Fatawa Razawiya With Referencing and Translation of Arabic Passages Imam Ahmad Raza Barelvi (May his soul be sanctified) 10 Raza Foundation Jamia Nizamia Razavia Inside Lohari Gate Lahore, 8 Pakistan (54000)

फ़तावा रज़विया अरबी इबारतों के तख़रीज (संदर्भ) और तर्जुमे के साथ इमाम अहमद रज़ा बरेलवी (क़ुद्दिसा सिर्रहु) १० रज़ा फाउंडेशन जामिया निज़ामिया रज़विया अंदरून लोहारी दरवाज़ा लाहौर, ८ पाकिस्तान (५४०००)

فتاویٰ رضویہ مع تخریج و ترجمہ عربی عبارات امام احمد رضا بریلوی قدس سرہ ۱۰ رضا

فاؤنڈیشن جامعہ نظامیہ رضویہ اندرون لوہاری دروازہ لاہور، ۸ پاکستان (۵۴۰۰۰)

Fatawa Razawiyya Volume 10

Contents Summary List 7
Preface ..... 9 Table of
Contents ..... 13 List of Subsidiary
Issues ..... 49 Book of
Zakat ..... 67 Tajalli al-Mishkat li-Inarat
As'ilah al-Zakat 1307 AH ..... 79 (A lamp's glow to clarify the issues of
Zakat) 79
Treatise ..... 175 A'azz al-Iktinah fi
Radd Sadaqah Mani' al-Zakat 1309 AH ..... 175 (A rare and true research
regarding the rejection of supererogatory charity from one who does not pay
Zakat) 175
Treatise ..... 191 Rādī' al-Ta'assuf
'an al-Imām Abī Yūsuf 1318 AH ..... 191 (Refutation of the
objections of non-conformists against Imam Abu Yusuf regarding the legal stratagem
of Zakat) ..... 191 Afsah al-Bayan fi Hukm Mazari' Hindustān
1318 AH ..... 217 (Detailed rulings on the lands of
India) ..... 217 Zakat on
Animals ..... 246 Risalah al-Zahr al-Basim
fi Hurmat al-Zakat 'ala Bani Hashim 1307 AH ..... 275 (An open blossom regarding
the prohibition of Zakat for the Bani Hashim) 275 Description of Sadaqah al-
Fitr ..... 295 Description of Supererogatory
Charities ..... 309 Book of Fasting (Description of
Fasting) ..... 335 Azka al-Ihlal bi-Ibtal ma Ahdatha al-Nas fi
Amr al-Hilal 1305 AH ..... 363 (An excellent discussion on nullifying news
invented by people regarding the sighting of the crescent moon (telegraph and
letter)) 363

फ़तावा रज़विया खंड 10

विषय-सूची (Contents) संक्षिप्त

सूची 7
प्रस्तावना ..... 9 विषय-
सूची ..... 13 गौण मुद्दों की
सूची ..... 49 जकात की पुस्तक (किताब-
उल-जकात) ..... 67 तजल्ली अल-मिश्कात ली-इनारात
अस्इला अल-जकात 1307 हिजरी ..... 79 (जकात के मुद्दों को स्पष्ट करने के लिए
दीपक की चमक) ..... 79 रिसाला (निबंध/
ग्रंथ) ..... 175 अअज्ज़ अल-इक्तिनाह फ़ी
रद सदका मानि' अल-जकात 1309 हिजरी ..... 175 (जकात न देने वाले के स्वैच्छिक
दान को अस्वीकार करने के बारे में एक दुर्लभ और सत्य
शोध) ..... 175 रिसाला (निबंध/
ग्रंथ) ..... 191 रादी' अल-तअस्सुफ़ 'अन
अल-इमाम अबी यूसुफ़ 1318 हिजरी ..... 191 (जकात के कानूनी हथकंडे के
संबंध में इमाम अबू यूसुफ पर गैर-मुक़ल्लिदों के आपत्तियों का
खंडन) ..... 191 अफ़्सह अल-बयान फ़ी
हुक्म मज़ारी' हिंदुस्तान 1318 हिजरी ..... 217 (हिंदुस्तान की जमीनों के विस्तृत
आदेश) ..... 217 जानवरों की
जकात ..... 246 रिसाला अल-ज़हर अल-
बासिम फ़ी हुरमत अल-जकात अला बनी हाशिम 1307 हिजरी ..... 275 (बनी हाशिम के लिए
जकात की मनाही के बारे में एक खुला हुआ फूल) ..... 275 सदका फ़ित्र का
वर्णन ..... 295 स्वैच्छिक दान (सदकात-ए-
नफ़्ल) का वर्णन ..... 309 रोजे की किताब (किताब-उस-
सौम) ..... 335 अज़्का अल-इहलाल बि-इब्ताल मा
अहदसा अन-नास फ़ी अम्र अल-हिलाल 1305 हिजरी .. 363 (चाँद देखने के बारे में लोगों द्वारा

आविष्कृत समाचारों (टेलीग्राम और पत्र) को रद्द करने पर एक उत्कृष्ट चर्चा) 363

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

Contents اجمالی فہرست 7

پیش لفظ ..... 9 فہرست

مضامین ..... 13 فہرست ضمنی

مسائل ..... 49 کتاب

الزکوٰۃ ..... 67 تجلی المشکوۃ لانارۃ

اسئلۃ الزکوۃ ۱۳۰۷ھ ..... 79 (زکوۃ کے مسائل کو واضح

کرنے کے لئے چراغ کی چمک) 79

رسالہ ..... 175 اعزّ الاکتناہ فی

ردّ صدقۃ مانع الزکوۃ ۱۳۰۹ھ ..... 175 (زکوۃ ادا نہ کرنے

والے کے صدقہ نفلی کے رد کے متعلق نادر تحقیق حقیق) 175

رسالہ ..... 191 رادع التعسف

عن الامام ابی یوسف ۱۳۱۸ھ ..... 191 (حیلہ زکوۃ کے

بارے میں امام ابو یوسف پر غیر مقلدین کے اعتراض کا رد) ..... 191 افصح

البیان فی حکم مزارع ہندوستان ۱۳۱۸ھ ..... 217 (ہندوستان

کی زمینوں کے تفصیلی احکام) ..... 217 جانوروں کی

زکوۃ ..... 246 رسالہ الزہرالباسم فی

حُرمۃ الزکوۃ علی بنی ھاشم ۱۳۰۷ھ ..... 275 (بنی ہاشم پر زکوۃ کی

حُرمت کے بارے میں کھلا ہوا شگوفہ) ..... 275 صدقہ فطر کا

بیان ..... 295 صدقاتِ نفل کا

بیان ..... 309 کتاب الصّوم (روزے کا

بیان) ..... 335 ازکی الاهلال بابطال ما احدث

الناس فی امر الهلال ۱۳۰۵ھ ..... 363 (رؤیتِ ہلال کے بارے میں

لوگوں کی ایجاد کردہ خبر (تار اور خط) کو باطل کرنے میں عمدہ بحث) 363

Fatawa Razawiya Volume 10

Treatise..... Methods of Establishing the Crescent 1320 AH (Methods of proving the moon sighting)..... 409 Al-Budur al-Ajilla fi Umur al-Ahilla 1304 AH ..... 454 With commentary ..... 454 Nur al-Adilla li al-Budur al-Ajilla ..... 454 With marginal notes ..... 454 Raf' al-Illa 'an Nur al-Adilla ..... 454 (Detailed rulings on moon sighting) ..... 454 Invalidators of Fasting ..... 487 (Things that break the fast) ..... 487 Al-I'lam bi-Hal al-Bukhur fi al-Siyam 1315 AH ..... 495 (Information regarding inhaling smoke/incense while fasting) ..... 495 Chapter on Restitution (Qada) and Expiation (Kaffara) ..... 520 Chapter on Ransom (Fidya) ..... 528 Tafsir al-Ahkam li-Fidya al-Salat wa al-Siyam 1312 AH (Detailed rulings on the ransom for prayers and fasts after death) .. 530 Disliked acts of fasting ..... 558 Discourse on Suhoor and Iftar ..... 568 Hidayat al-Jinan bi-Ahkam Ramadan 1323 AH (The Path to Paradise in the rulings of Ramadan) .. 574 Dar' al-Qubh 'an Dark Waqt al-Subh 1326 AH ..... 624 (Removal of shortcomings in understanding true dawn) ..... 624 Al-'Arus al-Mi'tar fi Zaman Da'wah al-Iftar 1312 AH ..... 638 (The perfumed groom in describing the time for the Iftar supplication) ..... 638 Supererogatory (Nafl) Fasting ..... 654 Book of Hajj 664

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवाँ

रिसाला (शोध पत्र) ..... तुरूके इसबाते हिलाल १३२० हि. (चाँद साबित करने के तरीक़े) ..... 409 अल-बुदूर अल-अजिल्ला फ़ी उमूर अल-अहिल्ला १३०४ हि. ..... 454 शरह (व्याख्या) के
साथ ..... 454 नूर अल-अदिल्ला लिल-बुदूर अल-अजिल्ला ..... 454 हाशिया (फुटनोट) के
साथ ..... 454 रफ़ अल-इल्ला अन नूर अल-अदिल्ला ..... 454 (चाँद देखने के विस्तृत
अहकाम) ..... 454 मुफ़सिदात-ए-
सौम ..... 487 (रोज़ा तोड़ देने वाली
चीज़ें) ..... 487 अल-इलाम बि-हाल अल-बखूर फ़िस-सियाम १३१५ हि. ..... 495 (रोज़े की हालत में धूनी लेने के बारे में जानकारी) ..... 495 बाब अल-क़ज़ा वल-कफ़्फ़ारा ..... 520 बाब अल-
फ़िद्या ..... 528 तफ़्सीर अल-अहकाम लि-फ़िद्या अस-सलात वस-सियाम १३१२ हि. (मौत के बाद नमाज़ और रोज़े के फ़िद्या के विस्तृत अहकाम) .. 530 मकरूहात-ए-सौम ..... 558 सहर-ओ-इफ़्तार का
बयान ..... 568 हिदायत अल-जिनान बि-अहकाम रमज़ान १३२३ हि. (रमज़ान के अहकाम में जन्नत की राह) .. 574 दर अल-क़ुबह अन दर्क वक़्त अस-सुबह १३२६ हि. ..... 624 (सुबह सादिक़ को समझने में कोताही का निवारण) .....
624 अल-अरूस अल-मिअतार फ़ी ज़मन दावत अल-इफ़्तार १३१२ हि. ..... 638 (इफ़्तार की दुआ के वक़्त के बयान में इत्र लगा दूल्हा) ..... 638 सौम-ए-नफ़्ल (नफ़्ल
रोज़ा) ..... 654 किताबुल
हज्ज 664

पेज 2/836

فتاوی رضویہ جلد دہم

رسالہ ..... طرق اثبات الھلال ۱۳۲۰ھ (اثبات چاند کے طریقے) ..... 409 البدور الاجلة فی امور الاهلة ۱۳۰۴ھ ..... 454 مع شرح ..... 454 نور الادلة للبذور الاجلة ..... 454 مع حاشیہ ..... 454 رفع العلة عن نور الادلة ..... 454 (رؤیت ہلال کے تفصیلی احکام) ..... 454 مفسدات صوم ..... 487 (روزہ توڑ دینے والی اشیاء) ..... 487 الاعلام بحال البخور فی الصیام ۱۳۱۵ھ ..... 495 (حالت روزہ میں ڈھونی لینے کے بارے میں اطلاع) ..... 495 باب القضاء والکفارة ..... 520 باب الفدیة ..... 528 تفاسیر الاحکام لفدیة الصلوة والصیام ۱۳۱۲ھ (بعد از موت نماز وروزہ کے فدیہ کے تفصیلی احکام) .. 530 مکروهات صوم ..... 558 سحرو افطار کا بیان ..... 568 هدایة الجنان باحکام رمضان ۱۳۲۳ھ (رمضان کے احکام میں جنت کی راہ) .. 574 درء القبح عن درک وقت الصبح ۱۳۲۶ھ ..... 624 (صبح صادق کو سمجھنے میں کوتاہی کا ازالہ) ..... 624 العروس المعطار فی زمن دعوة الافطار ۱۳۱۲ھ ..... 638 (افطار کی دُعا کے وقت کے بیان میں عطر آلود

دُولها) ..... 638 صوم نفل ..... 654 كتاب
الحج 664

Volume Ten Fatawa Razawiyya

684 ..... Siqal al-Rayn 'an Ahkam Mujawarat al-Haramayn 1305 AH 684 ..... (Removal of doubts regarding the rulings of residing in the Holy Sanctuaries)
706 ..... Conditions of Hajj
720 ..... Chapter on Violations during Hajj 720 ..... (Description of violations during Hajj) 732 ..... Anwar al-Bishara fi Masa'il al-Hajj wal-Ziyara 1329 AH 732 ..... (Springs of joy in the matters of Hajj and Visitation) 778 ..... Al-Nayyira al-Wadiyya Sharh al-Jawhara al-Mudiyya 1295 AH 778 ..... With Marginalia 778 ..... Al-Turra al-Radiyya 'ala al-Nayyira al-Wadiyya 778 .....
Text ___ By the great scholar Maulana Syed Husayn bin Salih Jamal al-Layl Fatimi Husayni, Shafi'i Imam and Preacher of Makkah al-Mukarramah, may Allah have mercy on him (d. 1391 AH) 778
778 ..... ___ Commentary and Marginalia By Aala Hazrat Imam of Ahl al-Sunnah Maulana Shah Ahmad Raza Khan Qadri Barelvi (Quddisa Sirruhul
Aziz) .....
778 778 ..... Etiquettes and Issues of Hajj, Umrah and Pure Visitation
819 .....
Supplement 819 ..... On the method of Hajj and Umrah, the sequence of their rituals from beginning to end, and the etiquettes of visiting the tomb of the Beloved (Prophet), peace and blessings of the Near and Responding One be upon him.

खंड दस फ़तावा रज़विया

684 ..... सैक़ल अर-रैन अन अहकाम मुजावरात अल-हरमैन १३०५ हिजरी 684 ..... (दोनों पवित्र हरमों में निवास के नियमों से संबंधित शंकाओं का समाधान)
706 ..... हज की शर्तें 720 ..... हज में उल्लंघनों का अध्याय 720 ..... (हज के उल्लंघनों का वर्णन) 732 ..... अनवार अल-बिशारा फ़ी मसाइल अल-हज वल-ज़ियारत १३२९ हिजरी 732 ..... (हज और ज़ियारत के मसलों में प्रसन्नता की बहारें) 778 ..... अन-नय्यिराह अल-वदिय्याह शरह अल-जौहराह अल-मुदिय्याह १२९५ हिजरी
778 ..... हाशिया (टिप्पणी) सहित 778 ..... अत-तुर्रा अर-रदिय्याह अला अन-नय्यिराह अल-वदिय्याह
778 ..... मूल पाठ ___ महान विद्वान मौलाना सैयद हुसैन बिन सालेह जमल अल-लैल फातिमी हुसैनी, मक्का मुकर्रमा के शाफ़ई इमाम और खतीब, अल्लाह उन पर दया करे (मृत्यु १३९१ हिजरी) द्वारा 778
778 ..... ___ व्याख्या और टिप्पणी आला हज़रत इमाम अहले सुन्नत मौलाना शाह अहमद रज़ा खाँ क़ादरी बरैलवी (क़ुदिस सिर्रुहु अल-अज़ीज़) द्वारा . 778 778 ..... हज, उमराह और पाकीज़ा ज़ियारत के शिष्टाचार और मसले
819 ..... पूरक (तकमिला) 819 ..... हज और उमराह की विधि, शुरू से अंत तक उनके कार्यों का क्रम, और प्रिय (नबी) की कब्र की ज़ियारत के शिष्टाचार, उन पर करीब और जवाब देने वाले (अल्लाह) की कृपा और शांति हो।

पृष्ठ 3 का 836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

684 ..... صیقل الرین عن احکام مجاورۃ الحرمین

۱۳۰۵ھ 684 ..... (حرمین شریفین میں سکونت کے احکام سے متعلق شبہات کا ازالہ)

706 .....

شرائط حج 720 ..... باب الجنایات في الحج

720 ..... (جنایات حج کا بیان) 732 ..... انوار البشارۃ في مسائل الحج والزیارۃ

۱۳۲۹ھ 732 ..... (حج وزِیارت کے مسائل میں خوشی کی بہاریں) 778 ..... النیّرۃ الوضیّۃ شرح الجوہرۃ المضیّۃ ۱۲۹۵ھ

778 ..... مع حاشیہ 778 ..... الطّرّۃ الرضیّۃ علی النیّرۃ الوضیّۃ

778 .....

متن ___ از عالم اجل مولانا سید حسین بن صالح جمل اللیل فاطمی حسینی امام و خطیب شافعیہ مکہ مکرمہ رحمہ اللہ (متوفی ۱۳۹۱ھ) 778

778 ..... ___

شرح وحاشیہ از اعلیحضرت امام اہلسنت مولانا شاہ احمد رضا خاں قادری بریلوی قدس سرہ العزیز 778

778 ..... حج، عمرہ اور زیارت سراپاطہارت کے آداب و مسائل

819 .....

تکملہ 819 ..... حج و عمرہ کی ترکیب اور اول سے آخر تک ان کے افعال کی ترتیب اور آداب زیارت قبر حبیب علیہ صلوٰۃ القریب المجیب میں

Volume Ten Fatawa Razawiyya

Fatawa Razawiyya With references and translation of Arabic texts

Imam Ahmad Raza Barelvi (May his secret be sanctified) Raza Foundation Jamia Nizamia Razavia

www.dawateislami.net Inside Lohari Gate, Lahore No. 8 Pakistan (54000) I.T. Majlis of Dawat-e-Islami

Page 4 of 836

दसवीं जिल्द फ़तावा रज़विया

फ़तावा रज़विया अरबी इबारतों के तख़रीज (हवाले) और अनुवाद के साथ

इमाम अहमद रज़ा बरेलवी (क़ुद्दसा सिर्रहु) रज़ा फाउंडेशन जामिया निज़ामिया रज़विया

www.dawateislami.net लोहारी गेट के अंदर, लाहौर नंबर ८ पाकिस्तान (५४०००) I.T. मजलिस-ए-दावत-ए-इस्लामी

पृष्ठ ४ का ८३६

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

فتاویٰ رضویہ مع تخریج و ترجمہ عربی عبارات

امام احمد رضا بریلوی قدس سرہ رضا فاؤنڈیشن جامعہ نظامیہ رضویہ

www.dawateislami.net اندرون لوہاری دروازہ لاہور نمبر ۸ پاکستان (۵۴۰۰۰) آئی ٹی مجلسِ دعوتِ اسلامی

صفحہ ۴ از ۸۳۶

Fatawa Razawiya Volume 10

Whomsoever Allah intends good for, He gives him understanding of the religion (Hadith) AL-ATAYA AL-NABAVIYYA FI AL-FATAWA AL-RAZAVIYYA With citations and translation of Arabic phrases

Volume 10

A magnificent fourteenth-century jurisprudential encyclopedia containing rare research Imam Ahmad Raza Barelvi (may his secret be sanctified) 1272 AH _ *1340 AH 1856 AD* _ 1921 AD

Raza Foundation, Jamia Nizamia Razawiyya Inside Lohari Gate, Lahore (8), Pakistan (12350) Phone: 67752

www.dawateislami.net I.T. Majlis of Dawat-e-Islami

Page 5 of 836

फ़तावा रज़विया दसवाँ भाग

जिसके साथ अल्लाह भलाई का इरादा करता है, उसे दीन की समझ अता फ़रमाता है (अल-हदीस)
अल-अताया अल-नबविया फ़िल फ़तावा अल-रज़विया अरबी इबारतों के तख़रीज और तर्जुमे के साथ

दसवाँ भाग

दुर्लभ शोधों पर आधारित चौदहवीं सदी का महान न्यायशास्त्रीय (फ़िक़्ही) विश्वकोश इमाम अहमद रज़ा बरेलवी (कुद्दिस सिर्रहु अल-अज़ीज़) १२७२ हिजरी _ १३४० हिजरी १८५६ ईस्वी _ १९२१ ईस्वी

रज़ा फाउंडेशन, जामिया निज़ामिया रज़विया लोहारी गेट के अंदर, लाहौर (८), पाकिस्तान (१२३५०)
फ़ोन: ६७७५२

www.dawateislami.net आई.टी. मजलिस-ए-दावत-ए-इस्लामी

पृष्ठ ८३६ में से ५

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

مَنْ یُرِدِ اللّٰہُ بِہٖ خَیْرًا یُفَقِّھْہُ فِي الدِّینِ (الحدیث) الْعَطَایَا النَّبَوِیَّة فِي الْفَتَاوَی الرَّضَوِیَّة مع تخریج و ترجمہ عربی عبارات

جلد دہم

تحقیقات نادرہ پر مشتمل چودہویں صدی کا عظیم الشان فقہی انسائیکلو پیڈیا امام احمد رضا بریلوی قدس سرہ العزیز ۱۲۷۲ھ _ ۱۳۴۰ھ ۱۸۵۶ء _ ۱۹۲۱ء

رضا فاؤنڈیشن، جامعہ نظامیہ رضویہ اندرون لوہاری دروازہ، لاہور (۸)، پاکستان (۱۲۳۵۰) فون: ۶۷۷۵۲

www.dawateislami.net I.T. Majlis of Dawat-e-Islami

Volume Ten Fatawa Ridawiyya

Book: Fatawa Ridawiyya Volume Ten Author: Sheikh-ul-Islam Imam Ahmad Raza Qadri Barelwi (May Allah have mercy on him) Translation of Arabic Passages: Hazrat Allama Mufti Muhammad Khan Qadri, Lahore Foreword: Hafiz Abdul Sattar Saeedi, Director of Education, Jamia Nizamia Ridawiyya, Lahore Arrangement & Index: Hafiz Abdul Sattar Saeedi, Director of Education, Jamia Nizamia Ridawiyya, Lahore Verification & Correction: Maulana Nazeer Ahmad Saeedi Supervision & Patronage: Maulana Mufti Muhammad Abdul Qayyum Hazarvi, Secretary General Tanzeem-ul-Madaris Ahl-e-Sunnat, Pakistan Calligraphy: Muhammad Sharif Gul, Katrial Kalan (Gujranwala) Composing: Maulana Muhammad Munsha Tabish Qasuri, Teacher Department of Persian, Jamia Nizamia Lahore Pages: 842 Publication: Rabi-ul-Awwal 1417 AH / August 1996 AD Press: ___ ***Publisher: Raza Foundation Jamia Nizamia Ridawiyya, Inside Lohari Gate, Lahore Price:*** ___ Rupees

Addresses where available: - Maktaba Qadria, Jamia Nizamia Ridawiyya, Inside Lohari Gate, Lahore - Maktaba Tanzeem-ul-Madaris, Jamia Nizamia Ridawiyya, Inside Lohari Gate, Lahore - Maktaba Ziaia, Bohar Bazar, Rawalpindi - Zia-ul-Quran Publications, Ganj Bakhsh Road, Lahore

दसवां खंड फतावा रज़विया

किताब: फतावा रज़विया दसवां खंड लेखक: शेख-उल-इस्लाम इमाम अहमद रज़ा कादरी बरेलवी (रहमतुल्लाहि अलैहि) अरबी अनुच्छेदों का अनुवाद: हज़रत अल्लामा मुफ्ती मोहम्मद खान कादरी, लाहौर प्रस्तावना: हाफ़िज़ अब्दुल सत्तार सईदी, शिक्षा निदेशक जामिया निज़ामिया रज़विया, लाहौर क्रम और अनुक्रमणिका: हाफ़िज़ अब्दुल सत्तार सईदी, शिक्षा निदेशक जामिया निज़ामिया रज़विया, लाहौर सत्यापन और सुधार: मौलाना नज़ीर अहमद सईदी प्रबंधन और संरक्षण: मौलाना मुफ्ती मोहम्मद अब्दुल कय्यूम हज़ारवी, महासचिव तंज़ीम-उल-मदारिस अहल-ए-सुन्नत, पाकिस्तान सुलेख: मोहम्मद शरीफ गुल, कत्रियाल कलां (गुजरानवाला) कंपोजिंग: मौलाना मोहम्मद मंशा ताबिश कसूरी, शिक्षक फारसी विभाग, जामिया निज़ामिया लाहौर पृष्ठ: ८४२ प्रकाशन: रबी-उल-अव्वल १४१७ हिजरी / अगस्त १९९६ ईस्वी प्रेस: ___ **प्रकाशक: रज़ा फाउंडेशन जामिया निज़ामिया रज़विया, अंदरूनी लोहारी दरवाजा, लाहौर मूल्य:** ___ रुपये

प्राप्ति के पते: - मक्तबा कादरिया, जामिया निज़ामिया रज़विया, अंदरूनी लोहारी दरवाजा, लाहौर - मक्तबा तंज़ीम-उल-मदारिस, जामिया निज़ामिया रज़विया, अंदरूनी लोहारी दरवाजा, लाहौर - मक्तबा ज़ियाइया, बोहड़ बाज़ार, रावलपिंडी - ज़िया-उल-कुरान पब्लिकेशंस, गंज बख्श रोड, लाहौर

पृष्ठ ८३६ में से ६

جلد دہم فتاوی رضویہ

کتاب: فتاوی رضویہ جلد دہم تصنیف: شیخ الاسلام امام احمد رضا قادری بریلوی رحمتہ اللہ تعالیٰ علیہ ترجمہ عربی عبارات: حضرت علامہ مفتی محمد خان قادری، لاہور پیش لفظ: حافظ عبدالستار سعیدی، ناظم تعلیمات جامعہ نظامیہ رضویہ، لاہور ترتیب و فہرست: حافظ عبدالستار سعیدی، ناظم تعلیمات جامعہ نظامیہ رضویہ، لاہور تخریج و تصحیح: مولانا نذیر احمد سعیدی باہتمام و سرپرستی: مولانا مفتی محمد عبدالقیوم ہزاروی ناظم اعلیٰ تنظیم المدارس اہلسنت، پاکستان کتابت: محمد شریف گل، کٹریال کلاں (گوجرانوالا) پیسٹنگ: مولانا محمد منشا تابش قصوری معلم شعبہ فارسی جامعہ نظامیہ لاہور صفحات: ۸۴۲ اشاعت: ربیع الاول ۱۴۱۷ھ اگست ۱۹۹۶ء مطبع: ___ **ناشر: رضا فاؤنڈیشن جامعہ نظامیہ رضویہ، اندرون لوہاری دروازہ، لاہور قیمت:** ___ روپے

ملنے کے پتے: - مکتبہ قادریہ، جامعہ نظامیہ رضویہ، اندرون لوہاری دروازہ، لاہور - مکتبہ تنظیم المدارس، جامعہ نظامیہ رضویہ، اندرون لوہاری دروازہ، لاہور - مکتبہ ضیائیہ، بوہڑ بازار، راولپنڈی - ضیاء القرآن پبلیکیشنز، گنج بخش روڈ، لاہور

Volume Ten Fatawa Razawiyya Summary Table of Contents

Foreword ..... 5 Book of
Zakat ..... 63 Book of
Fasting ..... 331 Chapter on Sighting the
Moon ..... 352 Chapter on Qadha (Making up fasts) and Kaffarah
(Expiation) ... 513 Chapter on Fidyah (Compensation) ..... 521 Book of
Hajj (Pilgrimage) ..... 657 Chapter on Violations in
Hajj ..... 713 List of Treatises * Tajalli al-
Mishkat ..... 75 * A'azz al-
Iktinah ..... 171 * Radi' al-
Ta'assuf ..... 187 * Afsa' al-
Bayan ..... 213 * Az-Zahr al-
Basim ..... 271 * Azka al-
Ihlal 359

दसवां खंड फ़तावा रज़विया संक्षिप्त विषय-सूची

प्रस्तावना (पेश लफ्ज़) ..... 5 किताबुज़ ज़कात (ज़कात की पुस्तक) ..... 63 किताबुस सौम (रोज़ों की पुस्तक) ..... 331 बाब रुयत-ए-हिलाल (चांद देखने का अध्याय) ..... 352 बाब अल-क़ज़ा वल-कफ़्फ़ारा (क़ज़ा और कफ़्फ़ारा का अध्याय) ... 513 बाब अल-फ़िदिया (फ़िदिया का अध्याय) ..... 521 किताबुल हज (हज की पुस्तक) ..... 657 बाब अल-जिनायात फिल हज (हज में जुर्म व सज़ा का अध्याय) ..... 713 लेखों (रसाइल) की सूची * तजल्ली अल-मिशकात ..... 75 * अ'अज़्ज़ अल-इकतिनाह ..... 171 * रादि' अत-त'अस्सुफ़ ..... 187 * अफ़सहुल् बयान ..... 213 * अज़-ज़हर अल-बासिम ..... 271 * अज़का अल-इहलाल 359

جلد دہم فتاویٰ رضویہ اجمالی فہرست

پیش لفظ ..... ۵ کتاب

الزکوٰۃ ..... ۶۳ کتاب

الصوم ..... ۳۳۱ باب رؤیۃ

الہلال ..... ۳۵۲ باب القضاء

والکفارۃ ..... ۵۱۳ باب

الفدیہ ..... ۵۲۱ کتاب

الحج ..... ۶۵۷ باب الجنایات فی

الحج ..... ۷۱۳ فہرست رسائل ہ تجلی

المشکوۃ ..... ۷۵ ہ اعز

الاکتناہ ..... ۱۷۱ ہ رادع

التعسف ..... ۱۸۷ ہ افصح

البیان ..... ۲۱۳ ہ الزہر

الباسم ..... ۲۷۱ ہ ازکی

الاہلال ۳۵۹

Fatawa Razawiyya Volume 10

o Methods of crescent moon verification ..... 405 o Al-Budur al-Ajilah ..... 449 o Al-I'lam bi-Hal al-Bukhur ..... 489 o Tafasir al-Ahkam ..... 523 o Hidayat al-Jinan ..... 567 o Dar' al-Qubh ..... 617 o Al-Arus al-Mu'attar ..... 631 o Saiqal ar-Rayn ..... 677 o Anwar al-Bisharah ..... 725 o An-Nayerat al-Wadiyya 771

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

o चाँद साबित करने के तरीके..... 405 o अल-बुरूर अल-अजिलाह ..... 449 o अल-इलाम बि-हाल अल-बखूर ..... 489 o तफ़ासीर अल-अहकाम ..... 523 o हिदायत अल-जिनान ..... 567 o दर अल-कुब्ह ..... 617 o अल-अरूस अल-मुअत्तर ..... 631 o सैक़ल अर-रैन ..... 677 o अनवार अल-बिशाराह ..... 725 o अन-नैय्यराह अल-वज़ियाह 771

فتاوی رضویہ جلد دہم

ہ طرق اثبات ہلال ..... ۴۰۵ ہ البدور الاجلة ..... ۴۴۹ ہ

الاعلام بحال البخور ..... ۴۸۹ ہ تفاسیر الاحکام ..... ۵۲۳ ہ

ہدایة الجنان ..... ۵۶۷ ہ درء القبح ..... ۶۱۷ ہ

العروس المعطار ..... ۶۳۱ ہ صیقل الرین ..... ۶۷۷ ہ

انوار البشارة ..... ۷۲۵ ہ النیرة الوضیة ۷۷۱

صفحہ 8 کا 836

Fatawa Rizvia Volume 10

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

Foreword

Praise be to Allah. To bring the scholarly treasures and jurisprudential stores of Ala Hazrat Imam-ul-Muslimeen Maulana Al-Shah Ahmad Raza Khan Fazil-e-Barelvi (may Allah have mercy on him) into the public eye in a modern way in accordance with the requirements of the present age, the institution named "Raza Foundation" was established several years ago at Darul Uloom Jamia Nizamia Razvia Lahore. It is moving towards its goal by completing the evolutionary stages of the proposed project with extreme lightning speed. Nine beautiful volumes containing the Book of Purification (Kitab-ut-Taharat), the Book of Prayer (Kitab-us-Salat), and the Book of Funerals (Kitab-ul-Jana'iz) have reached you. Now, by the grace of Allah (Glorious is His Majesty) and by the kindness of His Noble Messenger (peace and blessings of Allah be upon him), the tenth volume is being presented.

Volume 10

This volume consists of answers to 316 questions from the Book of Zakat until the end of the fourth volume of the old Fatawa Rizvia. Thus, four old volumes have been completed in the form of ten new volumes. The translation of the Arabic and Persian passages of this volume has been done by the renowned scholar and translator of many books, Hazrat Allama Mufti Muhammad Khan Qadri, while the translations of volumes six, seven, and eight are also the fruit of his pen's outpourings.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

बिस्मिल्लाह हिर-रहमान निर-रहीम

प्रस्तावना (पेश लफ्ज़)

अल्हम्दुलिल्लाह (तमाम प्रशंसा अल्लाह के लिए है), आला हज़रत इमामुल मुस्लिमीन मौलाना अल-शाह अहमद रज़ा ख़ान फ़ाज़िल-ए-बरेली (रहमतुल्लाह अलैह) के शैक्षिक खजानों और न्यायशास्त्र (फ़िक़्ह) के भंडार को आधुनिक युग की माँगों के अनुसार आधुनिक अंदाज़ में सामने लाने के लिए, दारुल उलूम जामिया निज़ामिया रज़विया लाहौर में "रज़ा फ़ाउंडेशन" के नाम से जो संस्थान कुछ साल पहले स्थापित किया गया था, वह अत्यंत तीव्र गति के साथ प्रस्तावित योजना के विकास के चरणों को तय करते हुए अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रहा है। किताबुत तहारत (पवित्रता की किताब), किताबुस सलात (नमाज़ की किताब) और किताबुल जनाइज़ (जनाज़े की किताब) पर आधारित नौ सुंदर जिल्दें (खंड) आप तक पहुँच चुकी हैं। अब अल्लाह तआला के फ़ज़्ल और उसके रसूल-ए-करीम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की इनायत से दसवीं जिल्द पेश की जा रही है।

जिल्द 10

यह जिल्द पुराने फ़तावा रज़विया की चौथी जिल्द में से 'किताबुज़ ज़कात' से अंत तक 316 सवालों के जवाबों पर आधारित है। इस तरह चार पुरानी जिल्दें दस नई जिल्दों के रूप में पूरी हो चुकी हैं। इस जिल्द के अरबी और फ़ारसी वाक्यों का अनुवाद प्रसिद्ध विद्वान और कई किताबों के अनुवादक हज़रत अल्लामा मुफ़्ती मुहम्मद ख़ान क़ादरी ने किया है, जबकि छठी, सातवीं और आठवीं जिल्द का अनुवाद भी उन्हीं की क़लम की देन है।

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

بسم اللہ الرحمن الرحیم

پیش لفظ

الحمد للہ اعلیٰحضرت امام المسلمین مولانا الشاہ احمد رضا خاں فاضل بریلوی رحمۃ اللہ علیہ کے خزائن علمیہ و ذخائر فقہیہ کو جدید انداز میں عصر حاضر کے تقاضوں کے مطابق منظر عام پر لانے کے لیے دارالعلوم جامعہ نظامیہ رضویہ لاہور میں "رضا فاؤنڈیشن" کے نام سے جو ادارہ چند سال قبل قائم ہوا تھا وہ انتہائی برق رفتاری کے ساتھ مجوزہ منصوبہ کے ارتقائی مراحل کو طے کرتے ہوئے اپنے ہدف کی طرف بڑھ رہا ہے۔ کتاب الطہارت، کتاب الصلوۃ اور کتاب الجنائز پر مشتمل نو خوبصورت جلدیں آپ تک پہنچ چکی ہیں۔ اب بفضلہ تعالی جل مجدہ و بعنایتہ رسولہ الکریم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم دسویں جلد پیش کی جارہی ہے۔

جلد دہم

یہ جلد فتاویٰ رضویہ قدیم جلد چہارم میں سے کتاب الزکوۃ سے آخر تک ۳۱۶ سوالوں کے جوابات پر مشتمل ہے، اس طرح قدیم چار جلدیں دس جدید جلدوں کی صورت میں مکمل ہوچکی ہیں، اس جلد کی عربی و فارسی عبارات کا ترجمہ فاضل شہیر مترجم کتب کثیرہ حضرت علامہ مفتی محمد خاں قادری نے فرمایا ہے جبکہ جلد ششم، ہفتم اور ہشتم کا ترجمہ بھی انہی کی رشحات قلم کا ثمر ہے۔

Fatawa Razawiyya Volume 10

In the present volume, the treatise 'Al-Budur al-Ajilla fi Umur al-Ahilla', its commentary 'Nur al-Adilla lil-Budur al-Ajilla', and its marginal notes 'Raf' al-Illa min Nur al-Adilla' were quite tangled due to forward and backward placement and lack of order, making it very difficult to benefit from them. In the current edition, the text, commentary, and related marginal notes have been interconnected with an excellent arrangement, so that it can now be easily utilized. Additionally, the treatise 'Al-Nayyira al-Wadiyya Sharh al-Jawhara al-Mudiyya ma' Hashiya al-Turra al-Radiyya', which was not previously included in Fatawa Razawiyya, has been included for publication according to the relevance of the subject. Furthermore, a detailed table of contents of the treatises included in this volume has been prepared by the author for the benefit of readers. In addition to numerous secondary issues and benefits, the following seven topics have been discussed in this volume:

(1) Kitab al-Zakat (Book of Alms-giving) (2) Kitab al-Sawm (Book of Fasting) (3) Bab fi Ru'yat al-Hilal (Chapter on Sighting the Crescent Moon) (4) Bab al-Qada' wal-Kaffara (Chapter on Making up and Expiation) (5) Bab al-Fidya (Chapter on Ransom/ Compensation) (6) Kitab al-Hajj (Book of Pilgrimage) (7) Bab al-Jinayat fil-Hajj (Chapter on Offenses in Hajj)

In addition to the above-mentioned topics, the following sixteen treatises containing extremely precise and valuable research and investigations are also included in this volume:

(1) Tajalli al-Mishkat li-Inarat As'ilat al-Zakat (1307 AH): Description of calculating Zakat for every type of wealth, times of payment, and its recipients.

(2) A'azz al-Iktinah fi Raddi Sadaqat Mani' al-Zakat (1309 AH): If a person liable for Zakat does not pay it but gives other charities or does optional deeds while obligatory ones are pending, then it is not acceptable.

(3) Rad' al-Ta'assuf 'an al-Imam Abi Yusuf (1318 AH): A matter was wrongly attributed to Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him); this treatise provides a response to that.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (भाग 10)

वर्तमान जिल्द में शामिल रिसाला (ग्रंथ) 'अल-बद्दूर अल-अजिल्ला फ़ी उमूर अल-अहिल्ला', इसकी शरह (व्याख्या) 'नूर अल-अदिल्ला लिल-बद्दूर अल-अजिल्ला' और इसके हाशिए 'रफ़ अल-इल्ला मिन नूर अल-अदिल्ला' में आगे-पीछे होने और क्रम की कमी के कारण काफी उलझन थी, जिसके आधार पर इससे लाभ उठाना बहुत कठिन था। वर्तमान संस्करण में मूल पाठ, शरह और संबंधित हाशिए को अत्यंत सुंदर व्यवस्था के साथ आपस में जोड़ दिया गया है, ताकि अब इससे आसानी से लाभ उठाया जा सके। साथ ही, रिसाला 'अन-नयिरा अल-वज़िया शरह अल-जौहरा अल-मुज़िया मा हाशियह अत-तुर्रा अर-रज़िया', जो पहले फ़तावा रज़विया में शामिल नहीं था, विषय की उपयुक्तता के अनुसार प्रकाशन में शामिल कर दिया गया है। इसके अलावा, इस जिल्द में शामिल रिसालों की विस्तृत सूची लेखक ने पाठकों के लाभ के लिए तैयार कर दी है। कई गौण मसलों और फ़ायदों के अलावा, इस जिल्द में निम्नलिखित सात विषयों पर चर्चा की गई है:

(1) किताबुल ज़कात (ज़कात की पुस्तक) (2) किताबुस सौम (रोज़े की पुस्तक) (3) बाब फ़ी रुयतुल हिलाल (चांद देखने का अध्याय) (4) बाबुल कज़ा वल कफ़्फ़ारा (कज़ा और कफ़्फ़ारा का अध्याय) (5) बाबुल फ़िद्या (फ़िद्या का अध्याय) (6) किताबुल हज (हज की पुस्तक) (7) बाबुल जिनायात फ़िल हज (हज में होने वाले अपराधों का अध्याय)

उपरोक्त विषयों के अलावा, अत्यंत सूक्ष्म और मूल्यवान शोध एवं अनुसंधान पर आधारित निम्नलिखित सोलह रिसाले भी इस जिल्द में शामिल हैं:

(1) तजल्ली अल-मिश्कात लि-इनारत अस्इलत अल-ज़कात (1307 हिजरी): हर प्रकार के धन की ज़कात का हिसाब लगाने, अदा करने के समय और इसके व्यय के स्थानों (मसारिफ़) का वर्णन।

(2) अ'अ़ज़्ज़ अल-इक्तिनाह फ़ी रद्दि सदक़त मानिअ़ अल-ज़कात (1309 हिजरी): यदि ज़कात के निसाब का मालिक ज़कात अदा न करे और अन्य दान-पुण्य करे, या ज़िम्मे में फ़राइज़ (अनिवार्य कर्तव्य) हों और नवाफ़िल (ऐच्छिक कार्य) अदा करे, तो यह स्वीकार्य नहीं है।

(3) रादिउत तअ़स्सुफ़ अन अल-इमाम अबी यूसुफ़ (1318 हिजरी): हज़रत इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाह अलैहि) की ओर एक मसला गलत तरीके से मंसूब (जोड़ा) कर दिया गया था, इस रिसाले में उसका जवाब दिया गया है।

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

پیش نظر جلد میں شامل رسالہ البدورالاجلة فی امور الاهلة، اس کی شرح نور الادلة للبدور الاجلة اور اس کے حاشیہ رفع العلة من نور الادلة میں تقدم و تاخر اور عدم ترتیب کی وجہ سے خاصا الجھاؤ تھا جس کی بناء پر اس سے استفادہ بہت دشوار تھا، موجودہ ایڈیشن میں متن، شرح اور متعلقہ حاشیہ کو انتہائی حسن ترتیب کے ساتھ باہم مربوط کر دیا گیا چنانچہ اب اس سے باسانی استفادہ کیا جاسکتا ہے، نیز رسالہ النیرة الوضیة شرح الجوهرة المضیة مع حاشیة الطرة الرضیة جو کہ پہلے فتاوی رضویہ میں شامل نہ تھا، موضوع کی مناسبت سے شامل اشاعت کر دیا گیا ہے۔

علاوہ ازیں اس جلد میں شامل رسائل کے مندرجات کی مفصل فہرست راقم نے افادہ قارئین کے لیے تیار کر دی ہے متعدد ضمنی مسائل و فوائد کے علاوہ اس جلد میں مندرجہ ذیل سات عنوانات زیر بحث لائے ہیں :

(۱) کتاب الزکوٰۃ (۲) کتاب الصوم (۳) باب فی رؤیۃ الهلال (۴) باب القضاء والکفارۃ (۵) باب الفدیہ (۶) کتاب الحج (۷) باب الجنایات فی الحج

مندرجہ بالا عنوانات کے علاوہ انتہائی دقیق اور گرانقدر تحقیقات و تدقیقات پر مشتمل مندرجہ ذیل سولہ رسائل بھی اس جلد میں شامل ہیں :

(۱) تجلی المشکوۃ لانارۃ اسئلۃ الزکوۃ (۱۳۰۷ھ) ہر قسم کے مال کی زکوٰۃ کے حساب لگانے، ادا کرنے کے اوقات اور مصارف کا بیان

(۲) اعز الاکتناہ فی رد صدقۃ مانع الزکوۃ (۱۳۰۹ھ) صاحب نصاب زکوٰۃ ادا نہ کرے اور دیگر صدقات و خیرات کرے یا ذمہ میں فرائض ہوں اور نوافل ادا کرے تو یہ مقبول نہیں۔

(۳) رادع التعسف عن الامام ابی یوسف (۱۳۱۸ھ) حضرت امام ابو یوسف رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کی جانب ایک مسئلہ کو غلط منسوب کر دیا گیا اس رسالہ میں اس کا جواب دیا گیا ہے۔

Fatawa Razawiyya, Volume 10

(4) Afsah al-Bayan fi Hukm Mazari' Hindustan (1318 AH) Detailed rulings regarding the lands of India. (5) Al-Zahr al-Basim fi Hurmat al-Zakat 'ala Bani Hashim (1307 AH) Zakat and obligatory charities are forbidden for the Bani Hashim (descendants of the Prophet), and giving it to them will not fulfill the obligation. (6) Azka al-Ihlal bi-Ibtal ma Ahdatha al-Nas fi Amr al-Hilal (1305 AH) A telegram message is not reliable for moon sighting. (7) Turuq Ithbat al-Hilal (1320 AH) Correct and incorrect methods of moon sighting confirmation. (8) Al-Budur al-Ajillah fi Umur al-Ahillah with Sharh Nur al-Adillah lil-Budur al-Ajillah with Hashiyah Raf' al-'Illah 'an Nur al-Adillah (1304 AH) Detailed rulings of moon sighting. (9) Al-I'lam bi-Hal al-Bukhur fi al-Siyam (1315 AH) How the smoke of incense sticks, frankincense, etc., entering the mouth or nose breaks the fast. (10) Tafasir al-Ahkam li-Fidyat al-Salat wa al-Siyam (1316 AH) Detailed issues of fidyah (compensation) for missed prayers and fasts after death. (11) Hidayat al-Jinan bi-Ahkam Ramadan (1323 AH) Recognition of true dawn (Subh Sadiq) and false dawn (Subh Kadhib) is provided, and true dawn is explained with maps; issues of Iftar and Suhoor are also discussed. (12) Dar' al-Qubh 'an Dark Waqt al-Subh (1326 AH) The rule for determining true dawn is stated (an excellent research on the time of Suhoor). (13) Al-'Arus al-Mi'tar fi Zaman Da'wat al-Iftar (1312 AH) Reciting the Iftar supplication after breaking the fast. (14) Sayqal al-Rayn 'an Ahkam Mujawarat al-Haramayn (1305 AH) Statement regarding residing in the two holy cities (Makkah and Madinah).

फतावा रज़विया, जिल्द दहम

(4) अफ़साह अल-बयान फ़ी हुक्म मज़ारि' हिंदुस्तान (1318 हिजरी) हिंदुस्तान की ज़मीनों के विस्तृत अहकाम (नियम)। (5) अज़-ज़हर अल-बासिम फ़ी हुरमत अज़-ज़कात 'अला बनी हाशिम (1307 हिजरी) बनी हाशिम पर ज़कात और सदक़ा-ए-वाजिबा हराम हैं और उन्हें देने से ज़कात अदा नहीं होगी। (6) अज़का अल-इहलाल बि-इब्ताल मा अहदसा अन-नास फ़ी अम्र अल-हिलाल (1305 हिजरी) चाँद देखने के मामले में तार (टेलीग्राम) की खबर विश्वसनीय नहीं है। (7) तुरुक़ इसबात-ए-हिलाल (1320 हिजरी) चाँद साबित करने के सही और गलत तरीके। (8) अल-बुदूर अल-अजिल्ला फ़ी उमूर अल-अहिल्ला मअ शरह नूर अल-अदिल्ला लिल-बुदूर अल-अजिल्ला मअ हाशिया रफ़' अल-इल्ला 'अन नूर अल-अदिल्ला (1304 हिजरी) चाँद देखने के विस्तृत अहकाम। (9) अल-इ'लाम बि-हाल अल-बख़ूर फ़ी अस्-सियाम (1315 हिजरी) अगरबत्ती, लोबान आदि का धुआं मुँह या नाक में किस तरह जाने से रोज़ा टूटता है। (10) तफ़ासीर अल-अहकाम लि-फ़िद्यात अस-सलात व अस्-सियाम (1316 हिजरी) मृत्यु के बाद नमाज़ और रोज़ा के फ़िद्या (क्षतिपूर्ति) के विस्तृत मसले। (11) हिदायत अल-जिनान बि-अहकाम रमज़ान (1323 हिजरी) सुबह सादिक और काज़िब की पहचान कराई गई है और नक्शों से सुबह सादिक समझाया गया है, साथ ही इफ्तार और सहरी के मसले बयान किए गए हैं। (12) दर' अल-क़ुब्ह 'अन दर्क वक़्त अस्-सुब्ह (1326 हिजरी) सुबह सादिक मालूम करने का नियम बयान किया गया है (सहरी के समय की उत्कृष्ट शोध)। (13) अल-अरूस अल-मिअ़तार फ़ी ज़मन दा'वत अल-इफ़्तार (1312 हिजरी) इफ़्तार के बाद इफ़्तार की दुआ पढ़ना। (14) स़ैक़ल अर-रैन 'अन अहकाम मुजावरत अल-हरमैन (1305 हिजरी) हरमैन तैयिबन (मक्का और मदीना) में निवास करने का विवरण।

पृष्ठ 11 / 836

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

(۴) افصح البیان فی حکم مزارع ھندوستان (۱۳۱۸ھ) ہندوستان کی زمینوں کے تفصیلی احکام (۵) الزھر الباسم فی حرمۃ الزکوٰۃ علی بنی ھاشم (۱۳۰۷ھ) بنی ہاشم پر زکوٰۃ اور صدقات واجبہ حرام ہیں اور ان کو دئے ادا نہ ہوگی۔ (۶) ازکی الاھلال بابطال ما احدث الناس فی امر الھلال (۱۳۰۵ھ) رویتِ ہلال میں تار کی خبر معتبر نہیں۔ (۷) طرق اثباتِ ہلال (۱۳۲۰ھ) اثباتِ ہلال کے صحیح اور غلط طریقے (۸) البدور الاجلۃ فی امور الاھلۃ مع شرح نور الادلۃ للبدور الاجلۃ مع حاشیۃ رفع العلۃ عن نور الادلۃ (۱۳۰۴ھ) رؤیت ہلال کے تفصیلی احکام (۹) الاعلام بحال البخور فی الصیام (۱۳۱۵ھ) اگر بتی لبان وغیرہ کا دھواں منہ یا ناک میں کس طرح جانے سے روزہ ٹوٹتا ہے۔ (۱۰) تفاسیر الاحکام لفدیۃ الصلوٰۃ والصیام (۱۳۱۶ھ) بعد از موت نماز روزہ کے فدیہ کے مفصل مسائل (۱۱) ہدایۃ الجنان باحکام رمضان (۱۳۲۳ھ) صبح صادق اور کاذب کی معرفت کرائی گئی ہے اور نقشوں سے صبح صادق سمجھایا گیا ہے نیز افطار و سحر کے مسائل بیان کیے گئے ہیں۔ (۱۲) درء القبح عن درک وقت الصبح (۱۳۲۶ھ) صبح صادق معلوم کرنے کا قاعدہ بیان کیا گیا ہے (سحری کے وقت کی تحقیق جلیل) (۱۳) العروس المعطار فی زمن دعوۃ الافطار (۱۳۱۲ھ) دعائے افطار بعد افطار پڑھنا (۱۴) صیقل الرین عن احکام مجاورۃ الحرمین (۱۳۰۵ھ) حرمین طیبین میں سکونت کرنے کا بیان

Volume 10 Fatawa Razawiyya

(15) Anwar-ul-Bisharah fi Masail-ul-Hajj wal-Ziyarah (1329 AH) Description of travel etiquette, prerequisites of Hajj, rulings of Hajj, Ihram, Tawaf, and the method of Hajj, etc.

(16) Al-Nayyirat-ul-Wadhiyah Sharh al-Jawharat-ul-Mudhiyah ma'a Hashiyah al-Turrat-ur-Radhwiyyah (1295 AH) Description of the issues of Hajj and Ziyarah (visitation).

Rabi-ul-Awwal 1417 AH / August 1996 AD Hafiz Abdul Sattar Sa'idi, Director of Education, Jamia Nizamia Razawiyya, Lahore

www.dawateislami.net

F: The author's name is Sayyid Husain bin Salih Jamal-ul-Layl Fatimi Husayni, Imam and Preacher of the Shafi'is in Makkah al-Mukarramah, died 1301 AH. Commentary and marginalia by Ala Hazrat Maulana Ahmad Raza Khan Qadri Barelvi (may his secret be sanctified). Ala Hazrat authored this treatise in one day in Makkah al-Mu'azzamah during his first Hajj.

Page 12 of 836

जिल्द दहम फ़तावा रज़विया

(१५) अनवारुल बशारह फ़ी मसाइलुल हज्ज वज़ ज़ियारह (१३२९ हिजरी) यात्रा के शिष्टाचार, हज की भूमिका, हज के अहकाम, एहराम, तवाफ और हज की पद्धति आदि का वर्णन।

(१६) अन्नैय्यिरतुल वज़ियाह शरह अल-जौहरतुल मुज़ियाह मआ हाशिया अत-तुलरतुल रज़विया (१२९५ हिजरी) हज और ज़ियारत के मसाइल का वर्णन।

रबी-उल-अव्वल १४१७ हिजरी / अगस्त १९९६ ईस्वी हाफ़िज़ अब्दुल सत्तार सईदी, नाज़िम तालीमात, जामिया निज़ामिया रज़विया, लाहौर

www.dawateislami.net

फ़: मूल लेखक का नाम सैय्यद हुसैन बिन सालेह जमलुल लैल फ़ातिमी हुसैनी, मक्का अल-मुकर्रमा के शाफ़ई इमाम और खतीब हैं, मृत्यु १३०१ हिजरी। व्याख्या और हाशिये आला हज़रत मौलाना अहमद रज़ा खान क़ादरी बरेलवी (कुद्दिस सिर्रहु) द्वारा। आला हज़रत ने यह रिसाला पहली बार हज के दौरान मक्का मुअज़्ज़मा में एक दिन में संकलित किया था।

पृष्ठ ८३६ का १२

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

(۱۵) انوار البشارۃ فی مسائل الحج والزیارۃ (۱۳۲۹ھ) آداب سفر، مقدمات حج ، احکام حج ، احرام، طواف اور طریقہ حج وغیرہ کا بیان۔

(۱۶) النیرۃ الوضیۃ شرح الجوھرۃ المضیۃ مع حاشیۃ الطرۃ الرضیۃ (۱۲۹۵ھ) مسائل حج و زیارت کا بیان

ربیع الاول ۱۴۱۷ھ اگست ۱۹۹۶ء حافظ عبد الستار سعیدی ناظم تعلیمات جامعہ نظامیہ رضویہ، لاہور

www.dawateislami.net

ف: ماتن کا نام سید حسین بن صالح جمل اللیل فاطمی حسینی امام و خطیب شافعیہ مکہ المکرمہ متوفی ۱۳۰۱ھ شرح و حاشیہ از اعلیٰحضرت مولانا احمد رضا خاں قادری بریلوی قدس سرہ، اعلیٰحضرت نے یہ رسالہ بار اول کے حج میں مکہ معظمہ میں ایک دن میں تالیف کیا۔

Fatawa Razawiyya | Volume 10

List of Contents

Book of Zakat

73 | Book of Zakat | The owner can include the value of stolen property in Zakat by forgiving the thief. | 74 73 | Evidence for Zakat, Prayer, Fasting, and Ushr. | Paying a debtor's loan from Zakat money without permission. Zakat on money given as a loan. | 74 75 | Intention is a condition for Zakat to be fulfilled; giving it as Eidi or a reward. Giving Zakat to those who wake people for Suhoor, palanquin bearers, or those who bring good news. | Treatise: Tajalli al-Mishkat li-Inarat As'ilat al-Zakat (Explanation of calculating Zakat for all types of wealth, times of payment, and its recipients). | 75 75 | Benefit: Zakat does not become invalid due to invalid conditions. | Seven questions regarding Zakat. | 75 75 | Buying grain etc. with Zakat money and distributing it among the poor. | First Issue: Should Zakat be given gradually or in a lump sum? | 75 75 | Feeding or clothing from Zakat money. | In case of advance payment of Zakat, there is complete authority for differentiation and gradual distribution. | 75 75 | Feeding the needy by making them sit will not fulfill the Zakat. | Zakat does not become payable before the passing of a year (Hawlan-e-Hawl). | 75 72 | During a famine, buying grain at six rupees per maund and selling it to the needy at four rupees per maund, and accounting for the remaining two rupees as Zakat; will the Zakat be fulfilled or not? | |

फ़तावा रज़विया | खंड 10

विषय-सूची

किताब-उज़्-ज़कात

73 | किताब-उज़्-ज़कात | चोरी हुए माल की कीमत चोर को माफ कर मालिक उसे ज़कात में गिन सकता है। | 74 73 | ज़कात, नमाज़, रोज़ा और उश्र का प्रमाण। | बिना अनुमति कर्जदार का कर्ज ज़कात के माल से अदा करना। कर्ज में दिए गए रुपयों की ज़कात। | 74 75 | ज़कात अदा होने के लिए नीयत शर्त है; ईदी या इनाम के तौर पर देना। सेहरी जगाने वालों, डोली लाने वालों, या खुशखबरी सुनाने वालों को ज़कात देना। | रिसाला: तजल्ली अल-मिश्कात लि-इनारात अस्इलात अल-ज़कात (हर प्रकार के माल की ज़कात का हिसाब लगाने, अदा करने के समय और इसके खर्च के विवरण)। | 75 75 | लाभ: गलत शर्तों से ज़कात खराब नहीं होती। | ज़कात से संबंधित सात प्रश्न। | 75 75 | ज़कात के माल से अनाज आदि खरीदकर गरीबों में बांटना। | पहला मसला: ज़कात धीरे-धीरे दी जाए या एकमुश्त। | 75 75 | ज़कात के माल से खाना खिलाना या कपड़े पहनाना। | ज़कात अग्रिम भुगतान की स्थिति में उसे अलग-अलग या धीरे-धीरे बांटने का पूर्ण अधिकार है। | 75 75 | ज़रूरतमंदों को बिठाकर खाना खिलाने से ज़कात अदा नहीं होगी। | साल पूरा होने (हौलान-ए-हौल) से पहले ज़कात देय नहीं होती। | 75 72 | अकाल के समय छह रुपये प्रति मन अनाज खरीदकर चार रुपये प्रति मन ज़रूरतमंदों को बेचना और दो रुपये ज़कात में जोड़ना; क्या ज़कात अदा होगी या नहीं? | |

فتاویٰ رضویہ | جلد دہم

فہرست مضامین

کتاب الزکاۃ

۷۳ | کتاب الزکاۃ | مسروقہ مال کی قیمت چور سے معاف کر کے مالک زکوۃ میں محسوب کرے۔ | ۷۴ ۷۳ | زکوۃ، نماز، روزہ اور عشر کا ثبوت۔ | بلا اجازت مقروض اس کا قرض کوئی مال زکوۃ سے ادا کر دے۔ قرض میں دیئے ہوئے روپوں کی زکوۃ۔ | ۷۴ ۷۵ | زکوۃ ادا ہونے کے لیے نیت شرط ہے عیدی یا انعام کے طور پر دینا۔ سحری جگانے والے، ڈولی لانے والے۔ خوشخبری سنانے والے کو زکوۃ دینا۔ | رسالہ تجلی المشکوۃ لانارۃ اسئلۃ الزکوۃ (ہر قسم کے مال کی زکوۃ کے حساب لگانے، ادا کرنے کے اوقات اور مصارف کے بیان) | ۷۵ ۷۵ | فائدہ: شروطِ فاسدہ سے زکوۃ فاسد نہیں ہوتی۔ | زکوۃ سے متعلق سات سوالات ۔ | ۷۵ ۷۵ | مال زکوۃ سے غلہ وغیرہ خرید کر فقراء میں تقسیم کرنا۔ | مسئلہ اولیٰ: زکوۃ بتدریج دی جائے یا یکمشت۔ | ۷۵ ۷۵ | مال زکوۃ سے کھانا کھلانا کپڑا پہنانا۔ | زکوۃ پیشگی ادا کرنے کی صورت میں تفریق و تدریج کا کامل اختیار ہے۔ | ۷۵ ۷۵ | محتاجوں کو بٹھا کر کھانے کھلانے سے زکوۃ ادا نہ ہوگی۔ | حولانِ حول سے پہلے زکوۃ واجب الادا نہیں ہوتی۔ | ۷۵ ۷۲ | قحط کے زمانے میں چھ روپیہ من غلہ خرید کر چار روپیہ من محتاجوں کے ہاتھ بیچے اور دو روپیہ زکوۃ میں محسوب کرے زکوۃ ادا ہوگی یا نہیں۔ | |

No.	Topic
76	Pre-payment of Zakat is a voluntary act (Tabarru'), and there is no compulsion on voluntary acts.
76	After the completion of a year (Hawlan-e-Hawl), when Zakat has become obligatory to pay, then distribution and gradual payment are prohibited; rather, the entire obligatory amount should be paid immediately.
76	In the correct and reliable school of thought, the obligation to pay Zakat is immediate.
76	Delaying payment after Zakat becomes obligatory is a cause of sin.
80	The obligation of Hajj, according to the preferred view, is immediate, but in case of delay, it will still be considered an 'Ada' (performance) and not 'Qada' (makeup).
80	The obligation of Prostration of Recitation (Sajda-e-Tilawat), according to Imam Abu Yusuf, is immediate, and according to Imam Muhammad, it is delayed
85	Detailed explanation of the threshold (Nisab) for gold and silver and the statement of the amount of Zakat upon it.
85	By 'Hawlan-e-Hawl' (completion of a year), the lunar year is meant.
86	Whatever wealth is added from the same category as the Nisab in the middle of the year before the year's completion will also be included in the original Nisab, and Zakat will be paid for all of it, provided that Zakat does not become double-obligatory on any wealth.
88	Third Issue: If jewelry decreases in the future, by what calculation should the reduction in Zakat be made?
88	Zakat is only obligatory on the Nisab (threshold amount), not on the surplus amount that falls below the next increment (Afw).
89	If a reduction in the Nisab occurs before the completion of the year, it is not free from two conditions.

No.	Topic
	(mutarakhi). However, whenever it is performed, by consensus, it will be called 'Ada' and not 'Qada'.
80	Many of our Imams have explicitly stated that one who delays the payment of Zakat is 'Mardood-ush-Shahadah' (one whose testimony is rejected), and this same report is from Hazrat Imam Muhammad.
83	There are calamities in delaying payment after Zakat becomes obligatory.
83	An faith-refreshing incident of Imam Muhammad Baqir (may Allah be pleased with him).
83	Virtues of Imam Muhammad Baqir (may Allah be pleased with him).
84	Matters that incline people towards gradualism in the payment of Zakat.
85	Second Issue: Zaid has jewelry and pays its Zakat. If the jewelry increases in the future, by what calculation should he increase the Zakat amount?
90	If the year was completed for the Nisab and Zakat became obligatory, but it hadn't been paid yet when the wealth decreased, this is not free from three cases: the cause of reduction being consumption (istihlak), charity (tasadduq), or loss (halak).
91	The first case: the ruling on consumption (istihlak).
91	The second case: the ruling on charity (tasadduq).
94	Imam Abu Saud Muhammad Effendi, Mufti of the Roman lands, author of Bahr-e-Bar; the author of Bahr-e-Shar Nablaali is prior to this Abu Saud, who is the annotator of Nablaali's books.
95	The third case: the ruling on loss (halak).

नंबर	विषय
७६	ज़कात का अग्रिम भुगतान एक स्वैच्छिक कार्य (तबर्रु) है और स्वैच्छिक कार्य पर कोई दबाव नहीं है।
७६	एक वर्ष पूरा होने (हौलान-ए-हौल) के बाद जब ज़कात देना अनिवार्य हो जाए, तो अब वितरण और धीरे-धीरे भुगतान करना निषिद्ध है, बल्कि पूरी अनिवार्य राशि तुरंत अदा करनी चाहिए।
७६	सही और विश्वसनीय मत के अनुसार, ज़कात की अदायगी का दायित्व तत्काल है।
७६	ज़कात अनिवार्य होने के बाद भुगतान में देरी करना पाप का कारण है।
८०	हज्ज का दायित्व पसंदीदा मत के अनुसार तत्काल है, लेकिन देरी की स्थिति में भी इसे 'अदा' ही माना जाएगा, न कि 'क़ज़ा'।
८०	सजदा-ए-तिलावत की अनिवार्यता इमाम अबू युसुफ़ के अनुसार तत्काल है और इमाम मुहम्मद के अनुसार विलंबित (मुतराखी) है, लेकिन जब भी इसे किया
८५	सोने और चांदी के निसब (सीमा) का विवरण और उस पर ज़कात की मात्रा का वर्णन।
८५	'हौलान-ए-हौल' (वर्ष की पूर्णता) से चंद्र वर्ष का अर्थ है।
८६	वर्ष के बीच में वर्ष पूरा होने से पहले निसब की ही श्रेणी से जो भी संपत्ति बढ़ेगी, वह भी मूल निसब में शामिल की जाएगी और उन सबकी ज़कात दी जाएगी, बशर्ते कि किसी संपत्ति पर दोबारा ज़कात अनिवार्य न हो जाए।
८८	तीसरा मसला: यदि भविष्य में आभूषण कम हो जाएं तो ज़कात में किस हिसाब से कमी की जाए।
८८	ज़कात केवल निसब (न्यूनतम सीमा) में अनिवार्य होती है, न कि अतिरेक (अफ़्व) में।
८९	यदि वर्ष पूरा होने से पहले निसब में कमी आती है, तो यह दो स्थितियों से खाली नहीं है।

नंबर	विषय
	जाएगा, सर्वसम्मति से इसे 'अदा' ही कहा जाएगा, न कि 'क़ज़ा'।
८०	हमारे बहुत से इमामों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि ज़कात की अदायगी में देरी करने वाला 'मर्दूद-उश-शहादह' (जिसकी गवाही स्वीकार्य न हो) है, और यही बात हज़रत इमाम मुहम्मद से वर्णित है।
८३	ज़कात अनिवार्य होने के बाद भुगतान में देरी करने में मुसीबतें हैं।
८३	इमाम मुहम्मद बाकिर रज़ियल्लाहु अन्हु की एक ईमान ताज़ा करने वाली घटना।
८३	इमाम मुहम्मद बाकिर रज़ियल्लाहु अन्हु के गुण।
८४	लोगों को ज़कात की अदायगी में क्रमिकता (धीरे-धीरे देने) के लिए प्रेरित करने वाली बातें।
८५	दूसरा मसला: ज़ैद के पास आभूषण हैं और वह उसकी ज़कात देता है, भविष्य में आभूषण बढ़ जाएं तो किस हिसाब से ज़कात की राशि बढ़ाए।
९०	निसब पर वर्ष पूरा हो गया और ज़कात अनिवार्य हो गई, लेकिन अभी भुगतान नहीं किया गया था कि संपत्ति कम हो गई, यह तीन स्थितियों से खाली नहीं है: कमी का कारण उपभोग (इस्तिहलाक), दान (तसद्दुक) या विनाश (हलाक) होगा।
९१	पहली स्थिति: यानी उपभोग (इस्तिहलाक) का हुक्म।
९१	दूसरी स्थिति: यानी दान (तसद्दुक) का हुक्म।
९४	इमाम अबू सऊद मुहम्मद अफ़ंदी, रोम के क्षेत्रों के मुफ्ती, बहर-ए-बर के रचयिता; बहर-ए-शर नबलाली के लेखक इस अबू सऊद से पहले के हैं, जो नबलाली की पुस्तकों के टीकाकार हैं।
९५	तीसरी स्थिति: यानी विनाश (हलाक) का हुक्म।

نمبر	عنوان	نمبر	عنوان
۷۶	زکوۃ کی پیشگی ادائیگی تبرع ہے اور تبرع پر جبر نہیں۔	۸۵	سونے اور چاندی کے نصاب کی تفصیل اور اس پر مقدارِ زکوۃ کا بیان۔
۷۶	حولانِ حول کے بعد جب زکوۃ واجب الادا ہو چکی ہو تو اب تفریق و تدریج ممنوع ہو گی بلکہ فوراً تمام و کمال زرِ واجب ادا کرے۔	۸۵	حولانِ حول سے قمری سال مراد ہے۔
۷۶	مذہبِ صحیح و معتمد میں ادائے زکوۃ کا وجوب فوری ہے۔	۸۶	حولانِ حول سے پہلے نصاب کی جنس سے وسط سال میں جتنے مال کا اضافہ ہوگا وہ بھی اصل نصاب میں شامل کرکے سب کی زکوۃ دی جائے گی بشر طیکہ کسی مال پر دوبارہ زکوۃ لازم نہ آئے۔
۷۶	وجوب زکوۃ کے بعد ادائیگی میں تاخیر باعث گناہ ہے۔	۸۸	مسئلہ ثالثہ : اگر آئندہ زیور کم ہو جائے تو زکوۃ میں کس حساب سے کمی کی جائے۔
۸۰	حج کا وجوب قولِ راجح پر فوری ہے لیکن تاخیر کی صورت میں بھی ادا ہی ہو گا نہ کہ قضا۔	۸۸	زکوۃ صرف نصاب میں واجب ہوتی ہے نہ کہ عفو میں۔

نمبر	عنوان	نمبر	عنوان
۸۰	سجدۂ تلاوت کا وجوب امام ابو یوسف کے نزدیک فوری اور امام محمد کے نزدیک متراخی ہے مگر جب بھی کرے گا بالاتفاق ادا ہی کہلائے گا نہ کہ قضا۔	۸۹	نصاب میں نقصان اگر حولانِ حول سے قبل ہو تو دو حال سے خالی نہیں۔
۸۰	ہمارے بہت ائمہ نے تصریح فرمائی کہ زکوۃ کی ادائیگی میں تاخیر کرنے والا مردود الشہادۃ ہے، اور یہی منقول ہے حضرت امام محمد سے۔	۹۰	نصاب پر سال پورا ہو گیا اور زکوۃ واجب ہو چکی مگر ابھی ادا نہیں کی تھی کہ مال کم ہو گیا، یہ تین حال سے خالی نہیں کہ کمی کا سبب استہلاک ہو گا یا تصدق یا ہلاک۔
۸۳	بعد از وجوب زکوۃ ادائیگی کی تاخیر میں آفات ہیں۔	۹۱	صورت اولٰی یعنی استہلاک کا حکم۔
۸۳	امام محمد باقر رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا ایمان افروز واقعہ۔	۹۱	صورت ثانیہ یعنی تصدق کا حکم
۸۳	امام محمد باقر رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے فضائل۔	۹۴	امام ابو السعود محمد آفندی مفتی دیارِ رومیہ صاحبِ بحرِ بر، صاحبِ بحرِ شر نبلا لی پر اور شر نبلالی اس ابوالسعود پر مقدم ہیں جو شر نبلالی کی کتب کے محشی ہیں۔
۸۴	لوگوں کو زکوۃ کی ادائیگی میں تدریج پر راغب کرنے والی باتیں	۹۵	صورت ثالثہ یعنی ہلاک کا حکم۔

نمبر	عنوان نمبر	عنوان
۸۵	مسئلہ ثانیہ: زید کے پاس زیور ہے وہ اس کی زکوۃ دیتا ہے، آئندہ کو زیور زیادہ ہو تو کس حساب سے زرِ زکوۃ زیادہ کرے۔	

Fatawa Razawiyya - Volume 10

- Fourth Issue: Description of giving Zakat to needy Syeds. (99)
- Zakat is strictly prohibited for noble Syeds and all descendants of Hashim (Bani Hashim). (99)
- The prohibition of obligatory charities (Sadaqat Mafroodha) for noble Syeds is proven by the consensus of the four Imams and continuous (mutawatir) traditions. (99)
- Twenty noble companions (Sahaba) have narrated traditions regarding the prohibition of obligatory charities for noble Syeds. (99)
- The reason for the prohibition of charities for Syeds is their high honor, dignity, cleanliness, and purity. (100)
- Zakat is the filth of wealth and the washing away of sins. (100)
- A wealthy person is not equal to Bani Hashim in entitlement to honor. (101)
- Zakat is not permissible for a Hashimi's Mukatab slave. (102)
- The fatwa allowing Zakat for Bani Hashim is based on a weak and rejected narration. (102)
- In case of conflict, 'Zahir-ur-Riwayah' (the most authentic report) is preferred. (103)
- Whatever is against 'Zahir-ur-Riwayah' is not the school of our Imams. (103)
- Strength of evidence necessitates interpretation. (104)
- Consistency with tradition prevents deviation from reasoning. (104)
- It is not permissible for noble Syeds to take Zakat, nor is it permissible to give it to them, and Zakat is not fulfilled by giving it to them. (104)
- Issuing a fatwa based on a weak opinion is ignorance and against consensus (ijma). (104)
- How should the support (muwasat) of noble Syeds be in these turbulent times! (105)
- Virtues of serving and assisting noble Syeds and the household (Ahl al-Bayt) of the Prophet (peace be upon him). (105)
- The Day of Judgment is a day of severe need and necessity. (105)
- One glance of kindness from the Master of the two worlds (peace be upon him) is sufficient for all the critical matters of both worlds. (105)
- The measure through which service to Syeds is performed and Zakat is also fulfilled. (106)

- It is not permissible to provide a shroud (kafan) for the deceased from Zakat money. (106)
- A legal device (heela) for the permissibility of a shroud from Zakat money. (106)
- A legal device to spend Zakat money on the construction of mosques and all other good deeds. (106)
- The one who guides towards a good deed gets as much reward as the one who performs it. (106)
- All individuals participating in a good deed receive full reward; reward does not decrease for anyone due to partnership. (106)
- In spending Zakat for good deeds, transferring ownership (tamleek) through someone deserving of Zakat brings reward to both parties. (107)
- One cannot forcibly take back from the person to whom ownership was transferred, because they have become the independent owner and thus have the choice whether to give it or not. (107)
- Gifts (Hiba) and charity (Sadaqa) do not become invalid due to an invalid condition. (108)
- According to the author (may Allah have mercy on him), a seamless method to spend Zakat money on a Syed or a mosque. (108)

फतावा रज़विया - जिल्द दहम

- मसला राबिया: सआदात मोहताजीन को ज़कात देने का बयान। (99)
- ज़कात सआदात किराम और तमाम बनी हाशिम पर कतई हराम है। (99)
- सआदात किराम पर सदक़ात-ए-मफ़रूज़ा की हुरमत अइम्मा-ए-अरबा के इजमा और अहादीस-ए-मुतवातिरा से साबित है। (99)
- सआदात किराम पर सदक़ात-ए-मफ़रूज़ा के हराम होने से मुताल्लिक बीस सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने हदीसें रिवायत फरमाई हैं। (99)
- सआदात के लिए तहरीम-ए-सदक़ात की इल्लत उन हज़रात-ए-आलिया की इज़्ज़त व करामत और नज़ाफ़त व तहारत है। (100)
- ज़कात माल का मैल और गुनाहों का धोवन है। (100)
- गनी इस्तेहकाक़-ए-करामत में बनी हाशिम के बराबर नहीं। (101)
- हाशिमी के गुलाम मुकातब को ज़कात जाइज़ नहीं। (102)
- बनी हाशिम के लिए जवाज़-ए-ज़कात के फ़तवे की बुनियाद एक मरजूह व मजरूह रिवायत पर है। (102)
- बवक्त-ए-इख्तिलाफ ज़ाहिरुर रिवायत ही मुरज्जह है। (103)
- जो कुछ ज़ाहिरुर रिवायत के खिलाफ है वो हमारे अइम्मा का मज़हब नहीं। (103)
- क़ुवत-ए-दलील मोजिब-ए-तावील है। (104)
- रिवायत की मुवाफक़त मानि-ए-अदूल अज़ दरायत है। (104)
- सआदात किराम के लिए न ज़कात लेना जाइज़, न उन्हें देना जाइज़, और न उन्हें देने से ज़कात अदा होती है। (104)
- कौल-ए-मरजूह पर फतवा जहालत और इजमा के खिलाफ है। (104)
- इस ज़माना-ए-पुर-आशोब में सआदात किराम की मुवासात क्योंकर हो! (105)
- हज़रात सआदात और अहले बैत रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत व मुआवन्नत के फ़ज़ाइल। (105)
- कयामत का दिन सख्त ज़रूरत व हाजत का दिन है। (105)

- सरकार-ए-दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की एक निगाह-ए-लुत्फ़ जुमला मुहिमात-ए-दो जहां को बस है। (105)
- वो तदबीर जिससे ख़िदमत-ए-सआदात भी बजा हो और ज़कात भी अदा हो। (106)
- माल-ए-ज़कात से मय्यत को कफ़न देना जाइज़ नहीं। (106)
- माल-ए-ज़कात से कफ़न-ए-मय्यत के जवाज़ का हीला। (106)
- तामीर-ए-मस्जिद वगैरा तमाम नेक कामों में माल-ए-ज़कात सर्फ करने का हीला। (106)
- नेक काम की रहनुमाई करने वाले को उतना ही सवाब मिलता है जितना नेक काम करने वाले को। (106)
- नेक काम में शरीक होने वाले तमाम अफ़राद को कामिल सवाब मिलता है शिरकत की वजह से किसी के अज्र में कमी वाक़े नहीं होती। (106)
- नेक कामों में ज़कात खर्च करने के लिए किसी मुस्तहिक-ए-ज़कात से तमीलीक कराने में दोनों को सवाब मिलता है। (107)
- जिससे तमीलीक कराई उससे जब्रन वापस नहीं ले सकते क्योंकि वो मुस्तकिल मालिक हो चुका है लिहाज़ा उसे इख्तियार है चाहे दे या न दे। (107)
- हिबा व सदक़ा शर्त-ए-फासिद से फासिद नहीं होते। (108)
- मुसन्निफ रहमतुल्लाहि अलैहि के नज़दीक सैय्यद या मस्जिद पर माल-ए-ज़कात सर्फ़ करने का एक बे-खलिश तरीका। (108)

فتاویٰ رضویہ - جلد دہم

- مسئلہ رابعہ: سادات محتاجین کو زکوۃ دینے کا بیان۔ (۹۹)
- زکوۃ سادات کرام اور تمام بنی ہاشم پر حرام قطعی ہے۔ (۹۹)
- سادات کرام پر صدقات مفروضہ کی حرمت ائمہ اربعہ کے اجماع اور احادیث متواترہ سے ثابت ہے۔ (۹۹)
- سادات کرام پر صدقات مفروضہ کے حرام ہونے سے متعلق بیس صحابہ کرام رضی اللہ تعالیٰ عنہم نے حدیثیں روایت فرمائی ہیں۔ (۹۹)
- سادات کے لیے تحریم صدقات کی علت ان حضرات عالیہ کی عزت و کرامت اور نظافت و طہارت ہے۔ (۱۰۰)
- زکوۃ مال کا میل اور گناہوں کا دھوون ہے۔ (۱۰۰)
- غنی استحقاق کرامت میں بنی ہاشم کے برابر نہیں۔ (۱۰۱)
- ہاشمی کے غلام مکاتب کو زکوۃ جائز نہیں۔ (۱۰۲)
- بنی ہاشم کے لیے جواز زکوۃ کے فتویٰ کی بنیاد ایک مرجوح و مجروح روایت پر ہے۔ (۱۰۲)
- بوقت اختلاف ظاہر الروایتہ ہی مرجح ہے۔ (۱۰۳)
- جو کچھ ظاہر الروایتہ کے خلاف ہے ہمارے ائمہ کا مذہب نہیں۔ (۱۰۳)
- قوتِ دلیل موجبِ تعویل ہے۔ (۱۰۴)
- روایت کی موافقت مانع عدول از درایت ہے۔ (۱۰۴)
- سادات کرام کے لیے نہ زکوۃ لینا جائز، نہ انہیں دینا جائز، اور نہ ان کو دینے سے زکوۃ ادا ہوتی ہے۔ (۱۰۴)

- قولِ مرجوح پر فتویٰ جہالت اور اجماع کے خلاف ہے۔ (۱۰۴)
- اس زمانہ پُر آشوب میں سادات کرام کی مواسات کیونکر ہو! (۱۰۵)
- حضرات سادات اور اہل بیت رسول صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی خدمت و معاونت کے فضائل۔ (۱۰۵)
- قیامت کا دن سخت ضرورت و حاجت کا دن ہے۔ (۱۰۵)
- سرکارِ دو عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی ایک نگاہِ لطف جملہ مہمات دو جہاں کو بس ہے۔ (۱۰۵)
- وہ تدبیر جس سے خدمت سادات بھی بجا ہو اور زکوۃ بھی ادا ہو۔ (۱۰۶)
- مالِ زکوۃ سے میت کو کفن دینا جائز نہیں۔ (۱۰۶)
- مال زکوۃ سے کفن میت کے جواز کا حیلہ۔ (۱۰۶)
- تعمیر مسجد وغیرہ تمام نیک کاموں میں مال زکوۃ صرف کرنے کا حیلہ۔ (۱۰۶)
- نیک کام کی رہنمائی کرنے والے کو اتنا ہی ثواب ملتا ہے جتنا نیک کام کرنے والے کو۔ (۱۰۶)
- نیک کام میں شریک ہونے والے تمام افراد کو کامل ثواب ملتا ہے شراکت کی وجہ سے کسی کے اجر میں کمی واقع نہیں ہوتی۔ (۱۰۶)
- نیک کاموں میں زکوۃ خرچ کرنے کے لیے کسی مستحق زکوۃ سے تملیک کرانے میں دونوں کو ثواب ملتا ہے۔ (۱۰۷)
- جس سے تملیک کرائی اس سے جبراً واپس نہیں لے سکتے کیونکہ وہ مستقل مالک ہو چکا ہے لہذا اسے اختیار ہے چاہے دے یا نہ دے۔ (۱۰۷)
- ہبہ و صدقہ شرط فاسد سے فاسد نہیں ہوتے۔ (۱۰۸)

- مصنف رحمہ اللہ تعالیٰ علیہ کے نزدیک سید یا مسجد پر مالِ زکوۃ صرف کرنے کا ایک بے خلش طریقہ۔ (۱۰۸)

108 | When a creditor finds the debtor's wealth of the same type as the debt, he can take it without his consent. 109 | It is impermissible to give Zakat to one's own ancestors (parents, etc.), descendants (children, etc.), or to the owned slaves of one's husband or wife, even if they are 'Mukatib' (slaves with a contract for freedom).

108 | A creditor can give Zakat to his poor debtor to retrieve it as payment for the debt; if the debtor refuses to return it, the creditor can take it back forcibly. 109 | A wealthy person (Ghani), his minor children, and his non-Mukatib slaves cannot be given Zakat.

108 | If some money is exchanged for rupees, based on 'Jami' as-Saghir', the condition of mutual possession seems apparent, but according to the 'Mabsut' narration, possession by one side is sufficient. 109 | It is not permissible to give Zakat to a freed slave of a Hashimi.

109 | No charity (Sadaqah) is complete without transfer of possession. 109 | Zakat cannot be given to a non-believer (Kafir).

109 | Resorting to legal ruses (Hilah) to misappropriate Zakat funds is against the objectives of Sharia and is, in a way, attempting to deceive the Lord Almighty. 109 | Specific mention of sixteen types of people to whom it is permissible to give Zakat, though there might have been a doubt regarding its impermissibility.

109 | Fifth Issue: For what purposes is it permissible to give Zakat? 109 | Can someone whose mother is a Hashimi but whose father is a non-Hashimi be called a Hashimi?!

109 | Definition of the recipients of Zakat. 109 | In Sharia, lineage is traced from the father.

109 | It is impermissible to give Zakat to sixteen (types of) individuals; it is permissible to give it to everyone else. 109 | One who considers himself a Syed solely because his mother is a Syedani, and insists on it, is deserving of a curse according to the Hadith.

109 | It is not permissible to give Zakat to a Hashimi. 110 | Several scenarios where one does not have access to wealth that is beyond their basic necessities (Nisab).

109 | A woman cannot give Zakat to her husband, and a husband cannot give Zakat to his wife, even if he has given her an irrevocable divorce (Talaq-e-Mughallazah), as long as she is within the waiting period (Iddah). 110 | One who has access to the aforementioned 'Nisab' (minimum taxable wealth) cannot receive Zakat, whether he is a warrior (Ghazi), a pilgrim (Haji), or a student.

109 | It is not permissible to give Zakat to one's own children or grandchildren. 110 | A Zakat collector (Aamil) can take from the Zakat an amount equal to his work even if he is wealthy.

109 | It is not permissible to give Zakat to one's parents or grandparents. 110 | Transfer of ownership (Tamlik) is a condition for giving Zakat.

109 | Giving Zakat to one's own ancestors or descendants is impermissible, even if these relationships are established through illicit means (adultery). 110 | Zakat will not be fulfilled by merely seating the needy at one's table and feeding them (as permission to eat/Ibahat), nor by using it for the shroud or burial of the deceased, nor by building mosques, wells, Sufi lodges (Khanqah), schools, bridges, inns, etc.

112 | A traveler cannot take more Zakat than what is required for his needs, whereas a poor person can take more than his immediate needs.

फ़तावा रज़विया | जिल्द दहम (दसवीं)

108 | जब लेनदार क़र्ज़दार की संपत्ति उसी प्रकार की पाता है जैसा उसका क़र्ज़ है, तो वह उसकी सहमति के बिना उसे ले सकता है। 109 | अपने पूर्वजों (माता-पिता आदि), वंशजों (संतान आदि), या पति/पत्नी के स्वामित्व वाले दासों को ज़क़ात देना जायज़ नहीं है, भले ही वे 'मुक़ातिब' (स्वतंत्रता के अनुबंध वाले दास) हों।

108 | एक लेनदार अपने गरीब क़र्ज़दार को ज़क़ात देकर उसे क़र्ज़ की वसूली के तौर पर वापस ले सकता है; यदि वह वापस न दे तो उसे छीना जा सकता है। 109 | एक धनी व्यक्ति (ग़नी), उसकी नाबालिग संतान और उसके ग़ैर-मुक़ातिब दासों को ज़क़ात नहीं दी जा सकती।

108 | यदि रुपयों के बदले कुछ पैसे बचते हैं, तो 'जामे अस-सग़ीर' के अनुसार स्पष्ट रूप से दोनों पक्षों के पास होना ज़रूरी लगता है, लेकिन 'मबसूत' की रिवायत के अनुसार एक पक्ष का क़ब्ज़ा काफ़ी है। 109 | हाशिमी के आज़ाद किए गए गुलाम को ज़क़ात देना जायज़ नहीं है।

109 | कोई भी सदक़ा क़ब्ज़े के बिना पूरा नहीं होता। 109 | काफ़िर (ग़ैर-मुस्लिम) को ज़क़ात नहीं दे सकते।

109 | ज़क़ात के माल को अपने इस्तेमाल में लाने के लिए हीलों (बहानों) का सहारा लेना शरीयत के उद्देश्यों के ख़िलाफ़ है और मानो रब तआला को धोखा देना है। 109 | उन सोलह प्रकार के व्यक्तियों का विशेष रूप से उल्लेख जिन्हें ज़क़ात देना जायज़ है, जबकि उनके बारे में ना-जायज़ होने का भ्रम हो सकता था।

109 | मसला पंजुम (पाँचवाँ): ज़क़ात किन मदों में देना जायज़ है। 109 | जिसकी माँ हाशिमी हो और पिता ग़ैर-हाशिमी हो, क्या वह हाशिमी कहला सकता है!

109 | ज़क़ात के हक़दार (मस्रफ़) की परिभाषा। 109 | शरीयत में वंश पिता से चलता है।

109 | सोलह व्यक्तियों को ज़क़ात देना ना-जायज़ है, बाक़ी सबको देना जायज़ है। 109 | जो केवल माँ के सैयदानी होने से सैयद बन बैठे और उस पर ज़िद करे, वह हदीस के हुक्म से लानत का पात्र है।

109 | हाशिमी को ज़क़ात देना जायज़ नहीं। 110 | बुनियादी ज़रूरतों (हवाइज-ए-अस्लिया) से अधिक माल (निसाब) पर पहुँच न होने की कुछ सूरतें।

109 | पत्नी अपने पति को और पति अपनी पत्नी को ज़क़ात नहीं दे सकते, भले ही पति ने उसे 'तलाक़-ए-मुग़ल्लज़ह' दे दी हो, जब तक वह इद्दत (प्रतीक्षा अवधि) से बाहर न आ जाए। 110 | उपरोक्त निसाब (न्यूनतम संपत्ति) पर अधिकार रखने वाला व्यक्ति ज़क़ात नहीं ले सकता, चाहे वह ग़ाज़ी हो, हाजी हो या छात्र।

109 | अपनी संतान और संतान की संतान को ज़क़ात देना जायज़ नहीं। 110 | ज़क़ात वसूल करने वाला (आमिल) संपन्न होने की स्थिति में भी अपने काम के बराबर ज़क़ात से ले सकता है।

109 | अपने माता-पिता और उनके माता-पिता को ज़क़ात देना जायज़ नहीं। 110 | ज़क़ात देने में मालिक बनाना (तमलीक) शर्त है।

109 | अपने मूल (माता-पिता) और शाखाओं (संतान) को ज़क़ात देना ना-जायज़ है, भले ही ये रिश्ते ज़िना (अवैध संबंधों) के ज़रिए हों। 110 | मोहताजों को अपने दस्तरख़्वान पर बैठाकर खाना खिला देने (इबाहत), मृत के कफ़न-दफ़न में लगाने, या मस्जिद, कुआँ, ख़ानक़ाह, मदरसा, पुल और सराय आदि बनवाने से ज़क़ात अदा नहीं होगी।

112 | मुसाफ़िर अपनी ज़रूरत से ज़्यादा ज़क़ात नहीं ले सकता, जबकि फ़क़ीर अपनी ज़रूरत से ज़्यादा भी ले सकता है।

पृष्ठ १६ / ८३६

۱۰۸ | دائن جب اپنے دین کی جنس سے مال مدیون پائے تو اس کی رضامندی کے بغیر لے سکتا ہے۔ ۱۰۹ | اپنے اصول وفروع، شوہر اور بیوی کے مملوک کو زکوۃ دینا ناجائز اگرچہ مکاتب ہو۔

۱۰۸ | دائن اپنے مدیون فقیر کو زکوۃ دے کر دین کی وصولی کے طور پر واپس لے سکتا ہے، نہ دے تو چھین سکتا ہے۔ ۱۰۹ | غنی، اس کی نابالغ اولاد اور اس کے غیر مکاتب مملوک کو زکوۃ نہیں دے سکتے۔

۱۰۸ | اگر کچھ پیسے بعوض روپوں کے بچے تو جامع صغیر سے بظاہر تقابض بدلین کی شرط معلوم ہوتی ہے مگر روایت مبسوط پر ایک ہی جانب کا قبضہ کافی ہے۔ ۱۰۹ | ہاشمی کے آزاد کردہ غلام کو زکوۃ دینا جائز نہیں۔

۱۰۹ | کوئی صدقہ بے قبضہ تمام نہیں ہوتا۔ ۱۰۹ | کافر کو زکوۃ نہیں دے سکتے۔

۱۰۹ | مال زکوۃ کو اپنے خورد برد میں لانے کے لئے حیلوں کا سہارا لینا مقاصد شرع کے خلاف اور گویا رب تعالیٰ کو فریب دینا ہے۔ ۱۰۹ | ان سولہ اشخاص کا بطور خاص ذکر جنہیں زکوۃ دینا جائز ہے مگر عدم جواز کا وہم ہوسکتا تھا۔

۱۰۹ | مسئلہ خامسہ: زکوۃ کن مصارف میں دینا جائز ہے۔ ۱۰۹ | جس کی ماں ہاشمیہ اور باپ غیر ہاشمی ہو کیا وہ ہاشمی کہلاسکتا ہے!

۱۰۹ | مصرف زکوۃ کی تعریف۔ ۱۰۹ | شرع میں نسب باپ سے ہے۔

۱۰۹ | سولہ اشخاص کو زکوۃ دینا نا جائز ہے باقی سب کو دینا جائز ہے۔ ۱۰۹ | جو فقط ماں کے سیدانی ہونے سے سید بن بیٹھے اور اس پر اصرار کرے وہ بحکم حدیث مستحق لعنت ہے۔

۱۰۹ | ہاشمی کو زکوۃ دینا جائز نہیں۔ ۱۱۰ | حوائج اصلیہ سے فارغ نصاب پر دسترس نہ رکھنے کی چند صورتیں۔

۱۰۹ | عورت اپنے شوہر کو اور شوہر اپنی بیوی کو زکوۃ نہیں دے سکتے اگرچہ بیوی کو طلاق مغلظ دے دی ہو جب تک عدت سے باہر نہ آئے۔ ۱۱۰ | نصاب مذکور پر دسترس رکھنے والا زکوۃ نہیں لے سکتا، چاہے غازی ہو یا حاجی ہو یا طالب علم۔

۱۰۹ | اپنی اولاد اور اولاد کی اولاد کو زکوۃ دینا جائز نہیں۔ ۱۱۰ | عامل زکوۃ بحالت غنا بھی بقدر عمل زکوۃ لے سکتا ہے۔

۱۰۹ | اپنے والدین اور والدین کے والدین کو زکوۃ دینا جائز نہیں۔ ۱۱۰ | زکوۃ دینے میں تملیک شرط ہے۔

۱۰۹ | اپنی اصل وفروع کو زکوۃ دینا نا جائز اگرچہ یہ اصلی وفرعی رشتے بذریعہ زنا ہوں۔ ۱۱۰ | محتاجوں کو اپنے دسترخوان پر بٹھا کر بطور اباحت کھانا کھلا دینے، میت کے کفن ودفن میں لگانے یا مسجد، کنواں، خانقاہ، مدرسہ، پل اور سرائے وغیرہ بنوانے سے زکوۃ ادا نہ ہوگی۔

۱۱۲ | مسافر اپنی حاجت سے زائد زکوۃ نہیں لے سکتا جبکہ فقیر حاجت سے زائد بھی لے سکتا ہے۔

Fatawa Rizvia, Volume 10

113 | Sixth Problem: What is the Zakat on 68 tolas and 2 mashas of gold jewelry and 341 tolas of silver jewelry, and what is the code of conduct for future years? | 120 | An essential, highly beneficial rule that must be memorized. 113 | Description of some essential regulations regarding the obligation of Zakat for a person who owns both gold and silver wealth. | 123 | Explanation of the second regulation. 113 | When wealth reaches the known quorum (nisab) under specified conditions, it becomes the cause for the obligation of Zakat, and its ruling is independent. | 123 | Twenty-four (24) scenarios of the primary regulation. 113 | If gold and silver separately do not reach the quorum, but reach it when combined, they will be combined based on their valuation to form a quorum. | 124 | No mixture of gold and silver in the world can fall outside of 74 scenarios. 114 | Combining gold and silver with each other is only for the purpose of completing the quorum. | 125 | Ruling on the specific scenario asked. 115 | The purpose of combining silver and gold is to fulfill the obligation, not to change the obligation. | 126 | Seventh Problem: Whether Zakat given every year less than the required amount, because the correct amount was unknown, is counted as Zakat or not! 115 | For complete quorums of gold and silver, the ruling is not to combine them, but Zakat is obligatory on each separately. | 126 | Intention is necessary for paying Zakat; knowing the exact required amount is not among the conditions of validity. 115 | If the owner of both quorums wants to pay in a single Zakat payment, there is no harm in combining both by valuation, but such valuation is mandatory where the benefit to the poor is greater. | 126 | A person's debt ('dayn-e-abd') is among their essential needs. 116 | Non-quorum will be valued and combined with the quorum, not the quorum with the non-quorum. | 126 | What is meant by 'dayn-e-abd'? 117 | The mixture of gold and silver is limited to three states. | 126 | If after deducting the debt ('dayn-e-abd'), the quorum remains, Zakat will be obligatory on the remainder. If the quorum does not remain, Zakat will not be obligatory. 118 | Table of mixtures of gold and silver with reference to rulings. | 127 | A person has 240 dirhams of silver; 6 Sharia dirhams of Zakat are obligatory on him. If such a person keeps giving 5 dirhams every year, what will be the ruling! 118 | Explanation of the primary regulation. | 128 | Method of payment if Zakat has not been paid for several years. 118 | Twelve scenarios of the primary regulation and examples of all of them. | |

फतावा रिज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

११३ | छठा मसला: ६८ तोले २ माशे सोने के गहने और ३४१ तोले चांदी के गहने पर ज़कात कितनी होगी और भविष्य के वर्षों के लिए कार्य-प्रणाली क्या है? | १२० | एक आवश्यक, अत्यंत लाभकारी नियम जिसे याद रखना अनिवार्य है। ११३ | जो व्यक्ति सोने और चांदी दोनों प्रकार के धन का स्वामी हो, उस पर ज़कात की अनिवार्यता से संबंधित कुछ आवश्यक नियमों का वर्णन। | १२३ | द्वितीय नियम की व्याख्या। ११३ | जब धन ज्ञात शर्तों के साथ निसाब (न्यूनतम सीमा) तक पहुँच जाता है, तो स्वयं ज़कात की अनिवार्यता का कारण बन जाता है और इसका आदेश स्वतंत्र है। | १२३ | प्रथम नियम की चौबीस (२४) स्थितियां। ११३ | यदि सोना और चांदी अलग-अलग निसाब न बनाते हों, लेकिन मिलाने से निसाब बन जाते हों, तो दोनों को मूल्य के आधार पर मिलाकर निसाब माना जाएगा। | १२४ | दुनिया में सोने और चांदी का कोई भी मिश्रण ७४ स्थितियों से बाहर नहीं हो सकता। ११४ | सोने और चांदी को आपस में मिलाना केवल निसाब को पूरा करने के उद्देश्य से होता है। | १२५ | पूछे गए विशिष्ट मामले का आदेश। ११५ | चांदी और सोने को मिलाने का उद्देश्य दायित्व को पूरा करना है, दायित्व को बदलना नहीं। | १२६ | सातवां मसला: सही ज़कात की मात्रा न पता होने के कारण हर साल अनिवार्य मात्रा से कम जो ज़कात दी गई है, वह ज़कात मानी जाएगी या नहीं! ११५ | सोने और चांदी के पूर्ण निसाबों में मिलाने का नियम नहीं है, बल्कि दोनों पर अलग-अलग ज़कात अनिवार्य होगी। | १२६ | ज़कात की अदायगी में नीयत (इरादा) ज़रूरी है; अनिवार्य मात्रा का सही ज्ञान होना स्वास्थ्य (वैधता) की शर्तों में से नहीं है। ११५ | यदि दोनों निसाबों का स्वामी चाहता है कि वह एक ही बार में ज़कात दे, तो मूल्य लगाकर दोनों को मिलाने में कोई हर्ज नहीं है, लेकिन ऐसी मूल्यांकन पद्धति अनिवार्य है जिसमें गरीबों का लाभ अधिक हो। | १२६ | मनुष्य का ऋण (दैन-ए-अब्द) उसकी मूलभूत आवश्यकताओं में से है। ११६ | गैर-निसाब को मूल्यवान बनाकर निसाब के साथ मिलाया जाएगा, न कि निसाब को गैर-निसाब के साथ। | १२६ | 'दैन-ए-अब्द' से क्या तात्पर्य है! ११७ | सोने और चांदी का मिश्रण तीन स्थितियों तक सीमित है। | १२६ | दैन-ए-अब्द घटाने के बाद यदि निसाब बाकी रहता है, तो बाकी पर ज़कात अनिवार्य होगी। यदि निसाब बाकी नहीं रहता, तो ज़कात अनिवार्य नहीं होगी। ११८ | सोने और चांदी के मिश्रण की तालिका और संबंधित आदेशों के संकेत। | १२७ | जिस व्यक्ति के पास २४० दिरहम चांदी है, उस पर ६ शरिया दिरहम ज़कात अनिवार्य है। यदि ऐसा व्यक्ति हर साल ५ दिरहम देता रहा, तो क्या आदेश होगा! ११८

| प्रथम नियम की व्याख्या। | १२८ | यदि कई वर्षों की ज़कात अदा न की हो, तो अदायगी का तरीका। ११८ | प्रथम नियम की बारह स्थितियां और उन सभी के उदाहरण। | |

पृष्ठ ८३६ का १७

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

۱۱۳ | مسئلہ سادسہ: اڑسٹھ تولے دوماشے طلائی زیور اور تین سو اکتالیس تولے نقرئی زیور پر زکوٰۃ کتنی ہوگی اور آئندہ ہر سال کے لیے دستور العمل کیا ہے۔ | ۱۲۰ | ضروری قاعدہ عظیم الفائدہ واجب الحفظ ۱۱۳ | جو شخص سونے اور چاندی دونوں مالوں کا مالک ہو اس پر وجوب زکوٰۃ سے متعلق بعض ضوابط ضرور یہ کا بیان۔ | ۱۲۳ | شرح ضابطہ ثانیہ۔ ۱۱۳ | مال جب بشرائط معلومہ نصاب کو پہنچے تو بنفسہ وجوب زکوٰۃ کا سبب اور ایراٹ حکم میں مستقل ہے۔ | ۱۲۳ | ضابطہ اولیٰ کی چوبیس ۲۴ صورتیں۔ ۱۱۳ | اگر سونا اور چاندی الگ الگ نصاب نہ بنتے ہوں اور ملانے سے نصاب بن جاتے ہوں دونوں کو بطور تقویم ملا کر نصاب بنایا جائے گا۔ | ۱۲۴ | عالم میں کوئی اختلاط زر و سیم ۷۴ صورتوں سے خارج نہیں ہوسکتا۔ ۱۱۴ | سونے اور چاندی کو آپس میں ملانا صرف بغرض تکمیل نصاب ہوتا ہے۔ | ۱۲۵ | صورت جزئیہ مسئول عنہا کا حکم۔ ۱۱۵ | ضم سیم و زر سے مقصود تحصیل واجب ہے نہ کہ تبدیل واجب۔ | ۱۲۶ | مسئلہ سابعہ: صحیح تعداد زکوٰۃ نہ معلوم ہونے کی وجہ سے جو ہر سال مقدار واجب سے کم زکوٰۃ میں دیا گیا ہے وہ محسوب زکوٰۃ ہوا یا نہیں ! ۱۱۵ | ذہب وفضہ کے کامل نصابوں میں حکم ضم نہیں بلکہ دونوں پر جدا زکوٰۃ واجب ہوگی۔ | ۱۲۶ | ادائے زکوٰۃ میں نیت ضروری ہے مقدار واجب صحیح معلوم ہونا شرائط صحت سے نہیں۔ ۱۱۵ | دونوں نصابوں کا مالک اگر چاہتا ہے کہ ایک ہی زکوٰۃ میں دوں تو قیمت لگا کر دونوں کو ضم کر لینے میں مضائقہ نہیں مگر ایسی تقویم واجب ہے جس میں فقراء کا نفع زائد ہو۔ | ۱۲۶ | دین عبد انسان کے حوائج اصلیہ سے ہے۔ ۱۱۶ | غیر نصاب کو نصاب سے تقویم کر کے ملائیں گے نہ کہ نصاب کو غیر نصاب سے۔ | ۱۲۶ | دین عبد سے کیا مراد ہے ! ۱۱۷ | اختلاط زر و سیم تین حال میں منحصر ہے۔ | ۱۲۶ | دین عبد

منہا کر کے اگر نصاب باقی رہتا ہے تو باقی پر زکوٰۃ واجب ہوگی اگر نصاب باقی نہیں رہتا تو زکوٰۃ واجب نہ ہوگی۔ ۱۱۸ | جدول اختلاط زر و سیم مع اشارہ احکام۔ | ۱۲۷ | جس شخص کے پاس دو سو چالیس درہم چاندی ہے اس پر چھ ۶ درہم شرعی زکوٰۃ واجب ہے ایسا شخص اگر ہر سال پانچ درہم دیتا گیا تو کیا حکم ہوگا ! ۱۱۸ | شرح ضابطہ اولیٰ۔ | ۱۲۸ | چند سال کی زکوٰۃ ادا نہ کی ہو تو ادائیگی کا طریقہ۔ ۱۱۸ | ضابطہ اولیٰ کی بارہ صورتیں اور ان سب کی مثالیں۔ | |

Fatawa Razawiya - Volume 10

Page	Subject
143	Nisab of Zakat.
143	Paying Zakat for several years.
143	Zakat of a woman who possesses Nisab is her own responsibility; Zakat for jewelry given to her for wearing is on the husband.
144	How will Zakat be paid if the wealth is in the form of trade goods, cash, or loans.
144	Where is the market rate reliable!
144	Zakat on pledged jewelry is neither on the pledgor nor on the pledgee.
144	Nisab for gold, silver, and rupees.
144	Question regarding different types of Zakat.
144	The market rate at the end of the year for gold and silver is what counts.
145	Zakat is two and a half rupees per hundred.
145	On what things is Zakat due.
145	Zakat for another person will not be fulfilled without their permission,
129	A woman's dowry (mahr) is not a hindrance to Zakat.
130	Zakat on jewelry given to women is the responsibility of the husband.
132	Zakat is also due on wealth added after the completion of Nisab.
133	Zakat is due on money kept for spending at weddings.
133	No Zakat on a minor.
134	Ruling on currency notes and rupees.
134	Zakat on Nisab and one-fifth of Nisab.
136	Zakat is two and a half rupees per hundred.
139	If wealth does not fall below Nisab, Zakat will be obligatory every year.
139	Zakat on jewelry gifted to minor girls is neither on the father nor on the girls.
139	No Zakat on jewelry owned by minor girls, nor on pledged jewelry.
139	At how many rupees does a person become 'Sahib-e-Nisab'

Page	Subject
	whether a father pays for his son or a son for his father.
145	The market rate at the end of the year is reliable in Zakat calculation.
145	Zakat, Qurbani, and Sadaqah al-Fitr will be obligatory on money saved for Hajj.
153	Rule for calculating Zakat if it has been pending for several years.
154	Zakat is obligatory on money kept in banks, post offices, or as a trust.
	Ruling on Post Office Promissory Notes.
139	(possessor of the required minimum wealth).
	Wealth added until the end of the year will be included in Zakat calculation.
140	Money held in trust or as a loan will be included in the Nisab calculation.
140	If a woman had jewelry for three years and did not pay Zakat...
141	As long as wealth does not fall below Nisab, Zakat will be obligatory every year.
142	

फ़तावा रज़विया - जिल्द १०

पृष्ठ	विषय
१४३	ज़कात का निसाब।
१४३	कई वर्षों की ज़कात अदा करना।
१४३	साहिबे निसाब औरत की ज़कात औरत के ज़िम्मे है, जो ज़ेवरात औरत को पहनने के लिए दिए गए उनकी ज़कात शौहर पर है।
१४४	माल-ए-तिजारत, नकद, माल-ए-कर्ज़ की सूरत में हो तो ज़कात कैसे अदा होगी।
१४४	बाज़ार का भाव कहाँ विश्वसनीय है!
१४४	गिरवी रखे ज़ेवरों की ज़कात न गिरवी रखने वाले पर और न गिरवी रखने वाले पर।
१४४	सोने, चाँदी और रुपये का निसाब।
१४४	विभिन्न प्रकार की ज़कात से संबंधित प्रश्न।
१४४	सोने-चाँदी में साल पूरा होने पर जो भाव हो उसी का एतबार है।
१४५	प्रति सौ ढाई रुपया ज़कात है।
१४५	ज़कात किन चीज़ों पर है।
१२१	औरत का महर ज़कात में बाधक नहीं है।
१३०	औरतों को दिए गए ज़ेवरों की ज़कात शौहर पर है।
१३२	निसाब पूरा होने के बाद बढ़े हुए माल पर भी ज़कात है।
१३३	शादियों में खर्च करने के लिए रखे हुए रुपयों पर ज़कात है।
१३३	नाबालिग पर ज़कात नहीं।
१३४	नोट और रुपयों का हुक्म।
१३४	निसाब और निसाब के पाँचवें हिस्से पर ज़कात।
१३६	प्रति सौ ढाई रुपया ज़कात।
१३९	माल निसाब से कम न हो जाए तो ज़कात हर साल वाजिब होगी।
१३९	नाबालिग लड़कियों को तोहफे में मिले ज़ेवरों की ज़कात न बाप पर है न लड़कियों पर।
१३९	नाबालिग लड़कियों के स्वामित्व वाले ज़ेवरों पर ज़कात नहीं, न ही गिरवी रखे ज़ेवरों पर।

पृष्ठ	विषय
१४५	बिना अनुमति दूसरे की ज़कात अदा नहीं होगी, चाहे बाप बेटे की या बेटा बाप की अदा करे।
१४५	ज़कात में साल पूरा होने का भाव विश्वसनीय है।
१४५	हज के लिए बचाए गए माल पर ज़कात, कुर्बानी और सदक़ा-ए-फ़ित्र वाजिब होंगे।
१५३	कई साल की ज़कात बाकी हो तो उनकी ज़कात मालूम करने का नियम।
१५४	बैंक, डाकखाने या अमानत में रुपये हों तो उन पर ज़कात वाजिब है।
	डाकखाने के प्रॉमिसरी नोटों का हुक्म।
१३९	कितने रुपये पर आदमी साहिबे निसाब (निसाब का मालिक) होगा।
१३९	साल पूरा होने तक बढ़ा हुआ माल ज़कात में शामिल होगा।
१४०	अमानत और कर्ज़ के रुपये निसाब में गिने जाएंगे।
१४०	तीन साल तक औरत के पास ज़ेवरात थे और ज़कात अदा नहीं की...
१४१	निसाब से कम माल न हो जाए, हर साल ज़कात वाजिब होगी।
१४२	

पृष्ठ १८ का ८३९

صفحہ	مسئلہ	صفحہ	مسئلہ
۱۴۳	زکوٰۃ کے نصاب۔	۱۲۹	عورت کا مہر مانع زکوٰۃ نہیں۔
۱۴۳	چند سال کی زکوٰۃ ادا کرنا۔	۱۳۰	عورتوں کو دیئے ہوئے زیوروں کی زکوٰۃ شوہر پر ہے۔
۱۴۳	صاحب نصاب عورت کی زکوٰۃ عورت کے ذمہ ہے، جو زیورات عورت کو پہننے کے لیے دئے گئے ان کی زکوٰۃ شوہر پر ہے۔	۱۳۲	کمال نصاب کے بعد اضافہ شدہ مال پر بھی زکوٰۃ ہے۔
۱۴۴	مال تجارت، نقد، مال قرض کی صورت میں ہو تو زکوٰۃ کیسے ادا ہو گی۔	۱۳۳	شادیوں میں خرچ کرنے کے لیے رکھے ہوئے روپوں پر زکوٰۃ ہے۔
۱۴۴	بازار کا نرخ کہاں معتبر ہے!	۱۳۳	نابالغ پر زکوٰۃ نہیں۔
۱۴۴	مرہون زیوروں کی زکوٰۃ نہ راہن پر نہ مرتہن پر۔	۱۳۴	نوٹ اور روپوں کا حکم۔
۱۴۴	سونے چاندی اور روپے کے نصاب۔	۱۳۴	نصاب وخمس نصاب پر زکوٰۃ۔
۱۴۴	مختلف قسم کی زکوٰۃ سے متعلق سوال۔	۱۳۶	فی سیکڑہ ڈھائی روپیہ زکوٰۃ۔
۱۴۴	سونے چاندی میں سال تمام ہونے پر جو بھاؤ ہو اس کا اعتبار ہے۔	۱۳۹	مال نصاب سے کم نہ ہو جائے زکوٰۃ تو ہر سال واجب ہو گی۔

مسئلہ	صفحہ	مسئلہ	صفحہ
نابالغ لڑکیوں کو ہبہ شدہ زیوروں کی زکوٰۃ نہ باپ پر نہ لڑکیوں پر۔	۱۳۹	فی سیکڑہ ڈھائی روپیہ زکوٰۃ ہے۔	۱۴۵
نابالغ لڑکیوں کے مملوکہ زیوروں پر زکوٰۃ نہیں، نہ مرہون زیوروں پر۔	۱۳۹	زکوٰۃ کن چیزوں پر ہے۔	۱۴۵
کتنے روپیہ پر آدمی صاحب نصاب ہو گا۔	۱۳۹	بغیر اجازت دوسرے کی زکوٰۃ ادا نہ ہو گی چاہے باپ بیٹے کی یا بیٹا باپ کی ادا کرے۔	۱۴۵
سال تمام تک اضافہ شدہ مال زکوٰۃ میں شامل ہو گا۔	۱۳۹	زکوٰۃ میں سال تمام کا نرخ معتبر ہے۔	۱۴۵
امانت اور قرض کے روپے نصاب میں شمار ہوں گے۔	۱۴۰	حج کے لئے پس انداز مال پر زکوٰۃ قربانی اور صدقہ فطر واجب ہوں گے۔	۱۴۵
تین سال تک عورت کے پاس زیورات تھے اور زکوٰۃ ادا نہ کی-----	۱۴۰	چند سال کی زکوٰۃ باقی ہو تو ان کی زکوٰۃ معلوم کرنے کا قاعدہ۔	۱۵۳
نصاب سے کم مال نہ ہو جائے ہر سال زکوٰۃ واجب ہو گی۔	۱۴۱	بینک، ڈاک خانہ یا امانت میں روپیہ ہوں تو ان پر زکوٰۃ واجب ہے۔	۱۵۴
	۱۴۲	ڈاک خانہ کے پرامیسری نوٹوں کا حکم۔	

Fatawa Razawiyya | Volume 10

Index of Subjects

(Right Column Topics) 154 | Nisab (minimum amount for zakat) of gold, silver, and money. 155 | Zakat will be obligatory on trade goods every year. 156 | If someone vowed to give a portion of profits in charity and spent more, the excess will not be counted as zakat. 156 | Zakat is due on both the principal and the profit of trade goods. 156 | In zakat, lunar months are considered, not English/Solar months. 157 | Ruling of zakat in Piroz and funds. 158 | Giving zakat openly and secretly. 158 | Zakat will be on the entire trade goods, not just the profit. 158 | Whether a proxy for paying zakat can spend the money for his own needs or not. 159 | Zakat money cannot be invested in trade. 160 | If a residential house is worth thousands or brings in thousands in rent, but is not more than one's needs, he can accept zakat. 161 | No zakat on house and household items. 161 | Statement about zakat wealth: If the amount of zakat is set aside with the intention of zakat, then there is no need for intention at the time of giving it to the poor. 161 | If the amount given is still with the poor person, making the intention at that time will also be sufficient.

(Left Column Topics) 162 | Types and rulings of religion. 166 | Zakat on money that is loaned or has been usurped by someone. 167 | Zakat on loaned money. 168 | If a husband is in debt, his wife will not be considered a debtor. 168 | If a woman possesses the nisab, zakat will be obligatory on her. 168 | If a woman gives money to her husband to pay off a debt, will it be a debt on the husband or not? 169 | When zakat is due on a woman's dower (mahr). 171 | Treatise 'I'zaz al-Iktinah fi Radd Sadaqah Mani' al-Zakat' (If a person possessing the nisab does not pay zakat but gives other charities and offerings, or has obligatory duties to fulfill but performs voluntary acts, then these will not be accepted). 172 | Zakat is one of the greatest obligations of religion and most important pillars of Islam. 172 | Zakat is mentioned alongside prayer in thirty-two places in the Holy Quran. 172 | Paying zakat increases wealth, just as a tree grows by pruning rotten and excess parts. 172 | Giving zakat brings blessings to wealth and not giving it leads to destruction; mention of four hadiths on this. 172 | First Hadith: The wealth of zakat, when mixed with other wealth, will destroy it. 172 | Second Hadith: Whatever wealth is lost on land or sea is due to not paying zakat.

Page 19 of 836

फ़तावा रज़विया | जिल्द दहम (दसवीं)

विषय सूची

(दाईं ओर के विषय) 154 | सोने, चाँदी, रुपये का निसाब। 155 | व्यापारिक माल पर हर साल ज़कात अनिवार्य (वाजिब) होगी। 156 | मुनाफ़े के किसी हिस्से को दान करने की किसी ने मन्नत मानी और अतिरिक्त खर्च कर दिया तो अतिरिक्त ज़कात में नहीं गिना जाएगा। 156 | व्यापारिक माल के मूल और मुनाफ़े दोनों पर ज़कात है। 156 | ज़कात में चांद्र महीनों (हिजरी) का विचार किया जाता है, अंग्रेजी महीनों का नहीं। 157 | पिरोज़ और फंड में ज़कात का हुक्म। 158 | ज़ाहिर और गुप्त रूप से ज़कात देना। 158 | पूरे व्यापारिक माल पर ज़कात होगी, केवल मुनाफ़े पर नहीं। 158 | ज़कात अदा करने का वकील (प्रतिनिधि) अपने उपयोग में रुपया खर्च कर सकता है या नहीं। 159 | ज़कात के रुपये व्यापार में नहीं लगाए जा सकते। 160 | रिहायशी मकान चाहे हज़ारों रुपये का हो या हज़ारों रुपये किराया आता हो, मगर ज़रूरत से ज़्यादा न हो तो वह ज़कात ले सकता है। 161 | मकान और घरेलू सामान पर ज़कात नहीं। 161 | ज़कात वाले माल का विवरण, यदि ज़कात की राशि ज़कात की नियत से अलग कर दी जाए, तो फ़कीर को देते समय नियत की आवश्यकता नहीं। 161 | फ़कीर के पास दी हुई राशि मौजूद हो तो उस समय भी नियत कर लेना काफी होगा।

(बाईं ओर के विषय) 162 | धर्म के प्रकार और नियम (अहकाम)। 166 | रुपया ऋण (कर्ज़) में हो या किसी ने हड़प लिया हो, उनकी ज़कात। 167 | ऋण (कर्ज़) के रुपये पर ज़कात। 168 | यदि पति ऋणी हो तो उसकी पत्नी को ऋणी नहीं माना जाएगा। 168 | यदि महिला निसाब की मालिक हो तो उस पर ज़कात अनिवार्य (वाजिब) होगी। 168 | महिला ऋण चुकाने के लिए पति को रुपया दे तो वह पति पर ऋण होगा या नहीं। 169 | महिला पर मेहर की ज़कात कब है। 171 | रिसाला 'एज़ाजुल इक्तिनाह फ़ी रद्दे सदक़ह मानिएज़्ज़कात' (निसाब का मालिक ज़कात अदा न करे और अन्य दान-पुण्य करे या अनिवार्य कर्तव्य शेष हों और नफ़्ल अदा करे तो यह स्वीकार्य नहीं)। 172 | ज़कात धर्म के महानतम कर्तव्यों और इस्लाम के महत्वपूर्ण स्तंभों में से है। 172 | कुरान मजीद में बत्तीस स्थानों पर नमाज़ के साथ ज़कात का उल्लेख किया गया है। 172 | ज़कात देने से धन बढ़ता है जैसे सड़ी-गली और अतिरिक्त शाखाओं को काटने से पेड़ बढ़ता है। 172 | ज़कात देने से धन में बरकत और न देने से तबाही होती है, इस पर चार हदीसों का उल्लेख। 172 | पहली हदीस: ज़कात का धन जिस धन में मिला होगा उसे तबाह और बर्बाद कर देगा। 172 | दूसरी हदीस: ज़मीन और समुद्र में जो धन नष्ट होता है वह ज़कात न देने के कारण होता है।

فتاویٰ رضویہ | جلد دہم

فہرست عنوانات

(دائیں کالم کے عنوانات) ۱۵۴ | سونے، چاندی، روپیہ کا نصاب۔ ۱۵۵ | مال تجارت پر ہر سال زکوۃ واجب ہو گی۔ ۱۵۶ | منافع کے جزءِ حصہ کی خیرات کرنے کی کسی نے منت مانی اور زائد خرچ کر دیا تو زائد زکوۃ میں شمار نہ ہو گا۔ ۱۵۶ | مال تجارت کے اصل اور منافع دونوں پر زکوۃ ہے۔ ۱۵۶ | زکوۃ میں قمری مہینوں کا اعتبار ہے انگریزی مہینوں کا نہیں۔ ۱۵۷ | پیروز و فنڈ میں زکوۃ کا حکم۔ ۱۵۸ | ظاہر اور پوشیدہ طور پر زکوۃ دینا۔ ۱۵۸ | پورے مال تجارت پر زکوۃ ہو گی صرف منافع پر نہیں۔ ۱۵۸ | زکوۃ ادا کرنے کا وکیل اپنے مصرف میں روپیہ خرچ کر سکتا ہے یا نہیں۔ ۱۵۹ | زکوۃ کے روپے تجارت میں نہیں لگ سکتے ہیں۔ ۱۶۰ | مسکونہ مکان ہزاروں روپیہ کا ہو یا کرایہ کے ہزاروں روپے آتے ہوں مگر ضرورت سے زائد نہ ہوں وہ زکوۃ لے سکتا ہے۔ ۱۶۱ | مکان اور اسباب خانہ داری پر زکوۃ نہیں۔ ۱۶۱ | زکوۃ والے مال کا بیان، بہ نیت زکوۃ مقدار زکوۃ الگ کر دی جائے تو فقیر کو دیتے وقت نیت کی ضرورت نہیں۔ ۱۶۱ | فقیر کے پاس دی ہوئی رقم موجود ہو تو اس وقت بھی نیت کر لینا کافی ہو گا۔

(بائیں کالم کے عنوانات) ۱۶۲ | دین کے اقسام اور احکام۔ ۱۶۶ | روپے قرض میں ہوں یا کسی نے غصب کر لیے ہوں ان کی زکوٰۃ۔ ۱۶۷ | قرض کے روپیہ پر زکوٰۃ۔ ۱۶۸ | شوہر مقروض ہو تو اس کی عورت کو مقروض قرار نہیں دیا جائے گا۔ ۱۶۸ | عورت صاحب نصاب ہو تو اس پر زکوٰۃ واجب ہو گی۔ ۱۶۸ | عورت قرض ادا کرنے کے لیے شوہر کو روپیہ دے تو شوہر پر قرض ہو گا یا نہیں۔ ۱۶۹ | عورت پر مہر کی زکوٰۃ کب ہے۔ ۱۷۱ | رسالہ اعزاز الکتناہ فی ردّ صدقۃ مانع الزکوۃ (صاحب نصاب زکوۃ ادا نہ کرے اور دیگر صدقات و خیرات کرے یا ذمہ میں فرائض

ہوں اور نوافل ادا کرے تو یہ مقبول نہیں) ۱۷۲ | زکوۃ اعظم فروضِ دین واہم ارکان اسلام سے ہے۔ ۱۷۲ | قرآن مجید میں بتیس جگہ نماز کے ساتھ زکوۃ کا ذکر فرمایا گیا۔ ۱۷۲ | زکوۃ ادا کرنے سے مال بڑھتا ہے جیسے اجزائے فاسدہ زائدہ کے کاٹنے سے درخت بڑھتا ہے۔ ۱۷۲ | زکوۃ دینے سے مال میں برکت اور نہ دینے سے بربادی ہوتی ہے اس پر چار احادیث کا ذکر۔ ۱۷۲ | پہلی حدیث: زکوۃ کا مال جس مال میں ملا ہو گا اسے تباہ و برباد کرے گا۔ ۱۷۲ | دوسری حدیث: خشکی اور تری میں جو مال تلف ہوتا ہے وہ زکوۃ نہ دینے کی وجہ سے ہوتا ہے۔

Fatawa Razvia - Volume 10

176: Third Hadith: Whoever pays the Zakat of his wealth, Allah the Almighty removes evil from his wealth. | 172: No optional (Nafl) act is accepted until the mandatory (Farz) is fulfilled.

176: Fourth Hadith: Secure your wealth by paying Zakat and treat your sick with charity. | 173: Some heart-wrenching examples from the noble book "Futuh al-Ghayb" of Hazrat Ghaus-e-Azam (may Allah be pleased with him).

173: Those who do not pay Zakat are even worse than that rustic farmer who sows wheat seeds in the ground to obtain more grain. | 173: Of the four mandatory pillars of Islam—Prayer, Zakat, Fasting in Ramadan, and Hajj—if one performs three, they will be of no avail until all four are fulfilled.

173: Eighteen (18) Hadiths regarding the calamities of non-payment of Zakat. | 173: The charity given, the mosque built, or the village endowed by a person who does not pay Zakat might be legally valid and binding, but there is no hope of reward or acceptance for them until Zakat is fully paid.

178: No one can endure the agonizing calamities of not giving Zakat. | 178: Charity once given cannot be taken back from the poor person.

178: What is the strength of a weak human? If the calamities of not giving Zakat were cast upon mountains, they would turn to dust. | 178: An endowment (Waqf), once completed, becomes mandatory and final; there is no authority to revoke it whatsoever.

178: The greatest fool is the person who spends his wealth on superficial, false charity and lets the debt of Allah Almighty remain on his neck. | 178: Inheritance does not apply to an endowment (Waqf).

178: It is a great deception of Satan that he ruins a person under the guise of virtue. | 178: A prayer offered for show (Riya) might be technically valid, and the obligation may be lifted, but it will not be accepted nor will it earn reward; instead, the person will be a sinner because a deed being valid is one thing, and being accepted is another.

178: Optional (Nafl) acts without mandatory (Farz) ones are a total deception; there is no hope of their acceptance, and the punishment for abandoning the mandatory

remains on the neck. | 178: Allah Almighty desires the well-being of His servant and his release from severe punishment.

178: Mandatory (Farz) is like a special royal debt, and Optional (Nafl) is like a gift or offering. | 178: A virtuous strategy to get endowments, mosques, and charities etc. accepted without paying Zakat.

179: The will of Hazrat Syedna Siddiq-e-Akbar (may Allah be pleased with him) at the time of his death to Hazrat Syedna Farooq-e-Azam (may Allah be pleased with him). | 179: What should be done if the exact calculation of Zakat is not known due to the passage of a long time?

फ़तावा-ए-रज़विया - जिल्द दहुम (खंड 10)

१७६: तीसरी हदीस: जिसने अपने माल की ज़कात अदा कर दी, अल्लाह तआला ने उसके माल से बुराई को दूर कर दिया। | १७२: कोई नफ़्ल क़बूल नहीं होता जब तक फर्ज़ अदा न कर लिया जाए।

१७६: चौथी हदीस: ज़कात देकर अपने मालों को मज़बूत क़िलों में कर लो और ख़ैरात से अपने बीमारों का इलाज करो। | १७३: हज़रत ग़ौस-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) की मुबारक किताब "फ़ुतुह अल-ग़ैब" से चंद दिल दहला देने वाली मिसालें।

१७३: ज़कात अदा न करने वाले उस गंवार किसान से भी गुज़र गए जो ज़्यादा अनाज हासिल करने के लिए गेहूं का बीज ज़मीन में डाल देता है। | १७३: इस्लाम के चार फ़राइज़ - नमाज़, ज़कात, रमज़ान के रोज़े और हज में से अगर तीन अदा करे, तो वे उसे कुछ काम न देंगे जब तक चारों को पूरा न कर ले।

१७३: ज़कात की अदायगी न करने की आफ़तों से मुताल्लिक अठारह (१८) हदीसें। | १७३: ज़कात न देने वाले शख्स ने जो ख़ैरात की, मस्जिद बनवाई और गाँव वक़्फ़ किया, ये सब उमूर सही और लाज़िम तो हो गए मगर जब तक ज़कात पूरी तरह अदा न करे उन पर सवाब और क़बूलियत की उम्मीद नहीं।

१७८: ज़कात न देने की दर्दनाक आफ़तों की कोई ताब नहीं ला सकता। | १७८: दी हुई ख़ैरात फ़क़ीर से वापस नहीं ली जा सकती।

१७८: कमज़ोर इंसान की क्या बिसात, अगर ज़कात न देने की आफ़तें पहाड़ों पर डाली जाएं तो ख़ाक में मिल जाएं। | १७८: वक़्फ़ पूरा होने के बाद लाज़िम और मुकम्मल हो जाता है, इसे रद्द करने का कोई अधिकार नहीं रहता।

१७८: सबसे बड़ा बेवकूफ वह शख्स है जो अपना माल झूठी, नाम की ख़ैरात में खर्च करे और अल्लाह तआला का क़र्ज़ अपनी गर्दन पर रहने दे। | १७८: वक़्फ़ में विरासत जारी नहीं होती।

१७८: शैतान का यह बड़ा धोखा है कि आदमी को नेकी के पर्दे में हलाक करता है। | १७८: दिखावे के लिए पढ़ी हुई नमाज़ सही तो हो गई, फर्ज़ उतर गया मगर क़बूल न होगी, न सवाब मिलेगा बल्कि गुनहगार होगा क्योंकि किसी अमल का सही होना अलग बात है और मक़बूल होना अलग।

१७८: फर्ज़ के बिना नफ़्ल कोरा धोखा है; इसके क़बूल होने की उम्मीद तो नहीं है, और फर्ज़ छोड़ने का अज़ाब गर्दन पर मौजूद रहता है। | १७८: अल्लाह तआला को बंदे की भलाई और सख्त अज़ाब से उसकी रिहाई मंज़ूर है।

१७८: फर्ज़ खास शाही क़र्ज़ है और नफ़्ल जैसे तोहफा और नज़राना। | १७८: ज़कात अदा किए बिना वक़्फ़, मस्जिद और ख़ैरात वगैरह क़बूल कराने की एक नेक तदबीर।

१७९: हज़रत सैयदना सिद्दीक़-ए-अकबर (रज़ियल्लाहु अन्हु) की वफ़ात के वक़्त हज़रत सैयदना फ़ारूक़-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) को वसीयत। | १७९: मुद्दत दराज़ गुज़रने के कारण अगर ज़कात का हक़ीक़ी हिसाब मालूम न हो तो क्या करना चाहिए।

فتاویٰ رضویہ - جلد دہم

۱۷۶: تیسری حدیث: جس نے اپنے مال کی زکوۃ ادا کردی اللہ تعالیٰ نے اس کے مال سے شر کو دور کر دیا۔ | ۱۷۲: کوئی نفل قبول نہیں ہوتا جب تک فرض ادا نہ کر لیا جائے۔

۱۷۶: چوتھی حدیث: زکوۃ دے کر اپنے مالوں کو مضبوط قلعوں میں کر لو اور خیرات سے اپنے بیماروں کا علاج کرو۔ | ۱۷۳: سیدنا غوث اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کی کتاب مستطاب فتوح الغیب شریف سے چند جگر شگاف مثالیں۔

۱۷۳: زکوۃ ادا نہ کرنے والے اس گنوار کسان سے بھی گزر گئے جو زیادہ غلے کے حصول کے لیے تخم گندم کو زمین میں ڈال دیتا ہے۔ | ۱۷۳: اسلام کے فرائض اربعہ نماز، زکوۃ، روزہ رمضان اور حج میں سے اگر تین ادا کرے اسے کچھ کام نہ دیں گے جب تک چاروں کو نہ بجالائے۔

۱۷۳: عدم ادائیگی زکوۃ کی آفات سے متعلق اٹھارہ (۱۸) حدیثیں۔ | ۱۷۳: زکوۃ نہ دینے والے شخص نے جو خیرات کی، مسجد بنوائی اور گاؤں وقف کیا، یہ سب امور صحیح و لازم تو ہو گئے مگر جب تک زکوۃ پوری پوری ادا نہ کرے ان پر اُمید ثواب و قبول نہیں۔

۱۷۸: زکوۃ نہ دینے کی جانکاہ آفتوں کی کوئی تاب نہیں لاسکتا۔ | ۱۷۸: دی ہوئی خیرات فقیر سے واپس نہیں لے سکتا۔

۱۷۸: ضعیف البنیان انسان کی کیا جان زکوۃ نہ دینے کی آفتیں اگر پہاڑوں پر ڈالی جائیں تو خاک میں مل جائیں۔ | ۱۷۸: وقف بعد تمام لازم و حتمی ہو جاتا ہے اس کے ابطال کا ہرگز اختیار نہیں رہتا۔

۱۷۸: سب سے بڑا احمق وہ شخص ہے جو اپنا مال جھوٹے سچے نام کی خیرات میں صرف کرے اور اللہ تعالیٰ کا قرض اپنی گردن پر رہنے دے۔ | ۱۷۸: وقف میں میراث جاری نہیں ہوتی۔

۱۷۸: شیطان کا یہ بڑا دھوکا ہے کہ آدمی کو نیکی کے پردے میں ہلاک کرتا ہے۔ | ۱۷۸: دکھاوے کے لیے پڑھی ہوئی نماز صحیح تو ہوگئی، فرض اتر گیا مگر قبول نہ ہو گی نہ ثواب پائے گا بلکہ گنہگار ہوگا کیونکہ کسی فعل کا صحیح ہونا اور بات ہے اور مقبول ہونا اور بات۔

۱۷۸: نفل بے فرض نرے دھوکے کی ٹٹی ہے اس کے قبول کی اُمید تو مفقود، اور اس کے ترک کا عذاب گردن پر موجود۔ | ۱۷۸: اللہ تعالیٰ کو بندے کی بھلائی اور عذاب شدید سے اس کی رہائی منظور ہے۔

۱۷۸: فرض خاص سلطانی قرض ہے اور نفل گویا تحفہ و نذرانہ۔ | ۱۷۸: زکوۃ ادا کئے بغیر وقف، مسجد اور خیرات وغیرہ قبول کرانے کی ایک نیک تدبیر۔

۱۷۹: حضرت سیدنا صدیق اکبر رضی اللہ تعالیٰ عنہ کی بوقت وفات سیدنا حضرت فاروق اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو وصیت۔ | ۱۷۹: مدت دراز گزرنے کے باعث اگر زکوۃ کا تحقیقی حساب معلوم نہ ہو تو کیا کرنا چاہئے۔

Volume 10 Fatawa Ridawiyya

| 196 | The truth is that the statement of Imam Abu Yusuf is not for people to avoid Zakat, but rather it is based on times of necessity and need. | 194 | The author's (mercy of Allah upon him) polemical critique of the critics of Imam Abu Yusuf. | | 187 | A legal stratagem (hila) is permissible to avoid sin, not for falling into sin. | 194 | A Mujtahid receives a reward even for his error, although the reward for being correct is double. | | 187 | The permissibility of legal stratagems (hiyal shar'iyyah) is proven from the Quran and Hadith. | 194 | Stubborn opposition to one's obligation is absolutely a major sin. | | 187 | The stratagem used by Prophet Ayyub (peace be upon him) to fulfill his oath. | 194 | Attributing a severe major sin, or rather the greatest of major sins, to the leader of Muslims without proof is in no way permissible. | | 187 | The stratagem for applying a legal penalty (hadd) to a weak person. | 195 | Merely considering something loathsome or far-fetched without legal evidence is not admissible. | | 187 | A legal stratagem to avoid interest (usury). | 195 | The rules of asceticism (zuhd) do not govern the rules of Sharia. | | 199 | According to Imam Shafi'i, all jurists are the dependents of Imam Abu Hanifa. | 195 | Followers of the spiritual path consider a prayer with a lack of humility to be void, useless, corrupt, and impaired. | | 199 | Imam Bukhari held an exalted rank in his time in memorizing Hadith, critiquing narrators, and scrutinizing the authenticity and weakness of narrations. | 195 | There is a consensus among jurists that humility is neither a pillar of prayer, nor an obligation, nor a condition. | | 199 | Among books of Hadith, the book of Imam Bukhari is undoubtedly select and chosen. | 195 | There is a world of difference between 'doing' and 'what they used to do'. | | 199 | Leaving aside the 'suspended narrations' (ta'liq), 'follow-up narrations' (muta'bi'at), and 'corroborative reports' (shawahid) of Bukhari, if one looks at the core Musnad narrations, there is room for discussion. | 195 | The phrase 'Kaan Yaf'alu' (he used to do) is not a definitive text for repetition. | | 199 | The virtues of Imam Abu Hanifa. | 195 | An account of an event is subject to a hundred interpretations. | | 199 | Imam Bukhari acquired knowledge from the students of the students of Imam al-A'zam Abu Hanifa. | 195 | A Mujtahid is not to be blamed for his independent reasoning. | | 199 | Allah Almighty created Imam Bukhari for the service of the words of Hadith, while the service of their meanings was the portion of the Mujtahid Imams, especially Imam Abu Hanifa. | 195 | The incident of Imam Zain al-Milla wa al-Din seeing the Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) in a dream. | | 199 | The relationship between a scholar of Hadith (muhaddith) and a Mujtahid is like that of a

druggist and a physician. | 196 | A stratagem to prevent Zakat after it becomes due is categorically forbidden by consensus; the discussion here is about preventing the obligation itself. |

जिल्द दहुम फ़तावा रज़विया

| १९६ | सत्य यह है कि इमाम अबू यूसुफ़ का कथन इसलिए नहीं है कि लोग ज़कात से बचें, बल्कि वह ज़रूरत और आवश्यकता के समय पर आधारित है। | १९४ | इमाम अबू यूसुफ़ के आलोचकों पर मुसन्निफ़ (अल्लाह की उन पर रहमत हो) की मुनाज़िराना (बहस वाली) पकड़। | | १९७ | गुनाह से बचने के लिए हिला (कानूनी युक्ति) जायज़ है, न कि गुनाह में पड़ने के लिए। | १९४ | मुज्तहिद अपनी गलती पर भी पुण्य (सवाब) पाता है, हालांकि सही होने का पुण्य दोगुना है। | | १९७ | शरई हिलों की अनुमति कुरान और हदीस से प्रमाणित है। | १९४ | अपने कर्तव्य (फ़र्ज़) से हठधर्मी (मुआनदत) करना निश्चित रूप से गुनाह-ए-कबीरा (महापाप) है। | | १९७ | हज़रत अय्यूब अलैहिस्सलाम की कसम पूरी करने का हिला। | १९४ | इमामुल मुस्लिमीन की ओर बिना किसी प्रमाण के किसी गंभीर पाप या बल्कि सबसे बड़े पाप (अकबरुल कबा़यर) को जोड़ना किसी भी तरह जायज़ नहीं हो सकता। | | १९७ | एक कमज़ोर व्यक्ति पर हद (कानूनी सज़ा) लगाने का हिला। | १९५ | महज़ घृणा या दूर की बात समझना बिना शरई दलील के स्वीकार्य नहीं है। | | १९७ | ब्याज (सूद) से बचने का एक शरई हिला। | १९५ | ज़ुहद (वैराग्य) के नियम, शरीअत के नियमों पर हाकिम नहीं हैं। | | १९९ | इमाम शाफ़ई के अनुसार, सभी फ़ुक़हा (विधिवेत्ता) इमाम अबू हनीफ़ा के आश्रित (बाल-बच्चे) हैं। | १९५ | जिस नमाज़ में विनम्रता (ख़ुशू) की कमी हो, सुलूक वाले (अध्यात्मवादी) उसे बातिल, व्यर्थ, दूषित और दोषपूर्ण समझते हैं। | | १९९ | इमाम बुखारी का अपने समय में हदीस याद करने, रावीयों की आलोचना करने और रिवायतों की शुद्धता व दुर्बलता की जाँच करने में बहुत ऊँचा स्थान है। | १९५ | फ़ुक़हा का आम सहमति (इज्मा) है कि ख़ुशू न तो नमाज़ का रुक्न (स्तंभ) है, न फ़र्ज़ है, न शर्त। | | १९९ | हदीस की किताबों में इमाम बुखारी की किताब निस्संदेह चुनिंदा और श्रेष्ठ है। | १९५ | 'करने' और 'क्या करते थे' में ज़मीन-आसमान का अंतर है। | | १९९ | बुखारी की तालीक़ात, मुताबाआत और शवाहिद को छोड़कर यदि उसूल-ए-मसानिद पर नज़र डालें तो बहस की गुंजाइश है। | १९५ | 'कान यफ़अलु' (वह किया करते थे) दोहराव के लिए निश्चित प्रमाण (नस्स) नहीं है। | | १९९ | इमाम अबू हनीफ़ा के फ़ज़ाइल (गुण)। | १९५ | किसी घटना का विवरण सौ संभावनाओं (एहतमाल) के अधीन होता है। | | १९९ | इमाम बुखारी ने इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा के शिष्यों के शिष्यों से ज्ञान प्राप्त किया। | १९५ | मुज्तहिद को उसके इज्तिहाद (स्वतंत्र शोध) पर कोई दोष (मलाम) नहीं है। | | १९९ | अल्लाह तआला ने इमाम बुखारी को हदीस के शब्दों की सेवा के लिए बनाया था, जबकि अर्थों (माआनी) की सेवा मुज्तहिद इमामों, विशेष रूप से इमाम अबू

हनीफ़ा का हिस्सा था। | १९५ | इमाम ज़ैनुल मिल्लत वद्दीन के सपने में अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को देखने की घटना। | | १९९ | मुहद्दिस और मुज्तहिद का संबंध अत्तार (दवा बेचने वाला) और तबीब (चिकित्सक) के समान है। | १९६ | ज़कात अनिवार्य होने के बाद उसे रोकने का हिला इज्मा के अनुसार कतई हराम है; यहाँ चर्चा अनिवार्यता (वुजूब) को रोकने के बारे में है। |

पेज २२/८३६

جلد دہم فتاوی رضویہ

| ۱۹۶ | حق یہ ہے کہ امام ابو یوسف کا قول اس لیے نہیں کہ لوگ زکوٰۃ سے بچیں بلکہ وہ وقت ضرورت وحاجت پر محمول ہے۔ | ۱۹۴ | طاعنین امام ابو یوسف پر مصنف رحمۃ اللہ تعالیٰ کی مناظرانہ گرفت۔ | | ۱۹۷ | حیلہ گناہ سے بچنے کے لیے جائز ہے نہ کہ گناہ میں پڑنے کے واسطے۔ | ۱۹۴ | مجتہد اپنی خطا پر بھی ثواب پاتا ہے اگر چہ صواب کا ثواب دُونا ہے۔ | | ۱۹۷ | حیل شرعیہ کا جواز قرآن و حدیث سے ثابت ہے۔ | ۱۹۴ | اپنے فرض سے معاندت قطعاً گناہ کبیرہ ہے۔ | | ۱۹۷ | حضرت ایوب علیہ السلام کی قسم پوری کرنے کا حیلہ۔ | ۱۹۴ | سخت کبیرہ بلکہ اکبر الکبائر کی نسبت امام المسلمین کی طرف بے سند کر دینا کسی طرح جائز نہیں ہو سکتا۔ | | ۱۹۷ | ایک کمزور شخص پر حد لگانے کا حیلہ۔ | ۱۹۵ | مجرد استقباح و استبعاد بے دلیل شرعی مسموع نہیں۔ | | ۱۹۷ | سود سے بچنے کا ایک حیلہ شرعیہ۔ | ۱۹۵ | احکام زہد، احکام شرع پر حاکم نہیں۔ | | ۱۹۹ | بقول امام شافعی تمام فقہاء امام ابو حنیفہ کے بال بچے ہیں۔ | ۱۹۵ | جس نماز میں قلّتِ خشوع ہو اہل سلوک اس کو باطل، مہمل، فاسد اور مختل سمجھتے ہیں۔ | | ۱۹۹ | امام بخاری کا اپنے زمانے میں حفظ حدیث، نقدِ رجال اور تنقیح صحت و ضعف روایات میں پایہ رفیع ہے۔ | ۱۹۵ | فقہاء کا اجماع ہے کہ خشوع نہ نماز کا رکن ہے، نہ فرض، نہ شرط | | ۱۹۹ | کتب احادیث میں امام بخاری کی کتاب بیشک چیدہ و منتخب ہے۔ | ۱۹۵ | کرنے اور کیا کرتے میں زمین و آسمان کا فرق ہے۔ | | ۱۹۹ | بخاری کی تعالیق، متابعات اور شواہد کو چھوڑ کر اصول مسانید پر نظر کیجئے تو گنجائش کلام ہے۔ | ۱۹۵ | کَانَ یَفْعَلُ تکرار میں نص نہیں۔ | | ۱۹۹ | امام ابو حنیفہ کے فضائل۔ | ۱۹۵ | واقعہ حال، محتمل صد احتمال ہوتا ہے۔ | | ۱۹۹ | امام بخاری نے امام اعظم ابو حنیفہ کے شاگردوں کے شاگردوں

سے علم حاصل کیا۔ | ۱۹۵ | مجتہد اپنے اجتہاد پر ملام نہیں۔ | | ۱۹۹ | امام بخاری کو اللہ تعالیٰ نے خدمت الفاظ حدیث کے لیے بنایا تھا، خدمت معانی ائمہ مجتہدین خصوصاً امام ابو حنیفہ کا حصہ تھا۔ | ۱۹۵ | امام زین الملۃ والدین کے خواب میں رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو دیکھنے کا واقعہ۔ | | ۱۹۹ | محدث و مجتہد کی نسبت عطار و طبیب کی مثل ہے۔ | ۱۹۶ | بعد وجوب زکوٰۃ منع کا حیلہ بالاجماع حرام قطعی یہاں کلام منع وجوب میں ہے۔ |

Volume 10 | Fatawa-e-Razvia

- If a complete fragrance does not reach the high senses of a skilled physician, he is excused. | 200 | Case of sending Zakat wealth to other cities. | 202
- Imam Bukhari is neither from the Tabi'in nor from the Taba' Tabi'in, but rather a student in the fifth level of Imam-e-Azam. | 200 | Fees for money orders etc. will not be calculated as part of Zakat. | 203
- Tribute of praise to Imam-e-Azam (may Allah be pleased with him) by Imam A'mash (may Allah be pleased with him). | 200 | Zakat can be given to a sister-in-law (wife's sister). | 203
- Virtues of Hazrat Imam Amir Shabi (may Allah be pleased with him). | 200 | 'Ushr' (tithe) will be on the cultivator, and in crop-sharing, on the landlord. | 203
- According to us, the relationship of Imam Bukhari to Imam Abu Hanifa is like that of Hazrat Ameer Muawiyah (may Allah be pleased with him) to Hazrat Ali Murtaza (may Allah be pleased with him). | 201 | Situations of the tenth and twentieth (parts). | 203
- Countless differences in ranks; truth is with Hyder-e-Karrar (Ali), but Muawiyah is also our leader; slandering him is the work of the wicked. | 201 | There is no Zakat on grain; there is 'Ushr' on it. | 203
- Whoever turns a blind eye to the priority, greatness, and perfection of Hazrat Ali in support of Muawiyah is a Nasibi Yazidi, and whoever forgets the companionship and service to the court of Prophethood of Hazrat Muawiyah in love for Ali is a Shiite Zaidi. | 201 | Are the lands of India 'Ushri' or 'Kharaji'. | 204
- The same mentioned relationship, according to us, exists between Imam Ibn al-Jawzi and Ghaus al-Azam, and between Mulla Ali Qari and Sheikh al-Akbar. | 201 | Land revenue is not included in 'Ushr'. | 204
- The objections of Imam Bukhari, Ibn Jawzi, and Mulla Ali Qari do not affect the greatness of the status of the aforementioned personalities. | 201 | Treatise "Afsah al-Bayan fi Hukm Mazari' al-Hind" (Detailed rulings on the lands of India). | 213
- One should not object to these objectors because the cause of their objections was not egoism, but rather the failure of their lofty intellects to reach the high senses of the great beloveds of God. | 201 | The lands of Indian Muslims will not be considered 'Kharaji' unless the 'Kharaji' status of a specific land is proven

by Shariah evidence. Rather, they are 'Ushri', or neither 'Ushri' nor 'Kharaji', and in both cases, their levy is 'Ushr'. | 213

- The objection is void, the objector is excused, and the status of those objected upon is most sublime and high. | 201 | Lack of seeing (observation) is not proof of non-existence. | 214
- Meaning of 'Hawlan-e-Hawl' (completion of a year). | 202 | Lack of narration is not proof of non-narration. | 214

- यदि पूर्ण सुगंध एक कुशल चिकित्सक की उच्च इंद्रियों तक नहीं पहुँचती है, तो वह क्षम्य है। | २०० | ज़कात की संपत्ति दूसरे शहरों में भेजने का मामला। | २०२
- इमाम बुखारी न तो ताबेईन में से हैं और न ही तब-ए-ताबेईन में से, बल्कि इमाम-ए-आज़म के पाँचवें स्तर के छात्र हैं। | २०० | मनी ऑर्डर आदि का शुल्क ज़कात में शामिल नहीं किया जाएगा। | २०३
- इमाम आमश (रज़ियल्लाहु अन्हु) द्वारा इमाम-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) को प्रशंसा की श्रद्धांजलि। | २०० | साली को ज़कात दी जा सकती है। | २०३
- हज़रत इमाम आमिर शाबी (रज़ियल्लाहु अन्हु) के गुण। | २०० | 'उश्र' (दशमांश) काश्तकार पर होगा और बटाई में ज़मींदार पर। | २०३
- हमारे अनुसार, इमाम बुखारी का इमाम अबू हनीफा के साथ वही संबंध है जो हज़रत अमीर मुआविया (रज़ियल्लाहु अन्हु) का हज़रत अली मुर्तज़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) के साथ है। | २०१ | दसवें और बीसवें (भाग) की स्थितियाँ। | २०३
- पद्यों में अनगिनत अंतर हैं; सत्य हैदर-ए-कर्रार (अली) के साथ है, लेकिन मुआविया भी हमारे सरदार हैं, उन पर कटाक्ष करना दुष्टों का काम है। | २०१ | अनाज पर ज़कात नहीं, उस पर 'उश्र' है। | २०३
- जो मुआविया के समर्थन में हज़रत अली की प्राथमिकता, महानता और पूर्णता से आँखें फेर लेता है वह नासिबी यज़ीदी है, और जो अली के प्रेम में हज़रत मुआविया की सहाबियत और नबूवत के दरबार की सेवा को भूल जाता है वह शिया ज़ैदी है। | २०१ | भारत की भूमि 'उशरी' है या 'ख़राजी'। | २०४
- यही उल्लेखित संबंध हमारे अनुसार इमाम इब्न अल-जौज़ी का गौस अल-आज़म के साथ और मुल्ला अली क़ारी का शेख अल-अकबर के साथ है। | २०१ | भू-राजस्व (मालगुज़ारी) 'उश्र' में शामिल नहीं है। | २०४
- इमाम बुखारी, इब्न जौज़ी और मुल्ला अली क़ारी की आपत्तियों से उक्त हस्तियों की महानता में कोई फर्क नहीं पड़ता। | २०१ | रिसाला "अफ़सह अल-बयान फ़ी हुक्म मज़ारी अल-हिंद" (भारत की ज़मीनों के विस्तृत नियम)। | २१३

- इन आपत्ति करने वालों पर आपत्ति नहीं करनी चाहिए क्योंकि उनकी आपत्तियों का कारण अहंकार नहीं था, बल्कि ईश्वर के महान प्रियजनों की उच्च इंद्रियों तक उनकी उच्च समझ की पहुंच की कमी थी। | २०१ | भारतीय मुसलमानों की ज़मीनें तब तक 'ख़राजी' नहीं मानी जाएँगी जब तक कि किसी विशेष ज़मीन का 'ख़राजी' होना शरीयत के साक्ष्य से सिद्ध न हो जाए। बल्कि वे 'उशरी' हैं, या न उशरी न ख़राजी, और दोनों स्थितियों में उनका वज़ीफ़ा (शुल्क) 'उश्र' है। | २१३
- आपत्ति निराधार है, आपत्ति करने वाला क्षम्य है और जिन पर आपत्ति की गई उनका स्थान सर्वोच्च और उच्च है। | २०१ | न देखना, न होने का प्रमाण नहीं है। | २१४
- 'हौलन-ए-हौल' (एक वर्ष पूरा होना) का अर्थ। | २०२ | वर्णन न होना, न होने का प्रमाण नहीं है। | २१४

पृष्ठ ८३६ का २३

- عطر کامل اگر طبیب حاذق کے مدارک عالیہ تک نہ پہنچے معذور ہے۔ | ۲۰۰ | دوسرے شہروں میں مال زکوۃ بھیجنے کی صورت۔ | ۲۰۲
- امام بخاری نہ تابعین میں سے ہیں نہ تبع تابعین میں سے بلکہ امام اعظم کے پانچویں درجے میں جا کر شاگرد ہیں۔ | ۲۰۰ | منی آرڈر وغیرہ کی فیس زکوۃ میں محسوب نہیں ہوگی۔ | ۲۰۳
- امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو امام اعمش رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا خراج تحسین۔ | ۲۰۰ | سالی کو زکوۃ دے سکتے ہیں۔ | ۲۰۳
- حضرت امام عامر شعبی رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے فضائل۔ | ۲۰۰ | عشر کاشتکار پر ہوگا اور بٹائی میں زمیندار پر۔ | ۲۰۳
- ہمارے نزدیک امام بخاری کو امام ابوحنیفہ سے وہ نسبت ہے جو حضرت امیر معاویہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو حضرت علی مرتضیٰ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے۔ | ۲۰۱ | دسویں بیسویں کی صورتیں۔ | ۲۰۳
- فرق مراتب بے شمار حق بدست حیدر کرار ، مگر معاویہ بھی ہمارے سردار ، طعن ان پر بھی کارِ فجار۔ | ۲۰۱ | غلے میں زکوۃ نہیں اس میں عشر ہے۔ | ۲۰۳
- جو حمایت معاویہ میں حضرت علی کی اولیت و عظمت و اکملیت سے آنکھ پھیرے وہ ناصبی یزیدی ، اور جو محبت علی میں حضرت معاویہ کی صحابیت و خدمت بارگاہ رسالت کو بھلا دے وہ شیعی زیدی ہے۔ | ۲۰۱ | ہندوستان کی زمینیں عشری ہیں یا خراجی۔ | ۲۰۴

- یہی نسبت مذکورہ ہی ہمارے نزدیک امام ابن الجوزی کو حضور سیدنا غوث اعظم اور مولانا علی قاری کو شیخ اکبر سے ہے۔ | ۲۰۱ | مالگزاری عشر میں داخل نہیں۔ | ۲۰۴
- امام بخاری ، ابن جوزی اور ملا علی قاری کے اعتراضوں سے مذکورہ ہستیوں کی عظمت شان میں فرق نہیں پڑتا۔ | ۲۰۱ | رسالہ افصح البیان فی حکم مزارع ہندوستان (ہندوستان کی زمینوں کے تفصیلی احکام۔) | ۲۱۳
- ان معترضین حضرات پر اعتراض نہیں کرنا چاہئے کیونکہ ان کے اعتراضوں کا منشاء نفسانیت نہ تھا بلکہ انچ اکابر محبوبان خدا کے مدارک عالیہ تک عدم رسائی تھا۔ | ۲۰۱ | ہندوستان کے مسلمانوں کی زمینیں خراجی نہ سمجھی جائیں گی جب تک کسی خاص زمین کی نسبت خراجی ہونا دلیل شرعی سے ثابت نہ ہو بلکہ وہ عشری ہیں، یا نہ عشری نہ خراجی، اور دونوں صورتوں میں ان کا وظیفہ عشر ہے۔ | ۲۱۳
- اعتراض باطل، معترض معذور اور معترض علیہم کی شان ارفع و اعلیٰ۔ | ۲۰۱ | عدم رؤیت، رؤیت عدم نہیں۔ | ۲۱۴
- حولان حول کے معنی۔ | ۲۰۲ | عدم نقل، نقل عدم نہیں۔ | ۲۱۴

- Land that is neither Ushr-land nor Kharaj-land, Ushr is mandatory on it. (214) | Reasoning is drawn from the antecedent to the consequent. (228)
- Will Ushr be on the landowner or the cultivator? (216) | Reasoning is not drawn from the consequent to the antecedent. (228)
- The word "Naakhuzu" (We take/adopt) is among the most emphatic words of Fatwa. (216) | Land revived by a Dhimmi (non-Muslim citizen) is Kharaj-land by consensus. (230)
- The Fatwa regarding the validity of sharecropping (Muzara'at) is based on the opinion of the Sahibayn (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad). (217) | Kharaj is not exclusive to Kharaj-water. (232)
- Hardship is averted by the Text (Nass). (217) | If a Muslim turns his house into a garden or revives dead land, then if he irrigates it with Ushr-water, Ushr will be due; if with Kharaj-water, Kharaj will be due. (232)
- Land that is proven to be Kharaj-land, its levy is Kharaj. (218) | The cause of obligation for Kharaj is productive land (Ardh-e-Namiyah). (234)
- British revenue (Malguzari) has no relation to Shariah Kharaj. (218) | To whom should Kharaj be given? (235)
- The demand for Kharaj is conditional upon control/possession. (218) | What should be given in Kharaj? (237)
- For cities where control did not belong to a Sharia government for a period, Kharaj for those days cannot be demanded even after gaining control. (218) | Kharaj is of two types: (I) Kharaj-e-Muqasamah (proportional), (II) Kharaj-e-Muwazzaf (fixed). (237)
- What is the utilization/expenditure of Kharaj? (219) | How much Kharaj should be given? (237)
- It is futile to demand something for which there is no use/expenditure. (221) | What are the measurements of Jareeb and Saa'? (239)
- There is a difference between state demand and religious obligation. (222) | On whom is the Ushr of the mango crop due? (241)
- The ruler has no right to demand many things, yet they are mandatory according to Sharia. (222) | When should the crop be sold? (241)
- Control and protection are conditions for the state's demand, not conditions for the obligation itself. (223) | Zakat on animals. (242)

- The expenditure of Kharaj is not just for the Islamic army, but for all public welfare interests of Muslims. (223) | Who are the recipients (Masarif) of Zakat? (246)
- Here the universal affirmative proposition is: "Wherever protection exists, tax collection is mandatory," not "Wherever tax collection is mandatory, protection exists," so that its contrapositive would be: "Whenever protection does not exist, tax collection is not mandatory." (226) | Zakat can be given to a debtor. (250)
- In the text of 'Inayah, the word "Yukhtassu" (is specific to) has occurred ambiguously, and it is superfluous and contrary to the intended meaning. (226) | Mention of some relatives to whom Zakat can be given. (251)

फतावा रज़विया | जिल्द 10

- जो ज़मीन न उश्शरी हो न ख़राजी उसमें उश्शर वाजिब होता है। (214) | पूर्वगामी से परिणामी तक तर्क दिया जाता है। (228)
- उश्शर ज़मीन के मालिक पर होगा या किसान पर? (216) | परिणामी से पूर्वगामी तक तर्क नहीं दिया जाता है। (228)
- शब्द "नाख़ुज़ु" (हम लेते हैं) फतवे के सबसे ताकीदी शब्दों में से है। (216) | जो ज़मीन किसी ज़िम्मी ने आबाद की, वह सर्वसम्मति से ख़राजी है। (230)
- बटाई खेती (मुज़ारअत) की वैधता के बारे में फतवा साहिबैन के कौल (कथन) पर आधारित है। (217) | ख़राज, ख़राजी पानी के साथ विशेष नहीं है। (232)
- कठिनाई (हरज) को शास्त्रवाक्य (नस्स) द्वारा दूर किया जाता है। (217) | अगर किसी मुसलमान ने घर को बगीचा बना लिया या बंजर ज़मीन को आबाद किया, तो अगर वह उश्शरी पानी से सिंचाई करेगा तो उश्शर, और अगर ख़राजी पानी से सिंचाई करेगा तो ख़राज वाजिब होगा। (232)
- जिस ज़मीन का ख़राजी होना साबित हो जाए, उसका कर ख़राज है। (218) | ख़राज के वाजिब होने का कारण उपजाऊ भूमि (अर्ज़-ए-नामिया) है। (234)
- शरीअत के ख़राज से अंग्रेज़ी मालगुज़ारी का कोई संबंध नहीं है। (218) | ख़राज किसे दें? (235)
- ख़राज की मांग आधिपत्य (तसल्लुत) पर निर्भर है। (218) | ख़राज में क्या दें? (237)
- जिन शहरों पर जितने दिन शरीअती सल्तनत का कब्ज़ा नहीं रहा, कब्ज़ा होने के बाद भी उन दिनों के ख़राज की मांग नहीं की जा सकती। (218) | ख़राज दो प्रकार के होते हैं: (१) ख़राज-ए-मुक़ासमा, (२) ख़राज-ए-मुवज़्ज़फ़। (237)
- ख़राज का ख़र्च (मसरफ़) क्या है? (219) | कितना ख़राज दें? (237)
- जिस चीज़ का उपयोग न रह जाए, उसकी मांग व्यर्थ है। (221) | जरीब और साअ (माप) की मात्रा क्या है? (239)
- सरकार की मांग और धार्मिक कर्तव्य (वजूब-ए-दियानत) में अंतर है। (222) | आम की फसल का उश्शर किस पर है? (241)

- बहुत सी चीज़ों की मांग करना सुल्तान का अधिकार नहीं है, फिर भी वे शरीअत के अनुसार वाजिब हैं। (222) | फसल कब बेची जाए? (241)
- आधिपत्य और सुरक्षा राजकीय मांग की शर्त है, न कि स्वयं कर्तव्य के अनिवार्य होने की शर्त। (223) | जानवरों की ज़कात। (242)
- ख़राज का उपयोग केवल इस्लामी सेना के लिए नहीं है, बल्कि मुसलमानों के सभी सार्वजनिक हितों के लिए है। (223) | ज़कात के पात्र (मस्तारिफ़) कौन लोग हैं? (246)
- यहाँ सार्वभौमिक सकारात्मक प्रस्ताव यह है: "जहाँ भी सुरक्षा है, वहाँ कर संग्रह (जिबाया) अनिवार्य है," न कि "जहाँ कर संग्रह अनिवार्य है, वहाँ सुरक्षा है," ताकि इसका प्रतिलोम इस प्रकार हो: "जब भी सुरक्षा नहीं होगी, कर संग्रह अनिवार्य नहीं होगा।" (226) | कर्जदार को ज़कात दे सकते हैं। (250)
- 'इनाया' के पाठ में "युख़्तस्सु" (विशिष्ट होना) शब्द भ्रामक रूप से आया है, और वह अनावश्यक तथा अभीष्ट अर्थ के विपरीत है। (226) | कुछ रिश्तेदारों का वर्णन जिन्हें ज़कात दी जा सकती है। (251)

- جو زمین نہ عشری ہو نہ خراجی اس میں عشر واجب ہوتا ہے۔ (۲۱۴) | وضع مقدم سے وضع تالی پر استدلال کیا جاتا ہے۔ (۲۲۸)
- عشر مالک زمین پر ہوگا یا مزارع پر؟ (۲۱۶) | وضع تالی سے وضع مقدم پر استدلال نہیں کیا جاتا۔ (۲۲۸)
- لفظ "ناخذ" آکد الفاظ فتویٰ سے ہے۔ (۲۱۶) | جو زمین ذمی نے احیاء کی بالاتفاق خراجی ہے۔ (۲۳۰)
- صحت مزارعت کے بارے میں فتویٰ صاحبین کے قول پر ہے۔ (۲۱۷) | خراج، آب خراجی کے ساتھ خاص نہیں۔ (۲۳۲)
- حرج مدفوع بالنص ہے۔ (۲۱۷) | مسلمان نے گھر کو باغیچہ بنالیا یا مردہ زمین احیاء کی تو اگر عشری پانی سے سیراب کرے گا تو عشر، اور اگر خراجی پانی سے سیراب کرے گا تو خراج واجب ہوگا۔ (۲۳۲)
- جس زمین کی نسبت خراجی ہونا ثابت ہو جائے اس کا وظیفہ خراج ہے۔ (۲۱۸) | خراج کے لیے سبب وجوب، ارضِ نامیہ ہے۔ (۲۳۴)
- خراج شرعی سے مالگزاری انگریزی کو کوئی تعلق نہیں۔ (۲۱۸) | خراج کسے دیں؟ (۲۳۵)
- مطالبہ خراج مشروط بہ تسلط ہے۔ (۲۱۸) | خراج میں کیا دیں؟ (۲۳۷)
- جن بلاد پر جتنے دن تسلط، شرعی سلطنت کا نہ رہا بعد از تسلط بھی ان ایام کے خراج کا مطالبہ نہیں کیا جا سکتا۔ (۲۱۸) | خراج دو قسم ہے: (۱۱) خراج مقاسمہ، (۲۲) خراج موظف (۲۳۷)

- خراج کا مصرف کیا ہے؟ (۲۱۹) | خراج کتنا دیں؟ (۲۳۷)
- جس شئی کا مصرف نہ رہے اس کا مطالبہ عبث ہے۔ (۲۲۱) | جریب اور صاع کی مقدار کیا ہے؟ (۲۳۹)
- مطالبہ سلطنت اور وجوب دیانت میں فرق ہے۔ (۲۲۲) | آم کی بہار کا عشر کس پر ہے؟ (۲۴۱)
- بہت چیزوں کا مطالبہ سلطان کو نہیں پہنچتا مگر شرعاً واجب ہیں۔ (۲۲۲) | بہار کب بیچی جائے؟ (۲۴۱)
- تسلط و حمایت شرط مطالبہ سلطانی ہے نہ کہ شرط نفس وجوب۔ (۲۲۳) | جانوروں کی زکوۃ۔ (۲۴۲)
- مصرف خراج صرف لشکر اسلام نہیں بلکہ تمام مصالح عامہ مسلمین ہیں۔ (۲۲۳) | مصارف زکوۃ کون لوگ ہیں؟ (۲۴۶)
- یہاں موجبہ کلیہ یوں ہے کہ حیثما وجدت الحمایۃ وجبت الجبایۃ، نہ یوں کہ حیثما وجبت الجبایۃ وجدت الحمایۃ، تاکہ اس کا عکس نقیض اس طرح آتا کہ کلما لم توجد الحمایۃ لم تجب الجبایۃ۔ (۲۲۶) | مقروض کو زکوۃ دے سکتے ہیں۔ (۲۵۰)
- عبارت عنایہ میں لفظ "یختص" موہم واقع ہوا ہے اور وہ زائد و خلاف مقصود ہے۔ (۲۲۶) | چند اقارب کا بیان جنہیں زکوۃ دی جا سکتی ہے۔ (۲۵۱)

Fatawa Razvia, Volume 10

(Right Column) Zakat can be given to students. (Page 251) Zakat can also be given to those who apparently seem eligible. (Page 251) If quilts are made, the costs of carding and sewing will not be counted in Zakat expenses. (Page 251) If Niaz or Mawlid is performed with Zakat money, Zakat will not be considered paid. (Page 251) The amount of Sadaqah-ul-Fitr, its recipients, on whom and when is it obligatory to pay? (Page 252) There is double reward in giving Zakat to one's debtor relative. (Page 253) It is superior to give Zakat to students studying religious knowledge. (Page 253) Giving Zakat to beggars. (Page 253) Methods of spending Zakat money on students. (Page 254) Zakat money cannot be spent on salaries or the construction of a Madrasa; methods of spending it on these tasks. (Page 254) Books etc. cannot be bought from Zakat money and endowed (Waqf); method of spending on them. (Page 255) Method of spending Zakat on buying mats for a mosque or printing religious books. (Page 256) When is there a liability in mixing donation money? (Page 257) Giving Zakat to a defense fund. (Page 258) Method of sending Zakat to war-torn or riot-affected areas. (Page 260) Donation amounts can be mixed with the owner's permission. (Page 260) The ruling if a wealthy person accepts charity. (Page 261)

(Left Column) Students can take Zakat. (Page 261) Zakat cannot be spent on salaries. (Page 262) It is permissible to give Zakat to an orphan. (Page 262) Zakat will not be considered paid by feeding or clothing an orphan etc. The price of food and clothing will be counted in Zakat; the costs of cooking etc. will not be counted. (Page 262) Buying a house for an orphanage or spending Zakat on its legal case. (Page 262) A Shari'ah-compliant stratagem (Heela) should be used when necessary, not for personal use; a woman cannot pay Zakat from children's maintenance money. (Page 263) Zakat can be given in the name of Eidi (Eid gift) etc. (Page 264) A sister is an eligible recipient of Zakat, but a daughter is not. (Page 264) Circumstances for giving Zakat to a father. (Page 265) The recipients of Zakat and Sadaqah-ul-Fitr are the same. (Page 266) Maintenance of the mother is upon the son, and maintenance of the sister is upon the brother. (Page 266) Method of spending Zakat on a mosque. (Page 267) Methods and conditions for Shari'ah-compliant stratagem (Heela). (Page 267) Zakat wealth is forbidden for the descendants of the Prophet (Sadaat); method of helping them through Zakat. (Page 267) Method of spending Zakat in religious schools (Madaris Diniya). (Page 269) The function of a Zakat worker is to transfer ownership to the poor (Tamleek-e-Faqir). (Page 269)

फतावा रज़विया, खंड 10

(दायां कॉलम) छात्रों को ज़कात दी जा सकती है। (पेज २५१) जो स्पष्ट रूप से ज़कात के पात्र हों, उन्हें भी दी जा सकती है। (पेज २५१) यदि रजाई बनवाई जाए, तो धुनाई और सिलाई के खर्च ज़कात में नहीं गिने जाएंगे। (पेज २५१) यदि ज़कात के पैसे से नियाज़ या मिलाद किया जाए, तो ज़कात अदा नहीं होगी। (पेज २५१) सदका-ए-फ़ित्र की मात्रा और उसके पात्र, किस पर और कब अदा करना वाजिब है? (पेज २५२) अपने कर्जदार रिश्तेदार को ज़कात देने में दोगुना सवाब है। (पेज २५३) दीनी तालीम हासिल करने वाले छात्रों को ज़कात देना बेहतर है। (पेज २५३) भिखारियों को ज़कात देना। (पेज २५३) छात्रों पर ज़कात का पैसा खर्च करने के तरीके। (पेज २५४) मदरसे के वेतन या निर्माण में ज़कात का पैसा खर्च नहीं किया जा सकता; इन कामों में खर्च करने के तरीके। (पेज २५४) ज़कात के पैसे से किताबें आदि खरीदकर वक्फ़ नहीं की जा सकतीं; उनमें खर्च करने का तरीका। (पेज २५५) मस्जिद के लिए चटाइयां खरीदने या धार्मिक किताबें छपवाने में ज़कात खर्च करने का तरीका। (पेज २५६) चंदे की रकम मिलाने में कब ज़िम्मेदारी आती है? (पेज २५७) रक्षा कोष (डिफेंस फंड) में ज़कात देना। (पेज २५८) युद्ध या दंगा प्रभावित क्षेत्रों में ज़कात भेजने का तरीका। (पेज २६०) मालिक की अनुमति से चंदे की रकम मिलाई जा सकती है। (पेज २६०) यदि कोई धनी व्यक्ति सदका ले, तो उसका हुक्म। (पेज २६१)

(बायां कॉलम) छात्र ज़कात ले सकते हैं। (पेज २६१) ज़कात वेतन में खर्च नहीं की जा सकती। (पेज २६२) अनाथ (यतीम) को ज़कात देना जायज़ है। (पेज २६२) अनाथ आदि को खिलाने-पिलाने या कपड़े पहनाने से ज़कात अदा नहीं होगी। खाने और कपड़े की कीमत ज़कात में गिनी जाएगी, पकाने आदि के खर्च नहीं गिने जाएंगे। (पेज २६२) यतीमखाने के लिए घर खरीदना या उसके मुकदमे में ज़कात खर्च करना। (पेज २६२) ज़रूरत पड़ने पर शरई हीला (तरीका) अपनाना चाहिए, अपने इस्तेमाल के लिए नहीं; बच्चों के खर्च के पैसों से महिला ज़कात अदा नहीं कर सकती। (पेज २६३) ईदी आदि के नाम से ज़कात दी जा सकती है। (पेज २६४) बहन ज़कात की पात्र है, बेटी नहीं। (पेज २६४) पिता को ज़कात देने की सूरत। (पेज २६५) ज़कात और सदका-ए-फ़ित्र के पात्र एक ही हैं। (पेज २६६) माँ का भरण-पोषण बेटे पर और बहन का भाई पर है। (पेज २६६) मस्जिद में ज़कात खर्च करने का तरीका। (पेज २६७) शरई हीला के तरीके और शर्तें। (पेज २६७) सादात (सैयदों) के लिए ज़कात का माल हराम है; ज़कात से उनकी मदद करने का तरीका। (पेज २६७) धार्मिक मदरसों में

ज़कात खर्च करने का तरीका। (पेज २६९) ज़कात कार्यकर्ता का कार्य गरीब को मालिकाना हक दिलाना (तमलीक-ए-फ़कीर) है। (पेज २६९)

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

(دائیں جانب کا کالم) طلبہ کو زکوٰۃ دے سکتے ہیں۔ ۲۵۱ جو بظاہر مصرف زکوٰۃ ہو اسے بھی دے سکتے ہیں۔ ۲۵۱ لحاف بنوائے جائیں تو دھنائی سلائی کے مصارف زکوٰۃ میں شمار نہ ہوں گے۔ ۲۵۱ نیاز یا میلاد مالِ زکوٰۃ سے کیا جائے تو زکوٰۃ ادا نہ ہوگی۔ ۲۵۱ صدقہ فطر کی مقدار اور اس کے مصارف، کس پر اور کب ادا کرنا واجب ہے؟ ۲۵۲ اپنے عزیز مقروض کو زکوٰۃ دینے میں دو گنا ثواب ہے۔ ۲۵۳ علم دین پڑھنے والے طلبہ کو زکوٰۃ دینا افضل ہے۔ ۲۵۳ گداگروں کو زکوٰۃ دینا۔ ۲۵۳ زکوٰۃ کے روپے طلبہ میں صرف کرنے کی صورتیں۔ ۲۵۴ تنخواہ یا تعمیر مدرسہ میں زکوٰۃ کے روپے صرف نہیں ہو سکتے، ان کاموں میں صرف کرنے کی صورتیں۔ ۲۵۴ مالِ زکوٰۃ سے کتاب وغیرہ خرید کر وقف نہیں کر سکتے، ان میں صرف کرنے کی صورت۔ ۲۵۵ مسجد کے لیے دریاں خریدنے یا دینی کتاب طبع کرانے میں زکوٰۃ خرچ کرنے کی صورت۔ ۲۵۶ چندہ کے روپے مخلوط کرنے میں کب ضمان ہے؟ ۲۵۷ دفاعی فنڈ میں زکوٰۃ دینا۔ ۲۵۸ جنگ یا فساد زدہ مقامات کو زکوٰۃ بھیجنے کا طریقہ۔ ۲۶۰ چندہ کی رقوم باذن مالک مخلوط کی جاسکتی ہیں۔ ۲۶۰ غنی صدقہ لے تو اس کا حکم۔ ۲۶۱

(بائیں جانب کا کالم) طلبہ زکوٰۃ لے سکتے ہیں۔ ۲۶۱ زکوٰۃ تنخواہ میں صرف نہیں ہو سکتی۔ ۲۶۲ یتیم کو زکوٰۃ دینا جائز ہے۔ ۲۶۲ یتیم وغیرہ کو کھلانے کھلانے، کپڑے پہنانے سے زکوٰۃ ادا نہ ہوگی۔ کھانے کپڑے کی قیمت زکوٰۃ میں محسوب ہوگی، پکوائی وغیرہ کے مصارف محسوب نہ ہوں گے۔ ۲۶۲ یتیم خانہ کے لیے مکان خریدنا یا اس کے مقدمہ میں زکوٰۃ خرچ کرنا۔ ۲۶۲ ضرورت پر حیلہ شرعی کرنا چاہئے، اپنے صرف میں لانے کے لیے نہیں، بچوں کے اخراجات کے روپوں سے عورت زکوٰۃ ادا نہیں کر سکتی۔ ۲۶۳ عیدی وغیرہ کے نام سے زکوٰۃ دی جا سکتی

ہے۔ ۲۶۴ بہن مصرفِ زکوٰۃ ہے بیٹی نہیں۔ ۲۶۴ باپ کو زکوٰۃ دینے کی صورت۔ ۲۶۵ زکوٰۃ اور صدقہ فطر کے مصارف واحد ہیں۔ ۲۶۶ ماں کی کفالت لڑکے پر اور بہن کی کفالت بھائی پر۔ ۲۶۶ مسجد میں زکوٰۃ خرچ کرنے کی صورت۔ ۲۶۷ حیلہ شرعی کے طریقے اور شرط ۲۶۷ سادات کرام پر مالِ زکوٰۃ حرام ہے، زکوٰۃ سے ان کی مدد کرنے کی صورت۔ ۲۶۷ مدارس دینیہ میں زکوٰۃ خرچ کرنے کی صورت۔ ۲۶۹ زکوٰۃ کارکن تملیک فقیر ہے۔ ۲۶۹

Fatawa Razawiyya Volume 10

Topic	Page	Topic	Page
Treatise: Al-Zahar al-Basim fi Hurmat al-Zakat 'ala Bani Hashim (Zakat and obligatory charities are forbidden for the Banu Hashim).	271	In the absence of clean earth, Tayammum also drops.	274
Is it permissible for the Banu Hashim to take Zakat and obligatory charity due to the fall of Khums al-Khums?	271	Both the prohibition of charity and the establishment of a share are independent honors for the Banu Hashim.	274
Neither is it permissible to give obligatory charities to the Banu Hashim, nor is it permissible for them to take it.	272	In what sense is Khums al-Khums a compensation for charities for the Banu Hashim?	274
Continuous (Mutawatir) Hadiths have come regarding the prohibition of charities for the Banu Hashim.	272	Difference between conventional compensation (Mu'awazat 'Urfiyya) and technical compensation (Mu'awazat Mustalaha).	275
The reason for the prohibition of charities for the Banu Hashim is their honor and dignity.	272	Whether there is technical compensation in Khums al-Khums and charities is a point of discussion. (Footnote)	275
Zakat is the filth of wealth, whose status is like used water (Ma' Must'amal).	272	The separation between Khums al-Khums and obligatory charities is not real separation (Infasal Haqiqi) but rather the prevention of gathering (Man' al-Jam').	275
Clarification of the mentioned reason from authentic Hadiths.	272	In 'Manfasila Haqiqiya', prevention of emptiness (Man' al-Khulu) is necessary.	275
The establishment of Khums al-Khums is based on the prohibition of charities, not the prohibition of	273	The non-permissibility of Zakat for the Banu Hashim is according to the 'Zahir al-Riwayah'.	275

Topic	Page	Topic	Page
charities on the establishment of Khums al-Khums.			
The return of compensation upon the fall of consideration is only where the loss of consideration is dependent on the acquisition of compensation.	273	Whatever is against 'Zahir al-Riwayah' is not the saying of our Imams.	276
If the buyer gave the price to the seller and the sold item was destroyed while still with the seller, the buyer will return for the price.	273	Acting upon a retracted opinion (Qawl Marju' 'Anhu) is impermissible.	276
If the loss of consideration is justified by some reason other than compensation, then as long as that reason remains, the loss of consideration will certainly remain.	274	Attributing the adoption of an irregular (Shadhah) narration to Imam Tahawi is not accepted.	277
Due to illness and the reason of harm, the obligation of Wudu is dropped, and Tayammum becomes necessary in its stead.	274	Imam Tahawi has some unique choices, such that acting on them by leaving the Madhhab has no meaning.	277
		The majesty of Imam Tahawi's status is accepted, but the overwhelming greatness of the original Madhhab is something else.	277

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

विषय	पृष्ठ
रिसाला अल-ज़हर अल-बासिम फ़ी हुरमत अल-ज़कात अला बनी हाशिम (बनी हाशिम पर ज़कात और सदक़ात वाजिबा हराम हैं)।	271
क्या खुम्स अल-खुम्स के सुक़ूत (गिरने) की वजह से बनी हाशिम को ज़कात और सदक़ा वाजिबा लेना जायज़ है।	271
सदक़ात वाजिबा न बनी हाशिम को देना जायज़, न उन्हें लेना जायज़।	272
बनी हाशिम के लिए तहरीम-ए-सदक़ात से मुताल्लिक मुतवातिर हदीसें आई हैं।	272
बनी हाशिम के लिए सदक़ात की हुरमत की वजह (इल्लत) उनकी इज़्ज़त और करामत है।	272
ज़कात माल का मेल है जिसका हाल मा-ए-मुस्तअमल (इस्तेमाल शुदा पानी) की तरह है।	272
अहादीस सहीहा से मज़कूरा इल्लत की तसरीह (स्पष्टीकरण)।	272
तक़रीर-ए-खुम्स अल-खुम्स, तहरीम-ए-सदक़ात पर मब्नी है, न कि तहरीम-ए-सदक़ात तक़रीर-ए-खुम्स अल-खुम्स पर।	273
	273
सईद तय्यब (पाक मिट्टी) की अदम मौजूदगी में तयम्मुम भी साक़ित हो जाता है।	274
तहरीम-ए-सदक़ा और तक़रीर-ए-सहम दोनों बनी हाशिम के लिए मुस्तकिल करामतें हैं।	274
खुम्स अल-खुम्स बनी हाशिम के लिए इवज़-ए-सदक़ात किस मानी में है?	274
मुआ़वज़त-ए-उर्फ़िया और मुआ़वज़त-ए-मुस्तलहा में फ़र्क।	275
खुम्स अल-खुम्स और सदक़ात में मुआ़वज़त-ए-मुस्तलहा का होना महल्ले-कलाम है (चर्चा का विषय है)। (हाशिया)	275
खुम्स अल-खुम्स और सदक़ात वाजिबा में इन्फ़िसाल-ए-हक़ीक़ी नहीं बल्कि मन-अल-जमअ़ है।	275
मुनफ़सिला हक़ीक़िया को मन-ए-खुलू लाज़िम होता है।	275
बनी हाशिम के लिए ज़कात का अदम-ए-जवाज़ ज़ाहिर-र-रिवायत है।	275
जो कुछ ज़ाहिर-र-रिवायत के खिलाफ हो वो हमारे अइम्मा का क़ौल नहीं।	276

विषय	पृष्ठ
सुक़ूत-ए-इवज़ से मुअ़व्वज़ की तरफ रुजू वहीं है जहाँ ज़वाल-ए-मुअ़व्वज़, हुसूल-ए-इवज़ पर मौकूफ़ हो।	
मुश्तरी (खरीदार) ने समन (कीमत) बाएअ (विक्रेता) को दे दिए और मबीअ़ (बिकी हुई चीज़) बाएअ के पास ही हलाक हो गया तो मुश्तरी समन के लिए रुजू करेगा।	273
ज़वाल-ए-मुअ़व्वज़ अगर इवज़ के अलावा किसी और इल्लत से मुअ़ल्लल हो तो जब तक वो इल्लत बाक़ी रहेगी ज़वाल-ए-मुअ़व्वज़ बेशक रहेगा।	274
मरीज़ से इल्लत-ए-ज़रर (नुकसान) की वजह से फ़र्ज़ियत-ए-वुज़ू साक़ित हो जाती है और उसके इवज़ उस पर तयम्मुम लाज़िम होता है।	274
क़ौल-ए-मरजूअ़ अन्हु (वापस लिए गए कथन) पर अमल नाजायज़ है।	276
इमाम तहावी की तरफ रिवायत-ए-शाज़ा को इख्तियार करने की निस्बत मुस्लिम नहीं।	277
इमाम तहावी के कुछ इख्तियारात-ए-मुफ़रदा हैं कि तर्कए-मज़हब कर के उन पर अमल के कोई मानी नहीं।	277
इमाम तहावी की जलालत-ए-शान मुस्लिम मगर अज़मत-ए-क़ाहिरा अस्ल-ए-मज़हब चीज़-ए-दीगर अस्त (कुछ और ही चीज़ है)।	277

فتاوی رضویہ جلد دہم

عنوان صفحہ		عنوان صفحہ	
رسالہ الزھر الباسم فی حرمۃ الزکوۃ علی بنی ھاشم (بنی ہاشم پر زکوۃ اور صدقات واجبہ حرام ہیں)	۲۷۱	صعید طیب کی عدم موجودگی میں تیمم بھی ساقط ہو جاتا ہے۔	۲۷۴
کیا خمس الخمس کے سقوط کی وجہ سے بنی ہاشم کو زکوۃ و صدقہ واجبہ لینا جائز ہے۔	۲۷۱	تحریم صدقہ و تقریر سہم دونوں بنی ہاشم کے لیے مستقل کرامتیں ہیں۔	۲۷۴
صدقات واجبہ نہ بنی ہاشم کو دینا جائز، نہ انہیں لینا جائز۔	۲۷۲	خمس الخمس بنی ہاشم کے لیے عوض صدقات کس معنی میں ہے ؟	۲۷۴
بنی ہاشم کے لئے تحریم صدقات سے متعلق متواتر حدیثیں آئی ہیں۔	۲۷۲	معاوضت عرفیہ اور معاوضت مصطلحہ میں فرق۔	۲۷۵
علت تحریم صدقات برائے بنی ہاشم ان کی عزت و کرامت ہے۔	۲۷۲	خمس الخمس اور صدقات میں معاوضت مصطلحہ کا ہونا محل کلام ہے۔ (حاشیہ)	۲۷۵
زکوۃ مال کا میل ہے جس کا حال ماء مستعمل کی طرح ہے۔	۲۷۲	خمس الخمس اور صدقات واجبہ میں انفصال حقیقی نہیں بلکہ منع الجمع ہے۔	۲۷۵
احادیث صحیحہ سے علت مذکورہ کی تصریح۔	۲۷۲		

عنوان	صفحہ
تقریر خمس الخمس، تحریم صدقات پر مبتنی ہے نہ کہ تحریم صدقات تقریر خمس الخمس پر۔	۲۷۳
سقوط عوض سے رجوع معوض وہیں ہے جہاں زوال معوض، حصول عوض پر موقوف ہو۔ مشتری نے ثمن بائع کو دے دیئے اور مبیع بائع کے پاس ہی ہلاک ہو گیا تو مشتری ثمن کے لئے رجوع کرے گا۔	۲۷۳
زوال معوض اگر عوض کے علاوہ کسی اور علت سے معلل ہو تو جب تک وہ علت باقی رہے گی زوال معوض بیشک رہے گا۔ مریض سے بعلت ضرر فرضیت وضوء ساقط ہو جاتا ہے اور اس کے عوض اس پر تیمم لازم ہوتا ہے۔	۲۷۴
منفصلہ حقیقیہ کو منع خلو لازم ہوتا ہے۔	
بنی ہاشم کے لیے زکوۃ کا عدم جواز ظاہر الروایۃ ہے۔	۲۷۵
جو کچھ ظاہر الروایتہ کے خلاف ہو وہ ہمارے ائمہ کا قول نہیں۔	۲۷۶
قول مرجوع عنہ پر عمل ناجائز ہے۔	۲۷۶
امام طحاوی کی طرف روایت شاذہ کو اختیار کرنے کی نسبت مسلم نہیں۔	۲۷۷
امام طحاوی کے کچھ اختیارات مفردہ ہیں کہ بترک مذہب ان پر عمل کے کوئی معنی نہیں۔	۲۷۷
امام طحاوی کی جلالت شان مسلم مگر عظمت قاہرہ اصل مذہب چیزے دیگر است۔	۲۷۷

Fatawa Rizwia | Volume 10

277 | Author's research that even according to Imam Tahawi, Zahir al-Riwayah is the preferred view, and he explicitly refers to it as "bihi na'khudh". 277 | The attribution of the view contrary to Zahir al-Riwayah (i.e., opting for permissibility) to Imam Tahawi in several books is based on a misunderstanding. 281 | Seventeen "17" reasons based on the internal and external context of Imam Tahawi's own words that demonstrate that the narration of prohibition is preferred by him, not the narration of permissibility. 281 | Six indications from the preceding context (Sabaq-e-Kalam). 281 | Six indications from the succeeding context (Siyaq-e-Kalam). 282 | Indications and evidences from the text itself. 288 | Proof of the prohibition of Zakat for the Bani Hashim from the noble Hadiths. 290 | Giving Zakat to disbelievers, polytheists, Wahhabis, Rafidis, Qadianis, etc., is forbidden. 290 | Obligatory charities (Sadaqat-e-Wajiba) are forbidden for the wealthy, while voluntary charities (Sadaqat-e-Nafla) are permissible. 290 | Giving the value of Zakat or Qurbani to the 'Samar Na Fund'. 291 | Description of Sadaqah al-Fitr. 291 | An Imam taking money from Zakat, sacrifice skins, or oil. 292 | In Sadaqah al-Fitr, the measure of Sa' is considered for four items, while for others, the price is considered. 294 | Fitra of minor children is the responsibility of the father. 294 | Fitra of the woman is not the responsibility of the husband. 294 | If a woman pays the Fitra on behalf of an adult, or a father or husband, permission is required. 294 | Difference between the Nisaab of Sadaqah al-Fitr and Zakat money. 295 | The amount of Sadaqah al-Fitr. 295 | Determining the Sa' using British Rupees. 295 | Quantity of the Shari'i Yard (Gaz). 296 | Fitra of minor children is the responsibility of the father. 296 | The woman's Fitra is neither on the father nor on the husband. 296 | The guest's Fitra is not upon the host. 296 | If rice is given in Fitra, its value will be considered, not its weight. 296 | Determining the Sa' using British Rupees. 297 | The precautionary amount of Fitra. 298 | Research on the weight of a Sa'. 302 | The measure of 'Seer' is not considered in a Sa'. 302 | Determining the Sa' using British Rupees. 302 | Collecting donations in mosques. 303 | Begging without Shari'i necessity is forbidden. 303 | How is it to give to common beggars? 303 | There is no harm in taking if someone gives without being asked. 304 | A specific form of asking/begging. 305 | Giving money intended for the annual Fatiha in the name of the Prophet (PBUH) to the needy. 307 | Giving to beggars; condemnation of begging. 308 | Ruling on the sweets of Milad Sharif.

फ़तावा रज़विया | जिल्द दहम (खंड 10)

277 | लेखक का शोध कि इमाम तह़ावी के अनुसार भी ज़ाहिर अल-रवाया ही पसंदीदा है, और वह स्पष्ट रूप से ज़ाहिर अल-रवाया को ही "बह नाख़ुज़" (इसके साथ हम लेते हैं) कहते हैं। 277 | कई किताबों में इमाम तह़ावी की ओर ज़ाहिर अल-रवाया के विपरीत यानी अनुमति के विकल्प के चयन का श्रेय गलतफहमी के कारण दिया गया है। 281 | इमाम तह़ावी के अपने कलाम के आंतरिक और बाहरी संदर्भों से तर्क के सत्रह "17" कारण कि उनके अनुसार निषेध का वर्णन ही पसंदीदा है न कि अनुमति का। 281 | सबाक़-ए-कलाम (पूर्व संदर्भ) से छह संकेत। 281 | सियाक़-ए-कलाम (अनुवर्ती संदर्भ) से छह संकेत। 282 | इबारत (पाठ) से ही संकेत और साक्ष्य। 288 | हदीस-ए-करीमा से बनी हाशिम के लिए ज़कात की मनाही का प्रमाण। 290 | काफ़िर, मुशरिक, वहाबी, राफ़िज़ी, क़ादियानी आदि को ज़कात देना हराम (वर्जित) है। 290 | अनिवार्य दान (सदक़ात-ए-वाजिबा) धनी व्यक्ति के लिए हराम हैं और स्वैच्छिक दान (सदक़ात-ए-नाफ़िला) जायज़ हैं। 290 | समर ना फ़ंड में ज़कात या क़ुर्बानी की कीमत देना। 291 | सदक़ा-ए-फ़ितर का बयान। 291 | इमाम का ज़कात, क़ुर्बानी की खाल या तेल के पैसे लेना। 292 | सदक़ा-ए-फ़ितर में चार चीज़ों में साअ (एक पैमाना) मान्य है, बाकी में कीमत मान्य है। 294 | नाबालिग बच्चों का फ़ितरा पिता की ज़िम्मेदारी है। 294 | महिला का फ़ितरा पति की ज़िम्मेदारी नहीं है। 294 | यदि कोई महिला किसी बालिग की ओर से, या पिता या पति का फ़ितरा अदा करे, तो अनुमति की आवश्यकता है। 294 | सदक़ा-ए-फ़ितर और ज़कात की रकम के निसाब में अंतर। 295 | सदक़ा-ए-फ़ितर की मात्रा। 295 | अंग्रेजी रुपयों से साअ का निर्धारण। 295 | शरई गज़ की मात्रा। 296 | नाबालिग बच्चों का फ़ितरा पिता की ज़िम्मेदारी है। 296 | महिला का फ़ितरा न पिता पर है और न ही पति पर। 296 | मेहमान का फ़ितरा मेज़बान पर नहीं है। 296 | यदि फ़ितरे में चावल दिया जाए, तो मूल्य का विचार होगा, वज़न का नहीं। 296 | अंग्रेजी रुपयों से साअ का निर्धारण। 297 | फ़ितरा की एहतियाती (सावधानीपूर्ण) मात्रा। 298 | साअ के वज़न का शोध। 302 | साअ में सेर का विचार नहीं है। 302 | अंग्रेजी रुपयों से साअ का निर्धारण। 302 | मस्जिदों में चंदा करना। 303 | शरई ज़रूरत के बिना सवाल (भीख माँगना) करना हराम है। 303 | आम भिखारियों को देना कैसा है? 303 | यदि कोई बिना माँगे दे तो उसे लेने में कोई बुराई नहीं है। 304 | सवाल करने का एक विशेष रूप। 305 | हुज़ूर अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के नाम पर होने वाले वार्षिक फातिहा के पैसे ज़रूरतमंद को देना। 307 | भिखारियों को देना, भीख माँगने की निंदा। 308 | मिलाद शरीफ़ की मिठाई का हुक्म।

۲۷۷ | مصنف کی تحقیق کہ امام طحاوی کے نزدیک بھی ظاہر الروایۃ ہی مختار ہے اور وہ قطعاً ظاہر الروایۃ کو ہی "بہ ناخذ" فرما رہے ہیں۔ ۲۷۷ | متعدد کتابوں میں امام طحاوی کی طرف خلاف ظاہر الروایۃ یعنی اختیار جواز کی نسبت غلط فہمی سے کی گئی ہے۔ ۲۸۱ | امام طحاوی کے اپنے کلام کے محاوی ظاہرہ اور مطاوی باہرہ سے استدلال کی سترہ "۱۷" وجوہ کہ امام طحاوی کے نزدیک روایت تحریم مختار ہے نہ کہ روایت جواز۔ ۲۸۱ | سباق کلام سے چھ قرینے۔ ۲۸۱ | سیاق کلام سے چھ قرینے۔ ۲۸۲ | نفس عبارت سے قرائن و شواہد۔ ۲۸۸ | بنی ہاشم کے لیے زکوۃ کی حرمت کا ثبوت احادیث کریمہ سے۔ ۲۹۰ | کافر، مشرک، وہابی، رافضی، قادیانی وغیرہ کو زکوۃ دینا حرام ہے۔ ۲۹۰ | صدقات واجبہ غنی کے لیے حرام اور صدقات نافلہ جائز۔ ۲۹۰ | سمر نافنڈ میں زکوۃ یا قربانی کی قیمت دینا۔ ۲۹۱ | صدقہ فطر کا بیان۔ ۲۹۱ | امام کو زکوۃ، چرم قربانی یا تیل کے پیسے لینا، ۲۹۲ | صدقہ فطر میں چار چیزوں میں صاع کا اعتبار ہے باقی میں قیمت کا۔ ۲۹۴ | نابالغ بچوں کا فطرہ باپ کے ذمہ ۲۹۴ | عورت کا فطرہ شوہر کے ذمہ نہیں۔ ۲۹۴ | بالغ کی جانب سے باپ یا شوہر کا فطرہ عورت ادا کرے تو اذن کی ضرورت ہے۔ ۲۹۴ | صدقہ فطر اور زر زکوۃ کے نصاب میں فرق۔ ۲۹۵ | صدقہ فطر کی مقدار۔ ۲۹۵ | انگریزی روپوں سے صاع کا تعین۔ ۲۹۵ | شرعی گز کی مقدار۔ ۲۹۶ | نابالغ بچوں کا فطرہ باپ کے ذمہ ہے۔ ۲۹۶ | عورت کا فطرہ نہ باپ پر نہ شوہر پر۔ ۲۹۶ | مہمان کا فطرہ میزبان پر نہیں۔ ۲۹۶ | فطرہ میں چاول دیا جائے تو قیمت کا اعتبار ہوگا وزن کا نہیں۔ ۲۹۶ | انگریزی روپے سے صاع کا تعین۔ ۲۹۷ | فطرہ کی احتیاطی مقدار۔ ۲۹۸ | صاع کے وزن کی تحقیق۔ ۳۰۲ | صاع میں سیر کا اعتبار نہیں۔ ۳۰۲ | انگریزی روپے سے صاع کا تعین۔ ۳۰۲ | مسجدوں میں

چندہ کرنا۔ ۳۰۳ | ضرورت شرعیہ کے بغیر سوال کرنا حرام ہے۔ ۳۰۳ | عام گداگروں کو دینا کیسا ہے؟ ۳۰۳ | بے سوال کوئی دے تو لینے میں حرج نہیں۔ ۳۰۴ | سوال کرنے کی ایک صورت۔ ۳۰۵ | حضور اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے نام ہونے والے سالانہ فاتحہ کے پیسے محتاج کو دینا۔ ۳۰۷ | گداگروں کو دینا، بھیک مانگنے کی مذمت۔ ۳۰۸ | میلاد شریف کی شیرینی کا حکم۔

Volume 10 Fatawa Razawiyya

311: If one person spends all income on children, and another spends on children and also gives charity, who among them is superior? | The excellence of reciting the Holy Quran in Ramadan. :351 327: A method of giving Fatiha money to a war fund. | **Chapter: Sighting of the New Moon** 327: Buying land with Zakat money and dedicating it as Waqf. | News of the new moon via telegram is not reliable, nor is breaking fast based on its news permissible. :352 328: Answer to the reasoning for giving charity to hostile disbelievers from the Hadith "Give charity to people of all religions." | A treatise: "Azka al-Hilal bi-Ibtal ma Ahdatha al-Nas fi Amr al-Hilal" (Telegram news in moon sighting is not reliable). :359 **Book of Fasting** | A rebuttal containing five warnings regarding a newly invented method for moon investigation. :360 331: Doing Suhoor and Iftar with forbidden things. | First Warning: The pure Shariah has based the news of the moon from another city on sufficient testimony or religious continuity (Tawatur), and has set many restrictions and conditions for them to be sufficient and religious. :360 332: Fasting will not be waived for a Hafiz due to leading Tarawih. | Telegram is neither a religious testimony nor a continuous news (Khabar-e-Mutawatir). :360 345: A minor Hafiz could not fast due to reciting Quran in voluntary prayers. | Second Warning: The status of a telegram is worse and more infirm than a letter. :361 346: Fast was broken upon receiving news of moon sighting for Ramadan, but then the news was proven false. | When letters and correspondence are not reliable in religious matters, how can a telegram be? :361 347: Fasting while traveling. | Statements of the leaders of religion on the unreliability of letters. :361 349: The reason for Ramadan occurring in different seasons. | Third Warning: Even if there is no religious flaw in the original news, upon arriving via telegram, its reliability is completely shredded for several reasons. :362 350: Two issues related to the Day of Doubt (Yaum-ush-Shak). | Fourth Warning: Scholars have clarified that giving news of testimony from another city via letter is exclusive to a Shariah Judge (Qazi) appointed by the Sultan to decide cases, to the extent that even a letter of judgment is not accepted otherwise. :362 351: Why is fasting forbidden on five days? | A ruling that is considered contrary to analogy cannot exceed its specific instance. :364

खण्ड 10 फ़तावा रज़विया

311: कोई व्यक्ति पूरी आमदनी बच्चों पर खर्च करे, और दूसरा बच्चों पर भी खर्च करे और खैरात (दान) भी दे, तो उनमें कौन बेहतर है? | रमज़ान शरीफ में कुरान पाक की तिलावत की फज़ीलत (महिमा)। :351 327: फ़ातिहा के रुपये जंग फण्ड में देने की एक सूरत। | **अध्याय: चाँद देखना (रुआयत-ए-हिलाल)** 327: जकात के पैसों से ज़मीन खरीदकर वक्फ करना। | चाँद देखने के मामले में तार (टेलीग्राम) की खबर विश्वसनीय नहीं है और न ही इसकी खबर पर इफ्तार करना जायज़ है। :352 328: हदीस "तसद्दक़ू अला अदियान कुल्लहा" से काफिर हरबी को सदका देने पर दलील का जवाब। | रिसाला: "अज़का अल-हिलाल बि-इब्ताल मा अहदसा अल-नास फी अम्र अल-हिलाल" (चाँद देखने में तार की खबर विश्वसनीय नहीं)। :359 **किताब-उल-सोम (रोज़े की किताब)** | चाँद की तहकीक (जांच) से संबंधित एक नए गढ़े हुए तरीके पर पाँच चेतावनियों वाला खंडन। :360 331: हराम चीज़ों से सहरी और इफ्तार करना। | पहली चेतावनी: शरीअत मुतह्हरा ने दूसरे शहर के चाँद की खबर को शहादत-ए-काफिया (पर्याप्त गवाही) या तवातुर-ए-शरई (धार्मिक निरंतरता) पर आधारित किया है और उनके पर्याप्त और शरई होने के लिए बहुत सी शर्तें और प्रतिबंध लगाए हैं। :360 332: तरावीह पढ़ाने के कारण हाफ़िज़ से रोज़ा माफ नहीं होगा। | तार न तो कोई शरई गवाही है और न ही खबर-ए-मुतवातिर (लगातार खबर)। :360 345: नाबालिग हाफ़िज़ नफ़्ल नमाज़ में कुरान पढ़ने के कारण रोज़ा न रख सके। | दूसरी चेतावनी: तार की हालत खत (पत्र) से भी ज़्यादा खराब और कमज़ोर है। :361 346: रमज़ान के चाँद की खबर मिलने पर रोज़ा तोड़ दिया गया और बाद में वह खबर झूठी निकली। | जब दीनी मामलात में खतों और पत्रों का भरोसा नहीं, तो तार का कैसे हो सकता है। :361 347: सफर में रोज़ा रखना। | खतों के विश्वसनीय न होने पर अइम्मा-ए-दीन (धर्म गुरुओं) के कथन। :361 349: विभिन्न मौसमों में रमज़ान शरीफ आने का कारण। | तीसरी चेतावनी: अगर मूल खबर में कोई शरई खराबी न भी हो, तो तार के ज़रिए आने पर कई वजहों से उसकी विश्वसनीयता पूरी तरह खत्म हो जाती है। :362 350: योम-उश-शक (संदेह के दिन) से संबंधित दो मसले। | चौथी चेतावनी: उलेमा (विद्वानों) ने स्पष्ट किया है कि दूसरे शहर से खत के ज़रिए गवाही की खबर देना सिर्फ काज़ी-ए-शरअ (धार्मिक न्यायाधीश) के साथ खास है जिसे सुल्तान ने मुकदमों के फैसले के लिए नियुक्त किया हो, यहाँ तक कि फैसले का खत भी (अन्यथा) स्वीकार्य नहीं है। :362 351: पाँच दिनों में रोज़ा रखना क्यों मना है? | जो हुक्म कयास (अनुमान) के खिलाफ माना जाता है, वह अपने स्थान से आगे नहीं बढ़ सकता। :364

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

۳۱۱: کوئی کل آمدنی بچوں پر خرچ کرے، اور دوسرا بچوں پر خرچ اور خیرات بھی کرے ان میں کون افضل ہے؟ | رمضان شریف میں قرآن پاک کی تلاوت کی فضیلت۔ :۳۵۱ ۳۲۷: فاتحہ کے روپے جنگی فنڈ میں دینے کی ایک صورت۔ | **باب رؤیۃ الھلال** ۳۲۷: زکوٰۃ سے زمین خرید کر وقف کرنا۔ | رؤیت ہلال میں تار کی خبر معتبر نہیں اور نہ اس کی خبر پر افطار جائز۔ :۳۵۲ ۳۲۸: حدیث تصفّدقوا علی الادیان کلھا سے کفار حربی کو صدقہ دینے پر استدلال کا جواب۔ | ہ رسالہ ازکی الاھلال بابطال ما احدث الناس فی امر الھلال (رویت ہلال میں تار کی خبر معتبر نہیں) :۳۵۹ **کتاب الصوم** | تحقیق ہلال سے متعلق ایک تراشیدہ طریقہ کا پانچ تنبیہات پر مشتمل رد۔ :۳۶۰ ۳۳۱: حرام چیزوں سے سحری اور افطار کرنا۔ | تنبیہ اول: شریعت مطہرہ نے درباره ہلال دوسرے شہر کی خبر کو شہادت کافیہ یا تواتر شرعی پر بناء فرمایا اور ان میں کافی و شرعی ہونے کے لئے بہت قیود و شرائط لگائیں۔ :۳۶۰ ۳۳۲: تراویح پڑھانے کے سبب حافظ سے روزہ ساقط نہیں ہوگا۔ | تار نہ تو کوئی شہادت شرعیہ ہے نہ خبر متواتر۔ :۳۶۰ ۳۴۵: نابالغ حافظ نوافل میں قرآن پاک پڑھنے کے سبب روزہ نہ رکھ سکے۔ | تنبیہ دوم: تار کی حالت خط سے زیادہ ردی و سقیم ہے۔ :۳۶۱ ۳۴۶: رمضان کو رؤیت کی خبر ملنے پر روزہ توڑ دیا گیا اور پھر خبر کی تکذیب ہوگئی۔ | امور شرعیہ میں خطوط و مراسلات کا اعتبار نہیں تو تار کا کیسے ہو سکتا ہے۔ :۳۶۱ ۳۴۷: سفر میں روزہ رکھنا۔ | خطوط کے غیر معتبر ہونے پر ائمہ دین کی عبارات۔ :۳۶۱ ۳۴۹: مختلف موسموں میں رمضان شریف آنے کا سبب۔ | تنبیہ سوم: اگر اصل خبر میں کوئی خلل شرعی نہ بھی ہو تو تار میں آکر کئی وجوہ سے اس کا دامن اعتبار یکسر تار تار ہو جاتا ہے۔ :۳۶۲ ۳۵۰: یوم الشک سے متعلق دو مسائل۔ | تنبیہ چہارم: علماء نے تصریح فرمائی ہے کہ دوسرے

شہر سے بذریعہ خط خبر شہادت دینا صرف قاضی شرع سے خاص جسے سلطان نے فصل مقدمات پر والی مقرر فرمایا ہو یہاں تک کہ حکم کا خط مقبول نہیں۔ :۳۶۲ ۳۵۱: پانچ دنوں میں روزہ کیوں ممنوع ہے ؟ | جو حکم خلاف قیاس مانا جاتا ہے وہ مورد سے آگے تجاوز نہیں کر سکتا۔ :۳۶۴

Fatawa Razawiyya Volume X

- If a telegram from a reliable source is insignificant, then what value does a telegram from a rejected source hold? (365) Page: 406
- When will the testimony of a single person regarding the Ramadan moon be accepted? (365) Page: 406
- Fifth Warning: A letter from a Shariah judge is also only acceptable when two trustworthy men or one man and two just women come from the court and give Shariah testimony that this letter is definitely from that judge, and he wrote it in our presence; otherwise, it is not accepted at all. (365) Page: 406
- If reason deems it impossible for a certain number of people to agree on a false report, then such news is acceptable from everyone, whether Muslim or non-Muslim. (365) Page: 406
- Regarding the unreliability of telegrams, telephones, letters, calendars, etc. (367) Page: 409
- Second Method: Testimony upon Testimony (Shahadat 'ala al-Shahadah), meaning the witnesses did not see the moon themselves, but observers testified before them, and they were made witnesses to that testimony. (367) Page: 409
- Multiple issues related to the Eid prayer. (372) Page: 409
- The method of Testimony upon Testimony. (382) Page: 411
- Predictions are not reliable in moon sighting. (382) Page: 411
- A secondary witness should mention the name of the primary witness, their father, and grandfather, to the point that if they omit it, the judge can reject their testimony. (Footnote) (382) Page: 411
- The Eid moon appearing during the day on the 30th of Ramadan. (388) Page: 412
- Third Method: Testimony upon Judicial Decree (Shahadat 'ala al-Qada), meaning testifying to the decision of a Shariah judge. (388) Page: 412
- News reports and letters are not reliable regarding moon sighting. (390) Page: 412
- Method of Testimony upon Judicial Decree. (390) Page: 412
- Two issues related to the difference in sighting horizons. (392) Page: 413
- Fourth Method: Kitab al-Qadi ila al-Qadi, meaning one Shariah judge writing a letter to another Shariah judge. (392) Page: 413

- Once sighting is established, fasting becomes obligatory wherever the sighting occurs. (403) Page: 413
- The method and conditions of Kitab al-Qadi ila al-Qadi. (403) Page: 414
- Treatise on methods of moon sighting validation (Description of seven Shariah methods and rejection of seven invented methods). (405) Page: 414
- Fifth Method: Istifadah (Widespread Reporting). (405) Page: 414
- There are seven methods in Shariah for proving moon sighting. (405) Page: 414
- The form and conditions of Istifadah. (405) Page: 417
- First Method: Direct testimony of sighting, i.e., the witness of the moon-seer. (406) Page: 417
- In establishing rulings, 'Tawatur' (consecutive reporting) also serves as testimony, and it is even stronger. (406) Page: 417
- Any testimony that contradicts 'Tawatur' is rejected. (406) Page: 417

फतावा-ए-रज़विया जिल्द दहम

- जब मक़बूलुल किताब का तार नाचीज़ है तो मरदूदुल किताब का तार क्या चीज़ है? (365) पृष्ठ: 406
- रमज़ान के चाँद के बारे में अकेले व्यक्ति की गवाही कब स्वीकार की जाएगी? (365) पृष्ठ: 406
- पाँचवीं चेतावनी: शरीअत के क़ाज़ी का पत्र भी केवल उसी समय स्वीकार्य है जब दो विश्वसनीय पुरुष या एक पुरुष और दो न्यायप्रिय महिलाएं न्यायालय से यहाँ आकर शरई गवाही दें कि यह पत्र निश्चित रूप से उसी क़ाज़ी का है और उन्होंने हमारे सामने इसे लिखा है, अन्यथा यह कदापि स्वीकार्य नहीं है। (365) पृष्ठ: 406
- यदि बुद्धि यह असंभव माने कि इतने लोगों का किसी ग़लत ख़बर पर सहमत होना नामुमकिन है, तो ऐसी ख़बर मुस्लिम और काफ़िर सभी की स्वीकार्य है। (365) पृष्ठ: 406
- तार, टेलीफ़ोन, पत्र, जंतरी आदि के अविश्वसनीय होने के वर्णन में। (367) पृष्ठ: 409
- दूसरी पद्धति: शहादत अलल शहादत, यानी गवाहों ने चाँद खुद नहीं देखा बल्कि देखने वालों ने उनके सामने गवाही दी और अपनी गवाही पर उन्हें गवाह बनाया। (367) पृष्ठ: 409
- ईद की नमाज़ से संबंधित विभिन्न मसले। (372) पृष्ठ: 409
- शहादत अलल शहादत की पद्धति। (382) पृष्ठ: 411
- चाँद देखने के मामले में भविष्यवाणी विश्वसनीय नहीं है। (382) पृष्ठ: 411
- उप-गवाह (गवाह-ए-फ़रअ) को चाहिए कि वह मूल गवाह, उसके पिता और दादा सभी का नाम बताए, यहाँ तक कि यदि वह इसे छोड़ देता है तो शासक उसकी गवाही को खारिज कर सकता है। (हाशिया) (382) पृष्ठ: 411
- ईद का चाँद 30 रमज़ान को दिन में दिखाई दे। (388) पृष्ठ: 412
- तीसरी पद्धति: शहादत अलल क़ज़ा, यानी शरीअत के क़ाज़ी के फ़ैसले पर गवाही देना। (388) पृष्ठ: 412
- चाँद देखने के मामले में समाचार पत्रों की ख़बरें और पत्र विश्वसनीय नहीं हैं। (390) पृष्ठ: 412
- शहादत अलल क़ज़ा की पद्धति। (390) पृष्ठ: 412
- मतला (क्षितिज) के अंतर से संबंधित दो मसले। (392) पृष्ठ: 413
- चौथी पद्धति: किताबुल क़ाज़ी इलल क़ाज़ी, यानी शरीअत के एक क़ाज़ी का दूसरे शरीअत के क़ाज़ी को पत्र लिखना। (392) पृष्ठ: 413

- चाँद देखना सिद्ध होने पर रोज़ा रखना अनिवार्य होगा जहाँ भी चाँद देखा जाए। (403) पृष्ठ: 413
- किताबुल क़ाज़ी इलल क़ाज़ी की पद्धति और उसकी शर्तें। (403) पृष्ठ: 414
- चाँद सिद्ध करने के तरीक़ों का रिसाला (चाँद सिद्ध करने के सात शरई तरीक़ों का वर्णन और सात मनगढ़ंत तरीक़ों का खंडन)। (405) पृष्ठ: 414
- पाँचवीं पद्धति: इस्तफ़ाज़ा (व्यापक रिपोर्ट)। (405) पृष्ठ: 414
- चाँद देखने के प्रमाण के लिए शरीअत में सात तरीक़े हैं। (405) पृष्ठ: 414
- इस्तफ़ाज़ा का स्वरूप और उसकी शर्तें। (405) पृष्ठ: 417
- पहली पद्धति: प्रत्यक्ष गवाही, यानी चाँद देखने वाले की अपनी गवाही। (406) पृष्ठ: 417
- आदेशों को सिद्ध करने में 'तवातुर' (निरंतर रिपोर्टिंग) भी गवाही के स्थान पर है बल्कि उससे भी अधिक सशक्त है। (406) पृष्ठ: 417
- जो गवाही तवातुर के विपरीत हो, वह खारिज कर दी जाती है। (406) पृष्ठ: 417

पृष्ठ: 29 / 836

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

- جب مقبول الکتاب کا تار ناچیز ہے تو مردود الکتاب کا تار کیا چیز ہے؟ ۳۶۵ (صفحہ: ۴۰۶)
- ہلالِ رمضان کے بارے میں اکیلے شخص کی گواہی کب قبول ہو گی؟ ۳۶۵ (صفحہ: ۴۰۶)
- تنبیہ پنجم: قاضی شرع کا نامہ بھی صرف اسی وقت مقبول ہے جب دو مرد ثقہ یا ایک مرد دو عورتیں عادل دار القضاء سے یہاں آکر شہادت شرعیہ دیں کہ یہ خط بالیقین اسی قاضی کا ہے اس نے ہمارے سامنے لکھا ہے ورنہ ہرگز قبول نہیں۔ ۳۶۵ (صفحہ: ۴۰۶)
- عقل جتنے شخصوں کا غلط خبر پر اتفاق محال جانے تو ایسی خبر مسلم و کافر سب کی مقبول ہے۔ ۳۶۵ (صفحہ: ۴۰۶)
- تار، ٹیلیفون، خط، جنتری وغیرہ کے غیر معتبر ہونے کے بیان میں۔ ۳۶۷ (صفحہ: ۴۰۹)
- طریق دوم: شہادۃ علی الشہادۃ یعنی گواہوں نے چاند خود نہ دیکھا بلکہ دیکھنے والوں نے ان کے سامنے گواہی دی اور اپنی گواہی پر انہیں گواہ کیا۔ ۳۶۷ (صفحہ: ۴۰۹)
- عید کی نماز سے متعلق متعدد مسائل۔ ۳۷۲ (صفحہ: ۴۰۹)
- شہادۃ علی الشہادۃ کا طریقہ۔ ۳۸۲ (صفحہ: ۴۱۱)
- رؤیت ہلال میں پیشگوئی معتبر نہیں۔ ۳۸۲ (صفحہ: ۴۱۱)
- گواہ فرع کو چاہئے کہ گواہ اصل اور اس کے باپ اور دادا سب کا نام دے ذکر کرے یہاں تک کہ اگر اسے چھوڑ دے گا تو حاکم اس کی گواہی کو رد کر سکتا ہے۔ (حاشیہ) ۳۸۲ (صفحہ: ۴۱۱)
- عید کا چاند ۳۰ رمضان کو دن میں نظر آئے۔ ۳۸۸ (صفحہ: ۴۱۲)
- طریق سوم: شہادۃ علی القضاء یعنی قاضی شرع کے فیصلہ پر گواہی دینا۔ ۳۸۸ (صفحہ: ۴۱۲)

- رؤیت ہلال میں اخبار کی خبریں اور خطوط معتبر نہیں۔ ۳۹۰ (صفحہ: ۴۱۲)
- شہادۃ علی القضاء کا طریقہ۔ ۳۹۰ (صفحہ: ۴۱۲)
- اختلافِ مطالع سے متعلق دو مسائل۔ ۳۹۲ (صفحہ: ۴۱۳)
- طریق چہارم: کتاب القاضی الی القاضی یعنی ایک قاضی شرع کا دوسرے قاضی شرع کے نام خط لکھنا۔ ۳۹۲ (صفحہ: ۴۱۳)
- رؤیت ثابت ہونے پر روزہ رکھنا فرض ہوگا جہاں بھی رؤیت ہو۔ ۴۰۳ (صفحہ: ۴۱۳)
- کتاب القاضی الی القاضی کا طریقہ اور اس کے شرائط ۴۰۳ (صفحہ: ۴۱۴)
- ۵ رسالہ طرق اثباتِ ہلال (اثباتِ ہلال کے سات شرعی طریقوں کا بیان اور سات اختراعی طریقوں کا رد)۔ ۴۰۵ (صفحہ: ۴۱۴)
- طریق پنجم: استفاضہ۔ ۴۰۵ (صفحہ: ۴۱۴)
- ثبوتِ رؤیت ہلال کے لیے شرع میں سات طریقے ہیں۔ ۴۰۵ (صفحہ: ۴۱۴)
- استفاضہ کی صورت اور اس کے شرائط ۴۰۵ (صفحہ: ۴۱۷)
- طریق اول: خود شہادت رؤیت یعنی چاند دیکھنے والے کی گواہی۔ ۴۰۶ (صفحہ: ۴۱۷)
- اثبات احکام میں تواتر بھی قائم مقام شہادت بلکہ اس سے اقویٰ ہے۔ ۴۰۶ (صفحہ: ۴۱۷)
- جو شہادت تواتر کے خلاف ہو وہ رّد کردی جاتی ہے۔ ۴۰۶ (صفحہ: ۴۱۷)

Fatawa Razawiya, Volume 10

- Tawatur is acceptable for denial, but testimony is not heard. (417)
- Sixth Method: Completion of the count, meaning when thirty days of a month are completed, the crescent of the next month will be proven automatically, even if there is no sighting testimony or decree of 'Istifadah' etc. (419)
- Seventh Method: The sound of cannons for the people of the villages surrounding the city is among the proofs for the moon sighting. (420)
- When will the proclamation in an Islamic city be acted upon? (420)
- Caution: Regarding the crescent moon of months other than Ramadan and Shawwal. (421)
- There are seven incorrect methods of proving the crescent moon that are prevalent in the world. (423)
- First: Narration of sighting (425)
- Second: Rumors (425)
- Third: Letters and newspapers (426)
- Fourth: Telegrams, which are even more unreliable than letters. (427)
- Fifth: Mention of almanacs (428)
- Sixth: Conjectures and circumstantial evidence (428)
- Seventh: Some inductive and some invented rules (429)
- Two issues related to moon sighting (429)
- Definition of 'Istifadah'. (432)
- One person seeing the moon in clouds and dust. (436)
- What is the ruling if there is a difference regarding the Shaban moon and there are clouds on the 29th of Ramadan and Eid? (437)
- "People of such and such city saw the moon," such testimony is not reliable. (441)
- Meaning of "The day of your fast is the day of your sacrifice." (442)
- Whether scholars are included in the judge's ruling or not. (442)
- A question regarding the sighting of Eid al-Adha. (443)
- The size of the moon is not reliable, nor are almanacs and timekeepers. (444)
- The testimony of a 'Fasiq' (sinner) is not reliable. (446)
- Difference of horizons is not reliable. (447)
- Treatise: 'Al-Budoor al-Ajilah fi Umur al-Ahillah' (Detailed rulings on moon sighting). (449)

- Section One: On the ruling of moon sighting and related issues and benefits, consisting of fifteen crescents. (449)
- What is 'Fard al-Kifayah'? (450)
- If the moon has appeared and was not seen, they will unintentionally be involved in the prohibited act of fasting on Eid day. (450)
- It is necessary to search for the Dhul-Hijjah moon on the 29th of Dhul-Qi'dah. (450)
- That which leads to an obligatory act (Fard) is itself Fard, and that which leads to a necessary act (Wajib) is itself Wajib. (451)
- Caution: People are of three types: (1) 'Adil' (just), (2) 'Mastur' (unknown status), (3) 'Fasiq' (sinner). (452)
- Definitions of 'Adil', 'Mastur', and 'Fasiq'. (452)
- A minor sin becomes a major sin through persistence. (452)
- In countries where there is an Islamic state, the Sunni scholar who has the most knowledge of Fiqh (jurisprudence) is the leader of the Muslims according to Sharia. (454)

फ़तावा रज़विया, जिल्द १०

- नकार (नफी) पर तवातुर स्वीकार्य है और गवाही अनसुनी। (४१७)
- छठा तरीका: इक़माल-ए-अद्दत यानी जब एक महीने के तीस दिन पूरे हो जाएं तो साथ वाले महीने का चाँद अपने आप ही साबित हो जाएगा, चाहे उसके लिए देखने की गवाही या इस्तफ़ाज़ा का हुक्म आदि न हो। (४१९)
- सातवां तरीका: शहर के आस-पास के गांवों वालों के लिए तोपों की आवाज़ चाँद साबित होने की दलीलों में से है। (४२०)
- इस्लामी शहर में मुनादी (घोषणा) पर अमल कब होगा? (४२०)
- चेतावनी: रमज़ान और शव्वाल के अलावा अन्य महीनों के चाँद के बारे में। (४२१)
- चाँद साबित करने के सात गलत तरीके जो दुनिया में बहुत प्रचलित हैं। (४२३)
- पहला: चाँद देखने की कहानी (४२५)
- दूसरा: अफ़वाह (४२५)
- तीसरा: पत्र और समाचार पत्र (४२६)
- चौथा: टेलीग्राम (तार), जो पत्रों से भी ज़्यादा अविश्वसनीय है। (४२७)
- पांचवां: पंचांग (जंतरी) का वर्णन (४२८)
- छठा: अनुमान और परिस्थितिजन्य साक्ष्य (४२८)
- सातवां: कुछ आगमनात्मक (inductive) और कुछ आविष्कारित नियम (४२९)
- चाँद देखने से संबंधित दो मसले (४२९)
- 'इस्तफ़ाज़ा' की परिभाषा। (४३२)
- बादल और धूल में एक व्यक्ति का चाँद देखना। (४३६)
- शाबान के चाँद में मतभेद हो और रमज़ान व ईद की २९ तारीख को बादल हों तो क्या हुक्म है? (४३७)
- "फलां शहर वालों ने चाँद देखा," ऐसी गवाही विश्वसनीय नहीं है। (४४१)
- "यौम-ए-सौमकुम यौम-ए-नहरकुम" के अर्थ। (४४२)
- क्या विद्वान काज़ी के हुक्म में शामिल हैं या नहीं। (४४२)
- ईद-उल-अज़हा के चाँद देखने से संबंधित प्रश्न। (४४३)

- चाँद के बड़े होने का कोई एतबार (भरोसा) नहीं है, न ही पंचांग और समय बताने वालों (मोक़्क़तीन) का। (४४४)
- फासिक (पापी) की गवाही मान्य नहीं है। (४४६)
- क्षितिज (मताल-ए) का अंतर मान्य नहीं है। (४४७)
- रिसाला 'अल-बुद्दूर अल-आज़िला फ़ी उमूर अल-अहिल्लाह' (चाँद देखने के विस्तृत नियम)। (४४९)
- पहला अध्याय: चाँद देखने का हुक्म और उससे संबंधित मसले और लाभ, जिसमें पंद्रह चाँद शामिल हैं। (४४९)
- फ़र्ज़-ए-किफ़ाया किसे कहते हैं? (४५०)
- अगर चाँद हो गया और नहीं देखा गया, तो वे अनजाने में ईद के दिन रोज़ा रखने के हराम काम में शामिल हो जाएंगे। (४५०)
- २९ ज़िल-क़ादा को ज़िल-हिज्जा का चाँद तलाश करना ज़रूरी है। (४५०)
- जो चीज़ फ़र्ज़ तक पहुँचाती है वह फ़र्ज़ है, और जो वाजिब तक पहुँचाती है वह वाजिब है। (४५१)
- चेतावनी: लोग तीन प्रकार के होते हैं। (१) आदिल (सच्चा) (२) मस्तूर (अज्ञात धार्मिक स्थिति) (३) फासिक (पापी)। (४५२)
- आदिल, मस्तूर और फासिक की परिभाषाएं। (४५२)
- छोटा गुनाह (सग़ीरा) बार-बार करने से बड़ा गुनाह (कबीरा) बन जाता है। (४५२)
- जहाँ इस्लामी राज्य है, उन देशों में जो सुन्नी विद्वान फ़िक़्ह (न्यायशास्त्र) का सबसे अधिक ज्ञान रखता हो, वह शरिया के अनुसार मुसलमानों का सरदार है। (४५४)

पृष्ठ ८३६ का ३०

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

- نفی پر تواتر مقبول ہے اور شہادت نامسموع ۔ (۴۱۷)
- طریق ششم: اکمال عدت یعنی جب ایک مہینہ کے تیس دن پورے ہو جائیں تو ماہ متصل کا ہلال آپ ہی ثابت ہوجائے گا اگر چہ اس کے لیے رؤیت شہادت اور حکم استفاضہ وغیرہ کچھ نہ ہو۔ (۴۱۹)
- طریق ہفتم : توپوں کی آواز حوالی شہر کے دیہات والوں کے لیے دلائل ثبوت ہلال سے ہے۔ (۴۲۰)
- اسلامی شہر میں منادی پر عمل کب ہوگا؟ (۴۲۰)
- تنبیہ: درباره ہلال غیر رمضان و شوال۔ (۴۲۱)
- ثبوت ہلال کے غلط طریقے جو جہاں میں زیادہ رائج ہیں وہ سات ہیں۔ (۴۲۳)
- یکم : حکایت رؤیت (۴۲۵)
- دوم: افواہ (۴۲۵)
- سوم : خطوط و اخبار (۴۲۶)
- چہارم : تار جو کہ خط سے بھی زیادہ بے اعتبار ہے ۔ (۴۲۷)
- پنجم : جنتریوں کا بیان (۴۲۸)
- ششم : قیاسات و قرائن (۴۲۸)
- ہفتم : کچھ استقرائی اور کچھ اختراعی قاعدے (۴۲۹)
- رؤیت ہلال سے متعلق دو مسائل (۴۲۹)
- استفاضہ کی تعریف ۔ (۴۳۲)

- ابر و غبار میں ایک شخص چاند دیکھے۔ (۴۳۶)
- شعبان کے چاند میں اختلاف ہو اور رمضان اور عید میں ۲۹ کو ابر ہو تو کیا حکم ہے؟ (۴۳۷)
- فلاں شہر والوں نے چاند دیکھا، ایسی گواہی معتبر نہیں۔ (۴۴۱)
- یوم صومکم یوم نحرکم کے معنی۔ (۴۴۲)
- قاضی کے حکم میں علماء ہیں یا نہیں۔ (۴۴۲)
- عید الاضحیٰ کی رؤیت سے متعلق سوال۔ (۴۴۳)
- چاند بڑے ہونے کا اعتبار نہیں، یو نہی جنتری اور موقتین کا۔ (۴۴۴)
- فاسق کی شہادت معتبر نہیں۔ (۴۴۶)
- اختلاف مطالع معتبر نہیں۔ (۴۴۷)
- رسالہ البدور الاجلۃ فی امور الاھلۃ (رؤیت ہلال کے تفصیلی احکام) (۴۴۹)
- فصل اول: رؤیت ہلال کے حکم اور اس کے متعلق مسائل و فوائد میں پندرہ ہلال پر مشتمل۔ (۴۴۹)
- فرض کفایہ کسے کہتے ہیں ۔ (۴۵۰)
- اگر چاند ہو گیا اور نہ دیکھا تو نادانستہ عید کے دن روزہ حرام میں مبتلا ہوں گے۔ (۴۵۰)
- ۲۹ ذی القعدہ کو ہلال ذی الحجہ کی تلاش ضروری ہے۔ (۴۵۰)
- موصل الی الفرض فرض، اور موصل الی الواجب واجب ہوتا ہے۔ (۴۵۱)
- تنبیہ : لوگ تین قسم ہیں۔ (۱) عادل (۲) مستور (۳) فاسق (۴۵۲)
- عادل، مستور اور فاسق کی تعریفات۔ (۴۵۲)
- صغیرہ اصرار سے کبیرہ ہو جاتا ہے۔ (۴۵۲)
- جہاں ریاست اسلامی ہے ان بلاد میں جو عالم دین سنی المذہب سب سے زیادہ علم فقہ رکھتا ہو وہ بحکم شرع سردار مسلمانان ہے۔ (۴۵۴)

Volume 10 Fatawa Razawiya

469 | It is the common custom that the moon of the third night does not set until the time for Isha arrives. | 455 | Caution: Nowadays, even in Islamic states, judges and officials are often ignorant (of religious law), so a religious scholar takes precedence over them, and in case of disagreement, it is mandatory to act upon the fatwa of the scholar. 471 | Caution: A letter is acceptable in some cases; Kitab al-Qadhi ila al-Qadhi, i.e., when a Sharia judge writes to another Sharia judge, it is binding evidence under numerous conditions. | 455 | An anecdote from the time of Imam al-Haramayn Abu al-Ma'ali (mercy of Allah be upon him). 471 | Market rumors are essentially nothing (have no weight). | 455 | Caution: Religious knowledge consists of Fiqh (jurisprudence) and Hadith. 477 | Certainty is of two types: (1) Shari'i (legal) (2) Urfi (conventional). | 455 | Compound ignorance (Jahl-e-Murakkab) is a thousand times worse than simple ignorance (Jahl-e-Basit). 477 | Failing to differentiate between conventional and legal perception is an explicit error. | 457 | On the evening there is a possibility of sighting the crescent moon, until there is an order from a Sharia judge or a fatwa from a religious scholar, guns should absolutely not be fired nor fireworks used even for worldly purposes. 478 | What is the meaning of the exalted saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), "Two months do not decrease"? | 458 | According to the Hadith, those who give fatwas without knowledge are astray and lead others astray. | | 459 | Supplications for sighting the crescent moon. | Invalidators of Fasting | | 481 | If a woman inserts medicine or a suppository into her vagina, or if semen is discharged from a man due to foreplay. | 461 | Chapter Two: Regarding matters that have no credibility concerning the investigation of the crescent moon; this consists of twenty segments. 485 | Having a betel leaf (paan) quid remaining in the mouth until morning. | 461 | Who are the people of astronomy (ahl-e-hay'at)? 485 | Passing wind while performing Istinja (cleaning with water). | 461 | In the correct school of thought, astronomers are not relied upon even if they are trustworthy and upright. 486 | Eating betel leaf (paan), smoking tobacco, or taking snuff while fasting. | 463 | Caution: This means that what they say based on astronomy is not accepted; otherwise, if they testify to a sighting, they are like other people whose testimony is heard, and their testimony will be accepted under the same conditions. 486 | Fasting is not broken by sour belching. | 468 | It is also proven through the science of astronomy that it is possible for a 29-day moon to appear larger than some 30-day moons. | | 469 | According to astronomy, it is proven that sometimes the crescent of

the 29th is conceived to be higher and longer-lasting than some crescents of the 30th.

Page 31 of 836

जिल्द दहम फ़तावा रज़विया

४६९ | आम तौर पर यह आदत है कि तीसरी रात का चाँद तब तक नहीं डूबता जब तक इशा का समय न हो जाए। | ४५५ | चेतावनी: आजकल इस्लामी रियासतों में भी क़ाज़ी और शासक अक्सर अनपढ़ (दीनी इल्म से कोरे) होते हैं, तो आलिम-ए-दीन उन पर भी मुक़द्दम है और मतभेद के समय आलिम के फ़तवे पर ही अमल करना अनिवार्य है। ४७१ | चेतावनी: पत्र कुछ स्थितियों में स्वीकार्य होता है; किताब अल-क़ाज़ी इलल-क़ाज़ी, यानी जब शरीयत का शासक दूसरे शरीयत के शासक को पत्र लिखे, तो वह कई शर्तों के साथ पुख़्ता दलील है। | ४५५ | इमाम अल-हरमैन अबुल मआली (रहमतुल्लाहि अलैहि) के ज़माने का एक वाक़या। ४७१ | बाज़ारी अफ़वाह की कोई हैसियत नहीं है। | ४५५ | चेतावनी: दीन का इल्म फ़िक़्ह और हदीस है। ४७७ | यक़ीन दो प्रकार का होता है (१) शरई (धार्मिक/कानूनी) (२) उर्फ़ी (प्रचलित)। | ४५५ | जहल-ए-मुरक्कब (वह अज्ञानता जिसमें इंसान को यह भी न पता हो कि वह अज्ञानी है), जहल-ए-बसीत (सरल अज्ञानता) से हज़ार गुना बदतर है। ४७७ | प्रचलित और शरई बोध में अंतर न करना स्पष्ट गलती है। | ४५७ | जिस शाम चाँद दिखने की संभावना हो, जब तक शरीयत के शासक का हुक्म या आलिम-ए-दीन का फ़तवा न आ जाए, तब तक किसी भी कारण से बंदूकें न चलाई जाएँ और न ही शोर-शराबे वाली आतिशबाज़ी की जाए, यहाँ तक कि अपने दुनियावी कामों के लिए भी नहीं। ४७८ | हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के इस इरशाद "दो महीने कम नहीं होते" का क्या अर्थ है? | ४५८ | हदीस के अनुसार बिना इल्म के फ़तवा देने वाले ख़ुद भी गुमराह हैं और दूसरों को भी गुमराह करते हैं। | | ४५९ | चाँद देखने की दुआएँ। | रोज़े को तोड़ने वाली चीज़ें (मुफ़सिदात-ए-सोम) | | ४८१ | औरत शर्मगाह में दवा या बत्ती डाले या छेड़छाड़ की वजह से मर्द की मनी (वीर्य) निकल जाए। | ४६१ | अध्याय दो: उन मामलों के बारे में जिनका चाँद की जाँच-पड़ताल में कोई भरोसा नहीं, यह बीस हिस्सों पर आधारित है। ४८५ | सुबह तक मुँह में पान का बीड़ा दबा रहे। | ४६१ | अहल-ए-हय्यत (खगोलशास्त्री) कौन लोग हैं? ४८५ | पानी से इस्तिंजा करने में हवा (रियाह) ख़ारिज हो। | ४६१ | सही मज़हब में खगोलशास्त्रियों का कोई एतबार नहीं चाहे वे कितने ही भरोसेमंद और न्यायप्रिय क्यों न हों। ४८६ | रोज़े की हालत में पान खाना, तम्बाकू पीना, नसवार लेना। | ४६३ | चेतावनी: इस मसले का अर्थ यह है कि जो बात वे खगोलशास्त्र के आधार पर कहें वह स्वीकार्य नहीं है, अन्यथा यदि वे चाँद देखने की गवाही दें तो वे अन्य लोगों के समान हैं जिनकी गवाही सुनी जाती है, उनकी गवाही भी स्वीकार की जाएगी। ४८६ | खट्टी डकार से रोज़ा नहीं टूटता। | ४६८ | खगोलशास्त्र के

अनुसार भी यह साबित है कि २९ का चाँद कुछ ३० के चाँदों से बड़ा होना संभव है। | | ४६९ | खगोलशास्त्र के अनुसार यह साबित है कि कभी उनतीस का चाँद तीस के कुछ चाँदों से ऊँचा और ज़्यादा समय तक रहने वाला हो सकता है।

पृष्ठ 31 का 836

جلد دہم فتاوی رضویہ

۴۶۹ | عادت اکثری یوں ہے کہ تیسری شب کا چاند غروب نہیں ہوتا جب تک عشاء کا وقت نہ آجائے۔ | ۴۵۵ | تنبیہ : آج کل اسلامی ریاستوں میں بھی قضاہ و حکام اکثر بے علم ہوتے ہیں تو عالم دین ان پر بھی مقدم اور وقت اختلاف فتوائے عالم پر ہی عمل واجب ہے۔ ۴۷۱ | تنبیہ : خط بعض صورتوں میں مقبول ہوتا ہے ، کتاب القاضی الی القاضی ، یعنی حاکم شرع حاکم شرع کو خط لکھے تو بشرائط کثیرہ حجت ملزمہ ہے۔ | ۴۵۵ | امام الحرمین ابوالمعالی رحمتہ اللہ علیہ کے زمانے کی ایک حکایت۔ ۴۷۱ | بازاری افواہ اصلاً کوئی چیز نہیں۔ | ۴۵۵ | تنبیہ : علم دین فقہ وحدیث ہے۔ ۴۷۷ | یقین دو قسم کا ہوتا ہے (۱۱) شرعی (۲۲) عرفی۔ | ۴۵۵ | جہلِ مرکب، جہل بسیط سے ہزار درجہ بدتر ہے۔ ۴۷۷ | مدرک عرفی و شرعی میں فرق نہ کرنا صریح خطا ہے۔ | ۴۵۷ | جس شام احتمال ہلال ہو جب تک حکمِ حاکم شرعی یا فتوائے عالم دین نہ ہو ہر گز ہر گز کسی وجہ سے بندوقیں یا آواز کی آتشبازی اپنے دنیوی کاموں کے لیے بھی نہ کریں۔ ۴۷۸ | حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے ارشادِ عالی "شھرانِ لا ینقصان" کا کیا مطلب ہے؟ | ۴۵۸ | بغیر علم کے فتوی دینے والے بحکمِ حدیث ضال و مضل ہیں۔ | | ۴۵۹ | رؤیت ہلال کی دعائیں۔ | مفسداتِ صوم | | ۴۸۱ | عورت شرمگاہ میں دوا یا بتی ڈالے یا تلاعب سے مرد کو منی نکلے۔ | ۴۶۱ | فصلِ دوم: ان امور میں جن کا درباره تحقیقِ ہلال کچھ اعتبار نہیں، یہ بیس قمر پر مشتمل ہے۔ ۴۸۵ | صبح تک پان کا بیڑا منہ میں پڑا رہے۔ | ۴۶۱ | اہل ہیئت کون لوگ ہیں؟ ۴۸۵ | پانی سے استنجا کرنے میں ریاح خارج ہو۔ | ۴۶۱ | صحیح مذہب میں اہل ہیئت کا اعتبار نہیں اگر چہ وہ ثقہ عادل ہوں۔ ۴۸۶ | روزہ کی حالت میں پان کھانا، تمباکو پینا، نسوار لینا۔ | ۴۶۳ | تنبیہ : اس مسئلہ کے یہ معنی ہیں جو بات وہ بطور ہیئت کہیں قبول نہیں ورنہ اگر شہادت

رویت ادا کریں تو مثل اور لوگوں کے ہیں جن شرائط سے اوروں کی گواہی سنی جاتی ہے ان کی بھی گواہی قبول ہو گی۔ ۴۸۶ | کھٹی ڈکار سے روزہ نہیں ٹوٹتا۔ | ۴۶۸ | بطور علم ہیئت بھی ثابت ہے کہ ۲۹ کا چاند بعض ۳۰ کے چاندوں سے بڑا ہونا ممکن ہے۔ | | ۴۶۹ | از روئے ہیئت ثابت ہے کہ کبھی انتیس کا ہلال تیس کے بعض ہلالوں سے اونچا اور دیر پا ہونا منصور ہے۔

Fatawa Razawiyya, Volume 10

486 | Things that break the fast. | Research on a thing without reality is intellectually impossible. | 492 487 | Ruling on bloodletting and enemas? | Rulings on various things entering the body of a fasting person from the outside. | 492 489 | Treatise: 'Al-I'lam bi-Hal al-Bukhur fi al-Siyam' (How smoke from incense, frankincense, etc., entering through the mouth or nose breaks the fast). | Imposing impossible tasks and tasks beyond one's capacity is invalid. | 495 490 | If smoke or dust enters the throat or brain unintentionally, the fast is not broken, even if one remembers they are fasting. | The persistence of a thing while its reality is negated, and the union of essence with its opposite, are invalid. | 495 492 | If a fasting person intentionally lets smoke or dust enter their throat or brain, without being in a state of forgetting the fast, the fast will be invalidated. | A critically ill person close to death who was forced to drink medicine—the fast is broken. | 495 492 | The matter of dust and smoke depends on unintentional entry versus intentional intake; the first does not invalidate, the second does. | If someone fed a fasting person by threatening to kill them, the fast is lost. | 495 492 | The reality of fasting is confined to refraining from things that break the fast according to Sharia. | Someone suffering from extreme hunger who ate or drank out of necessity—the fast is broken, although they are not a sinner. | 495 494 | Sharia obligations are limited to one's capacity. | If something that breaks the fast enters the throat while sleeping, the fast is broken. | 495 494 | The negation of reality necessarily implies the negation of the thing itself. | The moisture remaining in the mouth after rinsing does not break the fast. | 497 494 | The reality of marriage consists of offer and acceptance. | A subtle point. | 497 494 | A woman cannot become someone's wife through a mere offer without acceptance. | A cause leading to something is of two types: one leading to it entirely and the other leading to it rarely. | 497 494 | The reality of Zakat is making a poor person the owner of the wealth. | Intentional entry of water into the ear, according to the most correct opinion, invalidates the fast. | 498 494 | In the blessed time of our master Christ (peace be upon him), no recipient for Zakat will be found. | While bathing or entering a river, if water enters the ear unintentionally, the fast is not broken. | 498 494 | Components dropped due to necessity are part of the scope of components, not the core original reality of the components. | If a baker cooks food all day in the heat of summer and it affects the fast due to weakness, then he should cook for half the day. | 500

फतावा रज़विया, खंड 10

486 | रोज़े को तोड़ने वाली चीज़ें। | बिना वास्तविकता के किसी चीज़ की शोध करना बौद्धिक रूप से असंभव है। | 492 487 | रक्तमोक्षण और एनिमा का नियम? | बाहर से रोज़ेदार के शरीर के अंदर जाने वाली विभिन्न वस्तुओं के नियम। | 492 489 | ग्रंथ: 'अल-इलाम बि-हाल अल-बखुर फ़ी अस-सियाम' (अगरबत्ती, लोबान आदि का धुआं मुंह या नाक से किस प्रकार अंदर जाने से रोज़ा टूटता है)। | असंभव कार्यों और सामर्थ्य से बाहर के कार्यों का थोपा जाना अमान्य है। | 495 490 | यदि धुआं या धूल बिना इरादे के गले या दिमाग में चली जाए, तो रोज़ा नहीं टूटेगा, चाहे रोज़ेदार होना याद हो। | वास्तविकता के अभाव के साथ किसी चीज़ का बना रहना, और मूल सार का उसके विपरीत के साथ मिलन अमान्य है। | 495 492 | यदि रोज़ेदार जानबूझकर धुआं या धूल अपने गले या दिमाग में जाने दे, बिना रोज़ा भूले हुए, तो रोज़ा खराब हो जाएगा। | मृत्यु के निकट बीमार व्यक्ति जिसने मजबूरी में दवा पी ली—रोज़ा टूट गया। | 495 492 | धूल और धुएं का मामला बिना इरादे के प्रवेश और जानबूझकर सेवन पर निर्भर करता है; पहला रोज़ा नहीं तोड़ता, दूसरा तोड़ता है। | यदि किसी ने हत्या की धमकी देकर रोज़ेदार को कुछ खिला दिया, तो रोज़ा खत्म हो गया। | 495 492 | रोज़े की वास्तविकता शरीयत के अनुसार रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों से परहेज करने तक ही सीमित है। | अत्यधिक भूख से पीड़ित व्यक्ति जिसने मजबूरी में कुछ खाया या पिया—रोज़ा टूट गया, हालांकि वह गुनहगार नहीं होगा। | 495 494 | शरीयत की ज़िम्मेदारियाँ सामर्थ्य के अनुसार सीमित हैं। | सोते समय गले में रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ चली जाए तो रोज़ा टूट जाता है। | 495 494 | वास्तविकता का अभाव निश्चित रूप से स्वयं वस्तु के अभाव को दर्शाता है। | कुल्ला करने के बाद मुंह में रहने वाली नमी रोज़ा नहीं तोड़ती। | 497 494 | निकाह की वास्तविकता ईजाब (प्रस्ताव) और कुबूल (स्वीकृति) है। | सूक्ष्म बिंदु। | 497 494 | कोई भी महिला मात्र प्रस्ताव से, बिना स्वीकृति के किसी की पत्नी नहीं बन सकती। | किसी चीज़ की ओर ले जाने वाले कारण दो प्रकार के होते हैं: एक जो पूरी तरह से ले जाता है, और दूसरा जो शायद ही कभी ले जाता है। | 497 494 | ज़कात की वास्तविकता एक गरीब व्यक्ति को धन का स्वामी बनाना है। | कान में जानबूझकर पानी डालना, सबसे सही राय के अनुसार रोज़ा तोड़ देता है। | 498 494 | हमारे स्वामी ईसा मसीह (उन पर शांति हो) के धन्य समय में, ज़कात का कोई पात्र नहीं मिलेगा। | नहाते समय या नदी में जाते समय यदि पानी कान में अनजाने में चला जाए, तो रोज़ा नहीं टूटता। | 498 494 | आवश्यकता के कारण छोड़े गए स्तंभ (अर्कान) स्तंभों की गुंजाइश का हिस्सा हैं, न कि मूल वास्तविकता का। | यदि कोई नानबाई

गर्मी के दिनों में सारा दिन खाना बनाता है और कमजोरी के कारण रोज़े में परेशानी आती है, तो उसे आधा दिन ही पकाना चाहिए। | 500

पृष्ठ 836 का 32

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

۴۸۶ | روزے کے نواقض۔ | تحقیق شے بے حقیقت شئی محال عقلی ہے۔ | ۴۹۲ ۴۸۷ | فصد اور پچکاری کا حکم؟ | خارج سے جوف صائم میں داخل ہونے والی مختلف اشیاء کے احکام۔ | ۴۹۲ ۴۸۹ | رسالہ الاعلام بحال البخور فی الصیام (اگر بتی، لوبان وغیرہ کا دھواں منہ یا ناک میں کس طرح جانے سے روزہ ٹوٹتا ہے) | تکلیف بالمحال اور تکلیف مالا یطاق باطل ہے۔ | ۴۹۵ ۴۹۰ | دھواں یا غبار حلق یا دماغ میں بلا قصد چلا جائے تو روزہ نہ جائے گا اگرچہ روزہ دار ہونا یاد ہو۔ | بقاء شئی مع انتقاء حقیقت اور اجماع ذات و منافی ذات باطل ہیں۔ | ۴۹۵ ۴۹۲ | صائم اگر دھواں یا غبار اپنے حلق یا دماغ میں عمداً، بے حالت نسیان صوم داخل کرے گا تو روزہ فاسد ہوگا۔ | بیمار قریب الموت نے مجبورا دوا پی پی تو روزہ ٹوٹ گیا۔ | ۴۹۵ ۴۹۲ | مسئلہ غبار و دخان میں دخول بلا قصد اور ادخال بالقصد پر مدار کار ہے، اول غیر مفسد اور ثانی مفسد ہے۔ | کسی نے قتل کی دھمکی دے کر روزہ دار کو کچھ کھلایا تو روزہ جاتا رہا۔ | ۴۹۵ ۴۹۲ | حقیقت صوم، مفطرات شرعیہ سے امساک میں محصور ہے۔ | مخمصہ والے مفطر نے مجبوراً کچھ کھایا پیا تو روزہ ٹوٹ گیا اگر چہ گنہگار نہ ہو گا۔ | ۴۹۵ ۴۹۴ | تکالیف شرعیہ قدر وسع پر مقصور ہیں۔ | سوتے ہوئے حلق میں مفطر چلا جائے تو روزہ ٹوٹ جاتا ہے۔ | ۴۹۵ ۴۹۴ | انتقائے حقیقت کو انتقائے شئی قطعاً لازم ہے۔ | کلی کرنے کے بعد جو تری منہ میں رہتی ہے مفطر نہیں۔ | ۴۹۷ ۴۹۴ | حقیقت نکاح ایجاب و قبول ہے۔ | نکتہ دقیقہ | ۴۹۷ ۴۹۴ | کوئی عورت مجرد ایجاب سے بغیر قبول کے کسی کی زوجہ نہیں بن سکتی۔ | سبب مفضی الی الشئی دو قسم ہے، ایک مفضی کلیتہً اور دوسرا مفضی نادراً۔ | ۴۹۷ ۴۹۴ | حقیقت زکوۃ تملیک فقیر ہے۔ | کان میں پانی کا بالقصد ادخال، اصح الاقوال پر مفسد صوم ہے۔ | ۴۹۸ ۴۹۴ | زمان برکت نشان

سید نا مسیح کلمتہ اللہ صلوات اللہ وسلامہ علیہ میں زکوۃ کا کوئی مصرف نہ ملے گا۔ | نہاتے یادر یا میں داخل ہوتے ہوئے پانی اگر کان میں چلا جائے تو روزہ نہیں ٹوٹتا۔ | ۴۹۸ ۴۹۴ | ارکان ساقطہ بضرورت، حقیقت ارکان سعت ہوتے ہیں نہ کہ ارکان اصل حقیقت۔ | نان پز اگر گرمی کے دنوں میں سارا دن کھانا پکائے تو ضعف کی وجہ سے روزہ میں خلل آتا ہے تو آدھا دن پکائے۔ | ۵۰۰

- If a slave girl suffers such weakness due to cooking etc. that she is forced to break her fast, she should make up for it. (Page 500) | Chapter of Fidya (Ransom)
- In which rulings should slaves and slave girls not obey their master? (Page 500) | There is fidya for the extremely elderly (Sheikh-e-Fani). (Page 521)
- Under what conditions is a fasting person allowed to taste salt in curry etc.? (Page 501) | Treatise: Tafsir al-Ahkam li-Fidya al-Salah wa al-Siyam (Explanation of the rulings regarding the ransom for prayer and fasting). (Page 523)
- When can a fasting person chew something and give it to a child? (Page 501) | Twelve questions regarding the ransom (fidya) for prayer and fasting. (Page 523)
- When smoke enters the throat, its bitterness is felt and the body's defensive nature expels it immediately; when it enters the brain, its burning sensation is felt, causing distress to the brain. (Page 503) | Weights vary across different cities. (Page 525)
- Diving into water, applying kohl, smelling perfume, applying oil to the head or body, using a miswak, applying tooth powder. (Page 510) | What is the amount of ransom (fidya) or expiation (kaffara) for one prayer and one fast? (Page 525)
- Chapter of Qada (Making up) and Kaffara (Expiation) | One Sa' is two hundred and seventy (270) tolas, and half a Sa' is one hundred and thirty-five (135) tolas. (Page 525)
- Giving a Quran as expiation for fast or prayer. (Page 513) | There are twelve mashas in a tola, eight rattis in a masha, and eight rice grains in a ratti. (Page 525)
- Not knowing that dawn has occurred while eating Suhoor. (Page 516) | An English Rupee is eleven and a quarter mashas. (Page 525)
- Making up for a fast broken due to illness. (Page 517) | The weight of a mithqal is twenty-five (25) rattis and a fifth part of a ratti. (Page 525)
- Making up for one fast becomes obligatory when the 29th moon is confirmed. (Page 518) | Seven mithqals are equal to ten dirhams. (Page 525)
- Eating Suhoor after dawn, doubt about whether intercourse occurred before or after true dawn, breaking the fast without a legal excuse. (Page 519) | According to us, the Iraqi Sa' is reliable, which consists of eight ratls. (Page 526)

- Should a sick person fast or not? (Page 520) | In one ratl there are 20 istars, one istar is four and a half mithqals, in one mithqal there are 20 carats, and one carat is (1-2/5) ratti. (Page 526)
- A woman cannot fast on behalf of a man. (Page 520) | The silver nisab (threshold) of two hundred dirhams is fifty-two and a half tolas, and the gold nisab of twenty mithqals is seven and a half tolas. (Page 526)

- कनीज़ (दासी) को खाना पकाने आदि के कारण ऐसी कमज़ोरी हो जाए कि मजबूरी में रोज़ा तोड़ना पड़े, तो वह उसकी कज़ा करे। (पेज ५००) | बाब-उल-फ़िदिया (फ़िदिया का अध्याय)
- गुलाम और कनीज़ किन अहकाम में मालिक की आज्ञा न मानें। (पेज ५००) | शेख-ए-फानी (अत्यंत वृद्ध) के लिए फ़िदिया है। (पेज ५२१)
- किस रोज़ेदार को किन शर्तों के तहत सालन आदि में नमक चखने की इजाज़त है। (पेज ५०१) | रिसाला तफ़सीर-उल-अहकाम लि-फ़िदिया-तिस-सलाति वस-सियाम (नमाज़ और रोज़े के फ़िदिया की मात्रा का वर्णन)। (पेज ५२३)
- रोज़ेदार किसी बच्चे को कोई चीज़ चबाकर कब दे सकता है? (पेज ५०१) | नमाज़ और रोज़े के फ़िदिया से संबंधित बारह सवाल। (पेज ५२३)
- धुआँ जब गले में जाता है तो उसकी कड़वाहट महसूस होती है और स्वभाव की रक्षात्मक शक्ति उसे तुरंत निकाल देती है, और जब दिमाग में जाता है तो उसकी जलन महसूस होती है जो दिमाग को कष्ट देती है। (पेज ५०३) | अलग-अलग शहरों में वज़न अलग होते हैं। (पेज ५२५)
- पानी में गोता लगाना, सुरमा लगाना, खुशबू सूंघना, सिर या बदन पर तेल लगाना, मिसवाक करना, मंजन करना। (पेज ५१०) | एक नमाज़ और एक रोज़े के फ़िदिया या कफ़्फ़ारा की मात्रा क्या है? (पेज ५२५)
- बाब-उल-कज़ा वल-कफ़्फ़ारा (कज़ा और कफ़्फ़ारा का अध्याय) | सा' दो सौ सत्तर (२७०) तोले है और आधा सा' एक सौ पैंतीस (१३५) तोले है। (पेज ५२५)
- रोज़ा या नमाज़ के कफ़्फ़ारे में कुरान देना। (पेज ५१३) | एक तोले में बारह माशे होते हैं, एक माशे में आठ रत्ती, और एक रत्ती में आठ चावल के दाने होते हैं। (पेज ५२५)
- सहरी खाते समय सुबह होने का पता न होना। (पेज ५१६) | अंग्रेज़ी रुपया सवा ग्यारह माशे का होता है। (पेज ५२५)
- बीमारी के कारण रोज़ा तोड़ने पर कज़ा वाजिब है। (पेज ५१७) | मिष्काल का वज़न पच्चीस (२५) रत्ती और रत्ती का पाँचवाँ हिस्सा है। (पेज ५२५)
- २९ का चाँद साबित होने पर एक रोज़े की कज़ा वाजिब हो गई। (पेज ५१८) | सात मिष्काल दस दिरहम के बराबर होते हैं। (पेज ५२५)

- सुबह होने के बाद सहरी खाई, संदेह हो कि संभोग सुबहे सादिक़ से पहले हुआ या बाद में, बिना किसी शरी'ई उज़्र के रोज़ा तोड़ना। (पेज ५१९) | हमारे नज़दीक इराकी सा' विश्वसनीय है जो आठ रतल का होता है। (पेज ५२६)
- मरीज़ रोज़ा रखे या नहीं। (पेज ५२०) | एक रतल में २० इस्तार, एक इस्तार साढ़े चार मिष्काल, एक मिष्काल में २० क़ीरात, और एक क़ीरात (१-२/५) रत्ती का होता है। (पेज ५२६)
- मर्द की जगह औरत रोज़ा नहीं रख सकती। (पेज ५२०) | दो सौ दिरहम चाँदी का निसाब साढ़े बावन तोले है, और बीस मिष्काल सोने का निसाब साढ़े सात तोले है। (पेज ५२६)

पेज ३३ / ८३६

- کنیز کو پکانے وغیرہ کی وجہ سے ایسا ضعف لاحق ہوا کہ مجبوراً روزہ توڑنا پڑا تو قضا کرے۔ (صفحہ ۵۰۰) | باب الفدیہ
- غلام وکنیز کن احکام میں اطاعت مولیٰ نہ کریں۔ (صفحہ ۵۰۰) | شیخ فانی کے لیے فدیہ ہے۔ (صفحہ ۵۲۱)
- کون سے روزہ دار کو کن شرائط کے تحت سالن وغیرہ میں نمک چکھنے کی اجازت ہے۔ (صفحہ ۵۰۱) | رسالہ تفاسیر الاحکام لفدیۃ الصلوۃ والصیام (نماز اور روزے کے فدیہ کی مقدار کا بیان) (صفحہ ۵۲۳)
- روزہ دار، بچے کو کوئی چیز چبا کر کب دے سکتا ہے؟ (صفحہ ۵۰۱) | نماز و روزہ کے فدیہ سے متعلق بارہ سوالات۔ (صفحہ ۵۲۳)
- دھواں جب حلق میں جاتا ہے تو اس کی تلخی محسوس ہوتی ہے اور طبیعت کی دافعہ فوراً دفع کرتی ہے اور جب دماغ میں جاتا ہے تو اس کی سوزش معلوم ہوتی ہے جو دماغ کو اذیت دیتی ہے۔ (صفحہ ۵۰۳) | وزن بلاد میں مختلف ہوتے ہیں۔ (صفحہ ۵۲۵)
- پانی میں غوطہ لگانا، سرمہ لگانا، خوشبو سونگھنا، سر یا بدن میں تیل لگانا، مسواک کرنا، منجن لگانا۔ (صفحہ ۵۱۰) | ایک نماز اور ایک روزہ کا فدیہ یا کفارہ کی مقدار کیا ہے؟ (صفحہ ۵۲۵)
- باب القضاء والکفارہ | صاع دو سو ستر ۲۷۰ تولے اور نیم صاع ایک سو پینتیس ۱۳۵ تولے ہے۔ (صفحہ ۵۲۵)

- روزہ یا نماز کے کفارے میں قرآن دینا۔ (صفحہ ۵۱۳) | تولہ میں بارہ ماشے، اور ماشہ میں آٹھ رتی، اور رتی میں آٹھ چاول ہوتے ہیں۔ (صفحہ ۵۲۵)
- سحری کھانے میں صبح ہونے کا علم نہ ہو۔ (صفحہ ۵۱۶) | انگریزی روپیہ سوا گیارہ ماشے کا ہے۔ (صفحہ ۵۲۵)
- مرض کی وجہ سے روزہ توڑنے میں قضا ہے۔ (صفحہ ۵۱۷) | مثقال کا وزن پچیس ۲۵ رتی اور رتی کا پانچواں حصہ ہے۔ (صفحہ ۵۲۵)
- ۲۹ کے چاند ثابت ہونے پر ایک روزہ کی قضا واجب ہو گئی۔ (صفحہ ۵۱۸) | سات مثقال دس درہم کے برابر ہوتے ہیں۔ (صفحہ ۵۲۵)
- صبح ہونے کے بعد سحری کھائی، شبہ ہو جائے کہ جماع صبح صادق سے قبل ہوا یا بعد، بلا عذر شرعی روزہ توڑنا۔ (صفحہ ۵۱۹) | ہمارے نزدیک صاع عراقی معتبر ہے جو آٹھ رطل کا ہوتا ہے۔ (صفحہ ۵۲۶)
- مریض روزہ رکھے یا نہیں۔ (صفحہ ۵۲۰) | ایک رطل میں ۲۰ استار، ایک استار ساڑھے چار مثقال، ایک مثقال میں ۲۰ قیراط، اور ایک قیراط (۱-۲/۵) رتی کا ہوتا ہے۔ (صفحہ ۵۲۶)
- مرد کے عوض عورت روزہ نہیں رکھ سکتی۔ (صفحہ ۵۲۰) | دو سو درہم نصاب چاندی کے ساڑھے باون اور بیس مثقال نصاب سونے کے ساڑھے سات تولے ہوتے ہیں۔ (صفحہ ۵۲۶)

Fatawa Razvia, Volume 10

526 | Difference in the weight of 'Seers' prevalent in Bareilly, Lucknow, Delhi, and Rampur. | 526 | It is a legal principle that perfect performance (Ada-e-Kamil) must be through perfect means, not imperfect. | 544 526 | The weight of 'Sa'a' is different in the mentioned cities. | 526 | No prayer is permissible during the three disliked times (Auqat-e-Thalatha-e-Makruha) except for that day's Asr prayer. | 544 526 | If grain other than wheat and barley is given for Fidya, its weight will not be considered; rather, the price of wheat or barley will be considered. | 526 | Funeral prayers for a deceased brought during the three disliked times are permissible during those times. | 544 527 | All four scenarios of the fifth question are permissible, i.e., giving Fidya for ten days of fasting at once to one person, or to ten persons, or over ten days to one person or ten persons. | 527 | Qada (missed) prayers are generally perfect, therefore they are impermissible during the three disliked times. | 545 527 | All scenarios of the fourth question are permissible, i.e., Fidya can be given all at once or separately, but the scenario where less than half a 'Sa'a' is given to a poor person is impermissible according to the dominant view. | 527 | Wealth that is owed by someone as a debt (Dayn) is not considered 'perfect wealth' until it is received; it is 'imperfect'. | 545 528 | The recipient of Fidya for missed prayers and fasts is the same as for Kaffara (expiations) and obligatory charities (Sadaqat-e-Wajiba). | 528 | If millions of rupees are spread out as loans (receivables) but one has nothing on hand, they can take an oath that they possess no wealth. | 545 529 | Ruling on giving a deceased husband's Fidya to the wife and a deceased wife's Fidya to the husband. | 529 | Zakat is not fulfilled by waiving a debt with the intention of Zakat. | 545 530 | It is better to give the value (money) for Fidya, but during famine, providing food is better. | 530 | If a Nisab (threshold amount) was a debt upon a poor person and it is waived in full or in part, the Zakat for the waived portion is dropped. | 545 530 | For four items mentioned in the Shariah texts—wheat, barley, dates, and raisins—value is not considered; the Shariah weight is what matters. | 530 | An imperfect (obligation) can be fulfilled with an imperfect (means). | 545 531 | For items where value is considered, the value on the day the obligation became due (Roz-e-Wujub) will be considered, not on the day of payment (Roz-e-Ada). | 531 | Paying a debt with another debt, and paying a specific item (Ayn) with a debt or another item is permissible. | 545 532 | Whether Fidya will be fulfilled by waiving a debt owed by a poor person to the giver. | 532 | Paying a debt with a specific item (Ayn) is

impermissible. | 545 533 | Whether a bequest of wealth (Wasiyyat bil-Maal) applies only to tangible assets (Ayn) or to debts (Dayn) as well. | 533 | | |

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

526 | बरेली, लखनऊ, दिल्ली और रामपुर में प्रचलित सेरों के वजन में अंतर। | 526 | शरीयत का नियम है कि पूर्ण अदायगी (अदा-ए-कामिल) पूर्ण से ही होती है, न कि अपूर्ण (नाक़िस) से। | 544 526 | उल्लेखित शहरों में साअ (Sa'a) का वजन अलग-अलग है। | 526 | तीन मकरूह समयों (औक़ात-ए-थलासा-ए-मक़रूहा) में उस दिन की अस्र की नमाज़ के अलावा कोई नमाज़ जायज़ नहीं है। | 544 526 | फ़िद्या में गेहूं और जौ के अलावा कोई अन्य अनाज दिया जाए तो उसके वजन का ध्यान नहीं रखा जाएगा, बल्कि गेहूं और जौ की कीमत का ध्यान रखा जाएगा। | 526 | जो जनाज़ा तीनों मकरूह समयों में लाया गया, उसकी नमाज़ उन समयों में जायज़ है। | 544 527 | पांचवें प्रश्न की चारों स्थितियां जायज़ हैं, यानी दस रोज़ों का फ़िद्या एक ही दिन में एक ही समय में एक व्यक्ति को देना या दस व्यक्तियों को, या दस दिनों में एक व्यक्ति या दस व्यक्तियों को देना। | 527 | क़ज़ा नमाज़ें आमतौर पर पूर्ण होती हैं, इसलिए वे तीन मकरूह समयों में जायज़ नहीं हैं। | 545 527 | चौथे प्रश्न की सभी स्थितियां जायज़ हैं, यानी फ़िद्या एक साथ भी दिया जा सकता है और अलग-अलग भी, लेकिन जिस स्थिति में गरीब को आधे साअ से कम दिया जाए, वह राज़ेह (प्रबल) मत के अनुसार नाजायज़ है। | 527 | जो माल किसी पर कर्ज (दैन) है, जब तक वह प्राप्त न हो जाए, वह पूर्ण माल नहीं बल्कि अपूर्ण (नाक़िस) है। | 545 528 | नमाज़ और रोज़े के फ़िद्या का उपभोग-स्थल वही है जो कफ़्फ़ारों और अनिवार्य दान (सदक़ात-ए-वाजिबा) का है। | 528 | लाखों रुपये कर्ज के रूप में फैले हुए हैं, लेकिन पास में कुछ नहीं है, तो वह कसम खा सकता है कि मेरे पास कोई माल नहीं है। | 545 529 | पति की मृत्यु के बाद पति का फ़िद्या पत्नी को और पत्नी का फ़िद्या पति को देने का हुक्म। | 529 | ज़कात की नीयत से कर्ज माफ कर देने से ज़कात अदा नहीं होती। | 545 530 | फ़िद्या में कीमत देना बेहतर है, लेकिन अकाल की स्थिति में भोजन देना बेहतर है। | 530 | जो निसाब किसी गरीब पर कर्ज था, वह पूरा या उसका कुछ हिस्सा माफ कर दिया जाए, तो माफ की गई मात्रा की ज़कात साक़ित (समाप्त) हो गई। | 545 530 | चार चीजें जिनका ज़िक्र शरीयत के प्रमाणों में है, यानी गेहूं, जौ, खजूर और किशमिश, उनमें कीमत का एतबार नहीं है, बल्कि शरई वजन ही मान्य है। | 530 | अपूर्ण (नाक़िस) की अदायगी अपूर्ण से हो सकती है। | 545 531 | जिन वस्तुओं में कीमत मान्य है, उनमें उस दिन की कीमत का एतबार होगा जिस दिन वह अनिवार्य हुआ (रोज़-ए-वुजूब), न कि अदायगी के दिन (रोज़-ए-अदा) की कीमत का। | 531 | कर्ज की अदायगी कर्ज से, और ऐन (वस्तु) की अदायगी कर्ज और ऐन से जायज़ है। | 545 532 | क्या गरीब

कर्जदार को फ़िद्या में कर्ज छोड़ देने से फ़िद्या अदा हो जाएगा या नहीं। | 532 | ऐन (वस्तु) से कर्ज की अदायगी नाजायज़ है। | 545 533 | क्या माल की वसीयत केवल ऐन (नकद/वस्तु) पर लागू होती है या कर्ज पर भी। | 533 | | |

पृष्ठ 34 का 836

فتاوی رضویه جلد دہم

۵۲۶ | بریلی، لکھنؤ، دہلی اور رامپور میں رائج سیروں کے وزن میں فرق۔ | ۵۲۶ | قاعدہ شرعیہ ہے کہ ادائے کامل بہ کامل نہ کہ ادائے کامل بہ ناقص۔ | ۵۴۴ ۵۲۶ | مذکورہ شہروں میں صاع کا وزن مختلف ہے۔ | ۵۲۶ | اوقاتِ ثلثہ مکروہہ میں کوئی نماز جائز نہیں سوائے اسی دن کی عصر کے۔ | ۵۴۴ ۵۲۶ | فدیہ میں گندم اور جو کے علاوہ کوئی اور غلہ دیا جائے تو اس میں وزن کا لحاظ نہ ہوگا، بلکہ گندم وجو کی قیمت کا لحاظ ہوگا۔ | ۵۲۶ | جو جنازہ اوقاتِ مکروہہ ثلثہ میں لایا گیا اس کی نماز ان اوقات میں جائز ہے۔ | ۵۴۴ ۵۲۷ | سوال پنجم کی چاروں صورتیں جائز ہیں یعنی دس روزوں کا فدیہ ایک ہی دن بیک وقت ایک شخص یا دس شخصوں یا دس دنوں میں ایک شخص یا دس شخصوں کو دینا۔ | ۵۲۷ | قضا نمازیں عموماً کامل ہیں لہذا اوقاتِ ثلثہ میں ناجائز ہیں۔ | ۵۴۵ ۵۲۷ | سوال چہارم کی تمام صورتیں جائز یعنی فدیہ بیک وقت بھی دے سکتا ہے اور متفرق طور پر بھی، مگر جس صورت میں فقیر کو نصف صاع سے کم دیتا ہو وہ صورت قولِ راجح کے مطابق ناجائز ہے۔ | ۵۲۷ | جو مال کسی پر دین ہے جب تک وصول نہ ہو مالِ کامل نہیں ناقص ہے۔ | ۵۴۵ ۵۲۸ | فدیہ نماز وروزہ کا مصرف مثلِ کفارات و صدقاتِ واجبہ کے ہے۔ | ۵۲۸ | لاکھوں روپے قرض میں پھیلے ہوئے ہیں اگر پاس کچھ نہیں تو قسم کھا سکتا ہے کہ میرا کچھ مال نہیں۔ | ۵۴۵ ۵۲۹ | بعد مرگ زوج کا فدیہ زوجہ اور زوجہ کا فدیہ زوج کو دینے کا حکم۔ | ۵۲۹ | دین بہ نیت زکوۃ معاف کر دینے سے زکوۃ ادا نہیں ہوتی۔ | ۵۴۵ ۵۳۰ | فدیہ میں قیمت دینا افضل ہے مگر قحط سالی کی صورت میں کھانا دینا بہتر ہے۔ | ۵۳۰ | جو نصاب کسی فقیر پر دین تھی وہ کُل یا بعض اسے معاف کر دے تو قدر معاف شدہ کی زکوۃ ساقط ہو گئی۔ | ۵۴۵ ۵۳۰ | چار چیزیں جن میں نص شرعی وارد ہے یعنی گندم، جو، خرما

اور کشمش ان میں قیمت کا اعتبار نہیں، وزن شرعی ہی معتبر ہے۔ | ۵۳۰ | ناقص ناقص سے ادا ہو سکتا ہے۔ | ۵۴۵ ۵۳۱ | جن اشیاء میں قیمت معتبر ہے ان میں روزِ وجوب کی قیمت کا اعتبار ہوگا نہ کہ روزِ ادا کی قیمت کا۔ | ۵۳۱ | اداءِ دَین دَین سے، اور اداءِ عین دَین و عین سے جائز ہے۔ | ۵۴۵ ۵۳۲ | مدیون فقیر کو فدیہ میں دَین چھوڑ دینے سے فدیہ ادا ہو جائے گا یا نہیں۔ | ۵۳۲ | اداءِ دَین، عین سے ناجائز ہے۔ | ۵۴۵ ۵۳۳ | کیا وصیت بالمال فقط عین کو تناول ہوتی ہے یا دین کو بھی۔ | ۵۳۳ | | |

Fatawa Razawiya - Volume 10

- Debt will not be considered paid if it is forgiven as Fidya. (Page 536)
- The method of paying Fidya that is common among the people of India is incomplete and insufficient. (Page 536)
- The correct and beautiful method for paying Fidya. (Page 537)
- In the texts of later scholars, the method of 'daur' (repetition) for the ruse is mentioned, but the method of 'deen' (debt) is not mentioned anywhere. (Page 539)
- How will the Fidya be paid for a person who dies at the age of 72? (Page 539)
- A lunar year is not more than 355 days. (Page 539)
- Something that is definite and certain does not need extra caution. (Page 540)
- There are 2,130 Fidyas for one year's prayers. (Page 540)
- Apart from the Fidya for fasting and prayers, many other Fidyas are also necessary, ten of which are mentioned. (Page 540)
- In short, there are two ways to pay Fidya from a debt. (Page 542)
- Benefit: The scholars have aimed to reduce the 'daur' as much as possible. (Page 542)
- The ruse to reduce the 'daur' or avoid it. (Page 543)
- There are several differences in the rulings of Fidya for 'Sheikh-e-Fani' (the infirm elderly) and the deceased. (Page 545)
- 'Sheikh-e-Fani' can give Fidya for fasting during their lifetime, but not for prayers. (Page 545)
- It is obligatory for 'Sheikh-e-Fani' to give Fidya for fasting during their lifetime if they are able; after death, it is not obligatory unless they have made a will from their wealth. (Page 545)
- If 'Sheikh-e-Fani' pays the Fidya for fasting during their life or makes a will for it, then its sufficiency should be believed. (Page 545)
- If someone other than 'Sheikh-e-Fani' gives Fidya for a missed fast during their lifetime, the fast will not be waived; rather, its makeup (qadha) remains obligatory. (Page 546)
- If death occurs before the makeup of the fast, then making a will for Fidya is obligatory. (Page 546)
- If someone passes away and has fasts or prayers remaining, they will not be waived by someone else performing them on their behalf. (Page 546)
- Fidya for a 75-year-old man. (Page 547)

- Recipients of Fidya. (Page 548)
- The amount of Fidya in 'Tolas' and 'Sa' (traditional measures). (Page 548)
- Definition of 'Sheikh-e-Fani'. (Page 548)
- **Disliked Acts during Fasting** (Heading)
- Using a Miswak (toothbrush tree twig) or tooth powder. (Page 551)
- Touching a woman or looking at private parts. (Page 551)
- Fasting while in a state of ritual impurity (Janaba). (Page 554)
- Condemnation of remaining in a state of ritual impurity all day and the ruling for fasting. (Page 554)
- Fasting only on Friday. (Page 559)
- **Description of Sahur and Iftar** (Heading)
- Question regarding the Quranic verse 'Fa-al-ana bashiru-hunna'. (Page 561)

फतावा रजविया - जिल्द १०

- कर्ज माफ कर देने से फिद्या अदा नहीं होगा। (पृष्ठ ५३६)
- फिद्या की अदायगी का जो तरीका भारत के लोगों में प्रचलित है, वह अधूरा और अपर्याप्त है। (पृष्ठ ५३६)
- फिद्या की अदायगी का उत्तम तरीका। (पृष्ठ ५३७)
- बाद के विद्वानों के ग्रंथों में हीले (छूट) के लिए 'दौर' (पुनरावृत्ति) का तरीका वर्णित है, 'दीन' (कर्ज) के तरीके का कहीं जिक्र नहीं है। (पृष्ठ ५३९)
- बहत्तर वर्ष की आयु में मरने वाले व्यक्ति का फिद्या कैसे अदा किया जाएगा? (पृष्ठ ५३९)
- चांद्र वर्ष ३५५ दिनों से अधिक नहीं होता। (पृष्ठ ५३९)
- जो वस्तु पूर्णतः निश्चित हो, उसे अतिरिक्त सावधानी की आवश्यकता नहीं होती। (पृष्ठ ५४०)
- एक वर्ष की नमाजों के लिए २१३० फिदिये होते हैं। (पृष्ठ ५४०)
- रोज़े और नमाज़ के फिदिये के अलावा भी बहुत से फिदिये अनिवार्य होते हैं, जिनमें से दस का उल्लेख है। (पृष्ठ ५४०)
- संक्षेप में, कर्ज से फिद्या अदा करने के दो तरीके हैं। (पृष्ठ ५४२)
- लाभ: विद्वानों ने यथासंभव 'दौर' (चक्र) को कम करने पर विचार किया है। (पृष्ठ ५४२)
- दौर कम करने या दौर से बचने का तरीका। (पृष्ठ ५४३)
- शेख़-ए-फ़ानी (अत्यधिक वृद्ध) और मृत व्यक्ति के फिद्या के नियमों में कई अंतर हैं। (पृष्ठ ५४५)
- शेख़-ए-फ़ानी अपने जीवन में रोज़े का फिद्या दे सकता है, नमाज़ का नहीं। (पृष्ठ ५४५)
- शेख़-ए-फ़ानी पर जीवन में रोज़े का फिद्या देना अनिवार्य है यदि वह सक्षम हो; मृत्यु के बाद तब तक अनिवार्य नहीं जब तक वह अपनी संपत्ति में वसीयत न करे। (पृष्ठ ५४५)
- यदि शेख़-ए-फ़ानी अपने जीवन में रोज़े का फिद्या अदा करे या रोज़े के फिद्या की वसीयत कर जाए, तो उसके पर्याप्त होने पर यकीन किया जाए। (पृष्ठ ५४५)
- शेख़-ए-फ़ानी के अलावा यदि कोई व्यक्ति अपने जीवन में छूटे हुए रोज़े का फिद्या दे, तो रोज़ा माफ नहीं होगा बल्कि उसकी कज़ा (भरपाई) फर्ज है। (पृष्ठ ५४६)
- रोज़े की कज़ा से पहले मृत्यु हो जाए, तो फिद्या की वसीयत करना अनिवार्य है। (पृष्ठ ५४६)
- यदि किसी का इंतकाल हो जाए और उसके जिम्मे रोज़ा या नमाज़ बाकी हो, तो किसी और के अदा करने से वे माफ नहीं होंगे। (पृष्ठ ५४६)

• ७५ वर्षीय व्यक्ति के लिए फिद्या। (पृष्ठ ५४७)
• फिद्या के पात्र (मसारिफ)। (पृष्ठ ५४८)
• तोलों से फिद्या और 'साअ' की मात्रा। (पृष्ठ ५४८)
• शेख़-ए-फ़ानी की परिभाषा। (पृष्ठ ५४८)
• **रोज़े की नापसंद चीजें (मकरूहात-ए-सौम)** (शीर्षक)
• मिसवाक करना, मंजन लगाना। (पृष्ठ ५५१)
• स्त्री को स्पर्श करना या गुप्तांग देखना। (पृष्ठ ५५१)
• जनाबत (अशुद्धि) की स्थिति में रोज़ा रखना। (पृष्ठ ५५४)
• दिन भर जनाबत की हालत में रहने की निंदा और रोज़े का हुक्म। (पृष्ठ ५५४)
• केवल शुक्रवार को रोज़ा रखना। (पृष्ठ ५५९)
• **सहर और इफ्तार का बयान** (शीर्षक)
• आयत-ए-करीमा 'फालआना बाशिरूहुन्ना' से संबंधित प्रश्न। (पृष्ठ ५६१)

فتاویٰ رضویہ - جلد دہم

- دین معاف کر دینے سے فدیہ ادا نہ ہوگا۔ ۵۳۶
- فدیہ کی ادائیگی کا جو حیلہ ہندوالوں میں متعارف ہے ناتمام و ناکافی ہے۔ ۵۳۶
- ادائیگی فدیہ کا حیلہ جمیلہ۔ ۵۳۷
- متاخرین کی نصوص میں حیلہ کے لیے طریق دُور مذکور ہے طریق دین کا کہیں ذکر نہیں۔ ۵۳۹
- بہتر سال کی عمر میں مرنے والے شخص کا فدیہ کیسے ادا کیا جائے گا؟ ۵۳۹
- سال قمری تین سو پچپن دن سے زائد نہیں ہوتا۔ ۵۳۹
- جو شئی قطعی ویقینی ہو وہ احتیاط کی محتاج نہیں۔ ۵۴۰
- ایک سال کی نمازوں کے دو ہزار ایک سو تیس فدیے ہوتے ہیں۔ ۵۴۰
- فدیہ صوم و صلوٰۃ کے علاوہ بھی بہت سے فدیے لازم ہوتے ہیں جن میں سے دس کا ذکر۔ ۵۴۰
- با لجملہ دین سے فدیہ ادا کرنے کی دو صورتیں ہیں۔ ۵۴۲
- فائدہ: علماء نے حتی الامکان تقلیل دور پر نظر فرمائی ہے۔ ۵۴۲
- تخفیف دور یادور سے بچنے کا حیلہ۔ ۵۴۳
- شیخ فانی اور موتی کے احکام فدیہ میں متعدد فرق ہیں۔ ۵۴۵
- شیخ فانی اپنی حیات میں روزہ کا فدیہ دے سکتا ہے نماز کا نہیں۔ ۵۴۵
- شیخ فانی پر روزہ کا فدیہ حیات میں دینا واجب ہے۔ اگر قادر ہو، بعد مرگ وجوب نہیں جب تک اپنے مال میں وصیت نہ کرے۔ ۵۴۵

- شیخ فانی اگر اپنی زندگی میں روزہ کا فدیہ ادا کرے یا فدیہ روزہ کی وصیت کر جائے تو اس فدیہ کے کافی ہونے پر یقین کیا جائے۔ ۵۴۵
- شیخ فانی کے علاوہ کوئی شخص اپنی زندگی میں قضا شدہ روزہ کا فدیہ دے تو روزہ ساقط نہ ہوگا بلکہ قضا فرض ہے۔ ۵۴۶
- روزہ کی قضا سے پہلے موت آجائے تو فدیہ کی وصیت واجب ہے۔ ۵۴۶
- کوئی شخص انتقال کر جائے اور اس کے ذمہ روزہ یا نماز باقی ہے تو اس کی طرف سے کسی اور کے ادا کرنے سے ساقط نہ ہوں گے۔ ۵۴۶
- ۷۵ سالہ آدمی کے لیے فدیہ۔ ۵۴۷
- فدیہ کے مصارف۔ ۵۴۸
- تولوں سے فدیہ اور صاع کی مقدار۔ ۵۴۸
- شیخ فانی کی تعریف۔ ۵۴۸
- **مکروہات صوم** (عنوان)
- مسواک کرنا، منجن لگانا۔ ۵۵۱
- عورت سے مس کرنا یا شرمگاہ دیکھنا۔ ۵۵۱
- جنابت کی حالت میں روزہ رکھنا۔ ۵۵۴
- دن بھر جنابت کی حالت میں رہنے کی مذمت اور روزے کا حکم۔ ۵۵۴
- صرف جمعہ کو روزہ رکھنا۔ ۵۵۹
- **سحر و افطار کا بیان** (عنوان)
- آیہ کریمہ فالان باشروھن سے متعلق سوال۔ ۵۶۱

Fatawa Rizwia Volume 10

562 | Delaying Sahri and hastening Iftar is recommended (Mustahabb). | O Muslims! This is the religion of God. He who knows it knows that learning it is a debt upon me. | 569 562 | Meaning of hastening and delaying. | Recognizing the time is an individual obligation (Farz-e-Ain) for every Muslim. | 569 563 | It is a common misconception that Sahri should not be eaten when one-seventh of the night remains; a reasoned refutation of this. | According to Imam Ghazali, it is difficult at first to distinguish between Subh-e-Sadiq (true dawn) and Subh-e-Kazib (false dawn), but with careful observation and divine grace, both become clearly distinguished in one's sight. | 570 567 | Treatise 'Hidayat-ul-Jinan bi-Ahkam-e-Ramadan' (Recognition of Subh-e-Sadiq and Kazib has been provided, and Subh-e-Sadiq has been explained through charts; issues of Iftar and Sahri have been described). | Description of five reasons that cause confusion between Subh-e-Sadiq and Subh-e-Kazib. | 570 567 | Inquiry (Istifta) regarding an advertisement containing issues of Iftar, Sahri of Ramadan-ul-Mubarak and a few issues of fasting, and a query about its correctness or incorrectness. | In Hadith, Subh-e-Kazib was called 'Mustateel' (vertical/ rectangular) and Subh-e-Sadiq was called 'Mustateer' (horizontal/spread out). | 570 568 | The art of calculating correct timings is called Ilm-ut-Taqeet (Horology). | Confusion arising from the nomenclature of Subh-e-Kazib. | 570 568 | Most scholars in India are unaware of Ilm-ut-Taqeet, nor can it be learned from standard astronomy textbooks. | The whiteness of Subh-e-Kazib continues to increase from where it starts until the end; darkness never follows it there. | 570 568 | One who is ignorant of the two-letter table of Mirza Khairullah Munajjam cannot benefit from this art. | In some astronomy books, and subsequently in some Fiqh books, it is incorrectly written that Subh-e-Sadiq occurs when the sun is 15 degrees below the horizon, and Subh-e-Kazib occurs only three degrees before it. | 570 568 | The adjustment tables of 'Zij Bahadur Khani' have no relevance to Sahri and are deficient for Iftar. | The whiteness of dawn appears high in our view on the horizon, not rising from the very edge of the earth to a height. | 571 568 | Introduction to the author's (Mercy of Allah be upon him) Sahri and Iftar chart, in which proof and observation have been harmonized. | The saying that morning is one-seventh of the night is not general for every season and every place. | 571 568 | One who knows astronomy, seeing the author's chart according to proof and being able to recognize Subh-e-Sadiq and Kazib, will find it according to observation. | Description of seven forms of whiteness that occur from the start of Subh-e-Kazib until the spreading of Subh-e-Sadiq. | 571

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

५६२ | सहरी में देरी करना और इफ्तार में जल्दी करना मुस्तहब है। | मुसलमानो! यह दीन है जिस पर खुदा का दीन है वह जानता है कि इसका सीखना मुझ पर दीन (ऋण) है। | ५६९ ५६२ | जल्दी और देरी के मायने। | वक्त पहचानना हर मुसलमान पर फर्ज़-ए-ऐन है। | ५६९ ५६३ | यह गलत मशहूर है कि जब रात का सातवां हिस्सा बाकी रहे तो सहरी न खाई जाए, इसका दलील के साथ खंडन। | इमाम गज़ाली के अनुसार सुबह-ए-सादिक और काज़िब में फर्क करना शुरू में मुश्किल होता है, लेकिन गौर से देखने और ईश्वरीय कृपा से दोनों नज़र में अच्छी तरह समा जाते हैं। | ५७० ५६७ | रिसाला हिदायतुल जिनान बि-अहकाम-ए-रमज़ान (सुबह-ए-सादिक और काज़िब की पहचान कराई गई है और नक्शों से सुबह-ए-सादिक समझाया गया है, इफ्तार व सहर के मसाइल बयान किए गए हैं) | सुबह-ए-सादिक और काज़िब में भ्रम पैदा करने वाले पांच कारणों का वर्णन। | ५७० ५६७ | रमज़ानुल मुबारक के इफ्तार और सहरी और रोज़े के कुछ मसाइल पर आधारित एक विज्ञापन के बारे में इस्तफ़्ता और उसके सही व गलत होने के बारे में पूछताछ। | हदीस में सुबह-ए-काज़िब को 'मुस्ततील' और सुबह-ए-सादिक को 'मुस्ततीर' कहा गया। | ५७० ५६८ | सही वक्त निकालने की कला को इल्म-ए-तौक़ीत कहते हैं। | सुबह-ए-काज़िब के नामकरण से पैदा होने वाला भ्रम। | ५७० ५६८ | इल्म-ए-तौक़ीत से हिंदुस्तान के अधिकतर उलेमा अनजान हैं, न ही यह खगोल विज्ञान की दरसी किताबों से आ सकता है। | सुबह-ए-काज़िब की सफेदी जहाँ से शुरू होती है वह आखिर तक बढ़ती ही जाती है, वहां कभी अंधेरा नहीं आता। | ५७० ५६८ | मिर्ज़ा खैरुल्लाह मुनज्जम की दो हर्फी जदवल से नावाकिफ इस कला से लाभ नहीं पा सकता। | कुछ खगोल विज्ञान की किताबों और उनके अनुसरण में कुछ फिकह की किताबों में यह बात गलत लिख दी गई कि जब सूरज क्षितिज से १५ डिग्री नीचे होता है तो सुबह-ए-सादिक होती है, और सुबह-ए-काज़िब उससे केवल तीन डिग्री पहले होती है। | ५७० ५६८ | ज़ीज बहादुर खानी की जदवल-ए-तादील का सहरी से कोई लेना-देना नहीं और इफ्तार के मामले में यह अधूरी है। | सुबह की सफेदी क्षितिज में काफी ऊपर हमारी नज़रों में पैदा होती है, न कि ज़मीन के किनारे से उठती हुई ऊँचाई पर आती है। | ५७१ ५६८ | लेखक (रहमतुल्लाह अलैह) के सहर व इफ्तार के नक्शे का परिचय जिसमें प्रमाण और प्रत्यक्ष अनुभव को एक कर दिया गया है। | यह कहना कि सुबह रात का सातवां हिस्सा है, हर मौसम और हर जगह के लिए आम नहीं है। | ५७१ ५६८ | जिसे खगोल विज्ञान का ज्ञान है वह लेखक के नक्शे को प्रमाण के अनुसार देखकर और सुबह-ए-सादिक व काज़िब को पहचानने में सक्षम होकर इसे अवलोकन के

अनुसार पाएगा। | सुबह-ए-काज़िब की शुरुआत से सुबह-ए-सादिक के फैलने तक सफेदी की सात स्थितियों का वर्णन। | ५७१

पृष्ठ ८३६ का ३६

فتاوی رضویہ جلد دہم

۵۶۲ | سحری میں تاخیر اور افطار میں تعجیل مستحب ہے۔ | مسلمانو! یہ دین ہے جس پر خدا کی دین ہے وہ جانتا ہے کہ اس کا سیکھنا مجھ پر دین ہے۔ | ۵۶۹ ۵۶۲ | تعجیل و تاخیر کے معنی۔ | وقت پہچاننا ہر مسلمان پر فرض عین ہے۔ | ۵۶۹ ۵۶۳ | یہ غلط مشہور ہے کہ جب رات کا ساتواں حصہ باقی رہے تو سحری نہ کھائی جائے، اس کا مدلل رد۔ | بقول امام غزالی صبح صادق و کاذب میں امتیاز کرنا ابتدا میں مشکل ہوتا ہے لیکن بغور مشاہدہ کرتے رہنے سے بعنایت الٰہی دونوں سمجھیں خوب نگاہ میں بیچ جاتی ہیں۔ | ۵۷۰ ۵۶۷ | رسالہ ہدایۃ الجنان بأحکام رمضان (صبح صادق اور کاذب کی معرفت کرائی گئی ہے اور نقشوں سے صبح صادق سمجھایا گیا ہے، افطار و سحر کے مسائل بیان کئے گئے ہیں) | صبح صادق و کاذب میں اشتباہ پیدا کرنے والی پانچ وجوہ کا بیان۔ | ۵۷۰ ۵۶۷ | افطار و سحری رمضان المبارک اور چند مسائل روزہ پر مشتمل ایک اشتہار کے بارے میں استفتاء اور اس کے صحیح و غلط ہونے کے متعلق استفسار۔ | صبح کاذب کو حدیث میں مستطیل اور صبح صادق کو مستطیر کہا گیا۔ | ۵۷۰ ۵۶۸ | اوقات صحیح نکالنے کے فن کو علم توقیت کہتے ہیں۔ | صبح کاذب کی وجہ تسمیہ سے پیدا ہونے والا اشتباہ۔ | ۵۷۰ ۵۶۸ | علم توقیت سے ہندوستان کے اکثر علماء غافل ہیں نہ یہ ہیئت کی درسی کتابوں سے آسکتا ہے۔ | صبح کاذب کی سپیدی جہاں شروع ہوتی ہے وہ اخیر تک بڑھتی ہی جاتی ہے وہاں ہر گز تاریکی نہیں آتی۔ | ۵۷۰ ۵۶۸ | مرزا خیر اللہ منجم کی دو حرفی جدول سے ناواقف فن نفع نہیں پاسکتا۔ | بعض کتب ہیئت اور ان کی اتباع میں بعض کتب فقہ میں یہ بات غلط لکھ دی گئی کہ جب آفتاب افق سے پندرہ ۱۵ درجے نیچے ہوتا ہے تو صبح صادق ہوتی ہے، اور صبح کاذب اس سے صرف تین درجے پہلے ہوتی ہے۔ | ۵۷۰ ۵۶۸ | زیج بہادر خانی کی جداول تعدیل سے سحری کو

تو کچھ تعلق ہی نہیں اور افطار میں ناقص ہے۔ | صبح کی سفیدی افق سے بہت اونچی ہی ہماری نظروں میں پیدا ہوتی ہے نہ کہ زمین کے کنارہ سے اٹھتی ہوئی بلندی پر آتی ہے۔ | ۵۷۱ ۵۶۸ | مصنف رحمتہ اللہ علیہ کے نقشہ سحر و افطار کا تعارف جس میں برہان و عیان کو مطابق کر دیا گیا ہے۔ | یہ قول کہ صبح رات کا ساتواں حصہ ہے ہر موسم اور ہر مقام کے لیے عام نہیں۔ | ۵۷۱ ۵۶۸ | جو ہیئت کا علم رکھتا ہے وہ نقشہ مصنف کو برہان کے مطابق دیکھ کر صبح صادق و کاذب کو پہچان سکنے والا اس کو مشاہدہ کے مطابق پائے گا۔ | صبح کاذب کے شروع سے صبح صادق کے انتشار تک سفیدی کو پیش آنے والی سات صورتوں کا بیان۔ | ۵۷۱

Fatawa Razawiyya, Volume 10

573 | Identifying thirty (30) errors in the aforementioned advertisement | 573 | In jurisprudence, the great task is the perception of the refined (rectified) opinion. | 577 573 | Regarding the crescent of Ramadan in cloudy or dusty conditions, as per the corrections of great imams, the testimony of a 'mastur' (a person whose hidden character is unknown) is also acceptable. | 573 | If Ramadan is proven by the testimony of two reliable witnesses, and after completing thirty fasts, on the thirty-first night the sky is clear yet the moon is not visible, what is the ruling? | 577 573 | 'Mastur' refers to someone whose internal integrity (justice) is unknown. | 573 | Relying on the opinion of some scholars against the fatwa-authorized (mufti-bihi) school of thought is ignorance and a violation of consensus (ijma). | 578 573 | Explicitly deviating from the explicitly corrected 'Zahir al-Riwayah' (manifest reports) is clear ignorance and unacceptable. | 573 | Which day is the 'Day of Doubt' (Yawm al-Shakk)? | 579 574 | Adding the condition of conformity with rational rules to the conformity with Sharia rules for the acceptance of testimony is against the reliable school of thought. | 574 | Doubt is in a state of equilibrium between two sides. | 579 574 | Regarding the rules astronomers have devised about the crescent based on their conjectures and estimations, Sharia has paid no attention to them at all. | 574 | According to our noble Imams, the difference in horizons (ikhtilaf al-matali) is not considered. | 581 575 | Why did the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him, completely invalidate and disregard calculation regarding crescent sighting, despite knowing that it depends on the predetermined calculation of the All-Mighty, All-Knowing? | 575 | Testimony is not needed for necessities. | 581 575 | Why did the leader of astronomers, Ptolemy, not mention the sighting of the crescent in the Almagest? | 575 | The fatwa is based on not considering the difference in horizons, and this is the most cautious (ahwat) and strongest (aqwa) view. | 582 575 | It is not difficult for the estimations of latter-day astronomers to fail (to be inaccurate). | 575 | Adopting 'Zahir al-Riwayah' is most cautious. | 582 575 | Astronomers could not provide any correct regulation regarding the sighting of the crescent. | 575 | Caution lies in acting upon the stronger of two evidences. | 582 575 | Errors have often occurred in the calculations of astrologers/astronomers. | 575 | Whatever falls outside 'Zahir al-Riwayah' is not the school of thought or opinion of Imam Azam (may Allah be pleased with him). | 583 576 | Rational rules that reject the Sharia testimony of a reliable witness are not worthy of consideration. | 576 | Whatever is outside 'Zahir al-Riwayah' is that from which he recanted, and a recanted

view is no longer the Imam's opinion. | 583 576 | In case of a clear sky, when is the testimony of one reliable witness rejected and when is it accepted? | 576 | Whatever opposes 'Zahir al-Riwayah' is not the school of thought of our companions. | 583

फतावा रज़विया, खंड १०

५७३ | उक्त विज्ञापन में तीस (३०) त्रुटियों की पहचान | ५७३ | न्यायशास्त्र में परिष्कृत (संशोधित) मत को समझना मुख्य कार्य है। | ५७७ ५७३ | बादलों या धूल की स्थिति में रमज़ान के चाँद के बारे में, महान इमामों के सुधार के अनुसार, एक 'मस्तूर' (जिसका आंतरिक चरित्र अज्ञात हो) की गवाही भी स्वीकार्य है। | ५७३ | जब दो विश्वसनीय गवाहों की गवाही से रमज़ान सिद्ध हो गया हो और तीस रोज़े पूरे होने पर इकतीसवीं रात को आसमान साफ़ होने के बावजूद चाँद दिखाई न दे, तो क्या हुक्म है? | ५७७ ५७३ | 'मस्तूर' का अर्थ वह व्यक्ति है जिसकी आंतरिक न्यायप्रियता अज्ञात हो। | ५७३ | मुफ़्ती-बिही (जिस पर फ़तवा दिया जाता है) मत के विरुद्ध कुछ विद्वानों के मत पर भरोसा करना अज्ञानता और आम सहमति (इज्मा) का उल्लंघन है। | ५७८ ५७३ | स्पष्ट रूप से प्रमाणित 'ज़ाहिर अल-रिवाया' (प्रकट विवरण) से विचलित होना स्पष्ट अज्ञानता और अस्वीकार्य है। | ५७३ | 'यौम-ए-शक' (संदेह का दिन) कौन सा दिन है? | ५७९ ५७४ | गवाही की स्वीकार्यता के लिए शरीयत के नियमों के साथ तर्क के नियमों के अनुरूप होने की शर्त जोड़ना विश्वसनीय मत के विरुद्ध है। | ५७४ | संदेह दोनों पक्षों के बीच संतुलन की स्थिति में होता है। | ५७९ ५७४ | खगोलविदों ने चाँद के बारे में अपने अनुमानों और अटकलों के आधार पर जो नियम बनाए हैं, शरीयत ने उनकी ओर बिल्कुल भी ध्यान नहीं दिया। | ५७४ | हमारे महान इमामों के अनुसार, क्षितिज में अंतर (इख्तिलाफ अल-मत़ाले) मान्य नहीं है। | ५८१ ५७५ | अल्लाह के रसूल, सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह जानते हुए भी कि चाँद का दिखना सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ नियंता की पूर्व-निर्धारित गणना पर आधारित है, चाँद देखने के मामले में गणना को पूरी तरह से रद्द और नज़रअंदाज़ क्यों किया? | ५७५ | अनिवार्यताओं के लिए गवाही की आवश्यकता नहीं है। | ५८१ ५७५ | खगोलविदों के नेता टॉलेमी ने अल्मागेस्ट में चाँद के दिखने का उल्लेख क्यों नहीं किया? | ५७५ | फ़तवा क्षितिज के अंतर को न मानने पर है और यही सबसे अधिक एहतियाती (अहवत) और मज़बूत (अक़वा) विचार है। | ५८२ ५७५ | उत्तरवर्ती खगोलविदों के अनुमानों का विफल होना कठिन नहीं है। | ५७५ | 'ज़ाहिर अल-रिवाया' को अपनाना ही सबसे सुरक्षित (अहवत) है। | ५८२ ५७५ | खगोलविद् चाँद के दिखने के बारे में कोई सही नियम नहीं बता सके। | ५७५ | दो प्रमाणों में से अधिक मज़बूत पर अमल करने में ही सावधानी है। | ५८२ ५७५ | ज्योतिषियों/खगोलविदों की गणनाओं में अक्सर त्रुटि हुई है। | ५७५ | जो कुछ 'ज़ाहिर अल-रिवाया' से बाहर है, वह इमाम आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) का मत या कथन नहीं है। | ५८३ ५७६ | विश्वसनीय गवाह की शरीयत गवाही को खारिज करने वाले तर्क के नियम विचार

करने योग्य नहीं हैं। | ५७६ | जो 'ज़ाहिर अल-रिव़ाया' से बाहर है, वह वह मत है जिससे उन्होंने हाथ खींच लिया (मर्ज़ूअन अन्हु) और ऐसा मत अब इमाम का मत नहीं रहा। | ५८३ ५७६ | आसमान साफ़ होने की स्थिति में एक विश्वसनीय व्यक्ति की गवाही कब अस्वीकार्य और कब स्वीकार्य है। | ५७६ | जो 'ज़ाहिर अल-रिव़ाया' के विपरीत है वह हमारे साथियों (असहाब) का मत नहीं है। | ५८३

पृष्ठ ३७/८३६

۵۷۳ | مسائل مذکورہ اشتہار میں تیس ۳۰ اغلاط کی نشاندہی | ۵۷۳ | فقہ میں بڑا کام قول منقح کا ادراک ہے۔ | ۵۷۷ ۵۷۳ | ہلال رمضان میں بحالت ابر و غبار اجلہ ائمہ کی تصحیح کے مطابق مستور کی شہادت بھی مقبول ہے۔ | ۵۷۳ | جب رمضان دو عادلوں کی گواہی سے ثابت ہوا ہو اور تیس روزے پورے ہونے پر اکتیسویں شب مطلع صاف ہونے کے باوجود چاند نظر نہ آئے تو کیا حکم ہے۔ | ۵۷۷ ۵۷۳ | مستور سے مراد وہ ہے جس کی عدالت باطنی مجہول ہو | ۵۷۳ | مذہب مفتی بہ کے مقابل بعض مشائخ کے قول پر اعتماد کرنا جہل و خرق اجماع ہے۔ | ۵۷۸ ۵۷۳ | ظاہر الروایہ مصحہ بالصریح سے عدول صریح جہل و نامقبول ہے۔ | ۵۷۳ | یوم شک کون سا دن ہے۔ | ۵۷۹ ۵۷۴ | قبول شہادت کے لیے مطابقت قواعد شرعیہ کے ساتھ مطابقت قواعد عقلیہ کی قید بڑھانا خلاف مذہب معتمد ہے۔ | ۵۷۴ | شک استوائے طرفین کی حالت میں ہے۔ | ۵۷۹ ۵۷۴ | جو قواعد اہل ہیئت نے دربارہ ہلال اپنے ظنون و تخمینات سے گھڑے ہیں شرع نے اصلاً ان کی طرف التفات نہ فرمایا۔ | ۵۷۴ | ہمارے ائمہ کرام کے نزدیک اختلافِ مطالع معتبر نہیں۔ | ۵۸۱ ۵۷۵ | رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے یہ معلوم ہونے کے باوجود کہ سیرتیرین عزیز علیم کے حساب مقدر پر ہے در باب رؤیتِ ہلال حساب کو یک لخت ابطال واہمال کیوں فرمایا۔ | ۵۷۵ | ضروریات کے لیے گواہی کی حاجت نہیں۔ | ۵۸۱ ۵۷۵ | امام اہل ہیئت بطلیموس نے مجسطی میں رؤیتِ ہلال کا ذکر کیوں نہیں کیا۔ | ۵۷۵ | فتویٰ عدمِ اعتبارِ اختلافِ مطالع پر ہے اور یہی احوط واقویٰ ہے۔ | ۵۸۲ ۵۷۵ | متاخرین اہل ہیئت کے تخمینات کا تخلف دشوار نہیں۔ | ۵۷۵ | ظاہر الروایہ کو اپنانا ہی احوط ہے۔ | ۵۸۲ ۵۷۵ | اہل ہیئت رؤیتِ ہلال کے بارے میں کوئی ضابطہ صحیحہ نہیں بتا سکے۔ | ۵۷۵ | دو دلیلوں میں سے اقویٰ پر عمل

کرنے میں ہی احتیاط ہے۔ | ۵۸۲ ۵۷۵ | منجمین کے حسابات میں اکثر خطا پڑی ہے۔ | ۵۷۵ |
جو ظاہر الروایہ سے خارج ہو وہ امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا مذہب اور قول نہیں۔ | ۵۸۳
۵۷۶ | ثقہ عادل کی شہادت شرعیہ کو رد کرنے والے قواعد عقلیہ قابلِ لحاظ نہیں۔ | ۵۷۶ | جو
ظاہر الروایہ سے خارج ہے وہ مرجوع عنہ ہے اور مرجوع عنہ امام صاحب کا قول نہ رہا۔ | ۵۸۳
۵۷۶ | مطلع صاف ہونے کی صورت میں ایک ثقہ کی شہادت کب مردود اور کب مقبول ہے۔ |
۵۷۶ | جو ظاہر الروایہ کے مخالف ہے وہ ہمارے اصحاب کا مذہب نہیں۔ | ۵۸۳

Fatawa Rizwia - Volume 10

Ref	Subject Description	Detailed Subject Description	Page
583	Giving a fatwa on a retracted opinion is ignorance and a breach of consensus.	Maulvi Sahab wrote the third volume of his fatwa by posing questions himself, and in many places corrected errors from previous volumes. Therefore, it is necessary for those viewing his fatwas to take this into account.	592
584	How much distance do those who consider the difference in moon sightings (Ikhtilaf al-Matali') valid deem authoritative?	What is the weight of half a Sa' (Naim Sa') in English Seers, and how much in the Seers of Bareilly and Rampur?	592
584	Rejection of the arguments for determining the difference in moon sightings by prominent scholars.	One who has not fasted due to a Sharia-compliant excuse should eat as secretly as possible, out of respect for the sanctity of the month of Ramadan.	595
588	The sophisticated doctrine of our Imams is on such a high level of meticulous research that even those claiming to be researchers have not even caught a whiff of it.	For things that are neither food nor medicine, nor are they naturally desired, eating even to a full stomach only requires making up the fast (Qada); there is no expiation (Kaffara).	595
588	Why did our Imams not take into account the difference in moon sightings?	Conditions for the obligation of expiation (Kaffara) upon breaking a fast.	595
589	Regarding the sighting of the moon, the analogy between the difference in sightings for prayers and for the moon is purely a false analogy (Ma'al Fariq).	In expiation (Kaffara), adhering to the Sharia-prescribed order is essential.	595
589	Rebuttal of the stance of Maulvi Abdul Hai Sahab Lucknawi regarding the difference in moon sightings.	Fasting is not broken by masturbation as long as ejaculation does not occur.	596
589		When does vomiting break a fast?	596

Ref	Subject Description	Detailed Subject Description	Page
	Imam Zaila'i Sahab does not represent the entire school of thought, nor are the Hanafi Hadith scholars limited to them.		
589	Who are the Hadith scholars comparable to Imam Abu Hanifa, Imam Abu Yusuf, and Imam Muhammad (may Allah have mercy on them)?	Repeatedly doing things that break the fast but don't require expiation (Mufattirat Ghayr-Mukaffirat) absolutely does not necessitate expiation unless done with the intention of sin.	596
589	Discussion on the Hadith of Kuraib.	When are pregnant and breastfeeding women permitted not to fast?	597
591	The author's (may Allah have mercy on him) explanation regarding the Hadith of Kuraib is superior to that of the author of Fath al-Qadir.	If there is disagreement about the number of Taraweeh rak'ats—whether 20 were prayed or 18—there are multiple scenarios for this.	597
591	Maulvi Abdul Hai Sahab Lucknawi made an error in understanding the passage from Tatar-Khaniyah.	If a Hafiz has recited the Quran once in Taraweeh, he can recite it at another place on other dates.	598
593	The aforementioned Maulvi Sahab's return to the truth regarding the difference in moon sightings.		

फतावा रज़विया - जिल्द 10

सन्दर्भ	विषय विवरण	विस्तृत विषय विवरण	पृष्ठ
583	वापस लिए गए मत पर फतवा देना अज्ञानता और आम सहमति (इज्मा) का उल्लंघन है।	मौलवी साहब ने अपने फतवा की तीसरी जिल्द खुद ही सवाल कायम करके लिखी है और इसमें कई जगह पिछली जिल्दों की गलतियों को सुधारा गया है, इसलिए उनके फतवा देखने वालों को इसका ध्यान रखना ज़रूरी है।	592
584	उदय स्थलों के अंतर (इख्तिलाफ-ए-मताले) को मानने वाले इसे कितनी दूरी तक मान्य समझते हैं?	आधे साअ (नीम साअ) का वज़न अंग्रेज़ी सेर में कितना होता है और बरेली तथा रामपुर के सेर में कितना होता है?	592
584	उदय स्थलों के अंतर के निर्धारण के विश्वसनीय तर्कों का खंडन।	जिस व्यक्ति ने शरई उज़्र (कारण) की वजह से रोज़ा न रखा हो, उसे रमज़ान के महीने के सम्मान में यथासंभव छिपकर खाना चाहिए।	595
588	हमारे इमामों का सुसंस्कृत मज़हब शोध के उस उच्च स्तर पर है कि शोध का दावा करने वालों को उसकी भनक तक नहीं लगी।	जो चीज़ें न भोजन हैं, न दवा, और न ही प्राकृतिक रूप से पसंद की जाने वाली हैं, उन्हें पेट भरकर खा लेने से भी केवल कज़ा वाजिब है, कफ़्फ़ारा नहीं।	595
588	हमारे इमामों ने उदय स्थलों के अंतर (इख्तिलाफ-ए-मताले) को मान्य क्यों नहीं माना?	रोज़ा तोड़ने पर कफ़्फ़ारा वाजिब होने की शर्तें।	595
589	चाँद देखने के मामले में, नमाज़ों और चाँद के उदय स्थलों के अंतर के बीच तुलना सरासर गलत तुलना (क़यास महज़ मा अल-फ़ारिक़) है।	कफ़्फ़ारे में शरई क्रम का ध्यान रखना आवश्यक है।	595
589		जब तक वीर्यपात न हो, हस्तमैथुन से रोज़ा नहीं टूटता।	596

सन्दर्भ	विषय विवरण	विस्तृत विषय विवरण	पृष्ठ
	उदय स्थलों के अंतर के बारे में मौलवी अब्दुल हई साहब लखनवी के रुख का खंडन।		
589	इमाम ज़ैलई साहब पूरे मज़हब के प्रतिनिधि नहीं हैं, और न ही हनफी मुहादिसीन (हदीस विद्वान) उन्हीं तक सीमित हैं।	उल्टी (क़ै) करने से रोज़ा कब टूटता है।	596
589	इमाम अबू हनीफा, इमाम अबू यूसुफ और इमाम मोहम्मद (अल्लाह उन पर रहम करे) के बराबर कौन से हदीस विद्वान होंगे?	रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें जो कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं करतीं (मुफ़त्तिरात ग़ैर-मुकफ़्फ़िरात), उन्हें बार-बार करने से भी तब तक कफ़्फ़ारा वाजिब नहीं होता जब तक कि वे गुनाह की नीयत से न की जाएं।	596
589	हदीस-ए-कुरैब पर चर्चा।	गर्भवती और स्तनपान कराने वाली महिला को रोज़ा न रखने की अनुमति कब है?	597
591	हदीस-ए-कुरैब के बारे में लेखक (अल्लाह उन पर रहम करे) की व्याख्या, फतह अल-क़दीर के लेखक की व्याख्या से बेहतर है।	तरावीह की रकातों की संख्या में मतभेद हो कि बीस (20) पढ़ी गई हैं या अठारह (18), तो इसकी कई स्थितियाँ हैं।	597
591	मौलवी अब्दुल हई साहब लखनवी को तातारखनिया की इबारत समझने में गलती हुई।	यदि एक हाफ़िज़ एक बार तरावीह में कुरान सुना चुका है, तो वह दूसरी तारीखों में दूसरी जगह सुना सकता है।	598
593	उपर्युक्त मौलवी साहब का उदय स्थलों के अंतर के बारे में सत्य की ओर लौटना।		

فتاویٰ رضویہ - جلد دہم

| ۵۸۳ | قول مرجوع پر فتوی دینا جہل وخرق اجماع ہے۔ | مولوی صاحب نے اپنے فتاوی کی تیسری جلد آپ ہی سوالات قائم کرکے لکھی ہے اور اس میں بہت جگہ پہلی جلدوں کے اغلاط کی اصلاح کردی لہٰذا ان کا فتاویٰ دیکھنے والوں کو اس کا لحاظ ضروری ہے۔ | ۵۹۲ | | ۵۸۴ | اختلاف مطالع کا اعتبار کرنے والے کتنی مسافت میں اس کو معتبر مانتے ہیں۔ | نیم صاع کا وزن انگریزی سیر سے کتنا بنتا ہے اور بریلی اور رامپور کے سیر سے کتنا بنتا ہے۔ | ۵۹۲ | | ۵۸۴ | معتبرین اختلاف مطالع کا تعین وجوہ سے رَد | جس نے بعذر شرعی روزہ نہ رکھا ہو اسے ماہِ رمضان کی حرمت کے پیش نظر حتی الوسع چھپ کر کھانا چاہئے۔ | ۵۹۵ | | ۵۸۸ | ہمارے ائمہ کا مذہب مہذب اس اعلیٰ درجہ تحقیق انیق پر ہوتا ہے کہ مدعیانِ تحقیق تک اس کی ہوا بھی نہیں آئی۔ | جو اشیاء نہ غذا ہیں نہ دوا، اور نہ ہی مرغوب طبع ہیں، وہ پیٹ بھر کر بھی کھالینے سے فقط قضا لازم ہے کفارہ نہیں۔ | ۵۹۵ | | ۵۸۸ | ہمارے ائمہ نے اختلافِ مطالع کا اعتبار کیوں نہیں کیا۔ | روزے توڑنے پر وجوب کفارہ کی شرائط | ۵۹۵ | | ۵۸۹ | رویتِ ہلال کے بارے میں اختلافِ مطالع کا دربارہ صلوات اختلاف مطالع پر قیاس محض مع الفارق ہے۔ | کفارے میں ترتیب شرعی کا لحاظ ضروری ہے۔ | ۵۹۵ | | ۵۸۹ | اختلافِ مطالع کے بارے میں مولوی عبدالحی صاحب لکھنوی کے موقف کارد۔ | جب تک انزال نہ ہو جلق سے روزہ نہیں ٹوٹتا۔ | ۵۹۶ | | ۵۸۹ | امام زیلعی صاحب مذہب نہیں، نہ محدثین حنفیہ ان میں منحصر ہیں۔ | قے سے روزہ کب ٹوٹتا ہے۔ | ۵۹۶ | | ۵۸۹ | امام ابو حنیفہ، امام ابو یوسف اور امام محمد رحمتہ اللہ تعالیٰ علیہم کے برابر کون سے محدثین ہوں گے۔ | مفطرات غیر مکفرات کا بار بار کرنا مطلقاً موجب کفارہ نہیں جب تک بہ نیت معصیت نہ ہو۔ | ۵۹۶ | | ۵۸۹ | حدیثِ کریب پر بحث۔ | حاملہ اور

مرضعہ کو روزہ نہ رکھنے کی اجازت کب ہے۔ | ۵۹۷ | | ۵۹۱ | مصنف رحمۃ اللہ علیہ کی حدیثِ کریب کے بارے میں توجیہ صاحب فتح القدیر کی توجیہ سے اولیٰ ہے۔ | رکعات تراویح کی تعداد میں اختلاف ہو کہ بیس ۲۰ پڑھی ہیں یا اٹھارہ ۱۸، تو اس کی متعدد صورتیں ہیں۔ | ۵۹۷ | | ۵۹۱ | مولوی عبدالحی صاحب لکھنوی کو تاتارخانیہ کی عبارت سمجھنے میں غلطی لگی۔ | حافظ ایک بار تراویح میں سنا چکا تو دوسری تاریخوں میں دوسری جگہ سنا سکتا ہے۔ | ۵۹۸ | | ۵۹۳ | مولوی صاحب مذکور کا اختلافِ مطالع کے بارے میں حق کی طرف رجوع۔ | | |

Fatawa-e-Razvia - Volume 10

Page	Ruling	Page
598	Congregational Nafl prayer with call/announcement is not prescribed.	603
598	Just as Tarawih is not dropped behind a Nafl prayer, similarly it will not be performed behind a person praying Fard.	603
598	The obligation that comes from a vow is temporary/incidental.	605
598	Incidental obligation is weaker than original obligation.	605
598	Building the stronger upon the weaker is not correct.	605
598	Difference in the cause of obligation is an obstacle to the correctness of following.	605
598	One who has made a vow cannot follow another who has made a vow.	605
598	One who has made a vow cannot follow one who is praying an obligatory prayer.	605
599	One who prays Fard in congregation and Tarawih alone can join the Witr congregation.	605
600	One who prays Fard alone and Tarawih in congregation cannot join the Witr congregation.	605
601	No prayer of adults is valid behind a minor, even if he is one day short of fifteen years.	607
603	If a verse of prostration is recited in prayer, the prostration becomes immediately obligatory.	607
603	Just as exiting the sanctity of prayer prevents the prostration of recitation, it also prevents the prostration of forgetfulness.	607
603	If one forgets to do the prostration of recitation in prayer and remembers before exiting the sanctity of prayer, he should perform both the prostration of recitation and the prostration of forgetfulness.	607
603	Regarding the moon sighting, testimony via wire/telegram is purely void and unreliable in Sharia.	608

--- | --- | --- 598 | Khatm-e-Quran in Tarawih is Sunnah, not Wajib. | 603 598 | Repeating Khatm-e-Quran in Tarawih, although not Sunnah Mu'akkadah for the Hafiz before starting, but after it has occurred, whatever he reads will be considered Fard. | 603 598 | The initial Fard in prayer is even a single verse, but if the entire great Quran is read in a single Rak'at, then all of it will be considered Fard. | 605 598 | If

joining a Surah is Wajib, then why return from Ruku for it? | 605 598 | Abandoning Fard for Wajib is impermissible, while abandoning Fard for Fard is permissible. | 605 598 | If someone forgets the first sitting and stands straight, returning to it is not permissible. | 605 598 | One who goes into Ruku forgetting to join a Surah, if he stands back up to read the Surah, he must repeat the Ruku. | 605 598 | The Fard that was abandoned for another Fard is gone. | 605 599 | One who has already led Tarawih once cannot lead it for other people on the same night. | 605 600 | Listening to the Quran is Fard even in purely voluntary (Nafl) prayers. | 605 601 | Tarawih is Sunnah Mu'akkadah throughout the entire holy month. | 607 603 | Rejection of a fatwa by Maulana Abdul Hai Lakhnawi with various reasons. | 607 603 | Weakness in Sunnah and voluntary prayers is not an obstacle to the correctness of following. | 607 603 | Prayer in clothes cannot be performed behind a naked person. | 607 603 | Prayer of a person wearing a turban is permissible behind a person wearing a cap. | 608

फ़तावा-ए-रज़विया - जिल्द दस

पृष्ठ	फ़तवा	पृष्ठ
598	नवाफिल की जमाअत तदाई के साथ मशरू (शुरू) नहीं है।	603
598	तरावीह जिस तरह नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे साक़ित (ख़त्म) नहीं होगी, उसी तरह फ़र्ज़ पढ़ने वाले के पीछे भी अदा नहीं होगी।	603
598	मन्नत से जो वुजूब (अनिवार्यता) आता है वह आरज़ी (अस्थायी) होता है।	605
598	आरज़ी वुजूब असल वुजूब से कमज़ोर होता है।	605
598	कमज़ोर पर मज़बूत की बुनियाद रखना सही नहीं है।	605
598	वुजूब के सबब में इख़्तलाफ़ इक्तिदा की सेहत के लिए रुकावट है।	605
598	मन्नत मानने वाला दूसरे मन्नत मानने वाले की इक्तिदा नहीं कर सकता।	605
598	मन्नत मानने वाला फ़र्ज़ पढ़ने वाले की इक्तिदा नहीं कर सकता।	605
599	जो फ़र्ज़ जमाअत से और तरावीह अकेले पढ़ता है, वह वित्र की जमाअत में शामिल हो सकता है।	605
600	जो फ़र्ज़ अकेले और तरावीह जमाअत से पढ़ता है, वह वित्र की जमाअत में दाखिल नहीं हो सकता।	605
601	नाबालिग के पीछे बालिग़ों की कोई नमाज़ जायज़ नहीं, चाहे वह पंद्रह साल से एक दिन ही कम क्यों न हो।	607
603	नमाज़ में सजदा-ए-तिलावत की आयत पढ़ी तो सजदा फ़ौरन वाजिब है।	607
603	नमाज़ की हुरमत से निकलना जिस तरह सजदा-ए-तिलावत के लिए रुकावट है, वैसे ही सजदा-ए-सह्व के लिए भी रुकावट है।	607
603	नमाज़ में सजदा-ए-तिलावत करना भूल गया और नमाज़ की हुरमत से बाहर नहीं हुआ था कि याद आ गया, तो सजदा-ए-तिलावत और सजदा-ए-सह्व दोनों करे।	607
603	चाँद देखने के मामले में तार/टेलीग्राम की गवाही शरीयत में सिरे से बातिल और नाकाबिले-एतबार है।	608

--- | --- | --- 598 | तरावीह में ख़त्मे-कुरआन सुन्नत है, वाजिब नहीं। | 603 598 | तरावीह में दोबारा ख़त्मे-कुरआन, हालांकि हाफ़िज़ के लिए शुरू करने से पहले सुन्नत-ए-मुअक्कदा नहीं है, लेकिन शुरू होने के बाद वह जितना पढ़ेगा, फ़र्ज़ की तरह वाक़े होगा। | 603 598 | नमाज़ में शुरूआती फ़र्ज़ चाहे एक ही आयत हो, लेकिन अगर सारा कुरआन एक ही रकअत में पढ़े तो सब फ़र्ज़ ही वाक़े होगा। | 605 598 | सूरह मिलाना वाजिब है, तो उसके लिए फ़र्ज़ रुकू से वापस क्यों आना? | 605 598 | वाजिब के लिए फ़र्ज़ छोड़ना नाजायज़ है, जबकि फ़र्ज़ के लिए फ़र्ज़ छोड़ना जायज़ है। | 605 598 | क़ादा-ए-ऊला भूल कर सीधा खड़ा हो गया तो अब उसका वापस लौटना हलाल नहीं। | 605 598 | सूरह मिलाना भूल कर रुकू में जाने वाला अगर वापस खड़ा होकर सूरह पढ़े, तो दोबारा रुकू करना ज़रूरी है। | 605 598 | फ़र्ज़ के लिए जो फ़र्ज़ छोड़ा वह जाता रहा। | 605 599 | जो एक बार तरावीह पढ़ा चुका, वह उसी रात दूसरे लोगों को नहीं पढ़ा सकता। | 605 600 | सिर्फ़ नफ़्ल नमाज़ में भी कुरआन सुनना फ़र्ज़ है। | 605 601 | पूरे माहे-मुबारक (रमज़ान) में तरावीह सुन्नत-ए-मुअक्कदा है। | 607 603 | मौलवी अब्दुल हई साहब लखनवी के एक फ़तवे का विभिन्न कारणों से खंडन। | 607 603 | सुन्नत और नवाफिल में अज़फ़ियत (कमज़ोरी) इक्तिदा की सेहत के लिए रुकावट नहीं है। | 607 603 | नंगे व्यक्ति के पीछे कपड़ों वाले की नमाज़ नहीं हो सकती। | 607 603 | टोपी पहनने वाले के पीछे इमामा (पगड़ी) बाँधने वाले की नमाज़ जायज़ है। | 608

فتاوی رضویہ - جلد دہم

صفحہ	مضمون	صفحہ
۵۹۸	جماعت نفل بہ تداعی مشروع نہیں۔	۶۰۳
۵۹۸	تراویح جس طرح متنفل کے پیچھے ساقط نہ ہوں گی اسی طرح مفترض کے پیچھے بھی ادا نہ ہوں گی۔	۶۰۳
۵۹۸	نذر سے جو وجوب آتا ہے وہ عارضی ہوتا ہے۔	۶۰۵
۵۹۸	وجوب عارضی وجوب اصلی سے اضعف ہوتا ہے۔	۶۰۵
۵۹۸	اضعف پر اقوی کی بناء صحیح نہیں۔	۶۰۵
۵۹۸	اختلاف سبب وجوب مانع صحت بناء ہے۔	۶۰۵
۵۹۸	ناذر ناذر کی اقتداء نہیں کر سکتا۔	۶۰۵
۵۹۸	ناذر مفترض کی اقتداء نہیں کر سکتا۔	۶۰۵
۵۹۹	فرض جماعت سے اور تراویح تنہا پڑھنے والا وتر کی جماعت میں شریک ہو سکتا ہے۔	۶۰۵
۶۰۰	فرض تنہا اور تراویح جماعت سے پڑھنے والا وتر کی جماعت میں داخل نہیں ہو سکتا۔	۶۰۵
۶۰۱	نابالغ کے پیچھے بالغوں کی کوئی نماز جائز نہیں اگر چہ ایک دن کم پندرہ برس کا ہو۔	۶۰۷
۶۰۳	نماز میں آیت سجدہ تلاوت کی تو سجدہ فورا واجب ہے۔	۶۰۷

صفحہ مضمون **صفحہ**

حرمت نماز سے خروج جس طرح مانع سجدہ تلاوت ہے یوں ہی مانع سجدہ سہو بھی ہے۔ ۶۰۳ ۶۰۷

سجدہ تلاوت نماز میں کرنا بھول گیا اور حرمت نماز سے خارج نہ ہوا تھا کہ یاد آگیا تو سجدہ تلاوت پھر سجدہ سہو دونوں کرے۔ ۶۰۳ ۶۰۷

در بارہ ہلال تار کی گواہی شرعاً محض باطل ونا معتبر۔ ۶۰۳ ۶۰۸

--- | --- | --- ۵۹۸ | تراویح میں ختم قرآن سنت ہے واجب نہیں۔ | ۶۰۳ ۵۹۸ | دوبارہ ختم قرآن تراویح میں اگر چہ حافظ کے لیے قبل ایقاع سنت مؤکدہ نہیں مگر بعد وقوع سنت تو درکنار جتنا پڑھے گا فرض واقع ہوگا۔ | ۶۰۳ ۵۹۸ | نماز میں فرض ابتدائی اگر چہ ایک ہی آیت ہے مگر سارا قرآن عظیم اگر ایک ہی رکعت میں پڑھے تو سب فرض ہی واقع ہوگا۔ | ۶۰۵ ۵۹۸ | ضم سورت واجب ہے تو اس کے لیے فرض رکوع سے عود کیوں۔ | ۶۰۵ ۵۹۸ | واجب کے لیے رفض فرض ناجائز جبکہ فرض کے لیے رفض فرض جائز ہے۔ | ۶۰۵ ۵۹۸ | قعدہ اولی بھول کر سیدھا کھڑا ہو گیا تو اب اسے عود حلال نہیں۔ | ۶۰۵ ۵۹۸ | ضم سورت بھول کر رکوع میں جانے والا واپس کھڑا ہو کر سورت پڑھے تو دوبارہ رکوع لازم ہے۔ | ۶۰۵ ۵۹۸ | فرض کے لیے جو فرض چھوڑا وہ جاتا رہا۔ | ۶۰۵ ۵۹۹ | جو ایک بار تراویح پڑھا چکا اسی رات دوسرے لوگوں کو نہیں پڑھا سکتا۔ | ۶۰۵ ۶۰۰ | نفل محض میں بھی استماع قرآن فرض ہے۔ | ۶۰۵ ۶۰۱ | تراویح سارے ماہ مبارک میں سنت مؤکدہ ہے۔ | ۶۰۷ ۶۰۳ | مولوی عبدالحی صاحب لکھنوی کے ایک فتوی کا وجہ وجہ سے رد۔ | ۶۰۷ ۶۰۳ | سنن ونوافل میں اضعفیت مانع صحت بناء نہیں۔ | ۶۰۷ ۶۰۳ | عاری کے پیچھے لباس کی نماز نہیں ہو سکتی۔ | ۶۰۷ ۶۰۳ | کلاہ پوش کے پیچھے عمامہ بند کی نماز جائز ہے۔ | ۶۰۸

Fatawa Razvia, Volume 10

- The telegraph (wire) has no capacity for testimony at all. | 609
- Research into the meaning of 'Istifadah' (general knowledge/report) that Sharia has considered reliable regarding moon sighting. | 610
- Istifadah is in the position of a 'Mutawatir' (successive/frequent) report. | 611
- Allama Shami had an ambiguity regarding the moon of Eid al-Adha. | 612
- Caution / Note | 613
- Rejection of testimony in Hajj is not based on the difference of horizons but to avoid hardship/difficulty. | 613
- Treatise: "Dar al-Qubh an Dark Waqt al-Subh" (The rule for determining true dawn is explained). | 617
- Is there a general principle in Sharia for determining true dawn, or is it necessary to see with the eyes? | 617
- What is the meaning of what is written in "Miftah al-Salat" with reference to "Khazanah al-Riwayat" that the seventh part of the night is Fajr? | 617
- The times appointed by the pure Sharia for prayer, fasting, Hajj, etc., depend on sighting. | 617
- The Sharia of Muhammad (upon its master be prayers and peace) has descended for the whole world. | 618
- The Wise and Merciful One (may His glory be exalted) appointed two clear signs for times, i.e., the moon and the sun. | 618
- Arguments from the Quran and Hadith for the appointment of the sun and moon for determining times. | 618
- The reasons for the appearance and concealment of the moon are many and unregulated. | 619
- Ptolemy, despite establishing chapters for the appearance and disappearance of the five wandering planets and fixed stars, did not discuss moon sighting at all. | 619
- Later astronomers said some things about moon sighting with respect to the degree of altitude, or distance from the equator, or the arc of sunset adjustment, etc., but they themselves are intensely divided on them. | 619
- The modern astronomers carry out extreme scrutiny and depth in useless matters; a few examples of this. | 619

- Our scholars have stated clearly that the word of timekeepers/astronomers is not acceptable regarding moon sighting. | 619
- Through repeated sightings, experience gave some general principles with the help of which it became possible to bring time into the regulations of astronomy and astronomical tables. | 619
- Knowing the city's latitude and the sun's declination is sufficient to tell the sunrise and sunset times. | 620
- In the pure Sharia, the customary sunrise and sunset are considered reliable. | 620
- Differing opinions state that between 455 to 525 miles above the earth are surrounded by vapors and thick air. | 620
- The ray of vision first passes through a thick medium then a clear medium to reach the horizon. | 620
- What is refraction and the rule for finding its amount. | 620

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (खंड 10)

- टेलीग्राफ (तार) में गवाही की बिल्कुल योग्यता नहीं होती। | ६०९
- रुआयत-ए-हिलाल (चाँद देखने) के बारे में शरिया द्वारा मान्य 'इस्तिफ़ादा' के अर्थ का शोध। | ६१०
- इस्तिफ़ादा, मुतवातिर (निरंतर) समाचार के समान है। | ६११
- अल्लामा शामी को ईदुल अज़हा के चाँद के बारे में संदेह हुआ। | ६१२
- चेतावनी / नोट | ६१३
- हज में गवाही का खंडन क्षितिज के अंतर के आधार पर नहीं बल्कि कठिनाई को दूर करने के कारण है। | ६१३
- लेख: "दर अल-कुब्ह अन डार्क वक़्त अल-सुब्ह" (सच्ची भोर का पता लगाने का नियम बताया गया है)। | ६१७
- क्या शरिया में सुब्ह-ए-सादिक (सच्ची भोर) जानने का कोई सामान्य नियम है या इसे आंखों से देखना ज़रूरी है? | ६१७
- "मिफ्ताह अल-सलात" में "खज़ाना अल-रिवायत" के हवाले से जो लिखा है कि रात का सातवां हिस्सा फज्र है, उसका क्या मतलब है? | ६१७
- शुद्ध शरिया ने नमाज़, रोज़ा और हज आदि के लिए जो समय निर्धारित किए हैं, वे चाँद/सूरज देखने पर निर्भर हैं। | ६१७
- मुहम्मदी शरीयत (उन पर दरूद और सलाम हो) पूरी दुनिया के लिए अवतरित हुई है। | ६१८
- समय के लिए हकीम रहीम (अल्लाह) ने दो स्पष्ट संकेत नियुक्त किए हैं, यानी चंद्रमा और सूर्य। | ६१८
- समय निर्धारित करने के लिए सूर्य और चंद्रमा की नियुक्ति पर कुरान और हदीस से प्रमाण। | ६१८
- चाँद के दिखाई देने और छिपने के कारण बहुत से और अनियंत्रित हैं। | ६१९
- टॉलेमी ने पाँच विचरने वाले ग्रहों और स्थिर सितारों के प्रकट होने और ओझल होने के लिए अध्याय स्थापित करने के बावजूद, चाँद देखने के बारे में बिल्कुल चर्चा नहीं की। | ६१९

- बाद के खगोलविदों ने ऊंचाई के अंश, या भूमध्य रेखा से दूरी, या सूर्यास्त समायोजन के चाप आदि के संबंध में चाँद देखने के बारे में कुछ बातें कहीं, लेकिन वे स्वयं उनमें कड़ा मतभेद रखते हैं। | ६१९
- आधुनिक खगोलशास्त्री बेकार की बातों में अत्यधिक बारीकी और गहराई में जाते हैं; इसके कुछ उदाहरण। | ६१९
- हमारे विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि चाँद देखने के बारे में समय बताने वालों (ज्योतिषियों) की बात स्वीकार्य नहीं है। | ६१९
- बार-बार देखने से, अनुभव ने कुछ सामान्य नियम दिए जिनकी मदद से समय को खगोल विज्ञान और खगोलीय तालिकाओं के नियमों के तहत लाना संभव हुआ। | ६१९
- शहर का अक्षांश और सूर्य का झुकाव जानना सूर्योदय और सूर्यास्त का समय बताने के लिए पर्याप्त है। | ६२०
- शुद्ध शरिया में प्रथागत सूर्योदय और सूर्यास्त को विश्वसनीय माना जाता है। | ६२०
- विभिन्न मतों के अनुसार, पृथ्वी से ४५५ से ५२५ मील ऊपर तक वाष्प और घनी हवा छाई रहती है। | ६२०
- दृष्टि की किरण पहले घने माध्यम और फिर साफ माध्यम से गुजरकर क्षितिज तक पहुँचती है। | ६२०
- अपवर्तन (Refraction) क्या है और इसकी मात्रा ज्ञात करने का नियम। | ६२०

पृष्ठ ८३६ में से ४०

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

- تار اصلاً اہلیت شہادت نہیں رکھتا۔ | ۶۰۹
- جو استفاضہ شرع نے رؤیت ہلال کے بارے میں معتبر فرمایا اس کے معنی کی تحقیق۔ | ۶۱۰
- استفاضہ بمنزلہ خبر متواتر ہے۔ | ۶۱۱
- درباره ہلال اضحی علامہ شامی کو اشتباہ ہوا۔ | ۶۱۲
- تنبیہ | ۶۱۳
- حج میں رد شہادت اختلاف مطالع کی بناء پر نہیں بلکہ دفع حرج کی وجہ سے ہے۔ | ۶۱۳
- رسالہ درء القبح عن درک وقت الصبح (صبح صادق معلوم کرنے کا قاعدہ بیان کیا گیا ہے) | ۶۱۷
- کیا شریعت میں صبح صادق معلوم کرنے کا کوئی قاعدہ کلیہ ہے یا آنکھوں سے دیکھنا ضروری ہے۔ | ۶۱۷
- مفتاح الصلوۃ میں جو بحوالہ خزانہ الروایات لکھا ہے کہ رات کا ساتواں حصہ فجر ہوتا ہے اس کا کیا مطلب ہے۔ | ۶۱۷
- شریعت مطہرہ نے نماز، روزہ اور حج وغیرہ کے لیے جو اوقات مقرر فرمائے ان کا مدار رؤیت پر ہے۔ | ۶۱۷
- شریعت محمدیہ علیٰ صاحبہا الصلوۃ والسلام تمام جہان کے لیے اُتری ہے۔ | ۶۱۸
- اوقات کے لیے حکیم رحیم جل جلالہ نے دو کھلی نشانیاں مقرر فرمادیں یعنی چاند اور سورج۔ | ۶۱۸
- اوراک اوقات کے لیے شمس و قمر کے تقرر پر قرآن و حدیث سے دلائل۔ | ۶۱۸

- ہلال کے ظہور و خفا کے اسباب کثیر و نامنضبط ہیں۔ | ۶۱۹
- بطلیموس نے متحیرہ خمسہ و کواکب ثوابت کے ظہور و خفا کے لیے باب وضع کرنے کے باوجود رؤیت ہلال سے اصلاً بحث نہ کی۔ | ۶۱۹
- متاخرین ارباب ہیئت نے بلحاظ درجہ ارتفاع یا بعد معدل و قوس تعدیل الغروب وغیرہ کی کچھ باتیں رؤیت ہلال کے بارے میں کہیں لیکن وہ خود ان میں بشدت مختلف ہیں۔ | ۶۱۹
- اہل ہیئت جدیدہ فضول باتوں میں نہایت تدقیق و تعمق کرتے ہیں اس کی چند مثالیں۔ | ۶۱۹
- ہمارے علماء نے تصریح فرمائی کہ رؤیت ہلال کے بارے میں اہل توقیت کا قول منظور نہیں۔ | ۶۱۹
- رؤیت کے تکرار سے تجربہ نے کچھ ضوابط کلیہ دیئے جن کی مدد سے وقت کو قوانین علم ہیئت وز یج کے ضابطہ میں لے آنا میسر ہوا۔ | ۶۱۹
- شہر کا عرض اور جزء شمس کا میل معلوم ہونا طلوع و غروب کا وقت بتانے کے لیے کافی و وافی ہے۔ | ۶۲۰
- شرع مطہر میں طلوع و غروب عرفی معتبر ہے۔ | ۶۲۰
- بالائے زمین ۴۵۵ سے ۵۲۵ میل تک علی الاختلاف بخارات و ہواء غلیظہ محیط ہوتی ہیں۔ | ۶۲۰
- شعاع بصر پہلے ملاء غلیظ پھر ملاء صافی میں گزر کر افق میں پہنچتی ہے۔ | ۶۲۰
- انکسار کیا ہے اور اس کی مقدار دریافت کرنے کا ضابطہ | ۶۲۰

Fatawa Razawiya, Volume 10

Page	Subject	Subject	Page
621	Disagreement among astronomers regarding the degrees of solar depression at the time of Subh-i-Kazib (false dawn) and Subh-i-Sadiq (true dawn).	Time for reciting the Iftar prayer.	629
621	The Shari'i definition of Subh-i-Kazib and Subh-i-Sadiq.	Treatise 'Al-Arous al-Mu'tar fi Zaman Da'wah al-Iftar' (Reciting the Iftar prayer after Iftar).	631
621	The difference in degrees between Subh-i-Kazib and Subh-i-Sadiq.	There are three opinions regarding the Iftar prayer 'Allahumma laka sumtu...': whether it should be recited before Iftar, at the time of Iftar, or after Iftar. Which of these three is correct?	631
622	According to Imam-e-Azam, the time of Maghrib lasts until the white horizontal twilight (Shafaq-e-Abyaz Mustatir).	The requirement of the evidence is that this prayer should be recited after breaking the fast; reasoning based on five points.	634
623	A famous incident supporting the invalidity of 15 degrees and the validity of 18 degrees of solar depression for Subh-i-Sadiq.	The explicit implication of the words of the Hadith 'When he broke his fast he said: O Allah...' is that the act of Iftar is the condition and 'said such' is its consequence.	635
623	What is the year of death of Imam Shams al-Aimmah al-Halwani? (Footnote).	A mere statement without a speaker lacks the possibility of occurrence; from where will the necessary sequence of the consequence arise?	635
625	When a branch contradicts its root, the branch is a liar by its own admission, because a branch is based on its root; if the base is void,	Declaring 'Allahumma' as a new sentence (Kalam-e-Mustanaf) is such an error that even a student of 'Sharh Mi'at Amil' would not accept it.	635

Page	Subject	Subject	Page
	then the structure built upon it is also void.		
625	It is permissible to beat a drum for Sahari.	The consequence (jaza) does not precede the condition (shart), but follows it and is dependent on it.	635
625	Difference in the timings of Sahar and Iftar in Almora and Bareilly.	True simultaneity between the mentioned prayer and Iftar is not reasonable here.	635
626	Sahar and Iftar timings of Sahadar.	The final result of the second and third opinions is the same.	635
626	It is Sunnah to break the fast immediately upon being certain of sunset.	In the Iftar prayers, the use of past tense forms is not intended as 'insha' (origination), so inevitably, 'ikhbar' (information) is determined.	636
627	Difference between mountain and plain sunrise and sunset in Almora.	Resorting to metaphorical interpretation (tajawuz) is contrary to the original rule.	636
629	Breaking the fast with dates and water; smoking hookah in a way that causes languor is haraam.		

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम (दसवीं)

पेज	विषय	विषय	पेज
621	सुब्ह-ए-काज़िब और सुब्ह-ए-सादिक़ के समय सूर्य के अध:पतन (डिप्रेशन) के अंशों में खगोलशास्त्रियों का मतभेद।	इफ़्तार की दुआ पढ़ने का समय।	629
621	सुब्ह-ए-काज़िब और सुब्ह-ए-सादिक़ की शरी'ई परिभाषा।	रिसाला 'अल-अरूस अल-मुअत्तार फ़ी ज़मन दा'वत अल-इफ़्तार' (इफ़्तार के बाद इफ़्तार की दुआ पढ़ना)।	631
621	सुब्ह-ए-काज़िब और सुब्ह-ए-सादिक़ के बीच कितने अंशों का अंतर है?	इफ़्तार की दुआ 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु...' के बारे में तीन मत हैं कि क्या यह इफ़्तार से पहले पढ़ी जाए, इफ़्तार के समय या इफ़्तार के बाद। इन तीनों में से कौन सा मत सही है?	631
622	इमाम-ए-आज़म के अनुसार मग़रिब का समय शफ़क़-ए-अबयज़ मुस्ततीर (सफेद क्षैतिज गोधूलि) तक है।	तर्क की मांग यह है कि यह दुआ रोज़ा इफ़्तार करके पढ़ी जाए, इस पर पाँच पहलुओं से दलील।	634
623	सुब्ह-ए-सादिक़ के लिए 15 अंश के डिप्रेशन के बातिल होने और 18 अंश के डिप्रेशन के सही होने का समर्थक प्रसिद्ध वाकया।	हदीस के शब्दों 'इज़ा अफ़्तरा क़ाला अल्लाहुम्मा...' का स्पष्ट अर्थ यही है कि इफ़्तार शर्त है और 'क़ाला कज़ा' (ऐसा कहा) उसका फल (जज़ा) है।	635
623	इमाम शम्स अल-अइम्मा हलवानी का वफ़ात का वर्ष क्या है? (हाशिया)।	वक्ता के बिना केवल कथन होने की क्षमता ही नहीं रखता, अनुक्रम जो जज़ाइयत के लिए आवश्यक है वह कहाँ से आएगा?	635
625	जब शाखा मूल (अस्ल) को झुठलाती है, तो शाखा स्वयं के स्वीकारोक्ति से झूठी है क्योंकि शाखा मूल पर टिकी होती है; जब	'अल्लाहुम्मा' को नया वाक्य (कलामे मुस्तनफ़) मानना ऐसी गलती है जिसे 'शरह	635

पेज	विषय	विषय	पेज
	आधार ही बातिल है तो उस पर टिकी चीज़ भी बातिल है।	मिअत आमिल' पढ़ने वाला भी स्वीकार नहीं करेगा।	
625	सहरी के लिए नगाड़ा बजाना जायज़ है।	जज़ा (फल) शर्त से पहले नहीं होती बल्कि शर्त के बाद और उस पर आधारित होती है।	635
625	अल्मोड़ा और बरेली के सहरी और इफ़्तार के समय में अंतर।	उल्लेखित दुआ और इफ़्तार में वास्तविक एकरूपता यहाँ तर्कसंगत नहीं है।	635
626	सहादर के इफ़्तार और सहरी के समय।	दूसरे और तीसरे मत का परिणाम एक ही है।	635
626	सूर्यास्त का यकीन होने पर तुरंत इफ़्तार करना सुन्नत है।	इफ़्तार की दुआओं में भूतकाल (माज़ी) के शब्दों से नवीन रचना (इन्शा) अभीष्ट नहीं है, अतः अनिवार्य रूप से यह केवल सूचना (इख़बार) है।	636
627	अल्मोड़ा में पहाड़ी और मैदानी सूर्योदय और सूर्यास्त में अंतर।	लाक्षणिक प्रयोग (तजावुज़) करना मूल नियम के विरुद्ध है।	636
629	खजूर, पानी से इफ़्तार करना; हुक्का इस तरह पीना जिससे कमज़ोरी या आलस्य आए, हराम है।		

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

صفحہ	موضوع
	صبحِ کاذب و صبحِ صادق کے وقت
٦٢١	انحطاطِ شمس کے درجات میں اہل ہیئت کا اختلاف۔
٦٢١	صبحِ کاذب اور صبحِ صادق کی شرعی تعریف۔
٦٢١	صبحِ کاذب اور صبحِ صادق میں کتنے درجات کا فاصلہ ہے۔
٦٢٢	امام اعظم کے نزدیک وقتِ مغرب شفقِ ابیض مستطیر تک ہے۔
٦٢٣	صبحِ صادق کے لیے ١٥ درجے انحطاط کے بطلان اور ١٨ درجے انحطاط کی صحت کا مؤید مشہور واقعہ۔

صفحہ	موضوع
٦٢٩	افطار کی دعا پڑھنے کا وقت۔
٦٣١	رسالہ العروس المعطار فی زمن دعوۃ الافطار (دعائے افطار بعد افطار پڑھنا)
٦٣١	دعائے افطار "اللہم لک صمت الخ" کے بارے میں تین اقوال ہیں کہ قبلِ افطار پڑھی جائے یا وقتِ افطار یا بعد افطار ان اقوالِ ثلاثہ میں سے کون سا قول صحیح ہے۔
٦٣٤	مقتضائے دلیل یہ ہے کہ یہ دلیل روزہ افطار کر کے پڑھی جائے، اس پر پانچ وجوہ سے استدلال۔
٦٣٥	الفاظِ احادیث "اذا افطر قال اللہم الخ" کا مفاد صریح یہی ہے کہ افطار شرط او قال کذا اس کی جزا ہے۔

صفحہ	موضوع
٦٢٣	امام شمس الائمہ حلوانی کا سنِ وفات کیا ہے۔ (حاشیہ)
٦٢٥	فرع جب تکذیبِ اصل کرے تو فرع باقرارِ خود کاذب ہے کیونکہ فرع اصل پر مبتنی ہے جب مبنی باطل تو مبتنی بھی باطل۔
٦٢٥	سحری کے لیے نقارہ بجانا جائز ہے۔
٦٢٥	الموڑہ اور بریلی کے سحر و افطار کے وقت میں تفاوت۔
٦٢٦	سہادر کے افطار و سحر کے اوقات۔
٦٢٦	غروب پر یقین ہونے پر فوراً افطار سنت ہے۔
٦٢٧	الموڑہ میں پہاڑی اور میدانی طلوع و غروب میں فرق۔
٦٢٩	

صفحہ	موضوع
٦٣٥	مجرد قول، مقولے کے بغیر صلاحیتِ وقوع ہی نہیں رکھتا، ترتبِ جولازم جزائیت ہے کہاں سے آئے گا۔
٦٣٥	اللہم کو کلامِ مستانف قرار دینا ایسی غلطی ہے کہ شرحِ مائۃ عاملِ خواں بھی قبول نہ کرے گا۔
٦٣٥	جزا شرط سے مقدم نہیں ہوتی بلکہ شرط سے مؤخر اور اس پر مرتب ہوتی ہے۔
٦٣٥	دعاء مذکور اور افطار میں مقارنتِ حقیقیہ یہاں معقول نہیں۔
٦٣٥	قول ثانی و ثالث کا مآل ایک ہی ہے۔
٦٣٦	ادعیہ افطار میں ماضی کے صیغوں سے انشاء مقصود نہیں تولاجرم اخبار متعین ہے۔
٦٣٦	ارتکابِ تجوز خلافِ اصل ہے۔

خرما، پانی سے افطار کرنا، حقہ اس
طور پر پینا جس سے تفتیتر ہو حرام
ہے۔

Fatawa Razawiya Volume 10

- 636: As long as there is no necessity, it is obligatory to interpret the texts literally.
- 636: The translation of "Aftartu" as "I break the fast" is not correct; rather, the correct one is "I broke the fast."
- 636: It is proven from Hadith Qudsi that the one who breaks the fast quickly is more beloved to Allah Almighty.
- 637: Three Hadiths that indicate the breaking of fast before prayer by the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him).
- 638: Clarification by Mulla Ali Qari and Ibn al-Malik that the prayer of breaking fast is after breaking the fast.
- 638: "Allahumma laka sumtu" is a prayer.
- 639: In numerous Hadiths, Dhikr (remembrance) has also been declared as Dua (prayer).
- 639: The best prayer is the prayer of Arafah.
- 640: The best Dhikr is "La ilaha illa Allah" and the best prayer is "Alhamdulillah".
- 640: Metonymy (Kinayah) is more eloquent than explicit statement (Tasreeh).
- 641: "Waqt-ul-Iftar", "Ind-al-Iftar", "Ba'd-al-Iftar", "Hangam-e-Iftar", "Nazdeek-e-Iftar" and "Pas-Iftar" all have the same meaning.
- 641: Research into the literal meaning of the word "Inda".
- 641: Proximity to spatial things will be spatial proximity, and to temporal things will be temporal proximity.
- 641: Unity of direction necessitates proximity, and that is actually spatial proximity since the true direction is specific to spatial things.
- 642: Sometimes Iftar, in contrast to Suhoor, refers to the food a fasting person eats in the evening.
- 644: Explanation of the Hadith from which it apparently seems that the occurrence of prayer was before breaking the fast.
- 644: Dawud bin Zabraqan is abandoned [as a narrator].

Optional Fasting (Sawm-e-Nafl) - 647: Fasting on the 27th of Rajab. - 649: 27th Rajab and other optional fasts. - 653: The fast of Hazrat Ali Mushkil Kusha. - 654: I'tikaf in the last ten days of Ramadan Sharif.

The Book of Hajj (Kitab-ul-Hajj) - 657: If Hajj is obligatory for a woman, it is obligatory for her to go for Hajj. - 658: In obligatory Hajj, there is no need for the permission of parents. - 658: Parents having debt is not an obstacle to Hajj being obligatory for the son. - 658: He for whom Hajj is obligatory but does not go for Hajj and [instead] helps other pilgrims is a sinner.

Hajj on behalf of another (Hajj-e-Badal) - 659: If a pilgrim dies on the way, his Hajj is considered fulfilled. - 659: It is disliked (Makruh) to have someone else perform Hajj on behalf of one for whom Hajj is [already] obligatory.

फतावा रज़विया जिल्द दहम (भाग 10)

- 636: जब तक कोई ज़रूरत न हो, नुसूस (ग्रंथों) को उनके ज़ाहिरी अर्थों में लेना वाजिब (अनिवार्य) है।
- 636: "अफ़्तरतु" का अनुवाद "मैं इफ्तार करता हूँ" सही नहीं है, बल्कि सही यह है कि "मैंने इफ्तार किया।"
- 636: हदीस-ए-क़ुदसी से साबित है कि जल्दी इफ्तार करने वाला अल्लाह तआला को अधिक प्रिय है।
- 637: तीन हदीसें जो रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के इफ्तार दुआ से पहले करने की जानकारी देती हैं।
- 638: मुल्ला अली क़ारी और इब्न-उल-मलिक का स्पष्टीकरण कि इफ्तार की दुआ इफ्तार के बाद है।
- 638: "अल्लाहुम्मा लका सुमतु" एक दुआ है।
- 639: अनेक हदीसों में ज़िक्र (स्मरण) को भी दुआ करार दिया गया है।
- 639: बेहतरीन दुआ अरफ़ा की दुआ है।
- 640: अफ़ज़ल ज़िक्र "ला इलाहा इल्लल्लाह" और अफ़ज़ल दुआ "अल्हम्दुलिल्लाह" है।
- 640: किनाया (व्यंजना) तसरीह (स्पष्टीकरण) से अधिक प्रभावशाली है।
- 641: वक़्त-उल-इफ्तार, इन्द-अल-इफ्तार, बाद-अल-इफ्तार, हंगाम-ए-इफ्तार, नज़दीक-ए-इफ्तार और पस-इफ्तार—सब का अर्थ एक ही है।
- 641: "इन्द" शब्द के शाब्दिक अर्थ का अनुसंधान।
- 641: स्थान-सम्बन्धी वस्तुओं से निकटता स्थानीय होगी और समय-सम्बन्धी वस्तुओं से निकटता सामयिक होगी।
- 641: दिशा की एकता निकटता की आवश्यकता है, और वह वास्तव में स्थानीय निकटता है क्योंकि वास्तविक दिशा स्थानों के लिए विशिष्ट है।
- 642: कभी-कभी सुहूर के मुक़ाबले में इफ्तार उस भोजन को कहते हैं जो रोज़ेदार शाम को खाता है।
- 644: उस हदीस की व्याख्या जिससे ज़ाहिरी तौर पर इफ्तार से पहले दुआ का होना साबित है।

• 644: दाऊद बिन ज़बरक़ान मतरूक (परित्यक्त रावी) है।

नफ़्ल रोज़ा (सॉम-ए-नफ़्ल) - 647: २७ रजब का रोज़ा। - 649: २७ रजब और अन्य नफ़्ल रोज़े। - 653: हज़रत अली मुश्किल कुशा का रोज़ा। - 654: रमज़ान शरीफ़ के आख़िरी अशरे (दस दिनों) में एतिकाफ़।

किताब-उल-हज्ज - 657: यदि औरत पर हज्ज फ़र्ज़ हो तो उसके लिए हज्ज पर जाना फ़र्ज़ है। - 658: फ़र्ज़ हज्ज में माता-पिता की अनुमति की आवश्यकता नहीं है। - 658: माता-पिता पर क़र्ज़ होना बेटे के हज्ज के फ़र्ज़ होने में रुकावट नहीं है। - 658: जिस पर हज्ज फ़र्ज़ हो और वह हज्ज को न जाए और दूसरे हाजियों की मदद करे, वह गुनहगार है।

हज्ज-ए-बदल - 659: यदि हाजी रास्ते में मर जाए तो उसका हज्ज अदा हो जाता है। - 659: जिस पर हज्ज फ़र्ज़ हो उससे हज्ज-ए-बदल कराना मकरूह है।

पृष्ठ 42/836

- ۶۳۶: جب تک کوئی حاجت نہ ہو نصوص کو ظاہر پر محمول کرنا واجب ہے۔
- ۶۳۶: اَفْطَرْتُ کا ترجمہ "میں افطار کرتا ہوں" صحیح نہیں بلکہ صحیح یہ ہے کہ "میں نے افطار کیا۔"
- ۶۳۶: حدیث قدسی سے ثابت ہے کہ جلد افطار کرنے والا اللہ تعالیٰ کو زیادہ محبوب ہے۔
- ۶۳۷: تین حدیثیں جو رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے افطار قبل از دعا کا پتا دیتی ہیں۔
- ۶۳۸: ملا علی قاری اور ابن الملک کی تصریح کہ دعاء افطار کے بعد ہے۔
- ۶۳۸: اللھم لک صمتُ دعا ہے۔
- ۶۳۹: احادیث کثیرہ میں ذکر کو بھی دعا قرار دیا گیا۔
- ۶۳۹: بہترین دُعا دُعاء عرفہ ہے۔
- ۶۴۰: افضل ذکر لا الہ الا اللہ اور افضل دعاء الحمد للہ ہے۔
- ۶۴۰: کنایہ تصریح سے ابلغ ہے۔
- ۶۴۱: وقت الافطار، عند الافطار، بعد الافطار، ہنگام افطار، نزدیک افطار اور پس افطار سب کا حاصل ایک ہی ہے۔
- ۶۴۱: لفظ عند کے لغوی معنی کی تحقیق۔
- ۶۴۱: مکانیات سے قرب مکانی اور زمانیات سے قرب زمانی ہوگا۔
- ۶۴۱: اتحاد جہت مستلزم قرب اور وہ ہنگام حقیقت قرب مکانی کہ جہت حقیقیہ مختص بمکانیات ہے۔
- ۶۴۲: کبھی افطار مقابل سحور اس کھانے کو کہتے ہیں جو صائم شام کو کھاتا ہے۔

- ۶۴۴: جس حدیث سے بظاہر افطار سے قبل دعاء کا وقوع ثابت ہے اس کی توجیہ۔
- ۶۴۴: داؤد بن زبرقان متروک ہے۔

صوم نفل - ۶۴۷: ۲۷ رجب کا روزہ۔ - ۶۴۹: ۲۷ رجب اور دوسرے نفلی روزے۔ - ۶۵۳: حضرت علی مشکل کشا کا روزہ۔ - ۶۵۴: رمضان شریف کے اخیر عشرہ میں اعتکاف۔

کتاب الحج - ۶۵۷: عورت پر حج فرض ہو تو اسے حج کے لیے جانا فرض ہے۔ - ۶۵۸: حج فرض میں والدین کی اجازت کی حاجت نہیں۔ - ۶۵۸: والدین پر قرض ہونا لڑکے کے حج پر حج فرض ہونے میں مانع نہیں۔ - ۶۵۸: جس پر حج فرض ہو وہ حج کو نہ جائے اور دوسرے حاجیوں کی مدد کرے وہ گنہگار ہے۔

حج بدل - ۶۵۹: حاجی راستہ میں مر جائے تو اس کا حج ادا ہو جاتا ہے۔ - ۶۵۹: جس پر حج فرض ہو اس سے حج بدل کرانا مکروہ ہے۔

Fatawa Razawiyya Volume 10

659: Conditions for Hajj Badal (proxy pilgrimage). 659: The inability for which Hajj Badal was performed must remain until death. 662: What kind of person should be the proxy, from where should he start, and from where should calculations be made. Whether Hajj Badal from Makkah Mukarramah will be sufficient or not. 663: A penalty must be paid if proxy funds are spent on personal needs. 664: It is permissible not to tie a loincloth. 664: Wearing habitually sewn clothes. 664: Covering the head or mustache is forbidden in Ihram. 664: Remedy if keeping the head uncovered causes harm. 665: If bathing is harmful, perform ablution (Wudu) for Ihram, not dry ablution (Tayammum). 666: Times for traveling from Mina to Arafat and Muzdalifah. 666: What to do if there is a necessity during these times. 666: Performing Ramy (stoning the devil) before noon on the 12th. 666: Can another person perform Ramy on behalf of a woman or not. 669: Sacrifices related to Ihram. 669: Eight people participating in one camel sacrifice. 670: The Haram (sacred territory) is a condition for the sacrifice. 670: Giving the value in charity instead of the sacrifice.

761: What is the ruling if one does not go to Madinah Tayyibah after Hajj. 762: Going to Madinah Tayyibah before or after Hajj. 762: Rulings for prayer, fasting, and Umrah in Makkah Mukarramah during Ramadan and other months. 764: A question concerning aid for the Hijaz Railway. 777: The treatise 'Saiqal al-Rayn 'an Ahkam Mujawarat al-Haramayn' (Statement of residing in the two holy Harams). 777: Can a legally responsible person, whose parents are alive and not financially dependent on him, migrate to the Two Holy Mosques and reside there without their permission or not. 778: Kind treatment of parents is among the greatest obligations and important acts of proximity to God. 778: The virtues of parents and good treatment towards them from the Quran and Hadith. 784: Hazrat Uwais Qarni (may Allah be pleased with him) is the best of the successors (Tabi'un). 784: What is the correct meaning of migration (Hijrah). 785: A single jurist (Faqih) is harder on Satan than a thousand worshippers. 786: Had Jurayj the monk known, responding to his mother's call would have been better than the worship of the Lord. 786: Obedience to parents is better than performing a voluntary (Nafl) Hajj. 789: The incident of the noble Sayyid Abu Abdullah al-Fasi (may Allah have mercy on him). 791: There is a difference of opinion among scholars regarding residing in Makkah Mukarramah. 795: Mercy in Madinah Munawwarah is more frequent, gentler, and more abundant.

फतावा रजविया जिल्द दहम (खंड 10)

659: हज बदल की शर्तें। 659: जिस लाचारी के कारण हज बदल कराया गया है, वह मृत्यु तक बनी रहे। 662: बदल के लिए व्यक्ति कैसा हो, कहाँ से जाए और गणना कहाँ से करे। मक्का मुकर्रमा से हज बदल पर्याप्त होगा या नहीं। 663: बदल के पैसों को अपनी ज़रूरतों में खर्च करने पर हर्जाना देना होगा। 664: बिना लंगोट बांधे एहराम बांधना जायज़ है। 664: सामान्य तौर पर सिले हुए कपड़े पहनना। 664: एहराम में सिर या मूँछों को ढकना मना है। 664: सिर खुला रहने से नुकसान होने की स्थिति में उपाय। 665: यदि स्नान नुकसान पहुँचाए तो एहराम के लिए वज़ू करें, तयम्मुम न करें। 666: मिना से अराफात और मुज़दलिफ़ा जाने का समय। 666: इन समयों में मजबूरी की स्थिति में क्या करें। 666: बारहवीं तारीख को ज़वाल (दोपहर) से पहले रमी करना। 666: क्या महिला की ओर से कोई और रमी कर सकता है या नहीं। 669: एहराम की कुर्बानियाँ। 669: एक ऊँट में आठ लोगों का शामिल होना। 670: कुर्बानी के लिए हरम की सीमा शर्त है। 670: कुर्बानी के बजाय उसकी कीमत दान करना।

761: हज के बाद मदीना तैयबा न जाने का क्या हुक्म है। 762: हज से पहले या बाद में मदीना तैयबा जाना। 762: रमज़ान और अन्य महीनों में मक्का मुकर्रमा में नमाज़, रोज़ा और उमराह के नियम। 764: हिजाज़ रेलवे की मदद से संबंधित प्रश्न। 777: रिसाला 'सैक्लुर्रैन अन अहकाम मुजावरतुल हरमैन' (दोनों पवित्र हरमों में निवास के नियमों का वर्णन)। 777: जिस व्यक्ति के माता-पिता जीवित हों और उस पर आर्थिक रूप से निर्भर न हों, क्या वह उनकी अनुमति के बिना हरमैन शरीफैन की ओर प्रवास कर वहाँ निवास कर सकता है या नहीं। 778: माता-पिता के साथ अच्छा व्यवहार सबसे बड़े कर्तव्यों और महत्वपूर्ण पुण्यों में से एक है। 778: कुरान और हदीस के अनुसार माता-पिता और उनके साथ अच्छे व्यवहार के गुण। 784: हज़रत ओवैस क़रनी (रज़िअल्लाहु तआला अन्हु) सबसे श्रेष्ठ ताबई (अनुयायी) हैं। 784: हिजरत (प्रवास) का सही अर्थ क्या है। 785: एक धर्मशास्त्री (फ़क़ीह) शैतान पर एक हज़ार उपासकों (आबिद) से अधिक भारी है। 786: यदि जुरैज राहब को पता होता, तो माँ की पुकार का उत्तर देना प्रभु की इबादत से बढ़कर होता। 786: माता-पिता की आज्ञा का पालन करना नफ़्ल हज से बेहतर है। 789: माननीय सैय्यद अबू अब्दुल्ला अल-फासी (रहमतुल्लाहि तआला अलैहि) की घटना। 791: मक्का मुकर्रमा में निवास करने के संबंध में विद्वानों के बीच मतभेद। 795: मदीना मुनव्वरा में ईश्वरीय कृपा अधिक, कोमल और प्रचुर है।

पृष्ठ 43 / 836

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

۶۵۹: حج بدل کے شرائط۔ ۶۵۹: جس عجز کی وجہ سے بدل کرایا گیا ہے وہ مرتے دم تک باقی رہے۔ ۶۶۲: بدل کے لیے آدمی کیسا ہو، کہاں سے جائے، اور کہاں سے حساب لگائے۔ مکہ مکرمہ سے حج بدل کافی ہو گا یا نہیں۔ ۶۶۳: بدل کے روپے اپنی ضرورتوں میں خرچ کرنے سے تاوان دینا ہوگا۔ ۶۶۴: بغیر لنگوٹ باندھنا جائز ہے۔ ۶۶۴: معتاد طور پر سلے کپڑے پہننا۔ ۶۶۴: سر یا مونچھ چھپانا احرام میں منع ہے۔ ۶۶۴: سر کھلے رہنے پر ضرر ہو تو اس کی تدبیر۔ ۶۶۵: غسل ضرر کرے تو احرام کے لیے وضو کرے، تیمم نہ کرے۔ ۶۶۶: منی سے عرفات اور مزدلفہ جانے کے اوقات۔ ۶۶۶: ان اوقات میں کوئی مجبوری ہو تو کیا کرے۔ ۶۶۶: بارہویں کو قبل زوال رمی کرنا۔ ۶۶۶: عورت کی جانب سے دوسرا رمی کر سکتا ہے یا نہیں۔ ۶۶۹: احرام کی قربانیاں۔ ۶۶۹: ایک اونٹ میں آٹھ آدمی شریک ہونا۔ ۶۷۰: قربانی کے لئے حرم شرط ہے۔ ۶۷۰: قربانی کی بجائے قیمت خیرات کرنا۔

۷۶۱: حج کے بعد مدینہ طیبہ نہ جائے تو کیا حکم ہے۔ ۷۶۲: حج سے قبل یا بعد مدینہ طیبہ جانا۔ ۷۶۲: رمضان اور غیر رمضان میں مکہ مکرمہ میں نماز، روزہ، عمرہ کے حکم۔ ۷۶۴: حجاز ریلوے کی امداد سے متعلق سوال۔ ۷۷۷: رسالہ صیقل الرین عن احکام مجاورۃ الحرمین (حرمین طیبین میں سکونت کرنے کا بیان)۔ ۷۷۷: جس مکلف شخص کے والدین زندہ ہوں اور معاشی طور پر اس کے محتاج نہ ہوں وہ ان سے اجازت لیے بغیر حرمین شریفین کی طرف ہجرت کر کے وہاں مجاورت اختیار کر سکتا ہے یا نہیں۔ ۷۷۸: والدین سے نیک سلوک اعظم واجبات اور اہم قربات سے ہے۔ ۷۷۸: قرآن و حدیث سے والدین اور ان کے ساتھ حسن سلوک کے فضائل۔ ۷۸۴: حضرت اویس قرنی رضی اللہ تعالیٰ عنہ خیر التابعین ہیں۔ ۷۸۴: ہجرت کا صحیح مفہوم کیا ہے۔ ۷۸۵: فقیہ

واحد شیطان پر ہزار عابد سے زیادہ بھاری ہے۔ ۷۸۶: اگر جریج راہب جانتا ہوتا تو ماں کی پکار پر لبیک کہنا عبادت رب سے اولیٰ ہے۔ ۷۸۶: اطاعت والدین حج نفل سے اولیٰ ہے۔ ۷۸۹: سید جلیل ابو عبداللہ الفاسی رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کا واقعہ۔ ۷۹۱: مجاورت مکہ مکرمہ کے بارے میں علماء کا اختلاف ہے۔ ۷۹۵: مدینہ منورہ میں رحمت اکثر، الطف اور اوفر ہے۔

Fatawa Razawiyya, Volume 10

- In summary, in our times, the ruling is the non-permissibility of neighboring. | 698 | A penalty will be incurred for covering the head. Details of the penalty. | 713
- **Conditions of Hajj** | | Stitched clothes of Ihram. | 715
- Health is a condition for Hajj. | 699 | Women covering their faces with fans etc. in the state of Ihram. | 715
- Wealth being in excess of all needs is a condition for obligation. | 699 | Eating fragrant tobacco in betel leaf (paan). | 716
- It is necessary to have a Mahram (male relative) with a woman. | 701 | If Hajj is obligatory for a woman and a Mahram is available, she should go for Hajj even if the husband does not permit. | 717
- Marrying if there is no Mahram. | 701 | The Shari'i ruling for one who abandons the holy visit to the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) despite having the ability, and for one who denies its excellence. | 718
- A pious woman being with another woman is not sufficient. | 701 | The incident of Hazrat Bilal (may Allah be pleased with him). | 721
- A woman should not go with a transgressor (Fasiq). | 701 | Treatise "Anwar-ul-Basharah fi Masail-il-Hajj wal-Ziyarah" (Description of travel etiquettes, Hajj preliminaries, Hajj rulings, Ihram, circumambulation (Tawaf), method of Hajj, etc.) | 725
- A woman should marry if there is no Mahram. | 703 | This concise and comprehensive treatise is extracted from the noble book "Jawahir-ul-Bayan" by the author's late father, Al-Haj Maulana Muhammad Naqi Ali Qadiri (may Allah have mercy on him). The author (may Allah have mercy on him) also added hundreds of issues from his own treatises, which was written at the request of Hazrat Syed Muhammad Ahsan Sahib Barelvi. This treatise consists of seven chapters. | 725
- Having a Mahram with a woman is necessary even if the woman is old. | 705 | First Chapter: On travel etiquettes and Hajj preliminaries. | 726
- If a woman performs Hajj without a Mahram, she will be a sinner. | 705 | Forty-eight issues are mentioned in this chapter. | 726
- Hajj will not be obligatory from forbidden (Haram) wealth. | 708 | Second Chapter: In description of Ihram and its rulings, entering the sacred Harams, Makkah Mukarramah, and Masjid al-Haram. | 731

• An excused person should have Hajj Badal (proxy Hajj) performed. | 709 | Twenty issues are described in this chapter. | 737
• Hajj was obligatory for someone but they did not perform it, and now they have no money; how should they perform Hajj? | 710 | Third Chapter: Description of Tawaf and Sa'i between Safa and Marwa. | 737
• The safety of the route is a condition for Hajj. | 710 | Thirty-six issues are described in this chapter. | 737
• The luminous grave (of the Prophet) is superior to the Kaaba and the Throne ('Arsh). | 711 | Fourth Chapter: Description of departure to Mina and standing at Arafat. | 745
• Which is superior between Madinah Munawwarah and Makkah Mukarramah. | 711 | Twenty-four issues are described in this chapter. | 745
• **Jinaayat (Penalties/Transgressions)**

फतावा रज़विया, खंड 10

- कुल मिलाकर, हमारे समय में पड़ोस में रहने की अनुमति न होने का हुक्म है। | ६९८ | सिर ढंकने से जुर्माना लगेगा। जुर्माने का विवरण। | ७१३
- **हज की शर्तें** | | एहराम के सिले हुए कपड़े। | ७१५
- हज के लिए स्वास्थ्य शर्त है। | ६९९ | एहराम की स्थिति में महिलाओं का पंखे आदि से चेहरा ढंकना। | ७१५
- धन का सभी जरूरतों से अधिक होना अनिवार्य होने की शर्त है। | ६९९ | पान में सुगंधित तंबाकू खाना। | ७१६
- महिला के साथ महरम का होना जरूरी है। | ७०१ | यदि महिला पर हज फर्ज हो और महरम उपलब्ध हो, तो वह हज के लिए जाए भले ही पति अनुमति न दे। | ७१७
- महरम न हो तो निकाह करना। | ७०१ | सामर्थ्य होने के बावजूद रसूल अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की पवित्र जियारत छोड़ने वाले और इसकी श्रेष्ठता का खंडन करने वाले का शरई हुक्म। | ७१८
- महिला के साथ एक परहेजगार महिला का होना पर्याप्त नहीं है। | ७०१ | हजरत बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हु) की घटना। | ७२१
- महिला किसी फासिक (दुराचारी) के साथ न जाए। | ७०१ | रिसाला "अनवार-उल-बशारत फी मसाइल-इल-हज वल-ज़ियारत" (यात्रा के शिष्टाचार, हज की भूमिका, हज के नियम, एहराम, तवाफ और हज की पद्धति आदि का वर्णन) | ७२५
- महरम न हो तो महिला निकाह करे। | ७०३ | यह संक्षिप्त और व्यापक रिसाला लेखक (रहमतुल्लाहि अलैहि) के पिता अल-हाज मौलाना मुहम्मद नकी अली कादिरी (रहमतुल्लाहि अलैहि) की प्रतिष्ठित पुस्तक "जवाहर-उल-बयान" से लिया गया है। लेखक (रहमतुल्लाहि अलैहि) ने इसमें अपने रिसालों से भी सैकड़ों मसले बढ़ाए हैं, जो हजरत सैयद मुहम्मद अहसन साहब बरेलवी के अनुरोध पर लिखा गया था। यह रिसाला सात अध्यायों पर आधारित है। | ७२५
- महिला के साथ महरम होना जरूरी है भले ही महिला बूढ़ी हो। | ७०५ | पहला अध्याय: यात्रा के शिष्टाचार और हज की भूमिका में। | ७२६

• बिना महरम के महिला हज करे तो वह गुनहगार होगी। | ७०५ | इस अध्याय में अड़तालीस मसलों का उल्लेख है। | ७२६
• हराम की कमाई से हज फर्ज नहीं होगा। | ७०८ | दूसरा अध्याय: एहराम और उसके नियमों और पवित्र हरम, मक्का मुकर्रमा और मस्जिद-अल-हराम में प्रवेश के वर्णन में। | ७३१
• मजबूर व्यक्ति हज-ए-बदल (किसी और से हज) कराए। | ७०९ | इस अध्याय में बीस मसले बताए गए हैं। | ७३७
• किसी पर हज फर्ज था और उसने हज नहीं किया, अब उसके पास धन नहीं है तो वह कैसे हज करे। | ७१० | तीसरा अध्याय: तवाफ और सफा-मरवा की सई का वर्णन। | ७३७
• रास्ते का सुरक्षित होना हज के लिए शर्त है। | ७१० | इस अध्याय में छत्तीस मसले बताए गए हैं। | ७३७
• पवित्र मजार (नबी करीम की), काबा और अर्श से श्रेष्ठ है। | ७११ | चौथा अध्याय: मिना की रवानगी और वकूफ-ए-अराफा (अराफात में रुकना) का वर्णन। | ७४५
• मदीना मुनव्वरा और मक्का मुकर्रमा में कौन श्रेष्ठ है। | ७११ | इस अध्याय में चौबीस मसले बताए गए हैं। | ७४५
• **जिनायात (अपराध/जुर्माने)**

فتاویٰ رضویہ ، جلد دہم

- بالمجملہ ہمارے زمانے میں عدم جوازِ مجاورت کا حکم ہے۔ | ۶۹۸ | سر چھپانے سے تاوان آئے گا۔ تاوان کی تفصیل۔ | ۷۱۳
- **شرائطِ حج** | | احرام کے سلے ہوئے کپڑے ۔ | ۷۱۵
- حج کے لیے صحت شرط ہے۔ | ۶۹۹ | احرام کی حالت میں عورتوں کا پنکھے وغیرہ سے منہ چھپانا | ۷۱۵
- مال جملہ حاجات سے فاضل ہو نا شرطِ وجوب ہے۔ | ۶۹۹ | خوشبودار تمباکو پان میں کھانا۔ | ۷۱۶
- عورت کے ساتھ محرم ہونا ضروری ہے۔ | ۷۰۱ | عورت پر حج فرض ہو اور محرم دستیاب ہو تو حج کو جائے اگرچہ شوہر اجازت نہ دے۔ | ۷۱۷
- محرم نہ ہو تو نکاح کرنا۔ | ۷۰۱ | قدرت کے باوجود زیارت شریف رسول اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے تارک اور منکر فضل کا حکم شرعی۔ | ۷۱۸
- عورت کے ساتھ متقیہ عورت کا ہونا کافی نہیں۔ | ۷۰۱ | حضرت بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا واقعہ۔ | ۷۲۱
- فاسق کے ساتھ عورت نہ جائے۔ | ۷۰۱ | رسالہ انوارالبشارۃ فی مسائل الحج والزیارۃ (آداب سفر، مقدماتِ حج، احکامِ حج احرام، طواف اور طریقہ حج وغیرہ کا بیان) | ۷۲۵
- محرم نہ ہو تو عورت نکاح کرے۔ | ۷۰۳ | یہ مختصر اور جامع رسالہ مصنف رحمۃ اللہ علیہ کے والد ماجد الحاج مولینا محمد نقی علی قادری رحمۃ اللہ تعالیٰ کی کتاب مستطاب "جواہر البیان" سے ملتقط ہے اور اس میں صدہا مسائل مصنف رحمہ اللہ تعالیٰ نے اپنے رسائل سے

بھی بڑھائے جو کہ حضرت سید محمد احسن صاحب بریلوی کی فرمائش پر معرضِ تحریر میں آیا۔ یہ رسالہ سات فصلوں پر مشتمل ہے۔ | ۷۲۵

- عورت کے ساتھ محرم ہونا ضروری ہے اگر چہ عورت بوڑھی ہو۔ | ۷۰۵ | فصل اول: آدابِ سفر و مقدماتِ حج میں۔ | ۷۲۶
- بغیر محرم کے عورت حج کرے تو گنہ گار ہوگی۔ | ۷۰۵ | اس فصل میں اڑتالیس مسائل مذکور ہیں۔ | ۷۲۶
- حرام مال سے حج واجب نہیں ہوگا۔ | ۷۰۸ | فصل دوم: احرام اور اس کے احکام اور داخلی حرم محترم ومکہ مکرمہ و مسجد الحرام کے بیان میں۔ | ۷۳۱
- معذور حج بدل کرائے۔ | ۷۰۹ | اس فصل میں بیس مسائل بیان کئے گئے ہیں۔ | ۷۳۷
- کسی پر حج فرض تھا اور حج نہیں کیا اب اس کے پاس مال نہیں تو وہ کیسے حج کرے۔ | ۷۱۰ | فصل سوم: طواف و سعی صفا و مروہ کا بیان۔ | ۷۳۷
- راستہ کا مامون ہونا حج کے لیے شرط ہے۔ | ۷۱۰ | اس فصل میں چھتیس مسائل بیان کئے گئے ہیں۔ | ۷۳۷
- قبرِ انور، کعبہ معظمہ اور عرش سے افضل ہے۔ | ۷۱۱ | فصل چہارم: منیٰ کی روانگی اور وقوفِ عرفہ کا بیان۔ | ۷۴۵
- مدینہ منورہ اور مکہ مکرمہ میں کون افضل ہے۔ | ۷۱۱ | اس فصل میں چوبیس مسائل بیان کئے گئے ہیں۔ | ۷۴۵
- **جنایات**

Volume Ten Fatawa Razawiyya

746: On the Day of Tarwiyah, i.e., the 8th of Dhul-Hijjah, depart for Mina after sunrise. If possible, walk, because for every step taken while performing Hajj on foot, seven hundred virtues will be recorded. A hundred thousand makes a lakh, a hundred lakhs make a crore, a hundred crores make a billion (arb), and a hundred billion make a trillion (kharab). In this way, until the return to Makkah, these virtues total approximately 78 trillion 40 billion. 747: What will be meant by 'Sadaqah' in this chapter. 748: What is 'Mauqaf' (Place of standing/halt)? (Footnote) 748: What is meant by 'Batn-e-Urnah'? (Footnote) 748: Ruling on an involuntary offense. 748: What is meant by 'Char Pahar' (four watches/six-hour periods)? (Footnote) 750: In 'Mauqaf', one should avoid using an umbrella or seeking shade in any way without a prior vow, as much as possible. 750: Extremely important warning. 750: Chapter Five: Description of Mina, Muzdalifah, and other rites of Hajj. 750: Fifty-seven issues are mentioned in this chapter. 751: What is Wadi-e-Muhassar? 752: If a completely destitute person intends 'Qiran' or 'Tamattu', then instead of animal sacrifice, ten fasts will be obligatory for him. (Footnote) 755: What is meant by Jannat al-Mu'alla and Wadi-e-Muhassab? (Footnote) 757: Chapter Six: Description of offenses and their expiations (kaffarah). 757: Sixty issues are explained in this chapter. 757: In this chapter, 'Dam' refers to a sheep or goat, and 'Badnah' refers to a camel or cow. 757: The conditions for animals in 'Dam' and 'Badnah' are the same as those for regular sacrifice (Qurbani). 758: If henna is applied to the entire palm or sole, 'Dam' becomes obligatory. (Footnote) 758: Issue: If a significant amount of perfume rubbed on the Black Stone (Hajr-e-Aswad) gets onto the face, 'Dam' is required; if it is a small amount, then 'Sadaqah' must be given. 762: Issue: Wherever one 'Dam' or 'Sadaqah' is required, for a 'Qarin' (one performing Qiran Hajj), two are required. 762: Issue: The sacrifice of expiation (kaffarah) or the sacrifice of thankfulness (shukrana) for a 'Qarin' or 'Mutamatti' cannot be performed outside the boundaries of the Haram. 762: One can eat from the sacrifice of thankfulness (shukrana) themselves and feed it to the wealthy, but the sacrifice of expiation (kaffarah) is solely the right of the needy. 762: Advice. 763: Section Seven: Description of visiting the presence of the Great Master in Medina al-Tayyiba, the presence of the Noble Beloved (Prophet), Peace and Blessings of Allah be upon him. 764: Forty issues are mentioned in this section. 764: The death of Prophets (peace be upon them) is only for a single moment. 764: There is no difference between the life and passing of the Holy Prophet, Peace and Blessings of Allah be upon him.

जल्द दहम (दसवाँ खंड) फ़तावा रज़विया

७४६: यौम-उत-तरविया यानी ८ ज़ुल-हिज्जा को सूर्योदय के बाद मिना के लिए रवाना हों। यदि संभव हो तो पैदल चलें क्योंकि पैदल हज करने से हर कदम पर सात सौ नेकियाँ लिखी जाएँगी। सौ हज़ार का लाख, सौ लाख का करोड़, सौ करोड़ का अरब, सौ अरब का खरब, तो इस प्रकार मक्का मुकर्रमा वापस लौटकर आने तक ये नेकियाँ अनुमानित रूप से ७८ खरब ४० अरब होती हैं। ७४७: इस अध्याय में 'सदक़ा' से क्या तात्पर्य होगा। ७४८: 'मौक़फ़' (ठहराव का स्थान) क्या है। (फुटनोट) ७४८: 'बत्न-ए-उरनह' से क्या तात्पर्य है। (फुटनोट) ७४८: अनैच्छिक अपराध का नियम। ७४८: 'चार पहर' से क्या तात्पर्य है। (फुटनोट) ७५०: 'मौक़फ़' में बिना मन्नत के छाता लगाने या किसी भी तरह की छाया चाहने से यथासंभव बचना चाहिए। ७५०: अत्यंत आवश्यक चेतावनी। ७५०: पाँचवाँ अध्याय: मिना, मुज़दलफ़ा और हज के अन्य कार्यों का वर्णन। ७५०: इस अध्याय में सत्तावन मसलों (विषयों) का उल्लेख है। ७५१: वादी-ए-मुहस्सर क्या है। ७५२: यदि कोई पूर्णतः निर्धन व्यक्ति किरान या तमत्तु' की नियत करता है, तो उसे कुर्बानी के बदले दस रोज़े (व्रत) रखना अनिवार्य होगा। (फुटनोट) ७५५: जन्नत-उल-मुअल्ला और वादी-ए-मुहस्सब से क्या तात्पर्य है। (फुटनोट) ७५७: छठा अध्याय: अपराध और उनके प्रायश्चित (कफ़्फ़ारा) का वर्णन। ७५७: इस अध्याय में साठ मसले बयान किए गए हैं। ७५७: इस अध्याय में 'दम' से तात्पर्य भेड़ या बकरी और 'बदना' से तात्पर्य ऊँट या गाय होगा। ७५७: 'दम' और 'बदना' में जानवरों की वही शर्तें हैं जो कुर्बानी में होती हैं। ७५८: यदि पूरी हथेली या तलवे पर मेहंदी लगाई, तो 'दम' अनिवार्य है। (फुटनोट) ७५८: मसला (विषय): यदि हज्र-ए-अस्वद (काला पत्थर) पर लगी सुगंध बहुत अधिक मात्रा में मुँह पर लग जाए तो 'दम', और यदि कम हो तो 'सदक़ा' देना होगा। ७६२: मसला: जहाँ एक 'दम' या 'सदक़ा' है, वहाँ 'क़ारिन' (किरान करने वाला) पर दो हैं। ७६२: मसला: प्रायश्चित (कफ़्फ़ारा) की कुर्बानी या 'क़ारिन' और 'मुतमत्तु' की शुक्राने (कृतज्ञता) की कुर्बानी हरम के बाहर नहीं हो सकती। ७६२: शुक्राने की कुर्बानी का मांस स्वयं भी खा सकते हैं और धनी व्यक्ति को भी खिला सकते हैं, लेकिन कफ़्फ़ारा की कुर्बानी केवल निर्धनों का अधिकार है। ७६२: नसीहत (उपदेश) ७६३: सातवाँ अनुभाग (वस्J): सरकार-ए-आज़म मदीना तैयबा, हुज़ूर हबीब-ए-अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की उपस्थिति का वर्णन। ७६४: इस अनुभाग में चालीस मसले वर्णित हैं। ७६४: अंबिया (पैगंबरों) अलैहिमुस्सलाम की मृत्यु केवल एक क्षण के लिए होती है। ७६४: हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के जीवन और मृत्यु में कोई अंतर नहीं है।

جلد دہم فتاوی رضویہ

۷۴۶: یوم الترویہ یعنی آٹھ ذوالحجہ کو طلوعِ آفتاب کے بعد منی کے لیے روانہ ہوں اگر ہوسکے تو پیدل چلیں کیونکہ پیدل حج کرنے سے ہر قدم پر سات سو نیکیاں لکھی جائیں گی۔ سو ہزار کا لاکھ، سو لاکھ کا کروڑ، سو کروڑ کا ارب، سو ارب کا کھرب تو اس طرح مکہ مکرمہ واپس پلٹ کر آنے تک یہ نیکیاں تخمیناً اٹھتر کھرب چالیس ارب آتی ہیں۔ ۷۴۷: اس فصل میں صدقہ سے کیا مراد ہوگی۔ ۷۴۸: موقف کیا ہے۔ (حاشیہ) ۷۴۸: بطنِ عرنہ سے کیا مراد ہے۔ (حاشیہ) ۷۴۸: جرم غیر اختیاری کا حکم۔ ۷۴۸: چار پہر سے کیا مراد ہے۔ (حاشیہ) ۷۵۰: موقف میں بلانذر چھتری لگانے یا کسی طرح سایہ چاہنے سے حتی المقدور بچنا چاہئے۔ ۷۵۰: تنبیہ ضروری ضروری، اشد ضروری۔ ۷۵۰: فصل پنجم : منی و مزدلفہ وباقی افعالِ حج کا بیان۔ ۷۵۰: اس فصل میں ستاون مسائل کا ذکر ہے۔ ۷۵۱: وادیِ محسر کیا ہے۔ ۷۵۲: محتاج محض اگر قرآن یا تمتع کی نیت کرے تو اس پر قربانی کے بدلے دس روزے واجب ہوں گے۔ (حاشیہ) ۷۵۵: جنۃ المعلیٰ اور وادیِ محصب سے کیا مراد ہے۔ (حاشیہ) ۷۵۷: فصل ششم : جرم اور ان کے کفارے کا بیان۔ ۷۵۷: اس فصل میں ساٹھ مسائل بیان کئے گئے۔ ۷۵۷: اس فصل میں دم سے مراد بھیڑ یا بکری اور بدنہ سے مراد اونٹ یا گائے ہوگی۔ ۷۵۷: دم اور بدنہ میں جانوروں کے شرائط وہی ہیں جو قربانی میں ہیں۔ ۷۵۸: پوری ہتھیلی یا تلوے پر مہندی لگائی تو دم واجب ہے۔ (حاشیہ) ۷۵۸: مسئلہ: سنگِ اسود پر ملی ہوئی خوشبو اگر بہت سی منہ کو لگ جائے تو دم اور اگر تھوڑی ہو تو صدقہ دینا ہوگا۔ ۷۶۲: مسئلہ: جہاں ایک دم یا صدقہ ہے قارن پر دو ہیں۔ ۷۶۲: مسئلہ: کفارہ کی قربانی یا قارن و متمتع کے شکرانہ کی قربانی غیر حرم میں نہیں ہوسکتی۔ ۷۶۲: شکرانہ کی قربانی خود بھی کھا سکتا ہے اور غنی کو بھی کھلا سکتا ہے مگر کفارہ کی قربانی صرف محتاجوں کا حق ہے۔ ۷۶۲:

نصیحت ۷۶۳: وصل ہفتم : حاضریِ سرکارِ اعظم مدینہ طیبہ حضور حبیبِ اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا بیان۔ ۷۶۴: اس وصل میں چالیس مسائل ذکر کئے گئے ہیں۔ ۷۶۴: انبیاء علیہم السلام کی موت صرف ایک آن کے لیے ہوتی ہے۔ ۷۶۴: حضورِ اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی حیات و وفات میں کوئی فرق نہیں۔

Fatawa Razviya - Volume 10

Page	Topic
763	The Messenger of Allah ﷺ is aware of the presence of visitors, their standing, offering salutations, and indeed all their actions, states, departures, and stays.
765	One should stand before the Holy Presence ﷺ as one stands in prayer.
765	One should avoid kissing or touching the noble net (Jali) of the shrine as it is contrary to etiquette.
768	One should intend for I'tikaf whenever entering any mosque.
768	Leaving the congregational prayer without a valid excuse is a sin; if done repeatedly, it is strictly forbidden and a major sin.
769	Circumambulating (Tawaf), prostrating (Sajdah), or bowing as much as in Ruku' at the Radiant Shrine is prohibited.
769	Veneration of the Messenger of Allah ﷺ lies in obeying him.
771	5. Risalah Al-Nayyirah Al-Wadhiyah Sharh Al-Jawharah Al-Mudhiyah (Account of the issues of Hajj and Pilgrimage).
771	Khutbah At-Turrat-ur-Radawiyah
772	Explanation (Sharh) of the text of the Khutbah.
772	Meaning and purpose of 'Nasik'.
773	Khutbah Al-Munirat-ul-Wadhiyah
781	The Sunnah and recommended method of Ihram.
782	Matters that are prohibited during Ihram.
784	Black hair dye is always impermissible except in Jihad.
785	An important issue concerning prayer (footnote).
786	Pillars (Arkan) of Hajj and Umrah.
786	Difference between a pillar (Rukn), condition (Shart), and obligation (Farz).
789	Obligatory acts (Fara'id) of Hajj.
789	Necessary acts (Wajibat) of Hajj.
792	Sunnahs of Hajj.
792	Tawaf al-Qudum is not for the Mutamatti' and the people of Makkah.
795	An open miracle (footnote).
797	

Page	Topic
773	Incident of the meeting between the author (Matin) and the commentator (Sharh), may Allah have mercy on them.
777	Reason for the commentary (Sharh).
775	Conditions for Hajj being obligatory.
776	Definition of Mukatib, Mudabbir, and Umm-ul-Walad.
776	Are acts of worship other than faith obligatory upon disbelievers?
778	The state/quality of Ihram.
798	Account of penalties (fine/ penalty for violations).
798	Account of the pilgrimage as absolute purity.
800	Reply to the Hadith "La Tashuddu-r-Rihal" (footnote).
801	Proof from twenty Hadiths that visitors are entitled to intercession.
802	A strange subtle point (footnote).
802	The Radiant Presence ﷺ replies to the one who offers salutation.

फ़तावा रज़विया - जिल्द दस (10)

पृष्ठ	विषय
763	रसूलुल्लाह ﷺ ज़ायरीन की हाज़िरी, खड़े होने, सलाम अर्ज़ करने बल्कि तमाम आमाल व हालात और कूच व क़याम से आगाह हैं।
765	हुज़ूर अलैहिस्सलाम के सामने ऐसे खड़े होना चाहिए जैसे नमाज़ में खड़े होते हैं।
765	रौज़ा की जाली शरीफ़ को बोसा देने या हाथ लगाने से बचना चाहिए कि अदब के ख़िलाफ़ है।
768	हर मस्जिद में जाते हुए एतिकाफ़ की नियत कर लेनी चाहिए।
768	तर्कए-जमाअत बिना उज़्र गुनाह है, कई बार हो तो सख़्त हराम व गुनाह-ए-कबीरा है।
769	रौज़ा-ए-अनवर का तवाफ़, सज्दा और रुकूअ के बराबर झुकना ममनूअ (वर्जित) है।
769	रसूलुल्लाह ﷺ की ताज़ीम उनकी इताअत (आज्ञाकारिता) में है।
771	5. रिसाला अन-नय्यरतुल् वज़िय्या शरह अल-जौहरतुल् मुज़िय्या (हज व ज़ियारत के मसाइल का बयान)
771	खुतबा अत-तुर्रतुर् रज़विय्या
772	शरह खुतबा मतन
772	'नासिक' का मा'ना व मुराद
773	खुतबा अल-मुनीरतुल वज़िय्या
773	

पृष्ठ	विषय
781	एहराम का मसनून व मुस्तहब तरीक़ा।
782	वो उमूर जो एहराम में हराम हैं।
784	सियाह खिज़ाब हमेशा नाजायज़ है मगर जिहाद में।
785	नमाज़ का एक अहम मसअला (हाशिया)
786	हज व उमरा के अरकान।
786	रुकन, शर्त और फ़र्ज़ में फ़र्क़।
789	हज के फ़राइज़।
789	हज के वाजिबात।
792	हज की सुन्नतें।
792	तवाफ़-ए-क़ुदूम मुतमत्तेअ और अहले मक्का के लिए नहीं।
795	खुला मोजिज़ा (हाशिया)
797	जुर्माने का बयान।
798	

पृष्ठ	विषय
	मातिन व शारेह रहमतुल्लाहि अलैहि की मुलाक़ात का वाकिआ।
777	सबब-ए-शरह (व्याख्या का कारण)
775	शरायत-ए-वुजूब-ए-हज (हज वाजिब होने की शर्तें)।
776	मुकातिब, मुदब्बिर और उम्म-ए-वलद की परिभाषा।
776	क्या ईमान के सिवा इबादतें कुफ़्फ़ार पर फ़र्ज़ हैं।
778	एहराम की कैफ़ियत।

पृष्ठ	विषय
	ज़ियारत सरापा तहारत का बयान।
800	हदीस "ला तशुद्दुर रिहाल" का जवाब (हाशिया)
801	ज़ायरीन के मुस्तहिक़-ए-शफ़ाअत होने का सबूत बीस अहादीस से।
802	अजीब लतीफ़ा (हाशिया)
802	हुज़ूर अनवर ﷺ सलाम अर्ज़ करने वाले को जवाब देते हैं।

صفحہ	عنوان
۷۶۳	رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم زائرین کی حاضری، کھڑے ہونے، سلام عرض کرنے بلکہ تمام افعال واحوال اور کوچ و مقام سے آگاہ ہیں۔
۷۶۵	حضور علیہ السلام کے سامنے ایسے کھڑے ہونا چاہئے جیسے نماز میں کھڑے ہوتے ہیں۔
۷۶۵	روضہ کی جالی شریف کو بوسہ دینے یا ہاتھ لگانے سے بچنا چاہئے کہ خلاف ادب ہے۔
۷۶۸	ہر مسجد میں جاتے ہوئے اعتکاف کی نیت کر لینی چاہئے۔
۷۶۸	ترک جماعت بلا عذر گناہ ہے، کئی بار ہو تو سخت حرام و گناہ کبیرہ ہے۔
۷۶۹	روضہ انور کا طواف، سجدہ اور رکوع کے برابر جھکنا ممنوع ہے۔
۷۶۹	رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی تعظیم ان کی اطاعت میں ہے۔
۷۷۱	

صفحہ	عنوان
۷۸۱	احرام کا مسنون و مستحب طریقہ۔
۷۸۲	وہ امور جو احرام میں حرام ہیں۔
۷۸۴	سیاہ خضاب ہمیشہ ناجائز ہے مگر جہاد میں۔
۷۸۵	نماز کا ایک اہم مسئلہ (حاشیہ)
۷۸۶	حج وعمرہ کے ارکان۔
۷۸۶	رکن، شرط اور فرض میں فرق۔
۷۸۹	حج کے فرض
۷۸۹	حج کے واجب۔

صفحہ	عنوان	صفحہ	عنوان
	۵ رسالہ النیرۃ الوضیۃ شرح الجوھرۃ المضیۃ		
	(مسائل حج و زیارت کا بیان)		
۷۷۱	خطبہ الطرۃ الرضیۃ	۷۹۲	حج کی سنتیں۔
۷۷۲	شرح خطبہ متن	۷۹۲	طواف قدوم، متمتع اور اہل مکہ کے لئے نہیں۔
۷۷۲	ناسک کا معنی و مراد	۷۹۵	کھلا معجزہ (حاشیہ)
۷۷۳	خطبۃ المنیرۃ الوضیۃ	۷۹۷	جرمانے کا بیان۔
۷۷۳	ماتن و شارح رحمہ اللہ تعالیٰ کی ملاقات کا واقعہ۔	۷۹۸	زیارت سراپا طہارت کا بیان۔
۷۷۷	سبب شرح	۸۰۰	حدیث "لا تشد الرحال" کا جواب (حاشیہ)
۷۷۵	شرائط وجوب حج۔	۸۰۱	زائرین کے مستحق شفاعت ہونے کا ثبوت بیس احادیث سے۔
۷۷۶	مکاتب، مدبر اور ام ولد کی تعریف۔	۸۰۲	عجیب لطیفہ (حاشیہ)
۷۷۶	کیا ایمان کے سوا عبادتیں کفار پر فرض ہیں۔	۸۰۲	حضور انور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سلام عرض کرنے والے کو جواب دیتے ہیں۔
۷۷۸	احرام کی کیفیت۔		

Fatawa Ridawiyya | Volume 10

Subject	Page
رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم قیامت تک کے احوال کو ایسے دیکھ رہے ہیں جیسے اپنی ہتھیلی کو۔ (The Messenger of Allah, peace and blessings be upon him, sees the conditions until the Day of Resurrection as if on his own palm.)	806
سرور عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا علم وفات کے بعد بھی ایسا ہی ہے جیسا آپ کی زندگی میں۔ (The knowledge of the Master of the Universe, peace and blessings be upon him, is the same after his passing as it was during his life.)	807
حضور سرور عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی حیات و وفات دونوں امت کے لیے بہتر ہیں۔ (The life and death of the Master of the Universe, peace and blessings be upon him, are both better for the Ummah.)	807
ہمارے اعمال حضور پر نور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی خدمت میں پیش کیے جاتے ہیں، نیکیوں پر آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم شکر ادا کرتے ہیں اور گناہوں پر ہمارے لیے استغفار کرتے ہیں۔ (Our deeds are presented before the Radiant Presence, peace and blessings be upon him; he gives thanks for good deeds and seeks forgiveness for our sins.)	807
حج وعمرہ کی ترکیب۔ (Method of Hajj and Umrah.)	813
حاجیوں کا احرام تین طرح ہوتا ہے۔ (The Ihram of pilgrims is of three types.)	813
مفرد، متمتع اور قارن کی تعریف۔ (Definition of Mufrid, Mutamatti, and Qarin.)	813
زیادہ ثواب قارن کو حاصل ہوتا ہے۔ (The Qarin obtains more reward.)	814

Subject	Page
زمین پر پیغمبروں کا جسم کھانا حرام ہے۔ (It is forbidden for the earth to consume the bodies of Prophets.)	807
نبی زندہ ہوتے ہیں اور انہیں رزق دیا جاتا ہے۔ (Prophets are alive and are provided with sustenance.)	807
مسجد نبوی میں نماز کی فضیلت۔ (Excellence of prayer in the Prophet's Mosque.)	808
حرمین میں مرنے والے کے لیے قیامت میں امن۔ (Peace on the Day of Resurrection for those who die in the Two Holy Sanctuaries.)	808
مدینہ مکہ سے افضل ہے۔ (Madinah is superior to Makkah.)	809
مدینہ منورہ میں مرنے والے کے لیے شفاعت کی ضمانت۔ (Guarantee of intercession for those who die in Madinah Munawwarah.)	809
حسنین کریمین میں سے کون افضل ہے (حاشیہ) (Who among the two noble Hasnayn is superior. (Footnote))	811
	812
حج کے لیے منیٰ اور عرفات پیدل چلیں تو ہر قدم پر سات کروڑ نیکیاں ہیں۔ (For Hajj, if one walks to Mina and Arafat, there are seventy million virtues for every step.)	817
مکہ مکرمہ سے عرفات اور پھر عرفات سے واپس مکہ مکرمہ تک ۲۸ میل بنتے ہیں اور ایک میل میں چار ہزار قدم اور ہر قدم پر سات کروڑ نیکیاں، تو اس طرح کل نیکیاں تخمیناً اٹھتر کھرب چالیس ارب ہو جاتی ہیں۔ (حاشیہ) (From Makkah to Arafat and back to Makkah it is 28 miles, and there are four thousand steps in a mile, and for every step seventy million virtues, thus total virtues are approximately 7.84 trillion. (Footnote))	817
قدرت الہی کا عجیب کرشمہ۔ (حاشیہ) (A strange miracle of Divine Power. (Footnote))	821
قدرت ربانی کا صریح نمونہ۔ (حاشیہ) (A clear example of Divine Power. (Footnote))	822
حاضری مدینہ طیبہ۔ (Visit to the Radiant City of Madinah.)	823
عبد بمعنیٰ غلام کا اطلاق و جواز (حاشیہ) (Application and permissibility of 'Abd' in the sense of 'slave'. (Footnote))	825
ہمیشہ جلوس مسجد میں نیت اعتکاف رکھے۔ (Always keep the intention of i'tikaf while sitting in the mosque.)	827
	827

Subject	Page	Subject	Page
حضرات آل اطہار رضوان اللہ علیہم اجمعین کو خلاصہ مخلوق کہنا صحیح ہے۔ (It is correct to call the members of the pure Household, may Allah be pleased with them all, the essence of creation.)		مسجد نبوی شریف کے سات ستونوں کی تفصیل۔ (حاشیہ) (Detail of the seven pillars of the noble Prophet's Mosque. (Footnote))	
تکملہ (Supplement)	812	فائدہ جلیلہ (Sublime benefit)	828
تکملہ لکھنے کی وجہ۔ (Reason for writing the supplement.)	812		

Page 47 of 836

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) कयामत तक के हालात को ऐसे देख रहे हैं जैसे अपनी हथेली को।	806	हज और उमराह की तरकीब।	813
सरवरे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का इल्म वफ़ात के बाद भी वैसा ही है जैसा आपकी ज़िंदगी में था।	807	हाजियों का एहराम तीन तरह का होता है।	813
हुज़ूर सरवरे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की हयात और वफ़ात दोनों उम्मत के लिए बेहतर हैं।	807	मुफ़रिद, मुतमत्ते और कारिन की परिभाषा।	813
हमारे आमाल हुज़ूर पुरनूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की खिदमत में पेश किए जाते हैं, नेकियों पर आप शुक्र अदा करते हैं और गुनाहों पर हमारे लिए इस्तिग़फ़ार करते हैं।	807	कारिन को ज़्यादा सवाब मिलता है।	814
ज़मीन पर नबियों का जिस्म खाना हराम है।	807	हज के लिए मिना और अराफ़ात पैदल चलें तो हर कदम पर सात करोड़ नेकियां हैं।	817
नबी ज़िंदा होते हैं और उन्हें रिज़्क़ दिया जाता है।	807	मक्का मुकर्रमा से अराफ़ात और फिर अराफ़ात से वापस मक्का मुकर्रमा तक 28 मील बनते हैं और एक मील में चार हज़ार कदम और हर कदम पर सात करोड़ नेकियाँ, तो इस तरह कुल नेकियाँ लगभग अठहत्तर खरब चालीस अरब हो जाती हैं। (हाशिया)	817
मस्जिदे नबवी में नमाज़ की फ़ज़ीलत।	808	कुदरते इलाही का अजीब करिश्मा। (हाशिया)	821
	808	कुदरते रब्बानी का स्पष्ट नमूना। (हाशिया)	822

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
हरमैन में मरने वाले के लिए कयामत में अमन।			
मदीना मक्का से अफ़ज़ल है।	809	हाज़िरी मदीना तैयबा।	823
मदीना मुनव्वरा में मरने वाले के लिए शफ़ाअत की गारंटी।	809	'अब्द' का अर्थ 'गुलाम' के रूप में इस्तेमाल और उसका जवाज़। (हाशिया)	825
हसनैन करीमैन में से कौन अफ़ज़ल है। (हाशिया)	811	हमेशा मस्जिद में बैठते समय एतिकाफ़ की नियत रखें।	827
हज़रात आले अतहार (रज़ियल्लाहु अन्हुम अजमईन) को खुलासए मखलूक कहना सही है।	812	मस्जिदे नबवी शरीफ के सात सुतूनों (खंभों) का विवरण। (हाशिया)	827
तकमिला (परिशिष्ट)	812	फ़ायदा जलीला (बड़ा लाभ)	828
तकमिला लिखने का कारण।	812		

موضوع	صفحہ	موضوع	صفحہ
رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم			
قیامت تک کے احوال کو ایسے دیکھ	۸۰۶	حج وعمرہ کی ترکیب۔	۸۱۳
رہے ہیں جیسے اپنی ہتھیلی کو۔			
سرور عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا			
علم وفات کے بعد بھی ایسا ہی ہے جیسا	۸۰۷	حاجیوں کا احرام تین طرح ہوتا ہے۔	۸۱۳
آپ کی زندگی میں۔			
حضور سرور عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ			
وسلم کی حیات و وفات دونوں امت کے	۸۰۷	مفرد، متمتع اور قارن کی تعریف۔	۸۱۳
لیے بہتر ہیں۔			
ہمارے اعمال حضور پر نور صلی اللہ			
تعالیٰ علیہ وسلم کی خدمت میں پیش			
کیے جاتے ہیں، نیکیوں پر آپ صلی اللہ	۸۰۷	زیادہ ثواب قارن کو حاصل ہوتا ہے۔	۸۱۴
تعالیٰ علیہ وسلم شکر ادا کرتے ہیں اور			
گناہوں پر ہمارے لیے استغفار کرتے			
ہیں۔			
	۸۰۷		۸۱۷

موضوع	صفحہ
زمین پر پیغمبروں کا جسم کھانا حرام ہے۔	۸۰۷
نبی زندہ ہوتے ہیں اور انہیں رزق دیا جاتا ہے۔	۸۰۷
مسجد نبوی میں نماز کی فضیلت۔	۸۰۸
حرمین میں مرنے والے کے لیے قیامت میں امن۔	۸۰۸
مدینہ مکہ سے افضل ہے۔	۸۰۹
مدینہ منورہ میں مرنے والے کے لیے شفاعت کی ضمانت۔	۸۰۹
حسنین کریمین میں سے کون افضل ہے (حاشیہ)	۸۱۱
حج کے لیے منیٰ اور عرفات پیدل چلیں تو ہر قدم پر سات کروڑ نیکیاں ہیں۔ مکہ مکرمہ سے عرفات اور پھر عرفات سے واپس مکہ مکرمہ تک ۲۸ میل بنتے ہیں اور ایک میل میں چار ہزار قدم اور ہر قدم پر سات کروڑ نیکیاں، تو اس طرح کل نیکیاں تخمیناً اٹھتر کھرب چالیس ارب ہو جاتی ہیں۔ (حاشیہ)	۸۱۷
قدرت الٰہی کا عجیب کرشمہ۔ (حاشیہ)	۸۲۱
قدرت ربانی کا صریح نمونہ۔ (حاشیہ)	۸۲۲
حاضری مدینہ طیبہ۔	۸۲۳
عبد بمعنیٰ غلام کا اطلاق و جواز (حاشیہ)	۸۲۵
ہمیشہ جلوس مسجد میں نیت اعتکاف رکھے۔	۸۲۷

موضوع	صفحہ	موضوع	صفحہ
حضرات آل اطہار رضوان اللہ علیہم اجمعین کو خلاصہ مخلوق کہنا صحیح ہے۔	۸۱۲	مسجد نبوی شریف کے سات ستونوں کی تفصیل۔ (حاشیہ)	۸۲۷
تکملہ	۸۱۲	فائدہ جلیلہ	۸۲۸
تکملہ لکھنے کی وجہ۔	۸۱۲		

Volume 10 Fatawa Razawiyya

Index of Supplementary Issues

Tayammum: - Due to the reason of harm for a sick person, the obligation of Wudu is waived and Tayammum becomes mandatory in its place. (Page: 274) - In the absence of clean earth (Sa'id-e-Tayyib), Tayammum is also waived. (Page: 274)

Salah (Prayer): - A prayer performed for show is valid technically (the obligation is discharged), but it will not be accepted nor will there be any reward; rather, the person will be a sinner. (Page: 182) - There is a consensus among jurists that Khushu (humility/concentration) is neither a pillar, nor an obligation, nor a condition for prayer. (Page: 195) - No prayer is permissible during the three disliked times except for the 'Asr prayer of that same day. (Page: 534) - Qada (missed) prayers are generally considered complete, hence they are impermissible during the three disliked times. (Page: 535) - For one year's worth of prayers, there are two thousand one hundred and thirty Fidya (compensatory payments). (Page: 540) - Reciting a Surah (along with Al-Fatiha) is Wajib, so why return to it from the obligatory Ruku (bowing)? (Page: 598) - If one forgets the first sitting (Qa'da Ula) and stands up straight, returning to it is no longer permissible. (Page: 598) - According to Imam-e-Azam, the time for Maghrib lasts until the spread of the white twilight (Shafaq-e-Abyad Mustatir). (Page: 622) - An important issue concerning prayer (Footnote). (Page: 785)

Congregation (Jama'at): - Congregational prayer for voluntary (Nafil) prayers with invitation/announcement is not prescribed. (Page: 603)

Page 49 of 836 I.T. Majlis of Dawat-e-Islami

जिल्द दसवीं फतावा रज़विया

पूरक विषयों की सूची

तयम्मुम: - हानि की स्थिति के कारण, रोगी से वज़ू की अनिवार्यता समाप्त हो जाती है और उसके बदले में उस पर तयम्मुम अनिवार्य हो जाता है। (पृष्ठ: २७४) - पाक मिट्टी (सईद तैयब) की अनुपलब्धता में तयम्मुम भी समाप्त हो जाता है। (पृष्ठ: २७४)

नमाज़: - दिखावे के लिए पढ़ी गई नमाज़ सही तो हो गई, फ़र्ज़ अदा हो गया लेकिन स्वीकार नहीं होगी और न ही सवाब मिलेगा, बल्कि वह गुनहगार होगा। (पृष्ठ: १८२) - फ़कीहों (धर्मशास्त्रियों) की सर्वसम्मति है कि खुशु (एकाग्रता) न नमाज़ का रुकन (स्तंभ) है, न फ़र्ज़ है और न ही शर्त। (पृष्ठ: १९५) - तीन मकरूह (वर्जित) समयों में कोई भी नमाज़ जायज़ नहीं है, सिवाय उसी दिन की अस्र की नमाज़ के। (पृष्ठ: ५३४) - कज़ा नमाज़ें आम तौर पर कामिल (पूर्ण) होती हैं, इसलिए तीन मकरूह समयों में वे नाजायज़ हैं। (पृष्ठ: ५३५) - एक साल की नमाज़ों के लिए दो हज़ार एक सौ तीस फ़िदये होते हैं। (पृष्ठ: ५४०) - सूरह मिलाना वाजिब है, तो उसके लिए फ़र्ज़ रुकूअ से वापसी क्यों? (पृष्ठ: ५९८) - यदि कोई पहला कादा (बैठक) भूलकर सीधा खड़ा हो जाए, तो अब उसे वापस लौटना हलाल नहीं। (पृष्ठ: ५९८) - इमाम-ए-आज़म के नज़दीक मग़रिब का वक़्त शफ़क-ए-अ़बयज़ मुस्ततीर (सफ़ेद लाली के फैलने) तक है। (पृष्ठ: ६२२) - नमाज़ का एक महत्वपूर्ण मसला (हाशिया)। (पृष्ठ: ७८५)

जमाअत: - नफ़ल नमाज़ के लिए दावत या बुलावे के साथ जमाअत मसनून (शरिया सम्मत) नहीं है। (पृष्ठ: ६०३)

पृष्ठ ८३६ का ४९ आई.टी. मज्लिस दावत-ए-इस्लामी

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

فہرست ضمنی مسائل

تیمم: - مریض سے بعلتِ ضرر، فرضیتِ وضو ساقط ہوجاتا ہے اور اس کے عوض اس پر تیمم لازم ہوتا ہے۔ (صفحہ: ۲۷۴) - صعید طیب کی عدم موجودگی میں تیمم بھی ساقط ہوجاتا ہے۔ (صفحہ: ۲۷۴)

نماز: - دکھاوے کے لیے پڑھی ہوئی نماز صحیح تو ہوگئی، فرض اتر گیا مگر قبول نہ ہوگی نہ ثواب پائے گا بلکہ گنہگار ہوگا۔ (صفحہ: ۱۸۲) - فقہاء کا اجماع ہے کہ خشوع نہ نماز کا رکن ہے، نہ فرض، نہ شرط (صفحہ: ۱۹۵) - اوقاتِ ثلاثہ مکروہہ میں کوئی نماز جائز نہیں سوائے اسی دن کی عصر کے۔ (صفحہ: ۵۳۴) - قضا نمازیں عموماً کامل ہیں لہذا اوقاتِ ثلاثہ میں ناجائز ہیں۔ (صفحہ: ۵۳۵) - ایک سال کی نمازوں کے دو ہزار ایک سو تیس فدیے ہوتے ہیں۔ (صفحہ: ۵۴۰) - ضمِ سورت واجب ہے تو اس کے لیے فرض رکوع سے عود کیوں۔ (صفحہ: ۵۹۸) - قعدہ اولیٰ بھول کر سیدھا کھڑا ہوگیا تو اب اسے عود حلال نہیں۔ (صفحہ: ۵۹۸) - امامِ اعظم کے نزدیک وقت مغرب شفقِ ابیض مستطیر تک ہے۔ (صفحہ: ۶۲۲) - نماز کا ایک اہم مسئلہ (حاشیہ) (صفحہ: ۷۸۵)

جماعت: - جماعت نفل بہ تداعی مشروع نہیں۔ (صفحہ: ۶۰۳)

Fatawa Razawiyyah, Volume 10

- One who has already led Taraweeh once cannot lead it for others on the same night. (599) | One who prays Fard in congregation and Taraweeh alone can join the congregation for Witr. (605)
- Taraweeh is Sunnat-e-Mu'akkadah throughout the blessed month. (601) | One who prays Fard alone and Taraweeh in congregation cannot enter the Witr congregation. (605)
- Just as Taraweeh will not be valid behind one offering voluntary prayer, it will also not be fulfilled behind one offering obligatory prayer. (603) | Leaving congregation without an excuse is a sin; if done several times, it is strictly forbidden and a major sin. (768)

Leadership (Imamat) | Recitation (Qira'at) - If the whole Great Quran is recited in a single rak'ah, it will all be counted as obligatory, although the initial obligation is only one verse. (598) | A clothed person's prayer cannot be valid behind an undressed person. (603) - If one forgets to join a surah and goes into Ruku, then stands back up to recite the surah, performing Ruku again is necessary. (598) | Prayer of one wearing a turban is permissible behind one wearing a cap. (603) - Listening to the Quran is obligatory even in purely voluntary (nafl) prayer. (600) | One who has made a vow (Nadhir) cannot follow another who has made a vow. (605) Prostration of Forgetfulness (Sajda Sahw) | One who has made a vow cannot follow one who is praying obligatory prayer. (605) - Exit from the sanctity of prayer is a barrier to the prostration of recitation (sajda tilawat) just as it is a barrier to the prostration of forgetfulness (sajda sahw). (607) | No prayer of adults is permissible behind a minor, even if he is just one day short of fifteen years. (607)

Taraweeh | Prostration of Recitation (Sajda Tilawat) - The obligation of Sajda Tilawat is immediate according to Imam Abu Yusuf and delayed according to Imam Muhammad, but whenever it is performed, it is by consensus considered performance (ada) and not makeup (qada). (80) | If there is a disagreement on the number of Taraweeh rak'ahs, whether twenty or eighteen were prayed, there are several scenarios. (597) - If a verse of prostration is recited in prayer, the prostration is immediately obligatory. (607) | If a Hafiz has finished reciting once in Taraweeh, he can recite again on other dates at another place. (598) - If one forgets to perform Sajda Tilawat during prayer and remembers before exiting the sanctity of prayer, one should perform both Sajda Tilawat and then Sajda Sahw. (607) | Completing the

Quran in Taraweeh is Sunnah, not Wajib. (598) - Repeating the completion of the Quran in Taraweeh: although it is not Sunnah Mu'akkadah for the Hafiz before starting, once started, whatever he recites will be counted as obligatory. (598)

फ़तावा रज़विया, खंड 10

- जो एक बार तरावीह पढ़ा चुका है, वह उसी रात दूसरे लोगों को नहीं पढ़ा सकता। (५९९) | फ़र्ज़ जमात के साथ और तरावीह अकेले पढ़ने वाला वित्र की जमात में शामिल हो सकता है। (६०५)
- तरावीह पूरे पवित्र महीने में सुन्नत-ए-मुअक्कदा है। (६०१) | फ़र्ज़ अकेले और तरावीह जमात के साथ पढ़ने वाला वित्र की जमात में शामिल नहीं हो सकता। (६०५)
- तरावीह जिस तरह नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे अदा नहीं होगी, उसी तरह फ़र्ज़ पढ़ने वाले के पीछे भी अदा नहीं होगी। (६०३) | बिना किसी कारण के जमात छोड़ना गुनाह है, कई बार ऐसा करना सख्त हराम और गुनाह-ए-कबीरा है। (७६८)

इमामत | क़िराअत - नमाज़ में फ़र्ज़ शुरुआत में हालांकि एक ही आयत है, लेकिन यदि पूरा महान कुरान एक ही रकात में पढ़ा जाए तो सब फ़र्ज़ ही माना जाएगा। (५९८) | कपड़े पहने हुए व्यक्ति की नमाज़ बिना कपड़ों वाले व्यक्ति के पीछे नहीं हो सकती। (६०३) - सूरत मिलाना भूलकर रुकू में जाने वाला यदि वापस खड़ा होकर सूरत पढ़े तो दोबारा रुकू करना अनिवार्य है। (५९८) | टोपी पहनने वाले के पीछे पगड़ी पहनने वाले की नमाज़ जायज़ है। (६०३) - शुद्ध नफ़्ल में भी कुरान सुनना फ़र्ज़ है। (६००) | मन्नत मानने वाला (नाज़िर) दूसरे मन्नत मानने वाले का अनुसरण नहीं कर सकता। (६०५) सजदा सहव | मन्नत मानने वाला फ़र्ज़ नमाज़ पढ़ने वाले का अनुसरण नहीं कर सकता। (६०५) - नमाज़ की पवित्रता से बाहर निकलना जिस तरह सजदा-ए-तिलावत के लिए बाधक है, उसी तरह सजदा-ए-सहव के लिए भी बाधक है। (६०७) | नाबालिग के पीछे वयस्कों की कोई भी नमाज़ जायज़ नहीं है, चाहे वह पंद्रह वर्ष का होने में एक दिन कम ही क्यों न हो। (६०७)

तरावीह | सजदा-ए-तिलावत - सजदा-ए-तिलावत का अनिवार्य होना इमाम अबू यूसुफ के अनुसार तत्काल है और इमाम मुहम्मद के अनुसार विलंबित है, लेकिन जब भी किया जाएगा, सर्वसम्मति से इसे अदायगी (अदा) ही कहा जाएगा न कि कज़ा। (८०) | तरावीह की रकातों की संख्या में यदि मतभेद हो कि बीस पढ़ी गई हैं या अठारह, तो इसकी कई स्थितियाँ हैं। (५९७) - नमाज़ में सजदा वाली आयत पढ़ी तो सजदा तुरंत वाजिब है। (६०७) | हाफ़िज़ एक बार तरावीह में सुना चुका हो तो दूसरी तारीखों में दूसरी जगह सुना सकता है। (५९८) - नमाज़ में सजदा-ए-तिलावत करना भूल गया और नमाज़ से बाहर नहीं निकला था कि याद आ गया, तो सजदा-ए-तिलावत और सजदा-ए-सहव

दोनों करे। (६०७) | तरावीह में कुरान खत्म करना सुन्नत है, वाजिब नहीं। (५९८) - तरावीह में दोबारा कुरान खत्म करना, हालांकि हाफ़िज़ के लिए शुरू करने से पहले सुन्नत-ए-मुअक्कदा नहीं है, लेकिन शुरू करने के बाद, सुन्नत तो दूर, जितना पढ़ेगा वह फ़र्ज़ माना जाएगा। (५९८)

पृष्ठ ८३६ में से ५०

- جو ایک بار تراویح پڑھا چکا اسی رات دوسرے لوگوں کو نہیں پڑھا سکتا۔ ۵۹۹ | فرض جماعت سے اور تراویح تنہا پڑھنے والا وتر کی جماعت میں شریک ہو سکتا ہے۔ ۶۰۵
- تراویح سارے ماہ مبارک میں سنتِ مؤکدہ ہے۔ ۶۰۱ | فرض تنہا اور تراویح جماعت سے پڑھنے والا وتر کی جماعت میں داخل نہیں ہو سکتا۔ ۶۰۵
- تراویح جس طرح متنفل کے پیچھے ساقط نہ ہوں گی اسی طرح مفترض کے پیچھے بھی ادا نہ ہوں گی۔ ۶۰۳ | ترکِ جماعت بلاعذر گناہ ہے، کئی بار ہو تو سخت حرام و گناہِ کبیرہ ہے۔ ۷۶۸

امامت | قراءت - عاری کے پیچھے لابس کی نماز نہیں ہو سکتی۔ ۶۰۳ | نماز میں فرض ابتدائی اگر چہ ایک ہی آیت ہے مگر سارا قرآن عظیم اگر ایک ہی رکعت میں پڑھے تو سب فرض ہی واقع ہو گا۔ ۵۹۸ - کلاہ پوش کے پیچھے عمامہ بند کی نماز جائز ہے۔ ۶۰۳ | ضم سورت بھول کر رکوع میں جانے والا واپس کھڑا ہو کر سورت پڑھے تو دوبارہ رکوع لازم ہے۔ ۵۹۸ - ناذر ناذر کی اقتداء نہیں کر سکتا۔ ۶۰۵ | نفل محض میں بھی استماع قرآن فرض ہے۔ ۶۰۰ - ناذر مفترض کی اقتداء نہیں کر سکتا۔ ۶۰۵ | سجدہ سہو - نابالغ کے پیچھے بالغوں کی کوئی نماز جائز نہیں اگرچہ ایک دن کم پندرہ برس کا ہو۔ ۶۰۷ | حرمت نماز سے خروج جس طرح مانع سجدہ تلاوت ہے یونہی مانع سجدہ سہو بھی ہے۔ ۶۰۷

تراویح | سجدہ تلاوت - رکعات تراویح کی تعداد میں اختلاف ہو کہ بیس پڑھی ہیں یا اٹھارہ، تو اس کی متعدد صورتیں ہیں۔ ۵۹۷ | سجدہ تلاوت کا وجوب امام ابویوسف کے نزدیک فوری اور امام

محمد کے نزدیک متراخی ہے مگر جب بھی کرے گا بالاتفاق ادا ہی کہلائے گا نہ کہ قضاء۔ ۸۰ - حافظ ایک بار تراویح میں سنا چکا تو دوسری تاریخوں میں دوسری جگہ سنا سکتا ہے۔ ۵۹۸ | نماز میں آیت سجدہ تلاوت کی تو سجدہ فوراً واجب ہے۔ ۶۰۷ - تراویح میں ختم قرآن سنت ہے واجب نہیں۔ ۵۹۸ | سجدہ تلاوت نماز میں کرنا بھول گیا اور حرمتِ نماز سے خارج نہ ہوا تھا کہ یاد آگیا تو سجدہ تلاوت پھر سجدہ سہو دونوں کرے۔ ۶۰۷ - دوبارہ ختم قرآن تراویح میں اگرچہ حافظ کے لیے قبل ایقاع سنت مؤکدہ نہیں مگر بعد وقوع سنت تو درکنار جتنا پڑھے گا فرض واقع ہوگا۔ ۵۹۸

جلد دہم (Volume 10) | فتاویٰ رضویہ (Fatawa Ridawiyya)

Section / Topic	Page No.	Section / Topic	Page No.
Funerals (جنائز)		**اللھم لك صمت is a prayer.**	638
It is not permissible to give a shroud to a deceased person from Zakat money.	106	In many hadiths, dhikr is also considered a prayer.	639
A funeral brought during the three disliked times; its prayer is permissible during those times.	532	The best prayer is the prayer of Arafah.	639
Eids (عیدین)		**Quranic Sciences & Interpretation (قرآنی علوم و تفسیر)**	
Multiple questions regarding Eid prayer.	372	In the Holy Quran, Zakat is mentioned along with prayer in 33 places.	172
Eid moon sighting on the 30th of Ramadan during the day.	388	Question regarding the noble verse 'فَالآنَ بَاشِرُوهُنَّ' (So now, have relations with them...).	561
Question regarding the sighting for Eid al-Adha.	443	**Hadith and Principles of Hadith (حدیث و اصول حدیث)**	
Mosque Rulings (احکام مسجد)		The anecdote about Imam Abu Yusuf mentioned with reference to Imam Bukhari is not found anywhere in Sahih Bukhari.	188
The case of spending Zakat in a mosque.	267	Excluding Bukhari's suspended narrations, follow-ups, and corroborating narrations, if one looks at the primary Musnads, there is room for discussion.	199
Collecting donations in mosques.	302	Response to the reasoning from the hadith 'تصدّقوا علی الادیان کلّھا' regarding giving charity to hostile non-believers.	328

Section / Topic	Page No.
Always maintain the intention of I'tikaf while sitting in the mosque.	827
I'tikaf (اعتکاف)	
I'tikaf in the last ten days of the blessed month of Ramadan.	652
One should make the intention for I'tikaf while entering any mosque.	768
	459

Section / Topic	Page No.
What is the meaning of the Holy Prophet's (PBUH) noble saying "شهرانِ لا ينقصان" (Two months that do not decrease)?	478
In the Hadith, the false dawn was called rectangular (mustateel) and the true dawn was called spreading (mustateer).	570
Discussion on the Hadith of Kuraib.	589
The author's (mercy of Allah be upon him) explanation of the Hadith of Kuraib is superior to the explanation given by the author of Fath al-Qadir.	591
Dua and Seeking Forgiveness (دعا واستغفار)	
The explicit benefit of the wording in hadiths "اذا افطر قال اللهم الخ" is that 'breaking the fast' is the condition and 'saying thus' is its consequence.	635
Prayers for moon sighting.	

अनुभाग / विषय	पृष्ठ सं.
जनाइज़ (जनाज़ा - جنائز)	
ज़कात के पैसे से मय्यत को कफ़न देना जायज़ नहीं है।	106
जो जनाज़ा तीन मकरूह औक़ात (वर्जित समय) में लाया गया, उसकी नमाज़ उन औक़ात में जायज़ है।	532
ईदैन (ईद - عیدین)	
ईद की नमाज़ से संबंधित अनेक प्रश्न।	372
रमज़ान की 30 तारीख को दिन में ईद का चाँद नज़र आना।	388
ईदुल अज़हा की रुय्यत (चाँद दिखने) से संबंधित प्रश्न।	443
अहकाम-ए-मस्जिद (मस्जिद के नियम - احکام مسجد)	
मस्जिद में ज़कात खर्च करने की सूरत।	267
मस्जिदों में चंदा करना।	302
अल्लाहुम्मा लका सुमतु (اللھم لك صمت) एक दुआ है।	638
अनेकों हदीसों में ज़िक्र को भी दुआ क़रार दिया गया है।	639
सबसे बेहतरीन दुआ अराफ़ा की दुआ है।	639
क़ुरआनी उलूम व तफ़सीर (قرآنی علوم و تفسیر)	
क़ुरआन मजीद में 33 जगहों पर नमाज़ के साथ ज़कात का ज़िक्र किया गया है।	172
आयत-ए-करीमा 'फ़ल-आना बाशिरूहुन्ना' (فَالآنَ بَاشِرُوهُنَّ) से संबंधित प्रश्न।	561
हदीस व उसूल-ए-हदीस (حدیث و اصول حدیث)	
इमाम अबू यूसुफ़ के बारे में इमाम बुख़ारी के हवाले से जो किस्सा बयान किया जाता है, वह बुख़ारी शरीफ़ में कहीं नहीं है।	188
बुख़ारी की तालीक़, मुताबाआत और शवाहिद को छोड़कर अगर अस्ल मुसानीद पर नज़र डालें तो गुंजाइश-ए-कलाम है।	199
	328

अनुभाग / विषय	पृष्ठ सं.
मस्जिद में बैठते समय हमेशा एतिकाफ़ की नियत रखनी चाहिए।	827
एतिकाफ़ (اعتكاف)	
रमज़ान शरीफ़ के आख़िरी अशरे में एतिकाफ़।	652
हर मस्जिद में जाते समय एतिकाफ़ की नियत कर लेनी चाहिए।	768
रुय्यत-ए-हिलाल (चाँद देखने) की दुआएँ।	459

अनुभाग / विषय	पृष्ठ सं.
हदीस 'तसद्दक़ू अला अदियान कुल्लिहा' (تصدّقوا على الاديان كلّها) से कुफ़्फ़ार-ए-हरबी को सदक़ा देने पर दलील का जवाब।	
हुज़ूर अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पाक इरशाद "शहराने ला यनक़ुसान" (شهرانِ لا ينقصان) का क्या मतलब है?	478
हदीस में सुब्ह-ए-काज़िब को मुस्ततील और सुब्ह-ए-सादिक़ को मुस्ततीर कहा गया है।	570
हदीस-ए-कुरैब पर बहस।	589
मुसन्निफ़ (रहमतुल्लाह अलैहि) की हदीस-ए-कुरैब के बारे में व्याख्या, साहिब-ए-फ़तहुल क़दीर की व्याख्या से बेहतर है।	591
दुआ व इस्तिग़फ़ार (دعا واستغفار)	
हदीस के अलफ़ाज़ "इज़ा अफ़्तरा क़ाला अल्लाहुम्मा इलख" (اذا افطر قال اللهم الخ) का स्पष्ट अर्थ यह है कि 'अफ़्तर' (इफ़्तार करना) शर्त है और 'क़ाला कज़ा' (ऐसा कहा) उसका प्रतिफल है।	635

عنوان / مضمون	صفحہ نمبر
جنائز	
مالِ زکوۃ سے میت کو کفن دینا جائز نہیں۔	۱۰۶
جو جنازہ اوقاتِ ثلاثہ مکروہہ میں لایا گیا اس کی نماز ان اوقات میں جائز ہے۔	۵۳۲
عیدین	
عید کی نماز سے متعلق متعدد سوال۔	۳۷۲
عید کا چاند تیس ۳۰ رمضان کو دن میں نظر آئے۔	۳۸۸
عیدالاضحیٰ کی رؤیت سے متعلق سوال۔	۴۴۳
احکام مسجد	
اللھم لك صمت دعا ہے۔	۶۳۸
احادیثِ کثیرہ میں ذکر کو بھی دعا قرار دیا گیا۔	۶۳۹
بہترین دعا دعاء عرفہ ہے۔	۶۳۹
قرآنی علوم و تفسیر	
قرآن مجید میں ۳۳ جگہ نماز کے ساتھ زکوٰۃ کا ذکر فرمایا گیا ہے۔	۱۷۲
آیہ کریمہ فَالآنَ بَاشِرُوھُنَّ الآیۃ سے متعلق سوال۔	۵۶۱
حدیث و اصول حدیث	
	۱۸۸

عنوان / مضمون	صفحہ نمبر
مسجد میں زکوٰۃ خرچ کرنے کی صورت۔	۲۶۷
مسجدوں میں چندہ کرنا۔	۳۰۲
ہمیشہ جلوس مسجد میں نیت اعتکاف رکھے۔	۸۲۷
اعتکاف	
رمضان شریف کے آخری عشرہ میں اعتکاف۔	۶۵۲

عنوان / مضمون	صفحہ نمبر
امام ابو یوسف کے بارے میں جو حکایت امام بخاری کے حوالے سے بیان کی جاتی ہے وہ بخاری شریف میں کہیں نہیں۔	
بخاری کی تعلیق، متابعات اور شواہد کو چھوڑ کر اصولِ مسانید پر نظر کیجئے تو گنجائش کلام ہے۔	۱۹۹
حدیث تصدّقوا علی الادیان کلّھا سے کفارِ حربی کو صدقہ دینے پر استدلال کا جواب۔	۳۲۸
حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے ارشاد عالی "شھرانِ لا ینقصان" کا کیا مطلب ہے؟	۴۷۸
صبحِ کاذب کو حدیث میں مستطیل اور صبحِ صادق کو مستطیر کہا گیا۔	۵۷۰
حدیثِ کریب پر بحث۔	۵۸۹
مصنف رحمۃ اللہ علیہ کی حدیث کریب کے بارے میں توجیہ صاحب فتح القدیر کی توجیہ سے اولیٰ ہے۔	۵۹۱

عنوان / مضمون	صفحہ نمبر
ہر مسجد میں جاتے ہوئے اعتکاف کی نیت کر لینی چاہیے۔	۷۶۸
دعا واستغفار	
الفاظِ احادیث "اذا افطر قال اللھم الخ" کا مفاد صریح یہی ہے کہ افطر شرط اور قال کذا اس کی جزا ہے۔	۶۳۵
رؤیتِ ہلال کی دعائیں۔	۴۵۹

Volume 10 Fatawa Razawiyya

Page	Topic / Subject	Reference Page
644	Explanation of the Hadith from which it apparently seems that supplication occurs before Iftar.	You (Peace and blessings of Allah be upon him) offer thanks for good deeds and seek forgiveness for our sins.
800	Answer to the Hadith "La Tashad-ur-Rihal" (footnote)	History and Biography
801	Proof from twenty Hadiths that visitors are deserving of intercession.	The faith-inspiring incident of Imam Muhammad Baqir (may Allah be pleased with him).
	Names of Men (Biographies)	Imam Abu al-Sa'ud Muhammad Effendi, Mufti of the Roman lands, author of Bahr-e-Ra'iq, on Bahr-e-Shurunbulali and Shurunbulali is prior to this Abu al-Sa'ud, who are the commentators of Shurunbulali's books.
624	Dawud bin Zabarqan is discarded (matrook).	The incident of Imam Zain al-Millah wa al-Din seeing the Messenger of Allah (Peace and blessings of Allah be upon him) in a dream.
	Seerat (Biography)	Imam Bukhari is neither from the Tabi'un nor from the Tabi' al-Tabi'un, but is a student at the fifth level of Imam-e-Azam.
		A story from the time of Imam al-Haramayn Abu al-Ma'ali (may Allah have mercy on him).
806	The Master of the Universe (Peace and blessings of Allah be upon him) responds to the one who offers greetings (Salam).	A famous incident supporting the invalidity of 15 degrees and the validity of 18 degrees of depression for Fajr (true dawn).
806	The Messenger of Allah (Peace and blessings of Allah be upon him) sees the conditions until the Day of Judgment as if looking at his palm.	What is the year of death of Imam Shams al-A'immah Halwani? (footnote)
807		

Page	Topic / Subject	Reference Page
	The knowledge of the Master of the Universe (Peace and blessings of Allah be upon him) after death is the same as it was in his life.	The incident of the noble Sayyid Abu Abdullah al-Fasi (may Allah have mercy on him).
807	The life and death of the Master of the Universe (Peace and blessings of Allah be upon him) are both better for the Ummah.	The incident of Hazrat Bilal (may Allah be pleased with him).
807	Our deeds are presented in the presence of the Radiant Prophet (Peace and blessings of Allah be upon him).	The incident of the meeting between Imam Ahmad Raza and Maulana Makki Shafi'i (may Allah have mercy on them).

जिल्द दहम फ़तावा रज़विया

पृष्ठ	विषय	सन्दर्भ पृष्ठ
644	उस हदीस की व्याख्या जिससे ज़ाहिर तौर पर इफ़्तार से पहले दुआ का होना साबित होता है।	आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) नेकियों पर शुक्र अदा करते हैं और गुनाहों पर हमारे लिए इस्तिग़फ़ार करते हैं।
800	हदीस "ला तशुद्दुर रिहाल" का जवाब (फुटनोट)	इतिहास और तज़किरा
801	ज़ायरीन (दर्शनार्थियों) के शफ़ाअत के हक़दार होने का सबूत बीस अहादीस से।	इमाम मुहम्मद बाक़िर (रज़ियल्लाहु अन्हु) का ईमान अफ़रोज़ वाक़िया।
	अस्माउर रिजाल (जीवनी)	इमाम अबू अल-सऊद मुहम्मद अफ़ंदी मुफ़्ती दियार-ए-रूमिया साहब-ए-बहर पर, साहब-ए-बहर शरुन्बुलाली पर और शरुन्बुलाली इस अबू अल-सऊद पर मुक़द्दम हैं जो शरुन्बुलाली की कुतुब के हशिया निगार हैं।
624	दाऊद बिन ज़बरक़ान मतरूक हैं।	इमाम ज़ैन अल-मिल्लत व अल-दीन के ख़्वाब में रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को देखने का वाक़िया।
	सीरत (जीवनी)	इमाम बुख़ारी न ताबिईन में से हैं न तब-ए-ताबिईन में से बल्कि इमाम-ए-आज़म के पांचवें दर्जे में जाकर शागिर्द हैं।
		इमाम अल-हरमैन अबू अल-मआली (रहमतुल्लाह अलैह) के ज़माने की एक हिकायत।
806	हुज़ूर सरवर-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) सलाम अर्ज़ करने वाले को जवाब देते हैं।	सुब्ह-ए-सादिक़ के लिए 15 दर्जा इनहिता़त (अवनति) के बुतलान और 18 दर्जा इनहिता़त की सेहत का मुअय्यद मशहूर वाक़िया।
806	रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) क़यामत तक के	इमाम शम्स अल-अइम्मा हलवानी की सन-ए-वफ़ात क्या है (फुटनोट)

पृष्ठ	विषय	सन्दर्भ पृष्ठ
	अहवाल को ऐसे देख रहे हैं जैसे अपनी हथेली को।	
807	सरवर-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का इल्म वफ़ात के बाद भी वैसा ही है जैसा आपकी ज़िंदगी में।	सैय्यद जलील अबू अब्दुल्लाह अल-फ़ासी (रहमतुल्लाह अलैह) का वाक़िया।
807	हुज़ूर सरवर-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की हयात और वफ़ात दोनों उम्मत के लिए बेहतर हैं।	हज़रत बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हु) का वाक़िया।
807	हमारे आमाल हुज़ूर पुर नूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की ख़िदमत में पेश किए जाते हैं।	इमाम अहमद रज़ा और मौलाना मक्की शाफ़ई (रहमतुल्लाह अलैहिमा) की मुलाक़ात का वाक़िया।

جلد دہم فتاوی رضویہ

صفحہ	عنوان	صفحہ نمبر
۶۴۴	جس حدیث سے بظاہر افطار سے قبل دعا کا وقوع ثابت ہے اس کی توجیہ۔	نیکیوں پر آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم شکر ادا کرتے ہیں اور گناہوں پر ہمارے لیے استغفار کرتے ہیں۔
۸۰۰	حدیث "لا تشد الرحال" کا جواب (حاشیہ)	تاریخ و تذکرہ
۸۰۱	زائرین کے مستحق شفاعت ہونے کا ثبوت بیس احادیث سے۔	امام محمد باقر رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا ایمان افروز واقعہ۔
	اسماء الرجال	امام ابو السعود محمد آفندی مفتی دیار رومیہ صاحب بحر پر، صاحب بحر شرنبلالی پر اور شرنبلالی اس ابوالسعود پر مقدم ہیں جو شرنبلالی کی کتب کے محشی ہیں۔
۶۲۴	داؤد بن زبرقان متروک ہیں۔	امام زین الملۃ والدین کے خواب میں رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو دیکھنے کا واقعہ۔
	سیرت	امام بخاری نہ تابعین میں سے ہیں نہ تبع تابعین میں سے بلکہ امام اعظم کے پانچویں درجے میں جا کر شاگرد ہیں۔

صفحہ	عنوان	صفحہ نمبر
		امام الحرمین ابوالمعالی رحمۃ اللہ علیہ کے زمانے کی ایک حکایت۔
۸۰۶	حضور سرورِ عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سلام عرض کرنے والے کو جواب دیتے ہیں۔	صبح صادق کے لئے ۱۵ درجہ انحطاط کے بطلان اور ۱۸ درجہ انحطاط کی صحت کا مؤید مشہور واقعہ۔
۸۰۶	رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم قیامت تک کے احوال کو ایسے دیکھ رہے ہیں جیسے اپنی ہتھیلی کو۔	امام شمس الائمہ حلوانی کی سن وفات کیا ہے (حاشیہ)
۸۰۷	سرورِ عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا علم وفات کے بعد بھی ایسا ہی ہے جیسا آپ کی زندگی میں۔	سید جلیل ابو عبداللہ الفاسی رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کا واقعہ۔
۸۰۷	حضور سرورِ عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی حیات و وفات دونوں امت کے لیے بہتر ہیں۔	حضرت بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا واقعہ۔
۸۰۷	ہمارے اعمال حضور پر نور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی خدمت میں پیش کیے جاتے ہیں۔	امام احمد رضا اور مولانا مکی شافعی رحمۃ اللہ علیہما کی ملاقات کا واقعہ۔

Fatawa-e-Razvia, Volume 10

Virtues & Merits	Page	Beliefs & Theology	Page
Virtues of Imam Muhammad Baqir (may Allah be pleased with him).	84	One merciful glance of the Master of the two worlds (peace and blessings of Allah be upon him) is sufficient for all the important matters of both worlds.	105
The reason for the prohibition of charity for the Sayyids is the honor, dignity, cleanliness, and purity of these exalted personages.	100	Allah the Almighty desires the well-being of the servant and his deliverance from severe punishment.	182
The wealthy are not equal to Banu Hashim in the entitlement of honor.	101	Is it permissible to curse Yazid?	193
Virtues of serving and assisting the Sayyids and the household of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him).	105	Countless differences in ranks; truth is with Ali the Courageous, but Muawiyah is also our leader, and slandering him is an act of the wicked.	201
The one who guides towards a good deed receives as much reward as the one who performs it.	106	He who, in support of Muawiyah, turns a blind eye to the priority, greatness, and perfection of Hazrat Ali is a Nasibi Yazidi, and he who, in love of Ali, forgets the companionship of Hazrat Muawiyah and his service to the court of the Prophet is a Shiah Zaidi.	201
Giving Zakat to relatives yields double the reward: one for maintaining family ties and one for charity.	183	What is the correct meaning of Hijrah?	682
According to Imam Shafi'i, all jurists are the children (dependents) of Imam Abu Hanifa.	197	The death of the Prophets (peace be upon them) is only for a moment.	763

Virtues & Merits	Page	Beliefs & Theology	Page
Imam Bukhari had a high standing in his time in memorizing Hadith, critiquing narrators, and scrutinizing the authenticity and weakness of narrations.	199	There is no difference in the life and passing of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him).	764
Indeed, the book of Imam Bukhari among the books of Hadith is selected and choice.	199	The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) is aware of the attendance of visitors, their standing, offering salutations, rather of all their actions and states, and their departure and stay.	764
Virtues of Imam Abu Hanifa.	199	Are acts of worship other than faith obligatory upon disbelievers?	776
Imam Bukhari acquired knowledge from the students of the students of Imam-e-Azam Abu Hanifa.	199	It is forbidden for the earth to consume the bodies of the Prophets.	807
		Prophets are alive and are provided with sustenance.	880

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द दहम (खंड 10)

फ़ज़ाइल व मनाक़िब (गुण और प्रशंसा)	पृष्ठ	अक़ायद व कलाम (विश्वास और धर्मशास्त्र)	पृष्ठ
इमाम मुहम्मद बाक़िर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) के फ़ज़ाइल।	84	दो जहाँ के आका (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की एक कृपा दृष्टि दोनों जहाँ के सभी महत्वपूर्ण कार्यों के लिए पर्याप्त है।	105
सादात के लिए सदक़ात (दान) की मनाही का कारण इन महान हस्तियों का सम्मान, गरिमा, स्वच्छता और पवित्रता है।	100	अल्लाह तआला बंदे की भलाई और उसे कठोर दंड से मुक्ति दिलाना चाहता है।	182
सम्मान के हक़दार होने में धनी लोग बनी हाशिम के बराबर नहीं हैं।	101	क्या यज़ीद पर लानत करना जायज़ है?	193
सादात और रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के अहल-ए-बैत की सेवा और सहायता के फ़ज़ाइल।	105	पद और गरिमा में अनगिनत अंतर हैं; सत्य हैदर-ए-कर्रार (हज़रत अली) के साथ है, लेकिन मुआविया भी हमारे सरदार हैं, और उन पर कटाक्ष करना पापियों का काम है।	201
नेक काम की ओर मार्गदर्शन करने वाले को भी उतना ही पुण्य मिलता है जितना नेक काम करने वाले को।	106	जो व्यक्ति मुआविया के समर्थन में हज़रत अली की प्राथमिकता, महानता और पूर्णता से आंखें फेर ले, वह नासिबी यज़ीदी है; और जो अली के प्रेम में हज़रत मुआविया की सहाबियत और रसूल के दरबार में उनकी सेवा को भूल जाए, वह शीआ ज़ैदी है।	201
अपनों को ज़कात देने से दोगुना पुण्य मिलता है, एक नातेदारी (सिला-ए-रहमी) का और एक दान (सदक़ा) का।	183	हिजरत का सही अर्थ क्या है?	682

फ़ज़ाइल व मनाक़िब (गुण और प्रशंसा)	पृष्ठ	अक़ायद व कलाम (विश्वास और धर्मशास्त्र)	पृष्ठ
इमाम शाफ़ई के अनुसार, सभी फ़क़ीह (विधिवेत्ता) इमाम अबू हनीफ़ा के बाल-बच्चे (उन पर निर्भर) हैं।	197	नबियों (अलैहिमुस्सलाम) की मृत्यु केवल एक क्षण के लिए होती है।	763
इमाम बुख़ारी का अपने समय में हदीस कंठस्थ करने, रावियों की परख करने और हदीसों की प्रामाणिकता की जांच करने में बहुत ऊंचा स्थान है।	199	हुज़ूर अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के जीवन और देहावसान में कोई अंतर नहीं है।	764
हदीस की किताबों में इमाम बुख़ारी की किताब निस्संदेह चुनिंदा और श्रेष्ठ है।	199	अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) आगंतुकों की उपस्थिति, उनके खड़े होने, सलाम पेश करने, बल्कि उनके सभी कार्यों, स्थितियों और उनके प्रस्थान और ठहरने से अवगत हैं।	764
इमाम अबू हनीफ़ा के फ़ज़ाइल।	199	क्या ईमान के अलावा इबादतें काफ़िरों पर फ़र्ज़ हैं?	776
इमाम बुख़ारी ने इमाम-ए-आज़म अबू हनीफ़ा के शिष्यों के शिष्यों से ज्ञान प्राप्त किया।	199	ज़मीन पर नबियों के जिस्म को खाना हराम है।	807
		नबी ज़िंदा होते हैं और उन्हें रिज़्क़ (आहार) दिया जाता है।	880

فضائل و مناقب	صفحہ	عقائد و کلام	صفحہ
امام محمد باقر رضی اللہ تعالیٰ کے فضائل۔	۸۴	سرکار دو عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی ایک نگاہِ لطف جملہ مہماتِ دو جہاں کو بس ہے۔	۱۰۵
سادات کے لیے تحریم صدقات کی علت ان حضراتِ عالیہ کی عزت و کرامت اور نظافت و طہارت ہے۔	۱۰۰	اللہ تعالٰی کو بندے کی بھلائی اور عذابِ شدید سے اس کی رہائی منظور ہے۔	۱۸۲
غنی استحقاق کرامت میں بنی ہاشم کے برابر نہیں۔	۱۰۱	کیا یزید پر لعنت کرنا جائز ہے؟	۱۹۳
حضرات سادات اور اہل بیت رسول صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی خدمت و معاونت کے فضائل۔	۱۰۵	فرق مراتب بے شمار حق بدست حیدر کرار، مگر معاویہ بھی ہمارے سردار، طعن ان پر بھی کارِ فجار۔	۲۰۱
نیک کام کی رہنمائی کرنے والے کو اتنا ہی ثواب ملتا ہے جتنا نیک کام کرنے والے کو۔	۱۰۶	جو حمایت معاویہ میں حضرت علی کی اولیت و عظمت و اکملیت سے آنکھ پھیرے وہ ناصبی یزیدی، اور جو محبت علی میں حضرت معاویہ کی صحابیت	۲۰۱

فضائل و مناقب	صفحہ
اپنوں کو زکوٰۃ دینے سے دو گنا ثواب ہے ایک صلہ رحمی کا اور ایک تصدق کا۔	۱۸۳
بقول امام شافعی تمام فقہاء امام ابو حنیفہ کے بال بچے ہیں۔	۱۹۷
امام بخاری کا اپنے زمانے میں حفظِ حدیث، نقدِ رجال اور تنقیح صحت و ضعف روایات میں پایہ رفیع ہے۔	۱۹۹
کتب احادیث میں امام بخاری کی کتاب بیشک چیدہ و منتخب ہے۔	۱۹۹
امام ابو حنیفہ کے فضائل۔	۱۹۹
امام بخاری نے امام اعظم ابو حنیفہ کے شاگردوں کے شاگردوں سے علم حاصل کیا۔	۱۹۹

عقائد و کلام	صفحہ
و خدمت بارگاہِ رسالت کو بھلا دے وہ شیعی زیدی ہے۔	
ہجرت کا صحیح مفہوم کیا ہے۔	۶۸۲
انبیاء علیہم السلام کی موت صرف ایک آن کے لیے ہوتی ہے۔	۷۶۳
حضور اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی حیات و وفات میں کوئی فرق نہیں۔	۷۶۴
رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم زائرین کی حاضری، کھڑے ہونے، سلام عرض کرنے بلکہ تمام افعال و احوال اور کوچ و مقام سے آگاہ ہیں۔	۷۶۴
کیا ایمان کے سوا عبادتیں کفار پر فرض ہیں۔	۷۷۶
زمین پر پیغمبروں کا جسم کھانا حرام ہے۔	۸۰۷

نبی زندہ ہوتے ہیں اور انہیں رزق دیا جاتا ہے۔ ۸۸۰

Fatawa Razawiyya, Volume 10

- 199: Allah Almighty created Imam Bukhari for the service of the words of Hadith; the service of the meanings was the share of the Mujtahid Imams, especially Imam Abu Hanifa. | 678: Virtues of parents and kind treatment towards them from the Quran and Hadith.
- 200: Tribute from Imam A'mash (RA) to Imam-e-Azam (RA). | 682: Hazrat Uwais Qarni (RA) is the best of the Tabi'un.
- 200: Virtues of Hazrat Imam Amir Shabi (RA). | 685: A single jurist is heavier upon Satan than a thousand worshippers.
- 201: In our view, the relationship Imam Bukhari has with Imam Abu Hanifa is the same as Hazrat Amir Muawiya (RA) has with Hazrat Ali Murtaza (RA). | 686: If Jurayj the monk had been a scholar, he would have known that responding to a mother's call is superior to the worship of the Lord.
- 201: In our view, the same mentioned relationship exists between Imam Ibn al-Jawzi and our master Ghous-e-Azam, and between Maulana Ali Qari and Shaykh-e-Akbar. | 686: Obedience to parents is superior to Nafl Hajj.
- 253: There is double reward in giving Zakat to one's debtor relative. | 695: In Madinah Munawwarah, mercy is more frequent, gentler, and more abundant.
- 253: It is better to give Zakat to students of religious knowledge. | 808: Excellence of prayer in Masjid Nabawi.
- 474: The prohibition of charity and the determination of the share are both permanent miracles for the Banu Hashim. | 808: Peace on the Day of Judgment for those who die in the Haramain.
- 477: Imam Tahawi's status is great indeed, but the overpowering greatness of the original school (Madhhab) is something else. | 809: Madinah is superior to Makkah.
- 351: Virtue of reciting the Holy Quran in Ramadan. | 809: Guarantee of intercession for those who die in Madinah Munawwarah.
- 588: The school of our Imams is of such a high level of elegant research that the so-called claimants of research cannot even catch a scent of it. | 811: Who among the Hassanain (Hasan and Husayn) is superior? (Footnote).
- 589: Which scholars of Hadith can be equal to Imam Abu Hanifa, Imam Abu Yusuf, and Imam Muhammad (may Allah's mercy be upon them)? | 812: It is correct to call the pure household (Ahl al-Bayt) the cream of creation.

- 636: It is proven from Hadith Qudsi that the one who hastens to break the fast is more beloved to Allah Almighty. | 817: If one walks on foot to Mina and Arafat for Hajj, there are seventy million rewards for every step.
- 640: The best dhikr is 'La ilaha illAllah' and the best supplication is 'Alhamdulillah'.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवाँ)

- १९९: अल्लाह तआला ने इमाम बुखारी को हदीस के शब्दों की सेवा के लिए बनाया था; अर्थों की सेवा मुज्तहिद इमामों, विशेष रूप से इमाम अबू हनीफा का हिस्सा थी। | ६७८: कुरान और हदीस से माता-पिता और उनके साथ अच्छे व्यवहार के गुण।
- २००: इमाम आ'मश (रजि.) द्वारा इमाम-ए-आजम (रजि.) को श्रद्धांजलि। | ६८२: हज़रत उवैस करनी (रजि.) ताबेईन में सबसे श्रेष्ठ हैं।
- २००: हज़रत इमाम आमिर शाबी (रजि.) के गुण। | ६८५: एक अकेला फकीह (धर्मशास्त्री) शैतान पर हज़ार इबादत करने वालों से ज़्यादा भारी है।
- २०१: हमारे नज़दीक इमाम बुखारी का इमाम अबू हनीफा से वही रिश्ता है जो हज़रत अमीर मुआविया (रजि.) का हज़रत अली मुर्तज़ा (रजि.) से है। | ६८६: यदि जुरैज राहब आलिम होते तो जानते कि माँ की पुकार पर लब्बैक कहना रब की इबादत से बढ़कर है।
- २०१: हमारे नज़दीक वही उपर्युक्त संबंध इमाम इब्न अल-जौज़ी का हमारे आका ग़ौस-ए-आज़म से, और मौलाना अली कारी का शैख़-ए-अकबर से है। | ६८६: माता-पिता की आज्ञाकारिता नफ़्ल हज से बढ़कर है।
- २५३: अपने कर्ज़दार रिश्तेदार को ज़कात देने में दोहरा सवाब है। | ६९५: मदीना मुनव्वरा में रहमत सबसे ज़्यादा, कोमल और भरपूर है।
- २५३: दीनी इल्म पढ़ने वाले छात्रों को ज़कात देना अफ़ज़ल है। | ८०८: मस्जिद-ए-नबवी में नमाज़ की फ़ज़ीलत।
- ४७४: सदके की मनाही और हिस्से का निर्धारण दोनों बनी हाशिम के लिए स्थायी चमत्कार हैं। | ८०८: हरमैन में मरने वालों के लिए कयामत के दिन अमन।
- ४७७: इमाम तहावी की शान बहुत बड़ी है, लेकिन असल मज़हब की ज़बरदस्त अज़मत कुछ और ही बात है। | ८०९: मदीना मक्का से अफ़ज़ल है।
- ३५१: रमज़ान शरीफ में कुरान पाक की तिलावत की फ़ज़ीलत। | ८०९: मदीना मुनव्वरा में मरने वालों के लिए शफाअत की गारंटी।
- ५८८: हमारे इमामों का मज़हब तहक़ीक़ के इतने ऊँचे दर्जे पर है कि तहक़ीक़ के दावेदारों तक को इसकी हवा भी नहीं लगती। | ८११: हसनैन करीमैन में से कौन अफ़ज़ल है? (हाशिया)

- ५८९: इमाम अबू हनीफा, इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैहिम) के बराबर कौन से मुहद्दिस होंगे? | ८१२: अहले बैत (पाक घराने) को मखलूक का खुलासा (सृष्टि का सार) कहना सही है।
- ६३६: हदीस-ए-कुदसी से साबित है कि जल्दी इफ्तार करने वाला अल्लाह तआला को ज़्यादा प्यारा है। | ८१७: हज के लिए मिना और अराफ़ात पैदल चलें तो हर कदम पर सात करोड़ नेकियाँ हैं।
- ६४०: सबसे अफ़ज़ल ज़िक्र 'ला इलाहा इल्लल्लाह' और सबसे अफ़ज़ल दुआ 'अल्हम्दुलिल्लाह' है।

فتاوی رضویہ، جلد دہم

- ۱۹۹: امام بخاری کو اللہ تعالیٰ نے خدمت الفاظ حدیث کے لیے بنایا تھا، خدمتِ معانی ائمہ مجتہدین خصوصاً امام ابوحنیفہ کا حصہ تھا۔ | ۶۷۸: قرآن و حدیث سے والدین اور ان کے ساتھ حسن سلوک کے فضائل۔
- ۲۰۰: امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو امام اعمش رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا خراج تحسین۔ | ۶۸۲: حضرت اویس قرنی رضی اللہ تعالیٰ عنہ خیر التابعین ہیں۔
- ۲۰۰: حضرت امام عامر شعبی رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے فضائل۔ | ۶۸۵: فقیہ واحد شیطان پر ہزار عابد سے زیادہ بھاری ہے۔
- ۲۰۱: ہمارے نزدیک امام بخاری کو امام ابوحنیفہ سے وہ نسبت ہے جو حضرت امیر معاویہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو حضرت علی مرتضیٰ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے۔ | ۶۸۶: اگر جریج راہب عالم ہوتا تو جانتا کہ ماں کی پکار پر لبیک کہنا عبادت رب سے اولیٰ ہے۔
- ۲۰۱: یہی نسبت مذکورہ ہی ہمارے نزدیک امام ابن الجوزی کو حضور سیدنا غوث اعظم اور مولانا علی قاری کو شیخ اکبر سے ہے۔ | ۶۸۶: اطاعت والدین حج نفل سے اولیٰ ہے۔
- ۲۵۳: اپنے عزیز مقروض کو زکوٰۃ دینے میں دُونا ثواب ہے۔ | ۶۹۵: مدینہ منورہ میں رحمت اکثر، الطف اور اوفر ہے۔
- ۲۵۳: علم دین پڑھنے والے طلبہ کو زکوٰۃ دینا افضل ہے۔ | ۸۰۸: مسجد نبوی میں نماز کی فضیلت۔
- ۴۷۴: تحریم صدقہ و تقریر سہم دونوں بنی ہاشم کے لیے مستقل کرامتیں ہیں۔ | ۸۰۸: حرمین میں مرنے والے کے لیے قیامت میں امن۔

- ۴۷۷: امام طحاوی کی جلالت شان مسلم مگر عظمت قاہرہ اصل مذہب چیزے دیگر است۔ | ۸۰۹: مدینہ مکہ سے افضل ہے۔
- ۳۵۱: رمضان شریف میں قرآن پاک کی تلاوت کی فضیلت۔ | ۸۰۹: مدینہ منورہ میں مرنے والے کے لیے شفاعت کی ضمانت۔
- ۵۸۸: ہمارے ائمہ کا مذہب مہذب اس اعلیٰ درجہ تحقیق انیق پر ہوتا ہے کہ مدعیان تحقیق تک اس کی ہوا بھی نہیں آتی۔ | ۸۱۱: حسنین کریمین میں سے کون افضل ہے (حاشیہ)
- ۵۸۹: امام ابوحنیفہ، امام ابویوسف اور امام محمد رحمتہ اللہ تعالیٰ علیہم کے برابر کون سے محدثین ہوں گے۔ | ۸۱۲: حضرات آل اطہار رضوان اللہ علیہم اجمعین کو خلاصہ مخلوق کہنا صحیح ہے۔
- ۶۳۶: حدیث قدسی سے ثابت ہے کہ جلد افطار کرنے والا اللہ تعالیٰ کو زیادہ محبوب ہے۔ | ۸۱۷: حج کے لیے منیٰ اور عرفات پیدل چلیں تو ہر قدم پر سات کروڑ نیکیاں ہیں۔
- ۶۴۰: افضل ذکر لا الہ الا اللہ اور افضل دعاء الحمد للہ ہے۔

Fatawa-e-Razvia | Volume 10

Astronomy and Timekeeping

- The whiteness of dawn appears to our eyes much higher than the horizon, it does not rise as an ascending height from the edge of the earth. | Page 571
- It is proven through the science of astronomy that it is possible for a 22nd day moon to be larger than some 30th day moons. [Ref 468] | The saying that morning is one-seventh of the night is not general for every season and every place. | Page 571
- From the perspective of astronomy, it is proven that sometimes a 29th day crescent moon can be conceived as higher and more lasting than some 30th day crescent moons. [Ref 469] | Description of seven forms of whiteness that occur from the start of false dawn (Subh-e-Kazib) until the spreading of true dawn (Subh-e-Sadiq). | Page 571
- A lunar year does not exceed three hundred and fifty-five days. [Ref 539] | Why did Ptolemy, the leader of astronomers, not mention the sighting of the new moon in the Almagest? | Page 575
- The art of extracting correct times is called the science of timekeeping (Ilm-e-Tawqeet). [Ref 568] | It is not difficult for the estimates of later astronomers to fail. | Page 575
- Most scholars in India are unaware of the science of timekeeping, nor can it be learned from astronomy textbooks. [Ref 568] | Astronomers could not provide any correct regulation regarding the sighting of the new moon. | Page 575
- Someone unfamiliar with Mirza Khairullah Munajjim's two-character table cannot benefit from this art. [Ref 568] | Errors have often occurred in the calculations of astronomers. | Page 575
- The adjustment tables of Zeej Bahadur Khani have no relation to Sahari and are deficient for Iftar. [Ref 568] | The All-Mighty, Wise and Merciful Lord has appointed two clear signs for timing, namely the moon and the sun. | Page 618
- Recognizing the time is an individual obligation (Fard-e-Ayn) for every Muslim. [Ref 569] | The causes of the appearance and concealment of the crescent moon are numerous and uncoordinated. | Page 619
- Where the whiteness of false dawn begins, it keeps increasing until the end; darkness never occurs there. [Ref 570] | Despite creating chapters for the appearance and concealment of the five wandering planets and fixed stars, Ptolemy did not discuss the sighting of the new moon at all. | Page 619

- In some books of astronomy and consequently in some books of jurisprudence, it is incorrectly written that true dawn occurs when the sun is fifteen degrees below the horizon, and false dawn occurs only three degrees before it. [Ref 570] | Later experts in astronomy said some things about the sighting of the new moon regarding the degree of altitude or distance from the meridian and the arc of sunset adjustment etc., but they themselves differ greatly on them. | Page 619

फ़तावा-ए-रज़विया | खंड 10

खगोल विज्ञान और समय निर्धारण (हियत और तौकीत)

- भोर की सफेदी हमारी आँखों में क्षितिज से बहुत ऊपर दिखाई देती है, न कि पृथ्वी के किनारे से उठती हुई ऊँचाई पर आती है। | पृष्ठ 571
- खगोल विज्ञान के माध्यम से भी यह प्रमाणित है कि 22 तारीख का चाँद कुछ 30 तारीख के चाँद से बड़ा होना संभव है। [संदर्भ 468] | यह कहना कि सुबह रात का सातवां हिस्सा है, हर मौसम और हर स्थान के लिए सामान्य नहीं है। | पृष्ठ 571
- खगोल विज्ञान के अनुसार यह प्रमाणित है कि कभी-कभी 29 तारीख का अर्धचंद्र (हिलाल) 30 तारीख के कुछ अर्धचंद्रों से ऊँचा और अधिक समय तक टिकने वाला कल्पित हो सकता है। [संदर्भ 469] | सुब्ह-ए-काज़िब (असली भोर से पहले की रोशनी) की शुरुआत से सुब्ह-ए-सादिक (असली भोर) के प्रसार तक सफेदी के आने वाली सात स्थितियों का वर्णन। | पृष्ठ 571
- चंद्र वर्ष तीन सौ पचपन दिनों से अधिक नहीं होता है। [संदर्भ 539] | खगोलविदों के इमाम टॉलेमी ने अपनी पुस्तक अल्मागेस्ट (मुजस्ती) में चाँद दिखने (रुयते हिलाल) का ज़िक्र क्यों नहीं किया। | पृष्ठ 575
- सही समय निकालने की कला को इल्म-ए-तौकीत (समय निर्धारण का विज्ञान) कहते हैं। [संदर्भ 568] | बाद के खगोलविदों के अनुमानों में विसंगति होना कठिन नहीं है। | पृष्ठ 575
- भारत के अधिकांश विद्वान इल्म-ए-तौकीत से अनभिज्ञ हैं और न ही यह खगोल विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों से सीखा जा सकता है। [संदर्भ 568] | खगोलविद् चाँद दिखने के बारे में कोई सही नियम नहीं बता सके। | पृष्ठ 575
- मिर्ज़ा खैरउल्ला मुनज्जिम की दो अक्षरों वाली तालिका से अनभिज्ञ व्यक्ति इस कला से लाभ नहीं उठा सकता। [संदर्भ 568] | ज्योतिषियों की गणनाओं में अक्सर गलतियाँ हुई हैं। | पृष्ठ 575
- 'ज़ीज बहादुर खानी' की समायोजन तालिकाओं का सहरी से तो कोई संबंध ही नहीं है और इफ्तार के मामले में यह अधूरी है। [संदर्भ 568] | सर्वशक्तिमान, बुद्धिमान और दयालु प्रभु ने समय के लिए दो स्पष्ट संकेत नियत किए हैं, अर्थात् चंद्रमा और सूर्य। | पृष्ठ 618
- समय को पहचानना हर मुसलमान पर व्यक्तिगत कर्तव्य (फ़र्ज़-ए-ऐन) है। [संदर्भ 569] | अर्धचंद्र के प्रकट होने और छिपने के कारण अनेक और अनियंत्रित हैं। | पृष्ठ 619

- सुब्ह-ए-काज़िब की सफेदी जहाँ से शुरू होती है, वह अंत तक बढ़ती ही जाती है, वहाँ कभी अंधेरा नहीं होता। [संदर्भ 570] | पाँच ग्रहों और स्थिर तारों के प्रकट होने और छिपने के लिए अध्याय बनाने के बावजूद, टॉलेमी ने चाँद दिखने पर बिल्कुल चर्चा नहीं की। | पृष्ठ 619
- खगोल विज्ञान की कुछ पुस्तकों और उनका अनुसरण करते हुए न्यायशास्त्र (फ़िक़्ह) की कुछ पुस्तकों में यह गलत लिखा गया है कि जब सूरज क्षितिज से पंद्रह डिग्री नीचे होता है तो सुब्ह-ए-सादिक होती है, और सुब्ह-ए-काज़िब उससे केवल तीन डिग्री पहले होती है। [संदर्भ 570] | बाद के खगोलविदों ने ऊँचाई के अंश या मध्याह्न से दूरी और सूर्यास्त समायोजन चाप आदि के संबंध में चाँद दिखने के बारे में कुछ बातें कहीं, लेकिन वे स्वयं उनमें बहुत मतभेद रखते हैं। | पृष्ठ 619

पृष्ठ 55 का 836

فتاویٰ رضویہ | جلد دہم

ہیئت و توقیت

- صبح کی سفیدی افق سے بہت اونچی ہی ہماری نظروں میں پیدا ہوتی ہے نہ کہ زمین کے کنارہ سے اُٹھتی ہوئی بلندی پر آتی ہے۔ | صفحہ ۵۷۱
- بطور علم ہیئت بھی ثابت ہے کہ ۲۲ کا چاند بعض ۳۰ کے چاندوں سے بڑا ہونا ممکن ہے۔ [نمبر ۴۶۸] | یہ قول کہ صبح رات کا ساتواں حصہ ہے ہر موسم اور ہر مقام کے لیے عام نہیں۔ | صفحہ ۵۷۱
- از روئے ہیئت ثابت ہے کہ کبھی ۲۹ کا ہلال ۳۰ کے بعض ہلالوں سے اونچا اور دیر پا ہونا متصور ہے۔ [نمبر ۴۶۹] | صبح کاذب کے شروع سے صبح صادق کے انتشار تک سفیدی کو پیش آنے والی سات صورتوں کا بیان۔ | صفحہ ۵۷۱
- سالِ قمری تین سو پچپن دن سے زائد نہیں ہوتا۔ [نمبر ۵۳۹] | امام اہل ہیئت بطلیموس نے مجسطی میں رویتِ ہلال کا ذکر کیوں نہیں کیا۔ | صفحہ ۵۷۵
- اوقات صحیح نکالنے کے فن کو علم توقیت کہتے ہیں۔ [نمبر ۵۶۸] | متاخرین اہل ہیئت کے تخمینات کا تخلف دشوار نہیں۔ | صفحہ ۵۷۵
- علم توقیت سے ہندوستان کے اکثر علماء غافل ہیں نہ یہ ہیئت کی درسی کتابوں سے آسکتا ہے۔ [نمبر ۵۶۸] | اہل ہیئت رویتِ ہلال کے بارے میں کوئی ضابطہ صحیحہ نہیں بتا سکے۔ | صفحہ ۵۷۵
- مرزا خیر اللہ منجم کی دو حرفی جدول سے ناواقف فن نفع نہیں پاسکتا۔ [نمبر ۵۶۸] | منجمین کے حسابات میں اکثر خطا پڑی ہے۔ | صفحہ ۵۷۵

- زیج بہادر خانی کی جداول تعدیل سے سحری کو تو کچھ تعلق ہی نہیں اور افطار میں ناقص ہے۔ [نمبر ۵۶۸] | اوقات کے لیے حکیم رحیم جل جلالہ نے دو کھلی نشانیاں مقرر فرمادیں یعنی چاند اور سورج۔ | صفحہ ۶۱۸
- وقت پہچاننا ہر مسلمان پر فرض عین ہے۔ [نمبر ۵۶۹] | ہلال کے ظہور و خفا کے اسباب کثیر و نامنضبط ہیں۔ | صفحہ ۶۱۹
- صبح کاذب کی سپیدی جہاں شروع ہوتی ہے وہ اخیر تک بڑھتی ہی جاتی ہے وہاں ہر گز تاریکی نہیں آتی۔ [نمبر ۵۷۰] | بطلیموس نے متحیرہ خمسہ و کواکب ثوابت کے ظہور و خفا کے لیے باب وضع کرنے کے باوجود رویتِ ہلال سے اصلاً بحث نہ کی۔ | صفحہ ۶۱۹
- بعض کتب ہیئت اور ان کی اتباع میں بعض کتب فقہ میں یہ بات غلط لکھ دی گئی کہ جب آفتاب افق سے پندرہ درجے نیچے ہوتا ہے تو صبح صادق ہوتی ہے، اور صبح کاذب اس سے صرف تین درجے پہلے ہوتی ہے۔ [نمبر ۵۷۰] | متاخرین اربابِ ہیئت نے بلحاظ درجہ ارتفاع یا بعد معدل و قوس تعدیل الغروب وغیرہ کی کچھ باتیں رویتِ ہلال کے بارے میں کیں لیکن وہ خود ان میں بشدت مختلف ہیں۔ | صفحہ ۶۱۹

Fatawa Rizwia - Volume 10

- Modern astronomers delve deeply into trivial matters; some examples of this. (Page: 619, 525)
- The weight of a Mithqal is 4-1/2 Mashas. (Page: 619, 525)
- Through repeated observation, experience has provided some universal rules, with the help of which it became possible to bring time into the regulations of the science of astronomy and Zij. (Page: 619, 525)
- The weight of a Shariah Dirham is twenty-five Rattis plus one-fifth of a Ratti, which is 5.25 Rattis. (Page: 619, 525)
- Knowing the latitude of a city and the solar declination is sufficient and ample to tell the time of sunrise and sunset. (Page: 620, 526)
- One Ratl contains Astar, one Astar is four and a half Mithqals, one Mithqal is twenty Qirats, and one Qirat is 1.5-4/7 Rattis. (Page: 620, 526)
- What is refraction and the formula for finding its amount/duration? (Page: 620, 548)
- The amount of Fidiya and Sa' in terms of Tolas. (Page: 621, 548)
- The difference of opinion among astronomers regarding the degrees of solar depression at the times of Subh-e-Kazib (false dawn) and Subh-e-Sadiq (true dawn). (Page: 621)

फ़तावा रिज़विया - जिल्द दहम (भाग 10)

- आधुनिक खगोलशास्त्री बेकार की बातों में बहुत गहराई से छानबीन करते हैं, इसके कुछ उदाहरण। (पृष्ठ: 619, 525)
- मिथकाल का वज़न साढ़े चार (4-1/2) माशे है। (पृष्ठ: 619, 525)
- बार-बार के अवलोकन से अनुभव ने कुछ सामान्य नियम दिए हैं जिनकी सहायता से खगोल विज्ञान और ज़िज (Zij) के नियमों में समय को लाना संभव हुआ। (पृष्ठ: 619, 525)
- शरीयत के दिरहम का वज़न पच्चीस रत्ती और रत्ती का पाँचवाँ हिस्सा है, यानी 5.25 रत्ती। (पृष्ठ: 619, 525)
- किसी शहर का अक्षांश और सूर्य का झुकाव (declination) ज्ञात होना सूर्योदय और सूर्यास्त का समय बताने के लिए पर्याप्त है। (पृष्ठ: 620, 526)
- एक रतल (Ratl) में अस्तर (Astar) होते हैं, एक अस्तर साढ़े चार मिथकाल का होता है, एक मिथकाल बीस किरात (Qirat) का, और एक किरात 1.5-4/7 रत्ती का होता है। (पृष्ठ: 620, 526)
- अपवर्तन (Refraction) क्या है और इसकी मात्रा/अवधि ज्ञात करने का नियम क्या है? (पृष्ठ: 620, 548)
- तोलों में फिदया और साअ (Sa') की मात्रा। (पृष्ठ: 621, 548)
- सुबह-ए-काज़िब (झूठा सवेरा) और सुबह-ए-सादिक (सच्चा सवेरा) के समय सूर्य के झुकाव के अंशों में खगोलशास्त्रियों का मतभेद। (पृष्ठ: 621)

- اہل ہیئت جدیدہ فضول باتوں میں نہایت تدقیق و تعمق کرتے ہیں اس کی چند مثالیں۔ (صفحہ: ۶۱۹، ۵۲۵)
- مثقال کا وزن ۴-۱/۲ ماشے ہے۔ (صفحہ: ۶۱۹، ۵۲۵)
- روئیت کے تکرار سے تجربہ نے کچھ ضوابط کلیہ دیئے جن کی مدد سے وقت کو قوانین علم ہیئت و زیچ کے ضابطہ میں لے آنا میسر ہوا۔ (صفحہ: ۶۱۹، ۵۲۵)
- درہم شرعی کا وزن پچیس رتی اور رتی کا پانچواں حصہ ہے یعنی ۵.۲۵ رتی۔ (صفحہ: ۶۱۹، ۵۲۵)
- شہر کا عرض اور جزءِ شمس کا میل معلوم ہونا طلوع و غروب کا وقت بتانے کے لیے کافی ووافی ہے۔ (صفحہ: ۶۲۰، ۵۲۶)
- ایک رطل میں استار، ایک استار ساڑھے چار مثقال، ایک مثقال بیس قیراط، اور ایک قیراط ۴/۷-۱.۵ رتی کا ہوتا ہے۔ (صفحہ: ۶۲۰، ۵۲۶)
- انکسار کیا ہے اور اس کی مقدار مدت دریافت کرنے کا ضابطہ (صفحہ: ۶۲۰، ۵۴۸)
- تولوں سے فدیہ اور صاع کی مقدار۔ (صفحہ: ۶۲۱، ۵۴۸)
- صبحِ کاذب و صبحِ صادق کے وقت انحطاطِ شمس کے درجات میں اہل ہیئت کا اختلاف۔ (صفحہ: ۶۲۱)

- Does a bequest of wealth apply only to tangible assets (Ayn) or to debts (Dayn) as well? | 533 | Muslims! This is a religion for which God is the giver; He knows that looking at it is a debt upon me. | 529
- If death occurs before the compensation for missed fasts, the bequest of Fidiya (ransom) is mandatory. | 526 | Rasm-ul-Mufti |
- **Encouragement and Admonition** | | In times of difference, the Zahir-ul-Riwayah (manifest reports) is the point of reference. | 103
- There are calamities in delaying the payment of Zakat after it becomes due. | 83 | Whatever is contrary to the Zahir-ul-Riwayah is not the creed of our Imams. | 103
- Words that encourage people towards gradual payment of Zakat. | 84 | A fatwa based on an abandoned opinion is against ignorance and consensus. | 104
- The Day of Judgment is a day of severe necessity and need. | 105 | The fatwa is on the impermissibility of the trick to evade Zakat; this is the creed of both (Imam Abu Hanifa and Imam Muhammad). | 190
- All individuals participating in a good deed receive full reward; the reward of anyone does not decrease due to partnership. | 106 | Regarding the trick to evade Zakat, Imam Abu Yusuf retracted from his previous opinion. | 192
- In spending Zakat for good deeds, both parties get a reward for transferring ownership (tamlik) to a deserving recipient. | 107 | It is one thing for a mujtahid's effort to result in the permissibility of an act, and another for him to personally commit it. | 193
- Paying Zakat increases wealth, just as a tree grows by cutting off harmful and extra parts. | 172 | The pillars of the divine religion often state concessions for the common people but practice resolute action (Azimat) themselves. | 193
- No one can bear the soul-crushing calamities of not giving Zakat. | 178 | The word "Na'khudh" (We take) is among the most emphatic words of a fatwa. | 216
- What is the worth of a weak-built human? If the calamities of not giving Zakat were cast upon mountains, they would turn to dust. | 178 | The fatwa regarding the validity of sharecropping (Muzara'at) is based on the opinion of the Sahibayn (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad). | 217
- Examples from the blessed book "Futuh al-Ghaib" of Sayyiduna Ghous-e-Azam (may Allah be pleased with him) that split the liver (i.e., deeply affecting). | 179 | Hardship is repelled by the textual evidence (Nass). | 217

- | | The impermissibility of Zakat for Bani Hashim is the Zahir-ul-Riwayah. | 275

फतावा रज़विया | जिल्द दहुम (दसवां भाग)

- क्या माल की वसीयत केवल मौजूद चीज़ (ऐन) पर लागू होती है या कर्ज़ (दैन) पर भी? | ५३३ | मुसलमानो! यह वह दीन है जिस पर खुदा का दीन है, वह जानता है कि उसे देखना मुझ पर दीन (कर्ज़) है। | ५२९
- रोज़ों की कज़ा से पहले मौत आ जाए तो फ़िदिया की वसीयत वाजिब है। | ५२६ | रस्म-उल-मुफ़्ती |
- **तरगीब-ओ-तरहीब (प्रोत्साहन और चेतावनी)** | | मतभेद के समय ज़ाहिर-उर-रिवायत ही मरजा (संदर्भ बिंदु) है। | १०३
- ज़कात वाजिब होने के बाद अदायगी में देरी करने में आफ़तें (मुसीबतें) हैं। | ८४ | जो कुछ ज़ाहिर-उर-रिवायत के खिलाफ है, वह हमारे इमामों का मज़हब नहीं है। | १०३
- लोगों को ज़कात की अदायगी में धीरे-धीरे प्रवृत्त करने वाली बातें। | ८४ | मतरूक (छोड़े हुए) कौल पर फ़तवा अज्ञानता और इज्मा (आम सहमति) के खिलाफ है। | १०४
- कयामत का दिन सख्त ज़रूरत और हाजत का दिन है। | १०५ | ज़कात से बचने के हीले (बहाने) के ना-जायज़ होने पर फ़तवा है, यही तरफ़ैन (इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम मुहम्मद) का मज़हब है। | १९०
- नेक काम में शरीक होने वाले तमाम लोगों को कामिल सवाब मिलता है, शिरकत की वजह से किसी के अज्र में कमी नहीं आती। | १०६ | ज़कात के हीले के बारे में इमाम अबू यूसुफ़ ने अपने पुराने कौल से रुजू (वापसी) कर लिया। | १९२
- नेक कामों में ज़कात खर्च करने के लिए किसी मुस्तहिक (हकदार) को मालिक बनाने (तमलीक) में दोनों को सवाब मिलता है। | १०७ | मुजतहिद के इज्तिहाद में किसी काम का जायज़ होना और बात है और खुद उसका मुर्तकिब (करने वाला) होना और बात है। | १९३
- ज़कात अदा करने से माल बढ़ता है, जैसे फ़ासिद (बेकार) हिस्सों को काटने से पेड़ बढ़ता है। | १७४ | दीन-ए-इलाही के सुतून (बड़े आलिम) अक्सर अवाम के लिए रुख़सत (रियायत) बताते हैं लेकिन खुद अज़ीमत (कठिन संकल्प) पर अमल करते हैं। | १९४
- ज़कात न देने की जानलेवा आफ़तों को कोई सहन नहीं कर सकता। | १७८ | लफ्ज़ "नाख़ुज़" (हम लेते हैं) फ़तवे के सबसे ताकीदी शब्दों में से है। | २१६

- कमज़ोर इंसान की क्या हस्ती? अगर ज़कात न देने की आफ़तें पहाड़ों पर डाली जाएँ तो वे राख हो जाएँ। | १७८ | मुज़ारेअत (बटाई पर खेती) की सेहत के बारे में फ़तवा साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद) के कौल पर है। | २१७
- सैय्यदुना गौस-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) की मुबारक किताब "फ़ुतूह अल-ग़ैब" से कुछ दिल दहला देने वाली मिसालें। | १७९ | हरज (कठिनाई) ऩस (स्पष्ट प्रमाण) द्वारा दूर की जाती है। | २१७
- | | बनी हाशिम के लिए ज़कात का ना-जायज़ होना ज़ाहिर-उर-रिवायत है। | २७५

पृष्ठ ८३६ का ५७

- کیا وصیت بالمال فقط عین کو تناول ہوتی ہے یا دین کو بھی۔ | ۵۳۳ | مسلمانو! یہ دین ہے جس پر خدا کی دین ہے وہ جانتا ہے کہ اس کا دیکھنا مجھ پر دین ہے۔ | ۵۲۹
- روزہ کی قضا سے پہلے موت آجائے تو فدیہ کی وصیت واجب ہے۔ | ۵۲۶ | رسم المفتی |
- **ترغیب و ترھیب** | | بوقعت اختلاف ظاہر الروایت ہی مرجع ہے۔ | ۱۰۳
- بعد از وجوب زکوۃ ادائیگی کی تاخیر میں آفات ہیں۔ | ۸۳ | جو کچھ ظاہر الروایت کے خلاف ہے ہمارے ائمہ کا مذہب نہیں۔ | ۱۰۳
- لوگوں کو زکوۃ کی ادائیگی میں تدریج پر راغب کرنے والی باتیں۔ | ۸۴ | قول مرجوع پر فتوی جہالت اور اجماع کے خلاف ہے۔ | ۱۰۴
- قیامت کا دن سخت ضرورت و حاجت کا دن ہے۔ | ۱۰۵ | اسقاط زکوۃ کے حیلہ کے عدم جواز پر فتوی ہے یہی طرفین کا مذہب ہے۔ | ۱۹۰
- نیک کام میں شریک ہونے والے تمام افراد کو کامل ثواب ملتا ہے شراکت کی وجہ سے کسی کے اجر میں کمی واقع نہیں ہوتی۔ | ۱۰۶ | حیلہ اسقاط زکوۃ کے بارے میں امام ابو یوسف نے اپنے سابق قول سے رجوع فرمالیا۔ | ۱۹۲
- نیک کاموں میں زکوۃ خرچ کرنے کے لیے کسی مستحق زکوۃ سے تملیک کرانے میں دونوں کو ثواب ملتا ہے۔ | ۱۰۷ | مجتہد کے اجتہاد میں کسی فعل کا جواز آنا اور بات ہے اور خود اس کا مرتکب ہونا اور بات ہے۔ | ۱۹۳

- زکوۃ ادا کرنے سے مال بڑھتا ہے جیسے اجزائے فاسدہ زائدہ کے کاٹنے سے درخت بڑھتا ہے۔ | ۱۷۲ | اساطین دین الہی بارہا عوام کے لیے رخصت بتاتے ہیں اور خود عزیمت پر عمل کرتے ہیں۔ | ۱۹۳
- زکوۃ نہ دینے کی جانکاہ آفتوں کی کوئی تاب نہیں لاسکتا۔ | ۱۷۸ | لفظ "ناخذ" آکد الفاظ فتوی سے ہے۔ | ۲۱۶
- ضعیف البنیان انسان کی کیا جان زکوۃ نہ دینے کی آفتیں اگر پہاڑوں پر ڈالی جائیں تو خاک میں مل جائیں۔ | ۱۷۸ | صحت مزارعت کے بارے میں فتویٰ صاحبین کے قول پر ہے۔ | ۲۱۷
- سیدنا غوث اعظم رضی اللہ تعالی عنہ کی کتاب مستطاب فتوح الغیب شریف سے چند جگر شگاف مثالیں۔ | ۱۷۹ | حرج مدفوع بالنص ہے۔ | ۲۱۷
- | | بنی ہاشم کے لیے زکوۃ کا عدم جواز ظاہر الروایت ہے۔ | ۲۷۵

Fatawa Razvia, Volume 10

Description	Page	Description	Page
Anything contrary to the 'Zahir al-Riwayah' is not the saying of our Imams.	276	Demand for land tax is conditional upon control/authority.	218
Acting upon a retracted opinion (qawl-e-marju' 'anh) is impermissible.	276	To demand something that has no use is futile.	221
Imam Tahawi has some isolated preferences; acting upon them while abandoning the school of thought (madhhab) is meaningless.	277	There is a difference between the state's demand and religious obligation.	222
Those who give fatwas without knowledge are, according to Hadith, misguided and misguiding.	458	Many things cannot be demanded by the ruler, yet they are religiously obligatory.	222
Relying on the opinion of some scholars against the accepted school of thought is ignorance and a violation of consensus (ijma).	578	The word 'yakhtass' in the text of 'Inayah' has occurred ambiguously, and it is superfluous and contrary to the intended meaning.	226
The fatwa is on the non-consideration of the difference in moon sightings (ikhtilaf al-matali'), and this is more cautious and stronger.	582	What are the quantities of Jarib and Sa'a?	239
Adopting the 'Zahir al-Riwayah' is most cautious.	582	The explanation of 'Khums al-Khums' is based on the prohibition of charities, not the prohibition of charities being based on 'Khums al-Khums'.	273
Caution lies in acting upon the stronger of two evidences.	582	Difference between customary exchange and technical exchange.	275
Whatever is outside the 'Zahir al-Riwayah' is not the school or saying	583	In Sadaqat-ul-Fitr, the Sa'a measure is considered for four things, for others, the price is considered.	292

Description	Page	Description	Page
of Imam al-A'zam (Allah be pleased with him).			
Whatever is outside the 'Zahir al-Riwayah' is a retracted opinion, and a retracted opinion is no longer the saying of the Imam.	583	Research on the weight of a Sa'a.	298
Whatever opposes the 'Zahir al-Riwayah' is not the school of our companions.	583	A telegram is neither Sharia-compliant testimony nor a concurrent report (khabar-e-mutawatir).	360
Giving a fatwa based on a retracted opinion is ignorance and a violation of consensus.	583	When a telegram from an acceptable book (Maqbul al-Kitab) is insignificant, what is the value of a telegram from a rejected book?	365
Jurisprudential Benefits		The form of 'istifadah' (widespread report) and its conditions.	414
The completion of a lunar year (hawlan al-hawl) refers to the lunar year.	85	In establishing rulings, 'tawatur' (recurrence) stands in place of testimony, rather it is stronger than it.	417
Zakat is obligatory only on the minimum taxable amount (nisab), not on the surplus (afw).	88	When will a public announcement be acted upon in an Islamic city?	420
In Zakat, lunar months are considered, not English months.	156	Definitions of an upright person ('Adil), a hidden person (Mastur), and a transgressor (Fasiq).	452
The meaning of 'hawlan al-hawl' (passing of a year).	202		

फतावा-ए-रजविया, खंड 10

विवरण	पृष्ठ
जो कुछ ज़ाहिर अल-रिवायह के खिलाफ हो, वह हमारे इमामों का कथन नहीं है।	२७६
मर्जू' अनहु (प्रत्याहारित राय) पर अमल करना नाजायज़ है।	२७६
इमाम तहावी की कुछ अलग राय हैं; मज़हब को छोड़कर उन पर अमल करने का कोई मतलब नहीं है।	२७७
बिना ज्ञान के फतवा देने वाले हदीस के अनुसार पथभ्रष्ट और दूसरों को पथभ्रष्ट करने वाले हैं।	४५८
मान्य मज़हब के विरुद्ध कुछ उलेमाओं की राय पर भरोसा करना अज्ञानता और आम सहमति (इज्मा) का उल्लंघन है।	५७८
फतवा चांद देखने के अंतर (इख़्तिलाफ़-ए-मताली) के विचार न करने पर है और यही अधिक सतर्क और मजबूत है।	५८२
ज़ाहिर अल-रिवायह को अपनाना ही सबसे अधिक सतर्क है।	५८२
दो प्रमाणों में से अधिक मजबूत पर अमल करने में ही सावधानी है।	५८२
जो ज़ाहिर अल-रिवायह से बाहर हो, वह इमाम-ए-आजम (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) का मज़हब और कथन नहीं है।	५८३
खराज (भूमि कर) की मांग नियंत्रण/अधिकार पर निर्भर है।	२१८
जिस वस्तु का कोई उपयोग न रह जाए उसकी मांग करना व्यर्थ है।	२२१
सत्ता की मांग और धार्मिक कर्तव्य की अनिवार्यता में अंतर है।	२२२
सुल्तान कई चीजों की मांग नहीं कर सकता, फिर भी वे धार्मिक रूप से अनिवार्य हैं।	२२२
इनाया के पाठ में 'यख्तस' शब्द अस्पष्ट रूप से आया है, और वह अनावश्यक और इच्छित अर्थ के विपरीत है।	२२६
जरीब और सा'अ की मात्रा क्या है?	२३९
'ख़ुम्स अल-ख़ुम्स' की व्याख्या दान के निषेध पर आधारित है, न कि दान का निषेध 'ख़ुम्स अल-ख़ुम्स' की व्याख्या पर आधारित है।	२७३
प्रचलित विनिमय और तकनीकी विनिमय में अंतर।	२७५
सदका-ए-फ़ित्र में चार चीज़ों में सा'अ का विचार किया जाता है, बाकियों में मूल्य का।	२९२

विवरण	पृष्ठ
जो ज़ाहिर अल-रिवायह से बाहर है, वह मर्जू' अनहु है और मर्जू' अनहु इमाम साहब का कथन नहीं रहा।	५८३
जो ज़ाहिर अल-रिवायह के विपरीत है, वह हमारे साथियों का मज़हब नहीं है।	५८३
मर्जू' पर फतवा देना अज्ञानता और आम सहमति का उल्लंघन है।	५८३
न्यायशास्त्रीय लाभ	
हौलन-ए-हौल से तात्पर्य चंद्र वर्ष से है।	८५
ज़कात केवल निसाब (न्यूनतम कर योग्य राशि) पर अनिवार्य है, न कि आफ़ू (अतिरिक्त) पर।	८८
ज़कात में चंद्र महीनों का विचार किया जाता है, अंग्रेजी महीनों का नहीं।	१५६
हौलन-ए-हौल (एक वर्ष बीतने) का अर्थ।	२०२
सा'अ के वजन पर शोध।	२९८
टेलीग्राम न तो शरई गवाही है और न ही खबर-ए-मुतवातिर (सहमति वाली रिपोर्ट)।	३६०
जब स्वीकार्य पुस्तक (मक़बूल अल-किताब) का टेलीग्राम तुच्छ है, तो अस्वीकृत पुस्तक के टेलीग्राम का क्या मूल्य है?	३६५
इस्तिफ़ादा की स्थिति और उसकी शर्तें।	४१४
नियमों को स्थापित करने में 'तवातुर' गवाही के स्थान पर आता है, बल्कि उससे अधिक प्रबल है।	४१७
इस्लामी शहर में सार्वजनिक घोषणा पर कब अमल किया जाएगा?	४२०
न्यायप्रिय (आदिल), गुप्त (मस्तूर) और पापी (फासिक) की परिभाषाएँ।	४५२

تفصیل	صفحہ
جو کچھ ظاہر الروایتہ کے خلاف ہو وہ ہمارے ائمہ کا قول نہیں۔	۲۷۶
قولِ مرجوع عنہ پر عمل نا جائز ہے۔	۲۷۶
امام طحاوی کے کچھ اختیاراتِ مفردہ ہیں کہ بترکِ مذہب ان پر عمل کے کوئی معنی نہیں۔	۲۷۷
بغیر علم کے فتویٰ دینے والے بحکمِ حدیث ضال و مضل ہیں۔	۴۵۸
مذہبِ مفتی بہ کے مقابل بعض مشائخ کے قول پر اعتماد کرنا جہل و خرقِ اجماع ہے۔	۵۷۸
فتویٰ عدمِ اعتبارِ اختلافِ مطالع پر ہے اور یہی احوط واقویٰ ہے۔	۵۸۲
ظاہر الروایہ کو اپنانا ہی احوط ہے۔	۵۸۲
مطالبہ خراج مشروط بہ تسلط ہے۔	۲۱۸
جس شئی کا مصرف نہ رہے اس کا مطالبہ عبث ہے۔	۲۲۱
مطالبہ سلطنت اور وجوبِ دیانت میں فرق ہے۔	۲۲۲
بہت چیزوں کا مطالبہ سلطان کو نہیں پہنچتا مگر شرعاً واجب ہیں۔	۲۲۲
عبارتِ عنایہ میں لفظ یختص موہم واقع ہوا ہے اور وہ زائد و خلافِ مقصود ہے۔	۲۲۶
جریب اور صاع کی مقدار کیا ہے؟	۲۳۹
	۲۷۳

تفصیل صفحہ

دو دلیلوں میں سے اقویٰ پر عمل کرنے میں ہی احتیاط ہے۔ ۵۸۲

جو ظاہر الروایتہ سے خارج ہو وہ امامِ اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا مذہب اور قول نہیں۔ ۵۸۳

جو ظاہر الروایتہ سے خارج ہے وہ مرجوع عنہ ہے اور مرجوع عنہ امام صاحب کا قول نہ رہا۔ ۵۸۳

جو ظاہر الروایتہ کے مخالف ہے وہ ہمارے اصحاب کا مذہب نہیں۔ ۵۸۳

قولِ مرجوع پر فتویٰ دینا جہل و خرقِ اجماع ہے۔ ۵۸۳

فوائدِ فقہیہ

حولانِ حول سے قمری سال مراد ہے۔ ۸۵

تفصیل صفحہ

تقریرِ خمس الخمس، تحریمِ صدقات پر مبتنی ہے نہ کہ تحریمِ صدقات تقریرِ خمس الخمس پر۔

معاوضتِ عرفیہ اور معاوضتِ مصطلحہ میں فرق۔ ۲۷۵

صدقہ فطر میں چار چیزوں میں صاع کا اعتبار ہے باقی میں قیمت کا۔ ۲۹۲

صاع کے وزن کی تحقیق۔ ۲۹۸

تار نہ تو کوئی شہادت شرعیہ ہے نہ خبرِ متواتر۔ ۳۶۰

جب مقبول الکتاب کا تار ناچیز ہے تو مردود الکتاب کا تار کیا چیز ہے؟ ۳۶۵

استفاضہ کی صورت اور اس کے شرائط ۴۱۴

اثباتِ احکام میں تواتر بھی قائم مقامِ شہادت بلکہ اس سے اقویٰ ہے۔ ۴۱۷

تفصیل	صفحہ
زکوۃ صرف نصاب میں واجب ہوتی ہے نہ کہ عفو میں۔	۸۸
زکوۃ میں قمری مہینوں کا اعتبار ہے انگریزی مہینوں کا نہیں۔	۱۵۶
حولانِ حول کے معنیٰ۔	۲۰۲
اسلامی شہر میں منادی پر عمل کب ہوگا؟	۴۲۰
عادل، مستور اور فاسق کی تعریفات۔	۴۵۲

Fatawa Razwiya Volume 10

Page	Topic	Ref. No.	Related Point	Page
786	Wherever an Islamic state exists, the Sunni scholar in those countries who possesses the most knowledge of Fiqh is, by the command of Sharia, the leader of Muslims.	454	Difference between Pillar (Rukn), Condition (Shart), and Obligation (Farz).	786
825	The matter of dust and smoke depends on unintentional entry versus intentional introduction; the former is not a fast-breaker, while the latter is.	492	Application and permissibility of 'Abd' meaning slave (Footnote 1).	825
	The reality of fasting is confined to abstaining from things that break the fast according to Sharia.	494	Fawaid Usooliya (Fundamental Principles).	
76	According to us, the Iraqi Sa' (measurement) is reliable, which equals eight Ratls.	526	There is no compulsion regarding voluntary donations (Tabarru).	76
76	There are four items specified in Sharia texts—wheat, barley, dates, and raisins—for which price is not considered; only Sharia weight is reliable.	530	In the correct and relied-upon school of thought, the payment of Zakat is immediately obligatory.	76
80	For items where price is considered, the price on the day of obligation will be valid, not the price on the day of payment.	531	The obligation of Hajj is immediate according to the more correct opinion, but in case of delay, it will eventually be performed (Ada), not compensated (Qaza).	80
104	There are several differences in the rulings of Fidya for an elderly	545	The strength of evidence necessitates a change (in opinion).	104

Page	Topic	Ref. No.	Related Point	Page
	person (Sheikh-e-Fani) and the deceased.			
	Definition of Sheikh-e-Fani.	548	Agreement of narration prevents deviating from reason (Dirayat).	
115	In Fiqh, the perception of a refined statement is achieved through sharp intelligence.	577	The purpose of combining silver and gold is to fulfill the obligation, not to exchange the obligation.	115
178	Which day is the Day of Doubt (Yaum-e-Shak).	579	A specific obligation (Farz) is like a royal debt, while voluntary acts (Nafl) are like gifts and offerings.	178
917	What is the weight of half a Sa' in English Seer and how much does it equal in Bareilly and Rampur Seers.	594	No voluntary act (Nafl) is accepted until the obligation (Farz) has been performed.	917
182	The obligation abandoned for the sake of another obligation is gone.	598	For an action to be correct is one thing, and for it to be rewarded and accepted in the Divine Presence is another.	182
192	The obligation that arises from a vow (Nazr) is temporary.	605	When a leader of religion retracts from a statement, it is no longer his statement, nor is criticism of him permissible because of it.	192
194	Widespread report (Istifadha) is equivalent to a consistently narrated (Mutawatir) report.	611	A Mujtahid receives a reward even for his mistake, although the reward for being correct is double.	194
194			Defiance of an obligation is strictly a major sin.	194

फतावा रज़विया जिल्द 10

पृष्ठ	विषय	सं. सं.	संबंधित बिंदु	पृष्ठ
७८६	जहाँ इस्लामी रियासत है, उन शहरों में जो सुन्नी विद्वान सबसे ज्यादा इल्म-ए-फ़िक्ह रखता हो, वह शरीअत के हुक्म से मुसलमानों का सरदार है।	४५४	रुकन, शर्त और फ़र्ज़ में फर्क।	७८६
८२५	धूल और धुएं के मसले में अनजाने में प्रवेश करने और जानबूझकर प्रवेश कराने पर दारोमदार है; पहला रोज़ा नहीं तोड़ता और दूसरा तोड़ता है।	४९२	गुलाम के अर्थ में 'अब्द' शब्द का प्रयोग और उसकी वैधता (पाद-टिप्पणी १)	८२५
	रोज़े की हकीकत, शरीअत के अनुसार रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों से रुकने में ही सीमित है।	४९४	फ़वाइद उसूलिया (बुनियादी सिद्धांत)	
७६	हमारे निकट साअ-ए-इराकी विश्वसनीय है जो आठ रतल का होता है।	५२६	स्वैच्छिक दान (तबर्रु) पर कोई ज़बरदस्ती नहीं होती।	७६
७६	चार चीजें जिनके बारे में शरीअत का स्पष्ट पाठ मौजूद है—गेंहू, जौ, खजूर और किशमिश—इनमें कीमत का विचार नहीं किया जाता, केवल शरई वजन ही विश्वसनीय है।	५३०	सही और विश्वसनीय मज़हब में ज़कात की अदायगी तुरंत अनिवार्य है।	७६
८०	जिन चीज़ों में कीमत मान्य है, उनमें दायित्व के दिन की कीमत मान्य होगी न कि भुगतान के दिन की।	५३१	हज की अनिवार्यता राजह (प्रबल) मत के अनुसार तुरंत है, लेकिन देरी की स्थिति में भी यह केवल अदायगी (अदा) होगी, कज़ा नहीं।	८०
१०४		५४५		१०४

पृष्ठ	विषय	सं. सं.	संबंधित बिंदु	पृष्ठ
	'शेख-ए-फ़ानी' (अत्यंत वृद्ध) और मृतकों के लिए फिदिया के नियमों में कई अंतर हैं।		प्रमाण की मजबूती राय बदलने का कारण बनती है।	
	'शेख-ए-फ़ानी' की परिभाषा।	५४८	रिवायत की सहमति अक्ल (दिरायत) से हटने में बाधक है।	
११५	फ़िक्ह में, तीव्र बुद्धि के माध्यम से परिष्कृत कथन का बोध होता है।	५७७	सोने और चांदी को मिलाने का उद्देश्य दायित्व को पूरा करना है न कि दायित्व को बदलना।	११५
१७८	'यौम-ए-शक' (संदेह का दिन) कौन सा दिन है।	५७९	अनिवार्य (फ़र्ज़) शाही ऋण के समान है, और नफ़्ल एक उपहार या भेंट की तरह है।	१७८
९१७	आधे 'साअ' का वज़न अंग्रेजी सेर में कितना होता है और बरेली तथा रामपुर के सेर में कितना बनता है।	५९४	कोई भी नफ़्ल (स्वैच्छिक कार्य) तब तक स्वीकार नहीं होता जब तक कि फ़र्ज़ (अनिवार्य कार्य) पूरा न कर लिया जाए।	९१७
१८२	वह फ़र्ज़ जो दूसरे फ़र्ज़ के लिए छोड़ दिया गया, वह चला गया।	५९८	किसी कार्य का सही होना एक बात है और उस पर प्रतिफल (सवाब) मिलना और ईश्वर के दरबार में स्वीकार्य होना दूसरी बात है।	१८२
१९२	मन्नत (नज़्र) से जो अनिवार्यता आती है, वह अस्थायी होती है।	६०५	जब धर्म का कोई इमाम अपने किसी कथन को वापस ले लेता है, तो वह अब उसका कथन नहीं रह जाता, और न ही उस कारण से उन पर आलोचना करना उचित है।	१९२
१९४	'इस्तिफ़ाज़ा' (व्यापक सूचना) 'मुतवातिर' (निरंतर वर्णित) सूचना के समान है।	६११	मुजतहिद अपनी गलती पर भी सवाब पाता है, हालांकि सही होने का सवाब दोगुना होता है।	१९४

सं. सं.	संबंधित बिंदु	पृष्ठ
	फ़र्ज़ से अवज्ञा निश्चित रूप से गुनाह-ए-कबीरा (बड़ा पाप) है।	१९४

صفحہ	عنوان	سلسلہ نمبر	متعلقہ نکتہ	صفحہ
۷۸۶	جہاں ریاست اسلامی ہے ان بلاد میں جو عالم دین سنی المذہب سب سے زیادہ علم فقہ رکھتا ہو وہ بحکم شرع سردار مسلمانان ہے۔	۴۵۴	رکن، شرط اور فرض میں فرق۔	۷۸۶
۸۲۵	مسئلہ غبار و دخان میں دخول بلا قصد اور ادخال بالقصد پر مدار کار ہے، اول غیر مفسد اور ثانی مفسد ہے۔	۴۹۲	عبد بمعنی غلام کا اطلاق و جواز (حاشیہ ۱)	۸۲۵
	حقیقت صوم، مفطرات شرعیہ سے امساک میں محصور ہے۔	۴۹۴	فوائد اصولیہ	
۷۶	ہمارے نزدیک صاع عراقی معتبر ہے جو آٹھ رطل کا ہوتا ہے۔	۵۲۶	تبرع پر جبر نہیں ہوتا۔	۷۶
۷۶	چار چیزیں جن میں نص شرعی وارد ہے یعنی گندم، جو، خرما اور کشمش ان میں قیمت کا اعتبار نہیں، وزن شرعی ہی معتبر ہے۔	۵۳۰	مذہب صحیح و معتمد میں ادائے زکوٰۃ کا وجوب فوری ہے۔	۷۶

صفحہ	عنوان	سلسلہ نمبر	متعلقہ نکتہ	صفحہ
۸۰	جن اشیاء میں قیمت معتبر ہے ان میں روزِ وجوب کی قیمت کا اعتبار ہوگا نہ کہ روزِ ادا کی قیمت کا۔	۵۳۱	حج کا وجوب قولِ راجح پر فوری ہے لیکن تاخیر کی صورت میں کبھی ادا ہی ہوگا نہ کہ قضاء۔	۸۰
۱۰۴	شیخ فانی اور موتیٰ کے احکام فدیہ میں متعدد فرق ہیں۔	۵۴۵	قوتِ دلیل موجب تحویل ہے۔	۱۰۴
	شیخ فانی کی تعریف۔	۵۴۸	روایت کی موافقت مانع عدول از درایت ہے۔	
۱۱۵	فقہ میں بذکاء قول منقح کا ادراک ہے۔	۵۷۷	ضم سیم وزر سے مقصود تحصیل واجب ہے نہ کہ تبدیل واجب۔	۱۱۵
۱۷۸	یوم شک کون سا دن ہے۔	۵۷۹	فرض خاص سلطانی قرض ہے اور نفل گویا تحفہ و نذرانہ۔	۱۷۸
۹۱۷	نیم صاع کا وزن انگریزی سیر سے کتنا بنتا ہے اور بریلی اور رامپور کے سیر سے کتنا بنتا ہے۔	۵۹۴	کوئی نفل قبول نہیں ہوتا جب تک فرض ادا نہ کر لیا جائے۔	۹۱۷
۱۸۲	فرض کے لئے جو فرض چھوڑا وہ جاتا رہا۔	۵۹۸	کسی فعل کا صحیح ہونا اور بات ہے اور اس پر ثواب ملنا اور مقبولِ بارگاہ ہونا اور بات ہے۔	۱۸۲

صفحہ	عنوان	سلسلہ نمبر	متعلقہ نکتہ	صفحہ
			امام دین جب ایک قول سے رجوع	
۱۹۲	نذر سے جو وجوب آتا ہے وہ عارضی ہوتا ہے۔	۶۰۵	فرما لے تو وہ اب اس کا قول نہ رہا، نہ اس سے اس پر طعن روا ہے۔	۱۹۲
۱۹۴	استفاضہ بمنزلہ خبر متواتر ہے۔	۶۱۱	مجتہد اپنی خطا پر بھی ثواب پاتا ہے اگرچہ صواب کا ثواب دُونا ہے۔	۱۹۴
۱۹۴			فرض سے معاندت قطعاً گناہ کبیرہ ہے۔	۱۹۴

Fatawa Razawiyya Volume 10

195 | Mere abhorrence and distance without Sharia evidence is not heard. | 495 | Imposing an impossible task and a task beyond capacity is void. 195 | Rulings of asceticism are not rulers over Sharia rulings. | 497 | The cause leading to a thing is of two types: one leads completely, and the other leads rarely. 195 | An occurrence of a situation is subject to a hundred interpretations. | 532 | It is a Sharia principle that a complete performance is by a complete act, not by a deficient one. 195 | A mujtahid is not blamed for his ijtihad. | 535 | A deficient performance can be done by a deficient act. 214 | Absence of sight is not the sight of absence. | 535 | Paying debt with debt, and paying a specific item with debt and specific item is permissible. 214 | Absence of transport is not transport of absence. | 535 | Paying debt with a specific item is impermissible. 223 | Control and protection is a condition for the ruler's demand, not a condition for the obligation itself. | 540 | That which is definitive and certain does not need caution. 234 | The cause of obligation for land tax (Kharaj) is productive land. | 573 | Deviation from Zahir al-Riwayah, corrected by explicit statement, is clear ignorance and unacceptable. 273 | Return of the compensated due to lapse of compensation is only where lapse of compensation depends on obtaining compensation. | 581 | There is no need for testimony for necessities. 474 | If the lapse of compensated is due to some reason other than compensation, then as long as that reason remains, the lapse of compensated will surely remain. | 596 | Repeatedly doing things that break the fast but do not require expiation does not absolutely necessitate expiation unless done with the intention of sin. 362 | A ruling considered contrary to analogy cannot exceed beyond the case at hand. | 598 | Abandoning an obligation for a mandatory act is impermissible, while abandoning a mandatory act for a mandatory act is permissible. 417 | Mutawatir (continuous reporting) is acceptable for negation, and testimony is unheard. | 603 | In Sunnah and voluntary prayers, being weaker does not prevent the validity of construction. 451 | That which leads to a mandatory act is mandatory, and that which leads to a necessary act is necessary. | 605 | Temporary obligation is weaker than original obligation. 774 | Not distinguishing between conventional and Sharia perception is a clear error. | 605 | Building the stronger upon the weaker is not correct. 494 | Sharia obligations are limited according to capacity. | 605 | Difference in the cause of obligation prevents the validity of construction. 494 | Pillars dropped due to necessity are in reality pillars of expansion, not pillars of original reality. | 646

| Committing a metaphorical usage is against the original. | | 646 | As long as there is no need, it is obligatory to take texts at their apparent meaning.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

195 | बिना शरई दलील के केवल अरुचि और दूरी सुनाने योग्य नहीं है। | 495 | असंभव का दायित्व और सामर्थ्य से बाहर का दायित्व बातिल है। 195 | ज़ुहद के अहकाम, शरई अहकाम पर हाकिम नहीं हैं। | 497 | किसी चीज़ की ओर ले जाने वाला सबब दो प्रकार का है, एक जो पूर्णतः ले जाए और दूसरा जो कभी-कभार ले जाए। 195 | वर्तमान स्थिति की घटना सौ संभावनाओं वाली होती है। | 532 | शरई नियम है कि पूर्ण अदायगी पूर्ण से होती है न कि पूर्ण अदायगी अपूर्ण से। 195 | मुजतहिद को उसके इज्तिहाद पर दोष नहीं दिया जा सकता। | 535 | अपूर्ण की अदायगी अपूर्ण से हो सकती है। 214 | दृष्टि का अभाव, अभाव की दृष्टि नहीं है। | 535 | ऋण की अदायगी ऋण से, और निश्चित वस्तु की अदायगी ऋण और निश्चित वस्तु से जायज़ है। 214 | स्थानांतरण का अभाव, अभाव का स्थानांतरण नहीं है। | 535 | ऋण की अदायगी निश्चित वस्तु से नाजायज़ है। 223 | वर्चस्व और संरक्षण सुल्तान की मांग की शर्त है, न कि स्वयं वाजिब होने की शर्त। | 540 | जो वस्तु कतई और यकीनी हो, वह एहतियात की मोहताज नहीं होती। 234 | खिराज के लिए वाज़िब होने का कारण उपजाऊ भूमि है। | 573 | ज़ाहिर-उर-रिवायत से विचलन, जो स्पष्टीकरण से सही साबित हो, स्पष्ट अज्ञानता और अस्वीकार्य है। 273 | मुआवजे के समाप्त होने से मुआवजे की वापसी वहीं है जहाँ मुआवजे की समाप्ति मुआवजे की प्राप्ति पर निर्भर हो। | 581 | आवश्यकताओं के लिए गवाही की ज़रूरत नहीं है। 474 | यदि मुआवजे की समाप्ति मुआवजे के अलावा किसी अन्य कारण से हो, तो जब तक वह कारण रहेगा, मुआवजे की समाप्ति निश्चित रूप से रहेगी। | 596 | रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें जो कफ़्फ़ारा अनिवार्य नहीं करतीं, उन्हें बार-बार करना पूर्णतः कफ़्फ़ारा का कारण नहीं बनता जब तक कि पाप की नीयत से न हो। 362 | जो नियम कयास के विरुद्ध माना जाता है, वह उस विशेष मामले से आगे नहीं बढ़ सकता। | 598 | वाजिब के लिए रफ़्ज़ फर्ज़ नाजायज़ है, जबकि फर्ज़ के लिए रफ़्ज़ फर्ज़ जायज़ है। 417 | निषेध पर मुतवातिर स्वीकार्य है और गवाही अनसुनी। | 603 | सुन्नत और नफ्ल नमाज़ों में कमजोरी, बनावट की शुद्धता में बाधक नहीं है। 451 | फर्ज़ तक पहुँचाने वाला फर्ज़ है, और वाजिब तक पहुँचाने वाला वाजिब होता है। | 605 | अस्थायी वाज़िब, मूल वाज़िब से कमज़ोर होता है। 774 | सांसारिक और शरई बोध में अंतर न करना स्पष्ट त्रुटि है। | 605 | कमज़ोर पर मज़बूत की बुनियाद रखना सही नहीं है। 494 | शरई ज़िम्मेदारियाँ सामर्थ्य तक सीमित हैं। | 605 | वाजिब होने के कारण में अंतर, बनावट की शुद्धता में बाधक है। 494 | ज़रूरत के कारण छूटे हुए अरकान वास्तव में विस्तार के अरकान होते हैं, न कि मूल वास्तविकता के

अरकान। | 646 | मुहावरे का प्रयोग मूल के विरुद्ध है। | | 646 | जब तक कोई ज़रूरत न हो, नसों को उनके ज़ाहिरी अर्थ पर लेना वाजिब है।

पृष्ठ 60 का 836

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

۱۹۵ | مجرد استقباح واستبعاد بے دلیل شرعی مسموع نہیں۔ | ۴۹۵ | تکلیف بالمحال اور تکلیف مالا یطاق باطل ہے۔ ۱۹۵ | احکام زہد، احکام شرع پر حاکم نہیں۔ | ۴۹۷ | سبب مفضی الی الشئی دو قسم ہے، ایک مفضی کلیۃً اور دوسرا مفضی نادراً۔ ۱۹۵ | واقعہ حال، محتمل صد احتمال ہوتا ہے۔ | ۵۳۲ | قاعدہ شرعیہ ہے کہ ادائے کامل بہ کامل نہ کہ ادائے کامل بہ ناقص۔ ۱۹۵ | مجتہد اپنے اجتہاد پر ملام نہیں۔ | ۵۳۵ | ناقص ناقص سے ادا ہو سکتا ہے۔ ۲۱۴ | عدم رؤیت، رؤیت عدم نہیں۔ | ۵۳۵ | اداء دین دین سے، اور اداء عین دین وعین سے جائز ہے۔ ۲۱۴ | عدم نقل نقل عدم نہیں۔ | ۵۳۵ | اداء دین، عین سے ناجائز ہے۔ ۲۲۳ | تسلط وحمایت شرط مطالبہ سلطانی ہے نہ کہ شرط نفس وجوب۔ | ۵۴۰ | جو شئی قطعی ویقینی ہو وہ احتیاط کی محتاج نہیں۔ ۲۳۴ | خراج کے لیے سبب وجوب، ارضِ نامیہ ہے۔ | ۵۷۳ | ظاہر الروایۃ مصححہ بالتصریح سے عدول صریح جہل ونا مقبول ہے۔ ۲۷۳ | سقوط عوض سے رجوع معوض وہی ہے جہاں زوال معوض حصول عوض پر موقوف ہو۔ | ۵۸۱ | ضروریات کے لیے گواہی کی حاجت نہیں۔ ۴۷۴ | زوال معوض اگر عوض کے علاوہ کسی اور علت سے معلل ہو تو جب تک وہ علت باقی رہے گی زوال معوض بیشک رہے گا۔ | ۵۹۶ | مفطرات غیر مکفرات کا بار بار کرنا مطلقاً موجب کفارہ نہیں جب تک بنیت معصیت نہ ہو۔ ۳۶۲ | جو حکم خلاف قیاس مانا جاتا ہے وہ مورد سے آگے تجاوز نہیں کر سکتا۔ | ۵۹۸ | واجب کے لئے رفض فرض ناجائز جبکہ فرض کے لیے رفض فرض جائز ہے۔ ۴۱۷ | نفی پر تواتر مقبول ہے اور شہادت نامسموع۔ | ۶۰۳ | سنن ونوافل میں اضعفیت مانع صحت بناء نہیں۔ ۴۵۱ | موصل الی الفرض فرض، اور موصل الی الواجب واجب ہوتا ہے۔ | ۶۰۵ | وجوبِ عارضی وجوبِ اصلی سے اضعف ہوتا ہے۔ ۷۷۴ | مدرک عرفی وشرعی میں فرق

نہ کرنا صریح خطا ہے۔ | ۶۰۵ | اضعف پر اقوی کی بناء صحیح نہیں۔ ۴۹۴ | تکالیف شرعیہ قدر وسع پر مقصور ہیں۔ | ۶۰۵ | اختلاف سبب وجوب مانع صحت بناء ہے۔ ۴۹۴ | ارکان ساقط بضرورت، حقیقۃً ارکان سعت ہوتے ہیں نہ کہ ارکان اصل حقیقت۔ | ۶۴۶ | ارتکابِ تجوز خلاف اصل ہے۔ | | ۶۴۶ | جب تک کوئی حاجت نہ ہو نصوص کو ظاہر پر محمول کرنا واجب ہے۔

Fatawa Razawiyya, Volume 10

Marriage (Nikah) - The reality of marriage is offer and acceptance (Ijab-o-Qabul). (494) - No woman can become anyone's wife by a mere offer without acceptance. (494) - A creditor can give Zakat to his poor debtor and take it back as debt recovery; if not given, he can take it by force. (108) - Rules and types of debt (Dain). (162) - Zakat can be given to a debtor. (250) - Whether the ransom (Fidiya) is paid for a poor debtor by forgiving the debt or not. (532)

Lineage (Nasab) - Can someone whose mother is Hashmi and father is non-Hashmi be called Hashmi? In Sharia, lineage is from the father. (109) - Anyone who calls themselves a Sayyid merely because their mother is a Sayyidani and insists upon it, is deserving of a curse according to the Hadith. (109)

Pre-emption (Shufa) (109) - Using a ruse (heela) to waive the right of pre-emption after it has been established is disliked (makrooh); however, a ruse to prevent its establishment is not disliked according to Imam Abu Yusuf. (189)

Endowment (Waqf) (109) - Once completed, Waqf becomes binding and final; there is absolutely no authority to cancel it. (181) - Inheritance does not apply in Waqf. (182) - One cannot buy books etc. from Zakat money and make them Waqf; the way to spend them. (255) - Buying land from Zakat money and making it Waqf. (327)

Sale (Bay') - If some coins are sold in exchange for rupees, the condition of mutual possession of the exchanges (taqabuz-e-badlain) appears from 'Jami-us-Saghir', but according to the 'Mabsut' narration, possession by one side is sufficient. (108) - If the buyer pays the price to the seller and the sold item is destroyed while still in the seller's possession, the buyer will reclaim the price. (273)

Debts (Madainat) - When a creditor finds the debtor's property of the same kind as his debt, he can take it without his consent. (108)

Mortgage/Pledge (Rahn) - Zakat on pledged jewelry is neither due from the pledgor (rahin) nor from the pledgee (murtahin). (134)

Page 61 of 836

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसम

निकाह (विवाह) - निकाह की हक़ीक़त ईजाब-ओ-क़बूल है। (४९४) - कोई औरत महज़ ईजाब से बिना क़बूल के किसी की पत्नी नहीं बन सकती। (४९४) - ऋणदाता अपने गरीब ऋणी को ज़कात देकर ऋण वसूली के रूप में वापस ले सकता है; अगर वह न दे तो छीन सकता है। (१०८) - ऋण (दैन) के अहकाम और क़िस्में। (१६२) - ऋणी को ज़कात दे सकते हैं। (२५०) - गरीब ऋणी को फ़िदया के तौर पर कर्ज़ छोड़ देने से फ़िदया अदा होगा या नहीं। (५३२)

नसब (वंश) - जिसकी माँ हाशमी और बाप ग़ैर-हाशमी हो, क्या वह हाशमी कहला सकता है? शरीयत में नसब बाप से होता है। (१०९) - जो सिर्फ माँ के सय्यदानी होने से सय्यद बन बैठे और उस पर ज़ोर दे, वह हदीस के हुक्म के अनुसार लानत का पात्र है। (१०९)

शुफ़ा (पूर्वाधिकार) (१०९) - शुफ़ा के प्रमाण के बाद उसे समाप्त करने का बहाना (हीला) करना मकरूह है, अलबत्ता प्रमाण को रोकने के लिए हीला करना इमाम अबू यूसुफ़ के नज़दीक मकरूह नहीं है। (१८९)

वक़्फ़ (धार्मिक न्यास) (१०९) - वक़्फ़ पूरा होने के बाद अनिवार्य और अंतिम हो जाता है, इसे रद्द करने का कोई अधिकार नहीं रहता। (१८१) - वक़्फ़ में विरासत लागू नहीं होती। (१८२) - ज़कात के माल से किताबें आदि खरीदकर वक़्फ़ नहीं कर सकते; उनमें ख़र्च करने का तरीक़ा। (२५५) - ज़कात के पैसे से ज़मीन खरीदकर वक़्फ़ करना। (३२७)

बय (क्रय-विक्रय) - अगर कुछ पैसे रुपयों के बदले बेचे जाएँ तो जामे-सग़ीर से ज़ाहिरी तौर पर दोनों पक्षों के क़ब्ज़े की शर्त मालूम होती है, लेकिन मबसूत की रिवायत के अनुसार एक ही पक्ष का क़ब्ज़ा काफ़ी है। (१०८) - यदि खरीदार ने विक्रेता को क़ीमत दे दी और बेची गई वस्तु विक्रेता के पास ही नष्ट हो गई, तो खरीदार क़ीमत के लिए वापस रुजू करेगा। (२७३)

मदाइनात (ऋण संबंधी मामले) - जब ऋणदाता अपने ऋण की श्रेणी का माल ऋणी के पास पाए, तो वह उसकी सहमति के बिना उसे ले सकता है। (१०८)

रहन (गिरवी) - गिरवी रखे गहनों की ज़कात न तो रहन रखने वाले (राहिन) पर है और न ही रहन लेने वाले (मुर्तहिन) पर। (१३४)

पेज 836 का 61

فتاوی رضویہ، جلد دہم

نکاح - حقیقتِ نکاح ایجاب و قبول ہے۔ (۴۹۴) - کوئی عورت مجرد ایجاب سے بغیر قبول کے کسی کی زوجہ نہیں بن سکتی۔ (۴۹۴) - دائن اپنے مدیون فقیر کو زکوٰۃ دے کر دین کی وصولی کے طور پر واپس لے سکتا ہے، نہ دے تو چھین سکتا ہے۔ (۱۰۸) - دین کے احکام اور اقسام۔ (۱۶۲) - مقروض کو زکوٰۃ دے سکتے ہیں۔ (۲۵۰) - مدیون فقیر کو فدیہ میں دین چھوڑ دینے سے فدیہ ادا ہو جائے گا یا نہیں۔ (۵۳۲)

نسب - جس کی ماں ہاشمیہ اور باپ غیر ہاشمی ہو کیا وہ ہاشمی کہلا سکتا ہے۔ شرع میں نسب باپ سے ہے۔ (۱۰۹) - جو فقط ماں کے سیدانی ہونے سے سید بن بیٹھے اور اس پر اصرار کرے وہ بحکمِ حدیث مستحق لعنت ہے۔ (۱۰۹)

شفعہ (۱۰۹) - ثبوتِ شفعہ کے بعد اس کے اسقاط کا حیلہ کرنا مکروہ ہے البتہ دفعِ ثبوت کے لیے حیلہ امام ابویوسف کے نزدیک مکروہ نہیں۔ (۱۸۹)

وقف (۱۰۹) - وقف بعد تمامی، لازم و حتمی ہو جاتا ہے اس کے ابطال کا ہرگز اختیار نہیں رہتا۔ (۱۸۱) - وقف میں میراث جاری نہیں ہوتی۔ (۱۸۲) - مالِ زکوٰۃ سے کتاب وغیرہ خرید کر وقف نہیں کر سکتے، ان میں صرف کرنے کی صورت۔ (۲۵۵) - زکوٰۃ سے زمین خرید کر وقف کرنا۔ (۳۲۷)

بیع - اگر کچھ پیسے بعوض روپوں کے بیچے تو جامع صغیرہ سے بظاہر تقابضِ بدلین کی شرط معلوم ہوتی ہے مگر روایت مبسوط پر ایک ہی جانب کا قبضہ کافی ہے۔ (۱۰۸) - مشتری نے ثمن

بائع کو دے دئے اور مبیع بائع کے پاس ہی ہلاک ہو گیا تو مشتری ثمن کے لئے رجوع کرے گا۔ (۲۷۳)

مدائنات - دائن جب اپنے دین کی جنس سے مال مدیون پائے تو اس کی رضامندی کے بغیر لے سکتا ہے۔ (۱۰۸)

رہن - مرہون زیوروں کی زکوٰۃ نہ راہن پر نہ مرتہن پر۔ (۱۳۴)

Fatawa Ridawiyya - Volume 10

[Left Column] - Gift and charity are not invalidated by a corrupt condition. (Page 108) - Charity given cannot be taken back from the poor person. (Page 181) - **Logic** - Here the universal affirmative is such that "wherever protection is found, tax is mandatory," not such that "wherever tax is mandatory, protection is found," so that its contrapositive becomes: "whenever protection is not found, tax is not mandatory." (Page 226) - From the affirmation of the antecedent, the affirmation of the consequent is inferred. (Page 228) - From the affirmation of the consequent, the affirmation of the antecedent is not inferred. (Page 228) - In Khums al-Khums and obligatory charities, there is no real separation but rather a prohibition of combining (Mana-al-Jam'). (Page 275) - A real disjunction necessitates the prohibition of emptiness (Mana-al-Khulu). (Page 275) - The negation of reality necessarily entails the negation of the thing. (Page 294) - Asserting a thing without reality is intellectually impossible. (Page 294) - The permanence of a thing with the negation of reality and the gathering of essence with its opposite are false. (Page 295) - Doubt is in the state of equality between two sides. (Page 589)

[Right Column] - **Gift** - When a branch belies the root, the branch is a liar by its own admission because the branch is built on the root; when the foundation is false, that which is built on it is also false. (Page 625) - **Linguistics** - There is a world of difference between 'doing' and 'what doing'. (Page 195) - 'Kāna yaf'alu' (was doing) is not an explicit text for repetition. (Page 195) - The translation of "Aftartu" as "I am breaking fast" is not correct, rather the correct one is "I have broken fast". (Page 636) - Time of Iftar, at the time of Iftar, after Iftar, during Iftar, near Iftar, and after Iftar; the result of all is one and the same. (Page 641) - Investigation of the lexical meaning of the word 'inda' (at/near). (Page 641) - Sometimes Iftar, as opposed to Sahur, refers to the food that a fasting person eats in the evening. (Page 642) - **Grammar** - A mere saying, without the spoken word, does not even have the potential to occur; how can the consequence follow from its being a reward? (Page 635) - To consider 'Allahumma' as a new sentence (Kalam Mustana'f) is such an error that even a student of Sharh Mi'ata Amil would not accept it. (Page 635) - The reward (Jaza) does not precede the condition (Shart) but rather follows it and is structured upon it. (Page 635)

फ़तावा रज़विया - जिल्द 10

[बायाँ कॉलम] - उपहार और दान भ्रष्ट शर्त से अमान्य नहीं होते। (पृष्ठ 108) - दिया गया दान गरीब से वापस नहीं लिया जा सकता। (पृष्ठ 181) - **तर्कशास्त्र (Logic)** - यहाँ सार्वभौमिक सकारात्मक (मौजबा कुलिया) इस प्रकार है कि "जहाँ भी सुरक्षा पाई जाती है, कर अनिवार्य हो जाता है," न कि इस प्रकार कि "जहाँ भी कर अनिवार्य है, सुरक्षा पाई जाती है," ताकि इसका विपरीत (अक्स नकीज़) इस तरह आए कि "जब कभी सुरक्षा नहीं पाई जाती, कर अनिवार्य नहीं होता।" (पृष्ठ 226) - पूर्ववर्ती के अभिकथन (वज़े मुक़द्दम) से परिणामी के अभिकथन (वज़े ताली) का अनुमान लगाया जाता है। (पृष्ठ 228) - परिणामी के अभिकथन से पूर्ववर्ती का अनुमान नहीं लगाया जाता है। (पृष्ठ 228) - खुम्स अल-खुम्स और अनिवार्य दान में वास्तविक अलगाव नहीं है, बल्कि यह केवल संयोजन की मनाही (मना-अल-जमा) है। (पृष्ठ 275) - वास्तविक वियोजन (मुनफ़सिला हक़ीक़िया) खालीपन की मनाही (मना-अल-खुल्) को अनिवार्य करता है। (पृष्ठ 275) - वास्तविकता के अभाव (इंतिफ़ा-ए-हक़ीक़त) से वस्तु का अभाव निश्चित रूप से अनिवार्य है। (पृष्ठ 294) - वास्तविकता के बिना किसी चीज़ का दावा (तहक़ीक़) करना बौद्धिक रूप से असंभव है। (पृष्ठ 294) - वास्तविकता के अभाव के साथ वस्तु का बने रहना और सार (ज़ात) का उसके विपरीत के साथ मिलना असत्य है। (पृष्ठ 295) - संदेह दोनों पक्षों के समान होने की स्थिति में होता है। (पृष्ठ 589)

[दायाँ कॉलम] - **हिबा (उपहार)** - जब शाखा मूल (जड़) को झुठलाती है, तो शाखा अपने स्वीकारोक्ति से झूठी है क्योंकि शाखा मूल पर टिकी है; जब आधार ही गलत है, तो उस पर बनी चीज़ भी गलत है। (पृष्ठ 625) - **भाषाविज्ञान (Linguistics)** - 'करने' और 'क्या करने' में ज़मीन-आसमान का फ़र्क है। (पृष्ठ 195) - 'काना यफ़अ़लु' (Kāna yaf'alu) बार-बार होने के लिए कोई स्पष्ट पाठ नहीं है। (पृष्ठ 195) - "अफ़तरतु" (Aftartu) का अनुवाद "मैं इफ़्तार करता हूँ" सही नहीं है, बल्कि सही यह है कि "मैंने इफ़्तार किया"। (पृष्ठ 636) - इफ़्तार का समय, इफ़्तार के समय, इफ़्तार के बाद, इफ़्तार के दौरान, इफ़्तार के पास, और इफ़्तार के बाद; इन सबका अर्थ एक ही है। (पृष्ठ 641) - 'इंदा' (Inda) शब्द के शाब्दिक अर्थ की जाँच। (पृष्ठ 641) - कभी इफ़्तार, सुहूर के विपरीत, उस भोजन को कहते हैं जो रोज़ेदार शाम को खाता है। (पृष्ठ 642) - **व्याकरण (Grammar)** - बोले गए शब्दों के बिना केवल कहना (मुजर्रद क़ौल) होने की संभावना ही नहीं रखता; परिणाम के बदले मिलने वाले इनाम (जज़ा) का संबंध कहाँ से आएगा। (पृष्ठ 635) - 'अल्लाहुम्मा' को एक नया वाक्य (कलामे मुस्तानफ़) मानना ऐसी गलती है जिसे 'शरह मिअ़ता आमिल' पढ़ने वाला भी स्वीकार नहीं

करेगा। (पृष्ठ 635) - इनाम (जज़ा) शर्त से पहले नहीं आता, बल्कि शर्त के बाद आता है और उसी पर आधारित होता है। (पृष्ठ 635)

पृष्ठ 836 का 62

فتاوی رضویہ جلد دہم

[بایاں کالم] - ہبہ و صدقہ شرط فاسد سے فاسد نہیں ہوتے۔ (صفحہ ۱۰۸) - دی ہوئی خیرات فقیر سے واپس نہیں لے سکتا۔ (صفحہ ۱۸۱) - **منطق** - یہاں موجبہ کلیہ یوں ہے کہ حیثما وجدت الحمایة وجبت الجبایة، نہ یوں کہ حیثما وجبت الجبایة وجدت الحمایة، تاکہ اس کا عکس نقیض اس طرح آتا کہ کلمالم توجد الحمایة لم تجب الجبایة۔ (صفحہ ۲۲۶) - وضع مقدم سے وضع تالی پر استدلال کیا جاتا ہے۔ (صفحہ ۲۲۸) - وضع تالی سے وضع مقدم پر استدلال نہیں کیا جاتا۔ (صفحہ ۲۲۸) - خمس الخمس اور صدقات واجبہ میں انفصال حقیقی نہیں بلکہ منع الجمع ہے۔ (صفحہ ۲۷۵) - منفصلہ حقیقیہ کو منع خلو لازم ہوتا ہے۔ (صفحہ ۲۷۵) - انتفائے حقیقت کو انتفائے شئی قطعاً لازم ہے۔ (صفحہ ۲۹۴) - تحقیق شئی بے حقیقت شئی محال عقلی ہے۔ (صفحہ ۲۹۴) - بقائے شئی مع انتفاء حقیقت اور اجتماع ذات ومنافی ذات باطل ہیں۔ (صفحہ ۲۹۵) - شک استوائے طرفین کی حالت میں ہے۔ (صفحہ ۵۸۹)

[دایاں کالم] - **ہبہ** - فرع جب تکذیب اصل کرے تو فرع باقرار خود کاذب ہے کیونکہ فرع اصل پر مبتنی ہے جب مبنی باطل تو مبتنی بھی باطل۔ (صفحہ ۶۲۵) - **لغت** - کرنے اور کیا کرنے میں زمین و آسمان کا فرق ہے۔ (صفحہ ۱۹۵) - کَانَ یَفْعَلُ تکرار میں نص نہیں۔ (صفحہ ۱۹۵) - "أَفْطَرْتُ" کا ترجمہ "میں افطار کرتا ہوں" صحیح نہیں بلکہ صحیح یہ ہے کہ "میں نے افطار کیا"۔ (صفحہ ۶۳۶) - وقت الافطار، عند الافطار، بعد الافطار، ہنگام افطار، نزدیک افطار اور پس افطار سب کا حاصل ایک ہی ہے۔ (صفحہ ۶۴۱) - لفظ عند کے لغوی معنی کی تحقیق۔ (صفحہ ۶۴۱) - کبھی افطار مقابل سحور اس کھانے کو کہتے ہیں جو صائم شام کو کھاتا ہے۔ (صفحہ ۶۴۲) - **نحو** - مجرد قول، مقولے کے بغیر صلاحیت وقوع ہی نہیں رکھتا، ترتب جزا لازم جزائیت سے کہاں سے

آئے گا۔ (صفحہ ۶۳۵) - اللّٰہم کو کلام مستانف قرار دینا ایسی غلطی ہے کہ شرح مائۃ عامل خواں بھی قبول نہ کرے گا۔ (صفحہ ۶۳۵) - جزاء شرط سے مقدم نہیں ہوتی بلکہ شرط سے مؤخر اور اس پر مرتب ہوتی ہے۔ (صفحہ ۶۳۵)

صفحہ ۶۲ از ۸۳۶

Fatawa Razawiyya Volume 10

636 - In the supplications of Iftar, the past tense forms are not intended for 'Insha' (origination), hence they are determined as information (Akhbar). 261 - Students can take Zakat.

Debate (Munazara) 194 - The author's (mercy of Allah be upon him) argumentative grip on the critics of Imam Abu Yusuf. 262 - Zakat cannot be spent on salaries. 290 - Giving Zakat to an infidel (Kafir), polytheist (Mushrik), Wahabi, Rafidi, Qadiyani, etc., is forbidden (Haram). 584 - Rejection of the determination of valid differences in moon sighting based on reasons. 291 - For an Imam to take Zakat, money for the skin of a sacrificial animal, or oil money. 589 - Rejection of the stance of Maulana Abdul Hayy Lakhnavi regarding differences in moon sighting. 303 - Begging without Sharia necessity is forbidden (Haram). 603 - Rejection of one fatwa of Maulana Abdul Hayy Lakhnavi for six reasons. 303 - How is it to give to common beggars?

Rhetoric (Balaghat) 304 - There is no harm in taking it if someone gives without being asked. 640 - Metonymy (Kinayah) is superior to explicit statement (Tasreeh). 305 - Giving money from an annual Fatiha held in the name of the Noble Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) to a needy person. 308 - Ruling on sweets for Milad Sharif.

Forbidden and Permitted (Hazr-o-Ibahat) 104 - It is not permissible for Sayyids to take Zakat, nor is it permissible to give it to them, and Zakat is not fulfilled by giving it to them. 331 - Having Sahur and Iftar with forbidden things. 109 - Using tricks to bring Zakat money into one's own embezzlement is against Sharia objectives and is like deceiving the Lord Almighty. 457 - On the evening when there is a possibility of moon sighting, as long as there is no order from a Sharia ruler or fatwa from a religious scholar, guns or loud fireworks should never be used even for worldly tasks for any reason. 194 - Attributing a major sin (Kabirah), rather the greatest of major sins (Akbar al-Kabair), to the Imam of Muslims without evidence can in no way be permissible. 595 - One who has not fasted without a Sharia excuse should eat in hiding as much as possible out of respect for the sanctity of the month of Ramadan. 254 - Zakat money cannot be spent on salaries or the construction of a Madrassah; methods for spending on these tasks. 625 - It is permissible to beat a drum for Sahur. 258 - Giving Zakat to a defense fund. 750 - In the standing (Mawqif at Arafat), one should avoid using an umbrella or seeking shade in any way without excuse as much as possible. 260 - Subscription funds can be mixed with the owner's permission. 762 -

One can eat the meat of a gratitude (Shukrana) sacrifice themselves and also feed a wealthy person, but the meat of an expiation (Kaffarah) sacrifice is only the right of the needy.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

636 - इफ़्तार की दुआओं में भूतकाल (माज़ी) के शब्दों से 'इन्शा' (आरंभ) अभिप्रेत नहीं है, इसलिए वे सूचना (अख़बार) के रूप में निर्धारित हैं। 261 - छात्र ज़कात ले सकते हैं।

मुनाज़रा (बहस) 194 - इमाम अबू यूसुफ़ के आलोचकों पर लेखक (अल्लाह उन पर रहम करे) की बहस भरी पकड़। 262 - ज़कात का उपयोग वेतन में नहीं किया जा सकता। 290 - काफ़िर, मुशरिक, वहाबी, राफ़िज़ी, क़ादियानी आदि को ज़कात देना हराम है। 584 - चन्द्रदर्शन के मतभेदों के निर्धारण का कारणों सहित खंडन। 291 - इमाम के लिए ज़कात, क़ुर्बानी की खाल या तेल के पैसे लेना। 589 - चन्द्रदर्शन के मतभेद के बारे में मौलवी अब्दुल हई लखनवी के रुख का खंडन। 303 - शरीयत की ज़रूरत के बिना मांगना हराम है। 603 - मौलवी अब्दुल हई लखनवी के एक फतवे का छह कारणों से खंडन। 303 - आम भिखारियों को देना कैसा है?

बलाग़त (वक्तृत्वकला) 304 - बिना मांगे कोई दे तो लेने में कोई हर्ज नहीं। 640 - संकेत (किनाया) स्पष्ट कथन (तसरीह) से बेहतर है। 305 - हुज़ूर अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के नाम पर होने वाली वार्षिक फातिहा के पैसे ज़रूरत मंद को देना। 308 - मिलाद शरीफ़ की मिठाई का हुक्म।

हज़र-ओ-इबाहत (वर्जित और अनुमत) 104 - सादात-ए-कराम के लिए न ज़कात लेना जायज़ है, न उन्हें देना जायज़ है, और न ही उन्हें देने से ज़कात अदा होती है। 331 - हराम चीज़ों से सहरी और इफ्तार करना। 109 - ज़कात के धन को अपने गबन में लाने के लिए हीलों (बहानों) का सहारा लेना शरीयत के उद्देश्यों के खिलाफ है और मानो रब्बे तआला को धोखा देना है। 457 - जिस शाम चाँद दिखने की संभावना हो, जब तक शरीयत के हाकिम का आदेश या दीन के आलिम का फतवा न हो, किसी भी कारण से अपने दुनियावी कामों के लिए भी बंदूकें या आवाज़ वाली आतिशबाज़ी हरगिज़ न करें। 194 - बिना किसी प्रमाण के इमामुल मुस्लिमीन की ओर बड़े गुनाह (कबीरा), बल्कि सबसे बड़े गुनाह (अकबरुल कबीरा) का आरोप लगाना किसी भी तरह जायज़ नहीं हो सकता। 595 - जिसने बिना शरीयत के उज़्र (बहाने) के रोज़ा न रखा हो, उसे माहे रमज़ान की गरिमा के दृष्टिगत जहाँ तक संभव हो छिपकर खाना चाहिए। 254 - मदरसे के वेतन या निर्माण में ज़कात के रुपये खर्च नहीं हो सकते, इन कामों में खर्च करने के तरीके। 625 - सहरी के लिए नगाड़ा बजाना जायज़ है। 258 - रक्षा कोष में ज़कात देना। 750 - मौक़िफ़ (अराफात) में बिना किसी कारण के छतरी लगाने या किसी प्रकार की छाया चाहने से जहाँ तक संभव हो बचना चाहिए। 260 - चंदे की रकम मालिक की

अनुमति से मिलाई जा सकती है। 762 - शुक्राने की कुर्बानी का मांस स्वयं भी खा सकता है और अमीर को भी खिला सकता है, लेकिन कफ़ारे की कुर्बानी केवल ज़रूरतमंदों का अधिकार है।

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

۶۳۶ - ادعیہ افطار میں ماضی کے صیغوں سے انشاء مقصود نہیں تو لا جرم اخبار متعین ہے۔ ۲۶۱ - طلبہ زکوۃ لے سکتے ہیں۔

مناظرہ ۱۹۴ - طاعنین امام ابو یوسف پر مصنف رحمہ اللہ تعالیٰ کی مناظرانہ گرفت۔ ۲۶۲ - زکوۃ تنخواہ میں صرف نہیں ہوسکتی۔ ۲۹۰ - کافر، مشرک، وہابی، رافضی، قادیانی وغیرہ کو زکوۃ دینا حرام ہے۔ ۵۸۴ - معتبرین اختلافِ مطالع کا تعین وجوہ سے رد ۲۹۱ - امام کو زکوہ، چرم قربانی یا تیل کے پیسے لینا، ۵۸۹ - اختلافِ مطالع کے بارے میں مولوی عبد الحہ صاحب لکھنوی کے موقف کارد۔ ۳۰۳ - ضرورت شرعیہ کے بغیر سوال کرنا حرام ہے۔ ۶۰۳ - مولوی عبد الحہ صاحب لکھنوی کے ایک فتویٰ کا چھ وجوہ سے رد۔ ۳۰۳ - عام گداگروں کو دینا کیسا ہے؟

بلاغت ۳۰۴ - بے سوال کوئی دے تو لینے میں حرج نہیں۔ ۶۴۰ - کنایہ تصریح سے افضل ہے۔ ۳۰۵ - حضور اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے نام ہونے والے سالانہ فاتحہ کے پیسے محتاج کو دینا۔ ۳۰۸ - میلاد شریف کی شیرینی کا حکم۔

حظر و اباحت ۱۰۴ - سادات کرام کے لیے نہ زکوۃ لینا جائز، نہ انہیں دینا جائز، اور نہ ان کو دینے سے زکوۃ ادا ہوتی ہے۔ ۳۳۱ - حرام چیزوں سے سحری اور افطار کرنا۔ ۱۰۹ - مالِ زکوۃ کو اپنے خورد برد میں لانے کے لئے حیلوں کا سہارا لینا مقاصدِ شرع کے خلاف اور گویا رب تعالیٰ کو فریب دینا ہے۔ ۴۵۷ - جس شام احتمال ہلال ہو جب تک حکمِ حاکم شرعی یا فتوائے عالم دین نہ ہو ہر گز ہرگز کسی وجہ سے بندوقیں یا آواز کی آتشبازی اپنے دنیوی کاموں کے لیے بھی نہ کریں۔ ۱۹۴ - سخت کبیرہ بلکہ اکبر الکبائر کی نسبت امام المسلمین کی طرف بے سند کر دینا کسی طرح جائز نہیں ہو سکتا۔ ۵۹۵ - جس نے بغیر عذرِ شرعی روزہ نہ رکھا ہو اسے ماہِ رمضان کی حرمت

کے پیشِ نظر حتی الوسع چھپ کر کھانا چاہئے۔ ۲۵۴ - تنخواہ یا تعمیر مدرسہ میں زکوۃ کے روپے صرف نہیں ہو سکتے، ان کاموں میں صرف کرنے کی صورتیں۔ ۶۲۵ - سحری کے لیے نقارہ بجانا جائز ہے۔ ۲۵۸ - دفاعی فنڈ میں زکوۃ دینا۔ ۷۵۰ - موقف میں بلا عذر چھتری لگانے یا کسی طرح سایہ چاہنے سے حتی المقدور بچنا چاہئے۔ ۲۶۰ - چندہ کی رقوم باذنِ مالک مخلوط کی جاسکتی ہیں۔ ۷۶۲ - شکرانہ کی قربانی خود بھی کھا سکتا ہے اور غنی کو بھی کھلا سکتا ہے مگر کفارہ کی قربانی صرف محتاجوں کا حق ہے۔

Fatawa Razawiyya - Volume Ten

Subject	Page
One should stand before the Holy Prophet (PBUH) as one stands in prayer.	765
One should avoid kissing or touching the noble lattice of the mausoleum as it is against etiquette.	765
Circumambulating the radiant mausoleum, prostrating, and bowing like in prayer is prohibited.	769
Black hair dye is always impermissible except during Jihad.	784
Judiciary (Qada)	
Method and conditions of 'Kitab al-Qadi ila al-Qadi' (Communication from one judge to another).	413
Testimony (Shahadat)	
Many of our Imams have explicitly stated that one who delays the payment of Zakat has their testimony rejected, and this is narrated from Imam Muhammad.	80
When is the testimony of a single person regarding the Ramadan crescent accepted?	406
To add the condition of conformity with rational rules along with conformity with Shariah rules for the acceptance of testimony is against the reliable school of thought.	544
Rational rules that reject the Shariah testimony of a trustworthy, just person are not worth considering.	546
In the case of a clear sky, when is the testimony of one trustworthy person rejected and when is it accepted?	546
Testimony via telegram regarding the crescent moon is legally void and unreliable.	608
A telegram inherently lacks the eligibility to be a witness.	609
The rejection of testimony in Hajj is not due to differences in horizons, but rather to avoid hardship.	613
Agency (Wakalat)	
Whether an agent for paying Zakat can spend the money for their own needs or not.	158
Guarantorship (Kafalat)	

Subject	Page
Method of 'Shahada 'ala al-Shahada' (Testimony upon testimony).	409
Method of 'Shahada 'ala al-Qada' (Testimony upon judgment).	413
The testimony of a transgressor (fasiq) is not reliable.	446
For the Ramadan crescent, in cloudy or dusty conditions, according to the correction by prominent Imams, the testimony of a commoner (Mastoor) is also acceptable.	573

Subject	Page
The support of the mother is the son's responsibility, and the support of the sister is the brother's responsibility.	266
Legal Stratagems (Hiyal)	
How to support/sympathize with the noble descendants (Syeds) in these turbulent times.	105
A method by which the descendants of the Prophet are served and Zakat is also fulfilled.	106
It is not permissible to provide a shroud for a deceased person from Zakat money.	106

फ़तावा रज़विया - जिल्द दहम (दसवीं)

विषय	पृष्ठ
हुज़ूर अलैहिस्सलाम के सामने ऐसे खड़े होना चाहिए जैसे नमाज़ में खड़े होते हैं।	७६५
रौज़ा की जाली शरीफ़ को बोसा देने या हाथ लगाने से बचना चाहिए कि अदब के ख़िलाफ़ है।	७६५
रौज़ा-ए-अनवर का तवाफ़, सज्दा और रुकू के बराबर झुकना ममनू है।	७६१
सियाह ख़िज़ाब हमेशा ना-जाइज़ है मगर जिहाद में।	७८४
क़ज़ा (न्यायपालिका)	
किताबुल क़ाज़ी इलल क़ाज़ी का तरीक़ा और उसकी शरायत।	४१३
शहादत (गवाही)	
हमारे बहुत से अइम्मा ने तसरीह फ़रमाई कि ज़कात की अदायगी में ताख़ीर करने वाला मरदूद-ए-शहादत है, और यही हज़रत इमाम मुहम्मद से मन्क़ूल है।	८०
क़ुबूल-ए-शहादत के लिए शरीयत के क़वाइद के साथ अक़्ली क़वाइद की क़ैद बढ़ाना मोतमद मज़हब के ख़िलाफ़ है।	५४४
सिक़ह आदिल की शरई शहादत को रद्द करने वाले अक़्ली क़वाइद क़ाबिल-ए-लिहाज़ नहीं।	५४६
मतला साफ़ होने की सूरत में एक सिक़ह की शहादत कब मरदूद और कब मक़बूल है।	५४६
हिलाल के बारे में तार (टेलीग्राम) की गवाही शरअन महज़ बातिल व ना-मोतमद है।	६०८
तार अस्लन अहलियत-ए-शहादत नहीं रखता।	६०९
हज में रद्द-ए-शहादत इख़्तिलाफ़-ए-मतालअ की बिना पर नहीं बल्कि दफ़अ-ए-हरज की वजह से है।	६१३
वकालत	
ज़कात अदा करने का वकील अपने मसरफ़ में रुपया ख़र्च कर सकता है या नहीं।	१५८
कफ़ालत (ज़मानत)	४०६

विषय	पृष्ठ
हिलाल-ए-रमज़ान के बारे में अकेले शख़्स की गवाही कब क़ुबूल होगी?	
शहादत अलल शहादत का तरीक़ा।	४०९
शहादत अलल क़ज़ा का तरीक़ा।	४१३
फ़ासिक़ की शहादत मोतमद नहीं।	४४६
हिलाल-ए-रमज़ान में हालत-ए-अब्र-ओ-गुबार में अजलह अइम्मा की तसहीह के मुताबिक़ मस्तूर की शहादत भी मक़बूल है।	५७३
माँ की कफ़ालत लड़के पर और बहन की कफ़ालत भाई पर है।	२६६
हियल (शरई तदबीरें)	
इस ज़माना-ए-पुरआशूब में सादात-ए-किराम की मुआसात (मदद) क्योंकर हो।	१०५
वह तदबीर जिससे ख़िदمت-ए-सादात भी बजा हो और ज़कात भी अदा हो।	१०६
माल-ए-ज़कात से मय्यत को कफ़न देना जाइज़ नहीं।	१०६

पृष्ठ ८३६ का ६४

موضوع	صفحہ
حضور علیہ السلام کے سامنے ایسے کھڑے ہونا چاہئے جیسے نماز میں کھڑے ہوتے ہیں۔	۷۶۵
روضہ کی جالی شریف کو بوسہ دینے یا ہاتھ لگانے سے بچنا چاہئے کہ خلاف ادب ہے۔	۷۶۵
روضہ انور کا طواف، سجدہ اور رکوع کے برابر جھکنا ممنوع ہے۔	۷۶۹
سیاہ خضاب ہمیشہ ناجائز ہے مگر جہاد میں۔	۷۸۴
قضاء	
کتاب القاضی الی القاضی کا طریقہ اور اس کے شرائط	۴۱۳
شہادت	
قبول شہادت کے لیے مطابقت قواعد شرعیہ کے ساتھ مطابقت قواعد عقلیہ کی قید بڑھانا خلاف مذہب معتمد ہے۔	۵۴۴
ثقہ عادل کی شہادت شرعیہ کو رد کرنے والے قواعد عقلیہ قابلِ لحاظ نہیں۔	۵۴۶
مطلع صاف ہونے کی صورت میں ایک ثقہ کی شہادت کب مردود اور کب مقبول ہے۔	۵۴۶
درباره ہلال تار کی گواہی شرعاً محض باطل و نا معتبر۔	۶۰۸
تار اصلاً اہلیت شہادت نہیں رکھتا۔	۶۰۹
حج میں رَدِ شہادت اختلاف مطالع کی بناء پر نہیں بلکہ دفع حرج کی وجہ سے ہے۔	۶۱۳
وکالت	

موضوع	صفحہ
ہمارے بہت ائمہ نے تصریح فرمائی کہ زکوۃ کی ادائیگی میں تاخیر کرنے والا مردود الشھادۃ ہے، اور یہی منقول ہے حضرت امام محمد سے۔	۸۰
ہلالِ رمضان کے بارے میں اکیلے شخص کی گواہی کب قبول ہوگی؟	۴۰۶
شھادۃ علی الشھادۃ کا طریقہ۔	۴۰۹
شھادۃ علی القضاء کا طریقہ۔	۴۱۳
فاسق کی شہادت معتبر نہیں۔	۴۴۶
ہلالِ رمضان میں بحالتِ ابر و غبار اجلہ ائمہ کی تصحیح کے مطابق مستور کی شہادت بھی مقبول ہے۔	۵۷۳

موضوع	صفحہ
زکوۃ ادا کرنے کا وکیل اپنے مصرف میں روپیہ خرچ کر سکتا ہے یا نہیں۔	۱۵۸
کفالت	
ماں کی کفالت لڑکے پر اور بہن کی کفالت بھائی پر۔	۲۶۶
حِیل	
اس زمانہ پُر آشوب میں سادات کرام کی مواسات کیونکر ہو۔	۱۰۵
وہ تدبیر جس سے خدمت سادات بھی بجا ہو اور زکوۃ بھی ادا ہو۔	۱۰۶
مالِ زکوۃ سے میت کو کفن دینا جائز نہیں۔	۱۰۶

- Legal device (hila) for the permissibility of using Zakat money for a deceased person's shroud. (106) (532)
- Legal device for spending Zakat money on the construction of mosques and other good deeds. (106) (533)
- A flawless method according to the author (mercy of Allah upon him) for spending Zakat on a Sayyid or a mosque. (108)

Qurbani (Sacrifice) - A legal device for release if a person would become empty-handed after paying all outstanding Zakat from previous years. (183) (140) - Zakat, Qurbani, and Sadaqat al-Fitr will be obligatory on money saved for Hajj. (140) - A legal device to prevent Zakat after it becomes obligatory is definitively forbidden by consensus; the discussion here is about preventing the obligation itself. (196) (290) - Giving Zakat or the price of Qurbani to the 'Samarna' Fund. (290) - A legal device is permissible to avoid sin, not to fall into it. (197) (669) - Sacrifices of Ihram. (669) - Permissibility of Shariah devices is proven from the Quran and Hadith. (197) (669) - Eight people participating in one camel [sacrifice]. (669) - Legal device used by Prophet Ayub (Peace be upon him) to fulfill his oath. (197) (670) - Haram (the sacred precincts) is a condition for Qurbani. (670) - Legal device for applying a legal penalty (hadd) on a weak person. (197) (670) - Charity of price instead of Qurbani. (670) - A Shariah device to avoid interest (usury). (197)

Atq (Manumission) - Methods and conditions of a Shariah device. (267) (500) - In which matters male and female slaves should not obey their master. (500) - Manner of spending Zakat in religious schools (Madaris). (269) (776) - Definition of Mukatab, Mudabbir, and Umm-ul-Walad. (776) - The legal device for paying Fidiya (compensation) popular among Hindus is incomplete and insufficient. (536)

Tasawwuf (Sufism) - The beautiful legal device for paying Fidiya. (537) (195) - Among people of the path (Sufis), a prayer lacking humility (khushu') is considered void, useless, corrupt, and impaired. (195) - In the texts of later scholars, the method of 'daur' (revolving) for legal devices is mentioned, but the 'method of religion' is not mentioned anywhere. (539)

Qasam (Oath) - If millions of rupees are spread out in loans and one has nothing on hand, can he take an oath that he has no wealth? (535)

फ़तावा रज़विया - खंड 10

- मृतक के कफ़न के लिए ज़कात के धन के उपयोग की अनुमति के लिए हिला (कानूनी युक्ति)। (106) (532)
- मस्जिद के निर्माण और अन्य नेक कामों में ज़कात के धन को खर्च करने का हिला। (106) (533)
- लेखक (अल्लाह उन पर रहम करे) के अनुसार सैय्यद या मस्जिद पर ज़कात खर्च करने का एक दोषरहित तरीका। (108)

क़ुर्बानी (बलिदान) - पिछले सभी वर्षों की बकाया ज़कात देने पर यदि कोई व्यक्ति कंगाल हो जाता है, तो उससे बचने का हिला। (183) (140) - हज के लिए बचाए गए धन पर ज़कात, क़ुर्बानी और सदक़ा-ए-फ़ितर वाजिब होगा। (140) - ज़कात अनिवार्य होने के बाद उसे रोकने का हिला सर्वसम्मति से पूरी तरह हराम है; यहाँ चर्चा अनिवार्यता को रोकने के बारे में है। (196) (290) - समरना फंड में ज़कात या क़ुर्बानी की कीमत देना। (290) - हिला गुनाह से बचने के लिए जायज़ है, गुनाह में पड़ने के लिए नहीं। (197) (669) - एहराम की क़ुर्बानियाँ। (669) - शरीयत के हिलों की वैधता कुरान और हदीस से साबित है। (197) (669) - एक ऊंट में आठ लोगों का शरीक होना। (669) - हज़रत अय्यूब अलैहिस्सलाम की कसम पूरी करने का हिला। (197) (670) - क़ुर्बानी के लिए हरम शर्त है। (670) - एक कमज़ोर व्यक्ति पर हद (दंड) लगाने का हिला। (197) (670) - क़ुर्बानी के बजाय कीमत खैरात करना। (670) - सूद (ब्याज) से बचने का एक शरिया हिला। (197)

अतक़ (दासों की मुक्ति) - शरिया हिला के तरीके और शर्तें। (267) (500) - किन मामलों में गुलाम और दासी को अपने मालिक की आज्ञा नहीं माननी चाहिए। (500) - धार्मिक मदरसों में ज़कात खर्च करने का तरीका। (269) (776) - मुकातिब, मुदब्बिर और उम्म-उल-वलद की परिभाषा। (776) - फ़िदया की अदायगी का वह हिला जो हिंदुओं में प्रचलित है, अपूर्ण और अपर्याप्त है। (536)

तसव्वुफ़ (अध्यात्म) - फ़िदया की अदायगी का हिला-ए-जमीला। (537) (195) - जिस नमाज़ में खुशूअ (विनम्रता) की कमी हो, सुलूक वाले उसे बातिल, बेकार, फासिद और खराब समझते हैं। (195) - बाद के विद्वानों के ग्रंथों में हिला के लिए 'दौर' के तरीके का उल्लेख है, लेकिन 'दीन के तरीके का कहीं उल्लेख नहीं है। (539)

क़सम (शपथ) - लाखों रुपये कर्ज में फैले हुए हैं, अगर हाथ में कुछ नहीं है, तो क्या वह शपथ ले सकता है कि मेरे पास कोई धन नहीं है। (535)

पृष्ठ 836 का 65

- مال زکوۃ سے کفن میت کے جواز کا حیلہ۔ (۱۰۶) (۵۳۲)
- تعمیر مسجد وغیرہ تمام نیک کاموں میں مال زکوۃ صرف کرنے کا حیلہ۔ (۱۰۶) (۵۳۳)
- مصنف رحمہ اللہ تعالیٰ علیہ کے نزدیک سید یا مسجد پر مال زکوۃ صرف کرنے کا ایک بے خلش طریقہ۔ (۱۰۸)

قربانی - اگر کوئی شخص پچھلے تمام سالوں کی واجب الادا زکوۃ دے تو خالی ہاتھ رہ جاتا ہے تو اس کے چھٹکارے کا حیلہ۔ (۱۸۳) (۱۴۰) - حج کے لئے پس انداز مال پر زکوۃ قربانی اور صدقہ فطر واجب ہوں گے۔ (۱۴۰) - بعد وجوب زکوۃ منع کا حیلہ بالاجماع حرام قطعی یہاں کلام منع وجوب میں ہے۔ (۱۹۶) (۲۹۰) - سمر نافنڈ میں زکوۃ یا قربانی کی قیمت دینا۔ (۲۹۰) - حیلہ گناہ سے بچنے کے لیے جائز ہے نہ کہ گناہ میں پڑنے کے واسطے (۱۹۷) (۶۶۹) - احرام کی قربانیاں۔ (۶۶۹) - حیل شرعیہ کا جواز قرآن و حدیث سے ثابت ہے۔ (۱۹۷) (۶۶۹) - ایک اونٹ میں آٹھ آدمی شریک ہونا۔ (۶۶۹) - حضرت ایوب علیہ السلام کی قسم پوری کرنے کا حیلہ۔ (۱۹۷) (۶۷۰) - قربانی کے لیے حرم شرط ہے۔ (۶۷۰) - ایک کمزور شخص پر حد لگانے کا حیلہ۔ (۱۹۷) (۶۷۰) - قربانی کی بجائے قیمت خیرات کرنا۔ (۶۷۰) - سود سے بچنے کا ایک حیلہ شرعیہ۔ (۱۹۷)

عتق - حیلہ شرعی کے طریقے اور شرط (۲۶۷) (۵۰۰) - غلام و کنیز کن احکام میں اطاعت مولیٰ نہ کریں۔ (۵۰۰) - مدارس دینیہ میں زکوۃ خرچ کرنے کی صورت (۲۶۹) (۷۷۶) - مکاتب،

مدبر اور ام ولد کی تعریف۔ (۷۷۶) - فدیہ کی ادائیگی کا جو حیلہ ہندوؤں میں متعارف ہے ناتمام و ناکافی ہے۔ (۵۳۶)

تصوف - ادائیگی فدیہ کا حیلہ جمیلہ۔ (۵۳۷) (۱۹۵) - جس نماز میں قلت خشوع ہو اہل سلوک کے ہاں اس کو باطل، مہمل، فاسد اور مختل سمجھتے ہیں۔ (۱۹۵) - متاخرین کی نصوص میں حیلہ کے لیے طریق دور مذکور ہے طریق دین کا کہیں ذکر نہیں۔ (۵۳۹)

قسم - لاکھوں روپے قرض میں پھیلے ہوئے ہیں اگر پاس کچھ نہیں تو قسم کھا سکتا ہے کہ میرا کچھ مال نہیں۔ (۵۳۵)

Volume 10 Fatawa Razawiyya

Miscellaneous (Mutafarriqat)

Page	Subject	Page	Subject
621	Shari'i definition of False Dawn (Subh-e-Kazib) and True Dawn (Subh-e-Sadiq).		**Miscellaneous**
748	What is 'Mawqif'? (Footnote)	186	Who are the A'ra'?
748	What is meant by 'Batn-e-Urna'? (Footnote)	349	The reason for Ramadan occurring in different seasons.
751	What is 'Wadi Muhassar'?	455	Compound ignorance (Jahl-e-Murakkab) is a thousand times better than simple ignorance (Jahl-e-Basit).
755	What is meant by 'Jannat al-Mu'alla' and 'Wadi al-Muhassab'? (Footnote)	526	Difference in the weight of 'Seers' prevalent in Bareilly, Lucknow, Delhi, and Rampur.
757	What is meant by 'Char Pehar'? (Footnote)	594	The Molvi Sahib wrote the third volume of his Fatawa by posing questions himself, and in many places, he corrected errors from earlier volumes; therefore, it is necessary for those viewing his Fatawa to take this into account.
827	Details of the seven pillars of the noble Prophet's Mosque (Masjid Nabawi). (Footnote)	610	Investigation into the meaning of 'Istifazah' which Sharia considers reliable regarding the sighting of the moon.

खंड दस फतावा रज़विया

विविध (متفرقات)

पृष्ठ	विषय	पृष्ठ	विषय
६२१	सुब्ह-ए-काज़िब और सुब्ह-ए-सादिक़ की शरई परिभाषा।		**विविध**
७४८	'मौकिफ़' क्या है? (फुटनोट)	१८६	अरअ़ (A'ra') कौन लोग हैं।
७४८	'बत्न-ए-उर्ना' (Batn-e-Urna) से क्या तात्पर्य है? (फुटनोट)	३४९	विभिन्न मौसमों में रमज़ान शरीफ़ आने का कारण।
७५१	वादी-ए-मुहस्सर क्या है?	४५५	जह्ल-ए-मुरक्कब, जह्ल-ए-बसीत से हज़ार गुना बेहतर है।
७५५	'जन्नत अल-मुअ़ल्ला' और 'वादी-ए-मुहस्सब' से क्या तात्पर्य है? (फुटनोट)	५२६	बरेली, लखनऊ, दिल्ली और रामपुर में प्रचलित 'सेर' के वजन में अंतर।
७५७	'चार पहर' से क्या तात्पर्य है? (फुटनोट)	५९४	मौलवी साहब ने अपने फतावा का तीसरा खंड स्वयं प्रश्न बनाकर लिखा है और इसमें कई स्थानों पर पिछले खंडों की गलतियों को सुधारा है, इसलिए उनके फतावा देखने वालों के लिए इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है।
८२७	मस्जिद-ए-नबवी शरीफ़ के सात स्तंभों का विवरण। (फुटनोट)	६१०	'इस्तिफ़ाज़ा' के अर्थ की जांच, जिसे शरीयत ने चाँद देखने के मामले में विश्वसनीय माना है।

पृष्ठ ८३६ का ६६

متفرقات

صفحہ	مضمون	صفحہ	مضمون
۶۲۱	صبحِ کاذب اور صبحِ صادق کی شرعی تعریف۔	**متفرقات**	
۷۴۸	موقف کیا ہے۔ (حاشیہ)	۱۸۶	اعرہ کون لوگ ہیں۔
۷۴۸	بطنِ عرنہ سے کیا مراد ہے۔ (حاشیہ)	۳۴۹	مختلف موسموں میں رمضان شریف آنے کا سبب۔
۷۵۱	وادی محسر کیا ہے۔	۴۵۵	جہل مرکب، جہل بسیط سے ہزار درجہ بہتر ہے۔
۷۵۵	جنتہ المعلیٰ اور وادی محصب سے کیا مراد ہے۔ (حاشیہ)	۵۲۶	بریلی، لکھنؤ، دہلی اور رامپور میں رائج سیروں کے وزن میں فرق۔
۷۵۷	چار پہر سے کیا مراد ہے۔ (حاشیہ)	۵۹۴	مولوی صاحب نے اپنے فتاویٰ کی تیسری جلد آپ ہی سوالات قائم کرکے لکھی ہے اور اس میں بہت جگہ پہلی جلدوں کے اغلاط کی اصلاح کردی لہذا ان کا فتاویٰ دیکھنے والوں کو اس کا لحاظ ضروری ہے۔

مسجد نبوی شریف
جو استفاضہ شرع نے رویت ہلال کے بارے میں معتبر فرمایا
۸۲۷ کے سات ستونوں کی ۶۱۰
اس کے معنی کی تحقیق۔
تفصیل۔ (حاشیہ)

Fatawa Razawiya Volume Ten

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful

Book of Zakat

Problem 1: From Bakaji, Wala area, Jagal Haripur, Post Office Kot Najibullah Khan, sent by Maulvi Sher Muhammad Khan, 7th Rabi-ul-Awwal Sharif 1312 AH.

Honorable Sir, the giver of grace, the source of eternal hope, a Maulvi from Amritsar came to this servant. He was arguing about something, so this servant said that Allah has mentioned prayer (Salah) many times in the Holy Quran and has also mentioned Zakat many times, but has mentioned fasting (Sawm) only once. Honorable Sir, is this correct or not? And is 'Ushr' mentioned in the Holy Quran or not?

The Answer: In reality, the obligation, excellence, and rulings of prayer and Zakat are mentioned in many places in the Holy Quran, to the extent that it occurs in Manaqib Bazzazi, Bahr-ur-Raiq, Nahr-ul-Faiq, Minah-ul-Ghaffar, Fath-ul-Mu'in, etc., that besides those instances where prayer and Zakat are mentioned separately, their joint mention occurs eighty-two (82) times in the Great Quran. However, Allama Halabi, Allama Tahtawi, and Allama Shami, the noble masters and commentators of Durr-ul-Mukhtar, state: The correct view is that they are mentioned together in thirty-two (32) places. Allama Halabi's teacher has counted all those instances. It is stated in Durr-ul-Mukhtar: "It (Zakat) is joined with prayer in eighty-two places" (i.e., Zakat is mentioned along with prayer at 82 spots). Sharh Maskeen and Hashiya Sayyid Azhari.

1. Durr-ul-Mukhtar, Book of Zakat, Mujtabai Press, Delhi, 1/129

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

बिस्मिल्लाहिर रहमानिर रहीम

किताब-उज़-ज़कात (ज़कात की किताब)

मसला १: बकाजी, वाला इलाका, जागल हरी पुर, डाकखाना कोट नजीबुल्लाह खान से, प्रेषक मौलवी शेर मोहम्मद खान, ७ रबी-उल-अव्वल शरीफ १३१२ हिजरी।

आदरणीय महोदय, कृपा प्रदान करने वाले, शाश्वत आशा के केंद्र, इस सेवक के पास अमृतसर से एक मौलवी आए। वे किसी बात पर बहस कर रहे थे, तो इस सेवक ने कहा कि अल्लाह ने कुरान शरीफ में नमाज़ का ज़िक्र बहुत बार किया है और ज़कात का ज़िक्र भी बहुत बार किया है, लेकिन रोज़े का ज़िक्र सिर्फ एक बार किया है। आदरणीय महोदय, क्या यह सही है या नहीं? और क्या उश्र का ज़िक्र कुरान मजीद में आया है या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): वास्तव में, नमाज़ और ज़कात की अनिवार्यता, श्रेष्ठता और समस्याओं का ज़िक्र कुरान मजीद में बहुत सी जगहों पर है, यहाँ तक कि मनाकिब बज़्ज़ाज़ी, बहर-उर-राइक, नहर-उल-फाइक, मिनह-उल-ग़फ़्फ़ार, फ़तह-उल-मुईन आदि में उल्लेख है कि उन स्थानों के अलावा जहाँ नमाज़ और ज़कात का अलग-अलग ज़िक्र है, दोनों का एक साथ ज़िक्र महान कुरान में बयासी (८२) जगहों पर आया है। लेकिन अल्लामा हलबी, अल्लामा तहतावी और अल्लामा शामी, जो दुर्रे मुख़्तार के माननीय टीकाकार हैं, फरमाते हैं: सही यह है कि उनका एक साथ ज़िक्र बत्तीस (३२) जगहों पर हुआ है। अल्लामा हलबी के उस्ताद ने वे सभी स्थान गिनवा दिए हैं। दुर्रे मुख़्तार में है: "ज़कात को बयासी जगहों पर नमाज़ के साथ जोड़ा गया है" (अर्थात ८२ स्थानों पर ज़कात का ज़िक्र नमाज़ के साथ किया गया है)। शरह मस्क़ीन और हाशिया सय्यद अज़हरी।

1. दुर्रे मुख़्तार, किताब-उज़-ज़कात, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, १/१२९।

पृष्ठ ६७/८३६

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

بسم اللہ الرحمن الرحیم

کتاب الزکوۃ

مسئلہ ۱: از بکاجی والاعلاقہ علاقہ جاگل ہری پور ڈاک خانہ کوٹ نجیب اللہ خاں مرسلہ مولوی شیر محمد خاں ۷ ربیع الاول شریف ۱۳۱۲ھ جناب عالی فیض بخش فیض رساہ امید گاہ جاویداں بندہ سے ایک مولوی امرت سر سے آئے ہیں وہ کسی بات کا جھگڑا کیا تھا تو بندہ نے کہا کہ نماز کا اللہ نے بہت بار قرآن شریف میں ذکر کیا ہے اور زکوٰۃ کا بھی بہت بار ذکر کیا ہے مگر روزہ کا ایک بار ذکر کیا ہے، جناب عالی یہ صحیح ہے یا نہیں؟ اور عشر کا ذکر قرآن مجید میں آیا ہے یا نہیں؟

الجواب: فی الواقع نماز وزکوٰۃ کی فرضیت و فضیلت و مسائل تینوں قسم کا ذکر قرآن مجید میں بہت جگہ ہے یہاں تک کہ مناقب بزازی و بحر الرائق و نہر الفائق و منح الغفار و فتح المعین وغیرہما میں واقع ہوا کہ علاوہ ان مواقع کے جن میں نماز و زکوٰۃ کا ذکر جُدا جُدا ہے دونوں کا ساتھ ساتھ ذکر قرآنِ عظیم میں بیاسی ۸۲ جگہ آیا ہے ، مگر علامہ حلبی و علامہ طحطاوی و علامہ شامی سادات کرام محشیانِ در مختار فرماتے ہیں : صحیح یہ ہے کہ ان کا ساتھ ساتھ بتیس ۳۲ جگہ فرمایا ہے۔ علامہ حلبی کے استاد نے وہ سب مواقع گنا دیئے در مختار میں ہے : قرنھا بالصلوۃ فی اثنین و ثمانین موضعاً ۱ (بیاسی ۸۲ مقامات پر زکوٰۃ کو نماز کے ساتھ ذکر کیا گیا ہے ۔ ت) شرح مسکین و حاشیہ سید ازہری۔

۱ در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۲۹

Fatawa Ridawiyya - Volume 10

It is stated:

Arabic	Urdu
Zakat is coupled with prayer in eighty-two places in the Quran. (Summary)	Summary: In the Quranic verses, Zakat has been mentioned adjacently to prayer at eighty-two (82) places. (T)

It is stated in Tahtawi and Radd al-Muhtar:

Arabic	Urdu
And the wording for his statement "in eighty-two places" followed the author of al-Nahr and al-Minah, and they followed the author of al-Bahr, attributing it to al-Manaqib al-Bazzaziyya. The correct number is thirty-two, as counted by our teacher, the Sayyid. Finished - Halabi with additions.	Its text is that his saying is like this for eighty-two (82) places; in this, the author of Nahr and Minah followed [others], and both of them followed the author of Bahr; he attributed it towards Manaqib Bazzaziyya, and the correct thing is that the number of places where Zakat is mentioned adjacently to prayer is thirty-two (32), as our teacher Sayyid has counted this number. Finished - Halabi with addition - (T)

And the mention of the obligation of fasting is only in one place; however, its excellence has also been manifested in other places through direct expression and allusion:

Arabic	Urdu
As the Almighty says in Surah al-Ahzab: "Indeed, the Muslim men and Muslim women..." (until the word of the Almighty) "...and the fasting men and the fasting women..." (until the Almighty says) "...Allah has prepared for them forgiveness and a great reward."	For example, in Surah al-Ahzab is the word of Allah Almighty: "Undoubtedly, Muslim men and Muslim women (until this statement of Allah Almighty) fasting men and fasting women (until He said) Allah Almighty has prepared for them forgiveness and a great reward."
And the word of the Almighty in Surah al-Tawbah: "Those who repent, those who worship, those who praise, those who fast [as-Sa'ihun]..." to the end of the verse.	And in Surah al-Tawbah is the guidance of Allah Almighty: "Those who repent..."

Arabic **Urdu**

And the word of the Almighty in Surah...

1. Fath al-Mu'in 'ala Sharh Mulla Miskin, Kitab al-Zakat, H.M. Saeed Company Karachi, 1/369
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Zakat, Mustafa al-Babi Egypt, 2/2
3. The Quran 33/35
4. The Quran 33/35
5. The Quran 9/112

फ़तावा रज़विया - जिल्द दस

इसमें है:

अरबी	उर्दू
क़ुरआन में बयासी जगहों पर ज़कात को नमाज़ के साथ जोड़ा गया है। (तल्ख़ीसन)	सारांश: क़ुरआनी आयतों में बयासी (८२) जगहों पर ज़कात को नमाज़ के साथ मिला कर बयान किया गया है। (त)

तहतावी और रद्दुल मुहतार में है:

अरबी	उर्दू
और उनके'बयासी जगहों पर' कहने के लफ्ज़ में साहिबे नहर और साहिबे मिन्ह ने पैरवी की है, और उन दोनों ने साहिबे बहर की पैरवी की है, जिन्होंने इसे मनाकिबे बज़ाज़िया की तरफ निस्बत दी है। सही बात यह है कि यह बत्तीस है, जैसा कि हमारे उस्ताद सैय्यद ने गिना है। मुकम्मल - हलबी इज़ाफ़े के साथ।	इसकी इबारत यह है कि उनका क़ौल बयासी (८२) मक़ामात पर ऐसा है, इसमें साहिबे नहर और मिन्ह ने पैरवी की है, और इन दोनों ने साहिबे बहर की पैरवी की है, उन्होंने मनाकिबे बज़ाज़िया की तरफ निस्बत की है, और दुरुस्त यह है कि ज़कात को नमाज़ से मुत्तसिल (जुड़ा हुआ) जिन मक़ामात पर बयान किया गया उनकी तादाद बत्तीस (३२) है जैसे कि इस तादाद को हमारे शैख़ सैय्यद ने शुमार किया। मुकम्मल - हलबी मा इज़ाफ़ा - (त)

और रोज़े की फर्ज़ियत का ज़िक्र सिर्फ एक ही जगह है, हाँ इबारत और इशारे के तौर पर इसकी फ़ज़ीलत और मौक़ों पर भी ज़ाहिर फ़रमाई गई है:

अरबी	उर्दू
जैसा कि अल्लाह तआला ने सूरह अहज़ाब में फ़रमाया: 'बेशक मुसलमान मर्द और मुसलमान औरतें...' (अल्लाह तआला के इस फ़रमान तक) '...और रोज़ा रखने वाले मर्द और रोज़ा रखने वाली औरतें...' (यहाँ तक कि फ़रमाया) 'अल्लाह तआला	मसलन सूरह अहज़ाब में अल्लाह तआला का क़ौल है: बिला शुबा मुसलमान मर्द और मुसलमान ख़वातीन (अल्लाह तआला के इस फ़रमान तक) रोज़ा रखने वाले मर्द और रोज़ा रखने वाली ख़वातीन (यहाँ तक कि फ़रमाया)

अरबी

ने उनके लिए मग़फ़िरत और अज्रे अज़ीम (बड़ा सवाब) तैयार कर रखा है।'

और अल्लाह तआला का सूरह तौबा में फ़रमान: 'तौबा करने वाले, इबादत करने वाले, हम्द करने वाले, रोज़ा रखने वाले [अस-साइहूँ]...' आयत के आख़िर तक।

और अल्लाह तआला का सूरह... में फ़रमान

उर्दू

अल्लाह तआला ने उनके लिए मग़फ़िरत और अज्रे अज़ीम तैयार रखा है।

और सूरह तौबा में इरशादे बारी तआला है: तौबा करने वाले...

1. फ़तह अल-मुईन अला शरह मुल्ला मिस्कीन, किताबुज़ ज़कात, एच.एम. सईद कंपनी कराची, १/३६९
2. रद्दुल मुहतार, किताबुज़ ज़कात, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, २/२
3. अल-क़ुरआन ३३/३५
4. अल-क़ुरआन ३३/३५
5. अल-क़ुरआन ९/११२

فتاوی رضویہ - جلد دہم

میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
قرن الزکوۃ فی ای من القران اثنین و ثمانین موضعا اھ	ملخصاً آیات قرآنی میں بیاسی ۸۲ جگہ زکوۃ کو نماز سے متصل بیان کیا گیا ہے اھ تلخیصاً (ت)

طحطاوی وردالمحتار میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
واللفظ لط قوله في اثنين وثمانين موضعاً تبع فيه صاحب النهر والمنح وتبعاً صاحب البحر معزياً الى المناقب البزازية وصوابه اثنين وثلاثين كما عدها شيخنا السيد اھ حلبي بزيادة-	اس کی عبارت یہ ہے کہ ان کا قول بیاسی ۸۲ مقامات پر ایسا ہے، اس میں صاحب نہر اور منح نے اتباع کی ہے، اور ان دونوں نے صاحب بحر کی اتباع کی ہے، انہوں نے مناقب بزازیہ کی طرف نسبت کی ہے، اور درست یہ ہے کہ زکوۃ کو نماز سے متصل جن مقامات پر بیان کیا گیا ان کی تعداد بتیس ۳۲ ہے جیسے کہ اس تعداد کو ہمارے شیخ سید نے شمار کیا اھ حلبی مع اضافہ-(ت)

اور فرضیت روزہ کا ذکر صرف ایک ہی جگہ ہے، ہاں عبارۃً واشارۃً اس کی فضیلت اور مواقع پر بھی ظاہر فرمائی گئی ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
كقوله تعالى فى سورة الاحزاب إِنَّ الْمُسْلِمِينَ وَالْمُسْلِمَاتِ (الى قوله تعالى) وَالصَّائِمِينَ وَالصَّائِمَاتِ (الى ان قال تعالى) أَعَدَّ اللَّهُ لَهُمْ مَّغْفِرَةً وَأَجْرًا عَظِيمًا	مثلاً سورہ احزاب میں اللہ تعالی کا قول ہے: بلاشبہ مسلمان مرد اور مسلمان خواتین (اللہ تعالی کے اس فرمان تک) روزہ رکھنے والے مرد اور روزہ رکھنے والی خواتین (یہاں تک کہ فرمایا) اللہ تعالی نے ان کے لئے مغفرت اور اجر عظیم تیار رکھا ہے
وقوله تعالى فى سورة التوبة التَّائِبُونَ الْعَابِدُونَ الْحَامِدُونَ السَّائِحُونَ الآية تعالى فى سورة	اور سورہ توبہ میں ارشاد باری تعالی ہے: توبہ کرنے والے

1 فتح المعين على شرح ملا مسكين كتاب الزكوة ايچ ايم سعيد كمپنى كراچى ۳۶۹/۱ 2 ردالمحتار كتاب الزكوة مصطفى البابى مصر ۲/۲ 3 القرآن ۳۳/۳۵ 4 القرآن ۳۳/۳۵ 5 القرآن ۹/۱۱۲

Fatawa Razawiya, Volume 10

At-Tahrim: "Those who repent, those who worship, those who praise..." The traveler (As-Sa'ih) is the faster - those who worship, those who praise, those who fast [The Verse]. And in Surah At-Tahrim, the command of the Exalted Lord is: "Those who repent, those who worship, those who fast." The meaning of As-Sa'ih is the faster (T). The mention of Ushr (tithe) is also in the Great Quran:

Allah Almighty said in Surah Al-An'am: "And give its due on the day of its harvest" [2] - Ibn Abbas, Tawus, Al-Hasan, Jabir bin Zaid, and Sa'id bin al-Musayyib (may Allah be pleased with them) said this, as in 'Al-Ma'alim' and others, and Allah (Glorified and Exalted is He) knows best. Allah Almighty said in Surah Al-An'am: Give its due on the day the crop is harvested. (According to most commentators, this right refers to Ushr.) (Hazrat Ibn Abbas, Tawus, Hasan, Jabir bin Zaid, and Sa'id bin al-Musayyib, may Allah Almighty be pleased with them - all these personages interpreted this as Ushr, as found in Ma'alim al-Tanzil etc. T) And Allah Almighty knows best.

Issue 2: 10 Dhu al-Qi'dah 1306 AH, Mirza Baqi Baig Sahib Rampuri. What do the scholars of religion say regarding this matter: that some Muslims fixed some monthly cash as a contribution for assistance from Zakat and daily food for a gentleman, and did not assign any service or work in return etc. to him. In short, these people's intent was to treat a Muslim elder and poor person kindly, and they considered the presence of such a person in their neighborhood and mosque a source of goodness and blessing. In this manner, a period of nearly four years passed, where these people, according to their promise and intention, continued to give and pay whether that elder went to his hometown or stayed here. However, some of them made an excuse and said we will not pay for the days of absence. So, in this situation, was the Zakat of these people fulfilled or not? Explain and be rewarded.

The Answer: O Allah, guide to the truth and correctness: The principle is that intention (niyyah) is a condition for Zakat; it is not fulfilled without it. In Al-Ashbah [it says]: What is Zakat? Its fulfillment is not valid except with intention [4]. (In Al-Ashbah it is stated that the payment of Zakat is not correct without intention. T) and sincerity in intention...

1. Al-Quran 5/66
2. Al-Quran 6/142

3. Ma'alim al-Tanzil on the margins of Al-Khazin under the mentioned verse, Mustafa al-Babi Egypt 191/2
4. Al-Ashbah wa'n-Nazair, First Principle of the First Art, Idara al-Quran wa'l-Uloom al-Islamiyyah Karachi 30/1 Page 69 of 836

फतावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

अत-तहरीम: "तौबा करने वाले, इबादत करने वाले, हम्द करने वाले..." 'अस-साइह' का अर्थ रोज़ा रखने वाला है - इबादत करने वाले, हम्द करने वाले, रोज़ा रखने वाले (आयत)। और सूरह तहरीम में बारी तआला का इरशाद है: तौबा करने वालियाँ, इबादत करने वालियाँ, रोज़ा रखने वालियाँ। 'अस-साइह' का अर्थ रोज़ा रखने वाला है (त)। 'उश्र' का ज़िक्र भी कुरआन अज़ीम में है:

अल्लाह तआला ने सूरह अल-अनाम में फ़रमाया: "खेती कटने के दिन उसका हक़ अदा करो" [2] - इब्न अब्बास, ताऊस, अल-हसन, जाबिर बिन ज़ैद और सईद बिन अल-मुसय्यिब (रज़ियल्लाहु अन्हुम) ने यह फ़रमाया जैसा कि 'अल-मआलिम' आदि में है, और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है। अल्लाह तआला ने सूरह अल-अनाम में फ़रमाया: खेती कटने के दिन उसका हक़ अदा करो। (अक्सर मुफ़स्सिरीन के नज़दीक इस हक़ से मुराद 'उश्र' है।) (हज़रत इब्न अब्बास, ताऊस, हसन, जाबिर बिन ज़ैद और सईद बिन अल-मुसय्यिब रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम - इन तमाम हज़रात ने इससे उश्र मुराद लिया है जैसा कि मआलिम अत-तंज़ील वगैरह में है। त) वल्लाहु तआला आलम।

मस्अला २: १० ज़ी क़ादा १३०६ हिजरी, मिर्ज़ा बाक़ी बेग साहब रामपुरी। उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि कुछ मुसलमानों ने एक साहब की कुछ मासिक नकद राशि बतौर चंदा ज़कात में से मदद के लिए और दिन-रात का भोजन तय कर दिया और उनके ज़िम्मे कोई सेवा या काम का बदला आदि नहीं लगाया। संक्षेप में, इन लोगों का मक़सद एक मुसलमान बुज़ुर्ग और मिस्कीन के साथ नेक सुलूक करना था और ऐसे व्यक्ति का अपने मोहल्ले और मस्जिद में रहना खैर-ओ-बरकत का सबब समझा। इसी तरह लगभग चार साल का अरसा गुज़रा कि ये लोग अपने वादे और नीयत के मुताबिक़, चाहे वे बुज़ुर्ग अपने वतन गए हों या यहाँ रहे हों, देते और अदा करते रहे। मगर उनमें से कुछ ने उज़्र (बहाना) किया और कहा कि हम ग़ैर-हाज़िरी के दिनों का नहीं देंगे। तो इस सूरत में क्या इन लोगों की ज़कात अदा हुई या नहीं? बयान फ़रमाएँ सवाब पाएँ।

अल-जवाब: ऐ अल्लाह, हक़ और सही राह की हिदायत दे: असल यह है कि ज़कात में नीयत शर्त है, इसके बग़ैर अदा नहीं होती। 'अल-अश्बाह' में है: ज़कात क्या है? इसकी अदायगी नीयत के बिना सही नहीं है [4]। (अश्बाह में है कि ज़कात की अदायगी नीयत के बिना दुरुस्त नहीं। त) और नीयत में इखलास (निष्ठा)...

1. अल-कुरआन ५/६६

2. अल-कुरआन ६/१४२
3. मआलिम अत-तंज़ील हाशियह अल-खाज़िन के नीचे ज़िक्र की गई आयत के तहत, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र १९१/२
4. अल-अश्बाह व अन-नज़ाइर, पहला उसूल, पहला फ़न, इदारा अल-कुरआन वल-उलूम अल-इस्लामिया कराची ३०/१ पेज ६९ (कुल ८३६ में से)

التحریم "تُبِیْتُ عُبِدَتُ سَبِحَتُ" السائح ھو الصائم - عبادت کرنے والے، حمد کرنے والے، روزہ رکھنے والے الآیۃ اور سورہ تحریم میں ارشاد باری تعالٰی ہے: توبہ کرنے والیاں عبادت کرنے والیاں، روزہ رکھنے والیاں۔ السائح کا معنی روزہ رکھنے والا ہے (ت) عشر کا ذکر بھی قرآن عظیم میں ہے:

قال تعالٰی فی سورۃ الانعام وَ اٰتُوْا حَقَّهٗ یَوْمَ حَصَادِهٖ2- قالہ ابن عباس و طاؤس و الحسن و جابر بن زید و سعید بن المسیب 3 - رضی اللہ تعالٰی عنھم کما فی المعالم وغیرھا، واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم۔ اللہ تعالٰی نے سورہ الانعام میں فرمایا: کھیتی کٹنے کی دن اس کا حق ادا کرو۔ (اکثر مفسرین کے نزدیک اس حق سے مراد عشر ہے) (حضرت ابن عباس، طاؤس، حسن، جابر بن زید اور سعید بن المسیب رضی اللہ تعالٰی عنہم ان تمام حضرات نے اس سے عشر مراد لیا ہے جیسا کہ معالم التنزیل وغیرہ میں ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲: ۱۰ ذی قعدہ ۱۳۰۶ھ مرزا باقی بیگ صاحب رامپوری کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ چند مسلمانوں نے ایک صاحب کا کچھ ماہوار نقد بطور چندہ مدد زکوۃ میں سے اور طعام شبانہ روز مقرر کردیا اور کوئی کام خدمت یا بدل وغیرہ ان کے ذمہ نہیں کیا، غرض ان لوگوں کی ایک مسلمان بزرگ و مسکین کے ساتھ سلوک کرنا تھا اور ایسے شخص کا اپنے محلہ و مسجد میں رہنا موجب خیر و برکت سمجھا، اسی طور پر عرصہ قریب چار سال کی گزرا کہ یہ لوگ موافق اپنے وعدے اور نیت کے خواہ وہ بزرگ اپنے وطن کو گئے یا یہاں رہے، دیتے اور ادا کرتے رہے، مگر بعض نے ان میں عذر کیا اور کہا ہم ایام غیر حاضری کا نہ دیں گے، تو اس صورت میں زکوۃ ان لوگوں کی ادا ہوئی یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: اللہم ھدایۃ الحق والصواب: اصل یہ ہے کہ زکوۃ میں نیت شرط ہے بے اس کے ادا نہیں ہوتی، فی الاشباہ ماالزکوۃ فلا یصح اداھا الّا بالنیۃ 4 (اشباہ میں ہے کہ زکوۃ کی ادائیگی نیت کے بغیر درست نہیں۔ ت) اور نیت میں اخلاص

1 القرآن ۵/۶۶ 2 القرآن ۱۴۲/۶ 3 معالم التنزیل علی ہامش الخازن تحت آیۃ مذکورہ مصطفیٰ البانی مصر ۱۹۱/۲ 4 الاشباہ والنظائر القاعدۃ الاولی من الفن الاول ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۳۰/۱

Volume 10 Fatawa Razawiyya

Intention is a condition; without it, the intent is meaningless. It is stated in Majma' al-Anhur: "Zakat is a form of worship, thus sincerity (Ikhlas) is essential in it."[1] (In Majma' al-Anhur, it is written: Zakat is worship, hence sincerity is a condition in it. - T) And the meaning of sincerity is that Zakat be given solely with the intention of [paying] Zakat, fulfilling an obligatory duty, and executing the divine command, and no other matter contradictory to Zakat should be intended alongside it. It is stated in Tanwir al-Absar:

[Arabic Box 1] "Zakat is to transfer ownership of a specific part of wealth designated by the Legislator to a poor Muslim who is not a Hashimi nor their freed slave, with the complete cessation of benefit from the transferor in every respect, for the sake of Allah the Exalted."[2] [Urdu Translation] Zakat is to make a poor Muslim owner of a portion of wealth determined by the Legislator solely for the pleasure of Allah, in such a way that the previous owner does not derive any benefit from it in any manner, provided that the Muslim is not a Hashimi nor their freed slave. (T)

In Durr al-Mukhtar it is stated: [Arabic Box 2] "For Allah the Exalted is an explanation for the condition of intention."[3] [Urdu Translation] The words "For Allah" are to establish the intention as a condition. (T)

In Radd al-Muhtar it is stated: [Arabic Box 3] "It is related to the transfer of ownership (tamleek), meaning for the sake of obeying the command of Allah the Exalted."[4] [Urdu Translation] These words (Allah the Exalted) are related to the word 'tamleek', meaning that this action should solely be for the fulfillment of the command of the Merciful Lord. (T)

Furthermore, in this regard, only the intention is considered even if one expresses something else with the tongue. For example, if someone intended Zakat in their heart but said "gift" or "loan" verbally when giving it, the Zakat will be valid according to the correct position of the school of thought. It is stated in Shami:

[Arabic Box 4] "There is no consideration for the naming; thus, if one calls it a gift or a loan, it suffices according to the more correct opinion."[5] [Urdu Translation] The verbal naming carries no weight; if someone calls this wealth a gift or a loan, Zakat will still be fulfilled according to the most authentic saying. (T)

1. Majma' al-Anhur Sharh Multaqa al-Abhur, Book of Zakat, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/192.

2. Durr al-Mukhtar, Book of Zakat, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/129.
3. Durr al-Mukhtar, Book of Zakat, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/129.
4. Radd al-Muhtar, Book of Zakat, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/4.
5. Radd al-Muhtar, Book of Zakat, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/4.

जिल्द दसवीं फ़तावा रज़विया

नियत एक शर्त है, इसके बिना इरादा व्यर्थ है। मजमा अल-अन्हुर में है: "ज़कात एक इबादत है, इसलिए इसमें इखलास (निष्ठा) अनिवार्य है।"[1] (मजमा अल-अन्हुर में है कि ज़कात इबादत है, अतः इसमें इखलास शर्त है। - त) और इखलास का अर्थ यह है कि ज़कात केवल ज़कात की नियत से, फ़र्ज़ की अदायगी और ईश्वरीय आदेश के पालन हेतु दी जाए, और इसके साथ कोई अन्य कार्य जो ज़कात के विपरीत हो, उद्देश्य न हो। तनवीर अल-अबसार में है:

[अरबी बॉक्स 1] "ज़कात शरीयत द्वारा निर्धारित धन के एक निश्चित हिस्से का मालिकाना हक किसी गरीब मुसलमान को देना है, जो न तो हाशमी हो और न ही उनका आज़ाद किया हुआ गुलाम, इस तरह कि मालिक को उस चीज़ से किसी भी तरह का लाभ प्राप्त न हो, केवल अल्लाह तआला के लिए।"[2] [उर्दू अनुवाद] ज़कात शरीअत के निर्धारित हिस्से का केवल अल्लाह की रज़ा के लिए किसी गरीब मुसलमान को इस तरह मालिक बनाना है कि मालिक को उस चीज़ से किसी भी तरह का नफ़ा हासिल न करना हो, बशर्ते कि वह मुसलमान हाशमी न हो और न ही उसका मौला (आज़ाद गुलाम) हो। (त)

दुर्र अल-मुख्तार में है: [अरबी बॉक्स 2] "अल्लाह तआला के लिए नियत की शर्त का बयान है।"[3] [उर्दू अनुवाद] "अल्लाह के लिए हो" के शब्द नियत ही को शर्त करार देने के लिए हैं। (त)

रद्द अल-मुह्तार में है: [अरबी बॉक्स 3] "तम्लीक (मालिक बनाने) से संबंधित है, यानी अल्लाह तआला के हुक्म की तामील के लिए।"[4] [उर्दू अनुवाद] इन शब्दों (अल्लाह तआला) का संबंध शब्द तम्लीक से है, यानी यह अमल केवल अपने रब करीम के हुक्म की बजा-आवरी के तौर पर हो। (त)

फिर इसमें एतबार केवल नियत का है, भले ही ज़ुबान से कुछ और ज़ाहिर किया जाए। उदाहरण के लिए, दिल में ज़कात का इरादा किया और ज़ुबान से हबा (उपहार) या क़र्ज़ कह कर दिया, तो सही मज़हब के अनुसार ज़कात अदा हो जाएगी। शामी में है:

[अरबी बॉक्स 4] "नाम रखने का कोई एतबार नहीं है; अतः यदि उसने इसका नाम उपहार या ऋण रखा, तो सबसे सही राय के अनुसार यह पर्याप्त है।"[5] [उर्दू अनुवाद] नाम लेने का एतबार नहीं है,

अगर किसी ने इस माल को हबा या क़र्ज़ कह दिया, तब भी सबसे सही कौल (विचार) के मुताबिक ज़कात अदा हो जाएगी। (त)

1. मजमा अल-अन्हुर शरह मुल्तका अल-अबहर, किताबुज़ ज़कात, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 1/192.
2. दुर्र अल-मुख्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/129.
3. दुर्र अल-मुख्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/129.
4. रद्द अल-मुह्तार, किताबुज़ ज़कात, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 2/4.
5. रद्द अल-मुह्तार, किताबुज़ ज़कात, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 2/4.

جلد دہم فتاوی رضویہ

شرط ہے بغیر اس کے نیت مہمل، فی مجمع الانہر الزکوۃ عبادۃ فلابد فیھا من الاخلاص[1] (مجمع الانہر میں ہے زکوۃ عبادت ہے لہٰذا اس میں اخلاص شرط ہے۔ ت) ور اخلاص کے یہ معنی کہ زکوۃ صرف بہ نیت زکوۃ وادائے فرض وبجآوری حکم الٰہی دی جائے ، اس کے ساتھ اور کوئی امر منافی زکوۃ مقصود نہ ہو۔ تنویرالابصار میں ہے:

الزکوۃ تملیك جزء مال عینه الشارع من مسلم فقیر غیر ھاشمی ولا مولاہ مع قطع المنفعة عن المملک من کل وجه لله تعالیٰ۔[2] زکوٰۃ شارع کی مقرر کردہ حصہ کا فقط رضائے الٰہی کے لئے کسی مسلمان فقیر کو اس طرح مالک بنانا کہ ہر طرح سے مالک نے اس شے سے نفع حاصل نہ کرنا ہو بشرطیکہ وہ مسلمان ہاشمی نہ ہو اور نہ ہی اس کا مولیٰ ہو۔ (ت)

در مختار میں ہے: لله تعالی بیان لاشتراط النیة۔[3] "اللہ کے لئے ہو" کے الفاظ نیت ہی کو شرط قرار دینے کیلئے ہیں۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے: متعلق بتملیك ای لاجل امتثال امرہ تعالیٰ۔[4] ان کلمات (اللہ تعالیٰ) کا تعلق لفظ تملیک سے ہے یعنی یہ عمل فقط اپنے رب کریم کے حکم کی بجا آوری کے طور پر ہو۔ (ت)

پھر اس میں اعتبار صرف نیت کا ہے اگر چہ زبان سے کچھ اور اظہار کرے، مثلاً دل میں زکوۃ کا ارادہ کیا اور زبان سے ہبہ یا قرض کہہ کر دیا صحیح مذہب پر زکوۃ ادا ہو جائیگی۔ شامی میں ہے :

لا اعتبار للتسمیة فلوسماھا ھبة او قرضا تجزیه فی الاصح۔[5] نام لینے کا اعتبار نہیں، اگر کسی نے اس مال کو ہبہ یا قرض کہہ دیا تب بھی اصح قول کے مطابق زکوۃ ادا ہو جائے گی۔ (ت)

1 مجمع الانہر شرح ملتقی الابحر کتاب الزکوۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۱/ ۱۹۲ 2 در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۲۹ 3 در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۲۹ 4 ردالمحتار کتاب الزکوۃ مصطفی البابی مصر ۲/ ۴ 5 ردالمحتار کتاب الزکوۃ مصطفی البابی مصر ۲/ ۴

Fatawa Rizwia, Volume 10

Furthermore, the intention is only that of the giver; whatever the receiver thinks and takes it as, their knowledge is not at all credible.

In 'Ghamz al-Uyun', it is stated: The credibility lies in the intention of the giver, not in the knowledge of the one to whom the Zakat is being given. (T)

Therefore, if on the day of Eid, one gives some money to their relatives to whom Zakat can be given, calling it 'Eidi', and they take it thinking it is indeed Eidi, but in the heart of the giver, the intention was to give Zakat, it will undoubtedly be fulfilled. Similarly, if someone brought a gift basket, or someone who wakes people for Sahur in the blessed month of Ramadan came to collect an Eid reward, or someone brought news of a friend's arrival or any other happy news, and the giver gave them something with the intention of Zakat in their heart, this giving will also be considered Zakat. Even though outwardly it was a reward for bringing a gift, waking for Sahur, or sharing good news, and they took it thinking it was such. It is stated in reliable books like 'Khulasat al-Fatawa' and 'Khazanat al-Muftin', etc.:

If one gives dirhams to the children of their relatives during the days of Eid, meaning 'Eidi', with the intention of Zakat, or gives to someone who brings news of a friend's arrival, or informs them of some news, or brings a gift of first fruits, or to the drummer (i.e., the one who wakes people for Sahur), or to a teacher with the intention of Zakat, it is permissible. (T)

Moreover, Zakat is a form of charity (Sadaqah), and charity is not invalidated by a corrupt condition; rather, that condition itself becomes invalid. For example, if Zakat was given and a condition was made: "I will give it if you stay here, otherwise I won't," or "I give it on the condition that you spend this money on such-and-such work, build a mosque with it, or spend it on shrouds for the deceased," then Zakat will certainly be fulfilled, and all these conditions will be deemed void and meaningless.

In 'Durr-ul-Mukhtar' regarding the expenditures of Zakat, it is stated: Zakat cannot be spent on building a mosque or on a shroud for the deceased. The legal stratagem (heela) is that Zakat should be given to a poor person, and then they should be told to do these things. Is it permissible for that poor person to go against the order of the giver? I haven't come across this. However, it is apparent that...

1. Ghamz 'Uyun al-Basair, Book of Zakat, Second Art, Mustafa al-Babi Egypt, 1/221.

2. Khulasat al-Fatawa, Book of Zakat, Chapter Eight regarding the payment of Zakat, Maktaba Habibia Quetta, 1/243.

फ़तावा रज़विया, खंड दसवाँ

फिर नीयत भी सिर्फ देने वाले की है, लेने वाला कुछ समझ कर ले उसका ज्ञान मूलतः विश्वसनीय नहीं है।

'ग़मज़ुल उयून' में है कि एतबार देने वाले की नीयत का है न कि उसके ज्ञान का जिसे ज़कात दी जा रही है। (त)

इसलिए अगर ईद के दिन अपने रिश्तेदारों को जिन्हें ज़कात दी जा सकती है, कुछ रुपया 'ईदी' का नाम देकर दिया और उन्होंने ईदी ही समझ कर लिया और उसके दिल में यह नीयत थी कि मैं ज़कात देता हूँ, तो निस्संदेह अदा हो जाएगी। इसी तरह अगर कोई डाली (उपहार) लाया, रमज़ान मुबारक में सहरी को जगाने वाला ईद का इनाम लेने आया या किसी व्यक्ति ने दोस्त के आने या किसी और खुशी की खुशखबरी सुनाई, उसने दिल में ज़कात का इरादा करके उन लोगों को कुछ दिया, यह देना भी ज़कात ही ठहरेगा, हालांकि उनके ज़ाहिर में डाली लाने या सहरी को जगाने या खुशखबरी सुनाने का इनाम था, और उन्होंने अपनी समझ में यही जानकर लिया। 'ख़ुलासतुल फ़तावा' और 'ख़ज़ानतुल मुफ़्तीन' आदि विश्वसनीय ग्रंथों में है:

अगर किसी ने ईद के दिनों में अपने रिश्तेदारों के बच्चों को ज़कात की नीयत से 'ईदी' के रूप में कुछ दिरहम दिए, या उस व्यक्ति को दिए जिसने उसे दोस्त के आने की सूचना दी या कोई खुशखबरी दी या उसे मौसम के पहले फलों का उपहार दिया या ढोल बजाने वाले (अर्थात सहरी पढ़ने वाले) या उस्ताद को ज़कात की नीयत से दिया, तो यह जायज़ है। (त)

फिर ज़कात सदक़ा है और सदक़ा भ्रष्ट शर्त (shart-e-fasid) से भ्रष्ट नहीं होता बल्कि वह शर्त ही भ्रष्ट हो जाती है, उदाहरण के लिए ज़कात दी और यह शर्त कर ली कि "यहाँ रहेगा तो दूँगा वरना न दूँगा", "इस शर्त पर देता हूँ कि तू यह रुपया फलां काम में खर्च करे, उसकी मस्जिद बना दे या मृतकों के कफ़न में खर्च कर दे", तो निश्चित रूप से ज़कात अदा हो जाएगी और ये शर्तें सब बातिल (अमान्य) और बेकार ठहरेंगी।

'दुर्रे मुख़्तार' के ज़कात के व्यय (Masarif) में है कि मस्जिद के निर्माण या मृतक के कफ़न पर ज़कात नहीं लगती और हीला (युक्ति) यह है कि फ़क़ीर को ज़कात दी जाए, फिर उसे इन कामों में

खर्च करने को कहा जाए। क्या उस फ़क़ीर के लिए उस देने वाले के आदेश का उल्लंघन करना जायज़ है? मेरी नज़र से नहीं गुज़रा। हाँ, ज़ाहिर यही है कि...

1. ग़मज़ उयूनुल बसायर, किताबुज़ ज़कात, फ़न-ए-सानी, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/221।
2. ख़ुलासतुल फ़तावा, किताबुज़ ज़कात, आठवां अध्याय ज़कात की अदायगी में, मकतबा हबीबिया क्वेटा, 1/243।

पृष्ठ 71/836

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

پھر نیت بھی صرف دینے والے کی ہے لینے والا کچھ سمجھ کر لے اس کا علم اصلاً معتبر نہیں۔

فی غمز العیون العبرۃ لنیۃ الدافع لاعلم المدفوع۔ 1 غمز العیون میں ہے کہ اعتبار دینے والے کی نیت کا ہے نہ کہ اس کے علم کا جسے زکوٰۃ دی جارہی ہے (ت)

ولہذا اگر عید کے دن اپنے رشتہ داروں کو جنھیں زکوٰۃ دی جاسکتی ہے کچھ روپیہ عیدی کا نام کر کے دیا اور انہوں نے عیدی ہی سمجھ کر لیا اور اس کے دل میں یہ نیت تھی میں زکوٰۃ دیتا ہوں بلاشبہ ادا ہو جائیگی۔ اسی طرح اگر کوئی ڈالی لایا رمضان مبارک میں سحری کو جگانے والا عید کا انعام لینے آیا یا کسی شخص نے دوست کے آنے یا اور کسی خوشی کا مژدہ سنایا اس نے دل میں زکوٰۃ کا قصد کر کے ان لوگوں کو کچھ دیا، یہ دینا بھی زکوٰۃ ہی ٹھہرے گا، اگر چہ ان کے ظاہر میں ڈالی لانے یا سحری کو جگانے یا خوشخبری کو سنانے کا انعام تھا، اور انہوں نے اپنی دانست میں یہی جان کر لیا، خلاصۃ الفتاوٰی و خزانۃ المفتین و غیرہما معتبرات میں ہے:

لو دفع علی صبیان اقاربہ دراھم فی ایام العید یعنی عیدی بنیۃ الزکوٰۃ او دفع الی من یبشرہ بقدوم صدیق او یخبرہ بخبر او یھدی الیہ الباکورۃ او الی الطبال یعنی سحر خواں او الی المعلم بنیۃ الزکوٰۃ جائز۔ 2 اگر کسی نے ایام عید میں اپنے رشتہ داروں کے بچوں کو بنیت زکوٰۃ سے عیدی دیدی یا اس شخص کو جس نے اس کے دوست کی آمد کی اطلاع دی یا کوئی خوشی والی خبر دی یا کسی کو عید مبارک پر دی یا سحری کے وقت بیدار کرنے والوں یا استاد کو دی تو زکوٰۃ ادا ہو جائیگی (ت)

پھر زکوٰۃ صدقہ ہے اور صدقہ شرطِ فاسد سے فاسد نہیں ہوتا بلکہ وہ شرط ہی فاسد ہو جاتی ہے، مثلاً زکوٰۃ دی اور یہ شرط کرلی کہ یہاں رہے گا تو دوں گا ورنہ نہ دونگا اس شرط پر دیتا ہوں کہ تو یہ روپیہ فلاں کام میں صرف کرے اس کی مسجد بنادے یا کفن اموات میں اٹھادے تو قطعاً زکوٰۃ ادا ہو جائیگی اور یہ شرطیں سب باطل و مہمل ٹھہریں گی،

فی مصارف الزکوٰۃ من الدار المختار لا الی بناء مسجد او کفن میت و الحیلۃ ان یتصدق علی الفقیر ثم یا مرہ بفعل ھذہ الاشیاء وھل لہ ان یخالف امرہ ولم ارہ و الظاھر درمختار کے مصارف زکوٰۃ میں ہے کہ مسجد کی تعمیر یا کفن میت پر زکوٰۃ نہیں لگتی اور حیلہ یہ ہے کہ فقیر کو زکوٰۃ دی جائے، پھر اسے ان کاموں میں خرچ کرنے کا کہا جائے، کیا اس فقیر کے لئے اس دینے والے کے حکم کی خلاف ورزی جائز ہے، میری نظر سے نہیں گزرا۔ ہاں ظاہر یہی ہے کہ

1 غمز عیون البصائر کتاب الزکوٰۃ فن ثانی مصطفیٰ البابی مصر ۱/ ۲۲۱ 2 خلاصۃ الفتاویٰ کتاب الزکوٰۃ الفصل الثامن فی اداء الزکوٰۃ مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ۱/ ۲۴۳

Arabic Text

Yes^1, summarized: his statement "(and the apparent is yes)" is a discussion by the author of *Al-Nahr*. He said it is because this is required for the validity of transfer of ownership (*tamleek*). Al-Rahmati said: The apparent is that there is no doubt in it because he made him the owner by giving him zakat from his wealth and imposed a void condition (*shart-e-fasid*) upon him. Gifts (*Hiba*) and charity (*Sadaqa*) are not invalidated by a void condition. ^{2} End of quote from *Rad al-Muhtar*.

Urdu Translation/Explanation

The poor person can act against it. (Summarized). Regarding the statement "the apparent is yes", the author of *Nahr* discussed this and said that the requirement of the sanctity of transfer of ownership is that he can violate it. Rahmati said: It is apparent that there is no doubt in this because he made the poor person the owner by giving zakat of his wealth and added a void condition, while gift and charity do not become void due to a void condition. End of quote from *Rad al-Muhtar*. (T)

Then, when an explicit condition, despite the sincerity of intention in paying zakat, does not interfere, then such conduct which apparently indicates the meaning of a condition—for example, "give when he is here and don't give when he is not"—will even more so not cause interference.

Arabic Text

I say: This has become clear from the issues of the *Bashir* (harbinger of good news), the *Tabbal* (drummer), and the one who brings *Madi al-Bakura* (early season fruits). People are moved to give to them only because of these actions of theirs; had they not done so, they would not have been given anything. Among such issues is giving *Eidi* with the intention of zakat to one's servants, whether male or female; this counts as zakat, as stated in *Al-Mi'raj* and elsewhere, despite knowing that if they hadn't served, they wouldn't have received this money. In short, these

Urdu Translation/Explanation

I say: This point has also become clear from the issues of the *Bashir* (harbinger), the *Sahar Khawan* (one who wakes people for Suhoor), and the one who gifts the first produce of the season. People give to them because of their work; if they did not do this work, most often these poor souls would be given nothing. Similarly, there is the issue that giving *Eidi* to servants (whether male or female) with the intention of zakat fulfills the zakat obligation, as mentioned in *Mi'raj* etc., even though it is a settled fact that if they had not served, they wouldn't have

Arabic Text	Urdu Translation/Explanation
relationships are the motives for people to specify their zakat for these particular individuals. Thus, the correlation of the gift with the existence or absence of these relationships does not define it as a "compensation". Rather, it depends on the intention; when the intention is sincere, the zakat will be fulfilled.	received this money. In short, these are the relationships due to which people give zakat to these specific individuals. Therefore, the connection of the gift with the existence or absence of these relationships does not define the meaning of it being a compensation; it depends on the intention. When the intention is pure, the zakat will be fulfilled. (T)

---

^{1} *Durr-e-Mukhtar*, Kitab al-Zakat, Bab al-Masrif, Mujtabai Press, Delhi, 1/141 ^{2} *Rad al-Muhtar*, Kitab al-Zakat, Bab al-Masrif, Mustafa al-Babi, Egypt, 29/2

अरबी पाठ

हाँ^{1}, संक्षेप में: उनका कथन "(और स्पष्ट रूप से हाँ)" अल-नहर के लेखक की चर्चा है। उन्होंने कहा क्योंकि यह स्वामित्व हस्तांतरण (तमलीक) की वैधता के लिए आवश्यक है। रहमती ने कहा: स्पष्ट यह है कि इसमें कोई संदेह नहीं है क्योंकि उसने अपने धन की ज़कात देकर उसे स्वामी बना दिया और उस पर एक अमान्य शर्त (शर्त-ए-फ़ासिद) लगा दी। उपहार (हिबा) और दान (सदक़ा) अमान्य शर्त से अमान्य नहीं होते। ^{2} रद अल-मुहतार का उद्धरण समाप्त।

उर्दू अनुवाद/व्याख्या

फ़क़ीर इसके विरुद्ध कार्य कर सकता है। (संक्षेप में)। उनका कथन "स्पष्ट रूप से हाँ" के संबंध में, नहर के लेखक ने इस पर चर्चा करते हुए कहा कि स्वामित्व हस्तांतरण की पवित्रता का तकाज़ा यही है कि वह इसका उल्लंघन कर सकता है। रहमती ने कहा: स्पष्ट यही है कि इसमें कोई संदेह नहीं है क्योंकि उसने फ़क़ीर को अपने माल की ज़कात देकर उसे मालिक बना दिया और साथ ही एक गलत (फ़ासिद) शर्त जोड़ दी, जबकि उपहार और सदक़ा गलत शर्त से गलत नहीं होते। रद अल-मुहतार का उद्धरण समाप्त। (त)

फिर जब स्पष्ट शर्त, ज़कात अदा करने की नीयत की शुद्धि के बावजूद बाधा नहीं डालती, तो ऐसा व्यवहार जो स्पष्ट रूप से शर्त के अर्थ को दर्शाता है—उदाहरण के लिए, "जब वह यहाँ हो तो दो और जब न हो तो न दो"—प्रथम दृष्टया बाधा का कारण नहीं बनेगा।

अरबी पाठ

मैं कहता हूँ: यह बशीर (खुशखबरी देने वाला), तब्बाल (ढोल बजाने वाला) और मेहदी अल-बाकुरा (शुरुआती फल लाने वाला) के मुद्दों से स्पष्ट हो गया है। लोग उन्हें उनके इन कार्यों के कारण ही देने के लिए प्रेरित होते हैं; यदि वे ऐसा न करते, तो उन्हें कुछ भी नहीं दिया जाता। ऐसे ही मुद्दों में से एक है अपने सेवकों (चाहे पुरुष हों या महिलाएँ) को ज़कात की नीयत से 'ईदी' देना; इससे ज़कात अदा हो जाती है, जैसा कि अल-मिराज आदि में है,

उर्दू अनुवाद/व्याख्या

मैं कहता हूँ: खुशखबरी देने वाले, सहर ख़्वां (सहरी के समय जगाने वाले) और नए फलों का उपहार देने वाले के मुद्दों से भी यह बात स्पष्ट हो गई है क्योंकि लोग उन्हें उनके काम की वजह से देते हैं; अगर वे यह काम न करें तो अक्सर इन बेचारों को कुछ भी नहीं दिया जाता। इसी तरह यह मसला कि सेवकों (चाहे पुरुष हों या महिलाएँ) को ज़कात की नीयत से ईदी देने से ज़कात अदा हो जाती है, जैसा कि मिराज आदि

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद/व्याख्या
बावजूद इसके कि यह ज्ञात है कि यदि वे सेवा न करते तो उन्हें यह राशि नहीं मिलती। संक्षेप में, ये वे संबंध हैं जो लोगों को इन विशेष व्यक्तियों के लिए अपनी ज़कात निर्दिष्ट करने के लिए प्रेरित करते हैं। अतः, इन संबंधों की उपस्थिति या अनुपस्थिति के साथ दान का जुड़ाव इसे "मुआवज़ा" के रूप में परिभाषित नहीं करता है। बल्कि, यह नीयत (इरादे) पर निर्भर करता है; जब नीयत शुद्ध होगी, तो ज़कात अदा हो जाएगी।	में है, हालाँकि यह बात सर्वमान्य है कि अगर वे सेवा न करते तो उन्हें यह राशि न मिलती। संक्षेप में, ये वे रिश्ते/संबंध हैं जिनकी वजह से लोग इन विशिष्ट व्यक्तियों को ज़कात देते हैं। तो अब दान का इन संबंधों की मौजूदगी या अनुपस्थिति के साथ जुड़ा होना इसे मुआवजे का अर्थ नहीं देता; यह नीयत पर निर्भर करेगा। जब नीयत शुद्ध होगी तो ज़कात अदा हो जाएगी। (त)

---

^{1} दुर्र-ए-मुख़्तार, किताब अल-ज़कात, बाब अल-मसरिफ़, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/141 ^{2} रद अल-मुहतार, किताब अल-ज़कात, बाब अल-मसरिफ़, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 29/2

عربی عبارت

نعم $1^$ ہ ملخصاً قولہ (والظاھر نعم) البحث لصاحب النھر وقال لانہ مقتضی صحۃ التملیك قال الرحمتی والظاھر انہ لا شبھۃ فیہ لا نہ ملکہ ایاہ عن زکوۃ مالہ و شرط علیہ شرطا فاسدا او الھبۃ و الصدقۃ لا تفسدان بالشرط الفاسد $2^$ اھ ردالمحتار۔

اردو ترجمہ و تشریح

فقیر اس کے خلاف کر سکتا ہے اھ ملخصاً۔ قولہ والظاہر نعم، صاحب نہر نے اس پر بحث کرتے ہوئے فرمایا کہ حُرمتِ تملیک کا تقاضہ یہی ہے کہ وہ خلاف ورزی کر سکتا ہے۔ رحمتی نے فرمایا: ظاہر یہی ہے کہ اس میں کوئی شک نہیں اس لئے کہ اس نے فقیر کو اپنے مال کی زکوٰۃ دے کر اسے مالک بنادیا اور ساتھ شرطِ فاسد کا اضافہ کردیا حالانکہ ہبہ اور صدقہ شرطِ فاسد سے فاسد نہیں ہوتے اھ ردالمحتار (ت)

پھر جب صریح شرط باوجود خلوصِ نیت اداء زکوٰۃ میں خلل انداز نہیں تو ایسا برتاؤ جو بظاہر معنی شرط پر دلالت کرے مثلاً جب یہاں رہے تو دے اور نہ رہے تو نہ دے، بدرجہ اولیٰ باعث خلل نہ ہوگا۔

عربی عبارت

اقول: وقد ظھر ھذا من مسائل البشیر والطبال ومھدي البالکورۃ فانہ انما یحمل الناس علی الدفع الیھم افعالھم ھذہ ولو لم یفعلو افلر یمالم یدفع الیھم شیء و من

اردو ترجمہ و تشریح

اقول: بشارت دینے والے، سحر خواں (سحری کے وقت بیدار کرنے والا) اور نئے پھلوں کا ہدیہ دینے والے کے مسائل سے بھی یہ بات واضح ہوگئی ہے کیونکہ لوگ ان کو ان کے عمل کی وجہ سے دیتے ہیں، اگر وہ یہ کام نہ

عربی عبارت	اردو ترجمہ و تشریح
ذلك مسئلة دفع العيدى بنية الزكوة الى خدامه من الرجال والنساء حيث يقع عن الزكوة كما فى المعراج وغيره مع العلم بانه لو لم يخدموه لما اعطاهم و بالجملم فهذه العلائق تكون بواعث للناس على تخصيصهم بصرف الزكوة فدوران العطاء معها وجودا وعدما لا يعين معنى التعويض وانما المراجع النية فاذا خلصت اجزت۔	کریں تو اکثر اوقات ان بیچاروں کو کچھ بھی نہیں دیا جاتا، اسی طرح یہ مسئلہ کہ خدام (خواہ مرد ہوں یا خواتین) کو نیت زکوٰۃ سے عیدی دینے سے زکوٰۃ ادا ہوجاتی ہے، جیسا کہ معراج وغیرہ میں ہے، حالانکہ یہ بات مسلمہ ہے کہ اگر وہ خدمت نہ کرتے تو انہیں یہ رقم نہ ملتی، الغرض یہ وہ تعلقات ہیں جن وجہ سے لوگ ان مخصوص لوگوں کو زکوٰۃ دیتے ہیں تو اب عطا کا تعلقات کے ساتھ دوران وجوداً وعدماً عوض بنانے کے معنی کو معین نہیں کرتا، نیت پر مدار ہوگا جب نیت خالص ہوگی تو زکوٰۃ ادا ہو جائیگی۔ (ت)

1^ درمختار کتاب الزکوٰۃ باب المصرف مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۴۱ 2^ ردالمحتار کتاب الزکوٰۃ باب المصرف مصطفی البابی مصر ۲۹/۲

Fatawa Razvia, Volume 10

When these matters are well understood, the answer to the problem, by the grace of Allah, becomes clear. If the givers had given with the intention of compensation and as wages, or if they had mixed this intention along with the intention of Zakat, then certainly Zakat would not have been fulfilled.

(Arabic)	(Urdu)
As for the first case, it is due to the lack of intention; as for the second, it is due to the lack of sincerity. It is not like the intention of diet/abstinence along with the intention of fasting, where it is valid because it is the intention of a necessity, not an intention that contradicts, as stated by the absolute researcher (Muhaqqiq al-Ala al-Itlaq) in Fath al-Qadir. This is not the case here, for compensation is opposed to charity.	In the first case (with the intention of compensation and wages), there is no intention of Zakat at all. In the second case (where the intention of compensation is mixed with Zakat), Zakat will not be fulfilled due to lack of sincerity. This is not like intending to follow a medical exemption due to fever along with the intention of fasting, which is permissible because the intention in that case is for a necessity, not for something contradictory. As the absolute researcher stated in Fath al-Qadir, and here it is not so because giving for compensation is contradictory to charity. (T)

While it is clear from the statement of the question that they gave solely with the intention of Zakat and considered it only as Zakat, with no regard for compensation or wages at all, then undoubtedly Zakat was fulfilled. Even if the person to whom Zakat was given knows something in his own knowledge, even if they explicitly said to him that they will give if he stays and not if he doesn't, even if they act accordingly (i.e., giving during presence and not during absence), since the specific intention is only for Zakat, none of these matters negate or contradict it.

(Arabic)	(Urdu)
As we have established, issuing a fatwa here of non-validity based on the contradiction of the recipient's knowledge—as has occurred from some who claim high standing in religious science—stems from a lack of	As we have researched, to now give a fatwa that giving Zakat here is not permissible because the recipient does not know it is Zakat—as some individuals who declare their superiority in religious knowledge have done—is due to a lack of

(Arabic)	(Urdu)
deliberation or a misunderstanding. Allah is the one whose help is sought in removing doubts. Praise be to Allah, and Allah the Glorified and Exalted knows best.	careful thought or misunderstanding. Allah Almighty is the helper in dispelling doubts. Praise be to Allah, and Allah, the Glorified and Exalted, knows best. (T)

Problem 3: Asked by Maulvi Ali Ahmad Sahib, author of Tahzeeb-us-Sibyan, 19 Jumada al-Ula 1312 AH.

What do the scholars of religion say in this matter that in these days of famine, some people distribute grains like maize etc. to the hungry from the head of Zakat, is this permissible or not? Explain and you shall be rewarded.

The Answer:

Giving grain, maize etc. of that value to a needy person at market rates instead of money, etc. for Zakat, with the intention of Zakat, making him the owner...

फ़तवा-ए-रज़विया, जिल्द 10

जब ये बातें अच्छी तरह समझ में आ जाएं, तो अल्लाह की कृपा से समस्या का उत्तर स्पष्ट हो जाता है। यदि देने वाले मुआवज़े (बदले) के इरादे से और मज़दूरी के तौर पर देते, या ज़कात के इरादे के साथ यह इरादा भी मिला लेते, तो निश्चित रूप से ज़कात अदा नहीं होती।

(अरबी)

पहले मामले में, नीयत (ज़कात की) की कमी के कारण, और दूसरे मामले में, निष्ठा (इखलास) की कमी के कारण। यह रोज़े की नीयत के साथ परहेज़ की नीयत रखने जैसा नहीं है, जो जायज़ है क्योंकि उस स्थिति में नीयत एक आवश्यक सहगामी के लिए होती है, न कि किसी विरोधाभासी चीज़ के लिए। जैसा कि मुहाक़्क़िक़ अल-अतलाक ने 'फ़तह अल-क़दीर' में स्पष्ट किया है, यहाँ ऐसा नहीं है क्योंकि मुआवज़े के तौर पर देना सदक़ा (दान) के विपरीत है।

(उर्दू)

पहली सूरत में (मुआवज़े और मज़दूरी के इरादे से) ज़कात की नीयत ही नहीं है, और दूसरी सूरत में (यानी ज़कात के साथ मुआवज़े की नीयत भी हो) तो निष्ठा न होने के कारण ज़कात अदा नहीं होगी। यह उस तरह नहीं है जैसे बुखार के कारण छूट की नीयत रोज़े की नीयत के साथ हो, जो कि जायज़ है क्योंकि उस सूरत में नीयत ज़रूरत की है, विरोधाभासी नहीं। जैसा कि मुहाक़्क़िक़ अल-अतलाक ने 'फ़तह अल-क़दीर' में फ़रमाया है, और यहाँ वैसा नहीं है क्योंकि मुआवज़े में देना सदक़ा के विपरीत है। (त)

जबकि सवाल के बयान से साफ़ है कि उन्होंने सिर्फ़ ज़कात की नीयत से दिया और उसे ज़कात ही समझा, मुआवज़े या मज़दूरी का बिल्कुल भी ध्यान नहीं था, तो बेशक ज़कात अदा हो गई। चाहे वह व्यक्ति जिसे ज़कात दी गई अपने ज्ञान में कुछ भी जानता हो, चाहे उन्होंने उससे साफ़ कह भी दिया हो कि यहाँ रहोगे तो देंगे वरना नहीं देंगे, चाहे वे उसी के अनुसार काम भी करें (यानी उपस्थिति के दिनों में दें और अनुपस्थिति में न दें), क्योंकि नीयत में सिर्फ़ ज़कात का विशेष इरादा है, तो इनमें से कोई भी बात इसे नकारती या इसके विपरीत नहीं है।

(अरबी)

जैसा कि हमने शोध किया है, प्राप्तकर्ता की जानकारी के विरोधाभास के आधार पर यहाँ (ज़कात के) अमान्य होने का फ़तवा देना—जैसा

(उर्दू)

जैसा कि हमने शोध किया है, अब इस पर फ़तवा देना कि यहाँ ज़कात देना इसलिए जायज़ नहीं है क्योंकि जिसे दी जा रही है उसे इसकी जानकारी

(अरबी)

कि धार्मिक ज्ञान में उच्च स्थान का दावा करने वाले कुछ लोगों से हुआ है—सोच-विचार की कमी या गलतफहमी के कारण है। अल्लाह ही भ्रमों को दूर करने में मददगार है। तमाम तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं, और अल्लाह, जो पवित्र और सर्वोच्च है, सबसे बेहतर जानता है।

(उर्दू)

नहीं है—जैसा कि दीन के इल्म में अपनी श्रेष्ठता का ऐलान करने वाले कुछ हज़रात ने किया—यह ग़ौर-ओ-फ़िक्र की कमी या ग़लतफ़हमी की वजह से हुआ। अल्लाह तआला ही वहम दूर करने पर मददगार है, और तमाम तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं, और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

(त)

मसला 3: सायल मौलवी अली अहमद साहब, मुसन्निफ़ (लेखक) तहज़ीब-उस-सिब्यान, 19 जमादी-उल-ऊला 1312 हिजरी।

दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि इन दिनों अकाल में कुछ लोग ज़कात की मद से भूखों को मक्का आदि अनाज बाँटते हैं, यह जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

अल-जवाब:

ज़कात में रुपयों आदि के बदले बाज़ार के भाव से उस कीमत का अनाज, मक्का आदि किसी मोहताज (ज़रूरतमंद) को देकर ज़कात की नीयत से उसे मालिक (बना देना)...

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

جب یہ امور ذہن نشین ہو لیے تو جواب مسئلہ بحمدہ تعالی واضح ہو گیا، اگر وہ اگر دینے والے بقصد معاوضہ و بطور اجرت دیتے یانیت زکوٰۃ کے ساتھ یہ نیت بھی ملا لیتے تو بیشک زکوٰۃ ادا نہ ہوتی۔

| اما علی الاول فلعدم النیة و اما علی الثانی فلعدم الاخلاص ولا یکون کنیة الحمیة مع نیة الصوم حیث تجزی لانها نیة لازم لا نیة مناف کما افاده المولی المحقق علی الاطلاق في فتح القدیر ولا کذلك ما هنا فان التعویض یبائن التصدق۔ | پہلی صورت (بقصد معاوضہ و اجرت) میں نیت زکوٰۃ ہی نہیں اور دوسری صورت یعنی (زکوٰۃ کے ساتھ معاوضہ کی نیت بھی ہو) تو اخلاص نہ ہونے کی وجہ سے زکوٰۃ ادا نہ ہو گی اور اس طرح نہیں جیسے بخار کی بناء پر رخصت کی نیت روزہ کی نیت کے ساتھ کہ یہ جائز ہے کیونکہ نیت اس صورت میں لازم کی نیت ہے منافی کی نہیں، جیسا کہ مولٰی محقق علی الاطلاق نے فتح القدیر میں افادہ فرمایا ہے اور یہاں ایسا نہیں ہے کیونکہ معاوضہ میں دینا صدقہ کے منافی ہے۔ (ت) |

جبکہ تقریر سوال سے ظاہر کہ انہوں نے محض بنیت زکوٰۃ دیا اور اسے زکوٰۃ ہی خیال کیا، معاوضہ و اجرت کا اصلاً لحاظ نہ تھا تو بے شک زکوٰۃ ادا ہو گئی اگر چہ وہ شخص جسے زکوٰۃ دی گئی اپنے علم میں کچھ جانتا ہو ، اگر چہ انہوں نے اس سے صاف کہہ بھی دیا کہ یہاں رہوگے تو دیں گے ورنہ نہ دیں گے، اگر چہ وہ عمل بھی اس کے مطابق کریں یعنی ایام حاضری میں دیں غیر حاضری میں نہ دیں کہ جب نیت میں صرف زکوٰۃ کا خاص قصد ہے تو ان میں کوئی امر اس کا نافی و منافی نہیں۔

| کما حققنا فالا فتاء ههنا بعدم الاجزاء بناء علی مخالفة علم المدفوع الیه کما وقع عن بعض المدعین علو الکعب في العلم الدینیة ناش عن قلة التدبیر او سوء الفهم واللہ المستعان وعلی ازالة الوهم والحمد للہ واللہ سبحانه وتعالی اعلم۔ | جیسا کہ ہم نے تحقیق کی ہے، پس اب اس پر فتوی دینا کہ یہاں زکوٰۃ دینا اس لئے جائز نہیں کہ جس کو دی جا رہی ہے اس کے علم میں یہ نہیں ہے، جیسا کہ علم دین میں اپنے فوقیت کا اعلان کرنے والے بعض حضرات نے کیا، یہ قلت تدبر یا سوء فہم کی وجہ سے ہوا۔ اللہ تعالیٰ ہی ازالہ وہم پر مددگار ہے والحمد للہ اللہ واللہ سبحنہ و تعالیٰ اعلم (ت) |

مسئلہ ۳: مسئولہ مولوی علی احمد صاحب مصنف تہذیب الصبیان ۱۹ جمادی الاولیٰ ۱۳۱۲ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ان دنوں قحط میں بعض آدمی مد زکوٰۃ میں بھوکوں کو غلہ مکا وغیرہ تقسیم کرتے ہیں، یہ جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب:

زکوٰۃ میں روپے وغیرہ کہ عوض بازار کے بھاؤ سے اس قیمت کا غلہ مکا وغیرہ محتاج کو دے کر بہ نیت زکوٰۃ مالک

Fatawa Razawiyya Volume 10

Giving [in kind] is permissible and sufficient; Zakat will be discharged. The value of the item in the possession of the needy person, based on the market rate, will be credited. Overheads will not be counted. For example, if the current rate of corn is nine seers [per rupee], and nine mounds of corn are bought and distributed to the needy, then only forty rupees will be counted towards Zakat. The wages for porters or transportation costs paid for it will not be included in the account. Or if it was brought from a village and distributed, the rent, octroi, and taxes will not be deducted. Or if the grain was cooked and given, the cooking charges and the cost of firewood will not be credited; rather, the value of the cooked item in the market will be counted.

Arabic	**Urdu**
Because its pillar is the transfer of ownership to a needy Muslim for the sake of Allah Almighty without compensation.	Because its pillar is that some needy person is made its owner for the sake of Allah's pleasure and not as a compensation. (T)

In Durr-e-Mukhtar it is stated:

Arabic	**Urdu**
If someone feeds an orphan with the intention of Zakat, it is not sufficient for him unless he hands over the food to him, just as if he had clothed him. [1]	When someone feeds an orphan with the intention of Zakat, Zakat will not be discharged until the food is handed over to him; the same applies to the case of clothing. (T)

In Alamgiri it is stated:

Arabic	**Urdu**
Other than grains, it is not permissible except by value. [2]	This is for things other than grains because there the value itself is necessary. (T)

In the same work it is stated: Bread is not permissible except by consideration of value. [3] (The consideration of bread without value is not permissible - T). And Allah, Glory be to Him and Exalted is He, knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete and most wise.

Question 4: What do the scholars of religion say in this situation: if someone, instead of the Zakat money due upon him, fed the needy or provided them with clothes, will the Zakat be discharged or not? Explain and be rewarded.

Answer: Giving clothes to the needy or giving them food instead of Zakat money is permissible, and through this, Zakat will be discharged. It is not mandatory to give specifically in cash. However, the meaning of paying Zakat is that the needy person should be made the owner of that amount of wealth.

---

[1] Durr-e-Mukhtar, Book of Zakat, Mujtabai Press, Delhi, 1/1291 [2] Fatawa Hindiyya, Chapter Eight on Sadqat al-Fitr, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/192 [3] Fatawa Hindiyya, Chapter Eight on Sadqat al-Fitr, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/192

फतावा रज़विया जिल्द दहुम (खंड 10)

[वस्तु के रूप में] देना जायज़ और पर्याप्त है, ज़कात अदा हो जाएगी। ज़रूरतमंद के पास जो चीज़ पहुँची है, बाज़ार भाव के अनुसार उसकी जो कीमत है, वही मुजरा (क्रेडिट) होगी। ऊपरी खर्च नहीं गिने जाएंगे। उदाहरण के लिए, आजकल मक्का की दर नौ सेर [प्रति रुपया] है, नौ मन मक्का खरीदकर ज़रूरतमंदों में बाँटी गई, तो ज़कात में केवल चालीस रुपये गिने जाएंगे। इस पर जो कुली का खर्च या ढुलाई दी गई है, वह हिसाब में नहीं जोड़ी जाएगी। या गाँव से मँगाकर बाँटी गई, तो किराया, चुंगी और टैक्स नहीं काटे जाएंगे। या अनाज पकाकर दिया गया, तो पकाने की मज़दूरी और लकड़ियों की कीमत मुजरा नहीं होगी; पकी हुई चीज़ की बाज़ार में जो कीमत होगी, वही गिनी जाएगी।

अरबी	उर्दू
क्योंकि इसका मूल स्तंभ किसी ज़रूरतमंद मुसलमान को अल्लाह की रज़ा के लिए बिना किसी बदले के मालिक बनाना है।	क्योंकि इसका रुकन (स्तंभ) यह है कि किसी फ़क़ीर (ज़रूरतमंद) को अल्लाह की रज़ा की खातिर उसका मालिक बनाया जाए और वह बदले के तौर पर न हो। (त)

दुर्रे मुख्तार में है:

अरबी	उर्दू
अगर किसी ने यतीम को ज़कात की नीयत से खाना खिलाया, तो वह उसके लिए पर्याप्त नहीं जब तक कि खाना उसके सुपुर्द न कर दे, जैसे कि उसे कपड़े पहनाए हों। [1]	जब किसी ने यतीम को ज़कात की नीयत से खाना खिलाया, तो ज़कात अदा नहीं होगी जब तक कि खाना उसके हवाले न कर दे, वैसे ही जैसे लिबास (कपड़े) का मामला है। (त)

आलमगीरी में है:

अरबी	उर्दू
अनाज के अलावा अन्य चीज़ों में मूल्य (कीमत) के बिना जायज़ नहीं है। [2]	यह दानों (अनाज) के अलावा में है क्योंकि वहाँ कीमत ही ज़रूरी है। (त)

उसी में है: रोटी का मूल्य (कीमत) के बिना एतबार जायज़ नहीं। [3] (रोटी की कीमत के बिना ज़कात जायज़ नहीं। त) और अल्लाह सुब्हानहु व तआला सबसे बेहतर जानता है, और उसका इल्म, उसकी शान बुलंद हो, सबसे कामिल (पूर्ण) और हिकमत वाला है।

मसला 4: उलमा-ए-दीन इस बारे में क्या फरमाते हैं कि अगर किसी व्यक्ति ने अपने ऊपर वाजिब ज़कात की रकम के बदले ज़रूरतमंदों को खाना खिलाया या कपड़े बनवा दिए, तो ज़कात अदा होगी या नहीं? बयान फरमाएं और सवाब पायें।

जवाब: ज़कात की रकम के बदले ज़रूरतमंदों को कपड़े बनवा देना या उन्हें खाना दे देना जायज़ है और इससे ज़कात अदा हो जाएगी। केवल नकद रुपया देना ही वाजिब नहीं है। मगर ज़कात अदा करने का मतलब यह है कि ज़रूरतमंद को उस कद्र माल का मालिक बना दिया जाए।

---

[1] दुर्रे मुख्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/1291 [2] फतावा हिन्दिया, बाब अष्टम फ़ी सदक़तुल फ़ित्र, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/192 [3] फतावा हिन्दिया, बाब अष्टम फ़ी सदक़तुल फ़ित्र, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/192

पृष्ठ 74/836

کر دینا جائز و کافی ہے، زکوۃ ادا ہو جائیگی، جس قدر چیز محتاج کی ملک میں گئی بازار کے بھاؤ سے جو قیمت اس کی ہے وہی مجرا ہو گی بالائی خرچ محسوب نہ ہوں گے، مثلاً آج کل مکا کا نرخ نو سیر ہے نو من مکا مول لے کر محتاجوں کو بانٹی تو صرف چالیس روپیہ زکوۃ میں ہوں گے، اس پر جو پلہ داری یا بار برداری دی ہے حساب میں نہ لگائی جائے گی، یا گاؤں سے منگا کر تقسیم کی تو کرایہ گھاٹ چونگی وضع نہ کریں گے، یا غلہ پکا کر دیا تو پکوائی کی اجرت، لکڑیوں کی قیمت مجرا نہ دینگے، اس کی پکی ہوئی چیز کو جو قیمت بازار میں وہی محسوب ہو گی،

عربی	اردو
لان رکنھا التملیك من فقیر مسلم لوجه الله تعالی من دون عوض۔	کیونکہ اس کا رکن یہ ہے کہ کسی فقیر کو اللہ کی رضا کی خاطر اس کا مالک بنایا اور بطور معاوضہ نہ ہو۔ (ت)

در مختار میں ہے:

عربی	اردو
لو اطعم یتیماً ناویا الزکوۃ لا یجزیه الا اذا دفع الیه المطعوم کما لو کساہ۔ [1]	جب کسی نے یتیم کو نیت زکوۃ سے کھانا کھلایا زکوۃ ادا نہ ہوگی جب تک کھانا اس کے حوالے نہ کردے، ایسے ہی لباس کا معاملہ ہے(ت)

عالمگیری میں ہے:

عربی	اردو
ماسواہ من الحبوب لا یجوز الا بالقیمۃ۔ [2]	یہ دانوں کے علاوہ میں ہے کیونکہ وہاں قیمت ہی ضروری ہے (ت)

اسی میں ہے: الخبز لا یجوز الا باعتبار القیمۃ [3] (روٹی کا اعتبار قیمت کے بغیر جائز نہیں۔ ت) واللہ سبحنہ و تعالی اعلم و علمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

مسئلہ ۴: کیا فرماتے علمائے دین اس صورت میں کہ اگر کسی شخص نے عوض اس زر زکوۃ کے جو اس کے ذمہ واجب ہے محتاجوں کو کھانا کھلایا یا کپڑے بنا دئے تو زکوۃ ادا ہو جائیگی یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: عوض زر زکوۃ کے محتاجوں کو کپڑے بنا دینا، انہیں کھانا دے دینا جائز ہے اور اس سے زکوۃ ادا ہو جائیگی خاص روپیہ ہی دینا واجب نہیں مگر ادائے زکوۃ کے معنی یہ ہیں کہ اس قدر مال کا محتاجوں کو مالک کر دیا جائے

---

[1] در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۲۹۱ [2] فتاوی ہندیہ الباب الثامن فی صدقۃ الفطر نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۱۹۲ [3] فتاوی ہندیہ الباب الثامن فی صدقۃ الفطر نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۱۹۲

Fatawa Razawiyya, Volume Ten

For this reason, if someone invites the poor and needy to their home, for example, cooks food, and feeds them in the manner of an invitation (hospitality), Zakat will never be fulfilled, because this form is 'Ibahat' (permission), not 'Tamlik' (transfer of ownership). That is, the invited person consumes the food while it remains the property of the host and does not become its owner. Therefore, it is not permissible for guests to give the food from the invitation to beggars or animals without the host's permission, nor should those at one table pass items to those at another table to keep for themselves, nor should they take home what remains after finishing the meal.

[Left Column - Arabic]: In 'Al-Durr al-Mukhtar': "If someone feeds an orphan with the intention of Zakat, it is not sufficient unless they hand over the food to them, just as if they provided clothing."[1] [Right Column - Urdu]: In 'Durr al-Mukhtar', it is stated that if someone feeds an orphan with the intention of Zakat, then Zakat will not be fulfilled unless the food is handed over to them, just as if clothing had been provided to them.

[Left Column - Arabic]: (End). His statement "just as if they provided clothing" means it is sufficient (valid).[2] [H] [Right Column - Urdu]: (End). His statement "just as if they provided clothing" means that in this case as well, Zakat would be fulfilled. [Ah] (Tahtawi from Al-Halabi).

[Left Column - Arabic]: Tahtawi from Al-Halabi. In 'Hashiya al-Tahtawi' as well, in the chapter on 'Al-Masrif': "Feeding is not sufficient except by way of transfer of ownership (tamlik). If one feeds them at their place with the intention of Zakat, it is not sufficient."[3] End. [Right Column - Urdu]: And in 'Hashiya al-Tahtawi' in the Chapter on 'Al-Masrif', it is also stated that feeding is not sufficient; however, if ownership is transferred, then it is sufficient. And if someone feeds them with the intention of Zakat, it will not be sufficient. (End).

Yes, if the owner of Zakat sends food—whether raw or cooked—to the homes of the deserving, or feeds them at their own home but clearly transfers ownership first, then Zakat will be fulfilled.

[Left Column - Arabic]: "For the criterion is transfer of ownership, and there is no entry for it whether it is eaten in the house of the Zakat-giver or sent to the houses of the deserving recipients. What Al-Tahtawi mentioned is based on the customary

invitation, for it is what is immediately understood from it, and it occurs only by way of permission." And Allah the Almighty knows best. [Right Column - Urdu]: Because the consideration is for transfer of ownership (tamlik); it has no bearing whether the food was eaten at the home of the Zakat-giver or sent to the homes of the deserving people. And what Al-Tahtawi mentioned is based on the customary invitation, because it is what is naturally understood from it, that such an invitation is not by way of transfer of ownership but rather by way of permission (ibahat). And Allah the Almighty knows best. (T)

[Footnotes] 1. Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Mujtabai Press, Delhi, 1/129. 2. Hashiya al-Tahtawi on Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/388. 3. Hashiya al-Tahtawi on Al-Durr al-Mukhtar, Bab al-Masrif, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/425.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम (दसवीं)

इसी कारण, यदि कोई व्यक्ति, उदाहरण के लिए, गरीबों और बेसहारा लोगों को अपने घर बुलाता है, खाना पकाकर दावत के रूप में खिलाता है, तो जकात कभी अदा नहीं होगी, क्योंकि यह स्वरूप 'इबाहत' (अनुमति) है न कि 'तमलीक' (स्वामित्व हस्तांतरण)। यानी, आमंत्रित व्यक्ति भोजन मेज़बान के स्वामित्व में ही खाता है और उसका मालिक नहीं बन जाता। इसी कारण मेहमानों के लिए यह जायज़ नहीं है कि वे मेज़बान की अनुमति के बिना दावत का भोजन भिखारियों या जानवरों को दें, या एक थाली वाले दूसरी थाली वालों को अपने पास रखने के लिए कुछ दें, या भोजन के बाद बचे हुए हिस्से को अपने घर ले जाएं।

[बायाँ कॉलम - अरबी]: 'अल-दुर्र अल-मुख्तार' में है: "यदि किसी ने जकात की नीयत से किसी अनाथ को भोजन खिलाया, तो वह पर्याप्त नहीं है जब तक कि भोजन उसे सौंप न दिया जाए, जैसे कि उसे कपड़े पहनाए गए हों।"[1] [दायाँ कॉलम - उर्दू]: 'दुर्र अल-मुख्तार' में है कि यदि किसी ने जकात की नीयत से अनाथ को खाना खिलाया, तो जकात अदा नहीं होगी, सिवाय उस स्थिति के जब खाना उसके सुपुर्द कर दिया गया हो, जैसा कि अगर उसे कपड़े पहनाए गए हों।

[बायाँ कॉलम - अरबी]: (समाप्त)। उनके कथन "जैसे कि उसे कपड़े पहनाए गए हों" का अर्थ है कि वह पर्याप्त है।[2] [ह] [दायाँ कॉलम - उर्दू]: (समाप्त)। उनके कथन "जैसे कि उसे कपड़े पहनाए गए हों" का अर्थ है कि इस स्थिति में भी जकात अदा हो जाएगी। [अह] (तहतावी, हलबी से)।

[बायाँ कॉलम - अरबी]: तहतावी, हलबी से। और 'हाशिया अल-तहतावी' के'बाब अल-मसरिफ' में भी है: "भोजन खिला देना पर्याप्त नहीं है, सिवाय स्वामित्व हस्तांतरण (तमलीक) के माध्यम से। और यदि किसी ने अपनी जगह पर जकात की नीयत से खिलाया, तो यह पर्याप्त नहीं होगा।"[3] समाप्त। [दायाँ कॉलम - उर्दू]: और 'हाशिया अल-तहतावी' के'बाब अल-मसरिफ' में यह भी है कि खाना खिला देना पर्याप्त नहीं है, अलबत्ता अगर मालिक बना दिया जाए तो फिर पर्याप्त है। और अगर किसी ने जकात की नीयत से खाना खिलाया तो पर्याप्त नहीं होगा। (समाप्त)।

हाँ, यदि जकात देने वाले ने कच्चा या पका हुआ भोजन ज़रूरतमंदों के घर भिजवा दिया या अपने ही घर खिलाया लेकिन स्पष्ट रूप से पहले मालिक बना दिया, तो जकात अदा हो जाएगी।

[बायाँ कॉलम - अरबी]: "क्योंकि मापदंड स्वामित्व का हस्तांतरण है, और इसमें इसका कोई दखल नहीं है कि भोजन जकात देने वाले के घर में खाया गया या ज़रूरतमंदों के घरों में भेजा गया। और

तहतावी ने जो उल्लेख किया है वह प्रसिद्ध दावत के संदर्भ में है, क्योंकि उससे प्रथम दृष्टि में यही समझा जाता है, और वह केवल अनुमति (इबाहत) के रूप में होती है।" और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। [दायाँ कॉलम - उर्दू]: क्योंकि एतबार 'तमलीक' का है, इसमें इसका कोई दखल नहीं कि जकात देने वाले के घर खाना खाया या मुस्तहिक लोगों के घर भेज दिया हो। और जो तहतावी ने जिक्र किया वह दावत-ए-मारूफ़ा (प्रचलित दावत) पर आधारित है, क्योंकि उससे यही समझा जाता है कि यह दावत बतौर तमलीक नहीं होती बल्कि बतौर इबाहत होती है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

[पाद-टिप्पणियाँ] 1. दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-जकात, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/129। 2. हाशिया अल-तहतावी अल-दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-जकात, दार अल-मारिफ़ा, बेरूत, 1/388। 3. हाशिया अल-तहतावी अल-दुर्र अल-मुख्तार, बाब अल-मसरिफ, दार अल-मारिफ़ा, बेरूत, 1/425।

पृष्ठ 75/836

اسی واسطے اگر فقراء و مساکین کو مثلاً اپنے گھر بلا کر کھانا پکا کر بطریق دعوت کھلا دیا تو ہر گز زکوٰۃ ادانہ ہوگی کہ یہ صورت اباحت ہے نہ کہ تملیک، یعنی مد عواس طعام کو ملک داعی پر کھاتا ہے اور اس کا مالک نہیں ہو جاتا اسی واسطے مہمانوں کو روا نہیں کہ طعام دعوت سے بے اذن دعوت میزبان گداؤں یا جانوروں کو دے دیں، یا ایک خوان والے دوسرے خوان والے کو اپنے پاس کچھ اٹھا دیں یا بعد فراغ جو باقی بچے اپنے گھر لے جائیں۔

في الدرالمختار لو اطعم یتیماً ناویاً الزکوۃ لا یجزیه الا اذا دفع الیه المطعوم کما لو کساه 1 | درمختار میں ہے کہ کسی نے یتیم کو بنیت زکوۃ کھانا کھلایا تو زکوٰۃ ادانہ ہوگی مگر اس صورت میں جب کھانا اس کے سپرد کر دیا گیا ہو، جیسا کہ اگر اسے لباس پہنا دیا گیا ہو انتھی قولہ کما لو کساہ ای کما یجزیه 2 ھ | انتہی قولہ "کمالوکساہ" یعنی اس صورت میں بھی زکوٰۃ ادا ہو جائیگی اھ طحطاوی عن الحلبی وفي الحاشیة الطحطاویة ایضاً في باب المصرف لا یکفی فیها الاطعام الا بطریق التملیك ولو اطعمه عنده ناویاً الزکوۃ لا یکفی 3 انتھی۔ | طحطاوی عن الحلبی اور حاشیہ طحطاویہ کے باب المصرف میں یہ بھی ہے کھانا کھلا دینا کافی نہیں البتہ اگر مالک کر دے تو پھر کافی ہے، اور اگر کسی نے نیت زکوٰۃ سے کھانا کھلایا تو کافی نہ ہوگا انتہی (ت)

ہاں اگر صاحب زکوٰۃ نے کھانا خام خواہ پختہ مستحقین کے گھر بھجوا دیا یا اپنے ہی گھر کھلایا مگر بتصریح پہلے مالک کر دیا تو زکوۃ ادا ہو جائیگی،

فان العبرۃ للتملیك ولا مدخل فیه لاکله في بیت المزکی او ارساله الی بیوت المستحقین وما ذکره الطحطاوی محمول علی الدعوۃ المعروفة فانها المتبادرۃ منه وانها لا تکون الا علی سبیل الاباحة۔ واللہ

تعالیٰ اعلم۔ | کیونکہ اعتبار تملیک کا ہے اس میں اس کا کوئی دخل نہیں کہ زکوۃ دینے والے کی گھر کھانا کھایا یا مستحق لوگوں کے گھر بھیج دیا ہو۔ اور جو طحطاوی نے ذکر کیا وہ دعوت معروفہ پر محمول ہے کیونکہ اس سے متبادر ہے کہ یہ دعوت بطور تملیک نہیں ہوتی بلکہ بطور اباحت ہوتی ہے، واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

1 درمختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۲۹ 2 حاشیہ الطحطاوی علی الدرالمختار کتاب الزکوۃ دارالمعرفۃ بیروت ۱/۳۸۸ 3 حاشیہ الطحطاوی علی الدرالمختار باب المصرف دارالمعرفۃ بیروت ۱/۴۲۵

Volume 10 Fatawa Rizvia

Issue 5: Sent by Maulana Abdul Wahid Sahib, student of Madrasa Ahle Sunnat-o-Jamaat Bareilly, 7 Dhu al-Hijjah 1336 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: Zaid set aside Zakat money, purchased grain with that money, gathered all the needy, cooked the food and fed them. Will the Zakat be considered paid or not? Is it necessary to give the exact same money that was set aside?

Answer: Providing cooked food and feeding the gathered does not fulfill Zakat because this is just 'ibahat' (permitting use) whereas the essential pillar of Zakat is 'tamleek' (transfer of ownership). (T) It is not necessary to give the exact same money; rather, if grain or clothes were bought and given to the needy, or if food was cooked and sent to their homes or divided into portions and distributed among them, then Zakat would be fulfilled to the extent of its market value. The expenses incurred on cooking etc. as wages would not be counted as Zakat. Allah the Almighty knows best.

Issue 6: From Dhoraji, Kathiawar region, asked by Haji Isa Khan Mohammad Sahib, 21 Safar 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: During a drought, Muslims collected donations and bought wheat at the rate of six rupees per maund. They then sold it to poor Muslims at the rate of four rupees per maund. Will the two-rupee loss be covered from Zakat funds or not? If not, then what is the correct way? Please respond quickly, it is very urgent as there has been no rain and poor Muslims are in great need. Please treat this as a formal question and send a written reply.

Answer: Zakat cannot be fulfilled in this manner.

| For selling is different from charity, and giving a discount is | Because selling is a distinct thing from charity; a concession in | | not a transfer of ownership of anything beyond the waived | purchase is not a transfer of ownership of any additional thing | | amount, because you did not own that waived portion so that | from the transaction, because the concession is not your property, | | you could make someone else its owner. | so that you could make someone else its owner. (T) |

Rather, the correct method is to sell it to them at the full price of six rupees per maund, and give them two rupees per maund from your own Zakat funds. Then collect the full six rupees from them. Those two rupees will be counted towards

Zakat, and they will effectively only have to pay four rupees from their own pocket for a maund of wheat. Allah the Almighty knows best.

भाग 10 फ़तावा रज़विया

मसला 5: प्रेषक मौलवी अब्दुल वाहिद साहब, छात्र मदरसा अहले सुन्नत व जमात बरेली, 7 ज़िलहिज्जा 1336 हिजरी। इस मसले में दीन के उलेमा क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद ने ज़कात के रुपये निकाले और उन रुपयों से अनाज ख़रीदा और तमाम ज़रूरतमंदों को जमा करके और खाना पकवा कर खिलाया, तो क्या ज़कात अदा हो जाएगी या नहीं? क्या यह ज़रूरी है कि जो रुपया निकाला वही दिया जाए?

अल-जवाब (उत्तर): खाना जमा करके खिला देने से ज़कात अदा नहीं हुई क्योंकि यह 'इबाहत' (उपभोग की अनुमति) है, जबकि ज़कात का मुख्य स्तंभ 'तम्लीक' (स्वामित्व प्रदान करना) है। (त) न तो वही रुपया देना ज़रूरी है, बल्कि अगर अनाज या कपड़ा ख़रीदकर मोहताजों को दे दिया जाता, या खाना पकाकर उनके घरों में भेज दिया जाता या हिस्से उन्हें बाँट दिए जाते, तो बाज़ार के भाव से जो उसकी क़ीमत होती, उतनी ज़कात अदा हो जाती। खाना पकाने आदि पर जो मज़दूरी खर्च हुई वह इसमें नहीं गिनी जाएगी। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 6: धोरजी, काठियावाड़ से हाजी ईसा ख़ाँ मोहम्मद साहब द्वारा पूछा गया, 21 सफ़र 1337 हिजरी। दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अकाल के समय मुसलमानों ने चंदा करके रुपया जमा किया और गेहूँ छह रुपये प्रति मन के भाव से ख़रीद कर चार रुपये प्रति मन के भाव से ग़रीब मुसलमानों को दिया। जो दो रुपये का नुकसान होता है, क्या वह ज़कात के माल से अदा हो जाएगा या नहीं? अगर नहीं, तो किस तरह अदा किया जाए? कृपया जल्दी उत्तर दें, बहुत ज़रूरी है, यहाँ बिल्कुल बारिश नहीं हुई है और ग़रीब मुसलमान बहुत ज़रूरत में हैं। इस मसले को प्रश्न बनाकर उत्तर लिखकर भेज दें।

अल-जवाब (उत्तर): ज़कात इस तरह अदा नहीं हो सकती।

| 'बिक्री' दान (सदक़ा) से भिन्न है और स्वामित्व हस्तांतरण के| क्योंकि बिक्री, सदक़ा से अलग चीज़ है, खरीदारी में रियायत सौदे | | संदर्भ में मूल्य में दी गई छूट का कोई स्थान नहीं है, क्योंकि | से किसी अतिरिक्त चीज़ का स्वामित्व प्रदान करना (तम्लीक) नहीं है | | तुम उसके मालिक नहीं थे कि किसी और को मालिक बना सको। | क्योंकि रियायत तुम्हारी मिल्कियत नहीं, ताकि तुम किसी को मालिक बना सको। (त) |

बल्कि इसका तरीक़ा यह है कि उन्हें छह रुपये प्रति मन के हिसाब से ही बेचें और अपनी तरफ़ से दो रुपये प्रति मन उन्हें ज़कात में दें, और फिर उनसे छह रुपये की पूरी क़ीमत वसूल करें। उनके दो रुपये ज़कात में गिने जाएँगे और उन्हें एक मन गेहूँ पर अपनी जेब से चार ही रुपये देने पड़ेंगे। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

पृष्ठ 76 / 836

جلد دہم فتاوی رضویہ

مسئلہ ۵: مرسلہ مولوی عبد الواحد صاحب متعلم مدرسہ اہلسنت و جماعت بریلی، ۷ ذی الحجہ ۱۳۳۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے زکوۃ کا روپیہ نکالا اور اس روپیہ سے غلہ خریدا اور تمام محتاجوں کو جمع کر کے اور کھانا پکوا کر کھلایا تو آیا زکوۃ ادا ہو جائیگی کہ نہیں، کیا ضروری ہے کہ جو روپیہ نکالا وہی بعینہ دے؟

الجواب: کھانا جمع کر کے کھلا دینے سے زکوۃ ادا نہ ہوئی کیونکہ اباحت ہے حالانکہ زکوۃ کا رکن مالک بنانا ہے۔ (ت) نہ بعینہ روپیہ دینا ضرور بلکہ اگر اس کا اناج یا کپڑا خرید کر محتاجوں کو دے دیتا یا کھانا پکا کر اُن کے گھر بھیج دیتا یا حصّے اُنہیں تقسیم کر دیتا تو بازار کے بھاؤ سے جو اُس کی قیمت ہوتی اس قدر زکوۃ ادا ہو جاتی پکائی وغیرہ اجرت میں جو صرف ہوا وہ محسوب نہ ہو گا۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶: از دھوراجی ملک کاٹھیاواڑ مسئولہ حاجی عیسیٰ خاں محمد صاحب، ۲۱ صفر ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ قحط سالی میں مسلمان لوگ چندہ کر کے روپیہ جمع کر کے گندم چھ روپیہ کے بھاؤ سے ایک من خرید کر کے چار روپیہ کے بھاؤ سے مسلمان غریب لوگوں کو دینا اور جو دو روپیہ کا نقصان ہوتا ہے وہ مالِ زکوۃ سے ادا ہو جائے گا یا نہیں؟ اگر نہ ہوتا ہو تو کس صورت سے ادا ہو؟ مہربانی فرما کر جلدی عنایت فرمائیں، بہت ضروری ہے، یہاں پر بالکل بارش نہیں ہوئی ہے، اور غریب مسلمان لوگوں کو بہت ضرورت ہے، اس مسئلہ کو سوال بنا کر جواب لکھ کر روانہ کر دینا۔

الجواب: زکوۃ اس طرح ادا نہیں ہو سکتی،

| فان البیع یبائن الصدقة والمحاباة لیست في القدر | کیونکہ بیع، صدقہ کے مبائن چیز ہے، خریداری میں رعایت سودے سے | | الزائد المتروک من التملیک في شئ فانک لم تملکه | کسی زائد چیز کی تملیک نہیں ہے کیونکہ رعایت تیری ملکیت نہیں، | | حتی تملکه۔ | تاکہ تو کسی کو مالک بنائے۔ (ت) |

بلکہ اس کا طریقہ یہ ہے کہ چھ ہی روپے من اُن کے ہاتھ بیچیں اور فی من دو روپے اُن کو زکوۃ میں اپنے پاس سے دیں اور قیمت میں چھ روپے اُن سے وصول کریں، اُن کے دو روپے زکوۃ میں محسوب ہوں گے اور اُن کو من بھر گیہوں پر چار ہی روپے اپنے پاس سے دینے پڑے۔ واللہ تعالٰی اعلم

جلد دہم (Volume Ten) - فتاویٰ رضویہ (Fatawa-e-Razvia)

Problem 77: 12 Rajab 1331 AH. Four or five people went to a cloth merchant to buy clothes. One of them stole some cloth. After finding out, the shopkeeper forgave him and intended it to be Sadaqah (charity) or Zakat. Will this intention be valid? And will this cloth be counted towards Sadaqah or Zakat?

Answer: If that cloth is still present, it will not be counted in Sadaqah nor in Zakat, and its forgiveness will not be valid because 'forgiving the specific physical assets is void' (for clearing liability of specific entities is invalid. T). Yes, if he gifted it (Hibah), it would become a gift, and if he intended Zakat or Sadaqah while gifting and that person is an eligible recipient, then Zakat and Sadaqah would be fulfilled. And if he destroyed that cloth such that its compensation (Tawan) became due on him, and he forgave that compensation, then the forgiveness is valid. If the intention is commendable, he will receive a reward, and this itself is a voluntary charity (Sadaqah Nafilah). However, the intention of Zakat is not valid in this case; yes, Zakat equivalent to the amount of compensation that was due on him will be fulfilled, but it will be Zakat for that specific amount, not for his other wealth. And Allah Almighty knows best.

Problem 78 to 81: What do the scholars of religion say in these matters: (1) Zaid provided a loan of fifty rupees with interest to his biological brother or brother-in-law or sister or a friend under his own guarantee. Now that money, including principal and interest, has become one hundred rupees. Zaid paid those hundred rupees from his Zakat money but did not tell the mentioned person that it was Zakat money because if told, that person would not like to take Zakat due to family relations. In this situation, is Zaid's Zakat fulfilled or not? (2) Zaid bought a thousand rupees worth of sugarcane juice (Ras) and gave the money to the sugar millers (Khand-saliyon) as per custom. At the time of receiving the juice, five hundred rupees worth of juice was received, and there remained hope of receiving the rest of the money in the coming year. Now, should Zaid pay Zakat on five hundred rupees or on a thousand? And for this remaining money, the arrangement made was to give some more money and have a document (Dastawez) written. The money from this document will be received ten months after the writing of the document provided there is production, otherwise, in the coming year. Is Zakat required on the debt in the document or not? (3) Some of Zaid's debt is such that Zaid lent money by having a document written. Out of that, some money was received and some remained. For this remainder, there is neither a document nor does that person have any asset from which he could

repay the debt. Or if he has, he has transferred that asset to someone else's name with malicious intent. Now Zaid has only hope and more hope.

मसाला 77: 12 रजब 1331 हिजरी। चार-पांच आदमी एक कपड़ा व्यापारी के पास कपड़ा खरीदने गए। उनमें से एक ने कोई कपड़ा चुरा लिया। पता चलने के बाद दुकानदार ने उसे माफ कर दिया और सदक़ा या ज़कात की नियत की। क्या यह नियत सही होगी? और क्या यह कपड़ा सदक़ा या ज़कात में गिना जाएगा?

जवाब: अगर वह कपड़ा अभी भी मौजूद है, तो न वह सदक़ा में गिना जाएगा, न ज़कात में, और न ही उसकी माफ़ी सही होगी क्योंकि "वस्तुओं (अयान) से बरी करना बातिल है"। (क्योंकि विशिष्ट वस्तुओं से मुक्त करना अमान्य है। त)। हाँ, अगर उसने उसे हिबा (उपहार) कर दिया तो वह हिबा हो जाएगा, और अगर हिबा करने से ज़कात या सदक़ा की नियत की और वह व्यक्ति उसका पात्र (मसरफ़) हो, तो ज़कात और सदक़ा अदा हो जाएंगे। और अगर उसने वह कपड़ा नष्ट कर दिया जिससे उस पर मुआवज़ा (तावान) अनिवार्य हो गया और दुकानदार ने वह मुआवज़ा माफ कर दिया, तो माफ़ी सही है। अगर नियत अच्छी है तो उसे पुण्य मिलेगा और यह खुद एक नफ़्ल सदक़ा है। मगर इसमें ज़कात की नियत सही नहीं है। हाँ, उससे उतने की ज़कात अदा हो जाएगी जितना मुआवज़ा उस पर अनिवार्य था, लेकिन यह उसके अन्य धनों की ज़कात नहीं हो सकेगी। और अल्लाह सर्वशक्तिमान सबसे बेहतर जानता है।

मसाला 78 से 81: दीन के विद्वान इन मसलों में क्या फ़रमाते हैं: (1) ज़ैद ने अपनी ज़मानत पर अपने सगे भाई या बहनोई या बहन या किसी दोस्त को पचास रुपये का सूदी क़र्ज़ दिलवा दिया। अब वह रुपया मूल और सूद मिलाकर सौ रुपये हो गया। ज़ैद ने वे सौ रुपये अपनी ज़कात के रुपयों से अदा कर दिए, लेकिन उक्त व्यक्ति से यह नहीं कहा कि यह ज़कात का रुपया है क्योंकि अगर उससे कहा गया तो वह व्यक्ति भाईचारे के कारण ज़कात लेना पसंद नहीं करेगा। इस स्थिति में ज़ैद की ज़कात अदा हुई या नहीं? (2) ज़ैद ने एक हज़ार रुपये का गन्ने का रस खरीदा और रिवाज़ के अनुसार खंडसालियों (चीनी मिल मालिकों) को रुपया दे दिया। रस प्राप्त करने के समय, पाँच सौ रुपये का रस प्राप्त हुआ और बाकी रुपये अगले साल प्राप्त होने की उम्मीद रही। अब ज़ैद को पाँच सौ रुपये पर ज़कात देनी चाहिए या हज़ार पर? और इस शेष रुपये के लिए यह इंतज़ाम किया कि कुछ और रुपये देकर दस्तावेज़ लिखवा लिया। इस दस्तावेज़ का रुपया पैदावार की शर्त पर दस्तावेज़ लिखने के दस महीने बाद प्राप्त होगा वरना अगले साल। क्या दस्तावेज़ वाले क़र्ज़ पर ज़कात ज़रूरी है या नहीं?

(3) ज़ैद का कुछ क़र्ज़ इस तरह है कि ज़ैद ने दस्तावेज़ लिखवाकर रुपया क़र्ज़ दिया। उसमें से कुछ रुपया प्राप्त हुआ और कुछ बाकी रहा। इस बाकी के लिए न दस्तावेज़ है और न ही उस व्यक्ति के पास ऐसी कोई चीज़ है जिससे वह अपना क़र्ज़ अदा कर सके। या अगर है तो बुरी नीयत से उस चीज़ को किसी और के नाम कर दिया। अब ज़ैद को सिर्फ उम्मीद ही उम्मीद है।

مسئلہ ۷۷: ۱۲ رجب ۱۳۳۱ھ چار پانچ آدمی بزاز کے یہاں کپڑا خریدنے گئے ان میں سے ایک نے کوئی کپڑا چرا لیا، بعد معلوم ہونے کے دکاندار نے اس کو معاف کردیا اور نیت صدقہ یا زکوٰۃ کی کی، تو یہ نیت اس کی صحیح ہوگی یا نہیں؟ اور یہ کپڑا صدقہ یا زکوٰۃ میں محسوب ہوگا یا نہیں؟

الجواب: اگر وہ کپڑا ہنوز موجود ہے تو نہ وہ صدقہ میں محسوب ہوگا، نہ زکوٰۃ میں، نہ اس کی معافی ہوگی فان الابراء عن الاعیان باطل (کیونکہ اعیان سے بری کرنا باطل ہے۔ ت) ہاں اگر اسے ہبہ کردیا تو ہبہ ہوجائےگا، اور اگر ہبہ کرنے سے زکوٰۃ یا صدقہ کی نیت کی اور وہ شخص اس کا مصرف ہو تو زکوٰۃ و صدقہ ادا ہو جائیں گے، اور اگر وہ کپڑا اس نے تلف کردیا یہاں تک کہ اس کا اس پر تاوان لازم آیا اور اس نے وہ تاوان معاف کردیا تو معانی صحیح ہے اور نیت محمود ہو تو اجر پائے گا اور یہ خود ایک صدقہ نفل ہے مگر اس میں زکوٰۃ کی نیت صحیح نہیں، ہاں اس سے اتنے کی زکوٰۃ ادا ہوجائے گی جتنا تاوان اس پر واجب تھا مگر یہ اس کے دیگر اموال کی زکوٰۃ ہو سکے گی نہ ہوگا۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۷۸ تا ۸۱: کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسئلوں میں: (۱) زید نے اپنے برادرِ حقیقی یا بہنوئی یا بہن یا کسی دوست کو اپنی ضمانت سے مبلغ پچاس روپیہ سودی قرض دلا دئے، اب وہ روپیہ اصل وسود مل کر سو روپیہ ہوگئے، زید نے وہ روپیے اپنی زکوٰۃ کے روپیے سے ادا کردئے مگر شخص مذکور سے یہ نہیں کہا کہ روپیہ زکوٰۃ کا ہم نے تمہارے قرضہ میں دیا کیونکہ اگر اس سے کہا جائیگا تو وہ شخص بوجہ برادری کے زکوٰۃ لینا پسند نہیں کرتا اس صورت میں زید سے زکوٰۃ ادا ہوگیا یا نہیں؟ (۲) زید نے مبلغ ہزار روپیہ کارس خریدا اور روپیہ بموجب رواج کھنڈ سالیوں کے بالیوں کو دے دیا، وقتِ وصول رس کے، پانچ سو روپیہ کارس وصول ہوا، اور

باقی روپیہ کے سال آئندہ پر وصول ہونے کی امید رہی، اب زید پر زکوٰۃ پانچ سو روپیہ کی چاہئے یا ہزار کی؟ اور اس بقیہ روپیہ کا یہ انتظام کیا کہ کچھ روپیہ اور دے کردستاویز تحریر کرالی اس دستاویز کا روپیہ بشرطِ پیداوار اس تحریر دستاویز سے دس ماہ بعد وصول ہوگا ورنہ سال آئندہ پر کیا قرضہ دستاویز پر زکوٰۃ چاہئے یا نہیں؟ (۳) کچھ قرضہ زید کا اس طور ہے کہ زید نے دستاویز تحریر کراکے روپیہ قرض کردیا، منجملہ اس کے کچھ روپیہ وصول ہوا اور کچھ باقی رہا، اس بقیہ کی نہ دستاویز ہے اور نہ کوئی شئی ایسی اس شخص کے پاس ہے کہ جس سے وہ قرضہ اپنا ادا کرے، اور اگر ہے تو بغرضِ بدنیتی اس شئی کو دوسرے کے نام کردیا، اب زید کو صرف اُمید ہی اُمید۔

...has been received. Therefore, should zakat be paid on this money or not? (4) Zaid took five hundred rupees of his own and a loan of one thousand, totaling fifteen hundred rupees. Of this, one thousand rupees worth of goods are in the shop and five hundred rupees are given out as loans. In this case, should zakat be paid or not, and if so, how much?

The Answer: (1) If Zaid gave that money to his relative with the intention of zakat in his heart, then zakat is fulfilled, whether he spends it on any expense. However, if he paid it towards the relative's debt on his own without the relative's permission, then zakat will not be fulfilled. And Allah Almighty knows best. (2) Zakat will be obligatory on the total amount of money, but it is not mandatory to pay for the amount given out as a loan right now; it can be paid after recovery. (3) When there is no proof of the loan, nor is the debtor willing to pay, and the debtor has no assets, then zakat on that loan is not mandatory. (4) Out of the fifteen hundred, no amount of zakat is currently due for payment as long as he possesses only that much wealth. And Allah Almighty knows best.

...वसूल की है, इसलिए इस रुपये पर ज़कात दी जाए या नहीं? (4) ज़ैद ने अपने पांच सौ रुपये और एक हज़ार रुपये का क़र्ज़ लेकर, कुल पंद्रह सौ रुपयों में से एक हज़ार रुपये का माल दुकान में रखा है और पांच सौ रुपये क़र्ज़ (लोगों को) दिए हुए हैं। इस सूरत में ज़कात दी जाए या नहीं, और अगर दी जाए तो कितनी?

उत्तर (अल-जवाब): (1) अगर ज़ैद ने वह रुपया अपने उस अज़ीज़ (रिश्तेदार) को दिल में ज़कात की नीयत करके दिया, तो ज़कात अदा हो गई चाहे वह किसी भी खर्च में इस्तेमाल करे। और अगर अपनी तरफ से बिना इजाज़त उसके क़र्ज़ में दे दिया, तो ज़कात अदा नहीं होगी। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (2) ज़कात कुल रुपयों पर वाजिब होगी, लेकिन क़र्ज़ वाली राशि की ज़कात अभी अदा करना लाज़िम नहीं है, वह वसूल होने के बाद अदा की जा सकती है। (3) जबकि उसके पास कोई सबूत नहीं है और न ही वह (कर्ज़दार) भुगतान करने को तैयार है और न ही उसके पास कोई जायदाद है, तो उस क़र्ज़ पर ज़कात लाज़िम नहीं है। (4) कुल पंद्रह सौ रुपयों में से फिलहाल किसी भी मात्रा में ज़कात देना वाजिब नहीं है जब तक कि उसके पास बस उतना ही माल हो। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[लोगो: आई.टी. मज्लिस-ए-दावत-ए-इस्लामी] पृष्ठ 78 का 836

وصول کی ہے لہذا اس روپے پر زکوۃ دی جائے یا نہیں؟ (۴) زید نے پانچ سو روپیہ اپنے اور ہزار قرض لے کر دکان کے منجملہ پندرہ سو روپیہ کے ہزار روپیہ کا مال دُکان میں ہے اور پانچ سو روپیہ قرضہ میں ہیں، اس صورت میں زکوۃ دی جائے یا نہیں اور دی جائے تو کس قدر کی؟

الجواب: (۱) اگر زید نے وہ روپیہ اپنے اس عزیز کو دل میں نیت زکوۃ کر کے دیا تو زکوۃ ادا ہو گئی خواہ کسی خرچ میں صرف کرے، اور اگر بطور خود بلا اجازت اس کے قرضہ میں دیا تو زکوۃ ادا نہ ہو گی، واللہ تعالی اعلم۔ (۲) زکوۃ کل روپیہ کی واجب ہو گی مگر مقدار قرضہ کے ابھی ادا کرنا لازم نہیں، بعد وصول ادا کر سکتا ہے۔ (۳) جبکہ اس کے پاس ثبوت نہیں اور نہ وہ ادا پر آمادہ اور نہ اس کے پاس جائیداد، تو اُس قرضہ کی زکوۃ لازم نہیں۔ (۴) منجملہ پندرہ سو کے کسی قدر زکوۃ فی الحال واجب الادا نہیں جبکہ وہ وہی مال رکھتا ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

[لوگو: I.T. Majlis of DawateIslami] صفحہ 78 از 836

Fatawa Razawiyya Volume 10

Tajalli al-Mishkat li-Inarat As'ilat al-Zakat 1307 AH (The brightness of the lamp to clarify the issues of Zakat)

Issue 1812: From Gonda, Bahraich, Mohalla Chhaoni, House of Maulvi Ashraf Ali Sahib, sent by Hazrat Syed Husain Haider Miyan Sahib (may his blessings last), 13 Jumada al-Ula 1307 AH.

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

What do the scholars of religion and muftis of the luminous Sharia (may Allah be kind to them all) say regarding these matters: First Issue: Should Zakat be paid gradually or in a lump sum? Is there any disadvantage in giving it gradually? Please explain and be rewarded. The Answer: If someone pays Zakat in advance, meaning the completion of the lunar year (Hawlan-al-Hawl) hasn't occurred yet for payment to become obligatory, whether it's because a full year hasn't passed since becoming the owner of productive wealth (nisab) exceeding basic needs, or because they have already paid for the previous year and the current year hasn't ended yet; then, until the end of the year, they certainly have full discretion to pay in installments or gradually. There is absolutely no disadvantage in this because Zakat does not become obligatory to pay before the completion of the lunar year. It is stated in Durr-e-Mukhtar:

| The condition for the obligation of paying Zakat is that the wealth | Shart Iftiraz Ada’iha Hawlan-al-Hawl |

Page 79 of 836

फ़तावा रज़विया खंड दसवां

तजल्ली अल-मिश्कात लि-इनारात अस्इलात अज़-ज़कात १३०७ हिजरी (ज़कात के मसलों को स्पष्ट करने के लिए चराग की चमक)

मसला १८१२: गोंडा, बहराइच, मोहल्ला छावनी, मौलवी अशरफ़ अली साहब के घर से, प्रेषक हज़रत सैयद हुसैन हैदर मियां साहब (दामत बरकातहुम), १३ जमादी उल-ऊला १३०७ हिजरी।

बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम

दीन के उलमा और शरीयत के मुफ़्ती (अल्लाह उन सब पर मेहरबान हो) इन मसलों के बारे में क्या फ़रमाते हैं: पहला मसला: ज़कात धीरे-धीरे (किस्तों में) दी जाए या एकमुश्त देने में क्या नुकसान है? बयान करें, सवाब पाएं। जवाब: अगर कोई ज़कात पेशगी (अग्रिम) अदा करता है, यानी अभी साल पूरा (हौलान-ए-हौल) नहीं हुआ कि अदायगी वाजिब हो जाती, चाहे इस तरह कि ज़रूरत से ज़्यादा मालिकेनिसाब हुए पूरा साल न हुआ हो, या इस तरह कि पिछले साल की दे चुका है और वर्तमान साल अभी खत्म नहीं हुआ; तो जब तक साल का अंत न हो जाए, निस्संदेह उसे अलग-अलग या धीरे-धीरे (टुकड़ों में) देने का पूरा अधिकार है। इसमें मूलतः कोई नुकसान नहीं है क्योंकि साल पूरा होने से पहले ज़कात अदा करना वाजिब नहीं होता। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

| ज़कात अदा करना फ़र्ज़ होने के लिए यह शर्त है कि माल | शर्त इफ़्तिराज़ अदाइहा हौलान अल-हौल |

पेज 79 ऑफ़ 836

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

تجلّی المشکوۃ لانارۃ اسئلۃ الزکوٰۃ ۱۳۰۷ھ (زکوٰۃ کے مسائل کو واضح کرنے کے لئے چراغ کی چمک)

مسئلہ ۱۸۱۲: از گونڈہ بہرائچ، محلہ چھاؤنی، مکان مولوی اشرف علی صاحب مرسلہ حضرت سید حسین حیدر میاں صاحب دامت برکاتہم ۱۳ جمادی الاولیٰ ۱۳۰۷ھ

بسم اللہ الرحمن الرحیم ط

کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین لطف اللہ بہم اجمعین، ان مسائل میں : مسئلہ اولیٰ: زکوٰۃ بتدریج دی جائے یا یکمشت دینے میں کیا نقصان ہے؟ بینوا توجروا۔ الجواب: اگر زکوٰۃ پیشگی ادا کرتا ہے یعنی ہنوز حولانِ حول نہ ہوا کہ وجوب ادا ہو جاتا، خواہ یوں کہ ابھی نصاب نامی فارغ عن الحوائج کا مالک ہوئے سال تمام نہ ہوا، یا یوں کہ سال گزشتہ کی دے چکا ہے اور سالِ رواں ہنوز ختم پر نہ آیا تو جب تک انتہائے سال نہ ہو بلا شبہ تفریق و تدریج کا اختیار کامل رکھتا ہے جس میں اصلاً کوئی نقصان نہیں کہ حولانِ حول سے پہلے زکوٰۃ واجب الادا نہیں ہوتی۔ در مختار میں ہے:

| ادائیگی زکوٰۃ کے فرض ہونے کے لئے یہ شرط ہے کہ مال | شرط افتراض ادائها حولان الحول |

Fatawa Razawiya, Volume 10

"...and it is in his ownership." [1] | ...a year has passed over his ownership. (T)

So Sharia does not even demand it yet, how can there be a demand for lump-sum payment? This advance payment is voluntary, and there is no compulsion on the one who volunteers, and this is very clear (T). And if the year has passed and Zakat has become obligatory, then dividing it or paying in installments is prohibited; rather, one must immediately pay the full and complete amount of money. For, according to the correct, reliable, and fatwa-prescribed school of thought, the obligation of paying Zakat is immediate, and delay in it is a cause of sin. This has been explicitly stated by our three Imams (may Allah the Almighty be pleased with them).

Arabic Text	**Translation**
It was narrated by Faqih Abu Ja'far from Imam al-A'zam, and Abu Yusuf mentioned it in al-Amali as in al-Khulasah, and in al-Muntaqa of Imam Abu 'Abdullah Muhammad ibn 'Abdullah al-Hakim al-Shahid (may Allah the Almighty have mercy on him), according to what al-Quhistani narrated from al-Muhit, that it is immediate according to both of them (Imam Abu Hanifa and Abu Yusuf). And from Muhammad (it is narrated) that the testimony of one who delays it shall not be accepted. Thus, this clearly shows that this is the school of thought narrated from the two Shaykhs in Zahir al-Riwayah.	This same Faqih Abu Ja'far narrated from Imam al-A'zam, and Imam Abu Yusuf mentioned it in Amali as it is in Khulasah, and in Muntaqa of Imam Abu Abdullah Muhammad bin Abdullah Al-Hakim Al-Shahid (may Allah have mercy on him), as Quhistani narrated from Muheet, it is stated that according to the two Shaykhs (Abu Hanifa and Abu Yusuf), payment of Zakat becomes immediately obligatory, and from Imam Muhammad it is reported that the testimony of one who delays payment will not be accepted. This point is clear in this regard that the same school of thought is narrated from the two Shaykhs in Zahir al-Riwayah. (T)

It is stated in Fath al-Qadir:

Arabic Text	**Translation**
Sin is incurred by delaying it without necessity, as explicitly stated by al-Karkhi and al-Hakim al-Shahid in al-Muntaqa. This is exactly what was mentioned by Faqih	Delaying without compulsion entails sin, as Imam Karkhi and Hakim Shahid have explicitly stated in Al-Muntaqa. This is exactly the same point mentioned by

Arabic Text	Translation
Abu Ja'far from Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) that he disliked delaying it without an excuse. Indeed, the 'prohibitive dislike' (karahah al-tahrim) is the interpretation when the term 'dislike' is mentioned without qualification by them.	Faqih Abu Ja'far from Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him), that delaying payment without an excuse is 'Makruh-e-Tahrimi' because when 'dislike' (karahat) is mentioned absolutely, it is then interpreted as 'Makruh-e-Tahrimi'.

[1] Durr al-Mukhtar, Book of Zakat, Matba' Mujtabai Delhi, 1/30 [2] Jami' al-Rumuz, Book of Zakat, Maktaba Islamiyya Gumbad Qamus Iran, 2/301

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम

"...और वह उसके स्वामित्व में है।" [1] | ...उसके स्वामित्व पर एक वर्ष बीत गया। (T)

तो अभी शरीयत इसकी मांग ही नहीं करती, एकमुश्त देने की मांग कैसे होगी? यह अग्रिम भुगतान स्वैच्छिक है, और स्वयंसेवक पर कोई ज़बरदस्ती नहीं है, और यह अत्यंत स्पष्ट है (T)। और यदि वर्ष बीत गया और ज़कात देना अनिवार्य हो गया, तो अब इसे किस्तों में देना वर्जित है; बल्कि उसे तुरंत पूरी और मुकम्मल राशि अदा करनी चाहिए। क्योंकि सही, विश्वसनीय और फतवा-निर्धारित संप्रदाय (मज़हब) के अनुसार ज़कात की अदायगी तुरंत अनिवार्य है, जिसमें देरी करना गुनाह का कारण है। यह हमारे तीनों इमामों (अल्लाह तआला उन पर प्रसन्न हो) से स्पष्ट रूप से प्रमाणित है।

अरबी पाठ

फ़कीह अबू जाफ़र ने इमाम आज़म से रिवायत किया, और अबू यूसुफ ने इसका उल्लेख 'अमाली' में किया है जैसा कि 'ख़ुलासा' में है, और इमाम अबू अब्दुल्लाह मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह अल-हाकिम अल-शहीद (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) की 'मुंतका' में है, जैसा कि कुहिस्तानी ने 'मुहीत' से उद्धृत किया है कि यह दोनों (इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम अबू यूसुफ़) के अनुसार तत्काल है। और इमाम मुहम्मद से रिवायत है कि जो ज़कात में देरी करे उसकी गवाही स्वीकार नहीं की जाएगी। अतः, यह स्पष्ट है कि शैख़ैन (अबू हनीफ़ा और अबू यूसुफ़) से ज़ाहिर अल-रिवाया में यही मज़हब वर्णित है।

अनुवाद

इसी फ़कीह अबू जाफ़र ने इमाम आज़म से रिवायत की, इमाम अबू यूसुफ़ ने इसका उल्लेख 'अमाली' में किया जैसा कि 'ख़ुलासा' में है, और इमाम अबू अब्दुल्लाह मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह अल-हाकिम अल-शहीद (रहमतुल्लाह अलैह) की 'मुंतका' में है जैसा कि कुहिस्तानी ने 'मुहीत' से नक़्ल किया है कि शैख़ैन के नज़दीक ज़कात की अदायगी तुरंत लाज़िम हो जाती है, और इमाम मुहम्मद से रिवायत है कि जिसने अदायगी में देरी की उसकी गवाही स्वीकार न होगी। यह बात इस बारे में स्पष्ट है कि शैख़ैन से ज़ाहिर अल-रिवाया में यही मज़हब मरवी (वर्णित) है। (T)

फ़तह अल-क़दीर में है:

अरबी पाठ

बिना किसी आवश्यकता के देरी करने से गुनाह होता है जैसा कि अल-कर्खी और अल-हाकिम

अनुवाद

बिना मजबूरी के देरी करने से गुनाह लाज़िम आता है जैसा कि इमाम कर्खी और हाकिम शहीद

अरबी पाठ	अनुवाद
अल-शहीद ने 'अल-मुंतका' में स्पष्ट किया है। यह वही बात है जिसे फ़कीह अबू जाफ़र ने अबू हनीफ़ा (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) से उल्लेख किया है कि वह बिना किसी बहाने के देरी करने को नापसंद (मक़रूह) करते थे। वास्तव में 'मक़रूहे तहरीमी' ही अर्थ है जब उनके द्वारा 'नापसंदगी' (कराहियत) का शब्द बिना किसी शर्त के प्रयोग किया जाता है।	ने 'अल-मुंतका' में तसरीह (स्पष्टीकरण) की है। यह हूबहू वही बात है जिसका ज़िक्र फ़कीह अबू जाफ़र ने इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से किया है कि बिना उज़्र (बहाने) अदायगी को मुअख़र (देरी) करना मक़रूहे तहरीमी है, क्योंकि जब कराहियत का ज़िक्र मुतलक़न (बिना शर्त) हो तो उस वक़्त वह मक़रूहे तहरीमी पर महमूल होती है।

[1] दुर्र-ए-मुख़्तार, किताबुज़-ज़कात, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/30 [2] जामेउर-रुमूज़, किताबुज़-ज़कात, मक्तबा इस्लामिया गुम्बद क़ामूस ईरान, 2/301

पृष्ठ 80 / 836

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

وھو في ملکھ- 1 | کی ملکیت پر سال گزرے۔ (ت)

تو ابھی شرع اس سے تقاضا ہی نہیں فرماتی، یکمشت دینے کا مطالبہ کہاں سے ہوگا، یہ پیشگی دینا تبرع ہے ولا جبر علی المتبرع وھذا ظاھر جداً (نقداً دینے پر جبر نہیں اور یہ نہایت ہی واضح ہی۔ ت) اور اگر سال گزر گیا اور زکوۃ واجب الادا ہو چکی تو اب تفریق و تدریج ممنوع ہوگی بلکہ فوراً اتمام و کمالِ زر واجب الادا ادا کرے کہ مذہبِ صحیح و معتمد و مفتی بہ پر ادائے زکوۃ کا وجوب فوری ہے جس میں تاخیر باعثِ گناہ۔ ہمارے ائمہ ثلاثہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم سے اس کی تصریح ثابت۔

متن عربی	**ترجمہ**
رواہ الفقیہ ابو جعفر عن الامام الاعظم و ذکرہ ابو یوسف فی الامالی کما فی الخلاصۃ وفي منتقی الامام ابی عبداللہ محمد بن عبداللہ الحاکم الشہید رحمہ اللہ تعالی علی ما نقل القھستانی عن المحیط انہ علی الفور عندھما وعن محمد لا تقبل شھادۃ من اخر، فھذا ظاھر فی انہ ھو المذھب المروی عن الشیخین فی ظاھر الروایۃ-	یہی فقیہ ابو جعفر نے امام اعظم سے روایت کیا، امام ابو یوسف نے اسے امالی میں ذکر کیا جیسا کہ خلاصہ میں ہے اور امام ابو عبداللہ محمد بن عبداللہ الحاکم الشہید رحمہ اللہ تعالیٰ کی منتقی میں ہے جیسا کہ قہستانی نے محیط سے نقل کیا ہے وہ یہ ہے کہ شیخین کے نزدیک ادائیگی زکوۃ علی الفور لازم ہو جاتی ہے، اور امام محمد سے ہے کہ جس نے ادائیگی میں تاخیر کی اس کی شہادت قبول نہ ہوگی۔ یہ بات اس بارے میں واضح ہے کہ شیخین سے یہی مذہب ظاہر الروایہ میں مروی ہے۔ (ت)

فتح القدیر میں ہے:

متن عربی	ترجمہ
یلزم بتاخیرہ من غیر ضرورۃ الاثم کما صرح بہ الکرخي والحاکم الشھید في المنتقی، وھو عین ما ذکرہ الفقیہ ابو جعفر عن ابي حنیفۃ رضی اللہ تعالی عنہ انہ یکرہ ان یؤخرھا من غیر عذر فان کراھۃ التحریم ھي المحمل عند اطلاق اسمھا عنھم	بغیر مجبوری کے تاخیر سے گناہ لازم آتا ہے جیسا کہ امام کرخی اور حاکم شہید نے المنتقی میں تصریح کی ہے۔ یہ بعینہ وہی بات ہے جس کا تذکرہ فقیہ ابو جعفر نے امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے کیا ہے کہ بغیر عذر ادائیگی کو مؤخر کرنا مکروہِ تحریمہ ہے کیونکہ جب کراہت کا ذکر مطلقاً ہو تو اس وقت وہ مکروہ تحریمی پر محمول ہوتی ہے،

1 در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۳۰/۱ 2 جامع الرموز کتاب الزکوۃ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۳۰۱/۲

Volume 10 Fatawa Razawiyya

"And similarly from Abu Yusuf and from Muhammad, his testimony is rejected for delaying Zakat. It is the right of the poor. Thus, the obligation of immediate payment of Zakat is established from the three (Imams). Al-Khulasa summary (T)." It is also narrated similarly from Imam Abu Yusuf. Imam Muhammad says that due to the delay in paying Zakat, the testimony will be rejected because Zakat is the right of the poor. Thus, it is proven from the three elders that the immediate payment of Zakat is obligatory. Al-Khulasa summary (T).

In Fatawa Imam Qazi Khan: "Will he be sinful for delaying Zakat after being able (to pay)? Al-Karkhi mentioned that he will be sinful. Similarly, Al-Hakim al-Shaheed mentioned in Al-Muntaqa. And from Muhammad, whoever delays Zakat without an excuse, his testimony will not be accepted. Hisham narrated from Abu Yusuf that he will not be sinful. Al-Khulasa summary." Will a person be a sinner due to the delay in Zakat after having the means or not? Imam Karkhi said: He will be a sinner. Similarly, Hakim Shaheed has mentioned it in Muntaqa. It is narrated from Imam Muhammad that the testimony of a person who delays Zakat without any excuse will not be accepted. Hisham narrated from Imam Abu Yusuf that he will not be a sinner. Al-Khulasa summary.

"I say: He placed the sinfulness first, and what he places first is the preferred (rajih), most apparent (azhar), and most famous (ash-har) according to him, as he himself specified. And it is the relied-upon (mu'tamad), as Al-Tahtawi, Al-Shami, and others specified. Similarly, it is placed first in Al-Hidayah and Al-Kafi." I say: (I say that) being a sinner (with reference to Imam Abu Yusuf) is mentioned first, and that is what is preferred, apparent, and famous according to Qazi Khan, as he himself has clarified. And that is the relied-upon view, as clarified by Tahtawi, Shami, and others. Similarly, it has been given priority in Hidayah and Kafi. (T)

In Fatawa Alamgiri: "It becomes obligatory immediately upon the completion of the year, such that he sins by delaying it without an excuse. In the narration of Al-Razi, it is on delay (at-tarakhi) until he sins at death. And the first is more correct." Zakat becomes obligatory immediately upon the completion of the year, so delaying it without an excuse will be a sin. According to Razi's narration, it is not obligatory

immediately (until delaying it will not be a sin), however, if death comes in this state then...

1. Fath al-Qadeer, Book of Zakat, Maktaba Nooriya Razawiyya, Sukkur 2/112
2. Fatawa Qazi Khan, Book of Zakat, Section on Trade Wealth, Munshi Naval Kishore Press, Lucknow 1/119 Page 81 of 836

जिल्द दसवाँ फ़तावा रज़विया

"और इसी तरह अबू यूसुफ़ और मुहम्मद से मंकूल है कि ज़कात में देरी करने के कारण उसकी गवाही रद्द कर दी जाएगी। यह गरीबों का हक़ है। अत; तीनों (इमामों) से ज़कात की तत्काल अदायगी की अनिवार्यता सिद्ध हो गई है। अल-खुलसा संक्षेप (त)।" इमाम अबू यूसुफ़ से भी इसी प्रकार वर्णित है। इमाम मुहम्मद फ़रमाते हैं कि ज़कात की देरी के कारण गवाही रद्द हो जाएगी क्योंकि ज़कात गरीबों का हक़ है, तो तीनों बुज़ुर्गों से यह साबित हुआ कि ज़कात की अदायगी तुरंत लाज़िम होती है। अल-खुलसा संक्षेप (त)।

फ़तावा इमाम क़ाज़ी खाँ में है: "क्या सामर्थ्य होने के बाद ज़कात में देरी करने पर वह गुनहगार होगा? अल-करखी ने उल्लेख किया कि वह गुनहगार होगा। इसी तरह अल-हाकिम अल-शहीद ने अल-मुंतक़ा में उल्लेख किया। और मुहम्मद से मंकूल है कि जो कोई बिना किसी उज़्र (बहाने) के ज़कात में देरी करता है, उसकी गवाही स्वीकार नहीं की जाएगी। हिशाम ने अबू यूसुफ़ से रिवायत की है कि वह गुनहगार नहीं होगा। अल-खुलसा संक्षेप।" आदमी सामर्थ्य के बाद ज़कात में देरी की वजह से गुनहगार होगा या नहीं? इमाम करखी ने फ़रमाया: गुनहगार होगा। इसी तरह हाकिम शहीद ने मुंतक़ा में ज़िक्र किया है। इमाम मुहम्मद से मंकूल है कि जिस व्यक्ति ने बिना किसी उज़्र के ज़कात को विलंबित किया, उसकी गवाही स्वीकार नहीं की जाएगी। हिशाम ने इमाम अबू यूसुफ़ से नक़ल किया कि वह गुनहगार न होगा। अल-खुलसा संक्षेप।

"मैं कहता हूँ: उन्होंने गुनाह होने की बात पहले रखी है, और जो वह पहले रखते हैं वही उनके नज़दीक राजह (वरीयता प्राप्त), अज़हर (स्पष्ट) और अश्हर (प्रसिद्ध) है, जैसा कि उन्होंने स्वयं स्पष्ट किया है। और वही मोतमद (भरोसेमंद) है, जैसा कि तहतावी, शामी और अन्य लोगों ने स्पष्ट किया है। इसी तरह हिदाया और काफ़ी में इसे पहले रखा गया है।" कुलतु: (मैं कहता हूँ कि) गुनहगार होना (इमाम अबू यूसुफ़ के हवाले से) पहले ज़िक्र किया है और वही क़ाज़ी खाँ के यहाँ राजह, अज़हर और अश्हर है, जैसा कि इस पर स्वयं उन्होंने तसरीह (स्पष्टता) की है, और वही मोतमद है, जैसा कि इस पर तहतावी, शामी और अन्य लोगों ने तसरीह की है, इसी तरह हिदाया और काफ़ी में इसी को मुक़द्दम (प्राथमिकता) रखा है। (त)

फ़तावा आलमगीरिया में है: "साल पूरा होने पर तुरंत वाजिब हो जाती है, यहाँ तक कि बिना किसी उज़्र के इसमें देरी करने से वह गुनहगार होगा। और राज़ी की रिवायत में यह तुरंत नहीं है (अत-

ताराखी), यहाँ तक कि मृत्यु के समय वह गुनहगार होगा। और पहला अधिक सही है।" साल पूरा होने पर ज़कात फ़ौरन लाज़िम हो जाती है यहाँ तक कि बिना उज़्र ताख़ीर (देरी) से गुनाह होगा, राज़ी की रिवायत के मुताबिक़ फ़ौरन लाज़िम नहीं (यहाँ तक कि मुअख़्ख़र करने से गुनाह न होगा) अलबत्ता इसी हालत में मौत आ गई तो...

1. फ़तह अल-क़दीर, किताबुज़ ज़कात, मकतबा नूरिया रज़विया, सक्खर 2/112
2. फ़तावा क़ाज़ी खाँ, किताबुज़ ज़कात, फ़सल फ़ी मालुल तिजारा, मतबा मुंशी नवल किशोर, लखनऊ 1/119 पृष्ठ 81 का 836

وکذا عن ابی یوسف وعن محمد ترد شھادتہ بتأ خیر الزکاۃ حق الفقراء فقد ثبت عن الثلثہ وجوب فوریۃ الزکاۃ اھ مخلصا۔ امام ابویوسف سے بھی اسی طرح مروی ہے۔ امام محمد فرماتے ہیں کہ تاخیرِ زکوۃ کی وجہ سے گواہی مردود ہو جائیگی کیونکہ زکوۃ فقراء کا حق ہے، تو تینوں بزرگوں سے یہ ثابت ہوا کہ زکوۃ کی ادائیگی فی الفور لازم ہوتی ہے اھ مخلصاً (ت)

فتاویٰ امام قاضی خاں میں ہے: ھل یأثم بتأخیر الزکوۃ بعد التمکن ذکر الکرخی انہ یأثم وھکذا ذکر الحاکم الشھید في المنتقی وعن محمد ان من اخر الزکوۃ من غیر عذر لا تقبل شھادتہ و روی ھشام عن ابی یوسف لا یأثم ۲ اھ ملخصا۔ آدمی قدرت کے بعد تاخیرِ زکوٰۃ کی وجہ سے گنہگار ہوگا یا نہیں؟ امام کرخی نے فرمایا: گنہگار ہوگا۔ اسی طرح حاکم شہید نے منتقٰی میں ذکر کیا ہے۔ امام محمد سے مروی ہے کہ جس شخص نے بغیر عذر زکوٰۃ کو مؤخر کیا اس کی شہادت قبول نہیں کی جائے گی۔ ہشام نے امام ابویوسف سے نقل کیا کہ وہ گنہگار نہ ہوگا اھ مخلصاً۔

قلت: فقد قدم التأثیم و ما یقدمہ فھو الراجح الاظھر الاشھر عندہ کما نص علیہ بنفسہ ویکون ھو المعتمد کما صرح بہ الطحطاوی و الشامی وغیرھما وکذا قدمہ في الھدایۃ والکافی۔ قلت: (میں کہتا ہوں کہ) گنہگار ہونا (امام ابویوسف کے حوالے سے) پہلے ذکر کیا ہے اور وہی قاضی خاں کے ہاں راجح، اظہر اور اشہر ہے، جیسا کہ اس پر خود انہوں نے تصریح کی ہے، اور وہی معتمد ہے، جیسا کہ اس پر طحطاوی، شامی اور دیگر لوگوں نے تصریح کی ہے، اسی طرح ہدایہ اور کافی میں اسی کو مقدم رکھا ہے (ت)

فتاویٰ عالمگیریہ میں ہے: تجب علی الفور عند تمام الحول حتی یأثم بتأخیرہ من غیر عذر وفی روایة الرازی علی التراخی حتی یأثم عند الموت والأول اصح سال پورا ہونے پر زکوٰۃ فی الفور لازم ہو جاتی ہے حتیٰ کہ بغیر عذر تاخیر سے گناہ ہوگا، رازی کی روایت کے مطابق فی الفور لازم نہیں (حتیٰ کہ مؤخر کرنے سے گناہ نہ ہوگا) البتہ اسی حالت میں موت آگئی تو

1 فتح القدیر کتاب الزکوۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱۱۲/۲ 2 فتاویٰ قاضی خاں کتاب الزکوۃ فصل فی مال التجارۃ مطبع منشی نوکشور لکھنؤ ۱۱۹/۱ Page 81 of 836

Thus in Al-Tahdhib:[1] [Arabic]: Likewise in Al-Tahdhib. [Urdu]: He will be a sinner near death, but the first opinion is more correct, as it is in Al-Tahdhib. (T)

In Jawahir al-Ikhlati, it is stated: [Arabic]: Zakat must be paid immediately such that one sins by delaying it without an excuse. It was said it can be delayed, but the first [view] is more correct. Abridged. [Urdu]: Zakat becomes obligatory immediately (fil-faur), such that one becomes a sinner by delaying it without a valid excuse. According to some, it is not immediate, but the first opinion is more correct. Abridged (T).

In Majma' al-Anhur, it is stated: [Arabic]: Muhammad said: The testimony of one who does not pay his Zakat shall not be accepted, and this indicates immediacy as Al-Karkhi said, and upon it is the fatwa.[3] [Urdu]: Imam Muhammad stated: The testimony of a person who does not pay Zakat will not be accepted; this indicates that Zakat becomes mandatory immediately. Imam Karkhi also stated the same, and the fatwa is based on this. (T)

In Tanwir al-Absar and Durr al-Mukhtar, it is stated: [Arabic]: (And it is said it is immediate) meaning obligatory immediately (and upon it is the fatwa) as in the commentary of Al-Wahbaniyyah (so its delay brings sin) without an excuse (and his testimony is rejected) because the command to spend on the poor is accompanied by the indicator of immediacy, which is to meet their needs, and these are urgent. Whenever it is not obligatory immediately, the purpose of the obligation would not be fully achieved. [Urdu]: (Some have said that Zakat is immediate) meaning Zakat becomes mandatory immediately (and the fatwa is on this) as mentioned in Sharh al-Wahbaniyyah (so delaying its payment will entail sin) when the delay is without an excuse (and the testimony of such a person is rejected) because mentioning the poor as the recipients alongside the command of Zakat is a contextual clue that it must be paid immediately, as giving Zakat is meant to fulfill the needs of the poor, and in this, haste is intended. If it were not mandatory immediately, the purpose of the obligation of Zakat would not be fully achieved. Its detail is...

---

[1] Fatawa Hindiyyah, Book of Zakat, Chapter on Trade Goods, Munshi Naval Kishore Press, Lucknow, 1/119. [2] Jawahir al-Akhlati, Book of Zakat, unpublished manuscript, p. 43. [3] Majma' al-Anhur Multaqa al-Abhur, Book of Zakat, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/192.

फतावा रिज़विया - जिल्द दहम (10)

कज़ा फी अत-तहज़ीब:[1] [अरबी]: कज़ा फी अत-तहज़ीब। [उर्दू]: मौत के करीब गुनाहगार होगा, लेकिन पहला कौल (विचार) ज़्यादा सही है जैसा कि तहज़ीब में है। (त)

जवाहर अख्लाती में है: [अरबी]: युजीब अज़-ज़कात अलल फौर हत्ता यासम बि-ताखीरिही बिला उज़र व कीला अलत-तराखी वल-अव्वल असुह।[2] अहतसारां। [उर्दू]: ज़कात फौरन वाजिब हो जाती है यहाँ तक कि बिना किसी ठोस कारण के देरी करने से गुनाहगार होता है। कुछ के अनुसार यह फौरन नहीं होती लेकिन पहला विचार ही सही है। (त)

मजमा उल-अनहुर में है: [अरबी]: काला मुहम्मद ला तुक्बलु शहादतु मन लम युअद्दी ज़कातहु व हाज़ा यदल्लु अलल फौर कमा काला अल-करखी व अलैहिल फतवा।[3] [उर्दू]: इमाम मुहम्मद ने फरमाया: जो व्यक्ति ज़कात अदा न करे उसकी गवाही स्वीकार नहीं की जाएगी, यह बात इस ओर संकेत करती है कि ज़कात फौरन अदा करना अनिवार्य है। इमाम करखी ने भी यही कहा है, और इसी पर फतवा है। (त)

तन्वीरुल अबसार और दुर्रे मुख्तार में है: [अरबी]: (व कीला फौरी) अई वाजिबुन अलल फौर (व अलैहिल फतवा) कमा फी शरह अल-वह्बानिया (फयासम बि-ताखीरिहा) बिला उज़र (व तुरद्दु शहादतुहू) लान अल-अमरा बि-सरफ इला अल-फकीर मअहू क़रीना अल-फौर व हिया अन्नहू लि-दफअ हाजतिही व हिया मुअज्जला फ-मता लम तुजिब अलल फौर लम युहस्सिल अल-मकसूद मिन अल-ईजाब अला वज्हित-तमाम। [उर्दू]: (कुछ ने कहा कि ज़कात फौरी है) यानी ज़कात फौरन अनिवार्य हो जाती है (और इसी पर फतवा है) जैसा कि शरह वह्बानिया में है (तो भुगतान में देरी से गुनाह होगा) जब देरी बिना किसी कारण के हो (और ऐसे व्यक्ति की गवाही अस्वीकार्य है) क्योंकि ज़कात के आदेश के साथ गरीबों (मसरफ) का उल्लेख करना इस बात का सबूत है कि भुगतान फौरन होना चाहिए, क्योंकि ज़कात देना गरीबों की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए होता है और इसमें जल्दी करना ही उद्देश्य है। अगर यह फौरन अनिवार्य न हो तो ज़कात के अनिवार्य होने का उद्देश्य पूरी तरह प्राप्त नहीं होगा। इसका विवरण...

---

[1] फतावा हिंदिया, किताबुज़ ज़कात, व्यापारिक वस्तुओं का अध्याय, मुंशी नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 1/119। [2] जवाहर अल-अख्लाती, किताबुज़ ज़कात, अप्रकाशित हस्तलिखित प्रति, पृष्ठ

43। [3] मजमा अल-अनहुर मुल्तकल अबहुर, किताबुज़ ज़कात, दार इह्या अल-तुरास अल-अरबी, बेरुत, 1/192।

पृष्ठ 82 / 836

کذا فی التہذیب۔[1] | قریب موت گنہگار ہوگا، لیکن پہلا قول اصح ہے جیسا کہ تہذیب میں ہے۔(ت)

جواہر اخلاطی میں ہے: یجب الزکوۃ علی الفور حتی یأثم بتأخیرہ بلا عذر و قیل علی التراخي والاول اصح[2] اہ ملخصاً۔ | زکوۃ علی الفور واجب ہو جاتی ہے حتی کہ بغیر عذر مؤخر کرنے سے گناہ گار ہوتا ہے بعض کے نزدیک فی الفور نہیں ہوتی لیکن پہلا قول اصح ہے اھ ملخصاً(ت)

مجمع الانہر میں ہے: قال محمد لا تقبل شہادۃ من لم یؤد زکوتہ وھذا یدل علی الفور کما قال الکرخی و علیہ الفتوی۔[3] | امام محمد نے فرمایا : جو شخص زکوۃ ادا نہ کرے اس کی شہادت مقبول نہ ہو گی، یہ بات دلالت کرتی ہے کہ زکوۃ فی الفور لازم ہو جاتی ہے۔ امام کرخی نے بھی یہی فرمایا ہے، اور اسی پر فتوی ہے (ت)

تنویر الابصار و در مختار میں ہے: (وقیل فوری) ای واجب علی الفور (وعلیہ الفتوی) کما في شرح الوھبانیۃ (فیأثم بتأخیرھا) بلا عذر (وترد شہادتہ) لان الامر بالصرف الی الفقیر معہ قرینۃ الفور وھی انہ لدفع حاجتہ وھی معجلۃ فمتی لم تجب علی الفور لم یحصل المقصود من الایجاب علی وجہ التمام وتمامہ | (بعض نے کہا کہ زکوۃ فوری ہے) یعنی زکوۃ فی الفور لازم ہو جاتی ہے (اور اسی پر فتوی ہے) جیسا کہ شرح وہبانیہ میں ہے (تو تاخیر ادائیگی سے گناہ لازم لائے گا) جب تاخیر بغیر عذر ہو (اور ایسے شخص کی شہادت مردود ہے) کیونکہ حکم زکوۃ کے ساتھ مصرف زکوۃ فقراء کا ذکر کرنا اس پر قرینہ ہے کہ فی الفور ادائیگی ہو کیونکہ زکوۃ دینا ضروریات فقیر کو پورا کرنے کیلئے ہوتا ہے اور اس میں تعجیل مقصود ہے اور اگر یہ فی الفور لازم ہی نہ ہو تو کامل طور پر ایجاب زکوۃ کا مقصد حاصل نہ ہوگا۔ تفصیل اس کی

[1] فتاوىٰ ہندیہ کتاب الزکوٰۃ فصل فی مال التجارۃ مطبع منشی نولکشور لکھنؤ ۱۱۹/۱ [2] جواہر الاخلاطی کتاب الزکوٰۃ غیر مطبوعہ قلمی نسخہ ص ۴۳ [3] مجمع الانہر ملتقی الابحر کتاب الزکوٰۃ دار حیاء التراث العربی بیروت ۱ / ۱۹۲

Fatawa Razawiyya Volume 10

In 'Al-Fath' [1], it is stated: "I say: Since this is what the evidence dictates, it is closely aligned with the sublime objective of the Sharia, it is the more cautious approach in religion, more effective in repelling the deceits of the devils, and more beneficial for the poor Muslims. Our leader, the insightful jurist and judge of the Ummah, asserted this and authenticated it, as previously mentioned and as will follow from the great Imams. It has been established from our three masters, who are the leaders of the school of thought, and many have specified that the fatwa is based on this. It is well-known that these words are more emphatic and stronger; therefore, reliance should be placed on them, even if delay (tarakhi) has also been narrated from the three glorious ones and authenticated by al-Baqani and al-Tatarkhani. Rather, the absolute researcher (al-Muhaqqiq al-Mutlaq) said in 'Fath al-Qadir': What Ibn Shuja' mentioned from our companions that Zakat is on a delay (tarakhi) must be understood as referring to the evidence for its obligatory nature (faradiyya), i.e., the evidence for its obligatoriness does not necessitate immediate performance, but it does not negate the existence of evidence for the necessity (wujub) of immediate performance [2]." Allama Sayyid Ahmad al-Misri said in his marginalia (hashiya) on 'al-Durr al-Mukhtar': Al-Kamal [ibn al-Humam] chose the view that Zakat is an obligation (fard) and its immediate payment is a necessity (wajib), and this serves as a reconciliation between the two statements [3]. I [the author] say: It appeared to me that reconciliation could be that whoever spoke of delay...

---

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Mujtabai Press, Delhi, 1/130.
2. Fath al-Qadir, Kitab al-Zakat, Maktaba Nooriya Razawiyya, Sukkur, 2/112.
3. Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Dar al-Ma'rifa, Beirut, 1/396.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

'अल-फतह' [1] में है: "मैं कहता हूँ: जब प्रमाण ऽ मामला यह है, तो यह शरीयत के महान उद्देश्य के सबसे निकट और अनुकूल है, धर्म में अधिक सुरक्षित है, शैतानों के धोखे को दूर करने वाला है, और गरीब मुसलमानों के लिए अधिक लाभकारी है। हमारे प्रमुख फकीह और उम्मत के काजी ने इसी पर जोर दिया और इसे सही करार दिया, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है और जैसा कि महान इमामों से आएगा। यह हमारे तीनों स्वामियों (इमामों) से प्रमाणित है जो पंथ के सिरताज हैं, और कई लोगों ने स्पष्ट किया है कि फतवा इसी पर है। यह ज्ञात है कि ये शब्द अधिक पुष्ट और मजबूत हैं; इसलिए, इसी पर भरोसा किया जाना चाहिए, भले ही उन तीनों महान हस्तियों से विलंब (तराखी) भी वर्णित हो और अल-बक़ानी और अल-तातारीखानी ने इसे सही कहा हो। बल्कि मुहाक्किक अल-मुतलक ने 'फतह अल-क़दीर' में कहा: हमारे साथियों में से इब्न शुजा ने जो यह कहा कि ज़कात में विलंब की अनुमति है, उसे ज़कात की अनिवार्यता (फ़र्ज़ियत) के प्रमाण से जोड़कर समझा जाना चाहिए, यानी अनिवार्यता का प्रमाण तुरंत भुगतान को आवश्यक नहीं बनाता है, जबकि यह तुरंत भुगतान के लिए एक अलग प्रमाण के अस्तित्व को नकारता नहीं है [2]।" अल्लामा सैय्यद अहमद अल-मिस्री ने 'अल-दुर अल-मुख्तार' के हाशिये में कहा कि अल-कमाल (इब्न अल-हुमाम) ने यह विकल्प चुना कि ज़कात फ़र्ज़ है और उसका तुरंत भुगतान वाजिब है, और यह दोनों कथनों के बीच सामंजस्य के रूप में कार्य करता है [3]। मैं [लेखक] कहता हूँ: मुझे यह सामंजस्य प्रतीत हुआ कि जिसने विलंब की बात कही...

---

1. दुर अल-मुख्तार, किताब अल-ज़कात, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/130।
2. फतह अल-कदीर, किताब अल-ज़कात, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 2/112।
3. हाशिया अत-तहतावी अला अद-दुर अल-मुख्तार, किताब अल-ज़कात, दार अल-मरिफ़ा, बेरूत, 1/396।

पृष्ठ 836 का 83

فتاوی رضویہ جلد دہم

فی الفتح[1] اھ اقول : فإذا كان هذا هوا قضية الدليل والا لصق بمقصد الشرع الجليل وهو الاحوط في الدين والا دفع لكيد الشياطين والأنفع لفقراء المسلمين وقد جزم به المولى فقيه النفس قاضى الامة وصححه كما مر ويأتى من كبار الأئمة وقد ثبت عن ساداتنا الثلثة مالكي الازمة وقد نص كثيرون ان عليه الفتوى ومعلوم ان هذا اللفظ أكد واقوى فعليه فليكن التعويل ولا اعتماد وان حكى التراخي ايضا عن الثلثة الامجاد وصححه الباقاني والتاتارخانى بل قال المولى المحقق على الاطلاق فى فتح القدير ما ذكر ابن شجاع عن اصحابنا ان الزكوة على التراخي يجب حمله على ان المراد بالنظر الى دليل الافتراض اى دليل الافتراض لا يوجبها وهولا ينفي وجود دليل الايجاب[2] اھ قال العلامة السيد احمد المصرى في حاشية الدر المختار واختار الكمال ان الزكوة فرضية وفوريتها واجبة ويصلح هذا توفيقاً بين القولين[3] اھ قلت : وكان ظهر لى التوفيق بأن من قال بالتراخي

فتح میں ہے اھ اقول : جب دلیل کا معاملہ یہ ہے تو یہ مقصد شرع جلیل سے متصل اور قریب ہے اور یہی دین میں احوط اور شیاطین کے مکر کو دفع کرنے والا اور فقراء مسلمین کے لئے زیادہ نافع ہے، اسی پر ہمارے سربراہ فقیہ النفس قاضی الامت نے جزم فرمایا اور اسکو صحیح قرار دیا جس کا ذکر گزرا اور کبار ائمہ سے اس کی تصحیح آ رہی ہے، اور ہمارے تینوں ائمہ جو مسلک کے سرتاج ہیں سے یہی ثابت ہے ، اور کثیر فقہاء نے تصریح کی ہے کہ فتوی اسی پر ہے ، اور یہ بات مسلم ہے کہ یہ الفاظ مؤکد اور قوی ہیں، لہذا اسی پر اعتماد ہونا چاہئے اگرچہ ان تینوں بزرگوں سے تراخی بھی منقول ہے اور اسے باقانی اور تاتارخانی نے صحیح کہا ہے بلکہ محقق علی الاطلاق نے فتح القدیر میں فرمایا : ہمارے احناف میں سے ابن شجاع نے جو یہ کہا کہ زکوٰۃ فی الفور لازم نہیں اسے زکوٰۃ کی فرضیت کی دلیل سے منسلک کرنا ضروری ہے یعنی فرضیت کی

دلیل فی الفور ادائیگی کو واجب نہیں کرتی جبکہ اس سے فوری ادائیگی کی علیحدہ دلیل کی نفی نہیں ہوتی۔ علامہ سیّد احمد مصری نے حاشیہ در مختار میں کہا کہ کمال کا مختار یہ ہے کہ زکوٰۃ فرض ہے اور فی الفور ادا کرنا واجب ہے، اس سے دونوں اقوال کے درمیان موافقت ممکن ہے اھ قلت (میں کہتا ہوں): میرے نزدیک تطبیق یوں ہوسکتی ہے کہ جس نے تراخی کی

---

1. در مختار کتاب الزکوٰۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۳۰
2. فتح القدیر کتاب الزکوٰۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۱۱۲
3. حاشیہ الطحطاوی علی الدر المختار کتاب الزکوٰۃ دار المعرفہ بیروت ۱/ ۳۹۶

Fatawa Razawiya - Volume 10

(Table Top Left - Arabic): His meaning is that the time for it is a lifetime, so whenever it is performed, it is considered performance (ada), even if one sins due to delay. And whoever said it is mandatory immediately (fil-fawr) meant that one becomes a sinner by delay, even if it does not become a missed obligation (qada). There is nothing strange in this, for Hajj is immediate according to the more correct (rajih) opinion, despite consensus that if it is delayed, it is still considered performance (ada). A similar case is the prostration of recitation (sajdah al-tilawah); its obligation is immediate according to Abu Yusuf and delayed according to Muhammad, which is the preferred (mukhtar) view as stated in Al-Nahr, Al-Imdad, and Al-Durr al-Mukhtar. If one performs it after a long time, it is considered performance by consensus, not a missed one, as mentioned in Al-Nahr al-Faiq and others.

(Table Top Right - Urdu): What he meant is that the time for performance is the entire life, so whenever one pays Zakat, it will be considered performance, although delaying it makes one a sinner. And the one who said "it is mandatory immediately" meant that by delaying, a person becomes a sinner, although delay will not turn it into a missed obligation (qada). This is not something new because Hajj, according to the preferred opinion, is mandatory immediately, even though there is consensus that if someone performed Hajj after a delay, it would still be performance. Its example is the prostration of recitation which, according to Imam Abu Yusuf, is mandatory immediately and according to Imam Muhammad, it is mandatory with delay, and this is the chosen opinion as it is in Al-Nahr, Al-Imdad, and Al-Durr al-Mukhtar. If someone performs the prostration after some time, it will be considered performance by consensus; he will not be called one who performs a missed obligation, as mentioned in Al-Nahr al-Faiq and others.

(Table Middle Left - Arabic): I say: But these two reconciliations are undermined by what we have previously cited from Al-Khaniyah, where the subject of the issue is specifically about sinning. The narration of Hisham from Abu Yusuf explicitly states that there is no sin. Therefore, it is necessary to maintain the disagreement and prefer the stronger opinion, or it could be said that Hisham heard "delay" (tarakhi) and narrated it, or whoever narrated it from him did so based on their understanding of the meaning. Perhaps there is some obscurity in this that is recognized and rejected. So ponder upon it. And Allah Almighty knows best.

(Table Middle Right - Urdu): I say: These two reconciliations make the previous statement of Al-Khaniyah problematic because the subject of the issue there is about being a sinner, and in the narration of Hisham from Imam Abu Yusuf, there is a clear statement of not being a sinner. Therefore, establishing the disagreement and preferring the stronger opinion is necessary, or it should be said that Hisham heard about delay and narrated it, and whoever narrated from him based on meaning did so according to his understanding. Perhaps there is some remoteness in this and it might be considered unfamiliar, so reflect. And Allah Almighty knows best. (T)

(Bottom Text - Urdu/Arabic): Rather, many of our scholars have explicitly stated that the one who delays payment of Zakat is one whose testimony is rejected. This is narrated from the recorder of the school (Madhhab), our master Imam Muhammad, may Allah have mercy on him. As previously mentioned from Al-Fath, Al-Khaniyah, and Majma' al-Anhur. Likewise, in Khazanat al-Muftin and Sharh al-Niqayah from Al-Muhit, and in Jawahir al-Akhlati, and it is firmly established in Tanwir and Al-Durr.

(ऊपरी तालिका - अरबी): उनकी बात का अर्थ यह है कि इसके अदा करने का समय पूरी उम्र है, तो जिस समय भी अदायगी करेगा ज़कात अदा ही होगी, हालाँकि देरी करने से वह गुनहगार होगा। और जिसने कहा कि "तत्काल (फ़िल-फ़ौर) वाजिब है", उसका अर्थ यह है कि देरी करने से इंसान गुनहगार हो जाता है, हालाँकि देरी से वह कज़ा (छूटा हुआ) नहीं होगा। और इसमें कोई नई बात नहीं है क्योंकि हज सही (राजिह) मत के अनुसार तत्काल अनिवार्य है, जबकि इस पर आम सहमति (इज्मा) है कि यदि किसी ने देरी से हज किया तो वह अदायगी ही मानी जाएगी। इसका उदाहरण सजदा-ए-तिलावत है, जिसकी अनिवार्यता इमाम अबू यूसुफ के अनुसार तत्काल है और इमाम मुहम्मद के अनुसार देरी के साथ (तराख़ी) है, और यही चुनिंदा (मुख्तार) मत है जैसा कि 'नहर', 'इमदाद' और 'दुर्रे-मुख्तार' में है। यदि किसी ने लंबे समय बाद सजदा किया तो सर्वसम्मति से वह अदायगी ही होगी, उसे कज़ा करने वाला नहीं कहा जाएगा, जैसा कि 'नहरुल फ़ाइक' आदि में है।

(ऊपरी तालिका - उर्दू): उनकी बात का अर्थ यह है कि अदायगी का समय पूरी उम्र है, तो जिस समय भी अदायगी करेगा ज़कात अदा ही होगी हालाँकि देरी से गुनहगार होगा। और जिसने कहा "तत्काल अनिवार्य है" उसकी मुराद यह है कि देरी से इंसान गुनहगार हो जाता है हालाँकि देरी से कज़ा नहीं होगी। और यह कोई नई बात नहीं क्योंकि हज राज़िह कौल के मुताबिक तत्काल लाज़िम है, हालांकि इस पर इज्मा है कि अगर किसी ने देर के बाद हज किया तो अदा ही होगा। इसकी मिसाल सजदा-ए-तिलावत है जो इमाम अबू यूसुफ़ के नज़दीक फ़िल-फ़ौर और इमाम मुहम्मद के नज़दीक अली-अत-तराख़ी वाजिब है और यही मुख़्तार है जैसा कि नहर, इमदाद और दुर्रे-मुख़्तार में है। अगर किसी ने मुद्दत के बाद सजदा किया तो बिल-इत्तेफ़ाक अदा ही होगा, उसे कज़ा करने वाला न कहा जाएगा, जैसा कि अन-नहरुल फ़ाइक वगैरह में है।

(मध्य तालिका - अरबी): मैं कहता हूँ: लेकिन ये दोनों समाधान 'ख़ानिया' के पिछले कथन को संदिग्ध बना देते हैं, क्योंकि वहां मसले का शीर्षक ही गुनहगार होने के बारे में है। इमाम अबू यूसुफ से हिशाम की रिवायत में गुनहगार न होने का स्पष्ट उल्लेख है। इसलिए मतभेद को बनाए रखना और सही (राजिह) मत को प्राथमिकता देना आवश्यक है, या यह कहा जाए कि हिशाम ने 'तराख़ी' सुना और उसे वैसे ही बयान कर दिया या जिसने उनसे 'रिवायत बिल-मानी' की, उसने अपनी समझ के अनुसार बयान किया। शायद इसमें कोई ऐसी बात हो जो समझ से परे हो, तो इस पर विचार करें। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

(मध्य तालिका - उर्दू): अक़ूल: इन दोनों समाधानों (ततबीकात) को ख़ानिया की पिछली इबारत मशकूक कर देती है कि वहाँ मसले का उनवान ही गुनहगार होने के बारे में है, और इमाम अबू यूसुफ़ से रिवायते हिशाम में गुनहगार न होने की वज़ाहत है। लिहाज़ा इख़्तेलाफ़ साबित करना और राज़िह को तरजीह देना ज़रूरी है या यह कहा जाए कि हिशाम ने तराख़ी सुना और उसे नक़ल कर दिया, जिसने उनसे रिवायत बिल-मानी की उसने अपनी समझ के मुताबिक नक़ल कर दिया। शायद इसमें कोई ऐसी बात हो जो अजनबी समझी जाए, तो गौर करो। वल्लाह तआला आलम। (त)

(नीचे का पाठ - उर्दू/अरबी): बल्कि हमारे कई आइम्मा (विद्वानों) ने तसरीह (स्पष्ट) फरमाई कि इसकी (ज़कात) अदायगी में देर करने वाला मर्दूद-अश-शहादत (जिसकी गवाही स्वीकार न हो) है। यही बात मुहर्रिर-ए-मज़हब सैय्यदुना इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैहि) से वर्णित है। जैसा कि 'फ़तह', 'ख़ानिया' और 'मजमा-अल-अनहुर' में है। इसी तरह 'ख़ज़ाना-तुल-मुफ़्तीन' और 'शरह-उन-निकाया' में 'मुहीत' के हवाले से है और 'जवाहर-अल-अख़लाती' में है, और इसी पर 'तन्वीर' और 'दुर' में मज़बूती से लिखा गया है।

पृष्ठ 84/836

(ٹیبل کا اوپر کا حصہ - عربی): فمراده ان وقته العمر فتكون اداء متى ادى وان اثم بالتأخير ومن قال بالفور اراد انه ياثم بالتأخير وان لم يصربه قضاء ولا بدع في ذلك فان الحج فورى على الراجح مع الاجماع على انه لو تراخى كان اداء ونظيره سجدة التلاوة وجوبها فورى عند ابي يوسف ومتراخ عند محمد و هو المختار كما فى النهر والامداد والدرالمختار واذا اداها بعد مدة كان مؤديا اتفاقا لا قاضيا كما فى النهر الفائق وغيره،

(ٹیبل کا اوپر کا حصہ - اردو): بات کی ہے اس کی مراد یہ ہے کہ وقت ادا تمام عمر ہے، تو جس وقت بھی ادائیگی کریگا زکوۃ ادا ہی ہوگی اگرچہ تاخیر سے گنہگار ہوگا، اور جس نے کہا "فی الفور واجب ہے" اس کی مراد یہ ہے کہ تاخیر سے انسان گنہگار ہوجاتا ہے اگرچہ تاخیر سے قضا نہیں ہوگی، اور یہ کوئی نئی بات نہیں کیونکہ حج راجح قول کے مطابق فی الفور لازم ہے، حالانکہ اس پر اجماع ہے کہ اگر کسی نے دیر کے بعد حج کیا تو ادا ہی ہوگا، اس کی نظیر سجدہ تلاوت ہے جو امام ابو یوسف کے نزدیک فی الفور اور امام محمد کے نزدیک علی التراخی واجب ہے اور یہی مختار ہے جیسا کہ نہر، امداد اور درمختار میں ہے اگر کسی نے مدت کے بعد سجدہ کیا تو بالاتفاق ادا ہی ہوگا، اسے قضا کرنے والا نہ کہا جائیگا ، جیسا کہ النہر الفائق وغیرہ میں ہے۔

(ٹیبل کا درمیانی حصہ - عربی): اقول: لكن يخدش التوفيقين ما قد منا عن الخانية حيث فرض المسئلة فى التأثيم ونص رواية هشام عن ابى يوسف لا يأثم فلابد من ابقاء الخلاف وترجيح الراجح اويقال ان هشاما انما سمع التراخى فنقل هو او من روى عنه بالمعنى على ما فهم ولعل فيه بعدا يعرف وينكر فليتدبر، والله تعالى اعلم۔

(ٹیبل کا درمیانی حصہ - اردو): اقول: ان دونوں تطبیقات کو خانیہ کی سابقہ عبارت مخدوش کر دیتی ہے کہ وہاں عنوان مسئلہ ہی گنہگار ہونے کے بارے میں ہے، اور امام ابو یوسف سے روایت ہشام میں گنہگار نہ ہونے کی تصریح ہے لہٰذا اثبات اختلاف اور ترجیح راجح ضروری ہے یا یہ کہا جائے کہ ہشام نے تراخی سنا اور اسے نقل کردیا جس نے ان سے روایت بالمعنی کی اس نے اپنی سمجھ کے مطابق نقل کردیا، شاید اس میں بعد معلوم ہو اور اجنبی سمجھا جائے ، تو غور کرو۔واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

(نیچے کی عبارت): بلکہ ہمارے بہت ائمہ نے تصریح فرمائی کہ اس (زکوۃ) کی ادائیگی میں دیر کرنے والا مردود الشہادۃ ہے، یہی منقول ہے محرر مذہب سیّدنا امام محمد رحمہ اللہ تعالیٰ سے، کما مر عن الفتح والخانیۃ ومجمع النہر ومثلہ فی خزانۃ المفتین وفی شرح النقایۃ عن المحیط وفی جواھرالاخلاطی و بہ جزم فی جیسا کہ فتح ، خانیہ اور مجمع الانہر میں ہے۔ اسی طرح خزانہ المفتین اور شرح نقایہ میں محیط سے اور جواہر الاخلاطی میں ہے، اور اسی پر تنویر اور در میں جزم

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Arabic Section]: At-Tanwir and Ad-Durr, as you have heard, and Imam Al-Khassi, the author of Al-Mudmirat (commentary on Al-Quduri), Al-Tahtawi, Ash-Shami, and others have narrated from Imam Qadi Khan that the fatwa is based on this, and Faqih Abu al-Layth (may Allah Almighty have mercy on him) has also adopted it. I say: The statement of one who says his testimony is rejected supports [our view] as is evident, and the statement of one who says it is not rejected does not contradict us, for not everything in which sin predominates, even if it is a minor sin, is of the type for which testimony is rejected, as is not hidden from anyone who has studied the Book of Testimony.

[Urdu Section]: ...as you have heard. Imam Al-Khassi, the author of Al-Mudmirat (commentary on Al-Quduri), Al-Tahtawi, Ash-Shami, and others have narrated from Imam Qadi Khan that the fatwa is based on this, and Faqih Abu al-Layth (may Allah Almighty have mercy on him) has also adopted it. I say: One who says "his testimony is rejected" has supported us as is not hidden, and one who says "it is not rejected" is not our opponent because every matter in which being a sinner is predominant, even if it was a minor sin, is not such that testimony would be rejected by it, as is clear (not hidden) for one who has dealt with the Book of Testimony. (T)

And there is no doubt that if in gradualness there was no delay of the whole, there would surely be a delay of some, whereas it was obligatory upon him to fulfill the entire demand immediately.

[Arabic Section]: Because the immediate obligation is for the whole, not for some, and this is very clear. Then, regarding the meaning of "immediate" (al-fawr) here, there is a discussion by Allama al-Shami (may his secret be sanctified) where he said: His statement "he sins by delaying it etc." implies sin by delay even if it is little, like a day or two, because they interpreted "immediate" as the first possible time. And it might be said that the intended meaning is not to delay until the following year, because in al-Bada'i from al-Muntaqa, if one does not pay until two years have passed, he has done evil and sinned. (End quote) Reflect. (End quote) I say: It is not hidden that this relied-upon opinion is narrated in general books with the word "immediate" (al-fawr).

[Urdu Section]: Because making it immediately obligatory is for the whole, not for some, and this is very clear. Then here Allama Shami (may his secret be sanctified) has a discussion on the meaning of "immediate". He says about the author's

statement "he will be a sinner by delaying Zakat etc." that it appears from this that even if the delay is short, for example, one or two days, he will be a sinner because the jurists have interpreted "immediate" as the first possible time, and sometimes it is said that the meaning is that it should not be delayed until the next year because in Bada'i from Muntaqa it is stated that when several years pass and (Zakat) payment has not been made, then this is bad and a sin. (End quote) Reflect. I say: Let it be clear that this relied-upon opinion is narrated in general reliable books with the word "immediate" and "no delay".

1 Rad al-Muhtar, Kitab az-Zakat, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 13/2 Page 85 of 836

फ़तावा रज़विया खंड दसवां

[अरबी पाठ]: अत-तन्वीर और अद-दुर्र जैसा कि आपने सुना है, और इमाम अल-खास्सी, अल-मुदमिरात (कुदुरी की व्याख्या) के लेखक, अल-तह्तावी, अश-शामी और अन्य लोगों ने इमाम काज़ी ख़ान से उद्धृत किया है कि फतवा इसी पर आधारित है, और फकीह अबू अल-लैथ (अल्लाह उन पर रहम करे) ने भी इसे ही अपनाया है। मैं कहता हूँ: जिस किसी ने कहा कि उसकी गवाही रद्द कर दी जाती है, उसने हमारा समर्थन किया है जैसा कि स्पष्ट है, और जिसने कहा कि रद्द नहीं की जाती वह हमारा विरोधी नहीं है, क्योंकि हर वह चीज़ जिसमें गुनहगार होना प्रबल हो, चाहे वह छोटा गुनाह (सग़ीरा) ही क्यों न हो, ऐसी नहीं है जिससे गवाही रद्द हो जाए, जैसा कि गवाही की किताब (किताबुश शहादत) का अध्ययन करने वाले पर स्पष्ट है।

[उर्दू पाठ]: जैसा कि आप सुन चुके हैं। इमाम अल-खास्सी, अल-मुदमिरात (कुदुरी की व्याख्या) के लेखक, अल-तह्तावी, अश-शामी और अन्य लोगों ने इमाम काज़ी ख़ान से उद्धृत किया कि फतवा इसी पर है, और फकीह अबू अल-लैथ रहमतुल्लाह अलैह ने इसे ही लिया है। मैं कहता हूँ: जिसने यह कहा कि "उसकी गवाही अस्वीकार्य है" उसने हमारा समर्थन किया जैसा कि छिपा नहीं है, और जिसने कहा "अस्वीकार्य नहीं है" वह हमारे विरोधी नहीं हैं क्योंकि हर वह चीज़ जिसमें गुनहगार होना प्रबल हो, चाहे वह छोटा गुनाह ही क्यों न हो, ऐसी नहीं है जिससे गवाही रद्द हो जाए जैसा कि यह उस पर स्पष्ट है (छिपा नहीं है) जिसने गवाही की किताब (किताबुश शहादत) का अध्ययन किया है। (त)

और इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि धीरे-धीरे करने में पूरी देरी नहीं हुई तो कुछ की तो ज़रूर होगी, जबकि उस पर अनिवार्य था कि पूरी मांग का भुगतान तत्काल (फिल-फ़ौर) करे।

[अरबी पाठ]: क्योंकि तत्काल अनिवार्यता पूरे के लिए है न कि कुछ के लिए, और यह बहुत स्पष्ट है। फिर यहाँ "तत्काल" (अल-फ़ौर) के अर्थ में अल्लामा अल-शामी (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र रखे) की एक चर्चा है जहाँ उन्होंने कहा: उनका कथन "वह इसमें देरी करके गुनहगार होगा आदि" का अर्थ देरी से होने वाला गुनाह है चाहे वह कम ही क्यों न हो, जैसे एक या दो दिन, क्योंकि उन्होंने "तत्काल" की व्याख्या पहले संभव समय के रूप में की है। और यह भी कहा जा सकता है कि इसका अर्थ यह है कि अगले वर्ष तक देरी न की जाए क्योंकि अल-बदई में अल-मुन्तका से उल्लेख है कि यदि कोई दो साल बीतने तक भुगतान नहीं करता है, तो उसने बुरा किया और गुनाह किया। (समाप्त)

विचार करें। (समाप्त) मैं कहता हूँ: यह छिपा नहीं है कि यह विश्वसनीय मत सामान्य पुस्तकों में "तत्काल" (अल-फ़ौर) शब्द के साथ उद्धृत है।

[उर्दू पाठ]: क्योंकि तत्काल अनिवार्य करना पूरे के लिए है न कि कुछ के लिए, और यह बहुत स्पष्ट है, फिर यहाँ अल्लामा शामी (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र रखे) को "फ़ौर" (तत्काल) के अर्थ में चर्चा है, वह लेखक के कथन "ज़कात में देरी से गुनहगार होगा" आदि के बारे में कहते हैं कि इससे यही ज़ाहिर है कि देरी चाहे थोड़ी हो मसलन एक या दो दिन, उससे गुनहगार होगा क्योंकि फ़ुक़्हा ने 'फ़ौर' की तफ़सीर (व्याख्या) पहले संभव समय से की है, और कभी यह कहा जाता है कि मुराद यह है कि आगामी वर्ष तक देरी न हो क्योंकि बदई में मुन्तका से है कि जब कई साल गुज़र जाएँ और (ज़कात की) अदायगी न की हो तो यह बुरा और गुनाह है। (समाप्त) विचार करें। मैं कहता हूँ: स्पष्ट रहे कि यह विश्वसनीय मत आम प्रामाणिक पुस्तकों में शब्द "फ़ौर" और "अदम-ए-ताख़ीर" (देरी न करना) से उद्धृत है और...

1 रद अल-मुह्तार, किताबुज़ ज़कात, दार इह्या अत-तुरास अल-अरबी, बेरूत 13/2 पृष्ठ 85 of 836

فتاوی رضویه جلد دہم

التنویر والدر کما سمعت ونقل الامام الخاصي وصاحب المضمرات شرح القدوري والطهطاوی والشامی وغیرهم عن الامام قاضی خان ان علیه الفتوی وبه اخذ الفقیه ابو اللیث رحمه الله تعالی اقول : وقول من قال ترد شهادته یؤید کا لا یخفی ومن قال لا فقوله لا یخالفنا اذ لیس کل ما یترجح فیه الاثم وان صغیرة ممایرد به الشهادة کمالیس بخاف علی من طالع کتاب الشهادة۔ کیا ہے جیسا کہ آپ سُن چکے۔ امام خاصی ، صاحب المضمرات شرح قدوری ، طحطاوی اور شامی وغیرہ نے امام قاضی خان سے نقل کیا کہ اسی پر فتویٰ ہے ، اور فقیہ ابواللیث رحمہ اللہ تعالیٰ نے اسے ہی لیا ہے۔ اقول: جس نے یہ کہا کہ " اس کی شہادت مردود ہے " اس نے ہماری تائید کی جیسا کہ مخفی نہیں ، جس نے کہا " مردود نہیں " وہ ہمارے مخالف نہیں کیونکہ ہر وہ شئی جس میں گنہگار ہونا راجح ہو اگر چہ گناہ صغیرہ ہی ہوا ایسی نہیں جس سے شہادت رد ہو جائے جیسا کہ یہ اس پر واضح ہے (مخفی نہیں) جس نے کتاب الشہادۃ کا معاملہ کیا ہے۔ (ت) اور شک نہیں کہ تدریج میں اگر کل کی تاخیر نہ ہوئی تو بعض کی ضرور ہوگی حالانکہ اس پر واجب تھا کہ کل مطالبہ فی الفور ادا کرے ، لان الا یجاب الفوری انما ھو للکل لا للبعض و ھذا ظاھر جدًا ثم فی معنی الفور ھھنا بحث للعلامة الشامي قدس سرّہ السامی حیث قال قوله فیأثم بتاخیرھا الخ ظاھرہ الاثم بالتأخیر ولوقلّ کیوم او یومین لانھم فسروا الفور باول اوقات الامکان وقد یقال المرادان لا یؤخر الی العام المقابل لما في البدائع عن المنتقی بأنون اذا لم یود حتی مضی حولان فقد اساء وأثم اھ فتأمل اھ اقول: لا یخفی ان ھذا القول المعتمد منقول في عامة الکتب بلفظ الفور کیونکہ فوری واجب کرنا کُل کے لئے ہے نہ کہ بعض کے لئے، اور یہ نہایت ہی واضح ہے، پھر یہاں علامہ شامی قدس سرّہ السامی کو معنی فور میں کلام ہے وہ کہتے ہیں مصنف کے قول " تاخیر زکوۃ سے گنہگار ہوگا" الخ اس سے ظاہر یہی ہے کہ

تاخیر اگرچہ تھوڑی ہو مثلاً ایک یا دو دن، اس سے گنہگار ہوگا کیونکہ فقہاء نے فور کی تفسیر اوّل اوقاتِ امکان سے کی ہے، اور کبھی یہ کہا جاتا ہے کہ مراد یہ ہے کہ آئندہ سال تک تاخیر نہ ہو کیونکہ بدائع میں منتقی سے ہے کہ جب کئی سال گزر جائیں اور (زکوۃ کی) ادائیگی نہ کی ہو تو یہ بُرا اور گناہ ہے اھ فتامل۔ اقول: واضح رہے کہ یہ قول معتمد عام کتب میں لفظِ فور اور عدمِ تاخیر سے منقول ہے اور

1 رد المحتار کتاب الزکوۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۱۳/۲ Page 85 of 836

Fatawa Razawiya, Volume 10

Arabic Text: The meaning of 'not delaying', as specified by the jurists and as you yourself have pointed out, is to perform [the obligation] at the earliest possible time. Therefore, restricting 'not delaying' to a year is a change (alteration), not an interpretation. It appears to me that the evidence also contradicts this [restriction], for the scholars, such as the Imam who is a jurist at heart and the absolute investigative Imam, and Imam Husain bin Muhammad al-Sam'ani, author of Khizanat al-Muftin, and Allama Burhan al-Din Abu Bakr bin Ibrahim al-Husayni, author of Jawahir al-Akhlati, and others (may Allah Almighty have mercy on them), mentioned the reason for Imam Muhammad’s distinction in making Zakat obligatory immediately (fawran) while Haj is delayed (taraxiyan). They stated that Zakat is the right of the poor, so delaying their right makes one sinful. Unlike Haj, which is purely the right of the Lord, Glory be to Him. And you know that the right of a slave, after the obligation and ability to perform it arises, is not delayed at all. Do you not see that when the deadline for a debt arrives, a wealthy person's procrastination is oppression, even if it is a short delay? Similarly, the Master Investigator, in his research, stated that there is a contextual clue for immediacy (fawr) in the text, which is that Zakat is meant to alleviate the needs of the poor, and this requires haste, which indicates true immediacy. Now, there is no difference in failing to achieve the objective completely whether it's one year or multiple years. No wonder it is stated in Majma' al-Anhur, after mentioning the fatwa on the immediacy of Zakat...

Urdu Text: Its meaning, as the jurists have clarified and you yourself have mentioned, is to fulfill it in the earliest possible moments. Therefore, to restrict non-delay to a year is a change (alteration), not an interpretation. And I also know that the matter of evidence is also contradicting it because scholars, for example, Imam Faqih al-Nafs, Imam Muhaqqiq ala al-Itlaq, Imam Husain bin Muhammad al-Sam'ani author of Khizanat al-Muftin, and Allama Burhan al-Din Abu Bakr bin Ibrahim al-Husayni author of Jawahir al-Akhlati, etc., may Allah Almighty have mercy on them, while differentiating the reasons of Imam Muhammad for making Zakat immediate and Hajj delayed, said that Zakat is the right of the poor, so due to the delay in their right, that person will be a sinner. Contrary to Hajj, as it is purely the right of Allah Subhanhu wa Ta'ala. And you know that the right of the servant, after the existence of power and the obligation of payment, is not delayed at all. Have you not seen that when the fixed time for the payment of a debt arrives, it is oppression for a wealthy person to procrastinate and delay, even if that delay is only slight. And similarly,

Mawla Muhaqqiq, while researching, said that in the text (nass) there is a contextual clue of immediacy, that Zakat is to remove the need of the poor, and in this there is haste which points towards true immediacy. Now, there will be no difference in terms of one year or multiple years in the failure to achieve the objective completely, especially when in Majma' al-Anhur, while mentioning the immediacy of Zakat, it is said that the Fatwa is on the immediacy of Zakat.

Footnote: 1. Radd al-Muhtar, Kitab az-Zakat, Idarah al-Tiba'ah al-Misriyyah, Egypt, 13/2

फतावा रज़विया, जिल्द दस (10)

अरबी पाठ का अर्थ: 'देरी न करने' का अर्थ, जैसा कि न्यायविदों (फ़ुक़हा) ने स्पष्ट किया है और आपने स्वयं भी इंगित किया है, इसे जल्द से जल्द संभव समय पर पूरा करना है। इसलिए, 'देरी न करने' को एक वर्ष तक सीमित करना एक परिवर्तन (बदलाव) है, व्याख्या नहीं। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि प्रमाण भी इसका विरोध कर रहे हैं, क्योंकि विद्वानों, जैसे कि इमाम जो दिल से फकीह हैं और पूर्ण अन्वेषक इमाम (मोहक्किक़), और इमाम हुसैन बिन मुहम्मद अल-समानी, 'ख़ज़ानतुल मुफ़्तीन' के लेखक, और अल्लामा बुरहानुद्दीन अबू बक्र बिन इब्राहिम अल-हुसैनी, 'जवाहिरुल अख़लाती' के लेखक, और अन्य (अल्लाह उन पर दया करे), ने इमाम मुहम्मद के ज़कात को तुरंत (फ़ौरन) और हज को देरी (तराख़ी) से अनिवार्य बनाने के कारणों में अंतर करते हुए कहा है कि ज़कात गरीबों का अधिकार है, इसलिए उनके अधिकार में देरी करने से व्यक्ति पापी (गुनेहगार) होगा। हज के विपरीत, जो विशुद्ध रूप से अल्लाह सुब्हानहु व तआला का अधिकार है। और आप जानते हैं कि बंदे का अधिकार, सामर्थ्य और अदायगी की अनिवार्यता के बाद बिल्कुल भी विलंबित नहीं होता। क्या आपने नहीं देखा कि जब ऋण अदायगी का समय आ जाए, तो धनवान व्यक्ति द्वारा टालमटोल और देरी करना ज़ुल्म है, चाहे वह देरी थोड़ी ही क्यों न हो। इसी तरह, मौला मोहक्किक़ ने शोध करते हुए कहा कि पाठ (नस्) में तुरंतता (फ़ौर) का संकेत है कि ज़कात गरीबों की ज़रूरत को दूर करने के लिए है और इसमें शीघ्रता है जो वास्तविक तुरंतता को दर्शाती है। अब पूर्ण रूप से उद्देश्य की प्राप्ति न होने में एक वर्ष या कई वर्षों के बीच कोई अंतर नहीं होगा, विशेष रूप से जब 'मज्मउल अन्हुर' में ज़कात की तुरंतता के फ़तवे का उल्लेख करते हुए कहा गया है...

उर्दू पाठ का अनुवाद: इसका अर्थ, जैसा कि न्यायविदों (फ़ुक़हा) ने स्पष्ट किया है और आपने स्वयं बताया है, इसे जल्द से जल्द संभव क्षणों में पूरा करना है। अतः बिना देरी के इसे एक वर्ष के साथ सीमित करना परिवर्तन (बदलना) है, व्याख्या नहीं। और मुझे यह भी ज्ञात है कि साक्ष्य का मामला भी इसका विरोध कर रहा है क्योंकि विद्वानों, उदाहरण के लिए, इमाम फकीह अन-नफ़्स, इमाम मोहक्किक़ अला अल-इतलाक़, इमाम हुसैन बिन मुहम्मद अल-समानी (ख़ज़ानतुल मुफ़्तीन के लेखक), और अल्लामा बुरहानुद्दीन अबू बक्र बिन इब्राहिम अल-हुसैनी (जवाहिरुल अख़लाती के लेखक) आदि, अल्लाह उन पर दया करे, ने इमाम मुहम्मद के ज़कात को तुरंत और हज को देरी से अनिवार्य करने के कारणों में अंतर करते हुए कहा कि ज़कात गरीबों का अधिकार है, इसलिए उनके अधिकार में देरी के कारण वह व्यक्ति पापी होगा। हज के विपरीत, क्योंकि वह विशुद्ध रूप से

अल्लाह सुब्हानहु व तआला का अधिकार है। और आप जानते हैं कि बंदे का अधिकार, सामर्थ्य और अदायगी की अनिवार्यता के बाद बिल्कुल भी विलंबित नहीं होता। क्या आपने नहीं देखा कि जब कर्ज अदायगी का निश्चित समय आ जाए, तो धनवान व्यक्ति के लिए टालमटोल और देरी करना ज़ुल्म है, चाहे वह देरी मामूली ही क्यों न हो। और इसी तरह, मौला मोहक्किक़ ने शोध करते हुए कहा कि पाठ में तुरंतता का संकेत है कि ज़कात गरीबों की ज़रूरत को दूर करने के लिए है, और इसमें शीघ्रता है जो वास्तविक तुरंतता की ओर संकेत करती है। अब, पूर्ण रूप से उद्देश्य की प्राप्ति न होने के मामले में एक वर्ष या कई वर्षों के आधार पर कोई अंतर नहीं होगा, विशेष रूप से जब मज्मउल अन्हुर में ज़कात की तुरंतता का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि ज़कात की तुरंतता पर फतवा है।

पाद-टिप्पणी: 1. रद-उल-मुहतार, किताब-उज़-ज़कात, इदारा अल-तिबा'ह अल-मिसरिया, मिस्र, 13/2

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

عربی عبارت: وعدم التأخیر انما معناہ کما نصواعلیہ وافدتم انتم ھو الاتیان فی اول اوقات الامکان فالتقیید بعدم التأخیر عاماً تغییر لا تفسیر و یظھر لی ان قضیۃ الدلیل ایضا تخالفہ فان العلماء کما لاماً فقیہ النفس والامام المحقق علی الاطلاق والامام حسین بن محمد السمعانی صاحب خزانۃ المفتین والعلامۃ برھان الدین ابی بکر بن ابراھیم الحسینی صاحب جواھر الا خلاطی وغیرھم رحمھم اللہ تعالی ذکر وا تعلیل تفرقۃ محمد بایجاب الزکوۃ علی الفور و الحج متراخیاً بان الزکوۃ حق الفقراء فیأثم بتأخیر حقھم بخلاف الحج فانہ خالص حق المولی سبحانہ وتعالی وانت تعلم ان حق العبد بعد وجوب الاداء والتمکن منہ لا یتأخر اصلا الاتری ان الاجل اذا حل فمطل الغنی ظلم وان قل، وکذا ما حقق المولی المحقق حیث اطلق من ان مع النص قرینۃ الفور وھو الشرع لدفع حاجۃ الفقراء وھی معجلۃ یدل علی الفور الحقیقی ولا یتفاوت التسویف بعام و اعوام فی عدم حصول المقصود علی وجہ التمام لا جرم ان قال فی مجمع الانھر بعد ذکرہ الفتوی علی فوریۃ الزکوۃ

اردو عبارت: اس کا معنی جیسا کہ فقہاء نے تصریح کی اور آپ خود افادہ کر چکے ہو کہ اوّل اوقات امکان میں بجالانا ہے لہذا عدم تاخیر کو سال کے ساتھ مقید کرنا تغییر (بدل دینا) ہے تفسیر نہیں، اور مجھے یہ بھی معلوم ہے کہ معاملہ دلیل بھی اس کی مخالفت کر رہا ہے کیونکہ علماء مثلاً امام فقیہ النفس، امام محقق علی الاطلاق ، امام حسین بن محمد سمعانی صاحب خزانۃ المفتین اور علامہ برہان الدین ابو بکر بن ابراہیم الحسینی صاحب جواہر الاخلاطی وغیرہم رحمہم اللہ تعالیٰ نے امام محمد کے زکوۃ کو فی الفور اور حج کو علی التراخی لازم قرار دینے کی علّتوں میں فرق کرتے ہوئے کہا کہ زکوۃ فقراء کا حق ہے تو ان کے حق میں تاخیر کی وجہ سے وہ شخص گنہگار ہوگا۔ بخلاف حج کے کہ وہ خالصۃً اللہ سبحانہ وتعالیٰ کا حق ہے، اور آپ جانتے ہیں کہ حقِ عبد

وجودِ قدرت اور وجوبِ ادا کے بعد بالکل متأخر نہیں ہوتا، کیا آپ نے نہیں دیکھا جب قرض کی ادائیگی کا وقت مقررہ آجائے تو غنی کا ڈھیل و تاخیر کرنا ظلم ہوتا ہے اگر چہ وہ تاخیر تھوڑی ہی کیوں نہ ہو، اور اسی طرح مولیٰ محقق نے تحقیق کرتے ہوئے کہا کہ نص میں قرینہ فور ہے کہ زکوۃ حاجتِ فقراء کو دور کرنے کے لئے ہے اور اس میں تعجیل ہے جو فورِ حقیقی پر دال ہے، اب کامل طور پر مقصد کے عدم حصول میں سال یا متعدد سالوں کے اعتبار سے کوئی تفاوت نہیں ہوگا خصوصاً جبکہ مجمع الانہر میں فوریتِ زکوۃ کا تذکرہ کرتے ہوئے کہا فتوٰی فورِ زکوۃ

حاشیہ: 1 رد المحتار کتاب الزکوۃ ادارۃ الطباعۃ المصریۃ مصر ۱۳/۲

Volume 10 - Fatawa Ridawiyya

The meaning of "obligatory immediately" (yajib alal fawr) is that it is necessary to perform the act at the first possible time. You are also aware of the clarification in Al-Khaniyah where it asks: Is a person sinful for delaying Zakat after being able to pay it? In Khizanat al-Muftin it is stated: Delaying Zakat after being able to pay it makes one a sinner. Anyone who delays payment without a valid excuse, their testimony is not accepted because Zakat is the right of the poor, so delaying their right is a sin (summarized). These are explicit texts. What is in al-Muntaqa is an inference, even though the evidence demands the same, so it is right to rely on it. Yes, there is no harm in conditioning the rejection of testimony on the passage of a period of time, because the evidence for immediacy is probabilistic (zanni), and what is established through it is obligatory (wujub), so abandoning it is a minor sin which does not invalidate testimony unless there is persistence. Therefore, a passage of time is necessary for that, as stated in Al-Bahr regarding the issue of delaying Hajj. And Allah knows best. (T)

Furthermore, the harm of delaying (tarakhi) after the obligation to pay is clearer than the sun, for according to the correct school of thought, one becomes a sinner immediately upon abandoning immediate action, and even according to the school of thought of delay (tarakhi), delaying is inappropriate as there are calamities in delay.

And Allah Almighty says: "Hasten towards forgiveness from your Lord." and Allah Almighty says: "So race to [all that is] good." (T)

1. Majma' al-Anhur, Kitab al-Zakat, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/192
2. Fatawa Qazi Khan, Kitab al-Zakat, Munshi Naval Kishore, Lucknow, 1/119
3. Khizanat al-Muftin, Chapter on Trade Wealth, Manuscript, 1/531
4. Al-Quran, 3/133
5. Al-Quran, 2/148

जिल्द दस (10) - फ़तावा रज़विया

"यजिब अलल फौर" (तुरंत अनिवार्य) का अर्थ यह बताया गया है कि संभव होने के पहले समय में कार्य को करना वाजिब है। और आप अल-खनियाह के इस स्पष्टीकरण से भी अवगत हैं जहाँ पूछा गया है कि क्या सामर्थ्य के बाद ज़कात में देरी करने से मनुष्य गुनहगार होता है या नहीं। और खज़ानतुल मुफ़्तीन में फरमाया: सामर्थ्य के बाद ज़कात में देरी करने से गुनहगार होता है, और जिसने बिना किसी बहाने अदायगी में देरी की उसकी गवाही स्वीकार नहीं है क्योंकि ज़कात गरीबों का अधिकार है, तो उनके अधिकार में देरी करना पाप होगा (संक्षेप में)। ये स्पष्ट प्रमाण (नुसूस) हैं। और जो कुछ अल-मुन्तक़ा में है वह एक निष्कर्ष है, हालांकि साक्ष्य की मांग भी यही है, इसलिए उसी पर भरोसा करना सही है। हाँ, गवाही की अस्वीकृति को एक समय बीतने के साथ जोड़ने में कोई हर्ज नहीं है क्योंकि तुरंत कार्य करने का प्रमाण अनुमानात्मक (ज़न्नी) है जिससे अनिवार्यता (वजुब) सिद्ध होती है, इसलिए इसे छोड़ना एक छोटा पाप (सगीरा गुनाह) है जिससे गवाही खारिज नहीं होगी जब तक कि इस पर दृढ़ता न हो। इसलिए इसके लिए समय का बीतना आवश्यक है जैसा कि अल-बहर में हज की देरी के मामले में विस्तार से बताया गया है। और अल्लाह बेहतर जानता है। (त)

फिर अदायगी वाजिब होने के बाद देरी (तराखी) करने का नुकसान सूरज की तरह स्पष्ट है कि सही पंथ (मज़हब) के अनुसार तुरंत कार्य न करने पर ही इंसान गुनहगार हो जाएगा, और देरी के पंथ पर भी देरी करना अनुचित है क्योंकि देरी में विपत्तियाँ (आफतें) होती हैं।

और अल्लाह तआला का फरमान है: "अपने रब से क्षमा माँगने में जल्दी करो।" और अल्लाह तआला का इरशादे गिरामी है: "नेकियों में आगे बढ़ो।" (त)

1. मजमा अल-अनहूर, किताब अल-ज़कात, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 1/192
2. फ़तावा क़ाज़ी ख़ान, किताब अल-ज़कात, मुंशी नवल किशोर, लखनऊ, 1/119
3. खज़ानतुल मुफ़्तीन, व्यापार धन पर अध्याय, पांडुलिपि, 1/531
4. अल-क़ुरान, 3/133
5. अल-क़ुरान, 2/148

पृष्ठ 87/836

معنی یجب علی الفور انه یجب تعجیل الفعل في اول اوقات الامکان اھ [1]۔ قد سمعت نص الخانیة اذقال ھل یأثم بتأخیر الزکوة بعد التمکن اھ [2]۔ وقال في خزانة المفتین یأثم بتأخیر الزکوة بعد التمکن ومن اخر من غیر عذر لا تقبل شھاته لان الزکوة حق الفقراء فیأثم بتأخیر حقھم اھ [3] ملخصا فھذہ نصوص صرائح وما في المنتقی مفھوم مع انه ھو الذي یقضی به الدلیل فحق ان یکون علیه التعویل نعم لا غرو في تقیید رد الشھادة بمرور المدة فان دلیل الفور ظني والثابت به الوجوب فترکه صغیرة لا ترد به الشھادة الا بعد الاصرار ولا بد لذلك من مرور مدة کما افاد البحر في مسئلة تأخیر الحج . واللہ تعالی اعلم۔ "یجب علی الفور" کا معنی یہ بیان کیا کہ اول اوقات امکان میں فعل کو بجالا نا واجب ہے اھ اور آپ خانیہ کی اس تصریح پر بھی آگاہ ہیں کہ کیا تمکن کے بعد تاخیر زکوۃ سے انسان گنہگار ہوتا ہے یا نہیں اھ اور خزانتہ المفتین میں فرمایا: تمکن کے بعد تاخیر زکوۃ سے گنہگار ہوتا ہے، اور جس نے بغیر عذر ادائیگی مؤخر کی اس کی شہادت مقبول نہیں کیونکہ فقراء کا حق ہے، تو ان کے حق میں تاخیر کرنا گناہ ہوگا اھ ملخصاً، پس یہ صریح نصوص ہیں۔ اور جو کچھ المنتقی میں ہے وہ مفہوم ہے باوجو دیکہ دلیل کا تقاضا بھی یہی ہے، لہٰذا اسی پر اعتماد کرنا حق ہے ، ہاں رد شہادت کو مدت کے گزرنے کے ساتھ مقید کرنے میں کوئی حرج نہیں کیونکہ دلیلِ فور ظنی ہے جس سے وجوب ثابت ہوگا ، لہٰذا اس کا ترک صغیرہ گناہ ہے، اس سے شہادت مردود نہیں ہوگی ، ہاں مگر اس صورت میں جب ترک پر اصرار ہو، لہٰذا اس کے لئے مدت کا گزرنا ضروری ہے جیسا کہ بحر میں مسئلہ تاخیر حج میں تفصیل مذکور ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

پھر بعد وجوب ادا تدر تنج کی مضرت اظہر من الشمس کہ مذہب صحیح پر ترک فور کرتے ہی گنہگار ہو گا اور مذہب تراخی پر بھی تدر تنج نامناسب کہ تاخیر میں آفات ہیں۔

وقال تعالیٰ "سَارِعُوَا اِلٰی مَغْفِرَةٍ مِّنْ رَّبِّکُمْ" [4] وقال تعالیٰ "فَاسْتَبِقُوا الْخَیْرٰتِ" [5] اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: اپنے رب سے بخشش مانگنے میں جلدی کرو۔ اللہ تعالیٰ کا ارشاد گرامی ہے: نیکیوں میں آگے بڑھو۔ (ت)

1 مجمع الانہر کتاب الزکوۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۱ / ۱۹۲ 2 فتاویٰ قاضی خان کتاب الزکوۃ منشی نولکشور لکھنؤ ۱ / ۱۱۹ 3 خزانۃ المفتین فصل فی مال التجارۃ قلمی نسخۃ ۱ / ۵۳۱ 4 القرآن ۱۳۳/۳ 5 القرآن ۱۴۸/۲

Fatawa Razawiya - Volume 10

It is obvious that the time of death is not known; it is possible that it arrives before performance [of the obligation], then by consensus, [the person] would be a sinner.

[Box text] Left cell: Because an extended obligation becomes narrowed at death, as jurists have stated. Therefore, those who maintain that the obligation is deferrable say that one who abandons it near death is a sinner, as we have previously mentioned. (T) Right cell: Arabic text: For every extended thing becomes narrowed at death as they have stated, and for this reason those who speak of the deferrability of the obligation clarify that he is a sinner at death as we have presented.

Similarly, in gradual payment, there are other possible difficulties, as is not hidden from any servant of jurisprudence (T). And even if one remains safe from financial and physical accidents, who can trust the self? For "Satan circulates in man like the flow of blood" [1] (Satan circulates within man just like blood. T). It is possible that he misleads, and the intention to pay that exists today may not remain tomorrow. Our master Imam, son of the Imam, noble son of the noble, Hazrat Imam Muhammad Baqir (may Allah be pleased with him) had an exquisite cloak made. He went into the washroom, and there the thought occurred to him to give it in the way of Allah. He immediately called his servant, who approached the wall; His Eminence took off the exalted cloak and gave it, saying, "Give this to such-and-such needy person." When he came out, the servant submitted: "What was the reason for such haste?" He replied: "Who knew if by the time I came out, a change would occur in my intention." Glory be to Allah! This is the precaution of those who were raised in the embrace of "Indeed, over My servants there is for you no authority" [2] (Indeed, my servants, you have no authority over them. T) and bathed in the river of "Allah only intends to remove from you the impurity [of sin], O people of the [Prophet's] household, and to purify you with [extensive] purification" [3] (Allah intends, O people of the Prophetic Household, to remove impurity from you and purify you thoroughly. T). May Allah's blessings be upon their noble and most generous father, and upon all of them, and blessings and peace. Then there are we, who are the playthings in the hands of Satan; on what hope are we fearless and unrestrained? And Allah is sufficient for us, and He is the best Disposer of affairs, and there is no power nor strength except by Allah, the High, the Great. In my view, several things lead people to gradual payment. Sometimes the thought that they should spend on what is most important, meaning giving to whichever needy person they deem most appropriate at a given time. Sometimes, since seekers come in large numbers, one wants to keep the Zakat

wealth for them to give from time to time. Sometimes, giving all at once is a bit burdensome on the self, whereas if it goes out little by little, it will not be felt. For those who have these thoughts, the way is to pay Zakat in advance, for example, in the blessed month of Ramadan...

[Footnotes] 1. Mishkat al-Masabih, Chapter on Whispering, Mujtabai Press, Delhi, 1/18 2. Al-Quran, 15/42 3. Al-Quran, 33/33

फ़तावा रज़विया - जिल्द 10

यह स्पष्ट है कि मृत्यु का समय ज्ञात नहीं है; यह संभव है कि अदायगी से पहले आ जाए, तो सर्वसम्मति (इज्मा) से वह गुनहगार होगा।

[बॉक्स टेक्स्ट] बायाँ भाग: क्योंकि विस्तारित दायित्व (वाजिब मुसअ), मृत्यु के निकट संकुचित (मज़य्यक़) हो जाता है जैसा कि फ़ुक़हा (विधिवेत्ताओं) ने स्पष्ट किया है। और इसी कारण से विलंब से अदायगी के समर्थकों का कहना है कि मृत्यु के समय इसे छोड़ने वाला गुनहगार है, जैसा कि हमने पहले वर्णन किया है। (त) दायाँ भाग: अरबी पाठ: क्योंकि हर विस्तारित चीज़ मृत्यु के समय संकुचित हो जाती है जैसा कि उन्होंने स्पष्ट किया है, और इसी कारण से जो लोग दायित्व के विलंब की बात करते हैं, वे स्पष्ट करते हैं कि वह मृत्यु के समय गुनहगार है जैसा कि हमने प्रस्तुत किया है।

इसी तरह क्रमिक अदायगी (तदरीज़) में अन्य कठिनाइयाँ भी संभावित हैं, जैसा कि न्यायशास्त्र (फिक्ह) के किसी भी सेवक पर गुप्त नहीं है। (त) और यदि कोई आर्थिक और शारीरिक दुर्घटनाओं से सुरक्षित भी रहे, तो अपने नफ़्स (मन) पर किसका भरोसा है? क्योंकि 'शैतान मनुष्य में रक्त की तरह दौड़ता है' [1] (त)। संभव है कि वह बहका दे और आज जो अदायगी का इरादा है, कल वह भी न रहे। हमारे स्वामी इमाम, इमाम के पुत्र, कुलीन के पुत्र हज़रत इमाम मुहम्मद बाक़िर (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने एक उत्तम चोगा (क़बा) बनवाया। वे शौचालय गए, वहाँ यह विचार आया कि इसे अल्लाह की राह में दे दें। तुरंत सेवक को आवाज़ दी, वह दीवार के करीब आया। हुज़ूर ने वह श्रेष्ठ चोगा उतार कर दिया और कहा: फलां ज़रूरतमंद को दे आओ। जब बाहर तशरीफ़ लाए तो सेवक ने निवेदन किया: इतनी जल्दी का क्या कारण था? फरमाया: क्या पता था कि बाहर आते-आते नीयत में बदलाव आ जाए। सुभानअल्लाह! यह उनकी सावधानी है जो इस आयत के साये में पले: 'निश्चित रूप से मेरे बंदों पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं चलेगा' [2] (त) और 'अल्लाह तो बस यही चाहता है, ऐ नबी के घर वालो! कि तुम से नापाकी को दूर रखे और तुम्हें पूरी तरह पाक-साफ़ कर दे' [3] (त) के समुद्र में नहाए-धोए हैं। उनके आदरणीय और अत्यंत उदार पिता पर अल्लाह की रहमतें हों और उन सब पर भी, और बरकतें और सलाम। फिर हम जो शैतान के हाथों के खिलौने हैं, किस उम्मीद पर निडर और बेलगाम हैं? और अल्लाह हमारे लिए काफी है और वह सबसे अच्छा कार्यसाधक है, और अल्लाह के सिवा कोई शक्ति और सामर्थ्य नहीं है जो सर्वोच्च और महान है। मेरे विचार में, कुछ बातें लोगों को क्रमिक अदायगी की ओर ले जाती हैं। कभी यह विचार कि सबसे महत्वपूर्ण कार्य में खर्च करें, यानी जिस समय जिस ज़रूरतमंद को देना अधिक उचित समझें उसे दें। कभी यह कि माँगने

वाले बड़ी संख्या में आते हैं, तो व्यक्ति चाहता है कि ज़कात का माल उनके लिए रखे ताकि समय-समय पर देता रहे। कभी एक साथ देना नफ़्स पर थोड़ा भारी होता है और थोड़ा-थोड़ा निकलता जाएगा तो महसूस नहीं होगा। जिन्हें यह विचार हों उनके लिए रास्ता यही है कि ज़कात पहले से (पेशगी) दे दिया करें, उदाहरण के तौर पर रमज़ान के मुबारक महीने में...

[पाद लेख] 1. मिश्कात अल-मसाबीह, अध्याय: वसवसा, मुस्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/18 2. अल-कुरान, 15/42 3. अल-कुरान, 33/33

ظاہر ہے کہ وقتِ موت معلوم نہیں، ممکن ہے کہ پیش از ادا آجائے تو بالا جماع گنہگار ہوگا۔

[باکس ٹیکسٹ] بائیں جانب: کیونکہ واجب موسع، موت کے قریب مضیق ہو جاتا ہے جیسا کہ اس پر فقہاء نے تصریح کی ہے، اور اسی وجہ سے علی التراخی وجوب کے قائلین موت کے قریب تارک کو گنہگار کہتے ہیں جیسا کہ ہم نے پہلے بیان کر دیا ہے (ت) دائیں جانب: فان کل موسع یتضیق عند الموت کما نصوا علیه ولذا صرح القائلون بتراخی الوجوب انه یأثم عند الموت کما قد منا۔

اسی طرح تدریج میں اور دقتیں بھی محتمل، کما لا یخفی علی خادم الفقه (جیسا کہ کسی بھی خادمِ فقہ پر مخفی نہیں۔ت) اور مالی و جانی حوادث سے محفوظ بھی رہا تو نفس پر اعتماد کسے ہے فان الشیطان یجری من الانسان مجری الدم 1 (شیطان، اسی انسان میں خون کی طرح گردش کرتا ہے۔ ت) ممکن کہ بہکا دے اور آج جو قصد ادا ہے کل یہ بھی نہ رہے۔ سیدنا امام ابن الامام کریم ابن الکرام حضرت امام محمد باقر رضی اللہ تعالٰی نے ایک قبائے نفیس بنوائی، طہارت خانے میں تشریف لے گئے، وہاں خیال آیا کہ اسے راہِ خدا میں دیجئے فوراً خادم کو آواز دی، قریبِ دیوار حاضر ہوا، حضور نے قبائے معلٰی اتار کر دی کہ فلاں محتاج کو دے آ۔ جب باہر رونق افروز ہوئے خادم نے عرض کی: اس درجہ تعجیل کی وجہ کیا تھی؟ فرمایا: کیا معلوم تھا باہر آتے آتے نیت میں فرق آجاتا۔ سبحان اللہ! یہ اُن کی احتیاط ہے جو اِنّ عِبَادِي لَيْسَ لَكَ عَلَيْهِمْ سُلْطَنٌ 2 (بلاشبہ میرے بندوں پر تیری حکومت نہیں چلے گی۔ ت) کی آغوش میں پلے اور اِنَّمَا يُرِيدُ اللّٰهُ لِيُذْهِبَ عَنْكُمُ الرِّجْسَ اَهْلَ الْبَيْتِ وَيُطَهِّرَكُمْ تَطْهِيرًا 3 (اللہ تعالٰی چاہتا ہے کہ اے اہلبیت نبوی! تم سے پلیدی کو دُور کرے اور تمہیں خوب پاک فرمادے۔ ت) کے دریا میں نہائے دھوئے صلی اللہ تعالٰی علی ابیھم الکریم الاکرام و علیھم اجمعین و بارك وسلّم (ان کے والدِ گرامی پر اللہ تعالٰی کی رحمتیں ہوں اور ان

تمام پر بھی اور برکات و سلامت) پھر ہم کہ سخرہ دستِ شیطان ہیں، کس امید پر بے خوف و مطلق العنان ہیں و حسبنا اللہ و نعم الوکیل ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم۔ میرے نزدیک چند باتیں لوگوں کو تدریج پر حاصل ہوتی ہیں، کبھی یہ خیال کہ اہم فالا ہم میں صرف کریں یعنی جس وقت جس حاجتمند کو دینا زیادہ مناسب سمجھیں اُسے دیں۔ کبھی یہ کہ سائل بکثرت آتے ہیں یہ چاہتا ہے مالِ زکوۃ اُن کے لئے رکھ چھوڑے کہ وقتاً فوقتاً دیا کرے کبھی یکمشت دینا ذرا نفس پر بار ہے اور تھوڑا تھوڑا نکلتا جائے گا تو معلوم نہ ہوگا۔ جنہیں یہ خیال ہوں اُن کے لئے راہ یہی ہے کہ زکوۃ پیشگی دیا کریں مثلاً ماہِ مبارک رمضان میں اُن

[حواشی] 1 مشکوۃ المصابیح باب فی الوسوسہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۸ 2 القرآن ۱۵/ ۴۲ 3 القرآن ۳۳ / ۳۳

Fatawa-e-Razviya, Volume 10

When a full year has passed, start giving for Ramadan 8 AH from Shawwal 8 AH, and continue giving gradually until the end of the year according to opinion and interest, so that their purposes are also achieved and the reprehensible and prohibited accumulation is avoided. Allah Subhanahoo Wa Ta'ala knows best, and His knowledge, glorified be His Majesty, is most perfect and most firm.

Issue Two: Zaid has jewelry on which he pays Zakat. If he acquires more jewelry in the future, how should the amount of Zakat be increased? Explain, and you shall be rewarded.

The Answer: The pure Sharia has prescribed one-fortieth (2.5%) as Zakat on the Nisab (minimum taxable amount) of gold that is beyond essential needs, whether it be in the form of rupees, ashrafis (gold coins), ornaments, vessels, foil, or any other thing, after the passage of one lunar year. The Nisab for gold is seven and a half tolas and for silver, it is fifty-two and a half tolas. Then, any amount after the aforementioned Nisab that does not reach one-fifth (Khums) of it is exempt; nothing is obligatory on it. This is the school of thought of the Master of the Madhhab (Imam-e-Azam Abu Hanifa) may Allah be pleased with him, and it is the correct view as stated in *At-Tuhfa* and then in *Majma-ul-Anhur*. (This is the school of thought of the Master of the Madhhab (Imam-e-Azam) may Allah be pleased with him and this is correct as in *At-Tuhfa* then in *Majma-ul-Anhur*. - Translator's note). When a full one-fifth (Khums) is completed, one-fortieth (Zakat) of that Khums becomes obligatory. Likewise, there is an exemption from one Khums to the next, and on every complete Khums, its one-fortieth (Ruba-e-Ushr) is due. For example, a person has 7.5 tolas of gold, on which he pays 2 masha of gold as Zakat. If he has more than that but less than one tola extra, for instance, 9 tolas minus one ratti, even then the same 2 masha and 2 surkh are obligatory; this one tola minus one ratti is exempt. Yes, if there is a full one tola and six mashas, which is the Khums of the Nisab, then its one-fortieth (Ruba-e-Ushr), i.e., 3 and 3/5 surkh, will also be due, and the total for 9 tolas and 6 mashas will be 5 and 3/5 surkh. Then, until another full one tola (6 masha) is completed, the amount won't increase. When 10 tolas and 6 mashas are complete, the same 5 and 3/5 surkh plus another 3 masha and 1/5 surkh will become due, and so on. Similarly, for one who has 53 tolas and 6 mashas of silver, 1 tola and 3 mashas of silver are obligatory on him. And until it increases by 10 tolas of silver, which is the Khums of the Nisab, the same remains obligatory. When 63 tolas are completed, then for those 10 tolas,

1/20th, i.e., 3 mashas and 1 and 1/5 surkh, will be added, making the total obligation 1 tola 10 masha and 2/5 surkh. Infer accordingly. It is stated in *Ad-Durr al-Mukhtar*:

The Nisab for gold is twenty (20) mithqals and for silver is two hundred (200) such dirhams.	(The Nisab for gold is twenty (20) mithqals and for silver is two hundred (200) such dirhams.)
That ten (10) dirhams weigh seven (7) mithqals, and their weight is considered	(That ten (10) dirhams of those weigh seven (7) mithqals, their)
for both the payment and the obligation, not their value. And what is required in the minted form of both...	(weight is considered for both payment and obligation, not their price. Then in...)

Page 89 of 836

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द दहुम

जब एक साल पूरा हो जाए, तो रमज़ान ८ हिजरी के लिए शव्वाल ८ हिजरी से देना शुरू करें और साल के अंत तक राय और भलाई के अनुसार धीरे-धीरे देते रहें ताकि उनके उद्देश्य भी प्राप्त हों और निंदनीय तथा वर्जित संचय से भी बचा जा सके। अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान, जिसकी महिमा महान है, सबसे पूर्ण और सबसे दृढ़ है।

मसला सानिया (दूसरा प्रश्न): ज़ैद के पास ज़ेवर है जिसकी वह ज़कात देता है। भविष्य में यदि ज़ेवर और बढ़ जाए, तो ज़कात की राशि किस हिसाब से बढ़ाई जाए? बयान करें, सवाब पाएं।

अल-जवाब: शरीअत-ए-मुतहरा ने सोने के निसाब पर, जो बुनियादी ज़रूरतों से ज़्यादा हो, चाहे वह रुपया, अशरफी, गहना, बर्तन, वर्क या कोई और चीज़ हो, एक चन्द्र वर्ष (लूनर ईयर) के बाद उसका चालीसवां हिस्सा (२.५%) ज़कात मुकर्रर फ़रमाया है। सोने का निसाब साढ़े सात तोले है और चाँदी का साढ़े बावन तोले। फिर निसाब के बाद जो कुछ भी उक्त निसाब के पांचवें हिस्से (खम्स) तक न पहुंचे, वह माफ़ है, उस पर कुछ वाजिब नहीं है। यही मज़हब के स्वामी (इमाम-ए-आज़म) रज़ियल्लाहु अन्हु का मज़हब है और यही सही है जैसा कि 'अत-तुहफ़ा' और फिर 'मजमा-उल-अन्हुर' में है। (यही साहब-ए-मज़हब (इमाम-ए-आज़म) रज़ियल्लाहु अन्हु का मज़हब है और यही सही है जैसा कि 'तुहफ़ा' में फिर 'मजमा-उल-अन्हुर' में है। - अनुवादक)। जब एक पूरा खम्स (पाँचवाँ हिस्सा) मुकम्मल हो जाए, तो फिर उस खम्स का चालीसवां हिस्सा फ़र्ज़ होगा। इसी तरह एक खम्स से दूसरे खम्स तक छूट (अफ़्व) है और हर मुकम्मल खम्स पर उसका रबा-ए-उश्र (४०वाँ हिस्सा) देय है। उदाहरण के लिए, यदि किसी व्यक्ति के पास ७.५ तोले सोना है, तो वह उस पर २ माशे सोना ज़कात देता है। और यदि उसके पास इससे ज़्यादा लेकिन एक तोले से कम अतिरिक्त सोना है, जैसे कि ९ तोले में एक रत्ती कम, तब भी वही २ माशे और २ सुर्ख वाजिब है; यह एक तोला रत्ती कम माफ़ है। हाँ, अगर पूरा १ तोला ६ माशा बढ़ जाए जो कि निसाब का खम्स है, तो उसका भी रबा-ए-उश्र (३ और ३/५ सुर्ख) देय होगा, और कुल ९ तोले ६ माशे पर ५ और ३/५ सुर्ख वाजिब होगा। फिर, जब तक एक और पूरा १ तोला ६ माशा न बढ़ जाए, तब तक ज़कात नहीं बढ़ेगी। जब १० तोले ६ माशे पूरे हो जाएं तो वही ५ और ३/५ सुर्ख और बढ़कर ३ माशा और ३ और १/५ सुर्ख वाजिबुल अदा होगा, और इसी तरह आगे भी। इसी तरह जिस व्यक्ति के पास ५३ तोले ६ माशा चाँदी है, उस पर १ तोला ३ माशा चाँदी वाजिब है। और जब तक १० तोले चाँदी (जो निसाब का खम्स है) न बढ़े, तब तक वही वाजिब रहेगा। जब ६३ तोले पूरे हो जाएं तो उन १० तोलों का १/२०वां हिस्सा यानी ३ माशा १ और १/५ सुर्ख

और जुड़कर १ तोला १० माशा और २/५ सुर्ख का वज़ूब होगा। इसी पर क़यास करें। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

सोने का निसाब बीस (२०) मिस्काल और चांदी का दो सौ (२००) ऐसे दिरहम है।	(सोने का निसाब बीस २० मिस्काल और चांदी का दो सौ २०० ऐसे दिरहम है)
कि उनमें से दस दिरहम सात (७) मिस्काल का वज़न रखते हों, और उनका वज़न ही मोतबर (मान्य) है	(कि उनमें से दस दिरहम सात ७ मिस्काल का वज़न रखते हों, उनका)
अदायगी और वज़ूब में, न कि उनकी क़ीमत। और इन दोनों के ढाले हुए सिक्कों में जो वाजिब है...	(वज़न अदायगी और वज़ूब में मोतबर है, इन दोनों की क़ीमत का एतबार नहीं, फिर इन)

पेज ८९ ऑफ़ ८३६

پر حولان حول ہوتا ہے تو رمضان ۸ھ کے لئے شوال ۸ھ سے دینا شروع کریں اور ختم سال تک بتدریج حسب رائے ومصلحت دیتے رہیں کہ اس میں ان کے مقاصد بھی حاصل ہوں گے اور تدریج مذموم و ممنوع سے بھی بچیں گے واللہ سبحانہ وتعالیٰ اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔ مسئلہ ثانیہ : زید کے پاس زیور ہے وہ اس کی زکوۃ دیتا ہے آئندہ کو زیور زیادہ ہو تو کس حساب سے زرِ زکوۃ زیادہ کیا جائے؟ بینوا توجروا الجواب: شریعتِ مطہرہ نے سونے کی نصاب پر کہ حوائجِ اصلیہ سے فارغ ہو خواہ وہ روپیہ اشرفی ہو، گہنا یا برتن یا ورق یا کوئی شے، حولان حول قمری کے بعد چالیسواں حصہ زکوۃ مقرر فرمایا ہے، سونے کی نصاب ساڑھے سات تولے ہے اور چاندی کی ساڑھے باون تولے، پھر نصاب کے بعد جو کچھ نصابِ مذکور کے پانچویں حصہ تک نہ پہنچے معاف ہے اُس پر کچھ واجب نہیں ھذا ھو مذہب صاحب المذھب رضی اللہ تعالیٰ عنہ وھو الصحیح کما فی التحفۃ ثم مجمع الانھر (یہی صاحبِ مذہب (امامِ اعظم) رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا مذہب ہے اور یہی صحیح ہے جیسا کہ تحفہ میں پھر مجمع الانہر میں ہے۔ت) جب خمس کامل ہو جائے اس پر پھر اس خمس کا چالیسواں حصہ فرض ہوگا یونہی ایک خمس سے دوسرے تک عفو اور ہر خمس کامل پر اس کا ربع عشر، مثلاً ایک شخص کے پاس ۷.۵ تولے سونا اس پر ۲ ماشے سونا زکوۃ دیتا ہے اور اگر ایک تولہ سے کم اس پر زائد ہے مثلاً ایک رتی کم ۹ تولہ ہے جب بھی وہی ۲ ماشے ۲ سرخ واجب ہے یہ رتی کم ایک تولہ معاف ہے، ہاں اگر پورا چھ ماشے ایک تولہ ہے کہ خمس نصاب ہے اور ہو تو اس کا بھی ربع عشر (۳، ۳/۵) سرخ ، اور واجب ہوگا کل ۹ تولے ۶ ماشے ، (۵، ۳/۵) سرخ ہے، پھر ایک تولہ پورا ہونے تک کچھ نہ بڑھے گا، جب ۱۰ تولے ۶ ماشے کامل ہو وہی (۵، ۳/۵) سرخ اور بڑھ کر ۳ ماشہ (۳، ۱/۵) سرخ واجب الادا ہوگا، وعلی ہذا القیاس۔ اسی

طرح جس کے پاس (۵۳) تولہ ۶ ماشہ چاندی ہے اس پر ۱ تولہ ۳ ماشہ چاندی واجب ہے اور جب تک ۱۰ تولے چاندی کہ خمس نصاب ہے نہ بڑھے، یہی واجب رہے گا۔ جب (۶۳) تولے کامل ہو جائے تو اس ۱۰ تولے کا (۲۰/۱) یعنی ۳ ماشہ ۱ (۱/۵) سرخ ، اور زائد ہو کر ایک تولہ ۱۰ ماشہ (۲/۵) سرخ کا وجوب ہوگا و علیہ قس۔ در مختار میں ہے:

نصاب الذهب عشرون مثقالا والفضة مأتا درهم	سونے کا نصاب بیس ۲۰ مثقال اور چاندی کا دوسو ۲۰۰ ایسے درہم ہے
كل عشرة دراهم وزن سبعة مثاقيل والمعتبر وزنهما	کہ ان میں سے دس درہم سات ۷ مثقال کا وزن رکھتے ہوں، ان کا
اداءً و وجوباً لا قيمتهما واللازم فی مضروب كل منهما	وزن ادائیگی اور وجوب میں معتبر ہے، ان دونوں کی قیمت کا اعتبار نہیں، پھر ان

Volume Ten Fatawa Razawiyya

"And its manufactured forms, even if raw gold or jewelry, whether their use is permissible or not, first (require) one-fortieth. And in every 'khums' (fifth part) - with a damma on the letter 'kha' - according to its proportion; thus in every forty dirhams, one dirham, and in every four mithqals, two qirats. And what is between one khums and the next is exempt. And they (the two companions) said, whatever is extra is according to its account, and this is the issue of fractions (al-kusoor). End summary."

In items made from both (gold and silver), a fortieth part is obligatory as Zakat, even if they are in the form of nuggets or jewelry, whether their use is permissible or forbidden (i.e., for men). Zakat will be due on every 'khums' (fifth part) according to its proportion. Thus, for every forty dirhams, there is one dirham of Zakat, and for every four mithqals, there are two qirats of Zakat. The amount between one khums and the next is exempt (according to the main view), but according to the Sahihayn (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad), Zakat will be due on any addition according to its proportion. This is called the 'Mas'ala-e-Kusoor' (Issue of Fractions). [Summarized] (T)

Furthermore, a person who is the owner of the Nisaab (minimum threshold), and before the completion of the lunar year, acquires more wealth of the same genus as that Nisaab - whether through gift, inheritance, purchase, bequest, or any other way - that wealth will also be included in the original Nisaab. The completion of the year for the original Nisaab will be considered as the completion of the year for all of it. Here, gold and silver are absolutely considered one and the same genus regardless of their form. Trading goods are also counted under their genus because, ultimately, Zakat is applied to them by valuing them in terms of gold or silver and checking their Nisaab accordingly. So, all these are of the same genus as gold and silver wealth. If acquired in the middle of the year, they shall be included with the gold and silver, provided that this inclusion does not lead to Zakat becoming obligatory twice on any wealth in a single year. After inclusion, the same rules of exemption and obligation apply as mentioned above. For example, a person became the owner of 30 (thirty) tolas of gold on the 1st of Muharram and owns nothing else from the genus of gold and silver. Then, 9 mashas of gold is obligatory as Zakat on him, which will become due on the last day of Dhu al-Hijjah. Before the year was complete, say on the 1st of Rajab, he received 1 more tola, and on the 1st of Dhu al-Hijjah, 2 (two) more tolas, totaling 33 tolas. Then, on the last day of Dhu al-Hijjah, Zakat on this total, i.e., 9 mashas (7, 1/5) of red gold, will become due. It's as if a year passed on all of it,

although in reality, only six months passed for that one tola and only one month for those two tolas. And if after that one-tola addition nothing else was received, such that at the year-end there were only 31 tolas, then only those same 9 mashas would remain obligatory, because after the Nisaab, any increase is exempt until a full 'khums' is reached. Similarly, if he didn't receive 3 tolas of gold but, for example, on the 2nd of Dhu al-Hijjah, he bought trading goods in exchange for his land, grain, or household effects, whose value reached 3 tolas of gold, then even if it has only been ten days since it came into his possession, yet the total...

---

[1] Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Bab Zakat al-Mal, Mujtabai Press Delhi, 1/34-35

जिल्द दसवीं फ़तावा रज़विया

"और उसका बना हुआ (रूप), चाहे वह कच्चा सोना हो या आभूषण, चाहे उसका उपयोग जायज़ हो या न हो, पहले (उस पर) चालीसवाँ हिस्सा है। और प्रत्येक 'ख़ुम्स' (पाँचवें हिस्से) में - ख़ा पर पेश के साथ - उसके हिसाब से; अतः प्रत्येक चालीस दिरहम में एक दिरहम, और प्रत्येक चार मिष्क़ाल में दो क़ीरात है। और जो एक ख़ुम्स और दूसरे के बीच है, वह क्षमा (छूट) है। और उन्होंने (साहिबैन ने) कहा, जो कुछ अधिक है वह उसके हिसाब से है, और यह भिन्नों का मसला (मसला-ए-कुसूर) है। समाप्त, सारांश।"

दोनों (सोने और चाँदी) से बनी वस्तुओं में चालीसवाँ हिस्सा ज़कात अनिवार्य है, चाहे वे डली (कच्चे धातु) के रूप में हों या आभूषणों के रूप में, चाहे उनका उपयोग जायज़ हो या वर्जित (अर्थात पुरुषों के लिए)। प्रत्येक 'ख़ुम्स' (पाँचवें हिस्से) में उसके अनुपात के अनुसार ज़कात होगी। अतः प्रत्येक चालीस दिरहम पर एक दिरहम ज़कात है और प्रत्येक चार मिष्क़ाल पर दो क़ीरात ज़कात है। एक ख़ुम्स से दूसरे ख़ुम्स के बीच की मात्रा पर ज़कात नहीं है (मुख्य मतानुसार), जबकि साहिबैन के निकट जितनी भी वृद्धि हो, उसमें उसी के अनुपात से ज़कात होगी। यही 'मसला-ए-कुसूर' कहलाता है। [संक्षेपित] (त)

फिर जो व्यक्ति निसाब (न्यूनतम सीमा) का मालिक है और अभी साल पूरा नहीं हुआ है कि साल के भीतर ही उसी निसाब की श्रेणी का कुछ और माल—चाहे उपहार, विरासत, खरीद, वसीयत या किसी भी अन्य माध्यम से उसके स्वामित्व में आया—तो उस माल को भी मूल निसाब में शामिल कर लिया जाएगा और मूल राशि पर साल का पूरा होना ही उस समस्त माल पर साल का पूरा होना माना जाएगा। यहाँ सोना और चाँदी पूर्णतः एक ही श्रेणी (जिन्स) माने जाते हैं, चाहे उनकी कोई भी वस्तु हो। व्यापारिक माल भी उन्हीं की श्रेणी में गिना जाएगा, चाहे वह किसी भी प्रकार का हो, क्योंकि अंततः उन पर ज़कात इसी प्रकार आती है कि उनका मूल्य सोने या चाँदी में आँका जाता है और उसी के अनुसार उनका निसाब देखा जाता है। अतः यह सारा माल सोने और चाँदी (ज़र व सीम) की ही श्रेणी से है। यदि साल के मध्य में प्राप्त हुआ हो, तो उसे सोने और चाँदी के साथ शामिल कर दिया जाएगा, बशर्ते कि इस मिलावट से किसी माल पर साल में दो बार ज़कात अनिवार्य न हो जाए। मिलाने के बाद, छूट और अनिवार्यता के वही नियम लागू होंगे जो ऊपर बताए गए हैं। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति 1 मुहर्रम को तीस ३० तोले सोने का मालिक हुआ और उसके पास सोने-चाँदी की श्रेणी से और कोई चीज़ नहीं है, तो उस पर 9 माशे सोना ज़कात के रूप में फ़र्ज़ है, जो धुल-हिज्जा के अंत में

देय होगा। अभी साल पूरा नहीं हुआ था कि उदाहरण के तौर पर 1 रजब को 1 तोला और 1 धुल-हिज्जा को दो २ तोले सोना उसे और मिला, जिससे अब कुल 33 तोले हो गए। तो धुल-हिज्जा के अंत में इस पूरे समूह की ज़कात 9 माशे (७, १/५) सुर्ख़ (लाल) सोना देय होगी। मानो इस पूरे माल पर साल बीत गया हो, हालाँकि वास्तव में उस एक तोले को अभी छह महीने और उन दो तोलों को केवल एक ही महीना बीता है। और यदि उस एक तोले की वृद्धि के बाद और कुछ न मिला होता और साल के अंत में केवल 31 तोले ही होते, तो वही 9 माशे वाजिब रहते, क्योंकि निसााब के बाद अगला पूरा ख़ुम्स होने तक की वृद्धि माफ़ है। इसी प्रकार, यदि उसे 3 तोले सोना तो नहीं मिला, लेकिन मान लीजिए 2 धुल-हिज्जा को उसने अपनी ज़मीन, अनाज या घर के सामान के बदले इतना व्यापारिक माल खरीदा जिसका मूल्य 3 तोले सोने तक पहुँच गया, तो भले ही उसे स्वामित्व में आए अभी केवल दस ही दिन बीते हों, लेकिन कुल...

---

[1] दुर्र-ए-मुख़्तार, किताबुल ज़कात, बाब ज़कातुल माल, मुज्तबाई प्रेस दिल्ली, 1/34-35

ومعموله ولو تبراً وحلياً مطلقاً مباح الاستعمال اولاً ربع عشر ، وفی کل خمس بضم الخاء بحسابه ففی کل اربعین درهماً درهم وفی کل اربعة مثاقیل قیراطان وما بین الخمس الی الخمس عفو وقالا ما زاد بحسابه وهی مسئلة الکسور اه ملخصاً۔

دونوں سے بنی ہوئی اشیا میں چالیسواں حصہ زکوٰۃ لازم ہے اگر چہ یہ ڈلی کی صورت میں یا زیورات کی صورت میں ہوں، خواہ ان کا استعمال مباح ہو یا ممنوع ہو (یعنی مردوں کیلئے) ہر خمس میں اس کے حساب سے زکوٰۃ ہوگی، پس ہر چالیس دراہم میں ایک درہم اور ہر چار مثقال میں دو قیراط زکوٰۃ ہوگی جو خمس سے دوسرے خمس تک ہے، اس میں زکوٰۃ نہیں، صاحبین کے نزدیک جتنا اضافہ ہو اس میں اسی کے حساب سے زکوٰۃ ہوگی، یہی مسئلہ کسور کہلاتا ہے اھ ملخصاً (ت)

پھر جو شخص مالکِ نصاب ہے اور ہنوز حولانِ حول نہ ہوا کہ سال کے اندر ہی کچھ اور مال اسی نصاب کی جنس سے خواہ بذریعہ ہبہ یا میراث یا شرا یا وصیت یا کسی طرح اس کی ملک میں آیا تو وہ مال بھی اصل نصاب میں شامل کرکے اصل پر سال گزرنا اس سب پر حولانِ حول قرار پائے گا اور یہاں سونا چاندی تو مطلقاً ایک ہی جنس ہیں خواہ ان کی کوئی چیز ہو اور مالِ تجارت بھی انہی کی جنس سے گنا جائیگا اگرچہ کسی قسم کا ہو کہ آخر اس پر زکوٰۃ یوں ہی آتی ہے کہ اس کی قیمت سونے یا چاندی سے لگا کر انہیں کی نصاب دیکھی جاتی ہے تو یہ سب مالِ زر و سیم ہی کی جنس سے ہیں اور وسطِ سال میں حاصل ہوئے تو ذہب و فضہ کے ساتھ شامل کر دئے جائیں گے بشرطیکہ اس ملانے سے کسی مال پر سال میں دو بار زکوٰۃ لازم نہ آئے پھر ملانے کے بعد عفو و

ایجاب کے وہی احکام ہیں جو اوپر گزرے، مثلاً ایک شخص یکم محرم الحرام کو تیس ۳۰ تولے سونے کا مالک ہوا اور اس کے سوا جنسِ زر و سیم سے اور کوئی چیز اس کی ملک نہیں تو اس پر ۹ ماشے سونا زکوٰۃ میں فرض ہے کہ سلخ ذی الحجہ الحرام کو واجب الادا ہوگا، ہنوز سال تمام نہ ہوا کہ مثلاً یکم رجب کو ایک تولہ اور یکم ذی الحجہ کو دو ۲ تولے سونا اسے اور ملا کہ اب کل ۳۳ تولے ہو گیا تو سلخ ذی الحجہ کو اس مجموع کی زکوٰۃ ۹ ماشے (۵/۱ ، ۷) سُرخ سونا واجب الادا ہو گا، گویا اس سب پر سال گزر گیا اگرچہ واقع میں اس ایک تولے کو ہنوز چھ مہینے اور اس دو ۲ تولے کو ایک ہی مہینہ گزرا ہے اور اس تولہ بھر کے بعد اور نہ ملا کہ سال تمام پر صرف ۳۱ تولے تھا تو وہی ۹ ماشہ واجب رہیں گے کہ نصاب کے بعد خمس پورا ہونے تک زیادت معاف ہے، اسی طرح اگر تین ۳ تولے سونا تو نہ ملا مگر مثلاً ۲ ذی الحجہ کو اس نے اپنی زمین یا غلے یا اثاث البیت کے عوض اس قدر مالِ تجارت خریدا جس کی قیمت ۳ تولے سونے تک پہنچی تو اگرچہ اسے ملک میں آئے ابھی دس ہی دن گزرے مگر مجموع

---

[1] در مختار کتاب الزکوۃ باب زکوۃ المال مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۳۴-۳۵

Fatawa Rizwia Volume 10

Zakat on 33 tolas will be obligatory. Yes, if for example he had one Nisab of goats and one of Dirhams, he paid Zakat on the Dirhams and bought more goats in exchange for them, the year for these new goats will be counted from today. They will not be merged with the previous goats because ultimately they are in exchange for the same money whose Zakat for this year has already been paid. Now if they are mixed into the goats' Nisab, then Zakat would become obligatory twice on the same wealth in one year, and this is not permissible. It is stated in Tanveer-ul-Absar and Dur-e-Mukhtar:

[Table Column 1 - Arabic] Benefit, even if by gift[1] (or purchase, inheritance, or bequest AH SH[2]) in the middle of the year is added to the Nisab of its kind[3] (as long as it is not prevented by a hindrance, which is the 'Thina' negated by the saying of Allah the Almighty's Messenger (PBUH): 'There is no Thina in Sadaqah' AH SH[4]). So he pays Zakat on it according to the original year. And if he paid Zakat on his cash, then bought a grazing animal with it, it is not added[5] (to the grazing animals he has of the same kind that he bought with that purified cash, that is, he does not pay Zakat on them at the completion of the year of the original grazing animals according to the Imam, due to the aforementioned hindrance AH SH[6]). Summary AH. And in SH also, one of the two currencies is added to the other, and trade goods are added to the two currencies due to homogeneity in terms of [value].

[Table Column 2 - Urdu] Whatever is acquired in the middle of the year, whether as a gift, (or purchase, inheritance, or bequest AH SH), it shall be added to the Nisab of the same kind, provided there is no hindrance. This hindrance is the repetition of Zakat, which the Master of the Universe (Peace and Blessings of Allah be upon him) negated in these words: "There is no repetition in Sadaqah" AH SH). Then, Zakat shall be paid according to the original year. If someone paid Zakat on cash and then bought a grazing animal, he should not mix it (with the original Sa'imah) which he bought with that cash whose Zakat had been paid. That is, according to the Imam, because of the aforementioned hindrance, at the end of the original Sa'imah's year, Zakat will not be due on the mentioned Sa'imah AH SH). Summary AH. It is also in SH that both currencies (gold and silver) [merge with each other].

1. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Mujtabai Press, Delhi, 1/133.
2. Radd al-Muhtar, Bab Zakat al-Ghanam, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/25.
3. Durr-e-Mukhtar, Bab Zakat al-Ghanam, Mujtabai Press, Delhi, 1/133.

4. Radd al-Muhtar, Bab Zakat al-Ghanam, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/26.
5. Durr-e-Mukhtar, Bab Zakat al-Ghanam, Mujtabai Press, Delhi, 1/133.
6. Radd al-Muhtar, Bab Zakat al-Ghanam, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/26.

33 तोले की ज़कात वाजिब होगी। हाँ, अगर उसके पास उदाहरण के लिए बकरियों का एक निसाब और दिरहम का एक निसाब था, उसने दिरहम की ज़कात अदा कर दी और उनके बदले और बकरियाँ ले लीं, तो इन नई बकरियों के लिए आज से साल गिना जाएगा। उन्हें पिछली बकरियों में शामिल नहीं किया जाएगा क्योंकि अंततः ये उसी पैसे के बदले में हैं जिसकी इस साल की ज़कात अदा की जा चुकी है। अब अगर उन्हें बकरियों के निसाब में मिलाते हैं, तो एक ही माल पर एक साल में दो बार ज़कात लाज़िम आ जाएगी और यह जायज़ नहीं है। तनवीर-उल-अब्सार और दुर-ए-मुख्तार में है:

[तालिका कॉलम 1 - अरबी] फ़ायदा, चाहे उपहार के रूप में हो[1] (या खरीद, विरासत या वसीयत अ.ह. श.[2]) साल के बीच में उसी प्रकार के निसाब में जोड़ा जाता है[3] (जब तक कि उसे किसी बाधा से न रोका जाए, जो कि 'थिना' है, जिसे अल्लाह के रसूल (स.अ.व.) के इस कथन द्वारा नकारा गया है: 'सदक़ा में थिना नहीं है' अ.ह. श.[4])। तो वह मूल वर्ष के अनुसार इस पर ज़कात देता है। और यदि उसने अपने नकद पर ज़कात अदा की, फिर उससे चरने वाला जानवर खरीदा, तो उसे नहीं जोड़ा जाता[5] (उन चरने वाले जानवरों के साथ जो उसके पास उसी प्रकार के हैं जिन्हें उसने उस शोधित नकद से खरीदा था, यानी, वह इमाम के अनुसार मूल चरने वाले जानवरों के वर्ष के पूरा होने पर उन पर ज़कात नहीं देता है, उपर्युक्त बाधा के कारण अ.ह. श.[6])। सारांश अ.ह.। और श. में भी, दो मुद्राओं में से एक को दूसरे में जोड़ा जाता है, और व्यापारिक माल को दोनों मुद्राओं में [मूल्य] के संदर्भ में समरूपता के कारण जोड़ा जाता है।

[तालिका कॉलम 2 - उर्दू] साल के बीच में जो कुछ भी हासिल हो, चाहे वह उपहार (हिबा) के रूप में हो, (या खरीद, विरासत या वसीयत के रूप में हो - अ.ह. श.), उसे उसी प्रकार के निसाब में शामिल किया जाएगा, बशर्ते कि कोई रुकावट न हो। वह रुकावट ज़कात का दोहराव है, जिसे सरवरे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने इन शब्दों में नकारा है: "सदक़ा में दोहराव नहीं है" अ.ह. श.)। फिर ज़कात मूल वर्ष के अनुसार अदा की जाएगी। यदि किसी ने नकद की ज़कात अदा की और फिर एक चरने वाला जानवर (साइमा) खरीदा, तो वह उसे (मूल साइमा के साथ) नहीं मिलाएगा जिसे उसने उस नकद से खरीदा था जिसकी ज़कात अदा की जा चुकी थी। यानी इमाम के नज़दीक उक्त रुकावट के

कारण मूल साइमा के वर्ष के अंत में, उल्लेखित साइमा पर ज़कात नहीं होगी अ.ह. श.) सारांश अ.ह.। श. में यह भी है कि दोनों नकद (सोना और चांदी) [एक दूसरे में जुड़ जाते हैं]।

1. दुर्रे मुख़्तार किताबुज़ ज़कात, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/133
2. रद-उल-मुहतार बाब ज़कातुल ग़नम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/25
3. दुर्रे मुख़्तार बाब ज़कातुल ग़नम, मुजतबाई दिल्ली, 1/133
4. रद-उल-मुहतार बाब ज़कातुल ग़नम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/26
5. दुर्रे मुख़्तार बाब ज़कातुल ग़नम, मुजतबाई दिल्ली, 1/133
6. रद-उल-मुहतार बाब ज़कातुल ग़नम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/26

33 تولے کی زکوٰۃ واجب ہوگی۔ ہاں اگر اس کے پاس مثلاً ایک نصاب بکریوں اور ایک دراہم کی تھی اس نے دراہم کی زکوٰۃ ادا کردی اور اُن کے عوض اور بکریاں لیں، ان نئی بکریوں کے لئے آج سے سال شمار کیا جائے گا اگلی بکریوں میں ضم نہ کریں گے کہ آخر یہ اُسی روپے کے بدل میں جس کی زکوٰۃ اس سال کی بابت ادا ہوچکی اب اگر انہیں نصاب شاۃ میں ملاتے ہیں تو ایک مال پر ایک سال میں دو بار زکوٰۃ لازم آئی جاتی ہے اور یہ جائز نہیں۔ تنویر الابصار ودرمختار میں ہے:

[جدول کا پہلا کالم - عربی] المستفاد ولوبهبة [1] (اوشراء میراث او وصیّة اه ش [2]) وسط الحول یضم الی نصاب من جنسه [3] (مالم یمنع منه مانع هو الثنی المنفی بقوله صلی الله تعالیٰ علیہ وسلم ولا ثنی في الصدقة اه ش [4]) فیزکیه بحول الاصل ولوادی زکاة نقده ثم اشتری به سائمه لا تضم [5] (الی سائمة عنده من جنس السائمة التی اشتراها بذلك النقد المزکی ای لا یزکیها عند تمام حول السائمة الاصلیة عند الامام للمانع المذکور اه ش [6]) اه بالتلخیص وفي ش ایضاً احد النقدین یضم الی الآخر و عروض التجارة الی النقدین للجنسیة باعتبار

[جدول کا دوسرا کالم - اردو] سال کے وسط میں جو بھی حاصل شدہ ہو خواہ بصورت ہبہ ہو (یا شراء یا میراث یا وصیت کی صورت میں ہو اھ ش) اسے ہم جنس نصاب میں شامل کیا جائیگا بشرطیکہ اس میں کوئی مانع نہ ہو اور وہ تکرار زکوٰۃ ہے جس کی نفی سرورِ عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے ان الفاظ میں فرمائی کہ صدقہ میں تکرار نہیں اھ ش) تو حول اصل کی زکوٰۃ ادا کی جائے گی، اگر کسی نے نقدی کی زکوٰۃ ادا کی پھر اس نے سائمہ جانور خریدا تو وہ اسے نہ ملائے (اصلی سائمہ کے ساتھ) جن کو اس نے اس نقدی سے خریدا تھا جس کی زکوٰۃ ادا کردی گئی یعنی

امام کے نزدیک مانع مذکور کی وجہ سے حول سائمہ اصلیہ کے اختتام پر مذکورہ سائمہ پر زکوٰۃ نہیں ہوگی اھ ش) اھ بالتلخیص، ش میں یہ بھی ہے کہ دونوں نقدیں (سونے اور چاندی)

1. در مختار کتاب الزکوٰۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۳۳
2. رد المحتار باب زکوٰۃ الغنم مصطفی البابی مصر ۲/۲۵
3. در مختار باب زکوٰۃ الغنم مجتبائی دہلی ۱/۱۳۳
4. رد المحتار باب زکوٰۃ الغنم مصطفی البابی مصر ۲/۲۶
5. در مختار باب زکوٰۃ الغنم مجتبائی دہلی ۱/۱۳۳
6. رد المحتار باب زکوٰۃ الغنم مصطفی البابی مصر ۲/۲۶

Fatawa Ridawiyya Volume 10

[Box Top Right: Arabic] Their value [is determined]... Briefly from Al-Bahr. And Allah Almighty knows best. [Box Top Left: Urdu] ...should be combined considering one as a different genus; trade goods should be combined with the two precious metals (gold and silver) based on value. Briefly from Al-Bahr. And Allah Almighty knows best. (S)

Problem 3: If jewelry decreases in the future, by what calculation should the reduction be made? Explain and be rewarded. Answer: Zakat is only obligatory on the Niṣāb (minimum threshold), not on the 'Afw' (the surplus above a Niṣāb before reaching the next increment). For example, if a person owns eight tolas of gold, the two masha of gold that became obligatory upon him corresponds only to 7.5 tolas, not the full eight tolas, because the six masha which is over the Niṣāb is 'Afw'. Similarly, if he owns 10 tolas, Zakat is only for 9 tolas, i.e., one complete Niṣāb and one-fifth of a Niṣāb; the tenth tola is exempt. In 'Multaqā al-Abḥur' it is stated:

[Box Middle Right: Arabic] Zakat pertains to the Niṣāb, not the 'Afw'. If forty sheep out of eighty die after the completion of the lunar year, one full sheep is still due as Zakat. Briefly summarized. [Box Middle Left: Urdu] Zakat is related to the Niṣāb, not the 'Afw'. Now, if forty of his sheep die after the year, one full sheep's Zakat will still be mandatory. Briefly summarized. (S)

In 'Durr al-Mukhtar' it is stated:

[Box Lower Right: Arabic] Not in 'Afw', which is what lies between Niṣābs in all types of wealth. [Box Lower Left: Urdu] There is no Zakat in 'Afw', and in every case, it is that amount and portion which lies between Niṣābs. (S)

Thus, if the loss does not exceed the amount of 'Afw', i.e., only as much wealth is lost as was 'Afw'—for example, in the first example 6 masha and in the second one tola—then it is not considered at all because Zakat was not due on that amount previously either. The entire obligatory amount corresponded to the remaining wealth, and it still remains. So, the same amount of Zakat is obligatory, and the reduction is disregarded as illustrated in Multaqā (as the example was given in Multaqā. S). And if it exceeds the amount of 'Afw', meaning a loss occurs in a Niṣāb because of it, whether the loss was more than the 'Afw' amount in the wealth—as in the mentioned examples, two tolas—or if from the start...

1. Rad al-Muhtar, Chapter on Zakat of Sheep, Mustafa al-Babi Egypt, 2/26

2. Multaqā al-Abḥur, Section on Zakat of Palm Trees, Muassasa ar-Risala Beirut, 1/717
3. Durr al-Mukhtar, Chapter on Zakat of Sheep, Mujtabai Delhi, 1/331

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम

[ऊपरी दायाँ बॉक्स: अरबी] उनकी कीमत... संक्षेप में अल-बहर से। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। [ऊपरी बायाँ बॉक्स: उर्दू] ...को एक दूसरी जिन्सियत के एतबार से मिलाया जाए, तिजारत के सामान को कीमत के एतबार से नकदीन (सोने-चांदी) के साथ मिलाया जाए। संक्षेप में अल-बहर से। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसाला 3: अगर आइंदा ज़ेवर कम हो जाए तो किस हिसाब से कमी की जाए? बयान करें और अज्र पाएं। जवाब: ज़कात केवल निसाब (न्यूनतम सीमा) पर अनिवार्य है, न कि अफ़्व (दो निसाबों के बीच की अतिरिक्त राशि) पर। उदाहरण के तौर पर, यदि किसी व्यक्ति के पास आठ तोले सोना है, तो जो दो माशा सोना उस पर अनिवार्य हुआ, वह केवल 7.5 तोले के बदले में है, न कि पूरे आठ तोले के, क्योंकि यह छह माशा जो निसाब से अधिक है, अफ़्व है। इसी तरह यदि कोई 10 तोले का मालिक है, तो ज़कात केवल 9 तोले यानी एक पूर्ण निसाब और निसाब के पांचवें हिस्से (खम्स) के बदले में है; दसवां तोला माफ है। 'मुल्तका अल-अब्हुर' में है:

[मध्य दायाँ बॉक्स: अरबी] ज़कात का संबंध निसाब से है, अफ़्व से नहीं। अगर साल पूरा होने के बाद अस्सी में से चालीस भेड़ें मर जाएं तो भी एक पूरी भेड़ ज़कात के रूप में अनिवार्य होगी। संक्षेप में। [मध्य बायाँ बॉक्स: उर्दू] ज़कात का संबंध निसाब से होता है अफ़्व से नहीं। अब अगर साल के बाद उसकी बकरियों में से चालीस हलाक (खत्म) हो गईं, तो अब भी एक कामिल (पूरी) बकरी ज़कात लाज़िम होगी। संक्षेप में। (त)

दुर्रे मुख्तार में है:

[निचला दायाँ बॉक्स: अरबी] अफ़्व में नहीं, जो तमाम मालों में निसाबों के दरमियान होता है। [निचला बायाँ बॉक्स: उर्दू] अफ़्व में ज़कात नहीं और यह हर हाल में वह मिक़दार और हिस्सा है जो निसाबों के दरमियान होता है। (त)

पस अगर नुकसान अफ़्व की मिक़दार से ज़्यादा न हो, यानी उतना ही माल कम हो जाए जितना अफ़्व था, मसलन पहली मिसाल में 6 माशा और दूसरी में एक तोला, तब तो यह कतई गौर करने लायक नहीं है क्योंकि उस मिक़दार पर तो पहले भी ज़कात न थी। पूरी वाजिब ज़कात बाकी बचे माल के बदले में थी, वह अब भी बाकी है। तो ज़कात उतनी ही वाजिब है और कमी का एतबार नहीं किया जाएगा जैसा कि मुल्तका में इसकी मिसाल दी गई (त)। और अगर अफ़्व की मिक़दार से

ज़्यादा हो जाए यानी उसके कारण किसी निसाब में कमी आए, चाहे इस तरह कि माल में जितना अफ़्व था नुकसान उससे ज़्यादा का हुआ। जैसे ऊपर दी गई मिसालों में दो तोले या इस तरह कि शुरुआत से...

1. रद उल मुहतार, बाब ज़कातुल गनम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/26
2. मुल्तका अल-अब्हुर, फ़स्ल फ़ी ज़कातुन नख़ील, मुअस्ससतुर् रिसाला बेरुत, 1/717
3. दुर्रे मुख्तार, बाब ज़कातुल गनम, मुज्तबाई दिल्ली, 1/331

فتاوی رضویہ جلد دہم

قیمتھما بحراہ ملخصًا واللہ تعالی اعلم۔ کو ایک دوسری جنسیت کے اعتبار سے ملایا جائے، سامانِ تجارت کو قیمت کے اعتبار سے نقدین کے ساتھ ملایا جائے، بحراہ ملخصًا واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ثالثہ: اگر آئندہ زیور کم ہو جائے تو کس حساب سے کمی کی جائے؟ بینوا توجروا الجواب: زکوۃ صرف نصاب میں واجب ہوتی ہے، نہ عفو میں، مثلاً ایک شخص آٹھ تولے سونے کا مالک ہے تو دو ماشہ سونا کہ اس پر واجب ہوا، وہ صرف ۷ تولے کے مقابل ہے نہ کہ پورے آٹھ تولے کے، کہ یہ چھ ماشے جو نصاب سے زائد ہے عفو ہے۔ یوں ہی اگر ۱۰ تولے کا مالک ہو تو زکوۃ صرف ۹ تولہ یعنی ایک نصاب کامل اور ایک نصاب خمس کے مقابل ہے، دسواں تولہ معاف۔

ملتقی الابحر میں ہے :

الزکوۃ تتعلق بالنصاب دون العفو فلو ھلك بعد الحول اربعون من ثمانین شاۃ تجب شاۃ کاملۃ اھ ملخصًا۔

زکوۃ کا تعلق نصاب سے ہوتا ہے عفو سے نہیں، اب اگر سال کے بعد اس کی بکریوں میں سے چالیس ہلاک ہو گئیں تو اب بھی ایک کامل بکری زکوۃ لازم ہوگی اھ ملخصًا۔ (ت)

در مختار میں ہے:

لا في عفو وھو ما بین النصب في کل الاموال۔ عفو میں زکوۃ نہیں اور یہ ہر حال میں وہ مقدار و حصہ ہے جو نصابوں کے درمیان ہوتا ہے (ت)

پس اگر نقصان مقدارِ عفو سے تجاوز نہ کرے یعنی اسی قدر مال کم ہو جائے جتنا عفو تھا، مثلاً مثالِ اوّل میں ۶ ماشہ اور دوم میں ایک تولہ، جب تو اصلاً قابلِ لحاظ نہیں کہ اس قدر پر تو پہلے بھی زکوۃ نہ تھی کل واجب بمقابلہ مال باقی تھا وہ اب بھی باقی ہے تو زکوۃ اسی قدر واجب ہے اور

کمی نظر سے ساقط کما مثل لہ فی الملتقی (جیسا کہ ملتقی میں اس کی مثال دی گئی۔ ت) اور اگر مقدارِ عفو سے متجاوز ہو یعنی اُس کے باعث کسی نصاب میں نقصان آئے خواہ یوں کہ مال میں جس قدر عفو تھا نقصان اس سے زائد کا ہوا۔ جیسے امثلہ مذکورہ میں دو تولے یا یوں کہ ابتداءً

1 رد المحتار باب زکوۃ الغنم مصطفی البابی مصر ۲/۲۶ 2 ملتقی الابحر فصل في زکوۃ النخیل موسسۃ الرسالہ بیروت ۱/۷۱۷ 3 در مختار باب زکوۃ الغنم مجتبائی دہلی ۱/۳۳۱

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

If the wealth was only at the minimum threshold (Nisab) levels and there was no surplus (Afw) at all, for example, 15, 30, or 50 tolas of gold, then any decrease of even a grain of rice or barley will reduce one of the Nisab levels. Such a loss is either before the completion of the lunar year (Hawl) or after it. In the first case, there are two possibilities: either the previous Nisab amount was completed again by the end of the full year or not. If it was completed, then this loss will not be considered at all, and the full year will be deemed to have passed on the total sum. For example, if a person owned 15 tolas of gold on the 1st of Muharram, and later some portion, whether small or large, was lost, spent, or given away, and only a very small amount remained, but then the amount that had decreased returned before the end of Dhu al-Hijjah (even just a day before), then Zakat for the full 15 tolas—two complete Nisabs—must be given, as one Mithqal is gold. Similarly, if someone owns 8 tolas of gold and in the middle of the year, it decreases by a tola so that it falls below the Nisab, but before the year ends, six or seven Mashas are added, then the full Zakat will be obligatory. Just as the loss of the six Mashas that were 'Afw' (surplus) is not considered, similarly, after their loss, their return is not required. It is only necessary that the number of Nisabs owned at the beginning of the year be complete at the end of the year. The Zakat that would have been obligatory if the wealth had remained continuous will be due in full, and the intervening loss will not be considered. However, it is essential that some part of the original wealth remains and not all of it perishes. Otherwise, the counting of the year from the first ownership will cease, and the calculation will begin from the day of new ownership. For example, if someone became the owner of Nisab on the 1st of Muharram, but in Safar all the wealth was gone, and then in Rabi' al-Awwal wealth returned, the year will be counted from that month; the Muharram calculation is gone. It is stated in Durr al-Mukhtar:

(Arabic)

The condition for the completion of Nisab at both ends of the year is: for the commencement (of the year) to take effect, and at the end for the obligation (of Zakat). Therefore, its decrease in between is not harmful. However, if all of it is lost, the year becomes invalid. 1

(Urdu)

The completion of Nisab is a condition at both ends of the year; at the beginning for the year to start and at the end for Zakat to become obligatory. A decrease during the middle period is not harmful. Yes, if all

(Arabic)	(Urdu)
	the wealth is lost, then the year will become void.

It is stated in Radd al-Muhtar:

(Arabic)	(Urdu)
If something is found before the completion of the year, even by one day, he shall add it and pay Zakat on all of it. 2	If any item is acquired before the end of the year, even just one day before, it will be added to it and Zakat will be paid on all of it. (T)

1 Durr al-Mukhtar, Chapter on Zakat al-Mal, Mujtabai Press, Delhi, 1/145 2 Radd al-Muhtar, Chapter on Zakat al-Ghanam, Idarat al-Tiba'at al-Misriyya, Egypt, 2/23

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवी

यदि धन केवल निसब (न्यूनतम सीमा) के स्तर पर था और कोई अतिरिक्त (अफ़्व) बिल्कुल नहीं था, जैसे कि 15, 30 या 50 तोले सोना, तो उसमें रत्ती या चावल के बराबर भी कमी किसी न किसी निसब में कमी लाएगी। ऐसा नुकसान दो स्थितियों से खाली नहीं है: या तो यह साल (हौल) पूरा होने से पहले है या बाद में। पहली स्थिति में दो संभावनाएं हैं: या तो साल पूरा होने पर पिछले निसब की राशि फिर से पूरी हो गई या नहीं। यदि पूरी हो गई, तो यह नुकसान बिल्कुल भी मान्य नहीं होगा और इस कुल राशि पर पूरा साल गुजरा हुआ माना जाएगा। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति 1 मुहर्रम को 15 तोले सोने का मालिक था, उसके बाद उसमें से कुछ हिस्सा, चाहे कम हो या अधिक, नष्ट हो गया, खर्च हो गया या किसी को दे दिया गया और बहुत कम हिस्सा बचा रहा, फिर जितना कम हुआ था वह ज़िल-हिज्जा समाप्त होने से पहले (चाहे एक दिन पहले ही) वापस आ गया, तो पूरे 15 तोले - दो पूर्ण निसब - की ज़कात देनी होगी क्योंकि एक मिस्काल सोना है। इसी तरह, यदि कोई 8 तोले सोने का मालिक है और साल के बीच में एक तोला कम हो गया जिससे निसब भी पूरा नहीं रहा, लेकिन साल खत्म होने से पहले छह-सात माशे मिल गए, तो वही पूरी ज़कात वाजिब होगी। जिस तरह छह माशे जो 'अफ़्व' (अतिरिक्त) थे उनके नष्ट होने का कोई विचार नहीं है, उसी तरह उनके नष्ट होने के बाद उनकी वापसी की आवश्यकता नहीं है। केवल इतना आवश्यक है कि साल की शुरुआत में जितने निसब का मालिक था, साल के अंत में वे निसब पूरे हों। तो जितनी ज़कात निरंतरता की स्थिति में वाजिब होती, उतनी ही पूरी वाजिब होगी और बीच के नुकसान पर ध्यान नहीं दिया जाएगा। हाँ, इतना ज़रूर है कि मूल धन का कोई हिस्सा सुरक्षित रहे, सब बिल्कुल खत्म न हो जाए, वरना पहली मिलकियत से साल की गिनती समाप्त हो जाएगी और जिस दिन नई मिलकियत होगी उस दिन से हिसाब किया जाएगा। उदाहरण के लिए, 1 मुहर्रम को निसब का मालिक हुआ, सफ़र में सारा माल चला गया, रबी-उल-अव्वल में फिर समृद्धि आई तो उसी महीने से साल गिनेंगे, मुहर्रम का हिसाब खत्म हो गया। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

(अरबी)	**(उर्दू)**
साल के दोनों सिरों पर निसब का पूरा होना शर्त है: शुरुआत में शुरू होने के लिए और अंत में वाजिब होने के लिए। अतः उनके बीच में कमी	साल के दोनों सिरों पर निसब की पूर्णता की शर्त है; शुरुआत में (साल के) शुरू होने के लिए और अंत में वाजिब होने के लिए, बीच की अवधि में कमी

(अरबी)

हानिकारक नहीं है। यदि सारा माल नष्ट हो जाए, तो साल अमान्य हो जाता है। 1

(उर्दू)

नुकसानदेह नहीं है। हाँ, अगर सारा माल हलाक हो गया तो साल बातिल (अमान्य) हो जाएगा।

'रद्दुल मुहतार' में है:

(अरबी)

यदि साल पूरा होने से पहले कुछ मिल जाए, चाहे एक दिन पहले ही, तो वह उसे (मूल धन में) जोड़ देगा और पूरे की ज़कात देगा। 2

(उर्दू)

अगर कोई चीज़ साल के अंत से पहले प्राप्त हुई, चाहे एक ही दिन पहले हो, उसे मिलाया जाएगा और तमाम की ज़कात अदा की जाएगी। (त)

1 दुर्रे मुख़्तार, बाब-उज़-ज़कात अल-माल, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 1/145 2 रद्दुल मुहतार, बाब ज़कात अल-ग़नम, इदारतुल तिबाअतुल मिस्रिया, मिस्र, 2/23

पृष्ठ 836 का 93

مال صرف مقادیر نصاب پر تھا عفو سرے سے تھا ہی نہیں جیسے ۱۵ یا ۳۰ یا ۵۰ تولے سونا کہ اس میں رتی چاول جو کچھ گھٹے گا کسی نہ کسی نصاب میں کمی کرے گا۔ ایسا نقصان دو حال سے خالی نہیں یا حولانِ حول سے پہلے ہے یا بعد، بر تقدیر اول دو ۲ حال سے خالی نہیں، یا سال تمام پر رقمِ نصاب ہائے پیشیں پھر پوری ہو گئی یا نہیں، اگر پوری ہو گئی تو یہ نقصان بھی اصلاً نہ ٹھہرے گا اور اس مجموع رقم پر حولانِ حول سمجھا جائے گا، مثلاً ایک شخص یکم محرم کو ۱۵ تولے سونا کا مالک تھا بعدہ اس میں سے کسی قدر قلیل خواہ کثیر ضائع ہو گیا یا صرف کر دیا یا کسی کو دے ڈالا اور تھوڑا سا اگرچہ بہت خفیف باقی رہا، پھر جس قدر کم ہو گیا تھا سلخ ذی الحجہ سے پیشتر اگرچہ ایک ہی دن پہلے پھر آگیا تو پورے ۱۵ ۱۵ تولہ دو نصاب کامل کی زکوٰۃ دینی ہو گی کہ ایک مثقال سونا ہے یونہی اگر مثلاً آٹھ تولے سونے کا مالک ہے اور وسط میں تولہ پھر گھٹ گیا کہ نصاب بھی پوری نہ رہی، ختم سال سے پہلے چھ سات ماشے مل گیا تو وہی زکوٰۃ تمام و کمال لازم آئے گی کہ چھ ماشہ جو عفو تھا جس طرح اس کے ہلاک کا اعتبار نہیں یو نہی بعد ہلاک اس کا عود درکار نہیں صرف اس قدر چاہئے کہ شروع سال میں ایک یا زائد جتنی نصابوں کا مالک ہوا تھا، ختم سال پر وہ نصابیں پوری ہوں تو جس قدر زکوٰۃ کا وجوب بحالت استمرار ہوتا اسی قدر پوری واجب ہوگی اور نقصان درمیانی پر نظر نہ کی جائے، ہاں اتنا ضرور ہے کہ اصل مال سے کوئی پارہ محفوظ رہے سب بالکل فنا نہ ہو جائے ورنہ ملک اول سے شمار سال جاتا رہے گا اور جس دن ملکِ جدید ہو گی اُس دن سے حساب کیا جائے گا، مثلاً یکم محرم کو مالکِ نصاب ہوا صفر میں سب مال سفر کر گیا، ربیع الاول میں پھر بہار آئی تو اسی مہینہ سے حول گنیں گے حساب محرم جاتا رہا۔ در مختار میں ہے:

عربی	اردو
شرط كمال النصاب في طرفي الحول في الابتداء للانعقاد وفی الانتهاء للوجوب فلا یضر نقصانه بینهما فلو هلك كله بطل الحول۔ 1	سال کے دونوں اطراف میں کمالِ نصاب کی شرط ہے ابتداء میں انعقاد اور انتہاء میں وجوب کے لئے، درمیانی مدت میں کمی نقصان دہ نہیں۔ ہاں اگر سارا مال ہلاک ہو گیا تو سال باطل ہو جائے گا۔

رد المحتار میں ہے:

عربی	اردو
فان وجد منہ شیئاً قبل الحول ولو بیوم ضمہ وزکی الکل۔ 2	اگر کوئی شئی سال کے اختتام سے حاصل ہوئی خواہ ایک ہی دن پہلے ہو اسے ملایا جائے گا اور تمام کی زکوٰۃ ادا کی جائے گی۔ (ت)

1 در مختار باب الزکوٰۃ المال مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۴۵ 2 رد المحتار باب زکوٰۃ الغنم ادارۃ الطباعۃ المصریۃ مصر ۲/۲۳

Fatawa Rizvia, Volume 10

It is in the same source:

[Arabic Quote]: "His statement 'all of it perished', meaning in the middle of the year, to the extent that if he acquires other than that wealth during it, a new year starts for it." (1) | [Urdu Translation]: If it's said that all the wealth is destroyed, i.e., in the middle of the year, such that if wealth is acquired other than this, a new year will begin for it. (T)

And if this loss continues, meaning at the end of the year the [minimum] wealth levels (nisabs) are not complete, then zakat will be mandatory on the amount currently present, and the same rules of calculating nisab and considering exemptions will apply to the existing amount. What was lost is considered as if it never existed, as the completion of the year occurred on this [remaining] amount. Even if this amount is less than the nisab, then zakat is completely waived.

[Arabic Quote]: "And that is because the passing of a year is a condition for obligation. If it falls below the niṣāb, nothing is obligatory. Otherwise, it is obligatory on what the year has passed over." | [Urdu Translation]: Because the passing of a year is a condition for obligation; when it's less than nisab, nothing will be mandatory, and if it is nisab, then zakat will be on that which a year has passed over. (T)

It is mentioned in the Hadith that the Radiant Presence, Master of the Universe (may Allah the Exalted grant him peace and blessings) says:

[Arabic Quote]: "There is no zakat on wealth until a year has passed over it." (2) Ibn Majah narrated this from the Mother of the Believers, al-Siddiqah (may Allah be pleased with her). | [Urdu Translation]: Zakat is not mandatory on wealth before the completion of a year; Ibn Majah has narrated this from the Mother of the Believers Lady Aisha (may Allah be pleased with her). (T)

In the marginalia of Shami it is [written]:

[Arabic Quote]: "If he consumed it before the completion of the year, there is no zakat on him due to the absence of the condition." (3) | [Urdu Translation]: If he destroyed the wealth before the completion of the year, then zakat will not be mandatory due to the absence of the condition. (T)

On the second scenario, i.e., when a year has passed over the wealth and zakat became obligatory to pay, but he hadn't paid it yet and the wealth decreased, it's not outside of three conditions: the cause of the decrease will be 'istihlak' (consumption/ destruction), 'tasadduq' (charity), or 'halak' (perishing). 'Istihlak' means that by his own action, he destroyed or spent some of that amount, threw it away, or gifted it to a wealthy person. And by 'tasadduq' here, it's meant giving to some poor needy person without the intention of zakat. And 'halak' means it was lost or destroyed without his action, for example...

1. Radd al-Muhtar, Chapter of Zakat of Wealth, Idarat al-Tiba'at al-Misriyyah, Egypt, 2/33
2. Sunan Ibn Majah, Chapters of Zakat, Chapter on Acquiring Wealth, H.M. Saeed Company, Karachi, p. 129
3. Durr-e-Mukhtar, Chapter of Zakat of Sheep, Idarat al-Tiba'at al-Misriyyah, Egypt, 2/12

फ़तावा रिज़विया, जिल्द 10

उसी में है:

[अरबी उद्धरण]: "उनका कथन 'सब नष्ट हो गया', यानी साल के बीच में, यहाँ तक कि अगर इस दौरान उसके अलावा कोई और धन प्राप्त होता है, तो उसके लिए एक नया साल शुरू होगा।" (1) | [उर्दू अनुवाद]: अगर सारा माल हलाक हो गया, यानी साल के बीच में, यहाँ तक कि अगर इस माल के अलावा कुछ हासिल होता है तो उसके लिए नया साल होगा। (त)

और अगर यह कमी जारी रही यानी साल के अंत पर वह निसाब (न्यूनतम आवश्यक धन) पूरा न हुआ, तो उस समय जितना मौजूद है उतने की ज़कात वाजिब होगी और वही निसाब के हिसाब और छूट के नियम मौजूद मात्रा पर लागू होंगे। जो चला गया वह मानो था ही नहीं, क्योंकि साल का गुजरना इसी मात्रा पर हुआ। यहाँ तक कि अगर यह मात्रा निसाब से भी कम है तो ज़कात पूरी तरह से समाप्त हो जाएगी।

[अरबी उद्धरण]: "ऐसा इसलिए है क्योंकि साल का गुजरना वाजिब होने की शर्त है। यदि यह निसाब से कम हो जाता है, तो कुछ भी अनिवार्य नहीं है। अन्यथा, जिस पर साल गुजर चुका है उस पर यह अनिवार्य है।" | [उर्दू अनुवाद]: क्योंकि साल का गुजरना वाजिब होने की शर्त है, जब निसाब से कम है तो कोई चीज़ लाज़िम (अनिवार्य) न होगी और अगर निसाब है तो जिस पर साल गुज़रा है उस पर ज़कात होगी। (त)

हदीस में है कि हुज़ूर पुरनूर सैयदे आलम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

[अरबी उद्धरण]: "माल पर तब तक ज़कात नहीं है जब तक कि उस पर एक साल न गुजर जाए।" (2) इब्ने माजा ने इसे उम्मुल मोमिनीन सिद्दीका (रज़ियल्लाहु तआला अन्हा) से रिवायत किया है। | [उर्दू अनुवाद]: माल पर ज़कात साल गुज़रने से पहले लाज़िम नहीं होती, इसे इब्ने माजा ने उम्मुल मोमिनीन सैयदा आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत किया है। (त)

हाशिया शामी में है:

[अरबी उद्धरण]: "यदि उसने साल पूरा होने से पहले इसे नष्ट कर दिया, तो शर्त के अभाव के कारण उस पर कोई ज़कात नहीं है।" (3) | [उर्दू अनुवाद]: अगर उसने माल साल गुज़रने से पहले हलाक (नष्ट) कर दिया तो शर्त की अनुपस्थिति की वजह से ज़कात लाज़िम न होगी। (त)

दूसरे मामले में, यानी जब माल पर साल गुज़र गया और ज़कात वाजिब हो गई, और अभी तक नहीं दी थी कि माल कम हो गया, तो यह तीन स्थितियों से खाली नहीं है कि कमी का कारण 'इस्तेहलाक' (नष्ट करना), 'तसद्दुक' (दान) या 'हलाक' (बर्बाद होना) होगा। 'इस्तेहलाक' का अर्थ यह है कि उसने अपने कार्य से उस राशि में से कुछ नष्ट कर दिया, खर्च कर दिया, फेंक दिया, या किसी अमीर को उपहार में दे दिया। और यहाँ 'तसद्दुक' से तात्पर्य यह है कि बिना ज़कात की नीयत के किसी गरीब ज़रूरतमंद को दे दिया। और 'हलाक' का अर्थ यह है कि उसके बिना किसी कार्य के वह खो गया या नष्ट हो गया, उदाहरण के लिए...

1. रद-उल-मुहतार, ज़कात के माल का अध्याय, इदारातुल तिबाअतुल मिसरिया, मिस्र, 2/33
2. सुनन इब्ने माजा, ज़कात के अध्याय, धन प्राप्ति का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, पृष्ठ 129
3. दुर्रे मुख्तार, भेड़ों की ज़कात का अध्याय, इदारातुल तिबाअतुल मिसरिया, मिस्र, 2/12

पृष्ठ 94/836

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

اُسی میں ہے:

قولہ ھلك كلہ ای فی اثناء الحول حتی لو استفاد فیہ غیرہ استأنف لہ حولا جدید۔ 1 | قولہ اگر سارا مال ہلاک ہو گیا، یعنی سال کے وسط میں، حتیٰ کہ اگر اس مال کے علاوہ حاصل ہوتا ہے تو اس کے لئے نیا سال ہوگا۔ (ت)

اور اگر یہ نقصان مستمر رہا یعنی ختمِ سال پر وہ نصابیں پوری نہ ہوئیں تو اس وقت جس قدر موجود ہے اتنے کی زکوۃ واجب ہوگی اور وہی احکامِ حسابِ نصاب ولحاظِ عفو کے اس قدر موجود پر جاری ہوں گے، جو جاتا رہا گویا تھا ہی نہیں کہ حولان حول اسی مقدار پر ہوا حتی کہ اگر یہ مقدار نصاب سے بھی کم ہے تو زکوۃ راساً ساقط

وذلك لان الحولان شرط الوجوب فاذا نقص عن النصاب لم یجب شئ والا وجب فیما حال علیہ الحول۔ | کیونکہ سال کا گزرنا شرط وجوب ہے، جب نصاب سے کم ہے تو کوئی شئی لازم نہ ہوگی اور اگر نصاب ہے تو جس پر سال گزرا ہے اس پر زکوۃ ہوگی (ت)

حدیث میں ہے حضور پُر نور سیدِ عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

لا زکوۃ فی مال حتی یحول علیہ الحول 2 اخرجہ ابن ماجۃ عن ام المؤمنین الصدیقۃ رضی اللہ تعالی عنہا۔ | مال پر زکوۃ سال گزرنے سے پہلے لازم نہیں ہوتی، اسے ابن ماجہ نے ام المومنین سیدہ عائشہ رضی اللہ عنہا سے روایت کیا ہے۔ (ت)

حاشیہ شامی میں ہے:

لو استھلکه قبل تمام الحول فلا زکوۃ علیه لعدم الشرط۔ 3 | اگر اس نے مال سال گزرنے سے پہلے ہلاک کر دیا تو عدم شرط کی وجہ سے زکوۃ لازم نہ ہوگی۔ (ت)

بر تقدیرِ ثانی یعنی جبکہ مال پر سال گزر گیا اور زکوۃ واجب الاداء ہو چکی، اور ہنوز نہ دی تھی کہ مال کم ہو گیا، یہ تین حال سے خالی نہیں کہ سببِ کمی استہلاک ہوگا یا تصدق یا ہلاک۔ استہلاک کے یہ معنی کہ اس نے اپنے فعل سے اس رقم سے کچھ اتلاف، صرف کر ڈالا، پھینک دیا، کسی غنی کو ہبہ کر دیا۔ اور یہاں تصدق سے یہ مراد کہ بلانیت زکوۃ کسی فقیر محتاج کو دے دیا۔ اور ہلاک کے یہ معنی کہ بغیر اس کے فعل کے ضائع و تلف ہو گیا، مثلاً

1 ردالمحتار باب زکوٰۃ المال ادارۃ الطباعۃ المصریۃ مصر ۲/۳۳ 2 سنن ابن ماجہ ابواب الزکوٰۃ باب استفاد مالا ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۱۲۹ 3 در مختار باب زکوٰۃ الغنم ادارۃ الطباعۃ المصریۃ مصر ۲/۱۲

Volume 10 Fatawa Razawiyya

If it was stolen, or if gold and silver were given to someone as a loan or concession and they denied it and there are no witnesses, or they died and left no inheritance, or the wealth was a debt on some poor person and the creditor exempted the needy debtor, then this is also under the ruling of destruction (halak).

Now, in the first case, i.e., consumption/destruction (istihlak), the amount of Zakat that had become obligatory upon the completion of the year will not decrease even by a grain, to the extent that even if all the wealth is spent and one becomes completely destitute, the debt of Zakat remains as it was. It is mentioned in Sirajiyyah, Nihayah, etc.:

Arab Text	Urdu Translation
If the Nisab (minimum taxable amount) is consumed, it [Zakat] does not fall away. [1]	If someone destroys the Nisab, Zakat will not be waived. (T)

It is in Nahr al-Faiq and Hashiyah al-Tahtawi:

Arab Text	Urdu Translation
If one gifts the Nisab to a rich person after it became obligatory, he is liable for the obligatory amount, and this is the more correct of the two narrations. [2]	If someone gifts the Nisab to a rich person after it became obligatory, he will be liable for the obligatory (amount), and this is the more correct of the two narrations. (T)

It is in Muheet-e-Sarkhasi and Alamgiriyyah:

Arab Text	Urdu Translation
In the narration of al-Jami', he is liable for the amount of Zakat, and it is the more correct. [3]	It is in the narration of al-Jami' that he will be liable for the amount of Zakat, and this is more correct. (T)

And in the second case, i.e., giving in charity (tasadduq), if the intention was for a vow (nazr), expiation (kaffara), or any other obligatory charity, then by consensus its ruling is also like consumption (istihlak), i.e., nothing will fall away from the Zakat; for what was given and what remains, Zakat will be mandatory for all. It is in al-Durr al-Mukhtar:

Arab Text	Urdu Translation
When one intends a vow or another obligation, it is valid, and he is liable for Zakat. [4]	When someone makes an intention for a vow or another obligation, it is valid, but the guarantee of Zakat will have to be given. (T)

[1] Fatawa Sirajiyyah, Kitab al-Zakat, Munshi Naval Kishore Press, Lucknow, p. 25 [2] Hashiyah al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/395 [3] Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Zakat, Chapter 1, Nurani Kutub Khana, Peshawar, 1/171 [4] Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Mujtabai Press, Delhi, 1/300

जिल्द दहुम (दसवाँ खंड) फ़तावा रज़विया

चोरी हो गई या सोना-चाँदी किसी को क़र्ज़ या रियायत के तौर पर दे दिया और वह मुकर गया और गवाह नहीं हैं, या वह मर गया और कोई विरासत नहीं छोड़ी, या माल किसी ग़रीब पर क़र्ज़ था और उसने ज़रूरतमंद क़र्ज़दार को माफ़ कर दिया, तो यह भी 'हलाक़' (नष्ट होने) के हुक्म में है।

अब पहली सूरत में यानी 'इस्तेहलाक' (खर्च कर देने) में साल पूरा होने पर जितनी ज़कात वाजिब हुई थी, उसमें से एक दाना भी कम नहीं होगा, यहाँ तक कि अगर सारा माल खर्च कर दे और बिल्कुल कंगाल हो जाए, फिर भी ज़कात का क़र्ज़ वैसे ही रहेगा। सिराजिया और निहाया वग़ैरह में है:

अरबी इबारत	**उर्दू अनुवाद**
لو استهلك النصاب لا يسقط۔ 1	अगर किसी ने निसाब को हलाक़ कर दिया तो ज़कात साक़ित (ख़त्म) नहीं होगी। (त)

नह्र अल-फ़ाएक़ और हाशिया तहावी में है:

अरबी इबारत	**उर्दू अनुवाद**
لو وهب النصاب لغنى بعد الوجوب ضمن الواجب وهو اصح الروايتين۔ 2	अगर किसी ने निसाब को वाजिब होने के बाद किसी धनी व्यक्ति को हिबा (दान) कर दिया, तो वह वाजिब (मात्रा) का ज़ामिन (ज़िम्मेदार) होगा और यही दोनों रिवायतों में अधिक सही है। (त)

मुहीत-ए-सरख़सी और आलमगीरिया में है:

अरबी इबारत	**उर्दू अनुवाद**
فى رواية الجامع يضمن قدر الزكوة وهو الاصح۔ 3	रिवायत अल-जामे में है कि वह ज़कात की मात्रा का ज़ामिन होगा और यही अधिक सही है। (त)

और दूसरी सूरत यानी 'तसद्दुक़' (सदक़ा देना) में अगर नज़र (मन्नत), कफ़्फ़ारे या किसी और सदक़ा-ए-वाजिबा की नीयत की, तो सर्वसम्मति से इसका हुक्म भी 'इस्तेहलाक' जैसा ही है, यानी ज़कात में से कुछ भी कम नहीं होगा; जो दे दिया और जो बाक़ी रहा, उन सब की ज़कात लाज़िम आएगी। दुर्रे मुख़्तार में है:

अरबी इबारत	उर्दू अनुवाद
اذا نوى نذراً او واجباً آخر يصح ويضمن الزكوة۔ 4	जब किसी ने नज़र की नीयत कर ली या किसी और वाजिब की, तो वह सही है, लेकिन ज़कात की ज़मानत देनी होगी। (त)

1 फ़तावा सिराजिया, किताबुज़ ज़कात, मतबअ मुंशी नवल किशोर, लखनऊ, पृ. 25 2 हाशिया अत-तहावी अलल दुर्रे मुख़्तार, किताबुज़ ज़कात, दारुल मा'रिफ़ा, बेरूत, 1/395 3 फ़तावा हिंदिया, किताबुज़ ज़कात, बाबुल अव्वल, नूरानी कुतुब ख़ाना, पेशावर, 1/171 4 दुर्रे मुख़्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबअ मुज्तबाई, दिल्ली, 1/300

पृष्ठ 836 का 95

چوری ہو گئی یا زر و زیور کسی کو قرض و رعایت دے دیا وہ مکر گیا اور گواہ نہیں یا مر گیا اور ترکہ نہیں یا مال کسی فقیر پر دین تھا مدیون محتاج کو ابرا کر دیا کہ یہ بھی حکم ہلاک میں ہے۔

اب صورت اولیٰ یعنی استہلاک میں جس قدر زکوۃ سال تمام پر واجب ہوئی تھی اس میں سے ایک حبہ نہ گھٹے گا یہاں تک کہ اگر سارا مال صرف کر دے اور بالکل نادار محض ہو جائے تاہم قرض زکوۃ بدستور ہے، سراجیہ و نہایہ وغیرہما میں ہے :

عربی عبارت **اردو ترجمہ**

لو استهلك النصاب لا يسقط 1 اگر نصاب کو کسی نے ہلاک کر دیا تو زکوۃ ساقط نہ ہوگی (ت)

نہر الفائق و حاشیہ طحطاوی میں ہے :

عربی عبارت **اردو ترجمہ**

لو وهب النصاب لغنى بعد الوجوب ضمن الواجب وهو اصح الروايتين۔ 2 اگر کسی نے نصاب کسی غنی کو وجوب کے بعد ہبہ کر دیا تو وہ واجب (مقدار) کا ضامن ہو گا اور یہی دونوں روایات میں اصح ہے۔ (ت)

محیط سرخسی و عالمگیریہ میں ہے :

عربی عبارت	اردو ترجمہ
فی روایۃ الجامع یضمن قدر الزکوۃ وھو الاصح۔ 3	روایت الجامع میں ہے کہ مقدار زکوۃ کا ضامن ہو گا اور یہی اصح (ت)

اور صورت ثانیہ یعنی تصدق میں اگر نذر یا کفارے یا کسی اور صدقہ واجبہ کی نیت کی تو بالاتفاق اس کا حکم بھی مثل استہلاک ہے یعنی زکوۃ سے کچھ ساقط نہ ہو گا جو دیا اور باقی رہا سب کی زکوۃ لازم آئیگی۔ در مختار میں ہے :

عربی عبارت	اردو ترجمہ
اذا نوی نذراً او واجباً آخر یصح ویضمن الزکوۃ۔ 4	جب کسی نے نذر کی نیت کر لی یا کسی اور واجب کی تو صحیح ہے مگر زکوۃ کی ضمانت دینا ہوگی۔ (ت)

---

1 فتاوٰی سراجیہ کتاب الزکوۃ مطبع منشی نولکشور لکھنؤ ص ۲۵ 2 حاشیہ الطحطاوی علی الدر المختار کتاب الزکوۃ دار المعرفہ بیروت ۱ / ۳۹۵ 3 فتاوٰی ہندیہ کتاب الزکوۃ الباب الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۱۷۱ 4 در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۳۰۰

Fatawa Razawiya Volume 10

And if the intention was for voluntary charity (tatawwu') or absolute charity and one gives away everything in charity, then by consensus (ittifaq), the obligation of Zakat is waived. It is stated in Al-Hindiya:

"Whoever gives away their entire nisab in charity without the intention of Zakat, the obligation is waived. This is based on Istihsan (juristic preference) as mentioned in Al-Zahidi. There is no difference whether one intended it as voluntary (nafl) charity or had no specific intention present at the time." (T)

And if some portion is given in charity, then according to Imam Muhammad (may Allah have mercy on him), the Zakat for the portion given is waived, and it remains obligatory for the rest. For example, if a year passed over two hundred dirhams and five dirhams of Zakat became due, and then one gave one hundred dirhams for Allah's sake, the Zakat for those hundred dirhams, which is two and a half dirhams, is waived while the rest remains due.

"This is narrated from the master of the school (Imam Azam) (may Allah be pleased with him) as in Al-Zahidi, Al-Inayah, and others. It is also narrated from Imam Abu Yusuf, as quoted in Al-Quhistani from Al-Khazanah. I say (Qultu): Al-Quduri affirmed this in his Mukhtasar, and Al-Sam'ani in Khazanat al-Muftin from Sharh al-Tahawi. When Al-Akmal said it is narrated that the Imam is with Muhammad in this matter, Al-Tahawi quoted from Abu al-Su'ud from his teacher that this is like an explicit statement of its preponderance (rajih). Al-Quhistani and Al-Hindiya quoted from Al-Zahidi that this is more similar (ashbah) to the principles." (T)

1. Fatawa Hindiya, Book of Zakat, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/171.
2. Al-Inayah on the margin of Fath al-Qadir, Book of Zakat, Maktaba Nooria Razavia Sukkur, 2/126.
3. Hashiyah Tahawi on Maraqi al-Falah, Book of Zakat, Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/395.
4. Fatawa Hindiya, Book of Zakat, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/171.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवां

और अगर नफ़्ली (ऐच्छिक) या सामान्य दान की नीयत थी और सब कुछ दान कर दिया तो सर्वसम्मति (इत्तिफ़ाक़) से ज़कात साक़ित (माफ़) हो गई। हिंदिया में है:

"जिसने अपने पूरे निसाब (न्यूनतम संपत्ति) को दान कर दिया और ज़कात की नीयत नहीं की, तो उससे फ़र्ज़ साक़ित हो जाएगा और यह इस्तिहसान (शरिया के सिद्धांतों के अनुकूल वरीयता) है जैसा कि ज़ाहेदी में है। इसमें कोई फ़र्क़ नहीं कि उसने नफ़्ली दान की नीयत की या ज़हन नीयत से खाली था।" (त)

और अगर कुछ हिस्सा दान किया तो इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैह) के नज़दीक जितना दान किया उसकी ज़कात साक़ित और बाक़ी की लाज़िम है। उदाहरण के लिए, दो सौ दिरहम पर एक साल गुज़र गया और ज़कात के पाँच दिरहम वाजिब हुए, अब उसने सौ दिरहम अल्लाह की राह में दे दिए तो उन सौ की ज़कात यानी ढाई दिरहम साक़ित हो गई, बाक़ी दीन (ऋण) रहे।

"और यही मज़हब के स्वामी (इमाम-ए-आज़म) रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है जैसा कि ज़ाहेदी और इनाया वग़ैरह में है। इमाम अबू यूसुफ़ से भी यही मरवी है, जैसा कि क़ुहिस्तानी ने ख़ज़ाना से नक़ल किया है। मैं कहता हूँ: इसी पर क़ुदूरी ने मुख़्तसर में, समआनी ने ख़ज़ानतुल मुफ़्तीन में शरह तह़ावी से ज़ज़्म (पुष्टि) किया है। जब अकमल ने कहा कि रिवायत है कि इमाम साहब इस मसले में इमाम मुहम्मद के साथ हैं, तह़ावी ने अबुल सऊद से उन्होंने अपने शैख़ से नक़ल किया कि यह राजह (प्रबल) होने पर तस़रीह (स्पष्ट व्याख्या) की तरह है। क़ुहिस्तानी और हिंदिया में ज़ाहेदी से यूँ नक़ल किया कि यही अशबह (नियमों के अधिक निकट) है।" (त)

1. फ़तावा हिंदिया, किताबुज़ ज़कात, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 1/171.
2. अल-इनाया अला हामिश फ़तुल क़दीर, किताबुज़ ज़कात, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/126.
3. हाशिया तह़ावी अला मराक़िल फ़लाह़, किताबुज़ ज़कात, दारुल मआरिफ़त बेरूत, 1/395.
4. फ़तावा हिंदिया, किताबुज़ ज़कात, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 1/171.

पृष्ठ 96 / 836

اور اگر تطوع یا مطلق تصدق کی نیت تھی اور سب تصدق کردے تو بالاتفاق زکوۃ ساقط ہوگئی۔

ہندیہ میں ہے: من تصدّق بجمیع نصابه ولا ینوی الزکوة سقط فرضها عنه وهذا استحسان کذا في الزاهدي ولا فرق بین ان ینوی النفل او لم تحضره النیّة۔ 1 جس نے تمام مال صدقہ کردیا اور زکوۃ کی نیت نہ کی تو اس سے فرض ساقط ہوجائے گا اور یہ استحسان ہے جیسا کہ زاہدی میں ہے اور اس میں کوئی فرق نہیں کہ اس نے صدقہ نفلی کی نیت کی یاد ہن نیت سے خالی تھا۔ (ت)

اور اگر بعض تصدق کیے تو امام محمد رحمۃ اللہ تعالٰی کے نزدیک جس قدر صدقہ کیا اس کی زکوۃ ساقط اور باقی کی لازم، مثلاً دو سو درہم پر حولان حول ہوگیا اور زکوۃ کے پانچ درہم واجب ہوئے، اب اس نے سو درہم اللہ دے دیے تو ان سو کی زکوۃ یعنی ڈھائی درہم ساقط ہوگئی دین رہے، وهو روایة عن صاحب المذهب رضي الله تعالی عنه کما في الزاهدي والعنایة وغیرهما وعن الامام ابي یوسف ایضاً کما في القهستاني عن الخزانة - قلت وبه جزم القدوري في مختصره والسمعاني في خزانة المفتین عن شرح الطحطاوي ولما قال الاکمل روی ان الامام مع محمد في هذه المسئلة 2 قال الطحطاوي عن ابي السعود عن شیخه وهذا کالتصریح بأ رجحیته 3 اه وقد نص في القهستاني والهندیة اثرین عن الزاهدي انه الاشبه۔ 4 اور یہی صاحب مذہب (امام اعظم) رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت ہے جیسا کہ زاہدی اور عنایہ وغیرہ میں ہے اور امام ابو یوسف سے بھی یہی مروی ہے، جیسا کہ قہستانی نے خزانہ سے نقل کیا ہے۔ قلت (میں کہتا ہوں) اسی پر قدوری نے مختصر میں، سمعانی نے خزانہ المفتین میں شرح طحطاوی سے جزم کیا ہے، اکمل نے کہا کہ امام صاحب اس مسئلہ میں امام محمد کے ساتھ ہیں، طحطاوی نے ابوالسعود سے انہوں نے اپنے شیخ سے نقل کیا کہ یہ راجح

ہونے پر تصریح کی طرح ہے اھ قہستانی اور ہندیہ میں زاہدی سے یوں نقل کیا کہ یہی اشبہ ہے (ت)

1 فتاوی ہندیہ کتاب الزکوۃ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۱۷۱ 2 العنایۃ علی ھامش فتح القدیر کتاب الزکوۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/۱۲۶ 3 حاشیہ طحطاوی علی مراقی الفلاح کتاب الزکوۃ دارالمعرفۃ بیروت ۱/۳۹۵ 4 فتاوی ہندیہ کتاب الزکوۃ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۱۷۱

However, according to Imam Abu Yusuf (may Allah Almighty have mercy on him), donating a part [of the wealth] is absolutely like consumption [of wealth]; regardless of the intention, it will not reduce anything from the original Zakat. Thus, in the mentioned case, even if one gives a hundred rupees in charity, the five dirhams of Zakat will remain obligatory as before. This school of thought is stronger, more accepted, and worthy of acceptance.

[Right Column - Urdu Translation/Explanation]: I say: Most primary texts (Mutun) have relied on this, such as Wiqayah, Nuqayah, Kanz, Islaah, Multaqa, Tanwir, etc., to the extent that the majority did not even mention any disagreement regarding it. The commentaries (Shuruh) have also maintained their position, such as Dhakhirat al-Uqba, Barjandi, Tabyin al-Haqa'iq, Idah, Majma' al-Anhur, Durr al-Mukhtar, etc. Qadi Khan and Ibrahim al-Halabi gave it precedence in their primary texts, and both of them only give precedence to the clearest, most well-known, and most correct opinion, as they explicitly stated in the prefaces of their books. It was also given precedence in al-Khulasah, and it is well-established that giving precedence indicates selection as the preferred opinion (Mukhtar), as stated in the chapter on partnership in Inayah, Nahr, and Durr al-Mukhtar. In al-Hidayah, the evidence for this opinion was mentioned last, and they only mention the evidence for the preferred opinion last so that it serves as an answer to the evidence of what preceded it. Al-Muhaqqiq 'ala al-Itlaq [Ibn al-Humam] also implicitly affirmed this in Fath al-Qadir. Similarly, al-Zayla'i in al-Tabyin mentioned the evidence for both opinions and strengthened the evidence of Imam Abu Yusuf while refuting the evidence of Imam Muhammad. In al-Idah, al-Multaqa, and Durr al-Mukhtar, the disagreement is attributed to Imam Muhammad, which is a way of weakening it [his opinion], as is known from the linguistic conventions of the jurists. Imam al-Shami affirmed this position of ad-Durr and strengthened it with some of what we have mentioned here, and this is the practice of al-Multaqa and...

[Left Column - Arabic Text]: I say: Most of the primary texts, such as al-Wiqayah, al-Nuqayah, al-Kanz, al-Islaah, al-Multaqa, al-Tanwir, and others, have relied [on this position], to the point that many of them did not mention any disagreement with it at all. The commentaries (al-Shuruh) have affirmed this, such as Dhakhirat al-Uqba, al-Barjandi, Tabyin al-Haqa'iq, al-Idah, Majma' al-Anhur, al-Durr al-Mukhtar, and others. Qadi Khan and Ibrahim al-Halabi gave it precedence in their primary texts (Matn), and both of them only give precedence to the clearest (al-Azhar), the most well-

known (al-Ashhar), and the most preferred (al-Arjah) [opinion], as they both stated in the prefaces (Khutbah) of their two books. It was also given precedence in al-Khulasah. It is known that giving precedence indicates preference (al-Ikhtiyar), as in the Book of Partnership in al-Inayah, al-Nahr, and al-Durr al-Mukhtar. The evidence for it was delayed in al-Hidayah, and one does not delay the evidence unless it is for what is the preferred (Mukhtar) position in their view, so that it may be a reply to the evidence of what preceded it. Al-Muhaqqiq in al-Fath affirmed this through an indication. Similarly, al-Zayla'i mentioned the evidence for both opinions in al-Tabyin, strengthened the evidence of Abu Yusuf, and replied to the evidence of Muhammad. In al-Idah, al-Multaqa, and al-Durr al-Mukhtar, the disagreement was attributed to Muhammad, which is a weakening of him [his position], as is known from their conventions. Al-Shami affirmed this position of al-Durr and strengthened it with some of what we have mentioned here, and this is the practice of al-Multaqa and...

मगर इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाह अलैहि) के नज़दीक कुछ का सदक़ा (दान) करना मुतलक़न (पूरी तरह से) माल के इस्तेमाल या उपभोग (इसतिहलाक) की तरह है; कि चाहे किसी भी नीयत से हो, मूल रूप से ज़कात में से कुछ भी कम नहीं होगा। तो ज़िक्र की गई स्थिति में, अगर कोई सौ रुपये खैरात (दान) कर दे, तो भी ज़कात के पाँच दिरहम पहले की तरह वाजिब (अनिवार्य) रहेंगे। यह संप्रदाय (मज़हब) अधिक मज़बूत, लोकप्रिय और स्वीकार करने के योग्य है।

[दायां कॉलम - उर्दू अनुवाद/व्याख्या]: मैं कहता हूँ: अधिकांश मूल ग्रंथों (मुतून) ने इसी पर भरोसा किया है, जैसे कि वक़ाया, नुक़ाया, कन्ज़, इस्लाह, मुल्तक़ा, तनवीर आदि, यहाँ तक कि बहुसंख्यक ने इसमें किसी प्रकार के मतभेद का उल्लेख तक नहीं किया है। और टीकाओं (शुरूह) ने भी उन्हीं के कथन को कायम रखा है, जैसे कि ज़खीरतुल उक़्बा, बर्जन्डी, तबयीनुल हक़ाएक़, ईज़ाह, मजमउल अनहुर और दुर्रे मुख़्तार आदि। क़ाज़ी खान और इब्राहिम हलबी ने अपने मूल पाठ में इसे प्राथमिकता दी है, और वे दोनों महानुभाव केवल सबसे स्पष्ट, प्रसिद्ध और सबसे सही (अर्ज़ह) कथन को ही प्राथमिकता देते हैं, जैसा कि उन्होंने अपनी पुस्तकों की प्रस्तावना (ख़ुत्बा) में स्पष्ट किया है। और 'अल-ख़ुलासा' में भी इसे प्राथमिकता दी गई है और यह माना जाता है कि प्राथमिकता देना इसे 'मुख़्तार' (पसंदीदा) होने पर दर्शाता है, जैसा कि इनाया, नहर और दुर्रे मुख़्तार की किताबुश शिरकत में है। और 'हिदाया' में इस कथन के प्रमाण को अंत में बताया गया है, और वे मुख़्तार कथन के प्रमाण को अंत में ही ज़िक्र करते हैं ताकि वह पहले वाले प्रमाण का उत्तर बन सके। मुहाक्क़िक़ अलल इतलाक़ (इब्न अल-हुमाम) ने भी 'फ़तह अल-क़दीर' में इसी की ओर संकेत करते हुए इसे पुष्ट किया है। इसी तरह ज़ैली ने 'तबीयन' में दोनों कथनों के प्रमाण दिए और इमाम अबू यूसुफ़ के प्रमाण को मज़बूत करते हुए इमाम मुहम्मद के प्रमाण का खंडन किया। 'ईज़ाह', 'मुल्तक़ा' और 'दुर्रे मुख़्तार' में कहा गया है कि इसमें इमाम मुहम्मद का मतभेद है, और यह उस कथन के कमज़ोर होने का प्रमाण है जैसा कि फ़क़ीहों (धर्मशास्त्रियों) की शब्दावली से स्पष्ट है। इमाम शामी ने 'दुर' के कथन को इसी तरह पुष्ट रखा और कुछ...

[बायां कॉलम - अरबी पाठ]: अक़ूलु (मैं कहता हूँ): अधिकांश मूल ग्रंथों, जैसे अल-वक़ाया, अल-नुक़ाया, अल-कन्ज़, अल-इस्लाह, अल-मुल्तक़ा, अल-तनवीर और अन्य ने [इस स्थिति पर] भरोसा किया है, यहाँ तक कि उनमें से कई ने इसके साथ किसी भी मतभेद का ज़िक्र ही नहीं किया। टीकाओं (अल-शुरूह) ने इसकी पुष्टि की है, जैसे ज़खीरतुल उक़्बा, अल-बर्जन्डी, तबयीनुल हक़ाएक़,

अल-ईज़ाह, मजमउल अनहुर, अल-दुर्रुल मुख़्तार और अन्य। क़ाज़ी खान और इब्राहिम हलबी ने इसे अपने मूल पाठ (मतन) में प्राथमिकता दी, और वे दोनों केवल सबसे स्पष्ट (अल-अज़हर), सबसे प्रसिद्ध (अल-अशहर) और सबसे पसंदीदा (अल-अर्ज़ह) [राय] को ही प्राथमिकता देते हैं, जैसा कि उन दोनों ने अपनी दो पुस्तकों की प्रस्तावना (ख़ुत्बा) में बताया है। इसे अल-ख़ुलासा में भी प्राथमिकता दी गई थी। यह सर्वविदित है कि प्राथमिकता देना पसंद (अल-इख़्तियार) को इंगित करता है, जैसा कि अल-इनाया, अल-नहर और अल-दुर्रुल मुख़्तार की साझेदारी की पुस्तक (किताबुश शिरकत) में है। अल-हिदाया में इसके प्रमाण को देरी से दिया गया था, और कोई प्रमाण को तब तक देरी से नहीं देता जब तक कि वह उनकी दृष्टि में पसंदीदा (मुख़्तार) स्थिति न हो, ताकि यह पहले आए प्रमाणों का उत्तर हो सके। अल-मुहाक्किक़ ने अल-फ़तह में एक संकेत के माध्यम से इसकी पुष्टि की। इसी तरह, अल-ज़ैली ने अल-तबीयन में दोनों मतों के प्रमाणों का उल्लेख किया, अबू यूसुफ़ के प्रमाण को मज़बूत किया, और मुहम्मद के प्रमाण का उत्तर दिया। अल-ईज़ाह, अल-मुल्तक़ा और अल-दुर्रुल मुख़्तार में, मतभेद का श्रेय मुहम्मद को दिया गया था, जो उन्हें [उनकी स्थिति को] कमज़ोर करना है, जैसा कि उनके रीति-रिवाजों से ज्ञात है। अल-शामी ने अल-दुर्र की इस स्थिति की पुष्टि की और यहाँ हमारे द्वारा बताए गए कुछ तथ्यों से इसे और मज़बूत किया, और यह अल-मुल्तक़ा का अभ्यास है और...

पृष्ठ 836 का 97

مگر امام ابو یوسف رحمہ اللہ تعالیٰ کے نزدیک بعض کا تصدق مطلقاً مثل استہلاک ہے کہ کسی نیت سے ہو اصلاً زکوٰۃ سے کچھ نہ گھٹے گا ، تو صورت مذکورہ میں اگر چہ سو روپیہ خیرات کر دے زکوٰۃ کے پانچ درہم بدستور واجب رہے، یہ مذہب زیادہ قوی و مقبول و شایان قبول ہے۔

[دایاں کالم - اردو ترجمہ و تشریح]: اقول: اکثر متون نے اسی پر اعتماد کیا ہے مثلاً وقایہ، نقایہ، کنز، اصلاح، ملتقی، تنویر وغیرہ، حتیٰ کہ اکثریت نے اس میں کسی قسم کے اختلاف کا تذکرہ تک نہیں کیا اور شروحات نے بھی انھیں کے قول کو ثابت رکھا ہے مثلاً ذخیرۃ العقبیٰ، برجندی، تبیین الحقائق، ایضاح، مجمع الانہر اور در مختار وغیرہ۔ قاضی خان اور ابراہیم حلبی نے اپنے متن میں اسے مقدم رکھا ہے اور وہ دونوں حضرات اظہر، اشہر اور ارجح قول کو ہی مقدم ذکر کرتے ہیں جیسا کہ انھوں نے اپنی کتب کے خطبہ میں اس پر تصریح کی ہے اور خلاصہ میں بھی اسے مقدم رکھا اور یہ مسلمہ ہے کہ تقدیم مختار ہونے پر دال ہے جیسا کہ عنایہ، نہر اور در مختار کی کتاب الشرکت میں ہے، اور ہدایہ میں اس قول کی دلیل کو مؤخر بیان کیا ہے اور وہ مختار قول کی دلیل ہی کو مؤخر ذکر کرتے ہیں تاکہ ما قبل دلیل کا جواب بن سکے۔ محقق علی الاطلاق نے بھی فتح القدیر میں اسی کو اشارۃً ثابت رکھا ہے، اسی طرح زیلعی نے تبیین میں دونوں اقوال کی دلیل بیان کی اور امام ابو یوسف کی دلیل کو مضبوط کرتے ہوئے امام محمد کی دلیل کا رد کیا، ایضاح، ملتقی اور در مختار میں کہا کہ اس میں امام محمد کو اختلاف ہے اور وہ اس قول کے ضعیف ہونے پر دال ہے جیسا کہ محاورات فقہاء سے واضح ہے، امام شامی نے در کے قول کو اسی طرح ثابت رکھا اور بعض

[بایاں کالم - عربی متن]: اقول: فقد اعتمد عامۃ المتون کالوقایۃ، والنقایۃ، والکنز، والصلاح، والملتقی، والتنویر و غیرہا حتی لم یتعرض کثیر منہم لخلافہ اصلا وا قرتہم علیہ الشروح کذخیرۃ العقبیٰ والبر جندی و تبیین الحقائق و الایضاح و مجمع الانہر و الدر المختار و غیرہا و قدمہ قاضی خان وابراھیم الحلبی فی متنہ وبما لایقدمان الا الاظہر الا شہر الارجح کما نصا علیہ في خطب الکتابین وکذا قدمہ في الخلاصۃ ومعلوم ان التقدیم یشعر بالاختیار کما فی کتاب الشرکۃ من العنایۃ والنہر والدر المختار واخر دلیلہ فی الہدایہ وھو لا یؤخر الدلیل ما ھو المختار عندہ لیکون جواباً من دلیل ما تقدم واقرہ علی ھذا اشارۃ المحقق فی الفتح وکذا ذکر الزیلعی فی التبیین دلیل القولین وشید دلیل ابی یوسف واجاب عن دلیل محمد ونسب فی الایضاح والملتقی والدرالمختار الخلاف لمحمد وھو تضعیف لہ کما عرف من محاوراتھم واقر الدر علی ذلك الشامی وقواہ ببعض ما ذکرنا ھنا وھو صنیع الملتقی و

صفحہ 836 کا 97

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Arabic Text Section] The precedence of Qazi Khan and the postponement of al-Hidayah has been preferred because of this: firstly, due to the consensus of the majority of the primary texts (mutun) on it; and secondly, because of the majesty of the status of those who relied upon it and affirmed it, like al-Imam Faqih al-Nafs, about whom they said that one should not deviate from his correction; and the Imam, the researcher (al-muhaqqiq), the author of al-Hidayah; and their contemporary, the Imam, author of al-Khulasa; and al-Imam al-Nasafi, author of al-Kanz. So, al-Imam Burhan al-Din Mahmud and his grandson al-Imam Sadr al-Shariah, and the Imam, the researcher when mentioned without restriction, and al-Imam al-Fakhr al-Zayla'i, and the scholar, al-Imam Ibn Kamal al-Wazir - they are all among the masters of independent reasoning (ijtihad) in a certain way, as acknowledged by reliable scholars. This is not the case for those we counted in the first view, except for al-Quduri and the commentator of al-Tahawi. As for al-Sam'ani, I have not seen anyone who acknowledged him for that. And this Abu al-Sa'ud is not the Imam, the researcher, the sign of existence, the seal of the mujtahids, Muhammad Effendi, the Mufti of the Ottoman lands, for he preceded the author of al-Bahr, who preceded al-Shurunbulali, who preceded this Sayyid Abu al-Sa'ud who commented on the books of al-Shurunbulali with annotations and notes. Therefore, the correction of these great figures, even if it were mandatory, cannot be opposed by an injured and discarded saying that another is more similar. Furthermore, the abundance among them and those who followed them from the great later scholars, as has become known, demands its preference, for practice is based on it...

[Urdu Text Section] Our aforementioned arguments have strengthened this, and it is the way of the Mufti, giving precedence to Qazi Khan and delaying Hidayah; therefore, this opinion will prevail. Firstly, because most primary texts (mutun) agree on it. Secondly, because the greatest personalities have clearly stated it and kept it established, for example, Imam Faqih al-Nafs, about whom jurists have explicitly stated that his correction cannot be deviated from. Imam Muhaqqiq, the author of Hidayah, and his contemporaries Imam Sahib-e-Khulasa and Imam Nasafi, the author of al-Kanz, then Imam Burhan al-Din Mahmud and his grandson Imam Sadr al-Shariah, Imam Muhaqqiq alal-Itlaq, Imam Fakhr Zayla'i, and Allama Ibn Kamal al-Wazir - all these are Imams of Ijtihad in certain aspects, as acknowledged by reliable scholars. And the situation of those we counted in the first view is not like this, except for Quduri and the commentator of Tahawi. As for Sam'ani, I have not seen anyone

acknowledging Ijtihad for him. And by this Abu Sa'ud, Imam Muhaqqiq Allamatul-Wujood Khatamatul-Mujtahideen Muhammad Effendi, the Mufti of the Roman lands (Ottoman Empire), is not meant, because he lived before the author of al-Bahr, and the author of al-Bahr preceded Shurunbulali, and Shurunbulali preceded Sayyid Abu Sa'ud, who wrote annotations and commentaries on the books of Shurunbulali. Therefore, the correction by these great scholars, even if it were mandatory, cannot be countered by a weakened and discarded saying claiming that something else is more suitable. Furthermore, the abundance of these scholars and their followers among the great later scholars, as has become known, also demands its preference, because practice is based on it...

फतावा रज़विया, जिल्द 10

[अरबी पाठ अनुभाग] काजी खान की प्राथमिकता और अल-हिदाया के विलंब को इसके कारण तरजीह दी गई है: पहला, इस पर अधिकांश मूल ग्रंथों (मुतून) की आम सहमति के कारण; और दूसरा, उन लोगों की स्थिति की भव्यता के कारण जिन्होंने इस पर भरोसा किया और इसे स्वीकार किया, जैसे अल-इमाम फकीह अन-नफ्स, जिनके बारे में उन्होंने कहा कि उनके सुधार (तस्हीह) से विचलित नहीं होना चाहिए; और इमाम, शोधकर्ता (अल-मुहाक़्क़िक़), अल-हिदाया के लेखक; और उनके समकालीन, इमाम, अल-खुलासा के लेखक; और अल-इमाम अल-नसफी, अल-कंज के लेखक। अत; अल-इमाम बुरहानुद्दीन महमूद और उनके पोते अल-इमाम सद्रुश-शरीअह, और इमाम, शोधकर्ता (जब बिना किसी प्रतिबंध के उल्लेख किया जाए), और अल-इमाम अल-फख्र अल-ज़ैलाई, और विद्वान, अल-इमाम इब्न कमाल अल-वज़ीर - ये सभी एक तरह से स्वतंत्र तर्क(इज्तिहाद) के स्वामी हैं, जैसा कि विश्वसनीय विद्वानों द्वारा स्वीकार किया गया है। यह उन लोगों के मामले में नहीं है जिन्हें हमने पहली राय में गिना था, सिवाय अल-कुदूरी और अल-तहावी के व्याख्याकार के। जहाँ तक अल-समानी का सवाल है, मैंने किसी को उनके लिए इसे स्वीकार करते हुए नहीं देखा। और यह अबू अल-सऊद वह इमाम, शोधकर्ता, अस्तित्व का चिन्ह, मुजतहिदों की मोहर, मुहम्मद अफ़ंदी, रोमन क्षेत्रों (तुर्क साम्राज्य) के मुफ़्ती नहीं हैं, क्योंकि वे अल-बहर के लेखक से पहले थे, जो अल-शुरुनबुलाली से पहले थे, जो इस सैय्यद अबू अल-सऊद से पहले थे जिन्होंने अल-शुरुनबुलाली की किताबों पर हाशिये और टिप्पणियाँ लिखीं। इसलिए, इन महान हस्तियों का सुधार, भले ही वह अनिवार्य ही क्यों न हो, किसी घायल और त्याग दी गई बात से मुकाबला नहीं कर सकता कि दूसरा अधिक समान है। इसके अलावा, उनके बीच और बाद के महान विद्वानों के अनुयायियों की बहुतायत, जैसा कि ज्ञात हो चुका है, इसे तरजीह देने की माँग करती है, क्योंकि अमल इसी पर आधारित है...

[उर्दू पाठ अनुभाग] हमारे उपर्युक्त तर्कों ने इसे पुख्ता किया है और यह मुफ़्ती का तरीका है, काज़ी ख़ान को प्राथमिकता देना और हिदाया में देरी करना, इसलिए इस राय को तरजीह दी जाएगी। पहले तो इसलिए क्योंकि अधिकांश मूल पाठ (मुतून) इसी पर हैं। दूसरे, क्योंकि महानतम हस्तियों ने इसे स्पष्ट किया है और इसे स्थापित रखा है, जैसे कि इमाम फकीह उन-नफ़्स, जिनके बारे में फकीहों ने स्पष्ट किया है कि उनकी तस्हीह (सुधार/पुष्टि) से विचलन नहीं किया जा सकता। इमाम मुहाक़्क़िक़ साहिब-ए-हिदाया और उनके समकालीन इमाम साहिब-ए-खुलासा और इमाम नसफ़ी साहिब-ए-

कन्ज़, फिर इमाम बुरहानुद्दीन महमूद और उनके पोते इमाम सद्रुश-शरीअह, इमाम मुहाक़्क़िक़ अलल-इतलाक़, इमाम फ़ख्र ज़ैलाई और अल्लामा इब्न कमाल अल-वज़ीर और ये सभी कुछ पहलुओं में इज्तिहाद के इमाम हैं, जिसे विश्वसनीय विद्वानों ने स्वीकार किया है। और पहली राय में हमारे गिनती के लोगों का मामला ऐसा नहीं है सिवाय क़ुद्दूरी और शारह-ए-तहावी के। जहाँ तक समानी की बात है, मैंने किसी को उनके लिए इज्तिहाद स्वीकार करते हुए नहीं देखा। और इस अबू सऊद से इमाम मुहाक़्क़िक़ अल्लामतुल वजूद खातमतुल मुजतहिदीन मुहम्मद अफ़ंदी मुफ़्ती दियार-ए-रूम मुराद नहीं हैं क्योंकि वे साहिब-ए-बहर से पहले गुज़रे हैं और साहिब-ए-बहर शरुनबुलाली से पहले हैं और शरुनबुलाली सैय्यद अबू सऊद से पहले हैं जिन्होंने शरुनबुलाली की किताबों पर हाशिये और टिप्पणियाँ लिखी हैं। अतः इन महान विद्वानों की तस्हीह, चाहे वह प्रतिबद्धता के रूप में ही क्यों न हो, किसी घायल और त्याग दी गई बात से मुकाबला नहीं कर सकती कि दूसरा अधिक मिलता-जुलता है। फिर इन विद्वानों और बाद के महान विद्वानों के अनुयायियों की बहुतायत, जैसा कि ज्ञात हो चुका है, इसे तरजीह देने की माँग करती है, क्योंकि अमल इसी पर है...

पेज 98 का 836

فتاوی رضویہ، جلد دہم

[عربی متن] تقدیم قاضی خان وتاخیر الهداية فقد ترجح هذا اولا بتظافر عامة المتون عليه وثانيا: بجلالة شان من اعتمد وه واقروه كالامام فقيه النفس الذى قالوا فيه انه لا يعدل عن تصحيحه والامام المحقق صاحب الهداية وعصريهما الامام صاحب الخلاصة و الامام النسفي صاحب الكنز فالامام برهان الدين محمود وحفيده الامام صدر الشريعة والامام المحقق حيث اطلق والامام الفخر الزيلعى والعلامة الامام ابن كمال الوزير وهم جميعا من ائمة الاجتهاد بوجه اقر لهم بذلك علماء معتمدون ولا كذلك من عددنا فى القول الاول الا القدورى و شارح الطحاوى اما السمعانى فلم ارمن اعترف له بذلك وابوا لسعود هذا ليس هو الامام المحقق علامة الوجود خاتمة المجتهدين محمد افندى مفتى الديار الرومية فانه متقدم على صاحب البحر المقدم على الشرنبلالى السابق على السيد ابى السعود هذا المتكلم على كتب الشرنبلالى تحشياً و تعليقاً فتصحيح هؤلاء الجلة ولو التزاماً لا يقاومه قول المجروح المطروح ان غيره اشبه ثم ما فيهم وفى من تبعهم من اعاظم المتاخرين من الكثرة كما عملت يقضى بترجيحه فانما العمل

[اردو متن] ہمارے مذکورہ دلائل سے اس کو تقویت دی اور وہ مفتی کا طریقہ ہے، تقدیم قاضی خان اور تاخیر ہدایہ ہے، لہذا یہ قول ترجیح پائے گا۔ اولاً: تو اس لئے کہ اس پر اکثر متون ہیں۔ ثانیاً: اس پر بزرگ ترین شخصیات نے اس کی تصریح کی اور اسے ثابت رکھا ہے، مثلاً امام فقیہ النفس جن کے بارے فقہاء نے تصریح کی ہے کہ ان کی تصحیح سے عدول نہیں کیا جاسکتا، امام محقق صاحب ہدایہ اور ان کے معاصرین امام صاحب خلاصہ اور امام نسفی صاحب الکنز پھر امام برہان الدین محمود اور ان کے پوتے امام صدر الشریعہ، امام محقق علی الاطلاق، امام فخر زیلعی اور علامہ ابن کمال الوزیر اور یہ تمام باوجہ ائمہ اجتہاد ہیں، جس کا اقرار کرنے والے علمائے

معتمدین ہیں، اور قولِ اوّل میں ہمارے شمار کا معاملہ اس طرح نہیں ماسوائے قدوری اور شارح طحاوی کے۔ رہا معاملہ سمعانی کا، تو میں ان کیلئے اجتہاد کا اعتراف کرتے ہوئے کسی کو نہیں دیکھا اور ابو سعود سے امام محقق علامۃ الوجود خاتمۃ المجتہدین محمد آفندی مفتی دیارِ روم مراد نہیں کیونکہ وہ صاحبِ بحر سے پہلے گزرے ہیں اور صاحبِ بحر شرنبلالی سے مقدم اور شرنبلالی سید ابو السعود سے مقدم ہیں جنہوں نے کتبِ شرنبلالی پر حواشی و تعلیقات تحریر کی ہیں، پس ان عظیم علماء کی تصحیح اگر چہ التزاماً ہو کا مقابلہ کوئی مجروح و مطروح قول نہیں کرسکتا اس بات میں کہ اس کا غیر مختار ہے، پھر ان علماء اور ان کے تبعین علماء متاخرین کی کثرت جیسا کہ معلوم ہوچکا ہے بھی ترجیح کا تقاضا کرتی، کیونکہ عمل اس پر

Fatawa Razawiyya, Volume Ten

[Arabic Box]: ...based on what the majority adheres to, as in 'al-Uqud al-Durriyah' and others. [Urdu Box]: ...which the majority follows, as in 'al-Uqud al-Durriyah' and others.

[Arabic Box]: Thirdly: Due to the strength of its evidence, as is apparent from reviewing 'al-Tabyin' and others. [Urdu Box]: Thirdly: Because its evidence is strong, as becomes clear from the study of 'al-Tabyin' and others.

[Arabic Box]: Fourthly: If equality between the two opinions is assumed from the aspect of preference, then this one is preferred because it is the opinion of Imam Abu Yusuf, as is known in 'Rasm al-Mufti'. [Urdu Box]: Fourthly: If we assume equality between both opinions due to the aspect of preference, even then this opinion will be preferred because it is the opinion of Imam Abu Yusuf, as has become known in 'Rasm al-Mufti'.

[Arabic Box]: Fifthly: It is the more cautious approach, for in it is the certain fulfillment of the obligation. [Urdu Box]: Fifthly: The most cautious approach is this, because in this case one can certainly be relieved of the responsibility.

[Arabic Box]: Sixthly: It is the most beneficial for the poor, and it is known that the scholars have paid great attention to that in Zakat and Endowments (Awqaf). [Urdu Box]: Sixthly: This is more beneficial for the poor, and it is known that the scholars pay a lot of attention to this in Zakat and Awqaf.

[Arabic Box]: This is what has appeared to me, so look into what you see fit. [Urdu Box]: This much has become clear to me, what is your opinion?

[Arabic Box]: And Allah Almighty knows best. [Urdu Box]: And Allah Almighty knows best. (T)

As for the third case, i.e., destruction (of wealth): In this, by consensus, no matter how little or how much is destroyed, Zakat will be waived according to the four proportional calculations, and whatever remains, even if it is less than the Niṣāb (minimum taxable amount), the Zakat for that portion remains due. For example, a person owned 220 Sharia Dirhams; after the passing of a year, 5 Dirhams became payable. They had not yet been given when 40 Dirhams were destroyed. So now, half a Dirham will be waived and 4 will be due, because 40 were 'Afw' (exempt excess), for which there was no corresponding Zakat; they just went to waste. Only 20 were

reduced from the Niṣāb, which is one-tenth of the Niṣāb, so a tenth of the Zakat, i.e., half a Dirham, will be waived and the rest remains. Thus, it was seen that 20 were destroyed from the Niṣāb, their (1/20) is half a Dirham, so that much was waived. Or consider it like this, that 180 remain, their (1/40) is four and a half; that much remained due. The result of all three methods is the same. And if in the mentioned case 21 Dirhams were lost, then only one-twentieth of a Dirham from the Zakat, which is one-two hundredth (1/200) of the total due, will be waived, and the rest (19/21) remains due because only one dirham was lost from the Niṣāb. This was 1/200th of the Niṣāb. And if 219 were destroyed, then only (1/40) i.e. 0.50 of a Dirham will be payable, and the rest waived, for according to this calculation the portion of Niṣāb remains, and so on. In 'Durr al-Mukhtar' it is said:

[Arabic Box]: Nothing is due on the 'Afw' (excess above Niṣāb) nor on what is destroyed after its obligation, as its connection is with the asset itself, not the responsibility. [Urdu Box]: Nothing is mandatory on 'Afw'; there is no Zakat on wealth destroyed after Zakat becomes obligatory, because Zakat was related to that wealth itself, not to the person's responsibility.

[Arabic Box]: And if a part of it is destroyed, its share is waived and it is spent... [Urdu Box]: And if a little is destroyed...

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

[अरबी पाठ बॉक्स]: ...उस पर आधारित जिस पर बहुमत है, जैसा कि 'अल-उक़ूद अद-दुर्रियाह' आदि में है। [उर्दू पाठ बॉक्स]: ...जिस पर बहुमत है जैसा कि 'अक़ूद अद-दुर्रिया' आदि में है।

[अरबी पाठ बॉक्स]: तीसरा: इसके प्रमाण की शक्ति के कारण, जैसा कि 'अत-तबीन' आदि की समीक्षा से स्पष्ट होता है। [उर्दू पाठ बॉक्स]: तीसरा: इसकी दलील मज़बूत होने की वजह से जैसा कि 'तबीन' आदि के अध्ययन से ज़ाहिर होता है।

[अरबी पाठ बॉक्स]: चौथा: यदि वरीयता के पहलू से दोनों कथनों में समानता मान ली जाए, तो इसे प्राथमिकता दी जाएगी क्योंकि यह इमाम अबू यूसुफ का कथन है, जैसा कि 'रस्म अल-मुफ़्ती' में ज्ञात है। [उर्दू पाठ बॉक्स]: चौथा: अगर वरीयता की वजह से दोनों कथनों में समानता मान लें तब भी यही कथन तरजीह पाएगा क्योंकि यह इमाम अबू यूसुफ का कथन है जैसा कि 'रस्म अल-मुफ्ती' में मालूम हो चुका।

[अरबी पाठ बॉक्स]: पांचवां: यह अधिक सावधानी वाला मार्ग है, क्योंकि इसमें जिम्मेदारी से निश्चित रूप से मुक्ति है। [उर्दू पाठ बॉक्स]: पांचवां: अहवत (अधिक सावधानी वाला) यही है क्योंकि इस सूरत में ज़िम्मेदारी से यक़ीनन निकला जा सकता है।

[अरबी पाठ बॉक्स]: छठा: यह गरीबों के लिए सबसे अधिक लाभकारी है, और यह ज्ञात है कि विद्वानों ने ज़कात और वक्फ़ में इस पर बहुत ध्यान दिया है। [उर्दू पाठ बॉक्स]: छठा: यह फ़ुक़्रा (गरीबों) के लिए ज़्यादा फ़ायदेमंद है और यह मालूम है कि उलेमा ज़कात और औक़ाफ़ में इसका बहुत ज़्यादा एहतेमाम करते हैं।

[अरबी पाठ बॉक्स]: यह वह है जो मुझे स्पष्ट हुआ है, तो देखें कि आप क्या देखते हैं। [उर्दू पाठ बॉक्स]: मुझ पर तो यही वाज़ेह हुआ, आपकी क्या राय है?

[अरबी पाठ बॉक्स]: और अल्लाह सर्वशक्तिमान सबसे बेहतर जानता है। [उर्दू पाठ बॉक्स]: अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

रही तीसरी सूरत यानी हलाकत (विनाश), इसमें सर्वसम्मति से, कम या ज़्यादा जितना भी नष्ट हो, चार आनुपातिक गणनाओं के हिसाब से उतनी ज़कात माफ़ हो जाएगी और जितना शेष रहेगा, चाहे वह निसाब (न्यूनतम कर योग्य राशि) से भी कम हो, उतने की ज़कात बकाया रहेगी। उदाहरण के लिए,

कोई 220 शरई दिरहम का मालिक था, एक साल पूरा होने के बाद 5 दिरहम देय हुए। अभी दिए नहीं थे कि 40 दिरहम नष्ट हो गए, तो अब आधा दिरहम माफ़ और 4 देय होंगे, क्योंकि 40 तो 'अफ़्व' (छूट वाली राशि) थे जिनके बदले ज़कात में कुछ नहीं था, वे तो बेकार गए। निसाब में से सिर्फ20 घटे, जो निसाब का दसवां हिस्सा हैं, तो ज़कात का भी दसवां हिस्सा यानी आधा दिरहम माफ़ होगा और बाकी बकाया रहेगा। इस तरह देखा गया कि निसाब से 20 नष्ट हुए हैं, उनका (1/20) आधा दिरहम है, उतना ही माफ़ हो गया। या यूँ मान लें कि एक सौ अस्सी 180 शेष हैं, उनका (1/40) साढ़े चार है, उतना ही देय रहा। तीनों का परिणाम एक ही है। और यदि उक्त स्थिति में 21 दिरहम नष्ट हो जाते, तो ज़कात में से दिरहम का केवल बीसवाँ हिस्सा, जो कुल देय का एक-दो सौवां (1/200) है, माफ़ होगा और शेष (19/21) देय होगा, क्योंकि निसाब से केवल एक दिरहम नष्ट हुआ है, यह निसाब का (1/200) था। और यदि 219 नष्ट हो गए, तो दिरहम का केवल (1/40) 0.50 देना होगा, बाकी माफ़ क्योंकि इसी हिसाब से निसाब का हिस्सा शेष है, और इसी तरह आगे भी। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

[अरबी पाठ बॉक्स]: अफ़्व (छूट) में कुछ नहीं है और न ही उस माल में जो उसके अनिवार्य होने के बाद नष्ट हो गया, क्योंकि इसका संबंध भौतिक संपत्ति से है न कि ज़िम्मेदारी से। [उर्दू पाठ बॉक्स]: अफ़्व में कोई चीज़ लाज़िम नहीं, वजूद-ए-ज़कात के बाद हलाक हो जाने वाले माल पर ज़कात नहीं क्योंकि ज़कात का ताल्लुक़ उस माल से था न कि ज़िम्मे के साथ।

[अरबी पाठ बॉक्स]: और यदि इसका कुछ हिस्सा नष्ट हो जाए, तो उसका हिस्सा माफ़ हो जाता है और उसे खर्च किया जाता है... [उर्दू पाठ बॉक्स]: और अगर थोड़ा हलाक...

فتاوی رضویہ جلد دہم

[عربی باکس]: بما علیه الاکثر کما في العقود الدریة وغیرها، [اردو باکس]: ہوتا ہے جس پر اکثریت ہو جیسا کہ عقود الدریہ وغیرہ میں ہے۔

[عربی باکس]: وثالثا : بقوة دلیله کما یظهر بمراجعة التبیین وغیره [اردو باکس]: ثالثاً : اس کی دلیل قوی ہونے کی وجہ سے جیسا کہ تبیین وغیرہ کے مطالعہ سے ظاہر ہوتا ہے۔

[عربی باکس]: - ورابعا : ان فرض تساوی القولین من جهة الترجیح فیترجح هذا بانه قول ابي یوسف کما عرف ذلك في رسم المفتی ۔ [اردو باکس]: رابعاً : اگر جہتِ ترجیح کی وجہ سے دونوں اقوال میں مساوات فرض کر لیں تب بھی یہی قول ترجیح پاجائے گا کیونکہ یہ امام ابو یوسف کا قول ہے جیسا کہ رسم المفتی میں معلوم ہو چکا۔

[عربی باکس]: وخامسا : بانه الاحوط فان فیه الخروج عن العهدة بیقین، [اردو باکس]: خامساً : احوط یہی ہے کیونکہ اس صورت میں ذمہ داری سے بالیقین نکلا جا سکتا ہے،

[عربی باکس]: و سادسا : بأنه الا نفع للفقراء وقد علم ان للعلماء بذلك اعتناءاً عظیماً في الزکوة والاوقاف [اردو باکس]: سادساً : یہ فقراء کیلئے زیادہ سُود مند ہے اور یہ معلوم ہے کہ علماء زکوٰۃ و اوقاف میں اس کا بہت زیادہ اہتمام کرتے ہیں

[عربی باکس]: هذا ماظهر لي فانظر ماذا تری، [اردو باکس]: مجھ پر تو یہی واضح ہوا ، آپ کی کیا رائے ہے،

[عربی باکس]: واللہ تعالی اعلم۔ [اردو باکس]: واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

رہی صورتِ ثالثہ یعنی ہلاک ، اس میں بالاتفاق کم یا بہت جس قدر تلف ہو بحسابِ اربعہ متناسبہ اُتنے کی زکوٰۃ ساقط ہو گی اور جتنا باقی رہے اگرچہ نصاب سے بھی کم ، اُتنے کی زکوٰۃ باقی، مثلاً دوسو بیس ۲۲۰ درہم شرعی کا مالک تھا حولانِ حول کے بعد ۵ درہم واجب الادا ہوئے ، ابھی نہ دئے تھے کہ ۴۰ درہم ہلاک ہو گئے تو اب نیم درہم ساقط اور ۴ واجب کہ ۴۰ تو عفو تھے جن کے مقابل زکوٰۃ سے کُچھ نہ تھا وہ تو بیکار گئے ، نصاب میں سے صرف بیس ۲۰ گھٹے ، وہ نصاب کی عشر ہیں تو زکوٰۃ کا بھی دسواں حصہ یعنی آدھا درہم ساقط ہوگا باقی باقی، یوں دیکھ لیا کہ نصاب سے ۲۰ ہلاک ہوئے ہیں ان کا (۱/۲۰) نیم درہم ہے اُسی قدر ساقط ہو گیا ، یا یوں خیال کر لیا کہ ایک سواستی ۱۸۰ باقی ہیں ان کا (۱/۴۰) ساڑھے چار ہیں اسی قدر واجب رہا ، تینوں کا حاصل ایک ہے، اور اگر صورتِ مذکورہ میں ۲۱ درہم ضائع ہوئے ہیں تو زکوٰۃ سے درہم کا صرف بیسواں حصہ کہ کل واجب کا نصف عشر عشر یعنی (۱/۲۰۰) ہے ساقط ہو گا باقی (۱۹/۲۱) واجب کہ نصاب سے فقط ایک درہم ہلاک ہوا ہے یہ نصاب کا (۱/۲۰۰) تھا ، اور اگر (۲۱۹) تلف ہوئے تو درہم کا فقط (۱/۴۰) ۰.۵۰ دینا آئے گا باقی ساقط کہ اسی حساب سے حصہ نصاب باقی ہے و علیٰ ہذا القیاس۔ در مختار میں ہے:

[عربی باکس]: لا شئ في عفو ولا في هالك بعد وجوبها تعلقها بالعين لا بالذمة [اردو باکس]: عفو میں کوئی شے لازم نہیں، وجوبِ زکوٰۃ کے بعد ہلاک ہو جانے والے مال پر زکوٰۃ نہیں کیونکہ زکوٰۃ کا تعلق اس مال سے تھا نہ کہ ذمہ کے ساتھ ،

[عربی باکس]: وان هلك بعضه سقط حظه ويصرف [اردو باکس]: اور اگر تھوڑا ہلاک

Fatawa Razawiyyah, Volume 10

[Arabic]: The loss is attributed first to the 'Afw' (surplus above the nisab threshold), then to the adjacent 'Nisab' (minimum amount for zakat), and so on. This is unlike the consumed wealth (Mustahlak) due to the presence of transgression. 'Tawa' (loss) after a loan and its return is considered 'Halak' (destruction). [Multaqata (T)] [Urdu]: If wealth is lost, Zakat will be waived accordingly. The lost wealth will first be attributed to the 'Afw', then to the 'Nisab' adjacent to it. In the same way, the process will continue. This is unlike when wealth is destroyed (consumed intentionally), because there is transgression involved. The denial by a borrower or the loss of repayment is called destruction (Halak). [Multaqata (T)]

It is in Radd al-Muhtar: [Arabic]: And 'Tawa' here means that he denies the debt when there is no proof against him, or the borrower dies without leaving an estate. 2 [Urdu]: "Tawa" here means that the debtor, in the absence of witnesses, denies the debt, or the borrower dies without leaving an estate for the repayment of the debt. (T)

In the same book, it is mentioned: [Arabic]: A form of consumption is if one forgives a wealthy debtor, unlike a poor one. I say: The order indicated in 'Al-Durr' regarding spending towards the 'Nisabs' is the school of thought of our master Imam Al-Azam (may Allah be pleased with him), unlike Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him). He attributes the loss after 'Afw' to all 'Nisabs' proportionately. However, I have not mentioned it here because the discussion is about gold and silver, and in them, this has no fruit (practical result) due to the lack of difference in the obligation of their 'Nisab' at all, for it is absolutely one-fortieth (2.5%). It only manifests in livestock. [Urdu]: One form of destruction of wealth is when a person forgives his wealthy debtor. This is unlike forgiving a needy person. I say: The order of expenditure of the 'Nisab' mentioned in 'Al-Durr' is the school of thought of our master Imam Al-Azam (may Allah be pleased with him). In this, there is a difference of opinion with Imam Abu Yusuf (may Allah be pleased with him), because after 'Afw', he returns the destroyed portion to all 'Nisabs' jointly. But I have not mentioned it here because the discussion is about gold and silver, and there is no benefit in it for both because there is no difference in their mandatory 'Nisab'; it is absolutely one-fortieth (portion).

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Zakat on Sheep, Mujtabai Press, Delhi, 1/133.

2. Radd al-Muhtar, Chapter on Zakat on Sheep, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/21.
3. Radd al-Muhtar, Chapter on Zakat on Sheep, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/21.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

[अरबी]: नुकसान को पहले 'अफ़्व' (निसब से ऊपर की अतिरिक्त राशि) की ओर, फिर निकटवर्ती 'निसब' की ओर निर्देशित किया जाएगा, और इसी तरह आगे भी। यह जानबूझकर खर्च किए गए धन के विपरीत है क्योंकि यहाँ ज़्यादती (सीमा का उल्लंघन) है। ऋण और उसकी वापसी के बाद 'तवा' (नुकसान) को 'हलाक' (विनाश) माना जाता है। [मुलतक़ता (त)] [उर्दू]: यदि धन नष्ट हो जाता है, तो उसके अनुसार ज़कात माफ कर दी जाएगी और नष्ट होने वाले धन को पहले अफ़्व की तरफ, फिर उससे जुड़े निसब की तरफ मोड़ा जाएगा। इसी तरह आगे भी सिलसिला जारी रहेगा। यह जानबूझकर नष्ट किए गए धन के विपरीत है, क्योंकि यहाँ ज़्यादती है। कर्जदार का इनकार करना और दोबारा भुगतान न होने का नुकसान हलाक कहलाएगा। [मुलतक़ता (त)]

रद्द अल-मुह्तार में है: [अरबी]: और यहाँ 'तवा' का अर्थ है कि वह गवाह न होने पर ऋण से इनकार कर दे, या कर्जदार बिना कोई विरासत छोड़े मर जाए। 2 [उर्दू]: "तवा" से यहाँ तात्पर्य यह है कि कर्जदार, गवाह न होने पर कर्ज से इनकार कर दे, या कर्जदार कर्ज चुकाने के लिए कोई विरासत (जायदाद) छोड़े बिना ही मर जाए। (त)

उसी में है: [अरबी]: धन नष्ट करने का एक रूप यह है कि कोई अपने धनवान कर्जदार का कर्ज माफ कर दे, जबकि निर्धन को माफ करना इसके विपरीत है। मैं कहता हूँ: 'दुर' में निसब के खर्च की जिस व्यवस्था की ओर इशारा किया गया है, वह हमारे स्वामी इमाम आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) का पंथ है। इसमें इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाह अलैह) का मतभेद है क्योंकि वे अफ़्व के बाद नष्ट होने वाले हिस्से को सभी निसबों के बीच साझा तौर पर बाँटते हैं। लेकिन मैंने यहाँ इसका उल्लेख नहीं किया है क्योंकि चर्चा सोने और चांदी के बारे में है, और उनमें इसका कोई व्यावहारिक लाभ नहीं है क्योंकि उनके अनिवार्य निसब में मूल रूप से कोई अंतर नहीं है, वह तो बिल्कुल चालीसवां हिस्सा है। यह केवल मवेशियों (पशुधन) के मामले में प्रकट होता है। [उर्दू]: नष्ट किए जाने वाले धन का एक रूप यह है कि कोई व्यक्ति अपने धनवान कर्जदार का कर्ज माफ कर दे। यह निर्धन का कर्ज माफ करने के विपरीत है। मैं कहता हूँ: 'दुर' में निसब के खर्च की जिस व्यवस्था की ओर इशारा है, वह हमारे स्वामी इमाम आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) का मज़हब है। इसमें इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाह अलैह) का मतभेद है क्योंकि वे अफ़्व के बाद नष्ट होने वाले हिस्से को सभी निसबों की ओर संयुक्त रूप से लौटाते हैं। लेकिन मैंने यहाँ इसका उल्लेख नहीं किया है क्योंकि चर्चा सोने और चांदी के बारे में है

और इन दोनों में इसका कोई लाभ नहीं है क्योंकि उनके अनिवार्य निसब में मूल रूप से कोई अंतर नहीं है, वह तो पूर्ण रूप से चालीसवां हिस्सा है।

1. रद्द अल-मुह्तार, बाब ज़कातुल ग़नम, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/133.
2. रद्द अल-मुह्तार, बाब ज़कातुल ग़नम, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 2/21.
3. रद्द अल-मुह्तार, बाब ज़कातुल ग़नम, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 2/21.

पेज 100/836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

الهالك الى العفو اولا ثم الى نصاب يليه ثم و ثم بخلاف المستهلك لوجود التعدى والتوى بعد القرض والاعادة هلاك اھ ملتقطا۔ ہوا تو اس کے مطابق زکوۃ ساقط ہوگی اور ہلاک ہونے والے کو پہلے عفو کی طرف پھر اس سے متصل نصاب کی طرف پھیرا جائے گا۔ اسی طرح آگے سلسلہ ہوگا، بخلاف ہلاک کیے جانے والے کے، کیونکہ یہاں زیادتی ہے، قرض لینے والے کے انکار، اور دوبارہ ادا کرنے کا نقصان ہلاک کہلائے گا اھ ملتقطا(ت)

ردالمحتار میں ہے: والتوى هنا ان يجحد ولا بينه عليه او يموت المستقرض لا عن تركة۔ 2 "توی" سے یہاں مراد یہ ہے کہ مقروض، گواہ نہ ہونے پر قرض سے انکار کردے یا مقروض قرضہ کی ادائیگی کے لیے ترکہ چھوڑے بغیر فوت ہوجائے(ت)

اسی میں ہے: من الاستهلاك ما لوأبرأمديونه الموسر بخلاف المعسر اھ3 اقول: وما اشار اليه في الدر من الترتيب في الصرف الى النصب فهو مذهب سيدناالامام الاعظم رضى الله تعالى عنه خلافا للامام ابي يوسف رحمه الله تعالى فانه يصرف الهالك بعدالعفو الى جميع النصب شائعا ولكن لم الم بذكره ههنا لان الكلام في الذهب والفضة وفيهما لاثمرة لهذاالعدم تفاوت نصبها في الواجب اصلافانه ربع العشر على الاطلاق وانماتظهر في السوائم ہلاک کیے جانے والے مال کی ایک صورت یہ ہے کہ کوئی آدمی اپنے امیر مقروض کو معاف کردے۔ بخلاف تنگدست کو معاف کردینے کے۔ اقول: در میں نصاب کے مصارف کی جس ترتیب کی طرف اشارہ ہے وہ سید نا امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا مذہب ہے۔ اس میں امام ابو یوسف رحمہ اللہ تعالیٰ کا اختلاف ہے کیونکہ وہ عفو کے بعد ہلاک ہونے والے حصہ کو مشترکہ طور پر تمام نصابوں کی طرف لوٹاتے ہیں لیکن میں نے یہاں اسے ذکر

نہیں کیا کیونکہ کلام سونے اور چاندی میں ہے اور ان دونوں میں اس کا کوئی فائدہ نہیں اس لیے کہ ان کے وجوب نصاب میں اصلاً تفاوت نہیں، وہ تو مطلقاً چالیسواں (حصہ ہے)

1 رد محتار باب زکوۃ الغنم مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۳۳ 2 ردالمحتار باب زکوۃ الغنم داراحیاء التراث العربی بیروت ۲۱/۲ 3 ردالمحتار باب زکوۃ الغنم داراحیاء التراث العربی بیروت ۲۱/۲

(Arabic Column): As for the difference in the obligation therein due to the difference in the minimum exempt limit (nisab), it may sometimes be a sheep, sometimes a female camel in its second year (bint makhad), sometimes a female camel in its third year (bint labun), and so on. Thus, if someone owns thirty-six camels and eleven of them perish, then according to the Imam (Abu Hanifa), the obligation is a bint makhad. According to the second (Imam Abu Yusuf), it is (25/36) of a bint labun, meaning twenty-five parts out of thirty-six parts of a bint labun. And as for the absence of similarity (mithliyah), a difference in both calculations is conceivable, such as one who owns two hundred and one sheep, the obligation is three sheep. If eighty of them perish, then according to the Imam, two sheep are obligatory, attributing the loss to the nearest nisab. According to Abu Yusuf, it is (121/201) of three sheep, meaning one hundred and twenty-one parts out of the parts of two hundred and one of three sheep. It is not required for this to be exactly like two sheep. This becomes apparent during valuation because paying the value is certainly permissible in zakat. Let us assume a sheep is valued at sixty-seven piastres (qirsh); then the value of the obligation according to the Imam is 134 piastres, and according to Abu Yusuf, it is 121. And so it is here; specific designation and commonality are equal without any difference at all. For example, whoever owns 44 mithqals of gold, the obligation is one mithqal and two carats (qirat) because every mithqal is twenty carats. Thus...

(Urdu Column): This is a portion. Yes, the result (of difference) will appear in livestock; either the difference in nisab will be due to the difference in what is obligatory, for example, sometimes it will be sheep, sometimes bint makhad, and sometimes bint labun. So, the person who became the owner of thirty-six camels, and eleven of them died; according to the Imam, bint makhad is necessary here, and according to the other (Imam Abu Yusuf), 25/36 of bint labun, i.e., twenty-five parts out of thirty-six parts of bint labun will be necessary. Or, because similarity is absent there, a difference between both calculations will be conceivable. For example, a person is the owner of two hundred and one (201) sheep; now three sheep have become obligatory, but eighty of them died. So, according to the Imam, due to returning to the nearest nisab, two sheep will be necessary here. And according to Imam Abu Yusuf, 121/201 of three sheep, i.e., one hundred and twenty-one (121) parts out of two hundred and one (201) parts of three sheep will be necessary, and it is not necessary for it to be like two sheep. This will be revealed at the time of valuation because zakat is definitely paid by giving the price. For example, we assume that the

price of a sheep is sixty-seven (67) qirsh; then according to the Imam, one hundred and thirty-four (134) qirsh, and according to Imam Abu Yusuf, one hundred and twenty-one (121) qirsh zakat will be necessary. Similarly, infer the rest. But in the issue under consideration, specific designation and partnership are equal; there is no difference in them. For example, a person who became the owner of forty-four (44) mithqals of gold, then one mithqal and two carats (qirat) of zakat is obligatory for him because every mithqal is twenty (20) carats. For example...

फ़तावा रज़विया, खंड 10

(अरबी स्तंभ): जहाँ तक निसाब में अंतर के कारण वाजिब (अनिवार्य) में अंतर का सवाल है, तो कभी यह एक भेड़ होती है, कभी बिन्त मख़ाज़ (दूसरे वर्ष की ऊंटनी) और कभी बिन्त लबून (तीसरे वर्ष की ऊंटनी) और इसी तरह। अतः, यदि कोई व्यक्ति छत्तीस ऊंटों का मालिक है और उनमें से ग्यारह मर जाते हैं, तो इमाम (अबू हनीफ़ा) के अनुसार बिन्त मख़ाज़ अनिवार्य है। और दूसरे (इमाम अबू यूसुफ़) के अनुसार (25/36) बिन्त लबून, यानी बिन्त लबून के छत्तीस भागों में से पच्चीस भाग अनिवार्य हैं। और जहाँ तक समानता (मिस्लियत) के अभाव का प्रश्न है, दोनों गणनाओं में अंतर की कल्पना की जा सकती है, जैसे कि वह व्यक्ति जो दो सौ एक भेड़ का मालिक है, तो तीन भेड़ें अनिवार्य हैं। यदि उनमें से अस्सी मर जाती हैं, तो इमाम के अनुसार, हानि को निकटतम निसाब की ओर मोड़ने के कारण दो भेड़ें अनिवार्य हैं। और अबू यूसुफ़ के अनुसार तीन भेड़ों का (121/201) भाग, यानी तीन भेड़ों के दो सौ एक भागों में से एक सौ इक्कीस भाग। यह आवश्यक नहीं है कि यह ठीक दो भेड़ों के समान हो। यह बात मूल्यांकन के समय स्पष्ट हो जाती है क्योंकि ज़कात में मूल्य का भुगतान निश्चित रूप से जायज़ है। मान लीजिए कि एक भेड़ का मूल्य सड़सठ क़िर्श है; तो इमाम के अनुसार वाजिब का मूल्य 134 क़िर्श है, और अबू यूसुफ़ के अनुसार 121 है। और यहाँ भी ऐसा ही है; नियत करना और साझापन बिना किसी अंतर के समान हैं। उदाहरण के लिए, जो कोई 44 मिस्काल सोने का मालिक है, उस पर एक मिस्काल और दो क़िरात ज़कात अनिवार्य है क्योंकि प्रत्येक मिस्काल बीस क़िरात का होता है। अतः..

(उर्दू स्तंभ): यह एक हिस्सा है। हाँ, चौपायों में इसका फल (मतभेद) प्रकट होगा; या तो निसाब में अंतर वाजिब में अंतर के कारण होगा, उदाहरण के लिए कभी भेड़ें होंगी, कभी बिन्त मख़ाज़ और कभी बिन्त लबून। तो जो व्यक्ति छत्तीस ऊंटों का मालिक बना और उनमें से ग्यारह मर गए, तो इमाम के नज़दीक यहाँ बिन्त मख़ाज़ अनिवार्य है और दूसरे के नज़दीक बिन्त लबून का 25/36, यानी बिन्त लबून के छत्तीस हिस्सों में से पच्चीस हिस्से अनिवार्य होंगे। या वहाँ समानता के अभाव के कारण दोनों गणनाओं में अंतर की कल्पना की जा सकती है। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति दो सौ एक (201) भेड़ों का मालिक है; अब तीन भेड़ें अनिवार्य हो गईं, लेकिन उनमें से अस्सी मर गईं। तो इमाम के नज़दीक, निकटतम निसाब की ओर लौटने के कारण यहाँ दो भेड़ें अनिवार्य होंगी। और इमाम अबू यूसुफ़ के नज़दीक तीन भेड़ों का 121/201 हिस्सा, यानी तीन भेड़ों के दो सौ एक (201) हिस्सों में से एक सौ इक्कीस (121) हिस्से अनिवार्य होंगे, और इसका दो भेड़ों के समान होना आवश्यक

नहीं है। और यह बात मूल्यांकन के समय ही प्रकट होगी क्योंकि मूल्य देने से ज़कात निश्चित रूप से अदा हो जाती है। उदाहरण के लिए, हम मान लेते हैं कि एक भेड़ की कीमत सड़सठ (67) क़िर्श है; तो इमाम के नज़दीक एक सौ चौंतीस (134) क़िर्श और इमाम अबू यूसुफ़ के नज़दीक एक सौ इक्कीस (121) क़िर्श ज़कात अनिवार्य होगी। इसी तरह बाक़ी का अनुमान लगा लें। लेकिन विचाराधीन मसले में नियत करना और साझापन बराबर हैं; उनमें कोई अंतर नहीं है। उदाहरण के लिए, जो व्यक्ति चवालीस (44) मिस्काल सोने का मालिक बना, तो उस पर एक मिस्काल और दो क़िरात ज़कात अनिवार्य है क्योंकि हर मिस्काल बीस (20) क़िरात का होता है। उदाहरण के लिए...

فتاویٰ رضویہ (جلد دہم)

(عربی کالم): اما لاختلاف الواجب فیها باختلاف النصب فقد یکون شاة و تارة بنت مخاض واخری بنت لبون وهکذا فمن ملك ستة و ثلثین من الابل فهلك احدی عشرة فالواجب عند الامام بنت مخاض و عند الثانی (۲۵/۳۶) بنت لبون ای خمسة و عشرون جزء من ستة و ثلثین جزء من اجزاء بنت لبون واما لا نعدام المثلیة فیتصور تفاوت الحسابین کمن ملك مائتی شاة و شاة فالواجب ثلث شیاه هلکت منها ثمانون فالواجب عند الامام شاتان صرفاً للهلاك الی اقرب النصب وعند ابی یوسف (۱۲۱/۲۰۱) ثلث شیاه ای مائة واحد و عشرون جزء من مائتی اجزاء وجزء من ثلث شیاه ولا یجب ان یکون هذا کمثل شاتین ویظهر ذلک عند التقویم فان دفع القیمة جائز فی الزکوة قطعاً فلنفرض ان شاة بسبعة وستین قرشا فقیمة الواجب عند الامام ۱۳۴ قرشا و عند ابی یوسف ۱۲۱ وهکذا اماهنا فالتعیین و الشیوع سواء بلا تفاوت اصلا فان من ملك مثلا ۴۴ مثقالا من ذهب فالواجب مثقال وقیراطان لان کل مثقال عشرون قیراطاً فاذا

(اردو کالم): حصہ ہے، ہاں چارپایوں میں ثمرہ (اختلاف) ظاہر ہوگا، یا تو اس میں اختلاف نصاب اختلاف واجب کی وجہ سے ہوگا، مثلاً کبھی بکریاں ہوں گی کبھی بنت مخاض اور کبھی بنت لبون، پس جو شخص چھتیس اونٹوں کا مالک بنا، ان میں سے گیارہ ہلاک ہوگئے، امام کے نزدیک یہاں بنت مخاض لازم ہے اور دوسرے کے نزدیک بنت لبون کا ۲۵/۳۶ یعنی بنت لبون کے چھتیس اجزاء میں سے پچیس اجزاء لازم ہوں گے، یا وہاں مثلیت معدوم ہونے کی وجہ سے دونوں حسابوں میں تفاوت متصور ہوگا، مثلاً ایک شخص دو سو ایک ۲۰۱ بکری کا مالک ہے اب تین بکریاں لازم ہوگئیں مگر ان میں سے اسی ہلاک ہوگئیں تو امام کے نزدیک اقرب نصاب کی طرف لوٹنے کی وجہ سے یہاں دو بکریاں لازم ہوں گی اور امام ابویوسف کے نزدیک تین بکریوں کا ۱۲۱/۲۰۱ یعنی تین بکریوں کے دو سو ایک ۲۰۱ اجزاء میں سے ایک سو اکیس ۱۲۱ لازم ہوں گے اور اس

کا دو بکریوں کی مانند ہونا لازم نہیں اور اس چیز کا اظہار قیمت لگانے کے وقت ہی ہوگا کیونکہ قیمت دینے سے زکوۃ بالیقین ادا ہوجاتی ہے، مثلاً ہم فرض کرتے ہیں کہ بکری کی قیمت سرسٹھ ۶۷ قرش ہے تو امام کے نزدیک ایک سو چونتیس ۱۳۴ قرش اور امام ابویوسف کے نزدیک ایک سو اکیس ۱۲۱ قرش زکوۃ لازم ہوگی، اسی طرح باقی قیاس کرلیں، لیکن زیر نظر مسئلہ میں تعیین اور اشتراک برابر ہیں ان میں کوئی تفاوت ہی نہیں، جو شخص مثلاً چوالیس ۴۴ مثقال سونے کا مالک بنا تو اس پر ایک مثقال اور دو قیراط زکوۃ لازم ہے کیونکہ ہر مثقال بیس ۲۰ قیراط ہوتا ہے، مثلاً

For example, if 24 mithqals are lost and 20 remain, then according to the Imam's method, half a mithqal is obligatory. According to Imam Abu Yusuf's method, 5/11 is obligatory, which means five parts out of eleven parts of a mithqal and two carats. When we convert them into the same denomination, it becomes 22 carats, of which the mentioned share is ten 10 carats, which is half a mithqal. Similarly, if someone becomes the owner of eighteen tolas of gold, this is two Nisabs and two-fifths. Now, the obligation will be five mashas (3-1/5) ratti. If, for example, three 3 tolas are lost, then two Nisabs remain. Now, according to the Imam's method, four 4 mashas and four rattis are obligatory, and according to Imam Abu Yusuf's method, 5/6 of the first obligation is due. So if we make everything into fifths of a grain (habba), the total is 216 fifths. If we take 5/6 of those, we get 180 fifths, which equals 4 mashas and 4 rattis, both being equal. If you have any doubt, look at this calculation:

(6) 216 (36 5 (5) 180 (36 masha 4) 36 (8)

Furthermore, know that clearing a wealthy debtor can also be considered a loss, especially if the debt is "weak." This refers to a debt that is not in exchange for property worth 4 surkh (ratti), such as dower (mahr), blood money (diyyat), or khula' compensation. Detailed discussion on this is in Rad al-Muhtar. And Allah, the Exalted, knows best. (t)

खंड दस - फतावा रज़विया

उदाहरण के लिए, यदि 24 मिस्क़ाल नष्ट हो गए और 20 शेष बचे, तो इमाम के तरीके के अनुसार आधा मिस्क़ाल अनिवार्य है। इमाम अबू यूसुफ के अनुसार, 5/11 यानी मिस्क़ाल के ग्यारह भागों में से पांच भाग और दो क़ीरात अनिवार्य होंगे। जब हम उन्हें एक ही श्रेणी में बदलेंगे, तो यह 22 क़ीरात बन जाएगा, जिसमें से उल्लेखित हिस्सा दस 10 क़ीरात होगा, जो आधा मिस्क़ाल है। इसी प्रकार, यदि कोई व्यक्ति अठारह तोले सोने का मालिक बनता है, तो यह दो निसाहब और दो पांचवें हिस्से हैं। अब, दायित्व पांच माशे (3-1/5) रत्ती होगा। यदि, उदाहरण के लिए, तीन 3 तोले नष्ट हो जाते हैं, तो दो निसाहब शेष रह जाते हैं। अब, इमाम के तरीके के अनुसार, चार 4 माशे और चार रत्ती अनिवार्य हैं, और इमाम अबू यूसुफ के तरीके के अनुसार, पहले दायित्व का 5/6 देय होगा। इसलिए यदि हम सबको दाने (हब्बा) के पांचवें हिस्से में बदल दें, तो कुल 216 पांचवें हिस्से होंगे। यदि हम उनमें से 5/6 लें, तो हमें 180 पांचवें हिस्से प्राप्त होंगे, जो 4 माशे और 4 रत्ती के बराबर हैं, दोनों समान हैं। यदि आपको कोई संदेह है, तो इस गणना को देखें:

(6) 216 (36 5 (5) 180 (36 माशा 4) 36 (8)

इसके अतिरिक्त, जान लें कि किसी धनी ऋणी को ऋणमुक्त करना भी नुकसान माना जा सकता है, विशेषकर यदि ऋण "कमजोर" हो। यह उस ऋण को संदर्भित करता है जो 4 सुर्ख (रत्ती) मूल्य की संपत्ति के बदले में नहीं है, जैसे कि मेहर (दहेज), दियत (रक्त धन), या खुला का मुआवजा। इस पर विस्तृत चर्चा 'रद्द अल-मुह्तार' में है। और अल्लाह, जो महान है, बेहतर जानता है। (त)

पृष्ठ 102/836

چوبیس ۲۴ مثقال ہلاک ہو گیا اور باقی بیس ۲۰ رہ گیا تو امام کے طریق پر نصف مثقال اور امام ابو یوسف کے مطابق ۵/۱۱ یعنی گیارہ مثقال اور دو قراط کے اجزاء میں پانچ اجزاء لازم ہوں گے، جب ہم انھیں ہم جنس قرار دیں تو یہ بائیس ۲۲ قیراط بن جائیں گے، اب ان میں حصہ مذکورہ دس ۱۰ قیراط ہوگا اور یہ نصف مثقال ہے۔ اسی طرح مثلاً کوئی شخص اٹھارہ تولے سونے کا مالک بنا تو یہ دو نصاب اور دو خمس ہیں تو اب پانچ ماشے (۳- ۱/۵) رتی بنے گا تو اب اگر تین ۳ تولے مثلاً ہلاک ہو گیا تو دو نصاب باقی رہ گئے۔ اب امام کے طریق کے مطابق چار ۴ ماشے اور چار رتی، اور امام ابو یوسف کے طریقہ پر ۵/۶ واجب اول کا ہو گا، تو اگر ہم سب کو حبہ کے خمس بنائیں تو کل ۲۱۶ خمس ہوئے ان میں سے ۵/۶ لے لیں تو ۱۸۰ خمس حاصل ہوئے اور ۴ ماشے ۴ رتی ہوئے جو برابر برابر ہیں، اگر تمھیں شک ہو تو اس عمل کو دیکھو:

(۶) ۲۱۶ (۳۶ ۵ (۵) ۱۸۰ (۳۶ ماشہ ۴) ۳۶ (۸)

پھر معلوم ہونا چاہئے کہ کسی غنی مقروض کو بری کرنا بھی کبھی ہلاک قرار پاتا ہے اور یہ جب ہوگا کہ قرض یا دین بہت کم ہو اور وہ یہ ۴ رتی سے کم ہو تو مال نہ قرار پائیگا جیسا کہ مہر، دیت، خلع کے بدل میں اس مقدار کو مال نہیں دیا جاتا، اس کی مکمل بحث ردالمختار میں ہے۔ واللہ سبحانہ وتعالی اعلم (ت)

Fatawa Razawiyya, Volume 10

Problem 4: Is it permissible to give Zakat to needy Sayyids or not? Many needy Sayyids are found who themselves ask for it, and I have heard that the scholars of Rampur have issued a fatwa of permissibility, but I have not dared to do so until now. What is your ruling in this regard? Explain and be rewarded.

The Answer: O Allah, guide to the truth and what is correct. Giving Zakat to the noble Sayyids and all of Bani Hashim is categorically forbidden (haram). There is a consensus (ijma) of our three Imams, rather the Imams of the four schools of jurisprudence (may Allah be pleased with them all), on its prohibition. Imam Sha'rani (may Allah have mercy on him) says in 'Al-Mizan':

[Table/Box Content] Arabic: The four Imams have agreed on the prohibition of obligatory charity (Zakat) for Bani Hashim and Bani Abdul Muttalib, and they are five clans: the family of Ali, the family of Abbas, the family of Ja'far, the family of Aqeel, and the family of Harith bin Abdul Muttalib. This is among the matters of consensus and agreement. Summarized. Urdu: With the agreement of the four Imams, obligatory charity is forbidden for Bani Hashim and Bani Abdul Muttalib, and they are five families: the family of Ali, the family of Abbas, the family of Ja'far, the family of Aqeel, and the family of Harith bin Abdul Muttalib. This is among the consensus and agreed-upon matters. Summarized. (T)

From beginning to end, all the core texts of the school without exception, and the general reliable commentaries and authoritative fatwas speak of this ruling. And many mutawatir (consecutive) hadiths from the radiant master of Sayyids (peace and blessings of Allah be upon him) have come down in this chapter. As far as this humble servant's knowledge goes at this moment, twenty noble companions (may Allah be pleased with them) have narrated hadiths of this subject from the presence of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him):

Our master Imam Hasan al-Mujtaba (may Allah be pleased with him): It was narrated from him by Ahmad, Bukhari, and Muslim. (Ahmad, Bukhari, and Muslim have narrated from him. T)

Our master Imam Husayn (may Allah be pleased with him): It was narrated from him by Ahmad and Ibn Hibban with trustworthy narrators. (Ahmad and Ibn Hibban have narrated from him with trustworthy men. T)

Our master Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them both): It was narrated by Imam Tahawi, Al-Hakim, Abu Nu'aym, and Ibn Sa'd in 'Al-Tabaqat', and Abu Ubayd al-Qasim bin Salam in 'Kitab al-Amwal'. Imam Tahawi narrated another hadith from him, and Tabarani narrated a third hadith (Imam Tahawi, Hakim, Abu Nu'aym, Ibn Sa'd in Tabaqat and...).

1. Al-Mizan al-Kubra, Chapter: Distribution of Charities, Mustafa al-Babi Egypt 2/113 Page 103 of 836

फ़तावा रज़विया, जिल्द १०

मसला ४: मोहताज सादात (सैय्यदों) को ज़कात देना जायज़ है या नहीं? बहुत से मोहताज सादात ऐसे मिलते हैं जो खुद माँगते हैं और मैंने सुना है कि रामपुर के उलेमा ने इसके जायज़ होने का फ़तवा दिया है, लेकिन मैंने अब तक यह हिम्मत नहीं की। इस बारे में आपका क्या हुक्म है? बयान करें, सवाब पाएँ।

अल-जवाब: ऐ अल्लाह! हक़ और दुरुस्त बात की हिदायत अता फ़रमा। सादात-ए-कराम और तमाम बनी हाशिम पर ज़कात हराम-ए-क़तई है, जिसकी हुरमत पर हमारे तीनों इमामों बल्कि चारों मज़ाहिब के इमामों (अल्लाह उन सब से राजी हो) का इजमा (आम सहमति) है। इमाम शेरानी (अल्लाह उन पर रहमत फ़रमाए) 'मिज़ान' में फ़रमाते हैं:

[बॉक्स विषय-वस्तु] अरबी: चारों इमामों ने बनी हाशिम और बनी अब्दुल मुत्तलिब पर फ़र्ज़ सदक़ा (ज़कात) के हराम होने पर इत्तेफ़ाक़ किया है, और वे पाँच ख़ानदान हैं: आल-ए-अली, आल-ए-अब्बास, आल-ए-जाफ़र, आल-ए-अक़ील, और आल-ए-हारिस बिन अब्दुल मुत्तलिब। यह इजमाई और इत्तेफ़ाक़ी मसाइल में से है। (संक्षेप में) उर्दू: चारों इमामों के इत्तेफ़ाक़ से बनी हाशिम और बनी अब्दुल मुत्तलिब पर फ़र्ज़ सदक़ा हराम है, और वे पाँच ख़ानदान हैं: आल-ए-अली, आल-ए-अब्बास, आल-ए-जाफ़र, आल-ए-अक़ील, आल-ए-हारिस बिन अब्दुल मुत्तलिब। यह इजमाई और इत्तेफ़ाक़ी मसाइल में से है। (संक्षेप में) (त)

शुरू से आख़िर तक मज़हब के तमाम बुनियादी मतून (मूल पाठ) बिना किसी अपवाद के, और आम मोतबर शरहें (व्याख्याएं) और सनद वाले फ़तवे इसी हुक्म को बयान करते हैं। और खुद हुज़ूर सद्र-उस-सादात (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से इस बारे में मुतवातिर हदीसें आई हैं। जहाँ तक इस फ़कीर की नज़र है, अब तक बीस सहाबा-ए-कराम (अल्लाह उन सब से राजी हो) ने इस मज़मून की हदीसें हुज़ूर पाक (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से रिवायत की हैं:

हज़रत सय्यदना इमाम हसन मुजतबा (अल्लाह उनसे राजी हो): उनसे इमाम अहमद, बुखारी और मुस्लिम ने रिवायत की है। (उनसे इमाम अहमद, बुखारी और मुस्लिम ने रिवायत किया है। त)

हज़रत सय्यदना इमाम हुसैन (अल्लाह उनसे राजी हो): उनसे अहमद और इब्न हिब्बान ने मोतबर रावियों (वर्णनकर्ताओं) के साथ रिवायत की है। (उनसे अहमद और इब्न हिब्बान ने मोतबर रावियों के साथ रिवायत किया है। त)

हज़रत सय्यदना अब्दुल्ला bin अब्बास (अल्लाह उन दोनों से राजी हो): उनसे इमाम तहावी, हाकिम, अबू नईम और इब्न साद ने 'तबाक़त' में और अबू उबैद अल-क़ासिम बिन सलाम ने 'किताब अल-अमवाल' में रिवायत की है। इमाम तहावी ने उनसे एक और हदीस और तबरानी ने तीसरी हदीस रिवायत की है (इमाम तहावी, हाकिम, अबू नईम, इब्न साद ने 'तबाक़त' और... में)।

1. अल-मिज़ान अल-कुबरा, बाब: सदक़ात का तक़सीम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 2/113 पृष्ठ १०३ का ८३६

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

مسئلہ رابعہ: سادات محتاجین کو زکوۃ دینا جائز ہے یا نہیں، بہت سادات محتاج ایسے ملتے ہیں کہ خود مانگتے ہیں اور میں نے سُنا ہے کہ علمائے رام پور نے جواز کا فتوٰی دیا ہے مگر میں نے اب تک یہ جرات نہ کی۔ اس بارہ میں آپ کیا حکم فرماتے ہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: اللھم ھدایۃ الحق والصواب، زکوۃ ساداتِ کرام وسائر بنی ہاشم پر حرام قطعی ہے جس کی حرمت پر ہمارے ائمہ ثلاثہ بلکہ ائمہ مذاہب اربعہ رضی اللہ تعالٰی عنہم اجمعین کا اجماع قائم۔ امام شعرانی رحمہ اللہ تعالٰی میزان میں فرماتے ہیں:

[خانہ/باکس کا مواد] عربی: اتفق الائمۃ الاربعۃ علی تحریم الصدقۃ المفروضۃ علی بني ھاشم و بنی عبد المطلب وھم خمس بطون ال علی وال العباس و ال جعفر وال عقیل وال الحارث بن عبد المطلب ھذا من مسائل الاجماع و الاتفاق اھ ملخصاً اردو: باتفاق ائمہ اربعہ بنو ہاشم اور بنو عبدالمطلب پر صدقہ فرضہ حرام ہے، اور وہ پانچ خاندان ہیں: آل علی، آل عباس، آل جعفر، آل عقیل، آل حارث بن عبدالمطلب۔ یہ اجماعی اور اتفاقی مسائل میں سے ہے۔ ملخصاً۔ (ت)

اول تا آخر تمام متون مذہب قاطبۃً بے شذر و شاذ و عامہ شروح معتمدہ و فتاوائے مستندہ اس حکم پر ناطق اور خود حضور پر نور سید السادات صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے متواتر حدیثیں اس باب میں وارد، اس وقت جہاں تک فقیر کی نظر ہے بیس صحابہ کرام رضی اللہ تعالٰی عنہم نے اس مضمون کی حدیثیں حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے روایت کیں:

حضرت سیدنا امام حسن مجتبٰی رضی اللہ تعالٰی عنہ روی عنہ احمد والبخاری و مسلم (ان رضی اللہ تعالٰی عنہ سے امام احمد، بخاری اور مسلم نے روایت کیا ہے۔ ت)

حضرت سیدنا امام حسین رضی اللہ تعالیٰ عنہ روی عنہ احمد و ابن حبان برجال ثقات (ان رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے احمد اور ابن حبان نے ثقہ رجال کے ساتھ روایت کیا ہے۔ ت)

حضرت سیدنا عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما روی الامام الطحاوی والحاکم و ابو نعیم و ابن سعد فی الطبقات وابو عبید القاسم بن سلام فی کتاب الاموال و روی عنہ الطحاوی حدیثاً آخرو الطبرانی حدیثاً ثالثاً (امام طحاوی، حاکم، ابو نعیم، ابن سعد نے طبقات اور...

1 المیزان الکبری باب قسم الصدقات مصطفیٰ البابی مصر ۱۱۳/۲ صفحہ 103 از 836

Fatawa Rizvia Volume 10

Abu Ubaid Qasim bin Salam has narrated in Kitab al-Amwal, and Tahawi narrated a second hadith from him, and Tabarani narrated a third hadith from him. (T) Hadhrat Abd al-Muttalib bin Rabi'a bin Harith bin Abd al-Muttalib (may Allah be pleased with him): narrated by Ahmad, Muslim, and Nasai. (T) Hadhrat Salman Farsi (may Allah be pleased with him): narrated by Ibn Hibban, Tahawi, Hakim, and Abu Nu'aym. (T) Hadhrat Abu Hurayrah (may Allah be pleased with him): narrated by the two Sheikhs (Bukhari and Muslim), and Imam Tahawi has two other hadiths from him. (T) Hadhrat Anas bin Malik (may Allah be pleased with him): narrated by Bukhari and Muslim, and Tahawi has another hadith from him. (T) Hadhrat Mu'awiyah bin Haidah al-Qushayri (may Allah be pleased with him): narrated by Tirmidhi and Nasai, and Tahawi has narrated another hadith from him. (T) Hadhrat Abu Rafi', the freed slave of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him): narrated by Ahmad, Abu Dawood, Tirmidhi, Nasai, Tahawi, Ibn Hibban, Ibn Khuzaymah, and Hakim. (T) Hadhrat Hurmuz or Kaysan, the freed slave of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him): narrated by Ahmad and Tahawi. (T) Hadhrat Buraydah al-Aslami (may Allah be pleased with him): narrated by Ishaq bin Rahwayh, Abu Ya'la al-Mawsili, Tahawi, al-Bazzar, al-Tabarani, and al-Hakim. (T) Hadhrat Abu Ya'la (may Allah be pleased with him) and Hadhrat Abu Umayrah Rashid bin Malik (may Allah be pleased with him): Tahawi narrated from both of them. (T) Hadhrat Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both), Hadhrat Abd al-Rahman bin Alqamah (may Allah be pleased with him) – it is said he is a companion – (T) Hadhrat Abd al-Rahman bin Abi Aqeel (may Allah be pleased with him): Imam Tirmidhi has mentioned hadiths from these three as suspended (mu'allaq). (T) The Mother of the Believers, Siddiqah bint al-Siddiq (may Allah be pleased with them both): the six compilers of the Sahih Sittah have narrated from her. (T) The Mother of the Believers, Umm Salama (may Allah be pleased with her): narrated by Ahmad and Muslim. (T) Hadhrat Umm Atiyyah (may Allah be pleased with her): narrated by Ahmad, Bukhari, and Muslim. (T) And indeed, the reason for this prohibition is the honor, dignity, cleanliness, and purity of these exalted individuals, as Zakat is the grime of wealth and the washing away of sins, which is not appropriate for those of such pure lineage before the holy presence of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) himself.

अबू उबैद क़ासिम बिन सलाम ने किताब अल-अमवाल में रिवायत किया है और तहावी ने उनसे दूसरी हदीस और तबरानी ने तीसरी हदीस रिवायत की है। (त) हज़रत अब्दुल मुत्तलिब बिन रबीआ बिन हारिस बिन अब्दुल मुत्तलिब रज़ियल्लाहु तआला अन्हु: उनसे अहमद, मुस्लिम और नसाई ने रिवायत किया है। (त) हज़रत सलमान फारसी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु: उनसे इब्न हिब्बान, तहावी, हाकिम और अबू नुऐम ने रिवायत किया है। (त) हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु: उनसे शैख़ैन (बुख़ारी और मुस्लिम) ने रिवायत किया और उन्हीं से इमाम तहावी ने दो और अहादीस नक़ल की हैं। (त) हज़रत अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु अन्हु: उनसे बुख़ारी और मुस्लिम ने रिवायत किया और उन्हीं से तहावी ने एक और हदीस रिवायत की है। (त) हज़रत मुआविया बिन हैदा क़ुशैरी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु: उनसे तिर्मिज़ी और नसाई ने रिवायत किया और उन्हीं से तहावी ने एक और हदीस बयान की है। (त) हज़रत अबू रफ़ी' मौला रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम: उनसे अहमद, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, नसाई, तहावी, इब्न हिब्बान, इब्न खुज़ैमा और हाकिम ने रिवायत किया है। (त) हज़रत हुरमुज़ या कैसाँ मौला रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम: उनसे अहमद और तहावी ने रिवायत किया है। (त) हज़रत बुरैदा असलमी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु: उनसे इसहाक़ बिन राहवैया, अबू यअला अल-मौसिली, तहावी, अल-बज़्ज़ार, अल-तबरानी और अल-हाकिम ने रिवायत किया है। (त) हज़रत अबू यअला रज़ियल्लाहु तआला अन्हु और हज़रत अबू उमैरा रशीद बिन मालिक रज़ियल्लाहु तआला अन्हु: इन दोनों से तहावी ने रिवायत किया है। (त) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा, हज़रत अब्दुर्रहमान बिन अलक़मा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु जिन्हें सहाबी कहा गया है। (त) हज़रत अब्दुर्रहमान बिन अबी अक़ील रज़ियल्लाहु तआला अन्हु: इमाम तिर्मिज़ी ने इन तीनों से तअ़लीक़न हदीस बयान की है। (त) हज़रत उम्मुल मोमिनीन सिद्दीक़ा बिन्ते सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा: उनसे असहाबे सित्ता ने बयान किया है। (त) हज़रत उम्मुल मोमिनीन उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा: उनसे इमाम अहमद और मुस्लिम ने रिवायत किया। (त) हज़रत उम्मे अतिया रज़ियल्लाहु तआला अन्हु: उनसे अहमद, बुख़ारी और मुस्लिम ने रिवायत किया है। (त) और बेशक इस तहरीम (निषेध) की वजह उन हज़रात-ए-आलिया की इज़्ज़त, करामत, नज़ाफ़त और तहारत है, क्योंकि ज़कात माल की मैल है और गुनाहों का धोवन, जो इस सुथरी नस्ल वालों के मुक़ाबले में नहीं, ख़ुद हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम...

ابو عبید قاسم بن سلام نے کتاب الاموال میں روایت کیا ہے اور طحاوی نے ان سے دوسری حدیث اور طبرانی نے تیسری حدیث روایت کی ہے۔ ت) حضرت عبدالمطلب بن ربیعہ بن حارث بن عبدالمطلب رضی اللہ تعالٰی عنہ روی عنہ احمد ومسلم والنسائی (ان سے احمد، مسلم اور نسائی نے روایت کیا ہے۔ ت) حضرت سلمان فارسی رضی اللہ تعالٰی عنہ روی عنہ ابن حبان والطحاوی والحاکم وابو نعیم (ان سے ابن حبان، طحاوی، حاکم اور ابونعیم نے روایت کیا ہے۔ ت) حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ روی عنہ الشیخان ولہ عند الطحاوی حدیثان آخران (ان سے بخاری و مسلم نے روایت کیا اور انہی سے امام طحاوی نے دو اور احادیث نقل کی ہیں۔ ت) حضرت انس بن مالک رضی اللہ عنہ روی عنہ البخاری ومسلم ولہ عند الطحاوی حدیث آخر (ان سے بخاری اور مسلم نے روایت کیا اور انہی سے طحاوی نے ایک اور حدیث روایت کی ہے۔ ت) حضرت معاویہ بن حیدہ قشیرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ روی عنہ الترمذی والنسائی ولہ عند الطحاوی حدیث آخر (ان سے ترمذی اور نسائی نے روایت کیا اور انہی سے طحاوی نے ایک اور حدیث بیان کی ہے۔ ت) حضرت ابو رافع مولٰی رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم روی عنہ احمد و داؤد والترمذی والنسائی والطحاوی و ابن حبان وابن خزیمہ والحاکم (ان سے امام احمد، داؤد، ترمذی، نسائی، طحاوی، ابن حبان، ابن خزیمہ اور حاکم نے روایت کیا ہے۔ ت) حضرت ہرمز یا کیسان مولٰی رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم روی عنہ احمد والطحاوی (ان سے احمد اور طحاوی نے روایت کیا ہے۔ ت) حضرت بریدہ اسلمی رضی اللہ تعالٰی عنہ روی عنہ اسحاق بن راہویہ و ابویعلی الموصلی والطحاوی والبزاز ولطبرانی والحاکم (ان سے اسحاق بن راہویہ، ابویعلی موصلی، طحاوی، بزاز، طبرانی اور حاکم نے روایت کیا ہے۔ ت) حضرت ابویعلی رضی اللہ تعالٰی عنہ، حضرت ابو عمیرہ رشید بن

مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ روی عنہما الطحاوی (ان دونوں سے طحاوی نے روایت کیا ہے۔ ت) حضرت عبداللہ بن عمر رضی اللہ عنہما، حضرت عبدالرحمن بن علقمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ یقال صحابی (ان کو صحابی کہا گیا ہے۔ ت) حضرت عبدالرحمن بن ابی عقیل رضی اللہ تعالیٰ عنہ علق عن الثلثۃ الترمذی (امام ترمذی نے ان تینوں سے تعلیقاً حدیث بیان کی ہے۔ ت) حضرت ام المومنین صدیقہ بنت الصدیق رضی اللہ تعالیٰ عنہما روی عنہا الستۃ (ان سے اصحابِ ستہ نے بیان کیا ہے۔ ت) حضرت ام المومنین ام سلمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا روی عنہ احمد ومسلم (ان سے امام احمد اور مسلم نے روایت کیا۔ ت) حضرت ام عطیہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ روی عنہا احمد و البخاری و مسلم (ان سے امام احمد، بخاری اور مسلم نے روایت کیا ہے۔ ت) اور بیشک اس تحریم کی علت اُن حضرات عالیہ کی عزت و کرامت و نظافت و طہارت کہ زکوٰۃ مال کا میل ہے اور گناہوں کا دھوون، اس ستھری نسل والوں کے مقابل نہیں خود حضور اقدس صلی اللہ علیہ تعالے

Fatwa Ridawiyya, Volume 10

...[Peace be upon him] clarified this reasoning,

As in the Hadith of Muttalib in Muslim, the Hadith of Ibn Abbas in Tabarani, and the Hadith of Ali al-Murtaza in Tahawi, may Allah be pleased with them all. (T)	**As in the Hadith of al-Muttalib with Muslim, and Ibn Abbas with al-Tabarani, and Ali al-Murtada with al-Tahawi, may Allah be pleased with them all.**

Similarly, common scholars like Imam Abu Ja'far Tahawi in 'Sharh Ma'ani al-Athar', Imam Shams al-Aimma Sarakhsi in 'Muhit', Imam Sadr al-Shaheed in 'Sharh Jami' al-Saghir', Imam Burhan al-Din Farghani in 'Hidayah', Imam Hafiz al-Din Nasafi in 'Kafi', Imam Fakhr al-Din Zaila'i in 'Tabyeen', Imam Sam'ani in 'Khazanat al-Muftiyeen', Allama Yusuf Chalapi in 'Dhakhirat al-Uqba', Muhaqqiq Ghazzi in 'Minah al-Ghaffar', Mudaqqiq Ala'i in 'Durr al-Mukhtar', Fadil Rumi in 'Majma' al-Anhur', Sayyid Hamwi in 'Ghamz al-Uyun' and others mention this same reason for this ruling. There is no doubt that this reason cannot change with the change of times, so there is no doubt about the permanence of the ruling forever. To the extent that the majority of noble scholars like Imam Abu al-Hasan Karkhi, Imam Abu Bakr Jassas, Imam Husam al-Din Umar Sadr al-Shaheed, Imam Ali bin Abi Bakr Marghinani the author of Hidayah, Imam Tahir Bukhari the author of Khulasah, Imam Saghnaqi the author of Nihayah, Imam Nasafi the author of Kafi, Imam Zaila'i the commentator of Kanz, Imam Hussain bin Muhammad the author of Khazanah, Imam Humam Muhammad bin al-Humam the author of Fath, Allama Itqani the author of Ghayat al-Bayan, Allama Barjandi the commentator of Niqayah, Allama Zain bin Nujaym the author of Ashbah and Bahr, Allama Umar bin Nujaym the author of Nahr, Allama Ibrahim Halabi the author of Multaqa, Allama Muhammad Haskafi the author of Durr al-Mukhtar, and the authors of Ikhtiyar Sharh Mukhtar, Fatawa Hindiyya, and others (may Allah Almighty have mercy on them all) deem it impermissible for the Banu Hashim to receive wages for the work of zakat from zakat funds. Even though this is permissible for the wealthy because it is not zakat in every respect, it still carries a semblance of zakat, and the majesty of the Banu Hashim deserves acquittal even from the semblance of pollution. In 'Tabyeen al-Haqa'iq' it is stated:

Workers of Zakat are entitled to it, but since there is a semblance of zakat in it, because the owners' zakat is discharged through it, it is not permissible for a Hashimi worker. This is to keep the kinship with the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) safe from even the semblance of filth. However, it is permissible for a wealthy worker because they are not equal to a Hashimi in terms of dignity, so this semblance will not be considered in their case. (End of summarized quote) (T)

They deserve payment for work, except that there is a semblance of charity in it, as evidenced by the discharge of zakat from the owners of wealth. Therefore, it is not permissible for the Hashimi worker, out of respect for the kinship with the Prophet (peace and blessings of Allah Almighty be upon him) from the semblance of filth. It is permissible for the wealthy because they do not equal the Hashimi in deserving honor, so the semblance is not considered in their case. (Summary ended)

1 Tabyeen al-Haqa'iq, Chapter: Al-Masrif, Al-Matba'at al-Kubra al-Amiriyya, Bulaq, Egypt, 1/297.

फतावा रजविया, जिल्द दहम

...[अलैहि वसल्लम] ने इस दलील को स्पष्ट किया है,

जैसा कि मुस्लिम में हदीस-ए-मुत्तलिब, तबरानी में हदीस-ए-इब्ने अब्बास और तहावी में हदीस-ए-अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हुम अजमईन में है। (त)	**जैसा कि मुस्लिम के पास हदीस-ए-मुत्तलिब, तबरानी के पास हदीस-ए-इब्ने अब्बास और तहावी के पास हदीस-ए-अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हुम अजमईन में है।**

इसी तरह आम उलमा जैसे इमाम अबू जाफ़र तहावी 'शरह मानी अल-आसार' में, इमाम शम्सुल अइम्मा सरख्सी 'मुहीत' में, इमाम सद्र शहीद 'शरह जामे सगीर' में, इमाम बुरहानुद्दीन फ़रग़ानी 'हिदाया' में, इमाम हाफ़िज़ुद्दीन नसफ़ी 'काफ़ी' में, इमाम फ़खरुद्दीन ज़ैलई 'तबयीन' में, इमाम सम्अानी 'खज़ानतुल मुफ़्तीन' में, अल्लामा यूसुफ़ चलपी 'ज़खीरतुल उक़बा' में, मुक़क़िक़ ग़ज़ी 'मिनहुल गफ़्फ़ार' में, मुदक़्क़िक़ अलाई 'दुर्रे मुख्तार' में, फ़ाज़िल रूमी 'मज्मउल अन्हुर' में, सैय्यद हमवी 'ग़म्ज़ुल उयून' में और उनके अलावा अन्य लोग इस हुक्म की यही वजह बयान करते हैं। इसमें कोई शक नहीं कि यह वजह समय के बदलने से नहीं बदल सकती, इसलिए हुक्म के हमेशा कायम रहने में कोई संदेह नहीं है। यहाँ तक कि जमहूर उलमा-ए-किराम जैसे इमाम अबुल हसन करखी, इमाम अबू बकर जस्सास, इमाम हुसामुद्दीन उमर सद्र शहीद, इमाम अली बिन अबू बकर मरग़ीनानी हिदाया वाले, इमाम ताहिर बुखारी खुलासा वाले, इमाम सग़्नाक़ी निहाया वाले, इमाम नसफ़ी काफ़ी वाले, इमाम ज़ैलई कन्ज़ के व्याख्याकार, इमाम हुसैन बिन मोहम्मद खज़ाना वाले, इमाम हुमाम मोहम्मद बिन हुमाम फ़तह वाले, अल्लामा इतक़ानी ग़ायतुल बयान वाले, अल्लामा बरजंदी निक़ाया के व्याख्याकार, अल्लामा ज़ैन बिन नुजैम अश्बाह और बहर वाले, अल्लामा उमर बिन नुजैम नहर वाले, अल्लामा इब्राहीम हलबी मुल्तक़ा वाले, अल्लामा मोहम्मद हसकफ़ी दुर्रे मुख्तार वाले और इख्तियार शरह मुख्तार के लेखक, फ़तावा हिंदिया और अन्य (अल्लाह उन सब पर रहमत करे) बनी हाशिम के लिए ज़कात के काम की मज़दूरी ज़कात के माल से लेना नाजायज़ ठहराते हैं। हालांकि यह अमीरों के लिए भी जायज़ है क्योंकि यह पूरी तरह से ज़कात नहीं है, फिर भी इसमें ज़कात का संदेह है और बनी हाशिम की महानता गंदगी के संदेह से भी पाक रहने के योग्य है। 'तबयीनुल हक़ाएक़' में है:

कामगार ज़कात के हक़दार हैं लेकिन चूंकि इसमें ज़कात का संदेह है क्योंकि इससे माल के मालिकों की ज़कात अदा हो जाती है, इसलिए हाशिमी कामगार के लिए यह हलाल नहीं है ताकि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की रिश्तेदारी को गंदगी के संदेह से भी महफूज़ रखा जाए। अलबत्ता अमीर कामगार के लिए जायज़ है क्योंकि वह इज़्ज़त के मामले में हाशिमी के बराबर नहीं है, इसलिए उनके मामले में इस संदेह पर विचार नहीं किया जाएगा। (संक्षेप में) (त)

काम के लिए वे भुगतान के हकदार हैं, सिवाय इसके कि उसमें सदक़े का संदेह है, जैसा कि माल के स्वामियों से ज़कात के गिरने से सिद्ध होता है। अतः नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की रिश्तेदारी के सम्मान में हाशिमी कामगार के लिए यह वैध नहीं है, ताकि उन्हें गंदगी के संदेह से दूर रखा जाए। अमीरों के लिए यह वैध है क्योंकि वे सम्मान के मामले में हाशिमी के बराबर नहीं हैं, इसलिए उनके मामले में संदेह पर विचार नहीं किया जाता है। (सारांश समाप्त)

1 तबयीनुल हक़ाएक़, बाबुल मसरिफ़, अल-मतबअतुल कुबरा अल-अमीरिया, बुलाक़, मिस्र, 1/297।

فتاوی رضویہ، جلد دہم

علیہ وسلم نے اس تعلیل کی تصریح فرمائی،

جیسا کہ مسلم کے ہاں حدیثِ مُطَّلِب، طبرانی کے ہاں حدیثِ ابنِ عباس اور طحاوی کے ہاں حدیثِ علی المرتضٰے رضی اللہ تعالٰی عنہم اجمعین میں ہے۔ (ت)

كما في حديث المطلب عند مسلم و ابن عباس عند الطبراني وعلى المرتضى عند الطحاوی رضی اللہ تعالی عنہم اجمعین۔

اسی طرح عامہ علماء مثل امام ابو جعفر طحاوی شرح معانی الآثار اور امام شمس الائمہ سرخسی محیط اور امام صدر شہید شرح جامع صغیر اور امام برہان الدین فرغانی ہدایہ اور امام حافظ الدین نسفی کافی اور امام فخر الدین زیلعی تبیین اور امام سمعانی خزانہ المفتیین اور علامہ یوسف چلپی ذخیرۃ العقبی اور محقق غزی منح الغفار اور مدقق علائی درمختار اور فاضل رومی مجمع الانہر اور سید حموی غمز العیون اور ان کے غیر میں اس حکم کی یہی علت بیان فرماتے ہیں اور شک نہیں کہ یہ علت تغیر زمانہ سے متغیر نہیں ہوسکتی تو دائماً ابقائے حکم میں کوئی شبہ نہیں، یہاں تک کہ جمہور علمائے کرام مثل امام ابوالحسن کرخی وامام ابوبکر جصاص و امام حسام الدین عمر صدر شہید وامام علی بن ابی بکر مرغینانی صاحب ہدایہ وامام طاہر بخاری صاحب خلاصہ و امام سغناقی صاحب نہایہ وامام نسفی صاحب کافی و امام زیلعی شارح کنز و امام حسین بن محمد صاحب خزانہ وامام ہمام محمد بن الہمام صاحب فتح العلامہ اتقانی صاحب غایۃ البیان و علامہ بر جندی شارح نقایہ و علامہ زین بن نجیم صاحب اشباہ و بحر و علامہ عمر بن نجیم صاحب نہر و علامہ ابراہیم حلبی صاحب ملتقی و علامہ محمد حصکفی صاحب درمختار و مصنفان اختیار شرح مختار و فتاوی ہندیہ و غیر ہم رحمۃ اللہ تعالٰی علیہم بنی ہاشم کو مال زکوۃ سے عمل صدقات کی اجرت لینا

ناجائز ٹھہراتے ہیں حالانکہ یہ اغنیاء کے لیے بھی روا کہ من کل الوجوہ زکوۃ نہیں مگر آخر شبہ زکوۃ ہے اور بنی ہاشم کی جلالت شان شبہ لوث سے بھی برائت کی شایاں۔ تبیین الحقائق میں ہے

عاملینِ زکوٰۃ کے حقدار ہیں مگر چونکہ اس میں شبہ زکوٰۃ ہے کیونکہ اس سے صاحبِ اموال کی زکوٰۃ ساقط ہو جاتی ہے لہٰذا ہاشمی عامل کے لئے حلال نہیں تاکہ قرابتِ نبوی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کو میل کے شبہ سے بھی محفوظ رکھا جائے البتہ غنی عامل کے لئے جائز ہے کیونکہ وہ مرتبہ کرامت میں ہاشمی کے برابر نہیں، لہٰذا ان کے حق میں اس شبہ کا اعتبار نہیں کیا جائے گا اھ ملخصاً (ت)

یستحقه عمالة الاان فیه شبهة الصدقة بدلیل سقوط الزکوة عن ارباب الاموال فلا یحل للعامل الهاشمی تنزیها لقرابة النبي صلی الله تعالی علیه وسلم عن شبهة الوسخ و تحل للغنی لا نه لا یوازی الهاشمی فی استحقاق الکرامة فلا تعتبر الشبهة فی حقه اه ملخصاً.

1 تبیین الحقائق باب المصرف مطبعہ الکبری الامیریہ بولاق مصر ۱ / ۲۹۷

Fatawa Razvia, Volume 10

In Al-Muheet, Al-Bahr, Al-Durar etc., it is stated: Zakat is not permissible for the Mukatab (a slave who has a contract for freedom) slave of a Hashimi, although it is permissible for the Mukatab of the wealthy. The reason is that the ownership of a Mukatab is partially the owner's ownership, and here the doubt is treated like reality. It is mentioned in Radd al-Muhtar:

In Al-Bahr from Al-Muheet: They said it is not permissible for a Mukatab of a Hashimi because ownership reverts to the master in one sense, and doubt is attached to reality in their case. That is, although a Mukatab becomes free-handed until he owns what is given to him, he is still owned in essence (raqaba). Thus, there is a doubt about ownership falling to his Hashimi master. Doubt is considered in his right due to honor, unlike the case of wealth as mentioned before. Therefore, the author restricted it to the right of Banu Hashim.

From Al-Muheet in Al-Bahr: The scholars have said that Zakat is not permissible for a Mukatab of a Hashimi because, in one respect, the ownership of the master remains, and here the doubt in the right of Hashimis is established in a real manner. That is, although the Mukatab is considered free to the extent that he owns what is given to him, he remains owned in terms of his neck (person). Therefore, in this situation, there is a doubt of ownership falling to his Hashimi master. Here, due to the nobility of the Hashimi, the doubt is taken into account, unlike the case of a wealthy person as mentioned regarding the tax-collector. Thus, the author imposed the restriction regarding the right of Banu Hashim. (Trans.)

In short, when the Hadith is that and the Fiqh is this, where is the path to disagreement? Now, those who give a fatwa of permissibility, their basis is an erroneous, weak, and rejected narration narrated by Abu Ismah Nuh ibn Abi Maryam Jami from the Imam (Radi Allahu Anhu) recounting that in our time, Zakat is permissible for Banu Hashim because the reason for prohibition was receiving a fifth of the fifth from spoils of war; now that it is no longer received, Zakat has returned to being permissible.

I say: This narration is neither narratively sound nor intellectually sound. We have just stated that the cause of prohibition, by the explicit text of the Lawgiver (peace and blessings of Allah be upon him) and the consistent clarifications of the bearers of

the law (mercy of Allah be upon them), is the impurity of charities and the cleanliness of the Sayyids, i.e., Banu Hashim. This cannot change with the changing of times. As for the reasoning provided for this weak statement, the poor servant (may Allah forgive him) has clarified its complete insufficiency in his Fatwa dated 1st Jumada al-Ula 1306 AH, included in the collection 'Al-Ataya al-Nabawiyyah fi al-Fatawa al-Ridwiyyah,' with bright explanations by the grace of Allah Almighty. In that, eighteen 'shining proofs' were established showing that a great misunderstanding occurred in attributing the adoption of this rejected narration to the great Imam Abu Ja'far al-Tahawi (may his secret be sanctified).

[1] Durr al-Mukhtar, Bab al-Masrif, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/20

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

मुहीत, बहर और दुर्र वगैरह में है: हाशिमी के मुकातब (वह गुलाम जिसने अपनी आज़ादी के लिए समझौता किया हो) गुलाम के लिए भी ज़कात जायज़ नहीं है, हालांकि धनवानों के मुकातब के लिए हलाल है। वजह यह है कि मुकातब की मिल्कियत एक लिहाज़ से मौला (मालिक) की मिल्कियत है और यहाँ संदेह हकीकत के समान है। रद अल-मुहतार में है:

बहर में मुहीत से है: उलमा ने फरमाया है कि हाशिमी के मुकातब के लिए ज़कात जायज़ नहीं है क्योंकि यहाँ एक लिहाज़ से मौला की मिल्कियत बाकी रहती है और यहाँ हाशिमियों के हक में संदेह वास्तविक रूप से बरकरार होता है। यानी मुकातब अगरचे आज़ाद जैसा प्रतीत होता है यहाँ तक कि जो कुछ उसे दिया जाए वह उसका मालिक बन जाता है लेकिन गर्दन (दासता) के एतबार से वह मम्लूक (गुलाम) होता है, लिहाज़ा इस सूरत में उसके हाशिमी मौला की मिल्कियत का संदेह है। और यहाँ हाशिमी की शराफत (सम्मान) की वजह से संदेह का एतबार होता है, धनवान के विपरीत जैसा कि आमिल के मामले में गुज़रा है, इसीलिए मुसन्निफ (लेखक) ने बनी हाशिम के हक की कैद लगाई है।

बहर में मुहीत से है कि उलमा ने फ़रमाया है कि हाशिमी के मुकातब के लिए ज़कात जाइज़ नहीं क्योंकि यहाँ एक लिहाज़ से मौला की मिल्कियत बाक़ी होती है और यहाँ शुबा हाशिमियों के हक़ में हक़ीक़ी तौर पर बरक़रार होता है अह यानी मुकातब अगरचे आज़ाद मुतसव्वर होता है यहाँ तक कि जो कुछ उसे दिया जाए वो उस का मालिक बन जाता है लेकिन गर्दन के एतबार से मम्लूक होता है लिहाज़ा इस सूरत में उस के हाशिमी मौला की मिल्कियत का शुबा है और यहाँ हाशिमी की शराफ़त की वजह से शुबा का एतबार होता है, बख़िलाफ़ ग़नी के, जैसा आमिल में गुज़रा है, इसी लिए मुसन्निफ़ ने हक़ बनी हाशिम की क़ैद लगाई है अह (त)

कुल मिलाकर, जब हदीस वह है और फिक़्ह यह है, तो फिर मतभेद की गुंजाइश कहाँ? अब जो साहब इसके जायज़ होने पर फतवा देते हैं, उनका आधार एक गलत, कमज़ोर और ठुकराई हुई रिवायत है जिसे अबू इस्मा नूह बिन अबी मरियम जामी ने इमाम (रज़ियल्लाहु अन्हु) से नक़्ल किया है कि हमारे ज़माने में बनी हाशिम के लिए ज़कात जायज़ है क्योंकि हराम होने का कारण गनीमत के माल से खुम्स का खुम्स मिलना था, अब जब वह नहीं मिलता तो ज़कात फिर से जायज़ हो गई।

मैं कहता हूँ: यह रिवायत न तो सनद के लिहाज़ से सही है और न ही अकल (समझ) के लिहाज़ से। हमने अभी बयान किया है कि हराम होने की वजह शरीयत देने वाले (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के स्पष्ट पाठ और शरीयत के ज्ञाताओं के स्पष्टीकरण के अनुसार सदक़ात की गन्दगी और सादात (बनी हाशिम) की पाकीज़गी है। यह ज़माना बदलने से बदल नहीं सकती। जहाँ तक उस कमज़ोर दलील का सवाल है, मुझ फकीर (अल्लाह उसे माफ़ करे) ने फतावा रज़विया के मजमूआ 'अल-अतया अल-नबविया' में 1 जमादी-उल-उला 1306 हिजरी के फतवे में अल्लाह के फ़ज़ल से रोशन दलीलों के साथ इसकी मुकम्मल कमज़ोरी वाज़ेह कर दी है। उसी में अठारह 'दलायल-ए-सातेआ' (चमकती दलीलें) कायम की हैं कि इमाम-ए-अजल अबू जाफर तहावी (क़ुद्दिस सर्रहु) की तरफ इस मरजूह (अस्वीकृत) रिवायत को अपनाने की निस्बत में बड़ा धोखा हुआ है।

[1] दुर अल-मुख्तार, बाब अल-मसरिफ, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 2/20

पृष्ठ 106/836

محیط وبحر و درر وغیرہا میں ہے : زکوۃ ہاشمی کے غلام مکاتب کو بھی جائز نہیں حالانکہ مکاتب اغنیاء کیلئے حلال، اور وجہ وہی کہ ملک مکاتب من وجہ ملک مولی ہے اور یہاں شبہ مثل حقیقت۔ ردالمختار میں ہے:

فی البحر عن المحیط وقد قالوا انه لا یجوز لمکاتب ہاشمی لان الملك یقع للمولی من وجه و الشبهة ملحقة بالحقیقة في حقهم اھ ای ان المکاتب وان صار حراید حتی یملك ما یدفع الیه لکنه مملوك رقبة ففیه شبهة وقوع الملك لمولاه الهاشمي والشبهة معتبرة في حقه لکرامة بخلاف الغنی کما مر في العمل فلذا قید بقوله في حق بنی ہاشم اھ

بحر میں محیط سے ہے کہ علماء نے فرمایا ہے کہ ہاشمی کے مکاتب کے لیے زکوۃ جائز نہیں کیونکہ یہاں ایک لحاظ سے مولی کی ملکیت باقی ہوتی ہے اور یہاں شبہ ہاشمیوں کے حق میں حقیقی طور پر برقرار ہوتا ہے اھ یعنی مکاتب اگر چہ آزاد متصور ہوتا ہے حتی کہ جو کچھ اسے دیا جائے وہ اس کا مالک بن جاتا ہے لیکن گردن کے اعتبار سے مملوک ہوتا ہے لہذا اس صورت میں اس کے ہاشمی مولی کی ملکیت کا شبہ ہے اور یہاں ہاشمی کی شرافت کی وجہ سے شبہ کا اعتبار ہوتا ہے ، بخلاف غنی کے ، جیسا عامل میں گزرا ہے ، اسی لیے مصنف نے حق بنی ہاشم کی قید لگائی ہے اھ (ت)

بالجملہ جب حدیث وہ اور فقہ یہ ، پھر خلاف کی طرف راہ کہاں ، اب جو صاحب جو از پر فتوی دیں ان کا منشاء غلط ایک مقدوح و مرجوح و مجروح روایت ہے جو ابو عصمہ نوح بن ابی مریم جامع نے امام رضی اللہ تعالی عنہ سے حکایت کی کہ ہمارے زمانے میں بنی ہاشم کو زکوۃ روا ہے کہ سبب حرمت مال غنیمت سے خمس خمس ملنا تھا اب کہ وہ نہیں ملتا ز کوۃ نے عود کیا۔ اقول: یہ

حکایت نہ روایتہ صحیح نہ درایتہ صحیح ، ہم ابھی بیان کر آئے کہ علت حرمت بنص صریح صاحب شرع صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم و تصریحات متظافرہ حاملان شرع رحمۃ اللہ علیہم کثافت صدقات و نظامت سادات یعنی بنی ہاشم ہے ، اور تبدل زمانہ سے متبدل نہیں ہو سکتی ، اور جو دلیل اس ضعیف قیل پر بیان میں آئی ، فقیر غفر اللہ تعالٰی لہ نے اس کی کامل ناتمامی اپنے فتاوی یکم جمادی الاولی ۱۳۰۶ ہجریہ مندرجہ مجموعہ العطایا النبویۃ فی الفتاوی الرضویۃ میں بحمد اللہ تعالیٰ روشن بیانوں سے واضح کردی اسی میں اٹھارہ 'دلائل ساطعہ قائم کیے کہ امام اجل ابو جعفر طحاوی قدس سرہ کی طرف اس روایت مرجوحہ کے اخذ و اختیار کی نسبت میں بڑا دھوکا واقع ہوا

[1] درالمختار باب المصرف دار حیاء التراث العربی بیروت ۲۰/۲

Fatawa Razawiyya Volume 10

Among which seventeen are from the testimonies of the speech of the praised Imam (Imam Tahawi) himself; rather, without doubt, regarding this true school of thought and Zahir al-Riwayah, he states "bi-hadha na'khudh" (we take this) and establishes it as reliable and the basis for fatwa. A simple, easily understandable point is that the same praised Imam, in his same book Sharh Ma'ani al-Athar, in the same book, same chapter, and same discussion where he is said to have made this reverse preference, explicitly and clearly states with this very "bi-hadha na'khudh" that in our view, not just the slaves of Bani Hashim, but even their freed slaves (mawali), zakat is forbidden for them. No contradiction to this is known from our Imams. Subhan Allah! When according to him zakat was halal for Bani Hashim themselves, how could it be rational to consider it forbidden for their slaves? The irony is that here Imam Tahawi has adopted the position that for Bani Hashim, not only obligatory zakat and charities are forbidden, but even voluntary charity (Sadaqah Nafilah) is forbidden. And he says that this is the view of our three Imams (Abu Hanifa, Abu Yusuf, Muhammad), may Allah be pleased with them. Then to consider them proponents of its permissibility is such a harsh statement of impossibility. Whoever wishes to be informed of the beautiful refinement of this grand objective should refer to the Fatawa of this humble servant (the author). When it is certain that that isolated (shadh) narration is contrary to the consensus position of the three Imams and all texts (mutun) have a definitive consensus against it, and the mutawatir hadiths of the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) repel it, and in terms of evidence and reason its portion is merely lost and wasted, and the fatwa of Imam Tahawi is certainly inclined towards the side of Zahir al-Riwayah, then giving a fatwa on it is absolutely rejected, which the pure Sharia strictly forbids. Who does not know the grand stature of the agreement of texts (mutun), due to which researchers have often not accepted the corrections (tashihat) of the opposing side, nor is the name of correction and preference mentioned on that side, such that the mujtahid Imam explicitly gave a fatwa on that side. Despite all this, how severely astonishing it is to leave it and go there. It is in Durr al-Mukhtar:

Arabic Text	**Urdu Translation**
قال في الخانية وعليه الفتوى لكن المتون على الاول فعليها المعول[1]	It is stated in Khaniyah that the fatwa is upon this, but in the texts, the first view is mentioned, therefore reliance will be upon it. (T)

Who does not know that at the time of disagreement, Zahir al-Riwayah is the preferred one, even if both are appended with a fatwa. It is in Bahr al-Ra'iq:

Arabic Text	Urdu Translation
اذا اختلف التصحيح وجب الفحص عن ظاهر الرواية والرجوع اليها-[2]	When there is a difference in the correction of views, then one should search for Zahir al-Riwayah and refer only to it. (T)

Scholars state that whatever is contrary to Zahir al-Riwayah is not the school of our Imams. In the book of Durr al-Mukhtar...

---

[1] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Qisma, Mujtabai Press Delhi, 2/219. [2] Bahr al-Ra'iq, Bab al-Masraf, H.M. Saeed Company Karachi, 2/250.

जिनमें सत्रह स्वयं प्रशंसित इमाम (इमाम तहावी) के कलाम की शहादतों से हैं, बल्कि वह निस्संदेह इसी मज़हब-ए-हक़ और 'ज़ाहिर-उर-रिवायत' को 'बि-हाज़ा नाखुज़' (हम इसी को लेते हैं। त) फरमाते और मोतमिद व मुफ़्ती-बिह ठहराते हैं। एक सरल और आम समझ की बात यह है कि वही प्रशंसित इमाम अपनी उसी किताब 'शरह मआनी अल-आसार' की उसी किताब, उसी बाब, उसी बहस में जहाँ उनसे इस उलट प्राथमिकता (तरजीह-ए-माकूस) के होने का बताया जाता है, विशेष इसी 'बि-हाज़ा नाखुज़' से साफ़ और स्पष्ट स्पष्टीकरण फरमाते हैं कि हमारे नज़दीक बनी हाशिम के गुलाम तो गुलाम, उनके मवाली (आज़ाद किए गए गुलामों) पर भी ज़कात हराम है। हमारे इमामों से इसके विपरीत कुछ भी ज्ञात नहीं है। सुभान अल्लाह! जब उनके नज़दीक स्वयं बनी हाशिम के लिए ज़कात हलाल थी, तो उनके गुलामों पर हराम मानना भला कैसे तर्कसंगत हो सकता था? विडंबना यह है कि यहीं इमाम तहावी ने यह मज़हब अपनाया है कि बनी हाशिम पर न केवल अनिवार्य ज़कात और सदक़ात, बल्कि नफ़ली सदक़ा भी हराम है। और फरमाते हैं कि हमारे तीनों इमामों (अबू हनीफ़ा, अबू यूसुफ़, मुहम्मद) रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम का यही कौल (कथन) है। फिर उन्हें इसके जायज़ होने का कायल (समर्थक) मानना कितना कठिन और असंभव कथन है। जिसे इस महान उद्देश्य के सुंदर शोध की जानकारी चाहिए, वह इस फकीर (लेखक) के फ़तावा की ओर रुजू करे (संपर्क करे)। और जब निश्चित रूप से ज्ञात हो गया कि वह शाज़ (दुर्लभ/एकाकी) रिवायत तीनों इमामों के इज्माई (सर्वसम्मत) मज़हब के विपरीत है और तमाम मुतून (मूल ग्रंथों) का इसके विपरीत पर इत्तेफ़ाक है, और सैय्यद-ए-आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की मुतवातिर हदीसें इसका खंडन करती हैं, और दलील व विवेक में भी इसका हिस्सा केवल व्यर्थ और खोया हुआ है, और इमाम तहावी का फ़तवा निश्चित रूप से 'ज़ाहिर-उर-रिवायत' के पक्ष में है, तो उस पर फ़तवा देना पूर्णतः अस्वीकार्य है, जिससे शरीअत-ए-मुतह्हरा निश्चित रूप से रोकती है। कौन नहीं जानता कि मुतून (मूल ग्रंथों) के सर्वसम्मति की कैसी महान शान है, जिसके कारण कई बार शोधकर्ताओं ने विरोधी पक्ष के संशोधनों (तसहीहात) को स्वीकार नहीं किया, और न ही उस पक्ष में संशोधन और प्राथमिकता का नाम भी होने दिया, भले ही इमाम-ए-मुज्तहिद ने स्पष्ट रूप से उसी पक्ष पर फ़तवा दिया हो। इसके बावजूद उसे छोड़कर उधर जाना कितना अधिक आश्चर्यजनक है। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
قال في الخانية وعليه الفتوى لكن المتون على الاول فعليها المعول[1]	खानिया में है कि फ़तवा इसी पर है लेकिन मुतून में पहला कौल है लिहाज़ा इसी पर एतमाद (भरोसा) होगा। (त)

कौन नहीं जानता कि मतभेद के समय 'ज़ाहिर-उर-रिवायत' ही प्राथमिकता वाला होता है, भले ही दोनों के साथ फ़तवा जुड़ा हो। 'बह्रुर राइक' में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
اذا اختلف التصحيح وجب الفحص عن ظاهر الرواية والرجوع اليها-[2]	जब अक़वाल (कथनों) की तसहीह में इख्तिलाफ़ (मतभेद) हो तो ज़ाहिर-उर-रिवायत की तलाश और उसकी तरफ ही रुजू करना चाहिए। (त)

विद्वान फरमाते हैं कि जो कुछ 'ज़ाहिर-उर-रिवायत' के विरुद्ध है, वह हमारे इमामों का मज़हब नहीं है। 'दुर्रे मुख्तार' की किताब...

---

[1] दुर्रे मुख्तार किताबुल क़िस्मा मतब'अ मुज्तबाई दिल्ली २/ २१९ [2] बह्रुर राइक बाबुल मसरफ एच.एम. सईद कंपनी कराची २/ २५०

جن میں سترہ "خود کلام امام ممدوح کی شہادات سے ہیں بلکہ وہ بلا شبہ اسی مذہب حق وظاہر الروایہ کو بھذا ناخذ (ہم اسی کو لیتے ہیں۔ ت) فرماتے اور معتمد و مفتی بہ ٹھہراتے ہیں، ایک سہل سی عام فہم بات یہ ہے کہ وہی امام ممدوح اپنی اسی کتاب شرح معانی الآثار کی اسی کتاب، اسی باب، اسی بحث میں جہاں ان سے اس ترجیح معکوس کا وقوع بتایا جاتا ہے خاص اسی بھذا ناخذ سے صاف صریح تصریح فرماتے ہیں کہ ہمارے نزدیک بنی ہاشم کے غلام تو غلام، موالی پر بھی زکوٰۃ حرام فرماتے ہیں۔ ہمارے ائمہ سے اس کا خلاف معلوم نہیں۔ سبحان اللہ جب ان کے نزدیک خود بنی ہاشم کے لیے زکوٰۃ حلال تھی تو ان کے غلاموں پر حرام ماننا کیونکر معقول تھا، طرفہ یہ کہ یہیں امام طحاوی نے اس مذہب کو اختیار فرمایا ہے کہ بنی ہاشم پر نہ صرف زکوٰۃ صدقات واجبہ بلکہ صدقہ نافلہ بھی حرام ہے۔ اور فرماتے ہیں ہمارے ائمہ ثلثہ رضی اللہ تعالٰی عنہم کا یہی قول ہے، پھر انہیں قائل جواز ماننا کیسا سخت قول بالمحال ہے جسے اس مطلب جلیل کی تنقیح جمیل پر اطلاع منظور ہو فتاوٰی فقیر کی طرف رجوع کرے، اور جب یقیناً معلوم کہ وہ روایت شاذہ مذہب اجماعی ائمہ ثلثہ کے خلاف واقعہ اور تمام متون کا اس کے خلاف پر اجماع قاطع، اور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی احادیث متواترہ اس کی دافع، اور دلیل و درایت میں بھی اس کا حصہ محض ذاہب و ضائع، اور فتوٰی امام طحاوی یقیناً جانب ظاہر الروایہ راجح، تو اس پر فتوٰی دینا قطعاً مردود، جس سے شرع مطہر جزماً مانع، کون نہیں جانتا کہ اطباق متون کی کیسی شان جلیل ہے جس کے سبب بارہا محققین نے جانب خلاف کی تصحیحوں کو قبول نہ کیا نہ اس طرف تصحیح و ترجیح کا نام بھی ہونے کہ صراحۃً امام مجتہد نے اسی جانب پر فتوٰی دیا ہو بایں ہمہ اسے چھوڑ کر اُدھر جانا کس قدر موجب عجب شدید ہے، در مختار میں ہے :

عربی عبارت	اردو ترجمہ
قال في الخانية وعليه الفتوى لكن المتون على الاول فعليها المعول[1]	خانیہ میں ہے کہ فتویٰ اسی پر ہے لیکن متون میں پہلا قول ہے لہٰذا اسی پر اعتماد ہوگا۔ (ت)

کون نہیں جانتا کہ ہنگام اختلاف ظاہر الروایہ ہی مرجح ہے اگرچہ دونوں مذیل بفتویٰ ہوں۔ بحر الرائق میں ہے :

عربی عبارت	اردو ترجمہ
اذا اختلف التصحيح وجب الفحص عن ظاہر الرواية والرجوع اليها-[2]	جب تصحیح اقوال میں اختلاف ہو تو ظاہر الروایہ کی تلاش اور اس کی طرف ہی رجوع کرنا چاہئے (ت)

علماء فرماتے جو کچھ ظاہر الروایہ کے خلاف ہے ہمارے ائمہ کا مذہب نہیں۔ در المختار کی کتاب

---

1 در مختار کتاب القسمہ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۲۱۹ 2 بحر الرائق باب المصرف ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۲۵۰

Fatawa Ridawiyya Volume 10

In Ihya' al-Mawat it is said: Ma khalafa zahir al-riwayah laysa madhhaban li-ashabina[1] | What is against the 'Zahir al-Riwayah' (dominant narration) is not the school of our companions. (T)

Then, when the fatwa is specifically on this side and there is nothing on that side, how far is it from the juristic path to go there? Who doesn't know how much the strength of evidence warrants reliance, to the point that scholars say: La yu'dalu 'an dirayati ma waqafaha riwayatun[2] kama fi al-ghunyati sharh al-munyati wa radd al-muhtar wa ghayrihima. | A rational evidence that conforms to a narrated evidence will not be turned away from, as it is in Munyah Sharh Ghunyah and Radd al-Muhtar etc. (T)

Consider this rejection of the narration and look at the situation of our topic; when the conformity of a narration is a barrier to turning away, how can a contradiction of what is in 'Zahir al-Riwayah' be acceptable? Furthermore, on this side are Mutawatir (continuous) Hadiths, for all of which there is such certainty of health as if listening with one's own ears to the sacred words of the Noble Presence, peace and blessings of Allah be upon him. I cannot say that even after these reasons, that narration remains acceptable, let alone worthy of attention. Necessity demands that you note that a vast number of scholars, authors of texts, commentaries, and fatwas, in their great, noble, and reliable works such as Quduri, Hidayah, Wafi, Kanz, Wiqayah, Niqayah, Islah, Multaqa, Hidayah, Tanwir, Kafi, Sharh Wiqayah, Idah, Ashbah, Durr al-Mukhtar, Tariqah Muhammadiyya, Hadiqah Nadiyya, Khaniyya, Khulasah, Khizanat al-Muftiyin, Jawahir al-Ikhlati, Alamgiri, etc., did not even mention the name of this narration, and generation after generation they have been making clear statements of prohibition and unlawfulness. Were they not aware of this isolated (shadh) narration? Certainly they were, but they did not consider it worthy of attention, and indeed it was worthy of being ignored. These fifty-two passages and twenty-seven (27) Hadiths to which this humble servant has pointed in this writing, by the praise of Allah, are currently before me; I refrained from copying them all for fear of prolixity. In short, there is absolutely no room for doubt or suspicion that Zakat is certainly forbidden for the noble Sayyids and the Banu Hashim; it is neither permissible for them to take it nor for anyone to give it to them. Giving it does not fulfill the obligation of Zakat; rather, nothing is gained but sin. And issuing a fatwa on its permissibility is purely wrong and void, a ruse of validity, rather it is devoid of any

ground for indulgence and is useless. Is it not known what harsh words the noble scholars have spoken regarding such a fatwa? In Durr al-Mukhtar it says:

Al-hukmu wa al-futya bi al-qawl al-marjuh jahlu wa kharqun li al-ijma' ah[3] wa la hawla wa la quwwata illa billah al-ali al-azim. | A ruling and fatwa based on a weak (marjuh) opinion is ignorance and a violation of consensus (ijma'). Finish. There is no power and no strength except with Allah, the High, the Magnificent. (T)

[1] Radd al-Muhtar, Kitab Ihya' al-Mawat, Dar Ihya' al-Turath al-Arabi, 5/8 [2] Radd al-Muhtar, Dar Ihya' al-Turath Beirut 1/312 and Ghunyah li-Mustamli Sharh Munyah al-Musalli, Suhail Academy Lahore p. 295 [3] Durr al-Mukhtar, Khutbat al-Kitab, Matba' Mujtabai Delhi 1/15

फ़तावा रिज़विया, जिल्द दस

एहयाउल मवात में है: मा ख़ालफ़ा ज़ाहिर अर-रिवाया लैसा मज़हबन ल-असहाबिना[1] | जो ज़ाहिर रिवायत के ख़िलाफ़ हो वह हमारे असहाब का मज़हब नहीं होता। (त)

फिर जबकि ख़ास इसी तरफ़ फ़तवा हुआ और उस जानिब कुछ नहीं तो उधर चलना फ़िक़्ही तरीके से कितना दूर है, कौन नहीं जानता कि दलील की ताक़त किस क़दर भरोसे के लायक़ होती है, यहाँ तक कि उलेमा फ़रमाते हैं: ला युअदलु अन दिरायति मा वाक़फ़हा रिवायतुन[2] कमा फ़िल ग़ुनिया शरह अल-मुनिया व रद्दुल मुहतार वग़ैरहुमा। | उस अक़्ली दलील से मुँह नहीं मोड़ा जाएगा जो नक़्ली दलील के मुताबिक़ हो जैसा कि मुनिया शरह ग़ुनिया और रद्दुल मुहतार वग़ैरह में है। (त)

रिवायत के इस इनकार पर नज़र कीजिए और हमारे ज़ेर-ए-बहस मामले की हालत देखिए; जब रिवायत की मुवाफ़िक़त रास्ता बदलने से रोकती है, तो 'मा हिया अर-रिवायत' के ख़िलाफ़ बात कैसे क़बूल की जा सकती है? फिर इस तरफ़ अहादीस-ए-मुतवातिरा हैं, जिनकी सेहत पर ऐसा यक़ीन है गोया हम अपनी कानों से हुज़ूर पुरनूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पाक कलाम सुन रहे हों। मैं नहीं कह सकता कि इन वजूहों के बाद भी वह रिवायत क़बूल तो दूर, ध्यान देने के क़ाबिल भी ठहरे। ज़ाहिर है कि बड़ी तादाद में उलेमा, जो मतून, शूरूह और फ़तावा के मुसन्निफ़ हैं, उन्होंने अपनी अज़ीम और मोतबर किताबों जैसे कि क़ुदूरी, हिदाया, वाफ़ी, कन्ज़, वक़ाया, नक़ाया, इस्लाह, मुल्तक़ा, हिदाया, तनवीर, काफ़ी, शरह वक़ाया, ईज़ाज़, अशबाह, दुर्र-ए-मुख़्तार, तरीक़ा मोहम्मदिया, हदीक़ा नदिया, ख़ानिया, ख़ुलासा, ख़ज़ानतुल मुफ़्तीन, जवाहिरे अख़लाती, आलमगीरी वग़ैरह में इस रिवायत का नाम तक नहीं लिया और नस्ल दर नस्ल मनाही और हराम होने के साफ़ अहकाम देते आए। क्या वे इस शाज़ (कमज़ोर) रिवायत से वाक़िफ़ नहीं थे? यक़ीनन थे, मगर उसे तवज्जो के क़ाबिल नहीं समझा, और बेशक वह इसी लायक़ थी। ये बावन इबारतें और सत्ताईस (27) हदीसें जिनकी तरफ़ इस फ़क़ीर ने इस तहरीर में इशारा किया है, अल्लाह के फ़ज़्ल से इस वक़्त मेरे सामने हैं; तवातुल के ख़ौफ़ से सबको नक़्ल करने से परहेज़ किया। मुख़्तसर यह कि इसमें कोई शक-ओ-शुबा नहीं कि सादात-ए-किराम और बनी हाशिम पर ज़कात यक़ीनन हराम है, न उन्हें लेना जायज़ है न देना जायज़ है, न उनके देने से ज़कात अदा होगी; इसमें गुनाह के सिवा कुछ हासिल नहीं। और इसके जायज़ होने पर फ़तवा देना महज़ ग़लत और बातिल है, और सेहत का बहाना बल्कि नज़रअंदाज़ करने की गुंजाइश से भी ख़ाली और बेकार है। क्या मालूम नहीं कि उलेमा-ए-किराम ने ऐसे फ़तवे के बारे में कितने सख़्त अलफ़ाज़ इरशाद फ़रमाए हैं। दुर्र-ए-मुख़्तार में है:

अल-हुक्मु वल-फ़ुतया बिल-क़ौल अल-मरजूह जहलुन व ख़रक़ुन लिल-इजमाअ अह[3] वला हौल वला क़ूव्वता इल्ला बिल्लाह अल-अली अल-अज़ीम। | मरजूह (कमज़ोर) क़ौल पर फ़ैसला और फ़तवा देना जहालत है और इजमाअ (सर्वसम्मति) को तोड़ना है। वला हौल वला क़ूव्वता इल्ला बिल्लाह अल-अली अल-अज़ीम। (त)

[1] रद्दुल मुहतार, किताब एहयाउल मवात, दारुल एहयाउत तुराथ अल-अरबी 8/5 [2] रद्दुल मुहतार, दारुल एहयाउत तुराथ बेरुत 1/312 और ग़ुनिया लिमुस्तमली शरह मुनियतुल मुसल्ली, सुहैल एकेडमी लाहौर, पृष्ठ 295 [3] दुर्रे मुख़्तार, ख़ुतबतुल किताब, मतबा मुजतबाई दिल्ली 1/15

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

احیاء الموات میں ہے: مَا خَالَفَ ظَاهِرَ الرِّوَايَةِ لَيْسَ مَذْهَبًا لِّاَصْحَابِنَا 1 | جو ظاہر روایت کے خلاف ہو وہ ہمارے اصحاب کا مذہب نہیں ہوتا۔ (ت)

پھر جبکہ خاص اسی طرف فتوٰی ہوا اور اس جانب کچھ نہیں تو اُدھر چلنا روشِ فقہی سے کتنا بعید ہے، کون نہیں جانتا کہ قوتِ دلیل کس قدر موجبِ تعویل، یہاں تک کہ علماء فرماتے ہیں: لَا يُعْدَلُ عَن دِرَايَةِ مَا وَاقَفَهَا رِوَايَةٌ 2 كَمَا فِی الغُنْيَةِ شَرْحِ المُنيَةِ وردالمختار وغیرھما۔ | اس عقلی دلیل سے اعراض نہیں کیا جائے گا جو نقلی دلیل کے مطابق ہو جیسا کہ منیہ شرح غنیہ اور ردالمحتار وغیرہ میں ہے۔ (ت)

اس تنکیر روایت پر نظر کیجئے اور مانحن فیہ کی حالت دیکھئے، جب روایت کی موافق مانع عدول تو ما ہِیَ الرِّوَايَةِ کا خلاف کیونکر مقبول، پھر اس طرف احادیث متواترہ، ان سب کے جن کے صحت پر ایسا یقین کہ گویا بگوشِ خویش کلامِ اقدس حضور پر نور صلوٰۃ اللہ تعالٰی وسلامہ علیہ سُن رہے ہیں، میں نہیں کہہ سکتا کہ ان کے وجوہ کے بعد بھی وہ روایت قبول تو قبول، التفات کے قابل ٹھہرے۔ لاجرم ملاحظہ کیجئے کہ بکثرت علماء اصحابِ متون و شروح و فتاوٰی اپنی تصانیفِ عظیمہ جلیلہ معتمدہ مثل قدوری و ہدایہ و وافی و کنز و وقایہ و نقایہ و اصلاح و ملتقی و ہدایہ و تنویر و کافی و شرح وقایہ و ایضاح و اشباہ و درمختار و طریقہ محمدیہ و حدیقہ ندیہ و خانیہ و خلاصہ و خزانۃ المفتین و جواہر اخلاطی و عالمگیری وغیرہا میں اس روایت کا نام تک زبان پر نہ لائے اور طبقۂ فطبقہ منع و تحریمِ روشن تصریحیں کرتے آئے، کیا وہ اس روایت شاذہ سے آگاہ نہ تھے، یقیناً تھے، مگر اسے قابلِ التفات نہ سمجھے، اور بے شک وہ اسی قابل تھی۔ یہ باون عبارتیں اور ستائیس ۲۷ حدیثیں جن کی طرف فقیر نے اس تحریر میں اشارہ کیا، بحمد اللہ اس وقت فقیر کے

پیش نظر ہیں، سب کی نقل سے بخوفِ تطویل دست کشی کی۔ بالجملہ اصلاً محلِ شک وار تیاب نہیں کہ ساداتِ کرام و بنی ہاشم پر زکوٰۃ یقیناً حرام، نہ انہیں لینا جائز نہ دینا جائز، نہ ان کے دئے زکوٰۃ ادا ہو تو اس میں گناہ کے سوا کچھ حاصل نہیں، اور اس کے جواز پر فتویٰ دینا محض غلط باطل، اور حیلہ صحت بلکہ قابلیت اغماض سے عاری و عاطل، کیا معلوم نہیں کہ علمائے کرام نے ایسے فتویٰ کی نسبت کیسے سخت الفاظ ارشاد کیے ہیں۔ در مختار میں ہے:

الْحُکْمُ وَ الْفَتْیَا بِالْقَوْلِ المرجوحِ جَھلٌ وخرقٌ لِلاجماع اھ 3 ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم۔ | قول مرجوح پر فیصلہ و فتویٰ جہالت اور اجماع کو توڑنا ہے اھ ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم (ت)

1 رد المحتار کتاب احیاء الموات دار احیاء التراث العربی ۸/۵ 2 رد المحتار دار احیاء التراث بیروت ۱/۳۱۲ وغنیہ لمستملی شرح منیۃ المصلی سہیل اکیڈمی لاہور ص ۲۹۵ 3 در مختار خطبہ الکتاب مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۵

The question remains: how should one maintain solidarity with the noble Sayyids in this tumultuous era? I say: It is the misfortune of wealthy people if they do not serve these exalted personages by offering gifts from their pure wealth. Remember the time when no refuge or shelter will be found even for the physical eyes except for the noble grandfather of these personalities (peace and blessings of Allah be upon him). Do they not like to spend a portion of that wealth, which was granted to them from his court for his sake and which they will soon leave behind to go underground empty-handed, on his pure and blessed descendants for his pleasure? So that on that day of severe need, they may be honored with the heavy rewards and great honors from that generous, kind, and merciful one (upon whom be the best of prayers and peace). Ibn Asakir narrates from the Commander of the Faithful, Mawla Ali (may Allah honor his face), that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said:

Whoever does a good turn for my household members, I will reward him for it on the Day of Resurrection. [1]	Whoever does a good turn for any of my household (Ahl al-Bayt), I will grant him its reward on the Day of Resurrection.

Khatib Baghdadi narrates from the Commander of the Faithful, Uthman Ghani (may Allah be pleased with him), that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said:

Whoever does a good deed for any of the descendants of Abd al-Muttalib in this world, it is incumbent upon me to reward him when he meets me. [2]	Whoever does a good deed for any of the descendants of Abd al-Muttalib in this world, it is mandatory upon me to reward him when he meets me on the Day of Resurrection.

Allah is Great, Allah is Great! The Day of Resurrection, that day of great need, that day of severe necessity, and indigents like us; and the one to grant the reward is Muhammad (peace and blessings of Allah be upon him), the owner of the crown. God knows what he will give and how he will make one prosper. One glance of his grace is sufficient for all the important affairs of both worlds; indeed, this reward itself is higher and more precious than millions of rewards, towards which the blessed phrase 'when he meets me' points. Expressing it with the word 'idha' (when), by the praise of Allah, brings the glad tidings of the promise of union and the vision of the Beloved of the Lord of Majesty on the Day of Resurrection. O Muslims! What else is

required? Run and take this wealth and good fortune, and with Allah is success. And those of moderate means if their expenses...

---

[1] Kanz al-Ummal, cited by Ibn Asakir, Hadith 34152, Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 12/95. [2] Tarikh Baghdad, biography 5221, 5 Abdullah bin Muhammad al-Fazari, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 10/103.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

यह सवाल कि फिर इस उथल-पुथल भरे समय में सादात किराम (सैयदों) की सहायता कैसे की जाए? मैं कहता हूँ: बड़े धनवानों के लिए यह दुर्भाग्य की बात है यदि वे अपने शुद्ध धन से उपहार के रूप में इन महानुभावों की सेवा न करें। वह समय याद करो जब इन महानुभावों के महान पूर्वज, अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के अलावा बाहरी आँखों को भी कोई शरण या आश्रय नहीं मिलेगा। क्या उन्हें यह पसंद नहीं आता कि वे उस धन का एक हिस्सा, जो उन्हें उन्हीं के सदके में उन्हीं के दरबार से मिला है और जिसे वे जल्द ही छोड़कर खाली हाथ ज़मीन के नीचे जाने वाले हैं, उनकी प्रसन्नता के लिए उनकी पवित्र और धन्य संतान पर खर्च करें? ताकि उस अत्यंत आवश्यकता के दिन वे उस उदार, दयालु और कृपालु (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के बड़े पुरस्कारों और महान सम्मानों से सम्मानित हों। इब्न असाकिर ने अमीरुल मोमिनीन मौला अली (करमल्लाहु वज्हहु) से रिवायत की है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

मन् सनाअ इला अहलि बैती यदन् काफ़ातुहू अलैहा यौमल क़ियामः। [1]	जो मेरे अहले बैत में से किसी के साथ अच्छा व्यवहार करेगा, मैं कयामत के दिन उसका बदला उसे प्रदान करूँगा।

खतीब बग़दादी ने अमीरुल मोमिनीन उस्मान ग़नी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

मन् सनाअ सनीअतन् इला अहदिम मिन् खलफ़ि अब्दुल मुत्तलिब फ़िद दुनिया फ़अलैया मुकाफ़ातुहू इज़ा लक़ीयनी। [2]	जो व्यक्ति दुनिया में अब्दुल मुत्तलिब की औलाद में से किसी के साथ नेकी करेगा, उसका बदला देना मुझ पर लाज़िम है जब वह कयामत के दिन मुझसे मिलेगा।

अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर! कयामत का दिन, वह कयामत का दिन, वह अत्यंत आवश्यकता और भारी ज़रूरत का दिन, और हम जैसे मोहताज; और बदला देने वाले ताज वाले मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)। खुदा जाने क्या कुछ देंगे और कैसा निहाल कर देंगे। उनकी एक कृपादृष्टि दोनों जहानों के सभी महत्वपूर्ण कार्यों के लिए पर्याप्त है, बल्कि यह बदला स्वयं करोड़ों बदलों से श्रेष्ठ और मूल्यवान है, जिसकी ओर महान शब्द 'इज़ा लक़ीयनी' (जब वह मुझसे मिलेगा) संकेत करता है। 'इज़ा' शब्द के साथ व्यक्त करना, अल्लाह की प्रशंसा के साथ, कयामत के दिन ज़ुल-जलाल (प्रतापी रब) के महबूब से मिलन और दीदार के वादे की खुशखबरी सुनाता है। ऐ

मुसलमानों! और क्या चाहिए? दौड़ो और इस धन और सौभाग्य को प्राप्त करो, और सफलता अल्लाह ही की ओर से है। और मध्यम स्थिति वाले लोग यदि खर्च...

---

[1] कंज़ुल उम्माल, इब्न असाकिर के हवाले से, हदीस 34152, मुअस्ससतुत रिसाला, बेरूत, 12/95।
[2] तारीख़ बग़दाद, अनुवाद 5221, 5 अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद अल-फज़ारी, दारुल किताब अल-अरबी, बेरूत, 10/103।

رہا یہ کہ پھر اس زمانہ پُر آشوب میں حضرات سادات کرام کی مواسات کیونکر ہو، اقول: بڑے مال والے اگر اپنے خالص مالوں سے بطور ہدیہ ان حضراتِ عالیہ کی خدمت نہ کریں تو ان کی بے سعادتی ہے، وہ وقت یاد جب ان حضرات کے جد اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سو ظاہری آنکھوں کو بھی کوئی ملجا و مادی نہ ملے گا، کیا پسند نہیں آتا کہ وہ مال جو اُنھیں کے صدقے میں انھیں کی سرکار سے عطا ہوا، جسے عنقریب چھوڑ کر پھر ویسے ہی خالی ہاتھ زیر زمین جانے والے ہیں، اُن کی خوشنودی کے لیے ان کے پاک مبارک بیٹوں پر اُس کا ایک حصہ صرف کیا کریں کہ اُس سخت حاجت کے دن اُس جواد کریم رؤوف و رحیم علیہ افضل الصلوٰۃ والتسلیم کے بھاری انعاموں، عظیم اکراموں سے مشرف ہوں۔ ابن عساکر امیر المومنین مولا علی کرم اللہ وجہہ سے راوی، رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

مَنْ صَنَعَ إِلٰی أَهْلِ بَيْتِي يَدًا كَافَاتُه جو میرے اہل بیت میں سے کسی کے ساتھ اچھا سلوک کرے گا عَلَيْهَا يَوْمَ الْقِيَامَةِ۔ [1] میں روزِ قیامت اس کا صلہ اسے عطا فرماؤں گا۔

خطیب بغدادی امیر المومنین عثمان غنی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی، رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

مَنْ صَنَعَ صَنِيعَةً إِلٰی أَحَدٍ مِّنْ خَلَفِ جو شخص اولاد عبد المطلب میں کسی کے ساتھ دنیا میں عَبْدِ الْمُطَّلِبِ فِي الدُّنْيَا فَعَلَيَّ مُكَافَاتُه إِذَا نیکی کرے اس کا صلہ دینا مجھ پر لازم ہے جب وہ روزِ لَقِيَنِي۔ [2] قیامت مجھ سے ملے گا۔

اللہ اکبر، اللہ اکبر! قیامت کا دن، وہ قیامت کا دن، وہ سخت ضرورت سخت حاجت کا دن، اور ہم جیسے محتاج، اور صلہ عطا فرمانے کو محمد صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم صاحب التاج، خدا جانے کیا کچھ دیں اور کیسا کچھ نہال فرما دیں، ایک نگاہِ لطف اُن کی جملہ مہمات دو جہاں کو بس ہے، بلکہ خود یہی صلہ کروڑوں صلے سے اعلیٰ وانفس ہے، جس کی طرف کلمہ کریمہ اذا لقینی (جب روزِ قیامت مجھ سے ملے گا ت) اشارہ فرماتا ہے، بلفظ اذا تعبیر فرمانا بحمد اللہ بروزِ قیامت وعدہ وصال و دیدار محبوب ذی الجلال کا مژدہ سُناتا ہے۔ مسلمانو! اور کیا درکار ہے دوڑو اور اس دولت و سعادت کو لو وباللہ التوفیق اور متوسط حال والے اگر مصارف

---

[1] کنز العمال بحوالہ ابن عساکر حدیث ۳۴۱۵۲ موسسۃ الرسالہ بیروت ۹۵/۱۲ [2] تاریخ بغداد ترجمہ ۵۲۲۱ ۵ عبداللہ بن محمد الفزاری دار الکتاب العربی بیروت ۱۰۳/۱۰

Fatawa Razawiyya Volume 10

If the scope for recommended (Mustahab) acts is not seen, then by the praise of Allah, a strategy is possible whereby Zakat is fulfilled as Zakat and service to the Sayyids (descendants of the Prophet) is also performed. That is, give some money from the Zakat funds to a reliable Muslim who is eligible for Zakat, with the intention of Zakat, making him the owner. Then ask him to offer it as a Nazar (votive offering) on your behalf to such-and-such Sayyid. In this way, both objectives will be achieved: Zakat went to the poor person, and what the Sayyid received was a Nazar (gift), fulfilling his need. Both the poor person and the giver receive the full reward for serving the Sayyid. This is mentioned in Al-Dhakhirah and Al-Hindiyyah:

[Arabic Box - Left]: If one intends to shroud a deceased from his wealth's Zakat, it is not permissible. The legal stratagem (Heela) is to give it as charity to a poor person from the family of the deceased, then he provides the shroud with it. Thus, for the giver, there is the reward of charity, and for the family of the deceased, the reward of shrouding. Likewise, in all chapters of piety, like building mosques and bridges, the stratagem is to give the amount of his Zakat to a poor person and then command him to spend it on these causes. Thus, the giver will have the reward of charity, and the poor person will have the reward of building the mosque and the bridge. Summary. I say: It appears to me that the reward for these acts of proximity is for both of them together, because he who guides to good is like the one who does it. It has been narrated consecutively from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) in similar cases that the reward is complete for every participant in goodness; partnership does not decrease any of the rewards of the partners. This is what led me to be certain about it, which you have heard, then I saw it in Durr-ul-Mukhtar.

[Urdu Box - Right]: If someone wants to prepare a shroud for a deceased person from Zakat, it is not permissible. Yes, he can use this legal stratagem: give it as charity to some poor member of the deceased's family, and that person prepares the deceased's shroud. Now the owner (of the wealth) will have the reward of charity and the deceased's family will have the reward of shrouding. A similar stratagem is permissible for all good deeds, such as building mosques and bridges: the owner gives an amount equal to his Zakat to some poor person and tells him to spend it on these matters. Now the reward for charity will be for the giver, and the reward for building the mosque or bridge will be for the poor person. Summary. (T) I say: Then this point became clear that the reward for these good deeds is for both of them

because whoever guides to a virtue also receives a reward like the one who performs the act. It is established through multiple narrations from the Prophet (peace be upon him) in such matters that every partner in a good deed receives the full reward; partnership does not cause any reduction in the reward of the partners. Based on the mentioned arguments, I was certain of this which you have heard, then I [saw it in] Durr-ul-Mukhtar.

1 Fatawa Hindiyyah, Book of Stratagems, Chapter Three on Zakat issues, Noorani Kutub Khana Peshawar, 6/392. Page 110 of 836

फतावा रज़विया जिल्द दहम

यदि मुस्तहब (पसंदिदा कार्यों) की गुंजाइश नहीं दिखती, तो अल्लाह की प्रशंसा से, वह तदबीर (उपाय) संभव है जिससे ज़कात की ज़कात भी अदा हो जाए और सादात (नबी के वंशजों) की सेवा भी हो जाए। अर्थात, ज़कात के माल से कुछ रुपये ज़कात की नीयत से किसी विश्वसनीय मुसलमान को, जो ज़कात का हक़दार हो, देकर उसका मालिक बना दें, फिर उससे कहें कि तुम अपनी तरफ से फलां सैय्यद की नज़्र (भेंट) कर दो। इसमें दोनों उद्देश्य प्राप्त हो जाएंगे कि ज़कात तो उस फ़कीर को मिल गई और यह जो सैय्यद ने पाया वह नज़राना था, उसका फ़र्ज़ अदा हो गया और सैय्यद की सेवा का पूर्ण सवाब (पुण्य) उसे और फ़कीर दोनों को मिला। ज़ख़ीरा व हिन्दिया में है:

[अरबी बॉक्स - बायां]: यदि कोई व्यक्ति अपने धन की ज़कात से मय्यत को कफ़न देना चाहे तो यह जायज़ नहीं है। उपाय (हीला) यह है कि इसे मय्यत के परिवार के किसी फ़कीर को सदक़ा कर दिया जाए, फिर वह उससे कफ़न तैयार करे। इस प्रकार, देने वाले के लिए सदक़े का सवाब होगा और मय्यत के परिवार के लिए कफ़न देने का सवाब होगा। इसी प्रकार, पुण्य के सभी अध्यायों में, जैसे मस्जिदों का निर्माण और पुलों का निर्माण, उपाय यह है कि अपनी ज़कात की मात्रा के बराबर किसी फ़कीर को सदक़ा दे दिया जाए और फिर उसे इन कार्यों में खर्च करने का आदेश दिया जाए। इस प्रकार, सदक़ा देने वाले को सदक़े का सवाब मिलेगा और फ़कीर को मस्जिद और पुल बनाने का सवाब मिलेगा। सारांश। मैं कहता हूँ: मुझे यह प्रतीत होता है कि इन निकटता के कार्यों का सवाब उन दोनों के लिए एक साथ है, क्योंकि जो भलाई की ओर मार्गदर्शन करता है वह उसे करने वाले के समान है। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से इसी तरह के मामलों में निरंतर (मुतवातिर) वर्णित है कि भलाई में हर भागीदार के लिए सवाब पूरा है; भागीदारी भागीदारों के पुरस्कार में से कुछ भी कम नहीं करती है। यही वह चीज़ है जिसने मुझे इसके बारे में निश्चित होने के लिए प्रेरित किया, जिसे आपने सुना है, फिर मैंने इसे 'दुर्रे मुख्तार' में देखा।

[उर्दू बॉक्स - दायां]: यदि कोई व्यक्ति ज़कात से मय्यत (मृतक) का कफ़न तैयार करना चाहे तो जायज़ नहीं है, हाँ यह हीला (उपाय) कर सकता है कि मय्यत के खानदान के किसी फ़कीर पर सदक़ा कर दे और वह मय्यत का कफ़न तैयार कर दे, तो अब मालिक के लिए सदक़े का और अहले मय्यत (मृतक के परिवार) के लिए तक़फ़ीन (कफ़न पहनाने) का सवाब होगा। इसी तरह का हीला तमाम नेक कामों जैसे मस्जिदों के निर्माण और पुलों के निर्माण में जायज़ है कि मालिक ज़कात की मात्रा के बराबर किसी फ़कीर को दे दे और उसे कहे कि तुम इन कामों पर खर्च कर दो। तो अब

सदक़ा करने वाले के लिए सदक़े का और मस्जिद व पुल निर्माण का सवाब फ़कीर को होगा। सारांश। (त) मैं कहता हूँ: फिर यह बात स्पष्ट हुई कि इन नेक कामों का सवाब दोनों के लिए है क्योंकि जो किसी नेकी का मार्गदर्शन करता है उसे भी अमल करने वाले की तरह सवाब मिलता है, हुज़ूर अलैहिस्सलाम से ऐसे मामलों में मुतवातिर (निरंतर) तौर पर साबित है कि नेक काम में हर भागीदार को पूरा सवाब मिलता है, भागीदारी से भागीदारों के पुण्य में कोई कमी नहीं आती। मुझे इस पर उल्लिखित दलीलों की वजह से दृढ़ विश्वास था जिसे तुम सुन चुके फिर मैंने 'दुर्रे मुख्तार' [में देखा]...

1 फतावा हिन्दिया, किताबुल हियल, तीसरा अध्याय ज़कात के मसलों में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 6/392 पृष्ठ 110/836

مستحبہ کی وسعت نہیں دیکھتے تو بحمد اللہ وہ تدبیر ممکن ہے کہ زکوۃ کی زکوۃ ادا ہو اور خدمت سادات بھی بجا ہو یعنی کسی مسلمان مصرف زکوۃ معتمد علیہ کو کہ اس کی بات سے نہ پھرے، مال زکوۃ سے کچھ روپے بہ نیت زکوۃ دے کر مالک کر دے، پھر اس سے کہے تم اپنے طرف سے فلاں سید کی نذر کر دو اس میں دونوں مقصود حاصل ہو جائیں گے کہ زکوۃ تو اس فقیر کو گئی اور یہ جو سید نے پایا نذرانہ تھا، اس کا فرض ادا ہو گیا اور خدمت سید کا کامل ثواب اسے اور فقیر دونوں کو ملا، ذخیرہ و ہندیہ میں ہے:

[Arabic Box - Left]: ذا اراد ان یکفن میتا عن زکوۃ ماله لا یجوز والحیلة ان یتصدق بها علی فقیر من اهل المیت ثم هو یکفن به فیکون له ثواب الصدقة ولاهل المیت ثواب التکفین وکذلک فی جمیع ابواب البر کعمارة المساجد وبناء القناطیر والحیلة ان یتصدق بمقدار زکواته علی فقیر ثم یأمره بالصرف إلی هذه الوجوه فیکون للمتصدق ثواب الصدقة وللفقیر ثواب بناء المسجد والقنطرة اھ ملخصا- اقول: ویظهر لی ان ثواب تلك القرب لهما جمیعا لان من دل علی خیر کان کفاعله وقد تواتر عن البنی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فی نظائره تکامل الثواب لکل شریك في الخیر لا تنقص الشرکة من اجورهم شیئا فهذا الذی حدانی علی الجزم بها سمعت ثم رأیت فی الدر المختار

[Urdu Box - Right]: اگر کوئی شخص زکوۃ سے میت کا کفن تیار کرنا چاہے تو جائز نہیں، ہاں یہ حیلہ کر سکتا ہے کہ خاندان میت کے کسی فقیر پر صدقہ کر دے اور وہ میت کا کفن تیار کر دے، تو اب مالک کے لیے صدقے کا اور اہل میت کے لیے تکفین کا ثواب ہوگا، اسی طرح کا حیلہ تمام امور خیر مثلاً تعمیر مساجد اور پلوں کے بنانے میں جائز ہے کہ مالک مقدار زکوۃ کے برابر کسی فقیر کو دے دے اور اسے کہے کہ تو ان امور پر خرچ کر دے تو اب صدقہ کرنے والے کے

لیے صدقہ کا اور بناء مسجد و پل کا ثواب فقیر کو ہوگا۔ ملخصا(ت) اقول: پھر یہ بات واضح ہوئی ہے کہ ان امور خیر کا ثواب دونوں کے لیے ہے کیونکہ جو کسی نیکی پر رہنمائی کرتا ہے وہ بھی عمل کرنے والے کی طرح ثواب ملتا ہے، حضور علیہ السلام سے ایسے معاملات میں تواتر کے ساتھ ثابت ہے کہ کار خیر میں ہر شریک کو کامل ثواب ملتا ہے شرکت سے اجر شرکاء میں کوئی کمی واقع نہیں ہوتی، مجھے اس پر مذکورہ دلائل کی وجہ سے جزم تھا جسے تو سن چکا، پھر میں نے در مختار

1 فتاوی ہندیہ کتاب الحیل الفصل الثالث فی مسائل الزکوۃ نورانی کتب خانہ پشاور ۶ / ۳۹۲ Page of 836 110

Fatawa Razvia Volume 10

[Arabic Text]: The legal trick for shrouding (Hilat-ut-Takfeen) is to first give the wealth as charity (Sadaqah) to a poor person, then he provides the shroud. In this way, both will receive a reward. Ah- Shami said: that is, the reward of Zakat belongs to the one who gives it (Muzakki), and the reward of shrouding belongs to the poor person. It has also been said that the reward of shrouding is established for the giver as well, because the one who points toward good is like the one who does it, even if the reward differs in quantity and quality. Ta. I (the author) say, and As-Suyuti narrated in 'Al-Jami' al-Sagheer' that if a charity passes through a hundred hands, each of them will have a reward equal to the first giver without decreasing anything from his reward. Ah- So this is exactly what we have discussed, and all praise is for Allah.

[Urdu Text]: I saw that the trick for the shroud is that first the wealth should be given as charity to a poor person, then the poor person should make a shroud out of it, then there will be a reward for both. Ah- Imam Shami said that the reward of Zakat will be for the giver (Muzakki) and the reward of shrouding will be for the poor person, and it has also been said that the reward of shrouding is also for the giver because the one who guides to good is like the doer of good, although the reward will be different in terms of quantity and quality. Ta. I (the author) say, Imam Suyuti narrated in 'Jami' Sagheer' that if charity passes through a hundred hands, every person will get the same reward as the first one without any reduction; this is exactly what we mentioned, Praise be to Allah. (T)

But the difficulty in this is that if he (the poor person) does not agree, there is no way of compulsion because finally, he has become the independent owner; he has the choice whether to give or not. In 'Durr-e-Mukhtar', it is stated:

[Arabic Text]: The legal trick is to give charity to the poor person, then command him to perform these things. Whether he can go against his command? I have not seen (a ruling on) this, and the apparent view is yes.

[Urdu Text]: The trick is that charity be given to the poor person and then he be asked to perform these matters. Can that poor person oppose it or not? This has not come under my sight; the apparent view is that he can oppose. (T)

In 'Radd-ul-Muhtar', it is stated: [Arabic Text]: The discussion belongs to the author of 'An-Nahr', and he said because it is a requirement for the validity of the transfer of

ownership (Tamleek). Ar-Rahmati said that apparently there is no doubt in it because he made him the owner from the Zakat of his wealth and condition...

[Urdu Text]: The author of 'An-Nahr' has discussed it and said that being able to oppose this is a requirement for the validity of transfer of ownership. Sheikh Rahmati said this is apparent; there is no doubt in it because of his own Zakat...

1. Durr-e-Mukhtar, Kitab-uz-Zakat, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/130
2. Radd-ul-Muhtar, Kitab-uz-Zakat, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/13
3. Durr-e-Mukhtar, Bab-ul-Masrif, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/121

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

[अरबी पाठ]: कफ़न पहनाने का हीला (हिलत-उत-तकफ़ीन) यह है कि पहले धन को एक गरीब व्यक्ति को दान (सदक़ा) के रूप में दिया जाए, फिर वह कफ़न प्रदान करे। इस तरह, दोनों को सवाब (पुण्य) मिलेगा। आह- शामी ने कहा: यानी ज़कात का सवाब देने वाले (मुज़क्की) के लिए है, और कफ़न पहनाने का सवाब गरीब व्यक्ति के लिए है। यह भी कहा गया है कि कफ़न पहनाने का सवाब देने वाले के लिए भी स्थापित है, क्योंकि भलाई की ओर इशारा करने वाला उसे करने वाले के समान है, भले ही सवाब मात्रा और गुणवत्ता में भिन्न हो। ता। मैं (लेखक) कहता हूँ, इमाम अस-सुयुती ने 'अल-जामी अल-सगीर' में वर्णन किया है कि यदि कोई दान सौ हाथों से गुज़रता है, तो उनमें से प्रत्येक को पहले देने वाले के बराबर सवाब मिलेगा, बिना उसके सवाब में किसी भी तरह की कमी किए। आह- तो यह बिल्कुल वही है जिस पर हमने चर्चा की है, और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है।

[उर्दू पाठ]: मैंने देखा कि कफ़न का हीला यह है कि पहले माल गरीब पर सदक़ा किया जाए फिर गरीब उससे कफ़न बनाए तो सवाब दोनों के लिए होगा। आह- इमाम शामी ने कहा कि ज़कात का सवाब मुज़क्की के लिए और तकफ़ीन (कफ़न पहनाने) का सवाब गरीब के लिए होगा, और यह भी कहा गया है कि तकफ़ीन का सवाब मुज़क्की के लिए भी है क्योंकि भलाई पर रहनुमाई करने वाला भलाई करने वाले की तरह ही होता है, हालांकि मात्रा और गुणवत्ता के लिहाज से सवाब अलग होगा। ता। मैंने कहा इमाम सुयुती ने 'जामे सगीर' में नक़ल किया कि अगर सदक़ा सौ हाथों से भी गुज़रे तो अज्र (पुण्य) में बिना किसी कमी के हर एक को उतना ही अज्र हासिल होगा जितना पहले को है, यह हूबहू वही है जो हमने ज़िक्र किया, अल्हम्दुलिल्लाह। (त)

मगर इसमें दिक्कत इतनी है कि अगर उसने न माना तो उसे कोई मजबूर करने का रास्ता नहीं क्योंकि आख़िर वह स्वतंत्र मालिक हो चुका है, उसे अधिकार है चाहे दे या न दे। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

[अरबी पाठ]: हीला यह है कि गरीब पर सदक़ा किया जाए, फिर उसे इन चीजों को करने का आदेश दिया जाए। क्या वह उसके आदेश के विरुद्ध जा सकता है? मैंने इसे (किसी हुक्म में) नहीं देखा, और ज़ाहिर यही है कि हाँ।

[उर्दू पाठ]: हीला यह है कि गरीब पर सदक़ा किया जाए फिर उसे इन कामों को करने को कहा जाए, क्या वह गरीब इसकी मुखालिफ़त (विरोध) कर सकता है या नहीं? यह मेरी नज़र से नहीं गुज़रा, ज़ाहिर यही है कि मुखालिफ़त कर सकता है। (त)

'रद्दुल मुहतार' में है: [अरबी पाठ]: चर्चा 'अन-नहर' के लेखक की है, और उन्होंने कहा क्योंकि यह स्वामित्व हस्तांतरण (तमलीक) की वैधता की आवश्यकता है। अर-रहमती ने कहा कि स्पष्ट रूप से इसमें कोई संदेह नहीं है क्योंकि उसने उसे अपने धन की ज़कात से मालिक बनाया और शर्त...

[उर्दू पाठ]: साहिबे नहर ने बहस की है, और कहा यह मुखालिफ़त कर सकना तमलीक की सेहत (वैधता) का तकाज़ा करता है। शेख रहमती ने फ़रमाया यही ज़ाहिर है इसमें कोई संदेह नहीं क्योंकि अपनी ज़कात का...

1. दुर्रे मुख़्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/130
2. रद्दुल मुहतार, किताबुज़ ज़कात, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/13
3. दुर्रे मुख़्तार, बाबल मसरिफ़, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/121

पृष्ठ 111 / 836

حیلة التکفین بها التصدق علی الفقیر ثم هو یکفن فیکون الثواب لهما اهـ قال الشامي اي ثواب الزکوة للمزکي و ثواب التکفین للفقیر وقد یقال ان ثواب التکفین یثبت للمزکي ایضاً لان الدال علی الخیر کفاعله وان اختلف الثواب کما و کیفاً ط قلت و اخرج السیوطي في الجامع الصغیر لو مرت الصدقة علی یدی مائة لکان لهم من الاجر مثل اجر المبتدئ من غیر ان ینقص من اجره شئ اهـ فهذا عین مابحث ولله الحمد۔

میں دیکھا کہ کفن کا حیلہ یہ ہے کہ پہلے مال فقیر پر صدقہ کیا جائے پھر فقیر اس سے کفن بنائے تو ثواب دونوں کے لیے ہوگا اھـ امام شامی نے کہا کہ زکوٰۃ کا ثواب مزکی کے لیے اور تکفین کا ثواب فقیر کے لیے ہوگا، اور یہ بھی کہا گیا ہے کہ تکفین کا ثواب مزکی کے لیے بھی ہے کیونکہ خیر پر رہنمائی کرنے والا فاعل خیر کی طرح ہی ہوتا ہے اگر چہ کمیت و کیفیت کے اعتبار سے ثواب مختلف ہوگا، ط قلت امام سیوطی نے جامع صغیر میں نقل کیا کہ اگر صدقہ سو ہاتھ بھی گزرے تو اجر میں بغیر کسی کمی کے ہر ایک کو اتنا ہی اجر حاصل ہوگا جتنا پہلے کو ہے، یہ بعینہ وہی ہے جو ہم نے ذکر کیا، وللہ الحمد (ت)

مگر اس میں دقت اتنی ہے اگر اس نے نہ مانا تو اسے کوئی راہِ جبر کی نہیں کہ آخر وہ مالک مستقل ہو چکا اسے اختیار ہے چاہے دے یا نہ دے۔ درمختار میں ہے:

لحیلة ان یتصدق علی الفقیر ثم یأ مره بفعل هذه الاشیاء وهل له ان یخالف امره لم اره والظاہر نعم۔

حیلہ یہ ہے کہ فقیر پر صدقہ کیا جائے پھر اسے ان امور کو بجالانے کا کہا جائے، کیا وہ فقیر اس کی مخالفت کر سکتا ہے یا نہیں؟ یہ میری نظر سے نہیں گزرا، ظاہر یہی ہے کہ مخالفت کر سکتا ہے۔ (ت)

ردا لمختار میں ہے : البحث لصاحب النهر وقال لانه مقتضى صحة التمليك ، قال الرحمتی والظاہر انه لا شبهة فيه لانه ملكه اياه عن زكوة ماله وشرط

صاحبِ نہر نے بحث کی ہے، اور کہا یہ مخالفت کر سکنا صحتِ تملیک کا تقاضا کرتا ہے۔ شیخ رحمتی نے فرمایا یہی ظاہر ہے اس میں کوئی شبہ نہیں کیونکہ اپنی زکوۃ کا

1 در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱ /۱۳۰ 2 رد المحتار کتاب الزکوۃ مصطفی البابی مصر ۲ /۱۳ 3 در مختار باب المصرف مطبع مجتبائی دہلی ۱ /۱۲۱

Fatawa Razawiyya, Volume 10

١ - عليه شرطاً فاسد او الهبة والصدقة لا تفسدان بالشرط الفاسد | He was made the owner and a corrupt condition was placed upon it, and gift and charity do not become void due to a corrupt condition. (T)

Therefore, according to the poor servant (may Allah Almighty forgive him), the smooth method is that, for example, if one wants to spend twenty (20) rupees from Zakat money as an offering to a Sayyid or for a mosque, one should show a garment, like a cap, or a certain quantity of grain, to a sane, adult recipient of Zakat and say: "We give this to you, but not for free; we will sell it for twenty rupees. We will give you these rupees from ourselves so that you return them to us as our due payment." He will inevitably agree, knowing that he is getting this thing, i.e., the cloth or grain, for free. Now, after performing a Shariah-compliant sale, give him twenty (20) rupees with the intention of Zakat. When he takes possession of them, take them back as payment for the price. Firstly, he himself will give it back because he had no hope of keeping those rupees for himself from the start, such that he would feel he is losing something from his own pocket. He only hoped for that cloth or grain; since he has obtained it, he will not refuse. Even if he refuses, take it by force because he is indebted to you for that amount, and when a creditor finds the debtor's wealth of the same kind as his debt, he can, by consensus, take it without the debtor's consent. Now, take these rupees and spend them yourself as an offering to a Sayyid or for building a mosque, so that both objectives are achieved. It is stated in Durr al-Mukhtar:

يعطى مديونه الفقير زكوته ثم يا خذها من دينه ولو امتنع المديون مد يده واخذها لكونه ظفر بجنس حقه اه ٢ | Give Zakat to your poor debtor and then collect the debt from him. If the debtor does not give it, snatch it from him because he has found the same kind as his right. (T)

And the poor servant (may Allah Almighty forgive him) specified the condition of the Zakat recipient being sane and adult so that a transaction involving excessive deception (Ghabn-e-Fahish) could be carried out without hesitation. And the reason for specifying cloth or grain is that if one wants to sell some money in exchange for rupees, then apparently according to the implication of 'Jami' al-Saghir', mutual possession (Taqabud al-Badlayn) would be a condition, which is not achieved here, although according to the original narration, possession on one side is sufficient and most scholars are of this opinion, and this is the refined view.

كما بينا ہ فی البیوع من فتاونا بل حققنا فیها ان لا دلالۃ لکلام الجامع الصغیر ایضاً علی اشتراط التقابض و ان ظن | As we have explained in the 'Sales' section of our Fatawa, rather we have researched that even in the text of 'Jami' al-Saghir', there is no indication of mutual possession being a condition.

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Recipient, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/29.
2. Durr al-Mukhtar, Book of Zakat, Mujtabai Press, Delhi, 1/130.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

١ - عليه شرطاً فاسد او الهبة والصدقة لا تفسدان بالشرط الفاسد | मालिक बनाया गया है और उस पर एक फ़ासिद शर्त लगाई गई है और हिबा और सदक़ा फ़ासिद शर्त से फ़ासिद नहीं होता। (त)

इसलिए फ़क़ीर (अल्लाह तआला उसे क्षमा करे) के निकट इसका निर्बाध तरीका यह है कि उदाहरण के लिए कोई ज़कात के माल से बीस (२०) रुपये सैय्यद की नज़र या मस्जिद में खर्च करना चाहता है, तो वह ज़कात के किसी बुद्धिमान वयस्क मसरफ़ (हकदार) को कोई कपड़ा जैसे टोपी या सवा सेर अनाज दिखाए और कहे कि "यह हम तुम्हें देते हैं लेकिन मुफ़्त नहीं देंगे, बीस रुपये में बेचेंगे, ये रुपये हम तुम्हें अपने पास से देंगे कि हमारे मांगने पर वापस कर दो"। वह निश्चित रूप से राजी हो जाएगा, जानेगा कि मुझे तो यह चीज़ यानी कपड़ा या अनाज मुफ़्त ही हाथ आएगा। अब शरई बिक्री करके बीस (२०) रुपये ज़कात की नीयत से उसे दे, जब वह उन पर कब्ज़ा कर ले तो उसे अपनी कीमत की मांग में ले ले। पहले तो वह खुद ही दे देगा क्योंकि उसे सिरे से उन रुपयों के अपने पास रहने की उम्मीद ही नहीं थी कि वह उसे अपनी गांठ (जेब) से जाता हुआ समझे, उसे तो सिर्फ उस कपड़े या अनाज की उम्मीद थी, वह उसे प्राप्त है तो इनकार नहीं करेगा। और अगर करे भी तो यह ज़बरदस्ती छीन ले कि वह इस मात्रा में उसका ऋणी (मद्यून) है और लेनदार (दाइन) जब अपने ऋण की किस्म का माल ऋणी के पास पाता है तो सर्वसम्मति से वह उसकी सहमति के बिना उसे ले सकता है। अब ये रुपये लेकर अपनी ओर से सैय्यद की नज़र या मस्जिद के निर्माण में खर्च कर दे कि दोनों उद्देश्य सिद्ध हो जाएँ। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

يعطى مديونه الفقير زكوته ثم يا خذها من دينه ولو امتنع المديون مد يده واخذها لكونه ظفر بجنس حقه اه ٢ | अपने ऋणी फ़क़ीर को ज़कात दे फिर उससे ऋण वसूल करे, अगर ऋणी न दे तो उससे छीन ले क्योंकि वह अपने हक़ की किस्म को पा रहा है। (त)

और फ़क़ीर (अल्लाह तआला उसे क्षमा करे) ने उस मसरफ़-ए-ज़कात के बुद्धिमान वयस्क होने की शर्त इसलिए लगाई ताकि उसके साथ अत्यधिक धोखे (ग़ब्न-ए-फ़ाहिश) की खरीद-बिक्री बिना किसी संकोच के वैध हो, और कपड़े व अनाज का विशेष उल्लेख इसलिए किया कि यदि कुछ पैसे रुपयों के बदले बेचना चाहेगा तो 'जामे सगीर' के स्पष्ट आशय के अनुसार विनिमय का परस्पर कब्ज़ा (तक़ाबुज़

अल-बदलैन) शर्त होगा जो यहाँ प्राप्त नहीं है, यद्यपि मूल रिवायत के अनुसार एक ही ओर का कब्ज़ा पर्याप्त है और अधिकांश विद्वान इसी पक्ष में हैं और यही परिष्कृत कथन है।

كما بينا ہ فى البيوع من فتاونا بل حققنا فيها ان لا دلالۃ لكلام الجامع الصغير ايضاً على اشتراط التقابض و ان ظن | जैसा कि हमने अपने फ़तावा के विक्रय (बय) के अध्याय में वर्णन किया है बल्कि इसकी तहकीक की है कि 'जामे सगीर' की इबारत में भी कब्ज़े की शर्त होने पर कोई संकेत नहीं है।

1. रद्दुल मुहतार, बाबुल मसरिफ़, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र २/२९
2. दुर्रे मुख्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबा मुजतबाई दिल्ली १/१३०

पृष्ठ ११२ का ८३६

علیہ شرطاً فاسد او الھبۃ والصدقۃ لا تفسدان بالشرط الفاسد - ۱ | مالک بنایا گیا ہے اور اس پر ایک فاسد شرط لگائی گئی ہے اور ہبہ اور صدقہ شرطِ فاسد سے فاسد نہیں ہوتا۔ (ت)

لہٰذا فقیر غفراللہ تعالٰی لہ کے نزدیک اس کا بے خلش طریقہ یہ ہے کہ مثلاً مالِ زکوۃ سے بیس ۲۰ روپے سید کی نذر یا مسجد میں صرف کیا چاہتا ہے کسی فقیر عاقل بالغ مصرفِ زکوۃ کو کوئی کپڑا مثلاً ٹوپی یا سیر سوا سیر غلہ دکھائے کہ یہ ہم تمھیں دیتے ہیں مگر مفت نہ دیں گے بیس روپے کو بیچیں گے، یہ روپے تمھیں ہم اپنے پاس سے دیں گے کہ ہمارے مطالبہ میں واپس کردو وہ خواہ مخواہ راضی ہو جائے گا، جانے گا کہ مجھے تو یہ چیز یعنی کپڑا یا غلہ مفت ہی ہاتھ آئے گا، اب بیع شرعی کر کے بیس ۲۰ روپے بنیت زکوۃ اسے دے، جب وہ قابض ہو جائے اپنے مطالبہ ثمن میں لے لے۔ اول تو وہ خود ہی دے دے گا کہ سرے سے اسے ان روپوں کے اپنے پاس رہنے کی امید ہی نہ تھی کہ وہ گرہ سے جاتا سمجھے اسے تو صرف اس کپڑے یا غلہ کی امید تھی وہ حاصل ہے تو انکار نہ کرے گا اور کرے بھی تو یہ جبراً چھین لے کہ وہ اس قدر میں اس کا مدیون ہے اور دائن جب اپنے دین کی جنس سے مالِ مدیون پائے تو بالاتفاق بے اس کی رضامندی کے لے سکتا ہے، اب یہ روپے لے کر بطورِ خود نذرِ سید یا بناءِ مسجد میں صرف کردے کہ دونوں مرادیں حاصل ہیں۔ در مختار میں ہے:

یعطی مدیونہ الفقیر زکوتہ ثم یا خذھا من دینہ ولو امتنع المدیون مد یدہ واخذھا لکونہ ظفر بجنس حقہ اھ ۲ | اپنے مدیون فقیر کو زکوۃ دی پھر اس سے دین وصول کرے، اگر مدیون نہ دے تو اس سے چھین لے کیونکہ یہ اپنے حق کی جنس کو پاتا ہے اھ (ت)

اور فقیر غفر اللہ تعالیٰ لہ نے اُس مصرفِ زکوۃ کے عاقل بالغ ہونے کی شرط اس لیے لگائی کہ اس کے ساتھ یہ غبنِ فاحش کی مبایعت بلا تکلف روا ہو اور کپڑے غلے کی تخصیص اس لیے کی کہ اگر کچھ پیسے بعوض روپوں کے بیچنا چاہے گا تو ظاہر مفاد جامع صغیر پر تقابض البد لین شرط ہو گا وہ یہاں حاصل نہیں اگرچہ روایت اصل پر ایک ہی جانب کا قبضہ کافی اور اکثر علماء اسی طرف ہیں اور یہی قولِ منقح،

کما بینا ہ فی البیوع من فتاونا بل حققنا فیھا ان لا دلالۃ لکلام الجامع الصغیر ایضاً علی اشتراط التقابض و ان ظن | جیسا کہ ہم نے اپنے فتاویٰ کی بیوع میں بیان بلکہ اس کی تحقیق کی ہے کہ جامع صغیر عبارت میں بھی تقابض کے شرط ہونے پر کوئی دلالت نہیں

۱ ردالمحتار باب المصرف مصطفی البابی مصر ۲۹/۲ ۲ در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱۳۰/۱

Al-Allamah ash-Shami, what he thought.

Even though Allama Shami's thought was something else. (T)

In any case, it is better to avoid this point of contention as much as possible, and the condition of making them take possession of the Zakat money before taking it for one's claim is because no charity is complete without taking possession, as the scholars have stipulated (as the scholars have stated as a نص [clear text] on this. T). And it has already been mentioned in the first part that the wealthy who possess a lot of wealth should express gratitude for the blessing. Those who spend thousands of rupees on useless desires, worldly comforts, or outward adornments should not use these excuses as a cover for charitable expenses. Those of moderate means should also take such steps for similar needs only for the sake of purely divine work, and not, God forbid, bring money into their own misappropriation under the name of paying Zakat through them, for this matter is completely contrary to the objectives of Sharia and is an absolute nullification of the wisdoms behind the obligation of Zakat. It is as if practicing this is deceiving one's Lord, the Mighty and Majestic.

I seek refuge with the Lord of the worlds, and Allah the Almighty knows the corrupt from the reformer. It is a prayer to Allah the Almighty to reform our deeds and bring our hopes to fruition. Praise be to Allah, Lord of the worlds. Allah, the Subhan and Most High, knows best, and His knowledge is most complete and most perfect. (T)

Wal 'ayazu billahi Rabbil 'aalameen wallahu ya'lamul mufsida minal muslih, nas'aluhu Ta'ala an yusliha a'maalana wa yuhassila aamaalana walhamdu lillahi Rabbil 'aalameen wallahu subhanahu wa Ta'ala a'lamu wa 'ilmuhu atammu wa ahkam.

Fifth issue: In what avenues is it permissible to give Zakat? Explain and you will be rewarded.

Answer: The recipient of Zakat is every needy Muslim who does not have access to an amount of their owned wealth equal to the 'Nisab' (threshold) beyond their basic original needs, provided they are not a Hashimi, nor one's own husband, nor one's own wife even if given an irrevocable divorce until they finish the waiting period

('iddah'), nor are they among one's descendants like a son, daughter, grandson, granddaughter, great-grandson, great-granddaughter, nor among those in whose descendants one is, like parents, paternal grandparents, maternal grandparents, even if these original or branch relationships are, God forbid, through adultery. Nor is it one's own slave or the slave of any of these five categories even if they are a 'Mukatib' (working for freedom), nor the non-Mukatib slave of any wealthy person, nor the minor child of a wealthy man, nor the freed slave of a Hashimi. By saying 'needy Muslim', non-believers and the wealthy are already excluded. These are sixteen persons to whom it is not permissible to give Zakat; apart from them, it is permissible for everyone. For example, the son of a Hashimi or even a Fatimi woman when the father is not a Hashimi, because in Sharia, lineage is from the father. Some famous people, because their mother is a Sayyidani (female descendant of the Prophet), call themselves Sayyids, and despite being explained the truth, they persist in this; according to the Sahih Hadith, they are deserving of divine curse...

अल्लामा शामी का जो विचार था।

यद्यपि अल्लामा शामी का अनुमान कुछ और ही था। (त)

बहरहाल, जहाँ तक संभव हो विवाद के इस स्थान से बचना बेहतर है और ज़कात की रक़म पर उनका क़ब्ज़ा करा कर अपने दावे में लेने की शर्त इसलिए है क्योंकि कोई भी सदक़ा क़ब्ज़े के बिना पूरा नहीं होता जैसा कि विद्वानों ने स्पष्ट किया है (जैसा कि विद्वानों ने इस पर नसीहत फरमाई है। त)। और यह तो पहले वर्णन में आ चुका है कि बहुत अधिक धन वाले धनी लोग आशीर्वाद के लिए आभार व्यक्त करें। जो लोग बेकार की इच्छाओं या सांसारिक सुख-सुविधाओं या बाहरी सजावट में हज़ारों रुपये खर्च करते हैं, उन्हें धर्मार्थ खर्चों में इन बहानों की आड़ नहीं लेनी चाहिए। मध्यम आय वाले लोग भी विशुद्ध रूप से ईश्वरीय कार्य के लिए ऐसी ही ज़रूरतों के उद्देश्य से इन तरीकों को अपनाएं न कि ईश्वर न करे, उनके माध्यम से ज़कात अदा करने का नाम देकर रुपया अपने हेरफेर में लाएं क्योंकि यह मामला शरीयत के उद्देश्यों के बिल्कुल खिलाफ है और इसमें ज़कात के अनिवार्य होने के रहस्यों का पूर्ण निराकरण है। तो मानो इसे बरतना अपने रब अज़्ज़-व-जल्ल को धोखा देना है।

मैं संसारों के रब की शरण चाहता हूँ, और अल्लाह तआला भ्रष्ट को सुधारक से जानता है। अल्लाह तआला से प्रार्थना है कि वह हमारे कार्यों को सुधारे और हमारी उम्मीदों को पूरा करे, और प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो संसारों का रब है। अल्लाह पाक और सर्वोच्च बेहतर जानता है और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण और सबसे अधिक परिपूर्ण है। (त)

व-अल-इयाज़ु बिल्लाहि रब्बिल आ-लमीन वल्लाहु या-लमु-अल मुफ़्सिदा मिनल मुस्लिह, नस-अलुहु त-आला अन युस्लिहा आ-मालना व युहस्सिला आ-मालना वल-हम्दु लिल्लाहि रब्बिल आ-लमीन वल्लाहु सुब्हानहु व त-आला अ-लम व इल्मुहु अतम्मु व अहकम।

पांचवां मसला: ज़कात किन मदों में देना जायज़ है? बयान करें और पुण्य पायें।

उत्तर: ज़कात का हक़दार हर वह ज़रूरतमंद मुसलमान है जिसकी अपनी स्वामित्व वाली संपत्ति में से मूल आवश्यकताओं के अतिरिक्त निसाब की मात्रा पर पहुँच नहीं है, बशर्ते कि वह न तो हाशिमी हो, न अपना पति हो, न अपनी पत्नी हो, भले ही उसे तलाक-ए-मुग़ल्लज़ा (अपरिवर्तनीय तलाक) दे दिया गया हो, जब तक कि वह इद्दत से बाहर न आ जाए, न ही वह अपनी संतानों में से हो जैसे बेटा, बेटी, पोता, पोती, नाती, नातिन, और न ही वह जिनमें वह पैदा हुआ हो जैसे माता-पिता, दादा-दादी, नाना-नीनी, भले ही ये मूल या शाखा वाले रिश्ते अल्लाह की पनाह, व्यभिचार के माध्यम से हों। न अपना या इन पांचों श्रेणियों में से किसी का दास, भले ही वह मुकातिब (अपनी मुक्ति के लिए कमा रहा हो) हो, न किसी धनी का गैर-मुकातिब दास, न किसी धनी व्यक्ति का नाबालिग बच्चा, न किसी हाशिमी का आज़ाद किया हुआ दास। और ज़रूरतमंद मुसलमान कहने से काफ़िर और धनी पहले ही बाहर हो चुके हैं। ये सोलह व्यक्ति हैं जिन्हें ज़कात देना जायज़ नहीं है, उनके अलावा सभी को जायज़ है। उदाहरण के लिए, एक हाशिमी या फातिमी महिला का बेटा जबकि पिता हाशिमी न हो, क्योंकि शरीयत में वंश पिता से होता है। कुछ प्रसिद्ध लोग जो अपनी माँ के सैय्यदनी होने के कारण स्वयं को सैय्यद मान बैठे हैं और समझाने के बावजूद इस पर अड़े रहते हैं, सही हदीस के आदेश के अनुसार वे ईश्वरीय लानत के पात्र हैं...

العلامۃ الشامی ماظن۔

اگرچہ علامہ شامی کا گمان کچھ ہو۔ (ت)

بہر حال اس حتی الوسع محل خلاف سے بچنا احسن اور زر زکوۃ پر اس کا قبضہ کرا کر اپنے مطالبے میں لینے کی قید اسلیے کہ کوئی صدقہ بے قبضہ تمام نہیں ہوتا کما نص علیہ العلماء (جیسا کہ علماء نے اس پر نص فرمائی ہے۔ ت) اور یہ تو پہلے بیان میں آ چکا کہ اغنیاء کثیر المال شکر نعمت بجالائیں۔ ہزاروں روپے فضول خواہش یا دنیوی آسائش یا ظاہر آرائش میں اٹھانے والے مصارف خیر میں ان حیلوں کی آڑ نہ لیں۔ متوسط الحال بھی ایسی ہی ضرورتوں کی غرض سے خالص خدا ہی کے کام صرف کرنے کے لیے ان طریقوں پر اقدام کریں نہ یہ کہ معاذاللہ اُن کے ذریعہ سے ادائے زکوۃ کا نام کر کے روپیہ اپنے خرد برد میں لائیں کہ یہ امر مقاصد شرع کے بالکل خلاف اور اس میں ایجاب زکوۃ کی حکمتوں کا بیکسر ابطال ہے تو گویا اس کا برتنا اپنے رب عزوجل کو فریب دینا ہے۔

رب العالمین سے پناہ چاہتا ہوں، اور اللہ تعالٰی جانتا ہے مفسد کو مصلح سے، اللہ تعالٰی سے دعا ہے کہ ہمارے اعمال کی اصلاح فرمائے اور ہماری امیدیں بر لائے، والحمد للہ رب العالمین واللہ سبحانہ و تعالٰی اعلم وعلمہ اتم واحکم۔ (ت)

والعیاذباللہ رب العالمین واللہ یعلم المفسد من المصلح، نسئلہ تعالٰی ان یصلح اعمالنا ویحصل آمالنا والحمد للہ رب العالمین واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم وعلمہ اتم واحکم۔

مسئلہ خامسہ: زکوۃ کن مصارف میں دینا جائز ہے بینوا توجروا۔

الجواب: مصرف زکوۃ ہر مسلمان حاجتمند ہے جسے اپنے مال مملوک سے مقدار نصاب فارغ عن الحوائج الاصلیہ پر دسترس نہیں بشرطیکہ نہ ہاشمی ہو نہ اپنا شوہر نہ اپنی عورت اگر چہ طلاق مغلظہ دے دی ہو، جب تک عدت سے باہر نہ آئے نہ وہ اپنی اولاد میں ہے جیسے بیٹا بیٹی، پوتا پوتی، نواسہ نواسی، نہ وہ جن کی اولاد میں یہ ہے جیسے ماں باپ، دادا دادی، نانا نانی، اگرچہ یہ اصلی وفرعی رشتے عیاذاً باللہ بذریعہ زنا ہوں، نہ اپنا یا ان پانچوں قسم میں کسی کا مملوک اگرچہ مکاتب ہو، نہ کسی غنی کا غلام غیر مکاتب، نہ مرد غنی کا نا بالغ بچہ، نہ ہاشمی کا آزاد بندہ، اور مسلمان حاجتمند کہنے سے کافر و غنی پہلے ہی خارج ہو چکے۔ یہ سولہ شخص ہیں جنہیں زکوۃ دینی جائز نہیں، ان کے سوا سب کو روا، مثلاً ہاشمیہ بلکہ فاطمیہ عورت کا بیٹا جبکہ باپ ہاشمی نہ ہو کہ شرع میں نسب باپ سے ہے۔ بعض مشہورین کہ ماں کے سیدانی ہونے سے سید بن بیٹھے ہیں اور وہ باوجود تفہیم اس پر اصرار کرتے ہیں بحکم حدیث صحیح مستحق لعنت الہی...

Fatawa-e-Razvia Volume 10

...[God forbid, and We have explained this in our fatwas. (T)] Similarly, the freed slave of a non-Hashimi, even if he is one's own, or a mukatab (contracted slave) of any rich person other than one's principles, branches, spouse, and a Hashimi, or the minor child of a rich woman, even if an orphan, or one's own sister, brother, uncle, aunt, maternal aunt, maternal uncle—rather, giving to them yields double the reward: Zakat and maintaining family ties. Or one's daughter-in-law, son-in-law, mother's husband, or father's wife, or the children of one's spouse; giving to these sixteen is also permissible as long as these sixteen are not among those [other] sixteen, because they are related to them, due to which it was possible that a doubt about the impermissibility might arise. Therefore, the humble author has counted them specifically. Not having access to the mentioned Nisab includes several situations: First, not possessing any wealth at all; such a person is called Miskeen. Second, possessing wealth but less than the Nisab; this is a Faqeer. Third, possessing the Nisab but it is consumed by essential needs, like a debtor. Fourth, having surplus over needs but no access to it, like a traveler (Ibn al-Sabil) who has no travel expenses left; he can take Zakat as much as necessary, but it's not permissible for him to take more. Or a person whose wealth is a deferred debt on another, and the term has not yet expired; if he faces hardship in food and clothing, he can take as much as needed until the term expires. Or one whose debtor is missing or has denied the debt, even if proof exists, because in all these cases, there is no access. In summary, the basis is being needy in the aforementioned sense. So, one who has access to the mentioned Nisab can never receive Zakat, even if he is a warrior, a pilgrim, a student, or a Mufti. However, the Zakat collector appointed by the Islamic ruler to collect Zakat from wealth owners can take an amount according to his labor even in a state of wealth, provided he is not a Hashimi. Furthermore, transfer of ownership (Tamleek) is a condition for giving; where this is absent, such as feeding the needy at one's table as an act of permission (Ibahat), or using it for a deceased's shroud and burial, or building a mosque, well, hospice, school, bridge, inn, etc., Zakat will not be discharged. If one wishes to spend on these, then the same legal stratagems (heelay) apply as mentioned in the fourth problem.

(Arabic)

All this is a summary of what the matter has settled upon in Tanwir al-Absar, al-Durr al-Mukhtar, Radd al-Muhtar, and

(Urdu)

The entire discourse is a summary of that which is established in authoritative books like Tanwir al-Absar, Durr al-

(Arabic)	(Urdu)
other reliable books. And with the success granted by Allah, We have summarized it in the best summary; perhaps it cannot be found from anyone else. And praise be to Allah. So whoever doubts anything of this, let him refer to the original books.	Mukhtar, and Radd al-Muhtar. By the grace of Allah, we have summarized it very well; perhaps its existence cannot be found elsewhere, and all praise is for Allah. Whoever has a doubt in this regard, [should refer to] the books of principles.

Note: If the debt is deferred, whether initially so or the set deadline has passed and the rich debtor is present, then this is a case of having "access". 12 Minh (M)

फतावा-ए-रज़विया जिल्द 10

...[ईश्वर रक्षा करे, और हमने अपने फतवों में इसकी व्याख्या कर दी है। (त)] इसी तरह गैर-हाशिमी का मुक्त दास चाहे वह अपना ही हो या अपने मूल, शाखाओं, पति-पत्नी और हाशिमी के अलावा किसी अमीर व्यक्ति का मुकातिब, या किसी अमीर महिला का नाबालिग बच्चा चाहे वह अनाथ हो या अपनी बहन, भाई, चाचा, बुआ, मौसी, मामा—बल्कि उन्हें देने में दोगुना पुण्य है: ज़कात और पारिवारिक संबंधों को बनाए रखना। या अपनी बहू या दामाद या माँ का पति या पिता की पत्नी या अपने पति या पत्नी की संतान; इन सोलह (16) को भी देना वैध है जब तक कि ये सोलह उन सोलह में से न हों, क्योंकि उनका उनसे संबंध है जिसके कारण यह संभव था कि उनकी अवैधता का भ्रम पैदा हो जाए। इसलिए, इस फकीर ने उन्हें विशेष रूप से गिना है। उक्त निसाब (न्यूनतम संपत्ति) तक पहुंच न होने में कई स्थितियां शामिल हैं: पहली, बिल्कुल भी धन न होना; उसे मिस्कीन कहते हैं। दूसरा, धन होना लेकिन निसाब से कम, यह फकीर है। तीसरा, निसाब भी होना लेकिन वह बुनियादी जरूरतों में डूबा हुआ हो, जैसे कर्जदार। चौथा, जरूरतों से फारिग हो लेकिन उसकी पहुंच में न हो, जैसे मुसाफिर (इब्न-उस-सबील) जिसके पास खर्च न रहा हो, वह जरूरत के अनुसार ज़कात ले सकता है, उससे ज्यादा लेना उसके लिए जायज़ नहीं। या वह व्यक्ति जिसका धन दूसरे पर कर्ज के रूप में है और अभी समय पूरा नहीं हुआ है; यदि उसे खाने-पहनने में कठिनाई है, तो समय पूरा होने तक जरूरत के अनुसार ले सकता है। या वह जिसका कर्जदार गायब है या मुकर गया है, हालांकि उसके पास सबूत हो, क्योंकि इन सभी स्थितियों में पहुंच नहीं है। संक्षेप में, आधार उल्लेखित अर्थ में जरूरतमंद होने पर है। तो जो उक्त निसाब पर पहुंच रखता है, वह हरगिज़ ज़कात नहीं पा सकता चाहे वह गाज़ी हो या हाजी या विद्यार्थी या मुफ्ती। लेकिन ज़कात वसूल करने वाला जिसे इस्लामी शासक ने मालदारों से ज़कात वसूलने पर नियुक्त किया है, वह अमीरी की स्थिति में भी अपने काम के अनुसार ले सकता है यदि वह हाशिमी न हो। फिर देने में स्वामित्व (तम्लीक) शर्त है, जहाँ यह नहीं है जैसे जरूरतमंदों को अनुमति (इबाहत) के तौर पर अपने दस्तरखान पर बिठाकर खिला देना या मृतक के कफन-दफन में लगाना या मस्जिद, कुआं, खानकाह, मदरसा, पुल, सराय आदि बनवाना, इनसे ज़कात अदा न होगी। यदि इनमें खर्च करना चाहे तो इसके वही हीले (कानूनी उपाय) हैं जो चौथे मसले में गुजरे।

(अरबी अनुवाद)

यह सब उस बात का सारांश है जिस पर तनवीर अल-अबसार, अल-दुर्र अल-मुख्तार, रद अल-मुह्तार और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में मामला स्थिर हुआ है। और अल्लाह की दी गई सफलता से हमने इसे बेहतरीन सारांश में संक्षिप्त किया है, शायद हमारे अलावा किसी और से यह न मिले। और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है। तो जिसे इसमें से किसी भी चीज़ में संदेह हो, वह मूल पुस्तकों को देखे।

(उर्दू अनुवाद)

पूरी चर्चा उस चीज़ का सारांश है जो तनवीर अल-अबसार, दुर-ए-मुख्तार और रद-अल-मुह्तार जैसी विश्वसनीय पुस्तकों में स्थापित है। और अल्लाह की तौफीक से हमने इसे बहुत अच्छी तरह से संक्षिप्त किया है; शायद इसका अस्तित्व हमारे अलावा कहीं और न मिले, और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है। और जिसे इस बारे में संदेह हो, वह उसूल (सिद्धांतों) की किताबें [देखे]।

टिप्पणी: यदि ऋण स्थगित है, चाहे वह शुरुआत में हो या निर्धारित समय सीमा बीत चुकी हो और अमीर कर्जदार मौजूद हो, तो यह 'पहुंच' होने की स्थिति है। 12 मिन्हा (म)

पृष्ठ 114 का 836

ہوتے ہیں والعیاذ باللہ وقد اوضحناذ لك في فتاوننا (اللہ تعالٰی بچائے، ہم نے اپنے فتاویٰ میں اس کی وضاحت کر دی ہے۔ت) اسی طرح غیر ہاشمی کا آزاد شدہ بندہ اگرچہ خود اپنا ہی ہو یا اپنے اصول و فروع و زوج و زوجہ و ہاشمی کے علاوہ کسی غنی کا مکاتب یا زن غنیہ کا نابالغ بچہ اگرچہ یتیم ہو یا اپنے بہن، بھائی، چچا، پھوپھی، خالہ، ماموں، بلکہ انھیں دینے میں دُونا ثواب ہے زکوۃ وصلہ رحم یا اپنی بہو یا داماد یا ماں کا شوہر یا باپ کی عورت یا اپنے زوج یا زوجہ کی اولاد ان سولہ ۱۶ کو بھی دینا روا جبکہ یہ سولہ اُن سولہ سے نہ ہوں ازانجا کہ اُنھیں اُن سے مناسبت ہے جس کے باعث ممکن تھا کہ ان میں بھی عدم جواز کا وہم جاتا، لہذا فقیر نے انہیں بالتحصیص شمار کر دیا، اور نصاب مذکورہ پر دسترس نہ ہونا چند صورت کو شامل : ایک یہ کہ سرے سے مال ہی نہ رکھتا ہو اسے مسکین کہتے ہیں۔ دوم مال ہو مگر نصاب سے کم ، یہ فقیر ہے۔ سوم نصاب بھی ہو مگر حوائج اصلیہ میں مستغرق، جیسے مدیون۔ چہارم حوائج سے بھی فارغ ہو مگر اسے دسترس نہیں، جیسے ابن السبیل یعنی مسافر جس کے پاس خرچ نہ رہا، تو بقدر ضرورت زکوۃ لے سکتا ہے، اس سے زیادہ اسے لینا روا نہیں، یا وہ شخص جس کا مال دوسرے پر دین مؤجل ہے ہنوز میعاد نہ آئی اب اُسے کھانے پہننے کی تکلیف ہے تو میعاد آنے تک بقدر حاجت لے سکتا ہے یا وہ جس کا مدیون غائب ہے یا لے کر مُکر گیا اگرچہ یہ ثبوت رکھتا ہو ، کہ ان سب صورتوں میں دسترس نہیں۔ بالجملہ عہ مدار کار حاجتمند بمعنی مذکور پر ہے، تو جو نصاب مزبور پر دسترس رکھتا ہے ہر گز زکوۃ نہیں پا سکتا اگر چہ غازی ہو یا حاجی یا طالب علم یا مفتی مگر عامل زکوۃ جسے حاکم اسلام نے اربابِ اموال سے تحصیل زکوۃ پر مقرر کیا وہ جب تحصیل کرے تو بحالت غنا بھی بقدر اپنے عمل کے لے سکتا ہے اگر ہاشمی نہ ہو۔ پھر دینے میں تملیک شرط ہے، جہاں یہ

نہیں جیسے محتاجوں کو بطور اباحت اپنے دسترخوان پر بٹھا کر کھلا دینا یا میت کے کفن دفن میں لگانا یا مسجد، کنواں، خانقاہ، مدرسہ، پل، سرائے وغیرہ بنوانا ان سے زکوۃ ادا نہ ہو گی، اگر ان میں صرف کیا چاہے تو اس کے وہی حیلے ہیں جو مسئلہ رابعہ میں گزرے۔

(عربی)	(اردو)
هذا كله ملخص ما استقر عليه الامر في تنوير الابصار والدر المختار وردالمحتار وغيرها من معتبرات الاسفار وقد لخصناه بتوفيق الله احسن تلخيص لعله لا يوجد من غيرنا والله الحمد فمن شك في شئ من هذا فليراجع الاصول	تمام گفتگو خلاصہ ہے اس چیز کا، جس پر تنویر الابصار ، در مختار اور ردالمحتار جیسی معتبر کتب میں استقرار ہے اور اللہ تعالیٰ کی توفیق سے ہم نے خوب تلخیص کر دی ہے شاید ہمارے علاوہ کہیں اور اس کا وجود نہ ہو وللہ الحمد اور جس کو اس بارے میں شک ہو وہ کتب اصول میں شک ہو وہ کتب اصول

عہ : اگر دین موجل ہے خواہ ابتدائیوں کہ جواجل مقرر ہوئی تھی گزر چکی اور مدیون غنی حاضر ہے تو یہ صورت دسترس کی ہے ۱۲منہ (م)

Fatawa Razawiya Volume 10

[Left Column - Arabic Quotes] ...which we have named or not named. Yes, there is no harm in citing texts that are nearly hidden or rare. In ‘Radd al-Muhtar’, it includes offspring from both marriage and fornication, so it cannot be given to an illegitimate child, etc. In it, under the phrase ‘or there is a marital relationship between them,’ even if she is separated, i.e., in the waiting period (Iddah), even if it is for three divorces, as cited in ‘An-Nahr’ from ‘Mi'raj al-Diraya’ (End). In it, under the phrase ‘nor to the slave of the one paying Zakat,’ even if he is a ‘Mukatab’ (a slave with a contract for freedom), and similarly a slave between whom and the owner there is a relationship of descent or marriage, as mentioned in ‘Al-Bahr’ and ‘Al-Fath’ (End). In it, under the phrase ‘unlike the child of a wealthy woman, it is permissible,’ it means even if the child does not have a father, as cited in ‘Al-Bahr’ from ‘Al-Qunya’ (End). In it, the restriction to direct descendants is to allow it for other relatives, such as poor brothers, paternal uncles, and maternal uncles; rather, they are more deserving because it is both maintaining kinship and giving charity. It is permissible to give it to the father's wife, the son's wife, and the daughter's husband, as in ‘Tatarkhaniya’ (End - Summarized). In it, from the ‘Book of Wills’ under the phrase ‘Nobility from the mother alone is not considered,’ this is supported by the statement in ‘Al-Hindia’ from ‘Al-Bada'i’: it is established that lineage (Hasab and Nasab) is specific to the father, not the mother (End). Therefore, Zakat is not forbidden for him, nor is he an equal match (Kufu) for a Hashimi woman, and he is not included in an endowment meant for the ‘Ashraf’ (nobles) (End). And in it, it is said...

[Right Column - Urdu Explanation] ...one should refer to it and see, whether we have named them or not. Yes, there is no harm if some such explications are mentioned that are hidden or rare. In ‘Radd al-Muhtar’, it is: this includes children from both marriage and fornication. Thus, it will not be given to his illegitimate child, etc. And in the same, under ‘or there is a marital relationship between them,’ it applies even if she is spending her waiting period for three divorces. In ‘An-Nahr’ from ‘Mi'raj al-Diraya’ (End). And in the same, under the author's statement ‘nor to the slave of the one paying Zakat,’ even if he is a Mukatab; and similarly that slave between whom and the owner there is a relationship of descent or marriage, as in ‘Al-Bahr’ and ‘Al-Fath’. And in the same, under the author's statement ‘unlike the child of a wealthy woman, it is permissible,’ it is permissible, meaning if the father is not [wealthy]. In ‘Al-Bahr’ from ‘Al-Qunya’ (End). And it is stated therein that the restriction to direct descendants is because it is permissible for other relatives, such as poor brothers,

nephews, and maternal uncles; rather, they are more deserving because here both maintaining kinship and charity are present. Zakat can be given to a stepmother, stepbrother, and one's son-in-law, according to ‘Tatarkhaniya’ (End - Summarized). And in the same ‘Book of Wills’, under the author's statement ‘Nobility from the mother alone is not considered,’ its support is found in ‘Al-Hindia’ with reference to ‘Al-Bada'i’ that this statement is made: it is proven that lineage (Hasab and Nasab) is specific to the father and not to the mother (End). And Zakat will not be forbidden for him, nor will he be an equal match for a Hashimi woman, and he will not be included in an endowment meant for the ‘Ashraf’ (End). And in the same...

[Footnotes] 1. Radd al-Muhtar, Chapter: Al-Masrif, Mustafa al-Babi Egypt, 290/2 2. Radd al-Muhtar, Chapter: Al-Masrif, Mustafa al-Babi Egypt, 290/2 3. Radd al-Muhtar, Chapter: Al-Masrif, Mustafa al-Babi Egypt, 271/2 4. Radd al-Muhtar, Chapter: Al-Masrif, Mustafa al-Babi Egypt, 29/2 5. Radd al-Muhtar, Chapter: Al-Wasiyyah for Relatives and Others, Mustafa al-Babi Egypt, 47/5

फ़तावा रज़विया जिल्द दस

[बायाँ कॉलम - अरबी उद्धरण] ...जिनके नाम हमने लिए हों या न लिए हों। हाँ, इसमें कोई हर्ज़ नहीं कि ऐसी कुछ तफ़सीलात का उल्लेख किया जाए जो गुप्त या दुर्लभ हैं। 'रद-उल-मुहतार' में है: इसमें निकाह और ज़िना दोनों की औलाद शामिल है, इसलिए वलद-ए-ज़िना (अवैध संतान) को ज़कात नहीं दी जाएगी इत्यादि। इसमें 'या उनके बीच वैवाहिक संबंध हो' के तहत है, चाहे वह अलगाव में हो, अर्थात इद्दत में हो, भले ही वह तीन तलाकों की हो, जैसा कि 'मेराज-उद-दिराया' से 'अन्-नहर' में उल्लेखित है। इसमें 'न ही ज़कात देने वाले के गुलाम को' के तहत है, भले ही वह मुकातब हो; और इसी तरह वह गुलाम जिसके और मालिक के बीच वंश या विवाह का रिश्ता हो, जैसा कि 'अल्-बह्र' और 'अल्-फतह' में कहा गया है। इसमें 'धनवान महिला के बच्चे के विपरीत, यह जायज़ है' के तहत है, जिसका अर्थ है भले ही उसका पिता न हो, 'कुनिया' से 'अल्-बह्र' में। इसमें वंश तक सीमित रखने का अर्थ अन्य रिश्तेदारों के लिए इसकी अनुमति देना है, जैसे गरीब भाई, चचेरे भाई, और मामा; बल्कि वे अधिक योग्य हैं क्योंकि इसमें रिश्तेदारी निभाना और दान देना दोनों शामिल हैं। सौतेली माँ, बेटे की पत्नी और दामाद को ज़कात देना जायज़ है, जैसा कि 'तातारखानिया' (संक्षिप्त) में है। इसमें 'वसीयत की किताब' से 'केवल माँ की ओर से कुलीनता मान्य नहीं है' के तहत, इसकी पुष्टि 'बदाइ' के हवाले से 'हिन्दिया' के इस कथन से होती है: यह सिद्ध है कि वंश (हसब और नसब) पिता के साथ विशिष्ट है न कि माता के साथ। इसलिए उस पर ज़कात हराम नहीं होगी, न ही वह हाशमी महिला के लिए समान जोड़ (कुफ़ू) होगा, और न ही वह 'अशरफ़' के लिए बने वक्फ में शामिल होगा। और इसमें कहा गया है...

[दायाँ कॉलम - उर्दू स्पष्टीकरण] ...की तरफ रुजू करके देख ले ख्वाह हमने उनका नाम लिया हो या न। हाँ इसमें कोई हर्ज़ नहीं कि अगर बाज़ ऐसी तशरीहात का ज़िक्र करें जो मख्फ़ी हैं या ग़रीब। रद-उल-मुहतार में है: यह निकाह और ज़िना दोनों की औलाद को शामिल है। पस उसके वलद-ए-ज़िना को नहीं दिया जाएगा इत्यादि। और इसी में 'औ बैनहुमा ज़ौजियह' के तहत है अगरचे वह तीन तलाकों की इद्दत बसर कर रही हो। नहर में 'मेराज-उद-दिराया' से है और इसी में मातन (मूल पाठ) के कौल 'वला इला ममलूक अल-मुज़क्की' के तहत है अगरचे मुकातब हो और इसी तरह वह ममलूक कि मालिक और उसके दरमियान औलाद या ज़ौजियत वाला रिश्ता हो, जैसा कि बह्र और फतह में है। और इसी में मातन के कौल 'बिखिलाफ तिफ्लुल ग़निया फ़यजुज़' के तहत है तो जायज़ है यानी अगर उसका वालिद [धनी] न हो। बह्र में कुनिया से है। और इसी में है कि औलाद के साथ

मुक़ैयद (सीमित) इसलिए किया है कि बकिया अक़ारिब (बाकी रिश्तेदारों) के लिए जायज़ है मसलन फ़ुक़रा भाई, भतीजे और खालू बल्कि औला (श्रेष्ठ) हैं क्योंकि यहाँ सिला और सदका दोनों हैं। ज़कात सौतेली वालिदा, सौतेले भाई और अपने दामाद को दी जा सकती है, तातारखानिया से खुलासा। और इसी के किताब-उल-वसाया में मातन के कौल 'अश-शरफ मिनल उम्मी फ़कत ग़ैर मुअतबर' के तहत है कि इसकी ताईद हिन्दिया में बदाइ के हवाले से यह कौल करता है कि यह बात साबित है कि हसब व नसब वालिद के साथ मखसूस है न कि माँ के साथ। और उस पर ज़कात हराम न होगी और न वह हाशमी के लिए कुफ़ू होगा और न वह वक्फ अला-अशरफ में दाखिल होगा। और इसी में है...

[पाद टिप्पणियाँ] 1. रद-उल-मुहतार, बाब अल-मसरिफ, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 290/2 2. रद-उल-मुहतार, बाब अल-मसरिफ, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 290/2 3. रद-उल-मुहतार, बाब अल-मसरिफ, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 271/2 4. रद-उल-मुहतार, बाब अल-मसरिफ, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 29/2 5. रद-उल-मुहतार, बाब अल-वसिय्यह लिल अक़ारिब व ग़ैरहिम, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 47/5

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

[Left Column] التی سمینا او لم نسم نعم لا بأس ان نورد نصوص بعض ما یکاد یخفی او یستغرب ۔ ففی رد المحتار شمل الولاد بالنکاح والسفاح فلا یدفع الی ولدہ من الزنا الخ وفیہ تحت قولہ او بینھما زوجیۃ ولو مباینۃ ای فی العدۃ و لو بثلاث نھر عن معراج الدرایۃ اھـ[1] وفیہ تحت قولہ ولا الی مملوك المزکی ولو مکاتباً وکذا مملوك من بینہ وبینہ قرابۃ ولاد او زوجیۃ لما قال فی البحر والفتح اھـ[2] وفیہ تحت قولہ بخلاف طفل الغنیۃ فیجوز ای ولو لم یکن لہ اب بحر عن القنیۃ اھـ[3] وفیہ وقید بالولاد لجوازہ لبقیۃ الاقارب کالاخوۃ والاعمام والاخوال الفقراء بل ھم اولی لانہ صلۃ وصدقۃ و یجوز دفعھا لزوجۃ ابیہ وابنہ وزوج ابنتہ تاترخانیۃ اھـ[4] ملخصاً وفیہ من کتاب الوصایا تحت قولہ الشرف من الام فقط غیر معتبر، یؤیدہ قولہ قول الھندیۃ عن البدائع فثبت ان الحسب والنسب یختص بالاب دون الام اھـ فلا تحرم علیہ الزکوۃ ولا یکون کفوا للھاشمیۃ ولا یدخل فی الوقف علی الاشراف ط اھـ[5] وفیہ قال

[Right Column] کی طرف رجوع کرکے دیکھ لے خواہ ہم نے ان کا نام لیا ہو یا نہ۔ ہاں اس میں کوئی حرج نہیں کہ اگر بعض ایسی تصریحات کا ذکر کریں جو مخفی ہیں یا غریب۔ ردالمحتار میں ہے: یہ نکاح اور زنا دونوں کی اولاد کو شامل ہے۔ پس اس کے ولد زنا کو نہیں دیا جائے گا الخ اور اسی میں "او بینھما زوجیۃ" کے تحت ہے اگر چہ وہ تین طلاقوں کی عدت بسر کر رہی ہو۔ نہر میں معراج الدرایہ سے ہے اھ اور اسی میں ماتن کے قول "ولا الی مملوک المزکی" کے تحت ہے اگرچہ مکاتب ہو اور اسی طرح وہ مملوک کہ مالک اور اس کے درمیان اولاد یا زوجیت والا رشتہ ہو، جیسا کہ بحر اور فتح میں ہے۔ اور اسی میں ماتن کے قول "بخلاف طفل الغنیہ فیجوز" کے تحت ہے تو جائز ہے یعنی اگر اس کا والد نہ ہو۔ بحر میں قنیہ سے ہے اھ اور اسی میں ہے کہ اولاد کے ساتھ مقید اس لیے کیا ہے کہ بقیہ اقارب کے لیے جائز ہے مثلاً فقرآء بھائی، بھتیجے اور

خالو بلکہ اولیٰ ہیں کیونکہ یہاں صلہ اور صدقہ دونوں ہیں زکوۃ سوتیلی والدہ، سوتیلے بھائی اور اپنے داماد کو دی جاسکتی ہے تاتارخانیہ اھ ملخصاً اور اسی کے کتاب الوصایا میں ماتن کے قول "الشرف من الام فقط غیر معتبر" کے تحت ہے کہ اس کی تائید ہندیہ میں بدائع کے حوالے سے یہ قول کرتا ہے کہ یہ بات ثابت ہے کہ حسب و نسب والد کے ساتھ مخصوص ہے نہ کہ ماں کے ساتھ اھ اور اس پر زکوۃ حرام نہ ہو گی اور نہ وہ ہاشمی کے لیے کفوء ہو گا اور وہ وقف علی الاشراف میں داخل نہ ہو گا اھ اور اسی میں ہے

[Footnotes] 1 ردالمحتار باب المصرف مصطفیٰ البابی مصر ۲۹۰/۲ 2 ردالمحتار باب المصرف مصطفیٰ البابی مصر ۲۹۰/۲ 3 ردالمحتار باب المصرف مصطفیٰ البابی مصر ۲۷۱/۲ 4 ردالمحتار باب المصرف مصطفیٰ البابی مصر ۲۹/۲ 5 ردالمحتار باب الوصیة للاقارب و غیر ہم مصطفیٰ البابی مصر ۴۷/۵

Fatawa Rizvia, Volume 10

Page 116 of 836

It is also mentioned in *Al-Fath* that it is not permissible for a traveler (Ibn-us-Sabil) to take more than his need. I say: this is contrary to the case of a poor person (faqir), for it is permissible for him to take more than his need. This distinguishes the traveler [from the poor], as explained in *Ad-Dhakhirah* [1]. In the same work, under the text's words "including when his wealth is deferred (mu'ajjal)," it means when he needs maintenance, it is permissible for him to take Zakat to the extent of his sufficiency until the due date arrives; this is from *Al-Khaniyah* in *An-Nahr* [2]. Under the words "or against an absent person (gha'ib)," it means even if it is currently due but he is unable to obtain it [3]. Under the words "or one in hardship (mu'sir) or a denier (jahid)," even if there is proof according to the most correct opinion, taking it is permissible according to the most correct sayings because he is like a traveler. However, if he is wealthy and acknowledges the debt, then it is not permissible, as in *Al-Khaniyah* [4]. Under the words "in the way of Allah (fi sabilillah)," it refers to a stranded warrior; some say it means a pilgrim, and some say a student of knowledge. In *Al-Bada'i*, it is explained as all charitable causes. It is stated in *An-Nahr* that this is a verbal disagreement because there is consensus that all categories except the collector ('amil) are given Zakat on the condition of poverty [5]. Under the words "and by this reasoning, it strengthens...", it strengthens what is attributed to *Al-Waqi'at*, that it is permissible for a student of knowledge to take Zakat even if he is wealthy, provided he has devoted himself [to studies].

Footnotes: 1 Rad al-Muhtar, Chapter on Al-Masrif, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/67 2 Rad al-Muhtar, Chapter on Al-Masrif, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/67 3 Rad al-Muhtar, Chapter on Al-Masrif, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/67 4 Rad al-Muhtar, Chapter on Al-Masrif, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/67 5 Rad al-Muhtar, Chapter on Al-Masrif, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/67

फ़तावा रज़विया, खंड 10

पृष्ठ 836 का 116

'अल-फ़तह' में भी उल्लेख है कि यात्री (इब्न-उस-सबील) के लिए अपनी ज़रूरत से ज़्यादा लेना जायज़ नहीं है। मैं कहता हूँ: यह फ़क़ीर के विपरीत है, क्योंकि उसके लिए ज़रूरत से ज़्यादा लेना हलाल है। इसी से फ़क़ीर और यात्री में अंतर हो गया जैसा कि 'ज़खीरा' में है [1]। उसी में मूल पाठ के शब्द "उनमें से जब उसका धन मुअज्जल (स्थगित) हो" के अंतर्गत है, यानी जब उसे गुज़ारे की ज़रूरत हो, तो देय तिथि आने तक अपनी पर्याप्तता के अनुसार ज़कात लेना जायज़ है; यह 'नहर' में 'ख़ानिया' से उद्धृत है [2]। उसी में मूल पाठ के शब्द "या ग़ायब पर" के अंतर्गत है, यानी भले ही वह वर्तमान में देय हो लेकिन उसे प्राप्त करने की शक्ति न रखता हो [3]। उसी में मूल पाठ के शब्द "या तंगदस्त या इनकार करने वाला" के अंतर्गत है, भले ही सही मत के अनुसार सबूत हों, तो सही मत के अनुसार उसके लिए ज़कात लेना जायज़ है क्योंकि वह एक यात्री की तरह है। लेकिन अगर वह अमीर है और स्वीकार करता है, तो अब जायज़ नहीं है जैसा कि 'ख़ानिया' में है [4]। उसी में मूल पाठ के शब्द "अल्लाह की राह में" के अंतर्गत है, यानी वह योद्धा जिसका खर्च और हथियार समाप्त हो गए हों; कुछ के अनुसार इससे हाजी और कुछ के अनुसार छात्र मुराद है, और 'बदाए' में इससे सभी पुण्य कार्यों के मद बयान किए गए हैं। 'नहर' में है कि यह मतभेद केवल शाब्दिक है क्योंकि इस पर सहमति है कि 'आमिल' (ज़कात वसूलने वाला) के अलावा सभी श्रेणियों को निर्धनता की शर्त पर ज़कात दी जा सकती है [5]। उसी में मूल पाठ के शब्द "और इस तर्क से प्रबल होता है..." के साथ वह बात प्रबल हो गई जो 'वाक़ियात' की ओर संबद्ध है कि छात्र के लिए ज़कात लेना जायज़ है भले ही वह धनी हो, यदि उसने स्वयं को [अध्ययन के लिए] समर्पित कर दिया हो।

पादलेख: 1 रद अल-मुह्तार, बाब अल-मसरीफ़, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/67 2 रद अल-मुह्तार, बाब अल-मसरीफ़, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/67 3 रद अल-मुह्तार, बाब अल-मसरीफ़, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/67 4 रद अल-मुह्तार, बाब अल-मसरीफ़, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/67 5 रद अल-मुह्तार, बाब अल-मसरीफ़, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/67

فتاوٰی رضویہ ، جلد دہم

فی الفتح ایضاً ولا یحل لہ ای لا بن السبیل ان یأخذ اکثر من حاجتہ قلت وھذا بخلاف الفقیر فانہ یحل لہ ان یأخذ اکثر من حاجتہ و بھذا فارق ابن السبیل کما افادہ فی الذخیرۃ اہ ۱ وفیہ تحت قولہ ومنہ ما لو کان مالہ مؤجلاً ای اذا احتاج الی النفقۃ یجوز لہ اخذ الزکوۃ قدر کفایتہ الی حلول الاجل نہر عن الخانیۃ اہ ۲ فیہ تحت قولہ او علی غائب ای و لو کان حالاً لعدم تمکنہ من اخذہ ۳ ط اہ وفیہ تحت قولہ او معسر او جاحد ولو بینۃ فی الاصح فیجوز لہ الاخذ فی اصح الاقاویل لانہ بمنزلۃ ابن السبیل ولو موسراً معترفاً لا یجوز کما فی الخانیۃ ٤ اہ وفیہ تحت قولہ وفی سبیل اللہ وھو منقطع الغزاۃ وقیل الحاج وقیل طلبۃ العلم وفسرہ فی البدائع بجمیع القرب قال فی النہر والخلاف لفظي للاتفاق علی ان الاصناف کلھم سوی العامل یعطون بشرط الفقر ٥ الخ وفیہ تحت قولہ و بھذا التعلیل یقوی ما نسب للواقعات من ان طالب العلم یجوز لہ اخذ الزکوۃ و لو غنیا اذا فرغ نفسہ

کہ فتح میں بھی کہا اور مسافر کے لیے جائز نہیں کہ وہ حاجت سے زائد ہے قلت اور یہ بخلاف فقیر ہے کہ اس کے لیے حاجت سے زائد لینا حلال ہے اور اسی سے فقیر اور مسافر میں فرق ہو گیا جیسا کہ ذخیرہ میں ہے اھ اور اس میں متن کے قول "منہ ما لو کان مالہ مؤجلا" (اس کا مال مؤخر ہو جائے) کے تحت ہے یعنی جب نفقہ کا محتاج ہو تو آنے کی مدت تک بقدر کفایت زکوۃ کا حصول جائز ہے، یہ نہر میں خانیہ سے ہے اھ اور اسی میں متن کے قول "او علی غائب" (یا غائب پر) کے تحت ہے یعنی اگرچہ یہ اس حال پر ہو کہ جس سے لینے پر قدرت نہ رکھتا ہو، ط اھ اور اسی میں متن کے قول "او معسر او جاحد الخ" یا تنگدست یا منکر ہو، اگرچہ اصح قول کے مطابق اس کے لیے گواہ ہوں تو اس کے لیے اصح قول کے مطابق زکوۃ لینا درست ہے کیونکہ یہ مسافر کی مانند ہے اور اگر امیر و معترف ہے تو اب جائز نہیں کما فی الخانیہ اھ اور اسی میں متن کے

قول "فی سبیل اللہ" کے تحت ہے یعنی وہ غازی جس کا خرچہ و اسلحہ ختم ہو گیا ہے بعض کے نزدیک اس سے حاجی اور بعض کے نزدیک طالبعلم مراد ہے، اور بدائع میں اس سے تمام امور خیر کے مصارف بیان کئے ہیں۔ نہر میں ہے کہ یہ اختلاف لفظی ہے کیونکہ اس پر اتفاق ہے عامل کے سوا تمام اصناف کو بشرط فقر زکوۃ دی جا سکتی ہے الخ اور اسی میں متن کے قول "وبھذا التعلیل یقوی الخ" اس تعلیل کے ساتھ وہ قوی ہو گیا جو واقعات کی طرف منسوب ہے کہ طالب علم کے زکوۃ کا لینا جائز ہے

١ ردالمختار باب المصرف مصطفی البابی مصر ٢/٦٧ ٢ ردالمختار باب المصرف مصطفی البابی مصر ٢/٦٧ ٣ ردالمختار باب المصرف مصطفی البابی مصر ٢/٦٧ ٤ ردالمختار باب المصرف مصطفی البابی مصر ٢/٦٧ ٥ ردالمختار باب المصرف مصطفی البابی مصر ٢/٦٧

For the benefit and acquisition of knowledge, this branch contradicts their absolute statement of prohibition (of zakat) for the wealthy, and no one relied on it. (T). I say: It is as such, and the more correct view is to restrict it to the poor until the end of what he stated, may the mercy of the Generous be upon him.	Even if he is wealthy, provided he has dedicated himself to the acquisition and imparting of knowledge. This specific point is against the general rule of the jurists who said that if a person is wealthy, taking zakat is forbidden. No one has relied on this general rule (in this case). (T). I say: It is so, and the preferable view is that this too should be restricted by poverty, as they have explained. May the mercy of the Generous be upon them.
And Allah subhanahu wa ta'ala knows best.	And Allah subhanahu wa ta'ala knows best. (T)

Sixth Issue: My total gold jewelry, plain and studded, after excluding the weight of pearls, stones, lacquer, etc., weighs sixty-eight (68) tolas, and the silver jewelry weighs three hundred and forty-one (341) tolas. In this situation, please inform me of the annual zakat due, explained in detail, and provide a guideline so that for any future additions, I can calculate the increase in zakat. Provide a ruling and be rewarded.

The Answer: The nisab (minimum threshold) for gold and silver and the calculation of what is due and what is exempt were explained in detail in the second issue. All the rulings regarding increase and decrease were clarified in the second and third issues. Those two issues were guidelines in themselves. However, the mixing of gold and silver, i.e., owning both types of wealth, certainly gives rise to some new rulings that were not mentioned above. Therefore, the humble servant (may Allah forgive him) mentions some necessary principles to complete the guideline, hoping for prayers for forgiveness and well-being in both worlds from the questioner and other benefiting readers. I say, and success is from Allah: When wealth, under known conditions, reaches the nisab, it inherently becomes the cause for the obligation of zakat and is independent in transmitting the ruling, not needing anything else. After the nisab, whatever reaches one-fifth of the nisab is also considered part of the nisab and a cause for obligation. However, what is less than one-fifth in its own category, for example, gold in gold or silver in silver, cannot trigger zakat because the pure Sharia has exempted it, as we previously explained in the second issue. (As we have

already explained in the second issue. T). Similarly, whatever exceeds the nisab but does not reach the next threshold on its own, lacks the capacity to be an inherent cause for obligation. However, when one category is mixed with another category, i.e., gold and silver together, since the reason for being a cause is their value as currency, and that is equal in both, from this perspective...

---

1 - Radd al-Muhtar, Bab al-Masrif, Mustafa al-Babi Egypt, 2/65.

ज्ञान के लाभ और प्राप्ति के लिए, यह शाखा उनके इस पूर्ण कथन के विरुद्ध है कि धनी के लिए (ज़कात) हराम है, और किसी ने इस पर भरोसा नहीं किया। (ट)। मैंने कहा: यह ऐसा ही है, और अधिक सही दृष्टिकोण यह है कि इसे भी निर्धनता के साथ प्रतिबंधित किया जाए, जैसा कि उन्होंने अंत तक बताया है, उन पर उदार प्रभु की कृपा हो।

और अल्लाह सुभानहु व ताआला सबसे बेहतर जानता है।

अगरचे वह धनी हो बशर्ते कि उसने ज्ञान प्राप्त करने और प्रदान करने के लिए स्वयं को समर्पित कर दिया हो। यह विशिष्ट बात फुक़हा (विधिवेत्ताओं) के उस पूर्ण नियम के विरुद्ध है जिसमें उन्होंने कहा कि यदि कोई धनी है तो ज़कात लेना हराम है और इस पर किसी ने भरोसा नहीं किया। (ट)। मैंने कहा: वह उसी तरह है, और बेहतर दृष्टिकोण यह है कि इसे भी निर्धनता के साथ सीमित किया जाए जैसा कि उन्होंने स्पष्ट किया है। उन पर उदार प्रभु की कृपा हो।

और अल्लाह सुभानहु व ताआला सबसे बेहतर जानता है। (त)

छठा मसला: मेरे सोने के सभी गहने, सादे और जड़ाऊ, मोती, रत्न और लाख आदि का वज़न घटाकर अड़सठ (68) तोले हैं, और चांदी के गहने तीन सौ एकतालीस (341) तोले हैं। इस स्थिति में वार्षिक ज़कात कितनी होगी, विस्तार से समझाएँ और एक ऐसी कार्यविधि बताएँ जिससे भविष्य में जितने भी गहने बनें, उन पर ज़कात बढ़ाई जा सके। मार्गदर्शन करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: सोने और चांदी का निसाब और उन पर अनिवार्य और माफ़ की जाने वाली गणना का विवरण दूसरे मसले में विस्तार से आ चुका है, और बढ़ोत्तरी और कमी के सभी नियम विस्तारपूर्वक दूसरे और तीसरे मसले में स्पष्ट कर दिए गए हैं। वे दोनों मसले अपने आप में कार्यविधि थे, लेकिन सोने और चांदी का मिला होना, यानी दोनों प्रकार की संपत्ति का मालिक होना, निश्चित रूप से कुछ नए नियमों का कारण बनता है जिनका उल्लेख ऊपर नहीं हुआ। इसलिए यह तुच्छ सेवक (अल्लाह उसे क्षमा करे) कार्यविधि को पूर्ण करने के लिए कुछ आवश्यक नियम यहाँ उल्लेख कर रहा है और प्रश्नकर्ता तथा अन्य पाठकों से इसके बदले में दोनों जहानों में क्षमा और कल्याण की दुआ की आशा रखता है। मैं कहता हूँ, और सफलता अल्लाह की ओर से है: जब संपत्ति ज्ञात शर्तों के अनुसार निसाब तक पहुँच जाती है, तो वह स्वयं ज़कात अनिवार्य होने का कारण बन जाती है और हुक्म लागू करने में स्वतंत्र है, उसे अपने हुक्म में किसी अन्य चीज़ की आवश्यकता नहीं होती। और निसाब के बाद जो

निसाब का पांचवां हिस्सा (खुम्स) हो, वह भी निसाब और अनिवार्यता का कारण है। हाँ, जो पांचवें हिस्से से कम है, वह अपनी श्रेणी में, उदाहरण के लिए सोने में सोना या चांदी में चांदी, ज़कात का कारण नहीं बन सकता क्योंकि पवित्र शरीयत ने उसे छूट दी है, जैसा कि हम दूसरे मसले में पहले बता चुके हैं। (जैसा कि हम दूसरे मसले में पीछे बयान कर आए हैं। त)। इसी तरह जो निसाब से अधिक हो लेकिन स्वयं अगले चरण तक न पहुँचे, वह अनिवार्यता का कारण बनने की क्षमता नहीं रखता। लेकिन जब एक श्रेणी को दूसरी श्रेणी के साथ मिला दिया जाए, यानी सोना और चांदी मिश्रित हों, तो चूंकि अनिवार्यता का कारण उनका मूल्य (मुद्रा होना) था और वह दोनों में समान है, तो इस दृष्टि से...

---

1 - रद अल-मुह्तार, बाब अल-मसरीफ, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 2/65.

لا فادة العلم واستفادته، هذا الفرع اگرچہ وہ غنی ہو بشرطیکہ اس نے افادہ و استفادہ علم کے لیے
مخاف لا طلاقهم الحرمة في الغنى اپنے آپ کو وقف کردیا ہو، یہ جزئیہ فقہاء کے اس اطلاق کے
ولم یعتمده احد ط قلت وهو كذلك خلاف ہے جو انہوں نے کہا کہ اگر غنی ہے تو زکوٰۃ لینا حرام
والا وجه تقییده بالفقیر الی اخر ما ہے اور اس پر کسی نے اعتماد نہیں کیا، ط قلت وہ اسی طرح
افاده علیه رحمة الجواد والله سبحانه ہے، اور اوجہ یہ ہے کہ اسے بھی فقر کے ساتھ مقید کر دیا
وتعالی اعلم۔ جائے جیسا کہ انہوں نے افادہ کیا ان پر رحمت جواد ہو۔
واللہ سبحانہ و تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ سادسہ: میرے کل زیور طلائی سادہ اور جڑاؤ میں سونے کا وزن، موتی اور نگینے اور لاکھ و غیرہا منہا کرکے اڑسٹھ ۶۸ تولے ہے اور زیور نقرئی تین سو اکتالیس تولے، اس صورت میں جو سالانہ زکوۃ ہو اس سے مشرح مطلع کیا جاؤں، اور ایک دستور العمل ایسا ہو کہ آئندہ جس قدر اور بنے اس پر زکوۃ بڑھالی جائے۔ بینوا توجروا۔

الجواب: سونے چاندی کا نصاب اور ان پر واجب و عفو کا حساب مسئلہ ثانیہ میں مشرحاً گزرا اور زیادت و نقصان کے تمام احکام بتفصیل تمام مسئلہ ثانیہ و ثالثہ میں مبین ہوئے۔ وہ دونوں مسئلے بجائے خود دستورالعمل تھے مگر اختلاط زر و سیم یعنی دونوں مال کا مالک ہونا، البتہ بعض نئے احکام کا موجب ہوتا ہے جن کا بیان اوپر نہ گزرا لہٰذا فقیر غفراللہ تعالیٰ لہ بعض ضوابط ضروریہ اور ذکر کرکے دستور العمل کی تکمیل کرتا اور حضرت مستفتی دامت برکاتہ، و دیگر ناظرین مستفنعین سے اس کے صلے میں دعائے عفو و عافیت دارین کی تمنا رکھتا ہے۔ فاقول: وباللہ

التوفیق مال جب بشرائط معلومہ نصاب کو پہنچے تو بنفسہ وجوب زکوۃ کا سبب اور ایراث حکم میں مستقل ہے جسے اپنے حکم میں دوسری شئی کی حاجت نہیں اور نصاب کے بعد جو خمس نصاب ہو وہ بھی نصاب و سبب ایجاب ہے، ہاں جو خمس سے کم ہے وہ اپنے نوع میں مثلاً چاندی یا سونا، سونے میں موجب زکوۃ نہیں ہوسکتا کہ شرع مطہر نے اسے عفو رکھا ہے کما قد منا فی المسئلۃ الثانیۃ (جیسا کہ ہم مسئلہ ثانیہ میں پیچھے بیان کر آئے ۔ت) اسی طرح جو رائداً نصاب کو نہیں پہنچا بنفسہ سببیت وجوب کی صلاحیت نہیں رکھتا مگر جب اس نوع کے ساتھ دوسری نوع بھی ہو یعنی زر و سیم مختلط ہوں تو ازانجا کہ وجہ سببیت ثمنیت تھی اور وہ دونوں میں یکساں، تو اس حیثیت سے

---

1 - ردالمحتار باب المصرف مصطفٰی البابی مصر ۲/۶۵

Fatawa-e-Razviyya Volume 10

Gold and silver are of the same genus, hence according to us, that which could not cause Zakat to become obligatory in one type—either because it did not reach the nisab (minimum threshold) or because it was within the 'forgiven' (exempt) margin after nisab—that amount will be added to the other type by valuing it, so that perhaps it becomes apparent that Zakat is now obligatory on it. Thus, if by this joining, the amount of Zakat increases (in the sense that the second type was not a nisab before joining, but became one upon joining, or the previous nisab of one-fifth was completed), then the Zakat will be increased by that much. And if any 'forgiven' part remains after joining, it will truly be 'forgiven', otherwise not. And if even after joining, no additional Zakat amount is evident, then it will become clear that originally no Zakat was due. It is stated in Al-Hidayah:

Arabic Text

The value of trade goods is added to gold and silver until the nisab is completed. Gold is joined with silver because they are of the same genus in terms of being currency (price), and for this reason, it becomes the cause [of obligation]. Then, according to Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him), they are joined based on value.[1]

In Fath al-Qadir:

The two currencies (gold and silver) are joined to each other for the completion of nisab according to us.[2]

In Tabyin al-Haqa'iq:

Gold is joined with silver based on value, so the nisab is completed by it, because all are of one genus.[3]

In Al-Khulasah:

The basis of this is that gold is joined to silver.

Urdu Translation

The value of goods will be combined with the value of gold and silver so that the nisab is completed. Gold will be combined with silver because they are of the same genus based on being currency, and for this reason, it will be the cause of obligation. Then, according to Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him), it will be combined based on value. (T)

In Fath al-Qadir:

According to us, for the completion of nisab, both currencies (gold and silver) shall be joined with each other. (T)

In Tabyin al-Haqa'iq:

Gold will be joined with silver according to the value so that the nisab is completed because they are of the same genus among themselves. (T)

In Al-Khulasah:

According to us, for the sake of completion of nisab, gold to silver...

[1] Al-Hidayah, Kitab az-Zakat, Fasl fil-Urooz, Maktaba al-Arabiyya, Karachi, 1/176 [2] Fath al-Qadir, Fasl fil-Urooz, Maktaba Nooriya Razviyya, Sukkur, 2/129 [3] Tabyin al-Haqa'iq, Bab Zakat al-Maal, Matba' Kubra Amiriyya, Bulaq, Egypt, 1/281

फ़तावा-ए-रज्विया जिल्द १०

सोना और चाँदी एक ही श्रेणी के हैं, इसलिए हमारे अनुसार, जो एक प्रकार में ज़कात को अनिवार्य नहीं बना सकता था—चाहे वह निसाब (न्यूनतम सीमा) न होने के कारण हो या निसाब के बाद 'माफ़' (छूट प्राप्त) मात्रा में होने के कारण—उस राशि को दूसरे प्रकार के साथ उसका मूल्य निर्धारित करके मिला दिया जाएगा, ताकि शायद अब यह स्पष्ट हो जाए कि उस पर ज़कात अनिवार्य हो गई है। अत; यदि इस मिलाप से ज़कात की राशि बढ़ती है (इस अर्थ में कि दूसरा प्रकार मिलाप से पहले निसाब नहीं था, लेकिन मिलने पर हो गया, या पिछले एक-पाँचवें हिस्से का निसाब पूरा हो गया), तो ज़कात उसी मात्रा में बढ़ा दी जाएगी। और यदि मिलाप के बाद कुछ 'माफ़' हिस्सा बचता है, तो वह वास्तव में 'माफ़' होगा, अन्यथा नहीं। और यदि मिलाप के बाद भी ज़कात की कोई अतिरिक्त राशि स्पष्ट नहीं होती, तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि मूल रूप से कोई ज़कात देय नहीं थी। हिदाया में है:

अरबी पाठ

सामान के मूल्य को सोने और चाँदी के साथ मिलाया जाएगा ताकि निसाब पूरा हो जाए और क़ीमत होने के कारण एक ही जाति के होने की वजह से सोने को चाँदी के साथ मिलाया जाएगा और इसी वजह से यह अनिवार्यता का कारण होगा, फिर इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) के नज़दीक क़ीमत के लिहाज़ से मिलाया जाएगा।[1]

उर्दू अनुवाद

सामान की क़ीमत को सोने और चाँदी की क़ीमत के साथ मिलाया जाएगा ताकि निसाब मुकम्मल हो जाए और समन की बिना पर हम जिन्स होने की वजह से सोने को चाँदी के साथ मिलाया जाएगा और इसी वजह से ये सबब-ए-वजूद होगा फिर इमाम अबू हनीफ़ा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु के नज़दीक क़ीमत के लिहाज़ से मिलाया जाएगा। (त)

फ़तह अल-क़दीर में है:

हमारे नज़दीक निसाब मुकम्मल करने के लिए दोनों नक़ूद (सोना व चाँदी) को एक दूसरे के साथ मिलाया जाएगा।[2]

फ़तह अल-क़दीर में है:

हमारे नज़दीक तकमील-ए-निसाब के लिए दोनों नक़ूद (सोने व चाँदी) को एक दूसरे के साथ मिलाया जाएगा। (त)

तबयीन अल-हक़ाएक़ में है:

तबयीन अल-हक़ाएक़ में है:

अरबी पाठ

सोने को चाँदी के साथ मूल्य के आधार पर मिलाया जाएगा ताकि निसाब मुकम्मल हो जाए क्योंकि सब एक ही जाति के हैं।[3]

ख़ुलासा में है:

इसका मूल आधार यह है कि सोने को चाँदी के साथ मिलाया जाता है।

उर्दू अनुवाद

सोने को चाँदी के साथ क़ीमत के एतबार से मिलाया जाएगा ताकि निसाब मुकम्मल हो जाए क्योंकि ये आपस में हम जिन्स हैं। (त)

ख़ुलासा में है:

हमारे नज़दीक तकमील-ए-निसाब की ख़ातिर सोने को चाँदी...

[1] अल-हिदाया, किताब-उज़-ज़कात, फ़स्ल फ़िल-उरूज़, मक्तबा अल-अरबिया, कराची, 1/176 [2] फ़तह अल-क़दीर, फ़स्ल फ़िल-उरूज़, मक्तबा नूरिया रज्विया, सुक्कुर, 2/129 [3] तबयीन अल-हक़ाएक़, बाब ज़कात अल-माल, मतबा कुबरा अमीरिया, बुलाक़, मिस्र, 1/281

ذہب وفضہ جنس واحد لہذا ہمارے نزدیک جو ایک نوع میں موجب زکوۃ نہ ہو سکتا تھا خواہ اس لیے کہ نصاب ہی نہ تھا یا اس لیے کہ نصاب کے بعد عفو تھا اس مقدار کو دوسری نوع سے تقویم کرکے ملا دیں گے کہ شاید اب اس کا موجب زکوۃ ہونا ظاہر ہو پس اگر اس ضم سے کچھ مقدار زکوۃ بڑھے گی (بایں معنی کہ نوع ثانی قبل ضم نصاب نہ تھی اسکے ملنے سے نصاب ہوگئی یا اگلی نصاب خمس کی تکمیل ہوگئی) تو اسی قدر زکوۃ بڑھا دیں گے اور اب اگر کچھ عفو بچا تو وہ حقیقۃ عفو ہوگا ورنہ کچھ نہیں اور اگر ضم کے بعد بھی کوئی مقدار زکوۃ زائد نہ ہو تو ظاہر ہو جائے گا کہ یہ اصلاً موجب زکوۃ نہ تھا۔ ہدایہ میں ہے :

عربی متن	**اردو ترجمہ**
تضم قیمة العروض الی الذهب والفضة حتی یتم النصاب و یضم الذهب الی الفضة للمجانسة من حیث الثمنیة ومن هذا الوجه صار سببًا ثم یضم بالقیمة عند ابی حنیفة رضی الله تعالی عنه۔ 1	سامان کی قیمت کو سونے اور چاندی کی قیمت کے ساتھ ملایا جائے گا تاکہ نصاب مکمل ہو جائے اور ثمن کی بنا پر ہم جنس ہونے کی وجہ سے سونے کو چاندی کے ساتھ ملایا جائے گا اور اسی وجہ سے یہ سبب وجوب ہوگا پھر امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالٰی عنہ کے نزدیک قیمت کے لحاظ سے ملایا جائے گا۔ (ت)

فتح القدیر میں ہے :

فتح القدیر میں ہے :

النقدان یضم احد هما الی الآخر فی تکمیل النصاب عندنا۔ 2	ہمارے نزدیک تکمیل نصاب کے لیے دونوں نقود (سونے و چاندی) کو ایک دوسرے کے ساتھ ملایا جائے گا۔(ت)

عربی متن	اردو ترجمہ
تبیین الحقائق میں ہے :	**تبیین الحقائق میں ہے :**
یضم الذھب الی الفقة با لقیمة فیکمل به النصاب لان الکل جنس واحد۔ 3	سونے کو چاندی کے ساتھ قیمت کے اعتبار سے ملایا جائیگا تاکہ نصاب مکمل ہو جائے کیونکہ یہ آپس میں ہم جنس ہیں (ت)
خلاصہ میں ہے :	**خلاصہ میں ہے :**
اصل ھذا ان الذھب یضم الی فضة	ہمارے نزدیک تکمیل نصاب کی خاطر سونے کو چاندی

1 الہدایہ کتاب الزکوۃ فصل فی العروض مکتبہ العربیہ کراچی ۱/۱۷۶ 2 فتح القدیر فصل فی العروض مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/۱۲۹ 3 تبیین الحقائق باب زکوۃ المال مطبعہ کبرٰی امیریہ بولاق مصر ۱/۲۸۱

Fatawa Razawiya Volume 10

In completing the Nisab according to us, and this is Istihsan (Juristic preference).[1] | Combining it [gold with silver] is the original principle and this is by way of Istihsan. (T) It is stated in Nuqayah: Gold is combined with silver by value for the completion of the Nisab.[2] | For the completion of the Nisab, gold will be combined with silver according to its value. (T)

From these statements of the Imams and the discourse of this humble one, it becomes clear that this combining is only for the purpose of completing the Nisab. A Nisab that is complete in itself does not need addition because it is an independent cause. The pure Shariah has already mandated an obligatory amount due to it. Now, mandating the combining of a [complete] Nisab with another thing is not completion of Nisab but nullification of Nisab. Or say that the purpose of this combining is to achieve the obligation, not to change the obligation. Therefore, our scholars state clearly that in complete Nisabs of gold and silver, the rule of combining does not apply; rather, Zakat will be obligatory separately on the gold Nisab and separately on the silver Nisab. Yes, if someone wants to pay in one type of Zakat and combines them by assigning a value, then there is no harm according to us. However, it will be mandatory at that time to value it in a way that is more beneficial for the poor. For example, if one currency is more widely circulated and the other less, then value it based on the one that is more circulated. Imam Malik al-Ulama Abu Bakr Mas'ud al-Kashani (may his secret be sanctified) says in Bada'i:

When each of them is a complete Nisab and there is no excess over it, combining is not mandatory. Rather, Zakat should be paid from each. If one combines one with the other to pay all of it from silver or gold, there is no harm according to us. But it is mandatory that the valuation be based on what is more beneficial for the poor in terms of circulation. Otherwise, one-fortieth (2.5%) should be paid from each.[3] | If the Nisab of both (gold and silver) is complete without addition, then combining them with each other is not mandatory; instead, the Zakat of each should be paid. And if someone combined them and paid the Zakat of each from either gold or silver, there is no harm with us. However, it is necessary that the value be set according to what is more beneficial for the poor in terms of circulation, otherwise, the fortieth part should be paid from each. (T)

From this elegant discourse, these benefits were gained: that if on one side there is a complete Nisab without exemption and on the other...

[1] Khulasat al-Fatawa, Chapter 5 on Zakat of Wealth, Maktaba Habibiya, Quetta, 1/231
[2] An-Nuqayah, Book of Zakat, Nur Muhammad Karkhana Tijarat Kutub, Karachi, p. 34
[3] Bada'i al-Sana'i, Section: Our stance on the obligatory amount, H.M. Said Company, Karachi, 2/201

हमारे नज़दीक निसाब को पूरा करने में, और यह इस्तेहसान (न्यायिक प्राथमिकता) है।[1] | इसके साथ मिलाना ही असल है और यह इस्तेहसान के तौर पर है। (त) नुक़ाया में है: निसाब पूरा करने के लिए सोने को मूल्य के आधार पर चांदी के साथ जोड़ा जाता है।[2] | निसाब पूरा करने के लिए सोने को मूल्य के हिसाब से चांदी के साथ मिलाया जाएगा। (त)

इमामों के इन कथनों और इस तुच्छ सेवक की व्याख्या से यह स्पष्ट हो गया कि यह मिलाना केवल निसाब पूरा करने के उद्देश्य से होता है। वह निसाब जो स्वयं में पूर्ण है उसे जोड़ने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि वह स्वयं एक स्वतंत्र कारण है। पवित्र शरीयत ने इसके कारण एक अनिवार्य मात्रा पहले ही निर्धारित कर दी है। अब एक [पूर्ण] निसाब को दूसरी चीज़ के साथ जोड़ने को अनिवार्य करना निसाब को पूरा करना नहीं बल्कि निसाब की स्थिति को समाप्त करना है। या यूँ कहें कि इस मिलावट का उद्देश्य दायित्व की प्राप्ति है, दायित्व का परिवर्तन नहीं। इसलिए हमारे विद्वान स्पष्ट रूप से कहते हैं कि सोने और चांदी के पूर्ण निसाबों में मिलाने का नियम लागू नहीं होता, बल्कि सोने के निसाब पर अलग से ज़कात अनिवार्य होगी और चांदी के निसाब पर अलग से। हाँ, यदि कोई व्यक्ति एक ही प्रकार की ज़कात देना चाहता है और मूल्य लगाकर उन्हें मिला लेता है, तो हमारे नज़दीक इसमें कोई हर्ज नहीं है। लेकिन उस समय यह अनिवार्य होगा कि मूल्यांकन इस तरह किया जाए जो गरीबों के लिए अधिक लाभकारी हो। उदाहरण के लिए, यदि एक मुद्रा अधिक प्रचलित है और दूसरी कम, तो जो अधिक प्रचलित है उससे मूल्यांकन करें। इमाम मलिकुल उलमा अबु बक्र मसूद काशानी (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र करे) बदाए में फ़रमाते हैं:

जब उनमें से प्रत्येक एक पूर्ण निसाब हो और उस पर कोई अतिरिक्त न हो, तो मिलाना अनिवार्य नहीं है। बल्कि प्रत्येक में से ज़कात अदा की जानी चाहिए। यदि कोई उनमें से एक को दूसरे के साथ मिला दे ताकि वह पूरा चांदी या सोने में से अदा करे, तो हमारे नज़दीक इसमें कोई हर्ज नहीं है। लेकिन यह अनिवार्य है कि मूल्यांकन उस चीज़ में हो जो गरीबों के लिए प्रचलन के मामले में अधिक लाभदायक हो। अन्यथा, प्रत्येक में से चालीसवां हिस्सा (2.5%) अदा किया जाना चाहिए।[3] | यदि दोनों (सोना और चांदी) का निसाब बिना किसी अतिरिक्त के पूर्ण है, तो अब एक-दूसरे के साथ मिलाना अनिवार्य नहीं है, बल्कि प्रत्येक की ज़कात अदा की जाएगी। और यदि किसी ने मिलाकर सोने और चांदी में से प्रत्येक की ज़कात अदा कर दी, तो भी हमारे यहाँ कोई हर्ज नहीं है। लेकिन यह ज़रूरी है कि मूल्य

उस चीज़ के साथ लगाया जाए जो प्रचलन के अनुसार गरीबों के लिए अधिक लाभदायक हो, अन्यथा प्रत्येक में से चालीसवां हिस्सा अदा कर दिया जाए। (त)

इस सुंदर चर्चा से ये लाभ प्राप्त हुए कि यदि एक ओर बिना छूट के पूर्ण निसाब है और दूसरी ओर...

[1] ख़ुलासतुल फ़तावा, अध्याय 5 ज़कात के बारे में, मकतबा हबीबिया, क्वेटा, 1/231 [2] अन-नुक़ाया, किताबुज़ ज़कात, नूर मुहम्मद कारख़ाना तिज़ारत कुतुब, कराची, पृ. 34 [3] बदाए अस-सनाए, खंड: अनिवार्य मात्रा पर हमारा रुख, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 2/201

पृष्ठ 119/836

فی تکمیل النصاب عندنا و ھذا استحسان ۔ 1 | کے ساتھ ملانا یہ اصل ہے اور یہ بطور استحسان ہے۔ (ت) نقایہ میں ہے : یضم الذھب الی الفضۃ بالقیمۃ لاتمام النصاب۔ 2 | اتمامِ نصاب کے لیے سونے کو قیمت کے اعتبار سے چاندی کے ساتھ ملایا جائے گا۔ (ت)

ان عباراتِ ائمہ و تقریرِ فقیر سے واضح ہوا کہ یہ ملانا صرف بغرضِ تکمیلِ نصاب ہوتا ہے، نصاب کہ بنفسہ کامل ہے محتاجِ ضم نہیں کہ خود سببِ مستقل ہے تو شرح مطہر اُس کے سبب ایک مقدار واجب فرما چکی اب نصاب کو دوسری چیز سے ضم کرنے کا ایجاب تکمیلِ نصاب نہیں تعطیلِ نصاب ہے، یایوں کہئے کہ اس ضم سے مقصود تحصیل واجب ہے نہ تبدیلِ واجب۔ ولہذا ہمارے علماء تصریح فرماتے ہیں کہ ذہب و فضہ کا کامل نصابوں میں حکم ضم نہیں بلکہ نصابِ ذہب پر جدا زکوۃ واجب ہوگی اور نصابِ فضہ پر جدا۔ ہاں اگر کوئی یہ چاہے کہ میں ایک ہی نوع زکوۃ میں دوں اور وہ قیمت لگا کر ضم کرلے تو ہمارے نزدیک کوئی مضائقہ بھی نہیں، مگر اس وقت واجب ہوگا کہ تقویم ایسی کرے جس میں فقراء کا نفع زائد ہو مثلاً ایک نقد زیادہ رائج ہے دوسرا کم، تو جو رائج تر ہے اُس سے تقویم کرے- امام ملک العلاء ابوبکر مسعود کاشانی قدس سرہ الربانی بدائع میں فرماتے ہیں:

اذا کان کل واحد منھما نصاباً تاماً ولم یکن زائداً علیہ لا یجب الضم بل ینبغی ان یؤدی من کل واحد منھما زکوتہ ولو ضم احدھما الی الآخر حتی یؤدی کلہ من الفضۃ اومن الذھب فلا باس بہ عندنا ولکن یجب ان یکون التقویم بما ھو انفع للفقراء رواجاً والا فیؤدی من کل واحد منھما ربع عشرۃ۔ 3 | اگر دونوں (سونا و چاندی) کا نصاب بلا اضافہ کے کامل ہے تو اب ایک دوسرے کے ساتھ ملانا واجب نہیں بلکہ ہر ایک کی زکوۃ ادا کی جائے اور اگر کسی نے ملا کر سونے چاندی میں سے ہر ایک

کی زکوۃ ادا کردی تو بھی ہمارے ہاں کوئی حرج نہیں لیکن یہ لازم ہے کہ قیمت اس کے ساتھ لگائی جائے جو رواجاً فقراء کے لیے زیادہ نافع ہو، ورنہ ہر ایک میں سے چالیسواں حصہ ادا کردیا جائے۔ (ت)

اس نفیس تقریر سے یہ فائدے حاصل ہوئے کہ اگر ایک جانب نصاب تام بلا عفو ہے اور دوسری

1 خلاصہ الفتاوی الفصل الخامس فی زکوۃ المال مکتبہ حبیبیہ کوئٹہ ۱/۲۳۱ 2 النقا یہ کتاب الزکوۃ نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳۴ 3 بدائع الصنائع فصل ولنا مقدار الواجب فیہ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/۲۰۱

Fatawa Rizvia, Volume 10

...[if the amount is] less than the threshold (nisab) on one side, then the specific method of addition here will be to value this non-threshold amount against that threshold and add it. It will not be that the threshold is valued and added to the non-threshold amount. For example, if silver is at the threshold and gold is not, then this gold will be converted to silver [for valuation]; silver will not be converted to gold. And if the situation is the reverse, then the opposite applies. Similarly, if on one side there is a complete threshold without an 'afw' [exempt excess] and on the other side there is a threshold along with 'afw', then only this 'afw' will be added to that threshold; the threshold combined with the 'afw' will not be added because it is only the 'afw' that needs completion, not the threshold. For example, if there is 7, 9, or 12 tolas of gold and 60 tolas of silver, where 7 tolas of silver is 'afw', then only those 7 tolas of silver will be converted into gold, not the total 60 tolas. Likewise, if there is 'afw' on both sides, then only these 'afw' amounts will be combined together, and the thresholds on both sides will be separated. It is stated in Al-Hindiyyah:

If there remains from the two thresholds less than four mithqals and less than forty dirhams, then one of the two excesses is added to the other until forty dirhams or four mithqals of gold is completed, as stated in Al-Mudmarat.

Translation: If there is an excess of less than four mithqals and less than forty dirhams on both thresholds, then one addition should be combined with the other until forty dirhams are completed or four mithqals of gold is completed, as mentioned in Al-Mudmarat. (T)

Thus, it is proven that what is capable of being combined is that which itself is not a threshold. Then, if this capability exists on only one side, the method of combining will be automatically determined as previously mentioned (as passed before. T). And if it is on both sides, then this matter will be worthy of consideration: which one should be valued against the other now that both possess the capacity for combining? There will be no preference based on quantity (greater or lesser) such that it is mandatory to combine only the smaller with the larger and not vice versa. When it is not a threshold, both small and large amounts are equal in the need for completion. It is stated in Radd al-Muhtar:

There is no difference between adding the lesser to the greater and vice versa.

Translation: There is no difference between adding the lesser amount to the greater or vice versa. (T)

Rather, the rule will be to adopt whichever valuation is more beneficial for the poor. If converting gold to silver is more beneficial for the poor, then follow that method; and if valuing silver as gold is decided, then establish that. If both cases are equal in benefit, then the one paying Zakat (muzakki) has the choice. It is stated in Durr-e-Mukhtar: is

1. Fatawa Hindiyyah, Chapter One regarding Zakat of Gold and Silver, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/179.
2. Radd al-Muhtar, Chapter on Zakat of Wealth, Mustafa al-Babi Egypt, 1/135.

फतावा रज़विया, खंड 10

...[यदि राशि] एक ओर निसाब (न्यूनतम सीमा) से कम हो, तो यहाँ जोड़ने का यही तरीका तय होगा कि इस गैर-निसाब को उस निसाब के साथ मूल्यवान बनाकर मिला दें। ऐसा नहीं होगा कि निसाब का मूल्यांकन करके उसे गैर-निसाब से मिलाया जाए। उदाहरण के लिए, यदि चाँदी निसाब के बराबर है और सोना गैर-निसाब, तो इस सोने को चाँदी बनाया जाएगा; चाँदी को सोना नहीं बनाया जाएगा, और यदि स्थिति इसके विपरीत हो, तो नियम भी विपरीत होगा। इसी प्रकार, यदि एक तरफ बिना 'अफ़्व' (छूट योग्य अतिरिक्त राशि) के पूर्ण निसाब है और दूसरी ओर 'अफ़्व' के साथ निसाब है, तो केवल इस 'अफ़्व' को उस निसाब में जोड़ा जाएगा; 'अफ़्व' के साथ वाले निसाब के कुल योग को नहीं जोड़ा जाएगा क्योंकि पूर्णता की आवश्यकता केवल उस 'अफ़्व' को है, निसाब को नहीं। उदाहरण के लिए, 7 या 9 या 12 तोले सोना और 60 तोले चाँदी है, जिसमें 7 तोले चाँदी 'अफ़्व' है, तो केवल उस 7 तोले चाँदी को सोना बनाया जाएगा, न कि कुल 60 तोले को। इसी तरह, यदि दोनों तरफ 'अफ़्व' है, तो केवल उन 'अफ़्व' को आपस में मिलाया जाएगा, और दोनों तरफ के निसाब को अलग निकाल लिया जाएगा। हिन्दिया में है:

यदि दो निसाबों में से चार मिस्क़ाल से कम और चालीस दिरहम से कम बचता है, तो दो वृद्धियों में से एक को दूसरे के साथ जोड़ा जाता है जब तक कि चालीस दिरहम या चार मिस्क़ाल सोना पूरा न हो जाए, जैसा कि मुज़मरात में है।

अनुवाद: यदि दोनों निसाबों पर चार मिस्क़ाल से कम और चालीस दिरहम से कम अतिरिक्त हो, तो एक अतिरिक्त राशि को दूसरे के साथ मिलाया जाए यहाँ तक कि चालीस दिरहम पूरे हो जाएँ या चार मिस्क़ाल सोना पूरा हो जाए, जैसा कि मुज़मरात में है। (त)

अतः यह सिद्ध हुआ कि जोड़ने के योग्य वही है जो स्वयं निसाब नहीं है। फिर यदि यह योग्यता केवल एक ही तरफ है, तो जोड़ने का तरीका स्वतः ही निर्धारित हो जाएगा जैसा कि पहले बताया गया है (जैसा कि पीछे गुज़रा। त)। और यदि यह दोनों तरफ है, तो यह मामला विचारणीय होगा कि अब इनमें से किसे किससे मूल्यवान माना जाए जबकि दोनों में जोड़ने की क्षमता है। इसमें कम या अधिक होने के कारण कोई प्राथमिकता नहीं होगी कि अनिवार्य रूप से केवल कम को ही अधिक के साथ जोड़ा जाए और अधिक को नहीं। जब निसाब की स्थिति नहीं है, तो कम और अधिक दोनों को पूरा करने की आवश्यकता समान है। रद अल-मुह्तार में है:

कम को अधिक में जोड़ने और इसके विपरीत करने में कोई अंतर नहीं है।

अनुवाद: कम को अधिक के साथ मिलाने या इसके विपरीत करने में कोई अंतर नहीं है। (त)

बल्कि नियम यह होगा कि जो मूल्यांकन गरीबों के लिए अधिक लाभदायक हो, उसे अपनाएं। यदि सोने को चाँदी करने में गरीबों का लाभ अधिक है तो वही तरीका अपनाएं और यदि चाँदी को सोना ठहराने में लाभ है तो यही ठहराएं और यदि दोनों स्थितियों में लाभ समान है तो ज़कात देने वाले (मुज़क्की) को विकल्प है। दुर्र-ए-मुख़्तार में है है (है)

1. फ़तावा हिन्दिया, सोने और चाँदी की ज़कात का पहला अध्याय, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 1/179।
2. रद अल-मुह्तार, धन की ज़कात का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/135।

طرف نصاب سے کم، تو یہاں یہی طریقہ ضم متعین ہوگا کہ اس غیر نصاب کو اُس نصاب سے تقویم کرکے ملادیں، یہ نہ ہوگا کہ نصاب کو تقویم کرکے غیر نصاب سے ملائیں۔ مثلاً چاندی نصاب ہے اور سونا غیر نصاب، تو اس سونے کو چاندی کریں گے چاندی کو سونا نہ کریں گے، اور عکس ہے تو عکس۔ اسی طرح اگر ایک طرف نصاب تام بلاعفو ہے اور دوسری جانب نصاب مع عفو، تو صرف اس عفو کو اس نصاب سے ملائیں گے نصاب مع العفو مجموع کو ضم نہ کریں گے کہ محتاجِ تکمیل صرف وہی عفو ہے نہ کہ نصاب، مثلاً ۷ یا ۹ یا ۱۲ تولے سونا اور ۶۰ تولے چاندی ہے جس میں ۷ تولے چاندی عفو ہے تو صرف اس ۷ تولے چاندی کو سونا کریں گے نہ کہ مجموع ۶۰ تولے کو۔ یونہی اگر دونوں جانب عفو ہے تو صرف ان عفوؤں کو باہم ملائیں گے، دونوں طرف کے نصاب الگ نکال لیں گے۔ ہندیہ میں ہے:

لو فضل من النصابین اقل من اربعة مثاقیل واقل من اربعین درھماً فانه تضم احدی الزیادتین الی الاخری حتی یتم اربعین درھماً او اربعة مثاقیل ذھب کذا فی المضمرات۔

اگر دونوں نصابوں پر چار مثقال سے کم اور چالیس درہم سے کم اضافی ہو تو ایک اضافہ کو دوسرے کے ساتھ ملایا جائے حتی کہ چالیس درہم کامل ہوجائیں یا چار مثقال سونا مکمل ہوجائے، جیسا کہ مضمرات میں ہے۔ (ت)

پس ثابت ہوا کہ قابلِ ضم وہی ہے جو خود نصاب نہیں، پھر اگر یہ قابلیت ایک ہی طرف ہے جب تو طریقہ ضم آپ ہی متعین ہوگا کما سبق (جیسا کہ پیچھے گزرا۔ت) اور دونوں جانب ہے تو البتہ یہ امر غور طلب ہوگا کہ اب ان میں کس کو کس سے تقویم کریں کہ دونوں صلاحیتِ ضم رکھتے ہیں،

اس میں کثرت وقلت کی وجہ سے ترجیح نہ ہوگی کہ خواہِ مخواہی قلیل ہی کو کثیر سے ضم کریں کثیر کو نہ کریں کہ جب نصابیت نہیں تو قلیل و کثیر دونوں احتیاجِ تکمیل میں یکساں۔ ردالمحتار میں ہے:

لا فرق بین ضم الاقل الی الاکثر وعکسہ۔

اقل کو اکثر ساتھ ملانا یا اس کے برعکس کرنے میں کوئی فرق نہیں۔ (ت)

بلکہ حکم یہ ہوگا جو تقویم فقیروں کے لیے انفع ہو اسے اختیار کریں، اگر سونے کو چاندی کرنے میں فقراء کا نفع زیادہ ہے تو وہی طریقہ برتیں، اور چاندی کو سونا ٹھہراتے ہیں تو یہی ٹھہرائیں، اور دونوں صورتیں نفع میں یکساں تو مزکی کو اختیار۔ درمختار میں ہے ہے

1 فتاوٰی ہندیہ الفصل الاول فی زکوٰۃ الذھب والفضہ نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۱۷۹ 2 ردالمحتار باب زکوٰۃ المال مصطفی البابی مصر ۱/ ۱۳۵

Fatawa Rizvia Volume 10

"If reaching the Nisab (minimum amount for Zakat) is possible with one and not the other, then the one that achieves it is designated for combination. If reaching the Nisab and a fifth (Khums) is possible with one, and less with the other, it should be valued by whatever is more beneficial for the poor. (Siraj etc.). And in Rad al-Muhtar, citing al-Nahr from al-Fath, it is quoted that the value of what makes it reach the Nisab is designated for combination, not the other. If it reaches the Nisab with both, but one is more current (in circulation), the valuation with the more current one is designated. (etc.). And in the Commentary on Niqaya by al-Quhustani: if they are equal, the owner has the choice." (T)

When these matters have been clarified, the rulings for all cases are known, as the mixing of gold and silver is confined to these three situations: (1) Either there will be no quantity capable of being combined on either side; and this will only happen when both reach the Nisab and both are without surplus (Afw). Its ruling was mentioned first: Zakat for each will be due separately, and if paying from one type, then consideration for the benefit of the poor is obligatory. (2) Or only one side will have a quantity capable of being combined. This will happen when one is a Nisab without surplus and the other is such a variable Nisab or a Nisab with surplus. Two cases arise from this; the rule for them was just learned: that specific combinable amount will be valued with the other. (3) Or there will be quantities capable of being combined on both sides. This will happen when both are less than the Nisab, or one is less and the other has surplus, or both have surplus. There are three cases for this. Rule 2 was also mentioned: that the quantities capable of being combined on both sides will be joined together, and the benefit of the poor will be considered. That is, whichever valuation results in a higher value of due Zakat, that will be chosen. If the value is equal, then the one with higher currency/usage will be taken. If value and currency are all the same, then a choice will be given.

---

1 Durr-e-Mukhtar, Chapter on Zakat of Wealth, Matba' Mujtabai Delhi, 1/135 2 Rad al-Muhtar, Chapter on Zakat of Wealth, Mustafa al-Babi Egypt, 2/34 3 Jami' al-Rumuz, Book of Zakat, Maktaba Islamia Gunbad Qamous Iran, 2/313

फ़तावा रिज़विया जिल्द दसवीं

"यदि एक को जोड़ने से निसाब (ज़कात के लिए न्यूनतम राशि) बनता है और दूसरे से नहीं, तो जिससे बनता हो उसे जोड़ने के लिए निर्धारित किया जाएगा। और यदि एक को जोड़ने से निसाब और पांचवां हिस्सा (खुम्स) बनता है और दूसरे से कम बनता है, तो जो गरीबों के लिए अधिक लाभदायक हो उससे मूल्य बनाया जाए, सिराज आदि। और रद-अल-मुह्तार में अल-नहर के हवाले से, अल-फतह से उद्धृत है कि निसाब तक पहुँचाने वाले का मूल्य जोड़ने के लिए निर्धारित होगा, दूसरे का नहीं। यदि दोनों से निसाब पूरा हो जाए जबकि एक का प्रचलन अधिक है, तो अधिक प्रचलित के साथ मूल्य लगाना निर्धारित होगा आदि। और शरह निक़ाया अल-क़ुहस्तानी में है: यदि दोनों बराबर हों तो मालिक को अधिकार है।" (त)

जब ये बातें स्पष्ट हो गईं, तो सभी स्थितियों के नियम ज्ञात हो गए कि सोने और चांदी का मिश्रण इन्हीं तीन स्थितियों में सीमित है: (१) या तो किसी भी तरफ कोई जोड़ने योग्य मात्रा नहीं होगी; और यह तभी होगा जब दोनों निसाब हों और दोनों में कोई अतिरिक्त (अफ़्व) न हो। इसका नियम पहले ही बताया जा चुका है कि प्रत्येक की ज़कात अलग-अलग देय होगी और यदि एक ही प्रकार से देना हो, तो गरीबों के लाभ का ध्यान रखना अनिवार्य है। (२) या केवल एक तरफ जोड़ने योग्य मात्रा होगी। यह तब होगा जब एक बिना अतिरिक्त के निसाब हो और दूसरा उतना परिवर्तित निसाब या अतिरिक्त वाला निसाब हो। इसकी दो स्थितियाँ निकलती हैं, उनका नियम अभी ज्ञात हुआ कि उसी विशिष्ट जोड़ने योग्य मात्रा का दूसरे के साथ मूल्यांकन करेंगे। (३) या दोनों तरफ जोड़ने योग्य मात्राएँ हों। यह इस तरह होगा कि दोनों निसाब से कम हों या एक कम हो और एक में अतिरिक्त हो या दोनों में अतिरिक्त हो। इसकी तीन स्थितियाँ हुईं। नियम २ में भी बताया गया कि जो मात्राएँ दोनों तरफ जोड़ने योग्य हैं, उन्हें आपस में मिलाया जाएगा और गरीबों के लाभ का ध्यान रखा जाएगा। अर्थात जिस मूल्यांकन में देय ज़कात की राशि अधिक हो, वही चुना जाएगा। और यदि मूल्य बराबर हो तो जिसका प्रचलन अधिक है उसे लिया जाएगा और यदि मूल्य और प्रचलन सब समान हों तो अधिकार दिया जाएगा।

---

१ दुर्रे मुख़्तार, बाब ज़कातुल माल, मतबा मुजतबाई दिल्ली, १/१३५ २ रद-अल-मुह्तार, बाब ज़कातुल माल, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, २/३४ ३ जामे-उर-रुमूज़, किताबुज़ ज़कात, मकतबा इस्लामिया गुंबद क़ामूस ईरान, २/३१३

فتاوی رضویہ جلد دہم

لو بلغ باحد هما نصاباً دون الاخر تعين مابلغ بہ ولو بلغ باحدہما نصاباً وخمساً و بالا خراقل قومہ بالا نفع للفقير سراج اھ ۱ وفي ردالمحتار عن النهر عن الفتح يتعين ما يبلغ نصاباً دون مالا يبلغ فان بلغ بكل منهما واحد هما اروج تعين التقويم بالا روج اھ۲ وفي شرح النقايہ للقهستانی و ان تسايا فمالک مخير۔۳

اگر ایک کو ضم کرنے سے نصاب بنتا ہے دوسری سے نہیں ، تو جس سے بنتا ہو وہ ضم کے لیے متعین ہوگا ، اور اگر ایک کو ضم کرنے سے نصاب اور خمس بنتا ہے اور دوسرے سے کم بنتا ہے تو فقیر کے لیے زیادہ فائدہ مند ہو اس سے قیمت بنائے ، سراج اھ اور ردالمحتار میں بحوالہ نہر، فتح سے منقول ہے کہ نصاب کو پہنچانے والے کی قیمت ضم کے لیے متعین ہو گی دوسرے کی نہیں ، اگر دونوں سے نصاب پورا ہو جبکہ ایک رواج سے زائد ہے تو جو زیادہ رائج ہو اس کے ساتھ قیمت لگانا متعین ہوگا اھ اور شرح نقایہ للقہستانی میں ہے: اگر دونوں برابر ہوں تو مالک کو اختیار ہے۔ (ت)

جب یہ امور مبرہن ہو لیے تمام صورتوں کے احکام معلوم ہو گئے کہ اختلاطِ زر و سیم انہی تین حال میں منحصر : (۱) یا کسی کی طرف کوئی مقدار قابل ضم نہ ہو گی اور یہ جب ہی ہو گا کہ دونوں نصاب ہوں اور دونوں بے عفو، اس کا حکم ، اول ہی گزرا کہ ہر ایک کی زکوٰۃ جدا واجب ہو گی اور ایک ہی نوع سے دینا چاہیے تو نفع فقراء کا لحاظ واجب۔ (۲) یا صرف ایک طرف مقدارِ قابل ضم ہو گی یہ یونہی ہو گا کہ ایک نصاب بلا عفو ہو اور دوسرا اتنا متغیر نصاب یا نصاب مع العفو، تو اس کی دو صورتیں نکلیں ، ان کا ضابطہ ابھی معلوم ہو چکا کہ خاص اسی قابلِ ضم کو دوسرے کے ساتھ تقویم کریں گے۔ (۳) یا دونوں طرف مقدارِ قابلِ ضم ہو یہ اس طرح ہو گا کہ

دونوں نصاب سے کم یا ایک کم اور ایک میں عفو یا دونوں میں عفو، اس کی تین صورتیں ہوئیں ، ضابطہ ۲ بھی مذکور ہوا کہ جو مقداریں دونوں طرف قابلِ ضم ہیں انہی کو آپس میں ملائیں گے اور نفع فقراء کا لحاظ رکھیں گے یعنی جس تقویم میں زیادہ مالیت واجب الادا ہو وہی اختیار کرینگے اور مالیت برابر ہو تو جس کا رواج زیادہ ہے اسے لیں گے اور قدر و رواج سب یکساں ہوں تو اختیار دیں گے۔

---

1 در مختار باب زکوٰۃ المال مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۳۵ 2 ردالمحتار باب زکوٰۃ المال مصطفی البانی مصر ۲/ ۳۴ 3 جامع الرموز کتاب الزکوۃ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۲/ ۳۱۳

Fatawa Rizvia, Volume 10

Table of Gold and Silver Combinations with Indications of Rulings

Silver / Gold	Less than Nisab	Nisab without surplus ('Afw)	Nisab with surplus ('Afw)
Less than Nisab	Combine the total of both based on what is more beneficial.	Convert silver into gold.	Combine the surplus of gold and the total of silver based on what is more beneficial.
Nisab without surplus	Convert gold into silver.	Separate zakat for each, or if combined, do so based on what is more beneficial.	Convert the surplus of gold into silver.
Nisab with surplus	Combine the surplus of silver and the total of gold based on what is more beneficial.	Convert the surplus of silver into gold.	Combine both surpluses based on what is more beneficial.

Although this explanation and table have clarified the issue, due to the complexity for a common Muslim, there is definitely a need for clarification with examples in both these rules. Therefore, this humble servant, may the Almighty forgive him, turns his attention towards detail again, and success is from Allah.

Explanation of Rule One: In silver and gold, when one has a complete Nisab (minimum amount for zakat) without surplus ('afw) and the other does not have a Nisab, whether totally, i.e., it doesn't reach the Nisab at all, or partially, i.e., what remains as surplus after the Nisab. This non-Nisab total or part will be merged with the other. For example, if silver is a total or partial non-Nisab, then consider it as gold based on value and join it with the Nisab of gold. And if gold is a total or partial non-Nisab, then join it with silver. Thus, the two situations of Rule One, after expansion, become four, as would have become clear from studying the table. Now, after merging, we will see if any Zakat has increased. If it still hasn't increased, then that non-Nisab was absolute surplus, which did not become liable for Zakat in any way. If it increases, then either no surplus will remain; in this case, it will be clear that the non-Nisab, which seemed not liable for Zakat in its own type, was actually fully liable. Or a small amount will remain, then it will be proven that in reality, only that much is surplus and Zakat is due on the rest. So, these three conditions arose, which when

multiplied by those four, result in twelve situations. Now, take an example for each and for calculation, assume that the price of one tola of gold is twenty-four tolas of silver.

Note: The central cell of this triangular table of rulings is the situation where there is no ruling for merging at all, and its four surrounding cells (fiery, airy, watery, earthy) relate to Rule One, and the remaining four cells at the four corners relate to Rule Two. 12 Minhu (M).

फ़तवा रिज़विया, जिल्द 10

सोने और चांदी के मिश्रण की तालिका और उनके आदेश

चांदी / सोना	निसाब से कम	निसाब बिना अतिरिक्त (अफ़्व)	निसाब अतिरिक्त (अफ़्व) के साथ
निसाब से कम	दोनों की कुल मात्रा को अधिक लाभदायक आधार पर मिलाएँ।	चाँदी को सोना मान लें।	सोने का अतिरिक्त भाग और चाँदी की कुल मात्रा को अधिक लाभदायक आधार पर मिलाएँ।
निसाब बिना अतिरिक्त	सोने को चाँदी मान लें।	प्रत्येक की ज़कात अलग दें, या यदि मिलाना हो तो अधिक लाभदायक आधार पर।	सोने के अतिरिक्त भाग को चाँदी मान लें।
निसाब अतिरिक्त के साथ	चाँदी के अतिरिक्त भाग और सोने की कुल मात्रा को अधिक लाभदायक आधार पर मिलाएँ।	चाँदी के अतिरिक्त भाग को सोना मान लें।	दोनों के अतिरिक्त भागों को अधिक लाभदायक आधार पर मिलाएँ।

यद्यपि इस विवरण और तालिका ने मसले को स्पष्ट कर दिया है, लेकिन एक आम मुसलमान के लिए जटिलता के कारण, इन दोनों नियमों में उदाहरणों के साथ स्पष्टीकरण की निश्चित रूप से आवश्यकता है। इसलिए, यह तुच्छ सेवक, जिसे सर्वशक्तिमान प्रभु क्षमा करे, फिर से विस्तार की ओर रुख करता है, और सफलता अल्लाह की ओर से है।

प्रथम नियम की व्याख्या: चाँदी और सोने में, जब एक पूर्ण निसाब बिना अफ़्व (अतिरिक्त) के हो और दूसरा निसाब न हो, चाहे पूरी तरह से, अर्थात वह निसाब तक पहुँचा ही न हो, या आंशिक रूप से, अर्थात निसाब के बाद जो अतिरिक्त बचा हो, उस गैर-निसाब कुल या भाग को दूसरे के साथ जोड़ा जाएगा। उदाहरण के लिए, यदि चाँदी कुल या आंशिक रूप से गैर-निसाब है, तो उसे मूल्य के आधार पर सोना मानकर सोने के निसाब के साथ मिलाएँगे। और यदि सोना कुल या आंशिक रूप से गैर-निसाब है, तो उसे चाँदी के साथ मिलाएँगे। इस प्रकार, विस्तार के बाद प्रथम नियम की दो स्थितियाँ

चार हो गईं, जैसा कि तालिका के अध्ययन से स्पष्ट हो गया होगा। अब हम जोड़ने के बाद देखेंगे कि क्या ज़कात बढ़ी है। यदि अब भी नहीं बढ़ी, तो वह गैर-निसाब पूर्ण अफ़्व (अतिरिक्त) था, जो किसी भी तरह से ज़कात का कारण नहीं बना। और यदि बढ़ी, तो या तो कुछ अफ़्व नहीं बचेगा; इस स्थिति में स्पष्ट होगा कि गैर-निसाब, जो अपने प्रकार में ज़कात का कारण नहीं दिख रहा था, वास्तव में पूरी तरह से ज़कात योग्य था। या कुछ मात्रा में बचेगा, तो यह सिद्ध होगा कि वास्तव में केवल उतना ही अफ़्व है और बाकी पर ज़कात है। तो ये तीन स्थितियाँ हुईं, जिन्हें उन चार से गुणा करने पर बारह स्थितियाँ निकलेंगी। अब प्रत्येक का उदाहरण लें और गणना के लिए मान लें कि एक तोला सोने की कीमत चौबीस तोला चाँदी है।

नोट: आदेशों के इस त्रिकोणीय चार्ट का केंद्रीय खाना वह स्थिति है जिसमें विलय का कोई आदेश नहीं है, और इसके चार घर (अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी) प्रथम नियम से संबंधित हैं, और शेष चार घर जो चारों कोनों पर हैं, द्वितीय नियम से संबंधित हैं। 12 मिन्हु (म)।

पृष्ठ 836 का 122

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

جدول اختلاطات زر وسیم مع اشارہ احکام

چاندی / سونا	نصاب سے کم	نصاب بے عفو	نصاب با عفو
نصاب سے کم	دونوں کا کل بہ لحاظ انفع ملائیں	چاندی کو سونا کریں	سونے کا عفو اور چاندی کا کل بلحاظ انفع ملائیں
نصاب بے عفو	سونے کو چاندی کریں	ہر ایک کی جدا زکوٰۃ اور ملانا بھی ہو تو بلحاظ انفع	سونے کے عفو کو چاندی کریں
نصاب با عفو	چاندی کا عفو اور سونے کا کل بہ لحاظ انفع ملائیں	چاندی کے عفو کو سونا کریں	دونوں عضوں کو بلحاظ انفع ملائیں

ہر چند اس بیان وجدول نے مسئلہ واضح کردیا، مگر بوجہ پیچیدگی عام مسلمان کے لیے ان دونوں ضابطوں میں ایضاح امثلہ کی بیشک ضرورت۔ لہذا فقیر غفرلہ المولی القدیر پھر جانب تفصیل عنان گردانی کرتا ہے، وباللہ التوفیق۔

شرح ضابطہ اولی: چاندی سونے میں جب ایک نصاب تام بلا عفو ہو اور دوسرا نصاب نہ ہو خواہ کلیتہً یعنی سرے سے نصاب تک پہنچا ہی نہ ہو یا بعضاً، یعنی نصاب کے بعد جو عفو بچا ہو، اس غیر نصاب کل یا بعض کو اس دوسرے کے ساتھ ضم کریں گے، مثلاً چاندی کل بعض غیر نصاب ہے تو اسے بلحاظ قیمت سونا قرار دے کر سونے کے نصاب سے ملائیں گے اور سونا کل یا بعض غیر نصاب ہو تو اسے چاندی سے تو ضابطہ اولے کی دو صورتیں بعد بسط چار ہوگئیں جیسا کہ

مطالعہ جدول سے واضح ہوا ہو گا۔ اب ہم بعد ضم دیکھیں گے کچھ زکوٰۃ بڑھی یا نہیں، اگر اب بھی نہ بڑھی تو وہ غیر نصاب عفو مطلق تھا کہ کسی طرح موجب زکوٰۃ نہ ہوا اور بڑھی تو یا کچھ عفو نہ بچے گا اس صورت میں ظاہر ہوگا کہ غیر نصاب اپنی نوع میں نہ موجب زکوٰۃ نظر آتا تھا حقیقۃً بالکل موجب تھا یا قدرے بچے گا تو ثابت ہوگا کہ واقع میں اسی قدر عفو ہے باقی پر زکوٰۃ، تو یہ تین حالتیں ہوئیں جنھیں ان چار میں ضرب دینے سے بارہ صورتیں نکلیں، اب ہر ایک کی مثال لیجئے اور حساب کے لیے فرض کیجئے کہ تولہ بھر سونے کی قیمت چوبیس تولے چاندی ہے

عہ: اس مثلثانہ خانہ احکام کا خانہ قطب وہ صورت ہے جس میں اصلاً حکم ضم نہیں اور اس کے چاروں خانہ آتشی بادی آبی خاکی متعلق ضابطہ اولیٰ اور باقی چاروں خانے کہ چاروں گوشوں پر ہیں متعلق ضابطہ ثانیہ ۱۲منہ (م)

صفحہ 836 میں سے 122

Fatawa Razawiyya Volume Ten

...and for one tola of silver, four (4) ratti of gold.

Example 1: A person has 52.5 tolas of silver and five and a quarter (5.25) mashas of gold. Here, the silver is a complete nisab (minimum threshold for zakat) without any exemption (afw), and the gold is completely below the nisab. Therefore, converting the gold into silver and adding it to the silver, i.e., seeing how much silver the gold is worth according to the mentioned rate: this gold became ten (10) tolas of silver. So, it is as if he is not the owner of 52.5 tolas of silver and 5 mashas of gold, but the owner of 63 tolas of silver. This silver fulfilled one complete nisab and one fifth-nisab (khums-e-nisab), on which no exemption remains.

Example 2: In the same scenario, suppose there are 10 mashas of gold, which equals 20 tolas of silver. So, it is as if he owns 72.5 tolas of silver, from which one complete nisab and one fifth-nisab are taken out, and 9 tolas of silver remain as exemption because it is less than the fifth-nisab. This became a real exemption, meaning if gold was not merged with silver, it would have appeared as a complete exemption due to lack of nisab. By merging, it became clear that only 4.5 mashas, which became 9 tolas of silver, is the exemption upon which zakat is obligatory.

Example 3: In the mentioned case, if you take only 5 mashas of gold, the entire amount will be exempt because its value is only ten (10) tolas of silver. Until the wealth reaches the fifth-nisab after the complete nisab, it is exempt, and the fifth-nisab in silver is 10.5 tolas.

Example 4: In the same scenario, take 7 tolas and 11 mashas of gold. So 7.5 tolas of gold is a complete nisab. After that, 5 mashas appear as exemption. Just merge this much into silver, and we will consider zakat obligatory on one nisab of gold and one nisab and one-fifth nisab of silver, in which no exemption remained.

Example 5: In the same scenario, if there are 8 tolas and 4 mashas of gold, then by the logic of Example 2, the same 4.5 mashas of gold will be exempt.

Example 6: If there is 7 tolas 11 mashas of gold, then whatever is above the gold nisab, i.e., 5 mashas, is all absolute exemption because even after merging, it does not increase the zakat.

In these six examples, silver was a complete nisab without exemption and gold was eligible for merging. In the first three, it was initially less than nisab, and in the last three, it was an exemption.

Now take the example where gold is complete without exemption and silver is eligible for merging for these same two reasons.

Example 7: A person owns 7.5 tolas of gold and 36 tolas of silver, which is completely below the nisab. Converting it into gold based on value, it became 1.5 tolas. This is a full fifth-nisab, so there is one complete gold nisab and one fifth-nisab, and no exemption remained at all.

Example 8: In the same scenario, if you put 50 tolas of silver, then 41 tolas will be exempt because the fifth-nisab is 36 tolas. 14 tolas' gold became 7 mashas, which is less than a fifth, so that remained exempt.

Example 9: In the same scenario, suppose 30 tolas of silver, then the entire amount is exempt because its gold value is only one and a quarter tolas after...

...और एक तोला चाँदी के बदले चार (४) रत्ती सोना।

उदाहरण १: एक व्यक्ति के पास ५२-१/२ तोले चाँदी और सवा पाँच माशे सोना है, तो चाँदी बिना छूट (अफ्व) के पूरा निसाब है और सोना पूरी तरह निसाब से कम है। इसलिए सोने को चाँदी मानकर चाँदी में मिलाया, यानी कीमत के हिसाब से देखा कि इतने सोने की कितनी चाँदी हुई। उल्लेखित दर पर यह सोना दस (१०) तोले चाँदी का हुआ, तो मानो वह ५२-१/२ तोले चाँदी और ५ माशे सोने का मालिक नहीं, बल्कि ६३ तोले चाँदी का मालिक है। यह चाँदी एक पूर्ण निसाब और एक पाँचवाँ हिस्सा (खुम्स) निसाब पूरा हुआ, जिस पर कोई छूट नहीं बची।

उदाहरण २: इसी स्थिति में १० माशे सोना मान लें, जिसकी २० तोले चाँदी हुई, तो मानो ७२-१/२ तोले चाँदी का मालिक है। जिसमें वही पूर्ण निसाब और पाँचवाँ हिस्सा निसाब निकलकर ९ तोले चाँदी छूट बची, क्योंकि यह पाँचवें हिस्से से कम है। यह वास्तविक छूट हुई, यानी यदि सोने को चाँदी के साथ नहीं मिलाते, तो निसाब न होने के कारण पूरी छूट दिखती थी। मिलाने से स्पष्ट हो गया कि इसमें केवल ४-१/२ माशे, जिसकी ९ तोले चाँदी हुई, उस पर ज़कात वाजिब है।

उदाहरण ३: उपरोक्त स्थिति में यदि केवल ५ माशे सोना मानें, तो पूरी छूट रहेगी, क्योंकि इसकी केवल दस (१०) तोले ही चाँदी हुई। और माल जब तक निसाब के बाद पाँचवें हिस्से तक न पहुँचे, वह छूट है, और चाँदी में पाँचवाँ हिस्सा १०-१/२ तोले है।

उदाहरण ४: इसी स्थिति में ७ तोले ११ माशे सोना लें, तो ७-१/२ तोले सोना तो पूर्ण निसाब है। इसके बाद ५ माशे छूट दिखाई देती है। बस इतने को ही चाँदी में मिलाएंगे, और एक निसाब सोने और एक निसाब व पाँचवें हिस्से चाँदी की ज़कात वाजिब मानेंगे, जिसमें कोई छूट नहीं रही।

उदाहरण ५: इसी स्थिति में ८ तोले ४ माशे सोना है, तो दूसरे उदाहरण के तर्क से वही ४-१/२ माशे सोना छूट रहेगा।

उदाहरण ६: ७ तोले ११ माशे सोना है, तो सोने के निसाब से जितना अधिक है यानी ५ माशे, सब पूर्ण छूट है क्योंकि मिलाने के बाद भी ज़कात नहीं बढ़ाता।

इन छह उदाहरणों में चाँदी बिना छूट के पूर्ण निसाब थी और सोना मिलाने योग्य। पहले तीन में मूल रूप से निसाब से कम था और पिछली तीन में छूट।

अब वह उदाहरण लें जहाँ सोना बिना छूट के पूर्ण है और चाँदी इन्हीं दो कारणों से मिलाने योग्य है।

उदाहरण ७: एक व्यक्ति ७-१/२ तोले सोने और ३६ तोले चाँदी का मालिक है, जो पूरी तरह निसाब से कम है। इसे मूल्य के हिसाब से सोना किया तो १-१/२ तोला हुआ। यह पूरा पाँचवाँ हिस्सा (खुम्स) है, तो सोने का एक पूर्ण निसाब और एक पाँचवाँ हिस्सा हुआ और बिल्कुल भी छूट नहीं बची।

उदाहरण ८: इसी स्थिति में ५० तोले चाँदी रखें, तो ४१ तोले छूट रहेगी क्योंकि ३६ तोले का पाँचवाँ हिस्सा हो गया। १४ तोले का ७ माशे सोना हुआ, जो पाँचवें हिस्से से कम है, वह छूट रहा।

उदाहरण ९: इसी स्थिति में ३० तोले चाँदी मान लें, तो पूरी छूट है क्योंकि इसका सवा तोला ही सोना हुआ बाद...

اور تولہ بھر چاندی کا چار ۴ رتی سونا۔

مثال ۱: ایک شخص کے پاس ۵۲-۱/۲ تولے چاندی اور سوا پانچ ماشے سونا ہے تو چاندی نصابِ تام بلا عفو ہے اور سونا کُلّاً غیر نصاب۔ لہٰذا سونے کو چاندی کر کے چاندی سے ملا یا یعنی بلحاظِ قیمت دیکھا کہ اس قدر سونے کی کتنی چاندی ہوئی، نرخ مذکور پر یہ سونا دس ۱۰ تولے چاندی کا ہوا تو گویا وہ ۵۲-۱/۲ تولے چاندی ۵ ماشے سونے کا مالک نہیں بلکہ ۶۳ تولے چاندی کا مالک ہے، یہ چاندی ایک نصابِ کامل اور ایک نصابِ خمس پورا ہوا جس پر عفو کچھ نہ بچا۔

مثال ۲: اسی صورت میں ۱۰ ماشے سونا فرض کیجئے جس کے ۲۰ تولے چاندی، تو گویا ۷۲-۱/۲ تولے چاندی کا مالک ہے جس میں وہی نصابِ کامل و نصابِ خمس نکل کر ۹ تولے چاندی عفو بچی کہ خمس نصاب سے کم ہے یہ عفو حقیقی ہوا یعنی سونے کو چاندی سے ضم نہ کرتے تو بوجہ عدم نصاب بالکل عفو نظر آتا تھا ضم کرنے سے کھل گیا کہ اس میں صرف ۴-۱/۲ ماشے جس کی ۹ تولے چاندی ہوئی عفو پر زکوۃ واجب۔

مثال ۳: صورتِ مسطورہ میں صرف ۵ ماشے سونا مانیے تو کل عفو رہے گا کہ اس کی دس ۱۰ ہی تولے چاندی ہوئی اور مال جب تک نصاب کے بعد خمس نصاب تک نہ پہنچے عفو اور چاندی میں خمس ۱۰-۱/۲ تولے ہے۔

مثال ۴: اسی صورت میں ۷ تولے ۱۱ ماشے سونا لیجئے تو ۷-۱/۲ تولے سونا تو نصابِ کامل ہے اس کے بعد ۵ ماشے عفو نظر آتا ہے، بس اسی قدر کو چاندی سے ضم کرینگے، اور ایک نصاب زر اور ایک نصاب و خمس نصاب سیم کی زکوۃ واجب مانیں گے جس میں عفو کچھ نہ رہا۔

مثال ۵: اسی صورت میں ۸ تولے ۴ ماشے سونا ہے تو بدلیل مثال دوم وہی ۴-۱/۲ ماشے سونا عفو رہے گا۔

مثال ۶: ۷ تولے ۱۱ ماشے سونا ہے تو نصاب زر سے جتنا یعنی ۵ ماشے، سب عفو مطلق ہے کہ بعد ضم بھی زکوۃ نہیں بڑھاتا۔

ان چھ مثالوں میں چاندی نصابِ تام بلا عفو تھی اور سونا قابلِ ضم، پہلی تین میں راساً نصاب سے کم اور پچھلی تین میں عفو۔

اب وہ مثال لیجئے کہ سونا تام بلا عفو اور چاندی انہی دو وجہوں پر قابلِ ضم۔

مثال ۷: ایک شخص ۷-۱/۲ تولے سونا ۳۶ تولے چاندی کا مالک ہے گلّاً غیر نصاب ہے۔ اسے بحسابِ قیمت سونا کیا تو ۱-۱/۲ تولے ہوا، یہ پورا نصابِ خمس ہے تو سونے کا ایک نصابِ کامل اور ایک نصابِ خمس ہوا اور عفو اصلا نہ بچا۔

مثال ۸: اسی صورت میں چاندی ۵۰ تولے رکھئے تو ۴۱ تولے عفو رہے گی کہ ۳۶ تولے کا نصابِ خمس ہو گیا ۱۴ تولے کا ۷ ماشے سونا ہوا کہ خمس سے کم ہے وہ عفو رہا۔

مثال ۹: اسی صورت میں چاندی ۳۰ تولے فرض کیجئے تو کل عفو ہے کہ اس کا سوا ہی تولے سونا ہوا بعد

Volume 10 Fatawa Ridawiyya

...nor did it increase at all.

Example 10, 11, and 12: Now we must describe those three situations in which gold is exempt from Nisab (minimum taxable amount), and silver is within the exempt range of Nisab, such that if its exempt portion is added to gold, it either remains exempt or makes some Zakat obligatory, leaving some exempt, or makes Zakat fully obligatory. These latter two situations seemingly appear naturally impossible, because in Nisab, exemption only exists for what is less than a fifth (khums), and Zakat becomes obligatory after Nisab upon reaching a fifth. Thus, these situations would only occur if 10 tolas or less of silver were equal to 7.5 tolas of gold or even more. But this cannot happen habitually; rather, 10 tolas or slightly more silver doesn't even reach the price of one tola of gold. So, at first glance, only the first situation seems possible, i.e., when adding the exempt silver to the gold Nisab, it remains exempt. However, by understanding a refined, noble, grand, and subtle principle, it will become clear that the other two situations are also possible. Knowing this magnificent principle is not only necessary for these specific cases, but it is an individual obligation (Fard al-Ayn) for everyone who owns both types of Zakat-eligible assets, gold and silver—and usually, people are such owners—because not knowing it leads to many errors, flaws, and losses. People often think they have paid Zakat, while in reality, the demand remains. That necessary, immensely beneficial, and worth-memorizing principle is that although the price and weight of gold and silver often differ from each other, especially when craftsmanship is involved—for instance, it's possible that a piece of gold weighing one tola might cost fifty rupees due to intricate craftsmanship, even if the price of one tola of gold is only twenty-five rupees, or a silver item weighing one tola might cost four rupees even if silver is one rupee per tola; this is very clear in Delhi's trade dealings. Similarly, when goods lose value, the price decreases relative to the weight, as is not hidden (kama la yukhafi). However, the Pure Shariah has considered only weight for the obligation and payment in gold and silver, not the price. For example, if someone has only 7 tolas of gold jewelry whose price reaches or even exceeds the price of 7.5 tolas of gold, Zakat is not obligatory on it because the weight did not complete 7.5 tolas. Or, if there is "hara" (low quality) gold jewelry of 7.5 tolas whose price is less than 7 tolas, Zakat is obligatory on it because the weight completes the Nisab. Or, a person has 7.5 tolas of gold jewelry which, due to craftsmanship, is worth the price of 5 tolas of gold; only 2 masha of gold will be obligatory on it, as it is one-fortieth of the weight, not 4 masha worth whose price is

1/20th. If an item weighing 15 tolas is equal in price to 7.5 tolas, it's considered based on weight. And regarding the manner of payment: for instance, if 6 masha of gold was due and one paid instead 2 masha of high-quality refined gold (kundan) which was equal to or even more than 6 masha of gold in price, the obligation is not fulfilled because the required weight was not met. But if one gave 2 masha of "hara" (low quality) gold which was equal in price to only two masha, it is fulfilled, although it is disliked (Makruh) because of the saying of Allah the Almighty:

...कुछ भी नहीं बढ़ा।

उदाहरण 10, 11 और 12: अब हमें उन तीन स्थितियों का वर्णन करना है जिनमें सोना निसाब (न्यूनतम कर योग्य राशि) से छूट प्राप्त हो और चांदी निसाब के छूट वाले दायरे में हो, जिससे कि यदि इसके छूट वाले हिस्से को सोने के साथ मिलाया जाए, तो वह या तो छूट में ही रहे या कुछ ज़कात वाजिब (अनिवार्य) कर दे, कुछ छूट बच जाए या पूरी तरह से ज़कात वाजिब कर दे। ये पिछली दो स्थितियाँ प्रत्यक्ष रूप से सामान्यतः असंभव लगती हैं, क्योंकि निसाब में छूट वही होती है जो पाँचवें हिस्से (खुम्स) से कम हो और निसाब के बाद ज़कात तब वाजिब होती है जब वह पाँचवें हिस्से तक पहुँचे। अत; इन स्थितियों का होना तभी संभव होगा जब 10 तोले या उससे कम चांदी 7.5 तोले सोने के बराबर या उससे भी अधिक हो। लेकिन यह सामान्यतः नहीं हो सकता, बल्कि 10 तोले या उससे कुछ अधिक चांदी एक तोले सोने की कीमत तक भी नहीं पहुँचती। इसलिए, प्रथम दृष्टि में यहाँ केवल पहली स्थिति ही संभव लगती है, अर्थात सोने के निसाब में चांदी की छूट मिलाने पर वह छूट ही रहे। लेकिन एक परिष्कृत, श्रेष्ठ, महान और सूक्ष्म नियम जानने से स्पष्ट हो जाएगा कि अन्य दो स्थितियाँ भी संभव हैं। उस महान नियम को जानना न केवल इन स्थितियों के लिए आवश्यक है, बल्कि उन सभी के लिए 'फ़र्ज़-ए-ऐन' (अनिवार्य कर्तव्य) है जो सोने और चांदी दोनों प्रकार की ज़कात योग्य संपत्ति के स्वामी हैं—और आमतौर पर लोग ऐसे ही होते हैं—क्योंकि इसे न जानने से बहुत सी गलतियाँ, त्रुटियाँ और नुकसान होते हैं। लोग अक्सर समझते हैं कि हमने ज़कात अदा कर दी है, जबकि वास्तव में मांग बाकी होती है। वह आवश्यक, अत्यंत लाभकारी और याद रखने योग्य नियम यह है कि यद्यपि सोने और चांदी की कीमत और वजन अक्सर एक-दूसरे से भिन्न होते हैं, विशेष रूप से जब शिल्पकारी (صنعت) बीच में हो। उदाहरण के लिए, संभव है कि शिल्पकारी के कारण एक तोले सोने के किसी आभूषण की कीमत पचास रुपये हो, जबकि एक तोले सोने की कीमत केवल पच्चीस रुपये हो; या एक तोले चांदी की वस्तु चार रुपये में मिले, भले ही चांदी एक रुपया प्रति तोला हो; दिल्ली के व्यापारिक सौदों में यह बात स्पष्ट है। इसी प्रकार, जब माल का मूल्य गिरता है, तो वजन के मुकाबले कीमत कम हो जाती है, जैसा कि छिपा नहीं है (कमा ला युखफी)। लेकिन शरीयत-ए-मुतह्हरा ने सोने और चांदी में ज़कात की अनिवार्यता और अदायगी के लिए हर तरह से वजन का ही एतबार (मान्यता) किया है, कीमत का नहीं। उदाहरण के तौर पर, किसी के पास केवल 7 तोले सोने का गहना है जिसकी कीमत 7.5 तोले सोने तक पहुँचती है या उससे भी अधिक है, उस पर ज़कात

वाजिब नहीं है क्योंकि वजन 7.5 तोले पूरा नहीं हुआ। या 7.5 तोले 'हारे' (घटिया) सोने का माल है जिसकी कीमत 7 तोले से भी कम है, उस पर ज़कात वाजिब है क्योंकि वजन निसाब के बराबर है। या किसी व्यक्ति के पास 7.5 तोले सोने का ज़ेवर है जो शिल्पकारी के कारण 5 तोले सोने की कीमत का है, उस पर केवल 2 माशे सोना वाजिब होगा क्योंकि यह वजन का चालीसवां हिस्सा है, न कि 4 माशे की कीमत जिसका 1/20 हिस्सा है। 15 तोले वजन की वस्तु कीमत में 7.5 तोले के बराबर है, तो वजन के आधार पर गणना होगी। और अदायगी का तरीका यह है कि उदाहरण के लिए, यदि उस पर 6 माशे सोना देय था और उसने उसके बदले 2 माशे बढ़िया कुंदन दिया जो कीमत में 6 माशे सोने के बराबर या उससे भी अधिक था, तो जिम्मेदारी पूरी नहीं हुई क्योंकि अनिवार्य वजन पूरा नहीं हुआ। और यदि 2 माशे 'हारा' सोना दे दिया जो कीमत में केवल दो माशे के ही बराबर था, तो अदायगी हो गई, यद्यपि इसमें कराहत (नापसंदगी) है, क्योंकि अल्लाह तआला का इरशाद है:

ضم بھی کچھ نہ بڑھا۔

مثال ۱۰ و ۱۱ و ۱۲ : اب ہمیں وہ تین صورتیں بیان کرنا ہیں جن میں سونا نصاب سے عفو ہو اور چاندی نصاب با عفو، جس کے عفو کو سونے سے ملائیں تو جب بھی عفو رہے یا کچھ زکوۃ واجب کرے ، کچھ عفو بچے یا بالکل زکوۃ واجب کرے۔ یہ پچھلی دو صورتیں بظاہر محالِ عادی نظر آتی ہیں کہ نصاب میں عفو وہی ہوتا ہے جس خمس سے کم ہو اور نصاب کے بعد زکوۃ واجب کرتا ہے جو خمس تک پہنچے، تو ان صورتوں کا وقوع جب ہی ہو گا کہ ۱۰ تولے کم چاندی ۱/۲-۷ تولے سونے کے برابر یا اس سے بھی زائد ہو مگر یہ عادۃً ہو نہیں سکتا بلکہ ۱۰ تولے یا اس سے کچھ زیادہ چاندی تولہ بھر سونے کی قیمت کو بھی نہیں پہنچتی، تو بادی النظر میں یہاں صرف صورتِ اولیٰ ہی قابلِ وقوع ہے یعنی عفو سیم کو نصابِ ذہب سے جب ملائیے عفو ہی رہے ، مگر ایک نفیس و شریف و جلیل و لطیف قاعدہ معلوم کرنے سے کھل جائیگا کہ دو صورتیں بھی قابلِ وقوع ہیں، اُس با عظمت قاعدے کا جاننا نہ صرف انہی صورتوں کے لیے ضرور ہے بلکہ جواہرِ زکوۃ زر و سیم دونوں قسم کے مالک ہوں اور عموماً ایسے ہی ہوتے ہیں اُن سب پر اس کا علم فرضِ عین ہے کہ اس کے نہ جاننے میں بہت غلطیاں اور خرابی و زیاں واقع ہوتے ہیں لوگ اکثر سمجھ لیتے ہیں ہم زکوۃ ادا کر چکے اور واقع میں مطالبہ باقی ہوتا ہے ، وہ ضروری قاعدہ عظیم الفائدہ واجب الحفظ یہ ہے کہ اگرچہ زر و سیم کی قیمت و وزن باہم اکثر مختلف ہوتے ہیں خصوصاً جبکہ صنعت کا قدم درمیان ہو ، مثلاً ممکن کہ تولہ بھر سونے کا کوئی گھنا صناعی کے سبب پچاس روپے کی قیمت کا ہو اگرچہ ایک تولہ سونے کی قیمت پچیس ہی روپیہ ہو یا تولہ بھر چاندی کی چیز چار روپے کو ملے اگرچہ چاندی ایک ہی روپیہ تولہ ہو، دہلی کی سوداکاریوں میں یہ بات

خوب واضح ہے یونہی جب مال ہارتا ہو تو قیمت وزن گھٹ جاتی ہے کما لا یخفی (جیساکلہ مخفی نہیں۔) مگر شرع مطہر نے سونے چاندی میں وجوب و اداء بھر طرح وزن ہی کا اعتبار فرمایا ہے نہ کہ قیمت کا، مثلاً کسی کے پاس صرف ۷ تولے سونے کا گہنا ہے کہ قیمت میں ۷-۱/۲ تولے سونے تک پہنچا ہے یا اس سے بھی زیادہ ہوتا ہے اس پر زکوۃ واجب نہیں کہ وزن ۷-۱/۲ تولے کامل نہ ہوا یا ۷-۱/۲ تولے ہارے سونے کا مال ہے کہ قیمت ۷ تولے سے بھی کم ہے اس پر زکوۃ واجب ، کہ وزن نصاب پورا ہے ، یا ایک شخص کے پاس ۷-۱/۲ تولے سونے کا زیور ہے جو بوجہ صنعت ۵ تولے سونے کی قیمت ہے اس پر صرف ۲ ماشے سونا واجب ہو گا کہ وزن کا چالیسواں حصہ ہے نہ چار ماشہ کی قیمت کا ار ۲۰ ہے ، ۱۵ تولے وزن کی چیز قیمت میں ۷-۱/۲ تولے کے برابر ہے ، تو باعتبارِ وزن ہوا اور ادا کی یہ صورت کہ مثلاً اس پر ۶ ماشے سونا واجب الادا تھا اس نے اُس کے بدلے ۲ ماشے نفیس کُندن کہ قیمت میں ۶ ماشے سونے کے برابر بلکہ زائد تھا ادا کیا تو عہدہ برآنہ ہوا کہ واجب کا وزن پورا نہ ہوا اور ہارا سونا ۲ ماشے دے دیا جو قیمت میں دو ہی ماشے کے برابر تھا تو ادا ہو گیا اگر چہ اس میں کراہت ہے لقولہ عزوجل:

- You would not take it yourselves except with disdain. (T) [1]

In Durr-e-Mukhtar: - In payment and obligation, the weight of these two [gold and silver] is considered, not their value. (T) [2]

In Radd al-Muhtar: - This means that for the obligation [of Zakat], it is considered that their weight reaches the Nisab (minimum threshold), according to Nahr. Even if someone has a gold or silver pitcher weighing ten Mithqals or a hundred Dirhams, but due to its craftsmanship its value is twenty [Mithqals] or two hundred [Dirhams], no Zakat is unanimously due on it. Quhistani. (T) [3]

In the same [book]: - If someone has a silver pitcher weighing a hundred Dirhams, but its value due to craftsmanship is two hundred Dirhams, Zakat is not obligatory based on the value. This is because quality and craftsmanship in usurious commodities (Amwal al-Riba) have no separate value, nor do they have value when exchanged for the same genus. (T) [4]

In the same [book]: - It is considered that the paid amount should equal the obligatory amount in weight. - That the zakat paid must be equal in weight to the amount due.

---

1 Al-Quran 2/267 2 Durr-e-Mukhtar, Chapter on Zakat of Wealth, Mujtabai Press Delhi, 1/132 3 Radd al-Muhtar, Chapter on Zakat of Wealth, Mujtabai Press Delhi, 2/33 4 Radd al-Muhtar, Chapter on Zakat of Wealth, Mujtabai Press Delhi, 2/37

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द दहम (दसवां खंड)

• तुम्हें मिले तो न लोगे जब तक इसमें चश्म-पोशी (नज़रअंदाज़) न करो। (त) [1]

दर्रे मुख्तार में है: - अदायगी और वुजूब (अनिवार्यता) में इन दोनों के वज़न का एतबार (विचार) है न कि क़ीमत का। (त) [2]

रदुल मुख्तार में है: - वुजूब (अनिवार्यता) के लिए यह मोतबर (मान्य) है कि वे वज़न के ऐतबार से निसाब (न्यूनतम मात्रा) तक पहुँचें, 'नहर'। अगर किसी के पास सोने या चांदी का कूज़ा (पात्र) था जिसका वज़न दस मिस्क़ाल या सौ दिरहम के बराबर था और कारीगरी के कारण उसकी क़ीमत २० या २०० है, तो अब इसमें बिल-इज्मा (सर्वसम्मति से) कोई चीज़ लाज़िम (अनिवार्य) नहीं। क़हस्तानी। (त) [3]

इसी में है: - अगर किसी के पास चांदी का ऐसा कूज़ा था जिसका वज़न सौ दिरहम हो और उसकी ज़ेवर की सूरत में क़ीमत दो सौ दिरहम है, तो अब क़ीमत के ऐतबार से ज़कात वाजिब (अनिवार्य) न होगी, क्योंकि अमवाल-ए-रिबा (सूद वाली वस्तुओं) में जो गुणवत्ता और कारीगरी होती है, उसकी व्यक्तिगत रूप में कोई क़ीमत नहीं होती और न ही उस समय कोई क़ीमत है जब वह अपनी ही किसी हम-जिंस (समान श्रेणी की वस्तु) के मुक़ाबले में हो। (त) [4]

उसी में है: - यह माना जाता है कि अदा की गई मात्रा वज़न में वाजिब (अनिवार्य) मात्रा के बराबर होनी चाहिए। - जिसकी ज़कात अदा की जाए, उसे वज़न के ऐतबार से होना चाहिए।

---

1 अल-कुरान 2/267 2 दर्रे मुख्तार, बाब ज़कातुल माल, मतबा मुजतबाई देहली, 1/132 3 रदुल मुख्तार, बाब ज़कातुल माल, मतबा मुजतबाई देहली, 2/33 4 रदुल मुख्तार, बाब ज़कातुल माल, मतबा मुजतबाई देहली, 2/37

पृष्ठ 125/836

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

• تمہیں ملے تو نہ لو گے جب تک اس میں چشم پوشی نہ کرو۔ (ت) [1]

در مختار میں ہے: - اداء و وجوب میں ان دونوں کے وزن کا اعتبار ہے نہ کہ قیمت کا۔ (ت) [2]

ردالمختار میں ہے: - یعنی یعتبر فی الوجوب ان یبلغ وزنھما نصاباً، نہر۔ وجوب کے لئے یہ معتبر ہے کہ وہ وزن کے اعتبار سے نصاب کو پہنچیں، نہر۔ اگر کسی کے پاس سونے یا چاندی کا کُوزہ تھا جس کا وزن دس مثقال یا سو درہم کے برابر تھا اور زیور کی صورت میں اس کی قیمت ۲۰ یا ۲۰۰ ہے تو اب اس میں بالاجماع کوئی شئی لازم نہیں۔ قہستانی۔ (ت) [3]

اسی میں ہے: - اگر کسی پاس چاندی کا ایسا کوزہ تھا جس کا وزن سو درہم ہو اور اس کی زیور کی صورت میں قیمت دو سو درہم ہے تو اب قیمت کے اعتبار سے زکوۃ واجب نہ ہوگی، کیونکہ اموال ربا میں جو جودت اور صنعت ہوتی ہے اس کی انفرادی صورت میں کوئی قیمت نہیں ہوتی نہ ہی اس وقت کوئی قیمت ہے جب کسی ہمجنس کے مقابل ہو۔ (ت) [4]

اُسی میں ہے: - یعتبر یکون المؤدی قدر الواجب وزناً - جس کی زکوۃ ادا کی جائے اس کا وزن کے اعتبار سے

---

1 القرآن ۲/ ۲۶۷ 2 در مختار باب زکوٰۃ المال مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۳۲ 3 ردالمختار باب زکوٰۃ المال مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۳ 4 ردالمختار باب زکوٰۃ المال مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۳۷

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

| (Arabic) If one pays five inferior (zuyuf) coins in place of five superior (jayyid) ones, whose value is equal to four superior ones, it is permissible but disliked. And if four superior ones had a value equal to five very poor (radi) ones, it would not be valid at all. (Summary) | (Urdu) It is necessary to reach the 'nisab' (minimum threshold). If someone pays 5 inferior dirhams instead of 5 superior ones, and their market value was 4 superior dirhams, it is permissible but discouraged. However, if the value of those four was equal to five poor-quality dirhams, it is not valid at all. Summary (T) |

However, when one is appraised against another, for example, silver against gold or gold against silver, as we see in cases of combining assets (ضم), then by consensus (ijma), the market value is considered. This is because quality (jawdat) and craftsmanship (san'at) gain value when compared against a different genus (genus-opposite) by consensus. For example, a piece of silver jewelry weighing 12 tolas but having a market value equal to 24 tolas of silver: if its price is now calculated in gold, then in terms of price, it will be equivalent to a full tola of gold, not six mashas based on weight. Therefore, for a person who has 200 tolas of silver jewelry worth 400 rupees, and on which 5 tolas of silver is due as Zakat: if they give 5 tolas of silver, it will be fulfilled. But if they give gold worth the price of 5 tolas of silver, it will absolutely not be fulfilled; rather, they would have to give gold worth the market price of 10 tolas of silver. It is stated in Rad al-Muhtar:

| (Arabic) The disregard for quality is only when comparing with the same genus. However, when comparing with a different genus, it is considered by consensus. | (Urdu) The consideration of quality cannot be made when comparing with the same genus, but if compared with a different genus, it is considered by consensus. (T) |

It is also stated in it:

| (Arabic) If a person has a silver vessel weighing two hundred (dirhams) but valued at three hundred, if they pay five (dirhams) from the vessel itself or from another source, it is permissible. And they (the scholars) agreed that if they pay from a different genus, the value is considered, until even if they pay gold whose value reaches five dirhams of uncrafted (unworked) silver, it would not be valid according to them, because quality is valued when compared (against a different genus). | (Urdu) If someone has a silver jug weighing two hundred dirhams and its price is three hundred dirhams, and they pay five dirhams from it or from another source, it is permissible. And there is consensus that if paid in an opposite genus, the market

value will be considered. To the extent that if gold worth five dirhams was paid from uncrafted metal, it is not valid according to them because at the time of comparison, quality... |

1. Rad al-Muhtar, Chapter on Zakat of Wealth, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/33
2. Rad al-Muhtar, Chapter on Zakat of Wealth, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/37

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (10)

| (अरबी) यदि कोई पाँच उत्कृष्ट (जय्यद) सिक्कों के स्थान पर पाँच घटिया (ज़ुयूफ़) सिक्के देता है, जिनका मूल्य चार उत्कृष्ट सिक्कों के बराबर है, तो यह जायज़ है लेकिन मकरूह (नापसंद) है। और यदि चार उत्कृष्ट सिक्कों का मूल्य पाँच बहुत घटिया (रदी) सिक्कों के बराबर था, तो यह बिल्कुल भी मान्य नहीं है। (संक्षिप्त) | (उर्दू) निसाब का होना ज़रूरी है। यदि किसी ने पाँच उत्कृष्ट दिरम की जगह पाँच घटिया (ज़ुयूफ़) दिरम अदा किए जिनकी कीमत चार उत्कृष्ट दिरम थी तो जायज़ है मगर मकरूह है, और उन चार की कीमत पाँच बहुत घटिया दिरम थी तो जायज़ ही नहीं। संक्षिप्त (त) |

लेकिन जब उनमें से एक का दूसरे के साथ मूल्यांकन किया जाए, जैसे चांदी का सोने से या सोने का चांदी से, जैसा कि हम संपत्तियों को जोड़ने के मामलों में देखते हैं, तो सर्वसम्मति (इज्मा) है कि बाज़ार मूल्य (क़ीमत) का ही विचार किया जाएगा। ऐसा इसलिए है क्योंकि श्रेष्ठता (जौदत) और शिल्पकारी (सनअत) की क़ीमत तब मानी जाती है जब उसकी तुलना दूसरी नस्ल (जिंस) से की जाए। उदाहरण के लिए, चांदी का 12 तोले वज़नी गहना जिसका बाज़ार मूल्य 24 तोले चांदी के बराबर है। अब अगर इसकी क़ीमत सोने से लगाई जाए, तो क़ीमत के हिसाब से यह पूरा एक तोला सोना होगा, न कि वज़न के हिसाब से छह माशा। इसलिए, जिस व्यक्ति के पास 200 तोले चांदी के आभूषण हों जिनका मूल्य 400 रुपये हो, और उस पर 5 तोले चांदी ज़कात वाजिब हो: यदि वह 5 तोले चांदी दे दे तो ज़कात अदा हो जाएगी। लेकिन यदि वह 5 तोले चांदी की क़ीमत के बराबर सोना देगा, तो वह बिल्कुल अदा नहीं होगी; बल्कि उसे 10 तोले चांदी के बाज़ार मूल्य के बराबर सोना देना होगा। 'रद्दुल मुहतार' में लिखा है:

| (अरबी) गुणवत्ता (जौदत) पर विचार न करना केवल उसी नस्ल (जिंस) के साथ तुलना करने पर है। लेकिन जब किसी दूसरी नस्ल से तुलना की जाए, तो सर्वसम्मति से उस पर विचार किया जाता है। | (उर्दू) श्रेष्ठ (जय्यद) होने का विचार, उसी नस्ल के साथ तुलना के समय नहीं किया जा सकता और यदि दूसरी नस्ल से तुलना हो तो सर्वसम्मति से मान्य है। (त) |

इसी में है:

| (अरबी) यदि किसी के पास चांदी का एक पात्र (लोटा) हो जिसका वज़न दो सौ (दिरम) हो और मूल्य तीन सौ हो, और वह उसमें से या किसी और चीज़ से पाँच (दिरम) अदा करता है, तो यह जायज़ है। और विद्वानों की सर्वसम्मति है कि यदि वह इसे किसी दूसरी नस्ल से अदा करता है, तो मूल्य पर

विचार किया जाएगा, यहाँ तक कि यदि वह इतना सोना दे जिसका मूल्य बिना बनावट वाली (कच्ची) चांदी के पाँच दिरम के बराबर हो, तो उनके अनुसार यह जायज़ नहीं होगा, क्योंकि तुलना के समय गुणवत्ता (जौदत) का मूल्यांकन किया जाता है। | (उर्दू) अगर किसी के पास चांदी का कोज़ा (लोटा) है जो दो सौ दिरम वज़नी है और क़ीमत तीन सौ दिरम है, तो अब वह इसमें से या इसके अलावा से पाँच दिरम अदा करता है तो जायज़ है और इस पर इत्तेफ़ाक़ (सहमति) है कि अगर इसके ख़िलाफ़ जिंस (दूसरी नस्ल) से अदा करे तो क़ीमत का एतबार होगा। यहाँ तक कि अगर इतना सोना जिसकी क़ीमत पाँच दिरम हो गैर-मसनूअ (बिना बनावटी) से अदा किया तो उनके नज़दीक जायज़ नहीं क्योंकि मुक़ाबले के वक़्त जौदत... |

1. रद्दुल मुहतार, बाब ज़क़ातुल माल, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/33
2. रद्दुल मुहतार, बाब ज़क़ातुल माल, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/37

पृष्ठ 126 / 836

فتاوٰی رضویہ ، جلد دہم

| فلوادی عن خمسة جیّدة خمسة زیوفا قیمتها اربعة جیدة جاز وکره ولواربعة قیمتها خمسة ردیئة لم یجزه ملخصاً۔ | نصاب ہونا ضروری ہے، اگر کسی نے پانچ جید درہم کی جگہ پانچ زیوف سے ادا کی جن کی قیمت چار جید درہم تھی تو جائز مگر مکروہ ہے، اور ان چار کی قیمت پانچ ردی درہم تھے تو جائز ہی نہیں اھ ملخصاً (ت) |

مگر جب ان میں ایک کو دوسرے سے تقویم کریں مثلاً چاندی کو سونے یا سونے کو چاندی سے جیسا کہ ضم کی صورتوں میں دیکھتے آئے تو بالاجماع قیمت کا اعتبار ہے کہ جودت و صنعت خلاف جنس کے مقابلہ میں بالاجماع قیمت پاتا ہے، مثلاً بارہ ۱۲ تولے چاندی کا وزنی گہنا اور قیمت میں ۲۴ تولے چاندی کے برابر، اب اس کی قیمت سونے سے لگائے گا تو بہ لحاظ قیمت پورا تولہ بھر سونا ہو گا، نہ بلحاظ وزن چھ ماشہ ولہٰذا جس کہ پاس ۲۰۰ تولے چاندی کا زیور چار سو روپے کا قیمتی ہو جس ۵ تولے چاندی واجب، وہ اگر ۵ تولے چاندی دے دے گا ادا ہو جائے گا اور ۵ تولے چاندی کی قیمت کا سونا دے گا ہرگز ادا نہ ہو گا بلکہ ۱۰ تولے چاندی کا قیمتی سونا دینا آئے گا۔ ردالمحتار میں ہے:

| عدم اعتبار الجودة انما هو عند المقابلة بالجنس اما عند المقابلة بخلافه فتعتبر اتفاقاً۔ 2 | جید ہونے کا اعتبار، جنس کے ساتھ مقابلہ وقت نہیں کیا جاسکتا اور اگر غیر جنس سے مقابلہ ہو تو بالاتفاق معتبر ہے۔ (ت) |

اسی میں ہے:

| لو كان له ابريق فضة وزنه مائتان وقيمته ثلث مائة ان أدى خمسة من عينه او من غيره جاز واجمعوا انه لو أدى من خلاف جنسه اعتبرت القيمة حتى لو أدى من الذهب ما تبلغ قيمته خمسة دراهم من غير الاناء لم يجز في قولهم لتقوم الجودة عند المقابلة | اگر کسی کے پاس چاندی کا کوزہ ہے دو صد درہم وزنی اور قیمت تن سو درہم ہے تو اب وہ اس میں سے یا اس کے غیر سے پانچ درہم ادا کرتا ہے تو جائز ہے اور اس پر اتفاق ہے کہ اگر اس کی مخالف جنس سے ادا کرے تو قیمت کا اعتبار ہو گا حتی کہ اگر اتنا سونا جسکی قیمت پانچ درہم ہو غیر مصنوع سے ادا کیا تو ان کے نزدیک جائز نہیں کیونکہ مقابلہ کے وقت جودت |

1 رد المحتار باب زكوٰة المال مصطفى البابى مصر ٣٣/٢ 2 رد المحتار باب زكوٰة المال مصطفى البابى مصر ٣٧/٢

Fatawa Razawiyya - Volume 10

[Boxed Text] "Unlike the same genus, as stated in al-Mi'raj and al-Nahr... it is summarized." ...its price is considered, unlike the same genus; it is mentioned in this way in al-Mi'raj, from al-Nahr summarized (T).

Now that this rule is known, examples of these two cases have also become clear. For instance, a person has 7.5 tolas of gold and 61.5 tolas of silver jewelry, which, due to its craftsmanship, is worth four times its weight. In this, 52.5 tolas of silver form a complete Nisaab (threshold for Zakat). The remaining 9 tolas appear to be 'Afw (exempt amount). If this is mixed with gold based on price, these 9 tolas, due to craftsmanship, are equivalent to the price of 36 tolas, which makes 7.5 tolas of gold, which is one-fifth of the gold Nisaab. Thus, Zakat is obligatory on one Nisaab of silver and one Nisaab plus one-fifth of a gold Nisaab, and no exempt amount remains. In the same scenario, if there were 62 tolas of silver, then even a masha of gold would be the price of those 6 mashas of silver and remain 'Afw, as is not hidden (as mentioned - T). And Allah Almighty knows best.

Explanation of the Second Rule: From the table, it will also be clear that there are three cases on both sides regarding the quantity to be added, which, when expanded, become four: either both gold and silver are below Nisaab, or both are Nisaab plus 'Afw, or silver is below Nisaab and gold has 'Afw, or gold is below Nisaab and silver has 'Afw. Then, each case has six possible situations:

(1) That even after adding, Zakat does not increase at all; whether you convert the addable silver to gold or the addable gold to silver, the amount does not reach the threshold for Zakat. In this case, it will remain true 'Afw. For example, a person owns 20 tolas of silver and one tola of gold. If silver is converted to gold, total gold becomes 1 tola 6 mashas. If gold is converted to silver, total silver becomes 24 tolas. Neither that much gold nor that much silver reaches the Nisaab.

(2) Converting gold to silver reaches Nisaab, but converting silver to gold does not. For example, there are 10 tolas of silver and 5 tolas of gold. Converting gold to silver makes 130 tolas of silver, which is two full Nisaabs and two fifths of Nisaab, with 4 tolas as 'Afw. Converting silver to gold results in 5 tolas 5 mashas of gold, which does not reach Nisaab. Therefore, everything will be treated as silver.

(3) The reverse of case (2): converting silver to gold reaches Nisaab, but converting gold to silver does not. For example, there are 7 tolas 5 mashas of gold and 50 tolas

of silver. 7.5 tolas of gold is separated as a complete Nisaab. 1 masha of gold remains. On the other side is the exempt amount, and there are 50 tolas of silver which is below Nisaab. These two are to be mixed. Now, if one masha of gold is converted to silver, total silver becomes 52 tolas. This did not reach Nisaab, and silver...

---

1 Radd al-Muhtar, Chapter of Zakat al-Maal, Mustafa al-Babi Egypt 2/33. Page 127 of 836

फ़तावा रज़विया - खण्ड 10

[कोष्टक पाठ] "एक ही श्रेणी के विपरीत जैसा कि अल-मेराज और अल-नहर में है... संक्षेप में।" ...उसकी कीमत का विचार होता है, एक ही श्रेणी के विपरीत; मेराज में इसी तरह है, नहर से संक्षेप में (त)।

अब जबकि यह नियम ज्ञात हो गया, तो इन दो स्थितियों के उदाहरण भी स्पष्ट हो गए। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति के पास 7.5 तोला सोना और 61.5 तोला चांदी के आभूषण हैं, जो शिल्प कौशल के कारण अपने वजन से चार गुना कीमत के हैं। इसमें 52.5 तोला चांदी तो पूर्ण निसाब (ज़कात के लिए निर्धारित सीमा) बन गई। शेष 9 तोला 'अफ़्व (छूट की मात्रा) प्रतीत होती है। यदि इसे कीमत के आधार पर सोने के साथ मिलाया जाए, तो शिल्प कौशल के कारण ये 9 तोले 36 तोले की कीमत के बराबर हैं, जो 7.5 तोला सोना बनता है, जो सोने के निसाब का पांचवां हिस्सा है। इस प्रकार, चांदी के एक निसाब और सोने के एक निसाब और उसके पांचवें हिस्से पर ज़कात अनिवार्य हो गई, और कुछ भी छूट नहीं बची। इसी स्थिति में यदि 62 तोला चांदी हो, तो एक माशा सोना भी उन 6 माशा चांदी की कीमत होगा और 'अफ़्व ही रहेगा, जैसा कि छिपा नहीं है (जैसा कि उल्लेख किया गया है - त)। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

दूसरे नियम की व्याख्या: तालिका से यह भी स्पष्ट होगा कि जोड़ने योग्य मात्रा के बारे में दोनों पक्षों में तीन स्थितियाँ हैं, जो विस्तार करने पर चार हो जाती हैं: यानी चांदी और सोना दोनों निसाब से कम हों, या दोनों निसाब और 'अफ़्व के साथ हों, या चांदी निसाब से कम और सोने में 'अफ़्व हो, या सोना निसाब से कम और चांदी में 'अफ़्व हो। फिर, प्रत्येक स्थिति में छह संभावित अवस्थाएँ हैं:

(1) यह कि जोड़ने के बाद भी मूल रूप से ज़कात न बढ़े; यानी चाहे जोड़ने योग्य चांदी को सोना बना दें या जोड़ने योग्य सोने को चांदी, किसी भी तरह यह मात्रा ज़कात का कारण न बने। इस स्थिति में वह वास्तविक 'अफ़्व रहेगा। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति 20 तोला चांदी और एक तोला सोने का मालिक है। चांदी को सोना बना दें तो कुल सोना एक तोला 6 माशा होगा, और सोने को चांदी बना दें तो कुल चांदी 24 तोला। न इतना सोना निसाब तक पहुँचा और न ही इतनी चांदी।

(2) सोने को चांदी बना दें तो निसाब बन जाए और चांदी को सोना बना दें तो न बने। उदाहरण के लिए, 10 तोला चांदी और 5 तोला सोना है। सोने को चांदी बनाया तो कुल चांदी 130 तोला हुई जो दो पूर्ण निसाब और दो निसाब का पांचवां हिस्सा है, और 4 तोला 'अफ़्व है। चांदी को सोना बनाया तो

कुल 5 तोला 5 माशा सोना हुआ जो निसाब तक भी नहीं पहुँचा। इसलिए सबको चांदी ही माना जाएगा।

(3) इसका उल्टा कि चांदी को सोना बनाने से निसाब बन जाए और सोने को चांदी करने से न बने। उदाहरण के लिए, 7 तोला 5 माशा सोना और 50 तोला चांदी है। 7.5 तोला सोना तो पूर्ण निसाब होकर अलग हो गया। 1 माशा सोना बचा। उधर वह 'अफ़्व है और इधर 50 तोला चांदी है जो निसाब से कम है। इन दोनों को आपस में मिलना है। अब यदि माशा भर सोने को चांदी करते हैं तो कुल चांदी 52 तोला आती है। यह निसाब भी नहीं हुई और चांदी...

---

1 रद्द अल-मुह्तार, बाब ज़कात अल-माल, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र 2/33. पेज 127/836

[خانہ] بخلاف الجنس کذا في لامعراج نہر اھ | کی قیمت اعتبار ہوتا ہے، بخلاف جنس کے، معراج میں اسی طرح ملخصاً۔ | ہے، نہراہ ملخصاً (ت)

جب یہ قاعدہ معلوم ہو لیا تو اب ان دو صورتوں کی مثالیں بھی واضح ہو گئیں مثلاً ایک شخص کے پاس ۷-۱/۲ تولے سونا اور ۶۱-۲/۱ تولے چاندی کا گہنا ہے جو بوجہ صناعی چوگنی قیمت کا ہے اس میں ۵۲-۱/۲ تولے چاندی تو نصاب کامل ہو گئیں ۹ تولے بچی وہ عفو نظر آتی ہے، اسے بلحاظ قیمت سونے سے ملا یا تو یہ ۹ تولے بہ سبب صنعت ۳۶ تولے کی قیمت میں ہے جس کا ۷-۱/۲ تولے سونا ہوا کہ خمس نصاب زر ہے تو ایک نصاب سیم اور ایک نصاب و خمس نصاب زر کی زکوٰۃ واجب ہوئی اور عفو کچھ نہ بچا، اور اسی صورت میں ۶۲ تولے چاندی ہے تو ماشہ بھر سونا کہ اس ۶ ماشے چاندی کی قیمت ہوا اور عفو رہے گا کما لا یخفی (جیسا کہ مخفی نہیں- ت) واللہ تعالٰی اعلم -

شرح ضابطہ ثانیہ: ملاحظہ جدول سے یہ بھی کھلا ہوگا کہ دونوں جانب مقدار قابلِ ضم ہونے کی تین صورتیں بھی عند البسط چار ہو گئیں یعنی چاندی سونا دونوں غیر نصاب یا دونوں نصاب مع العفو یا چاندی غیر نصاب اور سونے میں عفو یا سونا غیر نصاب اور چاندی میں عفو۔ پھر ہر صورت چھ حال سے خالی نہیں :

(۱) یہ کہ بعد ضم بھی اصلاً زکوٰۃ نہ بڑھے یعنی خواہ قابلِ ضم چاندی کو سونا کیجئے یا قابلِ ضم سونے کو چاندی، کسی طرح یہ مقدار موجب زکوٰۃ نہ ہو، اس صورت میں وہ عفو حقیقی رہے گا، مثلاً ایک شخص ۲۰ تولے چاندی اور ایک تولے سونے کا مالک ہے، چاندی کو سونا کیجئے تو کل

سونا ایک تولہ ۶ ماشے ہو، اور سونے کو چاندی تو کل چاندی ۲۴ تولے، نہ اتنا سونا موجب زکوٰۃ نہ اتنی چاندی۔

(۲) سونے کو چاندی کیجئے تو نصاب بنے اور چاندی کو سونا کیجئے تو نہ بنے، مثلاً ۱۰ تولے چاندی ۵ تولے سونا ہے، سونے کو چاندی کیا تو کل چاندی ۱۳۰ تولے ہوئی کہ دو نصاب کامل اور دو نصاب خمس، اور ۴ تولے عفو ہے، اور چاندی کو سونا کیا تو کل ۵ تولے ۵ ماشے سونا ہوا کہ نصاب تک بھی نہ پہنچا، لہٰذا سب کو چاندی ہی ٹھہرائیں گے۔

(۳) اس کا عکس کہ چاندی کو سونا کرنے سے نصاب بنے اور سونے کو چاندی کرنے سے نہ بنے، مثلاً ۷ تولے ۵ ماشے سونا اور ۵۰ تولے چاندی ہے ۷-۱/۲ تولے سونا تو نصابِ کامل ہو کر الگ ہو گیا، بچا ۱ ماشہ سونا، اُدھر وہ عفو ہے اور ادھر ۵۰ تولے چاندی یہ بے نصاب ہے، انہیں دونوں کا باہم میل ہونا ہے، اب اگر ماشہ بھر سونے کو چاندی کرتے ہیں تو کل چاندی ۵۲ تولے آتی ہے، یہ نصاب بھی نہ ہوئی اور چاندی

---

1 ردالمحتار باب زکوۃ المال مصطفی البابی مصر ۳۳/۲ Page 127 of 836

...convert to gold, then the total gold becomes 2 tolas and 2 mashas. Since 1-1/2 tolas is the one-fifth of the Nisaab (threshold), it will make Zakat obligatory, and the remaining 8 mashas will be exempt (afw).

(4) If the Nisaab is formed by both, but silver is more beneficial for the poor. For example, 7 tolas of gold and 42 tolas of silver. If converted to gold, it becomes 8 tolas and 9 mashas. On 7-1/2 tolas, Zakat is due, and 1 tola is exempt. So, only 2 mashas of gold would have to be given, whose value is 4-1/2 tolas of silver. And if converted to silver, it becomes 210 tolas, which is four complete Nisaabs without exemption, on which 5 tolas of silver is obligatory. Thus, in silver conversion, the poor will receive 9 mashas more of silver.

(5) If gold is more beneficial. For example, 7 tolas of gold and 48 tolas of silver. If converted to silver, then after four complete Nisaabs, 6 tolas will be exempt, and only 5 tolas of silver will have to be given, whose value is 2 mashas and 5 surkh of gold. And if converted to gold, it becomes exactly 51 tolas, which is one complete Nisaab and one-fifth Nisaab without exemption, on which 2 mashas and 5-5/3 surkh is obligatory. Thus, in gold conversion, 5/3 surkh more will go to the poor.

(6) If both are equal. For example, suppose the price of one tola of gold is 21 tolas of silver, and this person owns 42 tolas of silver and 0.5 tolas of gold. If we convert silver to gold, it becomes 7-1/2 tolas, i.e., one complete Nisaab, on which 3-1/2 mashas of gold, valued at 3 tolas 11 mashas 2 surkh of silver, becomes obligatory. And if gold is converted to silver, it becomes 152 tolas 6 mashas of silver, i.e., three complete Nisaabs, on which 3 tolas 11 mashas 2 surkh of silver, valued at 2 mashas of gold, becomes obligatory. The result remains the same either way. In this case, the payer (muzakki) has the choice to value it in whichever they prefer, provided both are equally in circulation; otherwise, the more prevalent one will be determined.

Multiplying these 6 states in the 4 forms of this rule gives 24. A full detailed explanation of their examples would lead to prolixity. Since we have written one example for each form, the clarity of the issue, by the grace of Allah, has reached its peak, after which there is no need for further lengthening. Now, by the grace of Allah, this code of practice is complete and perfect, such that no mix of gold and silver in the world can fall outside these 37 forms. One form is complete Nisaab on both sides without exemption, 12 forms for the first rule, and 24 for the second rule, and two (2) forms where one owns only silver or only gold, the rulings for which have

become clear in the second issue; making thirty-nine (39). The fortieth form, where one has neither gold nor silver, the ruling is itself obvious. Now these issues, by the grace of Allah Almighty, are sufficient and exhaustive for the statement of rulings for all forms. From these, the rulings for future increases and decreases will emerge, as ultimately, after increasing, it will remain within one of these 37 forms. The only difference would be a change of form, for example, wealth that was previously under the first form of the first rule, after increasing, it would now be under the second or first of the forms of the second or first rule.

जिल्द दहम (दसवां भाग) फतावा रज़विया

...सोना करते हैं तो यह कुल सोना २ तोले २ माशे होता है कि १-१/२ तोला निसाब खुम्स (पांचवां हिस्सा) होकर ज़कात का कारण होगा और बाकी ८ माशे माफ (अफ़्व) रहेगा।

(४) दोनों से निसाब बने मगर चांदी गरीबों के लिए अधिक लाभदायक हो, उदाहरण के लिए ७ तोले सोना ४२ तोले चांदी। अगर सोना बनायें तो ८ तोले ९ माशे हुआ। ७-१/२ तोले पर ज़कात और १ तोला माफ, तो केवल २ माशे सोना देना होगा जिसका मूल्य ४-१/२ तोले चांदी है। और अगर चांदी बनायें तो दो सौ दस २१० तोले हुई जो बिना माफी के पूरे चार निसाब हैं, जिस पर ५ तोले चांदी वाजिब है। तो चांदी करने में गरीबों को ९ माशे चांदी अधिक मिलेगी।

(५) सोना अधिक लाभदायक हो, जैसे ७ तोले सोना ४८ तोले चांदी। अगर चांदी बनायें तो चार पूर्ण निसाब के बाद ६ तोले माफ रहेगी और केवल ५ तोले चांदी देनी होगी जिसका मूल्य २ माशे ५ सुर्ख सोना है। और अगर सोना बनायें तो पूरा ५१ तोले हुआ, एक पूर्ण निसाब और एक निसाब खुम्स बिना माफी के है, जिस पर २ माशे ५-५/३ सुर्ख वाजिब है। तो सोना करने में गरीबों को ५/३ सुर्ख अधिक जायेगा।

(६) दोनों बराबर हों, उदाहरण के लिए मान लीजिए एक तोला सोने की कीमत २१ तोला चांदी है और यह व्यक्ति ४२ तोले चांदी और ०.५ तोले सोने का मालिक है। अगर चांदी को सोना बनाते हैं तो ७-१/२ तोले यानी एक पूर्ण निसाब हुआ जिस पर ३-१/२ माशे सोना, जिसका मूल्य ३ तोले ११ माशे २ सुर्ख चांदी है, वाजिब हुआ। और सोने को चांदी बनायें तो १५२ तोले ६ माशे चांदी यानी तीन पूर्ण निसाब हुए जिस पर ३ तोले ११ माशे २ सुर्ख चांदी, जिसका मूल्य २ माशे सोना है, वाजिब हुई। हर तरह से परिणाम एक ही रहता है, इस स्थिति में ज़कात देने वाले (मुज़क्की) को अधिकार होगा कि दोनों में से जिससे चाहे मूल्यांकन करे, बशर्ते कि दोनों प्रचलन में बराबर हों, अन्यथा जो अधिक प्रचलित है वही निर्धारित होगा।

इस नियम की ४ सूरतों (स्थितियों) में इन ६ दशाओं को गुणा करें तो चौबीस २४ होती हैं, जिनके उदाहरणों का पूरा विवरण विस्तार का कारण बनेगा। और चूंकि हम हर सूरत का एक उदाहरण लिख चुके हैं, अल्लाह के फ़ज़ल से मसले की स्पष्टता अपने चरम पर पहुँच गई है, जिसके बाद और अधिक विस्तार की आवश्यकता नहीं है। अब अल्हम्दुलिल्लाह यह कार्यविधि पूर्ण और मुकम्मल हो गई है कि दुनिया में सोने और चांदी का कोई भी मेल इन ४७ सूरतों से बाहर नहीं हो सकता। एक

सूरत दोनों ओर बिना माफी के पूर्ण निसाब की, १२ सूरतें पहले नियम की, और २४ दूसरे नियम की, और दो २ सूरतें कि केवल चांदी का मालिक हो या केवल सोने का, उनके आदेश दूसरे मसले में स्पष्ट हो चुके हैं, कुल उनतालीस ३९ हुईं। चालीसवीं सूरत कि सोना चांदी कुछ न रखता हो, उसका आदेश स्वयं स्पष्ट है। अब ये मसले, अल्लाह तआला के फ़ज़ल से, सभी सूरतों के आदेशों के वर्णन के लिए पर्याप्त और सम्पूर्ण हो गए हैं, इन्हीं से भविष्य में होने वाली वृद्धि और कमी के आदेश निकलेंगे, क्योंकि अंततः बढ़कर इन्हीं ३७ सूरतों में से किसी एक में रहेगा। अंतर केवल इतना होगा कि सूरत बदल जाएगी, उदाहरण के लिए पहले जो माल था वह पहले नियम की पहली सूरत पर था, अब बढ़कर दूसरे नियम या पहले नियम की दूसरी या पहली सूरत पर हो गया।

سونا کرتے ہیں تو یہ کُل سونا ۲ تولے ۲ ماشے ہوتا ہے کہ ۱-۱/۲ تولہ نصاب خمس ہو کر موجب زکوۃ ہوگا اور باقی ۸ ماشے عفو رہے گا۔

(۴) دونوں سے نصاب بنے مگر چاندی فقراء کے لیے انفع ہو، مثلاً ۷ تولے سونا ۴۲ تولے چاندی کہ سونا کیجئے تو ۸ تولے ۹ ماشے ہواُ۔ ۷-۱/۲ تولے پر زکوۃ اور ۱ تولہ عفو، تو صرف ۲ ماشے سونا دینا ہوگا جس کی قیمت ۴-۱/۲ تولے چاندی ، اور چاندی کیجئے تو دو سو دس ۲۱۰ تولے ہوئی کہ پورے چار نصاب بلا عفو ہے جس پر ۵ تولے چاندی واجب، تو چاندی کرنے میں فقراء کو ۹ ماشے چاندی زیادہ ملے گی۔

(۵) سونا انفع ہو، جیسے ۷ تولے سونا ۴۸ تولے چاندی کہ چاندی کیجئے تو چار نصاب کامل کے بعد ۶ تولے عفو رہے گی اور صرف ۵ تولے چاندی دینا ہوگی جس کی قیمت ۲ ماشے ۵ سرخ سونا، اور سونا کیجئے تو پورا ۵۱ تولے ہوا، ایک نصاب کامل اور ایک نصاب خمس بلا عفو ہے جس پر ۲ ماشے ۵-۵/۳ سرخ واجب، تو سونا کرنے میں فقراء کو ۵/۳ سرخ زیادہ جائے گا۔

(۶) دونوں یکساں ہوں، مثلاً فرض کیجئے تولہ بھر سونے کی قیمت ۲۱ تولے چاندی ہے اور یہ ۴۲ تولے چاندی ۰.۵ تولے سونے کا مالک ہے اگر چاندی کو سونا کرتے ہیں تو ۷-۱/۲ تولے یعنی ایک نصاب کامل ہوا جس پر ۳-۱/۲ ماشے سونا قیمتی ۳ تولے ۱۱ ماشے ۲ سرخ چاندی کا واجب ہوا، اور سونے کو چاندی کیجئے تو ۱۵۲ تولے ۶ ماشے چاندی یعنی تین نصاب کامل ہوئی جس پر ۳ تولے ۱۱ ماشے ۲ سرخ چاندی قیمتی ۲ ماشے سونا کی واجب ہوئی، ہر طرح حاصل ایک ہی

رہتا ہے، اس صورت میں مزکی کو اختیار ہوگا کہ دونوں میں جس سے چاہے تقویم کرے بشرطیکہ دونوں رواج میں یکساں ہوں ورنہ رائج تر متعین ہوگا۔

اس ضابطہ کی چار ۴ صورتوں میں ان چھ حالتوں کو ضرب دیجئے تو چوبیس ۲۴ ہوتی ہیں جس کے امثلہ کی پوری تفصیل موجب تطویل، اور جبکہ ہم ہر صورت کی ایک مثال لکھ چکے، وضوح مسئلہ بحمد اللہ اپنے منتہیٰ کو پہنچا جس کے بعد زیادہ اطالت کی حاجت نہیں، اب بحمد اللہ یہ دستور العمل کامل و مکمل ہو گیا کہ عالم میں کوئی اختلاط زر و سیم ان ۳۷ صورتوں سے خارج نہیں ہو سکتا۔ ایک صورت دونوں جانب کمال نصاب بلا عفو کی اور ۱۲ صورتیں ضابطہ اولیٰ، اور ۲۴ ضابطہ ثانیہ کی، اور دو ۲ صورتیں کہ صرف چاندی کا مالک ہو یا صرف سونے کا، ان کے احکام مسئلہ ثانیہ میں واضح ہو چکے، انتالیس ۳۹ ہوئیں۔ چالیسویں صورت کہ سونا چاندی کچھ نہ رکھتا ہو اس کا حکم خود واضح۔ اب یہ مسائل بحمد اللہ تعالیٰ تمام صورت کے بیان احکام کو کافی و وافی ہو گئے انھیں سے آئندہ کی زیادت و نقصان کے احکام نکل آئیں گے کہ آخر بڑھ کر انھیں ۳۷ صورتوں میں سے ایک میں رہے گا، غایت یہ کہ تبدیل صورت ہو جائے، مثلاً پہلے جو مال تھا ضابطہ اولیٰ کی صورت یکم پر تھا، اب بڑھ کر ضابطہ ثانیہ یا اولیٰ کی دوم یا اول الصور پر ہو گیا،

And by analogy, it will not go beyond these 40 scenarios. There is no ruling that these issues do not address—where Zakat will increase or decrease in surplus or deficit—see this in the second and third issues. I hope this explanation and clarification, by the grace of the 'Al-Fattah' (Allah), will be a distinguished contribution of this humble servant's writing; and all praise is for Allah, the Lord of the worlds.

Now, the ruling for the specific scenario asked about: How much should be taken out? 68 tolas 2 mashas of gold and 341 tolas of silver. First, calculate each separate niṣāb (taxable threshold). In 68 tolas 2 mashas of gold, there are 9 complete niṣābs, on which 1 tola 8 mashas 2 surkh (grains) of gold are obligatory (wajib), and 8 mashas are left as surplus, which is exempt (afw) within its own niṣāb. In 341 tolas of silver, there are six (6) complete niṣābs from 315 tolas, on which 7 tolas 10 mashas 4 surkh of silver are obligatory. And from 21 tolas, there are two fifth-units (khums) of niṣāb, on which 6 mashas 2-5/2 surkh are obligatory. Their total becomes 8 tolas 4 mashas 6-5/2 surkh, and 5 tolas of silver remained as surplus in the wealth, which is exempt in its own type. Now this scenario follows the second rule, as on both sides, an exempt amount is present that can be merged. Testing those six (6) conditions: If you convert silver to gold, 5 tolas of silver at the general market rate are not worth 10 mashas of gold, which when added to those 8 mashas would form a one-fifth niṣāb of gold, i.e., 1.5 tola gold, making Zakat obligatory. Now convert gold to silver: at today's rates, 8 mashas of gold is certainly more than 16 tolas of silver; so, when added to those 5 tolas of silver, it will be 21 tolas of silver plus something extra. This results in two fifth-units (khums) of niṣāb, on which 6 mashas 2-5/2 surkh silver is due. If it increases further, do likewise. Thus, on 68 tolas of gold and 341 tolas of silver, we will consider 1 tola 8 mashas two surkh gold, and 8 tolas 11 mashas 4/5 surkh silver as obligatory. The meaning of 4/5 surkh is four-fifths of a ratti, which can be called approximately one ratti of silver. This is according to general market rates. If due to craftsmanship the value of the asset itself has increased, the owner will know that calculation. For that, the mandatory-to-remember rule has already been written above. In short, praise and gratitude be to Allah; this humble servant—may the Almighty Lord forgive him—has, by the grace of Allah Subhan-o-Ta'ala, explained these issues with such detail, completion, and grand expansion that perhaps their equal may not be found in books. I hope that whoever understands all these thoroughly will be able to explain the ruling of thousands of Zakat issues just as an expert scholar would. In these matters, where I have seen some today who claim

proficiency in jurisprudence (fiqh) and hadith, even leadership in the arts of fiqh and hadith, making gross errors; a person with less knowledge who understands these writings of mine in an excellent manner will, God willing, be able to express them correctly and clearly without hesitation. However:

Note: Rates also vary in different cities. If there, 8 mashas of gold are worth less than 16 tolas of silver, then in the silver niṣāb, one-fifth (khums) will be reduced, due to which we will subtract 3 mashas 1-1/5 surkh silver from the obligatory amount. 12 Amna (M)

और इसी प्रकार, यह 40 स्थितियों से बाहर नहीं जाएगा, तो कोई ऐसा नियम नहीं है जिसे ये समस्याएँ न बताएं कि बढ़ोतरी या कमी में ज़कात कहाँ घटेगी या बढ़ेगी और कहाँ नहीं, इसे दूसरी और तीसरी समस्या में देख लीजिए। मुझे उम्मीद है कि यह व्याख्या और स्पष्टीकरण, 'अल-फ़त्ताह' (अल्लाह) की कृपा से इस तुच्छ सेवक (फ़क़ीर) के लेखन का विशेष हिस्सा होगा, और सभी प्रशंसा अल्लाह के लिए है, जो तमाम दुनिया का पालनहार है।

अब पूछे गए विशिष्ट मामले का हुक्म (आदेश): निकालना कितनी बड़ी बात है, 68 तोले 2 माशे सोना और 341 तोले चाँदी। पहले प्रत्येक का निसाब (न्यूनतम सीमा) अलग-अलग निकाल लीजिए। 68 तोले 2 माशे सोने में 9 पूर्ण निसाब हुए जिन पर 1 तोला 8 माशे 2 सुर्ख (रत्ती) सोना वाजिब (अनिवार्य) हुआ और 8 माशे अतिरिक्त बचे जो अपने निसाब में अफ़ू (माफ़) हैं। 341 तोले में से 315 तोले के छह (6) पूर्ण निसाब हुए जिन पर 7 तोले 10 माशे 4 सुर्ख चाँदी वाजिब हुई, और 21 तोले के2 'खुम्स' (पाँचवें हिस्से) निसाब हुए जिन पर 6 माशे 2-5/2 सुर्ख वाजिब हुए। उनका कुल योग 8 तोले 4 माशे 6-5/2 सुर्ख हुआ और माल में पाँच तोले चाँदी अतिरिक्त रही जो अपनी श्रेणी में माफ़ है। अब यह स्थिति दूसरे नियम की हो गई कि दोनों ओर माफ़ की गई राशि जोड़ने योग्य मौजूद है, इसमें उन छह (6) स्थितियों की जाँच बाकी रही। चाँदी को सोना कीजिए तो 5 तोले चाँदी सामान्य दर से इस योग्य नहीं है कि 10 माशे सोने की कीमत तक पहुँचे, जो इस 8 माशे से मिलकर सोने के निसाब का पाँचवाँ हिस्सा यानी 1.5 तोला सोना बनाए और ज़कात वाजिब करे। अब सोने को चाँदी कीजिए तो आज के भाव से 8 माशे सोना निश्चित रूप से 16 तोले चाँदी से कुछ अधिक ही है, तो वह उस पाँच तोले चाँदी से मिलकर 21 तोले चाँदी और कुछ अतिरिक्त होगा। ये दो 'खुम्स' निसाब प्राप्त हुए, जिस पर 6 माशे 2-5/2 सुर्ख चाँदी वाजिब हुई। और अगर बढ़ोतरी हुई तो इसी तरह करेंगे। तो 68 तोले सोने और 341 तोले चाँदी पर 1 तोला 8 माशे दो सुर्ख सोना, और 8 तोले 11 माशे 4/5 सुर्ख चाँदी वाजिब मानेंगे। 4/5 सुर्ख का अर्थ है रत्ती के चार-पाँचवें हिस्से, जिसे लगभग एक रत्ती चाँदी कहिए। यह सामान्य भाव के अनुसार है। और यदि कारीगरी के कारण संपत्ति के मूल्य में वृद्धि हुई है, तो उसका हिसाब मालिक को पता होगा। उसके लिए वह अनिवार्य नियम हम ऊपर लिख चुके हैं। संक्षेप में, अल्लाह के लिए प्रशंसा और आभार है, इस फ़क़ीर ने - जिसे सर्वशक्तिमान प्रभु क्षमा करे - ईश्वर की कृपा से इन समस्याओं को ऐसी व्याख्या और पूर्णता के साथ वर्णित किया है कि शायद उनकी मिसाल किताबों में न मिले। मुझे आशा है कि जो व्यक्ति इन सबको पूरी तरह समझ लेगा, वह ज़कात

की हज़ारों समस्याओं का समाधान ऐसे बताएगा जैसे कोई विद्वान शोधकर्ता बताता है। जिन मामलों में फ़क़ीर ने आज के कुछ फ़िक़ह और हदीस के विशेषज्ञों, बल्कि इन कलाओं के इमामों को बड़ी गलतियाँ करते देखा, कम ज्ञान वाला व्यक्ति भी जो फ़क़ीर के इन लेखों को अच्छी तरह समझ लेगा, वह इंशा अल्लाह पूरी स्पष्टता और शुद्धता के साथ बयान करेगा। लेकिन:

टिप्पणी: विभिन्न शहरों में दरें भी भिन्न होती हैं। यदि वहाँ 8 माशे सोना 16 तोले चाँदी से कम मूल्य का हो, तो चाँदी के निसाब में एक 'खुम्स' कम हो जाएगा, जिसके कारण हम वाजिब मात्रा में से 3 माशे 1-1/5 सुर्ख चाँदी घटा देंगे। 12 आमना (म)

وعلی ہذا القیاس، یوں ہی گھٹ کر ۴۰ صورتوں سے باہر نہ جائے گا تو کوئی حکم ایسا نہیں جسے یہ مسائل نہ بتائیں، زیادت و نقصان میں کہاں زکوۃ گھٹے بڑھے گی کہاں نہیں، یہ مسئلہ ثانیہ وثالثہ سے دیکھ لیجئے، امید کرتا ہوں یہ شرح و ایضاح بحول الفتاح اسی تحریر فقیر کا حصہ خاصہ ہو، والحمد للہ رب العالمین۔ اب صُورتِ جزئیہ مسؤل عنہا کا حکم: نکالنا کتنی بات ہے، ۶۸ تولے ۲ ماشے سونا اور ۳۴۱ تولے چاندی، اوّل ہر ایک نصاب الگ نکال لیجئے، ۶۸ تولے ۲ ماشے میں سونے ۹ نصاب کامل ہوئے جن پر ایک تولہ ۸ ماشے ۲ سُرخ سونا واجب ہوا اور ۸ ماشے فاضل بچا کہ اپنے نصاب میں عفو ہے، ۳۴۱ تولے میں ۳۱۵ تولے کے چھ ۶ نصاب کامل جن پر ۷ تولے ۱۰ ماشے ۴ سُرخ چاندی واجب، اور ۲۱ تولے کے ۲ نصاب خمس ہوئے جن پر ۶ ماشے ۲-۵/۲ سُرخ واجب، ان کا مجموعہ ۸ تولے ۴ ماشے ۶-۵/۲ سُرخ ہوا اور مال میں پانچ تولے چاندی فاضل رہی کہ اپنی نوع میں عفو ہے، اب یہ صورت ضابطہ ثانیہ کی ہوئی کہ دونوں جانب ایک رقم عفو قابلِ ضم موجود ہے، اس میں اُن چھ ۶ حالتوں کی جانچ باقی رہی، چاندی کو سونا کیجئے تو ۵ تولے چاندی عام نرخ سے اس قابل نہیں کہ ۱۰ ماشے سونے کی قیمت پہنچے جو اس ۸ ماشے سے مل کر خمسِ نصابِ ذہب یعنی ۱-۲/۱ تولے سونا بنائے اور زکوۃ واجب کرے۔ اب سونے کو چاندی کیجئے تو آج کل کے بھاؤ سے ۸ ماشے سونا بیشک ۱۶ تولے چاندی سے کچھ زیادہ ہی کا ہے تو وہ اس پانچ تولے چاندی سے مل کر ۲۱ تولے چاندی مع شے زائد ہوگا یہ دو نصاب خمس اور حاصل ہوئے جب پر ۶ ماشے ۲-۵/۲ سُرخ چاندی، اور بڑھی تو یوں ہی کریں گے اور ۶۸ تولے سونے ۳۴۱ تولے چاندی پر ایک تولہ ۸ ماشے دو سُرخ سونا، اور ۸ تولے ۱۱ ماشے ۴/ ۵ سُرخ چاندی واجب مانیں گے ۴/ ۵ سُرخ کے معنی رتی کے چار خمس، جسے تقریباً ایک رتی

چاندی کہئے، یہ عام بھاؤ کے اعتبار سے ہے، اور اگر بوجہ صنعت نفسِ مال کے کوئی قیمت بڑھ گئی ہو تو اس کا حساب مالک کو معلوم ہوگا اُس کے لیے وہ قاعدہ ضرور یہ واجب الحفظ ہم اوپر لکھ ہی چکے، غرض للہ الحمد والمنۃ فقیر غفر لہ المولی القدیر نے بتوفیق المولی سبحانہ و تعالیٰ ان مسائل کو ایسی شرح و تکمیل و بسط جلیل کے ساتھ بیان کیا ہے کہ شاید اُن کی نظیر کتب میں نہ ملے امید کرتا ہوں جو شخص ان سب کو بغورِ کامل خوب سمجھ لے وہ ہزارہا مسائلِ زکوۃ کا حکم ایسا بیان کرے گا جیسے کوئی عالم محقق بیان کرے، جن مسائل میں فقیر نے آج کل کے بعض مدعیان فقاہت و تحدیث بلکہ امامتِ فنون فقہ و حدیث کو فاحش غلطیاں کرتے دیکھا، کم علم آدمی جو ان تحریرات فقیر کو بنہج احسن سمجھ لے گا ان شاء اللہ تعالیٰ بے تکلف صحیح و صاف ادا کرے گا، مگر عہ: نرخ باختلافِ امصار بھی مختلف ہوتا ہے، اگر وہاں ۸ ماشے سونا ۱۶ تولے چاندی سے کم کا ہو تو نصب فضہ میں ایک خمس کم ہو جائیگا جس کے سبب مقدار واجب سے ۳ ماشے ۱-۱/۵ سُرخ چاندی گھٹادیں گے ۱۲ امنہ (م)

Fatawa Razawiyya, Volume Ten

Heaven forbid, one should never be content with their own understanding just because it is written in Urdu. A delicate or profound matter that is beyond a person's individual capacity, no matter how clearly expressed in any language, remains delicate. Rather, it is obligatory (wajib) to study these issues with a perfect scholar so that, by the grace of Allah Almighty, one may become a perfect scholar in this chapter themselves.

[Arabic Box]: I seek forgiveness from Allah, the Great, the Most Great, for what has flowed from the tongue of the pen. And may Allah Almighty send blessings upon our Master and Leader Muhammad, the most noble Prophet, and upon his family and companions, and grant them peace and blessings. And Allah, Glorified and Exalted is He, knows best, and His knowledge, may His glory be magnified, is most complete and most firm.

[Urdu Box]: I seek forgiveness from Allah, the Great and Most Great, for what has been written by the pen. May the mercies of Allah Almighty descend upon our Master and Lord, Prophet Muhammad, the most noble, and upon his family and companions, with blessings and peace as well. Allah, Glorified and Exalted is He, knows best, and His knowledge is complete, perfect, and firm. (T)

Problem 7: If, due to not knowing the correct amount of Zakat, less than the obligatory amount was given as Zakat each year, will it be counted as Zakat or not? Explain and you will be rewarded.

The Answer: Indeed, it is counted because the intention to pay Zakat is necessary; knowing the exact obligatory amount is not a condition for validity. The most that can be said is that there was a delay in paying a portion of the obligatory amount, which according to the dominant view is a sin, but it does not negate the validity of the Zakat paid. The matter is clear and needs no further explanation. (T) Therefore, whatever was given as Zakat every year was definitely paid, and what remained became a debt upon him, to the extent that if it conflicts with any 'Nisab' (minimum threshold), the obligatory amount will decrease accordingly. The explanation is that a human's debt to a servant (meaning someone who can demand it among people, even if it is truly a debt to Allah Almighty, like Zakat which the Islamic sovereign, may Allah strengthen his victory, can demand) is considered among basic needs. Such a debt, however much it may be, will be considered as engaged in basic requirements and rendered non-existent (for Zakat purposes). Zakat will be obligatory on the

remainder if it reaches the Nisab. For example, if a year has passed on one thousand rupees and there is a five hundred rupee debt, Zakat will be due on five hundred. And if the debt is nine hundred and fifty, then there is no Zakat at all because the remainder is less than the Nisab. It is stated in Durr al-Mukhtar:

[Arabic Box]: There is no Zakat upon one who is in debt to a servant to the extent of his debt; however, the surplus is zakatable if it reaches the Nisab. 1

[Urdu Box]: There is no Zakat for the debtor of a person on the amount of the debt; however, if the amount exceeding the debt reaches the Nisab, then he should pay Zakat on it. (T)

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Mujtabai Press, Delhi, 1/129

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

कदापि नहीं, केवल उर्दू इबारत जानकर अपनी समझ पर संतोष न करें, क्योंकि कोई सूक्ष्म या विचारणीय बात जो व्यक्ति की अपनी योग्यता से परे हो, वह किसी भी भाषा में कितनी ही स्पष्टता से क्यों न कही जाए, सूक्ष्म ही रहती है। बल्कि यह अनिवार्य (वाजिब) है कि किसी पूर्ण विद्वान (आलिम-ए-कामिल) से इन मसलों को पढ़े ताकि अल्लाह तआला की कृपा से इस विषय में स्वयं पूर्ण विद्वान हो जाए।

[अरबी बॉक्स]: मैं महान और महानतम अल्लाह से उसके लिए क्षमा मांगता हूं जो कलम की ज़बान से निकला। और अल्लाह तआला हमारे आका और मौला हज़रत मुहम्मद नबी-ए-अकरम पर और उनकी आल (संतान) और सहाबा (साथियों) पर अपनी रहमतें, बरकतें और सलाम नाज़िल फरमाए। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान, जिसकी महिमा महान है, सबसे पूर्ण और सुदृढ़ है।

[उर्दू बॉक्स]: कलम से जो लिखा गया उस पर महान और महानतम अल्लाह तआला से माफ़ी चाहता हूँ। अल्लाह तआला की रहमतें नाज़िल हों हमारे आका और मौला हज़रत मुहम्मद नबी-ए-अकरम पर और आपकी आल और सहाबा पर, बरकतें और सलाम भी। अल्लाह सुब्हानहु व तआला खूब जानता है, और उसका ज्ञान पूर्ण, मुकम्मल और मज़बूत है। (त)

मसला 7: सही ज़कात की राशि ज्ञात न होने के कारण, यदि हर वर्ष वाजिब राशि से कम ज़कात दी गई है, तो क्या वह ज़कात मानी जाएगी या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: बेशक, वह ज़कात मानी जाएगी क्योंकि ज़कात अदा करने की नीयत (इरादा) ज़रूरी है; वाजिब राशि का सही पता होना वैधता (सहत) की शर्तों में से नहीं है। अधिक से अधिक यह कि वाजिब के एक हिस्से की अदायगी में देरी हुई, जिससे प्रमुख मत (मज़हब-ए-राजिह) के अनुसार गुनाह तो हुआ, लेकिन दी गई ज़कात की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। मामला स्पष्ट है और अधिक स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं है। (त) अतः हर साल जितना ज़कात में दिया गया, वह निश्चित रूप से अदा हो गया और जो शेष रह गया, वह उस पर ऋण (कर्ज़) हो गया। यहाँ तक कि यदि वह किसी निसाब (न्यूनतम सीमा) के सामने आए, तो वाजिब की राशि उसी अनुपात में घट जाएगी। इसकी व्याख्या यह है कि बंदे का ऋण (अर्थात जिसका कोई दावा करने वाला हो, चाहे वह वास्तव में अल्लाह अज़्वजल का ऋण हो जैसे ज़कात, जिसका दावा इस्लामी सुल्तान कर सकता है)

मनुष्य की बुनियादी ज़रूरतों में से है। ऐसा ऋण जितना भी होगा, उतने धन को बुनियादी ज़रूरतों में व्यस्त मानकर अस्तित्वहीन (ज़कात के उद्देश्य से) माना जाएगा, और शेष पर ज़कात वाजिब होगी यदि वह निसाब के बराबर हो। उदाहरण के लिए, एक हज़ार रुपये पर एक वर्ष बीत गया और उस पर पाँच सौ का ऋण है, तो पाँच सौ पर ज़कात आएगी। और यदि ऋण साढ़े नौ सौ है, तो मूलतः कोई ज़कात नहीं है क्योंकि शेष राशि निसाब से कम है। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

[अरबी बॉक्स]: बंदे के ऋणदाता पर ऋण की मात्रा तक ज़कात नहीं है; हाँ, यदि ऋण से अधिक राशि निसाब तक पहुँच जाए, तो उस पर ज़कात है। 1

[उर्दू बॉक्स]: बंदे के कर्जदार पर कर्ज की मात्रा पर ज़कात नहीं है, हाँ अगर कर्ज से ज़्यादा निसाब को पहुँच जाए तो फिर उसकी ज़कात अदा करे। (त)

1 दुर्रे मुख्तार, किताबुज़ ज़कात, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/129

حاشا ہر گز اردو عبارت جان کر اپنی فہم پر قناعت نہ کرے کہ نازک یا غور طلب بات جو آدمی کی اپنی استعداد سے ورا ہو کسی زبان میں کیسی ہی واضح ادا کی جائے پھر نازک ہے بلکہ واجب کہ کسی عالم کامل سے ان مسائل کو پڑھ لے تاکہ بحول اللہ تعالٰی اس باب میں خود عالم کامل ہو جائے۔

[عربی باکس]: واستغفر اللہ العظیم الاعظم مما جری علی لسان القلم وصلی اللہ تعالی علیہ سیدنا و مولانا محمد ن النبی الاکرم و صحبہ وبارك وسلم واللہ سبحانہ وتعالی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

[اردو باکس]: قلم سے جو لکھا گیا اس پر عظیم و اعظم اللہ تعالٰی سے معافی طلب کرتا ہوں۔ اللہ تعالٰی کی رحمتیں نازل ہوں ہمارے آقا ومولی حضرت محمد نبی اکرم پر اور آپ کی آل و اصحاب پر، برکتیں اور سلام بھی۔ اللہ سبحانہ و تعالٰی خوب جانتا ہے، اور اس کا علم کامل اتم اور مستحکم ہے۔ (ت)

مسئلہ سابعہ: صحیح تعداد زکوۃ نہ معلوم ہونے کی وجہ سے جو ہر سال مقدار واجب سے کم زکوۃ میں دیا گیا ہے وہ محسوب زکوۃ ہوا یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: بیشک محسوب ہوا کہ ادائے زکوۃ کی نیت ضرور ہے مقدار واجب کا صحیح معلوم ہونا شرائط صحت سے نہیں، غایت یہ کہ ایک جزء واجب کے ادا میں تاخیر ہوئی اس سے مذہب راجح پر گناہ سہی زکوۃ مؤدی کی نفی صحت تو نہیں والامر بین غنی عن التبیین (معاملہ واضح ہے مزید وضاحت کا محتاج نہیں۔ت) پس ہر سال جتنا زکوۃ میں دیا وہ قطعاً ادا ہوا اور جو باقی رہتا گیا وہ اس پر دین ہوا حتی کہ اگر کسی نصاب سے معارض ہو جائے گا تو اسی قدر مقدار واجب گھٹ

جائے گی۔ تشریح اس کی یہ ہے کہ دین عبد (یعنی بندوں میں جس کا کوئی مطالبہ کرنے والا ہو اگرچہ دینِ حقیقۃ اللہ عزوجل کا ہو جیسے دین زکوۃ جس کا مطالبہ بادشاہ اسلام اعز اللہ نصرہ کو ہے) انسان کے حوائج اصلیہ سے ہے ایسا دین جس قدر ہو گا اتنا مال مشغول بحالت اصلیہ قرار دے کر کالعدم ٹھہرے گا اور باقی پر زکوۃ واجب ہو گی اگر بقدر نصاب ہو، مثلاً ہزار روپے پر حولان حول ہوا اور اس پر پانسو قرض ہیں تو پانسو پر زکوۃ آئے گی اور ساڑھے نو سو دین ہے تو اصلاً نہیں کہ باقی قدر نصاب سے کم ہے۔ در مختار میں ہے:

[عربی باکس]: لا زکوۃ علی مدیون للعبد بقدر دینہ فیزی الزائد ان بلغ نصاباً۔ 1

[اردو باکس]: بندے کے قرضدار پر قرض کی مقدار پر زکوۃ نہیں، ہاں اگر قرض سے زائد نصاب کو پہنچ جائے تو پھر اس کی زکوۃ ادا کرے۔ (ت)

1 در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی 1/129

Fatawa Razawiyya Volume 10

In the same (book) it is written:

[Arabic Text Box] Free from debt for which there is a demand from the side of servants, whether it be for Allah, such as Zakat and Kharaj (land tax), or for a servant... etc.

[Urdu Translation in Box] Free from that debt which is demanded by people, whether it is for Allah, for example, Zakat and Kharaj, or for a servant etc. (T)

In Durr-al-Mukhtar, it is stated:

[Arabic Text Box] The demander here is the Sultan (ruler) by estimation, because the demand for him is in the Zakat of pasturing animals, and likewise in others, his right of taking is not nullified... summarized and explanation is in it.

[Urdu Translation in Box] The one demanding here will be accepted as the Sultan because he can demand the Zakat of four-legged animals and similarly in others besides them, his right of taking Zakat will not be nullified... (summarized) and its explanation is in it. (T)

Similarly, 240 Shariah Dirhams, which is one complete Nisab and one-fifth (Nisab for silver is 200 dirhams which is 52.5 tolas, and for 40 dirhams it is 10.5 tolas), on these 6 Shariah Dirhams of Zakat are obligatory. If the owner, due to dispute or forgetfulness or intentionally, kept giving 5 dirhams every year (Note: meaning he gave from his income and the savings remained the same, neither decreased nor increased), then in the first year, one dirham of Zakat remained as debt on him. In the second year, he supposedly holds a collection of only 239 dirhams because one dirham is occupied by debt. Thus, the 'Nisab of one-fifth' (of 40 dirhams) after two hundred has gone, and in that year only the Zakat of 200 dirhams, i.e., five dirhams, became obligatory.

So, as long as he does not pay the mentioned one dirham, or until a year passes and one more dirham free from his needs is added, as long as he does not pay the mentioned one dirham or a full year passes, he will be a sinner for delaying its Zakat, and this sin after persistence will become a major sin (Kabira), we seek refuge with Allah. And if in the mentioned case, suppose he kept giving only one dirham every year, then in the first year, 5 dirhams of Zakat remained as debt on him. In the second year, supposedly only 235 are collected, that year also 5 became (obligatory)

and he gave only one, so now 4 more became debt, making it 9 dirhams total debt. In the third year 13, in the fourth year 17, similarly every year the debt of Zakat will keep increasing by four and the obligatory amount will remain five each year.

Note: Meaning he gave from his income and the total savings remained the same, neither decreased nor increased. 12 Minha (M)

---

1. Durr-al-Mukhtar, Book of Zakat, Mujtabai Press, Delhi, 1/129.
2. Radd al-Muhtar, Book of Zakat, Mustafa Al-Babi, Egypt, 2/5.

फतावा रजविया जिल्द दसवीं

उसी में है:

[अरबी पाठ बॉक्स] उस ऋण से मुक्त हो जिसकी मांग बंदों (लोगों) की तरफ से हो, चाहे वह अल्लाह के लिए हो जैसे ज़कात और खराज या बंदे के लिए आदि (त)

[उर्दू अनुवाद बॉक्स] उस ऋण से मुक्त हो जिसकी मांग बंदों की तरफ से है, चाहे वह अल्लाह के लिए हो मसलन ज़कात व खराज या बंदे के लिए आदि (त)

दुर्र-अल-मुख़्तार में है:

[अरबी पाठ बॉक्स] यहाँ मांग करने वाला सुल्तान (शासक) माना जाएगा क्योंकि चौपायों की ज़कात की मांग वही कर सकता है और इसी तरह उनके अलावा अन्य में भी उसके लिए ज़कात लेने का अधिकार रद्द नहीं होगा... संक्षेप में और इसका स्पष्टीकरण उसमें है।

[उर्दू अनुवाद बॉक्स] यहाँ मुतालिबा (मांग) करने वाला सुल्तान को तस्लीम किया जाएगा क्योंकि चार पायों की ज़कात वही तलब कर सकता है और इस तरह उनके अलावा में इसके लिए अख़्ज़-ए-ज़कात (ज़कात लेना) का हक़ बातिल नहीं होगा। अह मलख़्ख़सन और इसकी वज़ाहत इसमें है (त)

इसी तरह दो सौ चालीस (240) शरई दिरहम, जो एक पूर्ण निसाब और एक पंचमांश (fifth) है (दो सौ दिरहम की 52-1/2 तोले चाँदी हुई और चालीस की 10-1/2 तोले), उन पर 6 शरई दिरहम ज़कात के वाजिब हैं। यदि मालिक झगड़े, भूल या जानबूझकर हर साल पाँच दिरहम देता गया (नोट: यानी अपनी आमदनी से देता रहा और जमा राशि उतनी ही रही, न कम हुई न अधिक), तो पहले साल एक दिरहम ज़कात का उस पर ऋण रहा। दूसरे साल वह गोया दो सौ उनतालीस (239) दिरहम ही जमा रखता है क्योंकि एक दिरहम ऋण में व्यस्त है, तो दो सौ के बाद चालीस का 'निसाब-ए-ख़ुम्स' (पंचमांश निसाब) जाता रहा और उस साल केवल दो सौ (200) दिरहम की ज़कात यानी पाँच ही वाजिब हुए।

अतः जब तक वह उक्त एक दिरहम अदा न करे या पूरा साल गुजरने पर उसकी ज़रूरत से फालतू एक दिरहम और जमा न हो जाए, जब तक वह उक्त एक दिरहम अदा न करे या पूरा साल बीतने पर उसकी ज़कात की देरी से वह गुनाहगार होगा और यह गुनाह निरंतरता के बाद कबीरा (बड़ा गुनाह) हो जाएगा, अल्लाह की पनाह। और अगर उक्त स्थिति में मान लीजिए कि वह हर साल एक ही

दिरहम देता रहा, तो पहले साल उस पर 5 दिरहम ज़कात के ऋण रहे। दूसरे साल गोया सिर्फ दो सौ पैंतीस (235) जमा हैं, उस साल भी वही पाँच हुए और दिया एक ही, तो अब चार और कर्ज होकर नौ दिरहम कर्ज हो गए। तीसरे साल तेरह (13), चौथे साल सत्रह (17), इसी तरह हर साल ज़कात का ऋण चार-चार बढ़ता जाएगा और वाजिब वही पाँच-पाँच।

नोट: यानी अपनी आमदनी से देता रहा और जमा उसी कदर कायम रही न कम हुई न ज़्यादा। 12 मिन्हा (म)

---

1. दुर्र-अल-मुख़्तार, किताब-उल-ज़कात, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/129.
2. रद-अल-मुह्तार, किताब-उल-ज़कात, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/5.

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

اُسی میں ہے:

[عربی عبارت] فارغ عن دین لہ مطالب من جھۃ العباد سواء | اس دین سے فارغ ہو جس کا مطالبہ بندوں کی طرف سے ہے کان للہ تعالیٰ کزکوۃ و خراج او للعبد۱ الخ۔ | خواہ وہ اللہ کے لیے ہو مثلاً زکوۃ و خراج یا بندے کے لیے الخ (ت)

درالمختار میں ہے :

[عربی عبارت] المطالب ھنا السلطان تقدیر ا لان الطلب لہ فی | یہاں مطالبہ کرنے والا سلطان کو تسلیم کیا جائیگا کیونکہ چار زکوۃ السوائم وکذا فی غیر ھالم یبطل حقہ عن | پایوں کی زکوۃ وہی طلب کرسکتا ہے اور اس طرح ان کے علاوہ الخذ۲ اہ ملخصاً و ایضاحہ فیہ۔ | میں اس کے لیے اخذ زکوۃ کا حق باطل نہیں ہوگا اھ ملخصاً اور اس کی وضاحت اس میں ہے (ت)

یونہی دوسو چالیس ۲۴۰ درہم شرعی کہ ایک نصاب کامل و ایک خمس ہے (دو سو درہم کی ۵۲-۱/۲ تولے چاندی ہوئی اور چالیس کی ۱۰-۱/۲ تولے) ان پر چھ ۶ درہم شرعی زکوۃ کے واجب، اگر مالک جھگڑایا سہوا یا عمداً گہر سال پانچ درہم دیتا گیا عہ تو سالِ اول ایک درہم زکوۃ کا اس پر دین رہا، دوسرے سال وہ گویا دو سو انتالیس ۲۳۹ ہی درہم کی جمع رکھتا ہے کہ ایک درہم مشغول بہ دین ہے تو نصابِ خمس کہ دو سو کے بعد چالیس کا مل تھا جاتا رہا اور اس سال تمام صرف دو سو ۲۰۰ درہم کی زکوۃ یعنی پانچ ہی واجب ہوئے،

پس وہ جب تک ایک درہم مذکور ادا نہ کرے یا سالِ تمام پر اُس کی حاجت سے فارغ ایک درہم اور جمع نہ ہو جائے جب تک ایک درہم مذکور ادا نہ کرے یا سالِ تمام پر اُس کی زکوۃ کی تاخیر سے

گنہگار ہوگا اور یہ گناہ اصرار کے بعد کبیرہ ہو جائے گا والعیاذ باللہ تعالیٰ، اور اگر صورتِ مذکورہ میں فرض کیجئے کہ وہ ہر سال ایک ہی درہم دیتا رہا تو سالِ اول اس پر پانچ درہم زکوۃ کے دین رہے، سالِ دوم میں گویا صرف دو سو پینتیس ۲۳۵ جمع ہیں اس سال وہی پانچ ہوئے اور دیا ایک ہی اتواب چار اور قرض ہو کر نو درہم دین ہو گئے تیسرے سال تیرہ ۱۳، چوتھے سال ۱۷، یونہی ہر سال دین زکوۃ میں چار چار بڑھتے جائیں گے اور واجب وہی پانچ پانچ

عہ: یعنی اپنی آمدنی سے دیتا رہا اور جمع اُسی قدر قائم رہی نہ کم ہوئی نہ زائد ۱۲منہ (م)

---

1 در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۲۹ 2 ردالمحتار کتاب الزکوۃ مصطفی البابی مصر ۲/ ۵

...will continue to be, from two hundred (200) to two hundred and thirty-nine (239), there are only five dirhams. When in the tenth year, the debt becomes forty-one (241) dirhams, then in the eleventh year there will be no Zakat on it because the total will remain only one hundred and ninety-nine (199), which is less than the *nisab* (minimum taxable amount). Even in the eleventh year, if he has given one dirham as per custom, then five dirhams will become obligatory because now only forty dirhams will remain in debt and a full two hundred will be considered the total, and so on. In short, a person who has paid less in past years should understand this fine calculation well and immediately pay whatever debt is due from him. It is in Radd al-Muhtar:

If someone has a single *nisab* on which two years | If someone has only one *nisab* on which 2 years have passed and he has not paid Zakat for them - [1] | have passed, although he has not paid Zakat for then in the second year, there is no Zakat on it. | them, then now in the second year there is no And Allah the Almighty knows best. | Zakat on it. And Allah the Almighty knows best. (T)

Problem 18: From the city of Bareilly, Malukpur locality, Maulvi Shafa'atullah Sahib, student of Madrasa Ahle Sunnat-o-Jamaat, Bareilly, 3 Rabi' al-Akhir 1331 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say regarding this issue: A woman named Hindah has been the owner of gold and silver jewelry according to the details below and cash for a period of three years. In addition to this, she also has household effects for necessary expenses, and four rupees from the said money have been spent continuously every month for a period of three years. Now, the said woman wants to pay Zakat on her wealth; please state how she should pay it. Gold jewelry 4 tolas 10 mashas 3 surkh, silver jewelry (along with) cash (summary).

The Answer: From the statement of the questioner, it is known that the jewelry remained the same every year, not increasing or decreasing. So every year, according to the rate of gold that existed then, the value of 4 tolas 6 mashas 3 surkh will be added to the weight of the silver jewelry, and for every fifty-two and a half tolas of silver, its one-fortieth (1/40th) part, then for every additional ten and a half tolas of silver, its one-fortieth part will be due. At the end, whatever remains less than ten and a half tolas of silver will be exempt. Every second year, as much Zakat as became due in previous years will be deducted from the current assets, and Zakat will be due

on the remainder. For three years, this cash will also continue to be included in the calculation, and every second year, however many rupees were spent will be reduced. Thus, by calculating the total for three years, whatever amount of Zakat...

[1] Radd al-Muhtar, Kitab al-Zakat, Mustafa al-Babi Egypt, 5/2

फतावी रज़विया जिल्द १०

...होते रहेंगे, दो सौ २०० से दो सौ उनतालीस २३९ तक पांच ही दरम हैं। जब दसवें साल में इकतालिस ४११ दरम ऋण हो जाएंगे, तो ग्यारहवें साल उस पर ज़कात ही नहीं होगी क्योंकि कुल जमा सिर्फ एक सौ निन्यानवे १९९ रह जाएगी, जो निसाब (न्यूनतम कर योग्य राशि) से कम है। ग्यारहवें साल भी अगर उसने दस्तूर के मुताबिक एक दरम दे दिया, तो फिर पांच दरम वाजिब हो जाएंगे क्योंकि अब ऋण में सिर्फ चालीस दरम रहेंगे और पूरे दो सौ जमा माने जाएंगे, और इसी तरह आगे भी। संक्षेप में, पिछले वर्षों में कम देने वाले को इस सूक्ष्म हिसाब को अच्छी तरह समझकर, जितना ऋण उसके ज़िम्मे निकले, तुरंत अदा करना चाहिए। रद अल-मुह्तार में है:

यदि उसके पास एक निसाब हो जिस पर दो साल बीत | यदि किसी के पास एक ही निसाब है जिस पर २ साल गुज़रे, गए हों और उसने उनमें ज़कात न दी हो - [१] | हालाँकि उसने उनमें ज़कात नहीं दी, तो अब दूसरे साल दूसरे साल उस पर ज़कात नहीं है। | उस पर ज़कात नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। | और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला १८: बरेली शहर के मलूकपुर मोहल्ले से, मदरसा अहले सुन्नत व जमाअत बरेली के छात्र मौलवी शफात उल्लाह साहब की ओर से, ३ रबी अल-आख़िर १३३१ हिजरी। धर्म के विद्वान और मुफ्ती-ए-शरा-ए-मतीन इस मसले में क्या फरमाते हैं कि मुसम्मात हिंदा तीन साल की अवधि से सोने और चांदी के आभूषणों (नीचे दिए गए विवरण के अनुसार) और नकद रुपयों की मालकिन है। इसके अलावा वह घरेलू ज़रूरत का सामान भी रखती है, और उक्त रुपयों में से चार रुपये मासिक तीन साल की अवधि से लगातार खर्च होते रहे हैं। अब उक्त महिला अपने माल की ज़कात अदा करना चाहती है, वह किस तरह से अदा करे, बयान फरमाएं। सोने के आभूषण ४ तोले १० माशे ३ सुर्ख, चांदी के आभूषण (नकद रुपयों के साथ) (सारांश)।

अल-जवाब: प्रश्नकर्ता के बयान से पता चला कि जेवर हर साल उतना ही रहा, कम या ज़्यादा नहीं हुआ। तो हर साल सोने की जो दर थी, उससे ४ तोले ६ माशे ३ सुर्ख की कीमत लगाकर चांदी के जेवर के वज़न में शामिल की जाएगी और हर साढ़े बावन तोले चांदी पर उसका चालीसवां हिस्सा, फिर हर साढ़े दस तोले चांदी पर उसका चालीसवां हिस्सा वाजिब आएगा। अंत में जो साढ़े दस तोले चांदी से कम बचेगा, वह माफ रहेगा। हर दूसरे साल पिछले वर्षों की जितनी ज़कात वाजिब हुई, वर्तमान माल में से उतनी कम होकर बाकी पर ज़कात आएगी। तीन साल से यह नकद रुपया भी

बदस्तूर हिसाब में शामिल किया जाएगा और हर दूसरे साल जितने रुपये खर्च हो गए, कम कर दिए जाएंगे। इस तरह तीन साल का कुल हिसाब करके जिस कदर ज़कात...

१ रद अल-मुह्तार, किताब अल-ज़कात, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र ५/२

पेज १३२ / ८३६

ہوتے رہیں گے دوسو ۲۰۰ دو سو انتالیس ۲۳۹ تک پانچ ہی درم ہیں ، جب سال دہم میں اکتالیس ۲۴۱ درہم دین ہو جائیں گے تو گیارہویں سال اس پر زکوۃ ہی نہ ہوگی کہ جمع صرف ایک سو ننانوے ۱۹۹ ٹھہریں گے کہ نصاب سے کم میں سال یاز دہم بھی اگر اس نے ایک درہم حسب دستور دے دیا تو پھر پانچ درہم واجب ہو جائیں گے کہ اب دین میں صرف چالیس درہم رہے اور دوسو پورے جمع قرار پائے وعلی ہٰذا القیاس۔ غرض سنین ماضیہ میں کم دینے والا اس نفیس حساب کو خوب سمجھ کر جتنا دین اس کے ذمے نکلے فی الفور ادا کرے۔ ردالمحتار میں ہے :

لو کان لہ نصاب حال علیہ حولان ولم یزکہ - اھ ۱ | اگر کسی کے پاس ایک ہی نصاب ہے جس پر ۲ سال گزرے فیھما لا زکوۃ علیہ في الحول الثاني۔ | حالانکہ اس نے ان میں زکوۃ نہیں دی تو اب دوسرے سال واللہ تعالٰی اعلم۔ | اس پر زکوۃ نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۱۸ : از شہر بریلی محلہ ملوکپور مولوی شفاعت اللہ صاحب طالب علم مدرسہ اہلسنت و جماعت بریلی ۳ ربیع الآخر ۱۳۳۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ مسماۃ ہندہ عرصہ تین سال سے زیور طلائی و نقرئی کی حسب تفصیل ذیل اور نقد روپے کی عرصہ تین سال سے مالک ہے ، اس کے علاوہ اثاث البیت ضروری خرچ کا بھی رکھتی ہے اور روپیہ مذکور میں سے چار روپے ماہوار عرصہ تین سال سے متواتر خرچ ہوتا رہا ہے اب مسماۃ مذکور اپنے مال کی زکوۃ ادا کرنا چاہتی ہے کس طرح سے ادا کرے، بیان فرمائے ، زیور طلائی ۴ تولے ۱۰ ماشے ۳ سرخ، زیور نقرئی (معہ) نقد روپیہ (صمامہ)۔

الجواب : بیان سائل سے معلوم ہوا کہ زیور ہر سال اتنا ہی رہا کم و بیش نہ ہوا تو ہر سال جو سونے کا نرخ تھا اس سے ۴ تولے ۶ ماشے ۳ سرخ کی قیمت لگا کر زیور نقرہ کے وزن میں شامل کی جائے گی اور ہر ساڑھے باون تولے چاندی پر اس کا چالیسواں حصہ ، پھر ہر ساڑھے دس تولے چاندی پر اس کا چالیسواں حصہ واجب آئے گا، اخیر میں جو ساڑھے دس تولے چاندی سے کم بچے معاف رہے گی، ہر دوسرے سال اگلے برسوں کی جتنی زکوۃ واجب ہوئی آئی مال موجود میں سے اتنا کم ہو کر باقی پر زکوۃ آئے گی، تین سال سے یہ نقد روپیہ بھی بدستور حساب میں شامل کیا جائیگا اور ہر دوسرے سال جتنے روپے خرچ ہو گئے کم کر لئے جائیں گے ، یوں تین سال کا مجموعی حساب کر کے جس قدر زکوۃ

۱ ردالمحتار کتاب الزکوۃ مصطفیٰ البابی مصر ۵/۲

Volume X Fatawa Razawiya

Whatever obligation (Zakat) has emerged, it must be paid immediately. For the delay in payment until now, it is obligatory (Fard) to repent with great humility, and in the future, it should be paid on everything immediately every year. If it is difficult to find out the price of gold on the day the year completes for these next three years, then as a precaution, use the highest possible rate so that no Zakat remains unpaid, and Allah knows best.

Question 19: From Daru, District Nainital, sent by Abdullah Sahib, shopkeeper, 5 Dhu al-Hijjah 1331 AH. What do the scholars of the true religion say on this issue: how much is the full 'Nisab' (minimum amount of wealth upon which Zakat becomes obligatory)? As has been written in the scholarly sermon, is that correct? Their saying is that it should be seven and a half tolas of gold or fifty-two and a half tolas of silver; if someone has either of these, they become eligible for Zakat and possess the Nisab. The scholars should consider that if fifty-two and a half tolas of silver are present, and there are four to six people in the house to feed and spend on, does that person still possess the Nisab and become eligible for Zakat? Second submission: It is written in 'Ma la Budda Minhu' (a book of Fiqh) that wealth should be in excess of basic needs and a year should pass over it. If a person has fifty rupees worth of cloth for trade from which they earn their livelihood, sixty rupees worth of jewellery for constant wear, eighty rupees in cash, food for only one month in the house, and ninety-five rupees are due for the wife's dowry (meaning he is in debt), does that amount to the Nisab or not? Respected sir! We have full faith in you. Until we receive a ruling from you, we cannot do anything. I sent a letter to your service earlier but received no reply. Your grace should consider that here the Maulvis say one thing at one time and another at another. There is confusion in the Sharia; our faith is in you. We will accept whatever you write and cannot go against you. If one issue is asked in four places, there are four different ways. What is the reason for this? Why is there no consensus of opinion? We are very troubled; there is no clear meaning. Please show us kindness and fulfill our heart's desire.

Answer: In reality, the Nisab for gold is seven and a half tolas and for silver, it is fifty-two and a half tolas. Whichever of these a person possesses, if a full year passes over it, it remains after necessities like food, clothing, housing, etc., and debt does not reduce it below the Nisab, then Zakat is obligatory (Fard) on it. Even if it is jewellery for wearing, as wearing jewellery is not considered a basic necessity (Hajat-e-Asliyah). The Sharia has already taken into account the people to be fed in the house; Zakat is

obligatory only on the fortieth portion of what remains after all expenses for food, drink, and clothing for the whole year and stays for the year. This is so that you may also find salvation from punishment in the hereafter, for which a person would consider it a boon to give away the entire world to be free. And in this world, there will be progress and blessing in your wealth. Thinking that Zakat will decrease wealth is a sign of weak faith. The Almighty Lord states in the Great Quran that He gives progress and increase to Zakat; how can that which He increases possibly decrease? This...

खंड दसवाँ फ़तावा रज़विया

जितना फ़र्ज़ (ज़कात) निकला है उसे फ़ौरन अदा कर देना होगा और अब तक जो अदायगी में देरी हुई उसके लिए बहुत गिड़गिड़ाकर तौबा करना फ़र्ज़ है और भविष्य में हर साल कुल पर फ़ौरन अदा की जाए। यदि इन अगले तीन वर्षों में वर्ष पूरा होने के दिन सोने का भाव जानने में कठिनाई हो, तो एहतियातन अधिक से अधिक दर लगा लें ताकि ज़कात कुछ शेष न रहे, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला १९: डारू, ज़िला नैनीताल से, प्रेषक अब्दुल्ला साहिब दुकानदार, ५ ज़ुल-हिज्जा १३३१ हिजरी। दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि 'निसाब' (ज़कात के लिए निर्धारित न्यूनतम धन) की पूरी मात्रा कितनी होती है? जैसा कि विद्वानों के खुतबे में लिखा गया है, क्या वह सही है? उनका कथन है कि साढ़े सात तोले सोना हो या साढ़े बावन तोले चाँदी हो, दोनों में से कोई एक चीज़ हो तो वह ज़कात देने योग्य (साहिबे-निसाब) हो गया। विद्वानों को विचार करना चाहिए कि साढ़े बावन तोले चाँदी है और घर में चार-छह व्यक्ति खाने वाले और खर्च करने वाले हैं, तो क्या वह व्यक्ति साहिबे-निसाब और ज़कात देने योग्य हो गया? दूसरी गुज़ारिश यह है कि 'माला बुद्दा मिन्हु' (फ़िक़्ह की एक किताब) में लिखा है कि ज़रूरतों से अधिक हो और उस पर एक साल गुज़र जाए। यानी ज़रूरत से ज़्यादा हो, तो जिस तरह एक व्यक्ति के पास पचास रुपये का व्यापारिक कपड़ा है जिससे उसकी आजीविका चलती है, साठ रुपये के गहने हर समय पहनने के लिए हैं, और अस्सी रुपये उसके पास नकद हैं, घर में खाने के लिए केवल एक महीने का सामान है और पचानवे रुपये औरत का मेहर देना है (यानी वह कर्ज़दार है), तो क्या वह माल निसाब का हुआ या नहीं? हुज़ूर! हमें आप पर पूर्ण विश्वास है। जब तक हुज़ूर के यहाँ से कोई हुक्म नहीं मिलेगा, हम कुछ नहीं कर सकते। एक पत्र पहले भी हुज़ूर की सेवा में भेज चुका हूँ जिसका कोई उत्तर नहीं मिला। हुज़ूर को विचार करना चाहिए, यहाँ हुज़ूर मौलवी कभी कुछ कहते हैं तो कभी कुछ। शरीअत के मामलों में मतभेद है, हमारा विश्वास आप पर है। आप जैसा लिखेंगे वैसा ही हम मानेंगे, हम आपके विरुद्ध नहीं जा सकते। एक ही मसले को चार जगह पूछो तो चार अलग-अलग रास्ते होंगे, इसका क्या कारण है? राय में एकराय क्यों नहीं है? हमें बहुत परेशानी होती है, कोई अर्थ स्पष्ट नहीं है। हम पर कृपा फ़रमाएँ और हमारी दिली मुराद पूरी करें।

जवाब: वास्तव में सोने का निसाब साढ़े सात तोले और चाँदी का साढ़े बावन तोले है। इनमें से जो भी उसके पास हो और उस पर पूरा साल गुज़र जाए, और वह भोजन, वस्त्र, मकान आदि जैसी अनिवार्य

ज़रूरतों से बचा हुआ हो और कर्ज़ उसे निसाब से कम न कर दे, तो उस पर ज़कात फ़र्ज़ है। चाहे वह पहनने के गहने हों, क्योंकि गहने पहनना कोई 'हाजते-असलिया' (मौलिक आवश्यकता) नहीं है। घर में जो लोग खाने वाले हैं, शरीअत-ए-मुतहरा ने पहले ही उसका लिहाज़ कर लिया है। पूरे साल के खाने-पीने, पहनने और तमाम खर्चों से जो बचा और साल भर रहा, उसी के चालीसवें हिस्से पर ज़कात फ़र्ज़ हुई है। और वह भी इसलिए ताकि तुम्हें आख़िरत में भी अज़ाब से निजात मिले, जिसके लिए इंसान पूरी दुनिया देकर भी छुटकारा पाने को ग़नीमत समझे। और दुनिया में तुम्हारे माल में तरक्की और बरकत हो। यह सोचना कि ज़कात से माल घटेगा, कमज़ोर ईमान की निशानी है। अल्लाह तआला क़ुरआन-ए-अज़ीम में इरशाद फ़रमाता है कि वह ज़कात को तरक्की और वृद्धि देता है; जिसे वह बढ़ाए वह भला कैसे घट सकता है? यह...

पृष्ठ १३३ / ८३६

فرض نکلی سب فوراً ادا کر دینی ہو گی اور اب تک جو ادائی میں تاخیر کی بہت زاری کے ساتھ اُس سے توبہ فرض ہے اور آئندہ ہر سال تمام پر فوراً ادا کی جائے۔ یہ اگلے تین برسوں میں اس کے سال تمام ہونے کے دن سونے کے بھاؤ دریافت کرنے میں وقت ہو تو احتیاطاً زیادہ سے زیادہ نرخ لگا لے کہ زکوۃ کچھ رہ نہ جائے، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۹: از درو ضلع نینی تال مرسلہ عبد اللہ صاحب دکاندار ۵ ذی الحجہ ۱۳۳۱ ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین شرع متین اس مسئلہ میں کہ پُر انصاب کتنا ہوتا ہے جیسا کہ علمی خطبہ کے اندر تحریر کر چکے ہیں وہ ٹھیک ہے اُن کا قول یہ ہے کہ ساڑھے سات تولے سونا ہو یا ساڑھے باون تولے چاندی ہو ، دونوں میں سے ایک چیز ہو وہ اہل زکوۃ اہل نصاب ہو گیا علمائے دین کو غور کرنا چاہئے کہ ساڑھے باون تولے چاندی ہے اور گھر میں چار چھ آدمی کھانے والے اور خرچ کرنے والے ہیں تو وہ شخص اہل نصاب اہل زکوۃ ہو گیا، دوسری گزارش یہ ہے کہ مالابد منہ میں لکھا ہوا ہے کہ کارروائی سے زیادہ ہو سال بھر اُس پر گزر جائے، یعنی حاجت سے زائد ہو تو جس قدر ایک شخص کے پاس پچاس روپے کا کپڑا تجارت کا ہے اور اس سے اس کی اوقات بسری ہوتی ہے ساٹھ روپیہ کا زیور ہر وقت کے پہننے کا ہے اور اسی روپے اس کے پاس نقد ہیں اور گھر میں کھانے کو کل ایک مہینے کا ہے اور پچانوے روپے مہر عورت کا ہے یعنی قرضدار ہے وہ مال نصاب کا ہو گیا یا نہیں، حضور ! ہم لوگوں کا آپ پر یقین کامل ہے جب تک کوئی حکم حضور کے یہاں سے نہ ملے گا ہم کچھ نہیں کر سکتے اور ایک تحریر پیشتر حضور کی خدمت میں روانہ کر چکا ہوں اس کا کوئی جواب نہیں ملا، حضور کو غور کرنا چاہئے، یہاں پر حضور مولوی کبھی کچھ فرماتے ہیں کبھی کچھ شرع کے اندر رخنہ بازی ہے ہم لوگوں کا یقین آپ پر ہے

آپ جیسا لکھیں گے ویسا ہم مانیں گے آپ کے خلاف نہیں کر سکتے ، ایک مسئلہ کو چار جگہ دریافت کرو علیحدہ علیحدہ راہ ہو گی اس کی کیا وجہ ہے ، رائے کا اتفاق کیوں نہیں ہے ہم لوگوں کو بہت پریشانی ہوتی ہے کوئی مطلب ٹھیک نہیں ہم لوگوں پر عنایت فرمائیے اور دلی مراد پوری کیجئے۔

الجواب: فی الواقع سونے کا نصاب ساڑھے سات تولے اور چاندی کا ساڑھے باون تولے ہے ان میں سے جو اُس کے پاس ہو اور سال پُورا اس پر گزر جائے اور کھانے پہننے مکان وغیرہ ضروریات سے بچے اور قرض اسے نصاب سے کم نہ کر دے تو اُس پر زکوۃ فرض ہے اگرچہ پہننے کا زیور ہو زیور پہننا کوئی حاجت اصلیہ نہیں ، گھر میں جو آدمی کھانے والے ہوں اس کا لحاظ شریعت مطہرہ نے پہلے ہی فرمالیا ، سال بھر کے کھانے پینے پہننے تمام مصارف سے جو بچا اور سال بھر رہا اُسی کا تو چالیسواں حصہ فرض ہوا ہے اور وہ بھی اس لیے کہ تمہیں آخرت میں بھی عذاب سے نجات ملے جس سے آدمی تمام جہان دے کر چھوٹنے کو غنیمت سمجھے اور دنیا میں تمہارے مال میں ترقی ہو برکت ہو یہ خیال کرنا کہ زکوۃ سے مال گھٹے گا نزاعضعفِ ایمان ہے۔ مولیٰ تعالیٰ قرآن عظیم میں ارشاد فرماتا ہے کہ وہ زکوۃ کو ترقی و افزونی دیتا ہے جسے وہ بڑھائے وہ کیونکر گھٹ سکتا ہے، یہ

Fatawa Razawiya Volume 10

The thought that "at this time, if I give two and a half rupees out of a hundred as per the command, then what will the children eat in the future?", is purely a satanic whisper. If Zakat brings blessing, then [giving] two and a half rupees out of a hundred would decrease the amount, it wouldn't snatch away sustenance. If next year the wealth increases such that after a year's worth of expenses for children etc. the money remains as it was, then the falsehood of this whisper will be publicly evident. And if there was a need to spend it on food and drink to the extent that it falls below the Nisab (threshold), then no one will ask you for Zakat anymore. But what would be the concern for the children for next year? That which was accumulated was spent on food and drink, and now there is no Zakat to blame, how will you live further? Such weaknesses are taught by Satan. A wife's dower (Mahr), whose demand arises after death or divorce and for which no thought of payment occurs throughout life, should not be made an excuse for not giving Zakat. And Allah Almighty knows best.

Problem 20: What do the scholars of religion say regarding this matter: that 44 years ago, I became the owner of 13 tolas 6 mashas of gold and some silver. The silver remained as it was for nine to ten years and was spent in the eleventh year. And that gold remained for 44 years in the same amount, [but] in the third year, five tolas were spent so that at the end of the year it was only 8 tolas 6 mashas. In the fifth year, two and a half tolas were spent so that at the end of the year it was only 6 tolas, and it remained the same for forty-two years, then that too was gifted to my daughter. During the years that silver was with me, and even after that, the price of gold was 18 [rupees per] tola and silver was rupee for its weight. In this situation, how much Zakat is obligatory on me? Answer and be rewarded.

The Answer is evident that:

In the first year, the gold was equal to the Nisab or rather more, and the silver did not reach the Nisab, so it will be added to the gold by value. At the rate of that time, 7 [rupees worth of silver] became 3 mashas 4 surkhs of gold, so effectively that year there was 16 tolas, 7 mashas, and 4 surkhs of gold. In this, 15 tolas are two complete Nisabs. On them, 4 mashas 4 surkhs of gold is obligatory, and one and a half tolas is a fifth (khums) of a Nisab on which 3 3/5 surkhs is obligatory. Total obligatory is 4 mashas 7 3/5 surkhs, the remaining one masha 4 surkhs was exempt.

In the second year, after deducting the Zakat debt, it was effectively 16 tolas 2 mashas 7 2/5 surkhs of gold, in which the obligation for two complete Nisabs is 4 mashas 4 surkhs, the remaining one tola 2 mashas 4 1/5 surkhs was exempt. The sum of the two obligations is 9 mashas 3 3/5 surkhs.

In the third year, there was only 8 tolas 6 mashas of gold. After adding silver, it became 11 tolas 7 mashas 4 surkhs. From this, the total of previous obligations was subtracted, so 10 tolas 10 mashas 2/5 surkhs of gold remained, which is one complete Nisab. The obligation is 2 mashas 2 surkhs, and for two fifths of a Nisab, the obligation is 7 1/5 surkhs. Total obligatory is 3 mashas 1 1/5 surkhs. The excess over 10 tolas was exempt. Total obligations are one tola 2 4/5 surkhs.

फतावी रज़विया जिल्द दहम

ख्याल कि इस वक्त सौ रुपये से ढाई रुपये हुक्म मानने में उठा देंगे तो आइंदा बाल-बच्चे क्या खाएंगे, महज़ शैतानी वसवसा (संदेह) है। ज़कात से अगर बरकत भी मिलती तो ढाई रुपया सौ में से कम हो जाता रिज़्क़ (जीविका) न छीनता, आइंदा साल अगर माल बढ़ गया कि साल भर का बाल-बच्चों सबका खर्च होने के बाद भी वह रुपया बदस्तूर रखे रहे तब तो इस वसवसे का झूठ होना एलानिया ज़ाहिर हो जाएगा और अगर उनमें से खाने-पीने की हाजत पड़ी यहाँ तक कि माल निसाब (न्यूनतम सीमा) से कम रह गया तो अब आपसे कोई ज़कात न मांगेगा मगर बाल-बच्चों की फिक्र अगले साल के लिए क्या होगी, वह जो जमा थे खाने-पीने में खर्च हो गए और अब ज़कात भी नहीं जिस पर इल्ज़ाम धरो, आगे क्योंकर जिओगे, ऐसी कमज़ोरियाँ शैतान सिखाता है। औरत का महर जिसका मुतालबा मौत या तलाक़ के बाद होता है और पूरी उम्र जिसकी अदायगी का ख्याल तक नहीं आता उसे ज़कात न देने का हीला (बहाना) न बनाना चाहिये। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है)।

मसला २०: उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ४४ बरस हुए जो मैं १३ तोले ६ माशे सोने और भर चाँदी की मालिक हुई, चाँदी नौ-दस बरस तक बदस्तूर रही, ग्यारहवें साल खर्च हो गई, और वह सोना ४४ बरस तक उसी क़दर रह कर तीसरे साल पाँच तोला खर्च हो गया कि साल के अंत में सिर्फ ८ तोले ६ माशे था। पाँचवें साल ढाई तोला और खर्च हुआ कि साल के अंत में सिर्फ ६ तोला था और वही बयालीस बरस तक रहा, फिर वह भी अपनी दुख़्तर (बेटी) को हिबा (उपहार) कर दिया। जिन बरसों तक वह चाँदी मेरे पास थी बल्कि उसके बाद भी सोने का भाव १८ रुपये प्रति तोला रहा और चाँदी रुपया की रुपया भर, इस सूरत में मुझ पर ज़कात किस क़दर वाजिब है? स्पष्ट करें और पुण्य पायें।

अल-जवाब ज़ाहिर है कि:

साल अव्वल में सोना ब-क़दर निसाब बल्कि ज़ायद हुआ और चाँदी निसाब तक भी न पहुँची तो उसी के सोने से क़ीमतन ज़म (सम्मिलित) करेंगे। उस वक़्त के निर्ख़ (दर) से ७ रुपये का ३ माशा ४ सुर्ख सोना हुआ, तो गोया उस साल १६ तोले, ७ माशा ४ सुर्ख सोना था जिसमें १५ तोले दो निसाब कामिल हैं, उन पर वाजिब ४ माशा ४ सुर्ख सोना और डेढ़ तोला निसाब खुम्स (पाँचवा हिस्सा) है जिस पर

वाजिब ३ ३/५ सुर्ख, कुल वाजिब ४ माशा ७ ३/५ सुर्ख हुआ, बाक़ी एक माशा ४ सुर्ख अफ़ू (क्षमा/छूट) रहा।

साल दोम में ज़कात के कर्ज़ को निकालने के बाद गोया १६ तोले २ माशा ७ २/५ सुर्ख सोना था, जिसमें दो निसाब कामिल का वाजिब ४ माशा ४ सुर्ख, बाक़ी एक तोला २ माशा ४ १/५ सुर्ख अफ़ू, दोनों सालों का कुल वाजिब ९ माशा ३ ३/५ सुर्ख हुआ।

साल सोम में सिर्फ ८ तोले ६ माशे सोना था, चाँदी जोड़ने के बाद ११ तोले ७ माशे ४ सुर्ख हुआ। उससे कुल वाजिबात घटाए गए तो १० तोले १० माशे २/५ सुर्ख सोना बचा जो एक निसाब कामिल है। इस पर वाजिब २ माशा २ सुर्ख है, और दो खुम्स निसाबों पर वाजिब ७ १/५ सुर्ख है, कुल वाजिब ३ माशा १ १/५ सुर्ख हुआ, बाक़ी १० तोले से जो ज़ायद था वह अफ़ू हुआ। कुल वाजिबात एक तोला २ ४/५ सुर्ख हैं।

पृष्ठ १३४ का ८३६

خیال کہ اس وقت سو روپیہ سے ڈھائی روپے حکم ماننے میں اٹھادیں گے تو آئندہ بال بچے کیا کھائیں گے، محض شیطانی وسوسہ ہے۔ زکوۃ سے اگر برکت بھی ملتی تو ڈھائی روپیہ سو میں سے کم ہو جاتا رزق نہ چھینتا، آئندہ سال اگر مال بڑھ گیا کہ سال بھر کا بال بچوں سب کا خرچ ہوا وہ روپیہ بدستور رکھے رہے جب تو اس وسوسہ کا جھوٹ ہونا علانیہ ظاہر ہو جائے گا اور اگر ان میں سے کھانے پینے کی حاجت پڑی یہاں تک کہ نصاب سے کم رہ گیا تو اب آپ سے کوئی زکوۃ نہ مانگے گا مگر بال بچوں کی فکر اگلے سال کے لیے کیا ہو گی ، وہ جو جمع تھے کھانے پینے میں اٹھ گئے اور اب زکوۃ بھی نہیں جس کے سر الزام دھرو، آگے کیونکر جیوگے، ایسی کمزوریاں شیطان سکھاتا ہے، عورت کا مہر جس کا مطالبہ بعد موت یا طلاق ہوتا ہے اور عمر بھر ادا کا خیال تک نہیں آتا اسے زکوۃ نہ دینے کا حیلہ نہ بنانا چاہئے۔ وھو تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۰: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ۴۴ برس ہوئے جو میں ۱۳ تولے ۶ ماشے سونے اور بھر چاندی کی مالک ہوئی ، چاندی نو دس برس تک بدستور رہی، گیارھویں سال خرچ ہو گئی، اور سونا وہ ۴۴ برس تک اسی قدر رہ کر تیسرے سال پانچ تولہ خرچ ہو گیا کہ سال تمام میں صرف ۸ تولے ۶ ماشے تھا پانچویں سال ڈھائی تولہ اور خرچ ہوا کہ سال تمام میں صرف ۶ تولہ تھا اور وہی بیالیس برس تک رہا، پھر وہ بھی اپنے دختر کو ہبہ کر دیا، جن برسوں تک وہ چاندی میرے پاس تھی بلکہ اس کے بعد بھی سونے کا بھاؤ ۱۸ تولہ رہا اور چاندی روپیہ کی روپیہ بھر ، اس صورت میں مجھ پر زکوۃ کس قدر واجب ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب ظاہر ہے کہ :

سال اول میں سونا بقدر نصاب بلکہ زائد ہوا اور چاندی نصاب تک بھی نہ پہنچی تو اسی کے سونے سے قیمتاً ضم کریں گے اس وقت کے نرخ سے ۷ کا ۳ ماشہ ۴ سرخ سونا ہوا تو گویا اس سال ۱۶ تولے ، ۷ ماشہ ۴ سرخ سونا تھا جس میں ۱۵ تولے دو نصاب کامل ہیں ان پر واجب ۴ ماشہ ۴ سرخ سونا اور ڈیڑھ تولہ نصاب خمس ہے جس پر واجب ۳-۵/۳ سرخ ، کل واجب ۴ ماشہ ۷-۵/۳ سرخ ، باقی ایک ماشہ ۴ سرخ عفو رہا۔

سال دوم بعد اخراج دین زکوۃ گویا ۱۶ تولے ۲ ماشہ ۷-۵/۲ سرخ سونا تھا جس میں دو نصاب کامل کا واجب ۴ ماشہ ۴ سرخ ، باقی ایک تولہ ۲ ماشہ ۴-۵/۱ سرخ عفو، مجموع واجبین ۹ ماشہ ۳-۵/۳ سرخ۔

سال سوم صرف ۸ تولے ۶ ماشے سونا تھا بعد ضم فضہ ۱۱ تولے ۷ ماشے ۴ سرخ ہوا اس سے مجموع واجبین منہا کیا تو ۱۰ تولے ۱۰ ماشے ۵/۲ سرخ سونا بچا کہ ایک نصاب کامل ہے واجب ۲ ماشہ ۲ سرخ ، اور دو نصاب خمس واجب ۷-۵/۱ سرخ ، کل واجب ۳ ماشہ ۱-۵/۱ سرخ ، باقی ۱۰ تولے سے جو زائد تھا عفو ہوا۔ کل واجبات ایک تولہ ۲-۵/۴ سرخ۔

صفحہ ۱۳۴ از ۸۳۶

Fourth year also had the same amount of gold, i.e., 1 tola 7 masha 4 surkh. After deducting the obligatory dues, 10 tola 6 masha 1/5 surkh remained. On this too, the same complete Nisab and 3 masha 1-1/5 surkh for two fifth Nisabs became obligatory. The extra ratti are exempt. Total obligatory dues are 1 tola 3 masha 6 surkh.

Fifth year there was only 6 tola of gold. After deducting the obligatory dues, 4 tola 8 masha 2 surkh remained. This is not Nisab, and silver was also not Nisab. Now if gold is converted into silver, its value becomes Mullah's silver, which contains two complete Nisabs. One fifth Nisab is 13/2-5/2 pai, total Mullah 2-5/2 pai, remaining 12/9-5/3 is exempt. And if silver is converted into gold, then adding 3 tola 1 masha 4 surkh gold, the total gold becomes 7 tola 9 masha 6 surkh. This contains only one complete Nisab, and the remaining 3 masha 6 surkh gold will be exempt. It is clear that the period is much more than that exemption. Therefore, in this case, the benefit for the poor lies in converting to silver. So, they will do that and consider 2 tola 10 masha 5-1/5 surkh silver as obligatory.

Sixth year gold is the same 4 tola 8 masha 2 surkh, but silver decreased due to the debt of the fifth year. The weight of silver is 46 tola 10 masha 4 surkh. After deducting the obligatory dues of the fifth year, 43 tola 11 masha 6-4/5 surkh silver remained. If everything is converted into silver, then adding 70 tola 3 masha 6 surkh silver for the price of gold, the total silver becomes 114 tola 3 masha 7-4/5 surkh. In this, only two complete Nisabs of 105 tola are there, the remaining 9 tola 3 masha 7-4/5 surkh will be exempt. And if everything is converted into gold, then by adding 2 tola 11 masha 1-13/25 surkh gold from the 43 tola 11 masha 6-4/5 surkh silver, the total gold becomes 7 tola 7 masha 3-13/25 surkh. In this, 7-1/2 tola is complete Nisab and only 1 masha 3-13/25 surkh remains exempt. Again, it is clear that this exemption is much less than the silver exemption. Therefore, this year gold will be preferred, and 2 masha 2 surkh gold will be considered obligatory. Total gold dues are 1 tola 6 masha, and silver 2 tola 10 masha 5-1/5 surkh.

Seventh year silver remained the same 43 tola 11 masha 6-4/5 surkh, but gold was only 4 tola 6 masha because the sixth year's dues were paid. By converting its 76 tola 6 masha into silver, total silver is 111 tola 5 masha 6-4/5 surkh. In this, after two complete Nisabs, 6 tola 5 masha 6-4/5 surkh is exempt. And by converting into gold, total gold is 7 tola 5 masha 1-13/25 surkh, which being less than Nisab, everything

becomes exempt. Therefore, this year everything will be treated as silver and the same 2 tola 10 masha 5-1/5 surkh silver will be considered obligatory. Now total gold dues are the same 1 tola 6 masha, and silver 5 tola 9 masha 2-2/5 surkh.

Eighth year gold was the same 4 tola 6 masha, and silver was 41 tola 1 masha 1-3/5 surkh, after the seventh year's dues...

फतवा-ए-रज़विया, खंड दस

चौथे वर्ष भी उतना ही सोना यानी 1 तोला 7 माशा 4 सुर्ख था। अनिवार्य देय राशि निकालने के बाद 10 तोला 6 माशा 1/5 सुर्ख बचा, जिस पर भी वही पूर्ण निसाब और दो पाँचवें निसाब का 3 माशा 1-1/5 सुर्ख अनिवार्य हुआ। अतिरिक्त रत्तियाँ माफ हैं। कुल अनिवार्य देय 1 तोला 3 माशा 6 सुर्ख है।

पाँचवें वर्ष केवल 6 तोला सोना था, जो अनिवार्य देय निकालने के बाद 4 तोला 8 माशा 2 सुर्ख रहा। यह निसाब नहीं है और उधर चाँदी भी निसाब नहीं है। अब यदि सोने को चाँदी में बदला जाए तो उसकी कीमत मुल्ला की चाँदी ठहरती है जिसमें दो पूर्ण निसाब मिलते हैं। एक पाँचवां निसाब 13/2-5/2 पाई है, कुल मुल्ला 2-5/2 पाई, शेष 12/9-5/3 माफ है। और यदि चाँदी को सोना बनाया जाए तो 3 तोला 1 माशा 4 सुर्ख सोना मिलकर कुल सोना 7 तोला 9 माशा 6 सुर्ख हो जाता है जिसमें केवल एक पूर्ण निसाब है, शेष 3 माशा 6 सुर्ख सोना माफ रहेगा। स्पष्ट है कि वह अवधि उस छूट से कहीं अधिक है, इसलिए इस स्थिति में गरीबों का लाभ चाँदी करने में ही है। अतः वही करेंगे और 2 तोला 10 माशा 5-1/5 सुर्ख चाँदी अनिवार्य मानेंगे।

छठे वर्ष सोना वही 4 तोला 8 माशा 2 सुर्ख है लेकिन चाँदी पाँचवें वर्ष के ऋण के कारण कम हो गई। चाँदी का वजन 46 तोला 10 माशा 4 सुर्ख है, जिससे पाँचवें वर्ष का अनिवार्य देय घटाकर 43 तोला 11 माशा 6-4/5 सुर्ख चाँदी बची। यदि कुल को चाँदी किया जाए तो सोने के मूल्य की 70 तोला 3 माशा 6 सुर्ख चाँदी मिलकर कुल चाँदी 114 तोला 3 माशा 7-4/5 सुर्ख होती है, जिसमें 105 तोला के केवल दो पूर्ण निसाब हैं, शेष 9 तोला 3 माशा 7-4/5 सुर्ख माफ रहेगी। और यदि कुल को सोना किया जाए तो 43 तोला 11 माशा 6-4/5 सुर्ख चाँदी का सोना 2 तोला 11 माशा 1-13/25 सुर्ख मिलाकर कुल सोना 7 तोला 7 माशा 3-13/25 सुर्ख हुआ, जिसमें 7-1/2 तोला पूर्ण निसाब है और केवल 1 माशा 3-13/25 सुर्ख माफ बचा। फिर स्पष्ट है कि यह छूट चाँदी की छूट से बहुत कम है, इसलिए इस वर्ष सोना ही करेंगे और 2 माशा 2 सुर्ख सोना अनिवार्य मानेंगे। कुल सोने के देय 1 तोला 6 माशा, और चाँदी 2 तोला 10 माशा 5-1/5 सुर्ख।

सातवें वर्ष चाँदी तो वही 43 तोला 11 माशा 6-4/5 सुर्ख रही लेकिन सोना केवल 4 तोला 6 माशा रहा क्योंकि छठे वर्ष का देय निकल गया। जिसका 76 तोला 6 माशा चाँदी करने में कुल चाँदी 111 तोला 5 माशा 6-4/5 सुर्ख हुई, जिसमें वही दो पूर्ण निसाब निकलकर 6 तोला 5 माशा 6-4/5 सुर्ख माफ हो गई। और सोना करने में कुल सोना 7 तोला 5 माशा 1-13/25 सुर्ख होता है जो निसाब से भी कम

होकर सब माफ हो जाता है। अतः इस वर्ष सब चाँदी ही करेंगे और वही 2 तोला 10 माशा 5-1/5 सुर्ख चाँदी अनिवार्य मानेंगे। अब कुल सोने के देय वही 1 तोला 6 माशा, और चाँदी 5 तोला 9 माशा 2-2/5 सुर्ख।

आठवें वर्ष सोना वही 4 तोला 6 माशा, और चाँदी 41 तोला 1 माशा 1-3/5 सुर्ख रही कि सातवें वर्ष का अनिवार्य...

पेज 135 का 836

سال چہارم بھی اتنا ہی سونا یعنی ۱ تولہ ۷ ماشے ۴ سرخ تھا بعد اخراج واجبات ۱۰ تولے ۶ ماشہ ۵/۱ سرخ بچا کہ اس پر بھی وہی نصاب کامل و دو ۲ نصاب خمس کا ۳ ماشہ ۱-۵/۱ سرخ واجب ہوا، زیادہ کی رتیاں عفو ہیں، کل واجبات ایک تولہ ۳ ماشہ ۶ سرخ۔

سال پنجم صرف ۶ تولے سونا تھا کہ بعد اخراج واجبات ۴ تولہ ۸ ماشہ ۲ سرخ رہا، یہ بھی نصاب نہیں اور اُدھر چاندی بھی نصاب نہیں، اب اگر سونے کو چاندی کرتے ہیں تو اس کی قیمت ہو کر ملہ کی چاندی ٹھہرتی ہے جس میں دو ۲ نصاب کامل ملے، ایک نصاب خمس لہ/۱۳-۲-۵/۲ پائی، کل ملہ /۲-۵/۲ پائی، باقی ۱۲/۹-۵/۳ عفو، اور اگر چاندی کو سونا کرتے تو ۳ تولے ۱ ماشہ ۴ سرخ سونا مل کر کل سونا ۷ تولہ ۹ ماشہ ۶ سرخ قرار پاتا ہے جس میں صرف ایک نصاب کامل، باقی ۳ ماشہ ۶ سرخ سونا معاف رہے گا۔ ظاہر ہے کہ عرصہ اُس عفو سے کہیں زیادہ ہے تو اس صورت میں نفع فقراء چاندی ہی کرنے میں ہے لہٰذا وہی کریں گے اور ۲ تولہ ۱۰ ماشہ ۵-۵/۱ سرخ چاندی واجب مانیں گے۔

سال ششم سونا وہی ۴ تولہ ۸ ماشہ ۲ سرخ ہے مگر چاندی بوجہ دین سال پنجم گھٹ گئی کی چاندی کا وزن ۴۶ تولے ۱۰ ماشہ ۴ سرخ ہے جس سے واجب سال پنجم گھٹا کر ۴۳ تولے ۱۱ ماشے ۶-۵/۴ سرخ چاندی بچی۔ کل کو چاندی کرتے ہیں تو سونے کے روپیہ کے ۷۰ تولے ۳ ماشہ ۶ سرخ چاندی مل کر کل چاندی ۱۱۴ تولے ۳ ماشہ ۷-۵/۴ سرخ ہوتی ہے جس میں ۱۰۵ تولے کے صرف دو ۲ نصاب کامل، باقی ۹ تولے ۳ ماشہ ۷-۵/۴ سرخ عفو رہے گی، اور کل کو سونا کرتے ہیں تو ۴۳ تولے ۱۱ ماشے ۶-۵/۴ سرخ چاندی کا سونا ۲ تولے ۱۱ ماشے ۱-۱۳/۲۵ سرخ ملا کر کل سونا ۷ تولے ۷ ماشے ۳-۱۳/۲۵ سرخ ہوا جس میں ۷-۲/۱ تولے نصاب کامل اور صرف ایک

ماشہ ۳-۱۳/۲۵ سرخ عفو بچا، پھر ظاہر ہے کہ یہ عفو عفوِ سیم سے بہت کم ہے لہٰذا اس سال سونا ہی کریں گے اور ۲ ماشہ ۲ سرخ طلا واجب مانیں گے، کل واجباتِ ذہب ایک تولہ ۶ ماشہ، فضہ ۲ تولے ۱۰ ماشہ ۵-۵/۱ سرخ۔

سال ہفتم چاندی تو وہی ۴۳ تولے ۱۱ ماشے ۶-۵/۴ سرخ رہی مگر سونا صرف ۴ تولے ۶ ماشہ رہا کہ واجب سال ششم نکل گیا جس کا ۷ ۶ تولے ۶ ماشے چاندی کرنے میں کل فضہ ۱۱۱ تولے ۵ ماشہ ۶-۵/۴ سرخ جس میں وہی دو ۲ نصاب کامل نکل کر ۶ تولے ۵ ماشہ ۶-۵/۴ سرخ عفو ہو گئی، اور سونا کرنے میں کل ذہب ۷ تولے ۵ ماشہ ۱-۱۳/۲۵ سرخ ہوتا ہے کہ نصاب سے بھی گھٹ کر سب عفو ہوا جاتا ہے، لہٰذا اس سال سب چاندی ہی کریں گے اور وہی ۲ تولے ۱۰ ماشہ ۵-۵/۱ سرخ سیم واجب مانیں گے، اب کل واجبات ذہب وہی ایک تولہ ۶ ماشہ، اور فضہ ۵ تولے ۹ ماشہ ۲-۵/۲ سرخ۔

سال ہشتم سونا وہی ۴ تولے ۶ ماشہ، اور چاندی ۴۱ تولے ۱ ماشہ ۱-۵/۳ سرخ رہی کہ واجب سال ہفتم

Volume 10 Fatawa Rizvia

...it was excluded, it is evident that now it can never be considered as gold because in the seventh year silver was 2 tola 10 masha 5-1/5 surkh more than that; it did not form the gold nisab when mixed with that gold. Now that it has decreased so much, how can it form a nisab? Therefore, for that gold, the same 7 tola 6 masha of silver was added, making the total silver 108 tola 7 masha 3-5/3 surkh; in this also, on 105 tola, the same 2 tola 10 masha 5-1/5 surkh of silver became obligatory, and the rest is exempt. The total gold obligations remained 1 tola 6 masha, silver 8 tola 7 masha 4-5/3 surkh. In the ninth year, the eighth year's amount decreased, and with the silver and gold mixture, the total silver remained 105 tola 8 masha 4-5/2 surkh, on which the fractions of 7 tolas were waived, and the mentioned obligatory amount became necessary. Total gold obligations remained as before, silver 11 tola 6 masha 4-5/4 surkh. In the tenth year, the ninth year's amount decreased, and the total silver remained 102 tola 9 masha 7-1/5 surkh. Now the second full nisab did not remain, but only one full nisab and four-fifths of a nisab remained, on which 2 tola 7 masha 4 surkh is obligatory. Total gold obligations remained as before, silver 12 tola 2 masha 5/4 surkh. In the eleventh year, silver was gone and the gold that remained was not reaching the nisab; therefore, after this year until today, nothing became obligatory. The total requirement of 1.5 tola gold and 14 tola 2 masha 5/4 surkh silver became necessary. And Allah, the Exalted, knows best.

Issue 21: From Mufti Ganj, Patna district, Post Office Aligbar Sarai, sent by Muhammad Nawab Sahab Qadri and other residents of Mufti Ganj, 7 Ramadan Sharif 1318 AH. Zaid's wife Hinda is the owner of wealth reaching the nisab (minimum threshold for Zakat), and the wealth is in the form of jewelry which is Hinda's personal property, meaning she brought it from her parental home. Zaid instructs her to pay Zakat, but she does not listen. Please state whether the husband is accountable for her sin or not? And since his income is not more than basic subsistence level, can he be legally (by Sharia) responsible for paying her Zakat or not? To what extent is it necessary to scold and instruct that woman? And if Zaid had some jewelry made for Hinda with his own money, what is the ruling on that jewelry?

Answer: Jewelry that is the property of the wife, its Zakat is not at all the responsibility of the husband, even if he possesses vast wealth. He bears no sin for her failure to pay. "And no bearer of burdens will bear the burden of another"[1] (i.e., no soul shall bear the burden of another soul. - T)

[1] Quran 6/164 Page 136 of 836

जिल्द दहम फ़तावा रज़विया

...वह बाहर हो गया, ज़ाहिर है कि अब कभी सोना नहीं कर सकते क्योंकि जब सातवें साल चांदी २ तोला १० माशा ५-१/५ सुर्ख़ उससे अधिक थी; वह इस सोने में मिल कर तो निसाब-ए-ज़हब (सोने का निसाब) नहीं बनाती थी, अब इतनी घटकर वह निसाब कैसे बना सकती है? अतः उस सोने के लिए वही ७ तोला ६ माशा चांदी मिलाकर कुल चांदी १०८ तोला ७ माशा ३-५/३ सुर्ख़ मानी गई; इसमें भी १०५ तोला पर वही २ तोला १० माशा ५-१/५ सुर्ख़ चांदी वाजिब हुई, बाकी माफ़। सोने की कुल वाजिब मात्रा १ तोला ६ माशा, चांदी ८ तोला ७ माशा ४-५/३ सुर्ख़ रही। नौवें साल में आठवें साल की मात्रा कम होकर चांदी और सोने के मिश्रण के साथ कुल चांदी १०५ तोला ८ माशा ४-०/२ सुर्ख़ बची, जिस पर ७ तोलों की कसर माफ़ होकर उपरोक्त वाजिब अनिवार्य हो गया। सोने की कुल वाजिब मात्रा पूर्ववत् रही, चांदी ११ तोला ६ माशा ४-०/४ सुर्ख़। दसवें साल में नौवें साल की मात्रा घटकर कुल चांदी १०२ तोला ९ माशा ७-१/५ सुर्ख़ बची। अब दूसरा पूर्ण निसाब नहीं रहा, बल्कि केवल एक पूर्ण निसाब और निसाब का चार-पाँचवां हिस्सा (ख़ुमुस) बचा, जिस पर २ तोला ७ माशा ४ सुर्ख़ वाजिब है। सोने की कुल वाजिब मात्रा पूर्ववत् रही, चांदी १२ तोला २ माशा ०/४ सुर्ख़। ग्यारहवें साल में चांदी नहीं रही और जो सोना बचा वह निसाब के योग्य नहीं था, इसलिए इस साल के बाद आज तक कुछ वाजिब नहीं हुआ। कुल मांग डेढ़ तोला सोना, १४ तोला २ माशा ५/४ सुर्ख़ चांदी अनिवार्य हुई। वल्लाहु सुब्हानहु व तआला आलम।

मसाला २१: मुफ्ती गंज जिला पटना, डाकखाना अलीगबर सराय से मोहम्मद नवाब साहब कादरी और मुफ्ती गंज के अन्य निवासियों द्वारा प्रेषित, ७ रमज़ान शरीफ १३१८ हिजरी। ज़ैद की पत्नी हिंदा निसाब की मालिक है और उसके पास गहनों के रूप में धन है जो विशेष रूप से हिंदा की मिल्कियत है, यानी वह अपने मायके से लाई है। ज़ैद उसे ज़कात अदा करने का निर्देश देता है लेकिन वह उसकी बात नहीं मानती। तो कृपया बताएं कि क्या पति पर उसकी अवज्ञा के लिए कोई जवाबदेही है या नहीं? और इस स्थिति में कि पति की आय गुज़ारे से अधिक नहीं है, क्या वह शरई तौर पर ज़कात अदा करने के लिए उत्तरदायी हो सकता है या नहीं? और उस महिला को डांटने और समझाने की किस हद तक ज़रूरत है? और यदि ज़ैद ने अपने पैसों से कुछ गहने बनवाकर हिंदा को दिए हों, तो उन गहनों पर क्या आदेश है?

जवाब: गहने जो पत्नी की संपत्ति हैं, उनकी ज़कात अदा करना पति की ज़िम्मेदारी बिल्कुल नहीं है, भले ही उसके पास बहुत अधिक संपत्ति हो। उसके न देने का पति पर कोई गुनाह नहीं होगा। "और

कोई बोझ उठाने वाली जान दूसरे का बोझ नहीं उठाएगी"[1] (यानी कोई जान दूसरे का बोझ नहीं उठाएगी। - टी)

[1] क़ुरआन ६/१६४ पृष्ठ १३६ / ८३६

خارج ہو گیا، ظاہر ہے کہ اب کبھی سونا نہیں کر سکتے کہ جب سال ہفتم چاندی ۲ تولے ۱۰ ماشے ۵-۱/۵ سرخ اس سے زائد تھی وہ اس سونے میں مل کر تو نصابِ ذہب نہ بناتی تھی اب اتنی گھٹ کر کس طرح نصاب بنا سکے گی، لہٰذا اس سونے کے وہی ۷ تولے ۶ ماشے چاندی ملا کر کل چاندی ۱۰۸ تولے ۷ ماشے ۵/۳-۳ سرخ مانی، اس میں بھی ۱۰۵ تولے پر وہی ۲ تولے ۱۰ ماشے ۵- ۱/۵ سرخ سیم واجب ہوئی، باقی معاف، وہی کل واجباتِ ذہب ایک تولہ ۶ ماشے، فضہ ۸ تولے ۷ ماشے ۵/۳-۴ سرخ۔ سال نہم واجب سال ہشتم گھٹ کر مع سیم ذہب کُل چاندی ۱۰۵ تولے ۸ ماشے ۵/۲-۴ سرخ بچی جس پر تولوں کے ۷ تولے کی کسریں عفو ہو کر واجب مذکور لازم آیا، کُل واجباتِ ذہب بدستورِ فضہ ۱۱ تولے ۶ ماشے ۵/۴-۴ سرخ۔ سال دہم واجب سال نہم گھٹ کر کل چاندی ۱۰۲ تولے ۹ ماشے ۱/۵-۷ سرخ بچی، اب دوسرا نصابِ کامل نہ رہا بلکہ صرف ایک نصابِ کامل اور چار نصابِ خمس ہیں جب پر واجب ۲ تولے ۷ ماشے ۴ سرخ، کل واجباتِ ذہب بدستور۔ فضہ ۱۲ تولے ۲ ماشے ۵/۴ سرخ۔ سال یاز دہم میں چاندی نہ رہی اور سونا کہ باقی رہا قابلِ نصاب نہیں لہذا اس سال کے بعد آج تک کچھ واجب نہ ہوا اور کل مطالبہ سونا ڈیڑھ تولہ، چاندی ۱۴ تولے ۲ ماشے ۵/۴ سرخ لازم آیا۔ واللہ سبحانہ و تعالٰی اعلم۔ مسئلہ ۲۱: از مفتی گنج ضلع پٹنہ ڈاک خانہ الیگبر سرائے مرسلہ محمد نواب صاحب قادری و دیگر سکان مفتی گنج ۷ رمضان شریف ۱۳۱۸ھ زید کی بیوی ہندہ صاحبِ نصاب ہے اور مال از قسم زیورات ہے جو خاص ہندہ کی ملکیت ہے یعنی وہ اپنے میکے سے لائی ہے زید اس کو ہدایت ادائے زکوۃ کی کرتا ہے مگر اس کی سمع قبول میں نہیں آتی ہے تو یہ فرمائیے کہ شوہر سے اُس کے عصیاں پر مواخذہ ہے یا نہیں اور اس کی طرف سے درانحالیکہ اس کی آمدنی وجہ کفاف سے بیش نہیں، ادائے زکوۃ

کا مکلف شرعاً ہو سکتا ہے یا نہیں اور اُس عورت پر زجر اور فہمائش کی ضرورت ہو تو کس حد تک، اور اگر زید نے اپنے روپیہ سے کچھ زیور بنوا کر ہندہ کو دیا ہو تو اس زیور پر کیا حکم ہے؟ الجواب: زیور کہ ملک زن ہے اس کی زکوۃ ذمہ شوہر ہر گز نہیں اگر چہ اموالِ کثیرہ رکھتا ہو، نہ اس کے دینے کا اس پر کچھ وبال وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِّزْرَ اُخْرٰی[1] (کوئی بوجھ اٹھانے والی جان دوسرے کا بوجھ نہ اٹھائیگی۔ ت)

[1] القرآن ۱۶۴/۶

Fatawa Razawiya, Volume 2

It is obligatory to provide understanding, guidance, and appropriate warning and emphasis (which varies according to the differing circumstances of men and women). "Save yourselves and your families from the Fire" [1]. This same ruling applies to the jewelry given to a woman and made her property. If it was not made her property but kept as one's own and only given to her to wear, then its Zakat is undoubtedly the responsibility of the man, provided that it, either alone or combined with other wealth, reaches the amount of Nisab (minimum taxable limit) beyond basic needs. And Allah Almighty knows best.

Problem 22: Submitted by Abdul Saboor Sahib, Merchant, 6 Dhu al-Hijjah 1321 AH. A person invested one thousand rupees in some business. After the completion of a year, he had goods worth two hundred (200) rupees, five hundred rupees remained in debts (owed to him), and four hundred rupees in cash including a profit of one hundred. Should Zakat be calculated on the total of eleven hundred rupees or how much?

Answer: Upon the completion of the year, Zakat is obligatory on the total eleven hundred. However, the Zakat for the four hundred cash and two hundred worth of goods is currently due for payment. As for the five hundred that is spread out in debts, as and when an amount equal to eleven rupees, three annas, and 2-5/2 pies is received from it, he should continue to pay its fortieth part. If he pays the Zakat for the entire amount right now, he will be saved from repeated calculations in the future. And Allah Almighty knows best.

Problem 23: From the city of Masulah, Munshi Shaukat Ali Sahib, Octroi Clerk, 18 Dhu al-Hijjah 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: whether the calculation of the price should be based on the rate at the time the jewelry was made, or the market rate at the time of paying Zakat? Explain and you shall be rewarded.

Answer: When gold is given for gold and silver for silver in Zakat, there is no need for a rate; the fortieth part of the weight will be given. Yes, if one wishes to give silver instead of gold or gold instead of silver, then the rate will be required. Neither the rate at the time of manufacture nor the rate at the time of payment is authoritative. Whether the payment is before or after the completion of the year, the Hijri month and date on which he became the owner of the Nisab will mark the completion of the

year for Zakat upon its recurrence; the rate at that time shall be taken. And Allah Almighty knows best.

[1] Al-Quran 66/6

फतावा रज़विया, जिल्द दोम

इस पर तफ़हीम व हिदायत और बक़दरे मुनासिब तंबीह व ताकीद (जिसकी हालत इख़्तिलाफ़े हालात मर्द वज़न से मुख़्तलिफ़ होती है) लाज़िम है। "अपने आप को और अपने अहल (घर वालों) को आग से बचाओ"१। और वह ज़ेवर जो औरत को दिया और उसकी मिल्क (स्वामित्व) कर दिया उस पर भी यही हुक्म है, और अगर मिल्क न किया बल्कि अपनी ही मिल्क में रखा और औरत को सिर्फ पहनने को दिया तो बेशक उसकी ज़कात मर्द के ज़िम्मे है जबकि खुद दिया या दूसरे माल से मिल कर क़दरे निसाब फ़ाज़िल अनुल हाजतुल असलियत (मूल ज़रूरतों से अधिक निसाब की मात्रा) हो। वल्लाहु तआला आलम।

मसला २२: मुरसिला अब्दुल सबूर साहब सौदागर ६ ज़िलहिज्जा १३२१ हिजरी। एक शख़्स ने एक हज़ार रुपये किसी रोज़गार में लगाए, बाद साल ख़त्म होने के उसके पास माल २०० रुपये का रहा और क़र्ज़ में पाँच सौ रुपया रहा और नक़द ४०० रुपया मय मुनाफ़ा १०० रुपया रहा, आया कुल ११०० रुपये की ज़कात निकाली जाए या किस क़दर की?

अल-जवाब: साल तमाम होने पर कुल ११०० की ज़कात वाजिब है मगर ४०० नक़द और २०० का माल, इनकी ज़कात फ़िलहाल वाज़िबुल अदा है और ५०० जो क़र्ज़ में फैला हुआ है जब उसमें से बक़दरे ११ रुपये ३ आने २-५/२ पाई के वसूल होता जाए उसका चालीसवाँ हिस्सा अदा करता रहे और अगर फ़िलहाल सबकी ज़कात दे दे तो आइंदा के बार बार मुहासबे से नजात है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला २३: अज़ शहर मसूला मुंशी शौकत अली साहब मुहर्रिर चुंगी १८ ज़िलहिज्जा १३३९ हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलम-ए-दीन इस मसले में कि हिसाब क़ीमत का जिस वक़्त ज़ेवर बनवाया था वह रहेगा या निर्ख (दर) बाज़ार जो बर वक़्त देने ज़कात के है? बैनु तूजरु।

अल-जवाब: सोने के एवज़ सोना, चाँदी के एवज़ चाँदी की ज़कात में दी जाए तब तो निर्ख की कोई हाजत ही नहीं, वज़न का चालीसवाँ हिस्सा दिया जाएगा, हाँ अगर सोने के बदले चाँदी या चाँदी के बदले सोना देना चाहें तो निर्ख की ज़रूरत होगी, निर्ख न बनवाने के वक़्त का मोतबर हो न वक़्त अदा का, अगर अदा साल तमाम के पहले या बाद हो जिस वक़्त यह मालिक-ए-निसाब हुआ था वह माहे अरबी व तारीख़ वक़्त जब उऊद (वापस) करेंगे उस पर ज़कात का साल तमाम होगा उस वक़्त निर्ख लिया जाएगा। वल्लाहु तआला आलम।

१ अल-क़ुरआन ६/६६

पृष्ठ १३७/८३६

اس پر تفہیم و ہدایت اور بقدر مناسب تنبیہ و تاکید (جس کی حالت اختلاف حالات مرد و زن سے مختلف ہوتی ہے) لازم ہے قُوا أَنفُسَكُمْ وَأَهْلِيكُمْ نَارًا١ (اپنے آپ اور اپنے اہل کو آگ سے بچاؤ۔ ت) اور وہ زیور کہ عورت کو دیا اور اس کی ملک کر دیا اس پر بھی یہی حکم ہے، اور اگر ملک نہ کیا بلکہ اپنی ہی ملک میں رکھا اور عورت کو صرف پہننے کو دیا تو بیشک اس کی زکوۃ مرد کے ذمہ ہے جبکہ خود دیا یا دوسرے مال سے مل کر قدر نصاب فاضل عن الحاجۃ الاصلیہ ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۲: مرسلہ عبدالصبور صاحب سوداگر ۶ ذی الحجہ ۱۳۲۱ھ ایک شخص نے ایک ہزار روپے کسی روزگار میں لگائے، بعد سال ختم ہونے کے اس کے پاس مال دوسو ۲۰۰ روپے کا رہا اور قرض میں پانچ سو روپیہ رہا اور نقد چار سو روپیہ مع منافع ایک سو رہا، آیا کل گیارہ سو روپیہ کی زکوۃ نکالی جائے یا کس قدر کی؟

الجواب: سال تمام پر کل گیارہ سو کی زکوۃ واجب ہے مگر چار سو نقد اور دوسو کا مال، ان کی زکوۃ فی الحال واجب الادا ہے اور پانچ سو کہ قرض میں پھیلا ہوا ہے جب اس میں سے بقدر گیارہ روپے تین آنے ۲-۵/۲ پائی کے وصول ہوتا جائے اُس کا چالیسواں حصہ ادا کرتا رہے اور اگر فی الحال سب کی زکوۃ دے دے تو آئندہ کے بار بار محاسبہ سے نجات ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۳: از شہر مسولہ منشی شوکت علی صاحب محرر چونگی ۱۸ ذی الحجہ ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلے میں کہ حساب قیمت کا جس وقت زیور بنوایا تھا وہ رہے گا یا نرخ بازار جو بر وقت دینے زکوۃ کے ہے۔ بینوا توجروا۔

الجواب: سونے کے عوض سونا، چاندی کے عوض چاندی کی زکوۃ میں دی جائے جب تو نرخ کی کوئی حاجت ہی نہیں، وزن کا چالیسواں حصہ دیا جائے گا، ہاں اگر سونے کے بدلے چاندی یا چاندی کے بدلے سونا دینا چاہیں تو نرخ کی ضرورت ہوگی، نرخ نہ بنوانے کے وقت کا معتبر ہو نہ وقت ادا کا، اگر ادا سال تمام کے پہلے یا بعد ہو جس وقت یہ مالک نصاب ہوا تھا وہ ماہ عربی و تاریخ وقت جب عود کریں گے اس پر زکوۃ کا سال تمام ہوگا اس وقت نرخ لیا جائے گا۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

۱ القرآن ۶/۶۶

جلد دوم (Volume Two) فتاویٰ رضویہ (Fatawa Razawiyya)

Question 24: What do the scholars of religion say regarding this issue: Zaid has approximately 52 tolas, [some] mashas of gold jewelry, and besides this, approximately 15 tolas of silver jewelry and 2 tolas of gold jewelry are pledged as collateral for an amount of rupees. Also, cash is available, and in trade goods remaining from sales, there is approximately 12 rupees and 12 annas. In what manner should Zakat be paid on this?

Answer: "So much jewelry is pledged" can have two meanings. One is that this much jewelry belonging to another person is pledged with him. The second is that he has pledged this much with another person. In the first case, that jewelry does not belong to him; Zakat is not due on it for him. Instead, Zakat will be due on those 56 [rupees] which he has loaned to that pledger. According to this estimation, his Zakat-eligible assets are: 2 mashas of gold, 52 [tolas] of silver and rupees, and 12-12 worth of trade goods. Since 2 mashas of gold do not reach the threshold (Nisab), it will also be included in silver. If it is 1 tola per 4 rupees, then four rupees will be added for it. And if there were 52 tolas and 6 mashas weight, total assets became 52-12-4 [units] of silver, which contains four complete Nisabs of silver. And four-fifths of a Nisab... [complex calculation in annas and pies follows]. Zakat due on it is 6 tolas, 3 mashas, 4-5/4 ratti of silver; the rest is exempt. In the second case, that jewelry belongs to him, but Zakat is not mandatory on it as long as it remains in the possession of the pledgee (mortgagee). On this estimation, his current Zakat-eligible assets are: 2 mashas of gold, 52 tolas and six mashas of silver, plus 12 [rupees] cash and trade goods. After deducting debt, if 100 rupees and 12 annas remain, and if the gold is worth four rupees, total becomes 12 [units] more, which contains two complete Nisabs... [more calculations]. Zakat due on it is 3 tolas, 8 mashas, 5/4 ratti of silver; the rest is exempt. And Allah Almighty knows best.

Question 25: What do the scholars of religion say regarding the threshold (Nisab) for silver for the payment of Zakat, in terms of rupees or weight? And similarly, what is it for gold? An itinerant scholar-preacher has been in Ranikhet for a few days. He stated in a sermon that Zakat is not obligatory on five less than two hundred (195); only when it reaches two hundred rupees and a year passes upon them, Zakat becomes obligatory. And the currency is the current one of the British Government, which weighs eleven and a quarter (11.25) mashas. Explain and you shall be rewarded.

Answer: O Allah, grant guidance towards truth and correctness. (Amen). The Nisab for silver is fifty-two and a half (52.5) tolas, which equals 56 rupees in current coinage. And the Nisab for gold is seven and a half (7.5) tolas.

जिल्द दोम (खण्ड दो) फ़तावा रज़विया

मसला 24: इस मसले में दीन के उलेमा क्या फ़रमाते हैं: ज़ैद के पास तक़रीबन 52 तोले, (कुछ) माशे सोने के ज़ेवर मौजूद हैं और इसके अलावा तक़रीबन 15 तोले चांदी के ज़ेवर और 2 तोले सोने के ज़ेवर रुपयों के बदले रहन (गिरवी) रखे हुए हैं। नक़द रुपये भी मौजूद हैं और माल-ए-तिजारत (व्यापार का माल) जो बिक्री से बच गया है वह तक़रीबन 12-12 का है। तो इसमें ज़कात किस तरह अदा की जाएगी?

जवाब: "इतना ज़ेवर रहन है" के दो अर्थ हो सकते हैं। एक यह कि इतना ज़ेवर किसी दूसरे व्यक्ति का उसके पास रहन है। दूसरा यह कि उसने इतना ज़ेवर किसी दूसरे के पास रहन रखा है। पहली स्थिति में वह ज़ेवर उसका नहीं है, उस पर ज़कात वाजिब नहीं होगी। बल्कि उन छप्पन (56) रुपयों पर ज़कात होगी जो उसने उस रहन रखने वाले को कर्ज़ दिए हैं। इस हिसाब से उसके पास माल-ए-ज़कात यह हुआ: 2 माशे सोना, 52 [तोले] चांदी और रुपये और 12-12 का माल-ए-तिजारत। 2 माशे सोना निसाब (न्यूनतम सीमा) नहीं है, इसे भी चांदी में शामिल किया जाएगा। अगर एक तोला चार रुपये का हो तो चार रुपये इसके पड़ेंगे। और 52 तोले 6 माशे वज़न के हुए तो कुल माल 52-12-4 भर चांदी हुआ, जिसमें चांदी के चार मुकम्मल निसाब हैं। और निसाब का चार-पांचवां हिस्सा... [आना और पाई की गणनाएँ]। उस पर वाजिब ज़कात 6 तोले, 3 माशे, 4-5/4 रत्ती चांदी हुई, बाकी माफ़ है। दूसरी स्थिति में वह ज़ेवर उसी का है मगर उस पर ज़कात तब तक वाजिब नहीं जब तक वह मुर्तहिन (जिसके पास गिरवी है) के क़ब्ज़े में रहे। इस हिसाब से फिलहाल उसके पास माल-ए-ज़कात यह हुआ: 2 माशे सोना, 52 तोले और छह माशे चांदी, और मिले 12 नक़द व माल-ए-तिजारत। कर्ज़ निकालने के बाद अगर एक सौ रुपये बारह आने बचे, सोना चार रुपये का हो तो कुल मिले 12 हुए जिसमें दो मुकम्मल निसाब हैं... उस पर वाजिब ज़कात 3 तोले, 8 माशे, 5/4 रत्ती चांदी हुई, बाकी माफ़ है। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह बेहतर जानता है)।

मसला 25: इस मसले में दीन के उलेमा क्या फ़रमाते हैं कि ज़कात की अदायगी के लिए चांदी का निसाब रुपयों में या वज़न में कितना है? और इसी तरह सोने का कितना है? रानीखेत में कुछ दिनों से एक आलिम वाइज़ (प्रवचनकर्ता) आए हुए हैं, उन्होंने वज़ में फ़रमाया कि पाँच कम दो सौ (195) पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं, जब दो सौ रुपये हो जाएँ और उन पर एक साल गुज़र जाए तब ज़कात देना फ़र्ज़ होगी। और रुपया मौजूदा ब्रिटिश हुकूमत का है जिसका वज़न सवा ग्यारह (11.25) माशे है। बयान फरमाएं और सवाब पाएं।

जवाब: ऐ अल्लाह! हक़ और दुरुस्ती की हिदायत अता फ़रमा। (तर्जुमा)। चांदी का निसाब साढ़े बावन (52.5) तोले है, जो मौजूदा सिक्के के हिसाब से छप्पन (56) रुपये हुआ। और सोने का निसाब साढ़े सात (7.5) तोले है।

مسئلہ ۲۴: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں زید کے پاس تخمیناً ۵۲ تولے حبہ ماشہ زیورِ طلائی موجود ہے اور علاوہ اس کے تخمیناً ۱۵ تولے زیورِ نقرئی و ۲ تولے زیورِ طلائی بالعوض مبلغ روپے کی رہن ہے اور روپے نقد بھی موجود ہیں اور مالِ تجارت میں کہ جو فروخت سے باقی رہ گیا ہے وہ تخمیناً ۱۲-۱۲ کا ہے تو اس میں زکوٰۃ کس طور سے ادا کی جائے گی۔

الجواب: اتنا زیور رہن ہے ، اس کے دو معنیٰ ہو سکتے ہیں، ایک یہ کہ اتنا زیور دوسرے شخص کا اس کے پاس پر رہن ہے ، دوسرے یہ کہ اتنا اس کو دوسرے کے پاس پر رہن ہے، پہلی صورت میں وہ زیور اس کا نہیں اس کی زکوٰۃ اس پر نہیں ہو سکتی، بلکہ اس چھپن ۵۶ پر زکوٰۃ ہو گی جو اس نے اس راہن کو قرض دے ہیں اور اس تقدیر ہر اس کے پاس مالِ زکوٰۃ یہ ہوا دو ماشے سونا ۵۲ چاندی اور روپیہ اور ۱۲-۱۲ کا مالِ تجارت ۲ ماشے سونا ہونے کا نصاب نہیں اسے بھی چاندی میں شامل کیا جائے گا، اگر لِلع تولے کا ہے تو چار روپے اس کے پڑیں گے اور ۵۲ تولے ۶ ماشے وزن کے ہوئے تو کل مال ۵۲-۱۲-۴ بھر چاندی ہوا، جس میں چار نصاب کامل مالغ ہیں اور چار خمس نصاب لِلع للع ۱۲ ۹ - ۵/۳ پائی اس پر واجب ۶ تولے ۳ ماشے ۴- ۵/۴ رتی چاندی ہوئی باقی عفو ہے، دوسری صورت میں وہ زیور اُسی کا ہے مگر اس کی زکوٰۃ اس پر واجب نہیں جب تک وہ قبضہ مرتہن میں رہے، اس تقدیر پر فی الحال اس کے پاس مالِ زکوٰۃ یہ ہوا دو ۲ ماشے سونا ۵۲ تولے اور چھ ۶ ماشہ چاندی اور ملے ۱۲ نقد و مالِ تجارت جس میں سے دین کے نکل کر ایک سو روپیہ بارہ ۱۲ آنے رہے، سونا چار روپے کا ہو تو کُل ملے ۱۲ ہوئے جس میں دو نصاب کامل مِا ہیں اور چار خمس نصاب لِلع للع ۵/۳ پائی، اُس پر واجب ۳ تولے ۸ ماشے ۵/۴ رتی چاندی ہوئی باقی عفو ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۵: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ادائے زکوٰۃ کے واسطے چاندی کا نصاب کس قدر روپیہ یا کس قدر وزن ہے اور ایسے ہی سونے کا کس قدر ہے؟ رانی کھیت میں چند دنوں سے ایک عالم واعظ وارد ہیں، انہوں نے وعظ میں فرمایا کہ پانچ کم دو سو پر زکوٰۃ فرض نہیں، جس وقت دو سو روپے ہو جائیں اور ایک سال اُن پر گزر جائے اس وقت زکوٰۃ دینا فرض ہو گی اور روپیہ رائج الوقت گورنمنٹ انگلشیہ کا، جس کا وزن سوا گیارہ ماشے ہے۔ بینوا توجروا

الجواب: اللھم ھدایۃ الحق والصواب (اے اللہ حق اور صواب کی ہدایت عطا فرمات) چاندی کا نصاب ساڑھے باون تولے ہے جس کے سکہ رائج سے چھپن ۵۶ روپے ہوئے، اور سونے کا نصاب ساڑھے سات تولے۔

Fatawa Razawiya Volume 10

In Durr al-Mukhtar, it is stated:

Nisab al-dhahab 'ishruna mithqalan wa al-fiddatu ma'ata dirhamin kullu 'ashrati darahima waznu sab'ati mithaqila.[1]	**The Nisab for gold is twenty (20) Mithqals and for silver, it is two hundred (200) Dirhams, such that every ten (10) Dirhams weigh seven (7) Mithqals. (T)**

A Mithqal is four and a half Mashas, so a Dirham, being 7/10th of it, is three Mashas, one Ratti, and one-fifth of a Ratti. In Kashf al-Ghita, it is stated:

Mithqal bist qirat wa qirat yak habba wa chahar khums habba wa habba ke an ra ba Farsi surkh guyand hashtum hissa-e masha ast pas mithqal chahar o neem masha bashad.[2]	**There are twenty Qirats in a Mithqal, and a Qirat is one Ratti plus one-fourth of the fifth of a Ratti. Ratti, which is called 'Surkh' in Persian, is the eighth part of a Masha; thus, one Mithqal will be four and a half Mashas. (T)**

In Jawahir al-Akhlati, it is stated:

Ad-Dirham ash-Shar'i khamsun wa 'ishruna habbatan wa khumsu habbatin.[3]	**That is, the Shari'i Dirham is twenty-five Rattis and one-fifth of a Ratti.**

Now, by calculation, it can be clear that two hundred Dirhams, the Nisab of silver, equals 52 Tolahs and 6 Mashas, and twenty Mithqals, the Nisab of gold, equals 7 Tolahs and 6 Mashas. And the rupee here, which is 11 Mashas, is equal to two hundred Dirhams in rupees. This is the weight specified in the fundamental texts (Mutun) of the Madhhab and general commentaries (Shuruh) and Fatwas. It is stated in Radd al-Muhtar:

'Alayhil jam'ul ghafeeru wal jamhurul katheru wa itbaqu kutubil mutaqaddimeena wal muta'akhireen.[4]	**A vast multitude and the majority follow this, and there is a consensus on it in the books of both the early and later scholars. (T)**

Therefore, acting contrary to this is not permissible. In 'Uqud al-Durriyah and many other books, it is stated: Al-'amalu bima 'alayhil akthar[5] (Action shall be based on what the majority follows).

---

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Mujtabai Press, Delhi, 1/143.

2. Kashf al-Ghita, Chapter on rules of Du'a and Sadaqah, Ahmadi Press, Delhi, p. 68.
3. Jawahir al-Akhlati, Kitab al-Zakat, unpublished manuscript, p. 44.
4. Radd al-Muhtar, Kitab al-Zakat, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/32.
5. Radd al-Muhtar, Kitab al-Zakat, Mustafa al-Babi, Egypt, 1/166.

फ़तावा रज़विया जिल्द १०

दुर्रे मुख़्तार में है:

निसब अल-ज़हब 'इशरूना मिसक़ालन व अल-फ़िद्दतु माअता दिरहमिन कुल्लू 'अशरति दराहिमा वज़नु सबअति मिसक़ीला।[1]	**सोने का निसाब बीस (२०) मिसक़ाल और चांदी का दो सौ दिरहम है, जिनसे हर दस (१०) दिरहम का वज़न सात मिसक़ाल हो सके। (त)**

मिसक़ाल साढ़े चार माशे है, तो दिरहम जो उसका ७/१० है, तीन माशे एक रत्ती और रत्ती का पाँचवाँ हिस्सा हुआ। कश्फ़ अल-ग़िता में है:

मिसक़ाल बीस्त क़िरात व क़िरात यक हब्बा व चहार ख़ुम्स हब्बा व हब्बा के आं रा ब फारसी सुर्ख़ गोयंद हश्तुम हिसा-ए माशा अस्त पस मिसक़ाल चहार ओ नीम माशा बाशद।[2]	**मिसक़ाल में बीस क़िरात, और क़िरात एक रत्ती और रत्ती के पांचवें हिस्से की चौथाई होता है। रत्ती जिसे फ़ारसी में सुर्ख़ कहा जाता है, माशे का आठवां हिस्सा होता है, तो एक मिसक़ाल साढ़े चार माशे का होगा। (त)**

जवाहर अल-अख़लाती में है:

अद-दिरहम अश-शरई ख़म्सुन व 'इशरूना हब्बतन व ख़ुम्सु हब्बतिन।[3]	**यानी शरई दिरहम पच्चीस रत्ती और रत्ती का पांचवां हिस्सा है।**

अब हिसाब से स्पष्ट हो सकता है कि दो सौ दिरहम, चांदी के निसाब के ५२ तोले ६ माशे और बीस मिसक़ाल, सोने के निसाब के ७ तोले ६ माशे हुए। और यहाँ का रुपया जो ११ माशे का है, उससे रुपये दो सौ दिरहम के बराबर हुए। यही वज़न मज़हब के बुनियादी ग्रंथों (मुतून) और आम शरहों व फ़तावा में निर्धारित है। रद अल-मुह्तार में फ़रमाया:

'अलैहिल जम'उल ग़फ़ीरु वल जमहूरुल कसीरु व इतबाक़ु कुतुबिल मुतक़द्दिमीन वल मुतअख़्ख़िरीन।[4]	**एक बहुत बड़ी भीड़ और बहुमत इसी पर हैं, और प्रारंभिक और बाद के विद्वानों की किताबों का इसी पर इत्तेफ़ाक़ है। (त)**

तो इसके खिलाफ अमल करना जायज़ नहीं। उक़ूद अल-दुर्रिया आदि अनेक किताबों में है: अल-अमलु बिमा 'अलैहिल अक्सर[5] (अमल उसी पर होगा जिस पर अक्सरियत है)।

1. दुर्रे मुख़्तार, किताब अल-ज़कात, मतबआ मुज्तबाई दिल्ली, १/१४३।
2. कश्फ़ अल-ग़िता, फ़स्ल दर अहकाम-ए दुआ व सदक़ा, मतबआ अहमदी दिल्ली, पृ. ६८।
3. जवाहर अल-अख़लाती, किताब अल-ज़कात, अप्रकाशित हस्तलिखित प्रति, पृ. ४४।
4. रद अल-मुह्तार, किताब अल-ज़कात, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, २/३२।
5. रद अल-मुह्तार, किताब अल-ज़कात, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, १/१६६।

فتاوی رضویہ جلد دہم

در مختار میں ہے:

نصاب الذہب عشرون مثقالا والفضۃ مأتا درہم کل عشرۃ دراہم وزن سبعۃ مثاقیل۔ ۱

سونے کا نصاب بیس ۲۰ مثقال اور چاندی کا دو سو درہم جن سے ہر دس ۱۰ درہم کا وزن سات مثقال ہو سکے (ت)

مثقال ساڑھے چار ماشے ہے تو درہم کہ اس کا ۷/۱۰ ہے تین ماشے ایک رتی اور پانچواں حصہ رتی کا ہوا۔ کشف الغطاء میں ہے:

مثقال بیست قیراط وقیراط ایك حبہ و چہار خمس حبہ وحبہ کہ آنرا ابفارسی سرخ گویند ہشتم حصہ ماشہ است پس مثقال چہار و نیم ماشہ باشد۔ ۲

مثقال میں بیس قیراط، اور قیراط ایک رتی اور رتی کے خمس کی چوتھائی ہوتا ہے، رتی جسے فارسی میں سرخ کہا جاتا ہے ماشہ کا آٹھواں حصہ ہوتا ہے، تو ایک مثقال ساڑھے چار ماشے کا ہوگا۔ (ت)

جواہر الاخلاطی میں ہے:

الدرھم الشرعی خمس و عشرون حبۃ و خمس حبۃ۔ ۳

یعنی درہم شرعی پچیس رتی اور پانچواں حصہ رتی کا ہے۔

اب حساب سے واضح ہو سکتا ہے کہ دوسو درہم نصابِ فضہ کے ۵۲ تولے ۶ ماشے اور بیس مثقال، نصابِ ذہب کے ۷ تولے ۶ ماشے ہوئے اور یہاں کا روپیہ کہ ۱۱ ماشہ ہے اس سے روپے دو سو درہم کے برابر ہوئے، یہی وزن معین متون مذہب و عامہ شروح و فتاوی میں ہے، ردالمحتار میں فرمایا:

علیہ الجم الغفیر والجمہور الکثیر واطباق جمِ غفیر اور جمہور اسی پر ہیں اور کتبِ متقدمین و

کتب المتقدمین والمتأخرین۔ ۴ متاخرین کا اسی پر اتفاق ہے۔ (ت)

تو اس کے خلاف پر عمل جائز نہیں، عقودالدریہ وغیرہا کتبِ کثیرہ میں ہے: العمل بما علیہ الاکثر ۵ (عمل اسی پر ہوگا)

---

1 در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ا/ ۱۴۳ 2 کشف الغطاء فصل در احکام دعاء وصدقہ مطبع احمدی دھلی ص ۶۸ 3 جواہر الاخلاطی کتاب الزکوۃ غیر مطبوعہ قلمی نسخہ ص ۴۴ 4 ردالمحتار کتاب الزکوۃ مصطفی البابی مصر ۳۲/۲ 5 ردالمحتار کتاب الزکوۃ مصطفی البابی مصر ۱۶۶/۱

Fatawa Razawiyya Volume 10

...which has the majority consensus. (T) The humble servant wrote in his annotations on Hashiya Shami:

[Arabic Text Translation]: I say: It has become clear to this weak servant that this is the chosen view because the Pure Sharia, in defining wealth (Ghani) that necessitates Zakat, has considered a threshold (Nisab) based on productive financial value, not numerical count. Thus, whoever owns one hundred that equals two hundred dirhams has achieved the Sharia-required level of wealth for obligation. Consider if a dirham became customary in a city such that its weight equaled two hundred dirhams; would Zakat only become obligatory when someone owned two hundred such dirhams? The result would be that an Arab owning silver equivalent to two hundred dirhams would be considered wealthy and the Nisab would apply to him. Conversely, someone in that city owning nearly two hundred times that amount of silver would remain "poor," not being addressed for Zakat, but rather permitted to receive it. This leads to a scenario where Sharia commands someone owning just one rupee to give Zakat from that rupee to someone owning one hundred and ninety-nine rupees to fulfill their need, because the latter is considered poor due to "small amount of wealth" and the one with one rupee is considered wealthy. This is something that reason does not accept. Reflect on this. And Allah Almighty knows best. (End of what I wrote).

[Urdu Text Translation]: I say: It has become clear to this weak servant that this is the chosen view because the Pure Sharia, in defining wealth (Ghani) that necessitates Zakat, has considered a threshold (Nisab) based on productive financial value, not numerical count. Thus, whoever owns one hundred that equals two hundred dirhams has achieved the Sharia-required level of wealth for obligation. Consider if a dirham became customary in a city such that its weight equaled two hundred dirhams; would Zakat only become obligatory when someone owned two hundred such dirhams? The result would be that an Arab owning silver equivalent to two hundred dirhams would be considered wealthy and the Nisab would apply to him. Conversely, someone in that city owning nearly two hundred times that amount of silver would remain "poor," not being addressed for Zakat, but rather permitted to receive it. This leads to a scenario where Sharia commands someone owning just one rupee to give Zakat from that rupee to someone owning one hundred and ninety-nine rupees to fulfill their need, because the latter is considered poor due to "small amount of

wealth" and the one with one rupee is considered wealthy. This is something that reason does not accept. Reflect on this. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 26 / 27: From Etawah Court Collectorate, sent by Mawlawi Wasi Ali Sahib, 4th Rabi' al-Awwal 1327 AH. What is your opinion, may Allah Almighty have mercy on you, regarding these two issues? (May Allah Almighty have mercy on you in these two issues)

1. Jadd al-Muhtar, Chapter of Zakat on Wealth, Mubarakpur Printing Press (India) 1/128

फ़तावा रज़विया खंड दसवाँ

...जिस पर बहुमत हो। त) फ़क़ीर ने अपनी टिप्पणियों (हाशिया शामी) में लिखा है:

[अरबी पाठ का अनुवाद]: मैं कहता हूँ: इस तुच्छ दास पर यह स्पष्ट हो गया है कि यही विचार चुनिंदा है क्योंकि पवित्र शरीयत ने 'ग़ना' (संपन्नता) की सीमा निर्धारित करते हुए ऐसे निसाब (न्यूनतम संपत्ति) का विचार किया है जो ज़कात की अनिवार्यता का कारण बने, और यह संपन्नता बढ़ती हुई वित्तीय मूल्य पर आधारित है न कि संख्या पर। अतः जो व्यक्ति ऐसे सौ का स्वामी है जो दो सौ दिरहम के बराबर है, वह शरीयत के अनुसार संपन्नता के स्तर पर पहुँच गया है। बताइए यदि किसी शहर में एक ऐसा दिरहम प्रचलित हो जिसका भार दो सौ दिरहम के बराबर हो, तो क्या ज़कात केवल तभी अनिवार्य होगी जब वह ऐसे दो सौ दिरहमों का स्वामी बने? इसका परिणाम यह होगा कि कोई अरब जो दो सौ दिरहम के बराबर चांदी का स्वामी बने, वह संपन्न माना जाएगा और उस पर निसाब लागू होगा। और जो व्यक्ति उस भारी दिरहम वाले शहर में उस चांदी के लगभग दो सौ गुना का स्वामी बने, वह निर्धन माना जाएगा, उसे ज़कात देने का आदेश नहीं होगा बल्कि वह ज़कात ले सकेगा। इसका अर्थ यह हुआ कि जिस व्यक्ति के पास केवल एक रुपया है, शरीयत उसे आदेश दे रही है कि वह अपने एक रुपये में से उस व्यक्ति को ज़कात दे जो एक कम दो सौ (199) रुपयों का स्वामी है ताकि उसकी आवश्यकता पूरी हो सके, क्योंकि वह धन की कमी के कारण 'निर्धन' है और एक रुपये वाला 'संपन्न' है। यह एक ऐसी बात है जिसे बुद्धि स्वीकार नहीं करती, विचार करें। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है। (जो मैंने लिखा उसका अंत)।

[उर्दू पाठ का अनुवाद]: मैं कहता हूँ: इस तुच्छ दास पर यह स्पष्ट हो गया है कि यही विचार चुनिंदा है क्योंकि पवित्र शरीयत ने 'ग़ना' (संपन्नता) की सीमा निर्धारित करते हुए ऐसे निसाब का विचार किया है जो ज़कात की अनिवार्यता का कारण बने, और संपन्नता बढ़ती हुई वित्तीय मूल्य की वजह से है न कि संख्या की वजह से। अतः जो व्यक्ति ऐसे सौ का स्वामी हुआ जो दो सौ दिरहम के बराबर है, तो वह कारण में शरीयत के अनुसार संपन्नता के बराबर ठहरा। बताइए यदि किसी शहर में एक ऐसा दिरहम प्रचलित हो जिसका भार दो सौ दिरहम के बराबर हो, तो क्या उस पर ज़कात केवल उसी स्थिति में अनिवार्य होगी जब वह उस दिरहम जैसे दो सौ दिरहम का स्वामी बने? परिणाम यह होगा कि कोई अरब दो सौ दिरहम के बराबर चांदी का स्वामी बन जाए तो उस पर ज़कात अनिवार्य हो जाएगी क्योंकि वह निसाब का स्वामी होकर संपन्न हो गया, और जो व्यक्ति उस भारी दिरहम वाले शहर में उस चांदी के लगभग दो सौ गुना के पास का स्वामी बने वह निर्धन रहे और निसाब का स्वामी न होने

पर ज़कात ले सके। तो मानों संख्या के विचार से बात ऐसी हुई कि जो व्यक्ति एक रुपये की मात्रा का स्वामी हुआ उसे शरीयत आदेश दे रही है कि वह अपने एक रुपये से उस व्यक्ति को ज़कात दे जो एक कम दो सौ रुपये का स्वामी है ताकि उसकी आवश्यकता पूरी हो सके, क्योंकि यह धन की कमी के कारण निर्धन है और एक रुपये वाला संपन्न है, और यह ऐसी चीज़ है जिसे बुद्धि स्वीकार नहीं करती, विचार कीजिए, अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 26 / 27: इटावा कचहरी कलेक्टरी से, प्रेषक मौलवी वसी अली साहब, 4 रबी-उल-अव्वल शरीफ़ 1327 हिजरी। इन दो मसलों में आपका क्या कहना है, अल्लाह तआला आप पर रहम फ़रमाए? (अल्लाह तआला आप पर इन दो मसलों में रहम फ़रमाए)

1. जद्दुल मुहतार, बाब ज़कातुल माल, मुतबअ मुबारकपुर (भारत) 1/128

فتاوی رضویہ جلد دہم

جس پر اکثریت ہو ۔ ت) فقیر نے اپنے تعلیقات حاشیہ شامی میں لکھا:

اقول: ویظھر للعبد الضعیف انه لا وجه فان الشرع المطھر انما اعتبر النصاب تحدیدا لغنی یوجب الزکوۃ والغنی بالمالیة النامیة دون العدد فمن ملك مائة ساوت مائتی درھم فقد ساوی الغنی الشرعی في الموجب ارأیت لو تعورف في بلد درھم یساوی في الوزن مائتی درھم ولم یوجب علیه الابعد مایملك مائتین من ھذا کان حاصله ان من ملك في العرب مثلا ھذا القدر من الفضة کان غنیا قد انعقد علیه النصاب ومن ملك في ذلك البلد قریبا من مائتی امثال تلك الفضة یکون فقیرا لا یخاطب بالزکوۃ بل یحل له اخذ الزکوۃ فیؤل الی ان من ملك قدر ربیة یا مرہ الشرع بان یعطی من ربیته لمن یملك مائتی ربیة الا واحدۃ مسد الخلته، فانہ لقلۃ مالہ فقیر وھذا غنی ، ھذا مما لا یقبله العقل فافھم، واللہ تعالی اعلم اھـ ما کتبته۔

اقول: اس عبدِ ضعیف پر واضح ہوا ہے کہ یہی مختار ہے کیونکہ شریعتِ مطہرہ نے غنا کی حد بندی کرتے ہوئے ایسے نصاب کا اعتبار کیا ہے جو زکوٰۃ کے وجوب کا سبب ہو اور غنا مالیتِ نامیہ کی وجہ سے ہے نہ کہ تعداد کی وجہ سے، پس جو شخص ایسے سو کا مالک ہوا جو دوسو درہم کے برابر ہے تو وہ موجب میں غنائے شرعی کے برابر ٹھہرا۔ بتائیے اگر کسی شہر میں ایک ایسا درہم رواج پائے جس کا وزن دو سو درہم کے برابر ہو، تو کیا اس پر زکوٰۃ صرف اس صورت میں واجب ہوگی جب وہ اس درہم جیسے دو سو درہم کا مالک بنے، تو حاصل یہ ہوگا کہ کوئی عرب دوسو درہم کے برابر چاندی کا مالک بن جائے تو اس پر زکوٰۃ واجب ہو جائے کیونکہ وہ نصاب کا مالک ہو کر غنی ہو گیا، اور جو شخص اس بھاری درہم والے شہر میں اس چاندی کے

دوسو گنا کے قریب کا مالک بنے وہ فقیر رہے اور نصاب کا مالک نہ ہونے پر زکوٰۃ لے سکے، تو گویا عدد کے اعتبار سے بات یوں ہوئی کہ جو شخص ایک روپے کی مقدار کا مالک ہوا سے شریعت حکم دے رہی ہے کہ وہ اپنے ایک روپے سے اس شخص کو زکوٰۃ دے جو ایک کم دو سو روپے کا مالک ہے تاکہ اس کی حاجت پوری ہو سکے کیونکہ یہ قلتِ مال کی وجہ سے فقیر ہے اور ایک روپے والا غنی ہے، اور یہ ایسی چیز ہے جسے عقل قبول نہیں کرتی، غور کیجئے، واللہ تعالی اعلم (ت)

مسئلہ ۲۶ / ۲۷: از اٹا وہ کچہری کلکٹری مرسلہ مولوی وصی علی صاحب ۴ ربیع الاول شریف ۱۳۲۷ھ ماقولکم رحمکم اللہ تعالیٰ فی ھاتین المسألتین (اللہ تعالیٰ آپ پر رحم فرمائے ان دو مسئلوں میں

1 جد المستار باب زکوۃ المال مطبع مبارکپور (بھارت) ۱۲۸/۱

Fatawa Rizvia, Volume 10

What is your ruling? (T): (1) Zaid currently owns 8 tolas 6 mashas of gold jewelry and 97 mashas of silver jewelry. (2) Amr owns one hundred tolas six mashas of gold jewelry and 251 tolas 3 mashas of silver jewelry. How much zakat should both of them pay? Petitioner: Abdul Wadood

According to the rules mentioned in 'Tuhfa Hanafiya', I have calculated it as follows: (1) From 8 tolas 6 mashas, after the 7.5 tolas nisab of gold, the khums (fifth part) did not reach one and a half tolas. Therefore, 2 mashas 4 rattis of zakat became obligatory to pay and one tola was pardoned (exempt). In 97 tolas 6 mashas, one nisab of silver is 52 tolas and 2 khums are 21 tolas; on the total 73 tolas, 1 tola 10 mashas 5/2 rattis is obligatory to pay and 26 tolas of silver was pardoned. Now, considering both pardoned amounts for the greater benefit of the poor, 1 tola of gold is equal to 3 tolas 6 mashas of silver, such that 1 tola of gold according to current rates is equal to rupees... and of silver 06... When 6 tolas of silver which was pardoned was included in the silver, it became 21 tolas 6 mashas, which is 6 mashas less than four khums: (1) One-fortieth (Ruba' 'Ushr) of full four khums is 12 mashas 4-5/4 surkh. If this is added to the obligatory 1 tola 10 mashas 5/4, then 2 tolas 0 mashas 5-1/5 surkh became obligatory to pay. (b) If three khums of nisab, 31-1/2 tolas, are added, there is an addition of 9 mashas 3-5/3, then 10 tolas will again be surplus and 2 tolas 7 mashas 4 rattis will be obligatory. If this calculation is correct, which option should be chosen, (a) or (b)? (2) Following the same method in Amr's case, in 16-1/2 tolas of gold, there are 2 nisabs (15 tolas) and one khums (1-1/2 tola). So, for the 2 nisabs, 4 mashas 4 surkh and for the khums 3-5/3, totaling 4 mashas 7-5/3 surkh is obligatory to pay, and nothing is pardoned. In 251 tolas 3 mashas of silver, after deducting 4 nisabs (210 tolas) and three khums (31-1/2 tolas), 9 tolas 9 mashas remain as pardoned. For the 4 nisabs, 5 tolas 3 mashas, and for the three khums, one-fortieth is 9 mashas 3-5/3 surkh, totaling 60 tolas 3-5/3 surkh is obligatory to pay. Now, on one hand there is no pardon and on the other hand there is; in this situation, should the 9 tolas 9 mashas pardon be left alone or converted into gold? If it is made into gold, then should its khums' one-fortieth be taken and 4 mashas 7-5/3 surkh be added, or what? Explain and you will be rewarded.

The Answer: The zakat calculation for Amr is correct, but since 9 tolas 9 mashas of silver, when converted to gold, do not equal the value of 1-1/2 tolas of gold, therefore it...

फ़तावा रज़विया, खंड 10

आपका क्या आदेश है? (टी): (1) ज़ैद इस समय 8 तोले 6 माशे सोने के ज़ेवर और 97 माशे चांदी के ज़ेवर का मालिक है। (2) अम्र सौ तोले छह माशे सोने के ज़ेवर और 251 तोले 3 माशे चांदी के ज़ेवर का मालिक है, दोनों को कितनी ज़कात अदा करनी चाहिए? निवेदक: अब्दुल वदूद

'तोहफ़ा हनफ़िया' में दिए गए नियमों के अनुसार मैंने इसे इस प्रकार निकाला है: (1) 8 तोले 6 माशे में से, सोने के7.5 तोले निसाब के बाद, खुम्स (पाँचवाँ हिस्सा) डेढ़ तोले तक नहीं पहुँचा, इसलिए 2 माशे 4 रत्ती ज़कात वाजिब-उल-अदा (अनिवार्य) हुई और एक तोला माफ़ (अफ़ू) हुआ। 97 तोले 6 माशे में चांदी का एक निसाब 52 तोले और 2 खुम्स 21 तोले हैं; कुल 73 तोले पर एक तोला 10 माशे 5/2 रत्ती वाजिब-उल-अदा हुई और 26 तोले चांदी माफ़ हुई। अब गरीबों के अधिक लाभ को ध्यान में रखते हुए, दोनों माफ़ की गई राशियों को मिलाकर 1 तोला सोना, 3 तोले 6 माशे चांदी के बराबर इस तरह हुआ कि वर्तमान दर के अनुसार एक तोला सोना इतने रुपयों के बराबर है... और चांदी 06... चांदी में 6 तोले चांदी जो माफ़ थी उसे शामिल किया गया तो वह 21 तोले 6 माशे हो गई जिसमें 6 माशे कम चार खुम्स हैं: (1) पूरे चार खुम्स का रूब-उश्र (चालीसवाँ हिस्सा) 12 माशे 4-5/4 सुर्ख़ है। यदि इसे अनिवार्य 1 तोला 10 माशे 5/4 पर बढ़ाया जाए, तो 2 तोले 0 माशे 5-1/5 सुर्ख़ वाजिब-उल-अदा हुआ। (ख) यदि तीन निसाब खुम्स 31-1/2 तोले की वृद्धि की जाए, तो 9 माशे 3-5/3 की वृद्धि हुई और दस 10 तोले फिर अतिरिक्त होंगे और 2 तोले 7 माशे 4 रत्ती वाजिब होगा। यदि यह गणना सही है, तो कौन सा विकल्प चुना जाए, (क) या (ख)? (2) अम्र वाले मामले में इसी तरीके से 16-1/2 तोले सोने में 2 निसाब (15 तोले) और एक खुम्स (1-1/2 तोला) है। तो, दो 2 निसाब के4 माशे 4 सुर्ख़ और खुम्स के3-5/3, कुल 4 माशे 7-5/3 सुर्ख़ वाजिब-उल-अदा होता है और कुछ भी माफ़ नहीं है। 251 तोले 3 माशे चांदी में 4 निसाब (210 तोले) और तीन खुम्स (31-1/2 तोले) घटाकर 9 तोले 9 माशे माफ़ रहता है। 4 निसाब के5 तोले 3 माशे और तीन खुम्स का रूब-उश्र 9 माशे 3-5/3 सुर्ख़, सब मिलाकर 60 तोले 3-5/3 सुर्ख़ वाजिब-उल-अदा होता है। अब एक तरफ़ माफ़ी नहीं है और दूसरी तरफ़ है; इस स्थिति में 9 तोले 9 माशे माफ़ को छोड़ दिया जाए या उसे सोना बनाया जाए? अगर सोना बनाया जाए तो उसके खुम्स का रूब-उश्र लेकर 4 माशे 7-5/3 सुर्ख़ की वृद्धि की जाए या क्या? बयान फरमाएं पुण्य पाएंगे।

जवाब: अम्र की ज़कात का हिसाब सही है, लेकिन चूंकि 9 तोले 9 माशे चांदी को जब सोने में बदला जाए और वह 1-1/2 तोले सोने के मूल्य के बराबर न हो, तो उसे...

جلد دہم

فتاویٰ رضویہ

آپ کا کیا ارشاد ہے۔ت): (۱) زید اس وقت ۸ تولے ۶ ماشے زیور طلائی اور ۹۷ ماشے زیور نقرئی کا مالک ہے۔ (۲) عمرو سو تولے چھ ماشے زیور طلائی اور ۲۵۱ تولے ۳ ماشے زیور نقرئی کا مالک ہے، دونوں کو کس قدر زکوۃ ادا کرنی چاہئے۔ المستفتی عبد الودود بموجب ضوابط مندرجہ تحفہ حنفیہ میں نے اس کو یوں نکالا ہے: (۱) ۸ تولے ۶ ماشے جس میں سے ۷-۱/۲ تولے نصاب سونے کے بعد خمس ڈیڑھ تولہ تک نہیں پہنچا لہذا دو ماشے ۴ رتی واجب الادا زکوۃ ہوئی اور ایک تولہ عفو ہوا، ۹۷ تولے ۶ ماشے میں ایک نصاب چاندی ۵۲ تولے اور ۲ خمس ۲۱ تولے، کل ۷۳ تولے پر ایک تولہ ۱۰ ماشے ۵/۲ رتی واجب الادا اور ۲۶ تولے چاندی عفو ہوئی۔ اب دونوں عفو بلحاظ انفع للفقراء ایک تولہ سونے کی سے ۳ تولے ۶ ماشے چاندی اس طرح ہوئی کہ ایک تولہ سونا بحساب نرخ حال برابر ہے روپے کے اور کی چاندی ۰۶--- چاندی میں ۶ تولے چاندی جو عفو تھی شامل کی گئی تو ۲۱ تولے ۶ ماشے ہوئی جس میں ۶ ماشے کم چار خمس ہیں: (۱) پورے چار خمس کا ربع عشر ۱۲ ماشے ۴-۵/۴ سرخ لیے جو ایک تولہ ۱۰ ماشے ۵/۴ واجب پر بڑھائے تو ۲ تولے ۰ ماشے ۵-۱/۵ سرخ واجب الادا ہوا۔ (ب) اگر تین نصاب خمس ۳۱-۱/۲ تولہ اضافہ کیا جائے تو ۹ ماشے ۳-۵/۳ اضافہ ہوا اور دس ۱۰ تولے پھر فاضل ہوگا اور ۲ تولے ۷ ماشے ۴ رتی واجب ہوگا، اگر یہ حساب صحیح ہے تو کون سا اختیار کیا جائے، الف یا ب ؟ (۲) عمرو والے معاملہ اسی طریقہ سے ۱۶-۱/۲ تولہ سونے میں ۲ نصاب ۱۵ تولے اور ایک خمس ۱-۱/۲ تولہ ہے تو دو ۲ نصاب کے ۴ ماشے ۴ سرخ اور خمس کا ۳-۵/۳، کل ۴ ماشے ۷-۵/۳ سرخ واجب الادا ہوتا ہے اور عفو کچھ نہیں، اور ۲۵۱ تولے ۳ ماشے چاندی میں ۴ نصاب ۲۱۰

تولے اور تین خمس ۳۱-۱/۲ تولے مجرا ہو کر ۹ تولے ۹ ماشے عفو رہتا ہے اور ۴ نصاب کے ۵ تولے ۳ ماشے اور تین خمس کا ربع عشر ۹ ماشے ۳-۵/۳ سرخ ہمگیں ۶۰ تولے ۳-۵/۳ سرخ واجب الادا ہوتا ہے اب ایک جانب عفو نہیں اور دوسری جانب ہے اس صورت میں ۹ تولے ۹ ماشے عفو کو چھوڑ دیا جائے یا اس کو سونا کیا جائے، اگر سونا کیا جائے تو اس کے خمس کا ربع عشر لے کر ۴ ماشے ۷-۵/۳ سرخ اضافہ کیا جائے یا کیا؟ بینوا توجروا الجواب: زکوۃ عمرو کا حساب صحیح ہے مگر ۹ تولے ۹ ماشے چاندی جبکہ سونا کرنے سے ۱-۱/۲ تولہ سونے کی قدر نہ ہو تو اسے

Fatawa Rizvia, Volume 10

There is no reason to mix it with the gold threshold (Nisab); rather, in the mentioned case, it is absolutely exempt. Yes, if due to its craftsmanship it reaches or exceeds that amount, then for every 'Khums' (one-fifth) of the gold threshold produced in it, one-fourth of the tithe (Zakat) on gold will be added. Whatever remains less than a full 'Khums' will be left out. Three errors occurred in the Zakat calculation of Zaid: (1) One tola of gold, which was exempt in its own kind, while its current rate is 25 rupees, will be considered as exactly 25 rupees worth of silver. This amounts to twenty-three (23) tolas, five mashas, and two rati of silver, as a rupee is eleven and a quarter mashas. It shouldn't be that the price of one tola of gold is taken in rupees and then silver is bought with those rupees and considered 73 tolas of silver. The value is set based on coinage, not stone or brick. It is in Fath al-Qadir:

Arabic	**Urdu Translation**
Evaluation in the right of Allah Almighty is considered like evaluation in the right of servants. When we evaluate something usurped or consumed, we evaluate it by the dominant currency, as is the case here.[1]	The assessment of value in the right of Allah Almighty will be considered in the same way as it is beneficial in the right of people. When we set a price for a usurped or destroyed thing, we will set it from the dominant currency; it is like this. (T)

In Fatawa Alamgiriya, it says: | It is evaluated by minted [currency], as in al-Tabyin.[2] | Price will be set from minted [currency], as it is in Tabyin. (T) |

Thus, by adding the mentioned amount to 6 tolas of exempt silver, it becomes 29 tolas, 5 mashas, and 2 rati of silver, which contains only 2 'Khums', on which 6 mashas and 2.5/2 surkh are due. The total due on Zaid is 2 mashas 2 surkh of gold and 2 tolas 4 mashas 2.5/2 surkh of silver. (2) If 25 rupees were converted into 73 tolas of silver, then adding 6 tolas of exempt silver would make it 79 tolas, not 51. This was a slip of the pen. (3) If, for the sake of argument, adding 73 tolas resulted in a sum of exactly 51 tolas, the calculation 'B' was determined; there was no way towards 'A'. Anything even a grain of rice less than a 'Khums' will never be considered a full 'Khums'. This should always be remembered, and the first benefit should be well understood. The rule of the jurist (faqir) published in 'Tuhfa Hanafiya' clearly specified this, and knowing it is...

[1] Fath al-Qadir, Section on Commodities, Maktaba Nooria Razvia Sukkur, 2/168 [2] Fatawa Hindiyya, Second Chapter on Commodities, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/179

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम (10)

स्वर्ण के निसाब में मिलाने का कोई कारण नहीं है, बल्कि वर्णित स्थिति में वह पूर्णतः क्षमा (एहसान) है। हाँ, यदि अपनी कारीगरी के कारण वह उस मात्रा तक पहुँच जाए या बढ़ जाए, तो स्वर्ण के निसाब के जितने 'खुम्स' (पाँचवाँ भाग) उसमें पैदा होंगे, उनका चौथाई दसवां भाग (ज़कात) स्वर्ण पर बढ़ा दिया जाएगा। जो भाग पूरे 'खुम्स' से कम रहेगा उसे छोड़ दिया जाएगा। ज़ैद की ज़कात गणना में तीन त्रुटियाँ हुई हैं: (१) एक तोला सोना जो अपनी श्रेणी में क्षमा योग्य था, जबकि वर्तमान दर २५ रुपये है, तो उसे २५ रुपये मूल्य की ही चाँदी माना जाएगा। यह तेईस (२३) तोले, ५ माशे और २ रत्ती चाँदी हुई, क्योंकि एक रुपया सवा ग्यारह माशे का है। ऐसा नहीं कि एक तोला सोने की कीमत रुपये में लेकर फिर उन रुपयों से चाँदी खरीदी जाए और ७३ तोले चाँदी मान ली जाए। मूल्य का निर्धारण सिक्कों से किया जाता है न कि पत्थर या ईंट से। 'फतह अल-क़दीर' में है:

अरबी

अल्लाह सर्वशक्तिमान के अधिकार में मूल्यांकन उसी तरह माना जाता है जैसे बंदों (मनुष्यों) के अधिकार में मूल्यांकन। जब हम किसी हड़पी हुई या नष्ट हुई वस्तु का मूल्यांकन करते हैं, तो हम प्रचलित मुद्रा द्वारा मूल्यांकन करते हैं, यहाँ भी ऐसा ही है।[1]

उर्दू अनुवाद

अल्लाह तआला के हक़ में कीमत लगाने का एतबार उसी तरह होगा जो बंदों के हक़ में मुफीद हो। जब हम किसी मग़्सूब (छीनी हुई) या हलाक शुदा चीज़ की कीमत लगाएंगे, नक़्द-ए-ग़ालिब (प्रचलित मुद्रा) से लगाएंगे, इसी तरह यह है। (त)

'फ़तावा आलमगीरिया' में है: | इसका मूल्यांकन ढाले हुए सिक्कों से किया जाता है, जैसा कि 'तबीन' में है।[2] | मस्नूबह (सिक्कों) से कीमत लगाई जाएगी, जैसा कि तबीन में है। (त) |

अतः वर्णित मात्रा को ६ तोले क्षमा वाली चाँदी में मिलाने से २९ तोले ५ माशे २ रत्ती चाँदी हुई, जिसमें केवल २ 'खुम्स' हैं, जिन पर ६ माशे २-५/२ सुर्ख़ अनिवार्य हैं। ज़ैद पर कुल अनिवार्य ज़कात २ माशे २ सुर्ख़ सोना और २ तोले ४ माशे २-५/१ सुर्ख़ चाँदी है। (२) यदि २५ रुपयों की फिर ७३ तोले चाँदी बनाई जाए, तो ६ तोले क्षमा से मिलकर ७९ तोले होती, न कि ५१, यह लेखनी की त्रुटि थी। (३) यदि मान लिया जाए कि ७३ तोले जोड़ने पर योग ५१ तोले ही होता, तो गणना 'ब' निश्चित थी, 'अ' की ओर कोई रास्ता नहीं था। जो भाग 'खुम्स' से एक चावल के दाने के बराबर भी कम हो, उसे कभी भी पूर्ण 'खुम्स' नहीं माना जाएगा। इसे हमेशा याद रखा जाए और पहले लाभ को अच्छी तरह समझ लिया

जाए। फकीर (लेखक) का नियम जो 'तोहफा-ए-हनफिया' में छपा था, उसमें इसकी स्पष्ट व्याख्या की गई थी, इसे जानना...

[1] फतह अल-कदीर, उरूज़ (व्यापारिक सामान) का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सक्कर, २/१६८। [2] फतावा हिन्दिया, उरूज़ का दूसरा अध्याय, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, १/१७९।

पृष्ठ ८३६ में से १४२

نصابِ ذھب میں ملانے کی کوئی وجہ نہیں بلکہ صورتِ مذکورہ میں وہ مطلقاً عفو ہے گی، ہاں اگر اپنی صنعت کی وجہ سے اُس مقدار تک پہنچ جائے یا بڑھ جائے تو جتنے خمس نصابِ ذھب اس میں پیدا ہوں گے اُن کا ربع عشر زکوۃ ذھب پر زیادہ کر لیا جائے گا باقی جو خمس کامل سے کم رہا چھوڑ دیا جائے گا، حسابِ زکوۃِ زید میں تین سہو واقع ہوئے : (۱) تولہ بھر سونا کہ اپنی نوع میں عفو تھا جبکہ نرخ حال سے پچیس روپے کا ہے تو اسے پچیس ہی روپیہ بھر چاندی قرار دیں گے جس کی تیئس ۲۳ تولے پانچ ماشے دو رتی چاندی ہوئی کہ روپیہ سوا گیارہ ماشے کا ہے نہ یہ کہ تولہ بھر سونے کی قیمت روپیہ لے کر پھر ان روپوں کی چاندی خریدیں اور ۷۳ تولے چاندی قرار دیں سکہ ہی سے لگائی جاتی ہے نہ کہ پتھر یا اینٹ سے۔ فتح القدیر میں ہے۔

| التقویم فی حق اللہ تعالٰی یعتبر بالتقویم فی حق العباد متی قومنا المغصوب اوالمستھلك نقوم بالنقد الغالب کذا ھذا۔ ۱ | اللہ تعالٰی کے حق میں قیمت لگانے کا اعتبار اسی طرح ہو گا جو بندوں کے حق میں مفید ہو جب ہم کسی مغضوب یا ہلاک شدہ چیز کی قیمت لگائیں گے نقد غالب سے لگائیں گے، اسی طرح یہ ہے۔ (ت) |

فتاوی عالمگیر یہ میں ہے: | یقوم بالمضروبۃ کذا فی التبیین۔ ۲ | مضروبہ سے قیمت لگائی جائے گی، جیسا کہ تبیین میں ہے۔ (ت) |

پس مقدار مذکور ۶ تولے عفو سیم میں ملانے سے ۲۹ تولے ۵ ماشے ۲ رتی چاندی ہوئی جس میں صرف ۲ خمس ہیں جن پر ۶ ماشے ۲-۵/۲ سرخ اور واجب ہو کر کل واجب ذمہ زید سونا ۲ ماشے ۲ سرخ، چاندی ۲ تولے ۴ ماشے ۲-۵/۲ سرخ۔ (۲) ۲۵ روپوں کے پھر ۷۳ تولے چاندی اگر کی

جائے تو ۶ تولے عفو سے مل کر ۷۹ تولے ہوتی نہ کہ ۵۱، یہ لغزش قلم تھی۔ (۳) اگر بالفرض ۷۳ تولے اور ملاتے اور حاصل جمع ۵۱ ہی تولے ہوتا حساب ب متعین تھا الف کی طرف کوئی راہ نہ تھی جو خمس سے چاول بھر بھی کم ہے وہ خمس کامل ہر گز نہ مانا جائے گا، یہ ہمیشہ یاد رکھا جائے اور فائدہ اولے خوب سمجھ لیا جائے کہ فقیر کا ضابطہ جو تحفہ حنفیہ میں چھپا اس میں اس کی صاف تصریح کی گئی تھی اس کا جاننا اس کے

۱ فتح القدیر فصل فی العروض مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱۶۸/۲ ۲ فتاوی ہندیہ الفصل الثانی فی العروض نورانی کتب خانہ پشاور ۱۷۹/۱

Volume Ten Fatawa Razawiyya

It will be helpful in the implementation of regulations. And Allah Almighty knows best. Problem 31/28: From the city of Malukpur, sent by Mr. Syed Muhammad Ali Sahib, Deputy Supervisor Faridpur, 30th Ramadan-ul-Mubarak 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding the following issues: (1) On what basis should zakat on gold and silver jewelry be given? Is it based on the purchase price or the price one gets upon selling it? (2) Is the zakat on cash 8 per hundred or more or less? (3) On which items is zakat obligatory? (4) Can Sadaqah al-Fitr and zakat be given by parents on behalf of children and by children on behalf of parents if they eat and drink together?

The Answer: (1) Consideration will be given to the market rate prevailing at the end of the year. If one wants to pay zakat in a different commodity, for example, giving silver for the zakat of gold, then market price is considered. Otherwise, if giving zakat of gold and silver in their own respective commodities, weight is what matters, not the price. (2) This is the school of thought of the Sahibayn (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad), and in this, there is more benefit for the poor and ease of calculation for the giver. (3) Gold, silver, commercial goods, and livestock left for grazing. (4) Whether they eat and drink together or not, permission is required for one to pay an obligatory or mandatory financial duty on behalf of another. If parents pay Sadaqah al-Fitr or zakat on behalf of their adult children from their own wealth, or children pay on behalf of parents, and the person originally responsible for the obligation has not given permission, then it will not be fulfilled. And Allah Almighty knows best, and His knowledge is most perfect and most solid. Problem 32: A person has eleven tolas of gold and two seers of silver. How much zakat should he pay? That is, please write down the amounts so that the zakat for this much gold is in rupees and for this much silver is in rupees. Provide a ruling, may you be rewarded.

The Answer: Write down one thing, what is the exact weight of silver? According to the school of thought of the Sahibayn (may Allah be pleased with them), the entire calculation is thus: give three mashas, two rattis, and 3 1/5 grains of rice worth of gold, and five rupees worth of silver. If according to the school of thought of Imam Azam (may Allah be pleased with him)...

विनियमों के कार्यान्वयन में सहायक होगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। मसला 31/28: शहर मलूकपुर से, प्रेषक जनाब सैयद मुहम्मद अली साहब, नायब नाज़िर फरीदपुर, 30 रमज़ान-उल-मुबारक 1339 हिजरी। दीन के उलेमा निम्नलिखित मसलों में क्या फ़रमाते हैं: (1) सोने और चांदी के ज़ेवरात पर ज़कात किस हिसाब से दी जाए? क्या खरीद मूल्य पर या उस कीमत पर जो उसे बेचने पर मिलती है? (2) नकद राशि पर ज़कात 8 प्रति सैकड़ा है या उससे कम या ज़्यादा? (3) किन-किन चीज़ों पर ज़कात वाजिब है? (4) क्या सदक़ा-ए-फ़ित्र और ज़कात, वालिदैन की तरफ से औलाद और औलाद की तरफ से वालिदैन दे सकते हैं जबकि उनका खाना-पीना एक साथ हो?

अल-जवाब (उत्तर): (1) साल के अंत में बाज़ार में जो भाव हो, उसका लिहाज़ किया जाएगा। अगर किसी दूसरी चीज़ से ज़कात देना चाहें, मिसाल के तौर पर सोने की ज़कात में चांदी देना चाहें, तो कीमत का एतबार होगा। वरना अगर सोने-चांदी की ज़कात खुद उन्हीं की जिन्स (धातु) से दें, तो वज़न (भार) का एतबार है, कीमत का कोई लिहाज़ नहीं। (2) साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद) का यही मज़हब है और इसमें फ़कीर का नफ़ा (लाभ) ज़्यादा है और देने वाले को भी हिसाब में आसानी है। (3) सोना, चांदी, माल-ए-तिजारत (व्यापारिक सामान) और चराई पर छोड़े गए जानवर। (4) खाना-पीना एक जगह हो या अलग, किसी दूसरे की तरफ से कोई फ़र्ज़ और वाजिब माली (वित्तीय) ज़िम्मेदारी अदा करने के लिए उसकी इजाज़त की ज़रूरत है। अगर बालिग़ औलाद की तरफ से सदक़ा-ए-फ़ित्र या उनकी ज़कात, मां-बाप ने अपने माल से अदा कर दी, या मां-बाप की तरफ से औलाद ने अदा की, और असल व्यक्ति जिस पर हुक्म है, उसकी इजाज़त नहीं हुई, तो वह अदा नहीं होगी। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है और उसका इल्म सबसे कामिल और सबसे मज़बूत है। मसला 32: एक शख्स के पास ग्यारह तोले सोना और दो सेर चांदी है, तो उसे कितनी ज़कात देनी चाहिए? यानी इन दोनों की मात्रा लिख दीजिए कि इतने सोने की ज़कात के कितने रुपये हुए और इतनी चांदी की ज़कात के। जवाब दें, सवाब पाएं।

अल-जवाब: एक बात लिखिए, चांदी का सही वज़न कितना है? साहिबैन अलैहिमु-र-रिज़वान के मज़हब पर तो पूरा हिसाब यह है: तीन माशे, दो रत्ती और 3 1/5 चावल के बराबर सोना और पांच रुपये के बराबर चांदी दे। अगर इमाम-ए-आज़म अलैहि-र-रिज़वान के मज़हब के अनुसार...

ضوابط کے اجراء پر معین ہوگا۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ مسئلہ ۳۱/۲۸: از شہر ملوک پور مرسلہ جناب سید محمد علی صاحب نائب ناظر فرید پور ۳۰ رمضان المبارک ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین مسائل ذیل میں : (۱) زکوۃ زیور طلائی و نقرئی پر کس حساب سے دی جائے، آیا قیمت خرید پر یا جو قیمت اس کی خرید کرنے سے ملتی ہے؟ (۲) زر نقد پر زکوۃ ۸ سیکڑہ ہے یا اس سے کم و بیش؟ (۳) زکوۃ کن کن اشیاء پر واجب ہے ؟ (۴) صدقہ فطر و زکوۃ والدین کی جانب سے اولاد اور اولاد کی جانب سے والدین جبکہ خور و نوش یک جاہو دے سکتے ہیں؟

الجواب: (۱) سال تمام پر بازار کے بھاؤ سے جو قیمت ہو اس کا لحاظ ہوگا، اگر مختلف جنس سے زکوۃ دینا چاہیں مثلاً سونے کی زکوۃ میں چاندی، ورنہ سونے چاندی کی خود اپنی جنس سے زکوۃ دیں تو وزن کا اعتبار ہے قیمت کا کچھ لحاظ نہیں۔ (۲) صاحبین کا یہی مذہب ہے اور اس میں فقیر کا نفع زیادہ ہے اور دینے والے کو بھی حساب کی آسانی ہے۔ (۳) سونا چاندی اور مال تجارت اور چرانی پر چھوٹے ہوئے جانور۔ (۴) خورد و نوش یکجا ہو یا ان میں دوسرے کی طرف سے کوئی فرض و واجب مالی ادا کرنے کے لئے اس کی اجازت کی حاجت ہے، اگر بالغ اولاد کی طرف سے صدقہ فطر یا اس کی زکوۃ ماں باپ نے اپنے مال سے ادا کر دی یا ماں باپ کی طرف سے اولاد نے اور اصل جس پر حکم ہے اس کی اجازت نہ ہوئی تو ادا نہ ہوگی واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔ مسئلہ ۳۲: ایک شخص کے پاس گیارہ تولے سونا اور دوسیر چاندی ہے تو اس کو کس قدر زکوۃ دینا چاہئے، یعنی ان دونوں کی مقدار تحریر فرمائیے کہ اس قدر سونے کی زکوۃ کے روپے ہوئے اور اس قدر چاندی کی زکوۃ کے۔ بینوا توجروا

الجواب: ایک بات لکھئے، چاندی کا ٹھیک وزن کتنا ہے صاحبین علیہم الرضوان کے مذہب پر تو حساب سب اتنا ہے تین ماشے دورتی ۳۔ ۱/۵ چاول بھر سونا اور پانچ روپے بھر چاندی دے۔ اگر امام اعظم علیہم الرضوان کے مذہب

Whatever day the year is completed, the calculation is dependent on knowing what the market rate was for the gold and silver in his possession on that day. And Allah the Almighty knows best.

Problem 33: Submitted by Syed Ayub Ali, resident of Bareilly, Muhalla Bihari Pur Ka Sagar. Zaid, out of desire to visit the two holy sanctuaries (Makkah and Madinah), keeps saving some money. In this way, he has now become a 'Sahib-e-Nisab' (possessor of minimum taxable wealth) for a period of one and a half years. Should he pay Sadaqah al-Fitr, Zakat, and perform Qurbani on Eid al-Adha, or not? Please state and be rewarded.

The Answer: Zakat is obligatory (Fard) upon him, and Sadaqah [al-Fitr] and Qurbani are mandatory (Wajib). And Allah the Almighty knows best.

Problem 34: From Khwaja Qutb, 27 Dhu al-Qi'dah 1321 AH: What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid has nineteen Jaipur ashrafis (gold coins) weighing 17 tolas and 5 mashas, and four English ashrafis weighing 3 tolas and 9 mashas. In total, he has 23 ashrafis weighing 21 tolas and 2 mashas. For twenty-five years, he has not paid Zakat, and he had no other Zakat-eligible wealth besides these, nor does he have any now. In this situation, how much Zakat is obligatory upon him? Please state and be rewarded.

The Answer: 9 tolas, 7 mashas, one ratti rice-weight gold, and four-fifths (4/5) of a rice-weight. The detail is that the Nisab (minimum threshold) for gold is 7 tolas and 6 mashas, where 2 mashas and 2 surkh are mandatory. And for one-fifth of the Nisab (i.e., every additional 1.5 tolas), 3-5/3 surkh is mandatory. Any amount remaining less than one-fifth of the Nisab is exempt. Every year, the previous year's Zakat becomes a debt, reducing the amount of wealth for the following year. This continues until if the accumulated Zakat debts cause the remaining wealth to fall below the Nisab, then nothing further becomes mandatory. The rule for calculating the total mandatory amount for the past years is: subtract what remains in the final year after deducting Zakat debts from the original initial wealth, then add the final year's mandatory amount to the remainder. The resulting sum will be the total of the mandatory amounts for all years. The method of extraction is clear from this table. And Allah the Almighty knows best.

(See the table on the next page)

जब भी साल पूरा हो, उस दिन उसके पास जो सोना और चाँदी है, उसकी बाज़ार की दर क्या थी, इसका पता चलने पर ही हिसाब संभव है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ३३: प्रेषित सैयद अयूब अली साहिब, निवासी बरेली, मोहल्ला बिहारीपुर का सागर। ज़ैद हरमैन तैय्यबैन (मक्का और मदीना) की ज़ियारत के शौक़ में कुछ बचत करता रहता है। इस तरह अब वह डेढ़ साल से साहिब-ए-निसाब (ज़कात देने के योग्य) हो गया है। तो क्या उसे सदक़ा-ए-फ़ित्र, ज़कात और ईदुल अज़हा की क़ुर्बानी करनी चाहिए या नहीं? बयान फरमाएं और सवाब पायें।

अल-जवाब: उस पर ज़कात फ़र्ज़ है और सदक़ा [फ़ित्र] व क़ुर्बानी वाजिब है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ३४: ख़्वाजा कुत्ब की ओर से, २७ ज़ी अल-क़ादह १३२१ हिजरी: दीनी उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद के पास उन्नीस जयपुरी अशर्फ़ियाँ हैं जिनका वज़न १७ तोला ५ माशा है, और चार अंग्रेज़ी अशर्फ़ियाँ जिनका वज़न ३ तोला ९ माशा है। कुल २३ अशर्फ़ियाँ हैं जिनका वज़न २१ तोला २ माशा है। और पच्चीस साल से उसने ज़कात नहीं दी और इसके अलावा उसके पास कोई ज़कात योग्य माल न था और न अब है, तो इस स्थिति में उस पर कितनी ज़कात वाजिब है? बयान फरमाएं और सवाब पायें।

अल-जवाब: ९ तोला ७ माशा १ रत्ती चावल बराबर सोना और १ चावल का चार बटा पांच हिस्सा (४/५)। विवरण यह है कि सोने का निसाब ७ तोला ६ माशा है, जिस पर २ माशा २ सुर्ख़ वाजिब है, और निसाब के पांचवें हिस्से (यानी हर १.५ तोला) पर ३-५/३ सुर्ख़ वाजिब है। निसाब के पांचवें हिस्से से कम जो बचा हो वह माफ़ है। हर साल पिछले साल की ज़कात कर्ज़ बन जाती है, जिससे अगले साल के माल में उतनी ही कमी आ जाती है, यहाँ तक कि अगर ज़कात का कुल कर्ज़ बढ़ते-बढ़ते बाकी माल को निसाब से कम कर दे, तो अब कुछ भी नया वाजिब नहीं होगा। पिछले सालों के कुल वाजिब की गणना का नियम यह है कि आखिरी साल में ज़कात का कर्ज़ घटाने के बाद जो कुछ बचा हो, उसे शुरुआत के असल माल से घटा दें, फिर बाकी में इस आखिरी साल का वाजिब जोड़ दें। प्राप्त कुल राशि सभी वर्षों के वाजिबात का योग होगी। निकालने का तरीक़ा इस सारणी से स्पष्ट है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(सारणी अगले पृष्ठ पर देखें)

पृष्ठ ८३६ का १४४

پر چاہیں جس دن سال تمام ہوا اُس دن وہ سونا اور چاندی جو اس کے پاس ہیں بازار کے بھاؤ میں کس نرخ کے تھے اس کے معلوم ہونے پر حساب موقوف ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۳۳: مسئولہ سید ایوب علی صاحب ساکن بریلی محلہ بہاری پور کا سگر زید بشوقِ زیارت حرمین طیبین کچھ پس انداز کرتا جاتا ہے ، اس طرح پر اب وہ صاحب نصاب عرصہ ڈیڑھ سال سے ہو گیا تو اس کو صدقہ فطر و زکوٰۃ و قربانی عید الاضحیٰ کرنا چاہئے یا نہیں؟ بینو اتو جروا

الجواب: اس پر زکوٰۃ فرض ہے اور صدقہ قربانی واجب۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۳۴: از خواجہ قطب ۲۷ ذی القعدۃ الحرام ۱۳۲۱ھ : کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کے پاس انیس اشرفیاں جے پوری وزنی ۱۷ تولہ ۵ ماشہ اور چار اشرفیاں انگریزی وزنی ۳ تولہ ۹ ماشہ جملہ ۲۳ اشرفیاں وزنی ۲۱ تولہ ۲ ماشے ہیں اور پچیس سال سے اُس نے زکوٰۃ نہ دی اور ان کے سوا کوئی مالِ زکوٰۃ نہ اس کے پاس تھا، نہ ہے، تو اس صورت میں اس پر کس قدر زکوٰۃ واجب ہے۔ بینو اتو جروا۔

الجواب: ۹ تولے ۷ ماشے ایک رتی چاول سونا اور ایک چاول کے چار خمس ۴/۵، تفصیل یہ ہے کہ نصابِ ذہب ۷ تولے ۶ ماشے ہے، واجب ۲ ماشے ۲ سرخ، اور خمس نصاب پر ۳-۵/۳ سرخ واجب۔ خمس نصاب سے زائد بچے معاف ہے، ہر سال گزشتہ کی زکوٰۃ سال آئندہ دین ہو کر اس قدر مال کم ہوتا جائیگا یہاں تک کہ اگر دیون زکوٰۃ جمع ہوتے ہوتے باقی مال نصاب سے کم رہ جائے تو اب کچھ تازہ واجب نہ ہوگا واجب مجموع سنینِ گزشتہ معلوم کرنے کا قاعدہ یہ ہے کہ جو کچھ سال اخیر میں بعد منہایئ دیون زکوٰۃ باقی ہے اسے اصل مال اول سے تفریق کر کے باقی میں اس

اخیر کا واجب جوڑ دیں حاصل جمع برسوں کا مجموعہ واجبات ہوگا۔ طریقہ استخراج اس جدول سے واضح ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

(جدول اگلے صفحہ پر ملاحظہ ہو)

Volume Ten | Fatawa-e-Razawiyya

[Table containing calculations for Zakat based on weights like Tola, Masha, Surkh, etc., with 25 rows of data.]

Issue 35: 21 Rabi' al-Awwal 1323 AH What do the scholars of religion, firm Muftis, and experts of Sharia say regarding this issue: what is the ruling of Zakat concerning money deposited in a bank or post office?

The Answer: Wherever the money is deposited, even if it is a trust with someone, Zakat is absolutely obligatory on it. And Allah Almighty knows best.

Issue 36 / 74: Dhul-Hijjah 1331 AH (1) I have deposited an amount of one hundred rupees in a savings bank, it was not in my possession for the entire year, on this Zakat...

जिल्द दस | फतावा-ए-रज़विया

[सोने/चांदी के वजन जैसे तोला, माशा, सुर्ख आदि के आधार पर ज़कात की गणना वाली तालिका, जिसमें डेटा की 25 पंक्तियाँ हैं।]

मसला 35: 21 रबी-उल-अव्वल 1323 हिजरी क्या फरमाते हैं उलमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-मतीन व फुज़ला-ए-शरीअत इस मसले में कि बैंक या डाकखाने में जो रुपया जमा किया जाता है उसकी निस्बत ज़कात का क्या हुक्म है?

अल-जवाब: रुपया कहीं जमा हो, किसी के पास अमानत हो, मुतलकन (पूर्ण रूप से) उस पर ज़कात वाजिब है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला 36 / 74: ज़ुल-हिज्जा 1331 हिजरी (1) मैंने मबलग़ (कुल) सौ रुपये सेविंग बैंक में जमा कर रखा है, वह पूरा साल भर मेरे कब्ज़े में नहीं रहा, इस पर ज़कात...

पेज 145 / 836

[جدول برائے حسابِ زکوٰۃ بشمول اوزان تولہ، ماشہ، سرخ وغیرہ، جس میں 25 قطاروں پر مشتمل ڈیٹا موجود ہے۔]

مسئلہ ۳۵: ۲۱ ربیع الاول ۱۳۲۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ متین و فضلاءِ شریعت اس مسئلہ میں کہ بینک یا ڈاکخانہ میں جو روپیہ جمع کیا جاتا ہے اس کی نسبت زکوٰۃ کا کیا حکم ہے؟

الجواب: روپیہ کہیں جمع ہو کسی کے پاس امانت ہو مطلقاً اس پر زکوٰۃ واجب ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۳۶ / ۷۴: ذی الحجہ ۱۳۳۱ ھ (۱) میں نے مبلغ سو روپیہ سیونگ بینک میں جمع کر رکھا ہے وہ پورا سال بھر میرے قبضہ میں نہیں رہا، اس پر زکوۃ

Fatawa Razawiyya, Volume 10

...is obligatory, or when after two or three years etc. it is retrieved and possession is taken, should Zakat be given at that time? And when it comes into possession, should Zakat be given for each past year or only for the year of possession?

(2) I purchased promissory notes worth two hundred rupees from the post office. Now, regardless of how urgent my need for money is, it cannot be withdrawn immediately, and similarly, unless some buyer other than the bank is found for these promissory notes, that money cannot be received by me, whether a buyer is found in two days or in a whole year. So, is Zakat obligatory on this amount or not?

The Answer:

(1) As long as it is in the bank, it will be considered in one's possession and Zakat will be obligatory on it every year, whether one pays it year by year or when eleven rupees and three and a quarter annas are received from it, one should give the fortieth part from it. Zakat for all the years it remained there will be obligatory. However, every year, the Zakat of previous years will be considered as a debt on it and that much will be separate from Zakat. For example, if two hundred rupees are accumulated, then in the first year, approximately five rupees were obligatory on two hundred. In the second year, five rupees of last year's Zakat are a debt on it; therefore, Zakat will be obligatory on one hundred and ninety-five this year, which is approximately four rupees and fourteen annas. In the third year, nine rupees and fourteen annas of Zakat for two years are a debt; after excluding this, Zakat will be obligatory on one hundred and ninety rupees and two annas, and so on. And Allah Almighty knows best.

(2) The rule for promissory notes is that the money is given to the government, in exchange for which it issues these notes. Now this money will never be returned; neither the original owner can take it back, nor his heir, nor any representative. Yes, the government will pay interest on this money at the rate of six annas percent per month forever. So, these notes are not wealth themselves like currency notes but are debt certificates. Therefore, the government pays interest on them. If common notes are bought from the treasury, they won't give a single penny of interest because that was a sale, the exchange was completed. Here it is a loan. If common notes are bought from the treasury, a single penny remained as a loan and that loan cannot be recovered in any way, then it becomes a 'dead debt' (qarze murdah), and there is no Zakat on a dead debt. Nor is selling these notes permissible because it is actually the

sale of a debt to a non-debtor, and that is not permissible. So, the money one gets by selling them will be 'khabith' (impure/unlawful) for him, and it will be obligatory on him to return it to the one he took it from and annul this invalid sale. So, there is no Zakat on these notes because they are not wealth, nor on the money received by selling them as it is entirely 'khabith', nor on the money that was given to the government as a loan to take these notes, because that is a dead debt which will never be returned. It is mentioned in Durr-e-Mukhtar:

[Box]:

Al-Aslu fihi hadithu Ali, la zakata fi mal. | In this, the basis is the Hadith of Ali Murtaza (may Allah be pleased with him).

फ़तावा रज़विया, जिल्द दस (10)

...वाजिब है या जब दो या तीन साल वगैरह में कब्ज़ा आए तो कब्ज़ा लिया जाए उस वक्त ज़कात दी जाए और जब कब्ज़े में आए तो हर साल की बाबत ज़कात दी जाए या सिर्फ इसी साल कब्ज़े वाले की बाबत?

(2) मैंने दो सौ रुपये के प्रॉमिसरी नोट डाकखाने से खरीदे। अब अगर मुझे रुपये की चाहे कितनी ही सख्त ज़रूरत हो, तो फौरन वसूल नहीं हो सकता और इसी तरह जब तक कोई दूसरा खरीदार इन प्रॉमिसरी नोटों का पैदा न हो तब तक वह रुपया मुझे वसूल नहीं हो सकता, चाहे वह खरीदार दो दिन में मिल जाए या साल भर में, तो क्या इस रकम पर ज़कात वाजिब है या नहीं?

उत्तर (अल जवाब):

(1) वह जब तक बैंक में है, अपने कब्ज़े में ही समझा जाएगा और हर साल उस पर ज़कात वाजिब होगी, चाहे साल-दर-साल अदा करता रहे या जब उसमें से ग्यारह रुपये सवा तीन आने वसूल हों, उसमें से चालीसवां हिस्सा दे और जितने साल रहा है सब सालों की ज़कात वाजिब होगी। हाँ, हर साल पिछले सालों की ज़कात की मात्रा को उस पर ऋण (कर्ज़) समझकर ज़कात से अलग रखा जाएगा। उदाहरण के लिए, यदि दो सौ रुपये जमा हैं, तो पहले साल दो सौ पर लगभग पाँच रुपये वाजिब हुए। दूसरे साल पिछले साल की पाँच रुपये की ज़कात उस पर ऋण है, इसलिए इस साल एक सौ पचानवे पर ज़कात वाजिब होगी जो लगभग चार रुपये चौदह आने है। तीसरे साल उस पर दो साल की ज़कात के नौ रुपये चौदह आने कर्ज़ हैं, इसे घटाकर एक सौ नब्बे रुपये दो आने पर ज़कात वाजिब होगी और इसी तरह आगे भी। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(2) प्रॉमिसरी नोटों का यह नियम है कि रुपया सरकार को दे दिया जाता है जिसके बदले में वह यह नोट देती है। अब यह रुपया कभी वापस नहीं मिलेगा, न मूल मालिक इसे ले सकता है और न उसका वारिस और न उसका कोई प्रतिनिधि। हाँ, सरकार इस रुपये पर छह आने प्रतिशत प्रति माह के हिसाब से हमेशा ब्याज देगी। तो ये नोट मुद्रा नोटों की तरह स्वयं धन नहीं हैं बल्कि ऋण के प्रमाण पत्र हैं, इसलिए सरकार इन पर ब्याज देती है। और अगर आम नोट खजाने से खरीदे जाएं तो वे एक पैसा भी ब्याज नहीं देंगे क्योंकि वह बिक्री थी, विनिमय पूरा हो गया था। और यहाँ यह एक ऋण है। अगर आम नोट खजाने से खरीदे जाएं तो एक पैसा ऋण रहा और वह ऋण किसी तरह वापस नहीं मिल सकता, तो वह ऋण 'मुर्दा ऋण' (dead debt) हो गया और मुर्दा ऋण पर ज़कात नहीं है। न ही

इन नोटों को बेचना जायज़ है क्योंकि यह वास्तव में किसी गैर-कर्ज़दार को ऋण बेचना है, और वह जायज़ नहीं है। तो उन्हें बेचकर जो रुपया मिलेगा वह उसके लिए 'खबीस' (अशुद्ध) होगा और उस पर यह अनिवार्य होगा कि जिससे लिया था उसे वापस कर दे और इस अमान्य बिक्री को रद्द कर दे। तो न इन नोटों पर ज़कात है क्योंकि ये धन नहीं हैं, न उस रुपये पर जो उन्हें बेचकर मिलेगा क्योंकि वह पूरी तरह खबीस है, और न ही उस रुपये पर जो सरकार को ऋण देकर ये नोट लिए गए थे क्योंकि वह मुर्दा ऋण है जो कभी वापस नहीं मिलेगा। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

[कोष्ठक]:

अल-अस्लु फ़ीही हदीसु अली, ला ज़काता फ़ी माल। | इसमें आधार अली मुर्तज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु की हदीस है।

पृष्ठ संख्या 836 में से 146

واجب ہے یا جب دو یا تین سال وغیرہ میں برآمد کرکے قبضہ لیا جائے اس وقت زکوۃ دی جائے اور جب قبضہ میں آئے تو ہر سال کی بابت زکوۃ دی جائے یا صرف اسی سال قبضہ والے کی بابت؟ (۲) میں نے مبلغ دو سو روپے کے پرامیسری نوٹ ڈاک خانہ سے خرید کئے۔ اب اگر مجھ کو روپے کی خواہ کسی قدر سخت ضرورت ہو تو فوراً وصول نہیں ہو سکتا وقس علیہ کوئی خریدار غیر ان پرامیسری نوٹ کا پیدا نہ ہو تب تک وہ روپیہ مجھ کو وصول نہیں ہو سکتا خواہ دو روز میں پیدا ہو جائے یا سال بھر میں پیدا ہو تو اس رقم پر زکوۃ واجب ہے یا نہیں؟ الجواب: (۱) وہ جب تک بینک میں ہے اپنے قبضے میں سمجھا جائے گا اور ہر سال اُس پر زکوۃ واجب ہو گی خواہ سال بسال ادا کرتا رہے یا جب اس میں سے گیارہ روپے سوا تین آنے کی وصول ہو اس میں سے چالیسواں حصہ دے اور جتنے برس رہا ہے سب برسوں کی زکوۃ واجب ہو گی ، ہاں ہر سال اگلے برسوں کی زکوۃ کی قدر اس پر دین سمجھ کر اتنا زکوۃ سے جدا رہے گا ، مثلاً دو سو روپیہ جمع ہیں تو پہلے سال دوسو پر پانچ روپیہ تقریباً واجب ہوئے، دوسرے سال پانچ روپیہ سال گزشتہ کی زکوۃ کے اس پر واجب ہیں لہذا اس سال ایک سو پچانوے پر زکوۃ واجب ہو گی تقریباً چار روپے چودہ آنے ۔ تیسرے سال اس پر دو سال کی زکوۃ کے نو روپے چودہ آنے قرض ہیں یہ مستثنیٰ ہو کر ایک سو نوے روپے دو آنے پر زکوۃ واجب ہو گی و علی ھذا القیاس۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (۲) پرامیسری نوٹوں کا یہ قاعدہ ہے کہ روپیہ گورنمنٹ کو دے دیا جاتا ہے جس پر وہ یہ نوٹ دیتی ہے اب یہ روپیہ کبھی واپس نہ ملے گا نہ خود اصل مالک لے سکتا ہے نہ اس کا وارث نہ اس کا کوئی قائم مقام ، ہاں گورنمنٹ اس روپے چھ آنے فیصدی ماہوار کے حساب سے ہمیشہ سود دے گی تو یہ نوٹ نوٹوں کی طرح خود مال نہیں بلکہ سند قرض ہیں لہذا اس پر گورنمنٹ سود دیتی ہے

اور عام نوٹ خزانے سے خریدے جائیں تو ایک پیسہ سود نہ دے گی کہ وہ بیع تھی معاوضہ تمام ہو گیا ہے اور یہاں قرض ہے اور عام نوٹ خزانے سے خریدے جائیں تو ایک پیسہ قرض رہا اور وہ قرض کسی طرح واپس نہیں مل سکتا تو قرض مردہ ہوا اور قرض مردہ پر زکوۃ نہیں ، نہ ان نوٹوں کا بیچنا جائز کہ وہ حقیقۃً غیر مدیون کے ہاتھ دین کی بیع ہے اور وہ جائز نہیں تو ان کو بیچ کر جو روپیہ لے گا اس کے لیے خبیث ہو گا اور اس پر فرض ہو گا کہ جس سے لیا تھا اسے واپس دے اور اس بیع فاسد کو فسخ کرے تو زکوۃ ان نوٹوں پر ہے کہ یہ مال نہیں ، نہ اس روپیہ پر جو انھیں بیچ کر ملے گا یہ تمام و کمال خبیث ہے ، نہ اس روپیہ پر جو گورنمنٹ کو قرض دے کر یہ نوٹ لیے تھے کہ وہ قرض مردہ ہے جو کبھی واپس نہ ملے گا۔ در مختار میں ہے:

[باکس]:

الاصل فیہ حدیث علی ، لازکوۃ فی مال | اس میں اصل علی مرتضیٰ رضی اللہ تعالٰی عنہ کی حدیث ہے

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

[Boxed Text] Al-Dimar is wealth from which benefit cannot be derived despite ownership remains. And Allah Almighty knows best. [Footnote 1: Durr-ul-Mukhtar, Book of Zakat, Mujtabai Press Delhi, 1/129] That is, there is no Zakat on Mal-e-Dimar. Mal-e-Dimar is that which, despite being in ownership, it is not possible to benefit from it. And Allah Almighty knows best. (T)

Issue 38: From the place of Daru, District Nainital, asked by Abdullah, a shopkeeper, 2nd Rabi-ul-Awwal Sharif 1332 AH. Question: What do the scholars of the religion and the clear Shariah say regarding this matter: A person has 60 rupees in cash, jewelry worth 50 rupees for his wife to wear at all times, and he runs a shop with 50 rupees worth of goods. This is his total property. Out of this, 95 rupees is the debt of his wife's dower (mahr). The shop business he runs should be considered like a farmer's oxen for plowing, and there is a horse worth 25 rupees for carrying the yarn for the shop business. In this situation, should Zakat be paid on the first wealth or not? Act according to the command of the noble Shariah. Also, there is no grain for a whole year's food in his house. Explain and you shall be rewarded. The Answer: Nowadays, women's dower is usually Mahr Mu'ajjal (deferred dower), which will be demanded after death or divorce. A man never even considers it a debt upon him in all his expenses. Such a dower does not prevent the obligation of Zakat. If at the end of the year, he has these sixty rupees left, Zakat will be obligatory on them. The Nisab (threshold) for Zakat is 56 rupees (52.5 tolas of silver). If those ornaments are the property of the husband, they will also be included, and Zakat will be obligatory on 110. And if the trade goods also remain, they will also be included, making it 160. In short, if from these three types of wealth, there is an amount equal to 56 rupees at the end of the year, Zakat is obligatory, otherwise not. And if the jewelry is the wife's property, then Zakat will be obligatory on her if it alone or combined with her other gold and silver reaches 52.5 tolas of silver, otherwise not. And Allah Almighty knows best.

Issue 39: From Nainital, Kashipur, asked by Dr. Ishtiaq Ali, 18 Safar al-Muzaffar 1334 AH. Question: Regarding Zakat, last year I had 150 rupees collected in Ramadan and I paid Zakat on 150 rupees. After two months, it became 200, and after another 2 months, it became 250, and now in Ramadan, it has become a full 300. I take out Zakat every year in Ramadan. So now should I pay on 300 rupees or only on 150 because the money that increased after 150 has not completed a full year? The

Answer: When the Nisab remains, then however much wealth increases within the year, at the completion of the year of the first Nisab, Zakat is due on all of it...

फतावा रजविया, खंड दस

[बॉक्स किया हुआ टेक्स्ट] 'अज़-दिमार' वह माल है जिससे स्वामित्व के बने रहने के बावजूद लाभ उठाना संभव न हो। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। [पादलेख 1: दुर्रे मुख़्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबअ मुजतबाई दिल्ली, 1/129] यानी माले-दिमार पर ज़कात नहीं है, माले-दिमार वह है जो स्वामित्व में होने के बावजूद उससे लाभ उठाना संभव न हो। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला ३८: स्थान दरू, जिला नैनीताल से, प्रेषक अब्दुल्ला दुकानदार साहब, २ रबी-उल-अव्वल शरीफ़ १३३२ हिजरी। प्रश्न: धर्म के विद्वान और शरीयत के ज्ञाता इस विषय में क्या कहते हैं कि एक व्यक्ति के पास ६० रुपये नकद हैं, ५० रुपये के आभूषण उसकी पत्नी के हमेशा पहनने के लिए हैं, और वह ५० रुपये की दुकानदारी करता है। कुल यही संपत्ति है। इसमें ९५ रुपये पत्नी के महर (स्त्रीधन) का ऋण है। जो वह दुकानदारी करता है उसे वैसा ही समझना चाहिए जैसे किसान के हल जोतने के बैल, और दुकानदारी का सूत ढोने के लिए २५ रुपये मूल्य का एक घोड़ा है। इस स्थिति में पहले माल पर ज़कात होनी चाहिए या नहीं? जैसा शरीयत का हुक्म हो वैसा अमल किया जाए। साथ ही साल भर खाने के लिए अनाज भी उसके घर में नहीं है। उत्तर दें और पुण्य प्राप्त करें। अल-जवाब: आजकल महिलाओं का महर आमतौर पर 'महर मुअज्जल' (विलंबित महर) होता है, जिसकी मांग मृत्यु या तलाक के बाद होगी। पुरुष अपने तमाम खर्चों में कभी यह सोचता भी नहीं कि मुझ पर यह ऋण है। ऐसा महर ज़कात के अनिवार्य होने में बाधा नहीं बनता। साल पूरा होने पर अगर उसके पास ये साठ रुपये बचते हैं, तो उस पर ज़कात अनिवार्य होगी। ज़कात का निसाब ५६ रुपये (५२.५ तोला चांदी) है। अगर वे आभूषण पति के स्वामित्व में हैं, तो उन्हें भी शामिल किया जाएगा और ११० पर ज़कात अनिवार्य होगी। और अगर वह व्यापारिक माल भी बचा, तो उसे भी शामिल किया जाएगा और कुल १६० पर होगी। संक्षेप में, इन तीनों प्रकार के मालों में से साल पूरा होने पर अगर ५६ रुपये की मात्रा के बराबर माल होगा, तो ज़कात अनिवार्य है, अन्यथा नहीं। और अगर आभूषण पत्नी के स्वामित्व में हैं, तो उसकी ज़कात उस पर अनिवार्य होगी, बशर्ते कि वह स्वयं या उसके पास मौजूद अन्य सोने-चांदी को मिलाकर साढ़े बावन तोला चांदी हो जाए, अन्यथा नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ३९: नैनीताल काशीपुर से, प्रेषक डॉ. इश्तियाक अली, १८ सफ़र उल मुज़फ़्फ़र १३३४ हिजरी। प्रश्न: ज़कात के संबंध में, पिछले साल रमज़ान में मेरे पास १५० रुपये जमा थे और मैंने १५० रुपये पर

ज़कात दी थी। दो महीने बाद २०० हो गए, फिर २ महीने बाद २५० हो गए और अब रमज़ान में पूरे ३०० हो गए हैं। मैं हर साल रमज़ान में ज़कात निकालता हूँ। तो अब मुझे ३०० रुपये पर देनी होगी या केवल १५० पर, क्योंकि १५० के बाद जो रुपये बढ़े हैं, उनका पूरा एक साल नहीं बीता है? अल-जवाब: जब तक निसाब बाकी रहे, साल के भीतर जितना भी माल बढ़े, पहले निसाब का साल पूरा होने पर उस पूरे पर...

पृष्ठ ८३६ का १४७

[باکس میں تحریر] الضِمارُ وھو مالا یمکِنُ الانتفاعُ بہ مع بقاء الملك۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ [حاشیہ 1: در مختار، کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی، ۱۲۹/۱] کہ مالِ ضمار پر زکوۃ نہیں، مالِ ضمار وہ کہ ملکیت ہونے کے باوجود اس سے انتفاع ممکن نہ ہو۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۳۸: از مقام درو ضلع نینی تال، مسئولہ عبداللہ دکاندار صاحب ۲ ربیع الاول شریف ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص کے پاس ساٹھ روپے نقد ہیں اور پچاس روپے کا اس کی عورت پر زیور ہر وقت پہننے کا اور پچاس روپے کی دکانداری کرتا ہے کل یہی اسباب ہے اور اس میں پچانوے روپے مہر عورت کا قرض ہے اور جو دکان کرتا ہے وہ ایسا سمجھنا چاہئے کہ جیسے کاشتکار کے ہل جوتنے کے بیل اور گھوڑا پچیس ۲۵ روپے کی قیمت کا ہے دکانداری کا سوت لادنے کے واسطے، اس حالت میں اول مال پر زکوۃ ہونی چاہئے یا نہیں؟ جیسا کہ شرع شریف کا حکم ہو عمل کیا جائے، اور سال بھر کے کھانے کا اناج بھی اس کے گھر میں نہیں ہے۔ بینوا توجروا۔ الجواب: آج کل عورتوں کا مہر عام طور پر مہر مؤخر ہوتا ہے جس کا مطالبہ بعد موت یا طلاق ہوگا مرد کو اپنے تمام مصارف میں کبھی خیال بھی نہیں آتا کہ مجھ پر یہ دین ہے ایسا مہر مانع وجوب زکوۃ نہیں ہوتا، سال تمام پر اس کے پاس اگر یہ ساٹھ روپے بچے تو اس پر زکوۃ واجب ہوگی، زکوۃ کا نصاب ۵۶ روپے (۲/۱-۵۲ تولہ چاندی) ہے، اور وہ زیور اگر شوہر کی ملک ہے تو وہ بھی شامل کیا جائے گا ایک سو دس پر زکوۃ واجب ہوگی، اور اگر وہ مالِ تجارت بھی بچا تو وہ بھی شامل ہوگا ایک سو ساٹھ پر ہوگی، غرض ان تینوں مالوں میں سے سال تمام پر اگر ۵۶ روپے کی قدر ہوگا تو زکوۃ واجب ہے ورنہ نہیں، اور اگر

زیور عورت کی ملک ہے تو اس کی زکوۃ اس پر واجب ہوگی جبکہ وہ خود یا اس کی ملک کا اور سونا چاندی ملا کر ساڑھے باون تولے چاندی ہو ورنہ نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۳۹: از نینی تال کاشی پور مسئولہ ڈاکٹر اشتیاق علی، ۱۸ صفر المظفر ۱۳۳۴ھ متعلق زکوۃ پار سال میرے پاس ایک سو پچاس روپے رمضان میں جمع تھے اور زکوۃ میں نے ایک سو پچاس روپے پر دی تھی، دو ماہ بعد ۲۰۰ ہو گئے اور ۲ ماہ بعد ۲۵۰ ہو گئے اور اب رمضان میں پورے تین سو ہو گئے، اور میں ہر سال رمضان میں زکوۃ نکالا کرتا ہوں تو اب مجھ کو تین سو روپے پر دینا ہوگی یا صرف ۱۵۰ پر کیونکہ ۱۵۰ کے بعد جو روپے بڑھے ہیں ان کو پورا ایک سال نہیں گزرا ہے۔ الجواب: نصاب جبکہ باقی ہو تو سال کے اندر اندر جس قدر مال بڑھے اسی پہلے نصاب کے سال تمام پر اس کُل کی...

صفحہ 836 کا 147

Zakat will become obligatory. For example, if a year completes on the 1st of Ramadan and a person had only 100 rupees, and on the 30th of Sha'ban ten thousand more were received, then a few hours later when the 1st of Ramadan arrives, Zakat will be obligatory on the entire ten thousand one hundred. And Allah Almighty knows best.

Problem 40: From the city of Bareilly, Jasoli Mohalla, asked by Hafiz Ali Shah Sahib, 4 Sha'ban 1337 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say on this issue: Zaid has set aside money for the marriage of his three daughters, of whom two are minors (pre-pubescent) and one is of marriageable age (attained puberty). Now, is it obligatory for Zaid to pay Zakat on this money or not?

Answer: It is definitely obligatory. However, in that case, if he separates each minor girl's share and says, "I have made her the owner of this," then no Zakat will be obligatory on anyone until they reach puberty. After reaching puberty, if the conditions of Zakat are met, it will be obligatory on those girls. For the adult daughter, he should separate her share, make her the owner, and give it into her possession, even if he then takes it back from her to keep with him. The Zakat for this portion will be obligatory on that adult daughter according to the conditions. And Allah Almighty knows best.

Problem 41 to 43: From the city of Bareilly, sent by Shaukat Ali Faruqi, 4 Ramadan-ul-Mubarak 1337 AH. What do the scholars of religion say in these matters: (1) Do currency notes and silver rupees have the same ruling? A note is separate paper from silver and gold. (2) What percentage of Zakat has to be given? (3) For the money on which Zakat was paid in the first year, and the remaining money continued to be kept until the second year, now upon the arrival of the second year, will Zakat have to be paid again from that same money for which Zakat was already paid in the first year? Please clarify and be rewarded.

Answer: (1) The ruling for currency notes and rupees cannot be the same. A silver rupee is inherently money (natural currency), while a note is paper which is conventional money (legal tender). So, as long as it circulates, its ruling is like copper coins (paisa), which are also conventional money. (2) Zakat is one-fortieth part on every Nisab and Khums (one-fifth), and according to the Madhhab of the Sahiban (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad), it is a very easy calculation and beneficial for the poor: two and a half rupees per hundred (2.5%). (3) If kept for ten years, Zakat will be obligatory every year as long as it does not fall below the Nisab. This is

because if the first year's Zakat was not paid, one is a debtor for that amount in the second year, so after deducting that, Zakat will be on the remainder. Third...

दसवाँ खंड फ़तावा रज़विया

ज़कात फ़र्ज़ होगी, उदाहरण के लिए १ रमज़ान को साल पूरा होगा और उसके पास केवल सौ रुपये थे, ३० शाबान को दस हज़ार और आ गए कि साल पूरा होने से कुछ घंटे पहले जब १ रमज़ान आएगी, तो इस पूरे दस हज़ार एक सौ पर ज़कात फ़र्ज़ होगी, और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला ४०: बरेली शहर, जसोली मुहल्ला से, हफ़ीज़ अली शाह साहब द्वारा पूछा गया, ४ शाबान १३३७ हिजरी। दीन के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस मसले पर क्या कहते हैं: ज़ैद ने अपनी तीन बेटियों की शादी के लिए पैसा अलग कर दिया है, जिनमें से दो नाबालिग हैं और एक शादी के लायक (बालिग) है। अब, क्या ज़ैद पर इस पैसे पर ज़कात देना वाजिब है या नहीं?

उत्तर: ज़रूर वाजिब है। लेकिन उस स्थिति में, यदि वह प्रत्येक नाबालिग लड़की का हिस्सा अलग कर दे और कहे कि "मैंने उसे इसका मालिक बना दिया है", तो उनके बालिग होने तक किसी पर भी ज़कात वाजिब नहीं होगी। बालिग होने के बाद यदि ज़कात की शर्तें पाई गईं, तो उन लड़कियों पर वाजिब होगी। बालिग बेटी के लिए, वह उसका हिस्सा अलग कर दे, उसे उसका मालिक बना दे और उसके कब्ज़े में दे दे, भले ही वह फिर उससे लेकर अपने पास रख ले। इस हिस्से की ज़कात शर्तों के अनुसार उस बालिग बेटी पर वाजिब होगी। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला ४१ से ४३: बरेली शहर से, शौकत अली फ़ारूक़ी द्वारा प्रेषित, ४ रमज़ान-उल-मुबारक १३३७ हिजरी। दीन के विद्वान इन मामलों में क्या कहते हैं: (१) क्या नोट और रुपये का एक ही हुक्म है? नोट तो चांदी और सोने से अलग कागज़ है। (२) प्रतिशत के हिसाब से कितनी ज़कात देनी होती है? (३) जिस रुपये से पहले साल में ज़कात दे दी गई और बाकी रुपया वैसे ही दूसरे साल तक रखा रहा, अब दूसरे साल आने पर क्या फिर उसी रुपये में से ज़कात देनी होगी जिसमें पहले साल ज़कात दे चुका है? बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: (१) नोट और रुपये का हुक्म एक नहीं हो सकता। चांदी का रुपया प्राकृतिक मुद्रा (पायदाइशी समन) है और नोट कागज़ है जो कि पारंपरिक मुद्रा (इस्तलाही समन) है। तो जब तक यह प्रचलन में है, इसका हुक्म पैसों (तांबे के सिक्के) की तरह है, जो कि पारंपरिक मुद्रा भी हैं। (२) ज़कात हर निसाब और खुम्स (पाँचवें हिस्से) पर चालीसवां हिस्सा है और साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद) के मज़हब पर गणना बहुत आसान है और गरीबों के लिए लाभदायक है: प्रति सौ ढाई रुपये (२.५%)। (३) दस साल रखा, हर साल ज़कात वाजिब होगी जब तक कि वह निसाब से कम न हो

जाए। यह इसलिए है क्योंकि जब पहले साल की ज़कात नहीं दी गई, तो दूसरे साल वह उस राशि का ऋणी है, इसलिए उतना कम करके बाकी पर ज़कात होगी। तीसरा...

पृष्ठ ८३६ का १४८

زکوۃ فرض ہو گی ، مثلاً یکم رمضان کو سال تمام ہو گا اور اس کے پاس صرف سو روپے تھے تیس شعبان کو دس ہزار اور آئے کہ سال تمام سے چند گھنٹے بعد جب یکم رمضان آئے گی اس پورے دس ہزار ایک سو پر زکوۃ فرض ہو گی، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۴۰: از شہر بریلی محلہ جسولی مسئولہ حافظ علی شاہ صاحب ۴ شعبان ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید نے اپنے تین لڑکیوں کی شادی کے واسطے روپیہ علیحدہ کر دیا ہے جس میں سے دو لڑکیاں نابالغ ہیں اور ایک قابل ہے شادی کے، اب اس روپیہ کی زید پر زکوۃ دینا واجب ہے یا نہیں؟ الجواب: ضرور واجب ہے مگر اُس حالت میں ہر نابالغہ کا حصہ جُدا کر کے یہ کہہ دے کہ میں نے اسے اُس کا مالک کیا، اس کی زکوۃ ان کے بلوغ تک کسی پر واجب نہ ہو گی، بعد بلوغ اگر شرائطِ زکوۃ پائے گئے تو ان لڑکیوں پر واجب ہو گی اور بالغہ کا حصہ جُدا کر کے اسے مالک کر دے اور اس کے قبضے میں دے دے اگرچہ پھر اس سے لے کر اپنے پاس رکھ لے، اس حصّہ کی زکوۃ حسب شرائط اُس بالغہ پر ہو گی ۔ واللہ تعالٰی اعلم مسئلہ ۴۱ تا ۴۳: از شہر بریلی مرسلہ شوکت علی فاروقی ۴ رمضان المبارک ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں: (۱) کیانوٹ اور روپیہ کا ایک ہی حکم ہے، نوٹ تو چاندی سونے سے علیحدہ کاغذ ہے۔ (۲) فی صدی زکوۃ کیا دینا ہوتا ہے۔ (۳) جس روپیہ سے زکوۃ پہلے سال میں دے دی اور باقی روپیہ بدستور دوسرے سال تک رکھا رہا اب دوسرے سال آنے پر کیا پھر اُسی روپیہ میں سے جس میں پہلے سال زکوۃ دے چکا ہے زکوۃ دینا ہو گی بینوا توجروا۔ الجواب: (۱) نوٹ اور روپیہ کا حکم ایک نہیں ہو سکتا، روپیہ چاندی ہے کہ پیدائشی ثمن ہے اور نوٹ کاغذ کہ اصطلاحی ثمن ہے تو جب تک چلے اس کا حکم پیسوں کے مثل ہے کہ وہ بھی

اصطلاحی ثمن ہے۔ (۲) زکوۃ ہر نصاب و خمس پر چالیسواں حصہ ہے اور مذہب صاحبین پر نہایت آسان حساب اور فقراء کے لیے نافع ہے کہ فیصدی ڈھائی روپے۔ (۳) دس برس رکھا، ہر سال زکوۃ واجب ہو گی جب تک نصاب سے کم نہ رہ جائے، یہ اس لیے کہ جب پہلے سال کی زکوۃ نہ دی دوسرے سال اس قدر کا مدیون ہے تو اتنا کم کر کے باقی پر زکوۃ ہو گی، تیسرے

The Zakat for both previous years is a debt upon it, so the total will be reduced and it will be on the remainder. Similarly, after deducting the Zakat for all previous years, if the remaining amount alone or combined with other Zakat-eligible assets reaches the Nisaab (threshold), then Zakat is due; otherwise, it is not. And Allah Almighty knows best.

Problem 44: Questioned by Shamsuddin Ahmed from Farrukhabad. 12 Shawwal 1337 AH. Jewelry that someone has had made for their children, i.e., girls, and transferred ownership to them, while those children are still minors and not yet liable to pay Zakat - should one include the children's jewelry in the calculation when paying Zakat on one's wife's jewelry and cash? Please explain, may you be rewarded.

Answer: For jewelry gifted to children, there is no Zakat on the parent or the children. Not on the parent because it is no longer their property, and not on the children because they have not reached puberty. And Allah Almighty knows best.

Problems 45 to 47: 22 Shawwal 1314 AH. What do the scholars of religion say regarding: (1) For girls who are discerning but still minors, should Zakat be paid on their jewelry or not? (2) I pawned/mortgaged my jewelry for the necessity of my daughter's wedding as my husband was unemployed at that time. I continued to pay Zakat on the remaining jewelry I had, but didn't pay it on the mortgaged jewelry. It remained mortgaged for seven or eight years. Now that I have redeemed it, is Zakat due for those seven or eight years or not? (3) When my husband took the loan, he kept my jewelry as collateral with my mother. There was also a little more jewelry that wasn't mortgaged at that time and has been with me since then, but Zakat hasn't been paid on it because of the consideration of the debt.

Answer: (1) Jewelry made for minor girls, if ownership has not been transferred to them yet but is kept under one's own ownership and they only use it for wearing—even if the intention is to give it in their dowry after marriage—then that jewelry belongs to the parent who made it. If that jewelry alone, or combined with their other assets, reaches the amount of Nisaab, then Zakat is due on that owner. However, if it has been transferred to the ownership of the minor girls, then Zakat is not due from anyone. Not from the parents because it's not their property, and not from the girls because they are pre-pubescent. When they become adults, Zakat rules will apply to them from that time onwards.

फतावा रज़विया जिल्द दहुम (दसवीं)

पिछले दोनों वर्षों की ज़कात उस पर ऋण (कर्ज़) है, तो कुल घटाकर शेष पर होगी। इसी तरह पिछले सभी वर्षों की ज़कात घटाने के बाद जो बचे, यदि वह स्वयं या उसके अन्य ज़कात योग्य माल के साथ मिलकर निसाब (सीमा) तक पहुँचता है, तो ज़कात होगी अन्यथा नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 44: शम्सुद्दीन अहमद, फर्रुखाबाद की ओर से। 12 शव्वाल 1337 हिजरी। वह गहने जो किसी ने अपने बच्चों यानी लड़कियों के लिए बनवाए और उन्हें उनकी मिल्कियत (स्वामित्व) में दे दिया, और वे बच्चे अभी नाबालिग हैं और ज़कात देने के योग्य नहीं हैं - क्या अपनी पत्नी के गहनों और नकदी की ज़कात देते समय बच्चों के गहनों को भी हिसाब में शामिल करना चाहिए या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

जवाब: जो गहने बच्चों को हिबा (उपहार) कर दिए गए, उनकी ज़कात न तो माता-पिता पर है और न ही बच्चों पर। माता-पिता पर इसलिए नहीं क्योंकि वह अब उनकी मिल्कियत नहीं है, और बच्चों पर इसलिए नहीं क्योंकि वे बालिग नहीं हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 45 से 47: 22 शव्वाल 1314 हिजरी। धर्म के विद्वान क्या कहते हैं कि: (1) जो लड़कियाँ समझदार हैं लेकिन नाबालिग हैं, क्या उनके गहनों पर भी ज़कात होनी चाहिए या नहीं? (2) मैंने अपनी बेटी की शादी की ज़रूरत के लिए अपने गहने गिरवी रखे, उस समय मेरे पति बेरोजगार थे। मेरे पास जो बाकी गहने थे उनकी ज़कात तो मैं अदा करती रही, लेकिन जो गिरवी थे उनकी ज़कात नहीं दी। वे सात-आठ साल गिरवी रहे। अब मैंने उन्हें छुड़ा लिया है, तो क्या उन सात-आठ सालों की ज़कात देनी चाहिए या नहीं? (3) पति ने जब ऋण लिया था, तो मेरे गहने मेरी माँ के पास गिरवी रख दिए थे। इसके अलावा थोड़ा और गहना था जो उस समय गिरवी नहीं रखा गया था और तब से अब तक मेरे पास है, लेकिन ऋण के विचार से उसकी ज़कात अब तक नहीं दी गई है।

जवाब: (1) नाबालिग लड़कियों के लिए जो गहने बनवाए गए, यदि उन्हें अभी उनका मालिक नहीं बनाया गया बल्कि अपनी ही मिल्कियत में रखा गया और वे केवल उन्हें पहनने के काम में लाती हैं - चाहे नीयत यह हो कि शादी होने पर उन्हें दहेज में दे देंगे - तो वह गहना उसी माता-पिता की मिल्कियत है जिसने उसे बनवाया है। यदि वह गहना अकेला या उसके अन्य माल के साथ मिलकर निसाब की मात्रा तक पहुँचता है, तो उसी मालिक पर उसकी ज़कात वाजिब है। और यदि नाबालिग

लड़कियों को उसका मालिक बना दिया गया, तो उसकी ज़कात किसी पर नहीं है। माता-पिता पर इसलिए नहीं कि वह उनकी मिल्कियत नहीं है, और लड़कियों पर इसलिए नहीं कि वे नाबालिग हैं। जब वे बालिग (वयस्क) होंगी, तब से उन पर ज़कात के नियम लागू होंगे।

سال اگلے دونوں برسوں کی زکوٰۃ اس پر دین ہے تو مجموع کم کرکے باقی پر ہوگی، یوں اگلے سب برسوں کی زکوٰۃ منہا کرکے جو بچے اگر خود یا اس کے اور مال زکوٰۃ سے مل کر نصاب ہے تو زکوٰۃ ہوگی ورنہ نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۴۴: مسئولہ شمس الدین احمد از فرخ آباد ۱۲ شوال ۱۳۳۷ھ وہ زیور جو کسی نے اپنے بچوں یعنی لڑکیوں کو بنوا دیا اور ان کی ملک میں کر دیا اور وہ بچے ابھی نابالغ ہیں زکوٰۃ دینے کے لائق ہی نہیں یعنی اپنی بی بی کے زیور اور نقد دیتے وقت بچوں کا زیور حساب میں شامل کرے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: جو زیور بچوں کو ہبہ کر دیا اس کی زکوٰۃ نہ اس پر نہ بچوں پر، اس پر اس لیے نہیں کہ یہ ملک نہیں، ان پر اس لیے نہیں کہ وہ بالغ نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۴۵ تا ۴۷: ۲۲ شوال ۱۳۱۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ: (۱) جو لڑکیاں نکتہ داں ہیں اور نابالغ، ان کے زیور کی بھی زکوٰۃ ہونی چاہئے یا نہیں؟ (۲) میں نے لڑکی کی شادی کی ضرورت سے اپنا زیور رہن کیا، شوہر اس وقت میں بیکار تھے، باقی زیور جو میرے پاس تھا اس کی زکوٰۃ تو میں ادا کرتی رہی، جو رہن تھا اس کی زکوٰۃ نہ دی، سات آٹھ برس رہن رہا، اب میں نے چھڑایا تو اس سات آٹھ برس کی زکوٰۃ چاہئے یا نہیں؟ (۳) شوہر نے جس وقت قرض لیا تھا تو زیور میرا بطور رہن کے رکھ دیا تھا میری والدہ کے پاس، تو اور تھوڑا زیور جو اس وقت میں بھی رہن نہ رکھا تھا جب سے اب تک میرے پاس ہے اور زکوٰۃ جب سے نہیں دی گئی قرضے کا خیال کر کے۔

الجواب: (۱) نابالغ لڑکیوں کا جو زیور بنایا گیا اگر ابھی انہیں مالک نہ کیا گیا بلکہ اپنی ہی ملک پر رکھا اور ان کے پہننے کے صرف میں آتا ہے اگرچہ نیت یہ ہو کہ بیاہ ہونے پر ان کے جہیز میں دے دیں گے، جب تو وہ زیور ماں باپ جس نے بنایا ہے اسی کی ملک ہے، اگر تنہا یا اس کے اور مال سے مل کر قدر نصاب اسی مالک پر اس کی زکوٰۃ ہے اور اگر نابالغ لڑکیوں کی ملک کر دیا گیا تو اس کی زکوٰۃ کسی پر نہیں، ماں باپ پر تو یوں نہیں کہ ان کی ملک نہیں، اور لڑکیوں پر یوں نہیں کہ وہ نابالغہ ہیں، جب جوان ہوں گی اس وقت سے ان پر احکام زکوٰۃ۔

...and other such rules will apply. (2) Zakat is not obligatory for those years because the wealth which has been pledged as collateral (Rahn) is not in one's own possession, nor in the possession of one's deputy. It is stated in Bahr al-Ra'iq:

[Arabic Text Section] "Absolute ownership (Al-Milk) refers to complete ownership, which means owning both the essence (Raqabah) and the possession (Yadan). Therefore, Zakat is not obligatory on a buyer for what he purchased for trade before taking possession. This is stated in Ghayat al-Bayan. The objection regarding the wayfarer (Ibn al-Sabil) does not apply here because the possession of his deputy is considered like his own possession. Similarly stated in Mi'raj al-Dirayah. Among the obstacles to the obligation (of Zakat) is a pledge (Rahn) when it is in the hands of the pledgee (Murtahin), due to the lack of possessory ownership. This is in contrast to 'Ushr (tithe), where it is obligatory. Similarly stated in al-'Inayah [Summary ends]."

In Durr al-Mukhtar: "Nor on a pledged item after its possession [by the pledgee]." (Zakat is not due on mortgaged property after possession - T). In al-Tahtawi it is stated:

[Arabic Text Section] "Meaning, Zakat is not due on the pledgee (Murtahin) due to lack of ownership, nor on the pledgor (Rahin) due to lack of possession. When the pledgor recovers the item, he does not pay Zakat for the past years. This is the meaning of the commentator's phrase 'after possession'. The statement from al-Bahr supports this: 'Among the obstacles to obligation is the pledge (Rahn)'. Al-Halabi stated that its literal meaning indicates this, even if the value of the pledge exceeds the debt. And Allah Almighty knows best."

Footnotes: 1. Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Zakat, H.M. Saeed Karachi, 2/203. 2. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Mujtabai Press Delhi, 1/129. 3. Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Dar al-Ma'rifah Beirut, 391-92.

फ़तावा रज़विया | खंड 10

...आदि नियम लागू होंगे। (2) उन वर्षों की ज़कात वाजिब नहीं है क्योंकि जो माल गिरवी (रहन) रखा गया है, उस पर अपना कब्ज़ा नहीं है, और न ही अपने प्रतिनिधि (नायब) का कब्ज़ा है। 'बहर अल-रैक' में उल्लेख है:

[अरबी पाठ अनुभाग] "मलिक का उल्लेख निरपेक्ष रूप से किया गया है, इसलिए इससे पूर्ण स्वामित्व (मिल्कियत-ए-कामिला) मुराद होगी। और वह सार (रकबा) और कब्ज़ा (यदा) दोनों तरह से स्वामित्व होना है। इसलिए खरीदार पर उस वस्तु पर ज़कात वाजिब नहीं होगी जो उसने व्यापार के लिए खरीदी है जब तक कि उस पर कब्ज़ा न हो जाए। 'ग़ायत अल-बयान' में इसी तरह है। मुसाफ़िर (इब्न अल-सबील) के मामले में इस पर कोई आपत्ति लागू नहीं होती क्योंकि उसके नायब का कब्ज़ा उसके अपने कब्ज़े की तरह है। 'मेराज अद-दराया' में भी ऐसा ही है। ज़कात वाजिब होने में बाधाओं में से एक गिरवी (रहन) भी है जब वह गिरवी रखने वाले (मुर्तहिन) के कब्ज़े में हो, क्योंकि कब्ज़े वाले स्वामित्व की कमी होती है। 'उश्र' (दशमांश) के विपरीत, जहाँ यह वाजिब है। 'अल-इनाया' में इसी तरह है [संक्षेप में समाप्त]।"

'दुर्र अल-मुख्तार' में है: "कब्ज़ा होने के बाद गिरवी रखी गई वस्तु पर ज़कात नहीं है।" (कब्ज़े के बाद गिरवी रखी चीज़ में ज़कात नहीं है - त)। 'तहतवी' में कहा गया है:

[अरबी पाठ अनुभाग] "यानी मुर्तहिन (गिरवी रखने वाला) पर ज़कात इसलिए नहीं है क्योंकि वहाँ स्वामित्व नहीं है, और न ही राहिन (गिरवी रखने वाला) पर है क्योंकि उसका कब्ज़ा नहीं है। जब राहिन उस चीज़ को वापस प्राप्त करेगा, तो वह पिछले वर्षों की ज़कात नहीं देगा। टिप्पणीकार (शारह) के कथन 'कब्ज़ा होने के बाद' का यही अर्थ है और इस पर 'बहर' का यह कथन प्रमाण है: 'ज़कात वाजिब होने में बाधाओं में से गिरवी (रहन) है'। अल-हलबी ने कहा कि इसका स्पष्ट अर्थ यही बताता है, चाहे गिरवी रखी चीज़ ऋण की राशि से अधिक हो। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।"

पाद-टिप्पणियाँ: 1. बहर अल-रैक, किताब अल-ज़कात, एच.एम. सईद कराची, 2/203. 2. दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-ज़कात, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/129. 3. हाशिया अत-तहतवी अला अद-दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-ज़कात, दार अल-मआरिफ़ा बेरूत, 391-92.

पृष्ठ 150 का 836

وغیرہ کے جاری ہوں گے۔ (۲) ان برسوں کی زکوٰۃ واجب نہیں کہ جو مال رہن رکھا ہے اس پر اپنا قبضہ نہیں، نہ اپنے نائب کا قبضہ ہے ، بحر الرائق میں ہے:

[عربی عبارت کے ساتھ اردو تشریح] اطلق الملك فانصرف الی الکامل وھو المملوك رقبة ویدا: ملک کا ذکر مطلق کیا ہے لہذا اس سے ملکیت کاملہ مراد ہو گی اور وہ رقبۃ اور یدا دونوں طرح مملوک ہونا ہے فلا یجب علی المشتری فیما اشتراہ للتجارة قبل القبض کذا فی غایة البیان: لہذا مشتری پر قبض سے پہلے اس شئی پر زکوٰۃ نہ ہو گی جو اس نے بطورِ تجارت خریدی، غایۃ البیان میں اسی طرح ہے ۔ ولا یلزم علیہ ابن السبیل لان ید نائب کیدہ کذا فی معراج الدرایة: اس پر مسافر کے ساتھ اعتراض لازم نہیں آتا کیونکہ اس کے نائب کا قبضہ اسکے اپنے قبضے کی طرح ہے، معراج الدرا یہ میں ایسے ہی ہے۔ ومن موانع الوجوب الرھن اذا کان في ید المرتھن لعدم ملك الید بخلاف العشر حیث یجب فیه کذا في العنایة اھ مختصرًا: اور موانع وجوب میں رہن بھی ہے جبکہ وہ مرتہن کے قبضہ میں ہو کیونکہ اس صورت میں ملکیت نہیں بخلاف عشر کے، وہاں واجب ہے ، العنایہ اھ مختصراً (ت)

در مختار میں ہے: ولا في مرھون بعد قبضه (قبضہ کے بعد مرہونہ شئی میں زکوٰۃ نہیں ۔ت)

طحطاوی میں ہے :

ای علی المرتھن لعدم الملك ولاعلی الراھن لعدم الید: یعنی مرتہن پر زکوٰۃ اس لیے نہیں کہ وہاں ملکیت نہیں، نہ ہی راہن پر ہے کیونکہ اس کا قبضہ نہیں واذا استردہ الراھن لا یزکی من السنین الماضیة وھو معنی قول الشارح بعد قبضه: جب راہن اس شئی کو واپس لے گا تو گزشتہ سالوں کی

زکوٰۃ نہیں دے گا، شارح کے قول "قبضہ کے بعد " کا یہی معنی ہے ویبدل علیه قول البحر ومن موانع الوجوب الرھن اہ حلبی وظاھرہ ولو کان الرھن ازید من الدین اھ واللہ تعالی اعلم: اور اس پر بحر کی یہ عبارت دال ہے ، موانع وجوب میں سے رہن ہے اھ حلبی، اس کا ظاہر بتا رہا ہے کہ اگر چہ رہن قرض سے زائد ہواھ ۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

حواشی: 1. بحر الرائق کتاب الزکوۃ ایچ ایم سعید کراچی ۲۰۳/۲ 2. در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱۲۹/۱ 3. حاشیۃ الطحطاوی علی الدر المختار کتاب الزکوۃ دار المعرفۃ بیروت ۹۲-۳۹۱

Fatawa Razviya, Volume 10

(3) From the statement of the female questioner, it is clear that she herself gave this jewelry to her husband for the purpose of a pledge. He had pledged it with her permission, so this pledge was also a valid pledge. Thus, it is apparent here as well that Zakat is not obligatory for that period,

Due to the lack of complete ownership, for it is not owned in terms of possession since the possession of a pledge is a possession for fulfillment, as stated in Al-Hidayah. [1]	**On the basis of not having complete ownership, because in terms of possession it is not owned, for the possession of a pledge is the possession for recovery, as it is in Hidayah. (T)**

And after the aforementioned right is attached, it is not necessary that the debt itself be upon him. Therefore, if a person guarantees a debt on behalf of someone else, his property will be considered occupied to the extent of that debt, as the creditor has the right of recovery from it even if the debt is not originally upon him. It is stated in Durr al-Mukhtar:

Free from a debt demanded by people, whether it is for Allah Almighty, such as Zakat and Kharaj, or for a servant, even if it is a guarantee etc. [2]	**Should be free from such a debt whose demand is from the side of servants, whether it is for Allah Almighty, for example, Zakat, Kharaj, or the right of a servant, even if it is in the form of a guarantee. etc (T)**

In Radd al-Muhtar, it is stated:

It is said in al-Muhit: If someone borrows a thousand and ten people stand as guarantors for him, and each of them has a thousand in his house, and a year passes, then Zakat is not due on any one of them because of the preoccupation with the debt of guarantee, for he (the creditor) can take from whichever of them he wishes. Al-Bahr etc. [3]	**It is in Muhit that if someone borrowed a thousand rupees and ten people became guarantors on his behalf, and each one has one thousand rupees upon which a year passed, then Zakat is not due on any of them because that is occupied in debt guarantee, for the creditor can take the loan from any of them, Bahr etc (T)**

In Hidayah, it is stated:

If the borrowed item was a slave and the lender manumitted him, it is permissible because of the existence of the ownership of the neck (person). Then the pledgee has the choice: if he wishes, he can claim the debt.	**If a slave was given on loan and the lender freed him, then it is permissible because he is the owner of his neck (person). Then the pledgee (the one with whom it was pledged) has the option: if he wants, he can collect the debt from the pledgor because he...**

1. Al-Hidayah, Kitab al-Rahn, Matba' Yusufi Lucknow, 4/517.
2. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Matba' Mujtabai Delhi, 1/129.
3. Radd al-Muhtar, Kitab al-Zakat, Mustafa al-Babi Egypt, 2/6.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसम

(3) महिला प्रश्नकर्ता के बयान से यह स्पष्ट हो गया कि उसने स्वयं गिरवी रखने के उद्देश्य से ये गहने अपने पति को दिए थे। उसने उसकी अनुमति से इसे गिरवी रखा था, तो यह गिरवी भी एक वैध गिरवी थी। अतः यहाँ भी यही स्पष्ट है कि उस अवधि की ज़कात वाजिब नहीं होगी,

पूर्ण स्वामित्व की कमी के कारण, क्योंकि वह कब्जे के लिहाज़ से स्वामित्व में नहीं है क्योंकि गिरवी का कब्जा वसूली का कब्जा है, जैसा कि हिदाया में है। [1]

पूर्ण स्वामित्व न होने के आधार पर क्योंकि कब्जे के लिहाज़ से वह स्वामित्व में नहीं है, क्योंकि गिरवी का कब्जा वसूली का कब्जा है जैसा कि हिदाया में है। (त)

और उल्लिखित अधिकार के जुड़ने के बाद, यह आवश्यक नहीं है कि ऋण स्वयं उसी पर हो। इसलिए, यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य की ओर से उसके ऋण की गारंटी देता है, तो उसकी संपत्ति को उस ऋण की सीमा तक व्यस्त माना जाएगा, क्योंकि लेनदार को इससे वसूली का अधिकार प्राप्त है, भले ही ऋण मूल रूप से उस पर न हो। दुर्र-ए-मुख्तार में है:

उस ऋण से मुक्त जिसका माँग बंदों की ओर से हो, चाहे वह अल्लाह तआला के लिए हो जैसे ज़कात और ख़राज, या बंदे के लिए हो, भले ही वह ज़मानत (कफ़ालत) आदि हो। [2]

ऐसे ऋण से मुक्त हो जिसकी माँग बंदों की ओर से हो, चाहे अल्लाह तआला के लिए हो जैसे ज़कात, ख़राज या बंदे का अधिकार हो, भले ही वह ज़मानत के रूप में हो। आदि (त)

रद अल-मुहतार में है:

अल-मुहीत में कहा गया है: यदि कोई एक हज़ार उधार लेता है और दस व्यक्ति उसकी ओर से ज़मानत देते हैं, और उनमें से प्रत्येक के घर में एक हज़ार है और वर्ष बीत जाता है, तो उनमें से किसी एक पर भी ज़कात नहीं है क्योंकि वह ज़मानत के ऋण में व्यस्त है, क्योंकि उसे (लेनदार को) अधिकार है कि वह उनमें से जिससे चाहे ले ले। अल-बहर आदि। [3]

मुहीत में है कि अगर किसी ने एक हज़ार रुपये कर्ज लिया और उसकी तरफ से दस आदमी ज़ामिन (कफ़ील) बने और हर एक के पास एक-एक हज़ार रुपये हैं जिस पर साल गुज़र गया, तो उनमें से किसी पर ज़कात नहीं है क्योंकि वह कर्ज कफ़ालत (ज़मानत) में मशगूल (व्यस्त) है, क्योंकि कर्जख़्वाह (लेनदार) उनमें से किसी से भी कर्ज ले सकता है, बहर आदि (त)

हिदाया में है:

यदि उधार दी गई वस्तु एक गुलाम थी और उधार देने वाले (मुईर) ने उसे स्वतंत्र कर दिया, तो यह जायज़ है क्योंकि उसके व्यक्ति (रक़बा) का स्वामित्व बना हुआ है। फिर गिरवी रखने वाले (मुरतहन) को विकल्प है: यदि वह चाहे तो ऋण की वापसी की मांग कर सकता है।

अगर उधार दिया गया ग़ुलाम था उसे उधार देने वाले (मुईर) ने आज़ाद कर दिया तो जायज़ है क्योंकि वह उसकी गर्दन (व्यक्ति) का मालिक है फिर मुरतहन (जिसके पास गिरवी रखा गया) का अधिकार है अगर वह चाहे तो राहीन (गिरवी रखने वाले) से कर्ज वसूल करे क्योंकि उसने...

1. अल-हिदाया, किताब अल-रहन, मतबा यूसुफ़ी लखनऊ, 4/517।
2. दुर्रे मुख्तार, किताब अज़-ज़कात, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/129।
3. रद अल-मुहतार, किताब अज़-ज़कात, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/6।

فتاوی رضویہ جلد دھم

(۳) اظہار سائلہ سے واضح ہوا کہ یہ زیور بغرض رہن اس نے خود اپنے شوہر کو دیا اس نے اس کی اجازت سے رہن کیا تھا تو یہ رہن بھی رہن بالحق تھا، تو ظاہر یہاں بھی یہی ہے کہ اُس مدّت کی زکوۃ واجب نہ ہو،

لعدم الملك الكامل فانه ليس مملوكا يدا ملكيت كاملہ نہ ہونے کی بنا پر کیونکہ وہ قبضہ کے لحاظ لان قبض الرهن قبض استيفاء، كما سے مملوک نہیں ہے کیونکہ رہن کا قبضہ وصولی کا قبضہ في الهداية۔ 1 ہے جیسا کہ ہدایہ میں ہے۔ (ت)

اور بعد تعلق حق مذکور کے کچھ یہ ضرور نہیں کہ وہ دین خود اسی پر ہو لہذا اگر کوئی شخص کسی کی طرف سے اُس کے دَین کی ضمانت کرلے تو بمقدار دَین اس کا مال مشغول سمجھا جائیگا کہ دائن کو حق استیفاء اس سے حاصل ہے اگر چہ دین اصالتًا اس پر نہیں۔ در مختار میں ہے:

فارغ عن دين مطالب من جهة العباد ایسے دَین سے فارغ ہو جس کا مطالبہ بندوں کی طرف سے سواء كان لله تعالى كزكوة وخراج او ہو خواہ اللہ تعالٰی کے لیے ہو مثلاً زکوۃ، خراج یا بندے کا للعبد ولو كفالة الخ 2 حق ہو اگر چہ بطور کفالت ہو۔ الخ (ت)

رد المحتار میں ہے:

قال في المحيط لو استقرض الفا فكفّل عنه عشرة ولكلِ الف في بيته وحال الحول فلا زكوة على واحد منهم لشغله بدين الكفالة لان له ان يأخذ من ايهم شاء بحر الخ۔ 3

محیط میں ہے اگر کسی نے ہزار روپیہ قرض لیا اور اس کی طرف سے دس آدمی کفیل بنے اور ہر ایک کے پاس ایک ایک ہزار روپیہ ہے جس پر سال گزرا تو ان میں سے کسی پر زکوۃ نہیں کیونکہ وہ قرض کفالت میں مشغول ہے کیونکہ قرضخواہ ان میں سے کسی سے بھی قرض لے سکتا ہے، بحر الخ (ت)

ہدایہ میں ہے:

لو كانت العارية عبدا فأعتقه المعير جاز لقيام ملك الرقبة ثم المرتهن بالخيار ان شاء رجع بالدين

اگر عاریۃً غلام تھا اسے معیر نے آزاد کردیا تو جائز ہے کیونکہ وہ اس کی گردن کا مالک ہے پھر مرتہن کا اختیار ہے اگر وہ چاہے تو راہن سے دین وصول کرے کیونکہ اس نے

1 الہدایہ کتاب الرھن مطبع یوسفی لکھنؤ ۴ / ۵۱۷ 2 درمختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۲۹ 3 رد المحتار کتاب الزکوۃ مصطفیٰ البابی مصر ۲ / ۶

On the pledgor because he has not received it, and if he wishes, he can claim its value from the lender because the right has become attached to its essence and he has destroyed it by manumission, etc.	**If he has not obtained the replacement, he can, if he wishes, collect its price from the lender because the right is related to the neck [of the slave] with his consent, which he wasted by freeing him, etc. (T)**

Yes, the jewelry which was not a pledge, and since it has been in possession, if he gave it himself and it combined with other zakatable wealth to reach the nisab (minimum taxable amount), then as long as the nisab remained complete, zakat for that period is obligatory. The idea of the debt is a false notion because the debt was on the husband, and the zakat for the woman's jewelry is upon the woman, not the husband. However, regarding the zakat that accumulates, from its annual calculation, in the year when after deducting it, the wealth falls below the nisab, zakat for that year will not be obligatory. For example, by combining jewelry and other zakatable assets, in the first year it was exactly 210 dirhams; for this year, five dirhams of zakat became obligatory. In the second year, after deducting these five dirhams as a debt of zakat, it was as if it was 206 dirhams; five were still obligatory. In the fourth year, after deducting fifteen, it remained five less than two hundred; this is not the nisab, so zakat is no longer due; those same fifteen remain payable. However, if at the end of the year five more dirhams are received from somewhere else, making it two hundred dirhams again, then five dirhams will become necessary and twenty will become payable. It is mandatory to consider this calculation every year. Two hundred dirhams in Shariah are equivalent to fifty-six rupees, and for five dirhams, it is one rupee, six and a quarter annas, one dhela, and one-tenth of a paisa. And Allah knows best.

Issue 48: From Faridpur East, sent by Munshi Muhammad Ali Sahib, Deputy Nazir Tehsil Faridpur, 5th Rajab 1315 AH. What do the scholars of religion say about this: Zaid has four hundred rupees in addition to daily expenses, with this detail: he has already paid two hundred rupees to the homeowner for the purchase of a residential house, and has two hundred rupees in cash. Now, should Zaid pay zakat on four hundred rupees or on the two hundred he has in cash? When and by what calculation should he pay it? For example, if two hundred rupees cash accumulated with him from this month of Jamadi al-Thani, then in which month and how much should Zaid pay? And in case of non-payment, what accountability will be upon him? It is hoped

that for the sake of Allah Almighty, a detailed answer will be granted so that it is easy to understand and provides benefit for everyone in both worlds.

---

1. Al-Hidaya, Chapter on Disposal of Pledge, Yusufi Press Lucknow, 4/525.

रहन रखने वाले पर क्योंकि उसने इसे प्राप्त नहीं किया है, और यदि वह चाहे तो उधार देने वाले (मुइयर) से इसका मूल्य वसूल कर सकता है क्योंकि अधिकार उसकी गर्दन (मूल) से जुड़ गया है और उसने उसे स्वतंत्र करके नष्ट कर दिया है इत्यादि।

यदि उसने प्रतिस्थापन प्राप्त नहीं किया है, तो यदि वह चाहे तो उधार देने वाले से उसकी कीमत वसूल कर सकता है क्योंकि अधिकार उसकी गर्दन से उसकी सहमति के साथ संबंधित है, जिसे उसने आज़ाद करके नष्ट कर दिया है इत्यादि। (त)

हाँ, जो जेवर रहन (गिरवी) नहीं था और जब से पास है, अगर वह खुद दिया गया और ज़कात के माल के साथ मिलकर निसाब (न्यूनतम सीमा) तक पहुँच गया था, तो जब तक निसाब पूरा रहा, उस अवधि की ज़कात वाजिब (अनिवार्य) है। कर्ज़ का विचार एक गलत विचार है क्योंकि कर्ज़ पति पर था और महिला के जेवर की ज़कात महिला पर है, पति पर नहीं। हालाँकि, यह ज़कात जो बढ़ती गई, हर साल इसका हिसाब लगाने से, जिस साल इसे काटने के बाद माल निसाब के बराबर न रहे, उस साल की ज़कात वाजिब नहीं होगी। उदाहरण के तौर पर, जेवर और अन्य ज़कात वाली संपत्तियों को मिलाकर पहले साल में यह पूरी तरह से 210 दिरहम था; इस साल पाँच दिरहम ज़कात के वाजिब हुए। दूसरे साल में ज़कात के कर्ज़ के रूप में इन पाँच दिरहमों को काटने के बाद मानो यह 206 दिरहम था; अब भी पाँच वाजिब हुए। चौथे साल में पंद्रह काटने के बाद, यह दो सौ से पाँच कम रह गया; यह निसाब नहीं है, इसलिए अब ज़कात नहीं है; वही पंद्रह ही देय रहेंगे। लेकिन अगर साल के अंत में कहीं और से पाँच दिरहम मिल जाएँ, जिससे दो सौ दिरहम पूरे हो जाएँ, तो फिर पाँच दिरहम अनिवार्य हो जाएँगे और बीस वाजिब हो जाएँगे। हर साल यही हिसाब लगाना ज़रूरी है। शरीयत में दो सौ दिरहम छप्पन रुपये के बराबर होते हैं, और पाँच दिरहम के लिए एक रुपया, सवा छह आने, एक ढेला और पैसे का दसवां हिस्सा होता है। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला 48: फरीदपुर पूर्व से, मुंशी मोहम्मद अली साहब, नायब नाज़िर तहसील फरीदपुर द्वारा प्रेषित, 5 रजब 1315 हिजरी। धर्म के विद्वान इस बारे में क्या कहते हैं: ज़ैद के पास दैनिक खर्चों के अलावा चार सौ रुपये हैं, इस विवरण के साथ: उसने आवासीय घर खरीदने के लिए मकान मालिक को दो सौ रुपये दे दिए हैं, और दो सौ रुपये नकद रखे हैं। अब, क्या ज़ैद को चार सौ रुपये पर ज़कात देनी चाहिए या दो सौ पर जो उसके पास नकद हैं? उसे कब और किस हिसाब से इसका भुगतान करना चाहिए? उदाहरण के तौर पर, यदि इसी महीने जमादी-उल-सानी से उसके पास दो सौ रुपये नकद

जमा हो गए, तो ज़ैद को किस महीने में और कितना भुगतान करना चाहिए? और भुगतान न करने की स्थिति में उस पर क्या जवाबदेही होगी? उम्मीद है कि अल्लाह तआला की खातिर विस्तार से उत्तर दिया जाएगा ताकि इसे समझना आसान हो और यह दोनों लोकों में सभी के लिए फायदेमंद साबित हो।

---

1. अल-हिदाया, रहन में निपटान का अध्याय, युसुफी प्रेस लखनऊ, 4/525।

بدل حاصل نہ کیا اگر وہ چاہے تو معیر سے اس کی قیمت علی الراھن لانہ لم یستوفہ و ان شاء وصول کر سکتا ہے کیونکہ حق کا تعلق گردن سے اس کی ضمن المعیر قیمتہ لان الحق قد تعلق رضامندی سے ہے جو اس نے آزاد کر کے ضائع کیا ہے الخ برقبتہ وقد اتلفہ بالاعتاق الخ 1 (ت)

ہاں جو زیور رہن نہ تھا اور جب سے پاس ہے اگر وہ خود دیا اور مال زکوۃ سے مل کر نصاب تھا تو جب تک نصاب پورارہا اس مدت کی زکوۃ واجب ہے اور قرضے کا خیال باطل خیال ہے کہ قرض شوہر پر تھا اور زیور عورت کا زکوۃ عورت پر ہے نہ کہ شوہر پر، البتہ یہ زکوۃ جو چڑھتی گئی ہر سال اس کا حساب لگانے سے جس سال اسے مجرا کر کے مال بقدر نصاب نہ رہے اس سال کی زکوۃ واجب نہ ہو گی ، مثلاً زیور و غیرہ اموال زکوۃ ملا کر پہلے سال دو سو دس ۲۱۰ درہم کاملا تھا اس سال پانچ درہم زکوۃ کے واجب ہوئے، دوسرے سال یہ پانچ درہم کا کہ زکوۃ کا قرضہ کے مجرا کر کے گویا دو سو چھ ۶ کاملا تھا اب بھی پانچ واجب ہوئے، چوتھے سال پندرہ مجرا کر کے پانچ کم دو سو کمالا رہا، یہ نصاب نہیں اب زکوۃ نہیں، وہی پندرہ ہی واجب الاداء رہے، مگر یہ کہ ختم سال پر اور کہیں سے پانچ درہم مل گئے ہوں کہ دو سو درہم پورے ہو کر پھر پانچ درہم لازم آئیں گے اور بیس واجب ہو جائیں گے، یہی حساب ہر سال میں خیال کر لینا لازم ہے، دو سو درہم شریعت میں چھپن روپے کے ہوتے ہیں اور پانچ درہم کا ایک روپیہ سوا چھ آنے ایک دھیلا اور پیسے کا دسواں حصہ۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۴۸: از فرید پور شرقی مرسلہ منشی محمد علی صاحب نائب ناظر تحصیل فرید پور ۵ رجب ۱۳۱۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس بارے میں کہ زید کے پاس چار سو روپیہ علاوہ خرچ روز

مرہ کے اس تفصیل سے ہیں کہ دوسو روپیہ بابت خرید مکان مسکونہ کے مالک مکان کو دے چکا ہے اور دو سو روپے نقد رکھے ہیں، اب زید کو زکوۃ ادا کرنا چار سو روپے پر چاہیے یا دو سو پر، جو اس کے پاس نقد رکھے ہیں، کب اور کس حساب سے اُس کو ادا کرنا چاہیے، مثلاً اگر اسی مہینہ جمادی الثانی سے اُس کے پاس دو سو روپے نقد جمع ہو گئے، تو اب زید کو کس مہینہ میں اور کس قدر ادا کرنا چاہئے، اور در صورت نہ ادا کرنے کے کیا مواخذہ اس کے ذمے ہوگا، امید کہ اللہ تعالیٰ جواب بالتفصیل مرحمت فرمایا جائے تاکہ عام فہم ہو کر سب کو فائدہ دارین عطا فرمائے۔

---

1 الہدایۃ باب التصرف فی الرہن مطبع یوسفی لکھنو ۴/ ۵۲۵

Fatawa Razawiyya Volume 10

The Answer: From the seeker's statement, it is clear that the sale of this house has not yet taken place; only a promise of sale and purchase has occurred. On this basis, Zaid gave two hundred rupees in advance to the owner of the house and permitted him to spend it. This situation constitutes a loan (qard). It cannot be called the price (thaman) because the sale hasn't happened yet. It cannot be called a trust (amanat) because permission to spend was given. Inevitably, it is a loan.

[Boxed Section] Arabic: *Fi Lisan al-Hukkam wa al-'Uqud ad-Durriyah wa ghayrihima: dafa'a ilayhi darahima faqala lahu anfiq-ha fafa'ala fahuwa qardun kama law qala asrif-ha ila hawa'ijika.* 1 Urdu: It is stated in *Lisan al-Hukkam* and *al-'Uqud ad-Durriyah* etc. that if dirhams are given to someone and he is told to spend them, and he spends them, then it is a loan, just as if someone said spend them on your necessities. (T)

So the two hundred that are kept with him and the two hundred given to the house owner, all four hundred are in his ownership and are zakat-eligible assets. The threshold (nisab) for zakat from these rupees is fifty-six rupees. From the date he became the owner of fifty-six (56) rupees or more, he is considered the owner of nisab. From then on, the zakat year will be calculated. Whatever more money is received during the year will continue to be added to it. At the end of the full year, it will be seen how much money remains in his ownership after all expenses and beyond basic needs, whether kept with himself, held in trust by someone, or given as a loan. Zakat will be obligatory on that amount. Whatever is spent before the completion of the year will not be included in the zakat calculation. For example, if on 1st Muharram [13]15 AH he became the owner of fifty-six rupees, received another hundred in Rabi' al-Awwal, and another two hundred in Jumada al-Akhir, and gave these two hundred as a loan to the house owner, then the year is running from that same 1st Muharram. Until the year is complete, it cannot be said on how much amount zakat will be obligatory. Now, if before the arrival of 1st Muharram [13]16 AH, the sale of the house occurs and those two hundred given as a loan are accounted for in the price of the house before the year ends, then these two hundred are excluded from the zakat calculation because a year did not pass on them. Similarly, if the sale was not finalized and the money was taken back, but before the end of the year, all or part of it was spent, then there's no connection with it either. What remains at the end of the year will be checked: if the money is above [the threshold], then one year's zakat is due on it. And if at the end of the year it remains even less than the nisab, then nothing [is due], even though he was the owner of

nisab or more at the beginning, but before the year could pass it became less than nisab, so the occasion for zakat obligation ceased. And if until the full year—i.e., from when this person became the owner of nisab until the year was completed—neither was the sale finalized nor was the money returned...

1 *Al-'Uqud ad-Durriyah*, Book of Gifts, Haji Abdul Ghaffar and Sons Books, Ark Bazaar Kandahar, 2/91

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

उत्तर: पूछने वाले के बयान से यह स्पष्ट है कि अभी तक इस घर की बिक्री (खरीद-फरोख्त) नहीं हुई है, केवल खरीदने और बेचने का वादा हुआ है। इसी आधार पर ज़ैद ने घर के मालिक को दो सौ रुपये अग्रिम (एडवांस) दिए और उसे खर्च करने की अनुमति दी। यह स्थिति ऋण (क़र्ज़) की है। इसे मूल्य (थमन) नहीं कहा जा सकता क्योंकि अभी बिक्री ही नहीं हुई है। इसे अमानत नहीं कहा जा सकता क्योंकि खर्च करने की अनुमति दी गई है। अनिवार्य रूप से यह ऋण है।

[बॉक्स वाला भाग] अरबी: फ़ी लिसान अल-हुक्काम वल-'उक़ूद अद-दुर्रैया व ग़ैरहिमां: दफ़'आ इलयहि दराहिमा फ़क़ाला लहू अन्फ़िक़-हा फ़फ़'अला फ़हुवा क़र्ज़ुन कमा लौ क़ाला असरिफ़-हा इला हवाइजिका। 1 उर्दू अनुवाद: लिसान अल-हुक्काम और अल-'उक़ूद अद-दुर्रैया आदि में है कि किसी को दिरहम दिए गए और कहा गया कि इन्हें खर्च कर, उसने खर्च कर दिए तो यह ऋण है जैसा कि अगर किसी ने यह कहा हो कि इन्हें अपनी ज़रूरतों पर खर्च कर ले। (त)

तो दो सौ जो उसके पास रखे हैं और दो सौ जो उसने घर के मालिक को दिए हैं, चारों सौ उसी के स्वामित्व (मिल्कियत) में हैं और ज़कात के माल हैं। इन रुपयों से ज़कात का निसाब (न्यूनतम सीमा) छप्पन रुपये है। जिस तारीख़ को वह छप्पन (56) रुपये या उससे अधिक का मालिक हुआ, उसी तारीख़ से उसे निसाब का मालिक समझा गया, तभी से ज़कात के साल का हिसाब होगा। साल के अंदर जो माल और मिलता गया वह उसी के साथ जुड़ता रहेगा। पूरे साल के अंत में देखेंगे कि सभी खर्चों से बचकर और बुनियादी ज़रूरतों (हवाइज-ए-असलीया) से अतिरिक्त कितना रुपया उसके स्वामित्व में है, चाहे उसने अपने पास रखा हो या किसी के पास अमानत हो या किसी को ऋण दे दिया हो, उस राशि पर ज़कात अनिवार्य (वाजिब) होगी। और जो साल पूरा होने से पहले खर्च हो गया हो, वह ज़कात के हिसाब में नहीं गिना जाएगा। उदाहरण के लिए, 1 मुहर्रम [13]15 हिजरी को कोई छप्पन रुपये का मालिक हुआ था, रबी-उल-अव्वल में सौ और मिले, जमादी-उल-आख़िर में दो सौ और मिले, ये दो सौ घर के मालिक को ऋण के रूप में दे दिए, तो उस पर उसी 1 मुहर्रम से साल चल रहा है और अभी जबकि साल पूरा नहीं हुआ, कुछ नहीं कह सकते कि कितनी राशि पर ज़कात वाजिब होगी। अब अगर 1 मुहर्रम [13]16 हिजरी के आने से पहले घर की बिक्री हो गई और वे दो सौ जो ऋण के रूप में दिए थे, साल पूरा होने से पहले घर की कीमत में शामिल हो गए, तो ये दो सौ ज़कात के हिसाब से बाहर हो गए क्योंकि उन पर साल नहीं गुज़रा। इसी तरह अगर बिक्री तय नहीं हुई और रुपया वापस ले लिया और साल पूरा होने से पहले पूरा या कुछ हिस्सा खर्च हो गया, तो

उससे भी कोई सरोकार नहीं रहा। साल के अंत में जो शेष रहेगा उसे देखेंगे: यदि रुपया [निसाब से] अधिक है, तो उस पर एक साल की ज़कात वाजिब होगी। और अगर साल पूरा होने पर निसाब से भी कम रहे तो कुछ नहीं [देना होगा], भले ही शुरुआत में वह निसाब बल्कि निसाब से अधिक का मालिक था, लेकिन साल गुज़रने से पहले ही निसाब से कम हो गया, तो ज़कात वाजिब होने का आधार ही नहीं रहा। और अगर साल के अंत तक, यानी जब से यह व्यक्ति निसाब का मालिक हुआ साल पूरा होने तक, न तो बिक्री तय हुई और न ही रुपया वापस मिला...

1 अल-'उक़ूद अद-दुर्रैया , किताब अल-हिबा, हाजी अब्दुल ग़फ़्फ़ार व पिसरान कुतुब, अर्क बाज़ार कंधार, 2/91

पेज 153/836

الجواب: بیان سائل سے واضح ہوا کہ ہنوز اس مکان کی بیع نہیں ہوئی، وعدہ خرید و فروخت درمیان آیا ہے، اور اسی بناء پر زید نے مالک مکان کو دو سو روپے پیشگی دے دئے اور اسے اجازت دی کہ خرچ کرلے، یہ صورت قرض کی ہوئی ثمن کہہ نہیں سکتے کہ ابھی بیع ہی نہیں ہوئی امانت نہیں کہہ سکتے کہ خرچ کی اجازت دی لاجرم قرض ہے

فی لسان الحکام والعقود الدریۃ و غیر ھما دفع الیہ دراھم فقال لہ انفقھا ففعل فھو قرض کما لو قال اصرفھا الی حوائجک۔ 1 لسان الحکام اور عقود الدریہ وغیرہ میں ہے کہ کسی کو دراہم دیئے گئے اور کہا گیا کہ انہیں خرچ کر، اس نے خرچ کر دئے تو یہ قرض ہے جیسا کہ اگر کسی نے یہ کہا ہو کہ انہیں اپنی ضروریات پر خرچ کرلے۔ (ت)

تو دوسو کہ اس کے پاس رکھے ہیں اور دو سو جو مالک مکان کو دئے ہیں چاروں سو اسی کی ملک میں اور مال زکوٰۃ ہیں، زکوٰۃ کا نصاب ان روپوں سے چھپن روپے ہے، جس تاریخ چھپن ۵۶ روپے یا زائد کا مالک ہوا اسی تاریخ سے مالک نصاب سمجھا گیا، جب ہی سے سالِ زکوٰۃ کا حساب ہوگا، سال کے اندر جو مال اور ملتا گیا اسی کے ساتھ ملتا رہے گا، تمام پر دیکھیں گے سب خرچوں سے بچ کر حوائج اصلیہ سے فاضل کتنا روپیہ اس کی ملک میں ہے خواہ اس کے اپنے پاس رکھا ہو یا کسی کے پاس امانت ہو یا کسی کو قرض دے دیا ہو اُس قدر پر زکوٰۃ واجب آئے گی، اور جو سال تمام ہونے سے پہلے صرف ہو گیا ہو وہ حسابِ زکوٰۃ میں محسوب نہ ہوگا مثلاً یکم محرم ۱۵ھ کو چھپن روپے کا مالک ہوا تھا، ربیع الاول میں سو اور ملے، جمادی الآخر میں دو سو اور ملے، یہ دو سو مالک مکان کو قرض دے دے تو اس پر اسی یکم محرم سے سال

چل رہا ہے اور ابھی کہ سال تمام نہ ہوا کچھ نہیں کہہ سکتے کہ کس قدر پر زکوٰۃ واجب ہوگی اب اگر یکم محرم ۱۶ھ کے آنے سے پہلے مکان کی بیع واقع ہو گئی اور وہ دو سو کے قرض دئے تھے سال تمام سے پہلے قیمت مکان میں محسوب ہو گئے تو یہ دوسو حساب زکوٰۃ سے خارج ہو گئے کہ ان پر سال نہ گزرا، اسی طرح اگر بیع نہ ٹھہری اور روپیہ واپس لے لیا اور سال تمام سے پہلے کل یا بعض خرچ ہو گیا تو اس سے بھی تعلق نہ رہا تما می سال پر جو باقی رہے اسے دیکھیں گے کہ روپیہ زائد ہے تو اس پر ایک سال کی زکوٰۃ واجب ہوگی، اور اگر سال تمام پر نصاب سے بھی کم رہے تو کچھ نہیں کہ اگر چہ ابتداء میں نصاب بلکہ نصاب سے زائد کا مالک تھا مگر سال نہ گزرنے پایا کہ نصاب سے کم ہو گیا تو وجوبِ زکوٰۃ کا محل نہ رہا اور اگر سال تمام تک یعنی جب سے یہ شخص مالک نصاب ہوا سال پورا ہونے تک نہ بیع ٹھہری نہ روپیہ واپس ہوا

1 العقود الدریۃ کتاب الھبۃ حاجی عبد الغفار و پسران کتب ارک بازار قندھار ۹۱/۲

Rather, if the homeowner remains in debt, then upon him, since he himself is at the level of Nisab (minimum taxable amount), or even several Nisabs, and besides this, whatever cash is present at that time—in short, however much money, gold, or silver is in possession beyond basic necessities, whether it was there at the beginning of the Zakat year or was added in the middle—Zakat becomes obligatory on all of it. For what is cash, the obligation of payment also arises along with the obligation itself, so it should be given immediately. As for the debt, the obligation of payment will not arise until it is received, whether the money itself is received, such as when a sale was not finalized and the money is returned, or if after a sale it is adjusted in the price, as this is also considered receiving it. Then, since the debt is a 'strong debt' (Dain-e-Qawi), and in the questioned scenario, the beginning of the Nisab is from cash property because the Zakat year started with it, whatever amount is received from the debt during the completion of this year or after it will be examined to see if it is less than one-fifth of the Nisab, i.e., 2-5/2 pies. If it is less and there is no cash property available at the end of the current year which, when added to this received amount, would complete one-fifth of the Nisab, then paying Zakat on it would not be obligatory at all, neither for the past year nor for the current one. If such cash property is found, it will be added to it. Then, if it was received exactly at the completion of the year, then on the day of receipt itself, otherwise, the remaining amount at the end of the current year will be subject to this rule: for every one-fifth of the Nisab, its fortieth part (2.5%) is payable, and nothing is due on less than one-fifth. And if the mentioned received amount is not less than one-fifth of the Nisab, then Zakat will have to be paid for all the years it remained as a debt, until the remaining amount falls below one-fifth of the Nisab due to continuous Zakat payments. Then, in any case, whatever remains below one-fifth will follow the same rule; if there is cash property, it will be combined to apply the rule to the entire current amount, otherwise, nothing. Take an example for all cases: for instance, on 25th Dhul-Hijjah 14 AH, one became the owner of 300 Shari'i dirhams; from that moment the Zakat year started. All these rupees were lent to someone in the middle of the year. On the specific day the year ended, thirty-nine Shari'i dirhams were received from them, and today there is no cash in his possession. So, nothing will be due even on these 39 dirhams because they are less than one-fifth of the Nisab, i.e., forty dirhams. And if before the completion of the year, for example on 24th Dhul-Hijjah 15 AH—or if the ownership started at twelve o'clock on a particular day, then

just a moment before twelve o'clock on 25th Dhul-Hijjah 15 AH—thirty-nine dirhams were obtained from somewhere else, and at that same time one dirham was received from this debt, it will be added to those thirty-nine. Now these have become forty dirhams, which is a complete one-fifth, so it became obligatory to give one dirham. And if in the same scenario, for instance, thirty-nine dirhams were also received from the debt, which when added to the existing cash became seventy-eight dirhams, even then only one dirham—being the Zakat for one complete one-fifth, i.e., forty dirhams—will be payable. The remaining thirty-eight dirhams, being less than a fifth, will wait for the next year-end. And suppose five full years have passed since the start of the Zakat year and nothing was received until then, and after that forty dirhams...

बल्कि यदि मकान मालिक पर ऋण ही रहा, तो अब उस पर, क्योंकि वह स्वयं निसाब (न्यूनतम कर योग्य राशि) बल्कि कई निसाबों का मालिक है, और इसके अलावा जो नकदी उस समय मौजूद हो, संक्षेप में जितना भी रुपया, सोना या चाँदी बुनियादी ज़रूरतों से अधिक संपत्ति में है, चाहे वह ज़कात वर्ष के आरंभ से था या बीच में मिला, उन सब पर ज़कात अनिवार्य हो गई। जो नकद है उस पर तो अनिवार्यता के साथ भुगतान की अनिवार्यता भी होगी, अतः उसे तत्काल दिया जाए। और जो ऋण है उस पर अभी भुगतान की अनिवार्यता नहीं है, वह प्राप्ति पर होगी, चाहे रुपया ही प्राप्त हो, जैसे कि बिक्री तय नहीं हुई और रुपया वापस मिला, या बिक्री होकर कीमत में समायोजित हो जाए कि यह भी प्राप्ति ही है। फिर चूँकि ऋण 'दैन-ए-क़वी' (मज़बूत ऋण) है, और प्रश्नाधीन स्थिति में निसाब की शुरुआत नकद संपत्ति से है क्योंकि इसी पर ज़कात वर्ष शुरू हुआ, इस पूरे वर्ष के दौरान या उसके बाद ऋण से जो राशि प्राप्त होगी उसे देखा जाएगा कि वह निसाब के पाँचवें हिस्से यानी २- ५/२ पाई से कम है या नहीं। यदि कम है और वर्तमान वर्ष की समाप्ति पर ऐसा कोई नकद धन मौजूद नहीं है जो इस प्राप्त राशि के साथ मिलकर पाँचवाँ हिस्सा (खम्स) निसाब बन जाए, तो इसकी ज़कात देना बिल्कुल भी अनिवार्य नहीं होगा, न पिछले साल की और न ही वर्तमान की। और यदि ऐसा नकद धन पाया जाए तो उसे उसके साथ मिला देंगे। फिर यदि ठीक वर्ष पूर्ण होने के समय प्राप्त हुआ तो स्वयं प्राप्ति के दिन, अन्यथा वर्तमान वर्ष के अंत में जो शेष होगा उस पर यह नियम लागू करेंगे कि प्रत्येक पाँचवें हिस्से (खम्स) निसाब पर उसका चालीसवाँ हिस्सा देय है और पाँचवें हिस्से से कम पर कुछ नहीं। और यदि उक्त प्राप्त राशि पाँचवें हिस्से से कम नहीं है, तो ऋण की स्थिति में जितने वर्ष बीते हैं, उन सबकी ज़कात देनी होगी, जब तक कि ज़कात निकालते-निकालते वह पाँचवें हिस्से से कम न रह जाए। फिर बहरहाल जितना पाँचवें हिस्से से कम रहेगा उसका वही नियम है; और यदि नकद धन हो तो उसके साथ मिलाकर पूरे वर्तमान धन पर नियम देखा जाएगा, अन्यथा कुछ नहीं। सभी स्थितियों का एक उदाहरण लें: मान लीजिए २५ ज़ुल-हिज्जा १४ हिजरी को ३०० शरई दिरहमों का मालिक हुआ, उसी समय से ज़कात का वर्ष शुरू हो गया। ये सभी रुपये साल के बीच में किसी को उधार दे दिए। विशेष वर्ष पूर्ण होने के दिन उनमें से उनतालीस शरई दिरहम प्राप्त हुए और आज उसकी मिल्कियत में कुछ नकद नहीं है, तो इन ३९ दिरहमों पर भी कुछ देना नहीं होगा क्योंकि ये पाँचवें हिस्से यानी चालीस दिरहम से कम हैं। और यदि वर्ष पूर्ण होने से पहले, उदाहरण के लिए २४ ज़ुल-हिज्जा १५ हिजरी को—या यदि स्वामित्व दिन के बारह बजे शुरू हुआ था, तो अब २५ ज़ुल-हिज्जा १५

हिजरी को बारह बजने से एक क्षण पहले—कहीं और से उनतालीस दिरहम मिल गए और उसी समय इस ऋण में से एक दिरहम प्राप्त हुआ, तो उसे उन उनतालीस में मिला देंगे। अब ये चालीस दिरहम हो गए जो कि एक पूर्ण पाँचवाँ हिस्सा है, तो एक दिरहम देना अनिवार्य हो गया। और यदि इसी स्थिति में मान लीजिए ऋण में से भी उनतालीस दिरहम प्राप्त हुए जो नकद मौजूद के साथ मिलकर अठहत्तर दिरहम हो गए, तब भी केवल एक ही दिरहम—जो कि एक पूर्ण पाँचवें हिस्से यानी चालीस दिरहम की ज़कात है—देय होगा। शेष अड़तीस दिरहम जो पाँचवें हिस्से से कम हैं, अगले वर्ष की समाप्ति की प्रतीक्षा करेंगे। और यदि मान लें कि ज़कात वर्ष के आरंभ से पाँच पूर्ण वर्ष बीत गए और तब तक कुछ नहीं मिला, उसके बाद चालीस दिरहम...

بلکہ مالک مکان پر قرض ہی رہا تو اب اس پر کہ خود نصاب بلکہ چند نصاب ہیں اور اس کے سوا اور جو نقد اُس وقت موجود ہو، غرض جس قدر روپیہ سونا یا چاندی حاجاتِ اصلیہ سے فاضل ملک میں ہے خواہ شروع سال زکوٰۃ سے تھا خواہ بیچ میں ملا اُس سب پر زکوٰۃ واجب ہوئی، جو نقد ہے اس پر تو واجب کے ساتھ وجوبِ اداء بھی ہو گانی الحال دی جائے، اور جو قرض ہے اس پر ہنوز وجوبِ ادا نہیں وصول پانے پر ہو گا خواہ روپیہ ہی وصول ہو یونہی کہ بیع نہ ٹھہری اور روپیہ واپس ملے خواہ بیچ ہو کر قیمت میں مجرا ہو جائے کہ یہ بھی وصول پالیتا ہے، پھر از آنجا کہ قرض دین قوی ہے، اور صورتِ مسئولہ میں ابتدائے نصاب مال نقد سے ہے کہ اسی پر سال زکوٰۃ شروع ہوا، اس سال تمام پر یا اُس کے بعد جو رقم قرض سے وصول ہوگی اُسے دیکھا جائے گا کہ خمس نصاب یعنی کے پانچویں حصے لہ ۲- ۵/۲ پائی سے کم ہے یا نہیں، اگر کم ہے اور کوئی مال نقد اس وقت موجود نہ سال رواں کے ختم پر آکر ایسا ملا جو اس رقم وصولی سے مل کر خمس نصاب ہو جاتا تو اس کی زکوٰۃ دینی اصلاًا واجب نہ ہو گی، نہ سال گزشتہ کے کیے، نہ رواں کے لیے، اور اگر ایسا مال نقد پایا جائے تو اسے اُس کے ساتھ ملا دیں گے، پھر اگر عین سال تمام کے وقت وصول ہوا تو خود روز وصول، ورنہ سال تمام رواں پر جو باقی ہو گا اس پر یہ حکم لگائیں گے کہ ہر خمس نصاب پر اُس کا چالیسواں حصہ واجب الاداء اور خمس سے کم پر کچھ نہیں، اور اگر رقم وصول مذکور خمس نصاب سے کم نہیں تو جس قدر برس اس پر، حالت دین میں گزرے ہوں اُن سب کی زکوٰۃ دینا آئے گی جب تک زکوٰۃ نکالتے نکالتے خمس نصاب سے کم نہ رہ جائے۔ پھر بہرحال جس قدر خمس سے کم رہے گا اُس کا وہی حکم ہے اور مال نقد ہو تو اس کے ساتھ ملا کر تمام رواں پر حکم دیکھا جائے گا، ورنہ کچھ نہیں، سب صورتوں کی مثال لیجئے، مثلاً

۲۵ ذی الحجہ ۱۴ھ کو تین سو درہم شرعی کا مالک ہوا اس وقت سے سال زکوٰۃ شروع ہو گیا، یہ سب روپے وسط سال میں کسی کو قرض دے دیئے خاص سال تمام کے دن ان سے اُنتالیس درہم شرعی وصول ہوئے اور آج کچھ نقد اس کی ملک نہیں تو ان ۳۹ درہم پر بھی کچھ دینا نہ آئے گا کہ یہ خمس نصاب یعنی چالیس درہم سے کم ہیں اور اگر سال تمام سے پہلے مثلاً ۲۴ ذی الحجہ ۱۵ھ کو یا شروع سال میں مالکیّت دن کے بارہ بجے ہوئی تھی اب ۲۵ ذی الحجہ ۱۵ھ کو بارہ بجے سے ایک لحظہ پہلے انتالیس درہم کہیں اور سے مل گئے اور اُسی وقت ایک درہم اس قرض میں سے وصول ہوا تو اسے اُن انتالیس میں ملا دیں گے، اب یہ چالیس درہم ہو گئے کہ خمس کامل ہے تو ایک درہم دینا واجب آیا اور اگر اسی صورت میں مثلاً قرض میں سے بھی انتالیس درہم وصول ہوئے کہ نقد موجود سے مل کر اٹھتر مع درہم ہو گئے تو بھی ایک ہی درہم کہ ایک خمس کامل یعنی چالیس درہم کی زکوٰۃ ہے واجب الاداء ہوگا، باقی اڑتیس درہم زائد کہ خمس سے کم ہیں سال تمام آئندہ کے انتظار میں رہیں گے، اور اگر سرے سے فرض کیجئے کہ شروع سال زکوٰۃ کو پانچ سال کامل گزر گئے اُس وقت تک کچھ نہ ملا اُس کے بعد چالیس درہم

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

If funds were recovered from a debt and there is no other cash besides them, then in this amount, only one-fifth (khums) of the Nisab is present; the remaining four dirhams are extra. This one-fifth was obligatory for five years, so it became mandatory to give one dirham for each year. Thus, five dirhams of Zakat should be given. In the same case, if forty-three (43) dirhams were recovered, then it would be mandatory to give four dirhams of Zakat. When one dirham of Zakat for the first year was calculated on forty, then for the second year forty remained; one dirham for that year was calculated on them, forty remained for the third, for the fourth, so these four dirhams became payable. For the fifth year, only thirty-five remained, which is less than a khums, so nothing is due on them. Similarly, if thirty-five were recovered, three dirhams would be due, and for thirty, two, and for twenty-five, only one. For more than forty-five, five will have to be given until they reach the full eighty. On reaching eighty, six will be mandatory. In the first year, two dirhams for two khums; now for the second year, seventy-eight remained so only one full khums is left, thus only one dirham was mandatory in each of the remaining four years. Likewise, if eighty-two (82) are recovered, one will give seven as for two years two khums remained full; on eighty-four (84), eight; on eighty-six (86), nine; for all above eighty-eight (88), ten, until one hundred and twenty (120) are complete. Then on one hundred and twenty (120), eleven, and so on. This is in the case where there is no cash; otherwise, it will be calculated by adding it to that. For example, on recovering forty-three (43), four dirhams were due; if even one dirham of cash is present, then a full five will be due because together with that it becomes forty-four (44), and on forty-four, five were mandatory, and so on. Then in any case, whatever surplus remains will wait for the completion of the next year. This is what this humble servant has understood from the words of the scholars.

"And I hope that this is correct, God willing. And Allah Almighty knows His rulings best." I am hopeful that this, God willing, is correct, and Allah Almighty knows His commands best. (T)

It is stated in Tanwir al-Absar, Durr al-Mukhtar, and Radd al-Muhtar: "Zakat on debts is obligatory when they reach the Nisab by themselves or together with what one has, and a year has passed, even if it is before possession for strong and medium debts. However, it is not due immediately but upon possession of forty dirhams from a strong debt like a loan. So, whenever forty dirhams are possessed, one dirham becomes due; and for a medium debt, upon possession of two hundred dirhams."

Zakat is obligatory on debts when they are a Nisab by themselves or become a Nisab by adding what one has, and a year passes over it, even if the year passes before possession in strong and medium debts. However, it's not due immediately, but in the case of a strong debt, upon the possession of forty dirhams, like a strong loan. So, whenever forty dirhams are possessed, one dirham will be due, and in a medium debt, upon the possession of two hundred dirhams.

फतावा रज़विया, जिल्द दहुम

कर्ज़ से वसूल हुए और उनके सिवा और कुछ नकद नहीं है तो इस रक़म में सिर्फ़ एक ख़ुम्स (निसाब का पाँचवाँ हिस्सा) है, ऊपर के चार दिरहम ज़्यादा हैं। यह ख़ुम्स पाँच बरस तक फ़र्ज़ था तो हर साल की बाबत एक दिरहम देना वाजिब हुआ, पाँच दिरहम ज़कात दे। और अगर इसी सूरत में तैंतालीस (43) दिरहम वसूल हुए तो चार दिरहम ज़कात देना वाजिब होगी। जब साल-ए-अव्वल की बाबत एक दिरहम ज़कात चालीस पर निकाली गई, तो दूसरे साल के लिए चालीस रहे, उन पर उस साल का एक दिरहम निकाला, तीसरे के लिए चालीस रहे, चौथे के लिए, तो ये चार दिरहम वाजिबुल अदा हुए। पाँचवें के लिए सिर्फ़ पैंतीस ही रह गए कि ख़ुम्स से कम हैं, उन पर कुछ नहीं। इसी तरह अगर पैंतीस वसूल होते तो तीन ही दिरहम देने आते, और तीस पर दो, और पच्चीस पर सिर्फ़ एक ही। और पैंतालीस से ज़्यादा होने पर पाँच ही देने होंगे जब तक पूरे अस्सी तक न पहुँचें। इसी अस्सी पर छह लाज़िम आएँगे। पहले साल दो ख़ुम्स के दो दिरहम; अब दूसरे साल अठहत्तर (78) रह गए कि एक ही ख़ुम्स कामिल है, तो बाक़ी चार साल में एक-एक लाज़िम आया। यूँ ही बयासी (82) वसूल हों तो सात देगा कि दो साल तक दो ख़ुम्स कामिल रहे, चौरासी (84) पर आठ, छियासी (86) पर नौ, अठासी (88) से ज़्यादा सब पर दस, जब तक एक सौ बीस (120) कामिल न हों। फिर एक सौ बीस पर ग्यारह, और इसी प्रकार। यह उस सूरत में है कि कुछ नकद न हो, वरना उसके साथ मिला कर हिसाब लगाएँगे, मसलन तैंतालीस (43) वसूल होने पर चार दिरहम लाज़िम आते थे, अगर नकद एक दिरहम भी मौजूद है तो पूरे पाँच आएँगे कि उसके साथ मिल कर चवालीस (44) हो गए और चवालीस पर पाँच लाज़िम थे और इसी पर क़यास करें। फिर बहरहाल जो फाज़िल बचा वह मुकम्मल साल का इंतज़ार करेगा, यह है जो उलमा के कलमात से इस फ़क़ीर की समझ में आया।

"वारजो अन यकून सवाबन इन शा अल्लाह तआला वल्लाह तआला बि-अहकामिही अलीम।" मैं आशावान हूँ कि यह इन शा अल्लाह तआला सही है और अल्लाह तआला अपने अहकाम को ख़ूब जानने वाला है। (त)

तनवीरुल अब्सार व दुर्रे मुख़्तार व रदुल मुहतार में है: "अद्दियूनु तजिबु ज़कातुहा इज़ा तम्मा निसाबन बि-नफ़्सिही औ बिमा इंदहू यतम्मु बिहिन-निसाबु व हालल हौलु वलौ क़बला क़ब्ज़िही फ़िल क़विय्यि वल मुतवस्सिति लाकिन ला फ़ौरन बल इंदा क़ब्ज़ि अरबईना दिरहमम मिनल क़विय्यि क-क़र्ज़िन फ़-कुल्लہ क़बज़ा अरबईना दिरहमन यलज़मुहू दिरहमून इंदा क़ब्ज़ि मियातैनि मिन मुतवस्सितिन, व" कर्ज़ों पर ज़कात लाज़िम है जब वह ख़ुद निसाब हों या अपने पास जो कुछ है उससे

मिल कर निसाब बन जाएँ और उस पर साल गुज़र जाए, चाहे क़वी और मुतवस्सित में क़ब्ज़े से पहले गुज़रे, लेकिन फ़ौरन नहीं बल्कि क़वी में चालीस दिरहम के क़ब्ज़े पर जैसे क़र्ज़-ए-क़वी है। पस जब भी चालीस दराहम पर क़ब्ज़ा होगा एक दिरहम लाज़िम होगा, और मुतवस्सित में दो सौ दिरहम के क़ब्ज़े पर।

पृष्ठ 155/836

قرض سے وصول ہوئے اور اُن کے سوا اور کچھ نقد نہیں تو اس رقم میں صرف ایک خمس نصاب ہے اوپر کے چار درہم زیادہ ہیں، یہ خمس پانچ برس تک فرض تھا تو ہر سال کی بابت ایک درہم دینا واجب ہوا پانچ درہم زکوۃ دے اور اگر اسی صورت میں تینتالیس ۴۳ درہم وصول ہوئے تو چار درہم زکوۃ دینا واجب ہوگی جب بابت سالِ اول ایک درہم زکوۃ ان للہ پر ڈالا تو سالِ دوم کے لیے للہ رہے ان پر ایک درہم اس سال کا ڈالا، سوم کے لیے للہ رہے، چہارم کے لیے، تو یہ چار درہم واجب الادا ہوئے، پنجم کے لیے صرف لعہ ہی رہ گئے کہ خمس سے کم ہیں ان پر کچھ نہیں، اسی طرح اگر للعب وصول ہوتے تو تین ہی درہم دینے آتے اور لہ للہ تو دو اور للہ تو ایک ہی اور للہ للہ سے زیادہ پانچ ہی دینے ہوں گے جب تک پورے اسی لمتک نہ پہنچیں اسی لہ پر چھ لازم آئیں گے، پہلے سال دو خمس کے دو درہم، اب سالِ دوم اٹھترا لعہ رہ گئے کہ ایک ہی خمس کامل ہے، تو باقی چار سال میں ایک ہی ایک لازم آیا، یوں ہی بیاسی ۸۲ وصول ہوں تو سات دے گا کہ دو سال تک دو خمس کامل رہے، چوراسی ۸۴ پر آٹھ، چھیاسی ۸۶ پر نو، اٹھاسی ۸۸ سے زیادہ سب پر دس ، جب تک ایک سو بیس ۱۲۰ کامل نہ ہوں۔ پھر ایک سو بیس ۱۲۰ پر گیارہ و علٰی ہذا القیاس۔ یہ اس صورت میں ہے کہ کچھ نقد نہ ہو، ورنہ اس کے ساتھ ملا کر حساب لگائیں گے، مثلاً تینتالیس ۴۳ وصول ہونے پر چار درہم لازم آتے تھے، اگر نقد ایک درہم بھی موجود ہے تو پورے پانچ آئیں گے کہ اُس کے ساتھ مل کر چوالیس ۴۴ ہو گئے اور چوالیس پر پانچ لازم تھے و قس علٰی ھٰذا۔ پھر بہر صورت جو فاضل بچا وہ سالِ تمام آئندہ کا انتظار کرے گا، یہ ہے جو کلماتِ علماء سے فہم فقیر میں آیا،

وارجو ان یکون صواباً ان شاء اللہ تعالٰی واللہ تعالٰی باحکامہ علیم۔ میں امیدوار ہوں کہ یہ ان شاء اللہ تعالٰی صواب ہے اور اللہ تعالٰی اپنے احکام کو خوب جاننے والا ہے۔ (ت)

تنویر الابصار و درمختار و ردالمحتار میں ہے: الدیون تجب زکوتھا اذا تم نصاباً بنفسہ اوبما عندہ یتم بہ النصاب وحال الحول ولو قبل قبضہ فی القوی والمتوسط لکن لا فوراً بل عند قبض اربعین درھماً من القوی کقرض فکلما قبض اربعین درھماً یلزمہ درھم عند قبض مائتین من متوسط، و قرضوں پر زکوۃ لازم ہے جب خود نصاب ہوں یا اپنے پاس جو کچھ ہے اس سے مل کر نصاب بن جائیں اور اس پر سال گزر جائے اگرچہ قوی اور متوسط میں قبضہ سے قبل گزرے لیکن فی الفور نہیں بلکہ قوی میں چالیس درہم کے قبضہ پر جیسے قرضِ قوی ہے پس جب بھی چالیس دراہم پر قبضہ ہوگا ایک درہم لازم ہوگا، اور متوسط میں دو سو درہم کے قبضہ پر۔

Fatawa Rizvia, Volume 10

In Al-Badai', it is stated that Imam Karkhi said:

This applies when he has no wealth other than the debt. If he possesses other wealth, then whatever amount is received will be considered as acquired profit and will be added to the wealth he already has. Similarly, it is also mentioned in Al-Muhit. (Summarized) (T)

في البدائع قال الكرخی ہذا اذا لم یکن لہ مال سوی الدین والا فما قبض منه فهو بمنزلة المستفاد فیضم الی ما عنده وکذلک فی المحیط اھ ملتقطا[1]-

Also in Rad al-Muhtar:

Mentioned in Al-Muntaqa: A man has a debt of three hundred dirhams upon which three years have passed. He receives two hundred dirhams. According to Imam Abu Hanifa (may Allah have mercy on him), for the first year, it is five dirhams [on two hundred], and for the second and third years, it is four dirhams each on one hundred and sixty dirhams, and nothing is due on the remainder which is less than forty. (T)

ذکر في المنتقی رجل له ثلثما ئة درهم دین حال علیها ثلثة احول فقبض مائتین فعند ابی حنیفة یزکی للسنة الاولی خمسة وللثانیة والثالثة اربعة اربعة عن مائة وستین ولا شئی علیه في الفضل لانه دون الاربعین-[2]

In the same from Al-Muhit:

If someone is owed a thousand dirhams by a person in financial difficulty and buys a dinar from him using that debt and then gifts it back to him, then zakat is due on the full thousand because he is considered to have taken possession of the thousand by means of that one dinar. (T)

لو کان له الف علی معسر فاشتری منه بهادینا را ثم وهبه منه فعلیه زکوة الالف لانه صار قابضا لها بالدینار اهـ[3]

In Sharh Niqayah Quhistani:

New wealth will be included even if it is received shortly before the end of the year because this is before the time of obligation. (T)

يضم الحادث ولو قبيل أخر الحول لانه قبل وقت الوجوب اهـ[4]

Footnotes: 1. Rad al-Muhtar with Durr-e-Mukhtar Sharh Tanveer-ul-Absar, Chapter: Zakat of Wealth, Mustafa al-Babi Egypt, 2/38 to 40. 2. Rad al-Muhtar with Durr-e-Mukhtar Sharh Tanveer-ul-Absar, Chapter: Zakat of Wealth, Mustafa al-Babi Egypt, 2/38. 3. Rad al-Muhtar with Durr-e-Mukhtar Sharh Tanveer-ul-Absar, Chapter: Zakat of Wealth, Mustafa al-Babi Egypt, 2/40. 4. Jami al-Rumuz Kitab al-Zakat Maktaba Islamia Gumbad Qamus Iran 2/316.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

अल-बदाइ' में है, इमाम करखी ने फ़रमाया:

यह तब है जब ऋण (कर्ज़) के अलावा उसके पास कोई माल न हो। अगर माल हो, तो जितना हिस्सा वसूल होगा वह प्राप्त लाभ (मुनाफ़ा) की तरह होगा और उसे अपने पास मौजूद माल के साथ जोड़ा जाएगा। इसी तरह अल-मुहीत में भी है। (संक्षिप्त) (त)

في البدائع قال الكرخى ہذا اذا لم يكن لہ مال سوى الدين والا فما قبض منه فهو بمنزلة المستفاد فيضم الى ما عنده وكذلک فى المحيط اهـ ملتقطا[1]

साथ ही रद अल-मुह्तार में है:

अल-मुंतक़ा में उल्लेख है कि एक व्यक्ति के तीन सौ दिरहम ऋण हैं और उस पर तीन साल बीत चुके हैं। उसे दो सौ दिरहम प्राप्त हुए। इमाम अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाहि अलैहि) के अनुसार, पहले वर्ष के लिए पाँच दिरहम और दूसरे और तीसरे वर्ष के लिए एक सौ साठ दिरहम पर चार-चार दिरहम होंगे, और चालीस से कम अतिरिक्त पर कुछ नहीं। (त)

ذكر في المنتقى رجل لہ ثلثما ئة درهم دين حال عليها ثلثة احول فقبض مائتين فعند ابى حنيفة يزكى للسنة الاولى خمسة وللثانية والثالثة اربعة اربعة عن مائة وستين ولا شئى عليه في الفضل لانه دون الاربعين[2]

उसी में अल-मुहीत से है:

यदि किसी तंगदस्त (ग़रीब) पर एक हज़ार दिरहम का ऋण है और उससे उस ऋण के बदले एक दीनार ख़रीदकर फिर उसे वह उपहार (हिबा) कर दिया, तो अब ज़कात हज़ार पर ही होगी क्योंकि वह दीनार की वजह से हज़ार का ही कब्ज़ाधारी (क़ाबिज़) माना जाएगा। (त)

لو كان لہ الف على معسر فاشترى منه بهادينا را ثم وهبه منه فعليه زكوة الالف لانه صار قابضا لها بالدينار اهـ[3]

शरह निक़ाया क़ुहिस्तानी में है:

नए माल को शामिल किया जाएगा, भले ही वह वर्ष के अंत से थोड़ा पहले मिला हो, क्योंकि यह ज़कात अनिवार्य (वाजिब) होने के समय से पहले है। (त)

يضم الحادث ولو قبيل أخر الحول لانه قبل وقت الوجوب اهـ[4]

फुटनोट्स: 1. रद अल-मुह्तार मअ दुर्र-ए-मुख्तार शरह तनवीरुल अब्सार, बाब: ज़कात-उल-माल, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/38 से 40. 2. रद अल-मुह्तार मअ दुर्र-ए-मुख्तार शरह तनवीरुल अब्सार, बाब: ज़कात-उल-माल, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/38. 3. रद अल-मुह्तार मअ दुर्र-ए-मुख्तार शरह तनवीरुल अब्सार, बाब: ज़कात-उल-माल, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/40. 4. जामे अर-रुमूज़ किताब अल-ज़कात मकतबा इस्लामिया गुम्बद क़ामूस ईरान 2/316.

فی البدائع قال الکرخی ہذا اذا لم یکن لہ مال سوی الدین والا فما قبض منہ فھو بمنزلۃ المستفاد فیضم الی ما عندہ وکذلک فی المحیط اھ ملتقطا[1]۔

بدائع میں ہے امام کرخی نے فرمایا: یہ تب ہے جب دین کے علاوہ اس کے پاس مال نہ ہو، اور اگر مال ہو تو جتنے حصے پر قبضہ ہو گا وہ بمنزلہ منافع ہو گا اپنے پاس موجود مال سے اسے ضم کیا جائے گا، اور محیط میں بھی اسی طرح ہے اھ ملتقطا (ت)

نیز ردالمحتار میں ہے:

ذکر في المنتقی رجل لہ ثلثما ئۃ درھم دین حال علیھا ثلثۃ احول فقبض مائتین فعند ابی حنیفۃ یزکی للسنۃ الاولی خمسۃ وللثانیۃ والثالثۃ اربعۃ اربعۃ عن مائۃ وستین ولا شئی علیہ في الفضل لانہ دون الاربعین۔[2]

منقی میں ہے کہ ایک شخص کا تین سو درہم دین ہے اور اس پر تین سال گزر گئے اسے دو سو درہم وصول ہوئے تو امام ابو حنیفہ رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ کے نزدیک پہلے سال کے پانچ اور دوسرے و تیسرے سال کے چار چار درہم ایک سو ساٹھ درہم پر ہونگے اور چالیس سے کم زائد پر کچھ نہیں۔ (ت)

اسی میں محیط سے ہے:

لو کان لہ الف علی معسر فاشتری منہ بھادینا را ثم وھبہ منہ فعلیہ زکوۃ الالف لانہ صار قابضا لھا بالدینار اھ[3]

اگر کسی تنگدست پر ہزار درہم قرض ہے تو اس سے ایک دینار خرید کر پھر اسے ہبہ کردیا تو اب زکوۃ ہزار ہی کی ہے کیونکہ وہ دینار کی وجہ سے ہزار ہی کا قابض متصور ہوگا اھ (ت)

شرح نقایہ قہستانی میں ہے:

یضم الحادث ولو قبیل أخر الحول نئے مال کو شامل کیا جائیگا اگرچہ سال کے آخر سے تھوڑا سا لانہ قبل وقت الوجوب اھ[4] پہلے ملا ہو کیونکہ یہ وقت وجوب سے پہلے ہے اھ (ت)

حواشی: 1. ردالمحتار مع در مختار شرح تنویر الابصار باب زکوۃ المال مصطفی البابی مصر ۲/ ۳۸ تا ۴۰ 2. ردالمحتار مع در مختار شرح تنویر الابصار باب زکوۃ المال مصطفی البابی مصر ۲/ ۳۸ 3. ردالمحتار مع در مختار شرح تنویر الابصار باب زکوۃ المال مصطفی البابی مصر ۲/ ۴۰ 4. جامع الرموز کتاب الزکوۃ مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۲/ ۳۱۶

Fatawa Razawiya, Volume 10

Whoever fails to pay Zakat will be deserving of the punishment for it, Seek refuge in Allah, Seek refuge in Allah. It is neither light nor bearable. Some verses and Hadiths regarding this have been mentioned in this humble servant's treatise "A’azz al-Katna fi Radd-i-Sadaqati Mani’iz Zakah" (1309 AH). A summary of some of them is that the gold and silver for which Zakat is not paid will be heated in the fire of Hell on the Day of Resurrection, and with it, their foreheads, flanks, and backs will be branded. A hot stone of Hell will be placed on their heads and breasts such that it will break through the chest and come out of the shoulder, and placed on the shoulder blade such that it will break the bones and come out of the chest. It will break through the back and come out of the flank, and break the nape of the neck and emerge from the forehead. The wealth for which Zakat is not paid will turn into a long-lived, vicious, venomous snake on the Day of Resurrection and chase him. He will try to stop it with his hand, but it will chew his hand, then it will become a collar around his neck, take his face in its mouth and chew, saying, "I am your wealth, I am your treasure." Then it will chew his entire body. We seek refuge with Allah, the Lord of the worlds. And Allah (Glorified and Exalted is He) knows best.

Issue 49: 5 Jumada al-Ula 1319 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: Hind's 'Rukhsati' (leaving for her husband's home) took place in Jumada al-Ula 1315 AH, at which time she became the owner of her dowry; she was not the owner before that. At that time, her possession included gold jewelry weighing 90 Masha and silver jewelry worth some rupees. This remained with her until the end of her life. Hind passed away in Rabi' al-Akhir 1319 AH after three years, ten months, and twenty-three days. At that time, she had four more gold items: one weighing seven Tolas and eleven Mashas, which she became owner of ten months before her death; the second weighing two Tolas, which she received one and a half years before death; the third weighing four Tolas, received two years before; the fourth weighing five Tolas, received three years before. In this case, how much Zakat is due on Hind? Explain and you will be rewarded.

The Answer: Zakat became obligatory on Hind for three years, as she passed away when one month and seven days were remaining in the fourth year. The wealth received at the time of Rukhsati is subject to Zakat for all three years. Similarly, the fourth item of five Tolas, since it was received three years before death, which is 10 months and 23 days after Rukhsati; in short, since it was received before the completion of the first year, it was included in the initial wealth and Zakat for three

years applied to it. From here it is clear that for the third item, there is Zakat for the last two years, for the second item, for only one year, and for the first item, no Zakat at all. So, Hind's ownership of gold for each of the three years was: first year (90 Masha), second (99 Masha), third (109 Masha). In the questioned scenario, while Hind owned this much wealth and did not pay Zakat for the three years, the debt of each previous year's Zakat continued to be deducted from that year's wealth. The Zakat due for the first year was 11 Masha and 7 Surkh of gold and three rupees worth of silver, and...

ज़कात अदा न करने की स्थिति में जो पकड़ है, वह उसके लिए सज़ा का हक़दार होगा, अल्लाह की पनाह, अल्लाह की पनाह। वह न हल्की है और न ही सहने योग्य है। इसके बारे में कुछ आयतें और हदीसें इस तुच्छ सेवक के शोध प्रबंध "एअज़ अल-कत्ना फ़ी रद-ए-सदक़ाते मानिइज़ ज़कात" (1309 हिजरी) में वर्णित हैं। उनमें से कुछ का सारांश यह है कि जिस सोने और चांदी की ज़कात नहीं दी जाएगी, उन्हें क़यामत के दिन जहन्नुम की आग में तपाया जाएगा और उससे उनके माथे, करवटों और पीठ को दागा जाएगा। जहन्नुम का एक गर्म पत्थर उनके सिर और स्तन पर रखा जाएगा जिससे वह छाती फाड़कर कंधे से निकल जाएगा, और कंधे की हड्डी पर रखा जाएगा जिससे वह हड्डियों को तोड़ता हुआ सीने से निकल आएगा। वह पीठ फाड़कर करवट से निकलेगा और गर्दन के पीछे का हिस्सा तोड़कर माथे से उभरेगा। जिस धन की ज़कात नहीं दी जाएगी, वह क़यामत के दिन एक पुराना, दुष्ट और खूंखार अजगर बनकर उसके पीछे दौड़ेगा। वह उसे अपने हाथ से रोकने की कोशिश करेगा, तो वह उसका हाथ चबा लेगा, फिर उसके गले का हार बन जाएगा, उसका चेहरा अपने मुंह में लेकर चबाएगा और कहेगा, "मैं तुम्हारा धन हूं, मैं तुम्हारा ख़ज़ाना हूं।" फिर वह उसका पूरा शरीर चबा डालेगा। और हम अल्लाह, जो तमाम जहानों का रब है, की पनाह मांगते हैं। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है।

मसला 49: 5 जमादी अल-ऊला 1319 हिजरी विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि: हिंदा की रुख़सती जमादी अल-ऊला 1315 हिजरी में हुई और उस समय वह जहेज़ की मालिक बनी, इससे पहले वह मालिक नहीं थी। उस समय उसकी मिल्कियत में 90 माशा सोने के ज़ेवर और चांदी के ज़ेवर तथा कुछ रुपये थे। इतना धन उसकी उम्र के आख़िर तक उसके पास रहा। तीन साल दस महीने और तेईस दिन के बाद रबीउल आख़िर शरीफ़ 1319 हिजरी में हिंदा का इंतक़ाल हो गया। उस समय उसके पास चार और सोने की चीज़ें थीं: एक सात तोला ग्यारह माशा की, जिसकी वह मौत से दस महीने पहले मालिक बनी; दूसरी दो तोला की, जो मौत से डेढ़ साल पहले मिली थी; तीसरी चार तोला की, जो दो साल पहले मिली थी; चौथी पांच तोला की, जो तीन साल पहले मिली थी। इस स्थिति में हिंदा पर कितनी ज़कात वाजिब हुई? बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): हिंदा पर तीन साल की ज़कात वाजिब हुई, क्योंकि चौथे साल में एक महीना सात दिन बाक़ी थे जब उसका इंतक़ाल हुआ। रुख़सती के समय जो धन मिला, उस पर तीनों वर्षों की ज़कात है। इसी तरह चौथी चीज़ पांच तोला की, जब मौत से तीन साल पहले मिली, यानी रुख़सती के

10 महीने 23 दिन बाद। संक्षेप में, पहले साल के पूरा होने से पहले प्राप्त हुई, इसलिए वह भी शुरुआती धन में शामिल हो गई और तीनों वर्षों की ज़कात उस पर आई। और यहीं से स्पष्ट हुआ कि तीसरी चीज़ पर पिछले दो वर्षों की ज़कात है, दूसरी पर केवल एक वर्ष की, और पहली पर बिल्कुल नहीं। तो सोने में हिंदा की मिल्कियत हर तीन साल के हिसाब से यह हुई: पहला साल (90 माशा), दूसरा (99 माशा), तीसरा (109 माशा)। पूछे गए मामले में जबकि हिंदा इतने धन की मालिक थी और तीनों साल ज़कात नहीं दी, तो हर पिछली ज़कात का क़र्ज़ साल के धन से कम किया जाता रहा। पहले साल की वाजिब ज़कात 11 माशा 7 सुर्ख सोना और तीन रुपये की चांदी थी और...

पृष्ठ 157/836

ادا نہ کرنے کی حالت میں جو مواخذہ زکوۃ دینے پر ہے اس کا سزا وار ہو گا معاذ اللہ معاذ اللہ، وہ نہ ہلکا ہے نہ قابلِ برداشت، اس کے بارے کچھ آیات و احادیث فقیر کے رسالہ اعز الکتنا فی رد صدقۃ مانع الزکوۃ (۱۳۰۹ھ) میں مذکور ہوئیں، اُن میں بعض کا خلاصہ یہ کہ جس سونے چاندی کی زکوۃ نہ دی جائے روزِ قیامت جہنّم کی آگ میں تپا کر اس سے اُن کی پیشانیاں، کروٹیں، پیٹھیں داغی جائیں گی۔ اُن کے سر، پستان پر جہنّم کا گرم پتھر رکھیں گے کہ چھاتی توڑ کر شانے سے نکل جائے گا اور شانے کی ہڈی پر رکھیں گے کہ ہڈیاں توڑتا سینے سے نکل آئے گا، پیٹھ توڑ کر کروٹ سے نکلے گا، گدّی توڑ کر پیشانی سے ابھرے گا۔ جس مال کی زکوۃ نہ دی جائے گی روزِ قیامت پر انا خبیث خونخوار اژدہا بن کر اس کے پیچھے دوڑے گا، یہ ہاتھ سے روکے گا، وہ ہاتھ چبا لے گا، پھر گلے میں طوق بن کر پڑے گا، اس کا منہ اپنے منہ میں لے کر چبائے گا کہ میں ہوں تیرا مال، میں ہوں تیرا خزانہ۔ پھر اس کا سارا بدن چبا ڈالے گا۔ والعیاذ باللہ رب العالمین، واللہ سبحانہ وتعالی اعلم۔

مسئلہ ۴۹: ۵ جمادی الاولٰی ۱۳۱۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ہندہ کی رخصت جمادی الاولٰی ۱۳۱۵ھ میں ہوئی اور اس وقت وہ جہیز کی مالک ہوئی، اس سے پہلے مالک نہ تھی، اس وقت اس کی ملک میں زیور طلائی ۹۰ ماشہ تولے تھا اور زیور نقرئی ملا روپیہ بھر، اس قدر اخیر عُمر تک اس کے پاس رہا، تین سال دس ماہ تیئس دن کے بعد ربیع الآخر شریف ۱۳۱۹ھ میں ہندہ نے انتقال کیا، اُس وقت اُس کے پاس چار عدد طلائی اور تھے، ایک سات تولہ گیارہ ماشہ کا جس کی دس ماہ پیش از مرگ مالک ہوئی، دوسرا دو تولے کا کہ موت سے ڈیڑھ سال

پہلے ملا تھا، تیسرا چار تولے کا دو سال پہلے، چوتھا پانچ تولے کا تین سال پہلے، اس صورت میں ہندہ پر زکوۃ کس قدر ہوئی؟ بینوا توجروا۔

الجواب: ہندہ پر تین سال زکوۃ واجب ہوئی کہ چوتھے سال میں ایک ماہ سات روز باقی تھے کہ اس نے وفات پائی مال کہ وقتِ رخصت ملا اُس پر تینوں برسوں کی زکوۃ ہے، یوں ہی چوتھا عدد پانچ تولے کا جب مرگ سے تین سال پہلے ملا تو رخصت کے ۱۰ ماہ ۲۳ دن بعد، بالجملہ پہلے سال تمام سے پہلے پایا تو وہ بھی مالِ اوّل میں شامل ہوا اور تینوں سال کی زکوۃ اس پر آئی، اور یہیں سے واضح ہوا کہ تیسرے عدد پر دو سال اخیر کی زکوۃ ہے اور دوسرے پر ایک ہی برس کی، اور پہلے پر اصلاً نہیں تو سونے میں حاصلِ ملک ہندہ باعتبار ہر سہ سال یہ ہوا سال اوّل (۹۰ ماشا) دوم (۹۹ ماشا) سوم للہ (۱۰۹ ماشا) صورتِ مسئولہ میں جبکہ ہندہ اسی قدر مال کی مالک تھی اور زکوۃ تینوں سال نہ دی تو ہر پہلی زکوۃ کا دین سال کے مال سے مجرا ہوتا رہا واجب سالِ اول طلائی ۱۱ ماشہ ۷ سرخ نقرہ تین روپیہ بھر اور

...three Mashas and three Surkhs. After excluding from the second year's wealth, the gold for the second year remained 11 (Masha) and 2 Surkhs. The due [Zakat] is 11 Mashas, 7 Surkhs, and 5-1/5 rice grains. And the silver remained 10 Mashas and 7 Surkhs. The due is three Rupee-weight, 2 Mashas, 2 Surkhs, and 5-3/4-2 rice grains. For the third year, the gold due for two years was one Tola, 11 Mashas, 1 Surkh, and 5-1/5 rice grains. For silver, after deducting five Rupee-weight, 5 Mashas, 6 Surkhs, and 5-3/5-4 rice grains from the two-year due, the remaining gold is 11 (Masha), 2 Surkhs, and 5-2/5-2 rice grains. The due is one Tola, two Surkhs, and 7-17/100 rice grains. Silver is 10 Mashas and 7 Rupee-weight, 5 Mashas, three Surkhs, and 5-2/5-3. One Rupee-weight, one Masha, 4 Surkhs, and 7-13/200 rice grains. The total due gold for three years is 2 Tolas, 11 Mashas, 3 Surkhs, and 5-17/100 rice grains, which means two Tolas, 11 Mashas, 3 Rattis, and 76 out of a hundred parts of 5 rice grains. Silver is 10 Tolas, 7 Mashas, 2 Surkhs, and 7-15/200, which means nine Rupee-weight, 7 Mashas, 2 Rattis, 7 rice grains, and 57 out of two hundred parts of a rice grain. This is all according to the opinion of the 'Sahibayn' [Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad]. According to the opinion of the Imam [Abu Hanifa], there will be a slight decrease. If the questioner is not satisfied with this and wants further reduction, it is necessary to provide the correct market rates of gold and silver on the exact completion date of each of the three years. Also, specify how much the value of each piece exceeds its weight due to craftsmanship. Without this, calculation is impossible. And Allah Almighty knows best.

Problem 50: From Bengal, District Sylhet, Pargana Bijwara, Village Naran Gola, 1320 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: If a person buries 100 rupees after paying Zakat on it, is it necessary to pay Zakat on it again in the second year or not? Please answer with reference to books so you may be rewarded on the Day of Judgment. That is all.

Answer: It is mandatory every year as long as the total Zakatable wealth in his possession, either in reality or by ruling, does not fall below the 'Nisab' (threshold), i.e., seven and a half Tolas of gold or fifty-two and a half Tolas of silver, which is 56 English rupees. Decreasing 'in reality' means it is spent on Zakat or other things and thus reduces. Decreasing 'by ruling' means that Zakat became due each year but was not paid, so the debt of Zakat kept accumulating on it until the Zakatable wealth was no longer equal to the Nisab. For example, if he has only these 100 rupees as Zakatable wealth and no more, then at the end of the first year, based on the opinion

of the Sahibayn, two and a half rupees became due, but he did not pay. At the end of the second year, the Zakatable wealth remained only 97 rupees and 8 annas because 2 rupees and 8 annas are the debt of the previous year's Zakat. This year, 2 rupees and 7 annas became due. At the end of the third year, after excluding the previous two years' Zakat debt of 4 rupees and 15 annas, Zakat was calculated on only ninety-five rupees and one anna, which amounted to 2 rupees, six annas, and a tenth part of a paisa worth of silver. Similarly, when it continues to decrease and falls below 56 rupees, Zakat will no longer be mandatory.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

...तीन माशे तीन सुर्ख, माल-ए-साल-ए-दुम (दूसरे साल के माल) से इस्तिस्ना (छूट) किया तो साल-ए-दुम तिला (सोना) ११ (माशा) २ सुर्ख रहा, वाजिब ११ माशा ४ सुर्ख ۵/۱-۵ चावल, और नुक़रा (चांदी) ۱۰ माशा ७ (माशा) ७ सुर्ख रहा, वाजिब तीन रुपये भर ४ माशा ४ सुर्ख ४- ۴/۳- ۵ चावल, साल-ए-सुम (तीसरा साल) तिला वाजिब दो साल एक तोला ۱۱ माशे ۱ सुर्ख ۵/۱-۵ चावल, नुक़रा वाजिब दो साल से रुपये भर ۵ माशा ۶ सुर्ख ۴- ۳/۵- ५ चावल मिन्हा (घटा) करके बाक़ी तिला ११ (माशा) २ सुर्ख ४- ४/५- ۵ चावल, वाजिब एक तोला दो सुर्ख ۱۷/۱۰۰- ७ चावल नुक़रा ۱۰ माशा ७ रुपये भर ۵ माशा तीन सुर्ख ३- ۵/२- ۵ रुपैया भर एक माशा ۴ सुर्ख ७- ۱۴/۴۰۰ चावल जमीअ' वाजिब सह साला (तीन साला) तिला ४ तोले ۱۱ माशे ۴ सुर्ख ۵- ۱۷/۱۰۰ चावल यानी दो तोले ۱۱ माशे ۴ रत्ती ۵ चावल के सौ हिस्सों से सड़सठ ७६ हिस्से, नुक़रा ۱۰ तोला ७ माशा २ सुर्ख ४- ۱۵/۴۰۰ यानी नौ रुपैया भर और ७ माशे ४ रत्ती ४ चावल और चावल के दो सौ हिस्सों से सत्तावन ۵७ हिस्से, यह सब मज़हब-ए-साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद) पर है और मज़हब-ए-इमाम (अबू हनीफ़ा) पर कुछ कमी ख़फ़ीफ़ (हल्की) हो जाएगी, साइल (पूछने वाला) इस पर राज़ी न हुआ और तख़फ़ीफ़ (कमी) ही चाहे तो यह ज़रूर है कि तीनों बरस हर साल तमाम के सही तारीख़ पर सोने और चांदी का सही निर्ख (रेट) बाज़ार दरियाफ़्त करके बताए नीज़ यह कि किस किस अदद की क़ीमत बवजह-ए-सनअत (शिल्प कौशल) अपने वज़न से किस किस क़दर ज़ाइद (ज़्यादा) है, बे इसके हिसाब नामुमकिन है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला ५०: अज़ बंगाल ज़िला सिलहट परगना बिजवाड़ा मौज़अ नारान गोला १३२० हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसले में कि एक आदमी एक सौ रुपये की ज़कात देकर मदफ़ून (दफ़नाना) किया फिर दूसरे साल में ज़कात देना ज़रूरी है या नहीं? बैनू ब-हवाला किताब तूजरू यौमल हिसाब। फ़क़त।

अल-जवाब: हर बरस ज़रूर है जब तक कुल माल-ए-ज़कात जो उसकी मिल्क (स्वामित्व) है हक़ीक़तन या हुकमन निसाब यानी साढ़े सात तोला सोना या साढ़े बावन तोला चांदी यानी अंग्रेज़ी छप्पन ५६ रुपये से कम न हो जाए, हक़ीक़तन कम हो जाना यह कि ज़कात वग़ैरह में सर्फ़(खर्च) करते करते ख़्वाह किसी और तौर से घट जाए और हुकमन यह कि हर बरस ज़कात वाजिब होती रही और अदा न की कि हर साल ज़कात का दैन (क़र्ज़) इस पर चढ़ता रहा यहाँ तक कि माल-ए-ज़कात क़दर-ए-निसाब न रहा। मसलन सिर्फ यही सौ रुपये, मगर उसके पास माल-ए-ज़कात था

और यही रहा और माल ज़्यादा न हुआ तो अब पहले साल तमाम पर बर-बिना-ए-मज़हब-ए-साहिबैन ढाई रुपये वाजिब हुए मगर उसने अदा न की, दूसरे साल तमाम पर ज़कात सिर्फ ९७ रुपये ८ आने रही कि २ रुपये ८ आने दैन-ए-ज़कात साल-ए-गुज़श्ता में मशगूल हैं इस साल २ रुपये ७ आने वाजिब हुए, तीसरे साल तमाम पर दो साल गुज़श्ता का दैन-ए-ज़कात ४ रुपये १५ आने मुस्तस्ना (अलग) होकर फ़क़त पचानवे रुपये एक आना पर ज़कात आई कि २ रुपये छह आने और एक पैसे की चांदी का दसवां हिस्सा हुआ, व अला हाज़ल क़ियास (इसी तरह अंदाज़ा लगाएं) जब घटते घटते ५६ रुपये से कम रह जाए तो ज़कात वाजिब न होगी।

पेज १५८ ऑफ़ ८३६

تین ماشے تین سرخ، مالِ سالِ دوم سے استثناء کیا تو سالِ دوم طلا ۱۱ (ماشہ) ۲ سرخ رہا، واجب ۱۱ ماشہ ۷ سرخ ۵-۵/۱ چاول، اور نقرہ ۱۰ ماشہ ۷ (ماشہ) ۷ سرخ رہا، واجب تین روپے بھر ۲ ماشہ ۲ سرخ ۲- ۴/۳- ۵ چاول، سالِ سوم طلا واجب دو سال ایک تولہ ۱۱ ماشے ۱ سرخ ۵-۵/۱ چاول، نقرہ واجب دو سال سے روپے بھر ۵ ماشہ ۶ سرخ ۴- ۳/۵- ۵ چاول منہا کرکے، باقی طلا ۱۱ (ماشہ) ۲ سرخ ۲- ۲/۵- ۵ چاول، واجب ایک تولہ دو سرخ ۱۷/۱۰۰- ۷ چاول نقرہ ۱۰ ماشہ ۷ روپے بھر ۵ ماشہ تین سرخ ۳- ۵/۲- ۵ روپیہ بھر ایک ماشہ ۴ سرخ ۷- ۱۳/۲۰۰ چاول جمیع واجب سہ سالہ طلا ۲ تولے ۱۱ ماشے ۳ سرخ ۵- ۱۷/۱۰۰ چاول یعنی دو تولے ۱۱ ماشے ۳ رتی ۵ چاول کے سو حصوں سے سڑسٹھ ۷۶ حصّے، نقرہ ۱۰ تولہ ۷ ماشہ ۲ سرخ ۷- ۱۵/۲۰۰ یعنی نو روپیہ بھر اور ۷ ماشے ۲ رتی ۷ چاول اور چاول کے دو سو حصوں سے ستاون ۵۷ حصّے، یہ سب مذہب صاحبین پر ہے اور مذہب امام پر کچھ کمی خفیف ہو جائے گی، سائل اس پر راضی نہ ہوا اور تخفیف ہی چاہے تو یہ ضرور ہے کہ تینوں برس ہر سال تمام کے صحیح تاریخ پر سونے اور چاندی کا صحیح نرخ بازار دریافت کر کے بتائے نیز یہ کہ کس کس عدد کے قیمت بوجہ صنعت اپنے وزن سے کس کس قدر زائد ہے بے اس کے حساب نا ممکن ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۵۰: از بنگالہ ضلع سلہٹ پرگنہ بیجو اڑہ موضع ناران گولا ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک آدمی ایک سو روپے کی زکوۃ دے کر مدفون کیا پھر دوسرے سال میں زکوۃ دینا ضروری ہے یا نہیں؟ بینوا بحوالہ کتاب توجروا یوم الحساب۔ فقط

الجواب: ہر برس ضرور ہے جب تک کل مالِ زکوۃ جو اُس کی ملک ہے حقیقۃً یا حکماً نصاب یعنی ساڑھے سات تولہ سونے یا ساڑھے باون تولہ چاندی یعنی انگریزی چھپن ۵۶ روپے سے کم نہ ہو

جائے، حقیقۃً کم ہو جانا یہ کہ زکوۃ وغیرہ میں صرف کرتے کرتے خواہ کسی اور طور سے گھٹ جائے اور حکماً یہ کہ ہر برس زکوۃ واجب ہوتی رہی اور ادا نہ کی کہ ہر سال زکوۃ کا دین اس پر چڑھتا رہا یہاں تک کہ مالِ زکوۃ قدرِ نصاب نہ رہا مثلاً صرف یہی سو روپے، مگر اس کے پاس مالِ زکوۃ تھا اور یہی رہا اور مالِ زیادہ نہ ہوا تو اب پہلے سال تمام پر بربنائے مذہب صاحبین ڈھائی روپے واجب ہوئے مگر اس نے ادا نہ کی، دوسرے سال تمام پر زکوۃ صرف ۹۷ روپے ۸ آنے رہی کہ ۲ روپے ۸ آنے دینِ زکوۃ سالِ گزشتہ میں مشغول ہیں اس سال ۲ روپے ۷ آنے واجب ہوئے، تیسرے سال تمام پر دو سال گزشتہ کا دینِ زکوۃ ۴ روپے ۱۵ آنے مستثنیٰ ہو کر فقط پچانوے روپے ایک آنہ پر زکوۃ آئی کہ ۲ روپے چھ آنے اور ایک پیسے کی چاندی کا دسواں حصہ ہوا، وعلیٰ ھذا القیاس جب گھٹتے گھٹتے ۵۶ روپے سے کم رہ جائے تو زکوۃ واجب نہ ہو گی۔

Fatawa Razawiyyah Volume 10

In Ad-Durr al-Mukhtar, it is stated that the cause for the obligation of Zakat is the ownership of a nisab (minimum amount) for a lunar year, which is free from debts demanded by fellow humans, such as Zakat, land tax (kharaj), etc. (Abridged summary). In Al-Hindiyyah, it is mentioned: A man has a thousand dirhams and no other property. He rents a house with them for ten years at a rate of one hundred per year and pays the thousand dirhams upfront. He does not reside in the house throughout those years, and the house remains in the possession of the lessor. The lessor pays Zakat on nine hundred dirhams in the first year. In the second year, he pays on eight hundred dirhams minus the Zakat paid for the first year. Then, for each subsequent year, the Zakat for another hundred dirhams and whatever Zakat was due for previous years will be deducted annually. And Allah Almighty knows best.

Problem 51: 6 Sha'ban al-Mu'azzam 1321 AH What do the scholars of the religion say about this issue: Zaid says that once Zakat has been paid on trade goods, it should not be paid on them again in the second year; instead, Zakat should only be paid on the profit. Clarify and you shall be rewarded.

Answer: As long as trade goods, either by themselves or combined with other Zakatable assets, remain equal to the nisab and exceed basic necessities like debts, Zakat, etc., Zakat will be obligatory on them every year. Zaid's statement is completely incorrect, as all books bear witness. And Allah Almighty knows best.

Problem 52 to 54: Questioned by Muhammad Sabur, Merchant of Tables and Chairs, Bareilly near Karah. What do the scholars of the religion say about this issue: (1) A person, at the start of his business, decided that one-sixteenth of the profit made would be in the name of Allah Almighty...

1. Ad-Durr al-Mukhtar, Book of Zakat, Mujtabai Press Delhi, 1/129.
2. Fatawa al-Hindiyyah, Section Two on Loans, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/181-182.

फ़तावा रज़विया खण्ड 10

'अद-दुर्र अल-मुख्तार' में है कि ज़कात की फर्ज़ियत का सबब ऐसे निसाब का मालिक होना है जिस पर साल गुज़र चुका हो और वह ऐसे कर्ज़ से मुक्त हो जिसकी माँग बंदों की ओर से हो, जैसे ज़कात, ख़राज (भूमि कर) आदि। (संक्षिप्त)। 'अल-हिन्दिया' में है: एक व्यक्ति के पास एक हज़ार दिरहम हैं, इसके अलावा कोई धन नहीं। उसने इनके बदले दस साल के लिए घर किराए पर लिया कि हर साल के बदले एक सौ दिरहम अदा करेगा, उसने एक हज़ार दिरहम दे दिए, लेकिन उस घर में वह किसी भी साल तक नहीं रहा और घर मालिक के पास ही रहा। तो मालिक पहले साल नौ सौ पर, दूसरे साल आठ सौ पर, लेकिन पिछले साल की ज़कात की राशि घटाकर, फिर हर साल एक सौ और पिछले वर्षों की ज़कात की राशि सालाना कम होती जाएगी। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 51: 6 शाबान अल-मुअज़्ज़म 1321 हिजरी उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद कहता है कि जिस तिजारती माल पर एक बार ज़कात अदा कर दी, फिर दूसरे साल उस पर ज़कात नहीं देनी चाहिए, बल्कि उसके मुनाफे पर ज़कात देनी चाहिए। बयान फरमाएं आपको सवाब मिलेगा।

अल-जवाब (उत्तर): व्यापार का माल जब तक स्वयं या दूसरे ज़कात योग्य धन से मिलकर निसाब की मात्रा के बराबर और बुनियादी ज़रूरतों जैसे कर्ज़, ज़कात आदि से अधिक रहेगा, हर साल उस पर ज़कात वाजिब होगी। ज़ैद का बयान पूरी तरह गलत है, सभी पुस्तकें इस बात की गवाह हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 52 से 54: प्रश्नकर्ता मुहम्मद सबूर, मेज़ कुर्सी के व्यापारी, बरेली निकट कड़ा उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि: (1) एक व्यक्ति ने अपने व्यापार की शुरुआत के समय यह तय किया कि जो भी मुनाफा होगा, उसका सोलहवाँ हिस्सा अल्लाह तआला के नाम...

1. अद-दुर्र अल-मुख्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 1/129।
2. फ़तावा हिन्दिया, दूसरा खंड, ऋण के विषय में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 1/181-182।

فی الدر المختار سبب افتراضها ملك نصاب حولی فارغ من دین له مطالب من جهة العباد كزكاة وخراج اھ ملخصا وفي الهندية رجل له الف درهم لامال له غيرها استاجر بها دارا عشر سنين لكل سنة مائة فدفع الالف ولم يسكنها حتى مضت السنون والدار في يد الأجير يزكى الأجر في السنة الاولى عن تسع مائة وفي الثانية عن ثمان مائة الا زكاة السنة الاولى ثم يسقط لكل سنة زكاة مائة اخرى وما وجب عليه با لسنين الماضية الخ واللہ تعالی اعلم۔ در مختار میں ہے کہ زکوۃ کی فرضیت کا سبب ایسے نصاب کا مالک ہونا ہے جس پر سال گزرا ہو اور وہ ایسے دین سے فارغ ہو جس کا مطالبہ بندوں کی طرف سے ہو مثلاً زکوۃ، خراج وغیرہ اھ تلخیصاً۔ ہندیہ میں ہے ایک آدمی کے پاس ہزار درہم ہیں اس کے علاوہ کوئی مال نہیں، اس نے ان کے عوض دس سال تک گھر کرایہ پر لے لیا کہ ہر سال کے عوض ایک صد درہم ادا کرے گا، اس نے ہزار درہم دے دئے مگر اس گھر میں وہ کسی سال تک رہائش پذیر نہ ہوا اور گھر آجر کے پاس ہی رہا، تو آجر پہلے سال نو سو کی، دوسرے سال آٹھ سو کی، مگر گزشتہ سال زکوۃ کی مقدار نکال کر، پھر ہر سال ایک سو اور وہ جو گزشتہ سالوں کی زکوۃ کی مقدار ہو، سالانہ ساقط ہوتی جائے گی، واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۵۱: ۶ شعبان المعظم ۱۳۲۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید کہتا ہے جس مال تجارت پر ایک مرتبہ زکوٰۃ ادا کردی پھر دوسرے سال اس پر زکوۃ دینا نہ چاہیے بلکہ اس کے نفع پر زکوۃ دینا چاہئے۔ بینوا توجروا الجواب: مالِ تجارت جب تک خود یا دوسرے مالِ زکوۃ سے مل کر قدرِ نصاب اور حاجتِ اصلیہ مثل دین، زکوۃ وغیرہ سے فاضل رہے گا ہر سال اس پر زکوۃ واجب ہوگی زید کا بیان محض غلط ہے، تشھد بہ الکتب قاطبۃ۔ واللہ تعالٰی اعلم مسئلہ ۵۲تا ۵۴:

مسئولہ محمد صبور سوداگر میز کرسی، بریلی متصل کڑہ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ

میں کہ: (۱) ایک شخص نے اپنی تجارت کے آغاز کے وقت یہ قرار دیا کہ جو منافع ہوگا اس کا سولھواں حصہ اللہ تعالیٰ نام

1 در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۲۹ 2 فتاویٰ ہندیہ الفصل الثانی فی القروض

نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۸۲-۱۸۱ Page 159 of 836

Volume 10 Fatawa Razawiyya

...started spending, at the time of calculation, the 16th portion of profits came out to be less than what he had already spent on charitable work. Can this surplus amount be considered as Zakat or not?

(2) A person is a partner in a trade with the right of 'Hinth'. Before profits were realized, he continued taking from this trade gradually for his personal expenses. When profits were determined, he was a debtor to the trade. The profit assigned to him was applied towards that debt. In this situation, is Zakat on this profit binding upon him or not?

(3) A person, at the start of trade, informed another person who wanted to participate in his trade with money, saying "At the time of preparing the balance sheet (to determine profit), I first take out Zakat, and afterwards, profit is distributed." The other person liked this and became an equal partner in profit with his money. By stating this, does Zakat on his capital also become binding upon him, or does it only remain for the profit amount which enters into the expenses from both parties' shares? Provide a ruling, you will be rewarded.

The Answer:

(1) Since it was not given with the intention of Zakat, the surplus amount given cannot be counted towards Zakat. However, it can be adjusted against that 16th portion for the next year which he has pledged to give for Allah Almighty. For example, if at this time ten rupees more were paid, and next year the 16th portion of profit is one hundred rupees, then he has the option to count these ten in that and pay ninety rupees.

(2) No. And Allah Almighty knows best.

(3) Zakat for the other person cannot be binding upon him. Zakat on his own share is obligatory for each. And Zakat is not only on the profit of trade goods, as it is only on the profit of a house, land, or shop; here it is not like that, rather it is obligatory on the total trade goods. And Allah Almighty knows best.

Issue 55: From Mahalla Chah Baai, queried by Hafiz Muhammad Sadiq, General Attorney of Munshi Rahim Dad Khan Sahib Tehsildar, 25 Shaban 1330 AH.

What do the scholars of religion say regarding this issue: A person owns land/ property etc., and its income is received at different times and continues to be spent

on land revenue and other expenses. In such a situation, the annual accounting starts from the English month of October and ends in the month of September. Therefore, the amount remaining after expenses at the end of the year, when will Zakat become obligatory on it? At what time should it be paid? Provide a ruling, you will be rewarded.

...खर्च करना शुरू किया, हिसाब करते समय मुनाफे का सोलहवां हिस्सा उस खर्च से कम निकला जो वह नेक कामों में खर्च कर चुका था, क्या यह अतिरिक्त रुपया ज़कात में शामिल हो सकता है या नहीं?

(२) एक व्यक्ति 'हक्कुल हिंस' के साथ एक व्यापार में साझीदार है। मुनाफा प्राप्त होने से पहले, वह अपनी निजी ज़रूरतों के लिए इस व्यापार से धीरे-धीरे लेता रहा। जब मुनाफे का पता चला, तो वह व्यापार का कर्जदार था। उसके नाम जो मुनाफा हुआ, उसे उस कर्ज में जमा कर दिया गया। इस स्थिति में, क्या इस मुनाफे की ज़कात उसकी ज़िम्मेदारी है या नहीं?

(३) एक व्यक्ति ने व्यापार शुरू करते समय दूसरे व्यक्ति से, जो पैसे के साथ उसके व्यापार में शामिल होना चाहता था, स्पष्ट किया कि "मैं हिसाब (मुनाफा जानने) के समय पहले ज़कात निकाल देता हूँ, उसके बाद मुनाफा बाँटा जाता है।" उस दूसरे व्यक्ति ने इस बात को पसंद किया और पैसे के साथ मुनाफे में बराबर का साझीदार बन गया। क्या इस बात को स्पष्ट करने से उसके ऊपर उसके मूल धन की भी ज़कात लागू होगी या केवल मुनाफे की वह राशि रहेगी जो दोनों पक्षों के हिस्से से खर्च में शामिल होती है? बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर:

(१) चूँकि उसे ज़कात की नीयत से नहीं दिया गया था, इसलिए जो अतिरिक्त दिया गया वह ज़कात में नहीं गिना जा सकता। हाँ, अगले साल के उस सोलहवें हिस्से में समायोजित किया जा सकता है जो उसने अल्लाह अज़्ज़वजल के लिए देना तय कर रखा है। उदाहरण के लिए, यदि इस समय दस रुपये अधिक पहुँच गए और अगले साल मुनाफे का सोलहवां हिस्सा सौ रुपये हो, तो उसे अधिकार है कि इन दस को उसमें समायोजित करके नब्बे रुपये दे।

(२) नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(३) दूसरे की ज़कात उसकी ज़िम्मेदारी नहीं हो सकती। हर एक पर उसके अपने हिस्से की ज़कात अनिवार्य है। और ज़कात केवल व्यापारिक माल के मुनाफे पर नहीं होती, जैसा कि घर, ज़मीन या दुकान के केवल मुनाफे पर होती है; यहाँ ऐसा नहीं है, बल्कि कुल व्यापारिक माल पर अनिवार्य होती है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ५५: मोहल्ला चाह बाई से, प्रश्नकर्ता हाफ़िज़ मोहम्मद सादिक़, मुख्तार-ए-आम मुंशी रहीम दाद ख़ाँ साहब तहसीलदार, २५ शाबान १३३० हिजरी।

विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक व्यक्ति ज़मींदारी जायदाद आदि का मालिक है और उसकी आय अलग-अलग समय पर प्राप्त होती रहती है और मालगुज़ारी और अन्य खर्चों में खर्च होती रहती है। ऐसी स्थिति में वार्षिक हिसाब अंग्रेज़ी महीने अक्टूबर से शुरू होता है और सितंबर के महीने में समाप्त होता है। इसलिए खर्चों के बाद साल के अंत में जो राशि शेष रहती है, उस पर ज़कात कब वाजिब होगी? इसे किस समय अदा करना चाहिए? बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

पृष्ठ १६० का ८३६

صرف کرنا شروع کیا، وقت کرنے حساب کے، منافع کی تعداد کا سولہواں حصہ کم نکلا اُس صرف سے جو وہ کارِ خیر میں صرف کر چکا، یہ فاضل روپیہ بمنزلہ زکوٰۃ داخل ہو سکتا ہے یا نہیں؟

(۲) ایک شخص حق الحنث کے ساتھ ایک تجارت میں شریک ہے، قبل حاصل ہونے منافع کے اس تجارت سے بتدریج اپنے صرف کے واسطے لیتا رہا، وقت معلوم ہونے منافع کے وہ قرضدار تجارت کا تھا، جو منافع اس کے نامزد ہوا وہ قرضہ میں داخل کیا، اس حالت میں اس منافع کی زکوٰۃ اس کے ذمہ عائد ہے یا نہیں؟

(۳) ایک شخص وقت شروع کرنے تجارت کے دیگر شخص سے جو اُس کی تجارت میں شرکت روپیے کے ساتھ دینا چاہتا تھا ظاہر کیا کہ میں وقت چٹھہ کے (معلوم کرنا منافع کا) پہلے زکوٰۃ نکال دیتا ہوں بعدہ، منافع تقسیم کیا جاتا ہے، اُس دیگر شخص نے اس بات کو پسند کیا اور روپیہ کے ساتھ منافع میں برابر کا شریک ہوا، اس بات کے ظاہر کرنے سے کیا اس کے ذمہ اس کے روپیہ کی بھی زکوٰۃ عائد ہوگی یا صرف منافع کی رقم رہی جو طرفین کے حصہ سے خرچ میں داخل ہوتی ہے۔ بینوا توجروا

الجواب:

(۱) جبکہ بہ نیت زکوٰۃ وہ دینا نہ تھا تو جو زائد دیا گیا زکوٰۃ میں محسوب نہیں ہو سکتا، ہاں آئندہ سال کے اُس سولہویں حصہ میں مجرا ہو سکتا ہے جو اس نے اللہ عزوجل کے لیے دینا ٹھہرا رکھا

ہے، مثلاً اس وقت دس روپیہ زیادہ پہنچے اور آئندہ سال منافع کا سولہواں حصہ سو روپے ہو تو اسے اختیار ہے کہ یہ دس اس میں محسوب کر کے نوے روپے دے۔

(۲) نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

(۳) دوسرے کی زکوٰۃ اس کے ذمہ عائد نہیں ہو سکتی، ایک پر اُس کے حصہ کی زکوٰۃ لازم ہے، اور زکوٰۃ صرف منافع مالِ تجارت پر نہیں ہوتی، جس طرح مکان زمین دکان کے صرف منافع پر ہوتی ہے یہاں ایسا نہیں بلکہ کل مالِ تجارت پر لازم ہوتی ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۵۵: از محلہ چاہ بائی مسئولہ حافظ محمد صادق مختارِ عام منشی رحیم داد خاں صاحب تحصیلدار ۲۵ شعبان ۱۳۳۰ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص مالک ہے جائدادِ زمینداری وغیرہ کا اور اس کی آمدنی مختلف اوقات میں وصول ہوتی رہتی ہے اور مالگزاری و نیز دیگر اخراجات میں خرچ ہوتی رہتی ہے اور ایسی صورت میں حساب سالانہ انگریزی ماہ اکتوبر سے شروع ہوتا ہے اور ماہ ستمبر میں ختم کیا جاتا ہے لہذا جو رقم بعد اخراجات کے آخر سال پر باقی رہتی ہے اس پر زکوٰۃ کب واجب ہوگی؟ کس وقت اس کو ادا کرنا چاہئے؟ بینوا توجروا

Volume 10 Fatawa Razvia

The Answer: Relying on September or October is forbidden, nor is the timing of income considered. Rather, the lunar month, date, hour, and minute on which he first became the owner of 56 rupees, and if that amount (nisab) remained with him until the end of the year—meaning the same lunar month, date, hour, and minute of the following year—then it becomes obligatory (fard) for him to pay zakat at that specific time. And Allah Almighty knows best.

Question 56: From Bareilly city, Railway Station C.R.K.R., Nimat Hussain Darapur, 15 Rabi-ul-Akhir 1333 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Shariah say regarding this matter: Zaid has been an employee of a railway company for approximately twenty years. According to company rules, the railway deducts one anna and four pies per rupee from Zaid's monthly salary, along with other employees, as a security deposit. After six months, they invest this money in some other business, etc. In case of profit or loss, they adjust the proportional increase or decrease and then provide a receipt every six months. Initially, one rupee and two annas were deducted; as the salary increased, the deduction also increased. Thus, now three rupees per month are deducted, and the principal amount has reached five hundred, and the total amount (including profit) has exceeded one thousand. This will be received by him or his heirs when Zaid retires, provided the term of service ends well and no fault occurs. However, there is no risk regarding the original five hundred rupees, except that it is impossible to receive the money during the period of service until he resigns. According to Shariah, is it obligatory to pay zakat on this money or not? If it is, from what time should it be given? Will it be given on the principal amount or the total amount? And what is the threshold (nisab) for zakat and what is the rate of zakat on it? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: From the time that the original money itself, or combined with other zakatable assets that Zaid possesses, reached the threshold of nisab—i.e., 56 rupees—and after meeting basic needs, one lunar year passed over it, zakat became obligatory from that time, and it continued to become obligatory year by year. Yes, whatever zakat was due for the previous year will be deducted from this year's total, as that is a debt owed to Allah Almighty. Zakat will then be due on the remaining amount plus the new additions for the current year. From the third year's total, the zakat due for the past two years will be deducted, and the current year's addition will be included; zakat will be due on this amount. From the fourth year's total, the aforementioned three years' zakat will be deducted, and the current year's addition

will be included; zakat will be due on this amount. From the fourth year's total, the mentioned three years' zakat will be deducted and this year's addition will be included; it will continue like this until the end.

जिल्द दसवां फ़तावा-ए-रज़विया

उत्तर: सितंबर-अक्टूबर का भरोसा करना हराम है, न ही इसकी आमदनी के समय का विचार किया जाएगा, बल्कि सबसे पहले जिस अरबी (चांद) महीने की जिस तारीख, जिस घंटे और मिनट पर वह ५६ रुपये का मालिक हुआ और साल के अंत तक, यानी वही अरबी महीना, वही तारीख, वही घंटा और मिनट अगले साल आने तक उसके पास निसाब (न्यूनतम आवश्यक धन) बचा रहा, वही महीना, तारीख और मिनट उसके लिए ज़कात देना फर्ज़ है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला ५६: बरेली शहर, रेलवे स्टेशन सी.आर.केआर. से, नेमत हुसैन दारापुर, १५ रबी-उल-आखिर १३३३ हिजरी। दीन के विद्वान और शरीअत के मुफ़्ती इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद लगभग बीस वर्षों से एक रेलवे कंपनी में कर्मचारी है। रेलवे अपने नियमों के अनुसार, अन्य कर्मचारियों सहित, ज़ैद के मासिक वेतन से एक आना और चार पाई प्रति रुपया ज़मानत के तौर पर काट लेती है। छह महीने के बाद, वे इस पैसे को किसी अन्य व्यापार आदि में निवेश करते हैं। लाभ या हानि के मामले में आनुपातिक कमी या वृद्धि करके, वे हर छह महीने में रसीद देते हैं। शुरुआत में एक रुपया दो आना काटा जाता था; जैसे-जैसे वेतन बढ़ता गया, कटौती भी बढ़ती गई। इस प्रकार, अब तीन रुपये मासिक की कटौती की जाती है और अब मूल राशि पाँच सौ हो गई है और कुल राशि एक हज़ार से अधिक हो गई है। यह ज़ैद या उसके वारिसों को उस समय प्राप्त होगी जब वह नौकरी से अलग होगा, बशर्ते कि सेवा की अवधि अच्छी तरह से समाप्त हो जाए और कोई गलती न हो। लेकिन जो पाँच सौ रुपये मूल हैं, उनमें किसी तरह का जोखिम नहीं है, सिवाय इसके कि नौकरी के दौरान इस्तीफा देने तक पैसा प्राप्त करना असंभव है। शरीअत के अनुसार, क्या इस पैसे पर ज़कात देना फर्ज़ है या नहीं? यदि है, तो किस समय से दी जाएगी? क्या मूल राशि पर दी जाएगी या कुल राशि पर? और ज़कात का निसाब कितना है और उस पर ज़कात की मात्रा क्या है? व्याख्या करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: जब से वह मूल रुपया स्वयं, या ज़ैद के पास मौजूद अन्य ज़कात योग्य संपत्ति के साथ मिलकर निसाब की मात्रा, यानी ५६ रुपये तक पहुँच गया और बुनियादी ज़रूरतों को पूरा करने के बाद उस पर एक साल बीत गया, तब से उस पर ज़कात अनिवार्य हो गई और साल-दर-साल नई ज़कात अनिवार्य होती रही। हाँ, पिछले साल की जितनी ज़कात अनिवार्य हुई है, उसे इस साल के कुल योग में से कम कर दिया जाएगा क्योंकि वह अल्लाह अज़्ज़वजल का ऋण है। बाकी बची हुई राशि और वर्तमान वर्ष की नई वृद्धि पर ज़कात आएगी। तीसरे साल के योग में से पिछले दो वर्षों की देय ज़कात

को घटा दिया जाएगा और वर्तमान वर्ष की वृद्धि को शामिल किया जाएगा; इस राशि पर ज़कात आएगी। चौथे साल के योग में से पिछले तीन वर्षों की उक्त ज़कात को घटा दिया जाएगा और वर्तमान वर्ष की वृद्धि को शामिल किया जाएगा; इस राशि पर ज़कात आएगी। चौथे साल के योग में से उक्त तीन वर्षों की ज़कात की कटौती और इस वर्ष की वृद्धि को शामिल किया जाएगा, अंत तक इसी तरह किया जाएगा।

पृष्ठ ८३६ का १६१

الجواب: ستمبر اکتوبر کا اعتبار حرام ہے ، نہ اس کے اوقاتِ آمدنی پر لحاظ ، بلکہ سب میں پہلی جس عربی مہینے کی جس تاریخ جس گھنٹے منٹ پر وہ ۵۶ روپے کا مالک ہوا اور ختم سال تک یعنی وہی عربی مہینہ وہی تاریخ وہی گھنٹہ منٹ دوسرے سال آنے تک اس کے پاس نصاب باقی رہا وہی مہینہ تاریخ منٹ اس کے لیے زکوۃ دینا فرض ہے ۔ واللہ تعالٰی اعلم مسئلہ ۵۶: از شہر بریلی اسٹیشن ریلوے سٹی آر ، کے ، آر نعمت حسین دراپور ۱۵ ربیع الآخر ۱۳۳۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید عرصہ تخمیناً بیس سال سے ریلوے کمپنی کے یہاں ملازم ہے اور ریلوے اپنے قاعدے کے موافق بشمول دیگر ملازمان کے زید کی تنخواہ ماہواری سے ایک آنہ چار پائی فی روپیہ بطور ضمانت مجرا کر لیتی ہے اور بعد چھ ماہ کے اس روپے کو کسی دوسری تجارت وغیرہ میں لگا دیتی ہے ، در صورت نفع و نقصان کے رسدی کمی بیشی کر کے پھر ششماہی پر رسید دے دیتی ہے ، ابتدا میں ایک روپیہ دو آنہ مجرا ہوتا تھا جوں جوں تنخواہ میں ترقی ہوتی گئی اس میں بھی اضافہ ہوتا گیا ، چنانچہ اب مبلغ تین روپے ماہوار مجرا کیا جاتا ہے اور اب اصل تعداد مبلغ پانچ سو کی ہو گئی ہے اور گل تعداد ایک ہزار سے زائد ہو گئی ہے ، جس وقت زید ملازمت سے علیحدہ ہوگا اس وقت اس کو اور اس کے ورثا کو وصول ہو گا بشرطیکہ میعاد ملازمت اچھے طریقہ پر ختم ہو جائے اور کوئی قصور وغیرہ واقع نہ ہو ، مگر پانچ سو روپے جو اصلی ہے اس میں کسی طرح اندیشہ نہیں ہے سوا اس کے کہ درمیان ملازمت کے روپے کا وصول ہونا ناممکن ہے جب تک ملازمت سے مستعفی نہ ہو ، ازروئے شریعت اس روپے پر زکوۃ دینا فرض ہے یا نہیں؟ اگر ہے تو کس وقت سے دی جائے گی؟ اصلی تعداد پر دی جائے گی یا گل روپے پر؟ اور نصابِ زکوۃ کس قدر اور اس پر مقدارِ زکوۃ

کیا ہے؟ بینوا توجروا الجواب: جب سے وہ اصلی روپیہ خود یا مع اور زکوتی مال کے جو زید کے پاس ہے ، قدر نصاب یعنی ۵۶ روپے تک پہنچا اور حوائج اصلیہ سے بچ کر اس پر سال گزرا اس وقت سے اس پر زکوۃ واجب ہوئی اور سال بسال جدیدہ زکوۃ واجب ہوتی رہی ، ہاں اگلے سال کی جتنی زکوۃ واجب ہوئی ہے اس سال جمع میں سے اتنا کم کر لیں گے کہ اتنا اس پر اللہ عزوجل کا دین ہے باقی مع جدید مقدار سال حال پر زکوۃ آئے گی ، تیسرے سال کی جمع میں سے دو برس گذشتہ کی زکوۃ واجب شدہ مجرا کریں گے اور سال حال کا اضافہ شامل کریں گے اس قدر پر زکوۃ آئے گی چوتھے سال کی جمع میں سے تین سال کی زکوۃ مذکور مجرا کریں گے اور سال حال کا اضافہ شامل کریں گے اس قدر زکوۃ آئے گی ، چوتھے سال کی جمع میں سے تین سال کی زکوۃ مذکور مجرا اور امسال کا اضافہ شامل ہوگا، اخیر تک یو نہی کرینگے۔

If that money is invested in trade with permission, then its profit will be included, and Zakat will become obligatory year after year. However, paying Zakat on this money will only be necessary when it is received. And the addition that the company makes on the basis of interest (Riba) will never be subject to Zakat, as it is not owned by the person, nor is it permissible in any way with the intention of interest. Yes, after termination, if the company voluntarily gives that addition and no Muslim is a partner in the company, then he can take that addition with the intention that a non-Muslim group is giving money willingly; he can take it considering it as permissible property (maal-e-mubah) without the intention of interest. And Allah Almighty knows best.

Problem 57: From Kosi Kalan, Mathura District, sent by Allah Mehr, 21 Ramadan-ul-Mubarak 1334 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Shariah say about this matter: Is it better to give Zakat publicly or secretly? Please explain and be rewarded.

Answer: Giving Zakat publicly is better, and giving it secretly is also permissible without hesitation. If a needy person of dignity would not accept it publicly or would feel humiliated, then giving it to them secretly is also better. And Allah Almighty knows best.

Problem 58: From Sayyidpur Post Office Wazirganj, Budaun District, sent by Aghaz Ali Khan, 16 Rabi-ul-Awwal Sharif 1337 AH. Is Zakat obligatory on the original capital of trade, i.e., its cost, or on the profit?

Answer: Zakat is not just on the cost of trade, nor just on the profit, but at the completion of the year, Zakat is due on the profit amount and the current market value of the remaining trade goods. And Allah Almighty knows best.

Problem 59: Queried by Hafiz Mahmood Hussain Sahib, 19 Dhu al-Hijjah 1308 AH. Zaid gave something to Bakr and said, "Give this to the poor wherever you deem appropriate." If Bakr himself is deserving of it, can he spend it on himself or not? Please explain and be rewarded.

Answer: If the owner has given absolute permission saying, "give it where you deem appropriate," then the agent has the right to spend it on himself as well, provided he is a legitimate recipient. Yes, if these words were not said, it would not be permissible

for him to spend it on himself, but giving it to his children or wife would still be permissible if they were eligible recipients. It is stated in Durr-e-Mukhtar:

For the agent to give it to his poor child and his wife, but not to himself unless the owner says so. It is permissible for the agent to give it to his poor minor child and his deserving wife, while he cannot take it for himself.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द दहम (खंड 10)

व्यापार में वह रुपया अगर उसकी अनुमति से लगाया जाता है तो उसका मुनाफ़ा शामिल होगा, इस तरह ज़कात साल-दर-साल वाजिब होती रहेगी, मगर उस रुपये की ज़कात अदा करना उस समय अनिवार्य होगा जब वह वसूल होगा, और जो इज़ाफ़ा (वृद्धि) कंपनी सूद (ब्याज) के तरीके पर करती है उस पर कभी ज़कात नहीं होगी, न वह उसकी मिल्क (स्वामित्व) है न उसे सूद की नीयत से किसी तरह जायज़ है, हाँ बाद ख़त्म अगर कंपनी अपनी ओर से उसको वह इज़ाफ़ा दे और कंपनी में कोई मुसलमान शरीक न हो तो यह उस इज़ाफ़े को इस नीयत से ले सकता है कि एक गैर-मुस्लिम जमाअत एक माल खुशी से देती है, यूँ माल-ए-मुबाह समझ कर ले सकता है सूद की नीयत न हो, वल्लाहु तआला आलम।

मसला ५७: अज़ कोसी कलां ज़िला मथुरा मुरसला अल्लाह महर २१ रमज़ानुल मुबारक १३३४ हिजरी क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन व मुफ़्तियान-ए-शर-ए-मतीन इस मसले में कि ज़कात ऐलान के साथ देना बेहतर है या ख़ुफ़िया (गुप्त) तौर से? बय्यानु तूजरू।

अल-जवाब: ज़कात ऐलान के साथ देना बेहतर है और ख़ुफ़िया देना भी बे-तकल्लुफ़ रवा है, और अगर कोई साहिबे इज़्ज़त हाजतमंद हो कि ऐलानिया न लेगा या इसमें सुबकी (अपमान) समझेगा तो उसे ख़ुफ़िया देना भी बेहतर है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला ५८: अज़ सैयदपुर डाकखाना वज़ीरगंज ज़िला बदायूं मुरसला आग़ाज़ अली ख़ान १६ रबीउल अव्वल शरीफ़ १३३७ हिजरी व्यापार के सरमाया-ए-असली (मूल पूंजी) पर यानी उसकी लागत पर ज़कात देना वाजिब है या मुनाफ़े पर?

अल-जवाब: व्यापार की न लागत पर ज़कात है न सिर्फ मुनाफ़े पर, बल्कि साल तमाम के वक्त जो ज़र-ए-मुनाफ़ा है और बाकी माल-ए-तिजारत की जो कीमत उस वक्त बाज़ार के भाव से है उस पर ज़कात है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला ५९: मसूला हाफ़िज़ महमूद हुसैन साहब १९ ज़िल हिज्जा १३०८ हिजरी ज़ैद ने बक्र को कुछ दिया और कहा इसको मसाकीन (ग़रीबों) को जहाँ मुनासिब समझो दे दीजियो, अगर ज़ैद खुद उसका मसरफ़ (पात्र) हुआ अपने ऊपर उसको सर्फ़(ख़र्च) कर सकता है या नहीं? बय्यानु तूजरू।

अल-जवाब: जिसके मालिक ने उसे इज़्न-ए-मुतलक (पूर्ण अनुमति) दिया कि जहाँ मुनासिब समझो, दो, तो उसे अपने नफ़्स (स्वयं) पर भी सर्फ़ करने का इख़्तियार हासिल है, जबकि यह उसका मसरफ़ हो। हाँ अगर यह लफ्ज़ न कहे जाते इसे अपने नफ़्स पर सर्फ़ करना जायज़ न होता मगर अपनी या औलाद को दे देना तब भी जायज़ होता अगर वो मसरफ़ थे। दर्र-ए-मुख्तार में है:

वकील के लिए जायज़ है कि वह अपने ग़रीब नाबालिग बच्चे और अपनी बीवी मुस्तहिक़ (पात्र) को ज़कात दे दे जबकि खुद नहीं ले सकता, वकील को जायज़ है कि अपने नाबालिग़ फ़क़ीर बच्चे और अपनी बीवी मुस्तहिक़ को ज़कात दे दे जबकि खुद नहीं ले सकता।

पेज १६२ ऑफ़ ८३६

تجارت میں وہ روپیہ اگر اس کی اجازت سے لگایا جاتا ہے تو اس کا منافع شامل ہوگا اس طور پر زکوٰۃ سال بہ سال واجب ہوا کرے گی، مگر اس روپیہ کی زکوٰۃ ادا کرنا اس وقت لازم ہوگا جب وہ وصول ہوگا، اور جو اضافہ کمپنی سُود کے طریقے پر کرتی ہے اُس پر کبھی زکوٰۃ نہ ہوگی، نہ وہ اس کی ملک ہے نہ اُسے سُود کی نیت سے کسی طرح جائز ہے، ہاں بعد ختم اگر کمپنی بطور خود اس کو وہ اضافہ دے اور کمپنی میں کوئی مسلمان شریک نہ ہو تو یہ اُس اضافہ کو اس نیت سے لے سکتا ہے کہ ایک غیر مسلم جماعت ایک مال بخوشی دیتی ہے، یوں مالِ مباح سمجھ کر لے سکتا ہے سُود کی نیت نہ ہو، واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۵۷: از کوسی کلاں ضلع متھرا مرسلہ اللہ مہر ۲۱ رمضان المبارک ۱۳۳۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ اس میں کہ زکوٰۃ اعلان سے دینا بہتر ہے یا خفیہ طور سے؟ بینوا توجروا

الجواب: زکوٰۃ اعلان کے ساتھ دینا بہتر ہے اور خفیہ دینا بھی بے تکلف روا ہے، اور اگر کوئی صاحبِ عزت حاجتمند ہو کہ اعلانیہ نہ لے گا یا اس میں سبکی سمجھے گا تو اسے خفیہ بھی دینا بہتر ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۵۸: از سید پور ڈاک خانہ وزیر گنج ضلع بدایوں مرسلہ آغاز علی خاں ۱۶ ربیع الاول شریف ۱۳۳۷ھ تجارت کے سرمایہ اصلی پر یعنی اس کی لاگت پر زکوٰۃ دینا واجب ہے یا منافع پر؟

الجواب: تجارت کی نہ لاگت پر زکوٰۃ ہے نہ صرف منافع پر، بلکہ سال تمام کے وقت جو زرِ منافع ہے اور باقی مالِ تجارت کی جو قیمت اس وقت بازار کے بھاؤ سے ہے اس پر زکوٰۃ ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۵۹: مسئولہ حافظ محمود حسین صاحب ۱۹ ذی الحجہ ۱۳۰۸ھ زید نے بکر کو کچھ دیا اور کہا اس کو مساکین کو جہاں مناسب سمجھو دے دیجیو، اگر زید خود اس کا مصرف ہوا اپنے اوپر اس کو صرف کر سکتا ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: جس کے مالک نے اسے اذنِ مطلق دیا کہ جہاں مناسب سمجھو، دو، تو اسے اپنے نفس پر بھی صرف کرنے کا اختیار حاصل ہے، جبکہ یہ اس کا مصرف ہو۔ ہاں اگر یہ لفظ نہ کہے جاتے اسے اپنے نفس پر صرف کرنا جائز نہ ہوتا مگر اپنی یا اولاد کو دے دینا جب بھی جائز ہوتا اگر وہ مصرف تھے۔ در مختار میں ہے :

للوکیل ان یدفع لولدہ الفقیر وزوجتہ لا لنفسہ الااذاقال ربھا وکیل کو جائز ہے کہ اپنے نابالغ فقیر بچے اور اپنی بیوی مستحق کو زکوٰۃ دے دے جبکہ خود نہیں لے سکتا،

Volume 10 Fatawa-e-Razvia

Yes, if the owner of the wealth has said 'Spend it where you think appropriate,' then it is permissible for oneself as well, and Allah Almighty knows best. (T) Place it wherever you wish. 1 And Allah Almighty knows best.

Problem 620 to 627: From Indore Siyanch, sent by Tahir Muhammad Abdul Ghani Sahib, 11 Dhu al-Hijjah 1337 AH. What do the scholars of religion and muftis of the clear Shari'ah say regarding this matter: (1) If several wealthy individuals collect several thousand rupees of Zakat and entrust it to a few reliable people for the purpose of giving that money to the deserving recipients of Zakat according to their needs. (2) Can those people to whom the Zakat wealth has been entrusted invest that wealth in trade for the purpose of increasing it or not, or can they enter into a partnership with any merchant or not? (3) A person who has his own house and the annual income from that house was one hundred rupees, but because of having a large family, his annual expenditure is three hundred rupees, so is it permissible to give aid from Zakat wealth to such a person or not? Explain and you will be rewarded.

The Answer: (1 & 2) It is obligatory on these people to distribute those rupees among the deserving recipients of Zakat. Trading with it is forbidden for them as long as there is no permission from all the owners. And it is not permissible for the owners either, if a full year has passed on their Zakat, to withhold the Zakat and postpone it for the sake of obtaining trade profits. It is obligatory to pay Zakat immediately upon completion of the year. Yes, one who has paid in advance and the year has not yet completed for him, can wait until the completion of the year. Then, if he does so, for example, he invests a thousand rupees in trade with the intention of next year's Zakat, so that whatever profit is made from them will also be given to the poor along with those thousand, then this is a highly commendable act.

And in it is a Hadith: "Whoever sowed the barley of a laborer's wages and obtained wealth from it, then when the laborer came, he handed over everything to him. So Allah relieved him from [his distress] through it, and they are the companions of Al-Raqim, may Allah be pleased with them." 2

There is a Hadith regarding this that someone sowed the barley of a laborer's wages and whatever wealth was obtained from it, when the laborer came, he gave all those assets to him. So Allah Almighty opened the way for them (may Allah be pleased with them) when they were trapped in the cave, and they are the people of the cave (T).

1 Durr-e-Mukhtar, Book of Zakat, Matba Mujtabai Delhi 1/130 2 Sahih Muslim, Chapter on the Story of the Three People of the Cave etc., Qadimi Kutub Khana Karachi 2/353

जिल्द दस फ़तावा-ए-रज़विया

हाँ अगर माल वाले ने यह कहा हो कि जहाँ मुनासिब समझो ख़र्च करो, तो अपने लिए भी जाइज़ है, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त) इसे जहाँ चाहो रखो। 1 और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ६२० से ६२७: इंदौर सियांच से, प्रेषक ताहिर मुहम्मद अब्दुल ग़नी साहब, ११ ज़िल हिज्जा १३३७ हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस मसले में: (१) अगर चंद दौलतमंद अश्ख़ास कई हज़ार रुपये ज़कात का जमा करके चंद मोतबर लोगों के सुपुर्द इस ग़रज़ से करें कि वह रुपया हक़दारान-ए-ज़कात को हस्ब-ए-ज़रूरत दिया जाए। (२) वह लोग जिनकी सुपुर्दगी में माल-ए-ज़कात दिया गया है, वह उस माल को बढ़ाने की ग़रज़ से तिजारत में लगा सकते हैं या नहीं, या किसी ताजिर की शिरकत में शामिल कर सकते हैं या नहीं? (३) एक ऐसा शख़्स जिसके नज़दीक अपना ज़ाती मकान है और उस मकान की सालाना आमदनी सौ रुपये थी मगर बवजह अयालदार होने के उसका ख़र्च तीन सौ रुपये सालाना है, तो ऐसे शख़्स को ज़कात के माल से इमदाद देना जाइज़ है या नहीं? बयान फ़रमाएं सवाब पाएं।

जवाब: (१ व २) इन लोगों पर फ़र्ज़ है कि वह रुपया मुस्तहिक़ीन-ए-ज़कात पर तक़सीम कर दें, उससे तिजारत करना उनके लिए हराम है जब तक कि तमाम मालिकों की इजाज़त न हो। और मालिकों को भी जाइज़ नहीं कि अगर उन पर ज़कात का पूरा साल हो चुका हो तो ज़कात रोकें और तिजारत के मुनाफ़ा हासिल होने पर मुल्तवी करें। साल तमाम होने पर ज़कात फ़ौरन अदा करना वाजिब है। हाँ जिसने पेशगी दी हो और अभी उस पर साल पूरा न हुआ हो, वह साल पूरा होने तक ठहर सकता है। फिर अगर ऐसा करे कि मसलन हज़ार रुपये साल-ए-आइंदा की ज़कात की नियत से तिजारत में लगाए कि उनसे जो नफ़ा होगा वह भी उन हज़ार के साथ फ़ुक़रा को देगा, तो यह निहायत महबूब अमल है।

और इसमें हदीस है: "जिसने मज़दूर की मज़दूरी के जौ बोए और उससे माल हासिल किया, फिर जब मज़दूर आया तो उसने वह सब कुछ उसे सौंप दिया। तो अल्लाह ने उसके ज़रिए उसे (परेशानी से) निजात दी, और वे अर-रक़ीम वाले हैं, अल्लाह उनसे राज़ी हो।" 2

इस बारे में वह हदीस है कि जिसने मज़दूर की मज़दूरी जो (जौ) को बोया और उससे जो माल हासिल हुए, जब मज़दूर आया तो वह तमाम माल उसे दे दिए, तो अल्लाह तआला ने उन्हें (रज़ियल्लाहु अन्हुम) को रास्ता दिया जब वह ग़ार में फंस गए थे और वह असहाब-ए-कहफ़ हैं (त)।

1 दुर्र-ए-मुख़्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली १/१३० 2 सही मुस्लिम, बाब क़िस्सा असहाब-उल-ग़ार अस्सलासा अलख़, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची २/३५३

ہاں اگر مال والے نے یہ کہا ہو کہ جہاں مناسب سمجھو خرچ کرو، تو اپنے لیے بھی جائز ہے، واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت) ضعها حيث شئت ۔ ۱ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۶۲۰تا ۶۲۷: از اندور سیانچ مرسلہ طاہر محمد عبد الغنی صاحب ۱۱ذی الحجہ ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں: (۱) اگر چند اشخاص دولتمند کئی ہزار روپے زکوۃ کا جمع کر کے چند معتبر لوگوں کے سپرد اس غرض سے کریں کہ وہ روپیہ حقدارانِ زکوۃ حسب ضرورت ان کے دیا جائے۔ (۲) وہ لوگ جن کی سپردگی میں مالِ زکوۃ دیا گیا ہے وہ اس مال کو بڑھانے کی غرض سے تجارت میں لگا سکتے ہیں یا نہیں، یا کسی تاجر کی شرکت میں شامل کر سکتے ہیں یا نہیں؟ (۳) ایک ایسا شخص کہ جس کے نزدیک اپنا ذاتی مکان ہے اور اس مکان کی سالانہ آمدنی سو روپے تھی مگر بوجہ عیالدار ہونے کے اُس کا خرچ تین سو روپے سالانہ ہے تو ایسے شخص کو زکوۃ کے مال سے امداد دینا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: (۱و۲) ان لوگوں پر فرض ہے کہ وہ روپیہ مستحقینِ زکوۃ پر تقسیم کر دیں اُس سے تجارت کرنا ان کو حرام ہے جب تک اذنِ جملہ مالکان نہ ہو، اور مالکوں کو بھی جائز نہیں کہ اگر اُن پر زکوۃ کا پورا سال ہو چکا ہو تو زکوۃ روکیں اور تجارت کے منافع حاصل ہونے پر ملتوی کریں۔ سال تمام پر زکوۃ فوراً ادا کرنا واجب ہے، ہاں جس نے پیشگی دیا ہوا ابھی سال تمام اُس پر نہ آیا ہو وہ سال تمام آنے تک ٹھہرے سکتا ہے، پھر اگر یوں کرے کہ مثلاً ہزار روپے سالِ آئندہ کی زکوۃ کی نیت سے تجارت میں لگائے کہ ان سے جو نفع ہو وہ بھی مع ان ہزار کے فقراء کو دے گا تو یہ نہایت محبوب عمل ہے،

وفیه حدیث من زرع شعیر اجرۃ الاجیر وحصل منه اموالا فلما جاء الاجیر سلم کلها الیہ ففر ج اللہ به منہ وھم اصحاب الرقیم رضی اللہ تعالیٰ عنھم۔ ۲

اس بارے میں وہ حدیث ہے کہ جس نے مزدور کی اجرت جو کو بویا اور اس سے جو اموال حاصل ہوئے جب مزدور آیا تو وہ تمام اموال اسے دے دئے، تو اللہ تعالیٰ نے انھیں (رضی اللہ تعالیٰ عنہم) کو راستہ دیا جب وہ غار میں پھنس گئے تھے اور وہ اصحابِ کہف ہیں (ت)

1 در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۳۰ 2 صحیح مسلم باب قصہ اصحاب الغار الثلاثہ الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۳۵۳

Fatawa Razawiyya, Volume 10

However, it is necessary that if there is a loss in trade, he cannot put the loss on the poor; it will be mandatory to give them the full one thousand at the end of the year.

(3) Yes, Zakat can be given to him even if his residential house is worth a thousand rupees, or if he rents it out and earns a thousand rupees annually from it, but not enough remains after his necessary expenses and the maintenance of his family such that he owns 56 rupees surplus to his basic needs. It is mentioned in 'Alamgiriyyah:

[Boxed Text] (Arabic): "If a person owns shops or an income-generating house worth three thousand dirhams, and its income is not sufficient for his food and the food of his family, it is permissible to give Zakat to him according to the opinion of Muhammad, may Allah Almighty have mercy on him. And if he has land worth three thousand dirhams but it does not produce enough to suffice for him and his family, there is a difference of opinion among the scholars. Muhammad bin Muqatil said it is permissible for him to take Zakat. Thus it is in Fatawa Qadhikhan. And Allah Almighty knows best."

(Urdu Translation): "If a person has shops and rental property equivalent to three thousand dirhams, but the rent is not sufficient for him and his family, then according to Imam Muhammad (may Allah Almighty have mercy on him), it is permissible to spend Zakat on him. And if he has land equivalent to three thousand, but its produce is not enough to suffice for him and his family, then there is a difference of opinion among scholars on this matter; Muhammad bin Muqatil says it is permissible for him to take Zakat. Similarly, it is in Fatawa Qadhi Khan. And Allah Almighty knows best. (T)"

Issue 63 to 64: Sent by Muhammad Qasim Sahib from Gondal, Kathiawar region, 4 Dhu al-Qi'dah 1333 AH.

What do the scholars of religion and the firm Sharia say regarding the following issues: (1) A person purchased houses worth forty or fifty thousand, exceeding his needs, solely for the purpose of collecting rent. In this case, is Zakat obligatory on the value of these houses exceeding his needs, or is it on the rent received? (2) A person who buys copper, brass, china, etc., utensils for the decoration of his house and decorates the house with them, and sometimes those utensils are used and sometimes they are not; what is the ruling in this case? Explain and be rewarded.

Footnote 1: Fatawa Hindiyyah, Chapter Seven on Expenditures, Nurani Kutub Khana Peshawar 1/189.

फ़तावा रज़विया, जिल्द १०

मगर यह ज़रूरी है कि अगर व्यापार में नुकसान हो तो वह नुकसान फ़कीरों पर नहीं डाल सकता, उन्हें साल पूरा होने पर पूरे हज़ार देना लाज़िम होगा।

(३) हाँ, उसे ज़कात दे सकते हैं, भले ही उसका रिहायशी मकान हज़ार रुपये का हो, या वह उसे किराये पर चलाता हो और मकान से सालाना हज़ार रुपये आते हों, लेकिन उसके ज़रूरी खर्चों और अहल-ओ-अयाल (परिवार) के पालन-पोषण के बाद इतना न बचता हो कि वह अपनी ज़रूरत-ए-अस्लिया (बुनियादी ज़रूरतों) से अलग ५६ रुपये का मालिक हो। आलमगीरिया में है:

[बॉक्स की सामग्री] (अरबी): "यदि किसी व्यक्ति के पास तीन हज़ार दिरहम मूल्य की दुकानें या किराये का घर है और उसकी आय उसके और उसके परिवार के भोजन के लिए पर्याप्त नहीं है, तो इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैहि) के अनुसार उसे ज़कात देना जायज़ है। और यदि उसके पास तीन हज़ार मूल्य की भूमि है, लेकिन उससे इतनी उपज नहीं होती जो उसके और उसके परिवार के लिए पर्याप्त हो, तो इस बारे में विद्वानों में मतभेद है। मुहम्मद बिन मुक़ातिल कहते हैं कि उसके लिए ज़कात लेना जायज़ है। फ़तावा क़ाज़ीख़ान में भी ऐसा ही है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।"

(उर्दू अनुवाद): "यदि किसी व्यक्ति के पास दुकानें और किराये की जगह है जो तीन हज़ार दिरहम के बराबर है लेकिन किराया उसके और उसके परिवार के लिए पर्याप्त नहीं है, तो इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैहि) के अनुसार उस पर ज़कात खर्च करना जायज़ है। और यदि उसके पास ज़मीन है जो तीन हज़ार के बराबर है लेकिन उससे इतनी पैदावार नहीं होती जो उसके और उसके अहल-ओ-अयाल के लिए काफ़ी हो तो इस बारे में उलेमा का इख्तिलाफ़ है; मुहम्मद बिन मुक़ातिल कहते हैं कि उसके लिए ज़कात लेना जायज़ है। इसी तरह फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ में है। वल्लाहु तआला आलम। (त)"

मसला ६३ से ६४: प्रेषक मुहम्मद क़ासिम साहब, स्थान गोंडल, काठियावाड़ क्षेत्र, ४ ज़िल-क़ादा १३३३ हिजरी।

दीन के उलेमा और मज़बूत शरीयत इन मसलों में क्या फ़रमाते हैं: (१) एक व्यक्ति ने अपनी ज़रूरतों से ज़्यादा चालीस या पचास हज़ार के मकान सिर्फ़ किराया वसूल करने की नियत से खरीदे। क्या इस सूरत में ज़रूरत से ज़्यादा मकानों की क़ीमत पर ज़कात फ़र्ज़ है या जो किराया आता है उस पर? (२) जो साहब मकान की सजावट के लिए ताँबे, पीतल, चीनी आदि के बर्तन खरीद कर मकान को सजाते

हैं, और कभी वे बर्तन इस्तेमाल में भी आते हैं और कभी नहीं भी आते हैं, इस सूरत में क्या हुक्म है? बयान करें, सवाब पाएँ।

पाद-टिप्पणी १: फ़तावा हिन्दिया, सातवाँ अध्याय व्यय के बारे में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर १/१८९।

पेज १६४ / ८३६

مگر یہ ضرور ہے کہ اگر تجارت میں نقصان ہو تو نقصان فقراء پر نہیں ڈال سکتا، اُن کو سال تمام پر پورے ہزار دینے لازم ہوں گے۔

(۳) ہاں اسے زکوۃ دے سکتے ہیں اگرچہ اس کی حاجت سکونت کا مکان ہزار روپے کا ہو یا کرائے پر چلائے کہ مکان سے ہزار روپے سالانہ آتا ہو اور اُس کا ضروری مصارف و نفقہ اہل و عیال سے اتنا نہ بچتا ہو کہ وہ اپنی حاجت اصلیہ سے فارغ ۵۶ روپے کا مالک ہو۔ عالمگیریہ میں ہے:

[Boxed Area] لو کان لہ حوانیت او دار غلۃ تساوی ثلاثۃ الاف درھم و غلتھا لا تکفی لقوتہ و قوت عیالہ یجوز صرف الزکوۃ الیہ فی قول محمد رحمہ اللہ تعالی و لو کان لہ ضیعۃ تساوی ثلاثۃ الاف ولا تخرج ما یکفی لہ ولعیالہ اختلفوا فیہ قال محمد بن مقاتل یجوز لہ اخذ الزکوۃ ھکذا فی فتاوی قاضیخان۔ ۱ و اللہ تعالٰی اعلم۔ اگر کسی شخص کی دکانیں اور کرایہ کی جگہ ہے جو تین ہزار دراہم کے مساوی ہیں لیکن کرایہ اس کے اور اس کے عیال کے لیے کافی نہیں تو امام محمد رحمۃ اللہ تعالٰی کے نزدیک اس پر زکوۃ خرچ کرنا جائز ہے، اور اگر اس کی زمین ہے جو تین ہزار کے مساوی ہے لیکن اس سے اتنی پیداوار نہیں ہوتی جو اُس کے اور اس کے اہل و عیال کے لیے کافی ہو تو اس بارے میں علماء کا اختلاف ہے محمد بن مقاتل کہتے ہیں کہ اس کے لیے زکوۃ لینا جائز ہے۔ اسی طرح فتاوٰی قاضی خاں میں ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۶۳ تا ۶۴: مرسلہ محمد قاسم صاحب از مقام گونڈل علاقہ کاٹھیاواڑ ۴ ذیقعدہ ۱۳۳۳ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین و شرع متین ذیل کے مسئلوں میں: (۱) ایک شخص نے چالیس یا پچاس ہزار کے مکانات اپنی حاجات سے زیادہ صرف کرایہ وصول کرنے کی غرض سے خرید کیے، آیا اس صورت میں حاجت سے زیادہ مکانات میں ان کی قیمت کے اوپر زکوۃ فرض ہے یا جو کرایہ آتا ہے اس کے اوپر ہے؟ (۲) جو صاحب مکان کی زینت کے لیے تانبے، پیتل، چینی وغیرہ کے برتن خرید کر کے مکان کو سجاتا ہے اور کبھی وہ برتن استعمال میں بھی آتے ہیں اور کبھی نہیں بھی آتے ہیں، اس صورت میں کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا

۱ فتاویٰ ہندیۃ الباب السابع فی المصارف نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۱۸۹

Fatawa Razvia Volume Ten

The Answer: (1) There is no Zakat on houses, even if they are worth fifty crores (500 million). Zakat will be applicable on the savings from rent after a full year, provided it reaches the amount of Nisab (threshold) either on its own or when combined with other wealth. (2) There is no Zakat on household items such as utensils, even if they are worth millions. Zakat is only on three things: Gold and silver in any form, whether for wearing or use, as coins or leaves. Secondly, small animals that graze. Thirdly, trade merchandise. There is no Zakat on anything else. And Allah knows best.

Problem 65: From Budaun, Assistant Commissioner's Office, 7 Rabi al-Awwal 1308 AH. A person has wealth eligible for Zakat. After the past year, he gave a lump sum amount to a needy Muslim, but at the time of giving, he did not make the intention for Zakat, nor did it occur to his heart that he was paying Zakat. If the thought occurred later, is the money given included in Zakat or not? Explain and be rewarded.

The Answer: If this money given to the needy was kept separate purely with the intention of Zakat, meaning it was set aside with the intention to give it as Zakat, then Zakat was fulfilled the moment it was given to the needy, even if the thought of Zakat did not occur at the time of giving. If it was not like that, then as long as that money is in the possession of the needy person, if he makes the intention of Zakat now, it will be correct. And if it is no longer in their possession, he cannot do so now; this money has gone towards voluntary charity (Nafal Khairat), and he must pay Zakat separately. It is in Durr-e-Mukhtar:

[Table Content] Arabic Text: The condition for the validity of its payment is an intention coinciding with the payment, even if the coincidence is ruling-based, such as if one paid without intention and then intended while the wealth was still in the hand of the poor person, or coinciding with setting aside all or part of what was obligatory. Discharge from liability does not occur by setting aside, but by giving to the poor. Ends in summary. And Allah Almighty knows best. Urdu Translation: For the validity of Zakat payment, it is necessary for the intention to be concurrent with the act of paying, whether the concurrence is actual or constructive. For example, if someone paid Zakat without intention and then made the intention while the money was still in the possession of the poor person, or if the intention was made while setting aside the whole or part of the money for Zakat. Moreover, the responsibility is

not fulfilled merely by setting the money aside, but rather by delivering it to the poor. Ends in summary. And Allah Almighty knows best. (T)

1. Durr-e-Mukhtar, Kitab az-Zakat, Mujtabai Press, Delhi 1/130 Page 165 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दस

अल-जवाब: (१) मकानों पर ज़कात नहीं है, चाहे वे पचास करोड़ के हों। किराये से जो साल पूरा होने पर बचत होगी, उस पर ज़कात होगी बशर्ते कि वह स्वयं या अन्य धन के साथ मिलकर निसाब (न्यूनतम सीमा) की मात्रा तक पहुँच जाए। (२) बर्तन और घरेलू सामान आदि पर ज़कात नहीं है, भले ही वे लाखों रुपये के हों। ज़कात केवल तीन चीज़ों पर है: सोना और चाँदी किसी भी रूप में हों, पहनने के लिए हों या इस्तेमाल के लिए, सिक्के हों या पत्ते। दूसरा, चराने वाले छोटे जानवर। तीसरा, व्यापार का माल। बाकी किसी भी चीज़ पर ज़कात नहीं है। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला ६५: बदायूँ, असिस्टेंट कमिश्नर हाउस, ७ रबी-उल-अव्वल शरीफ़ १३०८ हिजरी। एक व्यक्ति के पास ज़कात के योग्य धन है। उसने पिछले साल के बाद एक मुश्त (एक साथ) राशि एक ज़रूरतमंद मुसलमान को दी, लेकिन उसने देते समय ज़कात की नीयत (इरादा) नहीं की और न ही उसके मन में यह विचार आया कि मैं ज़कात अदा कर रहा हूँ। बाद में अगर यह विचार आया, तो क्या दिया गया यह पैसा ज़कात में गिना जाएगा या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

अल-जवाब: यदि यह धन ज़रूरतमंद को देते समय शुद्ध रूप से ज़कात की नीयत से अलग रखा गया था, यानी इस नीयत से अलग कर रखा गया था कि इसे ज़कात में देंगे, तो जिस समय वह ज़रूरतमंद को दिया गया, ज़कात अदा हो गई, भले ही देते समय ज़कात का विचार न आया हो। और अगर ऐसा नहीं था, तो जब तक वह धन ज़रूरतमंद के पास मौजूद है, अब उसमें ज़कात की नीयत कर ले तो सही हो जाएगी। और अगर उसके पास नहीं रहा, तो अब नहीं कर सकता; यह धन नफ़ल (स्वैच्छिक) खैरात में गया, ज़कात अलग से अदा करे। दुर्रे मुख़्तार में है:

[तालिका सामग्री] अरबी पाठ: इसकी अदायगी की वैधता की शर्त अदायगी के साथ नीयत का होना है, चाहे वह हुक्मी (माना हुआ) ही क्यों न हो, जैसे कि किसी ने बिना नीयत के भुगतान किया और फिर तब नीयत की जब धन अभी भी फ़कीर (निर्धन) के पास हो, या जो वाजिब (अनिवार्य) है उसके पूरे या कुछ हिस्से को अलग करते समय नीयत की हो। केवल अलग करने से ज़िम्मेदारी पूरी नहीं होती, बल्कि फ़कीरों को देने से होती है। संक्षेप में समाप्त। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। उर्दू अनुवाद: ज़कात की अदायगी की शुद्धता के लिए भुगतान के समय नीयत का जुड़ा होना ज़रूरी है, चाहे वह जुड़ाव हुक्मी हो। उदाहरण के लिए, किसी ने बिना नीयत के ज़कात दे दी और अभी धन फ़कीर के क़ब्ज़े में हो, तो नीयत कर ली, या ज़कात के लिए कुल या आंशिक धन अलग करते समय

नीयत कर ली गई। इसके अतिरिक्त, केवल अलग करने से ज़िम्मेदारी पूरी नहीं होती, बल्कि फ़कीरों तक पहुँचाने से होगी। संक्षेप में समाप्त। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

1. दुर्रे मुख़्तार, किताबुज़-ज़कात, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली १/ १३० पेज 165 of 836

الجواب: (۱) مکانات پر زکوۃ نہیں اگرچہ پچاس کروڑ کے ہوں کرایہ سے جو سال تمام پر پس انداز ہو گا اس پر زکوۃ آئے گی اگر خود یا اور مال سے مل کر قدر نصاب ہو۔ (۲) برتن وغیرہ اسباب خانہ داری میں زکوۃ نہیں اگرچہ لاکھوں روپے کے ہوں، زکوۃ صرف تین چیزوں پر ہے: سونا، چاندی کیسے ہی ہوں، پہننے کے ہوں یا برتنے کے، سکہ ہو یا ورق۔ دوسرے چرانی پر چھوٹے جانور۔ تیسرے تجارت کا مال۔ باقی کسی چیز پر نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۶۵: از بدایوں خانہ اسٹنٹ کمشنر ۷ ربیع الاول شریف ۱۳۰۸ھ ایک شخص کے پاس مال زکوۃ کے قابل ہے، اُس نے سال گزشتہ کے بعد یکمشت روپیہ مسلمان محتاج کو دیا لیکن اس نے زکوۃ کی نیت بر وقت دینے کے نہ کی، نہ اس کے دل میں خیال آیا کہ زکوۃ ادا کرتا ہوں، بعد کو خیال آیا ہو تو یہ دیا ہوا روپیہ زکوۃ میں داخل ہوا یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: اگر یہ مال محتاج کو دیا خالص بہ نیت زکوۃ الگ رکھا تھا یعنی اس نیت سے جدا کر کے رکھ چھوڑا کہ اسے زکوۃ میں دیں گے تو جس وقت اس میں سے محتاج کو دیا گیا زکوۃ ادا ہو گئی اگرچہ دیتے وقت زکوۃ کا خیال نہ آیا اور ایسا نہ تھا وہ مال جب تک محتاج کے پاس موجود ہے اب اس میں زکوۃ کی نیت کرلے صحیح ہو جائے گی، اور اگر اس کے پاس نہ رہا تو اب نہیں کر سکتا، یہ مال خیرات نفل میں گیا زکوۃ جدا ادا کرے۔ در مختار میں ہے:

[Table Content] عربی عبارت: شرط صحة ادائها نية مقارنة للاداء ولو كانت المقارنة حكما كما لو دفع بلا نية ثم نوى والمال قائم فى يد الفقير او مقارنة بعزل ما وجب كله او بعضه ولا يخرج عن العهدة بالعزل بل بالاداء للفقراء اه ملخصاً واللہ تعالٰی اعلم۔ اردو ترجمہ: صحت ادائیگی زکوۃ کے لیے

ادا کے وقت نیت کا متصل ہونا ضروری ہے خواہ اتصال حکمی ہو، مثلاً کسی نے بلانیت زکوۃ ادا کر دی اور ابھی مال فقیر کے قبضہ میں ہو تو نیت کر لی یا کل یا بعض مال برائے زکوۃ جدا کرتے وقت نیت کر لی جائے، باقی جدا کرنے سے ذمہ داری پوری نہیں ہوتی بلکہ فقراء تک پہنچانے سے ہوگی اھ تلخیصاً واللہ تعالٰی اعلم (ت)

1 در مختار کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۳۰ Page 165 of 836

Fatawa Razawiyya Volume 10

Issue 66: From Monghyr, Batton Bazar, sent by Sheikh Imdad Ali Sahab, 21 Safar 1313 AH.

Question: What do the scholars of the religion say about the issue where money spread among people as loans and debts is recoverable; is Zakat obligatory on it or not? If it is obligatory, is it due immediately or after recovery? Upon how much recovery is it obligatory, and from when will the completion of a full year be counted? Explain and be rewarded.

Answer: The response is: Debt is of three (3) types:

First: Strong (Qawi), i.e., a loan, which in common parlance is called a revolving loan (Dast Gardan), or the price or rent of commercial goods. For example, if someone bought some goods with the intention of trade and sold them on credit to someone, then this debt resulting from the purchase is a strong debt. Or, if a house, shop, or land was bought with the intention of trade and then rented out for residence, seating, or farming; if this rent becomes a debt upon them, it will be a strong debt.

Second: Intermediate (Mutawassit), which is the exchange for non-commercial property. For example, selling grain from home or household furniture, or a riding horse to someone. Similarly, if someone receives a debt as part of an ancestor's inheritance, according to the strong opinion, that is also an intermediate debt.

Third: Weak (Da'if), which is not an exchange for property. Examples include a woman's dowry (mahr) which is in exchange for the benefits of intimacy, or a debt received through a will, or one that became obligatory on a woman due to Khula' (divorce initiated by the wife), or the accumulated rent on a house or land not purchased for trade purposes. On this third type of debt, as long as it remains a debt, Zakat is not obligatory at all, even if ten years pass. However, from the day it comes into possession, it will be included in the calculation for Zakat. That is, if the person already possessed another Nisaab of Zakat of the same type for which the year was already running, the recovered amount will be added to it, and Zakat will be due on the total amount at the completion of that year. If there was no such Nisaab, then the year starts from the day the amount is received, provided it meets the Nisaab; otherwise, there is nothing. In the first two types (strong and intermediate debts), Zakat continues to be obligatory year after year. However, its payment is mandatory only when an amount equal to one-fifth (khums) of the Nisaab from a strong debt, or

a full Nisaab from an intermediate debt, comes into possession. In terms of local currency, the full Nisaab is [blank] rupees and its fifth is 23-5/2 paisa. If a debt is recovered after several years, the Zakat for each preceding year that remained as a debt will be applied to this recovered amount in the account of previous years. For example, if Amr owed Zaid three hundred Sharia Dirhams as a strong debt and forty dirhams were recovered after five years, then nothing is due [if less than 40]. If forty were received, only one dirham is due, even though Zakat for five years is obligatory. This is because one dirham was due from these forty dirhams for the first year; now thirty-nine remain, which is less than one-fifth of the Nisaab. Therefore, for the remaining years...

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

मसला 66: मुंगेर, बटन बाज़ार से शेख इमदाद अली साहब द्वारा भेजा गया, 21 सफ़र 1313 हिजरी।

प्रश्न: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि जो पैसा ऋण और उधार के रूप में लोगों में फैला हुआ है और वसूल करने योग्य है, उस पर ज़कात अनिवार्य होगी या नहीं? यदि अनिवार्य है, तो क्या अभी या वसूली के बाद, और कितनी वसूली पर अनिवार्य होगी और उस पर पूरा वर्ष कब से गिना जाएगा? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: जवाब: ऋण तीन (3) प्रकार के होते हैं:

पहला: क़वी (मजबूत), अर्थात ऋण, जिसे आम भाषा में 'दस्त गर्दान' (लेन-देन का ऋण) कहा जाता है, या व्यापारिक माल की कीमत या किराया। उदाहरण के लिए, किसी ने व्यापार की नीयत से कुछ माल खरीदा और उसे उधार पर किसी को बेच दिया, तो खरीद पर आया यह ऋण 'दहन-ए-क़वी' है। या कोई घर, दुकान या ज़मीन व्यापार की नीयत से खरीदी थी और अब उसे रहने, बैठने या खेती के लिए किराए पर दे दिया; यदि यह किराया उन पर ऋण बन जाता है, तो यह 'दहन-ए-क़वी' होगा।

दूसरा: मुतवस्सित (मध्यम), जो किसी गैर-व्यापारिक संपत्ति का विनिमय (बदला) हो। उदाहरण के लिए, घर का अनाज या घर का सामान, या सवारी का घोड़ा किसी को बेचना। इसी तरह, यदि किसी को अपने पूर्वज की विरासत में कोई ऋण मिलता है, तो मजबूत मत के अनुसार वह भी 'दहन-ए-मुतवस्सित' है।

तीसरा: ज़ईफ़ (कमज़ोर), जो किसी संपत्ति का विनिमय न हो। जैसे महिला का महर (दहेज) जो वैवाहिक लाभों का बदला है, या वह ऋण जो वसीयत के माध्यम से उस तक पहुँचा, या ख़ुला (पत्नी द्वारा तलाक) के कारण महिला पर अनिवार्य हुआ, या उस घर या ज़मीन का किराया जो व्यापार की नीयत से नहीं खरीदा गया था। इस तीसरे प्रकार के ऋण पर, जब तक वह ऋण रहता है, ज़कात बिल्कुल अनिवार्य नहीं होती, चाहे दस साल बीत जाएँ। हाँ, जिस दिन से वह उसके कब्ज़े में आएगा, ज़कात की गणना में शामिल होगा। यानी, यदि उसके पास उसी श्रेणी का कोई अन्य ज़कात का निसाब (न्यूनतम राशि) पहले से मौजूद था और उसका वर्ष चल रहा था, तो जो प्राप्त हुआ उसे उसमें मिला लिया जाएगा और पूरे पर वर्ष के अंत में ज़कात अनिवार्य होगी। और यदि ऐसा निसाब नहीं था, तो जिस दिन से प्राप्त हुआ, यदि वह निसाब के बराबर है, तो वर्ष उसी समय से शुरू होगा, अन्यथा कुछ नहीं। पहले दो प्रकारों में, व्यापारिक ऋण पर हर साल ज़कात अनिवार्य होती रहेगी, लेकिन

इसका भुगतान केवल तभी अनिवार्य होगा जब उसके कब्ज़े में क़वी ऋण से निसाब के पाँचवें हिस्से (ख़ुम्स) के बराबर या मुतवस्सित से पूर्ण निसाब के बराबर राशि आएगी। यहाँ की मुद्रा में पूर्ण निसाब [खाली] रुपये है और उसका पाँचवाँ हिस्सा 23-5/2 पैसा है। फिर यदि ऋण कई वर्षों के बाद वसूल होता है, तो प्रत्येक पिछले वर्ष की ज़कात जो उसके ज़िम्मे ऋण रही, वह पिछले साल के हिसाब में इसी वसूली गई राशि पर डाली जाएगी। उदाहरण के लिए, अम्र पर ज़ैद के तीन सौ शरिया दिरहम क़वी ऋण थे, पाँच साल बाद चालीस दिरहम वसूल हुए, तो कुछ नहीं, और यदि चालीस हुए तो केवल एक दिरहम देना होगा, हालांकि पाँच साल की ज़कात अनिवार्य है। क्योंकि पहले वर्ष के लिए इन चालीस दिरहमों में से एक दिरहम देना आया, अब उनतालीस रह गए जो निसाब के पाँचवें हिस्से से कम है, इसलिए बाकी वर्षों के लिए अभी...

فتاوی رضویہ جلد دہم

مسئلہ ۶۶: از مونگیر محلہ بٹون بازار مرسلہ شیخ امداد علی صاحب ۲۱ صفر ۱۳۱۳ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جو روپیہ قرض و دین میں لوگوں پر پھیلا ہو اور زر وصولی ہو تو اس پر زکوۃ واجب ہوگی یا نہیں؟ اگر واجب ہوگی تو فی الحال یا بعد وصول، اور کتنے وصول پر واجب ہوگی اور اس پر سال تمام کب سے لیا جائے گا؟ بینوا توجروا

الجواب:

دین تین ۳ قسم ہے:

اول: قوی یعنی قرض، جس عرف میں دست گردان کہتے ہیں اور تجارتی مال کا ثمن یا کرایہ، مثلاً اس نے بہ نیت تجارت کچھ مال خریدا وہ قرضوں کسی کے ہاتھ بیچا تو یہ دین جو خرید پر آیا دینِ قوی ہے، یا کوئی مکان یا دکان یا زمین بہ نیت تجارت خریدی تھی اب اسے کسی کے ہاتھ سکونت یا نشست یا زراعت کے لیے کرایہ پر دیا، یہ کرایہ اگر اس پر دین ہوگا تو دینِ قوی ہوگا۔

دوم: متوسط کہ کسی مال غیر تجارتی کا بدل ہو، مثلاً گھر غلہ یا اثاث البیت، یا سواری کا گھوڑا کسی کے ہاتھ بیچا، یونہی اگر کسی پر کوئی دین اپنے مورث کے ترکہ میں ملا تو مذہبِ قوی پر وہ بھی دینِ متوسط ہے۔

سوم: ضعیف کہ کسی مال کا بدل نہ ہو، جیسے عورت کا مہر کہ منافع بضع کا عوض ہے، یا وہ دین جو بذریعہ وصیت اسے پہنچا یا بسبب خلع عورت پر لازم آیا، یا مکان زمین کہ بہ نیت تجارت نہ خریدی تھی ان کا کرایہ چڑھا قسم سوم کے دین پر، جب تک دین رہے اصلاً زکوۃ واجب نہیں ہوتی اگرچہ دس برس گزر جائیں، ہاں جس دن سے اس کے قبضہ میں آئے گا شمارِ زکوۃ میں

محسوب ہوگا یعنی اس کے سوا اور کوئی نصاب زکوۃ اسی کی جنس سے اس کے پاس موجود تھا اس پر سال چل رہا تھا تو جو وصول ہوا اس میں ملا لیا جائے گا اور اسی کے سال تمام پر کل کی زکوۃ لازم ہوگی، اور اگر ایسا نصاب نہ تھا تو جس دن سے وصول ہوا اگر بقدرِ نصاب ہے اُسی وقت سے سال شروع ہو اور نہ کچھ نہیں اور دو قسمِ سابق میں تجارت دین ہی سال بسال زکوۃ واجب ہوتی رہے گی مگر اس ادا کرنا اُسی وقت لازم ہوگا جبکہ اس کے قبضہ میں دین قوی سے بقدرِ خمسِ نصاب یا متوسط سے بقدرِ کامل نصاب آئیگا یہاں کے روپے میں نصاب کامل روپے ہے اور اس کا خمس لم ۲۳-۵/۲ پائی، پھر اگر دین کئی سال کے بعد وصول ہو تو ہر سالِ متقدم کی زکوۃ جو اس کے ذمہ دین ہوتی رہی وہ پچھلے سال کے حساب میں اسی وصولی رقم پر ڈالی جائے گی، مثلاً عمر و پر زید کے تین سو درہم شرعی دین قوی تھے، پانچ برس بعد چالیس درہم وصول ہوئے تو کچھ نہیں اور چالیس ہوئے تو صرف ایک درہم دینا آئے گا اگرچہ پانچ برس کی زکوۃ واجب ہے کہ سال اول کی بابت ان چالیس درہم سے ایک درہم دینا آیا یا اب انتالیس رہ گئے کہ خمسِ نصاب سے کم ہے لہذا باقی برسوں کی بابت ابھی

Fatawa Razawiya Volume 10

...nothing, and if three hundred dirhams were a 'medium debt', then until two hundred are received, nothing is payable. And if two hundred dirhams are received after five years, then twenty-one dirhams must be given: five dirhams for the first year. Now, in the second year, if they were less than a fifth (khums), they are forgiven and [the remainder] is four dirhams. In the third year, it remained; even now four dirhams. In the fourth... in the fifth... on them also four each, a total of 21 dirhams became payable. Similarly, as the 'strong debt' reaches a fifth of the Nisab and the 'medium debt' reaches the full Nisab, Zakat for previous years will become payable according to this calculation. If the entire amount is received, Zakat will be on the whole. Then, the first year will be considered from the date it became a debt, provided that before this, the current year of Nisab for any of its categories was not in progress. Otherwise, a debt that becomes due in the middle of the year will be added to existing wealth and its year will be calculated from its start. For example, if someone became the owner of two hundred dirhams on the 1st of Muharram, and on the 1st of Rajab, some 'strong' or 'medium' debt became due to him from someone, the year for this debt will also be counted from the 1st of Muharram, not from the 1st of Rajab. It is stated in Tanwir al-Absar and Durr al-Mukhtar:

Arabic Original	**Urdu Translation / Explanation**
Debts according to the Imam (Abu Hanifa) are of three types: Strong (Qawi), Medium (Mutawassit), and Weak (Dha'if). Zakat is obligatory on them when they reach the Nisab (either by themselves or combined with existing assets) and a full year has passed (even if before possession in Strong and Medium types). However, it is not due immediately but upon possession of forty dirhams in a Strong debt, such as a loan or payment for trade goods. Thus, whenever he takes possession of forty dirhams, one dirham is due. And upon possession of two hundred dirhams from what is in exchange for non-trade items, which is the Medium debt, such as the	According to the Imam (Abu Hanifa), debts are of three types: Strong, Medium, and Weak. Zakat is due on debts provided that by themselves or by combining with existing wealth, they reach the Nisab and a year passes over them. Although for Strong and Medium debts it can be before possession, it is not due immediately. Rather, in a Strong debt, upon possession of forty dirhams, one dirham will be due, as in loans and exchange for trade goods. So whenever one possesses forty dirhams, one dirham becomes obligatory. Debt that is in exchange for non-trade items is called Medium. Zakat on it will be after

Arabic Original

price of pasturing livestock or domestic slaves. According to the most correct opinion, the years passed before possession are also taken into account. A similar case is when someone inherits a debt from someone. And upon possession of two hundred along with the passage of a year thereafter for a Weak debt...

Page 167 of 836

Urdu Translation / Explanation

possessing two hundred dirhams, for example, the price of pasturing livestock or domestic slaves. According to the correct view, the past years before possession will also be considered. Similar to this is the case where someone inherits a debt. And in a Weak debt, upon possession of two hundred...

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

...कुछ नहीं, और अगर तीन सौ दिरहम ऋण-मध्यम (दैन-ए-मुतवस्सित) थे, तो जब तक दो सौ प्राप्त न हों, कुछ भी देय नहीं है। और अगर दो सौ दिरहम पाँच साल बाद प्राप्त हुए, तो इक्कीस दिरहम देने होंगे: पहले साल के पाँच दिरहम। अब दूसरे साल में, यदि वे पाँचवें हिस्से (ख़ुम्स) से कम थे, तो उन्हें माफ़ कर दिया जाता है और [शेष] चार दिरहम होते हैं। तीसरे साल में, यह बना रहा; अब भी चार दिरहम। चौथे में... पाँचवें में... उन पर भी चार-चार, कुल 21 दिरहम देय हुए। इसी प्रकार, जैसे-जैसे 'मजबूत ऋण' (दैन-ए-क़वी) निसाब के पांचवें हिस्से तक पहुँचता है और 'मध्यम ऋण' पूरे निसाब तक पहुँचता है, पिछले वर्षों की ज़कात इस गणना के अनुसार देय होती जाएगी। यदि पूरी राशि प्राप्त होती है, तो ज़कात पूरी पर होगी। फिर, ऋण होने की तारीख से पहला वर्ष माना जाएगा, बशर्ते कि इससे पहले, उसकी किसी भी श्रेणी के निसाब का चालू वर्ष प्रगति में न हो। अन्यथा, वर्ष के बीच में देय ऋण को मौजूदा संपत्ति में जोड़ा जाएगा और उसका वर्ष उसके प्रारंभ से गिना जाएगा। उदाहरण के लिए, यदि कोई 1 मुहर्रम को दो सौ दिरहम का मालिक बना, और 1 रजब को उस पर किसी का 'मजबूत' या 'मध्यम' ऋण बकाया हुआ, तो इस ऋण का वर्ष भी 1 मुहर्रम से गिना जाएगा, न कि 1 रजब से। तनवीर अल-अ़बसार और दुर्रे मुख्तार में है:

अरबी मूल

इमाम (अबू हनीफ़ा) के अनुसार ऋण तीन प्रकार के होते हैं: मजबूत (क़वी), मध्यम (मुतवस्सित), और कमजोर (ज़ईफ़)। उन पर ज़कात तब अनिवार्य होती है जब वे निसाब (स्वयं या मौजूदा संपत्तियों के साथ मिलकर) तक पहुँच जाते हैं और एक पूरा वर्ष बीत जाता है (चाहे मजबूत और मध्यम प्रकारों में कब्ज़े से पहले ही क्यों न हो)। हालाँकि, यह तुरंत देय नहीं है, बल्कि मजबूत ऋण में चालीस दिरहम के कब्ज़े पर देय है, जैसे ऋण या व्यापारिक वस्तुओं का भुगतान। इस प्रकार, जब भी वह चालीस दिरहम का कब्ज़ा लेता है, तो एक दिरहम देय होता है। और गैर-व्यापारिक वस्तुओं के बदले दो सौ दिरहम के कब्ज़े

उर्दू अनुवाद / स्पष्टीकरण

इमाम साहब के अनुसार ऋणों की तीन किस्में हैं: क़वी, मुतवस्सित, ज़ईफ़। ऋणों पर ज़कात होती है बशर्ते वे खुद या मालिक के पास मौजूद माल से मिलकर निसाब को पहुँचें और उन पर साल गुज़रा हो, हालाँकि क़वी और मुतवस्सित में कब्ज़े से पहले हो लेकिन फ़ौरन नहीं। बल्कि क़वी में चालीस दिरहम के कब्ज़े पर एक दिरहम होगा जैसा कि क़र्ज़ और बदल-ए-माल-ए-तिजारत में होता है। तो जब भी चालीस दिरहम पर काबिज़ होगा, एक दिरहम लाज़िम होगा। गैर-तिजारत के बदले में जो ऋण होता है उसे मुतवस्सित कहा जाता है।

अरबी मूल

पर, जो मध्यम ऋण है, जैसे चराई वाले पशुओं की कीमत या घरेलू गुलामों की कीमत। सबसे सही राय के अनुसार, कब्ज़े से पहले बीत चुके वर्षों को भी ध्यान में रखा जाता है। इसी तरह का मामला तब होता है जब कोई किसी से ऋण विरासत में पाता है। और कमजोर ऋण के मामले में इसके बाद एक वर्ष बीतने के साथ दो सौ के कब्ज़े पर...

उर्दू अनुवाद / स्पष्टीकरण

इसमें से दो सौ दिरहम के कब्ज़े के बाद ज़कात होगी, जैसे सायमा की कीमत, खिदमत वाले गुलामों की कीमत। सहीह क़ौल के मुताबिक कब्ज़े से पहले गुज़िश्ता सालों का भी एतबार किया जाएगा। इसी की मिसाल वह सूरत है जब कोई ऋण में किसी का वारिस बना। और ज़ईफ़ में दो सौ के कब्ज़े पर...

کچھ نہیں، اور اگر تین سو درہم دینِ متوسط تھے تو جب تک دوسو وصول نہ ہوں کچھ واجب الادا نہیں اور دوسو درہم اگر پانچ برس بعد وصول ہوئے تو اکیس درہم دینے ہوں گے، سال اول کے پانچ درہم، اب سال دوم میں گیارہ گئے تو کہ خمس سے کم تھے عفو ہو کر ملہ درہم، سال سوم میں مالہ رہے اب بھی چار درہم، چہارم میں مامعہ، پنجم میں مالعہ، ان پر بھی چار چار، کل لد درہم واجب الادا ہوئے، یونہی جب دینِ قوی سے خمس نصاب اور متوسط سے پورا نصاب ہو تا جائے گا اسی حساب سے اتنے کی زکوۃ سنین گزشتہ کی زکوۃ واجب الاداہوتی جائے گی، اگر کل وصول ہو گا کل کی، پھر دین ہونے کی تاریخ سے سال اول حالت میں مانا جائے گا جبکہ اس سے پہلے اس کی کسی جنس کے نصاب کا سال رواں نہ تھا ورنہ جو دینِ وسط سال میں اس کا یا فتنی ہوا وہ اسی مال موجود میں ملا کر اس کے سال سے حساب رہے گا مثلاً یکم محرم کو دوسو درہم کا مالک ہوا، یکم رجب کو اس کا کوئی دینِ قوی یا متوسط کسی پر لازم آیا تو اس دین کا سال بھی یکم محرم سے لیں گے نہ کہ یکم رجب سے، تنویر الابصار ودرِ مختار میں ہے :

الدیون عند الامام ثلثة — **امام صاحب کے نزدیک دیون کی تین اقسام ہیں:**

قوی، متوسط ضعیف، فتجب زکوتہما اذا تم نصابا (بنفسہ اوبماعندہ ممایتم بہ) وحال الحول (ای و لو قبل قبضہ فی القوی و المتوسط) لکن لافورًا بل عند قبض اربعین درھمًا من القوی کقرض وبدل مال تجارت فکلما قبض اربعین

قوی، متوسط، ضعیف۔ دیون پر زکوۃ ہوتی ہے بشرطیکہ وہ خود یا مالک کے پاس موجودہ مال سے مل کر نصاب کو پہنچیں اور ان پر سال گزرا ہوا اگر چہ قوی اور متوسط قبضہ سے پہلے ہو لیکن فوراً نہیں بلکہ قوی میں چالیس درہم کے قبضہ پر ایک درہم ہوگا جیسا کہ قرض اور بدلِ مالِ تجارت میں ہوتا ہے تو جب بھی چالیس درہم

الديون عند الامام ثلثة

درهمًا يلزمہ درهم و عند قبض مائتين من بدل مال لغير تجارة وهو المتوسط كثمن سائمة وعبيد خدمة ويعتبر مامضى من الحول قبل القبض في الاصح ومثله مالورث ديناً على رجل وعند قبض مائتين مع حولان الحول بعده من ضعيف و

امام صاحب کے نزدیک دیون کی تین اقسام ہیں:

پر قابض ہوگا ایک درہم لازم ہوگا، غیر تجارت کے بدلے میں جو دین ہوتا ہے اسے متوسط کہا جاتا ہے اس میں سے دوسو درہم کے قبضہ کے بعد زکوۃ ہوگی مثلاً سائمہ کے قیمت، خدمت والے غلاموں کے قیمت، اصح قول کے مطابق قبضہ سے قبل گزشتہ سالوں کا بھی اعتبار کیا جائیگا، اسی کی مثل وہ صورت ہے جب کوئی دین میں کسی کا وارث بنا، اور ضعیف میں دوسو کے

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Arabic Column Transcription/Translation]: It is a substitute for non-property like dower (mahr) and compensation for khul' (divorce settlement), unless he has something to add to the weak debt (it is better to say: what the weak debt is added to; the outcome is that if any part of it is received while he possesses a 'nisab' [minimum taxable amount], the received amount is added to the nisab and he pays zakat on it based on its current year, and a year passing after the receipt is not a condition) - summarized.[1] More from Radd al-Muhtar, I say: It is better to define 'weak debt' as that which is not a substitute for property so it also includes what is not a substitute at all, such as a legacy (bequeathed debt). In Radd al-Muhtar, from al-Muhit: As for the bequeathed debt, it does not become a nisab before possession because the legatee becomes the owner initially without any consideration/ compensation, and in ownership, he does not stand in the place of the legator. So it becomes as if he owned it by gift (hiba). [2]اھ This is also in al-Khaniya, al-Fath, and al-Bahr, and the wording is that of Qadi Khan: If someone rents out his house or slave for two hundred dirhams, zakat is not mandatory until a year has passed after possession according to the view of Imam Abu Hanifa (may Allah the Almighty have mercy on him). If the house and slave were for trade and he received...

[Urdu Column Transcription/Translation]: Zakat will be due at the time of possession provided that a year passes after it. Weak debt (dain-e-za'eef) is a substitute for non-property, e.g., dower, khul' compensation. However, in such a case when there is property already with the owner along with the weak debt, then it should be added. (It is better to phrase it as: the weak debt should be added to that property. The gist is that when any portion of it is received while the owner already possessed a nisab, then now the received amount should be added to the nisab and zakat for the year should be given. In this, the passing of a year after possession is not a condition) - summarized.[1] The additional text is from Radd al-Muhtar. I say: It is better to define 'weak' as that which is not a substitute for property so it also includes that which is not originally a substitute at all, e.g., that debt which has been willed. In Radd al-Muhtar it is from al-Muhit that the debt which has been willed cannot become a nisab before possession because the legatee is becoming the owner initially without any exchange, and in ownership, he is not a successor to the testator. This would be as if he became the owner of a gift.[2] It is in Khaniya, Fath, and Bahr, and the words are of Qazi Khan: when someone gave a house or slave on rent in exchange for two hundred dirhams, then according to the saying of Imam Abu Hanifa (may Allah be

pleased with him), zakat will not be mandatory before the passing of a year after possession. If the house and slave were for trade and for the year's...

Footnotes: 1. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Book of Zakat, Chapter on Zakat of Property, Mujtabai Press Delhi, 1/136. 2. Radd al-Muhtar, Book of Zakat, Chapter on Zakat of Property, Mustafa al-Babi Egypt, 2/30, 7.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (दसवीं)

[अरबी कॉलम का अनुवाद]: यह गैर-माल का प्रतिफल है जैसे मेहर और खुला का प्रतिफल, जब तक कि उसके पास वह चीज़ न हो जिसे कमज़ोर ऋण (दइन-ए-ज़ईफ़) के साथ जोड़ा जा सके (बेहतर यह है कि वह कहे: "वह जिसमें कमज़ोर ऋण जोड़ा जाता है"; संक्षेप में यह है कि जब भी उसमें से कुछ प्राप्त हो और उसके पास निसाब हो, तो प्राप्त राशि को निसाब में जोड़ा जाएगा और वह उसके अपने साल के हिसाब से उसकी ज़कात देगा, और प्राप्ति के बाद साल बीतने की शर्त नहीं है) - सारांश।[1] रद-अल-मुह्तार से अतिरिक्त: मैं कहता हूँ, कमज़ोर (ज़ईफ़) की परिभाषा में "वह जो माल का प्रतिफल न हो" कहना बेहतर है ताकि वह भी शामिल हो जाए जो मूल रूप से प्रतिफल नहीं है, जैसे वसीयत किया गया ऋण। रद-अल-मुह्तार में मुहीत के हवाले से है: जहाँ तक वसीयत किए गए ऋण का संबंध है, वह प्राप्ति से पहले निसाब नहीं माना जाएगा क्योंकि वसीयत पाने वाला बिना मुआवज़े के शुरुआत से मालिक बन रहा है और वह स्वामित्व में वसीयत करने वाले का उत्तराधिकारी नहीं है, तो यह वैसा ही हो गया जैसे वह दान (हिबा) का मालिक बना हो। [2]هـ। यह खानिया, फतह और बहर में है, और शब्द काज़ी खान के हैं: यदि उसने अपने घर या गुलाम को दो सौ दिरहम के किराये पर दिया, तो इमाम अबू हनीफा (रहमतुल्लाह अलैहि) के विचार में प्राप्ति के बाद साल गुज़रने से पहले ज़कात वाजिब नहीं है। यदि घर और गुलाम व्यापार के लिए हों और कब्ज़ा...

[उर्दू कॉलम का अनुवाद]: कब्ज़ा मिलने के समय ज़कात देय होगी बशर्ते कि उसके बाद एक वर्ष बीत जाए। 'दइन-ए-ज़ईफ़' (कमज़ोर ऋण) गैर-माल का प्रतिफल होता है जैसे मेहर, 'खुलअ' का प्रतिफल, लेकिन ऐसी स्थिति में जब कमज़ोर ऋण के साथ स्वामी के पास पहले से ही माल मौजूद हो तो उसे मिलाया जाना चाहिए (बेहतर यह है कि इसे इस प्रकार कहा जाए कि कमज़ोर ऋण को उस माल के साथ जोड़ा जाए; सारांश यह है कि जब उसमें से किसी वस्तु पर कब्ज़ा हो जाए जबकि स्वामी के पास पहले से 'निसाब' भी था, तो अब प्राप्त राशि को निसाब में जोड़कर वर्ष की ज़कात दी जाए; इसमें कब्ज़े के बाद वर्ष का बीतना शर्त नहीं है) - सारांश।[1] अतिरिक्त पाठ 'रद-अल-मुह्तार' का है। मैं कहता हूँ, 'ज़ईफ़' की परिभाषा इस तरह करना बेहतर है कि "वह जो माल का प्रतिफल न हो", ताकि इसमें वह भी शामिल हो जाए जो मूलतः प्रतिफल ही नहीं है, उदाहरण के लिए वह ऋण जिसकी वसीयत की गई हो। 'रद-अल-मुह्तार' में 'मुहीत' से उद्धृत है कि वह ऋण जिसकी वसीयत की गई हो, वह कब्ज़ा मिलने से पहले निसाब नहीं बन सकता क्योंकि वसीयत प्राप्तकर्ता (मौसी लह)

बिना किसी प्रतिफल के शुरू से ही स्वामी बन रहा है और वह स्वामित्व के मामले में वसीयतकर्ता का उत्तराधिकारी भी नहीं है। यह वैसा ही होगा जैसे वह किसी उपहार (हिबा) का स्वामी बना हो।[2] यह 'खानिया', 'फतह' और 'बहर' में भी दर्ज है, और शब्द काज़ी खान के हैं: "जब किसी ने अपना घर या गुलाम दो सौ दिरहम के बदले किराये पर दिया, तो इमाम अबू हनीफा (रज़ियल्लाहु अन्हु) के कथन के अनुसार, कब्ज़ा मिलने के बाद एक वर्ष बीतने से पहले ज़कात अनिवार्य नहीं होगी, बशर्ते घर और गुलाम व्यापार के लिए थे और साल के.."

फुटनोट्स: 1. दुर्र-ए-मुख़्तार शरह तनवीर अल-अब्सार, किताबुज़ ज़कात, बाबु ज़कातिल माल, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/136 2. रद-अल-मुहतार, किताबुज़ ज़कात, बाबु ज़कातिल माल, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/30, 7

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

[عربی متن (بائیں کالم میں)]: هو بدل غير مال كمهر و بدل خلع الا اذا كان عنده مايضم الى الدين الضعيف (الاولى ان يقول ما يضم الدين الضعيف اليه و الحاصل انه اذا قبض منه شيئاً وعنده نصاب يضم المقبوض الى النصاب و يزكيه بحوله ولا يشترط له حول بعد القبض) اه ملخصاً[1]- مزيد من رد المحتار اقول والاولى في رسم الضعيف ماليس بدلا عن مال ليدخل ماليس بدلا اصلا كالدين الموصى به فى رد المحتار عن المحيط اما الدين الموصى به فلا يكون نصاباً قبل القبض لان الموصى له ملكه ابتداء من غير عوض ولا قائم مقام الموصى فى الملك فصار كما لو ملكه بهبة اهـ[2] هذا وفى الخانية والفتح والبحر واللفظ لقاضى خان اذا اجر داره او عبده بمائتى درهم لا تجب الزكوة مالم يحل الحول بعد القبض في قول ابى حنيفة رحمة الله تعالى عليه فان كانت الدار و العبد للتجارة وقبض

[اردو ترجمہ و تشریح (دائیں کالم میں)]: قبضہ کے وقت زکوٰۃ ہو گی بشر طیکہ اسکے بعد سال گذرے اور دین ضعیف غیر مال کا بدل ہوتا ہے مثلاً مہر، بدل خلع، مگر ایسی صورت میں جب دین ضعیف کے ساتھ مالک کے پاس موجود مال ہو تو ملایا جائے (بہتر یہ ہے کہ یوں کہا جائے کہ دین ضعیف کو اس مال کے ساتھ ملایا جائے، حاصل یہ ہے کہ اس میں سے جب کسی شئی پر قبضہ ہوا حالانکہ مالک کے پاس نصاب بھی تھا تو اب مقبوض کو نصاب سے ملا کر سال کی زکوٰۃ دی جائے اس میں قبضہ کے بعد سال کا گذرنا شرط نہیں) اہ ملخصاً[1]، اضافی عبارت ردالمحتار کی ہے، اقول، ضعیف کی تعریف یوں کرنا بہتر ہے کہ جو مال کا بدل نہ ہو تو اسے بھی شامل ہوجائے جو اصلاً بدل ہی نہیں مثلاً وہ دین جس کی وصیت کی گئی ہو۔ ردالمحتار میں محیط سے ہے وہ دین جس کی وصیت کی گئی ہو وہ قبضہ سے پہلے نصاب نہیں بن سکتا کیونکہ موصی لہ بغیر عوض کے ابتداءً مالک بن رہا ہے اور یہ ملکیت میں وصیت کرنے والے کا قائم مقام بھی نہیں یہ ایسے

ہوگا جیسے وہ ہبہ کا مالک بنا ہو۔[2] خانیہ، فتح اور بحر میں ہے، اور الفاظ قاضی خاں کے ہیں جب کسی نے دار یا غلام دوسو درہم کے عوض اجرت پر دیا تو امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے قول کے مطابق قبضہ کے بعد سال گزرنے سے پہلے زکوٰۃ لازم نہ ہوگی، اگر دار اور غلام تجارت کے لیے تھے اور سال کے

حواشی: 1 در مختار شرح تنویر الابصار کتاب الزکوۃ باب زکوۃ المال مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۳۶

2 ردالمحتار کتاب الزکوۃ باب زکوۃ المال مصطفی البابی مصر ۲ / ۳۰، ۷

Fatawa Rizvia - Volume 10

[Arabic Text] Forty dirhams after a year, one dirham is due on them by virtue of the past year before the collection, because the rent of a trade house and a trade slave is equivalent to the price of trade goods in the correct narration. I say: It was mentioned before regarding the narration that it is from the weak or the medium category, even if another view is followed in 'Al-Muhit'. Likewise, inherited wealth is among the medium category, and this is the preferred view, even if it is stated with certainty in 'Al-Hindiyyah' from 'Al-Zahidi' that it is from the weak category. It was declared weak in 'Al-Khaniyyah' and others, and similarly, its weakness was pointed out in 'Al-Fath' and 'Al-Bahr'. In 'Radd al-Muhtar' from 'Al-Muntaqa', a man had a debt of three hundred dirhams which remained for three years, then he collected two hundred. According to Abu Hanifa, he pays Zakat of five dirhams for the first year, and for the second and third years, four each out of one hundred and sixty, and nothing is due on the remainder because it is less than forty. In 'Al-Hindiyyah' from the commentary of 'Al-Mabsut' by Imam al-Sarakhsi, the debt is attributed to the wealth in his hand, etc. In 'Radd al-Muhtar', if there were a thousand dirhams of a strong debt, such as the exchange of trade goods, the start of the year is the start of the original year, not from the time of sale nor from the time of receipt. So when he receives from it a Nisab or forty dirhams...

[Urdu Text] If forty dirhams were received after the completion of a year, then now one dirham is obligatory due to that year which passed before the receipt, because according to the correct narration, the rent of a trade house and a trade slave is similar to the price of trade goods. (End) I say: It was mentioned earlier in one narration that this debt is of the weak or medium category, although in 'Al-Muhit' the other narration was adopted. Similarly, inherited wealth is also among the medium category, and this is the preferred view, even though in 'Al-Hindiyyah' it is stated with certainty from 'Al-Zahidi' that it is weak. In 'Al-Khaniyyah' it has been declared weak. Similarly, in 'Al-Fath' and 'Al-Bahr', there is an indication of its weakness. In 'Radd al-Muhtar' from 'Al-Muntaqa', it is stated that a person had a debt of three hundred dirhams and three years passed over it, then he received two hundred dirhams; according to Imam Abu Hanifa, for the first year he should give five dirhams, and for the second and third years, four dirhams each from one hundred and sixty as Zakat. Nothing will be obligatory on the remainder because they are less than forty. (End) In 'Al-Hindiyyah', quoting from Imam Sarakhsi's 'Sharh al-Mabsut', it says that the debt will return to the wealth that was received, etc. In 'Radd al-Muhtar' it is stated that

when a debt is strong, for example, the price of trade goods, and it is one thousand dirhams, then the start of the year will be from the beginning of the original year, not from the time of sale nor from the time of receipt. So when he receives from the debt a Nisab or forty dirhams, then for that year...

Footnotes: 1. Fatawa Qadhi Khan, Chapter on Trade Goods, Naval Kishore Lucknow, 1/19-118 2. Radd al-Muhtar, Chapter on Zakat of Wealth, Mustafa al-Babi Egypt, 2/38 3. Fatawa Hindiyyah, Book of Zakat, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/174

फ़तावा रज़विया - जिल्द १०

[अरबी पाठ] चालीस दिरहम एक साल के बाद, उन पर एक दिरहम पिछले साल के कारण अनिवार्य है, जो कब्ज़े से पहले बीत गया था, क्योंकि व्यापारिक घर का किराया और व्यापारिक दास, सही रिवायत के अनुसार व्यापारिक माल की कीमत के समान होते हैं। मैंने कहा: पहले एक रिवायत में गुज़रा है कि यह ऋण 'कमज़ोर' या 'मध्यम' श्रेणी का है, भले ही 'अल-मुहीत' में दूसरी राय अपनाई गई हो। इसी तरह, विरासत में मिला माल मध्यम श्रेणी में आता है, और यही बेहतर मत है, भले ही 'अल-हिन्दिया' में 'अल-ज़ाहीदी' से निश्चितता के साथ कहा गया है कि यह कमज़ोर श्रेणी का है। 'अल-खानिया' और अन्य में इसे कमज़ोर घोषित किया गया था, और इसी तरह 'अल-फ़तह' और 'अल-बहर' में इसकी कमज़ोरी की ओर इशारा किया गया था। 'रद्दुल मुहतार' में 'अल-मुंतका' से उद्धृत है कि एक व्यक्ति का तीन सौ दिरहम का ऋण था जो तीन साल तक रहा, फिर उसने दो सौ प्राप्त किए। अबू हनीफ़ा के अनुसार, वह पहले साल के लिए पांच दिरहम की ज़कात देता है, और दूसरे और तीसरे साल के लिए, एक सौ साठ में से चार-चार दिरहम, और शेष पर कुछ भी देय नहीं है क्योंकि वह चालीस से कम है। 'अल-हिन्दिया' में इमाम सरख़सी की 'शरह अल-मबसूत' से है कि ऋण उसके हाथ में मौजूद माल की ओर लौटेगा, इत्यादि। 'रद्दुल मुहतार' में है कि यदि एक हज़ार दिरहम का 'कवी' ऋण हो, जैसे व्यापारिक सामान का विनिमय, तो साल की शुरुआत मूल वर्ष की शुरुआत से होती है, न कि बिक्री के समय से और न ही कब्ज़े के समय से। तो जब वह उसमें से निसाब या चालीस दिरहम प्राप्त करता है...

[उर्दू पाठ] बाद चालीस दराहम पर कब्ज़ा हुआ तो अब एक दिरहम लाज़िम इस साल की वजह से हुआ जो कब्ज़े से पहले गुज़रा है क्योंकि सही रिवायत मुताबिक़ दार तिजारत और अब्द तिजारत की उजरत माल तिजारत के षमन (कीमत) की मिस्ल होती है। अ-ह क़ुल्तु: पहले एक रिवायत में गुज़रा है कि यह दैन ज़ईफ़ या मुतवस्सित से है अगरचे मुहीत में दूसरी रिवायत को इख़्तियार किया है, इसी तरह माल मौरूसा भी मुतवस्सित में से है और यही राजिह है, अगरचे हिन्दिया में ज़ाहिदी से इसके ज़ईफ़ होने पर जज़्म किया है, खानिया में इसे कमज़ोर क़रार दिया है। इसी तरह फ़तह और बहर में इसके ज़ुअफ़ (कमज़ोरी) की तरफ़ इशारा है। रद्दुल मुहतार में मुंतक़ा से है कि किसी शख़्स का तीन सौ दराहम दैन था और उस पर तीन साल गुज़रे तो उसका दो सौ पर कब्ज़ा हुआ तो इमाम अबू हनीफ़ा के नज़दीक पहले साल पांच, दूसरे व तीसरे में एक सौ साठ में से, चार-चार दिरहम ज़कात दे, फ़ज़्ल में कोई शय लाज़िम न होगी क्योंकि वह चालीस से कम हैं अ-ह। हिन्दिया में इमाम सरख़सी

की शरह मबसूत से है कि दैन उस माल की तरफ़ लौटेगा जिस पर कब्ज़ा हुआ अख़। रद्दुल मुहतार में है कि जब दैन क़वी मसलन बदल सामाने तिजारत, हज़ार दराहम हों तो साल की इब्तिदा हौल असल से होगी न कि वक़्ते बैअ से और न वक़्ते कब्ज़ा से, तो जब उसने दैन से निसाब या चालीस दिरहम पर कब्ज़ा किया तो उस साल का...

पाद-टिप्पणियाँ: 1. फ़तावा काज़ी ख़ान, फ़स्ल फ़ी माल अल-तिजारा, नवल किशोर लखनऊ, 1/19-118 2. रद्दुल मुहतार, बाब ज़कात अल-माल, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/38 3. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-ज़कात, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 1/174

पृष्ठ १६९ का ८३१

اربعین درھما بعد الحول کان علیه درھم بحکم الحول الماضی قبل القبض لان اجرة دار التجارة وعبد التجارة بمنزلة ثمن مال التجارة فی الصحیح من الروایة اھ قلت: فتقدم علی روایة انها من الضعیف او الوسیط وان مشی علی الاخری فی المحیط وکذلك کون الموروث من المتوسط ھو الوجیح وان جزم فی الھندیة عن الزاھدی انه من الضعیف، فقد مرضھا فی الخانیة و اخر وھکذا اشار الی تضعیفه فی الفتح والبحر وفی رد المحتار عن المنتقی رجل له ثلثمائة ردھم دین حال علیھا ثلثة احوال فقبض مائتین عند ابی حنیفة یزکی للسنة الاولی خمسة وللثانیة والثالثة اربعة اربعة من مائة وستین ولا شئ ولیه فی الفضل لانه دون الاربعین اھ وفی الھندیة عن شرح المبسوط للامام السرخی ان الدین مصروف الی المال الذی فی یده الخ وفی ردالمحتار اذا کانت لالف من دین قوی کبدل عروض تجارة فأن ابتداء الحول ھو حول الاصل لا من حین البیع ولا من حین القبض فأذا قبض منه نصاباً واربعین

بعد چالیس دراہم پر قبضہ ہوا تو اب ایک درہم لازم اس سال کی وجہ سے ہوا جو قبضہ سے پہلے گزرا ہے کیونکہ صحیح روایت مطابق دار تجارت اور عبد تجارت کی اجرت مال تجارت کے ثمن کی مثل ہوتی ہے اھ قلت: پہلے ایک روایت میں گزرا ہے کہ یہ دین ضعیف یا متوسط سے ہے اگر چہ محیط میں دوسری روایت کو اختیار کیا ہے، اسی طرح مال موروثہ بھی متوسط میں سے ہے اور یہی راجح ہے، اگر چہ ہندیہ میں زاہدی سے اس کے ضعیف ہونے پر جزم کیا ہے ، خانیہ میں اسے کمزور قرار دیا ہے ۔ اسی طرح فتح اور بحر میں اس کے ضعف کی طرف اشارہ ہے ۔ ردالمحتار میں منتقٰی سے ہے کہ کسی شخص کا تین سو دراہم دین تھا اور اس پر تین سال گزرے تو اس کا دو سو پر قبضہ ہوا تو امام ابو حنیفہ کے نزدیک پہلے سال پانچ ، دوسرے و تیسرے میں ایک سو ساٹھ میں سے ، چار چار درہم زکوۃ دے، فضل میں کوئی شئی لازم نہ ہوگی کیونکہ وہ

چالیس سے کم ہیں اھ ہندیہ میں امام سرخسی کی شرح مبسوط سے ہے کہ دین اس مال کی طرف لوٹے گا جس پر قبضہ ہوا الخ ردالمحتار میں ہے کہ جب دین قوی مثلاً بدل سامانِ تجارت ، ہزار دراہم ہوں تو سال کی ابتداء حول اصل سے ہوگی نہ کہ وقت بیع سے اور نہ وقت قبضہ سے ، تو جب اس نے دین سے نصاب یا چالیس درہم پر قبضہ کیا تو اس سال کا

1 فتاویٰ قاضی خاں فصل فی مال التجارۃ نولکشور لکھنؤ ۱ / ۱۹- ۱۱۸ 2 ردالمحتار باب زکوٰۃ المال مصطفی البابی مصر ۲ / ۳۸ 3 فتاویٰ ہندیہ کتاب الزکوٰۃ نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۱۷۴

Fatawa Rizvia Volume 10

[Arabic Box] ...regarding the Zakat for the past period, based on the original lunar year. If someone owned trade goods, then sold them after half a year, and then after one and a half years received their price, then two years have passed for him. He should pay Zakat for both years at the time of receiving the payment, without any disagreement. [1] اھ I say: The discussion was specified for 'Strong Debt' (Dayn-e-Qawi) because its origin is from Zakat assets, unlike 'Medium Debt' (Dayn-e-Mutawassit) where a year is not a condition for its origin. Now, if there was no 'Nisab' (minimum taxable amount) of its kind before it, then the year's beginning will be from the time of sale because through it, it became Zakat asset, as quoted here from Al-Muhit. And the meaning is not that in 'Mutawassit', it cannot begin before the time of sale even if a 'Nisab' of its kind existed before within the lunar year. Because this is against the issue of 'Mustafad' (acquired wealth) and that agreed-upon issue which our scholars have clearly stated in all texts, commentaries, and fatwas of the school. So understand it well and remain steadfast upon it. And Allah Almighty knows best.

[Urdu Translation Box] ...considering the past period, give Zakat. If a person became the owner of goods for trade, then sold the goods after half a year, and after one and a half years took possession of its price, then two years have passed for him. Now, without any disagreement, Zakat will be paid from the time of possession. I say: The reason for specifying the discourse with debt is that its origin is from Zakat assets, unlike 'Medium Debt' where a year is not a condition for its origin. Now, if there was no 'Nisab' of its kind before it, then the beginning of the year will be from the time of sale because because of it, it became Zakat asset, as has been quoted here from 'Al-Muhit'. And it is not meant that in 'Mutawassit', it cannot begin before the time of sale even if a 'Nisab' of its kind existed before within the lunar year. Because this is against the issue of 'Mustafad' and that agreed-upon issue on which our scholars have stated clearly in all the texts, commentaries, and fatwas of the school. So understand it well and remain steadfast upon it. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 67: 22 Shawwal 1314 AH When there was no way to pay off the debt, the husband wrote a note to the mother, took back the jewelry from them, sold it, and put the money into trade. I did not want to sell it, but there was a compulsion because there was no livelihood; the husband was unemployed. The debt was not yet paid, and that trade also ended in a loss. The husband was considered the owner of the trade; its income was spent on all the children's expenses at home. After the trade ended, whatever money remained was spent on household expenses. It was

never mentioned that this is the money from my jewelry because the matter was considered as one. Now that money is also gone and...

---

[1] Radd al-Muhtar, Chapter: Obligation of Zakat on 'Dayn al-Marsad', Mustafa al-Babi Egypt 2/39. Page 170 of 836

फ़तावा रिज़विया जिल्द दहम

[अरबी बॉक्स] ...बीते हुए समय की ज़कात के बारे में, मूल चंद्र वर्ष (हौल-ए-अस्ल) के आधार पर। यदि कोई व्यक्ति व्यापारिक माल का मालिक बना, फिर आधे वर्ष के बाद उसने सामान बेच दिया और डेढ़ साल के बाद उसकी कीमत प्राप्त की, तो उसके लिए दो वर्ष पूरे हो गए हैं। वह बिना किसी मतभेद के भुगतान प्राप्त करने के समय दोनों वर्षों की ज़कात देगा। [1] ھ। मैं कहता हूँ: चर्चा 'मजबूत ऋण' (दैन-ए-क़वी) के लिए विशिष्ट थी क्योंकि इसका मूल ज़कात वाली संपत्तियों से होता है, 'मध्यम ऋण' (दैन-ए-मुतवस्सित) के विपरीत जहाँ इसके मूल के लिए वर्ष की शर्त नहीं है। अब यदि उससे पहले उसकी श्रेणी का निसाब (न्यूनतम कर योग्य राशि) नहीं था, तो वर्ष की शुरुआत बिक्री के समय से ही होगी क्योंकि इसके माध्यम से वह ज़कात की संपत्ति बन गई, जैसा कि यहाँ 'अल-मुहीत' से उद्धृत किया गया है। और इसका मतलब यह नहीं है कि 'मुतवस्सित' में बिक्री के समय से पहले शुरुआत नहीं हो सकती भले ही वर्ष के भीतर उसकी श्रेणी का निसाब पहले मौजूद हो। क्योंकि यह 'मुस्तफ़ाद' (अर्जित धन) के मुद्दे और उस सर्वसम्मत मुद्दे के खिलाफ है जिसे हमारे विद्वानों ने संप्रदाय के सभी ग्रंथों, व्याख्याओं और फतवों में स्पष्ट रूप से बताया है। तो इसे अच्छी तरह समझ लो और इस पर अडिग रहो। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

[उर्दू अनुवाद बॉक्स] ...बीते हुए समय का विचार करते हुए ज़कात दें। अगर कोई शख्स तिजारत के लिए सामान का मालिक हुआ, फिर उसने आधा साल बाद सामान बेच डाला और डेढ़ साल बाद उसके पैसे हासिल किए, तो अब उस पर दो साल गुजर चुके हैं। अब बिना किसी इख़्तिलाफ़ के कब्ज़े के वक्त से उसकी ज़कात दी जाएगी। मैं कहता हूँ: 'दैन' (ऋण) के साथ कलाम मख़सूस करने की वजह यह है कि इसका अस्ल (मूल) ज़कात के माल से होता है, बखिलाफ़ 'दैन-ए-मुतवस्सित' के कि वहां उसके अस्ल पर साल की शर्त नहीं है। अब अगर उसकी जिन्स से पहले निसाब न था तो अब साल की इब्तिदा (शुरुआत) बिक्री के वक्त से ही होगी क्योंकि इसकी वजह से वह माल-ए-ज़कात बना है जैसा कि यहाँ 'मुहीत' से नकल किया गया है। और यह मुराद नहीं कि मुतवस्सित में बिक्री के वक्त से पहले इब्तिदा नहीं हो सकती अगरचे साल पहले उसकी जिन्स से निसाब हो क्योंकि यह मसला 'मुस्तफ़ाद' और उस मुत्तफ़िक अलैह (सर्वसम्मत) मसले के खिलाफ है जिस पर हमारे उलमा ने तमाम किताबों के मतून, शरूहात और फतावा में वजाहत की है। लिहाज़ा इसे अच्छी तरह समझ लो और इस पर कायम रहो। वल्लाह तआला आलम (त)

मसला ६७: २२ शव्वाल १३१४ हिजरी जब कर्ज चुकाने की कोई सूरत न निकली तो शौहर ने वालिदा को रुक्का (चिट्ठी) लिख दिया और वह ज़ेवर उनसे वापस लेकर बेच डाला और रुपया तिजारत (व्यापार) में लगाया। बेचना मुझे मंजूर न था मगर मजबूरी थी कि रोज़गार न था, शौहर की बेकारी थी। कर्ज अभी अदा न हुआ था और वह तिजारत भी नुकसान होकर खत्म हो गई। मालिक-ए-तिजारत शौहर ही समझे जाते थे, उसकी आमदनी घर में सब बाल-बच्चों के खर्चों में सर्फ होती थी। तिजारत खत्म होने के बाद जो रुपया बचा वह सब घर के खर्चों में सर्फ हुआ। कभी यह जिक्र दरमियान न आया कि यह मेरे ज़ेवर का रुपया है क्योंकि मामला एक ही समझा जाता था। अब वह रुपया भी नहीं है और...

---

[1] रद अल-मुह्तार, बाब: दैन अल-मर्सद पर ज़कात का वुजूब, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र २/३९। पृष्ठ ८३६ में से १७०

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

[Arabic Box] درهماً زكاة عما مضى بانيًا على حول الاصل فلو ملك عرضًا للتجارة ثم بعد نصف الحول باعه ثم بعد حول و نصف قبض ثمنه فقد تم عليه حولان فيزكيهما وقت القبض بلا خلاف اهـ [1]

اقول: و انما خص الكلام بالقوى لان اصله من اموال الزكوة بخلاف المتوسط فلا حول لاصله فلو لم يكن له قبله نصاب من جنسه لا يبتدأ الحول الامن حين البيع لانه به صار مال الزكوة كما نقله ههنا عن المحيط و ليس يريد ان في الوسيط لا يبتدأ الامن وقت البيع و ان جد قبله نصاب يجانسه تحت حولان الحول فانه خلاف مسئلة المستفاد والمتفق عليها عند علمائنا المصرح بها في جميع كتب المذهب متوناً وشروحاً وفتاوى فافهم وتثبت والله تعالى اعلم۔

[Urdu Translation Box] اعتبار کرتے ہوئے گزشتہ عرصہ کی زکوٰۃ دے اگر کوئی شخص تجارت کے لیے سامان کا مالک ہوا پھر اس نے نصف سال کے بعد سامان بیچ ڈالا اور ڈیڑھ سال کے بعد اس کے ثمن پر قبضہ کیا تو اب اس پر دو سال گزر چکے ہیں تو اب بلا اختلاف وقتِ قبضہ سے اس کی زکوٰۃ دی جائے گی۔ اقول: دین کے ساتھ کلام مخصوص کرنے کی وجہ یہ ہے کہ اس کا اصل اموالِ زکوٰۃ سے ہوتا ہے، بخلاف دینِ متوسط کہ وہاں اس کے اصل پر سال شرط نہیں ہے اب اگر اس کی جنس سے پہلے نصاب نہ تھا تو اب سال کی ابتدا بیع کے وقت سے ہی ہوگی کیونکہ اس کی وجہ سے وہ مالِ زکوٰۃ بنا ہے جیسا کہ اس مقام پر محیط سے منقول ہوا ہے اور یہ مراد نہیں کہ متوسط میں وقتِ بیع سے پہلے ابتدا نہیں ہو سکتی اگرچہ سال پہلے اس کی جنس سے نصاب ہو کیونکہ یہ مسئلہ مستفاد اور اس متفق علیہ مسئلہ کے خلاف ہے جس پر ہمارے علماء نے تمام کتب کے متون، شروحات اور فتاویٰ میں تصریح کی ہے، پس اسے اچھی طرح سمجھ لو اور اس پر قائم رہو۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۶۷: ۲۲ شوال ۱۳۱۴ھ جب قرضہ کے ادا کی شکل نہ ہوئی تو شوہر نے والدہ کو رقعہ لکھ دیا اور وہ زیور ان سے واپس لے کر فروخت کر ڈالا اور روپیہ تجارت میں لگایا، بیچنا مجھے منظور نہ تھا مگر مجبوری تھی کہ روزگار نہ تھا، شوہر کی بیکاری تھی، قرضہ ابھی ادا نہ ہوا اور وہ تجارت بھی نقصان ہو کر چھٹ گئی، مالکِ تجارت شوہر ہی سمجھے جاتے تھے، اس کی آمد گھر میں سب بال بچوں کے خرچ میں صرف ہوتی تھی، تجارت چھٹنے کے بعد جو روپیہ بچا وہ سب گھر کے خرچوں میں صرف ہوا، کبھی یہ ذکر درمیان نہ آیا کہ میرے زیور کا روپیہ ہے کیونکہ معاملہ ایک سمجھا جاتا تھا اب وہ روپیہ بھی نہیں اور

---

[1] ردالمختار باب وجوب الزکوٰۃ فی دین المرصد مصطفی البابی مصر ۳۹/۲ Page 170 of 836

Fatawa Razawiya, Volume 10 Neither is the husband's livelihood stable, and the debt remains as before. Explain [the ruling] and may you be rewarded.

The Answer: If the jewelry was sold with your permission and the husband invested it in his business, even if that permission was due to the compulsion of the husband's unemployment, then its price remains a debt upon the husband. And if he sold it on his own without your permission, even if you remained silent, it fell under the ruling of usurpation (ghasb). In any case, year by year, zakat on it remained obligatory upon you and will continue to be obligatory as long as the threshold (nisab) remains. However, paying this zakat will not be obligatory upon you until the husband pays you an amount equivalent to eleven rupees, three and a quarter annas, minus a few cowries—that is, 2-5/2 1/3 pies. When this much comes into your possession, then paying the fortieth part of that amount will become obligatory. And if nothing comes into your possession, then paying that zakat will not be obligatory.

[Boxed Section] Arabic Text: Al-Shami said regarding the issue of usurped property: "And it is apparent according to the opinion of obligation that the ruling of a strong debt applies," i.e., it becomes obligatory upon receiving forty dirhams.[1] Urdu Translation of the Arabic: Regarding usurped property, he said that the apparent view is indeed of obligation because this is the ruling for a strong debt; i.e., one dirham is required upon the possession of forty dirhams. (T)

Yes, if you had simply given him that jewelry and never intended to take its price, then zakat is not obligatory upon you at all, because in such a case you no longer have the right of return, as it would be understood from some indication that the husband was made the owner. And Allah Almighty knows best.

Question 68: What do the scholars of religion say regarding this matter: if a person's money is spread out in loans, is zakat on it obligatory upon him or not? Explain and may you be rewarded.

The Answer: Zakat is also necessary for money spread out in loans, but it will become obligatory to pay when an amount equal to the threshold (nisab) or one-fifth of the threshold is recovered, calculating for all the years that have passed. And Allah Almighty knows best.

Question 69: 8 Shawwal 1314 AH (1) My husband is my debtor, and I have jewelry worthy of zakat, and my husband and I have a shared situation. Whatever money I

had, I gave it into my husband's possession, thinking that our affairs are one; rather, the husband also knows...

[1] Radd al-Muhtar, Chapter on Obligation of Zakat on Debts, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/39. Page 171 of 836

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10 न पति का रोज़गार ठीक है और क़र्ज़ जस का तस है, स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

उत्तर: यदि गहने आपकी अनुमति से बेचकर पति ने अपने व्यापार में लगाए, भले ही वह अनुमति पति की बेरोज़गारी की मजबूरी के कारण थी, तो उसकी कीमत पति पर ऋण (कर्ज़) रही। और यदि आपकी अनुमति के बिना स्वयं बेच दिया, भले ही आप चुप रहीं, तो यह ग़स्ब (अवैध कब्ज़े) के हुक्म में था। बहरहाल, साल-दर-साल उस पर ज़कात आप पर वाजिब रही और वाजिब होती रहेगी जब तक निसाब (न्यूनतम सीमा) बाकी है। लेकिन इस ज़कात को देना आप पर तब तक वाजिब न होगा, जब तक पति उसमें से लगभग ग्यारह रुपये सवा तीन आने कुछ कौड़ियाँ कम के बराबर आपको भुगतान न कर दे—यानी 2-5/2 1/3 पाई। जिस समय इतनी मात्रा आपके कब्ज़े में आएगी, उस समय उस मात्रा का चालीसवाँ हिस्सा देना वाजिब होगा। और यदि कुछ भी कब्ज़े में नहीं आएगा, तो उस ज़कात की अदायगी वाजिब न होगी।

[बॉक्स सेक्शन] अरबी पाठ: अल-शामी ने गसब (छीनी हुई संपत्ति) के मसले में कहा: "और वाजिब होने के कथन के अनुसार स्पष्ट यही है कि मज़बूत ऋण (दैन-ए-क़वी) का हुक्म लागू होगा," यानी चालीस दिरहम प्राप्त होने पर (ज़कात) वाजिब होगी।[1] उर्दू अनुवाद: मग़सब में फ़रमाया कि ज़ाहिर वजूब का क़ौल ही है क्योंकि यही दैन-ए-क़वी का हुक्म है अर्थात चालीस दिरहम के कब्ज़े पर एक दिरहम लाज़िम है। (त)

हाँ, यदि आपने वे गहने उन्हें दे ही दिए थे और उनकी क़ीमत कभी लेने का विचार न था, तो आप पर उसकी ज़कात वाजिब ही नहीं, क्योंकि ऐसी स्थिति में आपको वापसी का अधिकार नहीं रहा, जबकि किसी संकेत से पति को मालिक बना देना समझा गया हो। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह बेहतर जानता है)।

मसला 68: धर्म के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि यदि किसी व्यक्ति का रुपया ऋण (कर्ज़) के रूप में फैला हुआ हो, तो क्या उसकी ज़कात उसके ज़िम्मे फ़र्ज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

उत्तर: जो रुपया ऋण में फैला है उसकी भी ज़कात लाज़िम है, लेकिन जब निसाब की मात्रा या निसाब का पाँचवाँ हिस्सा वसूल हो, उस समय अदायगी वाजिब होगी, जितने वर्ष गुज़रे हों सबका हिसाब लगाकर। वल्लाहु तआला आलम।

मसला 69: 8 शव्वाल 1314 हिजरी (1) मेरा पति मेरा कर्ज़दार है और मेरे पास ज़कात के योग्य गहने हैं, और मेरे पति और मेरा मामला एक ही है, और मेरे पास जो कुछ रुपया हुआ वह मैंने पति के कब्ज़े में दे दिया यह समझकर कि मेरा और उनका मामला एक ही है, बल्कि पति को मालूम भी...

[1] रद-उल-मुहतार, ऋण पर ज़कात की अनिवार्यता का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/39। पृष्ठ 171/836

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم نہ شوہر کا روز گار ٹھیک ہے اور قرضہ بدستور ہے، بینوا تو جروا۔

الجواب: اگر زیور تمھاری اجازت سے بیچ کر شوہر نے اپنی تجارت میں لگایا اگرچہ وہ اجازت اسی مجبوری سے تھی کہ شوہر کی بیکاری ہے تو اس کی قیمت شوہر پر قرض رہی، اور اگر بے تمھاری اجازت کے بطور خود بیچ ڈالا اگرچہ تم نے سکوت کیا تو حکم غصب میں تھا، بہر حال سال بسال اس کی زکوٰۃ تم پر واجب ہوتی رہی اور واجب ہوا کرے گی جب تک نصاب باقی ہے مگر اس زکوٰۃ کا دینا تم پر واجب نہ ہوگا، جب تک شوہر اس میں سے بقدر گیارہ روپے سوا تین آنہ کچھ کوڑیاں کم کے تمھیں ادانہ کرے یعنی ۳/۱ ۲-۵/۲ پائی جس وقت اس قدر اس میں سے تمھارے قبضہ میں آئے گا اس وقت اس مقدار کا چالیسواں حصہ دینا واجب ہوگا اور اگر کچھ قبضہ میں نہ آئے گا تو اس زکوٰۃ کا ادا کرنا تو واجب نہ ہوگا،

[باکس سیکشن] عربی: قال الشامی فی مسئلۃ المغصوب قال والظاھر علی القول بالوجوب ان حکم الدین القوی اھ ای فتجب عند قبض اربعین درھما۔[1] اردو ترجمہ: مغصوب میں فرمایا کہ ظاہر وجوب کا قول ہی ہے کیونکہ یہی دین قوی کا حکم ہے اھ یعنی چالیس درہم کے قبضہ پر ایک درہم لازم۔ (ت)

ہاں اگر تم نے وہ زیور انھیں دے ہی دیا تھا اس کی قیمت کبھی لینے کا خیال نہ تھا تو تم پر اس کی زکوٰۃ واجب ہی نہیں کہ ایسی حالت میں تمھیں استحقاق واپسی نہ رہا جبکہ کسی قرینہ سے شوہر کو مالک کر دینا سمجھا گیا ہو، واللہ تعالٰی اعلم۔ مسئلہ ۶۸: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ کسی شخص کا روپیہ اگر قرض میں پھیلا ہو تو اس کی زکوٰۃ اس کے ذمہ فرض ہے یا نہیں؟

بینوا توجروا الجواب: جو روپیہ قرض میں پھیلا ہے اس کی بھی زکوٰۃ لازم ہے مگر جب بقدر نصاب یا خمس نصاب وصول ہو اس وقت ادا واجب ہوگی جتنے برس گزرے ہوں سب کا حساب لگا

کر۔ واللہ تعالیٰ اعلم مسئلہ ۶۹: ۸ شوال ۱۳۱۴ھ (۱) شوہر میرا قرضدار ہے اور میرے پاس زیور ہے زکوٰۃ کے لائق، اور میرا شوہر کا معاملہ ایک ہے، اور میرے پاس جو کچھ روپیہ ہوا تو شوہر کے قبضہ میں دے دیا یہ سمجھ کر کہ میرا اور اُن کا معاملہ واحد ہے بلکہ شوہر کو معلوم بھی

[1] ردالمحتار باب وجوب الزکوۃ فی دین المرصد مصطفی البابی مصر ۳۹/۲ Page 171 of 836

Fatawa Razawiya Volume 10

[Continuation of a query]: ...happened later, now I neither have a demand on my husband nor was there any conversation that I have forgiven [it], rather I considered our matter as one and gave it as a loan. Now the jewelry I have is much less than the loan but sufficient for Zakat. In this case, is it obligatory to pay Zakat or not? And the expenses for children are high, and income is very low. If Zakat is obligatory, please suggest a way where Zakat is also paid and there is no difficulty in expenses. (2) The money I received from my mother, I gave it towards my husband's debt or it was spent on household expenses for the children. I did not know about Zakat; is it obligatory on me? Please answer, and you shall be rewarded.

The Answer: (1) No matter how unified the relationship between a wife and husband is in worldly terms, in the eyes of Allah Almighty's command, they are distinct. When you possess jewelry eligible for Zakat and the debt is not upon you but upon your husband, then Zakat is certainly obligatory upon you. Every year, Zakat became obligatory on all the jewelry, and also on any other money or Zakat-eligible items that were in your own ownership. The money you gave towards his debt on your own without your husband's request will be considered your favor [to him]; its demand cannot be made from the husband. The responsibility for the children's expenses lies with the father, not with you. Do not consider paying Zakat as a burden on expenses; rather, not paying it is the cause of hardship, bringing misfortune and lack of blessings. Paying Zakat increases wealth, and Allah Almighty grants abundance and ease. This is Allah's promise in the Holy Quran, and Allah Almighty is Truthful, and His promise is true. Peace be upon you. (2) If you gave the money to your husband so that he could pay off his debt with it, and your intention was not to gift it to him, then that money is a loan from you to your husband. In Al-Uqud al-Durriyya from Lisan al-Hukkam: "Money was given to him and told 'spend it', and he did, then it is a loan as if it was said 'spend it on your needs'." 1 In Al-Uqud al-Durriyya it is quoted from Lisan al-Hukkam that if dirhams were given to someone saying "spend them," and he spent them, it is a loan, as if it was said "spend it for your needs." (T) In this case, the ruling is the same: Zakat is obligatory on you year after year as long as the nisab (minimum threshold) remains. However, paying this Zakat will only become necessary when you receive the equivalent of 13/.. from the husband. At that time, it will be obligatory to pay four and a half annas out of that Zakat, minus a few cowries, i.e., 4/5 - 25/19 pai. And if you gave it to your husband or on your own for the husband's...

1 Al-Uqud al-Durriyya, Kitab al-Hiba, Haji Abdul Ghaffar and sons, book merchants, Arg Bazaar, Kandahar, Afghanistan, 2/91.

फ़तावा रज़विया खंड 10

[एक प्रश्न का निरंतरता]: ...बाद में हुआ, अब न तो मेरा पति पर कोई तक़ाज़ा है और न ही यह बात हुई कि मैंने माफ़ कर दिया, बल्कि अपना और उनका मामला एक समझकर कर्ज़ के तौर पर दे दिया। अब जो ज़ेवर है वह कर्ज़ से बहुत कम है लेकिन ज़कात के लायक़ है, इस सूरत में ज़कात देना फ़र्ज़ है या नहीं? और बच्चों के ख़र्च बहुत हैं, आमदनी बहुत कम है। अगर ज़कात फ़र्ज़ हो तो कोई ऐसी सूरत बताएं जिससे ज़कात भी अदा हो जाए और ख़र्च में तकलीफ़ न हो। (2) जो रुपया मुझे अपनी माँ के पास से मिला था, वह मैंने पति के कर्ज़ में दे दिया या घर में बच्चों के ख़र्च में सर्फ़(व्यय) हुआ। ज़कात के बारे में मालूम नहीं था, क्या मुझ पर फ़र्ज़ है? ब्यान कीजिए, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: (1) दुनिया के ऐतबार से पत्नी और पति का मामला चाहे कितना ही एक क्यों न हो, लेकिन अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल के हुक्म में वे अलग-अलग हैं। जब तुम्हारे पास ज़कात के क़ाबिल ज़ेवर है और कर्ज़ तुम पर नहीं बल्कि तुम्हारे पति पर है, तो तुम पर ज़कात ज़रूर वाजिब है। और हर साल पूरे ज़ेवर के अलावा जो रुपया या ज़कात की कोई और चीज़ तुम्हारी अपनी मिल्कियत (स्वामित्व) में थी, उस पर भी ज़कात वाजिब हुई। जो रुपये तुमने पति के कहे बिना अपनी तरफ़ से उनके कर्ज़ में दे दिए, वह तुम्हारा एहसान माना जाएगा; उसकी मांग पति से नहीं की जा सकती। बच्चों के ख़र्च की ज़िम्मेदारी बाप की है, तुम्हारी नहीं। ज़कात देने से ख़र्च की तकलीफ़ न समझें, बल्कि उसका न देना ही तकलीफ़ का कारण होता है, मनहूसियत और बे-बरकती लाता है। ज़कात देने से माल बढ़ता है, अल्लाह तआला बरकत और फ़रागत (प्रचुरता) देता है। क़ुरान मजीद में अल्लाह का वादा है, अल्लाह तआला सच्चा है और उसका वादा सच्चा है, वस्सलाम। (2) अगर तुमने पति को रुपया दिया कि इससे अपना कर्ज़ अदा कर लो और उसे दे डालना (दान करना) मक़सूद नहीं था, तो वह रुपया पति पर तुम्हारा कर्ज़ है। अल-उक़ूद अद-दुर्रिया में लिसान अल-हुक्काम से उद्धृत: "उसे दिरहम दिए गए और कहा गया 'इन्हें ख़र्च करो', तो उसने वैसा ही किया, फिर यह कर्ज़ है जैसे कहा गया हो 'इसे अपनी ज़रूरतों पर ख़र्च करो'।" 1 अल-उक़ूद अद-दुर्रिया में लिसान अल-हुक्काम से है कि अगर किसी को यह कहते हुए दिरहम दिए गए कि तुम इन्हें ख़र्च कर दो, अब उसने ख़र्च कर लिए तो यह कर्ज़ है जैसा कि कहा गया हो कि तू इसे अपनी ज़रूरतों में ख़र्च करे। (त) इस सूरत में तो वही हुक्म है कि इसकी ज़कात तुम पर साल-ब-साल वाजिब है जब तक निसाब (न्यूनतम सीमा) बाक़ी रहे, मगर यह ज़कात देना उसी समय लाज़िम होगा जब पति से १३/.. के बराबर वसूल पाओगी। उस समय उस

ज़कात में से साढ़े चार आने देने वाजिब होंगे, कुछ कौड़ियाँ कम यानी ४/५- २५/१९ पाई। और अगर पति को दे डाला या अपनी तरफ़ से पति की...

---

1 अल-उक़ूद अद-दुर्रिया, किताब अल-हिबा, हाजी अब्दुल ग़फ़्फ़ार और बेटे, पुस्तक विक्रेता, अर्ग बाज़ार, कंधार, अफ़गानिस्तान, 2/91.

فتاوی رضویه جلد دہم

بعد کو ہوا، اب میرا نہ شوہر پر تقاضا ہے نہ یہ گفتگو ہوئی کہ میں نے معاف کر دیا بلکہ اپنا ان کا معاملہ ایک سمجھ کر قرضہ میں دے دیا، اب جو زیور ہے وہ قرضہ سے بہت کم ہے لیکن زکوٰۃ کے لائق ہے اس صورت میں زکوٰۃ دینا فرض ہے یا نہیں؟ اور خرچ بال بچوں کا بہت ہے آمد بہت کم ہے، اگر زکوٰۃ فرض ہو تو کچھ ایسی صورت بتائے کہ جس میں زکوٰۃ بھی ادا ہو جائے اور خرچ کو تکلیف نہ ہو۔ (۲) جو روپیہ میری والدہ کے پاس سے مجھ کو ملا تھا میں نے شوہر کے قرضہ میں دے دیا یا گھر میں بال بچوں کے خرچ میں صرف ہوا زکوٰۃ کا حال معلوم نہ تھا مجھ پر فرض ہے۔ بینوا توجروا۔ الجواب: (۱) عورت اور شوہر کا معاملہ دنیا کے اعتبار سے کتنا ہی ایک ہو مگر اللہ عزوجل کے حکم میں وہ جدا جدا ہیں، جب تمہارے پاس زیور زکوٰۃ کے قابل ہے اور قرض تم پر نہیں شوہر پر ہے تو تم پر زکوٰۃ ضرور واجب ہے اور ہر سال تمام پر زیور کے سوا جو روپیہ یا اور زکوٰۃ کی کوئی چیز تمہاری اپنی ملک میں تھی اس پر بھی زکوٰۃ واجب ہوئی، جو روپے تم نے بغیر شوہر کے کہے بطور خود ان کے قرضہ میں دے دیا وہ تمہارا احسان سمجھا جائے گا اس کا مطالبہ شوہر سے نہیں ہو سکتا بال بچوں کا خرچ باپ کے ذمہ ہے تمہارے ذمہ نہیں ، زکوٰۃ دینے سے خرچ کی تکلیف نہ سمجھوں بلکہ اس کا نہ دینا ہی تکلیف کا باعث ہوتا ہے نحوست اور بے برکتی لاتا ہے اور زکوٰۃ دینے سے مال بڑھتا ہے اللہ تعالیٰ برکت و فراغت دیتا ہے، قرآن مجید میں اللہ کا وعدہ ہے، اللہ تعالیٰ سچا اور اس کا وعدہ سچا، والسلام۔ (۲) اگر روپیہ تم نے شوہر کو دیا کہ اس سے اپنا قرض ادا کر لو اور اسے دے ڈالنا مقصود نہ تھا تو وہ روپیہ تمہارا شوہر پر قرض ہے۔ فی العقود الدریة عن لسان الحکام دفع الیہ دراھم فقال لہ انفقھا ففعل فھو قرض کما لو قال اصرفھا الی حوائجک۔ 1 عقود الدریہ میں لسان الحکام سے ہے کہ اگر کسی کو یہ کہتے

ہوئے دراہم دئے گئے کہ تم انھیں خرچ کر دو اب اس نے خرچ کر لئے تو یہ قرض ہے جیسا کہ کہا ہو کہ تو اسے اپنی ضروریات میں خرچ کرے (ت) اس صورت میں تو وہی حکم ہے کہ اس کی زکوٰۃ تم پر سال بسال واجب جب تک نصاب باقی رہے، مگر یہ زکوٰۃ دینا اسی وقت لازم ہو گا جب شوہر سے بقدر لہ ۱۳ کے وصول پاؤ گی، اُس وقت اس زکوٰۃ میں سے ساڑھے چار آنے دینے واجب ہوں گے کچھ کوڑیاں کم یعنی ۴/ ۵- ۲۵/۱۹ پائی، اور اگر شوہر کو دے ڈالا یا بطور خود شوہر کی

---

1 العقود الدرية كتاب الهبة حاجی عبدالغفار و پسران تاجران كتب ارگ بازار قندهار افغانستان ۹۱/۲

Volume Ten Fatawa Razawiyya

If money was given upon their request as a loan, then for this money and for the money spent on children's expenses, it will be seen whether this money was given and spent before the completion of the zakat year. If so, then nothing is due. And if it was given and used up after zakat became obligatory, then zakat for that period when it remained will be mandatory. From the time it was given and spent, zakat is no longer obligatory. Allah Almighty knows best.

Problem 71: 21 Safar 1332 AH In what scenario is zakat on dower (Mahr) obligatory for a woman? For example, is it non-deferred (Mu'ajjal) dower, or if in both deferred (Ghair Mu'ajjal) and non-deferred dower, the woman forgave it, or if in both deferred and non-deferred dower, the husband did not pay; in which case is zakat obligatory for the woman? Explain and be rewarded.

The Answer: Zakat will be payable by the woman on non-deferred (Mu'ajjal) dower when it reaches one-fifth of the Nisab (minimum amount for zakat), and it is better if she pays it beforehand. And for that dower which is commonly fixed without a specified time, which the woman cannot demand before death or divorce, the eligibility for zakat on it will be after receipt. Allah Almighty knows best.

Page 173 of 836

यदि उनके अनुरोध पर ऋण के रूप में धन दिया गया था, तो इस धन और बच्चों के खर्च पर खर्च किए गए धन के लिए यह देखा जाएगा कि क्या यह धन ज़कात वर्ष पूरा होने से पहले दिया और खर्च किया गया था। यदि ऐसा है, तो कुछ भी (देय) नहीं है। और यदि ज़कात अनिवार्य होने के बाद दिया गया और खर्च हो गया, तो उस अवधि के लिए ज़कात अनिवार्य होगी जब तक वह शेष था। जिस समय से इसे दिया और खर्च किया गया, तब से ज़कात अनिवार्य नहीं रही। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 71: 21 सफ़र 1332 हिजरी एक महिला के लिए मेहर (दहेज) पर ज़कात किस स्थिति में अनिवार्य होगी? उदाहरण के लिए, क्या यह मुअज्जल (गैर-आस्थगित) मेहर है, या यदि आस्थगित (गैर-मुअज्जल) और मुअज्जल दोनों मेहर में महिला ने इसे माफ़ कर दिया, या यदि आस्थगित और मुअज्जल दोनों मेहर में पति ने भुगतान नहीं किया; किस स्थिति में महिला के लिए ज़कात अनिवार्य है? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: महिला द्वारा मुअज्जल मेहर पर ज़कात तब देय होगी जब वह निसाब (ज़कात के लिए न्यूनतम राशि) के पांचवें हिस्से तक पहुंच जाए, और यदि वह इसे पहले दे दे तो बेहतर है। और वह मेहर जो आमतौर पर बिना किसी निर्धारित समय के तय किया जाता है, जिसे महिला मृत्यु या तलाक से पहले नहीं मांग सकती, उस पर ज़कात की पात्रता प्राप्ति के बाद होगी। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

पृष्ठ 173/836

درخواست کے اُن کے قرضہ دے دیا تو یہ روپیہ اور نیز وہ جو بچوں کے خرچ میں صرف ہوا اُن میں یہ دیکھا جائے گا کہ زکوۃ کا سال تمام ہونے سے پہلے یہ روپیہ دے ڈالا اور صرف ہو گیا جب تو کچھ نہیں ، اور اگر بعد زکوۃ واجب ہونے کے دے دیا اور اٹھ گیا تو جب تک باقی تھا اتنی مدت کی زکوۃ واجب رہے جب سے دے ڈالا خرچ ہو گیا زکوۃ لازم نہ ہوئی ۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۱: ۲۱ صفر ۱۳۳۲ھ عورت پر مہر کی زکوۃ کون سی صورت سے واجب ہوگی مثلاً مہر غیر معجل ہے یا کہ معجل اور غیر معجل دونوں میں عورت نے معاف کر دیا یا کہ معجل اور غیر معجل دونوں شوہر نے ادا نہ کیا، عورت پر جب بھی کیا زکوۃ واجب؟ بینوا توجروا ۔

الجواب: معجل مہر سے جب بقدر خمس نصاب ہو اُس وقت عورت پر زکوۃ واجب الادا ہوگی اور پہلے دیتی رہے تو بہتر ہے اور یہ مہر جو عام طور پر بلا تعینِ وقت باندھا جاتا ہے جس کا مطالبہ عورت قبل موت و طلاق نہیں کر سکتی اس پر زکوۃ کی صلاحیت بعد وصول ہوگی ۔ واللہ تعالیٰ اعلم ۔

صفحہ ۱۷۳ از ۸۳۶

Fatawa Razawiya Volume 10

Treatise “The Utmost Understanding in the Refutation of the Voluntary Charity of the One Who Refuses Zakat” 1309 AH (A rare and genuine investigation regarding the rejection of optional charity by those who do not pay Zakat)

Problem 72: From Pilibhit, sent by Abdul Razzaq Khan, Dhu al-Qi'dah al-Haram 1309 AH. What do the scholars of the religion and the jurists of the clear Sharia say about this issue? A person does not pay Zakat on his money but spends it on charitable causes. For instance, every day he distributes cash and grain among the poor, has built a mosque, and has bought a village with this money and donated (Hibah) it for charity, and continues to spend the surplus income (zar-e-taufir) of that village on charitable causes for his entire life. Now, another person says that any kind of charity from money for which Zakat has not been paid is not permissible. Daily charity, building the mosque, and donating the village are all in vain. Therefore, a fatwa is requested: Is it correct to spend money, for which Zakat has not been paid, on charitable causes as mentioned above or not? And if it is not correct, should he take back that property from the gift and donate it again with the intention that the surplus income of this property, which will be received every year, be spent in exchange for the Zakat amount that is due from him for the past period? Explain and be rewarded. The Petitioner: Abdul Razzaq Khan son of Nathu Khan Khandsari, resident of Pilibhit, Mohalla Ashraf Khan.

Page 175 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द १०

रिसाला (लघुग्रंथ) ए'ज़ अल-इक्तिनाह फी रद्दि सदक़ति मानिअिज़-ज़कात १३०९ हिजरी (ज़क़ात न देने वाले के नफ़्ली सदक़े के खंडन के संबंध में दुर्लभ और सत्य शोध)

मसला ७२: पीलीभीत से, प्रेषक अब्दुल रज्ज़ाक़ ख़ाँ, ज़िलक़ादा उल-हराम १३०९ हिजरी। दीन के विद्वान और स्पष्ट शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक व्यक्ति अपने रुपयों की ज़कात नहीं देता है लेकिन रुपयों को नेक कामों में खर्च करता है, यानी हर रोज़ फ़कीरों को नकद और अनाज बाँटता है, और एक मस्जिद बनवाई है, और एक गाँव इन रुपयों से खरीदकर खैरात के लिए हिबा (दान) कर दिया है और जीवन भर खुद उस गाँव की अतिरिक्त आय (ज़र-ए-तौफ़ीर) को नेक कामों में खर्च करता रहता है। अब एक और व्यक्ति यह कहता है कि जिस रुपये की ज़कात नहीं दी गई है, उस रुपये से किसी भी तरह की खैरात जायज़ नहीं है, हर रोज़ की खैरात, मस्जिद बनाना और गाँव का दान करना सब व्यर्थ है। इसलिए फ़तवा माँगा जाता है कि जिस रुपये की ज़कात नहीं दी गई है, उस रुपये को नेक कामों में खर्च करना जैसा कि ऊपर बताया गया है, सही है या नहीं? और अगर सही नहीं है, तो क्या उस जगह को दान से वापस लेकर फिर से इस इरादे से दान करे कि उस जगह की जो अतिरिक्त आय हर साल प्राप्त होगी, उसे उस ज़कात की रकम के बदले खर्च किया जाए जो पिछले समय से उस पर बकाया (देनदारी) है। बयान करें और सवाब पायें। मुकल्लफ़ (निवेदक): अब्दुल रज्ज़ाक़ ख़ाँ पुत्र नत्थू ख़ाँ खंडसारी, निवासी पीलीभीत, मोहल्ला अशरफ़ ख़ाँ।

पृष्ठ ८३६ में से १७५

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

رسالہ اعزّ الاکتناہ فی ردّ صدقۃ مانع الزکوٰۃ ۱۳۰۹ھ (زکوٰۃ ادا نہ کرنے والے کے صدقہ نفلی کے رد کے متعلق نادر تحقیق حقیق)

مسئلہ ۷۲ : از پیلی بھیت مرسلہ عبدالرزاق خاں ذیقعدہ الحرام ۱۳۰۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص اپنے روپیہ کی زکوٰۃ نہیں دیتا ہے مگر روپیہ مصرفِ خیر میں صرف کرتا ہے یعنی ہر روز فقراء کو زر نقد و غلہ تقسیم کرتا ہے ، اور ایک مسجد بنوائی ہے ، اور ایک گاؤں اس روپیہ سے خرید کر واسطے خیرات کے ہبہ کردیا ہے اور تاحیات خود زرِتوفیر اس کا صرف کرتا رہے مصرفِ خیر میں۔ اب ایک اور شخص یہ کہتا ہے کہ جس روپیہ کی زکوٰۃ نہیں دی گئی ہے ، اس روپیہ سے کسی قسم کی خیرات جائز نہیں ہے ہر روز کی خیرات اور بنانا مسجد کا اور گاؤں کا ہبہ کرنا سب اکارت ہے۔ فلہذا فتویٰ طلب کیا جاتا ہے کہ جس روپیہ کی زکوٰۃ نہیں دی گئی ہے اس روپیہ کو مصرفِ خیر میں صرف کرنا جیسا کہ بالا مذکور ہے درست ہے یا نہیں ؟ اور اگر درست نہیں تو اس موضع کو ہبہ سے واپس لے کر دوبارہ اس قصد سے ہبہ کرے کہ اس موضع کی توفیر ہو جو ہر سال وصول ہوا کرے گی بالعوض اس زرِ زکوٰۃ کے جواس کے ذمہ زمانہ ماضیہ کی دین ہے ، صرف ہوا کرے۔ بینوا توجروا المکلف :

عبدالرزاق خاں ولد نتھو خاں کھنڈساری ساکن پیلی بھیت محلہ اشرف خاں

صفحہ ۱۷۵ از ۸۳۶

Fatawa Razawiya, Volume 10

The Answer: Zakat is among the greatest obligations of the religion and the most important pillars of Islam. That is why it has been mentioned alongside prayer (Salah) thirty-two (32) times in the Great Quran. In various ways, the servants of Allah have been called towards this important obligation, and it has been clearly stated: never think that by giving Zakat, your wealth has decreased by that much; rather, wealth increases through it.

Allah destroys interest and gives increase for charities.	**يَمْحَقُ اللّٰهُ الرِّبٰوا وَ يُرْبِی الصَّدَقٰتِ (Quran 2:276)**

In some trees, certain corrupt elements grow that hinder the growth of the tree. A foolish person would not prune them, thinking "my tree will decrease by this much," but an intelligent and wise person knows that by pruning these, this sapling will flourish and become a tree; otherwise, it will wither away. The same logic applies to wealth for which Zakat is due. In the Hadith, the radiant presence, the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him), says:

The charity or Zakat portion, if mixed with wealth, will destroy it.	**مَا خَالَطَتِ الصَّدَقَةُ اَوْ مَالُ الزَّکٰوةِ مَالًا اِلَّا اَفْسَدَتْہُ۔**
It was narrated by al-Bazzar and al-Bayhaqi from the Mother of the Believers, al-Siddiqah (may Allah be pleased with her).	رواہ البزار والبیھقی عن ام المومنین الصدیقہ رضی اللہ تعالٰی عنھا۔

In another Hadith, the Noble Presence (peace and blessings of Allah be upon him) says:

No wealth is lost on land or at sea except due to the withholding of Zakat.	**مَا تَلِفَ مَالٌ فِی بَرٍّ وَلَا بَحْرٍ اِلَّا بِحَبْسِ الزَّکٰوةِ۔**
It was narrated by al-Tabarani in 'al-Awsat' from Abu Hurairah from the Commander of the Believers, Umar al-Faruq al-A'zam (may Allah be pleased with them both).	اخرجَہ الطبرانی فی الاوسط عن ابی ھریرہ عن امیر المومنین عمر الفاروق الاعظم رضی اللہ تعالٰی عنھما۔

In a third Hadith, the Holy Presence (peace and blessings of Allah be upon him) says:

Whoever pays the Zakat of his wealth, Allah has indeed removed its evil from him.	**مَنْ اَدّى زَكٰوة مَالِہٖ فَقَدْ اَذْهَبَ اللّٰہُ شَرَّهٗ**
Narrated by Ibn Khuzaymah in his 'Sahih' and al-Tabarani.	اخرجَہ ابن خزيمة فى صحيحہ والطبرانى

1. Quran 2/276
2. Shu'ab al-Iman by al-Bayhaqi, Hadith 3522, Chapter on Refraining from Begging, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah Beirut 3 / 274
3. Majma' al-Zawa'id citing Mu'jam al-Awsat, Chapter on Obligation of Zakat, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut 3 / 63
4. Sahih Ibn Khuzaymah, Hadith 2258, Al-Maktab al-Islami Beirut 4 / 13

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

जवाब: ज़क़ात दीन के सबसे बड़े फ़राइज़ (अनिवार्य कर्तव्यों) और इस्लाम के सबसे महत्वपूर्ण स्तंभों में से है। इसीलिए क़ुरआन अज़ीम में बत्तीस (32) जगहों पर नमाज़ के साथ इसका ज़िक्र किया गया है और तरह-तरह से बंदों को इस महत्वपूर्ण फ़र्ज़ की तरफ़ बुलाया गया है। साफ़ फ़रमा दिया गया कि हरगिज़ यह न समझना कि ज़कात दी तो माल में से इतना कम हो गया, बल्कि इससे माल बढ़ता है।

يَمْحَقُ اللّٰهُ الرِّبٰوا وَ يُرْبِى الصَّدَقٰتِ
(क़ुरआन 2:276)

अल्लाह ब्याज को मिटाता है और सदक़ात (दान) को बढ़ाता है।

कुछ पेड़ों में कुछ भ्रष्ट हिस्से पैदा हो जाते हैं जो पेड़ की बढ़त को रोक देते हैं। एक बेवक़ूफ़ नादान उन्हें नहीं काटेगा कि "मेरा पेड़ इतना कम हो जाएगा," लेकिन एक अक़्लमंद और समझदार जानता है कि इन्हें छाँटने से यह नन्हा पौधा लहलहा कर पेड़ बनेगा, वरना यूँ ही मुरझा कर रह जाएगा। ज़कात वाले माल का भी यही हिसाब है। हदीस में हुज़ूर पुर नूर सय्यदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

مَا خَالَطَتِ الصَّدَقَةُ اَوْ مَالُ الزَّكٰوةِ مَالًا اِلَّا اَفْسَدَتْهٗ۔

ज़कात का माल जिस माल में मिला होगा, उसे तबाह और बर्बाद कर देगा।

رواہ البزار والبیھقی عن ام المومنین الصدیقہ رضی اللہ تعالٰی عنھا۔

इसे बज़ार और बैहक़ी ने उम्मुल मोमिनीन अत्-सिद्दीक़ा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत किया।

दूसरी हदीस में हुज़ूर वाला (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

مَا تَلِفَ مَالٌ فِى بَرٍّ وَلَا بَحْرٍ اِلَّا بِحَبْسِ الزَّكٰوةِ۔

खुश्की और तरी (ज़मीन और समंदर) में जो माल नष्ट हुआ है, वह ज़कात न देने की वजह से ही हुआ है।

اخرجَہ الطبرانی فی الاوسط عن ابی ھریرہ عن امیر المومنین عمر الفاروق الاعظم رضی اللہ تعالٰی عنھما۔

इसे तबरानी ने 'अल-औसत' में अबू हुरैरा से और उन्होंने अमीरुल मोमिनीन उमर फ़ारूक़े आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया।

तीसरी हदीस में हुज़ूर अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

जिसने अपने माल की ज़कात अदा कर दी, बेशक अल्लाह तआला ने उस माल की बुराई (शर) उससे दूर कर दी।

مَنْ اَدّٰی زَکٰوۃَ مَالِہٖ فَقَدْ اَذْھَبَ اللّٰہُ شَرَّہٗ

इसे इब्ने खुज़ैमा ने अपनी 'सहीह' में और तबरानी ने रिवायत किया।

اخرجہ ابن خزیمۃ فی صحیحہ والطبرانی

1. क़ुरआन 2/276
2. शोअबुल ईमान, बैहक़ी, हदीस 3522, फ़स्लुल इस्तिअफ़ाफ़ अनिल् मसअला, दारुल कुतुब अल-इलमिया बेरूत 3/274
3. मज्मअ अज़-ज़वाइद, बहवाला मोजम औसत, बाब फ़र्ज़ुज़ ज़कात, दारुल किताब अल-अरबी बेरूत 3/63
4. सहीह इब्ने खुज़ैमा, हदीस 2258, अल-मक्तब अल-इस्लामी बेरूत 4/13

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

الجواب: زکوٰۃ اعظم فروضِ دین واہم ارکانِ اسلام سے ہے و لہذا قرآن عظیم میں بتیس ۳۲ جگہ نماز کے ساتھ اس کا ذکر فرمایا اور طرح طرح سے بندوں کو اس فرضِ اہم کی طرف بلایا، صاف فرمادیا کہ زنہار نہ سمجھنا کہ زکوۃ دی تو مال میں سے اتنا کم ہوگیا، بلکہ اس سے مال بڑھتا ہے۔

اللہ ہلاک کرتا ہے سود کو اور بڑھاتا ہے خیرات کو (ت) **یَمْحَقُ اللّٰہُ الرِّبٰوا وَ یُرْبِی الصَّدَقٰتِؕ (القرآن ۲/ ۲۷۶)**

بعض درختوں میں کچھ اجزائے فاسدہ اس قسم کے پیدا ہوجاتے ہیں کہ پیڑ کی اٹھان کو روک دیتے ہیں، احمق نادان انھیں نہ تراشے گا کہ میرے پیڑ سے اتنا کم ہوجائے گا، پر عاقل ہوشمند تو جانتا ہے کہ ان کے چھانٹنے سے یہ نونہال لہلہا کر درخت بنے گا ورنہ یوں ہی مرجھا کر رہ جائے گا، یہی حساب زکوتی مال کا ہے۔ حدیث میں حضور پُر نور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

زکوٰۃ کا مال جس میں ملا ہوگا اسے تباہ و برباد کردے گا۔ **مَا خَالَطَتِ الصَّدَقَۃُ اَوْ مَالُ الزَّکٰوۃِ مَالًا اِلَّا اَفْسَدَتْہُ۔**

اسے بزار اور بیہقی نے ام المومنین الصدیقہ رضی رواہ البزار والبیھقی عن ام المومنین الصدیقہ اللہ تعالٰی عنہا سے روایت کیا۔ رضی اللہ تعالٰی عنھا۔

دوسری حدیث میں ہے حضور والا صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

خشکی و تری میں جو مال تلف ہوا ہے وہ زکوۃ نہ دینے ہی سے تلف ہوا ہے۔

مَا تَلِفَ مَالٌ فِی بَرٍّ وَلَا بَحْرٍ اِلَّا بِحَبْسِ الزَّکٰوۃِ۔

اسے طبرانی نے اوسط میں ابوہریرہ سے امیر المومنین عمر فاروق اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا۔

اخرجَہ الطبرانی فی الاوسط عن ابی ھریرہ عن امیر المومنین عمر الفاروق الاعظم رضی اللہ تعالٰی عنہما۔

تیسری حدیث میں ہے حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

جس نے اپنے مال کی زکوٰۃ ادا کردی بیشک اللہ تعالیٰ نے اس مال کا شر اس سے دُور کردیا۔

مَنْ اَدّٰی زَکٰوۃَ مَالِہٖ فَقَدْ اَذْھَبَ اللّٰہُ شَرَّہٗ

اسے ابن خزیمہ نے اپنی صحیح میں اور طبرانی نے روایت کیا۔

اخرجَہ ابن خزیمۃ فی صحیحہ والطبرانی

1. القرآن ۲/ ۲۷۶
2. شعب الایمان للبیہقی حدیث ۳۵۲۲ فصل الاستعفاف عن المسئلۃ دارالکتب العلمیہ بیروت ۳ / ۲۷۴
3. مجمع الزوائد بحوالہ معجم اوسط باب فرض الزکوۃ دارالکتاب العربی بیروت ۳ / ۶۳
4. صحیح ابن خزیمہ حدیث ۲۲۵۸ المکتب الاسلامی بیروت ۴ / ۱۳

Fatawa Rizvia, Volume 10

In Al-Awsat and Al-Hakim in Al-Mustadrak on the authority of Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with them):

Whoever pays the Zakat on his wealth, surely Allah Almighty has removed the evil of that wealth from him. Narrated by Ibn Khuzaymah in his Sahih, Al-Tabarani in Al-Mu'jam al-Awsat, and Al-Hakim in Al-Mustadrak on the authority of Hadrat Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with them).

It is stated in the fourth Hadith that the Prophet (peace and blessings be upon him) said:

"Protect your wealth in strong fortresses by giving Zakat, and treat your sick with charity." [1] Narrated by Abu Dawud in his Marasil from Al-Hasan [Al-Basri], and Al-Tabarani, Al-Bayhaqi, and others from a group of companions (may Allah be pleased with them).

"Protect your wealth by giving Zakat, and treat your sick with charity." It was narrated by Abu Dawud in his Marasil from Imam Hasan Basri, and by Al-Tabarani, Al-Bayhaqi, and other Muhadditheen from a group of Companions (may Allah be pleased with them).

O dear one! Look at an ignorant peasant who, if he lacks wheat seeds, obtains them with a thousand difficulties through loans or money and casts them into the ground. At that moment, he mixes them with the soil with his own hands, yet he holds onto the hope that, God willing, this loss will turn into a great gain. Do you not even have as much sense as that peasant, or is your reliance on apparent causes greater than your trust in the command of your Master (Glorious and Exalted), such that you do not sow the seed of Zakat to increase your wealth and turn every single grain into a tree? He says: Give Zakat, and your wealth will increase. If there is no conviction in this command in your heart, then it is open disbelief; otherwise, who is more foolish than you, who abandons such a grand trade of certain benefit in religion and the world, and instead invites loss in both worlds?

Hadith 1: In it, the Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) says:

"Indeed, the completion of your Islam is that you pay the Zakat on your wealth." [2] Narrated by Al-Bazzar from Alqamah.

The completion of your Islam is that you pay the Zakat on your wealth. Narrated by Al-Bazzar from Hadrat Alqamah (may Allah be pleased with him).

Hadith 2: The Prophet (peace and blessings be upon him) says:

"Whoever believes in Allah and His Messenger should pay Zakat..."	**Whoever believes in Allah and His Messenger, it is mandatory for him...**

1 Kitab al-Marasil, Chapter: The Fasting Person Visits His Family (20), Maktaba Ilmiya, Lahore, p. 62 2 Kashf al-Astar 'an Zawa'id al-Bazzar, Chapter: Obligation of Zakat, Mu'assasat al-Risala, Beirut, 1/416

फ़तावा रज़विया, खंड १०

अल-औसत और अल-हाकिम की अल-मुस्तदरक में हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत है:

जिसने अपने माल की ज़कात अदा कर दी, बेशक अल्लाह तआला ने उस माल की बुराई को उससे दूर कर दिया। इसे इब्न खुज़ैमा ने अपनी सहीह में, तबरानी ने मोजम औसत में और हाकिम ने मुस्तदरक में हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है।

चौथी हदीस में है कि हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

"अपने माल को ज़कात देकर मज़बूत किलों में सुरक्षित कर लो, और अपने बीमारों का सदक़ा (दान) से करो।" [१] इसे अबू दाऊद ने अपनी मरासील में इमाम हसन बसरी से, और तबरानी, बैहक़ी और अन्य हदीस के विद्वानों ने सहाबा के एक समूह से रिवायत किया है (रज़ियल्लाहु अन्हुम)।

अपने माल को ज़कात देकर मज़बूत किलों में सुरक्षित कर लो, और अपने बीमारों का इलाज खैरात (दान) से करो। इसे अबू दाऊद ने अपनी मरासील में इमाम हसन बसरी से और तबरानी व बैहक़ी और अन्य मुहद्दिसीन ने सहाबा की एक जमाअत (समूह) से नक़ल किया है (रज़ियल्लाहु अन्हुम)।

ऐ अज़ीज़! एक नासमझ गँवार को देख कि अगर उसके पास गेहूँ का बीज नहीं होता, तो वह हज़ार कठिनाइयों के साथ कर्ज़ या पैसों से उसे हासिल करता है और ज़मीन में डाल देता है। उस समय वह अपने हाथों से उसे मिट्टी में मिला देता है, लेकिन उसे उम्मीद होती है कि अगर ईश्वर ने चाहा तो यह नुकसान बहुत बड़े लाभ में बदल जाएगा। क्या तुम्हारे पास उस गँवार के बराबर भी अक्ल नहीं है, या जितना तुम्हें बाहरी कारणों पर भरोसा है, क्या तुम्हें अपने मालिक (जल्ल व अला) के फ़रमान पर उतना भी भरोसा नहीं है कि तुम अपने माल को बढ़ाने और हर दाने को एक पेड़ बनाने के लिए ज़कात का बीज नहीं डालते? वह फ़रमाता है: ज़कात दो, तुम्हारा माल बढ़ेगा। अगर दिल में इस फ़रमान पर यकीन नहीं है, तो यह खुला कुफ़्र है; वरना तुझसे बढ़कर मूर्ख कौन होगा जो दीन और दुनिया के निश्चित लाभ के इतने बड़े व्यापार को छोड़कर दोनों जहानों का नुकसान मोल लेता है?

हदीस १: में है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

"बेशक, तुम्हारे इस्लाम का पूरा होना यह है कि तुम अपने मालों की ज़कात अदा करो।" [२] इसे बज़ार ने अलक़मा से रिवायत किया है।

तुम्हारे इस्लाम का पूरा होना यह है कि तुम अपने मालों की ज़कात अदा करो। इसे बज़ार ने हज़रत अलक़मा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया।

हदीस २: हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

"जो अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाता है, उसे ज़कात अदा करनी चाहिए..."

जो अल्लाह और अल्लाह के रसूल पर ईमान लाता है, उसके लिए लाज़िम है...

१ किताब अल-मरासील, बाब अस-साइम यसीबू अहलाहु (२०), मकतबा इल्मिया लाहौर, पृ. ६२ २ कश्फ़ अल-अस्तार अन ज़वाइद अल-बज़ार, बाब वुजूब अज़-ज़कात, मुअस्ससतुर रिसाला बेरूत १/४१६

فی الاوسط والحاکم فی المستدرك عن جابر بن عبداللہ رضی اللہ تعالی عنہما۔

جس نے اپنے مال کی زکوۃ ادا کردی بیشک اللہ تعالیٰ نے اس مال کا شر اس سے دُور کردیا۔ اسے ابن خزیمہ نے اپنی صحیح میں، طبرانی نے معجم اوسط میں اور حاکم نے مستدرک میں حضرت جابر بن عبداللہ رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا ہے۔

چوتھی حدیث میں ہے حضور صلی اللہ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

حصنوا اموالکم بالزکوۃ وداووا مرضاکم بالصدقۃ 1 رواہ ابوداؤد فی مراسیلہ وغیرھما من جماعۃ من الصحابۃ رضی اللہ تعالیٰ عنہم۔

اپنے مالوں کو مضبوط قلعوں میں کرلو زکوۃ دے کر، اور اپنے بیماروں کا علاج کرو خیرات سے۔ اسے ابوداؤد نے اپنی مراسیل میں امام حسن بصری سے اور طبرانی و بیہقی اور دیگر محدثین نے صحابہ کی ایک جماعت سے نقل کیا ہے رضی اللہ تعالیٰ عنہم۔

اے عزیز! ایک بے عقل گنوار کو دیکھ کہ تخم گندم اگر پاس نہیں ہوتا ہزار دقت قرض دام سے حاصل کرتا اور اسے زمین میں ڈال دیتا ہے، اس وقت تو وہ اپنے ہاتھوں سے خاک میں ملا دیا مگر امید لگی ہے کہ خدا چاہے تو یہ کھونا بہت کچھ پانا ہو جائے گا۔ تجھے اس گنوار کے برابر بھی عقل نہیں، یا جس قدر ظاہری اسباب پر بھروسہ ہے اپنے مالک جل وعلا کے ارشاد پر اتنا اطمینان بھی نہیں کہ اپنے مال بڑھانے اور ایک ایک دانہ ایک ایک پیڑ بنانے کو زکوۃ کا بیج نہیں ڈالتا۔ وہ فرماتا ہے: زکوۃ دو تمہارا مال بڑھے گا۔ اگر دل میں اس فرمان پر یقین نہیں جب تو کھلا

کفر ہے، ورنہ تجھ سے بڑھ کر احمق کون کہ اپنے یقینی نفع دین و دنیا کی ایسی بھاری تجارت چھوڑ کر دونوں جہانوں کا زیاں مول لیتا ہے۔

حدیث ۱: میں ہے رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

ان تمام اسلامکم ان تؤدوا زکوۃ اموالکم۔ 2 رواہ البزار عن علقمۃ۔

تمہارے اسلام کا پورا ہونا یہ ہے کہ اپنے مالوں کی زکوۃ ادا کرو۔ اسے بزار نے حضرت علقمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا۔

حدیث ۲: حضور صلی اللہ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

من کان یؤمن باللہ ورسولہ فلیؤد زکوۃ جو اللہ اور اللہ کے رسول پر ایمان لاتا ہوا سے لازم

1 کتاب المراسیل باب الصائم یصیب اھلہ (۲۰) مکتبہ علمیہ لاہور ص ۶۲ 2 کشف الاستار عن زوائد البزار باب وجوب الزکوۃ مؤسسۃ الرسالہ بیروت ۱/ ۴۱۶

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

- Narrated by Al-Tabarani in Al-Kabir from Ibn Umar (may Allah be pleased with them both): It is mandatory for whoever believes in Allah and His Messenger to pay the Zakat on his wealth. This was narrated by Al-Tabarani in Al-Mu'jam al-Kabir from Ibn Umar (may Allah be pleased with them both).

Hadith 3: The Radiant Messenger (peace and blessings of Allah be upon him) said: Whoever possesses gold or silver and does not pay its Zakat, on the Day of Resurrection, plates of that gold and silver will be made and heated in the fire of Hell. Then his forehead, side, and back will be branded with them. Whenever those plates cool down, they will be heated and branded again on a day that is fifty thousand years long. This will continue until judgment has been passed among all creatures. (Narrated by Al-Bukhari and Muslim from Abu Hurairah, may Allah be pleased with him. - T) The Lord Almighty says:

“And those who hoard gold and silver and spend it not in the way of Allah - give them tidings of a painful punishment. The day when it will be heated in the fire of Hell and seared therewith will be their foreheads, their flanks, and their backs, [it will be said], 'This is what you hoarded for yourselves, so taste what you used to hoard.'” (Quran 9:34-35)

Furthermore, one should not think that this branding is just a superficial mark or that only the fat of the forehead, back, and side will melt away; rather, listen to its description from the Hadith:

Hadith 4: Our leader Abu Dharr (may Allah be pleased with him) said: A hot stone of Hell will be placed on their heads and breasts such that it will break through the chest and come out from the shoulder, and it will be placed on the shoulder bone such that it will break the bones and come out from the chest. (Narrated by Al-Bukhari and Muslim)

---

1 Al-Mu'jam al-Kabir, Hadith 13561, from Abdullah ibn Umar, Maktabah Faysaliyyah, Beirut, 12/224. 2 Sahih Muslim, Chapter: The sin of the one who refuses to pay Zakat, Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 1/318. 3 Al-Quran 9/34. 4 Sahih Bukhari, Book of Zakat, Chapter: What is paid as Zakat is not a hoard, Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 1/189.

फतावा रज़विया, जिल्द दहुम

- अल-तबरानी ने अल-कबीर में इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है: जो अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाता है, उसके लिए लाज़िम है कि अपने माल की ज़कात अदा करे। इसे तबरानी ने मुअजम कबीर में हज़रत इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है।

हदीस 3: हुज़ूर पुर नूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: जिसके पास सोना या चांदी हो और उसकी ज़कात न दे, क़यामत के दिन उस ज़र-ओ-सीम (सोने-चांदी) की तख्तियां बना कर जहन्नुम की आग में तपाएंगे, फिर उनसे उस शख़्स की पेशानी, करवट और पीठ पर दाग़ देंगे। जब वह तख्तियां ठंडी हो जाएंगी तो फिर उन्हें तपा कर दागेंगे। क़यामत का दिन पचास हज़ार बरस का है, यूँही करते रहेंगे यहाँ तक कि तमाम मख़लूक़ का हिसाब हो चुके। (बुखारी व मुस्लिम ने इसे हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है।) मौला तआला फ़रमाता है:

“और जो लोग जोड़ते हैं सोना-चांदी और उसे ख़ुदा की राह में नहीं उठाते यानी ज़कात अदा नहीं करते, उन्हें बशारत (ख़बर) दे दुःख की मार की। जिस दिन तपाया जाएगा वह सोना-चांदी जहन्नुम की आग से, पस दागी जाएंगी उससे उनकी पेशानियाँ और करवटें और पीठें। यह है जो तुमने अपने लिए जोड़ कर रखा था, अब चक्खो मज़ा इस जोड़ने का।” (क़ुरआन 9:34-35)

फिर इस दाग़ देने को भी न समझे कि कोई छक्का (نشان) लगा दिया जाएगा या पेशानी व पुश्त व पहलू की चर्बी निकल कर बस होगी, बल्कि उसका हाल भी हदीस से सुन लीजिये:

हदीस 4: सय्यदिना अबू ज़र रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया: उनके सर और पिस्तान (सीने) पर वह जहन्नुम का गर्म पत्थर रखेंगे कि सीना तोड़ कर शाना (कंधे) से निकल जाएगा और शाना की हड्डी पर रखेंगे कि हड्डियाँ तोड़ता सीने से निकलेगा। (सही बुखारी व मुस्लिम)

---

1 अल-मुअजम अल-कबीर, हदीस 13561, अब्दुल्लाह इब्न उमर से, मकतबा फ़ैसलिया, बैरूत, 12/224. 2 सहीह मुस्लिम, बाब: ज़कात न देने वाले का गुनाह, क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/318. 3 अल-क़ुरआन 9/34. 4 सहीह बुखारी, किताबुल ज़कात, बाब: जो ज़कात दी गई वह ख़ज़ाना नहीं, क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/189.

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

مالہ- 1رواہ الطبرانی فی الکبیر عن ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما۔ | جو اللہ اور اللہ کے رسول پر ایمان لاتا ہوا سے لازم ہے کہ اپنے مال کی زکوٰۃ ادا کرے۔ اسے طبرانی نے معجم کبیر میں حضرت ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا ہے۔

حدیث ۳: حضور پُر نور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: جس کے پاس سونا یا چاندی ہو اور اس کی زکوٰۃ نہ دے قیامت کے دن اس زرو سیم کی تختیاں بنا کر جہنم کی آگ میں تپائیں گے، پھر ان سے اس شخص کی پیشانی اور کروٹ اور پیٹھ پر داغ دیں گے، جب وہ تختیاں ٹھنڈی ہو جائیں گی پھر انھیں تپا کر داغیں گے قیامت کے دن کہ پچاس ہزار برس کا ہے، یو نہی کرتے رہیں گے، یہاں تک کہ تمام مخلوق کا حساب ہو چکے۔ 2اخرجہ الشیخان عن ابی ھریرۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ (بخاری و مسلم نے اسے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ ت) مولٰی تعالٰی فرماتا ہے:

وَالَّذِیْنَ یَکْنِزُوْنَ الذَّھَبَ وَالْفِضَّۃَ وَلَا یُنْفِقُوْنَھَا فِیْ سَبِیْلِ اللہِ فَبَشِّرْھُمْ بِعَذَابٍ اَلِیْمٍ ۙ یَوْمَ یُحْمٰی عَلَیْھَا فِیْ نَارِ جَھَنَّمَ فَتُکْوٰی بِھَا جِبَاھُھُمْ وَ جُنُوْبُھُمْ وَ ظُھُوْرُھُمْ ھٰذَا مَا کَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِکُمْ فَذُوْقُوْا مَا کُنْتُمْ تَکْنِزُوْنَ 3 | اور جو لوگ جوڑتے ہیں سونا چاندی اور اسے خدا کی راہ میں نہیں اٹھاتے یعنی زکوۃ ادا نہیں کرتے انھیں بشارت دے دُکھ کی مار کی، جس دن تپایا جائے گا وہ سونا چاندی جہنم کی آگ سے، پس داغی جائیں گی اس سے ان کی پیشانیاں اور کروٹیں اور پیٹھیں، یہ ہے جو تم نے اپنے لیے جوڑ کر رکھا تھا اب چکھو مزا اس جوڑنے کا۔

پھر اس داغ دینے کو بھی نہ سمجھے کہ کوئی چھکا لگا دیا جائے گا یا پیشانی و پشت و پہلو کی چربی نکل کر بس ہوگی بلکہ اس کا حال بھی حدیث سے سُن لیجیے:

حدیث ۴: سیدنا ابوذ رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے فرمایا: ان کے سر، پستان پر وہ جہنم کا گرم پتھر رکھیں گے کہ سینہ توڑ کر شانہ سے نکل جائے گا اور شانہ کی ہڈی پر رکھیں گے کہ ہڈیاں توڑتا سینہ سے نکلے گا۔ 4اخرجہ الشیخان

---

1 المعجم الکبیر حدیث ۱۳۵۶۱ عن عبداللہ ابن عمر مکتبہ فیصلیہ بیروت ۲۲۴/۱۲ 2 صحیح مسلم باب اثم مانع الزکوۃ قدیمی کتب خانہ کراچی ۳۱۸/۱ 3 القرآن ۹/ ۳۴ 4 صحیح بخاری کتاب الزکوۃ باب مادی زکوۃ فلیس بکنز قدیمی کتب خانہ کراچی ۱۸۹/۱

Fatawa Razawiyya Volume 10

Narrated from Al-Ahnaf bin Qais (recorded by Imam Bukhari and Muslim from Hadrat Ahnaf bin Qais, may Allah be pleased with him): And he said: I heard the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) say that [the heated metal] will break through the back and come out from the side, and it will break through the back of the neck and come out from the forehead. [1] Narrated by Muslim (recorded by Imam Muslim. t) And along with this, listen to another description as well:

Hadith 5: Hadrat Abdullah bin Mas'ood (may Allah be pleased with him) said: No rupee will be placed upon another, nor will one gold coin be placed upon another, but rather the body of the one who did not pay Zakat will be so enlarged that even if there are millions of pairs [of coins], every single rupee will leave a separate mark. [2] Narrated by Al-Tabarani in Al-Kabir (quoted by Tabarani in Mu'jam Kabir. t) O dear one! Do you consider the command of Allah and His Messenger as mere jest, or do you find it easy to endure these soul-crushing calamities for a period of fifty thousand years? Just try placing one or two heated rupees from this world's fire on your body; then compare this mild heat to that wrathful fire, this single rupee to all the wealth accumulated over a lifetime, this one minute's delay to a disaster lasting thousands of days and years, this light touch to that wrath which will break through bones. May Allah Almighty grant guidance to Muslims, Amen!

Hadith 6: Mustafa (peace and blessings of Allah be upon him) says: He who does not pay the Zakat of his wealth, that wealth on the Day of Resurrection will take the form of a bald venomous snake and will become a collar around his neck. Then the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) recited the confirmation from the Book of Allah, for the Lord Almighty says:

سَيُطَوَّقُوْنَ مَابَخِلُوْا بِهٖ يَوْمَ الْقِيمَةِ ط 3 4	**That which they were stingy with will be made a collar and put around their necks on the Day of Resurrection.**
Narrated by Ibn Majah, Al-Nasa'i, and Ibn Khuzaymah from Ibn Mas'ood, may Allah be pleased with him.	It has been narrated by Ibn Majah, Nasa'i, and Ibn Khuzaymah from Hadrat Abdullah ibn Mas'ood, may Allah be pleased with him. (t)

Hadith 7: The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) says: That snake will chase after him with its mouth open; he will run away. It will be said to

him: "Take your treasure that you kept hidden, for I am independent of it." When he sees that...

---

[1] Sahih Muslim, Chapter on the Sin of Withholding Zakat, Nur Muhammad Asah al-Matabi, Karachi, 1/321. [2] Kashf al-Astar 'an Zawa'id al-Bazzar, Chapter on Those Who Withhold Zakat, Mu'assasatu al-Risalah, Beirut, 1/218; Al-Mu'jam al-Kabir, narrated from Thawban (may Allah be pleased with him), Hadith 1408, Maktabah Faysaliyyah, Beirut, 2/91. [3] Sahih al-Bukhari, Chapter on the Sin of Withholding Zakat, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/188. [4] Majma' al-Zawa'id, referencing Mu'jam al-Awsat, Chapter on the Obligation of Zakat, Dar al-Kitab al-'Arabi, Beirut, 2/62.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (10)

अल-अहनफ़ बिन क़ैस से रिवायत है (इसे इमाम बुखारी और मुस्लिम ने हज़रत अहनफ़ बिन क़ैस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। त) और फ़रमाया: मैंने हुज़ूर नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम को फ़रमाते सुना कि [तपाया हुआ लोहा] पीठ तोड़कर करवट से निकलेगा और गुद्दी (गर्दन का पिछला हिस्सा) तोड़कर माथे से। [1] रवाह मुस्लिम (इसे इमाम मुस्लिम ने रिवायत किया। त) और इसके साथ एक और कैफियत भी सुन लीजिए:

हदीस 5: हज़रत अब्दुल्ला बिन मसऊद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु ने फ़रमाया: कोई रुपया दूसरे रुपये पर नहीं रखा जाएगा और न ही कोई अशर्फ़ी दूसरी अशर्फ़ी से बिछाई जाएगी, बल्कि ज़कात न देने वाले का शरीर इतना बढ़ा दिया जाएगा कि अगर लाखों-करोड़ों जोड़े (सिक्के) भी हों, तो हर रुपया अलग से दाग देगा। [2] रवाह अल-तबरानी फ़िल कबीर (इसे तबरानी ने मुअजम कबीर में नक़्ल किया है। त) ऐ अज़ीज़! क्या तू अल्लाह और रसूल के फ़रमान को यूँ ही हँसी-ठिठोली समझता है या पचास हज़ार बरस की मुद्दत में इन जानलेवा मुसीबतों को झेलना आसान समझता है? ज़रा यहीं की आग में एक-आध रुपया गर्म करके बदन पर रख कर देख, फिर कहाँ ये मामूली गर्मी और कहाँ वो कहर की आग, कहाँ ये एक ही रुपया और कहाँ वो सारी उम्र का जोड़ा हुआ माल, कहाँ ये एक मिनट भर की देरी और कहाँ वो हज़ार दिन बरस की आफ़त, कहाँ ये हल्का सा चिपकना और कहाँ वो हड्डियाँ तोड़कर पार होने वाला गज़ब। अल्लाह तआला मुसलमानों को हिदायत बख्शे, आमीन!

हदीस 6: मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: जो व्यक्ति अपने माल की ज़कात नहीं देगा, वह माल क़यामत के दिन एक गंजे अज़दहे (ज़हरीले साँप) की शक्ल बनेगा और उसके गले में तौक़ (हार) बनकर पड़ेगा। फिर सैय्यद-ए-आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने किताबुल्लाह से इसकी तस्दीक (पुष्टि) पढ़ी कि रब अज़्ज़ व जल्ल फ़रमाता है:

سَيُطَوَّقُوْنَ مَا بَخِلُوْا بِهٖ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ؕ ط 4 3	**जिस चीज़ में वे कंजूसी कर रहे हैं करीब है कि तौक़ बना कर उनके गले में डाल दी जाए क़यामत के दिन।**
रवाह इब्न माजा वल-नसाई व इब्न खुज़ैमा अन इब्न मसऊद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु।	इसे इब्न माजा, नसाई और इब्न खुज़ैमा ने हज़रत अब्दुल्ला इब्न मसऊद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। (त)

हदीस 7: हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: वह अज़दहा मुँह खोलकर उसके पीछे दौड़ेगा, यह भागेगा, उससे फ़रमाया जाएगा: ले अपना वह खज़ाना जो तूने छुपा कर रखा था कि मैं उससे बेपरवाह हूँ। जब वह देखेगा कि...

---

1 सही मुस्लिम, ज़कात न देने के गुनाह का अध्याय, नूर मुहम्मद असद अल-मताबे, कराची, 1/321। 2 कशफ़ अल-अस्तर 'अन ज़वाइद अल-बज़ार, ज़कात रोकने वालों का अध्याय, मुअस्ससतु अल-रिसाला, बेरुत, 1/218; अल-मुअजम अल-कबीर, हज़रत थौबान रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत, हदीस 1408, मकतबा फैसलिया, बेरुत, 2/91। 3 सही अल-बुखारी, ज़कात न देने के गुनाह का अध्याय, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/188। 4 मजमा अल-ज़वाइद, मुअजम अल-औसत के हवाले से, ज़कात की फर्ज़ियत का अध्याय, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरुत, 2/62।

فتاوی رضویہ جلد دہم

عن الاحنف بن قیس (اسے امام بخاری و مسلم نے حضرت احنف بن قیس رضی اللہ تعالی عنہ سے روایت کیا ہے۔ ت) اور فرمایا: میں نے حضور نبی کریم صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کو فرماتے سنا کہ پیٹھ توڑ کر کروٹ سے نکلے گا اور گدی توڑ کر پیشانی سے۔ ۱ رواہ مسلم (اسے امام مسلم نے روایت کیا۔ت) اور اس کے ساتھ اور بھی ایک کیفیت سن رکھئے :

حدیث ۵: حضرت عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالی عنہ نے فرمایا: کوئی روپیہ دوسرے روپے پر نہ رکھا جائے نہ کوئی اشرفی دوسری اشرفی سے بچھو جائے گی بلکہ زکوۃ نہ دینے والے کا جسم اتنا بڑھا دیا جائے گا کہ لاکھوں کروڑوں جوڑے ہوں تو ہر روپیہ جدا داغ دے گا۔ ۲ رواہ الطبرانی فی الکبیر (اسے طبرانی نے معجم کبیر میں نقل کیا ہے۔ ت) اے عزیز ! کیا خدا و رسول کے فرمان کو یونہی ہنسی ٹھٹھا سمجھتا ہے یا پچاس ہزار برس کی مدت میں یہ جانکاہ مصیبتیں جھیلنی سہل جانتا ہے ، ذرا یہیں کی آگ میں ایک آدھ روپیہ گرم کر کے بدن پر رکھ دیکھ، پھر کہاں یہ خفیف گرمی کہاں وہ قہر آگ، کہاں یہ ایک ہی روپیہ کہاں وہ ساری عمر کا جوڑا ہوامال ، کہاں یہ منٹ بھر دیر کہاں وہ ہزار دن برس کی آفت، کہاں یہ ہلکا سا چپکا کہاں وہ ہڈیاں توڑ کر پار ہونے والا غضب ۔ اللہ تعالیٰ مسلمان کو ہدایت بخشے، آمین !

حدیث ۶: مصطفیٰ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں: جو شخص اپنے مال کی زکوٰۃ نہ دے گا وہ مال روز قیامت گنجے اژدہے کی شکل بنے گا اور اس کے گلے میں طوق ہو کر پڑے گا۔ پھر سید عالم صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے کتاب اللہ سے اس کی تصدیق پڑھی کہ رب عز و جل فرماتا ہے:

سَيُطَوَّقُوْنَ مَابَخِلُوْا بِهٖ يَوْمَ الْقِيمَةِ ط 3 4

جس چیز میں بخل کر رہے ہیں قریب ہے کہ طوق بنا کر ان کے گلے میں ڈالی جائے قیامت کے دن۔

رواہ ابن ماجۃ والنسائی و ابن خزیمۃ عن ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ۔

اسے ابن ماجہ، نسائی اور ابن خزیمہ نے حضرت عبداللہ ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے (ت)

حدیث ۷: فرماتے ہیں حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم : وہ اژدہا منہ کھول کر اس کے پیچھے دوڑے گا، یہ بھاگے گا، اس سے فرمایا جائے گا: لے اپنا وہ خزانہ کہ چھپا کر رکھا تھا کہ میں اس سے غنی ہوں۔ جب دیکھے گا کہ

---

1 صحیح مسلم باب اثم مانع الزکوۃ نور محمد اصح المطابع کراچی ۱/ ۳۲۱ 2 کشف الاستار عن زوائد البزار باب فیمن منع الزکوۃ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۱/ ۲۱۸ ، المعجم الکبیر مروی از ثوبان رضی اللہ تعالیٰ عنہ حدیث ۱۴۰۸ مکتبہ فیصلیہ بیروت ۲/ ۹۱ 3 صحیح البخاری باب اثم مانع الزکوۃ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۱۸۸ 4 مجمع الزوائد بحوالہ معجم اوسط باب فرض الزکوۃ دار الکتاب العربی بیروت ۲/ ۶۲

Fatawa Rizvia Volume 10

There is no escape from this serpent; inevitably, he will put his hand in its mouth, and it will chew it just as a camel chews a young twig. 1 - Narrated by Muslim from Jabir (may Allah be pleased with him).

Hadith 8: He (peace and blessings of Allah be upon him) says: When that serpent runs after him, he will ask, "Who are you?" It will reply, "I am your wealth for which Zakat was not paid, which you left behind when you died." When he sees that it is constantly chasing him, he will put his hand in its mouth, and it will chew it; then it will chew his whole body. 2 - Reported by al-Bazzar, al-Tabarani, Ibn Khuzaimah, and Ibn Hibban from Thuban (may Allah be pleased with him).

Hadith 9: He (peace and blessings of Allah be upon him) says: That serpent will take his mouth in its hood and say, "I am your wealth, I am your treasure." 3 - Narrated by al-Bukhari and al-Nasai from Abu Huraira (may Allah be pleased with him).

Hadith 10: He (peace and blessings of Allah be upon him) says: The poor will never suffer the hardship of being hungry and naked except due to the rich. Listen! Allah Almighty will take a severe account from such wealthy people and give them a painful punishment. 4 - Narrated by al-Tabarani from the Commander of the Faithful Ali (may Allah Almighty honor his face).

Hadith 11: Abdullah bin Masood (may Allah be pleased with him) says: The one who does not pay Zakat is cursed upon the blessed tongue of Muhammad, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him). 5 - Narrated by Ibn Khuzaimah, Ahmad, Abu Ya'la, and Ibn Hibban (This...)

---

1 Sahih Muslim, Chapter: Sin of the one who withholds Zakat, Nur Muhammad Asah al-Matabi Karachi, 1/321 2 Kashf al-Astar 'an Zawa'id al-Bazzar, Chapter: Concerning the one who withholds Zakat, Mu'assasat al-Risalah Beirut, 1/218; Al-Mu'jam al-Kabir narrated from Thuban (R.A.), Hadith 1208, Maktabah Faisaliyah Beirut, 2/91 3 Sahih Bukhari, Chapter: Sin of the one who withholds Zakat, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/188 4 Majma al-Zawa'id with reference to Mu'jam Awsat, Chapter: Obligation of Zakat, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, 3/63; Sahih Ibn Khuzaimah, Chapter: Cursing the one who pays charity, Al-Maktab al-Islami Beirut, 4/9 5 Sahih Ibn Khuzaimah, Chapter: Cursing the one who pays charity, Al-Maktab al-Islami Beirut, 4/9; Kanz al-Ummal with reference to Ibn Masood, Hadith 15750, Mu'assasat al-Risalah Beirut, 6/104

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

इस अज़दहे से कहीं निजात नहीं, लाचार होकर वह अपना हाथ उसके मुँह में दे देगा, और वह उसे ऐसे चबाएगा जैसे ऊँट टहनी को चबाता है। 1 - इसे मुस्लिम ने हज़रत जाबिर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत किया है।

हदीस ८: आप (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: जब वह अज़दहा उस पर दौड़ेगा तो वह पूछेगा 'तू कौन है?' वह कहेगा 'मैं तेरा वह बिना-ज़कात वाला माल हूँ जिसे तू छोड़ कर मरा था'। जब वह देखेगा कि वह पीछा किये ही जा रहा है, तो अपना हाथ उसके मुँह में दे देगा, वह उसे चबाएगा, फिर उसका सारा बदन चबा डालेगा। 2 - इसे बज़्ज़ार, तबरानी, इब्ने खुज़ैमा और इब्ने हिब्बान ने हज़रत सौबान (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत किया है।

हदीस ९: आप (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: वह अज़दहा उसका मुँह अपने फन में ले लेगा और कहेगा: 'मैं तेरा माल हूँ, मैं तेरा ख़ज़ाना हूँ।' 3 - बुख़ारी और नसाई ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत किया है।

हदीस १०: आप (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: फ़क़ीर हरगिज़ भूखे और नंगे रहने की तकलीफ़ नहीं उठाएंगे मगर अमीरों के हाथों। सुन लो! ऐसे धनवानों से अल्लाह तआला सख़्त हिसाब लेगा और उन्हें दर्दनाक अज़ाब देगा। 4 - तबरानी ने अमीरुल मोमिनीन अली (कर्रमल्लाहु तआला वज्हहु) से रिवायत किया है।

हदीस ११: अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) फ़रमाते हैं: ज़कात न देने वाला मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) की पाक ज़बान पर मलऊन (शापित) है। 5 - इब्ने खुज़ैमा, अहमद, अबू यअला और इब्ने हिब्बान ने रिवायत किया है। (इसे...)

---

1 सहीह मुस्लिम, बाब: ज़कात रोकने वाले का गुनाह, नूर मुहम्मद असहुत ततबा कराची, 1/321 2 कश्फ़ुल अस्तर अन ज़वाइदिल बज़ार, बाब: ज़कात रोकने वाले के बारे में, मुअस्ससातुर रिसाला बेरूत, 1/218; अल-मुअजम अल-कबीर सौबान (रज़ि.) से वर्णित, हदीस 1208, मकतबा फ़ैसलिया बेरूत, 2/91 3 सहीह बुख़ारी, बाब: ज़कात रोकने वाले का गुनाह, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची, 1/188 4 मजमउज़ ज़वाइद ब-हवाला मुअजम औसत, बाब: ज़कात का फ़र्ज़ होना, दारुल किताब अल-अरबी बेरूत, 3/63; सहीह इब्ने खुज़ैमा, बाब: ज़कात देने वाले पर लानत, अल-मकतब अल-

इस्लामी बेरूत, 4/9 5 सहीह इब्ने खुज़ैमा, बाब: ज़कात देने वाले पर लानत, अल-मकतब अल-इस्लामी बेरूत, 4/9; कंजुल उम्माल ब-हवाला इब्ने मसऊद, हदीस 15750, मुअस्ससातुर रिसाला बेरूत, 6/104

اس اژدہا سے کہیں مفر نہیں، ناچار اپنا ہاتھ اس کے منہ میں دے دے گا، وہ ایسا چبائے گا جیسے نر اونٹ چباتا ہے۔ ۱- رواہ مسلم عن جابر رضی اللہ تعالٰی عنہ (اسے مسلم نے حضرت جابر رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ت)

حدیث ۸: فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: جب وہ اژدہا اس پر دوڑے گا یہ پوچھے گا 'تُو کون ہے؟' کہے گا 'میں تیرا وہ بے زکوٰتی مال ہوں جو چھوڑ مرا تھا' جب یہ دیکھے گا کہ وہ پیچھا کیے ہی جا رہا ہے ہاتھ اس کے منہ میں دے دے گا وہ چبائے گا، پھر اس کا سارا بدن چبا ڈالے گا۔ ۲- اخرجہ البزار والطبرانی وابنا خزیمۃ وحبان عن ثوبان رضی اللہ تعالٰی عنہ (اسے بزار، طبرانی، ابن خزیمہ اور ابن حبان نے حضرت ثوبان رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔ت)

حدیث ۹: فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: وہ اژدہا اس کا منہ اپنے پھن میں لے کر کہے گا: 'میں تیرا مال ہوں میں تیرا خزانہ ہوں۔' ۳- رواہ البخاری والنسائی عن ابی ہریرۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ (اسے بخاری اور نسائی نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ت)

حدیث ۱۰: فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: فقیر ہرگز بھوکے ننگے ہونے کی تکلیف نہ اٹھائیں گے مگر اغنیاء کے ہاتھوں، سُن لو ایسے تونگروں سے اللہ تعالٰی سخت حساب لے گا اور انہیں دردناک عذاب دے گا۔ ۴- رواہ الطبرانی عن امیر المؤمنین علی کرم اللہ تعالٰی وجہہ (اسے طبرانی نے امیر المومنین علی کرم اللہ تعالٰی وجہہ سے روایت کیا۔ت)

حدیث ۱۱: عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ فرماتے ہیں: زکوٰۃ نہ دینے والا ملعون ہے زبانِ پاک محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم پر۔ ۵- رواہ ابن خزیمۃ واحمد وابو یعلی وابن حبان (اسے

---

1 صحیح مسلم باب اثم مانع الزکوۃ نور محمد اصح المطابع کراچی ۳۲۱/۱ 2 کشف الاستار عن زوائد البزار باب فیمن منع الزکوۃ مؤسسۃ الرسالہ بیروت ۱ / ۲۱۸، المعجم الکبیر مروی از ثوبان رضی اللہ تعالیٰ عنہ حدیث ۱۲۰۸ مکتبہ فیصلیہ بیروت ۲ / ۹۱ 3 صحیح البخاری باب اثم مانع الزکوۃ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱۸۸/۱ 4 مجمع الزوائد بحوالہ معجم اوسط باب فرض الزکوۃ دار الکتاب العربی بیروت ۳ / ۶۳، صحیح ابن خزیمہ باب ذلعن لادی الصدقۃ المکتب الاسلامی بیروت ۴ / ۹ 5 صحیح ابن خزیمہ باب ذلعن لادی الصدقۃ المکتب الاسلامی بیروت ۴ / ۹، کنز العمال بحوالہ ن عن ابن مسعود حدیث ۱۵۷۵۰ موسسۃ الرسالہ بیروت ۶ / ۱۰۴

Fatawa Ridawiyyah Volume 10

(Narrated by Ibn Khuzaymah, Ahmad, Abu Ya'la and Ibn Hibban.)

Hadith 12: Mawla Ali (may Allah Almighty ennoble his face) says: The Messenger of Allah (may Allah grant him peace and blessings) declared as accursed on the Day of Resurrection those who consume usury, those who give it to others, those who witness it, those who write its document, and those who do not pay Zakat. 1. Reported by Al-Asbahani.

Hadith 13: He (may Allah grant him peace and blessings) says: On the Day of Resurrection, there is ruin for the wealthy at the hands of the needy. The needy will say: O our Lord! They wrongfully withheld the rights from us that You had made obligatory upon them for us. Allah (Exalted and Majestic) will say: By My Might and My Glory, I will grant you My proximity and keep them far away. 2. Narrated by Al-Tabarani and Abu al-Shaykh from Anas (may Allah be pleased with him).

Hadith 14: The Holy Prophet (may Allah grant him peace and blessings) saw some people who had some rags like loincloths in front and behind them, and they were grazing like cattle on the hot fire of Hell, stones, cactus (Thaqoom), and extremely bitter, burning, foul-smelling grass. He asked Gabriel (peace be upon him): Who are these people? He replied: These are those who do not pay Zakat. Allah has not been unjust to them; Allah is never unjust to His servants. 3. Narrated from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him) by Al-Bazzar.

Hadith 15: Two women came into the presence of the Holy Prophet wearing gold bangles. He (may Allah grant him peace and blessings) asked: Will you pay Zakat for these? They said: No. He said: Do you want Allah to make you wear bangles of fire? They said: No. He said: Then pay Zakat. 4. Narrated by At-Tirmidhi, Ad-Daraqutni, Ahmad, Abu Dawood, and An-Nasa'i from Abdullah bin 'Umar (may Allah be pleased with them).

Hadith 16: A lady was wearing silver rings. He said: Will you pay Zakat for these? She somewhat refused.

---

1. Kanz al-Ummal, with reference to Hab, from Ali, Hadith 8783, Mu'assasatu ar-Risalah Beirut 102/4.
2. Majma' az-Zawa'id, with reference to Al-Mu'jam al-Awsat, Chapter on Obligation of Zakat, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut 22/3.

3. Kashf al-Astar 'an Zawa'id al-Bazzar, Chapter on Mi'raj, Hadith 555, Mu'assasatu ar-Risalah Beirut 38/1.
4. Jami' at-Tirmidhi, Chapter on Zakat of Jewelry, Aftab-e-Alam Press Lahore 81/1.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

(इब्न खुज़ैमा, अहमद, अबू याला और इब्न हिब्बान ने रिवायत किया।)

हदीस 12: मौला अली (कर्रमल्लाहु तआला वज्हहुल करीम) फरमाते हैं: रसूले अल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने सूद (ब्याज) खाने वाले, खिलाने वाले, उस पर गवाही देने वाले, उसका दस्तावेज़ लिखने वाले और ज़कात न देने वाले, इन सबको क़यामत के दिन मलऊन (शापित) बताया है। 1. इसे असबहानी ने रिवायत किया।

हदीस 13: आप (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: क़यामत के दिन अमीरों के लिए मोहताजों के हाथों बर्बादी है। मोहताज अर्ज़ करेंगे: ऐ हमारे रब! उन्होंने हमारे वो हक़ जो तूने हमारे लिए उन पर फ़र्ज़ किए थे, ज़ालिमाना तरीके से नहीं दिए। अल्लाह अज़्व-व-जल्ल फरमाएगा: मुझे मेरी इज़्ज़त और जलाल की क़सम, मैं तुम्हें अपनी नज़दीकी अता करूँगा और उन्हें दूर रखूँगा। 2. इसे तबरानी और अबुश्शैख़ ने हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत किया।

हदीस 14: हुज़ूरे अक़दस (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने कुछ लोग देखे जिनके आगे और पीछे लंगोटियों की तरह कुछ चिथड़े थे और वे जहन्नुम की गर्म आग के पत्थरों, थोहर और सख्त कड़वी बदबूदार जलती हुई घास को चौपायों (जानवरों) की तरह चरते फिरते थे। जिब्रीले अमीन (अलैहिस्सलाम) से पूछा: ये कौन लोग हैं? अर्ज़ किया: ये ज़कात न देने वाले हैं। अल्लाह तआला ने उन पर ज़ुल्म नहीं किया, अल्लाह तआला बंदों पर ज़ुल्म नहीं फरमाता। 3. इसे बज़ार ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत किया।

हदीस 15: दो औरतें हुज़ूर की खिदमत में सोने के कंगन पहने हुए हाज़िर हुईं। हुज़ूरे अक़दस (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: क्या तुम इनकी ज़कात दोगी? अर्ज़ किया: नहीं। फरमाया: क्या तुम ये चाहती हो कि अल्लाह तआला तुम्हें आग के कंगन पहनाए? अर्ज़ किया: नहीं। फरमाया: तो ज़कात दो। 4. इसे तिर्मिज़ी, दारकुतनी, अहमद, अबू दाऊद और नसाई ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) से रिवायत किया।

हदीस 16: एक बीबी (महिला) चाँदी के छल्ले पहने हुए थीं, फरमाया: क्या इनकी ज़कात दोगी? उन्होंने कुछ इंकार सा किया।

---

1. कंज़ुल उम्माल, बहवाला हब, अन अली, हदीस 8783, मुअस्ससतु र-रिसाला बैरूत 102/4.

2. मज्मउज़ ज़वाइद, बहवाला अल-मुअजमुल औसत, बाब फ़रज़े ज़कात, दारुल किताबुल अरबी बैरूत 22/3.
3. कश्फुल अस्तार अन ज़वाइदुल बज़ार, बाब मिअराज, हदीस 555, मुअस्ससतु र-रिसाला बैरूत 38/1.
4. जामिअत तिर्मिज़ी, बाब ज़कातुल हुली, आफ़ताबे आलम प्रेस लाहौर 81/1.

पेज 181/836

ابن خزیمہ ، احمد ، ابو یعلی اور ابن حبان نے روایت کیا۔ت)

حدیث ۱۲ : مولا علی کرم اللہ تعالیٰ وجہہ فرماتے ہیں : رسول اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے سود کھانے والے اور کھلانے والے اور اس پر گواہی کرنے والے اور اس کا کاغذ لکھنے والے، زکوۃ نہ دینے والے ان سب کو قیامت کے دن ملعون بتایا۔ ۱۔ رواہ الاصبہانی (اسے اصبہانی نے روایت کیا۔ت)

حدیث ۱۳ : کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم : قیامت کے دن تونگروں کے لیے محتاجوں کے ہاتھ سے خرابی ہے۔ محتاج عرض کریں گے اے رب ہمارے ! انہوں نے ہمارے وہ حقوق جو تو نے ہمارے لیے ان پر فرض کیے تھے ظالمانہ دے اللہ عزوجل فرمائے گا : مجھے قسم ہے اپنے عزت کی وجلال کی کہ تمھیں اپنا قرب عطا کروں گا اور انھیں دور رکھوں گا۔ ۲۔ رواہ الطبرانی وابو الشیخ عن انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ (اسے طبرانی اور ابوالشیخ نے حضرت انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا۔ت)

حدیث ۱۴ : کہ حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے کچھ لوگ دیکھے جن کے آگے پیچھے غرق لنگوٹیوں کی طرح کچھ چیتھڑے تھے اور جہنم کی گرم آگ پتھر اور تھوہر اور سخت کڑوی جلتی بدبو گھانس چوپایوں کی طرح چرتے پھرتے تھے۔ جبریل امین علیہ الصلوۃ والسلام سے پوچھا : یہ کون لوگ ہیں ؟ عرض کی : یہ زکوۃ نہ دینے والے ہیں اللہ تعالیٰ نے ان پر ظلم نہیں کیا اللہ تعالیٰ بندوں پر ظلم نہیں فرماتا۔ ۳۔ رواہ عن ابی ہریرۃ رضی اللہ تعالیٰ عنہ (اسے بزار نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا۔ت)

حدیث ۱۵ : دو عورتیں خدمت والا میں سونے کے کنگن پہنے ہوئیں حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا : ان کی زکوۃ دو گی ؟ عرض کی ؟ نہ۔ فرمایا : کیا چاہتی ہو کہ اللہ تعالیٰ تمھیں آگ کے کنگن پہنائے ؟ عرض کی : نہ۔ فرمایا : زکوۃ دو۔ ۴۔ رواہ الترمذی والدارقطنی واحمد وابوداؤد والنسائی عن عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنھما (اسے ترمذی، دار قطنی، احمد، ابوداؤد اور نسائی نے حضرت عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا۔ت)

حدیث ۱۶ : ایک بی بی چاندی کے چھلے پہنے تھیں، فرمایا : ان کی زکوۃ دوگی؟ انہوں نے کچھ انکار سا کیا۔

---

1 کنز العمال بحوالہ ھب عن علی حدیث ۸۷۸۳ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۱۰۲/۴ 2 مجمع الزوائد بحوالہ المعجم الاوسط باب فرض الزکوۃ دار الکتاب العربی بیروت ۲۲/۳ 3 کشف الاستار عن زوائد البزار باب منہ فی الاسراء حدیث ۵۵۵ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۳۸/۱ 4 جامع الترمذی باب ما جاء فی زکوۃ الحلی آفتاب عالم پریس لاہور ۸۱/۱

He said: So these alone are sufficient to lead to Hell. Narrated by Abu Dawud and al-Daraqutni from the Mother of the Believers, may Allah the Almighty be pleased with her. (Abu Dawud and al-Daraqutni narrated this from the Mother of the Believers, Hazrat Aisha Siddiqa, may Allah the Almighty be pleased with her. - T)

Hadith 17: That the Noble Presence (the Prophet), may Allah the Almighty's peace and blessings be upon him, says: One who does not pay Zakat will be in Hell on the Day of Judgment. Narrated by al-Tabarani from Anas, may Allah the Almighty be pleased with him. (Al-Tabarani narrated this from Hazrat Anas, may Allah the Almighty be pleased with him. - T)

Hadith 18: The Messenger of Allah, may Allah the Almighty's peace and blessings be upon him, says: Three people will enter Hell first of all; among them is that wealthy person who does not fulfill the right of the Almighty in his wealth. Narrated by Ibn Khuzaymah and Ibn Hibban in their Sahihs from Abu Hurayrah, may Allah the Almighty be pleased with him. (Ibn Khuzaymah and Ibn Hibban narrated this in their respective Sahihs from Hazrat Abu Hurayrah, may Allah the Almighty be pleased with him. - T)

In short, the agonizing calamities of not paying Zakat are not those which can be endured. The non-payer should expect to be caught in those severe punishments for a thousand years. What is the soul of a weak-structured human? If [these punishments] were cast upon mountains, they would become like antimony powder and mix with dust. Then who is a bigger fool than one who spends his wealth on charitable acts for the sake of a false or true reputation, yet leaves the obligatory command of Allah the Almighty and that heavy debt of the Subduing King upon his neck? It is a great deception of Satan that he ruins a person under the guise of virtue; the ignorant one does not even understand, "I am doing a good deed," and does not know that supererogatory acts (Nafl) without obligatory ones (Fardh) are a mere facade of deception. The hope of their acceptance is non-existent, and the punishment for abandoning the obligation remains on the neck. O dear one! The Fardh is like a specific royal debt, and the Nafl is as if a gift and offering. If you do not pay the debt and send useless extra gifts, will they be worthy of acceptance, especially in the court of that Independent Emperor who is beyond the need of all worlds and worldlings? If you do not believe this, then test it even with the false rulers of the world. Suppose a landlord stops paying land revenue but keeps sending

baskets of fruit as gifts; see whether he is designated a government criminal or if his baskets bring some fruit of prosperity! A person should just look into his own collar [self-reflect]. Suppose a fixed amount of sugar mill juice is due from tenants; when the time to pay arrives, they do not give that juice at all, but send mangoes and melons as gifts. Would this person be pleased with those tenants? At the coming [of the time for payment], for the trouble he can inflict upon them for their non-payment, would he refrain from it in exchange for those mangoes and melons...

---

1 Sunan Abi Dawud, Chapter: What constitutes a treasure and Zakat on jewelry, Aftab-e-Alam Press, Lahore 1/218 2 Majma' al-Zawa'id, referencing al-Mu'jam al-Saghir, Chapter: Obligation of Zakat, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut 3/64 3 Sahih Ibn Khuzaymah, Chapter: Mentioning the entry of those who refuse Zakat, etc., al-Maktab al-Islami, Beirut 4/8

फरमाया: तो ये ही जहन्नम में ले जाने को बहुत हैं। 'रवाह अबु दाऊद वद्दार कुतनी अन उमुल मोमिनीन रज़ियल्लाहु तआला अन्हा' (इसे अबू दाऊद और दारकुतनी ने उम्मुल मोमिनीन हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु तआला अन्हा से रिवायत किया। - त)

हदीस १७: कि हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फरमाते हैं: ज़कात न देने वाला क़ियामत के दिन दोज़ख़ में होगा। 'रवाह अत-तबरानी अन अनस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु' (इसे तबरानी ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया। - त)

हदीस १८: फरमाते हैं रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम: दोज़ख़ में सब से पहले तीन शख़्स जाएंगे, उन में एक वो मालदार कि अपने माल में अज़्वजल का हक़ अदा नहीं करता। 'रवाह इब्ने ख़ुज़ैमा व इब्ने हब्बान फ़ी सहीहहुमा अन अबी हुरैरा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु' (इसे इब्ने ख़ुज़ैमा और इब्ने हब्बान ने अपनी-अपनी सहीह में हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया। - त)

ग़रज़ ज़कात न देने की जाँकाह आफ़तें वो नहीं जिनकी ताब आ सके, न देने वाले को हज़ार साल उन सख़्त अज़ाबों में गिरफ़्तारी की उम्मीद रखनी चाहिए कि ज़ईफ़ुल-बनियान इंसान की क्या जान, अगर पहाड़ों पर डाली जाएं सुरमा होकर ख़ाक में मिल जाएं, फिर उस से बढ़कर अह्मक़ कौन कि अपना माल झूठे-सच्चे नाम की ख़ैरात में सर्फ़ करे और अल्लाह अज़्वजल का फ़र्ज़ और उस बादशाह-ए-क़ह्हार का वो भारी क़र्ज़ गर्दन पर रहने दे, शैतान का बड़ा धोखा है कि आदमी को नेकी के परदे में हलाक करता है, नादान समझता ही नहीं, नेक काम कर रहा हूँ, और न जाना कि नफ़्ल बे-फ़र्ज़ निरी धोखे की टट्टी है, इसके क़बूल की उम्मीद तो मफ़क़ूद और इसके तर्क का अज़ाब गर्दन पर मौजूद। ऐ अज़ीज़! फ़र्ज़ ख़ास सुल्तानी क़र्ज़ है और नफ़्ल गोया तोहफ़ा व नज़राना। क़र्ज़ न दीजिये और बालाई बेकार तोहफ़े भेजिये वो क़ाबिल-ए-क़बूल होंगे ख़ुसूसन उस शहंशाह-ए-गनी की बारगाह में जो तमाम जहान व जहानियाँ से बे-नियाज़? यूँ यक़ीन न आए तो दुनिया के झूठे हाकिमों ही को आज़मा ले, कोई ज़मींदार मालगुज़ारी तो बंद कर ले और तोहफ़े में डालियाँ भेजा करे, देखों तो सरकारी मुजरिम ठहरता है या उसकी डालियाँ कुछ बहबूद का फल लाती हैं! ज़रा आदमी अपने ही गिरेबान में मुँह डाले, फ़र्ज़ कीजिये आसामियों से किसी खंडसारी का रस बंधा हुआ है जब देने का वक़्त आए वो रस तो हरगिज़ न दें मगर तोहफ़े में आम ख़रबूज़े भेजें, क्या यह शख़्स उन आसामियों

से राज़ी हो गया आते हुए उसकी ना-दहंदगी पर जो आज़ार उन्हें पहुँचा सकता है इन आम ख़रबूज़ों के बदले उस से बाज़...

---

१ सुनन अबी दाऊद बाब अल-कन्ज़ माहु व ज़कातिल हुली आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर २१८/१ २ मज्मउज़ ज़वाइद बहवाला अल-मुअजम अल-सगीर बाब फ़र्ज़ुज़ ज़कात दारुल किताबुल अरबी बैरुत ६४/३ ३ सहीह इब्ने ख़ुज़ैमा बाब लिज़िक्रि इज़ख़ालि मानिइज़ ज़कात इल्ख़ अल-मक्तबतुल इस्लामी बैरुत ८/४

فرمایا: تو یہ ہی جہنم میں لے جانے کو بہت ہیں۔ رواہ ابو داود والدار قطنی عن ام المؤمنین رضی اللہ تعالٰی عنہا (اسے ابو داؤد اور دار قطنی نے ام المومنین حضرت عائشہ صدیقہ رضی اللہ تعالٰی عنہا سے روایت کیا۔ ت)

حدیث ۱۷: کہ حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: زکوۃ نہ دینے والا قیامت کے دن دوزخ میں ہوگا۔ رواہ الطبرانی عن انس رضی اللہ تعالٰی عنہ (اسے طبرانی نے حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔ ت)

حدیث ۱۸: فرماتے ہیں رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: دوزخ میں سب سے پہلے تین شخص جائیں گے، ان میں ایک وہ تونگر کہ اپنے مال میں عزوجل کا حق ادا نہیں کرتا۔ رواہ ابن خزیمہ وابن حبان فی صحیحہما عن ابی ھریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ (اسے ابن خزیمہ اور ابن حبان نے اپنی اپنی صحیح میں حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔ ت)

غرض زکوۃ نہ دینے کی جانکاہ آفتیں وہ نہیں جن کی تاب آسکے، نہ دینے والے کو ہزار سال ان سخت عذابوں میں گرفتاری کی امید رکھنا چاہئے کہ ضعیف البنیان انسان کی کیا جان، اگر پہاڑوں پر ڈالی جائیں سرمہ ہو کر خاک میں مل جائیں، پھر اس سے بڑھ کر احمق کون کہ اپنا مال جھوٹے سچے نام کی خیرات میں صرف کرے اور اللہ عزوجل کا فرض اور اس بادشاہ قہار کا وہ بھاری قرض گردن پر رہنے دے، شیطان کا بڑا دھوکا ہے کہ آدمی کو نیکی کے پردے میں ہلاک کرتا ہے، نادان سمجھتا ہی نہیں، نیک کام کر رہا ہوں، اور نہ جانا کہ نفل بے فرض نرے دھوکے کی ٹٹی ہے، اس کے قبول کی امید تو مفقود اور اس کے ترک کا عذاب گردن پر موجود۔ اے عزیز!

فرض خاص سلطانی قرض ہے اور نفل گویا تحفہ و نذرانہ۔ قرض نہ دیجئے اور بالائی بیکار تحفے بھیجئے وہ قابل قبول ہوں گے خصوصاً اس شہنشاہ غنی کی بارگاہ میں جو تمام جہان و جہانیاں سے بے نیاز؟ یوں یقین نہ آئے تو دنیا کے جھوٹے حاکموں ہی کو آزمالے، کوئی زمین دار مال گزاری تو بند کرلے اور تحفے میں ڈالیاں بھیجا کرے، دیکھو تو سرکاری مجرم ٹھہرتا ہے یا اس کی ڈالیاں کچھ بہبود کا پھل لاتی ہیں! ذرا آدمی اپنے ہی گریبان میں منہ ڈالے، فرض کیجئے آسامیوں سے کسی کھنڈ ساری کا رس بندھا ہوا ہے جب دینے کا وقت آئے وہ رس تو ہر گز نہ دیں مگر تحفے میں آم خربوزے بھیجیں، کیا یہ شخص ان آسامیوں سے راضی ہو گیا آتے ہوئے اس کی ناد ہندگی پر جو آزار انھیں پہنچا سکتا ہے ان آم خربوزے کے بدلے اس سے باز

---

1 سنن ابی داؤد باب الکنز ماھو وزکوۃ الحلی آفتاب عالم پریس لاہور ۲۱۸/۱ 2 مجمع الزوائد بحوالہ المعجم الصغیر باب فرض الزکوۃ دار الکتاب العربی بیروت ۶۴/۳ 3 صحیح ابن خزیمہ باب لذکر اذخال مانع الزکوۃ الخ المکتب الاسلامی بیروت ۸/۴

Fatawa Razawiyya, Volume 10.

SubhanAllah! When this is the situation regarding the demand for a small piece of khand (sugar), then what can be said about the debt of the King of Kings, the Wisest of Judges (Allah) Jalla wa 'Ala! Naturally, Muhammad bin al-Mubarak bin al-Sabah in his 'Juz Imla', 'Uthman bin Abi Shaybah in his 'Sunan', Abu Nu'aym in 'Hilyat al-Awliya', Hannad in 'Fawa'id', and Ibn Jarir in 'Tahdhib al-Athar' narrated from Abdur Rahman bin Sabit, Zaid, and Zubayd, the sons of Harith, and Mujahid:

[Table with two columns] (Left Column - Arabic Text): لما حضر ابابکرن الموتُ دعا عمر فقال اتق اللہ یا عمر واعلم ان له عملا بالنهار لا یقبله باللیل وعملا باللیل لا یقبله بالنهار واعلم انه لایقبل نافلة حتی تؤدی الفریضة الحدیث۔ ذکره العلامة ابراهیم بن عبدالله الیمنی المدنی الشافعی فی الباب الثالث عشر من کتاب "القول الصواب فی فضل عمر بن الخطاب" وفی الباب التاسع عشر من کتاب "التحقیق فی فضل الصدیق" وهو اول کتب کتابه "الاکتفا فی فضل الاربعة الخلفاء ورواه الامام الجلیل الجلال السیوطی رحمه اللہ تعالٰی فی الجامع الکبیر فقال عن عبدالرحمن بن سابط و زید و زبید بن الحارث و مجاہد قالو الما حضر الخ

(Right Column - Urdu Translation): That is, when the time of death approached the Caliph of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), Sayyiduna Siddiq al-Akbar (may Allah be pleased with him), he called the Commander of the Faithful, Farooq al-A'zam (may Allah be pleased with him), and said: O Umar! Fear Allah and know that Allah has some deeds for the day which, if you do them at night, He will not accept; and some deeds for the night which, if you do them during the day, they will not be accepted. And be warned that no supererogatory (nafl) act is accepted until the obligatory (fard) act is performed. Al-Hadith (This was mentioned by Allama Ibrahim bin Abdullah al-Yamani al-Madani al-Shafi'i in Chapter 13 of the book 'al-Qawl al-Sawab fi Fadl Umar bin al-Khattab' and in Chapter 19 of the book 'al-Tahqiq fi Fadl al-Siddiq'. This is the first book he wrote himself, titled 'al-Iktifa' fi Fadl al-Arba'at al-Khulafa'. Imam Jalil Jalaluddin al-Suyuti (may Allah have mercy on him) also narrated it in 'al-Jami' al-Kabir' from Abdur Rahman bin Sabit, Zaid, and Zubayd bin al-Harith, and Mujahid, stating that when the time of death approached...)

The enlightened presence, Sayyiduna Ghous-e-Azam, our noble master Hazrat Sheikh Muhiyuddin Abu Muhammad Abdul Qadir Jilani (may Allah be pleased with him), in his blessed book 'Futuh al-Ghaib Sharif', has given such heart-wrenching examples

for a person who leaves the obligatory (fard) and performs the supererogatory (nafl). He says: The proverb for such a person is like someone whom a king...

1. Hilyat al-Awliya, Mention of the Muhajireen, Number Abu Bakr as-Siddiq, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut 1 / 36.
2. Al-Masanid wal-Marasil from al-Jami' al-Kabir, Hadith 189m, Chain of Abu Bakr as-Siddiq, Dar al-Fikr Beirut 13/53.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10.

सुभान अल्लाह! जब एक खंड (चीनी) के टुकड़े की मांग का यह हाल है, तो राजाओं के राजा, सबसे बुद्धिमान न्यायाधीश (अल्लाह) जल्ल व अला के ऋण के बारे में क्या कहा जा सकता है! निःसंदेह, मुहम्मद बिन अल-मुबारक बिन अल-सबाह ने अपने 'जुज़ इमला' में, उस्मान बिन अबी शयबा ने अपनी 'सुनन' में, अबू नुएम ने 'हिल्यत अल-औलिया' में, हन्नाद ने 'फ़वाइद' में और इब्न जरीर ने 'तहरीब अल-आथार' में अब्दुर रहमान बिन साबित, ज़ैद और जुबैद (हारिस के बेटों) और मुजाहिद से रिवायत की है:

[दो स्तंभों वाली तालिका] (बायां स्तंभ - अरबी पाठ): لما حضر ابابكرن الموتُ دعا عمر فقال اتق اللہ یا عمر واعلم ان له عملا بالنهار لا یقبله بالليل وعملا بالليل لا یقبله بالنهار واعلم انه لایقبل نافلة حتی تؤدی الفریضة الحدیث۔ ذکره العلامة ابراهیم بن عبدالله الیمنی المدنی الشافعی فی الباب الثالث عشر من کتاب "القول الصواب فی فضل عمر بن الخطاب" وفی الباب التاسع عشر من کتاب "التحقیق فی فضل الصدیق" وهو اول کتب کتابه "الاکتفا فی فضل الاربعة الخلفاء" ورواه الامام الجلیل الجلال السیوطی رحمه اللہ تعالٰی فی الجامع الکبیر فقال عن عبدالرحمن بن سابط و زید و زبید بن الحارث و مجاہد قالو الما حضر الخ

(दायां स्तंभ - उर्दू अनुवाद): यानी जब रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के खलीफा सैयदना सिद्दीक अकबर (रज़ियल्लाहु अन्हु) की मृत्यु का समय आया, तो उन्होंने अमीरुल मोमिनीन फारूक-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) को बुलाया और फरमाया: ऐ उमर! अल्लाह से डरो और जान लो कि अल्लाह के कुछ काम दिन के होते हैं, जिन्हें यदि तुम रात में करोगे तो वह स्वीकार नहीं करेगा; और कुछ काम रात के होते हैं, जिन्हें यदि तुम दिन में करोगे तो वे स्वीकार नहीं होंगे। और सावधान रहो कि कोई भी नफ्ल (स्वैच्छिक कार्य) तब तक स्वीकार नहीं किया जाता जब तक कि फर्ज़ (अनिवार्य कार्य) पूरा न कर लिया जाए। अल-हदीस (इसका उल्लेख अल्लामा इब्राहिम बिन अब्दुल्ला अल-यमनी अल-मदनी अल-शफ़ई ने पुस्तक 'अल-कौल अल-सवाब फ़ी फ़ज़ल उमर बिन अल-खत्ताब' के अध्याय 13 में और पुस्तक 'अल-तहक़ीक़ फ़ी फ़ज़ल अल-सिद्दीक' के अध्याय 19 में किया है। यह पहली पुस्तक है जो उन्होंने स्वयं लिखी है, जिसका शीर्षक है 'अल-इक्तिफ़ा फ़ी फ़ज़ल अल-अरबअत अल-खुलफ़ा'। इमाम जलील जलालुद्दीन सुयूती (रहमतुल्लाह अलैहि) ने 'अल-जामी अल-

कबीर' में अब्दुर रहमान बिन साबित, ज़ैद और ज़ुबैद बिन अल-हारिस और मुजाहिद से रिवायत किया है कि जब मृत्यु का समय आया...)

नूरानी व्यक्तित्व, सैयदना गौस-ए-आज़म, हमारे उदार स्वामी हज़रत शेख मुहियुद्दीन अबू मुहम्मद अब्दुल क़ादिर जिलानी (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने अपनी धन्य पुस्तक 'फ़ुतुह अल-ग़ैब शरीफ़' में उस व्यक्ति के लिए कैसी हृदयविदारक मिसालें दी हैं जो फर्ज़ छोड़कर नफ्ल अदा करता है। वह फरमाते हैं: ऐसे व्यक्ति की कहावत उस व्यक्ति की तरह है जिसे एक राजा...

1. हिल्यत अल-औलिया, मुहाजिरों का उल्लेख, नंबर अबू बक्र अस-सिद्दीक, दार अल-किताब अल-अरबी बेरुत 1 / 36.
2. अल-मसानिद वल-मरासिल अल-जामी अल-कबीर से, हदीस 189m, अबू बक्र अस-सिद्दीक की सनद, दार अल-फ़िक्र बेरुत 13/53.

पृष्ठ 183 का 836

آئے گا۔ سبحان اللہ ! جب ایک کھنڈ ساری کے مطالبہ کا یہ حال ہے تو ملک الملوک احکم الحاکمین جل وعلا کے قرض کا کیا پوچھنا! لاجرم محمد بن المبارک بن الصباح اپنے جزء املاء اور عثمان بن ابی شیبہ اپنی سنن اور ابونعیم حلیۃ الاولیاء اور ھناد فوائد اور ابن جریر تہذیب الآثار میں عبدالرحمن بن سابط وزید وزبید پسران حارث و مجاہد سے راوی:

لما حضر ابابکرن الموتُ دعا عمر فقال اتق اللہ یا عمر واعلم ان لہ عملا بالنہار لا یقبلہ باللیل وعملا باللیل لا یقبلہ بالنہار واعلم انہ لایقبل نافلۃ حتی تؤدی الفریضۃ الحدیث۔ ذکرہ العلامۃ ابراھیم بن عبداللہ الیمنی المدنی الشافعی فی الباب الثالث عشر من کتاب "القول الصواب فی فضل عمر بن الخطاب" وفی الباب التاسع عشر من کتاب "التحقیق فی فضل الصدیق" وھو اول کتب کتابہ "الاکتفا فی فضل الاربعۃ الخلفاء" ورواہ الامام الجلیل الجلال السیوطی رحمہ اللہ تعالٰی فی الجامع الکبیر فقال عن عبدالرحمن بن سابط و زید و زبید بن الحارث و مجاہد قالو الما حضر الخ

یعنی جب خلیفہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سیدنا صدیق اکبر رضی اللہ تعالٰی عنہ کی نزع کا وقت ہوا امیر المومنین فاروق اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ کو بلا کر فرمایا: اے عمر! اللہ سے ڈرنا اور جان لو کہ اللہ کے کچھ کام دن میں ہیں کہ انھیں رات میں کرو تو قبول نہ فرمائے گا اور کچھ کام رات میں کہ انھیں دن میں کرو تو مقبول نہ ہوں گے، اور خبردار رہو کہ کوئی نفل قبول نہیں ہوتا جب تک فرض ادا نہ کر لیا جائے الحدیث (اسے علامہ ابراہیم بن عبد اللہ الیمنی المدنی الشافعی نے القول الصواب فی فضل عمر بن الخطاب کے باب نمبر ۱۳ میں اور کتاب التحقیق فی فضل الصدیق کے باب نمبر ۱۹ میں ذکر کیا ہے، یہ پہلی کتاب ہے، جو انہوں نے خود لکھی ہے جس کا نام "الا کتفاء فی فضل الاربعۃ الخلفاء" ہے اسے امام جلیل جلال الدین سیوطی رحمہ اللہ تعالٰی نے

جامع الکبیر میں عبدالرحمن بن سابط اور زید و زبید بن الحارث اور مجاہد سے روایت کیا کہ جب نزع کا وقت آیا ت)

حضور پُر نور سیدنا غوث اعظم مولائے اکرم حضرت شیخ محی الملۃ والدین ابو محمد عبدالقادر جیلانی رضی اللہ تعالٰی عنہ نے اپنی کتاب مستطاب فتوح الغیب شریف میں کیا کیا جگر شگاف مثالیں ایسے شخص کے لیے ارشاد فرمائی ہیں جو فرض چھوڑ کر نفل بجالائے۔ فرماتے ہیں: اس کی کہاوت ایسی ہے جیسے کسی شخص کو بادشاہ

1 حلیۃ الاولیاء ذکر المہاجرین نمبر ابوبکر الصدیق دار الکتاب العربی بیروت ۱ / ۳۶ 2 المسانید والمراسیل من الجامع الکبیر حدیث ۱۸۹م سند ابوبکر الصدیق دار الفکر بیروت ۵۳/۱۳

Fatawa Rizvia Volume 10

...called him for his own service, but he did not present himself there and remained present in the service of his slave. Then, an example was quoted from the Commander of the Faithful, the Master of Muslims, our Master Mawla Ali Murtaza (may Allah honor his face), where he said: The condition of such a person is like that of a pregnant woman who, when the days of childbirth draw near, suffers a miscarriage; now she is neither pregnant nor a mother. That is, if a miscarriage occurs at full term, the entire effort was made, but the result is nothing. Had there been a child, the fruit itself would be present; if the pregnancy remained, there would be hope for the future. Now there is no pregnancy, no child, no hope, no fruit, yet she suffered the same pain as one who gives birth. Similarly, for the person giving supererogatory charity, the money is spent, but since the obligatory (Fard) duty was abandoned, this supererogatory act was also not accepted; thus, the expense occurred, but nothing was gained. In the same blessed book, Mawla (Ali) (may Allah be pleased with him) has said:

If one occupies oneself with Sunnah and Nafl (supererogatory acts) before the Fara'id (obligatory acts), they will not be accepted from him, and he will be humiliated. 1	That is, if one abandons the obligatory acts and occupies oneself with Sunnah and Nafl, they will not be accepted and he will be disgraced.

Likewise, Sheikh Muhaqqiq Maulana Abdul Haq Muhaddith Dehlavi (may his secret be sanctified) said in its commentary:

To abandon what is necessary and essential and to focus on what is not essential is far from the benefit of intellect and wisdom; because for a wise person, averting harm is more important than gaining benefit; rather, in this case, the benefit is negated. 2	To abandon a necessary and essential thing and to focus on what is not essential is far from the benefit of intellect and wisdom, because for a wise person, averting harm is more important than attaining benefit; rather, in this case, benefit is negated. (T)

Hadrat Sheikh-ush-Shuyukh Imam Shihab al-Millat wad-Din Suhrawardi (may his secret be sanctified) narrates in the thirty-eighth chapter of 'Awarif al-Ma'arif from Hadrat Khawas (may Allah be pleased with him):

We have received word that Allah (Exalted and Majestic) does not accept any supererogatory act (Nafl) until the obligatory act (Fard) is performed. Allah (the Almighty) says to such people: Your proverb is like that of a wicked servant who presents a gift before paying off his debt. 3	News has reached us that Allah (Exalted and Majestic) does not accept any supererogatory act until the obligatory act is fulfilled. Allah (the Almighty) says to such people: Your example is like a bad servant who presents a gift before repaying a debt.

It is mentioned in the Hadith itself: The radiant Presence, the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) says:

1 Futuh al-Ghayb with commentary by Abdul Haq al-Dahlawi, Discourse 48, Munshi Naval Kishore, Lucknow, p. 274. 2 Futuh al-Ghayb with commentary by Abdul Haq al-Dahlawi, Discourse 48, Munshi Naval Kishore, Lucknow, p. 274. 3 Awarif al-Ma'arif, appended to Ihya' al-'Ulum, Chapter 38 regarding the etiquette of prayer, etc., Al-Mashhad al-Husayni Library and Press, Cairo, p. 168.

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

...अपनी सेवा के लिए बुलाया, वह वहां तो उपस्थित नहीं हुआ और उसके गुलाम की सेवा में मौजूद रहा। फिर अमीरुल मोमिनीन, मुस्लिमों के मौला, हमारे आका मौला अली मुर्तज़ा (करम अल्लाह तआला वज्हहु) से इसकी मिसाल नकल फरमाई कि आप फ़रमाते हैं: ऐसे व्यक्ति का हाल उस औरत की तरह है जिसे गर्भ रहा, जब बच्चा होने के दिन करीब आए तो गर्भपात हो गया; अब वह न गर्भवती है न बच्चे वाली। यानी जब पूरे दिनों पर अगर गर्भपात हो जाए तो मेहनत तो पूरी की और नतीजा कुछ नहीं; अगर बच्चा होता तो फल स्वयं मौजूद होता, अगर गर्भ बाकी रहता तो आगे की उम्मीद थी, अब न गर्भ है न बच्चा, न उम्मीद न फल, और तकलीफ वही सही जो बच्चा पैदा होने वाली को होती है। ऐसे ही नफल खैरात देने वाले के पास से रुपया तो गया, मगर चूंकि फर्ज़ छोड़ा, यह नफल भी कबूल न हुआ, तो खर्च का खर्च हुआ और हासिल कुछ नहीं। इसी मुबारक किताब में मौला (अली) (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने फरमाया है:

"यदि कोई फर्ज़ से पहले सुन्नत और नफल में व्यस्त हो जाए, तो वे उससे स्वीकार नहीं किए जाएंगे और उसे अपमानित किया जाएगा।" 1	अर्थात्, फर्ज़ छोड़कर सुन्नत और नफल में व्यस्त होने पर वे स्वीकार नहीं होंगे और वह अपमानित किया जाएगा।

इसी तरह शेख मोहक्किक मौलाना अब्दुल हक मुहद्दिस देहलवी (कुद्स सिर्रहु) ने इसकी शरह (व्याख्या) में फरमाया कि:

"जो आवश्यक और अनिवार्य है उसे छोड़ना और जो अनिवार्य नहीं है उस पर ध्यान केंद्रित करना अक्ल और समझ के लाभ से दूर है; क्योंकि एक बुद्धिमान व्यक्ति के लिए लाभ प्राप्त करने से अधिक महत्वपूर्ण हानि को रोकना है; बल्कि इस स्थिति में लाभ ही समाप्त हो जाता है।" 2	अनिवार्य और आवश्यक चीज़ का त्याग और जो आवश्यक नहीं है उसका प्रबंध अक्ल और समझ के लाभ से दूर है, क्योंकि बुद्धिमान के नज़दीक लाभ प्राप्ति से हानि को रोकना अधिक महत्वपूर्ण है; बल्कि इस सूरत में लाभ नगण्य हो जाता है। (त)

हज़रत शैख-उश-शुयूख इमाम शिहाब अल-मिल्लत वद-दीन सुहरावर्दी (कुद्स सिर्रहु) अवारिफ शरीफ के अड़तीसवें अध्याय में हज़रत खवास (रज़ियल्लाहु अन्हु) से नकल फ़रमाते हैं:

"हमें यह खबर पहुंची है कि अल्लाह (अज़्ज़ व जल्ल) कोई नफल तब तक स्वीकार नहीं फ़रमाता जब तक फर्ज़ अदा न किया जाए। अल्लाह तआला ऐसे लोगों से फरमाता है: तुम्हारी मिसाल उस बुरे बंदे की तरह है जो कर्ज अदा करने से पहले तोहफा पेश करे।" 3

हमें खबर पहुंची कि अल्लाह (अज़्ज़ व जल्ल) कोई नफल स्वीकार नहीं फरमाता जब तक फर्ज़ अदा न किया जाए, अल्लाह तआला ऐसे लोगों से फ़रमाता है: तुम्हारी कहावत उस बुरे बंदे की तरह है जो कर्ज अदा करने से पहले तोहफा पेश करे।

स्वयं हदीस में है: हुज़ूर पुर नूर सय्यदे आलम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

1 फुतूह अल-गैब मय शरह अब्दुल हक देहलवी, लेख 48, मुंशी नवल किशोर, लखनऊ, पृ. 274। 2 फुतूह अल-गैब मय शरह अब्दुल हक देहलवी, लेख 48, मुंशी नवल किशोर, लखनऊ, पृ. 274। 3 अवारिफ अल-मआरिफ, इह्या अल-उलूम के साथ संलग्न, अध्याय 38 नमाज़ के आदाब के बारे में, आदि, मकतबा व मतबा अल-मशहद अल-हुसैनी, काहिरा, पृ. 168।

पृष्ठ 184/836

اپنی خدمت کے لئے بلائے، یہ وہاں تو حاضر نہ ہوا اور اس کے غلام کی خدمتگاری میں موجود رہا ہے۔ پھر حضرت امیر المومنین مولی المسلمین سیدنا مولٰی علی مرتضٰی کرم اللہ تعالٰی وجہہ سے اس کی مثال نقل فرمائی کہ جناب ارشاد فرماتے ہیں: ایسے شخص کا حال اس عورت کی طرح ہے جسے حمل رہا جب بچہ ہونے کے دن قریب آئے اسقاط ہو گیا اب وہ نہ حاملہ ہے نہ بچہ والی۔ یعنی جب پورے دنوں پر اگر اسقاط ہو تو محنت تو پوری اٹھائی اور نتیجہ خاک نہیں کہ اگر بچہ ہوتا تو ثمرہ خود موجود تھا حمل باقی رہتا تو آگے امید لگی تھی، اب نہ حمل نہ بچہ، نہ اُمید نہ ثمرہ اور تکلیف وہی جھیلی جو بچہ والی کو ہوتی۔ ایسے ہی اس نفل خیرات دینے والے کے پاس روپیہ تو اٹھا مگر جبکہ فرض چھوڑا یہ نفل بھی قبول نہ ہوا تو خرچ کا خرچ ہوا اور حاصل کچھ نہیں۔ اسی کتاب مبارک میں حضور مولٰی رضی اللہ تعالٰی عنہ نے فرمایا ہے کہ:

فأن اشتغل بالسنن والنوافل قبل الفرائض لم یقبل منه واهین۔ 1

یعنی فرض چھوڑ کر سنت و نفل میں مشغول ہوگا یہ قبول نہ ہوں گے اور خوار کیا جائے گا۔

یونہی شیخ محقق مولانا عبدالحق محدث دہلوی قدس سرہ نے اس کی شرح میں فرمایا کہ:

ترک آنچه لازم و ضروری ست واہتمام بآنچه نه ضروری است از فائده عقل وخرد دور است چه دفع ضرراہم ست بر عاقل از جلب نفع بلکہ بحقیقت نفع دریں صورت منتفی است۔ 2

لازم اور ضروری چیز کا ترک اور جو ضروری نہیں اس کا اہتمام عقل و خرد میں فائدہ سے دُور ہے کیونکہ عاقل کے ہاں حصولِ نفع سے دفعِ ضرر اہم ہے بلکہ اس صورت میں نفع منتفی ہے۔ (ت)

حضرت شیخ الشیوخ امام شہاب الملۃ والدین سہروردی قدس سرہ العزیز عوارف شریف کے باب الثامن والثلاثین میں حضرت خواص رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے نقل فرماتے ہیں:

بلغنا ان اللہ لا یقبل نافلۃ حتی یؤدی فریضۃ یقول اللہ تعالی مثلکم کمثل العبد السوء بداء بالھدایۃ قبل قضاء الدین۔ 3

ہمیں خبر پہنچی کہ اللہ عزوجل کوئی نفل قبول نہیں فرماتا یہاں تک کہ فرض ادا کیا جائے، اللہ تعالیٰ ایسے لوگوں سے فرماتا ہے کہاوٹ تمہاری بد بندہ کی مانند ہے جو قرض ادا کرنے سے پہلے تحفہ پیش کرے۔

خود حدیث میں ہے: حضور پُر نور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

1 فتوح الغیب مع شرح عبدالحق الدہلوی المقالۃ الثامنۃ والاربعون منشی نولکشور لکھنؤ ص ۲۷۴ 2 فتوح الغیب مع شرح عبدالحق الدہلوی المقالۃ الثامنۃ والاربعون منشی نولکشور لکھنؤ ص ۲۷۴ 3 عوارف المعارف ملحق باحیاء العلوم باب ۳۸ فی ذکر آداب الصلوۃ الخ مکتبہ ومطبعہ المشہد الحسینی قاہرہ ص ۱۶۸

Fatawa Razawiyya - Volume 10

Allah has made four things obligatory in Islam; if someone performs three of them, they will not benefit him at all until he performs all four: Prayer, Zakat, fasting in Ramadan, and Pilgrimage to the House (Kaaba). (Reported by Imam Ahmad in his Musnad with a good chain from Hazrat Amarah bin Hazm, may Allah be pleased with him. - T)

Our master Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him) says: We were commanded to establish prayer and give Zakat, and whoever does not give Zakat, his prayer is not accepted. (Reported by Al-Tabarani in Al-Mu'jam al-Kabir with a sound chain. - T)

Glory be to Allah! When the prayer, fasting, and pilgrimage of one who does not give Zakat are not accepted, what hope can there be for the worldly deeds called voluntary charity? Rather, it is mentioned in a narration by Asbahani that he says: Whoever establishes prayer and does not give Zakat, he is not a Muslim such that his actions would benefit him.

O Allah! Guide the Muslim, Ameen! In short, whatever charity this person has given to this day, the mosques he built, the villages he endowed (waqf), all these matters have become valid and binding. He cannot take back the charity already given to the poor, nor does he have the right to revoke an endowment once made. He cannot spend the income of that village on paying Zakat or on any other of his own needs, because an endowment, once completed, becomes binding and final, and there is no authority whatsoever to annul it.

In Durr al-Mukhtar, it is stated that according to the two companions (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad), an endowment becomes binding because it enters the ownership of Allah Almighty, so it is not permissible (to revoke it).

1. Musnad Ahmad bin Hanbal, Hadith of Ziyad bin Nu'aym, Dar al-Fikr, Beirut, 4/201, Kanz al-Ummal with reference to Hab, from Amarah bin Hazm, Hadith 33, Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 1/30
2. Majma' al-Zawa'id with reference to Al-Mu'jam al-Kabir, Chapter of Obligation of Zakat, Dar al-Kutub al-Ilmiyah, Beirut, 3/62
3. Al-Targhib wa al-Tarhib with reference to Al-Asbahani, Al-Targhib min Man' al-Zakat, Mustafa al-Babi, Egypt, 1/540

फ़तावा रज़विया - जिल्द दहम

अल्लाह ताला ने इस्लाम में चार चीजें फ़र्ज़ की हैं, जो उनमें से तीन अदा करे वे उसे कुछ काम न देंगी जब तक कि वह चारों पूरी तरह न बजा लाए: नमाज़, ज़कात, रमज़ान के रोज़े और काबा का हज। (इसे इमाम अहमद ने अपनी मुसनद में सनद हसन के साथ हज़रत अमारा बिन हज़म रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। - त)

सैय्यदना अब्दुल्लाह बिन मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु फरमाते हैं: हमें हुक्म दिया गया कि नमाज़ पढ़ें और ज़कात दें और जो ज़कात न दे उसकी नमाज़ कुबूल नहीं। (इसे तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में सही सनद के साथ रिवायत किया है। - त)

सुब्हान अल्लाह! जब ज़कात न देने वाले की नमाज़, रोज़े, हज तक मक़बूल नहीं तो इस नफ़्ल खैरात नाम की कायनात से क्या उम्मीद है? बल्कि उन्हीं से अस्बहानी की रिवायत में आया कि फ़रमाते हैं: जो नमाज़ अदा करे और ज़कात न दे वह मुसलमान नहीं कि उसे उसका अमल काम आए।

इलाही! मुसलमान को हिदायत फरमा आमीन! बिल-जुमला उस शख़्स ने आज तक जिस क़दर खैरात की, मस्जिद बनाई, गाँव वक्फ़ किया, ये सब उमूर सही व लाज़िम तो हो गए कि अब न दी हुई खैरात फ़क़ीर से वापस कर सकता है न किए हुए वक्फ़ को फेर लेने का इख़्तियार रखता है, न उस गाँव की तौफ़ीर (बचत/आय) से ज़कात की अदायगी, ख़्वाह अपने और किसी काम में सर्फ़ कर सकता है कि वक्फ़ बाद-ए-तमामी लाज़िम व हतमी हो जाता है जिसके इबताल (निरस्तीकरण) का हरगिज़ इख़्तियार नहीं रहता।

दुर्रे मुख़्तार में है कि वक्फ़ साहिबैन के नज़दीक अल्लाह ताला की मिल्कियत में चले जाने की वजह से लाज़िम हो जाता है, लिहाज़ा (वापस लेना) जायज़ नहीं।

1. मुसनद अहमद बिन हंबल, हदीस ज़ियाद बिन नुएम, दार अल-फ़िक्र, बेरुत, 4/201, कँजुल उम्माल बहवाला हब अन अमारा बिन हज़म, हदीस 33, मुअस्सतुर रिसाला, बेरुत, 1/30
2. मज्मउज़ ज़वाइद बहवाला अल-मुअजम अल-कबीर, बाब फ़र्ज़-ए-ज़कात, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरुत, 3/62
3. अत-तरग़ीब वत-तरहीब बहवाला अल-अस्बहानी, अत-तरग़ीब मिन मन'इज़ ज़कात, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/540

اربع فرضھن اللہ فی الا سلام فمن جاء بثلث لم یغنین عنہ شیئا حتی یاتی بھن جمیعا الصلوۃ والزکوۃ وصیام رمضان وحج البیت۔ ۱ چار چیزیں اللہ تعالٰی نے اسلام میں فرض کی ہیں جو ان میں سے تین ادا کرے وہ اسے کچھ کام نہ دیں جب تک پوری چاروں نہ بجالائے نماز، زکوۃ، روزہ رمضان، حج کعبہ (اسے امام احمد نے اپنی مسند میں سند حسن کے ساتھ حضرت عمارہ بن حزم رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔ ت)

سید نا عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ فرماتے ہیں: امرنا باقام الصلوۃ وایتاء الزکوۃ ومن لم یزک فلا صلوۃ لہ۔ ۲ رواہ الطبرانی فی الکبیر بسند صحیح۔ ہمیں حکم دیا گیا کہ نماز پڑھیں اور زکوۃ دیں اور جو زکوۃ نہ دے اس کی نماز قبول نہیں (اسے طبرانی نے المعجم الکبیر میں صحیح سند کے ساتھ روایت کیا ہے۔ ت)

سبحان اللہ! جب زکوۃ نہ دینے والے کی نماز، روزے، حج تک مقبول نہیں تو اس نفل خیرات نام کی کائنات سے کیا امید ہے بلکہ انہی سے اصبہانی کی روایت میں آیا کہ فرماتے ہیں: من اقام الصلوۃ ولم یؤت الزکوۃ فلیس بمسلم ینفعہ۔ ۳ جو نماز ادا کرے اور زکوۃ نہ دے وہ مسلمان نہیں کہ اسے اس کا عمل کام آئے۔

الٰہی! مسلمان کو ہدایت فرما آمین! بالجملا اس شخص نے آج تک جس قدر خیرات کی، مسجد بنائی، گاؤں وقف کیا، یہ سب امور صحیح ولازم تو ہو گئے کہ اب نہ دی ہوئی خیرات فقیر سے واپس کر سکتا ہے نہ کئے ہوئے وقف کو پھیر لینے کا اختیار رکھتا ہے، نہ اس گاؤں کی توفیر ادائے زکوۃ،

خواہ اپنے اور کسی کام میں صرف کر سکتا ہے کہ وقف بعد تمامی لازم و حتمی ہو جاتا ہے جس کے ابطال کا ہرگز اختیار نہیں رہتا۔

فی الدر المختار الوقف عند ہما ھو حبسہا علی ملك اللہ تعالی فیلزم فلا یجوز در مختار میں ہے کہ وقف صاحبین کے نزدیک اللہ تعالی کی ملکیت میں چلے جانے کی وجہ سے لازم ہو جاتا ہے

1 مسند احمد بن حنبل حدیث زیاد بن نعیم دار الفکر بیروت ۴ / ۲۰۱ ، کنز العمال بحوالہ ہب عن عمارہ بن حزم حدیث ۳۳ موسسۃ الرسالہ بیروت ۱ / ۳۰ 2 مجمع الزوائد بحوالہ المعجم الکبیر باب فرض الزکوۃ دار الکتاب العربی بیروت ۳ / ۶۲ 3 الترغیب والترھیب بحوالہ اصبہانی الترھیب من منع الزکوۃ مصطفی البابی مصر ۱ / ۵۴۰

Arabic Text: It cannot be invalidated nor inherited from him, and the fatwa is based on this - summarized.

Urdu Text: In Durr al-Mukhtar, it is stated that according to the two companions (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad), the endowment (waqf) becomes binding because it passes into the ownership of Allah Almighty. Therefore, its invalidation is not permissible, nor can anyone inherit it; the fatwa is based on this. (T)

However, despite all this, until one pays the Zakat in full, there is no hope for reward or acceptance for these acts. For a deed being valid is one thing, and it being rewarded and accepted in the Divine Presence is another. For example, if someone prays for show, the prayer is valid in the sense that the obligation is discharged, but it will neither be accepted nor will they receive a reward; rather, they will become a sinner. This is the case with such a person. O dear one! Now the cursed Satan, who is man's clear enemy, in order to completely destroy you and cut off even this small fear and intention of charity that remains—which benefits the poor—will suggest such a thought: 'If the charity is not accepted, what is the point of doing it? Better to stop this as well and fully serve Satan.' But Allah (the Mighty and Majestic) desires your well-being and salvation from severe punishment; He will put into your heart that the answer to this Shar'i ruling was not what that enemy of faith taught you, making you completely rebellious and defiant. Instead, you should have worried, so that you would be saved from the King's (Allah's) punishment, and today there would be hope for the acceptance of all this waqf, mosque construction, and charity. Think, is it better for ruined affairs to be mended and for wasted efforts to bear fruit again, or—Allah forbid—is it better to bid farewell even to the remaining outward form of servitude and register your name among the open rebels and notorious mutineers? The righteous strategy is this: repent for not paying Zakat. Immediately pay whatever Zakat has been due upon you until today, with a joyful heart, to obey your Lord's

command and please Him, so that your name may be removed from the list of rebellious slaves in the court of the Self-Sufficient Emperor and written in the register of obedient servants. Then, a bright countenance may appear before the Kind Lord who gave life, limbs, wealth, and bestowed millions of blessings. And let there be glad tidings, good news, and congratulations that by doing so, there will be hope for the acceptance of all the charity given, waqf made, and mosques built so far; because when the crime that made them unacceptable is removed, they too, by the permission of Allah Almighty, will achieve the honor of acceptance. This is the remedy; thereafter, every person has the choice of their own good or evil. If the exact calculation of Zakat cannot be determined due to a long period having passed, then to purify the afterlife, one should assume the largest possible amount that comes to mind as an obligation. If more is paid, it will not be wasted, but rather stored with your Kind Lord for the time of your greatest need.

---

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Waqf, Matba' Mujtabai Delhi, 1/377.

अरबी पाठ: इसे रद्द नहीं किया जा सकता और न ही इसका उत्तराधिकार होता है, और इसी पर फतवा है - संक्षेप में।

उर्दू पाठ: दुर्र-ए-मुख्तार में है कि साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद) के अनुसार वक्फ अल्लाह तआला के स्वामित्व में चले जाने के कारण अनिवार्य (लाज़िम) हो जाता है, इसलिए इसका रद्द करना जायज़ नहीं है, और न ही इसका कोई वारिस हो सकता है, इसी पर फतवा है। (त)

मगर इसके बावजूद जब तक ज़कात पूरी-पूरी अदा न करे, इन कार्यों पर सवाब और कबूलियत की उम्मीद नहीं है, क्योंकि किसी कार्य का सही होना अलग बात है और उस पर सवाब मिलना और दरबार-ए-इलाही में मक़बूल होना अलग बात है। मिसाल के तौर पर, अगर कोई व्यक्ति दिखावे के लिए नमाज़ पढ़े, तो नमाज़ तो सही हो गई और फ़र्ज़ उतर गया, लेकिन वह न तो क़बूल होगी और न ही सवाब मिलेगा, बल्कि वह उल्टा गुनाहगार होगा। यही हाल इस व्यक्ति का है। ऐ अज़ीज़! अब लानती शैतान, जो इंसान का खुला दुश्मन है, बिल्कुल हलाक कर देने और इस थोड़े से डर और नेकी के इरादे को भी काट देने के लिए—जिससे फ़कीरों को तो फ़ायदा है—तुम्हें ऐसा ख्याल दिलाएगा कि जब खैरात क़बूल ही नहीं तो करने से क्या फ़ायदा, चलो इसे भी छोड़ो और शैतान की पूरी बंदगी करो। लेकिन अल्लाह (अज़्वजल) को तुम्हारी भलाई और सख्त अज़ाब से रिहाई मंज़ूर है, वह तुम्हारे दिल में डालेगा कि इस शरीअत के हुक्म का जवाब वह न था जो उस ईमान के दुश्मन ने तुम्हें सिखाया और तुम्हें बिल्कुल बागी और सरकश बना दिया। बल्कि तुम्हें तो फिक्र करनी चाहिए थी, जिससे सुल्तानी अज़ाब से भी निजात मिलती और आज तक के ये वक्फ, मस्जिद और खैरात के भी क़बूल हो जाने की उम्मीद जगती। ज़रा सोचो, वह बात बेहतर है कि बिगड़े हुए काम फिर बन जाएँ और ज़ाया हुई मेहनत फिर फल लाए, या—अल्लाह की पनाह—यह बेहतर है कि नाम को जो बची-कुची बंदगी की सूरत है उसे भी अलविदा कहें और खुले सरकशों और विज्ञापित बागियों में अपना

नाम लिखवा लें? वह नेक तदबीर यही है कि ज़कात न देने से तौबा कीजिए। आज तक जितनी ज़कात आप पर बाकी है, फौरन दिल की खुशी के साथ अपने रब का हुक्म मानने और उसे राज़ी करने के लिए अदा कर दीजिए, ताकि शहंशाह-ए-बेनियाज़ की दरगाह में बागी गुलामों की फेहरिस्त से नाम कटकर फरमाबरदार बंदों के रजिस्टर में दर्ज हो जाए। उस मेहरबान मौला के सामने, जिसने जान अता की, अंग दिए, माल दिया और करोड़ों नेमतें बख्शीं, चेहरा रोशन होने की सूरत नज़र आए। और खुशखबरी हो, बशारत हो कि ऐसा करते ही अब तक जितनी खैरात दी है, वक्फ किया है, मस्जिद बनाई है, उन सब की भी मक़बूलियत की उम्मीद होगी; क्योंकि जिस जुर्म के कारण वे क़ाबिल-ए-क़बूल न थे, जब वह दूर हो गया, तो उन्हें भी अल्लाह तआला के हुक्म से मक़बूलियत का सम्मान हासिल हो गया। इलाज तो यही है, आगे हर व्यक्ति को अपनी भलाई और बुराई का अधिकार है। लंबा समय बीत जाने के कारण अगर ज़कात का सही हिसाब मालूम न हो सके, तो आखिरत सुधारने के लिए जहाँ तक ख्याल आए, बड़ी से बड़ी रकम फर्ज़ कर ले; अगर ज़्यादा भी चली गई तो ज़ाया नहीं होगी, बल्कि तुम्हारे मेहरबान रब के पास तुम्हारी बड़ी ज़रूरत के वक्त के लिए जमा रहेगी।

---

1. दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-वक्फ, मतबअ मुजतबाई दिल्ली, 1/377.

لہ ابطالہ ولا یورث عنہ وعلیہ الفتوی، ملخصاً۔

در مختار میں ہے کہ وقف صاحبین کے نزدیک اللہ تعالٰی کی ملکیت میں چلے جانے کی وجہ سے لازم ہو جاتا ہے لہذا اس کا ابطال جائز نہیں، اور نہ ہی اس کا کوئی وارث ہو سکتا ہے، اسی پر فتوٰی ہے۔ (ت)

مگر بایں ہمہ جب تک زکوٰۃ پوری پوری نہ ادا کرے ان افعال پر امید ثواب و قبول نہیں کہ کسی فعل کا صحیح ہو جانا اور بات ہے اور اس پر ثواب ملنا مقبول بارگاہ ہونا اور بات ہے، مثلاً اگر کوئی شخص دکھاوے کے لیے نماز پڑھے تو نماز صحیح تو ہو گئی فرض اتر گیا، پر نہ قبول ہو گی نہ ثواب پائے گا، بلکہ الٹا گناہگار ہوگا، یہی حال اس شخص کا ہے۔ اے عزیز! اب شیطان لعین کہ انسان کا عدو مبین ہے بالکل ہلاک کر دینے اور یہ ذرا سا ڈر اور جو قصد خیرات کا لگا رہ گیا ہے جس سے فقراء کو تو نفع ہے اسے بھی کاٹ دینے کے لیے یوں فقرہ سجھائے گا کہ کہ جو خیرات قبول نہیں تو کرنے سے کیا فائدہ، چلو اسے بھی دور کرو، اور شیطان کی پوری بندگی بجالاؤ، مگر اللہ عزوجل کو تیری بھلائی اور عذاب شدید سے رہائی منظور ہے، وہ تیرے دل میں ڈالے گا کہ اس حکم شرعی کا جواب یہ نہ تھا جو اس دشمنِ ایمان نے تجھے سکھایا اور رہا سہا بالکل ہی متمرد و سرکش بنایا بلکہ تجھے تو فکر کرنی تھی جس سے باعث عذابِ سلطانی سے

بھی نجات ملتی اور آج تک کہ یہ وقف ومسجد و خیرات بھی سب قبول ہو جانے کی اُمید پڑتی، بھلا غور کرو وہ بات بہتر کہ بگڑتے ہوئے کام پھر بن جائیں، اکارت جاتی محنتیں از سر نو ثمرہ لائیں یا معاذاللہ یہ بہتر کہ رہی سہی نام کو جو صورت بندگی باقی ہے اسے بھی سلام کیجئے اور کھلے ہوئے سرکشوں، اشتہاری باغیوں میں نام لکھالیجئے، وہ نیک تدبیر یہی ہے کہ زکوٰۃ نہ دینے سے توبہ کیجئے، آج تک جتنی زکوٰۃ گردن پر ہے فوراً دل کی خوشی کے ساتھ اپنے رب کا حکم ماننے اور اسے راضی کرنے کو ادا کر دیجئے کہ شہنشاہِ بے نیاز کی درگاہ میں باغی غلاموں کی فہرست سے نام کٹ کر فرماں بردار بندوں کے دفتر میں چہرہ لکھا جائے۔ مہربان مولا جس نے جان عطا کی، اعضا دئے، مال دیا، کروڑوں نعمتیں بخشیں، اس کے حضور منہ اجالا ہونے کی صورت نظر آئے اور مژدہ ہو ، بشارت ہو، نوید ہو، تہنیّت ہو کہ ایسا کرتے ہی اب تک جس قدر خیرات دی ہے وقف کیا ہے، مسجد بنائی ہے، ان سب کی بھی مقبولیت کی اُمید ہو گی کہ جس مجرم کے باعث یہ قابل قبول نہ تھے جب وہ زائل ہو گیا انھیں بھی باذن اللہ تعالی شرفِ قبول حاصل ہو گیا۔ چارہ کار تو یہ ہے آگے ہر شخص اپنی بھلائی بُرائی کا اختیار رکھتا ہے، مدت دراز گزرنے کے باعث اگر زکوٰۃ کا تحقیقی حساب نہ معلوم ہوسکے تو عاقبت پاک کرنے کے لیے بڑی سے بڑی رقم جہاں تک خیال میں آئے فرض کرلے کہ زیادہ جائے گا تو ضائع نہ جائے گا، بلکہ تیرے رب مہربان کے پاس تیری بڑی حاجت کے وقت کے لیے جمع رہے گا

---

1. در مختار کتاب الوقف مطبع مجتبائی دہلی ۳۷۷/۱

He will bestow upon you its complete reward which is beyond your courage and expectation, and if decreased, then the demand of the Almighty King for a thousand rupees is the same as for one paisa. If for this reason, because it is wealth in large quantity and zakat for many years, giving this abundant amount causes pain to the self, then first of all consider this: it is one's own fault; had it been given year after year, why would this bundle have formed? Then look at the kindness of God the Generous, Almighty; He did not order that it should be given only to strangers, rather He kept double reward in giving to one's own: one for charity, one for maintaining family ties. So give to those who are dear from your home, dear to the heart, like brothers, nephews, nieces; giving to them will not be so unpleasant. Just keep this much in mind: that they are not wealthy, nor is their wealthy father alive so that they are minor children, nor is there a relationship of spouse or birth with them, meaning they are not among your offspring, nor are you among theirs. Then if the amount is so abundant that it feels as if the hands are becoming completely empty, then there is no escape without giving. The severe punishments of God for thousands of years are very difficult to bear; these few breaths of the world will pass somehow. However, if this person gives to his relatives with the intention of zakat and gives them possession, then if they, out of compassion and without any coercion, voluntarily return as much as they wish as a gift, then it is entirely beneficial for everyone. For him, the benefit is that he was saved from the punishment of God, the debt and obligation of Allah Almighty was fulfilled, and the wealth also returned after becoming lawful and pure. What remained, remained with his own loved ones. For them, the benefits are that they received wealth in this world, and in the hereafter, they gained reward for showing compassion to their dear Muslim brother and gifting it to him and helping him in paying zakat. Then, if there is complete trust in them, there will be no need to calculate zakat for years; give them the entire wealth as charity and give possession, then they can gift back as much as they want from their side. However much zakat was due on it, all was paid, all purposes were fulfilled, and both parties gained every kind of religious and worldly benefit. May the Lord Almighty grant success by His grace, Ameen Ameen O Lord of the worlds. And Allah Almighty knows best, and His knowledge is most complete.

Problem 73: From Shahr Malukpur, sent by Mr. Syed Muhammad Ali, Deputy Nazir Faridpur, 30 Ramadan-ul-Mubarak 1329 AH. In which month is it better to give zakat, or is it when a full year has passed on jewelry and money?

The Answer: When the year is complete, pay the full amount immediately. Yes, if priority is desired, pay in advance before the year is complete. For this, the blessed month of Ramadan is better, in which the reward for a voluntary (nafl) act is equal to an obligatory (fard) act, and an obligatory act is equal to seventy obligatory acts. And Allah Almighty knows best.

वह उसका पूर्ण प्रतिफल प्रदान करेगा जो तुम्हारे साहस और कल्पना से परे है, और यदि कम किया तो सर्वशक्तिमान बादशाह की माँग वैसी ही है जैसे हज़ार रुपये की वैसे ही एक पैसे की। यदि इस कारण से कि धन प्रचुर मात्रा में है और कई वर्षों की ज़कात है, यह बड़ी राशि देते समय मन को कष्ट पहुँचता है, तो पहले यह सोच लें कि दोष अपना ही है; यदि वर्ष-दर-वर्ष देते रहते तो यह बोझ क्यों बनता? फिर दयालु ईश्वर, सर्वशक्तिमान की कृपा देखें, उन्होंने यह आदेश नहीं दिया कि केवल अजनबियों को ही दें, बल्कि अपनों को देने में दोगुना पुण्य रखा है: एक दान का, एक पारिवारिक संबंध निभाने का। तो जो आपके घर के प्रिय हों, दिल के अज़ीज़ हों जैसे भाई, भतीजे, भांजे, उन्हें दे दीजिये कि उन्हें देना उतना अरुचिकर न होगा। बस इतना ध्यान रखें कि न तो वे धनी हों, न ही उनके धनी पिता जीवित हों कि वे नाबालिग बच्चे हों, न ही उनसे पति-पत्नी या जन्म का संबंध हो, अर्थात न तो वे आपकी संतान में हों और न ही आप उनकी संतान में। फिर यदि राशि इतनी अधिक है कि मानो हाथ बिलकुल खाली हो रहे हों, तो बिना दिए छुटकारा नहीं है। हज़ारों वर्षों तक ईश्वर के उन कठोर दंडों को सहना बहुत कठिन है, दुनिया की ये कुछ साँसें तो जैसे-तैसे गुज़र ही जाएँगी। फिर भी यदि यह व्यक्ति अपने इन रिश्तेदारों को ज़कात की नियत से देकर उन्हें कब्ज़ा दिला दे, फिर वे तरस खाकर बिना किसी दबाव के अपनी खुशी से उपहार के रूप में जितना चाहें वापस कर दें, तो सबके लिए पूर्णतः लाभ है। उसके लिए यह लाभ है कि वह ईश्वर के दंड से बच गया, अल्लाह सर्वशक्तिमान का ऋण और कर्तव्य पूरा हुआ और धन भी हलाल और शुद्ध होकर वापस मिल गया। जो रहा, वह अपने प्रियजनों के पास रहा। उनके लिए लाभ यह है कि उन्हें दुनिया में धन मिला, परलोक में अपने प्रिय मुसलमान भाई पर दया करने और उसे उपहार देने और उसकी ज़कात अदायगी में मदद करने से पुण्य पाया। फिर यदि उन पर पूरा भरोसा हो तो सालों-साल ज़कात का हिसाब लगाने की भी आवश्यकता नहीं रहेगी; अपना पूरा धन दान के रूप में उन्हें देकर कब्ज़ा दिला दें, फिर वे अपनी ओर से जितना चाहें उपहार स्वरूप लौटा दें। जितनी भी ज़कात उस पर थी, सब अदा हो गई, सारे उद्देश्य पूरे हुए और दोनों पक्षों ने हर प्रकार का धार्मिक और सांसारिक लाभ प्राप्त किया। प्रभु सर्वशक्तिमान अपनी कृपा से सुमति प्रदान करें, आमीन आमीन हे संसार के प्रतिपालक। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है और उसका ज्ञान पूर्ण है।

मसला ७३: शहर मलूकपुर से, प्रेषक श्री सैयद मुहम्मद अली साहब, नायब नाज़िर फ़रीदपुर, ३० रमज़ान-उल-मुबारक १३२९ हिजरी। ज़कात किस महीने में देना उत्तम है या यह कि ज़ेवर और रुपये पर जब पूरा साल गुज़र जाए?

उत्तर: जब साल पूरा हो जाए, तो तुरंत पूरा अदा करें। हाँ, यदि प्राथमिकता चाहें तो साल पूरा होने से पहले अग्रिम भुगतान करें। इसके लिए पवित्र रमज़ान का महीना बेहतर है जिसमें नफ़्ल (स्वैच्छिक) का पुण्य फ़र्ज़ (अनिवार्य) के बराबर और फ़र्ज़ का सत्तर फ़र्ज़ों के बराबर होता है। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

पेज १८७ / ८३६

وہ اس کا کامل اجر جو تیرے حوصلہ و کمان سے باہر ہے عطا فرمائے گا، اور کم کیا تو بادشاہ قہار کا مطالبہ جیسا ہزار روپیہ کا ویسا ہی ایک پیسے کا۔ اگر بدیں وجہ کہ مال کثیر اور قرنوں کی زکوۃ ہے یہ رقم وافر دیتے ہوئے نفس کو درد پہنچے گا، تو اول تو یہ ہی خیال کر لیجئے کہ قصور اپنا ہے سال بہ سال دیتے رہتے تو یہ گٹھڑی کیوں بندھ جاتی، پھر خدائے کریم عزوجل، کی مہربانی دیکھئے، اس نے یہ حکم نہ دیا کہ غیروں ہی کو دیجئے بلکہ اپنوں کو دینے میں دُونا ثواب رکھا ہے، ایک تصدّق کا، ایک صلہ رحم کا۔ تو جو اپنے گھر سے پیارے، دل کے عزیز ہوں جیسے بھائی، بھتیجے، بھانجے، انھیں دے دیجئے کہ ان کا دینا چنداں ناگوار نہ ہوگا، بس اتنا لحاظ کر لیجئے کہ نہ وہ غنی ہو نہ غنی باپ زندہ کہ نابالغ بچے، نہ اُن سے علاقہ زوجیت یا ولادت ہو یعنی نہ وہ اپنی اولاد میں نہ آپ ان کی اولاد میں۔ پھر اگر رقم ایسی ہی فراواں ہے کہ گویا ہاتھ بالکل خالی ہوا جاتا ہے تو دئے بغیر تو چھٹکارا نہیں، خدا کے وہ سخت عذاب ہزاروں برس تک جھیلنے بہت دشوار ہیں، دنیا کی یہ چند سانسیں تو جیسے بنے گزر ہی جائیں گی، تاہم اگر چہ یہ شخص اپنے ان عزیزوں کو بہ نیت زکوٰۃ دے کر قبضہ دلائے پھر وہ ترس کھا کر بغیر اس کے جبرواکراہ کے اپنی خوشی سے بطور ہبہ جس قدر چاہیں واپس کر دیں تو سب کے لیے سراسر فائدہ ہے، اس کے لیے یہ کہ خدا کے عذاب سے چھوٹا اللہ تعالیٰ کا قرض وفرض ادا ہوا اور مال بھی حلال و پاکیزہ ہو کر واپس ملا، جو رہا وہ اپنے جگر پاروں کے پاس رہا، ان کے لیے یہ فائدہ ہیں کہ دنیا میں مال ملا عقبے میں اپنے عزیز مسلمان بھائی پر ترس کھانے اور اسے ہبہ کرنے اور اس کے ادائے زکوٰۃ میں مدد دینے سے ثواب پایا، پھر اگر ان پر پورا اطمینان ہو تو زکوٰۃ سالہا سال حساب لگانے کی بھی حاجت نہ رہے گی، اپنا کل مال بطور تصدق انھیں دے کر قبضہ دلادے

پھر وہ جس قدر چاہیں اسے اپنی طرف سے ہبہ کر دیں، کتنی ہی زکوۃ اس پر تھی سب ادا ہو گئی اور سب مطلب بر آئے اور فریقین نے ہر قسم کے دینی و دنیوی نفع پائے، مولیٰ عزوجل اپنے کرم سے توفیق عطا فرمائے آمین آمین یا رب العالمین۔ واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ اتم۔

مسئلہ ۷۳: از شہر ملوک پور مرسلہ جناب سید محمد علی صاحب نائب ناظر فرید پور ۳۰ رمضان المبارک ۱۳۲۹ھ زکوٰۃ کس ماہ میں دینا اولیٰ ہے یا یہ کہ زیور اور روپیہ تو جب پورا سال گزر جائے؟ الجواب: جب سال تمام ہو فوراً فوراً پورا ادا کرے، ہاں اولیت چاہے تو سال تمام ہونے سے پہلے پیشگی ادا کرے، اس کے لیے بہتر ماہِ مبارک رمضان ہے جس میں نفل کا ثواب فرض کے برابر اور فرض کا ستر فرضوں کے برابر۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

Fatawa Razawiyyah, Volume 10

Problem 72: From Banaras, Bibi Raji Mosque adjacent to the hospital, sent by Maulvi Hakim Abdul Ghafoor Sahib, 1312 AH. What do you, O scholars, say? (O respected scholars! What is your guidance) regarding this matter: Zaid practices medicine and has some pills that he generally gives to patients at the rate of 4 pills per Rupee. However, the actual cost of those four pills is four paisas. When a poor person eligible for Zakat comes to the clinic, he gives those 4 aforementioned pills (whose original cost is 4 paisas) and counts them as one Rupee towards the payment of Zakat. In this situation, according to his thought, will one Rupee worth of Zakat be paid, or only one Anna, which is the actual cost? Please explain and be rewarded.

The Answer: Although a person has the choice to sell a product of his profession for a thousand rupees with the buyer's consent, provided there is no lie, fraud, or deception involved; however, in Zakat and other obligatory charities, where something other than the required item is given, it can only be given based on the market value of both sides.

[Table Content] Arabic: It is mentioned in 'Al-Tabyin' that if Zakat is to be paid with something other than its own kind, then by consensus, the value (market price) will be considered. And in 'Al-Tatarkhaniyah', quoting from 'Al-Tuhfah', it says that regarding camels, if a female is required, payment with a male is not permissible except by way of its value. In Imam Sarakhsi's 'Al-Muhit' regarding Sadaqat-ul-Fitr, it is stated that wheat flour and barley flour, as well as their parched grain flour (sattu), are like their respective grains, but bread cannot be given (in kind) except by considering its value, and this is the most correct opinion. All this is in 'Al-Hindiyyah'. Urdu: It is in Tabyin that if Zakat is to be paid with something of a different genus, then by consensus, the value will be considered. And in Tatarkhaniyah, quoting from Tuhfah, it says that in the case of camels, if a female is mandatory, payment with a male is now not permissible except as value. In Imam Sarakhsi's Muhit regarding Sadaqat-ul-Fitr, it says that wheat and barley flour and their sattu are like each other, but bread cannot be given, yes, according to the value, and this is the most correct statement. See full details in Hindiyyah. (T)

And 'value' refers to the worth of the item according to the market rate, not the price agreed upon between the buyer and seller, which is the 'Thaman' (agreed price).

Footnotes: 1 Tabyin al-Haqa'iq, Chapter of Zakat al-Mal, Matba'ah al-Kubra al-Amiriyyah, Bulaq, Egypt, 1 / 278. 2 Fatawa Hindiyyah, referencing Tatarkhaniyah,

Chapter Two on Loans, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1 / 181. 3 Fatawa Hindiyyah, Muhit al-Sarakhsi, Chapter Eight on Sadaqat-ul-Fitr, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1 / 191.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

मसाला 72: बनारस से, अस्पताल के पास बीबी राजी मस्जिद, मौलवी हकीम अब्दुल गफूर साहब द्वारा भेजा गया, 1312 हिजरी। हे विद्वानों, आपका क्या कहना है? (हे सम्मानित विद्वानों! आपका क्या मार्गदर्शन है) इस मामले के बारे में: ज़ैद चिकित्सा का अभ्यास करता है और उसके पास कुछ गोलियाँ हैं जो वह आम तौर पर मरीज़ों को 4 गोलियाँ प्रति रुपये की दर से देता है। हालाँकि, उन चार गोलियों की वास्तविक लागत चार पैसे है। जब ज़कात का पात्र कोई गरीब व्यक्ति क्लिनिक में आता है, तो वह उन 4 उपर्युक्त गोलियों को देता है (जिनकी मूल लागत 4 पैसे है) और उन्हें ज़कात के भुगतान में एक रुपये के रूप में गिनता है। इस स्थिति में, उसके विचार के अनुसार, क्या एक रुपये की ज़कात अदा होगी, या केवल एक आना, जो वास्तविक लागत है? कृपया स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: हालाँकि किसी व्यक्ति को अपनी पसंद की वस्तु खरीदार की सहमति से एक हजार रुपये में बेचने का अधिकार है, बशर्ते कि इसमें कोई झूठ, धोखाधड़ी या धोखेबाजी न हो; हालाँकि, ज़कात और अन्य अनिवार्य दान में, जहाँ आवश्यक वस्तु के स्थान पर कुछ और दिया जाता है, तो वह केवल दोनों पक्षों के बाजार मूल्य के आधार पर ही दिया जा सकता है।

[तालिका विषयवस्तु] अरबी: 'अल-तबीन' में उल्लेख है कि यदि ज़कात अपनी तरह की वस्तु के अलावा किसी और चीज़ से दी जानी है, तो सर्वसम्मति से मूल्य (बाजार मूल्य) पर विचार किया जाएगा। और 'अल-ततारखानिया' में 'अल-तुहफा' के हवाले से कहा गया है कि ऊंटों के मामले में, यदि मादा देना आवश्यक है, तो नर के साथ भुगतान तब तक जायज़ नहीं है जब तक कि उसके मूल्य के अनुसार न हो। इमाम सरखसी की 'अल-मुहीत' में सदक़त-उल-फ़ित्र के बारे में कहा गया है कि गेहूँ का आटा और जौ का आटा, साथ ही उनके सत्तू, उनके संबंधित अनाज के समान हैं, लेकिन रोटी (वस्तु के रूप में) नहीं दी जा सकती सिवाय इसके मूल्य पर विचार किए, और यही सबसे सही राय है। यह सब 'अल-हिंदिया' में है। उर्दू: 'तबीन' में है कि अगर ज़कात किसी चीज़ के गैर-जिन्स से अदा करनी हो, तो सर्वसम्मति से क़ीमत (मूल्य) का एतबार होगा। और 'ततारखानिया' में 'तुहफ़ा' से है कि ऊंटों में अगर मादा लाज़िम है, तो अब नर से अदायगी जायज़ नहीं है मगर बतौरे क़ीमत। इमाम सरखसी की 'मुहीत' के सदक़त-उल-फ़ित्र में है कि गंदुम और जव का आटा और उनका सत्तू एक-दूसरे के मिसल (समान) हैं, लेकिन रोटी नहीं दी जा सकती, हाँ क़ीमत के एतबार से, और यही असहे (सबसे सही) क़ौल है। मुकम्मल तफ़्सील 'हिन्दिया' में मुलाहिज़ा कीजिए। (त)

और 'मूल्य' (क़ीमत) से तात्पर्य बाजार दर के अनुसार वस्तु की कीमत से है, न कि खरीदार और विक्रेता के बीच तय की गई कीमत से, जिसे 'थमन' (तयशुदा कीमत) कहा जाता है।

पादलेख (Footnotes): 1 तबीन अल-हक़ाएक़, ज़कात अल-माल का अध्याय, मतबअ अल-कुबरा अल-अमीरिया, बुलाक, मिस्र, 1/278। 2 फ़तावा हिंदिया, ततारखानिया के हवाले से, ऋण पर दूसरा अध्याय, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/181। 3 फ़तावा हिंदिया, मुहीत अल-सरखसी, सदक़त-उल-फ़ित्र पर आठवाँ अध्याय, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/191।

فتاوی رضویہ، جلد دہم

مسئلہ ۷۲: از بنارس مسجد بی بی راجی متصل شفاخانہ مرسلہ مولوی حکیم عبدالغفور صاحب ۱۳۱۲ھ ماقولکم ایھا العلماء (اے علماء کرام! آپ کا کیا ارشاد ہے) دریں مسئلہ کہ زید پیشہ طبابت کرتا ہے اور کچھ گولیاں اس کے پاس ہیں کہ بحساب فی روپیہ ۴ گولیاں علی العموم بیماروں کو دیتا ہے لیکن لاگت اصل چار گولیوں کے چار پیسے ہے، جب مطب میں کوئی غریب مصرفِ زکوۃ آجاتا ہے تو ۴ گولی مذکور الصدر جس کی قیمت اصلی ۴ پیسے ہے دے کر ایک روپیہ ادائے زکوۃ میں شمار کرتا ہے، اس صورت میں بموجب اس کے خیال کے ایک روپیہ زکوۃ میں سے ادا ہوگا یا ایک آنہ جو لاگت اصلی ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: ہر چند شخص کو اختیار ہے کہ اپنے پیشہ کی چیز برضاے مشتری ہزار روپے کے بیچے جبکہ اس میں کذب و فریب و مغالطہ نہ ہو ، مگر زکوۃ و غیر ہاصدقات واجبہ میں جہاں واجب شئی کی جگہ اس کی غیر کوئی چیز دی جائے تو صرف بلحاظ قیمتِ جانبین ہی دی جاسکتی ہے۔

[جدول کا مواد] عربی: في التبیین لوادی من خلاف جنسه تعتبر القیمة با لا جماع اهـ و في التتار خانیة عن التحفة، الواجب فی الابل الا نوثة حتی لا یجوز الذکور الا بطریق القیمة اهـ وفي محیط الامام السرخسی فی صدقة الفطر ان دقیق الحنطة والشعیر و سویقهما مثلهما و الخبز لا یجوز الا با عتبار القیمة وهو الاصح اهـ الکل في الهندیة۔ اردو: تبیین میں ہے کہ اگر شئی کے غیر جنس سے زکوۃ ادا کرنا ہو تو بالاتفاق قیمت کا اعتبار ہوگا اور تاتارخانیہ میں تحفہ سے ہے کہ اونٹوں میں اگر مؤنث لازم ہے تو اب مذکر سے ادائیگی جائز نہیں مگر بطور قیمت اھ امام سرخسی کی محیط کے صدقۃ الفطر میں ہے کہ گندم و جو کا آٹا اور ان کے ستو ایک دوسرے کی مثل ہیں لیکن روٹی نہیں دی

جاسکتی، ہاں قیمت کے اعتبار سے، اور یہی اصح قول ہے اھ، مکمل تفصیل ہندیہ میں ملاحظہ کیجئے۔ (ت)

اور قیمت وہ کہ نرخ بازار سے جو حیثیت شئی کی ہو، نہ وہ کہ بائع اور مشتری میں ان کی تراضی سے قرار پائے کہ وہ ثمن ہے،

حواشی: 1 تبیین الحقائق باب زکوٰۃ المال مطبعہ کبری امیر یہ بولاق مصر ۱ / ۲۷۸ 2 فتاوی ہندیہ بحوالہ تاتارخانیہ الفصل الثانی فی القروض نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۱۸۱ 3 فتاوی ہندیہ محیط السرخسی الباب الثامن فی صدقۃ الفطر نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۱۹۱

Fatawa Razawiyya Volume 10

In Radd al-Muhtar: "The difference between Thaman (agreed price) and Qeemat (market value) is that Thaman is what the contracting parties agree upon, whether it is more or less than the value, while Qeemat is the standard worth of a thing, acting as an equivalent without increase or decrease." [1] It is stated in Radd al-Muhtar that there is a difference between Thaman and Qeemat. What the contracting parties agree upon will be Thaman, whether it is more or less than the value of the object. Price (Qeemat) is the name for the standard compensation of an object without any increase or decrease. (T)

So, those tablets will be adjusted in Zakat according to their market value. What remains is a debt to Allah which is immediately payable. Yes, if one wants to count more, the way is not to gift the tablets to the Zakat recipient, but to sell them to him. Now, in a sale, one has the choice to fix whatever Thaman they agree upon, no matter how much more than the item's worth it is, provided the buyer is sane and an adult. And explain to him that if he doesn't have the price, don't worry about it; I will give it to you from myself and clear you. Now, for example, sell 4 tablets for one rupee to him, he buys them, and one rupee becomes a debt on him. Then give him one rupee with the intention of Zakat and have him take possession, then take back your rupee in exchange. If he makes an excuse, it can be taken by force because he is indebted for that much. Thus, he will get 4 tablets for free and one rupee will be paid from his Zakat.

In al-Durr al-Mukhtar: "The legal stratagem for permissibility is that a person gives Zakat to his poor debtor, then takes it back as his debt. Even if the debtor refuses, he may stretch out his hand and take it because he has attained the same type as his right." [2] And Allah Almighty knows best. It is in Durr-e-Mukhtar that the legal stratagem for permissibility is that a person gives Zakat to his poor debtor and then collects the debt from him. If the debtor does not give it, then snatch it because he is capable of [taking] the same type as his right. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 775 to 77: From Mumbai No. 9 Hotel Ice Cream, queried by Sheikh Imam Ali Sahib Rizvi, 15 Muharram 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: (1) A person took some land on lease from a landlord. He deposited ten thousand rupees with him. No lease term was fixed. It was decided that whenever the money is returned, the land will be taken back from the lease. And that person gave permission to profit from the land. What is the ruling on Zakat for this money

and in what way should its Zakat be paid? (2) If a person has ten bighas of agricultural land and in five bighas of land grain [is grown] by rain...

[1] Radd al-Muhtar, Chapter on Khayar al-Shart, Mustafa al-Babi Egypt 2/57. [2] Dur al-Mukhtar, Book of Zakat, Mujtabai Press Delhi 1/130.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

रद-अल-मुह्तार में है: "थमन (तय मूल्य) और क़ीमत (बाज़ार मूल्य) के बीच अंतर यह है कि थमन वह है जिस पर अनुबंध करने वाले पक्ष सहमत होते हैं, चाहे वह मूल्य से अधिक हो या कम, जबकि क़ीमत किसी वस्तु का मानक मूल्य है, जो बिना किसी वृद्धि या कमी के उसके बराबर होता है।" [1] रद-अल-मुह्तार में है कि थमन और क़ीमत में फ़र्क़ है, जिस पर अनुबंध करने वाले (मुताअक़िदान) राज़ी हो जाएँ वह थमन होगा चाहे वह चीज़ की क़ीमत से ज़्यादा हो या कम। बिना किसी कमी-बेशी के चीज़ के मानक मुआवज़े का नाम क़ीमत है। (त)

तो उन गोलियों की बाज़ार दर के हिसाब से जितनी मालियत होगी, उतनी ही ज़कात में काटी जाएगी। उससे ज़्यादा अल्लाह का कर्ज़ रहा जो तुरंत देय (वाजिब-उल-अदा) है। हाँ, अगर ज़्यादा जोड़ना चाहें तो उसका रास्ता यह नहीं है, बल्कि यूँ है कि ज़कात के हक़दार को गोलियाँ तोहफ़े(हिबा) में न दे बल्कि उसके हाथ बेच दे। अब बेचने में अख्तियार है कि जो थमन चाहे उसकी रज़ामंदी से तय कर ले, चाहे चीज़ की हैसियत से कितना ही ज़्यादा हो, बशर्ते कि खरीदार अक़्लमंद और बालिग़ हो। और उसे समझा दे कि अगर तेरे पास क़ीमत नहीं है तो इसकी फ़िक्र न कर, मैं अपनी तरफ़ से तुझे देकर तुझे बरी कर दूँगा। अब मिसाल के तौर पर 4 गोलियाँ एक रुपये में उसके हाथ बेचे, वह खरीदे, तो उस पर एक रुपया कर्ज़ हो गया। फिर एक रुपया ज़कात की नीयत से उसे देकर क़ब्ज़ा करा दे, फिर अपना रुपया उससे वापस ले ले। अगर वह आना-कानी करे तो ज़बरदस्ती ले सकता है क्योंकि वह इतने का कर्ज़दार है। इस तरह उसे 4 गोलियाँ मुफ़्त मिल जाएँगी और उसकी ज़कात से एक रुपया अदा हो जाएगा।

दुर-ए-मुख़्तार में है: "जवाज़ का ह़ीला (क़ानूनी तरीका) यह है कि आदमी अपने ग़रीब क़र्ज़दार को ज़कात दे, फिर उसे अपने क़र्ज़ के रूप में वापस ले ले। अगर क़र्ज़दार देने से मना करे तो वह हाथ बढ़ाकर उसे ले ले क्योंकि वह अपने हक़ की चीज़ प्राप्त करने पर समर्थ है।" [2] और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। दुर-ए-मुख़्तार में है कि जवाज़ का ह़ीला यह है कि आदमी अपने मक़रूज़ (कर्ज़दार) फ़क़ीर को ज़कात दे फिर उससे क़र्ज़ वसूल करे, अगर मक़रूज़ न दे तो छीन ले क्योंकि वह अपने हक़ की चीज़ लेने पर क़ादिर है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 775 से 77: मुम्बई नंबर 9 होटल आइसक्रीम से, प्रेषक शेख़ इमाम अली साहब रज़वी, 15 मुहर्रम 1339 हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि: (1) एक व्यक्ति ने किसी

ज़मींदार से कुछ ज़मीन ठेके पर ली और उसके पास दस हज़ार रुपये जमा किए। ठेके की मियाद (अवधि) तय नहीं है। यह तय हुआ कि जब रुपये वापस करेंगे, ज़मीन ठेके से निकाल लेंगे और उस व्यक्ति ने ज़मीन से नफ़ा हासिल करने की इजाज़त दी। इस रुपये की ज़कात का क्या हुक्म है और किस तरीक़े से इसकी ज़कात दी जाएगी? (2) अगर एक व्यक्ति के पास दस बीघा खेती की ज़मीन है और वह पाँच बीघा ज़मीन में बारिश से अनाज...

[1] रद-अल-मुह्तार, बाब खियार-अल-शर्त, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 2/57 [2] दुर-ए-मुख़्तार, किताब-उज़-ज़कात, मतबा मुज्तबाई दिल्ली 1/130

पृष्ठ 189/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

فی ردالمحتار الفرق بین الثمن والقیمۃ ان الثمن ما تراضی علیہ المتعاقد ان سواء زاد علی القیمۃ او نقص والقیمۃ ما قوم بہ الشئ بمنزلۃ المیعاد من غیر زیادۃ ولا نقصان۔ 1 ردالمحتار میں ہے کہ ثمن اور قیمت میں فرق ہے، جس پر متعاقدان راضی ہوجائیں وہ ثمن ہوں گے خواہ قیمت شئی سے زائد ہو یا کم، بغیر کسی کمی وزیادتی کے شئی کے معیاری عوض کا نام قیمت ہے۔ (ت)

تو اُن گولیوں کی بہ لحاظ نرخ بازار جس قدر مالیت ہو اسی قدر زکوٰۃ میں مجرا ہوں گے اُس سے زائد دین الہی رہا کہ فورا واجب الادا ہے، ہاں اگر زیادہ محسوب کرنا چاہے تو اس کی سبیل یہ نہیں بلکہ یوں ہے کہ مصرف زکوٰۃ کو گولیاں ہبہ نہ دے اس کے ہاتھ بیع کرلے، اب بیع میں اختیار ہے جو ثمن چاہے اس کی رضا مندی سے ٹھہرالے اگر چہ شئی کی حیثیت سے کتنا ہی زائد ہو بشرطیکہ مشتری عاقل بالغ ہو، اور اسے سمجھادے کہ اگر تیرے پاس قیمت نہیں تو اس کا اندیشہ نہ کریں خود اپنے پاس سے تجھے دے کر سبکدوش کردوں گا، اب مثلاً ۴ گولیاں ایک روپیہ کو اس کے ہاتھ بیچے وہ خریدے اس کا ایک روپیہ اس پر دین ہو گیا پھر ایک روپیہ بہ نیت زکوٰۃ اسے دے کر قبضہ کرادے پھر اپنے آتے میں روپیہ اس سے واپس لے، اگر وہ عذر کرے تو جبر گلے سکتا ہے کہ اتنی میں وہ اس کا مدیون ہے، یوں اسے ۴ گولیاں مفت ملیں گی اور اس کی زکوٰۃ سے ایک روپیہ ادا ہو جائے گا،

فی الدر المختار حیلۃ الجواز ان یعطی مدیونہ الفقیر زکوتہ ثم یأ خذھا من دینہ ولو امتنع المدیون مدیدہ واخذھا لکونہ ظفر بجنس حقہ ، 2 واللہ تعالٰی اعلم۔ در مختار میں ہے کہ حیلہ جواز یہ ہے کہ آدمی اپنے مقروض فقیر کو زکوٰۃ دے پھر اس سے قرضہ وصول کرے، اگر مقروض نہ دے تو چھین لے کیونکہ وہ اپنے حق کی جنس پر قادر ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۷۷۵ تا ۷۷: از بمبئی نمبر ۹ ہوٹل آئسکریم مسئولہ شیخ امام علی صاحب رضوی ۱۵ محرم ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ: (۱) ایک شخص نے کچھ زمین کسی زمیندار سے ٹھیکہ میں لی اس کے پاس دس ہزار روپیہ جمع کیا، میعاد ٹھیکہ مقرر نہیں، یہ طے ہوا کہ جس وقت روپیہ واپس کریں گے زمین ٹھیکہ سے نکال لیں گے اور اس شخص نے زمین سے نفع حاصل کرنے کی اجازت دی، اس روپیہ کی زکوٰۃ کا کیا حکم ہے اور کس طریقہ سے اس کی زکوٰۃ دی جائے؟ (۲) اگر ایک شخص کے پاس دس بیگھہ زمین کا شتکاری کی ہے اور وہ پانچ بیگھہ زمین میں بارش سے غلہ

1 ردالمحتار باب خیار الشرط مصطفی البابی مصر ۲ / ۵۷ 2 درمختار کتاب الزکوٰۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۳۰

...grows and irrigates five bighas of land with well or river water to produce grain, and the grain is only enough to suffice for the family with no surplus; what is the ruling on Ushr and Zakat in this case? (3) If someone has bought ten thousand rupees worth of items in a shop, such as tables, chairs, utensils, etc., for customers' use, and brings items for sale to the shop daily or every second or third day and sells them, what is the ruling on the Zakat for those ten thousand rupees, and the daily income he brings for his own expenses?

The Answer: (1) This is not a form of contract (Theka). In a contract, money is against profit, not that profit is taken and on returning the land, the money is returned. This is a form of debt, and the land is collateral (Rahn). Taking profit from it is not permissible. Zakat on this is obligatory upon the person who gave the money, although it will become due to be paid when he receives the debt in the amount of Nisab (minimum threshold) or one-fifth of Nisab. And Allah the Almighty knows best. (2) There is no Zakat on either the grain or the land. If gold or silver, beyond one's basic needs, reaches the level of Nisab and a year passes, then Zakat will be obligatory. However, Ushr is obligatory in any case; one-tenth on rain-fed produce and one-twentieth on irrigated produce. And Allah the Almighty knows best. (3) On the day he became the owner of Nisab, when a full year passes, whatever amount of gold, silver, or trade goods like tables, chairs, etc., he has remaining beyond his basic needs that reach the level of Nisab, Zakat will be obligatory on that. Whatever was spent on daily expenses is gone. And Allah the Almighty knows best.

Problem 78: From Kanpur, Mohalla Feel Khana Kehna, asked by Syed Muhammad Asif Sahib, 9 Muharram al-Haram 1339 AH. On the margin of the first printed volume of your Fatawa, there is this text: "He whose relatives are needy is forbidden from leaving them and giving his charities to strangers. It is stated in the Hadith: The charity of such a person will not be accepted, and Allah the Almighty will not look towards him on the Day of Judgment." Who are the people meant by "relatives"?

The Answer: Among relatives, the 'Dhu al-Rahm' (blood relatives) are prioritized, then the rest of the 'Dhu al-Rahm'. One should not bypass them to give charity to a stranger. Bypassing means giving such charity; for example, what is given to beggars like a paisa or a piece of bread, which cannot be given to one's own relatives, or if given, they would not accept it; that would be giving it by bypassing them. And Allah the Almighty knows best.

...उगाता है और पाँच बीघा ज़मीन को कुओं या नदी के पानी से सींचकर अनाज पैदा करता है और अनाज केवल उतना ही होता है जो परिवार के लिए पर्याप्त होता है, कोई बचत नहीं होती। इस स्थिति में उश्र और ज़कात का क्या हुक्म है? (3) यदि किसी ने एक दुकान में दस हज़ार रुपये का सामान यानी मेज़, कुर्सी और बर्तन आदि ग्राहकों के उपयोग के लिए खरीद कर लगा दिया है और दुकान में बेचने का सामान रोज़ाना या दूसरे-तीसरे दिन लाकर बेचता है, तो उन दस हज़ार रुपये की ज़कात का क्या हुक्म है, और रोज़ाना जो आमदनी होती है उसे अपने खर्च में लाता है?

उत्तर: (1) यह ठेके की कोई सूरत नहीं है। ठेके में मुनाफ़े के बदले रुपया होता है, न कि मुनाफ़ा लिया जाए और ज़मीन की वापसी पर रुपया वापस हो जाए। यह ऋण (क़र्ज़) की स्थिति है और ज़मीन गिरवी (रहन) है और इससे लाभ उठाना जायज़ नहीं है। इसकी ज़कात उस रुपया वाले पर वाजिब है, हालांकि अदायगी तब वाजिब होगी जब वह क़र्ज़ निसाब की मात्रा में या निसाब का पाँचवां हिस्सा वसूल कर ले। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। (2) न तो अनाज पर ज़कात है और न ही ज़मीन पर। यदि सोना या चाँदी सभी मूल आवश्यकताओं से अतिरिक्त निसाब के बराबर हो और एक वर्ष बीत जाए, तो ज़कात वाजिब होगी। और उश्र तो हर हाल में वाजिब है; वर्षा आधारित पैदावार पर दसवां हिस्सा और सिंचाई वाले पानी पर बीसवां हिस्सा। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। (3) जिस दिन वह निसाब का मालिक हुआ था, जब उस पर एक पूरा वर्ष बीत जाएगा, उस समय जितना सोना-चाँदी या व्यापार का माल जैसे मेज़-कुर्सी आदि जो कुछ भी उसके पास अपनी मूल आवश्यकताओं से अतिरिक्त निसाब की मात्रा में मौजूद होगा, उस पर ज़कात फ़र्ज़ होगी। दैनिक खर्च में जो खर्च हो गया सो हो गया। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 78: कानपुर, मोहल्ला फ़ील खाना कोहना से, मुस्तौ़ला सैयद मुहम्मद आसिफ साहब, 9 मुहर्रम अल-हराम 1339 हिजरी। हुज़ूर के फतावा के प्रथम खंड के हाशिये पर यह इबारत है: "जिसके रिश्तेदार ज़रूरतमंद हों, उसे मना है कि उन्हें छोड़कर गैरों को अपना सदक़ा दे। हदीस में फ़रमाया गया: ऐसे व्यक्ति का सदक़ा स्वीकार नहीं होगा और अल्लाह तआला क़यामत के दिन उसकी ओर नज़र नहीं फ़रमाएगा।" 'अज़ीज़' (रिश्तेदारों) से कौन लोग मुराद हैं?

उत्तर: रिश्तेदारों में 'ज़ुल-रहम' (रक्त संबंधी) पहले हैं, फिर शेष 'ज़ुल-रहम'। उन्हें छोड़कर किसी अजनबी को सदक़ा न दे। छोड़ने के मायने ऐसा सदक़ा देना है; जैसे भिखारियों को जो एक-आध

पैसा या रोटी का टुकड़ा दिया जाता है जिसे वह अपने रिश्तेदारों को नहीं दे सकता, और अगर दे तो वे नहीं लेंगे, वह उन्हें छोड़कर देना हुआ। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

पृष्ठ 190/836

اگاتا ہے اور پانچ بیگھ زمین کو کنوؤں یا دریائی پانی سے سینچ کر غلہ پیدا کرتا ہے اور غلہ صرف اتنا ہی ہوتا ہے کہ جو خاندان کے لیے کافی ہوتا ہے بچت نہیں، اس صورت میں اس کے عشر اور زکوٰۃ کا کیا حکم ہے؟ (۳) اگر کسی نے ایک دُکان میں دس ہزار روپیہ کا سامان یعنی میز کرسی اور برتن وغیرہ خرید کر گاہکوں کے استعمال کے لیے لگا دیا اور دُکان میں فروخت کی اشیاء روزانہ یا دوسرے تیسرے دن لاکر فروخت کرتا ہے تو اس دس ہزار روپیہ کی زکوٰۃ کا کیا حکم ہے، اور روزانہ جو آمدنی ہوتی ہے اس کو اپنے خرچ میں لاتا ہے؟

الجواب: (۱) یہ کوئی صورت ٹھیکے کی نہیں، ٹھیکہ میں نفع کے مقابل روپیہ ہوتا ہے نہ یہ کہ نفع لیا جائے اور واپسی زمین پر روپیہ واپس ہو جائے، یہ صورت قرض کی ہے اور زمین رہن اور اس سے نفع لینا جائز نہیں اور اس کی زکوٰۃ اس روپیہ والے پر واجب، اگرچہ واجب الادا اس وقت ہو گی جب وہ قرض بقدرِ نصاب یا خُمس نصاب اس کو وصول ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم (۲) زکوٰۃ تو نہ غلہ پر ہے نہ زمین پر، اگر سونا یا چاندی تمام حاجاتِ اصلیہ سے فارغ بقدرِ نصاب ہو اور سال گزرے تو زکوٰۃ واجب ہو گی اور عشر بہر حال واجب ہے، مینہ کی پیداوار پر دسواں حصہ اور پانی دی ہوئی پر بیسواں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ (۳) جس دن وہ مالکِ نصاب ہوا تھا جب اُس پر سال پورا گزرے گا اُس وقت جتنا سونا چاندی یا تجارت کا مال میز کرسی وغیرہ جو کچھ بھی ہو بقدرِ نصاب اس کے پاس تمام حاجاتِ اصلیہ سے فارغ موجود ہو گا اس پر زکوٰۃ فرض ہو گی، روزمرہ کے خرچ میں جو خرچ ہو گیا ہو گیا۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۸: از کانپور محلّہ فیل خانہ کہنہ مسئولہ سید محمد آصف صاحب ۹ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ

حضور کے فتاویٰ جلد اول مطبوعہ کے حاشیہ پر یہ عبارت ہے کہ : "جس کے عزیز محتاج ہوں

اسے منع ہے کہ انہیں چھوڑ کر غیروں کو اپنے صدقات دے، حدیث میں فرمایا: ایسے کا صدقہ قبول نہ ہوگا اور اللہ تعالیٰ روزِ قیامت اس کی طرف نظر نہ فرمائے گا۔ " عزیز سے کون کون شخص مراد ہیں؟

الجواب: عزیزوں میں ذورِ رحم مقدم ہیں پھر باقی ذورِ رحم، ان سے پھیر کر اجنبی کو صدقہ نہ دے پھیرنے کے معنی کا صدق دینا چاہئے، مثلاً گداگروں کو جو ایک آدھ پیسہ یا روٹی کا ٹکڑا جاتا ہے کہ اپنے اعزّاء کو نہیں دے سکتا، اور دے تو وہ نہ لیں گے، وہ ان سے پھیر کر دینا ہوا۔ واللہ تعالیٰ اعلم

Volume Ten Fatawa Razawiyya

Treatise Repelling Injustice against Imam Abu Yusuf 1318 AH (Refutation of the objections of non-conformists against Imam Abu Yusuf regarding the ruse for Zakat)

Problem 79: From Gonda, Kingdom of Awadh, Islamic Madrasa, sent by Hafiz Abdullah Sahib, teacher of the said Madrasa, 16 Jamadi al-Akhir 1318 AH. In the book "Ghafir al-Mubeen" authored by Muhyiddin, a non-conformist, it is written that Qazi Abu Yusuf used to gift his wealth to his wife at the end of the year and have her wealth gifted back to him so that the Zakat obligation would be waived. This was reported to Imam Abu Hanifa, who said that this is from the perspective of his deep understanding of jurisprudence, and he spoke correctly. Furthermore, a scholar who follows a legal school also confirmed this matter, even stating that Imam Bukhari has also recorded this matter in his book and written about it with great aversion. Please provide a reasoned explanation and clarification for this issue.

The Answer: In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

Allahumma lakal hamdu salli wa sallim 'ala sayyidi anbiya-ika	**O Allah, all praise is for You alone. Upon the leader of all Prophets (peace be upon them)**
wa alihi wa sahbihi wa sa'iri asfiya-ika as-aluka hubbaka wa hubba	be peace and blessings, upon their family and companions, and upon all the other chosen ones as well. O Allah! I ask You for Your love and the love of...

जिल्द दसवां फ़तावा रज़विया

रिसाला रादे' अल-त'अस्सुफ़ अन अल-इमाम अबी यूसुफ़ १३१८ हिजरी (ज़कात के हिला के बारे में इमाम अबू यूसुफ़ पर ग़ैर-मुक़ल्लिदीन के एतराज़ का रद्द)

मसला ७९: गोंडा, अवध राज्य, मदरसा इस्लामिया से, प्रेषक हाफ़िज़ अब्दुल्ला साहिब, उक्त मदरसे के शिक्षक, १६ जमादी अल-आख़िर १३१८ हिजरी। ग़ैर-मुक़ल्लिद लेखक मुहीउद्दीन की किताब "ग़ाफ़िर अल-मुबीन" में लिखा है कि काज़ी अबू यूसुफ़ साहिब साल के अंत में अपना माल अपनी बीवी के नाम हिबा (दान) कर दिया करते थे और उनका माल अपने नाम हिबा करा लिया करते थे ताकि ज़कात साक़ित (माफ़) हो जाए। जब यह बात किसी ने इमाम अबू हनीफ़ा साहिब से नक़्ल की तो उन्होंने फ़रमाया कि यह उनके फ़िक्ह (धर्मशास्त्र) की समझ की वजह से है और उन्होंने सही फ़रमाया। चुनांचे इस मामले की तस्दीक़ एक मुक़ल्लिद आलिम ने भी की, बल्कि यह कहा कि इस मामले को इमाम बुख़ारी साहिब ने भी किताब में दर्ज किया है और बहुत नफ़रत के साथ लिखा है। इस मामले की दलील के साथ तशरीह और वजाहत इरशाद फ़रमाई जाए।

अल-जवाब: बिस्मिल्लाहिर रहमानिर रहीम

अल्लाहुम्मा लकल हम्दु सल्लि व सल्लिम अला सैय्यदि अंबियाइक	**ऐ अल्लाह! तेरे ही लिए हम्द है। तमाम अंबिया अलैहिमुस्सलाम के**
वआलिहि व सहबिहि व साइरि असफ़ियाइक अस्अलुका हुब्बका व हुब्बा	सरबराह पर सलात-ओ-सलाम हो, उनकी आल और असहाब पर और बाक़ी तमाम असफ़िया पर भी। ऐ अल्लाह! मैं तुझसे तेरी मोहब्बत और उसकी मोहब्बत...

पेज १९१ का ८३६

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

رسالہ رادع التعسف عن الامام ابی یوسف ۱۳۱۸ھ (حیلہ زکوۃ کے بارے میں امام ابو یوسف پر غیر مقلدین کے اعتراض کا رد)

مسئلہ ۷۹: از گونڈہ ملک اودھ مدرسہ اسلامیہ مرسلہ حافظ عبداللہ صاحب مدرس مذکور ۱۶ جمادی الآخر ۱۳۱۸ھ کتاب غفر المبین مؤلفہ محی الدین غیر مقلد میں لکھا ہے کہ جناب قاضی ابو یوسف صاحب آخر سال پر اپنا مال اپنی بی بی کے نام ہبہ کر دیا کرتے تھے اور اس کا مال اپنے نام ہبہ کرا لیا کرتے تھے تاکہ زکوۃ ساقط ہو جائے، یہ بات کسی نے امام ابو حنیفہ صاحب سے نقل کی انہوں نے فرمایا کہ یہ ان کے فقہ کی جہت سے ہے اور درست فرمایا، چنانچہ اس امر کو ایک عالم مقلد نے بھی تصدیق کیا بلکہ یہ کہا اس معاملے کو امام بخاری صاحب نے بھی درج کتاب کیا ہے اور بہت نفرت کے ساتھ لکھا ہے اس کی تشریح و توضیح مدلل ارشاد فرمائی جائے۔

الجواب: بسم اللہ الرحمن الرحیم

اللھم لك الحمد صل وسلم علی سید انبیائك

اے اللہ تیرے ہی لیے حمد ہے۔ تمام انبیاء علیہم السلام کے

وآلہ وصحبہ وسائر اصفیائك اسألك حبك وحب

سربراہ پر صلوۃ وسلام، ان کی آل واصحاب اور باقی تمام اصفیاء پر بھی۔ اے اللہ! میں آپ سے آپ کی

- (Arabic): I ask for Your love, the love of those You love, and good manners towards all Your friends. And I seek refuge with You from Your wrath, Your anger, and the severity of Your affliction.
- (Urdu Translation): I ask for Your love, the love of Your beloved ones, and good manners with all Your friends, and I seek refuge from Your wrath, displeasure, and seizure. (T)

Firstly: Nowhere in Sahih Bukhari from beginning to end is this anecdote mentioned that Imam Abu Yusuf practiced it and Imam Azam confirmed it. Imam Bukhari only wrote that according to some scholars, if a person destroys or gives away or exchanges their wealth before the full year passes so that Zakat does not become obligatory, then nothing will be due from him. And if he destroys it and dies, nothing will be taken from his wealth. And if he pays Zakat before the full year passes, it is permissible and valid. Their statement is as follows:

- (Arabic): And some people said that for one hundred and twenty camels, there are two 'Haqqas' (three-year-old camels). If he destroys them intentionally, gives them away, or uses a trick to escape Zakat, then nothing is due from him. 1
- (Urdu Translation): Some people said that for one hundred and twenty (120) camels, there are two Haqqas. If he destroys them intentionally or gifts them to someone or uses a trick to escape Zakat, then Zakat will no longer be obligatory on the owner. (T)

Then he said:

- (Arabic): And some people said regarding a man who has camels and fears that Zakat will become obligatory on him, so he sells them for similar camels, or for sheep, or for cows, or for dirhams, one day before the year ends, as a trick to escape Zakat, then nothing is due from him. And they say that if he pays Zakat for his camels one day or one year before the year passes, it is valid for him. 2
- (Urdu Translation): Some people said about the person who has camels and fears that charity (Zakat) might become obligatory on them, so he sells them a day before to escape Zakat and as a trick, either for similar camels or in exchange for goats, cows, or dirhams; then nothing is obligatory on him. And they also say that if the owner paid the Zakat for his camels one day or one year before the year passed, it would be fulfilled. (T)

Then he said:

- (Arabic): And some people said when camels reach twenty...
- (Urdu Translation): Some people said when camels become twenty (20), then in that...

1 Sahih al-Bukhari, Kitab al-Hiyal, Chapter on Zakat and not separating, etc., Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/1029. 2 Sahih al-Bukhari, Kitab al-Hiyal, Chapter on Zakat and not separating, etc., Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/1029.

- (अरबी): मैं आपसे आपके प्रेम, आपके प्रेमियों के प्रेम और आपके सभी मित्रों के साथ अच्छे व्यवहार (हुस्न-ए-अदब) की प्रार्थना करता हूँ, और आपके क्रोध, आपकी नाराजगी और आपकी पकड़ से पनाह मांगता हूँ।
- (उर्दू अनुवाद): मैं आपसे आपके प्रेम, आपके प्रियजनों के प्रेम और आपके सभी मित्रों के साथ अच्छे व्यवहार की प्रार्थना करता हूँ, और मैं आपके क्रोध, नाराजगी और पकड़ से शरण चाहता हूँ। (त)

प्रथम: सहीह बुखारी शरीफ में आदि से अंत तक कहीं भी यह किस्सा नहीं मिलता कि इमाम अबू यूसुफ इस पर अमल करने वाले थे और इमाम आज़म ने इसकी पुष्टि की थी। इमाम बुखारी ने केवल इतना लिखा है कि कुछ विद्वानों के अनुसार यदि कोई व्यक्ति वर्ष पूरा होने से पहले माल को नष्ट कर दे, या दे दे, या बेचकर बदल ले ताकि जकात अनिवार्य न हो पाए, तो उस पर कुछ भी अनिवार्य नहीं होगा। और यदि वह उसे नष्ट करके मर जाए तो उसके माल से कुछ भी नहीं लिया जाएगा। और यदि वर्ष पूरा होने से पहले जकात अदा कर दे तो वह जायज़ और मान्य है। उनका कथन यह है:

- (अरबी): कुछ लोगों ने कहा है कि एक सौ बीस ऊंटों में दो 'हक़्क़ा' हैं। यदि वह उन्हें जानबूझकर नष्ट कर दे, या उपहार में दे दे, या जकात से बचने के लिए कोई चाल चले, तो उस पर कुछ भी बकाया नहीं होगा। १
- (उर्दू अनुवाद): कुछ लोगों ने कहा है कि एक सौ बीस (१२०) ऊंटों में दो 'हक़्क़ा' (तीन साल के ऊंट) हैं। यदि वह उन्हें जानबूझकर नष्ट कर दे या किसी को उपहार (हिबा) में दे दे या जकात से बचने के लिए कोई उपाय (हीला) कर ले, तो अब मालिक पर जकात नहीं होगी। (त)

फिर कहा:

- (अरबी): कुछ लोगों ने उस व्यक्ति के बारे में कहा जिसके पास ऊंट हों और उसे डर हो कि उस पर जकात अनिवार्य हो जाएगी, तो वह जकात से बचने के लिए एक दिन पहले उन्हें समान ऊंटों, या भेड़ों, या गायों, या दिरहमों के बदले बेच देता है, तो उस पर कुछ भी अनिवार्य नहीं होगा। और वे कहते हैं कि यदि उसने अपने ऊंटों की जकात वर्ष पूरा होने से एक दिन या एक वर्ष पहले दे दी, तो यह मान्य है। २

- (उर्दू अनुवाद): कुछ लोगों ने उस व्यक्ति के बारे में कहा जिसके पास ऊंट हों और वह डरता हो कि कहीं उन पर जकात अनिवार्य न हो जाए, इसलिए वह जकात से बचने और हीला करते हुए एक दिन पहले उन्हें उसी जैसे ऊंटों के बदले बेच देता है या बकरी, गाय या दिरहम के बदले बेच देता है; तो अब उस पर कुछ भी अनिवार्य नहीं है। और वे यह भी कहते हैं कि यदि मालिक ने अपने ऊंटों की जकात वर्ष पूरा होने से एक दिन या एक साल पहले दे दी, तो वह अदा हो जाएगी। (त)

फिर कहा:

- (अरबी): और कुछ लोगों ने कहा जब ऊंट बीस तक पहुँचें...
- (उर्दू अनुवाद): कुछ लोगों ने कहा जब ऊंट बीस (२०) हो जाएं तो उसमें...
- सहीह अल-बुखारी, किताबुल हियल, बाब फिज़्ज़कात... क़दीमी कुतुब खाना कराची, २/१०२९
- सहीह अल-बुखारी, किताबुल हियल, बाब फिज़्ज़कात... क़दीमी कुतुब खाना कराची, २/१०२९

८३६ में से पृष्ठ १९२

- احبائك وحسن الادب مع جمیع اولیائك و اعوذبك من غضبك و سخطك و سوء بلائك۔
- محبت، آپ کے محبوبوں کی محبت اور آپ کے تمام دوستوں کے ساتھ حُسنِ ادب کا سوال کرتا ہوں، اور آپ کے غضب، ناراضگی اور گرفت سے پناہ مانگتا ہوں (ت)

اولاً: صحیح بخاری شریف میں اوّل تا آخر کہیں اس حکایت کا پتا نہیں کہ امام ابو یوسف اس کے عامل تھے امام اعظم مصدّق ہوئے، امام بخاری نے صرف اس قدر لکھا کہ بعض علماء کے نزدیک اگر کوئی شخص سال تمام سے پہلے مال کو ہلاک کر دے یا دے ڈالے یا بیچ کر بدل لے کہ زکوۃ واجب نہ ہونے پائے تو اس پر کچھ واجب نہ ہوگا، اور ہلاک کر کے مر جائے تو اس کے مال سے کچھ نہ لیا جائے گا، اور سال تمام سے پہلے اگر زکوۃ ادا کر دے تو جائز وروا۔ اُن کی عبارت یہ ہے:

- وقال بعض الناس فی عشرین ومائة بعیر حقتان فان اھلکھا متعمداً او وھبھا او احتال فیھا فرارا من الزکاۃ فلا شئ علیہ۔ 1
- بعض لوگوں نے کہا ہے کہ ایک سو بیس ۱۲۰ اونٹوں میں دو حقہ ہیں اور اگر انھیں عمداً ہلاک کر دیا یا انھیں کسی کو ہبہ کر دیا یا زکوۃ سے بھاگنے کے لیے کوئی حیلہ کر لیا تو اب مالک پر زکوۃ نہیں ہوگی (ت)

پھر کہا:

- وقال بعض الناس فی رجل لہ ابل فخاف ان تجب علیہ الصدقة فباعها بابل مثلها او بغنم او ببقر او بدراهم فرارا من الصدقة بیوم واحتیالا فلا شئ علیه وهو یقول ان زکی ابله قبل ان یحول الحول بیوم او بسنة جازت عنه۔ 2
- بعض لوگوں نے اس شخص کے بارے میں کہا جس کے پاس اونٹ ہوں وہ ڈرتا ہے کہ کہیں اس پر صدقہ لازم نہ ہوجائے پس وہ زکوٰۃ سے فرار اور حیلہ کرتے ہوئے ایک دن پہلے اس کی مثل اونٹوں سے بیچ دیتا ہے یا بکری یا گائے یا دراہم کے عوض بیچ دیتا ہے تو اب اس پر کوئی شئے لازم نہیں، اور وہ یہ بھی کہتے ہیں کہ اگر مالک نے اپنے اونٹ کی زکوٰۃ سال گزرنے سے ایک دن یا سال پہلے زکوٰۃ دے دی تو ادا ہوجائیں گی۔ (ت)

پھر کہا:

- وقال بعض الناس اذا بلغت الابل عشرین
- بعض لوگوں نے کہا جب اونٹ بیس ۲۰ ہوجائیں تو اس

1 صحیح البخاری کتاب الحیل باب فی الزکوۃ والا یفرق الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱۰۲۹/۲ 2 صحیح البخاری کتاب الحیل باب فی الزکوۃ والا یفرق الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱۰۲۹/۲

Fatawa Razawiyya Volume 10

Arabic Text	Urdu Translation/Explanation
fafiha arba'u shiyahin fa'in wahabaha qabl al-hawli aw ba'aha firaran aw ihtiyalan li'isqati az-zakati fala shay'a 'alayhi wa kadhalika in atlafaha famata fala shay'a fi malihi.1	Some people have said that when camels become twenty (20), four goats will be obligatory on them. Now, if as a stratagem to avoid Zakat, they are gifted away before the year has passed, then nothing will be mandatory. Similarly, if the owner destroyed them and then passed away, nothing will be mandatory from his assets. (T)

It means that if someone does such a thing, nothing will be mandatory upon him.

Second: The books of our school of thought have cited the disagreement between Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad (may Allah Almighty have mercy on them both) on this issue and have simply stated that the Fatwa (legal ruling) is based on the opinion of Imam Muhammad that such an act is not permissible. In *Tanwir al-Absar, Durr al-Mukhtar, Durar wa Ghurar, Jawhara,* etc., it is stated:

Arabic Text	Urdu Translation/Explanation
wal-lafzu lil-awwalayni (tukrahu al-hilatu li'isqati ash-shuf'ati ba'da thubutiha wifaqan) kaqawlihi lish-shafi'i ishtarihu minni dhakarahu al-bazzazi (wa ammal-hilatu lida'fi thubutiha ibtida'an fa'inda abi yusufa la tukrahu wa 'inda muhammadin tukrahu, wa yufta biqawli abi yusufa fish-shuf'ati) qayyadahu fis-sirajiyyati bima idhakana al-jaru ghayra muhtajin ilayhi wa istahsanahu muhashshi al-ashbahi (wa bididdih) wa huwa al-karahatu (fiz-zakati wal-hajji wa ayatis-sajdah) jawharah.2	The wording in the first two books is: (Employing a stratagem to drop the right of pre-emption [Shufa] after it has been established is unanimously disliked [Makruh]). For example, saying to the pre-emptor, "Buy this from me." Al-Bazzazi mentioned this. (But to use a trick to prevent its establishment from the beginning is not disliked according to Imam Abu Yusuf, while it is disliked according to Imam Muhammad. Regarding Shufa, the Fatwa is on the opinion of Imam Abu Yusuf). As-Sirajiyyah adds the condition that the neighbor is not in need of it. The commentator of *Al-Ashbah* preferred this. Regarding Zakat, Hajj, and the verse of prostration, the Fatwa is on [its opposite], i.e., dislike. *Jawhara* (T)

In *Radd al-Muhtar*, from the commentary of *Durar al-Bihar*, it is stated: *hadha tafsilun hasanun3* (This is a beautiful detail. T) — *Ghamz al-Uyun*

1. *Sahih al-Bukhari*, Book of Stratagems, Chapter on Zakat..., Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 1029/2
2. *Durr al-Mukhtar*, Book of Shufa, Chapter on what nullifies it, Matba' Mujtabai, Delhi, 216/2
3. *Radd al-Muhtar*, Book of Shufa, Chapter on what nullifies it, Mustafa al-Babi, Egypt, 37/5

अरबी इबारत

फ़फ़ीहा अरबअ' शिआहिन फ़इन वहबहु क़ब्ल अल-हौलि औ बाअ'हा फ़िरारन औ इहतियालन लिसक़ाति अज़-ज़काति फ़ला शैया 'अलैहि व कज़ालिका इन अतलाफ़हा फ़माता फ़ला शैया फ़ी मालिही।*1*

उर्दू अनुवाद/व्याख्या

कुछ लोगों ने कहा कि जब ऊंट बीस (20) हो जाएं तो उनमें चार बकरियां लाज़िम होंगी। अब अगर ज़कात से बचने के लिए कोई हिला (चाल) करते हुए साल गुज़रने से पहले उन ऊंटों को हिबा (दान) कर दिया, तो अब कोई चीज़ लाज़िम न होगी। इसी तरह अगर मालिक ने उन्हें हलाक (नष्ट) कर दिया और मालिक फ़ौत (मर) हो गया, तो उसके माल में से कोई चीज़ लाज़िम न होगी। (त)

यानी अगर कोई ऐसा करे तो उस पर कुछ वाजिब न होगा। **दूसरा:** हमारी मज़हब की किताबों ने इस मसले में इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाहि अलैहि) के इख़्तिलाफ़ (असहमति) को नक़्ल किया है और सिर्फ़ यह लिख दिया है कि फ़तवा इमाम मुहम्मद के क़ौल (कथन) पर है कि ऐसा फ़ेल (कार्य) जायज़ नहीं। तनवीरुल अबसार, दुर्रे मुख़्तार, दुरर व ग़ुरर और जौहरा वग़ैरह में है:

अरबी इबारत

वल-लफ़्ज़ु लिल-अव्वलईनी *(*तुकराहु अल-हिलतु लिसक़ाति अश-शुफ़अ'ति बअ'दा थुबूतहा विफ़ाक़न*)* कक़ौलिही लिश-शफ़ीइ' इश्तारीहु मिन्नी ज़करहु अल-बज़्ज़ाज़ी *(*व अम्मा-हिलतु लिदफ़इ' थुबूतहा इब्तिदान फ़इंदा अबी यूसुफ़ा ला तुकराहु व इंदा मुहम्मदनि तुकराहु, व युफ़्ता बि-क़ौलि अबी यूसुफ़ा फ़िश-शुफ़अ'ति*)* क़य्यादहु फ़िस-सिराजिय्याति बिमा इज़ाकाना अल-जारु ग़ैरा मुहताजतिन इलैहि व इस्तहसनहु मुहाश्शी अल-अशबाही *(*व बि-दिदिह*)* व हुवा अल-

उर्दू अनुवाद/व्याख्या

पहली दोनों किताबों की इबारत यह है: (शफ़ा का हक़ साबित होने के बाद उसे गिराने के लिए हिला करना सर्वसम्मति से मकरूह है), जैसे कि शफ़ी (पड़ोसी) से कहना कि वह चीज़ आप मुझसे ख़रीद लें। इसे बज़ाज़ी ने ज़िक्र किया है। (लेकिन शुरुआत में हक़ साबित न होने देने के लिए हिला करना इमाम अबू यूसुफ़ के नज़दीक मकरूह नहीं है, जबकि इमाम मुहम्मद के यहाँ मकरूह है। शफ़ा के मामले में इमाम अबू यूसुफ़ के क़ौल पर फ़तवा है)। सराजिया में यह शर्त जोड़ी गई है कि पड़ोसी को उस चीज़ की हाजत (ज़रूरत) न हो। अल-अशबाह के मुहाशशी ने इसे पसंद किया है। ज़कात, हज और

अरबी इबारत	उर्दू अनुवाद/व्याख्या
कराहतु *(फ़िज़-ज़कातिवल-हज्जि व आयातस-सजदह)* जौहरा।*2*	आयते सज्दा के मामले में (इसका उलटा) यानी मकरूह होने पर फ़तवा है। (जौहरा)

रद-दुल-मुह्तार में शरह दुर्र-उल-बिहार से है: हाज़ा तफ़्सीलन हसनुन3 (यह तफ़सील ख़ूबसूरत है। त) — ग़म्ज़ुल उयून।

---

1. सहीह अल-बुख़ारी, किताबुल हियल, बाब फ़िज़-ज़कात..., क़दीमी कुतुब ख़ाना, कराची, 1029/2
2. दुर्रे मुख़्तार, किताबुश-शुफ़अ, बाब मायबतिलहा, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 216/2
3. रद-दुल-मुह्तार, किताबुश-शुफ़अ, बाब मायबतिलहा, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 37/5

पृष्ठ 193 / 836

عربی عبارت	اردو ترجمہ/تشریح
ففيها اربع شياه فان وهبها قبل الحول او باعها فرارا او احتيالا لاسقاط الزكوٰة فلا شيء عليه وكذلك ان اتلفها فمات فلا شيء في ماله۔1	بعض لوگوں نے کہا جب اونٹ بیس ۲۰ ہو جائیں تو اسمیں چار بکریاں لازم ہوں گی، اب اگر اسقاطِ زکوٰۃ کیلئے حیلہ کرتے ہوئے سال گزرنے سے پہلے ان اونٹوں کو ہبہ کر دیا تو اب کوئی شئی لازم نہ ہوگی، اسی طرح اگر مالک نے ہلاک کردیا اور مالک فوت ہوگیا تو اس کے مال میں کوئی شئی لازم نہ ہوگی۔(ت)

کیا ہے کہ کوئی ایسا کرے تو اس پر کچھ واجب نہ ہوگا۔ **ثانیاً:** ہمارے کتب مذہب نے اس مسئلہ میں امام ابویوسف اور امام محمد رحمہما اللہ تعالیٰ کا اختلاف نقل کیا اور صرف لکھ دیا کہ فتویٰ امام محمد کے قول پر ہے کہ ایسا فعل جائز نہیں۔ تنویر الابصار ودرمختار ودرر وغرہ وجوہرہ وغیرہما میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ/تشریح
واللفظ للاولين (تكره الحيلة لاسقاط الشفعة بعد ثبوتها وفاقاً) كقوله للشفيع اشتره منى ذكره البزازى (واما الحيلة لدفع ثبوتها ابتداءً فعند ابي يوسف لاتكره وعند محمد تكره، ويفتى بقول ابي يوسف في الشفعة) قيده في السراجية بما	پہلی دونوں کتب کی عبارت یہ ہے (ثبوت شفعہ کے بعد اسقاط کے لیے حیلہ کرنا بالاتفاق مکروہ ہے) مثلاً شفیع کے لیے یہ کہنا کہ وہ چیز آپ مجھ سے خرید لیں۔ اسے بزازی نے ذکر کیا(لیکن ابتدا عدمِ ثبوت کے لیے حیلہ کرنا امام ابویوسف کے نزدیک مکروہ نہیں۔ اور امام محمد کے ہاں مکروہ ہے۔ شفعہ میں امام ابویوسف کے قول پر فتویٰ

عربی عبارت	اردو ترجمہ/تشریح
اذکان الجار غیر محتاج الیه و استحسنة محشی الاشباه (وبضدة) وهو الکراهة (فی الزکوة والحج وآیة السجدة جوهرة۔ 2	ہے) سراجیہ میں اس قید کا اضافہ ہے کہ بشرطیکہ پڑوسی اس کے محتاج نہ ہو محشی اشباہ نے اسے پسند کیا ہے اور زکوٰۃ، حج اور آیت سجدہ میں (اس کی ضد) بھی کراہت پر فتویٰ ہے۔ جوہرہ (ت)

ردالمحتار میں شرح درر البحار سے ہے: هذا تفصیل حسن 3 (یہ تفصیل خوبصورت ہے۔ت) غمز العیون

---

1. صحیح البخاری کتاب الحیل باب فی الزکوٰۃ والایفرق بین مجتمع الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱۰۲۹/۲
2. درمختار کتاب الشفعة کتاب مایبطلها مطبع مجتبائی دہلی ۲۱۶/۲
3. ردالمحتار کتاب الشفعة کتاب مایبطلها مصطفٰی البابی مصر ۳۷/۵

Page 193 of 836

Fatawa-e-Razvia Volume Ten

It is in:

Arabic	Urdu
Az-Zakat 'ala 'adami jawazi al-hilati li-isqati az-zakati wa huwa qawlu Muhammadin rahimahu Allahu Ta'ala wa huwa al-mu'tamadu.[1]	The fatwa is on the non-permissibility of a stratagem for the evasion of Zakat, and this is the saying of Imam Muhammad (may Allah Almighty have mercy on him), and it is relied upon. (T)

In Majma' al-Anhar from Sharh al-Kanz by al-'Ayni, it is mentioned:

Arabic	Urdu
Al-mukhtaru 'indi an la tukrahu fi ash-shuf'ati duna az-zakati.[2]	According to me, the chosen position is that a stratagem is not disliked in pre-emption (Shuf'a), but it is disliked in Zakat. (T)

In Waqaya, Islah, and Idah, it is mentioned:

Arabic	Urdu
Wal-lafzu li-hadhayni la yukrahu hilatu isqati ash-shuf'ati az-zakati 'inda Abi Yusuf khilafan li-Muhammadin wa yufta fil-awwali bi-qawlil-awwali wa fith-thani bi-qawlith-thani.[3]	The wording for these two is: A stratagem to drop pre-emption (Shuf'a) and Zakat is not disliked according to Imam Abu Yusuf, contrary to Imam Muhammad. In the first case (Shuf'a), the fatwa is on the saying of the first Imam (Abu Yusuf), and in the second case (Zakat), the fatwa is on the saying of the second Imam (Muhammad). (T)

The school of thought of the Imam of Imams, the Lamp of the Ummah, our Master Imam Azam (may Allah be pleased with him), is also the same as the school of Imam Muhammad, that such an act is prohibited and evil. In Ghamz al-Uyun from Tatar Khaniyah, it is stated:

Arabic	Urdu
Kana mamnu'an makruhan 'inda al-Imami wa Muhammadin.[4]	This (stratagem) is disliked according to both Imam Azam and Imam Muhammad. (T)

So, the attribution of approval to the Imam that he said (Abu Yusuf spoke rightly) is explicitly contrary to the school of the Imam himself. Secondly: Rather, in Khizanat al-Muftin from Fatawa Kubra, it is stated:

[1] Ghamz 'Uyun al-Basair, Al-Fann al-Khamis min al-Ashbah wan-Nazair etc., Idarat al-Qur'an wal-Ulum al-Islamiyyah Karachi, 2 / 292 [2] Majma' al-Anhar Sharh Multaqa al-Abhur, Fasl wa Tabtulu ash-Shuf'atu bi-taslim al-kulli aw ba'din, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 2 / 286 [3] Sharh al-Wiqayah, Kitab ash-Shuf'ah, Bab ma hiya fih etc., Matba' Yusufi Lucknow, 4 / 70 [4] Ghamz 'Uyun al-Basair, Al-Fann al-Khamis min al-Ashbah wan-Nazair, wa huwa Fann al-Hiyal, Idarat al-Qur'an wal-Ulum al-Islamiyyah Karachi, 2 / 292

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द दहम (दसवीं)

इसमें है:

अरबी	उर्दू
अज़-ज़कात अला अदमी जवाज़िल हीलति लि-इस्कातिज़ ज़कात व हुवा क़ौलु मुहम्मद र-हि-महुल्लाहु तआला व हुवल मु'तमद।[1]	फ़तवा जकात गिराने के हीले के गैर-जवाज़ (नाजायज़ होने) पर है और यही इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैह) का कौल है, और इसी पर भरोसा है। (त)

मजमा अल-अनहर में शरह अल-कन्ज़ अल-अयनी से है:

अरबी	उर्दू
अल-मुख्तारु इंदी अन ला तुकरहु फिश-शफ़'अति दूनज़ ज़कात।[2]	मेरे नज़दीक मुख्तार यह है कि शफ़आ (पूर्व-क्रयाधिकार) में हीला मकरूह नहीं है लेकिन जकात में मकरूह है। (त)

विकाया, इस्लाह और ईज़ाह में है:

अरबी	उर्दू
वल-लफ्ज़ु लि-हाज़ैनी ला युकरहु हीलतु इस्कातिश-शफ़'अति अज़-ज़कात इंदा अबी यूसुफ़ खिलाफ़न लि-मुहम्मद व युफ़्ता फ़िल-अव्वालि बि-क़ौलि-अव्वालि व फ़िथ-थानी बि-क़ौलिथ-थानी।[3]	इन दोनों की इबारत यह है: शफ़आ और जकात को गिराने के लिए हीला इमाम अबू यूसुफ़ के नज़दीक मकरूह नहीं है लेकिन इमाम मुहम्मद का इसमें इख्तिलाफ़ (मतभेद) है। पहले (शफ़आ) में पहले इमाम (अबू यूसुफ़) के कौल पर और दूसरे (जकात) में दूसरे इमाम (मुहम्मद) के कौल पर फ़तवा है। (त)

इमामों के इमाम, उम्मत के चिराग, हमारे आका इमाम आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) का मज़हब भी इमाम मुहम्मद का ही मज़हब है कि ऐसा अमल मना और बुरा है। गम्ज़ अल-उयून में तातार खानिया से है:

अरबी	उर्दू
काना ममनूअन मकरूहान इंदल इमामि व मुहम्मद।[4]	यह (हीला) इमाम आज़म और इमाम मुहम्मद दोनों के नज़दीक मकरूह है। (त)

तो इमाम की तरफ वह निस्बत (सम्बन्ध) कि उन्होंने फ़रमाया (अबू यूसुफ़ ने सही कहा) खुद इमाम के मज़हब के साफ़ खिलाफ है। दूसरा: बल्कि खिज़ानतुल मुफ़्तीन में फ़तावा कुब्रा से है:

---

[1] गम्ज़ उयून अल-बसार, अल-फन्न अल-खामिस मिन अल-अशबाह वन-नज़ायर आदि, इदारातुल कुरान वल उलूम अल-इस्लामिया कराची, 2 / 292 [2] मजमा अल-अनहर शरह मुल्तका अल-अबहुर, फ़स्ल व तब्तुलुश-शफ़'अतु बि-तस्लीम अल-कुल्लि औ बज़िन, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बेरूत, 2 / 286 [3] शरह अल-विकाया, किताबुश-शफ़'अह, बाब मा हिया फ़ीह आदि, मतब' यूसुफी लखनऊ, 4 / 70 [4] गम्ज़ उयून अल-बसार, अल-फन्न अल-खामिस मिन अल-अशबाह वन-नज़ायर, व हुवा फन्नुल हियल, इदारातुल कुरान वल उलूम अल-इस्लामिया कराची, 2 / 292

पेज 194 / 836

جلد دہم فتاوٰی رضویہ

میں ہے:

عربی	اردو
الزکوۃ علی عدم جواز الحیلۃ لاسقاط الزکوۃ وھو قول محمد رحمہ اللہ تعالی وھو المعتمد۔[1]	فتوٰی حیلہ اسقاط زکوۃ کے عدم جواز پر ہے اور یہی امام محمد رحمہ اللہ تعالٰی کا قول ہے، اور اسی پر اعتماد ہے (ت)

مجمع الانہر میں شرح الکنز للعینی سے ہے:

عربی	اردو
المختار عندی ان لا تکرہ فی الشفعۃ دون الزکوۃ۔[2]	میرے نزدیک مختار یہ ہے کہ شفعہ میں حیلہ مکروہ نہیں لیکن زکوۃ میں مکروہ ہے۔ (ت)

وقایہ واصلاح وایضاح میں ہے:

عربی	اردو
واللفظ لھذین لا یکرہ حیلۃ اسقاط الشفعۃ الزکوۃ عند ابی یوسف خلافا لمحمد و یفتی فی الاول بقول الاول وفی الثانی بقول الثانی۔[3]	ان دونوں کی عبارت یہ ہے: اسقاط شفعہ و زکوۃ کے لیے حیلہ امام ابو یوسف کے نزدیک مکروہ نہیں لیکن امام محمد کو اس میں اختلاف ہے پہلے (شفعہ) میں پہلے امام (ابو یوسف) کے قول پر اور دوسرے (زکوۃ) میں دوسرے امام (محمد) کے قول پر فتوٰی ہے۔ (ت)

امام الائمہ سراج الامہ حضرت سیدنا امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا مذہب بھی یہی مذہب امام محمد ہے کہ ایسا فعل ممنوع و بد ہے۔ غمز العیون میں تاتار خانیہ سے ہے:

عربی	اردو
کان ممنوع مکروھا عند الامام و محمد۔[4]	یہ (حیلہ) امام اعظم اور امام محمد دونوں کے نزدیک مکروہ ہے۔ (ت)

تو امام کے طرف وہ نسبت تصویب کہ انہوں نے فرمایا (ابو یوسف نے درست فرمایا) خود مذہب امام کے صریح خلاف ہے۔ ثانیاً: بلکہ خزانتہ المفتین میں فتاویٰ کبریٰ سے ہے:

---

[1] غمز عیون البصائر الفن الخامس من الاشباہ والنظائر الخ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲ / ۲۹۲ [2] مجمع الانہر شرح ملتقی الابحر فصل وتبطل الشفعۃ بتسلیم الکل او بعض دار احیاء التراث العربی بیروت ۲ / ۲۸۶ [3] شرح الوقایۃ کتاب الشفعہ باب ماہی فیہ الخ مطبع یوسفی لکھنؤ ۴ / ۷۰ [4] غمز عیون البصائر الفن الخامس من الاشباہ والنظائر وہو فن الحیل ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۲ / ۲۹۲

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

Arabic Text	Urdu Translation
Using a legal ruse (hila) to nullify the right of pre-emption (shuf'a) after it has been established is disliked (makruh) because it involves nullifying an obligatory right. However, before it is established, there is no harm in using a ruse; this is the chosen view. And using a ruse to prevent the obligation of Zakat is disliked by consensus.[1]	It is disliked to use a ruse to nullify the right of pre-emption after its establishment because it is to nullify an obligatory right, but there is no harm in using a ruse before establishment, and this is the preferred view. And to use a ruse for obstructing the obligation of Zakat is disliked by consensus. (T)

From this, it is proven that there is a consensus among all our Imams on its impermissibility. Hazrat Imam Abu Yusuf also considers it disliked and deems it forbidden and unlawful, as absolute dislike (karahat) refers to prohibitive dislike (karahat al-tahrim), especially since the transmission of consensus shows that the schools of all our Imams are unified here. There is no doubt that the school of Imam al-A'zam (Abu Hanifa) and Imam Muhammad is that this ruse is unlawful. You have already heard the words of "Ghamz al-Uyun," which clearly state its impermissibility. I say: even if there are contradictory reports, for the purpose of reconciliation, let us interpret the word "disliked" in this consensus report in a broader sense,

Arabic Text	Urdu Translation
For sometimes it occurs like this, as their saying regarding prayer: "such and such is disliked", and they meant both types of disliked actions (tahrimi and tanzihi).	So sometimes it also appears like this, as the saying of the jurists in the chapter of prayer that "such and such thing is disliked", and they mean both types of disliked actions. (T)

Thus, the result will be that there is a consensus among our Imams on this ruse being disliked and undesirable. The disagreement is that Imam Abu Yusuf says it is mildly disliked (makruh tanzihi), while Imam al-A'zam and Imam Muhammad say it is prohibitively disliked (makruh tahrimi). This humble servant has personally read this noble passage in the widely transmitted and esteemed book "Kitab al-Kharaj" by Imam Abu Yusuf (may Allah be pleased with him) (Bulaq Press, Egypt, page 45):

Arabic Text

Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) said: It is not permissible for a man who believes in Allah and the Last Day to withhold Zakat, nor to transfer it from his ownership to the ownership of a group of others in order to divide it, so that Zakat is nullified, such that each of them possesses a quantity of camels, cattle, or sheep that does not reach the taxable threshold (nisab). One must not resort to a ruse to nullify Zakat in any way or by any means. We have received from Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him)...

[1] Khizanat al-Muftin

Urdu Translation

Meaning Imam Abu Yusuf says that it is not lawful for any person who believes in Allah and the Day of Judgment to not give Zakat, or to transfer it from his ownership to others' ownership such that the ownership is dispersed and Zakat does not become obligatory because now each one has less than the nisab, and he should not use any trick or method to nullify Zakat in any way. A Hadith has reached us from Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him) that he said: "The one who does not give Zakat does not remain a Muslim," and for the one who does not give Zakat, his...

फ़तावा रिज़विया, जिल्द दहम (10)

अरबी पाठ

शुफ़अ (अग्रक्रय) के अधिकार को सिद्ध होने के बाद रद्द करने के लिए हीला (कानूनी युक्ति) करना मकरूह है क्योंकि यह एक वाजिब हक को बातिल (रद्द) करना है। लेकिन सिद्ध होने से पहले हीला करने में कोई हर्ज नहीं है, और यही पसंदीदा मत है। और ज़कात की अनिवार्यता को रोकने के लिए हीला करना सर्वसम्मति (इजमा) से मकरूह है।[1]

उर्दू अनुवाद

सुबूत के बाद इब्ताल-ए-शुफ़ा (शुफ़ा को रद्द करने) के लिए हीला करना मकरूह है क्योंकि यह हक़-ए-वाजिब को बातिल करना है, लेकिन सुबूत से पहले हीला में कोई हर्ज नहीं और यही मुख्तार (पसंदीदा) है और वुजूब-ए-ज़कात (ज़कात की अनिवार्यता) में रुकावट के लिए हीला करना बिल-इजमा मकरूह है। (त)

यहाँ से साबित हुआ कि हमारे तमाम आइम्मा (इमामों) का इसके नाज़ायज़ होने पर इजमा है। हज़रत इमाम अबू यूसुफ़ भी इसे मकरूह रखते हैं, ममनू (वर्जित) और नाज़ायज़ जानते हैं क्योंकि मुतलक़ कराहत (पूर्ण अरुचि) कराहत-ए-तहरीमी (निषिद्ध) के लिए है, विशेष रूप से इजमा का उल्लेख यह बता रहा है कि यहाँ हमारे सब आइम्मा का मज़हब एक है। इसमें कोई शक नहीं कि इमाम-ए-आज़म और इमाम मुहम्मद का मज़हब इस हीले का नाज़ायज़ होना है। "ग़म्ज़ुल उयून" के शब्द आप सुन चुके हैं कि साफ़ तौर पर अदम-ए-जवाज़ (अमान्यता) की तसरीह (स्पष्टीकरण) है। मैं कहता हूँ: अगर बहुत सी रिवायतों के विपरीत होने की वजह से, सुलह की ग़रज़ से इस इजमा की रिवायत में कराहत को व्यापक अर्थों में लिया जाए,

अरबी पाठ

तो कभी यूँ भी आता है जैसा कि नमाज़ के बारे में फ़ुक़हा (धर्मशास्त्रियों) का कहना है कि फलां-फलां चीज़ मकरूह है, और वे मकरूह की दोनों श्रेणियों (तहरीमी और तंज़ीही) को मुराद लेते हैं।

उर्दू अनुवाद

तो कभी यूँ भी आता है जैसा कि फ़ुक़हा का नमाज़ के बाब (अध्याय) में कहना कि फलां-फलां चीज़ मकरूह है और मकरूहात की दोनों किस्मों को मुराद लेते हैं। (त)

तो हासिल यह होगा कि इस हीले के मकरूह और नापसंद होने पर हमारे आइम्मा का इजमा है। मतभेद इसमें है कि इमाम अबू यूसुफ़ इसे मकरूह-ए-तंज़ीही फरमाते हैं और इमाम-ए-आजम और इमाम मुहम्मद इसे मकरूह-ए-तहरीमी। और इस दास ने स्वयं इमाम अबू यूसुफ़ रज़ियल्लाहु अन्हु

की प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित पुस्तक "किताबुल ख़राज" में यह इबारत पढ़ी है (बोलक प्रेस, मिस्र, पृष्ठ 45):

अरबी पाठ

इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाह अलैहि) ने फरमाया: जो व्यक्ति अल्लाह और परलोक के दिन पर ईमान रखता है, उसके लिए ज़कात न देना या अपनी संपत्ति को दूसरों के स्वामित्व में देना हलाल नहीं है ताकि इसे विभाजित करके ज़कात के दायित्व को समाप्त किया जा सके, क्योंकि ऊंटों, गायों और भेड़ों में से प्रत्येक का हिस्सा निसाब (न्यूनतम कर योग्य सीमा) से कम हो जाएगा। ज़कात को समाप्त करने के लिए किसी भी तरह से या किसी भी कारण से हीला नहीं किया जाना चाहिए। हमें इब्न मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु से यह हदीस मिली है...

उर्दू अनुवाद

यानी इमाम अबू यूसुफ़ फरमाते हैं कि किसी व्यक्ति को जो अल्लाह और क़यामत पर ईमान रखता हो, यह हलाल नहीं है कि वह ज़कात न दे या अपनी मिल्कियत से दूसरों को दे दे जिससे मिल्कियत बंट जाए और ज़कात वाजिब न रहे क्योंकि अब हर एक के पास निसाब से कम है, और वह किसी भी तरह ज़कात खत्म करने का हीला न करे। हमें इब्न मसूद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से हदीस पहुँची है कि उन्होंने फरमाया: "ज़कात न देने वाला मुसलमान नहीं रहता," और जो ज़कात न दे उसकी...

[1] ख़ज़ानतुल मुफ़्तीन

पेज 195 (836 में से)

عربی عبارت	اردو ترجمہ
الحيلة في ابطال الشفعة بعد ثبوتها يكره لانه ابطال لحق واجب واما قبل الثبوت فلا باس به وهو المختار والحيلة في منع وجوب الزكوة تكره بالاجماع-1	ثبوت کے بعد ابطالِ شفعہ کے لیے حیلہ کرنا مکروہ ہے کیونکہ یہ حق واجب کو باطل کرنا ہے لیکن ثبوت سے پہلے حیلہ میں کوئی حرج نہیں اور یہی مختار ہے اور وجوب زکوٰۃ میں رکاوٹ کے لیے حیلہ کرنا بالاجماع مکروہ ہے۔ (ت)

یہاں سے ثابت کہ ہمارے تمام ائمہ کا اس کے عدم جواز پر اجماع ہے، حضرت امام ابو یوسف بھی مکروہ رکھتے ہیں ممنوع و ناجائز جانتے ہیں کہ مطلق کراہت کراہت تحریم کے لیے ہے خصوصاً نقل اجماع کہ یہاں ہمارے سب ائمہ کا مذہب متحد بتا رہی ہے اور شک نہیں کہ مذہب امام اعظم و امام محمد اس حیلہ کا ناجائز ہونا ہے، غمز العیون کے لفظ سن چکے کہ صاف عدم جواز کی تصریح ہے اقول: اگر بتظافر نقول خلاف، بغرض توفیق اس روایت اجماع میں کراہت کو معنی اعم پر حمل کریں،

عربی عبارت	اردو ترجمہ
فربما تجئ كذا كقولهم فى الصلوة كره كذا وكذا و ارادوا به المكروهات من القسمين۔	تو کبھی یوں بھی آتا ہے جیسا کہ فقہاء کا نماز کے باب میں کہنا کہ فلاں فلاں چیز مکروہ ہے اور مکروہات کی دونوں قسموں کو مراد لیتے ہیں (ت)

تو حاصل یہ ہوگا کہ اس حیلہ کے مکروہ و ناپسند ہونے پر ہمارے ائمہ کا اجماع ہے، خلاف اس میں ہے کہ امام ابو یوسف مکروہ تنزیہی فرماتے ہیں اور امام اعظم و امام محمد مکروہ تحریمی۔ اور فقیر نے بچشم خود امام ابی یوسف رضی اللہ عنہ کی متواتر کتاب مستطاب الخراج میں یہ عبارت شریفہ مطالعہ کی (مطبع میری بولاق مصر صفحہ ۴۵):

عربی عبارت

قال ابو یوسف رحمه الله لا یحل لرجل یؤمن بالله والیوم الاخر منع الصدقة ولا اخراجها من ملکه الی ملک جماعة غیره لیفرقها بذلک فتبطل الصدقة عنها بان یصیر لکل واحد منهم من الابل والبقر والغنم مالا یجب فیه الصدقة ولا یحتال فی ابطال الصدقة بوجه ولا سبب بلغنا عن ابن مسعود رضی الله تعالی عنه

اردو ترجمہ

یعنی امام ابو یوسف فرماتے ہیں کسی شخص کو جو اللہ و قیامت پر ایمان رکھتا ہو یہ حلال نہیں کہ زکوٰۃ نہ دے یا اپنی ملک سے دوسروں کی ملک میں دے دے جس سے ملک متفرق ہو جائے اور زکوٰۃ لازم نہ آئے کہ اب ہر ایک کے پاس نصاب سے کم ہے اور کسی طرح کسی صورت ابطالِ زکوٰۃ کا حیلہ نہ کرے، ہم کو ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے حدیث پہنچی ہے کہ انہوں نے فرمایا زکوٰۃ نہ دینے والا مسلمان نہیں رہتا، اور جو زکوٰۃ نہ دے اس کی

1 خزانة المفتين

Fatawa Ridawiyya Volume 2

Indeed, he said: The one who refuses to pay Zakat is a Muslim, but whoever does not pay it, his prayer is not accepted. **Prayer is rejected.**

The narration of consensus in *Fatawa Kubra* and *Khizanat al-Muftiyeen* supports the statement of generality, and its application to that consensus. Imam Abu Yusuf authored this fine book for Khalifa Harun, while he served as the Chief Justice and the Judge of the East and the West during the Harunid caliphate. In it, with full declaration of the truth, he gave instructions to the Caliph that were befitting of a high-ranking divine Imam, stating that in matters of Allah, one should not fear or favor any sultan or caliph. The Caliph (may Allah have mercy on him) listened to these instructions in a manner worthy of a God-fearing sultan and Leader of the Faithful—that the advice of Imams and scholars, even if seemingly bitter, should be heard with acceptance and humility. This period was the latter part of the Imam's life, preceding the assembly of our master Imam al-Azam or shortly thereafter, when the differences among the three Imams were recorded. Therefore, there is no need to deviate from the apparent meaning of the narration of consensus. The reconciliation would be that Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) recanted this opinion, and his final view became the same as that of his supreme teacher, the Leader of Imams, and his senior student Imam Muhammad (may Allah be pleased with them all). When a leading figure of religion recants an opinion, it is no longer considered his view, and criticism is not permissible. Just as criticism is not valid against our master Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them both), who for a long time held the view of the permissibility of *Mut'ah* (temporary marriage), until Abdullah bin Zubair (may Allah be pleased with them both) said to him during his caliphate, "Try it for yourself; if you perform *Mut'ah*, I will stone you." In his later years, he recanted and said: Allah Almighty has made only the legal wife and the female slave permissible. "So every private part besides these two is forbidden."[2] (Narrated by at-Tirmidhi). Or as criticism against Zaid bin Arqam (may Allah be pleased with him) for previously declaring certain forms of usury (Riba) permissible, until Umm al-Mu'minin Aisha (may Allah be pleased with her) said, "Inform Zaid that if he does not desist from this view, Allah will invalidate the Hajj and Jihad he performed alongside the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him)."[3] (Narrated by al-Daraqutni).

Fourthly: This anecdote is not proven by any authentic chain of narration, and being mentioned without a chain of narration, how can it be used for criticism?

1. *Kitab al-Kharaj*, Chapter on Increase and Decrease etc., Bulaq Press, Egypt, p. 86.
2. *Jami' at-Tirmidhi*, Chapters on Nikah, Chapter on what has been narrated regarding Nikah al-Mut'ah, Amin Company, Kutub Khana Rashidiyah, Delhi, 1/174.
3. *Sunan al-Daraqutni*, Kitab al-Buyu', Hadith 211, Nashr us-Sunnah Multan, 3/52.

फ़तावा रिज़विया जिल्द 2

बेशक, उन्होंने कहा: ज़कात न देने वाला मुसलमान है, लेकिन जो इसे अदा नहीं करता, उसकी नमाज़ स्वीकार नहीं है। **नमाज़ मरदूद है।**

फ़तावा कुबरा और खिज़ानतुल मुफ़्तीइन में इजमा (आम सहमति) का उल्लेख व्यापकता के कथन का समर्थन कर रहा है, और उस इजमा पर इसका अनुप्रयोग है। इमाम अबू यूसुफ़ ने यह उत्तम पुस्तक खलीफ़ा हारून के लिए रची थी, जबकि वे हारूनी खिलाफत में मुख्य न्यायाधीश और पूर्व एवं पश्चिम के न्यायाधीश थे। इसमें सत्य की पूर्ण घोषणा के साथ, उन्होंने खलीफ़ा को वे निर्देश दिए जो एक उच्च श्रेणी के ईश्वरीय इमाम के योग्य थे, कि अल्लाह के मामले में सुल्तान और खलीफ़ा किसी का डर या लिहाज़ न करें। खलीफ़ा (अल्लाह उन पर रहम करे) ने इन निर्देशों को उसी तरह सुना जो एक ईश्वर-भक्त सुल्तान और अमीरुल मोमिनीन के योग्य है कि इमामों और विद्वानों की सलाह, चाहे वे ज़ाहिरी तौर पर कड़वी हों, स्वीकार्यता के साथ सुनें और उनकी विनम्रता करें। यह समय इमाम का अंतिम समय था, हमारे स्वामी इमाम-ए-आज़म की मजलिस-ए-मुबारक या उसके बाद का निकट समय, जिसमें तीनों इमामों के मतभेद दर्ज किए गए थे, उससे पहले का था। तो इस स्थिति में इजमा के उल्लेख को ज़ाहिर (प्रत्यक्ष) से फेरने की ज़रूरत नहीं है। सामंजस्य इस प्रकार होगा कि इमाम अबू यूसुफ़ (अल्लाह उन पर रहम करे) ने इस मत से रुजू (वापसी) कर लिया और उनका अंतिम मत वही ठहरा जो उनके महान शिक्षक इमामुल अइम्मा और उनके सबसे बड़े छात्र इमाम मुहम्मद (अल्लाह उन सभी से प्रसन्न हो) का है। और जब धर्म का एक इमाम किसी मत से रुजू कर ले, तो अब वह उनका मत नहीं रहता, न ही उस पर कोई आलोचना जायज़ है। जैसे हमारे स्वामी अब्दुल्लाह बिन अब्बास (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) पर कोई आलोचना जायज़ नहीं कि वे शुरू में वर्षों तक मुतअ (अस्थायी विवाह) की वैधता के कायल रहे, यहाँ तक कि अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) ने अपने खिलाफत के समय में उनसे कहा कि अपने आप पर आज़मा कर देखिए, अगर मुतअ किया तो मैं संगसार (पत्थर मार कर मौत की सज़ा) करूँगा। जीवन के अंतिम समय में उन्होंने इससे रुजू किया और कहा: अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल ने केवल शरीयत के अनुसार पत्नी और लौंडी, बस इन दो को हलाल फरमाया है, "तो इन दो के अलावा जो शर्मगाह है वह हराम है।"[2] (इसे तिरमिज़ी ने रिवायत किया है)। या ज़ैद बिन अरक़म (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) पर आलोचना की जाए कि वे पहले सूद (ब्याज) की कुछ सूरतों को हलाल बताते थे, यहाँ तक कि उम्मुल मोमिनीन सिद्दीक़ा (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) ने फरमाया कि ज़ैद को खबर दे दो कि अगर वह इस मत से

बाज़ न आए, तो उन्होंने रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के साथ मिलकर जो हज और जिहाद किया है, अल्लाह तआला उसे बातिल (अमान्य) कर देगा।[3] (इसे दारक़ुतनी ने रिवायत किया है)।

चौथी बात: यह वृत्तांत किसी प्रामाणिक सनद से सिद्ध नहीं है, और बिना सनद के उल्लेख होना आलोचना के लिए क्या लाभ दे सकता है?

---

1. किताबुल ख़राज, ज़्यादती और कमी आदि का अध्याय, बुलाक़ प्रेस, मिस्र, पृष्ठ 86।
2. जामिउत तिरमिज़ी, निकाह के अध्याय, निकाह अल-मुतअ के बारे में जो वर्णित है, अमीन कंपनी, कुतुब खाना रशीदिया, दिल्ली, 1/174।
3. सुनन अद-दारक़ुतनी, खरीद-बिक्री की किताब, हदीस 211, नश्रुस सुन्ना मुल्तान, 3/52।

انہ قال مانع الزکوۃ بمسلم ومن لم یؤدھا فلا صلوۃ لہ[1] نماز مردود ہے۔

فتاوٰی کبرٰی و خزانتہ المفتیین کی نقلِ اجماع عبارتِ اطلاق کی تائید کررہی ہے اور اس کا اطلاق اُس اجماع کی، امام ابویوسف نے یہ کتاب مستطاب خلیفہ ہارون کے لیے تصنیف فرمائی ہے جبکہ امام خلافت ہارونی میں قاضی القضاۃ و قاضی الشرق والغرب تھے اُس میں کمالِ اعلانِ حق کے ساتھ خلیفہ کو وہ ہدایات فرمائی ہیں جو ایک اعلیٰ درجے کے امام ربانی کے شایانِ شان تھیں کہ اللہ کے معاملے میں سُلطان و خلیفہ کسی کا خوف و لحاظ نہ کرے اور خلیفہ رحمہ اللہ تعالیٰ نے ان ہدایات کو اسی طرح سنا ہے جو ایک خدا پرست سلطان و امیر المومنین کے لائق ہے کہ نصائح ائمہ و علماء اگرچہ بظاہر تلخ ہوں گوشِ قبول سے سنے اور اُن کے حجرِ فروتنی کرے، یہ زمانہ امام کا آخر زمانہ تھا، حاضرین مجلسِ مبارک سیّدنا امامِ اعظم یا اُس کے بعد کا قریب زمانہ جس میں خلافیاتِ ائمہ ثلاثہ منقول ہوئی ہیں، اس سے متقدم تھا، تو اس تقدیر پر نقلِ اجماع کو ظاہر سے پھیرنے کی حاجت نہیں، تطبیق یوں ہوگی کہ امام ابی یوسف رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ نے اس قول سے رجوع فرمایا اور اُن کا آخر قول یہی ٹھہرا جو ان کے استاذِ اعظم امام الائمہ اور شاگردِ اکبر امام محمد کا ہے رضی اللہ تعالیٰ عنہم اجمعین، اور ایک امام دین جب ایک قول سے رجوع فرمائے تو اب وہ اس کا قول نہ رہا، نہ اس پر طعن روا، نہ سیّد نا عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما پر طعن کیا کہ وہ ابتداء میں جوازِ متعہ مدتوں قائل رہے ہیں یہاں تک کہ عبد اللہ بن زبیر رضی اللہ تعالیٰ عنہما نے اپنے زمانہ خلافت میں اُن سے فرمایا کہ اپنے ہی اوپر آزما دیکھئے، اگر متعہ کرو تو میں سنگسار کروں، آخر زمانہ میں اس سے رجوع کیا اور فرمایا: اللہ عزوجل نے زوجہ و کنیز شرعی بس ان دو کو حلال فرمایا ہے فکل فرج سواھما حرام [2] ان دو کے سوا جو فرج ہے حرام

ہے، رواہ الترمذی (اسے ترمذی نے روایت کیا۔ ت) زید بن ارقم رضی اللہ تعالیٰ عنہ پر طعن کیا جائے کہ وہ پہلے سُود کی بعض صُورتیں حلال بتاتے ہیں یہاں تک اُمّ المومنین صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا نے فرمایا کہ زید کو خبر دے دو کہ اگر وہ اس قول سے باز نہ آئے تو انہوں نے جو حج و جہاد رسول اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے ہمراہ رکاب کیا اللہ تعالیٰ اسے باطل فرمادے گا۔[3] رواہ الدارقطنی (اسے دار قطنی نے روایت کیا۔ ت)

رابعاً: یہ حکایت کسی سندِ مستند سے ثابت نہیں، اور بے سند مذکور ہونا طعن کے لیے کیا نفع دے سکتا ہے

---

1 کتاب الخراج باب فی الزیادۃ والنقصان الخ مطبع بولاق مصر ص ۸۶ 2 جامع الترمذی ابواب النکاح باب ما جاء فی نکاح المتعۃ امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۱ / ۱۷۴ 3 سنن الدار قطنی کتاب البیوع حدیث ۲۱۱ نشر السنۃ ملتان ۳ / ۵۲

Fatawa Razawiyya Volume 10

Especially in such a book where those hadiths are attributed to the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) himself, regarding which the Imams of Hadith have decisively stated that they are false, fabricated, and lies.

| ولكل فن رجال و لكل مجال ويا بى اللہ العصمة الا لكلامه و لكلام رسوله صلى اللہ تعالىٰ عليه وسلم۔ | There are experts for every field, and in all experts there is a possibility of error. Allah Almighty has granted infallibility only to His own words and the words of His Messenger, peace and blessings of Allah be upon him. (T) |

A ruling of permissibility in the ijtihad of a mujtahid is one thing, and being guilty of it himself is another; these pillars of divine religion repeatedly state concessions for the common people while acting upon determination themselves. Our Master, the Greatest Imam, Imam of the Imams, Lamp of the Nation, Remover of Sorrow, Possessor of the Times, may Allah be pleased with him, says:

| لا احرم النبيذ الشديد ديانة ولا اشربه مروءة۔ | I do not declare strong Nabidh (a fermented beverage) forbidden by religion, but I do not drink it out of personal dignity. (T) |

His student's student, Muhammad bin Muqatil al-Razi, says:

| لواعطيت الدنيا بحذافيرها ماشربت المسكر يعنى نبيد التمر والزبيب ولو اعطيت الدنيا بحذافيرها ماافتيت بانه حرام، ذكره الامام البخاري في الخلاصة۔ | If the whole world were given to me, I would not drink intoxicating things, i.e., Nabidh made from dates and raisins, and even if the whole world were bestowed upon me, I could not give a fatwa of it being haram. Imam Bukhari has mentioned this in 'Khulasah'. (T) |

Fifthly: Imam Hujjat-ul-Islam Ghazali (may his secret be sanctified) states in Ihya al-Ulum al-Sharif:

| فان قيل هل يجوز لعن يزيد لانه قاتل الحسين وأمر به قلنا هذا لم يثبت اصلاً فلا يجوز ان يقال انه قتل او امر به مالم يثبت فضلا عن اللعنة لانه | If it is asked whether it is permissible to curse Yazid because he is the killer of Imam Hussain (may Allah be pleased with him) or he ordered your murder, then we say: this is basically not proven. Until this is proven, then it... |

1. Khulasat-ul-Fatawa, Kitab-ul-Ashribah, Maktabah Habibiyyah, Quetta, 205/4

फतावा रज़विया खंड दसवाँ

विशेष रूप से ऐसी पुस्तक में जिसमें वे हदीसें स्वयं अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की ओर इस प्रकार संबोधित हैं जिनके बारे में हदीस के इमामों ने दृढ़ता से कहा है कि वे असत्य, मनगढ़ंत और झूठी हैं।

| ولكل فن رجال و لكل مجال ويا بى اللہ العصمة الا لكلامه و لكلام رسوله صلى اللہ تعالىٰ عليہ وسلم। | हर विषय के विशेषज्ञ होते हैं और सभी विशेषज्ञों में गलती की संभावना होती है। अल्लाह तआला ने निष्पापता केवल अपने कलाम और अपने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के कलाम को ही प्रदान की है। (त) |

एक मुजतहिद के इज्तिहाद में किसी कार्य की अनुमति देना एक बात है और स्वयं उसका अपराधी होना दूसरी बात है; ईश्वरीय धर्म के ये स्तंभ बार-बार आम लोगों के लिए रियायतें (छूट) बताते हैं और स्वयं दृढ़ता पर कार्य करते हैं। हमारे स्वामी इमाम-ए-आज़म, इमामों के इमाम, उम्मत के चिराग़, ग़मों को दूर करने वाले, रज़ियल्लाहु तआला अन्हु फ़रमाते हैं:

| لا احرم النبيذ الشديد ديانة ولا اشربه مروءة۔ | मैं नबीज़ को दीनी तौर पर हराम नहीं कहता लेकिन अपनी गरिमा के कारण इसे पीता नहीं हूँ। (त) |

उनके शिष्य के शिष्य मुहम्मद बिन मुक़ातिल रज़ी कहते हैं:

| لواعطيت الدنيا بحذافيرها ماشربت المسكر يعنى نبيد التمر والزبيب ولو اعطيت الدنيا بحذافيرها ماافتيت بانه حرام، ذكره الامام البخاري في الخلاصة۔ | अगर पूरी दुनिया मुझे दे दी जाए तो मैं नशीली चीज़ यानी खजूर और किशमिश की नबीज़ नहीं पीऊंगा, और अगर मुझे पूरी दुनिया प्रदान कर दी जाए तो मैं इसके हराम होने का फ़तवा नहीं दे सकता, इमाम बुखारी ने 'खुलासा' में इसका उल्लेख किया है। (त) |

पाँचवाँ: इमाम हुज्जतुल इस्लाम गज़ाली (अल्लाह उनकी पवित्रता को बढ़ाए) 'इहया उल उलूम शरीफ़' में फ़रमाते हैं:

| فان قيل هل يجوز لعن يزيد لانه قاتل الحسين وأمر به قلنا هذا لم يثبت اصلاً فلا يجوز ان يقال انه قتل او امر به مالم يثبت فضلا عن اللعنة لانه | अगर सवाल किया जाए कि क्या यज़ीद पर लानत करना जायज़ है क्योंकि वह इमाम हुसैन रज़ियल्लाहु तआला अन्हु का हत्यारा है या उसने

आपके कत्ल का हुक्म दिया है, तो हम कहते हैं कि यह मूलतः साबित नहीं है जब तक कि यह साबित न हो जाए तो उसे... |

1. खुलासात-उल-फ़तावा, किताबुल अशरिबहा, मकतबा हबीबिया, क्वेटा, 205/4 पृष्ठ 197/836

وہ بھی ایسی کتاب میں خصوصاً جس میں تو وہ حدیثیں خود رسول اللہ صلی تعالٰی علیہ وسلم کی طرف ایسی منسوب ہیں جن کی نسبت ائمہ حدیث نے جزم کیا کہ باطل و موضوع و مکذوب ہیں۔

| ولکل فن رجال و لکل مجال ویا بی اللہ العصمۃ الا لکلامہ و لکلام رسولہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم۔ | ہر فن کے ماہرین ہیں اور تمام ماہرین میں خطا کا امکان ہے۔ اللہ تعالٰی نے عصمت صرف اپنے کلام اور اپنے رسول صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے کلام ہی کو عطا فرمائی ہے۔ (ت) |

مجتہد کے اجتہاد میں کسی فعل کا جواز آنا اور بات اور خود اس کا مرتکب ہونا اور بات، یہ اساطین دین الٰہی بار بار عوام کے لئے رخصت بتاتے اور خود عزیمت پر عمل کرتے۔ سیدنا امام اعظم امام الائمہ سراج الامہ کاشف الغمہ مالک الازمہ رضی اللہ تعالٰی عنہ فرماتے ہیں:

| لا احرم النبیذ الشدید دیانۃ ولا اشربہ مروءۃ۔ | میں نبیذ کو دیانتہً حرام نہیں کہتا لیکن مروءتًا اسے پیتا نہیں ہوں۔ (ت) |

ان کے شاگرد کے شاگرد محمد بن مقاتل رازی کہتے ہیں:

| لواعطیت الدنیا بحذافیرھا ماشربت المسکر یعنی نبید التمر والزبیب ولو اعطیت الدنیا بحذافیرھا ماافتیت بانہ حرام، ذکرہ الامام البخاري في الخلاصۃ۔ | اگر تمام دنیا مجھے دے دی جائے تو میں نشہ آور چیز یعنی تمر اور زبیب کا نبیذ نہ پیوں گا، اور اگر مجھے تمام دنیا عطا کر دی جائے تو میں اس کے حرام ہونے کا فتوٰی نہیں دے سکتا، امام بخاری نے خلاصہ میں اس کا ذکر کیا ہے۔ (ت) |

خامساً: امام حجتہ الاسلام غزالی قدس سرہ الشریف احیاء العلوم شریف فرماتے ہیں:

| فان قیل ھل یجوز لعن یزید لانه قاتل الحسین وأمر به قلنا ھذا لم یثبت اصلاً فلا یجوز ان یقال انه قتل او امر به مالم یثبت فضلا عن اللعنة لانه | اگر سوال کیا جائے کہ کیا یزید پر لعنت کرنا جائز ہے کیونکہ وہ امام حسین رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا قاتل ہے یا اس نے آپ کے قتل کا حکم دیا ہے، تو ہم کہتے ہیں کہ یہ اصلاً ثابت نہیں جب تک یہ ثابت نہ ہو جائے تو اسے |

1. خلاصة الفتاوی کتاب الاشر بہ مکتبہ حبیبہ کوئٹہ ۲۰۵/۴ صفحہ 197 از 836

Fatawa Razawiyya, Volume Ten

[Section 1] Because it is not permissible to attribute a major sin to a Muslim without investigation. Yes, it is permissible to say that Ibn Muljam killed Ali and Abu Lu'lu' killed Umar (may Allah be pleased with them both), for this is proven by mass transmission (tawatur). So, it is not permissible to charge a Muslim with transgression (fisq) or disbelief (kufr) without investigation. (Source: Ihya Ulum-ud-Din, al-Afnatul Sabitah al-La'n, Maktaba wa Matba' al-Mashhad al-Husaini, Cairo, 3/125)

[Section 2] I say: This action is narrated from Imam Abu Yusuf (may Allah be pleased with him). Is it an ijtihadi error, or does he not possess that capability, but God forbid, it is a deliberate defiance against Allah's obligation? On the first supposition, what is the meaning of criticism? A mujtahid receives reward for his error, though the reward for being correct is double. And if, God forbid, the second possibility is assumed, then defiance against an obligation itself is certainly a major sin, especially that which is done habitually (as they used to do). Its implication is especially with the assumption that its harm in the hereafter is more than any other sin, then God forbid, it becomes the greatest of the major sins. Then how did it become permissible to attribute such a severe, extreme, not just major but greatest of major sins, to a Muslim—and not just any Muslim, but the Imam of Muslims—without tawatur? Not only without tawatur, but purely without any proof, based merely on hearsay. Glory be to Allah! Such attribution towards the cursed Yazid is considered impermissible and forbidden, on the grounds that his ordering the martyrdom of the oppressed Imam, our master Husain (may Allah be pleased with him), is not proven from that wretch by tawatur. Yet, it is deemed permissible to attribute such a severe and grave thing to our master Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him), even though, leave aside tawatur, there isn't even a broken chain of narration for it.

[Section 3] Thus, proof has been established upon proof with full proof, and the garment of the Imam of the Path (Imam al-Mahajja) has been cleared. The ultimate proof belongs only to Allah. Every swift horse can stumble, every sharp sword can become blunt, and every scholar can make a slip... Indeed, the Imam of Dar al-Hijrah, the scholar of Madinah, our master Imam Malik bin Anas (may Allah be pleased with him) spoke the truth when he said: "The word of everyone can be accepted or rejected, except for the inhabitant of this grave (meaning the Prophet Muhammad), peace and blessings be upon him."

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवां

[अनुभाग १] क्योंकि बिना जांच-पड़ताल के किसी मुसलमान पर बड़े पाप (कबीरा गुनाह) का आरोप लगाना जायज़ नहीं है। हाँ, यह कहना जायज़ है कि इब्न मुलजम ने हज़रत अली (रज़ियल्लाहु अन्हु) को और अबू लुअ़लुआ़ ने हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) को शहीद किया, क्योंकि यह बात तवातुर (निरंतरता) से सिद्ध है। इसलिए बिना जांच के किसी मुसलमान की ओर अवज्ञा (फ़िस्क़) या कुफ़्र का आरोप लगाना बिल्कुल जायज़ नहीं है। (त) (स्रोत: इहया उलूम-उद-दीन, अल-अफ़नातुल साबिथाह अल-लअ़न, मकतबा व मतब' अल-मशहद अल-हुसैनी, काहिरा, ३/१२५)

[अनुभाग २] मैं कहता हूँ: यह कृत्य इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाह अलैहि) के बारे में बताया जाता है। क्या यह उनकी इज्तिहादी (विवेकपूर्ण निर्णय) गलती है या उनमें वह योग्यता ही नहीं थी? बल्कि अल्लाह न करे, यह जानबूझकर अल्लाह के अनिवार्य आदेश (फ़रीज़ा) का विरोध है। पहली सूरत में, आलोचना का क्या अर्थ? मुजतहिद को अपनी गलती पर भी सवाब मिलता है, हालाँकि सही होने का सवाब दोगुना है। और यदि, अल्लाह न करे, दूसरी सूरत मान ली जाए, तो किसी अनिवार्य आदेश का स्वयं विरोध करना निश्चित रूप से कबीरा गुनाह है, विशेष रूप से वह जो आदत के तौर पर हो (जैसा कि वे किया करते थे)। इसका निहितार्थ विशेष रूप से इस धारणा के साथ है कि परलोक में इसका नुकसान हर गुनाह से अधिक है, तो अल्लाह न करे यह 'अकबर-उल-कबाइर' (सबसे बड़े पापों में से एक) हुआ। फिर यह कैसे जायज़ हो गया कि ऐसे कठोर, गंभीर, न केवल कबीरा बल्कि अकबर-उल-कबाइर को एक मुसलमान—और न केवल साधारण मुसलमान बल्कि मुसलमानों के इमाम—की ओर बिना तवातुर के, बल्कि बिना किसी ठोस आधार के, महज़ सुनी-सुनाई बातों पर मढ़ दिया जाए? सुभान अल्लाह! यज़ीद पलीद के लिए तो ऐसा आरोप लगाना नाजायज़ और हराम है क्योंकि उसका इमाम-ए-मज़लूम सैयदना हुसैन (रज़ियल्लाहु अन्हु) को शहीद करने का आदेश देना उस खबीस से तवातुर के साथ साबित नहीं है, और सैयदना इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाह अलैहि) की ओर इतनी गंभीर बात का आरोप लगाना जायज़ ठहराया जाए, जबकि तवातुर तो दूर, इसके लिए कोई टूटी-फूटी सनद (प्रमाण) भी नहीं है।

[अनुभाग ३] अब प्रमाण पर प्रमाण के साथ पूर्ण प्रमाण मिल गया और इमाम अल-महज्जा का दामन पाक हो गया। पूर्ण प्रमाण केवल अल्लाह के लिए ही है। हर तेज़ घोड़े को गिरना है और हर तलवार को कुंद होना है और हर विद्वान को चूक का सामना करना पड़ता है... इमाम दारुल हिजरत, मदीना के विद्वान, हमारे आका इमाम मालिक बिन अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने सच फरमाया कि हर किसी

की बात स्वीकार भी की जा सकती है और अस्वीकार भी, सिवाय इस कब्र के निवासी (यानी हज़रत मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के।

पृष्ठ १९८ का ८३६

[Section 1] لانہ لاتجوز نسبة مسلم الی کبیرة من غیر تحقیق نعم یجوز ان یقال قتل ابن ملجم علیا وقتل ابو لؤلؤ عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ فان ذلک ثبت متواتر افلا یجوز ان یرمی مسلم بفسق وکفر من غیر تحقیق۔ [1] قاتل یا اس کا آمر نہ کہا جائے چہ جائیکہ اس پر لعنت کی جائے کیونکہ بغیر تحقیق کسی مسلمان کی طرف کبیرہ گناہ کی نسبت کرنا جائز نہیں۔ ہاں یہ کہنا جائز ہے کہ حضرت علی رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو ابن ملجم اور حضرت عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو ابولؤلؤ نے شہید کیا کیونکہ یہ تواتر سے ثابت ہے تو بغیر تحقیق کسی مسلمان کی طرف فسق یا کفر کی نسبت کرنا ہر گز جائز نہیں۔ (ت) [1] احیاء العلوم الافنة الثابتہ اللعن مکتبہ و مطبعہ المشہد الحسینی القاہرة ۳/ ۱۲۵

[Section 2] اقول: یہ فعل امام ابو یوسف رحمہ اللہ تعالیٰ سے حکایت کیا جاتا ہے آیا خطاء اجتہادی ہے یا اس کی قابلیت نہیں رکھتا بلکہ معاذ اللہ عمداً فریضہ اللہ سے معاندت ہے، بر تقدیر اول اس سے طعن کے کیا معنیٰ مجتہد اپنی خطا پر ثواب پاتا ہے اگرچہ صواب کا ثواب دو نا ہے۔ اور اگر عیاذاً باللہ شق ثانی فرض کی جائے فرض خود سے معاندت قطعاً کبیرہ ہے خصوصاً وہ بھی برسبیل عادت جو (کر دیا کرتے تھے) کا مفاد ہے خصوصاً اس زعم کے ساتھ کہ آخرت میں اس کا ضرر ہر گناہ سے زائد ہے تو معاذ اللہ اکبر الکبائر ہوا پھر کیونکر حلال ہو گیا کہ ایسے سخت کبیرہ شدید نہ کبیرہ بلکہ اکبر الکبائر کو ایک مسلمان نہ صرف مسلمان بلکہ امام المسلمین کی طرف بلا تواتر نہ فقط بے تواتر بلکہ محض بلا سند صرف حکی کی بنا پر نسبت کر دیا جائے۔ سبحان اللہ! یزید پلید کی طرف تو یہ نسبت ناجائز و حرام ہو کہ اس نے امام مظلوم سیدنا حسین رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو شہید کرایا اس لیے کہ اس کا حکم دینا اس خبیث سے متواتر نہیں اور سیدنا

امام ابو یوسف رحمۃ اللہ علیہ کی طرف ایسی شدید عظیم بات نسبت کرنا حلال ٹھہرے حالانکہ تواتر چھوڑ کرا صلاً کوئی ٹوٹی پھوٹی سند بھی نہیں۔

[Section 3] فقد تمت الحجۃ بالحجۃ علی الحجۃ و طہر بہ ذیل امام المحجۃ واللہ الحجۃ البالغۃ ولکل جواد کبوۃ ولکل صارم نبوۃ ولکل عالم ھفوۃ ولقد صدق امام دار الھجرۃ عالم المدینۃ سیدنا الامام مالک بن انس رحمۃ اللہ تعالیٰ اذ یقول کل مأخوذ من قولہ ومردود علیہ الاصاحب ھذا القبر صلی اللہ علیہ و سلم الا اب حجت پر حجت کے ساتھ حجت تام ہو گئی اور امام المحجۃ کا دامن پاک ہو گیا اور کامل حجت اللہ تعالیٰ کے لیے ہی ہے ہر شہسوار کو گرنا اور ہر تلوار کند ہونا ہے اور ہر عالم کو لغزش کا سامنا ہے--- امام دار الہجرت عالم مدینہ سیدنا امام مالک بن انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے سچ فرمایا کہ ہر ایک کا قول ماخوذ بھی ہو سکتا ہے اور مردود بھی ماسوائے اس قبر کے مکین صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

Verily, those in whose hearts is deviation follow the lapses that appear, however rare they may be, seeking fitna (discord) in religion and causing pain to the hearts of Muslims. And Allah is the helper against the tyrants and rebellious apostates. There is no power and no strength except with Allah, the Most High, the Supreme.

Without doubt, those whose hearts are crooked follow these lapses however they appear, and by this, they create discord in religion and cause grief to the hearts of Muslims. Allah the Almighty is the helper against these rebels and rejected deviants. (T)

Sixthly: Mere abhorrence and considering something far-fetched without legal proof is not heard. Don't the people of spiritual paths (Suluk) strictly and severely condemn the lack of humility (Khushu) in prayer? They consider such prayer void, useless, corrupt, and defective. Yet, the consensus of the jurists (Fuqaha) is that Khushu is neither a pillar, nor an obligation, nor a condition of prayer. The opponent has not shown, nor can they show until the Day of Resurrection, that the matter under discussion is not a place for Ijtihad (independent legal reasoning). What then is the meaning of criticizing the Ijtihad of a Mujtahid? Even if, for the sake of argument, an action were proven to have occurred once or twice through a reliable chain, there is a world of difference between doing it and how it is done. The phrase 'kana yaf'alu' (used to do) is not a proof for repetition, as we have explained in 'al-Taj al-Mukallal fi Inarat Madlul Kana Yaf'alu' (as we mentioned in our treatise 'Al-Taj al-Mukallal...'-T). An actual event can have a hundred possible interpretations, such as an accidental necessity, an important matter, or if nothing else, just a demonstration of permissibility. Verily, an action is more complete and perfect than words. And (this is from their jurisprudence) it is not an endorsement (taswib). Its meaning is only that it was his Ijtihad, the purpose of which is merely to prevent criticism—that a Mujtahid is not blamed for his Ijtihad. Just as Hazrat Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them both) replied to Ikrimah when he complained about Amir Muawiya (may Allah be pleased with him) performing a single rak'ah for Witr: 'Leave him, for he is a jurist (faqih).' Narrated by Bukhari. Yes, regarding endorsement and verification, this story is reported in books: that Imam Zain al-Milla wa al-Din Abu Bakr was honored with the vision of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) in a dream. Someone of the Shafi'i school mentioned this statement of Imam Abu Yusuf

to the Prophet. The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: 'Abu Yusuf's proposal is the truth,' or he said, 'It is correct.' It is in Sharh an-Nuqaya:

And it has been supported by what is authentic according to us, that the most virtuous of scholars in his time and the most perfect of Gnostics in his era, Zain al-Milla wa al-Din Abu Bakr...	**This is supported by the event which is proven with authenticity according to us, that the most virtuous of scholars and most perfect of Gnostics of his time, Zain al-Millat wa al-Din Abu Bakr...**

F: Two Hadiths are reported at the mentioned place in Bukhari. One has the words 'Leave him, for he accompanied the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him),' and the other says 'He was correct, for he is a jurist.' AlaHazrat (may Allah have mercy on him) has adopted both Hadiths. - Nazir Ahmed

---

1 Sahih Bukhari, Chapter: Mention of Muawiya, Qadimi Kutub Khana Karachi 1/531

निश्चय ही जिनके दिलों में टेढ़ापन है, वे उन त्रुटियों का अनुसरण करते हैं जो प्रकट होती हैं, चाहे वे कितनी ही दुर्लभ क्यों न हों, धर्म में फ़ितना (कलह) पैदा करने और मुसलमानों के दिलों को दुख पहुँचाने की कोशिश करते हैं। और अल्लाह अत्याचारियों और विद्रोही धर्मत्यागियों के विरुद्ध सहायक है। अल्लाह के अलावा कोई शक्ति और कोई सामर्थ्य नहीं है, जो सबसे उच्च और महान है।

बिना किसी संदेह के, जिन लोगों के दिलों में टेढ़ापन है, वे उन त्रुटियों का अनुसरण करते हैं जैसे भी वे प्रकट हों, और इससे धर्म में फ़ितना पैदा करके मुसलमानों के दिलों को दुख पहुँचाते हैं। अल्लाह सर्वशक्तिमान इन बागियों और तिरस्कृत विद्रोहियों के खिलाफ मदद करने वाला है। (त)

छठा: बिना किसी शरई प्रमाण के मात्र घृणा और किसी बात को दूर की कौड़ी समझना मान्य नहीं है। क्या सुलूक (आध्यात्मिकता) के लोग नमाज़ में खुशु (विनम्रता) की कमी की कड़ी और सख्त निंदा नहीं करते? वे ऐसी नमाज़ को अमान्य, व्यर्थ, भ्रष्ट और दोषपूर्ण मानते हैं। जबकि फ़ुक़हा (विधिवेत्ताओं) की सहमति है कि खुशु न तो नमाज़ का रुक्न (स्तंभ) है, न फ़र्ज़ है और न ही शर्त। विरोधी ने यह नहीं बताया और न ही कयामत तक बता सकता है कि विचाराधीन मामला इजतिहाद (स्वतंत्र कानूनी तर्क) का स्थान नहीं है। फिर एक मुजतहिद के इजतिहाद की आलोचना करने का क्या अर्थ है? यदि, तर्क के लिए, यह मान भी लिया जाए कि कोई क्रिया एक-दो बार किसी विश्वसनीय प्रमाण से सिद्ध भी हो जाए, तो उसे करने और कैसे करने में ज़मीन-आसमान का अंतर है। 'काना यफ़'अलु' (वह किया करते थे) वाक्यांश दोहराव के लिए प्रमाण नहीं है, जैसा कि हमने 'अल-ताज अल-मुकल्लल फ़ी इनारत मदलूल काना यफ़'अलु' में स्पष्ट किया है (जैसा कि हमने अपने शोध प्रबंध 'अल-ताज अल-मुकल्लल...' में बताया है -त)। किसी वास्तविक घटना की सौ संभावित व्याख्याएं हो सकती हैं, जैसे आकस्मिक आवश्यकता, कोई महत्वपूर्ण मामला, या यदि कुछ भी नहीं, तो केवल अनुमति का प्रदर्शन। वास्तव में, एक कार्य शब्दों की तुलना में अधिक पूर्ण और उत्तम होता है। और (यह उनके न्यायशास्त्र से है) यह समर्थन (तस्वीब) नहीं है। इसका अर्थ केवल इतना है कि यह उनका इजतिहाद था, जिसका उद्देश्य केवल आलोचना को रोकना है - कि एक मुजतहिद को उसके इजतिहाद के लिए दोषी नहीं ठहराया जाता है। जिस प्रकार हज़रत अब्दुल्ला बिन अब्बास (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) ने इकरामा को उत्तर दिया जब उन्होंने अमीर मुआविया (अल्लाह उनसे प्रसन्न

हो) के वितर की एक रकअत पढ़ने की शिकायत की: 'उन्हें छोड़ दो, क्योंकि वह एक फ़कीह (विधिवेत्ता) हैं।' इसे बुखारी ने वर्णित किया है। हाँ, समर्थन और पुष्टि के संबंध में, यह कहानी किताबों में वर्णित है कि इमाम ज़ैन अल-मिल्लत व अल-दीन अबू बक्र को सपने में पवित्र पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। शाफ़ई संप्रदाय के किसी व्यक्ति ने इमाम अबू यूसुफ़ के इस कथन का उल्लेख पैगंबर के सामने किया। पवित्र पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) ने फ़रमाया: 'अबू यूसुफ़ का प्रस्ताव सत्य है,' या फ़रमाया, 'यह सही है।' शरह अल-नुक़ाया में है:

और इसकी पुष्टि उस बात से हुई है जो हमारे पास प्रामाणिक है, कि अपने समय के सबसे श्रेष्ठ विद्वान और अपने युग के सबसे पूर्ण आरिफ़ (ज्ञानी), ज़ैन अल-मिल्लत व अल-दीन अबू बक्र...

इसकी पुष्टि उस घटना से होती है जो हमारे निकट प्रमाणिकता के साथ सिद्ध है कि अपने समय के श्रेष्ठ विद्वान, पूर्ण ज्ञानी, ज़ैन अल-मिल्लत व अल-दीन अबू बक्र...

फ़: बुखारी के उल्लेखित स्थान पर दो हदीसें वर्णित हैं। एक के शब्द हैं 'उन्हें छोड़ दो, क्योंकि उन्होंने अल्लाह के रसूल (उन पर शांति हो) का साथ दिया' और दूसरे के शब्द हैं 'उन्होंने सही किया क्योंकि वे फ़कीह हैं।' आला हज़रत (उन पर अल्लाह की रहमत हो) ने दोनों हदीसों को अपनाया है। - नज़ीर अहमद

---

1 सहीह बुखारी, अध्याय: मुआविया का उल्लेख, कदीमी कुतुब खाना कराची 1/531

ان الذین فی قلو بھم زیغ فیتبعون ھفوات بدرت مہما ندرت یبتغون الفتنۃ فی الدین وایذاء قلوب المسلمین واللہ المستعان علی الطاغین والمردۃ الباغین ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم۔

بلا شبہ وہ لوگ جن کے دلوں میں ٹیڑھ ہے وہ ان ہفوات کی اتباع کرتے ہیں جیسے بھی وہ ظاہر ہوں اور اس سے دین میں فتنہ برپا کرکے مسلمانوں کے دلوں کو ایذا دیتے ہیں، ان سرکشوں اور مردود باغیوں کے خلاف اللہ تعالٰی مدد فرمانے والا ہے۔(ت)

سادساً: مجرد استقباح و استبعاد بے دلیل شرعی مسموع نہیں، نہ احکامِ زہد احکامِ شرع پر حاکم نماز میں قلتِ خشوع کو اہل سلوک کیا کیا سخت و شنیع مذمتیں نہیں کرتے، ایسی نماز کو باطل و مہمل و فاسد و مختل سمجھتے ہیں۔ اور فقہاء کا اجماع ہے کہ خشوع نہ رکن نماز ہے نہ فرض نہ شرط، مانحن فیہ کا محلِ اجتہاد نہ ہونا مخالف نے نہ بتایا نہ قیامت تک بتا سکتا ہے، پھر اجتہادِ مجتہد پر طعن کیا معنی رہا، فعل اگر بفرضِ غلط ایک آدھ بار وقوع بسندِ معتمد ثابت بھی ہو جائے تو کرنے اور کیا کرنے میں زمین آسمان کا بل ہے، نہ کان یفعل تکرار میں نص، کما بیّناہ فی التاج المکلل فی انارۃ مدلول کان یفعل (جیسا کہ ہم نے اس بات کو اپنے رسالہ "التاج المکلل فی انارۃ مدلول کان یفعل" میں بیان کیا ہے۔ت) واقعہ حال محتمل صد احتمال ہوتا ہے عروض ضرورت یا امر اہم یا کچھ نہ سہی تو بیانِ جواز ہی کہ فعلاً قولاً سے اکمل واتم اور (یہ اُن کی فقہ سے ہے) تصویب نہیں، اس کے معنی اس قدر کہ یہ اُنکا اجتہاد ہے جس کا حاصل صرف منعِ طعن ہے کہ مجتہد اپنے اجتہاد پر ملام نہیں، جس طرح حضرت عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما نے عکرمہ کو جب اُنھوں نے امیر معاویہ رضی اللہ تعالٰی عنہ کی شکایت کی کہ وتر کی ایک رکعت پڑھی، جواب دیا دعہ فانہ فقیہ ۱ انہیں کچھ نہ کہہ کہ وہ مجتہد ہیں رواہ البخاری (اسے بخاری نے روایت کیا ہے۔ت)

ہاں درباره تصویب و تصدیق یہ حکایتِ کتب میں منقول ہے کہ امام زین الملۃ والدین ابو بکر خواب میں زیارتِ اقدسِ حضور سیّدِ عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے مشرف ہوئے کسی شافعی المذہب نے امام ابو یوسف کا یہ قول حضور کے سامنے عرض کیا، حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: ابو یوسف کی تجویز حق ہے، یا فرمایا درست ہے۔ شرحِ نقایہ میں ہے:

وقد ایده ما صح عندنا ان افضل العلماء فی زمانہ واکمل العرفاء فی اوانہ زین الملۃ والدین ابوبکر

اس کی تائید وہ واقعہ کرتا ہے جو ہمارے نزدیک صحت کے ساتھ ثابت ہے کہ اپنے وقت کے افضل العلماء اکمل العرفاء، زین الملت والدین

ف: بخاری کے مقامِ مذکور پر دو حدیثیں منقول ہیں ایک کے الفاظ یہ ہیں دعہ فانہ صحب رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم اور دوسری کے الفاظ یوں قال اصاب انہ فقیہ۔ اعلحضرت علیہ الرحمۃ نے دونوں حدیثوں کا اختیار نقل کیا ہے۔ نذیر احمد)

---

1 صحیح بخاری باب ذکر معاویہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۵۳۱

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Box 1] [Arabic Text]: Al-Ta'ibadi saw in a dream that a person of the Shafi'i school of thought said in the assembly of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) that Abu Yusuf allowed a legal artifice (hila) to drop the obligation of Zakat. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "What Abu Yusuf allowed is right and most true." - 1 [Urdu Text]: This is supported by the incident which is established with us as authentic, that the best of scholars and most perfect of gnostics of his time, Zain al-Millah wa al-Din Abu Bakr al-Ta'ibadi, saw in a dream that a person of the Shafi'i school submitted in the assembly of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) that Abu Yusuf had allowed a 'hila' (legal artifice) in dropping Zakat. So the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "What Abu Yusuf has proposed is right or correct." (T)

Previously stated: After the obligation (of Zakat), an artifice to prevent its payment is absolutely forbidden by consensus. Here, the discussion is about preventing the obligation itself, meaning taking measures such that Zakat does not become obligatory from the start. Imam Abu Yusuf says: What command was disobeyed in this? Allah Almighty made Zakat obligatory upon the completion of a full year; one who does not pay after it becomes obligatory is a sinner by consensus. Where has it been made obligatory to let a full year pass over one's wealth? Just as it is ordained that one who has provisions, a means of transport, and capability should perform Hajj, it is never made obligatory, nor even recommended, to collect enough wealth for provisions and capability. Similarly, it is not at all obligatory or even recommended to gather wealth equal to the 'nisab' (minimum threshold) and keep it for a whole year just so Zakat becomes obligatory. Attributing the teaching of deceit to the leaders of the religion is a form of ill-suspicion which is not permissible even towards common Muslims. The truth is that the esteemed Imam's statement is not meant for people to use as a pretext to avoid Zakat, but rather it is applicable in times of necessity and need. For example, Hajj became obligatory on someone, but their money was stolen, and they need a thousand dirhams for Hajj expenses and family maintenance, and it won't be possible with less. They gathered it through hard work and effort; today the caravan is to depart, and tomorrow the year for Zakat will be complete. If twenty-five dirhams are taken out, there will be a shortfall in expenses. If they use such an artifice so as not to be deprived of the obligatory Hajj, or if someone knows their own condition that they will absolutely not give Zakat at all, their self is so dominant that it will not allow them the power to fulfill this

obligation, then they do this with the thought of avoiding the abandonment of payment and committing a sin after it becomes obligatory. This falls under the category of "Whoever is afflicted by two trials, let him choose the easier of the two." (T) It is stated in Sirajiyyah:

[Box 2] [Arabic Text]: If he wishes to use an artifice to prevent the obligation of Zakat because he fears that he will not pay it and thus fall into sin, the way is to gift the 'nisab' before the year is complete to someone he trusts. [Urdu Text]: When someone uses an artifice to prevent the obligation of Zakat because he fears that if he doesn't pay Zakat he will be a sinner, the way for him is to [gift] the 'nisab' before the year passes to a reliable person of...

1 Sharh al-Niqayah Page 200 of 836

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम (भाग 10)

[बॉक्स 1] [अरबी पाठ]: अल-ताइबादी ने सपने में देखा कि शाफ़ई संप्रदाय के एक व्यक्ति ने पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सभा में कहा कि अबू यूसुफ ने ज़कात की अनिवार्यता को समाप्त करने के लिए एक 'हीला' (कानूनी युक्ति) की अनुमति दी है। पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "अबू यूसुफ ने जो अनुमति दी है वह सही और परम सत्य है।" - 1 [उर्दू पाठ]: इसकी पुष्टि उस घटना से होती है जो हमारे पास प्रामाणिकता के साथ स्थापित है कि अपने समय के सर्वश्रेष्ठ विद्वान और सबसे पूर्ण आरिफ़, ज़ैन अल-मिल्लत व अल-दीन अबू बक्र अल-ताइबादी ने सपने में देखा कि एक शाफ़ई व्यक्ति ने पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सभा में अर्ज़ किया कि अबू यूसुफ ने ज़कात को साक़ित करने (गिराने) में हीला को जायज़ माना है। तो आपने (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाया: अबू यूसुफ ने जो तजवीज़ (सुझाव) दी है वह हक़ या सही है। (त)

पहले बताया गया: ज़कात वाजिब होने के बाद, उसे रोकने का हीला सर्वसम्मति (इज्मा) से कतई हराम है। यहाँ चर्चा वक़ूब (अनिवार्यता) को रोकने की है, यानी ऐसी तदबीर करना कि शुरू से ही ज़कात वाजिब न हो। इमाम अबू यूसुफ फ़रमाते हैं कि इसमें किस हुक्म की नाफरमानी हुई? अल्लाह अज़्वजल ने साल पूरा होने पर ज़कात फ़र्ज़ की है; जो वाजिब होने के बाद अदा न करे वह इज्मा से गुनाहगार है। यह कहाँ फ़र्ज़ किया गया है कि अपने माल पर साल गुज़रने ही दिया जाए? जिस तरह यह फ़र्ज़ किया गया है कि जिसके पास पाथेय (राशन), सवारी और शक्ति हो वह हज करे, यह कब फ़र्ज़ किया गया है कि पाथेय और सवारी के काबिल माल जमा भी कर। वैसे ही, यह हरगिज़ वाजिब नहीं है और न ही मुस्तहब (पसंदीदा) है कि निसाब की मात्रा में माल जोड़कर साल भर रख छोड़ें ताकि ज़कात वाजिब हो। दीन के इमामों पर छल सिखाने का आरोप लगाना बदगुमानी (बुरी धारणा) है जो आम मुसलमानों के प्रति भी जायज़ नहीं है। और सच यह है कि मम्दूह (प्रशंसित) इमाम का यह कहना इसलिए भी नहीं है कि लोग इसे दस्तावेज़ (बहाना) बनाकर ज़कात से बचें, बल्कि यह ज़रूरत और हाजत के समय पर आधारित है। उदाहरण के तौर पर, किसी पर हज फ़र्ज़ हो गया था, माल चोरी हो गया, हज के खर्च और परिवार के भरण-पोषण के लिए एक हज़ार दिरहम की ज़रूरत है और इससे कम में काम नहीं चलेगा। बड़ी मेहनत और कोशिश से जमा किए; आज काफ़िला जाने वाला है और कल ज़कात का साल पूरा होगा। अगर पच्चीस दिरहम निकल जाएँगे तो खर्च में कमी आएगी। वह ऐसा हीला करे ताकि फ़र्ज़ हज से वंचित न रहे, या कोई व्यक्ति अपनी स्थिति जानता है कि वह ज़कात हरगिज़ नहीं देगा, उसका नफ़्स (मन) उस पर इतना हावी है कि वह इस फ़र्ज़ की

अदायगी की शक्ति ही नहीं देगा, तो वह इस विचार से ऐसा करे कि फ़र्ज़ होने के बाद अदायगी छोड़ने और गुनाह करने से बच जाए। यह "जो व्यक्ति दो मुसीबतों में घिर जाए, वह उनमें से आसान को चुन ले" (त) की श्रेणी में होगा। सिराजिया में है:

[बॉक्स 2] [अरबी पाठ]: यदि वह ज़कात की अनिवार्यता को रोकने के लिए कोई हीला करना चाहता है क्योंकि उसे डर है कि वह इसे अदा नहीं करेगा और इस प्रकार पाप में पड़ जाएगा, तो रास्ता यह है कि साल पूरा होने से पहले वह निसाब किसी ऐसे व्यक्ति को दान कर दे जिस पर वह भरोसा करता है। [उर्दू पाठ]: जब कोई ज़कात की अनिवार्यता रोकने के लिए हीला करता है क्योंकि वह इस बात से डरता है कि अगर उसने ज़कात अदा न की तो गुनाहगार होगा, तो उसके लिए रास्ता यह है कि साल गुज़रने से पहले निसाब किसी विश्वसनीय व्यक्ति के..

1 शरह नक़ाया पेज 200/836

فتاوی رضویہ، جلد دہم

[ٹیبل/باکس 1] [عربی متن]: التائبادي قد رأى في المنام ان شافعي المذهب قال في مجلس النبي صلى الله تعالى عليه وسلم ان ابا يوسف جوز حيلة في اسقاط الزكوة فقال صلى الله تعالى عليه وسلم ان ماجوزه ابو يوسف حق واصدق - 1 [اردو متن]: اس کی تائید وہ واقعہ کرتا ہے جو ہمارے نزدیک صحت کے ساتھ ثابت ہے کہ اپنے وقت کے افضل العلماء اکمل العرفاء، زین الملت والدین ابو بکر التائبادی نے خواب میں دیکھا کہ شافعی المذہب شخص نے مجلسِ نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم میں عرض کیا کہ ابو یوسف نے اسقاطِ زکوۃ میں حیلہ کو جائز رکھا ہے تو آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: ابو یوسف نے جو تجویز کیا ہے وہ حق یا درست ہے (ت)

سابقا: بعد وجوب، منع کا حیلہ بالاجماع حرام قطعی ہے، یہاں کلام منع وجوب میں ہے یعنی وہ تدبیر کرنی کہ ابتداءً کوۃ واجب ہی نہ ہو۔ امام ابو یوسف فرماتے ہیں اس میں کون سے حکم کی نافرمانی ہوئی، اللہ عزوجل نے سال تمام ہونے پر زکوۃ فرض کی جو بعد وجوب ادا نہ کرے بالاجماع عاصی ہے، یہ کہاں فرض کیا ہے کہ اپنے مال پر سال گزر بھی جانے دو، جس طرح یہ فرض فرمایا ہے کہ جو زاد و راحلہ و قدرت رکھتا ہو حج کرے یہ کب فرض کیا ہے کہ زاد و راحلہ واستطاعت کے قابل مال جمع بھی کر، یونہی ہر گز واجب کیا مستحب بھی نہیں کہ قدر نصاب مال جوڑ کر سال بھر رکھ چھوڑو تاکہ زکوۃ واجب ہو، ائمہ دین کو تعلیمِ غل کی طرف منسوب کرنا بد گمانی ہے جو عوام مسلمین پر بھی جائز نہیں، اور حق یہ ہے کہ امام ممدوح کا یہ قول بھی اس لیے نہیں کہ لوگ اسے دستاویز بنا کر زکوۃ سے بچیں بلکہ وہ وقت ضرورت و حاجت پر محمول ہے، مثلاً کسی پر حج فرض ہو گیا تھا، مال چوری ہو گیا، مصارفِ حج و نفقۂ عیال کے لیے ہزار درہم کی ضرورت ہے اس سے کم میں نہ ہو گا محنت و کوشش سے جمع کئے، آج قافلہ جائے کو ہے کل سال زکوۃ

تمام ہو گا، اگر پچیس درہم نکل جائیں گے مصارف میں کمی پڑے گی، یہ ایسا حیلہ کرے کہ حج فرض سے محروم نہ رہے، یا کوئی شخص اپنے حال کو جانتا ہے کہ زکوۃ اس سے ہرگز ہرگز قطعاً نہ دی جائے گی، اس کا نفس ایسا غالب ہے کہ کسی طرح اس فرض کی ادا پر اصلاً قدرت نہ دے گا، یہ اس خیال سے ایسا کرے کہ بعد فرضیت ترک ادا وار تکاب گناہ سے بچوں تواز قبیل من ابتلی ببلتیین اختارا ھو نھما (جو شخص دو مشکلات میں گھر جائے ان میں سے آسان کو اختیار کرے ۔ت) ہو گا ۔ سراجیہ میں ہے:

[ٹیبل/باکس 2] [عربی متن]: اذا ارادان یحتال لامتناع وجوب الزکوۃ لما انہ خاف ان لا یؤدی فیقع فی المأثم فالسبیل ان یھب النصاب قبل تمام الحول من یثق بہ [اردو متن]: جب کوئی امتناعِ وجوبِ زکوۃ کے لیے حیلہ کرتا ہے کہ وہ اس بات سے ڈرتا ہے کہ اگر اس نے زکوۃ ادانہ کی تو گناہگار ہوگا، تو اس کے لیے راستہ یہ ہے کہ سال گزرنے سے پہلے نصاب کسی باعتماد آدمی کے

1 شرح نقایہ صفحہ 200/836

Volume 10 Fatawa Ridawiyya

| "...and hand it over to him, then ask him to gift it back." - 1 | When someone uses a legal stratagem to avoid the obligation of Zakat because they fear being sinful if they don't pay it, the way out for them is to hand over the Nisab (taxable amount) to a trustworthy person before the year passes, and then take it back from them as a gift. (T) |

See, it is explicitly stated that this stratagem is to avoid sin, not, God forbid, to fall into sin. The permissibility of legal stratagems (Hiyal-e-Shar'iyyah) is proven from the Quran and the Hadiths of the Leader of the Messengers, peace and blessings of Allah be upon him. Job (Ayyub), peace be upon him, had sworn an oath to strike his holy wife with a hundred (100) lashes. The Lord of Honor, Glorified and Exalted is He, said:

| "And take in your hand a bundle of rushes and strike with it and do not break your oath." - 2 | Meaning, make a broom of a hundred twigs and strike once with it, and do not make your oath false. |

The Master of the World, peace and blessings of Allah be upon him, acted upon this same beautiful stratagem while applying a legal punishment (Hadd) on a weak person. It was commanded:

| "Take for him a branch of a date palm having a hundred sprigs, then strike him with it once." - 3 Reported by Ahmad, Ibn Majah, and Abu Dawud, and with similar meaning by al-Baghawi in Sharh al-Sunnah. The first two narrate from Abu Umamah bin Sahl from Sa'id bin Sa'd bin 'Ubadah; the third from Abu Umamah bin Sahl from some companions of the Ansar; and the fourth from Sa'id bin Sa'd bin 'Ubadah (may Allah be pleased with him) that a man was brought to the Prophet, peace and blessings of Allah be upon him... [the rest of the Hadith]. 4 This Hadith has a good (Hasan) chain of transmission. Al-Ruyani narrated it in his Musnad, saying: Muhammad bin al-Muthanna told us, 'Uthman bin 'Umar told us, Fulayh told us from Sahl bin Sa'd that a young girl during the time of the Messenger of Allah... | Meaning: take a date-palm branch with a hundred twigs and strike him once with it (Imam Ahmad, Ibn Majah, and Abu Dawud have narrated it; and Baghawi in Sharh al-Sunnah has narrated its meaning. The first two scholars narrated it from Hazrat Abu Umamah bin Sahl, and he from Sa'id bin Sa'd bin 'Ubadah (Allah be pleased with him). The third narrated from Hazrat Umamah bin Sahl, who narrated from an Ansari companion. The fourth narrated from Hazrat Sa'id bin Sa'd bin 'Ubadah that a person was brought to the service of the Holy Prophet, peace and blessings of Allah be upon

him and his family... [the rest of the Hadith]. The chain of this Hadith is good (Hasan) and Ruyani has narrated it in his Musnad that Muhammad bin Muthanna narrated to them...) |

1 Fatawa Sirajiyya, Kitab al-Hiyal wal-Khawarij, Munshi Naval Kishore, Lucknow, p. 154. 2 Quran 38 / 44. 3 Musnad Imam Ahmad bin Hanbal, Hadith of Sa'id bin Sa'd bin 'Ubadah (Allah be pleased with him), Dar al-Fikr, Beirut, 5/222. 4 Sharh al-Sunnah, Bab Hadd al-Marid, Hadith 2591, al-Maktab al-Islami, Beirut, 10/303. Page 201 of 836

खंड दसवां फ़तावा रज़विया

| "...और उसे सौंप दे, फिर उससे इसे उपहार (हिबा) स्वरूप वापस माँग ले।" - 1 | जब कोई ज़कात की अनिवार्यता से बचने के लिए कोई हिला (वैध युक्ति) करता है क्योंकि उसे डर है कि यदि उसने ज़कात अदा नहीं की तो वह गुनहगार होगा, तो उसके लिए रास्ता यह है कि वर्ष बीतने से पहले निसाब (न्यूनतम आवश्यक धन) किसी विश्वसनीय व्यक्ति के हवाले कर दे, फिर उससे उपहार के रूप में वापस ले ले। (त) |

देखें, यह स्पष्ट किया गया है कि यह हिला गुनाह से बचने के लिए है, न कि खुदा न खास्ता गुनाह में पड़ने के लिए। शरीयत के हिलों (हियाल-ए-शरिय्या) का औचित्य स्वयं कुरान और सैय्यद-उल-मुरसलीन (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की हदीसों से साबित है। हज़रत अय्यूब अलैहिस्सलाम ने शपथ ली थी कि वह अपनी पवित्र पत्नी को सौ (100) कोड़े मारेंगे। रब-उल-इज़्ज़त ने फ़रमाया:

| "और अपने हाथ में सींकों का एक गट्ठा लें और उससे मारें और अपनी कसम न तोड़ें।" - 2 | अर्थात् सौ टहनियों की एक झाड़ू बनाकर उससे एक बार मार लें और शपथ झूठी न करें। |

हुज़ूर सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने एक कमज़ोर व्यक्ति पर दंड (हद) लागू करने में इसी सुंदर हिला पर अमल फ़रमाया। आदेश हुआ:

| "उसके लिए खजूर की एक शाखा लें जिसमें सौ टहनियाँ हों, फिर उसे उससे एक बार मारें।" - 3 अहमद, इब्न माजा और अबू दाऊद ने इसे रिवायत किया है, और इसी अर्थ में अल-बगवी ने शरह अल-सुन्नाह में। पहले दो ने अबू उमामा बिन सहल से, उन्होंने सईद बिन साद बिन उबादा से; तीसरे ने अबू उमामा बिन सहल से, उन्होंने कुछ अंसार सहाबा से; और चौथे ने सईद बिन साद बिन उबादा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया कि नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सेवा में एक व्यक्ति लाया गया, अल-हदीस। 4 यह हदीस हसन सनद वाली है और इसे अल-रुयानी ने अपनी मुसनद में रिवायत किया है, उन्होंने कहा: हमें मुहम्मद बिन अल-मुथन्ना ने बताया, हमें उस्मान बिन उमर ने बताया, हमें फुलैह ने सहल बिन साद से बताया कि रसूलुल्लाह के समय में एक लौंडी... | अर्थात् सौ टहनियों वाली खजूर की एक शाखा लें फिर उसे एक ही बार मारें (इसे इमाम अहमद, इब्न माजा, अबू दाऊद ने और भावार्थ के साथ बगवी ने शरह-उस-सुन्नाह में रिवायत किया है, पहले दो मुहद्दिसीन ने हज़रत अबू उमामा बिन सहल से और उन्होंने सईद बिन साद बिन उबादा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है और तीसरे ने हज़रत उमामा बिन सहल से, उन्होंने एक अंसारी सहाबी से

रिवायत किया है, और चौथे ने हज़रत सईद बिन साद बिन उबादा से रिवायत किया कि नबी पाक (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की खिदमत में एक व्यक्ति को लाया गया, अल-हदीस। इस हदीस की सनद हसन है और इसे रुयानी ने अपनी मुसनद में रिवायत किया कि हमें मुहम्मद बिन मुथन्ना ने बताया...) |

1 फ़तावा सिराजिया, किताबुल हियाल वल-ख्वारिज, मुंशी नवल किशोर, लखनऊ, पृष्ठ 154 2 अल-कुरान 38 / 44 3 मुसनद इमाम अहमद बिन हंबल, हदीस सईद बिन साद बिन उबादा (रज़ियल्लाहु अन्हु), दारुल फिक्र बेरुत 5/222 4 शरह अल-सुन्नाह, बाब हद्द अल-मरीज़, हदीस 2591, अल-मकतब अल-इस्लामी, बेरुत 10/303 पेज 201 of 836

| ویسلمه الیه ثم یستوهبه - 1 | جب کوئی امتناع وجوب زکوۃ کے لیے حیلہ کرتا ہے کہ وہ اس بات سے ڈرتا ہے کہ اگر اس نے زکوۃ ادانہ کی تو گناہگار ہوگا ، تو اس کے لیے راستہ یہ ہے کہ سال گزرنے سے پہلے نصاب کسی باعتماد آدمی کے حوالے کر دے پھر اس سے بطور ہبہ واپس لے لے ۔ (ت) |

دیکھو تصریح ہے کہ یہ حیلہ گناہ سے بچنے کے لیے، نہ کہ معاذ اللہ گناہ میں پڑنے کے واسطے ۔ حیل شرعیہ کا جواز خود قرآن و احادیثِ سید المرسلین صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے ثابت ہے ، ایوب علیہ الصلوٰۃ والسلام نے قسم کھائی تھی کہ اپنی زوجہ مقدسہ کو سو ۱۰۰ کوڑے ماریں گے ، رب العزت عزوجلالہ نے فرمایا:

| وَخُذْ بِيَدِكَ ضِغْثًا فَاضْرِب بِّهِ وَلَا تَحْنَثْ - 2 | یعنی سو ٹہنیوں کی ایک جھاڑو بنا کر اس سے ایک دفعہ مار لو اور قسم جھوٹی نہ کرو۔ |

حضور سیدِ عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ایک کمزور شخص پر حد لگانے میں اسی حیلہ جمیلہ پر عمل فرمایا ارشاد ہوا:

| خذوا له عثکالا فیه مائة شمراخ ثم اضربوه به ضربة واحدة - 3 رواه احمد وابن ماجة وابو داؤد و بمعناه البغوی فی شرح السنة الاولان عن ابی امامة بن سهل عن سعید بن سعد بن عبادة والثالث عن ابی امامة بن سهل عن بعض الصحابة من الانصار والرابع عن سعید بن سعد بن عبادة رضی الله تعالٰی عنه اتی النبی صلی الله تعالٰی علیه وسلم برجل، الحدیث، 4 هذا حدیث حسن الاسناد ورواه الرویانی فی مسنده فقال حدثنا محمد بن المثنی نا عثمن بن عمر نا فلیح عن سهل بن سعد ان ولیدة فی عهد رسول الله

| یعنی سو ٹہنیوں والی کھجور کی ایک شاخ لو پھر اسے ایک ہی بار مارو (اسے امام احمد، ابن ماجہ، ابوداؤد نے اور معناً بغوی نے شرح السنۃ میں روایت کیا ہے، پہلے دونوں محدثین نے حضرت ابوامامہ بن سہل اور انہوں نے سعید بن سعد بن عبادہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے اور تیسرے نے حضرت امامہ بن سہل سے، انہوں نے ایک انصاری صحابی سے روایت کیا ہے، اور چوتھے نے حضرت سعید بن سعد بن عبادہ سے روایت کیا کہ نبی پاک صلی اللہ تعالیٰ علیہ وآلہ وسلم کی خدمتِ اقدس میں ایک شخص کو لایا گیا، الحدیث۔ اس حدیث کی سند حسن ہے اور اسے رویانی نے اپنی مسند میں روایت کیا کہ ہمیں محمد بن مثنیٰ نے انہیں |

1 فتاویٰ سراجیہ کتاب الحیل والخوارج منشی نولکشور لکھنؤ ص ۱۵۴ 2 القرآن ۳۸ / ۴۴ 3 مسند امام احمد بن حنبل حدیث سعید بن سعد بن عبادہ رضی اللہ عنہ دارالفکر بیروت ۵ / ۲۲۲ 4 شرح السنۃ باب حد المریض حدیث ۲۵۹۱ المکتب الاسلامی بیروت ۱۰ / ۳۰۳ Page 201 of 836

Fatawa Razawiyya Volume 10

(Arabic Text): It is narrated that a woman became pregnant through adultery. She was asked, "Who made you pregnant?" She said, "The crippled man made me pregnant." He was asked about it and he confessed. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "He is too weak for lashing." So he ordered a cluster of a hundred date-palm branches and struck him once. This is how it appeared in what I saw. However, the well-known narrator is Ibn Sahl Sa'id bin Sa'd. In another narration of Ibn Majah, it is narrated by Ibn Sahl from Sa'd bin Ubadah. And Allah knows best.

(Urdu Translation): Uthman bin Umar narrated from Falih from Hazrat Sahl bin Sa'd that a girl became pregnant through adultery during the lifetime of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him). It was asked, "Whose pregnancy is this?" She said, "It is from this crippled man." When asked, he confessed. The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said, "This person is weak and cannot endure the punishment of a hundred lashes." Therefore, he struck him once with a bunch of a hundred date-palm twigs. I saw this, and it is correct, though the well-known narrator is Ibn Sahl Sa'id bin Sa'd. In another narration of Ibn Majah, Ibn Sahl narrates from Hazrat Sa'd bin Ubadah. And Allah knows best.

In Sahih Bukhari and Sahih Muslim, it is narrated from Hazrat Abu Sa'id and Hazrat Abu Huraira (may Allah be pleased with them) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) appointed a person as a governor over Khaybar. He brought some high-quality dates from there. The Prophet asked, "Are all the dates of Khaybar like this?" He replied, "No, O Messenger of Allah! By Allah, we exchange six seers of low-quality dates for three seers of these high-quality ones, and nine seers for six seers." The Prophet said:

[Boxed Text] (Arabic): Do not do that. Sell the mixed dates for dirhams, and then buy the high-quality dates with those dirhams. (Urdu): Do not do this; rather, sell the inferior or old dates first for money, then buy these high-quality dates with that money.

And he gave the same order regarding everything that is weighed. Also, in Sahih Muslim, it is narrated from Abu Sa'id al-Khudri (may Allah be pleased with him) that Hazrat Bilal (may Allah be pleased with him) brought some high-quality Barni dates to the presence of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). The

Prophet asked, "Where did these come from?" He replied, "We had some inferior dates; we gave six seers of them and took three seers of these." He said:

[Boxed Text] (Arabic): Oh! This is the essence of Riba (usury). Do not do that, but rather... (Urdu): Oh! This is pure usury. Do not do this. However, when exchanging...

---

1. Musnad al-Ruyani Hadith No. 1050, Dar al-Kutub al-Ilmiyya Beirut, p. 138/1; Kanz al-Ummal cited by Ibn al-Najjar Hadith No. 13502, Muassasa al-Risala Beirut 226/5.
2. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Buyu, Chapter: When one wants to sell dates for better dates, Qadimi Kutub Khana Karachi 293/1.

फ़तावा रज़विया भाग दस

(अरबी पाठ): यह वर्णित है कि एक महिला व्यभिचार से गर्भवती हो गई। उससे पूछा गया, "तुम्हें किसने गर्भवती किया?" उसने कहा, "अपंग व्यक्ति ने मुझे गर्भवती किया।" उससे इस बारे में पूछा गया और उसने स्वीकार कर लिया। पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) ने कहा: "वह कोड़े मारने के लिए बहुत कमजोर है।" इसलिए उन्होंने सौ खजूर की टहनियों का एक गुच्छा मंगाया और उसे एक बार मारा। मैंने जो देखा उसमें ऐसा ही था। हालाँकि, प्रसिद्ध वर्णनकर्ता इब्न सहल सईद बिन साद हैं। इब्न माजा के एक अन्य वर्णन में, इब्न सहल ने हज़रत साद बिन उबादा से वर्णन किया है। और अल्लाह ही बेहतर जानता है।

(उर्दू अनुवाद): उस्मान बिन उमर ने उन्हें फलीह से हज़रत सहल बिन साद से बयान किया कि एक लड़की अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के ज़ाहिरी जीवन में व्यभिचार से गर्भवती हो गई। पूछा गया कि यह गर्भ किसका है? उसने कहा कि यह इस लूले (अपंग) का है। पूछा गया तो उसने स्वीकार कर लिया। हुज़ूर (अलैहिस्सलाम) ने फरमाया कि यह कमज़ोर है, सौ कोड़ों की सज़ा नहीं झेल सकता, इसलिए आपने सौ शाखाओं वाली खजूर की टहनी से उसे एक बार मारा। मैंने देखा तो यही है, मगर प्रसिद्ध इब्न सहल सईद बिन साद हैं, और इब्न माजा के दूसरे वर्णन में इब्न सहल ने हज़रत साद बिन उबादा से बयान किया है। अल्लाह ही बेहतर जानता है।

खुद सहीह बुखारी शरीफ बल्कि सहीहैन में हज़रत अबू सईद और हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने एक साहब को खैबर पर गवर्नर बनाकर भेजा, वे वहां से उम्दा खजूरें लाए। फरमाया: क्या खैबर की सब खजूरें ऐसी ही हैं? (उन्होंने) कहा: नहीं या रसूलुल्लाह! अल्लाह की कसम, हम छह सेर (खराब) खजूरों के बदले ये तीन सेर खजूरें, और नौ सेर देकर छह सेर खरीदते हैं। फरमाया:

[बॉक्स टेक्स्ट] (अरबी): ऐसा न करो। मिश्रित खजूरों को दिरहम (रुपयों) के बदले बेचो, फिर उन रुपयों से उम्दा खजूरें खरीदो। (हिंदी): ऐसा न करो बल्कि घटिया या पुरानी खजूरें पहले रुपयों के बदले बेचो, फिर उन रुपयों से ये उम्दा खजूरें खरीदो।

और हर तौले जाने वाली चीज़ के बारे में यही हुक्म फरमाया। साथ ही सहीहैन में अबू सईद खुदरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से है कि हज़रत बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हु) बरनी छुआरे की उम्दा किस्म हुज़ूर

सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की खिदमत में लाए। फरमाया: ये कहाँ से आए हैं? अर्ज़ की: हमारे पास घटिया छुआरे थे, उनके छह सेर देकर ये तीन सेर लिए। फरमाया:

[बॉक्स टेक्स्ट] (अरबी): ओह! यह तो शुद्ध ब्याज (रिबा) है। ऐसा मत करो, बल्कि... (हिंदी): उफ़! यह तो खास सूद है, ऐसा न करो। हाँ, जब बदलना हो...

---

1. मुसनद अल-रुयानी हदीस नंबर 1050, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया बेरुत, पृष्ठ 138/1; कंज़ अल-उम्माल हदीस नंबर 13502 के हवाले से इब्न अल-नज्जार, मुअस्ससतु अल-रिसाला बेरुत 226/5।
2. सहीह अल-बुखारी, किताब अल-बुयू, अध्याय: जब कोई खजूर को बेहतर खजूर के बदले बेचना चाहता हो, पुरानी कुतुब खाना कराची 293/1।

صلی اللہ تعالٰی وسلم حملت من الزنا، فسئلت من احبلك؟ فقالت احبلني المقعد، فسئل عن ذلك فاعترف فقال النبي صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم انہ لضعیف عن الجلد فامر بمائۃ عثکول فضربہ بھا ضربۃ واحدۃ اھ ھکذا وقع فیما رأیت انما المعروف ابن سھل سعید بن سعد وفی اخری لابن ماجۃ عن ابن سھل عن سعد بن عبادۃ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

عثمان بن عمر نے انہیں فلیح نے حضرت سہل بن سعد سے بیان کیا کہ ایک لڑکی حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی ظاہری حیات میں زنا سے حاملہ ہو گئی، پوچھا گیا یہ حمل کس کا ہے؟ اس نے کہا یہ اس لولے کا ہے، پوچھا گیا تو اس نے اعتراف کر لیا۔ حضور علیہ السلام نے فرمایا یہ کمزور ہے سو کوڑوں کی سزا نہیں جھیل سکتا، لہٰذا آپ نے سو شاخوں والے خرما کی شاخ سے اسے ایک ضرب لگوائی اھ دیکھا تو میں نے، یہی ہے مگر معروف ابن سہل سعید بن سعد ہیں، اور ابن ماجہ کی دوسری روایت میں ابن سہل نے حضرت سعد بن عبادہ سے بیان کیا ہے۔ اللہ تعالٰی ہی بہتر جانتا ہے (ت)

خود صحیح بخاری شریف بلکہ صحیحین میں حضرت ابوسعید و حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہما سے ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ایک صاحب کو خیبر پر عامل بنا کر بھیجا، وہ عمدہ خرمے وہاں سے لائے، فرمایا: کیا خیبر کے سب خرمے ایسے ہی ہیں؟ نہیں یارسول اللہ! واللہ کہ ہم چھ سیر خرموں کے بدلے یہ خرمے تین سیر، اور نو سیر دے کر اس کے چھ سیر خریدتے ہیں۔ فرمایا:

[باکس میں متن] لا تفعل بع الجمع بالدراهم ثم ابتع بالدراهم جینباً۔ ایسا نہ کرو بلکہ ناقص یا پچھیل خرمے پہلے روپوں کے عوض بیچو پھر ان روپوں سے یہ عمدہ خرمے خریدو۔

اور ہر موزوں کے بارے میں یہی حکم فرمایا، نیز صحیحین میں ابو سعید خدری رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے ہے۔ بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ کہ برنی چھوہارے کے عمدہ قسم ہیں خدمت اقدس حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم میں حاضر لائے، فرمایا : یہ کہاں سے آئے ہیں؟ عرض کی : ہمارے پاس ناقص چھوہارے تھے اُن کے چھ سیر دے کر یہ تین سیر لیے، فرمایا :

[باکس میں متن] اوہ عین الربا لا تفعل ذلك و لکن اُف خاص سُود ہے ایسا نہ کرو، ہاں جب بدل

---

1 مسند الروياني حدیث نمبر 1050 دار الکتب العلمیہ بیروت ص 138/1، کنز العمال بحوالہ ابن النجار حدیث 13502 مؤسسۃ الرسالہ بیروت 226/5 2 صحیح البخاری کتاب البیوع باب اذا اراد بیع تمر بتمر خیر منہ قدیمی کتب خانہ کراچی 293/1

“If you want to buy (dates), sell the dates in another transaction first, then buy with that [money].”[1] If you want, first sell your dates for something else, then buy good dates with that.

Are these not Sharia legal stratagems (hila)? The chapter of stratagems is vast; if the discourse is expanded, it would lead to excessive length. This much is enough for fair-minded people. Then, when Allah and His Messenger allow and teach them, what blame can be put on Imam Abu Yusuf? Yes, our Imam-e-Azam and Imam Muhammad (may Allah be pleased with them) thought that proposing this might open the door to abominable purposes for the common people, hence they prohibited it. The jurists of fatwa also gave fatwa based on this prohibition. If Imam Bukhari also sides with Imam Muhammad and does not like this saying of Imam Abu Yusuf, what harm is there to the lofty status of Imam Abu Yusuf? Which mujtahid is there whose some sayings were not pleasing to others? This rejection and acceptance has been prevalent and practiced since the era of the Sahaba (may Allah be pleased with them) without objection. There is no word of harsh hatred in the mentioned sayings of Bukhari; all that emerges from them is that this saying is not preferred by him. And even if there were, what harm can his dislike do to the Great Imam (Mujtahid), especially the Hanafi Imams, particularly the Imam of Imams, Imam-e-Azam (may Allah be pleased with him and them)? For Imam Bukhari's Imam and leader, our master Imam Shafi'i (may Allah be pleased with him), testifies regarding them that all mujtahids are the 'children' (dependents) of Imam Abu Hanifa. It is accepted that Imam Bukhari held a high station and lofty rank in his time in the preservation of Hadith, the evaluation of narrators (naqd-ur-rijal), and the scrutiny of the authenticity and weakness of narrations, and was accepted by his contemporaries and followed by those who came later. His book in the collections of Hadith is undoubtedly very select and a choice selection. If one looks at the core of the musnads (chains of narration), excluding the ta'aliqat (hanging narrations), mutaba'at (corroborations), and shawahid (supporting narrations), the scope for discussion in them is probably similar to the secondary issues (masa'il-e-thaniya) of Imam-e-Azam. And this, by the grace of Allah, was the beneficence of the Hanafis and the students of Abu Hanifa, and the students of the students of Abu Hanifa, such as Imam Abdullah bin al-Mubarak, Imam Yahya bin Said al-Qattan, Imam Fudayl bin Iyad, Imam Mis'ar bin Kidam, Imam Waki' bin al-Jarrah, Imam Layth bin Sa'ad, Imam Mu'alla bin Mansur ar-Razi, Imam Yahya bin Ma'in, and other Imams of the religion (may Allah have mercy

on them all), that Imam Bukhari acquired knowledge from their students and followed in their footsteps. Even Imam Bukhari's most venerable teacher, Imam Ahmad bin Hanbal, was a student of Imam Shafi'i, who was a student of Imam Muhammad, who was a student of Imam Abu Yusuf, who was a student of Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with them all). However, this important task (of Hadith collection) was such that Imam Bukhari could not be so fully engrossed in it as to also have time for the even more venerable and greater task of Fiqh (jurisprudence) and Ijtihad (legal reasoning). Allah Almighty had created him for the service of the noble words (Hadith), while the service of the meanings was the portion of the Mujtahid Imams, especially the Imam of Imams, Abu Hanifa. The relationship between a Muhaddith (Hadith scholar) and a Mujtahid (Jurist) is like that between a pharmacist ('attar) and a physician (tabib). The pharmacist knows medicines; his shop is full of excellent medicines, but diagnosing the disease, knowing the cure, and the method of application is the job of the physician.

[1] Sahih al-Bukhari, Kitab al-Wakalah, Chapter: When the agent sells something invalidly, etc., Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/310. Page 203 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवाँ

“यदि आप (खजूर) खरीदना चाहते हैं, तो पहले खजूर को दूसरे सौदे में बेच दें, फिर उसके ज़रिये खरीदें।”[1] यदि चाहें तो अपने छुहारे पहले किसी और चीज़ के बदले बेच दें, फिर उससे अच्छे छुहारे मोल ले लें।

क्या ये शरी'ई हीले (कानूनी उपाय) नहीं तो और क्या हैं? हीलों का अध्याय बहुत विस्तृत है; यदि चर्चा को विस्तार दिया जाए तो बात बहुत लंबी हो जाएगी। न्यायप्रिय लोगों के लिए इतना ही पर्याप्त है। फिर जब अल्लाह और उसके रसूल अनुमति दें और उनकी शिक्षा दें, तो इमाम अबू यूसुफ पर क्या आरोप लगाया जा सकता है? हाँ, हमारे इमाम-ए-आज़म और इमाम मुहम्मद (रज़ियल्लाहु अन्हुमु) ने यह विचार किया कि कहीं इसका सुझाव आम लोगों के लिए घृणित उद्देश्यों का द्वार न खोल दे, इसलिए उन्होंने मना कर दिया, और फतवा देने वाले इमामों ने इसी मनाही पर फतवा दिया। यदि इमाम बुखारी भी इमाम मुहम्मद का साथ दें और इमाम अबू यूसुफ के इस कथन को पसंद न करें, तो इमाम अबू यूसुफ की महान शान को क्या नुकसान? वह कौन सा मुजतहिद है जिसके कुछ कथन दूसरों को पसंद नहीं आए? यह अस्वीकृति और स्वीकृति तो सहाबा-ए-किराम (रज़ियल्लाहु अन्हुमु) के समय से बिना किसी आपत्ति के प्रचलित और सामान्य रही है। बुखारी के उल्लेखित कथनों में न तो घृणा का कोई कठोर शब्द है, उनसे केवल इतना ही निकलता है कि यह कथन उन्हें पसंद नहीं है। और यदि हो भी, तो उनकी घृणा इमाम मुजतहिद को क्या नुकसान पहुँचा सकती है, विशेष रूप से हनफी इमामों को, विशेषकर इमामों के इमाम, इमाम-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) को? क्योंकि इमाम बुखारी के इमाम और मार्गदर्शक सैय्यदना इमाम शाफ़ई (रज़ियल्लाहु अन्हु) उनके बारे में गवाही देते हैं कि सभी मुजतहिद इमाम अबू हनीफा के'बच्चे' (आश्रित) हैं। हदीस के संरक्षण, पुरुषों के मूल्यांकन (नक़्द-उर-रिजाल) और हदीसों की प्रामाणिकता और दुर्बलता की जाँच में इमाम बुखारी का अपने समय में उच्च स्थान, ऊँचा रुतबा, समकालीनों द्वारा स्वीकार्य और बाद के लोगों द्वारा अनुसरण किया जाना सर्वमान्य है। हदीस की किताबों में उनकी किताब निस्संदेह अत्यंत चुनिंदा और बेहतरीन चयन है, जिसके त'अ़लीक़ात, मुताबा'आत और शवाहिद को छोड़कर यदि मूल मसनदों पर नज़र डालें, तो उनमें चर्चा की गुंजाइश शायद वैसी ही मिले जैसे इमाम-ए-आज़म के द्वितीयक मसलों (मसाइल-ए-थानिया) में। और यह भी, अल्लाह के शुक्र से, हनफ़ियों और अबू हनीफ़ा के शिष्यों और शिष्यों के शिष्यों, जैसे इमाम अब्दुल्ला बिन अल-मुबारक, इमाम यहया बिन सईद क़त्तान, इमाम फ़ुज़ैल बिन अयाज़, इमाम मिस्र बिन किराम, इमाम वक़ी' बिन अल-जर्राह, इमाम लैथ बिन स'अद,.

इमाम मु'अल्ला बिन मंसूर राजी, इमाम यहया बिन मुईन आदि दीनी इमामों (रहमतुल्लाही अलैहिम अजमईन) की ही देन थी कि इमाम बुखारी ने उनके शिष्यों से ज्ञान प्राप्त किया और उनके पदचिन्हों पर चले। यहाँ तक कि खुद इमाम बुखारी के महान शिक्षक इमाम अहमद बिन हंबल, इमाम शाफ़ई के शिष्य हैं, वे इमाम मुहम्मद के, वे इमाम अबू यूसुफ के, वे इमाम अबू हनीफा के(रज़ियल्लाहु अन्हुमु अजमईन)। लेकिन यह महत्वपूर्ण कार्य ऐसा नहीं था कि इमाम बुखारी इसमें पूरी तरह तल्लीन होकर दूसरे अधिक महान कार्य यानी फ़िक़्ह (धर्मशास्त्र) और इजतिहाद (कानूनी शोध) के लिए भी समय पाते। अल्लाह अज़्वजल ने उन्हें महान शब्दों (हदीस) की सेवा के लिए बनाया था, अर्थों की सेवा मुजतहिद इमामों, विशेष रूप से इमामों के इमाम अबू हनीफा का हिस्सा था। मुहद्दिस और मुजतहिद के बीच का संबंध अत्तार (दवा बेचने वाला) और तबीब (हकीम/डॉक्टर) की तरह है। अत्तार दवाओं को पहचानता है, उसकी दुकान बेहतरीन दवाओं से भरी है, लेकिन बीमारी का निदान, इलाज की पहचान और इस्तेमाल का तरीका तबीब का काम है।

[1] सहीह अल-बुखारी, किताबुल वकालत, अध्याय: जब वकील कोई अवैध वस्तु बेचे आदि, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची 1/310 पृष्ठ 203 का 836

فتاوی رضویہ جلد دہم

اذا اردت ان تشتری فبع التمر ببیع اخر ثم اشتر بہ۔[1] نا چاہو تو اپنے چھوہارے اور چیز سے پہلے بیچ پھر اس سے اچھے چھوہارے مول لے لو۔

یہ شرعی حیلے نہیں تو اور کیا ہیں، باب حیل واسع ہے، اگر کلام کو وسعت دی جائے تطویل لازم آئے۔ اہل انصاف کو اسی قدر بس ہے، پھر جب اللہ ورسول اجازت دیں تعلیم فرمائیں تو ابو یوسف پر کیا الزام آ سکتا ہے، ہاں ہمارے امام اعظم و امام محمد رضی اللہ تعالٰی عنہم نے یہ خیال فرمایا کہ کہیں اس کی تجویز عوام کے لئے مقصدِ شنیع کا دروازہ کھولے ، لہٰذا ممانعت فرمادی، اور ائمہ فتوٰی نے اسی منع ہی پر فتوٰی دیا، امام بخاری بھی اگر امام محمد کا ساتھ دیں اور یہ قول امام ابی یوسف پسند نہ کریں تو امام ابی یوسف کی شانِ جلیل کو کیا نقصان، وہ کون سا مجتہد ہے جس کے بعض اقوال دوسروں کو مرضی نہ ہوئے، یہ ردو قبول تو زمانہ صحابہ کرام رضی اللہ تعالٰی عنہم سے بلا نکیر رائج و معمول ہے، نہ بخاری کے اقوال مذکورہ میں کوئی کلمہ سخت نفرت کا ہے، اُن سے صرف اتنا نکلتا ہے کہ یہ قول انھیں مختار نہیں، اور ہو بھی تو ان کی نفرت امام مجتہد کو کیا ضرر دے سکتی ہے خصوصاً ائمہ حنفیہ لاسیما امام الائمہ امام اعظم رضی اللہ تعالی عنہ وعنہم کہ امام بخاری کے امام و متبوع سیّدنا امام شافعی رضی اللہ تعالی عنہ جن کی نسبت شہادت دیتے ہیں کہ تمام مجتہدین امام ابو حنیفہ کے بال بچے ہیں ، حفظ حدیث ونقد رجال و تنقیح صحت وضعف روایات میں امام بخاری کا اپنے زمانے میں پایہ رفیع والا، صاحب رتبہ بالا، مقبول معاصرین و مقتدائے متاخرین ہونا مسلم۔ کتب حدیث میں ان کی کتاب بیشک نہایت چیدہ و انتخاب جس کے تعالیق و متابعات وشواہد کو چھوڑ کر اصول مسانید پر نظر کیجئے تو ان میں گنجائش کلام تقریباً شاید ایسی ہی ملے جیسے مسائلِ ثانیہ امام اعظم میں، اور یہ بھی بحمد اللہ حنفیہ وشاگردان ابو حنیفہ

وشاگردان شاگرد ابو حنیفہ مثل امام عبد اللہ بن المبارک و امام یحییٰ بن سعید قطان و اما فضیل بن عیاض و امام مستعر بن کرام و امام وکیع الجراح وامام لیث بن سعد وامام معلی بن منصور رازی وامام یحییٰ بن معین وغیرہ ہم ائمہ دین رحمۃ اللہ علیہم اجمعین کا فیض تھا کہ امام بخاری نے اُن کے شاگردوں سے علم حاصل کیا اور اُن کے قدم پر قدم رکھا اور خود امام بخاری کے استاذ اجل امام احمد بن حنبل، امام شافعی کے شاگرد ہیں، وہ امام محمد کے، وہ امام ابو یوسف کے، وہ امام ابو حنیفہ کے، رضی اللہ تعالی عنہم اجمعین، مگر یہ کار اہم ایسا نہ تھا کہ امام بخاری اس میں ہمہ تن مستغرق ہو کر دوسرے کار اجل واعظم یعنی فقاہت واجتہاد کی بھی فرصت پاتے، اللہ عز وجل نے انھیں خدمتِ الفاظِ کریمہ کے لئے بنایا تھا، خدمت معانی ائمہ مجتہدین خصوصاً امام الائمہ ابو حنیفہ کا حصہ تھا۔ محدث و مجتہد کی نسبت عطار و طبیب کی مثل ہے، عطار دوا شناس ہے اُس کی دُکان عمدہ دواؤں سے مالامال ہے مگر تشخیص مرض و معرفتِ علاج و فریقِ استعمال طبیب کا کام ہے،

1 صحیح البخاری کتاب الوکالت باب اذ باع الوکیل شیئا فاسداً الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۳۱۰

Fatawa Razawiyya, Volume 10

If a complete perfumer does not reach the high perceptions of a skilled physician, he is excused. Especially the king of skilled physicians, the leader of the world's imams, who brought knowledge from the Pleiades (the stars), whose depth of objectives the great imams did not find. Indeed, Imam Bukhari is neither from the Tabi'in nor the Taba' al-Tabi'in; he became a student in the fifth generation after Imam Azam. The venerable Imam Suleiman Al-A'mash himself, who is among the most illustrious Tabi'in and a leader of the Imams of Hadith, was a student of Sayyiduna Anas bin Malik Al-Ansari (may Allah be pleased with him), the servant of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), and a teacher to our Imam Azam (may Allah have mercy on him). Someone asked him (Al-A'mash) some questions when Imam Azam (may Allah be pleased with him) was also present. Imam Al-A'mash took a fatwa from our Imam, and our Imam immediately answered all the questions. Al-A'mash asked, "From where did you produce these answers?" He replied, "From the hadiths I heard from you." And he recited those hadiths along with their chains of narration. Imam Al-A'mash said:

Enough! The hadiths I narrated to you in a hundred days, you recited to me in a single hour. I did not know that you work with these hadiths. O group of jurists (Fuqaha)! You are the physicians and we (the Muhaddithin) are the pharmacists, and you, O man, have taken both sides (mastered both).[1]	That is, enough! The hadiths I narrated in a hundred days, you recited to me in a moment. I did not know that you work with hadiths in this way. O Mujtahid! You are the physician and we Muhaddithin are the perfumers. And O Abu Hanifa! You have occupied both shores.

This narration has been mentioned by Imam Ibn Hajar Makki Shafi'i and other Shafi'i imams and others in their works like "Khairat al-Hisan". Not only this, but far more illustrious and greater than him is his noble and senior teacher, Imam Aamir ash-Sha'bi, who met five hundred companions of the Prophet (may Allah be pleased with them), including the Leader of the Believers, Mawla Ali, Sa'd bin Abi Waqqas, Sa'id bin Zayd, Abu Hurairah, Anas bin Malik, Abdullah bin Umar, Abdullah bin Abbas, Abdullah bin Zubair, Imran bin Husain, Jarir bin Abdullah, Mughirah bin Shu'bah, Adiyy bin Hatim, Imam Hasan, Imam Husain, and many other companions of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him). He was their student and a teacher of our Imam Azam (may Allah have mercy on him). His status in Hadith was so high that he used to say, "For twenty years, no hadith has reached my ears from any

Muhaddith whose knowledge was greater than mine." A person of such high station and grandeur states:

We are not jurists (Fuqaha), but we heard the hadiths and narrated them to the jurists so that they may act upon them.	We are not jurists and Mujtahids; we have just heard the hadiths and narrated them before the jurists so that, being informed about them, they...

[1] Al-Khairat al-Hisan, Chapter 30, regarding his chain in Hadith, M.H. Saeed Company, Karachi, p. 144.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दस

यदि एक पूर्ण इत्र विक्रेता (अत्तार) एक कुशल चिकित्सक (तबीब) की उच्च समझ तक नहीं पहुँच पाता है, तो वह क्षम्य है। विशेष रूप से कुशल चिकित्सकों के राजा, दुनिया के इमामों के नेता, जो 'सुरैया' (तारों) से ज्ञान लेकर आए, जिनके उद्देश्यों की गहराई महान इमामों को भी नहीं मिली। वास्तव में, इमाम बुखारी न तो ताबिईन से हैं और न ही तब-ए-ताबिईन से; वे इमाम आज़म के पाँचवें दर्जे के छात्र हैं। स्वयं आदरणीय इमाम सुलेमान आमश, जो सबसे प्रतिष्ठित ताबिईन और हदीस के इमामों के नेता हैं, सैयदुना अनस बिन मलिक अल-अंसारी (रज़ियल्लाहु अन्हु), जो अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के सेवक थे, के छात्र और हमारे इमाम आज़म (रहमतुल्लाहि अलैहि) के उस्ताद थे। किसी ने उनसे कुछ मसले पूछे, उस समय इमाम आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) भी वहाँ मौजूद थे। इमाम आमश ने हमारे इमाम से फतवा लिया, और हमारे इमाम ने तुरंत सभी सवालों के जवाब दे दिए। आमश ने पूछा, "आपने ये जवाब कहाँ से निकाले?" उन्होंने कहा, "उन हदीसों से जो मैंने स्वयं आपसे सुनी हैं।" और उन्होंने उन हदीसों को उनके वर्णन की कड़ियों (सनद) के साथ पढ़कर सुना दिया। इमाम आमश ने कहा:

बस कीजिए! जो हदीसें मैंने सौ दिनों में बयान की थीं, आपने उन्हें एक ही घड़ी में मुझे सुना दिया। मुझे मालूम नहीं था कि आप इन हदीसों पर इस प्रकार काम करते हैं। ऐ मुज्तहिद! तुम हकीम (तबीब) हो और हम हदीस सुनाने वाले पंसारी (अत्तार) हैं। और ऐ अबू हनीफा! तुमने दोनों किनारों को घेर लिया है (दोनों क्षेत्रों में महारत हासिल कर ली है)।[1]	यानी बस कीजिए, मैंने जो हदीसें सौ दिनों में बयान की थीं, आपने उन्हें एक ही घड़ी में मुझे सुना दिया। मुझे मालूम नहीं था कि आप हदीसों में यह काम करते हैं। ऐ मुज्तहिद! तुम हकीम हो और हम हदीस सुनाने वाले अत्तार। और ऐ अबू हनीफा! तुमने दोनों किनारों को घेर लिया।

यह उल्लेख इमाम इब्न हजर मक्की शाफई और अन्य शाफई इमामों ने अपनी पुस्तकों जैसे "खैरात अल-हिसान" आदि में किया है। केवल यही नहीं, बल्कि उनसे कहीं अधिक श्रेष्ठ और महान उनके आदरणीय और वरिष्ठ उस्ताद, इमाम आमिर अश्-शा'बी थे, जिन्होंने पाँच सौ सहाबा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) को पाया था, जिनमें अमीरुल मोमिनीन मौला अली, साद बिन अबी वक्कास, सईद बिन ज़ैद, अबू हुरैरा, अनस बिन मलिक, अब्दुल्ला बिन उमर, अब्दुल्ला बिन अब्बास, अब्दुल्ला बिन ज़ुबैर, इमरान बिन हुसैन, जरीर बिन अब्दुल्ला, मुग़ीरा बिन शुबा, अदी बिन हातिम, इमाम हसन, इमाम हुसैन और रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के कई अन्य सहाबा शामिल थे। वह उनके छात्र

और हमारे इमाम आज़म (रहमतुल्लाहि अलैहि) के उस्ताद थे। हदीस में उनका दर्जा इतना ऊँचा था कि वे कहते थे, "बीस साल बीत गए हैं, किसी भी हदीस बयान करने वाले से कोई ऐसी हदीस मेरे कानों तक नहीं पहुँची जिसका ज्ञान मुझे उस व्यक्ति से अधिक न हो।" ऐसे उच्च स्थान और महिमा वाले व्यक्ति कहते हैं:

हम लोग फकीह और मुज्तहिद नहीं हैं, हमने तो हदीसें सुनकर फकीहों के सामने बयान कर दी हैं, जो उनसे अवगत होकर (उन पर अमल करें)।	हम लोग फकीह और मुज्तहिद नहीं हैं, हमने तो हदीसें सुनकर फकीहों के आगे बयान कर दी हैं जो उन पर सूचित होकर...

[1] अल-खैरात अल-हिसान, अध्याय 30, हदीस में उनकी सनद के बारे में, एम.एच. सईद कंपनी, कराची, पृष्ठ 144।

عطار کامل اگر طبیب حاذق کے مدارک عالیہ تک نہ پہنچے معذور ہے خصوصاً ملک اطبائے حدّاق امام ائمہ آفاق جو ثریا سے علم لے آیا، جس کی دقتِ مقاصد کو اکابرِ ائمہ نے نہ پایا، بھلا امام بخاری تو نہ تابعین سے ہیں نہ تبع تابعین سے، امام اعظم کے پانچویں درجے میں جاکر شاگرد ہیں، خود حضرت امام اجل سلیمان اعمش کہ اجلہ تابعین و امام ائمہ محدثین سے ہیں حضرت سید نا انس بن مالک انصاری رضی اللہ تعالیٰ عنہ خادم رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے شاگرد اور ہمارے امام اعظم رحمہ اللہ تعالیٰ علیہ کے استاد، ان سے کچھ مسائل کسی نے پوچھے اس وقت امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ بھی وہاں تشریف فرما تھے امام اعمش نے ہمارے امام سے فتویٰ لیا، ہمارے امام نے سب مسائل کا فوراً جواب دیا، اعمش نے کہا یہ جواب آپ نے کہاں سے پیدا کیے؟ فرمایا ان حدیثوں سے جو میں نے خود آپ سے سُنیں اور وہ احادیث مع اسانید پڑھ کر بتادیں، امام اعمش نے کہا:

حسبك ماحدثتك به فی مائة یوم تحدثنی به یعنی بس کیجئے میں نے جو حدیثیں سو دن میں بیان کیں فی ساعة واحدة، ما علمت انك تعمل بهذه آپ نے گھڑی بھر میں مجھے سنادیں، مجھے معلوم نہ الاحادیث، یامعشر الفقهاء انتم الاطباء تھا کہ آپ احادیث میں یہ کام کرتے ہیں اے مجتہد! تم ونحن الصیادلة وانت ایها الرجل بکلا طبیب ہو اور ہم محدثین عطار۔ اور اے ابو حنیفہ! تم نے الطرفین۔[1] دونوں کنارے گھیر لیے۔

یہ روایت امام ابن حجر مکی شافعی وغیرہ ائمہ شافعیہ و غیرہم نے اپنی تصانیف خیرات الحسان وغیرہ میں بیان فرمائی، یہ تو یہ خود ان سے بدرجہا اجل و اعظم ان کے استاذ اکرم واقدم امام عامر شعبی جنہوں نے پانچو صحابہ کرام رضی اللہ تعالیٰ عنہم کو پایا حضرت امیر المومنین مولیٰ علی و

سعد بن ابی وقاص و سعید بن زید و ابو ہریرہ و انس بن مالک و عبداللہ بن عمر و عبداللہ بن عباس و عبداللہ بن زبیر و عمران بن حصین و جریر بن عبداللہ و مغیرہ بن شعبہ وعدی بن حاتم و امام حسن و امام حسین و غیر ہم بکثرت اصحاب کرام رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے شاگرد اور ہمارے امام اعظم رحمہ اللہ تعالیٰ کے استاد جن کا پایہ رفیع، حدیث میں ایسا تھا کہ فرماتے ہیں میں ۲۰ سال گزرے ہیں کسی محدث سے کوئی حدیث میرے کان تک ایسی نہیں پہنچی جس کا علم مجھے اس محدث سے زائد نہ ہو۔ ایسے مقام والا مقام با آں جلالت شان فرماتے ہیں:

انا لسنا بالفقهاء ولكنا سمعنا الحديث ہم لوگ فقیہ و مجتہد نہیں ہم نے تو حدیثیں سُن کر فقیہوں کے

فروينا للفقهاء من اذا آگے روایت کر دیں ہیں جو ان پر مطلع ہو کر

1 الخیرات الحسان الفصل الثلاثون فی سندہ فی الحدیث ایم ایچ سعید کمپنی کراچی ص ۱۴۴

Knowledge is action. [Naqalah-uz-Zayn fi Tadhkirat-ul-Huffaz]. We are not jurists (Fuqaha) or Mujtahids; we have merely heard the Hadith and narrated them before the jurists, who, being cognizant of them, will act accordingly. (Sheikh Zayn has narrated this in Tadhkirat-ul-Huffaz. -T)

If only the great Imam, our master Imam Bukhari (may the mercy of the Creator be upon him), had found the opportunity and spent no more than ten or twelve years learning jurisprudence (Fiqh) from the Hanafi masters like Imam Hafs al-Kabir Bukhari etc. (may Allah Almighty have mercy on them), he would have become aware of the majestic status and lofty position of the noble sayings of Imam Abu Hanifa. He would then have been counted equally among both the leading scholars of Hadith (Muhadditheen) and the leading jurists (Fuqaha), like Imam Abu Ja'far al-Tahawi al-Hanafi. However, whatever portion the Eternal Distribution bestows, that is what is received.

Every person was created for a particular task, And the inclination for that task was placed in his heart. (Whomever He wishes to prepare for a task, He places the love for that task in his heart.)

And in all fairness, this desire is also futile; if Imam Bukhari were like that, he would not have been the Imam Bukhari [we know]. Among these superficial people, he too would have been considered censured and flawed like the Hanafi Imams. "To Allah is the complaint made, and upon Him is the reliance" (My petition is before Allah Almighty alone, and in Him is my trust. -T).

In short, for us people of the Truth, the relationship of Hazrat Imam Bukhari with the luminous presence of the Great Imam (Imam al-A'zam Abu Hanifa) is the same as the relationship of Hazrat Amir Mu'awiya (may Allah be pleased with him) with the luminous presence of the Commander of the Faithful, the Master of the Muslims, our Master and Patron Ali al-Murtaza (may Allah Almighty ennoble his face). That is, there is an uncountable difference in ranks, and the truth was with the valiant Haider (Ali). Yet, Mu'awiya is also our leader; to disparage him is the work of the wicked. He who, in support of Mu'awiya—God forbid—turns a blind eye to the precedence, priority, greatness, and perfection of the Lion of Allah (Ali), is a Nasibi Yazidi. And he who, in the love of Ali, forgets the companionship and association of Mu'awiya with the court of the Prophet, is a Shiah Zaidi. This conduct of etiquette, by the grace of Allah Almighty, is always maintained by us people of moderation and balance. For us, the

same relationship exists between Imam Ibn al-Jawzi and the presence of Hazrat Ghaus al-A'zam (Sheikh Abdul Qadir Jilani), and between Mulla Ali al-Qari and the Seal of Muhammadan Sainthood, Sheikh al-Akbar (Ibn Arabi). We do not believe that the high status of Imam al-A'zam, Ghaus al-A'zam, and Sheikh al-Akbar (may Allah be pleased with them) is affected by the objections of Bukhari, Ibn al-Jawzi, or Ali al-Qari. Nor do we entangle ourselves with these gentlemen because they raised objections due to a misunderstanding. We know that the motive behind their objections was not egotism; rather, it was because their power of perception did not reach the lofty insights of those great beloveds of God. Consequently, the objection is void, and the objector is excused, while the status of those objected against remains most elevated and sacred. All praise belongs to Allah, Lord of all the worlds, and peace and blessings be upon the Master of the Messengers.

---

1 Tadhkirat-ul-Huffaz, biography 77, Ash-Sha'bi ‘Alamat-ut-Tabi’in, Dairat-ul-Ma'arif an-Nizamiyya, Hyderabad Deccan, 1/97.

इल्म अमल है। [नकलहुज़ ज़ैन फ़ी तज़किरातुल हुफ़्फ़ाज़]। हम लोग फ़क़ीह और मुज्तहिद नहीं हैं, हमने तो हदीसें सुनकर फ़क़ीहों के सामने बयान कर दी हैं, जो उन पर जानकार होकर कार्रवाई करेंगे। (इसे शेख ज़ैन ने तज़किरातुल हुफ़्फ़ाज़ में नक़ल किया है। त)

काश महान इमाम, हमारे आका इमाम बुखारी (उन पर रब्बे बारी की रहमत हो) अगर समय पाते और ज़्यादा नहीं तो दस-बारह साल इमाम हफ़्स कबीर बुखारी वगैरह अइम्मा-ए-हनफ़िया (अल्लाह तआला उन पर रहम फरमाए) से फ़िक़्ह हासिल फरमाते, तो वह इमाम अबू हनीफा के पाक कौल की अज़मत और मकाम की बुलंदी से आगाह हो जाते। फिर वह इमाम अबू जाफ़र तह़ावी हनफ़ी की तरह अइम्मा-ए-मुह़द्दिसीन और अइम्मा-ए-फ़ुक़हा दोनों की गिनती में बराबर आते, मगर अज़ली तक़सीम जो हिस्सा दे दे।

हर किसी को किसी काम के लिए बनाया गया है, और उसकी चाहत उसके दिल में डाल दी गई है। (जिसे जिस काम के लिए तैयार करना होता है, उस काम की मुहब्बत उसके दिल में डाल देते हैं)

और इंसाफ़न यह तमन्ना भी बेकार है, अगर इमाम बुखारी ऐसे होते तो वह इमाम बुखारी ही न होते। इन ज़ाहिरबीनों के यहाँ वह भी हनफ़ी इमामों की तरह बुरा और दोषपूर्ण माने जाते। "अल्लाह ही की बारगाह में फरियाद है और उसी पर भरोसा है" (अल्लाह तआला की बारगाह में ही अर्ज़ी है और उसी पर भरोसा है। त)

संक्षेप में, हम हक़ वालों के नज़दीक हज़रत इमाम बुखारी का हुज़ूर पुर नूर इमाम-ए-आज़म से वही रिश्ता है जो हज़रत अमीर मुआविया (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) का हुज़ूर पुर नूर अमीरल मोमिनीन मौलल मुस्लिमीन सैयदुना व मौलाना अली मुर्तज़ा (कर्रमल्लाहु तआला वज्हहुल् अस्ना) से है कि मर्तबों का अंतर बेहिसाब है और हक़ हैदर-ए-करार (अली) के साथ था, लेकिन मुआविया भी हमारे सरदार हैं, उन पर ताना मारना बदकारों का काम है। जो मुआविया की हिमायत में—अल्लाह की पनाह—अल्लाह के शेर (अली) की पहल, अज़मत और कामिलियत से आँखें फेर ले, वह नासिबी यज़ीदी है। और जो अली की मुहब्बत में मुआविया की सहाबियत और दरबार-ए-रिसालत से उनके रिश्ते को भुला दे, वह शिया ज़ैदी है। अदब का यही तरीका, अल्लाह के फ़ज़ल से, हम मध्यमार्गी और संतुलन रखने वालों के यहाँ हर जगह ध्यान में रखा जाता है। हमारे नज़दीक यही रिश्ता इमाम इब्नुल जज़ी का हज़रत गौस-ए-आज़म से और मौलाना अली क़ारी का हज़रत ख़ातम-ए-विलायते मुहम्मदिया

शेख़-ए-अकबर से है। न हम बुखारी, इब्नुल जज़ी और अली क़ारी के एतराज़ों से इमाम-ए-आज़म, गौस-ए-आज़म और शेख़-ए-अकबर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम) की बुलंद शान पर कोई असर समझते हैं, और न इन हज़रात से इस वजह से उलझते हैं कि उन्होंने गलतफ़हमी की वजह से एतराज़ किया। हम जानते हैं कि उनके एतराज़ की वजह नफ़्सानियत (अहंकार) नहीं थी, बल्कि उन महान ईश-प्रेमियों की ऊँची समझ तक उनकी पहुँच नहीं हो सकी। लाज़मी तौर पर एतराज़ गलत है और एतराज़ करने वाला मजबूर, जबकि जिनके खिलाफ एतराज़ हुआ उनकी शान बहुत ऊँची और पाक है। सब तारीफें अल्लाह के लिए हैं जो तमाम जहानों का रब है, और सलात व सलाम हो रुलों के सरदार पर।

---

1 तज़किरातुल हुफ़्फ़ाज़, तर्जुमा 77, अश्-शा'बी अलामतुत ताबिईन, दाइरतुल मआरिफ़ अन-निज़ामिया, हैदराबाद दकन, 1/97।

علم عمل۔ نقلہ الزین فی تذکرۃ الحفاظ۔ | ہم لوگ فقیہ و مجتہد نہیں ہم نے تو حدیثیں سن کر فقیہوں کے آگے روایت کر دی ہیں جو ان پر مطلع ہو کر کار روائی کرینگے۔ (اسے شیخ زین نے تذکرۃ الحفاظ میں نقل کیا ہے۔ ت)

کاش امام اجل سید نا امام بخاری علیہ رحمۃ الباری اگر فرصت پاتے اور زیادہ نہیں دس بارہ برس امام حفص کبیر بخاری وغیرہ ائمہ حنفیہ رحمہم اللہ تعالٰی سے فقہ حاصل فرماتے تو امام ابو حنیفہ کے اقوال شریفہ کی جلالت شان و عظمت مکان سے آگاہ ہو جاتے، امام ابو جعفر طحاوی حنفی کی طرح ائمہ محدثین وائمہ فقہاء دونوں کے شمار میں یکساں آتے مگر تقسیم ازل جو حصہ دے۔

ہر کسے را بہر کارے ساختند میل او اندر دلش انداختند (جس کو کسی کام کے لیے تیار کرنا ہوتا ہے اس کام کی محبت اس کے دل میں ڈال دیتے ہیں)

اور انصافا یہ تمنا بھی عبث ہے، امام بخاری ایسے ہوتے تو امام بخاری ہی نہ ہوتے، ان ظاہر بینوں کے یہاں وہ بھی ائمہ حنفیہ کی طرح معتوب و معیوب قرار پاتے فالی اللہ المشتکی وعلیہ التکلان (اللہ تعالٰی کی بارگاہ میں ہی درخواست ہے اور اسی پر بھروسا ہے۔ ت)

بالجملہ ہم اہل حق کے نزدیک حضرت امام بخاری کو حضور پر نور امام اعظم سے وہی نسبت ہے جو حضرت امیر معاویہ رضی اللہ تعالٰی عنہ کو حضور پر نور امیر المومنین مولی المسلمین سیدنا و مولانا علی المرتضٰی کرم اللہ تعالٰی وجہہ الاسنٰی سے کہ فرق مراتب بے شمار اور حق بدست حیدر کرار، مگر معاویہ بھی ہمارے سردار، طعن ان پر بھی کارِ فجار، جو معاویہ کی حمایت میں عیاذ باللہ اسد اللہ کے سبقت و اولیت و عظمت و اکملیت سے آنکھ پھیر لے وہ ناصبی یزیدی، اور جو

علی کی محبت میں معاویہ کی صحابیت و نسبتِ بارگاہ حضرت رسالت بھلا دے وہ شیعی زیدی، یہی روش آداب بحمد اللہ تعالیٰ ہم اہل توسط و اعتدال کو ہر جگہ ملحوظ رہتی ہے، یہی نسبت ہمارے نزدیک امام ابن الجوزی کو حضور سیدنا غوث اعظم اور مولانا علی قاری کو حضرت خاتم ولایت محمدیہ شیخ اکبر سے ہے، نہ ہم بخاری و ابن جوزی و علی قاری کے اعتراضوں سے شانِ رفیع امام اعظم و غوث اعظم و شیخ اکبر رضی اللہ تعالیٰ عنہم پر کچھ اثر سمجھیں نہ ان حضرات سے کہ بوجہ خطائی الفہم معترض ہوئے الجھیں، ہم جانتے ہیں کہ ان کا منشاء اعتراض بھی نفسانیت نہ تھا بلکہ ان اکابر محبوبانِ خدا کے مدارک عالیہ تک درس ادراک نہ پہنچنا لاجرم اعتراض باطل اور معترض معذور، اور معترض علیہم کی شان ارفع و اقدس، والحمد للہ رب العالمین والصلوۃ والسلام علی سید المرسلین

---

1 تذکرۃ الحفاظ ترجمہ ۷۷ الشعبی علامۃ التابعین دائرۃ المعارف النظامیہ حیدر آباد دکن ۱/۹۷

Fatawa Razawiya, Volume 10

[Salutations upon Prophet] Muhammad, his family, companions, saints, scholars, household, and his entire party, Amen. And Allah Almighty knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most perfect and most solid.

Problem 80: From Mirzapur Bungla, minor [locality], sent by Shuja'at Hussain Beg Sahib Bareilly.

To the most noble, world-wise, intelligent, expert, scholar of the current century, the honorable Mufti, may Allah increase his blessings. After the customary greetings, it is submitted that I was in debt for some time. On the 1st of Ramadan 1338 AH, I sold my shop and paid off the debt. Infinite and countless thanks to Him that He, by His grace and mercy, relieved me of this great burden. After paying all debts, two thousand two hundred and ninety-five [rupees] remained beyond my needs. On the second of the blessed month, in obedience to the Lord, Mighty and Majestic, before the passing of a lunar year (haulān-i-haul), I set aside the money. The Zakat for those 55 rupees, according to the command of the pure Sharia, was calculated, and by adding one more to the remainder, I set them aside with the intention of Zakat. Is this method correct according to the command of the pure Sharia or not? I was in Bareilly until the 24th of Ramadan, and during that time I continued to give Zakat money to students and the poor. Some remained when I had to come to Mirzapur out of necessity on the 24th. Now, if the remaining is given to the needy here, will it not be against the Sharia ruling? I have a brother-in-law who resides in Katra Miranpur, district Tilhar. He has low income and many children. If something is sent to him, it will also be a kindness to kin. But please guide whether the amount sent via mail—for example, five rupees sent and the mail fee was one or two annas—should these fees be given to them from [the zakat money] or separately from my own pocket?

Answer: And upon you be peace and the mercy of Allah and His blessings. The day and time an individual becomes the owner of nisab (the minimum threshold for Zakat), as long as they remain in possession of it, the same day and time when it recurs will mark the completion of the lunar year (haulān-i-haul). Any additional money received in between will also be included in that same year, and its year will be considered the same, even if it was received just a minute ago. Delaying the payment of Zakat after the completion of the lunar year is absolutely not permissible; the longer the delay, the more sinful it is. However, there is an option to pay in

advance gradually. At the end of the year, calculate the total. If the full amount due has been paid, it's better. If it's less, pay the remainder immediately now. If more has been paid, adjust it for the next year. On the day and time your lunar year completes, all the money received in between should be included in Zakat, including those fifty-six which were set aside with the intention of Zakat, and take 1/40th (2.5%) of the total. Yes, if there was no nisab before this, then the year would start from the time these rupees were received. At that time, whether you paid or not, or paid more or less, would not be the criterion; at the end of the year, see what remains. Zakat will be demanded on that remaining amount, whether it results in that demand or more or less. Give the rest of the Zakat to the poor there.

फतावा रज़विया, खंड 10

[पैगंबर] मुहम्मद, उनके परिवार, साथियों, संतों, विद्वानों, घर वालों और उनकी पूरी जमात पर सलाम, आमीन। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान, उसकी महिमा बुलंद हो, सबसे पूर्ण और सबसे दृढ़ है।

मसला 80: मिर्जापुर बंगला, नाबालिग [स्थान], प्रेषक: शुजात हुसैन बेग साहब बरेलवी।

अत्यंत सम्मानित, विश्व-ज्ञानी, बुद्धिमान, विशेषज्ञ, वर्तमान शताब्दी के विद्वान, माननीय मुफ्ती साहब, अल्लाह उनके आशीर्वाद में वृद्धि करे। सुन्नत के अनुसार सलाम के बाद, यह निवेदन है कि मुझ पर कुछ समय से कर्ज था। 1 रमजान 1338 हिजरी को मैंने अपनी दुकान बेचकर कर्ज चुका दिया। उसका असीम और अनगिनत शुक्र है कि उसने अपने फजल और करम से मुझे इस भारी बोझ से मुक्त कर दिया। सारा कर्ज चुकाने के बाद, जरूरत से ज्यादा दो हजार दो सौ पचानवे [रुपये] बचे। मुबारक महीने की दूसरी तारीख को, रब अज्ज़वजल की आज्ञा के पालन में, साल पूरा होने (हौलान-ए-हौल) से पहले ही रुपये अलग कर दिए। उन 55 रुपयों की जकात शरीयत-ए-मुतह्हरा के हुक्म के अनुसार हुई, शेष में एक जोड़कर जकात की नियत से अलग कर दिए। क्या यह तरीका शरीयत-ए-मुतह्हरा के हुक्म के अनुसार सही है या नहीं? मैं 24 रमजान तक बरेली में रहा, तब तक जकात की रकम छात्रों और गरीबों को देता रहा। कुछ बाकी थे कि मुझे जरूरत के कारण 24 तारीख को मिर्जापुर आना पड़ा। अब यहाँ यह शेष रकम जरूरतमंदों को दी जाए तो शरीयत के हुक्म के खिलाफ तो नहीं होगा? मेरे एक साले हैं जो कटरा मीरानपुर जिला तिलहर में रहते हैं, उनकी आमदनी कम है और बच्चे बहुत हैं। अगर उन्हें कुछ भेजा जाए तो सिला-ए-रहमी (रिश्तेदारों से अच्छा व्यवहार) भी होगा। लेकिन यह मार्गदर्शन करें कि डाक के माध्यम से जितनी रकम भेजी जाए, मान लीजिए पाँच रुपये भेजे और डाक की फीस एक या दो आना हुई, तो ये पैसे उन्हें उसी में से दिए जाएं या अलग से अपने पास से।

जवाब: और आप पर भी सलाम और अल्लाह की रहमत और उसकी बरकतें हों। जिस दिन और समय पर आदमी साहिब-ए-निसाब (न्यूनतम संपत्ति का मालिक) हुआ, जब तक निसाब रहे, वही दिन और समय जब आएगा तो साल पूरा (हौलान-ए-हौल) माना जाएगा। इस बीच जो और रुपया मिलेगा, उसे भी उसी साल में शामिल कर लिया जाएगा और उसी का साल उसका साल माना जाएगा, चाहे उसे मिले हुए अभी एक ही मिनट हुआ हो। साल पूरा होने के बाद जकात की अदायगी में बिल्कुल

देरी करना जायज नहीं है, जितनी देरी करेगा गुनहगार होगा। हाँ, पेशगी (अग्रिम) देने का अधिकार है कि धीरे-धीरे देता रहे, साल पूरा होने पर हिसाब करे। उस समय जो वाजिब निकले, अगर पूरा दे चुका है तो बेहतर, और अगर कम हो गया है तो बाकी तुरंत अब दे दे, और अगर ज्यादा पहुँच गया है तो उसे अगले साल में समायोजित कर ले। आप पर साल जिस दिन और समय पूरा होता है, उस बीच जो ये रुपये मिले वे सब जकात में शामिल किए जाएंगे, वे छप्पन भी जो जकात की नियत से अलग रखे थे, और उन सब को मिलाकर 40वां हिस्सा (2.5%) लेंगे। हाँ, इससे पहले निसाब न होता तो जिस समय ये रुपये मिले उसी समय से साल शुरू होता। उस समय आपने अदा किए या कम-ज्यादा का विचार न होता, साल पूरा होने पर देखिए कि क्या बाकी है, उतने की जकात का मुतालबा (मांग) होता, वह मुतालबा निकलता या कम-ज्यादा। बाकी जकात वहाँ के गरीबों (मसाकीन) को दे दीजिए।

पृष्ठ 206 का 836

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

محمد و آلہ و صحبہ و اولیائہ و علمائہ و اھلہ و حزبہ اجمعین، آمین، واللہ تعالی اعلم و علمہ جل مجدہ اتم و احکم۔

مسئلہ ۸۰: از مرزا پور بنگلہ نابالغ مرسلہ شجاعت حسین بیگ صاحب بریلوی

بنظر اشرف عالم المعی فاضل لوذعی مجددمائتہ حاضرہ جناب مفتی صاحب زاد اللہ فیوضہ، بعد سلام مسنون گزارش ہے مجھ پر عرصہ قرض تھا، یکم رمضان ۱۳۳۸ھ کو اپنی دکان بیچ کرکے قرضہ دے دیا، بے حد و بے شمار شکر ہے کہ اس نے مجھے اس بار عظیم سے اپنے فضل و کرم سے سبکدوش فرمایا، بعد ادائے کل قرضہ دو ہزار دوسو پچانوے زائد علی الاحتیاج باقی رہے، دوسری ماہ مبارک کو بامنتثال رب عزوجل قبل گزرنے حولان حول کے روپے علیحدہ کردیئے باقی رہے ان ۵۵ روپے کی زکوٰۃ بحکم شریعت مطہرہ ہوئے بقیہ میں ایک کا اضافہ کرکے بہ نیت زکوٰۃ علیحدہ کردیئے، یہ طریقہ بحکم شریعت مطہرہ صحیح ہوا یا نہیں؟ ۲۴ رمضان تک میں بریلی رہا جب تک زرزکوٰۃ طلبہ و فقراء کو دیتا رہا، باقی تھے کہ مجھے بضرورت ۲۴ کو مرزا پور آنا پڑا، اب یہاں یہ بقیہ اہل حاجت کو دیا جائے تو خلاف حکم شرعی تو نہ ہوگا؟ میرے ایک سالے ہیں جو کٹرہ میران پور ضلع تلہر میں منسوب ہیں قلیل آمدنی ہے اور کثیر اولاد ہیں اگر ان کو کچھ بھیجا جائے تو صلہ رحم بھی ہوگا مگر یہ ارشاد ہو کہ جس قدر ان کو بذریعہ ڈاک روانہ کیا جائے، مثلاً پانچ روپے بھیجے اور ڈاک کی فیس ایک آنہ یا دو آنے ہوئی تو یہ پیسے انہیں ص سے دئے جائیں یا علیحدہ اپنے پاس سے۔

الجواب: وعلیکم السلام ورحمتہ اللہ وبرکاتہ، جس دن تاریخ وقت پر آدمی صاحب نصاب ہوا جب تک نصاب رہے وہی دن تاریخ وقت جب آئے گا اسی منٹ حولان حول ہوگا اس بیچ میں جو اور روپیہ ملے گا اسے بھی اسی سال میں شامل کرلیا جائے گا اور اسی حولان کو اس کا حولان مانا جائے گا اگر چہ اسے ملے ہوئے ابھی ایک ہی منٹ ہوا، حولان حول کے بعد ادائے زکوٰۃ میں اصلاً تاخیر جائز نہیں، جتنی دیر لگائے گا گنہ گار ہوگا، ہاں پیشگی دینے میں اختیار ہے کہ بتدریج دیتا رہے سال تمام پر حساب کرے اس وقت جو واجب نکلے اگر پورا دے چکا بہتر، اور کم ہوگیا ہے تو باقی فوراً اب دے، اور زیادہ پہنچ گیا تو اسے آئندہ سال میں مجرا لے۔ آپ پر حولان حول جس دن تاریخ وقت پر ہوتا ہے اسے اس بیچ میں جو یہ روپے ملے سب زکوٰۃ میں شامل کیے جائیں گے وہ چھپن بھی جو بہ نیت زکوٰۃ علیحدہ رکھے، اور ان سب کو ملا کر ۴۰/۱ لیں گے، ہاں اس سے پہلے نصاب نہ ہوتا تو جس وقت یہ روپے ملے اسی وقت سے شروع سال لیتے اور اس وقت آپ نے ادا کیے یا بیش و کم کا اعتبار نہ ہوتا سال تمام پر دیکھیے کہ کیا باقی ہے اتنے کی زکوٰۃ کا مطالبہ ہوتا وہ مطالبہ نکلتا یا بیش و کم، بقیہ زکوٰۃ وہاں کے مساکین کو دیجئے۔

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

There is no harm in sending Zakat to another city if there is no blood relationship (not part of the 'rahim'). It can be sent before it becomes obligatory, i.e., before the passage of a full year, but not after that. Whatever amount the recipient receives will be counted as Zakat; expenses for sending it, such as fees, shall not be included. And Allah Almighty knows best.

Problem 81 to 82: (1) If a landlord has land cultivated on a sharecropping basis (batai) or if a farmer gets it cultivated by other farmers and they are entitled to half the produce, will Zakat be obligatory on both? (2) For the Rabi harvest, is it correct that the share is one-tenth for a field not watered, one-twentieth for a watered one, and for the Kharif harvest, it is one-tenth because it grows from rainwater?

The Answer: (1) According to the Sahibain (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad), 'Ushr (one-tenth) is only upon the farmer. There is no harm in giving a fatwa on this; rather, in countries where wages are fixed in cash, the fatwa should be based on this. In sharecropping, according to the saying of the Imam (Abu Hanifa), it is only upon the landlord. (2) Land watered by rain, canal, or pond has a share of one-tenth. Land watered by a 'charas' (leather bucket) or 'dhakli' (lever) has a share of one-twentieth, and land watered with purchased water should also have a one-twentieth share. And Allah Almighty knows best.

Problem 83: From Sirmian, District Bareilly, sent by Amir Ali Sahab Qadri, 2 Rajab 1331 AH. Zaid enquires that a farmer gave one-tenth from the produce of unwatered land and one-twentieth from watered land as Zakat. If after a full year, some of that same produce remains, from which the farmer had already paid the tenth or twentieth share, will he have to pay a one-fortieth share of Zakat or not?

The Answer: There is no Zakat on agricultural produce; that itself is 'Ushr. No other Zakat applies to it upon the completion of a year. Zakat is only on three types of wealth: 1. Gold, 2. Silver or merchandise bought with the intention of trade, 3. Livestock grazing in the wild. And Allah Almighty knows best.

Problem 84: From Daru, District Nainital, Post Office Kachhar, sent by Abdul Aziz Khan, 6 Ramadan al-Mubarak 1315 AH. Is canal land 'Ushri or Kharaji? And the money that the British take from landlords as installments, are they counted as Zakat, 'Ushr, or Kharaj? Give a ruling and be rewarded.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवां

यदि खूनी रिश्ता (रहीम) नहीं है, तो दूसरे शहर में ज़कात भेजने में कोई बुराई नहीं है। ज़कात वाजिब होने से पहले, यानी साल पूरा होने से पहले भेजी जा सकती है, लेकिन साल पूरा होने के बाद नहीं। प्राप्तकर्ता को जितनी राशि मिलेगी, उतनी ही ज़कात मानी जाएगी; भेजने का शुल्क आदि इसमें शामिल नहीं किया जाएगा। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 81 से 82: (1) यदि ज़मींदार ज़मीन बँटाई पर जुतवाए या काश्तकार अन्य काश्तकारों से खेती कराए और आधे पैदावार के हकदार हों, तो क्या दोनों पर ज़कात फ़र्ज़ होगी? (2) रबी की फसल में जिस खेत को पानी नहीं दिया गया, उसका दसवाँ हिस्सा, और पानी दिए हुए का बीसवाँ हिस्सा; तथा खरीफ़ की फसल में दसवाँ हिस्सा क्योंकि वह वर्षा के जल से पैदा होती है, क्या यह सही है?

अल-जवाब: (1) साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद) का मज़हब यह है कि उश्र (दसवाँ हिस्सा) केवल काश्तकार पर है। इस पर फ़तवा देने में कोई बुराई नहीं है, बल्कि उन देशों में जहाँ मज़दूरी नकद तय होती है, वहाँ इसी पर फ़तवा होना चाहिए। और बँटाई में इमाम (अबू हनीफ़ा) के कथन के अनुसार केवल ज़मींदार पर है। (2) जिसे वर्षा, नहर या तालाब का पानी दिया गया हो, उसमें दसवाँ हिस्सा है, और जिसे चरस या ढेकली से पानी दिया गया हो, उसमें बीसवाँ हिस्सा है, और जिसे मोल (खरीदकर) लिए गए पानी से सींचा गया हो, उसमें भी बीसवाँ हिस्सा होना चाहिए। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 83: सुरमियाँ, जिला बरेली से, प्रेषक अमीर अली साहब क़ादरी, 2 रजब 1331 हिजरी। ज़ैद पूछता है कि काश्तकार ने पैदावार में से बिना पानी वाली का दसवाँ हिस्सा और पानी वाली का बीसवाँ हिस्सा ज़कात (उश्र) के रूप में दे दिया है। यदि साल बीतने के बाद उसी पैदावार में से कुछ हिस्सा बच जाए, जिस पर काश्तकार दसवाँ या बीसवाँ हिस्सा दे चुका था, तो क्या उस पर चालीसवाँ हिस्सा (ज़कात) देना होगा या नहीं?

अल-जवाब: खेत की पैदावार पर कोई ज़कात नहीं है, वही उश्र है। उसके अलावा साल पूरा होने पर कोई और ज़कात नहीं आती। ज़कात केवल तीन प्रकार के माल पर है: 1. सोना, 2. चाँदी या वह माल जो व्यापार की नीयत से खरीदा गया हो, 3. जंगल में चरने वाले पशु। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 84: दारू, जिला नैनीताल, डाकखाना कछार से, प्रेषक अब्दुल अज़ीज़ ख़ाँ, 6 रमज़ानुल मुबारक 1315 हिजरी। नहरी ज़मीन उश्रीय है या ख़राजी? और जो रुपये अंग्रेज़ ज़मींदारों से किस्तों के रूप में लेते हैं, क्या वे ज़कात, उश्र या ख़राज में गिने जाएँगे? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

पृष्ठ 207/836

حرج نہیں سالے سے اگر نسبی رشتہ نہیں تو رحم میں شامل نہیں، دوسرے شہر کو وہ زکوٰۃ بھیج سکتے ہیں جو ابھی واجب الادانہ ہوئی، حولانِ حول نہ ہوا، اس کے بعد نہیں، جتنا روپیہ زکوٰۃ گیرندہ کو ملے گا اتنا زکوٰۃ میں محسوب ہوگا، بھیجنے کی اُجرت وغیرہ اس پر جو خرچ ہو شامل نہ کی جائے گی۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۸۱ تا ۸۲: (۱) اگر زمیندار زمین بٹائی پر جتوائے یا کاشتکار دیگر کاشت کار سے کاشت کرائے اور نصف پیداوار کے مستحق ہوں تو دونوں پر زکوٰۃ فرض ہوگی؟ (۲) فصل ربیع میں جس کھیت کو پانی نہ دیا اس کا دسواں حصہ، پانی دئے ہوئے کا بیسواں اور فصل خریف میں دسواں کیوں کہ بارش کے پانی سے پیدائش ہے، یونہی صحیح ہے؟

الجواب: (۱) صاحبین کا مذہب یہ ہے کہ عشر صرف کاشتکار پر ہے اس پر فتویٰ دینے میں کوئی حرج نہیں بلکہ ان ملکوں میں جہاں اُجرت میں نقدی ٹھہری ہوتی ہے وہاں اسی پر فتویٰ ہونا چاہئے اور بٹائی میں حسب قول امام فقط زمیندار پر ہے۔ (۲) جسے بارش یا نہر یا تالاب کا پانی دیا گیا اُس میں دسواں حصہ ہے، اور جسے چرسے یا ڈھکلی سے پانی دیا گیا اس میں بیسواں حصہ اور جسے مول کا پانی دیا گیا اس میں بھی بیسواں حصہ چاہئے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۸۳: از سر میاں ضلع بریلی مرسلہ امیر علی صاحب قادری ۲ رجب ۱۳۳۱ھ زید دریافت کرتا ہے کہ کاشت کار نے زکوٰۃ کی پیداوار میں سے دسواں حصہ بلا پانی دیا ہوا اور بیسواں حصہ پانی دئے ہوئے میں سے دیا اگر کاشت کار کے بعد سال تمام کے اسی پیداوار میں سے جس کی زکوٰۃ دسواں یا بیسواں حصہ دے چکا تھا، بچ رہے تو زکوٰۃ چالیسواں حصہ دینا ہوگا کہ نہیں؟

الجواب: کھیت کی پیداوار پر زکوٰۃ نہیں، وہی عشر ہے، اس کے سوا سال تمام پر اور کوئی زکوٰۃ نہیں آتی، زکوٰۃ صرف تین مالوں پر ہے : ۱۔ سونا ۲۔ چاندی یا وہ مال جو تجارت کی نیت سے خریدا یا ۳۔ جنگل میں چرتے ہوئے جانور۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۸۴: از درو ضلع نینی تال ڈاکخانہ کچھار مرسلہ عبدالعزیز خاں ۶ رمضان المبارک ۱۳۱۵ھ زمین نہری عشری ہے یا خراجی؟ اور جو روپے کہ انگریز زمینداروں سے بطور قسط ہیں وہ محسوب زکوٰۃ عشر یا خراج؟ بینوا توجروا۔

Answer: Land can be 'Ushri' (tithe-paying) in many forms, 'Kharaji' (land-tax paying) in many, and in some, it is neither Ushri nor Kharaji. The details of these are mentioned in books of jurisprudence under the chapter of 'Al-Ushr wal-Kharaj'. In a vast country like India, most or all of these forms are likely present in its various lands. Therefore, its land cannot be called absolutely Ushri nor absolutely Kharaji. 'Ushr' and 'Kharaj' are types of Sharia revenues for which the pure Sharia has prescribed principles, rules, occasions, and magnitudes. The British, in taking their installments (taxes), are not bound by these principles; rather, their revenue law is separate, as is not hidden (as is not hidden. T).

Problem 85: From Ludhiana, Mohalla Gujru Mangli, sent by Sheikh Muhammad Maqbool Sahib, merchant. 21 Jamadi al-Ula 1316 AH.

Question (Arabic): What do the Hanafi jurists say regarding the Indian lands held by Muslims, are they Kharaji or Ushri? Explain and be rewarded. (T) Question (Urdu): What is the position of the Hanafi jurists regarding the land of India which is in the possession of Muslims, are they Kharaji or Ushri? Explain and be rewarded. (T)

Answer: Arabic Column: Land is often Ushri as it was conquered and divided among us (1). Or those inhabitants who accepted Islam voluntarily before being overcome (2). And an Ushri land bought by a Zimmi from a Muslim, then a Muslim took it by pre-emption (3). Or it was returned to the seller (4) due to invalidity of sale (5) or by option of condition (6) or option of vision (7) absolutely, or defect (8) by judicial decree. And what a Muslim reclaimed (9) near Ushri lands or its proximity to Kharaji and Ushri lands is equal (10) according to the fatwa-issued opinion of Abu Yusuf, and it is irrigated by Ushri water alone or with Kharaji water according to the opinion of the two Masters (Tarafayn). And just as reclaiming (11), he made his house (12) a garden or a farm. Often it is Kharaji as...

Urdu Column: Land is Ushri in many cases, as in these cases, for example: (1) Conquered land divided among Muslims. (2) The inhabitants of that place accepted Islam happily before the victory of Muslims. (3) The land was Ushri, a Zimmi bought it from a Muslim, then some Muslim obtained it through pre-emption. (4) Or it returned to the Muslim seller due to corruption of the sale, (5) or option of condition, (6) or option of vision in any case, (7) or in case of a defect, by the decree of the judge. (8) Which a Muslim has inhabited near Ushri land. (9) Or the proximity of that land is equal to Kharaji and Ushri land, according to the fatwa-issued saying of Imam Abu

Yusuf, and only Ushri water or both Ushri and Kharaji water irrigate it according to the opinion of 'Tarafayn' (Imam Abu Hanifa and Imam Muhammad).

जवाब: ज़मीन बहुत सी सूरतों में 'उशरी' (दशमांश देय) होती है और बहुत सी में 'ख़राजी' (लगान देय), और कुछ में न उशरी होती है न ख़राजी। इनका विवरण फ़िक़्ह (धर्मशास्त्र) की किताबों में 'अल-उश्र वल-ख़राज' के अध्याय में वर्णित है। भारत जैसे विशाल देश की विभिन्न भूमियों में संभवतः वे सभी या अधिकांश रूप मौजूद हैं। इसलिए इसकी भूमि को न तो पूर्ण रूप से उशरी कहा जा सकता है और न ही पूर्ण रूप से ख़राजी। उश्र और ख़राज शरई राजस्व के प्रकार हैं जिनके लिए पावन शरीअत ने सिद्धांत, नियम, अवसर और मात्राएं निर्धारित की हैं। अंग्रेज अपनी किस्तें (कर) लेने में इन सिद्धांतों के पाबंद नहीं हैं, बल्कि उनका मालगुजारी का कानून अलग है, जैसा कि छिपा नहीं है (कमा ला यख़्फ़ा। त)।

मसला 85: लुधियाना, मुहल्ला गोजरो मंगली से शेख मोहम्मद मकबूल साहब, व्यापारी द्वारा भेजा गया। 21 जमादी-उल-उला 1316 हिजरी।

सवाल (अरबी): भारत की वे ज़मीनें जो मुसलमानों के कब्जे में हैं, उनके बारे में हनफी फ़ुक़्हा (धर्मशास्त्रियों) का क्या कहना है, क्या वे ख़राजी हैं या उशरी? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें। (त)
सवाल (उर्दू): मुसलमानों के कब्ज़े वाली हिन्दुस्तान की ज़मीन के बारे में हनफ़ी फ़ुक़्हा का क्या मौक़िफ़ है, क्या वे ख़राजी हैं या उशरी? स्पष्ट करें और सवाब पायें। (त)

जवाब: अरबी कॉलम: भूमि अक्सर उशरी होती है जैसा कि वह विजित की गई और हमारे बीच विभाजित की गई (1)। या वे निवासी जिन्होंने वश में आने से पहले स्वेच्छा से इस्लाम स्वीकार कर लिया (2)। और एक उशरी भूमि जिसे किसी ज़म्मी ने मुसलमान से खरीदा, फिर किसी मुसलमान ने उसे शुफ़ा (अग्रक्रयाधिकार) के ज़रिए ले लिया (3)। या बिक्री की खराबी (5) या विकल्प (6) या दर्शन (7) के कारण, या दोष (8) के कारण काज़ी के फैसले से विक्रेता (4) को वापस लौटा दी गई। और जिसे किसी मुसलमान ने उशरी ज़मीनों के पास आबाद किया (9)। या ख़राजी और उशरी ज़मीन से उसकी निकटता बराबर है (10), इमाम अबू यूसुफ़ के फ़तवे वाले कथन के अनुसार, और उसे केवल उशरी पानी या उशरी और ख़राजी दोनों पानी से सींचा जाता है 'तरफ़ैन' (इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम मोहम्मद) के कथन के अनुसार। और जैसे कि आबाद करना (11), उसने अपने घर (12) को बाग या खेत बना लिया। अक्सर यह ख़राजी होती है जैसे कि...

उर्दू कॉलम: ज़मीन बहुत सी सूरतों में उशरी होती है जैसा कि इन सूरतों में है, उदाहरण के लिए: (1) विजित भूमि जो मुसलमानों में विभाजित की गई। (2) वहां के निवासियों ने मुसलमानों की जीत से पहले ही खुशी से इस्लाम स्वीकार कर लिया। (3) ज़मीन उशरी थी, उसे किसी ज़म्मी ने मुसलमान से खरीद लिया फिर किसी मुसलमान ने शुफ़ा के ज़रिए हासिल कर लिया। (4) या बिक्री में गड़बड़ी के कारण, (5) या शर्त के विकल्प, (6) या देखने के विकल्प के कारण हर हाल में, (7) या दोष की स्थिति में काज़ी के फैसले से वह ज़मीन बेचने वाले मुसलमान की तरफ वापस लौट आई। (8) जिसे मुसलमान ने उशरी ज़मीन के पास आबाद किया हो। (9) या उस ज़मीन की निकटता ख़राजी और उशरी ज़मीन के समान है, इमाम अबू यूसुफ़ के फ़तवे के अनुसार, और उसे केवल उशरी पानी या उशरी और ख़राजी दोनों पानी से सींचा जाता हो 'तरफ़ैन' के कथन के अनुसार।

पेज 208/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

الجواب: زمین بہت صورتوں میں عشری ہوتی ہے بہت میں خراجی، بعض میں نہ عشری نہ خراجی، جن کی تفصیل کتب فقہ باب العشر و الخروج میں مذکور ہندوستان کہ ایک ملکِ وسیع ہے اس کی مختلف زمینوں میں غالباً وہ سب یا اکثر صور متحقق، تو اس کی زمین کو نہ مطلقاً عشری کہہ سکتے ہیں نہ مطلقاً خراجی، عشر و خراج جو محاصل شرعیہ کے اقسام ہیں جن کے لیے شرع مطہر نے اصول و ضوابط و مواقع و مقادیر کی تقدیر فرمائی، انگریز اپنی قسطیں لینے میں اس اصول کے پابند نہیں بلکہ ان کا قانونِ مالگزاری جدا ہے کما لا یخفی (جیسا کہ مخفی نہیں ہے۔ ت)

مسئلہ ۸۵: از لودھیانہ محلہ گوجرومنگلی مرسلہ شیخ محمد مقبول صاحب تاجر ۲۱ جمادی الاولٰی ۱۳۱۶ھ

ما قول الفقهاء الحنفية في ان اراضى الهندية التي في ايدى المسلمين خراجية ام عشرية-بينواتوجروا- (عربی) فقہائے احناف کا ہندوستان کی اس زمین کے بارے میں کیا موقف ہے جو مسلمانوں کے قبضہ میں ہے، کیا وہ خراجی ہیں یا عشری؟ بینوا توجروا۔ (ت)

الجواب: الارض كثيرا ماتكون عشرية كما فتح ۱ وقسم بيننا۔ وما اسلم ۲ اهله طوعا قبل ان تظفر بهم و عشرية اشتراها ذمى من مسلم فاخذ ها مسلم بشفعة ۳ اوردت على البائع ۴ لفساد البيع ۵ او بخيار ۶ اوروية ۷ مطلقا او عيب ۸ بالقضاء و ما احياه ۹ مسلم بقرب العشريات او لتسا وى القرب ۱۰ اليها والى الخراجيات على قول ابى يوسف المفتى به وسقاه بماء عشرى وحده اومع خراجى على قول الطرفين و كالا حياء جعله ۱۱ ۱۲ داره بستاناً او مزرعة، كثير اما تكون خراجية كما (عربی کالم) زمین بہت سی صورتوں میں عشری ہوتی ہے جیسا کہ ان صورتوں میں ہے مثلاً (۱) زمین مفتوحہ

اور مسلمانوں میں تقسیم شدہ ہے (۲) وہاں کے باشندوں نے مسلمانوں کے غلبہ سے پہلے پہلے خوشی سے اسلام قبول کرلیا ---- (۳) زمین عشری تھی اسے کسی ذمی نے مسلمان سے خرید لیا پھر کسی مسلمان نے بذریعہ شفعہ حاصل کر لی (۴) یا فساد بیع کی وجہ سے (۵) یا خیار شرط (۶) یا خیار رؤیت ہر حال میں (۷) یا عیب کی صورت میں قاضی کی قضا سے وہ زمین بیچنے والے مسلمان کی طرف واپس لوٹ آئی ہے (۸) جو مسلمان نے آباد کی ہو عشری زمین کے قریب (۹) یا اس زمین کا قرب خراجی اور عشری زمین کے مساوی ہے امام ابو یوسف کے مفتی بہ قول کے مطابق، اور اسے صرف عشری پانی یا عشری اور خراجی دونوں پانی سیراب کرتے ہوں طرفین کے (اردو کالم)

Fatawa Razawiya, Volume 10

[Arabic Text Section:] Conquest and showing favor to its inhabitants or transferring it to other disbelievers; what was conquered by peace; tithe (Ushr) land bought by a dhimmi from a Muslim; land tax (Kharaj) land bought by a Muslim; land developed by a dhimmi with the permission of the Imam or granted to him unconditionally; or by a Muslim near tax-lands; or irrigated solely with tax-water according to both opinions; and the same applies to the issue of the house for both a Muslim and a dhimmi together. Sometimes it may be neither tithe land nor tax land, such as land we conquered and kept for ourselves until the Day of Resurrection, or whose owners died and it reverted to the public treasury, over which there is a dispute. It is stated in Radd al-Muhtar from al-Durr al-Muntaqa Sharh al-Multaqa: This is a third type, meaning neither tithe land nor tax land among lands, called 'land of the kingdom' and 'enclosed lands'. It is that whose owners died without an heir and it reverted to the treasury, or was conquered by force and kept for Muslims until the Day of Resurrection. Its ruling, according to what is in al-Tatar Khaniya, is that it is permissible for the Imam to give it to a farmer in one of two ways: either by establishing them in the place of owners in cultivation and giving the tax...

[Urdu Text Section:] According to the statement (10, 11) and making the land of a house a garden or agricultural land is like making it inhabited, and in many cases, land is Kharaji: (1) Land was conquered but returned to its inhabitants as an act of kindness. (2) Such land was transferred to other infidels. (3) That land was conquered through peace. (4) Land was Ushri but a dhimmi bought it from a Muslim. (5) Such Kharaji land which a Muslim bought. (6) Land which a dhimmi inhabited with the Imam's permission. (7) Land given to a dhimmi as a gift. (8) A Muslim inhabited this land near Kharaji land or irrigated it solely with Kharaj water according to both opinions. (9) Similarly is the case of the house issue in favor of a Muslim and a dhimmi, that for the dhimmi it is Kharaji. Sometimes land is neither Shari (Ushri) nor Kharaji, for example, we conquered land and kept it as a waqf for Muslims until the Day of Resurrection or the owners of this land died and that land returned to the Treasury; there is a dispute in this. It is in Radd al-Muhtar from Durr al-Muntaqa Sharh al-Multaqa that this is the third type of land, meaning it is neither Ushri nor from Kharaji lands. Such lands are called 'Ardh-e-Mamlaka' and 'Aradhi Hawz', and these are lands whose owners die without heirs and that land returns to the Treasury, or it is land as a conquered territory and it is kept for Muslims until the Day

of Resurrection. According to Tatar Khaniya, its ruling is that the ruler of the time [gives] it in two ways...

फ़तावा रज़विया, खंड 10

[अरबी पाठ अनुभाग:] विजय और उसके निवासियों पर कृपा करना या उसे अन्य काफिरों को हस्तांतरित करना; जो शांति से विजित हुआ; एक धिम्मी द्वारा एक मुसलमान से खरीदी गई उश्रीय भूमि; एक मुसलमान द्वारा खरीदी गई खराजी भूमि; इमाम की अनुमति से धिम्मी द्वारा विकसित भूमि या उसे बिना शर्त दी गई भूमि; या खराजी भूमि के पास एक मुसलमान द्वारा विकसित; या दोनों मतों के अनुसार पूरी तरह से खराजी पानी से सींची गई; और यही मामला एक मुसलमान और धिम्मी के लिए एक साथ घर के मुद्दे पर भी लागू होता है। कभी-कभी यह न तो उश्रीय भूमि हो सकती है और न ही खराजी भूमि, जैसे कि वह भूमि जिसे हमने विजित किया और कयामत के दिन तक अपने पास रखा, या जिसके मालिक मर गए और वह बैत-अल-माल (राजकोष) में लौट आई, जिस पर विवाद है। रद अल-मुहतार में अल-दुर्र अल-मुंतका शरह अल-मुल्तका से उल्लेखित है: यह एक तीसरी प्रकार है, जिसका अर्थ है भूमियों में न तो उश्रीय और न ही खराजी, जिसे 'ममलका की भूमि' और 'घेरे वाली भूमि' कहा जाता है। यह वह है जिसके मालिक बिना वारिस के मर गए और वह राजकोष में वापस आ गई, या बलपूर्वक जीती गई और कयामत तक मुसलमानों के लिए रखी गई। इसका नियम, जैसा कि अल-तातार खानिया में है, यह है कि इमाम के लिए यह अनुमेय है कि वह इसे किसान को दो तरीकों में से एक में दे: या तो उन्हें खेती में मालिकों के स्थान पर स्थापित करके और खराज देकर...

[उर्दू पाठ अनुभाग:] कथन (10, 11) के अनुसार और घर की भूमि को बाग या कृषि भूमि बनाना आबाद करने जैसा है, और कई मामलों में भूमि खराजी होती है: (1) भूमि जीत ली गई लेकिन सदभावना के तौर पर उसके निवासियों को ही वापस कर दी गई। (2) ऐसी भूमि की ओर अन्य काफिरों का स्थानांतरण किया गया हो। (3) वह भूमि सुलह के माध्यम से विजित की गई हो। (4) भूमि उश्रीय थी लेकिन किसी धिम्मी ने इसे मुसलमान से खरीद लिया। (5) ऐसी खराजी भूमि जिसे किसी मुसलमान ने खरीद लिया। (6) भूमि जिसे इमाम की अनुमति से किसी धिम्मी ने आबाद किया। (7) धिम्मी को उपहार के रूप में दी गई भूमि। (8) किसी मुसलमान ने खराजी भूमि के पास इस भूमि को आबाद किया या दोनों कथनों के अनुसार केवल खराजी पानी से सींचा। (9) इसी तरह एक मुसलमान और धिम्मी के पक्ष में घर के मसले का मामला है, कि धिम्मी के लिए यह खराजी है। कभी-कभी भूमि न तो शरई (उश्रीय) होती है और न ही खराजी, उदाहरण के लिए, हमने भूमि विजित की और इसे कयामत तक मुसलमानों के लिए वक़्फ़ रखा या इस भूमि के मालिक मर गए और वह भूमि बैत-अल-माल की ओर लौट आई; इसमें विवाद है। रद अल-मुहतार में दुर्र अल-मुंतका शरह मुल्तका से है कि

यह भूमि का तीसरा प्रकार है यानी न वह उश्रीय है और न ही खराजी भूमियों में से है। ऐसी भूमियों को 'अर्ज़-ए-ममलका' और 'अराज़ी हौज' कहा जाता है, और ये ऐसी भूमियाँ हैं जिनके मालिक बिना वारिस के मर जाएं और वह भूमि बैत-अल-माल की ओर लौट आए, या वह भूमि विजित क्षेत्र के रूप में हो और वह कयामत तक मुसलमानों के लिए रखी गई हो। तातार खानिया के अनुसार इसका हुक्म यह है कि समय का शासक इसे दो तरीकों से...

पृष्ठ 836 का 209

[عربی عبارت:] فتح ومن على اهلها او نقل اليه كفار أخر وما فتح صلحاً وعشرية اشتراها ذمى من مسلم و خراجية اشتراها مسلم وما احياه ذمى باذن الامام او رضخ له مطلقاً او مسلم بقرب الخراجيات، او سقاه بماء خراجى صرفاً على القولين و مثله مسئلة الدار في المسلم والذمى جميعاً، وقد تكون لا عشرية ولا خراجية كما فتحناه و ابقيناه لنا الى يوم القيمة اومات ملا كها وآلت لبيت المال على نزاع في هذا قال في رد المحتار عن الدر المنتقى شرح الملتقى، هذا نوع ثالث يعنى لا عشرية ولا خراجية من الاراضي تسمى ارض المملكة واراضي الحوز و هو ما مات اربابه بلا وارث وآل لبيت المال او فتح عنوة ابقى للمسلمين الى يوم القيامة وحكمه على ما فى التاتارخانية انه يجوز للامام دفعه للمزارع باحد طريقين اما باقامتهم مقام الملاك في الزراعة واعطاء الخراج

[اردو عبارت:] قول کے مطابق (۱۰، ۱۱) اور دار کی زمین کو باغ یا زرعی بنانا ، آباد بنانے کی طرح ہے اور بہت سی صورتوں میں زمین خراجی ہوتی ہے (۱) زمین فتح کر لی گئی مگر اس کے باشندوں کو ہی بطور حسن سلوک واپس کردی گئی (۲) ایسی زمین کی طرف دوسرے کفار کی منتقلی کی گئی ہو (۳) وہ زمین بطور صلح فتح کی گئی ہو (۴) زمین عشری تھی مگر کسی ذمی نے مسلمان سے خرید لی۔ (۵) ایسی زمین خراجی جسے کسی مسلمان نے خرید لیا۔ (۶) ایسی زمین جسے اذنِ امام سے کسی ذمی نے آباد کیا۔ (۷) جو زمین ذمی کو بطور عطیہ دے دی گئی (۸) کسی مسلمان نے اس زمین کو خراجی زمین کے قریب آباد کیا یا اسے دونوں قولوں کے مطابق محض خراجی پانی سے سیراب کیا (۹) اسی کی مثل مسئلہ دار ہے مسلمان اور ذمی کے حق میں کہ ذمی کیلئے خراجی ہے بعض اوقات زمین نہ شرعی ہوتی ہے اور نہ ہی خراجی، مثلاً ہم نے زمین فتح کی اور تاقیامت اسے مسلمانوں کے لیے وقف رکھا یا اس زمین کے مالک فوت ہو گئے اور وہ

زمین بیت المال کی طرف لوٹ آئی، اس میں نزاع ہے۔ ردالمحتار میں درالمتقی شرح ملتقی سے ہے کہ یہ زمین کی تیسری نوع ہے یعنی نہ وہ عشری ہے اور نہ وہ خراجی زمینوں میں سے ہے، ایسی زمینوں کو ارضِ مملکت اور اراضی حوز کہا جاتا ہے، اور یہ ایسی زمینیں ہیں جن کے مالک بلا وارث فوت ہو جائیں اور وہ زمین بیت المال کی طرف لوٹ آئے یا وہ زمین بطور غلبہ مفتوحہ ہو اور وہ تا قیامت مسلمانوں کیلئے باقی رکھ دی ہو، تاتار خانیہ کے مطابق اس کا حکم یہ ہے کہ حاکم وقت اسے دو طریقوں

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Right Column - Urdu Translation/Explication] ...can give it for agriculture according to any one of these, or make them substitutes for the owners in agriculture and paying Kharaj (land tax), or give it on lease equal to the amount of Kharaj. Now, from what is obtained from this land, for the ruler it will be Kharaj, and for those taking it on rent, there will be nothing except the wage; so there is neither Ushr (tithe) nor Kharaj on them. (Briefly) Similarly, the ruling at this time is when he does not make it a Waqf (endowment), as I mentioned in the commentary of Multaqa. Ash-Shami says that Ushr is not mentioned in Al-Bahr; after investigating, they said that Kharaj ended on Egyptian lands because their owners died and they reverted to the public treasury (Bayt al-Mal). So if a person buys such land from the Imam, he will become the owner and there will be no Kharaj, because the Imam has obtained its substitute for the Muslims. Its details are in Al-Tuhfah al-Mardiyyah. Yes, Ushr is mentioned in that treatise, stating that Ushr is also not obligatory because no report was found in it. I say this is subject to consideration because jurists have explicitly stated that the obligation of Ushr is proven by the Book of Allah, Sunnah, Consensus (Ijma), and Reason (Qiyas), and they have also clarified that Ushr is obligatory on land that is neither Ushri nor Kharaji, such as wildernesses and mountains, and that ownership is not a condition.

[Left Column - Arabic Text] "As for leasing it for the amount of Kharaj, what is taken for the Imam's right is Kharaj, and for the farmers it is rent and nothing else, neither Ushr nor Kharaj. (Briefly) It says in Al-Durr al-Mukhtar: Land purchased from the public treasury, if its purchaser endows it, there is no Ushr or Kharaj. Shurunbulaliya quotes Al-Bahr. Similarly, if he does not endow it, as I mentioned in the commentary of Al-Multaqa. Ash-Shami said: Ushr was not mentioned in Al-Bahr, but rather it said, after confirming that Kharaj was abolished from Egyptian lands due to their return to the public treasury upon the death of their owners: if a person buys it from the Imam, he owns it and there is no Kharaj on it because the Imam has taken the substitute for the Muslims. The complete discussion is in Al-Tuhfah al-Mardiyyah. Yes, Ushr was mentioned in that treatise, saying it is also not obligatory because he did not see any report regarding it. I say: what is in it is not hidden, for they have explicitly stated that the obligation of Ushr is established by the Book, the Sunnah,

the Consensus, and Reason, and that it is obligatory in what is neither Ushri nor Kharaji, such as wildernesses and mountains, and that ownership is not a condition."

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Ushr, Kharaj, and Jizyah, Mustafa al-Babi Egypt 3/280.
2. Durr al-Mukhtar, Chapter on Ushr, Kharaj, and Jizyah, Matba' Mujtabai Delhi 1/348.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

[दायां कॉलम - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] ...इनमें से किसी एक के अनुसार कृषि के लिए दे सकता है, या उन्हें कृषि और ख़राज (भूमि कर) देने में मालिकों का प्रतिनिधि बना सकता है, या ख़राज की राशि के बराबर पट्टे (लीज़) पर दे सकता है। अब इस भूमि से जो प्राप्त होगा, शासक के अधिकार में वह ख़राज होगा और जो लोग इसे किराए पर ले रहे हैं उनके लिए मज़दूरी के अलावा कुछ नहीं होगा; अतः उन पर न उश्र (दशमांश) है और न ख़राज। (संक्षेप में) इसी प्रकार इस समय आदेश यह है कि जब वह इसे वक्फ न करे, जैसा कि मैंने मुल्तका की व्याख्या में उल्लेख किया है। शामी कहते हैं कि अल-बहर में उश्र का उल्लेख नहीं है; जांच के बाद उन्होंने कहा कि मिस्र की भूमि पर ख़राज समाप्त हो गया क्योंकि उनके मालिकों की मृत्यु हो गई और वे सार्वजनिक कोष (बैत अल-माल) में वापस आ गए। अतः यदि कोई व्यक्ति इमाम से ऐसी भूमि खरीदता है, तो वह उसका स्वामी बन जाएगा और उस पर कोई ख़राज नहीं होगा, क्योंकि इमाम ने मुसलमानों के लिए उसका विकल्प प्राप्त कर लिया है। इसका विवरण अत-तुहफ़ा अल-मर्दिया में है। हाँ, उस शोध पत्र में उश्र का उल्लेख है, जिसमें कहा गया है कि उश्र भी अनिवार्य नहीं है क्योंकि उसमें इसका कोई उल्लेख नहीं मिला। मैं कहता हूँ कि यह विचारणीय है क्योंकि न्यायविदों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि उश्र की अनिवार्यता अल्लाह की किताब, सुन्नत, इज्मा (आम सहमति) और कयास (तर्क) से सिद्ध है, और उन्होंने यह भी स्पष्ट किया है कि उश्र उस भूमि पर अनिवार्य है जो न तो उश्रीय है और न ही ख़राजी, जैसे कि जंगल और पहाड़, और यह कि स्वामित्व अनिवार्य शर्त नहीं है।

[बायां कॉलम - अरबी पाठ] "जहाँ तक ख़राज की राशि के बराबर पट्टे पर देने की बात है, तो इमाम के अधिकार में जो लिया जाता है वह ख़राज है, और किसानों के लिए वह किराया है और कुछ नहीं, न उश्र और न ख़राज। (संक्षेप में) अल-दुर्र अल-मुख्तार में कहा गया है: सार्वजनिक कोष से खरीदी गई भूमि, यदि उसका खरीदार उसे वक्फ कर देता है, तो कोई उश्र या ख़राज नहीं है। शरुन्बुललिया अल-बहर का हवाला देते हैं। इसी तरह, यदि वह इसे वक्फ नहीं करता है, जैसा कि मैंने अल-मुल्तका की व्याख्या में उल्लेख किया है। अल-शामी ने कहा: अल-बहर में उश्र का उल्लेख नहीं किया गया था, बल्कि इसमें यह पुष्टि करने के बाद कहा गया था कि मालिकों की मृत्यु पर सार्वजनिक कोष में वापसी के कारण मिस्र की भूमि से ख़राज समाप्त कर दिया गया था: यदि कोई व्यक्ति इसे इमाम से खरीदता है, तो वह इसका मालिक होता है और इस पर कोई ख़राज नहीं होता क्योंकि इमाम ने मुसलमानों के लिए विकल्प ले लिया है। पूरी चर्चा अत-तुहफ़ा अल-मर्दिया में है। हाँ, उस शोध पत्र में

उश्र का उल्लेख किया गया था, जिसमें कहा गया था कि यह अनिवार्य नहीं है क्योंकि उन्होंने इसके बारे में कोई रिपोर्ट नहीं देखी। मैं कहता हूँ: इसमें जो है वह छिपा नहीं है, क्योंकि उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है कि उश्र की अनिवार्यता किताब, सुन्नत, इज्मा और अक्ल द्वारा स्थापित है, और यह कि यह उसमें अनिवार्य है जो न तो उश्रीय है और न ही ख़राजी, जैसे जंगल और पहाड़, और यह कि स्वामित्व शर्त नहीं है।"

1. रद अल-मुह्तार, उश्र, ख़राज और जज़िया का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 3/280।
2. दुर्र अल-मुख्तार, उश्र, ख़राज और जज़िया का अध्याय, मतबा मुज्तबाई दिल्ली 1/348।

पृष्ठ 210/836

[دایاں کالم] میں سے کسی ایک کے مطابق زراعت کیلئے دے سکتا ہے یا زراعت اور خراج دینے میں مالکوں کے قائم مقام بنا دے یا بقدر خراج اجارہ پر دے دے اب اس زمین سے حاصل شدہ حاکم کے حق میں خراج اور کرایہ پر لینے والوں پر سوائے اجرت کے کچھ نہ ہوگا، تو ان پر نہ عشر ہے نہ خراج اھ اختصاراً۔ اسی طرح اس وقت حکم ہے جب وقف نہ کرے جیسا کہ میں نے شرح ملتقی میں ذکر کیا ہے۔ شامی کہتے ہیں کہ بحر میں عشر کا ذکر نہیں، انہوں نے اس کی تحقیق کے بعد کہا کہ اراضی مصر کے مالک فوت ہونے اور ان کے بیت المال کی طرف لوٹنے کی وجہ سے خراج ختم ہو گیا، تو اب کوئی انسان امام سے ایسی زمین خریدتا ہے تو وہ مالک بن جائیگا اور خراج نہیں ہوگا کیونکہ امام نے اس کا بدل مسلمانوں کے لیے حاصل کر لیا ہے، اس کی تفصیل تحفہ مرضیہ میں ہے اھ ہاں اس رسالہ میں عشر کا ذکر ہے کہ عشر بھی واجب نہیں کیونکہ اس میں نقل نہیں پائی گئی۔ میں کہتا ہوں یہ محل نظر ہے کیونکہ فقہاء نے تصریح کی ہے کہ فرضیت عشر کتاب اللہ، سنت، اجماع اور قیاس سے ثابت ہے، اور اس بات کی بھی تصریح کی ہے کہ عشر اس زمین میں واجب ہے جو نہ عشری ہو اور غیر شرط

[بایاں کالم - عربی متن] واما باجارتها بقدر الخراج فيكون المأخوذ في حق الامام خراجا وفي حق الاكرة اجرة لا غير لا عشر ولا خراج اه باختصار۔ و قال في الدر المختار المشتراة من بيت المال اذا وقفها مشتريها فلا عشر ولا خراج۔ شرنبلالیہ معزیاً للبحر، وكذا لو لم يوقفها كما ذكرته في شرح الملتقى اهـ [2] قال الشامی لم يذكر في البحر، العشر وانما قال بعد ما حقق ان الخراج ارتفع عن اراضي مصر لعودها الى بيت المال بموت ملاكها فاذا اشتراها انسان من الامام، ملكها ولا خراج عليها لان الامام قد اخذ البدل للمسلمين و تمامه في التحفة المرضية اه نعم ذكر العشر في تلك الرسالة فقال انه لا

يجب ايضا لانه لم ير فيه نقلا۔ قلت ولا يخفى مافيه لانهم قد صرحوا بان فرضية العشر ثابتة بالكتاب و السنة والاجماع والمعقول وبأنه يجب فيما ليس بعشرى ولا خراجى كالمفاوز والجبال وبأن الملك غير شرط۔

1 رد المحتار باب العشر والخراج والجزية مصطفٰى البابى مصر ٣/ ٢٨٠ 2 در مختار باب العشر والخراج والجزية مطبع مجتبائى دہلى ١/ ٣٤٨

جلد دہم (Volume 10) فتاوی رضویہ (Fatawa Ridawiyya)

(Arabic side) In it, rather the condition is ownership of the produce, and because Ushr is obligatory on the output, not on the land. So, the ownership of the land and its absence are equal, as stated in Al-Bada'i. The fall of Kharaj does not necessitate the fall of Ushr, although there might be a dispute regarding the fall of Kharaj when it is from Kharaj land or irrigated with its water, etc. (Extracted). The remaining issues are presented in Ad-Durr and other glorious books. The land of India, in its vastness, is not far from having all or most of those scenarios present. Thus, the recourse is to clarification. Whichever land has a scenario established, its ruling is applied, whether it is Kharaji, Ushri, or neither. There is no way to settle on a single ruling without investigation. And what is imagined—that Muhammad bin Qasim Al-Thaqafi conquered it by force in the year 93 AH, as mentioned in Al-Fath and Al-Binaya, and its distribution among Muslims is unknown—so it must be (Kharaji), is not so. For Qasim did not conquer but a very small portion from one of its regions adjacent to Multan. And conquest by force does not necessarily imply Kharajite status, as...

(Urdu side) ...nor Kharaji, for example, the land of forests and mountains. And it is also explicitly stated that ownership of the land is not a condition; rather, ownership of the produce obtained from the land is a condition. This is also because Ushr becomes obligatory on the yield, not on the land itself. Therefore, the ownership or non-ownership of land is equivalent. (Reference: Al-Bada'i). The falling away of Kharaj does not necessarily mean Ushr also falls away. Furthermore, there is a difference of opinion regarding the falling away of Kharaj when the land is Kharaji or irrigated with Kharaji water, etc. (in brief). The rest of the matters are well-known in Durr-e-Mukhtar and other books. The land of India is very vast; it is not improbable that all or most of the mentioned cases are found in it. Therefore, to apply the ruling that it is Ushri or Kharaji, or neither Ushri nor Kharaji, it is necessary to identify the land—which land's case is being dealt with. A definitive single ruling cannot be applied without investigation. And the notion entertained by some that Muhammad bin Qasim al-Thaqafi conquered Indian land by force in 93 AH—as mentioned in Al-Fath and Al-Binaya—and it is not known whether its Kharaj status is necessary, this notion is neither sufficient nor strong. And how could it be, since Qasim had conquered only a very small part that was adjacent to a corner of India near Multan, and acquiring land through dominance does not necessitate it being Kharaji land, as you have learned. So, just as...

(Footnotes) 1. Radd al-Muhtar, Chapter on Ushr, Kharaj, and Jizya, Mustafa al-Babi, Egypt, 3/279. 2. Fath al-Qadir, Chapter on Ushr and Kharaj, Maktaba Nooria Rizvia, Sukkur, 5/280. Page 211 of 836

(अरबी पक्ष) इसमें, बल्कि शर्त उपज का स्वामित्व है, और क्योंकि उश्र पैदावार पर अनिवार्य है, न कि भूमि पर। इसलिए, भूमि का स्वामित्व और उसका न होना बराबर है, जैसा कि अल-बदई में है। खराज के समाप्त होने से उश्र का समाप्त होना आवश्यक नहीं है, हालांकि खराज के समाप्त होने में विवाद हो सकता है जब वह खराज की भूमि हो या उसके पानी से सींची गई हो आदि (संक्षिप्त)। शेष मुद्दे अद-दुर और अन्य गौरवशाली पुस्तकों में प्रस्तुत हैं। भारत की भूमि, अपनी विशालता में, उन सभी या अधिकांश परिदृश्यों के होने से दूर नहीं है। इस प्रकार, सहारा स्पष्टीकरण का है। जिस भूमि में जो परिदृश्य स्थापित हो, उसका वही निर्णय लागू किया जाएगा, चाहे वह खराजी हो, उश्रीय हो, या दोनों में से कोई नहीं। बिना जाँच-पड़ताल के एक ही निर्णय पर टिके रहने का कोई रास्ता नहीं है। और जो यह कल्पना की जाती है कि मुहम्मद बिन कासिम अल-थकफी ने हिजरी सन 93 में बलपूर्वक इसे जीता था, जैसा कि अल-फत और अल-बिनाया में है, और मुसलमानों के बीच इसके वितरण के बारे में पता नहीं है—इसलिए इसे (खराजी) होना चाहिए—वह सही नहीं है। क्योंकि कासिम ने मुल्तान के निकट उसके एक क्षेत्र से केवल एक बहुत ही छोटा सा हिस्सा जीता था। और बलपूर्वक विजय प्राप्त करना आवश्यक रूप से खराजी होने का संकेत नहीं देता, जैसा कि...

(उर्दू पक्ष) ...न ही खराजी, उदाहरण के लिए जंगलों और पहाड़ों की भूमि। और यह भी स्पष्ट किया गया है कि भूमि का स्वामित्व शर्त नहीं है, बल्कि भूमि से प्राप्त उपज का स्वामित्व शर्त है। यह इसलिए भी है क्योंकि उश्र उपज पर लागू होता है, न कि स्वयं भूमि पर। इसलिए, भूमि का स्वामित्व या गैर-स्वामित्व बराबर है। (संदर्भ: अल-बदई)। खराज के समाप्त होने का अर्थ यह नहीं है कि उश्र भी समाप्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त, खराज के समाप्त होने के संबंध में मतभेद है जब भूमि खराजी हो या खराजी पानी से सींची जाती हो आदि (संक्षेप में)। शेष मामले दुर्रे मुख्तार और अन्य पुस्तकों में प्रसिद्ध हैं। भारत की भूमि बहुत विशाल है; इसमें उल्लिखित सभी या अधिकांश स्थितियों का पाया जाना असंभव नहीं है। इसलिए, यह नियम लागू करने के लिए कि यह उश्रीय है या खराजी, या न तो उश्रीय है और न ही खराजी, भूमि की पहचान करना आवश्यक है कि किस भूमि का मामला सामने है। बिना शोध के निश्चित रूप से एक ही नियम नहीं लगाया जा सकता। और जो यह वहम किया गया है कि मुहम्मद बिन कासिम अल-थकफी ने 93 हिजरी में भारत की भूमि को जीत के तौर पर हासिल किया था—जैसा कि अल-फत और अल-बिनाया में है—और यह ज्ञात नहीं है कि इसका खराजी होना आवश्यक है, यह वहम न तो पर्याप्त है और न ही मजबूत। और यह कैसे हो सकता है,

क्योंकि कासिम ने बहुत ही छोटा हिस्सा जीता था जो मुल्तान के पास भारत के एक कोने से सटा हुआ था, और प्रभुत्व के माध्यम से भूमि प्राप्त करना उसके खराजी होने को अनिवार्य नहीं करता जैसा कि आप जान चुके हैं। तो, जिस प्रकार...

(पादलेख) 1. रद अल-मुह्तार, उश्र, खराज और जिज़्या का अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 3/279। 2. फतह अल-कादिर, उश्र और खराज का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 5/280। पृष्ठ 211 / 836

جلد دہم فتاوی رضویہ

(عربی کالم) فیہ بل الشرط ملك الخارج ولان العشر یجب فی الخراج لا فی الارض فکان ملك الارض وعدمه سواء کما فی البدائع ولا یلزم من سقوط الخراج سقوط العشر علی انه قد ینازع فی سقوط الخراج حیث کانت من ارض الخراج او سقیت بمائه الخ ملتقطاً وبواقی المسائل معروضة فی الدرر وغیرہ من الاسفار الغر وارض الہند علی سعتها لا یبعد ان یوجد فیہا تلك الصور کلہا اوجلہا فالمصیر الی التبین فای ارض ثبتت فیہا صورة اجری علیها حکمها من کونها خراجیة او عشریة او لا ولا سبیل الی الجزم بحکم واحد من دون تحقیق وما یتوهم من ان القاسم بن محمد الثقفی افتتحها عنوة سنة ثلث وتسعین 2 کما فی الفتح والبنایة ولم یعلم قسمتها بین المسلمین فوجب کیف وان قاسما لم یفتح منها الا شیئا نزرا یسیرا من احدی نواحیها مما یلی ملتان والافتتاح عنوة لا تستلزم الخراجیة کما

(اردو کالم) نہ خراجی، مثلاً جنگل اور پہاڑ کی زمین، اور یہ بھی تصریح ہے کہ ملکیت اس پر شرط نہیں بلکہ زمین سے حاصل ہوئی چیز کی ملکیت شرط ہے اور اس لیے بھی کہ عشر حاصل شدہ میں لازم ہوتا ہے نہ کہ زمین میں، لہذا زمین کی ملکیت اور عدم ملکیت برابر ہے البدائع، سقوط خراج سے سقوط عشر لازم نہیں آتا، علاوہ ازیں سقوطِ خراج میں بھی اختلاف ہے جبکہ وہ زمین خراجی ہو یا خراجی پانی سے سیراب ہو الخ اختصاراً۔ باقی مسائل در مختار اور دیگر کتب میں معروف ہیں۔ ہندوستان کی زمین نہایت وسیع ہے اس میں مذکورہ تمام صورتوں یا اکثر کا پایا جانا بعید نہیں لہذا یہ حکم لگانے کے لیے کہ یہ عشری ہے یا خراجی، یا نہ عشری ہے نہ خراجی۔ زمین کا تعین ضروری ہے کہ کون سی زمین کا معاملہ درپیش ہے، تحقیق کے بغیر یقینی طور پر ایک حکم نہیں لگایا جا سکتا۔ اور جو یہ وہم کیا گیا ہے کہ قاسم بن محمد الثقفی نے ۹۳ھ کو ہندوستان کی زمین بطورِ غلبہ حاصل کی تھی۔ جیسا کہ فتح اور بنایہ میں ہے اور یہ معلوم نہیں کہ

اس کا خراجی ہو نا ضروری ہے، یہ وہم نہ کافی ہے اور نہ قوی، اور یہ ہو بھی کیسے سکتا ہے کیونکہ قاسم نے بہت تھوڑا سا حصہ فتح کیا تھا جو ہندوستان کے ایک گوشہ ملتان کے ساتھ متصل تھا، اور بطورِ غلبہ حصولِ زمین اس کے خراجی ہونے کو مستلزم نہیں جیسا کہ آپ نے جان لیا ہے تو جس طرح

(حواشی) 1 ردالمحتار باب العشر والخراج والجزیة مصطفی البابی مصر ۲۷۹/۳ 2 فتح القدیر باب العشر والخراج مکتبه نوریه رضویه سکهر ۲۸۰/۵ Page 211 of 836

Fatawa Razawiya, Volume 10

You know that just as the distribution of this land among us is not known, similarly, its granting to the inhabitants as an act of favor is not established either. So, how can a ruling be given for the imposition of Kharaj (land tax) on Muslims despite the lack of evidence for its necessity? Isn't it possible that the land is among what was left for the Muslims? Rather, it is apparent from the actions of the rulers. Therefore, it is neither Ushr (tithe) nor Kharaj in its original status. As for what is in the hands of the people, which they possess and inherit, it is ruled that it belongs to them. It is presumed that some of it was barren land that they cultivated, and some were transferred to them legally from the public treasury (Bayt al-Mal). After this, it will certainly not be Kharaj land because it was not so at the beginning, and Kharaj cannot be initially imposed on a Muslim. It would be Ushr land as verified in 'Radd al-Muhtar'. In the second case, it would be exempt from both duties (Ushr and Kharaj) according to what is in 'al-Tuhfat al-Mardiyyah', 'Ghaniyat Dhawi al-Ahkam', and 'al-Durr al-Mukhtar'. Ibn Abidin said: "The lack of ownership by the cultivators is unknown to us except in villages and endowed farms, or what is known to belong to the public treasury. As for other lands, we see people inheriting them generation after generation." In 'al-Khayriyyah', it is mentioned: "When the possessor claims that he received the land through purchase, inheritance, or other means..."

आप जानते हैं कि जिस प्रकार हमारे बीच इसका वितरण ज्ञात नहीं है, उसी प्रकार निवासियों को उपकार के रूप में दिया जाना भी प्रमाणित नहीं है। तो, आवश्यकता के प्रमाण के अभाव के बावजूद मुसलमानों पर खराज (भूमि कर) लगाने का आदेश कैसे दिया जा सकता है? क्या यह संभव नहीं है कि यह भूमि उन जमीनों में से हो जो मुसलमानों के लिए छोड़ी गई थीं? बल्कि, शासकों के कार्यों से यही स्पष्ट होता है। इसलिए, अपनी मूल स्थिति में यह न तो उश्री (tithe) है और न ही खराजिया। और जो कुछ लोगों के हाथ में है, जिसके वे मालिक हैं और जो उन्हें विरासत में मिलता है, तो यह आदेश दिया जाता है कि वह उन्हीं की संपत्ति है। यह माना जाता है कि उनमें से कुछ बंजर भूमि थी जिसे उन्होंने आबाद किया, और कुछ सार्वजनिक खजाने (बैतुल-माल) से कानूनी रूप से उन्हें हस्तांतरित की गई। इसके बाद, यह निश्चित रूप से खराज भूमि नहीं होगी क्योंकि यह शुरुआत में ऐसी नहीं थी, और किसी मुसलमान पर शुरू में खराज अनिवार्य नहीं किया जा सकता। जैसा कि 'रद अल-मुह्तार' में प्रमाणित है, यह उश्री भूमि होगी। दूसरी स्थिति में, यह दोनों कर्तव्यों (उश्र और खराज) से मुक्त होगी जैसा कि 'अल-तोहफ़त अल-मर्दिया', 'ग़नियत ज़वी अल-अहकाम' और 'अल-दुर्र अल-मुख्तार' में है। इब्न आबिदीन कहते हैं: "किसानों के स्वामित्व की कमी हमें गांवों और वक्फ खेतों के अलावा ज्ञात नहीं है, या जो सार्वजनिक खजाने का होना ज्ञात है। अन्य जमीनों के लिए, हम देखते हैं कि मुसलमान पीढ़ी दर पीढ़ी उनके वारिस बनते हैं और खरीद-फरोख्त करते आ रहे हैं।" 'अल-खैरिया' में है: "जब कब्ज़ा करने वाला दावा करे कि उसे यह ज़मीन खरीद, विरासत या किसी अन्य कारण से मिली है..."

علمتم كما لم يعلم قسمتها بيننا كذلك لم يثبت المن بها على اهلها فكيف يحكم بايجاب الخراج على المسلمين مع عدم ثبوت موجبه، الايمكن ان تكون الارض مما ابقى للمسلمين بل لعله الظاهر من صنيع السلاطين فاذن لا تكون في اصل الوضع عشرية ولا خراجية وما كان منها بأيدى الناس يتملكونها ويتوارثونها، يحكم بأنها مملوكة لهم ويحمل على ان منها ما كان مواتاً فأحييت و منها ما انتقل اليهم بوجه صحيح من بيت المال وبعد هذا لا تكون خراجية قطعاً لانها لم تكن في بدء امرها منها ولا يوضع الخراج على مسلم بدأ تكون عشرية على ما حققه في ردالمحتار وفارغة الوظيفتين في الصورة الثانية على ما في التحفة المرضية وغنية ذوى الاحكام والدرالمختار، قال ابن عابدين عدم ملك الزراع غير معلوم لنا الا فى القرى و المزارع الموقوفة او المعلوم كونها لبيت المال اما غيرها فنراهم يتوارثونها جيلا بعد جيل وفي الخيرية اذا ادعى واضع اليد الذى تلقاها شراءً أو ارثاً او غيرها من اسباب

مسلمانوں کے درمیان تقسیم کرنا معلوم نہیں اسی طرح ان باشندوں کو بطور حسن سلوک دینا بھی تو ثابت نہیں، تو عدم ثبوت مقتضی کے باوجود مسلمانوں پر وجوب اخراج کا حکم کیسے لگایا جاسکتا ہے البتہ ایسا ممکن بلکہ مسلمان سلاطین سے زیادہ ظاہر یہی ہے کہ انہوں نے یہ زمین مسلمانوں کے لیے رکھی ہو تو اب اصل مصرف کے اعتبار سے نہ یہ عشری ہے اور نہ خراجی، اور جو زمین مسلمانوں کے قبضہ میں ہو وہی اس کے مالک ووارث ہوں تو وہاں اس زمین کو انہی کی مملوکہ کہا جائے گا اور یہی سمجھا جائے گا ان میں سے کچھ زمین غیر آباد تھی اسے مسلمانوں نے آباد کر لیا اور کچھ انکی طرف بیت المال سے بطریق صحیح آئی، اس کے بعد تو وہ قطعاً خراجی نہ ہوگی کیونکہ ابتداءً وہ خراجی نہیں ہو سکتی اور نہ ہی کسی مسلمان پر ابتداءً خراج لازم ہو سکتا ہے اور وہ عشری ہوگی جیسا کہ اس کی تفصیل ردالمحتار میں ہے، اور وہ دوسری

صورت میں دونوں وظیفوں (عشر وخراج) سے فارغ ہوگی جیسا کہ تحفہ مرضیہ، غنیہ ذوی الاحکام اور در مختار میں ہے، ابن عابدین کہتے ہیں کہ ہمیں قری اور وقف شدہ کھیتوں کے علاوہ عدم ملک زراع کا علم نہیں یا ہمیں معلوم ہے کہ یہ زمین بیت المال کی ہے، اس کے علاوہ زمین کے مسلمان ہر دور میں وارث بنتے اور خرید وفروخت کرتے چلے آرہے ہیں، خیر یہ میں ہے کہ قبضہ کرنے والا جب کوئی دعوی کرے کہ یہ زمین مجھے شراءً یا وراثتاً یا دیگر کسی اسباب سے ملی

Fatawa Razawiya Volume 10

Ownership: If it is his property, then his statement is valid for or against anyone disputing the ownership, with proof etc. Jurists have stated that possession and disposal are among the strongest evidences for ownership; hence, testifying that something is someone's property is correct. In Abu Yusuf's 'Kitab al-Kharaj', it is mentioned that it is not permissible for a ruler to remove anything from someone's possession except by an established and recognized right. When the Imams spoke regarding churches built for non-believers, stating they were in the wilderness and later became connected to city buildings, it is more appropriate to say that those lands remain in the ownership of those who possess them. This is because it is possible the land was barren and they cultivated it, or it was transferred to them in a legally valid manner. This is the summary of the detailed, eloquent, and clarifying passage. Regarding what was mentioned at the end concerning lands in Syria, Egypt, and similar regions: if it is known that they were acquired by the public treasury (Bayt al-Mal) through Sharia-compliant means, then their ruling is as the commentator mentioned from 'Al-Fath' (i.e., land tax/Kharaj is waived and what is collected is considered rent). However, lands whose status is unknown remain the property of their current owners, and what is collected from them is Kharaj, not rent.

1 Rad al-Muhtar, Chapter of Ushr, Kharaj, and Jizyah, Mustafa al-Babi, Egypt, 3/280.

स्वामित्व: यदि यह उसकी संपत्ति है, तो कथन उसके पक्ष में है या उसके विरुद्ध जो संपत्ति के बारे में उससे विवाद करता है, प्रमाण आदि। और न्यायविदों ने कहा है कि कब्ज़ा और उपभोग स्वामित्व के प्रमाण के रूप में उपयोग की जाने वाली सबसे मजबूत चीज़ों में से हैं, और इसी कारण से, यह गवाही देना कि यह उसकी संपत्ति है, मान्य है। इमाम अबू यूसुफ की 'किताब अल-खराज' में उल्लेख है कि किसी शासक के लिए यह जायज़ नहीं है कि वह किसी के कब्ज़े से कोई चीज़ निकाले सिवाय उस स्थिति के जब दूसरे का अधिकार स्थापित और ज्ञात हो। विद्वानों ने उन चर्चों के बारे में स्पष्ट किया है जो गैर-मुसलमानों के लिए बनाए गए थे, वे ऐसे वीराने में थे जो बाद में शहर की इमारतों से जुड़ गए, तो यहाँ यह कहना अधिक उचित है कि वह भूमि उन्हीं के स्वामित्व में रहेगी जिनके कब्ज़े में वह है। क्योंकि यह संभव है कि वह भूमि बंजर रही हो और उन लोगों ने उसे आबाद किया हो या वह उन लोगों को कानूनी रूप से सही तरीके से प्राप्त हुई हो। यह उनके विस्तृत, सुंदर और सही दृष्टिकोण को स्पष्ट करने वाले कथन का सारांश है। अंत में जो कहा गया है कि शाम (सीरिया), मिस्र और उनके जैसे अन्य क्षेत्रों की भूमि के बारे में: यदि यह ज्ञात हो कि वे शरीयत के अनुसार बैतुल-माल (राजकोष) की संपत्ति हैं, तो उनका आदेश वही है जिसका उल्लेख व्याख्याकार ने 'अल-फ़तह' के हवाले से किया है (अर्थात भूमि कर/खराज समाप्त हो जाएगा और जो लिया जाएगा वह किराया होगा)। और जिन भूमियों के बारे में स्थिति स्पष्ट नहीं है, वे उनके वर्तमान स्वामियों की ही संपत्ति मानी जाएँगी और उनसे लिया जाने वाला खराज होगा, किराया नहीं।

1 रद-अल-मुह्तार, बाब-अल-उश्र, खराज और जिज़्या, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 3/280। पृष्ठ 213 का 836

الملک انها ملکه فالقول له او علی من یخاصمه فی الملك البرهان اهـ وقد قالوا ان وضع الید والتصرف من اقوی ما یستدل به علی الملك ولذا تصح الشهادة بأنه ملکه - وفي رسالة الخراج لابی یوسف لیس للامام ان یخرج شیئاً من ید احد الا بحق ثابت معروف اه والائمة اذا قالوا في الکنائس المبنیة للکفر انها کانت في بریة فاتصلت بها عمارة المصر فاولی ان یقولوا ببقاء تلك الاراضی بید من هی تحت ایدیهم باحتمال انها کانت مواتاً فاحییت او انها انتقلت الیهم بوجه صحیح اه ملتقطا الی آخر ما اطال واطاب واوضح الصواب، اما ما قال فی اخره و الحاصل فی الاراضی الشامیة والمصریة ونحوها ان ما علم منها کونه لبیت المال بوجه شرعی فحبکمه ما ذکره الشارح عن الفتح (ای سقط الخراج و ماخوذ اجرة) و ما لم یعلم فهو ملك لاربابه والمأخوذ منه خراج لا اجرة سبب ملک کے ذریعے حاصل ہوئی ہے تو وہ اس کی ملک ہوگی اور اسی کا قول معتبر ہو گا یا جو اس کے ساتھ ملکیت میں مخاصمت کرے اس پر دلیل کالانا ہو گا اھ اور فقہاء نے تصریح کی ہے کہ قبضہ اور تصرف، ملکیت پر قوی دلیل بنتے ہیں یہی وجہ ہے کہ اس کے مالک ہونے پر شہادت دینا صحیح ہوتا ہے۔ امام ابو یوسف کی کتاب الخراج میں ہے کہ کسی حاکم کے لیے یہ جائز نہیں کہ وہ کسی کے قبضہ سے کوئی شے خارج کرے ماسوائے اس صورت کے جب دوسرے کا حق ثابت و معروف ہو ، اھ، اور ائمہ نے ان گرجوں کے بارے میں تصریح کی ہے جو کفار کی خاطر بنائے گئے وہ ایسے بیابان میں تھے جو شہر کی عمارتوں سے متصل ہے تو یہاں اولیٰ یہی کہنا ہے کہ زمین انہی کی ملکیت میں باقی رہے گی جن کے وہ قبضہ میں ہے کیونکہ ممکن وہ زمین غیر آباد ہو اور ان لوگوں نے اسے آباد کیا یا وہ ان لوگوں کی طرف بطریق صحیح منتقل ہوئی ہو اھ یہ ان کی طویل، خوبصورت اور صواب کو واضح کرنے والی عبارت کا خلاصہ ہے، اور اس کے آخر میں یہ جو کہا کہ شام، مصر اور ان کی

طرح دیگر علاقوں کی اراضی کے بارے میں اگر یہ علم ہو کہ بطریق شرعی بیت المال کو حاصل ہوئی ہیں تو ان کا حکم وہی ہے جس کا ذکر شارح نے فتح سے کیا (یعنی خراج ساقط ہو جائے گا اور جو حاصل کیا جائے گا وہ اجرت ہو گی) اور جن زمینوں کا علم نہیں وہ ان کے مالکوں کی ہی ہوں گی اور اس سے خراج

1 ردالمختار باب العشر والخراج والجزية مصطفى البابي مصر ٢٨٠/٣ Page 213 of 836

Fatawa Razawiyya, Volume 10 Page 214 of 836

[Arabic Column Text:] Because it is kharaji in its original status. Thus, it has become clear that the reason for its being kharaji from the beginning is what was previously stated in this explanation, based on the second Imam [Imam Abu Yusuf], that the lands of Iraq, Syria, and Egypt were conquered by force and are kharaji, left for their inhabitants who were conquered. Before this, he said: Abu Yusuf said in the 'Book of Kharaj' that if the Imam leaves it in the hands of its inhabitants who were conquered, it is good. For the Muslims conquered the land of Iraq, Syria, and Egypt and did not distribute any part of it; rather, Umar (may Allah be pleased with him) imposed the kharaj on it, and there is no khums [fifth share] in it. This is what was said about it being kharaji in its original status. As for what we are concerned with, since that has not been proven, it is not possible to make it kharaji based on probability, nor to impose it on Muslims who are not liable for it, as explicitly stated by the experts. This is what appeared to me, and Allah Almighty knows best the reality of the situation. Then I saw in 'Fatawa al-Aziziyya' a narration from the treatise of our noble master, Sheikh Jalal al-Thanesari.

[Urdu Column Text:] ...be received as rent, because originally this land is Kharaji [subject to land tax]. Thus, it has now been clarified that the initial reason for them being Kharaji is the same as what was stated earlier, which is the evidence of the second Imam, that the lands of Iraq, Syria, and Egypt were acquired by way of conquest and are Kharaji because they were given back to their former inhabitants from whom they were conquered. And before this, it was written that Imam Abu Yusuf said in 'Kitab al-Kharaj' that if the ruler leaves the land with those people from whom it was conquered, then it is very good, because when the Muslims conquered the lands of Iraq, Syria, and Egypt, they did not distribute them; instead, Hazrat Umar Farooq (may Allah be pleased with him) imposed Kharaj on these lands and Khums was not kept in them. This is what you said, that these are Kharaji based on their origin. However, the one we are discussing, until it is proven, cannot be declared Kharaji based on possibility. And imposing something on Muslims for which they are not eligible, according to the masters of perfection, is not possible. This has become apparent to me, and Allah Almighty is more aware and knowledgeable of the true situation. Then I saw in 'Fatawa Aziziyya' that they [cited] from the treatise of Maulana Sheikh Jalal al-Din Thanesari (may his secret be sanctified)...

[Footnotes:] 1. Radd al-Muhtar, Chapter on 'Ushr, Kharaj, and Jizyah, Mustafa al-Babi, Egypt, 3/282. 2. Radd al-Muhtar, Chapter on 'Ushr, Kharaj, and Jizyah, Mustafa al-Babi,

Egypt, 3/281. 3. Radd al-Muhtar, Chapter on 'Ushr, Kharaj, and Jizyah, Mustafa al-Babi, Egypt, 3/279.

फतावा रज़विया, खंड 10 पृष्ठ 836 में से 214

[अरबी कॉलम का पाठ:] क्योंकि यह अपनी मूल स्थिति में खाराजी है। इस प्रकार, यह स्पष्ट हो गया है कि शुरुआत से ही इसके खाराजी होने का कारण वही है जो इस विवरण में पहले दूसरे इमाम [इमाम अबू यूसुफ] के आधार पर कहा गया था कि इराक, सीरिया और मिस्र की भूमि बलपूर्वक जीती गई थी और खाराजी है, जिसे उनके उन निवासियों के लिए छोड़ दिया गया था जो पराजित हुए थे। इससे पहले उन्होंने कहा: अबू यूसुफ ने 'किताब अल-खराज' में कहा है कि यदि इमाम इसे इसके उन निवासियों के हाथों में छोड़ देता है जो पराजित हुए थे, तो यह अच्छा है। क्योंकि मुसलमानों ने इराक, सीरिया और मिस्र की भूमि को जीत लिया और उसका कोई हिस्सा वितरित नहीं किया; बल्कि उमर (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने उस पर खराज लगा दिया, और इसमें खुम्स [पांचवां हिस्सा] नहीं है। यह वही है जो इसकी मूल स्थिति में खाराजी होने के बारे में कहा गया था। जहाँ तक हमारा संबंध है, चूंकि यह सिद्ध नहीं हुआ है, इसलिए इसे संभावना के आधार पर खाराजी बनाना संभव नहीं है, और न ही उन मुसलमानों पर इसे थोपना संभव है जो इसके लिए उत्तरदायी नहीं हैं, जैसा कि विशेषज्ञों द्वारा स्पष्ट रूप से कहा गया है। यही मुझे प्रतीत हुआ, और अल्लाह सर्वशक्तिमान स्थिति की वास्तविकता को सबसे बेहतर जानता है। फिर मैंने 'फतावा अल-अजीजिया' में हमारे महान स्वामी, शेख जलाल अल-थानीसरी के शोध प्रबंध से एक वर्णन देखा।

[उर्दू कॉलम का पाठ:] ...किराये के रूप में वसूला जाए, क्योंकि मूल रूप से यह भूमि खाराजी है। इस प्रकार, अब यह स्पष्ट हो गया है कि शुरुआत में उनके खाराजी होने का कारण वही है जो पहले बताया गया था, जो कि दूसरे इमाम का साक्ष्य है, कि इराक, सीरिया और मिस्र की भूमि विजय के माध्यम से प्राप्त की गई थी और खाराजी हैं क्योंकि उन्हें उनके पूर्व निवासियों को वापस दे दिया गया था जिनसे उन्हें जीता गया था। और इससे पहले, यह लिखा गया था कि इमाम अबू यूसुफ ने 'किताब अल-खराज' में कहा था कि यदि शासक उन लोगों के पास जमीन छोड़ देता है जिनसे इसे जीता गया था, तो यह बहुत अच्छा है, क्योंकि जब मुसलमानों ने इराक, सीरिया और मिस्र की भूमि को जीता, तो उन्होंने उन्हें वितरित नहीं किया; इसके बजाय, हज़रत उमर फ़ारूक (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने इन भूमियों पर खराज लगाया और उनमें खुम्स नहीं रखा गया। यह वही है जो आपने कहा था, कि ये अपने मूल के आधार पर खाराजी हैं। हालाँकि, जिसकी हम चर्चा कर रहे हैं, जब तक कि वह सिद्ध न हो जाए, संभावना के आधार पर खाराजी घोषित नहीं किया जा सकता है। और मुसलमानों पर ऐसी किसी चीज़ को थोपना जिसके लिए वे पात्र नहीं हैं, पूर्णता के स्वामियों के अनुसार, संभव नहीं है। यह

मुझ पर स्पष्ट हो गया है, और अल्लाह सर्वशक्तिमान वास्तविक स्थिति के बारे में अधिक जागरूक और जानकार है। फिर मैंने 'फतावा अज़ीज़िया' में देखा कि उन्होंने मौलाना शेख जलाल अल-दीन थानीसरी (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र करे) के शोध प्रबंध से उद्धृत किया है...

[पादलेख:] 1. रद अल-मुहतार, उश्र, खराज और जिज़िया पर अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 3/282। 2. रद अल-मुहतार, उश्र, खराज और जिज़िया पर अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 3/281। 3. रद अल-मुहतार, उश्र, खराज और जिज़िया पर अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 3/279।

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

[Arabic Column:] لانه خراجي فی اصل الوضع اهہ فقد بان ان الوجه کونها خراجية فی بد ء الامر لما قدم فی هذا البيان مستندا للامام الثانی ان ارض العراق والشام ومصر عنوية خراجية ترکت لاهلها الذين قهروا عليها اهہ و قال قبله قال ابو يوسف في کتاب الخراج ان ترکها الامام في ايدی اهلها الذين قهروا عليها فهو حسن فأن المسلمين افتتحوا ارض العراق والشام ومصر ولم يقسموا شيئا من ذلك بل وضع عمر رضی الله تعالیٰ عنہ عليها الخراج وليس فيها خمس اهہ فهذا ما قال انه خراجي فی اصل الوضع اما ما نحن فيه اذ لم يثبت ذلک لا يمکن جعلها خراجية بالاحتمال وايجابه علی المسلمين الذين ليسو امن اهله بتصريح ذوی الکمال هذا ما ظهرلی والله تعالیٰ اعلم بحقيقة الحال ثم رأيت في الفتاوی العزيزية۔ نقل عن رسالة مولانا الشيخ الجليل جلال التهانيسری

[Urdu Column:] وصول کیا جائے کہ اُجرت ، کیونکہ اصلاً یہ زمین خراجی ہے اھہ تو اب واضح کیا کہ ابتداءً ان کے خراجی ہونے کی وجہ وہی ہے جس کو پہلے بیان کیا جو امام ثانی کی دلیل ہے کہ عراق ، شام اور مصر کی زمینیں بطور غلبہ حاصل ہوئی ہیں اور خراجی ہیں کیونکہ انھیں اس کے ان سابقہ باشندوں کو دے دیا گیا جن سے بطور غلبہ حاصل کی گئی تھی اھ اور اس سے پہلے لکھا کہ امام ابو یوسف نے کتاب الخراج میں فرمایا اگر حاکم نے انھیں لوگوں کے پاس زمین رہنے دی جن سے بطور غلبہ حاصل کی تھی تو یہ بہت اچھا کیا کیونکہ مسلمانوں نے عراق، شام اور مصر کی زمینیں حاصل کیں تو انھیں تقسیم نہ کیا بلکہ حضرت عمر فاروق رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے ان زمینوں پر خراج لگایا اور ان میں خمس نہ رکھا گیا اھ یہ وہی ہے جس کے بارے میں آپ نے فرمایا کہ یہ اصل کے اعتبار سے خراجی ہیں مگر وہ جس میں ہم گفتگو کر رہے ہیں جب تک ثابت نہ ہو ان کا احتمال کی بنیاد پر خراجی قرار دینا اور مسلمانوں پر ایسی چیز کا وجوب جس

کے وہ بقول صاحب کمال کے اہل نہیں، ممکن نہیں، یہ مجھ پر ظاہر ہوا ہے اور حقیقت حال سے اللہ تعالیٰ زیادہ واقف وآگاہ ہے ، پھر میں نے فتاویٰ عزیزیہ میں دیکھا کہ انہوں نے مولانا شیخ جلال الدین تھانیسری قدس سرہ السری کے رسالہ

1 رد المحتار باب العشر والخراج والجزية مصطفى البابى مصر ٢٨٢/٣ 2 رد المحتار باب العشر والخراج والجزية مصطفى البابى مصر ٢٨١/٣ 3 رد المحتار باب العشر والخراج والجزية مصطفى البابى مصر ٢٧٩/٣ Page 214 of 836

Fatawa-e-Razvia, Volume 10

[Left Column Text - primarily Arabic/Persian quotes] ...may his secret be sanctified, what he wrote in Persian (Ajami) is as follows: The land of India, at the beginning of the conquest, was like Sawad-e-Iraq, which was conquered during the era of Hazrat Farooq (may Allah be pleased with him). It is placed as waqf property in the ownership of the Bait-ul-Mal. The landowners have no role beyond trusteeship, management, and providing cultivators, as well as assisting in agriculture and maintaining its income. Even the word 'Zamindar' indicates this. The changes and alterations in Zamindari, the dismissal and appointment of landowners, removing some and acknowledging others, and granting lands to Afghans, Baluchis, Sayyids, and Qidwais under the title of 'Zamindari' is explicit evidence of this. Thus, in this case, all lands in India became the property of the Bait-ul-Mal, and they remain in the hands of landowners under a contract of sharecropping (muzara'at) for half or less. This is explicit in what we have inferred, that the conquerors did not distribute them as property among Muslims. The ruling regarding it is what we explained. And what the mentioned Sheikh (mercy of Allah be upon him) mentioned regarding Sawad-e-Iraq is the chosen view of the Shafi'i Imams, as explained in Rad-ul-Muhtar. As for us, the land was bestowed upon the inhabitants as a favor. The discussion regarding its comparison does not harm us, so based on this, what is in the hands of Muslims...

[Right Column Text - Urdu Translation/Explication] ...quoted from, which in Persian words is like this: The land of India at the start of the conquest was conquered in the same way the land of Iraq was conquered during the era of Hazrat Farooq-e-Azam (may Allah be pleased with him). This will remain as waqf in the ownership of the Bait-ul-Mal, and the landowners have no more involvement than being the trustees, managers, providers of cultivators, and supervisors for the assistance of agriculture for the Bait-ul-Mal, as the word 'Zamindar' also hints towards this. The changes and alterations in landownership, and dismissing or appointing them, keeping some of them and removing others, and giving some lands to Afghans, Baluchis, Sayyids, and Qidwais with the word 'Zamindari' is also an explicit declaration of this. Therefore, in this situation, all the land of India is the property of the Bait-ul-Mal; it will be in the possession of the landowner through a contract of sharecropping for half or less. All this is explicit evidence of what we have chosen, that the conquerors neither divided the lands nor gave them to the inhabitants there, but rather kept them in the ownership of Muslims. Their ruling is the same as we have stated. And what the mentioned Sheikh (may Allah have mercy on him) said about the land of Iraq is the

chosen view of the Shafi'i Imams, as stated in Rad-ul-Muhtar. According to us, that land was given to the residents there as a favor, though it was brought forth as an example.

[Footnote] 1. Fatawa-e-Azizi, issue of state-granted lands, Mujtabai Press, Delhi 1/23

फ़तावा रिज़विया, जिल्द 10

[बाएं कॉलम का पाठ - मुख्य रूप से अरबी/फ़ारसी उद्धरण] ...उनके पवित्र रहस्य को ईश्वर पवित्र रखे, जो उन्होंने फ़ारसी (अजमी) में इस प्रकार लिखा है: भारत की भूमि, विजय के प्रारंभ में, सवाद-ए-इराक़ की तरह थी, जिसे हज़रत फ़ारूक़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) के युग में विजित किया गया था। यह बैतुल माल के स्वामित्व में वक़्फ़ संपत्ति के रूप में रखी गई है। ज़मींदारों की इसमें ट्रस्टीशिप, प्रबंधन और काश्तकारों को उपलब्ध कराने के साथ-साथ कृषि में सहायता करने और इसकी आय बनाए रखने के अलावा कोई भूमिका नहीं है। यहाँ तक कि 'ज़मींदार' शब्द भी इसी ओर संकेत करता है। ज़मींदारी में परिवर्तन और बदलाव, ज़मींदारों की बर्खास्तगी और नियुक्ति, कुछ को हटाना और दूसरों को मान्यता देना, और 'ज़मींदारी' के शीर्षक के तहत अफ़गानों, बलूचियों, सैयदों और किदवाइयों को भूमि प्रदान करना इसका स्पष्ट प्रमाण है। इस प्रकार, इस मामले में, भारत की सभी भूमि बैतुल माल की संपत्ति बन गई, और वे आधे या उससे कम के लिए बटाईदारी (मुज़ारा'अत) के अनुबंध के तहत ज़मींदारों के हाथों में रहती हैं। यह उस बात में स्पष्ट है जो हमने निष्कर्ष निकाला है कि विजेताओं ने उन्हें मुसलमानों के बीच संपत्ति के रूप में वितरित नहीं किया था। इसके संबंध में निर्णय वही है जो हमने समझाया है। और उक्त शेख (अल्लाह की उन पर दया हो) ने सवाद-ए-इराक़ के बारे में जो उल्लेख किया है, वह शाफ़ई इमामों का पसंदीदा विचार है, जैसा कि रद-उल-मुह्तार में समझाया गया है। जहाँ तक हमारा संबंध है, वह भूमि निवासियों को उपकार स्वरूप प्रदान की गई थी। इसकी तुलना के संबंध में चर्चा हमें नुकसान नहीं पहुँचाती है, इसलिए इसके आधार पर, जो मुसलमानों के हाथों में है...

[दाएं कॉलम का पाठ - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] ...से उद्धृत किया गया, जो फ़ारसी शब्दों में इस प्रकार है: भारत की भूमि विजय की शुरुआत में उसी तरह विजित हुई थी जैसे इराक़ की भूमि हज़रत फ़ारूक़-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) के युग में विजित हुई थी। यह बैतुल माल के स्वामित्व में वक़्फ़ के रूप में रहेगी, और ज़मींदारों का इसमें इससे अधिक कोई हस्तक्षेप नहीं है कि वे बैतुल माल के लिए इन भूमियों के ट्रस्टी, प्रबंधक, बटाईदार उपलब्ध कराने वाले और कृषि व देखरेख में सहयोग करने वाले हैं, जैसा कि 'ज़मींदार' शब्द भी इसी ओर संकेत करता है। ज़मींदारी में परिवर्तन और बदलाव, और उन्हें पदमुक्त या नियुक्त करना, उनमें से कुछ को रखना और कुछ को निकालना, अफ़गानों, बलूचियों, सैयदों और किदवाइयों को 'ज़मींदारी' शब्द के साथ कुछ भूमियाँ देना भी इसी पर स्पष्टीकरण है। इसलिए, इस स्थिति में भारत की पूरी भूमि बैतुल माल की संपत्ति है; यह आधे या

उससे कम पर बटाईदारी के अनुबंध के माध्यम से ज़मींदार के कब्जे में होगी। यह सब उस पर स्पष्ट प्रमाण है जिसे हमने चुना है कि विजेताओं ने न तो भूमियों को विभाजित किया और न ही वहाँ के निवासियों को दिया, बल्कि उन्हें मुसलमानों के स्वामित्व में रखा। उनका निर्णय वही है जो हमने बताया है। और उक्त शेख (अल्लाह की उन पर दया हो) ने इराक़ की भूमि के बारे में जो कहा, वह शाफ़ई इमामों का पसंदीदा विचार है, जैसा कि रद-उल-मुह्तार में कहा गया है। हमारे अनुसार, वह भूमि वहाँ के निवासियों को एक एहसान के रूप में दी गई थी, हालाँकि इसे एक उदाहरण के रूप में पेश किया गया था।

[पाद लेख] 1. फ़तावा अज़ीज़ी, राज्य-प्रदत्त भूमि का मामला, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली 1/23

पृष्ठ 836 का 215

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

[بائیں کالم کی تحریر] قدس سرہ السری ما نصہ بالاعجمیۃ زمین ہندوستان در ابتدائے فتح مانند سواد عراق کہ در عہد حضرت فاروق رضی اللہ تعالیٰ عنہ مفتوح شدہ بود موقوف بر ملک بیت المال است و زمینداران را بیش از تولیت و داروغگی تر دو و فراہم آوردن مزارعین واعانت و زراعت و حفظ دخلے نیست چنانچہ لفظ زمیندار نیز اشعارے باں می کند و تغیر و تبدل زمینداری عزل و نصب زمینداران و اخراج بعضے از آنہا و اقرار بعضے و عطائے اراضی بافغاناں و بلوچاں وسادات وقد وائیاں بصیغہ زمینداری دلالت صریحہ بریں می کند پس دریں صورت جمیع اراضی ہندوستان مملوک بیت المال گشت و بعقد مزارعت علی النصف او اقل منہ در دست زمینداران ۱ فھذا صریح فیما استظھرناہ من ان الفاتحین لم یقسموھا ملکاً للمسلمین و الحکم فیہ ما بیناہ و ذکرحمہ اللہ تعالیٰ فی سواد العراق فمختار الائمۃ الشافعیۃ کما بینہ فی رد المحتار اما عند نا فمنون بھا علی اھلھا و لا یضرنا الکلام فی التمثیل فعلی ھذا ما بایدی المسلمین

[دائیں کالم کی تحریر] سے نقل کیا جو فارسی الفاظ میں یوں ہے: ہندوستان کی زمین ابتدائے فتح اسی طرح فتح ہوئی جس طرح عراق کی زمین حضرت فاروق اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے دور میں فتح ہوئی تھی، یہ بیت المال کی ملکیت میں بطور وقف رہے گی اور زمینداروں کا اس سے زیادہ دخل نہیں کہ وہ ان زمینوں کے متولی، منتظم، مزارعین مہیا کرنے اور بیت المال کے لیے تعاون و زراعت اور نگرانی کرنیوالے ہیں، جیسا کہ لفظ زمیندار بھی اس کی طرف اشارہ کر رہا ہے، زمینداری میں تغیر و تبدل، اور انھیں معزول و مقرر کرنا، ان میں سے بعض کا رکھنا اور بعض کا نکالنا، افغانیوں، بلوچوں، سادات اور قدوائیوں کو لفظ زمینداری کے ساتھ بعض زمینوں کا دینا بھی اسی پر تصریح ہے لہٰذا اس صورت میں ہندوستان کی تمام زمین بیت المال کی ملکیت ہے،

نصف یا اس سے اقل پر مزارعت کے عقد کے ذریعے زمیندار کے قبضہ میں ہو گی۔ یہ تمام اس پر تصریح ہے جیسے ہم نے اختیار کیا کہ فاتحین نے جن زمینوں کو نہ تقسیم کیا نہ وہاں کے باشندوں کو دیں بلکہ انھیں مسلمانوں کی ملکیت میں رکھا تو ان کا وہی حکم ہے جو ہم نے بیان کر دیا ہے، اور مذکور شیخ رحمہ اللہ تعالیٰ نے عراق کی زمین کے بارے میں جو کہا تو یہ ائمہ شوافع کا مختار ہے جیسا کہ ردالمحتار میں بیان ہوا ہے اور ہمارے نزدیک تو وہ زمین وہاں کے باشندوں کو بطور احسان دے دی گئی تھی البتہ بطور مثال لانا

[حاشیہ] ۱ فتاویٰ عزیزی مسئلہ اراضی عطائے سلطانی مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۲۳

Volume Ten Fatawa Razawiyya

(Arabic Text): None of the lands shall be considered except as 'Ushriya' (land subject to tithe) as long as it is not proven for any of them to be 'Kharajiyya' (land subject to land tax) by a Shari'a reason. And Allah, Glory be to Him and the Most Exalted, and His knowledge—may His majesty be glorified—is most complete and most decisive.

(Urdu Text): It is not harmful to us, so now according to this rule, the land which will be in the possession of Muslims will be 'Ushriya' only, except in the case when there is a Shari'a reason present for it being 'Kharajiyya'. And Allah, Glory be to Him and the Most Exalted, knows best, and His knowledge—may His majesty be glorified—is most complete and most decisive.

(T)

Page 216 of 836

खंड दस फ़तावा रज़विया

(अरबी पाठ): भूमियों में से किसी को भी 'उश्रिया' (10% कर वाली भूमि) के अलावा तब तक नहीं माना जाएगा जब तक कि उनमें से किसी के'ख़राजिया' (भूमि कर वाली भूमि) होने का कोई शरई (शरीयत आधारित) कारण सिद्ध न हो जाए। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला और उसका ज्ञान—जिसकी महिमा महान है—सबसे पूर्ण और सबसे सुदृढ़ है।

(उर्दू पाठ): हमें नुकसानदेह नहीं है, तो अब इस नियम के अनुसार जो ज़मीन मुसलमानों के कब्ज़े में होगी वह 'उश्रिया' ही होगी, सिवाय उस स्थिति के जब उसके'ख़राजिया' होने की कोई शरई वजह मौजूद हो। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला सबसे अधिक जानने वाला है और उसका ज्ञान—जिसकी महिमा महान है—सबसे पूर्ण और सबसे सुदृढ़ है।

(त)

पृष्ठ 836 में से 216

من الاراضی لا تجعل الا عشریة مالم یثبت فی شئی منها کونها خراجیة بوجه شرعی واللہ سبحانه و تعالی و علمه جل مجده اتم واحکم۔

ہمیں نقصان دہ نہیں تو اب اس ضابطہ پر جو زمین مسلمانوں کے قبضہ میں ہوگی وہ عشری ہی ہوگی مگر اس صورت میں جب اس کے خراجی ہونے پر کوئی وجہ شرعی موجود ہو واللہ سبحانہ و تعالیٰ اعلم و علمه جل مجده و اتم احکم۔

(ت)

Fatawa Rizvia, Volume 10

The most eloquent explanation regarding the ruling on the farmlands of India 1318 AH (Detailed rulings on the lands of India)

Problem 86: From Bihar Sharif, Madrasa Islamia, sent by Maulvi Abdullah Sahib, student, 12 Rabi' al-Akhir 1318 AH. What do the scholars of religion say in this situation: Is all the land of India for which the landlords pay tax in cash Ushr-land (subject to tithe) or Kharaj-land (subject to land tax)? If it is Ushr-land, is it due after deducting the land revenue or without deduction? Also, in the case where landlords manage the land with all their subjects, on whom is the Ushr obligatory—on the landlord or on the subjects? And if it is Kharaj-land, will the land revenue paid in cash be considered as Kharaj, or something else? If it is something else, will the Sharia-mandated Kharaj be paid after deducting the land revenue or without deduction? And how much and by what calculation should it be paid? In the case where it is neither Ushr-land nor Kharaj-land, what should we landlords do to be free from accountability? State the ruling and be rewarded.

Answer: In the name of Allah, the Beneficent, the Merciful. Blessings and peace be upon the Messenger of Allah. In India, the lands of Muslims will not be considered Kharaj-land unless there is evidence for a specific land being Kharaj-land...

फ़तावा रिज़विया, खंड 10

हिंदुस्तान के खेतों के शासन के संबंध में सबसे स्पष्ट व्याख्या 1318 हिजरी (भारत की भूमि पर विस्तृत नियम)

मसला 86: बिहार शरीफ़, मदरसा इस्लामिया से, मौलवी अब्दुल्ला साहब, छात्र द्वारा प्रेषित, 12 रबी-उल-आख़िर 1318 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि हिंदुस्तान की वह सारी ज़मीन जिसकी मालगुज़ारी (भू-राजस्व) ज़मींदार नक़द देते हैं, क्या वह उशरी है या ख़राजी? अगर वह उशरी है, तो क्या वह मालगुज़ारी की कटौती के बाद वाजिब है या बिना कटौती के? और यह भी कि इस स्थिति में जब ज़मींदार अपनी सारी प्रजा के साथ ज़मीन का बंदोबस्त करते हैं, तो उश्र किस पर वाजिब है - ज़मींदार पर या प्रजा पर? और ख़राजी होने की सूरत में, क्या वही मालगुज़ारी जो वे नक़द देते हैं, ख़राज मानी जाएगी या कोई और? और जब कोई और होगा, तो क्या मालगुज़ारी घटाकर शरई ख़राज देना होगा या बिना घटाए? और कितना और किस हिसाब से देना होगा? और उशरी या ख़राजी न होने की स्थिति में, हम ज़मींदारों को क्या करना चाहिए ताकि हम जवाबदेही से मुक्त हो सकें? बयान करें और पुण्य कमाएं।

उत्तर: अल्लाह के नाम से, जो अत्यंत दयालु और कृपालु है। अल्लाह के रसूल पर आशीर्वाद और शांति हो। हिंदुस्तान में मुसलमानों की ज़मीनें तब तक ख़राजी नहीं समझी जाएँगी जब तक कि किसी विशेष ज़मीन के ख़राजी होने का प्रमाण न हो...

فتاوی رضویہ جلد دہم

افصح البیان فی حکم مزارع ہندوستان ۱۳۱۸ھ (ہندوستان کی زمینوں کے تفصیلی احکام)

مسئلہ ۸۶: از بہار شریف مدرسہ اسلامیہ مرسلہ مولوی عبد اللہ صاحب طالب علم ۱۲ ربیع الآخر ۱۳۱۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس صورت میں کہ وہ سب زمین ہندوستان کی جس کی مالگزاری زمیندار نقد دیتے ہیں آیا عشری ہے یا خراجی، اگر عشری ہے تو بعد منہائی مالگزاری کے واجب ہے یا بلا منہائی، اور یہ بھی کہ اس صورت میں کہ زمیندار سب اپنی رعایا کے ساتھ زمین کو بندوبست کرتے ہیں اس صورت میں عشر کس پر واجب ہے زمیندار پر یا رعایا پر؟ اور بصورت خراجی ہونے کے وہ مال گزاری جو نقد دیتے ہیں وہی خراج تصور کیا جائیگا اور کوئی دوسرا، اور جب دوسرا ہوگا تو مالگزاری منہادے کر خراج شرعی دینا ہوگا یا بغیر منہا، اور کس قدر اور کس حساب سے دینا ہوگا، اور بصورت عدم عشری و عدم خراجی ہونے کے ہم زمینداروں کو کیا کرنا چاہیے جو مواخذہ سے بری ہوں۔ بینوا توجروا۔

الجواب: بسم اللہ الرحمن الرحیم والصلوۃ والسلام علی رسول اللہ۔ ہندوستان میں مسلمانوں کی زمینیں خراجی نہ سمجھی جائیں گی جب تک کسی خاص زمین کی نسبت خراجی ہونا دلیل...

Volume 10 Fatawa Razawiyya

...is not proven by Sharia. As we have established with the help of Allah Almighty in our fatwas in a way that truth is not exceeded. (t) Rather, they are Ushr-paying lands, or neither Ushr-paying nor Kharaj-paying, and in both cases, their required contribution is Ushr (the tithe).

[Left Arabic Column]: As for the first case, it is obvious. As for the second case, it is as established in Rad al-Muhtar, contrary to what is in At-Tuhfat al-Mardiyyah, then Ash-Shurunbulaliyyah, then Ad-Durr al-Mukhtar. What he has established is clear and refined. Ad-Durr only attributed it to Ash-Shurunbulali, and Ash-Shurunbulali attributed it to the author of At-Tuhfa on the authority of the scholar, the author of Al-Bahr. Thus, the matter centers on him, may Allah Almighty have mercy on him. What is written in At-Tuhfa has no basis in cited transmission; it merely relied on not seeing a transmission regarding the obligation of Ushr in it. You know that not seeing is not seeing the non-existence, and the absence of transmission is not a transmission of absence. The texts are general. Ushr is mandatory in what is neither Ushr-paying nor Kharaj-paying land, such as deserts and mountains. I say: The meaning of "whatever we have conquered, we have retained for ourselves until the Day of Resurrection, without giving it back to its owners or other disbelievers, or distributing it among the victors," and similarly land whose owners have died and it has reverted to the Public Treasury (Bait al-Mal), is that Ushr and Kharaj are only mandatory as a right for Muslims. These lands were either already theirs or have become theirs, so there is no reason for anything to be imposed on them for their own benefit.

[Right Urdu Column]: In the first case, the matter is clear, and in the second case also there is Ushr, as detailed in Rad al-Muhtar. However, there is a difference between Tuhfat al-Mardiyyah, then Shurunbulaliyyah, and then Durr al-Mukhtar. The research of the author of Durr al-Mukhtar is very elegant. Durr attributed it to Shurunbulali, and Shurunbulali attributed it to the author of Tuhfa, and there it is attributed to the scholar, the author of Al-Bahr. The basis of the matter here is this. The mentioned Sheikh (may Allah Almighty have mercy on him) and whatever is in Tuhfa has no evidence for its transmission; it was relied upon only because no narration regarding the necessity of Ushr in such land has come to our notice. And you know that not seeing something is not evidence of its non-existence. Lack of mentioned transmission is not a transmission of non-existence. Whereas the texts are absolute, and in land which is neither Ushri nor Kharaji, Ushr is mandatory, such as forests and

mountains. I say: The meaning of the phrase "We conquered the land and kept it for ourselves until the Day of Resurrection" is that it was not returned to the original owners, given to other disbelievers, or divided among the army as spoils of war. Similarly, land whose owner died and it became part of the Public Treasury (Bait al-Mal), because Ushr and Kharaj are mandatory as a right of the Muslims. This mentioned land either already belongs to the Muslims or will revert to them, therefore for the Muslims, there is no...

खंड 10 फ़तावा रज़विया

...शरिया से सिद्ध नहीं होता। जैसा कि हमने अल्लाह तआला की तौफ़ीक़ से अपने फ़तावा में इसकी तहक़ीक़ की है जिससे सत्य का उल्लंघन नहीं होता। (त) बल्कि वे उश्रिया (दशमांश) वाली भूमि हैं, या न तो उश्रिया और न ही ख़राजिया, और दोनों ही स्थितियों में उनका निर्धारित अंश उश्र है।

[बायाँ अरबी कॉलम]: पहली स्थिति के लिए, यह स्पष्ट है। दूसरी स्थिति के लिए, जैसा कि 'रद-अल-मुहतार' में प्रमाणित है, जो 'अत-तुहफ़त अल-मर्दिया', फिर 'अश-शुरुनबुलालिया', फिर 'अद-दुर्र अल-मुख़्तार' में जो है, उसके विपरीत है। उन्होंने जो शोध किया है वह स्पष्ट और परिष्कृत है। 'अद-दुर्र' ने इसे केवल 'शुरुनबुलाली' की ओर संदर्भित किया, और 'शुरुनबुलाली' ने इसे 'बहर' के लेखक विद्वान के हवाले से 'तुहफ़ा' के लेखक को संदर्भित किया। अतः मामला उन्हीं पर केंद्रित है, अल्लाह उन पर दया करे। 'तुहफ़ा' में जो कुछ है वह किसी उद्धृत परंपरा पर आधारित नहीं है; यह केवल उसमें उश्र की अनिवार्यता के संबंध में किसी परंपरा के न दिखने पर निर्भर था। आप जानते हैं कि न देखना, न होने का प्रमाण नहीं है, और उल्लेख का अभाव, अभाव का उल्लेख नहीं है। मूल पाठ व्यापक हैं। उश्र उस भूमि में अनिवार्य है जो न तो उश्रिया है और न ही ख़राजिया, जैसे कि रेगिस्तान और पहाड़। मैं कहता हूँ: "हमने जो कुछ भी जीता है, उसे प्रलय के दिन तक अपने पास रखा है, बिना उसके मालिकों या अन्य काफ़िरों को वापस दिए, या विजेताओं के बीच वितरित किए," और इसी तरह वह भूमि जिसके मालिकों की मृत्यु हो गई और वह सार्वजनिक कोष (बैतुल माल) में वापस आ गई, का अर्थ यह है कि उश्र और ख़राज केवल मुसलमानों के अधिकार के रूप में अनिवार्य हैं। ये ज़मीनें या तो पहले से ही उनकी थीं या उनकी हो गई हैं, इसलिए उनके अपने लाभ के लिए उन पर कुछ भी थोपने का कोई कारण नहीं है।

[दायां उर्दू कॉलम]: पहली स्थिति में मामला स्पष्ट है, और दूसरी स्थिति में भी उश्र है जैसा कि 'रद-अल-मुहतार' में विस्तार से दिया गया है। हालाँकि, 'तुहफ़ा मर्दिया', फिर 'शुरुनबुलालिया' और फिर 'दुर्रे मुख़्तार' के बीच मतभेद है। 'दुर्रे मुख़्तार' के लेखक का शोध अत्यंत सुंदर है। 'दुर' ने इसे 'शुरुनबुलाली' के नाम किया, और 'शुरुनबुलाली' ने इसे 'तुहफ़ा' के लेखक के नाम किया, और वहाँ इसे अल्लामा, 'बहर' के लेखक की ओर श्रेय दिया गया है। यहाँ मामले का आधार यही है। उल्लेखित शेख़ (अल्लाह उन पर रहम करे) और 'तुहफ़ा' में जो कुछ भी है, उसके प्रमाण का कोई सबूत नहीं है; इस पर केवल इसलिए भरोसा किया गया क्योंकि ऐसी भूमि में उश्र की आवश्यकता के संबंध में कोई वर्णन हमारी नज़र में नहीं आया। और आप जानते हैं कि किसी चीज़ को न देखना उसके

अस्तित्वहीन होने का प्रमाण नहीं है। उल्लेख की कमी, न होने का उल्लेख नहीं है। जबकि मूल पाठ निरपेक्ष हैं, और जो ज़मीन न तो उश्रिया है और न ही ख़राजिया, वहाँ उश्र अनिवार्य है, जैसे जंगल और पहाड़। मैं कहता हूँ: इस वाक्यांश का अर्थ "हमने ज़मीन जीत ली और प्रलय के दिन तक इसे अपने पास रखा" यह है कि इसे मूल मालिकों को नहीं लौटाया गया, अन्य काफ़िरों को नहीं दिया गया, या युद्ध के माल के रूप में सेना के बीच विभाजित नहीं किया गया। इसी तरह, वह ज़मीन जिसका मालिक मर गया और वह सार्वजनिक कोष (बैतुल माल) का हिस्सा बन गई, क्योंकि उश्र और ख़राज मुसलमानों के अधिकार के रूप में अनिवार्य हैं। यह उल्लेखित भूमि या तो पहले से ही मुसलमानों की है या उनके पास वापस आ जाएगी, इसलिए मुसलमानों के लिए, वहाँ कोई...

पृष्ठ 836 का 218

شرعی سے ثابت نہ ہو۔ کما حققناہ بتوفیق اللہ تعالیٰ فی فتاؤنا بمالایتجاوز الحق عنہ (جیسا کہ ہم نے اللہ تعالیٰ کی توفیق سے اپنے فتاویٰ میں اس کی تحقیق کی ہے جس سے حق متجاوز نہیں۔ت) بلکہ وہ عشری ہیں یا نہ عشری نہ خراجی، اور دونوں صورتوں میں ان کا وظیفہ عشر ہے۔

[عربی متن]: اما علی الاول فظاہر و اما علی الثانی فکما حققہ فی ردالمحتار خلافا لما فی التحفہ المرضیہ ثم الشرنبلالیہ ثم الدرالمختار وما حققہ واضح نفیس، والدر، انما عزاہ للشرنبلالی و الشر نبلالی لصاحب التحفہ عن العلامہ صاحب البحر، فالیہ دار فیہ الامر، و ھو رحمہ اللہ تعالیٰ و ما فی التحفہ لم یستند فیہ النقل انما اعتمد علی عدم رؤیتہ نقلا بلزوم العشر فیہ و انت تعلم ان عدم الرویۃ لیست رؤیۃ العدم ولا عدم النقل نقل العدم والنصوص مطلقۃ والعشر یجب فیما لیس بعشر ولا خراجی کا لمفاوز والجبال - اقول: ومعنی کون مافتحناہ فابقیناہ لنا الی یوم القیامۃ من دون ان نعطیھا ملاکھا او کفارا آخرین اونقسمھا بین الغانمین وکذا مامات ملاکھا فالت لبیت المال، ان العشر والخراج انما یوجب حقا للمسلمین وھذہ قد کانت او صارت لھم فلا وجہ لان یوجب شئی لھم

[اردو ترجمہ و تشریح]: پہلی صورت میں تو معاملہ واضح ہے اور دوسری صورت میں بھی عشر ہے جیسا کہ ردالمحتار میں اس کی تفصیل ہے البتہ تحفہ مرضیہ پھر شرنبلالیہ پھر درمختار کا اس میں اختلاف ہے اور صاحب درمختار کی تحقیق نہایت نفیس ہے، در نے شرنبلالی اور شرنبلالی نے صاحب تحفہ سے اور وہاں علامہ صاحبِ بحر کی طرف منسوب ہے، اور معاملہ کی بنیاد یہاں یہی ہے اور مذکور شیخ رحمہ اللہ تعالی نے اور جو کچھ تحفہ میں ہے اس کے نقل پر کوئی دلیل نہیں، اس پر اعتماد صرف اس وجہ سے کیا گیا ہے کہ ایسی زمین میں عشر کے لازم ہونے پر کوئی روایت ہماری نظر سے نہیں گزری اور آپ جانتے ہیں کہ عدمِ رؤیت، رؤیتِ عدم نہیں ہوتی۔

عدمِ نقل، نقلِ عدم نہیں۔ حالانکہ نصوص مطلق ہیں، اور جو زمین نہ عشری ہو اور نہ خراجی وہاں عشر لازم ہوتا ہے جیسا کہ جنگل اور پہاڑ۔ اقول : اس عبارت کہ "ہم نے زمین کی فتح کی اور اسے تا قیامت اپنے لیے رکھا" کا معنی یہ ہے کہ اسے مالکوں کو واپس نہ دیا یا دیگر کفار کو نہ دی یا بطورِ غنیمت اسے لشکریوں میں تقسیم نہ کیا اسی طرح وہ زمین جس کا مالک فوت ہو گیا اور وہ بیت المال کی ہو گئی کیونکہ عشر اور خراج مسلمانوں کے حق کی وجہ سے لازم ہوتا ہے۔ یہ مذکورہ زمیں یا تو ہے ہی مسلمانوں کی یا ان کی طرف لوٹ آئے گی، لہٰذا مسلمانوں کے لیے ان پر کوئی

Fatawa Razviyya, Volume 10

(Arabic Text on the left column): Upon them, the vacancy of function is due to the absence of anyone to whom it can be assigned, like wasteland that has not been cultivated at all. However, if there is a person upon whom we can impose something, then "vacancy" has no meaning. The Researcher (Al-Muhaqqiq) has explicitly stated this in Fath al-Qadir at the end of the chapter on "Zakat of Crops" while explaining the statement of Imam [Abu Hanifa] (may Allah be pleased with him): "If a dhimmi (non-Muslim citizen) buys titheable land (ushri land) from a Muslim, it becomes taxable land (kharaji land)." His exact words are: "The reason for Abu Hanifa's view is that tithe (ushr) becomes impossible because it involves an element of worship, and land is never devoid of a legally prescribed function (duty) according to Shari'ah." This, by the grace of Allah, is an explicit text supporting our preferred view, and all praise is for Allah. In short, the property of the Bait al-Mal (Public Treasury) remains vacant as long as it belongs to it. Once it is transferred to someone's ownership through a valid method—as is the case with lands held by people, which they inherit and dispose of like owners, as established in Radd al-Muhtar and explained in our Fatawa—there is no escape from assigning a function. Do you not see that wasteland belongs to the Bait al-Mal...

(Urdu Translation on the right column): There is no reason to make anything obligatory; the reason why Ushr and Kharaj are not mandatory here is that there is no person upon whom something can be imposed, like barren land that has not been cultivated at all. And if we find such a person here upon whom we can impose something, then 'vacancy' (being free from duty) will have no meaning. The Researcher (Al-Muhaqqiq ala al-Itlaq) has explicitly clarified in Fath al-Qadir at the end of the chapter on Zakat of Crops while explaining the reason for Imam [Abu Hanifa's] (may Allah be pleased with him) statement that: when a dhimmi buys Ushri land from a Muslim, it becomes Kharaji. He stated the reason for Imam Abu Hanifa's view as: Ushr cannot be applied here because Ushr has an element of worship, and land cannot be free from some legally prescribed duty (wazifa) according to Shari'ah. In short, by the grace of Allah, this is a clear specification of our chosen view, and praise be to Allah. In short, as long as the land of the Bait-ul-Mal belongs to the Bait-ul-Mal, it will be free from every duty until it passes into someone's ownership through a valid method, as is the case with lands that pass into people's hands by inheritance and they exercise control over them like owners, as mentioned in Radd-

ul-Muhtar and we have explained it in our Fatawa. Thus, there is no escape from duty in them; do you not know that when uncultivated land...

Footnotes: 1. Fath al-Qadir, Chapter on Zakat of Crops and Fruits, Maktaba Nooriya Razviyya Sukkur, 2/196. 2. Fath al-Qadir, Chapter on Zakat of Crops and Fruits, Maktaba Nooriya Razviyya Sukkur, 2/197.

फतावा रज़विया, खंड 10

(बाएँ कॉलम में अरबी पाठ): उन पर, कार्य का खाली होना उस व्यक्ति की अनुपस्थिति के कारण है जिस पर इसे सौंपा जा सके, जैसे कि बंजर भूमि जिसे बिल्कुल भी नहीं जोता गया हो। हालाँकि, यदि कोई ऐसा व्यक्ति पाया जाता है जिस पर हम कुछ थोप सकें, तो 'रिक्ति' का कोई मतलब नहीं है। अनुसंधानकर्ता (अल-मुहक़्क़िक़) ने फतह अल-क़दीर में 'फसलों की जकात' के अध्याय के अंत में इमाम [अबू हनीफ़ा] (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के इस कथन की व्याख्या करते हुए स्पष्ट रूप से कहा है: 'यदि कोई ज़िम्मी (गैर-मुस्लिम नागरिक) किसी मुसलमान से उशरी (दशमांश) भूमि खरीदता है, तो वह खाराजी (कर योग्य) भूमि बन जाती है।' उनके शब्द हैं: 'अबू हनीफ़ा के विचार का कारण यह है कि दशमांश (उश्र) असंभव हो जाता है क्योंकि इसमें इबादत का पहलू शामिल है, और भूमि कभी भी शरीयत के अनुसार एक निर्धारित कार्य (कर्तव्य) से खाली नहीं होती।' यह, अल्लाह की कृपा से, हमारे पसंदीदा विचार का समर्थन करने वाला एक स्पष्ट पाठ है, और सभी प्रशंसा अल्लाह के लिए है। संक्षेप में, बैत अल-माल (सार्वजनिक खजाना) की संपत्ति तब तक खाली रहती है जब तक वह उसके पास है। एक बार जब यह किसी वैध तरीके से किसी के स्वामित्व में स्थानांतरित हो जाती है - जैसा कि उन भूमियों के मामले में होता है जो लोगों के पास होती हैं, जिन्हें वे विरासत में प्राप्त करते हैं और मालिकों की तरह उसका उपयोग करते हैं, जैसा कि रद्द अल-मुह्तार में स्थापित है और हमारे फतावा में समझाया गया है - तो कार्य सौंपने से कोई बचाव नहीं है। क्या आप नहीं देखते कि बंजर भूमि बैत अल-माल की होती है...

(दाएँ कॉलम में उर्दू अनुवाद): किसी चीज़ को वाजिब (अनिवार्य) करने का कोई कारण नहीं है; यहाँ उश्र और खराज के अनिवार्य न होने का कारण यह है कि यहाँ कोई ऐसा व्यक्ति ही नहीं है जिस पर कुछ अनिवार्य किया जा सके, जैसे कि बंजर भूमि जिसकी बिल्कुल भी खेती न की गई हो। और यदि हम यहाँ ऐसा कोई व्यक्ति पाते हैं जिस पर हम कुछ अनिवार्य कर सकें, तो 'फराग़' (कार्य मुक्ति) का कोई अर्थ नहीं होगा। मुहक़्क़िक़ अली अल-इतलाक़ ने फतह अल-क़दीर में फसलों की ज़कात के अध्याय के अंत में इमाम साहब (रज़ियल्लाहु अन्हु) के कथन के कारण का वर्णन करते हुए स्पष्ट किया है कि: जब किसी ज़िम्मी ने किसी मुसलमान से उशरी भूमि खरीदी, तो वह खाराजी हो जाएगी। इमाम अबू हनीफ़ा के कथन का कारण यह बताया कि यहाँ उश्र नहीं हो सकता क्योंकि उश्र में इबादत का पहलू है और भूमि शरीयत के अनुसार किसी निर्धारित वज़ीफ़ा (कर्तव्य) से खाली नहीं हो सकती। संक्षेप में, अल्लाह की स्तुति है, यह हमारे चुने हुए मत पर स्पष्टीकरण है और अल्लाह की

प्रशंसा है। संक्षेप में, बैत-उल-माल की भूमि जब तक बैत-उल-माल की है, वह हर वज़ीफ़ा से मुक्त रहेगी, जब तक कि वह किसी सही तरीके से किसी के स्वामित्व में न चली जाए, जैसा कि उन जमीनों का मामला है जो लोगों के पास विरासत के रूप में स्थानांतरित होती हैं और वे उनमें मालिकों जैसा व्यवहार करते हैं, जैसा कि रद्द-उल-मुह्तार में है और हमने इसे अपने फतावा में वर्णित किया है। अतः उनमें वज़ीफ़ा से कोई छुटकारा नहीं है; क्या आपको नहीं पता कि जब बंजर भूमि...

पादलेख: 1. फतह अल-क़दीर, फसलों और फलों की जकात का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/196। 2. फतह अल-क़दीर, फसलों और फलों की जकात का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/197।

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

(بائیں کالم میں عربی متن): علیهم ففراغ الوظیفة لعدم من یوظف علیه کارض خربة لم تزرع اصلاً اما اذا وجد ناً من نوجب علیه فلا معنی للفراغ وقد نص المحقق علی الاطلاق فی فتح القدیر "اواخر باب زکوة الزروع" فی تعلیل قول الامام رضی الله تعالی عنه، ان الذمی اذا اشتری عشریة من مسلم تصیر خراجیة، ما نصه وجه قول ابی حنیفة انه تعذر العشر لان فیه من معنی العبادة والارض لا تخلو فیه من معنی العبادة والارض لا تخلوا عن وظیفة مقررة فیها شرعاً اهـ مختصراً، فهذا بحمد الله نص فیما عولنا علیه ولله الحمد ۔ وبالجملة مابیت المال فارغة مادامت لها فإذا انتقلت لملك احد بوجه صحیح کما هو المحمل فی الاراضی التی بأیدی الناس یتوارثونها ویتصرفون فیها تصرف الملاك کما حققه فی رد المحتار وبیناه فی فتاوٰنا فلا محید عن التوظیف الاتری ان الموات تکون لبیت المال

(دائیں کالم میں اردو ترجمہ): شئی واجب کرنے کی کوئی وجہ نہیں، یہاں عشر و خراج کا نہ لازم ہونا اس لیے ہے کہ یہاں کوئی ایسا شخص ہی نہیں جس پر کچھ لازم کیا جائے جیسے کہ بنجر زمین جو بالکل ہی کاشت نہ کی گئی ہو اور اگر ہم یہاں ایسے شخص کو پالیں جس پر کوئی شئی لازم کریں تو فراغ کا کوئی معنی نہ ہوگا۔ محقق علی الاطلاق نے فتح القدیر میں باب زکوٰۃ الزروع کے آخر میں امام صاحب رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے قول کی علت بیان کرتے تصریح کی ہے کہ ذمی نے جب عشری زمین کسی مسلمان سے خریدی تو وہ خراجی ہو جائے گی۔ امام ابو حنیفہ کے قول کی وجہ یہ بیان کی کہ یہاں عشر نہیں ہو سکتا کیونکہ عشر میں عبادت کا پہلو ہے اور زمین شرعی طور پر کسی مقرر وظیفہ سے خالی نہیں ہو سکتی اھ اختصاراً بحمد اللہ یہ ہمارے مختار پر تصریح ہے وللہ الحمد۔ الغرض بیت المال کی زمین جب تک بیت المال کی ہے وہ ہر وظیفہ سے فارغ رہے گی حتی کہ وہ کسی طریق صحیح سے کسی کی ملکیت میں چلی جائے جیسا کہ معاملہ

ان اراضی کا ہے جو لوگوں کے پاس بطور وراثت منتقل ہوتی ہیں اور ان میں وہ مالکوں جیسا تصرف کرتے ہیں جیسا کہ ردالمحتار میں ہے اور ہم نے اسے اپنے فتاویٰ میں بیان کیا ہے پس ان میں وظیفہ سے چھٹکارا نہیں، کیا تمہارے علم میں نہیں کہ جب بے آباد زمین

حواشی: 1 فتح القدیر باب زکوۃ الزروع الثمار مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۱۹۶ 2 فتح القدیر باب زکوۃ الزروع الثمار مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۱۹۷

Fatawa Razawiyya Volume 10

| Arabic: وهى فارغة فاذا هى تحيى باذن الامام فتصير ذات وظيفة كذا هذا۔ | Urdu: If it is the property of the Bait-ul-Mal (public treasury), it is free from stipend. So when it is inhabited with the ruler's permission, that land will belong to the stipend-holder. This is also the case here. (T) |

And Ushr (tithe) will be taken from the entire produce.

| Arabic: فى تنوير الابصار يجب العشر بلا رفع مؤن الزرع، وفى الدر المختار لتصريحهم بالعشر في كل الخارج اه | Urdu: (In Tanwir al-Absar, it states that Ushr is obligatory without deducting all cultivation costs. In Durr-e-Mukhtar, the reasoning is that jurists have specified that Ushr is on the total produce. - T) |

I say: "He who is wronged shall not wrong" (I say injustice should not be met with injustice. - T). If land is given on a sharecropping basis, i.e., fixing a portion of the produce from the cultivator, such as half or a third of the grain, then Ushr will be due from the landowner according to his share. In the case of sharecropping by halves, if 100 maunds of grain are produced, the landlord should give five maunds as Ushr. And if it was given on lease, which people call 'Naqshi', for example, let at 100 rupees per bigha, then according to Sayyiduna Imam Azam (may Allah be pleased with him), the total Ushr is on the landowner, and according to the Sahibain (may Allah have mercy on them), it is all on the cultivator; nothing is demanded from the landlord. Imam Qazi Khan indicated that the first opinion is more apparent.

| Arabic: وعليه اقتصر الامام الخصاف وبه جزم في منظومة النسفي والاسعاف واعتمده المتأخرون كالخير الرملي واسمعيل الحائك وحامد آفندى وغير هم رحمهم الله تعالى۔ | Urdu: Imam Khassaf restricted himself to this, and it is certain in Manzumah Nasafi and Is'af. The later scholars like Khayr Ramli, Isma'il Ha'ik, Hamid Afandi, and others (may Allah Almighty have mercy on them) have relied on this. (T) |

But in Hawi Qudsi, the fatwa is on the second opinion, and that too with the word 'Na'khudh' (we take this - T), which is among the strongest words of fatwa; that was an obligatory correction, and this is explicit.

| Arabic: فى الدر المختار العشر على الموحر كخراج موظف وقالا على المستأجر كمستعير مسلم وفى الحاوى وبقولهما نأخذ و | Urdu: In Durr-e-Mukhtar, it is stated that Ushr is on the

one who gives on rent, just like fixed Kharaj (land tax). According to the Sahibain, Ushr is on the tenant, like a Muslim taking something on loan (Ariya). - Hawi |

1. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Chapter of Ushr, Mujtabai Press, Delhi, 1/139.
2. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Chapter of Ushr, Mujtabai Press, Delhi, 1/139.

फ़तावा रज़विया, खंड 10

| अरबी: وهى فارغة فاذا هى تحيى باذن الامام فتصير ذات وظيفة كذا هذا۔ | उर्दू/अनुवाद: यदि वह बैत-उल-माल (राजकोष) की संपत्ति हो, तो वह वज़ीफ़ा (कर) से मुक्त होती है। तो जब वह शासक की अनुमति से आबाद हो जाए, तो वह भूमि वज़ीफ़ा-धारक की हो जाएगी। यहाँ भी यही मामला है। (त) |

और उश्र (दशमांश) पूरी पैदावार से लिया जाएगा।

| अरबी: فى تنوير الابصار يجب العشر بلا رفع مؤن الزرع، وفى الدر المختار لتصريحهم بالعشر في كل الخارج اه | उर्दू/अनुवाद: (तनवीर अल-अब्सार में है कि खेती के सभी खर्चों को निकाले बिना उश्र अनिवार्य है। दुर्रे मुख्तार में इसका तर्क यह दिया गया है कि न्यायविदों ने स्पष्ट किया है कि उश्र पूरी पैदावार पर है। - त) |

मैंने कहा: "जिस पर अत्याचार किया गया वह अत्याचार न करे" (मैं कहता हूँ कि अत्याचार के बदले अत्याचार नहीं किया जाएगा। - त)। यदि भूमि बटाई पर दी जाती है, यानी बटाईदार से पैदावार का हिस्सा, उदाहरण के लिए आधा या एक तिहाई अनाज तय किया जाता है, तो भूमि मालिक पर उसके हिस्से के अनुसार उश्र होगा। आधे-आधे की बटाई की स्थिति में यदि 100 मन अनाज पैदा होता है, तो ज़मींदार को उश्र में पाँच मन देना चाहिए। और यदि इसे पट्टे पर दिया गया था जिसे लोग 'नक़्शी' कहते हैं, उदाहरण के लिए 100 रुपये प्रति बीघा पर दिया गया, तो सैयदुना इमाम आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) के अनुसार पूरा उश्र भूमि मालिक पर है। और साहिबैन (रहमतुल्लाहि अलैहि) के अनुसार पूरा उश्र बटाईदार पर है, ज़मींदार से कुछ माँग नहीं की जाएगी। इमाम क़ाज़ी खान ने पहले मत के अधिक स्पष्ट होने का संकेत दिया।

| अरबी: وعليه اقتصر الامام الخصاف وبه جزم في منظومة النسفي والاسعاف واعتمده المتأخرون كالخير الرملي واسمعيل الحائك وحامد آفندى وغير هم رحمهم الله تعالى۔ | उर्दू/अनुवाद: इमाम खस्साफ ने इसी पर संतोष किया है और मंज़ूमा नसफ़ी और इसआफ़ में इसी पर ज़ोर दिया गया है। और बाद के विद्वानों जैसे खैर रमली, इस्माइल हाइक, हामिद आफ़ंदी आदि (अल्लाह तआला उन पर दया करे) ने इसी पर भरोसा किया है। (त) |

लेकिन हावी क़ुदसी में दूसरे मत पर फ़तवा है, और वह भी 'नाखुज़ु' (हम इसे लेते हैं - त) शब्द के साथ, जो फ़तवे के सबसे पुख्ता शब्दों में से है। वह अनिवार्य सुधार था और यह स्पष्ट है।

| अरबी: فى الدر المختار العشر على الموحر كخراج موظف وقالا على المستأجر كمستعير مسلم وفى الحاوى وبقولهما نأخذ و | उर्दू/अनुवाद: दुर्रे मुख्तार में है कि उश्र किराए पर देने वाले पर है जैसे कि निर्धारित खराज (भूमि कर)। साहिबैन के अनुसार उश्र किराएदार पर है जैसे कि कोई मुसलमान उधार (आरिया) पर कोई चीज़ ले। - हावी |

1. दुर अल-मुख्तार शरह तनवीर अल-अब्सार, उश्र का अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/139.
2. दुर अल-मुख्तार शरह तनवीर अल-अब्सार, उश्र का अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/139.

पृष्ठ 220/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

| وھی فارغة فاذا ھی تحیی باذن الامام فتصیر ذات وظیفة کذا ھذا۔ | بیت المال کی ملکیت ہو تو وہ وظیفہ سے فارغ ہوتی ہے تو جب وہ حاکم کی اجازت سے وہ آباد ہوجائے تو وہ زمین صاحب وظیفہ کی ہو جائیگی یہاں بھی یہی معاملہ ہے۔ (ت) |

اور عشر پوری پیداوار کا لیا جائے گا۔

| فی تنویر الابصار یجب العشر بلا رفع مؤن الزرع، وفی الدر المختار لتصریحھم بالعشر في کل الخارج اھ | (تنویر الابصار میں ہے کہ کھیتی کے تمام اخراجات نکالے بغیر عشر لازم ہے۔ درمختار میں اس کی دلیل یہ دی ہے کہ فقہاء نے تصریح کی ہے کہ عشر تمام پیداوار پر ہے۔ت) |

قلت: و من یظلم لا یظلم (میں کہتا ہوں ظلم کے بدلے ظلم نہ کیا جائے گ۔ت) زمین اگر بٹائی پر دی جائے یعنی مزارع سے پیداوار کا حصہ مثلا نصف یا ثلث غلہ قرار دیا جائے تو مالک زمین پر بقدر حصہ کا عشر آئیگا مزارعت بالمناصفہ کی صورت میں سو من غلہ پیدا ہوا تو زمیندار پانچ من عشر میں دے، اور اگر اجارہ میں دی گئی جسے لوگ نقشی کہتے ہیں مثلاً سو روپے بیگھہ پر اٹھائی تو سیدنا امام اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ کے نزدیک کل عشر مالک زمین پر ہے اور صاحبین رحمہما اللہ تعالٰی کے نزدیک کل مزارع پر ہے زمیندار سے کچھ مطالبہ نہیں۔ امام قاضی خان نے قولِ اول کے اظہر ہونے کا اشارہ کیا،

| وعلیه اقتصر الامام الخصاف وبه جزم في منظومة النسفي والاسعاف واعتمده المتأخرون کالخیر الرملي واسمعیل الحائك وحامد آفندی وغیر ھم رحمھم اللہ تعالی۔ | امام خصاف نے اسی پر اکتفاء کیا

ہے اور منظومہ نسفی اور اسعاف میں اسی پر جزم کیا ہے اور متاخرین مثلاً خیر رملی، اسمعیل حائک، حامد آفندی وغیرہم رحمہم اللہ تعالیٰ نے اسی پر اعتماد کیا ہے (ت) |

مگر حاوی قدسی میں قول دوم پر فتویٰ اور وہ بھی لفظ ناخذ (ہم اسی کو لیں گے۔ت) کہ آکد الفاظِ فتویٰ سے ہے وہ تصحیح التزامی تھی اور یہ صریح ہے،

| فی الدر المختار العشر علی الموحر کخراج موظف وقالا علی المستأجر کمستعیر مسلم وفی الحاوی وبقولھما نأخذ و | درمختار میں ہے کہ عشر کرایہ پر دینے والے پر ہے جیسا کہ مقرر خراج، صاحبین کے نزدیک عشر کرایہ دار پر ہے جیسے کہ مسلمان عاریۃً کوئی چیز لے۔ حاوی |

1 درمختار شرح تنویر الابصار باب العشر مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۳۹ 2 درمختار شرح تنویر الابصار باب العشر مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۳۹

Fatawa Rizvia, Volume 10

In Sharecropping (Muzara'ah), if the seed is provided by the landowner, the tithe (Ushr) is upon him. If it is from the sharecropper, then the Ushr is shared between them proportionally. In 'Radd al-Muhtar', under the statement 'and in Muzara'ah...', what the commentator mentioned is the opinion of the 'Sahibayn' (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad). The reason for sufficing with it is that the verdict (Fatwa) is based on their opinion regarding the validity of Muzara'ah. However, the details mentioned here contradict what is found in 'Al-Bahr', 'Al-Mujtaba', 'Al-Mi'raj', 'Al-Siraj', 'Al-Haqa'iq', 'Al-Zahiriyya', etc., which state that according to Imam Abu Hanifa, the Ushr is upon the landowner, while according to the Sahibayn, it is upon both, without further detail. This is apparent since, in 'Al-Bada'i', it is stated that Muzara'ah is permissible according to the Sahibayn, and Ushr is mandatory on the produce, and the produce is shared between them; therefore, Ushr will be due upon both, etc. (T)

In summary: the second opinion is also not weak, and in our lands, it is the most lenient for the people. Here, rents are never fixed considering the Ushr. If the Ushr of the produce were to be paid from the rent, likely nothing would remain; in fact, in many places, one would have to pay the Ushr from their own pocket. Additionally, there are other rural expenses and government taxes. If people were forced to set rents such that, after paying Ushr, taxes, and all expenses, enough remained for their subsistence, it would be impossible, and farmers would never agree to it.

Restraining people from their customs causes hardship, and hardship is averted by the sacred texts. Allah Almighty says: 'Allah does not burden a soul except [with] that which He has given it. Allah will bring about, after hardship, ease [i.e., relief].' And this is as mentioned by Allama Shami (may Allah have mercy on him) in the section on Endowments (Awqaf).

1. Durr-e-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Chapter of Ushr, Mujtabai Press Delhi, 1/40-139.
2. Radd al-Muhtar, Chapter of Ushr, Mustafa al-Babi Egypt, 2/2.
3. Al-Quran, 65/7.

फतावा रज़विया, जिल्द 10

मज़ारअत (साझा खेती) में यदि बीज ज़मीन के मालिक की ओर से हो, तो 'उश्र' (पैदावार का दसवां हिस्सा) उसी पर है। और यदि वह किसान की ओर से हो, तो हिस्से के अनुसार दोनों पर होगा। 'रद अल-मुह्तार' में 'मज़ारअत में...' इस कथन के तहत व्याख्याकार ने जो उल्लेख किया है, वह 'साहिबैन' (इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद) का मत है। इस पर निर्भरता का कारण यह है कि मज़ारअत की वैधता के बारे में फतवा उन्हीं के मत पर है। हालाँकि, यहाँ वर्णित विवरण 'अल-बहर', 'अल-मुजतबा', 'अल-मेराज', 'अल-सिराज', 'अल-हकाइक', 'अल-ज़हीरिया' आदि के विपरीत है, जिनमें कहा गया है कि इमाम अबू हनीफा के अनुसार उश्र ज़मीन के मालिक पर है, जबकि साहिबैन के अनुसार बिना किसी विवरण के दोनों पर है। यही ज़ाहिर है क्योंकि 'अल-बदाइ' में वर्णित है कि साहिबैन के अनुसार मज़ारअत जायज़ है और उश्र पैदावार पर अनिवार्य है, और पैदावार दोनों के बीच साझा है, इसलिए उश्र दोनों पर होगा, आदि। (त)

संक्षेप में: दूसरा मत भी कमज़ोर नहीं है, और हमारे क्षेत्रों में यही लोगों के लिए सबसे अधिक सुविधाजनक है। यहाँ किराए कभी भी उश्र को ध्यान में रखकर तय नहीं किए जाते। यदि पैदावार का उश्र किराए में से दिलाया जाए, तो संभवतः कुछ नहीं बचेगा; बल्कि कई स्थानों पर तो उश्र के लिए घर से पैसा देना पड़ेगा। इसके अलावा अन्य ग्रामीण खर्च और सरकारी लगान भी हैं। यदि लोगों को ऐसा किराया तय करने पर मजबूर किया जाए कि उश्र, लगान और सभी खर्चों के बाद उनके गुज़ारे लायक बचे, तो यह संभव नहीं होगा, और किसान इस पर कभी सहमत नहीं होंगे।

लोगों को उनकी आदतों से रोकना कठिनाई पैदा करता है, और कठिनाई को कुरान के स्पष्ट प्रमाणों द्वारा टाला गया है। अल्लाह तआला का फरमान है: 'अल्लाह किसी जान पर उसकी सामर्थ्य से अधिक बोझ नहीं डालता। जल्द ही अल्लाह कठिनाई के बाद सुगमता प्रदान करेगा।' और यह वैसा ही है जैसा अल्लामा शामी (र.अ.) ने औकाफ (बंदोबस्त) के अध्याय में उल्लेख किया है।

1. दुर्रे मुख्तार शरह तनवीरुल अबसार, बाबुल उश्र, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/40-139।
2. रद अल-मुह्तार, बाबुल उश्र, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 2/2।
3. अल-कुरान, 65/7।

पृष्ठ 836 का 221

فی المزارعة ان کان البذر من رب الارض فعلیه ولو من العامل فعلیهما بالحصة فی ردالمحتار تحت قوله وفی المزارعة الخ ما ذکره الشارح هو قولهما اقتصر علیه لما علمت ان الفتوی علی قولهما بصحة المزارعة لکن ما ذکر من التفصیل یخالفه مافی البحر والمجتبیٰ والمعراج والسراج والحقائق والظهیریة وغیرها من ان العشر علی رب الارض عنده وعلیهما عندهما من غیر ذکر هذا التفصیل وهو الظاهر لما فی البدائع من ان المزارعة جائزة عندهما والعشر یجب فی الخارج والخارج بینهما فیجب العشر علیهما الخ۔ میں صاحبین کا قول لیتے ہیں اور مزارعت میں اگر بیج زمین کے مالک کا ہے تو اس پر عشر ہے اور اگر عامل کا ہے تو حصہ کے مطابق دونوں پر ہوگا، رد المحتار میں ماتن کے قول "وفی المزارعة الخ" کے تحت یہ شارح نے جو کہا یہ صاحبین کا قول ہے، اور اس پر اکتفاء کی وجہ آپ جان چکے کہ صحتِ مزارعت کے بارے میں صاحبین کے قول پر فتویٰ ہے لیکن جو تفصیل میں بیان ہوا وہ اس کے مخالف ہے، جو بحر، مجتبیٰ، معراج، سراج، حقائق، ظہیریہ وغیرہ میں ہے کہ امام صاحب کے نزدیک عشر مالکِ زمین پر ہے اور صاحبین کے نزدیک دونوں پر ہے مگر تفصیل کا ذکر نہیں، اور عشر پیداوار میں واجب ہے اور پیداوار دونوں کے درمیان تقسیم ہوگی لہٰذا عشر دونوں پر ہوگا الخ (ت)

بالجملہ : قولِ دوم بھی ضعیف نہیں اور ہمارے بلاد میں وہی ارفق بالناس ہے یہاں اجرتیں بلحاظِ عشر ہر گز مقرر نہیں ہوتیں، اگر پیداوار کا عشر اجرت سے دلائیں تو غالباً کچھ نہ بچے بلکہ بہت جگہ عشر ہی میں گھر سے دینا پڑے باقی مصارف دیہی و مالگزاری انگریز مجدار ہے۔ اور اگر اس پر مجبور کیجئے کہ اب وہ اجرتیں مقرر کر لیجئے کہ عشر و مالگزاری و جملہ مصارف دے کر تمہارے لیے بقدرِ کفالت بچے تو یہ ہرگز میسر نہیں، مزارعین اس پر کیوں راضی ہونے لگے۔

وفی نزع الناس عن عاداتهم حرج والحرج مدفوع بالنص لا يُكَلِّفُ اللهُ نَفْسًا اِلَّا مَا اٰتٰهَا سَيَجْعَلُ اللهُ بَعْدَ عُسْرٍ يُّسْرًا وهذا كما ذكر العلامة الشامی رحمه الله تعالیٰ فی اوقاف لوگوں کو ان کی عادت سے روکنا حرج ہے اور حرج کا مدفوع ہونا نص سے ثابت ہے۔ ارشاد باری ہے: "اللہ تعالیٰ کسی جان پر اس کی وسعت سے زیادہ بوجھ نہیں ڈالتا۔ اللہ عنقریب تنگی کے بعد آسانی پیدا فرمائے گا"۔ اور یہ ویسا ہی ہے جیسا علامہ شامی رحمہ اللہ تعالیٰ نے کتاب الاوقاف میں ذکر فرمایا۔

1 در مختار شرح تنویر الابصار باب العشر مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۴۰- ۱۳۹ 2 ردالمحتار باب العشر مصطفی البابی مصر ۲/۲ 3 القرآن ۶۵/ ۷

Fatawa Razawiya, Volume 10

[Table Header] [Left Column (Arabic Text)] ...his cities, that the rent, or even several times its amount, does not suffice for the 'Ushr' (tithe) or the 'Kharaj al-Muqasama' (apportioned land tax). He said: Therefore, one should not deviate from issuing a fatwa based on the view of the two disciples [Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad] regarding this. This is because, in our time, they determine the 'fair rent' (Ujrat al-Mithl) on the basis that the rent is free from the obligations of the endowment side, and there is no 'Ushr' or anything else upon it. However, if the payment of 'Ushr' from the side of the endowment was taken into account, and that the tenant is responsible for nothing but the rent, then the fair rent would increase many times over, as is not hidden. So, if it is possible to take the full rent, then the fatwa should be according to the Imam's [Abu Hanifa] view; otherwise, it should be according to the view of the two disciples, to avoid the clear harm that no one advocates. And Allah Ta'ala knows best. (Ah 1)

[Right Column (Urdu Translation/Explanation)] ...he will make it easy. This is exactly what Allama Shami (may Allah Ta'ala have mercy on him) mentioned about the endowments (Awqaf) of his cities, in which neither the rent nor the 'Ushr' added to it is received, nor is the distribution of grain received in full. He said that it is not appropriate to avoid issuing a fatwa based on the statement of the 'Sahibayn' (the two disciples) in this regard. This is because, in our era, people fix the 'fair rent' (Ujrat-e-Mithl) based on the premise that fixing it for the endowment ensures safety from loss, and there is no 'Ushr' etc. on it. If it were considered that 'Ushr' is to be paid by the endowment and nothing but the rent is upon the tenant, then the fair rent would increase manyfold, as is not hidden. Therefore, if it is possible to collect the full rent, the fatwa will be according to the Imam's [Abu Hanifa] statement; otherwise, it will be according to the Sahibayn's statement, so that the obvious loss does not become necessary, which no one has suggested. And Allah Ta'ala knows best. (T)

[Main Body Text (Urdu)] As for the land whose status as 'Kharaji' (subject to land tax) is proven—for example, if investigation shows that at the beginning of the Islamic Sultanate (may Allah Ta'ala bless its periods), this land initially belonged to a non-Muslim Dhimmi who developed it with the Sultan's permission, or the Sultan granted it to him, and then a Muslim bought it from him, or a Muslim developed land in the vicinity of Kharaji land—then its duty is certainly 'Kharaj'. Undoubtedly, English land revenue has no connection with Shari'i Kharaj; it is neither counted nor deducted

from its payment. 'And this is clear and manifest, with no ambiguity in it' (T). The matter requiring investigation is that since there is neither an Islamic Sultanate nor an Islamic army here, does the Shari'i Kharaj remain obligatory or not? And if it remains, to whom should it be given, what, and how much? I say: And with Allah is success. It is clearly stated in the books that the demand for Kharaj is conditional upon control (Tasallut). For as long as the Shari'ah government does not have control over the cities, even after gaining control, the Kharaj for those days is not demanded, whether during those days they paid Kharaj to another nation or did not pay it at all, because taking Kharaj is coupled with providing protection.

1. Radd al-Muhtar, Chapter of Ushr, Mustafa al-Babi, Egypt 20/2.

फ़तवा रज़विया, खंड 10

[तालिका शीर्षक] [बायाँ कॉलम (अरबी पाठ)] ...उनके शहरों में, कि किराया, या उसका कई गुना भी, 'उश्र' (दशमांश) या 'खराज अल-मुक़ासमा' (विभाजित भूमि कर) के लिए पर्याप्त नहीं है। उन्होंने कहा: इसलिए, इस बारे में दो शिष्यों [इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद] के मत के आधार पर फतवा देने से विचलन नहीं करना चाहिए। ऐसा इसलिए है क्योंकि हमारे समय में, वे 'उचित किराया' (उजरत अल-मिस्ल) इस आधार पर निर्धारित करते हैं कि किराया बंदोबस्ती (वक्फ) पक्ष के दायित्वों से मुक्त है, और उस पर कोई 'उश्र' या कुछ और नहीं है। हालाँकि, यदि वक्फ की ओर से 'उश्र' के भुगतान को ध्यान में रखा जाता, और यह कि किराएदार किराए के अलावा किसी और चीज़ के लिए जिम्मेदार नहीं है, तो उचित किराया कई गुना बढ़ जाता, जैसा कि छिपा नहीं है। इसलिए, यदि पूरा किराया लेना संभव है, तो फतवा इमाम [अबू हनीफ़ा] के मत के अनुसार होना चाहिए; अन्यथा, यह दो शिष्यों के मत के अनुसार होना चाहिए, ताकि उस स्पष्ट नुकसान से बचा जा सके जिसकी वकालत कोई नहीं करता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (अह 1)

[दायाँ कॉलम (उर्दू अनुवाद/व्याख्या)] ...वह इसे आसान बना देगा। यह बिल्कुल वैसा ही है जैसा अल्लामा शामी (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) ने अपने शहरों के औकाफ (बंदोबस्ती) के बारे में बताया है, जिसमें न तो किराया और न ही उसके साथ जोड़ा गया 'उश्र' प्राप्त होता है, और न ही अनाज का वितरण पूरा मिलता है। उन्होंने कहा कि इस संबंध में 'साहिबैन' (दो शिष्यों) के कथन के आधार पर फतवा देने से बचना उचित नहीं है। इसका कारण यह है कि हमारे युग में, लोग 'उजरत-ए-मिस्ल' (उचित किराया) इस आधार पर तय करते हैं कि वक्फ के लिए इसे तय करने से नुकसान से सुरक्षा सुनिश्चित होती है, और उस पर कोई उश्र आदि नहीं है। यदि यह माना जाए कि उश्र का भुगतान वक्फ द्वारा किया जाना है और किराएदार पर किराए के अलावा कुछ भी नहीं है, तो उचित किराया कई गुना बढ़ जाएगा, जैसा कि छिपा नहीं है। इसलिए, यदि पूरा किराया वसूल करना संभव है, तो फतवा इमाम [अबू हनीफ़ा] के कथन के अनुसार होगा; अन्यथा, यह साहिबैन के कथन के अनुसार होगा, ताकि वह स्पष्ट नुकसान न हो, जिसका सुझाव किसी ने नहीं दिया है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

[मुख्य पाठ (उर्दू)] जहाँ तक उस भूमि का प्रश्न है जिसकी स्थिति 'खराजी' (भूमि कर के अधीन) सिद्ध हो चुकी है - उदाहरण के लिए, यदि शोध से पता चलता है कि इस्लामी सल्तनत के प्रारंभ में (अल्लाह तआला इसके युगों को आशीर्वाद दे), यह भूमि शुरू में किसी गैर-मुस्लिम धिम्मी की थी जिसने

सुल्तान की अनुमति से इसे विकसित किया था, या सुल्तान ने उसे प्रदान किया था, और फिर किसी मुसलमान ने उससे खरीदा था, या किसी मुसलमान ने खराजी भूमि के पास भूमि विकसित की थी - तो उसका कर्तव्य निश्चित रूप से 'खराज' है। निस्संदेह, अंग्रेजी मालगुजारी का शरीयत के खराज से कोई संबंध नहीं है; न तो इसकी गणना की जाती है और न ही इसके भुगतान से काटा जाता है। 'और यह स्पष्ट और प्रकट है, इसमें कोई अस्पष्टता नहीं है' (त)। जांच का विषय यह है कि चूंकि यहां न तो इस्लामी सल्तनत है और न ही इस्लामी सेना, क्या शरीयत का खराज अनिवार्य है या नहीं? और यदि यह रहता है, तो किसे, क्या और कितना दिया जाना चाहिए? मैं कहता हूँ: और अल्लाह की मदद से सफलता है। किताबों में स्पष्ट रूप से उल्लेखित है कि खराज की मांग नियंत्रण (तसल्लुत) पर निर्भर है। जब तक शरीयत सरकार का शहरों पर नियंत्रण नहीं रहता, नियंत्रण पाने के बाद भी उन दिनों का खराज नहीं मांगा जाता, चाहे उन दिनों उन्होंने किसी अन्य राष्ट्र को खराज दिया हो या बिल्कुल न दिया हो, क्योंकि خ؎ لेना सुरक्षा प्रदान करने के साथ जुड़ा हुआ है।

1. रद अल-मुह्तार, बाब उल-उश्र, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र 20/2।

بلاده انه لا تفی الاجرة ولا اضعافها بالعشر او خراج المقاسمة قال فلا ینبغي العدول عن الافتاء بقولهما في ذلك لانهم فی زماننا یقدرون اجرة المثل بناء علی ان الاجرة سالبة لجهة الوقف ولا شئ علیه من عشر و غیره اما لو اعتبر دفع العشر من جهة الوقف وان المستأجر لیس علیه سوی الجرة فان اجرة المثل تزید اضعافاً کثیرة کما لا یخفی فان امکن اخذ الجرة کاملة یفتی بقول الامام والا فبقولهما لما یلزم علیه من الضرر الواضح الذی لا یقول به احد واللہ تعالی اعلم اهـ 1

آسانی فرمادے گا، یہ اسی طرح ہے جو علامہ شامی رحمہ اللہ تعالٰی نے اپنے شہروں کے ان اوقاف کے بارے میں ذکر کیا ہے جن میں نہ اجرت نہ اس کے ساتھ عشر کا اضافہ اور نہ ہی غلے کی تقسیم پوری ملتی ہے، انہوں نے کہا کہ اس سلسلہ میں صاحبین کے قول پر فتوٰی دینے سے اعراض مناسب نہیں کیونکہ ہمارے دور میں لوگ اجرت مثلی مقرر کرتے ہیں اس بناء پر کہ وقف کے لئے اجرت مثلی مقرر کرنے میں نقصان سے سلامتی ہے اور اس پر کوئی عشر وغیرہ نہیں اور اگر وقف کی جانب سے عشر دینے کا اعتبار کیا جائے اور مستأجر پر سوائے اجرت کے کچھ نہ ہو تو اجرت مثلی کئی گنا بڑھ جاتی ہے جیسا کہ مخفی نہیں، تو اگر کاملاً اجرت لینا ممکن ہو تو امام صاحب کے قول پر فتوٰی ہوگا ورنہ صاحبین کے قول پر، تاکہ اس سے وہ واضح نقصان لازم آئے جس کا قول کسی نے بھی نہیں کیا واللہ تعالٰی اعلم اھـ (ت)

رہی وہ زمین جس کی نسبت خراجی ہونا ثابت ہو جائے مثلاً تحقیق ہو کہ ابتدائے زمانہ سلطنت اسلام سقی اللہ تعالی عہد ہا میں ابتدائے یہ زمین کسی کافر ذمی کی تھی کہ اس نے باذنِ سلطانِ احیاء کی، سلطان نے اسے عطا کی، اُس سے مسلمان نے خریدی یا مسلمان نے خراجی زمین کے

قرب میں احیاء کی اس کا وظیفہ ضرور خراج ہے اور بلاشبہ خراج شرعی سے مالگذاری انگریزی کا کوئی تعلق نہیں، نہ حساب ادا میں وہ مجرادی جائے وھذا ظاھر جلی لا خفاء بہ (اور یہ ظاہر روشن ہے اس میں کوئی خفا نہیں ۔ ت) امرِ تحقیق طلب یہ ہے کہ جب یہاں نہ سلطنتِ اسلام نہ لشکرِ اسلام تو خراجِ شرعی بھی واجب رہا یا نہیں، اور رہا تو کسے اور کیا اور کتنا دیا جائے - اقول: وباللہ التوفیق: یہ تو کتب میں مصرح ہے کہ مطالبہ خراج مشروط ہے تسلط سے، جب بلاد پر جتنے دنوں سلطنتِ شرعیہ کا تسلط نہ رہے بعدِ تسلط بھی اُن ایام کے خراج کا مطالبہ نہیں انہوں نے اتنے دنوں کسی اور قوم کو خراج دیا یا اسے بھی نہ دیا ہو کہ خراج لینا حمایت فرمانے کے ساتھ

1 ردالمختار باب العشر مصطفٰی البابی مصر ۲/۲۰

Volume 10 Fatawa Rizvia

When for so many days the religious state remained separate from their protection, it cannot take the land tax (Khiraj) for that period. In *Kanz* it is stated:

If rebels collect the tithe (Ushr), land tax (Khiraj), and alms-tax (Zakat), it shall not be taken again. (T) | If rebels collect Ushr, Khiraj, and Zakat, it shall not be taken again. (T)

In *Hidayah*, *Bahr*, etc., it is stated:

Because the Imam (ruler) did not protect them, and taxation is based on protection. (T) | Because the ruler did not protect them, and Khiraj is based on protection. (T)

In *Tabyeen*, *Bahr*, and *Ghunyat Dhuwi al-Ahkam* it is stated:

The mention of the condition of them taking the Khiraj etc. occurred by chance, to the extent that even if it was not taken from them for years while the Dhimmi (non-Muslim subject) was under their control, nothing would be taken for the past period either, for the reason we mentioned. (T) | The mention of setting the condition for taking Khiraj etc. happened by chance, to the extent that if collection was not made from them for several years although the Dhimmi was with them, then nothing will be taken from the past either, as we have explained. (T)

In *Radd al-Muhtar* it is stated:

It appears to me that if the enemies (Ahl al-Harb) overpower one of our cities, the same ruling applies because the underlying reason and cause here is that the Imam did not protect them, and taxation is tied to protection. In *Bahr* and other books, it is said that if a non-Muslim from enemy territory (Harbi) accepts Islam in the *Dar al-Harb* (abode of war) and resides there for several years, then comes to us, the ruler cannot collect anything from him due to the absence of protection, etc. (T) | It has become clear to me that if the people of war (enemies) overpower one of our cities, the ruling will be the same because the reason and cause here is that the ruler did not protect them, and Khiraj is due to protection. And in *Bahr* etc. it is said if a person of war converted to Islam in Dar al-Harb and stayed there for several years then came to us, the ruler cannot collect anything from him due to lack of protection etc. (T)

And it is also clearly stated that the expenditure of Khiraj is for the army of Islam, the poor have no right in it.

[1] Kanz al-Daqa'iq, Section on Sheep, H.M. Saeed Company, Karachi, p. 59 [2] Al-Bahr al-Ra'iq, Section on Sheep, H.M. Saeed Company, Karachi, 2/223 [3] Tabyin al-Haqa'iq, Section on Zakat of Sheep, Matba'ah Kubra, Bulaq, Egypt, 2/27 [4] Radd al-Muhtar, Chapter on Zakat of Sheep, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/26

जिल्द दहम फतावा रिज़विया

जब इतने दिनों तक धार्मिक राज्य उनकी सुरक्षा से वंचित रहा, तो वह उस अवधि का खिराज (भूमि कर) नहीं ले सकता। 'कन्ज़' में है:

यदि विद्रोही उश्र (दशमांश), खिराज और ज़कात वसूल कर लें, तो उसे दोबारा नहीं लिया जाएगा। (त) | अगर बागी उश्र, खिराज और ज़कात वसूल कर लें तो दोबारा न लिया जाएगा। (त)

'हिदाया', 'बहर' आदि में है:

क्योंकि इमाम (शासक) ने उनकी सुरक्षा नहीं की और कराधान सुरक्षा पर आधारित है। (त) | क्योंकि हाकिम ने उनकी हिमायत नहीं की और खिराज तो हिमायत की बिना पर होता है। (त)

'तबीन', 'बहर' और 'ग़ुनियत ज़ुवी अल-अहकाम' में है:

खिराज आदि लेने की शर्त का उल्लेख संयोगवश हुआ है, यहाँ तक कि यदि कई वर्षों तक उनसे वसूली नहीं की गई, जबकि ज़म्मी (गैर-मुस्लिम नागरिक) उनके पास था, तो पिछली अवधि के लिए भी कुछ नहीं लिया जाएगा जैसा कि हमने वर्णन किया है। (त) | खिराज वगैरह लेने की शर्त लगाने का ज़िक्र इत्तेफ़ाक़न हुआ है हत्ता कि अगर कई साल उनसे वसूली न की हालांकि ज़म्मी उनके पास था तो अब साबिक़ा से भी कोई शय न ली जाएगी जैसा कि हमने बयान कर दिया है। (त)

'रद्दुल मुहतार' में है:

मुझ पर यह स्पष्ट हुआ है कि यदि युद्धरत लोग (शत्रु) हमारे किसी शहर पर हावी हो जाएं तो यही हुक्म होगा क्योंकि यहाँ कारण और तर्क यही है कि शासक ने उनकी सुरक्षा नहीं की और खिराज सुरक्षा के कारण होता है। और 'बहर' आदि में है कि यदि किसी हरबी (शत्रु देश के निवासी) ने दारुल हरब में इस्लाम स्वीकार कर लिया और वह वहीं कई वर्षों तक रहा, फिर हमारे पास आया, तो शासक सुरक्षा के अभाव के कारण उससे कुछ वसूल नहीं कर सकता, इत्यादि। (त) | मुझ पर यह ज़ाहिर हुआ है कि अगर अहल-ए-हर्ब हमारे किसी शहर पर ग़ालिब आ जाएं तो हुक्म यही होगा क्योंकि यहाँ दलील व इल्लत वही है कि हाकिम ने उनकी हिमायत नहीं की और खिराज हिमायत की वजह से होता है, और बहर वगैरह में है अगर हरबी ने दारुल हर्ब में इस्लाम क़ुबूल कर लिया और वो वहाँ ही कई साल तक मुकीम रहा फिर हमारे यहाँ आया तो हाकिम अदम-ए-हिमायत की वजह से उससे कुछ वसूल नहीं कर सकता इल्ख (त)

और यह भी स्पष्ट उल्लेख है कि खिराज का व्यय इस्लामी सेना के लिए है, इसमें गरीबों का कोई हक नहीं है।

[1] कन्ज़ुल दक़ा'इक़, फ़स्ल फ़िल ग़नम, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, पृ. 59 [2] अल-बहरुर रा'इक़, फ़स्ल फ़िल ग़नम, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 2/223 [3] तबीनुल हक़ा'इक़, फ़स्ल फ़ी सदक़तुल ग़नम, मतबा कुबरा, बोलाक़, मिस्र, 2/27 [4] रद्दुल मुहतार, बाब ज़कातुल ग़नम, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/26

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

ہے جب اتنے دنوں سلطنتِ دینیہ ان کی حمایت سے جُدا رہی اسی مدت کا خراج نہیں لے سکتی۔

کنز میں ہے:

لواخذ العشر والخراج والزکواۃ بغاۃ لم یوخذ اخری۔[1] | اگر باغی عشر، خراج اور زکوۃ وصول کرلیں تو دوبارہ نہ لیا جائے گا۔ (ت)

ہدایہ، بحر وغیرہما میں ہے:

لان الامام لم یحمھم والجبایۃ بالحمایۃ۔[2] | کیونکہ حاکم نے ان کی حمایت نہیں کی اور خراج تو حمایت کی بنا پر ہوتا ہے۔ (ت)

تبیین وبحر وغنیہ ذوی الاحکام میں ہے:

اشتراط اخذھم الخراج ونحوہ وقع اتفاقا حتی لو لم یأخذ وا منہ سنین و ھو عندھم لم یو خذ منہ شئی ایضا لما ذکرنا۔[3] | خراج وغیرہ لینے کی شرط لگانے کا ذکر اتفاقاً ہوا ہے حتی کہ اگر کئی سال ان سے وصولی نہ کی حالانکہ ذمی ان کے پاس تھا تو اب سابقہ سے بھی کوئی شے نہ لی جائیگی جیسا کہ ہم نے بیان کردیا ہے۔ (ت)

رد المحتار میں ہے:

ویظھر لی ان اھل الحرب لو غلبوا علی بلدۃ من بلادنا کذلك للتعلیلہم اصل المسئلۃ بان الامام لم یحمھم والجبایۃ بالحمایۃ وفی البحر وغیرہ لو اسلم الحربی فی دار الحرب واقام فیھا سنین ثم خرج الینا لم یأخذ منہ الامام الزکوۃ لعدم الحمایۃ الخ[4] | مجھ پر یہ ظاہر ہوا ہے کہ اگر اہلِ حرب ہمارے کسی شہر پر

غالب آجائیں تو حکم یہی ہوگا کیونکہ یہاں دلیل و علت وہی ہے کہ حاکم نے ان کی حمایت نہیں کی اور خراج حمایت کی وجہ سے ہوتا ہے، اور بحر وغیرہ میں ہے اگر حربی نے دار الحرب میں اسلام قبول کرلیا اور وہ وہاں ہی کئی سال تک مقیم رہا پھر ہمارے ہاں آیا تو حاکم عدمِ حمایت کی وجہ سے اس سے کچھ وصول نہیں کرسکتا الخ (ت)

اور یہ بھی تصریح ہے کہ مصرفِ خراج لشکرِ اسلام ہے فقراء کا اس میں کچھ حق نہیں،

[1] کنز الدقائق فصل فی الغنم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۵۹ [2] بحر الرائق فصل فی الغنم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲ / ۲۲۳ [3] تبیین الحقائق فصل فی صدقۃ الغنم مطبعہ کبری بولاق مصر ۲ / ۲۷ [4] رد المحتار باب زکوٰۃ الغنم مصطفی البابی مصر ۲ / ۲۶

Fatawa Razawiyya Volume Ten

In 'Al-Inaya', under the issue of a Dhimmi (non-Muslim citizen) buying 'ushri' (tithe) land from a Muslim, in justifying the narration from Imam Muhammad (may Allah have mercy on him), it is stated that the right of the poor is attached to it. This is similar to how the right of the combatants (militia) is attached to 'kharaji' (taxed) lands. Then, in another justification, it says that what is spent on the poor is for the sake of Allah Almighty as an act of worship, and the wealth of a disbeliever is not like that, so it should be spent on the heads of expenditure for 'kharaj' (land tax).

And in 'Ad-Durr al-Mukhtar' from Ibn al-Shuhna in the versified list of the Bayt al-Maal (treasury):

And the third type is 'kharaj' along with 'ushur'. Going further it said:

The expenditures of the first two are present in our 'Nass' (textual proofs) and the expenditure of the third are our combatants (the army of Islam). (Finished)

And in 'Al-Fath' and 'Al-Inaya' and others, shortly before the chapter on 'Jizya' (tribute), it says: The expenditure for 'ushr' is for the poor, and the expenditure for 'kharaj' is for the combatants (militia). (Finished).

In 'Al-Fath', an objection has been raised on the previous issue that the land becoming 'kharaji' by a Dhimmi buying 'ushri' land is that after the right of the poor is attached to the land, the change nullifies their right, which is not permissible, etc. (T)

---

1. Al-Inaya with Fath al-Qadir, Chapter of Ushr, Nuriyah Razawiyya Library, Sukkur, 2/196
2. Durr al-Mukhtar, Chapter of Ushr, Mujtabai Press, Delhi, 1/140
3. Fath al-Qadir, Chapter of Ushr and Kharaj, Nuriyah Razawiyya Library, Sukkur, 5/286
4. Fath al-Qadir, Chapter of Zakat on Crops and Fruits, Nuriyah Razawiyya Library, Sukkur, 2/197

फ़तावा रज़विय्या जिल्द दसवीं

'अल-इनाया' में इस मसले के तहत कि 'एक ज़िम्मी ने मुसलमान से उशरी (दशमांश) ज़मीन खरीदी', इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाहि अलैहि) से वर्णित रिवायत के औचित्य में कहा गया है कि फ़कीरों का हक इसके साथ जुड़ा हुआ है। इसलिए, यह उसी हक की तरह है जैसे खराजी ज़मीनों के साथ मुक़ातला (लड़ाकों) का हक जुड़ा होता है। फिर एक अन्य औचित्य देते हुए कहा गया है कि जो कुछ फ़कीरों पर खर्च किया जाता है, वह अल्लाह तआला के लिए इबादत के तौर पर होता है, और एक काफ़िर के माल में यह बात नहीं होती, इसलिए इसे खराज (भूमि कर) के खर्चों में ही खर्च किया जाएगा।

और 'अद-दुर्रुल मुख्तार' में इब्न अश्-शहना से बैतुल माल (राजकोष) की नज़्म (कविता) में है:

और तीसरी किस्म 'खराज' के साथ 'उश्शुर' है। आगे चलकर कहा गया:

पहली दोनों के खर्च के स्रोत हमारे 'नस्स' (धार्मिक प्रमाण) में मौजूद हैं और तीसरी के खर्च के पात्र हमारे 'मुक़ातला' (इस्लाम की सेना) हैं। (समाप्त)

और 'फ़त्ह' और 'इनाया' और अन्य में 'बाबुल् जिज़्या' (जिज़्या का अध्याय) से थोड़ा पहले है कि 'उश्र' का खर्च फ़कीर हैं और 'खराज' का खर्च मुक़ातला करने वाले (इस्लाम की सेना) हैं। (समाप्त)

'फ़त्ह' में पिछले मसले पर ऐतराज किया गया है कि एक ज़िम्मी के उशरी ज़मीन खरीदने से उसके खराजी हो जाने पर, क्योंकि ज़मीन के साथ फ़कीरों का हक जुड़ने के बाद बदलाव उनके हक को बातिल (अमान्य) कर देता है, जो जायज़ नहीं है, आदि। (त)

---

1. अल-इनाया मअ फ़त्हुल क़दीर, बाबुल् उश्र, मक्तबा नूरिया रज़विय्या सुक्कुर, 2/196
2. दुर्रुल मुख्तार, बाबुल् उश्र, मतबा मुजतबाई देहली, 1/140
3. फ़त्हुल क़दीर, बाबुल् उश्र वल खराज, मक्तबा नूरिया रज़विय्या सुक्कुर, 5/286
4. फ़त्हुल क़दीर, बाबुज़ ज़कातुज़ ज़ुरूअ वस्-सुमार, मक्तबा नूरिया रज़विय्या सुक्कुर, 2/197

पृष्ठ 224 / 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

فی العنایۃ تحت مسئلۃ شراء ذمّی عشریۃ من مسلم، فی توجیہ روایۃ عن محمد حق الفقراء تعلق بہ فھو کتعلق حق المقاتلۃ بالاراضی الخراجیۃ ثم قال فی توجیہ اخری، مایصرف الی الفقراء ھو ماکان للہ تعالٰی بطریق العبادۃ و مال الکافر لیس کذلك فیصرف فی مصارف الخراج 1 عنایہ میں اس مسئلہ 'ذمی نے کسی مسلمان سے عشری زمین خریدی' کے تحت امام محمد رحمہ اللہ سے مروی روایت کی توجیہ میں ہے کہ فقراء کا اس کے ساتھ حق متعلق ہے، پس یہ اسی حق کی طرح ہے جس طرح خراجی زمینوں کے ساتھ حق مقاتلہ کا تعلق ہوتا ہے پھر دوسری توجیہ کرتے ہوئے کہا کہ جو کچھ فقراء پر خرچ کیا جاتا ہے وہ اللہ تعالٰی کے لیے بطور عبادت ہوتا ہے اور مال کافر میں یہ بات نہیں ہوتی لہذا اسے مصارف خراج میں ہی خرچ کیا جائے گا۔

وفی الدرالمحتار عن ابن الشحنۃ فی نظم بیوت المال ع اور در مختار میں ابن شحنہ سے بیوت المال کی نظم میں ہے :

وثالثھا خراج مع عشور الی ان قال: اور تیسری قسم خراج مع عشر ہے۔ آگے چل کر کہا:

فمصرف الاولین اتی بنص پہلی دونوں کے مصارف ہمارے نص میں موجود ہیں اور

وثالثھا حواہ مقاتلونا اہ 2 وفی الفتح والعنایۃ وغیرہما قبیل باب الجزیۃ، مصرف العشر الفقراء و مصرف الخراج المقاتلۃ اہ 3 وقد اعترض فی الفتح فی المسألۃ المارۃ علی جعل العشریۃ بشراء الذمّی خراجیۃ، بأن التغییر ابطال لحق الفقراء بعد تعلقہ فلا یجوز الخ۔ 4 تیسری کا مصرف ہمارے مقاتلہ (لشکرِ اسلام) ہوتے ہیں۔ اھ اور فتح اور عنایہ میں باب الجزیہ سے تھوڑا پہلے ہے کہ عشر کا مصرف فقراء اور خراج کا مصرف مقاتلہ کرنیوالے (لشکرِ اسلام) ہوتے ہیں اھ فتح میں گزشتہ

مسئلہ کہ عشری زمین کا ذمی کے خریدنے سے خراجی ہونے پر اعتراض کیا ہے کہ زمین کے ساتھ فقراء کا حق متعلق ہونے کے بعد تغیر ان کے حق کو باطل کر دیتا ہے جو جائز نہیں الخ (ت)

---

1 العنایۃ مع فتح القدیر باب العشر مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲ /۱۹۶ 2 در مختار باب العشر مطبع مجتبائی دہلی ۱ /۱۴۰ 3 فتح القدیر باب العشر والخراج مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۵ /۲۸۶ 4 فتح القدیر باب زکوٰۃ الزروع والثمار مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲ /۱۹۷

Fatawa Razawiyya Volume 10

And there is no doubt that when the recipient (of the charity) does not remain, for whom should the demand be made? Therefore, according to our Imam, the 'ashir (tax collector) will not take 'ushr (tithe) from a merchant for melons, cucumbers, wood, etc., which are products that spoil quickly, if the poor are not present because there is no recipient and those items would spoil by keeping them; so the demand is futile.

Arabic Text	English Translation
In al-Fath, shortly before the chapter on Minerals: regarding those who buy moist produce for trade, such as melons, cucumbers, and the like, 'ushr is not taken from them according to Abu Hanifa, for they spoil if kept, and there are no poor people with the official in the desert to give them to. If he keeps them to find the poor, they will spoil, and the intended purpose will be lost. (Abbreviated)[1]	In al-Fath, a little before the chapter on Minerals, it states that if a person passes by a field of vegetables and buys them for trade, for example, melons and cucumbers, etc., then according to Imam Abu Hanifa (may Allah's mercy be upon him), there will be no 'ushr on it because they spoil if kept. And there are no poor people with the official in the forest to whom he can give the 'ushr. If he keeps them until he finds the poor, they will spoil, thus the purpose is lost. (Abbreviated) (T)

In fact, the scholars have clearly stated that the reason for the obligation of all Kharaj (land tax) is for the right of the Muslim army and as a compensation for their protection. In Fath al-Qadir, the Book of Travel, Chapter on Ushr, it says:

Arabic Text	English Translation
Kharaj is a reward for the fighters for their protection; so whatever is irrigated by what they have protected, Kharaj becomes obligatory on it.[2]	Kharaj is the compensation for the protection provided by the Muslim army; land that is irrigated under their protection, Kharaj will be obligatory on it. (T)

In al-'Inayah, at the same place, it says:

Arabic Text	English Translation
Kharaj is obligatory as a compensation for the fighters, so the obligation of Kharaj is specific to what is irrigated by	Kharaj is meant to compensate for the losses of the fighters, therefore Kharaj will be specific to those lands that are

Arabic Text	English Translation
water protected by the fighters... (until his words) ...To this, Shams al-A'immah pointed out.[3]	irrigated under the protection of the army. (Further on he said) Shams al-A'immah has pointed towards this. (T)

[1] Fath al-Qadir, Chapter on what passes by the 'ashir, Maktabah Nuriyyah Razawiyyah Sukkur, 2/178 [2] Fath al-Qadir, Chapter on Ushr and Kharaj, Maktabah Nuriyyah Razawiyyah Sukkur, 5/281 [3] Al-'Inayah with Fath al-Qadir, Chapter on Ushr and Kharaj, Maktabah Nuriyyah Razawiyyah Sukkur, 5/280

फ़तावा रज़विया खंड 10

और इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब लाभार्थी (दान प्राप्त करने वाला) ही न रहे, तो मांग किसके लिए हो? इसलिए हमारे इमाम के अनुसार, आशिर (कर संग्रहकर्ता) किसी व्यापारी से खरबूजे, ककड़ी, लकड़ी आदि जैसी जल्दी खराब होने वाली उपज का उश्र (दशमांश) नहीं लेगा, जब गरीब मौजूद न हों क्योंकि कोई लाभार्थी नहीं है और वे चीजें रखने से खराब हो जाएंगी; तो मांग करना व्यर्थ है।

अरबी पाठ

अल-फतह में, खनिजों के अध्याय से थोड़ा पहले: उन लोगों के बारे में जो व्यापार के लिए ताज़ा उपज खरीदते हैं, जैसे कि खरबूजे, ककड़ी और इसी तरह की चीज़ें, इमाम अबू हनीफा के अनुसार उनसे उश्र नहीं लिया जाता है, क्योंकि वे रखने पर खराब हो जाते हैं, और जंगल में अधिकारी के पास उन्हें देने के लिए कोई गरीब नहीं होते हैं। यदि वह गरीबों को खोजने के लिए उन्हें रखता है, तो वे खराब हो जाएंगे, और इच्छित उद्देश्य विफल हो जाएगा। (संक्षिप्त)[1]

हिंदी अनुवाद

अल-फतह में, खनिजों के अध्याय से थोड़ा पहले है कि, जो व्यक्ति सब्जियों के खेत के पास से गुजरा और उसने उन्हें व्यापार के लिए खरीदा, उदाहरण के लिए खरबूजे और ककड़ी आदि, तो इमाम अबू हनीफा (रहमतुल्लाह अलैहि) के अनुसार उस पर उश्र नहीं होगा क्योंकि वे रखने से खराब हो जाते हैं। और जंगल में अधिकारी के पास गरीब नहीं होते जिन्हें वह उश्र दे सके। और अगर वह उन्हें गरीबों को पाने के लिए रखता है तो वे खराब हो जाते हैं, तो इससे उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। (संक्षिप्त) (त)

बल्कि, विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि समस्त खराज (भूमि कर) की अनिवार्यता मुस्लिम सेना के अधिकार और उनकी सुरक्षा के मुआवजे के लिए है। फतह अल-कादिर, किताब अल-सियर, उश्र के अध्याय में है:

अरबी पाठ

खराज योद्धाओं के लिए उनकी सुरक्षा का बदला है; अतः जो कुछ भी उनके द्वारा सुरक्षित पानी से सींचा जाता है, उस पर खराज अनिवार्य हो जाता है।[2]

हिंदी अनुवाद

खराज मुस्लिम सेना की सुरक्षा का मुआवजा है; जो भूमि उनकी सुरक्षा से सिंचित होगी, उस पर खराज अनिवार्य होगा। (त)

इनाया में इसी स्थान पर है:

अरबी पाठ	हिंदी अनुवाद
खराज योद्धाओं की क्षतिपूर्ति के रूप में अनिवार्य है, इसलिए खराज की अनिवार्यता उन्हीं भूमियों तक सीमित होगी जो योद्धाओं द्वारा सुरक्षित पानी से सींची जाती हैं... (उनके शब्दों तक) ...इसी की ओर शम्स अल-आइम्मा ने संकेत किया है।[3]	खराज योद्धाओं के नुकसान की भरपाई के लिए होता है, इसलिए खराज केवल उन जमीनों के साथ विशिष्ट होगा जो सेना की सुरक्षा के तहत सिंचित हों। (आगे चलकर कहा) शम्स अल-आइम्मा ने इसी ओर इशारा किया है। (त)

---

[1] फतह अल-कादिर, अध्याय: आशिर के पास से गुजरने वाली चीजों के बारे में, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/178 [2] फतह अल-कादिर, उश्र और खराज का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 5/281 [3] अल-इनाया फतह अल-कादिर के साथ, उश्र और खराज का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 5/280

فتاوی رضویہ جلد دہم

اور شک نہیں کہ جب مصرف نہ باقی ہو، مطالبہ کس کے لیے ہو ولہذا ہمارے امام کے نزدیک عاشر تاجر سے خربوزے، کھیری، لکڑی وغیرہ ہا جلد بگڑ جانے والی پیداوار کا عشر نہ لے گا جبکہ فقراء موجود نہیں کہ مصرف ہی نہیں اور وہ اشیاء رکھنے سے بگڑ جائیں گی، تو مطالبہ عبث ہے۔

عربی عبارت	**اردو ترجمہ**
في الفتح قبيل باب المعادن، من مربرطاب اشتراها للتجارة كالبطيخ والقثاء و نحوه لم يعشره عند ابی حنيفہ فانها تفسد بالا ستبقاء و ليس عند العامل فقراء في البر ليد فع لهم فاذا بقيت ليجد هم فسدت فيفوت المقصود اھ مختصراً۔[1]	فتح میں باب المعادن سے تھوڑا پہلے ہے، کہ جو شخص سبزیوں کے کھیت کے پاس سے گزرا اس نے تجارت کے لیے انہیں خریدا مثلاً خربوزہ اور کھیرا وغیرہ، تو اب امام ابو حنیفہ علیہ الرحمۃ کے نزدیک اس پر عشر نہ ہوگا کیونکہ وہ باقی رکھنے سے خراب ہوجاتی ہیں، اور عامل کے پاس جنگل میں فقراء نہیں ہوتے جنہیں وہ عشر دے دے، اور اگر انہیں فقراء کے پانے کے لیے باقی رکھتا ہے تو وہ خراب ہو جاتے ہیں تو اس سے مقصود فوت ہوجاتا اھ اختصاراً (ت)

بلکہ علماء نے تصریح فرمائی کہ کل خراج کا وجوب ہی لشکر اسلام کے حق کے لیے اور ان کی حمایت کا معاوضہ ہے۔ فتح القدیر، کتاب السیر، باب العشر میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ

الخراج جزاء المقاتلة على حمايتهم فما سقى بما احموه وجب فيه اھ[2]

خراج لشکر اسلام کی حمایت کا معاوضہ ہے، جو زمین ان کی حمایت سے سیراب ہوگی اس میں خراج واجب ہوگا اھ (ت)

عنایہ میں اسی جگہ ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ

الخراج يجب جبر ا للمقاتلة فيختص وجوب الخراج بما يسقى بماء حمته المقاتلة(الى قوله) الى هذا اشار شمس الائمة اھ[3]

خراج، مقاتلہ کے نقصان کو پورا کرنے کے لیے ہوتا ہے لہذا خراج انہی زمینوں کے ساتھ مخصوص ہوگا جو لشکر کی حمایت کے تحت سیراب ہوں گی (آگے چل کر کہا) شمس الائمہ نے اسی طرف اشارہ کیا ہے۔ (ت)

---

1. فتح القدير باب فيما يمر على العاشر مكتبہ نوريہ رضويہ سكھر ۲/ ۱۷۸
2. فتح القدير باب العشر والخراج مكتبہ نوريہ رضويہ سكھر ۵ / ۲۸۱
3. العنايہ مع فتح القدير باب العشر والخراج مكتبہ نوريہ رضويہ سكھر ۵ / ۲۸۰

In the later part of the same chapter on Zakat of Crops, it is stated: "Land tax (Kharaj) is due as a right for the combatants (Muqatila), so its obligation is specific to what is under the protection/control of the combatants." 1 Kharaj is obligatory as a right for the combatants; therefore, it remains specific to those who are under the combatants. (T) These words apparently point towards the cessation of Kharaj, but a precise insight rules that the essence of obligation is established and standing. There is a far difference between the demand of the state and religious obligation. There are many things that the ruler cannot demand, yet they are religiously obligatory. Like the Zakat of internal assets as mentioned in Al-Durr and other general books. And Al-Shami, citing Al-Bahr and others regarding the issue of a Harbi (non-Muslim in enemy territory) becoming Muslim in Dar al-Harb, said after the aforementioned text: "We will issue a fatwa for him to pay it if he was aware of its obligation, otherwise there is no Zakat upon him because the address (divine commandment) did not reach him, and that is a condition for obligation." 2 Like the Zakat of hidden wealth as mentioned in Durr and other books; Shami, referring to Bahr and others, speaking about a Harbi becoming Muslim in Dar al-Harb, said after the mentioned phrase: if that Muslim Harbi knows about the obligation of Zakat, we will give a fatwa for its payment, otherwise there is no Zakat on him because he did not receive such a command which is a condition for obligation. (T) Therefore, in the mentioned case of lack of control, it is explicitly stated that if the usurpers/conquerors take Zakat and Ushr but do not spend it on their proper avenues, then it is obligatory for the owners of the wealth to give it again. As for Kharaj, which does not need repetition, the reason is that the conquerors themselves, in their capacity as an Islamic army, are its recipients, so the Kharaj has reached its proper place. In Al-Durr al-Mukhtar: "The taking of Zakat of manifest assets like livestock, Ushr, and Kharaj by rebels and unjust rulers does not necessitate repetition by the owners, provided that what was taken was spent in its proper place mentioned later. Otherwise, they must repeat everything except Kharaj in matters between them and Allah, because they (the rebels) are themselves the recipients of Kharaj." 3 In Dur Mukhtar, it is stated that if rebels and oppressive rulers have collected Zakat of apparent wealth, for example, Zakat of livestock, or collected Ushr and Kharaj, then it will not be taken from the owners again (provided it was spent in the places mentioned ahead). And if it was not spent there, then as a matter of religious duty, repeating Ushr and Zakat is necessary

for the owners, but not Kharaj, because the rebel army itself is a recipient of Kharaj. (T)

1. Al-Inayah with Fath al-Qadir, Chapter on Zakat of Crops and Fruits, Maktaba Nooria Razvia Sukkur, 2 / 197.
2. Radd al-Muhtar, Chapter on Zakat of Sheep, Mustafa al-Babi Egypt, 2 / 26.
3. Dur al-Mukhtar, Chapter on Zakat of Sheep, Mujtabai Press Delhi, 1 / 134.

फतावा रज़विया - जिल्द दहम

फसलों की ज़कात के उसी अध्याय के अंतिम भाग में है: "खराज (भूमि कर) लड़ाकों (मुकातिला) के अधिकार के रूप में अनिवार्य है, इसलिए इसकी अनिवार्यता उन लोगों के लिए विशिष्ट है जो लड़ाकों के संरक्षण में हैं।" 1 खराज लड़ाकों के हक के रूप में लाज़िम होता है, इसलिए यह उन्हीं के साथ विशिष्ट रहेगा जो लड़ाकों के अधीन होंगे। (त) ये शब्द प्रत्यक्ष रूप से खराज के समाप्त होने की ओर संकेत करते हैं, लेकिन एक सूक्ष्म दृष्टि यह कहती है कि अनिवार्यता का मूल स्थापित और स्थिर है। सल्तनत की मांग और धार्मिक अनिवार्यता (दयानत) के बीच बहुत बड़ा अंतर है। बहुत सी चीज़ें ऐसी हैं जिन्हें शासक नहीं मांग सकता, फिर भी वे शरीयत के अनुसार अनिवार्य हैं। जैसे आंतरिक संपत्तियों (अमवाल-ए-बातिना) की ज़कात, जैसा कि 'अद-दुर्र और अन्य सामान्य पुस्तकों में है। और शामी ने 'अल-बहर' आदि के हवाले से दारुल-हर्ब में किसी हर्बी (शत्रु देश के गैर-मुस्लिम) के इस्लाम लाने के मसले पर उल्लिखित इबारत के बाद कहा: "हम उसे इसे अदा करने का फतवा देंगे यदि वह इसकी अनिवार्यता से अवगत था, अन्यथा उस पर ज़कात नहीं है क्योंकि उस तक ईश्वरीय संदेश (ख़िताब) नहीं पहुँचा, और यह अनिवार्यता के लिए एक शर्त है।" 2 जैसे छिपे हुए धन की ज़कात जैसा कि दुर्र और अन्य पुस्तकों में है; शामी ने बहर आदि के हवाले से दारुल-हर्ब में किसी हर्बी के मुसलमान होने के बारे में बात करते हुए उक्त वाक्यांश के बाद कहा: यदि वह मुस्लिम हर्बी ज़कात की अनिवार्यता के बारे में जानता है, तो हम इसके भुगतान के लिए फतवा देंगे, अन्यथा उस पर कोई ज़कात नहीं है क्योंकि उसे ऐसा कोई आदेश नहीं मिला जो अनिवार्यता के लिए शर्त है। (त) इसलिए, नियंत्रण की कमी के उल्लिखित मामले में स्पष्ट किया गया है कि यदि विद्रोही/विजेता ज़कात और उश्र लेकर उन्हें उनके उचित व्यय के स्थानों (मसारिफ) में खर्च नहीं करते हैं, तो संपत्ति के स्वामियों के लिए उन्हें दोबारा देना अनिवार्य है। जहाँ तक खराज की बात है, जिसमें दोबारा देने की आवश्यकता नहीं है, इसका कारण यह है कि वे विजेता स्वयं भी एक इस्लामी सेना होने के नाते इसके हकदार (मसरफ) हैं, इसलिए खराज अपने सही स्थान पर पहुँच गया। 'अद-दुर्र अल-मुख्तार' में है: "बागियों (विद्रोहियों) और अत्याचारी शासकों द्वारा मवेशियों जैसी प्रकट संपत्तियों की ज़कात, उश्र और खराज की वसूली स्वामियों पर दोहराव को अनिवार्य नहीं करती है, बशर्ते कि जो लिया गया था वह आगे बताए गए उसके उचित स्थान पर खर्च किया गया हो। अन्यथा, उन्हें अल्लाह के साथ अपने मामले में खराज के अलावा सब कुछ दोहराना चाहिए, क्योंकि वे (विद्रोही) स्वयं खराज के पात्र हैं।" 3 दुर मुख्तार में है कि यदि बागियों और ज़ालिम शासकों ने प्रकट संपत्तियों की ज़कात वसूल

कर ली है, उदाहरण के लिए पशुओं की ज़कात, या उश्र और खराज वसूल कर लिया है, तो अब मालिकों से दोबारा नहीं लिया जाएगा (बशर्ते कि उन्हें आगे बताए गए स्थानों पर खर्च किया गया हो)। और यदि वहां खर्च नहीं किया गया, तो मालिकों पर धार्मिक कर्तव्य के रूप में उश्र और ज़कात को दोहराना लाज़िम है, खराज को नहीं, क्योंकि बागी सेना स्वयं खराज का मसरफ (व्यय का पात्र) है। (त)

1. अल-इनाया मा फतह अल-कादिर, फसलों और फलों की ज़कात का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सक्कर, 2 / 197।
2. रद अल-मुह्तार, भेड़ों की ज़कात का अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 2 / 26।
3. दुर अल-मुख्तार, भेड़ों की ज़कात का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 1 / 134।

पेज 226 / 836

اسی کے اواخر باب زکوٰۃ الزروع میں ہے: الخراج یجب حقا للمقاتلۃ فیختص وجوبہ بما حمتہ المقاتلۃ۔ 1 خراج حق مقاتلہ کے طور پر لازم ہوتا ہے لہٰذا یہ اسی کے ساتھ مخصوص رہے گا جو مقاتلہ کے تحت ہوگا۔ (ت) یہ کلمات بظاہر سقوط خراج کی طرف ناظر مگر نظر دقیق حاکم، کہ نفس وجوب ثابت و قائم، مطالبہ سلطنت و وجوب دیانت میں فرق بعید ہے، بہت چیزیں ہیں کہ سلطان کو ان کا مطالبہ نہیں پہنچا اور شرعاً واجب۔ ک زکوۃ الاموال الباطنۃ کما في الدر وغیرہ عامۃ الاسفار وقد قال الشامي عن البحر وغیرہ في مسئلۃ اسلام الحربي في دار الحرب بعد العبارۃ المذکورۃ ونفتیہ بأدائھا ان کان عالما بوجوبھا والا فلا زکوۃ علیہ لان الخطاب لم یبلغہ وھو شرط الوجوب اھ 2 جیسے اموال باطنہ کی زکوٰۃ جیسا کہ در اور دیگر کتب میں ہے، شامی نے بحر وغیرہ کے حوالے سے دارالحرب میں کسی حربی کے اسلام لانے کے بارے میں گفتگو کرتے ہوئے عبارت مذکورہ کے بعد کہا، کہ اگر وہ حربی مسلمان وجوب زکوٰۃ کا علم رکھتا ہے ہم اسکی ادائیگی کا فتوٰی دینگے ورنہ اس پر زکوٰۃ ہی نہیں کیونکہ اسے ایسا حکم ہی نہیں پہنچا جو وجوب کے لیے شرط ہے اھ (ت) ولہٰذا صورتِ مذکورہ عدم تسلط میں تصریح فرمائی کہ متغلبین اگر زکوٰۃ و عشر لے کر ان کے مصارف میں سبب نہ کریں تو اربابِ اموال پر ان کا دوبارہ دینا واجب ہے اور خراج میں جو اعادے کی حاجت نہیں اس کا سبب یہ کہ وہ متغلبین خود بھی ایک اسلامی لشکر کی حیثیت سے اُس کے مصرف ہیں تو خراج اپنے محل کو پہنچ گیا۔ في الدر المختار، اخذ البغاۃ والسلاطین الجائرۃ زکوۃ الاموال الظاھرۃ کالسوائم والعشر و الخراج لا اعادۃ علی اربابھا، ان صرف المأخوذ في محلہ الاتی ذکرہ والا یصرف فیہ فعلیھم فیما بینھم وبین اللہ تعالی اعادۃ غیر الخراج لانھم مصارفہ۔ 3 درمختار میں ہے اگر باغیوں اور ظالم حکمرانوں نے اموال ظاہرہ کی زکوٰۃ وصول کرلی مثلاً چار

پایوں کی زکوٰۃ، یا عشر و خراج وصول کرلیا تو اب مالکوں سے دوبارہ نہیں لیا جائیگا (بشرطیکہ ان کی جگہ خرچ کیا گیا جن کا ذکر آرہا ہے) اور اگر وہاں خرچ نہیں کیا تو مالکوں پر بطورِ دیانت عشرہ و زکوٰۃ کا اعادہ لازم ہے خراج کا نہیں کیونکہ باغی لشکر خود خراج کا مصرف ہیں۔ (ت)

1 العنایہ مع فتح القدیر باب زکوٰۃ الزروع والثمار مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲ / ۱۹۷ 2 ردالمحتار باب زکوٰۃ الغنم مصطفی البابی مصر ۲ / ۲۶ 3 درمختار باب زکوٰۃ الغنم مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۳۴

In Durr al-Muntaqa, then in Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar it is stated:

Arabic	Urdu
As for the land tax (Khiraj), they do not issue a fatwa for its re-payment because they are its eligible recipients. When rebels fight against the people of war, Khiraj is the right of the combatants.[1]	A fatwa will not be given to collect Khiraj again because they are its recipients, as the rebels fought against the enemies of war, and Khiraj is the right of combatants. (T)

In Hidaya, Bahr, and others, it is mentioned:

Arabic	Urdu
They issued a fatwa that it (Zakat/etc) should be repeated except for Khiraj, for they are the recipients of Khiraj due to being combatants, while Zakat's recipients are the poor, and it is not spent on them.[2]	The scholars have issued a fatwa that anything besides Khiraj must be paid again because the rebels are the recipients of Khiraj since they are combatants, whereas Zakat's recipients are the poor, hence it cannot be spent on them. (T)

Thus, it is proven that control and protection are conditions for the Sultan's demand, not conditions for the obligation itself. This reasoning—that Khiraj is not repeated because they themselves are recipients—clarifies that if they were not recipients, such as non-Muslim nations, then the repetition of Khiraj would be mandatory. The recipients of Khiraj are not just the Islamic army but all general interests of Muslims, which include the construction of mosques, stipends for Imams and Muezzins, building of bridges and inns, salaries of teachers of religious sciences, support for students of religious sciences, and the service of the scholars of truth who are defenders of the faith and engaged in teaching, preaching, issuing fatwas, and other religious affairs.

Arabic	Urdu
In Radd al-Muhtar, under the statement of Ibn al-Shuhna mentioned previously, that: it is spent on our interests such as fortifying frontiers, building bridges and archways, providing for scholars,	In Radd al-Muhtar, under the previous statement of Ibn al-Shuhna found in Hidaya and most reliable books, it is stated: Khiraj can be spent on our interests, for example, defensive dams, bridges, roads, scholars, judiciary, service to scholars, combatants, and

Arabic	Urdu
judges, the family, and the provision for combatants and their descendants, i.e., the descendants of all.[3]	their descendants—meaning it can be spent on the children of all the aforementioned people. (T)

In Durr al-Mukhtar, it is stated:

---

[1] Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Chapter on Zakat of Sheep, Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/404 [2] Al-Hidayah, Book of Zakat, Chapter on what has no Sadaqah in it, Al-Maktabah al-Arabiyyah Karachi, 1/174 [3] Radd al-Muhtar, Chapter on Ushr, Mustafa al-Babi Egypt, 2/63

फ़तावा-ए-रज़विया - जिल्द 10

दुर्रुल मुंतक़ा, फिर तहतावी अल-दुर्रुल मुख्तार में है:

अरबी	उर्दू
जहाँ तक ख़िराज (भूमि कर) का सवाल है, वे इसकी पुनरावृत्ति के लिए फतवा नहीं देते हैं क्योंकि वे इसके पात्र प्राप्तकर्ता हैं। जब विद्रोही युद्ध के शत्रुओं के खिलाफ लड़ते हैं, तो ख़िराज योद्धाओं का अधिकार है।[1]	ख़िराज दोबारा लेने का फतवा नहीं दिया जाएगा क्योंकि वे इसके प्राप्तकर्ता हैं, क्योंकि विद्रोहियों ने युद्ध के दुश्मनों के साथ मुकाबला किया और ख़िराज मुकाबले का हक है। (त)

हिदाया और बहर आदि में है:

अरबी	उर्दू
विद्वानों ने फतवा दिया कि ख़िराज के अलावा सब कुछ फिर से लिया जाएगा, क्योंकि वे लड़ाके होने के कारण ख़िराज के प्राप्तकर्ता हैं, और ज़कात के प्राप्तकर्ता गरीब हैं और ज़कात उन पर खर्च नहीं की जाती।[2]	विद्वानों ने फतवा दिया है कि ख़िराज के अलावा का पुन: भुगतान होगा क्योंकि विद्रोही ख़िराज के पात्र हैं क्योंकि वे लड़ाके हैं और ज़कात के पात्र गरीब हैं इसलिए उन पर खर्च नहीं की जा सकती। (त)

अतः यह सिद्ध हो गया कि नियंत्रण और संरक्षण सुल्तान की मांग के लिए शर्त है, न कि स्वयं कर्तव्य (वजुब) की शर्त। इस तर्क ने—कि ख़िराज की पुनरावृत्ति इसलिए नहीं होती क्योंकि वे स्वयं पात्र हैं—स्पष्ट कर दिया कि यदि वे पात्र नहीं होते, जैसे गैर-मुस्लिम कौमें, तो ख़िराज की पुनरावृत्ति भी अनिवार्य होती। ख़िराज के पात्र केवल इस्लामी सेना नहीं बल्कि मुसलमानों के सभी सार्वजनिक हित हैं, जिनमें मस्जिदों का निर्माण, इमाम और मुअज़्ज़िनों का वजीफा, पुलों और सरायों का निर्माण, धार्मिक शिक्षकों का वेतन, धार्मिक छात्रों की देखरेख और सत्य के विद्वानों की सेवा जो धर्म के समर्थक और शिक्षण, उपदेश, फतवा और अन्य धार्मिक कार्यों में व्यस्त हैं, सब शामिल हैं।

अरबी	उर्दू
रद्दुल मुहतार में इब्न अश्-शहना के पिछले कथन के तहत कि: इसे हमारे हितों जैसे कि	रद्दुल मुहतार में इब्न शहना के पिछले कथन के तहत जो हिदाया और अधिकांश विश्वसनीय पुस्तकों में है,

अरबी

सरहदों की किलेबंदी, पुलों और मेहराबों के निर्माण, विद्वानों की सहायता, न्यायपालिका, परिवार और योद्धाओं और उनके वंशजों के प्रावधान पर खर्च किया जाता है।[3]

उर्दू

यह है: ख़िराज हमारे हितों पर खर्च किया जा सकता है जैसे रक्षा बांध, पुल, रास्ते, विद्वान, न्यायपालिका, विद्वानों की सेवा, योद्धा और उनके वंशज—यानी उपर्युक्त सभी लोगों की संतान पर खर्च किया जा सकता है। (त)

दुर्रुल मुख्तार में है:

---

[1] हाशियात अत-तहतावी अल-दुर्रुल मुख्तार, भेड़ की ज़कात का अध्याय, दार अल-मआरिफ़ा बेरूत, 1/404 [2] अल-हिदाया, ज़कात की किताब, उस माल के बारे में अध्याय जिसमें सदक़ा नहीं है, अल-मकतबा अल-अरबिया कराची, 1/174 [3] रद्दुल मुहतार, उश्र का अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 2/63

فتاوی رضویہ - جلد دہم

در منتقی پھر طحطاوی علی الدر المختار میں ہے:

عربی	اردو
اما الخراج فلا یفتون باعادتہ لانھم مصارفہ اذا ھل البغی یقاتلون اھل الحرب والخراج حق المقاتلۃ۔ 1	خراج دوبارہ لینے کا فتوٰی نہیں دیا جائے گا کیونکہ یہ اس کا مصرف ہیں کیونکہ اہل بغاوت نے اہل حرب کے ساتھ مقاتلہ کیا اور خراج مقاتلہ کا حق ہے (ت)

ہدایہ و بحر وغیرہما میں ہے:

عربی	اردو
افتوابان یعیدوھا دون الخراج لانھم مصارف الخرج لکونھم مقاتلۃ والزکوۃ مصرفھا الفقراء ولا یصرفونھا الیھم۔ 2	علماء نے فتوٰی دیا ہے کہ خراج کے علاوہ کا اعادہ ہوگا کیونکہ اہل بغاوت خراج کا مصرف ہیں اس لیے کہ یہ مقاتل ہیں اور زکوٰۃ کا مصرف فقراء ہیں لہٰذا ان پر خرچ نہیں کی جاسکتی۔ (ت)

تو ثابت ہوا کہ تسلط و حمایت شرط مطالبہ سلطانی ہے نہ شرط نفس وجوب اور اس تعلیل نے کہ اعادہ خراج اس وجہ سے نہیں کہ وہ خود بھی مصرف ہیں واضح کر دیا کہ اگر وہ مصرف نہ ہوں جیسے نامسلم قومیں تو خراج کا اعادہ بھی ضرور ہے مصرف خراج صرف لشکر اسلام نہیں بلکہ تمام مصالح عامہ مسلمین ہیں جن میں تعمیر مساجد و وظیفہ امام و موذن و بنائے پل و سراو تنخواہ مدرسین علم دین و خبر گیری طلبہ علوم دین و خدمت علمائے اہل حق حامیان دین مشغولین درس و وعظ وافتاء و غیر ہا امور دین سب داخل ہیں۔

عربی	اردو
فی ردالمحتار تحت قول ابن الشحنة المار انه یصرف فی مصالحنا کسد الثغور و بناء القناطیر والجسور و کفایة العلماء والقضاء والعال ورزق المقاتلة و ذراریهم اهای ذراری الجمیع۔ 3	ردالمحتار میں ابن شحنہ کے گزشتہ قول جو ہدایہ اور اکثر کتب معتبرہ میں ہے، کے تحت یہ ہے، خراج ہمارے مصالح پر خرچ کیا جاسکتا ہے مثلاً دفاعی بند، پل، راستے، علماء، قضاء، علماء کی خدمت، مقاتلہ کرنے والے اور ان کی اولاد، یعنی مذکورہ تمام لوگوں کی اولاد پر خرچ کیا جاسکتا ہے (ت)

در مختار میں ہے:

---

1 حاشیة الطحطاوی علی الدر المختار باب زکوة الغنم دارالمعرفة بیروت ۱/۴۰۴ 2 الہدایة کتاب الزکوة فصل فی مالاصدقة فیه المکتبة العربیة کراچی ۱/۱۷۴ 3 ردالمحتار باب العشر مصطفیٰ البابی مصر ۲/۶۳

The expenditure of Jizya and Kharaj is for our public welfare works, such as defensive matters like protecting the borders of Dar al-Islam, construction of roads and bridges, and providing maintenance for scholars and teachers, as mentioned in Tajnees. Students of knowledge are also included in this, according to Fath. It also includes judges and officials, such as clerks of judges, witnesses of distribution among heirs and partners, and coastal guards i.e., those who collect the tithe (Ushr), as mentioned in al-Tahawi. It provides for the sustenance of mujahideen and their progeny, meaning the sustenance for the children of all those mentioned above. As mentioned in Sharh Miskeen. (Summarized) (T)

It is stated in al-Hidaya: The Kharaj is spent for the benefit of the Muslims. From it, Muslim judges, officials, and scholars will be provided with what suffices for their needs because it is the wealth of the Bait-ul-Maal (Treasury), which is designated for the interests of Muslims, and these people are their workers. (T)

It is stated in Fath: In Tajnees al-Mu'allimeen wal-Muta'allimeen, there is an addition that students of knowledge are included through this. The text in all passages is summarized. (T)

The Imam of the school of thought himself, our master Abu Yusuf (may Allah be pleased with him), states in the book al-Kharaj to Caliph Harun al-Rashid:

1. Durr al-Mukhtar, Chapter on Jizya, Mujtabai Press, Delhi, 1/354.
2. Al-Hidaya, Chapter on the Christians of Bani Taghlib etc., Al-Maktaba al-Arabiyya, Karachi, 2/579.
3. Fath al-Qadeer, Chapter on the Christians of Bani Taghlib etc., Maktaba Nooriya Razawiya, Sukkur, 5/307.

जज़िया और ख़राज का ख़र्च हमारे जनहित के कार्यों के लिए है, जैसे रक्षा संबंधी मामले, दार-उल-इस्लाम की सीमाओं की रक्षा करना, सड़कों और पुलों का निर्माण, विद्वानों और शिक्षकों को भरण-पोषण के रूप में देना, जैसा कि 'तजनीस' में है। इसमें ज्ञान के विद्यार्थी भी शामिल हैं, जैसा कि 'फ़तह' में है। इसमें न्यायाधीश और अधिकारी भी शामिल हैं, जैसे न्यायाधीशों के लेखक, वारिसों और साझेदारों के बीच वितरण के गवाह, और तट रक्षक यानी दसवाँ हिस्सा (उश्र) लेने वाले, जैसा कि 'अत-तहावी' में है। मुजाहिदीन और उनके वंशजों की रोज़ी, यानी उन सभी की संतानों की रोज़ी जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है। जैसा कि 'शरह मिस्कीन' में है। (सारांश) (त)

'हिदाया' में है: ख़राज का उपयोग मुसलमानों के लाभ के लिए किया जाएगा। मुस्लिम न्यायाधीशों, अधिकारियों और विद्वानों की ज़रूरतों को इससे पूरा किया जाएगा क्योंकि यह बैतुल-माल (कोष) का धन है और बैतुल-माल मुसलमानों के हित के लिए होता है, और ये लोग मुसलमानों की सेवा कर रहे होते हैं। (त)

'फ़तह' में है: 'तजनीस अल-मुअल्लीमीन वल-मुतअल्लीमीन' में यह वृद्धि है कि इसके साथ ज्ञान के विद्यार्थी भी इसमें शामिल हो गए हैं। सभी उद्धरणों में संक्षेप है। (त)

मज़हब के स्वयं इमाम, हमारे स्वामी अबू यूसुफ़ (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) 'किताब अल-ख़राज' में ख़लीफ़ा हारून अल-रशीद से फ़रमाते हैं:

1. दुर्रे मुख़्तार, फ़सल फ़िल जज़िया, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 1/354।
2. अल-हिदाया, फ़सल व नसारा बनी तग़लिब आदि, अल-मकतबा अल-अरबिया कराची, 2/579।
3. फ़तह अल-क़दीर, फ़सल व नसारा बनी तग़लिब आदि, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 5/307।

पृष्ठ 228/836

مصرف الجزیة والخراج مصالحنا کسد ثغورنا و بناء قنطرة و جسر کفایة العلماء والمعلمین، تجنیس، وبه یدخل طلبة العلم، فتح، و القضاة والعمال ککتبة قضاة وشهود قسمة ورقباء سواحل ورزق المقاتلة وذراریهم ای ذراری من ذکر، مسکین (ملخصاً) [1] جزیہ اور خراج کا مصرف ہمارے رفاہی کام ہیں مثلاً دفاعی معاملات، جیسے دارالاسلام کی سرحدوں کی حفاظت کرنا، سڑکوں اور پلوں کا بنانا، علماء اور اساتذہ کو بطور کفالت دینا، تجنیس۔ اس میں طالب علم بھی داخل ہیں، فتح۔ قضاۃ اور عمال، جیسے قاضیوں کے کاتب، ورثاء اور شرکاء کے درمیان تقسیم کے گواہ اور سواحلِ دریا کے نگہبان یعنی عشر لینے والے کذا فی الطحاوی۔ مجاہدین کی روزی اور ان سب کی ذریت کی، یعنی جن کا ذکر اوپر ہوا ان سب کی اولاد کی روزی۔ کذافی شرح مسکین۔ (ملخصاً) (ت)

ہدایہ میں ہے:- الخراج یصرف فی مصالح المسلمین ویعطی قضاة المسلمین وعمالهم وعلماؤهم منه ما یکفیهم لانه مال بیت المال وهو معد لمصالح المسلمین وهؤلاء عملتهم-[2] خراج مسلمانوں کے مفاد کے لیے ہوگا۔ مسلمان قضاۃ، عمال، علماء کی ضروریات کو اس سے پورا کیا جائے گا کیونکہ یہ بیت المال کا مال ہے اور بیت المال مسلمانوں کے مفاد کے لیے ہوتا ہے، اور یہ لوگ مسلمانوں کی خدمت کر رہے ہوتے ہیں۔ (ت)

فتح میں ہے: زاد فی تجنیس، المعلمین والمتعلمین وبهذا تدخل طلبة العلم اهـ الکل مختصراً-[3] تجنیس المعلمین والمتعلمین میں یہ اضافہ ہے کہ اس کے ساتھ طالب علم اس میں داخل ہوگئے اھ تمام عبارتوں میں اختصار ہے۔ (ت)

خود امام مذہب سیدنا ابو یوسف رضی اللہ تعالیٰ عنہ کتاب الخراج میں خلیفہ ہارون رشید سے ارشاد فرماتے ہیں :

[1] در مختار فصل فی الجزیة مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۳۵۴ [2] الھدایة فصل و نصاری بنی تغلب الخ المکتبة العربیہ کراچی ۲/ ۵۷۹ [3] فتح القدیر فصل و نصاری بنی تغلب الخ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۵/ ۳۰۷

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Arabic Column]: You asked about how provisions are provided for judges and workers. May Allah grant the Commander of the Faithful honor through the obedience of his subjects. Provisions for judges and governors should be from the treasury (Bait-ul-Maal) of the Muslims, from land revenues or land taxes (Kharaj) and Jizya, because they are engaged in the work of the Muslims. So, spend on them from their treasury. For each city's governor and judge, provide a sufficient stipend according to what they can handle. And for every man you assign to the work of the Muslims, pay him from their treasury. Do not pay governors and judges from charity (Sadaqah) at all, except for the governor of charity, for he is paid from it as Allah Almighty said: '...and for those who collect it [Zakat].'

[Urdu Column]: O Commander of the Faithful! You asked how the matter of stipends for judges and workers should be handled. (May Allah Almighty grant honor to the Commander of the Faithful through the obedience of his subjects). Stipends should be given to judges and workers from the treasury of the Muslims, i.e., from land revenue, Kharaj, and Jizya, because they are busy in the work of Muslims. Therefore, spend on them from the treasury and for the governor and judge of every city, issue as much stipend as the work they do. And for whoever you appoint to the work of Muslims, spend on him from the treasury. Do not spend from the money of Sadaqah (charity) on governors and judges, though you can spend it on the collector of Sadaqah because it can be spent from it on him, as is the noble saying of Allah Almighty: 'and for those who collect it.' (t)

[Urdu Middle Paragraph]: And if, hypothetically, the specific army of Islam were its purpose, then by the praise of Allah Almighty, it is also present everywhere. And it has been known above that being specifically here for the protection of these regions is a condition for demanding payment, not a condition for its obligation. And Kharaj cannot be analogized with perishable goods. Furthermore, only the demand for payment is negated there, not the obligation. It is clarified in this very issue that although the collector (Aashir) will not take the tithe (Ushr) from it, he will command the trader to pay it.

[Arabic Column]: In Radd al-Muhtar from Shurunbulaliyya: The scenario of the issue is that if one buys some of these vegetables for trade with the amount of Nisab (minimum taxable limit) near the end of the year, and then the year is completed

upon it, then according to him (Imam Abu Hanifa), Zakat will not be collected from him, but the owner will be ordered to pay it.

[Urdu Column]: In Radd al-Muhtar, it is cited from Shurunbulaliyya that the scenario of the issue is: if near the end of the year someone purchased vegetables for trade against the Nisab, and a full year passed over it, then according to the Imam (Abu Hanifa), Zakat will not be collected from it, but...

1 Kitab al-Kharaj, chapter: From which aspect it is paid to judges, etc., Bulaq Press, Egypt, p. 202. Page 229 of 836

फ़तावा रज़विया, खंड 10

[अरबी कॉलम]: और आपने पूछा कि न्यायाधीशों (काज़ियों) और कार्यकर्ताओं के लिए वज़ीफ़ा (आय) किस प्रकार प्रदान किए जाते हैं। अल्लाह आज्ञाकारी प्रजा के माध्यम से विश्वासियों के सेनापति (अमीर-उल-मोमिनीन) को सम्मान प्रदान करे। न्यायाधीशों और राज्यपालों के लिए वज़ीफ़ा मुसलमानों के राजकोष (बैतुल माल) से होना चाहिए, भूमि राजस्व या भूमि कर (खराज) और जजिया से, क्योंकि वे मुसलमानों के काम में लगे हुए हैं। इसलिए, उनके राजकोष से उन पर खर्च करें। प्रत्येक शहर के राज्यपाल और न्यायाधीश के लिए उतना वजीफ़ा जारी करें जितना वे काम संभाल सकें। और जिस भी व्यक्ति को आप मुसलमानों के काम में नियुक्त करें, उसे उनके राजकोष से भुगतान करें। राज्यपालों और न्यायाधीशों को दान (सदक़ा) के धन से कुछ भी भुगतान न करें, सिवाय सदक़ा वसूल करने वाले के, क्योंकि उसे इसमें से भुगतान किया जा सकता है जैसा कि अल्लाह सर्वशक्तिमान ने कहा है: '...और वे जो इसे (ज़कात) इकट्ठा करते हैं।'

[उर्दू कॉलम]: ऐ अमीर-उल-मोमिनीन! आपने यह पूछा है कि काज़ियों और कार्यकर्ताओं के वजीफ़ों का मामला कैसे किया जाए, तो (अल्लाह तआला अमीर-उल-मोमिनीन को प्रजा की फ़रमाबरदारी के ज़रिए इज़्ज़त बख्शे) काज़ियों और कार्यकर्ताओं को मुसलमानों के बैतुल माल यानी ज़मीन की ज़मानत, खराज और जजिया से वजीफ़े दिए जाएं क्योंकि वे मुसलमानों के काम में मसरूफ़ होते हैं, पस उन पर बैतुल माल से खर्च करो और हर शहर के वाली (राज्यपाल) और काज़ी के लिए इतना वजीफ़ा जारी करो जितना वो काम करते हैं, और जो शख़्स मुसलमानों के काम में मुक़र्रर करो उस पर बैतुल माल से खर्च करो, वालियों और काज़ियों पर माल-ए-सदक़ा से खर्च न करो, हाँ वाली-ए-सदक़ा पर कर सकते हो क्योंकि उस पर इसमें से खर्च किया जा सकता है जैसा कि अल्लाह तआला का इरशाद-ए-गिरामी है 'और सदक़ात वसूल करने वालों के लिए'। (त)

[उर्दू मध्य अनुच्छेद]: और अगर मान लिया जाए कि केवल इस्लाम की सेना ही इसका उपयोग होती, तो अल्लाह तआला की कृपा से वह भी जगह-जगह मौजूद है। और ऊपर यह बात ज्ञात हो चुकी है कि विशेष रूप से यहाँ इन क्षेत्रों की रक्षा के लिए होना भुगतान की मांग के लिए एक शर्त है, न कि इसके अनिवार्य होने (वजुब) की शर्त। और जल्दी खराब होने वाली वस्तुओं पर खराज की तुलना नहीं की जा सकती। इसके अलावा, वहाँ भी केवल भुगतान की मांग को नकारा गया है, न कि अनिवार्यता को। इसी मसले में यह स्पष्ट किया गया है कि यद्यपि संग्रहकर्ता (आशिर) उससे उश्र (दसवां हिस्सा) नहीं लेगा, लेकिन वह व्यापारी को इसे अदा करने का आदेश देगा।

[अरबी कॉलम]: रद-अल-मुह्तार में शुरुनबुललिया से: मसले का स्वरूप यह है कि यदि कोई वर्ष के अंत के निकट निसाब (न्यूनतम कर योग्य सीमा) की राशि के साथ व्यापार के लिए इनमें से कुछ सब्जियां खरीदता है, और फिर उस पर वर्ष पूरा हो जाता है, तो उनके(इमाम अबू हनीफा) अनुसार उससे ज़कात नहीं ली जाएगी, लेकिन मालिक को इसे अदा करने का आदेश दिया जाएगा।

[उर्दू कॉलम]: रद-अल-मुह्तार में शुरुनबुललिया से है, मसले की सूरत यूं है कि साल खत्म होने के करीब अगर किसी ने तिजारत के लिए निसाब के एवज़ सब्ज़ियां खरीदीं और उस पर साल मुकम्मल हुआ तो इमाम साहब के नज़दीक उससे ज़कात वसूल नहीं की जाएगी लेकिन...

1 किताब अल-खराज, अध्याय: न्यायाधीशों आदि को किस पहलू से भुगतान किया जाता है, बुलाक प्रेस, मिस्र, पृष्ठ 202। पृष्ठ 229 का 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

[عربی کالم]: وسألت من ای وجه تجری علی القضاة و العمال الارزاق فاجعل (اعزالله امیرالمؤمنین بطاعته) ما یجری علی القضاة والولاة من بیت مال المسلمین من جبایة الارض او من خراج الارض والجزیة لانهم فی عمل المسلمین فیجری علیهم من بیت مالهم ویجری علی والی کل مدینة وقاً ضیقاً بقدر مایحتمل، وکل رجل تصیره فی عمل المسلمین فأجر علیه من بیت ما لهم ولا تجر علی الولاة والقضاة من مال الصدقة شیأً الا والی الصدقة فأنه یجری علیه منها کما قال الله تبارك وتعالی وَالْعٰمِلِیْنَ عَلَیْهَا۔

[اردو کالم]: اے امیر المؤمنین ! تُونے یہ پوچھا ہے کہ قضاۃ اور عمال کے وظائف کا معاملہ کیسے کیا جائے تو (اللہ تعالٰی امیر المؤمنین کو رعایا کی فرمانبرداری کے ذریعے عزت بخشے) قضاۃ اور عمال کو مسلمانوں کے بیت المال یعنی زمین کی ضمان، خراج اور جزیہ سے وظائف دئے جائیں کیونکہ وہ مسلمانوں کے کام میں مصروف ہوتے ہیں، پس ان پر بیت المال سے خرچ کرو اور ہر شہر کے والی اور قاضی کے لیے اتنا وظیفہ جاری کرو جتنا وہ کام کرتے ہیں، اور جو شخص مسلمانوں کے کام میں مقرر کرو اس پر بیت المال سے خرچ کرو، والیوں اور قاضیوں پر مال صدقہ سے خرچ نہ کرو، ہاں والی صدقہ پر کرسکتے ہو کیونکہ اس پر اس میں سے خرچ کیا جاسکتا ہے جیسا کہ اللہ تعالٰی کا ارشاد گرامی ہے اور صدقات وصول کرنے والے کے لیے۔ (ت)

اور اگر بالفرض خاص لشکرِ اسلام ہی اس کا مصرف ہوتا تو بحمد اللہ تعالٰی وہ بھی جابجا موجود، اور اوپر معلوم ہو چکا کہ خاص یہاں ہونا ان بلاو کی حمایت کا، شرط مطالبہ ہے نہ شرط وجوب، اور اشیائے سریعہ الفساد پر خراج کی قیاس نہیں ہو سکتا، پھر وہاں بھی صرف مطالبہ منتفی ہے نہ

وجوب، خود اسی مسئلہ میں تصریح ہے کہ عاشر اگرچہ اس سے عشر نہ لے گا مگر تاجر کو اس کے ادا کا حکم کرے گا۔

[عربی کالم]: في ردالمحتار عن الشربنلالية صورة المسألة ان يشترى بنصاب، قرب مضى الحول عليه، شيأً من هذه الخضراوات للتجارة فتم عليه الحول، فعنده لا يأخذ الزكوة لكن يأمر المالك بادائها

[اردو کالم]: ردالمحتار میں شرنبلالیہ سے ہے صورت مسئلہ یوں ہے کہ سال ختم ہونے کے قریب اگر کسی نے تجارت کے لیے نصاب کے عوض سبزیاں خریدیں اور اس پر سال مکمل ہوا تو امام صاحب کے نزدیک اس سے زکوٰۃ وصول نہیں کی جائے گی لیکن

1 کتاب الخراج من ای وجہ تجری علی القضاۃ الخ مطبعۃ بولاق مصر ص ۲۰۲ Page 229 of 836

Fatawa Rizvia, Volume 10

The owner will be told to pay it himself. (T)

The imposition of land tax (Kharaj) for the right of the Muslim army and as a fixed compensation for their protection is certainly a consideration in Sharia. However, it does not necessarily mean that the existence of protection is a condition for the obligation. It has become clear from the clarifications of the Imams that Kharaj was not set solely for them; rather, all general public interests of the people of Islam are equal in it. Yes, where protection exists, it is certainly their right, and where it is their right, that same compensation is intended. In short, from this side there is a general rule: "Wherever protection is found, collection (of tax) becomes obligatory" (i.e., where there is protection, Kharaj will be necessary. T). It is not from that side: "Wherever collection is found, protection is found" (i.e., where there is Kharaj, there will be protection. T) so that you could make its contrapositive: "Whenever protection is not found, collection does not become obligatory" (i.e., when there is no protection, Kharaj will not be necessary. T). The intent of the aforementioned passage from 'Fath al-Qadir' is only this much. However, in the passage of 'Inayah', the word 'yatakhas' (becomes specific) occurs which is misleading, and it is definitely redundant, unnecessary, rather contrary to the objective.

[Left Column: Arabic Text] And that is because Muhammad, may Allah have mercy on him, stated clearly in 'al-Ziyadat' that a Muslim cannot be initially charged with land tax (Kharaj). Then a disagreement occurred among them regarding when a Muslim revives dead (unused) land. Abu Yusuf said its surroundings are considered, i.e., what it is close to. If it is in the vicinity of Kharaj land, it is Kharaji; or if it is in the vicinity of Ushr land, it is Ushri, because proximity is one of the causes of preference. And Muhammad said if its quality is such that river water reaches it, then it is Kharaji, or if it is spring water and the like, then it is Ushri. All of this is in 'al-Fath'. And it follows from this that [imposing a tax] on a Muslim...

[Right Column: Urdu Translation] This is because Imam Muhammad (may Allah Almighty have mercy on him) has explicitly stated in 'al-Ziyadat' that Kharaj cannot be initially imposed on a Muslim. Then there is a difference of opinion among these Imams concerning when a Muslim populates an uncultivated land. Imam Abu Yusuf said its proximity will be considered: if it is near Kharaji land, then it is Kharaji; if it is near Ushri land, then it is Ushri, because proximity is one of the factors for preference. Imam Muhammad said if it is irrigated by river water, then it is Kharaji;

and if it is water from a spring etc., then it is Ushri. This entire detail is in 'al-Fath'. According to some's speculation, from this [imposing a tax] on a Muslim...

Footnotes: 1. Radd al-Muhtar, Chapter of the Tenth, Mustafa al-Babi Egypt, 2 / 47 2. Fath al-Qadir, Chapter on Zakat of Crops and Fruits, Maktaba Nooria Rizvia Sukkur, 2 / 198 3. Fath al-Qadir, Chapter on Ushr and Kharaj, Maktaba Nooria Rizvia Sukkur, 5 / 280

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

मालिक से कहा जाएगा कि वह स्वयं इसका भुगतान करे। (त)

मुस्लिम सेना के अधिकार और उनकी सुरक्षा के लिए तय मुआवजे के रूप में खराज (भूमि कर) लगाना निश्चित रूप से शरीयत की नज़र में स्वीकृत है। लेकिन इससे यह आवश्यक नहीं होता कि सुरक्षा का अस्तित्व दायित्व के लिए शर्त हो। इमामों के स्पष्टीकरणों से यह स्पष्ट हो गया है कि खराज केवल उनके लिए निर्धारित नहीं किया गया था; बल्कि इस्लाम के लोगों के सभी सामान्य सार्वजनिक हित इसमें समान हैं। हाँ, जहाँ सुरक्षा मौजूद है, वह निश्चित रूप से उनका अधिकार है, और जहाँ उनका अधिकार है, वही मुआवजा अभिप्रेत है। संक्षेप में, इस ओर से एक सामान्य नियम है: "जहाँ भी सुरक्षा पाई जाती है, वहां कर वसूली अनिवार्य हो जाती है" (अर्थात् जहाँ सुरक्षा होगी, वहां खराज आवश्यक होगा। त)। यह उस तरफ से नहीं है: "जहाँ भी वसूली पाई जाती है, वहां सुरक्षा पाई जाती है" (अर्थात् जहाँ खराज होगा, वहां सुरक्षा होगी। त) ताकि आप इसका विपरीत बना सकें "जब भी सुरक्षा नहीं पाई जाती है, वसूली अनिवार्य नहीं होती है" (अर्थात् जब सुरक्षा नहीं होगी, तो खराज आवश्यक नहीं होगा। त)। 'फतहुल कदीर' के उक्त अंश का उद्देश्य केवल इतना ही है। हालाँकि, 'इनाया' के अंश में शब्द 'यताख़स' (विशिष्ट होना) आया है जो भ्रामक है, और यह निश्चित रूप से फालतू, अनावश्यक और उद्देश्य के विपरीत है।

[बायां कॉलम: अरबी पाठ का अनुवाद] और ऐसा इसलिए है क्योंकि मुहम्मद (अल्लाह उन पर रहम करे) ने 'अल-ज़ियादात' में स्पष्ट रूप से कहा है कि एक मुस्लिम पर शुरुआत में खराज (भूमि कर) नहीं लगाया जा सकता है। फिर उनके बीच इस बात को लेकर मतभेद हुआ कि जब कोई मुस्लिम बंजर (अप्रयुक्त) भूमि को आबाद करता है। अबू यूसुफ ने कहा कि उसके आस-पास के क्षेत्र पर विचार किया जाएगा, यानी वह जिसके पास है। यदि वह खराज भूमि के पास है, तो वह खराजी है; या यदि वह उश्र भूमि के पास है, तो वह उश्री है, क्योंकि निकटता प्राथमिकता के कारणों में से एक है। और मुहम्मद ने कहा कि यदि उसकी गुणवत्ता ऐसी है कि नदियों का पानी उस तक पहुँचता है, तो वह खराजी है, या यदि यह झरने का पानी और इसके जैसा है, तो वह उश्री है। यह सब 'अल-फतह' में है। और इससे यह निकलता है कि एक मुस्लिम पर...

[दायां कॉलम: उर्दू अनुवाद का हिंदी संस्करण] यह इसलिए है क्योंकि इमाम मुहम्मद (अल्लाह उन पर रहम करे) ने 'अल-ज़ियादात' में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है कि मुस्लिम पर शुरुआत में खराज

नहीं लगाया जा सकता। फिर इन इमामों के बीच इस बारे में मतभेद है कि जब कोई मुस्लिम किसी गैर-आबाद भूमि को आबाद करता है। इमाम अबू यूसुफ ने कहा कि उसकी निकटता पर विचार किया जाएगा: यदि वह खराजी भूमि के पास है, तो खराजी; यदि उश्री भूमि के पास है, तो उश्री, क्योंकि निकटता वरीयता के कारकों में से एक है। इमाम मुहम्मद ने कहा कि यदि उसे नहर के पानी से सींचा जाता है, तो खराजी; और यदि झरने आदि का पानी हो, तो उश्री। यह पूरा विवरण 'अल-फतह' में है। कुछ लोगों के अनुमान के अनुसार, इससे मुस्लिम पर...

फुटनोट्स: 1. रद अल-मुह्तार, अध्याय दसवां, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 2 / 47 2. फतहुल कदीर, फसलों और फलों की ज़कात का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2 / 198 3. फतहुल कदीर, उश्र और खराज का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 5 / 280

مالک سے کہا جائیگا کہ خود ادا کردے۔ (ت) ایجاب خراج میں لشکر اسلام کا حق اور اس کی حمایت پر تقرر معاوضہ ضرور منظورِ نظرِ شرع ہے مگر اس سے وجودِ حمایت کا شرط وجوب ہونا لازم نہیں، تصریحاتِ ائمہ سے واضح ہو لیا کہ خراج صرف انہی کے لیے مقرر نہ ہوا بلکہ جمیع مصالح عامہ اہلِ اسلام اس میں متساویۃ الاقدام، ہاں جہاں حمایت ہو ان کا بھی حق ضرور ہے اور جہاں اُن کا حق ہو وہی معاوضہ منظور ہے، بالجملہ ادھر سے کلیہ ہے یعنی حیثما وجدت الحمایۃ وجبت الجبایۃ (جہاں حمایت ہوگی وہاں خراج لازم ہوگا۔ت) اُدھر سے نہیں کہ حیث ما وجدت الجبایۃ وجدت الحمایۃ (جہاں خراج ہو گا وہاں حمایت ہوگی۔ت) تاکہ اس کا عکس نقیض کیجئے کلما لم توجد الحمایۃ لم توجب الجبایۃ (جب حمایت نہ ہو گی تو خراج لازم نہ ہوگا۔ت) فتح القدیر کی عبارتِ مذکور کا منشاء اسی قدر ہے البتہ عبارتِ عنایہ میں لفظ یتخص موہم واقع ہوا ہے اور وہ قطعاً زائد بے حاجت محض بلکہ خلافِ مقصود ہے،

[بایاں کالم: عربی متن] وذلك لان محمد ارحمه الله صرح في الزيادات ان المسلم لا يبتدأ بتوظيف الخراج ثم وقع بينهم الخلاف فيما اذا احيا مسلم مواتا فقال ابو يوسف تعتبر بحيزها اى بما يقرب منها فان كانت من حيز ارض الخراج فخراجية او ارض العشر فعشرية لان القرب من اسباب الترجيح وقال محمد ان كان صفتها انها يصل اليها ماء الانهار فخراجية او ماء عين ونحوه فعشرية كل ذلك في الفتح وقد لزم من هذا توظيف

[دایاں کالم: اردو ترجمہ] یہ اس لیے کہ امام محمد رحمہ اللہ تعالٰی نے زیادات میں تصریح کی ہے کہ مسلمان پر ابتداءً خراج نہیں آسکتا، پھر ان ائمہ کے درمیان اس بارے میں اختلاف ہے کہ جب کسی مسلمان نے غیر آباد زمین کو آباد کیا، امام ابو یوسف نے فرمایا اس کے قرب کا اعتبار کیا

جائیگا، اگر خراجی کے قریب ہے تو خراجی، اگر عشری کے قریب ہے تو عشری، کیونکہ قرب اسباب ترجیح میں سے ہے۔ امام محمد نے فرمایا اگر اسے نہری پانی سیراب کرتا ہو تو خراجی، اور اگر چشمہ وغیرہ کا پانی ہو تو عشری۔ یہ تمام تفصیل فتح میں ہے۔ بعض کے گمان کے مطابق اس سے مسلمان پر

حواشی: 1 ردالمختار باب العاشر مصطفی البابی مصر ۲ / ۴۷ 2 فتح القدیر باب زکوۃ الزروع والثمار مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲ / ۱۹۸ 3 فتح القدیر باب العشر والخراج مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۵ / ۲۸۰

Fatawa Rizvia Volume 10

Kharaj (land tax) initially becomes mandatory on a Muslim when they irrigate their land with Kharaji water, according to what was conjectured [Note 1], although this is contrary to the explicit text of Al-Ziyadat. The answer given is that the text in Al-Ziyadat is subject to the condition that no such act is committed by the Muslim that warrants Kharaj, and that act is irrigation with Kharaji water. However, if such an act occurs, it indicates their commitment to Kharaj.

Note 1: This conjecture was made by a group, including Sheikh Husam al-Din al-Sighnaqi, who expressed it in Al-Nihaya. However, the matter is not as they conjectured; rather, it is the transfer of the thing for which Kharaj was established to the Muslim, which is the water, for it contains the obligation of Kharaj. So, when the land is irrigated by it, its obligation also applies to the Muslim's land, just as if someone buys Kharaji land, Kharaj becomes due on it. This is because the warriors (muqatila) are the ones who protected this water, thus their right is established in it, and their right is Kharaj. So when a Muslim uses this water, their right will be taken from it, just as their right is mandatory in Kharaji lands for providing protection. This benefit is derived from the chapter of Zakat of Crops in Al-Fath. 12 May Allah forgive him. (T)

Note 2: The one who answered is Imam Shams al-Aimma al-Sarakhsi, as mentioned in Al-Fath. 12 May Allah forgive him. (T)

Page 231 of 836

फ़तावा रिज़विया खंड दसवां

प्रारंभिक तौर पर एक मुसलमान पर खराज (भूमि कर) अनिवार्य हो जाता है जब वह अपनी भूमि को खराजी पानी से सींचता है, जैसा कि अनुमान लगाया गया है [नोट १], हालांकि यह अल-ज़ियादात के स्पष्ट पाठ के विपरीत है। इसका उत्तर यह दिया गया है कि अल-ज़ियादात के पाठ में इस शर्त का विचार है कि बशर्ते उस मुसलमान से ऐसा कोई कार्य न हो जो खराज की मांग करता हो, और वह कार्य खराजी पानी से सिंचाई करना है। और यदि ऐसा है, तो यह उसके द्वारा खराज की प्रतिबद्धता का संकेत है।

नोट १: यह अनुमान एक समूह द्वारा किया गया था, जिनमें शेख हुसामुद्दीन अल-सिग़नाकी भी शामिल हैं, जिन्होंने अल-निहाया में इसे व्यक्त किया था। हालांकि, मामला वैसा नहीं है जैसा उन्होंने अनुमान लगाया था, बल्कि यह उस वस्तु का हस्तांतरण है जिसके लिए खराज निर्धारित किया गया था, और वह पानी है क्योंकि इसमें खराज का दायित्व है। तो जब इससे भूमि सिंचित होगी, तो इसका दायित्व भी मुसलमान की भूमि पर लागू होगा, जैसे कि यदि कोई खराजी भूमि खरीदे तो उस पर खराज आता है। यह इसलिए है क्योंकि योद्धा (मुकातिला) वे लोग हैं जो इस पानी को संरक्षण प्रदान करते हैं, इसलिए इस पानी में उनका अधिकार सिद्ध होता है, और उनका अधिकार खराज है। तो जब कोई मुसलमान इस पानी का उपयोग करेगा, तो उससे पानी का हक लिया जाएगा, जिस तरह खराजी भूमि में संरक्षण प्रदान करने पर योद्धाओं का अधिकार अनिवार्य होता है। इसका लाभ अल-फ़तह के 'ज़कातुल ज़ुरू' (फसलों की ज़कात) के अध्याय से प्राप्त होता है। १२ अल्लाह उन्हें क्षमा करे। (त)

नोट २: उत्तर देने वाले शम्सुल अइम्मा अल-सरखसी हैं, जैसा कि अल-फ़तह में है। १२ अल्लाह उन्हें क्षमा करे। (त)

पृष्ठ ८३६ का २३१

الخراج علی المسلم بداً اذا سقاها بماء الخراج علی ما ظن ع۱ وهو خلاف نص الزیادات فاجیب ع۲ بتقیید ما فی الزیادات بما اذا لم یکن منه صنیع یستدعی ذلك وهو السقی بماء الخراج اما اذا وجد ذلك فهو دلالة التزامه الخراج۔ ابتدائی طور پر خراج کا تقرر لازم آتا ہے جبکہ وہ زمین خراجی پانی سے سیراب ہورہی ہو، حالانکہ یہ زیادات کی تصریح کے خلاف ہے، اس کا جواب یہ دیا گیا ہے کہ زیادات کی عبارت میں اس قید کا اعتبار ہے کہ بشرطیکہ اس مسلمان سے کوئی ایسا عمل نہ پایا جاتا ہو جو خراج کا تقاضا کرتا ہو اور وہ عمل خراجی پانی سے سیرابی ہے، اور اگر ایسا ہے تو بطور التزام اس کا۔

ع۱: ظنه جماعة منهم الشیخ حسام الدین السغناقی فی النهایة ولیس کما ظنوا بل انما هو انتقال ما تقرر فیه الخراج بوظیفة الیه وهو الماء فان فیه وظیفة الخراج فاذا سقی به انتقل هو بوظیفة الی ارض المسلم کما لواشتری خراجیة وهذا لان المقاتلة هم الذین حموا هذا الماء تثبت حقهم فیه وحقهم هو الخراج فاذا استقی به مسلم اخذ منه حقهم کما ان ثبوت حقهم فی الارض اعنی خراجها لحمایتهم ایاها یوجب مثل ذلك افاده فی الفتح من باب زکاة الزروع ۱۲ منه غفرله۔ (م) ع۱: یہ گمان ایک جماعت نے کیا ہے جن میں سے شیخ حسام الدین سغناقی ہیں جنھوں نے نہایہ میں اظہار کیا ہے، جبکہ معاملہ وہ نہیں جو انہوں نے گمان کیا ہے بلکہ یہ مسلمان کی طرف وظیفہ خراج والی چیز کا انتقال ہے۔ اور وہ پانی ہے کیونکہ اس میں خراج والا وظیفہ ہے۔ تو جب اس سے زمین سیراب ہوگی تو اس کا وظیفہ بھی مسلمان کی زمین پر لاگو ہوگا جیسا کہ کوئی خراجی زمین خریدے تو اس پر خراج آتا ہے یہ اس لیے کہ مقاتلہ وہ لوگ ہیں جو اس پانی کو تحفظ فراہم کرتے ہیں اس لیے اس پانی میں ان کا حق ثابت ہوگا جبکہ وہ خراج ہے تو جب کوئی مسلمان اس پانی کو استعمال کرے گا تو اس سے پانی کا

حق لیا جائیگا جس طرح خراجی زمینوں میں تحفظ فراہم کرنے پر مقاتلہ کا حق واجب ہوتا ہے، اس کا افادہ فتح کے باب زکوۃ الزروع سے حاصل ہے ۱۲ امنہ غفرلہ۔ (ت)

ع۲: المجیب الامام شمس الائمۃ السرخسی کما فی الفتح ۱۲ منہ غفرلہ (م) ع۲: جواب دینے والے شمس الائمہ سرخسی ہیں جیسا کہ فتح میں ہے ۱۲ امنہ غفرلہ (ت)

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Arabic Text Column]: Consent to it, because land tax (Kharaj) is a compensation for fighting to protect them. So, for what was irrigated by what they protected, it (Kharaj) becomes obligatory therein. This is what is in 'Al-Hidayah' and 'Al-Fath'. There is no need for specifying land tax to only what they protected in a way that if it's not found, it's not obligatory. Rather, the need is for their protection to entail the obligation of land tax, such that if it exists, it is obligatory. This is because the goal is to establish the obligation due to the establishment of protection. Thus, protection is the antecedent (malzoom) and land tax is the consequent (lazim), so that one can infer the consequent from the antecedent. And it is not necessary for the consequent to be equal to the antecedent. However, if we say that land tax is specific to protection, the meaning would be its non-existence upon the non-existence of protection. In that case, the consequent would be protection. Then, it would not be correct to argue from its existence for the obligation of land tax, because the affirmation of the consequent does not necessitate the affirmation of the antecedent. Thus, it becomes clear that the talk of specificity does not align with the goal. Therefore, the correct explanation is what was hinted at in 'Al-Hidayah' and explained in 'Al-Fath', and elucidated further in the section on Zakat of crops, just as we have just quoted its text in 'Al-Manhiyah'.

[Urdu Explanation Column]: Consent to Kharaj is established because Kharaj is the compensation for fighting for protection, and that which was irrigated by protected (Kharaji) water, Kharaj will be obligatory on it. This was in 'Hidayah' and 'Fath'. Here, there is essentially no need to restrict Kharaj to things where protection exists, such that where there is no protection, there would be no obligation of Kharaj. This need is for the sake of the obligation of Kharaj due to their protection, meaning where there is protection, there will be an obligation of Kharaj because the goal is to prove the obligation of Kharaj for the sake of proving protection. Now protection will be regarded as the antecedent (malzoom) and Kharaj as the consequent (lazim) so that the presence of the antecedent can be used to infer the presence of the consequent. And it is not necessary for the consequent to be equal to (the antecedent). But when we say that Kharaj is specific to protection, then the meaning will be that the negation of Kharaj leads to the negation of protection. So in this case, protection becoming the consequent will be necessary. Then, arguing for the obligation of Kharaj from the existence of the consequent (protection) will not be correct because the affirmation of the consequent does not lead to the affirmation of the antecedent.

So now it has become clear that the matter of specificity is not in accordance with the goal. Now the correct explanation is the one towards which Hidayah has hinted and which has been described in Fath and its explanation was given in Zakat of Crops, as we have just quoted its text in Manhiyah. (T)

Then to keep this specificity on its apparent literalness is absolutely wrong and void, the lands which we...

1 Fath al-Qadeer, Chapter on Ushr and Kharaj, Maktaba Nooria Razawiyya Sukkur, 5 / 281 Page 232 of 836

फतवा-ए-रज़विया खंड 10

[अरबी पाठ स्तंभ]: इस पर सहमति, क्योंकि भूमि कर (खराज) उनकी सुरक्षा के लिए लड़ने का मुआवजा है। अत; जिसे उस (पानी) से सींचा गया जिसकी उन्होंने सुरक्षा की, उसमें खराज अनिवार्य हो गया। यह 'अल-हिदाया' और 'अल-फतह' में है। यहाँ खराज को केवल उसी तक सीमित करने की कोई आवश्यकता नहीं है जिसकी उन्होंने रक्षा की, इस प्रकार कि यदि वह न मिले तो वह अनिवार्य न हो। बल्कि आवश्यकता इस बात की है कि उनकी सुरक्षा खराज की अनिवार्यता का कारण बने, ताकि यदि वह (सुरक्षा) हो तो खराज अनिवार्य हो। इसका कारण यह है कि उद्देश्य सुरक्षा सिद्ध होने के कारण अनिवार्यता सिद्ध करना है। इस प्रकार, सुरक्षा 'मल्ज़ूम' (पूर्ववृत्त) और खराज 'लाज़िम' (परिणाम) होगा, ताकि पूर्ववृत्त की उपस्थिति से परिणाम का अनुमान लगाया जा सके। और 'लाज़िम' का 'मल्ज़ूम' के बराबर होना आवश्यक नहीं है। लेकिन यदि हम कहें कि खराज सुरक्षा के साथ विशिष्ट है, तो इसका अर्थ होगा कि सुरक्षा न होने पर खराज भी नहीं होगा। तब 'लाज़िम' सुरक्षा होगी। उस स्थिति में 'लाज़िम' की उपस्थिति से खराज की अनिवार्यता का तर्क देना सही नहीं होगा, क्योंकि परिणाम के होने से पूर्ववृत्त का होना सिद्ध नहीं होता। अतः यह स्पष्ट हो गया कि विशिष्टता वाली बात उद्देश्य के अनुकूल नहीं है। तो अब सही विवरण वही है जिसकी ओर 'हिदाया' में संकेत किया गया है और 'फतह' में वर्णन किया गया है, और इसकी स्पष्टता फसलों की ज़कात (ज़कात-उल-ज़ुरूह) में की गई है, जैसा कि हमने अभी 'मन्हिया' में इसके मूल पाठ को उद्धृत किया है।

[उर्दू व्याख्या स्तंभ]: खराज पर राजी होना साबित हो जाता है क्योंकि खराज तो सुरक्षा पर युद्ध का मुआवज़ा है और जो सुरक्षा वाले (खराजी) पानी से सिंचित हुआ उस पर खराज अनिवार्य होगा। यह हिदाया और फतह में था। यहाँ खराज को उस चीज़ के साथ सीमित करने की मूलतः आवश्यकता नहीं है कि यह वहाँ होता है जहाँ सुरक्षा हो, और जहाँ सुरक्षा न होगी वहाँ खराज की अनिवार्यता न होगी। यह आवश्यकता तो उनकी सुरक्षा के कारण खराज की अनिवार्यता के लिए है यानी जहाँ सुरक्षा होगी वहाँ खराज की अनिवार्यता होगी क्योंकि उद्देश्य सुरक्षा सिद्ध करने के लिए खराज की अनिवार्यता को सिद्ध करना है। तो अब सुरक्षा 'मल्ज़ूम' (अनिवार्य कारण) और खराज 'लाज़िम' (अनिवार्य परिणाम) माना जाएगा ताकि कारण की उपस्थिति से परिणाम का अनुमान लगाया जा सके। और परिणाम के लिए कारण के समान होना आवश्यक नहीं होता। लेकिन जब हम यह कहेंगे कि खराज सुरक्षा के साथ विशिष्ट है, तो अब अर्थ होगा कि खराज के अभाव से सुरक्षा का अभाव हो, तो अब इस स्थिति में सुरक्षा का परिणाम होना आवश्यक हो जाएगा। तो अब परिणाम (सुरक्षा) की

उपस्थिति से खराज की अनिवार्यता का तर्क देना सही न होगा क्योंकि परिणाम की उपस्थिति से कारण की उपस्थिति सिद्ध नहीं होती। तो अब स्पष्ट हो गया कि विशिष्ट करने वाली बात उद्देश्य के अनुकूल नहीं है, अब सही विवरण वही है जिसकी ओर हिदाया में संकेत है और फतह में वर्णित है और इसकी व्याख्या ज़कात-उल-ज़ुरूह में की गई है, जैसा कि हमने अभी 'मन्हिया' में इसके मूल पाठ को उद्धृत किया है। (त)

फिर इस विशिष्टता को इसके प्रत्यक्ष पूर्ण अर्थ में रखना पूरी तरह से गलत और निराधार है, जो ज़मीनें हमने...

1 फतह अल-कदीर, उश्र और खराज का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 5 / 281 पृष्ठ 232 / 836

[عربی متن والا کالم]: رضا بہ لان الخراج جزاء المقاتلة على حما يتهم فبما سقى بما حموه وجب فيه هذا ما في الهداية والفتح، ولاحاجة فيه الى تخصيص الخراج بما حموه اصلا بحيث لم يوجد لم يجب انما الحاجة الى استتباع حما يتهم ايجاب الخراج بحيث اذا وجدت وجب لان المقصود اثبات الوجوب لاجل ثبوت الحماية فتكون الحماية ملزومة والخراج لازما ليستدل بوضع المقدم على وضع التالى واللازم لايجب تساويه اما اذا قلنا بان الخراج يختص بالحماية كان المعنى هو انتفاء ه بانتفاء ها فيكون اللازم هو الحماية فلا يصح الاستدلال بوجوده على وجوب الخراج لان وضع التالى لاينتج وضع المقدم فظهران حديث الخصوص لا يوافق المقصود فاذن التقرير الصحيح ما اشار اليه في الهداية وبينه في الفتح وانعم ايضاحه في زكوته الزروع كما نقلنا نصه انفا في المنهية۔

[اردو ترجمہ و تشریح والا کالم]: خراج پر راضی ہونا ثابت ہو جاتا ہے کیونکہ خراج تو حمایت پر مقاتلہ کا معاوضہ ہے اور جو حمایتی (خراجی) پانی سے سیراب ہوئی اس پر خراج واجب ہوگا۔ یہ ہدایہ اور فتح میں تھا۔ یہاں خراج کو اس چیز کے ساتھ مقید کرنے کی اصلاً ضرورت نہیں کہ یہ وہاں ہوتا ہے جہاں حمایت ہو، اور جہاں حمایت نہ ہوگی وہاں خراج کا وجوب نہ ہوگا۔ یہ ضرورت تو ان کی حمایت کی وجہ سے ایجابِ خراج کے لیے ہے یعنی جہاں حمایت ہوگی وہاں خراج کا وجوب ہوگا کیونکہ مقصود ثبوت حمایت کی خاطر وجوب خراج کا اثبات ہے تو اب حمایت ملزوم اور خراج لازم قرار پائے گا تاکہ وضعِ مقدم سے وضعِ تالی پر استدلال کیا جاسکے اور لازم کے لیے (ملزوم کے) مساوی ہونا ضروری نہیں ہوتا لیکن جب ہم یہ کہیں گے کہ خراج حمایت کے ساتھ مخصوص ہے، تو اب معنی ہوگا کہ خراج کی نفی سے حمایت کی نفی ہو تو اب اس صورت میں حمایت کا لازم ہونا لازم آجائے گا تو اب وجودِ لازم (حمایت) سے وجوب خراج پر استدلال

درست نہ ہوگا کیونکہ وضعِ تالی سے وضعِ مقدم پر منتج نہیں ہوتی۔ تو اب ظاہر ہوگیا کہ مخصوص کرنے والی بات مقصود کے موافق نہیں، اب تقریر صحیح وہی ہے جس کی طرف ہدایہ میں اشارہ ہے اور فتح میں بیان ہوئی اور اس کی وضاحت زکوۃ الزروع میں کی، جیسا کہ ہم نے ابھی منہیہ میں اس کی عبارت بصورِ نص نقل کی ہے۔(ت)

پھر اس اختصاص کو اپنے ظاہر اطلاق پر رکھئے تو قطعاً غلط و باطل ہے، جو زمینیں ہم نے

1 فتح القدیر، باب العشر والخراج ، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر، ۵ / ۲۸۱ Page 232 of 836

جلد دہم (Volume 10) فتاوىٰ رضویہ (Fatawa Razawiyya)

Whether conquered by force or through a peace treaty, and if the original inhabitants were allowed to remain on the land or if the land was conquered by force and given to disbelievers from other places, Kharaj (land tax) is definitely due upon them, even if the land is irrigated with 'Ushri water such as rain etc. Researchers state that this issue is a consensus among our Imams. The Absolute Researcher stated in Al-Fath:

We are certain that the land whose inhabitants remained on it, even if it was irrigated by a spring or by rainwater, would not be anything but Kharaji land, because its owners are disbelievers. Or, if 'Ushri land was transferred to disbelievers, it is known that 'Ushri land, if irrigated by a spring or rainwater, does not remain 'Ushri but becomes Kharaji according to the opinion of Abu Hanifa and Abu Yusuf, unlike Muhammad. So how can a disbeliever be initially assessed for 'Ushr? Furthermore, according to Muhammad, if 'Ushri land is transferred to him (a disbeliever), it remains as such; but initially, he also prevents the assessment of 'Ushr on a disbeliever.

We are certain that the land on which its inhabitants remained, even if it is irrigated by a spring or rainwater, will be Kharaji, because its owners are disbelievers. And if 'Ushri land is transferred to a disbeliever, it is known that if 'Ushri land is irrigated by a spring or rainwater, it will not remain 'Ushri but according to the opinion of Imam Abu Hanifa and Imam Abu Yusuf, it will become Kharaji. Yes, Imam Muhammad differs in this. So now, how can 'Ushr be initially established for a disbeliever? Then, according to Imam Muhammad, when 'Ushri land is transferred to a disbeliever, it will remain 'Ushri, but initially, he also forbids 'Ushr for a disbeliever. (T)

It is in Bahr al-Ra'iq:

The researcher has discussed at length in Fath al-Qadir in his report and then said: The summary is that for lands conquered by force, if the disbelievers are left in possession of them, nothing but Kharaj will be imposed on them, even if irrigated by rainwater. And if they are distributed among Muslims, nothing

The Absolute Researcher, after a very long discussion in Fath al-Qadir, said that the summary is that for lands obtained by conquest, if the disbelievers are kept in possession of them, then now only Kharaj will be fixed upon them, even if they are irrigated by rain. And if those lands are distributed among Muslims, then 'Ushr will

but 'Ushr will be imposed, even if irrigated by river water.

be fixed upon them, even if they are irrigated by river water. (T)

1. Fath al-Qadir, Chapter of Ushr and Kharaj, Maktaba Nooria Razavia, Sukkur, 5/280
2. Bahr al-Ra'iq, Chapter of Ushr and Kharaj, H.M. Saeed Company Karachi, 5/501

جلد دہم (भाग दस) فتاوٰی رضویہ (फ़तावा रज़विया)

चाहे बलपूर्वक जीता गया हो या संधि के माध्यम से, और यदि उनके मूल निवासियों को उन पर रहने दिया गया हो या बलपूर्वक जीतकर अन्य स्थानों के काफिरों को दे दिया गया हो, तो उन पर निश्चित रूप से खराज (भूमि कर) है, भले ही उन्हें 'उशरी पानी जैसे बारिश आदि से सींचा जाता हो। शोधकर्ताओं का कहना है कि यह मुद्दा हमारे इमामों के बीच सर्वसम्मत है। मुहाक्क़िक़ अल-इतलाक़ (पूर्ण शोधकर्ता) ने फ़तह में कहा है:

हमें यकीन है कि जिस भूमि पर उसके निवासी बने रहे, भले ही वह झरने या बारिश के पानी से सींची जाती हो, वह खराजिया ही होगी क्योंकि उसके मालिक काफिर हैं। या यदि उशरी भूमि काफिरों को हस्तांतरित हो गई हो, तो यह ज्ञात है कि उशरी भूमि, यदि झरने या बारिश के पानी से सींची जाती है, तो वह उशरी नहीं रहेगी बल्कि इमाम अबू हनीफा और इमाम अबू यूसुफ के अनुसार खराजिया बन जाएगी, इमाम मुहम्मद के विपरीत। तो अब एक काफिर पर शुरू में उश्र कैसे निर्धारित किया जा सकता है? इसके अलावा, इमाम मुहम्मद के अनुसार, जब उशरी भूमि उसे हस्तांतरित होती है, तो वह वैसी ही रहती है; लेकिन शुरुआत में, वह भी काफिर पर उश्र से मना करते हैं।

हमें इस बात का यकीन है कि जिस जमीन पर उसके निवासी बरकरार रहे, भले ही वह चश्मा या आसमानी पानी से सैराब होती हो तो वह खराजिया ही होगी क्योंकि उसके मालिक काफिर हैं और काफिर की तरफ अगर उशरी जमीन मुंतकिल हो और यह बात मालूम हो कि अगर उशरी जमीन को चश्मा या आसमानी पानी से सैराब किया जाता है तो वह उशरी न रहेगी बल्कि वह इमाम अबू हनीफा और इमाम अबू यूसुफ के कौल के मुताबिक खराजिया हो जाएगी, हाँ इमाम मुहम्मद का इसमें इख्तिलाफ (मतभेद) है, तो अब काफिर पर इब्तिदाई (शुरुआती) तौर पर उश्र कैसे मुकर्रर (निर्धारित) किया जा सकता है, फिर इमाम मुहम्मद के नजदीक जब उशरी जमीन किसी काफिर की तरफ मुंतकिल होगी तो वह उशरी ही रहे लेकिन इब्तिदा में वह भी काफिर पर उश्र से मना करते हैं। (त)

बहर अल-रायिक में है:

शोधकर्ता ने फतह अल-कदीर में अपनी रिपोर्ट में लंबी चर्चा की है और फिर कहा: निष्कर्ष यह

मुहाक्क़िक़ अल-इतलाक़ ने फतह अल-कदीर में बड़ी लंबी बातचीत करके कहा कि हासिल यह है

है कि जो जमीनें बलपूर्वक जीती गई हैं, यदि काफिरों को उनके कब्जे में रहने दिया जाए, तो उन पर केवल खराज लगाया जाएगा, भले ही वे बारिश के पानी से सींची गई हों। और यदि उन्हें मुसलमानों के बीच वितरित किया जाता है, तो केवल उश्र लगाया जाएगा, भले ही वे नदी के पानी से सींची गई हों।

कि जो जमीनें बतौर गल्बा (जीत के रूप में) हासिल हों अगर काफिरों को ही उन पर काबिज रखा तो अब उन पर खराज ही मुकर्रर किया जाएगा चाहे वे बारिश से सैराब होती हों, और अगर वे जमीनें मुसलमानों में तकसीम (विभाजित) कर दी गईं तो उन पर उश्र ही मुकर्रर किया जाएगा चाहे वे नहरी पानी से सैराब की जाती हों। (त)

1. फ़तह अल-कदीर, बाब अल-उश्र व अल-खराज, मकतबा नूरिया रज़विया, सक्खर, 5/280
2. बहर अल-रायिक, बाब अल-उश्र व अल-खराज, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 5/501

पृष्ठ 836 में से 233

قہراً خواہ صلحاً فتح کیں اور ان کے اہل کو اُن پر برقرار رکھا یا قہراً فتح کرکے اور جگہ کے کافروں کو دے دیں ان پر یقیناً خراج ہے اگرچہ انہیں آبِ عشری مثلِ باراں وغیرہ سے پانی دیا جاتا ہو۔ محققین تصریح فرماتے ہیں کہ یہ مسئلہ ہمارے ائمہ کا اجماعیہ ہے۔ محقق علی الاطلاق نے فتح میں فرمایا:

نحن نقطع ان الارض التي اقر اهلها لو كانت تسقى بعين اوبماء السماء لم تكن الاخراجية لان اهلها كفار او كفار لو انتقلت اليهم ارض عشرية و معلوم ان العشرية قد تسقى بعين او بماء السماء لا تبقى على العشرية بل تصير خراجية في قول ابي حنيفة وابي يوسف خلافا لمحمد فكيف يبتدأ الكافر بتوظيف العشر ثم كونها عشرية عند محمد اذا انتقلت اليه كذلك اما في الابتداء فهو ايضا يمنعه۔[1]

ہمیں اس بات کا یقین ہے کہ جس زمین پر اس کے اہل برقرار رہے اگرچہ وہ چشمہ یا آسمانی پانی سے سیراب ہوتی ہو تو وہ خراجی ہی ہوگی کیونکہ اس کے مالک کافر ہیں اور کافر کی طرف اگرچہ عشری زمین منتقل ہو اور یہ بات معلوم ہو کہ اگر عشری زمین کو چشمہ یا آسمانی پانی سے سیراب کیا جاتا ہے تو وہ عشری نہ رہے گی بلکہ وہ امام ابو حنیفہ اور امام ابو یوسف کے قول کے مطابق خراجی ہو جائے گی ، ہاں امام محمد کا اس میں اختلاف ہے ، تو اب کافر پر ابتدائی طور پر عشر کیسے مقرر کیا جا سکتا ہے ، پھر امام محمد کے نزدیک جب عشری زمین کسی کافر کی طرف منتقل ہو گی تو وہ عشری ہی رہے لیکن ابتداء وہ بھی کافر پر عشر سے منع کرتے ہیں۔ (ت)

بحر الرائق میں ہے:

وقد اطال المحقق في فتح القدير في تقريره ثم قال والحاصل ان التي فتحت عنوة ان اقر الكفار عليها لا يوظف عليهم الا الخراج ولو سقيت بماء المطر وان قسمت بين المسلمين لا يوظف الا العشر وان سقيت بماء الانهار۔[2]

محقق علی الاطلاق نے فتح القدیر میں بڑی طویل گفتگو کر کے کہا کہ حاصل یہ ہے کہ جو زمینیں بطور غلبہ حاصل ہوں اگر کفار کو ہی ان پر قابض رکھا تو اب ان پر خراج ہی مقرر کیا جائیگا اگرچہ وہ بارش سے سیراب ہوتی ہوں، اور اگر وہ زمینیں مسلمانوں میں تقسیم کردی گئیں تو ان پر عشر ہی مقرر کیا جائیگا اگرچہ وہ نہری پانی سے سیراب کی جاتی ہوں۔ (ت)

1 فتح القدیر باب العشر والخراج مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۵ / ۲۸۰ 2 بحر الرائق، باب العشر والخراج، ایچ سعید کمپنی کراچی ، ۵ / ۵۰۱

جلد دہم (Volume 10) فتاوىٰ رضویہ (Fatawa Razawiya)

Imam Muhaqqiq Zayla'i stated in Tabyin al-Haqa'iq: "This detail is regarding the Muslim; as for the disbeliever, Kharaj (land tax) is mandatory upon him, regardless of which water he irrigates with, because Ushr (tithe) is not initiated upon a disbeliever. Therefore, there will be no distinction or detail in it at the beginning, by consensus." (T)

Similarly, it was quoted and maintained in Bahr al-Ra'iq and Majma' al-Anhur. Therefore, Allama Halabi kept the issue of these lands being Kharaji (taxable) absolute in the firm text of Multaqa al-Abhur. After 'Ardh as-Sawad Kharajiyyah' (The land of Sawad is Kharaji. T), he said: "Likewise, every land that was conquered by force and its people were left upon it, or peace was made with them, except for Makkah." (2) That is, similarly, apart from Makkah, land that was conquered through dominance and its inhabitants were left as possessors there, or peace was made with them, will be Kharaji. (T)

And he did not mention any disagreement at all, even though they are committed to quoting if there is a disagreement from any of the three Imams of the school of thought in an issue. "He said in his sermon: And I have explicitly mentioned the disagreement between our Imams etc." (3) Allama Halabi said in the book's sermon: "If there is a disagreement among our Imams in any issue, I will state it clearly." (T)

Similarly, it was stated absolutely in the magnificent text of Kanz: "Conquered by force and its people were left upon it, or conquered by peace, is Kharaji land." (4) That is, land that was acquired through dominance and the possessors were kept there, or it was conquered through peace, it will be Kharaji land. (T)

And despite the commitment, no hint or sign towards disagreement was made. Similarly, land reclaimed by a Dhimmi (non-Muslim citizen) is Kharaji by consensus, even if...

1 Tabyin al-Haqa'iq, Chapter on Ushr and Kharaj etc., Matba'a Kubra Amiriyya, Bulaq Egypt, 3/272 2 Multaqa al-Abhur, Chapter on Ushr and Kharaj etc., Muassasat al-Risalah, Beirut, 1/470 3 Multaqa al-Abhur, Book Sermon (Author's Introduction), Muassasat al-Risalah, Beirut, 1/10 4 Kanz al-Daqaiq, Chapter on Ushr, Kharaj, and Jizyah, H.M. Saeed, Karachi, p. 191

जिल्द १० (Volume 10) फ़तावा रज़विया (Fatawa Razawiya)

इमाम मुहाक़्क़िक़ ज़ैलई ने तब्यीन अल-हक़ाएक़ में फ़रमाया: "यह विवरण मुस्लिम के हक़ में है, रहा काफ़िर का मामला तो उस पर ख़राज होगा चाहे वह जिस भी पानी से सिंचाई करे, क्योंकि काफ़िर पर शुरुआत में उश्र नहीं होता। इसलिए सर्वसम्मति से शुरुआत में इसमें कोई अंतर या विवरण नहीं होगा।" (त)

इसी प्रकार बहर अर-राएक़ और मजमा अल-अन्हुर में इसे उद्धृत किया गया और क़ायम रखा गया। इसीलिए अल्लामा हलबी ने मुल्तक़ा अल-अब्हुर के पुख्ता पाठ में इन ज़मीनों के ख़राजी होने का मसला मुतलक़ रखा। 'अर्ज़ अस-सवद ख़राजिया' (सवद की ज़मीन ख़राजी है। त) के बाद फ़रमाया: "और इसी प्रकार हर वह ज़मीन जो बलपूर्वक जीती गई और उसके लोगों को उसी पर रहने दिया गया, या उनके साथ सुलह कर ली गई, सिवाय मक्का के।" (२) अर्थात, इसी तरह मक्का के अलावा वह ज़मीन जो प्रभुत्व के माध्यम से जीती गई और वहाँ के निवासियों को वहाँ काबिज़ रखा गया या उनसे सुलह कर ली गई, वह ख़राजी होगी। (त)

और मूलतः किसी मतभेद का ज़िक्र नहीं किया, हालांकि वे इस बात के पाबंद हैं कि यदि किसी मसले में पंथ के तीनों इमामों में से किसी का मतभेद हो, तो उसे अवश्य उद्धृत करेंगे। "उन्होंने अपने खुतबे (भाषण) में कहा: और मैंने अपने इमामों के बीच के मतभेद का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है इत्यादि।" (३) अल्लामा हलबी ने किताब के खुतबे में फ़रमाया: "अगर हमारे इमामों के बीच किसी मसले में मतभेद होगा, तो मैं उसे स्पष्ट रूप से बयान करूँगा।" (त)

इसी प्रकार कन्ज़ के महान पाठ में मुतलक़ फ़रमाया: "बलपूर्वक जीता गया और उसके लोग उस पर छोड़े गए, या सुलह से जीता गया, ख़राजी है।" (४) अर्थात, वह ज़मीन जो प्रभुत्व के माध्यम से प्राप्त हुई और वहाँ के क़ाबिज़ों को बरकरार रखा गया, या सुलह के माध्यम से जीती गई, तो वह ख़राजी होगी। (त)

और प्रतिबद्धता के बावजूद मतभेद की ओर कोई संकेत नहीं किया गया। इसी तरह, वह ज़मीन जिसे एक ज़िम्मी ने आबाद किया है, वह सर्वसम्मति से ख़राजी है, भले ही...

१ तब्यीन अल-हक़ाएक़, बाब अल-उश्र वल-ख़राज इत्यादि, मतबा कुबरा अमीरिया, बुलाक़ मिस्र, ३/२७२ २ मुल्तक़ा अल-अब्हुर, बाब अल-उश्र वल-ख़राज इत्यादि, मुअस्ससत अर-रिसाला, बेरुत, १/४७० ३ मुल्तक़ा अल-अब्हुर, खुतबा अल-किताब (लेखक की प्रस्तावना), मुअस्ससत अर-रिसाला,

बेरुत, १/१० ४ कन्ज़ अद-दक़ाएक़, बाब अल-उश्र वल-ख़राज वल-जिज़्या, एच.एम. सईद, कराची, पृ. १९१

पेज २३४/८३६

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

امام محقق زیلعی نے تبیین الحقائق میں فرمایا: ھذا التفصیل فی حق المسلم اما الکافر فیجب | یہ تفصیل حق مسلم میں ہے، رہا کافر کا معاملہ تو اس پر خراج ہوگا علیہ الخراج من ای ماء سقی لان الکافر لا | خواہ جو پانی بھی سیراب کرے کیونکہ کافر پر ابتداءً عشر نہیں یبتدأ بالعشر فلا یأتی فیہ التفصیل في حالۃ | ہوتا لہذا ابتداءً اس میں بالاتفاق تفریق و تفصیل نہیں ہوگی۔ الابتداء اجماعا۔ 1 | (ت)

اسی طرح بحر الرائق و مجمع الانہر میں اس سے نقل کیا اور مقرر رکھا، ولہذا علامہ حلبی نے متن متین ملتقی الابحر میں ان زمینوں کو خراجی ہونے کا مسئلہ مطلق رکھا ارض السواد خراجیۃ (سواد کی زمین خراجی ہے۔ ت) کے بعد فرمایا: وکذا کل ما فتح عنوۃ واقر اھلھا علیہ او صولحو | اسی طرح ماسوائے مکہ کے وہ زمین جو بطور غلبہ فتح ہوئی اور اس اسوی مکۃ۔ 2 | کے باشندوں کو وہاں قابض رکھا یا ان سے صلح کرلی گئی۔ (ت) اور اصلاً خلاف کا ذکر نہ کیا حالانکہ انہیں التزام ہے کہ جس مسئلہ میں ائمہ ثلاثہ مذہب سے کسی کا خلاف ہو ضرور نقل کریں گے۔ قال في خطبتہ وصرحت بذکر الخلاف بین ائمتنا | علامہ حلبی نے خطبہ کتاب میں فرمایا ہمارے ائمہ کے درمیان الخ 3 | اگر کسی مسئلہ میں اختلاف ہوگا تو میں اس کی تصریح کروں گا۔ (ت)

اسی طرح متن جلیل کنز میں مطلق فرمایا: فتح عنوۃ واقر اھلہ علیہ او فتح صلحا خراجیۃ۔ 4 | وہ زمین جو بطور غلبہ حاصل ہوئی اور وہاں کے قابضین کو بر قرار رکھا یا بطور صلح فتح ہوئی تو وہ خراجی ہوگی۔(ت)

اور خلاف کی طرف باوصف التزام رمزا ایماء نہ کیا یونہی جو زمین ذمی نے احیا کی بالاتفاق خراجی ہے اگرچہ

1 تبیین الحقائق باب العشر والخراج الخ مطبعہ کبری امیریہ بولاق مصر ۲۷۲/۳ 2 ملتقی الابحر باب العشر والخراج الخ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۴۷۰/۱ 3 ملتقی الابحر خطبۃ الکتاب (مقدمۃ المؤلف) مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۱۰/۱ 4 کنز الدقائق باب العشر والخراج والجزئیۃ ایچ ایم سعید کراچی ص ۱۹۱

Fatawa Razawiyyah Volume Ten

If Ushr water is given, it is stated in Fath al-Qadir, Tabyin al-Haqa'iq, Bahr al-Ra'iq etc.:

Arabic Text	Urdu Translation
If a Dhimmi (non-Muslim citizen) develops land, it becomes Kharaji (subject to land tax), whether it is irrigated with rainwater etc. or not, according to Imam Muhammad. According to Imam Abu Yusuf, it is Kharaji whether it is near Kharaji land or near Ushri land. This reveals the weakness of the position taken in al-'Inayah following al-Nihayah, leaning towards an apparent narration in al-Hidayah which is contrary to the narration in al-Ghayah as clarified by the researcher in al-Fath. And Allah is the master of guidance and victory. (T)	If a Dhimmi developed the land, it would be Kharaji whether it was irrigated with rainwater etc. or not, and according to Imam Abu Yusuf, whether it was near Kharaji land or near Ushri land. From this, its weakness became apparent which was inclined towards in Inayah following Nihayah; there is a narration in Hidaya towards the apparent which is against the narration in Ghayah as clarified by the researcher in Fath. And Allah Almighty alone is the owner of guidance and victory. (T)

He clarified that the issue of water consideration is not absolute; it was stated in al-Hidayah:

Arabic Text	Urdu Translation
When a Muslim builds a house on vacant land under his possession and then turns it into a garden, Ushr will be due upon it. Its meaning is that if it is irrigated with Ushri water [Ushr is due]; and if it is irrigated with Kharaji water, then Kharaj is due upon it, because in such cases the matter of Ushr and Kharaj depends on the water. (T)	When a house was built on the vacant land of a Muslim as possession and then he turned it into a garden, there will be Ushr on it. Its meaning is that when it is irrigated with Ushri water, and when it is irrigated with Kharaji water, there will be Kharaj in it because in such cases the matter of Ushr and Kharaj is with the water. (T)

Regarding this, it is written in al-'Inayah:

Arabic Text	Urdu Translation
The meaning of the text's phrase "in such cases" refers to land whose status regarding Ushr or Kharaj has not been	By the text's saying "in such cases", the land meant is that whose matter has not become firm in terms of Ushr and Kharaj.

Arabic Text

established. This excludes the situation where a Muslim had land irrigated with Ushri water and a Dhimmi purchased it; in that case, its water remains Ushri but Kharaj is due upon the land. (T)

Urdu Translation

From this, that case was avoided when there was such land of a Muslim which was irrigated with Ushri water and a Dhimmi bought it, so now its water is Ushri but there is Kharaj in it. (T)

1. Fath al-Qadir, Chapter of Ushr and Kharaj, Maktaba Nooria Razawiyya Sukkur 5/281
2. Al-Hidayah, Chapter of Zakat on Crops and Fruits, Al-Maktaba al-Arabiyya Karachi 1/184
3. Al-'Inayah with Fath al-Qadir, Chapter of Zakat on Crops and Fruits, Maktaba Nooria Razawiyya Sukkur 2/197

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द दसवीं

यदि उश्री पानी दिया गया हो, फ़तहुल क़दीर, तबयीनुल हक़ाइक़ और बहरुर रज़ाइक़ आदि में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
लो अहयाहा ज़म्मी कान्त ख़राजियाः सवाउन सुक़ियत इन्द मुहम्मदिन बि-माइस्समाइ व नहविही औ ला व सवाउन कान्त इन्द अबी यूसुफ़ मिन हैज़ि अर्दिल ख़राजि अविल उश्रि अह[1] फ़-ज़हरा दु'फ़ु मा इंतहाहु फ़िल इनायाः तबा'अल लिन्नहायाः रुकूनन इलज़्ज़ाहिरि नक़ला फ़िल हिदायाः अला ख़िलाफ़ि नक़लिन फ़िल ग़ायाः कमा बय्यनहुल मुहक़्क़िक़ु फ़िल फ़तहि वल्लाहु वलिय्युल हिदायाः वल फ़तहि।	यदि किसी ज़म्मी (ग़ैर-मुस्लिम नागरिक) ने ज़मीन को आबाद किया तो वह ख़राजी होगी चाहे वह आसमानी पानी आदि से सींचा जाए या नहीं, और इमाम अबू यूसुफ़ के नज़दीक चाहे वह ख़राजी ज़मीन के क़रीब हो या उश्री ज़मीन के क़रीब। इससे उसकी कमज़ोरी ज़ाहिर हो गई जिसे 'अनाया' में 'निहाया' का अनुसरण करते हुए अपनाया गया है, जो 'हिदाया' में एक ज़ाहिरी नक़ल की ओर झुकाव है जो 'ग़ाया' की नक़ल के ख़िलाफ़ है जैसा कि मुहक़्क़िक़ ने 'फ़तह' में स्पष्ट किया है। और अल्लाह तआला ही हिदायत और फ़तह (सफलता) का मालिक है। (त)

उन्होंने स्पष्ट किया कि पानी का विचार निरपेक्ष नहीं है, 'हिदाया' में कहा गया था:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
इज़ा कान्त लि-मुस्लिमिन दारुन ख़ित्ततुन फ़-जा'अलाहा बुस्तानन फ़-अलैहिल उश्रु मा'नाहु इज़ा सुक़ाहा बि-माइल उश्रि व अम्मा इज़ा कान्त तुसक़ा बि-माइल ख़राजि फ़-फ़ीहल ख़राजी लि-अन्नल मु'नता फ़ी मिस़लि हाज़ा तदूरु म'अल माइ।[2]	जब कब्ज़े के तौर पर किसी मुसलमान की ख़ाली ज़मीन पर घर बनाया फिर उसे उसने बाग़ बना दिया तो उस पर उश्र होगा, इसका अर्थ यह है कि जब वह उश्री पानी से सींचा जाता हो और जब वह ख़राजी पानी से सींचा जाए तो उसमें ख़राज होगा क्योंकि ऐसी सूरतों में उश्र व ख़राज का मामला पानी के साथ है। (त)

इस पर 'अनाया' में लिखा है:

अरबी पाठ

मा'ना क़ौलिही "फ़ी मिस़लि हाज़ा" अल-अर्दुल्लती लम यतक़र्रर अमरुहू अला उश्रिन औ ख़राजिन वहुवा इहतिराज़ुन अम्मा इज़ा काना लि-मुस्लिमिन अर्दुन तुसक़ा बि-माइल उश्रि व क़द इश्तराहा ज़म्मीयुन फ़-इन्ना माअहा उश्रीय्युन व फ़ीहल ख़राजु।[3]

उर्दू अनुवाद

मूल पाठ (मतन) के कथन "ऐसी सूरतों में" से तात्पर्य वह ज़मीन है जिसका मामला उश्र और ख़राज के लिहाज़ से अभी तक निश्चित न हुआ हो, इससे वह स्थिति बाहर हो गई जब किसी मुसलमान की ऐसी ज़मीन थी जो उश्री पानी से सींची जाती थी और उसे किसी ज़म्मी ने ख़रीद लिया, तो अब उसका पानी उश्री है लेकिन उस पर ख़राज है। (त)

1. फ़तहुल क़दीर, बाबू उश्र वल ख़राज, मक्तबा नूरिया रज़विया सुक्कुर 5/281
2. अल-हिदाया, बाबू ज़कातुल ज़ुरूह वल सुमार, अल-मक्तबतुल अरबिया कराची 1/184
3. अल-'अनाया म'अ फ़तहुल क़दीर, बाबू ज़कातुल ज़ुरूह वल सुमार, मक्तबा नूरिया रज़विया सुक्कुर 2/197

پانی عشری دیا ہو، فتح القدیر و تبیین الحقائق و بحر الرائق وغیرہ میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
لو احیاھا ذمی کانت خراجیة سواء سقیت عند محمد بماء السماء ونحوہ او لا وسواء کانت عند ابي یوسف من حیز ارض الخراج او العشر اھ[1] فظھر ضعف ما انتحاہ فی العنایة تبعا للنھایة رکونا الی الظاہر نقل فی الھدایة علی خلاف نقل فی الغایة کما بینہ المحقق فی الفتح واللہ ولی الھدایة والفتح۔	اگر کسی ذمی نے زمین کو آباد کیا تو وہ خراجی ہوگی خواہ آسمانی پانی وغیرہ سے سیراب ہو یا نہ ہو اور امام ابو یوسف کے نزدیک خواہ خراجی کے قریب ہو یا عشری کے قریب اھ اس سے اس کا ضعف ظاہر ہوگیا جو عنایہ میں نہایہ کی اتباع کرتے ہوئے میلان کیا ہے ہدایہ میں نقل ظاہر کی طرف اور وہ نقل غایت کے خلاف ہے جیسا کہ محقق نے فتح میں کیا، اور اللہ تعالیٰ ہی ہدایت اور فتح کا مالک ہے۔(ت)

تصریح فرمائی مسئلہ اعتبار آب مطلق نہیں، ہدایہ میں فرمایا تھا:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
اذا کانت لمسلم دار خطة فجعلھا بستانا فعلیہ العشر معناہ اذا سقاھا بماء العشر واما اذا کانت تسقی بماء الخراج ففیھا الخراج لان المؤنة فی مثل ھذا تدور مع الماء۔[2]	جب بطور قبضہ کسی مسلمان کی خالی زمین پر گھر بنایا پھر اسے اس نے باغ بنادیا تو اس پر عشر ہوگا، اس کا معنی یہ ہے کہ جب وہ عشری پانی سے سیراب ہوتا ہو اور جب وہ خراجی پانی سے سیراب ہو تو اس میں خراج ہوگا کیونکہ ایسی صورتوں میں عشر و خراج کا معاملہ پانی کے ساتھ ہے۔(ت)

اس پر عنایہ میں لکھا ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
معنی قولہ " فی مثل ھذا " الارض التی لم یتقرر امرہ علی عشر او خراج وھو احتراز عما اذا کان لمسلم ارض تسقی بماء العشر وقد اشتراھا ذمی فان ماء ھا عشری وفیہ الخراج ۔ [3]	متن کے قول "فی مثل ھذا" سے مراد وہ زمین ہے جس کا معاملہ عشر و خراج کے اعتبار سے مستحکم نہ ہوا ہو، اس سے اس صورت سے احتراز ہوگیا جب کسی مسلمان کی ایسی زمین تھی جو عشری پانی سے سیراب ہوتی تھی اور اسے ذمی نے خرید لیا تو اب اس کا پانی عشری ہے لیکن اس میں خراج ہے۔ (ت)

1 فتح القدیر باب العشر و الخراج مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۵ / ۲۸۱ 2 الہدایۃ باب زکوٰۃ الزروع والثمار المکتبۃ العربیۃ کراچی ۱ / ۱۸۴ 3 العنایۃ مع فتح القدیر باب زکوٰۃ الزروع والثمار مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲ / ۱۹۷

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

See how clear the clarification is, that the water tax (Kharaj) is not specific to poor quality water. The research is that even now, its general application is not correct. The clarifications regarding the revival of land by a Dhimmi (non-Muslim citizen) and others have just been mentioned. Yes, according to the Imam of the School (Imam Abu Hanifa), may Allah be pleased with him, the consideration of water is only in the case where the obligation (of tax) is initially assigned to a Muslim, such as when he turns his house into a garden or revives dead land. The Absolute Researcher (Al-Muhaqqiq al-Mutlaq) has explained it thus:

[Arabic Text]: His saying 'the obligation in its like' regarding what is an initial assignment of duty upon a Muslim from this [land] and from the land which he revived, not all that whose matter of duty has not been established, as in al-Nihayah, that if a Dhimmi made his allotted house a garden, or revived land, or it was allotted to him for participating in battle, then it would be subject to Kharaj even if he irrigated it with 'Ushri water (tithe-water), according to Abu Hanifa, may Allah Almighty have mercy on him.

[Urdu Commentary]: The text's saying "the obligation in its like" refers to land where the duty is initially fixed upon a Muslim and which he has cultivated, not every land whose duty has not become firm, as stated in Al-Nihayah. This is because if a Dhimmi turned his allotted house into a garden, or cultivated land, or received it as a gift for participating in Jihad, it would be subject to Kharaj even if he irrigated it with 'Ushri water, according to Imam Azam, may Allah Almighty have mercy on him. (T)

It is stated in Al-Hidayah itself:

[Arabic Text]: If he (the Magian) turned it (his house) into a garden, then Kharaj is due upon him even if he irrigated it with 'Ushri water, because of the difficulty of mandating 'Ushr since it contains the meaning of proximity (worship), so Kharaj is specified, which is a punishment suitable to his state. (End of quote). I say: With this, the fall of what is in Al-'Inayah against this statement from Al-Hidayah becomes clear, the text of which is: "One could say, either the consideration is for the water or for the state of the one upon whom the duty is placed; if it is the first, 'Ushr would be obligatory upon him, and if it is the second, this contradicts it."

[Urdu Commentary]: If (a Magian turned his house) into a garden, then Kharaj is due upon him even if he irrigated it with 'Ushri water, because here the obligation of

'Ushr is difficult since there is an element of worship in 'Ushr. Therefore, Kharaj will be specified, which is suitable as a punishment for the state of the Magian. I say: From this, it becomes apparent that the objection in Al-'Inayah against the statement in Al-Hidayah is nullified. The objection was in these words: "A questioner could say that here the consideration is either for the water or for the person upon whom the 'Ushr or Kharaj is to be imposed; if it is for the water, then 'Ushr must be imposed on the Magian, and if it is for the person liable to duty, then this contradicts it."

1. Fath al-Qadir, Chapter of Zakat on Crops and Fruits, Maktaba Nooriya Ridawiyya, Sukkur, 2/198
2. Al-Hidayah, Chapter of Zakat on Crops and Fruits, Al-Maktaba al-Arabiyya, Karachi, 1/184

फतावा रज़विया, जिल्द 10

देखिए कितनी स्पष्ट व्याख्या है कि जल-कर (खिराज-ए-आब) केवल खराब पानी के साथ विशिष्ट नहीं है, और शोध यह है कि अब भी इसका सामान्य प्रयोग सही नहीं है। ज़िम्मी (गैर-मुस्लिम नागरिक) द्वारा भूमि को उपजाऊ बनाने आदि के संबंध में स्पष्टीकरण अभी गुज़रे हैं। हाँ, इमाम-ए-मज़हब (इमाम अबू हनीफ़ा) रज़ियल्लाहु अन्हु के अनुसार, पानी का विचार केवल उस स्थिति में है जहाँ एक मुसलमान पर पहली बार कर (वज़ीफ़ा) निर्धारित किया जाना हो, जैसे उसने अपने घर को बगीचा बना लिया या बंजर भूमि को उपजाऊ बनाया। मुहक़्क़िक़ अलल इत्लाक़ (पूर्ण शोधकर्ता) ने इस प्रकार व्याख्या की है:

[अरबी पाठ]: मूल पाठ का कथन 'अल-वज़ीफ़तु फ़ी मिस्लिही' यानी उस ज़मीन के बारे में है जिसका आरम्भ में एक मुसलमान पर कर निर्धारित किया जाना है और जिसे उसने जीवित (उपजाऊ) किया है, न कि हर वह ज़मीन जिसका कर मामला अभी स्थिर नहीं हुआ है, जैसा कि अल-निहाया में है कि यदि किसी ज़िम्मी ने अपने आवंटित घर को बगीचा बना लिया, या भूमि उपजाऊ की, या युद्ध में उपस्थित होने के कारण उसे भूमि आवंटित की गई, तो उसमें खिराज होगा भले ही उसने उसे 'उशरी' जल (दशांश जल) से सींचा हो, इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अलैहि के अनुसार।

[उर्दू भाष्य]: मूल पाठ का कथन "अल-वज़ीफ़तु फ़ी मिस्लिही" यानी उस भूमि का जिसका प्रारंभ में मुसलमान पर कर निर्धारित किया जाना है और जिसे उसने आबाद किया हो, न कि हर वह भूमि जिसका कर सुदृढ़ न हुआ हो जैसा कि निहाया में है। क्योंकि यदि ज़िम्मी ने अपने अधिकार वाले घर को बाग बना लिया या ज़मीन को आबाद किया या उसे जिहाद में भाग लेने के कारण उपहार स्वरूप मिली, तो उसमें खिराज होगा चाहे उसने उसे उशरी पानी से सींचा हो, इमाम आज़म रहमतुल्लाहि अलैहि के नज़दीक। (त)

स्वयं हिदाया में उल्लेख है:

[अरबी पाठ]: यदि उसने (मजूसी ने अपने घर को) बगीचा बना दिया तो उस पर खिराज है भले ही उसने उसे उशरी पानी से सींचा हो, क्योंकि उश्र अनिवार्य करना कठिन है क्योंकि इसमें इबादत (पूजा) का भाव है, अतः खिराज निश्चित किया गया जो उसकी स्थिति के अनुरूप एक दंड है। (समाप्त)। मैं कहता हूँ: इससे अल-इनाया में हिदाया के इस कथन पर किए गए आक्षेप का निराधार होना स्पष्ट हो गया, जिसके शब्द थे: "कोई कह सकता है कि विचार या तो पानी का है या उस व्यक्ति

की स्थिति का जिस पर कर लगाया जाना है; यदि पहला है, तो उस पर उश्र अनिवार्य होगा, और यदि दूसरा है, तो यह उसका खंडन करता है।"

[उर्दू भाष्य]: यदि (किसी मजूसी ने अपने घर को) बाग बना दिया तो उस पर खिराज है चाहे उसे उशरी पानी से सींचा हो क्योंकि यहाँ उश्र की अनिवार्यता कठिन है क्योंकि उश्र में इबादत का पहलू है, इसलिए खिराज तय होगा जो दंड के रूप में मजूसी की स्थिति के अनुकूल है। मैं कहता हूँ: इससे इनाया के उस एतराज़ का खारिज होना ज़ाहिर हो गया जो हिदाया के कथन पर इन शब्दों में किया गया था कि आपत्ति करने वाला कह सकता है कि यहाँ विचार पानी का है या उस व्यक्ति का जिस पर उश्र और खिराज लागू करना है; यदि पानी का विचार है तो मजूसी पर उश्र अनिवार्य होगा और यदि उत्तरदायी व्यक्ति का विचार हो तो यह इसके विपरीत होगा।

1. फ़तह अल-क़दीर, फसलों और फलों की ज़कात का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सक्कर 2/198
2. अल-हिदाया, फसलों और फलों की ज़कात का अध्याय, अल-मकतबा अल-अरबिया कराची 1/184

पृष्ठ 236 / 836

فتاوی رضویہ جلد دھم

دیکھو کیسی صاف تصریح ہے کہ خراج آب خرابی کے ساتھ خاص نہیں، اور تحقیق یہ ہے کہ اب بھی اطلاق صحیح نہیں، مسئلہ احیائے ذمی وغیرہما کے متعلق تصریحات ابھی گزریں، ہاں امام مذہب رضی اللہ تعالی عنہ کے نزدیک اعتبار آب صرف اس صورت میں ہے جہاں مسلمان پر ابتداءً وظیفہ مقرر کرنا ہو جیسے اس نے اپنے گھر کو باغیچہ بنالیا یا مردہ زمین احیاء کی، محقق علی الاطلاق نے یوں شرح فرمائی:

قولہ الوظیفۃ فی مثلہ فیما ھو ابتداء توظیف علی المسلم من ھذا و من الارض التی احیاھا، لا کل مالم یتقرر امرہ فی وظیفۃ کما فی النھایۃ بان الذمی لو جعل دار خطتہ بستانا او احیا ارضا اورضخت لہ لشھودہ القتال کان فیھا الخراج و ان سقاھا بماء العشر عند ابی حنیفۃ رحمہ اللہ تعالی- 1

متن کا قول "الوظیفۃ فی مثلہ" یعنی اس زمین کا جس کا ابتداءً مسلمان پر وظیفہ مقرر کرنا ہے اور جسے اس نے آباد کیا ہو، نہ کہ ہر وہ زمین جس کا وظیفہ مستحکم نہ ہوا ہو جیسا کہ نہایہ میں ہے کیونکہ اگر ذمی نے قبضہ شدہ گھر کو باغ بنالیا یا زمین کو آباد کیا یا اسے جہاد میں شرکت کی وجہ سے بطور عطیہ ملی تو اس میں خراج ہوگا اگرچہ اسے اس نے ماء عشری سے سیراب کیا ہو امام اعظم رحمہ اللہ تعالی کے نزدیک۔ (ت)

خود ہدایہ میں فرمایا:

ان جعلھا (ای المجوسی دارہ) بستانا فعلیہ الخراج و ان سقاھا بماء العشر لتعذر ایجاب العشر اذ فیہ معنی القربۃ فتعین الخراج و ھو عقوبۃ تلیق بحالہ اہ 2 اقول: و بہ ظھر سقوط ما فی العنایۃ علی ھذا

القول من الهداية ما نصه لقائل ان يقول اما ان يكون الاعتبار للماء او لحال من توضع عليه الوظيفة فان كان الاول وجب عليه العشر وان كان الثانی ناقض هذا

اگر (کسی مجوسی نے اپنے گھر کو) باغ بنادیا تو اس پر خراج ہے اگرچہ اسے عشری پانی سے سیراب کیا ہو کیونکہ یہاں وجوب عشر متعذر ہے اس لیے کہ عشر میں عبادت کا پہلو ہے لہذا خراج متعین ہوگا جو بطور عقوبت مجوسی کے حال کے مناسب ہے اقول: اس سے عنایہ کے اس اعتراض کا ساقط ہونا ظاہر ہو گیا جو ہدایہ کے قول پر، ان الفاظ میں کیا کہ معترض کہہ سکتا ہے کہ یہاں اعتبار پانی کا یا اس شخص کا ہے جس پر عشر و خراج لازم کرنا ہے، اگر پانی کا اعتبار ہے تو مجوسی پر عشر لازم آئے گا اور اگر شخص مکلف کا اعتبار ہو تو اس کا ناقض هذا

1 فتح القدير ، باب زكوة الزروع والثمار ، مكتبہ نوريہ رضويہ سكهر ۲/۱۹۸ 2 الهداية ، باب زكوة الزروع والثمار ، المكتبة العربية كراچی ۱/ ۱۸۴

Fatawa Razawiyya Volume 10

His statement (because the cost in such a case revolves around the water) Ushr (tithe) becomes obligatory on a Muslim if he irrigates his land with Kharaj (tribute) water. This means the reason for falling away [of the obligation] is that the discussion here is about a Dhimmi (non-Muslim citizen). What was mentioned earlier about the cost revolving around the water was only in cases where the initial assessment was on a Muslim. Thus, there is no room for contradiction at all, and no need to go through the trouble of answering by saying that the consideration is for the water, but the acceptance of the locus is a condition for the obligation of the ruling, and a non-believer is not a locus for the obligation of Ushr because it is an act of worship, etc. Whatever the case may be, our purpose is achieved, which is the invalidity of restricting Kharaj to Kharaj-water, either absolutely or in cases where its assessment has not been established. Yes, it is correct according to the Master of the School (Sahib al-Madhhab) only in cases where the initial assessment is on a Muslim. (T)

Furthermore, the ruling (Mufta Bihi) is that even here, water is not considered, but proximity is observed. If the land is near Kharaji land, it will be Kharaj, even if Ushr water is used. And if it is near Ushri land, it will be Ushr, even if the water is from Kharaj. It is stated in Tanwir:

"If a Muslim brings it to life (cultivates it), its proximity shall be considered."[3] That is, if a Muslim populates the land, then the proximity of land there will be considered. (T)

1 Al-Inaya with Fath al-Qadir, Chapter on Zakat of Crops and Fruits, Maktaba Nooriya Razawiyya Sukkur, 2/198 2 Al-Inaya with Fath al-Qadir, Chapter on Zakat of Crops and Fruits, Maktaba Nooriya Razawiyya Sukkur, 2/198 3 Tanwir al-Absar text in Durr al-Mukhtar, Chapter on Ushr and Kharaj, etc., Matba' Mujtabai Delhi, 1/449

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

उनका कथन (क्योंकि इस तरह के मामले में खर्च पानी के साथ घूमता है) एक मुसलमान पर उश्र (दशमांश) अनिवार्य हो जाता है यदि वह अपनी भूमि को खराज (कर) के पानी से सींचता है। गिरने का कारण यह है कि यहाँ चर्चा ज़म्मी (गैर-मुस्लिम नागरिक) के बारे में हो रही है। और जो पहले उल्लेख किया गया था कि खर्च पानी के साथ घूमता है, वह केवल उन मामलों में था जहाँ प्रारंभिक निर्धारण एक मुसलमान पर था। इसलिए, विरोधाभास की बिल्कुल कोई गुंजाइश नहीं है, और यह कहकर उत्तर देने की परेशानी उठाने की आवश्यकता नहीं है कि विचार तो पानी के लिए ही होता है, लेकिन नियम की अनिवार्यता के लिए स्थान की स्वीकृति एक शर्त है, और एक काफ़िर उश्र की अनिवार्यता के लिए स्थान नहीं है क्योंकि उश्र अदा करना इबादत है इत्यादि। जो भी हो, हमारा उद्देश्य सिद्ध होता है, वह यह कि खराज को खराज-पानी के साथ विशिष्ट करने की अमान्यता है, या तो हर हाल में या उस स्थिति में जब भूमि पर किसी निर्धारण की पुष्टि न हुई हो। हाँ, यह साहब-ए-मज़हब के अनुसार केवल उस समय सही है जब किसी मुसलमान पर प्रारंभ में निर्धारण करना हो। (त)

फिर मुफ़्ता-बिही (जिस पर फ़तवा दिया गया हो) यह है कि यहाँ भी पानी पर विचार नहीं किया जाएगा बल्कि समीपता देखी जाएगी। यदि भूमि खराजी भूमि के पास है तो खराज होगा, चाहे उश्री पानी दिया गया हो। और यदि उश्री भूमि के पास है तो उश्र होगा, चाहे पानी खराज का हो। तनवीर में है:

"यदि किसी मुसलमान ने इसे पुनर्जीवित (खेती के लिए आबाद) किया, तो उसकी समीपता का विचार किया जाएगा।"[3] अर्थात यदि किसी मुसलमान ने भूमि को आबाद किया तो वहाँ पास की भूमि का विचार किया जाएगा। (त)

1 अल-इनाया मअ फ़त्हुल क़दीर, फसलों और फलों की ज़कात का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/198 2 अल-इनाया मअ फ़त्हुल क़दीर, फसलों और फलों की ज़कात का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/198 3 तन्वीरुल अबसार मतन दर मुख़्तार, उश्र और खराज का अध्याय आदि, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/449

पृष्ठ 836 का 237

فتاوی رضویہ جلد دہم

قولہ (لان المؤنۃ فی مثل ھذا تدور مع الماء) وجب علی المسلم العشر اذا سقی ارضہ بماء الخراج) اھ اس قول سے تضاد لازم آئیگا کہ "ایسی صورت میں وظیفہ کے تعین کے لیے پانی کا اعتبار کیا جاتا ہے" اور مسلمان پر عشر لازم ہوتا ہے جب وہ اپنی زمین کو خراجی پانی سے سیراب کرتا ہو "اھ - وجہ سقوط یہ ہے کہ یہاں گفتگو ذمی میں ہو رہی ہے، اور جو گزرا ہے کہ تعین وظیفہ میں پانی کا اعتبار ہے، وہ اس صورت میں ہے جب ابتداء کسی مسلمان پر وظیفہ کا تعین کرنا ہو تو یہاں تناقض کا ثبوت ہی نہیں ہوا لہذا یہ کہہ کر جواب میں تکلف کی ضرورت نہیں، کہ اعتبار تو پانی کا ہی ہوتا ہے مگر وجوبِ حکم کے لیے محل کا قبول کرنا شرط ہے اور کافر ایجابِ عشر کا محل نہیں کیونکہ عشر ادا کرنا عبادت ہے الخ بہر حال ہمارا مقصد حاصل ہے وہ یہ کہ خراج پانی کے ساتھ خراج کو مخصوص کرنے کا بطلان ہے، یا تو ہر حال میں یا اس صورت میں جب زمین پر کسی وظیفہ کا تقرر نہ ہوا ہو، ہاں یہ صاحب مذہب کے نزدیک اس وقت فقط صحیح ہے جب کسی مسلمان پر ابتداءً وظیفہ کا تقرر کرنا ہو۔ (ت)

پھر مفتی بہ یہ ہے کہ یہاں بھی پانی کا اعتبار نہیں بلکہ قرب دیکھیں گے اگر زمین خراجی سے نزدیک ہے خراج ہو گا اگرچہ آب عشری دیا ہو، اور عشری سے تو عشر اگرچہ پانی خراج کا ہو۔ تنویر میں ہے: لو احیاہ مسلم اعتبر قربہ۔[3]8 اگر کسی مسلمان نے زمین کو آباد کیا تو وہاں اس کے قریب زمین کا اعتبار کیا جائیگا۔ (ت)

1 العنایۃ مع فتح القدیر، باب زکوۃ الزروع و الثمار، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر، ۲/ ۱۹۸ 2 العنایۃ مع فتح القدیر، باب زکوۃ الزروع و الثمار، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر، ۲/ ۱۹۸ 3 تنویر الابصار متن در مختار، باب العشر و الخراج الخ، مطبع مجتبائی دہلی، ۱/ ۴۴۹

Fatawa Razawiyya Volume 10

In Radd al-Muhtar it is stated:

Arabic Box: This is according to Abu Yusuf. Muhammad considered the water: if he revived it with Kharaji water, it is Kharaji, otherwise it is 'Ushri - Bahr. Fatwa is given based on the first statement - Durr al-Muntaqa. (1)

Urdu Translation Box: This is according to Imam Abu Yusuf; Imam Muhammad gave consideration to the water. If a Muslim has populated a land with Kharaji water, it will be Kharaji, otherwise 'Ushri, (Ref: Bahr). The fatwa is based on the first opinion, (Ref: Durr al-Muntaqa). (T)

In the same (book):

Arabic Box: And it is what the author proceeded upon first, like al-Kanz and others, and he prioritized it in the text of 'al-Multaqa', thus signifying its preference over the opinion of Muhammad. And H said: and it is the chosen one, as in al-Hamawi upon al-Kanz from the commentary of Qara Hisari, and the texts follow it. (2)

Urdu Translation Box: This is what the earlier authors proceeded upon, for example, Kanz etc. And in the text of Multaqa, it has been put forward. This signifies that they preferred it over the opinion of Imam Muhammad, and 'H' said that this is the chosen (preferred) one, as it is in Hamawi on Al-Kanz with reference to the commentary of Qara Hisari, and the texts are based on this. (T)

Nevertheless, even if specialization is accepted, the arrival of the hand of possession of the army of Islam on the water could initially be useful for its Kharaji status. What is the argument for the persistence of its Kharaji status to be dependent on the persistence of that hand of possession? And it is clear that our discussion is about persistence:

Arabic Box: Do you not see that Kharaj is obligatory as a punishment for disbelief, then it does not need (disbelief) for its persistence, such that if they embraced Islam, Kharaj would not be dropped from their lands, as they have unanimously stated.

Urdu Translation Box: You know that Kharaj is made obligatory as a punishment for disbelief, then in its persistence, it is not dependent on it, even to the extent that if non-believers become Muslims, Kharaj will not be dropped from their lands, as the jurists have explicitly and definitively stated. (T)

In short, as far as observation goes, from those lands here whose status as Kharaji has been proven by Shari'ah evidence, the cessation of the obligation of Kharaj without a Shari'ah reason is not proven. And how could it be proven when the cause of obligation for Kharaj is productive land, and that is present, so the obligation is also present. Hedaya states in the issue of the non-combination of 'Ushr and Kharaj:

1. Radd al-Muhtar, Chapter of Ushr and Kharaj, etc., Mustafa al-Babi Egypt, 3/284
2. Radd al-Muhtar, Chapter of Ushr and Kharaj, etc., Mustafa al-Babi Egypt, 3/284

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

रद्दुल मुहतार में है:

अरबी बॉक्स: यह अबू यूसुफ़ के अनुसार है। मुहम्मद ने पानी का विचार किया: यदि उसने इसे खाराजी पानी से पुनर्जीवित किया, तो यह खाराजी है, अन्यथा यह उशरी है - बहर। फतवा पहले कथन पर दिया जाता है - दुर्र अल-मुंतका। (1)

उर्दू अनुवाद बॉक्स: यह इमाम अबू यूसुफ़ के निकट है; इमाम मुहम्मद ने पानी का एतबार (विचार) किया है। अगर मुसलमान ने ज़मीन खाराजी पानी से आबाद की है तो वह खाराजी होगी वरना उशरी, (बहर)। फतवा पहले कौल (विचार) पर है, (दुर्र अल-मुंतका)। (त)

उसी में है:

अरबी बॉक्स: और यह वह है जिस पर पहले लेखक चले, जैसे अल-कन्ज़ और अन्य, और उन्होंने इसे 'अल-मुल्तका' के पाठ में प्राथमिकता दी, इस प्रकार मुहम्मद की राय पर इसकी वरीयता का लाभ मिला। और 'ह' ने कहा: और यही चुना हुआ है, जैसा कि क़रा हिसारी की टिप्पणी से अल-कन्ज़ पर अल-हमावी में है, और ग्रंथ इसी पर आधारित हैं। (2)

उर्दू अनुवाद बॉक्स: यही वह है जिस पर पहले मुसन्निफ़ (लेखक) चले मसलन कन्ज़ वग़ैरह। और मुल्तका के मतन (मूल पाठ) में इसे मुक़द्दम (आगे) किया है। यह इस बात को मुफ़ीद (लाभदायक) है कि उन्होंने इसे इमाम मुहम्मद के कौल पर तरजीह (प्राथमिकता) दी है और 'ह' ने कहा कि यही मुख़्तार (चुना हुआ/प्रामाणिक) है जैसा कि हमवी अल-कन्ज़ में शरह क़रा हिसारी के हवाले से है, और मतन इसी पर हैं। (त)

इसके बावजूद अगर तक़्सीस (विशिष्टता) मान भी ली जाए तो लश्करे इस्लाम का यदे क़ब्ज़ा (कब्ज़े का हाथ) पानी पर वारिद (आना) होना इब्तिदा (शुरुआत) में उसकी ख़राजियत के लिए मुफ़ीद हो सका, बक़ा (निरंतरता) में भी ख़राजियत, बक़ा-ए-यद पज़ीर पर मौक़ूफ़ (निर्भर) रहने की क्या दलील है, और फिर ज़ाहिर है हमारा कलाम बक़ा में है:

अरबी बॉक्स: क्या आप नहीं देखते कि कुफ्र (अविश्वास) की सज़ा के रूप में खराज अनिवार्य है, फिर इसे अपनी निरंतरता के लिए (कुफ्र की) आवश्यकता नहीं है, यहाँ तक कि यदि वे इस्लाम स्वीकार कर लें, तो उनकी भूमि से खराज समाप्त नहीं होगा, जैसा कि उन्होंने सर्वसम्मति से स्पष्ट किया है।

उर्दू अनुवाद बॉक्स: आप जानते हैं कि ख़राज कुफ्र की सज़ा के तौर पर वाजिब होता है फिर अपनी बक़ा (निरंतरता) में उसका मोहताज नहीं यहाँ तक कि अगर काफ़िर मुसलमान हो गए तो उनकी ज़मीनों से ख़राज साक़ित (समाप्त) न होगा जैसा कि इस पर.फ़ुक़हा (धर्मशास्त्रियों) ने क़तई (निश्चित) तसरीह (स्पष्टीकरण) की है। (त)

संक्षेप में जहाँ तक नज़र की जाती है यहाँ की उन ज़मीनों से जिनका ख़ाराजी होना शरई सुबूत (प्रमाण) से साबित हो लिया बिलावजह शरई वजूबे ख़राज (खराज की अनिवार्यता) का उठ जाना साबित नहीं होता और क्योंकर साबित हो हालाँकि ख़राज के लिए सबबे वजूब अर्ज़े नामिया (उपजाऊ भूमि) है और वह हासिल तो वजूब भी हासिल, हिदाया ने अश्र और ख़राज के न जुड़ने के मसले में फरमाया:

1 रद्दुल मुहतार बाबुल अश्र वल ख़राज आदि मुस्तफा अल-बाबी मिस्र 284/3 2 रद्दुल मुहतार बाबुल अश्र वल ख़राज आदि मुस्तफा अल-बाबी मिस्र 284/3

पृष्ठ 836 का 238

جلد دہم فتاوی رضویہ

ردالمختار میں ہے:

هذا عند ابی یوسف واعتبر محمد الماء فان احیاها بماء الخراج فخراجیة والا فعشریة بحر وبالاول یفتی، درمنتقٰی۔ ۱ یہ امام ابویوسف کے نزدیک ہے، امام محمد نے پانی کا اعتبار کیا ہے، اگر مسلمان نے زمین، خراجی پانی سے آباد کی ہے تو وہ خراجی ہوگی ورنہ عشری، بحر۔ فتویٰ پہلے قول پر ہے، درمنتقٰی۔ (ت)

اُسی میں ہے:

وہو مامشی علیہ المصنف اولا کالکنز وغیرہ وقد مہ فی متن "الملتقٰی" فافاد بترجیحہ علی قول محمد وقال ح وھو المختار کما فی الحموی علی الکنز عن شرح قرا حصاری وعلیہ المتون۔ ۲ یہی وہ ہے جس پر پہلے مصنف چلے مثلاً کنز وغیرہ۔ اور ملتقٰی کے متن میں اسے مقدم کیا ہے۔ یہ اس بات کو مفید ہے کہ انہوں نے اسے امام محمد کے قول پر ترجیح دی ہے اور ح نے کہا کہ یہی مختار ہے جیسا کہ حموی علی الکنز میں شرح قرا حصاری کے حوالے سے ہے، اور متون اسی پر ہیں۔ (ت)

معہذا اگر تخصیص مان بھی لیجئے تو لشکر اسلام کا ید قبضہ پانی پر وارد ہونا ابتداءً اس کی خراجیت کا مفید ہو سکا، بقاءً بھی خراجیت، بقاءً یدِ پذیر پر موقوف رہنے کی کیا دلیل ہے، اور پھر ظاہر ہے ہمارا کلام بقاء میں ہے:

الا تری ان الخراج یجب عقوبة الا الکفر ثم لا یحتاج فی بقائه حتی لو اسلموا لم یسقط الخراج عن اراضیهم کما نصوا علیه قاطبة آپ جانتے ہیں کہ خراج کفر کی سزا کے طور پر واجب ہوتا ہے پھر

اپنی بقاء میں اس کا محتاج نہیں حتی کہ اگر کافر مسلمان ہو گئے تو ان کی زمینوں سے خراج ساقط نہ ہو گا جیسا کہ اس پر فقہاء نے قطعی تصریح کی ہے۔ ت)

بالجملہ جہاں تک نظر کی جاتی ہے یہاں کی اُن زمینوں سے جن کا خراجی ہونا بہ ثبوت شرعی ثابت ہو لیا بلاوجہ شرعی وجوبِ خراج کا اٹھ جانا ثابت نہیں ہوتا اور کیونکر ثابت ہو حالانکہ خراج کے لیے سبب وجوبِ ارض نامیہ ہے اور وہ حاصل تو وجوب بھی حاصل، ہدایہ مسئلہ عدمِ اجتماع عشر و خراج میں فرمایا:

1 ردالمختار باب العشر والخراج الخ مصطفی البابی مصر ۲۸۴/۳ 2 ردالمختار باب العشر والخراج الخ مصطفی البابی مصر ۲۸۴/۳

Volume 10 Fatawa Rizvia

The cause for both rights (Ushr and Kharaj) is one, and that is productive land. However, for Ushr, its productivity is considered actual, while for Kharaj, it is considered hypothetical. This is why both are attributed to the land. [1] (T)

In Fath al-Qadir it is stated: Imam Shafi'i says that both can be combined because the cause for Ushr is land productive in actuality through produce, and the cause for Kharaj is land productive by estimation. Since the cause for both is realized and there is no contradiction between the two rights, both become obligatory. Our argument is that the multiplicity or oneness of a ruling depends on the multiplicity or oneness of its cause. The cause for both Kharaj and Ushr is productive land; hence, they are attributed to it, as one says "the Kharaj of the land" and "the Ushr of the land." Attribution to something is evidence of its causality. The land being with potential growth versus land with actual growth is a conceptual difference, not a real one. Thus, productive land remains the single cause. When the cause is one, the ruling must also be one. (Summarized from Fath al-Qadir) [2] (T)

There are still some other aspects in this humble person's mind which I have omitted for the sake of brevity. "What we have mentioned is sufficient, and Allah is the Master of guidance." (What we have mentioned is enough; Allah is the one who gives guidance. T)

1 Al-Hidayah, Chapter on Ushr and Kharaj etc., Al-Maktabat al-Arabiyyah Karachi, 2/543. 2 Fath al-Qadir, Chapter on Ushr and Kharaj etc., Maktabah Nooria Rizvia Sukkur, 5/286-87.

दोनों अधिकारों (उश्र और ख़राज) का कारण एक ही है और वह उत्पादक भूमि (अर्ज़-ए-नामी) है। हाँ, उश्र में इसकी उत्पादकता वास्तविक (अमलन) मानी जाती है, जबकि ख़राज में इसे अनुमानित (बिल-फ़र्ज़) माना जाता है। यही कारण है कि इन दोनों का संबंध भूमि से जोड़ा जाता है। [1] (त)

'फ़तह अल-क़दीर' में लिखा है: इमाम शाफ़ई फ़रमाते हैं कि इन दोनों को एकत्र किया जा सकता है क्योंकि उश्र का कारण वास्तव में पैदावार देने वाली भूमि है और ख़राज का कारण पैदावार की संभावना वाली भूमि है। यहाँ दोनों का कारण सिद्ध है और दोनों अधिकारों में कोई विरोध भी नहीं है, अतः दोनों अनिवार्य होंगे। हमारा तर्क यह है कि हुक्म का अनेक या एक होना कारण (सबब) के अनेक या एक होने पर निर्भर करता है। ख़राज और उश्र का कारण उत्पादक भूमि ही है, इसीलिए भूमि की ओर संकेत करते हुए कहा जाता है 'भूमि का ख़राज' और 'भूमि का उश्र'। किसी चीज़ की ओर निस्बत (सम्बन्ध) उसके कारण होने का प्रमाण है। भूमि का संभावित विकास (नमू) पर आधारित होना और वास्तविक विकास वाली भूमि होना, यह केवल वैचारिक भिन्नता है, वास्तविक नहीं। अतः उत्पादक भूमि ही कारण मानी जाएगी। जब कारण एक है, तो हुक्म भी एक ही होगा। (संक्षेप में) [2] (त)

इस फकीर के मन में अभी कुछ और पहलू भी हैं जिन्हें विस्तार के भय से छोड़ दिया गया है। "जो हमने उल्लेख किया है वह पर्याप्त है और अल्लाह ही मार्गदर्शन देने वाला है।" (हमने जो उल्लेख किया वह काफी है; अल्लाह ही मार्गदर्शन का स्वामी है। त)

1 अल-हिदाया, उश्र और ख़राज का अध्याय आदि, अल-मकतबत अल-अरबिय्या कराची, 2/543 2 फ़तह अल-क़दीर, उश्र और ख़राज का अध्याय आदि, मकतबा नूरिया रिज़विया सुक्कुर, 5/286-87

سبب الحقین واحد وھو الارض النامیۃ الا انہ یعتبر فی العشر تحقیقا و فی الخراج تقدیرا و لھذا یضافان الی الارض۔ 1 دونوں حقوق عشر و خراج کا سبب ایک ہے اور وہ ارضِ نامی ہے ، ہاں عشر میں اس کا نامی ہونا عملاً اور خراج میں بالفرض ہے، یہی وجہ ہے کہ ان دونوں کی نسبت زمین کی طرف ہوتی ہے(ت)

فتح القدیر میں ہے: قال الشافعی یجمع بینھما لان سبب العشر الارض النامیۃ بالخارج تحقیقا و سبب الخراج الارض النامیۃ بہ تقدیرا و قد تحقق سبب کل منھما ولا منافاۃ بین الحقین فیجبان ولنا ان تعدد الحکم واتحاد ہ بتعدد السبب واتحاد ہ وسبب کل من الخراج والعشر ، الارض النامیۃ و لھذا یضافان الیھا فیقال خراج الارض و عشر الارض و الاضافۃ دلیل السببیۃ وکون الارض مع النماء التقییری غیر الارض مع التحقیقی مخالفۃ اعتباریۃ لا حقیقۃ فالارض النامیۃ ہی السبب واذا اتحد السبب اتحد الحکم اھ 2 ملتقطا امام شافعی فرماتے ہیں کہ ان دونوں کو جمع کیا جاسکتا ہے کہ عشر کا سبب ارض نامی سے عملاً پیداوار اور خراج کا سبب ارضِ نامی سے پیداوار کا امکان ہے اور یہاں دونوں کا سبب متحقق ہے اور دونوں کے حقوق میں منافات بھی نہیں لہذا دونوں واجب ہوں گے، ہماری دلیل یہ ہے کہ حکم کا متعدد اور واحد ہونا سبب کے متعدد اور واحد ہونے پر موقوف ہے، خراج و عشر کا سبب ارضِ نامی ہے اسی لیے زمین کی طرف ان کی نسبت کرتے ہوئے کہا جاتا ہے، زمین کا خراج، زمین کا عشر اور کسی کی طرف اضافت اس کے سبب ہونے پر دلیل ہے۔ زمین کا امکانی نمو پر مشتمل ہونے کی وجہ سے اس کا ایسی زمین کا غیر ہونا جو واقعۃ نمو پر مشتمل ہے ، یہ اعتباری طور پر ہے ، یہاں حقیقۃً مخالفت نہیں تو ارضِ نامی ہی سبب قرار پائے گی، تو جب سبب ایک ہے تو حکم بھی ایک ہی ہو گا اھ اختصارًا (ت)

ہنوز بعض وجوہ اور ذہنِ فقیر میں ہیں کہ بخوفِ اطالت ترک کیں وفیما ذکر ناکفایۃ واللہ ولی الھدایۃ

(ہم نے جو ذکر کیا یہ کافی ہے اللہ تعالٰی ہی ہدایت کا مالک ہے۔ ت) کسے دیں، اس کا

1 الھدایۃ ، باب العشر والخراج الخ، المکتبۃ العربیۃ کراچی، ۲ / ۵۴۳ 2 فتح القدیر ، باب العشر والخراج الخ ، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر، ۵ / ۸۷-۲۸۶

Fatawa Rizwia, Volume 10

Answer: It has become clear from the previous explanation that there are many areas of expenditure for it here, such as mosques, madrasas, students, and scholars; it should be spent on them. Even if, hypothetically, the army was its only designated use and it was not possible to reach any of the Islamic soldiers, there would still be no meaning to its waiver. Kharaj (land tax) is obligatory upon the responsible owner. It is stated in Inaya:

"Al-Kharaju fi dhimmat-il-maliki wal-ushru fil-kharij."[1] Kharaj is the responsibility of the owner, and Ushr is on the produce. (T)

It is stated in Fath:

"Al-Ushru fil-khariji wal-kharaju fid-dhimmah."[2] Ushr is on the produce, and Kharaj is the responsibility of the owner. (T)

And it is a well-established right, similar to property and debt.

"Hatta la yahillu li saahibi ardin kharajiyyatin aklu ghallatiha qabla ada-i kharajiha kama fit-Tanwir ay fi kharaj-il-muqasamati faka-annahu kana malan mushtarakan, wa lil-imami habsul-khariji lil-kharaji kama fid-Dur, ay fil-kharaj-il-muwazzaf wa qad qala fil-Hidayati ar-rahnu wal-kafalatu ja-izani fil-kharaji liannahu deynun mutalabun bihi mumkunun al-istifa-u fayumkinu tartibu mujab-il-aqdi alayhi fihima." [5]

Until it is not permissible for the owner of Kharaji land to consume its produce before paying the Kharaj, as stated in Tanwir regarding 'Kharaj-e-Muqasama'. It is as if this produce is shared. It is permissible for the ruler to withhold the produce to collect Kharaj, as stated in Dur regarding 'Kharaj-e-Muwazzaf'. It is stated in Hidaya that pledge and guarantee are both valid for Kharaj because it is a debt for which a claim can be made and its recovery is possible. Thus, the requirements of the contract can be applied to both. (T)

---

1 Al-Inayah with Fath al-Qadir, Chapter of Ushr and Kharaj, Maktaba Nooriya Razavia Sukkur, 5 / 286 2 Fath al-Qadir, Chapter of Ushr and Kharaj, Maktaba Nooriya Razavia Sukkur, 5 / 286 3 Tanwir al-Absar Matn Dur al-Mukhtar, Chapter of Ushr, Matba' Mujtabai Delhi, 1 / 139 4 Dur al-Mukhtar, Chapter of Ushr, Matba' Mujtabai Delhi, 1 / 139 5 Al-Hidaya, Book of Guarantee (Kafala), Matba' Yusufi Lucknow, 3 / 116

फतावा रज़विया, जिल्द दहुम

उत्तर: पिछले बयान से स्पष्ट हो गया कि इसके बहुत से खर्च के स्थान जैसे मस्जिदें, मदरसे, छात्र और विद्वान यहाँ मौजूद हैं, उन पर खर्च करें। और अगर मान लिया जाए कि केवल सेना ही इसका खर्च होती और इस्लामी सैनिकों में से किसी तक पहुँचाने की शक्ति न होती, तब भी इसके रद्द होने का कोई अर्थ नहीं था। खराज (भूमि कर) जिम्मेदार मालिक पर अनिवार्य है। 'इनाया' में है:

"अल-खराजु फी ज़िम्मत-इल-मालिकि वल-उश्रु फिल-खारिज।"[1] खराज मालिक के ज़िम्मे है और उश्र पैदावार पर होता है। (त)

'फ़तह' में है:

"अल-उश्रु फिल-खारिजि वल-खराजु फिज़-ज़िम्मह।"[2] उश्र पैदावार पर है और खराज मालिक के ज़िम्मे होता है। (त)

और वह एक स्थापित अधिकार है जैसे संपत्ति और ऋण।

"हत्ता ला यहिल्लु ली साहिबि अर्दिन खराजिय्यतिन अक्लु ग़ल्लतिहा क़ब्ला अदा-इ खराजीहा कमा फ़ित-तन्वीर अय फ़ी खराज-इल-मुक़ासमति फका-अन्नहू काना मालन मुश्तरकन, व लिल-इमामि हब्सुल-खारिजि लिल-खराजि कमा फ़िद-दुर, अय फ़िल-खराज-इल-मुअज्ज़फ़ व क़द क़ाला फ़िल-हिदायति अर-रहनु वल-कफ़ालतु जा-इज़ानि फ़िल-खराजि लिअन्नहू दय्नुन मुतालकुन बिही मुम्कुनुन अल-इस्तिफा-उ फयुम्किनु तरतीबु मूजब-इल-अक़्दि अलैहि फीहिमा।" [5]

यहाँ तक कि खराजी भूमि के मालिक के लिए खराज की अदायगी से पहले उसकी फसल खाना हलाल नहीं है, जैसा कि 'तन्वीर' यानी खराज-ए-मुक़ासमा में है, मानो यह साझा संपत्ति है। और शासक के लिए खराज लेने के लिए पैदावार को रोक लेना जायज़ है जैसा कि 'दुर' में है यानी खराज-ए-मुअज्ज़फ़ में है। 'हिदाया' में है कि खराज में रहन (गिरवी) और कफ़ाला (ज़मानत) दोनों जायज़ हैं क्योंकि यह ऐसा ऋण है जिसकी मांग की जा सकती है और उसकी वसूली भी संभव है, इसलिए अनुबंध की शर्तों को इन दोनों पर लागू करना संभव होगा। (त)

---

1 अल-इनाया मअ फ़तह अल-क़दीर, बाब अल-उश्र वल-खराज, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 5/286 2 फ़तह अल-क़दीर, बाब अल-उश्र वल-खराज, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 5/286 3 तन्वीर अल-अबसार मतन दुर्र-ए-मुख्तार, बाब अल-उश्र, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/139 4 दुर्र-ए-

मुख्तार, बाब अल-उश्र, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/139 5 अल-हिदाया, किताब अल-कफ़ाला, मतबा यूसुफ़ी लखनऊ, 3/116

पृष्ठ 240 (836 में से)

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

جواب: بیان سابق سے واضح ہوگیا کہ اس کے بہت مصارف مثل مساجد و مدارس و طلبہ و علماء یہاں موجود ہیں ان پر صرف کریں اور اگر بالفرض لشکر ہی اس کا مصرف ہوتا اور عساکر اسلامیہ سے کسی تک پہنچانے پر قدرت نہ ملتی جب بھی سقوط کے کوئی معنی نہ تھے، خراج ذمہ مکلف پر واجب ہوتا ہے، عنایہ میں ہے:

الخراج فی ذمة المالك والعشر فی الخارج۔[1] خراج، مالک کے ذمہ ہے اور عشر پیداوار پر ہوتا ہے۔ (ت)

فتح میں ہے:

العشر فی الخارج والخراج فی الذمة۔[2] عشر، پیداوار پر ہے اور خراج مالک کے ذمہ ہوتا ہے۔ (ت)

اور وہ ایک حق ثابت معروف مثل ملک و دین ہے

حتی لایحل لصاحب ارض خراجیة اکل غلتها قبل اداء خراجها کما فی التنویر ای فی خراج المقاسمة فکانه کان مالا مشترکا ، و للامام حبس الخارج للخراج کمافی الدر ، ای فی الخراج الموظف وقد قال فی الهدایة الرهن والکفالة جائزان فی الخراج لانه دین مطالب به ممکن الاستیفاء فیمکن ترتیب موجب العقد علیه فیهما۔ [5]

حتی کہ خراجی زمین کے مالک کے لئے خراج کی ادائیگی سے پہلے اس کا غلہ کھانا حلال نہیں، جیسا کہ تنویر یعنی خراج مقاسمہ میں ہے، گویا یہ مال مشترک ہے اور حاکم کو خراج لینے کے لئے پیداوار کا روک لینا جائز ہے جیسا کہ دُر میں ہے یعنی خراج موظف میں ہے، ہدایہ میں ہے

رہن اور کفالہ خراج میں دونوں جائز ہیں کیونکہ یہ ایسا دین ہے جس کا مطالبہ کیا جاسکتا ہے اور اس کا حصول بھی ممکن ہوتا ہے لہٰذا تقاضائے عقد کا ان دونوں پر مرتب ہونا ممکن ہوگا۔ (ت)

---

1 العنایۃ مع فتح القدیر، باب العشر والخراج ، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ، ۵ / ۲۸۶ 2 فتح القدیر ، باب العشر والخراج ، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ، ۵ / ۲۸۶ 3 تنویر الابصار متن در مختار ، باب العشر، مطبع مجتبائی دہلی، ۱ / ۱۳۹ 4 در مختار ، باب العشر، مطبع مجتبائی دہلی ، ۱ / ۱۳۹ 5 الھدایۃ ، کتاب الکفالۃ ، مطبع یوسفی لکھنؤ ، ۳ / ۱۱۶

Fatawa Razawiyyah Volume 10

...and if the responsibility is occupied with a debt, it will not be waived just because the entitled person is no longer there, without payment or exoneration. Instead, it should be given to their heirs. If they also do not exist, then they should clear their conscience by giving it to the poor. The fact that the right of the poor is not original in Kharaj (land tax) does not contradict giving it to them out of necessity, as is the case in all other debts. (As it is in all debts. T) What should be given? Kharaj is of two types: Kharaj-e-Muqasamah, meaning crop-sharing where half, one-third, one-fourth, or one-fifth of the produce is fixed; and Kharaj-e-Muwazzaf, where a fixed amount is made mandatory on the person, whether in money, for example, an annual rate per bigha, as the Commander of the Faithful, Umar (may Allah be pleased with him) fixed one Sa' of grain and one Dirham on every Jarib of grain. It appears that the land tax of these regions was Kharaj-e-Muwazzaf; money was taken in the treasury, not grain, fruit, vegetables, etc. Rather, for ages, this has been the practice of rulers in general lands. It is stated in Al-Hidayah:

Arabic	**Urdu Translation**
وفي ديارنا وظفوامن الدراہم فی الاراضی کلها وترك كذلك لان التقدير يجب ان يكون بقدر الطاقة من اى شئی كان۔[1]	In our region, Dirhams are fixed on all lands, and among the Turks too it is the same because it is necessary to fix the amount according to capacity, whatever it may be. (T)

So apparently, the land tax here should be understood as Kharaj-e-Muwazzaf. However, for lands where it is proven that during the time of the Islamic Sultanate—may Allah Almighty irrigate its eras—there was Kharaj-e-Muqasamah on it. Kharaj-e-Muwazzaf is unanimously on the landowner, and according to the Sahibayn (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad), Kharaj-e-Muqasamah is on the cultivator, while according to the Imam (Abu Hanifa), it is on the landowner, as in Durr and Shami (as it is in Durr and Shami. T). How much should be given? If the amount fixed during the Islamic era—may Allah Almighty irrigate its eras—is known, then it is obvious that they should give that much, subject to two conditions: Firstly, in Kharaj-e-Muwazzaf, wherever the amount fixed by the Commander of the Faithful Umar Farooq (may Allah be pleased with him) is reported, there should be no increase upon it, as no Sultan has the right to increase it according to the correct school of thought; if it is more, they should not give the excess. And where no amount is reported from the Commander of the Faithful, and in Kharaj-e-Muqasamah, it should not exceed half, as it is against justice; if it is more, they should give only half. Secondly, the payment of

that much must still be possible from that land, otherwise, it should be according to capacity.

Arabic	Urdu Translation
فی التنویر التصنیف عین الانصاف فلا یزاد علیہ اھ[2] فی ردالمحتار لا یزاد علیہ فیہ ولا فی	In Tanwir it is stated: Giving half is the essence of justice, therefore no increase should be made to it. (End) And in Radd al-Muhtar it is stated: No increase shall be made in it, nor in...

[1] Al-Hidayah, Book of Ushr and Kharaj, Al-Maktabat-ul-Arabiyyah, Karachi, 2/527 [2] Tanwir-ul-Absar, text of Durr-e-Mukhtar, Book of Ushr and Kharaj, Mujtabai Press, Delhi, 1/349

फतावा रज़विया जिल्द दहम

...और यदि ज़िम्मेदारी ऋण से व्याप्त हो, तो बिना भुगतान या माफी के सिर्फ इस आधार पर कि हकदार नहीं रहा, वह समाप्त नहीं होगा। बल्कि उसके वारिसों को दिया जाएगा। यदि वे भी न हों, तो फकीरों (निर्धनों) को देकर ज़िम्मेदारी से मुक्त होंगे। खराज में मूलतः फकीरों का हक न होना, ज़रूरत पड़ने पर उन्हें दिए जाने के विपरीत नहीं है, जैसा कि अन्य सभी ऋणों में होता है। (जैसा कि तमाम दीवानों में है। त) क्या दें? खराज दो प्रकार का है: खराज-ए-मुकासमा यानी बंटाई कि पैदावार का आधा, एक-तिहाई, एक-चौथाई या पांचवां हिस्सा तय हो; और खराज-ए-मुवज्जफ़ कि एक निश्चित मात्रा ज़िम्मे पर अनिवार्य कर दी जाए, चाहे वह रुपया हो, उदाहरण के लिए प्रति बीघा वार्षिक रुपया, जैसे अमीर-उल-मोमिनीन हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने अनाज के हर जरीब पर एक साअ अनाज और एक दिरहम तय फरमाया था। ज़ाहिर है कि इन क्षेत्रों का खराज 'मुवज्जफ़' ही था; बैतुल माल (राजकोष) में रुपया ही लिया जाता था, न कि अनाज, फल, सब्ज़ी आदि। बल्कि लंबे समय से सामान्य क्षेत्रों में सुल्तानों का यही नियम जान पड़ता है। हिदाया में फरमाया है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
وفي ديارنا وظفوامن الدرابم فى الاراضى كلها وترك كذلك لان التقدير يجب ان يكون بقدر الطاقة من اى شئى كان۔[1]	हमारे क्षेत्र में तमाम ज़मीनों पर दराहमि (सिक्कों) का निर्धारण किया जाता है, और तुर्कों के यहाँ भी यही है क्योंकि क्षमता के अनुसार मात्रा निर्धारित करना आवश्यक है चाहे वह जिस भी वस्तु से हो। (त)

तो ज़ाहिर तौर पर यहाँ का खराज 'मुवज्जफ़' ही समझना चाहिए। मगर जिस ज़मीन के बारे में यह प्रमाणित हो कि इस्लामी सल्तनत के समय में—अल्लाह तआला उसके युगों को हरा-भरा रखे—उस पर खराज-ए-मुकासमा था। खराज-ए-मुवज्जफ़ सर्वसम्मति से ज़मीन के मालिक पर है, और खराज-ए-मुकासमा 'साहिबैन' के निकट किसान पर है और 'इमाम' के निकट ज़मींदार पर है, जैसा कि 'दुर्र' और 'शामिया' में है। कितना दें? यदि मात्रा ज्ञात हो कि इस्लाम के ज़माने में—अल्लाह तआला उसके युगों को हरा-भरा रखे—क्या निर्धारित था, तो स्पष्ट है कि उतना ही दें, दो शर्तों के साथ: प्रथम, खराज-ए-मुवज्जफ़ में जहाँ-जहाँ अमीर-उल-मोमिनीन उमर फारूक (रज़ियल्लाहु अन्हु) द्वारा निर्धारित मात्रा वर्णित है, वहाँ उसमें वृद्धि न हो क्योंकि सही मज़हब (विचारधारा) में किसी सुल्तान को इसमें वृद्धि करने का अधिकार नहीं है; यदि अधिक हो तो अतिरिक्त न दें। और जहाँ अमीर-उल-मोमिनीन से कोई मात्रा वर्णित नहीं है, वहाँ और खराज-ए-मुकासमा में आधे से अधिक न हो क्योंकि यह न्याय के

विरुद्ध है; यदि अधिक हो तो आधा ही दें। द्वितीय, उतनी अदायगी उस ज़मीन से अब भी संभव हो, अन्यथा क्षमता को ध्यान में रखते हुए दें।

अरबी	उर्दू अनुवाद
فی التنویر التصنیف عین الانصاف فلا یزاد علیہ اھ[2] فی ردالمحتار لا یزاد علیہ فیہ ولا فی	तनवीर में है: आधा देना ही पूर्ण न्याय है, अतः इस पर वृद्धि न की जाए। और रद-उल-मुहतार में है: इसमें वृद्धि न की जाएगी, और न ही...

[1] अल-हिदाया, बाब अल-उश्र व अल-खराज, अल-मकतबा अल-अरबिया, कराची, 2/527 [2] तनवीर-उल-अबसार, मतन दुर्र-ए-मुख्तार, बाब अल-उश्र व अल-खराज, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 1/349

اور ذمہ دین سے مشغول ہو تو بے ادا یا ابراء صرف اس بنا پر کہ مستحق نہ رہا ساقط نہ ہوگا بلکہ اس کے ورثہ کو دیں گے وہ بھی نہ رہیں تو فقراء کو دے کر براءت ذمہ کریں گے خراج میں اصالۃً حق فقراء نہ ہونا ضرورۃً انھیں دئے جانے منافی نہیں کما فی سائر الدیون (جیسا کہ تمام دیون میں ہے۔ت) کیا دیں خراج دو قسم ہے: خراج مقاسمہ یعنی بٹائی کہ پیداوار کا نصف یا ثلث یا ربع یا خمس مقرر ہو اور خراج موظف کہ ایک مقدار معین ذمے پر لازم کردی جائے خواہ روپیہ، مثلاً سالانہ روپے بیگھہ جیسے امیر المومنین عمر رضی اللہ تعالٰی عنہ نے غلے کی ہر جریب پر ایک صاع غلہ اور ایک درہم مقرر فرمایا، ظاہر یہ ہے کہ بلاد کا خراج موظف ہی تھا، بیت المال میں روپیہ ہی لیا جاتا نہ کہ غلہ، میوہ، ترکاری وغیرہ۔ بلکہ مدتوں سے عامہ بلاد میں سلاطین کا یہی داب معلوم ہوتا ہے، ہدایہ میں فرمایا:

عربی متن	اردو ترجمہ
وفي ديارنا وظفوامن الدراہم فی الاراضی کلھا وترك کذلك لان التقدیر یجب ان یکون بقدر الطاقۃ من ای شئی کان۔[1]	ہمارے علاقہ میں تمام زمینوں پر دراہم کا تقرر کیا جاتا ہے، اور ترکوں کے ہاں بھی یہی ہے کیونکہ بقدر طاقت مقدار مقرر کرنا ضروری ہے چاہے وہ جس سے ہی ہو۔ (ت)

تو ظاہراً یہاں کا خراج موظف ہی سمجھنا چاہئے مگر جس زمین کی نسبت ثابت ہو کہ زمان سلطنت اسلام سقی اللہ تعالٰی عہد ہا میں اس پر خراج مقاسمہ تھا، خراج موظف بالاتفاق مالک زمین پر ہے اور خراج مقاسمہ صاحبین کے نزدیک مزارع پر امام کے نزدیک زمیندار پر کما فی الدر والشا میۃ (جیسا کہ در اور شامیہ میں ہے۔ت) کتنا دیں، اگر مقدار معلوم ہو کہ زمانہ اسلام میں، سقی اللہ تعالٰی

عہد ہا کیا مقرر تھا، جب تو ظاہر ہے کہ اسی قدر دیں دو شرط سے، اولاً: خراج موظف میں جہاں جہاں مقدار مقرر فرمودہ امیر المومنین عمر فاروق رضی اللہ تعالیٰ عنہ منقول ہے وہاں اس پر زیادت نہ ہو کہ مذہب صحیح میں اس پر اضافہ کسی سلطان کو نہیں پہنچتا، زائد ہو تو زیادت نہ دیں اور جہاں کوئی مقدار امیر المومنین سے منقول نہیں وہاں اور خراج مقاسمہ میں نصف سے زیادت نہ ہو کہ خلاف انصاف ہے زائد ہو تو نصف ہی دیں۔ ثانیاً: اتنے کی ادا اس زمین سے اب بھی ممکن ہو ورنہ بلحاظ طاقت دیں۔

عربی متن	اردو ترجمہ
فی التنویر التصنیف عین الانصاف فلا یزاد علیہ اھ[2] فی ردالمحتار لا یزاد علیہ فیہ ولا فی	تنویر میں ہے نصف دینا عین انصاف ہے لہذا اس پر اضافہ نہ کیا جائے اھ اور ردالمحتار میں ہے اس میں اضافہ

---

[1] الہدایہ باب العشر والخراج المکتبۃ العربیۃ کراچی ۲ / ۵۲۷ [2] تنویر الابصار متن در مختار باب العشر والخراج، مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۳۴۹

Vol. 10 Fatawa Razawiyya

[Table Header - Left: Arabic, Right: Urdu] Kharaj al-Muqasama nor in the Muwazzaf - as mentioned in Durr al-Mukhtar. Nor in the Muwazzaf on the amount fixed by Umar (may Allah be pleased with him) - as mentioned in al-Tanwir. And it shall be decreased from what was fixed if it (the land) cannot bear it - as mentioned in Radd al-Muhtar. It is stated in al-Nahr: it shall not exceed half, and it is appropriate that it should not be less than one-fifth (khumus), as stated by al-Haddadi. The non-reduction from one-fifth is not narrated [from previous authorities], so al-Haddadi mentioned it as an investigative discussion. However, al-Khayr al-Ramli said: This must be applied to the case where the land has the capacity. If the yield is small but the expenses are high, it should be reduced, as the obligation must vary according to the variation in expenses, just as in Ushri land - concisely. | It should not be done, nor in Kharaj al-Muqasama and Kharaj al-Muwazzaf. It is in Durr al-Mukhtar that the amount fixed for Kharaj al-Muwazzaf cannot be increased beyond what was fixed by our master Umar Farooq (may Allah be pleased with him). A reduction can be made in the fixed amount. It is in al-Tanwir that if there is no strength [capacity], a reduction can be made in the fixed amount. It is in Radd al-Muhtar that it is stated in al-Nahr that it cannot be made more than half. Haddadi said it is appropriate not to make it less than one-fifth. And not making it less than one-fifth is not narrated, so Haddadi mentioned it as an academic discussion. But Khayr al-Ramli said it is necessary to apply this to the case when the land has capacity, and if the area is small but the expenses are high, then it can be reduced because a difference in the obligation is necessary due to the difference in expenses, as it is in Ushri land - concisely. (T)

And if it is not known what was fixed in the Islamic state, then apparently in Kharaj al-Muqasama and Kharaj al-Muwazzaf not fixed by the Leader of the Believers Umar Farooq (may Allah be pleased with him), give half, and in the fixations of the Leader of the Believers, observe the same. In short, give the full amount everywhere, from which an increase was not permissible.

[Bottom Table Row] Because reduction was only established by the Imam's reduction, and it was not established, so it did not stand. Therefore, being thorough in this leads to certain discharge of responsibility, so this was the most cautious path. | Because the reduction would be by the Imam's action, and when that is not established, then the reduction in the duty will also not be established. So here, for certain discharge of responsibility, sufficiency will be on the fixed amount, and this will be more cautious, from the start.

1 Al-Inayah with Fath al-Qadir, Chapter of Ushr and Kharaj, Maktaba Nooria Razawiyya Sukkur, 5/286 2 Fath al-Qadir, Chapter of Ushr and Kharaj, Maktaba Nooria Razawiyya Sukkur, 5/286 3 Tanwir al-Absar, text of Durr al-Mukhtar, Chapter of Ushr, Majtabai Press Delhi, 1/139 4 Durr al-Mukhtar, Chapter of Ushr, Majtabai Press Delhi 1/139 5 Al-Hidayah, Book of Al-Kafalah, Yusufi Press Lucknow, 3/116

भाग 10 फ़तावा रज़विया

[तालिका हेडर - बायां: अरबी, दायां: उर्दू] खराज अल-मुकासमा और न ही मुवज्ज़फ़ में - जैसा कि दुर-अल-मुख्तार में है। और न ही उमर (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) द्वारा निर्धारित राशि से अधिक मुवज्ज़फ़ में - जैसा कि अल-तनवीर में है। और निर्धारित राशि में कमी की जा सकती है यदि (भूमि) उसे सहन न कर सके- जैसा कि रद अल-मुख्तार में है। अल-नहर में कहा गया है: यह आधे से अधिक नहीं होना चाहिए, और यह उचित है कि यह पांचवें हिस्से (खुमुस) से कम न हो, जैसा कि अल-हद्दादी ने कहा। पांचवें हिस्से से कम न करना वर्णित (रिवायत) नहीं है, इसलिए अल-हद्दादी ने इसे एक शोध चर्चा के रूप में उल्लेख किया। हालांकि, अल-खैर अल-रमली ने कहा: इसे उस स्थिति पर लागू किया जाना चाहिए जब भूमि में क्षमता हो। यदि पैदावार कम हो लेकिन खर्च अधिक हो, तो इसे कम किया जाना चाहिए, क्योंकि खर्च में अंतर के अनुसार दायित्व में भी अंतर होना आवश्यक है, जैसा कि उशरी भूमि में होता है - संक्षेप में। | नहीं किया जाना चाहिए, और न ही खराज अल-मुकासमा और खराज अल-मुवज्ज़फ़ में। दुर अल-मुख्तार में है कि खराज अल-मुवज्ज़फ़ के लिए निर्धारित राशि में उस राशि से अधिक वृद्धि नहीं की जा सकती जो हमारे स्वामी उमर फारूक (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) द्वारा निर्धारित की गई थी। निर्धारित राशि में कमी की जा सकती है। अल-तनवीर में है कि यदि क्षमता न हो तो निर्धारित राशि में कमी की जा सकती है। रद अल-मुख्तार में है कि नहर में कहा गया है कि इसे आधे से अधिक नहीं किया जा सकता, हद्दादी ने कहा कि उचित है कि इसे पांचवें हिस्से से कम न किया जाए। और पांचवें हिस्से से कम न करना वर्णित नहीं है, इसलिए हद्दादी ने इसे एक अकादमिक चर्चा के रूप में उल्लेख किया। लेकिन खैर रमली ने कहा कि इसे उस स्थिति पर लागू करना आवश्यक है जब भूमि में क्षमता हो, और यदि क्षेत्र कम हो लेकिन खर्च अधिक हो, तो इसे कम किया जा सकता है क्योंकि खर्चों में अंतर के कारण दायित्व में अंतर आवश्यक है, जैसा कि उशरी भूमि में होता है - संक्षेप में। (टी)

और यदि यह ज्ञात न हो कि इस्लामी राज्य में क्या निर्धारित था, तो स्पष्ट रूप से खराज अल-मुकासमा और खराज अल-मुवज्ज़फ़ में जो मोमिनों के अमीर उमर फारूक (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) द्वारा निर्धारित नहीं है, आधा दें और मोमिनों के अमीर के निर्धारणों में उसी का ध्यान रखें। संक्षेप में, हर जगह पूरी राशि दें, जिससे अधिकता जायज़ नहीं थी।

[निचली तालिका पंक्ति] क्योंकि कमी केवल इमाम की कमी से सिद्ध होती थी और वह सिद्ध नहीं हुई, इसलिए वह स्थिर नहीं हुई। अतः इसमें गहनता निश्चित रूप से उत्तरदायित्व से मुक्ति की ओर ले

जाती है, इसलिए यही सबसे अधिक एहतियाती रास्ता था। | क्योंकि कमी इमाम के कार्य से होगी और जब वह सिद्ध नहीं है, तो कर्तव्य में कमी भी सिद्ध नहीं होगी। अतः यहाँ उत्तरदायित्व से निश्चित मुक्ति के लिए निर्धारित राशि पर संतोष करना होगा, और यही अधिक एहतियाती होगा, शुरू से।

1 अल-इनायाह मा फतह अल-कादिर, उश्र और खराज का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 5/286 2 फतह अल-कादिर, उश्र और खराज का अध्याय, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 5/286 3 तनवीर अल-अबसार, दुर-अल-मुख्तार का पाठ, उश्र का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 1/139 4 दुर-अल-मुख्तार, उश्र का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली 1/139 5 अल-हिदायाह, अल-कफालाह की किताब, यूसुफी प्रेस लखनऊ, 3/116

पृष्ठ 242/836

خراج المقاسمة ولا في الموظف اھ في الدر المختار ولا في الموظف علی مقدار ماوظفه عمر رضی اللہ تعالٰی عنه اھ في التنویر و ینقص مما وظف ان لم تطلق اھ في ردالمختار قال في النهر لا یزید علی النصف وینبغي ان لا ینقص عن الخمس قاله الحدادی اھ وکان عدم التنقیص عن الخمس غیر منقول فذکره الحدادی بحثاً لکن قال الخیر الرملي یجب ان یحمل علی ما إذا کانت تطیق فلو کانت قلیلة الربع کثیرة المؤن ینقص اذ یجب ان یتفاوت الواجب لتفاوت المؤنة کما في ارض العشر اھ مختصراً۔ | نہ کیا جائے اور نہ ہی خراج مقاسمہ اور خراج موظف میں اھ در مختار میں ہے اور نہ ہی خراج موظف میں اس مقدار میں اضافہ کیا جا سکتا ہے جو سید نا عمر فاروق رضی اللہ تعالٰی عنہ نے مقررہ میں کمی کی جاسکتی ہے اھ تنویر میں ہے اگر طاقت نہ ہو تو مقررہ میں کمی کا جاسکتی ہے اھ ردالمختار میں ہے کہ نہر میں ہے کہ نصف سے زیادہ نہیں کیا جاسکتا ،حدادی نے کہا مناسب ہے خمس سے کم نہ کیا جائے اھ اور خمس سے کم نہ کرنا منقول نہیں تو حدادی نے اسے بطور بحث ذکر کیا ہے۔ لیکن خیر رملی نے کہا ہے کہ اسے اس صورت پر محمول کرنا ضروری ہے جب وہ زمین طاقت رکھتی ہو، اور اگر رقبہ کم ہو مگر اخراجات اس کے زیادہ ہوں تو پھر کم کیا جاسکتا ہے کیونکہ اخراجات کے تفاوت کی وجہ سے واجب میں تفاوت ضروری ہوتا ہے جیسا کہ عشری زمین میں ہے اھ مختصراً (ت)

اور اگر معلوم نہ ہو کہ سلطنت اسلام میں کیا معین تھا تو ظاہر اخراج مقاسمہ و خراج موظف غیر مقرر امیر المومنین عمر فاروق رضی اللہ تعالٰی عنہ میں، نصف دیں اور مقرراتِ امیر المومنین میں ،اسی کا لحاظ رکھیں، غرض ہر جگہ پوری مقدار دیں جس سے زیادت جائز نہ تھی۔

لان التنقیص انما کان یثبت بنقص الامام ولم یثبت فلم یثبت فکان الاستقصاء فیه فراغ الذمة یقینا فکان الحوط هذا کله | کیونکہ کمی امام کے کرنے سے ہوگی اور جب وہ ثابت نہیں تو وظیفہ میں کمی بھی ثابت نہ ہوگی تو یہاں یقینی فراغ ذمہ کے لیے مقرر پر اکتفاء ہوگا تو یہی احوط ہوگا، اول سے

1 العنایة مع فتح القدیر، باب العشر والخراج، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر، ۵/ ۲۸۶ 2 فتح القدیر، باب العشر والخراج، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر، ۵/ ۲۸۶ 3 تنویر الابصار متن درمختار، باب العشر ، مطبع مجتبائی دہلی، ۱/ ۱۳۹ 4 درمختار ، باب العشر، مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۳۹ 5 الهدایة ،کتاب الکفالة ، مطبع یوسفی لکھنؤ، ۳ / ۱۱۶

Fatawa Razawiya Volume 10

From the beginning of the discourse up to here is what this humble servant has understood as a matter of jurisprudence (tafaqquh), and I hope it is correct, God willing. If I am correct, it is from Allah alone, and I praise Him for it. If I have erred, it is from myself and from Satan, and I disassociate myself from it towards Allah. There is no power or strength except with Allah, the Most High, the Supreme.	**From the beginning of the discourse up to here is what this humble servant has understood as a matter of jurisprudence (tafaqquh), and I hope it is correct, God willing. If I am correct, it is from Allah alone, and I praise Him for it. If I have erred, it is from myself and from Satan, and I disassociate myself from it towards Allah. There is no power or strength except with Allah, the Most High, the Supreme. (T)**

The fixed Faruqi obligation (wazifa) per jarib annually is one sa' and one dirham on every kind of grain. On plots for 'tab', i.e., melons and watermelons, and gardens for cucumber, eggplant and the like, it is five dirhams. On dense orchards of grapes and dates where cultivation is not possible, it is ten dirhams. Beyond these, the same estimation of capacity applies, which can go up to half. Then, in these categories, the capacity of the land and power are considered. The tax should be paid based on what the land is capable of growing and what the person is capable of. For example, if it can grow grapes, then pay the tax for that even if wheat is sown; and if it is suitable for wheat, then pay its tax even if barley is sown. In any case, the tax will be collected only once a year, even if one cultivates four times a year or leaves it completely idle despite having the capacity. This jarib is in English yards (gaz) as prevalent in these regions (each of which is sixteen 16 girahs, and each girah is three 3 anguls), it is thirty-five square yards, i.e., 35 yards long and 35 yards wide. And a sa' is two hundred and seventy 270 tolas, i.e., two hundred and eighty-eight 288 English rupees in weight, which makes exactly three seers by the Rampur seer measure. And the value of ten 10 dirhams is 12/9 - 5/3 pies, i.e., two 2 rupees and twelve and three-quarter annas plus one-fifth of a paisa; for five dirhams it is 6/4 - 2/5 pies; and for one dirham it is 4/5 - 25/19 pies, i.e., 25/4 less than four and a half annas.

In Al-Durr al-Mukhtar it is mentioned that Hazrat Umar (may Allah be pleased with him) fixed for every jarib, which is sixty by sixty cubits (dhira') with a Kisra cubit (seven handfuls), one sa' of wheat or barley. (And the correct view is that it should be paid from whatever is grown in that land, as stated in Al-Kafi, Shurunbulaliya, and similarly in Al-Bahr) and one dirham of the best quality.

It is stated in Durr al-Mukhtar that Hazrat Umar (may Allah be pleased with him) fixed one sa' of wheat or barley for every jarib. A jarib is sixty by sixty cubits (dhira') in length and width, and each cubit consists of seven handfuls. The correct view is that the obligation (wazifa) should be paid from whatever is produced from that land, as stated in Al-Kafi, Shurunbulaliya, and similarly in Al-Bahr.

प्रवचन की शुरुआत से लेकर यहाँ तक वह है जो इस विनम्र सेवक ने न्यायशास्त्र (तफक्कुह) के मामले के रूप में समझा है, और मुझे आशा है कि यह सही होगा, यदि ईश्वर ने चाहा। यदि मैं सही हूँ, तो यह अकेले अल्लाह की ओर से है, और मैं इसके लिए उसकी स्तुति करता हूँ। यदि मैंने कोई गलती की है, तो वह मेरी ओर से और शैतान की ओर से है, और मैं इससे खुद को अल्लाह की ओर अलग करता हूँ। अल्लाह, जो सबसे ऊंचा और महान है, के अलावा कोई शक्ति या बल नहीं है।

प्रवचन की शुरुआत से लेकर यहाँ तक यह बातचीत फ़क़ीर ने तफ़क्कुह (न्यायशास्त्रीय समझ) के तौर पर की है और मैं उम्मीद करता हूँ कि इंशा अल्लाह यह सही होगी। अगर तो मैं सही हुआ तो अल्लाह वाहिद की तरफ़ से है और मैं इस पर अल्लाह तआला की हम्द बजा लाता हूँ, और अगर यह ग़लत है तो मेरी तरफ़ से और शैतान की तरफ़ से है और मैं इससे बेज़ारी का ऐलान करते हुए अपने अल्लाह के दामन में आता हूँ। व ला हौल व ला क़ुव्वत इल्ला बिल्लाहिल अलीयिल अज़ीम। (त)

प्रति जरीब प्रति वर्ष निर्धारित फारूकी दायित्व (वजीफा) हर प्रकार के अनाज पर एक साअ और एक दिरहम है। 'ताब' के लिए भूखंडों, यानी खरबूजे और तरबूज, और खीरा, बैंगन और इसी तरह के बगीचों पर, यह पाँच दिरहम है। अंगूर और खजूर के घने बागों पर जहाँ खेती संभव नहीं है, यह दस दिरहम है। इनके अलावा, क्षमता का वही अनुमान लागू होता है, जो आधे तक जा सकता है। फिर, इन श्रेणियों में, भूमि की क्षमता और शक्ति पर विचार किया जाता है। भूमि जो उगाने में सक्षम है और व्यक्ति जो करने में सक्षम है, उसके आधार पर कर (ख़राज) का भुगतान किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, यदि अंगूर उग सकते हैं, तो उसके लिए कर का भुगतान करें भले ही गेहूं बोया गया हो; और यदि यह गेहूं के लिए उपयुक्त है, तो उसका कर चुकाएं भले ही जौ बोया गया हो। किसी भी स्थिति में, कर वर्ष में केवल एक बार एकत्र किया जाएगा, भले ही कोई वर्ष में चार बार खेती करे या क्षमता होने के बावजूद इसे पूरी तरह से खाली छोड़ दे। यह जरीब इन क्षेत्रों में प्रचलित अंग्रेजी गज (प्रत्येक सोलह 16 गिरह का है, और प्रत्येक गिरह तीन 3 अंगुल का है) में है, यह पैंतीस वर्ग गज है, यानी 35 गज लंबा और 35 गज चौड़ा। और एक साअ दो सौ सत्तर 270 तोले का है, यानी वजन में दो सौ अठासी 288 अंग्रेजी रुपये, जो रामपुर सेर माप के अनुसार बिल्कुल तीन सेर बनता है। और दस 10 दिरहम का मूल्य 12/9 - 5/3 पाई है, यानी दो 2 रुपये पौने तेरह आने और पैसे का पांचवां

हिस्सा; पांच दिरहम के लिए यह 6/4 - 2/5 पाई है; और एक दिरहम के लिए यह 4/5 - 25/19 पाई है, यानी 25/4 कम साढ़े चार आने।

अल-दुर अल-मुख्तार में उल्लेख है कि हज़रत उमर (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने हर जरीब के लिए, जो साठ गुना साठ हाथ (धरा') का होता है, एक किसरा हाथ (सात मुट्ठी) के साथ, एक साअ गेहूं या जौ निर्धारित किया। (और सही विचार यह है कि उस भूमि में जो कुछ भी उगाया जाता है, उसी से भुगतान किया जाना चाहिए, जैसा कि 'अल-काफी', 'शुरुनबुलालिया' और इसी तरह 'अल-बहर' में कहा गया है) और सर्वोत्तम गुणवत्ता का एक दिरहम।

दुर-ए-मुख्तार में है कि हज़रत उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हु ने हर जरीब में एक साअ गंदम (गेहूं) या जौ मुक़र्रर फ़रमाए और जरीब लम्बाई और चौड़ाई में साठ-साठ ज़राअ का होता है और हर ज़राअ सात मुट्ठियों का होता है और सही यह है कि इस ज़मीन से जो कुछ पैदा हो रहा है उसी से वजीफ़ा अदा किया जाएगा जैसा कि काफ़ी, शरुनबुलालिया में और इसी की मिसाल बहर में है।

من اول الکلام الٰی ھنا مما اخذہ الفقیر تفقھا و ارجون یکون صوابا ان شاء اللہ تعالٰی فان اصبت فمن اللہ وحدہ وانا احمد اللہ علیہ وان اخطأت فمنی ومن الشیطٰن وانا ابرؤ الی اللہ منہ ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم۔

لے کر یہاں تک یہ گفتگو فقیر نے بطور تفقہ کی ہے اور میں امید کرتا ہوں کہ ان شاء اللہ یہ صواب ہوگی، اگر تو میں درست ہوا تو اللہ وحدہ کی طرف سے ہے اور میں اس پر اللہ کی حمد بجالاتا ہوں، اور اگر یہ غلط ہے تو میری طرف سے اور شیطان کی طرف سے ہے اور میں اس سے برات کا اعلان کرتے ہوئے اپنے اللہ کے دامن میں آتا ہوں ولاحول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم۔ (ت)

وظیفہ مقررہ فاروقیہ فی جریب سالانہ یہ ہے ہر قسم غلے پر اسی سے ایک صاع اور ایک درہم اور کہ طاب یعنی خربوزے تربوز کی پالیزوں، کھیری ککڑی بیگن وامثالہا کی باڑیوں پر پانچ درہم انگور و خرما کے گھنے باغوں پر، جن کے اندر زراعت نہ ہو سکے، دس درہم ان کے ماوراء میں وہی تقدیر طاقت ہے جس کی انتہا نصف تک، پھر ان اقسام میں حیثیت زمین و قدرت کا اعتبار ہے جو زمین جس چیز کے ہونے کی لیاقت رکھتی ہو اور یہ شخص اس پر قادر ہو اس کے اعتبار سے خراج ادا کرے مثلاً انگور ہو سکتا ہے تو انہیں خراج دے اگرچہ گیہوں بوئے ہوں، اور گیہوں کے قابل ہے تو اس کا خراج دے، اگرچہ جو بوئے ہوں ہر حال میں خراج سال بھر میں ایک ہی بار لیا جائے گا اگرچہ سال میں چار بار زراعت کرے یا باوصف قدرت بالکل معطل رکھ چھوڑے اور یہ جریب انگریزی گز سے کہ ان بلاد میں رائج ہے (جس کی مقدار سولہ ۱۶ گرہ ہے ہر گرہ تین ۳ انگل) پینتیس گز مسطح ہے یعنی ۳۵ گز طول ۳۵ گز عرض، اور صاع دو سو ستر ۲۷۰ تولے ہے یعنی انگریزی روپیہ سے دو سواٹھاسی ۲۸۸ روپیہ بھر کہ رامپور کے سیر سے پورے تین سیر

ہوئے اور دس ۱۰ درہم کے عص ۱۲/ ۹ - ۵/۳ پائی یعنی دو ۲ روپے پونے تیرہ آنے اور پانچواں حصہ پیسے کا پانچ درم کے عص ۶ / ۴ - ۲/۵ پائی ایک درم کے ۴ / ۵ - ۲۵/۱۹ پائی یعنی ۲۵/۴ کم ساڑھے چار آنے۔

فی الدر المختار وضع عمر رضی الله تعالٰی عنه لکل جریب هو ستون ذرا عافی ستین، بذراع کسریٰ (سبع قبضات) صاعاً من بر او شعیر (والصحیح انه مما یزرع فی تلك الارض کما في الکافي، شرنبلالیة ومثله فی البحر) ودرهماً من اجود

در مختار میں ہے کہ حضرت عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے ہر جریب میں ایک صاع گندم یا جو مقرر فرمائے اور جریب طولاً عرضاً ساٹھ ساٹھ ذراع کا ہوتا ہے اور ہر ذراع سات مٹھیوں کا ہوتا ہے اور صحیح یہ ہے اس زمین سے جو کچھ پیدا ہو رہا ہے اسی سے وظیفہ ادا کیا جائے گا جیسا کہ کافی، شرنبلالیہ میں اور اسی کی مثل بحر میں ہے

Volume 10 Fatawa Razviya

From currencies, one dirham will be mandatory (whose weight is seven mithqals, as it is in Zakat, according to Bahr). And for a jarib (a unit of area) of moist produce (which includes cucumber, gherkin, melon, eggplant, and other similar items), five dirhams. For a jarib of dense vineyards or date-palm groves (this condition applies to both), ten dirhams. And for those things for which Sayyiduna Umar (may Allah be pleased with him) did not fix any tribute (kharaj), such as saffron, and for an orchard where trees are scattered and cultivation underneath them is possible, the tribute will be according to the capacity, and the maximum limit of capacity is half of the produce, because paying half is the essence of fairness. End (shortened). Yes, the additions within the brackets from Radd al-Muhtar have been made by me. And it is stated in al-Durr that if someone, being capable of high-value crops, cultivates a lower-value one, e.g., saffron, then the tribute for the high-value crop will be applicable. This should be known, but no fatwa (legal ruling) should be given on it so that oppressors do not take advantage of it. In Radd al-Muhtar, referring to al-'Inaya, this has been countered by asking how hiding such a matter can be permissible? And if the oppressors take it, they are doing right because it is mandatory. The answer given is that if we give a fatwa on this, every oppressor will claim regarding every land that previously saffron used to be sown in it, even if...

1. Durr al-Mukhtar, Chapter on 'Ushr and Kharaj, etc., Mujtabai Press, Delhi, 1/349; Radd al-Muhtar, Chapter on 'Ushr and Kharaj, etc., Mustafa al-Babi, Egypt, 3/285-86.
2. Durr al-Mukhtar, Chapter on 'Ushr and Kharaj, etc., Mujtabai Press, Delhi, 1/350.

जिल्द दहम (दसवीं) फ़तावा रज़विया

मुद्राओं (नक़द) में से एक दिरहम अनिवार्य होगा (जिसका वज़न सात मिस्काल हो जैसा कि ज़कात में होता है, बह्र)। और हरी सब्ज़ियों (जो खीरा, ककड़ी, खरबूजा, बैंगन और ऐसी अन्य चीज़ें हैं) की एक जरीब (क्षेत्रफल की इकाई) पर पाँच दिरहम; अंगूर और खजूर के घने बाग़ों (यह शर्त दोनों के लिए है) में दस दिरहम हैं। और जिन चीज़ों के लिए सैयदुना उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने कोई राशि (ख़राज) निर्धारित नहीं की थी, जैसे केसर, और वह बाग़ जिसमें बिखरे हुए पेड़ हों और वहाँ खेती करना संभव हो, तो क्षमता के अनुसार ख़राज होगा और क्षमता की अंतिम सीमा आधी पैदावार है क्योंकि आधा अदा करना ही पूर्ण न्याय है। (संक्षिप्त)। हाँ, कोष्ठक के अंदर रद अल-मुह्तार से इज़ाफ़ा (वृद्धि) मेरी तरफ से की गई है। और दुर्र में है कि यदि कोई उच्च मूल्य वाली फसल उगाने में सक्षम होने के बावजूद निम्न मूल्य वाली फसल उगाता है, उदाहरण के लिए केसर, तो उस पर उच्च मूल्य वाली फसल का ख़राज लागू होगा। इसे जान तो लिया जाए लेकिन इस पर फतवा न दिया जाए ताकि अत्याचारी इसका लाभ न उठा सकें। रद अल-मुह्तार में 'इनाया' के हवाले से इसका खंडन किया गया है कि ऐसी बात को छिपाना कैसे जायज़ हो सकता है? और अगर अत्याचारी लेते हैं तो वे ठीक करते हैं क्योंकि वह वाजिब (अनिवार्य) है। इसका उत्तर यह दिया गया है कि यदि हम इस पर फतवा देते हैं, तो हर अत्याचारी हर ज़मीन के बारे में यह दावा करेगा कि इससे पहले इसमें केसर बोया जाता था, भले ही...

1. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल उश्र वल ख़राज आदि, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/349; रद अल-मुह्तार, बाबुल उश्र वल ख़राज आदि, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 3/285-86.
2. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल उश्र वल ख़राज आदि, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/350.

पृष्ठ 836 का 244

جلد دہم فتاوی رضویہ

النقود(وزن سبعة كما فی الزكوة بحر) ولجريب الرطبة (وهی القثاء والخيار والبطيخ والباذ نجان وما جری مجراه) خمسة دراهم ولجريب الكرم اوالنخل متصلة (قيد فيهما)ضعفهماوما ليس فيه توظيف عمر كزعفران وبستان فيها اشجار متفرقة يمكن الزرع تحتها طاقته وغاية الطاقة نصف الخارج لان التصنيف عين الانصاف اه' مختصرا مزيد امابين الاهلة من ردالمحتار ۔ وفی الدرلو زرع الاخص قادراعلی الاعلی كزعفران فعليه خراج الاعلی وهذا يعلم ولا يفتی به كيلا يتجرئ الظلمة۲ فی ردالمحتار عن العناية رد، بانه كيف يجوز الكتمان وانهم لو اخذواكان فی موضعه لكونه واجبا واجب بانا لوافتينا بذلك لادعی كل ظالم فی ارض ليس شانها ذلك انها قبل هذاكانت تذرع الزعفران فياخذ خراج

اور نقود میں سے ایک درہم لازم ہوگا (جس کا وزن سات مثقال ہو جیسا کہ زکوۃ میں ہوتا ہے، بحر) اور سبزیات (اور وہ کھیرا، تر، خربوزے، بینگن اور ایسی دیگر اشیاء) کی جریب میں پانچ دراہم، انگور اور خرما کے گھنے باغوں (یہ قید دونوں کے لیے ہے) میں دس درہم ہے، اور جس میں سیدنا عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے کوئی وظیفہ مقرر نہیں فرمایا مثلاً زعفران، اور وہ باغ جس میں متفرق درخت ہوں اور وہاں کاشت کرنا ممکن ہو تو طاقت کے مطابق وظیفہ ہوگا اور انتہائے طاقت نصف پیداوار ہے کیونکہ نصف ادا کرنا عین انصاف ہے اھ مختصراً، ہاں قوسین کے اندر ردالمحتار سے اضافہ میری طرف سے کیا گیا ہے، اور در میں ہے کہ اگر کسی نے اعلیٰ پر قادر ہوتے ہوئے ادنیٰ کو کاشت کیا مثلاً زعفران، اس پر اعلیٰ کا خراج ہوگا، یہ جان تو لیا جائے مگر اس پر فتویٰ نہ دیا جائے تاکہ ظالم اس سے فائدہ نہ اٹھائیں۔ ردالمحتار میں عنایہ کے حوالے سے یہ رد کیا گیا ہے کہ ایسی بات کا چھپانا کیسے جائز ہو سکتا ہے اور اگر ظالم لیتے ہیں تو وہ ٹھیک

کرتے ہیں کیونکہ وہ واجب ہے، اس کا جواب یہ دیا گیا ہے کہ اگر ہم اس پر فتویٰ دیتے ہیں تو ظالم ہر زمین کے بارے میں یہ دعویٰ کرے گا کہ اس سے پہلے اس میں زعفران بویا جاتا تھا اگرچہ

1 درمختار، باب العشر والخراج الخ، مطبع مجتبائی دہلی، ۱ /۳۴۹، ردالمحتار باب العشر والخراج الخ مصطفی البابی مصر ۳ /۸۶-۲۸۵ 2 درمختار باب العشر والخراج الخ مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۳۵۰،

Fatawa Razawiyyah, Volume 10

[Table content] Arabic Text: That is oppression and transgression. The wording of Al-Fath says: Scholars have stated that a Fatwa (legal ruling) should not be given based on this, as it would mean allowing oppressors to seize the wealth of Muslims. Every oppressor would claim that his land was suitable for cultivating saffron etc., and resolving such cases would be difficult. I say: When a person pays it himself and there is no collector, as is the case in our lands, then there is no such fear. Therefore, I have relied on what is there. It is stated in Al-Hidayah that if kharaji land (land subject to tax) is flooded, or the water supply is cut off, or a calamity destroys the crop, then no kharaj is due. However, if the owner leaves it idle, then kharaj is still due. Kharaj is not repeated if multiple harvests occur in a single year. By collection, and Allah (Glorified and Exalted) knows best.

Urdu Text: If it is not so, he will collect kharaj from it, and this will be oppression and transgression. The statement of Al-Fath is that the jurists have said that a fatwa will not be given based on this because in such a case, it will be necessary to give oppressors power over the property of Muslims and every oppressor will claim that this land was capable of cultivating saffron etc. and its solution is difficult. I said that the person who pays it himself and there is no collector, as is the case in our area, there is no such fear or concern in it, so here it will be relied upon. It is in Hidaya that if water prevails over kharaji land or water is cut off from it or some calamity destroyed the crop, there will be no kharaj on it, and if the owner kept the land idle____ then there will be kharaj on it. There will be no kharaj on production again in one year, briefly, and Allah Almighty is Glorified and Exalted and knows best (T).

Problem 87: From the village of Sarnian, District Bareilly, sent by Amir Ali Sahib Qadri, 2 Rajab 1331 AH. Zaid asks how he can sell the tenth part (Ushr) of mangoes during the blossoming season so that the sale is not forbidden (khabeeth).

Answer: The blossoming crop should be sold when the fruit has appeared and is of some use. Selling before that is not permissible. Ushr becomes obligatory when the fruit reaches the stage where there is no longer a fear of it rotting, drying up, or being ruined due to being unripe. Even if it is not yet ready for picking, whoever owns it at this stage is responsible for the Ushr. If the fruit reached this state while with the seller and then he sold it, the Ushr is upon the seller. And whoever is in this state...

Footnotes: 1. Radd al-Muhtar, Chapter of Ushr and Kharaj, Mustafa al-Babi, Egypt, 3/289. 2. Fath al-Qadir, Chapter of Ushr and Kharaj, Maktabah Nooria Razawiyyah,

Sukkur, 5/285. 3. Al-Hidayah, Chapter of Ushr and Kharaj, Al-Maktabah al-Arabiyyah, Karachi, 2/573. Page 245 of 836

फतावा रज़विया, जिल्द 10

[तालिका सामग्री] अरबी पाठ: वह ज़ुल्म और ज्यादती होगी। 'फतह' की इबारत यह है कि फ़ुकहा (धर्मशास्त्रियों) ने फ़रमाया है कि इसके साथ फतवा नहीं दिया जाएगा क्योंकि ऐसी सूरत में मुसलमानों के माल पर ज़ालिमों को मुसल्लत करना लाज़िम आएगा और हर ज़ालिम यह दावा करेगा कि यह ज़मीन ज़ाफ़रान (केसर) वग़ैरह की काश्त के काबिल थी और इसका हल मुश्किल है। मैंने कहा कि जो शख़्स खुद-ब-खुद अदा करे और वसूल करने वाला न हो, जैसा कि हमारे इलाके में है, उसमें ऐसा कोई ख़ौफ़ व अंदेशा नहीं है, इसलिए यहाँ इसी पर भरोसा किया जाएगा। हिदाया में है कि अगर ख़राजी ज़मीन पर पानी का ग़लबा हो गया या उससे पानी मुनकता (कट) हो गया या किसी आफत ने फसल खत्म कर दी तो उस पर ख़राज न होगा। और अगर मालिक ने ज़मीन को खाली रखा, तो उस पर ख़राज होगा। एक साल में दोबारा पैदावार पर ख़राज न होगा। अल्लाह तआला सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है (त)।

उर्दू पाठ: वह ऐसी न हो तो उस से ख़राज वसूल करेगा और यह ज़ुल्म व ज़्यादती होगी। फतह की इबारत यह है कि फ़ुक़हा ने फ़रमाया है कि इसके साथ फ़तवा नहीं दिया जाएगा क्योंकि ऐसी सूरत में मुसलमानों के माल पर ज़ालिमों को मुसल्लत करना लाज़िम आएगा और हर ज़ालिम यह दावा करेगा कि यह ज़मीन काश्त-ए-ज़ाफ़रान वग़ैरह के क़ाबिल थी और इसका हल मुश्किल है। मैंने कहा जो शख़्स ख़ुद-ब-ख़ुद अदा करे और वसूल करने वाला न हो, जैसा कि हमारे इलाके में है, इसमें ऐसा कोई ख़ौफ़ व अंदेशा नहीं है इसलिए यहाँ इसी पर एतमाद किया जाएगा। हिदाया में है कि अगर ख़राजी ज़मीन पर पानी का ग़लबा हो गया या इससे पानी मुनकता हो गया या किसी आफत ने फ़स्ल ख़त्म कर दी तो उस पर ख़राज न होगा और अगर मालिक ने ज़मीन को मोअत्तल (खाली) रखा____ तो उस पर ख़राज होगा। एक साल में दोबारा पैदावार पर ख़राज न होगा, एख़्तिसारन (संक्षेप में), और अल्लाह तआला सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है (त)।

मसला 87: मौज़अ सरनियाँ, ज़िला बरेली से, प्रेषक अमीर अली साहब कादरी, 2 रजब 1331 हिजरी। ज़ैद दरयाफ्त करता है कि आम की बहार (मंज़र) में किस सूरत से दसवां हिस्सा (उश्र) निकाल कर फरोख्त (बेच) कर सकता है जिससे बिक्री नाजायज़ (ख़बीस) न हो।

जवाब: बहार उस वक़्त बेचनी चाहिए जब फल ज़ाहिर हो जाएँ और किसी काम के काबिल हों, इससे पहले बेचना जायज़ नहीं। और उस वक़्त उसमें उश्र वाजिब होता है जब फल अपनी हद तक पहुँच

जाएँ कि अब कच्चे और अधूरे होने की वजह से उनके बिगड़ने, सूखने या नष्ट होने का अंदेशा न रहे, अगरचे अभी तोड़ने के काबिल न हुए हों। यह हालत जिसकी मिलकियत (स्वामित्व) में पैदा होगी, उसी पर उश्र है। अगर बेचने वाले के पास फल ऐसे हो गए थे, उसके बाद बेचे तो उश्र बेचने वाले पर है, और जो इस हालत...

फुटनोट्स: 1. रद-उल-मुह्तार, बाब-उल-उश्र वल-ख़राज, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 3/289. 2. फतह-उल-क़दीर, बाब-उल-उश्र वल-ख़राज, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 5/285. 3. अल-हिदाया, बाब-उल-उश्र वल-ख़राज, अल-मकतबा अल-अरबिया कराची, 2/573. पेज 245/836

ذلک وھو ظلم وعد وان اھـ[1] واللفظ للفتح قالو لا یفتی بھذا لما فیہ تسلط الظلمۃ علی اموال المسلمین اذید عی کل ظالم ان ارضہ تصلح لزراعۃ الزعفران ونحوہ وعلاجہ صعب اھـ[2] قلت والذی یؤدی بنفسہ ولا جابی کما فی بلادنا فلا یخشی ذلك فلذا عولت علی ما ھنالك وفی الھدایۃ ان غلب علی ارض الخراج الماء انقطع الماء عنھا اواصطلم الزرع آفۃ فلا خراج علیہ، وان عطلھا صاحبھا فعلیہ الخراج، ولا یتکرر الخراج بتکرر الخارج فی سنۃ اھـ[3] بالالتقاط، واللہ سبحانہ و تعالٰی۔

وہ ایسی نہ ہو تو اس سے خراج وصول کرے گا اور یہ ظلم و زیادتی ہوگی اھـ، فتح کی عبارت یہ ہے کہ فقہاء نے فرمایا ہے کہ اس کے ساتھ فتوٰی نہیں دیا جائے گا کیونکہ ایسی صورت میں مسلمانوں کے مال پر ظالموں کو مسلط کرنا لازم آئے گا اور ہر ظالم یہ دعوٰی کرے گا کہ یہ زمین کاشتِ زعفران وغیرہ کے قابل تھی اور اس کا حل مشکل ہے اہـ میں نے کہا جو شخص خود بخود ادا کرے اور وصول کرنے والا نہ ہو، جیسا کہ ہمارے علاقے میں ہے اس میں ایسا کوئی خوف و خدشہ نہیں اس لیے یہاں اسی پر اعتماد کیا جائیگا، ہدایہ میں ہے کہ اگر خراجی زمین پر پانی کا غلبہ ہوگیا یا اس سے پانی منقطع ہوگیا کسی آفت نے فصل ختم کردی تو اس پر خراج نہ ہوگا اور اگر مالک نے زمین کو معطل رکھا____ تو اس پر خراج ہوگا۔ ایک سال میں دوبارہ پیداوار پر خراج نہ ہوگا اھـ اختصاراً، واللہ تعالٰی سبحانہ و تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۸۷: از موضع سرنیاں ضلع بریلی مرسلہ امیر علی صاحب قادری ۲ رجب ۱۳۳۱ھ زید دریافت کرتا ہے کہ آم کی بہار میں کس صورت سے دسواں حصہ نکال کر فروخت کرسکتا ہے جس سے فروخت خبیث نہ ہو۔

الجواب: بہار اس وقت بیچنی چاہئے جب پھل ظاہر ہوجائیں اور کسی کام کے قابل ہوں، اس سے پہلے بیع جائز نہیں اور اس وقت اُس میں عشر واجب ہوتا ہے پھل اپنی حد کو پہنچ جائیں کہ اب کچے اور نا تمام ہونے کے باعث ان کے بگڑ جانے، سوکھ جانے، مارے جانے کا اندیشہ نہ رہے اگر چہ ابھی توڑنے کے قابل نہ ہوئے ہوں، یہ حالت جس کی ملک میں پیدا ہوگی اُسی پر عشر ہے، بائع کے پاس پھل ایسے ہو گئے تھے اُس کے بعد بیچے تو عشر بائع پر ہے، اور جو اس حالت

1: رد المحتار باب العشر والخراج مصطفی البابی مصر ۳/ ۲۸۹ 2: فتح القدیر، باب العشر والخراج مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۵/ ۲۸۵ 3: الہدایۃ، باب العشر والخراج، المکتبۃ العربیۃ کراچی ۲/

Fatawa Razawiyya, Volume 10

...before reaching maturity, sold as raw, and they reach the buyer in this state, then the 'Ushr' (tithe) is upon the buyer; this same rule applies exactly to crops. And Allah Almighty knows best.

Zakat on Animals

Issue 88: 19 Muharram al-Haram 1322 AH What do the scholars of the religion say about this issue: whether Zakat should be paid on the following animals which are for farming purposes and not for trade, and graze in the forest for the greater part of the year, or not? Please clarify and be rewarded. Details: Bulls 18, cows 21, 2-year-old calves 13, calves under one year 3, buffaloes (female) 2, buffaloes over two years 2, buffalo calves under one year 4, buffaloes (male) 6. Total 76 heads.

The Answer: Camels, cows, buffaloes, goats, sheep—male or female or both mixed—when they reach the taxable threshold (Nisab: 5 for camels, 30 for cows/buffaloes, 40 for sheep/goats) and are not kept for seeding, plowing, carrying loads, or eating, but rather are free from all essential needs and kept solely for milk, breeding, or increasing value, or for hobbyist rearing and fattening, and for the majority of the year they depend on free grazing in the forest, and a full year passes over them, and at the time of the full year all those animals are of one kind—meaning all camels, or all cows/buffaloes, or all sheep/goats—and are not less than one year old, but rather at least one among them has completed a full year even if it is just one; then by the gathering of these five conditions, it will be obligatory to give Zakat on them, otherwise not. In Zakat, cows and buffaloes are considered one kind, and their Zakat calculation is that there is nothing on less than thirty; on thirty, one one-year-old calf, then this remains obligatory up to sixty-eight; on sixty (being a sum of two thirties), up to seventy-eight, two one-year-old calves; on seventy (being a combination of one thirty and one forty), up to seventy-nine, one one-year-old calf and one two-year-old calf; on eighty (being two forties), up to eighty-nine, two two-year-old calves; on ninety (being three thirties), up to ninety-nine, three one-year-old calves; on a hundred (being two thirties and one forty), up to one hundred and nine, two one-year-old calves and one two-year-old calf; on one hundred and ten (being one thirty and two forties), up to one hundred and nineteen, one one-year-old calf and two two-year-old calves; on one hundred and twenty, whether you consider it four thirties or three forties, up to one hundred and twenty-nine, whether one gives four one-year-old calves or three two-year-old calves. By this analogy, for every thirty, one one-year-

old calf, and for every forty, one two-year-old calf will become mandatory, and the single units from one to nine between the tens will all be exempt. If cows and buffaloes are mixed, then a one-year-old or two-year-old calf of whichever kind is greater in number will be taken, and if equal...

फतावा रज़विया, जिल्द दहम

...पहुंचने से पहले कच्चे बेच डाले और इस हालत पर खरीदार के पास पहुंचे तो उश्र खरीदार पर है, बिल्कुल यही हुक्म खेती का है, वल्लाह तआला आलम।

जानवरों की ज़कात

मसला 88: 19 मुहर्रमुल हराम 1322 हिजरी धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि निम्नलिखित जानवरों पर जो खेती के उद्देश्य से हैं और व्यापार के उद्देश्य से नहीं हैं और वर्ष के अधिकांश भाग में जंगल में चरते हैं, क्या उन पर ज़कात देना अनिवार्य है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें। विवरण: बैल 18, गाय 21, 2 साल के गाय के बच्चे 13, एक साल से कम के बच्चे 3, भैंस 2, दो साल से अधिक की भैंस 2, एक साल से कम के भैंस के बच्चे 4, भैंसे 6। कुल 76 रास।

उत्तर: ऊंट, गाय, भैंस, बकरी, भेड़ - नर हों या मादा या दोनों मिश्रित, जब निसाब (न्यूनतम सीमा) की मात्रा तक हों (ऊंट में पांच, गाय-भैंस में तीस, भेड़-बकरी में चालीस है) और बुवाई, जोताई, बोझ ढोने, खाने के लिए न रखे गए हों बल्कि सभी मूल आवश्यकताओं से मुक्त केवल दूध या वंश वृद्धि या मूल्य बढ़ने के लिए पाले जाते हों या शौक के लिए पालन-पोषण और मोटा करने के लिए हों और वर्ष का अधिकांश भाग जंगल में स्वतंत्र चरने पर निर्भर करते हों और उन पर पूरा वर्ष व्यतीत हो जाए और पूरे वर्ष के समय वे सभी जानवर एक प्रकार के हों, यानी सभी ऊंट या सभी गाय-भैंस या सभी भेड़-बकरी एक वर्ष से कम के न हों, बल्कि उनमें से कोई एक वर्ष का भी हो, भले ही वह एक ही हो; तो इन पांचों बातों के संयोजन से उनकी ज़कात देना अनिवार्य होगा, अन्यथा नहीं। ज़कात में गाय और भैंस एक ही प्रकार के हैं और उनकी ज़कात की गणना यह है कि तीस से कम पर कुछ नहीं, तीस पर एक एक-वर्षीय बच्चा, फिर अड़सठ तक यही अनिवार्य रहेगा, साठ पर जो दो तीस का योग है, अठहत्तर तक दो एक-वर्षीय बच्चे, सत्तर पर जो एक तीस और एक चालीस का योग है, उन्यासी तक एक एक-वर्षीय बच्चा और एक दो-वर्षीय बच्चा, अस्सी पर जो दो चालीस है, निवासी तक दो दो-वर्षीय बच्चे, नब्बे पर जो तीन तीस हैं, निन्यानवे तक तीन एक-वर्षीय बच्चे, सौ पर जो दो तीस और एक चालीस है, एक सौ नौ तक दो एक-वर्षीय बच्चे और एक दो-वर्षीय बच्चा, एक सौ दस पर जो एक तीस और दो चालीस है, एक सौ उन्नीस तक एक एक-वर्षीय बच्चा और दो दो-वर्षीय बच्चे, एक सौ बीस पर चाहे चार तीस समझ लें या तीन चालीस, एक सौ उनतीस तक चाहे चार एक-वर्षीय बच्चे दे या तीन दो-वर्षीय बच्चे। इसी अनुमान पर हर तीस पर एक एक-वर्षीय बच्चा और हर चालीस पर एक

दो-वर्षीय बच्चा अनिवार्य होता जाएगा और दहाइयों के बीच जो इकाइयां नौ तक आएंगी वे सब माफ होंगी। और यदि गाय-भैंस मिश्रित हों, तो गिनती में जो अधिक हों, उसी का एक-वर्षीय या दो-वर्षीय बच्चा लिया जाएगा, और यदि बराबर...

تک پہنچنے سے پہلے کچے بیچ ڈالے اور اس حالت پر مشتری کے پاس پہنچے تو عشر مشتری پر ہے بعینہ یہی حکم کھیتی کا ہے واللہ تعالٰی اعلم۔

جانوروں کی زکوٰۃ

مسئلہ ۸۸: ۱۹ محرم الحرام ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جانور انِ حسبِ ذیل پر جو کہ بغرضِ کاشتکاری ہیں اور تجارت کی غرض سے نہیں ہیں اور سال میں زیادہ حصہ جنگل میں چرتے ہیں ان پر زکوٰۃ دینی چاہئے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔ تفصیل : بیل ۱۸، گائے ۲۱، بچہ گائے ۲ سال کے ۱۳، بچہ اندر ایک سال ۳، بھینس ۲، بھینس زائد از دو سال ۲، بچہ بھینس کم از ایک سال ۴، بھینسے ۶۔ کل ۷۶ راس۔

الجواب : اونٹ، گائے، بھینس، بکری، بھیڑ نر خواہ مادہ خواہ دونوں مختلط، جبکہ قدرِ نصاب ہوں (کہ اونٹ میں پانچ، گائے بھینس میں تیس، بھیڑ بکری میں چالیس ہے) اور بونے، جوتنے، لادنے، کھانے کے لئے نہ رکھے گئے ہوں بلکہ تمام حاجاتِ اصلیہ سے فارغ صرف دُودھ یا نسل یا قیمت بڑھنے کے لئے پالے جاتے یا شوقیہ پرورش و فربہی کے واسطے ہوں اور سال کا اکثر حصہ جنگل میں چُھوٹے ہوئے چرنے پر اکتفا کرتے ہوں اور اُن پر سال پورا گذرے اور تمامی سال کے وقت وہ سب جانور ایک نوع کے یعنی سب اونٹ یا سب گائے بھینس یا سب بھیڑ بکری ایک سال سے کم کے نہ ہوں بلکہ اُن میں کوئی ایک سالِ کامل کا بھی ہو اگرچہ ایک ہی ہو تو ان پانچوں باتوں کے اجتماع سے ان کی زکوٰۃ دینی فرض ہوگی ورنہ نہیں۔ زکوٰۃ میں گائے بھینس ایک ہی نوع ہیں اور ان کا حساب زکوٰۃ یہ ہے کہ تیس سے کم پر کچھ نہیں، تیس پر ایک بچہ یکسال کا، پھر

اڑسٹھ تک یہی واجب رہے گا، ساٹھ پر کہ دو تیس کا مجموعہ ہے، اڑہتر تک دو بچے ایک سالہ، ستر پر کہ ایک تیس اور ایک چالیس کا مجموعہ ہے۔ اُناسی تک ایک بچہ ایک سالہ ایک دوسالہ، اسی پر کہ دو چالیس ہے نواسی تک دو بچے دوسالہ، نوے پر کہ تین تیس ہیں ننانوے تک تین بچے ایک سالہ، سو پر کہ دو تیس اور ایک چالیس ہے ایک سو نو تک دو بچے ایک سالہ ایک دوسالہ، ایک سو دس پر کہ ایک تیس دو چالیس ہے ایک سو انیس پر ایک بچہ یکسالہ دو دوسالہ، ایک سو بیس پر کہ چاہے چار تیس سمجھ لو چاہے تین چالیس ایک سو انتیس تک چاہے چار بچے ایک سالہ دے چاہے تین بچے دوسالہ۔ اسی قیاس پر ہر تیس پر ایک بچہ یکسالہ، اور ہر چالیس پر ایک بچہ دوسالہ لازم آتا جائے گا اور دہائیوں کے بیچ میں جو اکائیاں نو تک آتی جائینگی سب معاف ہوں گی، اور گائے بھینس مخلوط ہوں تو جو گنتی میں زیادہ ہو اُسی کا بچہ یک سالہ یا دوسالہ لیں گے، اور برابر

Volume 2 Fatawa Razawiyya

...if they are mixed, then the lower quality of the superior kind or the superior quality of the inferior kind will be taken. Similarly, in the case of sheep and goats being mixed, for example, if a person has fifteen cows and fifteen buffaloes, among which there are several offspring of one year each of both kinds, some being fatter, some thinner, and some average. Where a cow calf is considered more valuable, the thinnest among those one-year-old calves or the fattest buffalo calf will be taken. Conversely, where a buffalo calf is more precious, the thinnest among its one-year-old calves or the fattest cow calf will be given. It is stated in Tanwir al-Absar and Durr al-Mukhtar:

(Arabic Text)

(The Saimah is that which suffices by grazing for the majority of the year for the purpose of milk, breeding) and fatness. It is in al-Badai': if he marked them for meat, there is no Zakat, just as if he marked them for carrying loads or riding. If for trade, then there is Zakat on trade (so if he feeds them for half [the year], they are not Saimah), thus there is no Zakat due to doubt in the cause[1] (The Nisab for cows and buffaloes) (is thirty Saimah animals, and for them is one 'Tabee' of one year) complete (or 'Tabee'ah') female (and for forty is a 'Musinn' of two years or 'Musinnah') and there is nothing on what is above that (until sixty, then for it is double what is for thirty) and upon this is the fatwa (then for every thirty is a 'Tabee' and for every forty is a 'Musinnah' except when they overlap like one hundred and twenty, then one has the choice between four 'Tabee's and three 'Musinnah's, and so on)[2] (and

(Urdu Translation/Explanation)

A Saimah is a quadruped that spends most of the year grazing outside. If someone has kept such an animal for milk, breeding, and ghee. It is in al-Badai' that if it is for meat, then there is no Zakat, just as if someone kept it for carrying loads or riding, then there is no Zakat. If it is for trade, then there will be Zakat on it. (If fodder was provided for half the year, then that animal will not be a Saimah). There will be no Zakat in it because there is doubt in the cause. (The Nisab for cow/buffalo is thirty, among them (Tabee) one complete year's [calf] will be obligatory) (or Tabee'ah) its female (and in forty, one Musinn of two years or Musinnah). There is nothing on additional [animals] above this, (up to sixty, then at sixty, double of what was for thirty is obligatory and the fatwa is on this). Then for every thirty, there will be one Tabee and for every forty, one Musinnah. But in this case, when overlapping occurs, for example, the number becomes one hundred and twenty, then there is a choice

(Arabic Text)	(Urdu Translation/Explanation)
there is nothing for working animals and burden-bearers) with two fatha's, [referring to] offspring.	to give four Tabee's or three Musinnahs. Similarly, the matter proceeds further (those used for labor and toil...).

[1] Durr al-Mukhtar, Bab al-Saimah, Mujtabai Press Delhi, 1/131 [2] Durr al-Mukhtar, Bab Zakat al-Baqar, Mujtabai Press Delhi, 1/132

...हों तो उनमें जो उच्च श्रेणी के हैं, उनका निम्न लिया जाएगा या निम्न का उच्च। इसी प्रकार भेड़ और बकरी के मिश्रित होने में, उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति के पास पन्द्रह-पन्द्रह गायें और भैंसें हैं जिनमें दोनों प्रकार के एक-एक वर्ष के कई बच्चे हैं, कोई अधिक मोटा, कोई दुबला, कोई मध्यम, तो जहाँ गाय का बच्चा अधिक मूल्यवान समझा जाता हो, तो उन एक वर्षीय बच्चों में सबसे दुबला या भैंस के एक वर्षीय बच्चों में सबसे मोटा लिया जाएगा, और जहाँ भैंस का बच्चा अधिक कीमती हो तो उसके एक वर्षीय बच्चों में सबसे दुबला या गाय के एक वर्षीय बच्चों में सबसे मोटा दिया जाएगा। तनवीर अल-अबसार और दुर्र-ए-मुख्तार में है:

(अरबी पाठ)

(साहिमा वह चौपाया है जो दूध, प्रजनन और चर्बी के उद्देश्य से वर्ष का अधिकांश भाग चरकर गुजारा करे)। अल-बदाई' में है: यदि उन्हें मांस के लिए रखा गया हो तो ज़कात नहीं है, जैसा कि बोझ ढोने या सवारी के लिए रखा हो। यदि व्यापार के लिए है तो उस पर व्यापार की ज़कात होगी (अतः यदि उन्हें वर्ष के आधे भाग चारा खिलाया गया, तो वे साहिमा नहीं होंगे), इसलिए कारण में संदेह होने पर ज़कात नहीं होगी[1] (गायों और भैंसों का निसाब) (तीस साहिमा पशु हैं और उनमें एक 'तबीअ' एक वर्ष का) पूर्ण (या 'तबीआ') मादा (और चालीस में एक 'मुसिन्न' दो वर्ष का या 'मुसिन्ना') और इससे अधिक पर कुछ नहीं (साठ तक, फिर साठ में तीस का दोगुना है) और इसी पर फ़तवा है (फिर हर तीस पर एक तबीअ और हर चालीस पर एक मुसिन्ना होगा, सिवाय इसके जब वे आपस में मिल जाएँ जैसे एक सौ बीस, तो चार तबीअ या तीन मुसिन्ना देने

(उर्दू अनुवाद/व्याख्या)

साहिमा वह चौपाया है जो वर्ष का अधिकांश भाग बाहर चरकर गुजारा करे, यदि किसी ने ऐसा पशु दूध, प्रजनन और घी के लिए रखा हो। अल-बदाई' में है कि यदि मांस के लिए हो तो ज़कात नहीं, जैसा कि यदि किसी ने बोझ लादने या सवारी के लिए रखा तो ज़कात नहीं। यदि व्यापार के लिए है तो उसमें ज़कात होगी (यदि आधा वर्ष चारा डाला तो वह पशु साहिमा न होगा)। इसमें ज़कात न होगी क्योंकि कारण में संदेह है। (गाय-भैंस (का निसाब) तीस है, उनमें (तबीअ) एक पूर्ण वर्ष का [बछड़ा] अनिवार्य होगा) (या तबीआ) उसकी मादा (और चालीस में एक मुसिन्न दो वर्ष या मुसिन्ना)। इसके ऊपर वृद्धि में कुछ भी नहीं है, (साठ तक, फिर साठ पर तीस में जो कुछ था उसका दोगुना अनिवार्य है और इसी पर फ़तवा है)। फिर हर तीस पर एक तबीअ और हर चालीस पर एक मुसिन्ना होगा। लेकिन इस स्थिति में जब संख्या का ओवरलैप हो जाए, उदाहरण के लिए संख्या एक

(अरबी पाठ)	(उर्दू अनुवाद/व्याख्या)
का विकल्प है, और इसी तरह आगे है)[2] (और मेहनत करने वाले और भार ढोने वाले पशुओं पर कुछ नहीं है) दो फतह के साथ, [अर्थात्] संतान।	सौ बीस हो गई तो अब विकल्प है कि चार तबीअ दे दे या तीन मुसिन्ना, इसी तरह आगे मामला है (मेहनत और मशक्कत लेने वाले...)

[1] दुर्र-ए-मुख्तार, बाब अल-साहिमा, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 1/131 [2] दुर्र-ए-मुख्तार, बाब ज़कात अल-बक़र, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 1/132

पृष्ठ 836 का 247

ہوں تو ان میں جو قسم اعلیٰ ہے اس کا ادنیٰ لیا جائے گا یا ادنیٰ کا اعلیٰ۔ یونہی بھیڑ بکری مخلوط ہونے میں، مثلاً ایک شخص کے پاس پندرہ پندرہ گائے بھینسیں ہیں جن میں ایک ایک سال کے متعدد بچے دونوں قسم کے ہیں، کوئی زیادہ فربہ کوئی ہلکا کوئی متوسط، تو جہاں گائے کا بچہ زیادہ قیمتی سمجھا جاتا ہو تو ان ایک سالہ بچوں میں سب سے ہلکا یا بھینس کے ایک سالہ بچوں میں سب سے فربہ لیا جائے گا، اور جہاں بھینس کا بچہ بیش قیمت ہو تو اس کے ایک سالہ بچوں میں سب سے ہلکا یا گائے کے ایک سالہ بچوں میں سب سے فربہ دیا جائے گا۔ تنویر الابصار ودر مختار میں ہے :

(عربی متن)	(اردو ترجمہ و تشریح)
(السائمة المكتفية بالرعى اكثر العام لقصد الدر والنسل) والسمن، في البدائع لواسماها للحم فلا زكوة كما لواسما للحمل والركوب، ولو للتجارة ففيها زكوة التجارة (فلو علفها نصفه لا تكون سائمة) فلا زكوة للشك في الموجب[1] (نصاب البقر والجاموس) (ثلثون سائمة وفيها تبيع ذوسنة) كاملة (اوتبيعة) انثاه (وفى اربعين مسن ذو سنتين او مسنة) ولا شئ فيما زاد (الى ستين ففيها ضعف ما فى ثلثين)	سائمہ وہ چوپایہ ہے جو سال کا اکثر حصہ باہر چر کر گزارا کرے، اگر ایسا جانور کسی نے دُودھ، نسل اور گھی کے لیے رکھا ہو، بدائع میں ہے کہ اگر گوشت کے لیے ہو تو زکوۃ نہیں، جیسا کہ اگر کسی نے بوجھ لادنے یا سواری کے لیے رکھا تو زکوۃ نہیں، اگر تجارت کیلئے ہے تو اس میں زکوۃ ہوگی (اگر نصف سال چارہ ڈالا تو وہ جانور سائمہ نہ ہوگا) اس میں زکوۃ نہ ہوگی کیونکہ موجب میں شک ہے (گائے بھینس (کا نصاب) تیس ہے ان میں (تسیع) ایک کامل سال کا واجب ہوگا) (یا تبیعہ) اسکی مونث (اور چالیس میں ایک مسن دو سال یا ایک

(عربی متن)	(اردو ترجمہ و تشریح)
وعليه الفتوى (ثم فی کل ثلثین تبیع و فی کل اربعین مسنة الا اذا تداخلا کمائة وعشرین فیخیر بین اربع اتبعة وثلاث مسنات وهکذا)[2] (ولا شئ فی عوامل وحمل) بفتحتین ولد	مسنہ) اس پر اضافہ میں کوئی شئی نہیں، (ساٹھ تک پھر ساٹھ پر تیس میں جو کچھ تھا اس کا دو گنا لازم ہے اور اس پر فتویٰ ہے) پھر ہر تیس پر ایک تبیع اور ہر چالیس پر ایک مسنہ ہوگا مگر اس صورت میں جب تداخل ہوجائے مثلاً تعداد ایک سو بیس ہو گئی تو اب اختیار ہے چار تبیع دے دے یا تین مسنے، اسی طرح آگے معاملہ ہے (محنت ومشقت لینے والے

[1] در مختار باب السائمہ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۳۱ [2] در مختار باب زکوۃ البقر ، مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۳۲

Volume 10 Fatawa Razawiyya

[Section 1] Arabic: Ash-Shat (wa-Faseel) the offspring of a camel (wa-'Ajool) matching the weight of Sunoor (cat), the calf of a cow. The situation is that all the adults die and the year is completed on their young offspring (then there is no zakat in following) unless there is an adult, even if only one, then zakat will be due in following it. And (no zakat is due) in the 'Afw (pardonable excess), which is what is between the nisabs in all types of wealth. (Summary, selected).

Urdu: There is no Zakat on young animals, goat kids, camel calves, and cow calves. This scenario occurs when the adult animals die and the lunar year is completed while only the young offspring remain (then no Zakat is due). However, if adults are present, Zakat will be due by following them, even if there is only one adult. There is no Zakat on 'Afw', which refers to the portion of wealth between two Nisabs (thresholds) in all types of assets. (Summary) (T)

[Section 2] In Radd al-Muhtar it is stated: Arabic: The buffalo is a species of cow as stated in al-Maghrib. Therefore, it is like the cow regarding Zakat, sacrifice (Udhiya), and usury (Riba). The Nisab of cows is completed by it. Zakat is taken from the majority type. When equal, it is taken from the lowest of the high quality, or the highest of the low quality. Nahr. Based on this ruling are Bukhti and Arabi camels, sheep, and goats. Ibn Malik. 2

Urdu: Buffalo is a species of cow, as mentioned in 'Maghrib'. Therefore, it will fall under the same ruling as a cow for Zakat, sacrifice, and usury. The Nisab (minimum amount for Zakat) of cows can be completed with buffaloes. If cows are predominant, Zakat will be collected from them. If they are equal in number, the lower quality of the higher grade or the higher quality of the lower grade will be taken. Nahr. Bukhti and Arab camels, sheep, goats, etc., follow the same ruling. Ibn Malik. (T)

[Section 3] In the same [book] it is stated: Arabic: If the Nisab consists of sheep, the due amount is taken from sheep, even if there are goats. If the Nisab consists of goats, it is taken from goats, even if there are sheep. If it consists of both, then the majority is considered. If they are equal, then from whichever one wishes. Jauharah. That is, the lower of the higher grade or the higher of the lower grade will be given. As we have mentioned before. 3

Urdu: If the Nisab is of sheep, then sheep should be collected. If the Nisab is of goats, then goats will be taken. If the Nisab is comprised of both, then the dominant species

will be considered. If both are equal, you may take from whichever you choose. Jauharah. Meaning, either the lowest quality of the superior grade or the highest quality of the inferior grade will be taken. As we have explained before. (T)

Footnotes: 1 Durr-e-Mukhtar, Chapter of Zakat on Sheep, Mujtabai Press, Delhi, 1/133. 2 Radd al-Muhtar, Chapter of Zakat on Cows, Mustafa al-Babi, Egypt, 19/2. 3 Radd al-Muhtar, Chapter of Zakat on Sheep, Mustafa al-Babi, Egypt, 20/2.

जिल्द 10 फतावा रज़विया

[अनुभाग 1] अरबी: अल-शात (व-फसील) ऊंटनी का बच्चा (व-'अजूल) सुनूर के वजन के बराबर गाय का बच्चा। इसकी सूरत यह है कि सब बड़े मर जाएं और साल उनके छोटे बच्चों पर पूरा हो (तो अब ज़कात नहीं है) मगर बड़े मौजूद हों तो उनके अनुयायियों के रूप में ज़कात होगी, चाहे बड़ा एक ही हो। और 'अफ़व' (छूट) में ज़कात नहीं है, और यह सभी संपत्तियों में निसाबों (सीमाओं) के बीच के हिस्से को कहा जाता है। (सारांश)।

उर्दू: जानवरों, बकरी के बच्चों, ऊंटनी के बच्चों और गाय के बच्चों में ज़कात नहीं है। इसकी सूरत यह है कि बड़े जानवर मर जाते हैं और साल उनके छोटे बच्चों पर पूरा होता है (तो अब ज़कात नहीं है)। मगर इस सूरत में कि बड़े मौजूद हों तो उनके अनुयायियों के रूप में ज़कात होगी, चाहे बड़ा एक ही हो। और 'अफ़व' में ज़कात नहीं है, और यह सभी संपत्तियों में निसाबों के बीच के हिस्से को कहा जाता है। (सारांश)। (त)

[अनुभाग 2] रद-अल-मुह्तार में है: अरबी: भैंस गाय की एक किस्म है जैसा कि 'मग़रिब' में है, अतः वह ज़कात, कुर्बानी और रिबा (ब्याज) में गाय की तरह ही है। इससे गाय का निसाब पूरा हो जाता है। ज़कात बहुसंख्यक से ली जाती है और बराबरी पर होने पर उच्च श्रेणी का निम्नतम या निम्न श्रेणी का उच्चतम लिया जाता है। नह्र। इसी हुक्म पर बुख़्ती और अरबी ऊंट, भेड़ और बकरी हैं। इब्न मलिक। 2

उर्दू: भैंस, गाय की एक किस्म है जैसा कि 'मग़रिब' में है, इसलिए यह ज़कात, कुर्बानी और रिबा में गाय के हुक्म में होगी। इससे गाय का निसाब पूरा हो जाता है। अगर गाएं अधिक हों तो ज़कात ली जाएगी और अगर बराबर हों तो उनमें जो किस्म उच्च (आला) है उसका निम्न (अदना) लिया जाएगा या निम्न का उच्च, नह्र। और इसी के हुक्म में बुख़्ती और अरबी ऊंट, भेड़ और बकरी आदि होते हैं। इब्न मलिक। (त)

[अनुभाग 3] उसी में है: अरबी: निसाब अगर भेड़ का है तो अनिवार्य (वाजिब) भेड़ से लिया जाए, चाहे वहां बकरियां हों। और अगर बकरियां हों तो बकरियों से, चाहे भेड़ें हों। अगर दोनों हों तो बहुसंख्यक का एतबार होगा, और अगर दोनों बराबर हों तो जिससे चाहे लो। जौहरा। यानी उच्च से निम्न या निम्न से उच्च लिया जाएगा, जैसा कि हमने पहले बयान कर दिया है। 3

उर्दू: निसाब अगर भेड़ का है तो भेड़ ही वसूल की जाए, और अगर निसाब बकरी का है तो बकरी ही ली जाएगी, और अगर दोनों से निसाब है तो फिर बहुसंख्यक का एतबार होगा, और दोनों बराबर हों तो जिससे चाहो ले लो। जौहरा। यानी उच्च (आला) से निम्न (अदना) या निम्न से उच्च लिया जाएगा। जैसा कि हमने पहले बयान कर दिया है। (त)

फुटनोट: 1 दुर्रे मुख़्तार, बाब ज़कातुल ग़नम, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/133. 2 रद-अल-मुह्तार, बाब ज़कातुल बक़र, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 19/2. 3 रद-अल-मुह्तार, बाब ज़कातुल ग़नम, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 20/2.

पृष्ठ 248 का 836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

[حصہ 1] عربی: الشاة (وفصيل) ولد الناقة (وعجول) بوزن سنور ولد البقرة وصورته ان يموت كل الكبار ويتم الحول على اولا دها الصغار (الاتبعا لكبير ولو واحدا (و) لافى (عفووهو مابين النصب في كل الاموال اهـ ملخصا ملتقطا۔

اردو: جانوروں، بکری کے بچوں، اونٹنی کے بچوں اور گائے کے بچوں میں زکوٰۃ نہیں۔ اسکی صورت یہ ہے کہ بڑے جانور مر جاتے ہیں اور سال ان کے چھوٹے بچوں پر مکمل ہوتا ہے (تو اب زکوٰۃ نہیں) مگر اس صورت میں کہ بڑے موجود ہوں تو ان کی اتباع میں زکوٰۃ ہوگی اگرچہ بڑا ایک ہو اور عفو میں زکوٰۃ نہیں، اور یہ تمام اموال میں نصابوں کے درمیانی حصہ کو کہا جاتا ہے ملخصا۔(ت)

[حصہ 2] ردالمختار میں ہے: عربی: الجاموس هو نوع من البقر كما في المغرب فهو مثل البقر في الزكوة والاضحية والربا ويكمل به نصاب البقر وتوخذ الزكوة من اغلبها وعند الاستواء يوخذ على الادنى وادنى الاعلى، نهر، وعلى هذا الحكم البخت والعراب والضان والمعز، ابن ملک۔ 2

اردو: بھینس، گائے کی ایک نوع ہے جیسا کہ مغرب میں ہے لہذا یہ زکوٰۃ، قربانی اور ربا میں گائے کے حکم میں ہوگی، اس سے گائے کا نصاب مکمل ہو جاتا ہے اگر گائیں غالب ہوں تو زکوٰۃ لی جائے گی اور اگر برابر ہوں تو ان میں جو قسم اعلیٰ ہے اس کا ادنیٰ لیا جائیگا یا ادنیٰ کا اعلیٰ، نہر۔ اور اسی کے حکم میں بختی اور عربی اونٹ، بھیڑ اور بکری وغیرہ ہوتے ہیں، ابن الملک۔ (ت)

[حصہ 3] اسی میں ہے: عربی: النصاب اذا کان ضأنا یوخذ الواجب من الضأن ولو معز افمن البعز ولو منھما فمن الغالب ولو سواء فمن ایھما شاء جوھرۃ ای فیعطی ادنی الاعلی اوعلی الادنی کما قدمناہ۔ 3

اردو: نصاب اگر بھیڑ کا ہے تو بھیڑ ہی وصول کی جائے، اور اگر نصاب بکری کا ہے تو بکری ہی لی جائے گی، اور اگر دونوں سے نصاب ہے تو پھر غالب کا اعتبار ہوگا، اور دونوں برابر ہوں تو جس سے چاہو لے لو، جوہرہ۔ یعنی اعلیٰ سے ادنیٰ یا ادنیٰ سے اعلیٰ لیا جائیگا۔ جیسا کہ ہم نے پہلے بیان کر دیا ہے (ت)

حواشی: 1 در مختار باب زکوٰۃ الغنم مطبع مجتبائی دہلی 1/133 2 ردالمختار باب زکوٰۃ البقر مصطفیٰ البابی مصر 19/2 3 ردالمختار باب زکوٰۃ الغنم، مصطفیٰ البابی مصر 20/2

Fatawa Razawiyyah - Volume 10

In Alamgiriya, it is stated: “The minimum age related to the obligation of Zakat in camels is 'Bint Makhad' (a female camel entering its second year), in cows it is 'Tabee' (a one-year-old), and in sheep and goats it is 'Thani' (that which has completed a year), as mentioned in the Sharh (commentary) of Al-Tahawi.” (Summarized) (T)

In Durr-e-Mukhtar, it is stated: “'Bint Makhad' is that which has entered the second year. 'Tabee' is one full year old. In sheep and goats, 'Thani' is that which has completed one year.” (Summarized) (T)

In Hindiyyah, it is stated: “Zakat is obligatory on grazing animals (Sawa'im), whether male, female, or mixed. Grazing animals are those that graze in the wild for the purpose of milk, breeding, increase in value, or fatness. Similar is mentioned in Muhit as-Sarkhasi.” (T)

When these rules are known, the ruling on the questioned issue becomes clear. There is no Zakat on eighteen bulls and two buffaloes used for farming. Although calves under one year are not subject to Zakat individually, they are included when they are with one-year-olds. Thus, the total animals become 47, for which one calf of a full two years age is obligatory. Since most of them are cows, a two-year-old cow calf should be given, whether it is a male or female. Since most are females—among the 47, there are twenty-one cows and two full buffaloes, and two young female buffaloes—it is better to give a full two-year-old female cow calf (Bachhiya) in Zakat.

In Al-Hindiyyah, from Al-Tatar Khaniyah, from Al-Atabiyya regarding cows...

1. Fatawa Hindiyyah, Chapter Two on Zakat of Grazing Animals, Section Two, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/77-78
2. Durr-e-Mukhtar, Chapter on the Nisab of Camels, Zakat of Cows and Zakat of Sheep, Matba Mujtabai Delhi, 1/131 to 133
3. Fatawa Hindiyyah, Chapter Two on Zakat of Grazing Animals, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/77

फ़तावा रज़विया - जिल्द १०

आलमगीरिया में है: “ऊंटों में ज़कात अनिवार्य होने के लिए न्यूनतम आयु 'बिंत मखाद' (दूसरे वर्ष में प्रवेश करने वाली ऊंटनी) है, गायों में 'तबीअ' (एक वर्ष का बछड़ा), और भेड़-बकरियों में 'थनी' (जिसका एक वर्ष पूरा हो गया हो), जैसा कि शरह अल-तहावी में है।” (संक्षिप्त) (त)

दुर्र-ए-मुख़्तार में है: “'बिंत मखाद' वह है जो दूसरे वर्ष में प्रवेश कर गई हो। 'तबीअ' पूर्ण एक वर्ष का। और भेड़-बकरी में 'थनी' वह होता है जिसका वर्ष पूरा हो जाए।” (संक्षिप्त) (त)

हिन्दिया में है: “चराई वाले पशुओं (सवाइम) के नर, मादा और उनके मिश्रण पर ज़कात अनिवार्य है। चराई वाले पशु वे होते हैं जो जंगल में दूध, प्रजनन, मूल्य वृद्धि या चर्बी बढ़ाने के उद्देश्य से चरते हों। मुहीत अल-सरख़सी में भी इसी तरह है।” (त)

जब ये नियम ज्ञात हो गए, तो पूछे गए मसले का आदेश स्पष्ट हो गया। खेती के लिए इस्तेमाल होने वाले अठारह बैल और दो भैंसों पर कुछ नहीं (ज़कात) है। हालांकि एक वर्ष से कम के बछड़े स्वयं ज़कात के पात्र नहीं हैं, लेकिन एक वर्ष वालों के साथ मिलकर उन पर भी ज़कात अनिवार्य हो जाती है, तो कुल जानवर ४७ (सैंतालीस) हुए, जिन पर दो वर्ष की पूर्ण आयु का एक बछड़ा अनिवार्य है। चूंकि उनमें अधिक गायें हैं, इसलिए दो वर्षीय गाय का ही बछड़ा दिया जाएगा, चाहे वह नर हो या मादा। और चूंकि उनमें अधिकांश मादाएं हैं—सैंतालीस में इक्कीस गायें और दो पूरी भैंसें, तथा दो कटिया (युवा मादा भैंसें) हैं—तो बेहतर यह है कि दो वर्ष की पूर्ण आयु की बछिया ज़कात में दी जाए।

अल-हिन्दिया में तातारख़ानिया से अताबिया के हवाले से गायों के बारे में है...

1. फ़तावा हिन्दिया, बाब-२, सवाइम की ज़कात पर, फ़स्ल-२, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, १/७७-७८
2. दुर्र-ए-मुख़्तार, ऊंटों के निसाब, गाय और भेड़ की ज़कात का बाब, मतबा मुजतबाई दिल्ली, १/१३१ से १३३
3. फ़तावा हिन्दिया, बाब-२, सवाइम की ज़कात पर, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, १/७७

पृष्ठ २४९ / ८३६

جلد دہم، فتاوٰی رضویہ

عالمگیر یہ میں ہے: ادنی السن الذی یتعلق بہ وجوب الزکوۃ فی الابل بنت مخاض، وفی البقر تبیع، وفی الغنم ھو الثنی کذا فی شرح الطحاوی اھ ملتقطاً کم از کم وہ عمر جس کے ساتھ اونٹوں میں زکوۃ متعلق ہوتی ہے بنت مخاض ہے، گائے میں تبیع، اور بھیڑ بکریوں میں ثنی، جیسا کہ شرح الطحاوی میں ہے اھ اختصاراً (ت)

در مختار میں ہے: بنت مخاض ہی التی طعنت فی السنۃ الثانیۃ، وتبیع ذو سنۃ کاملۃ، والثنی من الضان والمعز ھو مأتمت لہ سنۃ اھ بالالتقاط۔ بنت مخاض، جو عمر کے دوسرے سال میں داخل ہو۔ تبیع، ایک سال کی عمر۔ اور بھیڑ و بکری میں ثنی وہ ہوتا ہے جس پر سال مکمل ہو جائے اھ اختصاراً (ت)

ہندیہ میں ہے: السوائم تجب الزکوۃ فی ذکورھا واناثھا و مختلط ھما والسائمۃ ہی التی تسام فی البراری لقصد الدر والنسل والزیادۃ فی الثمن والسمن کذا فی محیط السرخسی۔ 3 سائمہ چوپایوں مذکر و مونث اور ان دونوں کے اختلاط پر زکوۃ ہے۔ اور سائمہ وہ چوپائے ہوتے ہیں جو جنگل میں چریں اور ان سے مقصد دودھ، نسل، ثمن میں اضافہ اور گھی کا حصول ہو۔ محیط سرخسی میں اسی طرح ہے۔ (ت)

جب یہ قواعد معلوم ہوئے تو حکم مسئلہ مسئولہ واضح ہوگیا۔ اٹھارہ بیل اور دو بھینسے کہ کاشتکاری کے لئے ہیں اُن پر کچھ نہیں، اور ایک سال سے کم کے بچے اگرچہ خود محل وجوب نہیں مگر یک سالہ کے ساتھ مل کر ان پر بھی وجوب ہوتا ہے تو سب جانور سینتالیس سے ۴۷ ہوئے جن پر ایک بچہ دو سال کامل کی عمر کا واجب ہے اور ازانجا کہ ان میں زیادہ گائے ہیں تو

یہ دو سالہ گائے کا ہی بچہ دیا جائے گا بچھڑا ہو خواہ بچھیا، اور ازاں جا کہ ان میں زیادہ مادہ ہیں سینتالیس میں اکیس گائے ہیں اور دو بھینسیں پوری، دو جھوٹیاں۔ تو افضل یہ ہے کہ دو برس کامل کی بچھیا زکوۃ میں دے،

فی الھندیۃ عن التتارخانیۃ عن العتابیۃ ہندیہ میں تاتارخانیہ سے عتابیہ سے ہے گائے

1 فتاویٰ ہندیہ، الباب الثانی فی صدقة السوائم فصل ثانی، نورانی کتب خانہ پشاور، ۱ / ۷۸-۷۷ 2 در مختار باب نصاب الابل وزکوة البقر وزکوة الغنم مطبع مجتبائی دہلی، ۱ / ۱۳۱ تا ۱۳۳ 3 فتاویٰ ہندیہ الباب الثانی فی صدقة السوائم نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۷۷

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[In Arabic]: It is better in the case of cows to give a male calf (tabi') for a male and a female calf (tabi'ah) for a female. And Allah Subhanah wa Ta'ala knows best. [In Urdu]: It is stated in Al-Hindiyya, from Tatar-khaniyya via Al-Atabiyya: Regarding cows, it is better that a tabi' be given for a male and a tabi'ah for a female. And Allah Subhanah wa Ta'ala knows best. (T)

Question 89: From Gonda, Bahraich, Cantonment area, house of Maulvi Musharraf Ali Sahib, sent by Syed Hussain Sahib, may his blessings continue. 13 Jumada al-Ula 1307 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say on this matter —may Allah be kind to them all—concerning which categories are permissible recipients for Zakat? Explain and be rewarded.

The Answer: The recipient of Zakat is every needy Muslim who does not have access to the amount of Nisab from their owned wealth beyond basic necessities, provided that they are not a Hashimi, nor one's own husband, nor one's own wife (even if a final divorce has been given, until she completes her waiting period), nor those who are among one's descendants such as a son, daughter, grandson, granddaughter, nor those in whose descendants one belongs such as mother, father, grandfather, grandmother, even if these primary and branch relationships are—Allah forbid—through adultery; nor the slave of oneself or of these five categories even if he is a Mukatab (a slave buying his freedom), nor the non-Mukatab slave of a wealthy person, nor the minor child of a wealthy man, nor a freed slave of a Hashimi. By stating "needy Muslim," disbelievers and the wealthy are already excluded. These are sixteen types of people to whom it is not permissible to give Zakat. Besides these, it is permissible for all others; for example, the son of a Hashimi or even a Fatimi woman when the father is not a Hashimi, because in Sharia, lineage is derived from the father. Some reckless people consider themselves Sayyids because their mother is a Sayyidani, and despite being explained, they insist on it; according to the Sahih Hadith, they deserve divine curse—may Allah protect us. We have clarified this well in our Fatwas. Similarly, the freed slave of a non-Hashimi, even if he was one's own slave, or those who are not one's ancestors, descendants, or spouse, or the Mukatab of a wealthy person other than a Hashimi, or the minor child of a wealthy woman even if he is an orphan, or one's siblings, paternal uncle, paternal aunt, maternal aunt, maternal uncle—rather, there is double reward in giving to them: for Zakat and for joining family ties. Also, one's daughter-in-law, son-in-law, mother's husband (stepfather), father's wife (stepmother), or the children of one's spouse (stepchildren)

—it is permissible to give Zakat to these sixteen as well, provided they are not among the first sixteen. Since they have a relation to those, it was possible to imagine an impermissibility for them as well; therefore, I have specifically listed them. Not having access to the mentioned Nisab includes a few situations: One is having no wealth at all; such a person is called 'Miskin' (destitute). Second: having wealth but less than the Nisab; this person is a 'Faqir' (poor).

1. Al-Fatawa al-Hindiyya, Chapter 3 regarding Zakat on Cows, Nurani Kutub Khana Peshawar, 1/178.

फ़तावा रज़विया, खंड 10

[अरबी में]: गाय के मामले में बेहतर यह है कि नर के लिए नर बछड़ा (तबी') और मादा के लिए मादा बछड़ी (तबी'आ) दी जाए। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है। [उर्दू में]: हंदिया में तातारखनिया से अताबिया के हवाले से है: गाय के मामले में बेहतर यह है कि नर में तबी' और मादा में तबी'आ दिया जाए। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 89: गोंडा, बहराइच, छावनी मुहल्ला, मौलवी मुशर्रफ अली साहब का मकान, प्रेषक सैयद हुसैन साहब, उनकी बरकतें बनी रहें। 13 जमादी उल-उला 1307 हिजरी। धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या कहते हैं—अल्लाह उन सब पर मेहरबान हो—कि ज़कात किन-किन मदों में देना जायज़ है? बयान फरमाएं और सवाब (पुण्य) पाएं।

उत्तर: ज़कात का पात्र हर वह ज़रूरतंमद मुसलमान है जिसकी अपनी मलकियत वाली संपत्ति उसकी बुनियादी ज़रूरतों (हाजात-ए-असलीया) के अलावा निसाब (निर्धारित मात्रा) की सीमा तक न हो, इस शर्त के साथ कि वह हाशमी न हो, न अपना पति हो, न अपनी पत्नी हो (चाहे उसे तलाक-ए-मुग़ल्लज़ा दे दी गई हो जब तक कि वह इद्दत से बाहर न आ जाए), न वह जो अपनी औलाद में हो जैसे बेटा, बेटी, पोता, पोती, नवासा, नवासी, और न ही वे जिनकी औलाद में यह हो जैसे माँ-बाप, दादा-दादी, नाना-नानी, चाहे ये असली और फ़रूई (वंशानुगत) रिश्ते—अल्लाह की पनाह—ज़िना (व्यभिचार) के माध्यम से हों; न अपना या इन पांचों श्रेणियों में से किसी का गुलाम (ममलुक) हो चाहे वह मुकातब (आज़ादी खरीदने वाला गुलाम) ही क्यों न हो, न किसी अमीर का गैर-मुकातब गुलाम, न किसी अमीर पुरुष का नाबालिग बच्चा, न हाशमी का आज़ाद किया हुआ गुलाम। और 'ज़रूरतंमद मुसलमान' कहने से काफ़िर और अमीर पहले ही बाहर हो चुके हैं। ये सोलह प्रकार के व्यक्ति हैं जिन्हें ज़कात देना जायज़ नहीं है। इनके अलावा बाकी सभी को देना जायज़ है, उदाहरण के तौर पर हाशमी बल्कि फ़ातिमी महिला का बेटा जबकि उसका पिता हाशमी न हो, क्योंकि शरीयत में नसब (वंश) पिता से चलता है। कुछ लापरवाह लोग माँ के सैयदानी होने के कारण खुद को सैयद मान बैठते हैं और समझाने के बावजूद इस पर अड़े रहते हैं; सही हदीस के हुक्म के अनुसार वे अल्लाह की लानत के हकदार होते हैं, अल्लाह की पनाह। हमने इसे अपने फ़तावा में अच्छी तरह स्पष्ट कर दिया है। इसी तरह गैर-हाशमी का आज़ाद किया हुआ गुलाम चाहे वह अपना ही क्यों न हो, या अपने उसूल, फ़रू, पति और पत्नी के अलावा हाशमी के सिवा किसी अमीर का मुकातब गुलाम, या अमीर महिला का नाबालिग बच्चा चाहे वह अनाथ (यतीम) हो, या अपने भाई-बहन, चाचा, बुआ, मौसी, मामा

—बल्कि उन्हें देने में दुगुना सवाब है: ज़कात का और सिला-ए-रहमी (रिश्तेदारी निभाने) का। साथ ही अपनी बहू या दामाद या माँ का पति (सौतेला पिता) या पिता की पत्नी (सौतेली माँ) या अपने पति या पत्नी की संतान (सौतेले बच्चे)—इन सोलह को भी देना जायज़ है, बशर्ते कि ये पहले वाले सोलह में से न हों। चूँकि उनका उनसे संबंध है जिसके कारण मुमकिन था कि इनमें भी नाजायज़ होने का वहम होता, इसलिए मैंने उन्हें विशेष रूप से गिनवा दिया। निसाब पर पहुँच न होने में कुछ स्थितियाँ शामिल हैं: एक यह कि सिरे से माल (संपत्ति) ही न रखता हो, उसे 'मिस्कीन' कहते हैं। दूसरा: माल हो मगर निसाब से कम हो, यह 'फ़क़ीर' है।

1. फ़तावा हिंदिया, तीसरा अध्याय, गायों की ज़कात के बारे में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 1/178।

पृष्ठ 250 / 836

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

الافضل فی البقر ان یؤدی من الذکر التبیع ومن الاثنی التبیعۃ۔ واللہ سبحنہ وتعالی اعلم۔ ہندیہ میں تاتارخانیہ سے عتابیہ سے ہے گائے میں افضل یہ ہے کہ مذکر میں تبیع اور مؤنث میں تبیعہ دیا جائے۔ واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۸۹: از گونڈہ بہرائچ محلہ چھاؤنی مکان مولوی مشرف علی صاحب مرسلہ سید حسین صاحب دامت برکاتہم ۱۳جمادی الاولی ۱۳۰۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں لطف اللہ بہم اجمعین زکوٰۃ کن کن مصارف میں دینا جائز ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: مصرفِ زکوٰۃ ہر مسلمان حاجتمند جسے اپنے مال مملوک سے مقدارِ نصاب فارغ عن الحوائج الاصلیہ پر دسترس نہیں بشرطیکہ نہ ہاشمی ہو، نہ اپنا شوہر، نہ اپنی عورت، اگرچہ طلاق مغلظہ دے دی ہو جب تک عدت سے باہر نہ آئے، نہ وہ جو اپنی اولاد میں ہے جیسے بیٹا، بیٹی، پوتا پوتی، نواسہ نواسی، نہ وہ جن کی اولاد میں یہ ہے جیسے ماں باپ، دادا دادی نانا نانی، اگرچہ یہ اصلی وفروعی رشتے عیاذاً باللہ بذریعہ زنا ہوں، نہ اپنا یا ان پانچوں قسم میں کسی کا مملوک اگرچہ مکاتب ہو، نہ کسی غنی کا غلام غیر کاتب، نہ مرد غنی کا نابالغ بچہ، نہ ہاشمی کا آزاد بندہ، اور مسلمان حاجت مند کہنے سے کافر وغنی پہلے ہی خارج ہو چکے۔ یہ سولہ شخص ہیں جنھیں زکوٰۃ دینی جائز نہیں، ان کے سوا سب کو روا، مثلاً ہاشمیہ بلکہ فاطمیہ عورت کا بیٹا جبکہ باپ ہاشمی نہ ہو کہ شرع میں نسب باپ سے ہے۔ بعض متہورین کہ ماں کے سیدانی ہونے سے سید بن بیٹھے اور باوجود تفہیم اس پر اصرار کرتے ہیں بلحکم حدیث صحیح مستحقِ لعنتِ الہی ہوتے ہیں والعیاذ باللہ تعالٰی وقد اوضحنا ذلک فی فتاونا (اللہ تعالٰی کی پناہ اور ہم نے اسے اپنے فتاوٰی میں خوب واضح کردیا ہے۔ ت) اسی طرح غیر ہاشمی کا آزاد شدہ بندہ اگرچہ خود اپنا ہی ہو یا اپنے

اصول وفروع وزوج وزوجہ ہاشمی کے علاوہ کسی غنی کا مکاتب یا زنِ غنیہ کا نابالغ بچہ اگرچہ یتیم ہو یا اپنے بہن بھائی، چچا، پھوپھی، خالہ، ماموں بلکہ انھیں دینے میں دُونا ثواب ہے، زکوٰۃ وصلہ رحم یا اپنی بہو یا داماد یا ماں کا شوہر یا باپ کی عورت یا اپنے زوج یا زوجہ کی اولاد کہ ان سولہ کو بھی دینا روا، جبکہ یہ سولہ، اول سولہ سے نہ ہوں، ازانجا کہ انھیں اُن سے مناسبت ہے جس کے باعث ممکن تھا کہ ان میں ہی عدم جواز کا وہم جاتا، لہٰذا فقیر نے انھیں بالتخصیص شمار کردیا اور نصاب مذکور پر دسترس نہ ہونا چند صورت کو شامل: ایک یہ کہ سرے سے مال ہی نہ رکھتا ہو، اسے مسکین کہتے ہیں۔ دوم: مال ہو مگر نصاب سے کم، یہ فقیر ہے۔

1 فتاویٰ ہندیہ الفصل الثالث فی زکوٰۃ البقر نورانی کتب خانہ پشاور 1/ 178

Third: One who possesses the Niṣāb (minimum amount for Zakat liability) but it is consumed by basic needs, like a debtor.

Fourth: One who is free from basic needs but lacks access, like a wayfarer (traveler) who has run out of funds. He can take Zakat to the extent of his need; it is not permissible for him to take more than that. Or a person whose wealth is a deferred debt due from someone else and the term has not yet arrived. If he is suffering for food and clothing, he can take according to his need until the term arrives. Or one whose debtor is absent or has denied the debt, even if he has proof, because in all these cases he lacks access. In short, the matter revolves around being 'needy' in the mentioned sense. So, whoever has access to the aforementioned Niṣāb can never receive Zakat, whether he be a warrior, a pilgrim, a student, or a Mufti. However, the Zakat collector appointed by the Islamic ruler to collect Zakat from the wealthy can take according to his work even if he is wealthy himself, provided he is not a Hashimi. Furthermore, transfer of ownership (Tamlik) is a condition for giving Zakat. Where this is not present, such as feeding the poor by seating them at one's table as a matter of permission, or using it for a deceased person's shroud, or building a mosque, well, monastery, school, bridge, inn, etc. - Zakat will not be discharged through these. If one wishes to spend on them, the methods for it are those written in our fatwas.

[Arabic Box Column]: This is all a summary of what has been settled in Tanwīr al-Abṣār, al-Durr al-Mukhtār, Radd al-Muḥtār, and other reliable books. We have summarized it, by the grace of Allah Almighty, in the best possible way, such as might not be found elsewhere, and praise be to Allah. Whoever doubts any part of this should refer to the original sources we have named.

[Urdu Box Column]: This is the summary of this entire discussion, established in Tanwīr al-Abṣār, al-Durr al-Mukhtār, Radd al-Muḥtār, and other reliable books. By the grace of Allah Almighty, we have produced its best summary, which perhaps might not be found elsewhere. Praise be to Allah. Whoever has a doubt in this matter should refer to those principles and books that we have named.

Note: If the debt is immediate (Mu'ajjal), whether initially or because the set term has passed, and the debtor is wealthy and present, then this is a case of having access. It should be remembered that the loan which people call 'Dast Gardan' is legally always immediate. Even if a thousand oaths, promises, documents, and bonds have set a

term for payment after a certain period, and stated that there would be no right to demand it before then, and if a demand is made it would be void and unheard, etc., and a thousand such conditions are made, they are all void. The lender has the right to demand payment at any time.

Because it is a voluntary act (tabarru'), and there is no compulsion on the one performing a voluntary act. It is explicitly stated in al-Ashbāh, al-Durr, and others that setting a term for repayment of a loan is not valid. 1212 From him, may he be forgiven (M)

(Because it is a voluntary act and there is no compulsion in voluntary acts. It is clarified in Ashbāh, Durr and other books that fixing a time for repayment of debt is not correct. 1212 From him, may he be forgiven (T))

फतवा रज़विया खंड 10

तीसरा: निसाब (ज़कात के लिए न्यूनतम राशि) का मालिक है लेकिन वह बुनियादी ज़रूरतों में डूबा हुआ है जैसे कि ऋणी।

चौथा: बुनियादी ज़रूरतों से मुक्त हो लेकिन उसकी पहुँच में न हो, जैसे मुसाफिर (यात्री) जिसके पास खर्च न बचा हो, तो वह ज़रूरत के अनुसार ज़कात ले सकता है, उससे ज़्यादा लेना जायज़ नहीं है। या वह व्यक्ति जिसकी संपत्ति दूसरे पर ऋण (कर्ज़) के रूप में है जो अभी देय नहीं हुआ है और अभी अवधि नहीं आई है। अब उसे खाने-पहनने की तकलीफ है तो अवधि आने तक ज़रूरत के अनुसार ले सकता है। या वह जिसका ऋणी गायब है या कर्ज़ से मुकर गया है, भले ही उसके पास सबूत हो, क्योंकि इन सभी स्थितियों में उसकी पहुँच नहीं है। संक्षेप में, सारा मामला बताए गए अर्थ में 'ज़रूरतमंद' होने पर निर्भर है। तो जिसके पास उक्त निसाब तक पहुँच है, वह कभी भी ज़कात नहीं पा सकता, चाहे वह गाज़ी (योद्धा) हो या हाजी या छात्र या मुफ्ती। मगर ज़कात वसूल करने वाला जिसे इस्लामी शासक ने मालदारों से ज़कात वसूलने के लिए नियुक्त किया हो, वह वसूली के समय धनी होने की स्थिति में भी अपने काम के अनुसार ले सकता है, बशर्ते वह हाशमी न हो। फिर देने में स्वामित्व का हस्तांतरण (तमलीक) शर्त है। जहाँ यह नहीं है, जैसे मोहताजों (ज़रूरतमंदों) को अनुमति के तौर पर अपने दस्तरखान पर बिठाकर खिला देना या मृतक के कफ़न में लगाना या मस्जिद, कुआँ, खानकाह, मदरसा, पुल, सराय आदि बनवाना, इनसे ज़कात अदा नहीं होगी। अगर इनमें खर्च करना चाहे तो उसके वही तरीके हैं जो हमारे फतावा में दर्ज हैं।

[अरबी बॉक्स कॉलम]: यह उस पूरी चर्चा का सार है जिस पर तनवीर अल-अमसर, दुर-ए-मुख्तार, रद अल-मुख्तार और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में मामले को साबित किया गया है। और हमने अल्लाह तआला की तौफीक से इसका सबसे अच्छा सारांश किया है, शायद यह हमारे अलावा कहीं और न मिले। अल्लाह की स्तुति हो। और जिस किसी को इस बारे में संदेह हो, वह उन मूल स्रोतों की ओर रुजू करे जिनके हमने नाम लिए हैं।

[उर्दू बॉक्स कॉलम]: यह उस पूरी चर्चा का सार है जिस पर तनवीर अल-अमसर, दुर-ए-मुख्तार, रद अल-मुख्तार और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में मामले को साबित किया गया है। और हमने अल्लाह तआला की तौफीक से इसका सबसे अच्छा सारांश किया है, शायद यह हमारे अलावा कहीं और न

मिले, वल्लाहिल हम्द। और जिस किसी को इस बारे में संदेह हो, वह उन मूल स्रोतों और पुस्तकों की ओर रुजू करे जिनके हमने नाम लिए हैं।

नोट: अगर कर्ज़ तुरंत देय (मुअज्जल) हो, चाहे शुरू से ही या इसलिए कि तय की गई अवधि बीत चुकी हो और ऋणी धनी और मौजूद हो, तो यह 'पहुँच' की स्थिति है। और याद रखना चाहिए कि कर्ज़ जिसे लोग 'दस्त गरदां' कहते हैं, शरीयत की दृष्टि से हमेशा तुरंत देय होता है। अगर हज़ारों वादों, समझौतों, दस्तावेज़ों और बंधपत्रों के माध्यम से इसमें अवधि तय कर दी गई हो कि इतनी अवधि के बाद दिया जाएगा, उससे पहले मांग का अधिकार नहीं होगा, अगर मांग करे तो वह अमान्य और अनसुना होगा, इत्यादि हज़ारों शर्तें इस प्रकार की कर ली हों, तो वे सब अमान्य हैं और ऋणदाता को हर समय मांग करने का अधिकार है।

क्योंकि यह एक स्वैच्छिक कार्य (तबर्रु) है और स्वैच्छिक कार्य करने वाले पर कोई मजबूरी नहीं है। अल-अश्बाह, अल-दुर्र और अन्य पुस्तकों में यह स्पष्ट किया गया है कि ऋण की अदायगी का समय तय करना सही नहीं है। 1212 उन्हीं की ओर से, उन्हें क्षमा किया जाए (M)

(क्योंकि यह एक स्वैच्छिक कार्य है और स्वैच्छिक कार्य में कोई जबरदस्ती नहीं है। अश्बाह, दुर्र और अन्य पुस्तकों में यह स्पष्ट किया गया है कि ऋण अदायगी का समय नियत करना सही नहीं है। 1212 उन्हीं की ओर से, उन्हें क्षमा किया जाए (T))

पृष्ठ 251/836

سوم نصاب بھی مگر حوائج اصلیہ میں مستغرق جیسے مدیون۔ چہارم: حوائج سے فارغ ہو مگر اسے دسترس نہیں، جیسے ابن السبیل یعنی مسافر، جس کے پاس خرچ نہ رہا تو بقدر ضرورت زکوۃ لے سکتا ہے اس سے زیادہ اسے لینا روا نہیں۔ یا وہ شخص جس کا مال دوسرے پر دین موجّل ہے اور ہنوز میعاد نہ آئی اب اسے کھانے پہننے کی تکلیف ہے تو میعاد آنے تک بقدر حاجت لے سکتا ہے یا وہ جس کا مدیون غائب ہے یا لے کر مکر گیا اگر چہ ثبوت رکھتا ہو کہ ان سب صورتوں میں دسترس نہیں عہ بالجملہ مدار کار حاجتمند بمعنی مذکور پر ہے تو جو نصاب مذکور پر دسترس رکھتا ہے ہر گز زکوۃ نہیں پاسکتا اگر چہ غازی ہو یا حاجی یا طالب علم یا مفتی مگر عامل زکوۃ جسے حاکم اسلام نے ارباب اموال سے تحصیل زکوۃ پر مقرر کیا وہ جب تحصیل کرے بحالت غنی بھی بقدر اپنے عمل کے لے سکتا ہے، اگر ہاشمی نہ ہو۔ پھر دینے میں تملیک شرط ہے، جہاں یہ نہیں جیسے محتاجوں کو بطور اباحت اپنے دسترخوان پر بٹھلا کر کھلا دینا یا میت کے کفن میں لگانا یا مسجد، کنواں، خانقاہ، مدرسہ، پل، سرائے وغیرہ بنوانا ان سے زکوۃ ادا نہ ہوگی، اگر ان میں صرف کیا چاہے تو اس کی وہی حیلے ہیں جو ہمارے فتاوی میں مسطور ہیں،

[Arabic Box Column]: هذا كله ملخص ما استقر عليه الامر فی تنویر الابصار والدرالمختار وردالمحتار وغیرها من معتبرات الاسفار وقد لخصناه بتوفیق الله تعالی احسن تلخیص لعله لا یوجد من غیرنا والله الحمد، فمن شك في شئ من هذا فلیراجع الاصول التي سمینا

[Urdu Box Column]: یہ اس تمام گفتگو کا خلاصہ ہے جس پر تنویر الابصار، درمختار، ردالمختار اور دیگر کتب معتبرہ میں معاملہ کو ثابت کیا ہے اور ہم نے اللہ تعالٰی کی توفیق سے اس

کی سب سے اچھی تلخیص کی ہے، شاید یہ ہمارے علاوہ کہیں نہ ملے واللہ الحمد۔ اور جس شخص کو اس بارے میں شک ہو وہ ان اصول و کتب کی طرف رجوع کرے خواہ

عہ: اگر دین معجل خواہ ابتداً یا یوں کہ اجل مقرر ہوئی تھی گزر چکی اور مدیون غنی مقرر حاضر ہے تو یہ صورت دسترس کی ہے اور یاد رکھنا چاہئے کہ قرض جسے لوگ دست گردان کہتے ہیں شرعاً ہمیشہ معجل ہوتا ہے، اگر ہزار عہد و پیمان و وثیقہ و تمسک کے ذریعہ اس میں میعاد قرار پائی ہو کہ اتنی مدت کے بعد دیا جائے گا اس سے پہلے اختیار مطالبہ نہ ہوگا اگر مطالبہ کرے تو باطل و نامسموع ہو وغیرہ وغیرہ ہزار شرطیں اس قسم کی کر لی ہوں تو وہ سب باطل ہیں اور قرض دہندہ کو ہر وقت اختیار مطالبہ ہے،

لانه تبرع ولا جبر على المتبرع وقد نص في الاشباه والدر وغيرها انه لا يصح تاجيل القرض ١٢ منه غفر له (م)

کیونکہ یہ تبرع ہے اور تبرع میں جبر نہیں۔ اشباہ، در اور دیگر کتب میں یہ تصریح ہے کہ ادائیگی قرض کا وقت مقرر کرنا صحیح نہیں ١٢١٢ منہ غفر لہ (ت)

Fatawa Razawiya Volume 10

[Arabic column on left transcribed as Urdu translation on right]

Whether we have named them or not, there is no harm in mentioning some of these texts that are considered hidden or rare. In *Radd al-Muhtar*, it is stated: "This includes all offspring, whether through marriage or adultery; therefore, Zakat will not be given to children born out of wedlock either," etc. And in the same source, under the text's statement "or there is a marital relationship between them, even if it is *mubayinah* (separated), meaning even if she is spending her waiting period (*iddah*) after three divorces," it is stated that this is from *Ma'raj al-Dirayah* in *Al-Nahr*. And under the text's statement "a person giving Zakat should not give it to his slave even if he is a *mukatab* (a slave who has contracted for his freedom)," it is also the ruling for a slave between whom and the Zakat giver there is a relationship of parentage or marriage, based on the evidence found in *Al-Bahr* and *Al-Fath*. And under the text's statement "contrary to the child of a wealthy woman, it is permissible to give to him, i.e., if he has no father," it is stated in *Al-Bahr* from *Al-Quniyah*. And it states that the restriction to offspring is because it is permissible for other relatives such as poor brothers, sisters, paternal uncles, and maternal uncles; rather, they are more deserving of Zakat because here both maintaining family ties (*silah rahmi*) and charity (*sadqah*) are combined. It is permissible to give Zakat to one's father's wife, one's son's wife, and one's daughter's husband. *Tatar Khaniyah*, summarized. And in it, from the book of wills (*Kitab al-Wasaya*), under the text's statement, "only".

1 Radd al-Muhtar, Bab al-Masrif, Mustafa al-Babi Egypt, 2 / 69 2 Radd al-Muhtar, Bab al-Masrif, Mustafa al-Babi Egypt, 2 / 69 3 Radd al-Muhtar, Bab al-Masrif, Mustafa al-Babi Egypt, 2 / 69 4 Radd al-Muhtar, Bab al-Masrif, Mustafa al-Babi Egypt, 2 / 72 5 Radd al-Muhtar, Bab al-Masrif, Mustafa al-Babi Egypt, 2 / 69

फतावा रजविया जिल्द दहम (दसवीं)

चाहे हमने उनके नाम लिए हों या नहीं, इनमें से कुछ ऐसे ग्रंथों (नसूस) के उल्लेख में भी कोई हर्ज महसूस नहीं करते जिन्हें गुप्त या दुर्लभ समझा गया है। 'रद्दुल मुहतार' में है कि यह तमाम संतानों को शामिल है, चाहे वह निकाह की वजह से हो या ज़िना की वजह से, लिहाज़ा अवैध संतानों को भी ज़कात नहीं दी जाएगी, इत्यादि। और इसी में मूल पाठ (मतन) के कथन "या उनके बीच वैवाहिक संबंध हो, चाहे वह मुबाइना (विच्छेदित) हो, यानी चाहे वह तीन तलाक़ होने पर इद्दत बिता रही हो," के तहत है, यह 'नहर' में 'मेराजुद दराया' से है। और इसी में मूल पाठ के कथन "ज़कात देने वाला अपने गुलाम को न दे, चाहे वह मुक़ातब (स्वतंत्रता का अनुबंध करने वाला गुलाम) हो" के तहत है और इसी तरह उस गुलाम का हुक्म है जिसके और ज़कात देने वाले के बीच संतान या वैवाहिक संबंध हो, उस दलील के मद्देनज़र जो 'बहर' और 'फ़तह' में है। और इसी में मूल पाठ के कथन "धनी महिला के बच्चे के विपरीत कि उसे देना जायज़ है, यानी उसका पिता न हो" के तहत है, यह 'बहर' में 'क़ुनिया' से है। और इसी में है कि संतान का प्रतिबंध इसलिए है कि बाकी रिश्तेदारों जैसे ग़रीब भाई-बहनों, चाचा और मामा को ज़कात दी जा सकती है, बल्कि ये लोग ज़कात के ज़्यादा हक़दार हैं क्योंकि यहाँ सिला-रहमी (रिश्तेदारी निभाना) और सदक़ा दो चीज़ें जमा हो जाती हैं। अपने पिता की पत्नी, अपने बेटे की पत्नी और अपने दामाद को ज़कात देना जायज़ है। 'तातार खानिया' संक्षेप में। और इसमें 'किताबुल वसाया' (वसीयत की किताब) से मूल पाठ के कथन के तहत, "केवल"।

1 रद्दुल मुहतार, बाब अल-मसरिफ, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2 / 69 2 रद्दुल मुहतार, बाब अल-मसरिफ, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2 / 69 3 रद्दुल मुहतार, बाब अल-मसरिफ, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2 / 69 4 रद्दुल मुहतार, बाब अल-मसरिफ, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2 / 72 5 रद्दुल मुहतार, बाब अल-मसरिफ, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2 / 69

पृष्ठ 252/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

اولم نسم نعم لابأس ان نورد نصوص بعض مایکاد یخفی او یستغرب، ففي ردالمحتار شمل الولاد بالنکاح والسفاح فلا یدفع الی ولدہ من الزنا الخ وفیہ تحت قولہ او بینھما زوجیة ولو مباینة ای في العدة ولو بثلاث نھر عن معراج الدرایة اہ وفیہ تحت قولہ ولوالی مملوك المزکی ولو مکاتباً وکذا مملوك من بینہ وبینہ قرابة ولاد او زوجیة لما قال في الفتح الخ وفیہ تحت قولہ و بخلاف طفل الغنیة فیجوز ای ولو لم یکن لہ اب بحر عن القنیة اہ وفیہ وقید بالاولاد لجوازہ لبقیة الاقارب کالا خوة والاعمام و الاخوال الفقراء بل ھم اولی لانہ صلة وصدقة ویجوز دفعھا لزوجة ابیہ وابنہ و زوج ابنتہ، تاترخانیہ اہ ملخصاً وفیہ من کتاب الوصایا تحت قولہ، الشرف

ان کے ہم نے نام لیے ہیں یا نہیں، ان میں سے بعض ایسی نصوص کے ذکر میں بھی کوئی حرج محسوس نہیں کرتے جنھیں مخفی یا نادر سمجھا گیا ہے۔ ردالمحتار میں ہے یہ تمام اولاد کو شامل ہے خواہ وہ نکاح کی وجہ سے ہو یا زنا کی وجہ سے، لہٰذا اولادِ زنا کو بھی زکوٰۃ نہیں دی جائیگی الخ اور اسی میں متن کے قول "یا ان کے درمیان زوجیت کا رشتہ ہو خواہ وہ مبائنہ ہو یعنی خواہ وہ تین طلاق ہو جانے پر عدت بسر کر رہی ہو، یہ نہر میں معراج الدرایہ سے ہے اہ اور اسی میں متن کے قول " زکوٰۃ دینے والا اپنے غلام کو نہ دے خواہ وہ مکاتب ہو کے تحت ہے" اور اسی طرح اس غلام کا حکم ہے جس کے اور زکوٰۃ دینے والے کے درمیان رشتہ اولاد یا زوجیت ہو، اس دلیل کے پیش نظر جو بحر اور فتح میں ہے اور اسی میں متن کے قول "بخلاف غنی عورت کے بچے کے کہ اسے دینا جائز ہے یعنی اس کا والد نہ ہو، یہ بحر میں قنیہ سے ہے اہ اور اسی میں ہے کہ اولاد کی قید اسی لیے ہے کہ باقی اقارب مثلاً بھائی بہنیں، چچا اور خالو اگر فقراء ہوں تو انھیں زکوٰۃ دی جاسکتی ہے بلکہ یہ لوگ زکوٰۃ کے زیادہ مستحق ہیں کیونکہ یہاں صلہ رحمی اور صدقہ

دو چیزیں جمع ہوجاتی ہیں، اپنے والد اور بیٹے کی بیوی اور اپنے داماد کو زکوٰۃ جائز ہے تاتارخانیہ اھ ملخصاً اور اس میں کتاب الوصایا سے متن کے قول "فقط"

1 ردالمحتار باب المصرف مصطفی البابی مصر ۲ / ۶۹ 2 ردالمحتار باب المصرف مصطفی البابی مصر ۲ / ۶۹ 3 ردالمحتار باب المصرف مصطفی البابی مصر ۲ / ۶۹ 4 ردالمحتار باب المصرف مصطفی البابی مصر ۲ / ۷۲ 5 ردالمحتار باب المصرف مصطفی البابی مصر ۲ / ۶۹

Fatawa Ridawiyya - Volume 10

[Left Column - Arabic] ...from the mother only is not considered, supported by the statement in al-Hindiyyah from al-Bada'i: "So it is established that lineage and ancestry are specific to the father, not the mother." End of quote. Therefore, Zakat is not forbidden for him, nor would he be a suitable match for a Hashimi woman, and he is not included in an endowment for the noble descendants (Ashraf). End. And in it, it says in al-Fath also: "And it is not permissible for him—meaning for the traveler—to take more than his need." I say: This is unlike a poor person, for it is permissible for him to take more than his need. Thus the difference between a poor person and a traveler becomes clear, as explained in al-Dhakhirah. End. In it, under the statement: "And from it is if his wealth is deferred," meaning when he needs sustenance, it is permissible for him to take Zakat to the extent of sufficiency until the term falls due, as per al-Nahr from al-Khaniyah. End. And in it, under the statement: "or against an absent person," meaning even if it is due immediately, because of his inability to obtain it. End. And in it, under the statement: "or a person in hardship or one who denies [the debt], even if he [the creditor] has evidence according to the most correct opinion." So it is permissible for him to take [Zakat] according to the most correct of opinions, because he is in the position of a traveler. And if the debtor is wealthy and acknowledges [the debt], it is not permissible as in al-Khaniyah. End. And in it, under the statement: "and in the path of Allah," and he is cut off...

[Right Column - Urdu] Under the phrase "Nobility because of the mother is not considered," it is stated that what al-Hindiyyah has written from al-Bada'i supports this. Thus it is proven that lineage and ancestry are specific to the father and not the mother. Therefore, Zakat is not forbidden for him, nor will he be a suitable match (kufu) for a Hashimi woman, and he will not be included in the endowment for the Saadat (descendants of the Prophet). And in the same, it is in al-Fath as well that it is not permissible for him (the traveler) to take more than necessary. I say: Unlike a poor person for whom it is permissible to take more than necessary, from this the difference between a poor person and a traveler is clear, as described in al-Dhakhirah. End. And in it, regarding the text's statement: "And a similar case is where the time for obtaining wealth is fixed," meaning if there is a need for expenses, then it is permissible to take Zakat according to the need of sufficiency until the fixed time arrives. This is in al-Nahr from al-Khaniyah. And in it, under the text's statement: "or that debt is upon someone absent," meaning even if the debt is currently due because at that time he is not capable of obtaining it. And in it, under the text's

statement: "or the debtor is in hardship or a denier even if according to the most correct view there are witnesses," it means according to the most correct view, it is permissible for such a person to take Zakat because he is like a traveler. And if the debtor is wealthy and acknowledging, then it is not permissible as mentioned in al-Khaniyah. End. And in the same, regarding the text's statement...

[Footnotes] 1. Radd al-Muhtar, Chapter on Wills for Relatives, Mustafa al-Babi Egypt, 5/484 2. Radd al-Muhtar, Chapter on Beneficiaries, Mustafa al-Babi Egypt, 2/67 3. Radd al-Muhtar, Chapter on Beneficiaries, Mustafa al-Babi Egypt, 2/67

फ़तावा रज़विया - जिल्द दसवाँ

[बायां कॉलम - अरबी] ...केवल माँ की ओर से मान्य नहीं है, 'अल-हिंदिया' का 'अल-बदाए' से उद्धृत कथन इसका समर्थन करता है: "अतः यह सिद्ध हुआ कि कुल और वंश पिता के साथ विशिष्ट है, न कि माता के साथ।" उद्धरण समाप्त। इसलिए उस पर ज़कात हराम नहीं है और न ही वह किसी हाशमी महिला का कुफ़ू (समान जोड़ी) बनेगा और न ही सादात (सैयदों) के वक़्फ़ में शामिल होगा। समाप्त। और इसी में, 'फ़तह' में भी कहा गया है: "और उसके लिए—अर्थात मुसाफ़िर (इब्न-उस-सबील) के लिए—अपनी ज़रूरत से ज़्यादा लेना जायज़ नहीं है।" मैं कहता हूँ: यह फ़क़ीर के विपरीत है, क्योंकि फ़क़ीर के लिए अपनी ज़रूरत से ज़्यादा लेना जायज़ है। इस प्रकार फ़क़ीर और मुसाफ़िर के बीच का अंतर स्पष्ट हो गया, जैसा कि 'ज़खीरा' में बताया गया है। समाप्त। इसमें, इस कथन के तहत: "और इसी में से वह है यदि उसका धन आस्थगित (deferred) हो," अर्थात जब उसे भरण-पोषण की आवश्यकता हो, तो अवधि आने तक पर्याप्त मात्रा में ज़कात लेना जायज़ है, 'अल-नहर' में 'खनिया' के हवाले से। समाप्त। और इसमें, इस कथन के तहत: "या किसी अनुपस्थित व्यक्ति के विरुद्ध," अर्थात भले ही वह तत्काल देय हो, क्योंकि वह उसे प्राप्त करने में असमर्थ है। समाप्त। और इसमें, इस कथन के तहत: "या वह व्यक्ति तंगहाली में हो या जो [कर्ज़] से इनकार करे, भले ही सही मत के अनुसार उसके पास सबूत हो।" तो सही मत के अनुसार उसके लिए ज़कात लेना जायज़ है, क्योंकि वह एक मुसाफ़िर की स्थिति में है। और यदि कर्ज़दार अमीर हो और स्वीकार करने वाला हो, तो यह जायज़ नहीं है जैसा कि 'खनिया' में है। समाप्त। और इसमें, इस कथन के तहत: "और अल्लाह की राह में," और वह कटा हुआ है...

[दायां कॉलम - उर्दू] "माँ की वजह से सम्मान मान्य नहीं है" के तहत उल्लेख है कि 'हिंदिया' ने 'बदाए' से जो लिखा है वह उसका समर्थन करता है। तो यह सिद्ध हो गया कि कुल और वंश पिता के साथ विशिष्ट है, न कि माँ के साथ। इसलिए उस पर ज़कात हराम नहीं है और न ही वह हाशमी का कुफ़ू बनेगा और न ही सादात पर वक़्फ़ में शामिल होगा। और इसी में 'फ़तह' में भी है कि उस (मुसाफ़िर) के लिए ज़रूरत से ज़्यादा लेना जायज़ नहीं है। मैं कहता हूँ कि फ़क़ीर के विपरीत, जिसके लिए ज़रूरत से ज़्यादा लेना जायज़ है, इसी से फ़क़ीर और मुसाफ़िर के बीच का अंतर स्पष्ट हो गया, जैसा कि 'ज़खीरा' में इसका वर्णन है। और इसमें पाठ के कथन: "और वैसी ही स्थिति वह है जिसमें धन प्राप्त करने के लिए समय नियत हो," अर्थात यदि खर्च की ज़रूरत हो तो नियत समय आने तक पर्याप्त मात्रा में ज़कात लेना जायज़ है, यह 'नहर' में 'खनिया' से है। और इसमें पाठ के कथन: "या वह

कर्ज़ किसी अनुपस्थित पर है" के तहत है, अर्थात भले ही कर्ज़ तत्काल देय हो क्योंकि उस समय वह उसे प्राप्त करने में सक्षम नहीं है। और इसी में पाठ के कथन: "या कर्ज़दार तंगहाल हो या मुनकिर (इनकार करने वाला) हो भले ही सही मत के अनुसार गवाह भी हों" के तहत है कि सही मत के अनुसार ऐसे व्यक्ति के लिए ज़कात लेना जायज़ है क्योंकि वह मुसाफ़िर की तरह है। और अगर कर्ज़दार अमीर और इकरार करने वाला हो तो जायज़ नहीं है जैसा कि 'खनिया' में है। और इसी में पाठ के..

[पाद टिप्पणियाँ] 1. रद अल-मुहतार, रिश्तेदारों के लिए वसीयत का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 5/484 2. रद अल-मुहतार, ज़कात के पात्रों (मसरफ़) का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/67 3. रद अल-मुहतार, ज़कात के पात्रों (मसरफ़) का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/67

فتاویٰ رضویہ - جلد دہم

[بایاں کالم - عربی] من الام فقط غیر معتبر، یؤیدہ قول الھندیة عن البدائع فثبت ان الحسب والنسب یختص بالاب دون الام اہ فلا تحرم علیه الزکوة ولا یکون کفؤا للها شمیة ولا یدخل في الوقف علی الاشراف ط اہ ' وفیه وقال في الفتح ایضاً ولا یحل له ای لا بن السبیل ان یأخذ اکثر من حاجته، قلت وھذا بخلاف الفقیر فأنه یحل له ان یأخذ اکثر من حاجته وبھذا فارق ابن السبیل کما افادہ فی الذخیرة اہ فیه تحت قوله ومنه مالو کان ماله مؤجلاً، ای اذا احتاج الی النفقة یجوزله اخذ الزکوة قدر کفایته الی حلول الاجل، نھر عن الخانیة اھـ، وفیه تحت قوله او علی غائب ای ولو کان حالاً لعدم تمکنه من اخذہ ط اہ' وفیه تحت قوله او معسر او جاحد ولوله بینة فی الاصح، فیجوزله الاخذ فی اصح الاقاویل لانه بمنزلة ابن السبیل ولوموسرا معتر فالاً یجوز کما فی الخانیة 3 اھـ، وفیه تحت قوله و فی سبیل اللہ وھو منقطع

[دایاں کالم - اردو] ماں کی وجہ سے شرف معتبر نہیں "کے تحت ہے کہ ہندیہ نے بدائع سے جو لکھا ہے وہ اس کا موید ہے تو ثابت ہو گیا کہ حسب و نسب والد کے ساتھ مختص ہے نہ کہ ماں کے ساتھ اہ پس اس پر زکوٰۃ حرام نہیں اور نہ ہی وہ ہاشمی کا کفو بنے گا اور سادات پر وقف میں شامل نہ ہوگا۔ اور اسی میں ہے فتح میں بھی ہے کہ اس (مسافر) کے لیے ضرورت سے زائد لینا جائز نہیں۔ میں کہتا ہوں بخلاف فقیر کے کہ اس کے لیے ضرورت سے زائد لینا جائز ہے، اسی سے فقیر اور مسافر کے درمیان فرق واضح ہو گیا، جیسا کہ اس کا بیان ذخیرہ میں ہے اہ اور اس میں متن کے قول "اور ایسی ہی صورت وہ ہے جس میں مال کے حصول کیلئے وقت مقرر ہو یعنی خرچہ کی ضرورت ہو تو وقت مقرر آنے تک بقدر کفایت زکوٰۃ لینا جائز ہے یہ نہر میں خانیہ سے ہے اور اس میں متن کے قول "یا وہ قرضہ کسی غائب پر ہے "کے تحت ہے یعنی اگر چہ قرضہ حالی ہو

کیونکہ اس وقت اس کے حصول پر قادر نہیں اور اسی میں متن کے قول "یا مقروض تنگ دست یا منکر ہو اگر چہ اصح قول کے مطابق گواہ بھی ہوں "کے تحت ہے کہ اصح قول کے مطابق ایسے شخص کے لیے زکوٰۃ لینا جائز ہے کیونکہ وہ مسافر کی طرح ہے اور اگر مقروض امیر اور معترف ہو تو جائز نہیں جیسا کہ خانیہ میں ہے اھ اور اسی میں متن کے

[حواشی] 1 ردالمحتار باب الوصیۃ لا قارب مصطفیٰ البابی مصر ۵ / ۴۸۴ 2 ردالمحتار باب المصرف مصطفیٰ البابی مصر ۲ / ۶۷ 3 ردالمحتار باب المصرف مصطفیٰ البابی مصر ۲ / ۶۷

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Arabic Passage]: Al-Ghuzat (warriors), and it is said the pilgrims, and it is said the seekers of knowledge. And it was explained in Al-Badai' as all forms of nearness (to Allah). It is stated in Al-Nahr that the difference is verbal because there is agreement that all categories, except the worker, are given on the condition of poverty (summarized). And in it, under his statement: 'And with this reasoning, what is attributed to Al-Waqi'at is strengthened, that it is permissible for a seeker of knowledge to take Zakat even if he is wealthy, if he has devoted himself to imparting or acquiring knowledge.' This branch contradicts their general prohibition for the wealthy, and no one has relied upon it (At-Tahtawi). I say: It is as such, and the most correct view is to restrict it to the poor, until the end of what he stated, may the mercy of the Generous One be upon him. And Allah Subhanah wa Ta'ala knows best.

[Urdu Explanation of the above]: The word "and in the way of Allah" refers to those warriors who do not have the expenses for Jihad; some have determined it as pilgrims, and according to some, it refers to students. In Al-Badai', this word is interpreted as "all rewarded acts". In Al-Nahr, it is stated that apart from the collector, Zakat will be spent on all categories only when they are poor. And in it, the author's statement explains the reasoning that strengthens the view attributed to Al-Waqi'at, which is that it is permissible for a student of knowledge to take Zakat even if he is wealthy, provided he has dedicated himself to teaching and learning. However, this derivation is against the general rule of the noble jurists which keeps the prohibition of Zakat absolute for the wealthy, while no one has relied upon this (At-Tahtawi). I say: This matter is as such; it is appropriate that the seeker of knowledge be restricted to being poor (until the end of his discourse). May the mercy of Allah the Generous be upon them. And Allah Subhanah wa Ta'ala knows best. (T)

[Problem 90]: From the city of Bahraich, Mohalla Nazir Pura, requested by Hakim Muhammad Abdul Wakeel Sahib. What do the scholars of religion and the muftis of the firm Shariah say regarding this matter: that a person named Zaid built a mosque or a well related to a mosque for pure water, and due to a lack of capital, he ultimately became indebted. Therefore, in this situation, is it permissible to give Zakat money? Because it is religiously permissible for a debtor to take Zakat money to pay his debt, as debt is also one of the avenues for spending Zakat money. Please explain and be rewarded.

[The Answer]: A person who is so indebted that after paying it off, he does not remain the owner of wealth worth fifty-six rupees (Nisab) besides his basic necessities, and he is not a Hashmi, nor is the Zakat-giver among his children, nor are they husband and wife to each other—giving him Zakat is certainly permissible.

[Footnotes]: 1. Radd al-Muhtar, Bab al-Masraf, Mustafa al-Babi Egypt, 2/67 2. Radd al-Muhtar, Bab al-Masraf, Mustafa al-Babi Egypt, 2/65

फतावा रज़विया जिल्द 10

[अरबी गद्यांश]: अल-गुज़ात (योद्धा), और कहा गया है हाजी, और कहा गया है इल्म हासिल करने वाले (विद्यार्थी)। और अल-बदाइ' में इसकी व्याख्या सभी नेकियों के रूप में की गई है। अन-नह्र में कहा गया है कि मतभेद केवल शाब्दिक है क्योंकि इस बात पर सहमति है कि कार्यकर्ता के अलावा सभी श्रेणियों को गरीबी की शर्त पर ज़कात दी जाती है (संक्षेप में)। और उसी में, उनके इस कथन के तहत: 'और इस तर्क के साथ, अल-वाक़िआत से संबंधित उस बात को बल मिलता है कि इल्म हासिल करने वाले के लिए ज़कात लेना जायज़ है भले ही वह अमीर हो, बशर्ते उसने खुद को इल्म सिखाने या सीखने के लिए समर्पित कर दिया हो।' यह शाखा अमीरों के लिए ज़कात की मनाही के उनके सामान्य नियम के विरुद्ध है, और किसी ने भी इस पर भरोसा नहीं किया है (अत-तहतावी)। मैं कहता हूँ: यह ऐसा ही है, और सबसे सही नज़रिया इसे गरीबों तक सीमित रखना है, उनके द्वारा बताए गए अंत तक, उन पर उदार (अल्लाह) की रहमत हो। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है।

[उपरोक्त की उर्दू व्याख्या]: शब्द "और अल्लाह की राह में" से मुराद वो गाज़ी हैं जिनके पास जिहाद का खर्चा नहीं, कुछ ने हाजी करार दिया, कुछ के नज़दीक तलबा (विद्यार्थी) मुराद हैं। बदाइ' में इस कलमे की तफ़सीर "तमाम सवाब वाले काम" से की है, नह्र में है कि आमिल (ज़कात वसूलने वाला) के सिवा तमाम मसारिफ़ (खर्च की जगहें) पर तब खर्च किया जाएगा जब वो फ़कीर हों। और इसी में मात़िन के क़ौल, इस इल्लत (कारण) के बयान से वाक़िआत की तरफ़ मंसूब उस क़ौल की तक़्वियत (मजबूती) हो जाती है कि तालिब-ए-इल्म को ज़कात लेना जायज़ है ख्वाह वो ग़नी (अमीर) हो बशर्ते कि उसने अपने आप को इल्म पढ़ाने और पढ़ने के लिए मुख़्तस (समर्पित) कर रखा हो, कि ये तफ़रीह (शाखा) फ़ुक़हा-ए-किराम के हुरमत-ए-ज़कात को ग़नी के लिए मुतलक़ (निरपेक्ष) रखने के खिलाफ है जबकि इस पर किसी ने एतमाद नहीं किया, (अत-तहतावी)। मैं कहता हूँ ये मामला यूँ ही है, मौज़ूं यही है कि तालिब-ए-इल्म को फ़कीर होने से मुक़ैयद (सीमित) किया जाए (उनके अफ़ादा के आख़िर तक) उन पर अल्लाह तआला जवाद की रहमत हो, वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम। (त)

[मसला 90]: शहर बहराइच, मोहल्ला नाज़िर पुरा से, साएल हकीम मोहम्मद अब्दुल वक़ील साहब। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस मसले में कि मुसम्मी ज़ैद ने मस्जिद या कुआँ मस्जिद से मुतअल्लिक ताहिर (साफ़) पानी के लिए तैयार किया और बवजह कमी-ए-सरमाया के बिल-आख़िर क़र्ज़दार हो गया। लिहाज़ा इस सूरत में माल-ए-ज़कात देना जायज़ है?

क्योंकि क़र्ज़दार को उसके क़र्ज़ अदा करने के लिए माल-ए-ज़कात लेना शरअन जायज़ है क्योंकि मंजमला मसारिफ़-ए-माल-ए-ज़कात के क़र्ज़ भी एक मसरफ़ है। बीनू तौजरू।

[अल-जवाब]: जिस पर इतना दैन (कर्ज़) हो कि उसे अदा करने के बाद अपनी हाजात-ए-अस्लिया (बुनियादी ज़रूरतों) के अलावा छप्पन रुपये के माल का मालिक न रहेगा और वो हाशमी न हो, न ये ज़कात देने वाला उसकी औलाद में हो, न बाहम ज़ौज ओ ज़ौजा (पति-पत्नी) हों, उसे ज़कात देना बेशक जायज़ है।

[पाद टिप्पणियाँ]: 1. रद-अल-मुह्तार, बाब-अल-मसरफ़, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/67 2. रद-अल-मुह्तार, बाब-अल-मसरफ़, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/65

فتاوی رضویه جلد دہم

الغزاة وقيل الحاج وقيل طلبة العلم وفسره في البدائع بجميع القرب، قال في النهر والخلاف لفظي للاتفاق على ان الاصناف كلهم سوى العامل يعطون بشرط الفقر اهـ (ملخصاً) وفيه تحت قوله وبهذا التعليل يقوى مانسب للواقعات من ان طالب العلم يجوز له اخذ الزكوة ولو غنيا اذا فرغ نفسه لافادة العلم واستفادته، هذا الفرع مخالف لا طلاقهم الحرمة فی الغنی ولم يعتمده احد ط، قلت وهو كذلك والا وجه تقييده بالفقير الى اخر ما افاده ، عليه رحمة الجواد ۔ واللہ سبحانہ وتعالیٰ اعلم۔

قول " اور اللہ کی راہ میں " سے مراد وہ غازی ہیں جن کے پاس جہاد کا خرچہ نہیں، بعض نے حاجی قرار دیا، بعض کے نزدیک طلبہ مراد ہیں۔ بدائع میں اس کلمہ کی تفسیر " تمام ثواب والے کام " سے کی ہے، نہر میں ہے کہ عامل کے سوا تمام مصارف پر تب خرچ کیا جائے گا جب وہ فقیر ہوں اھ اور اسی میں ماتن کے قول، اس علت کے بیان سے واقعات کی طرف منسوب اس قول کی تقویت ہو جاتی ہے کہ طالب علم کو زکوٰۃ لینا جائز ہے خواہ وہ غنی ہو بشرطیکہ اس نے اپنے آپ کو علم پڑھانے اور پڑھنے کے لیے مختص کر رکھا ہو کہ یہ تفریح فقہاء کرام کے حرمت زکوٰۃ کو غنی کے لئے مطلق رکھنے کے خلاف ہے جبکہ اس پر کسی نے اعتماد نہیں کیا، ط میں کہتا ہوں یہ معاملہ یونہی ہے، موزوں یہی ہے کہ طالب علم کو فقیر ہونے سے مقید کیا جائے (ان کے افادہ کے آخر تک) ان پر اللہ تعالیٰ جواد کی رحمت ہو، واللہ سبحانہ وتعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ۹۰: از شہر بہرائچ محلہ ناظر پورہ مسئولہ حکیم محمد عبدالوہیل صاحب کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ مسمیٰ زید نے مسجد یا کنواں مسجد سے متعلق طاہر پانی کے لیے تیار کیا اور بوجہ کمی سرمایہ کے بالاخر قرضدار ہو گیا لہذا اس صورت میں مالِ زکوٰۃ دینا جائز ہے کیونکہ قرضدار کو اس کے قرضہ ادا کرنے کے لیے مالِ زکوٰۃ لینا شرعاً

جائز ہے کیونکہ منجملہ مصارفِ مالِ زکوٰۃ کے قرضہ بھی ایک مصرف ہے۔ بینوا توجروا الجواب:
جس پر اتنا دین ہو کہ اُسے ادا کرنے کے بعد اپنی حاجات اصلیہ کے علاوہ چھپن روپے کے مال کا مالک نہ رہے گا اور وہ ہاشمی نہ ہو، نہ یہ زکوٰۃ دینے والا اس کے اولاد میں ہو، نہ باہم زوج و زوجہ ہوں، اسے زکوٰۃ دینا بیشک جائز۔

1 ردالمختار، باب المصرف، مصطفی البابی مصر، ۶۷/۲ 2 ردالمختار، باب المصرف، مصطفی البابی مصر، ۶۵/۲

Volume Ten Fatawa-e-Razvia

Rather, giving to a debtor is more virtuous than giving to a poor person; one should not give fifty-six rupees to every poor person at once, but if a debtor owes fifty-six thousand, then fifty-six thousand of Zakat can be given at once. Allah Almighty said, "AND THOSE IN DEBT" [1] (Allah Almighty's noble command is: and Zakat should be spent on those in debt. - T). In Durr al-Mukhtar it is stated:

"A debtor is one who does not possess a surplus of wealth beyond his debt that reaches the Nisab. In Al-Zahiriyyah, it is mentioned: giving to a debtor is more virtuous than giving to a poor person." [2] (T)

In Radd al-Muhtar it is stated:

"And Tahtawi (Al-Tahṭāwī) narrated from Al-Hamawi that the condition is that he should not be a Hashimi. [3] And Allah Almighty knows best." (T)

Problem 91 to 102: Queried by Rashid Ahmed, student of Madrasa Ahl-e-Sunnat wal Jama'at, 7 Muharram-ul-Haram 1344 AH. What do the scholars of religion say regarding these matters: if a person sets aside Zakat from their wealth, should that money be given to these persons or not? (1) Is it permissible if some is given to paternal uncles, aunts, and paternal cousins (brothers and sisters)? (2) Is it permissible to give it to maternal uncles, aunts, maternal grandparents, and maternal cousins (brothers and sisters)? (3) Is it permissible to give it to paternal aunts, their husbands, and their children? (4) If a person has a sister and she is married, and her husband pays little attention (to her needs), is it permissible to give her Zakat money? (5) Is it permissible to give something to a niece or nephew (sister's children)? (6) If someone uses money to have cotton filled into quilts and distributes them among the poor, is it permissible? (7) Is it permissible to give something to a student? (8) Is it permissible to give something to a brother-in-law?

[1] Al-Quran 60/9 [2] Durr al-Mukhtar, Chapter of Expenditure, Mujtabai Press Delhi, 1/140 [3] Radd al-Muhtar, Chapter of Expenditure, Mustafa al-Babi Egypt, 2/67 Page 255 of 836

जिल्द दहम (खंड दस) फ़तावा रज़विया

बल्कि फ़कीर को देने से बेहतर है, हर फ़कीर को एक साथ छप्पन रुपये नहीं देने चाहिए, और यदि ऋणी (कर्जदार) पर छप्पन हज़ार का कर्ज हो तो ज़कात के छप्पन हज़ार एक साथ दिए जा सकते हैं। अल्लाह तआला ने फ़रमाया "व-अल-गारिमीन" [1] (अल्लाह तआला का पवित्र आदेश है: और कर्जदार लोगों पर ज़कात खर्च की जाए। - टी)। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

"ऋणी वह व्यक्ति है जिसके पास अपने ऋण के अतिरिक्त निसाब (न्यूनतम संपत्ति) के बराबर अतिरिक्त संपत्ति न हो, 'ज़हीरिया' में है: ऋणी को ज़कात देना फ़कीर को देने से बेहतर है।" [2] (टी)

'रद्दुल मुहतार' में है:

"और तहतावी ने हमवी से उद्धृत किया है कि शर्त यह है कि ऋणी हाशमी न हो। [3] और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।" (टी)

मसला ९१ से १०२: प्रार्थी रशीद अहमद, विद्यार्थी मदरसा अहले सुन्नत व जमात, ७ मुहर्रमुल हराम १३४४ हिजरी। धर्म के विद्वान इन मसलों में क्या कहते हैं कि यदि किसी व्यक्ति ने अपने धन से ज़कात निकाली, तो वह रुपया इन व्यक्तियों को देना चाहिए या नहीं? (१) यह कि क्या चाचा, चाची और चचेरे भाई-बहनों को कुछ दे दिया जाए तो जायज़ है या नहीं? (२) यह कि क्या मामा, मामी, नाना, नानी और ममेरे भाई-बहनों को देना जायज़ है या नहीं? (३) यह कि क्या फूफा, फूफी और उनकी संतान को देना जायज़ है या नहीं? (४) यह कि यदि अपनी बहन है और उसकी शादी कर दी और उसका पति कम ध्यान देता है, तो उसे ज़कात का माल देना जायज़ है या नहीं? (५) यह कि क्या भान्जी और भान्जे को कुछ दे दिया जाए तो जायज़ है या नहीं? (६) यह कि यदि कोई रुपये से लिहाफ़ में रुई डलवा कर गरीबों को बाँट दे, तो जायज़ है या नहीं? (७) यह कि यदि विद्यार्थी को कुछ दे दिया जाए तो जायज़ है या नहीं? (८) यह कि यदि बहनोई को कुछ दे दिया जाए तो जायज़ है या नहीं?

[1] अल-क़ुरान ६०/९ [2] दुर्रे मुख्तार, बाबुल मसरिफ, मतबा मुजतबाई दिल्ली, १/१४० [3] रद्दुल मुहतार, बाबुल मसरिफ, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, २/६७ पृष्ठ २५५/८३६

بلکہ فقیر کو دینے سے افضل، ہر فقیر کو چھپن روپے دفعۃً نہ دینا چاہئیں، اور مدیون پر چھپن ہزار دین ہو تو زکوۃ کے چھپن ہزار ایک ساتھ دے سکتے ہیں قال اللہ تعالیٰ وَالْغٰرِمِیْنَ 1 (اللہ تعالیٰ کا ارشاد گرامی ہے اور مقروض لوگوں پر زکوۃ خرچ کی جائے۔ت) دُر مختار میں ہے :

ومدیون لا یملك نصاباً فاضلاً عن دینہ وفی الظھیریۃ الدفع للمدیون اولٰی منہ للفقیر۔ 2 | مقروض وہ شخص ہوتا ہے جو قرض سے فاضل نصاب کا مالک نہ ہو، ظہیرہ میں ہے: مدیون کو زکوۃ دینا فقیر سے اولیٰ ہے۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے :

ونقل ط عن الحموی انہ یشترط ان لا یکون ھاشمیّاً۔ 3 واللہ تعالیٰ اعلم۔ | اور طحطاوی نے حموی سے نقل کیا کہ شرط یہ ہے کہ مدیون ہاشمی نہ ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ۹۱ تا ۱۰۲: مسئولہ رشید احمد متعلّم مدرسہ اہلسنت والجماعت ۷ محرم الحرام ۱۳۴۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسئلوں میں کہ کسی شخص نے اپنے مال میں سے زکوۃ نکالی وہ روپیہ ان شخصوں کو دینا چاہئے یا نہیں؟ (۱) یہ کہ اگر چچا چچی و چچا زاد بھائی و بہنوں کو کچھ دے دیا جائے تو جائز ہے یا نہیں؟ (۲) یہ کہ ماموں و ممانی و نانا و نانی اور ماموں زاد بھائی اور بہنوں کو دینا جائز ہے یا نہیں؟ (۳) یہ کہ پھوپھا و پھوپھی اور ان کی اولاد کو دینا جائز ہے یا نہیں؟ (۴) یہ کہ اگر اپنی ہمشیرہ ہے اور اس کی شادی کردی اور اس کا خاوند کم توجہ کرتا ہے تو اس کو زکوۃ کا مال دینا جائز ہے یا نہیں؟ (۵) یہ کہ بھانجی بھانجے کو کچھ دے دیا جائے تو جائز ہے یا نہیں؟ (۶) یہ کہ اگر کوئی روپے سے لحاف میں رُوئی ڈلوا کر غریبوں کو تقسیم کر دیں تو

جائز ہے یا نہیں؟ (۷) یہ کہ اگر طالب علم کو کچھ دے دیا جائے تو جائز ہے یا نہیں؟ (۸) یہ کہ اگر بہنوئی کو کچھ دے دیا جائے تو جائز ہے یا نہیں؟

1 القرآن ۶۰/۹ 2 در مختار باب المصرف مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۴۰ 3 ردالمحتار، باب المصرف، مصطفی البابی مصر ، ۲ / ۶۷ Page 255 of 836

Fatawa-e-Razvia Volume 10

(9) Even if it is known that this person appears poor, but he might secretly possess something, is it permissible to give to him or not? (10) Is it permissible to give from this money to beggars who go around asking for it or not? (11) Besides that, please write down the matters for which Zakat money should be spent. (12) If it is spent on Mawlid Sharif or for Niyaz (consecrated food) prayers, is it permissible or not? Provide a ruling and be rewarded.

The Answer:

(1) Yes, it is permissible as long as the recipient is eligible. (2) Impermissible for maternal grandparents; permissible for the remaining four. (3) It can be given to all of them, provided they are neither wealthy, nor minor children of wealthy fathers, nor from the Hashimi lineage. (4) Permissible as long as they are needy. (5) Permissible for them as well under the aforementioned conditions. (6) Yes, the cost of cotton can be applied towards Zakat, provided it is given with the intention of Zakat, but the labor cost for stuffing will not be counted in Zakat. (7) Permissible as long as they are not wealthy Hashimis. (8) Permissible under the aforementioned conditions. (9) As long as his internal state is unknown, one can act upon his apparent state of need and give Zakat. (10) It is permissible, but it is not permissible to give to healthy young people who make a profession of begging, such as Jogi or Sadhu children. (11) A needy poor person who is not a Hashimi, nor a minor child of a wealthy father, nor one's own descendants such as son, daughter, grandson, granddaughter, nor one's ancestors (Usool) such as parents, grandparents, nor one's wife, nor a woman's own husband; Zakat is fulfilled by making such a needy person, who is other than all these, the owner [of the Zakat amount] with the intention of Zakat. That is all. (12) In a gathering of Milad-e-Pak, distribution is general, and there is no distinction between wealthy and poor, or eligible and ineligible recipients. Similarly, in the distribution of Niyaz, Zakat cannot be fulfilled this way. Yes, those portions which are given specifically to the poor who are eligible for Zakat with the intention of Zakat can be counted towards Zakat. And Allah Almighty knows best.

Issue 103: From Moradabad, asked by Amir Hasan Sahib Rizvi, 9 Muharram al-Haram 1337 AH. What do the scholars of religion and muftis of the clear Shariah say regarding this issue: how much Sadaqah al-Fitr should be given, to whom it should be given, at what time it should be paid, and on whose behalf? Provide a ruling and be rewarded.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (दसवाँ भाग)

(9) यह कि यद्यपि मालूम हो कि यह व्यक्ति ग़रीब मालूम होता है और शायद उसके पास गुप्त रूप से कुछ हो, उसे देना जायज़ है या नहीं? (10) यह कि इन रुपयों में से उन फ़कीरों को जो मांगते फिरते हैं देना जायज़ है या नहीं? (11) इसके अलावा वह बात कि जिसमें रुपया ज़कात ख़र्च किया जाए वह कृपया लिख दीजिए। (12) यह कि अगर मौलूद शरीफ़ में या नियाज़ दुआ में ख़र्च किया जाए तो जायज़ है या नहीं? बयान फरमाएं सवाब पाएं।

जवाब:

(1) हाँ जायज़ है जब कि उपभोग्य (मसरफ़) हो। (2) नाना-नानी को नाजायज़, बाकी चारों को जायज़। (3) इन सब को दे सकते हैं जब कि न धनी हों, न धनी बाप के बच्चे, न हाशमी। (4) जायज़ है जब कि मोहताज हो। (5) इनको भी उपर्युक्त शर्तों के साथ जायज़ है। (6) हाँ रुई की क़ीमत ज़कात में लगा सकता है जब कि ज़कात की नीयत से दे, मगर भराई की मज़दूरी ज़कात में गिनी नहीं जाएगी। (7) जायज़ है जब कि धनी हाशमी न हो। (8) उपर्युक्त शर्तों के साथ जायज़ है। (9) जब कि उसे उसका आंतरिक हाल मालूम नहीं तो प्रकट रूप से मोहताजी पर अमल करके ज़कात दे सकता है। (10) जायज़ है मगर जो तंदुरुस्त जवान हैं जिन्होंने भीख मांगने का पेशा बना लिया है, जैसे जोगी साधु के बच्चे, उनको देना जायज़ नहीं। (11) मोहताज फ़कीर जो न हाशमी हो, न धनी बाप का नाबालिग़ बच्चा, न अपनी औलाद जैसे बेटा-बेटी, पोता-पोती, नवासा-नवासी, न अपने पूर्वज (उमूल) जैसे माँ-बाप, दादा-दादी, नाना-नानी, न अपनी पत्नी, न स्त्री का अपना पति, ऐसे मोहताज जो इन सब के अलावा हों उसे ज़कात की नीयत से मालिक बना देने से ज़कात अदा होती है, बस। (12) मजलिस-ए-मीलाद पाक में हिस्सा आम तक़सीम होता है धनी-फ़कीर, पात्र-अपात्र का भेद नहीं होता, इसी तरह नियाज़ की तक़सीम में तो इससे ज़कात अदा नहीं हो सकती, हाँ जो हिस्से ख़ास फ़ुक़रा (निर्धनों) को जो ज़कात के पात्र हैं दिए जाएं और उसमें ज़कात की नीयत करे तो वे ज़कात में गिने जा सकते हैं। वल्लाहु तआला आलम।

मसला 103: मुरादाबाद से, मुस्तौ़ला अमीर हसन साहब रिज़वी, 9 मुहर्रमुल हराम 1337 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीअत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि सदक़ा-ए-फ़ित्र कितना देना चाहिए और किसको देना चाहिए और किस समय अदा करना चाहिए और किसकी ओर से? बयान फरमाएं सवाब पाएं।

فتاوی رضویہ جلد دہم

(۹) یہ کہ اگرچہ معلوم ہو کہ یہ شخص غریب معلوم ہوتا ہے اور پوشیدہ اس کے پاس چاہے کچھ ہو اس کو دینا جائز ہے یا نہیں؟ (۱۰) یہ کہ ان روپوں میں سے فقیروں کو جو مانگتے پھرتے ہیں دینا جائز ہے یا نہیں؟ (۱۱) علاوہ اس کے وہ بات کہ جس میں روپیہ زکوٰۃ صرف کیا جائے وہ برائے مہربانی تحریر کر دیجئے گا۔ (۱۲) یہ کہ اگر مولود شریف میں یا نیاز دعا میں صرف کیا جائے تو جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب:

(۱) ہاں جائز ہے جبکہ مصرف ہو۔ (۲) نانا نانی کو نا جائز باقی چاروں کو جائز۔ (۳) ان سب کو دے سکتے ہیں جبکہ نہ غنی ہوں نہ غنی باپ کے بچے نہ ہاشمی۔ (۴) جائز ہے جبکہ محتاج ہو۔ (۵) ان کو بھی بشرائط مذکورہ جائز ہے۔ (۶) ہاں روئی کی قیمت زکوۃ میں لگا سکتا ہے جبکہ بہ نیت زکوۃ دے مگر بھرائی کی اجرت زکوۃ میں شمار نہ ہو گی۔ (۷) جائز ہے جبکہ غنی ہاشمی نہ ہو۔ (۸) بشرائط مذکورہ جائز ہے۔ (۹) جبکہ اُسے اس کا اندرونی حال معلوم نہیں تو ظاہر محتاجی پر عمل کر کے زکوۃ دے سکتا ہے۔ (۱۰) جائز ہے مگر جو ان سے تندرست جو بھیک مانگنے کا پیشہ کر لیتے ہیں جیسے جوگی سادھو بچے ان کو دینا جائز نہیں۔ (۱۱) محتاج فقیر جو نہ ہاشمی ہو نہ غنی باپ کا نابالغ بچہ، نہ اپنی اولاد جیسے بیٹا بیٹی، پوتا پوتی، نواسا نواسی، نہ اپنے اصول جیسے ماں باپ، دادا دادی، نانا نانی، نہ اپنی زوجہ، نہ عورت کا اپنا شوہر، ایسے محتاج جو ان سب کے سوا ہو بہ نیت زکوۃ دے کر مالک کر دینے سے زکوۃ ادا ہوتی ہے وبس۔ (۱۲) مجلس میلاد پاک میں حصہ عام تقسیم ہوتا ہے غنی فقیر مصرف غیر مصرف کی تخصیص نہیں ہوتی، یونہی نیاز کی تقسیم میں تو اس سے زکوۃ ادا نہیں ہو سکتی، ہاں جو حصے خاص فقراء مصرف

زکوۃ کو دے اس کا شمار ان کو دینے میں زکوۃ کی نیت کرے تو وہ زکوۃ میں محسوب ہو سکتے ہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۰۳: از مراد آباد مسئولہ امیر حسن صاحب رضوی ۹ محرم الحرام ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ صدقہ فطر کس قدر دینا چاہئے اور کس کو دینا چاہئے اور کس وقت ادا کرے اور کس طرف سے؟ بینوا توجروا

The Answer: Sadqah Fitr should be given as one and three-quarter seers plus an eighth (based on a hundred rupee seer). Its recipients are the same as those of Zakat. The time for giving it is broad; it can be given before Eid-ul-Fitr and also after, but delay should be avoided. It is better to give it before the Eid prayer, as stated in the Hadith: "The fasts of a person possessing the Nisab remain suspended until this Sadqah is paid." It is obligatory (Wajib) to give it on one's own behalf and on behalf of one's children and slaves who are in one's possession. It is not obligatory to give it on behalf of one's wife or adult children if they are owners of Nisab; if you give it or they give it with their permission, it is valid, otherwise, it will not be fulfilled on their behalf without permission. And Allah Almighty knows best.

Mas'ala 104: Among my relatives is a blind and indebted person. He has property, but it is less than his debts, and the possession is with someone else. He does not receive the full income. Should Zakat be given to him or not? Only. The Answer: Yes, in fact, giving it to relatives yields double reward. And Allah Almighty knows best.

Mas'ala 105: From Haji Abdul Karim Nur Muhammad, General Merchant, Chowk Nagpur, 9 Safar al-Muzaffar 1334 AH. Can Zakat money be given to students for aid or not? The Answer: Students who do not possess the Nisab can be given Zakat; in fact, giving it to them is superior if they are studying religious knowledge for the sake of religion. And Allah Almighty knows best.

Mas'ala 106: From the city of Bareilly, office of Anjuman Khadim al-Muslimin, 22 Shaban 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding whether Zakat is fulfilled by giving Zakat and charity funds to professional beggars or not? And to what extent is this group deserving of Zakat from a religious and civilizational perspective, and how far is it permissible not to encourage professional beggars? The Answer: Begging is of three types: One is the rich wealthy person, like many jogis and sadhus; it is Haraam (forbidden) for them to ask and Haraam to give to them, and Zakat is not fulfilled by giving to them; the obligation remains on the giver's shoulders.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

जवाब: सदक़ह फ़ित्र सौ रुपये के सेर से पौने दो सेर अठनी भर ऊपर दिया जाए और इसके मसरफ़ वही लोग हैं जो ज़कात के मसरफ़ हैं। इसके देने का समय विस्तृत है; इसे ईद-उल-फ़ित्र से पहले भी दिया जा सकता है और बाद में भी, लेकिन बाद में देरी नहीं करनी चाहिए, बल्कि बेहतर यह है कि ईद की नमाज़ से पहले दे दिया जाए, क्योंकि हदीस में है: "निसाब के मालिक के रोज़े तब तक लटके रहते हैं जब तक वह यह सदक़ा अदा न कर दे।" अपनी ओर से और अपने बच्चों की ओर से देना वाजिब है, और उन बांदी-गुलामों की ओर से भी जो उसके अधिकार में हैं। पत्नी या बालिग बच्चों की ओर से देना वाजिब नहीं है यदि वे स्वयं निसाब के मालिक हैं; यदि आप उनकी अनुमति से दें या वे अनुमति दें तो अदा होगा, बिना अनुमति उनकी ओर से अदा नहीं होगा। वल्लाहु तआला आलम।

मसअला १०४: मेरे रिश्तेदारों में एक व्यक्ति नेत्रहीन और कर्जदार है। उनके पास संपत्ति है लेकिन वह उनके कर्ज से कम है, और कब्ज़ा किसी अन्य व्यक्ति का है। उन्हें पूरी आय भी नहीं मिलती। क्या उन्हें ज़कात देनी चाहिए या नहीं? फ़क़त। जवाब: हाँ, बल्कि रिश्तेदारों को देने में दोगुना सवाब है। वल्लाहु तआला आलम।

मसअला १०५: हाजी अब्दुल करीम नूर मोहम्मद, जनरल मर्चेंट चौक नागपुर की ओर से, ९ सफ़र अल-मुज़फ़्फ़र १३३४ हिजरी। क्या ज़कात का पैसा छात्रों को सहायता के लिए दे सकते हैं या नहीं? जवाब: छात्र जो निसाब के मालिक न हों, उन्हें ज़कात दी जा सकती है, बल्कि उन्हें देना श्रेष्ठ है बशर्ते कि वे दीन का इल्म दीन समझकर पढ़ते हों। वल्लाहु तआला आलम।

मसअला १०६: शहर बरेली दफ़्तर अंजुमन ख़ादिमुल मुस्लिमीन की ओर से, २२ शाबान १३३८ हिजरी। धर्म के विद्वान क्या फ़रमाते हैं कि पेशेवर भिखारियों को ज़कात और ख़ैरात का माल देने से ज़कात अदा होती है या नहीं? और धार्मिक व सामाजिक दृष्टिकोण से यह समूह कहाँ तक ज़कात का हकदार है, और पेशेवर भिखारियों की हिम्मत अफ़ज़ाई न करना कहाँ तक जायज़ है? जवाब: भीख माँगना तीन प्रकार का है: एक धनी मालदार, जैसे कि बहुत से जोगी और साधु; उनके लिए माँगना हराम है और उन्हें देना हराम है, और उन्हें देने से ज़कात अदा नहीं होती, फ़र्ज़ सिर पर बाकी रहेगा।

पेज २५७ ऑफ़ ८३६

الجواب: صدقہ فطر سو روپے کے سیر سے پونے دوسیر اٹھنی بھر اوپر دیا جائے اور اس کے مصرف وہی لوگ ہیں جو مصرف زکوۃ ہیں اور اس کے دینے کا وقت واسع ہے، عیدالفطر سے پہلے بھی دے سکتا ہے اور بعد بھی، مگر بعد کو تاخیر نہ چاہئے بلکہ اولٰی یہ ہے کہ نماز عید سے پہلے نکال دے کہ حدیث میں ہے: صاحب نصاب کے روزے معلق رہتے ہیں جب تک یہ صدقہ ادا نہ کرے گا۔ اپنی طرف سے اور اپنے بچوں کی طرف سے دینا واجب ہے اور باندی غلام کی طرف سے بھی جو اس کی ملک ہیں، بی بی یا نا بالغ بچوں کی طرف سے دینا واجب نہیں اگر وہ صاحب نصاب ہیں، آپ دیں یا ان کی اجازت سے یہ دے، بلا اجازت ان کی طرف سے ادا نہ ہوگا۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۰۴: میرے عزیزوں میں ایک شخص نابینا اور قرضدار ہیں جائیداد ان کے ہے لیکن قرضداری سے کم ہے اور قبضہ دوسرے شخص کا ہے، ان کو آمد بھی پورے پورے طور سے نہیں ملتی، زکوٰۃ کو ان دینی چاہئے یا نہیں؟ فقط الجواب: ہاں بلکہ عزیزوں کو دینے میں دونا ثواب ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۰۵: از حاجی عبدالکریم نور محمد جنرل مرچنٹ چوک ناگپور ۹ صفر المظفر ۱۳۳۴ھ زکوٰۃ کا پیسہ طلبہ کو دے سکتے ہیں امداد کے لیے یا نہیں؟ الجواب: طلبہ کہ صاحب نصاب نہ ہوں انھیں زکوٰۃ دی جاسکتی ہے بلکہ انھیں دینا افضل ہے جبکہ وہ طلبہ علم دین بطور دین پڑھتے ہوں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۰۶: از شہر بریلی دفتر انجمن خادم المسلمین ۲۲ شعبان ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین کہ پیشہ ور گداگروں کو زکوٰۃ و خیرات کا مال دینے سے زکوٰۃ ادا ہوتی ہے یا نہیں اور مذہبی و تمدنی نقطہ نظر سے کہاں تک یہ گروہ زکوٰۃ کا مستحق ہے اور پیشہ ور گداگروں کی ہمت افزائی نہ کرنا کہاں تک جائز ہے؟ الجواب: گدائی تین قسم ہے: ایک غنی مالدار جیسے اکثر جوگی اور سادھو بجے، انھیں سوال کرنا حرام اور انھیں دینا حرام، اور ان کے دئے سے زکوٰۃ ادا نہیں ہو سکتی، فرض سر پر باقی رہے گا۔

Fatawa Ridawiyya Volume 10

Secondly, those who in reality do not own the equivalent of Nisab (the minimum amount for Zakat eligibility) but are strong and healthy, capable of earning, and their request is not for any need that is beyond their earning capacity; they do not practice any craft or labor, are accustomed to eating free food, and wander around begging for it. For them, begging is forbidden (Haram), and whatever they receive from it is impure (khabith) for them, as it is stated in the noble Hadith:

[Arabic Box: Charity is not lawful for a wealthy person, nor for one who is strong and healthy. 1] [Urdu translation box: Charity is not lawful for a wealthy person, nor for one who is strong and healthy (T)]

Giving them alms is prohibited because it is assistance in sin. If people do not give, they will be forced to do some work and labor.

[Arabic Box: Allah Almighty says: And do not cooperate in sin and transgression. 2] [Urdu translation box: Allah Almighty's blessed command is: Do not cooperate in sin and transgression (T)]

However, Zakat will be fulfilled by giving to them as long as there is no other Shari'ah prohibition, because they are poor (faqir).

[Arabic Box: Allah Almighty says: Zakat is only for the poor... 3] [Urdu translation box: Allah Almighty's blessed command is: Charity is for the poor (T)]

Thirdly, those weak and incapacitated who neither possess wealth nor have the power to earn, or are unable to earn as much as they need. For them, begging to the extent of their need is lawful (Halal), and whatever they receive from it is pure (Tayyib) for them. These are excellent recipients of Zakat, and giving to them is a source of great reward. These are the ones whom it is forbidden to rebuke. And Allah Almighty knows best.

Problem 701: From Nagaur, Marwar, from the shop of Qadir Bakhsh, sent by Muhammad Bakhsh, President of Anjuman Madrasa Hamidiyya Islamiya, Sha'ban 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it permissible to give Zakat money to an Islamic Madrasa or not?

The Answer: If the Islamic Madrasa is truly Islamic, specifically of the Ahl al-Sunnah, and not of the Necharis, Wahhabis, Qadianis, Rafidis, Deobandis, etc., who are apostates, then Zakat money can be given to it on the condition that the manager

keeps this money separate and spends it specifically for the ownership (tamlik) of the poor. It cannot be used to pay the salaries of teachers or other employees.

1. Jami' at-Tirmidhi, Chapters of Zakat, Chapter on those for whom charity is not lawful, Amin Company, Rashidiyah Bookstore, Delhi, 1/83.
2. Al-Quran 5/2.
3. Al-Quran 9/60.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

दूसरे वे जो वास्तव में निसाब (ज़कात की पात्रता की न्यूनतम राशि) के मालिक नहीं हैं, लेकिन शक्तिशाली और स्वस्थ हैं, कमाने में सक्षम हैं, और उनकी माँग ऐसी ज़रूरतों के लिए नहीं है जो उनकी कमाई की क्षमता से बाहर हों; वे कोई शिल्प या मज़दूरी नहीं करते हैं, मुफ़्त का खाना खाने के आदी हैं और इसके लिए भीख मांगते फिरते हैं। उनके लिए भीख माँगना हराम (वर्जित) है, और उन्हें इससे जो कुछ भी मिलता है वह उनके हक में ख़बीस (अपवित्र) है, जैसा कि हदीस शरीफ़ में है:

[अरबी बॉक्स: धनी व्यक्ति के लिए और न ही किसी शक्तिशाली और स्वस्थ व्यक्ति के लिए सदक़ा (दान) हलाल नहीं है। 1] [उर्दू अनुवाद बॉक्स: धनी व्यक्ति के लिए और न ही किसी शक्तिशाली और स्वस्थ व्यक्ति के लिए सदक़ा हलाल नहीं है (त)]

उन्हें भीख देना मना है क्योंकि यह गुनाह में मदद करना है। अगर लोग नहीं देंगे, तो वे कुछ मेहनत और मज़दूरी करने पर मजबूर होंगे।

[अरबी बॉक्स: अल्लाह तआला का फ़रमान है: और गुनाह और ज़्यादती पर एक-दूसरे का सहयोग न करो। 2] [उर्दू अनुवाद बॉक्स: अल्लाह तआला का मुबारक फ़रमान है: गुनाह और ज़्यादती पर सहयोग न करो (त)]

मगर उनके देने से ज़कात अदा हो जाएगी जबकि कोई और शर्ई रुकावट न हो क्योंकि वे फ़क़ीर हैं,

[अरबी बॉक्स: अल्लाह तआला का फ़रमान है: सदक़ात (ज़कात) केवल फ़क़ीरों के लिए हैं। 3] [उर्दू अनुवाद बॉक्स: अल्लाह तआला का मुबारक फ़रमान है: सदक़ात फ़क़ीरों के लिए हैं (त)]

तीसरे वे मजबूर और कमज़ोर जो न तो धन रखते हैं और न ही कमाने की शक्ति रखते हैं, या जितना आवश्यक है उतना कमाने में सक्षम नहीं हैं। उनके लिए आवश्यकता के अनुसार माँगना हलाल (वैध) है, और इससे उन्हें जो कुछ भी मिलता है वह उनके लिए तय्यिब (पवित्र) है। ये ज़कात के बेहतरीन पात्र हैं और उन्हें देना बहुत बड़े सवाब का कारण है। ये वे लोग हैं जिन्हें झिड़कना हराम है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 701: नागौर मारवाड़ से, क़ादिर बख़्श की दुकान से, मुरसला मुहम्मद बख़्श प्रेसिडेंट अंजुमन मदरसा हमीदिया इस्लामिया, शाबान 1337 हिजरी। उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि मदरसा इस्लामिया में ज़कात का माल देना जायज़ है या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): मदरसा इस्लामिया अगर सही इस्लामिया खास अहल-ए-सुन्नत का हो। नीचारियों, वहाबियों, क़ादियानियों, राफ़िज़ियों, देवबंदियों वग़ैरह जो मुर्तद (धर्मत्यागी) हैं, उनका न हो तो उसमें ज़कात का माल इस शर्त पर दिया जा सकता है कि प्रबंधक (मोहतमिम) उस माल को अलग रखे और विशेष रूप से फ़क़ीर के मालिकाना अधिकार (तमलीक) के ख़र्च में इस्तेमाल करे। इससे शिक्षकों या अन्य कर्मचारियों का वेतन नहीं दिया जा सकता।

1. जामे अल-तिरमिज़ी, अबवाब अज़-ज़कात, बाब मा जा'अ मन ला तहुल्लु लहू अस-सदक़ा, अमीन कंपनी कुतुब ख़ाना रशीदिया दिल्ली, 1/83
2. अल-क़ुरआन 5/2
3. अल-क़ुरआन 9/60

فتاوی رضویہ جلد دہم

دوسرے وہ کہ واقع میں قدرِ نصاب کے مالک نہیں مگر قوی و تندرست کسب پر قادر ہیں اور سوال کسی ایسی ضروریات کے لیے نہیں جوان کے کسب سے باہر ہو کوئی حرفت یا مزدوری نہیں کی جاتی مفت کا کھانا کھانے کے عادی ہیں اور اس کے لیے بھیک مانگتے پھرتے ہیں انھیں سوال کرنا حرام، اور جو کچھ انھیں اس سے ملے وہ ان کے حق میں خبیث کہ حدیث شریف میں :

[لا تحل الصدقة لغني ولا لذی مرة سوی ۔ 1] [صدقہ حلال نہیں کسی غنی کے لیے اور نہ کسی توانا و تندرست کے لیے (ت)]

انھیں بھیک دینا منع ہے کہ معصیت پر اعانت ہے، لوگ اگر نہ دیں تو مجبور ہوں کچھ محنت مزدوری کریں۔

[قال اللہ تعالٰی وَلا تَعَاوَنُوا عَلَی الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ۔ 2] [اللہ تعالیٰ کا مبارک فرمان ہے: گناہ اور زیادتی پر تعاون نہ کرو (ت)]

مگر ان کے دئے سے زکوٰۃ ادا ہوجائے گی جبکہ اور کوئی مانع شرعی نہ ہو کہ فقیر ہیں،

[قال اللہ تعالٰی إِنَّمَا الصَّدَقَاتُ لِلْفُقَرَاءِ - 3] [اللہ تعالیٰ کا فرمان مبارک ہے صدقات فقراء کے لیے ہیں (ت)]

تیسرے وہ عاجز ناتواں کہ نہ مال رکھتے ہیں نہ کسب پر قدرت، یا جتنے کی حاجت ہے اتنا کمانے پر قادر نہیں، انھیں بقدرِ حاجت سوال حلال، اور اس سے جو کچھ ملے ان کے لیے طیب، اور یہ عمدہ مصارفِ زکوٰۃ سے ہیں اور انھیں دینا باعثِ اجرِ عظیم، یہی ہیں وہ جنھیں جھڑکنا حرام ہے۔

واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۷۰۱: از ناگوار مارواڑ از دکان قادر بخش مرسلہ محمد بخش پریزیڈنٹ انجمن مدرسہ حمیدیہ اسلامیہ شعبان ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ مالِ زکوٰۃ مدرسہ اسلامیہ میں دینا جائز ہے یا نہیں ؟

الجواب: مدرسہ اسلامیہ اگر صحیح اسلامیہ خاص اہلسنت کا ہو۔ نیچریوں، وہابیوں، قادیانیوں، رافضیوں، دیوبندیوں وغیرہ ہم مرتدین کا نہ ہو تو اس میں مالِ زکوٰۃ اس شرط پر دیا جاسکتا ہے کہ مہتمم اس مال کو جدا رکھے اور خاص تملیکِ فقیر کے مصارف میں صرف کرے مدرسین یا دیگر ملازمین کی تنخواہ اس سے نہیں دی جاسکتی۔

1 جامع الترمذی، ابواب الزکوۃ باب ماجاء من لاتحل لہ الصدقۃ، امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی، ۱/۸۳ 2 القرآن ۵/۲ 3 القرآن ۹/۶۰

...It cannot be spent on the construction, repair, or flooring of a madrassa, nor is it permissible to cook food with that money and feed it to students who are provided meals by the madrassa, as this is a form of 'Ibaahat' (permission to use) whereas 'Tamleek' (transfer of ownership) is mandatory in Zakat. Yes, it can be done such that the money is given to the students with the intention of Zakat, making them the owners, and then they return it for their food. Or, if the students' stipend is purely as aid and not as wages, it can be given in their stipend or used to buy books for them and make them the owners. Yes, if the money is given to a legitimate recipient of Zakat with the intention of Zakat, making them the owner, and they then give it to the madrassa of their own accord, then it can be spent on salaries of teachers and staff and other expenses of the madrassa. And Allah knows best.

Problem 108: From Hafiz Ayaz Sahib, from Najibabad town, Bijnor district, Pathanpur mohalla, 24 Muharram 1342 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: if religious books like Fatawa Alamgiri and Mishkat Sharif etc. are bought with Zakat money and placed with another person as a 'Waqf' (endowment) so that the public can benefit from them—because such books are not available here due to being very expensive—what should be the procedure so that Zakat is fulfilled and the objective regarding the books is also achieved?

The Answer: Waqf is impossible with Zakat money because Waqf is not anyone's personal property, while Tamleek (transfer of ownership) is a condition for Zakat. A strategy for this could be that the money is given with the intention of Zakat to a virtuous person who is an eligible recipient of Zakat, making them the owner, and they then buy the books and Waqf them on their own behalf. Another 'heela' (legal stratagem) is also possible: for example, if books worth one hundred rupees are to be bought for Waqf and one hundred rupees of Zakat are due, then sell say one or two maunds of wheat to a poor person for one hundred rupees and explain to him that "we will give you this price ourselves." When he buys it, then give him one hundred rupees with the intention of Zakat. Once he takes possession of it, take the money back from him as the incoming price. If he doesn't give it back, it can be taken by force because he is a debtor. Now, with this money, buy the books and Waqf them. The issue is explicitly stated in Durr al-Mukhtar and Al-Mu'tamadat al-Asfar (there is a clear text on this issue in Durr al-Mukhtar and other reliable books. - Translator). And Allah Almighty knows best.

Problem 109 to 110: Haji Isa Sahib, Kathiawar, 22 Ramadan Sharif 1346 AH. What do the scholars of religion and muftis of the firm Shariah say regarding this matter: (1) In a mosque, there is very little space for worshippers, or because of which there is a struggle during every prayer. In such a case, if someone establishes the ownership of his Zakat money for a poor Muslim person, who then buys a house adjacent to the mosque and includes it in the mosque, will the Zakat be fulfilled or not? Repeat that...

फ़तावा रज़विया - जिल्द दहम

...न मदरसा की तामीर (निर्माण) या मरम्मत या फर्श वगैरह में खर्च हो सकती है, न यह हो सकता है कि जिन तलबा (छात्रों) को मदरसा से खाना दिया जाता है उस रुपये से खाना पका कर उनको खिलाया जाए कि यह सूरत इबाहत (उपयोग की अनुमति) है और ज़कात में तमीलीक (स्वामित्व प्रदान करना) लाज़िम (अनिवार्य) है। हाँ, यूँ कर सकते हैं कि जिन तलबा को खाना दिया जाता है उनको नक़द रुपया ब-नीयत (नीयत से) ज़कात देकर मालिक कर दें फिर वह अपने खाने के लिए वापस दें या जिन तलबा का वज़ीफ़ा (छात्रवृत्ति) न उजरत (मज़दूरी) बल्कि महज़ बतौर इमदाद (सहायता) है उनके वज़ीफ़े में दें या किताबें खरीद कर तलबा को उनका मालिक कर दें। हाँ अगर रुपया ब-नीयत ज़कात किसी मसरफ-ए-ज़कात (पात्र) को देकर मालिक कर दें वह अपनी तरफ से मदरसा को दे दे तो तनख्वाह मुदर्रिसीन (शिक्षकों) व मुलाज़िमीन वगैरह जुमला मसारिफ-ए-मदरसा (मदरसा के सभी खर्चों) में खर्च हो सकता है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला १०८: अज़ हाफिज़ अयाज़ साहब अज़ क़स्बा नजीबाबाद ज़िला बिजनौर मोहल्ला पठानपुर २४ मुहर्रम १३४२ हिजरी। क्या फरमाते हैं उलमा-ए-दीन इस मसला में कि अगर ज़कात के रुपये से दो-चार कुतुब-ए-दीनी (धार्मिक किताबें) मिसल (जैसे) फ़तावा आलमगीरी व मिश्कात शरीफ़ वगैरह खरीद करके दूसरे शख्स के पास बतौर वक़्फ़ (धार्मिक बंदोबस्ती) रख दी जाएं ताकि अवाम को उससे फ़ैज़ पहुंचे इस वजह से कि ऐसी किताब बवजह बेश कीमत (अधिक मूल्य) होने के यहाँ मुयस्सर (उपलब्ध) नहीं है तो इसके वास्ते क्या सूरत होनी चाहिए कि ज़कात भी अदा हो जाए और किताबों की कार्रवाई भी हो जाए।

अल-जवाब: माल-ए-ज़कात से वक़्फ़ नामुम्किन है कि वक़्फ़ किसी की मिलक (स्वामित्व) नहीं होता और ज़कात में तमीलीक शर्त है इसकी तदबीर यूँ हो सकती है कि किसी नेक बंदा को जो ज़कात का मसरफ (पात्र) है ब-नीयत ज़कात देकर मालिक कर दिया जाए और वह अपनी तरफ से किताबें खरीद कर वक़्फ़ कर दे। एक और हीला (उपाय) भी मुम्किन है मसलन सौ रुपये की किताबें वक़्फ़ करने के लिए खरीदनी हैं और इस पर सौ रुपये ज़कात के आते हैं तो मन दो मन गेहूं मसलन किसी फ़क़ीर के हाथ सौ रुपये को बेच करे और उसे समझा दे कि यह कीमत तुम्हें हम ही देंगे जब वह खरीद ले तो अब उसे सौ रुपये ब-नीयत ज़कात दिए जाएं जब वह कब्ज़ा कर ले अब उससे इस आती हुई कीमत में रुपये ले लिए जाएं अगर न दे तो जबरन ले सकता है कि वह उसका मदयून (कर्ज़दार) है, अब इस रुपये से किताबें खरीद कर वक़्फ़ कर दें। अल-मसला मंसूस अलैहा फ़ि अद-

दुर अल-मुख्तार व अल-मोतमादात अल-असफ़ार (दुर-ए-मुख्तार और दीगर मोतमिद किताबों में इस मसला पर नत्स है। त) वल्लाहु तआला आलम।

मसला १०९ ता श्लिो: हाजी ईसा साहब काठियावाड़ २२ रमज़ान शरीफ़ १३४६ हिजरी। क्या फरमाते हैं उलमा-ए-दीन व मुफ़्तियान-ए-शरह-ए-मतीन इस मसला में कि: (१) एक मस्जिद में ब-लिहाज़-ए-मुसल्लयान (नमाज़ियों की दृष्टि से) बहुत कम गुंजाइश है या बा-ईं वजह (इस कारण) कि हर वक्त की नमाज़ में कशमकश का सामना होता है लिहाज़ा ऐसी हालत में अगर कोई साहब-ए-ज़कात अपनी ज़र-ए-ज़कात (ज़कात की रकम) को किसी गरीब मुसलमान शख्स की मलकियत कायम करके उस मकान को जो मस्जिद से मिला हुआ है खरीद करके शामिल-ए-मस्जिद कर दे तो ज़कात अदा होगी या नहीं? मुकर्रर आंके..

نہ مدرسہ کی تعمیر یا مرمت یا فرش وغیرہ میں صرف ہو سکتی ہے، نہ یہ ہو سکتا ہے کہ جن طلبہ کو مدرسہ سے کھانا دیا جاتا ہے اُس روپے سے کھانا پکا کر اُن کو کھلایا جائے کہ یہ صورت اباحت ہے اور زکوٰۃ میں تملیک لازم ہاں یوں کر سکتے ہے کہ جن طلبہ کو کھانا دیا جاتا ہے اُن کو نقد روپیہ بہ نیت زکوٰۃ دے کر مالک کر دیں پھر وہ اپنے کھانے کیلئے واپس دیں یا جن طلبہ کا وظیفہ نہ اجرۃ بلکہ محض بطور امداد ہے اُن کے وظیفے میں دیں یا کتابیں خرید کر طلبہ اُن کا مالک کردیں۔ ہاں اگر روپیہ بہ نیت زکوٰۃ کسی مصرف زکوٰۃ کو دے کر مالک کردیں وہ اپنی طرف سے مدرسہ کو دے دے تو تنخواہ مدرسین و ملازمین وغیرہ جملہ مصارف مدرسہ میں صرف ہو سکتا ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۰۸: از حافظ ایاز صاحب از قصبہ نجیب آباد ضلع بجنور محلہ پٹھان پور ۲۴ محرم ۱۳۴۲ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اگر زکوٰۃ کے روپے سے دو چار کتب دینی مثل فتاویٰ عالمگیری و مشکوٰۃ شریف وغیرہ خرید کرکے دوسرے شخص کے پاس بطور وقف رکھ دی جائیں تاکہ عوام کو اس سے فیض پہنچے اس وجہ سے ایسی کتاب بوجہ بیش قیمت ہونے کے یہاں میسر نہیں ہے تو اس کے واسطے کیا صورت ہونی چاہئے کہ زکوٰۃ بھی ادا جائے اور کتابوں کی کاروائی بھی ہو جائے۔

الجواب: مال زکوٰۃ سے وقف ناممکن ہے کہ وقف کسی کی ملک نہیں ہوتا اور زکوٰۃ میں تملیک شرط ہے اس کی تدبیر یوں ہو سکتی ہے کہ کسی نیک بندہ کو جو زکوٰۃ کا مصرف ہے بہ نیت زکوٰۃ دے کر مالک کر دیا جائے اور وہ اپنی طرف سے کتابیں خرید کر وقف کردے۔ ایک اور حیلہ

بھی ممکن ہے مثلاً سو روپے کی کتابیں وقف کرنے کے لیے خریدنی ہیں اور اس پر سو روپے زکوٰۃ کے آتے ہیں تو من دو من گیہوں مثلاً کسی فقیر کے ہاتھ سو روپے کو بیچ کرے اور اُسے سمجھا دے کہ یہ قیمت تمھیں ہم ہی دینگے جب وہ خرید لے تو اب اسے سو روپے بہ نیت زکوٰۃ دے جائیں، جب وہ قبضہ کر لے اب اس سے اس آتی ہوئی قیمت میں روپے لے لیے جائیں، اگر نہ دے تو جبراً لے سکتا ہے کہ وہ اس کا مدیون ہے، اب اس روپے سے کتابیں خرید کر وقف کردیں، المسئلة منصوص علیها في الدر المختار والمعتمدات الاسفار (در مختار اور دیگر معتمد کتب میں اس مسئلہ پر نص ہے۔ ت) واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۰۹ تا ۱۱۰: حاجی عیسیٰ صاحب کاٹھیاوار ۲۲ رمضان شریف ۱۳۴۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ : (۱) ایک مسجد میں بلحاظ مصلیان بہت کم گنجائش ہے یا بایں وجہ کہ ہر وقت کی نماز میں کش مکش کا سامنا ہوتا ہے لہٰذا ایسی حالت میں اگر کوئی صاحب زکوٰۃ اپنی زر زکوٰۃ کو کسی غریب مسلمان شخص کی ملکیت قائم کرکے اس مکان کو جو مسجد سے ملا ہوا ہے خرید کرکے شامل مسجد کردے تو زکوٰۃ ادا ہوگی یا نہیں؟

مکرر آنکہ

The Muslims in the vicinity of the mentioned mosque do not have the capacity to provide funds to purchase the mentioned house. (2) A religious book which, if printed, could prove useful to all Muslims globally. If a person collects donations from Zakat money to print said book for the general welfare, will the Zakat of those donors be considered paid or not?

The Answer: (1) When he has given the Zakat to a poor person eligible for Zakat with the intention of Zakat and made him the owner, the Zakat is fulfilled. Now, if that poor person contributes it to the mosque, there will be a great reward for both. It is stated in *Durr al-Mukhtar*:

Arabic Text	**Urdu Translation**
The legal device (heela) for providing a shroud with it (Zakat) is to give it as charity to a poor person, who then provides the shroud; the reward will be for both, and the same applies to the construction of a mosque.[1]	The device for providing a shroud is to give charity to a poor person, then that poor person provides the shroud, so the reward will be for both. Similarly, a device can be used for the construction of a mosque. (T)

In *Bahr al-Ra'iq*, under the text 'not towards building a mosque, shrouding a corpse, paying off its debt, and buying a slave who is manumitted' (meaning it is not permissible to use Zakat directly for constructing a mosque, providing a shroud for the deceased, paying off his debts, or purchasing a slave to be freed), it is stated:

Arabic Text	**Urdu Translation**
The device for permissibility in these four cases is that he gives an amount equal to his Zakat as charity to a poor person, then commands him after that to spend it on these purposes. Thus, the owner of the wealth will have the reward of Zakat, and the poor person will have the reward of this spending. This is also stated in *Al-Muheet*.[2]	The device for permissibility in these four is that a man gives Zakat to a poor person, then tells him to spend on these four. There will be a reward of Zakat for the owner of the wealth and a reward of spending for the poor person. As in *Al-Muheet* (T)

(2) It is permissible, and for the donors, there is a great reward and ongoing charity (*Sadaqah Jariyah*). As long as that book remains and benefits Muslims generation after generation, its reward will continuously reach each donor during their life and

in their grave. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said:

Arabic Text	Urdu Translation
When a human dies, his actions are cut off except from three: an ongoing charity, or knowledge from which benefit is derived...	When a human dies, his actions come to an end except in three forms: one, he has...

[1] *Durr al-Mukhtar*, Book of Zakat, Mujtabai Press Delhi, 1/130 [2] *Bahr al-Ra'iq*, Chapter on Expenditures, H.M. Saeed Company Karachi, 2/243

उल्लेखित मस्जिद के आस-पास के मुसलमानों में इतनी सामर्थ्य नहीं है कि वे चंदा जमा करके उल्लेखित घर को खरीद सकें। (2) एक ऐसी धार्मिक पुस्तक जो यदि मुद्रित हो तो विश्व के सभी मुसलमानों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है। यदि कोई व्यक्ति जन कल्याण के उद्देश्य से उक्त पुस्तक को छपवाने हेतु ज़कात के पैसे से चंदा जमा करता है, तो क्या उन चंदा देने वालों की ज़कात अदा होगी या नहीं?

उत्तर: (1) जब उसने ज़कात के पात्र (मसरफ़) किसी निर्धन व्यक्ति को ज़कात की नियत से वह राशि देकर उसे उसका स्वामी बना दिया, तो ज़कात अदा हो गई। अब वह निर्धन व्यक्ति उसे मस्जिद में लगा दे, तो दोनों के लिए महान प्रतिफल होगा। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
ज़कात से कफ़न प्रदान करने की युक्ति (हीला) यह है कि किसी निर्धन को दान दिया जाए, फिर वह कफ़न प्रदान करे; सवाब दोनों को मिलेगा, और इसी प्रकार मस्जिद के निर्माण में भी युक्ति की जा सकती है।[1]	कफ़न बनाने के लिए यह हीला है कि सदक़ा निर्धन को दिया जाए फिर वह निर्धन कफ़न बना दे, तो सवाब दोनों के लिए होगा। इसी तरह मस्जिद के निर्माण में भी हीला किया जा सकता है। (त)

'बहर-उर-राइक़' में मूल पाठ 'न मस्जिद के निर्माण में, न मृतक के कफ़न में, न उसके ऋण के भुगतान में और न ही ऐसे दास की खरीद में जिसे स्वतंत्र कर दिया जाए' (अर्थात ज़कात से मस्जिद निर्माण, मृतक का कफ़न, ऋण अदायगी और दास मुक्ति प्रत्यक्ष रूप से जायज़ नहीं है) के अंतर्गत कहा गया है:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
इन चारों में वैधता की युक्ति यह है कि व्यक्ति अपनी ज़कात की राशि के बराबर किसी निर्धन को दान दे, फिर उसे इन मदों में खर्च करने का आदेश दे। इस प्रकार धन के स्वामी को ज़कात का सवाब मिलेगा और निर्धन को इस खर्च का सवाब होगा। ऐसा ही 'अल-मुहीत' में है।[2]	इन चारों में जायज़ होने का हीला यह है कि व्यक्ति ज़कात निर्धन को दे फिर उसे कहे कि इन चारों पर खर्च करे। धन के स्वामी के लिए ज़कात का सवाब और निर्धन के लिए खर्च का सवाब होगा। जैसा कि 'मुहीत' में है। (त)

(2) यह जायज़ है और इसमें दानदाताओं के लिए महान प्रतिफल और निरंतर सवाब (सदक़ा-ए-जारिया) है। जब तक वह पुस्तक मौजूद रहेगी और पीढ़ी-दर-पीढ़ी मुसलमानों को लाभ पहुँचाती रहेगी, उसका सवाब प्रत्येक दानदाता को उसके जीवन में और उसकी कब्र में निरंतर मिलता रहेगा। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
जब मनुष्य की मृत्यु हो जाती है, तो उसके कर्मों का सिलसिला रुक जाता है, सिवाय तीन स्थितियों के सदक़ा-ए-जारिया, या ऐसा ज्ञान जिससे लाभ उठाया जाए...	जब इंसान की मृत्यु हो जाती है, तो उसके कर्म रुक जाते हैं, सिवाय तीन स्थितियों के एक, उसने...

---

[1] दुर्रे मुख़्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 1/130 [2] बहरुल राइक, बाबुल मसरफ़, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 2/243

مسجد مذکور کے قُرب و جوار کے مسلمانوں میں اس قدر استطاعت نہیں کہ جو چندہ فراہم کرکے مکانِ مذکور کو خرید سکیں۔ (۲) ایسی کتاب دینی جو اگر طبع کی جائے تمام مسلمانانِ عالم میں مفید ثابت ہوسکتی ہے اگر کوئی شخص زرِ زکوٰۃ سے چندہ فراہم کرکے کتابِ مذکور بغرضِ رفاہِ عام چھپوائے تو ان چندہ دہندہ گان اصحاب کا زرِ زکوٰۃ ادا ہوگا یا نہیں؟

الجواب: (۱) جبکہ اس نے فقیر مصرفِ زکوٰۃ کو بہ نیتِ زکوٰۃ دے کر مالک کردیا زکوٰۃ ادا ہوگئی اب وہ فقیر مسجد میں لگادے دونوں کے لیے اجرِ عظیم ہوگا، درمختار میں ہے :

عربی متن	اردو ترجمہ
وحيلة التكفين بها التصدق على فقير ثم هو يكفن، الثواب لهما وكذا في تعمير المسجد۔[1]	کفن بنانے کے لیے یہ حیلہ ہے کہ صدقہ فقیر کو دیا جائے پھر وہ فقیر کفن بنادے تو ثواب دونوں کے لئے ہوگا، اسی طرح تعمیرِ مسجد میں حیلہ کیا جاسکتا ہے۔ (ت)

بحرالرائق میں زیر قولِ متن لا الی بناء مسجد و تکفین میت و قضاء دینہ و شراء قن یعتق (زکوٰۃ سے تعمیر مسجد ، میت کے لیے کفن اور اس کا اداءِ قرض اور ایسے غلام کا خریدنا جائز نہیں جسے آزاد کردیا گیا ہو۔ت) فرمایا:

عربی متن	اردو ترجمہ
والحيلة فى الجواز فى هذه الاربعة ان يتصدق بمقدار زكوته على فقير ثم يأمره بعد ذلك الصرف	ان چاروں میں جواز کا حیلہ یہ ہے کہ آدمی زکوٰۃ فقیر کو دے پھر اسے کہے کہ ان چاروں پر خرچ

عربی متن	اردو ترجمہ
فی هذه الوجوه فیکون لصاحب المال ثواب الزکوة و للفقیر ثواب هذه الصرف کذا فی المحیط[2]	کرے، صاحبِ مال کیلئے زکوٰۃ کا ثواب اور فقیر کے لیے خرچ کا ثواب ہوگا۔ کذا فی المحیط (ت)

(۲) جائز ہے اور اس میں چندہ دہندوں کے لیے اجرِ عظیم اور ثوابِ جاری ہے، جب تک وہ کتاب باقی رہے گی اور نسلاً بعد نسل جن جن مسلمانوں کو فائدہ دے گی ہمیشہ ان کا اجر ایک چندہ دہندے کو اُس کی حیات میں اور اُس کی قبر میں پہنچتا رہے گا۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

عربی متن	اردو ترجمہ
اذا مات الانسان انقطع عمله الامن ثلث صدقة جارية او علم ينتفع بها	جب انسان فوت ہوجاتا ہے تو اس کا عمل منقطع ہوجاتا ہے مگر تین صورتوں میں جاری رہتا ہے: ایک ، اس نے

---

1 درمختار کتاب الزکوۃ، مطبع مجتبائی دہلی، ۱ /۱۳۰ 2 بحرالرائق باب المصرف ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲ /۲۴۳

"Or a righteous child who prays for him" - Narrated by al-Bukhari in *Adab al-Mufrad*, Muslim in his *Sahih*, Abu Dawud, al-Tirmidhi, and al-Nasa'i from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him).[1]

One is *Sadaqah Jariyah* (ongoing charity), the second is such an action of his that is still beneficial, or his righteous offspring who pray for him. Imam Bukhari narrated this in *Adab al-Mufrad*, Muslim in his *Sahih*, Abu Dawud, Tirmidhi, and Nasa'i from Hazrat Abu Hurairah (may Allah be pleased with him). (T)

However, it is necessary first to make a poor person the owner by giving him zakat with that intention. Then, that poor person himself gives it for the printing of the book or has it given. As mentioned in the texts of *Durr al-Mukhtar* and *Bahr al-Raiq*, or follow whatever methods the Imams have written in the books of jurisprudence. In *Durr al-Mukhtar*, it is written:

The stratagem for permissibility is to give his zakat to his poor debtor, then take it back for his debt. Even if the debtor refuses, he may extend his hand and take it, because this is an instance of securing one's own right. If he prevents him, he should take the matter to the judge.[2]

The stratagem for permissibility is that zakat should be given to one's poor debtor, and then it should be taken back from him for one's debt. If the debtor does not give it, it can be snatched from him because this is a matter of exercising one's right. If even then he does not give, the matter should be taken to the judge. (T)

And the easiest way is for all zakat givers to collect their donations with a pious person and tell him that this is zakat money, spend it for our reward after making a poor person the owner according to the Sharia method. He should do just that. All zakats will be fulfilled, and that religious, necessary, and beneficial work will also be done. And mixing these funds, which is with the owners' permission, as this is the known and established method of donation, will not be an obstacle. In *Durr al-Mukhtar*, it is written:

If he mixed the zakat of his principals (clients), he becomes a guarantor and a voluntary donor, unless the poor have appointed him as their agent.[3]	**If he mixed the zakat of his clients, the agent will be a guarantor and he will be a voluntary donor, except in the case where the poor have appointed him as their agent. (T)**

1. Sahih Muslim, Chapter on what follows a person of reward after death, Qadimi Kutub Khana Karachi 2/41; Al-Adab al-Mufrad Chapter 91, Fil-Birr al-Walidayn after their death, Hadith 38, Maktaba Athariya Sangla Hill Sheikhupura p. 21.
2. Durr al-Mukhtar, Book of Zakat, Mujtabai Press Delhi 1/130.
3. Durr al-Mukhtar, Book of Zakat, Mujtabai Press Delhi 1/130.

"या नेक संतान जो उसके लिए दुआ करे" - इसे इमाम बुखारी ने 'अदब अल-मुफ़रद' में, मुस्लिम ने 'सहीह' में, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और नसाई ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है।[1]

एक सदक़ा-ए-जारिया है, दूसरा उसका ऐसा अमल जो अब भी लाभदायक है, या उसकी नेक औलाद जो उसके लिए दुआ करे। इसे इमाम बुखारी ने 'अदब अल-मुफ़रद' में, मुस्लिम ने 'सहीह' में, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और नसाई ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। (त)

लेकिन पहले फ़क़ीर को ज़कात की नीयत से देकर मालिक बना देना ज़रूरी है, फिर वह फ़क़ीर किताब की छपाई में खुद दे दे या उससे दिलवा दे, जैसा कि 'दुर्रे मुख्तार' और 'बहरे रैक' की इबारत से गुज़रा, या जो जो तरीके आइमा ने फिक़ह की किताबों में लिखे हैं उन्हें पूरा करे। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

जायज़ होने का हीला (तरीका) यह है कि अपने क़र्ज़दार फ़क़ीर को अपनी ज़कात दे दी जाए, फिर उसे अपने क़र्ज़ के बदले वापस ले लिया जाए। अगर क़र्ज़दार देने से मना करे, तो हाथ बढ़ाकर छीन ले, क्योंकि यह अपने हक़ पर क़ुदरत पाने का मामला है। अगर वह फिर भी न दे, तो मामला काज़ी (न्यायाधीश) के पास ले जाया जाए।[2]

जायज़ होने का तरीका यह है कि अपने क़र्ज़दार फ़क़ीर को ज़कात दी जाए फिर उससे अपने क़र्ज़ में वापस ली जाए और अगर क़र्ज़दार न दे तो उससे छीन ले क्योंकि यह अपने हक़ पर क़ुदरत का मामला है, अगर इस पर भी न दे तो काज़ी की तरफ मामला ले जाया जाए। (त)

और सबसे आसान यह है कि एक दीनदार शख्स के पास सब ज़कात देने वाले अपना चंदा जमा करें और उससे कह दें कि यह ज़कात की रकम है, शरीयत के तरीके पर किसी फ़क़ीर को मालिक बनाने के बाद हमारे सवाब के लिए खर्च कर। वह वैसा ही करे, सब ज़कात भी अदा हो जाएँगी और वह दीनी ज़रूरी लाभदायक काम भी हो जाएगा और इन मालों को मिलाना जो मालिकों की अनुमति से है, क्योंकि चंदा का यही प्रसिद्ध और जाना-माना तरीका है, इसमें कुछ रुकावट न होगी। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

अगर उसने अपने मुवक्किलों की ज़कात को मिला दिया तो वकील ज़ामिन (ज़िम्मेदार) होगा और वह एहसान करने वाला होगा, मगर उस सूरत में जब फ़क़ीरों ने उसे अपना वकील बना दिया हो।[3]	**अगर अपने मुवक्किलों की ज़कात मिला दी तो वकील ज़ामिन होगा और वह तबर्रअ (दान) करने वाला होगा मगर इस सूरत में जब फ़ुक़रा (ग़रीबों) ने उसे अपना वकील करार दे दिया हो। (त)**

1. सहीह मुस्लिम, बाब मा यलहकुल इंसानुस सवाबा बाअदा वफ़ातिही, क़दीमी कुतुब खाना कराची २/४१; अल-अदब अल-मुफ़रद बाब ९१, फिल-बिर्र अल-वालिदैन बाअदा मौतहुमा, हदीस ३८, मक्तबा असरारिया सांगला हिल शेखूपुरा, पृष्ठ २१।
2. दुर्रे मुख्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबा मुज्तबाई दिल्ली १/१३०।
3. दुर्रे मुख्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबा मुज्तबाई दिल्ली १/१३०।

اوولد صالح يد عولہ۔ ۱رواہ البخاري فی ادب المفرد او مسلم فی الصحیح وابوداؤد و الترمذی عن النسائی عن ابی ہریرۃ رضی اللہ تعالی عنہ۔

صدقہ جاریہ کیا تھا، دوسرا اس کا ایسا عمل جواب بھی نافع ہے یا اس کی نیک اولاد جو اس کے لیے دعا کرے اسے امام بخاری نے ادب المفرد میں، مسلم نے صحیح میں، ابو داؤد، ترمذی اور نسائی نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

مگر اولاً فقیر کو بہ نیت زکوٰۃ دے کر مالک کر دینا ضرور ہے پھر وہ فقیر طبعِ کتاب میں خود دے دے یا اس سے دلوادے، جیسا کہ درمختار و بحر الرائق کی عبارت سے گزرا، یا جو جو طریقے ائمہ نے کتبِ فقہ میں لکھے ہیں بجالائے۔ درمختار میں ہے:

حیلۃ الجواز ان یعطی مدیونہ الفقیر زکواتہ ثم یأخذھا عن دینہ ولو امتنع المدیون مدّیدہ واخذ ھا لکونہ ظفر بجنس حقہ فان مانعہ رفعہ للقاضی۔ 2

حیلہ جواز یوں ہے کہ اپنے مقروض فقیر کو زکوٰۃ دی جائے پھر اس سے اپنے قرض میں واپس لی جائے اور اگر مقروض نہ دے تو اس سے چھین لے کیونکہ یہ اپنے حق پر قدرت کا معاملہ ہے، اگر اس پر بھی نہ دے تو قاضی کی طرف معاملہ لے جایا جائے۔ (ت)

اور سب سے آسان یہ ہے کہ ایک دیندار شخص کے پاس سب زکوٰۃ دہندہ اپنا چندہ جمع کریں اور اس سے کہہ دیں کہ زرِ زکوٰۃ ہے طریقہ شرعیہ پر بعد تملیک فقیر طبع میں ہمارے ثواب کے لئے صرف کر، وہ ایسا ہی کرے، سب زکوٰتیں بھی ادا ہو جائیں گی اور وہ دینی ضروری نافع کام بھی

ہو جائیگا اور یہ اموال کا ملانا کہ باذن مالکانہ ہے کہ چندہ کا یہی طریقہ معروفہ معہودہ ہے کچھ مانع نہ ہوگا۔ درمختار میں ہے:

لو خلط زکوۃ موکلیہ ضمن وکان متبر عاً الا اذا وکلہ الفقراء۔ 3

اگر اپنے موکلین کی زکوٰۃ خلط کردی تو وکیل ضامن ہوگا اور وہ تبرع کرنے والا ہوگا مگر اس صورت میں جب فقراء نے اسے اپنا وکیل قرار دے دیا ہو۔ (ت)

---

1. صحیح مسلم باب ما یلحق الانسان الثواب بعد وفاتہ، قدیمی کتب خانہ کراچی ۴۱/۲، الادب المفرد باب ۹۱برالوالدین بعد موتہما حدیث ۳۸ مکتبہ اثریہ سانگلہ ہل شیخوپورہ ص ۲۱
2. درمختار کتاب الزکوٰۃ، مطبع مجتبائی دہلی ۱۳۰/۱
3. درمختار کتاب الزکوٰۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱۳۰/۱

Fatawa Rizvia (Volume 10)

In Radd al-Muhtar:

| (Arabic) It is stated in Al-Tatarkhaniyya: When permission is found or the owners allow it etc. 1 | (Urdu) It is stated in Al-Tatarkhaniyya: Whether it is due to some permission or the principal (muwakki) validates it. (T) |

In the same book:

| (Arabic) Then it is stated in Al-Tatarkhaniyya: Or implied permission for mixing was found as per common practice etc. 2 And Allah Almighty knows best. | (Urdu) Then it is stated in Al-Tatarkhaniyya: Or there is implied permission for mixing, such as it being the common practice. And Allah Almighty knows best. (T) |

Masla 111: Question from Nasir-ud-Din Sahib of Pilibhit, from Agra, Mohalla Nai Basti, Gali Badhu Baig, house of Hafiz Saeed-ud-Din Saudagar, dated 16 Jamadi-ul-Ula 1330 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: The Muslims have collected a lot of donations for the war in Italy and the Emperor of Rome. If the Zakat money of jewelry is sent to the Emperor of Rome for the mentioned war, will giving this money be permissible or impermissible? Please explain and be rewarded.

Al-Jawab (The Answer): It is not permissible to give Zakat for those expenses of Jihad in which ownership (tamleek) to a poor person (faqir) is not established, such as purchasing ammunition or shells, or transport for the army, or salaries of army officers, or medicines for the army clinic. Zakat is not fulfilled by this. In Alamgiri it is stated:

| (Arabic) It is not permissible to build a mosque with Zakat, and likewise for Hajj and Jihad, and everything in which there is no transfer of ownership (tamleek), as it is in Al-Tabyin. 3 | (Urdu) Building a mosque with Zakat is not permissible, nor are Hajj and Jihad [expenses], rather it is where there is no transfer of ownership. This is stated in Al-Tabyin. (T) |

Yes, it can be given to poor Mujahideen, or to the poor survivors of martyrs, or to those Mujahideen who have come for travel and have wealth at home but currently have nothing for expenses; giving to them is permissible. The first case is 'in the path of Allah', the second is for the poor and the third is for the wayfarer.

1. Radd al-Muhtar, Book of Zakat, Mustafa Al-Babi, Egypt, 2/12
2. Radd al-Muhtar, Book of Zakat, Mustafa Al-Babi, Egypt, 2/12

3. Fatawa Hindiyyah, Chapter Seven regarding Expenditures, Nurani Kutub Khana, Peshawar, 1/188

फ़तावा रज़विया (खण्ड 10)

रद अल-मुह्तार में है:

| (अरबी) ततारखानिया में है कि जब अनुमति मिल जाए या स्वामी उसे अनुमति दे दे। 1 | (उर्दू) ततारखानिया में है कि किसी अनुमति की वजह से हो या मुवक्किल उसे जायज़ (वैध) कर दे। (त) |

इसी में है:

| (अरबी) फिर ततारखानिया में कहा गया कि या तो मिश्रण की सांकेतिक अनुमति मिली जैसे कि सामान्य प्रथा है आदि। 2 और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। | (उर्दू) फिर ततारखानिया में कहा गया कि या तो सांकेतिक अनुमति (दलालत) हो जैसे कि सामान्य प्रथा (आदत) है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त) |

मसला 111: प्रेषक नासिर-उद-दीन साहिब पीलीभीती, निवासी आगरा मोहल्ला नई बस्ती, गली बुद्धू बेग, मकान हाफिज़ सईद-उद-दीन सौदागर, लिखित 16 जमादी-उल-उला 1330 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि इटली के युद्ध और रोम के शहंशाह के लिए मुसलमानों ने बहुत चंदा इकट्ठा किया है, अगर ज़ेवर की ज़कात का रुपया उक्त युद्ध के लिए रोम के शहंशाह को भेजा जाए तो यह रुपया देना जायज़ होगा या नाजायज़? कृपया उत्तर दें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: ज़कात को जिहाद के उन खर्चों में देना जायज़ नहीं है जिनमें किसी फकीर (निर्धन) को स्वामित्व (तम्लीक) प्रदान न किया जाए, जैसे गोले-बारूद की खरीदारी या सेना का परिवहन या सैन्य अधिकारियों का वेतन या सैन्य अस्पताल की दवाएँ। इनसे ज़कात अदा नहीं होती। आलमगीरी में है:

| (अरबी) ज़कात से मस्जिद बनाना जायज़ नहीं है और इसी प्रकार हज और जिहाद, और हर वह चीज़ जिसमें स्वामित्व न हो, जैसा कि तब्ईन में है। 3 | (उर्दू) ज़कात से मस्जिद बनाना जायज़ नहीं है, इसी प्रकार हज और जिहाद, बल्कि वह स्थान जहाँ स्वामित्व न हो। तब्ईन में यही है। (त) |

हाँ, फकीर मुजाहिदों को दी जाए या शहीदों के निर्धन परिजनों को या उन मुजाहिदों को जो यात्रा पर आए हों और घर पर उनके पास माल हो लेकिन यहाँ खर्च के लिए कुछ न हो, उन्हें देना जायज़ है। पहला मामला 'फ़ी सबीलील्लाह' है, दूसरा फकीरों के लिए और तीसरा मुसाफ़िरों के लिए है।

1. रद अल-मुह्तार, किताबुज़ ज़कात, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 2/12

2. रद अल-मुह्तार, किताबुज़ ज़कात, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 2/12

3. फ़तावा हिन्दिया, अध्याय सात खर्च के बारे में, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/188

فتاوٰی رضویہ (جلد دہم)

رد المحتار میں ہے :

| قال فی التتارخانیۃ اذا وجد الاذن او اجاز المالکان اھ 1 | تاتارخانیہ میں ہے کہ کسی اذن کی وجہ سے ہو یا مؤکل اسے جائز کردیں اھ (ت) |

اسی میں ہے :

| ثم قال التتارخانیۃ اووجدت دلالۃ الاذن بالخلط کما جرت العادۃ الخ۔ 2 واللہ تعالٰی اعلم۔ | پھر تاتارخانیہ میں کہا کہ یا دلالۃً اختلاط کی اجازت ہو جیسے کہ عادت معروفہ ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت) |

مسئلہ ۱۱۱: مسئولہ ناصر الدین صاحب پیلی بھیتی از آگرہ محلہ نئی بستی، گلی بدھو بیگ، مکان حافظ سعید الدین سوداگر لکھتا ۱۶ جمادی الاولی ۱۳۳۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جنگ اٹلی و شہنشاہِ روم کے واسطے اہل اسلام نے اکثر چندہ جمع کیا ہے، اگر زیور کی زکوٰۃ کا روپیہ جنگ مذکور کے واسطے شہنشاہ روم کو بھیجا جائے تو یہ روپیہ دینا جائز ہوگا یا نا جائز؟ بینوا توجروا

الجواب: زکوٰۃ جہاد کے ان مصارف میں جن میں فقیر کو تملیک نہ ہو جیسے گولے بارود کی خریداری یا فوج کی باربرداری یا فوجی افسروں کی تنخواہ یا فوجی دواخانہ کی دواؤں میں دینا جائز نہیں ، نہ اس سے زکوٰۃ ادا ہو۔ عالمگیری میں ہے :

| لایجوز ان یبنی با لزکاۃ المسجد وکذا الحج والجھاد وکل مالا تملیک فیہ کذا فی التبیین۔ 3 | زکوٰۃ سے مسجد بنانا جائز نہیں، اسی طرح حج اور جہاد، بلکہ وہ مقام جہاں تملیک نہ ہو۔ تبیین میں یہی ہے۔ (ت) |

ہاں فقیر مجاہدوں کو دی جائے یا شہیدوں کے فقیر پس ماندوں کو یا ان مجاہدوں کو جو سفر کر کے آئے گھر پر اموال رکھتے ہیں یہاں مصارف کے لیے کچھ پاس نہیں ان کو دینا جائز ہے اول فی سبیل اللہ ہے، ثانی فقراء اور ثالث ابن السبیل ہے۔

1 ردالمختار کتاب الزکوٰۃ مصطفیٰ البابی مصر ۲/ ۱۲ 2 ردالمختار کتاب الزکوٰۃ مصطفیٰ البابی مصر ۲/ ۱۲ 3 فتاویٰ ہندیہ الباب السابع فی المصارف نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۱۸۸

Third is Ibn-al-Sabil (the traveler), and these are all heads of Zakat expenditure. It is stated in Al-Durr al-Mukhtar:

[Table] | Arabic Text | Urdu Translation | | :--- | :--- | | Masraf al-Zakat Faqir wa fi Sabil Allah wa huwa munqati’ al-ghuzat wa Ibn al-Sabil wa huwa kullu man lahu maal la-bi-'aynihi. (Summarized) | Zakat should be spent on the poor and in the way of Allah, and by this is meant a needy warrior and traveler, and by this is meant every person who owns wealth but does not have it with them [at that moment]. (T) | [End Table]

Or it could be that it is given to a reliable poor person, making them the owner by giving possession, and they then contribute to this collection from their side; now there is no restriction, it can be spent on any head, and both the Zakat-giver and the poor person will receive a reward. It is stated in Al-Durr al-Mukhtar:

[Table] | Arabic Text | Urdu Translation | | :--- | :--- | | Hilat al-takfin biha al-tasadduq 'ala faqir thumma huwa yukaffin fayakunu al-thawab lahuma wa kadha fi ta'mir al-masjid. | The legal device (hila) for providing a shroud with it (Zakat) is to give it as charity to a poor person, who then provides the shroud; thus, the reward will be for both of them, and similarly in the case of building a mosque. (T) | [End Table]

Then, in the first scenario where the Zakat itself is sent for these permissible expenditures, if the Zakat year had not yet completed and it is paid in advance, then sending it to another city is absolutely permissible. And even if sent after the completion of the year, in this situation the ruling is of permissibility, as aiding warriors is more beneficial for Islam. It is stated in Al-Durr al-Mukhtar:

[Table] | Arabic Text | Urdu Translation | | :--- | :--- | | Kurriha naqluha illa ila qarabah aw ahwaj aw aslah aw awra' aw anfa' lil-muslimin, aw kanat mu'ajjalah qabla tamam al-hawl fala yukrahu khulasah. (Summarized) | It is disliked (makruh) to transfer Zakat to another place. However, it is not disliked in this situation if there is a relative, someone more needy, a righteous person, a person of piety, or if it is of greater benefit to Muslims in the other place, or if one wishes to pay Zakat early before the year's end. Summary. (T) | [End Table]

However, there must be certainty that it reaches its destination and is not embezzled in between. And Allah Almighty knows best.

1. Al-Durr al-Mukhtar, Bab al-Masraf, Mujtabai Press Delhi, 1/140
2. Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Mujtabai Press Delhi, 1/130
3. Al-Durr al-Mukhtar, Bab al-Masraf, Mujtabai Press Delhi, 1/141-142

जिल्द दस | फतावा-ए-रज़विया

तीसरा 'इब्न-उस-सबील' (मुसाफ़िर), और ये सब ज़कात के मसारिफ (व्यय के स्थान) हैं। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

[तालिका] | अरबी इबारत | उर्दू अनुवाद | | :--- | :--- | | मसरफ़ अल-ज़कात फ़क़ीर व फ़ी सबीलिल्लाह व हुवा मुन्क़ति' अल-ग़ुज़ात व इब्न अस-सबील व हुवा कुल्लू मन लहू माल ला-बि-'अैनिही। (मुलख़्ख़सन) | ज़कात फ़ुक़रा (निर्धनों) पर खर्च की जाए और अल्लाह तआला की राह में, और इससे मुराद मोहताज ग़ाज़ी (योद्धा) और मुसाफ़िर है, और इससे मुराद हर वह शख़्स है जिसका माल तो हो मगर उसके पास न हो। (त) | [तालिका समाप्त]

या यह हो कि यहाँ किसी मोअतमिद (विश्वसनीय) फ़क़ीर को देकर मालिक बनाकर क़ब्ज़ा दे दें, वह अपनी तरफ़ से इस चन्दे में दे दे, अब कोई शर्त नहीं हर मसरफ़ में सर्फ़(व्यय) हो सकती है, और ज़कात देने वाले और फ़क़ीर दोनों को सवाब मिलेगा। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

[तालिका] | अरबी इबारत | उर्दू अनुवाद | | :--- | :--- | | हीलत अल-तक़्फ़ीन बिहा अल-तसद्दुक़ 'अला फ़क़ीर सुम्मा हुवा युक़फ़्फ़िन फ़यकूनु अल-सवाब लहुमा व कज़ा फ़ी तामीर अल-मस्जिद। | तक़्फ़ीन (कफ़न देने) के लिए हीला यह है कि ज़कात फ़क़ीर को दी जाए, फ़क़ीर कफ़न बनवा दे, तो अब सवाब दोनों के लिए होगा, इसी तरह मस्जिद की तामीर (निर्माण) में हीला की सूरत है। (त) | [तालिका समाप्त]

फिर पहली सूरत में कि खुद ज़कात ही इन जायज़ मसारिफ के लिए वहाँ भेजे, अगर अभी उसकी ज़कात का साल पूरा नहीं हुआ था और पेशगी (अग्रिम) देता है तो दूसरे शहर को भेजना मुतलक़न (पूर्णत:) जायज़ है। और अगर साल पूरा होने के बाद भेजे, तब भी इस सूरत में हुक्म जवाज़ (अनुमति) का है कि मुजाहिदों की मदद में इस्लाम का ज़्यादा नफ़ा (लाभ) है। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

[तालिका] | अरबी इबारत | उर्दू अनुवाद | | :--- | :--- | | कुर्रिहा नक़्लुहा इल्ला इला क़राबह अव अहवज अव अस्लह अव अवर' अव अन्फ़' लिल-मुस्लिमीन, अव कान्त मुअज्जला क़ब्ल तमाम अल-हौल फ़ला युकरहु ख़ुलासा। (मुलख़्ख़सन) | ज़कात को दूसरी जगह मुंतक़िल (स्थानांतरित) करना मकरूह है, हाँ इस सूरत में मकरूह नहीं जब दूसरी जगह कोई रिश्तेदार, ज़्यादा मोहताज, नेक, साहब-ए-तक़वा या मुसलमानों का ज़्यादा फायदा हो या साल से पहले जल्दी ज़कात देना चाहता हो। ख़ुलासा। (त) | [तालिका समाप्त]

मगर इत्मीनान ज़रूर हो कि ठिकाने पर पहुँचे, बीच में खुर्द-बुर्द (ग़बन) न हो जाए। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

---

1. दुर्रे मुख़्तार, बाब अल-मसरफ़, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 1/140
2. दुर्रे मुख़्तार, किताब अज़-ज़कात, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 1/130
3. दुर्रे मुख़्तार, बाब अल-मसरफ़, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 1/141-142

पृष्ठ 263/836

ثالث ابن السبیل، اور یہ سب مصارف زکوۃ ہیں۔ در مختار میں ہے:

(Table starts) | مصرف الزکوۃ فقیر و فی سبیل اللہ و ھو منقطع الغزاۃ و ابن السبیل و ھو کل من لہ مال لابعہ- 1 (ملخصاً) | زکوۃ فقراء خرچ کی جائے اور اللہ تعالیٰ کی راہ میں، اور اس سے مراد محتاج غازی اور مسافر، اور اس سے مراد ہر وہ شخص ہے جس کا مال تو ہو مگر اس کے پاس نہ ہو۔ (ت) | (Table ends)

یا یہ ہو کہ یہاں کسی معتمد فقیر کو دے کر مالک کرکے قبضہ دے دیں وہ اپنی طرف سے اس چندہ میں دے دے، اب کوئی شرط نہیں ہر مصرف میں صرف ہو سکتی ہے، اور زکوۃ دہندہ اور فقیر دونوں کو ثواب ملے گا۔ در مختار میں ہے:

(Table starts) | حیلۃ التکفین بھا التصدق علی فقیر ثم ھو یکفن فیکون الثواب لہما و کذا فی تعمیر المسجد- 2 | تکفین کے لیے حیلہ یہ ہے کہ زکوۃ فقیر کو دی جائے فقیر کفن بنوادے، تو اب ثواب دونوں کے لیے ہوگا، اسی طرح تعمیر مسجد میں حیلہ کی صورت ہے۔ (ت) | (Table ends)

پھر صورت اولٰی میں کہ خود زکوۃ ہی ان جائز مصارف کے لیے وہاں بھیجے، اگر ابھی اس کی زکوۃ کا سال تمام نہ ہوا تھا پیشگی دیتا ہے جب تو دوسرے شہر کو بھیجنا مطلقاً جائز ہے اور اگر سال تمام کے بعد بھیجے جب بھی اس صورت میں حکم جواز ہے کہ مجاہدوں کی اعانت میں اسلام کا زیادہ نفع ہے۔ در مختار میں ہے:

(Table starts) | کرہ نقلہا الا الٰی قرابۃ او احوج او اصلح او اورع او انفع للمسلمین، اوکانت معجلۃ قبل تمام الحول فلا یکرہ خلاصۃ- 3 (ملخصاً) | زکوۃ کو دوسری جگہ منتقل کرنا مکروہ، ہاں اس صورت میں مکروہ نہیں جب دوسری جگہ کوئی رشتہ دار، زیادہ محتاج، نیک، صاحب تقویٰ یا مسلمانوں کا زیادہ فائدہ ہو یا سال سے پہلے جلدی زکوۃ دینا چاہتا ہو، خلاصہ (ت) | (Table ends)

مگر اطمینان ضرور ہو کہ ٹھکانے پر پہنچے بیچ میں خورد برد نہ ہو جائے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

---

1 در مختار، باب المصرف، مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۴۰ 2 در مختار، کتاب الزکوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۳۰ 3 در مختار، باب المصرف، مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۴۱-۱۴۲

Volume Ten

Fatawa Razawiyya

Issue 112: From Dehradun, Mohalla Dhaman, enquired by Mukhtar Hussain Qadri, 2 Shawwal 1339 AH.

What do the scholars of religion say regarding this matter: the current miserable condition of the oppressed Turks, for example in Smyrna, Anatolia, etc., who are victims of Greek aggression? If aid is provided to them from Zakat funds, will the Zakat be considered paid or not? If it will be paid, what should be the method of sending and giving the money? The current method practiced by Seth Chotani of Bombay, where he wishes to include Zakat in the aid for oppressed Turks, collects Zakat and other donations at his discretion and spends them according to his own opinion where needed, such as helping the sick, aiding looted homes, etc. Will the Zakat of people who contribute to this be fulfilled or not? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: Zakat cannot be fulfilled in this manner. These people collect donations on their own and mix Zakat with non-Zakat funds, and even contributions from Muslims and non-Muslims. That money is immediately invalidated and is no longer suitable for fulfilling Zakat, because mixing leads to consumption/destruction (of individual identities). It is stated in Fatawa Alamgiri:

If two persons give their Zakat to one person to pay on their behalf, and he mixes their money and then gives charity, the agent (representative) will be responsible for the donors' money, and the charity will be considered as from the agent. (Fatawa Qazi Khan)

(Arabic Text) رجلان دفع كل منهما زكوة ماله الى رجل ليؤدى عنه فخلط مالهما ثم تصدق ضمن الوكيل مال الدافعين وكانت الصدقة عنه كذا فى فتاوى قاضى خان۔[1]

In Durr-e-Mukhtar it is stated:

If he mixes the Zakat of his principals, he becomes a guarantor and a voluntary donor, except if the poor themselves have appointed him as their agent. (T)

(Arabic Text) لو خلط زكوة مؤكليه ضمن وكان متبرعاً الا اذا وكله الفقراء۔ [2]

A way for this could be that sincere Muslims deposit their individual Zakat with a reliable, religious person and grant permission to mix that money. No non-Zakat money should be mixed with it. Nor should the Zakat of any Wahabi, Rafidi, Nechari,

Qadiyani, or Gandhavi who has reached the level of disbelief be included in it, as the Zakat of these people is not Shari'ah-compliant...

---

[1] Fatawa Hindiyya, Chapter 3 on Zakat of Gold etc., Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/183. [2] Durre Mukhtar, Book of Zakat, Mujtabai Press Delhi, 1/130.

भाग दस

फ़तावा रज़विया

मसला ११२: देहरादून, मोहल्ला धामन से, मुस्तफ़्ती मुख्तार हुसैन कादरी, २ शव्वाल १३३९ हिजरी।

उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि मजलूम तुर्कों की जो मौजूदा दयनीय स्थिति है, मसलन स्मर्ना, अनातोलिया वगैरह में जो यूनानियों की ज़्यादतियों के शिकार हो रहे हैं, क्या उनकी इमदाद ज़कात के माल से की जाए तो ज़कात अदा होगी या नहीं? अगर होगी तो रुपया भेजने और देने की क्या सूरत होनी चाहिए? मौजूदा तरीका जो बम्बई वाले सेठ छोटानी अपना रहे हैं, कि मजलूम तुर्कों की मदद में वह ज़कात को भी शामिल करना चाहते हैं, अपने अख्तियार से ज़कात और दीगर चंदा लेकर जहाँ जितनी ज़रूरत होती है, मसलन बीमारों की मदद, लुटे हुए घरों की इमदाद वगैरह अपनी राय के मुताबिक खर्च करते हैं, तो जो लोग इसमें ज़कात देते हैं क्या उनकी ज़कात अदा होगी या नहीं? बयान फरमाएं और सवाब पाएं।

जवाब: इस तरीके से ज़कात अदा नहीं हो सकती। ये लोग अपनी मर्ज़ी से चंदा करते हैं और ज़कात व गैर-ज़कात बल्कि मुस्लिम और गैर-मुस्लिम सबके चंदे आपस में मिला (खलत-मलत कर) देते हैं। वह रुपया फ़ौरन हलाक (अपनी पहचान खो देता है) हो जाता है और ज़कात की अदायगी के काबिल नहीं रहता, क्योंकि खल्त करना हलाक करना है। फ़तावा आलमगीरिया में है:

दो व्यक्तियों ने अपने माल की ज़कात एक व्यक्ति को दी ताकि वह उनकी ओर से अदा करे, उसने दोनों के माल को मिला दिया फिर ज़कात अदा की, तो वकील (एजेंट) उनके माल का ज़ामिन (ज़िम्मेदार) होगा और सदका वकील की ओर से होगा। (फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ) (त)

(अरबी इबारत) رجلان دفع كل منهما زكوة ماله الى رجل ليؤدى عنه فخلط مالهما ثم تصدق ضمن الوكيل مال الدافعين وكانت الصدقة عنه كذا فى فتاوى قاضى خان۔[1]

दुर्रे मुख्तार में है:

अगर अपने मुवक्किलों की ज़कात को आपस में मिला दिया तो वह वकील ज़ामिन होगा और मुतबर्रेअ (स्वैच्छिक दाता) होगा, सिवाय उस सूरत के जब उसे फ़ुक़रा (गरीबों) ने अपना वकील बनाया हो। (त)

(अरबी इबारत) لو خلط زكوة مؤكليه ضمن وكان متبرعاً الا اذا وكله الفقراء۔[2]

इसकी सूरत यह हो सकती है कि ज़कात देने वाले खालिस मुसलमान अपनी-अपनी ज़कात एक मोअतमद मुतदैयान (भरोसेमंद और धार्मिक व्यक्ति) के पास जमा करें और वह रुपया मिलाने की इजाज़त दें, और उसमें कोई पैसा गैर-ज़कात का शामिल न किया जाए। न ही किसी वहाबी, राफ़ज़ी, नेचरी, कादियानी या कुफ़्र की हद तक पहुँचे हुए गांधवी की ज़कात इसमें शामिल हो, क्योंकि इन लोगों की ज़कात शरीअत के अनुसार...

---

[1] फ़तावा हिन्दिया, बाब ३ सोने की ज़कात आदि पर, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, १/१८३। [2] दुर्रे मुख्तार, किताबुज़ ज़कात, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, १/१३०।

पृष्ठ ८३६ का २६४

جلد دہم

فتاوی رضویہ

مسئلہ ۱۱۲: از دہیرہ دوں محلہ دھامان مسئولہ مختار حسین قادری ۲ شوال ۱۳۳۹ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلے میں کہ موجودہ حالت زار جو مظلومینِ تُرک کی ہے مثلاً سمرنا، اناطولیہ وغیرہ میں جو یونانیوں کی دست درازیوں کے شکار ہو رہے ہیں ان کی امداد زکوٰۃ کے مال سے کی جائے تو زکوٰۃ ادا ہو گی یا نہیں؟ اگر ہوگی روپیہ بھیجنے اور دینے کی کیا صورت ہونی چاہئے، موجودہ طریقہ جو سیٹھ چھوٹانی بمبئی والا کر رہا ہے کہ امدادِ مظلومینِ ترکوں کی جس میں وہ زکوٰۃ کو بھی شامل کرنا چاہتا ہے اپنے اختیار سے زکوٰۃ اور دیگر چندہ لے کر جتنی جہاں ضرورت ہوتی ہے مثلاً بیماروں کی مدد، لٹے ہوئے گھروں کی امداد وغیرہ اپنی رائے کے موافق صرف کرتا ہے، تو جو لوگ اس میں زکوٰۃ دیتے ہیں ادا ہو گی یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: اس طریقہ سے زکوٰۃ ادا نہیں ہو سکتی، یہ لوگ بطور خود چندہ کرتے ہیں اور زکوٰۃ و غیر زکوٰۃ بلکہ مسلم و غیر مسلم سب کے چندے غلط کر لیتے وہ روپیہ فوراً ہلاک ہو جاتا ہے اور قابلِ ادا زکوٰۃ نہیں رہتا، فان الخلط استھلاک (کیونکہ خلط ملط کرنا ہلاک کرنا ہوتا ہے۔ت) فتاوی عالمگیریہ میں ہے:

دو اشخاص نے اپنے مال کی زکوٰۃ ایک شخص کو دی تاکہ وہ ان کی طرف سے ادا کرے اس نے دونوں کے مال کو رجلان دفع کل منھما زکوۃ مالہ الی رجل لیؤدی عنہ فخلط مالھما ثم تصدق

ملا دیا پھر زکوٰۃ ادا کی تو وکیل ان کے مال کا ضامن ہوگا ضمن الوکیل مال الدافعین وکانت

اور صدقہ وکیل کی طرف سے ہوگا، فتاوی قاضی خاں(ت) الصدقة عنه كذا فی فتاوی قاضی خان۔[1]

در مختار میں ہے:

اگر اپنے مؤکلین کی زکوٰۃ میں خلط ملط کر دیا تو وہ وکیل ضامن لو خلط زکوة مؤكليه ضمن

ہوگا اور متبرع ہوگا مگر اس صورت میں کہ جب اسے فقراء نے وكان متبرعاً الا اذا وكله

اپنا وکیل بنایا ہو۔(ت) الفقراء۔ [2]

اس کی صورت یہ ہو سکتی ہے کہ زکوٰۃ دینے والے خالص مسلمان اپنی اپنی زکوٰۃ ایک معتمد متدین کے پاس جمع کریں اور وہ روپیہ ملالینے کی اجازت دیں اور اس میں کوئی پیسہ غیر زکوٰۃ کا خلط نہ کیا جائے نہ کسی وہابی یا رافضی یا نیچری یا قادیانی یا حد کفر تک پہنچے ہوئے گاندھوی کی زکوٰۃ اس میں شامل ہو کہ ان لوگوں کی زکوٰۃ شرعاً

---

1 فتاوی ہندیہ، الباب الثالث فی زکوٰۃ الذہب الخ، نورانی کتب خانہ پشاور، ۱ / ۱۸۳ 2 در مختار، کتاب الزکوٰۃ، مطبع مجتبائی دہلی، ۱/ ۱۳۰

Volume Ten Fatawa Razawiya

It is not Zakat; this is purely Sharia-compliant Zakat wealth collected which, with the permission of the owners, was mixed together to be delivered to these oppressed poor. In Radd al-Muhtar, under the aforementioned text of Durr al-Mukhtar, it says:

Arabic Text	**Urdu Translation**
His statement [is that the agent] will be a guarantor (liable) and his payment will be as a voluntary contribution, because by mixing [the funds], he becomes the owner of it and now he would be paying from his own wealth. It is stated in At-Tatarkhaniyah: Except in a case where there is permission or the owners permit it. End. Connected to this is the case where a scholar asked for something for the poor and mixed [it], then he would be liable. I say: its implication is that if it is customary (known by custom), then there will be no liability because at that time, implied permission exists. And Allah, Glorified and Exalted, knows best.	His statement is that the agent will be a guarantor and his payment will be as a voluntary contribution because by mixing [the funds], he becomes the owner and now he would be paying from his own wealth. It is stated in At-Tatarkhaniyah: Except in a case where there is permission or the owners permit it. End. Connected to this is the case where a scholar asked for something for the poor and mixed [it], then he would be liable. I say: its implication is that if it is customary, then there will be no liability because at that time, implied permission exists. And Allah, Glorified and Exalted, knows best. (T)

Problem 113: Questioned by Amir Hasan Bengali, student of Madrasah Ahl-e-Sunnat-o-Jama'at, 28 Rabi' al-Akhir 1334 AH. Is it permissible for a wealthy person to take charity (sadaqah) or not?

The Answer: Taking obligatory charity (Sadaqah Wajibah) is prohibited (haram) for a wealthy person, and giving it to them is also prohibited, and the obligation will not be fulfilled. As for voluntary charity (Sadaqah Nafilah), it is prohibited for a wealthy person to ask for it. If it is given without asking, it is not appropriate if the giver knows they are wealthy. If the giver provides it thinking they are needy, then taking it is prohibited. If the person portrays themselves as needy to receive it, it is a double sin. However, those voluntary charities meant for the general public, where there is no humiliation in taking them, are permissible even for the wealthy. For example, water from a public cistern, water from a fountain, sweets from an offering (niyaz), staying at a traveler's inn, or crossing a bridge. And Allah the Almighty knows best.

Problem 114: From Bareilly, Muhalla Kankar Tola, near Masjid Khurd, sent by Altaf Ali Khan, dated 13 Dhu al-Hijjah 1338 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say on this issue: Is it permissible to give Zakat and charity (sadaqah) to teachers in a religious school (madrasah)? Is it permissible to give it as salary, and is it permissible for the educational expenses of orphan students?

1. Radd al-Muhtar, Kitab az-Zakat, Mustafa al-Babi Egypt, 12/2 Page 265 of 836

यह ज़कात नहीं है; यह विशुद्ध रूप से शरई ज़कात का धन है जिसे मालिकों की अनुमति से मिलाया गया है ताकि इन पीड़ित ग़रीबों तक पहुँचाया जा सके। रद्द-उल-मुह्तार में उपर्युक्त दुर्र-उल-मुख़्तार के मूल पाठ के अंतर्गत लिखा है:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
उनका कहना है [कि प्रतिनिधि] ज़ामिन (उत्तरदायी) होगा और उसकी अदायगी स्वैच्छिक (तबर्रउ) होगी, क्योंकि धन को मिला देने से वह उसका मालिक बन जाता है और अब वह अपने स्वयं के धन से भुगतान करने वाला होगा। अत-ततारख़ानिया में है कि: सिवाय उस स्थिति के जब अनुमति हो या मालिक इसे जायज़ कर दें। समाप्त। इससे वह स्थिति भी जुड़ी हुई है जब किसी विद्वान ने ग़रीबों के लिए कुछ माँगा और उसे मिला दिया, तो वह ज़ामिन होगा। मैं कहता हूँ इसका अर्थ यह है कि अगर ऐसा करना प्रथागत (उर्फ़न) हो, तो अब कोई ज़िम्मेदारी नहीं होगी क्योंकि उस समय सांकेतिक अनुमति (दलालतन इजाज़त) मौजूद है। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है।	उनका कहना है कि प्रतिनिधि ज़ामिन होगा और उसकी अदायगी स्वैच्छिक होगी क्योंकि धन को मिला देने से वह मालिक हो जाता है और अब वह अपने धन से भुगतान करने वाला होगा। ततारख़ानिया में है कि मगर उस सूरत में जब इजाज़त हो या मालिक उसे जायज़ कर दें। समाप्त। उसके साथ वह सूरत भी जुड़ी हुई है जब किसी आलिम ने ग़रीबों के लिए कुछ माँगा और मिला दिया तो वह ज़ामिन होगा। मैं कहता हूँ इसका मक़सद यह है कि अगर प्रथा के अनुसार ऐसा किया जाता हो तो अब ज़मानत नहीं होगी क्योंकि उस वक़्त दलालतन इजाज़त मौजूद है। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है। (त)

मसअला 113: प्रेषक अमीर हसन बंगाली, छात्र मदरसा अहले सुन्नत व जमात, 28 रबी-उल-आख़िर 1334 हिजरी। क्या धनवान व्यक्ति के लिए सदक़ा लेना जायज़ है या नहीं?

उत्तर: वाजिब सदक़ा (अनिवार्य दान) लेना धनवान के लिए हराम है और देना भी हराम है, और इसे देने से अदायगी नहीं होगी। जहाँ तक नफ़ली (स्वैच्छिक) सदक़े का सवाल है, धनवान के लिए इसे माँगकर लेना हराम है। बिना माँगे लेना तब उचित नहीं है जब देने वाला उसे धनवान समझकर दे। और अगर वह उसे ज़रूरतमंद समझकर दे, तो लेना हराम है। और अगर लेने के लिए खुद को ज़रूरतमंद ज़ाहिर किया, तो दोहरा हराम है। हाँ, वे नफ़ली सदक़ात जो आम जनता के लिए होते हैं

और जिन्हें लेने में कोई अपमान नहीं है, वे धनवान के लिए भी जायज़ हैं। जैसे हौज का पानी, पियाऊ का पानी, नियाज़ की मिठाई, सराय का मकान, पुल से गुज़रना। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसअला 114: बरेली, मोहल्ला कंकर टोला, निकट मस्जिद खुर्द, प्रेषक अल्ताफ़ अली ख़ान, दिनांक 13 ज़ुल-हिज्जा 1338 हिजरी। दीन के विद्वान और शरीअत के मुफ़्ती इस मसअले में क्या फ़रमाते हैं कि मदरसा दीनिया में ज़कात और सदक़ा शिक्षकों को देना जायज़ है या नहीं? तनख़्वाह में देना और उन छात्रों को जो अनाथ (यतीम) हैं उनकी शिक्षा के ख़र्च के लिए देना जायज़ है या नहीं?

1. रद्द-उल-मुह्तार, किताब-उज़-ज़कात, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 12/2 पृष्ठ 265 का 836

زکوۃ نہیں، یہ خالص زکوٰۃ شرعی کا جمع کیا ہوا مال کہ مالکوں سے اذن سے خلط کیا گیا ان فقراء مظلومین کو پہنچا یا جائے۔ ردالمحتار میں زیر عبارت مذکورہ در مختار ہے

عربی متن

قوله ضمن وكان متبرعاً، لانه ملكه بالخلط وصار مؤدياً مال نفسه قال في التتارخانية الا اذا وجد الاذن أو اجازا الما لكان اه ويتصل بهذا العالم اذا سئل للفقراء شيئاً و خلط يضمن قلت و مقتضاه لو وجد العرف فلا ضمان لوجود الاذن حينئذ دلالة والله سبحانه وتعالیٰ۔

اردو ترجمہ

ان کا قول ہے وکیل ضامن ہوگا اور اس کی ادائیگی بطور تبرع ہوگی کیونکہ خلط ملط کرنے سے وہ مالک ہو جاتا ہے اور اب وہ اپنے مال کو ادا کرنے والا ہوگا۔ تتارخانیہ میں ہے کہ مگر اس صورت میں جب اجازت ہو یا مالک اسے جائز کردیں اھ اس کے ساتھ وہ صورت بھی ملحق ہے جب کسی عالم نے فقراء کے لئے کچھ مانگا اور خلط ملط کر دیا تو وہ ضامن ہوگا۔ میں کہتا ہوں اس کا مقتضا یہ ہے اگر عرفاً ایسا کیا جاتا ہو تو اب ضمان نہ ہوگا کیونکہ اس وقت دلالۃً اجازت موجود ہے۔ واللہ سبحانہ وتعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ۱۱۳: مسئولہ امیر حسن بنگالی طالب علم مدرسہ اہلسنت و جماعت ۲۸ ربیع الآخر ۱۳۳۴ھ مالدار کے لیے صدقہ لینا جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: صدقہ واجبہ مالدار کو لینا حرام اور دینا حرام، اور اس کے دئے ادا نہ ہوگا، اور نافلہ مانگ کر مالدار کو لینا حرام اور بے مانگے مناسب نہیں جبکہ دینے والا مالدار جان کر دے اور اگر وہ محتاج سمجھ کر دے تو لینا حرام، اور اگر لینے کے لیے اپنے آپ کو محتاج ظاہر کیا تو

دوہرا حرام، ہاں وہ صدقات نافلہ کہ عام خلائق کے لیے ہوتے ہیں اور ان کے لینے میں کوئی ذلت نہیں وہ غنی کو بھی جائز ہیں جیسے حوض کو پانی، سقایہ کا پانی، نیاز کی شیرینی، سرائے کا مکان، پل پر سے گزرے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۱۴: از بریلی محلہ کانکر ٹولہ متصل مسجد خورد مرسلہ الطاف علی خاں مورخہ ۱۳ ذی الحجہ ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ مدرسہ دینیہ میں زکوۃ و صدقہ مدرسین کو دینا جائز ہے یا نہیں، تنخواہ میں دینا و طلباء کو جو کہ یتیم ہیں ان کی تعلیم کے اخراجات کے واسطے دینا جائز ہے یا نہیں؟

1. ردالمحتار، کتاب الزکوۃ، مصطفی البابی مصر، ۱۲/۲ Page 265 of 836

Fatawa Razviya Volume 10

The Answer: It cannot be given for the salaries of teachers. However, it can be given to students by transferring ownership (Tamleek), even if they are not orphans. And Allah Almighty knows best.

Question 115: From Meerut City, District Jodhpur, asked by Fakhruddin Shah, 19 Dhu al-Qi'dah 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it permissible to give Zakat to orphans or not? The child is a relative, and has no heir. Please explain and be rewarded.

The Answer: Giving Zakat to an orphan child, especially when they are a relative, is very virtuous, provided they are not wealthy, not a Sayyid, etc. (not Hashemi), nor one's own children or children's children. Yes, if it is a brother or nephew, then under the mentioned conditions, they are most deserving. And Allah Almighty knows best.

Question 116: From city neighborhood Mamluk Pur, sent by جناب Syed Muhammad Ali Sahib, Deputy Nazir Faridpur, 30 Ramadan al-Mubarak 1329 AH. If the Zakat money is used to feed orphans and the poor, or used to make clothes for them, is it permissible or not?

The Answer: Making clothes and giving them to them to own, or cooking food and sending it to their house to give them possession and ownership, then at the current state, the stitched clothes and cooked food will be deducted from Zakat at market price. Sewing and cooking costs etc. will not be deducted. If you cook at your place and make them sit at a dining spread and feed them as is done in feasts, then Zakat cannot be fulfilled because 'li'annaha tamleekun wa hadhihi ibahatun' (because in Zakat one must make someone the owner, and in this situation, it is not ownership but rather permissibility to eat). And Allah Almighty knows best.

Question 117 to 118: 23 Dhu al-Qi'dah 1311 AH. (1) What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it correct to give Zakat money for the purchase of a house for orphans, and that house be named 'Yateem Khana' (Orphanage)? (2) Regarding the joined case that occurred in Jasoli with the Ghangru people, should Zakat money be given for its expenses or not, since it has been declared a religious matter?

The Answer: Zakat will never be fulfilled by spending money on the purchase of an orphanage, because 'li'annahu in kana waqfan wazzakatu tamleekun fala yajtami'ani' (because if an orphanage is an endowment (Waqf) and Zakat is a transfer of

ownership (Tamleek), then both cannot coexist). Nor can it be fulfilled by giving it to a wealthy person for a lawsuit, even if the lawsuit is religious or spiritual, because 'fa'innal ghaniya laysa bimasrafin' (a wealthy person is not a recipient of Zakat).

उत्तर: मुदर्रिसीन (शिक्षकों) के वेतन में नहीं दे सकते, हाँ छात्रों को तम्लीक (मालिक बनाना) कर सकते हैं चाहे वे अनाथ न हों। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ११५: मेरठ सिटी, जिला जोधपुर से, मुस्तौ़ला (पूछने वाले) फखरुद्दीन शाह, १९ ज़ी अल-क़ादह १३३९ हिजरी। उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अनाथों को ज़कात देना जायज़ है या नहीं? बच्चा अपना रिश्तेदार है और उसका कोई वारिस नहीं है। बयान फ़रमाएं और सवाब पाएं।

उत्तर: अनाथ बच्चे को, विशेष रूप से जब वह अपना रिश्तेदार हो, ज़कात देना बहुत अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) है, बशर्ते कि वह न अमीर हो, न सैय्यद वगैरह (हाशमी) हो, न अपनी औलाद या औलाद की औलाद हो। हाँ, अगर भाई या भांजा हो, तो वह उल्लेखित शर्तों के साथ सबसे ज़्यादा हक़दार है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ११६: शहर मोहल्ला ममलुक पुर से, मुरसिला (भेजने वाले) जनाब सैय्यद मुहम्मद अली साहब, नायब नाज़िर फ़रीदपुर, ३० रमज़ानुल मुबारक १३२९ हिजरी। ज़कात की रक़म में से अगर अनाथों और मिस्कीनों को खिलाया जाए या कपड़ा बनाया जाए तो जायज़ है या नहीं?

उत्तर: कपड़ा बनवा कर उन्हें देकर मालिक बना देना, खाना पकाकर उनके घर भेजकर क़ब्ज़े में देकर मालिक बना देना, तो वर्तमान स्थिति पर यह सिला हुआ कपड़ा और पका हुआ खाना बाज़ार के भाव से जितने का है, उतनी ज़कात अदा हो जाएगी। सिलाई, पकाई वगैरह की लागत ज़कात में नहीं गिनी जाएगी। और अगर अपने यहाँ पकाकर दस्तरख़्वान पर बिठाकर खिला दिया जैसा कि दावतों में होता है, तो ज़कात अदा नहीं होगी क्योंकि 'ला़अन्नहा तम्लीकुन वहाज़िही इबाहतुन' (क्योंकि ज़कात में मालिक बनाना होता है और इस सूरत में मिल्कियत नहीं बल्कि इबाहत (सिर्फ़ खाने की इजाज़त) है)। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ११७ से ११८: २३ ज़ी अल-क़ादह १३११ हिजरी। (१) उलमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि जो मकान अनाथों के लिए खरीदा जाए उसकी खरीद में ज़कात का रुपया देना दुरुस्त है या नहीं, और वह मकान 'यतीम खाना' (अनाथालय) के नाम से हो। (२) जो मसला जोली में घुंघरू वालों

के साथ हुआ है, उसके खर्च में ज़कात का रुपया दिया जाए या नहीं क्योंकि वह मज़हबी मामला क़रार दिया गया है?

उत्तर: यतीम खाना (अनाथालय) की ख़रीदारी में रुपया लगा देने से ज़कात हरगिज़ अदा न होगी 'ला़अन्नहु इन काना वक़्फ़न वज़ज़कातु तम्लीकुन फ़ला यजतमेआनि' (क्योंकि यतीम खाना अगर वक़्फ़ है और ज़कात में तम्लीक (मालिक बनाना) शर्त है, लिहाज़ा इन दोनों का जमा होना मुमकिन नहीं)। न ही किसी अमीर को मुक़दमे के लिए देने से अदा हो सकेगी, चाहे वह मुक़दमा मज़हबी या दीनी ही क्यों न हो, क्योंकि 'फ़इनल ग़निया लैसा बिमसरफ़िन' (अमीर ज़कात का पात्र नहीं होता)।

الجواب: تنخواہ مدرسین میں نہیں دے سکتے، ہاں طلبہ کو تملیک کر سکتے ہیں اگرچہ یتیم نہ ہوں۔ واللہ تعالیٰ اعلم مسئلہ ۱۱۵: از میرٹھ سٹی ضلع جودھپور مسئولہ فخر الدین شاہ ۱۹ ذی القعدہ ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلے میں کہ یتیموں کو زکوۃ دینا جائز ہے یا نہیں؟ بچہ اپنی قرابت کا ہے اُس کا وارث کوئی نہیں ہے۔ بینوا توجروا الجواب: یتیم بچہ خصوصاً جبکہ اپنا قرابت دار ہو زکوۃ دینا بہت افضل ہے جبکہ وہ نہ مالدار نہ سید وغیرہ نہ ہاشمی ہو نہ اپنی اولاد یا اولاد کی اولاد ہو۔ ہاں بھائی بھانجا ہو تو وہ بشرائط مذکورہ سب سے زیادہ مستحق ہے واللہ تعالیٰ اعلم مسئلہ ۱۱۶: از شہر محلہ مملوک پور مرسلہ جناب سید محمد علی صاحب نائب ناظر فرید پور ۳۰ رمضان المبارک ۱۳۲۹ھ زر زکوۃ میں سے اگر یتیموں مساکین کو کھلایا جائے یا کپڑا بنایا جائے تو جائز ہے یا نہیں؟ الجواب: کپڑا بنوا کر ان کو دے کر مالک کر دینا، کھانا پکا کر اُن کے گھر کو بھیج کر قبضہ میں دے کر مالک کر دینا تو حالت موجودہ پر یہ سلا ہوا کپڑا اور پکا ہوا کھانا بازار کے بھاؤ سے جتنے کا ہے اُس قدر زکوۃ میں مجرا ہوگا، سلائی پکوائی وغیرہ مجرانہ ملے گی اور اگر اپنے یہاں پکا کر دسترخوان پر بٹھا کر کھلا دیا جس طرح دعوتوں میں ہوتا ہے تو وہ زکوۃ نہیں ہو سکتا لانھا تملیك وھذہ اباحة (کیونکہ زکوۃ میں مالک بنانا ہوتا ہے اور اس صورت میں ملکیت نہیں بلکہ اباحت ہے۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم مسئلہ ۱۱۷ تا ۱۱۸: ۲۳ ذیقعدہ ۱۳۱۱ھ (۱) کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جو مکان واسطے یتیموں کے خرید اجائے اس کی بیچ میں زکوۃ کا روپیہ دینا درست ہے یا نہیں، اور وہ مکان نام یتیم خانہ کے ہو۔ (۲) کہ مضومہ جو واقعہ جسولی میں گنگھرو والوں سے ہوا ہے اس کے صرف میں زکوۃ کا روپیہ دیا جائے یا نہیں کیونکہ وہ مذہبی معاملہ قرار دیا گیا ہے۔ الجواب: یتیم خانہ کی خریداری میں روپیہ لگا دینے سے

زکوۃ ہرگز ادا نہ ہوگی لانه ان کان وقفا والزکوۃ تملیك فلا یجتمعان (کیونکہ یتیم خانہ اگر وقف ہے اور زکوۃ میں تملیک ہوتی ہے لہٰذا ان دونوں کا اجتماع نہیں ہو سکتا۔ت) نہ کسی غنی کو صرف مقدمہ کے لیے دینے سے ادا ہو سکے اگرچہ وہ مقدمہ مذہبی دینی ہو فان الغني لیس بمصرف

Fatawa Razawiyya Volume Ten

(Because it is not a place for Zakat spending. -T) It is not possible to fulfill [Zakat obligation] by giving to lawyers or agents for religious or worldly cases of any poor person or indigent, or by spending on other expenses, unless it is first given to a poor person and then taken from them after they have taken possession of it. Indeed, charity (Sadaqah) is not realized except by making the recipient the owner (Tamleek), and ownership is not complete without possession (Qabdha). (Because Sadaqah will only be fulfilled when someone eligible is made the owner, and the transfer of ownership cannot be completed without possession. -T) Therefore, if one wishes to spend in such matters, the method is to give it to a person who is Islamically eligible for Zakat with the intention of Zakat, and have them take possession of it. Then, of their own accord, they may give it back to you or spend it themselves on purchases for an orphanage or any religious case or good works. It is mentioned in Alamgiriyyah etc.:

Arabic Text

In all matters of righteousness, such as building mosques and constructing bridges, the legal stratagem (Heela) is that an amount equal to the Zakat be given as Sadaqah to a poor person, then they are instructed to spend it on these causes. Thus, the donor will have the reward of Sadaqah, and the poor person will have the reward for building the mosque or bridge (Summarized). And Allah knows best.

Urdu Translation

In all virtuous matters, like the construction of mosques and bridges, etc., the stratagem is that the amount of Zakat should be given as Sadaqah to a poor person, and then they should be asked to spend it on these matters. Now, the person giving the Sadaqah will receive the reward of Sadaqah, and for the poor person, there will be the reward of constructing the mosque and bridge. (Summarized) And Allah Almighty knows best. (T)

Issue 119: 22 Shawwal 1314 AH

Question: First, after greetings, I submit that I have no income except what comes from my husband for expenses, and that is so little that even getting by is difficult. I request you to suggest a way in which Zakat can be paid and there is no difficulty with expenses. This elderly lady says that some rupees were given to me from your side and then bought back for two annas, or can the Zakat be paid from the money I receive from my husband for children's expenses? Is there any harm in that? Or can I

offset the Zakat with the money I received from my father's inheritance, which was spent on the children, because you say that the children's expenses are the responsibility of the father?

The Answer: Jewelry itself is wealth; Zakat should be paid from it. You have absolutely no authority to give Zakat from whatever is received from the husband for the children's expenses. From what he gives for your personal expenses, you can give Zakat—the Zakat of your own wealth.

---

1 Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Hiyal, Chapter Three on Zakat Issues, Noorani Kutub Khana Peshawar, 6/392.

(क्योंकि यह ज़कात के खर्च की जगह नहीं है। -टी) किसी गरीब या मिस्कीन के दीनी या दुनियावी मुक़दमे में वकीलों, मुख्तारों को देने या अन्य खर्चों में लगाने से ज़कात अदा नहीं हो सकती, जब तक कि गरीब को देकर उसके कब्जे के बाद उससे लेकर खर्च न किया जाए। निःसंदेह सदक़ा तब तक सिद्ध नहीं होता जब तक कि प्राप्तकर्ता को मालिक (तमलीक) न बनाया जाए और स्वामित्व बिना कब्ज़े (क़ब्ज़ा) के पूरा नहीं होता। (क्योंकि सदक़ा तभी अदा होगा जब किसी पात्र को मालिक बनाया जाए और मालिकाना हक़ कब्ज़े के बिना पूरा नहीं हो सकता। -टी) अतः यदि कोई इस प्रकार के मामलों में खर्च करना चाहता है, तो उसका तरीका यह है कि जो व्यक्ति शरीयत के अनुसार ज़कात का पात्र है, उसे ज़कात की नीयत से देकर उसका कब्ज़ा करा दें, फिर वह अपनी मर्ज़ी से आपको दे दे या स्वयं यतीमखाने की खरीदारी या किसी दीनी मुक़दमे या भलाई के कामों में लगा दे। आलमगीरिया आदि में है:

अरबी मूल पाठ

सभी नेक कार्यों में, जैसे मस्जिदों का निर्माण और पुलों का निर्माण, कानूनी हिला (तरीका) यह है कि ज़कात की मात्रा के बराबर एक गरीब व्यक्ति को सदक़ा दिया जाए, फिर उन्हें इन कामों पर खर्च करने का निर्देश दिया जाए। इस प्रकार, दानदाता को सदक़ा का पुण्य मिलेगा, और गरीब व्यक्ति को मस्जिद या पुल बनाने का पुण्य मिलेगा (संक्षिप्त)। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

उर्दू अनुवाद

तमाम भलाई के कामों जैसे मस्जिदों और पुलों की तामीर आदि में हिला यह है कि ज़कात की मात्रा गरीब को सदक़ा की जाए फिर उसे इन कामों पर खर्च करने के लिए कहा जाए तो अब सदक़ा करने वाले के लिए सदक़ा का सवाब और गरीब के लिए मस्जिद और पुल की तामीर का सवाब होगा (सारांश)। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है (टी)।

मसला 119: 22 शव्वाल 1314 हिजरी

सवाल: सलाम के बाद अर्ज़ है कि मेरे पास उसके अलावा जो पति की ओर से खर्च के लिए आता है, और कोई आमदनी नहीं है, और वह इतनी कम है कि बसर करना भी मुश्किल होता है। अर्ज़ है कि ऐसी सूरत बताइये कि जिसमें ज़कात भी अदा हो जाए और खर्च की भी दिक्कत न हो। यह बड़ी बी कहती हैं कि आपके यहाँ से मुझे कुछ रुपये दिए गए और फिर वे दो आने में मोल ले लिए गए, या जो खर्च मुझे पति के पास से मिलता है उसमें से ज़कात अदा करके बच्चों के खर्च में लगाई जाए तो कोई

बुराई तो नहीं? या जो रुपया पिता की विरासत से मिला था वह मेरा बच्चों के खर्च में हो गया, क्या मैं उसे ज़कात में मुजरा (एडजस्ट) कर सकती हूँ क्योंकि आप फ़रमाते हैं कि बच्चों का खर्च बाप के ज़िम्मे है।

जवाब: ज़ेवर खुद माल है, उसी में से ज़कात अदा की जाए। पति से जो कुछ बच्चों के खर्च के लिए मिलता है, उसमें से ज़कात देने का हरगिज़ अधिकार नहीं है। तुम्हारे अपने खर्च के लिए जो कुछ देते हैं, उसमें से तुम ज़कात दे सकती हो—अपने माल की ज़कात।

---

1 फतावा हिंदिया, किताबुल हियल, तीसरा अध्याय ज़कात के मुद्दों पर, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 6/392।

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

(کیونکہ زکوۃ کا مصرف نہیں ہے۔ ت) نہ کسی فقیر نہ مسکین کے دینی خواہ دنیوی مقدمہ میں وکیلوں ، مختاروں کو دینے یا اور خرچوں میں اٹھانے سے ادا ممکن، جب فقیر کو دے کر اس کے قبضے کے بعد اس سے لے کر صرف نہ کیا جائے فان الصدقہ لا تحصل الا بتملیک مصرفھا ولا تتم الا بقبضہ (کیونکہ صدقہ تب ادا ہوگا جب کسی مصرف کو مالک بنایا جائے گا اور تملیک کا اتمام قبضہ کے بغیر نہیں ہو سکتا۔ ت) پس اگر اس قسم کے معاملات میں اٹھانا چاہیں تو اس کا طریقہ یہ ہے کہ جو شخص شرعاً مصرفِ زکوۃ ہے اسے بہ نیتِ زکوۃ دے کر اس کا قبضہ کرا دیں پھر وہ اپنی طرف سے اپنے آپ خواہ اسے دے کر خریداری یتیم خانہ خواہ کسی دینی مقدمہ امورِ خیر میں لگا دے۔ عالمگیریہ وغیرہ میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
في جميع ابواب البر كعمارة المساجد وبناء القناطير الحيلة ان يتصدق بمقدار زكوة على فقير ثم يأمره بالصرف الى هذه الوجوه فيكون للمتصدق ثواب الصدقة وللفقير ثواب بناء المسجد والقنطرة (ملخصاً) والله تعالىٰ اعلم۔	تمام امورِ خیر مثلاً تعمیر مساجد اور پُلوں کی تعمیر وغیرہ میں حیلہ یہ ہے کہ مقدارِ زکوۃ فقیر پر صدقہ کی جائے پھر اسے ان امور پر خرچ کرنے کے لیے کہا جائے تو اب صدقہ کرنے والے کے لیے صدقہ کا ثواب اور فقیر کے لیے مسجد اور پل کی تعمیر کا ثواب ہوگا (ملخصاً) واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ۱۱۹: ۲۲ شوال ۱۳۱۴ھ

سوال اول بعد سلام کے عرض ہے میرے پاس سوا اس کے جو شوہر کے پاس سے صرف کے لیے آتا ہے اور کوئی آمد نہیں، اور وہ اتنی ہے کہ گزر بھی مشکل ہوتی ہے عرض ہے کہ ایسی صورت بتائیے کہ جس میں زکوۃ بھی ادا ہو اور خرچ کی بھی دقت نہ ہو، یہ بڑی بی کہتی ہیں کہ آپ کے یہاں مجھ کو کچھ روپیہ دئے اور پھر وہ دو آنہ میں مول لئے یا جو خرچ مجھ کو شوہر کے پاس سے ملتا ہے اس میں سے زکوۃ ادا کر کے بچوں کے صرف کی جائے تو کچھ برائی تو نہیں؟ یا جو روپیہ والد کے ترکہ کا ملا تھا وہ میرا بچوں کے صرف میں ہو گیا وہ ہو سکتا ہے کہ میں زکوۃ میں مجرا کرلوں اس واسطے کہ آپ فرماتے ہیں بچوں کا صرف باپ کے ذمہ ہے۔

الجواب: زیور خود مال ہے اس میں سے زکوۃ ادا کی جائے، شوہر سے جو کچھ خرچ بچوں کے لیے ملتا ہے اس میں سے زکوۃ دینے کا ہرگز اختیار نہیں تمہارے خرچ کو جو کچھ دیتے ہیں اس میں سے زکوۃ دے سکتی ہو، اپنے مال کی زکوۃ۔

---

1 فتاویٰ ہندیہ، کتاب الحیل، الفصل الثالث فی مسائل الزکوۃ، نورانی کتب خانہ پشاور، ۶ / ۳۹۲

Fatawa Rizvia, Volume 10

[Zakat] cannot be spent on one's own children; Zakat will not be fulfilled through this. Whatever a mother spends on her children cannot be deducted from Zakat, even though the maintenance of children is the responsibility of the father, not the mother. The method where Zakat money is given to a needy person with the intention of Zakat to make them the owner, and then purchased back from them at a low price with their consent - this stratagem (heela) should only be used out of necessity, for example, if a Sayyid is in need and one cannot give him Zakat money directly, nor has the means to give more than the Zakat amount from one's own pocket. In such a case, Zakat can be fulfilled this way, and then after purchasing it with consent, it can be presented to the Sayyid or used for mosque construction or a deceased's shroud, as all these intentions are for the sake of Allah. This stratagem is not for the purpose of spending it on oneself or one's children after buying it back, as that would be like taking back wealth spent in the way of Allah, and refuge is sought with Allah Almighty from this. An easy way possible here is that apart from those who are one's direct ancestors (parents, grandparents) or direct descendants (children, grandchildren) and spouse, one can give Zakat to other needy close relatives such as siblings, nephews, nieces, maternal and paternal uncles and aunts. Giving to them yields double the reward and is less of a burden on the self, as one considers giving to their own siblings or nephews/nieces as if it's for their own use. Moreover, it is not necessary to inform them that it is Zakat; rather, with the intention of Zakat in heart, it can be given under the name of Eidi or wedding customs, etc., making them owners, and the Zakat will be fulfilled. Then, for example, if it's given to a sibling and they, seeing the financial hardship for the donor's children, gift it back to the children of their own free will, then there is no harm in the Zakat nor is it against Sharia's intent. Both objectives – fulfilling Zakat and providing for the children's expenses – will be achieved. Allah Almighty knows best.

Problem 120: From village Makkah Ji Wala, Jagal area, Thana Parhu, Post Office Kot Najibullah Khan, sent by Maulvi Muhammad Sher Sahib, 14 Jamadi-ul-Akhar 1317 AH.

Is it permissible to give Zakat or the Ushr (tithe) of land to one's own daughter or real sister? State the ruling and be rewarded.

The Answer:

It is permissible to give to a sister provided she is eligible for Zakat, but it is not permissible for a daughter.

In 'Al-Durr al-Mukhtar', it is stated that the recipient of Zakat and Ushr is the poor, etc. | In Durr al-Mukhtar it is that the recipient of Zakat and Ushr is the poor etc. and in it And in it: It is not to be spent on those with whom there is a relationship of birth (ancestors/descendants), etc. And Allah Almighty knows best. | it is that Zakat and Ushr should not be spent on such people from whom there is a relationship of birth etc. And Allah Almighty knows best. (T)

1. Al-Durr al-Mukhtar, Chapter on Recipient, Mujtabai Press Delhi, 1/140-141. Page 268 of 836

फ़तावा रज़विया, खंड १०

अपने बच्चों पर ज़कात खर्च नहीं की जा सकती, इससे ज़कात अदा नहीं होगी। माँ ने बच्चों पर जो कुछ खर्च किया वह ज़कात में नहीं गिना जा सकता, भले ही बच्चों का खर्च पिता पर वाजिब हो न कि माँ पर। वह तरीका जिसमें ज़कात की नीयत से किसी ज़रूरतमंद को ज़कात का माल देकर उसे मालिक बना दिया जाए और फिर उसकी सहमति से सस्ते दामों पर उसे वापस खरीद लिया जाए, यह हिला (तरीका) केवल ज़रूरत पड़ने पर ही अपनाना चाहिए, जैसे कि किसी सैयद साहब को ज़रूरत हो और उन्हें ज़कात नहीं दी जा सकती, और अपने पास ज़कात की रकम से ज़्यादा देने की गुंजाइश न हो, तो इस तरह ज़कात अदा करके और उसे आपसी सहमति से खरीद कर सैयद साहब को तोहफे में दे दिया जाए या मस्जिद की तामीर या मैयत के कफन में लगा दिया जाए, क्योंकि ये सब नीयतें अल्लाह ही के लिए हैं। यह हिला अपने या अपने बच्चों पर खर्च करने के मकसद से नहीं है, क्योंकि यह अल्लाह की राह में खर्च किए हुए माल को वापस लेने के समान होगा, और इससे अल्लाह की पनाह मांगते हैं। यहाँ जो आसान तरीका संभव है वह यह है कि जिन लोगों से व्यक्ति का सीधा संबंध है, यानी माता-पिता, दादा-दादी, नाना-नानी, या जो अपनी संतान हैं जैसे बेटा-बेटी, पोता-पोती, नवासा-नवासी, और पति-पत्नी, इन रिश्तों के अलावा अपने ज़रूरतमंद करीबी रिश्तेदारों जैसे भाई-बहन, भतीजा-भतीजी, भांजा-भांजी, मामा, मौसी, चाचा, बुआ को ज़कात दी जा सकती है। उन्हें देने में दोगुना सवाब (पुण्य) है और मन पर बोझ भी कम होगा क्योंकि व्यक्ति अपने सगे भाई-बहन या भतीजे-भांजे को दिया हुआ अपने काम में ही आने वाला समझता है। फिर यह भी ज़रूरी नहीं कि उन्हें ज़कात बताया जाए, बल्कि दिल में ज़कात की नीयत रखते हुए उन्हें ईदी या शादियों की रस्मों आदि के नाम पर मालिक बना दिया जाए तो ज़कात अदा हो जाएगी। फिर अगर मिसाल के तौर पर भाई-बहन को दिया और उन्होंने दानकर्ता के बच्चों के खर्च की तंगी देखकर अपनी खुशी से उसे बच्चों को तोहफे में दे दिया, तो ज़कात में कोई कमी नहीं आएगी और न ही यह शरीयत के मकसद के खिलाफ होगा। इस तरह दोनों उद्देश्य, यानी ज़कात की अदायगी और बच्चों के खर्च की व्यवस्था, पूरे हो जाएंगे। वल्लाहु तआला आलम (अल्लाह बेहतर जानता है)।

मसला १२०: मौज़ा मक्का जी वाला, इलाका जागल, थाना परहूडाकखाना कोट नजीबुल्लाह खान से मुरसला मौलवी मोहम्मद शेर साहब, १४ जमादी-उल-आख़िर १३१५ हिजरी।

अपनी सगी बेटी या सगी बहन को ज़कात या ज़मीन का उश्र देना जायज़ है या नहीं? बयान करें, सवाब मिलेगा।

अल-जवाब:

बहन को देना जायज़ है बशर्ते वह ज़कात की हक़दार हो, और बेटी को देना जायज़ नहीं।

अल-दुर्र अल-मुख्तार में है कि ज़कात और उश्र का हकदार फ़क़ीर है इत्यादि। | दुर्रे मुख्तार में है कि ज़कात व उश्र का मसरफ (खर्च करने की जगह) फकीर है इत्यादि और उसी में और उसी में है: ज़कात और उश्र उन लोगों पर खर्च न किया जाए जिनसे जन्म का संबंध हो (जैसे माता-पिता और संतान) इत्यादि। वल्लाहु तआला आलम। | है कि ज़कात व उश्र ऐसे लोगों पर खर्च न की जाए जिनसे अपनी विलादत (जन्म) का ताल्लुक हो इत्यादि वल्लाहु तआला आलम। (त)

1. दुर्रे मुख्तार, बाब अल-मसरफ़, मतबा मुजतबाई दिल्ली, १/१४०-१४१। पेज २६८ का ८३६

اپنے بچوں کے صرف میں نہیں کی جاسکتی، اس سے زکوٰۃ ادا نہ ہوگی، ماں کا جو کچھ بچوں کے صرف میں اٹھ گیا زکوٰۃ میں مجرا نہیں ہو سکتا اگر چہ بچوں کا خرچ باپ پر ہے ماں پر نہیں، وہ طریقہ کہ زکوٰۃ کا مال بہ نیت زکوٰۃ کسی محتاج کو دے کر مالک کر دیا جائے پھر اس کی رضامندی سے تھوڑے داموں کو اس سے خرید لیں، یہ حیلہ بضرورت صرف ایسی جگہ ہو کہ مثلاً کسی سید صاحب کو حاجت ہے مالِ زکوٰۃ انھیں دے نہیں سکتے اور اپنے پاس زرِ زکوٰۃ سے زیادہ دینے کی وسعت نہیں تو اس طرح زکوٰۃ ادا کرکے برضا مندی مول لے کر سید صاحب نذر کر دیا جائے یا مسجد کی تعمیر یا میت کے کفن میں لگا دیا جائے کہ یہ سب نیتیں اللہ ہی کے لیے ہیں، خرید کر اپنے یا اپنے بچوں کے صرف میں لانے کی غرض سے یہ حیلہ نہیں کہ اس میں راہِ خدا میں مال خرچ کرکے، پھر جانا پایا جائیگا والعیاذ باللہ تعالیٰ، آسان طریقہ جو یہاں ہو سکے یہ ہے کہ آدمی جن کی اولاد میں خود ہے یعنی ماں باپ، دادا دادی، نانا نانی یا جو اپنی اولاد میں ہیں یعنی بیٹا بیٹی، پوتا پوتی، نواسا نواسی اور شوہر و زوجہ ان رشتوں کے سوا اپنی جو عزیز قریب حاجتمند مصرف زکوٰۃ ہیں اپنے مال کی زکوٰۃ انھیں دے جیسے بہن بھائی، بھتیجا بھتیجی، بھانجا بھانجی، ماموں، خالہ، چچا، پھوپھی کہ انہیں دینے میں دو گنا ثواب ہے اور نفس پر بار بھی کم ہو گا کہ اپنے سگے بہن بھائی یا بھتیجے بھانجے کا دیا ہوا آدمی اپنے کام میں ہی اٹھانا جانتا ہے پھر یہ بھی کچھ ضرور نہیں کہ انھیں زکوٰۃ جتائی کر دے بلکہ دل میں زکوٰۃ کی نیت ہو انھیں عیدی و غیرہ یا شادیوں کی رسوم خواہ کسی بات کا نام کر کے مالک کردے زکوٰۃ ادا ہو جائیگی، پھر اگر مثلاً اپنے بہن بھائی کو دیا اور انھوں نے اس کے بچوں پر خرچ کی تنگی دیکھ کر اپنی خوشی سے اس کے بچوں پر ہبہ کر دیا تو زکوٰۃ میں کچھ خلل نہ آئے گا نہ مقصودِ شریعت کے خلاف ہوگا

اور دونوں مطلب یعنی ادائے زکوٰۃ اور بچوں کے خرچ کی وسعت حاصل ہو جائیں گے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۲۰: از موضع مکہ جی والا علاقہ جاگل تھانہ پرہوڈاکخانہ کوٹ نجیب اللہ خاں مرسلہ مولوی محمد شیر صاحب ۱۴ جمادی الآخر ۱۳۱۷ھ

اپنی دختری حقیقی ہمشیرہ کو زکوٰۃ یا زمین کا عشر دینا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب:

بہن کو جائز ہے جبکہ مصرف زکوٰۃ ہو اور بیٹی کو جائز نہیں۔

فی الدرالمختار مصرف الزکوٰۃ والعشر فقیر الخ و فیہ | در مختار میں ہے کہ زکوٰۃ و عشر کا مصرف فقیر ہے الخ اور اسی میں لا یصرف الی من بینھما ولاد الخ۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ | ہے کہ زکوٰۃ و عشر ایسے لوگوں پر صرف نہ کی جائے جن سے اپنی ولادت کا تعلق ہو الخ واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

1 درمختار، باب المصرف، مطبع مجتبائی دہلی، ۱/۱۴۱-۱۴۰ Page 268 of 836

Fatawa-e-Razvia Volume 10

Problem 121: Sent by Mahmood Hasan, student of Rashid Ahmed Gangohi, 20 Safar 1323 AH. What do the scholars of the true religion say regarding this: can I give my Zakat money to my father through some legal stratagem (hila) or not? Because my father is in such poverty that he is ashamed to go out and sit among people, and he is a respectable man. There is no one I can give it to so that they could give it to my father on their behalf. In this situation, can I give Zakat money to my father through some stratagem or not? Please clarify and be rewarded.

The Answer: Giving Zakat to one's father is not permissible in any way, nor will Zakat be considered fulfilled if given to him. If it is true that the father is so needy and the questioner does not have the capacity to both give Zakat and serve her father, and she cannot find a person of such trust that she gives Zakat to him and he gives it to her father on his own behalf, then this method is possible: For example, if ten rupees of Zakat are to be given and she wants this money to reach her father, then sell ten seers or five seers of wheat worth ten rupees to a poor person eligible for Zakat. Explain to them that they will have no difficulty paying the price, as we will give them Zakat and they can pay from that. When they accept the purchase, give them the wheat. Now, they owe ten dirhams as the price of the wheat. After this, give them ten rupees as Zakat and let them take possession of it; the Zakat is now fulfilled. Then, take the money back in lieu of the price of the wheat. If they do not give it willingly, she can take it by force because they are her debtor. Now, she can give this money to her father. It is stated in Durr-e-Mukhtar: "The legal stratagem for permissibility is that one gives Zakat to their poor debtor, and then takes it back in lieu of the debt. Even if the debtor refuses, one may extend their hand and take it, because it is a case of obtaining one's own right. If they still obstruct, the matter should be taken to the Qadi (judge)."

The legal stratagem for permissibility is that Zakat be given to one's poor debtor and then that amount be taken back in lieu of the debt. If the debtor does not agree, it should be taken from him by force because this is a form of exercising power over obtaining one's own property. If there is still an obstacle, the matter should be taken to the Qadi. (Translation)

However, it must be kept in mind that the maintenance (nafaqah) of a needy father is obligatory upon all his affluent children, sons and daughters alike. So, if she is the

only child, then his total expenses for food, clothing, and housing are mandatory upon her. And if there are others as well, then...

---

1. Durr-e-Mukhtar, Kitab az-Zakat, Mujtabai Press, Delhi, 1/130 Page 269 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

मसाला १२१: मुर्सला महमूद हसन साहब शागिर्द रशीद अहमद गंगोही साहब २० सफ़र १३२३ हि. क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन-ए-मतीन इस बारे में कि मेरी ज़कात का रुपया अपने वालिद को किसी हीले से दे सकती हूँ या नहीं, क्योंकि वालिद ऐसी ग़ुरबत में हैं कि बाहर निकलने बैठने में शर्म आती है और वह एक आबरूदार आदमी हैं और न कोई ऐसा आदमी है कि मैं उस आदमी को दे दूँ वह अपनी तरफ़ से भी वालिद को दे दे इस सूरत में किसी हीले से अपने वालिद को ज़कात का पैसा दे सकती हूँ या नहीं? बयान करें, सवाब पाएँ।

अल-जवाब: बाप को ज़कात देना किसी तरह जायज़ नहीं, न उसकी दी ज़कात अदा हो सके। यह बात अगर वाक़ई है कि बाप ऐसा ही हाजतमंद है और साइला में यह ताक़त नहीं कि ज़कात भी दे और बाप की भी ख़िदमत करे और ऐसा इत्मीनान का शख़्स कोई नहीं पाती कि उसे ज़कात दे और वह अपनी तरफ़ से उसके बाप को दे दें तो उसका यह तरीक़ा मुमकिन है कि मसलन दस रुपया ज़कात के देने हैं और चाहती है कि यह रुपया उसके बाप को पहुँचे तो किसी फ़क़ीर मस्रफ़-ए-ज़कात के हाथ मसलन दस सेर या पान सेर गेहूँ दस रुपये को बेचो और उसे समझा दे कि ज़र-ए-समन (क़ीमत) अदा करने की तुम्हें दिक़्क़त न होगी हम ज़कात देंगे उसी से अदा कर देना, जब वह बय (बिक्री) क़बूल करे गेहूँ उसको दे दे अब उसके दस दरहम बाबत समन-ए-गंदुम उस पर क़र्ज़ हो गए इसके बाद उसे दस रुपया ज़कात में देकर क़ब्ज़ा करा दे ज़कात अदा हो गई फिर गेहूँ की क़ीमत में रुपये वापस ले वह यूँ न दे तो जबरन ले सकती है कि वह उसका मदयून (क़र्ज़दार) है अब यह रुपया अपने बाप को दे दे। दुर-ए-मुख़्तार में है:

حیلة الجواز ان یعطی مدیونه الفقیر زکوتہ ثم یأخذها عن دینه ولو امتنع المدیون مدّ یده واخذها لکونه ظفر بجنس حقه فان مانعه رفعه للقاضی۔ १ हीला-ए-जवाज़ यह है कि अपने मक़रूज़ (क़र्ज़दार) फ़क़ीर को ज़कात दी जाए फिर क़र्ज़ के एवज़ (बदले) उससे वह रक़म वापस ले ली जाए अगर मक़रूज़ न माने तो उससे छीन ली जाए क्योंकि यह अपने माल के हुसूल पर क़ुदरत की सूरत है, अगर इसमें भी रुकावट बने तो मामला क़ाज़ी के पास ले जाया जाए। (त)

मगर इसका लिहाज़ लाज़िम है कि मोहताज बाप का नफ़क़ा उसकी सब ग़नी औलाद पर लाज़िम है, बेटा बेटी सब पर बराबर, तो अगर तन्हा यही उसकी औलाद है तो उस पर उसका कुल ख़र्च खाने पहनने रहने के मकान का लाज़िम है, और अगर और भी हैं तो

१ दुर-ए-मुख़्तार, किताब अज़-ज़कात, मतबा मुजतबाई देहली, १/१३० सफ़ा २६९ ऑफ़ ८३६

مسئلہ ۱۲۱: مرسلہ محمود حسن صاحب شاگرد رشید احمد گنگوہی صاحب ۲۰ صفر ۱۳۲۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین متین اس بارہ میں کہ میری زکوٰۃ کا روپیہ اپنے والد کو کسی حیلہ سے دے سکتی ہوں یا نہیں، کیونکہ والد ایسی غربت میں ہیں کہ باہر نکلنے بیٹھنے میں شرم آتی ہے اور وہ ایک آبرو دار آدمی ہیں اور نہ کوئی ایسا آدمی ہے کہ میں اس آدمی کو دے دوں وہ اپنی طرف سے بھی والد کو دے اس صورت میں کسی حیلہ سے اپنے والد کو زکوٰۃ کا پیسہ دے سکتی ہوں یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: باپ کو زکوٰۃ دینا کسی طرح جائز نہیں، نہ اس کی دی زکوٰۃ ادا ہوسکے۔ یہ بات اگر واقعی ہے کہ باپ ایسا ہی حاجتمند ہے اور سائلہ میں یہ طاقت نہیں کہ زکوٰۃ بھی دے اور باپ کی بھی خدمت کرے اور ایسا اطمینان کا شخص کوئی نہیں پاتی کہ اسے زکوٰۃ دے اور وہ اپنی طرف سے اس کے باپ کو دیں تو اس کا یہ طریقہ ممکن ہے کہ مثلاً دس روپیہ زکوٰۃ کے دینے ہیں اور چاہتی ہے کہ یہ روپیہ اس کے باپ کو پہنچے تو کسی فقیر مصرف زکوٰۃ کے ہاتھ مثلاً دس سیر یا پانسیر گیہوں دس روپیہ کو بیچو اور اسے سمجھا دے کہ زرِ ثمن ادا کرنے کی تمہیں دقت نہ ہوگی ہم زکوٰۃ دیں گے اسی سے ادا کر دینا، جب وہ بیع قبول کرے گیہوں اس کو دے دے اب اس کے دس درہم بابت ثمن گندم اس پر قرض ہو گئے اس کے بعد اسے دس روپیہ زکوٰۃ میں دے کر قبضہ کرادے زکوٰۃ ادا ہوگئی پھر گیہوں کی قیمت میں روپے واپس لے وہ یوں نہ دے تو جبراً لے سکتی ہے کہ وہ اس کا مدیون ہے اب یہ روپیہ اپنے باپ کو دے دے۔ درمختار میں ہے:

حیلۃ الجواز ان یعطی مدیونہ الفقیر زکوتہ ثم یاخذھا عن دینہ ولو امتنع المدیون مدّ یدہ واخذھا لکونہ ظفر بجنس حقہ فان مانعہ رفعہ للقاضی۔ ۱ حیلہ جواز یہ ہے کہ اپنے مقروض فقیر کو زکوٰۃ دی جائے پھر قرض کے عوض اس سے وہ رقم واپس لے لی جائے اگر مقروض نہ مانے تو اس سے چھین لی جائے کیونکہ یہ اپنے مال کے حصول پر قدرت کی صورت ہے، اگر اس میں بھی رکاوٹ بنے تو معاملہ قاضی کے پاس لے جایا جائے۔ (ت)

مگر اس کا لحاظ لازم ہے کہ محتاج باپ کا نفقہ اس کی سب غنی اولاد پر لازم ہے، بیٹا بیٹی سب پر برابر، تو اگر تنہا یہی اس کی اولاد ہے تو اس پر اس کا کل خرچ کھانے پہننے رہنے کے مکان کا لازم ہے، اور اگر اور بھی ہیں تو

---

۱ در مختار، کتاب الزکوۃ، مطبع مجتبائی دہلی، ۱/۱۳۰ Page 269 of 836

...proportionate share, and Zakat is also obligatory upon the wealthy for the sake of Allah Almighty. One should not use a legal pretext to drop one of the two obligations. Allah Almighty knows the intentions of the hearts. Yes, if there is truly an inability, then the mentioned pretext is a good means by which both obligations can be fulfilled. 'And Allah knows the corrupter from the reformer'[1] (Allah knows well the one who spoils from the one who mends. - Translator). And Allah Almighty knows best.

Problem 122: From Molvi Niyaz Muhammad Khan Badayuni, currently at Manugacha, Peeraak, 2 Rabi-ul-Thani 1332 AH. On what things can Fitra money be spent, and to which people can it be given? **The Answer:** The heads of expenditure for Fitra are exactly the same as the heads of expenditure for Zakat. And Allah Almighty knows best.

Problem 123: From Bareilly, Muhalla Kankar Tola, near Khurd Mosque, sent by Altaf Ali Sahib, 13 Dhu al-Hijjah 1338 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: if a person, despite his mother and sister being a widow and an orphan, gives them nothing and they suffer hardships; in this situation, if Zaid is 'sahib-e-nisab' (possessor of minimum wealth for zakat) and pays Zakat and charity, will it be accepted or not? And what is the ruling for Zaid in the Noble Shariah? Explain and be rewarded. **The Answer:** If Zaid's mother has no means of livelihood, then her maintenance is obligatory upon Zaid. Similarly, for an orphaned sister who is unmarried and has no wealth, not giving to them is a great sin upon him. It is stated in a Hadith: 'It is enough sin for a man that he neglects those whom he provides for.'[2] | It is enough for a man to be a sinner that he keeps those deprived whose expenses are his responsibility. (Translator)

As for Zakat, he cannot give it to his mother; he can give it to his sister, and he should serve his mother from his own funds. And Allah Almighty knows best.

Problem 124: From Kathiawad, Molvi Saifullah Sahib, Imam of Habatpur, 27 Dhu al-Hijjah 1333 AH. What do the noble scholars and great excellencies (may their blessings last upon us) say in this matter that due to necessity...

Footnotes: 1 Al-Quran 2/220 2 Sunan Abi Dawood, Book of Zakat, Chapter on Maintaining Ties of Kinship, Aftab-e-Alam Press Lahore, 1/238, Musnad Ahmad bin Hanbal narrated from Abdullah bin Amr, Dar al-Fikr Beirut 2/195, 192, 160.

फ़तावा रज़विया (ऊपर दाईं ओर) **खंड १०** (ऊपर बाईं ओर)

...हिस्सा रसद, और ज़कात भी अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल का धनी पर फ़र्ज़ है। हीला (क़ानूनी बहाना) करके दो वाजिबों में से एक को साक़ित न करे, अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल दिलों की नीयत जानता है। हाँ, हक़ीक़तन क़ुदरत न हो तो मज़कूरा हीला उम्दा वसीला है जिससे दोनों वाजिब अदा हो सकें। "और अल्लाह बिगाड़ने वाले को संवारने वाले से (अलग) जानता है"[1] (अल्लाह तआला ख़ूब जानता है बिगाड़ने वाले को संवारने वाले से। - त) वल्लाहु तआला आलम।

मसअला १२२: मुरसला मौलवी नियाज़ मुहम्मद ख़ान बदायूँनी, वारिद हाल मानूगाचा, मुल्क पीराक २ रबीउल थानी १३४२ हिजरी। फ़ितरा का पैसा कौन-कौन से काम में सर्फ़ हो सकता है और किस-किस शख़्स को दिया जा सकता है? **अल-जवाब:** फ़ितरा के मसारिफ़ (व्यय के मद) बिल्कुल वही हैं जो ज़कात के मसारिफ़ हैं। वल्लाहु तआला आलम।

मसअला १२३: अज़ बरेली, मुहल्ला कंकर टोला, मुत्तसिल मस्जिद खुर्द, मुरसला जनाब अल्ताफ़ अली साहब, १३ ज़ुल-हज्जा १३३८ हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसअले में कि जो शख़्स अपनी वालिदा और हमशीरा (बहन) को बावजूद बेवा और यतीम होने के कुछ न दे और वो तकलीफ़ें उठाती हों, इस हालत में अगर ज़ैद साहिब-ए-नसाब हो और ज़कात-सदक़ा अदा करे तो वो क़बूल होगा या नहीं? और ज़ैद के वास्ते शरअ शरीफ़ में क्या हुक्म है? बयान करें और अज्र पाएँ। **अल-जवाब:** ज़ैद की माँ अगर कोई ज़रिया-ए-मआश (आजीविका का साधन) नहीं रखती तो उसका नफ़क़ा (खर्चा) ज़ैद पर फ़र्ज़ है, यूँ ही यतीम बहन कि जिसकी शादी न हुई हो, न उसके पास कुछ माल हो, उनको न देने से उस पर गुनाह-ए-अज़ीम है। हदीस में फ़रमाया: "आदमी के गुनाहगार होने के लिए यही काफ़ी है कि वह ऐसे लोगों को महरूम रखे जिनका ख़र्चा उसके ज़िम्मे हो।"[2] (त)

रही ज़कात, वो माँ को नहीं दे सकता, बहन को दे और माँ की ख़िदमत अपने पास से करे। वल्लाहु तआला आलम।

मसअला १२४: अज़ काठियावाड़, मौलवी सैफ़ुल्लाह साहब, पेश इमाम हबतपुर, २७ ज़ुल-हज्जा १३३३ हिजरी। क्या फ़रमाते हैं हज़रात उलेमा-ए-किराम व फ़ुज़ला-ए-इज़ाम (दामत अलैना बरकातुहुम) इस मसअले में कि ब-ज़रूरत...

पाद-टिप्पणी: १ अल-कुरआन २/२२० २ सुनन अबी दाऊद, किताबुज़ ज़कात, बाबू फ़ी सिलतिर-रहम, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, १/२३८, मुस्नद अहमद बिन हंबल, अब्दुल्लाह बिन अम्र से रिवायत, दारुल फ़िक्र बैरूत २/१९५, १९२, १६०

पृष्ठ २७०/८३६

حصہ رسد، اور زکوٰۃ بھی اللہ عزوجل کا غنی پر فرض ہے حیلہ کر کے دو واجبوں میں ایک کو ساقط نہ کرے، اللہ عزوجل دلوں کی نیت جانتا ہے، ہاں حقیقۃً قدرت نہ ہو تو حیلہ مذکورہ عمدہ وسیلہ ہے جس سے دونوں واجب ادا ہوسکیں۔ وَاللّٰہُ یَعْلَمُ الْمُفْسِدَ مِنَ الْمُصْلِحِ۱۸ 1 (اللہ تعالٰی خوب جانتا ہے بگاڑنے والے کو سنوارنے والے سے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۲۲: مرسلہ مولوی نیاز محمد خاں بدایونی وارد حال مانو گاچہ ملک پیراک ۲ ربیع الثانی ۱۳۳۲ھ فطرہ کا پیسہ کون کون سے کام میں صرف ہو سکتا ہے اور کس کس شخص کو دیا جا سکتا ہے؟ **الجواب:** فطرہ کے مصارف بعینہ مصارف زکوٰۃ ہیں، واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۲۳: از بریلی محلہ کا نکر ٹولہ متصل مسجد خوردم رسلہ جناب الطاف علی صاحب ۱۳ ذی الحجہ ۱۳۳۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جو شخص اپنی والدہ اور ہمشیرہ کو باوجود بیوہ اور یتیم ہونے کے کچھ نہ دے اور وہ تکالیف اٹھاتی ہوں اس حالت میں اگر زید صاحب نصاب ہو اور زکوٰۃ صدقہ ادا کرے تو وہ قبول ہوگا یا نہیں؟ اور زید کے واسطے شرع شریف میں کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا **الجواب:** زید کی ماں اگر کوئی ذریعہ معاش نہیں رکھتی تو اس کا نفقہ زید پر فرض ہے، یوں ہی یتیم بہن کہ جس کی شادی نہ ہوئی ہو، نہ اس کے پاس کچھ مال ہو، ان کو نہ دینے سے اس پر گناہِ عظیم ہے۔ حدیث میں فرمایا: کَفٰی بِالْمَرْءِ إِثْمًا أَنْ یُضِیعَ مَنْ یَقُوتُ۔۲۸ 2 | آدمی کے گناہگار ہونے کے لیے یہی کافی ہے کہ وہ ایسے لوگوں کو محروم رکھے جن کا خرچہ اس کے ذمہ ہو۔ (ت)

رہی زکوٰۃ، وہ ماں کو نہیں دے سکتا بہن کو دے اور ماں کی خدمت اپنے پاس سے کرے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۲۴: از کاٹھیا واڑ مولوی سیف اللہ صاحب پیش امام حبت پور ۲۷ ذی الحجہ ۱۳۳۳ھ کیا فرماتے ہیں حضرات علمائے کرام و فضلائے عظام دامت علینابرکاتہم اس مسئلہ میں کہ بضرورت

حواشی: 1 القرآن ۲۲۰/۲ 2 سنن ابی داؤد، کتاب الزکوۃ، باب فی صلۃ الرحم، آفتاب عالم پریس لاہور، ۲۳۸/۱، مسند احمد بن حنبل مروی از عبداللہ بن عمرو دارالفکر بیروت ۱۹۵/۲، ۱۹۲، ۱۶۰

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

Question: If a Muslim who is himself eligible for Zakat takes possession of Zakat money and then spends it on the expansion of a mosque, is it permissible? Or in what way is it allowed? Please explain and be rewarded.

Answer: If the Zakat giver gave the Zakat money to a deserving recipient (Masrif) and transferred its ownership to him, then the recipient has the choice to spend it wherever he wishes, because the Zakat was fulfilled upon the transfer of ownership. Similarly, if the person paying Zakat (Muzakki) gave him the Zakat money and authorized him absolutely, saying "Pay my Zakat with this in whatever way you want," and he took it with the intention of Zakat for himself and then spent it on the mosque, this is also correct and permissible. Likewise, if the Muzakki set aside Zakat money and a poor person took it without his permission, but the owner, upon learning of it, validated his taking it, and then the poor person spent it on the mosque, this is also correct. However, if the poor person took possession of it on his own and the owner did not validate it, or validated it only after it had already been spent on the mosque, the Zakat will not be fulfilled. Similarly, if the owner gave him the money and appointed him as an agent (Wakeel) saying "Give this on my behalf to some poor person," and he is also poor himself and took it and spent it on the mosque, even then Zakat is not fulfilled, even if he was given absolute authority, because ownership (Tamleek) was not established, and he will be liable to repay the money. And Allah knows best.

Problem 125: From Tarsai Kathiawar, sent by Mr. Ahmad Dawood, 1st Jumada al-Akhira 1336 AH. Nowadays, there is no one to look after the Syeds; some have reached the point of starvation. In such a case, is it permissible to take Zakat, or is it permissible to take Zakat even without such an excuse?

Answer: Giving Zakat to a Syed is forbidden (Haraam) and Zakat is not fulfilled by giving it to them. If the starvation is because they are capable of working or laboring but choose not to, then this starvation cannot be an excuse because it is self-inflicted; why does he not earn a lawful living? But if they are truly unable to earn, it is an obligation on Muslims to help them. If people are negligent and they have no other means of sustenance except taking Zakat, then they may take only as much as is necessary and spend it only to the extent of their need. And Allah knows best.

Problem 126: From Mirzapur Civil Lines Bungalow, Maulvi Muhibullah Sahib Deputy Collector, sent by Muhammad Abdul Qadir Sahib Badayuni, 12th Jumada al-Ula 1336

AH. Zaid gave Sadaqah (charity) to Bakr. Bakr knows it is Sadaqah. In such a case, can Bakr give that property to a Syed or not? And does that property belong to Bakr or Zaid, since Zaid has already given it to Bakr?

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवाँ

प्रश्न: ज़क़ात का रुपया कोई मुसलमान क़ब्ज़ा करके जो ख़ुद भी मुस्तहिक़-ए-ज़क़ात हो, तौसी-ए-मस्जिद (मस्जिद के विस्तार) में सर्फ़(खर्च) करे तो जायज़ है या किस सूरत से? बयान फ़रमाएं सवाब पायें।

उत्तर: अल-जवाब: ज़क़ात देने वाले ने अगर ज़क़ात की रक़म ज़क़ात के हक़दार को देकर उसे उसका मालिक बना दिया, तो अब उसे अधिकार है कि जहाँ चाहे खर्च करे, क्योंकि उसके मालिक बना देने से ज़क़ात अदा हो गई। इसी तरह अगर ज़क़ात देने वाले (मुज़क्की) ने उसे ज़क़ात की रक़म दी और उसे पूर्ण अधिकार दिया कि "इससे जिस तरह चाहो मेरी ज़क़ात अदा कर दो" और उसने ख़ुद ज़क़ात की नीयत से उसे ले लिया, उसके बाद मस्जिद में लगा दिया तो यह भी सही और जायज़ है। इसी तरह अगर मुज़क्की ने ज़क़ात निकालकर रखी और किसी फ़क़ीर ने उसकी इजाज़त के बिना ले लिया और मालिक ने पता चलने के बाद उसका लेना जायज़ कर दिया और उसके बाद फ़क़ीर ने मस्जिद में खर्च किया तो यह भी सही है। और अगर फ़क़ीर ने अपने आप क़ब्ज़ा कर लिया और मालिक ने उसे जायज़ न किया या मस्जिद में लगा देने के बाद जायज़ किया, तो ज़क़ात अदा न होगी। इसी तरह अगर मालिक ने उसे रुपया दिया और वकील बनाया कि "मेरी तरफ़ से किसी फ़क़ीर को दे दो" और वह भी फ़क़ीर है, उसने ख़ुद ले लिया और मस्जिद में लगा दिया, तो अब भी ज़क़ात अदा न हुई चाहे उसे पूर्ण अधिकार ही क्यों न दिया गया हो, क्योंकि मलकियत (तमलीक) हासिल नहीं हुई और उस पर रुपयों का जुर्माना (तावान) आएगा। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला १२५: मक़ाम तरसाई काठियावाड़ से, भेजने वाले अहमद दाऊद साहब, १ जमादी-उल-आख़िर १३३६ हिजरी। आजकल सैयदों का कोई पूछने वाला नहीं है, कुछ की नौबत फाक़ों तक पहुँच गई है, ऐसी सूरत में ज़क़ात लेना या बिना इस मजबूरी के भी ज़क़ात लेना जायज़ है या नहीं?

उत्तर: अल-जवाब: सैयद को ज़क़ात देना हराम है और उसे देने से ज़क़ात अदा नहीं होती। और अगर फ़ाक़ों की नौबत इस बिना पर हो कि नौकरी या मज़दूरी करने की शक्ति है और नहीं करना चाहता, तो यह फ़ाक़ा मजबूरी नहीं हो सकता क्योंकि यह अपने हाथ का पैदा किया हुआ है, वह हलाल कमाई क्यों नहीं करता? और अगर वास्तव में कमाने पर क़ादिर (सक्षम) नहीं है, तो मुसलमानों पर फ़र्ज़ है कि उसकी सहायता करें। और अगर लोग लापरवाही करें और उसे ज़क़ात लेने के सिवा

जीविका का कोई और साधन न हो, तो ज़रूरत के अनुसार ले और ज़रूरत की हद तक ही खर्च करे। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला १२६: मिर्ज़ापुर सिविल लाइन बंगला मौलवी मुहिबउल्लाह साहब डिप्टी कलेक्टर से, भेजने वाले मोहम्मद अब्दुल क़ादिर साहब बदायूँनी, १२ जमादी-उल-ऊला १३३६ हिजरी। ज़ैद ने बक्र को सदक़ा दिया, बक्र को मालूम है कि यह सदक़ा है, ऐसी सूरत में क्या बक्र उस माल को सैयद को दे सकता है या नहीं? और वह माल बक्र की मलकियत (स्वामित्व) है या ज़ैद की, जबकि ज़ैद बक्र को दे चुका है।

पृष्ठ २७१ / ८३६

فتاوی رضویہ جلد دہم

زکوۃ کا روپیہ کوئی مسلمان قبضہ کرکے جو خود بھی مستحق زکوۃ ہو توسیع مسجد میں صرف کرے تو جائز ہے یا کس صورت سے؟ بینوا توجروا

الجواب: زکوۃ دہندہ نے اگر زرزکوۃ مصرف زکوۃ کو دے کر اس کی تملیک کردی تو اب اسے اختیار ہے جہاں چاہے صرف کرے کہ زکوۃ اس کی تملیک سے ادا ہوگئی، یوں ہی اگر مزکی نے زرزکوۃ اسے دیا اور ماذون مطلق کیا کہ اس سے جس طور پر چاہو میری زکوۃ ادا کردو اس نے خود بہ نیت زکوۃ لے لیا، اس کے بعد مسجد میں لگا دیا تو یہ بھی صحیح و جائز ہے، یونہی اگر مزکی نے زرزکوۃ نکال کر رکھا تو فقیر نے بے اس کی اجازت کے لے لیا اور مالک نے بعد اطلاع اس کا لینا جائز کردیا اور اس کے بعد فقیر نے مسجد میں صرف کیا تو یہ بھی صحیح ہے، اور اگر فقیر نے بطور خود قبضہ کرلیا اور مالک نے اسے جائز نہ کیا یا بعد اس کے کہ یہ مسجد میں لگا چکا، جائز کیا، تو زکوۃ ادانہ ہوگی۔ یونہی اگر مالک نے اسے روپیہ دیا اور وکیل کیا کہ میری طرف سے کسی فقیر کو دے دو یہ بھی فقیر ہے خود لے لیا اور مسجد میں لگا دیا تو اب بھی زکوۃ ادانہ ہوئی اگرچہ اسے ماذون مطلق کیا ہو کہ تملیک نہ پائی گئی اور اس پر روپے کا تاوان آئے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۲۵: از مقام تر سائی کاٹھیاواڑ مرسلہ احمد داؤد صاحب یکم جمادی الآخر ۱۳۳۶ھ فی زمانہ سیدوں کا کوئی پرسان حال نہیں، فاقوں تک بعض کی نوبت پہنچی ہے، ایسی صورت میں زکوۃ لینا یا بغیر اس عذر کے بھی زکوۃ لینا جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: سید کو زکوۃ دینا حرام ہے اور اسے دئے زکوۃ ادا نہیں ہوتی، اور فاقوں پر نوبت اگر اس بنا پر ہو کہ نوکری یا مزدوری پر قدرت ہے اور نہیں کرنا چاہتا تو یہ فاقہ بھی عذر نہیں ہوسکتا کہ یہ اپنے ہاتھ کا ہے کیوں نہیں کسب حلال کرتا، اور اگر واقعی کسب پر قادر نہیں تو مسلمانوں پر فرض ہے کہ اس کی اعانت کریں، اور اگر لوگ بے پروائی کریں اور اسے کوئی ذریعہ رزق کا سوائے زکوۃ لینے کے نہ ہو تو بقدر ضرورت لے اور قدر ضرورت میں صرف کرے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۲۶: از مرزاپور سول لائن بنگلہ مولوی محب اللہ صاحب ڈپٹی کلکٹر مرسلہ محمد عبد القادر صاحب بدایونی ۱۲ جمادی الاولی ۱۳۳۶ھ زید نے بکر کو صدقہ دیا، بکر کو علم ہے کہ صدقہ ہے، ایسی صورت میں بکر اُس مال کو سید کو دے سکتا ہے یا نہیں، اور وہ مال بکر کی ملکیت ہے یا زید کی، جبکہ زید بکر کو دے چکا۔

Fatawa Razawiyya - Volume 10

The Answer: When Zaid gave property to Bakr as charity and Bakr took possession, whether he was eligible for charity or not, and Zaid knew Bakr was not eligible for charity but gave it considering him rich, in both cases Bakr became the owner.

[Arabic]: Scholars have specified in 'Rad al-Muhtar' and others that there is a reward for giving charity to a wealthy person, although it is less than the reward obtained from giving charity to a poor person. 1 [Urdu]: It is specified by scholars in 'Rad al-Muhtar' etc., that there is also a reward for charity to the rich, but this reward will be less than the reward obtained from charity to the poor. (T)

And when he became the owner and offered it to a Syed (descendant of the Prophet) from his side, not as Zakat charity but as a gift or present, then it is permissible for the Syed to take it even if it was given to Bakr as Zakat.

[Arabic]: He (peace and blessings be upon him) said: "It is charity for you and a gift for us." 2 And Allah Almighty knows best. [Urdu]: The Messenger of Allah (may Allah Almighty send peace and blessings upon him) said: "It is charity for you and a gift for us." And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 17: Submitted by Muhammad Umar Jawan, known as Qadri, resident of Basni village, Nagaur Pargana, Marwar, Rabi' al-Awwal 1337 AH.

Praise be to Allah, Lord of the Worlds, and the outcome is for the righteous, and blessings and peace be upon our Master Muhammad and his family and all his companions. After that! What do the scholars of religion and muftis of the firm Shariah say about this matter that in the district of Marwar under the government of Nagaur, there is a town known as Basni where approximately nine hundred houses belong to Muslims and by grace, all young and old, youth and elders are observant of fasting and prayer to such an extent that in travel and residency, health and illness, sorrow and comfort, in short, in every state they are prayer-performers and observant of prayer. In the whole town, rarely would there be any such unfortunate person who does not pray. However, due to lack of knowledge, they are completely ignorant of Shariah rulings and necessary matters. Ignorance is so prevalent that considering the customs of ancestors as sufficient and complete, they are completely averse to Shariah matters (not due to prejudice but due to lack of knowledge). Distinguishing between truth and falsehood is not possible, but despite this, if by good fortune a scholar comes, they sit in his sermon to gain blessings, and after

being warned about bad deeds, they also repent and seek forgiveness and do not argue much with anyone who speaks on religious matters.

1 Rad al-Muhtar, Kitab al-Waqf, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 3/357 2 Sahih Muslim, Kitab al-Zakat, Bab Ibaha al-Hadiyya li-Nabi (saw), Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/345 Note: In Sahih Muslim the words are: "Huwa laha sadaqah wa lana hadiyyah." (Nazir Ahmed Saeedi)

फ़तावा रज़विया - जिल्द दहम

अल-जवाब: जब ज़ैद ने बक्र को सदक़ा का माल दिया और बक्र उस पर काबिज़ हो गया, चाहे वह सदक़ा का पात्र था या नहीं, और ज़ैद जानता था कि बक्र सदक़ा का पात्र नहीं है बल्कि उसे अमीर जानकर सदक़ा दिया, तो दोनों सूरतों में बक्र उसका मालिक हो गया।

[अरबी]: विद्वानों ने 'रद अल-मुह्तार' आदि में स्पष्ट किया है कि धनी को सदक़ा देने पर भी सवाब है, हालाँकि यह सवाब उस सवाब से कम है जो निर्धन को सदक़ा देने से मिलता है। 1 उर्दू: 'रद अल-मुह्तार' वगैरह में उलमा से स्पष्ट उल्लेख है कि धनी व्यक्ति को सदक़ा देने पर भी सवाब है, मगर यह सवाब उस सवाब से कम होगा जो फ़क़ीर को सदक़ा देने से प्राप्त होता है। (त)

और जब वह मालिक हो गया और अपनी तरफ से किसी सैय्यद को नज़्र किया, सदक़ा-ज़कात के तौर पर नहीं बल्कि हदिया (उपहार) और हिबा के तौर पर, तो सैय्यद के लिए उसे लेना जायज़ है, चाहे बक्र को ज़कात ही क्यों न दी गई हो।

[अरबी]: उन्होंने (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाया: "तुम्हारे लिए सदक़ा है और हमारे लिए हदिया।" 2 और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 17: प्रेषक: मुहम्मद उमर जवान, उर्फ़ क़ादरी, निवासी मौज़ा बासनी, परगना नागौर, मारवाड़, रबी-उल-अव्वल 1337 हिजरी।

सब तारीफें अल्लाह के लिए हैं जो तमाम जहानों का रब है, और नेक अंजाम परहेज़गारों के लिए है, और दुरूद व सलाम हो हमारे सरदार मुहम्मद और उनकी आल और उनके तमाम असहाब पर। अम्मा बाद! दीन के उलमा और शरीयत-ए-मतीन के मुफ्ती क्या फ़रमाते हैं इस मसले में कि ज़िला मारवाड़ में नागौर हुकूमत के मातहत एक कस्बा है जो बासनी के नाम से मशहूर है जहाँ अंदाज़न नौ सौ घर मुसलमानों के हैं और अल्लाह के फ़ज़्ल से सब छोटे-बड़े, जवान और बूढ़े नमाज़-रोज़े के इस हद तक पाबंद हैं कि सफर और वतन में, सेहत और बीमारी में, दुख और सुख में, गर्ज़ यह कि हर हाल में नमाज़ी और नमाज़ के पाबंद हैं। पूरे कस्बे में शायद ही कोई ऐसा बदबख्त होगा जो नमाज़ न पढ़ता हो, मगर इल्म न होने की वजह से शरीयत के अहकाम और ज़रूरी मसलों से बिल्कुल नावाकिफ़ हैं। जहालत इस कदर आम है कि बाप-दादाओं की रस्मों को काफी और मुकम्मल समझ कर शरीयत के मसलों से (तअस्सुब की वजह से नहीं बल्कि इल्म न होने की वजह से) बिल्कुल दूर

हैं। हक़ और बातिल में तमीज़ नहीं हो सकती लेकिन इसके बावजूद अगर इत्तेफ़ाक़ से कोई आलिम आ जाए तो उनके वअज़ (उपदेश) में बैठकर फैज़ हासिल करते हैं, बुरे कामों पर आगाह होने के बाद तौबा-इस्तग़फ़ार भी करते हैं और किसी मसला बताने वाले की बात पर कोई चू-चरा (तर्क वितर्क) भी नहीं करते।

1 रद अल-मुह्तार, किताब अल-वक़्फ़, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 3/357 2 सहीह मुस्लिम, किताब अल-ज़कात, बाब इबाहा अल-हदिया लि-नबी (स.), क़दीमी कुतुब ख़ाना, कराची, 1/345 नोट: सहीह मुस्लिम में शब्द इस तरह हैं: "हुवा लहा सदक़ा व लना हदिया।" (नज़ीर अहमद सईदी)

الجواب: جب زید نے بکر کو مالِ صدقہ میں دیا اور بکر قابض ہو گیا اور وہ محلِ صدقہ تھا یا نہ تھا اور زید جانتا تھا کہ بکر محلِ صدقہ نہیں غنی جان کر صدقہ دیا تو دونوں صورتوں میں بکر مالک ہو گیا۔

فقد نص العلماء کما فی ردالمحتار وغیرہ ان الصدقۃ علی الغنی لھا اجروان کان دون اجر الصدقۃ علی الفقیر۔ 1 | ردالمحتار وغیرہ میں علماء سے تصریح ہے کہ غنی پر صدقہ کا بھی اجر ہے مگر اس اجر سے یہ اجر کم ہو گا جو فقیر پر صدقہ سے حاصل ہوتا ہے۔ (ت)

اور جب وہ مالک ہو گیا اور اپنی طرف سے سید کو نذر کرے نہ بطور صدقہ زکوۃ بلکہ بطورِ ہدیہ و ہبہ تو سید کو اس کا لینا جائز ہے اگرچہ بکر کو زکوۃ ہی دی گئی ہو،

قال علیہ الصلوۃ والسلام: لک صدقۃ ولنا ھدیۃ۔ 2 واللہ تعالٰی اعلم | رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: تمھارے لئے صدقہ ہے اور ہمارے لیے ہدیہ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۱۷: مسئولہ محمد عمر جوان المعروف بہ قادری سکنہ موضع باسنی پرگنہ ناگوار مارواڑ ربیع الاول ۱۳۳۷ھ الحمد للہ رب العلمین والعاقبۃ للمتقین والصلوۃ والسلام علی سیدنا محمد و آلہ واصحابہ اجمعین، اما بعد! کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ ضلع مارواڑ تحت حکومت ناگوار میں ایک قصبہ ہے معروف بہ باسنی جہاں تخمیناً نو صد گھر مسلمانوں کے ہیں اور بفضلہ سب صغیر و کبیر، برنا و پیر صوم صلوۃ کے اس حد تک پابند ہیں کہ سفر و حضر، صحت سقم، رنج و راحت غرضکہ ہر حالت میں نماز گزار اور پابندِ صلوۃ ہیں۔ قصبہ بھر میں شاذ و نادر کوئی ایسا بدبخت ہو گا جو نماز نہ پڑھتا ہو، اما بوجہ نہ ہونے علم کے احکامِ

شرعیہ و مسائل ضروریہ سے محض نابلد ہیں، جہالت کی اس قدر گرم بازاری ہے کہ آبا و اجداد کی رسوم کو کافی و وافی سمجھ کر مسائلِ شرعیہ سے (نہ بوجہ تعصب کے بلکہ بوجھ نہ ہونے علم کے) یک لخت گریز ہے حق و باطل میں امتیاز ہو نہیں سکتا لیکن باوجود اس بات کے بھی اگر حُسنِ اتفاق سے کوئی عالم آ جائے تو اس کے وعظ میں بیٹھ کر تحصیلِ فیضان کرتے ہیں، افعالِ بد پر متنبہ ہونے کے بعد توبہ استغفار بھی کرتے ہیں اور کسی مسائل گو کی بات پر چنداں چون و چرا بھی

1 ردالمحتار کتاب الوقف داراحیاء التراث العربی بیروت ۳/ ۳۵۷ 2 صحیح مسلم کتاب الزکوۃ باب اباحۃ الہدیۃ للنبی صلی اللہ علیہ وسلم قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۳۴۵ ف: صحیح مسلم میں الفاظ یوں ہیں: ھو لھا صدقۃ و لنا ھدیۃ۔ نذیر احمد سعیدی)

...they do not, but since the town of Zaka-Narahi is devoid of knowledge, there is no one who can reform and correct it. Finally, a few prominent and farsighted gentlemen of the town thought that if an Islamic madrasa is opened in the town, through which such scholars of Islam who are coming to the town, and who besides preaching, would also give lessons in Tajweed, Tafsir, Hadith, Fiqh, Usul, and Ma'ani to the students in the madrasa, then the reform of the town as desired is certainly possible. Finally, through the great efforts of the aforementioned gentlemen, the building of the madrasa was prepared, the series of education was also started, and the reform of the village is also progressing. It is hoped that if the madrasa remains established, complete correction will be achieved. However, since at least ten teachers are required for the education of the students of such a large town, who are approximately five hundred, both young and old, and arrangements have also been made to admit all students to the madrasa and teachers have also been appointed, but the expenses of the madrasa are related to Zakat funds. Now we are concerned about how Zakat can be spent on the expenses of the madrasa such as the salaries of teachers, furnishings, oil and lamps, and other necessities of the madrasa. Should a poor person be appointed as a trustee from whom no accounts etc. are taken, or can there be another legal device (Heela), or are there more conditions for the trustee? In short, can any aspect be found in the Hanafi school of thought through which a legal device for the permissibility of spending in madrasa expenses can be found? If so, there is hope for the survival of the madrasa and the reform of the town; otherwise, without these funds, the people of the town do not have enough capacity to bear the expenses of the madrasa besides Zakat. This is because there are only a few people of means (Sahib-e-Nisab), and the rest are all poor (Miskeen) and struggle to earn their daily bread. However, both the poor and the wealthy are unanimously ready to provide assistance to the madrasa; no one disagrees. Please provide a reasoned answer with definitive proofs and clear arguments according to the Hanafi school of thought, along with page numbers of the books. State the ruling and be rewarded.

The Answer: The fundamental pillar of Zakat is "Tamleek-e-Faqir" (giving ownership to a poor person). Any noble work in which ownership is not transferred to a poor person, no matter how good it is, such as building a mosque, shrouding the dead, or paying the salaries of teachers of religious knowledge, Zakat cannot be fulfilled through it. If one wishes to give Zakat to a religious madrasa, there are three legal devices (Heela) for it: 1. One is that the donor gives the Zakat money to the manager

(Mutawalli) of the madrasa and informs him that this is Zakat money. The manager should keep this money separate and not mix it with other funds, and spend it specifically on Zakat-eligible expenses, such as making clothes for poor students, buying books for them, or giving them a stipend purely as aid and not as wages for any work. 2. The second is that the person giving Zakat gives it to a poor person who is eligible for Zakat with the intention of Zakat, and that poor person, of his own accord, donates all or part of it to the madrasa. 3. The third is that, for example, if one has to give a hundred rupees of Zakat and wants to help the religious madrasa with it, then...

...नहीं करते, लेकिन चूंकि ज़का-नराही कस्बा इल्म (ज्ञान) से खाली है, कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो इसका सुधार और बेहतरी कर सके। अंततः कस्बे के कुछ प्रमुख और दूरदर्शी लोगों ने सोचा कि यदि कस्बे में एक इस्लामी मदरसा खोल दिया जाए, जिसके माध्यम से इस्लाम के ऐसे विद्वान जो कस्बे में आ रहे हैं, और जो प्रवचन के अलावा मदरसे में छात्रों को तजवीद, तफ़सीर, हदीस, फिकह, उसूल और मा'नी का पाठ भी पढ़ाते रहें, तो कस्बे का सुधार इच्छानुसार संभव है। अंततः उपरोक्त सज्जनों के कठिन परिश्रम से मदरसे की इमारत तैयार हो गई, शिक्षा का सिलसिला भी शुरू कर दिया गया और गाँव का सुधार भी प्रगति पर है। आशा है कि यदि मदरसा कायम रहा तो पूर्ण सुधार हो जाएगा। लेकिन चूंकि इतने बड़े कस्बे के छात्रों, जो छोटे और बड़े मिलाकर लगभग पाँच सौ हैं, उनकी शिक्षा के लिए कम से कम दस शिक्षकों की आवश्यकता है, और सभी छात्रों को मदरसे में प्रवेश देने और शिक्षकों की नियुक्ति की व्यवस्था भी कर ली गई है, लेकिन मदरसे के खर्च जकात की रकम से संबंधित हैं। अब हमें चिंता है कि किस कानूनी तरीके(हीला) से जकात का पैसा मदरसे के खर्चों जैसे शिक्षकों के वेतन, फर्श, तेल-दीपक और मदरसे की अन्य आवश्यकताओं पर खर्च किया जा सकता है। क्या किसी गरीब व्यक्ति को अमीन (ट्रस्टी) नियुक्त किया जाए जिससे कोई हिसाब-किताब न लिया जाए, या कोई और तरीका हो सकता है, या अमीन के लिए और शर्तें हैं? संक्षेप में, क्या हनफी संप्रदाय में कोई ऐसा पहलू निकल सकता है जिससे मदरसे के खर्चों में जकात के जायज होने का कोई रास्ता निकल आए? यदि ऐसा हो जाए तो मदरसे के अस्तित्व की उम्मीद और कस्बे के सुधार की सूरत है, अन्यथा इन रकमों के बिना कस्बे के लोगों में इतनी क्षमता नहीं है कि वे जकात के अलावा मदरसे के खर्च उठा सकें। क्योंकि साहिब-ए-नसाब (संपन्न लोग) तो गिने-चुने ही होंगे, बाकी सब गरीब (मिस्कीन) हैं और अपनी रोजी-रोटी कमाने में लगे हैं। लेकिन गरीब और अमीर सभी मदरसा में सहायता देने के लिए एकमत हैं; किसी को कोई आपत्ति नहीं है। कृपया हनफी संप्रदाय के अनुसार ठोस प्रमाणों और स्पष्ट दलीलों के साथ जवाब दें, साथ ही किताबों के पृष्ठ संख्या भी दर्ज करें। स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

जवाब: ज़कात का स्तंभ "तमलीक-ए-फ़कीर" (किसी गरीब को मालिक बनाना) है। जिस काम में गरीब को मालिक न बनाया जाए, वह काम चाहे कितना भी नेक क्यों न हो, जैसे मस्जिद बनवाना या मुर्दे को कफन देना या दीन के शिक्षकों का वेतन, उससे ज़कात अदा नहीं हो सकती। यदि दीनी मदरसे में ज़कात देना चाहें, तो उसके तीन कानूनी तरीके(हीले) हैं: 1. एक यह कि ज़कात देने वाला

मदरसे के मुतवल्ली (प्रबंधक) को ज़कात का माल दे और उसे बता दे कि यह ज़कात का माल है। मुतवल्ली इस माल को अलग रखे और दूसरे माल में न मिलाए, और इसे विशेष रूप से ज़कात के खर्चों में ही लगाए, जैसे गरीब छात्रों के लिए कपड़े बनवाना, किताबें खरीद कर देना या उन्हें वजीफा देना जो केवल सहायता के तौर पर हो, न कि किसी काम की मजदूरी। 2. दूसरा यह कि ज़कात देने वाला ज़कात की नीयत से किसी ज़कात के हकदार गरीब को पैसा दे दे, और वह गरीब अपनी ओर से वह सारा या उसका कुछ हिस्सा मदरसे को दान कर दे। 3. तीसरा यह कि मान लीजिए सौ रुपये ज़कात के देने हैं और वह चाहता है कि इनसे दीनी मदरसे की मदद करे तो...

نہیں کرتے مگر چونکہ قصبہ زاکا نراہی علم سے معرّا ہے، کوئی وجود ایسا نہیں جو اس کی اصلاح ودرستی کرسکے، آخر قصبہ کے چند سربراوردہ و دُور اندیش اصحاب نے سوچا اگر قصبہ میں ایک اسلامی مدرسہ کھول دیا جائے جس کے ذریعہ ایسے وجود و نفوس علمائے اسلام کہ قصبہ میں آرہے ہیں جو علاوہ وعظ گوئی کے مدرسہ میں علم تجوید و تفسیر وحدیث و فقہ واصول و معانی کا طلبہ کو درس بھی دیتے رہیں تو البتہ قصبہ کی اصلاح حسب دلخواہ ممکن ہے، آخر انھوں حضرت مذکور الصدر کی سعی بلیغ سے مدرسہ کی عمارت تیار ہو کر سلسلہ تعلیم بھی شروع کردیا گیا اور گاؤں کی اصلاح بھی رو بہ ترقی ہے اور امید ہے کہ مدرسہ اگر قائم رہ گیا پوری درستی ہو جائیگی مگر چونکہ اتنے بڑے قصبہ کے طلباء صغار و کبار جو تخمیناً پانچ سو ہیں ان کی تعلیم کے لیے کم از کم دس مدرسین درکار ہیں، اور یہ انتظام بھی کرلیا گیا کہ جمیع طلباء داخل مدرسہ کرکے مدرسین بھی مقرر کرلیے مگر مصارف مدرسہ رقوم زکوٰۃ سے متعلق ہیں، اب ہمیں تشویش ہے کہ زکوٰۃ کس حیلہ سے مصارف مدرسہ میں مثل مشاہرات مدرسین فرش و فروش وتیل وچراغ و نیز مثل اس کے ضروریات مدرسہ میں خرچ ہو سکتے ہیں، آیا اس پر کوئی مفلس آدمی امین مقرر ہو کہ جس کے پاس سے حساب وغیرہ نہ لیا جائے یا اور حیلہ ہو سکتا ہے یا امین کے مزید شرائط ہوں غرضیکہ مذہب حنفیہ میں کوئی ایسا پہلو نکل آئے کہ جس سے مصارف مدرسہ میں جائز ہونے کا کوئی حیلہ نکل آئے جب تو مدرسہ کی بقا کی امید قصبہ کی اصلاح کی صورت ہے ورنہ بدون ان رقوم کے اہل قصبہ میں اتنی وسعت نہیں کہ سوا زکوٰۃ کے اخراجات مدرسہ کو اٹھا سکیں کیونکہ صاحب نصاب تو چند ہی ہوں گے باقی سب مسکین، اور اپنا نان و نفقہ قوت ضروری پیدا کرنے کے کھانے والے ہیں لیکن مسکین و متمول سب بالاتفاق مدرسہ میں امداد

دہی کے لیے حاضر ہیں کسی کو اختلاف نہیں، جواب مدلل بدلائل قاطعہ و براہین ساطعہ مطابق مذہب حنفیہ مع صفحات کتب ارقام ہو۔ بینوا توجروا۔

الجواب: زکوٰۃ کا رکن تملیک فقیر ہے جس کام میں فقیر کی تملیک نہ ہو کیسا ہی کارِ حسن ہو جیسے تعمیر مسجد یا تکفین میت یا تنخواہ مدرسانِ علم دین، اس سے زکوٰۃ نہیں ادا ہو سکتی۔ مدرسہ علم دین میں دینا چاہیں تو اس کے تین حیلے ہیں: ایک یہ متولی مدرسہ کو مالِ زکوٰۃ دے اور اسے مطلع کردے کہ یہ مال زکوٰۃ کا ہے۔ اسے خاص مصارفِ زکوٰۃ میں صرف کرنا، متولی اس مال کو جُدا رکھے اور مال میں نہ ملائے اور اس سے غریب طلبہ کے کپڑے بنائے، کتابیں خرید کردے یا ان کے وظیفہ میں دے جو محض بنظر امداد ہو، نہ کسی کام کی اُجرت۔ دوسرے یہ کہ زکوٰۃ دینے والا کسی فقیر مصرف زکوٰۃ کو بہ نیت زکوٰۃ دے اور وہ فقیر اپنی طرف سے کُل یا بعض مدرسہ کی نذر کردے۔ تیسرے یہ کہ مثلاً سو روپے زکوٰۃ کے دینے ہیں اور چاہتا ہے کہ مدرسہ علم دین کی ان سے مدد کرے تو

For example, sell ten seers of wheat to a needy person entitled to Zakat for one hundred rupees and inform him that we will give you the money to pay this price so that you do not bear the burden. If he accepts, then give him one hundred rupees with the intention of Zakat and let him take possession of it. After that, take those rupees from him as the price of your wheat. If he refuses to give it, the giver can take it back from him as it is his rightful due. Now, donate these rupees to the Madrasa. In both of these latter cases, this money can be spent on the salaries of teachers and other school-related expenses. The detailed ruling on this matter can be found in Al-Durr and other reliable books. (The details of this issue are in Al-Durr and other authoritative texts - Translator's note). And Allah Almighty knows best.

उदाहरण के लिए, ज़कात के हक़दार किसी मोहताज (ज़रूरतमंद) व्यक्ति को दस सेर गेहूँ सौ रुपये में बेचें और उसे सूचित कर दें कि हम ही आपको यह कीमत अदा करने के लिए देंगे ताकि आप पर इसका बोझ न पड़े। वह इसे स्वीकार कर लेता है। इसके बाद, ज़कात की नीयत से उसे सौ रुपये देकर उस पर उसका अधिकार करा दें। फिर अपने गेहूँ की कीमत के तौर पर वह रुपये उससे वापस ले लें। यदि वह (स्वेच्छा से) न देना चाहे, तो देने वाला स्वयं उससे ले सकता है क्योंकि यह उसका वास्तविक अधिकार है। अब ये रुपये मदरसे में दे दें। इन पिछली दोनों स्थितियों में, यह रुपया शिक्षकों के वेतन और मदरसे के अन्य कार्यों में खर्च किया जा सकता है। इस मसले का विवरण 'अल-दुर्र' आदि विश्वसनीय पुस्तकों में उपलब्ध है। (इस मसले का विवरण दुर्र और अन्य विश्वसनीय किताबों में है। - टीका) और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

مثلاً دس سیر گیہوں کسی محتاج مصرف زکوۃ کے ہاتھ سو روپے کو بیچے اور اسے مطلع کردے کہ یہ قیمت ادا کرنے کو تمہیں ہم ہی دیں گے تم پر اس کا بار نہ پڑے گا، وہ قبول کرلے اس کے بعد سو روپیہ بہ نیت زکوۃ اس کو دے کر قابض کردے اس کے بعد اپنے گیہوں کی قیمت میں وہ روپے اس سے لے لے، اگر وہ نہ دینا چاہے تو یہ خود اس سے لے سکتا ہے کہ یہ اس کا عین حق ہے، اب یہ روپے مدرسہ میں دے، ان پچھلی دونوں صورتوں میں یہ روپیہ تنخواہ مدرسین وغیرہ ہر کار مدرسہ میں صرف ہو سکتا ہے والمسئلۃ فی الدر وغیرہ من الاسفار الغر (اس مسئلہ کی تفصیل در اور دیگر معتبر کتب میں ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم

Volume X - Fatawa Razawiyya

Treatise Al-Zahr al-Basim fi Hurmat al-Zakat 'ala Bani Hashim 1307 AH (An open blossom regarding the prohibition of Zakat on Banu Hashim)

Problem 128: Sent by Maulvi Hafiz Muhammad Amirullah Sahib, First Teacher at Arabiyya Akbariyya, Jumada al-Ula 1307 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it permissible to give Zakat and obligatory Sadaqah to Banu Hashim due to the falling away (cessation) of the 'fifth of the fifth' (Khums al-Khums), or not? It is mentioned in Kifayah:

[Arabic Text]: His statement: "And it is not given to Banu Hashim." And in Sharh al-Athar by al-Tahawi (may Allah Almighty have mercy on him), from Abu Hanifa (may Allah Almighty be pleased with him): "There is no harm in all charities for the Banu Hashim. The prohibition during the era of the Prophet (peace and blessings be upon him) was due to the compensation, which was the fifth of the fifth. When that ceased with his death (peace and blessings of Allah be upon him), charity became lawful for them." And in al-Nitaf...

[Urdu Translation]: The statement is that Zakat should not be given to Banu Hashim. In Sharh al-Athar of Tahawi (may Allah Almighty have mercy on him), it is narrated from Imam Abu Hanifa (may Allah Almighty be pleased with him) that there is no harm in giving all types of charities to Banu Hashim because these were forbidden during the apparent life of the Holy Prophet (peace be upon him) due to the 'fifth of the fifth'. When the 'fifth of the fifth' was waived due to the passing of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), charities became lawful for them. And in al-Nitaf it is mentioned...

जिल्द दहम - फतावा रजविया

रिसाला अज़-ज़हरुल बासिम फ़ी हुरमतिज़-ज़काति अला बनी हाशिम १३०७ हि. (बनी हाशिम पर ज़कात की हुरमत के बारे में खुला हुआ शिगूफ़ा)

मसला १२८: मुरसिला मौलवी हाफ़िज़ मोहम्मद अमीर उल्लाह साहब, मुदर्रिस अव्वल अरबिया अकबरिया, जुमादल ऊला १३०७ हि. क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि बनी हाशिम को ज़कात और सदका-ए-वाजिबा देना 'खुम्स-अल-खुम्स' (पाँचवें का पाँचवाँ हिस्सा) के सुकूत (समाप्ति) की वजह से जायज़ है या नहीं? किफ़ाया में है:

[अरबी पाठ]: उनका कहना: "और यह बनी हाशिम को नहीं दिया जाता।" और तहावी (अल्लाह उन पर रहम करे) की शरह अल-आसार में इमाम अबू हनीफ़ा (अल्लाह उनसे राज़ी हो) से है: "बनी हाशिम पर सभी सदकात में कोई हर्ज नहीं है। नबी (उन पर सलात और सलाम हो) के युग में हुरमत (निषेध) मुआवज़े के कारण थी जो कि 'खुम्स अल-खुम्स' है। फिर जब वह उनके(सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) विसाल के कारण साक़ित हो गया, तो उनके लिए सदक़ा हलाल हो गया।" और अन-नितफ़ में है...

[उर्दू अनुवाद]: क़ौल यह है कि बनी हाशिम को ज़कात न दी जाए। शरह अल-आसार लित-तहावी (रहमहुल्लाह) में इमाम अबू हनीफ़ा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से है कि बनू हाशिम पर तमाम सदक़ात करने में कोई हर्ज नहीं है क्योंकि ये हुज़ूर (अलैहिस्सलाम) की ज़ाहिरी हयात में 'खुम्स अल-खुम्स' की वजह से हराम थे। जब आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के विसाल की वजह से 'खुम्स अल-खुम्स' साक़ित हो गया तो उनके लिए सदक़ात हलाल हो गए। और अन-नितफ़ में है...

पृष्ठ ८३६ का २७५

جلد دہم - فتاویٰ رضویہ

رسالہ الزھرالباسم فی حرمۃ الزکوٰۃ علی بنی ھاشم ۱۳۰۷ھ (بنی ہاشم پر زکوٰۃ کی حرمت کے بارے میں کھلا ہوا شگوفہ)

مسئلہ ۱۲۸: مرسلہ مولوی حافظ محمد امیر اللہ صاحب مدرس اول عربیہ اکبر یہ جمادی الاولی ۱۳۰۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ بنی ہاشم کو زکوٰۃ و صدقہ واجبہ دینا بجہت سقوط خمس الخمس جائز ہے یا نہیں؟ کفایہ میں ہے:

[عربی عبارت]: قوله ولا يدفع الى بني هاشم وفی شرح الاثار للطحاوی رحمه الله تعالى عن ابي حنيفة رضی الله تعالى عنه لا بأس بالصدقات كلها على بني هاشم والحرمة في عهد النبي عليه الصلوة و السلام للعوض وهو خمس الخمس، فلما سقط ذلك بموته صلى الله عليه وسلم حلت لهم الصدقة وفی النتف

[اردو عبارت]: قولہ بنی ہاشم کو زکوٰۃ نہ دی جائے، شرح الآثار للطحاوی رحمہ اللہ تعالیٰ میں امام ابوحنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے ہے بنو ہاشم پر تمام صدقات کرنے میں کوئی حرج نہیں کیونکہ یہ حضور علیہ السلام کی ظاہری حیات میں خمس الخمس کی وجہ سے حرام تھے، جب آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے وصال کی وجہ سے خمس الخمس ساقط ہو گیا تو ان کے صدقات حلال ٹھہرے اور النتف میں ہے

صفحہ ۲۷۵ از ۸۳۶

Volume 10 Fatawa Rizvia

[Arabic Quote]: "It is permissible to spend [charity] on the Bani Hashim according to his [Imam Abu Hanifa's] opinion, contrary to the two [Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad]. In 'Sharh al-Athar', it says: Obligatory and voluntary charity is prohibited for the Bani Hashim according to their [the two disciples'] opinion. From Imam Abu Hanifa (may Allah have mercy on him), there are two narrations regarding this. Imam Tahawi (may Allah have mercy on him) said: We adopt the position of permissibility. Finis. - Clarify and you shall be rewarded."

[Urdu Explanation]: That according to the Imam [Abu Hanifa], charities can be spent on the Bani Hashim, but the 'Sahibayn' [his two main students] differ in this. It is in 'Sharh al-Athar' that according to the saying of the 'Sahibayn', both obligatory and voluntary charity is impermissible for the Banu Hashim. And from Imam Abu Hanifa (may Allah have mercy on him), there are two narrations in this regard. Imam Tahawi said, "We will act upon the permissibility." Finis. Clarify and you shall be rewarded. (T)

The Answer: O Allah, all praise belongs to You, grant us the right path (O Allah! All praise is for You alone, O Allah! Bestow correctness. - T). Giving Zakat and obligatory charities to the Bani Hashim is not permissible, nor is it lawful for them to take them. Numerous (mutawatir) Hadiths from the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) have come regarding its prohibition. The reason for the prohibition is their honor and dignity, as Zakat is the "filth" of wealth and is like other obligatory charities that wash away sins. Their condition is like "used water" (ma' musta'mal) which has washed away the impurities of sins and the filth of ritual impurities. The grandeur of the pure, refined, and clean Ahl al-Bayt, in their purity and sanctity, is far too elevated and lofty for them to be contaminated by such things. Authentic Hadiths themselves have explicitly stated this reason.

[Arabic Box Left]: "Ahmad and Muslim narrated from al-Muttalib bin Rabi'a bin al-Harith (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: Verily, charity is not appropriate for the family of Muhammad; it is only the filth of the people. Al-Tabarani narrated from Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both) that: O Ahl al-Bayt! Nothing from charities is lawful for you, nor is the washing of hands. This is in brief, from Tahawi."

[Urdu Box Right]: It is in Musnad Ahmad and Muslim that it is narrated from Muttalib bin Rabi'a bin Harith (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: Charity is not permissible for the

Family (Aal) of Muhammad because it is the filth of people's (wealth). It is narrated in Tabarani from Hadhrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both) that: O Ahl al-Bayt! No item from charities is lawful for you, nor the filth of people's hands. This is in brief. In Tahawi from Hadhrat Ali...

Footnotes: 1. Al-Kifayah with Fath al-Qadir, Chapter on those to whom charity may and may not be given, Maktaba Nooria Rizvia Sukkur, 2/211 to 213. 2. Sahih Muslim, Book of Zakat, Chapter on the prohibition of Zakat for the Messenger of Allah etc., Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/324. 3. Al-Mu'jam al-Kabir, narrated from Abdullah ibn Abbas (may Allah be pleased with him), al-Maktabah al-Faysaliyah Beirut, 11/71.

खंड 10 फ़तावा रज़विया

[अरबी पाठ]: "इमाम [अबू हनीफ़ा] के अनुसार बनी हाशिम पर [सदका] खर्च करना जायज़ है, उनके[इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद] के विपरीत। 'शरह अल-आसार' में है: उनके[दो शिष्यों] के मत के अनुसार फ़र्ज़ और नफ़ल सदक़ा बनी हाशिम पर हराम है। इमाम अबू हनीफ़ा (अल्लाह उन पर रहम करे) से इस बारे में दो रिवायतें हैं। इमाम तहावी (अल्लाह उन पर रहम करे) ने कहा: हम जवाज़ (अनुमति) के रुख को अपनाते हैं। समाप्त - स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।"

[उर्दू अनुवाद का हिंदी]: कि इमाम साहब के नज़दीक सदक़ात को बनी हाशिम पर खर्च किया जा सकता है, मगर साहिबैन को इसमें मतभेद है। शरह अल-आसार में है कि साहिबैन के कौल के मुताबिक़ फर्ज़ व नफ़ल सदक़ा बनू हाशिम पर नाजायज़ है और इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह से इस बारे में दो रिवायतें हैं, इमाम तहावी ने फ़रमाया कि हम जवाज़ पर अमल करेंगे। समाप्त। स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ। (त)

उत्तर: ऐ अल्लाह! तेरे ही लिए सब प्रशंसा है, सही मार्गदर्शन दे (ऐ अल्लाह! प्रशंसा तेरे ही लिए है, ऐ अल्लाह! सही राह दिखा। - त)। बनी हाशिम को ज़कात और वाजिबात सदक़ात देना जायज़ नहीं है, न ही उनके लिए इन्हें लेना हलाल है। सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से मुतवातिर हदीसें इसकी मनाही में आई हैं, और मनाही का कारण उनकी इज़्ज़त और गरिमा है कि ज़कात माल का मैल है और अन्य अनिवार्य सदक़ात की तरह गुनाहों को धोने वाला है, तो उनकी स्थिति इस्तेमाल किए हुए पानी (मा-ए-मुस्तअमल) की तरह है जो गुनाहों की नापाकियों और अशुद्धियों को धोकर लाया हो। उन पाक़, लतीफ़ और सुथरे अहले बैत की पाकीज़गी और पवित्रता की शान इससे बहुत ऊँची और बुलंद है कि वे ऐसी चीज़ों से दूषित हों। स्वयं सही हदीसों में इस कारण को स्पष्ट किया गया है।

[अरबी बॉक्स]: "अहमद और मुस्लिम ने मुत्तलिब बिन रबीआ बिन अल-हारिस (अल्लाह उनसे खुश हो) से रिवायत की कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: वास्तव में, मुहम्मद के परिवार के लिए सदक़ा उचित नहीं है; यह केवल लोगों का मैल है। अल-तबरानी ने इब्न अब्बास (अल्लाह उन दोनों से खुश हो) से रिवायत की कि: ऐ अहले बैत! तुम्हारे लिए सदक़ात में से कुछ भी हलाल नहीं है, और न ही हाथों का धोवन (मैल)। यह संक्षेप में है, तहावी से।"

[उर्दू बॉक्स अनुवाद]: मुसनद अहमद और मुस्लिम में है कि मुत्तलिब बिन रबीआ बिन हारिस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से मरवी है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: सदक़ा आले मुहम्मद के लिए जायज़ नहीं क्योंकि ये लोगों के(माल की) मैल है। तबरानी में हज़रत इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से मरवी है कि ऐ अहले बैत! तुम्हारे लिए सदक़ात में से कोई चीज़ हलाल नहीं और न ही लोगों के हाथों की मैल, यह संक्षेप में है, तहावी में हज़रत अली...

पाद-टिप्पणियाँ: 1. अल-किफ़ाया मय फ़तह अल-क़दीर, बाब उन लोगों का जिन्हें सदक़ा दिया जा सकता है और जिन्हें नहीं, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/211 से 213। 2. सही मुस्लिम, किताबुल ज़कात, बाब रसूलुल्लाह पर ज़कात की मनाही आदि, क़दीमी कुतुब खाना करा۔چی, 1/324। 3. अल-मुअजम अल-कबीर, अब्दुल्ला इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया बेरूत, 11/71।

पृष्ठ 836 में से 276

يجوز الصرف الى بنى هاشم فى قوله خلافا لهما، وفي شرح الآثار، الصدقة المفروضة والتطوع محرمة على بنى هاشم فى قولهما وعن ابى حنيفة رحمه الله تعالى روايتان فيها قال الطحاوى رحمه الله تعالى وبالجواز نأخذ انتهى - بينوا توجروا کہ امام صاحب کے نزدیک صدقات کو بنی ہاشم پر خرچ کیا جاسکتا ہے مگر صاحبین کو اس میں اختلاف ہے۔ شرح الآثار میں ہے کہ صاحبین کے قول کے مطابق فرض و نفل صدقہ بنو ہاشم پر ناجائز ہے اور امام ابو حنیفہ رحمہ اللہ تعالیٰ سے اس بارے میں دو روایتیں ہیں، امام طحاوی نے فرمایا کہ ہم جواز پر عمل کریں گے انتھی ۔ بینوا توجروا (ت)

الجواب: اللھم لك الحمد ألھم الصواب (اے اللہ ! حمد تیرے ہی لیے ہے ، اے اللہ ! درستگی عطا فرما۔ ت) بنی ہاشم کو زکوۃ و صدقات واجبات دینا جائز نہیں، نہ انھیں لینا حلال۔ سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے متواتر حدیثیں اس کی تحریم میں آئیں، اور علت تحریم ان کی عزت و کرامت ہے کہ زکوۃ مال کا میل ہے اور مثل سائر صدقات واجبہ غاسلہ ذنوب، تو ان کا حال مثل ماء مستعمل کے ہے جو گناہوں کی نجاسات اور حدث کے قاذورات دھو کر لایا ان پاک لطیف سُتھرے لطیف اہلبیت طیب و طہارت کی شان اس سے بس ارفع و اعلیٰ ہے کہ ایسی چیزوں سے آلودگی کریں، خود احادیث صحیحہ میں اس علت کی تصریح فرمائی،

احمد ومسلم عن المطلب بن ربيعة عن الحارث رضي الله تعالى عنه قال قال رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم ان الصدقة لا تنبغى لآل محمد انما هى اوساخ الناس، الطبرانى عن ابن عباس رضى الله تعالى عنهما انه لا يحل لكم اهل البيت من الصدقات شئى ولا غسالة الايدى، هذا مختصرا، لطحاوى مسند احمد اور مسلم میں ہے کہ مطلب بن ربیعہ بن حارث رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مروی ہے کہ رسول اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: صدقہ آل محمد کیلئے جائز نہیں کیونکہ یہ لوگوں کے مال

کی میل ہے۔ طبرانی میں حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے مروی ہے کہ اے اہل بیت ! تمہارے لیے صدقات میں سے کوئی شے حلال نہیں اور نہ ہی لوگوں کے ہاتھوں کی میل، یہ مختصراً ہے، طحاوی میں حضرت علی

1 الکفایۃ مع فتح القدیر ، باب من یجوز دفع الصدقۃ الیہ ومن لا یجوز ، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲۱۱/۲ تا ۲۱۳ 2 صحیح مسلم کتاب الزکوۃ باب تحریم الزکوۃ علی رسول اللہ الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۳۲۴ 3 المعجم الکبیر مروی از عبداللہ ابن عباس رضی اللہ عنہ المکتبۃ الفیصلیہ بیروت ۱۱/۷۱

Fatawa Ridawiyya, Volume Two

It is narrated from Ali (may Allah Almighty honor his face) that he said: I told Abbas, ask the Prophet (peace and blessings of Allah Almighty be upon him) to appoint you to collect charities. So he asked him, and he (the Prophet) said: I will not appoint you over the washings of people's sins. (T)

Similarly, there are many explanations for this reasoning in the words of scholars. Regarding 'Khums al-Khums' (the fifth of the fifth), I say: And with Allah is success. Its explanation stems from the prohibition of charities, and the prohibition of charities is not based on its explanation.

Because when Allah Almighty forbade charities for the Bani Hashim, He provided 'Khums al-Khums' as sustenance for them. It is not that when 'Khums al-Khums' was given to them, charities became forbidden. If this share had not been for them, the washings of sins would not have been forbidden to them. Is there any evidence for that? Rather, the evidence speaks to the contrary. After I wrote this part, by the grace of Allah, I found a clear text from the Mujtahid Tabi'i, Imam Mujahid (may Allah Almighty have mercy on him), that the establishment of 'Khums al-Khums' is based on the prohibition of charity. Muhaddith Ibn Abi Shaybah and Tabarani narrated from Khasif from Mujahid that he said: Charity was not permissible for the family of Muhammad (peace and blessings of Allah Almighty be upon him), therefore 'Khums al-Khums' was appointed for them. (T)

And the return of the compensation due to the fall of the counter-value occurs where the loss of the counter-value depends on obtaining the compensation,

As in a sale, when the buyer pays the price and the sold item is destroyed in the possession of the seller, the buyer takes back the price.

1. Sharh Ma'ani al-Athar, Kitab al-Zakat, Bab al-Sadaqah 'ala Bani Hashim, H.M. Saeed Company, Karachi, 1/352.
2. Musannaf Ibn Abi Shaybah, Kitab al-Zakat, Man Qala La Tahillu al-Sadaqah 'ala Bani Hashim, Idarat al-Qur'an wa al-'Ulum al-Islamiyyah, Karachi, 3/215. F: It is narrated in Ibn Abi Shaybah through Husayn from Mujahid, and in another version 'Khasif'. See the footnote of Musannaf Ibn Abi Shaybah, page mentioned above. Nazir Ahmad Saeedi.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दो

अली करम अल्लाह तआला अन्हु से मरवी है कि मैंने हज़रत अब्बास से कहा कि हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से गुज़ारिश करो ताकि तुम्हें आप सदक़ात के लिए आमिल (वसूल करने वाला) मुक़र्रर फ़रमा दें, तो हज़रत अब्बास ने अर्ज़ किया तो आप ने फ़रमाया: मैं तुझे लोगों के गुनाहों के मैल पर आमिल नहीं बना सकता। (त)

इसी तरह उलमा के कलाम में इस दलील की बकसरत तसरीहें हैं, रहा ख़ुम्सुल ख़ुम्स (पाँचवे का पाँचवाँ) अक़ौल (मैं कहता हूँ): और अल्लाह ही तौफ़ीक़ देने वाला है, इसका बयान सदक़ात की हुरमत (मनाही) से निकला है, न कि सदक़ात की हुरमत इसके बयान पर मबनी (आधारित) है।

क्योंकि अल्लाह तआला ने जब बनू हाशिम पर सदक़ात हराम फ़रमाए तो उनके लिए ख़ुम्सुल ख़ुम्स को रिज़्क़ का ज़रिया बनाया, न कि ये कि जब ख़ुम्सुल ख़ुम्स उन्हें अता फ़रमाया तो उन पर सदक़ात हराम फ़रमाए। यहाँ तक कि अगर उनके लिए ये हिस्सा न होता तो उन पर गुनाहों का मैल (सदक़ा) हराम न होता और इस पर कोई दलील है? बल्कि इसके ख़िलाफ़ दलील नातिक़ (स्पष्ट) है। फ़क़ीर ने जब ये इस मक़ाम पर लिखा तो फिर बहमदुलिल्लाह मुजतहिद ताबई इमाम मुजाहिद रहमतुल्लाहि तआला से मैंने ये तसरीह पाई कि ख़ुम्सुल ख़ुम्स का इसबात (साबित होना) तहरीमे सदक़ा की बिना पर है। मुहद्दिस इब्न अबी शैबा और तबरानी ने ख़सीफ़ से और उन्होंने मुजाहिद से रिवायत किया कि हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की आल (वंश) के लिए सदक़ा हलाल न था लिहाज़ा उनके लिए ख़ुम्सुल ख़ुम्स रखा गया। (त)

और सुक़ूते एवज़ से रुजूए मुअ़व्वज़ वहीं है जहाँ ज़वाले मुअ़व्वज़ हुसूले एवज़ पर मौक़ूफ़ हो,

जैसा कि बेअ़ (बिक्री) में है जब मुश्तरी (ख़रीदार) रक़म सुपुर्द कर दे और मबीअ़ (बिकी हुई चीज़), बाएअ़ (बेचने वाले) के क़ब्ज़े में हलाक हो गया तो मुश्तरी षमन (क़ीमत) वापस (लेगा)।

1. शरह मा'नी अल-आसार, किताब अल-ज़कात, बाब अल-सदक़ा अला बनी हाशिम, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 1/352।
2. मुसन्निफ़ इब्न अबी शैबा, किताब अल-ज़कात, मन काला ला ताहिल्लु अल-सदक़ा अला बनी हाशिम, इदारातुल कुरआन वल उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 3/215। फ़: इब्न अबी शैबा में

तरीक़े हुसैन अन मुजाहिद से मरवी है और एक अन्य प्रति (नख) में 'ख़सीफ़' है। देखें हाशिया मुसन्निफ़ इब्न अबी शैबा, उपरोक्त पृष्ठ। नज़ीर अहमद सईदी।

पृष्ठ 836 का 277

جلد دوم فتاویٰ رضویہ

اعن علی کرم اللہ تعالیٰ عنہ قال قلت للعباس سل النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم یستعملک علی الصدقات فسألہ فقال ما کنت لاستعملک علی غسالۃ ذنوب الناس۔ 1 کرم اللہ تعالیٰ عنہ سے مروی ہے کہ میں نے حضرت عباس سے کہا کہ حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے گزارش کرو تاکہ تمہیں آپ صدقات کے لئے عامل مقرر فرمادیں تو حضرت عباس نے عرض کیا تو آپ نے فرمایا: میں تجھے لوگوں کے گناہوں کی میل پر عامل نہیں بناسکتا۔ (ت)

اسی طرح کلمات علماء میں اس تعلیل کی بکثرت تصریحیں ہیں، رہا خمس الخمس اقول : وباللہ التوفیق اس کی تقریر، تحریم صدقات سے ناشی تھی نہ کہ تحریم صدقات اس کی تقریر پر مبتنی ہو،

فان اللہ تعالیٰ لما حرم علیہم الصدقات رزقہم خمس الخمس لان اللہ تعالیٰ لما رزقہم ذلک حرم علیہم الصدقات حتی لولم یسہم لہم ذلک لم یحرم علیہم غسالۃ السیأت وھل من دلیل علی ذلک بل الدلیل ناطق بخلافہ وبعد تحریری ھذا المحل وجدت بحمد اللہ نصاً عن الامام المجتہد التابعی مجاھد رحمہ اللہ تعالیٰ ان تقریر خمس الخمس مبتن علی تحریم الصدقۃ فقد روی ابن ابی شیبۃ والطبرانی عن خصیف عن مجاھد قال کان ال محمد صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم لاتحل لہم الصدقۃ فجعل لہم خمس الخمس اھ 2 کیونکہ اللہ تعالیٰ نے بنو ہاشم پر صدقات حرام فرمائے تو ان کے لیے خمس الخمس کو رزق کا ذریعہ بنایا، نہ یہ کہ جب خمس الخمس انہیں عطا فرمایا تو ان پر صدقات حرام فرمائے حتی کہ اگر ان کے لیے یہ حصہ نہ ہوتا تو ان پر گناہوں کی میل حرام نہ ہوتی اور اس پر کوئی دلیل ہے؟ بلکہ اس کے خلاف دلیل ناطق ہے۔ فقیر نے جب یہ اس مقام پر لکھا تو پھر بحمد اللہ مجتہد تابعی امام مجاہد رحمہ اللہ تعالیٰ سے میں نے یہ تصریح پائی کہ خمس الخمس کا اثبات تحریم صدقہ کی بنا پر ہے، محدث ابن ابی شیبہ اور طبرانی نے خصیف سے اور انہوں نے مجاہد سے روایت کیا کہ

حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی آل کے لیے صدقہ حلال نہ تھا لہذا ان کے لیے خمس الخمس رکھا گیا اھ (ت)

اور سقوطِ عوض سے رجوع معوض وہیں ہے جہاں زوالِ معوض حصولِ عوض پر موقوف ہو،

کما فی البیع اذا سلم المشتری الثمن وھلک المبیع فی ید البائع رجع بالثمن جیسا کہ بیع میں ہے جب مشتری رقم سپرد کردے اور مبیع، بائع کے قبضہ میں ہلاک ہو گیا تو مشتری ثمن واپس

1 شرح معانی الآثار کتاب الزکوۃ باب الصدقۃ علی بنی ہاشم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۳۵۲ 2 مصنف ابن ابی شیبہ کتاب الزکوۃ، من قال لا تحل الصدقۃ علی بنی ہاشم، ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۳/۲۱۵ فـ: ابن ابی شیبہ میں بطریق حصین عن مجاہد مروی ہے وفی ن خصیف انظر حاشیہ مصنف ابن ابی شیبہ صفحہ مذکورہ بالا۔ نذیر احمد سعیدی)

Arabic: Because the cessation of the right to the price was dependent on obtaining the sold item, when the seller did not deliver the item, the right to the price returned.

Urdu: He can take it because the cessation of the right to the price was dependent on obtaining the sold item; so when the seller did not deliver the item, the right to the price will return. (t)

In contrast, if the cessation of the object of exchange is caused by another reason, then as long as that reason remains, the cessation of the object of exchange will surely persist, whether the substitute is obtained or the substitute itself is dropped.

Arabic: Otherwise, the effect would deviate from its cause. This is like a sick person for whom the obligation of ablution (wudu) was dropped due to the reason of harm, and it was substituted by the obligation of dry ablution (tayammum). If tayammum is also dropped due to, for instance, not finding clean earth, the obligation of wudu will absolutely not return because the harm that necessitated its dropping remains. Thus, both are dropped together; and it is like this here.

Urdu: Otherwise, the separation of the effect from the cause would be necessary. This is just like a patient for whom the obligation of wudu (ablution) was dropped because of harm, and in its place was tayammum. Now, if due to the lack of clean soil, tayammum is also dropped, the obligation of wudu will certainly not return because the harm for which it was dropped still exists. So now, both (wudu and tayammum) will be collectively dropped. It is the same here. (t)

Then I say: (Then I say - t) This answer is only applicable when we accept that 'one-fifth of the one-fifth' (khums al-khums) is a substitute for charity (sadaqat) in the sense that if the prohibition of charity did not exist, the allocation of khums al-khums would not have occurred. This is certainly a point of debate, and no evidence stands for it. We can say that the prohibition of charity and the allocation of the share are two independent honors that Allah Almighty bestowed upon the noble Ahl al-Bayt. Firstly, the word 'substitution' (ta'weed) is not, in the humble opinion of this pauper, found in any established Hadith. And what is in the books of jurisprudence that 'your substitute for them is one-fifth of the one-fifth' is 'not well-known' (ghair ma'ruf), as those who extract Hadith (ashab al-takhrij) have clarified. (What is in the books of jurisprudence, that khums al-khums is in exchange for charity, is not well-known as clarified by the experts of Hadith extraction. - t). Even if it were so, it is a common

idiom in use that when one thing goes and another is received, it is called its substitute, even if the attainment of one did not depend on the cessation of the other, nor did the cessation of one necessitate the attainment of the other.

Arabic: Just as for someone whose son died and then another son, better than him, was born, it is said to him "an excellent substitute". And just as someone who divorces a woman prays to his Lord: "Exchange her for me with one better than her..."

Urdu: Just as if someone's son dies and then another, better son is born, he is called an "excellent substitute" (Ni'm al-badal)... and just as someone who divorces a woman prays to his Lord that...

अरबी: क्योंकि मूल्य पर अधिकार की समाप्ति बेची गई वस्तु की प्राप्ति पर निर्भर थी, जब विक्रेता ने वस्तु नहीं सौंपी, तो मूल्य पर अधिकार वापस आ गया।

उर्दू: वह ले सकता है क्योंकि क़ीमत से हक़ का ज़वाल (समाप्ति), मबीअ (बेची गई चीज़) हासिल करने पर मौक़ूफ़ (निर्भर) था; तो जब बाएअ (विक्रेता) ने मबीअ सुपुर्द नहीं की तो हक़-ए-क़ीमत लौट आएगा। (त)

इसके विपरीत, यदि मुअव्वज़ (जिसके बदले कुछ दिया जाए) का ज़वाल किसी अन्य कारण (इल्लत) से हो, तो जब तक वह इल्लत बाक़ी रहेगी, मुअव्वज़ का ज़वाल निश्चित रूप से रहेगा, चाहे एवज़ (बदला) प्राप्त हो या एवज़ ही साक़ित (समाप्त) हो जाए।

अरबी: अन्यथा, प्रभाव अपने कारण से विचलित हो जाएगा। यह उस बीमार व्यक्ति की तरह है जिसके लिए नुक़सान के कारण वुज़ू की फ़र्ज़ियत साक़ित हो गई थी और उसके बदले तयम्मुम की फ़र्ज़ियत रखी गई थी। यदि पाक मिट्टी न मिलने के कारण तयम्मुम भी साक़ित हो जाए, तो वुज़ू की फ़र्ज़ियत हरगिज़ वापस नहीं आएगी क्योंकि वह नुक़सान बाक़ी है जिसके कारण वह साक़ित हुई थी। अतः अब दोनों एक साथ साक़ित हो जाएँगे; और यहाँ भी ऐसा ही है।

उर्दू: वरना मलूल (प्रभाव) का इल्लत (कारण) से तख़ल्लुफ़ (अलगाव) लाज़िम आएगा और यह इसी तरह है जैसे कोई मरीज़ जिससे किसी ज़रर (नुक़सान) की बिना पर फ़र्ज़ियत-ए-वुज़ू साक़ित थी और उसके एवज़ तयम्मुम था। अब अगर पाक मिट्टी न होने की वजह से तयम्मुम भी साक़ित हो जाता है तो फ़र्ज़ियत-ए-वुज़ू क़तअन लौट कर नहीं आएगी उस ज़रर के बाक़ी होने की वजह से जिससे वह साक़ित होती थी। तो अब दोनों (वुज़ू और तयम्मुम) का इज्तमाई तौर पर सुक़ूत हो जाएगा, इसी तरह यहाँ है (त)

फिर मैं कहता हूँ: (फिर मैं कहता हूँ - त) यह जवाब तभी है जब हम इस अर्थ में 'ख़ुम्सुल ख़ुम्स' का सदक़ात का एवज़ होना स्वीकार करें कि यदि सदक़ात की मनाही न होती तो ख़ुम्सुल ख़ुम्स का निर्धारण न होता। यह निश्चित रूप से चर्चा का विषय है और इस पर कोई दलील नहीं है। हम कह सकते हैं कि सदक़ात की मनाही और हिस्से का निर्धारण दोनों स्वतंत्र सम्मान (करामतें) हैं जो अल्लाह तआला ने अहल-ए-बैत को प्रदान किए हैं। पहली बात तो यह कि 'एवज़' (मुआवज़ा) शब्द इस फ़क़ीर के विचार में किसी प्रमाणित हदीस में नहीं है। और जो फ़िक़्ह की किताबों में है कि "तुम्हारा उनके बदले ख़ुम्सुल ख़ुम्स है" वह 'ग़ैर-मारूफ़' (अपरिचित) है जैसा कि हदीस निकालने

वाले विशेषज्ञों (अस्हाब-ए-तख़रीज) ने स्पष्ट किया है। (यह जो फ़िक़्ह की किताबों में है कि सदक़ा के एवज़ ख़ुम्सुल ख़ुम्स है तो यह ग़ैर-मारूफ़ है जैसा कि अस्हाब-ए-तख़रीज ने तसरीह की है। - त)। और यदि ऐसा हो भी, तो यह एक खुला हुआ मुहावरा है कि जब एक चीज़ चली जाए और दूसरी मिले तो उसे उसका एवज़ कहते हैं, भले ही उनमें से एक का मिलना दूसरे के ज़वाल पर निर्भर न हो और न ही एक का ज़वाल दूसरे के मिलने के लिए अनिवार्य हो।

अरबी: जैसा कि जिसके लिए उसका बेटा मर गया हो और फिर उससे बेहतर दूसरा बेटा पैदा हुआ हो, तो उसे कहा जाता है "बेहतरीन बदला"। और जैसा कि जो कोई औरत को तलाक़ देता है, वह अपने रब से दुआ करता है कि "मुझे उसके बदले उससे बेहतर प्रदान कर..."

उर्दू: जैसा कि किसी शख़्स का एक बेटा फ़ौत (मृत्यु) हो गया हो फिर उससे अच्छा दूसरा बेटा पैदा हो तो उसे 'नेमुल बदल' (बेहतरीन बदला) कहा जाता है__ और जिस तरह कोई शख़्स औरत को तलाक़ देता है और अपने रब से दुआ करता है कि...

لان زوال الحق عن الثمن کان موقوفا علی حصول المبیع فاذالم یسلم المبیع عاد الحق فی الثمن۔ لے سکتا ہے کیونکہ ثمن سے حق کا زوال، حصول مبیع پر موقوف تھا تو جب بائع نے مبیع سپرد نہ کیا تو حق ثمن لوٹ آئے گا۔ (ت)

بخلاف اس کے کہ زوال معوض کسی اور علت سے معلل ہو تو جب تک وہ علت باقی رہے گی زوال معوض بیشک رہے گا اگر چہ حصول عوض ہو یا عوض ہی ساقط ہو جائے۔

والالزم تخلف المعلول عن علته وذلك کا لمریض سقطت عنه فرضیة الوضوء لعلة الضر روعوض عنها بفرض التیمم، فان سقط التیمم ایضاً لعدم وجدان الصعید الطیب مثلا لا تعود فرضیة الوضوء قطعاً لبقاء الضرر المقتضی لسقو طها فاذن یسقطان جمیعا کذا هذا۔ ورنہ معلول کا علت سے تخلف لازم آئے گا اور یہ اسی طرح ہے جیسے کوئی مریض جس سے کسی ضرر کی بناء پر فرضیت وضو ساقط تھی اور اس کے عوض تیمم تھا اب اگر پاک مٹی نہ ہونے کی وجہ سے تیمم بھی ساقط ہو جاتا ہے تو فرضیت وضو قطعاً لوٹ کر نہیں آئے گی اس ضرر کے باقی ہونے کی وجہ سے جس سے وہ ساقط ہوتی تھی تو اب دونوں (وضو اور تیمم) کا اجتماعی طور پر سقوط ہو جائیگا، اسی طرح یہاں ہے (ت)

ثم اقول: (پھر میں کہتا ہوں ۔ ت) یہ جواب ہی اس وقت ہے جبکہ ہمیں خمس الخمس کا بایں معنی عوض صدقات ہونا مسلم ہو کہ اگر تحریم صدقات نہ ہوتی تقریر خمس الخمس عمل میں نہ آتی اور یہ بے شک محل کلام ہے نہ اس پر کوئی دلیل قائم ، ہم کہہ سکتے ہیں کہ تحریم صدقات و تقریر سہم دونوں مستقل کرامتیں ہیں کہ حق عزوجل نے اہلبیت کرام کو عطا فرمائیں، اور لفظ، تعویض

اوّل تو کسی حدیث ثابت سے اس وقت فقیر کے خیال میں نہیں وما فی کتب الفقه عوضکم منها بخمس الخمس فغیر معروف کما صرح المخرجون (یہ جو کتب فقہ میں ہے کہ صدقہ کے عوض خمس الخمس ہے تو یہ غیر معروف ہے جیسا کہ اصحاب تخریج نے تصریح کی ہے۔ ت) اور ہو بھی تو کھلا ہوا محاورہ دائرہ سائرہ ہے کہ ایک شئی جا کر جو دوسری ملتی ہے اسے اس کا عوض کہتے ہیں اگر چہ ان میں ایک کا حصول دوسرے کے زوال پر موقوف نہ نہ ایک کا زوال دوسرے کے حصول کو مستلزم،

کما ان من مات له ولد ثم ولد آخر احسن منه یقال له نعم البدل وکما ان من طلق امرأة یدعو ربه ان ابد لنی خیرا منها مع

جیسا کہ کسی شخص کا ایک بیٹا فوت ہو گیا ہو پھر اس سے اچھا دوسرا بیٹا پیدا ہو تو اسے نعم البدل کہا جاتا ہے ــــ اور جس طرح کوئی شخص عورت کو طلاق دیتا ہے اور اپنے رب سے دعا کرتا ہے کہ

Fatawa Rizwia Volume 10

(Arabic) Indeed, the parents and the two wives could possibly gather together.	**Grant me a better wife in her place, even though both sons and both wives can coexist,**
(Arabic) And the consideration and the thing considered cannot coexist.	whereas the consideration and the thing considered both cannot coexist. (T)

So it is by no means acceptable to us that conventional compensation is intended here rather than technical compensation, on the basis of which the return of one would depend on the lapse of another. Certainly, in *Zahir al-Riwayah*, our three Imams unanimously declare charity to be prohibited for Banu Hashim. All primary texts (mutoon) follow this absolutely. Great researchers among the scholars of commentaries and fatwas, and authorities on authentication and legal opinions, such as Imam Burhanuddin Farghani (author of *Al-Hidayah*), Imam Faqih al-Nafs Qadikhan, Imam Tahir (author of *Khulasa*), Imam Nasafi (author of *Al-Kafi*), and others (may Allah Almighty have mercy on them), are firm on this without any hint of disagreement. Far from considering any contrary weak narration, they haven't even given it the slightest regard. Those few who did mention it also stated that it is contrary to the established school (madhhab) and separate from *Zahir al-Riwayah*, as reported only by Nuh al-Jami. The absolute researcher states:

(Arabic) It is not given to Banu Hashim; this is the *Zahir al-Riwayah*. Abu Ismah narrated from Abu Hanifah that it is permissible in this era.	**Zakat should not be given to Banu Hashim; this is in *Zahir al-Riwayah*. And Abu Ismah narrated from Imam Abu Hanifah (may Allah Almighty have mercy on him) that it is permissible in this era. (T)**

1. In *Majma' al-Anhur*: | (Arabic) It is not given to a Hashimi, and that is *Zahir al-Riwayah*. Abu Ismah narrated from the Imam that it is permissible in his time. (End of summary). | The non-permissibility of giving Zakat to Banu Hashim is in *Zahir al-Riwayah*, and there is also a narration of permissibility in this era from Imam Abu Hanifah (may Allah have mercy on him). (End of summary) (T). | |----------
2. Sheikh Muhaqqiq Dehlavi says in *Ash'at al-Lam'at*: | The non-permissibility of paying Zakat to Banu Hashim is the apparent narration (Zahir Riwayah), and... | The non-permissibility of giving Zakat to Banu Hashim is in *Zahir al-Riwayah*,

and... |
|---|

Note: The gist is that, firstly, it is debatable whether technical compensation is intended, and the burden of proof lies with those who argue for it. Secondly, there must be mutual exclusivity between the two considerations (compensations), and it is not necessary for a real disjunctive to also imply non-omission. The entire argument depends on this. And Allah knows best. 12 Amna, may he be forgiven (M).

1. *Fath al-Qadir*, Chapter on who can and cannot receive charity, Maktaba Nooria Razvia, Sukkur, 2/211.
2. *Majma' al-Anhur*, Chapter on the rulings of the recipients (of Zakat), Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/242.

फतावा रज़विया जिल्द दहम (खंड 10)

(अरबी) वास्तव में, माता-पिता और दो पत्नियाँ एक साथ हो सकते हैं।	**मुझे उसके बदले में एक बेहतर पत्नी प्रदान करें, हालांकि दोनों बेटों और दोनों पत्नियों का एक साथ होना संभव है,**
(अरबी) और 'अवज़' और 'मुअव्वज़' दोनों एक साथ नहीं हो सकते।	जबकि 'अवज़' और 'मुअव्वज़' दोनों एक साथ नहीं हो सकते। (त)

तो हमें यह बिल्कुल स्वीकार्य नहीं है कि यहाँ 'मुआविज़त-ए-उर्फिया' (प्रचलित मुआवज़ा) के बजाय 'मुआविज़त-ए-मुस्तलहा' (तकनीकी मुआवज़ा) अभिप्रेत हो, जिसके आधार पर एक के गिरने से दूसरे की वापसी की चाहत हो। निश्चित रूप से, 'ज़ाहिर-अर-रिवाया' में हमारे तीनों इमामों ने सर्वसम्मति से बनी हाशिम पर सदक़ात (दान) को हराम करार दिया है। सभी मूल ग्रंथ (मुतून) पूर्णतः इसी पर आधारित हैं। महान शोधकर्ता, जो व्याख्याओं और फतवों के विद्वान हैं और प्रमाणीकरण एवं फतवा देने वाले अधिकारी हैं, जैसे इमाम बुर्हानुद्दीन फर्ग़ानी (हिदाया के लेखक), इमाम फ़क़ीह-उन-नफ़्स क़ाज़ीख़ान, इमाम ताहीर (ख़ुलासा के लेखक), इमाम नसफ़ी (काफ़ी के लेखक) और अन्य (अल्लाह तआला उन पर रहम फरमाए), बिना किसी विरोध के संकेत के इस पर दृढ़ हैं। किसी विपरीत कमज़ोर रिवायत पर विचार करना तो दूर, उन्होंने उसे ज़रा भी ध्यान देने योग्य नहीं समझा। जिन कुछ लोगों ने इसका उल्लेख किया है, उन्होंने साथ ही यह भी कह दिया कि यह मज़हब के खिलाफ और 'ज़ाहिर-अर-रिवाया' से अलग है, जिसे केवल नूह जामी ने बयान किया है। पूर्ण शोधकर्ता (मुहक़्क़िक़ अली अल-इतलाक़) फरमाते हैं:

(अरबी) बनी हाशिम को नहीं दिया जाएगा; यह 'ज़ाहिर-अर-रिवाया' है। और अबू इस्मा ने इमाम अबू हनीफा से रिवायत की है कि इस ज़माने में यह जायज़ है।	**बनी हाशिम को ज़कात न दी जाए; यह 'ज़ाहिर-अर-रिवाया' में है। और अबू इस्मा ने इमाम अबू हनीफा (रहमतुल्लाह अलैह) से रिवायत की है कि इस दौर में जायज़ है। (त)**

1. 'मजमा-उल-अनहुर' में है: | (अरबी) किसी हाशिमी को नहीं दिया जाएगा, और यही 'ज़ाहिर-अर-रिवाया' है। अबू इस्मा ने इमाम से रिवायत की है कि उनके समय में यह जायज़ है। (संक्षिप्त)। | बनी हाशिम को ज़कात न देने की बात 'ज़ाहिर-अर-रिवाया' में है, और इमाम अबू

हनीफा (रह.) से इस दौर में इसके जायज़ होने की रिवायत भी है। (संक्षिप्त) (त)। |

|----------

2. शेख मुहक़्क़िक़ देहलवी 'अशअत-उल-लमआत' में फरमाते हैं: | बनी हाशिम को ज़कात देने की मनाही 'ज़ाहिर-ए-रिवायत' है और... | बनी हाशिम को ज़कात न देने की बात 'ज़ाहिर-अर-रिवाया' में है, और... |

|----------|----------

नोट: निष्कर्ष यह है कि, पहली बात तो यह कि यहाँ तकनीकी मुआवज़ा मुराद होना बहस का विषय है और इसे साबित करना दलील देने वालों की ज़िम्मेदारी है। दूसरी बात यह कि दोनों मुआवज़ों के बीच 'मानिअत-उल-जमा' (एक साथ न होना) होना ज़रूरी है, न कि 'मुन्फ़सिला-ए-हक़ीक़िया' के लिए 'मना-ए-खुलू' (खाली होने की मनाही) भी लाज़िम हो। पूरी दलील इसी पर आधारित है। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। 12 आमना, उसे क्षमा किया जाए (म)।

1. फ़तहुल क़दीर, अध्याय: किसे सदक़ा देना जायज़ है और किसे नहीं, मकतबा नूरिया रज़विया सख्खर, 2/211.
2. मजमा-उल-अनहुर, ज़कात के हकदारों के अहकाम का बयान, दार इहया-उत-तुरास अल-अरबी बैरुत, 1/242.

ان الوالدین و المرأتین کان یمکن ان یجتمعا

مجھے اس کے بدلے بہتر بیوی عطا فرما، باوجودیکہ دونوں بیٹوں

والعوض والمعوض لا یجتمعان۔

اور دونوں بیویوں کا اجتماع ممکن ہے حالانکہ عوض اور معوض دونوں جمع نہیں ہو سکتے۔ (ت)

تو ہمیں ہر گز مسلم نہیں کہ یہاں معاوضت عرفیہ کے سوا معاوضت مصطلحہ مراد ہو جس کی بنا پر ایک سقوط سے دوسرے کا عود عہ چاہیں۔ لاجرم ظاہر الروایۃ میں ہمارے ائمہ ثلاثہ بالاجماع بنی ہاشم پر تحریم صدقات فرماتے ہیں کافہ متون علی الاطلاق اسی پر ماشی اور اجلہ محققین اہل شروح و فتاوی و ارباب تصحیح و فتوی مثل امام برہان الدین فرغانی صاحب ہدایہ و امام فقیہ النفس قاضیخاں و امام طاہر صاحب خلاصہ و امام نسفی صاحب کافی و غیر ہم رحمہ اللہ تعالٰی علیہم بے اشعار خلاف اس پر جازم کہ مسئلہ میں کوئی روایت مرجوحہ مخالفہ آنے کی بو بھی نہیں دیتے قابل التفات سمجھنا تو درکنار اور جن بعض نے اس کا ذکر کیا ساتھ ہی یہ بھی فرما دیا کہ مذہب کے خلاف اور ظاہر الروایۃ سے جدا ہے جس کے حاکی فقط نوح جامع ہیں، محقق علی الاطلاق فرماتے ہیں:

لا ترفع الی بنی ہاشم ھذا ظاہر الروایۃ وروی ابو عصمۃ عن ابی حنیفۃ انہ یجوز فی ھذا الزمان۔ 1

بنو ہاشم کو زکوٰۃ نہ دی جائے یہ ظاہر الروایۃ میں ہے۔ اور ابو عصمہ نے امام ابو حنیفہ رحمہ اللہ تعالٰی سے روایت کیا ہے کہ اس دور میں جائز ہے۔ (ت)

2 مجمع الانہر میں ہے: | لا تدفع الی ھاشمی وھو ظاہر الروایۃ وروی ابو عصمۃ عن الامام انہ یجوز في زمانہ اھ ملخصا ۔ | بنو ہاشم کو زکوٰۃ کا عدم جواز ظاہر الروایۃ میں ہے اور امام ابو حنیفہ رحمہ اللہ سے اس دور میں جواز کی روایت بھی ہے اھ ملخصاً (ت) |

---|

3 شیخ محقق دہلوی اشعۃ اللمعات میں فرماتے ہیں: | عدم جواز دفع زکوٰۃ بہ بنی ہاشم ظاہر روایت است و | بنو ہاشم کو زکوٰۃ کا عدم جواز ظاہر الروایۃ ہے اور |

---|---|

عہ: حاصل یہ کہ اولاً معاوضت مصطلحہ مراد ہونا محل کلام ہے اور اثبات، ذمہ مستدلین، ثانیاً عوضین میں مانعۃ الجمع ہونا ضرور ہے نہ منفصلہ حقیقیہ کو منع خلو بھی لازم ہو اور تمام استدلال اسی پر موقوف ، واللہ تعالٰی اعلم ۱۲ امنہ غفرلہ (م)

1 فتح القدیر، فصل من یجوز دفع الصدقۃ الیہ ومن لا یجوز الخ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/۲۱۱

2 مجمع الانہر باب فی بیان احکام المصرف دار احیاء التراث العربی بیروت ۱/۲۴۲

Fatawa Razawiyya, Volume 10

- In a narration from Imam Abu Hanifa, it is permissible in this time. (Footnote 1) | According to one narration from Imam Abu Hanifa, it is permissible in this era. (T)
- It is mentioned in *Al-Durr al-Mukhtar*: The apparent position of the school is an absolute prohibition. (T) It is mentioned in *Radd al-Muhtar*, *Tahtawi's marginalia on Durr al-Mukhtar*, and the marginalia of *Maraqi al-Falah*: "Abu 'Isma narrated from the Imam that it is permissible." (Sheikh Abu 'Isma quoted from the Imam that it is permissible to give Zakat to the Banu Hashim. T) In *Dhakhiro-ul-Uqba*, marginalia on *Sharh Wiqaya*, it says:
- It was narrated from the Great Imam (Al-Imam al-A'zam) that it is permissible to give Zakat to a Hashimi in his time. (Footnote 4) | It is narrated from the Great Imam that in our time, it is permissible to give Zakat to a Hashimi. (T)
- In *Sharh Nuqaya* by Al-Barjindi, quoting *Fatawa 'Atabi*: It is narrated from Imam Abu Hanifa (may Allah have mercy on him) that it is permissible to give Zakat to a Hashimi. (T) (Footnote 5)
- I say: Do not be confused by what is quoted from *Al-Nutaf* in the question. (T) | I say: (I say) What is quoted in *Al-Nutaf* should not lead to any doubt. (T)
- Scholars explicitly state that whatever is contrary to the *Zahir al-Riwayah* is not the opinion of our Imams, rather it is a retracted opinion (*marju' 'anhu*), and acting upon a retracted opinion is impermissible. Imam Khayr al-Din al-Ramli, a Palestinian scholar, states in his Fatawa:
- "This is the Madhhab (school of thought) from which one should not deviate. Anything other than this is outside the *Zahir al-Riwayah*, and whatever is outside the *Zahir al-Riwayah* is retracted, based on what is established in the principles of jurisprudence that it is impossible for two different but equal opinions to be issued by one Mujtahid; therefore, it is retracted."
- This is the Madhhab from which deviation to another is not permissible. Besides this, other narrations are outside the *Zahir al-Riwayah*, and whatever is outside the *Zahir al-Riwayah* is retracted, because it is an established principle that two different equal statements cannot be issued by one Mujtahid, hence it is retracted.

Footnotes: 1. Ash'at al-Lam'at, Kitab al-Zakat, Bab 'La tahallu lahu al-Sadaqah', Maktaba Nooria Razawiyya Sukkur, 2/25 2. Al-Durr al-Mukhtar, Bab al-Masrif, Matba' Mujtabai Delhi, 1/141 3. Hashiyat al-Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Bab al-Masrif,

Dar al-Ma'rifa Beirut, 1/428 4. Dhakhiro-ul-Uqba Hashiya Sharh Wiqaya, Kitab al-Zakat Bab al-Masrif, Munshi Naval Kishore Kanpur, 1/38 5. Sharh al-Nuqaya lil-Barjindi, Fasl fi Masarif al-Zakat, Munshi Naval Kishore Kanpur, 1/70

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम

- इमाम अबू हनीफ़ा से एक रिवायत में इस ज़माने में जायज़ है। (1) | इमाम अबू हनीफ़ा से एक रिवायत में इस ज़माने में जायज़ है। (त)
- दुर्रे मुख्तार में है: ज़ाहिरुल मज़हब मुतलक मनाही है। (त) रदुल मुहतार व तहतावी हाशिया दुर्रे मुख्तार व हाशिया मराक़िल फ़लाह में है और अबू अस्मा ने इमाम से रिवायत की कि यह जायज़ है। (शैख़ अबू अस्मा ने इमाम साहब से नक़ल किया कि बनू हाशिम को ज़कात देना जायज़ है। त) ज़ख़ीरतुल उक़्बा हाशिया शरह विक़ाया में है:
- इमाम आज़म से रिवायत है कि उनके ज़माने में हाशिमी को ज़कात देना जायज़ है। (4) | इमाम आज़म से रिवायत है कि हमारे दौर में हाशिमी को ज़कात देना जायज़ है। (त)
- शरह नुक़ाया बरजिंदी में फ़तावा अताबी से है: इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह से मन्क़ूल है कि हाशिमी को ज़कात देना जायज़ है। (त) (5)
- अक़ूल (मैं कहता हूँ): सवाल में मन्क़ूल 'अलनुतफ़' की बात से वहम नहीं होना चाहिए। | अक़ूल: (मैं कहता हूँ) अलनुतफ़ में जो कुछ मन्क़ूल है उससे वहम नहीं होना चाहिए। (त)
- और उलेमा तसरीह फ़रमाते हैं कि जो कुछ ज़ाहिरुल रिवायत के ख़िलाफ़ है वह हमारे इमामों का क़ौल नहीं बल्कि मरजू' अन्हु (वापस लिया हुआ) है और मरजू' अन्हु पर अमल नाजायज़ है। इमाम ख़ैरूद्दीन रमली फ़िलिस्तीन के आलिम अपने फ़तावा में फ़रमाते हैं:
- "यही वह मज़हब है जिससे किसी दूसरे की तरफ़ रुजू करना जायज़ नहीं, इसके अलावा दीगर रिवायतें ज़ाहिरुल रिवायत से ख़ारिज हैं, और जो ज़ाहिर रिवायत से ख़ारिज हो वह मरजू' अन्हु होता है क्योंकि उसूलों में यह तय है कि एक मुजतहिद से दो अलग-अलग बराबर के क़ौल जारी नहीं हो सकते, लिहाज़ा वह मरजू' अन्हु है।"
- यह वह मज़हब है जिसके अलावा किसी और की तरफ़ जाना जायज़ नहीं, इसके अलावा अन्य रिवायतें ज़ाहिरुल रिवायत से बाहर हैं, और जो ज़ाहिर रिवायत से बाहर हो वह मरजू' अन्हु है क्योंकि उसूलों में माना गया है कि किसी मुजतहिद से दो अलग-अलग बराबर के क़ौल जारी नहीं हो सकते, इसलिए मरजू' अन्हु।

फुटनोट: 1. अशुअतुल लम्आत, किताबुज़ ज़कात, बाब ला तहल्लु लहुस सदक़ा, मक्तबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 25/2 2. दुर्रे मुख्तार, बाबुल मस्रिफ़, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/141 3. हाशिया अत-तहतावी अलद दुर्रिल मुख्तार, बाबुल मस्रिफ़, दारुल मआरिफ़ा बेरुत, 1/428 4. ज़ख़ीरतुल

उक़्बा हाशिया शरह विक़ाया, किताबुज़ ज़कात बाबुल मस्रिफ़, मुंशी नवल किशोर कानपुर, 1/38 5. शरह अन-नुक़ाया लिल-बरजिंदी, फ़स्ल फ़ी मसारिफ़िज़ ज़कात, मुंशी नवल किशोर कानपुर, 1/70

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

• در روایتی از امام ابی حنیفه جائزست دریں زمان - 1 | امام ابو حنیفہ سے ایک روایت میں اس زمانہ میں جائز ہے۔ (ت)

• در مختار میں ہے: ظاہر المذہب اطلاق المنع (ظاہر مذہب ہر حال میں منع ہے۔ت) ردالمحتار و طحطاوی حاشیہ در مختار و حاشیہ مراقی الفلاح میں ہے و روی ابو عصمة عن الامام انه یجوز 3 (شیخ ابو عصمہ نے امام صاحب سے نقل کیا کہ بنو ہاشم کو زکوۃ دینا جائز ہے۔ت) ذخیرة العقبیٰ حاشیہ شرح وقایہ میں ہے :

• روی عن الامام الاعظم جواز دفع الزکوة الی الهاشمی فی زمانه- 4 | امام اعظم سے روایت ہے کہ ہمارے دور میں ہاشمی کو زکوۃ دینا جائز ہے۔ (ت)

• شرح نقایہ بر جندی میں فتاوٰی عتابی سے ہے: عن ابی حنیفة انه یجوز 5 (امام ابو حنیفہ رحمہ اللہ سے منقول ہے کہ ہاشمی کو زکوۃ دینا جائز ہے۔ت)

• اقول: فلا علیك مما في قول النتف المنقول في السؤال من الایهام- | اقول: (میں کہتا ہوں) النتف میں جو کچھ منقول ہے اس سے وہم نہیں ہونا چاہئے۔ (ت)

• اور علماء تصریح فرماتے ہیں کہ جو کچھ ظاہر الروایتہ کے خلاف ہے ہمارے ائمہ کا قول نہیں بلکہ مرجوع عنہ ہے اور مرجوع عنہ پر عمل ناجائز ۔امام خیر الدین رملی عالم فلسطین اپنے فتاوٰی میں فرماتے ہیں :

• هذا هو المذهب الذی لا یعدل عنه الی غیره وما سواه روایات خارجة عن ظاهر الروایة، وما خرج عن ظاهر الروایة فهو مرجوع عنه لما قرر في الاصول من عدم امکان صدور قولین

- یہ وہ مذہب ہے جس کے غیر کی طرف عدول جائز نہیں،اس کے علاوہ دیگر روایات ظاہر الروایہ سے خارج ہے، اور جو ظاہر روایت سے خارج ہو وہ مرجوع عنہ ہوتا ہے کیونکہ اصول میں مسلمہ ہے کہ کسی مجتہد سے دو مختلف مساوی اقوال صادر نہیں ہو سکتے لہذا مرجوع عنہ

حواشی: 1 اشعة اللمعات، کتاب الزکوۃ باب لا تحل له الصدقة، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر، ۲/۲۵ 2 در مختار، باب المصرف، مطبع مجتبائی دہلی، ۱/۱۴۱ 3 حاشیہ الطحطاوی علی الدر المختار باب المصرف دار المعرفة بیروت ۱/۴۲۸ 4 ذخیرة العقبیٰ حاشیہ شرح وقایہ، کتاب الزکوۃ باب المصرف منشی نولکشور کانپور، ۱/۳۸ 5 شرح النقایۃ للبر جندی فصل فی مصارف الزکوۃ منشی نولکشور کانپور ۱/۷۰

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

If there is a disagreement between equal mujtahids, the statement from which a mujtahid has retracted no longer remains his statement, as scholars have explicitly stated. When it becomes known that a particular statement is consistently transmitted in the primary texts (mutun), then that statement is the reliable one upon which action must be taken, etc. 1

The statement of a mujtahid will no longer be valid (if retracted), as the scholars have clarified. When it is known that a certain statement is being quoted consistently in the texts, then that alone is reliable, and it will be acted upon, etc. (T)

Similarly, it is mentioned in the 'Book of Judgement' of Bahr al-Ra'iq and in 'Durr al-Mukhtar': | | | | :--- | :--- | | When a mujtahid retracts from a statement, it is not permissible to act upon it. 2 | When a mujtahid retracts from a statement, it is no longer permissible to act upon it. (T) |

In the same way, it is written in the 'Book of Purification' of Bahr: "As clarified in al-Tawshih" 3 (As stated in al-Tawshih. T). Now there remains only the statement of the most eminent Imam, my master Abu Ja'far al-Tahawi (may Allah have mercy on him), "bihi na'khudh" (we act upon this). I say: and success is from Allah Almighty (T) - even if it is accepted that Imam al-Tahawi chose this rare (shadh) narration, it is known that he has some isolated opinions where acting upon them while abandoning the main school (madhhab) has no meaning. His greatness is undoubtedly accepted, but the overwhelming greatness of the original school is something else. Furthermore, the consensus of Hadiths, the agreement of texts, and the consensus of the majority of leading scholars in preference and fatwa is not something that can be outweighed by the isolated choice of Imam al-Tahawi. Ultimately, the noble Imams saw his statement "bihi na'khudh" (this is what we act upon. T), yet what was the reason they paid no attention to it at all? In short, this servant of jurisprudence knows that such a weak and criticized narration, which is neither reliable in transmission nor supported by legal reasoning, cannot be fit for adoption merely based on one choice that has not been accepted by all primary texts and other scholars of preference. All this is based on the assumption that we accept Imam al-Tahawi's adoption of the narration of permissibility. Otherwise, in the view of this humble servant (may Allah Almighty forgive him), if Imam al-Tahawi's words are examined deeply, then if Allah wills, it will be as clear as the break of dawn that he is definitely referring to the 'Zahir al-Riwayah' (manifest narrations) when saying "bihi na'khudh" (on this is our practice. T). Although this is a new point that many scholars of our time will find very

surprising, as books like al-Kifayah, Sharh Niqayah al-Quhistani, Maraqi al-Falah, Ghamz al-Uyun, Durr al-Muntaqa, Majma' al-Anhur, Hashiyah al-Tahawi, al-Uqud al-Durriyah, and many others explicitly attribute the choice of permissibility to Imam al-Tahawi. But what can be done except to follow careful investigation?

---

1 Fatawa Khayriyyah, Book of Testimonies, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 2/33 2 Durr al-Mukhtar, Section on the Well, Mujtabai Press, Delhi, 1/41 3 Bahr al-Ra'iq, Book of Purification, H.M. Saeed Company, Karachi, 1/138

विभिन्न समान मुजतहिदों में से जिससे रुजू (वापसी) कर ली गई हो, वह मुजतहिद का कौल (कथन) नहीं रहेगा, जैसा कि विद्वानों ने स्पष्ट किया है। और जहाँ यह ज्ञात हो जाए कि वह कथन वही है जिस पर मूल ग्रंथ (मतून) एकमत हैं, तो वही विश्वसनीय और उसी पर अमल किया जाएगा आदि। 1

मुजतहिद का कथन नहीं रहेगा, जैसा कि विद्वानों ने तस्दीक (स्पष्ट) की है और जब यह मालूम हो जाए कि फलां कौल मतून में बराबर नक़ल हो रहा है तो वही मोतमद (भरोसेमंद) है, और उसी पर अमल किया जाएगा आदि (त)

इसी तरह 'बहरुर राइक' की 'किताबुल कज़ा' में है और 'दुर्रे मुख्तार' में है: | | | | :--- | :--- | | जब मुजतहिद किसी कौल से रुजू कर ले तो उस पर अमल करना जायज़ नहीं है। 2 | जब मुजतहिद किसी कौल से रुजू करे तो उस पर अमल करना जायज़ नहीं रहता। (त) |

इसी तरह 'बहर' की 'किताबुत तहारत' में लिख कर फ़रमाया: जैसा कि 'अत-तौशीह' 3 में स्पष्ट है (जैसा कि तौशीह में इस पर तस्दीक है। त) अब केवल महान इमाम, मेरे आका अबू जाफ़र तहावी (रहमतुल्लाह अलैह) का कथन 'बिही नाखुज़' (हमारा इसी पर अमल है) कहना शेष रहा। मैं कहता हूँ: और अल्लाह तआला की ओर से ही सफलता है (त) - अगर यह मान भी लिया जाए कि इमाम तहावी इसी शाज़ (दुर्लभ) रिवायत को चुनते हैं, तो भी यह ज्ञात है कि उनके कुछ ऐसे एकाकी विकल्प (इख्तियारात मुफ़रदा) हैं कि मज़हब को छोड़कर उन पर अमल करने का कोई अर्थ नहीं है। उनकी महानता निस्संदेह सर्वमान्य है, लेकिन मूल मज़हब की प्रबल महानता कुछ और ही है। फिर हदीसों की अनुरूपता, फिर मूल ग्रंथों (मतून) की सहमति, फिर तरजीह और फतवे में प्रमुख इमामों के बहुमत की सहमति ऐसी चीज़ नहीं है जिसे इमाम तहावी के एकल विकल्प के कारण कमतर माना जा सके। अंततः इमामों ने उनका 'बिही नाखुज़' (हमारा इसी पर अमल है। त) कहना देखा, फिर क्या कारण है कि उन्होंने बिल्कुल भी उस ओर ध्यान नहीं दिया? संक्षेप में, फिक्ह (धर्मशास्त्र) का यह सेवक जानता है कि ऐसी मरजूह और मजरूह (कमज़ोर और विवादित) रिवायत, जो न तो रिवायतन मोतमद है और न ही दरायतन (तर्कसंगत) समर्थित, केवल एक विकल्प के आधार पर जिसे तमाम मतून और अन्य वरीयता देने वालों ने स्वीकार नहीं किया, हरगिज़ अपनाने के योग्य नहीं हो सकती। यह सब इस धारणा पर है कि इमाम तहावी द्वारा जायज़ होने की रिवायत को चुनना स्वीकार कर लिया जाए। अन्यथा, इस विनम्र सेवक (अल्लाह उसे क्षमा करे) के निकट, यदि इमाम तहावी के शब्दों का गहराई से निरीक्षण किया जाए, तो इंशाअल्लाह सुबह की सफेदी की तरह ज़ाहिर और स्पष्ट हो

जाएगा कि वह निश्चित रूप से 'ज़ाहिरुर रिवायत' (प्रचलित रिवायत) के बारे में ही 'बिही नाखुज़' (इसी पर हमारा अमल है। त) फ़रमा रहे हैं। हालाँकि यह एक नई बात है जिसे सुनकर वर्तमान समय के कई विद्वान बहुत चकित होंगे, क्योंकि 'अल-किफ़ाया', 'शरह निक़ाया कुहिस्तानी', 'मराक़िल फ़लाह', 'ग़मज़ुल उयून', 'दुर्रुल मुन्तका', 'मज्मउल अन्हुर', 'हाशिया तहावी' और 'उक़ूदुर दुरिया' आदि अनेक पुस्तकों में इमाम तहावी की ओर जवाज़ (अनुमति) के विकल्प का चुनाव स्पष्ट रूप से वर्णित है, लेकिन गहन शोध का अनुसरण करने के अलावा क्या किया जा सकता है।

---

1 फ़तावा खैरिया, किताबुश शहादात, दारुल मारिफ़ा, बेरूत, 2/33 2 दुर्रे मुख्तार, फ़स्ल फ़िल बीर (कुएं का अध्याय), मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/41 3 बहरुर राइक, किताबुत तहारत, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 1/138

فتاوی رضویہ جلد دہم

مختلفین متساویین من مجتهد والمرجوع عنه لم یبق قولاله کما ذکروہ وحیث علم ان القول هو الذی تواردت علیه المتون فهو المعتمد المعمول به الخ 1

مجتہد کا قول نہیں رہے گا، جیسا کہ علماء نے تصریح کی ہے اور جب علم ہو جائے کہ فلاں قول متون میں برابر نقل ہو رہا ہے تو وہی معتمد، اور اسی پر عمل کیا جائے گا الخ (ت)

اسی طرح بحر الرائق کی کتاب القضاء میں ہے در مختار میں ہے: | | | | :--- | :--- | | المجتہد اذا رجع عن قول لایجوز الاخذ به 2 | جب مجتہد کسی قول سے رجوع کرے تو اس پر عمل کرنا جائز نہیں رہتا۔ (ت) |

یوں ہی بحر کی کتاب الطھارۃ میں لکھ کر فرمایا: کما صرح به في التوشیح 3 (جیسا کہ توشیح میں اس پر تصریح ہے۔ ت) اب نہ رہا مگر امام اجل سیدی ابو جعفر طحاوی رحمتہ اللہ علیہ کا بہ ناخذ (ہمارا اس پر عمل ہے) فرمانا اقول: وباللہ التوفیق (میں کہتا ہوں اور توفیق اللہ تعالی سے ہے۔ ت) اگرمان بھی لیا جائے کہ امام طحاوی اسی روایت شاذہ کو اختیار فرماتے ہیں تاہم معلوم ہے کہ اُن کے لیے بعض اختیارات مفردہ ہیں کہ بترک مذہب ان پر عمل کے کوئی معنی نہیں ان کی جلالت شان بیشک مسلم مگر عظمت قاہرہ اصل مذہب چیزے دیگر ست، پھر اطباقِ احادیث پھر اتفاقِ متون پھر اتفاقِ جماہیر ائمہ ترجیح و فتیا ایسی شئی نہیں جس کا پلہ اختیار مفرد امام طحاوی کے باعث گر سکے آخر ائمہ کرام نے ان کا بہ ناخذ (ہمارا اسی پر عمل ہے۔ ت) فرمانا دیکھا، پھر کیا باعث کہ اصلاً اُدھر التفات نہ فرمایا، غرض خادمِ فقہ جانتا ہے کہ ایسی روایت مرجوحہ مجروحہ جو نہ روایتہً معتمد نہ درایۃً مؤید، صرف ایک اختیار کی بنا پر جسے جمیع متون وسائر مرجّحین نے مقبول نہ رکھا ہرگز صالح تحویل نہیں ہو سکتی، یہ سب اس تقدیر پر ہے کہ امام طحاوی کا روایتِ

جواز کو اختیار فرمانا تسلیم کر لیں ورنہ فقیر غفراللہ تعالیٰ لہ کے نزدیک اگر کلامِ امام طحاوی کی طرف بنظرِ غائر عطفِ عنان ہو تو ان شاء اللہ تعالیٰ سپیدۂ صبح کی طرح ظاہر وعیاں ہو کہ وہ قطعاً ظاہر الروایۃ ہی کو بہ ناخذ (اسی پر ہمارا عمل ہے۔ ت) فرمارہے ہیں اگرچہ یہ وہ نئی بات ہے جسے سن کر بہت علمائے زمانہ سخت تعجب فرمائیں گے کہ الکفایۃ و شرح نقایۃ قہستانی و مراقی الفلاح و غمز العیون و در منتقی و مجمع الانہر و حاشیہ طحاوی و عقود دریہ وغیرہا متعدد کتابوں میں امام طحاوی کی طرف اختیارِ جواز کی نسبت مصرح، مگر کیا کیجئے کہ اتباعِ نظر

---

1 فتاوی خیریہ کتاب الشہادات دارالمعرفۃ بیروت ۳۳/۲ 2 در مختار، فصل فی البئر، مطبع مجتبائی دہلی، ۱/۴۱ 3 بحر الرائق کتاب الطہارت ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۱۳۸

جلد دہم (Volume 10) فتاوی رضویہ (Fatawa Rizwia)

Willingly or unwillingly, this humble person is compelled to clarify the reality of the matter. So listen carefully to what is being recited to you. (T) Imam Al-Ajall Al-Tahawi, in his excellent book "Sharh Ma'ani al-Athar," under the "Book of Zakat," established the first chapter as "No Charity for Banu Hashim." After narrating a hadith, he stated that some people, based on this, consider charity permissible for Banu Hashim. Then he gave a healing answer to their adherence [to that view]. Then, mentioning their reliance on the hadith of Fadak, he also wrote a sufficient answer to that and said:

قد جاءت هذه الآثار عن رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم متواترة بتحريم الصدقة على بنى هاشم-1 After these reports, it is established from the Messenger of Allah (may Allah Almighty send peace and blessings upon him) through mutawatir (continuously narrated) hadiths that charity is forbidden for Banu Hashim. (T)

Then, after narrating fourteen hadiths from many chains of transmission from Imam Hasan al-Mujtaba, Abdullah bin Abbas, Abdul Muttalib bin Rabi'ah bin Harith, Salman al-Farsi, Abu Rafi, Hurmuz or Kaysan, Rashid bin Malik, Abi Laila, Buraydah al-Aslami, Anas bin Malik, two hadiths from Abu Hurairah, and two hadiths from Mu'awiyah bin Haydah al-Qushayri (may Allah be pleased with them all) from the Luminous Messenger, the Master of the World (may Allah Almighty send peace and blessings upon him), he said:

فهذه الآثار كلها قد جاءت بتحريم الصدقة على بني هاشم لا نعلم شيئا نسخها ولا عارضها الاما قد ذكرناه فى هذا الباب مما ليس فيه دليل على مخالفتها-2 All these reports bear witness to the prohibition of charity for Banu Hashim. We are not aware of them being abrogated or of any reports opposing them, except for what we have mentioned in this chapter, which is not such a proof that opposes these reports. (T)

Then, he substantiated this school of thought traditionally (hadith) and juristically (fiqh), stating that not only Zakat, but even voluntary charity (Sadaqah Nafilah) is forbidden for Banu Hashim. Their poor carry exactly the same ruling as the wealthy; what is permissible for the wealthy is also allowed for them, and what is not lawful for the wealthy is not permissible for them either. Then he said:

3-هذا هو النظر فی هذا الباب وهو قول ابی حنیفة وابی یوسف و محمد رحمهم الله تعالی In this chapter, this is the proof, and this is the statement of Imam Abu Hanifa, Imam Abu Yusuf, and Imam Muhammad (may Allah Almighty have mercy on them). (T)

1. Sharh Ma'ani al-Athar, Book of Zakat, Chapter: Charity for Banu Hashim, H.M. Saeed Company Karachi, 1/349.
2. Sharh Ma'ani al-Athar, Book of Zakat, Chapter: Charity for Banu Hashim, H.M. Saeed Company Karachi, 1/352.
3. Sharh Ma'ani al-Athar, Book of Zakat, Chapter: Charity for Banu Hashim, H.M. Saeed Company Karachi, 1/352.

चाहे या अनचाहे, यह फ़क़ीर मामले की हक़ीक़त को स्पष्ट करने के लिए मजबूर है। इसलिए जो कुछ आप पर पढ़ा जा रहा है उसे ध्यान से सुनें। (त) इमाम अल-अजल अल-तहावी ने अपनी बेहतरीन किताब "शरह मा'नी अल-आसार" की "ज़कात की किताब" में पहला अध्याय "बनी हाशिम के लिए कोई सदक़ा नहीं" स्थापित किया। एक हदीस का वर्णन करने के बाद उन्होंने कहा कि कुछ लोग इसके आधार पर बनी हाशिम के लिए सदक़ा जायज़ मानते हैं। फिर उन्होंने उनके इस विचार पर टिके रहने का एक संतोषजनक उत्तर दिया। फिर फ़दक की हदीस पर उनके भरोसे का उल्लेख करते हुए, उन्होंने उसका भी पर्याप्त उत्तर लिखा और कहा:

قد جاءت هذه الآثار عن رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم متواترة بتحريم الصدقة على بنى هاشم-1 इन आसार के बाद, रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से मुतवातिर (लगातार) हदीसों के माध्यम से यह साबित होता है कि बनी हाशिम पर सदक़ा हराम है। (त)

फिर इमाम हसन अल-मुजतबा, अब्दुल्ला बिन अब्बास, अब्दुल मुत्तलिब बिन रबीआ बिन हारिस, सलमान फ़ारसी, अबू राफ़ी, हुर्मुज़ या कैसाँ, रशीद बिन मालिक, अबी लैला, बुरैदा अल-अस्लमी, अनस बिन मालिक से, अबू हुरैरा की दो हदीसें और मुआविया बिन हैदा अल-कुशैरी (अल्लाह उन सब से राज़ी हो) की दो हदीसें, नूर वाले आका, सैयदे आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से कई श्रृंखलाओं के माध्यम से चौदह हदीसें बयान करने के बाद उन्होंने कहा:

فهذه الآثار كلها قد جاءت بتحريم الصدقة على بني هاشم لا نعلم شيئا نسخها ولا عارضها الاما قد ذكرناه فى هذا الباب مما ليس فيه دليل على مخالفتها-2 ये सभी आसार बनी हाशिम पर सदक़ा की हुरमत (मनाही) के गवाह हैं। हमें उनके मंसूख़ (निरस्त) होने या उनके मुक़ाबले में आने वाली रिवायतों का ज्ञान नहीं है, सिवाय उसके जिसका हमने इस अध्याय में ज़िक्र किया है, वह कोई ऐसी दलील नहीं है जो इन आसार के विरोध में हो। (त)

फिर उन्होंने हदीस और फ़िक़्ह के लिहाज़ से इस मज़हब को दलील के साथ पेश किया कि ज़कात तो ज़कात, नफ़्ली सदक़ा भी बनी हाशिम पर हराम है। उनके फ़ुक़रा (ग़रीब) का हुक्म वही है जो उनके मालदारों (ग़नी) का है; जो मालदार के लिए जायज़ है वह उनके लिए भी मुबाह (अनुमेय) है, और जो मालदार के लिए हलाल नहीं है वह उनके लिए भी जायज़ नहीं है। फिर उन्होंने कहा:

3-هذا هو النظر فی هذا الباب وهو قول ابی حنیفة وابی یوسف و محمد رحمهم الله تعالی
इस अध्याय में यही दलील है और यही इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैहिम) का क़ौल (कथन) है। (त)

1. शरह मा'नी अल-आसार, किताबुज़ ज़कात, बाबुल सदक़ा अला बनी हाशिम, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/349.
2. शरह मा'नी अल-आसार, किताबुज़ ज़कात, बाबुल सदक़ा अला बनी हाशिम, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/352.
3. शरह मा'नी अल-आसार, किताबुज़ ज़कात, बाबुल सदक़ा अला बनी हाशिम, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/352.

पृष्ठ 282/836

جلد دہم فتاوی رضویہ

خواہی نخواہی فقیر کو ایضاح حقیقتہ الامر پر مجبور کرتا ہے فاستمع لما یتلی علیک (کی جانے والی گفتگو کو اچھی طرح ملاحظہ کیجئے۔ت) امام اجل طحاوی نے اپنی کتاب مستطاب شرح معانی الآثار کی کتاب الزکوۃ میں پہلا باب لا صدقۃ علی بنی ہاشم وضع فرمایا اور اس میں ایک حدیث نقل کرکے ارشاد کیا کچھ لوگ اس کی بناء پر بنی ہاشم کے لیے صدقہ جائز رکھتے ہیں پھر ان کے تمسک کا جواب شافی دیا پھر حدیث فدک سے ان کا استناد ذکر کرکے اس کا بھی جواب کافی تحریر کیا پھر فرمایا:

1- قد جاءت هذه الآثار عن رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم متواترة بتحريم الصدقة على بنى هاشم

ان آثار کے بعد رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم سے متواتر طور پر احادیث سے ثابت ہے کہ بنو ہاشم پر صدقہ حرام ہے۔ (ت)

پھر احادیث امام حسن مجتبی و عبد اللہ بن عباس و عبد المطلب بن ربیعہ بن حارث و سلمان فارسی و ابو رافع و ہرمز یا کیسان و رشید بن مالک و ابی لیلی و بریدہ اسلمی و انس بن مالک و دو حدیث ابی ہریرہ و دو حدیث معاویہ بن حیدہ قشیری رضوان اللہ تعالٰی علیہم اجمعین چودہ حدیثیں حضور پر نور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے باسانید کثیرہ روایت کر کے فرمایا:

2- فهذه الآثار كلها قد جاءت بتحريم الصدقة على بني هاشم لا نعلم شيئا نسخها ولا عارضها الاما قد ذكرناه فى هذا الباب مما ليس فيه دليل على مخالفتها

یہ تمام آثار بنو ہاشم پر صدقہ کی حرمت پر شاہد ہیں، ہمیں ان کے منسوخ ہونے یا انکے مقابل روایات کا علم نہیں مگر جو کچھ ہم نے اس باب میں ذکر کیا ہے وہ کوئی ایسی دلیل نہیں جو ان آثار کی مخالفت پر ہو۔ (ت)

پھر حدیثاً و فقہاً اس مذہب کو مدلل کیا کہ زکوٰۃ تو زکوٰۃ صدقہ نافلہ بھی بنی ہاشم پر حرام ہے ان کے فقراء بعینہ حکم اغنیاء رکھتے ہیں، جو غنی کے لیے جائز ہے انھیں بھی مباح ہے اور جو غنی کو حلال نہیں انھیں بھی روا نہیں، پھر فرمایا:

هذا هو النظر فی هذا الباب وهو قول ابی حنیفة وابی یوسف و محمد رحمهم الله تعالی-3 اس باب میں یہی دلیل ہے اور یہی امام ابو حنیفہ، امام ابو یوسف اور امام محمد رحمہم اللہ تعالیٰ کا قول ہے (ت)

1 شرح معانی الآثار کتاب الزکوۃ باب الصدقۃ علی بنی ہاشم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۳۴۹ 2 شرح معانی الآثار، کتاب الزکوۃ، باب الصدقۃ علی بنی ہاشم، ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۳۵۲ 3 شرح معانی الآثار، کتاب الزکوۃ، باب الصدقۃ علی بنی ہاشم، ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۳۵۲

Fatawa Razawiya Volume 10

After this, he mentioned this narration as follows:

[Table Header omitted as it's part of the text structure]

Arabic Text: Among the different opinions of Imam Abu Hanifa (may Allah have mercy on him) regarding this, it is narrated that he said: there is no harm in all charities for Banu Hashim. Our view on this is that charities were only forbidden for them because of what was allocated for them from the Khums, from the share of the kinsfolk. When that was discontinued for them and reverted to others with the passing of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), what was previously prohibited for them became permissible because that which had been permissible for them (Khums) was no longer available. Sulayman bin Shu'ayb narrated to me from his father, from Muhammad, from Abu Yusuf, from Abu Hanifa regarding this, following the opinion of Abu Yusuf. Thus, we act upon this. 1

Urdu Translation: Among the different narrations from Imam Abu Hanifa (may Allah have mercy on him), one narration is that there is no harm in spending all kinds of charities on Banu Hashim. Our reasoning for this is that the reason for charities being forbidden for Banu Hashim was that they were entitled to a fifth share from the portion of the kinsfolk in the Khums. After the passing of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), when that share of theirs was discontinued and redirected elsewhere, what was previously forbidden for them would now become lawful, as the Khums was previously lawful for them. Sulayman bin Shu'ayb narrated to me from his father, who narrated from Muhammad, who narrated from Abu Yusuf, who narrated from Imam Abu Hanifa, regarding this matter in accordance with the statement of Abu Yusuf. Therefore, our practice is based on this. (T)

Then he said:

Arabic Text: If someone asks: Do you consider it disliked (Makruh) for their freed slaves (Mawali)? I say: Yes, because of the Hadith of Abu Rafi' which we have mentioned in this chapter. Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) stated this in 'Kitab al-Imla', and I do not know of any of our companions who disagreed with him in this. 2

Urdu Translation: If someone raises a question whether it is disliked for the freed slaves (Mawali) of Banu Hashim, I would say yes, because of the Hadith narrated

from Abu Rafi' which we have mentioned in this chapter. And this same point was stated by Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) in 'Kitab al-Imla', and I do not know if any of our companions opposed him in this. (T)

1 Sharh Ma'ani al-Athar, Kitab al-Zakat, Chapter of Charity on Banu Hashim, H.M. Saeed Company Karachi, 1/352 2 Sharh Ma'ani al-Athar, Kitab al-Zakat, Chapter of Charity on Banu Hashim, H.M. Saeed Company Karachi, 1/352

फ़तावा रज़विया खंड 10

इसके बाद, उन्होंने इस रिवायत का इस तरह ज़िक्र किया:

अरबी पाठ: इमाम अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाह अलैहि) से इस बारे में विभिन्न रिवायतों में से एक यह है कि उन्होंने कहा: बनू हाशिम पर सभी प्रकार के सदक़ात (दान) खर्च करने में कोई हर्ज नहीं है। हमारे पास इसका तर्क यह है कि बनू हाशिम के लिए सदक़ात का निषेध केवल इसलिए था क्योंकि वे निकट संबंधियों (ज़वी अल-क़ुर्बा) के लिए निर्धारित खुम्स (युद्ध के माल का पांचवां हिस्सा) के पांचवें हिस्से के हकदार थे। रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के निधन के बाद, जब उनका वह हिस्सा बंद हो गया और दूसरों की ओर चला गया, तो अब उनके लिए वह हलाल हो जाएगा जो उन पर हराम था, क्योंकि उनके लिए खुम्स हलाल था। सुलेमान बिन शुऐब ने मुझे अपने पिता से, उन्होंने मुहम्मद से, उन्होंने अबू यूसुफ़ से, उन्होंने अबू हनीफ़ा से इस बारे में अबू यूसुफ़ के कथन के अनुसार बताया। अतः, हम इसी पर अमल करते हैं। 1

उर्दू अनुवाद: इमाम अबू हनीफ़ा (रहमतुल्लाह अलैहि) से विभिन्न रिवायतों में से एक रिवायत यह है कि बनू हाशिम पर सभी प्रकार के सदक़ात खर्च करने में कोई हर्ज नहीं है। हमारे पास इसका तर्क यह है कि बनू हाशिम पर सदक़ात के हराम होने का कारण यह था कि खुम्स के निकट संबंधियों के हिस्से में से पांचवां हिस्सा उनका होता था। रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के निधन के बाद जब उनका वह हिस्सा बंद होकर दूसरों के पास चला गया, तो अब उनके लिए वह हलाल हो जाएगा जो उन पर हराम था, क्योंकि उनके लिए खुम्स हलाल था। सुलेमान बिन शुऐब ने मुझे अपने पिता से, उन्होंने मुहम्मद से, उन्होंने अबू यूसुफ़ से, उन्होंने इमाम अबू हनीफ़ा से इस सिलसिले में अबू यूसुफ़ के कथन के अनुसार रिवायत किया है, अतः इसी के साथ हमारा अमल है। (त)

फिर कहा:

अरबी पाठ: यदि कोई प्रश्नकर्ता कहे: क्या आप उनके आज़ाद किए गए गुलामों (मवाली) के लिए इसे नापसंद (मकरूह) समझते हैं? मैं कहूंगा: हाँ, अबू राफ़े की उस हदीस के कारण जिसका उल्लेख हमने इस अध्याय में किया है। और इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाह अलैहि) ने 'किताब अल-इमला' में यही कहा है, और मैं नहीं जानता कि हमारे साथियों में से किसी ने इस बारे में उनका विरोध किया हो। 2

उर्दू अनुवाद: यदि कोई प्रश्न उठाए कि क्या बनू हाशिम के आज़ाद गुलामों के लिए यह मकरूह है, तो मैं कहूंगा हाँ, उस हदीस की वजह से जो अबू राफ़े से वर्णित है और हमने इस अध्याय में उसका उल्लेख किया है। और यही बात इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाह अलैहि) ने 'किताब अल-इमला' में कही है और मैं नहीं जानता कि हमारे साथियों में से किसी ने इसका विरोध किया हो। (त)

1 शरह मआनी अल-आसार, किताब अल-ज़कात, बाब अस-सदक़ा अला बनी हाशिम, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/352 2 शरह मआनी अल-आसार, किताब अल-ज़कात, बाब अस-सदक़ा अला बनी हाशिम, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/352

पृष्ठ 283/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

اس کے بعد اس روایت کا یوں ذکر فرمایا کہ :

عربی متن: قد اختلف ابي حنيفة رحمه الله تعالى فی ذلك فروی انه قال لا باس بالصدقات كلها علی بنی هاشم وذهب فی ذلك عندنا الی ان الصدقات انما كانت حرمت عليهم من اجل ماجعل لهم في الخمس من سهم ذوی القربی فلما انقطع ذلك عنهم ورجع الی غيرهم بموت رسول الله صلی الله تعالی عليه وسلم حل لهم بذلك ما قد كان محرما عليهم من اجل ماقد كان احل لهم وقد حدثنی سليمان بن شعيب عن ابيه عن محمد عن ابي يوسف عن ابي حنيفة فی ذلك مثل قول ابی يوسف فبهذا ناخذ۔ 1

اردو ترجمہ: امام ابو حنیفہ رحمہ اللہ تعالٰی سے مختلف روایات میں سے ایک روایت یہ ہے کہ بنو ہاشم پر تمام صدقات خرچ کرنے میں کوئی حرج نہیں، اور اس میں ہمارے ہاں دلیل یہ ہے کہ صدقات بنی ہاشم پر حرام ہونے کی وجہ یہ تھی کہ خمس کے ذوی القربٰی کے حصہ میں سے پانچوں حصہ ان کا ہوتا تھا، رسالتمآب صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے وصال کے بعد جب ان کا وہ حصہ منقطع ہو کر غیر کی طرف چلا گیا تو اب ان کے لیے وہ حلال ہو جائے گا جو ان پر حرام ہوا تھا اس وجہ سے کہ ان پر خمس حلال تھا، مجھے حدیث بیان کی سلیمان بن شعیب نے اپنے والد سے انھوں نے محمد سے انھوں نے ابو یوسف سے انھوں نے امام ابو حنیفہ سے اس سلسلہ میں ابو یوسف کے قول کے مطابق نقل کیا ہے پس اس کے ساتھ ہی ہمارا عمل ہے۔ (ت)

پھر فرمایا:

عربی متن: فان قال قائل افتكرهها على مواليهم قلت نعم لحديث ابي رافع ن الذى قد ذكرناه في هذا الباب وقد قال ذلك ابويوسف رحمه الله تعالى في كتاب الاملاء وما علمت احدا من اصحابنا خالفه في ذلك۔ 2

اردو ترجمہ: اگر کوئی سوال اٹھائے کہ بنو ہاشم کے مولیٰ (آزاد کردہ غلام) کے لیے مکروہ ہے تو میں کہوں گا ہاں اس حدیث کی وجہ سے جو ابورافع سے مروی ہے اور ہم نے اس باب میں اسے ذکر کر دیا ہے، اور یہی بات امام ابو یوسف رحمہ اللہ تعالیٰ نے کتاب الاملاء میں کہی ہے اور میں نہیں جانتا کہ ہمارے اصحاب میں سے کسی نے اس کی مخالفت کی ہو۔ (ت)

1 شرح معانی الآثار، کتاب الزکوۃ باب الصدقۃ علی بنی ہاشم، ایچ ایم سعید کمپنی کراچی، ۱/۳۵۲ 2 شرح معانی الآثار، کتاب الزکوۃ باب الصدقۃ علی بنی ہاشم، ایچ ایم سعید کمپنی کراچی، ۱/۳۵۲

Fatawa Razviya Volume 10

Then he said:

If someone asks whether it is disliked for a Hashimi to work as a collector for charities (Zakat/Sadaqat), I would say no. Imam Abu Yusuf considered it disliked if their wages were taken from the charity itself. However, others disagreed with Imam Abu Yusuf and said there is no harm in a Hashimi receiving wages from it, because he is being paid for his work and effort. This is also permissible for wealthy people, so how can it be forbidden for the Banu Hashim, upon whom charity is forbidden? It is narrated from the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him) regarding what was given as charity to Barira that he ate from it. (Then Imam Tahawi cited hadiths on this subject from the Mothers of the Believers: Aisha, Juwayriya, Umm Salama, and from Ibn Abbas and Umm Atiyya - may Allah be pleased with them all - and then said:) Since it was permissible for the Prophet (may peace and blessings of Allah be upon him) to eat the charity given to Barira (may Allah be pleased with her), because he became its owner as a gift, it is also permissible for a Hashimi to receive wages from charity. This is because he becomes its owner due to his work, not based on it being charity. This is the correct view and preferred opinion, and it is the most correct of the sayings of Abu Yusuf (may Allah have mercy on him) in this matter. [Summarized (T)]

Now, look at the apparent meanings and hidden implications of this speech of the Imam:

1 Sharh Ma'ani al-Athar, Book of Zakat, Chapter on Charity for Banu Hashim, H.M. Saeed Company Karachi, 1/531-352.

Page 284 of 836

फ़तावा रज़विया खंड १०

फिर उन्होंने कहा:

यदि कोई यह सवाल करे कि क्या किसी हाशमी के लिए दान (सदाक़ात) का संग्रहकर्ता (आमिल) बनना मकरूह (नापसंद) है, तो मैं कहूँगा कि नहीं। इमाम अबू यूसुफ इसे मकरूह मानते थे यदि उनका वेतन उसी दान से दिया जाता था। हालाँकि, अन्य लोगों ने इमाम अबू यूसुफ से असहमति जताई और कहा कि हाशमी को इसमें से वेतन और भत्ता देने में कोई हर्ज नहीं है, क्योंकि यह उसे उसके काम और मेहनत के बदले दिया जा रहा है। और यह तो धनवानों के लिए भी जायज़ है, तो अब उन बनू हाशिम पर यह कैसे हराम हो सकता है जिन पर दान हराम था? अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से बरीरा को दिए गए दान के बारे में वर्णित है कि आपने उसमें से खाया। (फिर इमाम तहावी ने इस विषय पर मोमिनों की माताओं: हज़रत आयशा, हज़रत जुवेरिया, हज़रत उम्मे सलमा, और हज़रत इब्ने अब्बास और हज़रत उम्मे अतिया - रज़ियल्लाहु अन्हुम - से हदीसें उद्धृत कीं, फिर कहा:) चूँकि हज़रत बरीरा (रज़ियल्लाहु अन्हा) पर किए गए दान का सेवन करना रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के लिए जायज़ था क्योंकि आप उपहार के रूप में इसके मालिक बने थे, तो हाशमी के लिए भी वज़ीफ़े के रूप में दान जायज़ होगा, क्योंकि वह काम के कारण इसका मालिक बन रहा है, न कि दान के आधार पर। बस यही सही विचार और पसंदीदा राय है, और यह इस मामले में अबू यूसुफ (रहमतुल्लाहि अलैहि) के कथनों में सबसे सही है। [संक्षेपित (त)]

अब इमाम के इस कलाम के प्रत्यक्ष अर्थों और छिपे हुए निहितार्थों पर विचार करें:

1 शरह मआनी अल-आसार, किताबुज़ ज़कात, बाब अस-सदक़ा अला बनी हाशिम, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/531-352।

पृष्ठ 284 of 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

پھر فرمایا:

اگر کوئی یہ سوال کرے کہ ہاشمی کے لیے صدقات کیلئے عامل بننا مکروہ ہے تو میں کہوں گا کہ نہیں، امام ابو یوسف ان کی تنخواہ کو صدقات میں مکروہ کہتے ہیں، لیکن دوسرے لوگوں نے امام ابو یوسف کی مخالفت کرتے ہوئے کہا کہ ہاشمی کو اس میں تنخواہ و وظیفہ دینے میں کوئی حرج نہیں کیونکہ یہ اس کے عمل و محنت پر دیا جا رہا ہے اور یہ تو اغنیاء کے لیے بھی جائز ہے تو اب ان بنو ہاشم پر یہ کیسے حرام ہو سکتا ہے جن پر صدقہ حرام تھا، رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے صدقہ بریرہ کے بارے میں مروی ہے کہ آپ نے اس سے تناول فرمایا (پھر اس کے بعد امام طحاوی نے سند کے ساتھ امہات المومنین حضرت عائشہ، حضرت جویریہ، حضرت ام سلمہ، حضرت ابن عباس اور حضرت ام عطیہ رضی اللہ تعالٰی عنہم سے احادیث ذکر کیں، پھر کہا) فلما کان ما تصدق به علی بریرة رضی اللہ تعالٰی عنها جائزا للنبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اکله لانه انما ملکه بالهدیة جاز ایضا للهاشمي ان یجتعل من الصدقة لانه انما یملکه بعمله لا بالصدقة فهذا هو النظر وهو اصح مما ذهب الیه ابو یوسف رحمه اللہ تعالٰی فی ذلک اه ملخصاً (ت)۔

اب اس کلام امام کے محاوی ظاہرہ و مطاوی باہرہ پر نظر کیجئے:

1 شرح معانی الآثار کتاب الزکوۃ باب الصدقۃ علی بنی ہاشم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۵۳۱-۳۵۲

First: Refutation of arguments for permissibility from the beginning of the discourse. Second: Effort in multiplying arguments for prohibition. Third: Their proclamation that successive (mutawatir) traditions regarding prohibition have come from the Prophet (may Allah the Almighty bless him and grant him peace). Fourth: Concluding that in our knowledge, there is no abrogator (nasikh) or counter-argument to these traditions except those mentioned by the proponents of permissibility, which do not support them at all. Fifth: Proving traditionally (hadith) and juristically (fiqh) that not only Zakat or other obligatory charities, but all charities (sadaqat) in general are prohibited for Banu Hashim, even voluntary ones (nafila), and this is the school of thought of the three Imams. Sixth: Clearly stating that this is the requirement of juristic insight regarding the reasons. Now, where is the room for a contrary narration? Traditions without an abrogator or contradiction, juristic insight confined to this, then on what basis was a contrary choice made? These six indicators are in the preceding text (subaq); now move towards the following text (siyaq) and see the arguments. Seventh: After mentioning the difference in narration and his own choice, he poses a question by bringing 'fa' for sequence (ta'qib): "If someone were to ask me, 'Do you consider taking Zakat forbidden for the freed slaves of Banu Hashim?' Subhan Allah! If the meaning of 'bihi na'khudh' (we act upon this - T) was that Imam Tahawi himself considered Zakat permissible for Banu Hashim, then what was the occasion or place for this question? Freed slaves (mawali) were included on the basis of this sub-branch principle that 'the freed slave of a people is from among them' (T). When permissibility was established for the origin, what need was there to ask about the branch?" Eighth: Listen to the answer to this question: "I will say yes, meaning, according to me, taking Zakat is forbidden for the freed slaves of Banu Hashim, as the hadith of Abu Rafi' is explicit on this, and the instruction of Imam Abu Yusuf is in agreement, and opposition from the rest of the Imams is unknown." Subhan Allah! On one hand, believing Zakat is permissible for Banu Hashim, and on the other hand, knowing it is forbidden for their slaves. Ninth: Then the hadith of Abu Rafi' was indeed like this:

Indeed, charity is not permissible for the family of Muhammad, and the freed slave of a people is from among them.[1]	Charity is not permissible for the Family of Muhammad (may Allah the Almighty bless him and grant him peace), and the freed slave of a people is from among them. (T)

What does it mean that they should adopt the secondary ruling of the hadith because the hadith is mentioned, but abandon the primary ruling of the same hadith, upon which other successive hadiths are also explicit? Understand and do not be hasty.

---

1 Sharh Ma'ani al-Athar, Book of Zakat, Chapter on Charity for Banu Hashim, H.M. Saeed Company Karachi, 1/351.

प्रथम: प्रवचन की शुरुआत से ही हलाल (अनुमेयता) के तर्कों का खंडन। द्वितीय: हराम (निषेध) के तर्कों की संख्या बढ़ाने में प्रयास। तृतीय: उनका यह कथन कि नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से हराम होने के बारे में मुतवातिर (निरंतर) हदीसें आईं। चतुर्थ: समापन इस प्रकार कि हमारे ज्ञान में इन हदीसों का कोई नासिख़ (निरस्त करने वाला) या विरोधी तर्क नहीं है, सिवाय उन चीज़ों के जिनका उल्लेख हलाल मानने वालों ने किया और वे मूल रूप से उनके समर्थक नहीं हैं। पंचम: हदीस और फ़िक़ह (न्यायशास्त्र) से यह सिद्ध करना कि न केवल ज़कात या अन्य अनिवार्य दान, बल्कि सामान्य रूप से सभी सदक़ात (दान) बनी हाशिम पर हराम हैं, यहाँ तक कि नफ़्ली (स्वैच्छिक) भी, और यही तीनों इमामों का मज़हब (विचारधारा) है। षष्ठ: स्पष्ट रूप से यह स्पष्ट कर देना कि कारणों में यही फ़िक़ही दृष्टि का तकाज़ा है, अब विपरीत रिवायत (वर्णन) के लिए कहाँ गुंजाइश बची? बिना किसी नासिख़ और विरोधी के हदीसें मुतवातिर हैं, फ़िक़ही दृष्टि इसी में सीमित है, फिर किस आधार पर विपरीत विकल्प अपनाया गया? ये छह संकेत तो पहले के संदर्भ (सुबाक़) में हैं, अब आगे के संदर्भ (सियाक़) की ओर चलें और तर्क देखें। सप्तम: रिवायत के मतभेद और अपनी पसंद का उल्लेख करने के बाद, अनुक्रम के लिए 'फ़ा' लाते हुए एक प्रश्न खड़ा करते हैं: "अगर कोई मुझसे पूछे कि 'क्या तुम बनी हाशिम के आज़ाद किए हुए गुलामों के लिए ज़कात लेना वर्जित मानते हो?' सुभान अल्लाह! अगर 'बिही नाख़ुज़' (हम इसी पर अमल करते हैं - त) का अर्थ यही था कि इमाम तहावी ने खुद बनी हाशिम के लिए ज़कात को हलाल माना, तो अब इस प्रश्न का कौन सा अवसर और स्थान था? मवाली (आज़ाद गुलाम) तो इसी उप-नियम के आधार पर शामिल हुए थे कि 'किसी कौम का गुलाम उन्हीं में से होता है' (त)। जब मूल (अस्ल) के लिए अनुमति निश्चित हो गई, तो शाखा (फ़रा) के बारे में पूछने का क्या मतलब?" अष्टम: इस सवाल का जवाब सुनिए: "मैं कहूँगा हाँ, यानी मेरे नज़दीक बनी हाशिम के मवाली के लिए ज़कात लेना वर्जित है, क्योंकि अबू राफे की हदीस इसी पर स्पष्ट है, और इमाम अबू यूसुफ का निर्देश इसके अनुकूल है, और बाकी इमामों से इसके विपरीत होना अज्ञात है।" सुभान अल्लाह! कहाँ बनी हाशिम के लिए ज़कात को जायज़ मानना और कहाँ उनके गुलामों पर हराम जानना। नवम: फिर अबू राफे की हदीस तो इस तरह थी कि:

निश्चय ही, मोहम्मद की आल (वंशजों) के लिए सदक़ा हलाल नहीं है, और किसी कौम का गुलाम उन्हीं में से होता है।[1]	आल-ए-मोहम्मद (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के लिए सदक़ा हलाल नहीं है और कौम का गुलाम उन्हीं में से होता है (त)।

क्या मतलब कि हदीस के उप-नियम (फ़रई हुक्म) को इस वजह से अपना लें कि हदीस वर्णित है, और उसी हदीस के मूल नियम (असली हुक्म) को छोड़ दें, जिस पर उसके साथ अन्य मुतवातिर हदीसें भी स्पष्ट हैं? समझिए और जल्दबाज़ी न करें।

---

1 शरह मआनी अल-आसार, किताबुज़ ज़कात, बाब अल-सदक़तु अला बनी हाशिम, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/351.

اول: شروع سخن سے دلائل تحلیل کا رد۔ دوم: دلائل تحریم کی تکثیر میں کد۔ سوم: ان کا غازیوں کہ نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے تحریم میں متواتر حدیثیں آئیں۔ چہارم: ختم یوں کہ ہمارے علم میں ان حدیثوں کا کوئی ناسخ یا عارض نہیں سوا ان چیزوں کے جو اہل تحلیل نے ذکر کیں اور وہ اصلاً ان کی مؤید نہیں۔ پنجم: حدیثاً وفقہاً ثابت فرمانا کہ نہ صرف زکوۃ یا دیگر واجبات بلکہ مطلقاً تمام صدقات بنی ہاشم پر حرام ہیں یہاں تک کہ نافلہ بھی، اور یہی مذہب ائمہ ثلاثہ کا ہے۔ ششم: صاف صاف حصر فرما دینا کہ اسباب میں یہی مقتضائے نظر فقہی ہے، اب روایت خلاف کے لئے کہاں گنجائش رکھی، حدیثیں بے ناسخ و معارض متواتر نظر فقہی اسی میں منحصر، پھر اختیارِ خلاف کس دلیل سے صادر۔ یہ چھ قرینے تو سباق میں ہیں اب سیاق کی طرف چلئے کہ دلائل دیکھئے۔ ہفتم: روایت کے اختلاف اور اپنے اختیار کو ذکر کر کے بایراد فائے تعقیب سوال قائم فرماتے ہیں کہ اس پر کوئی مجھ سے پوچھے بھلا بنی ہاشم کے غلامان آزاد شدہ کے لئے اخذ زکوٰۃ ممنوع جانتے ہو، سبحان اللہ اگر اس بہ ناخذ (اسی پر ہمارا عمل ہے۔ ت) کے معنی یہی تھے کہ امام طحاوی نے خود بنی ہاشم کو زکوۃ حلال مانی تو اب اس سوال کا کون سا موقع اور کیا محل تھا، موالی تو اس فرعیت کی بناء پر داخل ہوئے تھے کہ مولی القوم منھم (کسی قوم کا غلام انہی میں سے ہوتا ہے۔ ت) جب اصول کے لئے جواز ٹھہر افروع کی نسبت کیا پوچھنا رہا۔ ہشتم: اس سوال کا جواب سنئے کہ میں فرماؤں گا ہاں یعنی میرے نزدیک موالی بنی ہاشم کو اخذ زکوٰۃ ممنوع ہے کہ حدیث ابو رافع اسی پر ناطق اور ارشاد امام ابی یوسف موافق اور بقیہ ائمہ سے خلاف نامعلوم، سبحان اللہ کہاں بنی ہاشم کے لئے زکوۃ جائز ماننا اور کہاں ان کے غلاموں پر حرام جاننا۔ نہم: پھر حدیث ابو رافع تو یونہی تھی کہ:

ان ال محمد لا یحل لہم الصدقۃ وان آل محمد (صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم) کے لیے صدقہ حلال نہیں

مولی القوم من انفسھم۔[1] اور قوم کا غلام اُنہی میں سے ہوتا ہے (ت)

کیا معنی کہ حدیث کا فرعی حکم اس وجہ سے کہ حدیث وارد ہے اخذ فرمائیں اور اسی حدیث کا اصلی حکم جس پر اس کے ساتھ اور احادیث متواترہ بھی ناطق ترک کر جائیں فافھم ولاتعجل۔

---

1 شرح معانی الاثار کتاب الزکوۃ باب الصدقۃ علی بنی ہاشم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱ / ۳۵۱

Tenthly: For one who considers it permissible for Banu Hashim and forbidden for the freed slave (mawla), the Hadith of Abu Rafi is by no means an argument for him; rather, it clearly turns against him, as in it, the freed slave of a group is declared to be within the ruling of that group. When the ruling for the group is permissibility, the ruling for the freed slave will also necessarily be permissibility; otherwise, the freed slaves are not inherently deserving of the prohibition. Thus, on the premise of opting for permissibility, this reasoning of Imam Tahawi turns out to be contrary.

Eleventhly: The strange thing is that they say Imam Abu Yusuf considered Zakat impermissible for the freed slave, and we do not find opposition to this from our other Imams. The opposition was to be established or was under consideration, because in the report where Zakat was made permissible for Banu Hashim themselves, it would be permissible for the freed slave to a greater degree (bi-daraja al-awla). Therefore, they necessarily consider that report to be discarded and unreliable when they negate the knowledge of opposition.

Twelfthly: After this, they pose a second question: Is it permissible according to you for a member of Banu Hashim to be appointed for the collection of Zakat and take wages for it? Subhan Allah! When they have already made the reality of Zakat permissible for them, what room is left for discussion on the doubt of Zakat? If that were Imam Tahawi's intention, I know of no better example for these two questions than a Shafi'i scholar saying, "In my view, marriage with the daughter of an adulteress is lawful," and Zaid asking, "Do you also consider her foster daughter lawful?" or him saying, "In my view, adultery does not necessitate the prohibition of affinity (hurmat-e-musaharat)," and Zaid asking, "What do you say about touching without marriage?"

These six great proofs were in context. Now look at the text itself, its testimony is most complete, perfect, and decisive in ending dispute. After proving the absolute prohibition of charities for Banu Hashim, Imam Tahawi said: This is the school of thought (madhhab) of Imam Abu Hanifa, Imam Abu Yusuf, and Imam Muhammad. This means it is from their Zahir al-Riwayah (established reports), that they do not quote a saying except from Zahir al-Riwayah. Then he mentioned a conflicting report from the Imam, mentioning it first with the word 'ruwiya 'anhu' (it was reported from him), which is clear evidence of the report's weakness. He cited that irregular (shadh) report without a chain of narration (sanad), then cited with a continuous chain that

the Imam's saying is like that of Imam Abu Yusuf, and regarding it, he said, "Fabi-hadha na'khudh" (And this is what we adopt). Now see what school of thought of Imam Abu Yusuf did Imam Tahawi describe to which he refers? It was none other than the absolute prohibition. So, he is definitely saying "Fabi-hadha na'khudh" regarding that. It is certainly known that no saying of Imam Abu Yusuf was mentioned above except prohibition. It is also extremely clear and obvious that he does not make a reference except to the mentioned matter. Therefore, it must be accepted that after stating the difference in reports, first he mentioned the report of Abu 'Isma with the words 'ruwiya 'anhu', then by "wa haddathani" (and he narrated to me), he gave the school of prohibition the color of a chain of narration from the path of "Muhammad 'an Abi Yusuf 'an Abi Hanifa" (Imam Muhammad narrated from Imam Abu Yusuf, who narrated from Imam Abu Hanifa, may Allah have mercy on them), and decorated it with "Fabi-hadha na'khudh" (upon this is the practice). Now the entire statement from beginning to end...

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

दसवाँ: जो बनी हाशिम के लिए जायज़ माने और उनके'मौली' (आज़ाद किए हुए गुलाम) पर हराम जाने, उनके लिए अबू राफ़े की हदीस कतई हुज्जत नहीं है, बल्कि यह साफ़ तौर पर उनके खिलाफ जाती है, क्योंकि उसमें कौम के मौली को कौम के हुक्म में रखा गया है। जब कौम का हुक्म जवाज़ (जायज़ होना) है, तो मौली का हुक्म भी यकीनन जवाज़ ही होगा, वरना मौली ज़ाती तौर पर हराम होने के हकदार नहीं हैं। तो जवाज़ अख्तियार करने की सूरत में इमाम तहावी का यह दलील देना विरोधाभासी ठहरता है।

ग्यारहवाँ: ताज्जुब की बात यह है कि वे फरमाते हैं कि इमाम अबू यूसुफ़ ने मौली पर ज़कात को नाजायज़ माना और हमें अपने बाकी इमामों से इसके खिलाफ कोई बात मालूम नहीं है। खिलाफ तो तब बनता या सामने आता जब उस रिवायत में जिसमें खुद बनी हाशिम को ज़कात जायज़ हुई, वह मौली के लिए बदरजा अव्वल (और भी ज़्यादा) जायज़ होती। तो यकीनन वे उस रिवायत को नज़रअंदाज़ करने लायक और अविश्वसनीय मानते हैं, तभी तो खिलाफ के इल्म का इनकार फरमाते हैं।

बारहवाँ: इसके बाद दूसरा सवाल खड़ा करते हैं कि भला तुम्हारे नज़दीक बनी हाशिम का ज़कात वसूल करने पर मुकर्रर होकर उसकी उजरत (मज़दूरी) लेना भी जायज़ है या नहीं। सुभान अल्लाह! जब हकीकत-ए-ज़कात को उनके लिए जायज़ कर चुके तो ज़कात के शुबहे (संदेह) पर बात करने का क्या मौका रहा? अगर इमाम तहावी की वही मुराद होती, तो मैं इन दोनों सवालों की मिसाल इससे बेहतर नहीं जानता कि कोई शाफ़ई मज़हब का आलिम कहे कि मेरे नज़दीक बदचलन औरत की बेटी से निकाह हलाल है, और ज़ैद पूछे कि भला उसकी रज़ाई (दूध शरीक) बेटी को भी हलाल जानते हो या नहीं? या वह कहे कि मेरे नज़दीक ज़िना से हुरमत-ए-मुसाहरत (निकाह की मनाही) पैदा नहीं होती, और ज़ैद पूछे कि बिना निकाह के छूने के बारे में क्या कहते हो।

ये छह अज़ीम दलीलें सियाक (संदर्भ) में थीं, अब असल इबारत (लिखावट) पर गौर कीजिए कि उसकी गवाही सबसे मुकम्मल और बहस को खत्म करने वाली है। इमाम तहावी ने बनी हाशिम पर हर तरह के सदकात की हुरमत (मनाही) साबित करके फरमाया: यह इमाम अबू हनीफा, इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मोहम्मद का मज़हब है, यानी उनसे ज़ाहिर-उर-रिवायत है कि वे ज़ाहिर-उर-रिवायत के अलावा किसी और कॉल (कथन) को नहीं कहते। फिर इमाम से रिवायत का इख्तिलाफ़

(अंतर) ज़िक्र किया और पहले 'रुविया अन्हु' (उनसे रिवायत है) के लफ्ज़ के साथ, जो रिवायत की कमज़ोरी की खुली दलील है, वह शाज़ (असामान्य) रिवायत बिना सनद के ज़िक्र की। फिर सनद के साथ नकल किया कि इमाम का कॉल इमाम अबू यूसुफ़ के कॉल जैसा है और इस पर फरमाया 'फ़बिहाज़ा नाखुज़' (यानी हम इसी को अपनाते हैं)। अब देख लीजिए कि इमाम तहावी ने इमाम अबू यूसुफ़ का क्या मज़हब बयान फरमाया था जिस पर हवाला देते हैं कि हमें इस सनद के साथ इमाम से इसी मज़हब के मुताबिक पहुँचा। आखिर वह सिवाय हुरमत के इलाक (पूर्ण मनाही) के और कुछ न था, तो निश्चित रूप से उसी को 'फ़बिहाज़ा नाखुज़' फरमा रहे हैं। यह तो यकीनन मालूम है कि ऊपर इमाम अबू यूसुफ़ का कोई कॉल सिवाय हुरमत के नहीं गुज़रा। और यह भी निहायत साफ़ है कि वे ज़िक्र की गई बात के अलावा कहीं और हवाला नहीं देते। लिहाज़ा, यह मानना होगा कि रिवायत का इख्तिलाफ़ बताकर पहले 'रुविया अन्हु' के लफ्ज़ से अबू इस्मा की रिवायत ज़िक्र की, फिर 'व हद्दसनी' (और मुझे बयान किया) से हुरमत के मज़हब को सनद का रंग दिया जो 'मोहम्मद अन अबी यूसुफ़ अन अबी हनीफ़ा' (इमाम मोहम्मद ने इमाम अबू यूसुफ़ से और उन्होंने इमाम अबू हनीफ़ा रहमहुमुल्लाह से रिवायत किया) के तरीके से मरवी है, और इसी को 'फ़बिहाज़ा नाखुज़' (इसी पर अमल है) से मुकम्मल किया। अब सारा बयान शुरू से आखिर तक...

पृष्ठ 286 का 836

دہم: جو بنی ہاشم کے لیے جواز مانے اور مولی پر حرام جانے، حدیث ابورافع ہر گز اس کے لیے حجت نہیں بلکہ صاف اس پر منقلب ہے کہ اس میں مولائے قوم کو حکم قوم میں فرماتے ہیں جب حکم قوم جواز ہے حکم مولی بھی لاجرم جواز ہوگا ورنہ موالی بالذات مستحقِ تحریم نہیں تو بر تقدیرِ اختیارِ جواز امام طحاوی کا یہ استدلال بالخالف ٹھہرتا ہے۔ یازدہم: طرفہ یہ کہ فرماتے ہیں امام ابو یوسف نے مولیٰ پر زکوۃ ناروامانی اور ہمیں اپنے باقی ائمہ سے اسکا خلاف معلوم نہیں، خلاف تو بننا یا پیش نظر ہے کہ جس روایت میں خود بنی ہاشم کو زکوۃ روا ہوئی، مولیٰ کے لیے بدرجہ اولیٰ ہوئی، تو لاجرم وہ اس روایت کو نظر سے ساقط اور ناقابلِ اعتضاد جانتے ہیں، جب تو علمِ خلاف کی نفی فرماتے ہیں۔ دواز دہم: اس کے بعد دوسرا سوال قائم کرتے ہیں کہ بھلا تمھارے نزدیک بنی ہاشم کا تحصیلِ زکوۃ پر متعین ہو کر اس کی اجرت لینا بھی جائز ہے یا نہیں۔ سبحان اللہ! جب حقیقتِ زکوۃ انھیں جائز کر چکے تو شبہ زکوۃ میں کلام کا کیا موقع رہا، اگر امام طحاوی کی وہی مراد ہوتی تو میں ان دونوں سوالوں کی مثال اس سے بہتر نہیں جانتا کہ عالم شافعی المذہب کہے میرے نزدیک بنتِ الفجور سے نکاح حلال ہے زید پوچھے بھلا اس کی دخترِ رضاعی بھی حلال جانتے ہو یا نہیں، یا وہ کہے میرے نزدیک زنا موجب حرمتِ مصاہرت نہیں، زید پوچھے بھلا بے نکاح مس میں کیا کہتے ہو۔ یہ چھ دلائل جلیل سیاق میں تھے، اب نفس عبارت پر نظر کیجئے کہ اس کی شہادت سب سے اتم واکمل و قاطع جدل ہے۔ امام طحاوی نے بنی ہاشم پر مطلق صدقات کی حرمت ثابت کر کے فرمایا: یہ امام ابو حنیفہ و امام ابو یوسف و امام محمد کا مذہب ہے یعنی ان سے ظاہر الروایۃ ہے کہ قول نہیں کہتے مگر ظاہر الروایۃ کو، پھر امام سے اختلاف روایت ذکر کیا اور اول بلفظ روی عنہ کہ صریح ضعف روایت پر دلیل ہے وہ روایت شاذہ بلا سند

ذکر کی پھر بسند متصل نقل کیا کہ امام کا قول مثل قول امام ابو یوسف ہے اور اس پر فرمایا فبھذا ناخذ۔ اب دیکھ لیجئے کہ امام طحاوی نے امام ابو یوسف کا کیا مذہب بیان فرمایا تھا جس پر حوالہ کرتے ہیں کہ ہمیں اس سند کے ساتھ امام سے اسی مذہب کے مطابق پہنچا، آخر وہ نہ تھا مگر اطلاقِ تحریم، تو قطعاً اسی کو بھذا ناخذ فرما رہے ہیں، یہ تو یقیناً معلوم کہ اوپر امام ابو یوسف کا کوئی قول نہ گزرا مگر تحریم، اور یہ بھی نہایت واضح و جلی کہ حوالہ نہیں کرتے، مگر امر مذکور پر لاجرم ماننا ہوگا کہ اختلاف روایت بتا کر پہلے لفظ روی عنہ روایت ابوعصمہ روایت کی پھر وحدثنی (مجھے بیان کیا۔ت) سے مذہبِ تحریم کہ اصول اسی طریق محمد عن ابی یوسف عن ابی حنیفہ (امام محمد نے امام ابو یوسف سے انھوں نے امام ابو حنیفہ رحمہم اللہ تعالی سے روایت کیا۔ت) سے مروی رنگ اسناد دیا اور اسی کو بھذا ناخذ (اسی پر عمل ہے۔ت) سے مندیل کیا، اب سارا بیان اول سے آخر تک

It became organized and coherent, and all objections and strangeness were instantly repelled; and one part of the speech was taken to clarify the other (otherwise, this would be taking some parts of the speech and leaving others). Reflect upon it; this is the certain interpretation of the Imam's words, beyond which there is no other possibility, and there are still many supporting evidences within the text itself and from other aspects, for example: Thirteenth: One familiar with the discourse of the Muhaddithin (Hadith scholars) knows that when they cite a statement as a chain-supported narration (Musnad), they either mention the chain and then state it, which is the most common way, or they state the statement and then mention the chain like this: "So-and-so narrated this to me from so-and-so," or "So-and-so narrated the like of it to me from so-and-so" (so that the chain of narration becomes connected to the narrated text), and not in a way that there is complete disparity and disconnection, such as saying: "It is narrated from Abu Hanifa thus, and so-and-so narrated to me from Abu Hanifa" (It is narrated from Imam Abu Hanifa in this way, and so-and-so told me the same statement from Imam Abu Hanifa). Fourteenth: If you consider it so, it would be necessary that Abu Yusuf's statement also implies permissibility, whereas Abu Yusuf's statement is definitively one of prohibition. In fact, far from a statement, there is perhaps not even a rare (shadh) narration from him similar to Noah's narration. Fifteenth: Imam Tahawi himself writes a few lines later that Abu Yusuf's statement regarding the Mawali (clients/freed slaves) also implies prohibition, not permissibility even for the principals themselves. Sixteenth: And a few lines later he said: In Abu Yusuf's statement, the Hashimite is not allowed the "shubha" (semblance) of Zakat, meaning taking the wages of their work from Zakat funds. Then, what is the meaning of permission in reality? Therefore, Abu Yusuf's statement is undoubtedly that of prohibition, and the text of this chain of narration is based on that, and it is established by "With this we take" (meaning: our practice is upon this). Seventeenth: You have heard above that the narration of permissibility is the narration of Nuh ibn Abi Maryam Abu Ismah al-Marwazi, a student of Imam Abu Hanifa, Imam Abi Laila, and Kalbi. Imam Tahawi narrates his chosen narration through the "Golden Chain" (Silsilat al-Dhahab): Muhammad from Abu Yusuf from Abu Hanifa (Imam Muhammad narrated from Imam Abu Yusuf, and he from Abu Hanifa). If that same narration were reported through this path, it would be said: "Abu Yusuf narrated from Abu Hanifa," not "Abu Ismah narrated" (Sheikh Abu Ismah narrated). For one does not leave the world-illuminating sun for a lamp, nor is

it the etiquette of jurists (Fuqaha) to attribute the narrations of the Imam that are reported through the two companions (Sahibayn - Abu Yusuf and Muhammad) to someone else, especially someone whose status regarding the speech of the Imams is known. No, no! In fact, certainly this narration which was stated with "With this we take" (meaning: our practice is upon this) is from those fundamental narrations which...

यह सुव्यवस्थित और सुसंगत हो गया और सभी आपत्तियाँ और विसंगतियाँ तुरंत दूर हो गईं और "कलाम के एक भाग को दूसरे के ज़रिए ग्रहण करना" (अन्यथा यह कलाम के कुछ भाग को लेने और कुछ को छोड़ने जैसा होता)। विचार करें तो इमाम का यह कलाम वह निश्चित अर्थ रखता है जिसके अलावा दूसरा कोई संभावित अर्थ नहीं है और अभी भी स्वयं कलाम और अन्य पहलुओं से इसके कई समर्थक प्रमाण शेष हैं, उदाहरण के लिए: तेरहवाँ: मुद्दिसिन (हदीस विद्वानों) के कलाम से परिचित व्यक्ति जानता है कि वे जिस कथन को मुसनद (प्रमाणित) लाते हैं, या तो सनद (शृंखला) लिखकर उसे बयान करते हैं और यही अक्सर होता है, या फिर कथन बयान करके सनद को इस तरह ज़िक्र करते हैं कि "मुझे फलां ने फलां से ऐसा बयान किया" या "फलां ने फलां से उसी के समान बयान किया" (ताकि सनद मुसनद से जुड़ी रहे), न कि इस तरह कि पूर्णतः भिन्नता और विच्छेद रहे कि "अबू हनीफा से ऐसा वर्णित है और मुझे फलां ने अबू हनीफा से फलां जैसा कथन बताया"। चौदहवाँ: यदि ऐसा ही माना जाए, तो यह आवश्यक होगा कि अबू यूसुफ का कथन भी वैधता (जवाज़) का हो, जबकि अबू यूसुफ का कथन निश्चित रूप से निषेध (तहरीम) का है, बल्कि कथन तो दूर, शायद उनसे कोई शाज़ (दुर्लभ) रिवायत भी नूह की रिवायत जैसी नहीं है। पंद्रहवाँ: स्वयं इमाम तहावी कुछ पंक्तियों के बाद लिखते हैं कि अबू यूसुफ का कथन मवाली (दासों/आश्रितों) पर भी निषेध है, न कि स्वयं मूल लोगों के लिए वैधता। सोलहवाँ: और कुछ पंक्तियों के बाद कहा कि अबू यूसुफ के कथन में हाशिमी को ज़कात का 'शुभा' (आभास) मान्य नहीं है, यानी अपने कार्य का पारिश्रमिक ज़कात के धन से लेना। फिर वास्तविकता में अनुमति का क्या अर्थ होगा? अतः अनिवार्य रूप से अबू यूसुफ का कथन वही निषेध है और इस सनद का मूल पाठ उसी पर आधारित है, और वही "बिहाज़ा नाखुज़" (इसी पर हमारा अमल है) से प्रमाणित है। सत्रहवाँ: ऊपर सुन चुके हैं कि वैधता की रिवायत नूह इब्न अबी मरियम अबू इस्मत अल-मरवज़ी की रिवायत है जो इमाम अबू हनीफा, इमाम अबी लैला और कल्बी के शिष्य हैं। इमाम तहावी अपनी चुनिंदा रिवायत को 'सिलसिला-तुज़-ज़हब' (स्वर्ण शृंखला) के माध्यम से वर्णित करते हैं: मुहम्मद, अबू यूसुफ से, वे अबू हनीफा से (इमाम मुहम्मद ने इमाम अबू यूसुफ से और उन्होंने अबू हनीफा से रिवायत की है)। यदि वही रिवायत इस मार्ग से वर्णित होती, तो कहा जाता "अबू यूसुफ ने अबू हनीफा से रिवायत की", न कि "अबू इस्मत ने रिवायत की" (शेख अबू इस्मत ने रिवायत की)। क्योंकि कोई विश्व-प्रकाशक सूर्य को छोड़कर चिराग की ओर नहीं जाता, और न ही यह फुकहा (विधिवेत्ताओं) का शिष्टाचार है कि इमाम की वे रिवायतें जो साहिबैन (दोनों साथियों -

अबू यूसुफ और मुहम्मद) के माध्यम से वर्णित हैं, किसी और के नाम से सम्बद्ध करें, विशेष रूप से ऐसे व्यक्ति के नाम से जिनकी स्थिति इमामों के कलाम के संबंध में ज्ञात है। नहीं, नहीं! बल्कि निश्चित रूप से यह रिवायत जिसे "बिहाज़ा नाखुज़" (इसी पर हमारा अमल है) फरमाया, उन्हीं मूल रिवायतों में से है जो...

पृष्ठ २८७/८३६

منتظم وملتئم ہو گیا اور تمام اعتراضات و استغربات دفعۃً دفع ہو گئے و اخذ الکلام بعضہ بحجر بعض (ورنہ یہ تو بعض کلام کو لینا اور بعض کو چھوڑنا ہے۔ت) تامل کیجئے تو کلام امام کا یہ وہ یقینی محمل ہے جس کے سوا دوسرا محتمل نہیں اور ہنوز اس کے مؤیدات نفس کلام و دیگر وجوہ سے بکثرت باقی ہیں مثلاً : سیزدہم: آشنائے کلام محدثین جانتا ہے کہ وہ جس قول کو مسند لاتے ہیں یا تو سند لکھ کر اسے بیان فرماتے ہیں وھو الا کثر (اکثر کا طریقہ یہی ہے۔ت) یا قول بیان کر کے سند یوں ذکر کرتے ہیں کہ حدثنی بذلك فلان عن فلان یا حدثنی فلان عن فلان مثلہ (مجھے فلاں سے فلاں نے بیان کیا فلاں نے فلاں سے اسی کی مثل بیان کیا۔ ت) تاکہ اسناد مسند سے مرتبط ہو جائے نہ یوں کہ بالکل تغایر و انقطاع رہے کہ روی عن ابی حنیفہ کذا و حدثنی فلان عن ابی حنیفہ (امام ابو حنیفہ سے اسی طرح مروی ہے اور مجھے فلاں نے امام ابو حنیفہ سے فلاں کی مثل قول کیا ہے۔ ت) چہاردہم : اگر ایسا ہی مانئے تو ضرور ہے کہ قول ابی یوسف بھی جواز ہو حالانکہ قول ابی یوسف قطعاً تحریم ہے بلکہ قول درکنار شاید ان سے کوئی روایت شاذہ بھی مثل روایت نوح نہیں۔ پانزدہم : خود امام طحاوی چند سطر کے بعد تحریر فرماتے ہیں کہ قول ابی یوسف موالی پر بھی تحریم ہے نہ کہ خود اصول کے لیے جواز۔ شانزدہم اور چند سطر بعد فرمایا قول ابی یوسف میں ہاشمی کو شبہ زکوۃ روا نہیں یعنی اپنے عمل کی اجرت مال زکوۃ سے لینا، پھر اجازت حقیقت چہ معنی، تو لاجرم قول ابی یوسف وہی تحریم ہے اور اس سند کا متن اسی پر محول، اور وہی بھذا ناخذ (اسی پر ہمارا عمل ہے۔ ت) سے مندیل۔ ہفتدہم اوپر سُن چکے کہ روایت جواز روایت نوح ابن ابی مریم ابو عصمہ مروزی تلمیذ امام ابو حنیفہ و امام ابی لیلی و کلبی ہے اور امام طحاوی اپنی روایت اپنی روایت مختارہ کو بطریق سلسلۃ الذہب محمد عن ابی یوسف عن ابی حنیفہ (امام محمد

نے امام ابو یوسف سے اور انھوں نے ابو حنیفہ سے روایت کیا ہے۔ ت) روایت فرماتے ہیں اگر وہی روایت اس طریق سے مروی ہوتی روی ابو یوسف عن ابی حنیفہ (امام ابو یوسف نے امام ابو حنیفہ سے روایت کیا۔ ت) کہا جاتا، نہ روی ابو عصمہ (شیخ ابو عصمہ نے روایت کیا۔ ت) کہ مہر عالم افروز کو چھوڑ کر چراغ کی طرف نہیں جاتے نہ ہرگز فقہاء کا ادب کہ امام کی وہ روایتیں جو بطریق صاحبین مروی ہیں کسی اور کے نام سے منسوب کیا کریں خصوصاً وہ صاحب بھی ایسے کہ جن کی نسبت کلام ائمہ معلوم ہے، نہیں نہیں بلکہ بیشک یہ روایت جسے بھذا ناخذ (اسی پر ہمارا عمل ہے۔ ت) فرمایا، انہی روایات اصول سے ہے جو

These elegant methods come from the Sahibain (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad). These total eighteen points are present in this very text, after which, if Allah wills, there will be no room for further discussion regarding the clarity of the reality of the matter. Besides this, listen to some powerful and manifest arguments from another part of the same Sharh Ma'ani al-Athar, through which it is also proven that Imam Tahawi vehemently and extensively rejects the fundamental basis of this rejected narration—namely, that the one-fifth of the one-fifth (Khums al-Khums) was a compensation for the Banu Hashim for charities. In the book Wujuh al-Fay' wa Khums al-Ghana'im, he cited a view that according to some, 'Dhul Qurba' (the relatives) in the noble verse refers only to the Banu Hashim because Allah Almighty forbade charity for them, so He gave them the share of Khums as compensation for it. Then he rejects this, saying:

[Arabic Box]: "Indeed, this statement of theirs is corrupt in our view, because when the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) forbade charity for the Banu Hashim, he also forbade it for their freed slaves, just as he forbade it for them, and mass-transmitted reports (mutawatir athar) from him have reached us regarding this. [1]" [Urdu Translation]: "The scholars say that this is corrupt in our view because when the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) forbade charity for the Banu Hashim, he also forbade it for their slaves in the same manner as it is forbidden for the Banu Hashim, and there are mutawatir reports from him on this. (T)"

Then, after mentioning the hadiths of Ibn Abbas, Abu Rafi, and Hormuz or Kaisan (may Allah be pleased with them), he said:

[Arabic Box]: "When the charity forbidden to the Banu Hashim also included their freed slaves, yet by the consensus of Muslims, they were not included with them in the share of 'Dhul Qurba', this established the corruption of the statement of those who say that what was assigned to 'Dhul Qurba' in the verse of Fay' and the verse of the Khums of booty was only as a substitute for the charity that was forbidden for them. [2]" [Urdu Translation]: "In the prohibition of charity, the slaves of the Banu Hashim are also included with them, but by consensus, they are not included with the Banu Hashim in the share of 'Dhul Qurba'. From this, the corruption of the view of those who say that whatever was stipulated for the relatives of the Prophet in the

verse of Fay' and the verse of Khums of booty was in exchange for that charity which was forbidden for them, has become clear. (T)"

Then, after proving the corruption of this being a compensation through another theoretical argument, he said:

[Arabic Box]: "So this indicates that the share of 'Dhul Qurba' was not made for the one for whom there is a substitute from the charity which..." [Urdu Translation]: "This indicates that the share of 'Dhul Qurba' for the people for whom it was stipulated is that which was forbidden upon them..."

---

1 Sharh Ma'ani al-Athar, Kitab Wujuh al-Fay' etc., H.M. Saeed Company Karachi, 2/183
2 Sharh Ma'ani al-Athar, Kitab Wujuh al-Fay' etc., H.M. Saeed Company Karachi, 2/183

फतावा रजविया जिल्द दस

ये खूबसूरत तरीके साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद) से आते हैं। ये कुल अठारह बातें तो इसी इबारत में हैं, जिसके बाद इंशाअल्लाह हकीकत की स्पष्टता में बहस की कोई गुंजाइश नहीं रहेगी। इसके अलावा, इसी 'शराह मआनी अल-आसार' के दूसरे स्थान से कुछ प्रबल और स्पष्ट दलीलें सुनें, जिससे यह भी साबित होता है कि इमाम तहावी इस खारिज की गई रिवायत की मूल बुनियाद—यानी बनी हाशिम के लिए खुमुसुल खुमुस (पांचवें का पांचवां हिस्सा) का सदकात (दान) का मुआवजा होने का—बहुत ही सख्ती और विस्तार से इनकार फरमाते हैं। किताब 'वुजूह अल-फय व खुमुस अल-ग़नाइम' में एक कथन (कौल) फ़रमाया कि कुछ लोगों के नज़दीक आयत-ए-करीमा में 'ज़ुवी अल-कुर्बा' से मुराद सिर्फ बनी हाशिम हैं क्योंकि अल्लाह तआला ने उन पर सदका हराम किया, तो उसने इस (सदके) के बदले खुमुस का हिस्सा उन्हें दिया। फिर वह इसका खंडन करते हुए फ़रमाते हैं कि:

[अरबी बॉक्स]: "वास्तव में उनका यह कथन हमारे निकट भ्रष्ट (फासिद) है, क्योंकि जब अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने बनी हाशिम पर सदका हराम किया, तो उन्होंने उनके आजाद किए गए दासों पर भी इसे उसी तरह हराम किया जैसे उन पर हराम किया था, और इस बारे में उनसे मुतवातिर (लगातार) रिवायतें हैं। [1]" [उर्दू अनुवाद]: "विद्वानों का कहना है कि यह हमारे निकट भ्रष्ट है क्योंकि जब अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने बनी हाशिम पर सदका हराम फ़रमाया तो आपने उनके गुलामों पर भी उसी तरह हराम फ़रमाया जिस तरह बनी हाशिम पर हराम है और इस पर आपसे मुतवातिर आसार (विवरण) मौजूद हैं। (त)"

फिर इब्न अब्बास, अबू राफे और हुरमुज़ या कैसां (रज़ियल्लाहु अन्हुम) की हदीसों का ज़िक्र करके फ़रमाया:

[अरबी बॉक्स]: "चूंकि बनी हाशिम पर हराम किया गया सदका उनके आजाद किए गए दासों को भी शामिल था, और मुसलमानों के आम सहमति (इत्तेफाक) से वे 'ज़ुवी अल-कुर्बा' के हिस्से में उनके साथ शामिल नहीं थे, तो इससे उन लोगों के कथन का भ्रष्टाचार साबित हो गया जो कहते हैं कि जो कुछ आयत-ए-फय और गनीमत के खुमुस की आयत में ज़ुवी अल-कुर्बा के लिए मुक़र्रर किया गया है, वह उस सदके के बदले में है जो उन पर हराम किया गया था। [2]" [उर्दू अनुवाद]: "सदके की हुरमत (मनाही) में बनी हाशिम के साथ उनके गुलाम भी शामिल हैं, लेकिन ज़ुवी अल-कुर्बा के हिस्से

में आम सहमति से बनी हाशिम के साथ शामिल नहीं हैं। इससे उन लोगों के कौल का फासिद होना साफ़ हो गया जो कहते हैं कि आयत-ए-फय और आयत-ए-खुमुस-ए-गनीमत में जो कुछ हुज़ूर के रिश्तेदारों के लिए मुक़र्रर किया गया है, वह उस सदके के बदले में है जो उन पर हराम कर दिया गया है। (त)"

फिर दूसरी तर्कसंगत दलील से इसके मुआवजा होने के भ्रष्ट होने को साबित करके फरमाया:

[अरबी बॉक्स]: "तो यह इस बात का प्रमाण है कि 'ज़ुवी अल-कुर्बा' का हिस्सा उन लोगों के लिए नहीं बनाया गया जिनके लिए वह उस सदके का विकल्प है जो..." [उर्दू अनुवाद]: "यह इस पर दलील है कि ज़ुवी अल-कुर्बा का हिस्सा जिन लोगों के लिए मुक़र्रर किया गया है वह उन पर हराम करदा..."

---

1 शराह मआनी अल-आसार, किताब वुजूह अल-फय आदि, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 2/183 2 शराह मआनी अल-आसार, किताब वुजूह अल-फय आदि, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 2/183

اس طریقہ انیقہ صاحبین سے آتی ہیں۔ یہ مجموع اٹھارہ باتیں تو اس نفس عبارت میں ہیں جن کے بعد ان شاء اللہ تعالٰی وضوح حقیقتہ الامر میں اصلاً مجال کلام نہیں اس کے سوا بعض دلائل قاہرہ و باہرہ اسی شرح معانی الآثار کے دوسرے مقام سے سنیئے جس سے یہ بھی ثابت ہوا کہ امام طحاوی اس روایت مردودہ کے اصل مبنی یعنی بنی ہاشم کے لیے خمس الخمس عوض صدقات ہونے ہی کا بہ نہایت شد و مد انکار بلیغ فرماتے ہیں کتاب وجوہ الفیئ و خمس الغنائم میں ایک قول فرمایا کہ بعض کے نزدیک آیہ کریمہ میں ذوی القربی سے صرف بنی ہاشم مراد ہیں کہ اللہ تعالٰی نے ان پر صدقہ حرام کیا یہ خمس کا حصہ اس کا عوض دیا، پھر اس کا رد فرماتے ہیں کہ:

ان قولهم هذا عندنا فاسد لان رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم لما حرمت الصدقة على بنى هاشم قد حرمها على مواليهم كتحريمه اياها عليهم وتواترت عنه الآثار بذلك۔ 1 علماء کا قول ہے کہ یہ ہمارے نزدیک فاسد ہے کیونکہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے جب صدقہ بنو ہاشم پر حرام فرمایا تو آپ نے ان کے غلاموں پر بھی اسی طرح حرام فرمایا جس طرح بنو ہاشم پر حرام ہے اور اس پر آپ سے متواتر آثار ہیں۔ (ت)

پھر احادیث ابن عباس و ابو رافع و ہرمز یا کیسان رضی اللہ تعالٰی عنہم ذکر کرکے فرمایا:

فلما كانت الصدقة المحرمة على بنى هاشم قد دخل فيهم مواليهم ولم يدخل معهم فى سهم ذوى القربى باتفاق المسلمين ثبت بذلك فساد قول من قال انما جعلت لذى القربى فى اية الفيئ وفى اية خمس الغنيمة بدلا مما حرم عليهم الصدقة۔ 2 صدقہ کی حرمت میں بنو ہاشم کے ساتھ ان کے غلام بھی شامل ہیں مگر ذوی القربی کے حصہ میں بالاتفاق بنو ہاشم کے ساتھ شامل نہیں اس سے ان لوگوں کے قول کا

فساد واضح ہو گیا جو کہتے ہیں کہ ایک آیت فئی اور آیت خمس غنیمت میں جو کچھ حضور کے رشتہ داروں کے لیے مقرر کیا گیا یہ اس صدقہ کے عوض ہے جو اُن پر حرام کردیا گیا ہے۔ (ت)

پھر دوسری دلیل نظری سے اس عوض ہونے کا فساد ثابت کرکے فرمایا:

فدل ذلك ان سهم ذوی القربی لم یجعل لمن له خلفا من الصدقة التي یہ اس پر دال ہے کہ ذوی القربی کا حصہ جن لوگوں کے لیے مقرر کیا گیا ہے وہ ان پر حرام کردہ

---

1 شرح معانی الآثار کتاب وجوہ الفیئ الخ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱۸۳/۲ 2 شرح معانی الآثار کتاب وجوہ الفیئ الخ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱۸۳/۲

Fatawa Razawiyya, Volume 10

Prohibition for him.[1] | Not a compensation for charity. (T)

Then it was explicitly stated that charity is forbidden for the Bani Hashim, and after proving this with multiple Hadiths, it was said: Does he not see that while charity is permissible for all the poor other than the Bani Hashim due to poverty, it is not permissible for the Bani Hashim for the same reason it is permissible for others? Similarly, if Fai and spoils (Ghanimah) were given to them on account of poverty, then these would also not be permissible for them. (T)[2]

Now does any clarification of the truth remain? Praise be to Allah. This is how research should be; Allah (the Glorified and Exalted) alone is the Giver of success. (Praise and glory be to Allah, and research is fitting only for Him; Allah (the Glorified and Exalted) is the owner of success. T) As for Imam Tahawi mentioning a justification for this narration within his discourse, in our opinion, the Imam's attention turned this way based on this narration; the marginalia originally has no connection with its adoption. It is the practice of scholars to mention the evidence for each of the various opinions; books like Hidaya, Kafi, etc., are in this style. Then, the preferred view remains the preferred view. Attributing the statement solely to Abu Yusuf is not strange, as there is already a mention of a difference in narration from the Imam, and among the two companions (Sahibayn), Abu Yusuf is the greatest and foremost. Moreover, the school of thought of everyone has already been written above; here it was only to point out that, in short, the discourse of Imam Tahawi proclaims loudly that he is nowhere near favoring or authenticating this weak narration, but rather is absolutely certain about its prohibition. And in this, he is so certain that he even rules on the prohibition of voluntary charity (nafilah), as is the preferred view among the absolute researchers and some other prominent figures. (As is prevalent among absolute researchers and some other great scholars. T) Perhaps initially, as necessitated by 'Allah refuses infallibility except for His speech and the speech of His Messenger (peace and blessings of Allah be upon him)' (Infallibility belongs only to the Word of Allah and the word of the Messenger, peace and blessings of Allah be upon him. T), the sight of some narrating scholars slipped, and they thought that 'And this is what we take' refers to that weak narration. Subsequently, later scholars continued to transmit it from one to another, and there was no occasion for critical evaluation or review.

[1] Sharh Ma'ani al-Athar, Kitab Wujuh al-Fai wa Qism al-Ghana'im, H.M. Saeed Company, Karachi, 2/184. [2] Sharh Ma'ani al-Athar, Kitab Wujuh al-Fai wa Qism al-Ghana'im, H.M. Saeed Company, Karachi, 2/184.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (खंड 10)

उस पर हराम है।[1] | सदक़ा का मुआवज़ा (बदला) नहीं। (त)

फिर स्पष्ट किया गया कि बनी हाशिम पर सदक़ा हराम है और इसे कई हदीसों से साबित करके फ़रमाया गया: क्या वह यह नहीं देखते कि बनी हाशिम के अलावा गरीबी के कारण सभी गरीबों के लिए सदक़ा हलाल है, लेकिन बनी हाशिम पर उस कारण से हलाल नहीं है जिस कारण से दूसरों के लिए हलाल है? तो इसी तरह फ़य (Fai) और ग़नीमत (spoils), अगर ये गरीबी की वजह से उन्हें दिए जाएं तो ये भी उनके लिए हलाल नहीं होंगे। (त)[2]

अब भी क्या सच की कोई और स्पष्टता बाकी है? अल्लाह का शुक्र है। शोध ऐसा ही होना चाहिए; अल्लाह सुब्हानहु ही तौफ़ीक़ (सफलता) देने वाला है। (अल्लाह तआला के लिए ही सारी प्रशंसा है और शोध उसी के योग्य है; अल्लाह सुब्हानहु व तआला ही तौफ़ीक़ का मालिक है। त) रही बात इमाम तहावी की कि उन्होंने अपनी बातचीत के दौरान इस रिवायत की एक व्याख्या ज़िक्र की, तो हमारे विचार में इस रिवायत के आधार पर इमाम की नज़र इस तरफ गई; हाशिये का मूल रूप से इसे अपनाने से कोई संबंध नहीं है। विद्वानों की यह प्रथा है कि वे विभिन्न कथनों में से प्रत्येक की दलील ज़िक्र करते हैं; हिदाया, काफ़ी आदि इसी शैली की किताबें हैं। फिर, चुनिंदा मत वही रहता है जो चुनिंदा है। और बात को केवल अबू यूसुफ़ की तरफ़ मंसूब (जोड़ना) करना कोई अचरज की बात नहीं है, क्योंकि इमाम से तो रिवायत के मतभेद का वर्णन ही है, और साहिबैन (दो शिष्यों) में अबू यूसुफ़ सबसे महान और सबसे पुराने हैं। इसके अलावा, सभी का मज़हब तो ऊपर लिख ही चुके हैं; यहाँ केवल यह बताना था कि संक्षेप में इमाम तहावी का कलाम पुकार-पुकार कर कह रहा है कि वे हरगिज़ इस कमज़ोर रिवायत को तरजीह (प्राथमिकता) देने या सही ठहराने के करीब भी नहीं हैं, बल्कि वे निश्चित रूप से इसके हराम होने पर अडिग हैं। और इसमें वे यहाँ तक अडिग हैं कि नफ़ल सदक़े के हराम होने पर भी हुक्म लगाते हैं, जैसा कि परम शोधकर्ताओं और कुछ अन्य दिग्गजों के नज़दीक प्रचलित है। (जैसा कि मुहक़्क़िक अल-इतलाक़ और कुछ अन्य बड़ों के यहाँ प्रचलित है। त) संभवतः शुरुआत में, 'अल्लाह अपनी और अपने रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की बात के अलावा किसी की मासूमियत (भूल न करना) स्वीकार नहीं करता' (मासूमियत केवल अल्लाह के कलाम और रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के कलाम को ही हासिल है। त) के तकाज़े के अनुसार, कुछ नकल करने वाले विद्वानों की नज़र चूक गई और उन्हें लगा कि 'हम इसे ही लेते हैं'

(بهذا ناخذ) का इशारा उस कमज़ोर रिवायत की ओर है। फिर बाद के विद्वान इसे एक से दूसरे तक नकल करते चले गए और इसकी जाँच या समीक्षा का अवसर नहीं मिला।

[1] शरह मआनी अल-आसार, किताब वुज़ूह अल-फ़य व क़िस्म अल-ग़नाइम, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 2/184। [2] शरह मआनी अल-आसार, किताब वुज़ूह अल-फ़य व क़िस्म अल-ग़नाइम, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 2/184।

पृष्ठ 289/836

فتاوی رضویہ، جلد دہم

حرمت علیہ۔ [1] | صدقہ کا عوض نہیں۔ (ت)

پھر تصریح کی کہ بنی ہاشم پر صدقہ حرام ہے اور اسے احادیث متعددہ سے ثابت فرما کر ارشاد کیا: افلا یری ان الصدقة التي تحل لسائر الفقراء من غیر بنی هاشم من جهة الفقر لاتحل لبنی هاشم من حیث تحل لغیرهم فکذلك الفیئ الغنیمة لو کان ما یعطون منها علی جهة الفقر اذا لما حل لهم۔[2] کیا وہ یہ ملاحظہ نہیں کرتے کہ بنو ہاشم کے علاوہ فقر کی وجہ سے تمام فقراء کے لیے صدقہ حلال ہے، لیکن بنو ہاشم پر اس علت کی بنا پر حلال نہیں جس کی بنا پر اوروں کے لیے حلال ہے تو اسی طرح فیئ اور غنیمت ، اگر یہ فقر کی وجہ سے انہیں عطا کئے جائیں تو یہ بھی ان کے لیے حلال نہ ہونگے۔ (ت)

اب بھی کچھ وضوح حق باقی رہا وللہ الحمد ہکذا اینبغی التحقیق اللہ سبحانہ ولی التوفیق (اللہ تعالٰی ہی کے لیے ہے حمد و ثناء اور تحقیق کے لیے ہی مناسب ہے اللہ سبحانہ و تعالٰی ہی توفیق کا مالک ہے۔ ت) رہا کہ امام طحاوی ضمنِ کلام میں اس روایت کی ایک توجیہ ذکر فرما گئے کہ ہمارے خیال میں اس روایت کی بنا پر امام کی نظر اس طرف گئی، حاشیہ اصلاً اس کے اختیار سے علاقہ نہیں رکھتا، علماء کا داب ہے کہ اقوال مختلفہ میں ہر ایک کی دلیل ذکر فرماتے ہیں ہدایہ وکافی وغیرہ ہما اس رنگ کی کتابیں اسی انداز پر ہیں، پھر مختار وہی ہے جو مختار ہے اور قول کو صرف ابو یوسف کی طرف نسبت کرنا کچھ مستغرب نہیں کہ امام سے تو اختلافِ روایت کا بیان ہی ہے اور صاحبین میں اعظم واقدم ابو یوسف ہیں، معہذا مذہب تو سب کا اوپر لکھ ہی چکے، یہاں فقط بتادینا تھا بالجملہ کلام امام طحاوی بہ اعلٰی ندا منادی، کہ وہ ہر گز اس روایتِ ضعیفہ کی ترجیح و تصحیح کے پاس بھی نہیں بلکہ قطعاً تحریم پر جازم، اور اس میں بھی یہاں تک جازم کہ تحریم

نافلہ پر بھی حاکم، کما ھو المرجح عند المحقق علی الاطلاق والبعض الآخرین من الحذاق (جیسا کہ محقق علی الاطلاق اور بعض دیگر اکابرین کے نزدیک رائج ہے۔ ت) غالباً ابتداء میں بمقتضائے یابی اللہ العصمۃ الّا لکلامہ وکلام رسولہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم (عصمت صرف کلام اللہ اور کلام رسول صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو ہی حاصل ہے۔ ت) بعض علمائے ناقلین کی نظر نے لغزش فرمائی اور بہذا ناخذ (اسی پر ہمارا عمل ہے۔ ت) کی مشار الیہ وہ روایت ضعیفہ خیال میں آئی پھر علمائے مابعد، نقل در نقل فرماتے چلے آئے نقد یا مراجعت کا اتفاق نہ ہوا

1 شرح معانی الآثار، کتاب وجوہ الفیئ و قسم الغنائم ، ایچ ایم سعید کمپنی، کراچی، ۱۸۴/۲ 2 شرح معانی الآثار کتاب وجوہ الفیئ و قسم الغنائم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱۸۴/۲

Otherwise, God forbid, their noble statuses are far higher than to look into the explanation of traditions without assistance and contemplation and to determine such a meaning for its text. Allama Zain Nujaym al-Misri states in Bahr-ur-Raiq:

"It often happens that an author makes a mistake in his book, and then the scholars who come after him quote that phrase without any change. Thus, the number of people quoting it increases, even though the original error was made by only one person, etc." (T)

Although an avid seeker of knowledge may find my lengthy discourse entirely unfamiliar, I hope that, God willing, this beautiful refinement and grand critique of this point was the portion of this person of no means from the blessings of the scholars. (Poetry: Even the ground gets a share from the table of the generous.)

"So observe and be grateful, and praise be to Allah, the Greatest. We have prolonged the discussion on this matter because it reached us that some contemporary scholars from the elite of Rampur, being misled by that narration and that preference, have declared Zakat permissible for the descendants of the Prophet (Peace be upon him). Protection (from error) is only by Allah, the Mighty, the All-Forgiving." (T)

In short, I state with conviction that indeed Zakat is forbidden for the Banu Hashim, and indeed fatwa on this is mandatory, and indeed deviating from this is impermissible. That narration is weak (marjuh) and intellectually flawed (majruh), and indeed Imam Tahawi is definitive against it. Their correction towards the 'Zahir-al-Riwayah' (manifest report) is predominant. To Allah is the return and to Him is the turning back (Allah is the only return and refuge. T). And Allah, Glory be to Him and Exalted is He, knows best the right way.

Problem 129: Sent by Maulvi Hafiz Muhammad Amirullah Sahib, 2nd Jumada al-Ula 1306 AH. What do the scholars of the religion say about this matter: Is it better to give Zakat to the most needy, especially those needy who are close relatives? Is this command absolute? For example, can Banu Hashim give Zakat to their needy relatives, or are they excluded due to the Hadith:

---

[1] Bahr-ur-Raiq, Kitab al-Buyu', Bab al-Tafruqat, H.M. Saeed Company Karachi, 185/6

फ़तावा-ए-रज़विया - जिल्द दहम (खंड 10)

वरना खुदा न करे, उनकी महान प्रतिष्ठा इससे कहीं ऊँची है कि वे बिना किसी सहायता और चिंतन के हदीसों की व्याख्या पर नज़र डालें और उसके इबारत के ये अर्थ निर्धारित करें। अल्लामा ज़ैन नुजैम अल-मिस्री 'बहर-उर-राइक' में फ़रमाते हैं:

"अक्सर ऐसा होता है कि एक लेखक अपनी पुस्तक में कोई गलती करता है, और फिर उसके बाद आने वाले विद्वान बिना किसी बदलाव के उस इबारत को उद्धृत (नकल) कर देते हैं। इस प्रकार उद्धृत करने वालों की संख्या बढ़ जाती है, जबकि असल गलती करने वाला एक ही था, आदि।" (त)

यद्यपि ज्ञान का खोजी मेरी इस लम्बी बातचीत को पूरी तरह अपरिचित पाएगा, लेकिन मुझे उम्मीद है कि इंशा अल्लाह, इस मुकाम की यह सुंदर व्याख्या और महान आलोचना विद्वानों के आशीर्वाद से इस साधनहीन व्यक्ति का हिस्सा थी। (कविता: उदार लोगों की दस्तरख़्वान से ज़मीन को भी हिस्सा मिलता है।)

"अतः विचार करें और शुक्र अदा करें, और सब प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो सबसे बड़ा है। हमने इस मुकाम पर विस्तार से चर्चा इसलिए की है क्योंकि हमें खबर मिली है कि रामपुर के कुछ समकालीन प्रतिष्ठित विद्वानों ने उस रिवायत और उस विकल्प के झांसे में आकर सादात-ए-कराम (सैयदों) के लिए ज़कात को जायज़ करार दे दिया है। गुनाहों से सुरक्षा केवल अल्लाह की मदद से है जो प्रभुत्वशाली और क्षमाशील है।" (त)

संक्षेप में, मैं दृढ़ता के साथ कहता हूँ कि निःसंदेह बनी हाशिम पर ज़कात हराम है, और निश्चित रूप से इसी पर फ़तवा देना अनिवार्य है, और इससे विचलन (हटना) नाजायज़ है। वह रिवायत 'मरजूह' (कमज़ोर) और तर्क के आधार पर दोषपूर्ण है, और निःसंदेह इमाम तहावी इसके खिलाफ़ दृढ़ हैं। ज़ाहिर-उर-रिवायत की तरफ उनकी सुधार करना ही प्रबल है। अल्लाह ही की तरफ लौटना है और वही शरणस्थली है। (त) और अल्लाह सुब्हानहु व तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 129: प्रेषक मौलवी हाफिज़ मुहम्मद अमीरुल्लाह साहब, 2 जमादी अल-उला 1306 हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि क्या ज़कात सबसे अधिक ज़रूरतमंद को देना बेहतर है, विशेष रूप से वह ज़रूरतमंद जो अपना क़रीबी रिश्तेदार हो? क्या यह हुक्म पूर्ण है? उदाहरण के तौर पर क्या बनी हाशिम अपने ज़रूरतमंद रिश्तेदारों को ज़कात दे सकते हैं, या हदीस के कारण वे इसमें शामिल नहीं हैं:

[1] बहर-उर-राइक, किताब-उल-ब्यू, बाब अत-तफरुक़ात, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 185/6 पृष्ठ 290 / 836

ورنہ حاش للہ ان کی جلیل شانیں اس سے بس ارفع ہیں کہ با معاون و تدبر شرح آثار پر نظر فرماتے اور اس کی عبارت کے یہ معنی ٹھہراتے، علامہ زین نجیم مصری بحر الرائق میں فرماتے ہیں:

قد یقع کثیرا ان مؤلفا یذکر شیئا خطأ في کتابه فیأتي من بعده من المشائخ فینقلون تلك العبارة من غیر تغییر فیکثر الناقلون لها واصلها الواحد مخطئ الخ | بہت دفعہ ایسا ہو جاتا ہے کہ ایک مصنف اپنی کتاب میں خطا کرتا ہے تو بعد کے مشائخ اسے بغیر کسی تبدیلی کے نقل کردیتے ہیں، ناقلین کثیر ہو جاتے ہیں حالانکہ اصل خطا کرنے والا ایک ہی تھا الخ (ت)

مشتعل علم اگرچہ میری اس طویل تقریر کو بالکل گوش ناآشنا پائے گا مگر امید کرتا ہوں کہ ان شاء اللہ تعالٰی اس مقام کی تنقیح جمیل و تنقید جلیل برکات علماء سے اس بے بضاعت کا حصہ تھا ع ولارض من کاس الکرام نصیب (زمین کے لیے بھی سخیوں کے دسترخوان سے حصہ ہوتا ہے)

فتبصر وتشکر والحمد للہ الاکبر، وانما اطلنا الکلام في هذا المقام لما بلغنا عن بعض علماء العصر من اجلة رامفور من اباحة الزکوة لحضرات الاشراف اغترارا بتلك الروایة وذاك الاختیار، وما العصمة الا باللہ العزیز الغفار۔ | غور کر، شکر کر، حمد اللہ کے لیے جو سب سے بڑا ہے۔ ہم نے اس مقام پر خوب طویل گفتگو اس لیے کی ہے کہ بعض معاصرین علمائے رامپور نے اس روایت کی بنا پر غلط فہمی کا شکار سادات کرام کے لیے زکوٰۃ کو مباح قرار دیا ہے، عصمت اللہ غالب غفار کے لیے ہی ہے (ت)

غرض میں جزم کرتا ہوں کہ بے شک بنی ہاشم پر زکوٰۃ حرام ہے اور بیشک اسی پر افتاء واجب اور بیشک اس سے عدول ناجائز، اور بے شک وہ روایت روایتِ مرجوح اور درایۃً مجروح اور

بیشک امام طحاوی اس کے خلاف پر قاطع، اور بے شک اُن کی تصحیح جانب ظاہر الروایۃ راجح، والی اللہ الرجعی والیہ متاب (اللہ ہی کی طرف لوٹنا ہے اور وہی ماوی و ملجاء ہے۔ت) واللہ سبحانہ وتعالی اعلم بالصواب۔

مسئلہ ۱۲۹: مرسلہ مولوی حافظ محمد امیر اللہ صاحب ۲ جمادی الاولی ۱۳۰۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زکوٰۃ احوج کو دینا اولیٰ ہے خصوصاً جو احوج اپنا قریب ہو یہ حکم مطلق ہے مثلاً بنی ہاشم اپنے اقارب احوج کو زکوٰۃ دیں یا یہ مخصوص ہیں بوجہ حدیث:

---

[1] بحر الرائق کتاب البیوع باب التفرقات ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۶/۱۸۵ Page 290 of 836

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Arabic]: O Bani Hashim, Allah Almighty has forbidden for you the washing of people and their filth, etc. [Urdu]: O Bani Hashim! Allah the Almighty has forbidden for you the washing of people and their grime, etc. (T). State the ruling, you shall be rewarded.

Answer: Indeed, giving Zakat and all other charities to one's dear relatives is superior and a cause for double reward. Zainab Thaqafiyya, the wife of Abdullah bin Masood, and an Ansari lady (may Allah be pleased with them) came to the noble door and sent a message through Hazrat Bilal (may Allah be pleased with him) asking if they could give their charities to their relatives. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said:

[Arabic]: For them are two rewards: the reward of kinship and the reward of charity. [Citation]: Narrated by Ahmad and the Two Shaykhs from Zainab, may Allah be pleased with her. [Urdu Translation]: For them there will be two rewards: one reward for kinship and the other for charity (Narrated by Imam Ahmad, Bukhari and Muslim from Hazrat Zainab, may Allah be pleased with her - T).

And he (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Arabic]: Charity to the poor is one charity, and to a relative it is two: charity and keeping ties of kinship. [Citation]: Narrated by An-Nasa'i and At-Tirmidhi, who graded it Hasan. Ibn Khuzaymah and Ibn Hibban narrated it in their Sahihs, and Al-Hakim narrated it and said its chain of narration is Sahih. [Urdu Translation]: Giving to a poor person is one charity, and giving to a relative is double: one charity and one keeping of kinship ties (Narrated by Nasa'i and Tirmidhi, who called it Hasan. Ibn Khuzaymah and Ibn Hibban narrated it in their Sahihs, and Al-Hakim narrated it and said its chain of narration is Sahih. - T).

Rather, it is mentioned in the Hadith that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Arabic]: O nation of Muhammad, by Him Who sent me with the truth, Allah does not accept charity from a man whose relatives are in need of his kindness and he spends it on others. [Urdu Translation]: O nation of Muhammad (peace and blessings of Allah be upon him), by the One who sent me with the truth, Allah the Almighty does not accept the charity of a person whose relatives are his...

1 Nasb al-Rayah li-Ahadith al-Hidayah, Kitab al-Zakat, Al-Maktabah al-Islamiyyah, owner Al-Haj Riyad al-Sheikh, 2/403. 2 Sahih Muslim, Kitab al-Zakat, section on Spending and Charity on Relatives, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/323. 3 Jami' at-Tirmidhi, chapters on Zakat, chapter on what has been narrated regarding charity on relatives, Amin Company, Delhi, 1/83.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

[अरबी]: ऐ बनी हाशिम, अल्लाह तआला ने तुम पर लोगों का धोवन और उनका मैल हराम कर दिया है इत्यादि। [उर्दू]: ऐ बनी हाशिम! अल्लाह तआला ने तुम पर लोगों का बचा हुआ और उनका मैल हराम कर दिया है इत्यादि (त)। बयान फरमाएं सवाब पाएंगे।

जवाब: बेशक ज़कात और सभी सदक़ात अपने अज़ीज़ों और रिश्तेदारों को देना अफ़ज़ल और दोगुने सवाब का सबब है। ज़ैनब सक़फ़िया, जो अब्दुल्लाह बिन मसूद की पत्नी थीं, और एक अनसारी बीवी (अल्लाह उन पर राज़ी हो) हुज़ूर के दरबार में हाज़िर हुईं और हज़रत बिलाल (अल्लाह उन पर राज़ी हो) के ज़रिए अर्ज़ करवाया कि क्या हम अपने सदक़ात अपने रिश्तेदारों को दें? हुज़ूर पुर नूर (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने फरमाया:

[अरबी]: उनके लिए दो सवाब होंगे: रिश्तेदारी का सवाब और सदक़ा का सवाब। [संदर्भ]: इसे अहमद और दोनों शेखों ने हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु तआला अन्हा से रिवायत किया है। [हिन्दी अनुवाद]: उनके लिए दो सवाब होंगे: एक रिश्तेदारी का सवाब और दूसरा सदक़ा का (इसे इमाम अहमद, बुखारी और मुस्लिम ने हज़रत ज़ैनब रज़ियल्लाहु तआला अन्हा से रिवायत किया है - त)।

और आप (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

[अरबी]: मिस्कीन पर सदक़ा एक सदक़ा है और रिश्तेदार पर दो हैं: सदक़ा और सिला-ए-रहम। [संदर्भ]: इसे नसाई और तिर्मिज़ी ने बयान किया और इसे हसन कहा। इब्न खुज़ैमा और इब्न हब्बान ने अपनी सहीह में और हाकिम ने रिवायत किया और कहा कि इसकी सनद सही है। [हिन्दी अनुवाद]: मिस्कीन को देना एक सदक़ा है और रिश्तेदार को देना दोगुना है: एक सदक़ा और दूसरा सिला-ए-रहम (रिश्तेदारी निभाना)। (इसे नसाई और तिर्मिज़ी ने बयान किया और इसे हसन कहा। इब्न खुज़ैमा और इब्न हब्बान ने अपनी अपनी सहीह में और हाकिम ने रिवायत किया और कहा कि इसकी सनद सही है। - त)।

बल्कि हदीस में है कि हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

[अरबी]: ऐ उम्मते मोहम्मद, उस ज़ात की कसम जिसने मुझे हक़ के साथ भेजा, अल्लाह उस आदमी का सदक़ा कबूल नहीं फरमाता जिसके रिश्तेदार उसकी मदद के मोहताज हों और वह उसे दूसरों पर खर्च करे। [हिन्दी अनुवाद]: ऐ उम्मते मोहम्मद (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम), उस ज़ात

की कसम जिसने मुझे हक़ के साथ भेजा, अल्लाह तआला उस आदमी का सदक़ा कबूल नहीं फरमाता जिसके रिश्तेदार उसकी मदद के मोहताज हों...

---

1 नस्ब-उर-राया ली-अहादीस-इल-हिदाया, किताब-उज़्-ज़कात, अल-मकतब-तुल-इस्लामिया, मालिक अल-हाज रियाज़ अल-शेख, 403/2। 2 सहीह मुस्लिम, किताब-उज़्-ज़कात, फ़स्ल अल-नफ़क़ा वल-सदक़ा अल-अल-अक़रबीन, कदीमी कुतुब खाना कराची, 323/1। 3 जामे-उत-तिर्मिज़ी, अबवाब-उज़्-ज़कात, बाब मा जाआ फ़िस-सदक़ा अला ज़ील-कराबा, अमीन कंपनी दिल्ली, 83/1।

पृष्ठ 836 का 291

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

یا بنی ہاشم حرم اللہ تعالٰی علیکم غسالۃ الناس واوساخھم الخ۔ اے بنی ہاشم! اللہ تعالٰی نے تم پر لوگوں کا بچا ہوا اور ان کی میل حرام کردی ہے الخ (ت) کے۔ بینوا توجروا۔

الجواب: بیشک زکوٰۃ اور سب صدقات اپنے عزیزوں قریبوں کو دینا افضل اور دو چند اجر کا باعث ہے، زینب ثقفیہ زوجہ عبداللہ بن مسعود اور ایک بی بی انصاریہ رضی اللہ تعالٰی عنہم در اقدس پر حاضر ہوئیں اور حضرت بلال رضی اللہ تعالٰی عنہ کی زبانی عرض کر بھیجا کہ ہم اپنے صدقات اپنے اقارب کو دیں، حضور پر نور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا:

لھما اجران اجر القرابۃ واجر الصدقۃ۔ رواہ احمد والشیخان من زینب رضی اللہ تعالٰی عنہا۔ ان کے لیے دو ثواب ہوں گے ایک ثواب قرابت اور دوسرا تصدق کا (اسے امام احمد، بخاری اور مسلم نے حضرت زینب رضی اللہ تعالٰی عنہا سے روایت کیا۔ت)

اور فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم :

الصدقۃ علی المسکین صدقۃ وعلی ذی الرحم ثنتان، صدقۃ وصلۃ۔ اخرجہ النسائی والترمذی وحسنہ وابن خزیمہ و ابن حبان فی صحیحھما والحاکم وقال صحیح الاسناد۔ مسکین کو دینا ایک صدقہ ہے اور رشتہ دار کو دینا دوہرا، ایک تصدق اور ایک صلہ رحم (اسے نسائی اور ترمذی نے بیان کیا اور اسے حسن کہا۔ ابن خزیمہ اور ابن حبان نے اپنی اپنی صحیح میں اور حاکم نے روایت کیا اور کہا اس کی سند صحیح ہے۔ ت)

بلکہ حدیث میں ہے حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں :

یا امة محمد والذی بعثنی بالحق لا یقبل اللہ صدقة من رجل وله قرابة محتاجون الی صلته و یصرفها الی غیرهم اے امت محمد (صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم) قسم اس کی جس نے مجھے حق کے ساتھ بھیجا اللہ تعالیٰ اس کا صدقہ قبول نہیں فرماتا جس کے رشتہ دار اس کے

---

1 نصب الرایة لاحادیث الهدایة کتاب الزکوة المکتبة الاسلامیه صاحبها الحاج ریاض الشیخ ۴۰۳/۲ 2 صحیح مسلم، کتاب الزکوة فصل النفقة والصدقة علی الاقربین قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۳۲۳ 3 جامع الترمذی ابواب الزکوة باب ماجاء فی الصدقة علی ذی القرابة امین کمپنی دہلی ۱/۸۳

(Arabic): "By Him in Whose hand is my soul! Allah will not look at him on the Day of Resurrection [who ignores his relatives in need]."[1] (Narrated by At-Tabarani from Abu Huraira, may Allah be pleased with him. - T)

(Urdu Translation): ...maintain ties of kinship with those in need, yet he ignores them and gives charity to others. By Him in Whose hand is my life, Allah the Almighty will not look at him on the Day of Resurrection. (Narrated by At-Tabarani from Hazrat Abu Huraira, may Allah be pleased with him. - T)

However, this is only in the case where giving charity to those relatives is permissible. For Zakat, the pure Sharia has specified the recipients and clearly stated who can receive it. Among one's relatives, those who are prohibited from receiving it absolutely have no entitlement, nor will Zakat be fulfilled if given to them—just as giving to one's wealthy brother or poor son. Similarly, one's Hashimite relatives, whom the pure Sharia has explicitly excluded, and indeed the absolute texts are clear.

(Arabic): Both Shaykhs (Bukhari & Muslim) narrated, and the wording is Muslim's, from Abu Huraira (may Allah be pleased with him) who said: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Indeed, charity is not lawful for us."[2] Narrated by Ahmad, Abu Dawud, and At-Tirmidhi who classified it as Sahih (authentic). An-Nasa'i and Al-Hakim stated it meets the criteria of the two Shaykhs, and the two Shaykhs agreed with them. Ibn Khuzaymah, Ibn Hibban, and At-

(Urdu Translation): In the wording of Muslim, narrated by Hazrat Abu Huraira (may Allah be pleased with him), the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Charity is not lawful for us." Musnad Ahmad, Abu Dawud, and Tirmidhi classified it as Sahih. An-Nasa'i and Al-Hakim stated it meets the criteria of the two Shaykhs. Hadith scholars affirmed it. Ibn Khuzaymah, Ibn Hibban, and At-Tahawi narrated from Hazrat Abu Rafi' (who is the freed slave of the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him) from the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon

(Arabic): "By Him in Whose hand is my soul! Allah will not look at him on the Day of Resurrection [who ignores his relatives in need]."[1] (Narrated by At-Tabarani from Abu Huraira, may Allah be pleased with him. - T)

(Urdu Translation): ...maintain ties of kinship with those in need, yet he ignores them and gives charity to others. By Him in Whose hand is my life, Allah the Almighty will not look at him on the Day of Resurrection. (Narrated by At-Tabarani from Hazrat Abu Huraira, may Allah be pleased with him. - T)

Tahawi narrated from Abu Rafi' (the freed slave of the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Charity is not lawful for us." [3] Ahmad and Ibn Hibban narrated with an authentic chain from Al-Hasan bin Ali (may Allah be pleased with him).

him) that: "Charity is not lawful for us." Musnad Ahmad and Ibn Hibban narrated with an authentic chain from Hazrat Hasan bin Ali (may Allah be pleased with them).

1. Majma' al-Zawa'id, referencing Mu'jam al-Awsat, Chapter: Charity to Relatives, etc., Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, 3/117.
2. Sahih Muslim, Book of Zakat, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/344.
3. Jami' at-Tirmidhi, Chapters of Zakat, Chapter on the Dislike of Charity for the Prophet, etc., Amin Company Delhi, 1/143. Note: In the mentioned reference from Sahih Muslim, instead of "from Abu Huraira", it is "from Shu'bah for this chain".

(अरबी): "उसकी शपथ जिसके हाथ में मेरी जान है! अल्लाह क़यामत के दिन उस व्यक्ति की ओर नहीं देखेगा [जो अपनी ज़रूरतमंद रिश्तेदारों को छोड़ देता है]।"[1] (अल-तबरानी ने हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है।)

(उर्दू अनुवाद): ...ज़रूरतमंदों के साथ अच्छा व्यवहार रखें, फिर भी वह उन्हें छोड़कर दूसरों को सदक़ा देता है। उसकी क़सम जिसके हाथ में मेरी जान है, अल्लाह तआला क़यामत के दिन उसकी ओर नहीं देखेगा। (इसे तबरानी ने हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। - टी)

हालांकि, यह केवल उसी स्थिति में है जब उन रिश्तेदारों को सदक़ा देना जायज़ हो। ज़कात के लिए पाक शरीयत ने हक़दारों को निर्धारित किया है और स्पष्ट रूप से बताया है कि किसे दिया जा सकता है। किसी के रिश्तेदारों में वे लोग जिन्हें ज़कात देने से मना किया गया है, उनका कोई अधिकार नहीं है, और न ही उन्हें देने से ज़कात अदा होगी—जैसे कि अपने धनी भाई या गरीब बेटे को देना। इसी तरह, अपने हाशमी रिश्तेदार, जिन्हें शरीयत ने स्पष्ट रूप से अपवाद माना है, और वास्तव में पूर्ण ग्रंथ (नसूस) स्पष्ट हैं।

(अरबी): दोनों शेखों (बुखारी और मुस्लिम) ने रिवायत किया और शब्द मुस्लिम के हैं, हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, उन्होंने कहा कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "बेशक सदक़ा हमारे लिए हलाल नहीं है।" [2] अहमद, अबू दाऊद और तिर्मिज़ी ने इसे सही (प्रामाणिक) कहा। अल-नसाई और अल-हाकिम ने कहा

(उर्दू अनुवाद): और मुस्लिम के शब्दों में हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से वर्णित है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: "हमारे लिए सदक़ा हलाल नहीं है।" मुसनद अहमद, अबू दाऊद और तिर्मिज़ी ने सही कहा। नसाई, हाकिम ने कहा कि यह शेखन की शर्तों पर है। मुहद्दिसीन ने इसे प्रमाणित रखा। इब्न खुज़ैमा, इब्न हिब्बान और तहावी ने हज़रत अबू राफे(जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु

(अरबी): "उसकी शपथ जिसके हाथ में मेरी जान है! अल्लाह क़यामत के दिन उस व्यक्ति की ओर नहीं देखेगा [जो अपनी ज़रूरतमंद रिश्तेदारों को छोड़ देता है]।"[1] (अल-तबरानी ने हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है।)

(उर्दू अनुवाद): ...ज़रूरतमंदों के साथ अच्छा व्यवहार रखें, फिर भी वह उन्हें छोड़कर दूसरों को सदक़ा देता है। उसकी क़सम जिसके हाथ में मेरी जान है, अल्लाह तआला क़यामत के दिन उसकी ओर नहीं देखेगा। (इसे तबरानी ने हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। - टी)

कि यह दो शेखों की शर्तों पर है, और दोनों शेखों ने इस पर सहमति जताई। इब्न खुज़ैमा, इब्न हिब्बान और अत-तहावी ने हज़रत अबू राफे(अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आज़ाद किए हुए गुलाम) से रिवायत किया कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "सदक़ा हमारे लिए हलाल नहीं है।" [3] अहमद और इब्न हिब्बान ने एक सही सनद (श्रृंखला) के साथ हज़रत हसन बिन अली (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है।

अलैहि वसल्लम के आज़ाद किए हुए गुलाम हैं) ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से बयान किया कि: "सदक़ा हमारे लिए हलाल नहीं है।" मुसनद अहमद और इब्न हिब्बान ने सही सनद के साथ हज़रत हसन बिन अली रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत की है।

1. मजमा अल-ज़वाइद, मुजम अल-अवसत के हवाले से, अध्याय: रिश्तेदारों को सदक़ा देना आदि, दार अल-किताब अल-अरबी बेरुत, 3/117.
2. सहीह मुस्लिम, किताब अल-ज़कात, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची, 1/344.
3. जामी अत-तिर्मिज़ी, ज़कात के अध्याय, नबी के लिए सदक़ा की नापसंदगी आदि का अध्याय, अमीन कंपनी दिल्ली, 1/143. नोट: सहीह मुस्लिम के उक्त संदर्भ में "अबू हुरैरा से" के स्थान पर "इस सनद के लिए शुबा से" है।

سلوک کی حاجت رکھیں اور وہ انہیں چھوڑ کر

والذی نفسي بیده لا ینظر الله الیه یوم اوروں پر تصدق کرے، قسم اس کی جس کے ہاتھ میں

القیامة۔[1] اخرجه الطبراني عن ابي هریرة میری جان ہے، اللہ تعالٰی روزِ قیامت اُس پر نظر نہ

رضی الله تعالی عنه۔ فرمائے گا۔ (اسے طبرانی نے حضرت ابوہریرہ رضی

اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ ت)

مگر یہ اسی صورت میں ہے کہ وہ صدقہ اس کے

قریبوں کو جائز ہو، زکوٰۃ کے لیے شریعت مطہرہ نے

مصارف معین فرمادئے ہیں اور جن جن کو دینا جائز

ہے صاف بتادے، اس کے رشتہ داروں میں وہ لوگ

جنھیں دینے سے ممانعت ہے ہرگز استحقاق نہیں

رکھتے، نہ اُن کے دئے زکوٰۃ ادا ہو جیسے اپنے غنی

بھائی یا فقیر بیٹے کو دینا، یونہی اپنا قریب ہاشمی کہ

شریعت مطہرہ نے بنی ہاشم کو صراحۃً مستثنٰی فرمالیا

ہے اور بیشک نصوص مطلق ہیں۔

الشیخان واللفظ لمسلم عن ابي هریرة رضی اور الفاظ مسلم میں حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی

الله تعالی عنه قال قال رسول الله صلی الله عنہ سے مروی ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ

تعالی علیه وسلم انّا لا تحل لنا الصدقة [2] وسلم نے فرمایا: ہمارے لیے صدقہ حلال نہیں۔ مسند

احمد و ابوداؤد والترمذی وصححه والنسائی احمد، ابوداؤد اور ترمذی نے صحیح کہا۔ نسائی، حاکم

سلوک کی حاجت رکھیں اور وہ انہیں چھوڑ کر

والذی نفسي بیدہ لا ینظر اللہ الیہ یوم اوروں پر تصدق کرے، قسم اس کی جس کے ہاتھ میں

القیامۃ-[1] اخرجہ الطبراني عن ابي ہریرۃ میری جان ہے، اللہ تعالیٰ روزِ قیامت اُس پر نظر نہ

رضی اللہ تعالی عنہ- فرمائے گا۔ (اسے طبرانی نے حضرت ابوہریرہ رضی

اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ ت)

والحاکم وقال علی شرط الشیخین واقروہ الشیخان، وابن خزیمۃ وابن حبان والطحاوی عن ابی رافع مولیٰ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم من رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم ان الصدقۃ لا تحل لنا[3] احمد وابن حبان بسند صحیح عن الحسن بن علی رضی اللہ تعالیٰ

نے کہا یہ شیخین کے شرائط پر ہے۔ محدثین نے اسے ثابت رکھا۔ ابن خزیمہ، ابن حبان اور طحاوی نے حضرت ابورافع (جو رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے آزاد کردہ غلام ہیں) نے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے بیان کیا کہ صدقہ ہمارے لیے حلال نہیں۔ مسند احمد اور ابن حبان نے سند صحیح کے ساتھ حضرت حسن بن علی رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے

1 مجمع الزوائد بحوالہ معجم اوسط، باب الصدقۃ علی الاقارب الخ دار الکتاب العربی بیروت، ۳/ ۱۱۷ 2 صحیح مسلم کتاب الزکوٰۃ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۳۴۴ 3 جامع الترمذی ابواب الزکوٰۃ باب ماجاء فی کراھیۃ الصدقۃ للنبی الخ امین کمپنی دہلی ۱/ ۱۴۳ ف: صحیح مسلم میں مذکورہ حوالہ میں "عن ابی ہریرۃ" کی جگہ "عن شعبہ لھذا الاسناد" ہے۔

Fatawa Ridawiyya Volume 10

It is narrated from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): "Indeed, we are the family of Muhammad; charity is not lawful for us." ^1 Narrated by Ahmad from Umm Kulthum (may Allah be pleased with her) and by Muslim from Mihran (the freed slave of the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him), who narrated from the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) a similar report. According to Imam Tahawi, it is narrated from Umm Kulthum that: "We had a freed slave named Hormuz or Kaisan..." (Al-Hadith). At-Tabarani narrated from Ibn Abbas, who attributed it to the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): "Indeed, no part of charity is lawful for you, O People of the Household." ^3 Ahmad, Abu Dawood, An-Nasa'i, and Al-Hakim, who graded it as authentic, and At-Tahawi narrated from Bahz ibn Hakim, from his father, from his grandfather, from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): "No part of charity is lawful for the family of Muhammad." ^4 This is in addition to other general and absolute proofs that are almost impossible to count due to their abundance. (T)

Therefore, the ruling of the Hadiths is an absolute prohibition of Zakat for the Hashimites, whether it is given by a Hashimite or a non-Hashimite. This is the school of thought (Madhab) of the Imam, as per 'Zahir al-Riwayah', and the primary texts (Mutun) are based on it; thus, it is the relied-upon position.

From Al-Durr al-Mukhtar: The apparent position of the school of thought is the absolute prohibition. The saying of Al-Ayni is that a Hashimite may give his Zakat to another Hashimite.	**In Durr al-Mukhtar, it states: The apparent position is that giving charity to the Syeds (descendants of the Prophet) is prohibited in all circumstances. Imam Ayni's statement is that a Hashimite [can give] his zakat to a Hashimite.**

1. Musnad Ahmad ibn Hanbal, narrated from Hasan ibn Ali (may Allah be pleased with him), Dar al-Ma'rifah Beirut 1/200.
2. Sharh Ma'ani al-Athar, Kitab Wujuh al-Fai' wa Qism al-Ghana'im, H.M. Saeed Company Karachi 2/184.
3. Al-Mu'jam al-Kabir, Hadith 11523, narrated from Abdullah ibn Abbas (may Allah be pleased with him), Al-Maktabah al-Faisaliyah Beirut 11/171.
4. Musnad Ahmad ibn Hanbal, Hadith Bahz ibn Hakim etc., Dar al-Fikr Beirut 4/215.

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवाँ

नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से रिवायत है: "बेशक हम मोहम्मद की आल हैं; हमारे लिए सदक़ा हलाल नहीं।" ^1 मुसनद अहमद में हज़रत उम्मे कुलसूम (रज़ियल्लाहु अन्हा) से और मुस्लिम में हज़रत मेहरान (रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आज़ाद करदा गुलाम) से रिवायत है कि उन्होंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से इसी की मिसाल रिवायत की है। इमाम तहावी के नज़दीक यह हज़रत उम्मे कुलसूम से मन्कूल है कि "हमारे एक आज़ाद करदा गुलाम थे जिन्हें हुरमुज़ या कैसां कहा जाता था..." (अल-हदीस)। तबरानी ने हज़रत इब्ने अब्बास से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया: "ऐ अहले बैत! तुम्हारे लिए सदक़ात में से कोई चीज़ हलाल नहीं।" ^3 अहमद, अबू दाऊद, नसाई और हाकिम ने इसे सही कहा। और तहावी ने हज़रत बहज़ बिन हकीम से, उन्होंने अपने वालिद से, उन्होंने अपने दादा से, उन्होंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से रिवायत किया कि आल-ए-मोहम्मद के लिए सदक़ात में से कोई चीज़ हलाल नहीं। ^4 इसके अलावा अन्य सामान्य और निरपेक्ष प्रमाण हैं जिन्हें अधिकता के कारण गिनना कठिन है। (त)

तो बेशक हदीसों का हुक्म हाशमियों पर मुतलक (पूर्णत) ज़कात की हरामियत है, चाहे वह हाशमी की हो या गैर-हाशमी की, और यही इमाम का मज़हब है और यही उनसे ज़ाहिर-अर-रिवायत है और इसी पर मुतून (मूल पाठ) हैं, तो यही मोतमिद (भरोसेमंद) है।

अल-दुर्र अल-मुख्तार में है: मज़हब का ज़ाहिर रुकना (मनाही) का मुतलक होना है। अल-ऐनी का कौल है कि हाशमी अपनी ज़कात हाशमी को दे सकता है।

दुर्रे मुख्तार में है: ज़ाहिर-ए-मज़हब यही है कि सादात को सदक़ा देना हर हाल में मना है। इमाम ऐनी का कौल है कि हाशमी अपनी ज़कात हाशमी [को दे सकता है]।

1. मुसनद अहमद बिन हंबल, हसन बिन अली (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत, दारुल मारिफ़ा बेरुत 1/200
2. शरह मआनी अल-आसार, किताब वुजुह अल-फ़ै व क़िस्म अल-ग़नाइम, एच.एम. सईद कंपनी कराची 2/184
3. अल-मुजम अल-कबीर, हदीस 11523, अब्दुल्ला इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया बेरुत 11/171

4. मुसनद अहमद बिन हंबल, हदीस बहज़ बिन हकीम आदि, दारुल फिक्र बेरुत 4/215

पृष्ठ 293 का 836

مروی ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے فرمایا آل محمد کے لیے صدقہ حلال نہیں۔ مسند احمد میں حضرت ام کلثوم رضی اللہ تعالی عنہا اور مسلم میں حضرت مہران (رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کے آزاد کردہ غلام) سے انھوں نے رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم سے اسی کی مثل روایت کیا ہے، امام طحاوی کے نزدیک یہ حضرت ام کلثوم رضی اللہ تعالی عنہا سے مروی ہے کہ ہمارے آزاد شدہ غلام تھے جنھیں ہرمز یا کیسان کہا جاتا ہے الحدیث، طبرانی نے حضرت ابن عباس سے روایت کیا ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے فرمایا : اے اہل بیت! تمھارے لیے صدقات میں سے کوئی شئی حلال نہیں۔ مسند احمد ، ابو داؤد ، نسائی اور حاکم نے اسے صحیح کہا۔ طحاوی نے حضرت بہز بن حکیم انھوں نے اپنے دادا سے انھوں نے رسالتمآب صلی اللہ تعالی علیہ وسلم سے روایت کیا کہ آل محمد کے لیے صدقات میں سے کوئی شئی حلال نہیں۔ اور ان کے علاوہ دیگر عمومی اور اطلاق دلائل جن کا احصا کثرت کی وجہ سے دشوار ہے۔ (ت)

عنھما عن النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم انا آل محمد لا تحل لنا الصدقۃ،^1 احمد عن ام کلثوم رضی اللہ تعالٰی عنھا ومسلم عن مھران مولی رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم عن رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم مثلہ وھو عند الطحاوی عن ام کلثوم ان مولی لنا یقال لہ ھرمز او کیسان^2 الحدیث الطبرانی عن ابن عباس یرفعہ الی النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم انہ لا یحل لکم اھل البیت من الصدقات شئ،^3 احمد و ابوداؤد والنسائی والحاکم وصححہ والطحاوی عن بھزبن حکیم عن ابیہ عن جدہ عن النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم لا یحل لآل محمد منھا شئ۔^4 الٰی غیر ذلک من العمومات والاطلاقات التی لاتکاد تحصی لکثرتھا۔

تو بیشک حکم احادیث ہاشمیوں پر مطلق زکوۃ کی تحریم ہے خواہ ہاشمی کی ہو یا غیر ہاشمی کی، اور یہی مذہب امام کا ہے اور یہی ان سے ظاہر الروایۃ اور اسی پر متون، تو یہی معتمد ہے،

في الدر المختار ظاہر المذھب اطلاق المنع وقول العینی والھاشمی یجوز لہ دفع زکوتہ

در مختار میں ہے ظاہر مذہب یہی ہے کہ سادات کو صدقہ دینا ہر حال میں منع ہے، امام عینی کا قول کہ ہاشمی اپنی زکوۃ ہاشمی [کو دے سکتا ہے]

1 مسند احمد بن حنبل مروی از حسن بن علی رضی اللہ عنہ دارالمعرفۃ بیروت ۱/ ۲۰۰ 2 شرح معانی الآثار کتاب وجوہ الفیئ وقسم الغنائم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱۸۴/ ۲ 3 المعجم الکبیر حدیث ۱۱۵۲۳ مروی از عبداللہ ابن عباس رضی اللہ عنہ المکتبۃ الفیصلیۃ بیروت ۱۱/ ۷۱ 4 مسند احمد بن حنبل، دیث بہز بن حکیم الخ دارالفکر بیروت ۴/ ۲۱۵

Fatawa Razawiyyah Volume 10

...for the three, correctly it is not permissible, end. 1 And Allah Subhanahu [it can be given to, to declare it correct is not permissible, end]. And Allah Almighty knows best. And Allah Subhanahu wa Ta'ala knows best. (T)

Problem 130: From the city of Bareilly, requested by Munshi Shaukat Ali Sahib, Clerk of Octroi Night, 18 Dhul Hijjah 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it permissible to give Zakat money to an infidel (kafir), polytheist (mushrik), Wahabi, Rafidi, Qadiyani, etc.? Explain and be rewarded.

The Answer: Giving to them is prohibited (haram) and Zakat will not be fulfilled by giving to them. And Allah Almighty knows best.

Problem 131: From Pindol Buzurg, Post Office Raipur, District Muzaffarpur, sent by Niamat Ali Sahib, 4 Rabi' al-Awwal Sharif 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: How is it for a rich and wealthy person to eat something given purely for the sake of Allah and for the countenance of Allah?

The Answer: Obligatory charity (Sadaqah Wajibah) such as Zakat and Sadaqah al-Fitr is prohibited for a wealthy person, but voluntary charity (Sadaqah Nafilah) such as water from a pool or water-carrier, or a room in a traveler's lodge, is permissible for a wealthy person as well. However, charity given on behalf of a deceased person should not be taken by a wealthy person, nor should it be given to one. And Allah Almighty knows best.

Problem 132: From Rander, District Surat, Main Post Office, requested by Janab Maulana Maulvi Faqir Ghulam Mohiuddin Sahib, 27 Ramadan al-Mubarak 1339 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Nowadays, in the Samar Fund, they are demanding Zakat from those who are liable for Zakat and the price of sacrifice from those on whom sacrifice (Qurbani) is obligatory. Large advertisements in Gujarati have been printed for this. Will the Zakat of those liable and the sacrifice of those on whom it is obligatory be fulfilled by giving to the Samar Fund? Explain and be rewarded.

The Answer: It is forbidden for a person on whom sacrifice (Qurbani) is obligatory to not perform the sacrifice and instead give its price to some fund; the sacrifice will never be fulfilled by this. He will be a deserter of an obligation (wajib) and deserving of punishment. Moreover, giving to such collections where people do so of their own

accord, and they mix all contributions like Zakat etc. with Zakat, even with apostates who are ineligible for Zakat like Wahabis and their ilk, mixing them all together.

1 Durr al-Mukhtar, Chapter of Disbursement, Mujtabai Press, Delhi, 1/141. Page 294 of 836

फ़तावा रज़विया खंड दसवां

...तीनों के लिए, सही रूप में यह जायज़ नहीं है, समाप्त। 1 और अल्लाह सुब्हानहु [उसे दिया जा सकता है, इसे सही ठहराना जायज़ नहीं है, समाप्त]। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला १३०: बरेली शहर से, मुंशी शौकत अली साहब, क्लर्क चुंगी रात, १८ ज़ुल हिज्जा १३३९ हिजरी द्वारा पूछा गया। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं: क्या काफ़िर, मुशरिक, वहाबी, राफ़िज़ी, क़ादियानी आदि को ज़कात का पैसा देना जायज़ है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: उन्हें देना हराम है और उन्हें देने से ज़कात अदा नहीं होगी, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला १३१: पिंडोल बुज़ुर्ग, डाकखाना रायपुर, जिला मुजफ्फरपुर से, नेमत अली साहब द्वारा प्रेषित ४ रबी-उल-अव्वल शरीफ १३३७ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं: जो चीज़ शुद्ध रूप से अल्लाह के लिए और अल्लाह की प्रसन्नता के लिए दी जाए, उसे अमीर और धनी व्यक्ति के लिए खाना कैसा है?

उत्तर: वाजिब सदक़ा (सदक़ा वाजिबा) जैसे ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र धनी व्यक्ति पर हराम है, और नफ़ली सदक़ा (सदक़ा नाफ़िला) जैसे हौज या पियाऊ का पानी या मुसाफ़िरखाने का कमरा धनी व्यक्ति के लिए भी जायज़ है। लेकिन मृतक की ओर से जो सदक़ा दिया जाता है, वह धनी व्यक्ति न ले और न धनी को दिया जाए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला १३२: रांदेर, जिला सूरत, मुख्य डाकखाना से, जनाब मौलाना मौलवी फ़क़ीर ग़ुलाम मुहीउद्दीन साहब द्वारा पूछा गया, २७ रमज़ानुल मुबारक १३३९ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं: आज कल समर फंड में ज़कात देने वालों से ज़कात और जिन पर क़ुरबानी वाजिब है उनसे क़ुरबानी की क़ीमत माँगी जा रही है और इसके लिए गुजराती में बड़े-बड़े विज्ञापन छपे हैं। क्या ज़कात वालों की ज़कात और जिन पर क़ुरबानी वाजिब है उनकी क़ुरबानी समर फंड में देने से अदा हो जाएगी? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: जिस पर क़ुरबानी वाजिब है, उसके लिए हराम है कि वह क़ुरबानी न करे और उसकी क़ीमत किसी फंड में दे दे; इससे क़ुरबानी हरगिज़ अदा नहीं होगी। वह वाजिब का त्याग करने वाला होगा

और अज़ाब (दंड) का हकदार होगा। और ऐसे चंदे में देने से जहाँ लोग अपनी मर्ज़ी से करते हैं और वे सभी के चंदे जैसे ज़कात आदि को ज़कात के साथ, बल्कि ज़कात के अपात्र मुर्तद (धर्मत्यागी) जैसे वहाबी आदि के साथ सब मिला देते हैं।

1 दुर्र-ए-मुख्तार, बाबुल मसरफ, मुतबा मुजतबाई दिल्ली १/१४१ पृष्ठ ८३६ का २९४

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

لثلہ، صوابہ لا یجوز نھر اہ ۱ واللہ سبحانہ کو دے سکتا ہے، اسے درست قرار دینا جائز نہیں، نہر اھ وتعالٰی اعلم۔ واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۱۳۰: از شہر بریلی مسئولہ منشی شوکت علی صاحب محرر چونگی شب ۱۸ ذی الحجہ ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زکوٰۃ کا روپیہ کافر، مشرک، وہابی، رافضی، قادیانی وغیرہ کو دینا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: ان کو دینا حرام ہے اور ان کو دئے زکوٰۃ ادا نہ ہوگی، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۳۱: از پنڈول بزرگ ڈاکخانہ رائے پور ضلع مظفر پور مرسلہ نعمت علی صاحب ۴ ربیع الاول شریف ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ خالصاً للہ ولوجہ اللہ جو چیز دی جائے اس کا کھانا امیر و غنی کو کیسا ہے؟

الجواب: صدقہ واجبہ جیسے زکوٰۃ و صدقہ فطر غنی پر حرام ہے اور صدقہ نافلہ جیسے حوض یا سقایہ کا پانی یا مسافر خانے کا مکان غنی کو بھی جائز ہے، مگر میت کی طرف سے جو صدقہ ہوتا ہے غنی نہ لے، نہ غنی کو دیں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۳۲: از راندیر یہ ضلع سورت ڈاکخانہ خاص مسئولہ جناب مولانا مولوی فقیر غلام محی الدین صاحب ۲۷ رمضان المبارک ۱۳۳۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ آج کل سمرنافنڈ میں صاحب زکوٰۃ سے زکوٰۃ اور جن پر قربانی واجب ہے اُن سے قربانی کی قیمت طلب کر رہے ہیں اور اس کے لئے گجراتی بڑے لمبے چوڑے اشتہار چھپے ہیں کیا صاحب زکوٰۃ اور جن پر قربانی واجب ہے اُن کی قربانی سمرنافنڈ میں دینے سے ہو جائے گی؟ بینوا توجروا۔

الجواب: جس پر قربانی واجب ہے اُسے حرام ہے کہ قربانی نہ کرے اور اس کی قیمت کسی فنڈ میں دے دے اس سے ہرگز قربانی ادا نہ ہوگی واجب کا تارک ہوگا اور عذاب کا مستحق، اور ایسے چندوں میں دینے سے کہ لوگ بطورِ خود کرتے ہیں اور سب کے چندے زکوٰۃ وغیرہ زکوٰۃ کے بلکہ مرتدین نا اہل زکوٰۃ مثل وہابیہ وغیرہ ہم کے سب خلط کر لیتے ہیں

1 در مختار باب المصرف مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۴۱ Page 294 of 836

Fatawa Razawiyya Volume Ten

Zakat cannot be fulfilled (this way), although reward will be received for the intention of helping Muslims, but the obligation of Zakat will remain on the person. And Allah Almighty knows best.

Statement on Sadqa-e-Fitr

Problem 133: From Nainital, sent by Sheikh Inayat Hussain Sahib, 25 Ramadan 1331 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: that in the Kanpur incident, a riot broke out between Muslims and the police regarding a mosque; the police targeted them with guns, now their poor children have become orphans and destitute Muslims were injured and arrested; now money is needed for their release, upbringing, and protection of life and honor. Muslims want to give Sadqa-e-Fitr of Ramadan for this noble cause. Can it be given according to Sharia or not?

The Answer: In Sadqa-e-Fitr, it is a condition to give it to a poor Muslim and make them the owner (Tamleek). So, if it is given to the poor and they are made owners, it is permissible, or if it is given to the poor and they then give it to be used for the legal case, it is permissible. Otherwise, by spending it directly on legal proceedings or giving it to lawyers, the Sadqa will not be fulfilled. It is stated in Durr-e-Mukhtar:

Sadqatul Fitr is like Zakat in its avenues of expenditure and in every state.[1] (Sadqa-e-Fitr is like Zakat in terms of recipients and all conditions. - Trans)

It is stated in Radd-ul-Muhtar:

The condition of intention and the condition of transferring ownership (Tamleek), thus mere permission (Ibahat) is not sufficient, as mentioned in Al-Badai'.[2] (Meaning, both intention and transferring ownership are conditions, so merely allowing usage will not suffice, as in Al-Badai'. - Trans) And Allah Almighty knows best, and His knowledge is most complete and most perfect.

Problem 134 to 135: From Rawalpindi Lal Kurti, sent by Din Muhammad Sahib, seller, 21 Ramadan 1333 AH. What do the scholars of religion say in these matters: (1) Is it permissible for the Imam of a mosque to take Sadqa-e-Fitr or not?

[1] Durr-e-Mukhtar, Chapter of Sadqat-ul-Fitr, Mujtabai Press Delhi, 1/145. [2] Radd-ul-Muhtar, Chapter of Sadqat-ul-Fitr, Mustafa Al-Babi Egypt, 2/86.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (दसवाँ भाग)

ज़कात अदा नहीं हो सकती, हाँ मुसलमानों की सहायता की नीयत पर सवाब मिलेगा मगर फ़र्ज़ ज़कात का बोझ सर पर बाक़ी रहेगा। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

सदक़ा-ए-फ़ित्र का बयान

मसला १३३: नैनीताल से शेख़ इनायत हुसैन साहब की ओर से भेजा गया, २५ रमज़ानुल मुबारक १३३१ हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि कानपुर की घटना में मस्जिद के मामले में मुसलमानों और पुलिस के बीच झगड़ा हो गया, पुलिस ने उन्हें बंदूक का निशाना बनाया, अब उनके ग़रीब बच्चे अनाथ हो गए हैं और मजबूर मुसलमान घायल होकर गिरफ़्तार कर लिए गए हैं। अब उनकी रिहाई और परवरिश, जान व इज़्ज़त की सुरक्षा के लिए रुपयों की ज़रूरत है। मुसलमान चाहते हैं कि रमज़ानुल मुबारक का सदक़ा-ए-फ़ित्र इस नेक काम के लिए दे दिया जाए। शरीयत की रोशनी में ऐसा किया जा सकता है या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): सदक़ा-ए-फ़ित्र में मुसलमान फ़क़ीर को देकर उसे मालिक बना देना (तमलीक) शर्त है। तो अगर ग़रीबों को देकर मालिक बना दिया जाए तो जायज़ है, या फ़क़ीर को दें और वह अपनी तरफ़ से मुक़दमे में लगाने के लिए दे दे तो जायज़ है। वरना सीधे मुक़दमे के खर्चों या वकीलों को देने से सदक़ा अदा नहीं होगा। दुर्रे मुख़्तार में है:

सदक़तुल फ़ित्र का-ज़काते फ़िल मसारिफ़ व फ़ी कुल्ले हाल।[1] (सदक़ा-ए-फ़ित्र मसारिफ़ यानी हक़दारों और तमाम स्थितियों में ज़कात की तरह है। - अनुवाद)

रद्दुल मुहतार में है:

मिन इश्तिरातिन निय्यते व इश्तिरातित तमलीके फ़ला तकफ़ी अल-इबाहात कमा फ़िल बदाइ।[2] (यानी नीयत और तमलीक यानी मालिक बनाना दोनों शर्तें हैं, तो सिर्फ़ इस्तेमाल की अनुमति काफ़ी नहीं होगी जैसा कि अल-बदाइ में है। - अनुवाद) वल्लाहु तआला आलम व इल्मुहू अतम व अहकम।

मसला १३४ से १३५: रावलपिंडी लाल कुर्ती से दीन मोहम्मद साहब फ़रोश की ओर से भेजा गया, २१ रमज़ानुल मुबारक १३३३ हिजरी। उलेमा-ए-दीन इन मसलों में क्या फ़रमाते हैं: (१) मस्जिद के इमाम को सदक़ा-ए-फ़ित्र लेना जायज़ है या नहीं?

[1] दुर्रे मुख़्तार, बाब सदक़तुल फ़ित्र, मतबा मुज्तबाई दिल्ली १/१४५ [2] रद्दुल मुहतार, बाब सदक़तुल फ़ित्र, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, २/८६

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

زکوۃ ادا نہیں ہو سکتی ، ہاں اعانت مسلمین کی نیت پر ثواب پائے گا مگر فرض زکوۃ سپر باقی رہے گا واللہ تعالٰی اعلم۔

صدقہ فطر کا بیان

مسئلہ ۱۳۳: از نینی تال مرسلہ شیخ عنایت حسین صاحب ۲۵ رمضان المبارک ۱۳۳۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ واقعہ کان پور میں مسلمانوں سے درباره مسجد پولیس سے فساد ہو گیا، پولیس نے انھیں نشانہ بندوق بنالیا، اب ان کے غریب بچے یتیم ہو گئے اور نادار مسلمان زخمی ہو کر گرفتار کر لیے گئے، اب ان کی رہائی اور پرورش حفاظت جان و عزت کے لیے روپے کی ضرورت ہے، مسلمان چاہتے ہیں کہ صدقہ فطر رمضان المبارک اس کار خیر کے متعلق دے دیا جائے عند الشرع دیا جا سکتا ہے یا نہیں؟

الجواب: صدقہ فطر میں مسلمان فقیر کو دے کر مالک کر دینا شرط ہے، تو اگر غرباء کو دے کر مالک کر دیں تو جائز ہے یا فقیر کو دیں اور وہ اپنی طرف سے مقدمہ میں لگانے کو دے دیں تو جائز ہے، ورنہ مقدمے اٹھانے یا وکیلوں کو دینے سے صدقہ ادا نہ ہوگا۔ در مختار میں ہے:

صدقۃ الفطر کالزکوۃ فی المصارف و فی کل حال۔[1] صدقہ فطر مصارف اور تمام احوال میں زکوۃ کی طرح ہے۔ (ت)

رد المحتار میں ہے :

من اشتراط النیۃ واشتراط التملیک فلا تکفی یعنی نیت اور تملیک دونوں شرائط ہیں تو محض اباحت کفایت نہ الاباحۃ کما فی البدائع۔[2] واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ کرے گی کما فی البدائع۔ (ت) اتم واحکم۔

مسئلہ ۱۳۴ تا ۱۳۵: از راولپنڈی لال کرتی مرسلہ دین محمد صاحب فروش ۲۱ رمضان المبارک ۱۳۳۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں: (۱) صدقہ فطر لینا امام مسجد کو جائز ہے یا نہیں؟

[1] در مختار باب صدقۃ الفطر مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۴۵ [2] رد المحتار، باب صدقۃ الفطر ، مصطفیٰ البابی مصر، ۸۶/۲

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

(2) Is it permissible for the aforementioned person to take the property of deceased people, i.e., charity (Sadaqah) etc.? Even though the Imam of the mosque is a person of wealth (Sahib-e-Nisab) and liable for Zakat. Furthermore, is it permissible for the Imam of the mosque to ask for cash and oil for lamps every Thursday and use it for his personal expenses? Is it permissible to take the skins of sacrificial animals?

The Answer: Even if he is the Imam of a mosque, it is not permissible (it is prohibited) for a person who possesses the 'Nisab' (minimum amount of wealth for Zakat) to take obligatory charity such as Zakat, Sadaqat-ul-Fitr, or expiations (Kaffarat). If Zakat or Sadaqah is given to him, it will not be considered as fulfilled. Regarding skins of sacrificial animals, if people give them voluntarily, he may take them. However, it is not permissible to take them by demanding them as a fixed right. If voluntary charity (Nafl Sadaqah) is given on behalf of the deceased, and the giver gives it thinking the recipient is poor, while the recipient hides his being a person of Nisab, then that too is prohibited; otherwise, it is disliked (Makruh) and undesirable. It is also prohibited to use the leftover cash collected for oil etc. for personal expenses, unless the donors are aware of this and are happy with it, then there is no harm. As Allah the Almighty says: "...by mutual consent among you."[1] (Allah's command is that it should be with your mutual consent. - T). And Allah the Almighty knows best.

Problem 136: From Deoband, Saharanpur district, Jamia Mosque, sent by Maulvi Azharuddin Bengali, 9 Dhu al-Qi'dah 1322 AH. Peace be upon you and the mercy and blessings of Allah. What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say regarding this matter: in a country where rice is produced in abundance and the food of its inhabitants is only rice, and wheat is not produced at all but some comes from other countries, yet even that is not available everywhere but found in cities and towns, and no one eats it as food but uses it incidentally. Barley is also produced very sparsely, for example, sown in only half a bigha out of four to five hundred or one to two thousand bighas, and they make 'Sattu' out of it and eat it occasionally as breakfast once in six months or a year. Dates are non-existent and found nowhere. In such a country, will the inhabitants be obligated to pay Sadaqah-ul-Fitr in the form of rice equivalent to the price of half a Sa' (unit of measurement) of wheat, or will one Sa' of rice be obligatory? Explain with evidence, may Allah the Glorious reward you. (T)

The Answer: The purified Sharia has fixed this charity only from four items: wheat, barley, dates, and raisins. Besides these, any fifth item, whether it is rice, paddy, or cloth, is permissible only based on the value of one of those four; otherwise not.

[1] Quran 4:29

फ़तावा रिज़विया, खंड दस

(२) क्या उपरोक्त व्यक्ति के लिए मृतकों की संपत्ति यानी सदक़ा आदि लेना जायज़ है? हालाँकि मस्जिद के इमाम साहब ज़कात के मालिक और धनवान हों। इसके अलावा, क्या मस्जिद के इमाम के लिए हर गुरुवार को तेल के लिए नकद और तेल मँगवाना और उसे अपने निजी खर्च में लाना जायज़ है? क्या कुर्बानी की खालें आदि लेना जायज़ है?

अल-जवाब: जो व्यक्ति साहिब-ए-नसाब (ज़कात देने के योग्य) हो, चाहे वह मस्जिद का इमाम ही क्यों न हो, उसके लिए ज़कात, सदक़ा-ए-फ़ित्र या कफ़्फ़ारा जैसी वाजिब सदक़ा लेना जायज़ नहीं है, यह हराम है। और उसे दी गई ज़कात और सदक़ा अदा नहीं माना जाएगा। कुर्बानी की खाल अगर लोग अपनी खुशी से दें तो ले सकता है; उसे अपना हक बताकर माँगकर लेना जायज़ नहीं है। मृतकों की ओर से जो नफ़्ल (ऐच्छिक) सदक़ा दिया जाता है, यदि देने वाले ने उसे गरीब समझकर दिया और उसने अपना साहिब-ए-नसाब होना छिपाया, तो यह भी हराम है; अन्यथा यह मकरूह और नापसंद है। तेल आदि के लिए मँगवाए गए नकद में से जो बच जाए, उसे अपने निजी खर्च में लाना भी हराम है, लेकिन यदि देने वाले इस बात से वाकिफ़ हों और इस पर राज़ी हों, तो कोई हर्ज नहीं। जैसा कि अल्लाह तआला का फ़रमान है: "तुम्हारी आपसी रजामंदी से हो।"[1] (अल्लाह तआला का फ़रमान है कि तुम्हारी सहमति से हो। - त)। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला १३६: देवबंद, ज़िला सहारनपुर, जामा मस्जिद से, प्रेषक मौलवी अज़हरुद्दीन बंगाली, ९ ज़ी अल-क़ादा १३२२ हिजरी। अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाही व बरकातुहू। दीन के उलमा और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले के बारे में क्या फ़रमाते हैं कि जिस देश में चावल बहुतायत में पैदा होता हो और वहाँ के निवासियों का मुख्य भोजन चावल ही हो, और गेहूँ बिल्कुल पैदा न होता हो, लेकिन दूसरे देशों से कुछ आता हो, पर वह भी हर जगह नहीं मिलता, बल्कि केवल शहरों और कस्बों में मिलता है और उसे कोई भोजन के रूप में नहीं खाता, बल्कि कभी-कभार ही इस्तेमाल करता है। जौ भी बहुत कम मात्रा में पैदा होता है, जैसे चार-पाँच सौ या एक-दो हज़ार बीघा में से किसी आधा बीघा में बोया गया हो, और उसे सत्तू बनाकर साल या छह महीने में कभी नाश्ते के रूप में खा लेते हों, और खजूर तो मिलता ही नहीं। ऐसे देश के निवासियों पर सदक़ा-ए-फ़ित्र के रूप में आधा 'सा' गेहूँ की कीमत के बराबर चावल देना वाजिब होगा या एक 'सा' चावल वाजिब होगा? दलील के साथ बयान करें, अल्लाह तआला आपको इसका बदला दे। (त)

अल-जवाब: शरीयत-ए-मुतह्हरा ने यह सदक़ा केवल चार चीज़ों से निर्धारित किया है: गेहूँ, जौ, खजूर और किशमिश। इनके अलावा कोई पाँचवीं चीज़, चाहे वह चावल हो या धान या कपड़ा, उन्हीं में से किसी एक की कीमत के हिसाब से जायज़ है, अन्यथा नहीं।

[1] कुरान ४:२९

पृष्ठ २९६/८३६

(۲) مُردوں کے مال یعنی صدقہ وغیرہ لینا بالا مند کور کو جائز ہے یا نہیں؟ حالانکہ امام مسجد صاحبِ زکوۃ و صاحبِ مال ہو، دیگر امام مسجد کو ہر جمعرات کو برائے تیل کے نقد و تیل منگانا اور اپنے ذاتی مصرف میں لانا جائز ہے یا نہیں؟ قربانیوں کی کھالیں وغیرہ لینا جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: صاحبِ نصاب کو اگر چہ امام مسجد ہو، کوئی صدقہ واجبہ مثل زکوۃ یا صدقات عید الفطر یا کفارات جائز نہیں حرام ہے، اور اس کے دئے ہوئے زکوۃ و صدقہ ادا نہ ہوں گے۔ قربانی کی کھال اگر لوگ اپنی خوشی سے دیں لے سکتا ہے مانگ کر اپنا حق قرار دے کر لینا جائز نہیں۔ اموات کی طرف سے جو نفل صدقہ دیا جاتا ہے اگر دینے والے نے اسے فقیر سمجھ کر دیا اور اس نے اپنا صاحبِ نصاب ہونا چھپایا تو یہ بھی حرام ہے ورنہ مکروہ و ناپسند۔ تیل وغیرہ کے لیے نقد منگا کر جو بچے اپنے صرف میں کرنا بھی حرام ہے مگر اس صورت میں کہ دینے والے اس بات سے آگاہ اور اس پر راضی ہوں تو کچھ مضائقہ نہیں۔ بقولہ تعالیٰ عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ ۱ (اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے تمہاری رضا مندی سے ہو۔ ت) واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۳۶: از دیوبند ضلع سہارنپور مسجد جامع مرسلہ مولوی اظہر الدین بنگالی ۹ ذی القعدہ ۱۳۲۲ھ السلام علیکم ورحمۃ اللہ وبرکاتہ، کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ جس ملک میں چاول کثرت سے پیدا ہوں اور وہاں کے باشندوں کی غذا چاول ہی ہو اور گندم مطلقاً پیدا نہ ہو مگر دوسرے ملکوں سے کچھ آتا ہے لیکن وہ بھی ہر جگہ نہیں ملتا ہے بلکہ شہر و قصبہ میں ملتا ہے اور اس کو کوئی غذا کھاتا بھی نہیں بلکہ دوامی اتفاقاً استعمال میں لاتے ہیں اور جو بھی بہت قلت طور پر پیدا ہو مثلاً چار پانچ سو یا ہزار دو ہزار بیگھ میں سے کسی ایک آدھ بیگھ میں بولیا اور اس کو ستو بنا کر برس چھ ماہ میں کبھی ناشتہ کے طور پر کھا لیتے

ہیں اور خرما ناپید ہے اور نہ کہیں ملتا ہے، بس ایسے ملک کے باشندوں پر صدقہ فطر نصف صاع گندم کی قیمت میں جس قدر چاول آئے وہ واجب ہوگا یا ایک صاع چاول واجب ہوگا بینو ابالدلیل جزاکم اللہ الجلیل (دلیل کے ساتھ بیان کیجئے اللہ تعالیٰ آپ کو جزا دے۔ ت)

الجواب: شرع مطہر نے یہ صدقہ صرف چار چیزوں سے مقرر فرمایا ہے: گیہوں، جو، خرما، زبیب۔ ان کے سوا پانچویں کوئی چیز چاول ہو یا دھان یا کپڑا وہ اُنھی میں ایک کی قیمت کے اعتبار سے جائز ہے ورنہ نہیں۔

۱ القرآن ۲۹/۴

Fatawa-e-Razvia, Volume 10

Half a Sa' is obligatory for wheat, meaning one hundred and thirty-five Tolas, which is equal to one hundred and forty-four rupees according to the British rupee weight. According to the 80-rupee seer, it amounts to one and three-quarter seers plus three-quarters of a Chatak and a twentieth part of a Chatak. For barley, it is double this amount. If wheat or barley is produced in smaller quantities there, or is not used as a staple food, or is not available in villages, then giving rice without considering the price, just by measure (Sa' or half Sa'), is not permissible. Rather, it is obligatory to pay the price of half a Sa' of wheat or one Sa' of barley according to the rates in one's district, or provide that amount's worth of rice or other things. It is stated in Fatawa Alamgiri:

[Arabic Box 1]: Only four things are obligatory: wheat, barley, dates, and raisins. For grains other than these, it is not permissible except by value. [Summary from Fatawa Alamgiri] (T)

[Urdu Box 1]: It is obligatory for four things: wheat, barley, dates, and raisins. For items other than these, it is not permissible except by value. (Summary)

In Manasik Mutawassit, it is stated:

[Arabic Box 2]: These are four types, there is no fifth for them. As for other types of grains like rice, corn, pulses, lentils, chickpeas, etc., they are only considered based on their value. 2

[Urdu Box 2]: These are four types; there is no fifth. For grains other than these, such as rice, millet, lentils, chickpeas, etc., nothing is considered except the value. (T)

In Durr-e-Mukhtar, it is stated:

[Arabic Box 3]: For items not explicitly specified like corn and bread, their value will be considered. 3

[Urdu Box 3]: For items not explicitly specified like millet and bread, their value will be considered. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 137: 7 Rabi-ul-Akhir Sharif 1321 AH

[Persian/Urdu]: What do the scholars of religion and the jurists of the clear Shari'ah say regarding this matter: If there are, for example, ten persons in someone's house,

some of whom are slaves and minor sons, and some are his wife and elder sons, then should Sadqa-e-Fitr be paid for seven persons or eight persons?

[Urdu]: What do the scholars of religion and the jurists of the clear Shari'ah say in this matter: if there are ten (10) individuals in someone's house, some of whom are slaves, some are small children, and some are wives and elder children, then Sadqa-e-Fitr...

Footnotes: 1. Fatawa Hindiya, Chapter 8 on Sadqa-e-Fitr, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/191-92. 2. Manasik Mutawassit text Manasik Mutqasit with Irshad-us-Sari, Chapter on compensation for wearing and covering, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, p. 264. 3. Durr-e-Mukhtar, Chapter on Sadqa-e-Fitr, Matba' Mujtabai Delhi, 1/125.

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द 10

गेहूं से आधा सा' वाजिब है यानी एक सौ पैंतीस तोले जो अंग्रेजी रुपये के हिसाब से एक सौ चौवालीस रुपये के वजन के बराबर है, और 80 रुपये के सेर के हिसाब से पौने दो सेर, पौने छटांक और छटांक का बीसवां हिस्सा। जौ के लिए इसका दोगुना होगा। यदि वहां गेहूं या जौ कम पैदा होता हो, भोजन में उपयोग न होता हो, या गांवों में न मिलता हो, तो चावल को बिना मूल्य का विचार किए केवल माप (सा' या आधा सा') के रूप में देना जायज़ नहीं है। बल्कि वाजिब यह है कि अपने जिले में आधा सा' गेहूं या एक सा' जौ की जो कीमत हो, उतनी रकम या उतने दाम के चावल या अन्य वस्तुएं अदा करें। फ़तावा-ए-आलमगीरी में है:

[अरबी बॉक्स 1]: केवल चार वस्तुओं से (सदक़ा-ए-फ़ित्र) वाजिब है: गेहूं, जौ, खजूर और किशमिश। इनके अलावा अन्य अनाजों में मूल्य के बिना जायज़ नहीं है। (संक्षेप में)

[उर्दू बॉक्स 1]: चार वस्तुओं में वाजिब है: गेहूं, जौ, खजूर और ज़बीब (किशमिश)। इनके अलावा मूल्य के बिना जायज़ नहीं है। (संक्षेप में)

मनसिक मुतवस्सित में है:

[अरबी बॉक्स 2]: ये चार प्रकार हैं, इनका कोई पांचवां नहीं है। इनके अलावा अन्य प्रकार के अनाजों जैसे चावल, मक्का, दालें, मसूर, चने आदि का विचार केवल मूल्य के आधार पर होगा। 2

[उर्दू बॉक्स 2]: ये चार प्रकार हैं, इनका कोई पांचवां नहीं है। इनके अलावा अन्य दानों में मूल्य के अतिरिक्त किसी का विचार नहीं होगा, जैसे चावल, बाजरा, मसूर और चने आदि। (त)

दुर्र-ए-मुख़्तार में है:

[अरबी बॉक्स 3]: जिस पर स्पष्ट आदेश (नस्) नहीं है जैसे मक्का और रोटी, उनमें मूल्य का विचार होगा। 3

[उर्दू बॉक्स 3]: जिस पर स्पष्ट आदेश नहीं है जैसे बाजरा और रोटी, उनमें मूल्य का विचार होगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 137: 7 रबी-उल-आख़िर शरीफ 1321 हिजरी

[फ़ारसी/उर्दू]: दीन के उलेमा और शरिया के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अगर किसी के घर में मान लीजिए दस व्यक्ति हों, जिनमें से कुछ गुलाम और छोटे बेटे हों, कुछ उसकी पत्नी और बड़े बेटे हों, तो क्या सात या आठ व्यक्तियों का सदक़ा-ए-फ़ित्र अदा किया जाएगा?

[उर्दू]: दीन के उलेमा और शरिया के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अगर किसी के घर में दस (10) व्यक्ति हों, जिनमें से कुछ गुलाम, कुछ छोटे बच्चे, कुछ के साथ पत्नी और बड़े बच्चे हों, तो सदक़ा-ए-फ़ित्र...

पादटिप्पणियाँ: 1. फ़तावा हिंदीया, अध्याय 8 सदक़ा-ए-फ़ित्र के बारे में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 1/191-92. 2. मनसिक मुतवस्सित मतन मनसिक मुतक़सित मा इरशाद-उस-सारी, लिबास और ढकने के बदले के अध्याय में, दार अल-किताब अल-अरबी बेरूत, पृष्ठ 264. 3. दुर्र-ए-मुख़्तार, अध्याय सदक़ा-ए-फ़ित्र, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/125. पृष्ठ 836 का 297

گیہوں سے نیم صاع واجب ہے یعنی ایک سو پینتیس تولے کہ انگریزی روپیہ سے ایک سو چوالیس روپیہ بھر ہوا، اور اسی ۸۰ روپیہ کے سیر سے پونے دوسیر اور پون چھٹانک اور بیسواں حصہ چھٹانک کا، اور جو سے اس کا دونا گیہوں یا جو کا وہاں کم پیدا ہونا یا غذا میں مستعمل نہ ہونا یاد یہات میں نہ ملنا چاول کو بے لحاظ قیمت صرف صاع یا نیم صاع دے دینے کے قابل نہیں کر سکتا، بلکہ واجب ہے کہ اپنے ضلع میں گیہوں نیم صاع یا جو، ایک صاع کی جو قیمت ہو اُس قدر دام یا اتنے دام کے چاول یا اور چیز ادا کردیں۔ فتاویٰ عالمگیریہ میں ہے:

انما تجب من اربعة اشیاء من الحنطة والشعیر والتمر والزبیب وماسواہ من الحبوب لا یجوز الا بالقیمة اھ 1 بالا لتقاط چار اشیاء میں واجب ہے: گندم، جو، کھجور اور زبیب۔ ان کے ماسوا میں قیمت کے علاوہ جائز نہیں اھ اختصاراً (ت)،

منسک متوسط میں ہے: ھذہ اربعة انواع لاخامس لھا و اما غیرھا من انواع الحبوب فلا یجوز الا باعتبار القیمة کالارز والذرة والماش والعدس والحمص و غیر ذلک۔ 2 یہ چار انواع ہیں ان کی پانچویں نہیں ان کے علاوہ دانوں میں قیمت کے علاوہ کسی کا اعتبار نہیں مثلاً چاول، باجرہ، مسور اور چنے وغیرہ۔ (ت)

در مختار میں ہے: مالم ینص علیہ کذرة وخبز یعتبر فیہ القیمة۔ 3 جس پر نص نہیں مثلاً باجرہ اور روٹی، ان میں قیمت کا اعتبار ہوگا۔ واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

واللہ تعالیٰ اعلم۔ مسئلہ ۱۳۷: ۷ ربیع الآخر شریف ۱۳۲۱ھ چہ می فرمایند علمائے دین و مفتیان شرع متین اندریں مسئلہ کہ اگر در خانہ کسے مثلاً دہ کس موجود باشند بعض ازان غلام و پسر

صغیر و بعض زوجہ خود و پسر کبیر پس صدقہ فطر ہفت کس یا ہشت کس ادا کردہ شود علمائے دین اور مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کیا فرماتے ہیں کہ اگر کسی کے گھر میں دس ۱۰ افراد ہوں بعض ان میں سے غلام، بعض چھوٹے بچے، بعض کے ساتھ بیوی اور بڑے بچے ہوں تو صدقہ فطر

1 فتاویٰ ہندیۃ الباب الثامن فی صدقۃ الفطر نورانی کتب خانہ پشاور، ۱/ ۱۹۱-۹۲ 2 منسک متوسط متن منسک متقسط مع ارشاد الساری فصل فی الجزاء اللبس والتغطیۃ دار الکتاب العربی بیروت ص ۲۶۴ 3 در مختار باب صدقۃ الفطر مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۲۵

Fatawa-e-Razvia Volume 10

Question: Whether the Sadaqah for seven or eight individuals, where the Sadaqah for two or three slaves and small children has not been given, will be Shariah-compliant and correct for those whose Sadaqah was paid? Or not? Answer through the Book so you may be rewarded on the Day of Reckoning. (T)

Answer: Whatever the payer paid on behalf of his small children will be fulfilled because its obligation was upon the father, not upon the children. As for what he paid on behalf of his wife and adult sane children, if it was with their permission, then it is also fulfilled, otherwise not. It is mentioned in Radd al-Muhtar from al-Bahr: If someone pays Zakat on behalf of another without his command, and then the news reaches him and he permits it, even then the Zakat will not be fulfilled because its execution was upon the one who gave the charity, as that Zakat is his property and he cannot become a deputy of another so that his permission could be executed. Yes, if the Zakat was paid with prior permission, then it would be valid (summarized). And Allah Almighty, Glorified be He, knows best, and His knowledge, glorified be His Majesty, is most complete and most decisive. (T)

Problem 138: 28 Jumada al-Ula 1325 AH What do the scholars of religion say regarding this matter: is the Nisab (minimum amount for obligation) of Zakat and Sadaqat-ul-Fitr the same or is there some difference? Explain and be rewarded.

Answer: The amount of Nisab is the same for all, there is no difference. Yes, in Zakat it is a condition for the wealth to be productive, such as gold, silver, pasturing livestock, or trade goods, and that's it. Also, the passing of a year is a condition. In Sadaqat-ul-Fitr and Qurbani (sacrifice), these are not required.

1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Zakat, Mustafa al-Babi Egypt, 2/12. Page 298 of 836

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द दहम (खंड 10)

प्रश्न: क्या सात या आठ व्यक्तियों का सदक़ा, जहाँ दो या तीन गुलामों और छोटे बच्चों का सदक़ा नहीं दिया गया हो, उन व्यक्तियों के लिए शरीयत के अनुसार सही और दुरुस्त होगा जिनका सदक़ा दिया गया है? या नहीं? किताब के माध्यम से उत्तर दें ताकि आप हिसाब के दिन प्रतिफल पाएं। (त)

उत्तर: भुगतान करने वाले ने अपने छोटे बच्चों की ओर से जो भी भुगतान किया, वह पूरा हो जाएगा क्योंकि इसकी अनिवार्यता पिता पर थी, न कि बच्चों पर। जहाँ तक पत्नी और वयस्क समझदार बच्चों की ओर से किए गए भुगतान का सवाल है, यदि यह उनकी अनुमति से था तो यह भी पूरा हो जाएगा, अन्यथा नहीं। रद अल-मुह्तार में 'अल-बहर' से उद्धृत है: यदि किसी ने दूसरे की अनुमति के बिना उसकी ओर से ज़कात अदा की, और फिर खबर उस तक पहुँची और उसने इसे स्वीकार कर लिया, तब भी ज़कात अदा नहीं होगी क्योंकि इसका निष्पादन सदक़ा करने वाले पर हुआ है, क्योंकि वह ज़कात उसकी संपत्ति है और वह दूसरे का प्रतिनिधि नहीं बन सकता कि उसकी अनुमति का निष्पादन हो सके। हाँ, यदि अनुमति से ज़कात अदा की गई हो तो वह जायज़ होगी (संक्षिप्त)। और अल्लाह सर्वशक्तिमान, जो अत्यंत पवित्र है, बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान, जिसकी महिमा महान है, सबसे पूर्ण और सबसे अटल है। (त)

मसला 138: 28 जमादी-उल-अव्वल 1325 हिजरी धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: क्या ज़कात और सदक़ा-ए-फ़ित्र का निसाब (न्यूनतम सीमा) बराबर है या कुछ अंतर है? स्पष्ट करें और प्रतिफल पाएं।

उत्तर: निसाब की मात्रा सबके लिए बराबर है, कोई अंतर नहीं है। हाँ, ज़कात में धन का 'नामी' (बढ़ने वाला) होना शर्त है, जैसे सोना-चाँदी, चरने वाले पशु, या व्यापार का माल, और बस। साथ ही, एक साल गुज़रना भी शर्त है। सदक़ा-ए-फ़ित्र और क़ुर्बानी में ये सब आवश्यक नहीं हैं।

1 रद अल-मुह्तार, किताब अल-ज़कात, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/12। पृष्ठ 298 / 836

و صدقہ دو آدمی یاسہ آدمی از غلام و پسر صغیر باشد یا غیر آں | سات افراد کا ہوگا یا آٹھ کا، دو آدمیوں یا تین غلام اور چھوٹے دادہ نہ شود پس صدقہ کسانی کہ ادا کردہ شد شرعاً صحیح و درست | بچوں کا صدقہ نہ دیا ہو، جن اشخاص کا صدقہ دیا ہے وہ شرعاً خواہد شد یانہ؟ بینوا بالکتاب توجروا یوم | درست ہوگا یا نہیں؟ الحساب۔ | کتاب سے جواب دے کر روزِ حساب اجر پاؤ۔ (ت)

الجواب: ہر چہ مؤدی از اطفال صغار خود ادا کر دادا شد کہ وجوب ہم | چھوٹے بچوں کی طرف سے جو ادا کیا وہ ادا ہو جائے گا کیونکہ وہ بروست نہ بر اطفال وانچہ از زوجہ و اولاد کبار عاقلین داداگر | واجب ہی والد پر تھا۔ اور جو بیوی اور بڑی اولاد کی طرف سے باذن ایشاں بود نیز از ایشاں ادا شد ورنہ نے فی ردالمحتار | ادا کیا اگر ان کا اذن تھا تو بھی ادا ہو جائیگا اور اگر اذن نہ تھا تو عن البحر لوادی زکوٰۃ غیرہ بغیر امرہ فبلغہ | صدقہ ادا نہ ہوگا۔ ردالمحتار میں بحر سے ہے: اگر کسی نے فاجازلم یجز لانھا وجدت نفاذا علی المتصدق | دوسرے کی طرف سے اس کی اجازت کے بغیر زکوٰۃ ادا کردی لانھا ملکہ ولم یصر نائبا عن غیرہ فنفذت علیہ | پھر دوسرے تک خبر پہنچی اور اس نے اسے جائز بھی رکھا تب ولو تصدق عنہ بامرہ جاز 1 (ملخصاً) واللہ تعالٰی | بھی زکوٰۃ ادا نہ ہو گی کیونکہ اس کا نفاذ صدقہ کرنے والے پر ہے، کیونکہ وہ زکوٰۃ اس کی ملکیت ہے اور غیر سے نائب بن سبحنہ اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔ | نہیں سکتا کہ اس کی اجازت کا نفاذ ہو، ہاں اگر اجازت سے زکوٰۃ ادا کی ہو تو پھر جائز ہوگا (ملخصاً) واللہ تعالٰی سبحانہ اعلم و علمہ جل مجدہ اتم و احکم۔ (ت)

مسئلہ ۱۳۸: ۲۸ جمادی الاول ۱۳۲۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زکوٰۃ اور صدقہ فطر کا نصاب برابر ہے یا کچھ فرق ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: مقدار نصاب سب کے لیے ہے کچھ فرق نہیں، ہاں زکوٰۃ میں مال نامی ہونا شرط ہے کہ سونا چاندی، چرائی پر چھوٹے جانور ، تجارت کا مال ہے وبس، اور سال گزرنا شرط ہے، صدقہ فطر و قربانی میں یہ کچھ

1 ردالمحتار کتاب الزکوٰۃ مصطفی البابی مصر ۱۲/۲ Page 298 of 836

Fatawa Razawiyya Volume 10

...not required, as in all books. (t) And Allah Almighty knows best.

Problem 139: From Bareilly city, Malukpur locality, sent by Mr. Syed Muhammad Ali Sahib, Deputy Inspector Faridpur, Ramadan al-Mubarak 1329 AH. What is the amount of Sadaqat al-Fitr per person?

The Answer: Three hundred and fifty-one rupees weight of barley, or half of that in wheat, which by the weight of Bareilly becomes one and three-quarter seers and one eighth. And Allah Almighty knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete and firm.

Problem 140: From Cantt Bread Godown Cantonment Lucknow, sent by Maulvi Syed Basit Ahmad, 7 Shawwal al-Mukarram 1336 AH. (1) How much should the weight of Fitra be given according to the Lucknow seer? How much is half a Sa' (unit of measure) in terms of Lucknow seer weight? (2) What is the measurement of a Sharia yard (Guz) according to the current number yard in Lucknow?

The Answer: (1) A Sa' of wheat is two hundred and seventy (270) tolas, which is two hundred and eighty-eight (288) rupees weight in English rupees. Half a Sa' is one hundred and forty-four (144) rupees weight of wheat. A Lucknow seer is eighty (80) rupees weight, so it is two seers; 1/5th of a seer, i.e., four rupees weight more than one and three-quarter seers. However, more precaution is to give wheat according to the Sa' of barley; in a Sa' of barley, three hundred and fifty-one (351) rupees weight of wheat comes, so half a Sa' is one hundred and seventy-five (175) rupees and eight annas weight, which is a little less than two and a quarter Lucknow seers by one eighth. (2) A numbered yard (Guz) is three feet; each foot is twelve (12) inches. The Sharia yard, called Dhira-ul-Kirbas, is equal to half of it, i.e., eight 'Girahs' (knots/ segments), which is twenty-four fingers (Angal), and each 'Girah' is three fingers. And Allah Almighty knows best.

Problem 142 to 143: From Village Khurd Manu Post Office Badusarai District Barabanki, sent by Mr. Syed Safdar Ali, 11 Shawwal 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding the following matters: (1) Zaid's wife, Hindah, who is not the owner of Nisab (threshold of wealth), is staying with her minor child at her father Bakr's house (her parental home) on Eid al-Fitr. Who should pay the Sadaqah for her and her child? Should it be Zaid, Hindah's husband, or Bakr, Hindah's father? (2) If a guest has been staying here from the 27th or 28th of Ramadan, or arrived before

dawn on Eid al-Fitr, is the host legally (Sharia) required to pay Sadaqah for these guests, or should the guests pay their own Sadaqah?

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवां

...आवश्यक नहीं है, जैसा कि सभी किताबों में है। (त) और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसाला १३९: बरेली शहर, मोहल्ला मलूकपुर से, जनाब सैयद मोहम्मद अली साहब, नायब नाज़िर फरीदपुर द्वारा भेजा गया, रमज़ानुल मुबारक १३२९ हिजरी। प्रति व्यक्ति सदक़ा-ए-फ़ित्र की मात्रा क्या है?

जवाब: तीन सौ इक्यावन रुपये भर जौ, या उसका आधा गेहूँ, जो बरेली की तौल से पौने दो सेर एक अठन्नी भर हुई। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है और उसका इल्म, जिसकी शान बुलंद है, सबसे पूर्ण और सुदृढ़ है।

मसाला १४०: कैंट रोटी गोदाम छावनी लखनऊ से, मौलवी सैयद बासित अहमद द्वारा भेजा गया, ७ शव्वाल अल-मुकर्रम १३३६ हिजरी। (१) लखनऊ सेर के हिसाब से फ़ितरा का वजन कितना देना चाहिए? लखनऊ सेर के वजन में आधा सा' (माप की इकाई) कितना होता है? (२) लखनऊ में प्रचलित नंबर गज़ के हिसाब से शरई गज़ कितना है?

जवाब: (१) गेहूँ का सा' दो सौ सत्तर (२७०) तोले है जो अंग्रेजी रुपये से दो सौ अट्ठासी (२८८) रुपये भर हुए। आधा सा' एक सौ चौवालीस (१४४) रुपये भर गेहूँ। लखनऊ का सेर अस्सी (८०) रुपये भर का है तो उससे दो सेर हुए; सेर का १/५ यानी पौने दो सेर से चार रुपये भर ऊपर, लेकिन अधिक एहतियात (सावधानी) यह है कि जौ के सा' के अनुसार गेहूँ दिए जाएं जौ के सा' में गेहूँ तीन सौ इक्यावन (३५१) रुपये भर आते हैं तो आधा सा' एक सौ पचहत्तर (१७५) रुपये आठ आने भर हुआ, लखनऊ का सवा दो सेर अठन्नी भर कम। (२) नंबरी गज़ जो तीन फुट का है, हर फुट बारह (१२) इंच, शरई गज़ जिसे ज़िरा' उल किरबास कहते हैं, उसका आधा यानी आठ गिरह के बराबर है कि वह चौबीस उंगल है और हर गिरह तीन उंगल। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसाला १४२ से १४३: मौज़ू ख़ुर्द मनू डाकखाना बदूसराय जिला बाराबंकी से, सैयद सफदर अली साहब द्वारा भेजा गया, ११ शव्वाल १३३७ हिजरी। धर्म के विद्वान निम्नलिखित मामलों में क्या कहते हैं: (१) ज़ैद की पत्नी हिंदा, जो निसाब (धन की सीमा) की मालिक नहीं है, अपने एक छोटे बच्चे के साथ अपने पिता बक्र के यहाँ यानी मायके में ईद-उल-फ़ित्र को रह रही है, तो उसका और उसके लड़के का सदक़ा किसे देना चाहिए? क्या ज़ैद को जो हिंदा का पति है या बक्र को जो हिंदा का पिता है? (२) यदि कोई मेहमान यहाँ २७ या २८ रमज़ान शरीफ से ठहरा हुआ है या ईद-उल-फ़ित्र की फ़ज्र (भोर)

होने से पहले आया, तो क्या इन मेहमानों का सदक़ा शरई तौर पर मेज़बान को अदा करना चाहिए या मेहमान अपना सदक़ा खुद अदा करें?

पेज २९९ का ८३६

فتاوی رضویه جلد دہم

درکار نہیں کما فی جمیع الکتب (جیسا کہ سب کتابوں میں ہے۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۳۹: از شہر بریلی محلہ ملوکپور مرسلہ جناب سید محمد علی صاحب نائب ناظر فرید پور رمضان المبارک ۱۳۲۹ھ صدقہ فطر کی مقدار فی کس کیا ہے؟

الجواب: تین سوا اکاون روپے بھر جو، یا اُس کے آدھے گیہوں کہ بریلی کی تول سے پونے دوسیر ایک اٹھنی بھر ہوئی۔ واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم احکم۔

مسئلہ ۱۴۰: از کینٹ روٹی گودام چھاؤنی لکھنؤ مرسلہ مولوی سید باسط احمد ۷ شوال المکرم ۱۳۳۶ھ (۱) وزن فطرہ بحساب سیر لکھنؤ کتنا دینا چاہئے؟ نصف صاع بوزن سیر لکھنؤ کتنا ہوتا ہے؟ (۲) گز شرعی بہ حساب گز نمبر مروجہ لکھنؤ کس قدر ہے؟

الجواب: (۱) گیہوں کا صاع دوسوسترسو ۲۷۰تولے ہے کہ انگریزی روپے سے دوسو اٹھاسی ۲۸۸ روپے بھر ہوئے۔ نصف صاع کے ایک سو چوالیس ۱۴۴ روپے بھر گیہوں۔ لکھنو کا سیر اسی ۸۰ روپے بھر کا ہے تو اس سے دوسیر ہوئے، سیر کا ۱/۵ یعنی پونے دوسیر سے چار روپے بھر اوپر ، لیکن زیادہ احتیاط یہ ہے کہ جو کے صاع سے گیہوں دئے جائیں جو کے صاع میں گیہوں تین سوا اکاون ۳۵۱ روپے بھر آتے ہیں تو نصف صاع ایک سو پچھتر ۱۷۵ روپے آٹھ آنے بھر ہوا، لکھنؤ کا سوادو سیر اٹھنی بھر کم۔ (۲) نمبری گز کہ تین فٹ کا ہے، ہر فٹ بارہ ۱۲ انچ، گز شرعی جسے ذراع کرباس کہتے ہیں، اس کا نصف یعنی آٹھ گرہ کے برابر ہے کہ وہ چوبیس انگل ہے اور ہر گرہ تین انگل۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۴۲ تا ۱۴۳: از موضوع خورد منوڈاخانہ بدوسرائے ضلع بارہ بنکی مرسلہ سید صفدر علی صاحب ۱۱ شوال ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین امور ذیل میں: (۱) زید کی بیوی ہندہ جو مالک نصاب نہیں ہے مع اپنے ایک خردسال بچے کے اپنے باپ بکر کے یہاں یعنی میکے میں عید الفطر کو قیام رکھتی ہے تو اُس کا اور اس کے لڑکے کا صدقہ کس کو دینا چاہئے، آیا زید کو جو ہندہ کا شوہر ہے یا بکر کو جو ہندہ کا باپ ہے۔ (۲) اگر کوئی مہمان یہاں ۲۷ یا ۲۸ رمضان شریف سے مقیم ہے یا قبل طلوع فجر عید الفطر آیا تو کیا ان مہمانوں کا صدقہ شرعاً میزبان کو ادا کرنا چاہئے یا مہمان اپنا صدقہ خود ادا کریں؟

Fatawa Rizvia Volume 10

The Answer: (1) The Sadqa-e-Fitr of a minor child is incumbent upon the father. As for a woman, it is neither upon her father nor her husband; if she is an owner of Nisab (possesses wealth above the threshold for Zakat), she is responsible for her own Sadqa. (2) A guest's Sadqa is not the responsibility of the host. If they own Nisab, they should pay their own Sadqa. And Allah Almighty knows best. 28 Rabi-ul-Awwal Sharif 1342 AH

Matter 144: If one gives half a Sa' of rice instead of half a Sa' of wheat flour for the Fitra of Ramadan, what is the ruling? Please clarify and be rewarded. The Answer: Rice will be given according to its monetary value, whether it weighs half a Sa' or more or less. That is, whatever quantity of rice corresponds to the price of half a Sa' of wheat should be given. And Allah Almighty knows best.

Matter 145: (The question is not present in this volume) The Answer: A Sa' consists of four Mudds, a Mudd is two and a half (2.5) Ratls, a Ratl is twenty Istars, an Istar is four and a half Mithqals, a Mithqal is four and a half Mashas, a Tola is twelve Mashas, and an English Rupee weighs eleven and a quarter Mashas. Thus, a Sa' is 270.5 Tolas, or in terms of rupee weight, 288 rupees. By the 80-rupee Seer measure, it equals 3 Seer 9 Chhatank and 3/5 Chhatank, or it can be stated as three and a half Seer, one and a half Chhatank, and 1/10 Chhatank. There is no doubt in this calculation; wheat was distributed according to this weight.

[Boxed Text:] Left: Because it is stated in 'Al-Fath' that according to Imam Abu Hanifa, half a Sa' of wheat is determined by weight (T). Right: "Because in Al-Fath, half a Sa' of wheat is considered by weight according to Abu Hanifa"[1]

For the month of Ramadan, I preferred the precautionary measure proposed by Allama Shami: to take a Sa' measure for barley and provide wheat equivalent to its weight. It is evident that barley is lighter; the volume that holds 270.5 Tolas of barley will hold a greater weight when filled with wheat. This provides more benefit to the poor. It is stated in 'Radd-ul-Muhtar':

[Boxed Text:] Left: Based on this, the precaution lies in determining it by barley. Right: "Accordingly, the most precautionary measure is to estimate it by barley, and therefore..."

[1] Fath-ul-Qadeer, Chapter on the Amount of Obligation and its Time, Maktaba Nooria Rizvia Sukkur, 2/229

फ़तावा रज़विया जिल्द दशम

उत्तर: (१) छोटे बच्चे का सदक़ा-ए-फ़ित्र उसके पिता पर है, और औरत का न पिता पर न पति पर, यदि वह साहिब-ए-नसाब (न्यूनतम धन सीमा की मालिक) हो तो उसका सदक़ा उसी पर है। (२) मेहमान का सदक़ा मेज़बान पर नहीं है, यदि वे साहिब-ए-नसाब हैं तो अपना सदक़ा स्वयं दें। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। २८ रबी-उल-अव्वल शरीफ़ १३४२ हिजरी

मसला १४४: रमज़ान के फ़ित्रे के लिए आधे साअ आटे के बदले यदि आधा साअ चावल दे दिया जाए तो क्या हुक्म है? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ। उत्तर: चावल की क़ीमत के आधार पर दिए जाएँगे, चाहे वे वज़न में आधा साअ हों या अधिक या कम, अर्थात् आधे साअ गेहूँ की क़ीमत में जितने चावल आएँ उतने दिए जाएँगे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला १४५: (जिल्द में सवाल नहीं) उत्तर: एक साअ चार मुद्द का होता है, और एक मुद्द ढाई (२.५) रतल का, और रतल बीस इस्तार का, और इस्तार साढ़े चार मिथकाल का, और मिथकाल साढ़े चार माशे का, और तोला बारह माशे का, और अंग्रेज़ी रुपया सवा ग्यारह माशे का। तो साअ २७०.५ तोले का हुआ, और रुपयों के हिसाब से २८८ रुपये भर। तो ८० रुपये के सेर के हिसाब से ३ सेर ९ छटांक और ३/५ छटांक, या यूँ कहें कि साढ़े तीन सेर डेढ़ छटांक और १/१० छटांक। इस गणना में कोई संदेह नहीं है, इसी वज़न के गेहूँ दिए जाते थे।

[बॉक्स का टेक्स्ट:] बाएँ क्योंकि फ़तह में है कि इमाम अबू हनीफ़ा के यहाँ वज़न के आधार पर आधा साअ गेहूँ का विचार किया गया है (त) दाएँ "चूँकि फ़तह में है कि इमाम अबू हनीफ़ा के यहाँ वज़न के आधार पर आधा साअ गेहूँ मान्य है"[1]

रमज़ान-उल-मुबारक के लिए अल्लामा शामी की यह सावधानी अधिक पसंद आई कि साअ जौ का लिया जाए, और उसके वज़न के गेहूँ दिए जाएँ। स्पष्ट है कि जौ हल्का होता है; जितने बर्तन में २७०.५ तोले जौ आएँगे, जब वह गेहूँ से भरा जाएगा तो वज़न में अधिक हो जाएगा। इसमें ग़रीबों का लाभ अधिक है। रद्दुल-मुहतार में है:

[बॉक्स का टेक्स्ट:] बाएँ इस बिना पर एहतियात (सावधानी) इसी में है कि इसका निर्धारण जौ से हो। दाएँ "इसलिए सबसे सावधानी पूर्ण तरीका इसे जौ के आधार पर निर्धारित करना है और इसी कारण..."

[1] फ़तह-उल-क़दीर, फ़सल फ़ी मिक़दार अल-वाजिब वक़्तुहु, मकतबा नूरिया रिज़विया सक्खर, २/२२९

पृष्ठ ८३६ में से ३००

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

الجواب: (۱) خورد سال بچے کا صدقہ فطر اس کے باپ پر ہے، اور عورت کا نہ باپ پر نہ شوہر پر، صاحبِ نصاب ہوتی تو اس کا صدقہ اسی پر ہوتا ہے۔ (۲) مہمان کا صدقہ میزبان پر نہیں، وہ اگر صاحبِ نصاب ہیں اپنا صدقہ آپ دیں۔ وھو تعالٰی اعلم۔ ۲۸ ربیع الاول شریف ۱۳۴۲ھ

مسئلہ ۱۴۴: فطرہ رمضان کے نصف صاع آٹے کے عوض میں اگر نصف صاع چاول دے دے تو کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا۔ الجواب: چاول کی قیمت کے اعتبار سے دیئے جائیں گے خواہ وزن میں نصف صاع ہوں یا زیادہ یا کم یعنی نصف صاع گندم کی قیمت میں جتنے چاول آئیں اتنے دیئے جائیں گے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۴۵: (جلد میں سوال نہیں) الجواب: صاع چار مد ہے اور مد دو ۲/۱ رطل، اور رطل بیس استار، اور استار ساڑھے چار مثقال، اور مثقال ساڑھے چار ماشے، اور تولہ بارہ ماشے، اور انگریزی روپیہ سوا گیارہ ماشے، تو صاع دوسوستر ۷۰/ ۲ تولے، اور روپیوں سے دوسواٹھاسی ۲۸۸ روپے بھر، تو اسی ۸۰ روپے کے سیر سے ۳ سیر ۹ چھٹانک اور ۵/۳ چھٹانک، یا یوں کہئے کہ ساڑھے تین سیر ڈیڑھ چھٹانک اور ۱/۱۰ چھٹانک۔ اس حساب میں کوئی شک نہیں، اسی تول کے گیہوں دئے جاتے تھے۔

[باکس ٹیکسٹ:] دائیں: لما فی الفتح یعتبر نصف صاع من بر من حیث الوزن عند ابی حنیفۃ_ ۱ بائیں: کیونکہ فتح میں ہے کہ امام ابوحنیفہ کے ہاں وزن کے اعتبار سے نصف صاع گندم کا اعتبار ہے (ت)

رمضان المبارک کے لئے علامہ شامی کی یہ احتیاط زیادہ پسند آئی کہ صاع لیا جائے جو کا، اور اس کے وزن کے گیہوں دئے جائیں، ظاہر ہے کہ جو ہلکا ہے جتنے برتن میں دوسوستر ۲۷۰/ تولے جو آئیں گے جب وہ گیہوں سے بھر اجائے گا تو وزن میں زیادہ چڑھ جائیں گے، اس میں فقیروں کا نفع زیادہ ہے۔ ردالمحتار میں ہے:

[باکس ٹیکسٹ:] دائیں: علی ھذا الاحوط تقدیرہ بالشعیر و لھذا بائیں: اس بنا پر احتیاط اسی میں ہے کہ اس کا تقرر جو

۱ فتح القدیر، فصل فی مقدار الواجب وقتہ، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر، ۲۲۹/۲

Fatawa Rizvia Volume 10

[Arabic Column]: Some commentators have quoted from the annotations of Al-Zayla'i by Sayyid Muhammad Amin Mir Ghani that our teachers in the Sacred Precinct of Makkah and their predecessors relied on and issued religious decrees that the measure of a 'Sa' (a dry measure) is eight 'ratls' (pounds) of barley. This was probably done to ensure certain fulfillment of the religious obligation, following what is stated in 'Al-Mabsut' by Al-Sarakhsi: that adopting caution in matters of worship is mandatory. If the 'Sa' is set based on barley, it will accommodate eight ratls of lentils and wheat, and will certainly exceed them, unlike the opposite case. Therefore, setting the measure of 'Sa' based on barley is more cautious. (Reference: 1)

[Urdu Column]: ...should be, for this reason some commentators have quoted from the annotations of Al-Zayla'i by Sayyid Muhammad Amin Mir Ghani; the scholars of the Haram of Makkah and their predecessors relied on it and used to issue fatwas that eight ratls of barley would be considered. They probably did this so that the fulfillment of the obligation is certain, and also because it is in Mabsut Sarakhsi that acting on caution in matters of worship is mandatory. When the Sa' is fixed for barley, then it will also accommodate eight ratls of lentils and wheat, and these will increase beyond it in any case. Unlike the opposite case. Therefore, fixing the Sa' with barley is more cautious. (T)

Based on this, with a view to caution and increasing the benefit for the poor, on the 7th of the blessed month in 1327 AH, barley weighing 144 rupees' weight was measured, which constituted half a Sa'. By a happy coincidence, a large china bowl was found that seemed to have been made to that exact measure. The barley filled it up to a flat level, without heaping or depression (without heaping and depth. T). Thus, that bowl became the measure for half a 'Sa' of barley. Then, I weighed wheat in the same bowl and according to the Bareilly 'seer', it weighed (---11) and one 'athanni' (half-anna coin) weight, i.e., one hundred seventy-five rupees and eight annas. So this was the weight of wheat, and double that is 351 rupees' weight of barley. Allah knows best.

Problem 136: From the State of Kashmir, Mirpur district, Nowshera post office, Phadda village, sent by Maulana Muhammad Abdullah, 4 Dhu al-Hijjah 1331 AH. What do the scholars of the religion say about this issue: in 'Durr-e-Mukhtar', the 'Sa' is written as 5040 dirhams, while in most books, a 'man' is 180 mithqals. According to the well-known saying, 'every ten dirhams is seven mithqals' (According to the well-

known saying, the weight of every ten dirhams should be seven mithqals. T). If one 'man' is 182 mithqals, then eight extra mithqals would come in a 'Sa'. Similarly, Sheikh Dehlavi has written the weight of 'Sa' in 'Sharh Safar al-Sa'adah' and 'Sharh Mishkat', which perfectly matches the aforementioned rule.

[1] Radd al-Muhtar, Chapter of Sadaqat al-Fitr, Mustafa al-Babi Egypt, 2/84 Page 301 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवाँ

[अरबी कॉलम]: कुछ टीकाकारों ने सैय्यद मुहम्मद अमीन मीर गनी की अल-ज़यलई पर टिप्पणियों से उद्धृत किया है कि हरम शरीफ़ मक्का में हमारे विद्वानों और उनके पूर्वजों ने यह माना था और इसी पर फ़तवा दिया था कि 'साअ' (एक माप) का पैमाना जौ के आठ रतल (पाउंड) के बराबर होगा। शायद उन्होंने ऐसा इसलिए किया ताकि धार्मिक कर्तव्य का पालन निश्चित रूप से हो सके, जैसा कि सरख्सी की 'अल-मबसूत' में कहा गया है: 'इबादत के मामलों में सावधानी बरतना अनिवार्य है।' जब साअ का निर्धारण जौ के आधार पर किया जाता है, तो इसमें मसूर और गेहूं के आठ रतल भी समा जाएंगे और निश्चित रूप से उनसे अधिक होंगे, जबकि इसके विपरीत स्थिति में ऐसा नहीं होगा। इसलिए जौ के आधार पर साअ का निर्धारण करना अधिक सुरक्षित है। (संदर्भ: १)

[उर्दू कॉलम]: ...हो, इसीलिए कुछ टिप्पणीकारों ने सैय्यद मुहम्मद अमीन मीर गनी के हाशिया ज़यलई से उद्धृत किया; मक्का के मशायख और उनसे पहले के मशायख ने इसी पर भरोसा किया और वे इसी पर फतवा देते थे कि आठ रतल जौ का विचार होगा। शायद उन्होंने ऐसा इसलिए किया ताकि कर्तव्य की अदायगी यकीन के साथ हो जाए और इसलिए भी कि मबसूत सरख्सी में है कि इबादत के मामले में एहतियात पर अमल वाजिब होता है। जब साअ का निर्धारण जौ के साथ हुआ तो अब मसूर और गेंहू के आठ रतल की गुंजाइश भी होगी और ये उससे हर हाल में बढ़ जाएंगे। इसके विपरीत नहीं। इसीलिए साअ का निर्धारण जौ के साथ करना अधिक एहतियात वाला है। (त)

इस आधार पर, एहतियात और गरीबों के लाभ में वृद्धि को देखते हुए, ७ रमज़ान १३२७ हिजरी को १४४ रुपये के वजन के बराबर जौ तोले गए जो आधा साअ हुए। खुशनसीबी से एक बड़ा चीनी का प्याला बिल्कुल इसी माप का मिला। जौ उसमें सपाट सतह तक भर गए, न तो ऊपर उभरे और न ही नीचे रहे (बिना उभरे और गहराई के। त)। तो वही प्याला आधा साअ जौ का पैमाना बन गया। फिर मैंने उसी प्याले में गेहूं भरकर तौला तो बरेली के सेर के हिसाब से (---११) और एक अठन्नी भर हुए, यानी एक सौ पचहत्तर रुपये आठ आने। तो यह गेहूं का वजन हुआ, और इसका दुगना ३५१ रुपये भर वजन जौ। अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला १३६: रियासत कश्मीर, जिला मीरपुर, डाकखाना नौशेरा, मौजा फड्डा से प्रेषित मौलवी मुहम्मद अब्दुल्ला साहब, ४ ज़िल हिज्जा १३३१ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या फरमाते हैं कि 'दुर्रे मुख्तार' में साअ ५०४० दरहम लिखा है और अधिकांश किताबों में मन १८० मिस्काल का बताया गया

है। प्रसिद्ध कहावत के अनुसार, 'हर दस दिरहम सात मिस्काल' (प्रसिद्ध कथन के अनुसार हर दस दिरहम का वजन सात मिस्काल होना चाहिए। त)। यदि एक मन १८२ मिस्काल का होता है, तो साअ में आठ मिस्काल अधिक आएंगे। इसी तरह शेख देहलवी ने 'शरह सफरुल सा'दा' और 'शरह मिश्कात' में साअ का वजन लिखा है जो उपर्युक्त नियम के पूर्णतः अनुरूप है।

1. रद अल-मुहतार, बाब सदक़तुल फित्र, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, २/८४ पृष्ठ ३०१, कुल ८३६ में से

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

[عربی کالم]: نقل بعض المحشین عن حاشیة الزیلعي للسید محمد امین میر غنی، ان الذی علیه مشائخنا بالحرم الشریف المکی و من قبلهم من مشائخهم و به کانوا یفتون تقدیره بثمانیة ارطال من الشعیر و لعل ذلک لیحتاطوا فی الخروج عن الواجب بیقین لما فی مبسوط السرخسی من ان الاخذ بالاحتیاط فی باب العبادات واجب اھ فاذا قدر بذلک یسع ثمانیة ارطال من العدس و من الحنطة و یزید علیها البتة بخلاف العکس فلذا کان تقدیر الصاع بالشعیر احوط اھ الخ[1]

[اردو کالم]: سے ہو، اسی لئے بعض محشین نے حاشیہ زیلعی للسید محمد امین میر غنی سے نقل کیا، حرم مکی کے مشائخ اور ان سے پہلے ان کے مشائخ نے اسی پر اعتماد کیا اور وہ اسی پر فتوٰی دیا کرتے تھے کہ آٹھ رطل جو کا اعتبار ہوگا، اور شاید انھوں نے یہ اس لیے کیا تاکہ واجب کی ادائیگی بالیقین ہو جائے اور اس لیے بھی کہ مبسوط سرخسی میں ہے کہ عبادات کے معاملے میں احتیاط پر عمل واجب ہوتا ہے اھ جب صاع کا تقرر جوں ہوا تو اب مسور اور گندم کے آٹھ رطل کی گنجائش بھی ہوگی اور یہ اس سے بہر صورت بڑھ جائیں گے۔ بخلاف عکس کے۔ اسی لیے صاع کا تقرر جو کے ساتھ کرنا احوط ہے اھ الخ (ت)

اس بنا پر بنظر احتیاط و زیادت نفع فقراء نے ۷ ماہ مبارک ۱۳۲۷ھ کو ایک سو چوالیس روپیہ بھر جو وزن کئے کہ نصف صاع ہوئے اور انھیں ایک پیالے میں بھرا حُسنِ اتفاق کہ نام چینی کا ایک بڑا کاسہ گویا اسی پیمانہ کا ناپ کر بنایا گیا تھا وہ جو اس میں پوری سطح مستوی تک آگئے من دون تکویم ولا تقعیر (بغیر ابھار اور گہرائی کے۔ ت) تو وہی کاسہ نصف صاع شعیری ہوا، پھر میں نے اُسی کاسہ میں گیہوں بھر کر تولے تو بریلی کے سیر سے (---۱۱) ثار اور ایک اٹھنی بھر

ہوئے یعنی ایک سو پچھتر روپے آٹھ آنہ بھر ، تو یہ وزن گندم ہوا، اور اس کا دو چند ۳۵۱ روپیہ بھر وزن جو۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۳۶ : از ریاست کشمیر ضلع میر پور ڈاک خانہ نوشہرہ موضع پھڈہ مرسلہ مولوی محمد عبداللہ صاحب ۴ ذی الحجہ ۱۳۳۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ درمختار میں صاع ۵۰۴۰ اور ہم لکھا ہے اور اکثر کتب میں من ۱۸۰ مثقال کا ہے وبقول معروف کل عشرة دراهم سبعة مثاقيل (معروف قول کے مطابق ہر دس دراہم کا وزن سات مثقال ہونا چاہئے۔ ت) ایک من ۱۸۲ مثقال کا ہوتا ہے تو صاع میں آٹھ مثقال زیادہ آئے، اور ایسے ہی شیخ دہلوی نے شرح سفر السعادۃ و شرح مشکوٰۃ میں وزن صاع لکھا ہے قاعدہ مذکورہ سے پورا موافق

[1] ردالمحتار، باب صدقة الفطر، مصطفٰی البابی مصر، ۸۴/۲ Page 301 of 836

Fatawa Ridawiyya - Volume 10

...does not come, please perform this research and investigation and provide it soon.

The Answer: The Sa' is four Man, forty Istar, and an Istar is four and a half Mithqal, which is four and a half Masha, and a Masha is eight Ratti, and a Ratti is eight Grains (of rice), and twelve Mashas equal one Tola. Therefore, a Sa' is 270 Tolas. Based on the current British Rupee, which weighs 11.25 Mashas, a Sa' weighs 288 Rupees. And a Man is 180 Mithqals, which is 67 Tolas and 6 Mashas, i.e., 72 Rupees weight. This weight is verified and there is no doubt in it at all. In Ghurar al-Adhkar Sharh Durar al-Bihar it is stated:

[Table 1] (Arabic): "The Sa' is four Mudds, a Mudd is two Ratls, a Ratl is half a Man, a Man consists of forty Istars, and an Istar is four and a half Mithqals" abbreviated. (1) (Urdu Translation): A Sa' consists of four Mudds, a Mudd is two Ratls, a Ratl is half a Man, a Man is forty Istars, and an Istar is four and a half Mithqals. (abbreviated)

It is in Kashf al-Ghita:

[Table 2] (Persian/Arabic): Know that what is credible among us is the Iraqi (Sa'), and it is eight Ratls, and a Ratl is twenty Istars, and an Istar is four and a half Mithqals, and a Mithqal is twenty Qirats, one Habba, and four-fifths of a Habba. And a Habba, which is called 'Surkh' in Persian, is the eighth part of a Masha. Thus, a Mithqal would be four and a half Mashas. (2) (Urdu Translation): Let it be clear that according to us, the Iraqi (Sa') is credible, and it is of eight Ratls. In one Ratl there are 20 Istars, and an Istar is four and a half Mithqals. In a Mithqal there are 20 Qirats, one Habba, and four-fifths of a Habba. Habba, which is called "Surkh" in Persian, is the eighth part of a Masha, hence a Mithqal became four and a half Mashas.

The statement of Hazrat Shaykh Muhaqqiq Dehlawi (may his powerful secret be sanctified) is not at all contrary to this. He has kept the same calculation for Mithqals that a Sa' of 720 Mithqals is estimated based on Akbari and Jahangiri Seers. The Akbari Seer was 30 Istars and the Sa' was 160 Istars. Therefore, Sa' 160 ÷ 30 = 5 1/3 Akbari Seers. And the Jahangiri Seer was 36 Istars, so Sa' 160 ÷ 30 [Note: textual error, likely 36] = 4 7/9 Jahangiri Seers. In the commentary of Sirat-e-Mustaqim, in the chapter of Zakat al-Fitr, he says:

[Table 3] (Arabic/Urdu): Iraqi Sa' is eight Ratls and Hijazi Sa' is five Ratls and a third of a Ratl. (Urdu Translation): Iraqi Sa' is eight Ratls and Hijazi Sa' is five Ratls and one-third of a Ratl.

1. Radd al-Muhtar, referring to Sharh Durar al-Bihar, Chapter on Sadqat al-Fitr, Mustafa al-Babi Egypt, 2/83.
2. Kashf al-Ghita, Chapter on Rulings of Supplication and Charity etc. from good deeds for the deceased, Matba' Ahmadi, Delhi, p. 68.

...नहीं आता है, यह अनुसंधान और जांच करके जल्द प्रदान करें।

उत्तर: साअ (Sa') चार मन चालीस इस्तार (Istar) है, और इस्तार साढ़े चार मिथकाल (Mithqal) यानी साढ़े चार माशा है, और माशा आठ रत्ती, और रत्ती आठ चावल, और बारह माशे का एक तोला है, तो साअ दो सौ सत्तर तोले का है। और प्रचलित ब्रिटिश रुपये के अनुसार, जो सवा ग्यारह माशे का है, साअ दो सौ अठासी रुपये भर है। और मन एक सौ अस्सी मिथकाल यानी सड़सठ तोले छह माशे, यानी बहत्तर रुपये भर है। यह वज़न प्रमाणित है जिसमें बिल्कुल कोई संदेह नहीं है। 'ग़ुरर अल-अज़कार शरह दुरर अल-बिहार' में है:

[तालिका १] (अरबी): "साअ चार मुद्द का होता है, मुद्द दो रतल का, रतल आधा मन, मन चालीस इस्तार का और इस्तार साढ़े चार मिथकाल का होता है" संक्षेप में। (१) (उर्दू अनुवाद): साअ चार मुद्द का होता है, और मुद्द दो रतल का, रतल आधे मन का, मन चालीस इस्तार का, और इस्तार साढ़े चार मिथकाल का होता है। (संक्षेप में)

'कश्फ़ अल-ग़िता' में है:

[तालिका २] (फ़ारसी/अरबी): जान लें कि हमारे निकट विश्वसनीय इराकी (साअ) है, और वह आठ रतल है, और रतल बीस इस्तार है, और इस्तार साढ़े चार मिथकाल है, और मिथकाल बीस किरात, एक हब्बा और हब्बा का चार-पाँचवां हिस्सा है। और हब्बा, जिसे फ़ारसी में "सुर्ख़" कहते हैं, माशा का आठवां हिस्सा है। अतः मिथकाल साढ़े चार माशा होगा। (२) (उर्दू अनुवाद): स्पष्ट रहे कि हमारे निकट विश्वसनीय इराकी (साअ) है और वह आठ रतल का होता है, एक रतल में २० इस्तार और इस्तार साढ़े चार मिथकाल, मिथकाल में २० किरात एक हब्बा और चार-पांचवां हिस्सा हब्बा है। हब्बा जिसे फ़ारसी में "सुर्ख़" कहते हैं, माशा का आठवां हिस्सा होता है, अतः मिथकाल साढ़े चार माशा हुआ।

हज़रत शेख़ मुहक्किक देहलवी (उनका पवित्र रहस्य शक्तिशाली हो) का बयान मूल रूप से इसके विपरीत नहीं है, उन्होंने मिथकालों का यही हिसाब रखा है कि ७२० मिथकाल का साअ अकबरी और जहांगीरी सेर के आधार पर बताया है, अकबरी सेर ३० इस्तार का था और साअ १६० इस्तार, तो साअ १६० ÷ ३० = ५ १/३ अकबरी सेर हुआ, और जहांगीरी सेर ३६ इस्तार, तो साअ १६० ÷ ३० [मूल पाठ में ३० है] = ४ ७/९ जहांगीरी सेर हुआ। शरह सिराते मुस्तकीम, फस्ल ज़कातुल फ़ित्र में फ़रमाते हैं:

[तालिका ३] (अरबी/उर्दू): इराकी साअ आठ रतल और हिजाजी साअ पाँच रतल और एक तिहाई रतल। (उर्दू अनुवाद): इराकी साअ आठ रतल और हिजाजी साअ पाँच रतल और तिहाई रतल।

---

1. रद अल-मुहतार, संदर्भ शरह दुरर अल-बिहार, बाब सदक़तुल फ़ित्र, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, २/८३।
2. कश्फ़ अल-ग़िता, फस्ल दुआ और सदक़ा के अहकाम और मृतकों के लिए नेक आमाल, मतबा अहमदी, दिल्ली पृ. ६८।

पृष्ठ ३०२ / ८३६

نہیں آتا ہے، یہ تحقیق و تدقیق فرما کر جلد عنایت کیجئے۔

الجواب: صاع چار من چالیس استار اور استار ساڑھے چار مثقال ساڑھے چار ماشے اور ماشہ آٹھ رتی، اور رتی آٹھ چاول، اور بارہ ماشے کا ایک تولہ، تو صاع دوسو ستر تولے ہے اور انگریزی روپیہ رائج سے کہ روپیہ سوا گیارہ ماشے کا ہے، صاع دوسو اٹھاسی روپیہ بھر، اور من ایک سواسی مثقال یعنی سڑسٹھ تولے چھ ماشے، یعنی بہتر روپیہ بھر۔ یہ وزن محقق ہے جس میں اصلاً شبہ نہیں، غرر الاذکار شرح دررالبحار میں ہے:

[جدول 1] (عربی): الصاع اربعة امداد والمد رطلان والرطل نصف من والمن بالاستار اربعون والاستار بالمثاقیل اربعة ونصف اه مختصراً۔ (1) (اردو ترجمہ): صاع چار مد کا ہوتا ہے، اور مد دو رطل کا، رطل نصف من کا، من چالیس استار کا، اور استار ساڑھے چار مثقال کا ہوتا ہے اه اختصاراً (ت)

کشف الغطاء میں ہے:

[جدول 2] (فارسی/عربی): بدانکہ معتبر نزد ما عراقی و آن ہشت رطل ست ورطل بست استار و استار چار و نیم مثقال و مثقال بست قیراط یک حبہ و چہار خمس حبہ و حبہ کہ آنرا بفارسی سُرخ گویند ہشتم حصہ ماشہ است پس مثقال چہار و نیم ماشہ باشد۔ (2) (اردو ترجمہ): واضح رہے کہ ہمارے نزدیک معتبر عراقی (صاع) ہے اور وہ آٹھ رطل کا ہوتا ہے، ایک رطل میں ۲۰ استار اور استار ساڑھے چار مثقال، مثقال میں ۲۰ قیراط ایک حبہ اور چار خمس حبہ ہے۔ حبہ جسے فارسی میں "سُرخ" کہتے ہیں ماشہ کا آٹھواں حصہ ہوتا ہے، پس مثقال ساڑھے چار ماشہ ہوا۔ (ت)

حضرت شیخ محقق دہلوی قدس سرہ القوی کا بیان اصلاً اس سے مخالف نہیں، مثقالوں کا یہی حساب رکھا ہے کہ سات سو بیس ۷۲۰ مثقال کا صاع اکبری و جہانگیری سیروں سے اس کا اندازہ بتایا ہے، اکبری سیر تیں ۳۰ استار کا تھا اور صاع ایک سو ساٹھ استار، تو صاع ۱۶۰ ÷ ۳۰ = ۵ - ۱/۳ سیر اکبری ہوا، اور سیر جہانگیری ۳۶ استار، تو صاع ۱۶۰ ÷ ۳۰ = ۴-۷/۹ سیر جہانگیری ہوا۔ شرح صراطِ مستقیم فصل زکوۃ فطر میں فرماتے ہیں:

[جدول 3] (عربی/اردو): صاع عراقی ہشت رطل و صاع حجازی پنج رطل و ثلث رطل (اردو ترجمہ): عراقی صاع آٹھ رطل اور حجازی پانچ رطل اور ثلث رطل

---

1 ردالمختار، بحوالہ شرح دررالبحار، باب صدقة الفطر، مصطفیٰ البابی مصر، ۸۳/۲ 2 کشف الغطاء، فصل در احکام دعا و صدقہ و نحوان از اعمال خیر برائے میت مطبع احمدی، دہلی ص ۶۸

Fatawa Razawiyya Volume 10

According to Imam Shafi'i, Sa' Hijazi is obligatory, while for us, Sa' Iraqi is obligatory, which is two Man, and one Man is four Astar, and one Astar is four and a half Mithqal. Therefore, one Man is one hundred and eighty Mithqal as stated by the commentator of Al-Wiqayah, and it is also known from other books similarly. When we calculate this according to the weight of our cities, half a Sa' according to Akbari Sers will be 2-1/2 Sers and 15 Astars, and according to Jahangiri (may Allah protect his kingdom and reign) Sers, it becomes 2-1/4 Sers less one Astar. This calculation is based on Sa' being 720 Mithqal. And if a Sa' is 4 Man, and one Man is 40 Astars, and one Astar is 4-1/2 Mithqal, then each Man will be 180 Mithqal. When one Astar is 4-1/2 Mithqal, it follows that half a Sa' is 80 Astars, and 180 Astars was 2-1/2 Sers and 15 Astars in the old weight, and 2-1/4 Sers less one Astar in the current weight. And Allah Almighty knows best. End (T).

Ser Shahi, Paisa, and Astar are the same weight, which is four and a half Mithqal, equaling twenty-two and a quarter Mashas. "Old weight" refers to Akbari and "current weight" to Jahangiri. This same calculation has been explained in the section on Purity. The difference is that there, the estimation for both Mudd Iraqi and Mudd Hijazi was done in Sers, and in some places, the fraction of one-third Paisa, which is one and a half Masha, was omitted for simplicity, as it is said that a Sa' is four Mudd and a Mudd, according to one saying, is two Ratls. (Here he said that a Sa' is four Mudd and a Mudd is two Ratls - T). (This is the opinion of our Imams that they take Sa' as eight Ratls).

1. Sharh Safar al-Sa'adah, Chapter on Zakat al-Fitr, Maktabah Nooriya Razawiyya Sukkur, pp. 286-87.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

इमाम शाफ़ई के नज़दीक साअ-ए-हिजाज़ी वाजिब है और हमारे नज़दीक साअ-ए-इराक़ी, जो दो मन का होता है, और मन चार अस्तार, और अस्तार साढ़े चार मिस्क़ाल है, लिहाज़ा मन एक सौ अस्सी मिस्क़ाल हुआ जैसा कि शारह-ए-विक़ाया ने कहा, और दूसरी किताबों से भी इसी तरह मालूम होता है, जब हम इसका हिसाब अपने शहरों के वज़न के एतबार से करते हैं तो आधा साअ अकबरी सेरों के मुताबिक़ 2-1/2 सेर 15 अस्तार होगा और जहांगीरी (अल्लाह तआला इसके मुल्क व सल्तनत की हिफाज़त करे) सेरों के मुताबिक़ 2-1/4 सेर और एक अस्तार कम बन जाता है। यह इस हिसाब से है कि साअ 720 मिस्क़ाल हुआ और अगर साअ 4 मन, और मन 40 अस्तार और अस्तार 4-1/2 मिस्क़ाल हो तो हर मन 180 मिस्क़ाल होगा, जब अस्तार 4-1/2 मिस्क़ाल है तो लाज़िम आया कि आधा साअ 80 अस्तार, और 180 अस्तार 2-1/2 सेर और 15 अस्तार पुराना वज़न हुआ, और 2-1/4 सेर एक अस्तार कम मौजूदा वज़न हुआ। वल्लाहु तआला आलम (त)।

सेर शाही और पैसा और अस्तार एक ही वज़न है यानी साढ़े चार मिस्क़ाल जो सवा बीस माशे हुए, और वज़न-ए-क़दीम से मुराद अकबरी और हाल से जहांगीरी। सद्र बाब तहारत में भी यही हिसाब इफादा फरमाया है। इतना है कि वहाँ मुद्द-ए-इराक़ी व मुद्द-ए-हिजाज़ी दोनों का सेरों से अंदाज़ा किया और बाज़ जगह तिहाई पैसा की कसर को जो डेढ़ माशा हुई मुसामहतन तर्क फ़रमा दिया है जैसा कि कहा गया कि साअ चार मुद्द है और मुद्द एक कौल के अनुसार दो रतल है (यहाँ उन्होंने कहा कि साअ चार मुद्द है और मुद्द दो रतल का होता है - त)। (यह क़ौल हमारे आइम्मा का है कि साअ को आठ रतल लेते हैं)।

1. शरह सफ़र अल-सआदा, फ़स्ल दर ज़कात-ए-फ़ित्र, मकतबा नूरियह रज़विया सुक्कुर, पृ. 286-87।

पृष्ठ 303/836

ہے- امام شافعی کے نزدیک صاع حجازی واجب ہے اور ہمارے نزدیک صاع عراقی، جو دو من کا ہوتا ہے، اور من چار استار، اور استار ساڑھے چار مثقال ہے، لہذا من ایک سو اسی مثقال ہوا جیسا کہ شارح وقایہ نے کہا، اور دوسری کتب سے بھی اسی طرح معلوم ہوتا ہے، جب ہم اس کا حساب اپنے شہروں کے وزن کے اعتبار سے کرتے ہیں تو نصف صاع اکبری سیروں کے مطابق ۲-۱/۲ سیر ۱۵ استار ہوگا اور جہانگیری (اللہ تعالیٰ اس کے ملک و سلطنت کی حفاظت کرے) سیروں کے مطابق ۲-۴/۱ سیر اور ایک استار کم بن جاتا ہے یہ اس حساب سے کہ صاع ۷۲۰ مثقال ہوا اور اگر صاع ۴ من، اور من ۴۰ استار اور استار ۴-۱/۲ مثقال ہو تو ہر من ۱۸۰ مثقال ہوگا، جب استار ۴-۱/۲ مثقال ہے تو لازم آیا کہ نصف صاع ۸۰ استار، اور ۱۸۰ استار ۲-۱/۲ سیر اور ۱۵ استار قدیم وزن ہوا، اور ۲-۴/۱ سیر ایک استار کم موجودہ وزن ہوا۔ واللہ تعالیٰ اعلم اھ (ت)

سیر شاہی اور پیسہ اور استار ایک ہی وزن ہے یعنی ساڑھے چار مثقال کہ سوا بیس ماشے ہوئے، اور وزن قدیم سے مراد اکبری اور حال سے جہانگیری۔ صدر باب طہارت میں بھی یہی حساب افادہ فرمایا ہے۔ اتنا ہے کہ وہاں مد عراقی و مد حجازی دونوں کا سیروں سے اندازہ کیا اور بعض جگہ تہائی پیسہ کی کسر کو کہ ڈیڑھ ماشہ ہوئی مسامحتہً ترک فرمادیا ہے حیث قال صاع چہار مدست و مد بقولے دو رطل ست (یہاں انھوں نے کہا کہ صاع چار مد ہے اور مد دو رطل کا ہوتا ہے۔ ت) (یہ قول ہمارے ائمہ کا ہے کہ صاع کو آٹھ رطل لیتے ہیں)

۱ شرح سفر السعادۃ، فصل در زکوۃ فطر، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر، ص ۲۸۶-۸۷

The apparent meaning of the Hadiths also indicates this, as some Hadiths regarding Wudu (ablution) state that one 'Mudd' is sufficient for it, while other Hadiths mention two 'Ratl'. The harmonization between them is that both refer to the same measure. According to one opinion, a 'Mudd' is one 'Ratl' and one-third of an Iraqi 'Ratl'. (T)

(This is the Shafi'i opinion where 1 Saa = 5 1/3 Ratl, hence 1 Mudd = 1 1/3 Ratl). A 'Ratl' is 20 'Astar', and an 'Astar' is 4 1/2 'Misqal', which is the weight of one 'Paisa'. This calculation is presented in these units for clarity. It should be known that according to the first (Hanafi) opinion, a 'Mudd' is one Shari'i 'Mann', and a Shari'i 'Mann' is 40 'Astar'. This is the 'Akbari' weight in which a 'Seer' is equal to 30 'Paisa', thus a 'Mudd' became one 'Seer' and one-third of a 'Seer'.

May Allah Almighty always keep the kingdom and sultanate of King Jahangir favored; his 'Seer' was 36 'Paisa', so a 'Mudd' became equal to one 'Seer' and four 'Paisa'. Therefore, the Iraqi 'Saa' (which is four 'Mudd') equals five 'Seer' and one-third of a 'Seer' by the 'Akbari' calculation. By the 'Jahangiri' calculation, it was four 'Seer' and half a 'Seer' less two 'Paisa'.

According to the second (Shafi'i) opinion, a 'Mudd' is slightly less than one 'Akbari Seer' and three 'Paisa', i.e., 26 2/3 'Paisa' minus 1 1/3 'Paisa'. By the 'Jahangiri' calculation, it is less than three-quarters (three 'Pao'), specifically 72 'Paisa' minus one-third of a 'Paisa'. The 'Hijazi Saa', by 'Akbari' calculation, is 3 1/2 'Seer' minus one 'Paisa' (rather 1 1/3 'Paisa' less), totaling 106 2/3 'Paisa'. By the 'Jahangiri' calculation, it is three 'Seer' minus one 'Paisa' (rather 1 1/3 'Paisa' less...).

1. Sharh Safar al-Sa'adah, chapter on Purification etc., Maktabah Nooria Rizvia Sukkur, p. 30. Page 304 of 836

हदीसों का प्रत्यक्ष अर्थ भी इसी ओर संकेत करता है, क्योंकि वुज़ू की कुछ हदीसों में उल्लेख है कि इसके लिए एक 'मुद्द' पर्याप्त है, जबकि अन्य हदीसों में दो 'रतल' का ज़िक्र है। इनमें सामंजस्य यह है कि दोनों एक ही माप को दर्शाते हैं। एक मत के अनुसार, एक 'मुद्द' एक इराकी 'रतल' और उसका एक तिहाई हिस्सा है। (त)

(यह शाफ़ई मत है जहाँ 1 साअ = 5 1/3 रतल, अतः 1 मुद्द = 1 1/3 रतल)। एक 'रतल' 20 'अस्तार' का होता है और एक 'अस्तार' 4 1/2 'मिस्काल' का है, जो एक पैसे का वज़न है। स्पष्टता के लिए इसी हिसाब से विवरण दिया जा रहा है। यह ज्ञात होना चाहिए कि पहले (हनफ़ी) मत के अनुसार, एक 'मुद्द' एक शरई 'मन' है, और एक शरई 'मन' 40 'अस्तार' का होता है। यह 'अकबरी' वज़न है जिसमें एक 'सेर' 30 पैसे के बराबर है, इस प्रकार एक 'मुद्द' एक सेर और सेर का तिहाई हिस्सा हुआ।

अल्लाह तआला बादशाह जहांगीर के मुल्क और सल्तनत को हमेशा पसंदीदा रखे; उनका 'सेर' 36 पैसे का था, तो एक 'मुद्द' एक सेर और चार पैसे के बराबर हुआ। अत; इराकी 'साअ' जो चार मुद्द के बराबर है, अकबरी हिसाब से पांच सेर और सेर का तिहाई हिस्सा हुआ। जहांगीरी हिसाब से यह चार सेर और साढ़े चार सेर में से दो पैसा कम हुआ।

दूसरे (शाफ़ई) मत के अनुसार, 'मुद्द' एक अकबरी सेर और तीन पैसे से कुछ कम है, यानी 26 2/3 पैसे में से 1 1/3 पैसा कम। जहांगीरी हिसाब से यह तीन पाव से कम है, यानी पैसे का तिहाई हिस्सा कम जो कि तीन पाव 72 पैसा है। 'हिजाज़ी साअ', अकबरी हिसाब से 3 1/2 सेर से एक पैसा कम (बल्कि 1 1/3 पैसा कम) है, जो कुल 106 2/3 पैसा बनता है। जहांगीरी हिसाब से यह तीन सेर से एक पैसा कम (बल्कि 1 1/3 पैसा कम...) है।

1. शरह सफ़र अल-सआदह, शुद्धता पर अध्याय आदि, मकतबा नूरिया रिज़विया सुक्कुर, पृष्ठ 30। पृष्ठ 304 / 836

ودلالتِ ظاہرِ احادیث ہم بریں است چہ در بعضِ احادیثِ وضو | ظاہر احادیث کی دلالت بھی اسی پر ہے کیونکہ بعض احادیث بمد واقع شدہ و در بعضے بدو رطل و تطبیق درآں است کہ مصداقِ | وضو میں ہے کہ اس کے لیے ایک مُد کافی ہے، اور بعض ہر دو یکے باشد بقولے مد رطل و ثلثِ رطلِ عراقی است۔ | احادیث میں دو رطل کا تذکرہ ہے، ان میں تطبیق یوں ہے کہ (یہ قول شافعیہ ہے کہ صاع ۵-۱/۳ رطل ÷ ۴ = ۳-۱/۱ رطل) | دونوں کا مصداق ایک ہی ہے۔ ایک قول کے مطابق رطل اور ورطل بست استار و نیم مثقال کہ وزنِ یک پیسہ است | ثلث عراقی ہے(ت) وایں حسابِ ابہامے دارد وما آنرا بوزنِ ایں دیار فرود آریم تا | (یہ قول شافعیہ ہے کہ صاع ۵-۱/۳ رطل ÷ ۴ = ۳-۱/۱ رطل) واضح گردد بدانکہ مد بقول اول (حنفی) یک من شرعی ست | اور رطل بیس ۲۰ استار اور استار ۲-۴/۱ مثقال جو کہ ایک پیسہ ومنِ شرعی چہل استار وآں بوزنِ جہانگیر شاہی ابدالله فی | کا وزن ہے، اس حساب سے بناتے ہیں تاکہ واضح ہو جائے۔ مراضیہ ملکہ وسلطنتہ کہ سیرے سی و شش پیسہ است یک سیر و | معلوم ہونا چاہئے کہ مُد پہلے (حنفی) قول پر ایک من ہے، اور چہار پیسہ پس صاع (یعنی عراقی) کہ چہار مدست پنج سیر و | شرعی من چالیس استار ہے، یہ اکبری وزن ہے جس میں سیر، ثلث سیر اکبری باشد و بوزن جہانگیری چہار سیر ونیم سیر | تیس ۳۰ پیسہ برابر ہے تو مُد ایک سیر اور سیر کا ثلث ہوا۔ دو پیسہ کم ومد بقول ثانی (شافعی) یک سیر اکبری سہ پیسہ و | جہانگیر بادشاہ اللہ تعالیٰ اس کے ملک و سلطنت کو ہمیشہ پسندیدہ چیزے کم (یعنی ۳-۱/۱ پیسہ کم ۲۶-۳/۲ پیسہ ہوا) و سہ ربع | فرمائے، کہ اس کا سیر چھتیس ۳۶ پیسہ، تو مُد ایک سیر اور چار سیر جہانگیری چیزے کم (یعنی ثلث پیسہ کم کہ جہانگیری تین | پیسہ برابر ہوا، پس صاع عراقی جو چار مُد ہے پانچ سیر اور ایک پاؤ ۷۲ پیسہ

ہے) وصاع (یعنی حجازی) بوزن اکبری سہ ونیم سیر | سیر کا ثلث، اکبری حساب سے ہوا۔ اور جہانگیری حساب سے و دو پیسہ (یعنی تہائی پیسہ کم کہ ساڑھے تین سیر اکبری اور دو | چار سیر اور دو پیسہ کم آدھ سیر ہوا۔ اور دوسرے قول (شافعی) پیسے کے ۷۰ پیسے ہوئے اور صاع حجازی ۱۰۶-۳/۲ پیسہ) | کے مطابق مُد، ایک اکبری سیر اور تین پیسہ سے قدرے کم، وبوزنِ جہانگیری سہ سیر یک پیسہ کم (بلکہ ۱-۳/۱ پیسہ کم | یعنی ۳-۱/۱ پیسہ کم ۲۶-۳/۲ پیسہ ہوا۔ اور جہانگیری حساب کہ | سے تین پاؤ سے کم یعنی پیسے کا تہائی حصہ کم جو کہ تین پاؤ | ۷۲ پیسہ ہے۔ اور صاع حجازی، اکبری حساب سے ۳-۲/۱ سیر | ایک پیسہ کم (بلکہ ۱-۳/۱ پیسہ کم) تین سیر جہانگیری ۱۰۸ پیسہ | ہے۔)

1 شرح سفر السعادة، فصل در طہارت الخ، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر، ص ۳۰ Page 304 of 836

Three Seer Jahangiri is 108 Paisa) the addition between parentheses is from me. (T) Al-Hilalayn minni. However, in Ash'at al-Lam'at printed at Matba' Mustafa'i Muhammad Husain Khan, in the chapter of Al-Ghusl, the calculation of Sa' Iraqi from Seer Jahangiri has apparently been incorrectly recorded by the scribe, where he said Sa' is of the weight of Akbar Shahi that a seer is thirty Seer Shahi, it becomes five Seer and ten Seer Shahi (according to Akbar Shahi's calculation that one Seer is thirty istar, Sa' is 5 Seer and ten istar. - T) (This is correct and according to the first calculation that ten (10) Seer Shahi is one-third Paisa Akbari as is not hidden - T).

According to the current weight of Jahangiri, may Allah perpetuate his kingdom and rule, a Seer is thirty-six Seer Shahi, it becomes four Seer and one quarter (Pa'o) less one Seer Shahi. [1]	**And according to Jahangiri's calculation in which one Seer is 26 istar, Iraqi Sa' is four Seer one quarter (Pa'o) and less one Seer. (T)**

(This is incorrect that Sa' is 160 Paisa, and four and a quarter Seer Jahangiri less one Paisa equals only 152 Paisa, a difference of eight Paisa. The correct one is what passed above, that it is four and a half Seer Jahangiri less two Paisa.) Issue 714 to 749: From Yehanpura Muksar Estate, questioned by Murtaza Khan P.S. Sergeant, Superintendent Police Office, 7 Dhu al-Hijjah 1339 AH. (1) What do you say, in the sermon (Khutbah) of Eid ul-Fitr, Fitrah per person was told to be given at one Seer eleven and a half Annas weight, calculated at one hundred and five Rupees weight, is this correct? (2) How many Seer is a Sa', how many Rupees weight is a Seer, how many Masha is a Rupee, and which Rupee is according to Shariah, what is the ruling in this? (3) In the scholarly sermon, half Sa' i.e., two Seers, whose weight according to Bareilly's Seer was told to be one Seer and nine Chhatank, is this correct? How much Fitrah per person should be given according to the current Seer?

The Answer: (1) This statement of Khalid is purely wrong. Wheat for Sadqah al-Fitr is one hundred and forty Masha per Rupee weight, and for more precaution, an eight-anna piece more, one hundred and seventy-five Malla-h'iya Rupees weight, as we have explained it in our Fatawa (as we explained it in our rulings).

[1] Ash'at al-Lam'at, Chapter of Al-Ghusl, Second Section, Maktaba Nooriya Razawiyya, Sukkur, 1/233.

जिल्द दस फ़तावा रज़विया

तीन सेर जहांगीरी १०८ पैसा है) कोष्ठकों के बीच जोड़ा गया हिस्सा मेरी ओर से है। (त) अल-हिलालैन मिन्नी। बहरहाल, मत्तबा मुस्तफ़ाई मुहम्मद हुसैन खान द्वारा मुद्रित अशअतुल लमआत में, बाबुल गुस्ल (स्नान के अध्याय) में, सेर जहांगीरी से साअ इराक़ी की गणना स्पष्ट रूप से लेखक द्वारा गलती से गलत लिख दी गई है, जहाँ उसने कहा कि साअ अकबर शाही वजन का है कि एक सेर तीस सेर शाही है, यह पाँच सेर और दस सेर शाही होता है (अकबर शाही की गणना के अनुसार कि एक सेर तीस इस्तार का है, साअ ५ सेर और दस इस्तार है। - त) (यह सही है और पहली गणना के अनुसार कि दस १० सेर शाही एक-तिहाई पैसा अकबरी है जैसा कि छिपा नहीं है। - त)।

और वर्तमान जहांगीरी वजन के अनुसार, अल्लाह उनके राज्य और शासन को बनाए रखे, एक सेर छत्तीस सेर शाही है, तो यह चार सेर और एक पाव (पाव) से एक सेर शाही कम होता है।[1]

और जहांगीरी गणना के अनुसार जिसमें एक सेर २६ इस्तार का है, इराकी साअ चार सेर एक पाव और एक सेर कम है। (त)

(यह गलत है कि साअ १६० पैसा है, और सवा चार सेर जहांगीरी एक पैसा कम में १५२ ही पैसे हुए, आठ पैसे का अंतर है। सही वही है जो ऊपर गुजरा कि साढ़े चार सेर जहांगीरी है दो पैसे कम) मसअला ७१४ से ७४९: यहानपुरा मुक्सर एस्टेट से, मुर्तज़ा खान पी.एस. सार्जेंट, सुपरिटेंडेंट पुलिस ऑफिस द्वारा पूछा गया, ७ जुल हिज्जह १३३९ हिजरी। (१) क्या फरमाते हैं, ईद उल-फितर के खुतबे में फितरा प्रति व्यक्ति एक सेर साढ़े ग्यारह आने भर, कुल एक सौ पाँच रुपये भर के हिसाब से देना बताया गया, क्या यह सही है? (२) साअ कितने सेर का है, सेर कितने रुपये भर का है, रुपया कितने माशे का है, और शरीयत के अनुसार कौन सा रुपया है, इसमें क्या हुक्म है? (३) इल्मी खुतबे में आधा साअ यानी दो सेर, जिसका वजन बरेली के सेर के हिसाब से एक सेर नौ छटाँक बताया गया, क्या यह सही है? मौजूदा सेर के हिसाब से प्रति व्यक्ति कितना फितरा देना चाहिए?

अल-जवाब (उत्तर): (१) खालिद का यह कथन सरासर गलत है। सदक़ा-ए-फितर के लिए गेहूँ एक सौ चालीस माशा प्रति रुपया भर है, और अधिक एहतियात के लिए एक अठन्नी ऊपर, एक सौ पचहत्तर मल्ला-हिया रुपये भर, जैसा कि हमने अपने फ़तावा में इसे बयान किया है।

[1] अशअतुल लमआत, बाबुल गुस्ल, दूसरी धारा, मकतबा नूरिय्या रज़विय्या, सुक्कुर १/२३३।

पेज 305/836

تین سیر جہانگیری ۱۰۸ پیسہ ہے) انتھی مزیداً مابین عبارت ختم ہوئی اور قوسین میں اضافہ میری طرف سے ہے۔(ت) الھلالین منی۔ البتہ اشعۃ اللمعات مطبع مصطفائی محمد حسین خاں باب الغسل میں سیر جہانگیری سے صاع عراقی کا حساب ظاہر ا خطا سے کاتب سے غلط ہو گیا ہے حیث قال صاع بوزن اکبر شاہی کہ سیرے سی سیر شاہی بود پنج سیر وہ سیر شاہی می شود (اکبر شاہی کے حساب سے کہ ایک سیر تیس استار کا ہے، صاع ۵ سیر ہوا اور دس استار ہے۔ت) (یہ صحیح ہے اور حساب اول کے مطابق کہ دس ۱۰ سیر شاہی ثلث پیسہ اکبری ہے کمالا یخفی جیسا کہ پوشیدہ نہیں۔ ت)

وبوزن حال جہانگیری ابد اللہ ملکہ وسلطنتہ کہ سیرے سی و شش سیر شاہی است چھار سیر ویک پاؤ می شود یک سیر شاہی کم۔[1]

اور جہانگیری حساب سے جس میں ایک سیر ۲۶ استار کا ہے، عراقی صاع چار سیر ایک پاؤ اور ایک سیر کم ہے۔ (ت)

(یہ غلط ہے کہ صاع ۱۶۰ پیسہ ہے اور سوا چار سیر جہانگیری ایک پیسہ کم کے ۱۵۲ ہی پیسے ہوئے آٹھ پیسے کا فرق ہے صحیح وہی ہے جو اوپر گزرا کہ ساڑھے چار سیر جہانگیری ہے دو پیسے کم) مسئلہ ۷۱۴ تا ۷۴۹ : از یہان پورہ مکسر اسٹیٹ مسئولہ مرتضی خاں پی سارجنٹ سپرنٹنڈنٹ پولیس آفس ۷ ذی الحجہ ۱۳۳۹ھ (۱) کیا فرماتے ہیں عید الفطر کے خطبہ میں فطرہ فی کس ایک سیر ساڑھے گیارہ آنے بھر مبلغ ایک سو پانچ روپیہ بھر کے حساب سے دینا بتایا، کیا یہ صحیح ہے؟ (۲) صاع کتنے سیر کا، سیر کتنے روپیہ بھر، روپیہ کتنے ماشے کا، اور کون روپیہ شرع سے، اس میں کیا حکم ہے؟ (۳) خطبہ علمی میں نصف صاع یعنی دو سیر جس کا وزن بریلی

کے سیر سے ایک سیر نو چھٹانک سے کچھ بتایا کیا یہ صحیح ہے؟ رائج الوقت سیر سے فطرہ فی کس کتنا دینا چاہئے؟

الجواب: (۱) خالد کا یہ قول محض غلط ہے گیہوں صدقہ الفطر ایک سو چالیس ماشہ للہ روپیہ بھر ہے اور زیادہ احتیاط اٹھنی اوپر ایک سو پچھتر ملہ ہعیہ روپے بھر، کما بیناہ فی فتاونا (جیسا کہ ہم نے اپنے فتاویٰ میں اسے بیان

[1] اشعۃ اللمعات باب الغسل فصل ثانی مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۱ / ۲۳۳

Volume 10 Fatawa Razawiyya

... (T) Sadaqah cannot be paid in any way with one hundred and five rupees and eleven and a half annas in weight. (2) Seers (units of weight) vary; the calculation of Sa' (another weight unit) will change according to the seer used in each place. A Sa' according to the current English rupee is two hundred and eighty-eight rupees in weight, and in tolas, it is two hundred and seventy tolas. This rupee weighs eleven and a quarter mashas. (3) The Fitra of wheat according to English rupees is one hundred and forty-four rupees in weight, which, according to the Bareilly seer (where 100 rupees weight is a seer), is one-fifth of a seer less than one and a half seers. The correct and refined calculation is that more precaution lies in what was mentioned above: give one and three-quarter seers plus an eighth (athni) weight of wheat by Bareilly's seer, and by the 80-seer weight, give two seers, three chhatanks and ten eighths (athnis) extra. And Allah Almighty knows best.

Question: For whom is begging permissible and for whom is it prohibited?

Issue 150: From Maulvi Muhammad Ismail Mahmood Abadi, 7th Rabi-ul-Akhir 1334 AH. In this region, there is a custom that after prayer but before the final Fatiha, a person stands up inside the mosque among the congregation to collect donations for travelers and the poor. After that, Fatiha is recited, and then the collected money is distributed among the travelers and the poor. Is this practice permissible inside the mosque?

The Answer: It is permissible as long as the collector does not take anything from it himself. In fact, collecting donations for the poor in the mosque in this manner is proven by the Sunnah itself. And Allah Almighty knows best.

Issue 151: What do the scholars of religion say regarding this matter: many people who are healthy and young, but due to a desire for ease, avoid the hard work of earning a livelihood and have made begging—which appears easy—their profession. Consequently, some, after reading a few books in Persian, Urdu, etc., have taken up preaching and go to other cities to beg through this means. Others earn by taking on the appearance of Sufi masters (mashaykh). Some stay in mosques as travelers and beg by presenting various types of needs. Due to the abundance and prevalence of such people, anyone who is truly needy, a person of genuine state, or a distressed traveler, is less likely to be verified or recognized. Additionally, besides begging, they also find out about the prominent and influential people of the city or neighborhood they reach and corner them...

... (त) एक सौ पांच रुपये साढ़े ग्यारह आने के वजन से किसी भी तरह सदक़ा अदा नहीं हो सकता। (२) सेर अलग-अलग होते हैं, सा' का हिसाब हर जगह के सेर के हिसाब से बदलेगा। मौजूदा अंग्रेजी रुपये के हिसाब से एक सा' दो सौ अट्ठासी रुपये के वजन के बराबर है, और तोले के हिसाब से दो सौ सत्तर तोले। यह रुपया सवा ग्यारह माशा वजन का है। (३) गेहूं का फ़ितरा अंग्रेजी रुपये के हिसाब से एक सौ चौवालीस रुपये वजन है, जो बरेली के सेर के हिसाब से (जहां १०० रुपये वजन का एक सेर होता है) डेढ़ सेर से एक बटा पांच हिस्सा कम है। सही और शुद्ध गणना यह है, अधिक सावधानी उसमें है जो ऊपर बताई गई कि बरेली के सेर से पौने दो सेर गेहूं दें और थोड़ा ऊपर, और ८० वाले सेर के हिसाब से दो सेर तीन छटांक और थोड़ा ऊपर। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

सवाल: किसके लिए मांगना जायज़ है और किसके लिए नाजायज़?

मसला १५०: मौलवी मुहम्मद इस्माइल महमूद आबादी की ओर से, ७ रबी-उल-आख़िर १३३४ हिजरी। इस मुल्क में रिवाज है कि नमाज़ के बाद और आख़िरी फातिहा से पहले, एक व्यक्ति मस्जिद के अंदर नमाज़ियों के बीच खड़ा होकर मुसाफिरों और गरीबों के लिए चंदा इकट्ठा करता है। इसके बाद फातिहा पढ़ी जाती है और फिर जो रकम चंदे के जरिए जमा होती है उसे मुसाफिरों और गरीबों में बांट दिया जाता है। क्या यह काम इस तरह मस्जिद के अंदर जायज़ है?

जवाब: जायज़ है बशर्ते कि वह चंदा इकट्ठा करने वाला खुद उसमें से कुछ न लेता हो, बल्कि मस्जिद में गरीब के लिए इस तरह चंदा करना खुद सुन्नत से साबित है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला १५१: उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अक्सर लोग जो स्वस्थ और जवान हैं, लेकिन आराम की चाहत में मेहनत की कमाई से जी चुराते हैं और उन्होंने मांगना (भीख मांगना) जो ज़ाहिर में आसान लगता है, अपना पेशा बना लिया है। चुनांचे कुछ लोगों ने फारसी, उर्दू आदि की चंद किताबें देख कर वाज़ (प्रवचन) करना शुरू कर दिया है और दूसरे शहरों में जाकर इसके ज़रिए मांगते हैं। कुछ लोग मशायख़ (सूफी गुरु) का रूप धारण कर कमाते हैं और कुछ मुसाफिर बनकर मस्जिदों में ठहरते हैं और तरह-तरह की ज़रूरतें ज़ाहिर करके मांगते हैं। इन जैसे लोगों की अधिकता और रिवाज की वजह से, जो कोई वास्तव में ज़रूरतमंद, सच्ची हालत वाला गरीब या मुसीबतज़दा मुसाफिर होता है, उसकी तस्दीक़ (पुष्टि) और पहचान कम हो पाती है। इसके अलावा,

मांगने के साथ-साथ यह भी होता है कि जिस शहर या मोहल्ले में पहुंचते हैं, वहां के रहने वालों से वहां के लोगों का हाल मालूम करके जिसे भी रसूखदार पाते हैं, उसे घेर लेते हैं...

کیا ہے۔ ت) ایک سو پانچ روپے ساڑھے گیارہ آنے بھر سے کسی طرح صدقہ ادا نہیں ہو سکتا۔ (۲) سیر مختلف ہوتے ہیں ، صاع کا حساب ہر جگہ کے سیر سے بدلے گا، صاع اس انگریزی روپیہ رائج الوقت سے دو سو اٹھاسی روپے بھر ہے، اور تولوں سے دوسوتر تولے۔ یہ روپیہ سوا گیارہ ماشہ بھر ہے۔ (۳) گیہوں کا فطرہ انگریزی روپے سے ایک سو چوالیس روپے بھر ہے جو بریلی کے سیر سے کہ سو ۱۰۰ روپیہ بھر کا ہے چھٹانک کم ڈیڑھ سیر ہوا سیر کا پانچواں حصہ کم۔ حساب صحیح و منقح یہ ہے، زیادہ احتیاط وہ ہے جو اوپر گزری کہ گیہوں بریلی کے سیر سے پونے دوسیر دیں اٹھنی بھر اوپر ، اور اسی ۸۰ کے سیر سے تین چھٹانک دوسیر دس اٹھنی بھر اوپر۔ واللہ تعالٰی اعلم

سوال کسے جائز ہے کسے ناجائز

مسئلہ ۱۵۰: از مولوی محمد اسمعیل محمود آبادی ے ربیع الآخر ۱۳۳۴ھ اس ملک میں رواج ہے کہ بعد نماز قبل فاتحہ اخیرہ کے ایک شخص اٹھ کر مسافروں مسکینوں کے واسطے مسجد کے اندر مقتدیوں میں چندہ کرتا ہے، بعد ہو جانے کے فاتحہ پڑھی جاتی ہے بعدہ جو کچھ رقم بذریعہ چندہ جمع ہوتی ہے اس کو مسافروں اور مسکینوں میں تقسیم کر دیتے ہیں، آیا یہ امر اس طرح مسجد کے اندر جائز ہے؟

الجواب: جائز ہے جبکہ وہ چندہ کرنے والا خود اس میں سے نہ لیتا ہو، بلکہ مسجد میں مسکین کے لیے اس طرح چندہ کرنا خود سنت سے ثابت ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۵۱: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اکثر لوگ جو صحیح و سالم جوان تندرست ہیں مگر بوجہ آرام طلبی کے طلب معاش کی محنت سے جی چرا کر سوال کو کہ بظاہر آسان ہے پیشہ اپنا مقرر کیا ہے، چنانچہ بعض نے تو چند کتابیں فارسی اردو وغیرہ کی دیکھ کر وعظ گوئی اختیار کی ہے اور دوسرے وطنوں میں جا کر اسی کے ذریعہ سے سوال کرتے ہیں اور بعض مشائخین کی شکل بنا کر کماتے ہیں اور بعض مسافر بن کر مسجدوں میں ٹھہرتے ہیں اور اقسام اقسام کی حاجتیں ظاہر کر کے سوال کرتے ہیں اور یہ سبب کثرت اور رواج اس قسم کے لوگوں کی جو کوئی محتاج سچی حالت والا مسکین اور مسافر مصیبت زدہ ہوتا ہے، اس کی تصدیق اور شناخت بھی کم ہوتی ہے، علاوہ سوال کرنے کے یہ بھی ہوتا ہے کہ جس شہر یا محلہ میں پہنچے ہیں وہاں کے باشندوں سے وہاں کے لوگوں کا حال معلوم کر کے جس کسی کو اہل شہر یا محلہ سے ذی وجاہت معلوم کرتے ہیں اس کو جا گھیرتے ہیں

Fatawa Razawiyya Volume 10

...and they say to us, "Introduce us to your neighborhood or city." Some people, getting caught up in their words, go around asking people on their behalf and collect something for them. Will such a person, who makes an effort to get something given to such people, receive a reward according to the Noble Hadith: "One who guides to good is like the one who does it" (T)? And will this action of his be a cause of reward? Or, according to the command "And do not cooperate in sin and transgression"[2] (T), will he be guilty of assisting in the forbidden act of begging? And will the person giving to such people also receive a reward, or will he be a sinner? Please explain, may you be rewarded.

The Answer: Begging without a Sharia-compliant necessity is prohibited (Haram). And those who, despite having the ability to earn, have made begging their profession without necessity, everything they collect from it is impure (Napak) and vile (Khabith). Knowing their situation, giving them something upon their request is not part of earning a reward, but rather it is impermissible and a sin, and helping in sin. And when giving to them is impermissible, then the one who facilitates it is not a "guider to good" but rather a "guider to evil". I, the humble servant (may Allah Almighty forgive him), have mentioned the details of this issue in my collection of fatwas. However, if someone gives something without being asked, as people serve scholars and spiritual guides (Mashaykh), there is no harm in taking it. In fact, if the intention is good, both the giver and the taker earn a reward, especially if the taker is in need. The Master of the World (peace and blessings of Allah Almighty be upon him) sent some gifts to the Commander of the Faithful, Umar Farooq al-A'zam (may Allah be pleased with him). He returned them, saying that the Prophet had instructed us that there is goodness in not taking anything from anyone. The Prophet (PBUH) said, "That was regarding a state of begging. What comes without asking is a provision that the Almighty Lord has sent to you." The Commander of the Faithful submitted, "By Allah, I will never ask anything from anyone now, but I will accept whatever comes without being asked."[3]

[Boxed text: Narrated by Malik in Al-Muwatta, the origin of the Hadith. | Imam Malik narrated it in Al-Muwatta and the original...]

---

1. Al-Mu'jam al-Kabir narrated from Abu Mas'ud al-Ansari, Al-Maktaba al-Faysaliya, Beirut, 1/27-28.

2. Al-Quran, 5/2.
3. Sahih al-Bukhari, Chapter: One whom Allah gives something without asking, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/199; Sahih Muslim, Chapter: Permissibility of taking without asking etc., Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/334; Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Umar bin Khattab (may Allah Almighty be pleased with him), Dar al-Fikr, Beirut, 1/71, 20; Musannaf Ibn Abi Shaybah, Book of Sales and Judgments, Hadith 12016, Idara Uloom al-Quran wal-Uloom al-Islamiyya, 6/552.

फतावा रज़विया जिल्द दसवीं

...और वे कहते हैं कि हमारे लिए हमें अपने मोहल्ले या शहर से अवगत करा दें। कुछ लोग उनकी बातों में आकर उनकी ओर से लोगों से मांग-मांग कर उनके लिए कुछ एकत्र करा देते हैं। ऐसा व्यक्ति जो ऐसे लोगों के लिए प्रयास करके कुछ दिलवा दे, तो क्या वह इस हदीस शरीफ़ के अनुसार: "भलाई पर रहनुमाई करने वाला इसे अंजाम देने वाले की तरह होता है।"[1] (त) सवाब पाएगा और उसका यह कार्य सवाब का कारण होगा? या "गुनाह और ज्यादती पर सहयोग न करो"[2] (त) के आदेश के अनुसार वह हराम सवाल में सहायता करने का अपराधी होगा? और क्या ऐसे लोगों को देने वाला भी सवाब पाएगा या नहीं या गुनहगार होगा? बयान फरमाएं, आपको अज्र मिले।

जवाब: शरीयत की आवश्यकता के बिना मांगना (भीख मांगना) हराम है। और जिन लोगों ने कमाने की क्षमता होने के बावजूद बिना आवश्यकता के मांगना अपना पेशा बना लिया है, वे इससे जो कुछ भी जमा करते हैं वह सब नापाक और खबीस (अशुद्ध) है। उनकी यह स्थिति जानते हुए उनके मांगने पर कुछ देना सवाब में शामिल नहीं है, बल्कि नाजायज़ और गुनाह है, और गुनाह में मदद करना है। और जब उन्हें देना नाजायज़ है, तो दिलवाने वाला भी 'दाल अलल खैर' (भलाई की ओर ले जाने वाला) नहीं बल्कि 'दाल अलल शर' (बुराई की ओर ले जाने वाला) है। इस मसले का विवरण फकीर (अल्लाह तआला उसे क्षमा करे) ने अपने फतवों के संग्रह में उल्लेख किया है। लेकिन अगर बिना मांगे कोई कुछ दे, जैसे लोग विद्वानों (उलेमा) और आध्यात्मिक गुरुओं (मशायख) की सेवा करते हैं, तो उसे लेने में कोई बुराई नहीं है, बल्कि अगर नीयत अच्छी हो तो देने और लेने वाले दोनों सवाब के हकदार हैं, विशेष रूप से जब लेने वाला ज़रूरतमंद हो। सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने अमीरुल मोमिनीन उमर फ़ारूक़-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) को कुछ उपहार भेजा। उन्होंने इसे वापस कर दिया और कहा कि हुज़ूर ने हमें आदेश दिया था कि किसी से कुछ न लेने में ही भलाई है। हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया, "वह मांगते रहने की स्थिति में था। जो बिना मांगे आए, वह तो एक रिज़्क (आजीविका) है जो मौला तआला ने तुम्हें भेजा है।" अमीरुल मोमिनीन ने अर्ज़ किया, "खुदा की कसम, अब मैं किसी से कुछ नहीं मांगूंगा, और जो बिना मांगे आएगा उसे ले लूंगा।"[3]

[बॉक्स में पाठ: इसे मोअत्ता में इमाम मालिक ने रिवायत किया है और असल... | रवाह मालिक फिल मोअत्ता अस्लुल हदीस]

1. अल-मुअजम अल-कबीर, अबू मसूद अल-अंसारी से रिवायत, अल-मकतबा अल-फैसलिया, बेरूत, 1/27-28।
2. अल-क़ुरआन, 5/2।
3. सहीह अल-बुखारी, अध्याय: जिसे अल्लाह बिना मांगे कुछ दे, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/199; सहीह मुस्लिम, अध्याय: बिना मांगे लेने की अनुमति आदि, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/334; मुसनद अहमद बिन हंबल, उमर बिन खत्ताब (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत, दारुल फिक्र, बेरूत, 1/71, 20; मुसन्नफ इब्न अबी शैबा, किताबुल बुयू वल अक्ज़िया, हदीस 12016, इदारा उलूमुल क़ुरआन वल उलूमुल इस्लामिया, 6/552।

فتاوی رضویہ جلد دہم

اور کہتے ہیں کہ ہمارے واسطے تم اپنے محلے یا شہر سے آگاہ کرا دو بعض لوگ ان کی باتوں میں آکر ان کی طرف سے لوگوں سے مانگ مانگ کر ان کے واسطے کچھ فراہم کرا دیتے ہیں، ایسا شخص جو ایسے لوگوں کے واسطے کوشش کر کے کچھ دلوا دے تو بمقتضائے اس حدیث شریف کے الدال علی الخیر کفاعلہ (بھلائی پر رہنمائی کرنے والا اسے بجا لانے والے کی طرح ہوتا ہے۔ ت) ثواب پائے گا اور یہ فعل اس کا موجب اجر ہو گا یا بحکم وَلَا تَعَاوَنُوا عَلَى الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ [2] (گناہ اور زیادتی پر تعاون نہ کرو۔ ت) کے سوالِ حرام کے معاونت کا مرتکب ہو گا اور ایسے لوگوں کو دینے والا بھی ثواب پائے گا یا نہیں یا گنہگار ہو گا۔ بینوا توجروا

الجواب: بے ضرورت شرعی سوال کرنا حرام ہے، اور جن لوگوں نے باوجود قدرتِ کسب بلا ضرورت سوال کرنا اپنا پیشہ کر لیا ہے وہ جو کچھ اس سے جمع کرتے ہیں سب ناپاک و خبیث ہے اور ان کا یہ حال جان کر ان کے سوال پر کچھ دینا داخلِ ثواب نہیں بلکہ ناجائز و گناہ، اور گناہ میں مدد کرنا ہے۔ اور جب انھیں دینا نا جائز تو دلانے والا بھی دال علی الخیر نہیں بلکہ دال علی الشر ہے۔ اس مسئلہ کی تفصیل فقیر غفراللہ تعالٰی نے اپنے مجموعہ فتاوی میں ذکر کی، لیکن اگر بے سوال کوئی کچھ دے جیسے لوگ علماء و مشائخ کی خدمت کرتے ہیں تو اس کے لیے لینے میں کوئی حرج نہیں بلکہ نیت نیک ہو تو دینے اور لینے والے دونوں داخلِ ثواب ہیں خصوصاً جبکہ لینے والا حاجت رکھتا ہو، سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے امیر المومنین عمر فاروقِ اعظم رضی اللہ عنہ کو کچھ عطا بھیجی انھوں نے واپس حاضر کی کہ حضور نے ہمیں حکم دیا تھا کہ کسی سے کچھ نہ لینے میں بھلائی ہے، فرمایا یہ بحالتِ سوال ہے اور جو بے سوال آئے وہ تو ایک

رزق ہے کہ مولیٰ تعالیٰ نے تجھے بھیجا، امیر المومنین نے عرض کی واللہ اب کسی سے کچھ سوال نہ کروں گا اور بے سوال جو چیز آئے گی لے لوں گا۔ [3]

رواہ مالك في الموطأ اصل الحديث | اسے موطا میں امام مالک نے روایت کیا ہے اور اصل

---

1. المعجم الکبیر مروی از ابو مسعود والانصاری المکتبۃ الفیصلیہ بیروت ۱/۲۸-۲۷
2. القرآن ۵/۲
3. صحیح البخاری باب من اعطاہ اللہ شیئاً من غیر مسئلہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۱۹۹، صحیح مسلم باب جواز الاخذ بغیر سوال الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۳۳۴، مسند احمد بن حنبل مروی از عمر بن خطاب رضی اللہ تعالیٰ عنہ دارالفکر بیروت ۱ / ۷۱، ۲۰، مصنف ابن ابی شیبہ کتاب البیوع والا قضیہ حدیث ۱۲۰۱۶ ادارہ علوم القرآن والعلوم الاسلامیہ ۶ / ۵۵۲

Fatawa Razawiya, Volume 10

[Table Header - Left: Arabic, Right: Urdu Translation]

According to the two Shaikhs (Bukhari and Muslim), there is a Hadith from Ibn Umar (may Allah be pleased with them both). In this chapter, narrations are also found from: Ummul-Mu'minin Siddiqa (Aisha) as cited by Ahmad and Baihaqi; from Wasil bin al-Khattab as cited by Abu Ya'la; from Khalid bin Adi al-Juhani as cited by Ahmad, Abu Ya'la, Tabarani, Ibn Hibban, and Hakim; from Abu Hurayrah (may Allah be pleased with him) as cited by Imam Ahmad; and from Aid bin Umar (may Allah be pleased with them) as cited by Ahmad, Tabarani, and Baihaqi. All of these are strong Hadiths with excellent chains of narration. (T)

It is stated in Hadith that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The one who gives from abundance is not superior to the one who receives if he (the receiver) is in need." 1 (Narrated by Tabarani in Al-Mu'jam al-Kabir from Hazrat Ibn Umar (may Allah be pleased with them both), and there is a supporting narration in his Al-Awsat, just as Ibn Hibban narrated in Al-Du'afa from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him).) And Allah Almighty knows best.

Issue 152: From Pakharia, Mohalla Noorul Haleem Shah Sharifabad, Raipur, District Muzaffarpur, sent by Sharif-ur-Rahman Sahib, 3 Shaban 1336 AH. Zaid is wealthy, owning land worth six or seven thousand rupees, more or less. He is in debt for five or six hundred rupees. Should he sell the land to pay the debt or beg? According to Sharia, is it permissible for him to beg for this purpose or not?

The Answer: If his means of livelihood is nothing other than this land, and he is not capable of any earning, nor is any part of this land [surplus]...

1 Al-Mu'jam al-Kabir narrated from Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both), Al-Maktaba al-Faysaliya, Beirut, 12/423.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

[तालिका शीर्षक - बाएँ अरबी, दाएँ उर्दू अनुवाद]

हदीस बुखारी और मुस्लिम ने हज़रत इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत की है, और इस बारे में इमाम अहमद और बैहक़ी ने उम्मुल मोमिनीन हज़रत आयशा सिद्दीका (रज़ियल्लाहु अन्हा) से, अबू या'ला ने हज़रत वासिल बिन खत्ताब से, इमाम अहमद, अबू या'ला, तबरानी, इब्न हब्बान और हाकिम ने हज़रत खालिद बिन अदी अल-जुहनी से, इमाम अहमद ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, इमाम अहमद, तबरानी और बैहक़ी ने हज़रत आइज़ बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से रिवायत किया है, और ये तमाम अहादीस उम्दा सनदों की वजह से मज़बूत हैं। (त)

हदीस में है कि हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: "संपन्नता से देने वाला लेने वाले से श्रेष्ठ नहीं है जब वह (लेने वाला) ज़रूरत मंद हो।" 1 (इसे तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में हज़रत इब्न उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया और अल-औसत में उनके यहाँ इसका साक्ष्य भी मौजूद है, जैसा कि इब्न हब्बान ने अल-ज़ुअफ़ा में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से हदीस रिवायत की है।) वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह बेहतर जानता है)।

मसला 152: पखरिया, मोहल्ला नूरुल हलीम शाह शरीफ़ाबाद, रायपूर, ज़िला मुज़फ़्फ़रपुर से मुर्सला शरीफ़ उर रहमान साहिब, 3 शाबान 1336 हिजरी। ज़ैद मालदार है, छह सात हज़ार रुपये या कुछ कमोबेश की ज़मीन रखता है और उस पर पाँच छह सौ रुपया क़र्ज़ है। क्या वह ज़मीन बेचकर अदा करे या भीख माँग कर? शरई तौर पर उसे इस ग़र्ज़ से भीख माँगना जायज़ है या नहीं?

अल-जवाब: अगर उसकी आजीविका का साधन इस ज़मीन के सिवा कुछ नहीं है, न वह किसी कमाई करने पर सक्षम है और न ही इस ज़मीन का कोई हिस्सा...

1 अल-मुअजम अल-कबीर, रिवायत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया, बैरूत, 12/423।

पेज 308/836

عند الشیخین من حدیث ابن عمر رضي الله تعالی عنهما وفي الباب عن ام المومنین الصدیقة عند احمد والبیهقي وعن واصل بن الخطاب عند ابي یعلی وعن خالد بن عدي الجهنی عند احمد وابي یعلی والطبرانی وابن حبان والحاکم عن ابي هریرة رضي الله تعالی عنه عند الامام احمد وعن عائذ بن عمر رضي الله تعالی عنهم عند احمد والطبرانی والبیهقي وهذا کلها احادیث قویة باسانید جیاد۔ حدیث بخاری و مسلم نے حضرت ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کی ہے، اور اس بارے میں امام احمد اور بیہقی نے ام المؤمنین حضرت عائشہ صدیقہ رضی اللہ تعالٰی عنہا سے، ابویعلٰی نے حضرت واصل بن خطاب سے، امام احمد، ابویعلٰی، طبرانی، ابن حبان اور حاکم نے حضرت خالد بن عدی الجہنی سے، امام احمد نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے، امام احمد، طبرانی اور بیہقی نے حضرت عائذ بن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہم سے روایت کیا ہے، اور یہ تمام احادیث جید اسناد کی وجہ سے قوی ہیں۔ (ت)

حدیث میں ہے حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: ما المعطي من سعة بافضل من الأخذ اذا کان محتاجاً۔ ۱ تونگری سے دینے والا کچھ لینے والے سے افضل نہیں جبکہ وہ حاجت رکھتا ہو (اسے طبرانی نے المعجم الکبیر میں حضرت ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا اور اوسط میں ان کے ہاں اس کا شاہد بھی ہے جیسا کہ ابن حبان نے الضعفاء میں حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے حدیث روایت کی ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۵۲: از پکھریا محلہ نور الحلیم شاہ شریف آباد رائے پور ضلع مظفر پور مرسلہ شریف الرحمن صاحب ۳ شعبان ۱۳۳۶ھ زید مالدار چھ سات ہزار روپے یا کچھ کم و بیش کی زمین رکھتا

ہے اور اس کو پانچ چھ سو روپیہ قرض ہے آیا وہ زمین بیچ کر ادا کرے یا بھیک مانگ کر، شرعاً اس کو اس غرض سے بھیک مانگنا جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: اگر اس کا ذریعہ رزق اس زمین کے سوا کچھ نہیں، نہ وہ کسی کسب پر قادر ہے نہ اس زمین کا کوئی حصہ

۱ المعجم الکبیر مروی از عبداللہ بن عمر رضی اللہ عنہما المکتبۃ الفیصلیہ بیروت ۱۲/ ۴۲۳

Fatawa Ridawiyya Volume 10

...separate it and what remains is sufficient, or if no one is willing to take a share. In short, if all means except begging are closed, then by the rule of necessity, begging is permissible to the extent of necessity; otherwise, it is forbidden.

Indeed, necessity makes prohibited things permissible, and what is for necessity (necessity makes prohibited things permissible and is estimated according to its extent) | Necessity makes prohibited things permissible, and only that much will be permissible in view of the necessity. (T) And Allah Almighty knows best.

STATEMENT OF VOLUNTARY CHARITIES

Question 153: From the administration of Marehra Mutahhara, from the shrine of the refuge of the poor, asked by Hazrat Syed Shah Hamid Hussain Mian Sahib Qibla, may his blessings continue. 10 Shaban 1320 AH.

What do the scholars of religion say regarding this matter: A person, with the intention of reward, spends his lawful money to have food cooked monthly or annually for the Fateha of the Radiant Prophet, Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him), and feeds it to the poor and others or distributes it. There is a student, a Hanafi Qadri Sunni Sayyid, whose religious education remains incomplete because his guardian lacks the means. There is a fear that due to not acquiring religious knowledge, this student of the progeny of Mustafa (peace and blessings of Allah be upon him) might become misguided. In this situation, if the money spent on Fateha is instead spent on the religious education of this student with the intention of the reward of Fateha for the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), will it be a replacement for the annual or monthly Fateha and a cause for the pleasure of the Leader of both worlds (peace and blessings of Allah be upon him) or not? And will there be any reduction in reward?

The Answer: This will be an excellent replacement for it, and what is the meaning of reduction in reward? Rather, there is a hope for seventy times more reward than that. In the aforementioned case of cooking and feeding or distributing food, there are ten for one.

Allah Almighty said: "Whoever brings a good deed, for him is ten times its like." 1 | The noble command of Allah Almighty is: He who performs a good deed, for him there are ten like it. (T)

And in assisting a student of religious knowledge, there are at least seven hundred for one.

Allah Almighty said: "The example of those who spend their wealth..." | The exalted command of Allah Almighty is: Their parable who spend...

1 Quran 6:160 Page 309 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

...अलग करके बाकी गुज़ारे के लायक बचे या कोई हिस्सा लेने पर राज़ी न हो। सारांश यह कि भीख मांगने के अलावा तमाम साधन बंद हों तो ज़रूरत के हुक्म से ज़रूरत के मुताबिक भीख मांगना हलाल है, वरना हराम।

क्योंकि ज़रूरत निषिद्ध चीजों को जायज़ कर देती है और जो ज़रूरत के लिए हो (ज़रूरत निषिद्ध चीजों को जायज़ कर देती है और उसका अंदाज़ा ज़रूरत के मुताबिक ही किया जाता है) | ज़रूरत निषिद्ध (ममनूआत) को जायज़ कर देती है और ज़रूरत के लिहाज़ से उतनी ही मात्रा जायज़ होगी। (त) और अल्लाह तआला ही सबसे ज़्यादा जानने वाला है।

नफ़ल सदक़ात। (स्वैच्छिक दान) का बयान

मसला 153: मरहरा मुतहरा प्रशासन से, दरगाह मिस्कीन पनाह से, हज़रत सैय्यद शाह हामिद हुसैन मियां साहब क़िबला, दामत बरकातुहुम द्वारा पूछा गया। 10 शाबान 1320 हिजरी।

विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि एक साहब सवाब की नीयत से अपने जायज़ पैसों से मासिक या सालाना खाना पकवा कर हुज़ूर पुर नूर, सरवर-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की फातिहा करते हैं और खाना गरीबों और अन्य लोगों को खिलाते हैं या बांट देते हैं। एक छात्र है जो हनफी कादरी सुन्नी सैय्यद है, जिसकी धार्मिक शिक्षा उसके अभिभावक की आर्थिक तंगी के कारण अधूरी रह रही है। डर यह है कि धार्मिक शिक्षा प्राप्त न करने के कारण आले-मुस्तफा (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का यह छात्र गुमराह न हो जाए। ऐसी स्थिति में, यदि फातिहा में खर्च किया जाने वाला पैसा हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की फातिहा के सवाब की नीयत से उस छात्र की धार्मिक शिक्षा पर खर्च किया जाए, तो क्या यह सालाना या मासिक फातिहा का विकल्प बनकर दोनों जहानों के सरदार (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की प्रसन्नता का कारण होगा या नहीं? और क्या सवाब में कोई कमी तो नहीं होगी?

जवाब: यह उसका बेहतरीन विकल्प होगा और सवाब में कमी का क्या मतलब, इससे तो सत्तर गुना ज़्यादा सवाब की उम्मीद है। ऊपर बताए गए खाना पकाकर खिलाने या बांटने में एक के दस हैं।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "जो कोई नेकी लाएगा, उसके लिए उसके जैसे दस हैं।" 1 | अल्लाह तआला का इरशाद-ए-गिरामी है: जो नेकी बजा लाता है उसके लिए उसके दस मिस्ल (गुना) हैं। (त)

और दीनी इल्म (धार्मिक शिक्षा) के छात्र की सहायता करने में कम से कम एक के सात सौ हैं।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "उन लोगों की मिसाल जो अपने माल खर्च करते हैं..." | अल्लाह तआला का फ़रमान-ए-आली है: उनकी कहावत जो अपने...

1 अल-कुरान 16/1 पेज 309 of 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

جدا کرکے باقی لائق کفایت بچے یا کوئی حصہ لینے پر راضی نہ ہو، غرض یہ کہ سوائے سوال جمیع اسباب بند ہوں تو بحکم ضرورت بقدر ضرورت سوال حلال، ورنہ حرام،

فان الضرورۃ تبیح المحظورات و ما کان لضرورۃ (الضرورۃ تبیح المحظورات وتقدر بقدرھا) | ضرورت ممنوعات کو مباح کر دیتی ہے اور ضرورت کے پیش نظر اتنی ہی مقدار جائز ہوگی (ت) واللہ تعالی اعلم

صدقات نفل کا بیان

مسئلہ ۱۵۳: از سرکار مارہرہ مطہرہ از درگاہ مسکین پناہ مسئولہ حضرت سید شاہ حامد حسین میاں صاحب قبلہ دامت برکاتہم ۱۰ شعبان ۱۳۲۰ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک صاحب بغرض ثواب اپنے جائز روپے سے ماہواری یا سالانہ کھانا پکوا کر فاتحہ حضور پرنور سرور عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کیا کرتے ہیں اور کھانا مساکین و غیر مساکین کو کھلا دیتے ہیں یا تقسیم کر دیتے ہیں ایک طالبعلم حنفی قادری سنی سید کہ جس کی تعلیم دینی بوجہ نہ استطاعت ہونے کے اس کے ولی کے غیر مکمل رہی جاتی ہو اور علوم دینی حاصل نہ کرنے کی وجہ سے اس طالب علم آل مصطفی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے بد عقیدہ ہو جانے کا اندیشہ ہو اس صورت میں اگر وہ روپیہ کو جو فاتحہ میں صرف کیا جاتا ہے اگر اس طالب علم کے تعلیم دینی میں بہ نیت ثواب فاتحہ حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم صرف کر دیا جائے تو بدل اس فاتحہ سالانہ یا ماہواری کا ہو کر باعث خوشنودی سردار دو عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ہو گا یا نہیں اور ثواب میں کمی تو نہ ہو گی؟

الجواب: یہ اس کا نعم البدل ہوگا اور ثواب میں کمی کیا معنی، اس سے ستر گنا ثواب کی زیادہ امید ہے بطور مذکور کھانا پکا کر کھلانے یا بانٹنے میں ایک کے دس ہیں۔

قَالَ اللّٰہُ تَعَالٰی مَنْ جَآءَ بِالْحَسَنَۃِ فَلَہٗ عَشْرُ اَمْثَالِھَا ۱ | اللہ تعالی کا ارشادِ گرامی ہے جو نیکی بجا لاتا ہے اس کے لئے اس کی دس مثل ہیں۔ (ت)

اور طالب علم دین کی اعانت میں کم سے کم ایک کے سات سو۔

قَالَ اللّٰہُ تَعَالٰی مَثَلُ الَّذِیْنَ یُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَھُمْ | اللہ تعالیٰ کا فرمانِ عالی ہے: ان کی کہاوت جو اپنے

1 القرآن ۱۶/۱ Page 309 of 836

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Table Header] Arabic: فِي سَبِيْلِ اللّٰهِ كَمَثَلِ حَبَّةٍ اَنْبَتَتْ سَبْعَ سَنَابِلَ فِيْ كُلِّ سُنْبُلَةٍ مِّائَةُ حَبَّةٍ وَاللّٰهُ يُضٰعِفُ لِمَنْ يَّشَآءُ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ﴿٢٦١﴾[1] Urdu: Those who spend their wealth in the way of Allah are like a seed that grew seven ears, in each ear a hundred grains, and Allah multiplies for whom He wills, and Allah is All-Encompassing, All-Knowing. (T)

In Durr-ul-Mukhtar it is stated:

[Table Header] Arabic: فی سبیل اللہ ھو منقطع الغزاۃ وقیل الحاج وقیل طلبۃ العلم خصوصاً۔[2] Urdu: 'In the path of Allah' refers to those warriors who do not have expenses and weapons; some said pilgrims, and some said specifically students of religious knowledge are meant. (T)

While there is preservation of guidance in it, it is a Sahih Hadith that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Table Header] Arabic: لان یھدی اللہ بك رجلا خیر لك مما طلعت علیك شمس و غربت۔[3] واللہ تعالی اعلم وعلمہ مجدہ اتم واحکم۔ Urdu: For Allah to guide even one person through you is better for you than everything upon which the sun rises and sets. (T) And Allah Almighty knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete and most wise.

Issue 154: From Rampur, Chah Shumar, Salma Maulvi Abdul Samad Sahib, 18 Muharram 1321 AH.

What do the scholars of religion and muftis of the firm Sharia say regarding this issue: Those who are healthy, strong, and well-to-do have made begging, poverty, and neediness their profession. They go from door to door and city to city begging and asking, and they never do hard work or labor, even though they are wealthy and well-to-do. Is it lawful (halal) or forbidden (haram) for such people to beg and ask? And if it is haram, is giving to them also haram and prohibited due to 'assisting in sin', or not? Especially since asking and giving in a mosque is stated as haram and disliked in books of jurisprudence. As recorded in Durr-ul-Mukhtar: "Asking therein is forbidden and giving is disliked."[4] (Begging in the mosque is haram and giving is makruh. T). Clarify from the Book and you shall be rewarded on the Day of Reckoning.

Footnotes: 1. Al-Quran 2/261 2. Durr-ul-Mukhtar, Chapter on Al-Masrif, Matba' Mujtabai Delhi, 1/140 3. Al-Jami' al-Saghir with Fayd al-Qadir, Hadith 2197, Dar al-

Ma'rifa Beirut 5/259; Ittihaf al-Sada al-Muttaqin, Chapter on abandoning acts of worship for fear of showing off, Dar al-Fikr Beirut 8/320 4. Durr-ul-Mukhtar, Chapter on what invalidates prayer, etc., Matba' Mujtabai Delhi, 1/93

फ़तावा रज़विया, खंड 10

[टेबल हेडर] अरबी: تَتْ سَبْعَ سَنَابِلَ فِيْ كُلِّ سُنْبُلَةٍ مِّائَةُ حَبَّةٍطوَفِي سَبِيْلِ اللّٰهِ كَمَثَلِ حَبَّةٍ اَنْ وَاللّٰهُ يُضٰعِفُ لِمَنْ يَّشَآءُ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ﴿۲۶۱﴾[1] उर्दू: अल्लाह की राह में खर्च करने वालों की मिसाल उस दाने की तरह है जिसने सात बालियां उगाईं, हर बाली में सौ दाने, और अल्लाह जिसे चाहे उससे भी ज़्यादा बढ़ा देता है, और अल्लाह बड़ी वुसअत (विस्तार) वाला और सब कुछ जानने वाला है। (त)

'दुर्रे मुख्तार' में है:

[टेबल हेडर] अरबी: فی سبیل اللہ ھو منقطع الغزاۃ وقیل الحاج وقیل طلبۃ العلم خصوصاً۔[2] उर्दू: 'फि सबीलिल्लाह' (अल्लाह की राह में) से मुराद वे गाज़ी (योद्धा) हैं जिनके पास खर्चा और हथियार न हों, कुछ ने कहा हाजी, और कुछ ने कहा कि इससे विशेष रूप से इल्म के तलबगार (छात्र) मुराद हैं। (त)

जबकि इसमें हिदायत की हिफाज़त हो, सही हदीस है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फरमाते हैं:

[टेबल हेडर] अरबी: لان یھدی اللہ بك رجلا خیر لك مما طلعت علیك شمس و غربت۔[3] واللہ تعالی اعلم وعلمہ مجدہ اتم واحکم۔ उर्दू: तुम्हारी वजह से किसी एक का हिदायत पा जाना तुम्हारे लिए उस हर चीज़ से बेहतर है जिस पर सूरज उगता और डूबता है। (त) और अल्लाह सबसे ज़्यादा जानने वाला है और उसका इल्म, उसकी शान बुलन्द हो, सबसे कामिल और मज़बूत है।

मसला 154: रामपुर, चाह शुमर, सलमा मौलवी अब्दुल समद साहब की ओर से, 18 मुहर्रम 1321 हिजरी।

उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शराह-ए-मतीन इस मसले में क्या फरमाते हैं कि: जो लोग तंदुरुस्त और धनवान हैं, खाते-पीते हैं, उन्होंने अपना पेशा भीख मांगना और फकीरी और मोहताजी बना रखा है और वे दर-दर, शहर-शहर भीख मांगते और सवाल करते फिरते हैं और हरगिज़ मेहनत मज़दूरी नहीं करते, हालांकि वे मालदार और खुशहाल हैं। क्या ऐसे लोगों के लिए भीख मांगना और सवाल करना हलाल है या हराम? और अगर हराम है, तो उन्हें देना भी गुनाह में मदद करने के कारण हराम और मना है या नहीं? जबकि मस्जिद में सवाल करना और दान देना फिकह की किताबों में हराम

और मकरूह बताया गया है। जैसा कि 'दुर्रे मुख्तार' में दर्ज है: 'उसमें सवाल करना हराम है और देना मकरूह है।'[4] (मस्जिद में भीख मांगना हराम और देना मकरूह है। त) कुरआन और हदीस की रोशनी में बयान करें और कयामत के दिन इसका अज्र पाएं।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. अल-कुरआन 2/261 2. दुर्रे मुख्तार, बाब अल-मसरिफ, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/140 3. अल-जामे-उस-सगीर मय फैज़-उल-कादिर, हदीस 2197, दारुल मारिफत बेरूत 5/259; इत्तेहाफ-उस-सादात-उल-मुत्तकीन, रियाकारी के डर से इबादत छोड़ने का बयान, दारुल फिक्र बेरूत 8/320 4. दुर्रे मुख्तार, बाब मा युफसिद अस-सलात आदि, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/93

पृष्ठ 310/836

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

[ٹیبل ہیڈر] عربی: فِي سَبِيْلِ اللهِ كَمَثَلِ حَبَّةٍ اَنْبَتَتْ سَبْعَ سَنَابِلَ فِيْ كُلِّ سُنْبُلَةٍ مِّائَةُ حَبَّةٍ وَاللهُ يُضٰعِفُ لِمَنْ يَّشَآءُ وَاللهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ﴿۲۶۱﴾[1] اردو: مال اللہ کی راہ میں خرچ کرتے ہیں اس دانہ کی طرح جس نے اگائیں سات بالیاں، ہر بالی میں سو دانے، اور اللہ اس سے بھی زیادہ بڑھائے جس کے لیے چاہے، اور اللہ وسعت والا علم والا ہے۔(ت)

در مختار میں ہے:

[ٹیبل ہیڈر] عربی: فی سبیل اللہ ھو منقطع الغزاۃ وقیل الحاج وقیل طلبۃ العلم خصوصاً۔[2] اردو: فی سبیل اللہ سے مراد وہ غازی ہیں جن کے پاس خرچہ واسلحہ نہ ہو، بعض نے کہا حاجی، اور بعض نے کہا اس سے خصوصاً طلبہ علم مراد ہیں (ت)

جبکہ اس میں حفظ ہدایت ہو، صحیح حدیث ہے نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

[ٹیبل ہیڈر] عربی: لان یھدی اللہ بك رجلا خیر لك مما طلعت علیك شمس و غربت۔[3] واللہ تعالی اعلم وعلمہ مجدہ اتم واحکم۔ اردو: تیری وجہ سے کسی ایک کا ہدایت پا جانا ہر اس شئی سے بہتر ہے جس پر طلوع آفتاب ہو۔ (ت) واللہ تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

مسئلہ ۱۵۴: از رامپور چاہ شومر سلمہ مولوی عبد الصمد صاحب ۱۸ محرم ۱۳۲۱ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین اندریں مسئلہ کہ جو لوگ تندرست و توانگر کھاتے پیتے ہیں انھوں نے اپنا پیشہ گدائی اور فقیری اور محتاجگی کا مقرر کیا ہے اور در بدر شہر بہ شہر بھیک مانگتے سوال کرتے پھرتے ہیں اور ہر گز محنت مزدوری نہیں کرتے اگرچہ مالدار آسودہ حال ہیں ایسے لوگوں کو بھیک مانگنا اور سوال کرنا حلال ہے یا حرام؟ اور اگر حرام ہے تو

دینا بھی بوجہ اعانت علی الحرمۃ، حرام اور ممنوع ہے یا نہیں، جبکہ مسجد میں سوال اور اس عطا کو کتب فقہ میں حرام و مکروہ فرمایا گیا ہے۔ چنانچہ در مختار میں مرقوم ہے: ویحرم فیہ السؤال ویکرہ الاعطاء (مسجد میں مانگنا حرام اور دینا مکروہ ہے۔ ت) بینوا بالکتاب وتوجروا بیوم الحساب (کتاب سے بیان کرو اور یوم حساب اجر پاؤ۔ ت)

حواشی: 1 القرآن ۲/ ۲۶۱ 2 درمختار باب المصرف مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۰ 3 الجامع الصغیر مع فیض القدیر حدیث ۲۱۹۷ دار المعرفۃ بیروت ۲۵۹/۵، اتحاف السادۃ المتقین بیان ترک الطاعات خوفا من الریاء دار الفکر بیروت ۸/ ۳۲۰ 4 در مختار باب مایفسد الصلوۃ الخ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۹۳

Fatawa Rizwia Volume 10

The Answer:

It is forbidden (haram) for anyone who possesses enough wealth to meet their Sharia-mandated needs, or who is capable of earning, to beg. And for those who are aware of this, it is forbidden to give to such a person. Both the taker and the giver are sinners and subject to divine punishment. It is stated in the authentic (Sahih) Hadiths that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said:

Arabic Text	Urdu Translation
Charity is not lawful for a wealthy person, nor for one who is strong and healthy. (Reported by the Imams Ahmad, Ad-Darimi, and the four [other compilers] from Abu Hurayrah, may Allah be pleased with him.)	Charity is not lawful for a wealthy person, nor for a healthy person. (Imams Ahmad, Darimi, and the four Imams narrated this from Hazrat Syedna Abu Hurairah, may Allah be pleased with him.)

Further, it is in the Sahih Hadiths that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said:

Arabic Text	Urdu Translation
Whoever begs from people while he has that which suffices him will come on the Day of Resurrection with his begging being scratches or wounds on his face. (Reported by Ad-Darimi and the four [other compilers] from Ibn Mas'ud, may Allah be pleased with him.)	Whoever begs from people while he has that which makes him self-sufficient will come on the Day of Resurrection in such a state that his begging will be scratches and wounds on his face. (Darimi and the four Imams narrated this from Hazrat Ibn Mas'ud, may Allah be pleased with him.)

Furthermore, he (peace and blessings of Allah be upon him) said:

Arabic Text	Urdu Translation
Whoever begs from people for their wealth to increase his own is only asking for a ember of Hellfire; let him take a little or take a lot. (Reported by Ahmad, Muslim, and Ibn Majah from [Abu Hurairah]...)	Whoever asks for people's wealth to increase his own is asking for a piece of Hellfire; now whether he takes a little or a lot. (Reported by Imam Ahmad, [Muslim, and Ibn Majah]...)

1. Sunan al-Darimi, No. 15, Chapter: On who is entitled to charity, Nashr al-Sunnah Multan 1/325; Jami' al-Tirmidhi, Chapters of Zakat, Amin Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi 1/83.
2. Jami' Sunan al-Darimi, No. 15, Chapter: On who is entitled to charity, Nashr al-Sunnah Multan 1/325; Jami' al-Tirmidhi, Chapters of Zakat, Amin Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi 1/82.
3. Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Abu Hurayrah (may Allah be pleased with him), Dar al-Fikr Beirut 2/231; Sahih Muslim, Book of Zakat, Qadimi Kutub Khana Karachi 1/333; Sunan Ibn Majah, Chapter: On begging despite having wealth, H.M. Saeed Company Karachi, p. 133.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (10)

उत्तर:

जो अपनी शरई ज़रूरतों के लायक़ माल रखता है या उसे कमाने पर सक्षम है, उसके लिए मांगना हराम है, और जो इस बात से वाक़िफ़ हो, उसके लिए ऐसे व्यक्ति को देना हराम है। लेने वाला और देने वाला दोनों गुनहगार हैं और सज़ा के पात्र हैं। सही हदीसों में आया है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
ला तहिल्लुस सदक़तु लि-ग़निय्यिन व लि-ज़ी मिर्रतिन सविय्यिन। (इसे इमाम अहमद, दारमी और चारों इमामों ने अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया।)	सदक़ा किसी धनी व्यक्ति के लिए हलाल नहीं है, और न ही किसी स्वस्थ और तंदुरुस्त व्यक्ति के लिए। (इसे इमाम अहमद, दारमी और चारों इमामों ने हज़रत सय्यदिना अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है।)

साथ ही, सही हदीसों में अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
मन सअलन नासा व लहू मा युग़्नीहि जा-अ यौमल क़ियामति व मस्-अलतुहू फ़ी वज्हिही खुमूश। (इसे दारमी और चारों इमामों ने इब्न मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया।)	जो लोगों से सवाल करे जबकि उसके पास वह चीज़ हो जो उसे बेनियाज़ (संतुष्ट) करती हो, तो वह क़यामत के दिन इस हाल में आएगा कि उसका वह सवाल उसके चेहरे पर खरोंच और ज़ख्म होगा। (इसे दारमी और चारों इमामों ने हज़रत इब्न मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है।)

इसके अतिरिक्त, आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
मन सअलन नासा अमवालहुम तकस्सुरुन फ़-इन्नमा यस-अलु जम्र जहन्नम फ़ल-यस्तक़िल्ल मिन्हु औ यस्तक्सिर। (इसे अहमद, मुस्लिम	जो अपना माल बढ़ाने के लिए लोगों से उनके माल का सवाल करता है, वह वास्तव में जहन्नम की आग का टुकड़ा माँग रहा है; अब चाहे वह कम ले या

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
और इब्न माजह ने [अबू हुरैरा] से रिवायत किया।)	अधिक। (इसे इमाम अहमद, [मुस्लिम और इब्न माजह] ने रिवायत किया...)

1. सुनन अल-दारमी, संख्या 15, अध्याय: जिसके लिए सदक़ा हलाल है, नश्र अल-सुन्नत मुल्तान 1/325; जामी अल-तिर्मिज़ी, ज़कात के अध्याय, अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली 1/83।
2. जामी सुनन अल-दारमी, संख्या 15, अध्याय: जिसके लिए सदक़ा हलाल है, नश्र अल-सुन्नत मुल्तान 1/325; जामी अल-तिर्मिज़ी, ज़कात के अध्याय, अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली 1/82।
3. मुसनद अहमद बिन हंबल, रिवायत हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से, दार अल-फ़िक्र बेरुत 2/231; सहीह मुस्लिम, ज़कात की किताब, क़दीमी कुतुब खाना कराची 1/333; सुनन इब्न माजह, अध्याय: धनी होने के बावजूद माँगने पर, एच.एम. सईद कंपनी कराची पृ. 133।

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

الجواب:

جو اپنی ضروریاتِ شرعیہ کے لائق مال رکھتا ہے یا اس کے کسب پر قادر ہے اُسے سوال حرام ہے اور جو اس مال سے آگاہ ہوئے دینا حرام، اور لینے اور دینے والا دونوں گنہگار و مبتلائے آثام۔ صحاح میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

متنِ عربی	اردو ترجمہ
لاتحل الصدقة لغنی ولذی مرة سوی۔ رواہ الائمۃ احمد والدارمی والاربعۃ عن ابی ہریرۃ رضی اللہ تعالیٰ عنہ۔	صدقہ حلال نہیں ہے کسی غنی کے لیے، نہ کسی تندرست کے لیے (اسے امام احمد، دارمی اور چاروں ائمہ نے حضرت سیدنا ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا۔ ت)

نیز صحاح میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

متنِ عربی	اردو ترجمہ
من سأل الناس ولہ مایغنیہ جاء یوم القیامۃ ومسئلتہ فی وجھہ خموش۔ رواہ الدارمی والاربعۃ عن ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ۔	جو لوگوں سے سوال کرے اور اس کے پاس وہ شئے ہو جو اسے بے نیاز کرتی ہو روزِ قیامت اس حال پر آئیگا کہ اس کا وہ سوال اس کے چہرہ پر خراش و زخم ہو (اسے دارمی اور چاروں ائمہ نے حضرت ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا۔ت)

نیز فرماتے ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم :

متنِ عربی	اردو ترجمہ
من سأل الناس اموالهم تكثرا فانما يسأل جمر جهنم فليستقل منه او يستكثر۔ رواه احمد و مسلم وابن ماجة عن	جو اپنا مال بڑھانے کے لیے لوگوں سے اُن کے مال کا سوال کرتا ہے وہ جہنم کی آگ کا ٹکڑا مانگتا ہے، اب چاہے تھوڑی لے یا بہت۔ (اسے امام احمد، (مسلم اور ابن ماجہ نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ عنہ سے روایت کیا۔ ت))

1 سنن الدارمی نمبر ۱۵ باب من تحل لہ الصدقۃ نشر السنۃ ملتان ۱/ ۳۲۵، جامع الترمذی ابواب الزکوۃ امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۸۳/۱ 2 جامع سنن الدارمی نمبر ۱۵ باب من تحل لہ الصدقۃ نشر السنۃ ملتان ۱/ ۳۲۵، جامع الترمذی ابواب الزکوۃ امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۸۲/۱ 3 مسند احمد بن حنبل مروی از ابوہریرہ رضی اللہ عنہ دارالفکر بیروت ۲۳۱/۲ ، صحیح مسلم کتاب الزکوۃ قدیمی کتب خانہ کراچی ۳۳۳/۱ ، سنن ابن ماجہ باب من سأل عن ظهر غنی ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۱۳۳

Volume Ten Fatawa-e-Razvia

- Abu Huraira (may Allah be pleased with him).
- Reported by Muslim and Ibn Majah from Hadrat Abu Huraira (may Allah be pleased with him). (T)

He (the Prophet, peace be upon him) also states: "Whoever asks [for charity] without being in poverty, he is only eating hot coals." [1] Reported by Ahmad and Ibn Khuzaymah, and also in Al-Mukhtarah from Habshi bin Junadah (may Allah be pleased with him) with a sound chain of narration. (T)

Explanation: Whoever asks [for charity] without a legitimate Shariah need or necessity, he eats the fire of Hell. (Imam Ahmad and Ibn Khuzaymah reported this, and it is narrated in Al-Mukhtarah from Hadrat Habshi bin Junadah (may Allah be pleased with him) with a sound chain of narration. - T)

In Tanwir al-Absar and Durr al-Mukhtar, it is stated: "It is not permissible to ask for one who has provisions for a day in actuality or in potentiality, like a healthy earner. And the one who gives to him, knowing his state, is a sinner for aiding him in what is forbidden..." [2] And the complete discussion on this point, along with the refutation of misconceptions, is in our Fatawa, and we have mentioned some of it in our commentary on Radd al-Muhtar. And Allah Almighty says, Magnificent is His glory: "And do not cooperate in sin and aggression." (Quran 5:2). And Allah Almighty knows best. (T)

Explanation: A person who has a day's livelihood practically available or has the physical strength to earn a living (meaning he is healthy and strong), it is not permissible for him to ask for food. If a person aware of his condition gives him something, he will be a sinner because he is helping him in something forbidden. (T) A detailed discussion has been provided in our Fatawa to dispel all doubts, and it has also been mentioned in the margins of Radd al-Muhtar. Allah Subhanahu's blessed command is: "Do not help in sin and excess." And Allah Almighty knows best. (T)

Issue 155: Sent by Muzaffar Ali, resident of Shahabad town, Hardoi district, Mohalla Syed Bada, 16 Jumadi al-Ula 1330 AH. Is it permissible to eat the sweets of Milad Sharif, Giyarween Sharif, and the Fatihah of Awliya Allah, and to drink the sherbet of Muharram? And what about the one who considers them haram, like the property of Zakat, declaring them absolutely forbidden for everyone except the poor?

[Footnotes] 1. Musnad Ahmad bin Hanbal, Hadith of Habshi bin Junadah al-Saluli (may Allah be pleased with him), Dar al-Fikr Beirut, 4/165; Sahih Ibn Khuzaymah No. 2412, Bab at-Taghleez fi Mas'alat al-Ghani min as-Sadaqah, Hadith 2446, al-Maktab al-Islami Beirut, 2/100. 2. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Bab al-Masraf, Matba' Mujtabai Delhi, 1/142.

खंड दस फ़तावा-ए-रज़विया

- अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु)।
- मुस्लिम और इब्न माजा ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है। (टी)

वह (पैगंबर, सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) यह भी फरमाते हैं: "जो बिना गरीबी के(दान) माँगता है, वह केवल दहकते अंगारे खा रहा है।" [1] इसे अहमद और इब्न खुजैमा ने रिवायत किया है, और अल-मुख्तारा में हब्शी बिन जुनादा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से सही सनद के साथ रिवायत है। (टी)

व्याख्या: जो व्यक्ति बिना किसी शरीयत-सम्मत आवश्यकता या मजबूरी के माँगता है, वह जहन्नुम की आग खाता है। (इमाम अहमद और इब्न खुजैमा ने इसे रिवायत किया है और मुख्तारा में हज़रत हब्शी बिन जुनादा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से सही सनद के साथ मरुवी है। - टी)

तनवीर अल-अब्सार और दुर्र अल-मुख्तार में कहा गया है: "उस व्यक्ति के लिए माँगना जायज़ नहीं है जिसके पास वास्तव में एक दिन का भोजन उपलब्ध हो या जिसमें भोजन कमाने की क्षमता हो, जैसे कि एक स्वस्थ कमाने वाला। और जो उसे जानते हुए देता है वह पापी है क्योंकि उसने हराम काम में मदद की..." [2] इस विषय पर विस्तृत चर्चा और भ्रमों का निवारण हमारे फतावा में है, और हमने इसका कुछ उल्लेख रद अल-मुहतार की अपनी व्याख्या में भी किया है। और अल्लाह सर्वशक्तिमान फरमाता है: "गुनाह और ज़्यादती में एक-दूसरे की मदद न करो।" (कुरान 5:2)। और अल्लाह सर्वशक्तिमान सबसे बेहतर जानता है। (टी)

व्याख्या: जिस व्यक्ति के पास वास्तव में एक दिन की रोज़ी मौजूद हो या वह रोज़ी कमाने की सही ताकत रखता हो (यानी वह तंदुरुस्त और बलवान हो), उसके लिए रोज़ी का सवाल जायज़ नहीं है। उसकी स्थिति से अवगत व्यक्ति यदि उसे कुछ देगा तो वह गुनहगार होगा क्योंकि वह हराम काम में उसकी मदद कर रहा है। (टी) इस पर ऐसी विस्तृत चर्चा जिससे तमाम शंकाओं का निवारण हो जाए, हमने अपने फतावा में की है और इसका कुछ ज़िक्र रद अल-मुहतार के हाशिये में भी है। अल्लाह सुब्हानहू का मुबारक फ़रमान है: "गुनाह और ज़्यादती पर मदद न करो।" और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (टी)

मसला 155: प्रेषक मुजफ्फर अली, निवासी कस्बा शाहबाद, जिला हरदोई, मोहल्ला सैयद बाड़ा, 16 जमादी-उल-उला 1330 हिजरी। क्या मिलाद शरीफ़, ग्यारहवीं शरीफ़ और औलिया अल्लाह की

फातिहा की मिठाई खाना और मुहर्रम का शरबत पीना जायज़ है? और उस व्यक्ति के बारे में क्या हुक्म है जो इन्हें हराम और ज़कात के माल की तरह समझता है और इसे गरीबों के अलावा सभी के लिए पूर्णतः वर्जित बताता है?

[पादलेख] 1. मुसनद अहमद बिन हंबल, हदीस हब्शी बिन जुनादा अल-सलूली (रज़ियल्लाहु अन्हु), दार अल-फ़िक्र बेरुत, 4/165; सही इब्न खुज़ैमा नंबर 2412, बाब अत-तगलीज़ फ़ी मसअत अल-ग़नी मिन अस-सदका, हदीस 2446, अल-मकतब अल-इस्लामी बेरुत, 2/100. 2. दुर्र अल-मुख्तार शरह तनवीर अल-अब्सार, बाब अल-मस्रफ़, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/142.

جلد دہم فتاوٰی رضویہ

ہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ مسلم اور ابن ماجہ نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔ (ت)

نیز فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: من سأل من غیر فقر فانما یاکل الجمر۔[1] رواہ احمد وابن خزیمۃ وایضاً فی المختارۃ عن حبشی بن جنادۃ رضی اللہ تعالی عنہ بسند صحیح۔ (ت) جو بے حاجت و ضرورت شرعیہ سوال کرے وہ جہنم کی آگ کھاتا ہے (اسے امام احمد اور ابن خزیمہ نے روایت کیا ہے اور مختارہ میں حضرت حبشی بن جنادہ رضی اللہ عنہ سے صحیح سند کے ساتھ مروی ہے۔ ت)

تنویر الابصار و در مختار میں ہے: لا یحل ان یسئل من لہ قوت یومہ بالفعل او بالقوۃ کالصحیح المکتسب ویا ثم معطیہ ان علم بحالہ لاعانتہ علی المحرم اھ[2] و تمام الکلام فی ھذا المقام مع دفع الاوھام فی فتاونا وقد ذکر ناشئاً منہ فیما علقنا علی رد المحتار واللہ تعالی یقول جل مجدہ وَلَا تَعَاوَنُوْا عَلَی الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ، واللہ تعالٰی اعلم۔ جس شخص کے پاس عملاً ایک دن کی روزی موجود ہو یا وہ روزی کمانے کی صحیح طاقت رکھتا ہو (یعنی وہ تندرست و توانا ہو تو) اس کے لیے روزی کا سوال جائز نہیں، اس کے حال سے آگاہ شخص اگر اسے کچھ دے گا تو وہ گنہ گار ہوگا کیونکہ وہ حرام پر اس کی مدد کر رہا ہے اھ (ت) اور اس پر ایسی تفصیلی گفتگو جس سے تمام اوہام کا رد ہو جائے ہم نے اپنے فتاوٰی میں کی ہے اور اس میں کچھ ردالمختار کے حاشیہ میں بھی ذکر کی ہے اور اللہ تعالٰی سبحانہ کا مبارک فرمان ہے: گناہ اور زیادتی پر مدد نہ کرو۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۱۵۵: مرسلہ مظفر علی ساکن قصبہ شاہ آباد ضلع ہر دوئی محلہ سید باڑہ ۱۶ جمادی الاولیٰ ۱۳۳۰ھ میلاد شریف اور گیارہویں شریف اور فاتحہ اولیاء اللہ کی شیرینی کھانا اور شربت محرم کا پینا درست ہے یا نہیں اور ان کا حرام جاننے والا اور مثل زکوٰۃ کے مال کے، بجز مساکین اور سب کے واسطے ، حرام قطعی بتانے والا

1 مسند احمد بن حنبل حدیث حبشی بن جنادۃ السلولی رضی اللہ عنہ دارالفکر بیروت ۴/ ۱۶۵ ، صحیح ابن خزیمہ نمبر ۲۴۱۲ باب التغلیظ فی مسئلۃ الغنی من الصدقۃ حدیث ۲۴۴۶ المکتب الاسلامی بیروت ۱۰۰/۲ 2 در مختار شرح تنویر الابصار باب المصرف مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۲

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

Is he a Hanafi follower (Muqallid) or not? And can such a person be eligible to lead prayers (Imamat) among Hanafi followers or not?

The Answer:

None of the mentioned items are Zakat or obligatory charity (Sadaqah Wajibah). Consuming them is unanimously permissible (Halal) for everyone, including the rich, the poor, Syeds, etc. Anyone who declares it forbidden (Haraam) for others besides the needy is fabricating a lie against Allah Almighty and is deserving of severe punishment. Allah Almighty says:

"And do not say about what your tongues assert of untruth, 'This is lawful and this is forbidden,' to invent falsehood about Allah. Indeed, those who invent falsehood about Allah will not succeed."	وَلَا تَقُولُوا لِمَا تَصِفُ أَلْسِنَتُكُمُ الْكَذِبَ هَذَا حَلَالٌ وَهَذَا حَرَامٌ لِّتَفْتَرُوا عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ ۚ إِنَّ الَّذِينَ يَفْتَرُونَ
"[It is but] a brief enjoyment, and they will have a painful punishment." (1)	۟ عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ لَا يُفْلِحُونَ مَتَاعٌ قَلِيلٌ ۖ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ

In Fatawa 'Attabiyyah, then Nihayah Sharh Hidayah, then Sa'di Afandi 'ala al-'Inayah it is written:

"Voluntary charity (Nafl Sadaqah) is absolutely permissible for the Hashimites by consensus, and similarly, voluntary charity is permissible for the wealthy." (2)	يجوز النفل للهشمى مطلقا بالاجماع وكذا يجوز النفل للغنى-

In Durr al-Mukhtar it is written:

"Voluntary acts of charity and the proceeds of endowments (Waqf) are permissible for them [the wealthy]." (3)	جازت التطوعات من الصدقات و غلة الاوقاف لهم-

In Dhakhirah, then Radd al-Muhtar it is written:

"Indeed, in giving charity to the wealthy, there is a type of spiritual proximity, but it is less than the proximity of giving charity to the poor." (4)	ان فى التصديق على الغنى نوع قربة دون قربة الفقير-

Furthermore, there is no intention of charity (tassaduq) in these items; rather, it is a distribution of gifts (Hadiya) to the general attendees, and a gift is certainly and absolutely permissible for everyone.

1. Al-Quran 16/116 and 117
2. Hashiyah Sa'di Afandi 'ala al-'Inayah with Fath al-Qadir, Chapter on Permissibility of Giving Charity etc., Maktaba Nooria Razvia, Sukkur, 2/211
3. Durr al-Mukhtar, Bab al-Masraf, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/141
4. Radd al-Muhtar, Kitab al-Waqf, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 3/357

फ़तावा रज़विया, खंड 10

क्या वह हनफी मुक़ल्लिद (अनुयायी) है या नहीं? और क्या ऐसा व्यक्ति हनफी मुक़ल्लिद व्यक्तियों के बीच इमामत (प्रार्थना का नेतृत्व) के लिए पात्र हो सकता है या नहीं?

उत्तर:

उपर्युक्त वस्तुओं में से कोई भी वस्तु ज़कात या अनिवार्य दान (सदक़ा वाजिबा) नहीं है। इनका सेवन करना धनी, गरीब, सैयद आदि सभी के लिए सर्वसम्मति से जायज़ (हलाल) है। इसे गरीबों के अलावा दूसरों पर हराम बताने वाला अल्लाह सर्वशक्तिमान पर झूठ गढ़ता है और कठोर दंड का पात्र है। अल्लाह सर्वशक्तिमान फ़रमाता है:

"और अपनी ज़ुबान से गढ़े हुए झूठ के आधार पर यह न कहो कि यह हलाल है और यह हराम है, ताकि अल्लाह पर झूठ बाँधो। वास्तव में, जो लोग अल्लाह पर झूठ बाँधते हैं, वे कभी सफल नहीं होंगे।"	وَلَا تَقُولُوا لِمَا تَصِفُ أَلْسِنَتُكُمُ الْكَذِبَ هَذَا حَلَالٌ وَهَذَا حَرَامٌ لِّتَفْتَرُوا عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ ۚ إِنَّ الَّذِينَ يَفْتَرُونَ
"[यह] थोड़ा सा लाभ है और उनके लिए दर्दनाक सजा है।" (1)	عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ لَا يُفْلِحُونَ ۚ مَتَاعٌ قَلِيلٌ ۖ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ

फ़तावा अत्ताय्या, फिर निहाया शरह हिदाया, फिर सादी अफ़ंदी अल-इनाया में है:

"हाशिमियों के लिए हर नफ़्ली (ऐच्छिक) सदक़ा सर्वसम्मति से जायज़ है, और इसी तरह धनी के लिए भी नफ़्ली सदक़ा जायज़ है।" (2)	يجوز النفل للهشمى مطلقا بالاجماع وكذا يجوز النفل للغنى-

दुर-ए-मुख़्तार में है:

"स्वैच्छिक दान और वक्फ़ की उपज उनके(धनवानों) के लिए जायज़ है।" (3)	جازت التطوعات من الصدقات و غلة الاوقاف لهم-

ज़ख़ीरा और फिर रद-उल-मुख़्तार में है:

"धनी को दान देने में एक प्रकार का पुण्य (क़ुर्बत) है, जो गरीब को दान देने के पुण्य से कम है।" (4)	ان فى التصديق على الغنى نوع قربة دون قربة الفقير-

इसके अलावा, इन चीज़ों में दान (तसद्दुक़) की नीयत नहीं होती, बल्कि यह आम उपस्थित लोगों में उपहार (हदिया) का वितरण है, और उपहार निश्चित रूप से सभी के लिए पूरी तरह से जायज़ है।

---

1. अल-कुरान 116/16 और 117
2. हाशिया सादी अफ़ंदी अल-इनाया मअ फ़तह अल-क़दीर, बाब यजूसु दफ़उल सदक़ा इलैह इलख, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर 211/2
3. दुर्रे मुख़्तार बाब अल-मस्रफ़ मतबा मुज़्तबाई दिल्ली 1/141
4. रद-उल-मुख़्तार, किताब अल-वक़्फ़, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बेरुत, 3/357

पृष्ठ 313 का 836

جلد دہم فتاوی رضویہ

حنفی مقلد ہے یا نہیں؟ اور ایسا شخص حنفی مقلد اشخاص میں قابل امامت ہو سکتا ہے یا نہیں؟

الجواب:

اشیاء مذکورہ سے کوئی چیز نہ زکوۃ ہے نہ صدقہ واجبہ، اس کا کھانا غنی، فقیر، سید وغیرہ سب کو بالاتفاق حلال ہے، اسے سوائے مساکین اوروں پر حرام بتانے والا، اللہ عزوجل پر افتراء کرتا ہے اور سخت عذاب شدید کا مستحق ہے، اور اللہ عزوجل فرماتا ہے:

وَلَا تَقُولُوا لِمَا تَصِفُ أَلْسِنَتُكُمُ الْكَذِبَ هَذَا حَلَالٌ وَهَذَا حَرَامٌ لِّتَفْتَرُوا عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ ۚ إِنَّ الَّذِينَ يَفْتَرُونَ عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ لَا يُفْلِحُونَ ۚ مَتَاعٌ قَلِيلٌ ۖ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ (1)

اور نہ کہو اپنی زبانی جھوٹ بناوٹوں سے کہ یہ چیز حلال ہے اور یہ چیز حرام کہ اللہ پر جھوٹ باندھو بیشک جو اللہ پر جھوٹ باندھتے ہیں فلاح نہ پائیں گے دنیا میں تھوڑا سا کھا پہن لیں پھر آخرت میں ان کے لیے دردناک عذاب ہے۔

فتاوی عتابیہ پھر نہایہ شرح ہدایہ پھر سعدی آفندی علی العنایہ میں ہے:

ہر نفلی صدقہ بالاتفاق ہاشمی کے لیے جائز ہے اور اسی طرح یجوز النفل للهشمی مطلقا بالاجماع وکذا یجوز النفل للغنی- نفلی صدقہ غنی کے لیے بھی جائز ہے۔ (ت) (2)

در مختار میں ہے:

نفلی صدقات اور غلہ اوقاف ان (اغنیاء) کے لیے جائز ہے ۔(ت) (3) جازت التطوعات من الصدقات و غلة الاوقاف لهم-

ذخیرہ پھر ردالمختار میں ہے:

غنی پر صدقہ کی صورت میں وہ قربت ہوتی ہے جو فقیر پر ان فی التصدیق علی الغنی نوع قربة دون قربة الفقیر۔ صدقہ سے کم ہے۔ (ت) (4)

معہذا ان اشیاء میں تصدق کی نیت نہیں ہوتی بلکہ عام حاضرین پر ہدیہ تقسیم اور ہدیہ یقیناً مطلقاً سب کے لیے جائز۔

---

1. القرآن ۱۱۶/۱۶ و ۱۱۷
2. حاشیہ سعدی آفندی علی العنایہ مع فتح القدیر باب یجوز دفع الصدقۃ الیہ الخ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲۱۱/۲
3. در مختار باب لمصرف مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۴۱
4. ردالمختار، کتاب الوقف، دار احیاء التراث العربی بیروت، ۳/۳۵۷

Volume 10 Fatawa Ridawiyya

And from the time of Prophethood, it has been generally prevalent without specific mention of the poor, that such a person who explicitly slanders Allah and His Messenger and declares the lawful of God as forbidden, if he is ignorant and unlearned and persists in his false statement, he is a 'Fasiq' (transgressor) for two reasons: First, making the lawful forbidden; second, giving a fatwa without knowledge, and speaking on matters of lawful and forbidden. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

They gave rulings without knowledge, so they went astray and led others astray. (Narrated by Al-Bukhari, Ahmad, Muslim, At-Tirmidhi, and Ibn Majah from Hazrat Abdullah bin Umar, may Allah be pleased with them both).	If an unlearned person makes a Sharia ruling, he himself goes astray and leads others astray. (Narrated by Imam Bukhari, Ahmad, Muslim, Tirmidhi and Ibn Majah from Hazrat Abdullah bin Umar, may Allah be pleased with them both).

Furthermore, it is in the Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said:

Whoever gives a fatwa without knowledge, the angels of the heavens and the earth curse him. (Narrated by Ibn Asakir from the Commander of the Faithful, Hazrat Ali, may Allah honor his face).	Whoever states a Sharia ruling without knowledge, the angels of heaven and earth curse him. (Ibn Asakir narrated this from the Commander of the Faithful, Hazrat Ali, may Allah honor his face).

And the leadership (imamate) of a Fasiq is Makruh Tahrimi (highly disliked):

As stated in Al-Hujjah, Al-Ghunyah, At-Tabyin, and At-Tahtawi on Al-Maraqi, etc., and we have discussed this in detail in our treatise 'Al-Nahy al-Akid'.	As in Hujjah, Ghunyah, Tabyin and Tahtawi ala al-Maraqi etc. and we have discussed this in detail in our treatise "Al-Nahy al-Akid".

And if he is a person of knowledge, then his case is even stricter because he knowingly slanders Allah Almighty, and Allah Almighty says:

Only they forge lies who do not believe. Only those who do not believe forge lies.

1. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Ilm, Chapter: How Knowledge is Taken Away, Qadeemi Kutub Khana Karachi, 1/2
2. Kanz al-Ummal with reference to Ibn Asakir, narrated from Ali Karam Allah Wajhu, Hadith 29018, Muassasat al-Risala Beirut, 10/193
3. Al-Quran 16/105

जिल्द दहम फ़तावा रज़विया

और रिसालत के समय से आम तौर पर बिना गरीबों के विशिष्ट उल्लेख के यह प्रचलित है कि ऐसा व्यक्ति जो स्पष्ट रूप से अल्लाह और उसके रसूल पर झूठा आरोप लगाता है और अल्लाह के हलाल को हराम बताता है, यदि वह अज्ञानी है और अपने गलत कथन पर अड़ा हुआ है, तो वह दो कारणों से 'फासिक' (पापी) है: पहला: हलाल को हराम करना, दूसरा: बिना ज्ञान के फतवा देना, हलाल और हराम के बारे में जुबान खोलना। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

उन्होंने बिना ज्ञान के फैसला दिया, इसलिए वे खुद भी गुमराह हुए और दूसरों को भी गुमराह किया। (इसे इमाम बुखारी, अहमद, मुस्लिम, तिर्मिज़ी और इब्न माजा ने हज़रत अब्दुल्ला बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया है।)

बिना ज्ञान के जो शरीयत का हुक्म लगा बैठे तो वे खुद भी गुमराह हुए और दूसरों को भी गुमराह किया। (इसे इमाम बुखारी, अहमद, मुस्लिम, तिर्मिज़ी और इब्न माजा ने हज़रत अब्दुल्ला बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया है।)

इसके अलावा हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

जिसने बिना ज्ञान के फतवा दिया, उस पर आसमान और ज़मीन के फरिश्ते लानत करते हैं। (इसे इब्न असाकिर ने अमीरुल मोमिनीन हज़रत अली करमल्लाह वज्हहु से रिवायत किया है।)

जो बिना ज्ञान के कोई शरीयत का हुक्म बताए, उस पर आसमान और ज़मीन के फरिश्ते लानत करें। (इसे इब्न असाकिर ने अमीरुल मोमिनीन हज़रत अली करमल्लाह वज्हहु से रिवायत किया है।)

और फासिक की इमामत मकरूह-ए-तहरीमी है:

जैसा कि अल-हुज्जाह, अल-गुनियाह, अत-तबीन और अत-तहतावी अली अल-मराक़ी आदि में है और हमने अपने रिसाले "अन-नही अल-अकीद" में इस पर विस्तार से चर्चा की है।

जैसा कि हुज्जत, गुनिया, तबीन और तहतावी अलल मराकी वगैरह में है और हमने अपने रिसाले "अन-नही अल-अकीद" में इस पर तफ्सीली (विस्तृत) गुफ्तगू की है।

और अगर वह ज्ञानी है, तो उसका हुक्म और भी सख्त है क्योंकि वह जानबूझकर अल्लाह अज़्वजल पर झूठा आरोप लगाता है और अल्लाह अज़्वजल फरमाता है:

झूठा आरोप केवल वही लोग लगाते हैं जो ईमान नहीं रखते।	झूठे आरोप वही बांधते हैं जो ईमान नहीं लाते।

1. सहीह अल-बुखारी, किताबुल इल्म, अध्याय: इल्म कैसे लिया जाता है, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/2
2. कंजुल उम्माल इब्न असाकिर के हवाले से, अली करमल्लाह वज्हहु से रिवायत, हदीस 29018, मुअस्ससतुल रिसाला बेरूत, 10/193
3. अल-कुरान 16/105

جلد دہم فتاوی رضویہ

اور زمانہ رسالت سے علی العموم بلا تخصیص مساکین رائج ہے، ایسا شخص کہ صراحتہ اللہ ورسول پر افتراء کرتا ہے اور حلالِ خدا کو حرام بتاتا ہے، اگر جاہل بے علم ہے اور اپنے قول باطل پر مصر ہے تو دو وجہ سے فاسق ہے: اولاً: حلال کو حرام کرنا، دوسرے بے علم فتوٰی دینا، حلال حرام میں زبان کھولنا۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں :

افتوا بغیر علم فضلوا واضلوا- رواہ البخاری واحد ومسلم والترمذی و ابن ماجۃ عن عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما۔

بے علم کہ شرعی حکم لگا بیٹھے تو آپ بھی گمراہ ہوئے اور دوسروں کو بھی گمراہ کیا (اسے امام بخاری، احمد، مسلم، ترمذی اور ابن ماجہ نے حضرت عبد اللہ بن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا ہے۔ت)

نیز حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

من افتی بغیر علم لعنتہ ملئکۃ السماء والارض - رواہ ابن عساکر عن امیر المؤمنین علی کرم اللہ وجھہ۔

جو بغیر علم کے کوئی شرعی حکم بتائے اس پر آسمان وزمین کے فرشتے لعنت کریں (اسے ابن عساکر نے امیر المومنین حضرت علی کرم اللہ تعالٰی وجہہ سے روایت کیا۔ ت)

اور فاسق کی امامت مکروہِ تحریمی ہے:

کما فی الحجۃ والغنیۃ والتبیین والطحطاوی علی المراقی وغیرھا وقد حققنا فی النھی الاکید۔

جیسا کہ حجت، غنیہ، تبیین اور طحطاوی علی المراقی وغیرہ میں ہے اور ہم نے اپنے رسالہ "النھی الاکید" میں اس پر تفصیلی گفتگو کی ہے۔ (ت)

اور اگر ذی علم ہے تو اُس کا حکم اور سخت تر ہے کہ وہ دانستہ اللہ عزوجل پر افتراء کرتا ہے اور اللہ عزوجل فرماتا ہے:

اِنَّمَا یَفْتَرِی الْکَذِبَ الَّذِینَ لَا یُؤْمِنُوْنَ جھوٹے افتراء وہی باندھتے ہیں جو ایمان نہیں لاتے۔

1 صحیح البخاری، کتاب العلم، باب کیف یقبض العلم، قدیمی کتب خانہ کراچی، ۲/۱ 2 کنزالعمال بحوالہ ابن عساکر، عن علی کرم اللہ وجہہ حدیث ۲۹۰۱۸، مؤسسة الرسالة بیروت، ۱۹۳/۱۰ 3 القرآن ۱۶/ ۱۰۵

Fatawa-e-Razawiya Volume 10

And there is no doubt about his being a non-follower (Ghair-Muqallid). He is neither Hanafi, nor Shafi'i, nor Maliki, nor Hanbali, because in no school of thought is distributing gifts to the rich forbidden. Yes, he is a follower of Satan, who put this impure whisper into his bold heart to make all Muslims from the time of the Companions until now perpetrators of forbidden acts and consumers of haram. Praying behind a non-follower is purely void, as we have verified in our aforementioned book. (As we have researched in our mentioned book. -T) In Fath al-Qadir it says:

[Prayer behind the people of whims/innovation is not permissible. And Allah Almighty knows best. Prayer behind the people of whims is not permissible. (T)]

Issue 156: From Kolkata, Colootola Street Number 65, sent by Haji Muhammad Lal Khan Sahib, 20 Rabi' al-Awwal 1331 AH. To the Qibla and Kaaba, my master and mentor, may his high shadow last forever. After the desire to kiss your feet, it is respectfully submitted that a person has a family. He spends on his children from his monthly or annual income without excess or deficiency and gives the remainder in the way of Allah, keeping nothing for the family for the future. Another person spends one part of his income on children, gives the second part in charity, and considers it better to keep the third part for the purpose of being useful for their future needs. Between these two, who is superior? Please enlighten us and be rewarded.

Answer: Both forms are commendable based on good intention, and according to varying circumstances, each can be superior or sometimes obligatory. Therefore, there are different hadiths in this regard and the practice of the righteous predecessors also varied.

I say: and success is from Allah Almighty (I say, and success is from Allah Almighty. -T). In this, a concise and comprehensive statement, if Allah Almighty wills, is that men are of two types: 'Munfarid' (solitary) who is alone, and 'Mu'ayyil' who has a family. Although the question relates to a Mu'ayyil, every Mu'ayyil is solitary in terms of his own self, and the same rulings apply to him regarding his self as to a Munfarid. Therefore, a discussion of the rulings for both is required.

First: Those people of detachment and devotion to Allah, companions of seclusion and isolation who have pledged with their Lord not to keep anything. For them,

abandoning storage is mandatory due to their pledge. If they keep something, it is a breach of the pledge, and accumulating after the pledge will surely arise from weakness of certainty or be suggestive of it. If such people store anything, they deserve punishment. The Radiant Presence, Master of the World, may Allah Almighty's peace and blessings be upon him...

---

1 Fath al-Qadir, Chapter of Imamat, Maktaba Nooriya Razawiya Sukkur, 4/307

और उसके गैर-मुक़ल्लिद होने में कोई शक नहीं है। वह न हनफी है, न शाफई, न मालिकी, न हनबली, क्योंकि किसी भी मज़हब में अमीरों को तोहफा देना हराम नहीं है। हाँ, वह शैतान का मुक़ल्लिद है, जिसने सहाबा के ज़माने से अब तक के तमाम मुसलमानों को हराम काम करने वाला और हराम खाने वाला बनाने का नापाक वसवसा उसके निडर दिल में डाल दिया। गैर-मुक़ल्लिद के पीछे नमाज़ पूरी तरह बातिल (अमान्य) है, जैसा कि हमने अपनी उक्त किताब में प्रमाणित किया है। (जैसा कि हमने अपनी उल्लिखित पुस्तक में शोध किया है। - त) फ़तह अल-क़दीर में है:

[गुमराह लोगों (अहल-ए-अहवा) के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। अहल-ए-हवा के पीछे नमाज़ जायज़ नहीं है। (त)]

मसाला 156: कोलकाता, कोलूटोला स्ट्रीट नंबर 65 से, हाजी मोहम्मद लाल खान साहब द्वारा प्रेषित, 20 रबी-उल-अव्वल 1331 हिजरी। क़िबला और काबा, हज़रत मौलाई मुर्शिदी, उनका साया हमेशा बना रहे। आपके क़दम चूमने की तमन्ना के बाद, अदब के साथ गुज़ारिश है कि एक व्यक्ति बाल-बच्चे वाला है। वह अपनी मासिक या वार्षिक आय से बिना किसी अति या कमी के अपने बच्चों पर खर्च करता है और बाकी अल्लाह की राह में दे देता है, भविष्य के लिए परिवार के पास कुछ नहीं रखता। दूसरा अपनी आय का एक हिस्सा बच्चों पर खर्च करता है, दूसरा हिस्सा खैरात (दान) करता है और तीसरा हिस्सा उनके भविष्य की ज़रूरतों के लिए बचाकर रखने को बेहतर मानता है। इन दोनों में से कौन अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) है? कृपया बताएं और पुण्य कमाएं।

जवाब: नेक नीयत से दोनों ही स्थितियां सराहनीय हैं, और परिस्थितियों के अनुसार हर एक श्रेष्ठ या कभी-कभी अनिवार्य हो सकती है। इसलिए इस बारे में हदीसें भी अलग-अलग आई हैं और नेक पूर्वजों (सलफ़ सालेहीन) का अमल भी अलग-अलग रहा है।

मैं कहता हूँ: और तौफ़ीक़ अल्लाह तआला से है (मैं कहता हूँ, और तौफ़ीक़ अल्लाह तआला से है। - त)। इसमें एक संक्षिप्त और व्यापक बात, इंशाअल्लाह, यह है कि आदमी दो प्रकार के होते हैं: 'मुनफ़रिद' जो अकेला हो और 'मुअय्यिल' जो परिवार वाला हो। हालाँकि सवाल मुअय्यिल से संबंधित है, लेकिन हर मुअय्यिल अपने स्वयं के अधिकार में अकेला है और उस पर अपने स्वयं के संबंध में वही नियम लागू होते हैं जो मुनफ़रिद पर होते हैं। इसलिए दोनों के नियमों पर चर्चा आवश्यक है।

पहला: वे लोग जो दुनिया से कटकर अल्लाह की इबादत में लग गए हैं, एकांत और अलगाव के साथी जिन्होंने अपने रब से कुछ न रखने का वादा किया है। उनके लिए अपने वादे के कारण बचत छोड़ना अनिवार्य है। अगर वे कुछ बचाकर रखते हैं तो यह वादे का उल्लंघन है, और वादे के बाद फिर से जमा करना निश्चित रूप से विश्वास की कमजोरी से पैदा होगा या उसका आभास कराएगा। अगर ऐसे लोग कुछ भी जमा करते हैं, तो वे सज़ा के पात्र होंगे। हुज़ूर पुर नूर सैय्यद-ए-आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम...

---

1 फ़तह अल-क़दीर, बाबुल इमामत, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 4/307

पृष्ठ 315/836

فتاوی رضویہ جلد دہم

اور اس کے غیر مقلد ہونے میں شک نہیں وہ نہ حنفی ہے نہ شافعی نہ مالکی نہ حنبلی کہ کسی مذہب میں ہدیہ تقسیم اغنیاء پر حرام نہیں۔ ہاں وہ شیطان کا مقلد ہے، جس نے صحابہ کرام کے زمانہ سے اس وقت تک تمام مسلمانوں کو مرتکب حرام واکل حرام، بنانے کا ناپاک وسوسہ اس کے بے باک دل میں ڈالا، اور غیر مقلد کے پیچھے نماز محض باطل ہے کما حققناہ فی کتابنا المذکور (جیسا ہم نے اپنی کتاب مذکور میں اس کی تحقیق کی ہے۔ ت) فتح القدیر میں ہے:

[الصلوۃ خلف اھل الاھواء لا تجوز۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ اہل ہوا کے پیچھے نماز جائز نہیں۔ (ت)]

مسئلہ ۱۵۶: از کلکتہ کولہوٹولہ اسٹریٹ نمبر ۶۵ مرسلہ حاجی محمد لعل خاں صاحب، ۲۰ ربیع الاول ۱۳۳۱ھ قبلہ و کعبہ حضرت مولائی مرشدی مد ظلہ العالی تمنائے قدم بوسی کے بعد مودبانہ گزارش ہے کہ ایک شخص اہل و عیال رکھتا ہے اپنی ماہانہ یا سالانہ آمدنی سے بلا افراط و تفریط اپنے بال بچوں پر خرچ کر کے بقایا خدا کی راہ میں دیتا ہے آئندہ کو اہل وعیال کے واسطے کچھ نہیں رکھتا، دوسری اپنی آمدنی سے بچوں پر ایک حصہ خرچ کر کے دوسرا حصہ خیرات کرتا اور تیسرا حصہ آئندہ انکی ضرورتوں میں کام آنے کی غرض سے رکھ چھوڑنے کو اچھا جانتا ہے، ان دونوں میں افضل کون ہے؟ بینواتوجروا

الجواب: حسن نیت سے دونوں صورتیں محمود ہیں، اور باختلاف احوال ہر ایک افضل، کبھی واجب، ولہذا اس بارہ میں احادیث بھی مختلف آئیں اور سلف صالح کا عمل بھی مختلف رہا۔

اقول: وباللہ التوفیق (میں کہتا ہوں اور توفیق اللہ تعالٰی سے ہے۔ت) اس میں قول موجز و جامع ان شاء اللہ تعالٰی یہ ہے کہ آدمی دو قسم ہیں منفرد کہ تنہا ہو اور معیل کہ عیال رکھتا ہو، سوال اگرچہ

معیل سے متعلق ہے مگر ہر معیل اپنے حق نفس میں منفرد اور اس پر اپنے نفس کے لحاظ سے وہی احکام ہیں جو منفرد پر ہیں، لہذا دونوں کے احکام سے بحث درکار۔

اوّل: وہ اہل انقطاع و تبتل الی اللہ اصحاب تجرید و تفرید جنھوں نے اپنے رب سے کچھ نہ رکھنے کا عہد باندھا ان پر اپنے عہد کے سبب ترک ادخار لازم ہوتا ہے اگر بچارکھیں تو نقض عہد ہے اور بعد عہد پھر جمع کرنا ضرور ضعف یقین سے ناشی یا اس کا موہم ہوگا، ایسے اگر کچھ بھی ذخیرہ کریں مستحق عقاب ہوں، حضور پر نور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ

---

1 فتح القدیر، باب الامامۃ، مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر، ۴/ ۳۰۷

Fatawa Razawiyya - Volume 10

The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) saw some dates collected with Bilal (may Allah be pleased with him). He asked, "What is this?" He replied, "I have stored them for my future needs." And in one narration it says: "I have kept them for the guests of the Prophet." He (peace and blessings of Allah be upon him) said:

"Do you not fear that there will be smoke for you in the fire of Hell? Spend, O Bilal, and do not fear poverty from the Lord of the Throne." - Narrated by al-Bazzar with a good (hasan) chain, and al-Tabarani in 'al-Mu'jam al-Kabir' from Ibn Mas'ud; and Abu Ya'la and al-Tabarani in 'al-Mu'jam al-Kabir' and 'al-Awsat' with a good chain, and al-Bayhaqi in 'Shu'ab al-Iman', and the first wording is from him, narrated from Abu Hurayra (may Allah be pleased with them). (T)	Do you not fear that there will be smoke of the fire of Hell for you, O Bilal! Spend and do not fear decrease from the Owner of the Throne. This was narrated by al-Bazzar with a good chain, by al-Tabarani in 'al-Mu'jam al-Kabir' from Ibn Mas'ud (RA), by Abu Ya'la and al-Tabarani in 'al-Mu'jam al-Kabir' and 'al-Awsat' with a good chain, and by al-Bayhaqi in 'Shu'ab al-Iman'. The first words are narrated from Hazrat Abu Huraira (RA). (T)

Once he said to the same Bilal (may Allah be pleased with him): "O Bilal! Die as a poor man and do not die as a rich man." He asked, "What is the way to achieve this?" He replied: "Do not hide what you receive, and do not refuse what is asked of you" (It is clear that when wealth is not hidden and no request is rejected, seekers will not leave anything with one at any time). He asked: "How should I do this?" He replied:

"It is either that or the Fire." - and refuge is sought with Allah. Narrated by al-Tabarani in 'al-Kabir', Abu al-Shaykh in 'al-Thawab', and al-Hakim in 'al-Mustadrak' from Bilal (may Allah be pleased with him).	Either it has to be done this way or there is the Fire. (I seek refuge in the mercy of Allah Almighty). This was narrated by al-Tabarani in 'al-Mu'jam al-Kabir', by Abu al-Shaykh in 'al-Thawab', and by al-Hakim in 'al-Mustadrak' from Hazrat Bilal (RA). (T)

Second: If one who receives charity by showing poverty and trust (in Allah) wants to maintain this state, then to save something from those charities...

---

1. Shu'ab al-Iman, Chapter on Zakat, Hadith 3338, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah Beirut, 3/209; al-Mu'jam al-Kabir, narrated from Bilal (RA), Hadith 1020, al-Maktabat al-

Faysaliyyah Beirut, 1/470; Majma' al-Zawa'id, with reference to al-Bazzar, Chapter on Spending and Withholding, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, 10/241.

2. al-Mu'jam al-Kabir, narrated from Bilal (RA), Hadith 1021, al-Maktabat al-Faysaliyyah Beirut, 1/341.

फ़तावा रज़विया - जिल्द दहम

नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने हज़रत बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हु) के पास कुछ खजूरें जमा देखीं, तो फ़रमाया: "यह क्या है?" अर्ज़ की: "ऐ अल्लाह के रसूल! यह मैंने अपने मुस्तक़बिल (भविष्य) की ज़रूरतों के लिए जमा कर रखी हैं।" और एक रिवायत में है: "हुज़ूर के मेहमानों के ख़याल से इन्हें रखा है।" फ़रमाया:

"क्या तुम डरते नहीं कि तुम्हारे लिए जहन्नम की आग का धुआं हो? ऐ बिलाल! ख़र्च करो और अर्श के मालिक से कमी का अंदेशा न करो।" - इसे बज़ार ने सनद हसन से, तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में हज़रत इब्न मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु से, अबू यअ़ला और तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर और औसत में सनद हसन से, और बैहक़ी ने शुअबुल ईमान में रिवायत किया है। पहले अल्फ़ाज़ हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी हैं। (त)

क्या डरता नहीं कि तेरे आतिश-ए-दोज़ख़ का धुआं हो, ऐ बिलाल! ख़र्च कर और अर्श के मालिक से कमी का अंदेशा न कर। इसे बज़ार ने सनद हसन से, तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में हज़रत इब्न मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु से, अबू यअ़ला और तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर और औसत में सनद हसन से, और बैहक़ी ने शुअबुल ईमान में रिवायत किया है। पहले अल्फ़ाज़ इसी के हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी हैं। (त)

एक बार इन्हीं बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु से फ़रमाया: "ऐ बिलाल! फ़क़ीर मरना और अमीर होकर न मरना।" अर्ज़ की: "इसकी क्या सबील (रास्ता) है?" फ़रमाया: "जो मिले उसे छुपाना नहीं और जो मांगा जाए उसे मना न करना" (ज़ाहिर है कि जब न माल छुपाया जाए और न ही किसी का सवाल रद्द किया जाए, तो साइलीन (मांगने वाले) किसी भी समय पास में कुछ नहीं छोड़ेंगे)। अर्ज़ की: "मैं ऐसा क्योंकर करूँ" फ़रमाया:

"या तो ऐसा ही करना होगा या आग (की सज़ा होगी)।" - और अल्लाह तआ़ला की पनाह चाहते हैं। इसे तबरानी ने अल-कबीर में, अबू शैख़ ने अत-तवाब में और हाकिम ने अल-मुस्तदरक में हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है।

या तो यूँ ही करना होगा या आग। (अल्लाह तआ़ला के दामन-ए-रहमत में पनाह लेता हूँ)। इसे तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में, अबू शैख़ ने अत-तवाब में और हाकिम ने अल-मुस्तदरक में हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। (त)

दूसरा: फ़क़्र और तवक्कुल ज़ाहिर करके सदक़ात लेने वाला अगर यह हालत मुस्तमर (लगातार) रखना चाहे, तो उन सदक़ात में से कुछ जमा कर रखना...

---

1. शुअबुल ईमान, बाबू फ़िज़ ज़कात, हदीस 3338, दारुल कुतुबुल इल्मिय्या बैरूत, 209/3; अल-मुअजम अल-कबीर, मरवी अज़ बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु, हदीस 1020, अल-मक्तबतुल फ़ैसलिया बैरूत, 470/1; मजमाउज़ ज़वाइद, बहवाला अल-बज़ार, बाब फ़िल इनफ़ाक़ वल इमसक, दारुल किताबुल अरबी बैरूत, 241/10.
2. अल-मुअजम अल-कबीर, मरवी अज़ बिलाल रज़ियल्लाहु अन्हु, हदीस 1021, अल-मक्तबतुल फ़ैसलिया बैरूत, 341/1.

علیہ وسلم نے بلال رضی اللہ تعالٰی عنہ کے پاس کچھ خرمے جمع دیکھے ، فرمایا : یہ کیا ہے ؟ عرض کی : شئ ادخر تہ لغد میں نے آئندہ کے لیے جمع کر رکھے ہیں ۔ اور ایک روایت میں ہے : اعد ذلک لا ضیا فک حضور کے مہمانوں کے خیال سے انہیں رکھا ہے۔ فرمایا :

امَا تخشی ان یکون لك دخان في نار جهنم انفق یا بلال ولا تخشی من ذی العرش اقلالا- رواه البزار بسند حسن والطبراني في الكبير عن ابن مسعود و ابو یعلی والطبراني في الكبير والاوسط بسند حسن والبیهقي في شعب الایمان واللفظ الاول له عن ابی هریرة رضی الله تعالی عنهما-

کیا ڈرتا نہیں کہ تیرے آتش دوزخ کا دھواں ہو، اے بلال! خرچ کر اور عرش کے مالک سے کمی کا اندیشہ نہ کرو۔ اسے بزار نے سند حسن سے طبرانی نے المعجم الکبیر میں حضرت ابن مسعود رضی اللہ عنہ سے، ابویعلٰی اور طبرانی نے المعجم الکبیر اور اوسط میں سند حسن سے، اور بیہقی نے شعب الایمان میں روایت کیا ہے پہلے الفاظ اسی کے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی ہیں۔ (ت)

ایک بار انہی بلال رضی اللہ تعالٰی عنہ سے فرمایا : "اے بلال! فقیر مرنا اور غنی ہو کر نہ مرنا" ۔ عرض کی : اس کی کیا سبیل ہے ؟ فرمایا : جو ملے نہ چھپانا اور جو مانگا جائے منع نہ کرنا (ظاہر ہے کہ جب نہ مال چھپانا ہو نہ کسی کا سوال رد کیا جائے تو سائلین کسی وقت بھی کچھ پاس نہ چھوڑیں گے) عرض کی : ایسا کیونکر کروں ؟ فرمایا :

هو ذاك او النار- والعیاذ بالله تعالی یا تو یونہی کرنا ہوگا یا آگ ۔ (اللہ تعالٰی کے دامن رحمت رواه الطبراني في الكبير وابو الشیخ میں پناہ لیتا ہوں) ۔ اسے طبرانی نے المعجم الکبیر میں ، ابو

فی الثواب والحاکم فی المستدرك عن بلال رضی اللہ تعالی عنہ۔ شیخ نے الثواب میں اور حاکم نے المستدرک میں حضرت بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے ۔ت)

دوم : فقر و توکل ظاہر کر کے صدقات لینے والا اگر یہ حالت مستمر رکھنا چاہے تو ان صدقات میں سے کچھ جمع کر رکھنا

---

1 شعب الایمان باب فی الزکوۃ حدیث ۳۳۳۸ دارالکتب العلمیہ بیروت، ۲۰۹/۳، المعجم الکبیر ، روی از بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ حدیث ۱۰۲۰، المکتبۃ الفیصلیہ بیروت، ۴۷۰/۱، مجمع الزوائد، بحوالہ البزار باب فی الانفاق والامساک دارالکتاب العربی بیروت، ۲۴۱/۱۰ 2 المعجم الکبیر مروی از بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ حدیث ۱۰۲۱ المکتبۃ الفیصلیہ بیروت ۳۴۱/۱

Fatawa Razviya Volume 10

It would be impermissible because it would be a deception, and whoever takes charity now, it will be forbidden and foul for them. From these two chapters are those Hadiths in which one who leaves behind one gold coin (Ashrafi) as inheritance, was told it is one brand (mark of fire). For two coins, two; for three, three. That is, one brand will be given for each gold coin.

Arabic Text

(1) Ahmad and Tabrani narrated from Abu Umamah (may Allah be pleased with him): A man from the people of Suffah died, and a dinar was found in his waistcloth. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "[It is] a brand." Then another died and two dinars were found in his waistcloth. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "[They are] two brands." Reported by Ahmad and Ibn Hibban.

(2) ...from Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him), who said: A man from the people of Suffah died, and two dinars were found in his cloak. They mentioned this to the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), and he said: "[They are] two brands." And for them and Bukhari, from Salamah bin al-Akwa' (may Allah be pleased with him): I was sitting with the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) when a funeral was brought. He asked, "Did he leave anything behind?" They said, "Yes, three dinars." He pointed with his

Urdu Translation

Imam Ahmad and Tabrani narrated from Hazrat Abu Umamah (may Allah be pleased with him) that a man among the people of Suffah passed away. A dinar was found in his wrap. So the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "There is one brand for him." Another person passed away, and there were two dinars in his garment's hem. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "These are two brands." Imam Ahmad and Ibn Hibban narrated from Hazrat Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him)

...who narrated that one from the people of Suffah passed away. Two dinars were found in his cloak. So people presented this in the sacred presence of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), and he said: "These are two brands." In Ahmad, Ibn Hibban, and Bukhari, it is narrated from Hazrat Salamah bin al-Akwa' (may Allah be pleased with him) that "I was sitting with the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) when a funeral was brought. The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) asked, 'Has he left anything?' They said, 'Yes, he has left three dirhams.' You pointed with your

Arabic Text	Urdu Translation
finger and said, "Three brands." (Abridged)	blessed fingers and said, 'These are three brands.'" (T)

It is clear that the context of these Hadiths cannot be that of the noble verse:

Quranic Verse	Meaning
"And those who hoard gold and silver and spend it not in the way of Allah - give them tidings of a painful punishment." (34)	Those who hoard gold and silver and do not spend in the way of Allah, give them tidings of a painful punishment.

1. Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Abu Umamah, Dar al-Fikr Beirut, 5/253
2. Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Abdullah ibn Mas'ud, Dar al-Fikr Beirut, 1/475
3. Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Salamah bin al-Akwa', Dar al-Fikr Beirut, 4/47

यह नाजायज़ होगा क्योंकि यह धोखा होगा और अब जो सदक़ा लेगा वह हराम और नापाक होगा। इन्हीं दो अध्यायों से वे हदीसें हैं जिनमें एक अशरफ़ी (सोने का सिक्का) विरासत में छोड़ने वाले के लिए एक दाग़ (आग का निशान) फ़रमाया गया, दो पर दो, तीन पर तीन, यानी हर अशरफ़ी पर एक दाग़ दिया जाएगा।

अरबी पाठ

(1) अहमद और तबरानी ने अबू उमामा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की: असहाब-ए-सुफ़्फ़ा में से एक व्यक्ति का निधन हो गया और उसकी तहबंद में एक दीनार पाया गया। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "[यह] एक दाग़ है।" फिर एक और का निधन हुआ और उसकी तहबंद में दो दीनार पाए गए। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "[ये] दो दाग़ हैं।" अहमद और इब्न हिब्बान द्वारा रिपोर्ट किया गया।

(2) ...इब्न मसऊद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, जिन्होंने कहा: असहाब-ए-सुफ़्फ़ा में से एक व्यक्ति की मृत्यु हो गई, और उसकी चादर में दो दीनार मिले। उन्होंने नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से इसका ज़िक्र किया, तो आपने फ़रमाया: "ये दो दाग़ हैं।" और उनके लिए और बुखारी में, सलमा बिन अल-अकवा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से: मैं नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पास बैठा था जब एक जनाज़ा लाया गया। आपने पूछा, "क्या उसने

उर्दू अनुवाद

इमाम अहमद और तबरानी ने हज़रत अबू उमामा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि असहाब-ए-सुफ़्फ़ा में से एक का निधन हुआ। उनके पल्ले में एक दीनार पाया गया, तो अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "उसके लिए एक दाग़ है।" दूसरा व्यक्ति फ़ौत हुआ, उसके दामन में दो दीनार थे। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "ये दो दाग़ हैं।" इमाम अहमद और इब्न हिब्बान ने हज़रत इब्न मसऊद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की...

...जिन्होंने रिवायत किया कि असहाब-ए-सुफ़्फ़ा में से एक फ़ौत हुए। उनके शमला (चादर) में दो दीनार पाए गए तो लोगों ने हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की ख़िदमत-ए-अक़दस में अर्ज़ किया, तो आपने फ़रमाया: "ये दो दाग़ हैं।" अहमद, इब्न हिब्बान और बुखारी में हज़रत सलमा बिन अकवा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से है कि मैं रिसालतमआब (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पास बैठा हुआ था, जनाज़ा लाया गया। आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "क्या उसने कुछ छोड़ा है?"

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
कुछ छोड़ा है?" उन्होंने कहा, "हाँ, तीन दीनार।" आपने अपनी उंगली से इशारा किया और फ़रमाया, "तीन दाग़।" (संक्षिप्त)	अर्ज़ किया: "हाँ, उसने तीन दिरहम छोड़े हैं।" आपने मुबारक उंगलियों से इशारा करते हुए फ़रमाया: "ये तीन दाग़ हैं।" (त)

ज़ाहिर है कि इन हदीसों का संदर्भ वह नहीं हो सकता जो आयत-ए-करीमा का है:

क़ुरआनी आयत	अर्थ
"और जो लोग सोना और चाँदी जमा करते हैं और उसे अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं करते - उन्हें एक दर्दनाक अज़ाब की ख़बर दे दें।" (34)	जो लोग सोना चाँदी जमा करते रहते हैं और अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं करते उन्हें दर्दनाक अज़ाब की...

1. मुसनद अहमद बिन हंबल, रिवायत अबू उमामा से, दारुल फ़िक्र बेरूत, 5/253
2. मुसनद अहमद बिन हंबल, रिवायत अब्दुल्लाह इब्न मसऊद से, दारुल फ़िक्र बेरूत, 1/475
3. मुसनद अहमद बिन हंबल, रिवायत सलमा बिन अकवा से, दारुल फ़िक्र बेरूत, 4/47

اسے ناجائز ہوگا کہ یہ دھوکا ہوگا اور اب جو صدقہ لے گا حرام و خبیث ہوگا، انہی دونوں باب سے ہیں وہ احادیث جن میں ایک اشرفی ترکہ چھوڑنے والے کو ایک داغ فرمایا، دو پر دو، تین پر تین یعنی فی اشرفی ایک داغ دیا جائیگا۔

عربی متن **اردو ترجمہ**

فلا حمد والطبرانی عن ابی امامۃ رضی اللہ تعالیٰ عنہ توفی رجل من اھل الصفۃ فوجد فی مئزرہ دینار فقال رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کیۃ ثم توفی آخر فو جد فی مئزرہ دیناران فقال رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کیتان ولأ حمد وابن حبان عن ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ قال توفی رجل من اھل الصفۃ فوجد وافی شملتہ دینارین فذکروا ذلك للنبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فقال کیتان ولھم وللبخاری من سلمۃ بن الاکوع رضی اللہ تعالیٰ عنہ کنت جالسا عند

امام احمد اور طبرانی نے حضرت ابو امامہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے اصحاب صفہ میں سے ایک فوت ہوئے ان کے پلے میں ایک دینار پایا گیا تو رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: اس کے لیے ایک داغ ہے، دوسرا فوت ہوا اس کے دامن میں دو دینار تھے ، رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: یہ دو داغ ہیں۔ امام احمد اور ابن حبان نے حضرت ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا اصحاب صفہ میں سے ایک فوت ہوئے ان کے شملہ میں دو دینار پائے گئے تو لوگوں نے حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی خدمت اقدس میں عرض کیا تو آپ نے فرمایا: یہ دو داغ ہیں۔ احمد ، ابن حبان اور بخاری میں حضرت سلمہ بن اکوع رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے ہے کہ میں رسالتمآب صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے

عربی متن	اردو ترجمہ
النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فاتی بجنازۃ فقال ھل ترك من شئ قالو انعم ثلثۃ دنانیر فقال باصبعہ ثلث کیات۔ مختصراً	پاس بیٹھا ہوا تھا جنازہ لایا گیا، آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: اس نے کچھ چھوڑا ہے؟ عرض کیا : ہاں اس نے تین دراہم چھوڑے ہیں۔ آپ نے مبارک انگلیوں سے اشارہ کرتے ہوئے فرمایا: یہ تین داغ ہیں (ت)

ظاہر ہے کہ ان حدیثوں کا محل وہ نہیں ہو سکتا جو آیۂ کریمہ:

قرآنی آیت	معنی
وَالَّذِينَ يَكْنِزُونَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنفِقُونَهَا فِي سَبِيلِ اللَّهِ فَبَشِّرْهُم بِعَذَابٍ أَلِيمٍ ﴿٣٤﴾	جو لوگ سونا چاندی جمع کرتے رہتے ہیں اور اللہ کی راہ میں خرچ نہیں کرتے انہیں دردناک عذاب کی

1 مسند احمد بن حنبل مروی از ابو امامہ دار الفکر بیروت ۵ / ۲۵۳ 2 مسند احمد بن حنبل مروی از عبداللہ ابن مسعود دار الفکر بیروت ۱ / ۴۷۵ 3 مسند احمد بن حنبل مروی از سلمہ بن اکوع دار الفکر بیروت ۴ / ۴۷

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

"The day it will be heated in the fire of Hell, and with it their foreheads, their flanks, and their backs will be branded. [It will be said], 'This is what you hoarded for yourselves, so taste what you used to hoard.'" (Quran 9:35) Give glad tidings that on the day they will be heated in the fire of Hell and their foreheads, sides, and backs will be branded (and it will be said) this is the treasure you were collecting for yourselves, now taste the punishment of what you collected. (T)

Authentic Hadith: "Whoever hoarded gold or silver and did not spend it in the path of Allah, it will be a glowing coal on the Day of Judgment with which he will be branded." - Narrated by Ahmad and At-Tabarani (the wording is his), both with an authentic chain from Abu Dharr (may Allah be pleased with him) from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). Whoever collected gold and silver and did not spend it in the path of Allah, it will become a glowing ember of fire for him on the Day of Resurrection and the owner will be branded with it. Imam Ahmad and At-Tabarani (the words are his) have narrated it from Hazrat Abu Dharr (may Allah be pleased with him) from the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) with an authentic chain. (T)

The meaning is that when one pays Zakat and fulfills the obligatory Sharia rights, it is no longer 'hoarded wealth' (kanz) and the description of 'not spending in the path of Allah' is no longer applicable, therefore the deserving of branding no longer remains.

Al-Bayhaqi in his Sunan from Ibn Umar (may Allah be pleased with both), both suspended (mawquf) and elevated (marfu') to the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): "Every wealth whose zakat is paid is not a treasure (kanz) even if it is buried under the earth, and every wealth whose zakat is not paid is a treasure (kanz) even if it is visible." And from Abu Dawood from Ibn Abbas (may Allah be pleased with both), he said: "When this verse 'And those who hoard gold and silver' was revealed, it weighed heavily upon the Muslims. So Umar (may Allah be pleased with him) said, 'I...'" Bayhaqi in his Sunan narrated from Hazrat Ibn Umar (may Allah be pleased with both) both as mawquf and marfu' from the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): every wealth whose zakat has been paid is not called 'kanz' even if it is buried in the ground, and every wealth whose zakat has not been paid is 'kanz' even if it is apparent. It is narrated in Abu Dawood from Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with both) that when this blessed verse "And those who

hoard gold and silver" was revealed, the Muslims became worried. Hazrat Umar (may Allah be pleased with him) said, "I..."

1 Quran 9/34 & 35 2 Al-Mu'jam al-Kabir narrated from Abu Dharr al-Ghifari (R.A.), Hadith 1641, Al-Maktabah al-Faysaliyah Beirut, 2/153 3 Al-Sunan al-Kubra by al-Bayhaqi, Book of Zakat, Chapter on the Interpretation of the Kanz etc., Dar Sadir Beirut, 4/83 Page 318 of 836

फ़तावा रिज़विया, जिल्द १०

"जिस दिन उसे जहन्नुम की आग में गरमाया जाएगा, फिर उससे उनकी पेशानियां, उनके पहलू और उनकी पीठें दागी जाएंगी। (कहा जाएगा) यह वह है जिसे तुमने अपनी जानों के लिए जमा किया था, तो अब अपने जमा किए हुए का मज़ा चखो।" (क़ुरआन ९:३५) बशारत दीजिए कि जिस दिन जहन्नुम की आग में उन्हें पिघलाया जाएगा और उनकी पेशानियों, पहलुओं और पीठों को दागा जाएगा (और कहा जाएगा) यह है वह खज़ाना जिसे तुम अपने लिए जमा करते थे अब अपने जमा किए हुए का अज़ाब चखो। (त)

और सहीह हदीस: "जिसने सोने या चांदी को बांधकर (जमा कर) रखा और उसे अल्लाह की राह में खर्च नहीं किया, वह क़यामत के दिन एक दहकता हुआ अंगारा होगा जिससे उसे दागा जाएगा।" - इसे अहमद और तबरानी ने रिवायत किया है और शब्द उन्हीं के हैं, दोनों ने हज़रत अबू ज़र रज़ियल्लाहु अन्हु के हवाले से नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से सही सनद के साथ रिवायत किया है। जिसने सोना चांदी जमा किया और उसे राह-ए-खुदा में खर्च न किया वह रोज़-ए-क़यामत उसके लिए आग का अंगारा बन जाएगा और उससे मालिक दागा जाएगा। इसे इमाम अहमद और तबरानी (अल्फाज़ इसी के हैं) ने हज़रत अबू ज़र रज़ियल्लाहु तआला अन्हु के हवाले से नबी अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से सही सनद के साथ रिवायत किया है (त)।

इसका अर्थ यह है कि जब ज़कात दे दे और वाजिब शरीई हुकूक अदा कर दे तो वह 'कन्ज़' (खज़ाना) नहीं रहा और 'अल्लाह की राह में खर्च न करना' उस पर लागू नहीं हुआ, लिहाज़ा दागने की सज़ा का हक़दार नहीं रहा।

सुनन में बैहक़ी ने हज़रत इब्न उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से मौक़ूफ़न और मरफ़ूअन नबी अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तक रिवायत किया है: "हर वह माल जिसकी ज़कात अदा कर दी गई हो वह खज़ाना (कन्ज़) नहीं है चाहे वह ज़मीन के नीचे दबा हो, और हर वह माल जिसकी ज़कात अदा न की गई हो वह खज़ाना (कन्ज़) है चाहे वह ज़ाहिर हो।" और अबू दाऊद में हज़रत इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु अन्हुमा से मरवी है कि उन्होंने कहा: "जब यह आयत 'और जो लोग सोना और चांदी जमा करते हैं' नाज़िल हुई तो यह मुसलमानों पर भारी गुज़री (वे परेशान हुए)। तो हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु ने कहा, 'मैं...'" बैहक़ी ने सुनन में हज़रत इब्न उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से मौक़ूफ़न और मरफ़ूअन नबी अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से बयान किया, हर वह माल

जिसकी ज़कात दे दी जाए वह कन्ज़ नहीं कहलाता अगरचे वह ज़मीन में मदफ़ून हो और हर वह माल जिसकी ज़कात न दी गई हो वह कन्ज़ है अगरचे ज़ाहिर हो, अबू दाऊद में हज़रत इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से मरवी है कि जब यह आयह-ए-करीमा "वल्लज़ीना यकनिज़ूनज़-ज़हबा वल-फ़िज़्ज़ता" नाज़िल हुई तो मुसलमान परेशान हुए, हज़रत उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हु ने कहा मैं...

१ अल-क़ुरआन ३४/९ व ३५ २ अल-मुअजम अल-कबीर मरवी अज़ अबू ज़र गफ़ारी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु हदीस १६४१ अल-मक्तबा अल-फ़ैसलिया बेरूत २/१५३ ३ अल-सुनन अल-कुब्रा लिल-बैहक़ी किताबुज़-ज़कात, बाबूत्तफ़्सीर अल-कन्ज़ इत्यादि, दार सादिर बेरूत, ८३/४ पेज ३१८ ऑफ़ ८३६

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

يَوْمَ يُحْمَىٰ عَلَيْهَا فِي نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوَىٰ بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوبُهُمْ وَظُهُورُهُمْ ۖ هَٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِأَنفُسِكُمْ فَذُوقُوا مَا كُنتُمْ تَكْنِزُونَ (۳۵) بشارت دیجئے کہ جس دن جہنم کی آگ میں انھیں پگھلایا جائے گا اور ان کی پیشانیوں، پہلوؤں اور پیٹھوں کو داغا جائے گا (اور کہا جائے گا) یہ ہے وہ خزانہ جسے تم اپنے لیے جمع کرتے تھے اب اپنے جمع کئے ہوئے کا عذاب چکھو۔(ت)

وحدیث صحیح: من اوکی علی ذھب او فضۃ ولم ینفقه فی سبیل اللہ کان جمر ا یوم القیامۃ یکوی به ۔ رواہ احمد و الطبرانی و اللفظ له کلاھما بسند صحیح عن ابی ذر رضی اللہ تعالٰی عنه عن النبی صلی اللہ تعالٰی علیه وسلم ۔ جس نے سونا چاندی جمع کیا اور اسے راہ خدا میں خرچ نہ کیا وہ روزِ قیامت اس کے لیے آگ کا انگارہ بن جائے گا اور اس سے مالک داغا جائے گا۔ اسے امام احمد اور طبرانی (الفاظ اسی کے ہیں) نے حضرت ابوذر رضی اللہ تعالٰی عنہ کے حوالے سے نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے صحیح سند کے ساتھ روایت کیا ہے(ت)

کا محمل ہے کہ جب زکوۃ دے دے حقوق واجبہ شرعیہ ادا کردے کنز نہ رہا اور سبیل اللہ میں خرچ نہ کرنا صادق نہ آیا لہٰذا استحقاقِ داغ نہ رہا،

فالبیھقي فی سننه ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنھما موقوفاً و مرفوعاً الی النبی صلی اللہ تعالٰی علیه وسلم کلما ادی زکوۃ فلیس بکنز وان کان مدفونا تحت الارض وکلما لا تؤدی زکوتہ فھو کنز وان کان ظاہراً و لابی داؤد عن ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنھما قال لما نزلت ھذہ الآیۃ و الذین یکنزون الذھب والفضۃ کبر ذلك علی المسکین فقال عمر رضی اللہ تعالٰی عنه انا بیہقی نے سنن میں حضرت ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے موقوفاً اور مرفوعاً نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے بیان کیا، ہر

وہ مال جس کی زکوۃ دے دی جائے وہ کنز نہیں کہلاتا اگرچہ وہ زمین میں مدفون ہو اور ہر وہ مال جس کی زکوۃ نہ دی گئی ہو وہ کنز ہے اگرچہ ظاہر ہو، ابوداؤد میں حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے مروی ہے کہ جب یہ آیہ کریمہ والذین یکنزون الذھب والفضۃ نازل ہوئی تو مسلمان پریشان ہوئے، حضرت عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے کہا میں

1 القرآن ۳۴/۹ و ۳۵ 2 المعجم الکبیر مروی از ابوذر غفاری رضی اللہ تعالیٰ عنہ حدیث ۱۶۴۱ المکتبۃ الفیصلیہ بیروت ۲/۱۵۳ 3 السنن الکبری للبیہقی کتاب الزکوۃ، باب التفسیر الکنز الخ، دار صادر بیروت، ۸۳/۴ Page 318 of 836

Fatawa Rizvia, Volume 10

I shall remove your worry. He went and said: O Prophet of Allah! This blessed verse has worried your companions. He (the Prophet) said: Allah has ordained Zakat only so that your remaining wealth becomes pure, and He ordained inheritance so that the wealth goes to those after you. The narrator says: Hazrat Umar (may Allah be pleased with him) proclaimed the greatness of Allah. (T)

And this is because there is no Zakat or obligatory charity on less than twenty dinars. Necessarily, the entitlement to the 'brand' (punishment) here is due to one of these two reasons. Allah Almighty says: "And fulfill the covenant; surely the covenant shall be questioned of." (T) And in 'Qut al-Qulub' and 'At-Targhib' etc., it is stated: This branding is because, despite hoarding, he outwardly showed poverty and shared with the poor in what came to them from charity. (T)

This is based on the assumption that 'branding' means, God forbid, being branded with fire heated in Hell. But if it means a spot/blemish, i.e., in their beauty and radiance they would appear like smallpox marks on a face, and in the cases where these hadiths appeared, undoubtedly this second meaning is more appropriate and closer, then they are separate from those two types. Imam Hujjat-ul-Islam (Ghazali) stated in 'Ihya' after mentioning the first reason: Second: That it should not be based on deception; now the meaning will be that there will be a reduction in ranks in the Hereafter, because whoever is given anything in this world, in exchange for it, the Hereafter...

1. Sunan Abu Dawood, Book of Zakat, Chapter: Rights of Wealth, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/234
2. Al-Quran, 17/34
3. At-Targhib wat-Tarhib, Book of Charities, Encouragement to spend in ways of goodness, etc., Mustafa al-Babi, Egypt, 2/58

फ़तावा रिज़विया, जिल्द दहम

मैं तुम्हारी ये परेशानी दूर करता हूँ। वे गए और अर्ज़ किया: ऐ अल्लाह के नबी! इस मुबारक आयत ने आपके सहाबा (साथियों) को परेशान कर दिया है। आपने फरमाया: अल्लाह तआला ने ज़कात सिर्फ इसलिए फ़र्ज़ की है ताकि तुम्हारा बाकी माल पाक हो जाए, और विरासत इसलिए फ़र्ज़ की है ताकि बाद के लोगों को माल मिले। रावी कहते हैं कि हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने अल्लाह की बड़ाई बयान की। (त)

और ये इसलिए कि बीस दीनार से कम पर न ज़कात है न कोई सदक़ा वाजिबा। लाज़िम है कि यहाँ दाग़ का हक़दार होना इन्हीं दो वजहों में से किसी एक पर हो, अल्लाह तआला का फ़रमान है: "और अहद (वादा) पूरा करो, यक़ीनन अहद के बारे में पूछा जाएगा।" (त) और 'क़ूतुल क़ुलूब' और 'अत-तरग़ीब' वग़ैरह में है: ये दाग़ इसलिए है कि ज़खीरा करने के साथ उसने ज़ाहिरी तौर पर फ़क़्र (ग़रीबी) का इज़हार किया और वह सदक़ात में फ़क़ीरों के साथ शरीक हो गया। (त)

ये इसी अनुमान पर है कि दाग़ से मुराद, अल्लाह की पनाह, दोज़ख़ की आग में तपा कर दाग़ देना हो। और अगर इससे धब्बा मुराद हो यानी उनके जमाल और नूरानियत में वे ऐसे मालूम होंगे जैसे चेहरे पर चेचक वग़ैरह का दाग़, और जिन संदर्भों में ये हदीसें आईं वहाँ निस्संदेह यही दूसरा अर्थ अधिक उपयुक्त और निकट है, तो वे इन दोनों क़िस्मों से अलग हैं। इमाम हुज्जतुल इस्लाम ने 'इह्या' में पहली वजह के ज़िक्र के बाद फ़रमाया: दूसरा ये कि धोखा देने की वजह से न हो, अब अर्थ ये होगा कि आख़िरत के दरजात में कमी हो जाएगी क्योंकि दुनिया में जिसे भी कुछ दिया गया है उसके बदले आख़िरत...

1. सुनन अबू दाऊद, किताबुज़ ज़कात, बाब: माल के हुक़ूक़, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 1/234
2. अल-क़ुरआन, 17/34
3. अत-तरग़ीब वत-तरहीब, किताबुस सदक़ात, खैर के कामों में ख़र्च करने की तरग़ीब वग़ैरह, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/58

पृष्ठ ८३६ का ३१९

افرج عنکم فانطلق فقال یا نبی اللہ انہ کبر علی اصحابک ھذہ الآیۃ فقال ان اللہ لم یفرض الزکوۃ الا لیطیب مابقی من اموالکم وانما فرض المواریث لتکون لمن بعد کم قال فکبر عمر رضی اللہ عنہ۔1 تمہاری یہ پریشانی دُور کرتا ہوں، حضور کی خدمت میں حاضر ہوئے اور عرض کیا : یا نبی اللہ ! اس آیہ مبارکہ نے آپ کے اصحاب کو پریشان کردیا ہے۔ آپ نے فرمایا: اللہ تعالٰی نے زکوۃ فقط اسی لیے فرض فرمائی تاکہ تمہارا باقی مال پاک ہوجائے اور وراثت اس لیے فرض کی ہے تاکہ بعد کے لوگوں کو مال ملے۔ راوی کہتے ہیں حضرت عمر رضی اللہ تعالٰی عنہ نے اللہ کی بڑائی بیان کی۔ (ت)

اور یہ اس لیے کہ بیس دینار سے کم پر نہ زکوۃ ہے نہ کوئی صدقہ واجبہ۔ لاجرم یہاں استحقاق داغ انہی دو وجہ سے ایک پر ہو، قال اللہ تعالٰی وَ اَوْفُوْا بِالْعَهْدِ ۚ اِنَّ الْعَهْدَ كَانَ مَسْـُٔوْلًا ۝ اللہ تعالٰی کا فرمان ہے: عہد پورا کرو عہد کے بارے میں پوچھا جائے گا۔ (ت) 2 وفی قوت القلوب والترغیب وغیرہما انما کان کذلک لان ادخر مع تلبسہ بالفقر ظاھرا و مشارکتہ الفقراء فیما یأتیہم من الصدقۃ۔3 قوت القلوب اور ترغیب وغیرہ میں ہے یہ داغ اس لیے ہے کہ ذخیرہ کرنے کے ساتھ اس نے ظاہراً فقر کا اظہار کیا اور وہ صدقات میں فقراء کے ساتھ شریک ہو گیا۔ (ت)

یہ اسی تقدیر پر ہے کہ داغ سے مراد عیاذاً باللہ آتش دوزخ میں تپا کر داغ دینا ہو، اور اگر اس سے دھبہ مراد ہو یعنی اس کے جمال و نورانیت میں وہ ایسے معلوم ہوں گے جیسے چہرہ پر چیچک وغیرہ کا داغ، اور جن موردوں کے بارے میں یہ حدیثیں آئیں وہاں بلاشبہ یہی معنی دوم انسب واقرب ہیں تو وہ ان دونوں قسموں سے الگ ہیں، امام حجتہ الاسلام نے احیاء میں بعد ذکر وجہ اول فرمایا: الثانی ان لایکون ذلک عن تلبیس، فیکون المعنی بہ النقصان عن درجتہ فی الآخرۃ اذلا یؤتی

احد من الدنیا شیئاً الا نقص دوسرا یہ کہ دھوکا کی بنا پر نہ ہو، اب معنی یہ ہوگا کہ آخرت کے درجات میں کمی ہوجائے گی کیونکہ دنیا میں جس کو بھی کچھ دیا گیا ہے اس کے عوض آخرت

1 سنن ابوداؤد کتاب الزکوۃ باب حقوق المال آفتاب عالم پریس لاہور ۲۳۴/۱ 2 القرآن ۳۴/۱۷ 3 الترغیب والترہیب کتاب الصدقات الترغیب فی الانفاق فی وجوہ الخیر الخ مصطفی البابی مصر ۵۸/۲

Volume 10 Fatawa Razawiyya

...will be reduced from the hereafter (Summary) ...will be reduced (Summary) (T)

Zubaydi said in Ithaf al-Sadah: "This way is what is appropriate for the station of the Companions, may Allah be pleased with them, as is not hidden." 2 This reason is suitable for the high status of the noble Companions (may Allah be pleased with them), as it is not hidden. (T)

Third: One who knows their own condition, that whatever they save beyond their needs causes their ego to lead them towards rebellion and disobedience, or if they have fallen into the habit of some sin and spend it there, then it is obligatory for them to avoid that sin. When this specific method is determined for them—not to keep the remaining wealth with themselves—then in such a state, it will be mandatory for them to spend all income exceeding their needs on charitable causes. "And that is because the absence of the tool is one of the two forms of protection, and whatever becomes a means for an obligatory act also becomes obligatory." This is because the absence of the means is also a form of protection (from sin), and whatever becomes a means to perform an obligatory duty itself becomes obligatory. (T)

Fourth: One who is so impatient that if they face starvation, God forbid, they start complaining against Allah, the Lord of Might and Majesty, even if only in their heart and not verbally, or resorts to unlawful means like theft or begging etc., it is obligatory for such a person to save as much as their need. If he is a professional laborer who eats daily, then for one day; if he is an employee who receives monthly wages or lives on rent from houses/shops that comes after a month, then for one month; and if he is a landlord who receives income per crop or year, then for six months or a full year. "For indeed, averting harms is more important than attaining benefits." (Eliminating harms is more important than achieving benefits. T) And maintaining the original source of livelihood, such as tools of trade, or shops, houses, and villages, according to sufficiency, is absolutely obligatory upon him. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Whoever is provided with sustenance through something, let them stick to it." 3 Reported by al-Bayhaqi in Shu'ab al-Iman from Anas (may Allah be pleased with him) with a good chain of transmission. Whatever is a means of livelihood for someone, they should

hold onto it. Imam Bayhaqi has narrated this in Shu'ab al-Iman from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him) with a good chain of transmission. (T)

1. Ihya al-Ulum, Book of Tawhid and Tawakkul, Second Section on dealing with the causes of saving, Maktaba wa Matba' al-Mashhad al-Husayni, Cairo, 4/278
2. Ithaf al-Sada al-Muttaqin, Book of Tawhid and Tawakkul, Second Section on dealing with the causes of saving, Dar al-Fikr, Beirut, 9/505
3. Shu'ab al-Iman, Chapter on Tawakkul and Taslim, Hadith 1321, Dar al-Kutub al-Ilmiyya, Beirut, 2/89

भाग 10 फ़तावा रज़विया

...परलोक (आख़िरत) से कम हो जाएगा (संक्षेप) ...में कमी हो जाएगी (संक्षेप) (त)

ज़ुबैदी ने इत्हाफ़ुस सादा में फ़रमाया: "और यह पहलू सहाबा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) के मक़ाम के लिए उपयुक्त है, जैसा कि छिपा नहीं है।" 2 सहाबा किराम रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम के मक़ाम के लिए यही वजह मुनासिब है, जैसा कि पोशीदा नहीं है। (त)

तीसरा: जिसे अपनी हालत मालूम हो कि ज़रूरत से ज़्यादा जो कुछ बचा कर रखता है, नफ़्स उसे विद्रोह और अवज्ञा पर उकसाता है, या किसी गुनाह की आदत पड़ी है और उसमें ख़र्च करता है, तो उस पर गुनाह से बचना फ़र्ज़ है। और जब उसका यही तरीका तय हो कि बाक़ी माल अपने पास न रखे, तो इस हालत में उस पर ज़रूरत से ज़्यादा सारी आमदनी को नेक कामों में ख़र्च कर देना लाज़िम होगा। "और यह इसलिए कि साधन का न होना भी सुरक्षा के दो रूपों में से एक है, और जो चीज़ किसी वाजिब (अनिवार्य) का साधन बन रही हो, वह भी वाजिब हो जाती है।" यह इसलिए कि साधन का न होना भी पवित्रता और बचाव का एक रूप है, और जो चीज़ किसी अनिवार्य कार्य का साधन बन जाए, वह भी अनिवार्य हो जाती है। (त)

चौथा: जो ऐसा बेसब्री वाला हो कि उसे फ़ाका (भूख) पहुँचे तो अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त की शिकायत करने लगे, चाहे सिर्फ़ दिल में ही क्यों न हो, ज़बान से न भी हो, या चोरी या भीख आदि जैसे ग़ैर-कानूनी रास्तों पर चल पड़े, तो उस पर लाज़िम है कि ज़रूरत के अनुसार जमा रखे। अगर वह रोज़ कमाकर खाने वाला मज़दूर है, तो एक दिन का; और अगर मुलाज़िम (कर्मचारी) है जिसे मासिक वेतन मिलता है या मकानों-दुकानों के किराये पर गुज़ारा है जो महीने के बाद आता है, तो एक महीने का; और अगर ज़मींदार है जिसे फ़सल या साल पर मिलता है, तो छह महीने या साल भर का। "नुकसान को दूर करना, लाभ हासिल करने से ज़्यादा अहम है।" (लाभ प्राप्त करने से बुराइयों को ख़त्म करना अधिक महत्वपूर्ण है। त) और आजीविका के मूल साधन, जैसे काम के औज़ार या दुकान, मकान, गाँव आदि को ज़रूरत के मुताबिक़ बाक़ी रखना तो उस पर पूर्णतः अनिवार्य है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) फ़रमाते हैं: "जिस किसी को किसी चीज़ के माध्यम से रोज़ी दी जाए, वह उसे मज़बूती से थामे रहे।" 3 इमाम बैहक़ी ने 'शुअ़बुल ईमान' में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से एक अच्छी सनद (हसन) के साथ इसे बयान किया है। जिस चीज़ से किसी की रोज़ी

जुड़ी हो, वह उसे लाज़िम पकड़े (न छोड़े)। इमाम बैहक़ी ने 'शुअ़बुल ईमान' में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से हदीस को हसन सनद के साथ बयान किया है। (त)

1. इहयाउल उलूम, किताबुत्तौहीद वत्तवक्कुल, अल-फ़न्नुस सानी, मकतबा व मतबअ़तुल मशहदुल हुसैनी, काहिरा 4/278
2. इत्हाफ़ुस सादतिल मुत्तक़ीन, किताबुत्तौहीद वत्तवक्कुल, अल-फ़न्नुस सानी, दारुल फ़िक्र, बैरूत 9/505
3. शुअ़बुल ईमान, बाबुत्तवक्कुल वत्तस्लीम, हदीस 1321, दारुल कुतुबुल इल्मिया, बैरूत, 2/89

पेज 320/836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

بقدرہ من الاٰخرۃ (ملخصاً) میں کمی ہو جائے گی (ملخصاً) (ت)

زبیدی نے اتحاف الساده میں فرمایا: وھذا الوجه ھو اللائق بمقام الصحابة رضی اللہ تعالی عنھم کما لا یخفی۔ 2 صحابہ کرام رضی اللہ تعالیٰ عنہم کے مقام کے یہی وجہ مناسب ہے، جیسا کہ مخفی نہیں۔ (ت)

سوم: جسے اپنی حالت معلوم ہو کہ حاجت سے زائد جو کچھ بچا کر رکھتا ہے نفس اُسے طغیان و عصیان پر حامل ہوتا، یا کسی معصیت کی عادت پڑی ہے اس میں خرچ کرتا ہے تو اس پر معصیت سے بچنا فرض ہے اور جب اُس کا یہی طریقہ معین ہو کہ باقی مال اپنے پاس نہ رکھے تو اس حالت میں اس پر حاجت سے زائد سب آمدنی کو مصارف خیر میں صرف کر دینا لازم ہوگا، وذلک لان فقد ان الالة احد العصمتین وماتعین طریقا لواجب وجب۔ یہ اس لیے کہ ذریعہ کا مفقود ہو جانا بھی عصمت کی ایک صورت ہے اور جو شئی کسی واجب کا ذریعہ بن رہی ہو وہ بھی واجب ہو جاتی ہے۔ (ت)

چہارم: جو ایسا بے صبر ہو کہ اُسے فاقہ پہنچے تو معاذ اللہ رب عزوجل کی شکایت کرنے لگے اگرچہ صرف دل میں، نہ زبان سے، یا طرقِ ناجائز مثل سرقہ یا بھیک وغیرہ کا مرتکب ہو، اس پر لازم ہے کہ حاجت کے قدر جمع رکھے، اگر پیشہ ور ہے کہ روز کا روز کھاتا ہے، تو ایک دن کا، اور ملازم ہے کہ ماہوار ملتا ہے یا مکانوں دکانوں کے کرایہ پر بسر ہے کہ مہینہ پیچھے آتا ہے، تو ایک مہینہ کا، اور زمیندار ہے کہ فصل یا سال پر پاتا ہے تو چھ مہینہ یا سال بھر کا، فأن درء المفاسد اھم من جلب المصالح (مصالح کے حصول سے مفاسد کا ختم کرنا اہم ہوتا ہے۔ ت) اور اصل

ذریعہ معاش مثلاً آلاتِ حرفت یا دکان مکان دیہات بقدر کفایت کا باقی رکھنا تو مطلقاً اس پر لازم ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: من رزق فی شئی فلیلزمہ ۔ 3 رواہ البیھقی فی شعب الایمان عن انس رضی اللہ تعالی عنہ بسند حسن۔ جو شئی کسی کا ذریعہ رزق ہو وہ اسے لازم پکڑے امام بیہقی نے شعب الایمان میں حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے بسندِ حسن بیان کیا ہے۔ (ت)

1. احیاء العلوم کتاب التوحید والتوکل الفن الثانی فی التعرض لاسباب الادخار مکتبہ ومطبعہ المشہد الحسینی قاہرہ ۴/ ۲۷۸
2. اتحاف السادۃ المتقین کتاب التوحید والتوکل الفن الثانی فی التعرض لاسباب الادخار دارالفکر بیروت ۵۰۵/۹
3. شعب الایمان باب التوکل والتسلیم حدیث ۱۳۲۱ دارالکتب العلمیہ بیروت، ۸۹/۲

In another Hadith, he (peace and blessings of Allah be upon him) says: [Arabic]: "There is no servant who sells an inherited/old property (Talid) except that Allah imposes upon him its destruction." - Narrated by Al-Tabarani in Al-Mu'jam al-Kabir from Imran bin Husain (may Allah be pleased with him) and from all the Sahaba. Note: "Talid" means old/inherited wealth. [Urdu Translation]: Whosoever sells old/ inherited property, Allah imposes a destroyer upon its price. This has been narrated by Al-Tabarani in Al-Mu'jam al-Kabir from Hazrat Imran bin Husain (may Allah be pleased with him) and is reported from all the companions. (T) "Talid" refers to old property.

In a third Hadith, he (peace and blessings of Allah be upon him) says: [Arabic]: "Whoever sells a fundamental property/homestead without necessity, Allah will appoint over its price a destroyer to consume it." - Narrated in Al-Awsat from Ma'qil bin Yasar (may Allah be pleased with him). "Al-Aqar" (with fatha) means "The Origin/ Root". [Urdu Translation]: Whoever sells a fundamental house without necessity, Allah Ta'ala imposes someone to destroy its proceeds. This has been narrated by Al-Tabarani in Al-Mu'jam al-Awsat from Hazrat Ma'qil bin Yasar (may Allah be pleased with him). The word is 'Aqar' with a fatha, meaning 'origin' or 'root'. (T)

Fifth: A religious scholar (Alim) who is a Mufti of Shariah or a defender against innovations (Bid'at) and does not receive sustenance from the public treasury (Bayt al-Mal), as is the case here, and there is no one else besides him to fulfill these religious duties because issuing Fatwas or defending against innovations has become an individual obligation (Fard 'Ayn) for him, and he possesses wealth and property that provides him with sufficiency and leisure for these religious duties such that if he spends it, he would become dependent on earning a livelihood and these affairs would be disrupted; for such a person also, preserving the original source of income and accumulating it to the mentioned extent is obligatory. Because "the precursor to an obligatory act is itself obligatory" (T). If such a scholar is not allowed to go for Jihad, how can he be permitted to spend time in earning wealth? It is mentioned in 'Tanweer' and 'Durr-e-Mukhtar': [Arabic]: "A scholar in a city, if there is no one more learned than him, it is not for him to go to war (Ghazwa)." [Urdu Translation]: If there is a jurist (Faqih) in a city and there is no one more knowledgeable in religion than him there, then such a person cannot go for Jihad. (T)

Sixth: If there are other scholars there who can perform this task, then the aforementioned preservation and accumulation [of wealth], though not obligatory, is important and emphasized.

Footnotes: 1: Al-Mu'jam al-Kabir, narrated from Imran bin Husain, Hadith 555, Al-Maktaba al-Faysaliyya Beirut, 18/222 2: Al-Jami' al-Saghir with Fath al-Qadir, with reference to Tabarani Al-Awsat Hadith 8553, Dar al-Ma'rifa Beirut 6/93 3: Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Jihad, Matba Mujtabai Delhi, 1/339

दूसरी हदीस में है, आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: [अरबी]: "जो कोई बंदा पुरानी जायदाद (तालिद) बेचता है, अल्लाह उस पर नष्ट करने वाला मुसल्लत कर देता है।" - इसे तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में इमरान बिन हुसैन (रज़ियल्लाहु अन्हु) से और तमाम सहाबा से बयान किया है। नोट: "तालिद" का अर्थ पुराना धन है। [उर्दू अनुवाद]: जो बंदा पुरानी जायदाद को बेच दे, अल्लाह तआला उस पर बर्बाद करने वाला मुसल्लत कर देता है। इसे तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में हज़रत इमरान बिन हुसैन रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से बयान किया है और तमाम सहाबा से मन्कूल है, (त) "तालिद" पुरानी संपत्ति को कहते हैं।

तीसरी हदीस में है, आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: [अरबी]: "जिसने बिना ज़रूरत के मूल संपत्ति बेची, अल्लाह उसके मूल्य पर किसी नष्ट करने वाले को मुसल्लत कर देता है जो उसे बर्बाद कर दे।" - अल-औसत में माक़िल बिन यसार (रज़ियल्लाहु अन्हु) से वर्णित है। "अल-अक़र" (फ़तह के साथ) का अर्थ "मूल/जड़" है। [उर्दू अनुवाद]: जिसने बिना ज़रूरत के असल घर (मूल संपत्ति) को बेचा, अल्लाह तआला उसकी कीमत पर किसी बर्बाद करने वाले को मुसल्लत कर देता है। इसे तबरानी ने अल-मुअजम अल-औसत में हज़रत माक़िल बिन यसार रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। 'अक़र' शब्द ज़बर (फ़तह) के साथ है, इसके अर्थ 'मूल' के हैं। (त)

पंचम: जो आलिम-ए-दीन मुफ्ती-ए-शरह या बिदअतों को दूर करने वाला हो और बैतुल माल से रोज़ी नहीं पाता, जैसा कि यहाँ है, और वहाँ उसके अलावा कोई इन दीनी पदों पर खड़ा न हो सके कि फतवा देने या बिदअतों को दूर करने में अपना समय खर्च करना उस पर फर्ज़-ए-ऐन हो, और वह धन-जायदाद रखता हो जिसके कारण उसे संपन्नता और इन दीनी फर्ज़ों के लिए फुर्सत प्राप्त हो कि अगर खर्च कर दे तो कमाने का मोहताज हो जाए और इन कामों में बाधा पड़े; उस पर भी आय के मूल स्रोत को बनाए रखना और आय को उक्त सीमा तक जमा रखना वाजिब है, क्योंकि "किसी फर्ज़ की प्रस्तावना (तैयारी) भी फर्ज़ होती है।" (त) ऐसे आलिम को जिहाद के लिए जाने की अनुमति नहीं है, तो धन कमाने में समय बिताने की अनुमति कैसे हो सकती है? तनवीर और दुर्रे मुख़्तार में है: [अरबी]: "शहर में ऐसा आलिम जिससे बढ़कर कोई फकीह (धर्मशास्त्री) न हो, तो उसे युद्ध (ग़ज़वा) के लिए जाना जायज़ नहीं।" [उर्दू अनुवाद]: किसी शहर में फकीह हो और वहाँ उससे बढ़कर दीन जानने वाला न हो तो ऐसा व्यक्ति जिहाद पर नहीं जा सकता है। (त)

षष्ठम: अगर वहाँ और भी आलिम यह काम कर सकते हों तो उक्त रखरखाव और संचय यद्यपि वाजिब नहीं लेकिन महत्वपूर्ण और ताकीदी है।

पाद-टिप्पणियाँ: 1: अल-मुअजम अल-कबीर, इमरान बिन हुसैन से वर्णित, हदीस 555, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया बेरूत, 18/222 2: अल-जामी अल-सगीर मय फ़तहुल क़दीर, ब-हवाला तबरानी औसत हदीस 8553, दारुल मारिफ़ा बेरूत 6/93 3: दुर्रे मुख़्तार, किताबुल जिहाद, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/339

دوسری حدیث میں ہے فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم : مامن عبد یبیع تالدا ۱عہ الاسلط اللہ علیہ تالفا۔۱رواہ الطبرانی فی الکبیر عن عمران بن حصین رضی اللہ تعالٰی عنہ وعن الصحابۃ جمیعا۔ جو بندہ قدیم جائیداد کو بیچ دے اللہ تعالٰی اس پر تلف کرنے والا مسلط کردیتا ہے۔ اسے طبرانی نے المعجم الکبیر میں حضرت عمر ابن حصین رضی اللہ تعالٰی عنہ سے بیان کیا ہے اور تمام صحابہ سے منقول ہے، (ت) "تالد" قدیم مال کو کہتے ہیں۔ عہ : المال القدیم۔

تیسری حدیث میں ہے فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم : من باع عقردار من غیر ضرورۃ سلط اللہ علٰی ثمنہا تالفا یتلفہ۔۲ رواہ فی الاوسط عن معقل بن یسار رضی اللہ تعالٰی عنہ العقر بالفتح الاصل۔ جس نے بغیر ضرورت اصل دار کو بیچا اللہ تعالٰی اس کے ثمنوں پر کسی تلف کرنے والے کو مسلط کردیتا ہے۔ اسے طبرانی نے المعجم الاوسط میں حضرت معقل بن یسار رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ لفظ عقر بالفتح ہے اس کے معنی اصل کے ہیں (ت)

پنجم: جو عالم دین مفتی شرع یا مدافع بدع ہو اور بیت المال سے رزق نہیں پاتا، جیسا یہاں ہے، اور وہاں اس کا غیر ان مناصب دینیہ پر قیام نہ کر سکے کہ افتا یا دفع بدعات میں اپنے اوقات کا صرف کرنا اس پر فرض عین ہو اور وہ مال و جائداد رکھتا ہے جس کے باعث اسے غنا اور ان فرائض دینیہ کے لیے فارغ البالی ہے کہ اگر خرچ کردے محتاج کسب ہو اور ان امور میں خلل پڑے، اس پر بھی اصل ذریعہ کا ابقاء اور آمدنی کا بقدر مذکور جمع رکھنا واجب ہے فان مقدمۃ الفریضۃ فریضۃ (کسی فریضہ کا مقدمہ فرض ہوتا ہے۔ت) ایسے عالم کو جہاد کے لیے جانے کی اجازت نہیں کسب مال میں وقت صرف کرنے کی کیونکر اجازت ہو سکتی ہے، تنویر و در مختار میں ہے:

عالم لیس فی البلدۃ افقہ منہ فلیس لہ الغزو۔۳ کسی شہر میں فقیہ ہو اور وہاں اس سے بڑھ کر دین جاننے والا نہ ہو تو ایسا شخص جہاد پر نہیں جاسکتا ہے۔ (ت)

ششم: اگر وہاں اور بھی عالم یہ کام کرسکتے ہوں تو ابقاء وجمع مذکور اگر چہ واجب نہیں مگر اہم ومؤکد

حواشی: 1 المعجم الکبیر، مروی از عمران بن حصین، حدیث ۵۵۵، المکتبۃ الفیصلیہ بیروت، ۲۲۲/۱۸ 2 الجامع الصغیر مع فتح القدیر بحوالہ طبرانی اوسط حدیث ۸۵۵۳ دار المعرفۃ بیروت ۶/ ۹۳ 3 در مختار، کتاب الجہاد، مطبع مجتبائی دہلی، ۳۳۹/۱

Fatawa Razawiya Volume 10

It is certain that for the sake of religious knowledge and its defense, freedom from worldly worries is millions of times better than being occupied in earning wealth. Moreover, one plus one is two, and two plus two is four; if one person's vision falters, others will steer them back to the right path. If someone faces excuses like illness, etc., work will not stop when others are present. Therefore, there is definitely a need for a plurality of religious scholars.

Seventh: He is not a scholar but is busy seeking religious knowledge, and if being occupied in earning would hinder that, then for him as well, preservation and collection (of resources) as mentioned is more emphasized and important.

Eighth: In three situations, collecting (wealth/resources) is prohibited, in two it is obligatory, and in two it is emphasized. He who falls outside these eight should look at his own condition. If not having savings makes his heart distressed and causes interference in his focus on worship and the remembrance of Allah, then in the aforementioned sense, keeping savings according to need is superior. And most people are of this type.

"A scattered livelihood leads to a scattered heart." (If livelihood is uncertain, the heart also becomes restless. T) "When I tie the knot for night prayer, what will my children eat in the morning?" (How can one focus in night prayer when there's worry about what children will eat in the morning. T)

In 'Ain al-'Ilm it is stated:

[Left box: يترك المضطرب طريق المتوكل بالادخار لان الغرض صلاح القلب۔[1]] [Right box: The distressed person should leave the path of the mutawakkil (the one relying solely on God) by storing (provisions) because the purpose is the rectification of the heart. (T)]

In Ihya al-'Ulum it is stated:

[Left box: بل لوامسك ضيعة يكون دخلها وافيا بقدر كفايته وكان لا يتضرع قلبه الابه فذلك له اولى۔[2]] [Right box: Rather, if he preserves an estate whose income is sufficient for his needs, and his heart finds tranquility (in worship) only through it, then that is better for him. (T)]

Here, those people are meant who intend to focus on God; otherwise, those immersed in worldly affairs are never attentive at any time, whether rich or not.

[1] 'Ain al-'Ilm, Chapter 20 on Monotheism and Trust etc., Islamic Press Lahore, p. 338. [2] Ihya al-'Ulum, Chapter 20 on Monotheism and Trust etc., Maktaba and Matba'at al-Mashhad al-Husayni, Cairo, 4/77.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

बेशक यह सच है कि दीन के इल्म और उसकी हिफाज़त के लिए फराग़-ए-बाल (चिंताओं से मुक्ति), धन कमाने में व्यस्त होने से लाखों गुना बेहतर है। इसके अलावा, एक से दो और दो से चार बेहतर होते हैं; यदि एक की दृष्टि कभी भटक जाए, तो दूसरे उसे सही राह पर ले आएंगे। यदि किसी को बीमारी आदि के कारण कोई मजबूरी पेश आए, तो जब और लोग मौजूद होंगे तो काम नहीं रुकेगा। इसलिए, कई धार्मिक विद्वानों की मौजूदगी निश्चित रूप से आवश्यक है।

सातवां: वह विद्वान नहीं है लेकिन दीन का इल्म हासिल करने में व्यस्त है, और यदि कमाई में व्यस्त होना उसे इससे रोकेगा, तो उसके लिए भी उल्लेखित तरीके से (संसाधनों को) बचाना और जमा करना अधिक ताकीदी और महत्वपूर्ण है।

आठवां: तीन स्थितियों में (धन) जमा करना मना है, दो में अनिवार्य है, और दो में ताकीदी है। जो इन आठों से बाहर हो, उसे अपनी स्थिति देखनी चाहिए। अगर बचत न रखने से उसका दिल परेशान होता है और इबादत व अल्लाह की याद में ध्यान भटकता है, तो ज़िक्र किए गए अर्थ में ज़रूरत के मुताबिक बचत रखना ही बेहतर है। और ज़्यादातर लोग इसी तरह के होते हैं।

"बिखरी हुई जीविका, बिखरा हुआ दिल" (यदि जीविका अनिश्चित हो, तो दिल भी परेशान रहता है। त) "जब मैं रात की नमाज़ के लिए खड़ा होता हूँ, तो सोचता हूँ कि सुबह मेरे बच्चे क्या खाएंगे" (रात को नमाज़ में दिल कैसे लगेगा जब यह चिंता हो कि सुबह बच्चे क्या खाएंगे। त)

'ऐन अल-इल्म' में है:

[बायां बॉक्स: [1]يترك المضطرب طريق المتوكل بالادخار لان الغرض صلاح القلب। [दायां बॉक्स: परेशान व्यक्ति संचय (भंडारण) करके मुतवक्किल (भरोसा करने वाले) का तरीका छोड़ दे क्योंकि उद्देश्य दिल का सुधार है। (त)]

'इह्या अल-उलूम' में है:

[बायां बॉक्स: بل لوامسك ضيعة يكون دخلها وافيا بقدر كفايته وكان لا يتضرع قلبه الابه فذلك اولى۔[2] له] [दायां बॉक्स: बल्कि अगर वह उतनी जायदाद को सुरक्षित रखे जिसकी आय उसकी ज़रूरत के लिए काफी हो, और (इबादत में) एकाग्रता उसी से हासिल होती हो, तो यह उसके लिए बेहतर है। (त)]

यहाँ उन लोगों से मुराद है जिनका इरादा खुदा की तरफ ध्यान लगाना है, वर्ना दुनिया में खोए हुए लोग तो कभी भी ध्यान नहीं देते, चाहे वे धनी हों या न हों।

[1] 'ऐन अल-इल्म, बीसवां अध्याय तौहीद और तवक्कुल आदि पर, मतब'अ इस्लामिया लाहौर, पृ. 338
[2] इह्या अल-उलूम, बीसवां अध्याय तौहीद और तवक्कुल आदि पर, मकतबा व मतब'अत अल-मशहद अल-हुसैनी काहिरा, 4/77

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

بیشک ہے کہ علم دین حمایت دین کے لئے فراغ بال، کسب مال میں اشتغال سے لاکھوں درجے افضل ہے معہذا ایک سے دو اور دو سے چار بھلے ہوتے ہیں، ایک کی نظر کبھی خطا کرے تو دوسرے اسے صواب کی طرف پھیر دیں گے، ایک کو مرض وغیرہ کے باعث کچھ عذر پیش آئے تو جب اور موجود ہیں کام بند نہ رہے گا لہذا تعدد علمائے دین کی طرف ضرور حاجت ہے۔

ہفتم: عالم نہیں مگر طلب علم دین میں مشغول ہے اور کسب میں اشتغال اُس سے مانع ہو گا تو اس پر بھی اُسی طرح ابقاء و جمع مسطور آکد و اہم ہے۔

ہشتم: تین صورتوں میں جمع منع ہوئی، دو میں واجب، دو میں مؤکد۔ جو ان آٹھ سے خارج ہو، وہ اپنی حالت پر نظر کرے اگر جمع نہ رکھنے میں اس کا قلب پریشان ہو توجہ بعبادت و ذکر الٰہی میں خلل پڑے تو بمعنی مذکور بقدرِ حاجت جمع رکھنا ہی افضل ہے اور اکثر لوگ اسی قسم کے ہیں ع

پراگندہ روزی پراگندہ دل (روزی پراگندہ ہو تو دل بھی پراگندہ ہوتا ہے۔ ت) شب چو عقد نماز بر بندم چہ خورد بامداد فرزندم (رات کو نماز میں دل کیا لگے جب یہ پریشانی ہو کہ صبح بچے کیا کھائیں گے۔ ت)

عین العلم میں ہے:

[بایاں باکس: یترك المضطرب طریق المتوکل بالادخار لان الغرض صلاح القلب۔[1]] [دایاں باکس: مضطرب ذخیرہ کے ذریعے متوکل کا طریقہ ترک کردے کیونکہ مقصد اصلاحِ قلب ہے(ت)]

احیاء العلوم میں ہے:

[بایاں باکس: بل لوامسك ضیعة یکون دخلها وافیا بقدر کفایته وکان لا یتضرع قلبه الابه فذلك له اولی۔

[2] [دایاں باکس: بلکہ اگر قدر کفایت کو پورا کرنیوالی جائیداد کو محفوظ کرے جبکہ (عبادت میں) تضرع اسی سے حاصل رہتا ہے تو یہ بہتر ہے۔ (ت)]

یہاں وہ لوگ مراد ہیں جن کو توجہ بخدا کا قصد ہے ورنہ منہمکین فی الدنیا تو کسی وقت بھی متوجہ نہیں ہوتے، غنی

[1] عین العلم، الباب العشرون فی التوحید والتوکل الخ، مطبع اسلامیہ لاہور ص ۳۳۸ [2] احیاء العلوم، الباب العشرون فی التوحید والتوکل الخ مکتبہ ومطبعۃ المشہد الحسینی قاہرہ ۴ / ۷۷

Fatawa Rizwia Volume 10

...so they may forget. O Allah! We seek refuge in You from that wealth which makes one rebellious towards You and from that poverty which makes one forget You. (T)

Ninth: If by keeping wealth accumulated, his heart remains focused and it helps in preserving wealth or inclination towards it, then keeping it is better. The primary goal is peace of mind for the remembrance of Allah; whatever interferes with this is harmful. The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) pointed towards both these situations in the prayer he taught his followers:

Arabic Text

O Allah, whatever You have provided me with of what I love, make it a source of strength for me in what You love. O Allah, and whatever You have withheld from me of what I love, make it a source of freedom for me in what You love. [1] Reported by al-Tirmidhi from Abdullah bin Yazid (may Allah be pleased with him) and he graded it as Hasan (Good).

Urdu Translation

O Allah! Whatever beloved sustenance You have given me, make it a means of strength for me in Your beloved tasks. And whatever beloved sustenance You have kept away from me, make it a means of free time (detachment) for me in Your beloved tasks. Imam Tirmidhi narrated this from Hazrat Abdullah bin Yazid (may Allah be pleased with him) and declared it Hasan. (T)

Imam Hujjat al-Islam (Al-Ghazali) states after the aforementioned text:

Arabic Text

The objective is the rectification of the heart so that it becomes solely for the remembrance of Allah. Many people are distracted by the presence of wealth, and many are distracted by its absence. What is prohibited is that which distracts from Allah the Almighty. Otherwise, the world in itself, neither its existence nor its absence, is prohibited. [2]

Urdu Translation

The objective is the rectification of the heart so that it becomes vacant for the remembrance of Allah. The presence of wealth makes many people heedless of Allah the Almighty, and the absence of wealth makes many heedless. Prohibition applies to that which makes one heedless of Allah the Almighty, otherwise, in itself, the existence or absence of the world is not forbidden. (T)

Tenth: For those with souls at peace, their hearts are neither troubled by the absence of wealth nor is their vision clouded by its presence; they are empowered. Allah the Almighty says to His Prophet, our Master Solomon (peace be upon him):

Arabic Text	Urdu Translation
[This is Our gift, so grant or withhold without account.] [3]	This is Our gift; now you may bestow it as a favor or withhold it, there is no account for you. (T)

[1] Jami' al-Tirmidhi, Chapters of Supplications, Amin Company, Kutub Khana Rashidiyah, Delhi, 2/187 [2] Ihya Ulum al-Din, Book of Tawhid and Tawakkul, States of the Trusting, etc., Maktaba wa Matba' al-Mashhad al-Husayni, Cairo, 4/277 [3] Al-Quran, 38/39

फतावा रज़विया जिल्द 10

...ताकि वे भूल जाएं। ऐ अल्लाह! हम तेरी पनाह मांगते हैं उस मालदारी से जो तेरा बाग़ी (विद्रोही) बना दे और उस फ़क्र (ग़रीबी) से जो तुझे भुला दे। (त)

नौवां: अगर माल जमा रखने में उसका दिल मुतमइन (शांत) रहे और माल की हिफाज़त या उसकी तरफ़ रुझान से जुड़ा हो, तो उसे रखना ही अफ़ज़ल (बेहतर) है क्योंकि असल मक़सद ज़िक्र-ए-इलाही के लिए फ़रागत-ए-क़ल्ब (मन की शांति) है, जो इसमें खलल डाले वही बुरा है। इन्हीं दोनों मकामों की तरफ़ हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उस दुआ में इशारा फ़रमाया जो अपनी उम्मत को तालीम फ़रमाई कि:

अरबी पाठ

ऐ अल्लाह, तूने मुझे मेरी पसंदीदा चीज़ों में से जो रिज़्क़ दिया है, उसे अपने पसंदीदा कामों में मेरे लिए ताक़त का ज़रिया बना दे। ऐ अल्लाह, और तूने मेरी पसंदीदा चीज़ों में से जो मुझसे रोक लिया है, उसे अपने पसंदीदा कामों के लिए मेरे वास्ते फ़ुर्सत का ज़रिया बना दे। [1] इमाम तिरमिज़ी ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन यज़ीद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया और इसे हसन क़रार दिया।

उर्दू अनुवाद

ऐ अल्लाह! तूने जो मुझे मेरा पसंदीदा रिज़्क़ दिया है, तो उसे अपने पसंदीदा कामों में मेरे लिए कुव्वत (शक्ति) का ज़रिया बना दे, और वो पसंदीदा रिज़्क़ जो तूने मुझसे रोक रखा है, तो उसे अपने पसंदीदा कामों में मेरे लिए ज़रिया-ए-फ़रागत (खाली समय का ज़रिया) बना दे। इसे इमाम तिरमिज़ी ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन यज़ीद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत करके हसन क़रार दिया है। (त)

इमाम हुज्जतुल इस्लाम (अल-ग़ज़ाली) ज़िक्र की गई इबारत के बाद फ़रमाते हैं:

अरबी पाठ

मक़सद दिल की इस्लाह (सुधार) है ताकि वो ज़िक्र-ए-इलाही के लिए खाली हो जाए। बहुत से लोगों को माल का होना अल्लाह से ग़ाफ़िल (बेखबर) कर देता है और बहुतों को माल का न होना। मना तो वो चीज़ है जो अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल से ग़ाफ़िल कर दे, वरना दुनिया अपने

उर्दू अनुवाद

मक़सद तो दिल की इस्लाह है ताकि वो ज़िक्र-ए-इलाही के लिए खाली हो जाए और बहुत से लोगों को माल का होना अल्लाह तआला से ग़ाफ़िल कर देता है और बहुत से लोगों को माल का न होना ग़ाफ़िल कर देता है, और मना तो वो है जो अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल से ग़ाफ़िल कर दे वरना फ़ी नफ़्सिही

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
आप में, न उसका वजूद और न ही उसका अदम (अभाव) मना है। [2]	(स्वयं में) दुनिया का वजूद व अदम ममनूअ (प्रतिबंधित) नहीं। (त)

दसवां: जो मुतमइन नफ़्स वाले हैं, न माल की कमी से उनका दिल परेशान होता है और न माल की मौजूदगी उनकी नज़रों को फेरती है, वे मुख़्तियार (स्वतंत्र) हैं। हक़ सुब्हानहू अपने नबी सैय्यदना सुलेमान अलैहिस्सलाम से फ़रमाता है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
[यह हमारी अता है, अब तू चाहे तो एहसान कर या रोक रख, तुझ पर कोई हिसाब नहीं।] [3]	यह हमारी अता है अब तू चाहे तो एहसान कर या रोक रख, तुझ पर कुछ हिसाब नहीं। (त)

---

[1] जामिउत तिरमिज़ी, अबवाबुद दावात, अमीन कंपनी, कुतुब ख़ाना रशीदिया, दिल्ली, 2/187 [2] इहयाउल उलूम, किताबुत्तौहीद वत्तवक्कुल, अहवालुल मुतवक्किलीन इलख, मक्तबा व मत्ब'तुल मशहदुल हुसैनी, क़ाहिरा, 4/277 [3] अल-कुरान, 38/39

فتاوی رضویہ جلد دہم

ہوں تو بھول جائیں اللھم انّا نعوذ بك من غنی یطغی و من فقر ینسی (اے اللہ ! ہم تیری پناہ مانگتے ہیں اس غنا سے جو تیرا باغی بنادے اور اس فقر سے جو تجھے بُھلا دے۔ت)

نہم: اگر جمع رکھنے میں اس کا دل متفرق اور مال کے حفظ یا اس کی طرف میلان سے متعلق ہو تو رکھنا ہی افضل ہے کہ اصل مقصود ذ کر الٰہی کے لیے فراغِ بال ہے جو اس میں مخل ہو وہی ضم ہے ان ہی دونوں مقاموں کی طرف حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے اُس دُعا میں اشارہ فرمایا جو اپنی اُمت کو تعلیم فرمائی کہ:

عربی متن	اردو ترجمہ
اللھم ما رزقتنی مما احب فاجعلہ قوۃ لی فیما تحب اللھم وما زویت عنی مما احب فاجعلہ فراغاً لی فیما تحب۔ [1] رواہ الترمذی عن عبداللہ بن یزید رضی اللہ تعالٰی عنہ و حسنہ۔	اے اللہ! تُو نے جو مجھے میرا پسندیدہ رزق دیا ہے تو اسے اپنے پسندیدہ کاموں میں میرے لیے قوت کا ذریعہ بنادے، اور وہ پسندیدہ رزق جو تُو نے مجھ سے روک رکھا ہے تو اسے اپنے پسندیدہ کاموں میں میرے لیے ذریعہ فراغت بنادے۔ اسے امام ترمذی نے حضرت عبداللہ بن یزید رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کر کے حسن قرار دیا ہے۔(ت)

امام حجۃ الاسلام بعد عبارتِ مذکورہ فرماتے ہیں:

عربی متن	اردو ترجمہ
المقصود اصلاح القلب لیتجرد لذکر اللہ، ورب شخص یشغلہ وجود المال ورب	مقصود تو دل کی اصلاح ہے تاکہ وہ ذکرِ الٰہی کے لیے خالی ہو جائے اور بہت سے لوگوں کو مال کا ہونا اللہ

عربی متن	اردو ترجمہ
شخص یشغله عدمه، والمحذور ما یشغل عن الله عزوجل، والا فالدنیا فی عینها غیر محذورة لا وجودها ولا عدمها۔ [2]	تعالیٰ سے غافل کر دیتا ہے اور بہت سے لوگوں کو مال کا نہ ہونا غافل کر دیتا ہے، اور منع تو وہ ہے جو اللہ عزوجل سے غافل کر دے ورنہ فی نفسہ دنیا کا وجود و عدم ممنوع نہیں۔ (ت)

دہم: اصحابِ نفوسِ مطمئنہ ہوں، نہ عدمِ مال سے اُن کا دل پریشان نہ وجودِ مال سے ان کی نظر، وہ مختار ہیں۔ حق سبحانہ اپنے نبی سیدنا سلیمان علیہ السلام سے فرماتا ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
هَذَا عَطَاؤُنَا فَامْنُنْ أَوْ أَمْسِكْ بِغَيْرِ حِسَابٍ [3]۔	یہ ہماری عطا ہے اب تُو چاہے تو احسان کر یا روک رکھ، تجھ پر کچھ حساب نہیں۔ (ت)

---

[1] جامع الترمذی ابواب الدعوات امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۲/۱۸۷ [2] احیاء العلوم کتاب التوحید والتوکل، احوال المتوکلین الخ مکتبہ و مطبعۃ المشہد الحسینی قاہرہ ۴/۲۷۷ [3] القرآن ۳۸/۳۹

Fatawa Ridawiyya Volume 10

And say nothing that it is for the benefit of the servants of Allah. In "Ihya", the Book of Zakat, sixth duty of the purifier, it is stated:

(Arabic): All wealth belongs to Allah, the Mighty and Sublime, and giving all of it is most beloved to Allah, the Exalted. He did not command His servant to do so only because it would be difficult for him due to his stinginess, as the Almighty said, "if He asks you too much, you would become stingy."[1]

(Translation): All wealth belongs to Allah, the Mighty and Sublime, and spending all of it is a liked deed in the eyes of Allah, the Exalted. Allah Almighty did not command to spend the rest because it was difficult for the servant to do so due to stinginess, as the Creator said: if more is demanded from you, you will become stingy. (T)

Eleventh: Spending more than what is needed in charitable avenues and not accumulating it was mandatory in the third case, and in all other cases it is certainly desired. Accumulating it is disliked and flawed for him, because for an individual, accumulating it would arise from either long-term hopes or love for the world, and long-term hope is deception, and the world is the worst of evils. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

(Arabic): "Be in this world as if you were a stranger or a traveler, and consider yourself among the inhabitants of the graves. When you reach the morning, do not speak to yourself of the evening, and when you reach the evening, do not speak to yourself of the morning."[2] Reported by Tirmidhi and Bayhaqi from Ibn Umar (may Allah be pleased with them). In Sahih Bukhari, its first part is narrated as marfu' and the last part as mawquf.

(Translation): Live in the world as if you are a traveler, or rather a wayfarer, and considering yourself in the grave, when it is morning do not bring to mind the thought that it will be evening, and if it is evening do not think it will be morning. (Narrated by Tirmidhi and Bayhaqi from Hazrat Ibn Umar (may Allah be pleased with them). In Sahih Bukhari its first part is narrated as marfu'ly and the last part as mawqufly. T)

In a Hadith, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "O people! Do you not feel ashamed?" Those present asked: "O Messenger of Allah, of what?" He said:

(Arabic): "You gather what you do not eat, and you build what you do not inhabit, and you cherish hopes that you do not achieve. Do you not feel ashamed?"

(Translation): You gather what you will not eat, and you build buildings in which you will not live, and you foster hopes until which...

[1] Ihya al-Ulum, Book of the Secrets of Zakat, Explanation of Subtleties and Inner Manners, etc., Al-Mashhad al-Husayni Library and Press, Cairo, 1/218, Al-Quran 47/37.
[2] Jami' at-Tirmidhi, Chapters on Asceticism, Chapter on Shortness of Hope, Amin Company Kitabkhana Rashidiyah, Delhi, 4/57.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

और कुछ न कहना कि अल्लाह के बंदों का फायदा है। इह्या उलूम की किताबुज़ ज़कात, मुज़क्की (पवित्र करने वाले) के छठे कर्तव्य में है:

(अरबी): सारा धन अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल के लिए है और उसका पूरा खर्च कर देना अल्लाह सुब्हानहू के नज़दीक पसंदीदा अमल है। अल्लाह तआला ने अपने बंदे को इसका हुक्म इसलिए नहीं दिया क्योंकि बंदे पर बुख़्ल (कंजूसी) की वजह से ऐसा करना मुश्किल था, जैसा कि बारी तआला ने इरशाद फरमाया: "अगर वह तुमसे ज़्यादा तलब करे तो तुम बुख़्ल करोगे"।[1]

(अनुवाद): सारा माल अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल का है और सारा का सारा खर्च कर देना अल्लाह सुब्हानहू के यहाँ पसंदीदा अमल है। बाक़ी तमाम को खर्च कर देने का अल्लाह तआला ने इसलिए हुक्म नहीं दिया कि बंदे पर बुख़्ल की वजह से ऐसा करना मुश्किल था, जैसा कि बारी तआला ने इरशाद फरमाया: तुमसे ज़्यादा तलब करे तो तुम बुख़्ल करोगे। त)

ग्यारहवाँ: ज़रूरत से ज़्यादा को भलाई के कामों में खर्च कर देना और जमा न रखना तीसरी सूरत में तो वाजिब था, बाक़ी तमाम सूरतों में ज़रूर मतलूब (वांछित) है। और जोड़ कर रखना उसके हक़ में नापसंद और मा'यूब (दोषपूर्ण) है क्योंकि अकेले व्यक्ति के लिए उसे जोड़ना लंबी उम्मीदों (तुल-ए-अमल) या दुनिया की मोहब्बत से ही पैदा होगा, और लंबी उम्मीदें धोखा हैं, और दुनिया बुराइयों की बुराई है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फरमाते हैं:

(अरबी): "दुनिया में ऐसे रहो मानो तुम परदेसी हो या राह चलते मुसाफिर, और अपने आप को कब्र वालों में समझो। जब सुबह करो तो शाम का ख्याल न लाओ, और जब शाम करो तो सुबह की उम्मीद न रखो।"[2] इसे तिर्मिज़ी और बैहक़ी ने इब्ने उमर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) से रिवायत किया है और यह सही बुखारी में है, जिसका पहला हिस्सा मरफ़ूअ़ और अंत मौक़ूफ़ है।

(अनुवाद): दुनिया में यूँ रह गोया तू मुसाफिर बल्कि राह चलता है और अपने आप को कब्र में समझ कर सुबह करे तो दिल में यह ख्याल न ला कि शाम होगी, और शाम हो तो यह न समझ कि सुबह होगी। (इसे तिर्मिज़ी और बैहक़ी ने हज़रत इब्ने उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से रिवायत किया है। सही बुख़ारी में इसका पहला हिस्सा मरफ़ूअ़न और आख़िरी हिस्सा मौक़ूफ़न मरवी है। त)

एक हदीस में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फरमाया: ऐ लोगो! क्या तुम्हें शर्म नहीं आती? हाज़िरीन ने अर्ज़ किया: या रसूलुल्लाह किस बात से। फरमाया:

(अरबी): "तुम वह जमा करते हो जिसे तुम खाओगे नहीं, और वह इमारतें बनाते हो जिनमें तुम रहोगे नहीं, और वह उम्मीदें बांधते हो जिन्हें तुम पाओगे नहीं। क्या तुम्हें शर्म नहीं आती?"	**(अनुवाद): जमा करते हो जो न खाओगे और इमारत बनाते हो जिसमें न रहोगे और वह आरज़ूएँ बांधते हो जिन तक...**

[1] इह्या उल-उलूम, किताब असरारुज़ ज़कात, बयान दक़ाइक़ व आदाबुल बातिना इल्ख़, मकतबा व मतबा अल-मशहद अल-हुसैनी काहिरा 1/218, अल-क़ुरआन 47/37 [2] जामिअ् तिर्मिज़ी, अबवाबुज़ ज़ुहद, बाब मा जाअ् फ़ी क़स्रुल अमल, अमीन कंपनी किताब ख़ाना रशीदिया देहली 4/57

पेज 324/836

فتاوی رضویہ جلد دہم

اور کچھ نہ کہنا کہ عباد اللہ کا فائدہ ہے۔ احیاء کتاب الزکوۃ وظیفہ سادسہ مزکی میں ہے:

المال کلہ للہ عز وجل وبذل جمیعہ تمام مال اللہ عز وجل کے لیے ہے اور تمام کا تمام خرچ کر دینا هو الاحب عند اللہ سبحنہ وانما لم اللہ سبحانہ کے ہاں پسندیدہ عمل ہے باقی تمام کو خرچ کردینے یأمر بہ عبدہ لانہ یشق علیہ بسبب کا اللہ تعالیٰ نے اس لیے حکم نہیں دیا کہ بندے پر بخل کی وجہ بخلہ کما قال عز وجل "فیحفکم سے ایسا کرنا مشکل تھا جیسا کہ باری تعالیٰ نے ارشاد فرمایا: تبخلوا"۔1 تم سے زیادہ طلب کرے تو تم بخل کرو گے۔ (ت)

یازدھم: حاجت سے زیادہ کا مصارف خیر میں صرف کر دینا اور جمع نہ رکھنا صورت سوم میں تو واجب تھا باقی جملہ صُور میں ضرور مطلوب، اور جوڑ کر رکھنا اس کے حق ناپسند و معیوب کہ منفرد کو اس کا جوڑنا طولِ امل یا حُب دنیا ہی سے ناشی ہوگا اور طولِ امل غرور ہے، اور دنیا شرالشرور۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

کن فی الدنیا کأنك غریب او عابر سبیل وعدنفسك من اصحاب القبور اذا اصبحت فلا تحدث نفسك بالمساء واذا امسیت فلا تحدث نفسك بالصباح۔ 2 رواہ الترمذی والبیھقی عن ابن عمر رضی اللہ تعالی عنھما وھو في صحیح البخاری برفع اولہ ووقف اخرہ۔

دنیا میں یوں رہ گویا تو مسافر بلکہ راہ چلتا ہے اور اپنے آپ کو قبر میں سمجھ کر صبح کرے تو دل میں یہ خیال نہ لا کہ شام ہوگی، اور شام ہو تو یہ نہ سمجھ کہ صبح ہوگی۔ (اسے ترمذی اور بیہقی نے حضرت ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا ہے۔ صحیح بخاری میں اس کا اول حصہ مرفوعاً اور آخری موقوفاً مروی ہے۔ت)

ایک حدیث میں رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: یاایھاالناس اما تستحیون اے لوگو! کیا تمہیں شرم نہیں آتی؟ حاضرین نے عرض کی: یارسول اللہ کس بات سے۔ فرمایا:

تجمعون مالا تاکلون وتبنون مالا تعمرون جمع کرتے ہو جو نہ کھاؤگے اور عمارت بناتے ہو جس وتأملون مالا تدرکون الاتستحیون میں نہ رہوگے اور وہ آرزوئیں باندھتے ہو جن تک

1 احیاء العلوم کتاب اسرار الزکوۃ، بیان دقائق وآداب الباطنہ الخ مکتبہ ومطبعہ المشہد الحسینی قاہرہ ۲۱۸/۱، القرآن ۴۷/ ۳۷ 2 جامع الترمذی ابواب الزہد باب ماجاء فی قصر الامل امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۴/ ۵۷

That.[1] Reported by al-Tabarani from Umm al-Walid bint Umar al-Farooq (may Allah be pleased with them). You will not reach it; they do not shy away from it. (Tabarani narrated it from Hazrat Umm al-Walid, daughter of Hazrat Umar Farooq, may Allah be pleased with them). (T)

In a Hadith, it is stated that Usama bin Zaid (may Allah be pleased with them) bought a slave-girl for a hundred dinars on credit for one month. The Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him) said: "Are you not amazed at Usama who buys on credit for a month? Verily, Usama has long hopes. By Him in whose hand is my soul, whenever my eyes open, I suspect that my eyelids will not meet before Allah seizes my soul. Never did I raise a cup to my mouth without suspecting that I would not be able to put it down before being seized [by death]. Never did I take a morsel without suspecting that I would not be able to swallow it before death stops it in my throat. By Him in whose hand is my soul, what you have been promised is coming, and you cannot escape it."[2] Narrated by Ibn Abi al-Dunya in 'Qasr al-Amal', Abu Nu'aym in 'al-Hilya', al-Asbahani in 'at-Targhib', and al-Bayhaqi from Abu Sa'id al-Khudri (may Allah be pleased with him).

Translation of the Arabic text: "Are you not amazed at Usama who bought (a slave girl) on credit for a month? Surely, Usama's hope is long. By Him in whose hand is my life, when I open my eyes, I suspect that death will come before I can blink. And when I take a cup to my mouth, I never suspect that I will live until I put it down. And when I take a morsel, I suspect that I will not be able to pass it down my throat as death will stop it in my neck. By Him in whose hand is my life, indeed what you are promised is sure to come, and you will not be able to evade it." Ibn Abi al-Dunya narrated it in the chapter 'Shortness of Hope', Abu Nu'aym in 'Hilya', Asbahani in 'Targhib', and Bayhaqi from Hazrat Abu Sa'id Khudri (may Allah be pleased with him). (T)

[He] saw Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them) repairing a wall with clay and mortar, and asked: "O Abdullah! What is this?" He replied: "I am repairing it." He [the Prophet] said:

---

[1] Al-Mu'jam al-Kabir, narrated from Umm al-Walid bint Umar bin Khattab, Hadith 421, Al-Maktaba al-Faysaliyya, Beirut, 171/25. [2] Hilyat al-Awliya, Abu Bakr Abi Maryam al-

Ghassani, No. 433, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 6/91; At-Targhib wa't-Tarhib, Kitab at-Tawba wa'z-Zuhd, Mustafa al-Babi, Egypt, 4/242.

वह।[1] इसे तबरानी ने हज़रत उम्मे वलीद बिन्ते उमर फ़ारूक़ (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत किया है। वहां तक नहीं पहुँचोगे, वे इससे शर्माते नहीं। (इसे तबरानी ने हज़रत उम्मे वलीद, हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हुमा की बेटी से रिवायत किया। (त)

एक हदीस में है कि हज़रत उसामा बिन ज़ैद (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) ने एक महीने के वादे पर एक कनीज़ (दासी) सौ दीनार में खरीदी। रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "क्या तुम्हें उसामा पर ताज्जुब नहीं होता जो एक महीने की मुद्दत पर ख़रीदारी करता है? बेशक उसामा की उम्मीदें लम्बी हैं। उस ज़ात की क़सम जिसके हाथ में मेरी जान है, जब मैं अपनी आँखें खोलता हूँ तो मुझे अंदेशा होता है कि पलक झपकने से पहले मेरी रूह कब्ज़ कर ली जाएगी। मैंने कभी पीने का प्याला अपने मुँह की तरफ़ नहीं उठाया मगर मुझे लगा कि उसे नीचे रखने से पहले मेरी रूह कब्ज़ कर ली जाएगी। और मैंने कभी खाने का कोई लुक़्मा नहीं लिया मगर मुझे लगा कि उसे गले से नीचे उतारने से पहले ही मौत उसे हलक़ में रोक लेगी। उस ज़ात की क़सम जिसके हाथ में मेरी जान है, जिस चीज़ का तुमसे वादा किया गया है वह ज़रूर आने वाली है और तुम उसे टाल नहीं सकोगे।"[2] इसे इब्ने अबी दुनिया ने 'क़स्र अल-अमल' में, अबू नुअैम ने 'अल-हिलया' में, असबहानी ने 'अत-तरग़ीब' में और बैहक़ी ने हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है।

उपरोक्त अरबी इबारत का उर्दू अनुवाद: "क्या उसामा से ताज्जुब नहीं करते जिसने एक महीने के वादे पर (कनीज़) खरीदी, बेशक उसामा की उम्मीद लम्बी है क़सम उसकी जिसके हाथ में मेरी जान है मैं तो जब आँख खोलता हूँ यह गुमान होता है कि पलक झपकने से पहले मौत आजायेगी, और जब प्याला मुँह तक ले जाता हूँ कभी यह गुमान नहीं करता कि इसके रखने तक ज़िन्दा रहूँगा, और जब कोई लुक़्मा लेता हूँ गुमान होता है कि इसे हलक़ से उतारने न पाऊँगा कि मौत इसे गले में रोक देगी, क़सम उसकी जिसके हाथ में मेरी जान है बेशक जिस बात का तुम्हें वादा दिया जाता है ज़रूर आने वाली है तुम ठिकाना न सकोगे। इसे इब्न अबी दुनिया ने बाब फ़ी क़स्र अल-अमल में, अबू नुअैम ने हिलया में, असबहानी ने तरग़ीब में और बैहक़ी ने हज़रत अबू सईद ख़ुदरी रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है।" (त)

अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) को दीवार पर गारा और मिट्टी दुरुस्त करते देखा, फ़रमाया: ऐ अब्दुल्ला! यह क्या है? अर्ज़ किया दुरुस्त कर रहा हूँ। फ़रमाया:

[1] अल-मुअजम अल-कबीर, उम्मे वलीद बिन्ते उमर बिन ख़त्ताब से रिवायत, हदीस 421, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया, बैरुत, 171/25। [2] हिलयतुल औलिया, अबू बक्र अबी मरियम अल-ग़स्सानी, नंबर 433, दारुल किताब अल-अरबी, बैरुत, 6/91; अत-तरग़ीब वत-तरहीब, किताबुत तौबा वज़-ज़ुहद, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 4/242।

ذلک۔ ۱ رواہ الطبرانی عن ام الولید بنت عمر الفاروق رضی اللہ تعالٰی عنہما۔ نہ پہنچو گے اس سے شرماتے نہیں۔ (اسے طبرانی نے حضرت ام الولید دختر حضرت عمر فاروق رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا۔ (ت)

ایک حدیث میں ہے اسامہ بن زید رضی اللہ تعالٰی عنہما نے ایک مہینے کے وعدے پر ایک کنیز سو دینار کو خریدی، رسول اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: الاتعجبون من اسامہ یشتری الی شھر، ان اسامہ طویل الامل، والذی نفسی بیدہ ماطرفتْ عیناہ الاظننت ان شفری لا یلتقیان حتی یقبض اللہ روحی ولا رفعت قد حاً الی في فظننت اني واضعہ حتی اقبض ولا لقمت لقمۃ الاظننت اني لاسیغھا حتی اعض بھا من الموت، والذی نفسی بیدہ ان ما توعدون لات وما انتم بمعجزین۔ ۲ رواہ ابن ابی الدنیا فی قصر الامل وابو نعیم في الحلیۃ والاصبھانی فی الترغیب و البیھقی عن ابی سعید ن الخدری رضی اللہ تعالٰی عنہ۔

عربی عبارت کا ترجمہ: کیا اسامہ سے تعجب نہیں کرتے جس نے ایک مہینے کے وعدے پر (کنیز) خریدی، بیشک اسامہ کی امید لمبی ہے قسم اس کی جس کے ہاتھ میں میری جان ہے میں تو جب آنکھ کھولتا ہوں یہ گمان ہوتا ہے کہ پلک جھپکنے سے پہلے موت آجائیگی، اور جب پیالہ منہ تک لے جاتا ہوں کبھی یہ گمان نہیں کرتا کہ اس کے رکھنے تک زندہ رہوں گا، اور جب کوئی لقمہ لیتا ہوں گمان ہوتا ہے کہ اسے حلق سے اتارنے نہ پاؤں گا کہ موت اسے گلے میں روک دے گی، قسم اس کی جس کے ہاتھ میں میری جان ہے بیشک جس بات کا تمہیں وعدہ دیا جاتا ہے ضرور آنے والی ہے تم تھکانہ سکو گے۔ اسے ابن ابی الدنیا نے باب فی قصر الامل میں، ابونعیم نے حلیہ

میں، اصبہانی نے ترغیب میں اور بیہقی نے حضرت ابوسعید خدری رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

عبد اللہ بن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما کو دیوار پر کھنگل اور ٹی درست کرتے دیکھا، فرمایا: اے عبد اللہ ! کیا ہے؟ عرض کی درست کرتا ہوں۔ فرمایا:

---

۱ المعجم الکبیر مروی از ام الولید بنت عمر بن خطاب حدیث ۴۲۱ المکتبۃ الفیصلیہ بیروت ۲۵/ ۱۷۱

۲ حلیۃ الاولیاء ابوبکر ابی مریم الغسانی نمبر ۴۳۳ دار الکتاب العربی بیروت ۹۱/۶، الترغیب والترہیب کتاب التوبۃ والزہد مصطفٰی البابی مصر ۲۴۲/۴

[Arabic Box Left]: "The matter is swifter than that." - Reported by Abu Dawud and al-Tirmidhi, who graded it Hasan Sahih, and Ibn Majah and Ibn Hibban narrated it from him [Ibn Umar], may Allah be pleased with him. [Urdu Box Right]: The matter is closer than this. (Reported by Abu Dawud and Tirmidhi, who narrated it and called it Hasan and Sahih. Ibn Majah and Ibn Hibban narrated it from Hazrat Abdullah bin Umar, may Allah be pleased with them both. - T)

Once the Holy Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, placed his holy hand on the back of the neck and said: "This is the son of Adam and this is his appointed time (death)." Then he extended his blessed hand and said:

[Arabic Box Left]: "And there is his hope, and there is his hope." - Reported by al-Tirmidhi and Ibn Hibban, and similarly by al-Nasa'i and Ibn Majah from Anas, may Allah be pleased with him. [Urdu Box Right]: And there is his hope so far away, so far away. (Tirmidhi, Ibn Hibban, and similarly Nasa'i and Ibn Majah narrated it from Hazrat Anas, may Allah be pleased with him. - T)

It is mentioned in a Hadith:

[Arabic Box Left]: "The world is the home of the homeless, and for it, he who has no intellect gathers." - Reported by Ahmad and al-Bayhaqi in Shu'ab al-Iman from the Mother of the Believers, and this is also reported from Ibn Mas'ud as his own saying, may Allah be pleased with them both. [Urdu Box Right]: The world is the home of those who have no home, and he who amasses for it has no intellect. (Imam Ahmad and Bayhaqi narrated it in Shu'ab al-Iman from the Mother of the Believers, and it is also cited as the saying of Hazrat Ibn Mas'ud, may Allah be pleased with him. - T)

In another Hadith, he (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Arabic Box Left]: "Whoever treasures the world, desiring eternal life, for life is in the hand of Allah; behold, I do not treasure a dinar." [Urdu Box Right]: He who amasses the world seeking longevity of life, then life is in the hands of Allah. Listen! I do not treasure any gold coins (dinars).

---

1 Jami' al-Tirmidhi, Chapters of Asceticism, Chapter on what is mentioned regarding short hopes, Amin Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi 2/57; Sunan Ibn Majah, Chapters of Asceticism, H.M. Saeed Company Karachi, p. 317. 2 Jami' al-Tirmidhi, Chapters of Asceticism, Chapter on what is mentioned regarding short hopes, Amin

Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi 2/57. 3 Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Aisha Siddiqa may Allah be pleased with her, Dar al-Fikr Beirut 6/71. F: The wording in Jami' al-Tirmidhi and Sunan Ibn Majah is: "I see the matter is even more urgent than that." - Nazir Ahmad.

[अरबी बॉक्स बाएँ: "मामला इससे भी तेज़ है।" - अबू दाऊद और तिर्मिज़ी ने इसे हसन और सहीह बताते हुए, इब्न माजह और इब्न हिब्बान ने उनसे (अब्दुल्लाह बिन उमर) रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। [उर्दू बॉक्स दाएँ: मामला इससे भी करीब है। (इसे अबू दाऊद और तिर्मिज़ी ने रिवायत करके हसन और सहीह कहा। इब्न माजह और इब्न हिब्बान ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया। - त)

एक बार हुज़ूर अकदस सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने गर्दन मुबारक पर दस्ते अकदस रखकर फरमाया: "यह आदम का बेटा है और यह उसकी मौत है।" फिर दस्ते अनवर फैलाकर फरमाया:

[अरबी बॉक्स बाएँ: "और वहां उसकी उम्मीद है, और वहां उसकी उम्मीद है।" - तिर्मिज़ी और इब्न हिब्बान ने, और उसी की तरह नसाई और इब्न माजह ने अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। [उर्दू बॉक्स दाएँ: और वह इतनी दूर उसकी उम्मीद है, इतनी दूर उसकी उम्मीद है। (इसे तिर्मिज़ी, इब्न हिब्बान और उसी की तरह नसाई और इब्न माजह ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया। - त)

एक हदीस में है:

[अरबी बॉक्स बाएँ: "दुनिया उनका घर है जिनका कोई घर नहीं, और इसके लिए वह जमा करता है जिसके पास अक्ल नहीं।" - अहमद और बैहकी ने शोअबुल ईमान में उम्मुल मोमिनीन से रिवायत किया है, और यह इब्न मसूद रज़ियल्लाहु अन्हुमा के कौल के तौर पर भी है। [उर्दू बॉक्स दाएँ: दुनिया बे-घरों का घर है और इसके लिए वह जमा करता है जो बे-अक्ल है। (इसे इमाम अहमद और बैहकी ने शोअबुल ईमान में उम्मुल मोमिनीन से रिवायत किया है और इसे हज़रत इब्न मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु के कौल के तौर पर नकल किया गया है। - त)

एक हदीस में फरमाते हैं सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम:

[अरबी बॉक्स बाएँ: "जो दुनिया का खजाना जमा करता है, जीवन की अमरता चाहता है, तो जीवन अल्लाह के हाथ में है; सुनो, मैं कोई दीनार जमा नहीं करता।" [उर्दू बॉक्स दाएँ: जो दुनिया जोड़कर रखे और ज़िंदगी की बका चाहता हो, तो ज़िंदगी तो अल्लाह के हाथ में है। सुन लो, मैं न अशरफी (दीनार) जमा करता हूँ।

1 जामिअ तिर्मिज़ी, अबवाबुल ज़ुहद, बाब मा जाअ फी कसरुल अमल, अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली 2/57; सुनन इब्न माजह, अबवाबुल ज़ुहद, एच.एम. सईद कंपनी कराची पृ. 317। 2 जामिअ तिर्मिज़ी, अबवाबुल ज़ुहद, बाब मा जाअ फी कसरुल अमल, अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली 2/57। 3 मुसनद अहमद बिन हंबल, हज़रत आयशा सिद्दीका रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत, दारुल फिक्र बेरुत 6/71। फ़: जामिअ तिर्मिज़ी और सुनन इब्न माजह में हदीस के अल्फाज़ इस तरह हैं: "मैं तो मामले को इससे भी ज़्यादा जल्दी वाला देखता हूँ।" - नज़ीर अहमद।

पृष्ठ 326 का 836

[Arabic Box Left]: الامر اسرع من ذلک۔ رواہ ابو داؤد و الترمذی و حسنہ و صححہ و ابن ماجۃ و ابن حبان عنہ رضی اللہ تعالی عنہ۔ [Urdu Box Right]: معاملہ اس سے قریب تر ہے (اسے ابو داؤد اور ترمذی نے روایت کرکے حسن اور صحیح کہا۔ ابن ماجہ اور ابن حبان نے حضرت عبد اللہ بن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا۔ ت)

ایک بار حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے گردن مبارک پر دستِ اقدس رکھ کر فرمایا : هذا ابن آدم و هذا اجلہ یہ ابن آدم ہے اور یہ اس کی موت ہے۔ پھر دستِ انور پھیلا کر فرمایا :

[Arabic Box Left]: و ثم املہ و ثم املہ۔ رواہ الترمذی و ابن حبان و بنحوہ النسائی وابن ماجۃ عن انس رضی اللہ تعالی عنہ۔ [Urdu Box Right]: اور وہ اتنی دور اس کی امید ہے اتنی دور اس کی امید۔ (اسے ترمذی، ابن حبان اور اسی کی مثل نسائی اور ابن ماجہ نے حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔ ت)

ایک حدیث میں ہے :

[Arabic Box Left]: الدنیا دار من لادار لہ ولہا یجمع من لا عقل لہ۔ رواہ احمد والبیہقي في شعب الایمان عن ام المومنین وھذا عن ابن مسعود من قولہ رضی اللہ تعالی عنہما۔ [Urdu Box Right]: دنیا بے گھروں کا گھر ہے اور اس کے لیے وہ جمع کرتا ہے جو بے عقل ہے۔ (اسے امام احمد اور بیہقی نے شعب الایمان میں اُم المؤمنین سے روایت کیا ہے اور اسے حضرت ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ کے قول کے طور پر نقل کیا ہے۔ ت)

ایک حدیث میں فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم :

[Arabic Box Left]: من کنز دنیا، یرید حیاۃ باقیۃ فان الحیاۃ بید اللہ الاوانی لا اکنز دینارا

[Urdu Box Right]: جو دنیا جوڑ کر رکھے بقائے زندگی چاہتا ہو تو زندگی تو اللہ کے ہاتھ میں ہے، سُن لو میں نہ اشرفی

---

1 جامع الترمذی ابواب الزہد باب ماجاء فی قصر الامل امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۲/ ۵۷، سنن ابن ماجہ ابواب الزہد ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۳۱۷ 2 جامع الترمذی ابواب الزہد باب ماجاء فی قصر الامل امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۲/ ۵۷ 3 مسند احمد بن حنبل مروی از عائشہ صدیقہ رضی اللہ عنہا دارالفکر بیروت ۶/ ۷۱ ف: جامع الترمذی اور سنن ابن ماجہ میں حدیث کے الفاظ یوں ہیں : ما اری الامر الا اعجل من ذلک۔ نذیر احمد)

Fatawa Razawiya, Volume 10

(Arabic) "Neither a dirham, nor do I hide sustenance for tomorrow." Narrated by Abu al-Sheikh in 'Al-Thawab' from Ibn Umar (may Allah be pleased with them).

(Urdu) I do not accumulate money, nor do I save food for tomorrow. (Abu al-Sheikh has narrated this in 'Al-Thawab' from Hazrat Ibn Umar, may Allah be pleased with them. - T)

All this pertained to an individual without dependents. Obviously, for his own self, he is an individual, so for his own person, he should observe those rulings; however, from the perspective of his dependents, there are other situations, which are explained below. Twelfth: Providing for dependents is an obligation (Fard) imposed by the Shari'ah. He cannot compel them to trust in God (tawakkul), cut off worldly ties (tabattul), or endure starvation. No matter how much he restrains himself, it is forbidden for him to leave them empty-handed. The Messenger of Allah (may Allah's peace and blessings be upon him) says:

(Arabic) "It is enough of a sin for a person to neglect those whom he is responsible for feeding." Narrated by Imam Ahmad, Abu Dawud, al-Nasa'i, al-Hakim, and al-Bayhaqi with a sound (sahih) chain of narration from Abdullah bin Amr (may Allah be pleased with them), and it is attributed to Muslim in 'al-Maqasid'.

(Urdu) It is sufficient sin for a man to leave those whose sustenance is his responsibility in a state of neglect. (Narrated by Imam Ahmad, Abu Dawud, Nasa'i, and Bayhaqi from Hazrat Abdullah bin Amr, may Allah be pleased with them, with a good (hasan) chain. In 'Al-Maqasid', it is attributed to Muslim. - T)

Hujjat al-Islam (Imam Ghazali) states (may his soul be sanctified):

(Arabic) "It is not permissible to force dependents to endure hunger; this is not possible for them. Nor is it 'trust in God' (tawakkul) for the earner [to neglect them]. Leaving dependents under the guise of trust, or sitting idle without making arrangements for their affairs based on trust, is forbidden. This might lead to their destruction, and he will be held accountable for them." (Summarized)

(Urdu) It is not permissible to keep dependents in a state of hunger as this is not possible for them. Similarly, it is not permissible for the earner to rely solely on trust (tawakkul) [while neglecting them]. Leaving them while claiming to trust in God for their sake, or sitting idle without attending to their expenses under the pretext of trust, is forbidden. If this becomes a cause for their ruin, this person will be caught (held accountable). (T)

1. Al-Targhib wa al-Tarhib, referencing Abu al-Sheikh in 'Kitab al-Thawab', Book of Repentance and Asceticism, Mustafa al-Babi Egypt, 4/189.
2. Sunan Abi Dawud, Book of Zakat, Chapter on Upholding Kinship Ties, Aftab-e-Alam Press Lahore 1/238; Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Abdullah bin Amr, Dar al-Fikr Beirut 2/160, 164, 195.
3. Ihya' 'Ulum al-Din, Book of Monotheism and Trust, Maktaba wa Matba'a al-Mashhad al-Husayni Cairo 4/272.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवाँ

(अरबी) "न एक दिरहम, और न ही मैं कल के लिए रिज़क़ (भोजन) छिपा कर रखता हूँ।" इसे अबू अल-शैख़ ने 'अल-सवाब' में इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है।

(उर्दू) न मैं रुपया जमा करता हूँ, न कल के लिए खाना बचाकर रखता हूँ। (इसे अबू अल-शैख़ ने 'अल-सवाब' में हज़रत इब्न उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया है। - त)

यह सब एक अकेले व्यक्ति का वर्णन रहा। ज़ाहिर है कि वह अपने नफ़्स (स्वयं) के हक़ में अकेला है, तो उसे स्वयं अपनी ज़ात के लिए उन्हीं अहकाम (आदेशों) का लिहाज़ रखना चाहिए; लेकिन अयाल (परिवार/आश्रितों) के लिहाज़ से इसकी स्थितियाँ अलग हैं, उनका वर्णन यहाँ किया जाता है। बारहवाँ: अयाल की कफ़ालत (भरण-पोषण) शरीयत ने उस पर फ़र्ज़ की है। वह उन्हें तवक्कुल (ईश्वर पर भरोसा), तबत्तुल (वैराग्य) और सब्र अला अल-फ़ाक़ा (भुखमरी पर धैर्य) पर मजबूर नहीं कर सकता। वह अपनी जान को जितना चाहे कड़े अनुशासन में रखे, लेकिन उन्हें खाली छोड़ना उस पर हराम है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

(अरबी) "इंसान के गुनाहगार होने के लिए इतना ही काफ़ी है कि वह उन्हें बर्बाद कर दे जिनका पेट पालना उसकी ज़िम्मेदारी है।" इसे इमाम अहमद, अबू दाऊद, नसाई, हाकिम और बैहक़ी ने सहीह सनद के साथ अब्दुल्ला बिन अम्र (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है, और 'अल-मक़ासिद' में इसे मुस्लिम की ओर निस्बत दी गई है।

(उर्दू) आदमी के गुनाहगार होने के लिए इतना ही काफ़ी है कि वह उसे बेसहारा छोड़ दे जिसका भोजन उसके ज़िम्मे है। (इसे इमाम अहमद, अबू दाऊद, नसाई और बैहक़ी ने हज़रत अब्दुल्ला बिन अम्र रज़ियल्लाहु अन्हुमा से सनद-ए-हसन के साथ रिवायत किया है। मक़ासिद में इसकी निस्बत मुस्लिम की ओर है। - त)

हुज्जतुल इस्लाम (इमाम ग़ज़ाली) फ़रमाते हैं (क़ुद्दिस सिर्रहु):

(अरबी) "अयाल को भूख पर सब्र करने के लिए मजबूर करना जायज़ नहीं है, क्योंकि उनके हक़ में ऐसा मुमकिन नहीं है। न ही कमाने वाले के लिए तवक्कुल करना [उन्हें नज़रअंदाज़ करते हुए] जायज़ है। अयाल के हक़ में तवक्कुल करते हुए उन्हें छोड़ देना या उनके मामलों की व्यवस्था किए बिना तवक्कुल के नाम पर बैठ जाना हराम है। यह उनकी हलाकत (विनाश) का कारण बन सकता है, और इसके लिए उसे जवाबदेह ठहराया जाएगा।" (संक्षिप्त)

(उर्दू) अयाल को भूख पर रखना जायज़ नहीं क्योंकि उनके हक़ में ऐसा मुमकिन नहीं और इसी तरह कमाने वाले को तवक्कुल कर लेना भी जायज़ नहीं। अयाल के हक़ में तवक्कुल करते हुए उन्हें छोड़ देना या तवक्कुल करते हुए उनके ख़र्चों का प्रबंध किए बिना बैठ जाना हराम है और अगर यह उनकी तबाही का कारण बना तो यह व्यक्ति पकड़ा जाएगा। (त)

1. अल-तरग़ीब वत-तरहीब, ब-हवाला अबी अल-शैख़ फ़ी किताब अल-सवाब, किताबुत्तौबा वज़-ज़ुहद, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 4/189
2. सुनन अबी दाऊद, किताबुज़-ज़कात, बाब फ़ी सिलतिल रहम, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर 1/238; मुस्नद अहमद बिन हंबल, अब्दुल्ला बिन अम्र से रिवायत, दारुल फ़िक्र बेरूत 2/160, 164, 195
3. इहया उलूम-उद-दीन, किताबुत्तौहीद वत-तवक्कुल, मकतबा व मतब'आ अल-मशहद अल-हुसैनी क़ाहिरा 4/272

ولا درھما ولا اخبأ رزقا لغد۔ رواہ ابو الشیخ فی الثواب عن ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنھما۔

جوڑ کر رکھتا ہوں نہ روپیہ، نہ کل کے لئے کھانا اٹھا کر رکھوں۔ (اسے ابو الشیخ نے الثواب میں حضرت ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا ہے۔ ت)

یہ سب منفرد کا بیان رہا عیالدار، ظاہر ہے کہ وہ اپنے نفس کے حق میں منفرد ہے، تو خود اپنی ذات کے لیے اسے اُنہیں احکام کا لحاظ چاہئے اور عیال کی نظر سے اس کی صورتیں اور ہیں ان کا بیان کریں۔ دوازدہم : عیال کی کفالت شرع نے اس پر فرض کی، وہ ان کو توکل و تبتل و صبر علی الفاقہ پر مجبور نہیں کر سکتا، اپنی جان کو جتنا چاہے کِسے مگر ان کو خالی چھوڑنا اس پر حرام ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

کفی بالمرء اثماً ان یضیع من یقوت ۲رواہ الامام احمد وابوداؤد والنسائی والحاکم والبیھقی بسند صحیح عن عبداللہ بن عمرو رضی اللہ تعالٰی عنہما وعزاہ فی المقاصد المسلم۔

آدمی کو گناہ کافی ہے کہ جس کا قوت اس کے ذمہ ہے اسے ضائع چھوڑے۔ (اسے امام احمد، ابوداؤد، نسائی ،اور بیہقی نے حضرت عبد اللہ بن عمرو رضی اللہ تعالٰی عنہما سے بسندِ حسن روایت کیا ہے۔ مقاصد میں اس کی نسبت مسلم کی طرف ہے۔ (ت)

حجۃ الاسلام فرماتے ہیں قدس سرہ:

لایجوز تکلیف العیال الصبر علی الجوع فلا یمکنہ فی حقہم ولا توکل المکتسب فاما ترک العیال توکل فی حقھم او القعود عن الاھتمام بأمرھم توکلا فھذا حرام وقد یفضی الی ھلا کھم ویکون ھو مؤاخذا بھم۔ ۳ (ملخصاً)

عیال کو بھوک پر قائم رکھنا جائز نہیں اس ان کے حق میں ایسا ممکن نہیں اور اسی طرح کمانے والے کو توکل کر لینا بھی جائز نہیں، عیال کے حق میں توکل کرتے ہوئے انھیں چھوڑ دینا یا توکل کرتے ہوئے ان کے اخراجات کا اہتمام نہ کرتے ہوئے بیٹھ جانا حرام ہے اور اگر یہ ان کی ہلاکت کا سبب بن گیا تو یہ شخص پکڑا جائے گا۔ (ت)

1 الترغیب والترہیب بحوالہ ابی الشیخ فی کتاب الثواب کتاب التوبہ والزہد مصطفی البابی مصر ۴/ ۱۸۹ 2 سنن ابی داؤد کتاب الزکوۃ باب فی صلۃ الرحم آفتاب عالم پریس لاہور ۱/ ۲۳۸، مسند احمد بن حنبل مروی از عبد اللہ بن عمرو دارالفکر بیروت ۲/ ۱۶۰، ۱۶۴، ۱۹۵ 3 احیاء العلوم کتاب التوحید والتوکل مکتبہ و مطبعہ المشہد الحسینی قاہرہ ۴/ ۲۷۲

Fatawa Rizwia Volume 10

The radiant presence, the Master of those who rely on Allah, peace and blessings of Allah be upon him, did not prefer to save food for the next day for his noble self. Once, a maidservant (may Allah be pleased with her) presented the meat of a bird that was left over from the day's meal on the following day. He said: "Did I not forbid you from saving anything for tomorrow? For Allah will provide sustenance for tomorrow, tomorrow." Reported by Abu Ya'la with a sound chain and Al-Bayhaqi from Anas, may Allah be pleased with him. (T)

And for his family, he would gather a year's worth of provisions. It is recorded in the Sahihayn (Bukhari and Muslim) from the Commander of the Faithful Farooq al-Azam (may Allah be pleased with him): "He (peace and blessings of Allah be upon him) would spend from it (i.e., from the spoils of war that Allah gave to His Messenger from the wealth of Banu Nadir) on a year's maintenance, then he would put what remained of it into the treasury of Allah Almighty." The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) would spend for the whole year from that (the 'fay' wealth which Allah granted the Prophet from the properties of Banu Nadir), then he would gather the remainder and give it to the public treasury (Bait-ul-Maal). (T)

Thirteenth: He whose family is impatient like the fourth case—and undoubtedly many common people will be like this—then regarding them, it would be doubly obligatory on him to store what is necessary. Allah the Almighty has commanded: "Save yourselves and your families from the Fire." (T)

Fourteenth: Yes, if all of one's family members are patient and rely on Allah, it is permissible for him to spend everything in the path of Allah. The Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) once ordered charity. The Commander of the Faithful, Umar (may Allah be pleased with him), says: "I was happy, thinking that if I were ever to surpass Siddiq al-Akbar (may Allah be pleased with him), it would be this time, as I have much wealth and he has less." Farooq brought half of all his wealth. It was asked: "What have you left for your family?" He replied: "The same amount."

1. Musnad Abi Ya'la from Musnad Anas bin Malik Hadith 4208 Muassasa Uloom al-Quran Beirut 4/192, Shu'ab al-Iman Bab al-Tawakkul wal Taslim Hadith 1348 Dar al-Kutub al-Ilmiyah Beirut 2/119.

2. Sahih al-Bukhari Kitab al-Nafaqat 2/806, Kitab al-Faraid 2/996, and Kitab al-I'tisam 2/1086 Qadimi Kutub Khana Karachi, Sahih Muslim Bab Hukm al-Fay Qadimi Kutub Khana Karachi 2/89 and 91.
3. Al-Quran 66/6.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

हुज़ूर पुर नूर सैयदुल मुतवक्किलीन सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम अपने नफ़्स-ए-करीम के लिए कल का खाना बचा कर रखना पसंद नहीं फरमाते थे। एक बार एक खादिमा रज़ियल्लाहु तआला अन्हा ने परिंदे का गोश्त, जो कल के खाने से बचा हुआ था, दूसरे दिन हाज़िर किया, तो आपने फरमाया: "क्या हमने मना नहीं किया था कि कल के लिए कुछ बचा कर न रखो, कल की रोज़ी अल्लाह कल देगा।" इसे अबू यअ़ला ने सनद-ए-सहीह के साथ और बैहक़ी ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। (त)

और अपने अहल-ओ-अयाल (परिवार) के लिए साल भर का राशन जमा फरमा देते थे। सहीहैन (बुखारी और मुस्लिम) में अमीरुल मोमिनीन फ़ारूक़-ए-आज़म रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से है: "रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम अपने उस (माल-ए-फ़य जो अल्लाह ने बनू नज़ीर के अमाल से हुज़ूर को अता किया था) से साल भर का ख़र्च करते थे, फिर बाकी को जमा करके बैतुल माल में दे देते थे।" (त)

तेरहवीं: वह जिसकी अहल-ओ-अयाल चौथी सूरत की तरह बे-सब्र हो—और निस्संदेह बहुत से आम लोग ऐसे निकलेंगे—तो उनके लिहाज़ से उस पर दोहरा वाजिब होगा कि ज़रूरत की मात्रा में जमा रखे। अल्लाह तआला का इरशाद-ए-मुबारक है: "अपने आप को और अपने घर वालों को आग से बचाओ।" (त)

चौदहवीं: हाँ, जिसकी तमाम अहल-ओ-अयाल साबिर और मुतवक्किल हों, उसके लिए जायज़ होगा कि सब कुछ अल्लाह की राह में खर्च कर दे। सैयद-ए-आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने एक बार सदके का हुक्म फ़रमाया, अमीरुल मोमिनीन उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हु फ़रमाते हैं: "मैं खुश हुआ कि अगर आज मैं सिद्दीक़-ए-अकबर रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से आगे बढ़ जाऊँगा, क्योंकि इस बार मेरे पास माल बहुत है और उनके पास कम।" फ़ारूक़ अपने तमाम माल का आधा हिस्सा ले आए। इरशाद हुआ: "अपने अहल-ओ-अयाल के लिए क्या छोड़ा?" अर्ज़ की: "इतना ही (यानी आधा)।"

1. मुसनद अबी यअ़ला अज़ मुसनद अनस बिन मालिक हदीस 4208 मुअ़स्सा उलूम अल-कुरान बेरुत 4/192, शअ़ब अल-ईमान बाब अत-तवक्कुल वत-तस्लीम हदीस 1348 दार अल-कुतुब अल-इल्मिया बेरुत 2/119.

2. सहीह अल-बुखारी किताब अल-नफ़क़ात 2/806 व किताब अल-फ़राएज़ 2/996 व किताब अल-एतेसाम 2/1086 क़दीमी कुतुब खाना कराची, सहीह मुस्लिम बाब हुक्म अल-फ़य क़दीमी कुतुब खाना कराची 2/89 व 91.
3. अल-कुरान 66/6.

पृष्ठ 328 का 836

حضور پر نور سید المتوکلین صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اپنے نفسِ کریم کے لیے کل کا کھانا بچا رکھنا پسند نہ فرماتے۔ ایک بار خادمہ رضی اللہ تعالٰی عنہما نے پرند کا گوشت کہ آج تناول تو فرمایا تھا بچاہوا دوسرے دن حاضر کیا، فرمایا: الم انھك ان ترفعی شیئا لغد، فان اللہ یأتی برزق غدا۔ ۱ رواہ ابو یعلی بسند صحیح والبیھقی عن انس رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ کیا ہم نے منع نہ فرمایا کہ کل کے لیے کچھ اٹھا کر نہ رکھنا کل کی روزی اللہ کل دے گا۔ (اسے ابو یعلی نے سند صحیح کے ساتھ اور بیہقی نے حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ ت)

اور اپنی عیال کے لیے سال بھر کا قوت جمع فرمادیتے۔ صحیحین میں امیر المومنین فاروقِ اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہے: کان صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ینفق منہ (ای مما افاء اللہ علی رسولہ من اموال بنی النضیر) علی نفقۃ سنۃ ثم یجعل مابقی منہ مجعل مال اللہ عزوجل۔ ۲ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اپنے اس (مال فئے جو اللہ نے بنونضیر کے اموال سے حضور کو عطا کیا تھا) سے سال بھر خرچ کرتے پھر باقی کو جمع کرکے بیت المال میں دے دیتے۔ (ت)

سیزدہم: وہ جس کی عیال میں صورت چہارم کی طرح بے صبرا ہو اور بے شک بہت عوام ایسے نکلیں گے تو اس کے لحاظ سے تو اس پر دوہر اوجوب ہوگا کہ قدر حاجت جمع رکھے، قال اللہ قوا انفسکم واھلیکم نارا۔ ۳ اللہ تعالٰی کا ارشادِ مبارک ہے: اپنے آپ کو اور اپنے اہل کو آگ سے بچاؤ۔ (ت)

چہاردہم: ہاں جس کی سب عیال صابر و متوکل ہوں اسے روا ہوگا کہ سب راہ خدا میں خرچ کردے۔ سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ایک بار صدقہ کا حکم فرمایا، امیر المومنین عمر رضی اللہ

تعالیٰ عنہ فرماتے ہیں میں خوش ہوا کہ اگر صدیق اکبر رضی اللہ تعالیٰ عنہ پر سبقت لے جاؤں گا تو اس بار میرے پاس مال بہت ہے اور ان کے پاس کم۔ فاروق اپنے تمام مال کا نصف حاضر لائے۔ ارشاد ہوا: عیال کے لیے کیا چھوڑا؟ عرض کی: اتنا ہی۔

1 مسند ابی یعلیٰ از مسند انس بن مالک حدیث ۴۲۰۸ مؤسسۃ علوم القرآن بیروت ۴/ ۱۹۲، شعب الایمان باب التوکل والتسلیم حدیث ۱۳۴۸ دارالکتب العلمیۃ بیروت ۲/ ۱۱۹ 2 صحیح البخاری کتاب النفقات ۲/ ۸۰۶ و کتاب الفرائض ۲/ ۹۹۶ و کتاب الاعتصام ۲/ ۱۰۸۶ قدیمی کتب خانہ کراچی، صحیح مسلم باب حکم الفئی قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۸۹ و ۹۱ 3 القرآن ۶/ ۶۶

Fatawa Rizwia, Volume 10

Siddiq (may Allah be pleased with him) brought all his wealth in its entirety. It was asked: "What have you left for your family?" He replied: "Allah and His Messenger (Exalted and Almighty, peace and blessings be upon him)." The Holy Prophet (peace be upon him) said: (Note 1) "The difference between the two of you is the difference between your statements." (Note 2) If the person has property and its income exceeds expenses, then it is absolutely better to give the surplus as charity after keeping enough for expenses. If the income is monthly, keep one month's expenses; if yearly, keep one year's. Accumulating more than this arises from greed and love for the world, and love for the world is the root of [all] sins. It is narrated in Sahihayn from the Commander of the Faithful Farooq al-Azam (may Allah be pleased with him):

Arabic	**Urdu**
Verily, the Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) used to spend on his family from this wealth the expenses for their year, then he would take what remained and put it in the treasury of Allah's wealth.[1]	The Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) would spend on his family for the whole year from this same wealth, then he would spend the remainder in the way of Allah. (T)

The Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) says:

Arabic	**Urdu**
The world is the house of those who have no house, and he who has no intellect gathers for it.[2] Narrated by Imam Ahmad and al-Bayhaqi in al-Shu'ab from the Mother of the Believers, al-Siddiqah [Aisha] (may Allah be pleased with her) with a sahih chain.	The world is a home for the homeless, and only a fool will collect for it. (Imam Ahmad and Bayhaqi narrated this in Shu'ab al-Iman from the Mother of the Believers Hazrat Aisha Siddiqah (may Allah be pleased with her) with a sahih chain. T)

It is in Ihya al-Ulum al-Sharif:

Arabic	**Urdu**
Nothing beyond a year's [provision] is stored except due to the heart's weakness, for such a person is not trusting in the divine	Provision for more than a year should not be collected unless the heart is weak and not trusting in divine decree, because the means of

Arabic	Urdu
arrangement, as the means of income recur with the recurrence of years.[3] (Summary)	collection will differ due to different years. (T)

And if he does not possess property, saving enough for the family so that if he dies, they may benefit from the remainder and not have to beg, is better. The Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) says:

Note 1: This is where the answer was found (the subsequent Arabic sentence and its translation were found in "Jawahir al-Bayan fi Sarar al-Arkan" p. 106 under this same Hadith). Note 2: This is a brief answer to the aforementioned question. 12

1. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Nafaqat 806/2 and Kitab al-Faraid 996/2 and Kitab al-I'tisam 1086/2, Qadeemi Kutub Khana Karachi; Sahih Muslim, Bab Hukm al-Fay, Qadeemi Kutub Khana Karachi, 89/2 & 91.
2. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Nafaqat 806/2 and Kitab al-Faraid 996/2 and Kitab al-I'tisam 1086/2, Qadeemi Kutub Khana Karachi.
3. Ihya al-Ulum, Kitab al-Tawhid wa al-Tawakkul, Bayan Ahwal al-Mutawakkilin, Maktaba wa Matba'a al-Mashhad al-Husayni, Cairo, 4/277.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

सिद्दीक़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने अपना सारा माल पूरी तरह से पेश कर दिया। पुछा गया: "अपने परिवार के लिए क्या छोड़ा?" उन्होंने उत्तर दिया: "अल्लाह और उसके रसूल (जल्ल जलालाहू व सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)"। हुज़ूर अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: (नोट १) "तुम दोनों के बीच का अंतर वही है जो तुम्हारी इन बातों में है"। (नोट २) यदि व्यक्ति के पास संपत्ति है और उसकी आय खर्च से अधिक है, तो खर्च के बराबर रखकर शेष को दान (सदक़ा) करना बिल्कुल बेहतर है। यदि आय मासिक है, तो एक महीने का खर्च रखें; यदि वार्षिक है, तो एक साल का। इससे अधिक संचय करना लालच और दुनिया के प्रति मोह से उत्पन्न होता है, और दुनिया का मोह सभी पापों की जड़ है। सहीहैन में अमीरुल मोमिनीन फ़ारूख़-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) से वर्णित है:

अरबी	**उर्दू**
बेशक, अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) इस धन से अपने परिवार पर उनके एक साल का खर्च करते थे, फिर जो बचता उसे ले लेते और अल्लाह के माल (बैतुल माल) में डाल देते थे।[1]	अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) इसी धन से अपने परिवार पर साल भर खर्च करते थे और फिर शेष को अल्लाह की राह में खर्च कर देते थे। (त)

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

अरबी	**उर्दू**
दुनिया उन लोगों का घर है जिनका कोई घर नहीं, और जिसके पास अक्ल नहीं है वही इसके लिए (माल) जमा करता है।[2] (इसे इमाम अहमद और बैहक़ी ने 'शुअब अल-ईमान' में उम्मुल मोमिनीन अस-सिद्दीक़ा [आयशा], रज़ियल्लाहु अन्हा से सहीह सनद के साथ रिवायत किया है।)	दुनिया बेघरों का घर है और इसके लिए मूर्ख ही (माल) इकट्ठा करेगा। (इसे इमाम अहमद, बैहक़ी ने 'शुअब अल-ईमान' में उम्मुल मोमिनीन हज़रत आयशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अन्हा से सहीह सनद के साथ रिवायत किया है। त)

इह्या उल-उलूम शरीफ़ में है:

अरबी	उर्दू
एक वर्ष से अधिक का संचय केवल हृदय की कमजोरी के कारण किया जाता है, क्योंकि वह ईश्वर की व्यवस्था (तदबीर-ए-हक़) पर भरोसा नहीं करता, क्योंकि आय के साधन वर्षों के बीतने के साथ दोहराए जाते हैं।[3] (संक्षिप्त)	एक वर्ष से अधिक का आहार जमा न किया जाए, सिवाय उस स्थिति के जब दिल कमज़ोर हो और ईश्वर की व्यवस्था पर भरोसा न हो, क्योंकि जमा करने के साधन अलग-अलग वर्षों के कारण अलग-अलग होंगे। (त)

और यदि उसके पास संपत्ति नहीं है, तो परिवार के लिए इतना बचाना कि यदि वह मर जाए तो वे इस शेष राशि से लाभान्वित हों और उन्हें भीख न मांगनी पड़े, श्रेष्ठ है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

नोट १: यहाँ तक यह उत्तर मिला (इससे आगे अरबी वाक्य और उसका अनुवाद "जवाहर अल-बयान फ़ी सरार अल-अरकान" पृ. १०६ में इसी हदीस के तहत मिला है)। नोट २: यहाँ से उपर्युक्त प्रश्न का यह संक्षिप्त उत्तर है। १२

1. सहीह अल-बुखारी, किताब अल-नफ़क़ात ८०६/२ और किताब अल-फ़राइद ९९६/२ और किताब अल-इतिसाम १०८६/२, क़दीमी कुतुब खाना कराची; सहीह मुस्लिम, बाब हुक्म अल-फ़ै क़दीमी कुतुब खाना कराची, ८९/२ और ९१।
2. सहीह अल-बुखारी, किताब अल-नफ़क़ात ८०६/२ और किताब अल-फ़राइद ९९६/२ और किताब अल-इतिसाम १०८६/२, क़दीमी कुतुब खाना कराची।
3. इह्या उल-उलूम, किताब अत-तौहीद व अत-तवक्कुल, बयान अहवाल अल-मुतवक्किलीन, मकतबा व मतबा अल-मशहद अल-हुसैनी, काहिरा, ४/२७७।

صدیق رضی اللہ تعالی عنہ تمام و کمال اپنا سارا مال حاضر لائے، ارشاد ہوا: عیال کے لیے کیا چھوڑا؟ عرض کی: اللہ ورسول جل و علا صلی اللہ تعالی علیہ وسلم۔ حضور اقدس نے فرمایا: عہ ۱ بینکم کما مابین کلتی کما (تم دونوں کے مرتبوں میں وہ فرق ہے جو تمھاری ان باتوں میں ہے) اگر صاحب عہ ۲ جائیداد ہے اور اسکی آمدنی خرچ سے زائد ہے تو اسکی آمدنی سے بقدر خرچ رکھ کر باقی کا تصدق مطلقاً افضل ہے، اگر دخل ماہانہ ہے تو ایک مہینہ کا خرچ رکھ کر، اور سالانہ تو ایک سال کا، اس سے زائد کا جمع رکھنا حرص و حب دنیا سے ناشی ہوتا ہے، اور حب دنیا خطا کی جڑ ہے۔ صحیحین میں امیر المومنین فاروق اعظم رضی اللہ تعالی عنہ سے ہے:

عربی	اردو
ان رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کان ینفق علی اھلہ نفقۃ سنتھم من ھذا المال ثم یأخذ مابقی فیجعلہ مجعل مال اللہ ۱	رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم اسی مال سے اپنے اہل پر سال بھر خرچ کرتے پھر بقیہ کو اللہ کے راہ میں خرچ کر دیتے۔ (ت)

رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

عربی	اردو
الدنیا دار من لادارلہ ولھا یجمع من لا عقل لہ ۲ رواہ الامام احمد والبیھقی فی الشعب عن ام المومنین الصدیقۃ رضی اللہ تعالی عنھا بسند صحیح۔	دنیا بے گھروں کا گھر ہے اور اس کے لیے احمق ہی جمع کرے گا۔ (اسے امام احمد ، بیہقی نے شعب الایمان میں ام المومنین حضرت عائشہ صدیقہ رضی اللہ تعالی عنہا سے بسند صحیح روایت کیا ہے۔ت)

احیاء العلوم شریف میں ہے:

عربی	اردو
ما وراء السنة لا یدخر له الا بحکم ضعف القلب فهو غیر واثق بتدبیر الحق فان اسباب الدخل تتکرر بتکرر السنین ۳ ملخصاً۔	سال سے زائد رزق جمع نہ کیا جائے مگر اس صورت میں دل ضعیف ہو اور تدبیر حق کے ساتھ واثق نہ ہو کیونکہ اسبابِ جمع مختلف سالوں کی وجہ سے مختلف ہونگے (ت)

اور اگر جائیداد نہیں رکھتا عیال کے لیے اتنا پس انداز کرنا کہ اگر یہ مرجائے تو وہ اس بقیہ سے منتفع ہوں اور انھیں بھیک مانگنی نہ پڑے افضل ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

عہ ۱: یہاں تک یہ جواب دستیاب ہوا (اس سے آگے عربی جملہ اور اسکا ترجمہ "جواہر البیان فی سرار الارکان" ص ۱۰۶ میں اسی حدیث کے تحت ملا ہے) عہ ۲: یہاں سے سوال مذکور کا یہ مختصر جواب ہے ۱۲

1 صحیح البخاری کتاب النفقات ۸۰۶/۲ و کتاب الفرائض ۹۹۶/۲ و کتاب الاعتصام ۱۰۸۶/۲ قدیمی کتب خانہ کراچی، صحیح مسلم، باب حکم الفئی، قدیمی کتب خانہ کراچی، ۸۹/۲ و ۹۱ 2 صحیح البخاری کتاب النفقات ۸۰۶/۲ و کتاب الفرائض ۹۹۶/۲ و کتاب الاعتصام ۱۰۸۶/۲ قدیمی کتب خانہ کراچی 3 احیاء العلوم کتاب التوحید والتوکل بیان احوال المتوکلین مکتبہ و مطبعۃ المشہد الحسینی قاہرہ ۴/ ۲۷۷

Fatawa Razawiyya - Volume 10

[Arabic]: "It is better for you to leave your heirs wealthy than to leave them poor, begging from people." Reported by the two Sheikhs (Bukhari and Muslim) from Sa'd bin Abi Waqqas (may Allah be pleased with him). [Urdu]: Leaving your heirs self-sufficient is far better than leaving them in poverty, wandering around begging people. This was narrated by Bukhari and Muslim from Hazrat Sa'd bin Abi Waqqas (may Allah be pleased with him). (T)

And the amount suitable to leave for them is reported from our Imam (may Allah be pleased with him) to be four thousand dirhams, meaning each one should receive that much. From Imam Abu Bakr Fazl, it is ten thousand dirhams. If their shares are different, then consideration will be given to the one whose share is the least. Anything more than that is greed. It is stated in 'Durr-e-Mukhtar':

[Arabic]: Bequeathing less than it (one-third) is recommended, even if the heirs are wealthy or become self-sufficient through their shares, just as it is recommended to abandon bequeathing if there is no wealth or self-sufficiency. (Summarized) [Urdu]: When heirs are wealthy or become self-sufficient due to their shares, it is recommended to make a will for less than one-third of the inheritance, just as if the heirs are not wealthy or self-sufficient, then abstaining from making a will is recommended. (Summarized). (T)

It is stated in 'Radd-ul-Muhtar':

[Arabic]: Their self-sufficiency through their shares means that each of them inherits four thousand dirhams, based on what is reported from the Imam, or ten thousand dirhams based on what is reported from al-Fadhli Qahistani from al-Zahiriyyah. Al-Atqani restricted it to the first opinion. [Urdu]: The heirs becoming self-sufficient through their share means each of them becomes an heir to four thousand dirhams, as narrated from the Imam. Or ten thousand, as Fazli Qahistani has quoted from Zahiriyyah. Atqani has relied only on the first statement. (T)

Four thousand dirhams equal eleven hundred and twenty English rupees, and ten thousand equal two thousand eight hundred. Yes, if the family is already wealthy, then not saving is better. Likewise, if they are transgressors (fasiq) who would spend the money on sins, then leaving nothing for them is better. In 'Fatawa Khulasa', 'Lisan al-Uloom', and 'Fatawa Alamgiri', it is stated:

[Arabic]: If his child is a sinner and he wants to spend his money... [Urdu]: If the children are sinners and wicked and he wants that I...

---

1. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Nafaqat, Bab Fadl al-Nafaqah 'ala al-Ahl, Qadimi Kutub Khana Karachi 2/806; Sahih Muslim, Kitab al-Wasiyyah, Qadimi Kutub Khana Karachi 2/39
2. Durr al-Mukhtar, Kitab al-'Aqil, Matba' Mujtabai Delhi 2/318
3. Radd al-Muhtar, Kitab al-'Aqil, Mustafa al-Babi Egypt 5/461

फतावा रज़विया - जिल्द दहुम (दसवीं)

[अरबी]: "तुम्हारा अपने वारिसों को समृद्ध छोड़ना इससे कहीं बेहतर है कि तुम उन्हें मोहताजी में छोड़ दो और वे लोगों के सामने हाथ फैलाते फिरें।" इसे बुखारी और मुस्लिम ने हज़रत साद बिन अबी वक़्क़ास (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। [उर्दू]: तेरा वारिसों को ग़नी (समृद्ध) छोड़ना इससे कहीं बेहतर है कि वे मोहताजी में लोगों से मांगते फिरें। इसे बुखारी व मुस्लिम ने हज़रत साद बिन अबी वक़्क़ास (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। (त)

और वह राशि जो उनके लिए छोड़ना उपयुक्त है, हमारे इमाम (रज़ियल्लाहु अन्हु) से चार हज़ार दिरहम रिवायत की गई है, यानी प्रत्येक को इतना हिस्सा पहुंचे। और इमाम अबू बक्र फ़ज़ल से दस हज़ार दिरहम। और यदि उनके हिस्से अलग-अलग हों, तो उसका ध्यान रखा जाएगा जिसका हिस्सा सबसे कम है। इससे अधिक फिर लालच है। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

[अरबी]: (वसीयत का) एक-तिहाई से कम में होना मुस्तहब (पसंदीदा) है, भले ही वारिस धनी हों या अपने हिस्से के कारण समृद्ध हों, जैसा कि धन और समृद्धि न होने की स्थिति में वसीयत न करना मुस्तहब है। (संक्षिप्त) [उर्दू]: जब वारिस ग़नी या अपने हिस्से के कारण समृद्ध हों तो एक-तिहाई विरासत से कम की वसीयत करना मुस्तहब होता है, जैसा कि वारिस ग़नी व समृद्ध न हों तो तर्कए-वसीयत (वसीयत न करना) मुस्तहब है। (संक्षिप्त)। (त)

'रद्दुल मुह्तार' में है:

[अरबी]: वारिसों का अपने हिस्से के साथ समृद्ध होने का अर्थ है कि उनमें से प्रत्येक चार हज़ार दिरहम का वारिस बने, जैसा कि इमाम साहब से रिवायत है, या दस हज़ार, जैसा कि फ़ज़ली क़हस्तानी ने ज़हीरिया से उद्धृत किया है। अतक़ानी ने केवल पहले मत पर ही संतोष किया है। [उर्दू]: वारिसों का अपने हिस्से के साथ समृद्ध होना यह है कि उनमें से हर एक चार हज़ार दिरहम का वारिस बने, जैसा कि इमाम साहब से रिवायत है। या दस हज़ार, जैसा कि फ़ज़ली क़हस्तानी ने ज़हीरिया से नक़्ल किया है। अतक़ानी ने पहले क़ौल पर ही इकतफ़ा (संतोष) किया है। (त)

चार हज़ार दिरहम के अंग्रेजी रुपये ग्यारह सौ बीस हुए और दस हज़ार के दो हज़ार आठ सौ। हाँ, अगर परिजन स्वयं धनी हों तो बचत न करना ही बेहतर है। इसी तरह अगर वे फासिक़ (पापी) हों कि धन गुनाहों में खर्च करेंगे, तो उनके लिए कुछ न छोड़ना ही बेहतर है। 'फ़तावा खुलासा', 'लिसानुल उलूम' और 'फ़तावा आलमगीरी' में है:

[अरबी]: यदि उसकी संतान फासिक़ हो और वह चाहता हो कि अपना माल खर्च करे... [उर्दू]: अगर औलाद फासिक़ व फ़ाजिर (पापी और दुष्ट) है और वह चाहता है कि मैं इस...

---

1. सहीह अल-बुखारी, किताबुन नफ़क़ात... कराची 806/2; सहीह मुस्लिम, किताबुल वसीयत... कराची 39/2
2. दुर्रे मुख़्तार, किताबुल आक़िल, दिल्ली 318/2
3. रद्दुल मुह्तार, किताबुल आक़िल, मिस्र 461/5

انك ان تذر ورثتك اغنياء خير من ان تذرهم عالة يتكففون الناس في ايديهم۔[1] رواه الشيخان عن سعد بن ابی وقاص رضی اللہ تعالٰی عنہ ۔ تیرا ورثاء کو غنی چھوڑنا اس سے کہیں بہتر ہے کہ محتاجی میں لوگوں سے مانگتے پھریں۔ اسے بخاری و مسلم نے حضرت سعد بن ابی وقاص رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

اور اس کی مقدار جو اُن کے لیے چھوڑنا مناسب ہے ہمارے امام رضی اللہ تعالٰی عنہ سے چار ہزار درہم مروی ہے یعنی ہر ایک کو اتنا حصہ پہنچے ، اور امام ابو بکر فضل سے دس ہزار درہم ، اور اگر ان کے حصے مختلف ہیں تو لحاظ اس کا کیا جائیگا جس کا حصہ سب سے کم ہے ، اور اس سے زیادہ پھر ہوس ہے، در مختار میں ہے :

ندبت (ای الوصیۃ) باقل منه (ای من الثلث) ولو عند غنی ورثته او استغنا هم بحصتهم، کما ندب ترکها بلا غنی واستغناء[2] (ملخصًا) جب ورثاء غنی یا اپنے حصہ کے سبب مستغنی ہوں تو تیسرے حصہ وراثت سے کم میں وصیت کرنا مستحب ہوتا ہے جیسا کہ ورثا غنی و مستغنی نہ ہوں تو ترکِ وصیت مستحب ہے (ملخصاً)۔ (ت)

رد المحتار میں ہے :

استغنائهم بحصتهم بأن يرث كل منهم اربعة الاف درهم علی ماروی عن الامام او يرث عشرة الاف درهم علی ماروی عن الفضلي قهستاني عن الظهيرية واقتصر الاتقانی علی الاول۔[3] ورثاء کا اپنے حصہ کے ساتھ مستغنی ہونا یہ ہے کہ ان میں سے ہر ایک چار ہزار درہم کا وارث بنے، جیسا کہ

امام صاحب سے مروی ہے۔ یا دس ہزار ، جیسا کہ فضلی قہستانی نے ظہیریہ سے نقل کیا ہے۔ اتقانی نے پہلے قول پر ہی اکتفاء کیا ہے۔ (ت)

چار ہزار درہم کے انگریزی روپے گیارہ سو بیس ہوئے اور دس ہزار کے دو ہزار آٹھ سو۔ ہاں اگر عیال خود غنی ہوں تو پس انداز نہ کرنا ہی افضل، یونہی اگر فاسق ہوں کہ مال معصیت میں خرچ کریں گے تو ان کے لیے کچھ نہ چھوڑنا ہی بہتر ۔ فتاوی خلاصہ و لسان العلوم و فتاوی عالمگیریہ میں ہے:

لو کان ولدہ فاسقًا وار دان یصرف مالہ اگر اولاد فاسق و فاجر ہے اور وہ چاہتا ہے کہ میں اس

---

1 صحیح البخاری کتاب النفقات باب فضل النفقہ علی الاہل قدیمی کتب خانہ کراچی ۸۰۶/۲، صحیح مسلم کتاب الوصیۃ قدیمی کتب خانہ کراچی ۳۹/۲ 2 درمختار کتاب العاقل مطبع مجتبائی دہلی ۳۱۸/۲ 3 رد المحتار کتاب العاقل مصطفی البابی مصر ۴۶۱/۵

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

...towards the ways of goodness and depriving him from inheritance, this is better than leaving it - and Allah Almighty knows best. (T) This is better than leaving inheritance. And Allah Almighty knows best.

Problem 157: From Jabalpur, District Pilibhit, sent by Muhammad Husain Ahmad Sahib Station Master, 6 Rabi al-Akhir 1331 AH. Reservoir of Truthful and Divine Sciences, may Allah continue their blessings, greetings after respect. For a long time, my wife has been cooking one and a quarter maunds of biryani every year for the 'Gyarvi' (11th) of Hazrat Ghaus al-Azam and distributing it to the poor. Is it possible for this money to be sent this year for the aid of the martyrs of the Ottoman Vietnamese soldiers, and for the 'Gyarvi Sharif', a small amount of sweets or food be offered as usual? More need [is there?]

The Answer: If both things cannot be done, then it is better to offer a small amount as 'niyaz' (offering) and send the entire amount for the aid of the mujahideen (warriors), and its reward should also be dedicated to the holy soul of our leader Ghaus al-Azam, may Allah be pleased with him. And Allah Almighty knows best.

Problem 158: From Baltsar Bazar, District Beliba, sent by Sheikh Wajid Ali Muhammad Sultan, leather merchant, 16 Shaban 1337 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid is a wealthy person and every year he takes out thousands of rupees for Zakat and distributes it among the deserving. But the question is, can Zaid buy landed property (zamindari) with this Zakat money and permanently give its net profits to the deserving and students of theology? Is there any way this is permissible? Because Zaid does not consider his business trade as stable compared to landed property, and he wants that in this way he can always ensure the distribution to the deserving from Zakat.

The Answer: Zakat is 'Tamlik-e-Faqir' (making a poor person the owner); it cannot be fulfilled by buying property nor by dedicating (waqf) property to the poor. Yes, if he gives that money to a poor person who is eligible to receive Zakat with Sharia permission and makes him the owner with the intention of Zakat, and then with that poor person's permission, buys property and makes it a waqf for the poor, then this method is very commendable. An easy way for this is, for example, if he has to give ten thousand rupees as Zakat and wants to buy property and make it a waqf for the poor, then he should sell some goods worth, say, fifty or a hundred rupees to a poor person eligible for Zakat for ten thousand rupees, and if the poor person accepts,

then take those ten thousand rupees back in demand of that price with the intention of Zakat, and then buy property and make it a waqf for the poor. Thus, the waqf will also [be valid]...

1. Fatawa Hindiyya, Chapter Six on Gifts to Minors, Noorani Kutub Khana Peshawar, 4/391.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवाँ)

...नेकी की राहों की तरफ और उसे वरासत से महरूम करना, यह इसे छोड़ने से बेहतर है - और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त) यह वरासत छोड़ने से बेहतर है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसअला 157: जबलपुर, ज़िला पीलीभीत से, प्रेषक मुहम्मद हुसैन अहमद साहब, स्टेशन मास्टर, 6 रबी-अल-आख़िर 1331 हिजरी। हक़्क़ानी और रब्बानी उलूम के मखज़न (खज़ाना), अल्लाह उनके फ़ैज़ को जारी रखे, आदर पूर्वक सलाम के बाद निवेदन है। मेरी पत्नी अरसे से हर साल हज़रत ग़ौस-ए-आज़म की ग्यारहवीं में सवा मन बिरयानी पकवा कर नियाज़ दिलाती है और उसे ज़रूरतमंदों में बांटा जाता है। क्या ऐसा हो सकता है कि इस साल यह रक़म उस्मानी वियतनामी सेना के शहीदों की मदद के लिए भेज दी जाए और ग्यारहवीं शरीफ़ के लिए मामूल के मुताबिक थोड़े बहुत पकवान या खाने पर नियाज़ दिला दी जाए?

अल-जवाब: अगर दोनों बातें मुमकिन न हों तो यही बेहतर है कि थोड़ी नियाज़ देकर वह सारी रक़म मुजाहिदीन की मदद के लिए भेज दी जाए और उसका सवाब भी हमारे आक़ा सैय्यदना ग़ौस-ए-आज़म रज़ियल्लाहु तआला अन्हु की रूह-ए-मुकद्दस को पेश किया जाए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसअला 158: बलत्सर बाज़ार, ज़िला बेलबा से, प्रेषक शेख वाजिद अली मुहम्मद सुल्तान, चमड़ा व्यापारी, 16 शाबान 1337 हिजरी। आलिमों का इस मसअले में क्या कहना है कि ज़ैद एक मालदार व्यक्ति है और वह हर साल ज़कात की मद में हज़ारों रुपये निकालकर ज़रूरतमंदों में बांटता है। मगर सवाल यह है कि क्या ज़ैद इस ज़कात की रक़म से ज़मींदारी की मिलकियत खरीद कर उसके शुद्ध मुनाफ़े को हमेशा के लिए ज़रूरतमंदों और दीनी शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को दे सकता है? क्या इसके जायज़ होने की कोई सूरत है? क्योंकि ज़ैद ज़मींदारी के मुक़ाबले अपने व्यापार को स्थायी नहीं मानता और वह चाहता है कि इस तरह वह हमेशा ज़कात से ज़रूरतमंदों की मदद जारी रख सके।

अल-जवाब: ज़कात 'तम्लीक-ए-फ़क़ीर' (किसी गरीब को मालिक बनाना) है; यह न तो संपत्ति खरीदने से अदा हो सकती है और न ही संपत्ति को गरीबों पर वक़्फ़ (दान) कर देने से। हाँ, अगर वह रक़म शरीयत की अनुमति से ज़कात के योग्य किसी गरीब को देकर उसे ज़कात की नियत से मालिक बना

दे, और फिर उस गरीब की अनुमति से वह संपत्ति खरीद कर गरीबों के लिए वक़्फ़ कर दे, तो यह तरीका बहुत प्रशंसनीय है। इसका एक आसान तरीका यह है कि, मिसाल के तौर पर, उसे दस हज़ार रुपये ज़कात देनी है और वह चाहता है कि संपत्ति खरीद कर गरीबों के लिए वक़्फ़ करे, तो वह ज़कात के हकदार किसी गरीब को सौ या पचास रुपये का सामान दस हज़ार रुपये में बेचे, और अगर वह गरीब इसे स्वीकार कर ले, तो वह दस हज़ार रुपये ज़कात की नियत से उस सामान की कीमत के बदले वापस ले ले और उनसे संपत्ति खरीद कर गरीबों के लिए वक़्फ़ कर दे। इस तरह वक़्फ़ भी [मान्य हो जाएगा]...

1. फ़तावा हिन्दिया, छठा अध्याय, नाबालिग को उपहार देने के विषय में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 4/391.

पृष्ठ 331/836

...الی وجوہ الخیر ویحرمہ عن المیراث ھذا خیر من ترکہ ۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ یہ وراثت چھوڑنے سے بہتر ہے(ت) واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۵۷: از جبلپور ضلع پیلی بھیت مرسلہ محمد حسین احمد صاحب اسٹیشن ماسٹر ۶ ربیع الآخر ۱۳۳۱ھ مخزن علوم حقانی و ربانی ادام اللہ فیوضہم، تسلیم بعد تعظیم میری اہلیہ عرصہ سے ہر سال حضرت غوث الاعظم کی گیارہویں میں سوا من بریانی پکوا کر نیاز دلاتی ہے اور مساکین کو تقسیم کی جاتی ہے کیا ایسا ہو سکتا ہے کہ یہ رقم امسال شہداء ویتنامی عساکر عثمانیہ کی امداد کے لیے بھیجی جائے اور گیارہویں شریف معمولا قدرے شیرینی یا طعام پر دلا دی جائے؟ زیادہ نیاز

الجواب: اگر دونوں باتیں نہ ہوں تو یہی بہتر ہے کہ قدرے نیاز دے کر وہ تمام قیمت امداد مجاہدین میں بھیج دی جائے اور اس کا ثواب بھی نذر روح اقدس سیدنا غوث اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کو کیا جائے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۵۸: از بلتسر ابازار ضلع بیلبا مرسلہ شیخ واجد علی محمد سلطان سوداگر چرم ۱۶ شعبان ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید شخص مالدار ہے اور سالانہ مد زکوٰۃ میں ہزاروں روپیہ نکال کر مستحقین میں تقسیم کرتا ہے مگر سوال یہ ہے کہ کیا اس رقم زکوٰۃ سے زید حقیت زمینداری خرید کر اُس کے خالص منافع کو مستقل طور پر مستحقین اور طالب علم دینیات کو دے سکتا ہے، کیا اس کے جواز کی کوئی صورت ہے، چونکہ زید اپنے کاروبار تجارت کو بمقابلہ حقیت زمینداری کے مستحکم نہیں خیال کرتا وہ چاہتا ہے کہ اس صورت میں ہمیشہ وہ زکوٰۃ سے مستحقین میں اس کا نفاذ رکھے۔

الجواب: زکوٰۃ تملیک فقیر ہے، نہ جائداد خریدنے سے ادا ہو سکتی ہے نہ جائیداد فقراء پر وقف کر دینے سے ہاں اگر وہ روپیہ کسی فقیر مصرفِ زکوٰۃ کو باجازت شرعی دے کر بہ نیت زکوٰۃ مالک کر دے تو اُس فقیر کی اجازت سے اس کی جائیداد خرید کر وقفِ فقراء کرے تو یہ صورت بہت مستحسن ہے اور اُس کا آسان طریقہ یہ ہے کہ مثلاً دس ہزار روپیہ زکوٰۃ کے دینے ہیں اور چاہتا ہے کہ ان کی جائیداد خرید کر وقفِ فقراء کرے تو کسی فقیر مصرف زکوٰۃ کے ہاتھ مثلاً سو پچاس روپے کا مال دس ہزار روپے کو بیچے اور وہ قبول کرلے تو دس ہزار روپیہ اس کو بہ نیت زکوٰۃ اور اُس قیمت کے مطالبہ میں واپس لے کر اُن کی جائیداد خرید کر وقفِ فقراء کردے، یوں وقف بھی

1 فتاویٰ ہندیہ، الباب السادس فی الہبۃ للصغیر، نورانی کتب خانہ پشاور، ۴/ ۳۹۱

Fatawa Razvia Volume 10

It will be done, and the Zakat will also be paid, and the poor person will receive goods worth fifty or a hundred rupees, and after paying Zakat, those ten thousand rupees should not be returned; he can take it by force because his assets come to him. It is in Durr-e-Mukhtar:

ولو امتنع المديون مديده واخذها لكونه ظفر بجنس حقه- والله تعالىٰ اعلم | If the debtor refuses to pay and he takes it because he has gained possession of the same type as his right - And Allah knows best. | If the debtor does not pay, then seize it because he has gained the power to obtain his right. And Allah knows best. (T)

Issue 159: From Kanpur, Mohalla Feel Khana Qadeem, sent by Maulana Maulvi Syed Muhammad Asif Sahib, may his grace increase, 27 Jumadi al-Akhir 1338 AH.

In the book 'Kunooz al-Haqa'iq', there is this noble Hadith: "Give charity to people of all religions." (T) And it is proven from another Hadith that goodness to every living creature is charity. Why do the noble Imams forbid dealing with hostile disbelievers (Kuffar-e-Harbi)? What are their proofs and what is the answer to the Hadiths? In the book 'As-Saniyyat al-Aniqa' it is stated:

لا تكون برا شرعاً ولذا لم يجز التطوع اليه فلم يقع قربة-[3] | It will not be a virtuous act according to Shariah; for this reason, voluntary charity to such a disbeliever is not permissible, nor will it be an act of nearing (Allah). (T)

The Answer: For the observation of Maulana al-Mukarram Dhi al-Majd wa al-Ikram Maulana Maulvi Syed Asif, may your virtues endure. In "Give charity to people of all religions," there is a command to give charity. Charity is an act of nearing (Qurbat); where there is no nearing, the truth of charity (Tasaduq) is impossible. According to the clarification of the Imams, giving anything to the people of war (Ahl-e-Harb) is not an act of nearing at all, so giving charity there is impossible. The definite meaning of the Hadith is that those to whom giving is an act of nearing, regardless of which religion they belong to, give charity to them. This is certainly correct and only includes the protected non-Muslims (Ahl-e-Dhimma), be they Christians, Jews, Magians, or idolaters. If we take the saying that giving to a wealthy person cannot be charity, then a wealthy Muslim also wouldn't come under the generality of "people of all religions" because he is not a recipient of charity, and the discourse is about charity. This is the same answer for the Hadith that goodness to every living creature is charity; otherwise, it is said in a Sahih Hadith of Sahih Muslim that whoever kills a

lizard with one blow gets a hundred rewards. In another Hadith, it is: "Whoever kills a snake, it is as if he killed a polytheist whose blood is permissible." Narrated by Imam Ahmad from Abdullah bin Masood (may Allah be pleased with him).

---

1. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Matba' Mujtabai Delhi 1/140
2. Kunuz al-Haqa'iq fi Hadith Khair al-Khala'iq by Abd al-Rauf al-Munawi, Hadith No. 2443, 2943
3. Al-Saniyyat al-Aniqa
4. Sahih Muslim, Kitab Qatl al-Hayyat, Bab Istihbab Qatl al-Wazgh, Qadimi Kutub Khana Karachi 2/236
5. Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Abdullah bin Masood, Dar al-Fikr Beirut 1/395

फतावा रज़विया जिल्द दहम (दसवीं)

हो जाएगा और ज़कात भी अदा हो जाएगी और फ़क़ीर को भी सौ-पचास रुपये का माल मिल जाएगा और वह ज़कात अदा करने के बाद दस हज़ार रुपये वापस नहीं देने चाहिए; वह इसे ज़बरदस्ती ले सकता है क्योंकि उसकी संपत्ति उस पर आती है। दुर्रे मुख़्तार में है:

ولو امتنع المديون مديده واخذها لكونه ظفر بجنس حقه- والله تعالىٰ اعلم | यदि ऋणी भुगतान करने से इंकार करता है और वह उसे ले लेता है क्योंकि उसने अपने अधिकार के समान वस्तु पर अधिकार प्राप्त कर लिया है - और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। | अगर कर्ज़दार नहीं देता तो उसे छीन ले क्योंकि वह अपना हक़ हासिल करने पर कुदरत पाता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसाला १५९: कानपुर मोहल्ला फील खाना कदीम से, मौलाना मौलवी सैयद मोहम्मद आसिफ साहब जैद फैज़हुम द्वारा भेजा गया, २७ जमादी अल-आखिर १३३८ हिजरी।

किताब 'कुनूज़ अल-हक़ाएक़' में यह हदीस शरीफ है: "तमाम धर्मों के लोगों पर सदक़ा करो।" (त) और दूसरी हदीस से साबित है कि हर जानदार के साथ भलाई सदक़ा है। इमामों ने हर्बी काफिरों के साथ व्यवहार करने से क्यों मना किया है, उनके क्या प्रमाण हैं और हदीसों का क्या जवाब है? किताब 'अस-सनिय्यतुल अन्नीक़ा' में है:

لا تكون برا شرعاً ولذا لم يجز التطوع اليه فلم يقع قربة-[3] | यह शरीयत के अनुसार नेकी नहीं होगी; इसी कारण से ऐसे काफिर पर नफली सदक़ा जायज़ नहीं और न ही वह कुर्बत (निकटता) बनेगा। (त)

जवाब: मौलाना अल-मुकर्रम ज़ी अल-मज्द व अल-इकराम मौलाना मौलवी सैयद आसिफ़, आपकी फज़ीलतें बनी रहें, के अवलोकन के लिए। "तमाम धर्मों के लोगों पर सदक़ा करो" में सदक़ा करने का आदेश है। सदक़ा एक कुर्बत (पुण्य कार्य) है; जहाँ कुर्बत न हो, वहाँ सदक़ा का होना असंभव है। इमामों के स्पष्टीकरण के अनुसार, हर्ब के लोगों (अहल-ए-हर्ब) को कुछ देना वास्तव में कुर्बत नहीं है, इसलिए वहाँ सदक़ा असंभव है। हदीस का निश्चित अर्थ यह है कि जिन्हें देना कुर्बत है, वे किसी भी धर्म के हों, उन पर सदक़ा करो। यह निश्चित रूप से सही है और इसमें केवल ज़िम्मी (अहल-ए-ज़िम्मा) शामिल हैं, चाहे वे ईसाई हों, यहूदी हों, मजूसी हों या मूर्तिपूजक हों। यदि हम इस बात को लें कि अमीर को देना सदक़ा नहीं हो सकता, तो अमीर मुसलमान भी "तमाम धर्मों के लोगों" की

व्यापकता में नहीं आ सकेगा क्योंकि वह सदक़ा पाने का पात्र ही नहीं है और बात सदक़ा की हो रही है। यही जवाब उस हदीस का है कि हर जानदार के साथ भलाई सदक़ा है; अन्यथा, सही मुस्लिम शरीफ की एक सही हदीस में कहा गया है कि जो छिपकली को एक वार में मार दे, उसे सौ नेकियाँ मिलेंगी। दूसरी हदीस में है: "जिसने साँप को मार डाला, उसने मानो एक ऐसे मुशरिक को मार डाला जिसका खून जायज़ है।" इमाम अहमद ने हज़रत अब्दुल्ला बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से इसे रिवायत किया है।

---

1. दुर्रे मुख़्तार, किताब अल-ज़कात, मतबा मुज्तबाई दिल्ली 1/140
2. कुनूज़ अल-हक़ाएक़ फी हदीस खैर अल-खलाएक़ लिल्लु-अब्दुल रऊफ अल-मनावी, हदीस संख्या 2443, 2943
3. अल-सनिय्यतुल अन्नीक़ा
4. सही मुस्लिम, किताब क़त्ल अल-हय्यात, बाब इस्तिहबाब क़त्ल अल-वज़ग, कदीमी कुतुब खाना कराची 2/236
5. मुसनद अहमद बिन हंबल, अब्दुल्ला बिन मसूद से रिवायत, दार अल-फ़िक्र बेरुत 1/395

فتاوی رضویہ جلد دہم

ہو جائیگا اور زکوٰۃ بھی ادا ہو جائیگی اور فقیر کو بھی سو پچاس روپیہ کا مال مل جائے گا اور وہ بعد ادائے زکوٰۃ دس ہزار روپیہ واپس دینا نہ چاہئے یہ جبر لے سکتا ہے کہ اس کا اثاثہ اس پر آتا ہے۔ در مختار میں ہے :

ولو امتنع المدیون مدیدہ واخذھا لکونہ ظفر بجنس حقہ۔ واللہ تعالیٰ اعلم | اگر مدیون نہیں دیتا تو اسے چھین لے کیونکہ یہ اپنے حق کے حصول پر قدرت پاتا ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ۱۵۹: از کانپور محلہ فیل خانہ قدیم مرسلہ مولانا مولوی سید محمد آصف صاحب زید فیضہم ۲۷ جمادی الآخر ۱۳۳۸ھ

کتاب کنوز الحقائق میں یہ حدیث شریف ہے: تصدقوا علی اھل الادیان کلھاً (تمام دینوں والوں پر صدقہ کرو۔ ت) اور دوسری حدیث سے ثابت ہے کہ ہر جاندار سے بھلائی صدقہ ہے۔ ائمہ کرام کفار حربی سے سلوک کو کیوں منع کرتے ہیں، ان کے کیا دلائل ہیں اور احادیث کے کیا جواب؟

کتاب السنیۃ الانیقہ میں ہے:

لا تکون برا شرعاً ولذا لم یجز التطوع الیہ فلم یقع قربۃ۔[3] | یہ شرعاً نیکی نہیں ہوگی اسی وجہ سے ایسے کافر پر نفلی صدقہ جائز نہیں اور نہ وہ قربت بنے گا۔ (ت)

الجواب: بہ ملاحظہ مولانا المکرم ذی المجد والاکرام مولانا مولوی سیّد آصف دامت فضائلکم، تصدقوا علی اھل الادیان کلھاً میں امر بتصدق ہے اور تصدق قربت جہاں قربت نہ ہو صدق تصدق محال ہے اور بہ تصریح ائمہ اہل حرب کو کچھ دینا اصلاً قربت نہیں تو وہاں صدق تصدق نا ممکن اور قطعاً حاصل حدیث یہ کہ جن کو دینا قربت ہے وہ کسی دین کے ہوں ان پر تصدق کرو یہ

ضرور صحیح ہے اور صرف اہل ذمّہ کو شامل نصرانی ہوں خواہ یہودی خواہ مجوسی خواہ وثنی، کسی دین کے ہوں ، اگر وہ قول لیں کہ غنی کو دینا صدقہ نہیں ہو سکتا تو مسلمان غنی بھی اس عموم اھل الادیان کلھاً میں نہیں آسکا کہ وہ محل صدقہ ہی نہیں اور کلام تصدق میں ہے، یہی جواب اس حدیث سے ہے کہ ہر جاندار سے بھلائی صدقہ ہے، ورنہ صحیح مسلم شریف کی صحیح حدیث میں فرمایا کہ جو وزغ کو ایک ضرب مارے سو نیکیاں پائے-[4] دوسری حدیث میں ہے: جس نے سانپ کو قتل کیا اس نے گویا ایک مشرک حلال الدم کو قتل کیا۔ [5] رواہ الامام احمد عن عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ (اسے امام احمد نے حضرت عبداللہ بن مسعود سے

---

1. در مختار کتاب الزکواۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۰
2. کنوز الحقائق فی حدیث خیر الخلائق لعبد الرؤوف المناوی حدیث نمبر ۲۴۴۳، ۲۹۴۳
3. السنیۃ الانیقہ
4. صحیح مسلم کتاب قتل الحیات باب استحباب قتل الوزغ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۲۳۶
5. مسند احمد بن حنبل مروی از عبداللہ بن مسعود دار الفکر بیروت ۱/ ۳۹۵

Volume Ten Fatawa Razawiyya

...narrated it. (T) In the third hadith, it is said:

[Box 1] Arabic: اقتلوا الحیات کلھن فمن خاف ثأر ھن فلیس منا۔ رواہ ابوداؤد والنسائی والطبرانی فی الکبیر عن جریر بن عبداللہ وعن عثمان بن ابی العاص رضی اللہ تعالٰی عنھم۔ Urdu: Kill all snakes; whoever fears their revenge is not from our group. (Narrated by Abu Dawood, an-Nasa'i and at-Tabarani in al-Mu'jam al-Kabir from Hadhrat Jarir bin Abdullah (may Allah be pleased with him) and Hadhrat Uthman bin Abi al-Aas (may Allah be pleased with them). - T)

In another hadith, it is said:

[Box 2] Arabic: من قتل حیۃ او عقربا فکا نما قتل کافرا۔ رواہ الخطیب عن ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ Urdu: Whoever killed a snake or a scorpion, it is as if he killed a disbeliever. (Narrated by al-Khatib from Hadhrat Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him). - T)

Regarding disbelievers, it is mentioned in the Great Quran itself: “And kill them wherever you find them” (And kill them wherever you find them. - T) and He said: “Wherever they are found, they shall be seized and slaughtered with a great slaughter” (Wherever they are found, they should be caught and killed one by one. - T) and He said: “and be harsh with them” (Be harsh upon them. - T) and He said: “and let them find harshness in you” (They should find harshness within you. - T). So they are originally not the objects of kindness. In the beginning of Islam, a distinction was made between non-combatant and combatant disbelievers; good treatment and equality towards them were permissible, and prohibition [of friendship] with them was expressed as being friends with them, otherwise friendship with any disbeliever was never lawful.

Allah the Almighty says:

[Box 3] Arabic: لَا یَنْھٰىكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِیْنَ لَمْ یُقَاتِلُوْكُمْ فِی الدِّیْنِ وَلَمْ یُخْرِجُوْكُمْ مِّنْ دِیَارِكُمْ اَنْ تَبَرُّوْهُمْ وَ تُقْسِطُوْۤا اِلَیْهِمْ اِنَّ اللّٰهَ Urdu: The honorable statement of Allah the Almighty is: Allah does not forbid you from those who did not fight you in religion and did not expel you from your homes, that you be kind to them and with them...

1 Sunan Abi Dawood, Kitab al-Adab, chapter on killing snakes, Aftab-e-Alam Press Lahore 356/2 2 Tarikh Baghdad, biography no. 69, Muhammad bin al-Husayn al-Lakhmi al-Ashnani, Dar al-Kutub al-Ilmiyah Beirut, 234/2 3 Al-Quran 2/191 and 4/91 4 Al-Quran 33/61 5 Al-Quran 9/73 6 Al-Quran 9/123

जिल्द दहम (Volume 10) फतावा रज़विया

...रिवायत किया है। (त) तीसरी हदीस में है:

[Box 1] अरबी: اقتلوا الحیات کلھن فمن خاف ثأر ھن فلیس منا۔ رواہ ابوداؤد والنسائی والطبرانی فی الکبیر عن جریر بن عبداللہ وعن عثمان بن ابی العاص رضی اللہ تعالٰی عنھم۔ उर्दू अनुवाद: सब साँपों को मार डालो, जो उनके बदले लेने से डरे वह हमारे गिरोह से नहीं। (इसे अबू दाऊद, नसाई और तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में हज़रत जरीर बिन अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु तआला अन्हु और हज़रत उस्मान बिन अबी अल-आस रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम से रिवायत किया है। - त)

एक हदीस में है:

[Box 2] अरबी: من قتل حیۃ او عقربا فکا نما قتل کافرا۔ رواہ الخطیب عن ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ उर्दू अनुवाद: जिसने साँप या बिच्छू मारा गोया एक काफ़िर मारा (इसे खतीब ने हज़रत इब्न मसऊद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया। - त)

काफ़िरों के संबंध में स्वयं कुरआन अज़ीम में है: "और उन्हें जहाँ पाओ मारो" (और उन्हें जहाँ पाओ मारो। - त) और फ़रमाया: "जहाँ कहीं मिलें पकड़े जाएँ और चुन-चुन कर क़त्ल किए जाएँ" (जहाँ कहीं मिलें पकड़े जाएँ और चुन-चुन कर क़त्ल किए जाएँ। - त) और फ़रमाया: "उन पर सख़्ती करो" (उन पर सख़्ती करो। - त) और फ़रमाया: "और वे तुम्हारे अंदर सख़्ती पाएँ" (वे पाएँ तुम्हारे अंदर सख़्ती। - त)। तो वे असल में एहसान (कृपा) के पात्र नहीं हैं। इस्लाम के आरम्भ में गैर-मुहारिब और मुहारिब काफ़िरों के बीच अंतर किया गया था, उनसे अच्छा व्यवहार और बराबरी का बर्ताव जायज़ था, और उनसे रोक को उनसे दोस्ती रखने से व्यक्त किया गया था, अन्यथा दोस्ती तो किसी काफ़िर से कभी हलाल नहीं थी।

अल्लाह तआला का फ़रमान है:

[Box 3] अरबी: لَا یَنْھٰىكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِیْنَ لَمْ یُقَاتِلُوْكُمْ فِی الدِّیْنِ وَلَمْ یُخْرِجُوْكُمْ مِّنْ دِیَارِكُمْ اَنْ تَبَرُّوْهُمْ وَ تُقْسِطُوْۤا اِلَیْهِمْ اِنَّ اللّٰهَ उर्दू अनुवाद: अल्लाह तआला का इरशादे गिरामी है: अल्लाह तुम्हें उन लोगों से मना नहीं करता जो तुमसे दीन में नहीं लड़े और तुम्हें तुम्हारे घरों से नहीं निकाला कि उनके साथ एहसान करो और उनसे...

1 सुनन अबी दाऊद किताबुल अदब बाब फ़ी क़त्ल अल-हय्यात, आफ़ताबे आलम प्रेस लाहौर 356/2 2 तारीखे बग़दाद, तर्जुमा नंबर 69, मुहम्मद बिन अल-हुसैन अल-लखमी अल-अशनानी, दारुल कुतुब अल-अरबी बेरूत, 234/2 3 अल-कुरआन 2/191 और 4/91 4 अल-कुरआन 33/61 5 अल-कुरआन 9/73 6 अल-कुरआन 9/123

पृष्ठ 333 का 836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

روایت کیا ہے۔ ت) تیسری حدیث میں ہے:

[Box 1] اقتلوا الحیات کلھن فمن خاف ثأر ھن فلیس منا۔ رواہ ابوداؤد والنسائی والطبرانی فی الکبیر عن جریر بن عبداللہ وعن عثمان بن ابی العاص رضی اللہ تعالٰی عنھم۔ | سب سانپوں کو قتل کرو، جو ان کے بدلہ لینے سے ڈرے وہ ہمارے گروہ سے نہیں۔ (اسے ابوداؤد، نسائی اور طبرانی نے المعجم الکبیر میں حضرت جریر بن عبداللہ رضی اللہ تعالٰی عنہ اور حضرت عثمان بن ابی العاص رضی اللہ تعالٰی عنہم سے روایت کیا ہے۔ ت)

ایک حدیث میں ہے:

[Box 2] من قتل حیۃ او عقربا فکا نما قتل کافرا۔ رواہ الخطیب عن ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ | جس نے سانپ یا بچھو مارا گویا ایک کافر مارا (اسے خطیب نے حضرت ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا۔ ت)

کفار کی نسبت خود قرآن عظیم میں ہے: وَاقْتُلُوْھُمْ حَیْثُ ثَقِفْتُمُوْھُمْ (اور ان کو جہاں پاؤ مارو۔ ت) اور فرمایا: اَیْنَمَا ثُقِفُوْا اُخِذُوْا وَ قُتِّلُوْا تَقْتِیْلًا (جہاں کہیں ملیں پکڑے جائیں اور گن گن کر قتل کئے جائیں۔ ت) اور فرمایا: وَاغْلُظْ عَلَیْھِمْ ط (ان پر سختی کرو۔ ت) اور فرمایا: وَلْیَجِدُوْا فِیْکُمْ غِلْظَۃً ط (وہ پائیں تمہارے اندر سختی۔ ت) تو وہ اصلاً محل احسان نہیں۔ ابتدائے اسلام میں غیر محارب و محارب کفار میں فرق فرمایا تھا ان سے نیک سلوک اور برابری کا برتاؤ جائز تھا اور ان سے منع، اور اسی کو ان سے دوستی رکھنے سے تعبیر فرمایا تھا ورنہ دوستی تو کسی کافر سے کبھی حلال نہ تھی۔

قال اللہ تعالٰی

[Box 3] لَا یَنْھٰىكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِیْنَ لَمْ یُقَاتِلُوْكُمْ فِی الدِّیْنِ وَلَمْ یُخْرِجُوْكُمْ مِّنْ دِیَارِكُمْ اَنْ تَبَرُّوْهُمْ وَ تُقْسِطُوْۤا اِلَیْهِمْ اِنَّ اللّٰهَ | اللہ تعالیٰ کا ارشاد گرامی ہے: اللہ تمھیں ان سے منع نہیں کرتا جو تم سے دین میں نہ لڑے اور تمھیں تمھارے گھروں سے نہ نکالا کہ ان کے ساتھ احسان کرو اور ان سے

1 سنن ابی داؤد کتاب الادب باب فی قتل الحیات، آفتاب عالم پریس لاہور ۳۵۶/۲ 2 تاریخ بغداد، ترجمہ نمبر ۶۹، محمد بن الحسین اللخمی الاشنانی، دار الکتب العربی بیروت، ۲۳۴/۲ 3 القرآن ۲/۱۹۱ و ۹۱/۴ 4 القرآن ۳۳/۶۱ 5 القرآن ۹/۷۳ 6 القرآن ۱۲۳/۹

Volume 10 Fatawa Rizvia

"Allah only forbids you from those who fought you on account of religion and expelled you from your homes and assisted in your expulsion - [forbids] that you make allies of them. And whoever makes allies of them, then it is those who are the wrongdoers." [Quran 60:9] Behave with justice. Indeed, those who are just are beloved to Allah. Allah forbids you from those who fought against you in religion or expelled you from your homes or helped in your expulsion, that you should make friendship with them. And those who make friends with them, they are the wrongdoers. (T)

It is in Ma'alim Sharif etc: "Then He mentioned those whom He forbade from maintaining ties with, so He said: 'Allah only forbids you...' [the verse]." Then Allah Almighty mentioned those with whom kindness is forbidden, saying: "Allah only forbids you...". (T)

In Khazin it is stated: "Then Allah mentioned those with whom He forbade maintaining ties and doing good towards, so the Most High said: 'Allah only forbids you...'" Then He mentioned those with whom goodness and kindness are forbidden, so He said: "Allah only forbids you...". (T)

Thus, it is known that being good to them is 'Muwalat' (alliance/friendship), and 'Muwalat' with them has been declared forbidden in many verses in an absolute sense. At the end of this same noble Surah, it is said: "O you who have believed, do not make allies of a people with whom Allah has become angry." O believers! Do not make friends with those people upon whom is the wrath of Allah. (T)

Necessarily, in [Tafsir] Kabir it is written: Qatadah said, "The Verse of Fighting (Ayat al-Qital) has abrogated this." (Hadrat Qatadah said that the Verse of Fighting has abrogated this verse. T). Therefore, now, kindness and maintaining ties with any warring disbeliever (kafir-e-harbi) is not permissible, even if they have not practically engaged in combat. And Allah Almighty knows best.

1. Quran 60/8 & 9
2. Tafsir Ma'alim al-Tanzil with al-Khazin, under the verse 'La yanhakumullah etc.', Mustafa al-Babi, Egypt, 7/177
3. Tafsir al-Khazin, under the verse 'La yanhakumullah etc.', Mustafa al-Babi, Egypt, 7/177
4. Quran 60/13

5. Tafsir Kabir, under the verse 'La yanhakumullah etc.', Al-Matba'ah al-Bahiyyah, Egypt, 4/29

जिल्द दहम फ़तावा रज़विया

"अल्लाह तुम्हें बस उन्हीं लोगों से रोकता है जिन्होंने धर्म के मामले में तुमसे युद्ध किया और तुम्हें तुम्हारे घरों से निकाला और तुम्हारे निष्कासन में सहायता की, कि तुम उनसे मित्रता करो। और जो उनसे मित्रता करेंगे, तो वही लोग अत्याचारी हैं।" [क़ुरआन 60:9] इंसाफ का बर्ताव करो। बेशक इंसाफ वाले, अल्लाह को महबूब हैं। अल्लाह तुम्हें उन्हीं से मना करता है जो तुमसे दीन में लड़े या तुम्हें तुम्हारे घरों से निकाला या तुम्हारे निकालने पर मदद की कि उनसे दोस्ती करो और जो उनसे दोस्ती करें तो वही सितमगर हैं। (त)

'मआलिम शरीफ़' आदि में है: "फिर उन्होंने उन लोगों का ज़िक्र किया जिनसे सिला-ए-रहमी (नाता जोड़ने) से मना फ़रमाया, तो कहा: 'इन्नमा यन्हाकुमुल्लाह' आयत।" फिर अल्लाह तआला ने उन लोगों का ज़िक्र किया जिनसे एहसान करने से मना फ़रमाया: 'इन्नमा यन्हाकुमुल्लाह'। (त)

'खाज़िन' में है: "फिर अल्लाह ने उन लोगों का ज़िक्र किया जिनसे सिला-ए-रहमी और नेकी करने से मना किया, तो तआला ने फ़रमाया: 'इन्नमा यन्हाकुमुल्लाह'।" फिर उन लोगों का ज़िक्र किया जिनसे नेकी व एहसान मना है तो फ़रमाया 'इन्नमा यन्हाकुमुल्लाह'। (त)

तो मालूम हुआ कि उनके साथ नेक सुलूक 'मुवालात' (मैत्री) है और उनसे मुवालात मुतलकन (पूर्ण रूप से) कई आयतों में हराम फ़रमाई गई। इसी सूरह करीमा के आख़िर में है: "ऐ ईमान वालो! उन लोगों से दोस्ती न करो जिन पर अल्लाह का ग़ज़ब है।" ऐ ईमान वालो! उन लोगों से दोस्ती न करो जिन पर अल्लाह का ग़ज़ब है। (त)

लाज़मी तौर पर 'तफ़्सीर कबीर' में है: क़तादा ने फ़रमाया, "इसे क़िताल (युद्ध) की आयत ने मंसूख़ (निरस्त) कर दिया है।" (हज़रत क़तादा ने फ़रमाया इस आयत को आयत-ए-क़िताल ने मंसूख़ कर दिया है। त) तो अब किसी काफ़िर-ए-हर्बी (युद्धरत काफ़िर) से भलाई और नाता जोड़ना जायज़ न रहा, चाहे उसने वास्तव में युद्ध न किया हो। वल्लाहू तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

1. क़ुरआन 60/8 और 9
2. तफ़्सीर मआलिम अत्तन्ज़ील मअ अल-खाज़िन, आयत 'ला यन्हाकुमुल्लाह' के तहत, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 7/177

3. तफ़्सीर अल-खाज़िन, आयत 'ला यन्हाकुमुल्लाह' के तहत, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 7/177

4. क़ुरआन 60/13

5. तफ़्सीर कबीर, आयत 'ला यन्हाकुमुल्लाह' के तहत, अल-मतबअतुल बहिय्या, मिस्र, 4/29

اِنَّمَا یَنْهٰىكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِیْنَ قٰتَلُوْكُمْ فِی الدِّیْنِ وَ اَخْرَجُوْكُمْ مِّنْ دِیَارِكُمْ وَ ظٰهَرُوْا عَلٰۤى اِخْرَاجِكُمْ اَنْ تَوَلَّوْهُمْ ۚ وَ مَنْ یَّتَوَلَّهُمْ فَاُولٰٓىٕكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ﴿۹﴾ انصاف کا برتاؤ برتو۔ بیشک انصاف والے ، اللہ کو محبوب ہیں اللہ تمہیں انہی سے منع کرتا ہے جو تم سے دین میں لڑے یا تمہیں تمہارے گھروں سے نکالا یا تمہارے نکالنے پر مدد کی کہ ان سے دوستی کرو اور جو ان سے دوستی کریں تو وہی ستمگار ہیں۔ (ت)

معالم شریف وغیرہ میں ہے: ثم ذکر الذین نهاہم عن صلتهم فقال اِنَّمَا یَنْهٰىكُمُ اللّٰهُ الآیۃ پھر اللہ تعالٰی نے ان لوگوں کا ذکر کیا جن سے احسان سے منع فرمایا: اِنَّمَا یَنْهٰىكُمُ اللّٰهُ۔ (ت)

خازن میں ہے: ثم ذکر اللہ الذی نهی عن صلتهم وبرهم فقال تعالٰی انما ینهاکم اللہ۔ پھر ان لوگوں کا ذکر کیا جن سے نیکی و احسان منع ہے تو فرمایا اِنَّمَا یَنْهٰىكُمُ اللّٰهُ۔ (ت)

تو معلوم ہوا کہ ان کے ساتھ نیک سلوک موالات ہے اور ان سے موالات مطلقاً کثیر آیات میں حرام فرمائی۔ اسی سورہ کریمہ کے آخر میں ہے: یٰۤاَیُّهَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَوَلَّوْا قَوْمًا غَضِبَ اللّٰهُ عَلَیْهِمْ اے ایمان والو! ان لوگوں سے دوستی نہ کرو جن پر اللہ کا غضب ہے۔ (ت)

لا جرم کبیر میں ہے: قال قتادۃ نسختها ایۃ القتال (حضرت قتادہ نے فرمایا اس آیت کو آیتِ قتال نے منسوخ کردیا ہے۔ ت) تو اب کسی کافر حربی سے بر و صلہ جائز نہ رہا اگرچہ اس نے بالفعل محاربہ نہ کیا ہو۔ واللہ تعالٰی اعلم

1 القرآن ۶۰/ ۸ و ۹ 2 تفسیر معالم التنزیل مع الخازن زیر آیت لا ینهکم الله الخ مصطفی البابی مصر ۱۷۷/۷ 3 تفسیر الخازن، زیر آیت لا ینهکم الله الخ، مصطفی البابی مصر ۱۷۷/۷ 4 القرآن ۱۳/۶۰ 5 تفسیر کبیر، زیر آیت لا ینهکم الله الخ، المطبعة البهیة مصر ۴/۲۹

Volume 10 Fatawa Razawiyya

Book of Fasting (Description of Fasting)

Problem 160: If someone kept a fast after eating forbidden (haram) food and broke the fast with something forbidden, is the obligatory fast discharged from them or not? Explain, and may you be rewarded.

The Answer: Certainly, in the mentioned case, the obligation is discharged. "For fasting is only to abstain from the three invalidators from dawn until night." (i.e., fasting is to refrain from eating, drinking, and sexual intercourse from dawn to dusk). Eating the pre-dawn meal (Suhoor) or breaking the fast (Iftar) is not part of the essence of fasting, nor among its conditions. Furthermore, if this occurred with forbidden wealth, then the sin for that is separate, but there is no doubt in the discharge of the obligation. And Allah Almighty knows best.

Problem 161: What do the scholars of religion and the jurists of the firm Shariah say regarding the issue: Is the obligatory fast waived for a Hafiz of the Qur'an because they lead Taraweeh prayers, or not? Explain, and may you be rewarded. What do the scholars of religion and the jurists of the firm Shariah say regarding this matter: Is it excused for a Hafiz of the Qur'an to not fast because of leading Taraweeh prayers, or not?

जिल्द 10 फ़तावा रज़विया

किताब-उस-सौम (रोज़े का बयान)

मसला 160: किसी ने हराम खाना खाकर रोज़ा रखा और हराम चीज़ से इफ़्तार किया, क्या उस पर से फ़र्ज़ रोज़ा साक़ित (उतर) गया या नहीं? बयान फरमाएं आपको सवाब मिलेगा।

अल-जवाब: बेशक पूछी गई सूरत में फ़र्ज़ साक़ित हो गया, क्योंकि "रोज़ा तो महज़ सुबह से शाम तक तीन चीज़ों (खाने, पीने और हमबिस्तरी) से रुक जाने का नाम है।" सहरी खाना या इफ़्तार करना रोज़े की हक़ीक़त में शामिल नहीं है और न ही इसकी शर्तों में से है। फिर अगर यह हराम माल से हुआ तो उसका गुनाह अलग रहा, मगर फ़र्ज़ अदा होने में कोई शक नहीं। वल्लाहु तआला आलम (अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

मसला 161: क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरह-ए-मतीन इस मसले में कि क्या क़ुरान के हाफ़िज़ पर जो रोज़ा फ़र्ज़ है, वह तरावीह पढ़ाने की वजह से माफ़ है या नहीं? बयान फरमाएं आपको सवाब मिलेगा। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरह-ए-मतीन इस मसले में कि एक हाफ़िज़-ए-क़ुरान पर तरावीह पढ़ाने की वजह से रोज़ा रखना माफ़ है या नहीं?

पेज 335 का 836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

کتابُ الصَّوم (روزے کا بیان)

مسئلہ ۱۶۰: کسی نے حرام کھانا کھا کر روزہ رکھا اور حرام چیز سے افطار کیا فرض صوم اُس پر سے ساقط ہوا ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: بیشک صورتِ مستفسرہ میں فرض ساقط ہو گیا فان الصوم انما ھو الامساك عن المفطرات الثلثة من الفجر الی اللیل (روزہ صبح سے لے کر شام تک تین چیزوں (کھانا، پینا اور ہمبستری) سے رک جانا ہے۔ت) سحری کھانا یا افطار کرنا روزے کی حقیقت میں داخل نہ اس کی شرائط سے، پھر اگر یہ مالِ حرام سے واقع ہوئی تو اس کا گناہ جدا رہا مگر سقوطِ فرض میں شبہ نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۶۱: چہ می فرمایند علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین در مسئلہ کہ روزہ فرض بر حافظِ قرآن ہو جسے کہ تراویح می گزارد معاف ست یا نا؟ بینوا توجروا کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ ایک حافظِ قرآن پر تراویح پڑھانے کی وجہ سے روزہ رکھنا معاف ہے یا نہیں؟

Fatawa Razawiyya Volume 10

O Scholars! O Scholars! Write the answer and earn a reward. (T)

Answer:

[Left Column - Persian/Arabic Text]: Completing the Quran in Taraweeh is no more than a Sunnah, and the difference between Sunnah and Fard (obligatory duty) is self-evident. What calamity and foolishness it would be to abandon the latter for the former and to consider it a burden in religion. Rather, this false excuse is beyond comprehension because reciting the Quran does not hinder fasting. Thousands upon thousands of Quran memorizers across the globe, including the elderly, children, and the weak, observe fasts during the day and recite the Quran at night. In this sense, no harm has ever been witnessed by them. And how could harm reach them when fasting is health and the Quran is healing? However, correct belief is essential so that these divine gifts manifest their benefit. Allah Almighty says: 'And We send down of the Qur'an that which is healing and mercy for the believers, but it does not increase the wrongdoers except in loss.' (1) The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: 'Go on military expeditions, you will gain booty; or fast, you will gain health; and travel, you will become wealthy.' (2) Recorded by Al-Tabarani in Al-Mu'jam al-Awsat via Zuhayr bin Muhammad from Suhayl bin Abi Salih from his father.

[Right Column - Urdu Translation/Explanation]: Completing the Quran in Taraweeh is no more than a Sunnah. The difference between Sunnah and Fard is extremely clear and obvious. It is immense foolishness and lack of intellect to abandon a Fard for the sake of a Sunnah. This turning away from religion, rather this false excuse, is incomprehensible because reciting the Quran cannot hinder fasting. Throughout the world, thousands of Quran memorizers, including the elderly, children, and the weak, fast during the day and recite the Quran at night, and never has anyone experienced such a thing as being harmful. How can it be that fasting is health and the Quran is absolute healing, but it is necessary for the belief to be correct so that Allah Almighty grants this benefit. The blessed command of Allah Almighty is: 'We have revealed the Quran which is healing and mercy for the believers and only increases the loss of the wrongdoers.' The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: 'Engage in Jihad, gain booty; fast, gain health; travel for trade and gain profit to become wealthy.' This was recorded by Al-Tabarani in Mu'jam al-Awsat from Zuhayr bin Muhammad, from Suhayl bin Abi Salih, from his father.

Footnotes: 1. Al-Quran 17/82 2. Majma' al-Zawa'id, referencing Al-Mu'jam al-Awsat, chapter 'Engage in Jihad, you will gain booty', etc., Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 5/324; Al-Maqasid al-Hasanah, letter 'Seen', Hadith 549, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, p. 236.

फ़तावा रज़विया खंड दसवाँ

ऐ उलेमा! ऐ उलेमा! जवाब लिखकर सवाब पायें। (त)

उत्तर:

[बायाँ कॉलम - फ़ारसी/अरबी पाठ]: तराव़ीह में ख़त्म-ए-क़ुरआन सुन्नत से बढ़कर नहीं है, और सुन्नत और फ़र्ज़ में जो फ़र्क़ है वह स्वयं स्पष्ट है। यह कितनी बड़ी आफ़त और बेवक़ूफ़ी है कि सुन्नत की ख़ातिर फ़र्ज़ को छोड़ दिया जाए और इसे दीन में बोझ समझा जाए। बल्कि यह झूठा बहाना समझ में नहीं आता क्योंकि क़ुरआन की तिलावत रोज़ा रखने में बाधक नहीं है। दुनिया भर में हज़ारों-हज़ार हाफ़िज़-ए-क़ुरआन, जिनमें बूढ़े, बच्चे और कमज़ोर शामिल हैं, दिन में रोज़ा रखते हैं और रात में क़ुरआन पढ़ते हैं। इस मायने में उनकी आँखों के सामने कभी कोई नुक़सान नहीं पहुँचा। और नुक़सान कैसे पहुँच सकता है जबकि रोज़ा सेहत है और क़ुरआन शिफ़ा है? लेकिन अक़ीदा सही होना चाहिए ताकि इन ईश्वरीय उपहारों से फ़ायदा हो। अल्लाह तआला फ़रमाता है: 'और हम क़ुरआन में वह चीज़ नाज़िल करते हैं जो मोमिनों के लिए शिफ़ा और रहमत है, और ज़ालिमों के लिए तो नुक़सान ही बढ़ाता है।' (1) अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: 'जिहाद करो ग़नीमत पाओगे, या रोज़ा रखो सेहत पाओगे, और सफ़र करो धनी हो जाओगे।' (2) इसे तबरानी ने 'अल-मोजम अल-औसत' में ज़ुहैर बिन मुहम्मद के माध्यम से सुहैल बिन अबी सालेह से, उन्होंने अपने पिता से रिवायत किया है।

[दायाँ कॉलम - उर्दू अनुवाद/व्याख्या]: तराव़ीह में ख़त्म-ए-क़ुरआन सुन्नत से बढ़कर नहीं है, सुन्नत और फ़र्ज़ में जो फ़र्क़ है वह बहुत ही साफ़ और ज़ाहिर है। यह कितनी बेवक़ूफ़ी और कम अक़्ली है कि सुन्नत की ख़ातिर फ़र्ज़ छोड़ दिया जाए। यह दीन से बेज़ारी, बल्कि यह झूठा बहाना समझ में नहीं आता क्योंकि क़ुरआन की तिलावत रोज़ा रखने में रुकावट नहीं बन सकती। पूरी दुनिया में हज़ारों हाफ़िज़-ए-क़ुरआन, जिनमें बूढ़े, बच्चे और कमज़ोर शामिल हैं, दिन को रोज़ा रखते हैं और रात को क़ुरआन सुनाते हैं और कभी किसी को ऐसा मामला नुक़सानदेह साबित नहीं हुआ। यह कैसे हो सकता है कि रोज़ा भी सेहत है और क़ुरआन सरापा शिफ़ा है, लेकिन अक़ीदे का सही होना ज़रूरी है ताकि अल्लाह तआला यह नफ़ा अता फ़रमाए। अल्लाह तआला का फ़रमान मुबारक है: 'हमने क़ुरआन नाज़िल किया जो मोमिनों के लिए शिफ़ा और रहमत है और ज़ालिमों के नुक़सान में इज़ाफ़ा ही करता है।' हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: 'जिहाद करो ग़नीमत हासिल करो,

रोज़ा रखो सेहत हासिल करो, व्यापार के उद्देश्य से सफ़र करो और लाभ प्राप्त करके धनी हो जाओ।' इसे तबरानी ने मोजम औसत में ज़ुहैर बिन मुहम्मद से, उन्होंने सुहैल बिन अबी सालेह से, उन्होंने अपने वालिद से रिवायत किया है।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. अल-क़ुरआन 17/82 2. मजमा अल-ज़वाइद, मोजम अल-औसत के हवाले से, बाब 'इग़्ज़ू तग़्नमु' आदि, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरुत, 5/324; मक़ासिद अल-हसना, हर्फ़ सीन, हदीस 549, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरुत, पृ. 236।

فتاوی رضویہ جلد دہم

ایھا العلماء۔ اے علماء! جواب تحریر فرما کر اجر پاؤ۔ (ت)

الجواب:

[بائیں کالم میں فارسی/عربی عبارت]: ختم قرآن در تراویح از سنتے بیش نیست وفرقے کہ از سنت تا فرض ست خود ہویداست چہ بلا وسفاہتے باشد ایں را بہر آں گزشتن وادر دین داواثر گونہ داشتن بلکہ ایں بہانہ دروغ خود بفہم در نمی آید زیراکہ قراتِ قرآن مانع روزہ نیست ہزاراں ہزار حافظان قرآن در اقطار عالم واکناف زمین از پیران وبچگان وکم طاقتان ھم بروز روزہ مے دارند و ہم شب قرآن می خوانند و بدیں معنی بیچ مضرتے بچشم ایشاں نمی رسد وچہ گونہ رسد کہ ہم روزہ صحت ست و ہم قرآن شفا اما اعتقاد صحیح باید تا ازیں دہائے الہی نفع رونماید ۔ قال اللہ تعالیٰ وَنُنَزِّلُ مِنَ الْقُرْاٰنِ مَا ھُوَ شِفَاءٌ وَّرَحْمَةٌ لِّلْمُؤْمِنِیْنَ ۙ وَلَا یَزِیْدُ الظّٰلِمِیْنَ اِلَّا خَسَارًا (1) قال صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اغزوا تغنموا او تصوموا تصحوا وسافروا تستغنوا ۔ (2) اخرجہ الطبرانی فی المعجم الاوسط من طریق زہیر بن محمد عن سھیل بن ابی صالح عن ابیہ

[دائیں کالم میں اردو ترجمہ/تشریح]: تراویح میں ختم قرآن سنت سے بڑھ کر نہیں، سنت اور فرض میں جو فرق ہے وہ نہایت ہی ظاہر وباہر ہے ، یہ کتنی بیوقوفی اور کم عقلی ہے کہ سنت کی خاطر فرض چھوڑ دیا جائے ، یہ دین سے برگشتگی ، بلکہ یہ جھوٹا بہانہ سمجھ میں نہیں آتا کیونکہ قرات قرآن روزہ رکھنے سے مانع نہیں ہو سکتی ۔ پوری دُنیا میں ہزارہا حفاظ قرآن جن میں بوڑھے ، بچے اور کمزور شامل ہیں دن کو روزہ رکھتے ہیں اور رات کو قرآن سناتے ہیں اور کبھی کسی کو ایسا معاملہ نقصان دہ نہیں ہوا اور یہ کیسے ہو سکتا ہے کہ روزہ بھی صحت ہے اور قرآن سراپا

شفا ہے لیکن اعتقاد کا صحیح ہونا ضروری ہے تاکہ اللہ تعالیٰ یہ نفع عطا فرمائے۔ اللہ تعالیٰ کا فرمان مبارک ہے: ہم نے قرآن نازل کیا جو مومنوں کے لیے شفا اور رحمت ہے اور ظالموں کے خسارہ میں اضافہ ہی کرتا ہے۔ حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: جہاد کرو غنیمت حاصل کرو، روزہ رکھو صحت حاصل کرو، بغرض تجارت سفر کرو اور نفع حاصل کر کے غنی حاصل کرو۔ اسے طبرانی نے معجم اوسط میں زہیر بن محمد سے ، انھوں نے سہیل بن ابی صالح سے، انھوں نے اپنے والد سے،

حواشی: 1 القرآن ۱۷ / ۸۲ 2 مجمع الزوائد بحوالہ المعجم الاوسط باب اغزوا تغنموا الخ دار الکتاب العربی بیروت ۵ / ۳۲۴ ، مقاصد الحسنہ حرف السین المہملہ حدیث ۵۴۹ دار الکتب العلمیۃ بیروت ص ۲۳۶

Fatawa Ridawiyya - Volume 10

It is narrated from Abu Huraira (may Allah be pleased with him) as mentioned in Al-Maqasid al-Hasana, and it is a narration from reliable narrators as mentioned in Targhib al-Mundhiri. Imam Ahmad also extracted it as Sakhawi stated. The words "Fast and you will be healthy" were also narrated by the Mother of the Believers from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). It was extracted by Ibn al-Sunni and Abu Nu'aym in 'Al-Tibb al-Nabawi' as mentioned in Al-Jami' al-Saghir by Al-Suyuti, but its chain of narration (isnad) is weak as Al-Munawi said. I say: its weakness is not harmful because it is narrated through reliable men. Furthermore, it is unanimously agreed that acting upon a weak narration regarding virtuous deeds is permissible, as Al-Nawawi and others have stated.

It cannot be believed in any way that for this person, reciting the Quran prevents them from fasting. This is nothing but a false excuse, lack of resolve, and self-indulgence, and Allah forbid. If, for instance, reciting the Quran makes him so weak that he loses the strength to fast, then in this case, reciting the Quran for him is neither a Sunnah nor a cause for reward; rather, it is forbidden and a cause for punishment. Just like someone who elongates the recitation of the Quran to the point that the prayer time passes away, such recitation falls under the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), as the Lord Almighty has said: "Many people recite the Quran, but the Quran curses them."

Footnotes: 1. Al-Jami' al-Saghir with Al-Taysir under the hadith "Fast and you will be healthy", Maktaba al-Imam al-Shafi'i, Riyadh, Saudi Arabia, 2/95. 2. Al-Taysir Sharh al-Jami' al-Saghir under the hadith "Fast and you will be healthy", Maktaba al-Imam al-Shafi'i, Riyadh, Saudi Arabia, 2/95. 3. Al-Madkhal by Ibn al-Hajj, section on the merit of reciting the Quran etc., Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 1/85.

इन्होंने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से बयान किया है जैसा कि मक़ासिद-ए-हसना में है और यह विश्वसनीय लोगों से रिवायत है जैसा कि तरगीब-ए-मुन्ज़िरी में है और इसे इमाम अहमद ने भी तख़रीज किया है जैसा कि सख़ावी ने कहा, और ये शब्द भी उम्मुल मोमिनीन ने हुज़ूर नबी-ए-अकरम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) से रिवायत किए कि 'रोज़ा रखो और सेहत पाओ'। इसे इब्ने सुन्नी और अबू नुऐम ने 'तिब्ब-ए-नबवी' में रिवायत किया, जैसा कि जामे-उल-सगीर-लिस-सुयूती में है लेकिन इसकी सनद कमज़ोर (ज़ईफ़) है, जैसा कि मनावी ने कहा। मैं कहता हूँ कि इसका कमज़ोर होना नुक़सानदेह नहीं है क्योंकि यह विश्वसनीय लोगों से मरवी है, इसके अलावा कमज़ोर रिवायत पर फ़ज़ायल (पुण्य कार्यों) में अमल करना सर्वसम्मति से जायज़ है जैसा कि नववी आदि ने बयान किया है।

किसी तरह भी यह यक़ीन नहीं किया जा सकता कि इस व्यक्ति को क़ुरआन का पाठ रोज़ा रखने से रोकता है, यह सिर्फ़ एक ग़लत बहाना, कमज़ोर इरादा और नफ़्स की पैरवी है, अल्लाह की पनाह। अगर मान लिया जाए कि क़ुरआन पढ़ना उसे इतना कमज़ोर कर देता है कि उसमें रोज़ा रखने की ताक़त नहीं रहती, तो इस स्थिति में उसके लिए क़ुरआन पढ़ना न सुन्नत है और न ही सवाब (पुण्य) का कारण, बल्कि हराम और अज़ाब (दंड) का कारण है। जिस तरह कोई व्यक्ति क़ुरआन का पाठ इतना लंबा करे कि नमाज़ का समय निकल जाए, तो ऐसा क़ुरआन पढ़ना हुज़ूर (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के इस फरमान के दायरे में आएगा: "बहुत से लोग क़ुरआन पढ़ते हैं मगर क़ुरआन उन पर लानत करता है।"

पाद-टिप्पणियाँ: १. अल-जामे-उल-सगीर मअत-तयसीर, हदीस 'सोमू तसिह्हू' के अंतर्गत, मकतबा अल-इमाम अल-शाफ़ई, रियाज़ सऊदी अरब, ९५/२ २. अत-तयसीर शरह अल-जामे-उल-सगीर, हदीस 'सोमू तसिह्हू' के अंतर्गत, मकतबा अल-इमाम अल-शाफ़ई, रियाज़ सऊदी अरब, ९५/२ ३. अल-मदख़ल लि-इब्निल हाज, बयान फ़ज़्ल तिलावतुल क़ुरआन आदि, दारुल किताब अल-अरबी, बेरुत, ८५/१

पृष्ठ ८३६ में से ३३७

انھوں نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے بیان کیا ہے جیسا کہ مقاصدِ حسنہ میں ہے اور یہ ثقہ لوگوں سے روایت ہے جیسا کہ ترغیبِ منذری میں ہے اور اسے امام احمد نے بھی تخریج کیا جیسا کہ سخاوی نے کہا، اور یہ الفاظ بھی ام المومنین نے حضور نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے روایت کئے کہ روزہ رکھو اور صحت پاؤ۔ اسے ابنِ سنی نے اور ابو نعیم نے طب نبوی میں روایت کیا، جیسا کہ جامع الصغیر للسیوطی میں ہے لیکن اس کی سند ضعیف ہے، جیسا کہ منادی نے کہا قلت اس کا ضعیف ہونا نقصان دہ نہیں کیونکہ ثقہ لوگوں سے مروی ہے، علاوہ ازیں ضعیف پر فضائل میں عمل بالاتفاق جائز ہے جیسا کہ نووی وغیرہ نے بیان کیا ہے۔

کسی طرح بھی یہ باور نہیں کیا جاسکتا کہ اس شخص کو قرآت روزہ رکھنے سے مانع ہے، یہ صرف عذرِ باطل، کم ہمتی اور العیاذ باللہ اگر بالفرض قرآن پڑھنا اتنا کمزور کردیتا ہے کہ اسے روزہ رکھنے کی طاقت نہیں رہتی تو اس صورت میں اس کے لئے قرآن پڑھنا سنت ہے نہ باعث ثواب، بلکہ حرام اور موجبِ عذاب ہے جس طرح کوئی شخص قرآن کی تلاوت اتنی طویل کرے کہ نماز کا وقت ہی فوت ہوجائے تو وہ حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے اس ارشادِ گرامی کے تحت داخل ہوگا۔ "بہت سے لوگ قرآن پڑھتے ہیں مگر قرآن ان پر لعنت (کرتا ہے)۔"

حواشی: 1 الجامع الصغیر مع التیسیر تحت حدیث صوموا تصحوا مکتبہ الامام الشافعی ریاض سعودیہ ۹۵/۲ 2 التیسیر شرح الجامع الصغیر تحت حدیث صوموا تصحوا مکتبہ الامام الشافعی ریاض سعودیہ ۹۵/۲ 3 المدخل لابن الحاج بیان فضل تلاوت القرآن الخ دار الکتاب العربی بیروت ۸۵/۱

Fatawa Razawiyya (Volume 10)

[Left Column - Persian/Arabic text] Many a reader of the Quran is such that the Quran curses them. Scholars have stated categorically that any action that weakens a person or prevents them from fasting is not permissible. It is mentioned in 'al-Durr al-Mukhtar': "It is not permissible to do work that leads to weakness." If a person is in a state where fasting makes them unable to stand during prayer, it is not permissible for them to skip the Ramadan fast. Instead, they should fast and offer prayer while sitting. In 'al-Durr al-Mukhtar' from 'al-Bazzaziyya': "If someone fasts and becomes unable to stand, they should fast and pray sitting, thus combining both acts of worship." Subhan Allah (Glory be to Allah)! In the view of scholars, the standing (Qiyam) in prayer, which is itself obligatory, is waived for the sake of observing the fast. Here, the Ramadan fast is being abandoned not for the sake of performing a Sunnah—far from it—but for the sake of boasting about holding the position of Imam, or rather for an act that is impermissible, forbidden, and sinful. Verily, this is blatant ignorance or ugly stubbornness. To such a person, it should be said that Allah Subhanu wa Ta'ala has made the Ramadan fast an individual obligation (Fard 'Ayn) upon you and everyone else, and completing the Quran in Tarawih is neither an obligation (Fard) nor a stressed Sunnah (Sunnat-e-'Ayn). If, due to excessive recitation during the rounds which is inevitable for most Hafiz, one finds such weakness, this burden has not been placed on your shoulders. Follow another Hafiz in prayer, perform Tarawih, and keep the fast, thus fulfilling the obligatory duty and also striving for the Sunnah. And if you do not even have strength for this much...

[Right Column - Urdu translation/elaboration] ...does. "Scholars have stated categorically that any action that weakens or prevents one from fasting is not permissible; it is in 'Durr al-Mukhtar' that every action which weakens a person is not permissible. If due to fasting a person becomes so weak that they do not have the strength to stand in prayer, then it is not permissible for them to leave the Ramadan fast; rather, they should fast and perform prayer while sitting. In 'Durr al-Mukhtar' from 'al-Bazzaziyya': If someone kept a fast and became unable to stand in prayer, then they should keep the fast and perform prayer sitting, combining both worships. Reciting the whole Quran in Tarawih—do not listen to this, just be capable of performing twenty rak'ats properly, otherwise, do not lose the fast and become deserving of the fire of Hell and painful punishment. Subhan Allah! According to scholars, the standing in prayer is waived for the sake of fasting, even though this standing is obligatory (Fard). In the mentioned case, the Ramadan fast is being

abandoned not for the sake of Sunnah but for boasting about the leadership (Imamate); rather, it is abandoned for an impermissible, forbidden, and sinful act; may Allah Almighty forgive. This is blatant ignorance and ugly stubbornness. It should be said to this dear one that Allah Subhanu wa Ta'ala has made the Ramadan fast Fard 'Ayn upon you, and completing the Quran in Tarawih is neither Fard nor Sunnat-e-'Ayn. If due to the abundance of recitation during 'Daur' (revision), which is inevitable for Hafiz, there is a risk of such weakness, then do not take this burden upon yourself; instead, follow another Hafiz, perform Tarawih and keep the fast, fulfill the obligation, and also attain the Sunnah, and if there is no strength for even this much...

[Footnotes] 1. al-Durr al-Mukhtar, Chapter: What breaks the fast and what does not, Mujtabai Press, Delhi, 1/152. 2. al-Durr al-Mukhtar, Chapter: What breaks the fast and what does not, Mujtabai Press, Delhi, 1/152.

फ़तावा रज़विया (खण्ड 10)

[बायाँ कॉलम - फ़ारसी/अरबी पाठ] बहुत से क़ुरान पढ़ने वाले ऐसे हैं जिन पर क़ुरान लानत भेजता है। विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि ऐसा कोई भी कार्य जो किसी को कमज़ोर कर दे या रोज़े में बाधा डाले, वह जायज़ नहीं है। 'दुर्रे मुख़्तार' में लिखा है: "ऐसा काम करना जायज़ नहीं जो कमज़ोरी की ओर ले जाए।" यदि किसी व्यक्ति की ऐसी स्थिति हो कि रोज़े के कारण वह नमाज़ में खड़ा न हो सके, तो उसके लिए रमज़ान का रोज़ा छोड़ना जायज़ नहीं है, बल्कि वह रोज़ा रखे और नमाज़ बैठकर अदा करे। 'दुर्रे मुख़्तार' में 'बज़ाज़िया' से उद्धृत है: "यदि किसी ने रोज़ा रखा और वह नमाज़ में खड़ा होने से लाचार हो गया, तो वह दोनों इबादतों को जमा करते हुए रोज़ा रखे और नमाज़ बैठकर पढ़े।" सुभान अल्लाह! विद्वानों के अनुसार, नमाज़ में खड़ा होना (क़ियाम), जो स्वयं फ़र्ज़ है, रोज़ा रखने की खातिर छोड़ दिया जाता है। यहाँ, रमज़ान का रोज़ा किसी सुन्नत को अदा करने के लिए नहीं—अल्लाह न करे—बल्कि इमामत प्राप्त करने पर गर्व करने के लिए, या यूँ कहें कि एक नाजायज़, हराम और गुनाह के कार्य के लिए छोड़ा जा रहा है। वास्तव में, यह तो खुली जहालत और बुरा हठ है। उस प्रिय व्यक्ति से कहा जाए कि अल्लाह सुब्हानहू व तआला ने तुझ पर रमज़ान का रोज़ा फ़र्ज़-ए-ऐन क़रार दिया है, और तरावीह में क़ुरान ख़त्म करना न तो फ़र्ज़ है और न ही सुन्नत-ए-ऐन। यदि दौर (तैयारी) के दौरान अधिक तिलावत के कारण, जो अक्सर हाफ़िज़ों के लिए अनिवार्य होता है, ऐसी कमज़ोरी आने का डर हो, तो यह बोझ अपने ऊपर न ले। इसके बजाय किसी दूसरे हाफ़िज़ के पीछे नमाज़ पढ़े, तरावीह भी अदा करे और रोज़ा भी रखे। फ़र्ज़ भी पूरा करे और सुन्नत भी हासिल करे। और अगर इतनी भी ताक़त न हो तो...

[दायाँ कॉलम - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] ...करता है। "विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है कि जो भी अमल रोज़ा रखने से कमज़ोर करे या मना करे वह जायज़ नहीं, दुर्रे मुख़्तार में है कि हर वह अमल जो इंसान को कमज़ोर कर दे वह जायज़ नहीं होता। अगर रोज़े की वजह से कोई शख्स इतना कमज़ोर हो जाता है कि नमाज़ में क़ियाम की ताक़त नहीं रखता तो उसके लिए रमज़ान का रोज़ा छोड़ना जायज़ नहीं बल्कि वह रोज़ा रखे और नमाज़ बैठकर अदा करे। दुर्रे मुख़्तार में बज़ाज़िया से है: अगर किसी ने रोज़ा रखा और वह नमाज़ में क़ियाम से आजिज़ हो गया तो वह दोनों इबादतों को जमा करते हुए रोज़ा रखे और नमाज़ बैठकर अदा करे। तरावीह में पूरा क़ुरान सुनने/पढ़ने के चक्कर में न पड़ें, बस बीस रकत ठीक से पढ़ सकें तो अदा करें, वरना रोज़ा छोड़कर नह-ए-जहीम (नरक की आग) और अज़ाब-ए-अलीम के हकदार न बनें। सुभान अल्लाह! विद्वानों के नज़दीक रोज़ा की खातिर

नमाज़ में क़ियाम साक़ित हो जाता है हालांकि यह क़ियाम फ़र्ज़ है। उपरोक्त सूरत में तो सुन्नत की खातिर नहीं बल्कि हुसूल-ए-इमामत पर तफ़ाख़ुर (गर्व) के लिए रोज़ा-ए-रमज़ान तर्क(त्याग) किया जा रहा है बल्कि नाजायज़, हराम और गुनाह-ए-नफ़्ल के लिए तर्क है, अल्लाह तआला माफ़ फरमाए। यह तो जहालत-ए-सरीह और अनाद-ए-क़बीह है। इस अज़ीज़ से कहा जाए कि अल्लाह सुब्हानहू व तआला ने तुझ पर रोज़ा-ए-रमज़ान फ़र्ज़-ए-ऐन फरमाया है और तरावीह में क़ुरान ख़त्म करना न फ़र्ज़ न सुन्नत-ए-ऐन। अगर बकसरत-ए-तिलावत दौर की वजह से जो हुफ़्फ़ाज़ के लिए लाज़मी होता है ऐसा ज़ोफ़ (कमजोरी) लाहक़ होने का ख़तरा है तो यह बोझ अपने ऊपर न ले बल्कि किसी दूसरे हाफ़िज़ की इक़्तिदा करे, तरावीह अदा करे और रोज़ा रखे, फ़र्ज़ को बजा लाए, और सुन्नत भी हासिल करे, और अगर इस क़दर की भी ताक़त नहीं तो...

[पाद-टिप्पणियाँ] 1. दुर्रे मुख़्तार, अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली और न तोड़ने वाली चीज़ें, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/152. 2. दुर्रे मुख़्तार, अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली और न तोड़ने वाली चीज़ें, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/152.

فتاویٰ رضویہ (جلد دہم)

[بایاں کالم - فارسی/عربی عبارت] ای بسا قران خواناں کہ قران ایشاں را لعنت می کند، علماء مطلق فرمودہ اند ہر عملے کہ ضعیف واز روزہ باز دارد، روانیست فی الدرالمختار لا یجوز ان یعمل عملا یصل بہ الی الضعف۱ واگر مردے راحالتی باشد کہ چوں روزہ دارد قیام در نماز نہ تواند اُو را روا نیست کہ روزہ رمضان ترک دہد بلکہ روزہ دارد و نماز نشستہ گزارد فی الدر المختار عن البزازیۃ لو صام عجز عن القیام صام وصلی قاعدا اجمعاً بین العباد تین۲ سبحان اللہ! نزد علماء قیام نماز کہ خود فرض است بغرض مراعات روزہ ساقط گردد اینجاروزہ رمضان بہر ادائے سنتے حاشا بلکہ بہر تفاخرے بہ حصول امامت بلکہ بہر فعلے ناجائزے حرامی عفونے شودان ھذا الاجھل صریح او عناد قبیح ایں عزیز را گویند کہ حق سبحانہ و تعالیٰ صوم رمضان بر تو و ہمگناں فرض عین فرمودہ است و قرآن در تراویح ختم کردن نہ فرض است و نہ سنت عین ، اگر بسبب تکثیر تلاوت ہنگام دور کہ اکثر حافظاں را ازاں ناگزیر است ضعفے بتورہ می یابد ایں خود بر گردن تو نہ نہادہ اند بحافظے دیگر اقتدا کن و تراویح گزار و روزہ دار ھم فرض بیاب و ھم بہ سنت شتاب و ایں قدر نیز نہ توانی

[دایاں کالم - اردو ترجمہ و تشریح] کرتا ہے۔ "علماء نے مطلقاً فرمایا ہے کہ جو بھی عمل روزہ رکھنے سے کمزور کرے یا مانع ہو وہ جائز نہیں، در مختار میں ہے کہ ہر وہ عمل جو انسان کو کمزور کر دے وہ جائز نہیں ہوتا۔ اگر روزے کی وجہ سے کوئی شخص اتنا کمزور ہو جاتا ہے کہ نماز میں قیام کی طاقت نہیں رکھتا تو اس کے لئے رمضان کا روزہ چھوڑنا جائز نہیں بلکہ وہ روزہ رکھے اور نماز بیٹھ کر ادا کرے۔ در مختار میں بزازیہ سے ہے اگر کسی نے روزہ رکھا اور وہ نماز میں قیام سے عاجز ہو گیا تو وہ دونوں عبادتوں کو جمع کرتے ہوئے روزہ رکھے اور نماز بیٹھ کر ادا کرے۔ تمام قرآن در تراویح خواں ومشنو ہمیں بست رکعت بہ ٹھیکہ قادر باشی بجا آور

ورنہ روزہ از دست دادہ مستحق نار جحیم و عذاب الیم مباش سبحان اللہ ! علماء کے نزدیک روزہ کی خاطر نماز میں قیام ساقط ہو جاتا ہے حالانکہ یہ قیام فرض ہے صورت مذکورہ میں تو سنت کی خاطر نہیں بلکہ حصول امامت پر تفاخر کے لیے روزہ رمضان ترک کیا جا رہا ہے بلکہ ناجائز، حرام اور گناہِ نفل کے لیے ترک ہے، اللہ تعالیٰ معاف فرمائے۔ یہ تو جہالت صریح اور عناد قبیح ہے اس عزیز سے کہا جائے کہ اللہ سبحانہ و تعالیٰ نے تجھ پر روزہ رمضان فرض عین فرمایا ہے اور تراویح میں قرآن ختم کرنا نہ فرض نہ سنّتِ عین۔ اگر بسبب کثرتِ تلاوت دُور کی وجہ سے جو حفاظ کے لیے ناگزیر ہوتا ہے ایسا ضعف لاحق ہونے کا خطرہ ہے تو یہ بوجھ اپنے اوپر نہ لے بلکہ کسی دوسرے حافظ کی اقتداء کرے، تراویح ادا کرے اور روزہ رکھے، فرض کو بجالائے، اور سنّت بھی حاصل کرے، اور اگر اس قدر کی بھی طاقت نہیں تو

[حواشی] 1 در مختار باب مایفسد الصوم وما لا یفسد مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۵۲ 2 در مختار باب مایفسد الصوم وما لا یفسد مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۵۲

Fatawa Rizvia, Volume 10

[Main Text, Column 1 - Arabic/Urdu Mix] Do not recite the entire Quran in Taraweeh nor listen to it; perform twenty rak'ahs in whatever way you are able. By losing the fast, do not become deserving of the fire of Hell and a painful punishment. O my brother! Fasting is an individual obligation (Fard-e-Ain), and an individual obligation takes precedence over a communal obligation (Fard-e-Kifayah). Completing the Quran in Taraweeh is a communal Sunnah (Sunnat-e-Kifayah), and a communal Sunnah is subordinate to an individual Sunnah. What an injustice of ignorance it is that they give precedence to a communal Sunnah over an individual obligation. Among the scholars are those who allowed leaving the completion of the Quran due to the laziness of the people, saying: 'Whoever is not aware of the people of his time is ignorant.' As mentioned in 'Ad-Durr al-Mukhtar' on the authority of Az-Zahidi, from Al-Wabari and Al-Kirmani. And in it, from 'Al-Ikhtiyar': 'The best amount in our time is that which is not burdensome for them.' The author, meaning Al-Ghazzi and others, concurred. And from 'Al-Mujtaba', it is narrated from the Imam: 'If one recites three short verses or one long verse in an obligatory prayer, he has done well and has not done wrong.' Az-Zahidi said: 'Then what is your opinion regarding Taraweeh?' I say: 'Look at the ignorance of this person who abandons the fast of Ramadan for something whose omission is permitted for the sake of something like this [the fast].' Fasting of the Commander of the Faithful...

[Main Text, Column 2 - Urdu Translation/Explication] So do not recite the entire Quran in Taraweeh nor listen to it. Perform twenty rak'ahs in whatever way you are capable of. If the fast is not kept, one will deserve the fire of Hell and a painful punishment. O my brother! Fasting is an individual obligation (Fard-e-Ain), and an individual obligation takes precedence over a communal obligation (Fard-e-Kifayah). And completing the Quran in Taraweeh is a communal Sunnah (Sunnat-e-Kifayah), and a communal Sunnah is subordinate to an individual Sunnah. What an injustice it is that a communal Sunnah has been given precedence over an individual obligation. Due to the emergence of laziness and lethargy among the people, some scholars have even allowed the room to leave the completion of the Quran, saying that a person who is not aware of the circumstances of his time is ignorant. As it is in 'Dur-e-Mukhtar' from Zahidi, and there with references to Wabari and Kirmani. And in the same, it is from 'Al-Ikhtiyar' that in our time, that amount is better which does not become a burden. And it was said that the author, Al-Ghazzi and others, have maintained this. It is narrated from the Imam in 'Al-Mujtaba' that if someone recited three small or large

verses in the obligatory prayers, he did very well and is not a sinner. Zahidi says, then what is your opinion in the matter of Taraweeh? I say, look at this ignorant person who is abandoning the fast of Ramadan for the sake of an act whose abandonment was possible for the sake of the fast. One day, the Commander of the Faithful, Hazrat...

---

1. Ad-Durr al-Mukhtar, Chapter of Witr and Nawafil, Mujtabai Press Delhi, 1/99
2. Ad-Durr al-Mukhtar, Chapter of Witr and Nawafil, Mujtabai Press Delhi, 1/98

फ़तावा रिज़विया, जिल्द दसवीं

[मुख्य पाठ, कॉलम 1 - अरबी/उर्दू मिश्रण] तमाम क़ुरआन तरावीह में न पढ़े और न सुने; जिस तरीक़े से बीस रकअत अदा करने पर क़ादिर हो अदा करे। रोज़ा हाथ से देकर जहन्नम की आग और दर्दनाक अज़ाब के मुस्तहिक़ न बनो। ऐ मेरे भाई! रोज़ा फ़र्ज़-ए-ऐन है और फ़र्ज़-ए-ऐन फ़र्ज़-ए-किफ़ाया पर मुक़द्दम (पहले) होता है। तरावीह में ख़त्म-ए-क़ुरआन सुन्नत-ए-किफ़ाया है और सुन्नत-ए-किफ़ाया सुन्नत-ए-ऐन से मोख़र (बाद में) होती है। यह कैसी नादानी का ज़ुल्म है कि सुन्नत-ए-किफ़ाया को फ़र्ज़-ए-ऐन पर मुक़द्दम रखते हैं। विद्वानों में से कुछ वे हैं जिन्होंने लोगों की सुस्ती की वजह से ख़त्म (क़ुरआन) को छोड़ने की गुंजाइश दी है, यह कहते हुए कि 'जो अपने ज़माने के लोगों से वाक़िफ़ नहीं वह जाहिल है।' जैसा कि 'अद-दुर्र अल-मुख़्तार' में अज़-ज़ाहिदी से, अल-वबरी और अल-किरमानी के हवाले से है। और उसी में 'अल-इख़्तियार' से है: 'हमारे ज़माने में सबसे बेहतर मिक़दार वह है जो उन पर बोझ न बने।' लेखक, यानी अल-ग़ज़्ज़ी और अन्य ने इस पर सहमति जताई। और 'अल-मुज्तबा' से इमाम से रिवायत है: 'अगर किसी ने फ़र्ज़ नमाज़ में तीन छोटी आयतें या एक लंबी आयत पढ़ी, तो उसने अच्छा किया और बुरा नहीं किया।' ज़ाहिदी ने कहा: 'फिर तरावीह के मामले में आपकी क्या राय है?' मैं कहता हूँ: 'इस शख़्स की जहालत को देखो जो रमज़ान का रोज़ा ऐसी चीज़ के लिए छोड़ रहा है जिसके छोड़ने की इजाज़त इसके(रोज़े) जैसे काम के लिए दी जा सकती थी।' अमीरुल मोमिनीन का रोज़ा...

[मुख्य पाठ, कॉलम 2 - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] तो तमाम क़ुरआन तरावीह में न पढ़े और न सुने। जिस तरीक़े से बीस तरावीह अदा करने पर क़ादिर है अदा करे। रोज़ा अगर न रखा तो नार-ए-जहन्नम और अज़ाब-ए-अलीम का मुस्तहिक़ ठहरेगा। ऐ मेरे भाई! रोज़ा फ़र्ज़-ए-ऐन है और फ़र्ज़-ए-ऐन फ़र्ज़-ए-किफ़ाया पर मुक़द्दम होता है। और ख़त्म-ए-क़ुरआन तरावीह में सुन्नत-ए-किफ़ाया है और सुन्नत-ए-किफ़ाया सुन्नत-ए-ऐन से मोख़र होती है। यह क्या ज़ुल्म है कि सुन्नत-ए-किफ़ाया को फ़र्ज़-ए-ऐन पर मुक़द्दम कर दिया गया है। बाज़ उलेमा ने क़ौम में सुस्ती व काहिली पैदा हो जाने की वजह से ख़त्म-ए-क़ुरआन को तर्क कर देने की भी गुंजाइश यह कहते हुए रवा रखी है कि जो शख़्स अपने ज़माने के हालात से आगाह नहीं वह जाहिल है जैसा कि दर्र-ए-मुख़्तार में ज़ाहिदी से और वहां वबरी और किरमानी के हवाले से है और उसी में अल-इख़्तियार से है कि हमारे ज़माने में इतनी मिक़दार अफ़ज़ल है जो बोझ न बने। और कहा कि इसे ही मुसन्निफ़ अल-ग़ज़्ज़ी वग़ैरह ने साबित रखा है। अल-मुज्तबा में इमाम साहब से मनक़ूल है कि अगर किसी ने फ़राइज़ में तीन आयात छोटी या बड़ी

पढ़ीं तो उसने बहुत अच्छा किया और वह गुनहगार नहीं। ज़ाहिदी कहते हैं कि फिर तरावीह के मामले में आपकी क्या राय है? मैं कहता हूँ इस जाहिल को देखो जो रमज़ान का रोज़ा ऐसे अमल की ख़ातिर तर्क कर रहा है जिसका तर्क रोज़े की ख़ातिर किया जा सकता था। एक दिन अमीरुल मोमिनीन हज़रत...

---

1. अद-दुर्र अल-मुख़्तार, बाबुल वित्र वन्नवाफ़िल, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 1/99
2. अद-दुर्र अल-मुख़्तार, बाबुल वित्र वन्नवाफ़िल, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 1/98

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

[متن، کالم 1 - عربی/اردو آمیز] تمام قرآن در تراویح خواں و مشنو ہمیں بست رکعت بہ نہجیکہ قادر باشی بجا آور و روزہ از دست دادہ مستحق نار جحیم و عذاب الیم مباش اے برادر! روزہ فرض عین ست و فرض عین بر فرض کفایہ مقدم و ختم قرآن در تراویح سنّتِ کفایہ است و سنّتِ کفایہ از سنت عین موخر ایں چہ ستم بے خردی باشک کہ سنّتِ کفایہ بر فرض عین مقدم دارند، من العلماء من وسع فی ترک الختم لکسل القوم قائلان من لم یکن عالماً باھل زمانہ فھو جاھل کما فی الدر مختار عن الزاھدی عن الو بری والکرماني وفیہ عن الاختیار الافضل فی زماننا قدر مالا یثقل علیھم قال اقرہ الصنف یعنی الغزی وغیرُہ وعن المجتبی عن الامام لو قرأ ثلاثاً قصاراً او آیۃ طویلۃ في الفرض فقد احسن ولم یسیئ قال الزاھدی فما ظنك بالتراویح قلت فانظر الی جھل ھذا الذی یترک صوم رمضان لشیئی یرخص فی ترکہ لمثل ھذا روزے امیر المومنین

[متن، کالم 2 - اردو ترجمہ و تشریح] تو تمام قرآن تراویح میں نہ پڑھے اور نہ سنے، جس طریقہ سے بیس تراویح ادا کرنے پر قادر ہے ادا کرے، روزہ اگر نہ رکھا تو نارِ جہنم اور عذابِ الیم کا مستحق ٹھہرے گا، اے میرے بھائی! روزہ فرضِ عین ہے اور فرضِ عین فرضِ کفایہ پر مقدم ہوتا ہے، اور ختمِ قرآن تراویح میں سنتِ کفایہ ہے اور سنتِ کفایہ سنتِ عین سے مؤخر ہوتی ہے، یہ کیا ظلم ہے کہ سنتِ کفایہ کو فرضِ عین پر مقدم کردیا گیا ہے، بعض علماء نے قوم میں سستی و کاہلی پیدا ہو جانے کی وجہ سے ختمِ قرآن کو ترک کردینے کی بھی گنجائش یہ کہتے ہوئے روارکھی ہے کہ جو شخص اپنے زمانے کے حالات سے آگاہ نہیں وہ جاہل ہے جیسا کہ درمختار میں زاہدی سے اور وہاں وبری اور کرمانی کے حوالے سے ہے اور اسی میں الاختیار سے ہے کہ ہمارے زمانے میں اتنی مقدار افضل ہے جو بوجھ نہ بنے، اور کہا کہ اسے ہی مصنف الغزی وغیرہ نے ثابت رکھا

ہے، المجتبیٰ میں امام صاحب سے منقول ہے کہ اگر کسی نے فرائض میں تین آیات چھوٹی یا بڑی پڑھیں تو اس نے بہت اچھا کیا اور وہ گنہگار نہیں۔ زاہدی کہتے ہیں کہ پھر تراویح کے معاملہ میں آپ کی کیا رائے ہے؟ میں کہتا ہوں اس جاہل کو دیکھو جو رمضان کا روزہ ایسے عمل کی خاطر ترک کر رہا ہے جس کا ترک روزے کی خاطر کیا جا سکتا تھا۔ ایک دن امیر المومنین حضرت

---

1 در مختار، باب الوتر والنوافل، مطبع مجتبائی دہلی، 99/1 2 در مختار باب الوتر والنوافل مطبع مجتبائی دہلی 98/1

Fatawa Razawiyya Volume 10

Farooq-e-Azam (may Allah be pleased with him) did not see Hazrat Sulaiman bin Abi Hathma in the morning congregation. He asked his mother the reason, and she stated that he had been praying all night; at dawn, he fell asleep, which is why he could not participate in the congregation. The Commander of the Faithful said: "To me, joining the morning prayer in congregation is far superior to worshipping the entire night."

In Muwatta, Imam Malik narrated from Shahab, from Abu Bakr bin Sulaiman bin Abi Hathma, from Hazrat Umar ibn al-Khattab, that he found Sulaiman bin Abi Hathma missing from the morning prayer. The next day, Hazrat Umar went towards the market; Sulaiman lived in a place between the mosque and the market. He passed by Sulaiman's mother, Hazrat Shifa, and said: "I did not see Sulaiman in the morning prayer." She replied: "He was praying all night, and in the morning, sleep overcame him." He said: "Attending the morning prayer is more beloved to me than standing in prayer the whole night."

Abu Bakr ibn Abi Shaybah narrated it from Abdul Rahman, from Hazrat Umar (may Allah be pleased with him), and his words are: "To perform both prayers (Isha and Fajr) with the congregation is more beloved to me than what is between them [staying awake all night]."

between

1. Muwatta Imam Malik, Chapter regarding Isha and Fajr, Mir Muhammad Kutub Khana Karachi, p. 115.
2. Musannaf Ibn Abi Shaybah, on falling behind in Isha and Fajr, etc., Idarat-ul-Quran Karachi, 1/333.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

फ़ारूक़-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने हज़रत सुलेमान बिन अबी हश्मा को सुबह की जमाअत में नहीं देखा। आपने उनकी माँ से वजह पूछी तो उन्होंने अर्ज़ किया कि वे पूरी रात नमाज़ पढ़ते रहे; सुबह के वक़्त उन्हें नींद आ गई जिस वजह से वे जमाअत में शरीक न हो सके। अमीरुल मोमिनीन ने फ़रमाया: "मेरे नज़दीक सुबह की नमाज़ में शरीक होना पूरी रात की इबादत से कहीं अफ़ज़ल है।"

'मुअत्ता' में इमाम मालिक ने शहाब से, उन्होंने अबू बक्र बिन सुलेमान बिन अबी हश्मा से, उन्होंने हज़रत उमर बिन ख़त्ताब से बयान किया कि उन्होंने सुलेमान बिन अबी हश्मा को सुबह की नमाज़ में ग़ायब पाया। दूसरे दिन हज़रत उमर बाज़ार की तरफ तशरीफ़ ले गए; सुलेमान मस्जिद और बाज़ार के बीच की जगह पर रहते थे। आप सुलेमान की माँ हज़रत शिफ़ा के पास से गुज़रे और फ़रमाया: "मैंने सुलेमान को सुबह की नमाज़ में नहीं देखा।" वह कहने लगीं: "वह सारी रात नमाज़ पढ़ता रहा, सुबह उस पर नींद का ग़लबा हो गया।" आपने फ़रमाया: "सुबह की नमाज़ के लिए हाज़िर होना मुझे पूरी रात के क़ियाम से ज़्यादा महबूब है।"

इसे अबू बक्र इब्न अबी शैबा ने अब्दुर रहमान से, उन्होंने हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है, और उनके शब्द ये हैं: "मुझे जमाअत के साथ दोनों नमाज़ें (इशा और फ़ज्र) अदा करना उन दोनों के दरमियान [पूरी रात जागने से ज़्यादा पसंद है]।"

दरमियान

1. मुअत्ता इमाम मालिक, बाब मा जा फ़िल अतमा वस सुबह, मीर मोहम्मद कुतुब ख़ाना कराची, पृ. 115।
2. मुसन्निफ़ इब्न अबी शैबा, इशा और फ़ज्र में पीछे रह जाने के बारे में आदि, इदारातुल क़ुरआन कराची, 1/333।

पेज 340/836

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

فاروق اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے حضرت سلیمان بن ابی حثمہ کو صبح کی جماعت میں نہ دیکھا آپ نے ان کی والدہ سے وجہ پوچھی تو انھوں نے عرض کیا وہ تمام رات نماز پڑھتے رہے صبح کے وقت انھیں نیند آگئی جس کی وجہ سے وہ جماعت میں شریک نہ ہوسکے، امیر المومنین نے فرمایا: میرے نزدیک صبح کی نماز میں شریک ہونا تمام رات کی عبادت سے کہیں افضل ہے۔ موطا میں امام مالک نے شہاب سے انھوں نے ابوبکر بن سلیمان بن ابی حثمہ سے انھوں نے حضرت عمر بن خطاب سے بیان کیا کہ انہوں نے سلیمان بن ابی حثمہ کو نماز صبح میں غائب پایا، دوسرے دن حضرت عمر بازار کی طرف تشریف لے گئے سلیمان مسجد اور بازار کی درمیانی جگہ پر رہائش پذیر تھے، آپ سلیمان کی والدہ حضرت شفا کے پاس سے گزرے فرمایا: میں نے سلیمان کو نماز صبح میں نہیں دیکھا وہ کہنے لگیں: وہ ساری رات نماز پڑھتا رہا صبح اس پر نیند کا غلبہ ہوگیا۔ آپ نے فرمایا: نماز صبح کیلئے حاضر ہونا مجھے تمام رات قیام سے زیادہ محبوب ہے۔ اسے ابوبکر ابن ابی شیبہ نے عبدالرحمن سے، انہوں نے حضرت عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا، اور اس کے الفاظ یہ ہیں: "مجھے جماعت کے ساتھ دونوں نمازیں ادا کرنا ان دونوں (عشاء اور صبح) کے درمیان

فاروق اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ سلیمان بن ابی حثمہ را در جماعت صبح نہ دید مادرش را پرسید عرض داد او ہمہ شب نماز گزاردہ است صبح دم خوابش بر دو حضور جماعت نتوانست امیر المومنین فرمود مراد رجماعت صبح حاضر شدن محبوب ترست از شب زندہ داشتن مالک فی المؤطا عن شہاب عن ابی بکر بن سلیمان بن ابی حثمہ عن عمر الخطاب فقد سلیمان بن ابی حثمہ فی صلوۃ الصبح وان عمر بن خطاب غدا الی السوق وسکن سلیمان بین السوق والمسجد فمر علی الشفاء ام

سلیمان فقال لمالم ارسلیمان فی صلوة الصبح فقالت انه بات یصلي فغلبته عیناه فقال عمر لان اشهد صلوة الصبح فی الجماعة احب الی ان اقوم لیلة اهـ ۱ رواه ابوبکر بن ابی شیبة عن عبد الرحمن عن عمر و لفظه لان اصلیهما فی جماعة احب الی من احیی مابینهما ۲ یعنی الصبح والعشاء

در میان

1 موطا امام مالک باب ماجاء فی العتمة والصبح میر محمد کتب خانہ کراچی ص ۱۱۵ 2 مصنف ابن ابی شیبہ فی التخلف فی العشاء والفجر الخ ادارة القرآن کراچی ۱/۳۳۳

Fatawa Razawiyya Volume 10

The luminous presence, Syedna Ghaus al-Thaqalayn, Pir Dastagir Muhyid-Din Abu Muhammad Abd al-Qadir Jilani (may Allah be pleased with him), states in the treatise on the 'Order of Worship' in his blessed book 'Futuh al-Ghayb Sharif', and he establishes a 'Great Resurrection' (stern warning) for such an ignorant person who abandons obligatory (Fard) acts due to supererogatory (Sunnah and Nawafil) ones. The humble one (may Allah forgive him) quotes a part of this blessed discourse along with the translation by Shaykh al-Muhaqqiq Maulana Abdul Haq Muhaddith Dehlvi (may Allah's mercy be upon him), so that the ignorant may awaken from the sleep of negligence, and Allah alone is the Giver of guidance.

Ghaus-e-Azam (may Allah be pleased with him) says: "A believer should perform the obligatory acts first." Muslims should first perform those acts of worship which Allah the Almighty has made obligatory and necessary upon them, by abandoning which they become sinners and liable to punishment. "When one is finished with these obligations, then one should engage in the Sunan." When a Muslim is finished with the obligatory acts, then he should engage in those Sunan which are fixed and emphasized (Mu'akkadah) alongside the obligations, the omission of which causes offense and reproach. "Then engage in Nawafil (supererogatory acts) and virtues." Then engage in those voluntary acts of worship which are beyond the obligations and Sunan and hold merit; performing them earns reward, but omitting them is not a sin. "Engaging in Sunan as long as one is not free from obligations is foolishness and arrogance." So, until obligations...

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

हुज़ूर पुर नूर सय्यदना गौसुल सक़लैन पीर दस्तगीर मुहीउद्दीन अबू मुहम्मद अब्दुल क़ादिर जिलानी (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) अपनी मुबारक किताब 'फुतूह अल-ग़ैब शरीफ़' के'इबादतों की तरतीब' वाले लेख में फ़रमाते हैं और ऐसे जाहिल पर जो सुन्नत और नफ़ल की वजह से फ़राइज़ (अनिवार्य कर्तव्यों) को छोड़ देता है, क़यामत-ए-कुबरा बरपा फ़रमाते हैं (सख्त चेतावनी देते हैं)। फ़क़ीर (अल्लाह तआला उसे माफ़ फ़रमाए) इस मुबारक गुफ़्तगू का कुछ हिस्सा शेख़ अल-मुहक्किक़ मौलाना अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी (रहमतुल्लाह तआला अलैहि) के अनुवाद के साथ यहाँ नक़ल करता है ताकि जाहिल लोग ग़फ़लत की नींद से जागें, और अल्लाह तआला ही हिदायत देने वाला है।

हुज़ूर गौस-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) फ़रमाते हैं कि "मोमिन को चाहिए कि वह पहले फ़राइज़ बजा लाए।" मुसलमानों को चाहिए कि वह पहले उन इबादतों को पूरा करें जो अल्लाह तआला ने उन पर फ़र्ज़ और वाजिब की हैं, जिनके छोड़ने से वे गुनहगार और पकड़ के काबिल बन जाते हैं। "जब इन फ़राइज़ से फ़ुरसत हो जाए, तो फिर सुन्नतों में मशग़ूल हो।" जब मुसलमान इन फ़राइज़ से फ़ारिग हो जाए, तो फिर उन सुन्नतों में मशग़ूल हो जो फ़राइज़ के साथ तयशुदा और मुअक्कदह हैं, जिनका छोड़ना बुराई और डांट-फटकार का कारण है। "फिर नवाफ़िल और फ़ज़ाइल में मशग़ूल हो।" फिर उन नफ़्ली इबादतों में मशग़ूल हो जो इन फ़राइज़ और सुन्नतों से ज़्यादा हैं और फ़ज़ीलत रखती हैं, उनका करना सवाब है, लेकिन उनका छोड़ना गुनाह नहीं। "जब तक फ़राइज़ से फ़ुरसत न हो जाए, सुन्नतों में मशग़ूल होना बेवकूफी और तक़ब्बुर (घमंड) है।" तो जब तक फ़राइज़...

पेज 341/836

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

قیام سے محبوب ہے۔ حضور پر نور سیدنا غوث الثقلین پیر دستگیر محی الدین ابو محمد عبد القادر جیلانی رضی اللہ تعالیٰ عنہ اپنی مبارک کتاب فتوح الغیب شریف کے ترتیب عبادات کے مقالہ میں فرماتے ہیں اور ایسے جاہل پر جو سنّت و نفل کی وجہ سے فرائض ترک کر دیتا ہے قیامت کبریٰ برپا فرماتے ہیں، فقیر (اللہ تعالیٰ اسے بخش دے) اس مبارک گفتگو سے کچھ حصہ مع ترجمہ شیخ محقق مولانا عبد الحق محدث دہلوی رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ نقل کرتا ہے تا کہ جاہل لوگ خواب غفلت سے بیدار ہوں اور اللہ تعالیٰ ہی ہدایت عطا فرمانے والا ہے، حضور غوثِ اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ فرماتے ہیں کہ "مومن کو چاہئے کہ وہ پہلے فرائض بجالائے" مسلمانوں کو چاہئے کہ وہ پہلے ان عبادات کو بجالائے جو اللہ تعالیٰ نے ان پر فرض و واجب کی ہیں جن کے ترک سے وہ گنہگار اور قابلِ گرفت بن جاتے ہیں "جب ان فرائض سے فراغت ہو جائے تو پھر سُنن میں مشغول ہو" جب مسلمان ان فرائض سے فارغ ہو جائے تو پھر ان سُنن میں مشغول ہو جو فرائض کے ہمراہ معین مؤکدہ ہیں جن کا ترک اسائت اور عتاب کا سبب ہے" پھر نوافل و فضائل میں مشغول ہو" پھر ان نفلی عبادات میں مشغول ہو جو ان فرائض و سُنن سے زائد ہیں اور فضیلت رکھتے ہیں، ان کا بجالانا ثواب، لیکن ان کا ترک گناہ نہیں "جب تک فرائض سے فراغت نہ ہو سُنن میں مشغول ہونا بیوقوفی اور رعونت ہے) تو جب تک فرائض

صفحہ 341 از 836

Fatawa-e-Razvia Volume Two

...not attending to the obligatory duties and not completing them, then becoming occupied with the Sunnah practices is a sign of ignorance, lack of wisdom, and foolishness. For abandoning that which is binding and necessary, while focusing on that which is not necessary, is far removed from the principles of intellect and reason; since for a wise person, averting harm is more important and mandatory than seeking benefits. In fact, in such a situation, any real benefit is negated. By this analogy, performing supererogatory acts (Nawafil) while neglecting obligatory duties (Fara'id) is also unacceptable and invalid, just as it is said: "If one becomes occupied with Sunnahs and Nawafil before the Fara'id," meaning if one gets busy with the Sunnahs and Nawafil before fulfilling the obligatory duties, then "they will not be accepted, rather there will be humiliation and disgrace." The scholars state that performing supererogatory acts while abandoning obligatory duties is exactly like someone giving a gift to their creditor without paying off their debt—this gift will never be accepted. It is also said that whoever considers supererogatory acts more important than the obligatory duties is deluded and deceived. It is also said that two things lead people to destruction: being occupied with supererogatory worship while wasting the obligatory ones, and the actions of the physical limbs without the conformity of the heart. The example of this is like a person whom a king summons to his service. That is, the state of a person who abandons obligatory duties to perform Sunnahs and Nawafil is like the state of a person whom a king summons for his service—this refers to those obligatory duties commanded by Allah Almighty, Who is the Absolute Ruler and King, and He summons in this supreme manner—"so he does not come to Him."

फ़तावा रिज़विया जिल्द दो

...फ़राइज़ (अनिवार्य कर्तव्यों) को पूरा न करना और उसकी जगह सुन्नतों में लग जाना मूर्खता और नासमझी की निशानी है। क्योंकि ऐसी चीज़ को छोड़ देना जो लाज़िम और ज़रूरी थी और ऐसी चीज़ का एहतमाम करना जो ज़रूरी नहीं थी, अक्ल और दानिशमंदी के कायदे से दूर है। अक्लमंद के लिए मुनाफ़े(फायदे) हासिल करने से ज़्यादा ज़रूरी नुकसान को दूर करना होता है, बल्कि हकीकत में ऐसी सूरत में कोई नफ़ा है ही नहीं। इसी आधार पर नवाफ़िल अदा करना और फ़राइज़ छोड़ देना भी नाक़ाबिले-क़बूल और बातिल (अमान्य) है जैसा कि फ़रमाया गया: 'अगर कोई फ़राइज़ से पहले सुन्नतों और नवाफ़िल में मशगूल हो गया,' यानी फर्ज की अदायगी से पहले ही सुन्नत और नफ़्ल में लग गया तो 'वे क़बूल नहीं होंगे बल्कि ज़िल्लत और रुसवाई होगी'। उलमा फ़रमाते हैं कि नवाफ़िल को अदा करना और फ़राइज़ को तर्क करना (छोड़ देना) ठीक वैसा ही है जैसे कोई अपने कर्ज़दार को तोहफ़ा दे दे मगर उसका कर्ज़ अदा न करे, तो यह तोहफ़ा हरगिज़ क़बूल न होगा। यह भी कहा गया है कि जिसके नज़दीक नवाफ़िल, फ़राइज़ के मुक़ाबले ज़्यादा अहम हों, वह धोखे और फ़रेब का शिकार है। यह भी कहा गया है कि दो चीज़ें लोगों को तबाह कर देने वाली हैं: नफ़ली इबादतों में मशगूल होकर फ़राइज़ को बर्बाद कर देना, और दिल की रज़ामंदी के बिना शरीर के बाहरी अंगों से काम लेना। इसकी मिसाल उस शख्स की तरह है जिसे बादशाह ने अपनी ख़िदमत (सेवा) के लिए बुलाया हो। यानी उस शख्स का हाल जो फ़राइज़ छोड़कर सुन्नत और नफ़्ल अदा करे, उस शख्स की तरह है जिसे बादशाह अपनी ख़िदमत में तलब करे, इससे मुराद वे फ़राइज़ हैं जिनका हुक्म अल्लाह तआला ने दिया है जो मुतलक़ हाकिम और बादशाह है, और वह इस आला तरीक़े पर बुलाता है —'फिर वह उसकी तरफ़ [नहीं आता]'।

पृष्ठ 342 का 836

فتاویٰ رضویہ جلد دوم

نہ پرداز از فرائض و تمام نہ کند آنہا را پس مشغول شدن بسنتہا نشان جہل و بے خردی و سبک عقلی ست چہ ترک انچہ لازم و ضروری ست واہتمام بہ انچہ نہ ضروری ست از قاعدہ عقل و خرد دور ست چہ دفع ضرر اہم است بر عاقل از جلب نفع بلکہ بہ حقیقت نفع دریں صورت منتفی ست بایں قیاس کردن نوافل با ترک فرائض نیز نا مقبول و باطل ست چنانچہ می فرمایند فان اشتغل بالسنن والنوافل قبل الفرائض پس اگر مشغول گردد بسنتہا و نفلما پیش از اتیان فرائض لم تقبل منہ واھین در پذیر فتہ نہ شود از وبلکہ خوار کردہ شود و گفتہ اند کہ اتیان نوافل با ترک فرائض بداں ماند کہ یکے ہدیہ برد کسے کہ دام وے دارد و دام نہد ایں ہرگز قبول نیفتد و نیز گفتہ اند کہ ہر کہ نوافل نزد وے اہم از فرائض باشد وے مخدوع و ممکور ست و نیز گفتہ اند ہلاک مردم دو چیز ست اشتغال نافل با تضیع فرائض و عمل جوارح بے مواطات قلب، فمثلہ کمثل رجل یدعوہ الملك الی خدمتہ پس حال و قصہ غریب آں کسے کہ ترک مے کند فرائض را با تیان سنن و نوافل ہمچو حال مردے ست کہ مے خواند او را بادشاہ بخدمت خود، کنایت ست از اتیان فرائض کہ پروردگار تعالی کہ حامل و بادشاہ علی الاطلاق ست بداں خواندہ و امر کردہ است فلا یأتی الیہ

مکمل نہ ہو جائیں سنتوں میں مشغول ہونا جہالت اور بے عقلی ہے کیونکہ ایسی چیز کا ترک کرنا جو لازم و ضروری تھی اور ایسی چیز کا اہتمام جو ضروری نہیں تھی عقل و خرد کے قاعدے سے دور ہے کیونکہ عاقل کے لیے منافع کے حصول سے ضرر کا دور کرنا اہم وواجب ہوتا ہے بلکہ حقیقۃً اس صورت میں نفع ہے ہی نہیں۔ اسی پر قیاس نوافل ادا کرنا اور فرائض ترک کردینا بھی نامقبول و باطل ہے جیسا کہ فرمایا "پس اگر سنن و نوافل میں فرائض سے پہلے مشغول ہو گیا" یعنی اگر فرض کی ادائیگی سے پہلے ہی سنن و نوافل میں مصروف ہو گیا تو "وہ مقبول نہ ہوں

گے بلکہ ذلت و رسوائی ہو گی"۔ علماء فرماتے ہیں کہ نوافل کا بجالانا اور فرائض کو ترک کر دینا ایسے ہی جیسے کوئی اپنے قرض خواہ کو ہدیہ دے دے مگر اس کا قرض ادا نہ کرے تو یہ ہدیہ ہرگز مقبول نہ ہو گا۔ یہ بھی کہا گیا کہ جس کے نزدیک نوافل فرائض کی نسبت اہم ہوں وہ دھوکا وفریب زدہ ہے۔ یہ بھی کہا گیا ہے کہ دو چیزیں لوگوں کو ہلاک کر دینے والی ہیں نفلی عبادات میں مشغول ہو کر فرائض کو ضائع کر دینا اور قلب کی موافقت کے بغیر ظاہری اعضاء کا عمل کرنا، اس کی مثال اس شخص کی طرح ہے جسے بادشاہ اپنی خدمت میں بلائے" یعنی اس شخص کا حال جو فرائض ترک کرکے سنن و نوافل بجالائے اس کا حال اس شخص کی طرح ہے جسے بادشاہ اپنی خدمت میں طلب کرے، اس سے مراد وہ فرائض ہیں جن کا حکم اللہ تعالیٰ نے دیا ہے جو علی الاطلاق حاکم و بادشاہ ہے اور وہ اس اعلیٰ طریقے پر بلاتا ہے "پس وہ اس کی طرف"

Fatawa Razawiya Volume 10

[Left Column - Persian text with Urdu translations in brackets] Thus, that man does not come towards the King but stays in the service of the Amir who is a slave of the King and his servant. He stands in the service of one of the King's nobles, who is the King's slave and servant, and is under his power and dominion. The Vizier (Minister) has the power of control and authority. This is the example of performing Sunnah and Nawafil prayers, which are done according to the path of the Messenger of Allah (peace be upon him), who is the servant and special Amir/Vizier of His court, and according to the recommendations of the scholars, who are His servants and slaves. Although all is by the command and legislation of the Lord Almighty, however, obligatory acts (Fara'id) are attributed to the Divine presence because of compulsion and necessity, and Sunnahs and Nawafil, which are not at that same rank, are attributed to the service of the Messenger, his companions, and followers (peace be upon them all). It is narrated from Ali bin Abi Talib: From the Commander of the Faithful Ali (may Allah honor him), who said: The Messenger of Allah (peace be upon him) said: 'The case of a person performing supererogatory prayers (Nawafil) while he still has obligatory ones (Fara'id) to fulfill—that is, there are obligations upon him that he has not performed—is like the case of a pregnant woman whose pregnancy has reached its full term, but when the time of childbirth comes, she miscarries.' Thus, when the time of birth approached, she threw out the incomplete child from the womb. The reason for this comparison is the enduring of pain and hardship in vain, because since...

[Right Column - Urdu translation/explanation of the Persian text] ...does not come "meaning that man does not come towards the King" and he stands by such an Amir of the King as if he were his slave and servant) meaning he stands by such a servant who is a slave of the King "and is in his possession and under his jurisdiction" he is under his control and power; this is the example of those Sunnah and Nawafil prayers which are performed according to the method of the Messenger of Allah (peace be upon him) (who is the Amir and special Vizier in the Divine presence) or according to the recommendations of the scholars (who are the slaves and servants of Allah Almighty). Although everything is by the command of the Lord, yet obligatory acts are attributed to Allah because of their binding and compulsory nature, while those Sunnah and Nawafil which do not hold this rank are attributed towards the Messenger of Allah (peace be upon him) and his companions and followers. It is narrated from Hazrat Ali bin Abi Talib; the Commander of the Faithful Hazrat Ali (may

Allah honor him) states that the Messenger of Allah (peace be upon him) said: "The example of one who performs Nawafil is like that of a person who performs Nawafil while he owes Fara'id" while there are such Fara'id due from him which he has not performed "is like that pregnant woman" "whose term of pregnancy was completed" "when the time of birth came, she miscarried" (meaning she dropped the incomplete child at the time of giving birth). The point of comparison is the uselessness of the pain and hardship endured, because when those Nawafil are not even accepted in the absence of performing Fara'id...

[बायां कॉलम - फ़ारसी पाठ और कोष्ठक में उर्दू अनुवाद] अतः वह व्यक्ति राजा के पास नहीं आता बल्कि उस अमीर की सेवा में रहता है जो राजा का गुलाम और सेवक है। वह राजा के रईसों में से एक की सेवा में खड़ा होता है, जो राजा का गुलाम और सेवक है, और उसके अधिकार और शासन के अधीन है। वज़ीर (मंत्री) के पास नियंत्रण और अधिकार की शक्ति है। यह सुन्नत और नवाफ़िल नमाज़ अदा करने का उदाहरण है, जो अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के रास्ते के अनुसार की जाती हैं, जो उसके दरबार के सेवक और विशेष अमीर/वज़ीर हैं, और विद्वानों की सिफारिशों के अनुसार, जो उसके सेवक और गुलाम हैं। हालाँकि सब कुछ सर्वशक्तिमान प्रभु के आदेश और कानून के अनुसार है, तथापि, अनिवार्य कार्यों (फ़राइज़) को विवशता और आवश्यकता के कारण ईश्वरीय उपस्थिति के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है, और सुन्नत और नवाफ़िल, जो उस समान रैंक पर नहीं हैं, रसूल, उनके साथियों और अनुयायियों (उन सभी पर शांति हो) की सेवा के लिए जिम्मेदार ठहराए जाते हैं। अली बिन अबी तालिब से वर्णित है: मोमिनों के अमीर अली (अल्लाह उनके चेहरे को सम्मान दे) से, जिन्होंने कहा: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: 'नवाफ़िल अदा करने वाले व्यक्ति का मामला, जबकि उसके पास अभी भी फ़राइज़ अदा करने के लिए हैं - अर्थात, उस पर ऐसे दायित्व हैं जो उसने नहीं किए हैं - उस गर्भवती महिला के मामले की तरह है जिसका गर्भकाल पूरा हो चुका है, लेकिन जब प्रसव का समय आता है, तो उसका गर्भपात हो जाता है।' इस प्रकार, जब जन्म का समय निकट आया, तो उसने गर्भ से अधूरे बच्चे को बाहर निकाल दिया। इस तुलना का कारण व्यर्थ में दर्द और कठिनाई सहना है, क्योंकि...

[दायां कॉलम - फ़ारसी पाठ का उर्दू अनुवाद/व्याख्या] ...नहीं आता "यानी वह आदमी राजा की ओर नहीं आता" और वह राजा के ऐसे अमीर के पास खड़ा रहता है जैसे कि वह उसका गुलाम और सेवक हो) यानी वह ऐसे सेवक के पास खड़ा रहता है जो राजा का गुलाम है "और उसके कब्जे और उसके अधिकार क्षेत्र में है" वह उसके नियंत्रण और शक्ति के अधीन है; यह उन सुन्नत और नवाफ़िल नमाज़ों का उदाहरण है जो अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के तरीके के अनुसार अदा की जाती हैं (जो ईश्वरीय उपस्थिति में अमीर और विशेष वज़ीर हैं) या विद्वानों की सिफारिशों के अनुसार (जो अल्लाह सर्वशक्तिमान के गुलाम और सेवक हैं)। हालाँकि सब कुछ प्रभु के आदेश से है, फिर भी अनिवार्य कार्यों को उनकी बाध्यकारी और अनिवार्य प्रकृति के कारण अल्लाह के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है, जबकि वे सुन्नत और नवाफ़िल जो इस पद पर नहीं हैं, अल्लाह के रसूल

(सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) और उनके साथियों और अनुयायियों की ओर जिम्मेदार ठहराए जाते हैं। हज़रत अली बिन अबी तालिब से वर्णित है; मोमिनों के अमीर हज़रत अली (अल्लाह उनके चेहरे को सम्मान दे) फरमाते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "नवाफ़िल अदा करने वाले की मिसाल उस व्यक्ति की तरह है जो नवाफ़िल अदा करता है जबकि उस पर फ़राइज़ बकाया हैं" जबकि उसके जिम्मे ऐसे फ़राइज़ हैं जिन्हें उसने अदा नहीं किया है "उस गर्भवती महिला की तरह है" "जिसका गर्भकाल पूरा हो गया था" "जब जन्म का समय आया, तो उसका गर्भपात हो गया" (यानी उसने बच्चे को जन्म देने के समय अधूरे बच्चे को गिरा दिया)। तुलना का बिंदु झेले गए दर्द और कठिनाई की व्यर्थता है, क्योंकि जब फ़राइज़ अदा न करने की स्थिति में वे नवाफ़िल स्वीकार ही नहीं किए जाते...

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

[بایاں کالم - فارسی متن مع اردو ترجمہ] پس نمی آید آں مرد بسوئے بادشاہ و یقف بخدمۃ الامیر الذی ھو غلام الملک و خادمہ می ایستد در چاکری یکے از امرائے بادشاہ کہ غلام بادشاہ و چاکر اوست و تحت ید و ولایتہ وزیر دست قدرت و تصرف اوست ایں مثال اتیان سنن و نوافل ست کہ برطریقہ رسول خدا صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کہ بندہ و امیر وزیر خاص درگاہ اوست و باستحسان و استجاب علماء کہ بندگان و غلامان اویند عمل کردن ست اگر چہ ہمہ بحکم حضرت پروردگار تعالیٰ و تشریع اوست، ولیکن فرائض را بہ جہت الزام و ایجاب نسبت بجناب ایزدی کنند و سنن و نوافل را کہ نہ در آں مرتبہ اند بخدمت رسول و اصحاب و اتباع او صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم و علیہم اجمعین عن علی بن ابی طالب روایت ست، از امیر المومنین علی کرم اللہ تعالیٰ وجہہ قال قال رسول اللہ گفت گفت پیغمبر خدا صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ان مثل مصلی النوافل بدر ستیکہ قصہ وحال گزارندہ نفلہا وعلیہ فریضہ و حال آنکہ بر ذمہ او فرضی ست کہ نہ گزاردہ است آں را کمثل حبلی حملت ہمچو قصہ و حال زنے بار داشت کہ تمام شدہ است مدت حمل او فلما دانی نفاسہا اسقطت پس ہرگاہ نزدیک شد وقت زائیدن وے افگند بچہ را نا تمام از شکم و وجہ تشبیہ رنج دیدن و مشقت کشیدن ست بے فائدہ زیرا کہ چوں

[دایاں کالم - اردو ترجمہ و تشریح] نہیں آتا " یعنی وہ آدمی بادشاہ کی طرف نہیں آتا " اور وہ بادشاہ کے ایسے امیر کے پاس کھڑا رہتا ہے جیسے اس کا غلام اور خادم ہو) یعنی وہ ایسے چاکر کے پاس کھڑا رہتا ہے جو بادشاہ کا غلام ہے " اور اس کے قبضہ و ولایت میں ہے " وہ اس کے تصرف اور قدرت کے تحت ہے، یہ ان سنن و نوافل کی مثال ہے جو رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم (جو بارگاہ خداوندی میں امیر اور خصوصی وزیر ہیں) کے طریقہ پر یا علماء کے استحباب

پر (جو اللہ تعالیٰ کے غلام اور بندے ہیں) کے طریقہ پر عمل پیرا ہوتا ہے اگرچہ تمام پروردگار کے حکم سے ہی لیکن فرائض کی نسبت الزام و ایجاب کی وجہ سے اللہ تعالیٰ کی طرف کی جاتی ہے اور وہ سنن و نوافل جن کا درجہ یہ نہیں ان کی نسبت رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اور آپ کے اصحاب و اتباع کی طرف کردی جاتی ہے۔ حضرت علی بن ابی طالب سے مروی ہے امیر المومنین حضرت علی کرم اللہ وجہہ بیان کرتے ہیں کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: "نوافل ادا کرنے والے کی مثال اس شخص کی سی ہے جو نوافل ادا کرتا ہے حالانکہ اس پر فرائض ہیں " حالانکہ اس کے ذمہ ایسے فرائض ہیں جنھیں اس نے ادا نہیں کیا " اس حاملہ خاتون کی طرح ہے "جس کی مدت حمل مکمل ہو گئی " جب ولادت کا وقت آیا تو اس نے بچے کو گرا دیا) یعنی ناتمام بچے کو اس نے جننے کے وقت گرا دیا۔ وجہ تشبیہ بے فائدہ تکلیف و مشقت اٹھانا ہے کیونکہ جب وہ نوافل عدم ادائیگی فرائض مقبول ہی نہیں

Fatawa Rizvia Volume Ten

"Supererogatory prayers (Nafila) are not accepted due to the non-performance of obligatory prayers (Fara'id). The worshiper has endured pain and hardship in vain, just as a pregnant woman endured long-term suffering but the benefit in the form of a child did not materialize for her. 'So now she is not pregnant' because the objective was lost, 'nor is she a parent' because the fetus was miscarried. Similarly, as long as that worshiper does not perform the obligatory prayers, Allah Almighty will not accept his supererogatory prayers. So long as the worshiper does not fulfill the obligations, neither his supererogatory prayers nor his obligatory ones will be valid. Another example of a worshiper performing supererogatory prayers without performing obligations is like a trader who wants to profit without capital. Therefore, it was said, 'The example of the worshiper is like a trader', meaning the state of the aforementioned worshiper is like a merchant, 'he does not gain profit in trade', i.e., he cannot gain profit in commerce 'until he secures his capital'. How can he gain profit until he invests capital? 'Similarly is the case of the worshiper performing supererogatory prayers, his supererogatory prayers cannot be accepted without the fulfillment of obligations' because supererogatory prayers are like profit and obligatory prayers are like capital. Ah[1] (The words of the commentary have been somewhat summarized)." In short, this person is, by the consensus of scholars, a transgressor (Fasiq), wicked (Fajir), a committer of major sins, and deserving of painful punishment and great humiliation. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) saw some people who...

So that worshiper is enduring useless hardship, just as a pregnant woman suffered for a long time but did not get the benefit of a child. "So now she is not pregnant" because the purpose is lost "nor is she a parent" because the pregnancy was terminated. "In the same way, as long as that worshiper does not perform the obligatory prayers, Allah Almighty will not accept his supererogatory prayers." Therefore, until the worshiper fulfills the obligations, neither his supererogatory prayers nor his obligatory ones will exist. Another example of a worshiper performing supererogatory prayers without paying obligations is like a trader who wants to gain profit without capital. Hence, it is said, "The example of a worshiper is like a trader." This means the condition of the mentioned worshiper is like a merchant who "does not get profit in business." That is, he cannot profit in business "until he gets his capital back." How can he get profit until he invests capital? "The case is the same for the worshiper performing supererogatory prayers; his

supererogatory prayers cannot be accepted without performing obligatory prayers" because supererogatory prayers are like profit and obligatory ones are like capital. Ah, the words of the commentary have been slightly summarized. In short, this person is, by the consensus of scholars, a transgressor, a sinner, a perpetrator of major sins, deserving of painful punishment and great disgrace. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) saw some people who...

1 Futuh al-Ghaib with Persian commentary, Article 48, Munshi Naval Kishore, Lucknow, pp. 274 to 275. Page 344 of 836

फ़तावा रज़विया खंड दस

"फ़राज़ (अनिवार्य नमाज़) की अदायगी न होने के कारण नवाफ़िल (ऐच्छिक नमाज़) स्वीकार नहीं किए जाते। उस नमाज़ पढ़ने वाले ने व्यर्थ में कष्ट और परिश्रम झेला, जैसे कि एक गर्भवती महिला ने लंबे समय तक कष्ट सहा लेकिन संतान के रूप में उसे लाभ प्राप्त नहीं हुआ। 'तो अब वह गर्भवती नहीं है' क्योंकि उद्देश्य समाप्त हो गया, 'न ही वह संतान वाली है' क्योंकि गर्भपात हो गया। इसी तरह जब तक वह नमाज़ पढ़ने वाला फ़राज़ अदा नहीं करेगा, अल्लाह तआला उसके नवाफ़िल स्वीकार नहीं फरमाएगा। तो जब तक नमाज़ी फ़राज़ पूरे नहीं करता, न उसके नवाफ़िल होंगे और न फ़राज़। फ़राज़ अदा किए बिना नवाफ़िल पढ़ने वाले नमाज़ी की दूसरी मिसाल ऐसी है जैसे कोई व्यापारी बिना पूंजी के लाभ कमाना चाहे। इसलिए कहा गया, 'नमाज़ी की मिसाल व्यापारी की तरह है', यानी उक्त नमाज़ी का हाल एक सौदागर जैसा है, 'उसे व्यापार में लाभ प्राप्त नहीं होता', अर्थात वह सौदागरी में तब तक लाभ प्राप्त नहीं कर सकता 'जब तक कि वह अपनी पूंजी प्राप्त न कर ले'। जब तक वह पूंजी नहीं लगाएगा, उसे लाभ कैसे होगा? 'इसी तरह नवाफ़िल पढ़ने वाले नमाज़ी का मामला है, उसके नफ़्ल फ़राज़ की अदायगी के बिना स्वीकार नहीं किए जा सकते' क्योंकि नफ़्ल लाभ के समान हैं और फ़र्ज़ पूंजी के समान हैं। अह[1] (शराह के शब्दों में कुछ संक्षिप्तीकरण किया गया है)।" कुल मिलाकर, यह व्यक्ति विद्वानों की सहमति से फ़ासिक़ (अज्ञानी), फ़ाजिर (पापी), बड़े पापों का अपराधी और दर्दनाक दंड तथा बड़े अपमान का पात्र है। नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने कुछ लोगों को देखा कि वे...

तो वह नमाज़ी बिना किसी लाभ के कष्ट उठा रहा है जैसे कि एक गर्भवती महिला ने कितनी लंबी अवधि तक कष्ट उठाया लेकिन उस पर संतान के रूप में लाभ प्राप्त नहीं हुआ "तो अब यह गर्भवती नहीं है" क्योंकि उद्देश्य समाप्त हो गया "न ही यह संतान वाली है" क्योंकि गर्भ गिर गया। "इसी तरह वह नमाज़ी जब तक फ़राज़ अदा नहीं करेगा अल्लाह तआला उसके नवाफ़िल स्वीकार नहीं फरमाएगा" तो जब तक नमाज़ी फ़राज़ पूरे नहीं करता, न उसके नवाफ़िल होंगे न फ़राज़। फ़राज़ की अदायगी के बिना नवाफ़िल अदा करने वाले नमाज़ी की दूसरी मिसाल यूँ है जैसे कोई व्यापारी बिना पूंजी के लाभ प्राप्त करना चाहे, अतः फरमाया "नमाज़ी की मिसाल व्यापारी की तरह है" यानी उक्त मुसल्ली (नमाज़ी) का हाल सौदागर की तरह है "उसे व्यापार में लाभ प्राप्त नहीं होता" यानी उसे सौदागरी में उस समय तक लाभ नहीं हो सकता "यहाँ तक कि वह अपनी पूंजी प्राप्त कर ले" जब तक वह पूंजी नहीं लगाएगा उसे लाभ कैसे होगा "इसी तरह मामला है नवाफ़िल अदा करने वाले

नमाज़ी का, उसके नफ़्ल अदायगी-ए-फ़राज़ के बिना स्वीकार नहीं हो सकते" क्योंकि नफ़्ल लाभ के स्थान पर और फ़र्ज़ पूंजी के स्थान पर हैं। अह, शराह के शब्दों में कुछ संक्षिप्तीकरण किया गया है। कुल मिलाकर यह व्यक्ति विद्वानों की सर्वसम्मति से फ़ासिक़, फ़ाजिर, बड़े पापों का अपराधी, दर्दनाक अज़ाब और भारी अपमान का हक़दार है, नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने कुछ लोगों को देखा कि वे...

1 फ़ुत्ूह अल-ग़ैब मय शराह फारसी, लेख 48, मुंशी नवल किशोर, लखनऊ, पृष्ठ 274 से 275। पेज 344/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

قبول نیفتاد نوافل بجہت عدم ادائے فرائض حاصل شد مراں مصلّے رارنج و مشقت بے فائدہ چنانچہ حاصل شد آں زن حاملہ را کہ مدت مدید گزشت و مشقت کشید و فائدہ کہ حصول ولد ست بر آں مراتب نہ گشت فلا ہی ذات حمل پس آں زن نہ خداوند حمل ست باعتبار انتفائے مقصود کہ ولد ست ولا ہی ذات ولاد نہ خداوند ولادت بجہت اسقاطِ حمل وکذلك المصلی لا یقبل اللہ لہ نافلة حتی یؤدی الفریضہ و ہمچنین مصلّی مذکور در نمی پذیر دخدائے تعالٰی مراد را نماز نفل را تا آنکہ بجا آرد فرض را پس نہ فرض باشد اور او نہ نفل و مثال دیگر مصلّی نفل را بے ادائے فرائض مثل تاجر است کہ سود می خواھد بے سرمایہ چنانچہ می فرمایند و مثل المصلی کمثل التاجر وحال مصلّی مذکور حال سودا گر ست کہ لایحصل لہ ربحہ حاصل نمی شود مر اور اسود در سوداحتی یا خذار اس مالہ تا آنکہ بگیرد سرمایہ خود را فکذلك المصلی بالنوافل لا یقبل لہ نافلة حتی یؤدی الفریضة ہمچنین حال مشغول شونده بہ نوافل پذیر فتہ نمی شود مراور انفل کہ بمنزلہ سود اوست تا آنکہ ادا کند فرض را کہ بمشابہ سرمایہ است اھ ۱ مع اختصار فی کلمات الشرح۔ بالجملہ این کسے با جماع علماء فاسق و فاجر و مرتکب کبیرہ و مستحق عذاب الیم و خزی عظیم است۔ نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم قومے را دید کہ

تو وہ نمازی بے فائدہ مشقت اٹھارہا ہے جیسے کہ حاملہ خاتون نے کتنی طویل مدت تکلیف اٹھائی مگر اس پر فائدہ بصورت اولاد مرتب نہ ہوا "پس اب یہ حاملہ نہیں ہے" کیونکہ مقصود فوت ہو گیا " نہ ہی یہ صاحب اولاد ہے" کیونکہ حمل ساقط ہو گیا۔" اسی طرح وہ نمازی جب تک فرائض ادا نہیں کرے گا اللہ تعالٰی اس کے نوافل قبول نہیں فرمائے گا" تو جب تک نمازی فرائض بجا نہیں لاتا نہ اس کے نوافل ہوں گے نہ فرائض۔ بے ادا فرائض کے نوافل ادا کرنے والے نمازی کی دوسری

مثال یوں ہے جیسے کوئی تاجر بغیر سرمایہ کے نفع حاصل کرنا چاہے، لہذا فرمایا "نمازی کی مثال تاجر کی طرح ہے" یعنی مذکور مصلیٰ کا حال سوداگر کی طرح ہے "اسے تجارت میں نفع حاصل نہیں ہوتا" یعنی اسے سوداگری میں اس وقت تک نفع نہیں ہو سکتا "یہاں تک کہ وہ اپنا سرمایہ حاصل کرلے " جب تک وہ سرمایہ نہیں لگائے گا اسے نفع کیسے ہو گا "اسی طرح معاملہ ہے نوافل ادا کرنے والے نمازی کا، اس کے نفل ادائیگی فرائض کے بغیر مقبول نہیں ہو سکتے" کیونکہ نفل بمنزلہ نفع کے اور فرض بمنزلہ سرمایہ کے ہیں اھ کلمات شرح میں کچھ اختصار کیا گیا ہے۔ بالجملہ یہ شخص باجماع علماء فاسق ، فاجر مرتکب کبیرہ، عذاب الیم اور ذلت عظیم کا مستحق ہے، نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے کچھ لوگوں کو دیکھا کہ وہ

1 فتوح الغیب مع شرح فارسی مقالہ ۴۸ منشی نولکشور لکھنؤ ص ۲۷۴ تا ۲۷۵ Page 344 of 836

Fatawa Rizwia, Volume 10

(Text on the left is in Persian and Arabic, text on the right is the Urdu translation and explanation)

They were hanging upside down, and their jaws were torn, from which blood was flowing. He asked, "Who are these people?" The angel replied, "O Messenger of Allah! These are the people who used to break their Ramadan fast before the prescribed time." Ibn Khuzaymah and Ibn Hibban narrated in their Sahihs from Abu Umamah al-Bahili (may Allah be pleased with him) that he said: I heard the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) say, "While I was sleeping, two men came to me, took me by my arms and brought me to a rugged mountain." (He narrated the long hadith, a part of which is): "Then they took me further, and there I saw a group of people hanging by their hamstrings, their jaws torn and dripping with blood. I asked, 'Who are these people?' It was said, 'These are the ones who used to break their fast before it was lawful for them to do so.'" When this is the punishment for breaking the fast before the time, then just imagine how much punishment there would be for not fasting at all, we seek refuge in Allah. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The bonds of Islam and the foundations of religion are three things upon which the building of Islam is established. Whoever abandons any one of them is a disbeliever whose blood is lawful: one is the testimony of the Word of Monotheism (Tawheed), second is the obligatory prayer, and third is the fast of Ramadan." And in one narration it is said: "Whoever fails to perform any of these is a denier of God, and neither their voluntary nor obligatory acts are accepted."

1. Sahih Ibn Khuzaymah, Chapter on Hanging those who break fast before time, Hadith 1986, Al-Maktab al-Islami Beirut 3/237

फ़तावा रिज़विया, जिल्द 10

(बाईं ओर का पाठ फ़ारसी और अरबी में है, दाईं ओर का पाठ उर्दू अनुवाद और व्याख्या है)

वे उलटे लटके हुए थे, और उनके जबड़े फटे हुए थे, जिनसे खून बह रहा था। आपने पूछा, "ये कौन लोग हैं?" फ़रिश्ते ने अर्ज़ किया: "या रसूल अल्लाह! ये वे लोग हैं जो रमज़ान का रोज़ा वक़्त से पहले ही इफ़्तार कर लेते थे।" इब्ने खुज़ैमा और इब्ने हिब्बान ने अपनी सहीह में हज़रत अबू उमामा बाहिली (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि मैंने रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को फ़रमाते सुना कि मैं सो रहा था कि मेरे पास दो आदमी आए और मुझे उठाकर एक पहाड़ पर ले गए (तफ़्सील से हदीस बयान की जिसका एक हिस्सा यह है) फिर मुझे आगे ले गए तो वहाँ एक क़ौम उलटी लटकी हुई थी, उनके जबड़े चीरे जा रहे थे जिनसे खून बह रहा था। फ़रमाया: मैंने पूछा ये कौन लोग हैं? बताया गया: ये रमज़ान का रोज़ा वक़्त आने से पहले ही इफ़्तार कर लेते थे। जब वक़्त से पहले रोज़ा इफ़्तार करने पर यह अज़ाब है, तो खुद सोचिए बिल्कुल रोज़ा न रखने पर कितना अज़ाब होगा, अल-इयाज़ु बिल्लाह। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: इस्लाम और दीन की बुनियाद तीन चीज़ें हैं जिन पर इस्लाम की इमारत खड़ी है, उनमें से अगर किसी ने एक को तर्क(छोड़) कर दिया तो वह काफ़िर होगा और उसका खून मुबाह (जायज़) होगा: उनमें से एक कलमा-ए-तौहीद की शहादत, दूसरा नमाज़-ए-फ़र्ज़ और तीसरा रमज़ान का रोज़ा। और एक रिवायत में है कि जो इनमें से किसी को पूरा न किया वह खुदा का मुनकिर है, उसका कोई नफ़्ल व फ़र्ज़ क़ुबूल नहीं।

1. सहीह इब्ने खुज़ैमा, बाब तालीक़ अल-मुफ़तिरीन क़ब्ल वक़्त अल-इफ़्तार, हदीस 1986, अल-मक्तब अल-इस्लामी बैरूत 3/237

पृष्ठ 345 / 836

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

ایشاں راسر نگوں آویختہ اند و کنجہائے دہاں ایشاں دریدہ کہ از آنہا خون می ریزد فرمود ایناں چہ باشند، فرشتہ عرضداشت کسانیکہ قبل از وقت افطار رمضان می کنند اخرجہ ابن خزیمۃ وابن حبان فی صحیحہما عن ابی امامۃ الباھلی رضی اللہ تعالٰی عنہ قال سمعت رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم یقول بیننا انا نائم اذا تانی رجلان فاخذا بضبعی فأتیابی جبلا وعرا۔ وساق الحدیث الی ان قال ثم انطلقا بی فاذا انا بقوم معلقین بعراقیبہم مشققۃ اشد اقمہم دما قال قلت من ھؤلاء، قال الذین یفطرون رمضان قبل تحلۃ صومھم چوں پیش از وقت افطار را این عذاب است اصلا روزہ نہ داشتن را خود قیاس کن کہ چنداں باشد والعیاذ باللہ، نبی صلی اللہ علیہ وسلم فرماید رسن ہائے اسلام و بنیاد ہائے دین سہ چیز ست کہ برائیاں بنائے اسلام نہادہ اند ہر کہ از آنہا یکے را ترک دہد کافرست بداں خون او حلال، یکے شہادت کلمہ توحید، دوم نماز فرض، سوم روزہ رمضان، و در روایتے فرماید ہر کہ از انہا یکے بگذارد پس آں کافر ست بخداونہ پذیر ند از و بیچ فرض و نہ نفل و

اُلٹے لٹکے ہوئے ہیں اور ان کی باچھوں کو چیرا جارہا ہے اور ان سے خون بہہ رہا ہے، آپ نے پوچھا یہ کون لوگ ہیں؟ فرشتے نے عرض کیا: یا رسول اللہ! یہ لوگ رمضان کا روزہ قبل از وقت افطار کر لیتے تھے۔ ابن خزیمہ اور ابن حبان نے اپنی صحیح میں حضرت ابو امامہ باہلی رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے کہ میں نے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کو یہ فرماتے ہوئے سنا ہے کہ میں سویا تھا میرے پاس دو آدمی آئے وہ مجھے اٹھا کر ایک پہاڑ پر لے گئے (تفصیلاً حدیث بیان کی جس کا ایک حصہ یہ ہے) پھر مجھے آگے لے گئے تو وہاں ایک قوم الٹی لٹکی ہوئی تھی ان کی باچھوں کو چیرا جارہا تھا جن سے خون بہہ رہا تھا، فرمایا: میں نے پوچھا یہ کون لوگ ہیں؟ بتایا گیا: یہ رمضان کا روزہ وقت آنے سے پہلے ہی افطار کر لیتے تھے۔ جب قبل از

وقت روزہ افطار کرنے پر یہ عذاب ہے تو خود سوچئے بالکل روزہ نہ رکھنے پر کتنا عذاب ہوگا العیاذ باللہ، نبی صلی اللہ علیہ وسلم نے فرمایا: اسلام اور دین کی بنیاد تین چیزیں ہیں جن پر اسلام کی عمارت کھڑی ہے ان میں سے اگر کسی نے ایک کو ترک کر دیا تو وہ کافر ہو گا اور اس کا خون مباح ہوگا، ان میں سے ایک کلمہ توحید کی شہادت، و دوم نمازِ فرض سوم روزہ رمضان۔ اور ایک روایت میں ہے کہ جو ان میں سے کسی کو بجا نہ لایا وہ خدا کا منکر ہے، اس کا کوئی نفل و فرض قبول نہیں

1 صحیح ابن خزیمہ باب تعلیق المفطرین قبل وقت الافطار حدیث ۱۹۸۶ المکتب الاسلامی بیروت ۳/ ۲۳۷

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Left Column - Arabic/Persian Context]: It is correct that his blood and property are lawful. Abu Ya'la narrated it with a good (Hasan) chain. Al-Mundhiri also said that its chain is Hasan, from Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both). Hammad bin Zayd said: "I do not know of it except that it is raised (marfu') to the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). He said: 'The handholds of Islam and the foundations of religion are three, upon which the foundations of Islam are built. Whoever leaves one of them is a disbeliever because of it, and his blood is lawful: the testimony that there is no god but Allah, the obligatory prayers, and the fasting of Ramadan.'" In one narration: "Whoever leaves one of them is a disbeliever in Allah, and neither his voluntary nor obligatory deeds will be accepted, and his blood and property have become lawful." This was narrated by Sa'id bin Zayd bin 'Amr bin Malik al-Nakri from Abu al-Jawza' from Ibn Abbas from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), and there is no doubt regarding it being marfu'. It is also reported from the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) that: "Allah the Almighty has made four things obligatory in the religion of Islam; if anyone performs three of them, they will not be of any use to him until he performs all four: prayer, zakat, and..."

[Right Column - Urdu Translation]: ...and his blood and property will be permissible. Abu Ya'la mentioned it with a good chain. Mundhiri also mentioned it with a good chain from Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both). Hammad bin Zayd says: "I do not know it except that its attribution is towards the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), that you said: 'The ropes of Islam and the pillars of religion are three on which the foundations of Islam rest. Whoever leaves any one of them is a disbeliever and his blood is permissible: first, the testimony of La ilaha illallah; second, the obligatory prayer; third, the fast of Ramadan.'" In another narration: "Whoever left any one of them is a denier of Allah; no voluntary or obligatory act of his is accepted; his blood and property are permissible." This narration was reported by Sa'id bin Zayd from Amr bin Malik al-Nakri, from Abu al-Jawza', from Hazrat Ibn Abbas, from the Messenger of God (peace and blessings of Allah be upon him), and there is no doubt about it being marfu'. It is also narrated from the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) that: "Allah the Almighty has made four things obligatory in the religion of Islam. If someone performs any three of them, they cannot be of any use to him until he performs all four (those are...)"

Footnotes: 1. Musnad Abu Ya'la al-Mawsili, Translation 2475, Muassasat Ulum al-Quran Beirut 13/3 2. At-Targhib wat-Tarhib, Chapter on leaving prayer intentionally etc., Mustafa al-Babi Egypt 1/382 and 2/110

फतवा रज़विया जिल्द 10

[बायाँ कॉलम - अरबी/फ़ारसी संदर्भ]: यह सही है कि उसका खून और माल जायज़ (मुबाह) होगा। अबू याला ने इसे हसन सनद के साथ रिवायत किया है। अल-मुन्दिरी ने भी कहा कि इसकी सनद हसन है, हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से। हम्माद बिन ज़ैद ने कहा: "मैं इसे नहीं जानता सिवाय इसके कि इसे नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) तक पहुँचाया (मरफ़ू) गया है। आपने फ़रमाया: 'इस्लाम के हलके और दीन की बुनियादें तीन हैं जिन पर इस्लाम की बुनियाद रखी गई है। जिसने भी उनमें से एक को छोड़ा, वह उसकी वजह से काफ़िर है और उसका खून जायज़ है: इस बात की गवाही देना कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, फ़र्ज़ नमाज़, और रमज़ान के रोज़े।'" एक रिवायत में है: "जिसने उनमें से एक को छोड़ा, वह अल्लाह के साथ कुफ़्र करने वाला है, और उसका कोई नफ़्ल या फ़र्ज़ कुबूल नहीं किया जाएगा, और उसका खून और माल जायज़ हो गया है।" इसे सईद बिन ज़ैद बिन अम्र बिन मालिक अल-नकरी ने अबुल जौज़ा से, उन्होंने इब्ने अब्बास से, उन्होंने नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से रिवायत किया है, और इसके मरफ़ू होने में कोई शक नहीं है। हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से यह भी मन्कूल है कि: "अल्लाह तआला ने दीने इस्लाम में चार चीज़ों को फ़र्ज़ किया है; अगर कोई उनमें से तीन को पूरा करता है, तो वे उसके किसी काम नहीं आएँगी जब तक कि वह चारों को पूरा न करे: नमाज़, ज़कात और..."

[दायाँ कॉलम - उर्दू अनुवाद]: ...किया जाएगा और उसका खून व माल मुबाह होगा। इसे अबू याला ने इसनाद हसन के साथ ज़िक्र किया, मुन्दिरी ने भी इसे सनद हसन के साथ हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) से रिवायत किया है, हम्माद बिन ज़ैद कहते हैं कि मैं इसे नहीं जानता मगर यह कि इसकी निस्बत रिसालत-मआब (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) की तरफ़ है कि आपने फ़रमाया कि इस्लाम की रस्सियाँ और दीन के सुतून तीन हैं जिन पर इस्लाम की बुनियादें हैं जिसने भी उनमें से किसी एक को तर्क किया वह काफ़िर है और उसका खून मुबाह है, पहली 'ला इलाहा इल्लल्लाह' की शहादत, दूसरी नमाज़ फ़र्ज़, तीसरी रमज़ान का रोज़ा। दूसरी रिवायत में है कि जिसने उनमें से किसी एक को छोड़ा वह अल्लाह का मुनकिर है, उसका कोई नफ़्ल व फ़र्ज़ कुबूल नहीं, उसका खून व माल मुबाह है। यह रिवायत सईद बिन ज़ैद ने अम्र बिन मालिक अल-नकरी से उन्होंने अबुल जौज़ा से उन्होंने हज़रत इब्ने अब्बास से उन्होंने रसूले ख़ुदा (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) से रिवायत किया है और इसके मरफ़ू होने में शक नहीं किया। हुज़ूर (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) से यह भी मन्कूल है कि हक़ तआला ने दीने इस्लाम में चार चीज़ों को फ़र्ज़ किया है

उनमें से अगर कोई तीन बजा लाता है तो वे उसके किसी काम नहीं आ सकते यहाँ तक कि वह चारों को बजा लाए (वे...

पाद-टिप्पणी: 1. मुसनद अबू याला अल-मौसली, तर्जुमा 2475, मुअस्ससत उलूम अल-क़ुरान बेरूत 13/3 2. अत-तरग़ीब वत-तरहीब, जानबूझकर नमाज़ छोड़ने का बयान आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 1/382 और 2/110

पृष्ठ 346 / 836

بدرستی کہ روا باشد خون و مال او ابویعلی باسناد حسن وقال المنذری ایضاً اسناده حسن عن ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما قال حماد بن زید ولا اعلمہ الاقد رفعه الی النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم قال عری الاسلام وقواعد الدین ثلثة علیهن اسس الاسلام ، من ترك منهن واحدة فهو بها كافر حلال الدم، شهادة ان لا اله الا اللہ والصلوٰة المكتوبة وصوم رمضان ۔ ۱ وفي رواية من ترك منهن واحدة فهو باللہ كافر ولا يقبل منه صرف ولا عدل وقد حل دمه وماله وروی هذه سعید بن زید بن عمرو بن مالک النکری عن ابی الجوازء عن ابن عباس عن النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ولم یشك فی رفعه ، وهم منقول باشد آں حضرت علیہ الصلوٰۃ والتحیۃ کہ فرمود حق تعالٰی در دین اسلام چہار چیز را فرض کردہ است ہر کہ از انہا سہ بجا آرد اور رائیج بکار نیاید تا ہر ہمہ چہار را ادا سازد، نماز وزکوٰۃ و

کیا جائے گا اور اس کا خون و مال مباح ہوگا۔ اسے ابویعلی نے اسناد حسن کے ساتھ ذکر کیا، منذری نے بھی اسے سند حسن کے ساتھ حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا ہے، حماد بن زید کہتے ہیں کہ میں اسے نہیں جانتا مگر یہ کہ اس کی نسبت رسالتمآب صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی طرف ہے کہ آپ نے فرمایا کہ اسلام کے رسے اور دین کے ستون تین ہیں جن پر اسلام کی بنیادیں ہیں جس نے بھی ان میں سے کسی ایک کو ترک کیا وہ کافر ہے اور اس کا خون مباح ہے، پہلی لا الہ الا اللہ کی شہادت، دوسری نماز فرض، تیسری رمضان کا روزہ۔ دوسری روایت میں ہے کہ جس نے ان میں سے کسی ایک کو چھوڑا وہ اللہ کا منکر ہے، اس کا کوئی نفل و فرض قبول نہیں، اس کا خون و مال مباح ہے۔ یہ روایت سعید بن زید نے عمرو بن مالک النکری سے انھوں نے ابوالجوزاء سے انھوں نے حضرت ابن عباس سے انھوں نے رسول خدا صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے روایت کیا ہے اور اس کے مرفوع ہونے میں شک نہیں کیا۔ حضور صلی اللہ

تعالیٰ علیہ وسلم سے یہ بھی منقول ہے کہ حق تعالیٰ نے دین اسلام میں چار چیزوں کو فرض کیا ہے ان میں سے اگر کوئی تین بجالاتا ہے تو وہ اس کے کسی کام نہیں آسکتے یہاں تک کہ وہ چاروں کو بجالائے (وہ

1 مسند ابویعلی الموصلی ترجمہ ۲۴۷۵ مؤسسۃ علوم القرآن بیروت ۱۳/۳ 2 الترغیب والترھیب من ترک الصلوۃ عمداً الخ مصطفی البابی مصر ۱/ ۳۸۲ و ۱۱۰/۲

Fatawa Razawiya, Volume 10

Fasting in Ramadan and Hajj to the Kaaba. Imam Ahmad narrated from Ziyad bin Nu'aym al-Hadrami in a mursal hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Allah has made four things obligatory in Islam. If someone performs three of them, they will not benefit him at all until he performs all of them together: Prayer (Salah), Zakat, Fasting in Ramadan, and Hajj to the House (Kaaba)." [Footnote 1]

Furthermore, it is narrated from the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) that he said: "Whoever omits a single day of fasting in Ramadan without a legal excuse or illness, even if he fasts for the rest of his life, it can never compensate for that one day." This was recorded by al-Tirmidhi (and the wording is his), Abu Dawood, an-Nasa'i, Ibn Majah, al-Bayhaqi, Ibn Khuzaymah in his Sahih, and al-Bukhari mu'allaqan from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him), that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Whoever breaks a fast of one day in Ramadan without a concession or illness, fasting for the entire duration of time thereafter will not make up for it." [Footnote 2]

Muslims should not allow such a person to lead Tarawih prayers for two reasons: First, he is a fasiq (transgressor), and performing prayer behind a fasiq is makruh (reprehensible/disliked), as explicitly stated in textual sources, commentaries, and fatwas...

Footnotes: 1. Musnad Ahmad bin Hanbal, Hadith of Ziyad ibn Nu'aym al-Hadrami, Al-Maktab al-Islami, Beirut, 4/201. 2. Sahih al-Bukhari, Chapter on intercourse during Ramadan, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/259; Jami' al-Tirmidhi, Chapters on Fasting, Amin Company Kutub Khana Rashidiya, Delhi, 1/90.

फ़तावा रज़विया, खंड 10

रमज़ान के रोज़े और काबा का हज। इमाम अहमद ने ज़ियाद बिन नुअयम अल-हज़रामी से एक मुरसल हदीस रिवायत की है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "अल्लाह ने इस्लाम में चार चीज़ें फ़र्ज़ की हैं। जो कोई उनमें से तीन को पूरा करेगा, वे उसे तब तक कोई लाभ नहीं देंगी जब तक कि वह उन सभी को पूरा न कर ले: नमाज़, ज़कात, रमज़ान के रोज़े और बैतुल्लाह का हज।" [पाद-टिप्पणी 1]

इसके अतिरिक्त, हुज़ूर सरवर-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से यह मरुवी है कि उन्होंने फ़रमाया: "जिस किसी ने शरीयत की अनुमति या बीमारी के बिना रमज़ान का एक रोज़ा भी छोड़ा, तो अगर वह अपनी पूरी ज़िंदगी भी रोज़े रखे, तब भी वह उस एक दिन का मुआवज़ा (बदला) नहीं हो सकता।" इसे तिर्मिज़ी (शब्द उनके हैं), अबू दाऊद, नसाई, इब्न माजह, बैहक़ी, इब्न खुज़ैमा ने अपनी 'सहीह' में और बुखारी ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से ता'लीक़न रिवायत किया है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "जिसने बिना किसी रियायत या बीमारी के रमज़ान का एक दिन का रोज़ा तोड़ दिया, तो उसके बाद सारा ज़माना भी रोज़ा रखता रहे, तो उसकी भरपाई नहीं हो सकती।" [पाद-टिप्पणी 2]

मुसलमानों को चाहिए कि वे दो कारणों से ऐसे व्यक्ति को तरावीह न पढ़ाने दें: पहली बात यह कि वह 'फ़ासिक़' (अवज्ञाकारी) है, और फ़ासिक़ की पैरवी (इक़्तदा) में नमाज़ पढ़ना 'मक़रूह' (नापसंद) है, जैसा कि पाठ्य पुस्तकों, व्याख्याओं और फ़तवों में स्पष्ट किया गया है...

पाद-टिप्पणी: 1. मुसनद अहमद बिन हंबल, ज़ियाद इब्न नुअयम अल-हज़रामी की हदीस, अल-मकतब अल-इस्लामी, बेरूत, 4/201। 2. सहीह अल-बुखारी, रमज़ान में संभोग से संबंधित अध्याय, क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/259; जामी' अत-तिर्मिज़ी, रोज़े के अध्याय, अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया, दिल्ली, 1/90।

روزہ رمضان اور حج کعبہ۔ امام احمد نے زیاد بن نعیم الحضرمی سے مرسلاً روایت کی ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: اربع فرضھن اللہ فی الاسلام فمن جاء بثلاث لم یغنین عنہ شیأً حتی یأتی بھن جمیعاً الصلوٰۃ والزکوٰۃ وصیام رمضان وحج البیت (چار چیزوں کو اللہ تعالیٰ نے ایمان میں فرض فرمایا ہے جو ان میں سے تین بجالائے گا وہ اسے کسی شئ کا فائدہ نہیں دیں گے حتیٰ کہ تمام کو بجالائے، وہ نماز ، زکوٰۃ ، روزہ رمضان اور حج کعبہ ہے) [حاشیہ ۱]

نیز مروی شد ازاں سرور علیہ افضل الصلوٰۃ والسلام کہ فرمود (نیز حضور سرورِ عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے یہ مروی ہے کہ آپ نے فرمایا) کہ ہر کہ یک روز از رمضان بے رخصت شرع و بے مرض روزہ ندارد اگر ہمہ عمر خودش روزہ خواہد داشت عوض آں یک روزہ نخواھد شد (اگر کسی نے شریعت کی اجازت اور مرض کے بغیر روزہ رمضان نہ رکھا اگر ساری عمر روزہ رکھے تب بھی اس کا عوض نہیں ہو سکتا)۔ فقد اخرج الترمذی واللفظ لہ وابو داؤد والنسائی و ابن ماجۃ و البیھقی وابن خزیمۃ فی صحیحہ والبخاری تعلیقاً عن ابی ھریرۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ ان رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم قال من افطر یوماً من رمضان من غیر رخصۃ ولا مرض لم یقض عنہ صوم الدھر کلہ وان صامہ (ترمذی نے روایت کیا یہ الفاظ اسی کے ہیں ، ابوداؤد ، نسائی، ابن ماجہ ، بیہقی ، ابن خزیمہ نے صحیح میں اور بخاری نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے تعلیقاً روایت کیا ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا : جس نے بغیر رخصت اور مرض کے ایک دن رمضان کا روزہ چھوڑ دیا اب اگر سارا زمانہ روزہ رکھتا رہے تو اس کا ازالہ نہیں ہو سکتا) [حاشیہ ۲]

مسلمانوں کو چاہئے کہ وہ دو وجوہ کی بنا پر ایسے شخص کو تراویح نہ پڑھانے دیں: اوّلاً یہ فاسق ہے اور فاسق کی اقتداء میں نماز مکروہ ہوتی ہے جیسا کہ اس پر متون، شروحات اور فتاویٰ کی صراحت موجود ہے---

حواشی: ۱۔ مسند احمد بن حنبل، حدیث زیاد ابن نعیم الحضرمی، المکتب الاسلامی بیروت، ۲۰۱/۴۔

۲۔ صحیح بخاری، باب اذا جامع فی رمضان، قدیمی کتب خانہ کراچی، ۲۵۹/۱ ، جامع الترمذی ابواب الصیام امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی، ۹۰/۱۔

Fatawa Ridawiyya Volume 10

[Right Column - Urdu Translation] Secondly, it is a definitive clarification and the most likely assumption that this person is extremely low-spirited and lacks taste in religious matters. He is reciting the Quran in Tarawih solely for the purpose of gaining leadership (imamate), precedence, and boasting, acting out of ostentation and seeking fame. Therefore, he should not be allowed to achieve his purpose. When no one follows him in prayer (iqtida), he will inevitably turn away from this forbidden act, God willing. Allah Almighty says: "And do not cooperate in sin and transgression." Having such a person recite the Quran is a great sin, and in the case of following him in prayer, the followers would be aiding in sin, hence they would also be sinners. Although the discussion has become somewhat lengthy, by the grace of Allah, it is not without benefit. Firstly, because of the research into the matter, and secondly, due to the citation and mention of the noble words of the illuminated Presence of Ghaus-ul-Azam (may Allah be pleased with him). For upon the mention of the righteous, especially the mention of the leader of saints, the crown of the poles (aqtab), and the master of the pious (may Allah be pleased with him and all of them), mercy descends. And Allah Almighty knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete and most wise. (T)

[Left Column - Original Persian/Urdu Text] Secondly, it is generally the case that this person is extremely low-spirited and lacking interest in religious matters. His recitation of the Quran in Tarawih is for the purpose of attaining leadership, precedence, and boasting through ostentation and seeking reputation. Thus, his purpose should not be fulfilled. When someone does not follow him, he will surely turn away from this forbidden act, God-willing. Allah Almighty says: "And do not cooperate in sin and transgression."(1) This Quran recitation from that person is a great sin, and the followers, by following him, are aiding in sin, so they themselves would be sinners. Although the speech has become somewhat long, by the grace of Allah, it is not devoid of benefit; one because of the research into the issue, and second because of the noble mention and citation of the subtle words of the illuminated Presence of Ghaus-ul-Azam (may Allah be pleased with him), for mercy descends at the mention of the righteous, especially this leader who is the head of saints, the crown of the poles, and the master of the pious (may Allah be pleased with him and all of them). And Allah Almighty knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete and most wise.

Problem 162: From Meerut, Kamboh Darwaza, house of Darogha Yaad Ilahi Sahib, sent by Mirza Ghulam Qadir Beg Sahib, 12 Ramadan 1307 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: If a minor boy who recites the Holy Quran in Nafl prayers, if...

(1) The Quran 2/5 (i.e., Surah Al-Ma'idah, verse 2) (2) Mirqat Sharh Mishkat, second section from the chapter on prayer for the funeral, Maktaba Imdadia Multan 4/61

फतावा रिज़विया जिल्द दहम (दसवीं)

[दायां कॉलम - उर्दू अनुवाद] निश्चित स्पष्टीकरण हैं। दूसरा, प्रबल संभावना यह है कि यह व्यक्ति धार्मिक मामलों में अत्यंत कम हिम्मत और बेज़ौक है। वह तरावीह में कुरान केवल इमामत हासिल करने, आगे बढ़ने और दिखावे व शोहरत के लिए सुना रहा है, रियाकारी करते हुए वह बड़ाई और गर्व पर अमल कर रहा है। इसलिए उसे इस मक़सद में कामयाब न होने दें। जब कोई उसकी पैरवी (इक्तिदा) नहीं करेगा, तो इंशा अल्लाह वह इस हराम काम से तौबा करेगा। अल्लाह तआला का फरमान है: "गुनाह और ज़्यादती के कामों में सहयोग न करो।" ऐसे व्यक्ति से कुरान पढ़वाना बड़ा गुनाह है, और इक्तिदा की सूरत में मुक़्तदी गुनाह पर उसकी मदद करने वाले होंगे, इसलिए वे भी गुनहगार होंगे। यद्यपि चर्चा कुछ लंबी हो गई है, लेकिन अल्लाह के फज़ल से यह फायदे से खाली नहीं है। एक तो मसले की तहकीक की वजह से और दूसरा हुज़ूर पुरनूर गौस-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) के कलाम और ज़िक्र-ए-शरीफ के नक़ल करने की वजह से, क्योंकि नेक लोगों के ज़िक्र से, विशेष रूप से औलिया के सरदार, अक्ताब के ताज और सालेहीन के सैय्यद (रज़ियल्लाहु अन्हु और उन सब पर अल्लाह की रज़ा हो) के ज़िक्र पर रहमत का नुज़ूल होता है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है, और उसका इल्म, उसकी शान बुलन्द हो, सबसे कामिल और सबसे मोहकम है। (त)

[बायां कॉलम - मूल फारसी/उर्दू पाठ] दूसरे, आमतौर पर ऐसा होता है कि यह व्यक्ति धार्मिक मामलों में बेहद पस्त-हिम्मत और बद-शौक है। तरावीह में कुरान का पढ़ना केवल इमामत, आगे बढ़ने और दिखावे व शोहरत के लिए अपनाया गया है। इसलिए उसका उद्देश्य पूरा नहीं होने देना चाहिए। जब कोई उसकी इक्तिदा नहीं करेगा, तो वह निश्चित रूप से इस हराम कार्य से पीछे हट जाएगा, इंशा अल्लाह। अल्लाह तआला फरमाता है: "और गुनाह और ज़्यादती पर हरगिज़ सहयोग न करो।"(१) इस व्यक्ति द्वारा यह कुरान ख्वानी बड़ा गुनाह है और मुक़्तदी इक्तिदा करके गुनाह पर मदद कर रहे हैं, इसलिए वे खुद गुनहगार होंगे। हालाँकि बात कुछ लंबी हो गई है, लेकिन अल्हम्दुलिल्लाह फायदे से खाली नहीं है; एक मसले की तहकीक के कारण, दूसरा हुज़ूर पुरनूर गौस-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) के लतीफ कलाम की नक़ल और ज़िक्र-ए-शरीफ की वजह से, क्योंकि सालेहीन के ज़िक्र के वक़्त रहमत उतरती है, खासकर यह सैय्यद जो औलिया के सरबराह, अक्ताब के ताज और सालेहीन के सरदार हैं (रज़ियल्लाहु अन्हु और उन सब पर अल्लाह की रज़ा हो)। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है, और उसका इल्म, उसकी शान बुलन्द हो, सबसे कामिल और सबसे मोहकम है।

मसला १६२: मेरठ, कम्बो दरवाज़ा, मकान दारोगा याद इलाही साहब, प्रेषक मिर्ज़ा गुलाम क़ादिर बेऽ साहब, १२ रमज़ान १३०७ हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या फरमाते हैं कि: एक नाबालिग लड़का जो नफ़्ल नमाज़ों में कुरान शरीफ पढ़ता है, अगर...

1. कुरान २/५ (अर्थात सूरह अल-मायदा, आयत २)
2. मिरकात शरह मिश्कात, किताबुल जनाइज़ का दूसरा हिस्सा, मकतबा इमदादिया मुल्तान ४/६१

पृष्ठ ३४८/८३६

فتاوی رضویہ جلد دہم

[دایاں کالم] قطعی تصریحات ہیں ثانیاً غالب گمان یہ ہے کہ یہ شخص انتہائی درجہ کا کم ہمت اور امورِ دینیہ کے معاملے میں بد ذوق ہے اور وہ تراویح میں قرآن محض حصولِ امامت کیلئے سُنا رہا ہے اور ریا کاری کرتے ہوئے تقدم وتفاخر پر عمل پیرا ہے لہٰذا اسے اس مقصد میں کامیاب نہ ہونے دیں، جب کوئی اس کی اقتداء نہیں کرے گا تو ان شاء اللہ تعالیٰ وہ اس فعلِ حرام سے رجوع کرے گا، اللہ تعالیٰ کا فرمان ہے: گناہ اور زیادتی پر ہر گز تعاون نہ کرو۔ایسے شخص سے قرآن پڑھوانا گناہ عظیم ہے، اور اقتداء کی صورت میں مقتدی گناہ پر اس کی اعانت کرنے والے ہوں گے لہٰذا یہ بھی گنہ گار ہوں گے، ہر چند گفتگو قدرے طویل ہوگئی ہے بحمد اللہ نفع سے خالی نہیں، ایک تو تحقیقِ مسئلہ کی وجہ سے اور دوسرا حضورِ پُر نور غوثِ اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے کلام وذکر شریف کے نقل کرنے کی وجہ سے، کیونکہ صالحین کے تذکرہ سے خصوصاً اس اولیاء کے سربراہ اقطاب کے تاج اور سید الصلحاء رضی اللہ تعالیٰ عنہ وعنہم اجمعین کے تذکرے پر رحمت کا نزول ہوتا ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔ (ت)

[بایاں کالم] قاطبۃً ثانیاً غالب آنست کہ ایں کس بغایت پست ہمت و بد شوق در امورِ دینیہ است و خواندنِ قرآن در تراویح ہمیں بغرضِ تحصیلِ امامت و تقدم و تفاخر بروجہِ ریاء وسمعہ اختیار کردہ است پس باید کہ غرضش را حاصل شدن نہ دہند وچوں کسے اقتدانہ کند، لاجرم ایں فعلِ حرام را گز اردو ان شاء اللہ تعالیٰ رجوع بروزہ آرد، قال تعالیٰ "وَلَا تَعَاوَنُوا عَلَى الْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ"[1] ایں قرآن خوانی ازاں کس گناہِ عظیم ست ومقتدیان باقتدائے اعانتِ بر گناہ می کنند پس خود آثم باشند ہر چند سخن قدرے دراز شد اما بحمد اللہ خالی از نفع نیست یکے از جہتِ تحقیقِ مسئلہ دوم از روئے ذکرِ شریف ونقلِ کلامِ لطیفِ حضورِ پُر نور غوثِ اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ فان عند ذکر الصالحین تنزل

الرحمۃ لاسیما ھذا السید رأس الاولیاء وتاج الاقطاب وسید الصلحاء رضی اللہ تعالیٰ عنہ و عنہم اجمعین، واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

مسئلہ ۱۶۲: از میرٹھ کمبوہ دروازہ مکان داروغہ یاد الہی صاحب مرسلہ مرزا غلام قادر بیگ صاحب ۱۲ رمضان ۱۳۰۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ نابالغ لڑکا کہ نوافل میں قرآن شریف پڑھتا ہے اگر

1 القرآن ۲/۵ 2 مرقات شرح مشکوۃ الفصل الثانی من باب الصلوۃ علی الجنازۃ مکتبہ امدادیہ ملتان ۶۱/۴

Fatawa Rizvia | Volume 10

Question: Is it permissible to break the fast due to excessive weakness and exertion? Please clarify, may you be rewarded.

Answer: The law of Sharia is not yet applicable to a minor. Even if they break the fast without an excuse, they will not be considered sinners.

Arabic: For His saying (peace and blessings be upon him): "The pen has been lifted from three..." up to his saying (may Allah the Exalted send peace and blessings upon him): "...and from the child until he reaches puberty." Urdu Translation: The Holy Prophet (may Allah the Exalted send peace and blessings upon him) said: "The pen has been lifted from three individuals." Among them, he (may Allah the Exalted send peace and blessings upon him) also mentioned the child who has not yet reached puberty. (T)

However, it is stated that as a child enters their eighth year, it is incumbent upon their guardian to command them to offer prayer and observe fasting. And when they enter their eleventh year, it is obligatory for the guardian to discipline them for [missing] prayer and fasting, provided they have the strength to fast and it does not cause harm. It is mentioned in a Sahih (authentic) Hadith that the Radiant Prophet, Master of the World (may Allah the Exalted send peace and blessings upon him) says:

Arabic: "Command your children to pray when they are seven years old, and beat them for [neglecting] it when they are ten years old." Urdu Translation: When children reach seven years of age, tell them to pray, and when they reach ten years, punish them for abandoning prayer. (T)

It is stated in Tanwir al-Absar:

Arabic: "Beating a ten-year-old for it [neglecting prayer] is obligatory." Urdu Translation: It is obligatory to punish a ten-year-old child for abandoning prayer. (T)

It is stated in Radd al-Muhtar:

Ref: Narrated by Ahmad, Abu Dawood, and al-Hakim from the Leader of the Believers, Umar and Ali; likewise, narrated by an-Nasa'i and Ibn Majah from the Mother of the Believers, Aisha as-Siddiqah (may Allah the Exalted be pleased with them all). 12 From the author, may he be forgiven. (M) Urdu Translation: It was narrated by Imam Ahmad, Abu Dawood, and Hakim from the Leader of the Believers, Hazrat Umar and Hazrat Ali (may Allah the Exalted be pleased with them), and by

Nasa'i and Ibn Majah from the Mother of the Believers, Hazrat Aisha Siddiqah (may Allah the Exalted be pleased with them). 12 From the author, may he be forgiven. (T)

1. Al-Mustadrak al-Hakim, Lifting of the pen from three, Dar al-Fikr Beirut, 1/258
2. Sunan Abi Dawood, Chapter: When a boy is commanded, etc., Aftab-e-Alam Press Lahore, 1/11
3. Tanwir al-Absar with Durr al-Mukhtar, Kitab al-Salah, Matba' Mujtabai Delhi 1/58

फतावा रिज़विया | जिल्द दहम (दसवीं)

सवाल: अत्यधिक कमजोरी और कड़ी मेहनत के कारण यदि कोई रोजा इफ्तार (तोड़) कर ले, तो क्या यह जायज है या नहीं? स्पष्ट करें, पुण्य प्राप्त करें।

अल-जवाब: नाबालिग पर तो शरीयत का कलम (कानून) लागू ही नहीं होता। वह अगर बिना किसी उज्र (बहाने) के भी रोजा इफ्तार कर ले, तो उसे गुनहगार नहीं कहा जाएगा।

अरबी: जैसा कि उन्होंने (उन पर शांति और आशीर्वाद हो) कहा: "तीन लोगों से कलम उठा लिया गया है..." उनके(अल्लाह उन पर शांति और आशीर्वाद बरसाए) कहने तक: "...और बच्चे से जब तक कि वह परिपक्व (बालीग) न हो जाए।" उर्दू अनुवाद: हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फरमाया: "तीन व्यक्तियों से कलम उठा लिया गया है।" उनमें आपने सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने उस बच्चे का भी उल्लेख फरमाया है जो अभी परिपक्वता (ब्लोगत) तक नहीं पहुँचा है। (त)

लेकिन स्पष्ट करना यह है कि बच्चा जैसे ही आठवें वर्ष में कदम रखे, उसके अभिभावक (वली) पर लाज़िम (अनिवार्य) है कि उसे नमाज़ और रोजे का आदेश दे। और जब उसका ग्यारहवाँ वर्ष शुरू हो, तो अभिभावक पर वाजिब (अनिवार्य) है कि नमाज़ और रोजे के लिए उसे सजा दे, इस शर्त के साथ कि रोजा रखने की शक्ति हो और रोजा नुकसान न पहुँचाए। सही हदीस में है कि हुज़ूर पुर नूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फरमाते हैं:

अरबी: "अपनी संतानों को नमाज़ का हुक्म दो जब वे सात साल के हों, और दस साल के होने पर इसके[नमाज़ छोड़ने] लिए उन्हें मारो।" उर्दू अनुवाद: जब बच्चे सात साल के हो जाएं तो उन्हें नमाज़ के लिए कहो और जब दस साल के हो जाएं तो उन्हें नमाज़ छोड़ने पर सजा दो। (त)

तनवीरुल अबसार में है:

अरबी: "दस साल के बच्चे को इसके[नमाज़ छोड़ने] लिए मारना वाजिब है।" उर्दू अनुवाद: नमाज़ छोड़ने पर दस साल के बच्चे को सजा देना वाजिब है। (त)

रद-उल-मुहतार में है:

अरबी हवाला: इसे अहमद, अबू दाऊद और हाकिम ने अमीरुल मोमिनीन उमर और अली से रिवायत किया; इसी तरह नसाई और इब्ने माजा ने उम्मुल मोमिनीन आयशा सिद्दीका (अल्लाह उन

सभी से प्रसन्न हो) से रिवायत किया। 12 लेखक से, उसे क्षमा किया जाए। (म) उर्दू अनुवाद: इसे इमाम अहमद, अबू दाऊद और हाकिम ने अमीरुल मोमिनीन हज़रत उमर और हज़रत अली रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से रिवायत किया, और नसाई व इब्ने माजा ने उम्मुल मोमिनीन हज़रत आयशा सिद्दीका रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम से रिवायत किया। 12 लेखक से, उसे क्षमा किया जाए। (त)

1. अल-मुस्तदरक लिल-हाकिम, रफ़अुल कलम अनिस-सलासा, दारुल फिक्र बेरुत, 1/258
2. सुनन अबी दाऊद, बाब मता युउमरुल गुलाम अलयख, आफताबे आलम प्रेस लाहौर, 1/11
3. तनवीरुल अबसार मअ दुर्रे मुख्तार किताबुस-सलात मतबा मुजतबाई दिल्ली 1/58

पेज 349/836

بوجہ کثرت ضعف و محنت دُور، روزہ افطار کرے تو جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: نابالغ پر تو قلم شرع جاری ہی نہیں وہ اگر بے عذر بھی افطار کرے اسے گنہ گار نہ کہیں گے۔

لقولہ علیہ الصلاۃ و السلام رفع القلم عن ثلاثۃ الی قولہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم وعن الصبی حتی یحتلم۔[1] حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: تین افراد سے قلم اٹھا لیا گیا ہے۔ ان میں آپ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے اس بچے کا بھی ذکر فرمایا ہے جو ابھی بلوغت کو نہیں پہنچا۔ (ت)

مگر بیان کرنا اس کا ہے کہ بچہ جیسے آٹھویں سال میں قدم رکھے اس کے ولی پر لازم ہے کہ اسے نماز روزے کا حکم دے، اور جب اُسے گیارہواں شروع ہو تو ولی پر واجب ہے کہ صوم و صلوۃ پر مارے بشرطیکہ روزے کی طاقت ہو اور روزہ ضرر نہ کرے۔ حدیثِ صحیح میں ہے کہ حضور پُر نور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

مروا اولاد کم بالصلوۃ وھم ابناء سبع سنین واضربوھم علیھا وھم ابناء عشر۔[2] جب بچے سات سال کے ہو جائیں تو انہیں نماز کو کہو اور دس سال کے ہو جائیں تو انہیں ترکِ نماز پر سزا دو۔ (ت)

تنویر الابصار میں ہے:

وجب ضرب ابن عشر علیھا۔[3] ترکِ نماز پر دس سال کے بچے کو سزا دینا واجب ہے۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے:

عہ: رواہ احمد وابو داؤد والحاکم عن امیر المومنین عمر و علی کالنسائی وابن ماجۃ عن ام المومنین عائشۃ الصدیقۃ رضی اللہ تعالی عنھم ۱۲ منہ غفرلہ (م) اسے امام احمد، ابوداؤد اور حاکم نے امیر المومنین حضرت عمر اور حضرت علی رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا، اور نسائی و ابن ماجہ نے ام المومنین حضرت عائشہ صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم سے روایت کیا۔ ۱۲منہ غفرلہ، (ت)

1 المستدرک للحاکم، رفع القلم عن الثلاث، دارالفکر بیروت، ۲۵۸/۱ 2 سنن ابی داؤد، باب متی یؤمر الغلام الخ، آفتاب عالم پریس لاہور، ۱۱/۱ 3 تنویر الابصار مع در مختار کتاب الصلوۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/۵۸

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Arabic]: "The apparent meaning of the Hadith is that commanding a seven-year-old child [to pray] is obligatory, just like the [command to] strike [a ten-year-old is obligatory]. The apparent meaning is also that 'obligatory' here is meant in its technical sense, not in the sense of being a 'fard' (absolute obligation), because the Hadith is speculative (dhanni). So understand this." 1 The apparent meaning in the Hadith is that it is obligatory to tell a seven-year-old child to pray, just as it is obligatory to punish a ten-year-old child. It is also clear that 'obligation' (wujub) here refers to the technical terminology and not in the sense of a 'fard' (absolute religious duty), because the Hadith is speculative (zanni). Therefore, ponder over it. (T)

It is stated in 'Durr-e-Mukhtar': "And fasting is like prayer according to the correct opinion." 2 (The ruling for fasting is the same as that for prayer according to the correct view. - T) It is stated in 'Aalamgiri': "Al-Razi said: The child is commanded when he is capable of it." 3 (Imam Razi said: When the child becomes physically capable, he should be commanded (to pray and fast). - T) In the same book:

[Arabic]: "This is when fasting does not harm his body; if it harms him, he is not commanded with it." 4 | This applies when fasting does not cause physical hardship/ harm. If it does, then he should not be told to fast. (T)

And it is apparent that these rulings in Hadith and Fiqh are absolute and general. Thus, the guardian of a minor child, seven years or older, can only grant permission to skip fasting when the fast itself causes him harm. Otherwise, if he makes the child skip fasting without a valid Sharia excuse or remains silent upon the child skipping it, he will be a sinner. This is because commanding or striking him is Shari'ah-mandated, and the one who neglects what is obligatory is a wrongdoer and a sinner. And reciting the Quran (Daur) is not a valid excuse for breaking the fast or not fasting. Firstly, it often happens that children, very young, strong, and healthy people, mistake a lack of courage for a lack of capability in such matters. However, if they gird up their loins, it becomes clear that considering themselves incapable was merely a doubt. Even if there is a real inability, meaning one cannot work hard on the Holy Quran while fasting, the way forward is to make them fast and engage in as much Quranic study as can be done without undue strain. Whatever amount they lack the strength for, postpone it until after Ramadan for a future cycle (Daur). For Shari'ah has fixed specific days for fasting, the missing of which results in the loss of the performance (ada), whereas no day is fixed for the 'Daur' (rehearsal/recitation); it can

be done at any time. Suppose if a healthy, resident young man was in the same state that he couldn't do 'Daur' while fasting, would the Shari'ah permit him to skip the fast for the 'Daur'? Never, not at all! Rather, it would mandate that he keep the fast and leave the 'Daur' for another time. So it is known that in this...

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Salat, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/235
2. Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Salat, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/58
3. Fatawa Hindiyya, Al-Mutafarriqat min bab al-I'tikaf, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/212
4. Fatawa Hindiyya, Al-Mutafarriqat min bab al-I'tikaf, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/212

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

[अरबी]: "हदीस का ज़ाहिरी मतलब यह है कि सात साल के बच्चे को (नमाज़ का) हुक्म देना वाजिब है, जैसे (दस साल के बच्चे को) मारना। ज़ाहिर है कि यहाँ 'वाजिब' से मुराद इस्तलाही वाजिब है न कि फ़र्ज़, क्योंकि हदीस ज़न्नी है। तो समझ लो।" 1 ज़ाहिर हदीस में है कि सात साल के बच्चे को नमाज़ का कहना इसी तरह वाजिब है, जैसे दस साल के बच्चे को सज़ा देना वाजिब है और यह भी वाज़ेह है कि यहाँ वज़ूब से इस्तलाही वज़ूब मुराद है न कि ब-मा'नी फ़र्ज़, क्योंकि हदीस ज़न्नी है। पस ग़ौर कीजिये। (त)

दुर्रे मुख़्तार में है: "वस्सौमु कस्सलाति अलस सहीह" 2 (सहीह क़ौल के मुताबिक़ रोज़े का हुक्म नमाज़ ही की तरह है। - त) आलमगीरी में है: "क़ालल राज़ी युअम्रुस्सबियु इज़ा अताक़हु" 3 (इमाम राज़ी ने फ़रमाया: जब बच्चा तवाना (सक्षम) हो जाए तो उसे (नमाज़ और रोज़े का) हुक्म दिया जाए। - त) इसी में है:

[अरबी]: "हाज़ा इज़ा लम यज़ुर्रस्सौमु बिबदनिही फ़इन् अज़र्र ला युअम्रु बिही" 4 | यह उस वक़्त है जब रोज़ा जिस्मानी तक़लीफ़ का सबब न बन रहा हो, अगर बन रहा हो तो फिर उसे न कहा जाए। (त)

और ब-ज़ाहिर कि ये अहकाम हदीस व फ़िक़्ह में मुतलक़ व आम हैं, तो वली ना-बालिग सात साल या उससे बड़े को उसी वक़्त तर्कए-सौम (रोज़ा छोड़ने) की इजाज़त दे सकता है जबकि फ़ि-नफ़्सिही (स्वयं) रोज़ा उसे ज़रर (नुक़सान) पहुँचाए वरना बिला उज़्र-ए-शरई अगर रोज़ा छुड़वाएगा या छोड़ने पर सुकूत (चुप) करेगा तो गुनहगार होगा कि उस पर अम्र (हुक्म) या ज़र्ब (मारना) शरअन लाज़िम और तारिक-ए-वाजिब, बदकार व गुनहगार है, और कलाम-उल्लाह (क़ुरआन) की मेहनत उज़्र और इफ़्तार (रोज़ा न रखना) नहीं। अव्वल तो अक्सर होता है कि बच्चे, बहुत जवान क़वी तंदुरुस्त लोग ऐसे उमूर में कम-हिम्मती को बे-क़ुदरती (अक्षमता) समझ लेते हैं हालाँकि कमर-ए-हिम्मत चुस्त बांधें तो खुल जाए कि उज़्र समझना सिर्फ़ वसवसा था, और वाक़िआ में उज़्र हो भी यानी रोज़ा रखकर कलाम-उल्लाह शरीफ़ पर मेहनत-ए-शाक़्क़ा (कठिन मेहनत) नहीं हो सकती तो राह यह है कि रोज़ा रखवाएं और क़ुरआन मजीद का जितना शुग़ल बे-क़ुल्फ़त (बिना कठिनाई) हो सके लें, और जिस क़दर की ताक़त न देखें बा'द रमज़ान दौर-ए-आइंदा पर मुल्तवी (स्थगित) रखें कि शरअन सियाम (रोज़ों) के लिए अयाम-ए-मुअय्यन (निश्चित दिन) हैं जिनके फ़ौत होने से अदा फ़ौत होगी और दौर के लिए कोई

दिन मुक़र्रर नहीं हमेशा हर वक़्त कर सकते हैं। फ़र्ज़ कीजिये अगर मर्द नौजवान तंदुरुस्त मुक़ीम की यही हालत होती है कि रोज़े के साथ मेहनत-ए-दौर न कर सकता तो क्या शरअ उसे इजाज़त देती कि दौर के लिए रोज़ा तर्क करे, हाशा व कल्ला (कदापि नहीं), बल्कि लाज़िम फ़रमाती कि रोज़ा रखो और दौर दौर-ए-दीगर (दूसरे समय) पर मौक़ूफ़ रख, तो मालूम हुआ इसी में...

1. रद-उल-मुख़्तार किताब-उस्सलात दार-इहया-उत-तुरास अल-अरबी बैरूत 1/235
2. दुर-ए-मुख़्तार किताब-उस्सलात मतबा मुजतबाई देहली 1/58
3. फ़तावा हिन्दिया अल-मुतफ़र्रिक़ात मिन बाब अल-ऐतिकाफ़ नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर 1/212
4. फ़तावा हिन्दिया अल-मुतफ़र्रिक़ात मिन बाब अल-ऐतिकाफ़ नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर 1/212

فتاوی رضویہ جلد دہم

ظاہر الحدیث ان الامر لابن سبع واجب کالضرب والظاہر ایضا ان الوجوب بالمعنی المصطلح علیہ لا بمعنی الافتراض لان الحدیث ظنی فافہم۔ 1 ظاہر حدیث میں ہے کہ سات سال کے بچے کو نماز کا کہنا اسی طرح واجب ہے، جیسے دس سال کے بچے کو سزا دینا واجب ہے اور یہ بھی واضح ہے کہ یہاں وجوب سے اصطلاحی وجوب مراد ہے نہ کہ بمعنی فرض، کیونکہ حدیث ظنی ہے۔ پس غور کیجئے ۔ (ت)

در مختار میں ہے : والصوم کالصلوٰۃ علی الصحیح 2 (صحیح قول کے مطابق روزہ کا حکم نماز ہی کی طرح ہے۔ت) عالمگیری میں ہے : قال الرازی یؤمر الصبی اذا اطاقہ 3 (امام رازی نے فرمایا : جب بچہ توانا ہو جائے تو اسے (نماز و روزہ کا) حکم دیا جائے۔ ت) اسی میں ہے :

ھذا اذالم یضرالصوم ببدنہ فان اضر لایؤمر بہ۔ 4 | یہ اس وقت ہے جب روزہ جسمانی تکلیف کا سبب نہ بن رہا ہو ، اگر بن رہا ہو تو پھر اسے نہ کہا جائے۔ (ت)

اور بہ ظاہر کہ یہ احکام حدیث و فقہ میں مطلق و عام ، تو ولی نا بالغ ہفت سال یا اس سے بڑے کے اسی وقت ترک صوم کی اجازت دے سکتا ہے جبکہ فی نفسہ روزہ اسے ضرر پہنچائے ورنہ بلا عذر شرعی اگر روزہ چھڑائے گا یا چھوڑنے پر سکوت کرے گا گنہ گار ہوگا کہ اس پر امر یا ضرب شرعاً لازم اور تارک واجب،بزہ کار و آثم، اور دُور کلام اللہ کی محنت عذر و افطار نہیں۔ اولاً اکثر ہوتا ہے کہ بچے بہت جوان قوی تندرست لوگ ایسے امور میں کم ہمتی کو بے قدرتی سمجھ لیتے حالانکہ کمر ہمت چست باندھیں تو کھل جائے کہ عجز سمجھنا صرف وسوسہ تھا، اور واقعہ میں عجز ہو بھی یعنی روزہ رکھ کر کلام اللہ شریف پر محنت شاقہ نہیں ہو سکتی تو راہ یہ

ہے کہ روزہ رکھوائیں اور قرآن مجید کا جتنا شغل بے کلفت ہوسکے لیں ، اور جس قدر کی طاقت نہ دیکھیں بعدِ رمضان دورِ آئندہ پر ملتوی رکھیں کہ شرعاً صیام کے لیے ایامِ معین ہیں جن کے فوت سے ادا فوت ہوگی اور دور کے لیے کوئی دن مقرر نہیں ہمیشہ وہر وقت کرسکتے ہیں فرض کیجئے اگر مرد نوجوان تندرست مقیم کی یہی حالت ہوتی ہے کہ روزے کے ساتھ محنت دُور نہ کرسکتا تو کیا شرع اسے اجازت دیتی کہ دور کے لیے روزہ ترک کرے، حاشا و کلا ، بلکہ لازم فرماتی کہ روزہ رکھ اور دُور دُورِ دیگر پر موقوف رکھ، تو معلوم ہوا اسی میں

1 ردالمختار کتاب الصلوٰۃ داراحیاء التراث العربی بیروت ۱/ ۲۳۵ 2 دُرِ مختار کتاب الصلوٰۃ مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۵۸ 3 فتاوی ہندیہ المتفرقات من باب الاعتکاف نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۲۱۲ 4 فتاوی ہندیہ المتفرقات من باب الاعتکاف نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۲۱۲

Fatawa-e-Razvia, Volume 10

There is goodness, and in its opposite there is evil. The guardian should command the child to do every good and restrain him from every evil. The commentators of Durr, Sadat Halabi, Tahtawi, and Shami (may Allah Almighty have mercy on them) state:

[Arabic: His intent in these two narrations is to explain that a child should be commanded to perform all orders and forbidden from all prohibitions. | Urdu: The purpose of these two explicit statements is that it is incumbent upon the guardian to instruct the child to fulfill all commands and to refrain from all prohibitions. (T)]

Allama Tahtawi stated:

[Arabic: So there is no specificity for prayer, fasting, and wine, as the reasoning points towards it. This is what I have, and the knowledge of truth is with my Lord. Indeed, He is Sublime and Exalted, Most Knowing. | Urdu: In this, prayer, fasting, and wine are not specifically restricted, as the explanation of the reason is making it clear. This has become clear to me; the knowledge of the truth is with my Lord, indeed He is Glorified and Exalted, Most Knowing. (T)]

Problem 163: From the camp of Hakeem Syed Noor-ul-Hassan Sahab Dehlavi, 4 Shawwal 1309 AH. What do the scholars of religion and the jurists of the firm Shariah say about this matter: due to a difference in moon sighting, the fast was broken on the 30th of Ramadan. After it became known that the news of the sighting was false, the fast was not re-established, and eating and drinking continued as usual. Now, is expiation (Kaffara) mandatory for this fast or only making it up (Qada)? Also, for those who, after receiving news of the falsity of the sighting, purified their mouths by rinsing and gargling and established their fast, what is mandatory for them? Is it Kaffara or Qada?

The Answer: Those who continued eating and drinking even though they had become aware of the lie have sinned, but expiation is not mandatory even for them. Those who immediately rinsed and gargled will receive a reward and they should also observe one fast in replacement for it. And Allah Almighty knows best.

Problem 164: From Gilgit Cantonment Jonal, sent by Sardar Amir Khan, employee of Captain Stut, 22 Dhu al-Hijjah 1312 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: How is it to fast while traveling? Especially when going for a battle. Give your verdict, may you be rewarded.

The Answer: Whoever sets out from their home with the intention of traveling three complete stages or more, whether the intention is good or bad, they...

---

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Salat, Mustafa al-Babi Egypt 1/259.
2. Hashiya Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Salat, Dar al-Ma'rifah Beirut 1/170.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

भलाई है, और इसके विपरीत में बुराई है, और वली (अभिभावक) को चाहिए कि बच्चे को हर भलाई का आदेश दे और हर बुराई से दूर रखे। 'दुर्र' के हाशिये लिखने वाले सादात हलाबी, तहतावी और शामी (अल्लाह उन पर रहम करे) फरमाते हैं:

[अरबी: इन दो उद्धरणों से उनका उद्देश्य यह समझाना है कि बच्चे को सभी आदेशों के लिए निर्देशित किया जाना चाहिए और सभी निषेधों से रोका जाना चाहिए। | उर्दू: इन दोनों स्पष्ट कथनों का उद्देश्य यह है कि अभिभावक के लिए यह अनिवार्य है कि वह बच्चे को सभी आदेशों का पालन करने और सभी वर्जित कार्यों से दूर रहने के लिए कहे। (त)]

अल्लामा तहतावी ने फरमाया:

[अरबी: तो नमाज़, रोज़ा और शराब के लिए कोई विशिष्टता नहीं है, जैसा कि कारण का स्पष्टीकरण इसकी ओर संकेत करता है। यह मेरे पास है, और सत्य का ज्ञान मेरे रब के पास है। निःसंदेह वह पवित्र और सर्वोच्च है, सबसे अधिक जानने वाला है। | उर्दू: इसमें नमाज़, रोज़ा और शराब ही विशेष नहीं हैं जैसा कि कारण का विवरण इसे स्पष्ट कर रहा है। यह मुझ पर स्पष्ट हुआ है, सत्य का ज्ञान मेरे रब के पास है, निःसंदेह वह पवित्र और सर्वोच्च है, सबसे अधिक जानने वाला है। (त)]

मसला १६३: हकीम सैयद नूरुल हसन साहब देहलवी के शिविर से, ४ शव्वाल १३०९ हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीअत के मुफ़्ती इस मसले के बारे में क्या कहते हैं: चाँद देखने के मतभेद के कारण रमज़ानुल मुबारक की ३० तारीख को रोज़ा इफ़्तार कर लिया गया और चाँद देखने की ख़बर के झूठे होने का पता चलने के बाद रोज़ा फिर से शुरू नहीं किया गया और खाना-पीना जारी रखा गया। अब इस रोज़े के लिए कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) अनिवार्य है या कज़ा? इसके अलावा, जिन लोगों ने ख़बर झूठी होने की सूचना मिलने के बाद कुल्ली और गरारे से मुँह साफ करके अपना रोज़ा फिर से शुरू कर लिया, उनके लिए क्या आदेश है, कफ़्फ़ारा या कज़ा?

जवाब: जिन्होंने खाना-पीना जारी रखा जबकि उन्हें झूठ का पता चल चुका था, वे गुनहगार हुए लेकिन कफ़्फ़ारा उन पर भी नहीं है। जिन्होंने तुरंत कुल्ली और गरारे कर लिए उन्हें सवाब (पुण्य) मिलेगा और वे इसके बदले में एक रोज़ा भी रखें। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला १६४: गिलगित छावनी जोनाल से, प्रेषक सरदार अमीर खान, कप्तान स्टुअर्ट के कर्मचारी, २२ ज़िल हिज्जा १३१२ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि सफर में रोज़ा रखना कैसा है? विशेष रूप से जब युद्ध के स्थान पर जाना हो। बयान फरमाएँ आपको प्रतिफल दिया जाए।

जवाब: जो अपने घर से तीन मंज़िल की पूरी दूरी या उससे अधिक के इरादे से निकले, चाहे इरादा अच्छा हो या बुरा, वह...

---

1. रद्दुल मुहतार, किताबुस सलात, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र १/२५९।
2. हाशिया तहतावी अला अद-दुर्रिल मुख्तार, किताबुस सलात, दारुल मारिफ़ा बेरुत १/१७०।

पृष्ठ ३५१/८३६

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

خیر ہے، اور اس کے عکس میں شر، اور ولی کو چاہئے بچے کو ہر خیر کا حکم دے اور ہر شر سے باز رکھے۔ محشیانِ دُرّ سادات حلبی و طحطاوی و شامی رحمہم اللہ تعالٰی فرماتے ہیں:

| مراده من هذين النقلين بيان ان الصبي ينبغي ان | ان دونوں تصریحات کا مقصد یہ ہے کہ ولی پر لازم ہے کہ وہ | | یؤمر لجمیع المأمورات وینهی عن جمیع المنهیات | بچے کو تمام اوامر کو بجالانے اور تمام منہیات سے باز رہنے کا | | 1. - | کہے۔ (ت) |

علّامہ طحطاوی نے فرمایا:

| فلا خصوصية للصلوة والصوم والخمر كما يرشد اليه | اس میں نماز، روزہ اور شراب ہی مخصوص نہیں جیسا کہ علت کا | | التعلیل اھ 2هذا ماعندی والعلم بالحق عند ربی | بیان اسے واضح کر رہا ہے۔ اھ یہ مجھ پر واضح ہوا ہے علم حق میرے | | انه سبحانه وتعالی اعلم۔ | رب کے پاس ہے، انه سبحانه وتعالی اعلم (ت) |

مسئلہ ۱۶۳: از کپ معرفت حکیم سید نور الحسن صاحب دہلوی ۴ شوال ۱۳۰۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین مفتیان شرع متین بیچ اس مسئلہ کے جو کہ بوجہ اختلاف ہونے رؤیتِ ہلال کے ۳۰ تاریخ رمضان المبارک کو روزہ افطار کیا گیا اور بعد معلوم ہو جانے خبر تکذیبِ رؤیت کے روزہ قائم نہیں کیا گیا اور اکل وشرب برابر رکھا، اب اس روزے کے واسطے کفارہ لازم ہے یا قضا و نیز جن صاحبوں نے بعد خبر پانے تکذیبِ رویت کے پھر اپنے صوم کو کلی غرارہ سے دہن کو پاک کرکے قائم کرلیا ہے اُن کو کیا امر لازم ہے آیا کفارہ یا قضا؟

الجواب: جنہوں نے اکل و شرب قائم رکھا حالانکہ کذب پر مطلع ہو چکے تھے وہ گنہ گار ہوئے لیکن کفارہ ان پر بھی نہیں، جنہوں نے فوراً کلی غرارہ کرلیا وہ ثواب پائیں گے اور ایک روزہ اُس کے عوض کا وہ بھی رکھیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۶۴: از گلگٹ چھاونی جو نال مرسلہ سردار امیر خاں ملازم کپتان اسٹوٹ ۲۲ ذی الحجہ ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ سفر میں روزہ رکھنا کیسا ہے؟ خاص کرکے لڑائی کے موقع پر جانا ہے۔ بینوا توجروا

الجواب: جو اپنے گھر سے تین منزل کامل یا زیادہ کی راہ کا ارادہ کرکے چلے خواہ کسی نیت اچھی یا بُری سے جانا ہو، وہ

---

1 ردالمحتار کتاب الصلوۃ مصطفی البابی مصر ۱/ ۲۵۹ 2 حاشیہ طحطاوی علی الدر المختار کتاب الصلوۃ دار المعرفہ بیروت ۱/ ۱۷۰

Fatawa Razawiyya Volume 10

As long as he does not return home or intend to stay in a place for fifteen days in between, he is a traveler. For such a person, it is permissible to skip the fast on the day he arrives in the state of travel at dawn and make up for it later. However, if fasting does not harm him and his companion is not distressed by his fasting, then fasting is better; otherwise, making it up later is better.

In Al-Durr al-Mukhtar: A traveler on a Shari'a journey, even if for a sinful purpose, may break the fast. Fasting is recommended if it does not harm him. If it is difficult for him or his companion, then breaking the fast is better for the sake of conforming to the group. It is obligatory for a resident to complete the fast of a day in Ramadan if he started his journey on that day. [Abridged] (T)

In Durr Mukhtar, it says: A traveler whose journey is of Shari'a distance, even if it is for a sin, can leave the fast. And if fasting does not cause him hardship, then fasting is recommended (mustahabb). And if fasting is difficult or difficult for his companion, then breaking the fast is better for conformity with the group. A resident must complete that day's Ramadan fast on the day he started his journey. [Summarized] (T)

Similarly, a warrior (ghazi), if he knows for certain that a battle with the enemy is imminent and fears that fasting will cause weakness, he may also skip the fast, even if he is not traveling.

In Radd al-Muhtar, from Al-Nahr, from Al-Khulasa: A warrior, if he knows for certain that he will fight the enemy in Ramadan and fears weakness if he does not break the fast, may break it.

In Radd al-Muhtar, it is cited from Nahr from Khulasa that when a warrior is certain that there will be a confrontation with the enemy in Ramadan, and if he keeps the fast he will become weak, then he should not fast. (T)

But this permission without travel is only for someone who fights in support or assistance of the religion of Islam. As for other national wars, or God forbid, in support of disbelief or on the side of a disbeliever, even if fighting another disbeliever, these are all sins. Permission to delay the fast to gain strength for a sin is not possible.

In Musta’min Fath al-Qadir, an exquisite branch in Al-Mabsut: If a group from the people of war (harb) raids…

In the chapter of Al-Musta’min in Fath al-Qadir, there is a very exquisite point from Mabsut that if among the people of war…

1 Durr Mukhtar, Chapter on what invalidates the fast, Section on Impediments, Mujtabai Press, Delhi, 1/152 to 154. 2 Radd al-Muhtar, Chapter on what invalidates the fast, Section on Impediments, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/126.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (दसवीं)

जब तक वह अपने घर वापस न आ जाए या बीच में कहीं ठहरने की जगह पन्द्रह दिन रुकने की नीयत न कर ले, वह मुसाफ़िर (यात्री) है। ऐसे व्यक्ति के लिए, जिस दिन वह सुबह सादिक (भोर) के समय यात्रा की स्थिति में हो, उस दिन का रोज़ा छोड़ना और बाद में उसकी कज़ा (भरपाई) कर लेना जायज़ है। फिर, यदि रोज़ा उसे नुकसान न पहुँचाए और न ही उसके साथी को उसके रोज़े से कोई परेशानी हो, तो रोज़ा रखना ही बेहतर है, अन्यथा कज़ा करना बेहतर है।

अद-दुरुल मुख्तार में है: एक मुसाफ़िर जो शरई सफ़र (यात्रा की निर्धारित दूरी) पर हो, चाहे वह किसी गुनाह के काम के लिए ही क्यों न हो, वह रोज़ा छोड़ सकता है। रोज़ा रखना मुस्तहब (पसंदीदा) है अगर इससे उसे नुकसान न हो। यदि यह उसके या उसके साथी के लिए मुश्किल हो, तो जमाअत (समूह) के साथ मेलजोल के लिए इफ़्तार (रोज़ा तोड़ना) करना बेहतर है। मुकीम (निवासी) पर उस दिन के रमज़ान के रोज़े को पूरा करना लाज़िम है जिस दिन उसने सफ़र शुरू किया हो। [संक्षिप्त] (त)

दुर्रे मुख्तार में है: वह मुसाफ़िर जिसका सफ़र शरई (दूरी के बराबर) हो, चाहे वह गुनाह की खातिर हो, रोज़ा छोड़ सकता है। और अगर उसे रोज़ा तकलीफ न दे तो रोज़ा रखना मुस्तहब है, और अगर रोज़ा मुश्किल हो या उसके साथी पर मुश्किल हो, तो फिर जमाअत की मुआफ़िक़त (सहमति) में इफ़्तार अफ़ज़ल है। मुकीम पर उस रोज़ा-ए-रमज़ान का इतमाम (पूरा करना) लाज़िम है जिस दिन उसने सफ़र शुरू किया। [संक्षिप्त] (त)

इसी तरह ग़ाज़ी (योद्धा) अगर यकीन के साथ जान ले कि अब दुश्मन से मुकाबला होने वाला है और रोज़ा रखने से कमज़ोरी का अंदेशा है, तो वह भी रोज़ा छोड़ दे, चाहे वह सफ़र में न हो।

रद-उल-मुह्तार में अन्नह्र से अल-ख़ुलासा के हवाले से है: ग़ाज़ी जब यकीन के साथ जानता हो कि वह रमज़ान में दुश्मन से लड़ेगा और अगर रोज़ा न तोड़ा तो कमज़ोरी का डर हो, तो वह इफ़्तार कर ले (रोज़ा तोड़ दे)।

रद-उल-मुह्तार में नहर से खुलासा से है कि ग़ाज़ी को जब यकीन हो कि रमज़ान में दुश्मन से मुकाबला होगा और अगर रोज़ा रखा तो कमज़ोर हो जाएगा, तो रोज़ा न रखे। (त)

मगर यह इजाज़त बिना सफ़र के सिर्फ उसी को मिल सकती है जो दीन-ए-इस्लाम की हिमायत या मदद में लड़ता हो। बाकी मुल्की लड़ाइयाँ या अल्लाह की पऽह, कुफ़्र की हिमायत या काफ़िर की

तरफ से होकर अगरचे दूसरे काफ़िर ही से लड़ना, ये सब गुनाह हैं। गुनाह पर ताकत हासिल करने के लिए रोज़ा कज़ा करने की इजाज़त मुमकिन नहीं।

मुस्तअमिन फ़तह-उल-क़दीर में है, अल-मबसूत की एक नफ़ीस (उत्कृष्ट) उपशाखा है: यदि हर्ब (युद्ध) वालों के लोगों में से एक गिरोह...

फ़तह-उल-क़दीर के बाब अल-मुस्तअमिन में है कि मबसूत में निहायत नफ़ीस जुज़ईया (विस्तृत मसला) है कि अगर अहल-ए-हर्ब में से...

1 दुर्रे मुख्तार, बाब मायफ़सिद अल-सौम, फ़स्ल फ़िल अवारिज़, मतबआ मुजतबाई, दिल्ली, 1/152 से 154। 2 रद-उल-मुह्तार, बाब मायफ़सिद अल-सौम, फ़स्ल फ़िल अवारिज़, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/126।

جب تک مکان کو پلٹ کر نہ آئے یا بیچ میں کہیں ٹھہرنے کی جگہ پندرہ دن قیام کی نیت نہ کرلے مسافر ہے، ایسے شخص کو جس دن کی صبح صادق مسافرت کے حال میں آئے اُس دن کا روزہ ناغہ کرنا اور پھر کبھی اس کی قضا کر لینا جائز ہے، پھر اگر روزہ اسے نقصان نہ کرے نہ اُس کے رفیق کو اُس کے روزہ سے ایذا ہو جب تو روزہ رکھنا ہی بہتر ہے ورنہ قضا کرنا بہتر ہے،

در مختار میں ہے وہ مسافر جس کا سفر شرعی

فی الدرالمختار،لمسافر سفر اشرعیاً ولو بمعصیة الفطر ، ویندب الصوم ان لم یضره فان شق علیه او علی رفیقه فالفطر افضل لموافقة الجماعة یجب علی مقیم اتمام صوم یوم من رمضان سافر فی ذلك الیوم اه ملتقطا 1

(مقدار کے برابر) ہو خواہ گناہ کی خاطر ہو روزہ چھوڑ سکتا ہے اور اگر اسے روزہ تکلیف نہ دے تو روزہ رکھنا مستحب ہے، اور اگر روزہ مشکل ہو یا اس کے ساتھی پر مشکل ہو تو پھر جماعت کی موافقت میں افطار افضل ہے۔ مقیم پر اس روزہ رمضان کا اتمام لازم ہے جس دن اس نے سفر شروع کیا اھ مختصراً (ت)

یونہی غازی اگر یقینا جانے کہ اب دشمن سے مقابلہ ہونے والا ہے اور روزہ رکھوں گا تو ضعف کا اندیشہ ہے تو وہ بھی ناغہ کرے اگرچہ سفر میں نہ ہو۔

فی ردالمختار عن النهر عن الخلاصة ردالمختار میں نہر سے خلاصہ سے ہے کہ غازی کو الغازی اذا کان یعلم یقینا انه یقاتل العدو فی جب یقین ہو کہ رمضان میں دشمن سے مقابلہ ہوگا اور رمضان ویخاف الضعف ان لم یفطر افطر - اگر روزہ رکھا تو کمزور ہوجائے گا تو روزہ نہ رکھے (ت) 2

مگر یہ اجازت بلا سفر صرف اُسی کو مل سکتی ہے جو حمایت یا اعانت دین اسلام میں لڑتا ہو، باقی ملکی لڑائیاں یا معاذاللہ کفر کی حمایت یا کافر کی طرف ہو کر اگرچہ دوسرے کافر ہی سے لڑنا، یہ سب گناہ ہیں۔ گناہ پر طاقت کے لیے روزہ قضا کرنے کی اجازت ممکن نہیں ہیں۔

فی مستأمن فتح القدیر، فرع نفیس فی فتح القدیر کے باب المستأمن میں ہے کہ مبسوط میں المبسوط لوغار قوم من اهل الحرب نہایت نفیس جزئیہ ہے کہ اگر اہل حرب میں سے

1 در مختار باب مایفسد الصوم فصل فی العوارض مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۵۲ تا ۱۵۴ 2 ردالمختار، باب مایفسد الصوم فصل فی العوارض ، مصطفیٰ البانی مصر، ۲/۱۲۶

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Arabic Box Text]: On the people of the territory in which there is a protected Muslim, it is not permissible for him to fight those disbelievers unless he fears for himself. Because fighting, when it is exposing oneself to destruction, is not permissible except for that (self-preservation) or for the exaltation of the word of Allah Almighty. When he does not fear for himself, his fighting them is not for the exaltation [of the word of Allah] but for disbelief.

[Urdu Box Text]: If some people attack an area where a Muslim has taken refuge, then it will not be permissible for that Muslim to fight with those disbelievers, except in the case when he fears for his life, because in fighting one has to present oneself for destruction and this is not permissible except in the case when there is fear for one's life or it is for the exaltation of the word of Allah Almighty, and when he does not fear for his life, then his fighting will be nothing but the exaltation of disbelief. (T)

Yes, when these people are on a journey, then due to the journey it will be permitted, even if that journey is towards Saqar (Hell).

[Arabic Box Text]: As we have previously mentioned from Durr al-Mukhtar, and the disagreement regarding this is well-known between us and Imam al-Shafi'i (may Allah Almighty be pleased with them all). And Allah Almighty knows best.

[Urdu Box Text]: As we have stated earlier with reference to Durr al-Mukhtar, and in this, there is a famous disagreement between us and Imam Shafi'i (may Allah Almighty be pleased with them all). And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 165: Irfan Ali Sahib Razavi, Bisalpuri employee, Collector's Court Pilibhit, 16 Shaban 1333 AH. The month of Ramadan Sharif sometimes occurs in the summer season, sometimes in the winter season, sometimes in spring, and sometimes in the rainy season. Suppose the month of Ramadan occurs in summer once, then it should occur in summer the next year as well because the same season returns after a full year. According to the solar months, Ramadan sometimes occurs in summer and sometimes in winter; what is the reason for this? Since your presence has extensive knowledge in astronomy, therefore its solution from anyone other than your presence is impossible. Please explain and be rewarded.

Answer: The change of seasons has been placed by the Creator (Mighty and Majestic) on the rotation of the sun. For example, from the transition into Aries to the end of Gemini is the spring season, then from the transition into Cancer to the end of Virgo

is summer, then from the transition into Libra to the end of Sagittarius is autumn, then from the transition into Capricorn to the end of Pisces is winter. This is one cycle of the sun which is completed in approximately 365 days and nearly six hours, which is about a quarter of a day. And the Arabic Shari'i months are lunar, which start from the crescent moon and end in 30 or 29 days. These twelve months...

1. Fath al-Qadir, Chapter of Al-Musta'min, Maktaba Nooria Razawiyya Sukkur, 5/267

[अरबी बॉक्स पाठ]: उन क्षेत्र के निवासियों पर जहाँ एक संरक्षित मुसलमान है, उसके लिए उन काफ़िरों से लड़ना तब तक जायज़ नहीं है जब तक कि उसे अपनी जान का ख़तरा न हो। क्योंकि युद्ध, चूँकि स्वयं को विनाश के लिए प्रस्तुत करना है, इसलिए वह केवल इसके लिए (आत्मरक्षा) या अल्लाह तआला के कलमे (वचन) की बुलंदी के लिए ही जायज़ है। और जब उसे अपनी जान का डर न हो, तो उनसे उसका युद्ध कुफ़्र की बुलंदी के सिवा कुछ नहीं होगा।

[उर्दू बॉक्स पाठ]: कुछ लोगों ने किसी ऐसे इलाके पर हमला कर दिया जिसमें किसी मुसलमान ने पनाह ले रखी थी तो उस मुसलमान के लिए उन काफ़िरों के साथ लड़ाई करना जायज़ न होगा, अलबत्ता इस सूरत में जब उसे अपनी जान का ख़ौफ़ हो, क्योंकि क़िताल (युद्ध) में अपने आप को हलाकत (विनाश) पर पेश करना होता है और यह जायज़ नहीं मगर इस सूरत में जब अपनी जान का ख़ौफ़ हो या कलमतुल्लाह तआला की सरबुलंदी के लिए हो, और जब उसे अपने नफ़्स (जान) का ख़ौफ़ नहीं तो अब उसका क़िताल सिवाय कुफ़्र की बुलंदी के कुछ न होगा। (त)

हाँ जब ये लोग सफ़र में हों तो बवजह सफ़र इजाज़त होगी अगरचे वह सफ़र जानिब-ए-सक़र (नरक की ओर) हो।

[अरबी बॉक्स पाठ]: जैसा कि हमने दुर्र-ए-मुख्तार के हवाले से पहले ज़िक्र किया है, और इसमें हमारे और इमाम शाफ़ई (अल्लाह तआला उन सब से राज़ी हो) के दरमियान इख़्तिलाफ़ (असहमति) मशहूर है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[उर्दू बॉक्स पाठ]: जैसा कि हमने दुर्र-ए-मुख्तार के हवाले से पीछे बयान किया है और इसमें हमारे और इमाम शाफ़ई (अल्लाह तआला इन तमाम से राज़ी हो) के दरमियान मशहूर इख़्तिलाफ़ है। वल्लाहु तआला आलम (त)

मसला १६५: इरफ़ान अली साहब रज़वी, बीसलपुरी मुलाज़िम कचहरी कलेक्टर पीलीभीत, १६ शाबान १३३३ हिजरी। माहे रमज़ान शरीफ़ कभी मौसम-ए-गर्मा में होता है कभी मौसम-ए-सरमा, कभी मौसम-ए-बहार में कभी बरसात में। फ़र्ज़ कीजिए कि एक मर्तबा माहे रमज़ान गर्मियों में हो तो दूसरे साल भी गर्मियों में होना चाहिए क्योंकि वही मौसम दोबारा साल भर बाद आता है, शम्सी महीने के हिसाब से कभी रमज़ान मौसम-ए-गर्मा में होता है और कभी मौसम-ए-सरमा में, इसकी वजह क्या

है? चूँकि हुज़ूर इल्म-ए-हैयत (खगोल विज्ञान) में यद-ए-तूला (महारत) रखते हैं पस सिवाए हुज़ूर के किसी और से इसका हल होना ग़ैर मुमकिन। बेयनू तूजरू (बयान करें, पुण्य पाएँ)।

अल-जवाब: मौसमों की तब्दीली ख़ालिक़-ए-अज़्वजल ने गर्दिश-ए-आफ़ताब (सूर्य के घूमने) पर रखी है मसलन तहवील-ए-बुर्ज-ए-हमल से ख़त्म-ए-जौज़ा तक फ़स्ल-ए-रबीअ है, फिर तहवील-ए-सरतान से ख़त्म-ए-सुम्बुला तक गर्मी, फिर तहवील-ए-मीज़ान से ख़त्म-ए-क़ौस तक ख़रीफ़, फिर तहवील-ए-जद्दी से ख़त्म-ए-हूत तक जाड़ा, यह आफ़ताब का एक दौर है कि तक़रीबन ३६५ दिन और पौने छह घंटे में कि पाव दिन के क़रीब हो, पूरा होता है। और अरबी शरई महीने क़मरी हैं कि हिलाल (चाँद) से शुरू और ३० या २९ दिन में ख़त्म होते हैं। यह बारह महीने...

1. फ़तह अल-क़दीर, बाब अल-मुस्तअमिन, मकतबा नूरिय्या रज़विय्या सुक्कुर, ५/२६७

فتاوی رضویہ جلد دہم

[Arabic Box Text]: علی اھل الدارالتی فیھم المسلم المستأمن لایحل لہ قتال ھؤلاء الکفار الا ان خاف علی نفسہ لان القتال لما کان تعریضاً لنفسہ علی الھلاك لایحل الا لذلك اولا علاء کلمۃ اللہ تعالی وھو اذالم یخف علی نفسہ لیس قتالہ لھؤلاء الاعلاء لکفر-1

[Urdu Box Text]: کچھ لوگوں نے کسی ایسے علاقے پر حملہ کر دیا جس میں کسی مسلمان نے پناہ لے رکھی تھی تو اس مسلمان کے لیے ان کفار کے ساتھ لڑائی کرنا جائز نہ ہوگا، البتہ اس صورت میں جب اسے اپنی جان کا خوف ہو، کیونکہ قتال میں اپنے آپ کو ہلاکت پر پیش کرنا ہوتا ہے اور یہ جائز نہیں مگر اس صورت میں جب اپنی جان کا خوف ہو یا کلمتہ اللہ تعالی کی سربلندی کے لیے ہو، اور جب اسے اپنے نفس کا خوف نہیں تو اب اس کا قتال سوائے کفر کی بلندی کے کچھ نہ ہوگا۔ (ت)

ہاں جب یہ لوگ سفر میں ہوں تو بوجہ سفر اجازت ہوگی اگرچہ وہ سفر جانب سقر ہو۔

[Arabic Box Text]: کما قدمنا عن الدرالمختار والخلاف فیہ معروف بیننا وبین الشافعی رضی اللہ تعالی عن الجمیع۔ واللہ تعالی اعلم۔

[Urdu Box Text]: جیسا کہ ہم نے دُر مختار کے حوالے سے پیچھے بیان کیا ہے اور اس میں ہمارے اور امام شافعی (اللہ تعالی ان تمام سے راضی ہو) کے درمیان مشہور اختلاف ہے۔ واللہ تعالی اعلم (ت)

مسئلہ ۱۶۵: عرفان علی صاحب رضوی، بیسل پوری ملازم کچہری کلکٹر پیلی بھیت ۱۶ شعبان ۱۳۳۳ھ ماہ رمضان شریف کبھی موسم گرما میں ہوتا ہے کبھی موسم سرما، کبھی موسم بہار میں

کبھی برسات میں۔ فرض کیجئے کہ ایک مرتبہ ماہ رمضان گرمیوں میں ہو تو دوسرے سال بھی گرمیوں میں ہونا چاہئے کیونکہ وہی موسم دوبارہ سال بھر بعد آتا ہے، شمسی مہینے کے حساب سے کبھی رمضان موسم گرما میں ہوتا ہے اور کبھی موسم سرما میں، اس کی وجہ کیا ہے؟ چونکہ حضور علم ہیات میں یدطولی رکھتے ہیں پس سوائے حضور کے کسی اور سے اس کا حل ہونا غیر ممکن۔ بینوا توجروا

الجواب: موسموں کی تبدیلی خالق عزوجل نے گردش آفتاب پر رکھی ہے مثلاً تحویل برج حمل سے ختم جوزا تک فصل ربیع ہے، پھر تحویل سرطان سے ختم سنبلہ تک گرمی، پھر تحویل میزان سے ختم قوس تک خریف، پھر تحویل جدی سے ختم حوت تک جاڑا، یہ آفتاب کا ایک دور ہے کہ تقریباً ۳۶۵ دن اور پونے چھ گھنٹے میں کہ پاؤ دن کے قریب ہو، پورا ہوتا ہے۔ اور عربی شرعی مہینے قمری ہیں کہ ہلال سے شروع اور ۳۰ یا ۲۹ دن میں ختم ہوتے ہیں۔ یہ بارہ مہینے

1 فتح القدیر باب المستأمن مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۵ / ۲۶۷

That is, a lunar year consists of 354 or 355 days, so it is ten or eleven days shorter than a solar year. To understand, ignoring the fractions, consider the solar year as 365 days and the lunar as 355, resulting in a ten-day difference. Now suppose that in a certain year, the 1st of Ramadan fell on the 1st of January. The following year, the 1st of Ramadan will be on the 22nd of December because 12 lunar months conclude in 355 days, while the solar year still requires ten more days to complete. Then, in the third year, the 1st of Ramadan will be on the 12th of December, and in the fourth year, on the 1st of December. Thus, in three years, the month shifted by one. It was initially on the 1st of January, now it is on the 1st of December. Likewise, every three years, it will shift by one month, and Ramadan will rotate through every solar month. Exactly the same would be the case with Hindi months if they didn't take 'Lound' (intercalary month). They kept the year solar and the months lunar, so every year, by decreasing ten days, after three years, one month was reduced. Therefore, every three years, they repeat one month to maintain alignment with the solar year; otherwise, sometimes Jait would fall in winter and Poos in summer. In fact, even the Christians, who took both year and months as solar, if they did not increase one day every fourth year to make February 29th, they would face the same situation where June would sometimes be in winter and December in summer. Since they took the year as 365 days and the sun's revolution completes a few hours later, roughly 6 hours, the solar year ended 6 hours before the completed revolution in the first year, 12 hours before in the second year, 18 hours before in the third year, and approximately 24 hours before in the fourth year. Since 24 hours make a full day and night, they added one day every fourth year to align with the sun's revolution. However, the sun's revolution was not exactly six hours extra but approximately five and three-quarters hours every fourth year. So, in the fourth year, the difference wasn't a full 24 hours but about 23 hours, yet they increased it by one full day (24 hours). Thus, in each year, the solar year would increase by a little less than an hour relative to the sun's revolution. After a hundred years, this amounts to roughly one day. Therefore, after a century, they reduced it back to make February 28 days. Such is the calculation for more precise fractions. And Allah Almighty knows best.

Problem 166: From Raipur CP, Mohalla Baijnath Para, sent by Bahadur Ali Khan, Superintendent Pensioner Settlement Department, 22 Dhu al-Hijjah 1336 AH. If the moon is not sighted on the 29th of Shaban, is it permissible for the general public,

besides the Qazi and Mufti, to fast on the 30th or not? And if it is permissible, with what intention?

The Answer: If the horizon is clear on the evening of the 29th and the moon is not sighted, then no one, neither the Qazi nor the Mufti, should fast on the 30th. If the horizon is cloudy or dusty, the Mufti should instruct the general public to wait until 'Dahwa-e-Kubra' (Islamic mid-day), meaning they should neither eat nor drink nor make an intention for fasting, but remain in a fast-like state without intention. If, during this time, through Shar'i evidence...

यानी चांद्र वर्ष ३५४ या ३५५ दिनों का होता है, तो यह सौर वर्ष से दस-ग्यारह दिन छोटा होता है। समझने के लिए, भिन्नों को छोड़कर, सौर वर्ष ३६५ दिन और चांद्र वर्ष ३५५ दिन का मान लें, तो दस दिनों का अंतर होता है। अब मान लीजिए कि किसी वर्ष रमज़ान शरीफ़ की पहली तारीख १ जनवरी को हुई। अगले वर्ष २२ दिसंबर को पहली रमज़ान होगी क्योंकि चांद्र १२ महीने ३५५ दिनों में समाप्त हो जाएंगे और सौर वर्ष पूरा होने में अभी दस दिन और लगेंगे। फिर तीसरे वर्ष पहली रमज़ान १२ दिसंबर को होगी, चौथे वर्ष १ दिसंबर को होगी। तीन वर्षों में एक महीना बदल गया, पहले १ जनवरी को थी अब १ दिसंबर को हुई। इसी प्रकार हर तीन साल में एक महीना बदलेगा और रमज़ानुल मुबारक हर सौर महीने का दौरा करेगा। ठीक यही स्थिति हिंदी महीनों की भी होती, अगर वे 'लोंद' (अधिक मास) न लेते। उन्होंने वर्ष सौर रखा और महीने चांद्र लिए, तो हर वर्ष दस दिन घटते-घटते तीन साल बाद एक महीना घट गया, इसलिए वे हर तीन साल में एक महीना दोहराते हैं ताकि सौर वर्ष से मेल बना रहे, अन्यथा कभी जेठ सर्दियों में आता और पूस गर्मियों में। यहाँ तक कि ईसाइयों ने भी, जिन्होंने वर्ष और महीने सभी सौर लिए, यदि वे हर चौथे वर्ष एक दिन बढ़ाकर २९ फ़रवरी न करते, तो उन्हें भी इसी स्थिति का सामना करना पड़ता कि कभी जून का महीना सर्दियों में होता और दिसंबर गर्मियों में। चूँकि उन्होंने वर्ष ३६५ दिनों का लिया और सूर्य का चक्कर अभी कुछ घंटों बाद पूरा होगा, जिसकी मात्रा लगभग ६ घंटे है, तो पहले सौर वर्ष में सूर्य का चक्कर पूरा होने से ६ घंटे पहले वर्ष समाप्त हुआ, दूसरे वर्ष १२ घंटे पहले, तीसरे वर्ष १८ घंटे पहले, चौथे वर्ष लगभग २४ घंटे पहले, और २४ घंटे का एक दिन-रात होता है इसलिए हर चौथे साल एक दिन बढ़ा दिया ताकि सूर्य के चक्कर से तालमेल रहे। लेकिन सूर्य का चक्कर पूरे छह घंटे अधिक नहीं था बल्कि चौथे वर्ष में लगभग पौने छह घंटे था, तो चौथे साल पूरे २४ घंटे का अंतर नहीं पड़ा था बल्कि लगभग २३ घंटे का पड़ा था, और बढ़ा लिया एक पूरा दिन (२४ घंटे), तो इस प्रकार हर साल सौर वर्ष सूर्य के चक्कर से एक घंटे से थोड़ा कम बढ़ जाएगा। सौ साल बाद लगभग एक दिन का अंतर आ जाएगा, इसलिए शताब्दी के बाद फिर घटाकर फ़रवरी २८ दिन का कर लिया। इसी तरह अन्य बारीक भिन्नों का हिसाब है। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

प्रश्न १६६: रायपुर सीपी, मोहल्ला बैजनाथ पारा से, प्रेषक बहादुर अली खान, सुपरिंटेंडेंट पेंशनर सेटलमेंट विभाग, २२ ज़िल हिज्जा १३३६ हिजरी। शाबान की २९ तारीख को अगर चाँद नज़र न आए,

तो ३० तारीख को काज़ी और मुफ़्ती के अलावा आम जनता के लिए रोज़ा रखना जायज़ है या नहीं? और अगर जायज़ है, तो किस नीयत (संकल्प) से?

उत्तर: यदि २९ की शाम को क्षितिज साफ़ हो और चाँद नज़र न आए, तो ३० को काज़ी, मुफ़्ती कोई भी रोज़ा न रखे। और यदि क्षितिज पर बादल या धूल-गुबार हो, तो मुफ़्ती को चाहिए कि आम जनता को 'ज़हवा-ए-कुबरा' (शारई मध्याह्न) तक प्रतीक्षा करने का आदेश दे, कि तब तक वे कुछ न खाएं पिएं, न रोज़े की नीयत करें, बल्कि बिना नीयत के रोज़े की तरह रहें। इस बीच यदि शारई प्रमाण से...

یعنی قمری سال ۳۵۴ یا ۳۵۵ دن کا ہوتا ہے تو شمسی سال سے دس گیارہ دن چھوٹا ہے، سمجھنے کے لیے کسر ات چھوڑ کر شمسی سال ۳۶۵ قمری ۳۵۵ میں رکھے کہ دس دن کا فرق ہوا، اب فرض کیجئے کہ کسی سال یکم رمضان شریف یکم جنوری کو ہوئی تو آئندہ سال ۲۲ دسمبر کو یکم رمضان ہوگی کہ قمری ۱۲ مہینے ۳۵۵ دن میں ختم ہو جائیں گے اور شمسی سال پورا ہونے کو ابھی دس دن اور درکار ہیں، پھر تیسرے سال یکم رمضان ۱۲ دسمبر کو ہوگی، چوتھے سال یکم دسمبر کو ہوگی، تین برس میں ایک مہینہ بدل گیا، پہلے یکم جنوری کو تھی اب یکم دسمبر کو ہوئی، یونہی ہر تین برس میں ایک مہینہ بدلے گا اور رمضان المبارک ہر شمسی مہینہ میں دورہ فرمائے گا، بعینہ یہی حالت ہندی مہینوں کی ہوگی، اگر وہ لوند نہ لیتے، انھوں نے سال رکھا شمسی اور مہینے لیے قمری، تو ہر برس دس دن گھٹ گھٹ کر تین سال بعد ایک مہینہ گھٹ گیا، لہذا ہر تین سال پر وہ ایک مہینہ مکرر کر لیتے ہیں تاکہ شمسی سال سے مطابقت رہے، ورنہ کبھی جیٹھ جاڑوں میں آتا اور پوس گرمیوں میں، بلکہ نصاری جنہوں نے سال و ماہ سب شمسی لیے اگر یہ چوتھے سال ایک دن بڑھا کر فروری ۲۹ کا نہ کرتے تو ان کو بھی یہی صورت پیش آتی کہ کبھی جون کا مہینہ جاڑوں میں ہوتا اور دسمبر گرمیوں میں، یوں کہ سال ۳۶۵ دن کا لیا اور آفتاب کا دورہ ابھی چند گھنٹے بعد پورا ہوگا کہ جس کی مقدار تقریباً چھ گھنٹے، تو پہلے سال شمسی سال دورہ یافتہ سے ۶ گھنٹے پہلے ختم ہوا، دوسرے سال ۱۲ گھنٹے پہلے، تیسرے سال ۱۸ گھنٹے پہلے، چوتھے سال تقریباً ۲۴ گھنٹے، اور ۲۴ گھنٹے کا ایک دن رات ہوتا ہے لہذا ہر چوتھے سال ایک دن بڑھا دیا کہ دورہ آفتاب سے مطابقت رہے، لیکن دورہ آفتاب پورے چھ گھنٹے زائد نہ تھا بلکہ چوتھے تقریباً پونے چھ گھنٹے، تو چوتھے سال پورے ۲۴ گھنٹے کا فرق نہ پڑا تھا بلکہ تقریباً

۲۳ گھنٹے کا اور بڑھالیا ایک ایک کہ ۲۴ گھنٹے ہے، تو یوں ہر سال میں شمسی سال دورہ آفتاب سے کچھ کم ایک گھنٹہ بڑھے گا، سو برس بعد تقریباً ایک دن، لہذا صدی بعد گھٹا کر پھر فروری ۲۸ دن کا کر لیا، اسی طرح اور دقیق کسر ات کا حساب ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۶۶: از رائے پور سی پی محلہ بیجنا تھ پارہ مرسلہ بہادر علی خاں سپرنٹنڈنٹ پنشنر محکمہ بندوبست ۲۲ ذی الحجہ ۱۳۳۶ھ شعبان کی ۲۹ کو اگر چاند نظر نہ آئے تو ۳۰ کو علاوہ قاضی و مفتی کے عوام کو روزہ رکھنا جائز ہے یا نہیں؟ اور جائز ہے تو کس نیت سے؟

الجواب: اگر ۲۹ کی شام کو مطلع صاف ہو اور چاند نظر نہ آئے تو ۳۰ کو قاضی مفتی کوئی بھی روزہ نہ رکھے اور اگر مطلع پر ابر و غبار ہو تو مفتی کو چاہئے کہ عوام کو ضحوہ کبری یعنی نصف النہار شرعی تک انتظار کا حکم دے کہ جب تک کچھ نہ کھائیں پئیں، نہ روزے کی نیت کریں، بلانیت روزہ مثل روزہ رہیں، اس بیچ میں اگر ثبوت شرعی سے

Fatawa-e-Razvia Volume 10

If the sighting [of the moon] is established, then everyone should make the intention for the fast, and it will be the fast of Ramadan. If this time passes and no proof is received from anywhere, then the Mufti should command the common people to eat and drink. However, if a person is accustomed to fasting on a specific day, and that day happens to fall on that date—for example, if a person fasts every Monday and this day is a Monday—then he can make the intention for that same voluntary (Nafl) fast. If he intends for the Ramadan fast due to doubt, or says, "If the moon has appeared, then I am keeping today's fast as Ramadan, otherwise it is Nafl," then he will be a sinner. It is stated in the Hadith:

"Whoever fasts on the day of doubt has disobeyed Abu al-Qasim (peace and blessings of Allah be upon him)." And Allah the Almighty knows best.

Explanation: Whoever kept a fast on the 'Day of Doubt' has disobeyed Hazrat Abu al-Qasim Muhammad (peace and blessings of Allah be upon him). And Allah the Almighty knows best. (T)

Mas'alah 177: What do the scholars of religion and the jurists of the clear Shari'ah say regarding this matter: the questioner asks whether one should fast on Monday or not, because if it is cloudy, establishing proof of the moon is impossible, and if the horizon is clear, fasting will be after seeing the moon. This query is made with the intent that fasting without seeing the moon might be impermissible. Please provide a written response so that the villages can be informed; it will be acted upon as per what is written.

Response (Al-Jawab): If the moon is sighted or Shari'ah testimony is received, then tomorrow is a fast day; otherwise, do not eat or drink anything until midday with the thought that perhaps the sighting of the moon might be established. Then, if it is established, make the intention to fast, otherwise eat. Until the sighting or proof of sighting occurs, keeping tomorrow's fast with the intention of Ramadan is forbidden (Haram). And Allah the Almighty knows best. Submitted by Ahmad Shah Khan from Village Nagriya Sadaat.

Mas'alah 168: What is the reason for the prohibition of fasting on these five days, i.e., specifically on Eid-ul-Fitr and Eid-ul-Adha? Explain so you may be rewarded.

Response (Al-Jawab): These days are feasts from Allah Almighty for His servants. And Allah the Almighty knows best.

Mas'alah 169: If a person recites or arranges the recitation of the Holy Quran or any other completion (Khatm), such as Tasbeeh and Tahleel, in the blessed month of Ramadan or outside of Ramadan, is the reward equal in both cases or more or less? What is the reason? Explain so you may be rewarded.

1. Sahih Bukhari, Chapter: When you see the crescent, fast... Qadimi Kutub Khana, Karachi 1/256.

यदि [चाँद] दिखना सिद्ध हो जाए तो सभी रोज़े की नीयत कर लें, यह रमज़ान का रोज़ा होगा। और यदि समय बीत जाए और कहीं से प्रमाण न मिले, तो मुफ़्ती को चाहिए कि वह आम जनता को खाने-पीने का आदेश दे। हाँ, जो व्यक्ति किसी विशेष दिन रोज़ा रखने का आदी हो, और वह दिन उसी तारीख को पड़ जाए—उदाहरण के तौर पर, कोई व्यक्ति हर सोमवार को रोज़ा रखता है और वह दिन सोमवार का हो—तो वह अपने उसी नफ़्ली (स्वैच्छिक) रोज़े की नीयत कर सकता है। यदि वह संदेह के कारण रमज़ान के रोज़े की नीयत करेगा या यह कहेगा कि "यदि चाँद हो गया तो आज रमज़ान का रोज़ा रख रहा हूँ वर्ना नफ़्ल," तो वह गुनहगार होगा। हदीस में है:

"जिसने शक के दिन रोज़ा रखा उसने अबू अल-क़ासिम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की नाफ़रमानी की।" और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

व्याख्या: जिसने 'शक के दिन' का रोज़ा रखा, उसने हज़रत अबू अल-क़ासिम मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की नाफ़रमानी की। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 177: धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या कहते हैं: पूछने वाला पूछता है कि सोमवार को रोज़ा रखना चाहिए या नहीं? क्योंकि यदि बादल रहे तो चाँद का सबूत होना असंभव है और यदि आसमान साफ़ हुआ तो चाँद देखकर रोज़ा होगा। इस उद्देश्य से पूछा गया है कि बिना चाँद देखे रोज़ा रखना नाजायज़ होगा। हुज़ूर लिखकर बता दें ताकि गाँवों में सूचित कर दिया जाए; जैसा लिखा जाएगा वैसा ही किया जाएगा।

जवाब (अल-जवाब): यदि चाँद हो जाए या शरीयत की गवाही आ जाए तो कल का रोज़ा है, अन्यथा दोपहर तक कुछ खाएँपिएँ नहीं इस ख्याल से कि शायद चाँद सिद्ध हो जाए। फिर यदि सिद्ध हो जाए तो रोज़े की नीयत कर लें वरना खाना खा लें। और जब तक चाँद देखना या उसके देखने का प्रमाण न मिल जाए, रमज़ान की नीयत से कल का रोज़ा रखना हराम है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। प्रेषक: अहमद शाह खाँ, ग्राम नगरिया सादात।

मसला 168: उन पाँच दिनों में रोज़ा रखना मना है, यानी विशेष रूप से ईद-उल-फ़ित्र और ईद-उल-अज़हा, इसका क्या कारण है? बयान करें ताकि आपको सवाब मिले।

जवाब (अल-जवाब): ये दिन अल्लाह अ़ज़्ज़वजल की ओर से बंदों की दावत के दिन हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 169: माहे रमज़ानुल मुबारक और रमज़ान के अलावा अन्य महीनों में क़ुरआन ख्वानी या कोई और ख़त्म जैसे तस्बीह और तहलील कोई व्यक्ति पढ़े या पढ़ाए, तो क्या दोनों में सवाब बराबर है या कम-ज़्यादा है? क्या कारण है? बयान करें ताकि आपको सवाब मिले।

1. सहीह बुखारी, बाब: जब तुम चाँद देखो तो रोज़ा रखो... कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/256।

पृष्ठ 355 / 836

فتاوی رضویہ جلد دہم

رویت ثابت ہو جائے تو سب روزے کی نیت کر لیں روزہ رمضان ہو جائے گا، اور اگر یہ وقت گزر جائے کہیں سے ثبوت نہ آئے تو مفتی عوام کو حکم دے کہ کھائیں پئیں، ہاں جو شخص کسی خاص دن کے روزے کا عادی ہو، اور اگر اس تاریخ وہ دن آ کر پڑے مثلاً ایک شخص ہر پیر کو روزہ رکھتا ہے اور یہ دن پیر کا ہو تو وہ اپنے اسی نفلی روزے کی نیت کر سکتا ہے شک کی وجہ سے رمضان کے روزے کی نیت کرے گا یا یہ کہ چاند ہو گیا تو آج رمضان کا روزہ رکھتا ہوں ورنہ نفل، تو گنہ گار ہوگا۔ حدیث میں ہے:

مَنْ صَامَ یَوْمَ الشَّکِّ عَصَی أَبَا الْقَاسِمِ صلَّی اللہ تعالٰی علیہ وسلم۔ واللہ تعالٰی اعلم

جس نے یومِ شک کا روزہ رکھا اس نے حضرت ابو القاسم محمد صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی نافرمانی کی۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۱۷۷: کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ سائل دریافت کرتا ہے کہ بروزِ پیر روزہ رکھنا چاہئے یا نہیں کیونکہ اگر ابر رہا تو چاند کا ثبوت ہونا غیر ممکن ہے اور اگر مطلع صاف ہوا تو دیکھ کر چاند روزہ ہوگا، اس غرض سے دریافت کیا گیا ہے بغیر چاند دیکھنے کے روزہ ناجائز ہوگا، حضور تحریر فرمادیں تاکہ دیہات میں خبر کر دی جائے، جیسا بھی تحریر ہوگا ویسا کیا جائے گا۔

الجواب: اگر چاند ہو جائے یا شرعی شہادت گزر جائے تو کل کا روزہ ہے ورنہ دوپہر تک کچھ کھائیں پئیں نہیں اس خیال سے کہ شاید چاند ثابت ہو جائے، پھر اگر ثابت ہو جائے تو روزہ کی نیت

کر لیں ورنہ کھانا کھا لیں اور جب تک رویت یا ثبوتِ رویت نہ ہو جائے رمضان کی نیت سے کل کا روزہ رکھنا حرام ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ مرسلہ احمد شاہ خاں از موضع نگر یا سادات

مسئلہ ۱۶۸: ان پانچ روزوں میں جو روزہ رکھنا منع ہے یعنی ایک خاص عید الفطر اور عید الاضحٰی کے، تو اس کی کیا وجہ ہے؟ بینوا توجروا

الجواب: یہ دن اللہ عزوجل کی طرف سے بندوں کی دعوت کے ہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۱۶۹: ماہِ رمضان المبارک اور غیر رمضان المبارک میں قرآن خوانی یا اور کوئی ختم مثلاً تسبیح و تہلیل کے کوئی شخص پڑھے یا پڑھائے تو دونوں میں ثواب برابر ہے یا کم و بیش ہے، تو کیا وجہ ہے؟ بینوا توجروا

1 صحیح بخاری باب اذا رایتموا الھلال فصوموا قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶

The Answer: The reward for every good deed in the blessed month of Ramadan is more and more abundant than deeds in other months. A voluntary (nafl) act in Ramadan is equal to an obligatory (fard) act in other months, and an obligatory act in it is equal to seventy obligatory acts in other months. And the grace of Allah Almighty is most vast and great. It is narrated from Salman Farsi (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said regarding the blessed month:

"Whoever draws near to Allah by performing any voluntary good deed during this month, shall receive a reward equal to that of an obligatory deed performed in any other month; and whoever performs an obligatory deed in it, shall receive a reward equal to that of seventy obligatory deeds performed in any other month." (Al-Hadith) This was narrated by Ibn Khuzaymah and al-Bayhaqi. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 170: From Munger, Bihar, sent by Mawlawi Muhammad Umar Sahib Wilayati, resident of Munger Masjid Toti. 5 Shawwal 1305 AH.

What do the scholars of religion say regarding this issue: In Munger, on the 29th of Ramadan, Sunday, despite clear skies, the moon was not sighted. However, news arrived from Calcutta via telegram that the moon had been sighted there on the 29th of Ramadan, Sunday. Following this, a prominent local person inquired from the Imam of the Grand Mosque of Calcutta via telegram, and the Imam gave the same answer: that the moon was sighted in Calcutta on the 29th of Ramadan. Based on this, that prominent person along with a few others broke their fast. However, no learned person agreed with them. What is the ruling regarding these people who broke their fast, if the said news is correct? And in case it is not correct, is only the makeup (qada) of that fast mandatory for these persons, or is there also an expiation (kaffarah) and punishment (ta'zir) of some kind? Explain and be rewarded.

The Answer: Information received via telegram is strictly unreliable according to Shariah, as we have thoroughly researched in a detailed fatwa to which nothing can be added. (T) Breaking the fast based on it was purely impermissible, and the mentioned individuals certainly committed a sin, even if it is later confirmed that it was indeed Eid that day. This is because when they broke their fasts, there was absolutely no Shariah proof, and they proceeded to break the fast without Shariah

permission, which is definitely a sin. The pure Shariah has linked fasting and breaking the fast to actual sighting (ro'yat).

1. Sahih Ibn Khuzaymah, Chapter: Virtues of the month of Ramadan, Hadith 1887, Al-Maktab al-Islami Beirut, 3/191-192. Page 356 of 836

उत्तर: रमज़ानुल मुबारक में हर नेक अमल का सवाब बाकी महीनों के अमल से बहुत अधिक और भरपूर है। रमज़ान का नफ़्ल अन्य महीनों के फ़र्ज़ के बराबर है और इसका फ़र्ज़ अन्य महीनों के सत्तर फ़र्ज़ों के बराबर है। और अल्लाह अज़्ज़ व जल्ल का फ़ज़्ल अत्यंत विशाल और महान है। हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने इस मुबारक महीने के बारे में फ़रमाया:

"जिसने रमज़ान में कोई नफ़्ली नेकी का काम किया, उसे उस व्यक्ति के समान सवाब मिलेगा जिसने रमज़ान के अलावा किसी अन्य महीने में फ़र्ज़ अदा किया। और जिसने इसमें एक फ़र्ज़ अदा किया, वह उस व्यक्ति की तरह है जिसने रमज़ान के अलावा सत्तर फ़र्ज़ अदा किए।" (अल-हदीस) इसे इब्ने खुज़ैमा और बैहक़ी ने रिवायत किया है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। (त)

मसला १७०: मुंगेर, बिहार से, मौलवी मोहम्मद उमर साहब विलायती, निवासी मुंगेर मस्जिद टूटी द्वारा प्रेषित। ५ शव्वाल १३०५ हिजरी।

दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि मुंगेर में २९ रमज़ान, रविवार को साफ़ आसमान के बावजूद चाँद दिखाई नहीं दिया। लेकिन कलकत्ता से तार (टेलीग्राम) के माध्यम से खबर आई कि वहाँ २९ रमज़ान, रविवार को चाँद देखा गया है। इसके बाद यहाँ के एक रईस ने कलकत्ता की जामा मस्जिद के इमाम से तार के ज़रिए दरयाफ़्त (पूछताछ) किया, इमाम साहब ने भी यही जवाब दिया कि कलकत्ता में २९ रमज़ान की तारीख़ को चाँद देखा गया। इस पर उस रईस ने कुछ और आदमियों के साथ रोज़े तोड़ दिए, लेकिन किसी पढ़े-लिखे (इल्म वाले) व्यक्ति ने उनसे सहमति नहीं जताई। उन रोज़ा तोड़ने वालों के बारे में क्या हुक्म है यदि उपरोक्त खबर सही हो? और यदि खबर सही न हो, तो क्या उन पर सिर्फ उस रोज़े की क़ज़ा लाज़िम होगी या कफ़्फ़ारा और किसी प्रकार की सज़ा (ताज़ीर) भी? बयान करें और पुण्य पायें।

उत्तर: तार (टेलीग्राम) की खबर शरीयत के अनुसार बिल्कुल अविश्वसनीय है, जैसा कि हमने एक विस्तृत फ़तवे में इस पर गहन चर्चा की है जिसमें अब कुछ भी जोड़ा नहीं जा सकता। (त) इसके आधार पर रोज़ा खोलना पूरी तरह नाजायज़ हुआ और उक्त व्यक्ति निश्चित रूप से गुनाह के अपराधी हुए, भले ही बाद में यह साबित हो जाए कि उस दिन वास्तव में ईद ही थी। क्योंकि जब उन्होंने रोज़े तोड़े, तो मूल रूप से कोई शरई सुबूत (प्रमाण) नहीं था और उन्होंने बिना शरई इजाज़त के रोज़ा

खोलने का कदम उठाया, और यह निश्चित रूप से गुनाह है। शरीयत-ए-मुतह्हरा ने रोज़ा रखने और खोलने को चाँद देखने (रुपत) पर निर्भर रखा है।

1. सहीह इब्ने खुज़ैमा, बाब: फ़ज़ाइल शहर-ए-रमज़ान, हदीस १८८७, अल-मकतब अल-इस्लामी बेरुत, ३/१९१-१९२। पृष्ठ ३५६ का ८३६

الجواب: رمضان المبارک میں ہر عمل نیک کا ثواب باقی مہینوں کے عمل سے اکثر واوفر ہے، رمضان کا نفل اور مہینوں کے فرض اور اس کا فرض اور مہینوں کے ستر فرض کے برابر ہے۔ اور اللہ عزوجل کا فضل اوسع واکبر ہے۔ سلمان فارسی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے شہر مبارک کی نسبت فرمایا:

من تقرب فیه بخصلة من الخیر کان کمن ادی فریضة فیما سواه، ومن ادی فیه فریضة کان کمن ادی سبعین فریضة فیما سواه، الحدیث رواه ابن خزیمۃ والبیهقی، واللہ تعالیٰ اعلم جس نے رمضان میں کوئی نفلی نیکی کا کام کیا اسے اس شخص جیسا ثواب ملے گا جس نے رمضان کے علاوہ میں فرض ادا کیا، اور جس نے اس میں فرض ادا کیا وہ اس شخص کی طرح ہے جس نے رمضان کے علاوہ میں ستر فرض ادا کئے، الحدیث اسے ابن خزیمہ اور بیہقی نے روایت کیا۔ واللہ تعالیٰ اعلم(ت)

مسئلہ ۱۷۰: از مونگیر بہار مرسلہ مولوی محمد عمر صاحب ولایتی مقیم مونگیر مسجد ٹوٹی ۵ شوال ۱۳۰۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ مونگیر میں ۲۹ رمضان بروز یکشنبہ کو با وجود صفائے مطلع چاند نظر نہ آیا مگر کلکتہ سے بذریعہ تار برقی خبر آئی کہ یہاں ۲۹ رمضان بروز یکشنبہ چاند دیکھا گیا بعد اس کے یہاں کے ایک رئیس نے کلکتہ کے امام جامع مسجد سے بذریعہ تار برقی دریافت کیا امام صاحب نے بھی یہی جواب دیا کہ کلکتہ میں بتاریخ ۲۹ رمضان چاند دیکھا گیا اس پر اُس رئیس نے مع اور چند آدمیوں کے روزے توڑ ڈالے مگر کسی ذی علم نے ان کی موافقت نہ کی ان اشخاص مفطرین کی نسبت در صورتِ صحتِ خبر مذکور کیا حکم

ہے، اور در صورت عدم صحت صرف اس روزے کی قضا ان اشخاص پر لازم ہوگی یا کفارہ اور تعزیر بھی کسی قسم کی؟ بینوا توجروا

الجواب: تار کی خبر شرعاً محض نا معتبر کما حققناہ فی فتوی مفصلۃ بما لا مزید علیہ (جیسا کہ ہم نے اپنے فتوٰی میں اس پر تفصیلی گفتگو کی ہے جس پر اضافہ نہیں ہو سکتا۔ ت) اس کی بناء پر افطار محض ناجائز واقع ہوئی اور اشخاص مذکورین بیشک مرتکب گناہ ہوئے اگرچہ بعد کو تحقیق ہو جائے کہ اس دن واقعی عید ہی تھی کہ جب تک انھوں نے روزے توڑے اصلاً ثبوت شرعی نہ تھا اور انھوں نے بے اذنِ شرع افطار پر اقدام کیا اور یہ قطعاً گناہ ہے۔ شرعِ مطہر نے صوم و افطار کو رؤیت پر معلق فرمایا۔

1 صحیح ابن خزیمہ باب فضائل شہر رمضان حدیث ۱۸۸۷ المکتب الاسلامی بیروت ۳/ ۱۹۱-۱۹۲

Fatawa Radawiyya Volume 10

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Fast upon seeing it (the moon) and break the fast upon seeing it." Reported by Bukhari and Muslim from Abu Huraira (may Allah be pleased with him), and this Hadith is well-known. (T)

They celebrated Eid without proof of sighting and acted against the command of the Greatest Ruler (peace and blessings of Allah be upon him). We have established in the detailed fatwa that news via telegraph comes through unknown persons and transgressors, even some non-believers. In Islamic law, it is obligatory not to act upon such news without thorough investigation.

Allah Almighty says: "O you who have believed, if there comes to you a disobedient person with information, investigate, lest you harm a people out of ignorance and become, over what you have done, regretful." (T)

They acted solely based on that (the telegram). The pure Shariah commanded: "If you do not know, then ask those who have knowledge."

Allah Almighty's blessed command is: "So ask the people of the message if you do not know." (T)

They took action without asking the people of knowledge, whereas the Great Quran has commanded: whatever matter arises, present it to the scholars, they will reach the reality of the matter.

Allah Almighty said: "And when there comes to them information about [public] security or fear, they spread it. But if they had referred it back to the Messenger or to those in authority among them, then the ones who [can] draw correct conclusions from it would have known about it." (T)

1. Sahih Bukhari, Chapter: When you see the crescent, fast... Qadimi Kutub Khana Karachi 1/256
2. Al-Quran 49/6
3. Al-Quran 21/7
4. Al-Quran 4/83

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवाँ

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "चाँद देखकर रोज़ा रखो और चाँद देखकर ईद करो।" इसे बुखारी और मुस्लिम ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है और यह हदीस मशहूर है। (त)

उन्होंने बिना चाँद देखे ही ईद मना ली और सबसे बड़े हाकिम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के हुक्म की मुख़ालफ़त की। हमने मुफ़स्सल फ़तवे में यह साबित किया है कि तार (टेलीग्राम) की खबर अनजान लोगों और फ़ासिकों (पापियों), यहाँ तक कि कुछ काफ़िरों के ज़रिए आती है। शरीयत में ऐसी ख़बर पर बिना तहक़ीक़ (जाँच) के अमल न करने का हुक्म दिया गया है।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "ऐ ईमान वालो! अगर तुम्हारे पास कोई फ़ासिक़ खबर लाए तो उसकी तहक़ीक़ कर लो, कहीं तुम नादानी में किसी क़ौम को तकलीफ़ न पहुँचा दो, फिर अपने किए पर पछताते रहो।" (त)

उन्होंने केवल उसी के भरोसे पर काम किया, जबकि शरीयत-ए-मुतहरा ने हुक्म दिया था कि अगर तुम्हें इल्म न हो तो इल्म वालों से पूछो।

अल्लाह तआला का मुबारक फ़रमान है: "ऐ लोगो! इल्म वालों से पूछो अगर तुम्हें इल्म नहीं।" (त)

उन्होंने अहल-ए-इल्म (विद्वानों) से पूछे बिना कार्रवाई की, जबकि क़ुरान-ए-अज़ीम ने इरशाद फ़रमाया था कि जो बात पेश आए उलमा से अर्ज़ करो, वे बात की हक़ीक़त तक पहुँच जाएँगे।

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "और जब उनके पास कोई बात इत्मीनान या डर की आती है, तो वे उसका प्रचार करने लगते हैं। और अगर वे इसमें रसूल और अपने ज़िम्मेदार लोगों की तरफ़ रुजू करते (पूछते), तो ज़रूर उसकी हक़ीक़त जान लेते, वे लोग जो उनमें से इज्तिहाद (सही नतीजा निकालने की योग्यता) रखते हैं।" (त)

1. सही बुखारी, अध्याय: जब तुम चाँद देखो तो रोज़ा रखो... कदीमी कुतुब खाना कराची 1/256
2. अल-कुरान 49/6
3. अल-कुरान 21/7
4. अल-कुरान 4/83

فتاوی رضویہ جلد دہم

قال رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم صوموا لرؤیتہ وافطر والرؤیتہ۔ اخرجہ الشیخان عن ابی ہریرۃ رضی اللہ تعالیٰ عنہ والحدیث مشہور۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا چاند دیکھنے پر روزہ رکھو اور چاند دیکھنے پر عید کرو۔ اسے بخاری و مسلم نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے اور یہ حدیث مشہور ہے۔ (ت)

انہوں نے بے ثبوتِ رؤیت عید کرلی اور حکمِ احاکم حاکم اعظم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے مخالفت کی ، ہم نے فتوی مفصلہ میں ثابت کیا کہ تار کی خبر مجہولین و فساق بلکہ بعض کفار کی وساطت سے آتی ہے اور ایسی خبر میں شرع میں فرض کیا تھا کہ زنہار بے تحقیق عمل نہ کریں۔

قال اللہ تعالیٰ یٰٓاَیُّہَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْٓا اِنْ جَآءَکُمْ فَاسِقٌۢ بِنَبَاٍ فَتَبَیَّنُوْٓا اَنْ تُصِیْبُوْا قَوْمًۢا بِجَہَالَۃٍ فَتُصْبِحُوْا عَلٰی مَا فَعَلْتُمْ نٰدِمِیْنَ ۔ اللہ تعالیٰ نے فرمایا اے اہلِ ایمان! اگر تمہارے پاس کوئی فاسق خبر لائے تو اس کی تحقیق کرلو کہ کہیں تم کسی قوم کو بے جانے ایذا نہ دے بیٹھو ، پھر اپنے کئے پر پچھتاتے رہو۔ (ت)

انہوں نے صرف اُسی کے اعتماد پر کاربندی کر لی، شرع مطہر نے حکم دیا تھا تمھیں علم نہ ہو تو علم والوں سے پوچھو۔

قال اللہ تعالیٰ فَسْئَلُوْٓا اَہْلَ الذِّکْرِ اِنْ کُنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ ۔ اللہ تعالیٰ کا مبارک فرمان ہے : اے لوگو! علم والوں سے پوچھو اگر تمھیں علم نہیں۔ (ت)

انہوں نے اہلِ علم سے بے پوچھے کارروائی کی ، قرآن عظیم نے ارشاد کیا تھا جو بات پیش آئے علماء سے عرض کرو وہ حقیقت کار تک پہنچ جائیں گے۔

قال اللہ تعالیٰ وَ اِذَا جَآءَهُمْ اَمْرٌ مِّنَ الْاَمْنِ اَوِ الْخَوْفِ اَذَاعُوْا بِهٖؕ وَلَوْ رَدُّوْهُ اِلَى الرَّسُوْلِ وَاِلٰۤى اُولِى الْاَمْرِ مِنْهُمْ لَعَلِمَهُ الَّذِيْنَ يَسْتَنْۢبِطُوْنَهٗ مِنْهُمْؕ اللہ تعالیٰ نے فرمایا: اور جب انکے پاس کوئی بات اطمینان یا ڈر کی آتی ہے اس کا چرچا کر بیٹھتے ہیں اور اگر اس میں رسول اور اپنے ذی اختیار لوگوں کی طرف رجوع لاتے تو ضرور اس کی حقیقت جان لیتے ان لوگوں سے جو ان میں سے اجتہاد کرتے ہیں (ت)

1 صحیح بخاری باب اذار ایتموالھلال فصو موا قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶ 2 القرآن ۶/۴۹ 3 القرآن ۲۱/ ۷ 4 القرآن ۸۳/۴

Fatawa Razawiyya, Volume 10

They considered their own opinion to be independent, whereas the Criterion of Truth (Quran) had stated: Do not do anything until Sharia grants permission. Allah Almighty says: "O you who have believed, do not put [yourselves] before Allah and His Messenger but fear Allah. Indeed, Allah is Hearing and Knowing." [Quran 49:1] They dared without Sharia proof. Ramadan was certainly established, and the Pure Sharia had gathered Muslims for fasting by the command: "So whoever sights [the new moon of] the month, let him fast it." [Quran 2:185]. It was obligatory that when Sharia gives permission that the work is finished, only then should they leave the fast.

Allah Almighty says: "The believers are only those who believe in Allah and His Messenger and, when they are [present] with him upon a matter of common interest, do not depart until they have asked his permission." [Quran 24:62] Without the permission of Sharia, while the end of that date of Ramadan had not yet been proven by Sharia evidence, they departed from that collective matter. Granted, later it turned out to be Eid, but at that time in their city, it was still known as Ramadan. They absolutely committed ignorant audacity in religious matters and ignorant opposition to Sharia rulings. So even if they were correct in reality, in the eyes of Sharia, they were wrongdoers.

As the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Whoever speaks about the Quran according to his own opinion and is correct, has still erred." - Recorded by Abu Dawood, Tirmidhi, and Nasai from Jundab (may Allah be pleased with him). Just as the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Whoever interprets the Holy Quran according to his own opinion, even if he is correct, he has still committed an error." Narrated by Abu Dawood, Tirmidhi, and Nasai from Hazrat Jundab (may Allah be pleased with him). (T)

And from here it is proven that, in any case, their boldness, audacity, independence of opinion, opposition to scholars, and invention of rulings [are evident].

1 Quran 49:1 2 Quran 2:185 3 Quran 24:62 4 Sunan Abi Dawood, Chapter on Speaking about the Book of Allah without knowledge, Aftab-e-Alam Press, Lahore 2/158. Page 358 of 836

फतावा रज़विया, खंड 10

उन्होंने अपनी राय को स्वतंत्र समझा, जबकि फ़ुरकान-ए-हकीम (कुरान) ने फरमाया था कि जब तक शरीयत अनुमति न दे, आप कुछ न करें। अल्लाह तआला ने फरमाया: "ऐ ईमान वालों! अल्लाह और उसके रसूल से आगे न बढ़ो और अल्लाह से डरो, यकीनन अल्लाह सुनने वाला, जानने वाला है।" [कुरान 49:1] उन्होंने बिना शरई प्रमाण के साहस किया। रमज़ान शरीफ़ निश्चित रूप से स्थापित था, और पाक शरीयत ने मुसलमानों को इस आदेश के साथ रोज़ों के लिए एकत्र किया था: "अत: तुममें से जो कोई इस महीने को पाए, वह इसके रोज़े रखे।" [कुरान 2:185]। यह अनिवार्य था कि जब शरीयत अनुमति दे कि अब वह काम समाप्त हो गया है, तभी वे रोज़ा छोड़ते।

अल्लाह तआला ने फरमाया: "ईमान वाले तो वही हैं जो अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाए और जब वे किसी सामूहिक मामले में आपके पास मौजूद हों, जिसके लिए उन्हें इकट्ठा किया गया हो, तो आपकी अनुमति के बिना वहाँ से नहीं जाते।" [कुरान 24:62] उन्होंने बिना शरई अनुमति के, जबकि उस तारीख तक रमज़ान का समाप्त होना शरई प्रमाण से सिद्ध नहीं हुआ था, उस सामूहिक मामले से विदाई ली। माना कि बाद में ईद ही ज़ाहिर हुई, लेकिन उस समय तक उनके शहर में तो रमज़ान ही ज्ञात था। उन्होंने निश्चित रूप से दीन के मामले में अज्ञानतापूर्ण साहस और शरीयत के आदेशों का अज्ञानतापूर्ण विरोध किया। तो यद्यपि वे वास्तव में सही भी हों, शरीयत की दृष्टि में वे अपराधी हुए।

जैसा कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फरमाया: "जिसने अपनी राय से कुरान के बारे में कुछ कहा और वह सही भी निकला, तो भी उसने गलती की।" - इसे अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और नसाई ने हज़रत जुंदब (रज़ियल्लाहु अन्हु) से उल्लेख किया है। जैसा कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फरमाया: "जिसने कुरान पाक की व्याख्या अपनी राय से की, वह सही भी हो तो भी उसने गलती की।" इसे अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और नसाई ने हज़रत जुंदब (रज़ियल्लाहु अन्हु) से बयान किया। (त)

और यहीं से साबित होता है कि हर हाल में उनकी निडरता, साहस, राय की स्वतंत्रता, विद्वानों का विरोध और नए हुक्म गढ़ना [ज़ाहिर है]।

1 कुरान 49:1 2 कुरान 2:185 3 कुरान 24:62 4 सुनन अबी दाऊद, अल्लाह की किताब के बारे में बिना ज्ञान के बात करने का अध्याय, आफताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर 2/158। पृष्ठ 358 का 836

انہوں نے اپنی رائے مستقل سمجھی فرقانِ حکیم نے فرمایا تھا جب تک شرع اجازت نہ دے آپ کچھ نہ کر بیٹھو قال اللہ تعالٰی اللہ تعالٰی نے فرمایا: اے اہل ایمان! اللہ اور اس کے رسول سے آگے نہ بڑھو اور اللہ تعالٰی سے ڈرو یقیناً اللہ سننے جاننے والا ہے (ت) يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تُقَدِّمُوا بَيْنَ يَدَيِ اللَّهِ وَرَسُولِهِ وَاتَّقُوا اللَّهَ ۚ إِنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ 1 انہوں نے بے ثبوت شرعی جسارت کی، رمضان شریف بالیقین ثابت تھا، اور مسلمانوں کو شرعِ مطہر نے بحکم فَمَنْ شَهِدَ مِنْكُمُ الشَّهْرَ فَلْيَصُمْهُ 2 (جو ماہِ رمضان کو پائے وہ ضرور اس کے روزے رکھے۔ ت) روزے پر جمع فرمایا تھا واجب تھا کہ جب شرع اذن دیتی کہ اب وہ کام ختم ہوا اُس وقت روزہ چھوڑتے،

قال اللہ تعالٰی اللہ تعالٰی نے فرمایا: بلاشبہ ایمان والے تو وہی ہیں جو اللہ اور اس کے رسول پر یقین لائے اور وہ جب حضور کے پاس کسی معاملہ میں حاضر ہوتے ہوں جس کیلئے جمع کئے گئے ہوں تو آپ کی اجازت کے بغیر وہاں سے نہیں جاتے (ت) إِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ الَّذِينَ آمَنُوا بِاللَّهِ وَرَسُولِهِ وَإِذَا كَانُوا مَعَهُ عَلَىٰ أَمْرٍ جَامِعٍ لَمْ يَذْهَبُوا حَتَّىٰ يَسْتَأْذِنُوهُ ۚ 3 انہوں نے بے اذنِ شرع کہ ہنوز اس تاریخ رمضان کا ختم ہو جانا دلیلِ شرعی سے ثابت نہ ہوا تھا اُس امرِ جامع سے جدائی کی، مانا کہ بعد کو عید ہی ظاہر ہو مگر اُس وقت تک اُن کے شہر میں تو رمضان ہی معلوم تھا، انہوں نے قطعاً امرِ دین ناواقفانہ جسارت اور احکام شرع سے جاہلانہ مخالفت کی، تو یہ اگرچہ نفس الامر میں مصیب ہوں عند الشرع خطاوار ہوئے،

کما قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم من قال في القرآن برأيه فأصاب فقد اخطأ - 4 اخرجہ ابو داؤد الترمذی والنسائی عن جندب رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ جیسا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: جس نے قرآن پاک کی تفسیر اپنی رائے سے کی وہ درست بھی ہو تو پھر بھی اس نے

خطاء کی۔ اسے ابو داؤد، ترمذی اور نسائی نے حضرت جندب رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے بیان کیا۔ (ت)

اور یہیں سے ثابت وہ بہر تقدیر اپنی بے باکی وجرات واستقلال بالرائے ومخالفتِ اہل علم واختراعِ حکم

1 القرآن 1/49 2 القرآن 185/2 3 القرآن 62/24 4 سنن ابی داؤد باب الکلام فی کتاب اللہ بلا علم آفتاب عالم پریس، لاہور 158/2 Page 358 of 836

Fatawa Razawiyya Volume X

...of which they deserve Tazir (discretionary punishment), for these are all sins, and every sin for which there is no fixed punishment (hadd), there is Tazir.

In Al-Ashbah: Every disobedience for which there is no prescribed limit (hadd), then there is Tazir in it.[1]

In Al-Ashbah it is stated: For whatever sin no (fixed) punishment is specified, there shall be Tazir. (T)

And its determination is according to the opinion of the Sharia ruler (judge), may Allah Almighty support him; be it beating, imprisonment, reprimand, harsh words, sharp looks, etc., in whatever way he deems beneficial for deterrence, he may choose, but it should not exceed thirty-nine lashes.

In Sharh al-Tanwir: Tazir has no fixed amount, rather it is delegated to the opinion of the Qadi (judge). This is the view of our scholars, (as mentioned in) Zaylai, because the purpose of it is deterrence, and people's conditions regarding it vary. Bahr[2]

In Sharh Tanwir it is stated that Tazir is not fixed but will be according to the judge's opinion, and our scholars follow this, (as per) Zaylai, because its objective is deterrence and people's temperaments differ in this regard. Bahr. (T)

In the same (book) it is:

Its maximum is thirty-nine lashes and by beating.[3]

Tazir is at most thirty-nine lashes if beating is to be carried out. (T)

And where there is no Sharia ruler, like in our lands, those people should not rejoice at being safe from Tazir, for this joy will multiply their sin a thousandfold. Rather, they should fear Him Whose rule is everywhere and Who is capable of everything at all times, and to Whom is the return. They should immediately repent with a sincere heart, and just as they committed this sin openly, they should also repent openly.

The Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him, said: When you commit a bad deed, perform repentance for it: secret for the secret (sin), and public for the public (sin). Imam Ahmad narrated it in 'al-Zuhd' and Al-Tabarani in 'al-Mu'jam al-Kabir' from Mu'adh bin Jabal, may Allah be pleased with him, with a good (Hasan) chain of narration.[4]

The Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him, said: When you commit an evil deed, repent for it. If the sin is secret, repentance should also be done secretly, and if the sin is public, repentance should also be done publicly. Imam Ahmad narrated it in 'al-Zuhd' and Al-Tabarani in 'al-Mu'jam al-Kabir' from Hazrat Mu'adh bin Jabal, may Allah be pleased with him, with a sound (Hasan) chain of narration. (T)

1. Al-Ashbah wa al-Nazair, Kitab al-Hudud wa al-Tazir, Idarat al-Qur'an wa al-'Ulum al-Islamiyya, Karachi, 1/285
2. Durr al-Mukhtar, Bab al-Tazir, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/326
3. Durr al-Mukhtar, Bab al-Tazir, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/326
4. Kanz al-'Ummal, Hadith 10180, reference Ahmad in al-Zuhd from 'Ata bin Yasar, Bab al-Tazir, Mu'assasat al-Risala, Beirut, 4/209; Al-Mu'jam al-Kabir, Hadith 331, narrated from Mu'adh bin Jabal, Al-Maktabat al-Faysaliyya, Beirut, 20/159

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

...जिसके कारण वे ताज़ीर (विवेकाधीन दंड) के पात्र हुए, क्योंकि ये सब गुनाह हैं और हर वह गुनाह जिसमें हद (निर्धारित दंड) नहीं है, उसमें ताज़ीर है।

अल-अशबाह में है: हर वह अवज्ञा जिसमें कोई निर्धारित हद नहीं है, तो उसमें ताज़ीर है।[1]

अशबाह में है कि जिस गुनाह पर कोई हद तय न हो, उसमें ताज़ीर होगी। (त)

और इसका निर्धारण शरीयत के हाकिम (न्यायाधीश), अल्लाह तआला उनकी सहायता करे, की राय पर है; चाहे वह पिटाई हो, जेल हो, फटकार हो, सख्त शब्द हों, तीखी नज़र आदि हो, जिस भी तरीके से वह सुधार के लिए उचित समझे, उसे चुन सकता है, लेकिन वह उनतालीस कोड़ों से अधिक न हो।

शरह अल-तन्वीर में है: ताज़ीर की कोई निश्चित मात्रा नहीं है, बल्कि यह काज़ी (न्यायाधीश) की राय पर निर्भर है। हमारे विद्वान इसी पर हैं, (जैसा कि) ज़ैलई (ने कहा), क्योंकि इसका उद्देश्य सुधार है और इस बारे में लोगों की स्थितियाँ भिन्न होती हैं। बहर[2]

शरह तन्वीर में है कि ताज़ीर निर्धारित नहीं है बल्कि काज़ी की राय के अनुसार होगी, और हमारे विद्वान इसी पर हैं, ज़ैलई, क्योंकि इससे उद्देश्य सुधार है और इस बारे में लोगों के स्वभाव अलग-अलग होते हैं, बहर। (त)

उसी में है:

इसका अधिकतम उनतालीस कोड़े और पिटाई है।[3]

ताज़ीर ज़्यादा से ज़्यादा उनतालीस कोड़े है अगर पिटाई करनी हो। (त)

और जहाँ शरीयत का शासक न हो, जैसे हमारे देश, वहाँ ये लोग ताज़ीर से सुरक्षित होने पर खुश न हों कि यह खुशी उनके गुनाह को हज़ार गुना कर देगी, बल्कि उससे डरें जिसकी हुकूमत हर जगह है और जो हर समय हर बात पर सक्षम है और उसी की ओर लौटकर जाना है। तुरंत सच्चे दिल से तौबा (प्रायश्चित) करें, और जैसे यह गुनाह खुलेआम किया, तौबा भी खुलेआम करें।

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया: जब तुम कोई बुरा काम करो, तो उसके लिए तौबा करो: गुप्त (गुनाह) के लिए गुप्त रूप से, और सार्वजनिक (गुनाह) के लिए सार्वजनिक रूप से। इसे इमाम अहमद ने 'अल-ज़ुहद' में और तबरानी ने 'अल-मुअजम अल-कबीर' में हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अन्हु से हसन सनद के साथ रिवायत किया है।[4]

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया: जब तुम कोई बुराई करो तो उस पर तौबा करो, अगर गुनाह गुप्त है तो तौबा भी गुप्त रूप से की जाए और अगर गुनाह सार्वजनिक है तो तौबा भी सार्वजनिक रूप से की जाए। इसे इमाम अहमद ने ज़ुहद में और तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में हज़रत मुआज़ बिन जबल रज़ियल्लाहु अन्हु से हसन सनद के साथ रिवायत किया है। (त)

1. अल-अशबाह व अन-नज़ाइर, किताब अल-हुदूद व अत-ताज़ीर, इदारातुल कुरआन वल उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 1/285
2. दुर्रे मुख्तार, बाब अत-ताज़ीर, मतबअ मुजतबाई, दिल्ली, 1/326
3. दुर्रे मुख्तार, बाब अत-ताज़ीर, मतबअ मुजतबाई, दिल्ली, 1/326
4. कन्ज़ुल उम्माल, हदीस 10180, संदर्भ अहमद फी अल-ज़ुहद अन अता बिन यसार, बाब अत-ताज़ीर, मुअस्सासतुर रिसाला, बेरूत, 4/209; अल-मुअजम अल-कबीर, हदीस 331, मुआज़ बिन जबल से रिवायत, अल-मकतबतुल फैसलिया, बेरूत, 20/159

کے باعث مستحق تعزیر ہوئے کہ یہ سب گناہ ہیں اور ہر گناہ جس میں حد نہیں اس میں تعزیر ہے،

فی الاشباہ کل معصیۃ لیس فیھا حد مقدر ففیہ التعزیر-1 **اشباہ میں ہے جس معصیت پر کوئی حد متعین نہ ہو اس میں تعزیر ہوگی (ت)**

اور اس کی تعیین ختم حاکم شرع ایدہ اللہ تعالٰی کی رائے پر ہے، ضرب، حبس، گوشمال، سخت کلام، تیز نگاہ وغیرہ باجس طریقہ سے مصلحت جانے زجر فرمائے اختیار کرے تو انتالیس کوڑے سے زیادہ نہ ہو۔

فی شرح التنویر، التعزیر لیس فیہ تقدیر بل ھو مفوض الی رأی القاضی وعلیہ مشائخنا زیلعی لان المقصود منہ الزجر واحوال الناس فیہ مختلفۃ۔ بحر - 2 **شرح تنویر میں ہے کہ تعزیر مقدر نہیں بلکہ قاضی کی رائے کے مطابق ہوگی، اور ہمارے مشائخ اسی پر ہیں، زیلعی، کیونکہ اس سے مقصود زجر ہے اور اس بارے میں لوگوں کے طبائع مختلف ہوتے ہیں، بحر۔ (ت)**

اسی میں ہے:

اکثرہ تسعۃ و ثلثون سوطاً و بالضرب - 3 **تعزیر زیادہ سے زیادہ انتالیس کوڑے ہے اگر ضرب کرنی ہو (ت)**

اور جہاں والی شرع نہ ہو جیسے ہمارے بلاد، وہاں یہ لوگ تعزیر سے محفوظی پر خوش نہ ہوں کہ یہ خوشی اُن کے گناہ کو ہزار چند کر دے گی، بلکہ اس سے ڈریں جس کی حکومت ہر جگہ ہے اور ہر وقت ہر بات پر قادر ہے اور اسی کی طرف پھر کر جانا ہے۔ فوراً صدق دل سے تائب ہوں، اور جیسے یہ معصیت اعلانیہ کی توبہ بھی بالاعلان کریں۔

قال رسول الله صلی الله تعالیٰ علیہ وسلم اذا عملت سیئة فاحدث عند هاتها توبة السر بالسر والعلانیة بالعلانیة اخرجه الامام احمد فی الزهد و الطبرانی فی المعجم الکبیر عن معاذ بن جبل رضی الله تعالیٰ عنه باسناد حسن۔

رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: جب تم کوئی برائی کرو تو اس پر توبہ کرو، اگر گناہ خفیہ ہے تو توبہ بھی خفیہ طور پر کی جائے اور اگر گناہ اعلانیہ ہے تو توبہ بھی اعلانیہ کی جائے۔ اسے امام احمد نے زہد میں اور طبرانی نے المعجم الکبیر میں حضرت معاذ بن جبل رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے سند حسن کے ساتھ روایت کیا ہے۔ (ت)

1 الاشباہ والنظائر کتاب الحدود والتعزیر ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۱/۲۸۵ 2 درمختار باب التعزیر مطبع مجتبائی دہلی ۱/۳۲۶ 3 درمختار باب التعزیر مطبع مجتبائی دہلی ۱/۳۲۶ 4 کنز العمال حدیث ۱۰۱۸۰ بحوالہ احمد فی الزہد عن عطاء بن یسار ، باب التعزیر موسسۃ الرسالۃ بیروت ۴/۲۰۹ ، المعجم الکبیر حدیث ۳۳۱ مروی از معاذ بن جبل المکتبۃ الفیصلیۃ بیروت ۲۰/۱۵۹

Volume 10 Fatawa Razawiyya

Let there be a firm pledge for the future that you will never exhibit boldness and audacity in religious matters and will not step forward with your own opinion without the guidance of scholars,

---

Allah accepts the repentance of whomever He wills. (1) | Allah Almighty accepts the repentance of whomever He wills. And He guides towards Himself whoever turns [to Him]. (2) | And He provides guidance towards Himself to those who turn to | Him. (T)

Then, if it is proven through the accepted methods of Sharia that the news was true and it was indeed Eid, then there is no makeup (qada) for that fast, because it was investigated and found that the day was not a day for fasting.

And there is no makeup except from obligation and | There is no makeup except for an obligation. Breaking a spailing a voluntary (nafl) act after starting it, | voluntary (nafl) fast after starting it makes makeup although it makes makeup obligatory. But this is for | obligatory, but that ruling is for days other than those days other than the five [prohibited] days, as in | five days as stated in Al-Tanwir and its commentary by at-Tanwir and its commentary by Al-Ala'i. | Al-Ala'i. Moreover, its context is starting it Furthermore, its context is intentional starting. Do | intentionally. Do you not know that if a person starts a you not see that if someone starts a prayer thinking | prayer with the assumption that he had not offered it, they have not performed it, then remembers they had, | then remembers that he had already offered it and he and stops it, there is no makeup for it. | breaks the prayer, then there is no makeup for him? (T)

An example of this is that sunset was not yet confirmed and a person broke his fast prematurely by estimation. This act was not permissible for him, as mentioned in Al-Siraj Al-Wahhaj, Al-Bahr Al-Ra'iq, and Al-Wajiz Al-Kardari. (As is in Siraj Al-Wahhaj, Bahr Al-Ra'iq and Wajiz Al-Kardari. T). However, if it is proven later that in reality the sun had already set at that time, then there is no makeup for the fast, as specified by Imam Al-Zayla'i, then Al-Tahtawi, and then Al-Shami (As Imam Al-Zayla'i, then Al-Tahtawi and then Al-Shami have clarified. T), because it became clear that the breaking of the fast occurred at its proper time. But if it is revealed that the news was false and that day was indeed Ramadan, or if nothing is confirmed, then indeed the makeup for that fast is necessary. In the first scenario, the reason is clear, and in the

second scenario, the arrival of Ramadan was certain and its departure was not legally proven. 'Certainty is not removed by doubt' (Certainty is not removed by doubt. T). So that day, according to Sharia, was indeed Ramadan itself, as Sharia has set a full month of 30 days in the absence of sighting [the moon].

1. Al-Quran 9/15
2. Al-Quran 13/27

जिल्द दहम फ़तावा रज़विया

भविष्य के लिए एक दृढ़ प्रतिज्ञा हो कि आप धर्म के मामलों में कभी भी निडरता और साहस नहीं दिखाएंगे और विद्वानों के मार्गदर्शन के बिना अपनी राय से कदम नहीं बढ़ाएंगे,

---

अल्लाह जिसकी चाहे तौबा स्वीकार करता है। (1) | अल्लाह ताला जिसकी चाहे तौबा कुबूल फरमाए। और अपनी तरफ और वह अपनी ओर उसे ही मार्गदर्शन देता है जो उसकी ओर | उसी को हिदायत देता है जो उसकी तरफ रुजू लाए (त)। झुकता है। (2) |

फिर अगर शरीअत के स्वीकार्य तरीकों से साबित हो जाए कि वह खबर सच्ची थी और वह वास्तव में ईद थी, तो उन पर इस रोज़े की कज़ा नहीं है क्योंकि तहकीक से पता चला कि वह दिन रोज़े का नहीं था,

---

फर्ज और शुरू करने के बाद नफ़्ल (स्वैच्छिक) इबादत | फर्ज़ के अलावा किसी की कज़ा नहीं, नफ़्ली रोज़ा शुरू करके खराब करने के अलावा कोई कज़ा नहीं है, हालाँकि इससे | तोड़ देने से रोज़ा वाजिब हो जाता है लेकिन वह हुक्म उन पांच कज़ा वाजिब हो जाती है। लेकिन यह उन पांच दिनों के| दिनों के अलावा है जैसा कि 'तनवीर' और उसकी शरह अलावा अन्य दिनों में है जैसा कि 'तनवीर' और 'अला'ई' | 'अल-अला'ई' में है, इसके अलावा इसका महल (संदर्भ) द्वारा उसकी व्याख्या में है। इसके अलावा, इसका संदर्भ | जानबूझकर शुरू होना है। क्या आप नहीं जानते कि जो शख्स जानबूझकर शुरू करना है। क्या आप नहीं देखते कि जो | किसी नमाज़ में यह गुमान करते हुए शुरू हुआ कि उसने इसे व्यक्ति किसी नमाज़ को यह सोचकर शुरू करता है कि | अदा नहीं की थी, फिर उसे याद आ गया कि उसने इसे अदा उसने उसे अदा नहीं किया था, फिर उसे याद आता है कि | कर ली है तो उसने नमाज़ तोड़ दी, तो अब उस पर कज़ा नहीं। (त) उसने उसे अदा कर लिया है और वह नमाज़ तोड़ देता है, | तो उस पर कोई कज़ा नहीं है। |

इसकी मिसाल यह है कि अभी सूर्यास्त सुनिश्चित नहीं हुआ था और किसी व्यक्ति ने अंदाज़न रोज़ा खोल लिया, यह बात उसे जायज़ नहीं थी, जैसा कि 'सिराज अल-वहाज', 'अल-बहर अल-राइक़' और 'वजीज़ अल-करदरी' में है। (जैसा कि सिराज अल-वहाज, बहर अल-राइक़ और वजीज़ करदरी में है। त)। लेकिन अगर बाद में साबित हो कि वास्तव में उस समय सूरज डूब चुका था, तो रोज़े की कज़ा नहीं है, जैसा कि इमाम अल-ज़ैलाई, फिर अल-तहतवी और फिर अल-शामी ने स्पष्ट किया है (जैसा

कि इस पर इमाम ज़ैलाई ने फिर तहतवी और फिर शामी ने तसरीह की है। त) कि स्पष्ट हुआ कि इफ़्तार का होना अपने सही स्थान पर था। और अगर यह पता चले कि खबर गलत थी और वह दिन रमज़ान का था या कुछ भी साबित न हो, तो बेशक उस रोज़े की कज़ा अनिवार्य है। पहली स्थिति में तो कारण स्पष्ट है और दूसरी स्थिति में रमज़ान का आना निश्चित था और उसका जाना शरीअत की दृष्टि से साबित नहीं हुआ था। 'यक़ीन शक से खत्म नहीं होता' (यक़ीन शक से ज़ाइल नहीं हुआ करता। त) तो वह दिन शरीअत के अनुसार रमज़ान ही का था, क्योंकि शरीअत ने चाँद न दिखने की स्थिति में पूरे 30 दिनों का महीना रखा है।

1. अल-कुरान 9/15
2. अल-कुरान 13/27

पेज 360/836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

آئندہ کیلئے عہد واثق ہو کہ کبھی امورِ دین میں بےباکی و جرات نہ کرینگے اور بے ارشادِ علماء اپنی رائے سے قدم نہ رکھیں گے،

وَيَتُوبُ اللَّهُ عَلَى مَنْ يَشَاءُ ط (۱) | اللہ تعالیٰ جس کی چاہے توبہ قبول فرمائے۔ اور اپنی طرف اسی وَيَهْدِي إِلَيْهِ مَنْ أَنَابَ ﴿۲﴾ (۲) | کو ہدایت دیتا ہے جو اس کی طرف رجوع لائے (ت)

پھر اگر طرق مقبولہ شرع سے ثابت ہو جائے کہ وہ خبر کچی اور عید واقعی تھی تو ان پر اس روزے کی قضا نہیں کہ تحقیق ہوا وہ دن روزے کا نہ تھا،

ولاقضاء الاعن وجوب وافساد النفل بعد الشروع وان | وجوب کے سوا کسی کی قضا نہیں، نفلی روزہ شروع کرکے توڑ دینے اوجب القضاء لکن هذا في غير صوم الايام الخمسة كما | سے روزہ واجب ہو جاتا ہے لیکن وہ حکم ان پانچ دنوں کے علاوہ ہے في التنوير و شرحه للعلائی، على ان محلہ فی الشروع | جیسا کہ تنویر اور اس کی شرح للعلائی میں ہے، علاوہ ازیں اس کا قصد االا تری ان من شرع فی صلوۃ ظآنا انہ لم یصلها | محل قصداً شروع ہونا ہے کیا آپ نہیں جانتے کہ جو شخص کسی نماز ثم تذكر فقطع لا قضاء عليه۔ | میں یہ گمان کرتے ہوئے شروع ہوا کہ اس نے ادا نہیں کی تھی، پھر | اسے یاد آگیا کہ اس نے ادا کرلی ہے تو اس نے نماز توڑ دی تو اب اس | پر قضا نہیں۔ (ت)

نظیر اس کی یہ ہے کہ ابھی غروبِ شمس محقق نہ ہوا اور کسی شخص نے جزافًا روزہ کھول لیا یہ امر اسے روا نہ تھا، کما فی السراج الوهاج والبحر الرائق و وجيز الكردرى (جیسا کہ سراج الوہاج،

بحر الرائق اور وجیز کردری میں ہے۔ ت) لیکن اگر بعد کو ثابت ہو کہ فی الواقع اُس وقت آفتاب ڈوب چکا تھا تو روزے کی قضا نہیں، کما نص علیہ الامام الزیلعی ثم الطحطاوی ثم الشامی (جیسا کہ اس پر امام زیلعی نے پھر طحطاوی اور پھر شامی نے تصریح کی ہے۔ ت) کہ ظاہر ہوا کہ وقوع افطار اپنے محل میں تھا، اور اگر منکشف ہو کہ خبر غلط تھی اور وہ دن رمضان کا تھا یا کچھ تحقیق نہ ہو تو بے شک اُس روزے کی قضا لازم ہے، تقدیر اول پر تو وجہ واضح اور بر تقدیر ثانی رمضان کا آنا یقینی تھا اور اُس کا جانا شرعاً ثابت نہ ہوا والیقین لا یزول بالشك (یقین شک سے زائل نہیں ہوا کرتا ت) تو وہ دن عند الشرع رمضان ہی کا تھا کہ شرع نے عدمِ رؤیت میں تیس ۳۰ دن پورے کا مہینہ رکھا ہے،

1 القرآن ۱۵/۹ 2 القرآن ۱۳/ ۲۷

Arabic: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "If it is cloudy for you, then complete the count of thirty [days]." Narrated by Bukhari, and similarly by Muslim from Ibn Umar (may Allah be pleased with them both).

Urdu: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: If the moon remains hidden from you (due to clouds), then complete thirty days. Imam Bukhari narrated it, and similarly Imam Muslim narrated it from Hazrat Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both). (T)

A precedent for this is if someone breaks their fast without verifying the sunset, and then it is proven that the sun was still visible or it was not clear; in both cases, Qada (making up the fast) is required, as explicitly stated by Az-Zayla'i and those after him. (T) Nevertheless, in the present case, there is no kaffara (expiation) under any circumstance because they eventually broke their fast believing it to be Eid, and although those reports are legally unacceptable, for these laypeople, they were a cause of suspicion, rather they had become a source of certainty in their estimation. Thus, a complete offense (jinayat-e-kamila) was not found on their part, and kaffara is based on complete offense. (T) A precedent for this is a person whose friend told him, "I have seen the moon of Eid," and he broke his fast considering him reliable. Even though he committed a sin as the news of a single person regarding the moon of Eid is entirely unreliable, and for this reason, Qada became mandatory, there is no kaffara. Allama Hasan Shurunbulali states in Nur al-Idah and its commentary Maraqi al-Falah:

Arabic: If someone who saw the crescent moon of Shawwal alone breaks his fast, he must perform Qada, and there is no kaffara upon him, nor upon a friend of the observer who witnessed with him the crescent of [Eid] al-Fitr, believed him, and broke his fast, because for him it is the day of Eid, so a doubt has occurred here.

Urdu: Whoever saw the moon of Shawwal alone and did not fast must make it up (Qada); there is no kaffara (expiation) on him. Similarly, there is no kaffara for one who believed the testimony of the witness regarding the moon of Eid al-Fitr and did not fast, because according to him it is the day of Eid, so a doubt has occurred here (therefore Qada will be due, not kaffara). (T)

Similarly, it is in Fath al-Qadir, Al-Hindiyya, etc. In fact, scholars explicitly state that if villagers heard the sound of drums from the city on the 30th of Ramadan and

thought it was the drum for Eid and broke their fast, whereas the drum was for something else, kaffara is not obligatory. It is stated in Fatawa Maniya, then Sharh Nuqaya, then Majma' al-Anhur, then Radd al-Muhtar:

1. Sahih Bukhari, Chapter 'When you see the moon, fast', Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/256.
2. Maraqi al-Falah with Hashiyah al-Tahtawi, Chapter 'What confirms the moon', Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub, Karachi, p. 375.

अरबी: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "अगर बादल की वजह से चाँद तुम पर छिप जाए, तो तीस की गिनती पूरी करो।" इसे बुखारी ने और इसी तरह मुस्लिम ने इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है।

उर्दू अनुवाद: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: अगर तुम पर चाँद (बादल की वजह से) ओझल रहे तो तुम तीस दिन पूरे करो। इसे इमाम बुखारी ने और इसके जैसा इमाम मुस्लिम ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है। (त)

इसकी मिसाल यह है कि बिना तहकीक के सूरज डूबने का गुमान करके रोज़ा इफ्तार कर लिया, फिर साबित हुआ कि सूरज अभी बाकी था या स्थिति स्पष्ट नहीं थी, दोनों हालतों में क़ज़ा लाज़िम है, जैसा कि ज़ैलई और उनके बाद आने वालों ने इसकी वजाहत की है। (त) इसके बावजूद, ज़ेरे-बहस मामले में किसी सूरत में कफ़्फ़ारा नहीं है क्योंकि आख़िरकार उन्होंने अपने नज़दीक ईद समझकर ही रोज़े तोड़े और वो ख़बरें चाहे शरई तौर पर ना-मकबूल हों, मगर उन आम लोगों के लिए वे गुमान पैदा करने वाली बल्कि उनके ख्याल में यक़ीन का सबब बन चुकी थीं, तो उनकी तरफ़ से कामिल जिनायत (पूर्ण उल्लंघन) नहीं पाया गया और कफ़्फ़ारा कामिल जिनायत पर होता है। (त) इसकी मिसाल वो शख्स है जिसके एक दोस्त ने उससे बयान किया कि मैंने ईद का चाँद देखा है, उसने उसे मोतबर (भरोसेमंद) समझकर रोज़ा तोड़ डाला, हालाँकि वह गुनाहगार हुआ क्योंकि ईद के चाँद के बारे में एक शख्स की ख़बर बिलकुल ना-मोतबर है, और इसी वजह से क़ज़ा भी आई मगर कफ़्फ़ारा नहीं। अल्लामा हसन शुरुनबुलाली 'नूरुल ईज़ाह' और उसकी शरह 'मराक़िल फ़लाह' में फरमाते हैं:

अरबी: जिस किसी ने शव्वाल का चाँद अकेले देखा और रोज़ा तोड़ दिया तो वह क़ज़ा करे, उस पर कफ़्फ़ारा नहीं है। और न ही चाँद देखने वाले के उस दोस्त पर कफ़्फ़ारा है जिसने उसके पास ईदुल फ़ित्र के चाँद की गवाही दी और उसने उसे सच मानकर रोज़ा तोड़ दिया, क्योंकि उसके लिए वह ईद का दिन है, लिहाज़ा यहाँ शुभे (संदेह) की गुंजाइश पैदा हो गई है।

उर्दू अनुवाद: जिस किसी ने शव्वाल का चाँद अकेले देखा और रोज़ा नहीं रखा तो वह क़ज़ा करे, उस पर कफ़्फ़ारा नहीं है। इसी तरह उस शख्स पर भी कफ़्फ़ारा नहीं है जिसने चाँद देखने वाले की गवाही की तस्दीक की और रोज़ा नहीं रखा, क्योंकि उसके नज़दीक यह ईद का दिन है, लिहाज़ा यहाँ शुभे (संदेह) की गुंजाइश पैदा हो गई है (इसलिए क़ज़ा होगी, कफ़्फ़ारा नहीं)। (त)

इसी तरह 'फतहुल क़दीर' और 'हिन्दिया' वगैरह में है, बल्कि उलमा सराहत फरमाते हैं कि अगर गाँव वालों ने तीसवें रमज़ान को शहर से नगाड़े की आवाज़ सुनी और वो समझे कि नगाड़ा ईद का है और रोज़े तोड़ दिए, हालाँकि वो नगाड़ा किसी और बात का था, तो उन पर कफ़्फ़ारा लाज़िम नहीं। 'फतावा मुनिया', फिर 'शरह नुक़ाया', फिर 'मज्मउल अन्हुर', फिर 'रद्दुल मुह्तार' में है:

1. सहीह बुखारी, बाब 'इज़ा रअैतुमुल हिलाला फसूमू', क़दीमी कुतुब खाना कराची, 1/256.
2. मराक़िल फ़लाह मअ हाशियतुत तहतावी, फ़स्ल 'फ़ीमा यस्बुतु बिहिल हिलाल', नूर मुहम्मद कारख़ाना तिजारत-ए-कुतुब कराची, पृ. 375.

قال رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فان غم علیکم فاکملوا العدۃ ثلثین ۱خرجہ البخاری و نحوہ مسلم عن ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: اگر تم پر چاند (بادل کی وجہ سے) مخفی رہے تو تم تیس دن مکمل کرو۔ اسے امام بخاری نے اور اس کی مثل امام مسلم نے حضرت عبد اللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا ہے۔ (ت)

نظیر اس کی یہ ہے کہ بے تحقیق غروب افطار کر لیا پھر ثابت ہوا کہ آفتاب باقی تھا یا کچھ نہ کھلا، دونوں حالت میں قضا ہے کما صرح بہ الزیلعی و من بعدہ (جیسا کہ اس پر زیلعی اور ان کے بعد آنے والوں نے تصریح کی ہے۔ت) بایں ہمہ ما نحن فیہ میں کفارہ کسی تقدیر پر نہیں کہ آخر انہوں نے اپنے نزدیک عید ہی جان کر روزے توڑے اور وہ خبریں اگر چہ شرعاً نا مقبول ہیں۔ مگر ان عامیوں کے لیے مورثِ ظن بلکہ ان کے گمان میں موجبِ یقین ہو چکی تھیں تو ان کی طرف سے جنایتِ کاملہ نہ پائی گئی و ان تبتنی الکفارۃ علیھا (اور کفارہ جنایتِ کاملہ پر ہوتا ہے۔ت) نظیر اس کی وہ شخص ہے جس کے ایک دوست نے اس سے بیان کیا میں نے عید کا چاند دیکھا اس نے اسے معتمد سمجھ کر روزہ توڑ ڈالا اگرچہ گنہگار ہوا کہ ایک کی خبر ہلالِ عید میں محض نامعتبر، اور اسی وجہ سے قضا بھی آئی مگر کفارہ نہیں، علامہ حسن شرنبلالی نور الایضاح اور اس کی شرح مراقی الفلاح میں فرماتے ہیں:

ان افطر من رأی الھلال وحدہ فی شوال قضی ولا کفارۃ علیہ ولا علی صدیق للرائی شھد عندہ بھلال الفطر و صدقہ فافطر لانہ یوم عید فیکون شبھۃ۔2 جس نے شوال کا چاند تنہا دیکھا اور روزہ نہ رکھا تو وہ قضا کرے اس پر کفارہ نہیں اسی طرح جس نے اس کی گواہی کی تصدیق کی عید الفطر کے

چاند میں، اور روزہ نہ رکھا کیونکہ اس کے نزدیک یہ عید کا دن ہے لہٰذا یہاں شبہ کا وقوع ہو گیا ہے (لہٰذا قضا ہوگی کفارہ نہیں۔ (ت)

اسی طرح فتح القدیر و ہندیہ وغیرہما میں ہے، بلکہ علماء تصریح فرماتے ہیں اگر گاؤں والوں نے تیسویں رمضان کو شہر سے نقارے کی آواز سنی اور وہ سمجھے کہ نقارہ عید کا ہے روزے توڑ دئے، حالانکہ وہ نقارہ کسی اور بات کا تھا کفارہ لازم نہیں، فتاوٰی منیہ پھر شرح نقایہ پھر مجمع الانہر پھر رد المحتار میں ہے:

1 صحیح بخاری باب اذا رایتم الہلال فصوموا قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۲۵۶ 2 مراقی الفلاح مع حاشیہ الطحطاوی فصل فیما یثبت بہ الہلال نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳۷۵

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

[Table Content] Arabic Text: If the people of the countryside break their fast on the sound of a drum on the thirtieth day, thinking it is the day of Eid, while it was [beaten] for another purpose, they are not liable for expiation (Kaffara).1 And Allah (Subhanahu wa Ta'ala) knows best, and His knowledge (Jalla Majduhu) is most perfect and firm.

Urdu Text: If the local residents broke their fast on the thirtieth day based on the assumption from the sound of a drum that it was the day of Eid, although it was played for some other reason, then there is no expiation (Kaffara) upon them. And Allah (Subhanahu wa Ta'ala) knows best, and His knowledge (Jalla Majduhu) is most perfect and firm. -(T)

[Watermark Content] www.dawateislami.net I.T. Majlis of Dawateislami

[Footnote] 1 Radd al-Muhtar, Chapter: What invalidates and what does not invalidate [the fast], Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 106/2

फतवा-ए-रज़विया, जिल्द 10

[तालिका सामग्री] अरबी पाठ: यदि किसी क्षेत्र के निवासियों ने तीसवें दिन ढोल की आवाज़ सुनकर यह समझते हुए रोज़ा खोल लिया कि आज ईद है, जबकि ढोल किसी अन्य कारण से बजाया गया था, तो उन पर कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) अनिवार्य नहीं होगा। और अल्लाह (सुब्हानहु व तआला) बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान (जल्ला मजदुहू) अत्यंत पूर्ण और दृढ़ है।

उर्दू पाठ: अगर स्थानीय लोगों ने तीसवें दिन ढोल की आवाज़ पर यह गुमान करते हुए रोज़ा इफ़्तार कर लिया कि यह ईद का दिन है, हालाँकि वह किसी और वजह से बजाया गया था, तो अब उन पर कफ़्फ़ारा नहीं होगा। और अल्लाह (सुब्हानहु व तआला) बेहतर जानता है, और उसका इल्म (जल्ला मजदुहू) सबसे कामिल और मज़बूत है। -(त)

[वॉटरमार्क सामग्री] www.dawateislami.net I.T. Majlis of Dawateislami

[पाद टिप्पणी] 1 रद-उल-मुहतार, अध्याय: क्या चीज़ें रोज़े को तोड़ती हैं और क्या नहीं, दार इह्या-उत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 106/2

पृष्ठ 362 का 836

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

[ٹیبل کا مواد] عربی عبارت: لو افطر اھل الرستاق بصوت الطبل یوم الثلثین ظانین انہ یوم العید وھو لغیرہ لم یکفر۔ 1 واللہ سبحنہ وتعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم و احکم۔

اردو عبارت: اگر اہل علاقہ نے تیسویں دن ڈھول کی آواز پر یہ گمان کرتے ہوئے روزہ افطار کرلیا کہ یہ عید کا دن ہے حالانکہ وہ کسی اور وجہ سے بجایا گیا تھا تو اب ان پر کفارہ نہیں ہوگا۔ واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم و احکم۔ -(ت)

[واٹر مارک کا مواد] www.dawateislami.net I.T. Majlis of Dawateislami

[حاشیہ] 1 رد المحتار باب ما یفسد وما لا یفسد دار احیاء التراث العربی بیروت ۱۰۶/۲

Fatawa Rizvia Volume 10

Azki-ul-Ihlal bi-Ibtal ma ahdathan-nas fi amril Hilal 1305 AH (An excellent discussion on nullifying the news [telegraph and letters] invented by people regarding the sighting of the crescent moon)

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. Allah is the Lord of Muhammad, peace and blessings be upon him.

Problem 171: What do the scholars of religion say regarding the issue of whether a telegraph report about the sighting of the crescent moon is legally valid according to Sharia or not? And if some people make an arrangement whereby, before the sightings of the crescents of Ramadan, Shawwal, Dhu al-Hijjah, and Muharram, communications are sent to other places wherever deemed appropriate, with the message that if sightings occur in those places on the 29th, the news of the sighting should be sent via telegraph, and upon receipt of news of sufficient testimony it is publicized—then is this method acceptable according to Sharia or purely invalid? And if an announcement is made based on it, is it permissible or forbidden for Muslims to act upon it? And what is the ruling for those who make the announcement? Explain and be rewarded.

The Answer: All praise is for Allah, through whose gratitude the crescent of blessings (attains completion).

Page 363 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

अज़्की अल-इहलाल बि-इब्ताल मा अहदथ-उन-नास फ़ी अम्रिल हिलाल १३०५ हिजरी (चाँद देखने के बारे में लोगों द्वारा ईजाद की गई खबर [तार और पत्र] को अमान्य करने पर एक बेहतरीन चर्चा)

अल्लाह के नाम से, जो अत्यंत दयालु और कृपाशील है। अल्लाह मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का रब है।

मसाला १७१: धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि क्या चाँद देखने के बारे में तार (टेलीग्राम) की खबर शरीयत के अनुसार विश्वसनीय है या नहीं? और यदि कुछ लोग यह व्यवस्था करें कि रमज़ान, शव्वाल, ज़ुल-हिज्जा और मुहर्रम के चाँद देखने के मामले में पहले से ही दूसरे स्थानों पर जहाँ उचित समझा जाए, इस आशय से पत्र भेजे जाएँ कि यदि उन स्थानों पर २९ तारीख को चाँद दिखाई दे, तो चाँद देखने की खबर तार के माध्यम से भेज दी जाए, और पर्याप्त गवाही की खबर पहुँचने के बाद उसे प्रचारित कर दिया जाए—तो क्या यह तरीका शरीयत के अनुसार स्वीकार्य है या पूरी तरह से बातिल (अमान्य) है? और यदि इसके आधार पर घोषणा की जाए, तो मुसलमानों के लिए इस पर अमल करना जायज़ है या हराम? और घोषणा करने वालों के हक में क्या हुक्म है? बयान करें और पुण्य कमाएँ।

जवाब: सभी प्रशंसा अल्लाह के लिए है, जिसके शुक्र से नेमतों का चाँद (पूर्णता प्राप्त करता है)।

पेज ३६३ का ८३६

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

ازکی الاملال بابطال ما احدث الناس فی امر الہلال ۱۳۰۵ھ (رؤیت ہلال کے بارے میں لوگوں کی ایجاد کردہ خبر (تار اور خط) کو باطل کرنے میں عمدہ بحث)

بسم اللہ الرحمن الرحیم اللہ رب محمد صلی اللہ علیہ وسلم

مسئلہ ۱۷۱: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں درباره رویت ہلال تار کی خبر شرعاً معتبر ہے یا نہیں؟ اور اگر کچھ لوگ یہ انتظام مقرر کریں کہ درباب رویت ہلال رمضان و شوال و ذی الحجہ و محرم کے پیشتر سے مراسلات مقام دیگر کو جہاں جہاں مناسب خیال کیا جائے اس مضمون سے بھیجے جائیں کہ اگر ان مقاموں میں ۲۹ کی رؤیت ہو تو خبر رؤیت کی بذریعہ تار کے پہنچ جائے اور بعد پہنچنے خبر شہادت کافی کے مشتہر کر دیا جائے تو یہ طریقہ شرعاً مقبول یا محض باطل، اور اس کی بنا پر اعلان ہو تو مسلمانوں کو اس پر عمل جائز یا حرام؟ اور اعلان کرنے والوں کے حق میں کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: الحمد للہ الذی بشکرہ یصیر ھلال النعمۃ | سب تعریف اللہ کے لیے جس کے شکر سے نعمتوں کا چاند

Fatawa Ridawiyyah Volume 10

| (Arabic) Badr al-Salat wa al-Salam 'ala ajalli shumus al-risalah qadran wa 'ala alihi wa sahbihi nujum al-huda wa aqmar al-tuqa ma ata al-barqu bi-khabar al-wadqi fa-saddaqa marratan wa kadhaba ukhra. Allahumma hidayat al-haqq wa al-sawab. | (Urdu) Full moon of blessings and peace be upon that personality who is the highest sun of messengership in rank and status, and upon his family and companions who are the stars of guidance and the moons of piety as long as the flash of lightning gives news of rain, sometimes being true and sometimes false. O Allah! Grant guidance to the truth and correctness. (T) |

In Sharia matters, news via telegraph is purely unreliable, and this method devised for moon sighting verification is false and ineffective. It is forbidden for Muslims to act upon such an announcement, and whoever makes an announcement based on it is most prone to sins. The errors in this method and its severe alienation from the rules of Sharia require a whole volume to detail. Therefore, here we restrict ourselves to a few simple warnings according to necessity and the understanding of the audience.

Warning One: The purified Sharia has based the news of moon sighting from another city on sufficient testimony or religious recurrence (Tawatur), and even for those to be sufficient and religiously valid, it has imposed many constraints and conditions without which testimony and fame are of no use. It is evident that telegraphy is neither a Sharia testimony nor a recurrent (Mutawatir) news; then how can reliance on it be permissible? It is stated in Fath al-Qadir, Durr al-Mukhtar, and Hashiya al-Tahtawi on Maraqi al-Falah Sharh Nur al-Idah:

| (Arabic) Wal-lafzu lil-Durri: Yalzam ahli al-mashriq bi-ru'yati ahli al-maghrib idha thabata 'indahum ru'yatu ula'ika bi-tariqin mujibin. 1 | (Urdu) The words in the Durr are: It becomes mandatory for the people of the East due to the sighting of the people of the West, provided that the proof of that sighting is established with them through a mandatory method. (T) |

Allamah Halabi, Allamah Tahtawi, and Allamah Shami state in their marginalia on Durr:

| (Arabic) Bi-tariqin mujibin kana yatahammalu ithnani al-shahadata aw yashhadu 'ala hukmi al-qadi aw yastafidu al-khabaru bi-khilafi ma idha akhbara anna ahla baldatin kadha ra'awhu li-annahu hikayatun. 2 | (Urdu) A mandatory method is that

two people bear witness, or they testify to the judge's ruling, or the news becomes widespread. Contrary to the case when both reported that the people of such-and-such a city saw it, because that is merely a narration. (T) |

Whoever wants to act on the news of the telegraph here, it is mandatory for him to prove its necessity and binding nature according to Sharia. But by no means will it be proven as long as the crescent moon does not shine in the east and the full moon in the west. Then why this baseless addition to the pure Sharia and audacity towards the lofty position of Fatawa? And refuge is sought in Allah.

---

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai Delhi, 1/149 2 Radd al-Muhtar, Bab Sadaqat al-Fitr, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 2/96

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

| (अरबी) बद्र अल-सलात व अल-सलाम अला अजल्ली शुमूस अल-रिसाला कदरन व अला आलिही व सहबिही नुजूम अल-हुदा व अक़मार अल-तुक़ा मा अता अल-बर्क़ु बि-ख़बर अल-वद्क़ी फ़-सद्क़ा मर्रतन व कधबा उख़रा। अल्लाहुम्मा हिदायत अल-हक़ व अल-सवाब। | (उर्दू) दुरूद व सलाम का कामिल चाँद उस हस्ती पर हो जो रुतबे और मर्तबे में रिसालत के सबसे अज़ीम सूरज हैं, और आपके आल व असहाब पर जो हिदायत के सितारे और तक़वा के चाँद हैं, जब तक कि बिजली की चमक बारिश की खबर देती रहे, जो कभी सच और कभी गलत होती है। ऐ अल्लाह! हक़ और दुरुस्तगी की हिदायत अता फरमा। (त) |

शरई उमूर (धार्मिक मामलों) में तार (टेलीग्राम) की खबर पूरी तरह अविश्वसनीय है, और चाँद देखने की पुष्टि के लिए अपनाया गया यह तरीका बातिल और बेअसर है। मुसलमानों के लिए ऐसी घोषणा पर अमल करना हराम है, और जो इसके आधार पर घोषणा करता है, वह सबसे अधिक पापों का भागी है। इस तरीके में जो गलतियाँ और शरई अहकाम से जो भारी बेगानगी है, उनके विवरण के लिए एक पूरे दफ्तर की आवश्यकता है। इसलिए यहाँ ज़रूरत और मुख़ातब (श्रोता) की समझ के अनुसार कुछ आसान चेतावनियों पर इक्तिफ़ा (बस) किया जा रहा है।

पहली चेतावनी: शरीयत-ए-मुतह्हरा ने दूसरे शहर से चाँद दिखने की खबर को 'शहादत-ए-काफ़िया' (पर्याप्त गवाही) या 'तवातुर-ए-शरई' (धार्मिक निरंतरता) पर आधारित किया है, और इनमें भी पर्याप्त और शरई होने के लिए बहुत सी शर्तें और पाबंदियाँ लगाई हैं, जिनके बिना गवाही और प्रसिद्धि किसी काम की नहीं होती। यह बात स्पष्ट है कि तार न तो कोई शरई गवाही है और न ही कोई मुतवातिर खबर, फिर उस पर भरोसा करना कैसे जायज़ हो सकता है? फ़तह अल-क़दीर, दुर्र-ए-मुख़्तार और हाशियह तहतावी अला मराक़िल फ़लाह शरह नूरुल ईज़ाह में है:

| (अरबी) वल-लफ़्ज़ु लिल-दुर्रि: यलज़मु अहलल मशरिक़ि बि-रुयति अहलिल मग़रिबि इज़ा थबता इन्दहुम रुयतु उलाइक़ा बि-तरीक़िन मुजिबिन। 1 | (उर्दू) दुर्र के अल्फाज़ ये हैं: मग़रिब (पश्चिम) के लोगों की रुयियत (चाँद देखना) की वजह से मशरिक़ (पूर्व) के लोगों पर (अमल) लाज़िम हो जाता है, बशर्ते कि वह रुयियत उनके यहाँ किसी वाजिब (शरई) तरीके से साबित हो। (त) |

अल्लामा हलबी, अल्लामा तहतावी और अल्लामा शामी हाशियह दुर्र में फरमाते हैं:

| (अरबी) बि-तरीक़िन मुजिबिन काना यत-हम्मलु इथनानि अल-शहादता अव यशहदु अला हुक्मि अल-क़ाज़ी अव यस्तफ़ीदु अल-ख़बरु बि-ख़िलाफ़ि मा इज़ा अख़बरा अन्ना अहला बलदतिन कज़ा र-अवहु लि-अन्नहु हिकायतुन। 2 | (उर्दू) वाजिब तरीका यह है कि गवाही लाने वाले दो लोग हों, या वे काज़ी के फैसले के गवाह हों, या खबर मशहूर (व्यापक) हो। इसके विपरीत उस सूरत के जब उन दोनों ने यह खबर दी हो कि फलां शहर के लोगों ने देखा है, क्योंकि यह तो केवल एक हिकायत (कथन) है। (त) |

जो यहाँ तार की खबर पर अमल करना चाहे, उस पर लाज़िम है कि शरई तौर पर इसके वाजिब और अनिवार्य होने को साबित करे। लेकिन यह कभी साबित नहीं होगा जब तक कि चाँद पूर्व से और पूरा चाँद पश्चिम से न चमकने लगे। फिर शरीयत-ए-मुतह्हरा में बेबुनियाद बढ़ोतरी और फ़तवे के ऊँचे ओहदे पर ऐसी जुर्रत क्यों? और अल्लाह की पनाह।

---

1 दुर्र-ए-मुख़्तार, किताब-उस-सौम, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 1/149 2 रद-उल-मुहतार, बाब सदक़तुल फ़ित्र, दारु एहया-उत-तुरास अल-अरबी बैरूत, 2/96

فتاوی رضویہ جلد دہم

| بدرالصلوۃ والسلام علی اجل شموس الرسالۃ قدر او علی آلہ وصحبہ نجوم الھدی واقمار التقی ماتاتی البرق بخبر الودق فصدق مرۃ وکذب اخری اللھم ھدایۃ الحق والصواب۔ | بدرِ صلوٰۃ و سلام اس ذات پر جو قدر و منزلت میں رسالت کا سب سے اعلیٰ آفتاب ہیں، آپ کے آل و اصحاب پر جو ہدایت کے ستارے اور تقوی کے چاند ہیں جب تک بجلی کی چمک بارش کی خبر دے کبھی وہ سچ ہو اور کبھی غلط، اے اللہ! حق وصواب کی ہدایت عطا فرما۔ (ت) |

امورِ شرعیہ میں تار کی خبر محض نامعتبر، اور یہ طریقہ کہ تحقیقِ ہلال کیلئے تراشا گیا باطل وبے اثر، مسلمانوں کو ایسے اعلان پر عمل حرام، اور جواس کی بنا پر مرتکبِ اعلان ہو سب سے زیادہ مبتلائے آثام۔ اس طریقے میں جو غلطیاں اور احکامِ شرع سے سخت بیگانگیاں ہیں۔ ان کی تفصیل کو دفتر درکار، لہذا یہاں بقدرِ ضرورت و فہمِ مخاطب چند آسان تنبیہوں پر اقتصار۔

تنبیہ اول: شریعت مطہرہ نے درباره ہلال دوسرے شہر کی خبر کو شہادتِ کافیہ یا تواترِ شرعی پر بنا فرمایا اور ان میں بھی کافی و شرعی ہونے کے لیے بہت قیود و شرائط لگائیں جس کے بغیر ہرگز گواہی و شہرت بیکار آمد نہیں اور پُر ظاہر کہ تار نہ کوئی شہادتِ شرعیہ ہے نہ خبر متواتر، پھر اس پر اعتماد کیونکر حلال ہوسکتا ہے۔ فتح القدیر ودرمختار و حاشیہ طحطاوی علی مراقی الفلاح شرح نورالایضاح میں ہے:

| واللفظ للدر یلزم اھل المشرق برؤیۃ اھل المغرب اذا ثبت عندھم رؤیۃ اولئك بطریق موجب۔ 1 | در کے الفاظ یہ ہیں اہل مشرق پر اہل مغرب کی رویت کی وجہ سے لازم ہوجاتا ہے بشرطیکہ جب اس رویت کا ثبوت ان کے ہاں بطریق موجب ہو۔ (ت) |

علامہ حلبی و علامہ طحطاوی و علامہ شامی حواشی در میں فرماتے ہیں:

| بطریق موجب کان یتحمل اثنان الشھادۃ او یشھد اعلی حکم القاضی او یستفیض الخبر بخلاف ما اذا اخبر ان اھل بلدۃ کذا رآوہ لانہ حکایۃ۔ 2 | طریق موجب یہ ہے کہ شہادت لانے والے دو ہوں یا وہ قاضی کے فیصلے پر گواہ ہوں یا خبر مشہور ہو۔ بخلاف اس صورت کے جب دونوں نے یہ خبر دی ہو کہ فلاں اہل شہر نے دیکھا ہے کیونکہ یہ تو حکایت ہے۔ (ت) |

جو یہاں تار کی خبر پر عمل چاہے اس پر لازم کہ شرعاً اس کا موجب و ملزم ہونا ثابت کرے مگر حاشا نہ ثابت ہوگا جب تک ہلال مشرق اور بدر مغرب سے نہ چمکے، پھر شرع مطہر پر بے اصل زیادت اور منصب رفیع فتویٰ پر جرات کس لیے۔ والعیاذ

---

1 در مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۴۹ 2 ردالمحتار، باب صدقۃ الفطر ، داراحیاء التراث العربی بیروت، ۹۶/۲

Fatawa Rizwia Volume 10

By Allah, the Exalted, and this notion that news received via telegram is sufficient as testimony is sheer ignorance. For us, news has reached through unreliable means. Whose news could be more reliable than that of the Prophet (Peace and blessings of Allah be upon him)? Yet, when a Hadith comes through unreliable narrators, why is it excluded from the rank of reliability?

Second Warning: The state of a telegram is worse and more flawed than a letter. In a letter, the writer's handwriting can be recognized, the style of expression is identifiable, and an expert finds help from other indicators. Despite all this, our scholars have explicitly stated that in Shari'ah matters, these letters and correspondences hold no weight because one handwriting can resemble another and can also be fabricated. Therefore, there can be no Shari'ah certainty that it was written by that specific person. Consider the statements of the leaders of the religion: It is stated in Al-Ashbah: "Handwriting is not to be relied upon nor acted upon." (T). It is stated in Al-Hidayah: "Handwriting resembles another handwriting, so knowledge cannot be attained from it." (T). It is stated in Fath al-Qadir: "Handwriting does not speak and it is similar [to others]." (T). It is stated in Ad-Durr al-Mukhtar: "Handwriting is not to be acted upon, etc." (T). It is stated in Fatawa Qadikhan:

[Table] Arabic: The judge only judges based on evidence, and evidence is either clear proof or confession. As for a document, it is not suitable as evidence because handwriting resembles handwriting. 5 Urdu Translation: A judge should decide based on evidence, and evidence means witnesses, or decide based on a confession; a document (stamp paper) is not proof because one's handwriting can resemble another's. (T)

It is stated in Kafi Sharh al-Wafi: "Handwriting resembles handwriting and it may be forged and fabricated." (Handwriting resembles handwriting and...)

1. Al-Ashbah wa'l-Naza'ir, Kitab al-Qada wa'l-Shahadat, Idara al-Quran wa'l-Uloom al-Islamiyya, Karachi, 1/338
2. Al-Hidayah, Kitab al-Shahadat, Chapter on what the witness bears, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/157
3. Fath al-Qadir
4. Ad-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Qadi ila al-Qadi etc., Matba' Mujtabai, Delhi, 2/83

5. Fatawa Qadikhan, Chapter on claiming Waqf etc., Munshi Naval Kishore, Lucknow, 4/427
6. Kafi Sharh al-Wafi

फतावा रज़विया जिल्द दसवां

अल्लाह सुब्हानहु व तआला की कसम, और यह ख्याल कि तार में खबर तो शहादत (गवाही) के तौर पर काफी आई, महज़ नादानी है कि हम तक तो यह गैर-मोतबर तरीके से पहुँची। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से ज्यादा मोतबर किसकी खबर होगी? फिर जो हदीस गैर-मोतबर रावियों के ज़रिए आती है, वह क्यों एतबार के दर्जे से गिर जाती है!

चेतावनी दूसरी: तार की हालत खत से भी ज़्यादा रद्दी और खराब है कि खत में तो कातिब (लिखने वाले) का खत पहचाना जाता है, इबारत का अंदाज़ पहचान में आता है, वाकिफकार दूसरे संकेतों से मदद पाता है। इसके बावजूद हमारे उलमा ने साफ़ तौर पर फ़रमाया है कि शरीअत के मामलों में इन खतों और संदेशों का कोई एतबार नहीं क्योंकि एक खत दूसरे के जैसा हो सकता है और बनाया भी जा सकता है, तो शरीअत में यह यकीन नहीं हो सकता कि यह उसी शख़्स का लिखा हुआ है। आईम्मा-ए-दीन (दीन के इमामों) की इबारतें देखिए: 'अशबाह' में है: "खत पर न एतबार किया जाएगा न अमल।" (त). 'हिदाया' में है: "खत दूसरे खत के समान होता है, इसलिए इससे इल्म (निश्चित ज्ञान) हासिल नहीं होगा।" (त). 'फतह-उल-क़दीर' में है: "खत बोलता नहीं और इसमें समानता होती है।" (त). 'दुर्रे मुख़्तार' में है: "खत पर अमल नहीं किया जा सकता आदि।" (त). 'फतावा क़ाज़ीख़ां' में है:

[तालिका] अरबी: काजी (न्यायाधीश) केवल प्रमाण के आधार पर फैसला करता है, और प्रमाण या तो स्पष्ट साक्ष्य है या इकबाल (स्वीकारोक्ति)। रही बात दस्तावेज़ की, तो वह प्रमाण के योग्य नहीं है क्योंकि लिखावट लिखावट के समान होती है। 5 उर्दू अनुवाद: काजी फैसला दलील (प्रमाण) पर करे और दलील गवाह हैं या इकरार पर फैसला करे, स्टाम्प (दस्तावेज़) हुज्जत (प्रमाण) नहीं क्योंकि खत दूसरे खत के समान हो सकता है। (त)

'काफी शरह वाफी' में है: "लिखावट लिखावट के समान होती है और कभी इसमें जालसाजी और बनावट भी की जाती है।" (खत खत के समान होता है और...)

1. अशबाह वन-नज़ाइर, किताबुल क़ज़ा वश-शहादात, इदारा अल-क़ुरान वल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 1/338
2. हिदाया, किताबुश-शहादात, मतबा यूसुफ़ी, लखनऊ, 3/157
3. फतह-उल-क़दीर
4. दुर्रे मुख़्तार, किताबुल क़ाज़ी इलल क़ाज़ी आदि, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/83

5. फतावा क़ाज़ीख़ां, मतबा मुंशी नवल किशोर, लखनऊ, 4/427

6. काफी शरह वाफी

पेज 365 / 836

فتاوی رضویہ جلد دہم

باللہ سبحانہ و تعالی اور یہ خیال کہ تار میں خبر تو شہادت کافیہ کی آئی، محض نادانی کہ ہم تک تو نا معتبرہ طریقے سے پہنچی نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے زیادہ معتبر کس کی خبر ، پھر جو حدیث نا معتبر راویوں کے ذریعہ سے آتی ہے کیوں پایہ اعتبار سے ساقط ہو جاتی ہے !

تنبیہ دوم : تار کی حالت خط سے زیادہ ردی و سقیم کہ اس میں کاتب کا خط تو پہچانا جاتا ہے ، طرز عبارت شناخت میں آتا ہے ، واقف کار دیگر قرائن سے اعانت پاتا ہے۔ بایں ہمہ ہمارے علماء نے تصریح فرمائی ہے کہ امور شرعیہ میں ان خطوط و مراسلات کا کچھ اعتبار نہیں کہ خط خط کے مشابہ ہوتا ہے اور بن بھی سکتا ہے تو یقین شرعی نہیں ہو سکتا کہ یہ اُسی شخص کا لکھا ہوا ہے۔ ائمہ دین کی عبارتیں لیجئے : اشباہ میں ہے: لا یعتمد علی الخط ولا یعمل بہ (خط پر نہ اعتماد کیا جائے گا نہ عمل۔ ت) ہدا یہ میں ہے : الخط یشبہ الخط فلم یحصل العلم (خط دوسرے خط کے مشابہ ہوتا ہے لہذا اس سے علم حاصل نہ ہوگا۔ ت) فتح القدیر میں ہے : الخط لا ینطق وھو متشابہ (خط بولتا نہیں اور اس میں مشابہت ہوتی ہے۔ت) در مختار میں ہے : لا یعمل بالخط الخ (خط پر عمل نہیں کیا جاسکتا الخ۔ ت) فتاوی قاضیخان میں ہے :

[ٹیبل] القاضی انما یقضی بالحجۃ والحجۃ ھی البینۃ او الاقرار اما الصک فلا یصلح حجۃ لان الخط یشبہ الخط 5 | قاضی فیصلہ دلیل پر کرے اور دلیل گواہ ہیں یا اقرار پر فیصلہ کرے، اشٹام حجت نہیں کیونکہ خط دوسرے خط کے مشابہ ہوسکتا ہے (ت)

کافی شرح وافی میں ہے : الخط یشبہ الخط وقد یزور ویفتعل۔ (خط خط کے مشابہ ہوتا ہے اور

1 اشباہ والنظائر کتاب القضاء والشہادات والہ دعاوی ادارہ القرآن والعلوم اسلامیہ کراچی ۳۳۸/۱ 2 ہدایہ کتاب الشہادت فصل ما یتحملہ الشاہد مطبع یوسفی لکھنؤ ۳/۱۵۷ 3 فتح القدیر 4 در مختار کتاب القاضی الی القاضی وغیرہ مطبع مجتبائی دہلی ۸۳/۲ 5 فتاوی قاضی خاں، فصل فی دعوی الوقف الخ، منشی نولکشور لکھنؤ ۴۲۷/۴ 6 کافی شرح وافی

This is among those things by which falsehood is attributed to someone and forgery is committed. (T) In Mukhtasar Zahiriyyah, then Sharh al-Ashbah by al-Allamah al-Biri, then in Radd al-Muhtar, it is stated:

Arabic Text	Urdu Translation
A judge should not rule based on this in a dispute because handwriting is something that can be forged and fabricated.[1]	A judge should not decide based on it at the time of a dispute because in handwriting, falsehood can be attributed to someone and it can be fabricated (T)

In 'Ayni Sharh Kanz, it is mentioned:

Arabic Text	Urdu Translation
Handwriting resembles handwriting, so it is not binding as evidence because it admits the possibility of forgery.[2]	Handwriting resembles handwriting, therefore it cannot be evidence because there is a possibility of forgery in it (T)

In Majma' al-Anhur Sharh Multaqa al-Abhur, it is stated:

Arabic Text	Urdu Translation
Testimony, judgment, and witnessing are not permissible except based on knowledge, and that is not found here because handwriting resembles handwriting.[3]	Testimony, judgment, and witnessing are not permissible without certainty, and here it is not achieved because handwriting resembles handwriting (T)

In Fatawa 'Alamgiri, as an excerpt, it is said:

Arabic Text	Urdu Translation
A document can be fabricated and forged; handwriting resembles handwriting and a seal resembles a seal.[4]	A document can have forgery and fabricated matters, and handwriting resembles handwriting. Similarly, a seal can resemble another seal (T)

In Ghamz al-'Uyun, from the Fatawas of Imam al-Ajal Zahir al-Din al-Marghinani, it is stated:

Arabic Text

The reason for not acting upon handwriting is that it is something that is forged and fabricated, i.e., it is of its nature. And its being of such a nature necessitates not acting upon it and not relying on it.

Urdu Translation

The reason for acting upon handwriting is that forgery can be done through it, i.e., this can become its quality, and the existence of this quality demands that it should not be acted upon nor relied upon even if...

[1] Radd al-Muhtar, Chapter of the Judge's Letter to the Judge, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 4/352 [2] 'Ayni Sharh Kanz al-Daqaiq, Book of Testimony, Maktabah Nuriyyah Razawiyyah Sukkur, 2/80 [3] Majma' al-Anhur, Book of Testimony, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 2/192 [4] Fatawa Hindiyyah, Twenty-Third Reason in the Book of the Judge's Letter to the Judge, Noorani Kutub Khana Peshawar, 2/381

जिल्द दहम फ़तावा रज़विया

यह उन चीज़ों में से है जिनसे किसी की ओर झूठ को जोड़ा जाता है और जालसाज़ी की जाती है। त) मुख़्तसर ज़हीरिया, फिर अल्लामा अल-बीरी की शरह अल-अशबाह, फिर रद अल-मुह्तार में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
ला यक़्ज़ी अल-क़ाज़ी बि-ज़ालिका अन अल-मुनाज़अति लान अल-ख़त्ता मिम्मा युज़व्वरु व युफ़्तअलु। १	काज़ी विवाद के समय इस पर फ़ैसला न करे क्योंकि खत में किसी की ओर झूठ जोड़ा जा सकता है और बना लिया जाता है। (त)

ऐनी शरह कंज़ में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
अल-ख़त्तु युश्बिहु अल-ख़त्ता फ़ला यल्ज़मु हुज्जतन लि-अन्नहु यहतमिलु अत-तज़्वीर। २	खत, खत के समान होता है इसलिए वह दलील नहीं बन सकता क्योंकि इसमें जालसाज़ी की संभावना होती है। (त)

मजमा अल-अन्हुर शरह मुल्तक़ा अल-अबहुर में है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
अश-शहादतु व अल-क़ज़ाउ व अर-रुअतु ला यहिल्लु इल्ला अन इल्मिन वला हुना लान अल-ख़त्ता युश्बिहु अल-ख़त्ता। ३	गवाही, फ़ैसला और साक्ष्य निश्चित ज्ञान के बिना जायज़ नहीं हैं और यहाँ वह प्राप्त नहीं है क्योंकि खत, खत के समान होता है। (त)

फ़तावा आलमगीरी में मुल्तक़त से है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
अल-किताबी युफ़्तअलु व युज़व्वरु, अल-ख़त्तु युश्बिहु अल-ख़त्ता व अल-ख़ातमु युश्बिहु अल-ख़ातम। ४	खत में जालसाज़ी और मनगढ़ंत बात भी हो सकती है और खत, खत के समान होता है। इसी तरह मुहर दूसरी मुहर के समान हो सकती है। (त)

ग़म्ज़ अल-उयून में इमाम अल-अजल ज़हीर अल-दीन अल-मरग़ीनानी के फ़तावा से है:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
अल-इल्लतु फ़ी अदमि अल-अमलि बिल-ख़त्ति कौमुहु मिम्मा युज़व्वरु व युफ़्तअलु अयी मिन शा-निहि ज़ालिका व कौमुहु मिन शा-निहि ज़ालिका यक़्तज़ी अदमु अल-अमलि बिहि व अदमु अल-इअतिमाद अलैहि।	खत पर अमल न करने का कारण यह है कि इसके ज़रिए जालसाज़ी की जा सकती है यानी इसकी यह विशेषता बन सकती है और इस विशेषता का होना तक़ाज़ा करता है कि इस पर अमल न किया जाए और न ही इस पर भरोसा किया जाए चाहे...

१ रद अल-मुह्तार, बाब किताबुल काज़ी इलल काज़ी, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी बेरुत, ४/३५२ २ ऐनी शरह कंज़ अद-दक़ायक़, किताबुश शहादा, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, २/८० ३ मजमा अल-अन्हुर, किताबुश शहादत, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी बेरुत, २/१९२ ४ फ़तावा हिंदिया, अस्बाबुस सालिसु वल इशरून फ़ी किताबिल काज़ी इलल काज़ी, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, २/३८१

جلد دہم فتاوٰی رضویہ

یہ ان اشیاء میں سے ہے جن سے کسی کی طرف جھوٹ منسوب کیا جاتا اور جعل سازی کی جاتی ہے۔ ت) مختصر ظہیریہ' پھر شرح الاشباہ للعلاّمۃ البیری' پھر ردالمحتار میں ہے:

لا یقضی القاضی بذلک عن المنازعۃ لان الخط مما یزور و یفتعل۔ ۱

قاضی جھگڑے کے وقت اس پر فیصلہ نہ کرے کیونکہ خط میں کسی کی طرف جھوٹ منسوب کیا جاسکتا ہے اور بنالیا جاتا ہے (ت)

عینی شرح کنز میں ہے:

الخط یشبہ الخط فلا یلزم حجۃ لانہ یحتمل التزویر۔ ۲

خط خط کے مشابہ ہوتا ہے لہذا وہ دلیل نہیں بن سکتا کیونکہ اس میں جعل سازی کا احتمال ہوتا ہے (ت)

مجمع الانہر شرح ملتقی الابحر میں ہے:

الشھادۃ والقضاء والرؤیۃ لایحل الاعن علم ولا ھنا لان الخط یشبہ الخط ۳

شہادت اور قضا اور رویت یقین کے بغیر حلال نہیں اور یہاں حاصل نہیں کیونکہ خط، خط کے مشابہ ہوتا ہے (ت)

فتاوٰی عالمگیری میں ملتقط سے ہے:

الکتاب یفتعل ویزور، الخط یشبہ الخط و الخاتم یشبہ الخاتم۔ ۴

خط میں جعل سازی اور من گھرت بات بھی ہوسکتی ہے اور خط، خط کے مشابہ ہوتا ہے۔ اسی طرح مہر دوسری مہر کے مشابہ ہوسکتی ہے (ت)

غمز العیون میں فتاوٰی امام اجل ظہیر الدین مرغینانی سے ہے:

العلة فی عدم العمل بالخط کونہ مما یزور ویفتعل ای من شانہ ذلک وکونہ من شانہ ذلک یقتضی عدم العمل بہ وعدم الاعتماد علیہ۔

خط پر عمل کرنے کی علت یہ ہے کہ اس کے ذریعے جعل سازی کی جاسکتی ہے یعنی اس کی یہ صفت بن سکتی ہے اور اس صفت کا ہونا تقاضا کرتا ہے کہ اس پر عمل نہ کیا جائے اور نہ اعتماد کیا جائے اگرچہ

۱ ردالمحتار، باب کتاب القاضی الی القاضی، دار احیاء التراث العربی بیروت، ۴/ ۳۵۲ ۲ عینی شرح کنز الدقائق کتاب الشہادۃ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۸۰ ۳ مجمع الانہر، کتاب الشہادت، دار احیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۱۹۲ ۴ فتاویٰ ہندیہ اسباب الثالث والعشرون فی کتاب القاضی الی القاضی نورانی کتب خانہ پشاور ۲/ ۳۸۱

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Boxed Text] Arabic: 1 - وان لم یکن مزوراً في نفس الامر کما ھو ظاھر Urdu: In reality, it has not been forged, as is evident. (T)

Look at how bright and clear these clarifications are, that a letter cannot be relied upon, nor can it be acted upon, nor can certainty be obtained through it, nor is a ruling or testimony based on it permissible, for a handwriting can resemble another and a seal can be like another. And they explicitly state that the mere possibility of forgery in the letter itself is sufficient for its unreliability, even if this specific letter is correct in reality. Then there's this telegram, in which there isn't even a trace of the sender's hand or voice, and compared to a letter, lying and forgery in it are extremely easy because the foundation of religious matters cannot be built upon it—a definite prohibition. Subhan Allah! The caution of the leaders of religion is such that they declared a sealed letter null and void merely due to the possibility of forgery, even though forging a seal and imitating handwriting is not easy; perhaps only one or two in a thousand could do it. Here, there is no difficulty at all; anyone can go to the telegraph office and send a telegram in anyone's name. There are no inquiries into name or lineage, nor are identification witnesses taken as in registration. Furthermore, what revelation has descended upon the truthfulness of telegraph operators that their words must be accepted whether one likes it or not? And religious rulings have begun to be based on it! Alas for the degradation of knowledge and the scarcity of scholars. Truly, to Allah we belong and to Him we shall return.

Third Warning: Aside from the fact that the statements of those sent messages to request news or testimony will probably be quite different from mere narration and reporting, whose unreliability is clearly stated in all books of the religion. Even if, for the sake of argument, there is no Sharia-related flaw in the original news, its reliability entirely disintegrates upon becoming a telegram. That statement did not reach us originally but came through multiple layers of transmission. The original reporter spoke to the telegraph operator there and left. The operator moved the telegraph and through its clicks—whose various patterns they have designated as letter symbols in their terminology—conveyed the text in signs. Now he is also gone. The telegraph operator here observed those clicks and transcribed into known characters what he understood from the recognized strokes. Now he is also gone. That slip of paper was handed to a messenger who delivered it here and went his way. Subhan Allah! Look at the chain of transmission of this "exquisite" narration: unknown from unknown from unknown, unacceptable from unacceptable from

unacceptable. So many intermediaries are inevitable. Furthermore, perhaps it never happens that respectable people go to send the telegram themselves; now consider whoever they sent it through as an additional intermediary. If a form was needed, then writing stepped in. If you didn't come yourself, then through the mediation of some English-knower. On the other side, if the telegram clerk doesn't write Urdu, then a translator is needed here separately. All these are extra separations and the telegram is not a direct link; then what is even the count of "copy of a copy"? Woe to injustice!

---

1 Ghamz al-Uyun ma' al-Ashbah wa'n-Naza'ir, Kitab al-Qada wa'sh-Shahadat, etc., Idarat al-Qur'an wa'l-Ulum al-Islamiyya, Karachi, 1/339.

फ़तावा रज़विया, खंड दसवाँ

[बॉक्स किया हुआ पाठ] अरबी: 1 - وان لم یکن مزوراً في نفس الامر کما ھو ظاھر اردू: वास्तविकता में इसमें जालसाजी नहीं की गई है, जैसा कि स्पष्ट है। (त)

देखिए ये स्पष्टीकरण कितने उज्ज्वल और स्पष्ट हैं कि पत्र पर भरोसा नहीं किया जा सकता, न ही उस पर अमल किया जा सकता है, न ही उसके माध्यम से निश्चितता प्राप्त की जा सकती है, और न ही उसके आधार पर फैसला या गवाही जायज़ है, क्योंकि एक लिखावट दूसरी लिखावट के समान हो सकती है और एक मुहर दूसरी मुहर जैसी हो सकती है। और वे स्पष्ट रूप से कहते हैं कि पत्र का स्वयं में केवल जालसाजी के योग्य होना ही उसकी अविश्वसनीयता के लिए पर्याप्त है, भले ही यह विशेष पत्र वास्तविकता में सही हो। फिर यह टेलीग्राम है, जिसमें भेजने वाले के हाथ या आवाज़ का कोई निशान तक नहीं है, और एक पत्र की तुलना में इसमें झूठ और जालसाजी अत्यंत आसान है क्योंकि धार्मिक मामलों की नींव उस पर नहीं रखी जाएगी—जो कि पूरी तरह से वर्जित है। सुभान अल्लाह! धर्म के इमामों की वह सावधानी कि उन्होंने केवल जालसाजी की गुंजाइश के कारण मुहर लगे पत्र को व्यर्थ घोषित कर दिया, जबकि मुहर बनाना और लिखावट की नकल करना आसान नहीं है; शायद हज़ार में से एक या दो ही ऐसा कर सकें। और यहाँ तो कोई कठिनाई ही नहीं है; जो चाहे टेलीग्राम कार्यालय जाए और जिसके नाम से चाहे टेलीग्राम भेज दे। वहां नाम या वंश की कोई जांच नहीं होती, न ही रजिस्ट्री की तरह पहचान के गवाह लिए जाते हैं। इसके अतिरिक्त, टेलीग्राम ऑपरेटरों की सत्यता पर कौन सी वली उतरी है कि उनकी बात स्वेच्छा या अनिच्छा से स्वीकार्य होगी? और धार्मिक आदेशों की नींव उस पर पड़ने लगी! ज्ञान की गिरावट और विद्वानों की कमी पर अत्यंत खेद है। बेशक हम अल्लाह के लिए हैं और उसी की ओर लौटने वाले हैं।

तीसरी चेतावनी: इस बात को छोड़ भी दें कि जिन लोगों को समाचार या गवाही मंगाने के लिए संदेश भेजे जाएंगे, उनका बयान संभवतः केवल वर्णन और सूचना से कितना अलग होगा, जिसकी अविश्वसनीयता धर्म की सभी पुस्तकों में स्पष्ट है। मान लीजिए यदि मूल समाचार में कोई शरीयत संबंधी दोष न भी हो, तो भी टेलीग्राम बनते ही उसकी विश्वसनीयता पूरी तरह से तार-तार हो जाती है। वह बयान हम तक मौलिक रूप से नहीं पहुँचा बल्कि वह नकल दर नकल होकर आया है। समाचार देने वाला वहां के टेलीग्राम ऑपरेटर से कहकर अलग हो गया। उसने टेलीग्राम यंत्र को चलाया और उसकी खटखट की आवाज़ों से, जिनके विभिन्न स्वरूपों को उन्होंने अपनी शब्दावली में अक्षरों का प्रतीक बना रखा है, संकेतों में इबारत बताई। अब वह भी अलग हो गया। यहाँ के टेलीग्राम ऑपरेटर

ने उन आवाज़ों पर ध्यान दिया, और ज्ञात प्रहारों से जो समझ में आया उसे ज्ञात अक्षरों में उतारा। अब यह भी अलग रहा। वह कागज़ का पुर्जा किसी हरकारे (संदेशवाहक) को सौंपा गया जो यहाँ पहुँचाकर चला गया। सुभान अल्लाह! इस "सुंदर" रिवायत की सनद (सूत्र) का सिलसिला तो देखिए: अज्ञात से अज्ञात से अज्ञात, अस्वीकार्य से अस्वीकार्य से अस्वीकार्य। इतने मध्यस्थ तो अनिवार्य हैं। फिर शायद कभी ऐसा न होता हो कि सम्मानित लोग स्वयं जाकर टेलीग्राम दें; अब जिसके हाथ कहला भेजा उसे एक अलग मध्यस्थ मानिए। यदि फॉर्म की आवश्यकता हुई तो लेखन बीच में आ गया। यदि आप स्वयं नहीं आए तो किसी अंग्रेजी जानने वाले की मध्यस्थता। उधर टेलीग्राम क्लर्क उर्दू न लिखे तो यहाँ अनुवादक की अलग आवश्यकता। ये सब अतिरिक्त अलगाव हुए और टेलीग्राम कोई सीधा संपर्क नहीं है; तो फिर "नकल दर नकल" की गिनती ही क्या है? अन्याय पर दुःख है!

---

1 ग़म्ज़ अल-उयून मअल अश्बाह वन-नज़ायर, किताब अल-क़दा वश-शहादात आदि, इदारत अल-क़ुरआन वल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 1/339.

فتاوی رضویہ، جلد دہم

[باکس کا متن] عربی: وان لم یکن مزوراً في نفس الامر کما ھو ظاھر - 1 اردو: نفس الامر میں اس میں جعلسازی نہ کی گئی ہو جیسا کہ ظاہر ہے۔ (ت)

دیکھئے کس قدر روشن و واضح تصریحیں ہیں کہ خط پر اعتماد نہیں ، نہ اس پر عمل نہ اس کے ذریعہ سے یقین حاصل ہو، نہ اس کی بنا پر حکم و گواہی حلال کہ خط خط کے مشابہ ہوتا ہے اور مہر مہر کے مانند ہو سکتی ہے، اور صاف ارشاد فرماتے ہیں کہ خط کا صرف اپنی ذات میں قابلِ تزویر ہونا ہی اس کی بے اعتباری کو کافی ہے اگرچہ یہ خاص خط واقع میں ٹھیک ہو، پھر یہ تار جس میں خبر بھیجنے والے کے دست و زبان کی کوئی علامت تک نام کو بھی نہیں اور اس میں خط کی بہ نسبت کذب و تزویر نہایت آسان کیونکہ امور دینیہ کی بنا اس پر حرام قطعی نہ ہو گی۔ سبحان اللہ ائمہ دین کی وہ احتیاط کہ مہر خط کو صرف گنجائشِ تزویر کے سبب لغو ٹھہرایا حالانکہ مہر بنالینا اور خط میں خط ملادینا سہل نہیں شاید ہزار میں دو ایک ایسا کر سکتے ہوں اور یہاں تو اصلاً دشواری نہیں جو چاہے تار گھر میں جائے اور جس کے نام سے چاہے تار دے آئے، وہاں نام و نسب کی کوئی تحقیقات نہیں ہوتی، نہ رجسٹری کی طرح شناخت کے گواہ لیے جاتے ہیں ، علاوہ بریں تار والوں کے وجوبِ صدق پر کون سی وحی نازل ہے کہ ان کی بات خواہی نخواہی واجب القبول ہوگی اور اس پر احکامِ شرعیہ کی بنا ہونے لگی ہزار افسوس ذلتِ علم و قلتِ علماء پر ، انا للہ و انا الیہ راجعون۔

تنبیہ سوم : قطعِ نظر اس سے کہ خبر شہادت منگانے کے لیے جنہیں مراسلات بھیجے جائیں گے غالباً ان کا بیان حکایت و اخبار محض سے کتنا جدا ہو گا جس کی بے اعتباری تمام کتب مذہب میں

مصرح۔ بالفرض اگر اصل خبر میں کوئی خلل شرعی نہ ہو تاہم اس کا جامعہ اعتبار تار میں آکر یکسر تار تار کہ وہ بیان ہم تک اصالتاً پہنچا بلکہ نقل در نقل ہو کر آیا ، صاحبِ خبر تو وہاں کے تار والے سے کہہ کر الگ ہو گیا اس نے تار کو جنبش دی اور اس کے کھٹکوں سے جن کے اطوار مختلفہ کو اپنی اصطلاحوں میں علامتِ حروف قرار دے رکھا ہے اشاروں میں عبارت بتائی اب وہ بھی جدا ہو گیا یہاں کے تار والے نے ان کھٹکوں پر نظر کی ، اور ضرباتِ معلومہ سے جو فہم میں آیا نقوشِ معرفہ میں لایا اب یہ بھی الگ رہا وہ کاغذ کا پرچہ کسی ہرکارے کے سپرد ہوا کہ یہاں پہنچا کر چلتا بنا۔ سبحان اللہ! اس نفیس روایت کا سلسلہ سند تو دیکھئے مجہول عن مجہول عن مجہول، نامقبول از نامقبول از نامقبول، اس قدر وسائط تولا بدی ہیں پھر شاید کبھی نہ ہوتا ہو کہ معزز لوگ بذاتِ خود جا کر تار دیں، اب جس کے ہاتھ کہلا بھیجا مانیے وہ جدا واسطہ، اس پر فارم کی حاجت ہوئی تو تحریر کا قدم در میان، آپ نہ آئے تو کسی انگریزی دان کی وساطت، ادھر تار کا بابو اردو نہ لکھے تو یہاں مترجم کی جدا ضرورت ، اینمہ فصلِ زائد ہوا اور تار وصل نہیں، جب تو نقل در نقل کی گنتی ہی کیا ہے، وائے بے انصافی۔

---

1 غمز العیون مع الاشباہ والنظائر کتاب القضاء والشہادات الخ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۳۳۹/۱

Fatawa Rizwiya Volume 10

Those who act upon this fabricated method should be asked to what extent they are aware of the justice and trustworthiness of all these intermediaries. God forbid, even their names are not known; let alone names, it is difficult to state the actual number of intermediaries. Leave everything else aside, even their adherence to Islam is not known; mostly Hindus and other non-believers are appointed to these services. In short, no fabricated Hadith would ever come through such a fine chain. Then, to base Sharia matters on such news—I seek refuge in Allah—is something I believe no sane person, let alone a scholar, would do.

Warning Four: Scholars explicitly state that providing news of testimony from another city via letter is specific only to a Shariah Qazi (judge) who has been appointed by the sovereign over legal cases. Even a letter from an arbitrator is not acceptable. In Durr al-Mukhtar, it is stated:

Arabic: Al-Qadhi yaktubu ilal-Qadhi wa huwa naqlu ash-shahadati haqiqatan wa la yuqbalu min muhakkamin bal min qadhin muwallan min qibali al-imam ilkh multaqata.1	**A Qazi can write to another Qazi, and this is in reality the transfer of testimony. It is not accepted from an arbitrator, but rather from a Qazi appointed by the ruler, etc. (Excerpted).**

In Fath [al-Qadir], it is stated:

Arabic: Hadha an-naqlu bi-manzilati al-qadhai wa lihadha la yasihhu illa mina al-qadhi.2	**This transfer is equivalent to a judicial decree; therefore, it is not valid from anyone other than a Qazi. (Excerpted).**

Non-Qazis are excluded right here. As for the Qazis, there is an explicit directive that the acceptance of a Qazi's letter in this regard is only because the Companions and the Successors (may Allah be pleased with them all) formed a consensus (Ijma) on its permission against analogy (Qiyas). Otherwise, the general rule would have demanded that his letter also be unacceptable for the same reasons mentioned above. It is evident that a ruling accepted against analogy cannot be extended beyond its specific context. Applying it elsewhere is merely false and a grave error. How then can the ruling of accepting a letter be extended to a telegram? The leaders of the religion go as far as to explicitly state that if a Qazi sends his representative, or even comes in person and states, "Testimonies were presented before me," they will certainly not listen to him, because the consensus was formed only regarding the

letter; a message through an envoy or the Qazi's own verbal statement is separate from it. Imam al-Muhaqqiq al-ala al-Itlaq states in the commentary of Hidayah:

Arabic: Al-farqu bayna rasuli al-qadhi wa kitabihi haythu	**The difference between the Qazi's messenger and his letter is that...**

1. Durr al-Mukhtar, Chapter: Kitab al-Qadhi ila al-Qadhi, Mujtabai Press Delhi, 2/83 & 84.
2. Fath al-Qadir, Chapter: Kitab al-Qadhi ila al-Qadhi, Maktaba Nuriya Rizwiya Sukkur, 6/389.

फ़तावा रिज़विया जिल्द दस

इस गढ़े हुए तरीके पर अमल करने वालों से पूछा जाए कि वे इन तमाम मध्यस्थों (वासाति) के न्याय और विश्वसनीयता (अदालत व सिक़ाहत) से कहाँ तक वाकिफ हैं? अल्लाह की पनाह! नाम तक मालूम नहीं होता; नाम तो दूर, मध्यस्थों की सही संख्या बताना भी मुश्किल है। बाकी सब छोड़िए, उनके इस्लाम का भी पता नहीं; अक्सर हिंदू और अन्य गैर-मुस्लिम इन सेवाओं पर नियुक्त हैं। सारांश यह कि ऐसी बारीक श्रृंखला से तो कोई गढ़ी हुई (मौज़ू) हदीस भी नहीं आती होगी। फिर ऐसी खबर पर शरीयत के मामलों की बुनियाद रखना—अस्तग़फिरुल्लाह—विद्वान तो विद्वान, मैं समझता हूँ कि किसी अकलमंद का काम भी नहीं होगा।

चौथी चेतावनी: विद्वान स्पष्ट रूप से फ़रमाते हैं कि दूसरे शहर से पत्र के माध्यम से गवाही की खबर देना केवल उस शरीयत के काज़ी के साथ विशिष्ट है जिसे सुल्तान ने मुकदमों पर नियुक्त किया हो, यहाँ तक कि किसी पंच (मोहक्कम) का पत्र भी स्वीकार्य नहीं है। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

अरबी: अल-काज़ी यकतुबु इलल-काज़ी व हुवा नक़लु अश्-शहादती हकीकतन व ला युक्बलु मिन मुहक्कमिन बल मिन काज़िन मुवल्लन मिन किबलि अल-इमाम इल्ख़ मुल्तक़ता।1	**काज़ी दूसरे काज़ी को लिख सकता है और यह वास्तव में गवाही का हस्तांतरण है। यह किसी फैसले करने वाले (पंच) से स्वीकार्य नहीं है, बल्कि उस काज़ी से स्वीकार्य है जिसे हाकिम ने नियुक्त किया हो, आदि। (उद्धृत)।**

'फ़तह' में है:

अरबी: हाज़ा अन-नक़लु बि-मंज़िलति अल-क़ज़ाई व लिहाज़ा ला यसिहहु इल्ला मिना अल-काज़ी।2	**यह हस्तांतरण फैसले (कज़ा) के दर्जे में है, इसलिए यह काज़ी के अलावा किसी और से सही नहीं है। (उद्धृत)।**

गैर-काज़ी तो यहीं बाहर हो गए। रहे काज़ी, तो उनके बारे में स्पष्ट निर्देश है कि इस मामले में काज़ी के पत्र की स्वीकृति केवल इसलिए है क्योंकि सहाबा और ताबेईन (अल्लाह उन सब से राज़ी हो) ने कयास (तर्क) के विपरीत इसकी अनुमति पर इज्मा (आम सहमति) कर लिया था। वरना नियम तो यही चाहता था कि उसका पत्र भी उन्हीं कारणों से अस्वीकार्य हो जो ऊपर बताए गए हैं। और यह ज़ाहिर है कि जो हुक्म कयास के खिलाफ माना जाता है, वह अपने स्थान से आगे नहीं बढ़ सकता। दूसरी जगह इसे लागू करना सरासर गलत और बड़ी भूल है। फिर पत्र स्वीकार करने के हुक्म से

आगे बढ़कर टेलीग्राम तक पहुँचना कैसे जायज़ हो सकता है? धर्मगुरु तो यहाँ तक स्पष्ट फ़रमाते हैं कि यदि काज़ी अपना आदमी भेजे या स्वयं आकर कहे कि "मेरे सामने गवाहियाँ गुज़रीं", तो वे हरगिज़ नहीं सुनेंगे, क्योंकि इज्मा केवल पत्र के बारे में हुआ है; दूत का संदेश या काज़ी का स्वयं का बयान उससे अलग है। इमाम मोहक़्क़िक अलल इतलाक 'शरह हिदाया' में फ़रमाते हैं:

अरबी: अल-फ़र्क़ु बयना रसूली अल-काज़ी व किताबिही हयसु	**काज़ी के दूत और उसके पत्र में यह फर्क है कि...**

1. दुर्रे मुख़्तार, बाब: किताबुल काज़ी इलल काज़ी, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/83 व 84
2. फ़तहुल कदीर, बाब: किताबुल काज़ी इलल काज़ी, मकतबा नूरिया रिज़विया सुक्कुर, 6/389

पृष्ठ 368/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

اس طریقہ تراشیدہ پر عمل کرنے والوں سے پوچھا جائے ان سب وسائط کی عدالت و ثقاہت سے کہاں تک آگاہ ہیں، حاش للہ نام بھی نہیں معلوم ہوتا، نام در کنار اصل شمار و سائط بتانا دشوار، سب جانے دیجئے اسلام پر بھی علم نہیں اکثر ہنود و غیر ہم کفار ان خدمات پر معین، غرض کوئی موضوع سی حدیث اس نفیس سلسلے سے نہ آتی ہوگی، پھر ایسی خبر پر امور شرعیہ کی بنا کرنا استغفر اللہ علماء تو علماء میں جانتا کہ کسی عاقل کا کام ہو۔

تنبیہ چہارم: علماء تصریح فرماتے ہیں کہ دوسرے شہر سے بذریعہ خط خبر شہادت دینا صرف قاضی شرع سے خاص جسے سلطان نے مقدمات پر والی فرمایا ہو، یہاں تک کہ حکم کا خط مقبول نہیں، درمختار میں ہے:

القاضی یکتب الی القاضی وھو نقل الشھادۃ حقیقۃ ولا یقبل من محکم بل من قاض مولی من قبل الامام الخ ملتقطا۔1

قاضی، دوسرے قاضی کی طرف لکھ سکتا ہے اور یہ حقیقتہً نقل شہادت ہے اور یہ فیصل سے قبول نہیں بلکہ اس قاضی سے قبول ہے جسے حاکم نے مقرر کیا ہو الخ ملتقطا (ت)

فتح میں ہے:

ھذا النقل بمنزلۃ القضاء و لھذا لایصح یہ نقل بمنزلہ قضاء کے ہے لہذا یہ قاضی کے علاوہ کسی الامن القاضی۔2

سے صحیح نہیں۔(ت)

غیر قضاۃ تو یہیں سے الگ ہوئے، رہے قاضی، ان کی نسبت صریح ارشاد کہ اس بارے میں نامہ قاضی کا قبول بھی اس وجہ سے ہے کہ صحابہ و تابعین رضوان اللہ علیہم اجمعین نے برخلاف

قیاس اسکی اجازت پر اجماع فرمالیا ورنہ قاعدہ یہی چاہتا تھا کہ اس کا خط بھی انہی وجوہ سے جو اوپر گزریں مقبول نہ ہو، اور پھر ظاہر کہ جو حکم خلاف قیاس مانا جاتا ہے مورد سے آگے تجاوز نہیں کر سکتا، اور دوسری جگہ اس کا اجراء محض باطل و فاحش خطا، پھر حکم قبول خط سے گزر کر تار تک پہنچنا کیونکر روا۔ ائمہ دین تو یہاں تک تصریح فرماتے ہیں کہ اگر قاضی اپنا آدمی بھیجے بلکہ بذات خود ہی آکر بیان کرے کہ میرے سامنے گواہیاں گزریں ہرگز نہ سنیں گے کہ اجماع تو صرف درباره خط منعقد ہوا ہے، پیام ایلچی و خود بیان قاضی اس سے جدا ہے۔ امام محقق علی الاطلاق شرح ہدایہ میں فرماتے ہیں:

الفرق بین رسول القاضی و کتابہ حیث قاضی کے قاصد اور اس کے خط میں یہ فرق ہے کہ

1. در مختار، باب کتاب القاضی الی القاضی، مطبع مجتبائی دہلی، ۸۳/۲ و ۸۴
2. فتح القدیر باب کتاب القاضی الی القاضی مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۳۸۹/۶

[Box 1] Arabic: His letter is accepted, but his messenger is not. At most, a messenger stands in place of the judge himself, whereas we have already stated that if a judge personally goes and informs another judge of the contents of the letter, the second judge would not accept it. Analogy (Qiyas) demands that the letter also not be accepted, but it was declared permissible and acceptable by the consensus (Ijma) of the Tabi'un (successors of the companions of the Prophet), which is contrary to analogy. Therefore, the permission is restricted to this. 1 Urdu: The letter will be accepted, but the messenger is not acceptable. At most, the messenger stands in the position of the judge, while we have already explained that if a judge himself goes to another judge and conveys the content of the letter, the other judge will not accept it. The requirement of analogy regarding the letter is that it should not be accepted, but it was declared permissible and acceptable by the consensus of the Tabi'un, which is contrary to analogy. That is why the permission remains confined to this. (T)

SubhanAllah! What then is the reality of a poor telegram that it should be compared to the 'Kitab al-Qadi' (Judge's Letter)? And where the personal statement of a judge is legally ineffective, how can judgments be based on it? (Verse:) Look at the difference, from where to where the paths lead. (See the vast difference in the paths, from where to where it goes. - T)

And when legally a judge's telegram is unreliable for various reasons, then the status of others' telegrams is evident from our aforementioned discourse: if the telegram of one whose letter is accepted (Maqbul al-Kitab) is worthless, then what is the value of the telegram of one whose letter is rejected (Mardud al-Kitab)? And there is no power nor strength except with Allah, the Sovereign King.

Fifth Warning: A letter from a Sharia judge is only acceptable when two reliable men or one man and two just women from the court of justice come here and provide legal testimony that this letter is definitely from that judge and he wrote it in our presence. Otherwise, it will never be accepted, even if we recognize the judge's handwriting and it bears his seal, and he sent it with his own specific person. It is stated in al-Hidayah:

[Box 2] Arabic: A letter is not accepted except with the testimony of two men or one man and two women, because one handwriting can resemble another. Therefore, proof of the letter cannot be established without complete evidence. This is because a ruling becomes binding due to it, so evidence is necessary. 2 Urdu: The letter will

not be accepted except upon the testimony of two men or one man and two women, because one handwriting can resemble another. Therefore, the letter will not be proven without this complete evidence, and this is because a ruling becomes mandatory due to the letter, so the presence of evidence is necessary. (T)

It is compiled from Fatawa Hindiyyah:

1. Fath al-Qadir, Commentary on al-Hidayah, Chapter: From Judge to Judge, Maktaba Nooriyya Razawiyya, Sukkur, 6/386.
2. Al-Hidayah, Chapter: From Judge to Judge, Matba Yusufi, Lucknow, 3/139.

[बॉक्स १] अरबी: उनका पत्र स्वीकार किया जाता है, लेकिन उनका दूत नहीं। अधिक से अधिक, एक दूत स्वयं न्यायाधीश (काज़ी) के स्थान पर होता है, जबकि हम पहले ही बता चुके हैं कि यदि कोई न्यायाधीश स्वयं जाकर दूसरे न्यायाधीश को पत्र की सामग्री बताए, तो दूसरा न्यायाधीश उसे स्वीकार नहीं करेगा। सादृश्य (क़ियास) के अनुसार पत्र को भी स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए, लेकिन ताबिईन (पैगंबर के साथियों के उत्तराधिकारी) की सहमति (इज्मा) से इसे जायज़ और स्वीकार्य घोषित किया गया था, जो सादृश्य के विपरीत है। इसलिए, अनुमति इसी तक सीमित है। १ उर्दू: पत्र स्वीकार किया जाएगा लेकिन दूत स्वीकार्य नहीं है, अधिक से अधिक यह है कि दूत, काज़ी के स्थान पर है जबकि हम पहले ही बयान कर चुके हैं कि अगर काज़ी खुद जाकर दूसरे काज़ी को पत्र वाला विषय बताए तो दूसरा काज़ी उसे स्वीकार नहीं करेगा, पत्र के बारे में क़ियास की माँग यही है कि स्वीकार न हो लेकिन ताबिईन हजरात के इज्मा से इसको जायज़ व मक़बूल करार दिया गया जो कि क़ियास के खिलाफ है इसीलिए इसी में इजाज़त सीमित रहेगी। (त)

सुभानअल्लाह! फिर बेचारे तार (टेलीग्राम) की क्या हकीकत है कि उसे 'किताब अल-काज़ी' (काज़ी के पत्र) पर क़ियास करें और जहाँ खुद काज़ी का बयान शरीयत के अनुसार बेअसर हो वहाँ उसके सिर पर फैसलों की नींव रखें। (शेर:) देखें कि रास्तों के बीच कितना बड़ा अंतर है। (रास्ते का अंतर देखें कि कहाँ से कहाँ तक है। - त)

और जब शरीयत के अनुसार काज़ी का तार कई कारणों से अविश्वसनीय है, तो दूसरों के तार की जो हैसियत है वह हमारे पूर्व प्रवचन से स्पष्ट है कि मक़बूल अल-किताब (जिसका पत्र स्वीकार्य है) का तार तुच्छ है, तो मर्दुद अल-किताब (जिसका पत्र अस्वीकार्य है) का तार क्या चीज़ है, और अल्लाह, सर्वशक्तिमान राजा के अलावा कोई शक्ति या सामर्थ्य नहीं है।

पांचवीं चेतावनी: शरीयत के काज़ी का पत्र भी सिर्फ उसी समय स्वीकार्य है जब न्याय के न्यायालय से दो विश्वसनीय पुरुष या एक पुरुष और दो न्यायप्रिय महिलाएं यहाँ आकर कानूनी गवाही दें कि यह पत्र निश्चित रूप से उसी काज़ी का है और उसने हमारे सामने लिखा है, अन्यथा हरगिज़ स्वीकार नहीं होगा चाहे हम उस काज़ी का पत्र पहचानते हों और उसकी मुहर भी लगी हो और उसने अपने विशेष व्यक्ति के हाथ भेजा हो। हिदाया में है:

[बॉक्स २] अरबी: पत्र स्वीकार नहीं किया जाएगा सिवाय दो पुरुषों या एक पुरुष और दो महिलाओं की गवाही के क्योंकि लिखावट लिखावट के समान हो सकती है। इसलिए पत्र का प्रमाण पूर्ण साक्ष्य के बिना स्थापित नहीं होगा और यह इसलिए है क्योंकि इसके कारण फैसला अनिवार्य हो जाता है, अतः साक्ष्य का होना आवश्यक है। २ उर्दू: पत्र स्वीकार नहीं किया जाएगा मगर दो मर्द या एक मर्द और दो महिलाओं की गवाही पर स्वीकार होगा क्योंकि पत्र, पत्र के समान हो सकता है लिहाजा इस मुकम्मल गवाही के बिना पत्र का सबूत न होगा और यह इसलिए कि पत्र की वजह से हुक्म लाज़िम होता है और इसलिए सबूत का होना ज़रूरी होता है। (त)

फतावा हिंदिया से संकलित है:

1. फ़तह अल-क़दीर, शरह हिदाया, बाब: अल-काज़ी इलल काज़ी, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, ६/३८६।
2. हिदाया, बाब: अल-काज़ी इलल काज़ी, मतबा यूसुफ़ी, लखनऊ, ३/१३९।

पृष्ठ ३६९/८३६

[باکس 1] عربی: یقبل کتابه ولا یقبل رسوله، فلان غایة رسوله ان یکون کنفسه، وقد منّانه لوذکر مافي کتابه لذلك القاضی بنفسه لا یقبله، وکان القیاس فی کتابه کذلك، الا انه اجیز باجماع التابعین علی خلاف القیاس فاقتصر علیه۔ 1 اردو: خط قبول کیا جائے گا لیکن قاصد مقبول نہیں، زیادہ سے زیادہ یہ ہے کہ قاصد، قاضی کے قائم مقام ہے جبکہ ہم پہلے بیان کر چکے کہ اگر قاضی خود جا کر دوسرے قاضی کو خط والا مضمون بتائے تو دوسرا قاضی اسے قبول نہیں کرے گا، خط کے بارے میں قیاس کا تقاضا یہی ہے کہ قبول نہ ہو لیکن تابعین حضرات کے اجماع سے اس کو جائز و مقبول قرار دیا گیا جو کہ خلاف قیاس ہے اسی لیے اسی میں اجازت محصور رہے گی۔ (ت)

سبحان اللہ! پھر تار بیچارے کی کیا حقیقت کہ اسے کتاب القاضی پر قیاس کریں اور جہاں خود بیان قاضی شرعا بے اثر وہاں اس کے سر، بنائے احکام دھریں ع بہیں تفاوت رہ از کجاست تا بکجا (راستے کا تفاوت دیکھیں کہ کہاں سے کہاں تک ہے۔ت)

اور جب شرعاً قاضی کا تار بوجوہ بے اعتبار، تو اوروں کے تار کی جو ہستی ہے وہ ہماری تقریرِ صدر سے آشکار کہ مقبول الکتاب کا تار، ناچیز، تو مردود الکتاب کا تار کیا چیز، ولا حول ولا قوۃ الا باللہ الملك العزیز۔

تنبیہ پنجم: قاضی شرع کا نامہ بھی صرف اُسی وقت مقبول جب دو مرد ثقہ یا ایک مرد دو عورتیں عادل دار القضاء سے یہاں آکر شہادت شرعیہ دیں کہ یہ خط بالیقین اُسی قاضی کا ہے اور اس نے ہمارے سامنے لکھا ہے ورنہ ہر گز قبول نہ ہو گی اگرچہ ہم اس قاضی کا خط پہچانتے ہوں اور اس کی مہر بھی لگی ہو اور اُس نے خاص اپنے آدمی کے ہاتھ بھیجا ہو۔ ہدایہ میں ہے:

[باکس 2] عربی: لا یقبل الکتاب الابشھادۃ رجلین اورجل وامراتین لان الکتاب یشبہ الکتاب فلا یثبت الابحجۃ تامۃ وھذا لانہ ملزم فلا بدمن الحجۃ۔ 2 اردو: خط نہیں قبول کیا جائے گا مگر دو مرد یا ایک مرد اور دو خواتین کی گواہی پر قبول ہوگا کیونکہ خط، خط کے مشابہ ہو سکتا ہے لہذا اس حجت کاملہ کے بغیر خط کا ثبوت نہ ہو گا اور یہ اس لیے کہ خط کی وجہ سے حکم لازم ہوتا ہے اور اس لیے حجت کا ہونا ضروری ہوتا ہے۔ (ت)

فتاوٰی ہندیہ میں ملتقط سے ہے:

1 فتح القدیر شرح ھدایۃ باب القاضی الی القاضی مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر 6/ 386 2 ہدایہ، باب القاضی الی القاضی، مطبع یوسفی لکھنؤ، 3/ 139

Fatawa Rizvia, Volume 10

It must be known that a judge's letter to another judge has become a Sharia proof in dealings, contrary to analogy. Because a letter can be forged and faked, and handwriting resembles handwriting, and a seal resembles a seal. However, we have made it a proof by consensus. But the judge to whom it is written accepts it only when its conditions are met. Among these conditions is evidence, so that the recipient judge does not accept the letter of another judge until it is proven by evidence that it is the letter of that judge. (1)

In 'Al-Uqud al-Durriya', it is mentioned from Fatawa Allama Qari 'al-Hidayah': If they testify that it is his handwriting without having witnessed its writing, then no judgment shall be given based on it. (2)

Glory be to Allah! These letters or telegrams that arrive here, which two upright witnesses come and testify that so-and-so wrote or sent this telegram in our presence? But the fact is that interference in Sharia matters without knowledge causes everything. We ask Allah for guidance to the right path and we seek His help in every matter. (T)

O dear! In this era of trials, people have great audacity regarding Sharia rulings, especially in those matters related to modern occurrences like telegrams, electricity, etc. They think that their ruling will not be found in the books of the Imams of religion, so they can ignore the Sharia. But they do not know that the scholars of religion (may Allah accept their beautiful efforts—T) have left nothing for these dear ones' independent reasoning (Ijtihad). They have stated everything explicitly, implicitly, derivatively, and fundamentally. More knowledge belongs to him who has more understanding, and God-willing, the time will not be void of servants of God who...

1. Fatawa Hindiyya, Chapter 23, on the Judge's letter to a Judge, Nurani Kutub Khana Peshawar, 3/381.
2. Al-Uqud al-Durriya, Writing on three levels, etc., Arg Bazaar, Kandahar, Afghanistan, 2/19.

फ़तावा रज़विया, खंड 10

यह जान लेना आवश्यक है कि एक न्यायाधीश (काज़ी) का पत्र दूसरे न्यायाधीश के पास लेन-देन में शरीयत के अनुसार एक प्रमाण बन गया है, जो कि तर्क(क़यास) के विरुद्ध है। क्योंकि पत्र में जालसाजी और झूठ हो सकता है, और लिखावट लिखावट के समान हो सकती है, और मुहर मुहर के समान हो सकती है। हालाँकि, हमने इसे आम सहमति (इजमा) के कारण प्रमाण माना है। लेकिन जिस न्यायाधीश को पत्र लिखा गया है, वह इसे तभी स्वीकार करता है जब उसकी शर्तें पूरी हों। और उन शर्तों में से एक गवाही है, यहाँ तक कि प्राप्तकर्ता न्यायाधीश दूसरे न्यायाधीश के पत्र को तब तक स्वीकार नहीं करता जब तक कि गवाही से यह सिद्ध न हो जाए कि यह उसी न्यायाधीश का पत्र है। (1)

'उक़ूदुल दुर्रिय्या' में फ़तावा अल्लामा क़ारी 'अल-हिदाया' से है: यदि वे गवाही दें कि यह उसकी लिखावट है, लेकिन उन्होंने उसे लिखते हुए नहीं देखा, तो ऐसे पत्र पर निर्णय नहीं दिया जाएगा। (2)

सुभान अल्लाह! ये पत्र या टेलीग्राम जो यहाँ आते हैं, उनके साथ कौन से दो न्यायप्रिय गवाह आकर गवाही देते हैं कि अमुक व्यक्ति ने हमारे सामने इसे लिखा या टेलीग्राम भेजा? लेकिन सच तो यह है कि अज्ञानता के साथ शरीयत के मामलों में अनुचित हस्तक्षेप सब कुछ करवा देता है। हम अल्लाह तआला से सही मार्गदर्शन की प्रार्थना करते हैं और हर मामले में उसी से मदद माँगते हैं। (त)

ऐ अज़ीज़! इस फितने (उपद्रव) के दौर में लोगों में शरीयत के आदेशों के प्रति बड़ा साहस है, विशेष रूप से उन मामलों में जिनका संबंध नई घटनाओं से है, जैसे टेलीग्राम, बिजली आदि। वे समझते हैं कि धर्म के इमामों की पुस्तकों में इनका हुक्म नहीं मिलेगा, जिससे शरीयत के विरोध का आरोप हम पर लगेगा। लेकिन वे नहीं जानते कि धर्म के विद्वानों (अल्लाह उनकी कोशिशों को स्वीकार करे—त) ने इन अज़ीज़ों के इज्तिहाद (स्वतंत्र शोध) के लिए कुछ भी नहीं छोड़ा है। उन्होंने सब कुछ स्पष्ट रूप से, संकेत में, शाखाओं के रूप में और मूल रूप से कह दिया है। अधिक ज्ञान उसे है जिसके पास अधिक समझ है, और इंशा अल्लाह तआला ज़माना अल्लाह के उन बंदों से खाली नहीं होगा जो...

1. फ़तावा हिन्दिया, अध्याय 23, काज़ी का काज़ी को पत्र, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/381.
2. उक़ूदुल दुर्रिय्या, 'अल-किताबा अला सलासा मरातिब' आदि, अर्क बाज़ार, कंधार, अफगानिस्तान, 2/19.

فتاوی رضویہ، جلد دہم

یجب ان یعلم ان کتاب القاضی الی القاضی صار حجة شرعاً فی المعاملات بخلاف القیاس لان الکتاب قد یفتعل ویزور، والخط یشبہ الخط والخاتم یشبہ الخاتم ولکن جعلنہ حجة بالاجماع ولکن انما یقبلہ القاضی المکتوب الیہ عند وجو دشرائطہ ومن جملة الشرائط البینة حتی ان القاضی المکتوب الیہ لایقبل کتاب القاضی مالم یثبت بالبینة انہ کتاب القاضی۔ 1 یہ جان لینا ضروری ہے کہ قاضی کا خط دوسرے قاضی کی طرف معاملات میں شرعاً حجت ہے لیکن خلافِ قیاس کیونکہ خط میں جعلسازی اور جھوٹ لکھا جاسکتا ہے، اور خط، خط کے مشابہ، اسی طرح مہر دوسری مہر کے مشابہ ہو سکتی ہے لیکن ہم نے اسے اجماع کی وجہ سے حجت مانا ہے لیکن جس قاضی کی طرف لکھا گیا ہو تب قبول کرے جب اسکی شرائط پائی جائیں، اور ان شرائط میں سے ایک یہ ہے کہ اس پر گواہ ہوں حتی کہ قاضی دوسرے قاضی کے خط کو اس وقت تک قبول نہیں کر سکتا جب تک گواہ گواہی نہ دیں کہ یہ قاضی کا خط ہے (ت)

عقودالدریہ میں فتاوی علامہ قاری الہدایہ سے ہے :

اذا شھدوا انہ خطہ من غیر ان یشاھدوا کتابتہ فلا یحکم بذلک۔ 2 جب وہ گواہی دیں کہ یہ اس کا خط مگر انہوں نے لکھتے ہوئے نہیں دیکھا تو ایسے خط پر فیصلہ نہ دیا جائے (ت)

سبحان اللہ ! یہ خطوط یا تار جو یہاں آتے ہیں اُن کے ساتھ کون سے دو گواہ عادل آکر گواہی دیتے ہیں کہ کہ فلاں نے ہمارے سامنے لکھا یا تار دیا مگر ہے یہ کہ نا واقفی کے ساتھ امورِ شرع میں بے جا مداخلت سب کچھ کراتی ہے نسأل اللہ توفیق الصواب و بہ نستعین فی کل باب (ہم اللہ تعالیٰ سے توفیق صواب کا سوال کرتے ہیں اور ہر معاملہ میں اسی سے مدد چاہتے ہیں۔ ت)

اے عزیز ! اس زمانہ فتن میں لوگوں کو احکامِ شرع پر سخت جرات ہے خصوصاً ان مسائل میں جنہیں حوادثِ جدیدہ سے تعلق و نسبت ہے جیسے تار، برقی وغیرہ، سمجھتے ہیں کہ کتب ائمہ دین میں ان کا حکم نہ نکلے گا جو مخالفتِ شرع کا ہم پر الزام چلے گا مگر نہ جانا کہ علمائے دین شکر اللہ تعالیٰ مساعیھم الجمیلۃ (اللہ تعالیٰ ان کی مساعی جمیلہ کو قبول فرمائے۔ ت) نے کوئی حرف ان عزیزوں کے اجتہاد کو اٹھا نہیں رکھا ہے تصریحاً تلویحاً تفریعاً تاصیلاً سب کچھ فرما دیا ہے زیادہ علم اسے ہے جسے زیادہ فہم ہے اور ان شاء اللہ العزیز زمانہ بندگانِ خدا سے خالی نہ ہوگا جو

1 فتاوی ہندیہ الباب الثالث والعشرون فی کتاب القاضی الی القاضی نورانی کتب خانہ پشاور ۳۸۱/۳

2 عقودالدریہ الکتابۃ علی ثلاثیہ مراتب الخ ارگ بازار قندھار افغانستان ۱۹/۲

Fatawa-e-Razvia Volume 10

I am an expert in simplifying the difficult, attaining the intricate, humbling the tough, and detailing the concise. By the permission of Allah Almighty, I am capable of extracting the pearl from the shell, the shell from the sea, the seed from the tree, and the fruit from the tree.

[Arabic Quote and Urdu translation in boxes:] May the universe not be devoid of their virtues and may Allah increase such people in our lands. Amen, Amen, by Your mercy, O Most Merciful of the merciful. And may Allah Almighty's peace and blessings be upon the Seal of the Prophets, our master Muhammad, and his family and all his companions. Allah, Glorified and Exalted is He, knows best, and His knowledge is most complete, His glory most perfect, and His judgment most firm. (T)

Problem 171: From Rampur via Mawlawi Bashir Ahmad Sahib, Head Teacher of Madrasa Ahle Sunnat-o-Jamaat Bareilly, 4 Rabi al-Awwal 1323 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Shari'ah say regarding this matter: if the moon is not sighted in one city on the 29th, but in another city, the same moon is sighted for the 30th, and people from there inform via telephone or telegraph, will that news be credible or not? Explain and be rewarded.

Answer: It can never be credible, it is not worthy of consideration at all. A detailed fatwa of this humble servant (the Faqeer) regarding the severe unreliability of telegraphs has already been published. Its status is even lower than a telephone call, as in telegraphy, there isn't even a trace of the sender's handwriting, and often non-believers like Bengali Babus etc. act as intermediaries, otherwise, they must be unknown (majahil). Scholars state clearly that even a letter is not credible. It is mentioned in 'Al-Hidaya': "One handwriting can resemble another" (Trans: Handwriting can be similar to another). So how can action upon a telegraph be possible according to Shari'ah! Likewise, with the telephone, there is no witness or witnessed entity, only a voice is heard. Scholars clarify that Shari'ah rulings cannot be based on a voice heard from behind a partition because one voice can resemble another. In 'Tabyin al-Haqa'iq' by Imam Zayla'i and then in 'Fatawa Alamgiri', it is stated: [Arabic Quote and Urdu translation in boxes:] "If someone hears from behind a veil, it is not permissible for him to testify because it could be someone else."

1. Al-Hidaya, Chapter: What a witness can bear, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/157

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द 10

मैं कठिन को सरल करने, पेचीदा को प्राप्त करने, मुश्किल को आसान बनाने और संक्षेप का विस्तार करने में माहिर हूँ। अल्लाह सर्वशक्तिमान की अनुमति से, मैं समुद्र से सीप, सीप से मोती, बीज से पेड़ और पेड़ से फल निकालने में सक्षम हूँ।

[बक्से में अरबी उद्धरण और उर्दू अनुवाद:] ब्रह्मांड उनकी खूबियों से खाली न रहे और अल्लाह हमारे क्षेत्रों में ऐसे लोगों की वृद्धि करे। आमीन, आमीन, तेरी रहमत के सदके ऐ सबसे बड़े रहम करने वाले। और अल्लाह सर्वशक्तिमान की कृपा और शांति पैगंबरों की मोहर, हमारे आका मुहम्मद, और उनके परिवार और उनके सभी साथियों पर हो। अल्लाह, महिमामय और सर्वोच्च, सबसे बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान सबसे पूर्ण है, उसका वैभव सबसे उत्तम है, और उसका निर्णय सबसे दृढ़ है। (त)

मसला 171: रामपुर से, मौलवी बशीर अहमद साहिब, मदरसा अहले सुन्नत व जमात बरेली के मुख्य शिक्षक के माध्यम से, 4 रबी-उल-अव्वल 1323 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती इस मसले के बारे में क्या कहते हैं: यदि 29 तारीख को किसी शहर में चांद दिखाई न दे और दूसरे शहर में वही चांद 30 का दिखाई दे, और वहां के लोग टेलीफोन या टेलीग्राफ द्वारा इसकी जानकारी दें, तो क्या वह खबर विश्वसनीय होगी या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

जवाब: यह कतई विश्वसनीय नहीं हो सकती, बिल्कुल भी ध्यान देने योग्य नहीं है। तार (टेलीग्राफ) की भारी अविश्वसनीयता के बारे में इस फकीर का विस्तृत फतवा पहले ही प्रकाशित हो चुका है। इसकी स्थिति टेलीफोन से भी बहुत गिरी हुई है, क्योंकि इसमें भेजने वाले के हाथ के अक्षर का कोई चिन्ह तक नहीं होता, और अक्सर बंगाली बाबू आदि जैसे काफ़िर मध्यस्थ होते हैं, अन्यथा उनका अज्ञात (मजहिल) होना निश्चित है। और विद्वान स्पष्ट रूप से कहते हैं कि पत्र भी विश्वसनीय नहीं है, 'हिदाया' में है: "एक लिखावट दूसरी लिखावट के समान हो सकती है" (अनुवाद: लिखावट एक-दूसरे से मिल सकती है)। तो शरीयत के अनुसार तार पर अमल कैसे संभव है! इसी तरह टेलीफोन, जिसमें गवाह और गवाही दी गई चीज़ मौजूद नहीं होती, केवल आवाज सुनाई देती है। विद्वान स्पष्ट करते हैं कि पर्दे के पीछे से सुनी गई आवाज पर शरीयत के आदेशों का आधार नहीं रखा जा सकता क्योंकि आवाज आवाज के समान हो सकती है। इमाम ज़ैलई की 'तबीन अल-हक़ा'इक़' और फिर 'फ़तावा

आलमगीरी' में है: [बक्से में अरबी उद्धरण और उर्दू अनुवाद:] "अगर किसी ने पर्दे के पीछे से सुना, तो उसके लिए गवाही देना जायज़ नहीं है क्योंकि वह कोई और हो सकता है।"

1. अल-हिदाया, अध्याय: गवाह क्या वहन कर सकता है, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 3/157 पृष्ठ 371 का 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

مشکل کی تسہیل، معضل کی تحصیل، صعب کی تذلیل، مجمل کی تفصیل سے ماہر ہوں۔ بحر سے صدف سے، صدف سے گوہر، بذر سے درخت، درخت سے ثمر نکالنے پر باذن اللہ تعالٰی قادر ہوں۔

[خانہ جات میں موجود عربی و اردو تحریر:] لا خلا الکون عن افضالھم وکثر اللہ فی بلادنا زمانہ ان فضلاء سے خالی نہیں اور اللہ تعالٰی ایسے لوگوں کو ہمارے علاقوں میں زیادہ کرے آمین آمین برحمتك یا ارحم الراحمین وصلی اللہ تعالٰی علی خاتم النبیین سیدنا محمد وآلہ وصحبہ اجمعین واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم وعلمہ اجل و مجدہ اتم وحکمہ احکم۔ (ت) الراحمین وصلی اللہ تعالی علی خاتم النبیین سیدنا محمد وآلہ وصحبہ اجمعین واللہ سبحانہ وتعالی اعلم وعلمہ اتم وحکمہ اعز شانہ احکم۔

مسئلہ ۱۷۱: از رامپور بوساطت مولوی بشیر احمد صاحب مدرس اول مدرسہ اہلسنت و جماعت بریلی ۴ ربیع الاول ۱۳۲۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ ۲۹ تاریخ کو کسی شہر میں چاند نظر نہ آئے اور دوسرے شہر میں وہی چاند ۳۰ کا نظر آیا اور وہاں کے لوگ ٹیلیفون یا ٹیلی گراف میں اطلاع دیں تو وہ خبر معتبر ہوگی یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: ہرگز معتبر نہیں ہوسکتی، اصلاً قابلِ لحاظ نہیں ہوسکتی، تار کی کمی سخت بے اعتباری میں فقیر کا فتوٰی مفصل طبع ہوچکا ہے، اس کی حالت ٹیلی فون سے بہت گری ہوئی ہے کہ اس میں مرسل کے ہاتھ کی علامت تک نہیں ہوتی اور اکثر بنگالی بابوؤں وغیرہ ہم کفار کو توسط ہوتا ہے ورنہ مجاہیل ہونا ضروری ہے، اور علماء تصریح فرماتے ہیں کہ خط بھی معتبر نہیں، ہدایہ میں ہے: الخط یشبہ الخط ۱ (تحریر ایک دوسرے کے مشابہ ہو سکتی ہے ۔ت) تو شرعاً تار پر عمل کیونکر ممکن ! یونہی ٹیلیفون کہ اس میں شاہد و مشہود نہیں ہوتا صرف آواز سنائی دیتی ہے اور

علماء تصریح فرماتے ہیں آڑ سے جو آواز مسموع ہو اُس پر احکامِ شرعیہ کی بناء نہیں ہو سکتی کہ آواز آواز سے مشابہ ہوتی ہے۔ تبیین الحقائق امام زیلعی پھر فتاویٰ عالمگیریہ میں ہے:

[خانہ جات میں موجود عربی و اردو تحریر:] لو سمع من وراء الحجاب لا یسعه ان یشهد لاحتمال ان یکون غیره اگر کسی نے پردہ کے پیچھے سے سنا تو اس کو گواہی دینا جائز نہیں کیونکہ وہ کوئی دوسرا ہو سکتا ہے کیونکہ

۱ الہدایہ فصل ما یحتملہ الشاہد مطبع یوسفی لکھنو ۳/ ۱۵۷ Page 371 of 836

Fatawa Razawiya Volume 10

[Boxed Text] Arabic: When a tone resembles another tone etc., and the form of exception mentioned does not apply in our discussion as is not hidden. And Allah Almighty knows best. Urdu: Voices can be similar to one another etc. and the form which has been declared an exception is not realized in our current discussion, as it is not hidden. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 173: Sent by Manzoor Ali Alwi Kakorvi What do the scholars of religion and muftis of the firm Shariah say about this matter: there is a place in the mountains where the moon cannot be seen without going to high peaks with great difficulty, and even there, often due to clouds and dust, the moon is not visible. In such a place, is it permissible for Muslims to break their fast and pray Eid prayers upon receiving information of the sighting of the Shawwal moon via telegram? Whether there is one telegram, two, or ten to twelve, is it permissible to rely on them in any case? If the news via telegram is not accepted, the month of Ramadan in the mountains (e.g., in Nainital) can never end at twenty-nine days, because there is an observation of ten to twelve years that the Shawwal moon can never be seen due to constant clouds and dust. Explain and you shall be rewarded.

The Answer: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Fast upon seeing it (the moon) and break your fast upon seeing it." And he says: "Indeed, Allah has made its duration dependent on sighting." Even if there are ten or twenty telegrams, they are absolutely not worthy of attention in religious matters according to Shariah, because their condition is worse than a letter. One recognizes the handwriting of an acquaintance, and the style of writing reveals identity, but there is none of this in a telegram. Furthermore, all our Imams in common books of the school like Hidaya, Durr-e-Mukhtar, Ashbah, Khairiyah, Uqud-ud-Durriyah, and Fatawa Alamgiri etc. have clarified that a letter is not reliable; rather, they clearly stated that even from a city (Misr), there is no reliance in these matters. How then can a telegram be reliable? Especially when the telegram operators (Babus), let alone their justice/uprightness, even their Islam is not known; in fact, most of them are Hindus etc. News coming from ten or twenty places from a non-believer or an unknown sinner will not make it shar'i-reliable, nor is reaching the limit of 'Tawatur' (mass-narration) conceivable here, which would require ten or twenty thousand...

1. Fatawa Hindiyya, Al-Bab ath-Thani fi Bayan Tahammul ash-Shahadah etc., Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/452

2. Sahih Bukhari, Bab Idha Ra'aytum al-Hilal fa-Somu, Qadeemi Kutub Khana Karachi, 1/256
3. Sunan ad-Daraqutni, Kitab as-Siyam No. 26, Nashr us-Sunnah Multan, 2/162

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (10)

[बॉक्स किया हुआ टेक्स्ट] अरबी: जब एक आवाज़ दूसरी आवाज़ के समान हो आदि, और जो अपवाद का रूप बताया गया है, वह हमारे इस विषय में सिद्ध नहीं होता, जैसा कि गुप्त नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। उर्दू: आवाज़ एक दूसरे के मुशाबह हो सकती है आदि और जो सूरत मुस्तस्ना (अपवाद) करार दी गई है, उसका हमारी इस बहस में तहक़्क़ुक़ (सिद्धि) नहीं है, जैसा कि मख़्फ़ी (गुप्त) नहीं। वल्लाहु तआला आलम। (त)

मसला 173: मुर्सला (प्रेषक) मंज़ूर अली अलवी काकोरवी क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन व मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस मसले में कि एक जगह पहाड़ में ऐसी है जहाँ बग़ैर बहुत दक़्क़त से ऊँची चोटियों पर गए चाँद नहीं देखा जा सकता है और जहाँ जाकर भी अक्सर ब-सबब अब्र-ओ-ग़ुबार के चाँद नहीं दिखाई देता है, ऐसी जगह में मुसलमानों को शव्वाल की रुयत-ए-हिलाल (चाँद दिखने) की इत्तला ब-ज़रिया तार (टेलीग्राम) के पाकर रोज़ा इफ़्तार कर देना और ईद की नमाज़ पढ़ना जाइज़ है या नहीं? तार अगर एक हो, दो हों, या दस-बारह हों, किसी सूरत में उन पर एतबार जाइज़ है या नहीं? अगर ख़बर ब-ज़रिया तार की न मानी जाए तो पहाड़ों में (मसलन नैनीताल में) कभी रमज़ान का महीना उनतीस को नहीं ख़त्म हो सकता, इसलिए कि दस-बारह बरस का मुशाहदा है कि हमेशा अब्र-ओ-ग़ुबार की वजह से शव्वाल का चाँद नहीं देखा जा सकता है। बैनू तूजरू (बयान करें सवाब पाएँ)।

अल-जवाब: रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: "चाँद देखकर रोज़ा रखो और चाँद देखकर इफ़्तार करो।" और फ़रमाते हैं: "बेशक अल्लाह तआला ने इसका मदार रुयत (देखने) पर रखा है।" तार अगरचे दस-बीस हों, अस्लन शरअन उमूर-ए-दीनिया में क़ाबिल-ए-इल्तिफ़ात (ध्यान देने योग्य) नहीं कि इसकी हालत ख़त से भी बदतर है। अपने शनासा (परिचित) का ख़त पहचाना जाता है, तर्ज़-ए-इबारत से पता चलता है, तार में यह कुछ भी नहीं। फिर हमारे तमाम आइम्मा ने आम कुतुब-ए-मज़हब में मिस्ल हिदाया व दुर्रे मुख़्तार व अशबाह व ख़ैरिया व उक़ूद-उद-दुर्रिया व फ़तावा आलमगीरी व ग़ैरहा में तसरीह फ़रमाई कि ख़त का एतबार नहीं बल्कि साफ़ फ़रमाया कि मिस्र (शहर) का भी इन मामलात में एतबार नहीं होता, फिर तार क्योंकर क़ाबिल-ए-एतबार हो सकता है, ख़ुसूसन तार बाबुओं की अदालत दर-कनार इस्लाम का भी इल्म नहीं, बल्कि

अक्सर हुनूद (हिंदू) वग़ैरह होते हैं। दस-बीस जगह से आना काफ़िर या फ़ासिक-ए-मजहूल की ख़बर को मोतबर-ए-शरई न कर देगा, न यहाँ हद-ए-तवातुर पहुँचना माक़ूल कि दस-बीस हज़ार...

1. फ़तावा हिंदिया, अल-बाब अस-सानी फ़ी बयान तहम्मुल अश-शहादा आदि, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 3/452
2. सही बुख़ारी, बाब इज़ा रायतुमुल हिलाल फ़-सोमू, कदीमी कुतुब ख़ाना कराची, 1/256
3. सुनन दारकुतनी, किताब अस-सियाम नंबर 26, नश्रुस सुन्ना मुल्तान, 2/162

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

[باکس شدہ عبارت] اذا النغمۃ تشبہ النغمۃ الخ وصورۃ الثنیا التی ذکرت لا تحقق لھا فیما نحن فیہ کما لایخفی واللہ تعالی اعلم۔ آواز ایک دوسرے کے مشابہ ہو سکتی ہے الخ اور جو صورت مستثنی قرار دی گئی ہے اس کا ہماری اس بحث میں تحقق نہیں ہے، جیسا کہ مخفی نہیں۔ واللہ تعالی اعلم (ت)

مسئلہ ۱۷۳: مرسلہ منظور علی علوی کا کوروی کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک جگہ پہاڑ میں ایسی ہے جہاں بغیر بہت دقت سے اونچی چوٹیوں پر گئے چاند نہیں دیکھا جاسکتا ہے اور جہاں جاکر بھی اکثر بسبب ابر غبار کے چاند نہیں دکھائی دیتا ہے ایسی جگہ میں مسلمانوں کو شوال کی رؤیتِ ہلال کی اطلاع بذریعہ تار کے پاکے روزہ افطار کردینا اور عید کی نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟ تار اگر ایک ہو، دو ہوں، یا دس بارہ ہوں ، کسی صورت میں ان پر اعتبار جائز ہے یا نہیں؟ اگر خبر بذریعہ تار کی نہ مانی جائے تو پہاڑوں میں (مثلاً نینی تال میں) کبھی رمضان کا مہینہ انتیس کو نہیں ختم ہو سکتا ہے ، اس لیے کہ دس بارہ برس کا مشاہدہ ہے کہ ہمیشہ ابر غبار کی وجہ سے شوال کا چاند نہیں دیکھا جاسکتا ہے۔ بینوا توجروا

الجواب: رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: صوموا لرؤیتہ وافطر والرؤیتہ (چاند دیکھ کر روزہ رکھو اور چاند دیکھ کر افطار کرو۔ اور فرماتے ہیں: ان اللہ امدہ لرؤیتہ (اللہ تعالٰی نے اس کا مدار رؤیت پر رکھا ہے۔ تار اگرچہ دس بیس ہوں اصلاً شرعاً امور دینیہ میں قابل التفات نہیں کہ اس کی حالت خط سے بھی بدتر ہے اپنے شناسا کا خط پہچانا جاتا ہے ، طرز عبارت سے پتا چلتا ہے ، تار میں یہ کچھ بھی نہیں ، پھر ہمارے تمام ائمہ نے عام کتب مذہب میں مثل ہدایہ و در مختار و اشباہ وخیر یہ وعقود الدریہ وفتاوٰی عالمگیری و غیرہا میں تصریح فرمائی کہ خط کا اعتبار نہیں

بلکہ صاف فرمایا کہ مصر کا بھی ان معاملات میں اعتبار نہیں ہوتا، پھر تار کیونکر قابل اعتبار ہو سکتا ہے، خصوصاً تار بابوؤں کی عدالت درکنار اسلام کا بھی علم نہیں، بلکہ اکثر ہنود و غیرہ ہوتے ہیں دس بیس جگہ سے آنا کافر یا فاسق مجہول کی خبر کو معتبر شرعی نہ کردے گا، نہ یہاں حد تواتر پہنچنا معقول کہ دس بیس ہزار

1 فتاوٰی ہندیہ الباب الثانی فی بیان تحمل الشہادۃ الخ نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۴۵۲ 2 صحیح بخاری، باب اذا رأیتم الھلال فصوموا قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶ 3 سنن دار قطنی، کتاب الصیام نمبر ۲۶، نشر السنۃ ملتان، ۲/ ۱۶۲

Even if telegrams come from different places, we will receive them only from one telegraph office, and even if there are two or four, it does not constitute 'Tawatur' (mass reporting). Look at your worldly affairs: if there is a claim for two rupees and a witness sends their testimony via telegram, will it be accepted in courts? Then how can celebrating Eid become permissible based on it! As for the situation where the moon of the 29th might not be visible there, searching and observing five crescents carefully from Sha'ban to Dhu al-Hijjah is obligatory (wajib) for Muslims in every place. If the difficulty of going to high peaks is only due to discomfort or laziness, then this excuse will never be accepted, and going up to look will be obligatory. If no one goes, everyone will be sinful, and if there is truly unbearable hardship, then it is forgiven. (Note: 'Ah')

| If it is obscured from you, then complete the count of thirty-1 | If the moon remains hidden from you, then complete the count of thirty. |

Muslims are concerned with the command, what does it matter if it is 29 or 30! And if there is a thought that the joy of a 29-day Ramadan is greater, why would that be? This is a purely meaningless thought. If you reflect, the deficit will be compensated for in Sha'ban, as it too will sometimes not be 29 days. Then for Ramadan, which is 30 days, the moon will be visible there on the 29th. If arrangements are made by sending two or four reliable Muslims to nearby settlements on the 29th, they can observe the sighting even from beyond the mountains. And Allah the Almighty knows best.

Problem 171: From Gondal Kathiawar, sent by Mahmood Mian bin Qazi Abdul Ghani Sahib, 8 Dhu al-Hijjah 1332 AH: In this state, due to the availability of telephones, if two Muslims are face-to-face and one Muslim informs the other via telephone about the moon sighting for Ramadan or Eid, stating, "I have seen the moon," and the recipient is also a Muslim and recognizes the voice, knowing that such-and-such person is giving this news, should his word be acted upon after recognizing his voice? Or if both the caller and the receiver are Muslim employees, and one informed the other of the moon sighting via telephone, and he in turn told someone else, "I was told by such-and-such from such-and-such place that the moon was sighted there," should such news be trusted or not?

The Answer: If the person calling on the telephone is not visible to the listener, it carries no weight in Sharia matters, even if the voice is recognized, as voices can be

similar. If he gives any testimony, it will not be credible, and if he makes an admission regarding something...

Note: Original text has a blank space here. 12.

1 Sunan al-Daraqutni, Kitab al-Siyam, Hadith 29, Nashr al-Sunnah Multan, 1/163 Page 373 of 836

जगहों से तार आएँ तो हमें डाकघर से एक ही तार मिलेगा, और अगर कहीं दो-चार भी हों तो यह 'तवातुर' (निरंतरता) नहीं है। अपने सांसारिक मामलों को देखें: यदि दो रुपये का दावा हो और गवाह तार के माध्यम से अपनी गवाही भेजे, तो क्या वह अदालतों में स्वीकार की जाएगी? फिर इसके आधार पर ईद मनाना कैसे जायज़ हो जाएगा! रही बात इस स्थिति की कि वहाँ 29 का चाँद नहीं होगा, शाबान से ज़ुल-हिज्जा तक पाँच चाँदों को गौर से देखना और खोजना हर जगह के मुसलमानों पर वाजिब है। ऊँची चोटियों पर जाने की कठिनाई अगर केवल तकलीफ या आलस के कारण है, तो यह बहाना हरगिज़ नहीं सुना जाएगा, और ऊपर जाकर देखना वाजिब होगा। अगर कोई नहीं जाएगा तो सब गुनहगार होंगे, और अगर वास्तव में असहनीय कष्ट है तो माफ़ है। (अ: मूल में यहाँ रिक्त स्थान है)

| फ़ाइन ग़ुम्मा अलैकुम फ़ा-अकमिलु अल-इद्दता सलासीन-1 | चाँद तुम पर ओझल रहे तो तीस की गिनती पूरी करो। |

मुसलमानों का वास्ता हुक्म से है, 29 या 30 से क्या मतलब! और अगर यह विचार है कि 29 के रमज़ान की खुशी ज़्यादा होती है, तो यह कैसे होगा? यह महज़ बेमानी ख्याल है। और गौर करें तो उसकी कमी इधर शाबान में निकल जाएगी कि वह भी कभी 29 का नहीं होगा। तो रमज़ान का 30 का चाँद वहाँ 29 को नज़र आएगा। अगर इंतज़ाम करें तो 29 तारीख को पास की बस्तियों में दो-चार विश्वसनीय मुसलमानों को भेजकर पहाड़ के बाहर से भी दर्शन (रौयत) कर सकते हैं। वल्लाह तआला आलम (और अल्लाह तआला बेहतर जानता है)।

मसला 171: गोंडल काठियावाड़ से, प्रेषक महमूद मियाँ इब्ने काज़ी अब्दुल ग़नी साहब, 8 ज़ुल-हिज्जा 1332 हिजरी: इस रियासत में टेलीफोन होने की वजह से, क्या टेलीफोन के ज़रिए रमज़ान या ईद के चाँद के दर्शन पर अमल किया जाएगा अगर दोनों मुसलमान आमने-सामने हों और एक जगह का मुसलमान दूसरे को खबर दे कि "मैंने चाँद देखा है" और दूसरी जगह वाला भी मुसलमान हो और उसकी आवाज़ पहचानता हो कि फलाँ शख्स यह खबर दे रहा है? क्या उसकी आवाज़ पहचान कर उसके कहने पर अमल किया जाएगा या नहीं? या टेलीफोन देने वाला और लेने वाला दोनों मुलाज़िम मुसलमान हैं, एक ने दूसरे को टेलीफोन के ज़रिए चाँद के दर्शन की खबर दी, और उसने दूसरे से

कहा कि मुझे फलाँ जगह से फलाँ ने कहा कि वहाँ चाँद के दर्शन हुए, तो ऐसी खबर पर भरोसा करना चाहिए या नहीं?

जवाब: टेलीफोन करने वाला अगर सुनने वाले की नज़रों के सामने न हो तो शरीअत के मामलों में उसका कोई ऐतबार नहीं है, चाहे आवाज़ पहचान ली जाए क्योंकि आवाज़ें एक जैसी हो सकती हैं। अगर वह कोई गवाही दे तो विश्वसनीय नहीं होगी, और अगर किसी बात का इक़रार करे...

अ: मूल में यहाँ बयाज़ (खाली जगह) है। 12

1 सुनन दारकुतनी, किताबुस-सियाम, नंबर 29, नश्रुस-सुन्ना मुल्तान, 1/163 पेज 373 का 836

جگہ سے تار آئیں ہم کو تو ایک ہی تار گھر سے ملیں گے اور کہیں دو چار بھی ہوئے تو یہ تواتر نہیں، اپنے دنیوی معاملات کو دیکھیے دو روپے کا دعویٰ ہو اور گواہ میں دفعہ تار پر اپنی گواہی بھیجے کیا کچہریوں میں قبول ہو جائیگی، پھر عید کر لینا کیسے حلال ہو جائے گا! رہا یہ کہ اس صورت میں کہ انتیس کا چاند ہی وہاں نہ ہوگا، شعبان سے ذی الحجہ تک پانچ ہلالوں کا بغور دیکھنا تلاش کرنا ہر جگہ کے مسلمانوں پر واجب ہے اونچی چوٹیوں پر جانے کی دقت اگر صرف بوجہ تکلیف یا کاہلی ہو تو یہ عذر ہر گز نہ سنا جائے گا، اور اوپر جاکر دیکھنا واجب ہوگا۔ اگر کوئی نہ جائے گا سب گنہگار رہیں گے اور اگر واقعی ناقابل برداشت تکلیف ہے تو معاف ہے۔ عہ

| فان غم علیکم فاکملوا العدۃ ثلثین-1 | چاند تم پر پوشیدہ رہے تو تیس کی گنتی پوری کرو۔ |

مسلمانوں کو حکم سے غرض ہے ۲۹ ، ۳۰ سے کیا کام! اور اگر یہ خیال ہے کہ ۲۹ کے رمضان کی خوشی زیادہ ہوتی ہے، یہ کیونکر ہوگی، تو یہ محض بے معنی خیال ہے، اور غور کریں تو اس کی کسر ادھر شعبان میں نکل جائیگی کہ وہ بھی کبھی ۲۹ کا نہ ہوگا، تو رمضان کہ ۳۰ کا چاند وہاں ۲۹ کو نظر آئے گا، اہتمام کریں تو ۲۹ تاریخ نزدیک کی آبادیوں میں دو چار معتبر مسلمان بھیج کر پہاڑ سے باہر بھی رؤیت کر سکتے ہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۷۱: از گوندل کاٹھیاواڑ مرسلہ محمود میاں ابن قاضی عبدالغنی صاحب ۸ ذی الحجہ ۱۳۳۲ھ اس ریاست میں ٹیلیفون ہونے کی وجہ سے بذریعہ ٹیلیفون رؤیت ہلال رمضان یا عید روبرو آمنے سامنے دونوں مسلمان ہوں اور ایک جگہ کا مسلمان دوسرے کو خبر دے کہ میں نے چاند دیکھا اور دوسری جگہ والا بھی مسلمان ہو اور اس کی آواز پہچانتا ہو کہ فلاں شخص یہ خبر

دے رہا ہے تو اس کی آواز پہچان کر ان کے قول پر عمل کیا جائیگا یا نہیں؟ یا ٹیلیفون دینے والا اور لینے دونوں ملازم مسلمان ہیں، ایک نے دوسرے کو بذریعہ ٹیلیفون خبر دی رؤیت ہلال کی، اس نے دوسرے سے کہا فلاں جگہ سے مجھ کو فلاں نے کہا کہ وہاں پر رؤیت ہلال ہوئی تو ایسی خبر پر اعتماد چاہئے یا نہیں؟

الجواب: ٹیلی فون دینے والا اگر سننے والے کے پیش نظر نہ ہو تو امور شرعیہ میں اس کا کچھ اعتبار نہیں اگر چہ آواز پہچانی جائے کہ آواز مشابہ آواز ہوتی ہے، اگر وہ کوئی شہادت دے معتبر نہ ہوگی، اور اگر کسی بات کا اقرار کرے

عہ : اصل میں یہاں بیاض ہے ۱۲

1 سنن دار قطنی، کتاب الصیام نمبر ۲۹، نشر السنہ ملتان، ۱ / ۱۶۳ Page 373 of 836

The listener is not permitted to testify to it. However, if they are face-to-face, as in seeing each other eye-to-eye, and the telephone is used merely for ease of sound transmission because it was difficult for the sound to reach from such a distance, then in this case, their word would be valid to the extent it is legally acceptable in Sharia. For example, if they testify to their own sighting [of the moon], it will be accepted if they are a reliable witness. But merely saying that a sighting occurred in such-and-such place, even if reported immediately upon arrival, is still not credible as it is mere narration and not testimony; and [likewise] saying that someone told me it happened in such-and-such place, and even more futile is a narration of a narration. It is stated in 'Tabayin al-Haqa'iq' and then in 'Fatawa Alamgiri':

Arabic Text	**Urdu Translation**
And if he heard from behind a veil, it is not permissible for him to testify because of the possibility that it is someone else, as one tone/voice resembles another tone/voice. Except if the person inside was alone, and the witness entered and knew that there was no one else there, then sat at the entrance, and there was no other entrance, and he heard the admission of the one inside but did not see him. Because [certain] knowledge is attained by this. And it is appropriate for the judge, if he (the witness) interprets it for him, not to accept it.[1]	If someone heard from behind a veil, the listener cannot testify; it is possible that it is someone else, because a voice can resemble another voice. However, in the case where the person entering is alone and the witness knows and has knowledge that there is no one else besides him, then that witness sits on the path while there is no other path besides this one, and he hears the admission of the one entering and does not see him (then the testimony is acceptable) because now he has certainty. And if the witness interprets the words of the person behind the veil himself, it is appropriate for the judge not to accept that interpretation. (T)

It is stated in 'Dhakhirah' and then in 'Hindiya':

Arabic Text	**Urdu Translation**
Faqih Abu al-Layth used to say: If a woman makes an admission from behind a veil, and two witnesses testify before him that she is so-and-so, it is not permissible for the one	Faqih Abu Layth used to say that when a woman made an admission from behind a veil and two men testified that she is such-and-such woman,

Arabic Text	Urdu Translation
who heard her admission to testify to her admission unless he saw her person, i.e., at the time she made the admission, then it is permissible for him to...	then it is not permissible for the one who heard the admission to testify to her admission unless he has seen that lady, i.e.

[1] Fatawa Hindiyya, Second Chapter on bearing witness, etc., Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/452

सुनने वाले को इस पर गवाही देने की अनुमति नहीं है। हाँ, यदि वे आमने-सामने हों, जिसे आमने-सामने होना कहा जाता है, अर्थात उसकी दोनों आँखें उसकी दोनों आँखों के सामने हों, एक-दूसरे को देख रहे हों, और टेलीफोन का उपयोग केवल ध्वनि संचरण की सुगमता के लिए हो क्योंकि इतनी दूर से आवाज़ पहुँचना कठिन था, तो इस स्थिति में उसकी बात जिस सीमा तक शरीयत में विश्वसनीय होती है, अब भी विश्वसनीय होगी। उदाहरण के लिए, यदि वह स्वयं अपने देखने (चाँद देखने) की गवाही देता है, तो उसे स्वीकार किया जाएगा यदि वह विश्वसनीय गवाह है। लेकिन केवल यह कहना कि अमुक स्थान पर चाँद देखा गया, चाहे वह आने के तुरंत बाद ही क्यों न गवाही दे, फिर भी विश्वसनीय नहीं है क्योंकि यह केवल एक वर्णन है, गवाही नहीं; और यह कहना कि अमुक व्यक्ति ने मुझसे कहा कि अमुक स्थान पर ऐसा हुआ, और इससे भी अधिक व्यर्थ यह है कि यह वर्णन का वर्णन (सुनी-सुनाई बात) है। 'तबयीन अल-हक़ा'इक' और फिर 'फ़तावा आलमगीरी' में है:

अरबी पाठ

यदि किसी ने पर्दे के पीछे से सुना, तो सुनने वाला गवाही नहीं दे सकता, क्योंकि संभव है कि वह कोई और हो, क्योंकि एक आवाज़ दूसरी आवाज़ के समान हो सकती है। सिवाय उस स्थिति के जब अंदर जाने वाला अकेला हो और गवाह को पता हो और वह जानता हो कि उसके अलावा कोई दूसरा नहीं है, फिर वह गवाह उस रास्ते पर बैठ जाता है जबकि उस रास्ते के अलावा कोई और रास्ता भी नहीं है, और वह अंदर जाने वाले का इक़रार (स्वीकृति) सुनता है और उसे देखता नहीं है। क्योंकि इससे [निश्चित] ज्ञान प्राप्त होता है। और काज़ी के लिए उचित है कि यदि गवाह उसके लिए व्याख्या करे, तो वह उसे स्वीकार न करे। [1]

उर्दू अनुवाद

अगर किसी ने पर्दे के पीछे से सुना तो सुनने वाला गवाही नहीं दे सकता, मुमकिन है कोई और शख़्स हो, क्योंकि आवाज़ आवाज़ से मुशाबा हो सकती है मगर इस सूरत में जब दाखिल होने वाला अकेला हो और शाहिद जानता और इल्म रखता हो कि इसके इलावा दूसरा नहीं, फिर वो गवाह रास्ते पर बैठता है जबकि इस रास्ते के इलावा कोई और रास्ता भी नहीं, और दाखिल होने वाले का इक़रार सुनता है और इसे देखता नहीं (तवाब गवाही क़बूल है) क्योंकि अब इसे यक़ीन हासिल है, और अगर गवाह पर्दे वाले की बात की अज़ ख़ुद तफ़्सीर करे तो क़ाज़ी के लिए मुनासिब है कि वो तफ़्सीर क़बूल न करे। (त)

'ज़ख़ीरा' और फिर 'हिन्दिया' में है:

अरबी पाठ

फ़क़ीह अबू लैथ फ़रमाया करते थे: जब पर्दे के पीछे से किसी महिला ने इक़रार किया और दो व्यक्तियों ने उसके सामने गवाही दी कि यह अमुक महिला है, तो इक़रार सुनने वाले के लिए यह जायज़ नहीं है कि वह उसके इक़रार पर गवाही दे, सिवाय उस स्थिति के जब उसने उस महिला के व्यक्ति को देखा हो, यानी इक़रार करते समय, तब उसके लिए जायज़ है कि...

उर्दू अनुवाद

फ़क़ीह अबुलैथ फ़रमाया करते थे कि जब पर्दे के पीछे औरत ने इक़रार किया और दो आदमियों ने गवाही दी कि ये फ़लां औरत है तो इक़रार सुनने वाले के लिए जाइज़ नहीं कि वो इसके इक़रार पर गवाही दे मगर इस सूरत में जब इसने इस ख़ातून को देखा हो यानी

[1] फ़तावा हिन्दिया, दूसरा अध्याय गवाही वहन करने के वर्णन में, आदि। नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 3/452

سننے والے کو اس پر گواہی دینے کی اجازت نہیں، ہاں اگر وہ اس کے پیش نظر ہے جسے دو بدو آمنے سامنے سے تعبیر کرتے ہیں، یعنی اس کی دونوں آنکھیں اس کی دونوں آنکھوں کے سامنے ہوں، ایک دوسرے کو دیکھ رہا ہو، اور ٹیلی فون کا واسطہ صرف بوجہ آسانی آواز رسانی کے لیے ہو کہ اتنی دور سے آواز پہنچنا دشوار تھا، تو اس صورت میں اس کی بات جس حد تک شرعاً معتبر ہوتی اب بھی معتبر ہوگی، مثلاً خود اپنی رؤیت کی شہادت ادا کرے تو مانی جائے گی اگر وہ مقبول الشہادۃ ہے، لیکن اتنی بات کہ فلاں جگہ رؤیت ہوئی اگر چہ متصل آ کر ادا کرے جب بھی معتبر نہیں کہ یہ محض حکایت ہے نہ کہ شہادت، اور یہ کہ فلاں نے مجھ سے کہا کہ فلاں جگہ ہوئی، اور زیادہ مہمل کہ حکایت در حکایت ہے۔ تبیین الحقائق پھر فتاوی عالمگیری میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
ولو سمع من وراء الحجاب لایسعہ ان یشھد لاحتمال ان یکون غیرہ اذ النغمۃ تشبہ النغمۃ الا اذا کان فی الداخل وحدہ ودخل وعلم الشاھد انہ لیس فیہ غیرہ ثم جلس علی المسلك ولیس لہ مسلك غیرہ فسمع اقرار الداخل ولا یراہ لانہ یحصل بہ العلم وینبغی للقاضی اذا فسرلہ ان لایقبلہ۔ 1	اگر کسی نے پردے کے پیچھے سے سنا تو سننے والا گواہی نہیں دے سکتا، ممکن ہے کوئی اور شخص ہو، کیونکہ آواز آواز سے مشابہ ہو سکتی ہے مگر اس صورت میں جب داخل ہونے والا اکیلا ہو اور شاہد جانتا اور علم رکھتا ہو کہ اس کے علاوہ دوسرا نہیں، پھر وہ گواہ راستہ پر بیٹھتا ہے جبکہ اس راستہ کے علاوہ کوئی اور راستہ بھی نہیں، اور داخل ہونے والے کا اقرار سنتا ہے اور اسے دیکھتا نہیں (تواب گواہی قبول ہے) کیونکہ اب اسے یقین حاصل ہے، اور اگر گواہ پردے والے کی

عربی عبارت	اردو ترجمہ
	بات کی از خود تفسیر کرے تو قاضی کے لیے مناسب ہے کہ وہ تفسیر قبول نہ کرے۔ (ت)

ذخیرہ پھر ہندیہ میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
كان الفقيه ابو الليث يقول اذا اقرت المرأة من وراء الحجاب وشهد عنده اثنان انها فلانة لا يجوز لمن سمع اقرارها ان يشهد على اقرارها الا اذا رأى شخصها يعنى حال ما اقرت فج يحوزله ان	فقیہ ابولیث فرمایا کرتے تھے کہ جب پردہ کے پیچھے عورت نے اقرار کیا اور دو آدمیوں نے گواہی دی کہ یہ فلاں عورت ہے تو اقرار سننے والے کے لیے جائز نہیں کہ وہ اس کے اقرار پر گواہی دے مگر اس صورت میں جب اس نے اس خاتون کو دیکھا ہو یعنی

1 فتاوی ہندیہ الباب الثانی فی بیان تحمل الشہادۃ الخ نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۴۵۲

Fatawa Ridawiyyah Volume 10

| Witnesses a confession; the condition is seeing the person, not seeing the face.[1] | While she is making a confession, it is now permissible for a person to witness her confession; the remaining condition is to identify the individual, not necessarily to see the face. (T) |

In Durr al-Mukhtar, it is stated:

| They witnessed that it was witnessed before the judge of Egypt that such-and-such witnesses saw the crescent moon on such-and-such a night and the judge ruled based on it, and the conditions of the claim were found to be met. It is permissible for this judge to rule based on the testimony of these two because the judge's ruling is a proof, and they testified to it, not if they testified to the sighting of others, as that would be a narration. Its full investigation is in our Fatawa. And Allah Almighty knows best. | Witnesses testified that before the judge of Egypt, such-and-such witnesses testified to seeing the crescent moon on such-and-such a night, and the judge gave a ruling on it and the conditions of the claim were found to be met. So it is permissible for this judge to rule based on the testimony of two witnesses because the judge's ruling is a proof, and the witnesses testified to that ruling itself. Yes, in this case, a ruling cannot be given when they have testified that so-and-so saw the moon because this is a narration (hikayat). Its full investigation is in our Fatawa. And Allah Almighty knows best. (T) |

Issue 175: From the office of Sahifa Hyderabad Deccan, published 16 Ramadan 1333 AH Telegraph and telephone are modern inventions, meaning these things were not invented in the time of previous jurists. Therefore, ancient books of jurisprudence are devoid of mention whether news coming through telegraph and telephone is acceptable or not. Regarding this issue, a general consensus and agreement among scholars is needed. So, please explain whether news coming via telegraph and telephone is acceptable according to the rulings of Sharia or not? And based on such news, can Sharia rulings such as the start and end of fasting and the determination of the day of Hajj, etc., be settled? Explain, and you will be rewarded.

The Answer: Telegraph is purely unreliable, and likewise the telephone, if the informer is not visible. Detail will be known from the sender's (the servant's) Fatawa. And Allah Almighty knows best.

[1] Fatawa Hindiyyah, Second Chapter on the Explanation of Bearing Testimony, etc., Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/453. [2] Durr al-Mukhtar, Book of Fasting, Matba' Mujtabai Delhi, 1/9.

फ़तावा रज़विया खंड 10

| वह स्वीकारोक्ति पर गवाह बनता है; शर्त व्यक्ति को देखना है न कि उसके चेहरे को।[1] | स्वीकारोक्ति (इकरार) करते समय अब उसके लिए जायज़ है कि उसके इकरार पर गवाह बने, बाकी शर्त व्यक्ति की पहचान करना है न कि चेहरे को देखना। (त) |

दुर्रे मुख्तार में है:

| उन्होंने गवाही दी कि मिस्र के काज़ी के पास इस तरह गवाही दी गई कि अमुक व्यक्ति ने अमुक रात को चाँद देखा और काज़ी ने उस पर फैसला सुनाया और दावे की शर्तें पूरी पाई गईं। तो इस काज़ी के लिए उन दोनों की गवाही पर फैसला देना जायज़ है क्योंकि काज़ी का फैसला एक प्रमाण है और उन्होंने उस पर गवाही दी है, न कि अगर उन्होंने दूसरों के देखने की गवाही दी हो क्योंकि वह एक विवरण (हिकायत) है। इसकी पूरी जांच हमारे फ़तावा में है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। | गवाहों ने गवाही दी कि मिस्र के काज़ी के पास फलां रात चाँद देखने पर दो गवाहों ने गवाही दी है और काज़ी ने उस पर फैसला दिया और दावे की शर्तें पाई गईं तो इस काज़ी के लिए दो गवाहों की गवाही पर फैसला देना जायज़ है क्योंकि क़ज़ा-ए-काज़ी (काज़ी का फ़ैसला) हुज्जत है और गवाहों ने इस फैसले पर ही गवाही दी है, हाँ इस सूरत में फैसला नहीं दे सकता जब उन्होंने यह गवाही दी हो कि फलां ने चाँद देखा है क्योंकि यह एक हिकायत है। इसकी तमाम तहक़ीक़ (पूरी जांच) हमारे फ़तावा में है, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त) |

मसला 175: दफ्तर सहीफ़ा हैदराबाद दक्कन से, प्रकाशित 16 रमज़ान 1333 हिजरी तार और टेलीफोन वर्तमान युग के आविष्कार हैं यानी पूर्ववर्ती फकीहों (धर्मशास्त्रियों) के समय में ये चीजें ईजाद नहीं हुई थीं, इसलिए फिकह की पुरानी किताबें इस ज़िक्र से खाली हैं कि तार और टेलीफोन के माध्यम से जो खबरें आती हैं वे स्वीकार्य हैं या नहीं। इस मसले के संबंध में उलेमा के बीच एक सामान्य आम सहमति और समझौते की आवश्यकता है, इसलिए कृपया बताएं कि तार और टेलीफोन के माध्यम से जो खबर आए वह शरीयत के नियमों के अनुसार स्वीकार्य है या नहीं? और ऐसी खबर के आधार पर शरीयत के आदेश जैसे रोज़ा रखना या छोड़ना और हज का दिन तय करना आदि का निपटारा हो सकता है या नहीं? बयान करें, आप पुण्य के पात्र होंगे।

उत्तर: तार पूरी तरह से अविश्वसनीय है, और इसी तरह टेलीफोन भी, अगर खबर देने वाला सामने न हो। विवरण फकीर (प्रस्तुतकर्ता) के भेजे गए फ़तावा से ज्ञात होगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[1] फ़तावा हिंदिया, दूसरा अध्याय गवाही वहन करने के वर्णन में, आदि, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/453 [2] दुर्रे मुख्तार, रोज़ा की किताब, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/9

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

| یشھد علی اقرارھا، شرط رؤیة شخصھا لارؤیة وجھھا۔[1] | اقرار کرتے وقت تو اب اس کے لیے جائز ہے کہ اس کے اقرار پر گواہ بنے باقی شرط شخصیت کو دیکھنا ہے نہ کہ چہرے کو۔ (ت) |

در مختار میں ہے:

| شھدوا انہ شھد عند قاضی مصر کذا شاھد ان برؤیة الھلال فی لیلة کذاوقضی القاضی بہ ووجد استجماع شرائط الدعوی جاز لھذا القاضی ان یحکم بشھادتھما لان قضاء القاضی حجة وقد شھد وابہ لا لو شھد وابرؤیة غیرھم لانہ حکایة اہ وتمامہ تحقیقہ فی فتاؤنا۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ | گواہوں نے گواہی دی کہ قاضی مصر کے پاس فلاں رات چاند دیکھنے پر دو گواہوں نے گواہی دی ہے اور قاضی نے اس پر فیصلہ دیا اور شرائطِ دعوٰی پائی گئیں تو اس قاضی کے لیے دو گواہوں کی شہادت پر فیصلہ دینا جائز ہے کیونکہ قضاءِ قاضی حجت ہے اور گواہوں نے اس قضاء پر ہی گواہی دی ہے، ہاں اس صورت میں فیصلہ نہیں دے سکتا جب انہوں نے یہ گواہی دی ہو کہ فلاں نے چاند دیکھا ہے کیونکہ یہ حکایت ہے اھ اس کی تمام تحقیق ہمارے فتاوٰی میں ہے، واللہ تعالٰی اعلم (ت) |

مسئلہ ۱۷۵: از دفتر صحیفہ حیدر آباد دکن مطبوعہ ۱۶ رمضان ۱۳۳۳ھ تار اور ٹیلیفون زمانہ حال کی ایجاد ہے یعنی فقہائے ما سبق کے زمانہ میں یہ چیزیں ایجاد نہیں ہوئی تھیں اس لئے قدیم کتب فقہ اس تذکرے سے خالی ہیں کہ تار اور ٹیلیفون کے ذریعہ سے جو خبریں آتی ہیں وہ قابلِ تقسیم ہیں یا نہیں، اس مسئلہ کی نسبت علماء کے ایک عام اجماع و اتفاق کی ضرورت ہے، پس براہِ کرم بیان فرمایا جائے کہ تار اور ٹیلی فون کے ذریعہ سے جو خبر آئے وہ از روئے احکامِ شریعت قابلِ تسلیم ہے یا نہیں؟ اور ایسی خبر کی بناء پر احکام شرعیہ مثلا ترک و اختیارِ صوم اور تقرریومِ حج

وغیرہ کا تصفیہ ہو سکتا ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا الجواب: تار محض بے اعتبار، یونہی ٹیلی فون ، اگر خبر دہندہ پیش نظر نہ ہو۔ تفصیل فقیر کے فتاوی مرسلہ سے معلوم ہوگی۔ واللہ تعالیٰ اعلم

1 فتاویٰ ہندیہ الباب الثانی فی بیان تحمل الشہادۃ الخ نورانی کتب خانہ پشاور ۳/ ۴۵۳ 2 در مختار کتاب الصیام مطبع مجتبائی دہلی ۹/۱

Fatawa Razawiya Volume 10

Problem 176 to 178: Asked by Abdul Aziz, leather merchant, Tihari town, Tangir neighborhood, Gaya district. 16 Dhu al-Qi'dah 1333 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say regarding the following detailed problems? Explain with reference to books of jurisprudence and fatwas so that you may be rewarded.

Question 1: The performance of Eid prayer depends on the sighting of the crescent moon. If news of the sighting reaches a village where the moon was not seen due to clouds and wind, and it comes through a reliable person who himself received the news from another city via telegraph, and that person has come after performing Eid prayer at his own place - is it permissible to break the fast and offer prayer based on this reliable person's statement or not? And after the Eid prayer was performed, some people who were traveling and were in Calcutta etc. on Eid day came here and stated that they and a large congregation saw the moon with their own eyes and offered Eid prayer on Friday. In such a case, was it permissible to break the fast and offer Eid prayer on Friday or not? Also, in the surrounding areas, the moon sighting was confirmed and Eid was on Friday, for which there is ample testimony.

Question 2: Some individuals in a village, based on the statement of a reliable person who received news via telegraph from another city, in a place where the moon was not seen due to clouds and wind - some of those individuals broke their fast and offered Eid prayer. While other individuals from the same place, who had a doubt whether Ramadan was 30 days long while according to their calculation it was the 29th of Ramadan, also received the news before the end of the prayer time. However, not trusting the word, news, and telegraph of the reliable person, they neither broke the fast nor offered Eid prayer on Friday. Instead, they broke the fast and offered Eid prayer on Saturday. Was their fast on Friday valid or invalid?

Question 3: Is it permissible to offer Eid prayer on two separate days in the same mosque?

The Answer:

Answer to the first question: Regarding the crescent moon, letters and telegrams are completely unreliable. Regarding the Eid crescent, even the testimony of a single just and reliable person's own sighting is not acceptable unless there is a complete quorum of testimony (Nisab-e-Shahadat). It is stated in Durr-e-Mukhtar:

"The condition for [breaking the fast of] al-Fitr, given an obstruction (like clouds) and despite the justice (of the witness), is the quorum of testimony and the use of the word 'Ashhadu' (I testify)." [1]

In Eid al-Fitr, in the presence of clouds and even if the witness is just, the quorum of testimony and the specific word of testimony are necessary. (T)

So, the mere news of one reliable person, and that too not of his own sighting but someone else's, and that too known through a telegraph, [is invalid] for four reasons:

---

[1] Durr-e-Mukhtar, Book of Fasting, Mujtabai Press Delhi, 1/148.

फतावा रज़विया जिल्द दस

मसला 176 से 178: मसूला अब्दुल अज़ीज़, चमड़ा व्यापारी, कसबा ठारी, मोहल्ला तांगीर, ज़िला गया। 16 ज़िल क़ादा 1333 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन दर्ज-ए-ज़ैल तफ़्सीली मसाइल में, फ़िक़्ह और फ़तावा की किताबों की रोशनी में जवाब दें, अल्लाह आपको इसका अज्र दे।

पहला सवाल: ईद की नमाज़ जिसकी अदायगी चाँद देखने (रौयत-ए-हिलाल) पर मौक़ूफ़ है, अगर इसकी रौयत की ख़बर किसी ऐसी बस्ती में मिले जहाँ बादलों और हवा की वजह से चाँद न देखा गया हो, और ये ख़बर किसी मोतबर (भरोसेमंद) शख़्स की ज़बानी हो जिसे खुद ये ख़बर किसी दूसरे शहर से तार (टेलीग्राम) के ज़रिए मिली हो और वो शख़्स अपने घर पर ईद की नमाज़ पढ़ कर आया हो - तो क्या उस मोतबर शख़्स के बयान पर रोज़ा इफ़्तार करना और नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं? और ईद की नमाज़ पढ़ने के बाद जो लोग सफ़र में ईद के दिन कलकत्ता वग़ैरह में थे, वो यहाँ आए और बयान किया कि हमने और एक बड़ी जमात ने अपनी आँखों से चाँद देखकर जुमे के दिन ईद की नमाज़ पढ़ी है। ऐसी सूरत में जुमे के दिन इफ़्तार करना और ईद की नमाज़ पढ़ना जायज़ हुआ या नहीं? और आसपास के इलाक़ों में चाँद की तस्दीक़ के साथ जुमे को ही ईद हुई, जिसके लिए बहुत सी गवाहियाँ मौजूद हैं।

दूसरा सवाल: एक बस्ती के कुछ लोगों ने एक मोतबर शख़्स के बयान पर, जिसे तार के ज़रिए दूसरे शहर से ख़बर मिली थी, उस जगह जहाँ बादलों की वजह से चाँद नहीं दिखा था, रोज़ा इफ़्तार कर लिया और ईद की नमाज़ पढ़ ली। जबकि उसी जगह के कुछ दूसरे लोगों ने, जिन्हें रमज़ान की रौयत में शक था कि 30 दिन हुए हैं जबकि उनके हिसाब से 29 रमज़ान थे, और उन्हें भी नमाज़ का वक़्त ख़त्म होने से पहले ख़बर मिल गई थी, लेकिन उन्होंने उस मोतबर शख़्स की बात और तार पर भरोसा न करके जुमे को न रोज़ा इफ़्तार किया और न ईद की नमाज़ पढ़ी। बल्कि सनीचर (शनिवार) के दिन रोज़ा इफ़्तार किया और ईद की नमाज़ पढ़ी। क्या उनका जुमे का रोज़ा जायज़ हुआ या नाजायज़?

तीसरा सवाल: क्या एक ही मस्जिद में दो अलग-अलग दिनों में ईद की नमाज़ पढ़ना जायज़ है या नहीं?

अल-जवाब:

पहले सवाल का जवाब: चाँद के मामले में ख़त और तार (टेलीग्राम) बिल्कुल नाकाबिले एतबार हैं। और ईद के चाँद के मामले में, एक आदिल और नेक शख़्स की अपनी रौयत की गवाही भी तब तक मक़बूल नहीं जब तक गवाही का पूरा निसाब (न्यूनतम संख्या) न हो। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

"बादल होने की सूरत में और गवाह के आदिल होने के बावजूद, फ़ित्र (ईद) के लिए गवाही का निसाब और 'अशहदु' (मैं गवाही देता हूँ) लफ़्ज़ कहना शर्त है।" [1]

यानी ईदुल फ़ित्र में बादल और रुकावटों की मौजूदगी में, गवाही का निसाब और लफ़्ज़-ए-शहादत ज़रूरी है। (त)

तो एक मोतबर शख़्स की महज़ ख़बर, वो भी उसकी अपनी रौयत की नहीं बल्कि दूसरे की, और वो भी तार के ज़रिए मिली, चार वजहों से [क़ाबिल-ए-क़बूल नहीं है]:

---

[1] दुर्रे मुख़्तार, किताबुस सौम, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/148

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

مسئلہ ۱۷۶تا ۱۷۸: مسئولہ عبدالعزیز تاجر چرم قصبہ ٹھاری محلہ تانگیر ضلع گیا ۱۶ ذی القعدہ ۱۳۳۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین مسائل مفصل ذیل میں بجوابی کتب فقہ و فتاویٰ بینوا توجروا۔

سوال اول: نماز عید کہ جس کی ادائیگی رؤیت ہلال پر موقوف ہے اگر اس کی رؤیت کی خبر ایسی بستی میں جہاں ابر و باد کی وجہ سے چاند نہ دیکھا گیا ہو اور معتبر شخص کی زبانی کہ اس شخص کو بھی خبر غیر شہر میں بذریعہ تار کے ملی ہو اور وہ شخص اپنے مکان پر نماز عید کی پڑھ کر آیا ہو اس شخص معتبر کے بیان پر روزہ افطار کرنا اور نماز پڑھنا جائز ہے یا نہیں، اور بعد پڑھنے نماز عید کے جو لوگ کہ سفر میں عید کے روز کلکتہ وغیرہ میں ہیں وہ لوگ یہاں آئے اور بیان کیا کہ ہم نے اور جماعت کثیرہ نے اپنی آنکھ سے چاند دیکھ کر نماز عید روز جمعہ کو پڑھی ہے ایسی صورت میں روز جمعہ کو افطار کرنا اور نماز عید جمعہ کو پڑھنا جائز ہوا یا نہیں، اور اطراف و جوانب میں بمعائنہ رؤیت ہلال عید روز جمعہ کو ہوئی اس کے لئے شہادت کثیرہ ہے۔

سوال دوم: ایک بستی کے بعض افراد نے شخص معتبر کے بیان پر کہ جس کو خبر بذریعہ تار کے دوسرے شہر میں ملی ہو اس کے بیان پر جہاں بوجہ ابر و باد رؤیت نہ ہوئی وہاں کے بعض افراد نے روزہ افطار کیا اور نماز عید پڑھی اور بعض افراد نے وہیں کے کہ جن کو اشتباہ ماہ رمضان کی رؤیت میں تیس کا تھا اور ان کے حساب سے انتیس رمضان پڑتا تھا اور خبر ان لوگوں کو بھی قبل باقی رہنے پورے وقت نماز کے ملی مگر شخص معتبر کے قول و خبر و تار پر اعتبار نہ کر

کے روز جمعہ کو نہ روزہ افطار کیا اور نہ نماز عید پڑھی بلکہ سنیچر کے روز روزہ افطار کیا اور نماز عید پڑھی، جمعہ کا روزہ جائز ہو لیا یا ناجائز؟

سوال سوم: ایک مسجد میں دو روز نماز عید پڑھنا جائز ہے یا نہیں؟

الجواب:

جواب سوال اول: درباره ہلال، خط اور تار محض بے اعتبار، اور درباره ہلال عید، ایک عادل ثقہ کی خود اپنی رؤیت کی گواہی بھی مقبول نہیں جب تک پورا نصاب شہادت نہ ہو، درمختار میں ہے:

شرط للفطر مع العلة والعدالة نصاب الشهادة ولفظ اشهد۔1 عیدالفطر میں بادل و عدالت کی موجودگی میں نصاب شہادت اور لفظ شہادت ضروری ہے (ت)

تو ایک معتبر شخص کی خبر محض اور وہ بھی اپنی رؤیت کی نہیں دوسرے کی، اور وہ بھی تار کی معلوم ہوئی، چار وجہ سے

---

1 درمختار، کتاب الصوم، مطبع مجتبائی دہلی، ۱/ ۱۴۸

Fatawa Razawiyya, Volume 10

...was rejected and celebrating Eid based on it was forbidden (Haraam). Those who broke their fast based on it committed a severe sin. The Eid prayer on that day was also sinful, Makruh-e-Tahrimi (prohibitively disliked), and unlawful. By not performing the Eid prayer on the second day, they also became sinners for omitting a mandatory (Wajib) act. No matter how many proofs emerge later, they cannot erase those sins, as at the time they committed these acts, there was no Sharia-compliant proof. The accusation of violating Sharia law will not be removed without repentance. And Allah Almighty knows best.

Answer to Question 2: Those who did not act on that news, kept their fast, and offered the Eid prayer on the second day, acted according to the command of Sharia. This was indeed the religious command. Although Friday was technically Eid day elsewhere, since there was neither a sighting nor Sharia proof there, fasting on Friday remained obligatory (Farz) for them, and Eid on Saturday was mandatory (Wajib). The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Fast upon sighting it (the moon) and break your fast (celebrate Eid) upon sighting it." (T)

Answer to Question 3: This situation was not one of two days of Eid prayer. Rather, celebrating Eid on Friday there was unlawful. Those who performed it offered an unlawful voluntary (Nafl) prayer because it was done in congregation, and they became sinners. It is stated in Durr-ul-Mukhtar:

[Arabic Quote 1]: "Offering Eid prayer in villages is prohibitively disliked (Makruh-e-Tahrimi), meaning it is engaging in something that is not valid [in that location]." 2 [Urdu Translation]: In villages, the Eid prayer is Makruh-e-Tahrimi because it involves engagement in something that is not correct. (T)

It is stated in Radd-ul-Muhtar:

[Arabic Quote 2]: "It is a disliked voluntary prayer because it is performed in congregation." 3 [Urdu Translation]: These are voluntary (Nafl) prayers, and performing voluntary prayers in congregation is disliked (Makruh). (T)

The valid Eid prayer was only the one performed by the second group on Saturday. And Allah Almighty knows best.

Issue 179: From Taya District, Post Office and Place Ratsar, Rahimullah and Abdul Rahman, 13 Safar-ul-Muzaffar 1337 AH.

Question: What do the scholars of the religion say about this issue: among the Muslim residents here is a person named Haji Musaddi Sahib, who resides in the bungalow area of Assam, district Teberpur, and does business there. He wrote a letter saying that the people here saw the moon for the month of Ramadan on Tuesday. Approximately fifty people saw it, and two or three people specifically from among our shop workers saw it, but Haji Musaddi Sahib denies...

1 Sahih Bukhari, Chapter: When you see the crescent moon, fast. Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/256 2 Durr-ul-Mukhtar, Chapter on Eidain, Matba Mujtabai Delhi, 1/114 3 Radd-ul-Muhtar, Chapter on Eidain, Mustafa Al-Babi Egypt, 1/611

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

...मर्दुद (अस्वीकृत) थी और उस आधार पर ईद करना हराम था। जिन लोगों ने इस आधार पर रोज़ा तोड़ा, वे गंभीर पाप के अपराधी बने। उस दिन की ईद की नमाज़ भी पापपूर्ण, मकरूह-ए-तहरीमी और नाजायज़ थी। दूसरे दिन ईद की नमाज़ न पढ़ने के कारण भी वे वाजिब छोड़ने के गुनहगार हुए। बाद में चाहे कितने ही सबूत सामने आ जाएँ वे उन गुनाहों को मिटा नहीं सकते क्योंकि जिस समय उन्होंने ये काम किए, उनके पास कोई शरीयत सम्मत सबूत नहीं था। शरीयत के हुक्म की खिलाफत का आरोप बिना तौबा (प्रायश्चित) के खत्म नहीं होगा। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

दूसरे सवाल का जवाब: जिन लोगों ने उस खबर पर अमल नहीं किया और रोज़ा रखा और दूसरे दिन ईद की नमाज़ पढ़ी, उन्होंने शरीयत के हुक्म के मुताबिक काम किया। शरीयत का हुक्म भी ऐसा ही था। हालाँकि शुक्रवार ज़रूर ईद का दिन था, लेकिन चूँकि वहाँ न तो चाँद देखा गया और न ही कोई शरई सबूत था, इसलिए उन पर शुक्रवार का रोज़ा ही फ़र्ज़ था और शनिवार की ईद वाजिब थी। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: "चाँद देखकर रोज़ा रखो और चाँद देखकर ईद करो।" (त)

तीसरे सवाल का जवाब: यह स्थिति दो दिन की ईद की नमाज़ की नहीं थी। वहाँ शुक्रवार को ईद मनाना नाजायज़ था। जिन्होंने पढ़ी, वह एक नाजायज़ नफ़्ल (नमाज़) थी क्योंकि उसे जमात (समूह) के साथ अदा किया गया और वे गुनहगार हुए। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

[अरबी उद्धरण 1]: "देहातों (गाँवों) में ईद की नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी है, यानी यह ऐसी चीज़ में मशगूल होना है जो सही नहीं है।" 2 [उर्दू अनुवाद]: गाँवों में ईद की नमाज़ मकरूह-ए-तहरीमी है क्योंकि यह ऐसी चीज़ में व्यस्त होना है जो सही नहीं है। (त)

'रद्दुल मुहतार' में है:

[अरबी उद्धरण 2]: "यह मकरूह नफ़्ल है क्योंकि इसे जमात के साथ अदा किया गया है।" 3 [उर्दू अनुवाद]: ये नफ़्ल नमाज़ें हैं और नफ़्ल की जमात के साथ अदायगी मकरूह है। (त)

ईद की नमाज़ वही हुई जो दूसरे समूह ने शनिवार को पढ़ी। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला 179: जिला तिया, डाकखाना और स्थान रतसर से, रहीमउल्लाह और अब्दुल रहमान, 13 सफ़र-उल-मुज़फ़्फ़र 1337 हिजरी।

सवाल: दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि यहाँ के मुस्लिम निवासियों में एक व्यक्ति हाजी मुसद्दी साहब हैं जो असम के तेबरपुर जिले के बंगला क्षेत्र में रहते हैं और वहीं व्यापार करते हैं। उन्होंने एक पत्र लिखा कि यहाँ के लोगों ने रमज़ान मुबारक का चाँद मंगलवार को देखा। लगभग पचास लोगों ने देखा और दो-तीन खास हमारे दुकान के आदमियों ने देखा, मगर हाजी मुसद्दी साहब इनकार...

1 सहीह बुखारी, बाब: जब तुम चाँद देखो तो रोज़ा रखो, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/256 2 दुर्रे मुख्तार, बाब अल-ईदैन, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/114 3 रद्दुल मुहतार, बाब अल-ईदैन, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 1/611

पृष्ठ 377/836

مردود تھی اور اس کی بنا پر عید کرنا حرام، جن لوگوں نے اس بنا پر روزہ توڑا سخت گناہ شدید کے مرتکب ہوئے اور اس دن کی نماز عید بھی گناہ و مکروہ تحریمی و ناجائز ہوئی، اور دوسرے دن نماز عید نہ پڑھنے سے بھی ترک واجب کے گنہگار ہوئے اور بعد کو ثبوت کتنے ہی کثیر ہوجائیں اُن کے اُن گناہوں کو رفع نہیں کر سکتا کہ جس وقت تک انہوں نے یہ افعال کئے ثبوت شرعی نہ تھا ان پر سے مخالفت حکم شرع کا الزام بے توبہ زائل نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

جواب سوال دوم: جن لوگوں نے اُس خبر پر عمل نہ کیا اور روزہ قائم رکھا اور دوسرے دن نماز عید پڑھی انہوں نے مطابق حکم شرع کیا، ایسا ہی کرنے کا شرعاً حکم تھا اگرچہ جمعہ ضرور روز عید تھا مگر وہاں نہ رویت نہ ثبوت شرعی گزرا تو اُن پر جمعہ کا روزہ ہی فرض تھا اور سینچر کی عید واجب، رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: صوموا لرؤیتہ وافطروا لرؤیتہ (چاند دیکھنے پر روزہ رکھو اور چاند دیکھنے پر عید کرو۔ ت)

جواب سوال سوم: یہ صورت دوروز نماز عید کی نہ تھی کہ وہاں جمعہ کو عید ناجائز تھی جنہوں نے پڑھی وہ ایک ناجائز نفل تھا کہ جماعت سے ادا کیا اور گنہگار ہوئے۔ درمختار میں ہے:

صلوۃ العید فی القری تکرہ تحریماً ای لانہ اشتغال بما لا یصح۔ 2 دیہاتوں میں نماز عید مکروہ تحریمی ہے کیونکہ یہ ایسی چیز میں مشغول ہونا ہے جو درست نہیں۔(ت)

رد المحتار میں ہے:

ھو نفل مکروہ لادائہ بالجماعۃ ح۔ 3 یہ نوافل ہیں اور نوافل کی جماعت کے ساتھ ادائیگی مکروہ ہے۔(ت)

نماز عید وہی ہوئی جو دوسرے گروہ نے روز شنبہ پڑھی۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۷۹: از ضلع تیا ڈاک خانہ ومقام رتسر رحیم اللہ و عبدالرحمن ۱۳ صفر المظفر ۱۳۳۷ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ یہاں مسلمان باشندوں میں سے ایک شخص حاجی مصدی صاحب ہیں جو کہ احاطہ بنگلہ خطہ آسام ضلع تبر پور رہتے ہیں اور وہیں تجارت کرتے ہیں لہذا انہوں نے خط لکھا کہ یہاں کے لوگوں نے چاند ماہ رمضان المبارک کا روز سہ شنبہ یعنی منگل کے ہوا، قریب قریب پچاس آدمیوں نے دیکھا اور دو تین آدمی خاص ہمارے آدمیوں میں سے جو کہ کاروبار دکان کے کرتے ہیں دیکھا مگر جناب حاجی مصدی صاحب انکار

1 صحیح بخاری، باب اذارایتم الھلال فصوموا، قدیمی کتب خانہ کراچی، ۲۵۶/۱ 2 درمختار، باب العیدین، مطبع مجتبائی دہلی، ۱۱۴/۱ 3 ردالمحتار، باب العیدین، مصطفے البابی مصر، ۶۱۱/۱

Fatawa Rizwia Volume 10

...They say that we did not see it with our own eyes, and among all those living in the outskirts of the country of Assam, no one saw the moon. At the time this letter arrived, Maulana Maulvi Abdul Ghaffar Sahib, resident of Mauza Azam Garhi, a student of Maulvi Rashid Ahmad Sahib Gangohi of the Deoband school, was visiting. After reading the letter, he said, "Enquire again via letter; if those people truly saw the moon, then you should also celebrate Eid on Friday, whether the moon is visible on Thursday or not, and make up for one day's fast later." When it was written again, the same response came: that the sighting of the moon was true, as fifty inhabitants of the country of Assam had seen it. Therefore, can the mere sighting by the people of Assam and the resulting fatwa by Maulvi Abdul Ghaffar Sahib be considered valid proof? Can we celebrate Eid on Friday or not? Supposing the moon was not visible on Thursday, can we celebrate Eid on Friday or not? In reality, it so happened that the Eid moon was not visible on Thursday; thousands of people looked, and no news of a moon sighting came from anywhere. Those who were not followers of Maulvi Abdul Ghaffar Sahib, seeing that these people would not agree, celebrated Eid on Friday with them just to avoid conflict and prevent a split in the congregation, without having seen the moon. Therefore, according to Sharia, what is the ruling on the above detail? Please provide a ruling and be rewarded.

The Answer: Regarding the crescent moon, a letter or a telegram is completely unreliable.

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Start fasting upon sighting it (the moon) and celebrate Eid upon sighting it." (T)

It is stated in general books like Hidaya, Ashbah, and Durr-e-Mukhtar: "A letter (writing) is not acted upon." (T)

The Deobandi fatwa was completely false. Celebrating Eid on Friday without a sighting or legal proof was prohibited (haraam), and the thought of avoiding a split in the congregation was a flawed notion. If some people celebrated Eid on Friday without legal proof, then it was neither Eid, nor was that prayer a prayer, nor was that congregation a congregation. What division would have occurred? While a formal split may not have occurred, in reality, it resulted in nullification; the prayer was lost, and everyone became sinners, even if in reality Eid fell on Friday. And Allah Almighty knows best.

Problem 180: From the state of Chhatari, District Bulandshahr, asked by Abdul Ghaffar Khan Sahib, Mohalla Katra, 15 Safar 1334 AH. What do the scholars of religion say in this situation: the Ramadan moon was seen on Wednesday night (the night preceding Thursday) in our town, and the fast was kept on Thursday. After 20 days, a letter from Maulvi Nazir Hasan Deobandi arrived addressed to the Rais, the content of which was that...

---

1. Sahih Bukhari, Chapter: When you see the moon, then fast. Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/256.
2. Durr-e-Mukhtar, Chapter: Book of the Judge to the Judge, etc. Matba' Mujtabai, Delhi, 2/83; Al-Ashbah wan-Naza'ir, Book of Judiciary and Testimonies, etc. Idara-tul-Quran wal-Uloom al-Islamiyya, Karachi, 1/338. 338/1 Page 378 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (दसवीं)

...कहते हैं कि हमने अपनी आँखों से नहीं देखा और आसाम देश के इन हिस्सों में रहने वाले किसी भी व्यक्ति ने चाँद नहीं देखा। जब यह पत्र आया, उस समय मौलाना मौलवी अब्दुल गफ्फार साहब, निवासी मौज़ा आज़मगढ़ी, जो मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही (देवबंद मदरसा) के शिष्य थे, वहाँ पधारे हुए थे। पत्र देखकर उन्होंने कहा, "फिर से पत्र लिखकर पूछो कि क्या वास्तव में उन लोगों ने चाँद देखा है। अगर देखा है, तो तुम लोग भी जुमा (शुक्रवार) को ईद मना लेना, चाहे जुमेरात (गुरुवार) को चाँद दिखे या न दिखे, और बाद में एक रोज़ा कज़ा कर लेना।" जब दोबारा लिखा गया, तो वही जवाब आया कि चाँद देखना सच है, आसाम के50 निवासियों ने देखा है। तो क्या केवल आसाम के लोगों का देखना और मौलवी अब्दुल गफ्फार साहब का उस आधार पर फतवा देना प्रमाण माना जा सकता है? और क्या हम जुमा को ईद कर सकते हैं या नहीं? यदि मान लें कि गुरुवार को चाँद नहीं दिखा, तो क्या जुमा को ईद की जा सकती है? और वास्तव में ऐसा ही हुआ कि गुरुवार को ईद का चाँद नज़र नहीं आया, हज़ारों लोगों ने देखा और कहीं से चाँद दिखने की ख़बर नहीं आई। जो लोग मौलवी अब्दुल गफ्फार साहब के अनुयायी नहीं थे, उन्होंने यह देखकर कि ये लोग नहीं मानेंगे, केवल विवाद को टालने और जमात में फूट न पड़ने देने के ख्याल से, बिना चाँद देखे उन्हीं के साथ जुमा को ईद कर ली। अतः शरीयत के अनुसार उपरोक्त विवरण की जाँच करें। उत्तर दें, पुण्य पाएँ।

अल-जवाब (उत्तर): चाँद (हिलाल) के बारे में पत्र और टेलीग्राम पूरी तरह अविश्वसनीय हैं।

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "चाँद देखकर रोज़ा शुरू करो और चाँद देखकर ईद करो।" (T)

हिदाया, अश्बाह और दुर्रे मुख्तार जैसी आम किताबों में है: "पत्र (लिखावट) पर अमल नहीं किया जाता।" (T)

देवबंदी फतवा सरासर बातिल (झूठा) था और बिना चाँद देखे या शरई सबूत के जुमा को ईद मनाना हराम था। जमात की फूट से बचने का विचार गलत था। अगर कुछ लोग बिना शरई सबूत के जुमा को ईद मना लेते, तो न वह ईद ईद थी, न वह नमाज़ नमाज़ थी और न वह जमात जमात थी। फिर फूट कैसी होती? अब फूट तो नहीं हुई, लेकिन वास्तव में सब कुछ अमान्य (बातिल) हो गया। नमाज़ भी गई और सब गुनहगार हुए, चाहे हकीकत में ईद जुमा को ही रही हो। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 180: रियासत छतरी, ज़िला बुलंदशहर, प्रेषक अब्दुल गफ्फार खान साहब, मोहल्ला कटड़ा, 15 सफ़र 1334 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: हमारे कस्बे में रमज़ान का चाँद बुधवार की रात (गुरुवार की पूर्व संध्या) देखा गया और गुरुवार को रोज़ा रखा गया। 20 दिनों के बाद मौलवी नाज़िर हसन देवबंदी का एक पत्र रईस के नाम पहुँचा, जिसका विषय यह था कि...

---

1. सही बुखारी, अध्याय: जब तुम चाँद देखो तो रोज़ा रखो। कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/256.
2. दुर्रे मुख्तार, अध्याय: न्यायाधीश का न्यायाधीश को पत्र, आदि। मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 2/83; अल-अश्बाह वन-नज़ायर, न्यायपालिका और गवाही की किताब, आदि। इदारा-तुल-कुरान वल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 1/338. 338/1 पृष्ठ 836 का 378

کرتے ہیں کہ ہم نے بچشم خود نہیں دیکھا اور جتنے اس اطراف کے ملک آسام میں رہتے ہیں کسی نے چاند نہیں دیکھا جس وقت یہ خط آیا اس وقت جناب مولانا مولوی عبدالغفار صاحب ساکن موضع اعظم گڑھی شاگرد مولوی رشید احمد صاحب گنگوہی سلسلہ مدرسہ دیوبند تشریف لائے تھے انہوں نے خط دیکھ کر فرمایا کہ دوبارہ خط سے دریافت کرو کہ اگر واقعی ان لوگوں نے چاند دیکھا تو تم لوگ بھی جمعہ کی عید کرلینا پنجشنبہ کو چاہے چاند ہو یا نہ ہو اور ایک روزہ قضاء کرکھ لینا، تو پھر جب دوبارہ لکھا گیا تو اسی مضمون کا جواب آیا کہ چاند کا دیکھنا سچ ہے ۵۰ آدمیوں نے باشندہ ملک آسام کے دیکھا لہذا محض ملک آسامیوں کا دیکھنا اور بموجب فتوٰی دینے مولوی عبدالغفار صاحب یہ قابل سند ہوسکتا ہے کہ نہیں اور جمعہ کو ہم لوگ عید کرسکتے ہیں کہ نہیں۔ بر تقدیر نہ چاند ہونے پنجشنبہ کے عید جمعہ کو کرسکتے ہیں یا نہیں، اور واقعی ایسا ہوا کہ پنجشنبہ کو عید کا چاند نہیں نظر پڑا، ہزاروں آدمیوں نے دیکھا اور نہ کہیں چاند دیکھنے کی خبر آئی جو لوگ کہ معتقد مولوی عبدالغفار صاحب کے نہیں تھے جبکہ دیکھا یہ لوگ نہیں مانیں گے تو محض رفع نزاع کے لیے انہی لوگوں کے ساتھ عید جمعہ کو کرلی بغیر چاند دیکھے تفریق جماعت اور دو فریق ہوجانے کے خیال سے، لہذا از روئے شرع کے تفصیل بالا کی تحقیق۔ بینوا توجروا۔

الجواب: درباره ہلال خط اور تار محض بے اعتبار،

قال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم صوموالرؤیتہ وافطروا لرؤیتہ - 1 | رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: چاند دیکھنے پر روزہ شروع کرو اور چاند دیکھنے پر عید کرو۔ (ت)

ہدایہ واشباہ و درمختار وغیرہ عام کتب میں ہے: الخط لا یعمل بہ 2 (خط پر عمل نہیں کیا جاتا۔ ت)

دیوبندی کا فتویٰ محض باطل تھا اور بغیر رویت یا ثبوت شرعی جمعہ کو عید کرلینا حرام تھا اور تفریق جماعت سے بچنے کا خیال خام تھا اگر کچھ لوگ بے ثبوت شرعی جمعہ کو عید کرلیتے تو نہ وہ عید عید تھی، نہ وہ نماز نماز، نہ وہ جماعت جماعت، تفریق کا ہے کی ہوئی! اب صورتِ تفریق تو نہ ہوئی مگر حقیقتاً ابطال ہوگیا، نماز بھی گئی، سب گنہگار ہوئے، اگرچہ واقعہ میں عید جمعہ کی تھی۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۱۸۰: از ریاست چھتاری ضلع بلند شہر مسئولہ عبدالغفور خاں صاحب محلہ کٹڑہ ۱۵ صفر ۱۳۳۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس صورت میں کہ ہمارے قصبہ میں ہلال رمضان شب پنجشنبہ میں دیکھا گیا اور پنجشنبہ کا روزہ ہوا، ۲۰ روز بعد مولوی ناظر حسن دیوبندی کا ایک خط بنام رئیس پہنچا جس کا مضمون یہ تھا کہ

---

1 صحیح بخاری باب اذا رایتم الھلال فصوموا قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶ 2 درمختار باب کتاب القاضی الی القاضی وغیرہ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۸۳ ، الاشباہ والنظائر کتاب القضاء والشہادات الخ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۱/ ۳۳۸ ۳۳۸/۱ Page 378 of 836

Fatawa Razawiyya Volume 10

Some people from Bahraich came to Deoband, and from them it was investigated that the moon sighting occurred on Wednesday night and the fast was on Wednesday. Therefore, the scholars of Deoband ordered that the fast should be observed starting from Wednesday. Those who started fasting from Thursday should keep one compensatory fast (qaza). Based on this, it was announced on the Friday of 23rd Ramadan that people should keep one qaza fast and in any case, Eid would not go beyond Friday. On Thursday, it was 29th Ramadan; despite the sky being clear and much effort being made, the moon was not sighted. However, the town, reasoning from the Maulvi Sahab's letter, gave the order for Eid on Friday. Is the Maulvi Sahab's letter legally (Sharia-wise) binding, and is the ruling of Eid based on it, despite the absence of sighting, correct or wrong? And what should we do now? Explain to us, may Allah have mercy on you, through the Book (May Allah have mercy on you, explain through the Book of Allah - translator). Please grant a detailed answer along with quotations from books and show your support.

The Answer: Regarding the new moon, a letter or telegram is completely unreliable. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Fast upon seeing it (the moon) and break your fast upon seeing it." It is stated in Hidaya, Ashbah, Durr-e-Mukhtar, and other general books: "A letter is not to be acted upon [in matters of moon sighting]" (translator). If the men from Bahraich told the Deobandis that the moon appeared there, or said many people saw it but did not give testimony of their narration, or if they did but none among them was acceptable under Sharia, then that order of the Deobandis was void from the start. Even if that wasn't the case, it was forbidden for the people of that town to act on his letter because, firstly, a letter regarding the crescent is itself rejected; secondly, it's from a sect whose profession is insulting Allah and His Messenger (Jalla wa 'Ala and peace and blessings of Allah be upon him). In any case, a sin was committed and repentance is necessary. And Allah Almighty knows best.

Problem 181: From Bulandshahr, Post Office Chhatari, Madrasa Ahmadiyya, asked by Mahfuz-ul-Haq Qadri, 29 Rabi-ul-Akhir 1337 AH. Respected Maulana, peace be upon you and the mercy of Allah and His blessings. It is submitted to your noble service that a small pamphlet of yours, which bears your seal and has this sentence written in one line: "Testimonies have passed before me, tomorrow Friday is Eid," was received by this humble servant. A Sharia-based fatwa is requested regarding it, that in the place where this pamphlet...

1. Sahih Bukhari, Chapter: When you see the moon, then fast... Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/256.
2. Durr-e-Mukhtar, Chapter: A judge's letter to another judge, etc., Matba' Mujtabai, Delhi, 2/84; Al-Ashbah wan-Naza'ir, Book of Judiciary and Testimony, etc., Idarat-ul-Quran wal-Uloom-il-Islamiyya, Karachi, 1/338.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

देवबंद में बहराइच के कुछ लोग आए और उनसे यह तहक़ीक़ हुई कि चाँद बुधवार की रात को देखा गया और रोज़ा बुधवार का हुआ, लिहाज़ा देवबंद के उलेमा ने हुक्म दिया कि रोज़ा बुधवार से रखा जाए, जिन लोगों ने जुमेरात से रखा है वे एक रोज़ा क़ज़ा रखें, इसी बिना पर 23 रमज़ान के जुमे को एलान किया गया कि लोग एक रोज़ा क़ज़ा रखें और हर हाल में ईद जुमे से आगे नहीं होगी, जुमेरात को 29 रमज़ान थी बावजूद मतला साफ़ होने के और बहुत कोशिश के चाँद नहीं दिखाई दिया हालांकि कस्बे ने मौलवी साहब के ख़त पर इस्तिदलाल करके जुमे को ईद का हुक्म दे दिया, क्या मौलवी साहब का ख़त शरअन क़ाबिल-ए-पाबंदी है और इसकी बिना पर बावजूद अदम-ए-रुय्यत हुक्म-ए-फ़ित्र सही है या ग़लत और हम लोगों को अब क्या करना चाहिए? बय्यिनू रहिमकुमुल्लाहु तआला बिल किताब (अल्लाह तआला आप पर रहम करे किताबुल्लाह से बयान कीजिये।त) जवाब तफ़्सीलन मअ इबारात-ए-कुतुब मरहमत हो और हिमायत फ़रमाई जाए।

अल-जवाब: हिलाल (चाँद) के बारे में ख़त और तार महज़ बे-एतबार हैं, हज़ूर सरवर-ए-आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, चाँद देखने पर रोज़ा रखो और चाँद देखने पर ईद करो (त) हिदाया, अश्बाह व दुर्रे मुख़्तार वग़ैरह आम किताबों में है: 'अल-ख़त्तु ला युअमलु बिही' (ख़त पर अमल नहीं किया जाता) (त) देवबंद वालों के पास बहराइच के आदमियों ने अगर यह बयान किया वहाँ चाँद हुआ या यही कहा कि बहुत लोगों ने देखा और अपनी रिवायत की शहादत न दी या दी और उनमें कोई शख़्स क़ाबिल-ए-क़बूल-ए-शरा न था जब तो देवबंदियों का वह हुक्म ही सिरे से बातिल था, और ऐसा न भी हो तो इस क़स्बे वालों को उनके ख़त पर अमल हराम था कि अव्वल तो ख़त दरबारा-ए-हिलाल ख़ुद ही मरदूद, दूसरे वह भी एक ऐसे फ़िरक़े का जिसका पेशा तौहीन-ए-ख़ुदा व रसूल जल्ल व अला व सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम है, बहरहाल गुनाह हुआ और तौबा लाज़िम। वल्लाहु तआला आलम।

मसअला 181: अज़ बुलंदशहर डाकख़ाना छतारी मदरसा अहमदिया मसऊला महफ़ूज़ुल हक़ क़ादरी 29 रबीउल आख़िर शरीफ़ 1337 हिजरी हज़रत मौलाना अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू, मअरूज़-ए-ख़िदमत-ए-शरीफ़ है कि जनाब-ए-वाला का एक मुख़्तसर सा पर्चा जिस पर जनाब की मोहर लगी होती है और एक सतर में यह इबारत मर्क़ूम है (मेरे सामने शहादतें गुज़र गईं कल जुमा को ईद है) ख़ाकसार को मौसूल हुआ इसके मुतअल्लिक़ फ़तवा-ए-शरई दरयाफ़्त तलब है कि जिस जगह यह पर्चा...

1. सहीह बुखारी बाब इजा रायतुल हिलाल फसोमू क़दीमी कुतुब खाना कराची 256/1
2. दुर्रे मुख़्तार बाब किताबुल क़ाज़ी इलल क़ाज़ी वग़ैरह मतबा मुज्तबाई दिल्ली 84/2, अल-अश्बाह वन-नज़ाइर किताबुल क़ज़ा वश-शहादत वग़ैरह इदारातुल क़ुरआन वल-उलूम-इल-इस्लामिया कराची 338/1

पृष्ठ 379/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

دیوبند میں کچھ آدمی بہرائچ کے آئے اور اُن سے تحقیق ہوا کہ رؤیتِ ہلال شبِ چہار شنبہ میں ہوئی اور روزہ چہار شنبہ کا ہوا، لہذا علمائے دیوبند نے حکم دیا کہ روزہ چہار شنبہ سے رکھا جائے، جن لوگوں نے جمعرات سے رکھا ہے وہ ایک روزہ قضا رکھیں، اسی بناء پر ۲۳ رمضان کے جمعہ کو اعلان کیا گیا کہ لوگ ایک روزہ قضا رکھیں اور ہر حال میں عید جمعہ سے متجاوز نہ ہوگی، جمعرات کو ۲۹ رمضان تھی باوجود صاف ہونے مطلع کے اور کمال کوشش کے چاند نہیں دکھائی دیا حالانکہ قصبہ نے مولوی صاحب کے خط پر استدلال کرکے جمعہ کو عید کا حکم دے دیا، آیا مولوی صاحب کا خط شرعاً قابل پابندی ہے اور اس کی بناء پر باوجود عدم رؤیت حکم فطر کا صحیح یا غلط ہے اور ہم لوگوں کو اب کیا کرنا چاہئے؟ بینوا رحمکم اللہ تعالیٰ بالکتاب (اللہ تعالیٰ آپ پر رحم کرے کتاب اللہ سے بیان کیجئے۔ت) جواب تفصیلاً مع عباراتِ کتب مرحمت ہو اور حمایت فرمائی جائے۔

الجواب: دربارہ ہلال خط اور تار محض بے اعتبار، قال صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم صوموا لرؤیتہ حضور سرورِ عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا، چاند دیکھنے پر روزہ رکھو اور چاند دیکھنے پر عید کرو (ت) وافطر والرؤیتہ- 1 ہدایہ واشباہ ودرمختار وغیرہ عامہ کتب میں ہے: الخط لا یعمل بہ (خط پر عمل نہیں کیا جاتا) (ت) دیوبند والوں کے پاس بہرائچ کے آدمیوں نے اگر یہ بیان کیا وہاں چاند ہوا یا یہی کہا کہ بہت لوگوں نے دیکھا اور اپنی روایت کی شہادت نہ دی یا دی اور اُن میں کوئی شخص قابل قبول شرع نہ تھا جب تو دیوبندیوں کا وہ حکم ہی سرے سے باطل تھا، اور ایسا نہ بھی ہو تو اس قصبہ والوں کو اس کے خط پر عمل حرام تھا کہ اول تو خط دربارہ ہلال

خود ہی مردود، دوسرے وہ بھی ایک ایسے فرقے کا جس کا پیشہ توہینِ خدا و رسول جل وعلا وصلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم، بہر حال گناہ ہوا اور توبہ لازم۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۸۱: از بلانڈ شہر ڈاکخانہ چھتاری مدرسہ احمدیہ مسئولہ محفوظ الحق قادری ۲۹ ربیع الآخر شریف ۱۳۳۷ھ حضرت مولانا السلام علیکم ورحمتہ اللہ وبرکاتہ، معروض خدمتِ شریف ہے کہ جناب والا کا ایک مختصر سا پرچہ جس پر جناب کی مہر لگی ہوتی ہے اور ایک سطر میں یہ عبارت مرقوم ہے (میرے سامنے شہادتیں گزر گئیں کل جمعہ کو عید ہے) خاکسار کو موصول ہوا اس کے متعلق فتویٰ شرعی دریافت طلب ہے کہ جس جگہ یہ پرچہ

---

1 صحیح بخاری باب اذا رایتم الھلال فصومو اقدییمی کتب خانہ کراچی ۲۵۶/۱ 2 درمختار باب کتاب القاضی الی القاضی وغیرہ مطبع مجتبائی دہلی ۸۴/۲ ، الاشباہ والنظائر کتاب القضاء والشہادت الخ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۳۳۸/۱

Fatawa Razawiya Volume 10

...when they reached there, were the people supposed to celebrate Eid on Friday or not? And was it necessary to break the fast or not? And what was the benefit of its general publicity and circulation in other cities? Please clarify and be rewarded.

Answer: Those papers were not sent to other cities; those distributing them gave some at the station, someone might have taken them. Some people wanted them for Pilibhit and they were told that unless two just witnesses go, the paper will not be sufficient. And how could they be sent to distant cities? And Allah Almighty knows best.

Issue 182 to 184: From Rajputana Chittorgarh, Abdul Karim, 18 Shawwal al-Mukarram 1334 AH What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say regarding this issue, based on these statements:

Arabic Text

It is stated in Al-Uyun: The fatwa is based on the opinion of the two companions (Sahibayn - Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad) when it is certain that it is someone's handwriting, whether it is a matter of judgment, sighting of the moon, or testimony in a document, even if the document is not in the witness's hand. This is because error is rare and the effect of alteration can be noticed. It is very rare for one handwriting to be completely identical to another in every way. Thus, when there is certainty about the handwriting, reliance on it is permissible for the ease of the people.[1]

As for the writing of a merchant, money changer, and broker, it is proof even if it does not have an official header recognized among people. Similarly,

Urdu Translation

In Al-Uyun, the fatwa is currently based on the saying of the 'Sahibayn' (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad) when it is certain that it is a particular person's handwriting, whether it be a matter of judgment or of sighting and testimony, even if the document is not in the hand of the witness. This is because errors are rare and any alteration can be detected. It rarely happens that one's writing is completely identical to another's. Therefore, when there is certainty about the handwriting, it is permissible to rely on it for the convenience of the people. (T)

The writing of a general merchant, money changer, and broker is proof even without a formal preamble, speech, or heading, as they are clearly recognized among people. Likewise, it is necessary for people's

Arabic Text	Urdu Translation
what people write among themselves must be proof based on custom.[2]	mutual correspondence to be considered proof based on custom (Urf). (T)

1. Ghamz Uyun al-Basair with Al-Ashbah, Kitab al-Qada wa al-Shahadat etc., Idarat al-Qur'an wa al-Ulum al-Islamiyya, Karachi, 1/338; Radd al-Muhtar, Bab Kitab al-Qadi ila al-Qadi etc., Mustafa al-Babi, Egypt, 4/393.
2. Radd al-Muhtar, Bab Kitab al-Qadi ila al-Qadi etc., Mustafa al-Babi, Egypt, 4/393.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

...जब वे वहाँ पहुँचे, तो क्या वहाँ के लोगों को शुक्रवार को ईद मनानी थी या नहीं? और क्या रोज़ा तोड़ना ज़रूरी था या नहीं? और इसके सामान्य प्रचार और अन्य शहरों में प्रसार से क्या लाभ था? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

जवाब: वे कागज़ात अन्य शहरों में नहीं भेजे गए थे; वितरित करने वालों ने स्टेशन पर भी दिए, उनमें से कोई ले गया होगा। कुछ लोग पीलीभीत के लिए चाहते थे और उन्हें बता दिया गया कि जब तक दो न्यायप्रिय गवाह न जाएँ कागज़ पर्याप्त नहीं होगा। और दूर के शहरों में उन्हें कैसे भेजा जा सकता था? और अल्लाह सर्वशक्तिमान सबसे बेहतर जानता है।

मसला 182 से 184: राजपूताना चित्तौड़गढ़ से अब्दुल करीम, 18 शव्वाल अल-मुकर्रम 1334 हिजरी। धर्म के विद्वान और सुदृढ़ शरीयत के मुफ्ती इस मसले में इन इबारतों के आधार पर क्या कहते हैं:

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद**
'अलयून' में है: फतवा उस समय 'साहिबैन' (इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद) के कथन पर है जब यह निश्चित हो कि यह अमुक व्यक्ति की लिखावट है, चाहे वह न्याय का मामला हो या चंद्रमा देखने और गवाही का मामला, भले ही दस्तावेज़ गवाह के हाथ में न हो। क्योंकि गलती होना दुर्लभ है और बदलाव का पता लगाया जा सकता है। ऐसा बहुत कम होता है कि एक लिखावट दूसरी लिखावट के पूरी तरह समान हो। अतः जब लिखावट का निश्चय हो जाए, तो लोगों की आसानी के लिए उस पर भरोसा करना जायज़ है।[1]	'अलयून' में है कि फतवा इस समय 'साहिबैन' के कथन पर है जब यह यकीन हो कि यह फलां का खत (लिखावट) है, चाहे वह कज़ा (न्याय) का मामला हो या रूयत (चंद्रदर्शन) और गवाही का, भले ही दस्तावेज़ गवाह के हाथ में न हो। क्योंकि गलती होना दुर्लभ है और तब्दीली (बदलाव) पर इत्तला मुमकिन है। ऐसा बहुत कम होता है कि एक तहरीर दूसरी तहरीर के पूरी तरह समान हो। अतः जब उसे खत का यकीन हो, तो लोगों की आसानी की खातिर उस पर भरोसा करना जायज़ है। (त)
जहाँ तक व्यापारी, सर्राफ और दलाल की लिखावट का प्रश्न है, वह प्रमाण है भले ही उसमें लोगों के बीच प्रसिद्ध कोई औपचारिक शीर्षक न हो। इसी	आम खरीद-फरोख्त करने वाले, सोने-चांदी का सौदा करने वाले और दलाल का खत तमहीद, तक़रीर और उनवान (शीर्षक) के बिना भी

अरबी पाठ

प्रकार, लोग आपस में जो कुछ भी लिखते हैं, उसे प्रथा (उर्फ़) के आधार पर प्रमाण माना जाना अनिवार्य है।[2]

उर्दू अनुवाद

हुज्जत (प्रमाण) है, जो लोगों में स्पष्ट रूप से प्रसिद्ध हैं। और इसी तरह लोगों की आपसी खत-ओ-किताबत (पत्राचार) का उर्फ़(प्रथा) के आधार पर हुज्जत होना वाजिब है। (त)

1. ग़म्ज़ उयूनुल बसायर म'अल अश्बाह, किताबुल कज़ा वश शहादात आदि, इदारातुल कुरान वल उलूमुल इस्लामिया, कराची 1/338; रद्दुल मुहतार, बाब किताबुल काज़ी इलल काज़ी आदि, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र 4/393।
2. रद्दुल मुहतार, बाब किताबुल काज़ी इलल काज़ी आदि, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र 4/393।

پہنچے تو وہاں کے لوگوں کو جمعہ کو عید کرنا تھی یا نہیں اور روزے توڑ دینا ضرور تھے یا نہیں اور اس کی عام تشہیر اور دیگر بلاد میں اشاعت سے کیا مفاد تھا؟ بینوا توجروا

الجواب: وہ پرچے دیگر بلاد میں نہ بھیجے گئے، تقسیم کرنے والوں نے اسٹیشن پر بھی دئے، ان میں سے کوئی لے گیا ہوگا۔ بعض لوگوں نے پہیلی بھیت کے واسطے چاہا اور ان کو جواب دے دیا گیا کہ جب تک دو شاہد عادل لے کر نہ جائیں پرچہ کافی نہ ہوگا اور بلادِ بعیدہ کو کیونکر بھیجے جاتے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۱۸۲ تا ۱۸۴: از راجپوتانہ چتور گڑھ عبدالکریم ۱۸ شوال المکرم ۱۳۳۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ ان عبارات کی بنا پر

عربی عبارت

قال في العيون والفتوى على قولهما اذا تيقن انه خطه سواء كان في القضاء اوالرؤية او الشهادة في الصك وان لم يكن الصك في يد الشاهد لان الغلط نادر واثر التغيير يمكن الاطلاع عليه وقلما يشتبه الخط من كل وجه فاذا تيقن ذلک جاز الاعتماد عليه توسعة على الناس۔ 1

اردو ترجمہ

عیون میں ہے فتویٰ اس وقت صاحبین کے قول پر ہے جب یہ یقین ہو کہ فلاں کا خط ہے خواہ قضاء کا معاملہ ہو یا رؤیت و شہادتِ اشتبام کا، اگرچہ اشتبام گواہ کے ہاتھ میں نہ ہو کیونکہ غلط ہونا نادر الوقوع ہے اور تبدیلی پر اطلاع ممکن ہے اور بہت کم ایسا ہوتا ہے کہ تحریر دوسری تحریر کے کلیۃً مشابہ ہو تو جب اسے خط کا یقین ہو تو لوگوں پر آسانی کی خاطر اس پر اعتماد جائز ہے (ت)

عربی عبارت	اردو ترجمہ
اور اما خط البیاع والصراف والسمسار فھو حجة وان لم یکن مصدرا معنونا یعرف ظاھرا بین الناس وکذلك ما یکتب الناس فیما بینھم یجب ان یکون حجة للعرف۔ [2]	عام خرید وفروخت کرنے والے، سونے چاندی کا سودا کرنے والے اور دلال کا خط تمہید، تقریر اور عنوان کے بغیر بھی حجت ہے جو لوگوں میں واضح طور پر معروف ہیں، اور یونہی لوگو کی آپس کی خط وکتابت عرف کی بناء پر حجت ہونا واجب ہے۔ (ت)

1 غمز عیون البصائر مع الاشباہ کتاب القضاء والشھادات الخ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۱/ ۳۳۸، ردالمحتار باب کتاب القاضی الی القاضی الخ مصطفی البابی مصر ۴/ ۳۹۳ 2 ردالمحتار باب کتاب القاضی الی القاضی الخ مصطفی البابی مصر ۴/ ۳۹۳

Fatawa Razawiyya Volume 10

Question: Can a fatwa be given that for the testimony of moon sighting, a letter from a loved one which clearly appears to be theirs from their style of expression and day-and-night handwriting, is reliable or not? (2) If a letter is not reliable in a religious matter, then how can one trust the fatwas written by scholars from far away? (3) Especially for the moon of Ramadan Sharif, for which instead of testimony, news alone is sufficient, is a letter reliable for that as well or not? Explain and be rewarded.

The Answer: Regarding the command of Allah and His Messenger (Jalla Jalaluhu, and SallAllahu Ta'ala 'Alayhi Wa Sallam), it is stated in all books:

[Arabic Quote]: A written document is not acted upon [alone]; handwriting resembles other handwriting, and a seal resembles another seal.[1] (Urdu translation in brackets: A letter cannot be acted upon. Handwriting resembles handwriting and a seal resembles a seal. -T)

The letters of merchants, money-changers, and Muftis are unanimously exempted against analogy (qiyas) due to people's necessity, and what is against analogy cannot be used as a basis for further analogy. Correspondence between people among themselves (Against analogy, they are proof considering people's needs, and what is against analogy cannot be compared against; correspondence among people is a different matter. -T) is a different thing, and the matter between them and their Lord (The matter between them and their Lord. -T). All the reliable books of the school of thought—texts, commentaries, and fatwas—should be examined; where they mention these few exceptions even with much discussion, is there any exception for the crescent moon sighting? How then is an addition to the Sharia on one's own permissible? The Qadi of the East and West mentioned an exception for a witness's own letter, for which a hundred reasons could be cited and the possibility of confusion regarding one's own handwriting is extremely remote; even they did not consider a letter valid regarding the crescent moon. The Prophet (SallAllahu Ta'ala 'Alayhi Wa Sallam) says: "Indeed, Allah has extended it for its sighting"[2] (Allah Ta'ala has based its determination on sighting. -T) and says:

[Arabic Quote]: Fast upon seeing it [the crescent moon] and break the fast upon seeing it.[3] (Urdu translation in brackets: Fast on seeing the moon and celebrate Eid on seeing the moon. -T)

---

[1] Al-Ashbah wa al-Nazair 8/338 and Al-Hidayah Kitab al-Shahada 3/175 and Fatawa Hindiyyah 3/381 [2] Sunan al-Daraqutni Kitab al-Siyam Hadith 26 Nashr al-Sunnah Multan 2/162 [3] Sahih Bukhari Bab Iza Ra'aytum al-Hilal fa Sumu Qadimi Kutub Khana Karachi 1/256

फतावा रजविया जिल्द 10

प्रश्न: क्या फतवा दिया जा सकता है कि चांद देखने की गवाही के लिए किसी प्रियजन का पत्र, जो उसकी अभिव्यक्ति की शैली और दिन-रात के हस्तलेखन से स्पष्ट रूप से उसका प्रतीत होता है, विश्वसनीय हो सकता है या नहीं? (2) यदि किसी धार्मिक मामले में पत्र विश्वसनीय नहीं होगा, तो दूर-दराज के विद्वानों द्वारा लिखे गए फतवों पर कैसे भरोसा किया जाए? (3) विशेष रूप से रमजान शरीफ के चांद के लिए, जिसके लिए गवाही के बजाय केवल खबर ही पर्याप्त है, क्या उसके लिए भी पत्र विश्वसनीय है या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर (अल-जवाब): अल्लाह और उसके रसूल (अल्लाह की उन पर बरकतें और शांति हो) के आदेश के संबंध में सभी पुस्तकों में स्पष्ट है:

[अरबी उद्धरण]: लिखावट पर [अकेले] अमल नहीं किया जाता; लिखावट, लिखावट के समान होती है और मुहर, मुहर के समान होती है।[1] (उर्दू अनुवाद कोष्ठक में: पत्र पर अमल नहीं किया जा सकता। लिखावट, लिखावट के समान और मुहर, मुहर के समान होती है। -त)

व्यापारियों, सर्राफों और मुफ्ती के पत्रों को सर्वसम्मति से लोगों की आवश्यकता के कारण कयास (तर्क) के विरुद्ध अपवाद माना गया है, और जो कयास के विरुद्ध हो उस पर कयास नहीं किया जा सकता। लोगों के बीच आपसी पत्राचार (लोगों की आवश्यकता के कारण कयास के विरुद्ध प्रमाण हैं और जो कयास के विरुद्ध हो उस पर कयास नहीं किया जा सकता; लोगों का आपसी पत्राचार अलग बात है। -त) एक अलग बात है, और उनके और उनके रब के बीच का मामला (उनके और उनके रब के बीच का मामला है। -त)। पंथ की सभी विश्वसनीय पुस्तकें—मूल ग्रंथ, व्याख्याएं और फतवे—देख ली जाएं जहां वे बहुत चर्चा के साथ इन गिने-चुने अपवादों का उल्लेख करते हैं, क्या कहीं भी अर्धचंद्र (चांद) देखने का अपवाद है? फिर अपनी ओर से शरीयत में वृद्धि करना कैसे जायज हुआ? पूर्व और पश्चिम के काजी ने गवाह के अपने पत्र के लिए अपवाद का उल्लेख किया, जिसके लिए सौ कारण बताए जा सकते हैं और अपने स्वयं के हस्तलेखन के बारे में भ्रम की संभावना अत्यंत कम है; उन्होंने भी चांद के मामले में पत्र को मान्य नहीं माना। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "बेशक अल्लाह ने इसे देखने के लिए विस्तारित किया है"[2] (अल्लाह ताला ने इसका आधार दर्शन पर रखा है। -त) और फरमाते हैं:

[अरबी उद्धरण]: उसे [चांद को] देखकर रोजा रखो और उसे देखकर रोजा खोलो।[3] (उर्दू अनुवाद कोष्ठक में: चांद देखने पर रोजा रखो और चांद देखने पर ईद मनाओ। -त)

---

[1] अल-अशबाह वन-नजायर 8/338 और अल-हिदाया किताब अल-शहादा 3/175 और फतावा हिंदिया 3/381 [2] सुनन अल-दारकुतनी किताब अल-सियाम हदीस 26 नश्र अल-सुन्ना मुल्तान 2/162 [3] सहीह बुखारी बाब इजा रायतुम अल-हिलाल फ सूमू कदीमी कुतुब खाना कराची 1/256

فتوٰی دیا جا سکتا ہے کہ رؤیت ہلال کی شہادت کے لیے کسی عزیز کا خط جو اس کی طرز عبارت اور رات دن کی تحریر سے صاف ظاہر ہوتا ہے کہ یہ ضرور اسی کا خط ہے معتبر ہو سکتا ہے یا نہیں؟ (۲) اگر کسی دینی معاملہ میں خط معتبر نہ ہوگا جو علماء دُور دراز سے فتوٰی تحریر کرتے ہیں اس پر کیسے اعتماد ہو؟ (۳) بالخصوص رمضان شریف کے چاند کے لیے بجائے شہادت کے صرف خبر ہی کافی ہے اس کے لیے بھی خط معتبر ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: حکم اللہ ورسول کے لیے (جل جلالہ، وصلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم) تمام کتب میں تصریح ہے: الخط لایعمل بہ، الخط یشبہ الخط، الخاتم یشبہ الخاتم۔[1] (خط پر عمل نہیں کیا جاسکتا۔ خط، خط کے مشابہ اور مُہر مُہر کے مشابہ ہوتی ہے۔ -ت)

بیاع و صراف و مفتی کے خطوط بالاجماع مستثنٰی ہیں علی خلاف القیاس لضرورۃ الناس و ماکان خلاف القیاس لا یجوز القیاس علیہ۔ مکاتبات ناس فیما بینھم (لوگوں کی ضرورت کے پیشِ نظر خلافِ قیاس حجت ہیں اور جو خلافِ قیاس ہو اس پر قیاس نہیں کیا جاسکتا، لوگوں کی آپس کی خط وکتابت اور چیز ہے۔ -ت) دوسری چیز ہیں اور امر حلال فیما بینھم و بین ربھم (ان کے اور ان کے رب کے درمیان معاملہ ہے۔ -ت) متون و شروح و فتاوٰی تمام کتبِ معتمدہ مذہب دیکھ لیے جائیں جہاں یہ گنتی کے استثناو ہ بھی بہت مباحث کے ساتھ کرتے ہیں کہیں بھی ہلال کا استثناہ ہے تو اپنی طرف سے زیادت فی الشرع کیونکر جائز ہوئی، قاضی الشرق والغرب نے شاہد کے اپنے خط کا استثناء فرمایا جس کے ساتھ سو وجوہ مذکور ہو سکتی ہیں اور اپنے خط کا اشتباہ بغایت بعید ہے انہوں نے بھی کہیں ہلال میں خط کا اعتبار فرمایا، نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: ان اللہ

امدہ لرؤیتہ[2] (اللہ تعالیٰ نے اس کا مدار رؤیت پر رکھا ہے۔ ت) اور فرماتے ہیں: صوموالرؤیتہ وافطر والرؤیتہ۔[3] (چاند دیکھنے پر روزہ رکھو اور چاند دیکھنے پر عید کرو۔ ت)

---

1 الاشباہ والنظائر ۸/ ۳۳۸ والہدایۃ کتاب الشہادۃ ۳/ ۱۷۵ و فتاوٰی ہندیہ ۳/ ۳۸۱ 2 سنن الدارقطنی کتاب الصیام حدیث ۲۶ نشر السنۃ ملتان ۲/ ۱۶۲ 3 صحیح بخاری باب اذارایتم الہلال فصو مواقدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶

It is clarified in all books that whether it is self-sighting or sighting from another place established through a mandatory method—and they detail those mandatory methods as being testimony, or testimony upon testimony, or testimony upon a judgment, or wide-spread report (istifaza) with investigation—a mere narrative, even if recounted by multiple trustworthy and just individuals, is explicitly stated as not acceptable. So much so that even for the crescent of Ramadan, where the word 'ash-hadu' (I testify) is not required, a letter carries no more weight than a mere narrative; in fact, often it cannot even equal it. For example, a postal letter passes through unknown intermediaries, and often arrives via non-believers, as anything is possible. The details are in our treatises. And Allah Almighty knows best.

Problem 185 to 193: From Raipur, CP, Baijnath Para Mohalla, sent by Bahadur Ali Khan, Superintendent Pensioner, Settlement Department, 24 Dhu al-Hijjah 1336 AH. (1) Are reports of the sighting of the crescent via telegram and letter reliable or not? (2) Where the moon is not visible on the 29th, through which means can the sighting of the moon be established according to Imam Azam (may Allah Almighty have mercy on him)? (3) In newspapers, if a date of the month is written, for example, 8 Shaban or 5 Ramadan or 4 Dhu al-Hijjah, but there is no mention of the sighting of the crescent, can the sighting of that month's crescent be established just by the date being written, in places where it wasn't seen on the 29th? (4) This ruling from the jurists that if the moon is not seen on the 29th, 30 days should be completed—is this specific to Ramadan and Eid al-Fitr or for all months? (5) Is it correct to observe fasting, celebrate Eid, or fix the date of any other month according to an almanac (jantri) calculation? (6) If the moon is not visible on the 29th of Shaban and there is a rumor that the moon was sighted, but no one is available to give testimony, is it permissible to offer Tarawih in congregation at night, and is it correct to fast the next morning? (7) This popular saying that the first of Ramadan falls on the same day as the 4th of Rajab, and Ashura falls on the same day as the 1st of Shawwal—is this reliable or not? (8) If one or two people come from somewhere and only say 'it was Eid on such and such a day in our city' without mentioning the sighting of the moon (neither theirs nor others'), can the people of this city celebrate Eid based on this news? (9) If there are clouds on the day of sighting for three consecutive months, can people decide on their own to alternate between 29-day and 30-day months for Eid? And if they celebrate Eid like this without a formal decision, was their prayer valid or

not? And if most city dwellers celebrated Eid this way while fifty or a hundred disagreed and prayed Eid the next day, who is on the right path?

सभी पुस्तकों में यह स्पष्ट किया गया है कि चाहे वह स्वयं की दृष्टि (रौयत) हो या किसी अन्य स्थान की दृष्टि जो अनिवार्य विधि से सिद्ध हो—और वे उन अनिवार्य विधियों का विवरण देते हैं जैसे कि गवाही, या गवाही पर गवाही, या किसी निर्णय पर गवाही, या जांच के साथ व्यापक रिपोर्ट (इस्तिफ़ाज़ा)—एक मात्र विवरण, भले ही उसे कई भरोसेमंद और न्यायप्रिय व्यक्ति कहें, स्पष्ट रूप से स्वीकार्य नहीं है। यहाँ तक कि रमज़ान के चाँद के लिए भी, जहाँ 'अश-हदु' (मैं गवाही देता हूँ) शब्द की आवश्यकता नहीं होती, एक पत्र की अहमियत मात्र एक विवरण से अधिक नहीं होती; वास्तव में, अक्सर यह उसके बराबर भी नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए, डाक का पत्र अज्ञात मध्यस्थों के माध्यम से गुजरता है, और अक्सर गैर-मुस्लिमों के माध्यम से आता है, क्योंकि कुछ भी संभव है। विवरण हमारे शोधपत्रों में हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसाला १८५ से १९३: रायपुर, सी.पी., बैजनाथ पारा मोहल्ला से, बहादुर अली खान, अधीक्षक पेंशनर, बंदोबस्त विभाग द्वारा भेजा गया, २४ ज़ुल-हिज्जा १३३६ हिजरी। (१) चाँद देखने के संबंध में तार और पत्र की खबरें विश्वसनीय हैं या नहीं? (२) जहाँ २९ तारीख को चाँद दिखाई न दे, वहाँ इमाम आज़म (रहमतुल्लाह अलैहि) के अनुसार चाँद की दृष्टि किन-किन माध्यमों से सिद्ध हो सकती है? (३) अखबारों में जो महीने की तारीख लिखी होती है, उदाहरण के लिए ८ शाबान या ५ रमज़ान या ४ ज़ुल-हिज्जा, और चाँद देखने का कोई ज़िक्र नहीं होता, तो क्या केवल तारीख लिखे होने से, उन स्थानों पर जहाँ २९ को चाँद नहीं दिखा, उस महीने के चाँद की दृष्टि सिद्ध मानी जा सकती है? (४) न्यायविदों (फ़ुक़हा) का यह कहना कि यदि २९ को चाँद न दिखे तो ३० दिन पूरे करने चाहिए—क्या यह केवल रमज़ान और ईद-उल-फितर के लिए है या सभी महीनों के लिए? (५) जंत्री (पंचांग) की गणना के अनुसार रोज़ा रखना या ईद मनाना या किसी अन्य महीने की तारीख तय करना सही है? (६) २९ शाबान को चाँद दिखाई न दे और अफवाह हो कि चाँद हो गया है, लेकिन गवाही देने वाला न मिले, तो क्या रात में जमात के साथ तरावीह पढ़ना जायज़ है या नहीं, और सुबह का रोज़ा रखना सही है या नहीं? (७) यह जो मशहूर है कि रजब की चौथी तारीख जिस दिन होती है, उसी दिन रमज़ान की पहली तारीख होती है, और जो शव्वाल की पहली होती है उसी दिन आशूरा होता है—क्या यह विश्वसनीय है या नहीं? (८) यदि कहीं से एक या दो व्यक्ति आकर केवल इतना कहें कि हमारे शहर में फलां दिन ईद थी और चाँद देखने का ज़िक्र न करें (न अपना न दूसरों का), तो क्या इस खबर पर उस शहर के लोग ईद मना सकते हैं? (९) यदि लगातार तीन महीनों तक चाँद देखने के दिन बादल छाए

रहें, तो क्या ऐसी स्थिति में लोग अपनी राय से एक महीना २९ का और एक महीना ३० का मानकर ईद तय कर सकते हैं? और यदि उन्होंने बिना किसी औपचारिक निर्णय के इसी तरह ईद मना ली, तो क्या उनकी नमाज़ हुई या नहीं? और यदि शहर के अधिकांश लोगों ने इसी तरह ईद मनाई और सौ-पचास लोगों ने इसके विपरीत किया और अगले दिन ईद की नमाज़ पढ़ी, तो हक पर कौन है?

पृष्ठ ८३६ में से ३८२

تمام کتب میں تصریح ہے کہ خود رؤیت ہو یا دوسری جگہ کی رؤیت بطریق موجب ثابت ہو اور ان طرق موجبہ کی بھی تفصیل فرماتے ہیں کہ شہادت ہو یا شہادت علی الشہادۃ یا شہادۃ علی الحکم یا استفاضہ مع التحقیق مجرد حکایت اگرچہ متعدد ثقات عدول کریں تصریح ہے کہ مقبول نہیں، حتی کہ ہلال رمضان میں لفظ اشہد کی حاجت نہیں پھر خط کہ حکایت مجردہ سے زیادہ وقعت نہیں رکھتا بلکہ اکثر اوقات اسکے برابر بھی نہیں ہوسکتا جیسے ڈاک کا خط کہ وسائط مجاہیل بلکہ اکثر بذریعہ کفار آتا ہے کیونکہ کوئی چیز ہوسکتا ہے والتفصیل فی رسائلنا (اور تفصیل ہمارے رسالوں میں ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۸۵ تا ۱۹۳: از رائے پور سی پی محلہ بیجناتھ پارہ مرسلہ بہادر علی خاں سپرنٹنڈنٹ پنشنر محکمہ بندوبست ۲۴ ذی الحجہ ۱۳۳۶ھ (۱) رؤیت ہلال کے بارے میں تار اور خط کی خبریں معتبر ہیں یا نہیں؟ (۲) جہاں چاند ۲۹ کو نظر نہ آئے وہاں چاند کی رؤیت امام اعظم رحمۃ اللہ تعالٰی کے نزدیک کن کن ذرائع سے ثابت ہوسکتی ہے؟ (۳) اخباروں کے اندر جو لفظ تاریخ ماہ لکھی ہوتی ہے مثلاً ۸ شعبان یا ۵ رمضان یا ۴ ذی الحجہ، اور رؤیت ہلال کا ذکر نہیں ہوتا تو فقط تاریخ لکھ دینے سے وہاں جہاں ۲۹ کو رؤیت نہ ہوئی اُس ماہ کے ہلال کی رؤیت ثابت ہوسکتی ہے۔ (۴) یہ جو فقہاء نے فرمایا کہ ۲۹ کو اگر چاند نظر نہ آئے ۳۰ دن پورے کرنا چاہئیں تو رمضان اور عید الفطر کے ساتھ خاص یا سب ماہ کے لئے ہے۔ (۵) جنتری کے حساب سے روزہ رکھنا یا عید کرنا یا کسی دیگر ماہ کی تاریخ مقرر کرنا درست ہے۔ (۶) شعبان کی ۲۹ کو چاند نظر نہ آئے اور افواہ ہو کہ چاند ہو گیا ہے لیکن شہادت دینے والا نہ ملے تو شب کو تراویح مع جماعت کرنا جائز ہے یا نہیں اور صبح کو روزہ رکھنا درست ہے یا نہیں؟ (۷) یہ جو مشہور ہے کہ رجب کی چوتھی

جس دن کی ہوتی ہے اسی دن رمضان کی پہلی ہوتی ہے اور جو شوال کی پہلی ہوتی ہے اسی روز عاشورہ ہوتا ہے یہ معتبر ہے یا نہیں؟ (۸) اگر کسی جگہ سے ایک یا دو آدمی آ کر فقط اتنا کہیں کہ ہمارے شہر فلاں دن عید ہے اور چاند کی رؤیت کا ذکر نہ کریں نہ اپنا نہ دوسروں کا، تو ان کی اس خبر پر اس شہر والے عید کر سکتے ہیں یا نہیں؟ (۹) اگر متواتر یا تین ماہ میں رؤیت کے دن ابر ہو جائے تو ایسے موقع پر ایک ماہ ۲۹ کا اور ایک ماہ تیس نکالے کر عید لوگ اپنی رائے سے مقرر کر سکتے ہیں یا نہیں؟ اور اگر یونہی نہیں مقرر کر کے عید کرلی تو نماز ہوئی یا نہیں؟ اور اگر اکثر شہر کے لوگوں نے یونہی عید کی اور سو پچاس نے خلاف کیا اور دوسرے دن نماز عید پڑھی تو حق پر

Fatawa Ridawiyyah, Volume 10

Who is it, many or few?

The Answer:

(1) In the sighting of the moon, telegrams and letters are not at all reliable. The status of a telegram is even worse than a letter because it is neither written by the sender's hand, nor does it have his signature, nor can it have his seal, and the means of delivery are unknown (majahil), in fact, often they are non-believers. Although a letter can be superior to a telegram in all these aspects, all books of the school of law clearly state that a letter is not reliable, nor can it be acted upon, because one handwriting can look like another and one seal like another. It is stated in Al-Ashbah:

[Arabic] No reliance shall be placed on handwriting, nor shall it be acted upon. | Handwriting shall neither be relied upon nor acted upon. (T)

In Hidaya it is stated: [Arabic] Handwriting resembles handwriting, so certain knowledge is not attained. | Writing resembles writing, so certain knowledge will not be obtained from it. (T)

In Alamgiriyyah it is stated: [Arabic] A book can be forged and fabricated; handwriting resembles handwriting and a seal resembles a seal. | Lies and forgery can occur in writing. Handwriting can resemble handwriting and a seal can resemble a seal. (T)

The full detail of this issue is in our treatise 'Azka al-Hilal bi-Ibtal ma Ahdatha an-Nas fi Amr al-Hilal'.

(2) For the proof of the moon (crescent), it is necessary that there be either eye-witness testimony of the sighting, or testimony upon testimony by those witnesses who, according to Shari'ah conditions, have made others witnesses to their testimony, or testimony on the legal ruling of a Shari'ah judge (Hakim-e-Shar'i). This should be in accordance with Shari'ah way or with valid jurisprudential conditions as a formal letter from one judge to another (Kitab al-Qadhi ila al-Qadhi). Or, in a city where there is a Shari'ah judge and by his order fasting and Eid take place, groups of people come from there and unanimously state the ruling of that Shari'ah judge. If none of these exist, then the final resort is to complete the count of thirty (30). That is, if the previous month's sighting occurred or was established by sufficient Shari'ah proof and the moon was not sighted on the 29th of this month, then upon

completion of thirty days, it will definitely be the new moon because a Shari'ah month cannot exceed thirty (30) days. A detailed and reasoned explanation of these methods and their conditions is in our treatise.

Footnotes: 1. Al-Ashbah wa an-Naza'ir, Kitab al-Qada' wa ash-Shahadat wa ad-Da'awi, Idara al-Quran wa al-Ulum al-Islamiyya, Karachi, 1/338 2. Hidaya, Kitab ash-Shahada, Matba' Yusufi, Lucknow, 3/157 3. Fatawa Hindiyya, Chapter 23 in Kitab al-Qadhi ila al-Qadhi, Nurani Kutub Khana, Peshawar, 3/381

फतावा रज़विया, जिल्द दस

कौन है, अधिक या कम?

उत्तर:

(1) चाँद देखने (रुयत-ए-हिलाल) के मामले में तार (टेलीग्राम) और पत्र बिल्कुल भी विश्वसनीय नहीं हैं। तार की स्थिति तो पत्र से भी बदतर है क्योंकि वह न तो भेजने वाले के हाथ का लिखा होता है, न ही उस पर उसके हस्ताक्षर होते हैं, न ही उसकी मुहर हो सकती है और प्राप्त करने के साधन अज्ञात (मजहिल) होते हैं, बल्कि अक्सर गैर-मुस्लिम होते हैं। हालांकि पत्र इन सब कारणों से तार से बेहतर हो सकता है, इसके बावजूद मज़हब की सभी किताबों में स्पष्ट रूप से उल्लेख है कि पत्र का कोई महत्व नहीं है, न ही उस पर अमल किया जा सकता है, क्योंकि एक लिखावट दूसरी लिखावट के समान हो सकती है और एक मुहर दूसरी मुहर के समान हो सकती है। 'अल-अशबाह' में है:

[अरबी] लिखावट पर भरोसा नहीं किया जाएगा और न ही उस पर अमल किया जाएगा। | लिखावट पर न तो भरोसा किया जाएगा और न ही अमल। (त)

'हिदाया' में है: [अरबी] लिखावट लिखावट के समान होती है, इसलिए निश्चित ज्ञान प्राप्त नहीं होता है। | लिखावट लिखावट के समान होती है, तो इससे निश्चित ज्ञान प्राप्त नहीं होगा। (त)

'आलमगीरिया' में है: [अरबी] लिखावट में जालसाजी और बनावट हो सकती है; लिखावट लिखावट के समान होती है और मुहर मुहर के समान। | लिखावट में झूठ और जालसाजी हो सकती है। लिखावट लिखावट के और मुहर मुहर के समान हो सकती है। (त)

इस मसले का पूरा विवरण हमारे शोध पत्र 'अज़का अल-हिलाल बि-इब्ताल मा अहदसा अन-नास फी अम्र अल-हिलाल' में है।

(2) चाँद के प्रमाण के लिए आवश्यक है कि या तो चाँद देखने पर प्रत्यक्ष गवाही हो, या उन गवाहों की गवाही पर गवाही हो जिन्होंने शरीयत की शर्तों के अनुसार अन्य गवाहों को अपनी गवाही का वाहक बनाया हो, या शरीयत के न्यायाधीश (हाकिम-ए-शरई) के शरीयत के आदेश पर गवाही हो। यह शरई तरीके से हो या विश्वसनीय न्यायशास्त्रीय शर्तों के साथ एक काज़ी का दूसरे काज़ी को पत्र (किताब अल-काज़ी इला अल-काज़ी) हो। या जिस शहर में शरई काज़ी हो और उसके आदेश से वहाँ रोज़ा और ईद होते हों, वहाँ से लोगों के समूह आएं और सर्वसम्मति से उस शरई न्यायाधीश का आदेश

बयान करें। और यदि इनमें से कुछ भी न हो, तो अंतिम उपाय के रूप में तीस (30) की गिनती पूरी करनी है। यानी जब पिछले महीने का चाँद देखा गया था या पर्याप्त शरई सबूत से साबित हुआ था और इस महीने की 29 तारीख को चाँद नहीं दिखा, तो तीस दिन पूरे होने पर नया चाँद हर हाल में मान लिया जाएगा, क्योंकि शरई महीना तीस (30) से अधिक नहीं हो सकता। इन तरीकों और उनकी शर्तों का विस्तृत और तर्कपूर्ण विवरण हमारे शोध पत्र में है।

पादलेख: 1. अल-अशबाह व अन-नज़ाइर, किताब अल-क़दा व अश-शहादात व अद-दा'वी, इदारा अल-कुरान व अल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 1/338 2. हिदाया, किताब अश-शहादा, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 3/157 3. फतावा हिंदिया, अध्याय 23, किताब अल-काज़ी इला अल-काज़ी, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 3/381

पृष्ठ 383/836

فتاوی رضویہ، جلد دہم

کون ہے، کثیر یا قلیل؟

الجواب:

(۱) رویت ہلال میں تار اور خط اصلاً معتبر نہیں، تار کی حالت تو خط سے بھی نہایت ردی ہے کہ وہ نہ مرسل کے ہاتھ کا لکھا ہوتا ہے نہ اس پر اس کے دستخط ہوتے ہیں نہ اس کی مہر ہو سکتی ہے اور ذرائع وصول مجاہیل بلکہ اکثر کفار ہوتے ہیں اور خط ان سب وجوہ سے اس پر فائق ہو سکتا ہے بایں ہمہ تمام کتب مذہب میں تصریح ہے کہ خط کا اعتبار نہیں، نہ اس پر عمل ہو سکے کہ خط خط کے مثل ہوتا ہے اور مہر مہر کی مثل بن سکتی ہے۔ اشباہ میں ہے:

لا یعتمد علی الخط لایعمل بہ۔ ۱ | خط پر نہ تو اعتماد کیا جائے گا اور نہ ہی عمل۔ (ت)

ہدایہ میں ہے: الخط یشبہ الخط فلا یحصل العلم۔ ۲ | تحریر تحریر کے مشابہ ہوتی ہے تو اس سے علم یقینی حاصل نہ ہوگا۔ (ت)

عالمگیریہ میں ہے: الکتاب قد یزور ویفتعل والخط یشبہ الخط والخاتم یشبہ الخاتم۔ ۳ | تحریر میں جھوٹ اور جعلسازی ہو سکتی ہے۔ خط خط کے اور مہر مہر کے مشابہ ہو سکتی ہے۔ (ت)

اس مسئلہ کی پوری تفصیل ہمارے رسالہ ازکی الھلال بابطال ما احدث الناس فی امر الھلال میں ہے۔

(۲) ثبوت ہلال کے لیے ضروری ہے کہ یا تو رویت پر عینی شہادت ہو یا عینی شاہدوں نے جن شاہدوں کو حسب شرائط شرعیہ اپنی شہادت کا حامل کیا ہو ان کی شہادت شہادت پر ہو یا حاکم شرعی کے حکم شرعی پر شہادت۔ بروجہ شرعی ہو یا شرائط معتبرہ فقہیہ کے ساتھ کتاب القاضی

الی القاضی ہو یا جس شہر میں قاضی شرع ہو اور اس کے حکم سے وہاں روزہ عید ہوا کرتے ہیں وہاں سے لوگ گروہ کے گروہ آئیں اور بالاتفاق اس حاکم شرع کا حکم بیان کریں، اور ان میں سے کچھ نہ ہو تو اخیر درجہ تیس ۳۰ کی گنتی پوری کرنا ہے یعنی جب اگلے مہینہ کی رویت ہوئی یا کافی ثبوت شرعی سے ثابت ہوئی اور اس مہینے ۲۹ کو رویت نہ ہوئی تو تیس دن پورے ہو کر ہلال خواہی نخواہی ہوگا کہ شرعی مہینہ تیس ۳۰ سے زائد نہیں ہو سکتا، ان طریقوں اور ان کی شرائط کا مفصل اور مدلل بیان ہمارے رسالہ

حواشی: 1 الاشباہ والنظائر کتاب القضاء والشہادات والداوی ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۳۳۸/۱ 2 ہدایہ کتاب الشہادۃ مطبع یوسفی لکھنو ۳/ ۱۵۷ 3 فتاوی ہندیہ الباب الثالث والعشرون فی کتاب القاضی الی القاضی نورانی کتب خانہ پشاور ۳۸۱/۳

Fatawa Razawiyya Volume 10

Regarding the ways to establish the sighting of the crescent moon.

(3) Merely writing the date in newspapers is of no consequence. Even if news of a moon sighting appears in newspapers, it is completely unreliable because it is neither testimony to the sighting (Shahadah ala al-Ru'yat), nor testimony upon testimony (Shahadah ala al-Shahadah), nor testimony upon a ruling (Shahadah ala al-Hukm). Furthermore, a newspaper is nothing but a letter, and it has been established above that a letter is not reliable at all in these matters, especially in the newspaper industry which is proverbial for spreading baseless rumors.

(4) This rule applies to all twelve months. Once, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) raised his ten blessed fingers three times and said: "The month is like this, like this, and like this" [1], meaning it is of thirty (30) days. And once he raised his ten blessed fingers three times but closed one finger at the end and said: "The month is like this, like this, and like this" [2], meaning it is of 29 days. Therefore, no lunar Arabic month—which are the ones considered in the pure Shariah—can be less than 29 days or more than thirty (30). For whichever month the sighting is established by sufficient legal proof, if it is not sighted on the 29th, then by completing 30 days, it will inevitably be the crescent of the next month.

(5) In the pure Shariah, the calculations of an almanac (Jantri) are not considered reliable at all. It is stated in Dur al-Mukhtar: "The statement of the experts in timing (astronomers) does not necessitate a religious obligation." [3]. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "We are an unlettered nation; we neither write nor calculate." [4] (This refers to those who were actual astronomers, not today's almanac-makers who haven't even caught a scent of astronomy. I have seen such gross errors in the very clear solar calendars of famous almanac makers that one would only expect from a senseless person; what then to say of moon sighting calculations? Moon sighting calculation is such a difficult thing that even the accepted leader of astronomers, Ptolemy, surrendered; in the Almagest, he established chapters for the appearance and disappearance of stars and fixed stars but did not touch upon the sighting of the new moon.

(6) In such a situation, it is neither permissible to pray Tarawih at night nor is it lawful to observe the fast of Ramadan in the morning. As for the latter, it is because of the Hadith, and as for the former, it is because congregating for voluntary (Nafil) prayers

is prohibited. Rather, even if they do not pray in congregation and pray twenty (20) Rak'ats alone with the intention of Tarawih, even then according to the Pure Shariah...

---

1 Sahih Bukhari, Chapter: When you see the crescent, fast, Qadimi Kutub Khana Karachi 1/256 2 Sahih Bukhari, Chapter: When you see the crescent, fast, Qadimi Kutub Khana Karachi 1/256 3 Dur al-Mukhtar, Book of Fasting, Matba' Mujtabai Delhi 1/812 4 Sahih Bukhari, Chapter: Saying of the Prophet (PBUH) 'We do not write...', Qadimi Kutub Khana Karachi 1/256; Sunan Abi Dawud, Chapter: The month is twenty-nine, Aftab-e-Alam Press Lahore 7/31

फ़तावा रजविया जिल्द दसवीं

चाँद साबित होने के तरीक़ों के बयान में।

(३) अख़बारों का सिर्फ़ तारीख़ लिखना तो कोई चीज़ नहीं, अख़बारों में अगर चाँद देखने (रूय्यत) की ख़बर छपे तो वह भी महज़ ग़ैर-मोतबर (अविश्वसनीय) है कि न वह गवाही है रूय्यत पर, न गवाही है गवाही पर, न गवाही है हुक्म पर। फिर अख़बार क्या है, एक पत्र ही तो है और ऊपर गुज़रा कि इन मामलात में पत्र बिल्कुल मोतबर नहीं, ख़ास तौर पर अख़बारों की दुनिया जो बेबुनियाद बातें उड़ाने के लिए मशहूर है।

(४) यह हुक्म बारह महीनों के लिए है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने एक बार अपनी दस उंगलियाँ तीन बार उठाकर फ़रमाया: "महीना ऐसे, ऐसे और ऐसे होता है" [१] यानी तीस (३०) दिन का। और एक बार अपनी दस उंगलियाँ तीन बार उठाईं लेकिन अंत में एक उंगली बंद कर ली और फ़रमाया: "महीना ऐसे, ऐसे और ऐसे होता है" [२] यानी २९ दिन का। तो कोई भी क़मरी अरबी महीना, जो शरीअत में मोतबर हैं, न २९ दिन से कम हो सकता है और न ही तीस (३०) से ज़्यादा। जिस महीने की रूय्यत शरई सुबूत से साबित हो और २९ को चाँद नज़र न आए, तो ३० दिन पूरे करने पर वह लाज़मी तौर पर अगले महीने का चाँद होगा।

(५) शरीअत-ए-मुतहहरा में जंतरी (पंचांग) का हिसाब बिल्कुल मोतबर नहीं। 'दुर्रे मुख़्तार' में है: "समय का निर्धारण करने वालों (खगोलशास्त्रियों) का कहना वाजिब होने का कारण नहीं बन सकता।" [३] अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: "हम एक ऐसी उम्मत हैं जो न लिखना जानते हैं और न हिसाब करना।" [४] (यह उनके बारे में है जो वास्तव में खगोलशास्त्री थे, न कि आज कल के जंतरी वालों के बारे में जिन्हें खगोल विज्ञान की हवा भी नहीं लगी। बड़े-बड़े नामी जंतरी बनाने वालों के स्पष्ट सौर कैलेंडरों में ऐसी गंभीर ग़लतियाँ देखी गई हैं जिनकी उम्मीद किसी होशमंद इंसान से नहीं की जा सकती। फिर चाँद के हिसाब का तो कहना ही क्या? चाँद का हिसाब वह मुश्किल चीज़ है जहाँ खगोल विज्ञान के माने हुए इमाम बतलीमूस (टॉलेमी) ने भी घुटने टेक दिए। 'मजिस्ती' में उन्होंने सितारों और ग्रहों के उदय और अस्त होने के लिए अध्याय तो बनाए, लेकिन चाँद दिखने (ज़ुहूर-ए-हिलाल) पर हाथ तक नहीं लगाया।

(६) ऐसी स्थिति में न रात को तरावीह पढ़ना जायज़ है, न सुबह को रमज़ान का रोज़ा रखना हलाल। दूसरी बात (रोज़ा) हदीस की वजह से और पहली बात (तरावीह) नफ़्ल इबादत की तरफ़ लोगों को

बुलाने (तदाई) की मनाही की वजह से है। बल्कि अगर जमात से न पढ़ें और अकेले ही बीस (२०) रकातें तरावीह की नियत से पढ़ें, तब भी शरीअत-ए-मुतहहरा में...

---

१ सहीह बुख़ारी, बाब: जब तुम हिलाल देखो तो रोज़ा रखो, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची १/ २५६ २ सहीह बुख़ारी, बाब: जब तुम हिलाल देखो तो रोज़ा रखो, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची १/ २५६ ३ दुर्रे मुख़्तार, किताबुल सोम, मतबा मुजतबाई दिल्ली १/ ८१२ ४ सहीह बुख़ारी, बाब: नबी (स.) का फ़रमान 'हम नहीं लिखते...', क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची १/ २५६; सुनन अबी दाऊद, बाब: महीना उनतीस का होता है, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर ७/ ३१

طرقِ اثباتِ ہلال میں ہے۔ (۳) اخباروں کا صرف تاریخ لکھنا تو کوئی چیز نہیں، اخباروں میں اگر روئیت کی خبر چھپے تو وہ بھی محض نامعتبر ہے کہ نہ شہادت علی الرویۃ ہے، نہ شہادت علی الشہادت، نہ شہادت علی الحکم، پھر اخبار نہیں مگر ایک خط اور اوپر گزرا کہ ان امور میں خط اصلاً معتبر نہیں، خصوصاً اخباری دنیا کہ بے سروپا اڑانے میں ضرب المثل ہے۔

(۴) یہ حکم بارہ مہینے کے لیے ہے، رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے ایک بار دسوں انگشتانِ مبارک تین دفعہ اٹھا کر فرمایا: الشھر ھکذا وھکذا وھکذا (۱) مہینہ اتنا اور اتنا اور اتنا ہوتا ہے، یعنی تیس (۳۰) دن کا۔ اور ایک بار دسوں انگشت مبارک تین دفعہ اٹھائیں مگر اخیر میں ایک انگشت مبارک بند فرما کر فرمایا: الشھر ھکذا وھکذا وھکذا (۲) مہینہ اتنا اور اتنا اور اتنا ہوتا ہے یعنی ۲۹ دن کا۔ تو کوئی قمری عربی مہینہ کہ یہی شریعتِ مطہرہ میں معتبر ہیں نہ ۲۹ دن سے کم ہوسکتا ہے نہ تیس (۳۰) سے زائد، جس مہینے کی روئیت کافی ثبوت شرعی سے ثابت ہو اور اس کی ۲۹ کو روئیت نہ ہو تو ۳۰ پورے کرکے خواہی نخواہی دوسرے مہینے کا ہلال ہے۔

(۵) شریعتِ مطہرہ میں جنتری کا حساب اصلاً معتبر نہیں، درمختار میں ہے: وقول اولی التوقیت لیس بموجب (۳) (اہل توقیت کا قول سببِ وجوب نہیں بن سکتا۔ت) رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: انا امۃ امیۃ لانکتب ولا نحسب (۴) (ہم بظاہر ان پڑھ ہیں نہ لکھتے ہیں نہ حساب کرتے ہیں۔ت) یہ ان کے بارے میں ہے جو واقعی ہیت داں تھے، نہ کہ آج کل کے جنتری والے جنہیں ہیت کی ہوا بھی نہیں لگی، بڑے بڑے نامی جنتری دانوں کی نہایت واضح تقاویم شمسیہ میں وہ اغلاطِ فاحشہ دیکھے ہیں کہ مدہوش کے سوا دوسرے سے متوقع نہیں تابہ حسابِ ہلال چہ رسد

حسابِ ہلال وہ دشوار چیز ہے جہاں اہل ہیت کے مسلم امام بطلیموس نے گھٹنے ٹیک دئے مجبطی میں ظہور و خفائے کواکب و ثوابت تک کے لیے باب وضع کیا اور ظہورِ ہلال کو ہاتھ نہ لگایا۔

(۶) ایسی صورت میں نہ شب کو تراویح پڑھنی جائز، نہ صبح کو روزہ رمضان رکھنا حلال، اما الثانی فللحدیث واما الاول فللتداعی فی النفل (دوسرا حدیث کی وجہ سے اور پہلا نفل کی طرف تداعی کی وجہ سے منع ہے۔ت) بلکہ اگر جماعت نہ کریں اکیلے ہی بیس ۲۰ رکعتیں پڑھیں اور تراویح کی نیت کریں جب بھی شرع مطہر

---

1 صحیح بخاری باب اذا رایتم الہلال فصومو القدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶ 2 صحیح بخاری باب اذا رایتم الہلال فصومو القدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶ 3 در مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۸۱۲ 4 صحیح بخاری باب قول النبی صلی اللہ علیہ وسلم لانکتب الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶، سنن ابی داؤد باب الشہر یکون تسع و عشرین آفتاب عالم پریس لاہور ۷/ ۳۱

...will be those who increase, as the pure Sharia has prescribed Taraweeh for the nights of Ramadan, and this night is not a night of Ramadan for them. (7) This is completely baseless, and experience also testifies against it, and relying on it is absolutely not permissible according to Sharia. This issue is in al-Bazzaziyya and Khizanat al-Muftin etc. All analogies, calculations, and circumstantial evidence famous among the general public are void and discarded according to Sharia. Reliance is only permissible on those methods mentioned in the answer to the second question and detailed in our treatise 'Turuq Ithbat al-Hilal' (Methods of Proving the Moon Crescent). And Allah knows best. (8) Performing Eid solely on such information is forbidden. It is stated in Fath al-Qadir, Bahr al-Ra'iq, and Alamgiri:

If a group testifies that the people of a town saw the Ramadan crescent a day before you, and they fasted, and according to their calculation today is the thirtieth, while these [witnesses] have not seen the crescent, it is not permissible for them to break the fast tomorrow, nor to leave Taraweeh tonight, because they did not testify to the sighting, nor is it the testimony of others, rather they narrated the sighting of others. And Allah knows best.	If a group testified that the people of a certain city saw the moon of Ramadan a day before you, and they fasted, and according to their calculation today is the thirtieth day, whereas these people themselves had not seen the moon, then it is not permissible for them to leave the next day's fast, nor would it be permissible to leave the Taraweeh of this night because the witnesses' testimony is not on the sighting of the moon, nor is it a testimony upon the testimony of others, but they have only narrated the sighting of others. And Allah knows best. (T)

(9) Until the sighting occurs or is proven by valid Sharia evidence, every month will be taken as thirty days. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"If it is hidden from you, then complete the count to thirty."	"If the moon is hidden from you, then complete the count of thirty." (T)

This rule that one month is 30 and one is 29 is completely false, a fact to which the observation of a just witness testifies. Many consecutive months can be 30, and many can be 29. According to the science of astronomy, four consecutive months can be 30 and three can be 29.

1 Fatawa Hindiyya, Chapter Two on Sighting the Crescent, etc., Nurani Kutub Khana Peshawar, 1/199 2 Sunan al-Daraqutni, Book of Fasting, Hadith 26, Nashr-us-Sunnah Multan, 1/262

फतावा रज़विया, जिल्द दहम

...बढ़ाने वाले होंगे, क्योंकि शरीयत-ए-मुतह्हरा ने रमज़ान की रातों में तरावीह रखी है, और यह रात उनके लिए रमज़ान की रात नहीं है। (७) यह पूरी तरह से निराधार है, और अनुभव भी इसके खिलाफ गवाही देता है, और इस पर भरोसा करना शरीयत के अनुसार बिल्कुल भी जायज़ नहीं है। यह मसला 'अल-बज़्ज़ाज़िया' और 'ख़िज़ानतुल मुफ़्तीन' आदि में है। आम जनता में प्रसिद्ध सभी अनुमान, गणनाएँ और परिस्थितिजन्य प्रमाण शरीयत के अनुसार शून्य और परित्यक्त हैं। केवल उन्हीं तरीकों पर भरोसा करना जायज़ है जिनका उल्लेख दूसरे प्रश्न के उत्तर में किया गया है और हमारे शोध पत्र 'तुरुक़ इस्बातुल हिलाल' (चाँद साबित करने के तरीके) में विस्तार से वर्णित है। और अल्लाह बेहतर जानता है। (८) केवल ऐसी सूचना पर ईद मनाना हराम है। 'फ़त्हुल क़दीर', 'बहरुर राइक़' और 'आलमगीरी' में है:

यदि कोई समूह गवाही दे कि किसी शहर के लोगों ने तुमसे एक दिन पहले रमज़ान का चाँद देखा, और उन्होंने रोज़ा रखा, और उनके हिसाब से आज तीसवां दिन है, जबकि इन (गवाहों) ने चाँद नहीं देखा था, तो उनके लिए कल का रोज़ा छोड़ना जायज़ नहीं है, और न ही आज की रात तरावीह छोड़ना जायज़ होगा, क्योंकि उन्होंने देखने की गवाही नहीं दी, और न ही दूसरों की गवाही पर गवाही है, बल्कि उन्होंने केवल दूसरों के देखने का वर्णन किया है। और अल्लाह बेहतर जानता है।

अगर किसी जमात ने गवाही दी कि फलां शहर वालों ने तुमसे पहले एक दिन रमजान का चांद देखा, और उन्होंने रोजा रखा, उनके हिसाब से आज का दिन तीसवां है जबकि खुद उन लोगों ने चांद नहीं देखा था तो उन को आइंदा दिन का रोजा छोड़ना जायज नहीं, और न ही इस रात की तरावीह को तर्क करना मुबाह होगा क्योंकि गवाहों की चांद की रोय्यत पर गवाही नहीं, और न गैर की शहादत पर गवाही है बल्कि उन्होंने सिर्फ गैर की रोय्यत हिकायत की है। वल्लाहु तआला आलम। (त)

(९) जब तक चाँद न देख लिया जाए या सही शरीयत के सुबूत से साबित न हो जाए, हर महीना तीस दिन का माना जाएगा। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

"अगर (बादल आदि के कारण चाँद) तुम पर छिप जाए, तो तीस की गिनती पूरी करो।"

"चाँद तुम पर पोशीदा रहे तो तीस की गिनती पूरी करो।" (त)

यह नियम कि एक महीना ३० का और एक २९ का होता है, बिल्कुल गलत है, जिसकी पुष्टि न्यायप्रिय गवाहों के अवलोकन से होती है। कई महीने लगातार ३० के हो सकते हैं और कई २९ के। खगोल विज्ञान के अनुसार लगातार ४ महीने ३० के और ३ महीने २९ के हो सकते हैं।

---

१ फतावा हिन्दिया, बाब-२ हिलाल देखने के बारे में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, १/१९९ २ सुनन दारकुतनी, किताबुस सियाम हदीस २६, नश्रुस सुन्ना मुल्तान, १/२६२

پر زیادت کرنے والے ہوں گے کہ تراویح شرع مطہر نے شب ہائے رمضان میں رکھی ہیں اور یہ رات اُن کے لیے شب رمضان نہیں۔ (۷) یہ محض بے اصل ہے اور تجربہ بھی اس کے خلاف پر شاہد، اور اس پر اعتماد شرعاً ہر گز جائز نہیں، والمسئلۃ فی البزازیۃ و خزانۃ المفتین و غیرھما (یہ مسئلہ بزازیہ اور خزانتہ المفتین وغیرہ میں ہے۔ت) تمام قیاسات و حسابات و قرائن کہ عوام میں مشہور ہیں شرعاً باطل و مہجور ہیں صرف انھی طریقوں پر اعتماد جائز ہے جو جواب سوال دوم گزرے اور ہمارے رسالہ طرق اثبات ہلال میں مفصل مذکور ہیں و بس۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (۸) فقط اتنی خبر پر عید کرنا حرام ہے۔ فتح القدیر و بحر الرائق و عالمگیری میں ہے:

لو شھد جماعۃ ان اھل بلدۃ قد رأو اھلال رمضان قبلکم بیوم فصاموا وھذا الیوم ثلثون بحسابھم ولم یرھؤلاء الھلال لایباح فطر غد ولا ترك التراویح فی ھذہ اللیلۃ لانھم لم یشھد وابالرؤیۃ ولا شھادۃ غیرھم وانما حکوا رؤیۃ غیرھم۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

اگر کسی جماعت نے گواہی دی کہ فلاں اہلِ شہر نے تم سے پہلے ایک دن رمضان کا چاند دیکھا، اور انہوں نے روزہ رکھا، ان کے حساب سے آج کا دن تیسواں ہے جبکہ خود ان لوگوں نے چاند نہیں دیکھا تھا تو ان کو آئندہ دن کا روزہ چھوڑنا جائز نہیں، اور نہ ہی اس رات کی تراویح کو ترک کرنا مباح ہوگا کیونکہ گواہوں کی چاند کی رؤیت پر گواہی نہیں، اور نہ غیر کی شہادت پر گواہی ہے بلکہ انہوں نے صرف غیر کی رؤیت حکایت کی ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

(۹) جب تک رؤیت نہ ہو یا ثبوت صحیح شرعی سے ثابت نہ ہو ہر مہینہ تیس کا لیا جائے گا۔

رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

فان غم علیکم فاکملوا العدۃ ثلاثین۔ چاند تم پر پوشیدہ رہے تو تہیں ۳۰ کی گنتی پوری کرو (ت)

یہ قاعدہ کہ ایک مہینہ ۳۰ اور ایک ۲۹ کا محض باطل ہے جس کے بطلان پر مشاہدہ شاہدِ عادل ہے کئی کئی مہینے متواتر ۳۰ کے ہو جاتے ہیں کئی کئی ۲۹ کے، اور علم ہیئت کی رُو سے ۴ مہینے پے درپے ۳۰ کے ہو سکتے ہیں اور تین ۲۹ کے،

---

1 فتاوی ہندیہ الباب الثانی فی رؤیۃ الہلال الخ نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۱۹۹ 2 سنن دار قطنی کتاب الصیام حدیث ۲۶ نشر السنہ ملتان ۱/۲۶۲

Fatawa Razawiyya | Volume 10

[Boxed text] Arabic: كما هو مصرح به فی الزیجات القدیمة والجدیدة و شروحها و احالوه علی التجربة و الاستقراء و منهم من تکلف بیانه بالاستدلال و لم یتم۔ (ت) Urdu Translation: As explicitly stated in old and new astronomical tables (Zijat) and their commentaries, they have entrusted this to experience and induction. Some attempted to explain it through reasoning, but were not successful. (T)

In the pure Shariah, even this inductive limitation of astronomers is not credible. If, by Shar'i evidence, four consecutive months are of 29 days, they will be accepted. For instance, if for six consecutive months the day of the new moon remains cloudy and there is no proof, all months will be taken as 30 days, because "Lan al-thabit la yazulu bi-al-shakk" (Because what is established is not removed by doubt. T). Those who celebrated Eid by taking one month as 30 and another as 29, their Eid and prayer are all void, and they bear four sins:

First: The great sin of intentionally abandoning the Ramadan fast, as it was still Ramadan for them. Second: Performing voluntary (nafl) prayer in a large congregation; the Eid prayer they performed was not actually Eid prayer but pure nafl, and praying nafl in a large congregation is a sin. Third: Abandoning the obligatory Eid prayer, as the next day was Eid for them, but they did not pray on that day. Fourth: Above all, the severe burden of inventing a new ruling in Shariah from one's own heart. Even if it is later confirmed that Eid was actually on the day they prayed, even if the whole city did so. And those who completed the count of thirty and then celebrated Eid, their Eid and prayer are correct, and they are saved from all these sins, even if it is later investigated that Eid was one or two days earlier, even if they were only two individuals. And Allah Almighty knows best.

Issue 193: From Katra, sent by Hafiz Jhannu Khan, 29 Shaban 1300 AH. After the Sunnah greeting, the request is: What is the ruling regarding Tarawih and fasting according to the noble Shariah? The situation is: Maulvi Muhammad Shakrullah Sahib states that according to the calculation of the surroundings of Benares, today's date is 30; the Maulvi Sahib has arrived in Benares. Maulvi Muhammad Ihsan Kareem Sahib states that he saw the moon of Shaban with his own eyes; according to his calculation, today is the thirtieth. Hafiz Habib-ul-Hasan Sahib states that two reliable persons reported seeing the Shaban moon; according to their calculation, today is 30 Shaban. And Maulvi Muhammad Shakrullah Sahib says that several reliable gentlemen reported seeing the Shaban moon, and I was present in Benares.

The Answer: After the Sunnah [greeting], Maulvi Shakrullah Sahib's first statement that according to the calculation of the surroundings of Benares...

[बॉक्स किया हुआ पाठ] अरबी: كما هو مصرح به فى الزيجات القديمة والجديدة و شروحها و احالوه على التجربة و الاستقراء و منهم من تكلف بيانه بالاستدلال و لم يتم۔ (ت)
उर्दू अनुवाद: जैसा कि प्राचीन और आधुनिक खगोलीय तालिकाओं (ज़ीजात) और उनकी व्याख्याओं में स्पष्ट रूप से कहा गया है, उन्होंने इसे अनुभव और आगमन (इंडक्शन) पर छोड़ दिया है। कुछ ने तर्क के माध्यम से इसे समझाने का प्रयास किया, लेकिन वे सफल नहीं हो सके। (त)

पवित्र शरीयत में, खगोलविदों की इस आगमनात्मक सीमा का भी कोई श्रेय नहीं है। यदि शरीयत के प्रमाण से लगातार ४ महीने २९ दिन के हों, तो उन्हें माना जाएगा। उदाहरण के लिए, यदि लगातार छह महीनों तक नए चाँद का दिन बादलों वाला रहे और कोई प्रमाण न मिले, तो सभी महीनों को ३० दिन का माना जाएगा, क्योंकि "لان الثابت لا يزول بالشک" (क्योंकि जो स्थापित है वह संदेह से दूर नहीं होता। त)। जिन लोगों ने एक महीना ३० और दूसरा २९ का मानकर ईद मनाई, उनकी वह ईद और नमाज़ सब अमान्य (बातिल) है और उन पर चार पाप हैं:

पहला: रमज़ान के रोज़े को जानबूझकर छोड़ने का बड़ा पाप, क्योंकि वह दिन उनके लिए रमज़ान का ही था। दूसरा: बड़ी जमात के साथ नफ़्ल नमाज़ पढ़ना; उन्होंने जो ईद की नमाज़ पढ़ी, वह वास्तव में ईद की नमाज़ नहीं थी बल्कि केवल नफ़्ल थी, और बड़ी जमात में नफ़्ल पढ़ना पाप है। तीसरा: वाजिब ईद की नमाज़ को छोड़ना, क्योंकि अगला दिन उनके लिए ईद था, लेकिन उन्होंने उस दिन नमाज़ नहीं पढ़ी। चौथा: इन सब के अलावा, शरीयत में अपने दिल से नया हुक्म गढ़ने का भारी बोझ। भले ही बाद में यह पता चले कि जिस दिन उन्होंने नमाज़ पढ़ी थी, वास्तव में उसी दिन ईद थी, भले ही पूरा शहर ऐसा करे। और जिन्होंने तीस-तीस की गिनती पूरी करके ईद मनाई, उनकी ईद और नमाज़ सब सही हुई और वे इन सब पापों से बच गए, भले ही बाद में जांच से पता चले कि ईद एक या दो दिन पहले थी, भले ही वे केवल दो ही व्यक्ति हों। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला १९३: कटरा से, प्रेषक हाफ़िज़ झन्नू खान, २९ शाबान १३०० हिजरी। सुन्नत सलाम के बाद गुजारिश यह है कि तरावीह और रोज़े के बारे में शरीयत के अनुसार क्या हुक्म है? स्थिति यह है: मौलवी मोहम्मद शक्रुल्लाह साहब का बयान है कि बनारस के आसपास के हिसाब से आज तारीख ३० है; मौलवी साहब बनारस आए हैं। मौलवी मोहम्मद एहसान करीम साहब का बयान है कि उन्होंने अपनी आँखों से शाबान का चाँद देखा, उनके हिसाब से आज तीस है। हाफ़िज़ हबीब-उल-हसन

साहब का बयान है कि दो विश्वसनीय व्यक्तियों ने शाबान का चाँद देखने की सूचना दी, उनके हिसाब से आज ३० शाबान है। और मौलवी मोहम्मद शक्रुल्लाह साहब कहते हैं कि कई विश्वसनीय सज्जनों ने शाबान का चाँद देखने की सूचना दी, और मैं बनारस में मौजूद था।

उत्तर: सुन्नत के बाद, मौलवी शक्रुल्लाह साहब का पहला बयान कि बनारस के आसपास के हिसाब से...

पृष्ठ ३८६ का ८३६

[Boxed text] کما ھو مصرح بہ فی الزیجات القدیمۃ والجدیدۃ و شروحھا و احالوہ علی التجربۃ و الاستقراء و منھم من تکلف بیانہ بالاستدلال و لم یتم۔ جیسا کہ قدیم و جدید زائچوں اور ان کی شروح میں اس پر تصریح ہے اور انہوں نے اسے تجربہ اور تتبع کے سپرد کر دیا ہے بعض نے استدلال کرنے کی کوشش کی وہ کامیاب نہ ہو سکے۔ (ت)

شریعتِ مطہرہ میں ہیئت والوں کی اس تحدید استقرائی کا بھی اعتبار نہیں۔ ثبوتِ شرعی سے اگر ۴ مہینے لگاتار ۲۹ کے ہوں تو مانے جائیں گے، اور مثلاً چھ مہینے متواتر روزِ ہلال ابر رہے اور ثبوت نہ ہو تو سب مہینے ۳۰ کے لیے جائیں گے لان الثابت لا یزول بالشک (کیونکہ ثابت شدہ شے کا زوال شک سے نہیں ہوتا۔ ت) جن لوگوں نے ایک مہینہ ۳۰ ایک ۲۹ کالے کر عید کر لی اُن کی وہ عید اور نماز سب باطل ہوئی اور ان پر چار گناہ رہے:

اوّل: گناہِ عظیم روزہ رمضان کا عمداً ترک کہ وہ اُن کے لیے رمضان تھا۔ دوم: نفل کا بجماعتِ کثیرہ پڑھنا کہ وہ نمازِ عید کہ انہوں نے پڑھی نمازِ عید نہ تھی نافلہ محضہ تھی اور نفل کا جماعتِ کثیر کے پڑھنا گناہ۔ سوم: واجبِ نمازِ عید کا ترک کہ دُوسرے دن اُن کے لیے عید تھی اُس دن نماز نہ پڑھی۔ چہارم: شریعت میں دل سے نیا حکم گھڑنے کا وبالِ شدید سب سے علاوہ، اگر چہ بعد کو تحقیق ہو جائے کہ جس دن انھوں نے نماز پڑھی واقعی اسی دن عید تھی، اگر چہ وہ سارا شہر ہو اور جنہوں نے تیس تیس کی گنتی پوری کر کے عید کی اُن کی عید اور نماز سب صحیح ہوئی اور وہ ان سب گناہوں سے بچے، اگر چہ بعد کو تحقیق ہو کہ عید ایک دن یادو دن پہلے تھی اگر چہ صرف یہ دو ہی شخص ہوں۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۹۳: از کٹڑہ مرسلہ حافظ جُھنّو خاں ۲۹ شعبان ۱۳۰۰ ھ بعد سلام مسنون کے گزارش یہ ہے تراویح اور روزہ کے بارے میں کیا حکم ہے بموجب شرع شریف کے کیفیت یہ ہے مولوی محمد شکر اللہ صاحب کا بیان ہے کہ گرد و نواح بنارس کے حساب سے آج تاریخ ۳۰ ہے مولوی صاحب تشریف بنارس لائے ہیں۔ مولوی محمد احسان کریم صاحب کا یہ بیان ہے کہ بچشم خود چاند شعبان کا دیکھا اس کے حساب سے آج تیس ہے۔ حافظ حبیب الحسن صاحب کا بیان ہے دو شخصوں معتبر نے چاند شعبان کا بیان کیا دیکھنا، اس کے حساب سے آج ۳۰ شعبان ہے اور مولوی محمد شکر اللہ صاحب فرماتے ہیں کہ چند صاحبان معتبر نے چاند شعبان کا دیکھنا بیان کیا اور میں بنارس میں موجود تھا۔

الجواب: بعد از ما ھو المسنون، مولوی شکر اللہ صاحب کا پہلا بیان کہ گرد ونواح بنارس کے حساب سے

Fatawa-e-Razvia Volume 10

Today is the 30th [of the month], which is a mere narration that is not legally acceptable in Sharia. In *Ad-Durr al-Mukhtar*: No [it's not accepted] if they testified to the sighting of others, because it is a narration. (1) | In *Durr Mukhtar* it is stated: If testimony is given based on others' sighting, it will not be accepted because it is a hearsay. (T)

Maulvi Ehsan Karim Sahib is alone, and for the crescent of Sha'ban, the testimony of one person is not reliable. In *Radd al-Muhtar*: And for the remaining nine months, nothing is accepted except the testimony of two men, or one man and two women, who are just (upright), free, and not punished for slander (*qadhf*), as is the case in all other rulings. (2) | In *Radd al-Muhtar* it is stated: For the proof of the remaining nine months, the testimony of one person is not reliable; rather, two men or one man and two women who are just, free, and have not had the punishment of *qadhf* executed upon them, as is the case in other rulings. (T)

The statement of Hafiz Habib-ul-Hasan Sahib and the second discourse of Maulvi Shukrullah Sahib, even if assumed to be 'testimony upon testimony', the number is insufficient. In *Radd al-Muhtar*: Testimony upon testimony is not accepted unless two men, or one man and two women, testify to each person's testimony. (3) | In *Radd al-Muhtar* it is stated: Testimony upon testimony will not be accepted until two men or one man and two women give testimony for each individual's testimony. (T)

In short, not a single one of the statements is credible according to Sharia. A Sharia ruling can only be established through Sharia principles, not based on mere ideas. The horizon of Sha'ban was extremely clear and many people were looking for the moon, but it was not visible to anyone. Now, even if today is the 30th in the sight of Allah, how can Sharia give a ruling without Sharia proof? And Allah Almighty knows best.

Issue 195: From Calcutta, Dharmatala No. 6, sent by Mr. Mirza Ghulam Qadir Baig Sahib, 24 Ramadan-ul-Mubarak 1311 AH. What do the scholars of religion say on this matter: Here in Calcutta, on the evening of Thursday, 29th Sha'ban, the horizon was completely clear. Everyone searched for the moon but there was no sighting. However, a 'Pir' Sahib had predicted that the 1st of Ramadan would be on Friday. His followers started fasting on Friday without a sighting. Now a gentleman, who is perhaps from Baghdad Sharif, has arrived here. That Pir Sahib presented him to confirm his prediction, and he [the gentleman] claimed his own sighting...

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai Delhi, 1/149 2 Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 103/2 3 Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 99/2

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द १० (दसवीं)

आज 30 तारीख है, यह महज एक किस्सा है जो शरीयत में स्वीकार्य नहीं है। 'अद-दुर्र अल-मुख्तार' में है: नहीं (यह स्वीकार्य नहीं है) यदि उन्होंने दूसरों के देखने पर गवाही दी, क्योंकि यह एक किस्सा है। (1) | 'दुर्रे मुख्तार' में है: अगर दूसरों के देखने पर गवाही दी जाए तो वह स्वीकार नहीं होगी क्योंकि यह एक सुनी-सुनाई बात (हिकायत) है। (त)

मौलवी एहसान करीम साहब अकेले हैं और शाबान के चाँद के लिए एक व्यक्ति की गवाही विश्वसनीय नहीं है। 'रद्द अल-मुह्तार' में है: और शेष नौ महीनों के लिए, दो पुरुषों, या एक पुरुष और दो महिलाओं की गवाही के अलावा कुछ भी स्वीकार नहीं किया जाता है, जो न्यायप्रिय (आदिल), स्वतंत्र हों और जिन पर मानहानि (कज़्फ़) की सज़ा लागू न हुई हो, जैसा कि अन्य सभी फैसलों में होता है। (2) | 'रद्द अल-मुह्तार' में है: बाकी नौ महीनों के प्रमाण के लिए एक व्यक्ति की गवाही विश्वसनीय नहीं है, बल्कि दो पुरुष या एक पुरुष और दो महिलाएँ जो आदिल और आज़ाद हों और उन पर 'हदे कज़्फ़' लागू न हुई हो, जैसा कि अन्य अहकाम में है। (त)

हाफ़िज़ हबीबुल हसन साहब का बयान और मौलवी शुक्रुल्लाह साहब का दूसरा बयान, यदि इसे 'गवाही पर गवाही' (शहादत अला शहादत) मान भी लिया जाए, तो संख्या अपूर्ण है। 'रद्द अल-मुह्तार' में है: गवाही पर गवाही तब तक स्वीकार नहीं की जाती जब तक कि प्रत्येक व्यक्ति की गवाही पर दो पुरुष या एक पुरुष और दो महिलाएँ गवाही न दें। (3) | 'रद्द अल-मुह्तार' में है: उस समय तक शहादत पर शहादत स्वीकार नहीं की जाएगी जब तक कि प्रत्येक व्यक्ति की शहादत पर दो पुरुष या एक पुरुष और दो महिलाएँ शहादत न दें। (त)

संक्षेप में, बयानों में से एक भी शरीयत के अनुसार विश्वसनीय नहीं है। शरीयत का हुक्म शरीयत के नियमों के माध्यम से ही स्थापित किया जा सकता है, न कि केवल ख्यालों पर। शाबान का क्षितिज (मत्ला) बहुत साफ था और बहुत से लोग चाँद देख रहे थे, लेकिन किसी को दिखाई नहीं दिया। अब भले ही अल्लाह के नज़दीक आज 30 ही हो, लेकिन शरीयत बिना शरीयत के प्रमाण के हुक्म कैसे दे? और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 195: कलकत्ता धर्मतल्ला नंबर 6 से प्रेषित, जनाब मिर्जा गुलाम कादिर बेग साहब, 24 रमज़ान-उल-मुबारक 1311 हिजरी। दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: यहाँ कलकत्ता में 29 शाबान, गुरुवार की शाम को क्षितिज बिल्कुल साफ था। सभी लोगों ने चाँद की तलाश की लेकिन

चाँद नहीं दिखा। मगर एक पीर साहब ने भविष्यवाणी की थी कि शुक्रवार को रमज़ान की पहली तारीख होगी। उनके मानने वालों ने बिना चाँद देखे शुक्रवार से रोज़ा रख लिया। अब एक साहब, जो शायद बगदाद शरीफ के हैं, यहाँ आए हैं। उन पीर साहब ने अपनी भविष्यवाणी की पुष्टि के लिए उन्हें पेश किया, उन्होंने अपनी चाँद देखने की बात...

1 दुर्रे मुख्तार किताबुस-सौम, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/149 2 रद-उल-मुह्तार किताबुस-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 103/2 3 रद-उल-मुह्तार किताबुस-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 99/2

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

آج تیس ۳۰ ہے مجرد حکایت ہے کہ شرعاً مقبول نہیں۔ في الدر المختار لا لو شهد وابروية غيرهم لانه حكاية ۱ | در مختار میں ہے اگر غیر کے دیکھنے پر گواہی دی تو مقبول نہ ہوگی کیونکہ یہ حکایت ہے (ت)

مولوی احسان کریم صاحب تنہا ہیں اور ہلالِ شعبان میں ایک کی گواہی معتبر نہیں۔ فی ردالمحتار، وبقية الاشهر التسعة فلا يقبل فيها الا شهادة رجلين اور جل و امرأتين عدول احرار غير محدودين كما في سائر الاحكام۔ ۲ | ردالمحتار میں ہے باقی نو مہینوں کے ثبوت کے لیے ایک کی گواہی معتبر نہیں بلکہ دومرد یا ایک مرد اور دو خواتین جو عادل، آزاد ہوں اور حدِ قذف ان پر نافذ نہ ہوئی ہو جیسا کہ دیگر احکام میں ہے۔ (ت)

حافظ حبیب الحسن صاحب کا بیان اور مولوی شکر اللہ صاحب کی دوسری تقریر بالفرض اگر شہادت علی الشہادت مانی جائے تو عدد ناقص، في ردالمحتار لا تقبل ما لم يشهد على شهادة كل رجل رجلان اور جل و امرأتان۔ ۳ | ردالمحتار میں ہے اس وقت تک شہادت پر شہادت قبول نہیں کی جائے گی جب تک ہر ایک شخص کی شہادت پر دومرد یا ایک مرد اور دو خواتین شہادت نہ دیں (ت)

بالجملہ بیانوں میں ایک بھی قابل اعتبار شرعی نہیں حکم شرعی قاعدہ شرعیہ ہی کے طور پر ثابت ہو سکتا، نہ مجرد خیالات پر۔ مطلع شعبان کا نہایت صاف تھا اور بہت آدمی چاند دیکھتے رہے کسی کو نظر نہ آیا، اب اگرچہ عند اللہ آج ۳۰ ہی سہی مگر شرع بے ثبوت شرعی کیونکر حکم دے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۹۵: از کلکتہ دھرم تلا نمبر ۶ مرسلہ جناب مرزا غلام قادر بیگ صاحب ۲۴ رمضان المبارک ۱۳۱۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ یہاں کلکتہ میں ۲۹ شعبان روز پنجشنبہ شام کو مطلع بالکل صاف تھا سب لوگوں نے چاند پر غور کیا رؤیت نہ ہوئی مگر ایک پیر صاحب نے پیش گوئی کی تھی کہ جمعہ کو یکم رمضان ہوگی اُن کے معتقدین نے بلا رؤیت جمعہ سے روزہ رکھ لیا اب ایک صاحب کہ شاید بغداد شریف کے ہیں یہاں آئے، اُن پیر صاحب نے انہیں پیش کیا اپنی پیشگوئی کی تصدیق کے لیے انہوں نے اپنی رؤیت

۱ در مختار کتاب الصوم، مطبع مجتبائی دہلی ، ۱/۱۴۹ ۲ ردالمحتار کتاب الصوم، مصطفیٰ البابی مصر ۱۰۳/۲ ۳ ردالمحتار کتاب الصوم، مصطفیٰ البابی مصر ۹۹/۲

Fatawa-e-Razawiyya Volume Ten

It was stated that the moon was sighted on Thursday evening at the Suez Canal. Then, in the same gathering, another person stood up and said that he and many others saw it in Amritsar on Thursday evening. Similarly, a third person, who had come from elsewhere, separate from that gathering, stated his sighting. However, all these people are followers of that Peer Sahib. In this situation, will the first of Ramadan be determined as Friday, and will fasting on Friday be obligatory for the people of Calcutta and the rest of India? Please clarify and be rewarded.

Answer: In the described scenario, those who acted upon that prediction without a sighting have all become sinners, even if it is now proven by any definitive evidence that the first [of the month] was Friday. At the time they gave the order and acted upon it, it was not Shariah-compliant. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: 'Fast upon sighting [the moon] and break your fast upon sighting [the moon]' (Meaning: keep the fast upon seeing the moon and celebrate Eid upon seeing the moon). Another Hadith states:

Arabic	Urdu Translation
لا تقدموا الشهر حتى ترووا الهلال وتكملوا العدة (الحديث رواه ابوداؤد والنسائی۔)	Do not start the month until you see the crescent moon; rather, complete the count. (Hadith, reported by Abu Dawood and Nasai).

When it comes to fasting on the day of doubt, 'He who fasts on the day of doubt has indeed disobeyed Abu al-Qasim Muhammad (peace and blessings of Allah be upon him).' Thus, declaring it Ramadan despite the horizon not being clear for sighting was an act of severe audacity and disobedience. As for the status of these testimonies according to the well-known and preferred texts and the corrected opinions of great Imams, these testimonies are purely useless and inadmissible. In conditions of a clear sky, the testimony of two or four is of no account; a 'Jam-e-Azeem' (large gathering) is required. And since Muslims did not neglect or show laziness in searching for the crescent moon, as is observed now by the grace of Allah, the need to act upon that narration which says 'two are sufficient' is not established in such a place.

Arabic	Urdu Translation
في الدرالمختار قيل بلاعلة جمع عظيم ليقع العلم	In Ad-Durr al-Mukhtar, it is said that if there is no obstruction (like clouds, etc.), a large gathering is necessary so that

Arabic	Urdu Translation
بخبر هم وهو مفوض الى رأى الامام من غير تقدير	certainty is obtained from their report, and it is delegated to the Imam's judgment without a fixed number. And according to the school of thought, here a gathering [is required].

1. Sahih Bukhari, Chapter: When you see the crescent moon, then fast, Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 1/256
2. Sunan Abi Dawood, Chapter: When the month is hidden, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/318
3. Sahih al-Bukhari, Chapter: When you see the crescent moon, then fast, Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 1/256

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द दहम (10)

नहर स्वेज में गुरुवार की शाम को [चाँद] देखने का बयान किया गया, फिर उसी सभा में दूसरा व्यक्ति खड़ा हुआ कि मैंने और बहुत से लोगों ने अमृतसर में गुरुवार की शाम को [चाँद] देखा, इसी तरह एक तीसरे व्यक्ति ने जो कहीं और से आया था, उसी सभा से अलग अपनी दृष्टि (رؤیت) बयान की, लेकिन ये सभी लोग उन पीर साहब के अनुयायी हैं। इस स्थिति में क्या रमज़ान शरीफ़ का पहला दिन शुक्रवार माना जाएगा और क्या कलकत्ता और भारत के अन्य हिस्सों के लोगों पर शुक्रवार का रोज़ा अनिवार्य होगा? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: पूछे गए मामले में, उस भविष्यवाणी पर और बिना चाँद देखे उस पर अमल करने वाले सभी लोग पापी हुए, भले ही अब किसी भी निश्चित प्रमाण से यह सिद्ध हो जाए कि पहली तारीख़ शुक्रवार थी। जिस समय उन्होंने आदेश दिया और उस पर अमल किया, उस समय वह शरिया के अनुसार नहीं था। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: 'صوموا الرؤیته وافطر والروئیته' (चाँद देखकर रोज़ा रखो और चाँद देखकर ही ईद करो)। दूसरी हदीस में है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
لا تقدموا الشهر حتى تروا الهلال وتكملوا العدة (الحديث رواه ابوداؤد والنسائی۔)	चाँद देखने से पहले महीने को शुरू न करो बल्कि गिनती पूरी करो, अल-हदीस, इसे अबू दाऊद और नसाई ने रिवायत किया है।

जब शक के दिन के रोज़े के बारे में है कि 'जिसने [शक के दिन] रोज़ा रखा, उसने अबुल कासिम मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की अवज्ञा की।' तो चाँद दिखाई देने की स्थिति न होने के बावजूद रमज़ान घोषित कर देना कैसी घोर धृष्टता और अवज्ञा थी। रही बात उन गवाहियों की जो प्रसिद्ध और चुने हुए ग्रंथों और बड़े इमामों के अनुसार हैं, तो ये गवाहियाँ बिल्कुल व्यर्थ और अमान्य हैं क्योंकि साफ़ आसमान की स्थिति में दो-चार की गवाही से कुछ नहीं होता, एक बड़ी जमात (जम-ए-अज़ीम) चाहिए। और चूँकि मुसलमानों ने चाँद ढूँढने में कोई कमी या आलस्य नहीं दिखाया जैसा कि अब यहाँ प्रत्यक्ष है, तो ऐसी जगह उस रिवायत पर अमल करने की आवश्यकता भी सिद्ध नहीं होती कि दो गवाह काफ़ी हैं।

अरबी	उर्दू अनुवाद
في الدرالمختار قيل بلاعلة جمع عظيم ليقع العلم بخبر هم وهو مفوض الى رأى الامام من غير تقدير	दुर्र-ए-मुख्तार में है कि अगर बादल आदि न हों, तो एक बड़ी जमात की गवाही ज़रूरी है ताकि उनकी ख़बर से विश्वास (यकीन) प्राप्त हो जाए, और यह बिना किसी निश्चित संख्या के इमाम के विवेक पर छोड़ दिया गया है। और पंथ के अनुसार यहाँ जमात [चाहिए]।

1. सहीह बुखारी, अध्याय: जब तुम चाँद देखो तो रोज़ा रखो, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/256
2. सुनन अबू दाऊद, अध्याय: जब महीना छिप जाए, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 1/318
3. सहीह अल-बुखारी, अध्याय: जब तुम चाँद देखो तो रोज़ा रखो, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/256

نہر سویز میں شام پنجشنبہ کی بیان کی، پھر اسی جلسہ میں دوسرا شخص کھڑا ہوا کہ میں نے اور بہت آدمیوں نے امر تسر میں شام پنجشنبہ کو دیکھا، یو نہی تیسرے شخص نے کہ وہ بھی کہیں سے آیا ہے اُس جلسہ سے جدا اپنی رؤیت بیان کی مگر یہ سب لوگ اُن پیر صاحب کے موافقین ہیں اس صورت میں رمضان شریف کی پہلی بروز جمعہ قرار پائیگی اور روزہ جمعہ کا کلکتہ والوں اور دوسرے ہندوستان پر فرض ہو گا یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: صورتِ مستفسرہ میں وہ پیشگوئی اور بلا رؤیت اس پر عمل کرنے والے سب گنہگار ہوئے اگرچہ اب کیسے ہی قطعی ثبوت سے یکم جمعہ کی ثابت ہو جائے کہ جس وقت انہوں نے حکم دیا اور عمل کیا تھا اُس وقت شرعی نہ تھا ، رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں : صومو الرؤیتہ وافطر والروئیتہ (چاند دیکھ کر روزہ رکھو اور چاند دیکھ کر ہی عید کروت)

دوسری حدیث میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
لا تقدموا الشھر حتی ترووا الھلال چاند دیکھنے سے پہلے مہینے کو شروع نہ کرو بلکہ گنتی وتکملوا العدۃ (الحدیث رواہ ابوداؤد پوری کرو، الحدیث، اسے ابوداؤد اور نسائی نے روایت کیا والنسائی۔)	ہے (ت)

جب صومِ شک کے لیے ہے قد عصی ابا القاسم محمد (صلی اللہ تعالی علیہ وسلم اُس نے محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کی نافرمانی کی۔ تو با وصفِ مطلع رؤیت نہ ہونے پر رمضان بنالینا کیسی سخت بیباکی و نافرمانی تھی، رہا ان گواہیوں کا حال مذہب مشہور و مختار متون و

مصحح کبار ائمہ پر ، تو یہ شہادت محض مہمل و نا مسموع ہیں کہ بحالت صفائی مطلع دو چار کی شہادت سے کچھ نہیں ہوتا جمع عظیم چاہئے، اور جبکہ مسلمین نے تلاش ہلال میں تقصیر و تکاسل کو راہ نہ دی جیسا کہ بحمد اللہ تعالی اب یہاں مشاہد ہے، تو ایسی جگہ اُس روایت پر عمل کی بھی ضرورت متحقق نہیں کہ دو کافی ہیں۔

عربی متن	اردو ترجمہ
في الدرالمختار قيل بلاعلة جمع عظيم ليقع العلم بخبر هم وهو مفوض الى رأى الامام من غير تقدير	در مختار میں ہے کہ اگر بادل وغیرہ نہ ہو تو ایک بڑی جماعت کی گواہی ضروری ہے تاکہ ان کی خبر سے یقین حاصل ہو جائے اور مذہب کے مطابق یہاں جماعت

1 صحیح بخاری باب اذا رائیتم الهلال فصو موا قدیمی کتب خانہ کراچی ۲۵۶/۱ 2 سنن ابی داؤد باب اذا غنی الشهر آفتاب عالم پریس لاہور ۳۱۸/۱ 3 صحیح البخاری، باب اذارائیتم السلال فصوموا، قدیمی کتب خانہ کراچی، ۲۵۶/۱

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Arabic Text in Left Column]: ...afterwards according to the school of thought, and it is narrated from the Imam that two witnesses are sufficient. This was chosen in 'al-Bahr' (as summarized in Radd al-Muhtar). His saying, "it is delegated," as stated in 'as-Siraj': "The correct view is that it is delegated to the opinion of the Imam. If the truth of what they testified to enters his heart and the witnesses are numerous, he should command fasting." This is what was authenticated in 'al-Mawahib' and followed by ash-Shurunbulali. In 'al-Bahr', citing 'al-Fath', it is said: "The truth is that consideration is given to the arrival of reports and their mass-transmission (tawatur) from every side." In 'an-Nahr', it says this is consistent with what was authenticated in 'as-Siraj'. Ponder upon it. His saying: "He chose it in al-Bahr," where he said: "It is appropriate to act upon this narration in our time, because people have become lazy in sighting the crescents. Thus, the statement of [the jurists] regarding rejecting the report of a single person when many people were seeking it does not apply here, as the error of that individual is not apparent." [summarized]

[Urdu Text in Right Column]: There is no fixed number; rather, it depends on the judge's opinion. It is also narrated from the Imam that two witnesses are sufficient, and this was chosen in 'al-Bahr'. (Summarized from Radd al-Muhtar). Regarding the statement "it is delegated," it is in 'as-Siraj' that the correct view is it depends on the judge's opinion. If, based on the testimony and the abundance of witnesses, certainty of its correctness arises in his heart, he should order fasting. This is what was authenticated in 'al-Mawahib' and followed by ash-Shurunbulali. In 'al-Bahr', from 'al-Fath', it is stated that the truth is the consideration for proof is the arrival of news from every side and its frequency (tawatur). In 'an-Nahr', it says this is consistent with what was authenticated in 'as-Siraj'. Ponder upon it. The statement that 'al-Bahr' chose it means: the text of 'al-Bahr' is that in our time, this narration should be acted upon because people are lazy in sighting the moon. Therefore, the statement of the jurists regarding rejecting the report of one person—that when many people seek it and only one person sees it, then his report's error is not apparent—ends. (Summarized) (Translator).

However, the preferred view is that when there is a specific quality in the witness such that his seeing it while others do not is not considered unlikely—for example, ordinary people were in the city and he saw it in the wilderness, or they were on the ground and he saw it from a height—then for the crescent of Ramadan, the

testimony of even one such person will be accepted, provided he is a legally acceptable witness.

[Final Row]: In 'ad-Durr al-Mukhtar', and it was authenticated in 'al-Aqdiyah', that it is sufficient to rely on one person if he comes from outside the city. In 'Durr al-Mukhtar' and declared correct in 'al-Aqdiyah' that one witness's testimony may be considered sufficient.

Footnotes: 1. Ad-Durr al-Mukhtar, Kitab as-Sawm, Mujtabai Press Delhi, 8/141. 2. Radd al-Muhtar, Kitab as-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/101.

फतावा रज़विया जिल्द दस

[बायां कॉलम - अरबी पाठ]: ...बाद में मज़हब के अनुसार, और इमाम से रिवायत है कि दो गवाह पर्याप्त हैं। 'अल-बहर' में इसे चुना गया है। (रद्द अल-मुह्तार में संक्षिप्त)। 'मुफव्वज़' (सौंपा गया) कथन के बारे में 'अस-सिराज' में है कि यही सही है कि यह इमाम (काजी) की राय पर निर्भर है। यदि गवाही और गवाहों की अधिकता के आधार पर उसके दिल में इसकी सत्यता का विश्वास हो जाए, तो वह रोज़े का आदेश दे। 'अल-मवाहिब' में इसी को प्रमाणित किया गया है और 'शुरुनबुलाली' ने इसका अनुसरण किया है। 'अल-बहर' में 'अल-फ़तह' से है कि सच यह है कि प्रमाण के लिए हर तरफ से खबर आने और उसके'तवातुर' का महत्व है। 'अन-नहर' में है कि यह उसी के अनुकूल है जिसे 'अस-सिराज' में प्रमाणित किया गया है। विचार करें। 'अल-बहर' ने इसे चुना है, इसका अर्थ है: 'अल-बहर' का कथन है कि हमारे समय में इसी रिवायत पर अमल होना चाहिए, क्योंकि लोग चाँद देखने में सुस्ती करते हैं। अतः फुकहा (धर्मशास्त्रियों) का एक व्यक्ति के देखने और उसकी खबर को खारिज करने के बारे में यह कहना कि बहुत से लोगों की तलाश के बावजूद वहाँ सिर्फ एक व्यक्ति को दिखाई देता है तो उसकी खबर का गलत होना गैर-ज़ाहिर है, समाप्त होता है। [संक्षिप्त]

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ]: संख्या का कोई निर्धारण नहीं है, बल्कि यह काजी की राय पर निर्भर है और इमाम से यह भी मयस्सर है कि दो गवाह काफी हैं, बहर में इसे चुना गया है अह् संक्षिप्त। रद्द अल-मुह्तार में क़ौले मुफव्वज़, सिराज में है कि यही सही है कि काजी की राय पर मुनहसिर है कि अगर गवाही और कसरत-ए-शहूद की बिना पर उसके दिल में इसकी सेहत का यकीन हो जाए तो वह रोज़े का हुक्म दे अह् मवाहिब में इसी की तसहीह की है, और इसी की इत्तिबा शुन्नबुलाली ने की है, और बहर में फतह से है कि हक यह है कि हर जानिब से खबर के आने और तवातुर से इसके सबूत का एतबार है अह् और नहर में है कि यह इसी के मुवाफिक है जिसकी तसहीह सिराज में है तअम्मुल, क़ौले बहर ने इसी को अख्तियार किया है, इबारत-ए-बहर यह है हमारे ज़माने में इस रिवायत पर अमल होना चाहिए, क्योंकि लोग चाँद देखने में सुस्ती करते हैं, तो इससे फुकहा का एक शख्स के देखने और उसकी खबर को रद करने के मुतल्लिक यह कौल कि कसीर लोगों की तलब-ओ-तलाश के बावजूद वहां एक शख्स को नज़र आता है तो उस एक की खबर का गलत होना गैर-ज़ाहिर है, ख़त्म हो जाता है अह् मुख्तसर (त)।

मगर राजिह यह है कि जब शाहिद में कोई खुसूसियत-ए-खालसा ऐसी हो जिससे उसका देखना और औरों को नज़र न आना मुस्तबअद (असंभव) न रहे, मसलन आम लोग शहर में थे उसने जंगल में

देखा या वह ज़मीन पर थे उसने बुलंदी पर देखा तो दोबारा हिलाल-ए-रमज़ानुल मुबारक ऐसे एक की भी गवाही मक़बूल होगी जबकि वह शरअन काबिल-ए-क़बूल शहादत हो।

[अंतिम पंक्ति]: 'अद-दुर्र अल-मुख्तार' में है और 'अल-अक़्ज़िया' में सही माना गया है कि अगर कोई शहर के बाहर से आए तो एक की गवाही पर्याप्त है। 'दुर्र-ए-मुख्तार' में है और 'अल-अक़्ज़िया' में सही करार दिया गया है कि एक की गवाही पर इक्तिफ़ा (निर्भरता) कर लिया जाए।

फुटनोट्स: 1. दुर्र-ए-मुख्तार किताबुस सौम मज़बा मुज्तबाई दिल्ली 8/141 2. रद अल-मुह्तार किताबुस सौम मुस्तफा अल-बाबी मिस्र 2/101

पृष्ठ 389/836

بعد علی المذھب و عن الامام انہ یکتفی بشاھدین واختارہ في البحر اہ ملخصاً في رد المحتار قولہ وھو مفوض قال في السراج الصحیح انہ مفوض الی رأی الامام ان وقع في قلبہ صحۃ ما شھدوا بہ و کثرت الشھود امر بالصوم اہ کذا صححہ في المواھب وتبعہ الشرنبلالي وفی البحر عن الفتح والحق ان العبرۃ بمجئ الخبر وتواترہ من کل جانب اہ وفي النھر انہ موفق لما صححہ في السراج تأمل، قولہ واختارہ في البحر حیث قال وینبغي العمل علی ھذہ الروایۃ في زماننا لان الناس تکاسلت عن ترائی الاھلۃ فانتفی قولھم مع توجھھم طالبین لماتوجہ ھو الیہ فکان التفرد غیر ظاھر في الغلط الخ اہ ملخصاً۔

کی تعداد کا کوئی تعین نہیں بلکہ قاضی کی رائے پر منحصر ہے اور امام سے یہ بھی مروی ہے کہ دو گواہ کافی ہیں، بحر میں اسے اختیار کیا گیا ہے اھ ملخصاً ردالمحتار میں قولہ مفوض، سراج میں ہے کہ یہی صحیح ہے کہ قاضی کی رائے پر منحصر ہے کہ اگر گواہی اور کثرت شہود کی بنا پر اس کے دل میں اس کی صحت کا یقین ہو جائے تو وہ روزے کا حکم دے اھ مواہب میں اسی کی تصحیح کی ہے، اور اسی کی اتباع شرنبلالی نے کی ہے، اور بحر میں فتح سے ہے کہ حق یہ ہے کہ ہر جانب سے خبر کے آنے اور تواتر سے اس کے ثبوت کا اعتبار ہے اھ اور نہر میں ہے کہ یہ اسی کے موافق ہے جس کی تصحیح سراج میں ہے تامل، قولہ بحر نے اسی کو اختیار کیا ہے، عبارت بحر یہ ہے ہمارے زمانے میں اس روایت پر عمل ہونا چاہئے، کیونکہ لوگ چاند دیکھنے میں سستی کرتے ہیں، تواس سے فقہاء کا ایک شخص کے دیکھنے اور اس کی خبر کو رد کرنے کے متعلق یہ قول کہ کثیر لوگوں کی طلب و تلاش کے باوجود وہاں ایک شخص کو نظر آتا ہے تو اس ایک کی خبر کا غلط ہونا غیر ظاہر ہے، ختم ہو جاتا ہے الخ اھ ملخصاً (ت)

مگر راجح یہ ہے کہ جب شاہد میں کوئی خصوصیت خالصہ ایسی ہو جس سے اُس کا دیکھنا اور اوروں کو نظر نہ آنا مستبعد نہ رہے، مثلاً عام لوگ شہر میں تھے اس نے جنگل میں دیکھا یا وہ زمین پر تھے اس نے بلندی پر دیکھا تو دوبارہ ہلال رمضان المبارک ایسے ایک کی بھی گواہی مقبول ہو گی جبکہ وہ شرعاً قابل قبول شہادت ہو،

في الدر المختار و صحح في الاقضية الاكتفاء بواحد ان جاء من خارج البلد او در مختار میں ہے اور الاقضیہ میں صحیح قرار دیا ہے کہ ایک کی گواہی پر اکتفاء کر لیا جائے

1 در مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۸/۱۴۱ 2 رد المحتار کتاب الصوم مصطفی البانی مصر ۱۰۱/۲

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Box 1] Arabic: "He was on an elevated place and Zahir al-Din preferred it." 1 Urdu: When he comes from outside the city or is at a high place, Zahir al-Din has preferred this (T).

[Main Body Paragraph 1] Regarding the queried matter, the mentioned specialty in 'Shahid Baghdadi' is certainly present. If this statement is correct, then firstly, it is far from habitation, and secondly, the river's air is cleaner than dust and smoke. Furthermore, the longitude of Calcutta is so much greater than the Suez Canal that more than a quarter of the night passes in Calcutta when it is evening there. During this period, the moon will move further away from the sun, making its sighting easier. In fact, this reason applies to the witness from Amritsar as well, that even at a minimum difference of 27 miles in longitude, such a difference is possible: "As Al-Taj al-Tabrizi al-Shahi relied upon from the commentary of Al-Minhaj by Al-Ramli." (Arabic) As Taj al-Tabrizi Shami has relied upon this, citing from Ramli's commentary on Al-Minhaj (T). Now it remains to be seen whether the witness himself is acceptable in testimony or not. If, along with the mentioned specialty, even one witness is of 'Mastoor al-Hal' (unknown character)—meaning it is not apparent from his attire, profession, livelihood, speech, etc., that he commits major sins or persists in minor sins or exhibits undignified behavior, nor are these matters known through any other means—then based on this, the testimony of a 'Mastoor' regarding the crescent of the blessed month of Ramadan is also acceptable.

[Box 2] Arabic: "As Imam Abu Abdullah al-Hakim al-Shahid stated in Al-Kafi." Urdu: As Imam Abu Abdullah Al-Hakim Shaheed has explicitly stated in Al-Kafi (T).

[Main Body Paragraph 2] Accepting his testimony, the makeup fast (qada) of Friday will be performed. However, if looking at the witness's condition and his intense devotion to the aforementioned elder, he becomes suspected of telling a lie to support him—as is the case today with many indifferent people towards their self-made sheikhs—then certainly his testimony will not be heard, because suspicion is also among the reasons for rejecting testimony.

[Box 3] Arabic: "In Al-Durr al-Mukhtar: A great leader made a claim and his officials, subordinates, and subjects testified for him, it is not accepted. Al-Ramli said: It is deduced from this that the testimony of his servants who are constantly with him, just as a slave's constant presence with his master, is likewise not accepted, and it is obvious." 2 Urdu: In Durr al-Mukhtar, it is written: If a high-ranking official makes a

claim and his employees, deputies, and subjects give testimony on it, then it will not be acceptable. (Ah) Allama Ramli says that it branches off from this that the testimony of his personal servants is just like the testimony of a slave in favor of his master, so that too is acceptable [Note: The Urdu text says 'acceptable', though the context and Arabic suggest 'not acceptable'].

[Footnotes] 1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Mujtabai Press, Delhi, 1/148. 2. Durr al-Mukhtar, Bab al-Qabul wa-Adamihi, Mujtabai Press, Delhi, 2/94.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

[बॉक्स 1] अरबी: "वह एक ऊंचे स्थान पर था और ज़हीर अल-दीन ने इसे पसंद किया।" 1 उर्दू: जब वह शहर के बाहर से आया हो या वह किसी ऊंचे स्थान पर हो, ज़हीर अल-दीन ने इसे पसंद किया है (त)।

[मुख्य अनुच्छेद 1] पूछताछ की गई बात में, 'शाहिद बग़दादी' में उल्लेखित विशेषता निश्चित रूप से है कि यदि यह बयान सही है तो एक तो आबादी से दूर, दूसरा नदी कि जिसकी हवा धूल और धुएँ से साफ़ होती है। फिर कलकत्ता का देशांतर स्वेज नहर से इतना अधिक है कि कलकत्ता में पहर भर से अधिक रात गुज़र जाती है जब वहां शाम होती है। इस अवधि में चांद सूरज से और अधिक हट जाएगा और दर्शन आसान होगा। बल्कि यह कारण अमृतसर के गवाह में भी है कि देशांतर में न्यूनतम 27 मील के अंतर पर ऐसा फर्क संभव है: "जैसा कि अल-ताज अल-तबरीज़ी अल-शाही ने अल-रमल द्वारा अल-मिन्हाज की व्याख्या से इस पर भरोसा किया है।" (अरबी) जैसा कि ताज तबरीज़ी शामी ने रमली की शरह मिन्हाज से उद्धृत करते हुए इस पर भरोसा किया है (त)। अब यह देखना रह गया कि गवाह खुद भी गवाही में स्वीकार्य है या नहीं। यदि उल्लेखित विशेषता के साथ एक गवाह भी 'मस्तूर अल-हाल' (अज्ञात चरित्र) है—यानी उसके पहनावे, पेशे, आजीविका, बातचीत आदि से यह ज़ाहिर नहीं है कि वह कबीरा (बड़े पाप) करता है या सगीरा (छोटे पाप) पर अड़ा रहता है या हल्की हरकतें करता है, न ही किसी अन्य तरीके से ये बातें मालूम हैं—तो इस आधार पर रमज़ानुल मुबारक के चांद के बारे में 'मस्तूर' की गवाही भी स्वीकार्य है।

[बॉक्स 2] अरबी: "जैसा कि इमाम अबू अब्दुल्ला अल-हाकिम अल-शहीद ने अल-काफी में स्पष्ट किया है।" उर्दू: जैसा कि इमाम अबू अब्दुल्ला अल-हाकिम शहीद ने अल-काफी में स्पष्ट किया है (त)।

[मुख्य अनुच्छेद 2] उसकी गवाही मानकर शुक्रवार के रोज़े की कज़ा की जाएगी। लेकिन यदि गवाह की हालत और उल्लेखित पीर (गुरु) के प्रति उसकी तीव्र श्रद्धा को देखते हुए वह उसकी बात को सच साबित करने के लिए संदिग्ध ठहराया जाता हो—जैसा कि आजकल बहुत से लापरवाह लोगों का अपने स्वयं निर्मित शेखों के साथ हाल है—तो निश्चित रूप से उसकी गवाही नहीं सुनी जाएगी क्योंकि संदेह भी गवाही खारिज करने के कारणों में से है।

[बॉक्स 3] अरबी: "अल-दुर्र अल-मुख्तार में: एक बड़े अमीर ने दावा किया और उसके कर्मचारियों, अधीनस्थों और प्रजा ने उसके लिए गवाही दी, यह स्वीकार नहीं किया जाता है। अल-रमल ने कहा: इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि उसके नौकरों की गवाही, जो उसके साथ लगातार रहते हैं, जैसे दास का अपने स्वामी के साथ लगातार रहना, वैसे ही स्वीकार नहीं की जाती है, और यह स्पष्ट है।" 2 उर्दू: दुर्रे मुख्तार में है: किसी बड़े अमीर ने दावा किया और उसके कर्मचारियों, नायबों और प्रजा ने उस पर गवाही दी तो यह स्वीकार्य नहीं होगी। (अह) अल्लामा रमली कहते हैं कि इससे यह शाखा निकलती है कि उसके सेवारत नौकरों की गवाही उसी तरह है जैसे गुलाम की गवाही उसके स्वामी के पक्ष में हो, तो वह भी स्वीकार्य [नोट: उर्दू पाठ में 'मक़बूल' लिखा है, लेकिन संदर्भ और अरबी पाठ के अनुसार यह 'ना-मक़बूल' होना चाहिए]।

[पाद टिप्पणियाँ] 1. दुर्रे मुख्तार, किताब अल-सॉम, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/148। 2. दुर्रे मुख्तार, बाब अल-क़ुबूल व अदमिही, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/94।

فتاوی رضویہ جلد دہم

[پہلا خانہ] کان علی مکان مرتفع و اختارہ ظھیر الدین۔ 1 جب وہ خارج شہر سے آیا ہو یا وہ کسی بلند جگہ پر ہو اسے ظہیر الدین نے پسند کیا ہے (ت)

[پہلا پیراگراف] صوت مستفسرہ میں شاہد بغدادی میں خصوصیت مذکورہ تو بیشک ہے کہ اگر یہ بیان صحیح ہے تو ایک تو آبادی سے دور، دوسرے دریا کہ اس کی ہوا گرد و غبار و دُخان سے صاف تر ہوتی ہے، پھر کلکتہ کا طول بلد نہر سوئز سے اتنا زائد کہ کلکتہ میں پہر بھر رات سے زائد گزر لیتی ہے تو وہاں شام ہوتی ہے، اس مدت میں چاند آفتاب سے اور زیادہ ہٹ آئے گا اور رویت آسان تر ہوگی بلکہ یہ وجہ گواہ امر تسری میں ہے کہ اقل درجہ بہتر ۲۷ میل کے تفاوت طول پر ایسا فرق ممکن ہے : کما اعتمد علیہ التاج التبریزی الشاھی عن شرح المنھاج للرملی۔ جیسا کہ اس پر تاج تبریزی شامی نے رملی کی شرح منہاج سے نقل کرتے ہوئے اعتماد کیا ہے (ت) بس یہ دیکھنا رہا گواہ خود بھی مقبول الشہادۃ ہیں یا نہیں، اگر خصوصیت مذکورہ کے ساتھ ایک گواہ بھی مستور الحال تک ہے یعنی اس کے وضع لباس حرفت معیشت کلام وغیرہ سے اس کا مرتکب کبیرہ یا مصر صغیرہ یا خفیف الحرکات ہونا ظاہر نہیں، نہ کسی دوسرے طریقہ سے اس میں یہ امور معلوم تو از نجا کہ ہلال رمضان مبارک میں مستور کی گواہی بھی مقبول ہے،

[دوسرا خانہ] کما نص علیہ الامام ابو عبد اللہ الحاکم الشھید في الکافی۔ جیسا کہ اس پر امام ابو عبد اللہ الحاکم شہید نے الکافی میں تصریح کی ہے (ت)

[دوسرا پیراگراف] اس کی شہادت مان کر روزہ جمعہ کی قضاء کی جائے گی مگر جبکہ گواہ کی حالت اور پیر مسطور سے اس کی شدت عقیدت پر نظر کرنے سے وہ اس کی بات سچی بنانے پر

متہم ٹھہرتا ہو جیسا کہ آجکل بہت لاابالی لوگوں کا اپنے ساختہ مشائخ کے ساتھ حال ہے تو البتہ اس کی گواہی نہ سنی جائے گی کہ تہمت بھی اسباب رد شہادت سے ہے،

[تیسرا خانہ] فی الدرالمختار امیر کبیر ادعی فشھد لہ عمالہ و توابعہ ورعایاً ھم لا تقبل اھـ 2 قال العلامۃ الرملی یؤخذ منہ ان شھادۃ خدامہ الملازمین لہ ملازمۃ کملا زمۃ العبد لمولاہ کذلك لا تقبل وھو ظاہر در مختار میں ہے کسی بڑے امیر نے دعویٰ کیا اس کے عمال، نائبین اور رعایا اس پر گواہی دیں تو یہ مقبول نہ ہوگی اھ علامہ رملی کہتے ہیں کہ اس سے متفرع ہو جاتا ہے کہ اس کے خدام ملازمین کی گواہی اسی طرح ہے جیسے غلام کی گواہی اس کے مولیٰ کے حق میں ہو تو وہ بھی مقبول

[حواشی] 1 در مختار کتاب الصوم، مطبع مجتبائی دہلی، ۱/ ۱۴۸ 2 در مختار باب القبول وعدمہ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۹۴

Fatawa Rizwia - Volume 10

[Table Top Section] [Arabic Column]: Especially in our time. And it is also mentioned therein (meaning in Al-Durr), that the testimony of a private employee, a servant, an assistant, or a personal student who considers the teacher's pain as his own is not accepted. (Al-Durr). In short. And you know that the condition of many common people of this era with those they have made their spiritual guides (Sheikhs) sometimes reaches a level more intense and greater than the state of deputies, princes, employers, and employees. Therefore, wherever suspicion exists, there will be non-acceptance, and the ruling revolves around its cause.

[Urdu Column]: No, and this is apparent, especially in our times (End of quote). And in the same Al-Durr, it is also stated that a private employee, servant, follower, or student who feels the teacher's hardship as his own, his testimony is not accepted. (Al-Durr, in brief). And you know that in this era, the relationship of common people with those they consider their Sheikhs is sometimes more intense than that of a Nawab, prince, employer, or employee. Therefore, in a state of suspicion, testimony will not be accepted, and the application of the ruling depends on its cause. (T)

[Middle Paragraph Urdu]: Likewise, if all witnesses are openly sinful (Fasiq)—those who do not adhere to congregational prayers, or watch unlawful spectacles, or hold prohibited jobs or professions, or keep their beards shorter than the Sharia limit, or wear silk clothes, or wear unlawful silver or gold attire or jewelry, or are ignorant and unlearned regarding the necessities of religion such that they are unaware of the obligations, conditions, and invalidators of prayer, fasting, wudu (ablution), and ghusl (bath), or engage in trade but have not learned the necessary rulings of buying and selling, and so on for those who refrain from learning the issues they require education in—all such are sinners whose testimony is rejected. The testimony of such people is not considered valid at all in the pure Sharia.

[Table Bottom Section] [Arabic Column]: In Al-Durr al-Mukhtar: The testimony of an ignorant person against a scholar is not accepted due to his sinfulness in abandoning what must be learned according to Sharia, being reckless in speech, swearing excessively, or having a habit of cursing his children or others, because these are major sins like abandoning congregational prayer, going out to celebrate the arrival of a ruler, or wearing silk. (End of quote, summarized). In it, the judge is asked about the obligatory duties required of him; if he does not know them...

[Urdu Column]: It is in Dur al-Mukhtar: The testimony of an ignorant person who commits major sins like abandoning necessary religious knowledge, indulging in idle talk, having a habit of swearing excessively, cursing their children or others, abandoning congregational prayer, going out to celebrate a ruler's arrival, or wearing silk, will not be accepted. (End of quote, in brief). And it also mentions that the judge will test them regarding the things that they must know, from which his...

[Footnotes]: 1. Reference: Minhat al-Khaliq ala al-Bahr al-Ra'iq, chapter on whose testimony is accepted, etc., H.M. Saeed Karachi, 5/96. 2. Al-Durr al-Mukhtar, chapter on acceptance and non-acceptance, Mujtabai Press Delhi, 95/2. 3. Al-Durr al-Mukhtar, chapter on acceptance and non-acceptance, Mujtabai Press Delhi, 95/2.

फ़तावा रज़विया - जिल्द 10

[ऊपरी तालिका अनुभाग] [अरबी कॉलम]: विशेष रूप से हमारे समय में। और इसमें (यानी अल-दुर में) यह भी उल्लेख है कि एक निजी कर्मचारी, नौकर, सहायक, या निजी छात्र की गवाही स्वीकार नहीं की जाएगी जो शिक्षक के दर्द को अपना दर्द मानता है। (अल-दुर)। संक्षेप में। और आप जानते हैं कि इस युग के कई आम लोगों की स्थिति उनके साथ जिन्हें वे अपना शेख (आध्यात्मिक गुरु) मानते हैं, कभी-कभी नवाबों, राजकुमारों, नियोक्ताओं और कर्मचारियों की स्थिति से अधिक तीव्र और बड़ी हो जाती है। इसलिए, जहाँ भी संदेह पाया जाता है, वहाँ अस्वीकृति होगी, और आदेश अपने कारण के इर्द-गिर्द घूमता है।

[उर्दू कॉलम]: नहीं, और यही स्पष्ट है, विशेष रूप से हमारे समय में (उद्धरण समाप्त)। और इसी अल-दुर में यह भी है कि एक निजी कर्मचारी या नौकर या अनुयायी या वह छात्र जो उस्ताद की तकलीफ को अपनी तकलीफ महसूस करे, उसकी गवाही स्वीकार नहीं है। (अल-दुर, संक्षेप में)। और आप जानते हैं कि इस दौर में आम लोगों का उन लोगों के साथ जिन्हें वे अपना शेख बनाते हैं, संबंध कभी-कभी नवाब, अमीर, नियोक्ता और कर्मचारी से भी ज़्यादा गहरा होता है। अतः संदेह की स्थिति में गवाही स्वीकार नहीं होगी, और हुक्म का लागू होना उसकी वजह (इल्लत) पर होता है। (त)

[मध्य पैराग्राफ उर्दू]: इसी तरह, यदि सभी गवाह खुले तौर पर पापी (फासिक) हैं—वे लोग जो जमात (सामूहिक प्रार्थना) के पाबंद नहीं हैं, या अवैध तमाशे देखते हैं, या हराम नौकरी या पेशा रखते हैं, या दाढ़ी को शरीयत की सीमा से कम रखते हैं, या रेशमी कपड़े पहनते हैं, या चांदी या सोने के अवैध कपड़े या गहने पहनते हैं, या धर्म की अनिवार्यताओं से बेखबर और अज्ञानी हैं कि नमाज़, रोज़ा, वज़ू और ग़ुस्ल के फ़र्ज़ों, शर्तों और बिगाड़ने वाली चीज़ों से अनजान हैं, या व्यापार करते हैं लेकिन खरीद-बिक्री के ज़रूरी अहकाम नहीं सीखे, और इसी तरह जिन मसलों की ज़रूरत पड़े उनकी शिक्षा से दूर रहने वाले—ये सब फासिक हैं जिनकी गवाही खारिज है। शरीयत-ए-मुतहहरा में ऐसे लोगों की गवाही बिल्कुल भी विश्वसनीय नहीं है।

[निचली तालिका अनुभाग] [अरबी कॉलम]: दुर-ए-मुख्तार में: एक अज्ञानी व्यक्ति की गवाही एक विद्वान के विरुद्ध स्वीकार नहीं की जाएगी क्योंकि शरीयत के अनुसार जो सीखना अनिवार्य है उसे छोड़ने के कारण वह पापी है, अपनी बातों में लापरवाह है, बहुत कसमें खाता है, या अपनी संतान या दूसरों को गाली देने का आदी है, क्योंकि ये बड़े गुनाह हैं जैसे जमात छोड़ना, शासक के आगमन पर

खुशी मनाने के लिए बाहर निकलना, या रेशम पहनना। (उद्धरण समाप्त, संक्षेप में)। इसमें काज़ी से उन अनिवार्य कर्तव्यों के बारे में पूछा जाता है जो उस पर लागू होते हैं; यदि वह उन्हें नहीं जानता...

[उर्दू कॉलम]: दुर-ए-मुख्तार में है: एक अज्ञानी व्यक्ति की गवाही स्वीकार नहीं की जाएगी जो ज़रूरी शरीयत के इल्म को छोड़ने, गपशप करने, बहुत कसमें खाने की आदत, अपनी औलाद और दूसरों को गाली देने की आदत जैसे कबीरा गुनाहों, जमात छोड़ने, किसी हाकिम के आने की खुशी मनाने और रेशम पहनने जैसे कामों के कारण फासिक है। (उद्धरण समाप्त, संक्षेप में)। और इसी में यह भी है कि काज़ी इन चीज़ों के बारे में उनका इम्तिहान लेंगे जिनके बारे में उन्हें जानना चाहिए, जिनसे उसका...

[पाद लेख]: 1. संदर्भ: मिन्हत अल-ख़ालिक अल-बहर अल-रैक, अध्याय जिनकी गवाही स्वीकार की जाती है आदि, एच.एम. सईद कराची, 5/96। 2. दुर-ए-मुख्तार, स्वीकार्यता और गैर-स्वीकार्यता का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 95/2। 3. दुर-ए-मुख्तार, स्वीकार्यता और गैर-स्वीकार्यता का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 95/2।

فتاوی رضویہ - جلد دہم

[اوپری جدول کا حصہ] [عربی کالم]: لا سیما فی زماننا اھ وفیه ایضاً اعنی الدر لا تقبل شهادة الا جیر الخاص او الخادم او التابع او التلمیذ الخاص الذي یعد ضرر استاذه ضرر نفسہ درر اھ ملتقطاً وانت تعلم ان حال کثیر من عوام الزمان مع من شیخوه علیهم ربما یبلغ اشد واکثر من حال النواب والامیر و المستأجر والاجیر فحیث وجد التهمة عدم القبول والحکم یدور مع علتہ۔

[اردو کالم]: نہیں اور یہی ظاہر ہے خصوصاً ہمارے زمانے میں اھ اور اسی در میں یہ بھی ہے کہ اجیر خاص یا خادم یا تابع یا وہ شاگرد جو استاد کی تکلیف کو اپنی تکلیف محسوس کرے ، کی گواہی مقبول نہیں درر اھ اختصاراً، اور آپ جانتے ہیں کہ اس دور میں عوام کے ان لوگوں کے ساتھ جنہیں یہ اپنے شیخ بناتے ہیں بعض اوقات نواب، امیر اور مستاجر اور اجیر سے زیادہ شدید ہوتے ہیں تو مقام تہمت میں گواہی مقبول نہ ہوگی، اور حکم کا ورود اس کی علت پر ہوتا ہے۔ (ت)

[درمیانی پیراگراف اردو]: یونہی اگر سب گواہ ظاہر الفسق وہ لوگ کہ جماعت کے پابند نہیں یا ناجائز تماشا دیکھا کرتے یا حرام نوکری یا پیشہ رکھتے یا داڑھی حد شرع سے کم رکھواتے یا ریشمیں کپڑے یا سونے چاندی کے ناجائز لباس یا زیور پہنا کرتے یا ضروریات دین سے غافل بے علم جاہل ہیں کہ نماز، روزہ، وضو، غسل کے فرائض و شرائط و مفسدات سے آگاہ نہیں یا تجارت کرتے ہیں اور بیع وشراء کے ضروری احکام نہ سیکھے وعلی ہذا القیاس جن مسائل کی ضرورت پڑے اُن کی تعلیم سے باز رہنے والے کہ یہ سب فساق مردود الشهادة ہیں تو ایسوں کی گواہی تو شرع مطہر میں اصلاً معتبر نہیں۔

[نچلی جدول کا حصہ] [عربی کالم]: في الدر المختار لا تقبل شهادة الجاهل على العالم لفسقہ بترک ما يجب تعلمہ شرعاً و مجازف فی کلامہ او يحلف فيہ كثيرا او اعتاد شتم اولاده او غيرهم لانه معصية كبيرة كترك جماعة وخروج لفرحة قدوم اميرولبس حرير اه بالتقاط، وفيه سئل القاضی عما يجب عليہ من الفرائض فان لم يعرفها

[اردو کالم]: در مختار میں ہے جاہل شخص جو ضروری علم شرعی کے ترک، گپ بازی، زیادہ قسمیں کھانے کی عادت، اپنی اولاد اور غیر کو گالی دینے کی عادت جیسے گناہ کبیرہ، ترک جماعت، کسی حاکم کے آنے کی خوشی منانے اور ریشم پہنے جیسے امور کی وجہ سے فاسق شخص کی شہادت قبول نہ ہوگی اھ اختصاراً، اور اسی میں ہے کہ قاضی کا ان چیزوں کے بارے میں امتحان لیا جائے گا جن سے اس کا

[حواشی]: 1۔ بحوالہ منحة الخالق على البحر الرائق باب من تقبل شہادتہ الخ ایچ ایم سعید کراچی ۵/۹۶ 2۔ در مختار باب القبول وعدمہ مطبع مجتبائی دہلی ۹۵/۲ 3۔ در مختار، باب القبول وعدمہ مطبع مجتبائی دہلی ، ۹۵/۲

Fatawa Razvia - Volume 10

[Table 1] Arabic: His transgression (Fisq) is established because it is mentioned in 'Al-Mujtaba' that one who abandons the study of Fiqh (Islamic jurisprudence), his testimony is not accepted. What is meant by this is the Fiqh which is mandatory to learn. - Nahr. 1 Urdu: Be aware that it is necessary; if he is not aware of them, he will be a 'Fasiq' (sinner) because it is stated in Mujtaba that the testimony of one who has no interest in Fiqh is not accepted. This means that if he abandoned the study of Fiqh which was necessary, then his testimony will not be accepted. - Nahr. (T)

In the case where that testimony is accepted, its effect will be on Calcutta, not on other cities of India until this testimony and proof reach there through Shariah means; mere correspondence does nothing.

[Table 2] Arabic: In 'Ad-Durr al-Mukhtar', it is binding upon the people of the East by the sighting of the people of the West if their sighting is proven to them through a valid method. 2 In 'Radd al-Muhtar', the meaning of 'valid method' is explained as two people giving testimony, or testifying upon a judge's ruling, or the news becoming widespread (Mustafiz), unlike if one informs that the people of such a city saw it, because that is a narration (hearsay). 3 And Allah Almighty knows best. Urdu: In 'Durr al-Mukhtar', it is stated that it will be binding on the people of the East due to the sighting of the people of the West, provided their sighting is proven through a valid legal method. In 'Radd al-Muhtar', the meaning of 'valid method' is explained such that two men testify, or they are witnesses to a judge's decision, or the news becomes very famous (widespread), contrary to the case where they report that the people of such a city saw the moon, because this is just a narration. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 196: 30 Ramadan al-Mubarak 1306 AH What do the scholars of religion and muftis of the clear Shariah say about whether it is permissible to break the fast of the last date of Ramadan after seeing the moon? That is, the moon of the 30th is often seen in the afternoon, so should the fast be opened at that time or after sunset? Explain and be rewarded.

Answer: It is not permissible at all to break the fast of any date during the day; rather, it is strictly forbidden (Haram). Allah Almighty has made it obligatory to complete the fast until the night, meaning open it at the time when the sun sets, the day ends, and the night begins. Allah Almighty says: "Then complete the fast until the night." 4 Allah Almighty's command is: Then complete the fast until the evening. (T)

Footnotes: 1. Durr al-Mukhtar, Chapter on Acceptance and Non-acceptance, Mujtabai Press Delhi, 2/95 2. Durr al-Mukhtar, Book of Fasting, Mujtabai Press Delhi, 1/129 3. Radd al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa al-Babi Egypt, 2/105 4. Al-Quran 2/187

फ़तावा रज़विया - जिल्द 10

[तालिका 1] अरबी: उसका उल्लंघन (फ़िस्क़) स्थापित है क्योंकि 'अल-मुज्तबा' में उल्लेख है कि जो फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) का अध्ययन छोड़ देता है, उसकी गवाही स्वीकार नहीं की जाती है। इससे अभिप्राय उस फ़िक़्ह से है जिसे सीखना अनिवार्य है। - नह्र। 1 उर्दू: अवगत रहें कि यह आवश्यक है; यदि वह उनसे अवगत नहीं है, तो वह 'फ़ासिक़' (पापी) होगा क्योंकि मुज्तबा में कहा गया है कि जिसे फ़िक़्ह में कोई रुचि नहीं है उसकी गवाही स्वीकार नहीं की जाती है। इसका अर्थ यह है कि यदि उसने उस फ़िक़्ह का अध्ययन छोड़ दिया जो आवश्यक था, तो उसकी गवाही स्वीकार नहीं की जाएगी। - नह्र। (त)

फिर जिस स्थिति में वह गवाही स्वीकार की जाएगी, उसका प्रभाव कलकत्ता पर होगा, न कि भारत के अन्य शहरों पर जब तक कि वह गवाही और प्रमाण शरीयत के माध्यम से वहाँ न पहुँचें; केवल पत्र-व्यवहार से कुछ नहीं होता।

[तालिका 2] अरबी: 'अद-दुर्र अल-मुख्तार' में, पश्चिम के लोगों द्वारा चाँद देखे जाने पर पूर्व के लोगों के लिए यह अनिवार्य हो जाता है यदि उनका देखना किसी वैध विधि से सिद्ध हो जाए। 2 'रद्द अल-मुह्तार' में, 'वैध विधि' का अर्थ समझाया गया है कि दो लोग गवाही दें, या एक न्यायाधीश के फैसले पर गवाही दें, या समाचार व्यापक (मुस्तफ़िज़) हो जाए, इसके विपरीत यदि कोई सूचित करता है कि अमुक शहर के लोगों ने इसे देखा, क्योंकि वह केवल एक वर्णन (कथा) है। 3 और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। उर्दू: 'दुर्र अल-मुख्तार' में है कि पश्चिम के लोगों के चाँद देखने के कारण पूर्व के लोगों पर यह अनिवार्य होगा बशर्ते कि उनका देखना वैध विधि द्वारा सिद्ध हो। 'रद्द अल-मुह्तार' में वैध विधि का अर्थ इस प्रकार बताया गया है कि दो आदमी गवाही दें या वे काजी (न्यायाधीश) के फैसले पर गवाह हों या खबर खूब प्रसिद्ध हो जाए, उस स्थिति के विपरीत जब वे यह खबर दें कि फलां शहर के लोगों ने चाँद देखा, क्योंकि यह केवल एक कथा है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 196: 30 रमज़ान-उल-मुबारक 1306 हिजरी धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ्ती क्या कहते हैं कि रमज़ान शरीफ की आखिरी तारीख का रोज़ा चाँद देखकर इफ्तार कर लेना जायज़ है या नहीं? यानी तीसवीं का चाँद अक्सर दोपहर के बाद नज़र आता है, तो क्या ऐसे समय रोज़ा खोल लें या सूर्यास्त के बाद? स्पष्ट करें और पुण्य पायें।

उत्तर (अल-जवाब): किसी भी तारीख़ का रोज़ा दिन में इफ्तार कर लेना हरगिज़ जायज़ नहीं है बल्कि कतई हराम है। अल्लाह तआला ने फ़र्ज़ किया है कि रोज़ा रात तक पूरा करो यानी जब सूरज डूब जाए और दिन खत्म होकर रात शुरू हो उस वक्त खोलो। अल्लाह तआला फ़रमाता है: "फिर रोज़ा रात तक पूरा करो।" 4 अल्लाह तआला का इरशाद है: फिर रोज़ा को शाम तक पूरा करो। (त)

फुटनोट्स: 1. दुर्र-ए-मुख्तार, बाबुल कुबूल व अदमिही, मुज्तबाई प्रेस दिल्ली, 2/95 2. दुर्र-ए-मुख्तार, किताबुस सौम, मुज्तबाई प्रेस दिल्ली, 1/129 3. रद्दुल मुह्तार, किताबुस सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/105 4. अल-क़ुरआन 2/187

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

[Table 1] عربی: ثبت فسقه لما في المجتبى من ترك الاشتغال بالفقه لا تقبل شهادته والمراد ما يجب تعلمه منه نهر۔ 1 اردو: آگاہ ہو نالازم ہے ، اگر وہ ان سے آگاہ نہ ہوا تو فاسق ہوگا کیونکہ مجتبی میں ہے کہ جس نے فقہ میں دلچسپی نہ لی اس کی گواہی قبول نہیں۔ اس سے مراد یہ ہے کہ جس فقہ کی تعلیم ضروری تھی اگر اسے ترک کردیا تو پھر گواہی مقبول نہ ہوگی، نہر۔ (ت)

پھر جس صورت میں کہ وہ گواہی مقبول ہوگی اس کا اثر کلکتہ پر ہوگا، نہ دیگر بلاد ہند پر جب تک وہاں بھی یہ شہادت و ثبوت بروجہ شرعی نہ پہنچے، خالی خط و کتابت سے کچھ نہیں ہوتا،

[Table 2] عربی: في الدر المختار يلزم اهل المشرق برؤية اهل المغرب اذا ثبت عندهم رؤية اولئك بطريق موجب 2 وفي ردالمحتار بطريق موجب كان يتحمل اثنان الشهادة اويشهدا على حكم القاضي اويستفيض الخبر بخلاف مااذا اخبر ان اهل بلدة كذا رأوه لانه حكاية اهـ 3 والله تعالى اعلم۔ اردو: در مختار میں ہے اہل مشرق پر اہل مغرب کی رؤیت کی وجہ سے لزوم ہوگا بشرطیکہ ان کی رؤیت بطریق موجب ثابت ہوئی ہو۔ ردالمحتار میں طریق موجب کا معنی یوں بیان ہوا ہے کہ دو آدمی گواہی دیں یا قاضی کے فیصلہ پر گواہ ہوں یا خبر خوب مشہور ہو، بخلاف اس صورت کے جب وہ یہ خبر دیں کہ فلاں شہر کے لوگوں نے چاند دیکھا، کیونکہ یہ حکایت ہے اھ واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ۱۹۶: ۳۰ رمضان المبارک ۱۳۰۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین کہ اخیر تاریخ رمضان شریف کا روزہ چاند دیکھ کر افطار کرلینا جائز ہے یا نہیں یعنی تیسویں کا چاند اکثر تیسرے پہر سے نظر آتا ہے تو آیا ایسی وقت روزہ کھول لیں یا غروبِ آفتاب کے بعد؟ بینوا توجروا

الجواب: کسی تاریخ کا روزہ دن سے افطار کرلینا ہر گز جائز نہیں بلکہ حرام قطعی ہے، اللہ تعالیٰ نے فرض کیا کہ روزہ رات تک پورا کرو یعنی جب آفتاب ڈوبے اور دن ختم اور رات شروع ہو اُس وقت کھولو۔ قال اللہ تعالیٰ ثُمَّ اَتِمُّوا الصِّیَامَ اِلَی الَّیْلِ ط 4 اللہ تعالیٰ کا ارشاد ہے: پھر روزہ کو شام تک پورا کرو۔ (ت)

حواشی: 1 درمختار باب القبول وعدمہ مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۹۵ 2 درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۲۹ 3 ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/ ۱۰۵ 4 القرآن ۲/ ۱۸۷

جلد دہم (Volume Ten) فتاوی رضویہ (Fatawa Ridawiyya)

In Durr al-Mukhtar it is stated:

Arabic Text

There is no weight given to seeing the crescent moon during the day at all according to the correct and relied-upon position of the Imam. As for the opinion of the second [Imam Abu Yusuf] that if it is seen before noon, it belongs to the previous night, then breaking the fast (iftar) does not mean breaking that day's fast, but rather establishing Eid according to him based on that. This is not the meaning of the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): 'Fast upon seeing it and break your fast upon seeing it.' Merely seeing the crescent after sunset does not necessitate fasting immediately. This is very clear, and Allah knows best, and His knowledge is more perfect and wise.

Urdu Translation / Explanation

According to the correct and relied-upon school of the Imam, seeing the moon during the day is not reliable under any circumstances. However, according to the second Imam (Abu Yusuf), if it is seen before noon, it will be considered from the previous night. So, this 'iftar' (breaking fast) doesn't mean breaking that specific day's fast, but rather, for the second Imam, it establishes the arrival of Eid because it's the moon of the previous night, so the fast is broken due to Eid. The blessed command of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), 'Fast upon seeing the moon and break your fast upon seeing the moon,' does not mean that as soon as you see it, you should break the fast. Otherwise, it would imply that merely seeing the moon after sunset would make fasting obligatory at that very moment, which is very clear. And Allah knows best, and His knowledge is most complete and wise. (T)

Issue 197: What do the scholars of religion say regarding this matter: There is a difference in India concerning the sighting of the crescent moon of the blessed month of Ramadan. It was learned through newspapers and other writings that in Calcutta and other places, the sighting was on Monday and fasting started on Tuesday. In other cities and regions, the sighting was on Tuesday and fasting started on Wednesday, and in some places even on Thursday. So, what is the fatwa of the scholars now? In the state of not seeing the Shawwal crescent, should the Ramadan fasts be ended on the coming Wednesday and Eid be celebrated on Thursday, or should Eid be on Wednesday? State the ruling and be rewarded.

F: The words found in Durr al-Mukhtar are: 'Seeing it during the day is for the coming night absolutely according to the school, as mentioned by al-Haddadi. The difference in horizons and seeing it during the day before or after noon is not reliable according to the manifest view of the school.' The words 'La ibra...' are not in Durr al-Mukhtar. - Nazir Ahmad Saeedi.

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Mujtabai Press, Delhi, 1/149. Page 393 of 836

जिल्द दस (Volume Ten) फतावी रज़विया (Fatawa Ridawiyya)

दुर-ए-मुख्तार में है:

अरबी पाठ

इमाम के सही और विश्वसनीय मत के अनुसार, दिन में चाँद देखने का कोई महत्व नहीं है। जहाँ तक दूसरे इमाम (अबू यूसुफ) के इस कथन का प्रश्न है कि यदि इसे दोपहर से पहले देखा जाए, तो यह पिछली रात का माना जाएगा, तो यहाँ उपवास तोड़ने (इफ्तार) का अर्थ उस दिन का उपवास तोड़ना नहीं है, बल्कि उनके अनुसार इससे ईद साबित होती है। यह पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) के इस कथन का अर्थ नहीं है: 'चाँद देखकर उपवास रखो और चाँद देखकर ही इसे तोड़ो।' सूर्यास्त के तुरंत बाद चाँद देखने मात्र से उपवास अनिवार्य नहीं हो जाता। यह बहुत स्पष्ट है, और अल्लाह बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान पूर्ण और बुद्धिमत्तापूर्ण है।

उर्दू अनुवाद / स्पष्टीकरण

इमाम के सही और विश्वसनीय मज़हब के अनुसार, किसी भी हाल में दिन में चाँद देखने का कोई एतबार (भरोसा) नहीं है। लेकिन दूसरे इमाम (अबू यूसुफ) के कथन के अनुसार, यदि ज़वाल (दोपहर) से पहले देखा गया, तो यह पिछली रात का होगा। तो अब इफ्तार का यह अर्थ नहीं है कि यह उस दिन के रोज़े का इफ्तार है, बल्कि इससे इमाम-ए-सानी के नज़दीक ईद का सबूत हो रहा है क्योंकि यह पिछली रात का चाँद है, इसलिए ईद की वजह से इफ्तार है। और हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का मुबारक फरमान 'चाँद देखने पर रोज़ा रखो और चाँद देखने पर ईद करो' का अर्थ यह नहीं है कि जब देखो तभी इफ्तार करो, वरना यह लाज़िम आएगा कि मग़रिब (सूर्यास्त) के बाद केवल चाँद देखने से उसी समय रोज़ा लाज़िम हो जाए। और यह अत्यंत स्पष्ट है। अल्लाह बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान पूर्ण और बुद्धिमत्तापूर्ण है। (त)

मसला १९७: धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं: भारत में रमजान-उल-मुबारक के चाँद के दिखने के संबंध में मतभेद है। समाचार पत्रों और अन्य लेखों के माध्यम से पता चला है कि कलकत्ता और अन्य स्थानों पर सोमवार को चाँद दिखा और मंगलवार को रोज़ा रखा गया। अन्य शहरों और क्षेत्रों में मंगलवार को चाँद दिखा और बुधवार को रोज़ा रखा गया, और कुछ स्थानों पर गुरुवार को रोज़ा शुरू हुआ। तो अब विद्वानों का फतवा क्या है? शव्वाल का चाँद न दिखने की स्थिति में, क्या रमज़ान के रोज़े आने वाले बुधवार को समाप्त करके गुरुवार को ईद मनाई जाए या बुधवार को ईद हो? बयान करें और पुण्य प्राप्त करें।

फ: 'दुर्र-ए-मुख्तार' में जो इबारत मिली है, उसके शब्द ये हैं: 'दिन में इसे देखना आने वाली रात के लिए है, मज़हब के अनुसार जैसा कि अल-हद्दादी ने उल्लेख किया है। क्षितिजों का अंतर और ज़वाल से पहले या बाद में दिन में इसे देखना मज़हब के प्रकट दृष्टिकोण के अनुसार विश्वसनीय नहीं है।' 'ला इबरत...' शब्द दुर्र-ए-मुख्तार में नहीं हैं। - नज़ीर अहमद सईदी।

1. दुर्र-ए-मुख्तार, किताब-उस-सौम, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, १/१४९। पृष्ठ ३९३/८३६

جلد دہم فتاوی رضویہ

در مختار میں ہے:

عربی عبارت

لا عبرة برؤية الهلال نهارا مطلقا على مذهب الامام الصحيح المعتمد، و اما على قول الثاني من انه ان رأى قبل الزوال فللماضية،1 فليس الافطار بمعنى افطار اليوم بل لثبوت العيد عنده بذاك وليس هذا معنى قوله صلى الله تعالى عليه وسلم صوموا لرؤيته وافطر والرؤيته ولايوجب الصوم بمجرد رؤية الهلال بعد المغرب وهذا واضح جدا، والله تعالى اعلم وعلمه اتم واحكم۔

اردو ترجمہ و تشریح

امام کے صحیح معتمد مذہب کے مطابق ہر حال میں دن کو چاند دیکھنے کا کوئی اعتبار نہیں، مگر امام ثانی (ابویوسف) کے قول پر ہے کہ اگر زوال سے پہلے دیکھا تو یہ گزشتہ رات کا ہوگا تو اب افطار کا یہ معنی نہیں کہ یہ دن کے روزے کا افطار ہے بلکہ اس سے امام ثانی کے نزدیک ثبوت عید ہو رہا ہے کیونکہ گزشتہ رات کا چاند ہے تو عید کی وجہ سے افطار ہے اور حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے فرمان مبارک "چاند دیکھنے پر روزہ رکھو اور چاند دیکھنے پر عید کرو" کا معنی یہ نہیں کہ جب دیکھو تو افطار کرو ورنہ یہ لازم آئے گا کہ مغرب کے بعد محض چاند دیکھنے سے اسی وقت روزہ لازم ہو جائے اور یہ نہایت ہی واضح ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ اتم واحکم۔ (ت)

مسئلہ ۱۹۷: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ نسبت رؤیت ہلال ماہ رمضان المبارک ہندوستان میں اختلاف ہے بذریعہ اخبار و دیگر تحریر معلوم ہوا کہ کلکتہ و دیگر جا میں رؤیت بروز دوشنبہ اور روزہ بروز سہ شنبہ ہوا و دیگر بلاد و امصار میں رؤیت بروز سہ شنبہ اور روزہ بروز چہار شنبہ اور بعض جاروز پنجشنبہ ہوا، پس اب فتویٰ علماء کا کیا ہے، آیا بحالت عدم رؤیت

ہلال شوال کے روزہ رمضان چار شنبہ آئندہ کو ختم کر کے پنجشنبہ کو عید کی جائے یا بروز چہار شنبہ عید ہو؟ بینوا توجروا

ف: در مختار میں جو عبارت ملی ہے اس کے الفاظ یہ ہیں: "ورؤیته بالنهار لليلة الاتية مطلقا على المذهب ذكره الحدادى، واختلاف المطالع ورؤيته نهارا قبل الزوال او بعده غير معتبر على ظاهر المذهب۔" در مختار میں لاعبرہ الخ کے الفاظ نہیں ہیں۔ نذیر احمد سعیدی

1 در مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۹ صفحہ ۳۹۳/۸۳۶

Fatawa Razawiyyah Volume Ten

The Answer: And Allah is the grantor of success, the certifier of truth and right (Allah Almighty alone is the one who grants the success of truth and reward. -T). The Lawgiver (peace and blessings be upon him) linked fasting and breaking the fast to the sighting [of the moon].

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: Fast upon its sighting and break the fast upon its sighting, as it is in the Sahih collections.

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: Keep the fast upon seeing the moon and celebrate Eid upon seeing the moon. As it is in the Sahih Hadiths. (T)

Therefore, for every city and its sighting, and for the basis of the waiting period ('Iddah) upon it, mere reports and letters are not valid grounds for transfer and reliance, nor is mere widespread rumor (that the moon was sighted on such a day in such a city, as some reports become famous in a city but their source is unknown) reliable. However, if multiple groups come from a city and each one states that the sighting occurred there on such a day, then indeed, it is obligatory to act upon this widespread (Mustafidh) news, even if those two places are as far apart as the East and West, because according to the reliable legal school, the difference in horizons (Ikhtilaf al-Matali') is not considered.

The scholar, Mufti Umdat al-Muta'akhireen Muhammad bin Ali bin Muhammad Ala al-Din al-Haskafi (may Allah have mercy on him) said in 'Al-Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar': "Yes, if the news spreads in another city (Mustafid), it becomes binding upon them according to the correct view of the school, as mentioned in 'al-Mujtaba' and others. End of quote. It is also mentioned there that the difference in horizons is not considered according to the Zahir al-Madhhab (the apparent view of the school), and this is the view of most scholars and the basis for fatwa, as cited by 'al-Bahr' from 'al-Khulasah'. Therefore, it is binding upon the people of the East based on the sighting of the people of the West, provided that it is proven to them in a legally binding way as mentioned before. Al-Zayla'i said: 'The most similar to the truth is that it is considered (the difference in horizons), but Al-Kamal said: 'Taking the apparent report (is preferred).'"

Scholar Mufti Muhammad bin Ali bin Muhammad Ala al-Din al-Haskafi (may Allah's mercy be upon him) said in Durr-e-Mukhtar Sharh Tanwir-al-Absar: "Yes, if the sighting of one city becomes common news (Mashhur) in another city, then fasting becomes obligatory for them according to the correct school of thought, as in Mujtaba etc. End of quote. And it is in the same that the difference of horizons is not reliable according to the apparent view of the school. Bahr has narrated it from Khulasah. Therefore, for the people of the East, fasting or breaking the fast will be mandatory by the sighting of the people of the West, provided that it is proven to the people of the East in a legally binding way as passed previously. Imam Zayla'i said the most likely to be correct is that it (difference of horizons) is reliable, but Imam Kamal [said] taking the apparent report (Zahir al-Riwayah)."

1 Sahih Bukhari, Chapter: "When you see the crescent, fast", Qadimi Kutub Khana Karachi 1/256 Page 394 of 836

उत्तर: और अल्लाह ही सफलता प्रदान करने वाला, सत्य और सही मार्ग दिखाने वाला है (अल्लाह सर्वशक्तिमान ही है जो सत्य और फल की सफलता प्रदान करने वाला है। -टी)। शरीयत देने वाले (उन पर शांति और आशीर्वाद हो) ने उपवास और इफ़्तार को चंद्रमा के दर्शन से जोड़ा है।

अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) ने फ़रमाया: चंद्रमा देखकर रोज़ा रखो और चंद्रमा देखकर ईद मनाओ। जैसा कि सही हदीसों में है।

अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) ने फ़रमाया: चंद्रमा देखने पर रोज़ा रखो और चंद्रमा देखने पर ईद करो। जैसा कि सही हदीसों में है (टी)।

इसलिए, प्रत्येक शहर और उसके दर्शन के लिए, और उसी पर इद्दत की गणना के लिए, केवल समाचार और पत्र हस्तांतरण और भरोसे के लिए पर्याप्त नहीं हैं, न ही केवल अफवाह (कि अमुक शहर में अमुक दिन चंद्रमा दिखा, जैसा कि कुछ समाचार शहर में प्रसिद्ध हो जाते हैं लेकिन उनका प्रसार करने वाला ज्ञात नहीं होता) विश्वसनीय है। हाँ, यदि किसी शहर से कई समूह आएं और प्रत्येक यह बयान करे कि अमुक दिन वहां दर्शन हुए, तो निश्चित रूप से इस व्यापक (मुस्तफ़िज़) समाचार पर अमल करना अनिवार्य होगा, भले ही वे दो स्थान पूर्व और पश्चिम की तरह दूर हों, क्योंकि विश्वसनीय मज़हब के अनुसार उदय-स्थलों का अंतर (इख़्तिलाफ़-ए-मतालए) मान्य नहीं है।

विद्वान मुफ्ती उमदतुल मुताख़िरीन मुहम्मद बिन अली बिन मुहम्मद अलाउद्दीन अल-हसकाफ़ी (अल्लाह उन पर रहम करे) ने 'अद-दुर्रुल मुख़्तार शरह तनवीरुल अबसार' में कहा है: "हाँ, यदि समाचार दूसरे शहर में व्यापक रूप से फैल जाए, तो सही मज़हब के अनुसार उन पर अमल करना अनिवार्य होगा, जैसा कि मुज्तबा आदि में है। उद्धरण समाप्त। इसमें यह भी है कि उदय-स्थलों का अंतर ज़ाहिर-ए-मज़हब के अनुसार मान्य नहीं है, और यही अधिकांश उलेमाओं का मत है और इसी पर फ़तवा है, जैसा कि 'बहर' ने 'ख़ुलासा' से उद्धृत किया है। अतः, पश्चिम के लोगों के दर्शन से पूर्व के लोगों पर रोज़ा या इफ़्तार अनिवार्य होगा, बशर्ते कि पूर्व के लोगों के पास यह बात प्रमाणपूर्ण तरीके से सिद्ध हो जाए जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है। अज़-ज़ैलई ने कहा: 'सत्य के सबसे निकट यह है कि इसे (उदय-स्थलों के अंतर को) माना जाए, लेकिन अल-कमाल ने कहा: 'ज़ाहिर-ए-रिवायत (स्पष्ट रिवायत) को अपनाना ही बेहतर है।'"

विद्वान मुफ़्ती मुहम्मद बिन अली बिन मुहम्मद अलाउद्दीन अल-हसकाफ़ी (अल्लाह उन पर रहम करे) ने दुर्रे मुख़्तार शरह तनवीर-अल-अबसार में फ़रमाया: "हाँ, अगर एक शहर का दर्शन दूसरे शहर में प्रसिद्ध समाचार (मशहूर) के रूप में पहुँच जाए, तो उन पर सही मज़हब के अनुसार रोज़ा रखना अनिवार्य हो जाएगा, जैसा कि मुज्तबा आदि में है। उद्धरण समाप्त। और इसी में है कि उदय-स्थलों का अंतर ज़ाहिर-ए-मज़हब के अनुसार विश्वसनीय नहीं है। बहर ने इसे ख़ुलासा से उद्धृत किया है। अतः, पश्चिम के लोगों के दर्शन से पूर्व के लोगों पर रोज़ा या इफ़्तार अनिवार्य होगा, बशर्ते कि पूर्व के लोगों के पास यह बात प्रमाणपूर्ण तरीके से साबित हो जाए जैसा कि पहले गुज़रा। इमाम ज़ैलई ने फ़रमाया कि सत्य के समान यह है कि (उदय-स्थलों का अंतर) विश्वसनीय है, लेकिन इमाम कमाल [ने कहा] ज़ाहिर-ए-रिवायत को अपनाना ही (प्रचलित है)।"

1 सही बुखारी, अध्याय: "जब तुम नया चाँद देखो तो रोज़ा रखो", क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची 1/256

الجواب: واللہ الموفق المصدق والصواب (اللہ تعالٰی ہی صدق و ثواب کی توفیق عطا فرمانے والا ہے۔ ت) شارع علیہ الصلوۃ والسلام نے صوم و فطر کو منوط برووٴیت فرمایا۔

قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم صوموا لرؤیتہ وافطر والرؤیتہ کمافی الصحاح۔	**رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: چاند دیکھنے پر روزہ رکھو اور چاند دیکھنے پر عید کرو۔ جیسا کہ احادیث صحاح میں ہے (ت)**

پس ہر شہر اور اس کی رویت اور اسی پر ابتنائے عدت، مجرد اخبارات و خطوط، صالح تحویل و اعتماد نہیں نہ صرف شہرت افواہ (کہ فلاں بلد میں فلاں روز چاند ہوا جیسے بعض خبریں شہر میں مشتہر ہو جاتی ہیں اور اُن کا اشاعت کنندہ معلوم نہیں) قابل اعتبار، ہاں اگر کسی شہر جماعات متعددہ آئیں اور ہر ایک بیان کرے کہ فلاں روز وہاں رویت ہوئی تو بیشک اس خبر مستفیض پر عمل واجب ہو گا اگرچہ ان دو بقاع میں بعد المشرقین ہو کہ مذہب معتمد پر اختلاف مطالع غیر معتبر ہے۔

قال العلامۃ المفتی عمدۃ المتاخرین محمد بن علی بن محمد علاء الدین الحصفکی رحمہ اللہ تعالیٰ فی الدرالمختار شرح تنویر الابصار، نعم لو استفاض الخبر فی البلدۃ الاخری لزمھم علی الصحیح من المذھب مجتبی وغیرہ انتھی وفیہ ایضاً ان اختلاف المطالع غیر معتبر علی ظاھر المذھب وعلیہ اکثر المشائخ وعلیہ الفتوی بحر عن الخلاصۃ فیلزم اھل المشرق برؤیۃ اھل المغرب اذا ثبت عندھم رؤیۃ اولئك بطریق موجب کمامر وقال الزیلعی الاشبہ انہ یعتبر لکن قال الکمال، الاخذ بظاھر الروایۃ

عمدۃ المتاخرین علامہ مفتی محمد بن علی بن محمد علاء الدین الحصفکی رحمۃ اللہ تعالیٰ نے درمختار شرح تنویر الابصار میں فرمایا: ہاں اگر ایک شہر کی رویت دوسرے شہر میں خبر مشہور کے طور پر ہو جائے تو ان پر صحیح مذہب کے مطابق روزہ رکھنا لازم ہو جائیگا مجتبی وغیرہ انتہی، اور اسی میں ہے کہ اختلاف مطالع ظاہر مذہب کے مطابق معتبر نہیں، اسے بحر نے خلاصہ سے نقل کیا ہے، پس اہل مشرق پر اہل مغرب کی رویت سے روزہ یا افطار لازم ہو گا بشرطیکہ اہل مشرق کے ہاں یہ بات بطریق موجب ثابت ہو جیسا کہ سابق میں گزرا۔ امام زیلعی نے فرمایا مشابہ بحق یہ ہے کہ (اختلاف مطالع) معتبر ہے لیکن امام کمال [نے کہا] الاخذ بظاہر الروایۃ

1 صحیح بخاری باب اذا رایتم الھلال فصوموا قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۲۵۶ Page 394 of 836

Fatawa Razawiyya - Volume 10

[Left Column - Arabic] ...more prudent[1] [End summary]. I say: they have mentioned that the 'Fatwa' is more emphasized than the 'Ashbah', and that when the 'Fatwa' differs, the 'Zahir al-Riwayah' is preferred[2], as in Al-Bahr and Al-Durr and others. In the annotation of 'Radd al-Muhtar' by the virtuous Syed Muhammad Amin ibn Abidin al-Shami (may Allah have mercy on him) from Sheikh Mustafa al-Rahmati al-Ansari (may Allah have mercy on him): that the meaning of 'Istifadah' (wide renown) is that multiple groups come from that city, each of them informing about the people of that city that they fasted based on a sighting, not just a rumor without all the city's residents talking about it, and without knowing who spread it, as news might spread which all the people of the city talk about but the one who spread it is unknown, as it is reported that in the end times, Satan sits among the assembly and speaks a word, then they speak about it and say 'we do not know who said it', so the like of this should not be heard, let alone a ruling being established by it. [End quote] (Shami said) I say: it is a good speech and the statement of Al-Dhakhirah 'when it becomes widely known and verified' points to it, for verification is not found by mere fame. [End quote][3]

[Right Column - Urdu Translation] They say that acting upon the 'Zahir al-Riwayah' is more prudent [End summary]. I say: the jurists have mentioned that the term 'Fatwa' is more emphasized than the term 'Ashbah'. When there is a disagreement regarding a Fatwa, 'Zahir al-Riwayah' will be preferred, as mentioned in Al-Bahr, Al-Durr, etc. The eminent Syed Muhammad Amin Ibn Abidin Shami (may Allah have mercy on him) has quoted from Sheikh Mustafa Rahmati Ansari (may Allah have mercy on him) in his annotation (Hashiyah) of Radd al-Muhtar that the meaning of 'Istifadah' (wide renown) is that several groups come from that city and all of them inform that people there fasted after sighting the moon. It is not based on a mere rumor whose spreader is unknown, as sometimes certain news spreads in cities and its source is unknown. As stated in a blessed Hadith, in the end times, Satan will sit among a group and say something, then people will narrate it and say 'we do not know who said it.' It is not appropriate even to listen to such talk, let alone establishing a legal ruling through it. [End quote] Imam Shami says: I say, this entire discussion is excellent, and the text of 'Al-Dhakhirah' also points in this direction - that the news should be well-known and verified, because verification does not occur by mere fame and spreading. [End quote] (T)

[Footnotes] 1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Mujtabai Press, Delhi, 1/129. 2. Al-Bahr al-Raiq, Kitab al-Rada', H.M. Saeed Company, Karachi, 3/222. 3. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/102.

फतावा रज़विया - जिल्द १०

[बायाँ कॉलम - अरबी] ...अधिक एहतियाती (सावधानीपूर्ण) है[1] [सारांश समाप्त]। मैं कहता हूँ: उन्होंने उल्लेख किया है कि 'फ़तवा' शब्द 'अशबह' से अधिक ताकीदी है, और जब फ़तवे में मतभेद हो, तो 'ज़ाहिर अल-रिव़ायाह' को प्राथमिकता दी जाएगी[2], जैसा कि अल-बहर, अल-दुर्र आदि में है। प्रसिद्ध सैयद मुहम्मद अमीन इब्न आबिदीन शामी (अल्लाह उन पर रहम करे) ने शेख मुस्तफ़ा रहमती अंसारी (अल्लाह उन पर रहम करे) से अपनी हाशिया 'रद अल-मुह्तार' में उद्धृत किया है: कि 'इस्तिफ़ाज़ह' (व्यापक प्रसिद्धि) का अर्थ यह है कि उस शहर से कई समूह आएँ और उनमें से प्रत्येक उस शहर के लोगों के बारे में सूचित करे कि उन्होंने चाँद देखकर रोज़ा रखा है, न कि केवल एक अफवाह जिसके बारे में शहर के सभी निवासी बात न कर रहे हों, और यह न पता हो कि इसे किसने फैलाया है, क्योंकि ऐसी खबरें फैल सकती हैं जिनके बारे में शहर के सभी लोग बात करते हैं लेकिन फैलाने वाला अज्ञात होता है, जैसा कि बताया गया है कि अंतिम समय में शैतान सभा के बीच बैठता है और एक शब्द बोलता है, फिर वे इसके बारे में बात करते हैं और कहते हैं 'हमें नहीं पता कि यह किसने कहा', इसलिए इस तरह की बात नहीं सुनी जानी चाहिए, तो फिर उससे कोई हुक्म साबित करना तो दूर की बात है। [उद्धरण समाप्त] (शामी ने कहा) मैं कहता हूँ: यह एक अच्छी बात है और 'अज़-ज़ख़ीराह' का कथन 'जब वह व्यापक रूप से प्रसिद्ध और सत्यापित हो जाए' इसी ओर संकेत करता है, क्योंकि सत्यापन केवल प्रसिद्धि से नहीं होता। [उद्धरण समाप्त][3]

[दायाँ कॉलम - उर्दू अनुवाद] वे कहते हैं कि ज़ाहिर अल-रिव़ायाह पर अमल करना अधिक एहतियाती है [सारांश समाप्त]। मैं कहता हूँ: न्यायविदों ने उल्लेख किया है कि फ़तवा शब्द 'अशबह' शब्द से अधिक ताकीदी होता है और जब फ़तवे में मतभेद हो तो ज़ाहिर अल-रिव़ायाह को प्राथमिकता प्राप्त होगी जैसा कि बहर, दुर्र वगैरह में है। फ़ाज़िल सैयद मुहम्मद अमीन इब्न आबिदीन शामी (अल्लाह उन पर रहम करे) ने शेख मुस्तफ़ा रहमती अंसारी (अल्लाह उन पर रहम करे) से अपनी हाशिया रद अल-मुह्तार में नक़ल किया है, मशहूर होने का अर्थ यह है कि उस शहर से कई जमातें आएँ और वे तमाम इस बात की सूचना दें कि वहाँ लोगों ने चाँद देखकर रोज़ा रखा है, महज़ ऐसी अफ़वाह से नहीं जिसके फैलाने वाले का पता न हो, जैसा कि कभी-कभी कुछ ख़बरें शहरों में फैल जाती हैं और उनके फैलाने वाले का पता नहीं होता, जैसा कि हदीस शरीफ में आया है कि अंतिम समय में शैतान जमात के दरमियान बैठकर कोई बात करेगा तो लोग उसे बयान करेंगे और कहेंगे 'हम नहीं जानते इसका कहने वाला कौन है', तो ऐसी बातें सुनना ही मुनासिब नहीं, चह जायका

कि उनसे कोई हुक्म साबित किया जाए। इमाम शामी कहते हैं: मैं कहता हूँ यह तमाम गुफ़्तगू निहायत ही खूब है और 'ज़ख़ीरा' की यह इबारत भी इसी तरफ इशारा कर रही है जब खबर मशहूर और सत्यापित हो जाए, क्योंकि सत्यापन महज़ शोहरत और फैल जाने से नहीं होता। [उद्धरण समाप्त] (त)

[पाद-टिप्पणियाँ] १. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताब अस-सौम, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, १/१२९। २. अल-बहर अल-राइक़, किताब अर-रज़ा, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, ३/२२२। ३. रद अल-मुह्तार, किताब अस-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, २/१०२।

पृष्ठ ३९५ / ८३६

فتاویٰ رضویہ - جلد دہم

[بایاں کالم - عربی] احوط ^1 انتھی (ملخصا) قلت وقد ذکروا ان الفتوی اکد من الاشبہ وان الفتوی متٰی اختلف رجح ظاہر الروایۃ ^2 کما فی البحر والدرر و غیرھما ، وفی حاشیۃ ردالمحتار للفاضل السید محمد امین ابن عابدین الشامی رحمہ اللہ عن الشیخ مصطفی الرحمتی الانصاری رحمہ اللہ، ان معنی الاستفاضۃ ان تاتی من تلك البلدة جماعات متعددون کل منہم یخبر عن اھل تلك البلدة انہم صاموا عن رؤیۃ ، لا مجرد الشیوع من غیر یتحدث بھا سائر اھل البلدة ولا یعلم من اشاعہ کما قد تشیع اخبار یتحدث بھا سائر اھل البلدة ولا یعلم من اشاعھا کما ورد ان فی آخر الزمان یجلس الشیطان بین الجماعۃ فیتکلم بالکلمۃ فیتحدثون بھا ویقولون لا ندری من قالھا فمثل ھذا لا ینبغی ان یسمع فضلا من ان یثبت بہ حکم اھ (قال الشامی) قلت وھو کلام حسن ویشیر الیہ قول الذخیرۃ اذا استفاض وتحقق فان التحقق لا یوجد بمجرد الشیوع انتھی ۔ ^3

[دایاں کالم - اردو] کہتے ہیں کہ ظاہر الروایہ پر عمل احوط ہے انتہیٰ (ملخصاً) قلت فقہاء نے ذکر کیا ہے کہ لفظ فتویٰ لفظ اشبہ سے زیادہ مؤکد ہوتا ہے اور جب فتویٰ میں اختلاف ہو تو ظاہر الروایۃ کو ترجیح حاصل ہوگی جیسا کہ بحر، در وغیرہ میں ہے، فاضل سید محمد امین ابن عابدین شامی رحمہ اللہ تعالیٰ نے شیخ مصطفیٰ رحمتی انصاری رحمہ اللہ تعالیٰ سے اپنے حاشیہ ردالمحتار میں نقل کیا ہے، مشہور ہونے کا معنی یہ ہے کہ اس شہر سے متعدد جماعتیں آئیں اور وہ تمام اس بات کی اطلاع دیں کہ وہاں لوگوں نے چاند دیکھ کر روزہ رکھا ہے محض ایسی افواہ سے نہیں جس کے پھیلانے والا معلوم نہ ہو، جیسا کہ کبھی کبھی بعض خبریں شہروں میں پھیل جاتی ہیں اور ان کے پھیلانے والا معلوم نہیں ہوتا، جیسا کہ حدیث شریف میں آیا ہے کہ آخری دور میں شیطان جماعت کے درمیان بیٹھ کر کوئی بات کرے گا تو لوگ اسے بیان کریں گے اور کہیں گے ہم نہیں

جانتے اس کا قائل کون ہے، تو ایسی باتیں سُننا ہی مناسب نہیں چہ جائیکہ ان سے کوئی حکم ثابت کیا جائے اھ امام شامی کہتے ہیں قلت یہ تمام گفتگو نہایت ہی خوب ہے اور ذخیرہ کی یہ عبارت بھی اسی طرف اشارہ کر رہی ہے جب خبر مشہور اور متحقق ہو جائے، کیونکہ تحقق محض شہرت اور پھیل جانے سے نہیں ہوتا انتہیٰ (ت)

[حواشی] 1 درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۲۹ 2 بحر الرائق، کتاب الرضاع ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲۲۲/۳ 3 ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۱۰۲/۲

Fatawa Razvia Volume 10

Therefore, in every city, whether based on their own sighting or on a legally reliable report from another city that established the 1st of Ramadan, they should continue their practice. If it's proven that a fast was missed, they should make it up after Ramadan. Complete the count of thirty days based on that 1st day and then celebrate Eid. However, if on the 31st night, despite a clear horizon, the moon is not visible and the fasting started based on the testimony of only one witness, then in this case, celebrating Eid after thirty days is deemed impermissible by Imam Azam and Imam Abu Yusuf (may Allah have mercy on them), as the falsehood of that single witness would have become apparent there. This is the preferred position of the school.

Arabic Text

This is what has been synthesized for us from scattered sayings and confusing words. Let us mention a part of the speech of Al-Shami in this regard so that what I have summarized from the objective becomes clear to you. The scholar and commentator, may Allah have mercy on him, said in 'al-Durr': after fasting thirty days based on the words of two just witnesses, breaking the fast becomes permissible. But based on the word of one just witness where it is allowed, and if the moon of Eid is obscured, breaking the fast is not permissible according to the [preferred] school, except according to [Imam] Muhammad, as mentioned by the author. However, Ibn al-Kamal narrated from 'al-Dhakhirah' that if the Eid moon is obscured, breaking the fast is permissible by consensus. In 'al-Zayla'i', it is said that the most likely case is that if it is obscured, breaking the fast is

Urdu Translation (English meaning)

This was all the discussion extracted from scattered sayings and words that cause confusion. It is very appropriate to quote some discussion of Imam Shami here so that the purpose for which I have quoted this summary of discussion becomes clear. The scholar and commentator, may Allah have mercy on him, stated in 'Durr' that when fasting was done based on the word of two just witnesses, then after thirty days, breaking the fast is 'halal' (permissible), meaning it is allowed. And if the situation is such that on the day of the Eid moon there are clouds, then breaking the fast is not permissible according to the correct school of thought. There is a difference of opinion of Imam Muhammad in this, as mentioned by the author. But Ibn Kamal has quoted from 'Dhakhirah' that if there are clouds etc. on the day of the Eid moon, then by consensus, breaking the fast is 'halal', meaning allowed. In 'Zayla'i' it is written: if the moon is not visible due to clouds etc.,

Arabic Text	Urdu Translation (English meaning)
permissible, otherwise not. End of concise quote. The eminent annotator (al-Mahshī) said regarding his statement 'breaking the fast is permissible', i.e., by consensus, if the night of the thirty-first is cloudy. Similarly, if it is clear, according to what was authenticated in 'al-Dirayah', 'al-Khulasah', and 'al-Bazzaziyyah'. Its negation was authenticated in 'Majmu' al-Nawazil' and by al-Sayyid al-Imam al-Ajal Nasir al-Din...	then Eid is 'halal' (permissible), otherwise not. (End of concise quote). The eminent annotator said 'qawluhu hall al-fitr' (his statement: breaking fast is permissible), meaning if the thirty-first night is cloudy, then by consensus Eid will be permissible. And according to the authentication of 'Dirayah', 'Khulasah', and 'Bazzaziyah', even if the horizon is clear, this same ruling applies. In 'Majmu' al-Nawazil' and Al-Sayyid Al-Imam Al-Ajal Nasir Al-Din have...

1 Durr-e-Mukhtar, Kitab-us-Saum, Matba Mujtabai Delhi, 1/149

इसलिए हर शहर में अपनी रूय्यत, चाहे दूसरे शहर की शरई तौर पर विश्वसनीय खबर पर, जो पहली रमज़ान की तय पाई हो, उसी पर अमल रखें। और अगर रोज़ा छूटना साबित हो जाए, तो रमज़ान के बाद कज़ा करें। उसी पहली तारीख के एतबार से तीस दिन पूरे करके ईद मनाएँ। लेकिन अगर इकतीसवीं रात को, आसमान साफ होने के बावजूद चाँद नज़र न आए और रोज़ों की शुरुआत सिर्फ एक गवाह की गवाही पर की गई हो, तो ऐसी स्थिति में तीस दिन के बाद ईद मनाना हज़रत इमाम-ए-आज़म और इमाम अबू यूसुफ़ (रहमतुल्लाहि अलैहिमा) के नज़दीक जायज़ नहीं है, क्योंकि उस एक गवाह का झूठ वहीं ज़ाहिर हो गया। और यही मज़हब और तरजीह है।

अरबी पाठ

यह वह है जो हमारे लिए बिखरे हुए कथनों और भ्रमित शब्दों से संकलित किया गया है। आइए हम इस स्थान पर अल-शामी के कलाम का एक हिस्सा ज़िक्र करें ताकि आपके लिए वह स्पष्ट हो जाए जो मैंने उद्देश्य से संक्षेप में प्रस्तुत किया है। विद्वान टीकाकार, अल्लाह उन पर रहम करे, ने 'अल-दुर' में कहा है: दो न्यायप्रिय गवाहों के कहने पर तीस दिन के रोज़े रखने के बाद, इफ्तार हलाल (जायज़) हो जाता है। और एक न्यायप्रिय गवाह के कहने पर जहाँ जायज़ हो, और अगर ईद का चाँद छिप गया हो, तो मज़हब के अनुसार इफ्तार जायज़ नहीं है, सिवाय इमाम मुहम्मद के, जैसा कि लेखक ने ज़िक्र किया है। लेकिन इब्न अल-कमाल ने 'अल-ज़खीरा' से नकल किया है कि अगर ईद का चाँद छिप गया हो, तो सर्वसम्मति से इफ्तार जायज़ है। 'अल-ज़ैलायी' में है कि सबसे संभावित यह है कि अगर छिप गया हो तो इफ्तार जायज़ है, अन्यथा नहीं। संक्षेप में समाप्त। प्रतिष्ठित टीकाकार

उर्दू अनुवाद

यह वह सारी बातचीत थी जो विभिन्न कथनों और उलझन में डालने वाले शब्दों से ली गई थी। यहाँ इमाम शामी की कुछ बातचीत नकल करना अत्यंत उपयुक्त है ताकि वह उद्देश्य स्पष्ट हो जाए जिसके लिए मैंने यह बातचीत का सारांश नकल किया है। अल्लामा शारह रहमतुल्लाहि अलैहि ने 'दुर' में फरमाया कि जब दो न्यायप्रिय गवाहों के कहने से रोज़ा रखा हो, तो तीस दिन के बाद इफ्तार हलाल है यानी जायज़ है। और स्थिति यह हो कि ईद के चाँद के दिन बादल हों, तो सही मज़हब पर इफ्तार हलाल नहीं है। इसमें इमाम मुहम्मद का मतभेद है जैसा कि लेखक ने ज़िक्र किया है। लेकिन इब्न-ए-कमाल ने 'ज़खीरा' से नकल किया है कि अगर ईद के चाँद के दिन बादल वगैरह हों तो सर्वसम्मति से इफ्तार हलाल यानी जायज़ है। 'ज़ैलायी' में है कि अगर चाँद बादल वगैरह की वजह से दिखाई न दे तो ईद हलाल है वर्ना नहीं। (संक्षेप में समाप्त)। प्रतिष्ठित

अरबी पाठ

ने उनके कथन 'इफ्तार जायज़ है' के बारे में कहा, यानी सर्वसम्मति से यदि इकतीसवीं रात बादलों वाली हो। इसी तरह अगर आसमान साफ़ हो, उस पर आधारित जिसे 'अल-दिराया', 'अल-खुलासा' और 'अल-बज़्ज़िया' में प्रमाणित किया गया है। और 'मज्मू अल-नवाज़िल' और अल-सैय्यद अल-इमाम अल-अजल नासिर अल-दीन में इसकी नफी को प्रमाणित किया गया है...

उर्दू अनुवाद

टीकाकार ने कहा 'कौलुहू हल्लल फित्र' यानी अगर इकतीसवीं रात बादल छाए हों तो सर्वसम्मति से ईद जायज़ होगी। और 'दिराया', 'खुलासा' और 'बज़्ज़िया' की तस्दीक के मुताबिक अगर आसमान साफ़ हो तब भी यही हुक्म है। 'मज्मू अल-नवाज़िल' में और अल-सैय्यद इमाम अजल नासिरुद्दीन ने...

1 दुर्रे मुख्तार, किताबुस सौम, मतबा मुजतबाई देहली, 1/149

पृष्ठ 396 / 836

پس ہر شہر میں اپنی رؤیت، خواہ غیر شہر کی شرعاً معتبر خبر پر، جو پہلی رمضان کی قرار پائے اسی پر بنائے کار رکھیں اور روزہ متروک ہو جانا ثابت ہو تو بعد رمضان قضا کریں اُسی یکم کے اعتبار سے شمارِ ثلاثین کامل کر کے عید کرلیں لیکن اگر اکتیسویں شب کو باوجود صفائی مطلع چاند نظر نہ آئے اور ابتدائے صیام صرف ایک شاہد کی شہادت پر کی گئی ہو تو اس صورت میں تیس کے بعد عید حضرت امام اعظم و امام ابویوسف رحمۃ اللہ تعالٰی علیہما ناروا فرماتے ہیں کہ کذب اُس شاہد واحد کا ظاہر وہیں ہو گیا اور یہی مذہب و مرجح،

عربی عبارت	**اردو عبارت**
هذا ما تحرر لنا من اقوال متشتتة وكلمات متشوشة، ولنذكر طرفاً من كلام الشامي في هذا المقام ليستبين لك ما لخصته عن المرام. قال العلامة الشارح رحمه الله في الدروبعد صوم ثلثين بقول عدلين حل الفطر وبقول عدل حيث يجوز وغم هلال الفطر لا يحل على المذهب خلا فالمحمد كذا ذكره المصنف لكن نقل ابن الكمال عن الذخيرة ان غم هلال الفطر حل اتفاقاً وفي الزيلعي الاشبه ان غم حل والا لا انتهى مختصراً. قال	یہ وہ تمام گفتگو تھی جو متفرق اقوال اور تشویش میں ڈالنے والے کلمات سے اخذ کی گئی، یہاں امام شامی کی کچھ گفتگو نقل کرنا نہایت ہی مناسب ہے تاکہ وہ مقصد واضح ہو جائے جس کی خاطر میں نے یہ خلاصۂ گفتگو نقل کی ہے، علامہ شارح رحمۃ اللہ تعالٰی نے در میں فرمایا جبکہ دو عادلوں کے قول سے روزہ رکھا ہو تو تیس دن کے بعد افطار حلال ہے یعنی جائز ہے اور حال یہ ہو کہ عید کے چاند کے دن ابر ہو، تو افطار حلال نہیں صحیح مذہب پر، اس میں امام محمد کا اختلاف ہے جیسا کہ مصنف نے ذکر کیا ہے لیکن ابنِ کمال نے ذخیرہ سے نقل کیا ہے کہ اگر عید کے چاند کے دن بادل وغیرہ ہو تو

عربی عبارت	اردو عبارت
الفاضل المحشی قوله حل الفطر ای اتفاقاً ان کانت لیلة الحادی والثلثین متغیمة وکذا لو مصحیة علی ما صححه في الدراية والخلاصة والبزازية وصححه عدمه في مجموع النوازل والسيد الامام الاجل ناصر الدين	بالاتفاق افطار حلال یعنی جائز ہے، زیلعی میں ہے اگر چاند بادل وغیرہ کی وجہ سے دکھائی نہ دے تو عید حلال ہے ورنہ نہیں انتہیٰ اختصاراً۔ فاضل محشی نے کہا قولہ حل الفطر یعنی اگر اکتیسویں رات ابر آلود ہو تو بالاتفاق عید جائز ہوگی، اور درایہ، خلاصہ اور بزازیہ کی تصحیح کے مطابق اگر مطلع صاف ہو تب بھی یہی حکم ہے، مجموع النوازل میں اور السید امام اجل ناصر الدین نے

1 در مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی 149/1

Fatawa Razawiya Volume 10

[Right Column - Urdu Text] Contrary to this, it has been authenticated as it is in al-Imdad, and Allama Nuh has narrated from al-Bada'i, al-Siraj, and al-Jawharah that in the second case as well, Eid will be permissible by consensus. He said that consensus here refers to the consensus of our three Imams, and the disagreement reported in this regard is only from some scholars. I say: in al-Fayd, the fatwa is on the permissibility of Eid, etc. (1). Then he said: His saying 'but' (Lakin), etc., is a rectification of what the author mentioned—that Imam Muhammad's disagreement is when the weather is cloudy regarding the crescent of Fitr. Similarly, in al-Dhakhira and al-Mi'raj, it is clarified from al-Mujtaba that the lawfulness of breaking the fast is by consensus, and the disagreement is only in the case when the weather is not cloudy and the moon is not seen. In that case, according to the two Shaikhs (Imams Abu Hanifa and Abu Yusuf), Eid is not permissible, while according to Imam Muhammad, it is permissible, as Shams al-A'imma al-Halwani stated and al-Shurunbulali narrated in al-Imdad. It is stated in Ghayat al-Bayan that the evidence for Imam Muhammad's view, which is the most correct one, is that breaking the fast is not established initially by the word of one person, but rather it is established consequentially and as a result, etc. (2). Then he said: His saying 'And in al-Zayla'i', etc., was quoted for this benefit which was not known from the discourse of al-Dhakhira, and that is: if Shawwal is not cloudy, then preference will be given to not breaking the fast, because the witness's error will be clear. This is because this word is among the most similar words of preference, but it is contrary to what you know from the authentication in Ghayat al-Bayan.

[Left Column - Arabic Text] As in al-Imdad, Allama Nuh narrated the consensus on the permissibility of breaking the fast in the second case as well from al-Bada'i, al-Siraj, and al-Jawharah. He said that consensus refers to our three Imams, and what is reported about disagreement in it is only from some of the scholars. I say: in al-Fayd, the fatwa is on the permissibility of breaking the fast etc. (1). Then he said: His saying 'but' etc. is an addendum to what the author mentioned that Muhammad's disagreement is when the crescent of Eid al-Fitr is obscured by clouds, because what is explicitly stated in al-Dhakhira and also in al-Mi'raj from al-Mujtaba is that the permissibility of breaking the fast here is a point of agreement, and the disagreement is only when it is not obscured and the crescent is not seen. In that case, according to the two (Imams Abu Hanifa and Abu Yusuf), breaking the fast is not permissible, but according to Muhammad, it is permissible. Shams al-A'imma al-

Halwani said, and al-Shurunbulali clarified it in al-Imdad, saying: 'It is stated in Ghayat al-Bayan that the reason for Muhammad's view, which is the more correct one, is that breaking the fast was not established by the word of one person initially, but rather consequentially and as a result etc.' (2). Then he said: His saying 'And in al-Zayla'i' etc. was quoted to explain a benefit not known from the words of al-Dhakhira, which is the preference for not breaking the fast if Shawwal is not obscured by clouds, due to the apparent mistake of the witness, because it is more similar to the words of preference, but it is contrary to what you learned from the correction in Ghayat al-Bayan.

[Footnotes] 1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/102-103 2 Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/103

[दायां कॉलम - उर्दू पाठ] इसके विपरीत, इसे सही ठहराया गया है जैसा कि इमदाद में है, और अल्लामा नूह ने बदाइ, सिराज और जौहरा से उद्धृत किया है कि दूसरी स्थिति में भी सर्वसम्मति से ईद जायज़ होगी। उन्होंने कहा कि यहाँ सर्वसम्मति से तात्पर्य हमारे तीनों इमामों की सहमति से है, और इस बारे में जो मतभेद बताया गया है वह केवल कुछ विद्वानों (मशायख) का है। 'क़ुल्त' (मैंने कहा): अल-फ़ैज़ में है कि फ़तवा ईद की अनुमति पर है, इत्यादि (1)। फिर उन्होंने कहा: उनका कथन 'लेकिन' इत्यादि उस पर एक टिप्पणी है जो लेखक ने कही थी कि इमाम मुहम्मद का मतभेद तब है जब ईद का चाँद बादलों में छिपा हो। इसी तरह 'अज़-ज़खीरा' और 'अल-मेराज' में 'अल-मुज्तबा' के हवाले से स्पष्ट है कि यहाँ रोज़ा खोलने की अनुमति सर्वसम्मति का विषय है, और मतभेद केवल उसी स्थिति में है जब आसमान साफ हो और चाँद दिखाई न दे। ऐसी स्थिति में 'शैख़ैन' (इमाम अबू हनीफा और इमाम अबू यूसुफ) के अनुसार ईद जायज़ नहीं है और इमाम मुहम्मद के अनुसार जायज़ है, जैसा कि शम्सुल अइम्मा हलवानी ने वर्णन किया और शरुन्बुलाली ने इमदाद में उद्धृत किया कि 'ग़ायत अल-बयान' में कहा गया है कि इमाम मुहम्मद के कथन का तर्क और वही अधिक सही है कि रोज़ा खोलना प्रारंभ में एक व्यक्ति के कहने से सिद्ध नहीं होता, बल्कि अनुवर्ती रूप से और परिणाम स्वरूप सिद्ध होता है, इत्यादि (2)। फिर उन्होंने कहा: उनका कथन 'और अज़-ज़ैलई में' इत्यादि एक ऐसे लाभ को स्पष्ट करने के लिए उद्धृत किया गया है जो 'अज़-ज़खीरा' के शब्दों से ज्ञात नहीं था, और वह यह है कि यदि शव्वाल का चाँद बादलों में न छिपा हो, तो रोज़ा न खोलने को प्राथमिकता दी जाएगी क्योंकि गवाह की गलती स्पष्ट होगी, क्योंकि यह शब्द प्राथमिकता के शब्दों में सबसे अधिक मिलता-जुलता है, लेकिन यह उसके विरुद्ध है जो आपने 'ग़ायत अल-बयान' के संशोधन से जाना।

[बायां कॉलम - अरबी पाठ] जैसा कि अल-इमदाद में है, अल्लामा नूह ने अल-बदाए, सिराज और जौहरा से उद्धृत किया है कि दूसरी स्थिति में भी सर्वसम्मति से रोज़ा खोलने की अनुमति होगी। उन्होंने कहा कि सर्वसम्मति से तात्पर्य हमारे तीनों इमामों से है, और जो मतभेद इसमें बताया गया है वह केवल कुछ विद्वानों से है। 'क़ुल्त': अल-फ़ैज़ में रोज़ा खोलने की अनुमति पर फ़तवा है, इत्यादि (1)। फिर उन्होंने कहा: उनका कथन 'लेकिन' (लाकिन) इत्यादि उस पर एक टिप्पणी है जो लेखक ने कही थी कि इमाम मुहम्मद का मतभेद तब है जब ईद का चाँद बादलों में छिपा हो, क्योंकि 'अज़-ज़खीरा' और 'अल-मेराज' में 'अल-मुज्तबा' के हवाले से स्पष्ट है कि रोज़ा खोलने की अनुमति यहाँ

सर्वसम्मति का विषय है, और मतभेद केवल तब है जब चाँद बादलों में न हो और दिखाई न दे। ऐसी स्थिति में उन दोनों (इमामों) के अनुसार रोज़ा खोलना जायज़ नहीं है, लेकिन इमाम मुहम्मद के अनुसार जायज़ है। शम्सुल अइम्मा हलवानी ने कहा और शरुन्बुलाली ने अल-इमदाद में इसे स्पष्ट किया: 'ग़ायत अल-बयान में कहा गया है कि मुहम्मद के कथन का कारण, जो कि अधिक सही है, यह है कि रोज़ा खोलना प्रारंभ में एक व्यक्ति के कहने से सिद्ध नहीं हुआ, बल्कि अनुवर्ती रूप से और परिणाम स्वरूप हुआ इत्यादि' (2)। फिर उन्होंने कहा: उनका कथन 'और अज़-ज़ैलई में' इत्यादि एक ऐसे लाभ को स्पष्ट करने के लिए उद्धृत किया गया है जो 'अज़-ज़खीरा' के शब्दों से ज्ञात नहीं था, जो शव्वाल के बादलों में न होने पर रोज़ा न खोलने की प्राथमिकता है, गवाह की स्पष्ट गलती के कारण, क्योंकि यह प्राथमिकता के शब्दों के अधिक समान है, लेकिन यह 'ग़ायत अल-बयान' के संशोधन से जो आपने सीखा उसके विरुद्ध है।

[पाद टिप्पणियाँ] 1 रद अल-मुह्तार, किताब अस-सौम, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 2/102-103 2 रद अल-मुह्तार, किताब अस-सौम, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 2/103

فتاوی رضویہ جلد دہم

[دایاں کالم - اردو متن] اس کے برخلاف صحیح کی ہے جیسا کہ امداد میں ہے، اور علامہ نوح نے بدائع، سراج اور جوہرہ سے نقل کیا ہے کہ دوسری صورت میں بھی بالاتفاق عید جائز ہوگی، اور کہا کہ یہاں اتفاق سے مراد ہمارے تینوں ائمہ کا اتفاق ہے اور اس سلسلہ میں اختلاف جو منقول ہے تو وہ بعض مشائخ کا ہے قلت فیض میں ہے فتوی عید کے جواز پر ہے الخ پھر کہا قولہ لکن الخ یہ استدراک ہے اس پر جو مصنف نے کہا کہ جب موسم ابر آلود ہو تو ہلال فطر کے بارے میں امام محمد کا اختلاف ہے۔ اسی طرح ذخیرہ میں اور معراج میں مجتبیٰ سے تصریح ہے کہ افطار کی حلت بالاتفاق ہے اور اختلاف اسی صورت میں ہے جب موسم ابر آلود نہ ہو اور چاند دکھائی نہ دے تو اب شیخین کے نزدیک عید جائز نہیں اور امام محمد کے نزدیک جائز ہے، جیسا کہ شمس الائمہ حلوانی نے بیان کیا اور شرنبلالی نے امداد میں نقل کیا کہ غایۃ البیان میں کہا ہے کہ امام محمد کے قول کی دلیل اور وہی اصح ہے کہ افطار ایک شخص کے قول سے ابتداءً ثابت نہیں ہوتا بلکہ تبعاً اور بناءً ثابت ہوا ہے الخ پھر فرمایا قولہ وفی الزیلعی الخ یہ اس فائدہ کے لیے منقول ہے جو کلام ذخیرہ سے نہ جانا گیا اور وہ یہ ہے کہ اگر شوال ابر آلود نہ ہو تو عدم افطار کو ترجیح ہوگی اس لیے کہ اس سے گواہ کا غلط ہونا واضح ہوگا کیونکہ یہ لفظ اشبہ الفاظ ترجیح میں سے ہے لیکن یہ اس کے مخالف ہے جو آپ غایۃ البیان

[بایاں کالم - عربی متن] کما فی الامداد نقل العلامة نوح، الاتفاق علی حل الفطر فی الثانیة ایضا عن البدائع والسراج و الجوهرة قال والمراد ائمتنا الثلاثة وما حکی فیه من الخلاف انما هو لبعض المشایخ قلت وفی الفیض، الفتوی علی حل الفطر الخ ۱ ثم قال قوله لکن الخ استدراك علی ما ذکره المصنف من ان خلاف محمد فیما اذاغم هلال الفطر بان المصرح به فی الذخیرة وکذا فی المعراج عن المجتبی ان

حل الفطر هنا محل وفاق وانما الخلاف فيما اذا لم يغم ولم ير الهلال فعند هما لا يحل الفطر وعند محمد يحل قال شمس الائمة الحلوانى وحرره الشرنبلالى فى الامداد قال فى غاية البيان وجه قول محمد وهو الاصح ان الفطر ما ثبت بقول الواحد ابتداء بل بناءً و تبعاً الخ ٢ ثم قال قوله وفى الزيلعى الخ نقله لبيان فائدة لم تعلم من كلام الذخيرة وهى ترجيح عدم الفطر ان لم يغم شوال لظهور غلط الشاهد لانه الاشبه من الفاظ الترجيح لكنه مخالف لما علمته من تصحيح غاية البيان

[حواشى] 1 ردالمحتار كتاب الصوم مصطفىٰ البابى مصر ٢ / ١٠٢-١٠٣ 2 ردالمحتار كتاب الصوم مصطفىٰ البابى مصر ٢ / ١٠٣

Fatawa Razawiya Volume 10

The reference for 'yalzam' (it becomes binding) is determined to be the crescent of fasting and breaking the fast (Eid).

And this is the phrase from Ash-Shami: His saying 'fayalzamu fa'ilahu', this pronoun refers to the proof of the crescent moon, meaning the crescent moon of Ramadan or Eid. (T)[1]

This much is not quite deniable, nor is it a definitive text (nass) denying the necessity from Hajj and sacrifice. Yes, Allama Shami clarified that from the words of the honorable Imams, it is understood and inferred that the difference in moon-sighting horizons (Ikhtilaf al-Matali') is valid in Hajj, and it should be the same in sacrifice. On this basis, for those celebrating Eid on Wednesday, sacrifice will be valid until Friday, even if it is the fourth day for those who observed it on Tuesday, provided that the difference in sighting horizons of different cities does not make the sighting there binding here. In Radd al-Muhtar it says:

Warning: It is understood from their words in the book of Hajj that the difference in sighting horizons is considered in it. Thus, nothing is binding upon them if it appears that the moon was seen in another city a day before them. Is the same said regarding sacrifice for non-pilgrims? I have not seen it. But apparently yes, because the difference in sighting horizons is only not considered in fasting due to its connection with absolute sighting. This is contrary to sacrifice; so apparently it is like prayer times: every people must act according to what is with them, so sacrifice on the thirteenth day would suffice even if, according to the sighting of others, it was the fourteenth day.[2]

Warning: From the discourse of the jurists in the book of Hajj, it is known that the difference in horizons is valid in Hajj. So, nothing will be binding on those pilgrims when it becomes apparent that the moon was seen in another city one day before them. Will the same rule apply to sacrifice for those other than pilgrims? This issue has not come under my study. Yes, apparently this same rule seems to be applicable because the difference in horizons is not considered for fasting (Sawm) because its connection is with absolute sighting. Unlike sacrifice, it appears that this is like prayer times; every people will be bound by the prayer at their own time. So, the sacrifice on the third day will suffice, even if it is the fourth day according to others. (T)

The basis of their opinion is that in all chapters of jurisprudence such as divorce, prayer, zakat, fasting, marriage, manumission, faith, travel, sale, lease, pre-emption, inheritance, etc., the difference in horizons is undoubtedly valid. In the crescent of fasting and breaking the fast, the most correct of the two correct views...

[1] Radd al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa al-Babi, Egypt, 105/2 [2] Radd al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa al-Babi, Egypt, 105/2

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवां

'यलज़म' (अनिवार्य होने) का सन्दर्भ रोज़े और ईद के चाँद को माना गया है।

और यह शामी का कथन है: 'उनका कहना फ़यालज़मु फ़ा'इलहु, यह सर्वनाम चाँद के प्रमाण की ओर लौटता है, यानी रमज़ान या ईद का चाँद।' (त)[1]

यह बात काफी हद तक निर्विवाद है, न ही यह हज और कुर्बानी से अनिवार्यता को नकारने वाला कोई स्पष्ट पाठ (नस्) है। हाँ, अल्लामा शामी ने स्पष्ट किया कि सम्मानित इमामों के शब्दों से यह समझा और निष्कर्ष निकाला गया है कि हज में चन्द्रोदय के समय (मताले) के अंतर को मान्य माना गया है, और कुर्बानी में भी यही मान्य होना चाहिए। इस आधार पर, बुधवार को ईद मनाने वालों के लिए शुक्रवार तक कुर्बानी वैध होगी, भले ही वह मंगलवार को मनाने वालों के हिसाब से चौथा दिन हो, बशर्ते कि अलग-अलग शहरों के चन्द्रोदय के समय का अंतर वहाँ के दर्शन को यहाँ अनिवार्य न करे। रद्द अल-मुह्तार में है:

चेतावनी: हज की किताब में उनके शब्दों से यह समझा जाता है कि उसमें चन्द्रोदय के समय का अंतर मान्य है। अतः उन पर कुछ भी अनिवार्य नहीं होगा यदि यह स्पष्ट हो जाए कि उनसे एक दिन पहले किसी अन्य शहर में चाँद देखा गया था। क्या गैर-हाजियों के लिए कुर्बानी के मामले में भी यही कहा जाएगा? मैंने इसे नहीं देखा है। और स्पष्ट रूप से हाँ, क्योंकि चन्द्रोदय का अंतर रोज़े में इसलिए मान्य नहीं है क्योंकि उसका संबंध पूर्ण रूप से चाँद देखने से है। यह कुर्बानी के विपरीत है; स्पष्ट रूप से यह नमाज़ के समय की तरह है: हर समुदाय को उनके पास जो समय है उसके अनुसार कार्य करना चाहिए, इसलिए तेरहवें दिन की कुर्बानी पर्याप्त होगी भले ही दूसरों के चाँद देखने के अनुसार वह चौदहवाँ दिन हो।[2]

चेतावनी: हज की किताब में फकीहों (धर्मशास्त्रियों) के प्रवचन से यह ज्ञात होता है कि हज में चन्द्रोदय के अंतर का विचार किया जाता है। इसलिए उन हाजियों पर कुछ भी अनिवार्य नहीं होगा जब यह स्पष्ट हो जाए कि दूसरे शहर में चाँद उनसे एक दिन पहले देखा गया था। क्या हाजियों के अलावा अन्य लोगों के लिए कुर्बानी के हक में भी यही नियम होगा? यह मसला मेरे अध्ययन में नहीं आया, हाँ, ज़ाहिरा तौर पर यही नियम मालूम होता है क्योंकि चन्द्रोदय (मताले) के अंतर का विचार रोज़े (सोम) के लिए इसलिए नहीं किया जाता क्योंकि इसका संबंध निरपेक्ष दर्शन (मुतलक रूयत) से है। कुर्बानी के विपरीत, इसमें ज़ाहिर यही है कि यह नमाज़ के समय की तरह है; प्रत्येक कौम पर

उनके अपने समय में नमाज़ लाज़िम होगी, तो तीसरे दिन की कुर्बानी काफी हो जाएगी चाहे दूसरों के एतबार से वह चौथा दिन हो। (त)

उनके विचार का आधार यह है कि तलाक, नमाज़, ज़कात, रोज़ा, निकाह, गुलामी से मुक्ति, ईमान, यात्रा, बिक्री, किराया, शुफ़ा, विरासत आदि न्यायशास्त्र (फिक्ह) के सभी अध्यायों में चन्द्रोदय का अंतर निस्संदेह मान्य है। रोज़े और ईद के चाँद में दो सबसे सही मतों में से...

[1] रद्द अल-मुह्तार, किताबुस सोम, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 105/2 [2] रद्द अल-मुह्तार, किताबुस सोम, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 105/2

पृष्ठ 399/836

فتاوی رضویہ جلد دہم

یلزم کا مرجع ہلال صوم وفطر کو قرار دیا،

وھذا عبارۃ الشامی قولہ فیلزم فاعلہ ضمیر یعود الی ثبوت الھلال ای ھلال الصوم او الفطر ۔[1] شامی کی عبارت یہ ہے قولہ فیلزم فاعلہ، یہ ضمیر ثبوت ہلال کی طرف لوٹ رہی ہے یعنی رمضان یا عید کا چاند۔ (ت)

اس قدر چنداں قابل انکار نہیں، نہ حج واضحیہ سے نفی لزوم میں نص، ہاں علامہ شامی نے تصریح فرمائی کہ کلمات ائمہ کرام سے حج میں اختلافِ مطالع کا معتبر ہونا مفہوم اور استظہار کیا کہ اضحیہ میں یہی معتبر ہونا چاہئے اس تقدیر پر اہل عید چار شنبہ کو جمعہ تک قربانی جائز ہوگی اگرچہ منگل والوں کے نزدیک وہ روز چہارم ہو جبکہ مطالع بلدین کا مختلف ہونا وہاں کی رؤیت کو یہاں لازم نہ کرے۔ ردالمحتار میں ہے:

تنبیہ: یفھم من کلامھم فی کتاب الحج ان اختلاف المطالع فیہ معتبر فلا یلزمھم شئی لو ظھر انہ رؤی فی بلدۃ اخری قبلھم بیوم ، وھل یقال کذلك فی حق الاضحیۃ لغیر الحجاج لم ارہ. والظاھر نعم لان اختلاف المطالع انما لم یعتبر فی الصوم لتعلقہ بمطلق الرؤیۃ وھذا بخلاف الاضحیۃ فالظاھر انھا کاوقات الصلوۃ یلزم کل قوم العمل بما عندھم فتجزی الاضحیۃ فی الیوم الثالث عشر وان کان علی رؤیا غیرھم ھو الرابع عشر ۔[2] تنبیہ: کتاب الحج میں فقہاء کے کلام سے معلوم ہوتا ہے کہ اختلاف مطالع کا حج میں اعتبار ہے تو ان حجاج پر کوئی شئی لازم نہ ہوگی، جب یہ ظاہر ہوجائے کہ دوسرے شہر میں چاند ان سے ایک دن پہلے دیکھا گیا ہے ، کیا حجاج کے علاوہ قربانی کے حق میں بھی یہی حکم ہوگا؟ یہ مسئلہ میرے مطالعہ میں نہیں آیا، ہاں ظاہراً یہی حکم معلوم ہوتا ہے کیونکہ

اختلاف مطالع کا اعتبار صوم (روزہ) اس لئے نہیں کیا جاتا کہ اس کا تعلق مطلق رؤیت سے ہے۔ بخلاف قربانی کے، تو اس میں ظاہر یہی ہے کہ یہ اوقات نماز کی طرح ہے، ہر قوم پر ان کے اپنے وقت میں نماز لازم ہوگی تو تیسرے دن کی قربانی کفایت کر جائے گی اگر چہ دوسروں کے اعتبار سے وہ چوتھا دن ہو۔ (ت)

اُن کے خیال کا منشا یہ ہے کہ طلاق، صلوۃ، زکوۃ، صوم، نکاح، عتق، ایمان، سیر، بیع، اجارہ، شفعہ، میراث وغیرہا تمام ابوابِ فقہ میں اختلافِ مطالع بلا شبہ معتبر ہے، ہلالِ صوم وفطر میں اصح التصحیحین

[1] ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۱۰۵/۲ [2] ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر، ۱۰۵/۲

Fatawa Razawiyya Volume 10

But not accepting it is based on the arrival of a textual proof (Nass) that:

[Arabic]: Fast upon sighting it [the crescent] and break your fast upon sighting it. (1) [Urdu]: Keep the fast on seeing the moon and break the fast on seeing the moon. (T)

However, this is the personal opinion of the mentioned scholar (may Allah have mercy on him), for which he provided no reliable narration, nor do the words of the scholars support him. The issue of Hajj is based on the removal of severe hardship, not on the difference of horizons (sighting zones). Claiming a lack of textual proof here is also incorrect. Especially regarding Dhu al-Hijjah, the dependence on sighting is established from a clear, authentic Hadith. The apparent context of the author's and commentator's words (may Allah have mercy on them) is that the pronoun refers back to the absolute establishment of the crescent, which includes Dhu al-Hijjah. The sequence of the text is as follows:

[Arabic]: The moon for Eid al-Adha and the remaining nine months is like Eid al-Fitr according to the school. A moon sighted during the day is absolutely for the coming night according to the school, as mentioned by al-Haddadi. According to the manifest school, the difference of horizons and sighting the moon during the day—whether before or after the sun's zenith—is not considered. Most scholars follow this, and the fatwa is based on it, as cited in Bahr from al-Khulasa. Therefore, it is binding on the people of the East, etc. (2) [Urdu]: The moon for Eid al-Adha and the remaining nine months is like Eid al-Fitr according to the correct legal school. A moon sighted during the day will, in any case, be counted for the upcoming night according to the correct school, as mentioned by al-Haddadi. According to the manifest school, the difference of horizons and the appearance of the moon during the day before or after the sun's zenith is unreliable. Most scholars are on this, and the fatwa is on this. Bahr from al-Khulasa; therefore, it will be binding on the East, etc. (T)

These [rulings] are within the description of general commands here, especially after this clarification regarding Dhu al-Hijjah etc., that the moon for all months carries the same ruling as for Ramadan and Fitr. Thus, upon investigation, if the sighting of another place is established through a Shariah method, acting upon it becomes mandatory.

[Arabic]: The weak servant, treated with kindness by the Kind Lord, intends to bring this magnificent and noble investigation, if Allah the Almighty wills, in a separate,

exquisite treatise. [Urdu]: The weak servant hopes from his Kind Lord to investigate this in detail in the future, if Allah the Almighty wills. (T)

Otherwise, there is absolutely no room for such views and discussions on uninvestigated matters. In Shariah, acting upon a letter is never [allowed], nor is an advertisement a valid thing. Nor can Shariah-compliant widespread reports (istifada) be attained from such ambiguous one or two writings. To consider such a method as a source is pure error and ignorance, and such...

---

1. Sahih Bukhari, Chapter: 'When you see the crescent, fast...', Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/256.
2. Durr al-Mukhtar, Book of Fasting, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/149.

फ़तावा रज़विया, खंड 10

लेकिन इसे न मानना इस स्पष्ट प्रमाण (नस) के आगमन पर आधारित है कि:

[अरबी]: चाँद देखने पर रोज़ा रखो और चाँद देखने पर इफ़्तार करो। (1) [उर्दू]: चाँद देखने पर रोज़ा रखो और चाँद देखने पर इफ़्तार करो। (त)

लेकिन यह वर्णित विद्वान (रहमतुल्लाह अलैह) का अपना विचार है जिस पर उन्होंने कोई विश्वसनीय प्रमाण प्रस्तुत नहीं किया, और न ही विद्वानों के कथन उनकी सहायता करते हैं। हज का मसला गंभीर कठिनाई को दूर करने पर आधारित है, न कि उदय स्थानों के अंतर (इख़्तिलाफ़-ए-मताले) पर। यहाँ स्पष्ट प्रमाण के न होने का दावा भी सही नहीं है। विशेष रूप से ज़ुल-हिज्जा के संबंध में भी स्पष्ट और सही हदीस से चाँद देखने पर हुक्म की निर्भरता प्रमाणित है। लेखक और टीकाकार (रहमतुल्लाह अलैहिम) के शब्दों का स्पष्ट संदर्भ यह है कि सर्वनाम सामान्य रूप से चाँद की पुष्टि की ओर लौटता है जिसमें ज़ुल-हिज्जा भी शामिल है। इबारत का क्रम इस प्रकार है:

[अरबी]: ईदुल अज़हा और शेष नौ महीनों का चाँद सही मज़हब के अनुसार ईदुल फ़ित्र की तरह है। जो चाँद दिन में नज़र आए, वह हर हाल में सही मज़हब के अनुसार आने वाली रात का माना जाएगा, इसे अल-हद्दादी ने उल्लेख किया है। ज़ाहिर-ए-मज़हब के अनुसार उदय स्थानों का अंतर और दिन में चाँद का दिखना—चाहे ज़वाल (दोपहर) से पहले हो या बाद में—अमान्य है। अधिकांश विद्वान इसी पर हैं और इसी पर फ़तवा है, 'बहर' ने 'अल्-ख़ुलासा' के हवाले से लिखा है, अतः पूर्व वालों पर यह लाज़िम होगा, इत्यादि। (2) [उर्दू]: ईदुल अज़हा और बाकी नौ माह का चाँद सही मज़हब पर ईदुल फ़ित्र की तरह है, जो चाँद दिन को नज़र आए हर हाल में सही मज़हब पर आने वाली रात का शुमार होगा, इसे हद्दादी ने ज़िक्र किया, ज़ाहिर मज़हब के मुताबिक़ इख़्तिलाफ़-ए-मताले और दिन को ज़वाल से पहले या बाद चाँद का नज़र आना ग़ैर मोतबर है अक्सर मशाईख़ इसी पर हैं और इसी पर फ़तवा है, बहर अनल-ख़ुलासा, लिहाज़ा मशरिक़ पर लाज़िम होगा इत्यादि। (त)

वह यहाँ सामान्य हुक्मों के बयान में हैं, विशेष रूप से ज़ुल-हिज्जा आदि के संबंध में इस स्पष्टीकरण के बाद कि सभी महीनों के चाँद का वही हुक्म है जो रमज़ान और फ़ित्र का है। अतः शोध के अनुसार यदि किसी अन्य स्थान का चाँद देखना शरई तरीक़े से प्रमाणित हो जाए, तो उसी पर अमल करना अनिवार्य होगा।

[अरबी]: यह कमज़ोर बंदा, जिस पर कृपालु स्वामी (अल्लाह) ने कृपा की है, चाहता है कि भविष्य में इस महान और गरिमामयी शोध को विस्तार से एक अलग श्रेष्ठ लेख में प्रस्तुत करे, यदि अल्लाह तआला ने चाहा। [उर्दू]: अब्द-ए-ज़ईफ़ अपने मौला लतीफ़ के चाहता है कि इस पर मुस्तक़बिल (भविष्य) में तफ़्सीलन तहक़ीक़ कर दे इंशा अल्लाह तआला। (त)

अन्यथा, बिना शोध वाली बातों पर इस तरह के विचार और बहस की कोई गुंजाइश नहीं है। शरीयत में न तो कभी केवल पत्र पर अमल किया जाता है और न ही कोई विज्ञापन कोई चीज़ है। न ही ऐसी अस्पष्ट एक-दो लेखों से शरीयत की मान्यता प्राप्त प्रसिद्धि (इस्तिफ़ाज़ा) प्राप्त की जा सकती है। ऐसे तरीक़े को आधार मान लेना केवल गलती और अनभिज्ञता है और ऐसे...

---

1. सहीह बुखारी, अध्याय: जब तुम चाँद देखो तो रोज़ा रखो... क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/256
2. दुर्रे मुख्तार, किताबुस सोम, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 1/149

पृष्ठ 836 का 400

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

پر اس کا نہ ماننا بر بنائے ورود نص ہے کہ:

صوموالرؤیتہ وافطروا الرؤیتہ-۱ | چاند دیکھنے پر روزہ رکھو اور چاند دیکھنے پر افطار کرو۔ (ت)

مگر یہ علامہ ممدوح رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کا اپنا خیال ہے جس پر انہوں نے کوئی نقل معتمد پیش نہ کی، نہ کلمات علماء اس کی مساعدت کریں، مسئلہ حج کی بناء دفع حرج شدید پر ہے نہ کہ اختلاف مطالع پر اور یہاں عدم ورود نص ماننا بھی صحیح نہیں، خاص درباره ذی الحجہ بھی حدیث صریح صحیح سے رؤیت پر تعلیق ثابت ہے اور ظاہر سیاق کلام ماتن و شارح رحمہم اللہ تعالیٰ رجوع ضمیر مطلق ثبوت ہلال کی طرف جس میں ذی الحجہ بھی داخل ہے، نظم عبارت یہ ہے:

وھلال الاضحی و بقیۃ الاشھر التسعۃ کالفطر علی المذھب ورؤیتہ بالنھار للیلۃ الآتیۃ مطلقا علی المذھب ذکرہ الحدادي، واختلاف المطالع ورؤیتہ نھارا قبل الزوال او بعدہ غیر معتبر علی ظاھر المذھب، وعلیہ اکثر المشائخ وعلیہ الفتوی بحر عن الخلاصۃ فیلزم اھل المشرق الخ ۲ | عید الاضحٰی اور باقی نو ماہ کا چاند صحیح مذہب پر عید الفطر کی طرح ہے، جو چاند دن کو نظر آئے ہر حال میں صحیح مذہب پر آنے والی رات کا شمار ہو گا، اسے حدادی نے ذکر کیا، ظاہر مذہب کے مطابق اختلاف مطالع اور دن کو زوال سے پہلے یا بعد چاند کا نظر آنا غیر معتبر ہے اکثر مشائخ اسی پر ہیں اور اسی پر فتویٰ ہے، بحر عن الخلاصہ ، لہذا مشرق پر لازم ہو گا الخ (ت)

وہ یہاں احکام عامہ کے بیان میں ہیں علی الخصوص اس تصریح کے بعد ذی الحجہ وغیرہ کہ سب مہینوں کے ہلال کا وہی حکم ہے جو رمضان و فطر کے تو عند التحقیق اگر دوسری جگہ کی رؤیت بطریق شرعی ثابت ہو جائے تو اسی پر عمل واجب ہو گا،

والعبد الضعیف لطف بہ المولی اللطیف، یرید ان یأتی بھذا التحقیق الجلیل الشریف ان شاء اللہ تعالی فی تحریر منفصل نفیس۔ | عبد ضعیف اپنے مولی لطیف کے چاہتا ہے کہ اس پر مستقبل میں تفصیلاً تحقیق کر دے ان شاء اللہ تعالٰی۔ (ت)

ورنہ بے تحقیق باتوں پر اس نظر و بحث کی اصلاً گنجائش نہیں، شرعاً نہ ہر گز خط پر عمل، نہ ہر چہ اشتہار کوئی چیز، نہ ایسی مہمل دو ایک تحریروں سے، استفاضہ شرعی حاصل ہو سکے، ایسے طریق کو موجب سمجھ لینا محض خطاء و ناواقفی اور ایسے

---

۱ صحیح بخاری باب اذا رأیتم الھلال فصوموا قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۲۵۶ ۲ درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۴۹

Fatawa-e-Razvia Volume 10

Celebrating Eid on the basis of absurd doubts, ruining the prayers and sacrifices of Muslims, and making people break their fast on the day of Arafah is severe audacity and boldness. It is stated in 'Durr-e-Mukhtar':

The people of the East are bound by the sighting of the people of the West if the sighting by the latter is proven to them through a valid method, as previously mentioned. - 1	**Fasting or breaking the fast will be mandatory for the people of the East based on the sighting of the people of the West, provided that the sighting is proven to them through a mandatory method. As passed previously. (T)**

In such a state, it is mandatory for us, by consensus of scholars, to act upon our own sighting, and paying attention to those baseless rumors is futile and void. And Allah, Glorified and Exalted, knows best.

Issue 199 to 200: From Shahjahanpur, Muhammad Khalil Gharbi, 21 Dhu al-Hijjah 1322 AH.

First: Sent by Muhammad I'zaz Husayn: What do the scholars of religion say regarding this matter that two reliable and just residents of Shahjahanpur came from Mumbai and stated that they themselves saw the moon on 29th Dhu al-Qi'dah in Mumbai? So, will the testimony of people coming from Mumbai be valid for the people of Shahjahanpur for Eid al-Adha based on the 29th or not? Please write the answer with references from authentic books of Hanafi jurisprudence. State the ruling and be rewarded.

Second: Sent by Maulvi Riyasat Ali Khan Sahib: What do the scholars of religion say regarding this matter that two persons come from another city after seeing the moon on the 29th, even if the distance of that city is more than a month's journey, will their testimony be reliable regarding the sighting of the moon for Eid al-Adha or not? And if it is reliable, then what is the meaning of Al-Shami's statement:

It is understood from their words in the Book of Hajj that the difference in horizons (matali') is considered therein. Therefore, nothing would be mandatory for them (the pilgrims) if it appears that it (the moon) was seen in another city a day before them, etc. 2	**From the words of the jurists in the 'Book of Hajj', it is understood that the difference in horizons is considered in Hajj. Thus, nothing will be mandatory for the pilgrims if it becomes apparent that the moon was seen in another city one day earlier, etc. (T)**

What does this mean? And if this statement of Al-Shami conflicts with the 'Mufta Bihi' (favored legal opinion) and 'Zahir al-Riwayah' (manifest narration), then will preference be given to Al-Shami's statement or to the 'Mufta Bihi' statement from which it is proven that the difference in horizons is absolutely not considered, even if it is for Eid al-Adha?

1. Durr-e-Mukhtar, Book of Fasting, Mujtabai Press, Delhi, 1/9.
2. Radd al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa Al-Babi, Egypt, 2/105.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

बेतुके संदेहों के आधार पर ईद मनाना, मुसलमानों की नमाज़ और कुर्बानी को बर्बाद करना, और अरफ़ा के दिन लोगों का रोज़ा तुड़वाना घोर धृष्टता और दुस्साहस है। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

पश्चिम के लोगों द्वारा चाँद देखे जाने पर पूर्व के लोगों के लिए रोज़ा रखना या खोलना अनिवार्य होगा, यदि उनके पास वह देखना किसी प्रामाणिक विधि से सिद्ध हो जाए, जैसा कि पहले बताया जा चुका है। - 1

पश्चिम के लोगों के चाँद देखने के आधार पर पूर्व के लोगों पर रोज़ा या इफ़्तार लाज़िम होगा, बशर्ते कि उनके यहाँ वह देखना किसी अनिवार्य तरीक़े से साबित हो जाए। जैसा कि गुज़रा। (त)

ऐसी स्थिति में विद्वानों की सहमति से हम पर अपनी दृष्टि (चाँद देखने) पर अमल करना अनिवार्य है और उन निराधार अफ़वाहों की ओर ध्यान देना व्यर्थ और शून्य है। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है।

मसला 199 से 200: शाहजहाँपुर से, मुहम्मद खलील ग़र्बी, 21 ज़िल हिज्जाह 1322 हिजरी।

पहला: मुहम्मद एज़ाज़ हुसैन द्वारा प्रेषित: धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि शाहजहाँपुर के रहने वाले दो भरोसेमंद और न्यायप्रिय व्यक्ति मुंबई से आए और उन्होंने बयान किया कि हमने स्वयं 29 ज़िलकादा को मुंबई में चाँद देखा, तो क्या मुंबई से आए हुए लोगों की गवाही शाहजहाँपुर वालों पर 29 के हिसाब से ईदुल अज़हा के लिए मान्य होगी या नहीं? विश्वसनीय हनफ़ी फ़िक़्ह की किताबों के हवाले के साथ जवाब लिखें। बयान करें और सवाब पायें।

दूसरा: मौलवी रियासत अली खां साहब द्वारा प्रेषित: धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि दो व्यक्ति किसी दूसरे शहर से 29 तारीख का चाँद देखकर आएं, चाहे उस शहर की दूरी एक महीने से अधिक हो, तो क्या ईदुल अज़हा के चाँद देखने के मामले में उनकी गवाही मान्य होगी या नहीं? और अगर मान्य होगी तो शामी (फ़तवा शामी) के इस कथन का क्या अर्थ है कि:

'किताबुल हज' में उनके शब्दों से यह समझा जाता है कि इसमें उदय स्थलों (मताले) का अंतर मान्य है। अतः तीर्थयात्रियों पर कुछ भी अनिवार्य नहीं होगा यदि यह स्पष्ट हो जाए कि वह (चाँद) उनसे एक दिन पहले किसी दूसरे शहर में देखा गया था इत्यादि। 2

किताबुल हज में फ़ुक़हा के कलाम से मालूम होता है कि हज में इख़्तिलाफ़-ए-मताले (उदय स्थलों का अंतर) मोतबर (मान्य) है, तो हज्जाज पर कोई चीज़ लाज़िम न होगी अगर दूसरे शहर में एक दिन पहले चाँद का देखना ज़ाहिर हो जाए इत्यादि। (त)

इसका क्या अर्थ है? और यदि शामी का यह कथन 'मुफ़्ता बिही' (जिस पर फ़तवा दिया गया हो) और 'ज़ाहिरुर रिवायत' के विरुद्ध है, तो प्राथमिकता शामी के कथन को दी जाएगी या मुफ़्ता बिही कथन को, जिससे यह साबित होता है कि उदय स्थलों के अंतर का बिल्कुल भी विचार नहीं किया जाता, चाहे वह ईदुल अज़हा ही क्यों न हो?

1. दुर्रे मुख्तार, किताबुस सौम, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 1/9
2. रद्दुल मुहतार, किताबुस सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/105

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

بیہودہ شبہتوں پر عید کر لینا مسلمانوں کی نماز و قربانی خراب کر دینا اور عرفہ کے روزے تڑوانا سخت جرات و بیباکی ہے در مختار میں ہے:

یلزم اھل المشرق برؤیتہ اھل المغرب اذا ثبت عندھم رؤیۃ اولئك بطریق موجب کمامر - 1

اہلِ مشرق پر اہلِ مغرب کی رؤیت کی بنا پر روزہ یا افطار لازم ہوگا بشرطیکہ ان کے ہاں وہ رؤیت بطریق موجب ثابت ہو۔ جیسا کہ گزرا۔ (ت)

ایسی حالت میں ہم پر باتفاق علماء اپنی رؤیت پر عمل واجب ہے اور ان بے اصل شوشوں کی طرف التفات ہی باطل و ذاہب واللہ سبحانہ و تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۱۹۹ تا ۲۰۰: از شاہجہان پور محمد خلیل غربی ۲۱ ذی الحجہ ۱۳۲۲ھ

اولاً: مرسلہ محمد اعزاز حسین بعبارت: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ شاہجہان پور کے رہنے والے دو شخص ثقہ عادل بمبئی سے آئے اور انہوں نے بیان کیا کہ ہم نے خود ۲۹ ذیقعدہ کو بمبئی میں چاند دیکھا تو بمبئی کے آئے ہوئے لوگوں کی شہادت اہلِ شاہجہانپور پر عید الاضحٰی ۲۹ کے حساب سے ہوگی یا نہیں؟ مع حوالہ کتب فقیہ حنفیہ معتبرہ جواب تحریر فرمائیے بینوا توجروا

ثانیاً: مرسلہ مولوی ریاست علی خاں صاحب بعبارت: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ دو شخص کسی دوسرے شہر سے ۲۹ تاریخ کا چاند دیکھ کر آئیں، گو مسافت اُس شہر کی ایک ماہ سے زائد ہو تو گواہی ان کی در باب رؤیت ہلال عید الاضحٰی معتبر ہوگی یا نہیں؟ اور اگر معتبر ہوگی تو قول شامی کا کہ:

یفهم من کلامهم فی کتاب الحج ان اختلاف المطالع فیه معتبر فلا یلزم مهم شئ لو ظهر انه رأی فی بلدة اخری قبلهم بیوم الخ 2

کتاب الحج میں فقہاء کے کلام سے معلوم ہوتا ہے کہ حج میں اختلافِ مطالع معتبر ہے تو حجاج پر کوئی شئی لازم نہ ہوگی اگر دوسرے شہر میں ایک دن پہلے چاند کا دیکھنا ظاہر ہوجائے الخ (ت)

کیا مطلب ہے، اور یہ قول شامی کا معارض قول مفتی بہ اور ظاہر الروایۃ کے ہے تو ترجیح قول شامی کو دی جائیگی یا مفتی بہ قول کو کہ جس سے یہ ثابت ہوتا ہے کہ اختلاف مطالع کا مطلقاً اعتبار نہیں ہے گو عید الاضحیٰ کا ہو

1 در مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۹/۱ 2 رد المحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۱۰۵/۲

And also, consider the fatwa of Maulvi Abdul Hai Sahib, which is supported by Hadith, or the *Zahir al-Riwayah* and the *Mufta Bih* (authoritative) opinion, because Maulvi Abdul Hai writes in his collection of fatwas that testimony regarding moon sighting from a distance of one month or more travel will not be credible or acceptable. Explain and you shall be rewarded.

The Answer: Answer to the first question: The testimony of these just individuals, fulfilling the Shari'i conditions, is obligatory to be accepted, and acting contrary to it is impermissible. In Shahjahanpur, based on this, the proof of the 29th of Dhu al-Qi'dah was established, and according to that calculation, it became necessary to perform Eid al-Adha on Wednesday. According to that same calculation, the period for sacrifice remained until the twelfth, i.e., Friday. Whoever performed the sacrifice on Saturday after that, their sacrifice is not valid. This is because, in the Hanafi school of thought, differences in the horizons (of moon sighting) are not considered at all; this is the *Zahir al-Riwayah* and the fatwa is based upon it. The learned scholars explicitly state that whatever is outside the *Zahir al-Riwayah* is fundamentally not the school of the Hanafi Imams, especially when that itself is the decorative fatwa, such that deviating from it in any way is now not permissible.

It is stated in *Khulasah*, *Bahr al-Ra'iq*, *Tanwir al-Absar*, and *Durr al-Mukhtar*: "The wording for these two, in summary: the crescent of Eid al-Adha and the remaining nine months are like (the crescent of) Eid al-Fitr according to the (correct) school of thought. Difference in horizons is not considered according to the *Zahir al-Riwayah*, and upon this are most of the elders (scholars), and the fatwa is based on it." (Summarized)

The words of these two books state that on the correct school of thought, the matter of the moon for Eid al-Adha and the remaining nine months is like Eid al-Fitr. According to the *Zahir al-Riwayah*, differences in horizons are not considered. Most scholars hold this view, and the fatwa is based upon it. (T)

It is stated in *Fatawa Khairiyyah*: "They have explicitly stated that whatever goes out of the *Zahir al-Riwayah* is not the school of Abu Hanifa nor his opinion." The jurists have explicitly stated that what deviates from the *Zahir al-Riwayah* is neither the school nor the opinion of Imam Abu Hanifa. (T)

It is stated in *Bahr al-Ra'iq*: "Whatever goes out of the *Zahir al-Riwayah* is that which has been retracted, and what has been retracted no longer remains his opinion." Whatever departs from the *Zahir al-Riwayah* has been retracted from, and a retracted opinion of the Imam does not remain his opinion. (T)

---

1 *Durr al-Mukhtar*, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/169 2 *Fatawa Khairiyyah*, Kitab al-Talaq, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/52 3 *Bahr al-Ra'iq*, Fasl fi al-Taqlid, H.M. Saeed Company, Karachi, 1/207 Page 402 of 836

और साथ ही मौलवी अब्दुल हई साहिब का फ़तवा, जो हदीस द्वारा समर्थित है, उसे माना जाना चाहिए या ज़ाहिर अल-रिवायत और मुफ़्ता बिह (अधिकारक) राय को, क्योंकि मौलवी अब्दुल हई अपने फ़तवों के संग्रह में लिखते हैं कि एक महीने या उससे अधिक की दूरी से चाँद दिखने की गवाही विश्वसनीय या स्वीकार्य नहीं होगी। स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

जवाब: पहले सवाल का जवाब: इन न्यायप्रिय लोगों की गवाही, जो शरीयत की शर्तों को पूरा करती है, स्वीकार करना अनिवार्य है, और इसके विपरीत कार्य करना नाजायज़ है। शाहजहांपुर में, इसके आधार पर, 29 ज़ुल-क़ादा का प्रमाण स्थापित हुआ और उस गणना के अनुसार, बुधवार को ईदुल अज़हा मनाना आवश्यक हो गया। उसी गणना के अनुसार, कुर्बानी की अवधि बारहवीं तक यानी जुमे के दिन तक रही। जिसने उसके बाद शनिवार को कुर्बानी की, उसकी कुर्बानी नहीं हुई। इसका कारण यह है कि हनफ़ी मत में, (चाँद दिखने के) क्षितिजों के अंतर पर बिल्कुल विचार नहीं किया जाता है; यही ज़ाहिर अल-रिवायत है और फ़तवा इसी पर आधारित है। विद्वान स्पष्ट रूप से कहते हैं कि जो कुछ भी ज़ाहिर अल-रिवायत से बाहर है, वह मौलिक रूप से हनफ़ी इमामों का मत नहीं है, विशेष रूप से जब वही सुसज्जित फ़तवा हो, कि अब किसी भी तरह से इससे हटना जायज़ नहीं है।

ख़ुलासा, बहर अर-राइक, तन्वीर अल-अबसार और दुर्रे मुख़्तार में है: "इन दोनों के लिए शब्द सारांशित हैं: ईदुल अज़हा का चाँद और शेष नौ महीने (सही) मत के अनुसार ईदुल फ़ित्र की तरह हैं। ज़ाहिर अल-रिवायत के अनुसार क्षितिजों का अंतर मान्य नहीं है, और इस पर अधिकांश बुजुर्ग (विद्वान) हैं, और फ़तवा इसी पर है।" (संक्षिप्त)

इन दोनों किताबों के शब्दों में सही मत पर ईदुल अज़हा और शेष नौ महीनों के चाँद का मामला ईदुल फ़ित्र की तरह है, ज़ाहिर अल-रिवायत के अनुसार क्षितिजों के अंतर का विचार नहीं है, अधिकांश विद्वान इसी पर हैं, और इसी पर फ़तवा है। (त)

फ़तावा खैरिया में है: "उन्होंने स्पष्ट किया है कि जो ज़ाहिर अल-रिवायत से बाहर निकल गया, वह न तो इमाम अबू हनीफ़ा का मत है और न ही उनका कथन।" फ़क़ीहों ने स्पष्ट किया है कि जो ज़ाहिर अल-रिवायत से निकल जाए, वह न तो इमाम अबू हनीफ़ा का मत होता है और न ही कथन। (त)

बहर अर-राइक में है: "जो ज़ाहिर अल-रिवायत से निकल जाए, वह उससे पीछे हटा हुआ (रुजू किया हुआ) है और जिससे पीछे हट लिया गया हो, वह उनका कथन नहीं रहता।" जो ज़ाहिर अल-रिवायत से निकल जाए, उससे रुजू कर लिया गया होता है और रुजू किया हुआ इमाम साहब का कथन नहीं रहता। (त)

---

1 दुर्रे मुख़्तार, किताब अस-सौम, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/169 2 फ़तावा खैरिया, किताब अत-तलाक़, दारुल मारिफ़ा, बेरूत, 1/52 3 बहर अर-राइक, फ़स्ल फ़ित तक़लीद, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/207 पेज 402/836

اور نیز فتویٰ مولوی عبدالحئی صاحب کا کہ جو مؤید بحدیث ہے اعتبار کیا جائے گا یا ظاہر الروایۃ اور مفتی بہ قول کا کیونکہ مولوی عبدالحئی اپنے مجموعہ فتاویٰ میں یہ لکھتے ہیں کہ ایک ماہ یا زائد کی مسافت کی گواہی در باب رؤیت ہلال معتبر اور مقبول نہ ہوگی۔ بینوا توجروا۔

الجواب: جواب سوال اول: ان لوگوں کی شہادت عادلہ مستجمعہ شرائط شرعیہ واجب الاعتبار ہے اور اُس کا خلاف نا جائز، اور شاہجہان پور میں اس کی بنا پر ضرور ماہ ذیقعدہ ۲۹ کا ثبوت ہو کر اُس کے حساب سے چہار شنبہ کو عیدالاضحیٰ کرنی لازم ہوئی اور اسی حساب سے جو بارہویں تھی یعنی روزِ جمعہ اُسی تک میعادِ قربانی رہی جس نے اُس کے بعد شنبہ کو قربانی کی وہ قربانی نہ ہوئی کہ مذہبِ حنفی میں اختلافِ مطالع کا اصلاً اعتبار نہیں یہی ظاہر الروایۃ ہے اور اسی پر فتویٰ ہے، اور علمائے کرام تصریح فرماتے ہیں کہ جو ظاہر الروایۃ سے خارج ہے وہ اصلاً مذہبِ ائمہ حنفیہ نہیں خصوصاً جب وہی مندیلِ بفتویٰ ہو کہ اب تو کسی طرح اس سے عدول روا نہیں۔

خلاصہ و بحرالرائق و تنویر الابصار ودرِمختار میں ہے: واللفظ لہذین ملتقطاً ہلال الاضحیٰ وبقیۃ الاشہر التسعۃ کالفطر علی المذہب واختلاف المطالع غیر معتبر علی ظاہر المذہب وعلیہ اکثر المشائخ وعلیہ الفتویٰ- (ملخصاً) خلاصہ ان دونوں کتابوں کے الفاظ میں صحیح مذہب پر عید الاضحیٰ اور بقیہ نو ماہ کے چاند کا معاملہ عید الفطر کی طرح ہے، اختلاف مطالع کا ظاہر مذہب کے مطابق اعتبار نہیں، اس پر اکثر مشائخ ہیں، اور اسی پر فتویٰ ہے۔ (ت)

فتاوٰی خیریہ میں ہے: صرحوابان ما خرج عن ظاہر الروایۃ لیس مذھباً لابی حنیفۃ ولا قولاً لہ- فقہاء نے تصریح کی ہے کہ جو ظاہر الروایۃ سے نکل جائے وہ امام ابو حنیفہ کا نہ مذہب ہوتا ہے نہ قول۔ (ت)

بحرالرائق میں ہے: ما خرج عن ظاہر الروایۃ فھو مرجوع عنہ والمرجوع عنہ لم یبق قولاً لہ- جو ظاہر الروایۃ سے نکل جائے اس سے رجوع کر لیا گیا ہوتا ہے اور مرجوع عنہ امام صاحب کا قول باقی نہیں رہتا۔ (ت)

---

1 درِ مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۶۹ 2 فتاوٰی خیریہ کتاب الطلاق دارالمعرفۃ للطباعۃ والنشر بیروت ۱/ ۵۲ 3 بحرالرائق فصل فی التقلید ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۲۰۷

Fatawa Razawiya, Volume 10

In Radd al-Muhtar, it is stated: "Whatever contradicts 'Zahir al-Riwayah' (the primary transmitted rulings) is not the school of our [Hanafi] masters." (T)

In Durr al-Mukhtar, it is stated: "Issuing a judgment or a fatwa based on a weightless (marjuh) opinion is ignorance and a violation of consensus (ijma')." (T)

In Radd al-Muhtar, it is stated: "Such as following the opinion of [Imam] Muhammad despite the existence of [Imam] Abu Yusuf's opinion, when [Imam Muhammad's opinion] has not been authenticated or its reasoning strengthened. And more invalid than this is issuing a fatwa against 'Zahir al-Riwayah' when such opposition has not been authenticated, or issuing a fatwa based on a retracted opinion. End. And Allah, the Sublime and Exalted, knows best, and His knowledge, Glorious is His Majesty, is most complete and most perfect." [Urdu translation in text: Like following Imam Muhammad's opinion despite the existence of Imam Abu Yusuf's opinion, when Imam Muhammad's opinion has not been authenticated or strengthened; and even more invalid would be a fatwa against Zahir al-Riwayah when such opposition has not been authenticated, or a fatwa based on a retracted opinion. And Allah, the Sublime and Exalted, knows best, and His knowledge, Glorious is His Majesty, is most complete and most perfect. (T)]

Answer to the Second Question: In the situation inquired about, when the legal testimony is just ('adila), it will certainly be reliable even if it concerns the moon of Eid al-Adha and even if the distance between them is more than a month's journey. This is the school of our Imams, and on this is the fatwa, and deviating from it is invalid and impermissible. 'Allama Shami (may Allah illuminate his high grave) did not intend to contradict 'Zahir al-Riwayah' or the 'Mufta Bihi' (fatwa-given) opinion here; rather, due to human nature, he made a conceptual error by considering it specific to the moon of fasting (Ramadan) and breaking the fast (Eid al-Fitr). He considered only the moon of [Eid al-] Adha as exempt from those texts. This was a slip of observation, such that in comparison to the generalities and explicit mentions in the reliable books of the school, paying attention to it is impossible, let alone relying on it. The mentioned 'Allama's saying 'it is understood from their words' is due to this error in thought; otherwise, it is not even inferred, let alone suspected, from the words of our scholars. Their high words clearly refuse this assumption. Maulvi Lucknawi not only considered the difference of horizons reliable for [Eid al-] Adha but for fasting and

[Eid al-] Fitr as well, and intentionally contradicted 'Zahir al-Riwayah' and the 'Mufta Bihi' opinion, and...

1. Radd al-Muhtar, Book: Ihya al-Mawat, Dar al-Turath al-Arabi, Beirut, 5/28
2. Durr al-Mukhtar, Preface, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/15
3. Radd al-Muhtar, under the mentioned text, Mustafa al-Babi, Egypt, 1/55

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम (10)

रद-उल-मुहतार में है: "जो 'ज़ाहिर-उर-रिवायत' के ख़िलाफ़ हो वह हमारे अह्नाफ़ का मज़हब नहीं है।" (त)

दुर्रे-मुख़्तार में है: "मरजूह (कमज़ोर) क़ौल पर फ़तवा और फ़ैसला देना जहालत और इज्मा (आम सहमति) की मुख़ालिफ़त है।" (त)

रद-उल-मुहतार में है: "जैसे इमाम अबू यूसुफ़ के क़ौल के होते हुए इमाम मुहम्मद के क़ौल पर अमल करना जिसकी तस्दीक़ (प्रमाणीकरण) न की गई हो या उसकी दलील को मज़बूत न बताया गया हो। और इससे भी ज़्यादा बातिल (अमान्य) वह फ़तवा होगा जो 'ज़ाहिर-उर-रिवायत' के ख़िलाफ़ हो जबकि उस ख़िलाफ़ की तस्दीक़ न की गई हो, या वह फ़तवा जो रुजू (वापस) किए गए क़ौल पर हो। अल्लाह सुब्हानहू व तआला सबसे बेहतर जानता है और उसका इल्म सबसे कामिल और हिकमत वाला है।" [उर्दू अनुवाद: जैसे इमाम अबू यूसुफ़ के क़ौल के बावजूद इमाम मुहम्मद के क़ौल पर जिस की तस्दीक़ न की गई हो या उस की तक़वियत बयान न की गई हो और इस से ज़्यादा बातिल वह फ़तवा होगा जो ज़ाहिर-उर-रिवायत के ख़िलाफ़ हो जब कि इस ख़िलाफ़ की तस्दीक़ न की गई हो, और वह फ़तवा जो मरजू'अ अन्हु हुआ, वल्लाह सुब्हानहू व तआला आलम व इल्मुहू जल्ला मजदुहू अतम व अहकम (त)]

दूसरे सवाल का जवाब: पूछी गई सूरत में, जब वह गवाही शरीअत के मुताबिक़ और आदिल (न्यायपूर्ण) हो तो वह ज़रूर मोतबर (भरोसेमंद) होगी, चाहे वह ईदुल अज़हा का चाँद हो और चाहे उनके बीच की दूरी एक महीने से ज़्यादा हो। यही हमारे इमामों का मज़हब है और इसी पर फ़तवा है, और इससे हटना बातिल और नाजायज़ है। अल्लामा शामी (अल्लाह उनकी क़ब्र को नूर से भर दे) ने यहाँ 'ज़ाहिर-उर-रिवायत' और 'मुफ़्ता बिही' (जिस पर फ़तवा दिया गया हो) क़ौल का विरोध करना नहीं चाहा, बल्कि इन्सानी फ़ितरत के तौर पर एक फ़िक्री ग़लती (सोच की चूक) से इसे सिर्फ़ रमज़ान और ईदुल फ़ित्र के चाँद तक सीमित समझा। उन्होंने सिर्फ़ ईदुल अज़हा के चाँद को उन नुसूस (धार्मिक ग्रंथों के स्पष्ट कथनों) से अलग माना। यह नज़र की एक चूक थी, क्योंकि मज़हब की मोतबर किताबों के आम बयानात और साफ़ उल्लेखों के सामने इसकी तरफ़ ध्यान देना भी नामुमकिन है, भरोसा करना तो दूर की बात है। मज़कूर अल्लामा का यह कहना कि 'उनकी बातों से यही समझ आता है' इसी फ़िक्री चूक की वजह से है, वरना हमारे उलेमा की बातों से ऐसा कोई मतलब या शक

भी नहीं निकलता। उनके आला दर्जे के अल्फ़ाज़ साफ़ तौर पर इस फ़र्ज़ी बात से इनकार करते हैं। मौलवी लखनवी साहब ने न सिर्फ़ अज़हा बल्कि रोज़ा और फ़ित्र सब में अलग-अलग स्थानों के क्षितिज (इख़्तिलाफ़-ए-मतालए) को मोतबर माना और 'ज़ाहिर-उर-रिवायत' व 'मुफ़्ता बिही' का जानबूझकर विरोध किया और...

1. रद-उल-मुहतार, किताब: इह्या अल-मवात, दारुल तुरास अल-अरबी, बेरुत, 5/28
2. दुर्रे-मुख़्तार, ख़ुत्बा, मतब-ए-मुज्तबाई, दिल्ली, 1/15
3. रद-उल-मुहतार, मज़कूर इबारत के तहत, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/55

فتاوٰی رضویہ ، جلد دہم

ردا لمحتار میں ہے: مَا خَالَفَ ظَاهِرَ الرِّوَايَةِ لَيْسَ مَذْهَبًا لِّاَصْحَابِنَا [جو ظاہر الروایت کے خلاف ہو وہ ہمارے احناف کا مذہب نہیں۔ (ت)]

در مختار میں ہے: الْحُكْمُ وَالْفُتْيَا بِالْقَوْلِ الْمَرْجُوحِ جَهْلٌ وَخَرْقُ الْإِجْمَاعِ [مرجوح قول پر فتوٰی و فیصلہ جہالت اور اجماع کی مخالفت ہے۔ (ت)]

ردالمحتار میں ہے: کقول محمد مع وجود قول ابی یوسف اذالم یصحح اویقو وجھہ واولی من ھذا بالبطلان الافتاء بخلاف ظاھرالروایۃ اذا لم یصحح والافتاء بالقول المرجوع عنہ اھ واللہ سبحنہ وتعالی اعلم وعلمہ اتم واحکم۔ [جیسا کہ امام ابو یوسف کے قول کے باوجود امام محمد کے قول پر جس کی تصحیح نہ کی گئی ہو یا اس کی تقویت بیان نہ کی گئی ہو اور اس سے زیادہ باطل وہ فتوٰی ہوگا جو ظاہر الروایہ کے خلاف ہو جبکہ اس خلاف کی تصحیح نہ کی گئی ہو، اور وہ فتوٰی جو مرجوع عنہ ہوا ح، واللہ سبحٰنہ و تعالٰی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم (ت)]

جواب سوال ثانی: صورت مستفسرہ میں جب وہ شہادت شرعیہ عادلہ ہو تو ضرور معتبر ہوگی اگرچہ ہلال عید اضحٰی ہو اگرچہ ان میں مسافت ایک ماہ سے زیادہ ہو، یہی ہمارے ائمہ کا مذہب ہے اور اسی پر فتوٰی اور اس سے عدول باطل و ناروا، علامہ شامی نور اللہ قبرہ السامی نے یہاں ظاہر الروایہ و قول مفتی بہ کا معارضہ نہ چاہا بلکہ براہ بشریت ایک خطائے فکری سے اسے مختص بہ ہلال صوم و فطر سمجھا، فقط ہلال اضحٰی کو اُن نصوص سے مخصوص جانا اور یہ لغزش نظر تھی کہ اطلاقات بلکہ تنصیصات کتب معتمدہ مذہب کے مقابل اس کی طرف التفات بھی نامکن، چہ جائے اعتماد، علامہ ممدوح کا یفھم من کلامھم فرمانا اسی لغزشِ فکر کے باعث ہے

ورنہ وہ ہرگز ہمارے علماء کے کلام سے مفہوم بلکہ موہوم بھی نہیں ان کے کلمات عالیات صاف اس مزعومہ سے ابا فرمارہے ہیں۔ مولوی لکھنوی صاحب نے نہ صرف اضحیٰ بلکہ صوم و فطر سب میں اختلاف مطالع معتبر ٹھہرایا اور ظاہر الروایہ اور مفتی بہ کا بالقصد معارضہ کیا اور

1 ردالمحتار کتاب احیاء الموات دارالتراث العربی بیروت ۲۸/۵ 2 در مختار خطبہ کتاب مطبع مجتبائی دہلی ۱۵/۱ 3 ردالمحتار تحت عبارت مذکور مصطفی البابی مصر ۵۵/۱

According to his own explanations, in many ways, he has employed gross errors and false constructions from the discussion of Allama Shami, which he does not present as a fatwa. And the fatwa of Maulvi Lakhnavi, upon which he relies with certainty and trust, is clearly void and utterly unacceptable according to the sciences of Fiqh, Hadith, and Astronomy. It also opposes, contradicts, and stands against other explanations given by both these gentlemen. Both have equally opposed the Ahadith, although the blame on Maulvi Lakhnavi is more extensive and stronger because Allama Shami (may Allah have mercy on him) does not pretend to be more than a recognized follower (Muqallid), whereas the scholar from Lucknow aspires to be a critical researcher, a traditionist (Muhaddith) of scholarly merit, an expert, and a critic of the teachings of the great Imams. He even subjects the sublime teachings of the great miracle of Muhammad, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), the lamp of the Ummah, the dispeller of grief, the Imam of Imams, the one who attained knowledge and faith from the Pleiades, our master Imam-e-Azam (may Allah be pleased with him), to the criteria of critique, deficiency, and rejection, saying that Abu Hanifa said this but the truth is such-and-such, and that Abu Hanifa's arguments are thus, and all of them are void. For such a grand and high-ranking scholar of Hadith, who encompasses and covers Ahadith and traditions, the pride of Bukhari and the envy of Tahawi, to oppose clear, well-known, established, authentic, and explicit Ahadith is indeed a cause for wonder. The fatwa of the Maulvi is by no means supported by Hadith; rather, it is in clear opposition to Ahadith. And there is no complaint about this either; he has even used foul language against great figures, considering the stance of any of our Imams (may Allah be pleased with them) to be against Hadith in his own deficient judgment. Yet, after scrutiny, it becomes clear as daylight that these objectors themselves did not understand the Hadith. And how excellent is the one who said (and goodness is for Allah alone, who said this verse):

How many there are who find fault in a correct statement, While its flaw is due to their own faulty understanding.

(Many people declare a correct statement as defective, whereas this misfortune has arisen due to weak understanding. T)

And the major portion of the opposition to the blessed Fiqh was taken up by this learned researcher. If there is one objection against Allama Shami here, then there

are four against him. As we have already pointed out, despite their deliberate abundance, these oppositions exist. Allama Shami had a slip in understanding one issue upon which he based his discourse, so he intended harmony, not the commission of opposition. Strangely, in terms of contradiction and inconsistency with their own clarifications, our meticulous contemporary researcher holds the heavier side. The accusation of complete ignorance of astronomy lies solely on him, as Allama Shami had no inclination towards these arts, whereas our contemporary researcher claims to be all-knowing. All these summary statements regarding his expertise are clear from the humble author's scattered writings, and if friends desire, this humble servant is ready for details with the help of the All-Powerful. And Allah knows best.

Problem 201: From Gaya, Mahalla Barah, near Masjid Ghulam Mustafa Sahab. The manifester of the lights of Shari'ah, Maulana [titles], after respectful greetings, the matter is that one issue which during Ramadan...

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवां

अपनी ही व्याख्याओं के अनुसार, कई प्रकार से उसने अल्लामा शामी की उस चर्चा से घोर त्रुटियों और झूठी रचनाओं का सहारा लिया है जिसे वह फतवा नहीं बताते। और मौलवी लखनवी साहब का फतवा, जिस पर वे पूर्ण विश्वास और भरोसे के साथ काम कर रहे हैं, न्यायशास्त्र (फ़िक़्ह), हदीस और खगोल विज्ञान (हैयात) तीनों विज्ञानों के अनुसार स्पष्ट रूप से शून्य और सर्वथा अस्वीकार्य है। साथ ही, यह इन दोनों महानुभावों की अन्य व्याख्याओं के विपरीत, विरोधाभासी और उनके मुकाबले में है। हदीसों का विरोध तो दोनों साहबों ने समान रूप से किया है, यद्यपि इसका दोष मौलवी लखनवी साहब पर अधिक और प्रबल है क्योंकि अल्लामा शामी (अल्लाह उन पर रहम करे) एक मान्यता प्राप्त मुक़ल्लिद (अनुयायी) से अधिक कुछ होने का दावा नहीं करते, जबकि लखनवी विद्वान एक शोधकर्ता मुहाद्दिस, दृष्टि संपन्न विचारवान और बड़े इमामों के उपदेशों के समीक्षक बनना चाहते हैं। यहाँ तक कि वे मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के महान चमत्कार, उम्मत के चिराग, दुखों को दूर करने वाले, इमामों के इमाम, जिन्होंने सुरैया नक्षत्र से ज्ञान और ईमान प्राप्त किया, हमारे आका इमाम-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) के महान उपदेशों को आलोचना, कमी और अस्वीकृति की कसौटी पर रखते हैं कि अबू हनीफा ने यह कहा और सत्य यह है, अबू हनीफा के तर्क ये हैं और ये सब शून्य हैं। ऐसे महान और उच्च पदस्थ मुहाद्दिस, जो हदीसों और परंपराओं के ज्ञाता हैं, बुखारी के गर्व और तहावी की ईर्ष्या, उनका स्पष्ट, प्रसिद्ध, ज्ञात, सही और प्रत्यक्ष हदीसों के विपरीत पड़ना वास्तव में आश्चर्य का विषय है। मौलवी साहब का फतवा किसी भी तरह से हदीस द्वारा समर्थित नहीं है, बल्कि हदीसों के स्पष्ट रूप से विरुद्ध है। और इसकी कोई शिकायत भी नहीं है; उन्होंने बड़ों के खिलाफ भी अभद्र भाषा का प्रयोग किया है, कि हमारे इमामों (रज़ियल्लाहु अन्हुम) के किसी भी मत को अपने दोषपूर्ण निर्णय में हदीस के विपरीत समझा। और जांच के बाद यह सूरज की तरह साफ हो गया कि ये आपत्ति करने वाले स्वयं ही हदीस नहीं समझते थे। और अल्लाह के लिए ही भलाई है जिसने यह शेर कहा:

कितने ही लोग हैं जो एक सही बात में दोष निकालते हैं, जबकि उसकी खराबी उनकी अपनी दोषपूर्ण समझ के कारण होती है।

(बहुत से लोग सही बात को दोषपूर्ण करार देते हैं जबकि यह मुसीबत कमज़ोर समझ की वजह से आई है। त)

और धन्य फ़िक़्ह के विरोध का बड़ा हिस्सा तो इन्हीं विद्वान शोधकर्ता ने लिया। अगर यहाँ अल्लामा शामी पर एक आपत्ति है, तो उन पर चार हैं। जैसा कि हम संकेत दे चुके हैं, जानबूझकर की गई अधिकता के बावजूद ये विरोध मौजूद हैं। अल्लामा शामी से एक मसले की समझ में चूक हुई जिस पर उन्होंने अपनी बात आधारित की, तो उनका उद्देश्य सहमति था, विरोध करना नहीं। विचित्र बात यह है कि अपनी ही व्याख्याओं से विरोधाभास और विसंगति के मामले में भी हमारे इन सूक्ष्मदर्शी समकालीन शोधकर्ता का पलड़ा भारी है। खगोल विज्ञान से पूरी तरह अनभिज्ञता का आरोप तो केवल उन्हीं पर है क्योंकि अल्लामा शामी का इन कलाओं की ओर कोई झुकाव नहीं था, जबकि हमारे समकालीन शोधकर्ता तो सर्वज्ञ होने का दावा करते हैं। उनकी योग्यता के बारे में ये सभी संक्षिप्त विवरण अल्लाह की सहायता से इस फकीर के विभिन्न लेखों से स्पष्ट हैं, और यदि मित्रों की इच्छा हुई तो यह फकीर विस्तार के लिए तैयार है। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला 201: गया, मोहल्ला बाह, निकट मस्जिद गुलाम मुस्तफा साहब। शरीयत के नूर के प्रकटीकरण हजरत मौलाना [उपाधियाँ], सादर अभिवादन के बाद, बात यह है कि एक मसला जो रमज़ान...

خود اپنی تصریحات کی رُوسے بوجوہ کثیرہ فاحش خطاؤں اور باطل بناؤں سے کام لیا علامہ شامی کی بحث سے جسے وہ فتویٰ نہیں بتاتے، اور مولوی لکھنوی صاحب کا فتویٰ جس پر وہ جزم و اعتماد کررہے ہیں علم فقہ و علم حدیث و علم ہیئت تینوں علوم کی رُو سے صریح باطل و محض نا قابل، اور خود ان دونوں حضرات کی دوسری تصریحات کے معارض و مناقض و مقابل ہیں، احادیث کی مخالفت تو دونوں صاحبوں نے یکساں کی ہے اگر چہ اس کا الزام بھی مولوی لکھنوی صاحب پر زائد و قوی ہے کہ علامہ شامی رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ ایک متفقہ مقلد سے زیادہ نہیں بنتے اور فاضل لکھنوی ایک محقق محدث اہل نظر اعتبار، نقاد ارشادات ائمہ کبار بننا چاہتے ہیں، حتیٰ کہ محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے معجزہ عظیمہ سراج الامۃ کاشف الغمہ امام الائمہ نائل العلم والایمان من الثریا سیدنا امام اعظم ہمام اقدم رضی اللہ تعالیٰ عنہ ارشادات عالیہ کو محک نقد و نقص ورد پر رکھتے ہیں کہ ابو حنیفہ نے یہ کہا اور حق یوں ہے ابو حنیفہ کے دلائل یہ ہیں اور یہ سب باطل ہیں، ایسے جلیل الشان رفیع المکان محدث، احادیث و آثار کے محیط و حاوی، فخر بخاری و رشک طحاوی کا احادیث واضحہ مشہورہ معروفہ صحیحہ صریحہ سے مخالف پڑنا ضرور محل عجب ہے۔ فتوائے مولوی صاحب ہر گز مؤید بحدیث بلکہ صریح مخالف احادیث ہے اور اس کی شکایت بھی کچھ نہیں، بڑے بڑوں پر بھی بد زبانی کی ہے کہ ہمارے ائمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم کے کسی مذہب کو اپنے زعم ناقص میں مخالف حدیث سمجھے اور بعد تنقیح، آفتاب کی طرح روشن ہوا کہ یہ معترضین خود ہی حدیث نہ سمجھتے تھے، وللہ در من قال (اور اللہ تعالیٰ ہی کے لئے بھلائی ہے، جس نے یہ شعر کہا:

و کم من عائب قولا صحیحا وآفتہ من الفہم السقیم

بہت سے لوگ صحیح بات کو معیوب قرار دیتے ہیں جبکہ یہ مصیبت کمزور فہم کی وجہ سے آئی ہے۔ت)

اور مبارک فقہ کی مخالفت کا زیادہ حصہ تو انہی فاضل محقق نے لیا۔ علامہ شامی پر اگر یہاں ایک اعتراض ہے تو ان پر چار پھر جیسا کہ ہم اشارہ کر آئے ہیں، اتنی مخالفت باوصف کثرت قصدیہ ہیں، اور علامہ شامی سے ایک مسئلہ کے فہم میں لغزش ہوئی جس پر انہوں نے بنائے کلام فرمائی تو وہ قاصد موافقت ہیں، نہ مرتکب مخالفت، طرفہ یہ کہ یہ اپنی تصریحوں سے تعارض و تناقض میں بھی، انہی ہمارے محقق مدقق معاصر کا پلہ بھاری ہے اور علم ہیئت سے یکسر بیگانگی کا الزام تو صرف انہی پر ہے کہ علامہ شامی کو ان فنون کی جانب التفات نہ تھا اور ہمارے محقق معاصر تو ہمہ داں ہیں، یہ سب اجمالی بیان بعونہ تعالٰی درباره اہلہ فقیر کی متفرق تحریرات سے واضح ہیں اور احباب کی خواہش ہوئی تو فقیر بعون القدیر تفصیل کے لیے حاضر۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲۰۱: از گیا محلہ بارہ قریب مسجد غلام المصطفی صاحب مظہر انوار شریعت حضرت مولانا دامت برکاتکم و فیوضاتکم بعد سلام باکرام آنکہ ایک مسئلہ جو رمضان

Fatawa Razawiyyah - Volume 10

...relating to the date that occurred, information is sought. It is hoped that a correct answer will be sent promptly, honoring and distinguishing [the sender], and may you be rewarded by Allah. If there is opportunity and time, please also provide references from Hadith and books. That's all. May the sun of guidance continue to shine brightly. What do the scholars of the firm religion say on this matter: In a town, on the day that was the 30th of Ramadan, a legal representative (mukhtar) of a city's court arrived and said that 'in the city he came from, the Eid prayer had already taken place today, the preparations for prayer were ongoing, and you all should also offer it.' The said mukhtar was not sent by any scholar, nor did he bring a letter from any scholar. Now, setting aside external matters and what might be verified in the future, please state whether the news from the said mukhtar was reliable in that town according to Sharia or not. And would it be correct to give a fatwa for the Eid prayer based on the mukhtar's news? Please state and be rewarded by Allah and included among the virtuous. Also, the Hindu telegraph clerk of that town was giving news that a telegram had arrived saying 'Eid will be today in such-and-such city.' Now, was the news from the telegraph clerk reliable or not?

Answer: Regarding the crescent moon, letters and telegrams are purely unreliable. It is in 'Ashbah wa al-Nazair': "A letter is not to be relied upon, nor acted upon." 1 (Translation: Neither should a letter be trusted nor should it be acted upon. - T). A single informant and a court's mukhtar, especially when it is mere narration and news, even if two just witnesses made such a narration, it would not be reliable at all. It is in 'Durr-e-Mukhtar':

Witnesses testified that such-and-such two witnesses testified before the Judge of Egypt regarding the sighting of the moon, and he passed a judgment based on it, and all the conditions for a claim were found to be met. The judge then rules based on their testimony because the judge's ruling is proof, and they testified to it. Not if they testified to the sighting of others, because that is [mere] narration. (Summary)

Witnesses say that before the Judge of Egypt, such-and-such two witnesses gave testimony on seeing the moon on such-and-such date, and the judge there has made a decision on it, and all the conditions of a claim are found, then it is permissible for the [local] judge to decide based on their testimony because the judge's decree is proof, and the witnesses there have testified to that. Yes, if they testified to the sighting of others, it would not be accepted because it is a narration (Summary). (T)

1 Ashbah wa al-Nazair, Kitab al-Qada wa al-Shahadat wa al-Da'awa, Idarat al-Qur'an wa al-'Ulum al-Islamiyyah, Karachi, 1/338. 2 Durr-e-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/129.

फ़तावा रज़विया - जिल्द 10

...जो तारीख पेश आई थी, उसकी जानकारी मांगी गई है। उम्मीद है कि सही जवाब जल्द भेजकर सम्मानित और गौरवान्वित करेंगे और अल्लाह के पास इसके लिए प्रतिफल (अजर) पाएंगे। अवसर और समय मिलने पर हदीस के स्रोत और किताब का हवाला भी बताने की कृपा करें। बस इतना ही, मार्गदर्शन का सूरज चमकता और दमकता रहे। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या फरमाते हैं कि: एक कस्बे में रमजान शरीफ की 30 तारीख के दिन, एक शहर की कचहरी के मुख्तार (कानूनी प्रतिनिधि) आए और उन्होंने कहा कि 'जिस शहर से हम आए हैं वहां आज ईद की नमाज हो गई, नमाज का सामान हो रहा था, आप लोग भी पढ़िये'। उक्त मुख्तार साहब किसी विद्वान (आलिम) द्वारा भेजे गए नहीं थे और न ही किसी विद्वान का पत्र लाए थे। अब बाहरी बातों और भविष्य में क्या सिद्ध होगा इसे छोड़कर, सिर्फ यह बताएं कि शरीयत के अनुसार उस कस्बे में उक्त मुख्तार साहब की खबर विश्वसनीय थी या नहीं? और मुख्तार साहब की खबर पर भरोसा करके ईद की नमाज के लिए फतवा देना सही होगा या नहीं? कृपया मार्गदर्शन करें और अल्लाह के पास प्रतिफल पाएं। साथ ही, उस कस्बे का हिंदू तार बाबू खबर दे रहा था कि तार आया है कि आज फलां शहर में ईद होगी। अब, क्या तार बाबू की खबर विश्वसनीय थी या नहीं?

उत्तर: चाँद के मामले में पत्र और तार पूरी तरह से अविश्वसनीय हैं। 'अश्बाह व अन-नज़ायर' में है: "पत्र पर न तो भरोसा किया जाए और न ही उस पर अमल किया जाए।" 1 (टीका: पत्र पर न तो विश्वास किया जाना चाहिए और न ही उस पर कार्रवाई की जानी चाहिए। - टी)। एक अकेले खबर देने वाले और कचहरी के मुख्तार, और वह भी केवल एक किस्सा और सूचना के रूप में, अगर दो न्यायप्रिय गवाह भी ऐसा किस्सा सुनाते तो वह कतई विश्वसनीय नहीं होता। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

अरबी पाठ: गवाहों ने गवाही दी कि मिस्र के न्यायाधीश के समक्ष दो गवाहों ने चाँद देखने की गवाही दी, और उन्होंने उसके आधार पर निर्णय सुनाया, और दावे की सभी शर्तें पूरी पाई गईं। न्यायाधीश तब उनकी गवाही के आधार पर शासन करता है क्योंकि न्यायाधीश का निर्णय प्रमाण है, और उन्होंने इसकी गवाही दी। यदि उन्होंने दूसरों के देखने की गवाही दी होती, तो ऐसा नहीं होता, क्योंकि वह [केवल] वर्णन है। (सारांश)

गवाह कहते हैं कि मिस्र के काजी के पास फलां दो गवाहों ने फलां तारीख को चाँद देखने पर गवाही दी है और वहां के काजी ने उस पर फैसला कर दिया है और दावे की सभी शर्तें पूरी पाई गई हों, तो अब काजी के लिए जायज है कि उनकी गवाही पर फैसला कर दे क्योंकि काजी का फैसला सबूत (हुज्जत) है और वहां के गवाहों ने उसी पर गवाही दी है। हाँ, अगर वे दूसरों के देखने पर गवाही देते तो वह स्वीकार नहीं होती क्योंकि वह एक किस्सा (हिकायत) है। (संक्षिप्त) (त)

1 अश्बाह व अन-नज़ायर, किताबुल कज़ा वश-शहादात वद-दा'वा, इदारतुल कुरान वल-उलूमल इस्लामिया, कराची, 1/338. 2 दुर्रे मुख्तार, किताबुस सौम, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/129.

کی تئیں تاریخ پیش آیا تھا وہ دریافت طلب ہے امید کہ جواب باصواب زودتر ارسال فرما کر سرفراز و ممتاز فرما کر عند اللہ ماجور ہوں۔ بصورت فرصت و مہلت حدیث ماخذ و حوالہ کتاب بھی ارشاد فرما دیجئے گا فقط ، زیادہ آفتابِ ہدایت تاباں و درخشاں باد۔ کیا فرماتے ہیں علمائے دین متین اس مسئلہ میں کہ ایک قصبہ میں جس روز رمضان شریف کی تئیں ۳۰ تاریخ تھی اسی روز ایک شہر کے مختار کچہری کے آئے اور انہوں نے کہا کہ آج ہم جس شہر سے آئے ہیں وہاں آج عید کی نماز ہو گئی ، سامان نماز کو ہو رہا تھا، آپ لوگ بھی پڑھیے۔ مختار صاحب مذکور کسی عالم کے فرستادہ میں سے نہ تھے اور نہ کسی عالم صاحب کا خط لائے تھے اب قطع نظر امورِ خارجہ کے اور اس بات کے کہ آئندہ کیا متحقق ہوگا ، صرف یہ ارشاد ہو کہ اس قصبہ میں ازروئے شریعت کے اس روز مختار صاحب موصوف کی خبر معتبر تھی یا نہیں اور مختار صاحب کی خبر کا اعتبار کر کے نماز عید کے واسطے فتوٰی دینا صحیح ہو گا یا نہیں ، ارشاد فرما کر عند اللہ ماجور و داخل حسنات ہوں اور اس قصبہ کا ہندو تار بابو خبر دیتا تھا کہ تار آیا ہے آج عید فلاں شہر میں ہو گی ، اب تار بابو کا خبر دینا معتبر تھا یا نہیں ؟

الجواب: دربارہ ہلال خط و تار محض بے اعتبار ، اشباہ و النظائر میں ہے : لایعتمد علی الخط ولا یعمل بہ ۱ (خط پر نہ تو اعتماد کیا جائے نہ ہی اس پر عمل کیا جائے ۔ت) مخبر واحد اور کچہری کے مختار اور وہ بھی محض حکایت و اخبار کہ دو شاہد عدل بھی ایسی حکایت کرتے تو اصلاً معتبر نہ تھی۔ در مختار میں ہے:

شھدوا انہ شھد عند قاضی مصر کذا شاھد ان برؤیۃ الھلال وقضی بہ و وجد استجماع شرائط الدعوی قضی القاضی بشھادتھما لان قضاء القاضی حجۃ وقد شھدوا بہ ، لالو شھدوا برؤیۃ غیرھم لانہ حکایۃ۔ ۲ (ملخصاً)

گواہ کہتے ہیں کہ قاضی مصر کے پاس فلاں دو گواہوں نے فلاں تاریخ کو چاند دیکھنے پر گواہی دی ہے اور وہاں کہ قاضی نے اس پر فیصلہ کر دیا ہے اور شرائط دعویٰ کی ساری پائی گئی ہوں تو اب قاضی کو جائز ہے ان کی گواہی پر فیصلہ کر دے کیونکہ قاضی کی قضاء حجت ہے اور اسی پر وہاں کے گواہوں نے گواہی دی ہے۔ ہاں اگر وہ دوسروں کی رؤیت پر گواہی دیتے تو قبول نہ ہوتی کیونکہ یہ حکایت ہے (ملخصاً)۔ (ت)

1 اشباہ والنظائر ، کتاب القضاء والشھادات والدعاوی، ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۱/ ۳۳۸

2 در مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۹/۱۲۱

Fatawa Razviya, Volume 10

In the aforementioned situation, it was forbidden (haram) for the townspeople to celebrate Eid even if it was proven later, because they celebrated before the proof of Eid and acted contrary to the guidance of the authentic Hadith: "Fast upon seeing it (the moon) and break your fast upon seeing it" (1). Whoever gave the fatwa for Eid based on the aforementioned delirium of telegrams and unreliable tales committed a severe sin. Never act upon such a fatwa. It is mentioned in the Hadith: "When authority is entrusted to those who are not worthy of it, then wait for the Hour (Judgment Day)." (2) And Allah knows best. (T) And Allah knows best.

Problem 202: From Sujat, Marwar market, issue of Sheikh Nanhe Miyan, Hat Seller, Dahan Mandi, 26 Safar 1327 AH. What do the scholars of religion and muftis of the clear Sharia say about this matter: In the town of Sujat, Marwar, the moon was not sighted on the 29th of Shaban. Therefore, people completed thirty days of Shaban and then started fasting for Ramadan. Later, for some reason, two or three people went to Delhi. The people there had started fasting based on the moon sighting on the 29th of Shaban. Now, those individuals returned to Sujat at the end of blessed Ramadan and started saying that fasting in Delhi started based on the 29th calculation, so we will also celebrate Eid according to their calculation and will not consider the moon sighting of Sujat. Now, on the 29th of Sujat and the 30th of the other place, they said we will celebrate Eid tomorrow. Out of stubbornness and ego, they did not fast and even misled those who were fasting into breaking their fast. Some people said that we will not break our fast without seeing the moon and will celebrate Eid after completing thirty days because this is the command of Sharia for us. They had also seen a fatwa by Maulana Ahmad Raza Khan which stated that one should not break the fast based on letters or telegrams, etc. Then a similar Hadith was also seen, the gist of which is that Hazrat Kuraib (may Allah be pleased with him) went to Syria to meet Hazrat Amir Muawiyah (may Allah be pleased with him) and had seen the Ramadan moon there. Then, at the end of Ramadan, he came to Medina Munawwarah and Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with both) asked him about the conditions there and also asked if he had seen the moon. He replied that he saw it on Friday night. Then Ibn Abbas asked, "Did you see it yourself?" He replied, "Yes, I saw it, and others saw it too, and everyone fasted." Hazrat Ibn Abbas

said, "We saw the moon on Saturday night, so we will fast according to that calculation." Then Hazrat Kuraib said, "Don't you...?"

1. Sahih Bukhari, Chapter: When you see the crescent moon, fast. Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/256.
2. Sahih Bukhari, Book of Knowledge, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/13.

उपरोक्त स्थिति में, शहर के लोगों के लिए ईद मनाना हराम था, भले ही बाद में ईद साबित हो गई हो, क्योंकि उन्होंने ईद के प्रमाण से पहले ही ऐसा किया और सही हदीस के मार्गदर्शन के खिलाफ काम किया: "चाँद देखकर रोज़े रखो और चाँद देखकर ईद करो" (1)। जिस किसी ने भी टेलीग्राम की बकवास और अविश्वसनीय कहानियों के आधार पर ईद का फ़तवा दिया, उसने बड़ा गुनाह किया। ऐसे फ़तवे पर कभी अमल न करें। हदीस में है: "जब मामला अयोग्य लोगों को सौंप दिया जाए, तो क़यामत (प्रलय) का इंतज़ार करो।" (2) और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। (त) और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मसला 202: सुजत, मारवाड़ बाज़ार, शेख नन्हे मियां, टोपी विक्रेता, दहन मंडी, 26 सफ़र 1327 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मामले में क्या कहते हैं: सुजत, मारवाड़ के कस्बे में 29 शाबान को चाँद नज़र नहीं आया। इसलिए, लोगों ने शाबान के तीस दिन पूरे किए और फिर रमज़ान के रोज़े रखना शुरू किए। बाद में, किसी कारण से दो-तीन लोग दिल्ली गए। वहाँ के लोगों ने 29 शाबान को चाँद देखने के हिसाब से रोज़े रखे थे। अब वे लोग मुबारक रमज़ान के अंत में सुजत वापस आए और कहने लगे कि दिल्ली में 29 के हिसाब से रोज़े रखना शुरू हुआ है, हम भी वहाँ के हिसाब से ईद करेंगे और सुजत के चाँद देखने का ख्याल नहीं करेंगे। अब सुजत की 29 तारीख और दूसरी जगह की 30 तारीख को उन्होंने कहा कि कल ईद करेंगे। उन्होंने ज़िद और अहंकार के कारण रोज़ा नहीं रखा, और जिन लोगों ने रोज़ा रखा था, उन्हें बहकाकर रोज़ा खुलवा दिया। कुछ लोगों ने कहा कि बिना चाँद देखे हम रोज़ा नहीं खोलेंगे और 30 दिन पूरे करके ईद करेंगे क्योंकि शरीयत का हमें यही हुक्म है। उन्होंने मौलाना अहमद रज़ा खान साहब का एक फ़तवा भी देखा था जिसमें लिखा था कि ख़तों और टेलीग्राम आदि के आधार पर रोज़ा इफ़्तार नहीं करना चाहिए। फिर उसी प्रकार की एक हदीस भी देखी गई जिसका सार यह है कि हज़रत कुरैब (रज़ियल्लाहु अन्हु) मुल्के शाम में हज़रत अमीर मुआविया (रज़ियल्लाहु अन्हु) के पास गए थे और वहाँ उन्हें रमज़ान का चाँद नज़र आ गया था। फिर रमज़ान शरीफ़ के अंत में वे मदीना मुनव्वरा आए और हज़रत इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) ने उनसे वहाँ के हालात पूछे और यह भी पूछा कि क्या तुमने चाँद देखा था? उन्होंने कहा कि जुमे (शुक्रवार) की रात को देखा था। फिर इब्न अब्बास ने पूछा, "क्या तुमने खुद देखा था?" उन्होंने कहा, "हाँ, मैंने भी देखा था और दूसरे लोगों ने भी देखा और सबने रोज़ा रखा।" हज़रत

इब्न अब्बास ने फ़रमाया, "हमने तो शनिवार की रात को चाँद देखा था, इसलिए हम उसी हिसाब से रोज़ा रखेंगे।" फिर हज़रत कुरैब ने कहा, "क्या आप...?"

1. सहीह बुखारी, अध्याय: जब तुम हिलाल (नया चाँद) देखो तो रोज़ा रखो, क़दीमी कुतुब खाना कराची 1/256
2. सहीह बुखारी, इल्म की किताब, क़दीमी कुतुब खाना कराची 1/13

صورتِ مذکورہ میں اہلِ قصبہ کو عید کرنی حرام تھی اگر چہ بعد کو عید ثابت ہی ہو جائے کہ اُنہوں نے قبل ثبوتِ عید کی اور ارشادِ حدیث صحیح "صوموا لرؤیته وافطروا لرؤیته" (1) (چاند دیکھ کر روزہ رکھو اور چاند دیکھ کر عید کرو) کے مخالف ہوئے جس نے بر بنائے مذکورہ ہذیانِ تار وحکایتِ نامختار عید کا فتوٰی دیا سخت حرام ہوا ایسے فتوے پر کبھی عمل نہ کریں، حدیث میں ہے: اذا وسد الامر الی غیر اهله فانتظر الساعة- جب غیر اہل کو کام سپرد کر دیا جائے تو قیامت کا انتظار کرو۔ (2) واللہ تعالٰی اعلم (ت) واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲۰۲: از مقام سوجت مارواڑ بازار کے اندر مسئلہ شیخ ننھے میاں کلاہ فروش داہن منڈی ۲۶ صفر ۱۳۲۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ قصبہ سوجت مارواڑ میں ۲۹ شعبان کو چاند نظر نہیں آیا اور شعبان کے تیس روز پورے کرکے رمضان شریف کے روزے رکھنے شروع کئے، بعد میں کسی وجہ سے دو تین آدمی دہلی گئے، وہاں کے لوگوں نے ۲۹ شعبان کو چاند دیکھنے کے حساب سے روزے رکھے تھے اب وہ شخص اخیر رمضان مبارک میں سوجت واپس آگئے اور کہنے لگے کہ دہلی میں ۲۹ کے حساب سے روزہ رکھنا شروع ہوا ہے ہم بھی وہاں کے حساب سے عید کرینگے سوجت کے چاند دیکھنے کا خیال نہیں کریں گے، اب سوجت کی ۲۹ اور دوسری جگہ ۳۰ کو کہا کہ کل عید کریں گے تو انہوں نے ضد اور نفسانیت کرکے روزہ نہیں رکھا، اور جن لوگوں نے روزہ رکھا تھا بہکا بہکا کر افطار کرا دیا اور بعض لوگوں نے کہا کہ بغیر چاند نظر آئے ہم روزہ افطار نہ کریں گے اور ۳۰ دن پورے کر کے عید کریں گے کیونکہ ہم کو شرع شریف کا یہی حکم ہے اور ایک فتوٰی جناب مولانا احمد رضا خاں صاحب کا دیکھا گیا تھا جس میں تحریر تھا کہ خطوط اور تار وغیرہ سے روزہ افطار نہیں کرنا

چاہئے اور پھر اسی قسم کی ایک حدیث بھی نظر آئی جس کا مضمون یہ ہے کہ حضرت کریب رضی اللہ تعالیٰ عنہ ملک شام میں حضرت امیر معاویہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے پاس گئے اور رمضان المبارک کا چاند اُن کو نظر آگیا تھا پھر اخیر رمضان شریف کو مدینہ منورہ میں آئے اور حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما نے اُن سے وہاں کے حالات دریافت کئے اور یہ بھی دریافت کیا کہ تم نے چاند کو دیکھا تھا انہوں نے کہا کہ جمعہ کی رات کو دیکھا تھا، پھر ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما نے فرمایا تم نے خود دیکھا تھا، انہوں نے کہا کہ ہاں میں نے بھی دیکھا تھا اور دوسرے آدمیوں نے بھی دیکھا اور سب نے روزہ رکھا، حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما نے فرمایا کہ ہم نے تو ہفتے کی رات چاند دیکھا سو اسی حساب سے ہم روزہ رکھیں گے۔ پھر حضرت کریب رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے کہا کیا آپ...؟

1. صحیح بخاری باب اذا رایتم الملال فصوموا قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۲۵۶
2. صحیح بخاری کتاب العلم، قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۱۳

They will not act upon the fasting of Hazrat Mu'awiya and his [people]. Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with both of them) said, "No, because the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) commanded us in this way, that the sighting of one's own country is mandatory; it is not binding on people of another country or region." Now the matter to be inquired is, those people who broke their fast and made others break their fast around 8 o'clock without seeing the moon, should those who completed 29 fasts repent and keep the missed fast (qada) or not?

Answer: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"Fast upon sighting it (the moon) and break the fast upon sighting it. If it is cloudy for you, then complete the count of Shaban as thirty." [1] | Fast upon seeing the moon and celebrate Eid upon seeing the moon; if the weather is cloudy, then it is necessary for you to complete thirty (30) days. (T)

The Messenger based both fasting and its ending on sighting. Therefore, whether it is one's own sighting or evidence of sighting from another place is established through Shari'a, even if the distance between the two places is as far as East and West. This is the apparent narration (Zahir al-Riwayah) and this is correct and reliable. It is stated in Durr al-Mukhtar etc.:

"Sighting by the people of the West is binding upon the people of the East if their sighting is proven to them through a Shari'a-compliant method." [2] | Fasting and breaking the fast is binding on the people of the East based on the sighting by the people of the West, provided that the proof of the moon there is established through a Shari'a-compliant method. (T)

There are seven (7) methods for its proof, which we have explained in detail in our Fatawa. The fact that one or two people went and brought news from another city that the 29th moon appeared there is neither a sighting, nor testimony, nor testimony upon testimony, nor testimony upon a ruling; in short, it is not a Shari'a method, merely a narration. And regarding the crescent, it is fundamentally not reliable, as specified in Durr and other books (Asfar). (As it is clearly stated in Durr etc. - T). By making others break their fast, they committed a major sin (Kabira), and those who broke their fast also committed a severe major sin, and qada is mandatory for them. And if no Shari'a proof reached them in Delhi, they are sinful and affected, and qada is also mandatory for them. This is the general ruling for such a situation.

However, for this year, 29 days have been proven through sufficient Shari'a evidences, therefore there is no need for qada.

---

1 Sahih Bukhari, Chapter: When you see the crescent then fast, Qadeemi Kutub Khana, Karachi 1/256 2 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai, Delhi 1/149

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

हज़रत मुआविया और उनके रोज़ा रखने पर अमल नहीं करेंगे तो हज़रत इब्ने अब्बास रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा ने फ़रमाया कि नहीं क्योंकि इसी तरह हमें अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने हुक्म दिया कि अपने-अपने मुल्क की रूयत (चाँद देखना) लाज़िम आती है, दूसरे मुल्क या इलाक़े वालों पर लाज़िम नहीं होती। अब दरयाफ़्त तलब अम्र यह है कि जिन लोगों ने रोज़ा तोड़ दिया और दूसरों के रोज़े क़रीब आठ बजे के छुड़वाए बग़ैर चाँद देखे, तो अब २९ रोज़े रखने वाले को तौबा करनी और रोज़े की क़ज़ा रखना चाहिए या नहीं?

अल-जवाब: रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

"चाँद देखकर रोज़ा रखो और चाँद देखकर ईद करो, अगर मौसम अबर आलूद (बादलों वाला) हो तो तुम पर तीस ३० दिनों का पूरा करना ज़रूरी है।" [१] (त)

रोज़ा और इफ़्तार दोनों की बुनियाद हुज़ूर ने रूयत पर रखी, तो खुद रूयत हो या दूसरी जगह की रूयत का सुबूत शरीई हो, अगरचे दोनों जगह फ़ासला मशरिक़ (पूर्व) व मग़रिब (पश्चिम) का हो, यही ज़ाहिर-उर-रिवायत है और यही सही व मोतमद है। दुर्रे मुख़्तार वग़ैरह में है:

"अहले मग़रिब (पश्चिम के लोगों) की रूयत की बिना पर अहले मशरिक़ (पूर्व के लोगों) पर रोज़ा इफ़्तार करना लाज़िम है, बशर्ते कि उनके यहाँ चाँद का सुबूत तरीक़-ए-मौजिव-ए-शरीई (शरीयत के तरीक़े) से हो।" [२] (त)

इसके सुबूत के सात ७ तरीक़े हैं जो हमने अपने फ़तावा में मुफ़स्सल (विस्तार से) बयान किए, यह बात कि एक दो आदमी गए और दूसरे शहर से ख़बर लाए कि वहाँ २९ का चाँद हुआ, न रूयत है, न शहादत (गवाही) है, न शहादत अलल-शहादत है, न शहादत अलल-हुक्म है, ग़रज़ कोई तरीक़ा-ए-शरीया नहीं महज़ हिकायत (कहानी) है, और वह दरबारे हिलाल अस्लन मोतबर नहीं जैसा कि दुर वग़ैरह कुतुब में तसरीह (स्पष्ट) है। (जैसा कि इस पर दुर वग़ैरह कुतुब में तसरीह है। त) औरों के रोज़े छुड़वाने में यह मुर्तकिब-ए-कबीरा (बड़े गुनाहगार) हुए और वह रोज़ा तोड़ने वाले सख़्त कबीरा के मुर्तकिब हुए और उन पर क़ज़ा लाज़िम, और उनको दिल्ली में अगर कोई सुबूत-ए-शरीई बहम न पहुँचा था तो उनका मुजरिम और असर है, और उन पर भी क़ज़ा लाज़िम, यह ऐसी सूरत का मुतलक़ हुक्म है मगर इस साल की निस्बत काफ़ी शरीई सुबूतों से २९ दिन का साबित हो गया, लिहाज़ा क़ज़ा की हाजत नहीं।

१ सही बुख़ारी, बाब: जब तुम चाँद देखो तो रोज़ा रखो, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची १/२५६ २ दुर्रे मुख़्तार, किताबुस-सौम, मतबा मुज्तबाई दिल्ली १/१४९

पेज 407/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

حضرت معاویہ اور اُن کے روزہ رکھنے پر عمل نہیں کرینگے تو حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما نے فرمایا کہ نہیں کیونکہ اسی طرح حکم کیا ہم کو رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے کہ اپنے اپنے ملک کی رؤیت لازم آتی ہے دوسرے ملک یا علاقہ والوں پر لازم نہیں ہوتی، اب دریافت طلب امر یہ ہے کہ جن لوگوں نے روزہ توڑ دیا اور دوسروں کے روزے قریب آٹھ بجے کے چھڑوائے بغیر چاند دیکھے، تو اب ۲۹ روزے رکھنے والے کو توبہ کرنا اور روزہ کی قضاء رکھنا چاہئے یا نہیں؟

الجواب: رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

صوموالرؤیتہ وافطر والرؤیتہ فان غم علیکم فاکملوا عدۃ شعبان ثلثین۔ ۱ | چاند دیکھنے پر روزہ رکھو اور چاند دیکھنے پر عید کرو، اگر موسم ابر آلود ہو تو تم پر تیس ۳۰ دنوں کا پورا کرنا ضروری ہے (ت)

روزہ اور افطار دونوں کی بناء حضور نے رؤیت پر رکھی، تو خود رؤیت ہو یا دوسری جگہ کی رؤیت کا ثبوت شرعی ہو، اگرچہ دونوں جگہ فاصلہ مشرق و مغرب کا ہو، یہی ظاہر الروایۃ ہے اور یہی صحیح و معتمد ہے۔ در مختار وغیرہ میں ہے:

یلزم اھل المشرق برؤیۃ اھل المغرب اذا ثبت ذلك عندھم رؤیۃ اولئك بطریق موجب شرعی ۲ | اہل مشرق پر اہل مغرب کی رؤیت کی بنا پر روزہ افطار لازم ہے بشرطیکہ ان کے ہاں چاند کا ثبوت بطریق موجب شرعی ہو۔ (ت)

اس کے ثبوت کے سات ۷ طریقے ہیں جو ہم نے اپنے فتاویٰ میں مفصل بیان کئے، یہ بات کہ ایک دو آدمی گئے اور دوسرے شہر سے خبر لائے کہ وہاں ۲۹ کا چاند ہوا، نہ رؤیت ہے، نہ شہادت ہے، نہ شہادت علی الشہادت، نہ شہادت علی الحکم، غرض کوئی طریقہ شرعیہ نہیں محض حکایت ہے، اور وہ درباره ہلال اصلاً معتبر نہیں کما نص علیه فی الدروغیره من الاسفار (جیسا کہ اس پر در وغیرہ کتب میں تصریح ہے۔ت) اوروں کے روزے چھڑوانے میں یہ مرتکب کبیرہ ہوئے اور وہ روزہ توڑنے والے اور سخت کبیرہ کے مرتکب ہوئے اور اُن پر قضاء لازم، اور اُن کو دہلی میں اگر کوئی ثبوت شرعی بہم نہ پہنچا تھا تو ان کا مجرم اور اثر ہے، اور ان پر بھی قضاء لازم، یہ ایسی صورت کا مطلق حکم ہے مگر اس سال کی نسبت کافی شرعی ثبوتوں سے ۲۹ دن کا ثابت ہو گیا، لہذا قضاء کی حاجت نہیں۔

---

1 صحیح بخاری باب اذا رایتم الہلال فصوموا قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶ 2 درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۹

Fatawa Razawiyya Volume 10

However, there is a need for repentance for the audacity shown towards the command of Shari'ah without any legal proof. However, if one observed fasts considering it as the 30th of Sha'ban, then making up (qaza) for the fast of the 1st of Ramadan is mandatory. And Allah Almighty knows best.

Page 408 of 836

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द दहुम (दसवाँ भाग)

अलबत्ता बिना किसी शरई सुबूत के शरीयत के हुक्म पर जो जुर्रत की गई, उसके लिए तौबा की ज़रूरत है। लेकिन अगर किसी ने शाबान की ३० तारीख समझकर रोज़ा रखा, तो पहली रमज़ान के रोज़े की क़ज़ा लाज़िम है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

पृष्ठ ४०८ का ८३६

البتہ بلا ثبوت شرعی جو حکمِ شرع پر جرات کی اُس سے توبہ کی حاجت مگر جبکہ شعبان ۳۰ کا سمجھ کر روزے رکھے تو یکم رمضان کے روزے کی قضا لازم ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

Volume Ten Fatawa Razawiya

Treatise Methods of Proving the Crescent Moon 1320 AH (Methods of Proving the Moon)

Issue 203: From Baroda, Gujarat, Barah Nawab Sahib, sent by Nawab Syed Moinuddin Hasan Khan Bahadur on 25th Muharram-ul-Haram 1320 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: how is the sighting of the crescent moon established in Sharia? Let an answer be given with references from books along with an Urdu translation. Explain and be rewarded.

The Answer: In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful:

[Arabic Section]: Praise be to Allah, who made the sun a radiance and the moon a light, and blessings and peace be upon him whose religion became a shining full moon by the rising of his crescent, and upon his family and companions, who are perfect in light and complete in illumination.

[Urdu Section]: All praise is for Allah, Who made the sun radiant and the moon a light. Blessings and peace be upon that sacred being by whose arrival the religion of Islam became a shining full moon among all religions, and upon his descendants and companions who are perfect in terms of light and complete in terms of illumination. (T)

In Sharia, there are seven methods for proving the sighting of the crescent moon:

जिल्द दस फ़तावा रज़विया

रिसाला चाँद साबित करने के तरीके १३२० हिजरी (चाँद साबित करने के तरीके)

मसला २०३: बड़ौदा, गुजरात, बाड़ा नवाब साहब से नवाब सैयद मुइनुद्दीन हसन खान बहादुर द्वारा प्रेषित, २५ मुहर्रम-उल-हराम १३२० हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि शरीयत में चाँद का देखना किस तरह साबित होता है? किताबों के हवाले और उर्दू अनुवाद के साथ जवाब अता हो। बयान करें, पुण्य पाएँ।

उत्तर: बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम:

[अरबी खंड]: तमाम तारीफें अल्लाह के लिए जिसने सूरज को रोशनी और चाँद को नूर बनाया और उस हस्ती पर दुरूद और सलाम हो जिनके हिलाल के उदय होने से दीन (धर्म) एक चमकता हुआ पूर्ण चंद्रमा बन गया, और उनके परिवार और साथियों पर जो नूर (प्रकाश) में कामिल (पूर्ण) और तनवीर (प्रदीप्ति) में मुकम्मल हैं।

[उर्दू खंड]: सारी तारीफें अल्लाह के लिए हैं जिसने सूरज को चमक और चाँद को नूर बनाया। दुरूद और सलाम हो उस मुक़द्दस ज़ात पर जिनकी आमद से दीन-ए-इस्लाम तमाम धर्मों में चमकता हुआ चाँद (बद्र-ए-मुनीर) बन गया, और आपके आल और असहाब (वंशजों और साथियों) पर जो नूर के लिहाज़ से कामिल और मुकम्मल हैं। (त)

शरीयत में चाँद देखने के प्रमाण के लिए सात तरीके हैं:

पेज ४०९ / ८३६

جلد دہم فتاوی رضویہ

رسالہ طرق اثبات الھلال ۱۳۲۰ھ (اثبات چاند کے طریقے)

مسئلہ ۲۰۳: از بڑودہ گجرات باڑہ نواب صاحب مرسلہ نواب سید معین الدین حسن خاں بہادر ۲۵ محرم الحرام ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ رؤیت ہلال شریعت میں کس طرح ثابت ہوتی ہے؟ بحوالہ کتب مع ترجمہ اردو جواب عطا ہو۔ بینوا توجروا

الجواب: بسم اللہ الرحمن الرحیم:

[Arabic]: الحمد للہ الذی جعل الشمس ضیاء والقمر نورا والصلوۃ والسلام علی من صار الدین بطلوع ھلالہ بدرا منیرا وعلی الہ وصحبہ الکاملین نورا والمکملین تنویرا۔

[Urdu]: سب تعریفات اللہ کے لیے جس نے شمس کو ضیاء اور قمر کو نور بنایا، صلوٰۃ وسلام اس ذاتِ اقدس پر جس کی آمد سے دین اسلام تمام ادیان میں بدر منیر بن گیا، آپ کے آل واصحاب پر جو نور کے اعتبار سے کامل اور تنویر کے اعتبار سے مکمل ہیں۔(ت)

ثبوتِ رؤیتِ ہلال کے لیے شرع میں سات طریقے ہیں:

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

Method One: Testimony of the sighting itself, i.e., the witness of someone who saw the moon. For the moon of Blessed Ramadan, the mere statement of a single sane, adult, non-sinful (non-fasiq) Muslim is sufficient, saying "I saw the moon of this Ramadan on the evening of such and such day," even if it is a slave girl, even if her internal state (piety) is unknown but her apparent condition follows the Shariah. This is true even if this statement is not made in a court of judgment (majlis-e-qadha), and even if the person doesn't say "I testify," and doesn't describe the manner of sighting like where it was seen, in which direction, how high it was, etc. This applies when the sky is not clear on the 29th of Sha'ban, i.e., there are clouds or dust at the moon's location. In clear sky conditions, if such a person comes from a forest or was at a high place, then too the statement of one person is enough. Otherwise, it will be considered whether the Muslims there strive to see the moon—whether many are attentive or they are lazy and don't care about seeing it. In case of negligence, at least two witnesses are required, even if their inner state is unknown. Otherwise, a large group (jama'at-e-azim) is needed to state they saw the moon with their own eyes, providing strong conviction (ghalbah-e-zann) that the moon definitely appeared, even if they are slaves or open sinners (fasiq). If the number reaches the level of 'Tawatur' (so many that it's intellectually impossible for them all to agree on a lie), then such a report is accepted from everyone, Muslim or non-Muslim. For the remaining eleven months, it is absolutely necessary in all cases to have two just (adil) men or one just man and two just free women, whose internal and external adherence to Shariah is verified, to testify before a Shariah judge (Qadhi) using the word "Ash-hadu" (I testify), saying "I testify that I saw the moon of this month on the evening of such and such day." Where there is no Shariah judge, the Mufti of Islam acts as a substitute if he exceeds all city dwellers in the knowledge of Fiqh. Testimony should be given before him. If there is no Qadhi or Mufti, out of necessity, the statement of two just men or one man and two women before other Muslims will be considered sufficient even without the word "Ash-hadu". This rule always applies to these eleven months. However, regarding the two Eids, if the sky is clear and Muslims are not lazy in moon-sighting, and those two witnesses did not come from the forest or a high altitude, then a 'large group' is required. Similarly, for any other moon like Muharram, if common Muslims are diligent about it, then in clear sky conditions when witnesses don't come from a forest or height, apparently a large group is

needed for the same reason it was required for Ramadan and Eids. It is stated in 'Durr-e-Mukhtar':

[Arabic Quote]: "It is said: without a claim, without the word 'Ash-hadu', and without a ruling or a court of judgement, for fasting [to be established] with an impediment like clouds or dust, the report of a just person or one whose state is concealed (mastur) [is accepted], not a sinner (fasiq) by consensus, even if [the witness is] a slave or a female, whether they explain the manner of sighting or not, based on..."

In the state of clouds and dust, for the moon of Ramadan, the report of one just or 'mastur-ul-hal' (whose state is unknown) person is sufficient, even if it is a slave or a woman, whether they describe the quality of the sighting or not. Neither a claim, nor the word 'Ash-hadu', nor a ruling, nor the judge's court is a condition, but the statement of a sinner (fasiq) is unanimously rejected. And for Eid...

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम (दसवीं)

तरीक़ा अव्वल: स्वयं रुयत (चाँद देखने) की गवाही, यानी चाँद देखने वाले की गवाही। रमज़ान मुबारक के चाँद के लिए सिर्फ एक ही अक़्लमंद, बालिग़ और ग़ैर-फ़ासिक़ मुसलमान का साधारण बयान काफ़ी है कि 'मैंने इस रमज़ान शरीफ़ का चाँद फलाँ दिन की शाम को देखा', चाहे वह दासी (कनीज़) हो, चाहे मस्तूर-उल-हाल (जिसकी आंतरिक धार्मिक स्थिति अज्ञात हो) हो, जिसकी बातिनी अदालत (न्यायप्रियता) मालूम न हो लेकिन ज़ाहिरी तौर पर शरीअत का पाबंद हो। यह बयान चाहे मजलिस-ए-क़ज़ा (न्यायालय) में न हो, और चाहे वह यह न कहे कि 'मैं गवाही देता हूँ', और न ही चाँद देखने की स्थिति बयान करे कि कहाँ से देखा, किस ओर था, कितना ऊँचा था आदि। यह उस स्थिति में है जब २९ शाबान को आसमान साफ़ न हो, चाँद की जगह बादल या धूल हो। और आसमान साफ़ होने की स्थिति में अगर ऐसा कोई व्यक्ति जंगल से आए या ऊँची जगह पर हो, तो भी एक ही का बयान काफ़ी होगा। वरना देखा जाएगा कि वहाँ के मुसलमान चाँद देखने में कोशिश करते हैं या नहीं, बहुत से लोग ध्यान देते हैं या वे सुस्त हैं और देखने की परवाह नहीं करते। लापरवाही की स्थिति में कम से कम दो गवाहों की ज़रूरत होगी चाहे वे मस्तूर-उल-हाल हों। वरना एक बड़ी जमाअत (जमाअत-ए-अज़ीम) चाहिए जो अपनी आँखों से चाँद देखना बयान करे, जिससे पुख्ता गुमान (ग़लबा-ए-ज़न्न) हो जाए कि चाँद ज़रूर हुआ है, चाहे वे ग़ुलाम या खुले फ़ासिक़ ही क्यों न हों। और अगर तादाद 'तवातुर' (इतनी अधिक कि सबका झूठ पर सहमत होना असंभव हो) तक पहुँच जाए तो ऐसी ख़बर मुस्लिम और काफ़िर सभी की स्वीकार्य है। बाक़ी ग्यारह महीनों के चाँद के लिए हर हाल में दो आदिल (न्यायप्रिय) पुरुष या एक आदिल पुरुष और दो आदिल आज़ाद महिलाएँ ज़रूरी हैं, जिनकी ज़ाहिरी और बातिनी धार्मिक स्थिति जाँची जा चुकी हो कि वे शरीअत के पाबंद हैं। वे क़ाज़ी-ए-शरअ के सामने लफ़्ज़ 'अशहदु' (मैं गवाही देता हूँ) के साथ गवाही दें कि 'मैं गवाही देता हूँ कि मैंने इस महीने का चाँद फलाँ दिन की शाम को देखा'। जहाँ क़ाज़ी-ए-शरअ न हो, वहाँ मुफ़्ती-ए-इस्लाम उसका स्थानापन्न (प्रतिनिधि) है बशर्ते वह शहर के तमाम लोगों से फ़िक़्ह के इल्म में ज़्यादा हो, उसके सामने गवाही दी जाए। और अगर कहीं क़ाज़ी और मुफ़्ती कोई न हो तो मजबूरी में मुसलमानों के सामने ऐसे दो आदिल पुरुषों या एक पुरुष और दो महिलाओं का बयान बिना लफ़्ज़ 'अशहदु' के भी काफ़ी समझा जाएगा। इन ग्यारह महीनों में हमेशा यही हुक्म है, मगर ईदों के लिए अगर आसमान साफ़ हो और मुसलमान चाँद देखने में सुस्ती न करते हों और वे दो गवाह जंगल या ऊँचाई से न आए हों, तो इस स्थिति में वही 'जमाअत-ए-अज़ीम' दरकार है। इसी तरह जहाँ किसी और चाँद मसलन

मुहर्रम के लिए आम मुसलमान पूरा एहतेमाम (प्रबंध/ध्यान) करते हों, तो साफ़ आसमान की स्थिति में जब गवाह जंगल या ऊँचाई से न आएँ तो ज़ाहिरन बड़ी जमाअत ही चाहिए, जिस कारण से इसे रमज़ान और ईदों के लिए अनिवार्य किया गया था, वह यहाँ भी मौजूद है। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

[अरबी पाठ]: "कहा गया: बिना किसी दावे के, बिना शब्द 'अशहदु' के, और बिना किसी फैसले या अदालत के, बादलों या धूल जैसी बाधा की स्थिति में रोज़े के लिए [चाँद की] खबर एक न्यायप्रिय (आदिल) या मस्तूर व्यक्ति की [स्वीकार्य है], सर्वसम्मति से किसी फ़ासिक़ (पापी) की नहीं, चाहे वह [गवाह] गुलाम हो या महिला, चाहे वे देखने के तरीके का वर्णन करें या नहीं, आधार पर..."

बादल और धूल की स्थिति में रमज़ान के चाँद के लिए एक आदिल या मस्तूर-उल-हाल की ख़बर काफ़ी है चाहे वह ग़ुलाम हो या औरत। चाँद देखने की कैफ़ियत बयान करे या न करे, दावा या लफ़्ज़ 'अशहदु' या हुक्म या मजलिस-ए-क़ाज़ी किसी की शर्त नहीं, मगर फ़ासिक़ का बयान सर्वसम्मति से खारिज (मर्दुद) है और ईद...

पृष्ठ ८३६ में से ४१०

طریق اول: خود شہادت رویت یعنی چاند دیکھنے والے کی گواہی، ہلال رمضان مبارک کے لیے ایک ہی مسلمان عاقل، بالغ، غیر فاسق کا مجرد بیان کافی ہے کہ میں نے اس رمضان شریف کا ہلال فلاں دن کی شام کو دیکھا اگر چہ کنیز ہو اگر چہ مستور الحال ہو، جس کی عدالت باطنی معلوم نہیں، ظاہر حال پابند شرع ہے اگر چہ اس کا یہ بیان مجلس قضا میں نہ ہو، اگر چہ گواہی دیتا ہوں نہ کہے، نہ دیکھنے کی کیفیت بیان کرے کہ کہاں سے دیکھا کدھر کو تھا کتنا اونچا تھا وغیرہ ذلک۔ یہ اس صورت میں ہے کہ ۲۹ شعبان کو مطلع صاف نہ ہو، چاند کی جگہ ابر یا غبار ہو، اور بحال صفائی مطلع اگر ویسا ایک شخص جنگل سے آیا یا بلند مکان پر تھا تو بھی ایک ہی کا بیان کافی ہو جائے گا، ورنہ دیکھیں گے کہ وہاں کے مسلمان چاند دیکھنے میں کوشش رکھتے ہیں، بکثرت لوگ متوجہ ہوتے ہیں یا کاہل ہیں دیکھنے کی پروا نہیں، بے پروائی کی صورت میں کم سے کم دو درکار ہوں گے اگر چہ مستور الحال ہوں، ورنہ ایک جماعت عظیم چاہئے کہ اپنی آنکھ سے چاند دیکھنا بیان کرے جس کے بیان سے خوب غلبہ ظن حاصل ہو جائے کہ ضرور چاند ہوا اگر چہ غلام یا کھلے فاسق ہوں، اور اگر کثرت حد تواتر کو پہنچ جائے کہ عقل اتنے شخصوں کا غلط خبر پر اتفاق محال جانے تو ایسی خبر مسلم و کافر سب کی مقبول ہے۔ باقی گیارہ ہلالوں کے واسطے مطلقاً ہر حال میں ضرور ہے کہ دو مرد عادل یا ایک مرد دو عورتیں عادل آزاد جن کا ظاہری و باطنی حال تحقیق ہو کہ پابند شرع ہیں، قاضی شرع کے حضور لفظ اشہد گواہی دیں یعنی میں گواہی دیتا ہوں کہ میں نے اس مہینے کا ہلال فلاں دن کی شام کو دیکھا اور جہاں قاضی شرع نہ ہو تو مفتی اسلام اس کا قائم مقام ہے جبکہ تمام اہل شہر سے علم فقہ میں زائد ہو اس کے حضور گواہی دیں اور اگر کہیں قاضی و مفتی کوئی نہ ہو تو مجبوری کو اور مسلمانوں کے سامنے ایسے

عادل دو مرد یا ایک مرد دو عورتوں کا بیان بے لفظ اشھد بھی کافی سمجھا جائے گا، ان گیارہ ہلالوں میں ہمیشہ یہی حکم ہے مگر عیدین میں اگر مطلع صاف ہو اور مسلمان رویت ہلال میں کاہلی نہ کرتے ہوں اور وہ دو گواہ جنگل یا بلندی سے نہ آئے ہوں تو اس صورت میں وہی جماعت عظیم درکار ہے، اسی طرح جہاں اور کسی چاند مثلاً ہلال محرم کا عام مسلمان پورا اہتمام کرتے ہوں تو بحالت صفائی مطلع جبکہ شاہدین جنگل یا بلندی سے نہ آئیں تو ظاہر اً جماعت عظیم ہی چاہئے کہ جس وجہ سے اس کا ایجاب رمضان و عیدین میں کیا گیا تھا یہاں بھی حاصل ہے۔ در مختار میں ہے:

قیل بلاد عوی وبلا لفظ اشھد وحکم و مجلس قضاء، للصوم مع علة کغیم وغبار، خبر عدل او مستور لا فاسق اتفاقاً و لو قناً او انثی بین کیفیة الرؤیة اولا، علی...

ابر و غبار کی حالت میں ہلال رمضان کے لیے ایک عادل یا مستور الحال کی خبر کافی ہے اگر چہ غلام یا عورت ہو رویت کی کیفیت بیان کرے خواہ نہ کرے، دعویٰ یا لفظ اشھد یا حکم یا مجلس قاضی کسی کی شرط نہیں مگر فاسق کا بیان بالاتفاق مردود ہے اور عید...

Fatawa Razviya Volume 10

[Section 1] Text: According to the Madhhab, for the sighting of the Eid-ul-Fitr moon when there is an atmospheric obstruction (like clouds), the condition for acceptance is the uprightness (Adalah) of witnesses, the legal quorum for testimony (two men or one man and two women), and the use of the word 'Ashhadu' (I bear witness). If they are in a town where there is no Islamic judge, then out of necessity, they should fast based on the report of one reliable person in case of clouds or dust, and break the fast (celebrate Eid) based on the reports of two upright individuals. When the sky is clear, the report of a large congregation is required, which leads to a strong presumption (Ghalba-e-Zann). It is narrated from the Imam that two witnesses are sufficient, and this was preferred in 'Al-Bahr'. In 'Al-Aqdiyyah', it was authenticated that one witness is sufficient if they come from outside the town or were at an elevated place; this was also chosen by Imam Zahir-ud-Din. The ruling for the crescent of Eid-ul-Adha and the remaining nine months is the same as for the crescent of Eid-ul-Fitr according to the Madhhab. [Summarized]

[Section 2] In Radd al-Muhtar it is stated: The condition for acceptance when there is no atmospheric obstruction for the crescent of fasting or Eid is the report of a large group (Jama'at-e-Azeem). This is because when a massive crowd is searching for the moon and there is no apparent hindrance, for only one or two people to see it clearly indicates their error. This is also stated in 'Al-Bahr'. Within a large group, uprightness (Adalah) is not a condition, as mentioned in 'Imdad-ul-Fattah', nor is being a free person a condition, as mentioned in 'Quhistani'. In 'Al-Bahr al-Ra'iq', it was stated: It is appropriate to act upon this narration in our time because people have become negligent in moon-sighting. Thus, the premise that 'everyone was busy looking for the moon and the sky was clear, so only those two seeing it is improbable' no longer applies, and two witnesses should suffice.

Footnotes: 1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai Delhi, 1/148-148 2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/100

Page 411 of 836

फ़तावा रज़विया खंड 10

[खंड 1] पाठ: मज़हब में, ईद-उल-फितर के लिए जब कोई बाधा (जैसे बादल) हो, तो स्वीकार्यता के लिए न्यायप्रियता (अदालत) और गवाही का कोरम (दो पुरुष या एक पुरुष और दो महिलाएं) 'अशहदु' (मैं गवाही देता हूँ) शब्द के साथ अनिवार्य है। यदि वे ऐसे शहर में हों जहाँ कोई इस्लामी शासक नहीं है, तो आवश्यकतावश बादलों और धूल की स्थिति में, एक विश्वसनीय व्यक्ति के बयान पर रोज़ा रखें और दो न्यायप्रिय व्यक्तियों की खबर पर ईद मनाएं। और जब बादल या धूल न हो, तो एक ऐसे बड़े समूह की खबर स्वीकार की जाएगी जिससे प्रबल संभावना (ग़लबा-ए-ज़न्न) प्राप्त हो जाए। इमाम से वर्णित है कि दो गवाह पर्याप्त हैं, जिसे 'अल-बहर' में चुना गया है। 'अल-अक़्दिय्या' में प्रमाणित किया गया कि एक गवाह भी पर्याप्त है यदि वह शहर के बाहर से आए या किसी ऊंचे स्थान पर हो; इसे इमाम ज़हीर-उद-दीन ने चुना था। ज़िल-हिज्जा और शेष नौ महीनों के चांद का वही नियम है जो मज़हब के अनुसार ईद-उल-फितर के चांद का है। [संक्षेप में]

[खंड 2] रद अल-मुह्तार में है: जब आसमान साफ़ हो, तो रोज़े और ईद के चांद की स्वीकार्यता के लिए एक बड़े समूह (जमाअत-ए-अज़ीम) की खबर शर्त है। इसका कारण यह है कि एक विशाल भीड़ में से केवल एक या दो व्यक्तियों का चांद देखना, जबकि अन्य लोग भी उसे ढूंढ रहे थे और कोई स्पष्ट बाधा नहीं थी, स्पष्ट रूप से उनकी त्रुटि को दर्शाता है। ऐसा ही 'अल-बहर' में है। बड़े समूह (जमाअत-ए-अज़ीम) में न्यायप्रियता शर्त नहीं है, जैसा कि 'इमदाद-उल-फ़त्ताह' में है, और न ही स्वतंत्र होना शर्त है, जैसा कि 'कुहिस्तानी' में है। 'अल-बहर अल-राइक़' में कहा गया है कि जब लोग चांद देखने में सुस्ती दिखाएं तो इस रिवायत पर अमल करना चाहिए कि दो गवाह पर्याप्त हैं। क्योंकि अब वह कारण नहीं रहा "कि सभी लोग चांद देखने में व्यस्त थे और आसमान साफ था, फिर भी केवल उन्हीं दो को नज़र आया"।

पादलेख: 1. दुर्रे मुख़्तार, किताबुस सौम, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/148-148 2. रद अल-मुह्तार, किताबुस सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/100

पृष्ठ 836 का 411

المذھب، وشرط للفطر مع العلة العدالة ونصاب الشھادة ولفظ اشھد ولو کانوا ببلدة لا حاکم فیھا، صاموا بقول ثقة وافطروا باخبار عدلین مع العلة للضرورة، وقیل بلا علة جمع عظیم یقع غلبة الظن بخبرھم وعن الامام . یکتفی بشاھدین واختارہ فی البحر وصحح فی الاقضیة الاکتفاء بواحد ، ان جاء من خارج البلد، او کان علی مکان مرتفع و اختارہ ظھیر الدین ، وھلال الاضحی وبقیة الاشھر التسعة کالفطر علی المذھب اھ مختصراً. کے لیے بحالِ نا صافی مطلع عدالت کے ساتھ دو مرد یا ایک مرد دو عورت کی گواہی بلفظِ اشھد ضرور ہے اور اگر ایسے شہر میں ہوں جہاں کوئی حاکمِ اسلام نہیں تو بوجہ ضرورت بحالِ ابر و غبار ایک ثقہ شخص کے بیان پر روزہ رکھیں اور دو عادلوں کی خبر پر عید کر لیں۔ اور جب ابر و غبار نہ ہو تو ایسی بڑی جماعت کی خبر مقبول ہو گی جس سے ظنِ غالب حاصل ہو جائے اور امام سے مروی ہوا کہ دو گواہ کافی ہیں اور اسی کو بحرالرائق میں اختیار کیا، اور کتاب الاقضیہ میں فرمایا صحیح یہ ہے کہ ایک بھی کافی ہے اگر جنگل سے آئے یا بلند مکان پر تھا اور اسی کو امام ظہیر الدین نے اختیار فرمایا اور ذی الحجہ اور باقی نو مہینوں کے چاند کا وہی حکم ہے جو ہلال عید الفطر کا۔ اھ مختصراً

ردالمحتار میں ہے: شرط القبول عند عدم علة فی السماء لھلال الصوم او الفطر اخبار جمع عظیم لان التفرد من بین الجم الغفیر بالرؤیة مع توجھھم طالبین لما توجه ھو الیه مع فرض عدم المانع ظاھر فی غلطه ، بحر ، ولا یشترط فیھم العدالة ، امداد ولا الحریة قھستانی ، قوله واختارہ فی البحر حیث قال ینبغی العمل علی ھذہ الروایة فی زماننا لان الناس تکاسلت عن ترائی الاھلة فانتفی قولھم مع توجھھم طالبین و آ نا ۔ جب آسمان صاف ہو تو ہلالِ روزہ و عید کے قبول کو جماعتِ عظیم کی خبر شرط ہے اس لیے کہ بڑی جماعت کہ وہ بھی چاند دیکھنے میں مصروف تھی اس میں صرف دو ایک

شخص کو نظر آنا حالانکہ مطلع صاف ہے ان دو ایک کی خطا میں ظاہر ہے، ایسا ہی بحرالرائق میں ہے اور جماعتِ عظیم میں عدالت شرط نہیں، ایسا ہی امداد الفتاح میں ہے، نہ آزادی شرط ہے ایسا ہی قہستانی میں ہے، اور بحرالرائق میں فرمایا کہ جب لوگ چاند دیکھنے میں کاہلی کریں تو اس روایت پر عمل چاہئے کہ دو گواہ کافی ہیں کہ اب وہ وجہ نہ رہی "کہ سب چاند دیکھنے میں مصروف تھے اور مطلع صاف تھا تو فقط انہی دو کو نظر آنا"۔

1 در مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۴۸- ۱۴۸ 2 ردالمحتار کتاب الصوم مصطفیٰ البانی مصر ۲ / ۱۰۰

Volume 10 Fatawa Razawiya

The apparent meaning of Al-Walwaljiyah and Al-Zahiriyyah indicates that the Zahir al-Riwayah (established position) is the condition of multiplicity of witnesses, and multiplicity is fulfilled by two [witnesses]. End. And in our time, the laziness of people is witnessed, so the testimony of two is not considered isolated among a huge crowd such that the mistake of the witness becomes apparent. Thus, the reason for the Zahir al-Riwayah is negated, and it became necessary to give a fatwa based on the other narration. [1] And in 'Kafi al-Hakim', which is a compilation of all of Imam Muhammad's words and the books of Zahir al-Riwayah, it is stated as follows: In Ramadan, the testimony of one Muslim man or woman, whether upright (adil) or of unknown status (mastur al-hal), is accepted provided they testify that they saw it outside the city or saw it in the city and there was some reason why it was not visible to others. End. And there is no contradiction between these two narrations because the condition of a large congregation (Jama'at-e-Azeem) applies when the witness is in the city in a place that is not elevated. So the second [narration] restricts the absolute nature of the first, with the evidence being that in the first one, the reason given for not accepting the testimony of one is that their seeing it alone is apparently a mistake, and in this latter case, i.e., when they were in the forest or on an elevated place, the reason for rejection was not found. Therefore, it is stated in 'Al-Muhit' that in this state, seeing it alone will not be against the apparent, etc. And for the remaining nine months, [testimony] will not be accepted except from two men or one man and two women, who are upright, free, and have not been punished for false accusation (hadd-e-qazf), just like in all other matters. Similarly...

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/101
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/101

जिल्द दस फ़तावा रज़विया

अल-वलवालजियाह और अल-ज़हीरिय्याह के प्रत्यक्ष अर्थ से पता चलता है कि ज़ाहिर अर-रिवायत (स्थापित स्थिति) गवाहों की बहुलता की शर्त है, और बहुलता दो [गवाहों] से पूरी हो जाती है। इति। और हमारे समय में, लोगों का आलस्य देखा जाता है, इसलिए एक विशाल भीड़ के बीच दो की गवाही को अलग-थलग नहीं माना जाता है जिससे गवाह की गलती स्पष्ट हो जाए। इस प्रकार, ज़ाहिर अर-रिवायत का कारण समाप्त हो गया, और दूसरी रिवायत के आधार पर फतवा देना आवश्यक हो गया। [1] और 'काफ़ी अल-हाकिम' में, जो इमाम मुहम्मद के सभी वचनों और ज़ाहिर अर-रिवायत की पुस्तकों का संग्रह है, इस प्रकार कहा गया है: रमज़ान में, एक मुसलमान पुरुष या महिला की गवाही, चाहे वह न्यायप्रिय (आदिल) हो या अज्ञात स्थिति (मस्तूर अल-हाल) की हो, स्वीकार की जाती है बशर्ते कि वे गवाही दें कि उन्होंने इसे शहर के बाहर देखा है या शहर में देखा है और कुछ ऐसा कारण था जिसके कारण यह दूसरों को दिखाई नहीं दिया। इति। और इन दोनों रिवायतों के बीच कोई विरोधाभास नहीं है क्योंकि बड़ी सभा (जमात-ए-अज़ीम) की शर्त तब लागू होती है जब गवाह शहर में किसी ऐसी जगह पर हो जो ऊंची न हो। इसलिए दूसरी [रिवायत] पहली की निरपेक्ष प्रकृति को सीमित करती है, इस प्रमाण के साथ कि पहली में, एक की गवाही स्वीकार न करने का कारण यह बताया गया था कि उनका अकेले देखना स्पष्ट रूप से एक गलती है, और इस बाद वाले मामले में, यानी जब वे जंगल में या किसी ऊंचे स्थान पर थे, अस्वीकृति का कारण नहीं पाया गया। इसलिए, 'अल-मुहीत' में कहा गया है कि इस अवस्था में, उनका अकेले देखना प्रत्यक्ष के विरुद्ध नहीं होगा, आदि। और शेष नौ महीनों के लिए, [गवाही] स्वीकार नहीं की जाएगी सिवाय दो पुरुषों या एक पुरुष और दो महिलाओं के, जो न्यायप्रिय, स्वतंत्र हों और जिन्हें झूठे आरोप (हद-ए-कज़फ़) के लिए दंडित न किया गया हो, ठीक वैसे ही जैसे अन्य सभी मामलों में। इसी प्रकार...

1. रद-उल-मुहतार, किताब-उस-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 101/2
2. रद-उल-मुहतार, किताब-उस-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 101/2

ظاہر الولوالجیة والظہیریة یدل علی ان ظاہر الروایة ھو اشتراط العدد والعدد یصدق باثنین اھ وفی زماننا مشاھد من تکاسل الناس فلیس في شھادة الاثنین تفرد من بین الجم الغفیر حتی یظھر غلط الشاھد، فانتفت علة ظاہر الروایة فتعین الافتاء بالروایة الاخری، ۱ وفی کافي الحاکم الذی ھو جمع کلام محمد في کتبه ظاہر الروایة وتقبل شھادة المسلم والمسلمة عد لاکان اوغیر عدل بعد ان یشھد انه رأی خارج المصر او انه رآہ في المصر وفي المصر علة تمنع العامة من التسساوی فی رؤیته اھ ولا منافاة بینھما لان اشتراط الجمع العظیم اذاکان الشاھد من المصر في مکان غیر مرتفع، فالثانیة مقیدة لاطلاق الاولی بدلیل ان الاولی علل فیھا رد الشھادة بان التفرد ظاہر في الغلط وعلی مافی الثانیة لم توجد علة الرد ولھذا قال في المحیط فلایکون تفردہ بالرؤیة خلاف الظاہر الخ ۲ قولہ وبقیة الشھر التسعة لا یقبل فیھا الا شھادة رجلین اورجل وامرأتین عدول احرار غیر محدودین کما فی سائر الاحکام، بحر عن شرح

بعید از قیاس ہے ، اور ولوالجیہ و ظہیریہ سے ظاہر ہوتا ہے کہ ظاہر الروایہ میں صرف تعدد گواہان کی شرط ہے اور تعدد دو سے بھی ہوگیا انتہی اور ہمارے زمانے میں لوگوں کا کسل آنکھوں دیکھا ہے تو دو کی گواہی کو یہ نہ کہیں گے کہ جمہور کے خلاف انہی کو کیسے نظر آگیا جس سے گواہ کی غلطی ظاہر ہو تو ظاہر الروایہ کی وجہ نہ رہی تو اس دوسری روایت پر فتوی دینا لازم ہوا اور کافی حاکم جس میں امام محمد کا تمام کلام، کتب ظاہر الروایہ کا جمع فرمادیا ہے یوں ہے کہ رمضان میں ایک مسلمان مرد یا عورت عادل یا مستورالحال کی گواہی مقبول ہے جبکہ یہ گواہی دے کہ اس نے جنگل میں دیکھا یا شہر میں دیکھا اور کوئی سبب ایسا تھا جس کے باعث اوروں کو نظر نہ آیا انتہی اور ان دونوں روایتوں میں منافات نہیں اس لیے کہ جماعت عظیم کی شرط وہاں ہے کہ گواہ شہر میں غیر مکان بلند پر ہو تو یہ پچھلی روایت اس پہلی کے اطلاق کی قید

بتاتی ہے اور اس پر دلیل یہ کہ پہلی میں ایک کی گواہی نہ ماننے کی وجہ یہ فرمائی کہ تنہا اس کا دیکھنا غلطی میں ظاہر ہے اور اس پچھلی صورت یعنی جبکہ وہ جنگل میں یا بلند مکان پر تھا وہ رد کی وجہ نہ پائی گئی اس لیے محیط میں فرمایا کہ اس حالت میں تنہا اس کا دیکھنا خلاف ظاہر نہ ہوگا الخ اور باقی نو مہینوں میں مقبول نہ ہوگی مگر گواہی دو مردوں یا ایک مرد دو عورتوں عادل آزاد کی جن پر حد قذف نہ لگ چکی ہو جیسے باقی تمام معاملات میں۔ اسی طرح

1 ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البانی مصر ۱۰۱/۲ 2 ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البانی مصر ۱۰۱/۲

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Table/Box 1] Arabic Text: “Mukhtasar al-Tahawi” by Imam al-Aspijabi: It is apparent that for these nine crescent moons, there is no difference between a cloudy and a clear sky regarding the acceptance of two men's testimony. This is because the underlying reason for requiring a large group—which is that everyone is out searching—is absent here, as people do not generally search for the moon in these nine months. This is supported by his statement: "as is the case in all other rulings." [Summarized]

Urdu Translation/Explanation: In “Bahr al-Ra'iq,” quoting Imam Aspijabi’s commentary on “Mukhtasar al-Tahawi,” it is stated that it is apparent that for these nine moons, there is no difference between the clarity or lack of clarity of the horizon. In any case, the testimony of two people will be accepted because the reason for requiring a large congregation—that everyone searches for the crescent—is not present here, as common people do not search for the moon during these nine months. This is supported by Imam Aspijabi's statement that for these [months], what is required is what is necessary for all other matters. [Summarized]

[Heading] It is stated in “Hadiqa al-Nadiyya”:

[Table/Box 2] Arabic Text: When the times are devoid of a competent ruler (Sultan), matters are entrusted to the scholars, and it is incumbent upon the community to refer to them. They become the authorities. If it is difficult for all of them to unite under one person, then every region becomes independent by following its scholars. If there are many scholars, then the most learned among them is followed. If they are equal, then lots should be cast between them. [2]

Urdu Translation/Explanation: When a period is devoid of such a ruler who can adequately handle Shariah matters, all Shariah tasks will be entrusted to the scholars. It will be mandatory for Muslims to turn to them in every Shariah matter. Those scholars will be considered the judges and rulers. Then, if it is difficult for all Muslims to agree on one scholar, the people of every district will follow their own scholars. If there are many scholars in a district, then the one who has the most knowledge of Shariah rulings will be followed. If they are equal in knowledge, then lots should be cast among them. [12 Minhu Ghafira Lahu]

[Paragraph 3] Second Method: Testimony upon Testimony (Shahadat 'ala al-Shahadah). This means that the witnesses did not see the moon themselves, but

those who did see it gave testimony before them and appointed them as witnesses to their testimony. They then testified to that testimony. This is for when the primary witnesses are excused from attending in person. The method is that the original witness says to the substitute witness, "Be a witness to this testimony of mine that I testify that I saw the crescent of such-and-such month of such-and-such year on the evening of such-and-such day." The branch witnesses (secondary witnesses) come here and testify thus: "I testify that so-and-so, son of so-and-so, made me a witness to his testimony that the aforementioned so-and-so, son of so-and-so, saw the crescent of such-and-such month of such-and-such year on the evening of such-and-such day, and the aforementioned so-and-so, son of so-and-so, said to me: 'Be a witness to this testimony of mine.'" Then, the rulings that have passed regarding the different states of the sighting in the original testimony must be considered; for example, if the horizon was clear in the month of Ramadan...

[Footnotes] 1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm (Book of Fasting), Mustafa al-Babi, Egypt, 2/103. 2. Al-Hadiqa al-Nadiyya, Type 3 of the Types of Islamic Sciences, Maktaba Nooria Razawiyya, Faisalabad, 1/451.

फ़तावा रज़विया, खंड 10

[बॉक्स 1] अरबी पाठ: इमाम अल-अस्पीजाबी द्वारा लिखित "मुख़्तसर अल-तहावी": यह स्पष्ट है कि इन नौ अर्धचंद्रों के लिए, दो पुरुषों की गवाही की स्वीकृति के संबंध में बादल और साफ़ आकाश के बीच कोई अंतर नहीं है। इसका कारण यह है कि एक बड़ी जमात की आवश्यकता का मूल कारण—जो यह है कि हर कोई तलाश में बाहर है—यहाँ अनुपस्थित है, क्योंकि लोग आम तौर पर इन नौ महीनों में चाँद की तलाश नहीं करते हैं। यह उनके इस कथन से समर्थित है: "जैसा कि अन्य सभी आदेशों के मामले में है।" [सारांशित]

उर्दू अनुवाद/व्याख्या: "बहर-उर-राइक" में इमाम अस्पीजाबी की "मुख़्तसर तहावी" की शरह (व्याख्या) से उद्धृत है कि ज़ाहिर तौर पर इन नौ चाँदों में क्षितिज की सफ़ाई या कमी का कोई अंतर नहीं है। हर स्थिति में दो लोगों की गवाही स्वीकार की जाएगी क्योंकि वह वजह जो वहाँ बड़ी जमात की शर्त का कारण थी—कि सब चाँद की तलाश करते हैं—यहाँ मौजूद नहीं है, क्योंकि आम लोग इन नौ महीनों में चाँद की तलाश नहीं करते हैं। इसकी पुष्टि इमाम अस्पीजाबी का वह कहना करता है कि उनमें वही ज़रूरी है जो बाकी तमाम मामलों में दरकार है। [सारांशित]

[शीर्षक] "हदीक़ा नदिया" में लिखा है:

[बॉक्स 2] अरबी पाठ: जब समय एक सक्षम शासक (सुल्तान) से खाली हो, तो मामले विद्वानों को सौंप दिए जाते हैं, और समुदाय के लिए उनके पास जाना अनिवार्य है। वे अधिकारी बन जाते हैं। यदि उन सभी के लिए एक व्यक्ति के अधीन एकजुट होना कठिन हो, तो प्रत्येक क्षेत्र अपने विद्वानों का अनुसरण करके स्वतंत्र हो जाता है। यदि विद्वान बहुत हों, तो उनमें से सबसे अधिक ज्ञानी का अनुसरण किया जाता है। यदि वे बराबर हों, तो उनके बीच पर्ची (क़ुर्रा) डालनी चाहिए। [2]

उर्दू अनुवाद/व्याख्या: जब ज़माना ऐसे सुल्तान से खाली हो जो शरीयत के मामलों में किफायत कर सके तो शरीयत के सब काम विद्वानों (उलेमा) के सुपुर्द होंगे और मुसलमानों पर लाज़िम होगा कि अपने हर शरीयत मामले में उनकी तरफ रुजू करें। वे विद्वान ही काज़ी और हाकिम समझे जाएंगे। फिर अगर सब मुसलमानों का एक विद्वान पर इत्तेफ़ाक़ मुश्किल हो तो हर ज़िले के लोग अपने उलेमा का अनुसरण करेंगे। अगर ज़िले में विद्वान बहुत हों तो जो सब में ज़्यादा शरीयत के अहकाम का इल्म रखता है उसकी पैरवी होगी। और अगर इल्म में बराबर हों तो उनमें क़ुर्रा डालें। [12 मिन्हु गफ़िर लहू]

[पैराग्राफ 3] दूसरी पद्धति: शहादत अला अल-शहादत (गवाही पर गवाही)। इसका अर्थ है कि गवाहों ने स्वयं चाँद नहीं देखा, बल्कि देखने वालों ने उनके सामने गवाही दी और उन्हें अपनी गवाही पर गवाह बनाया। उन्होंने उस गवाही की गवाही दी। यह तब होता है जब मूल गवाह व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने में असमर्थ हों। इसकी विधि यह है कि मूल गवाह उप-गवाह से कहे, "मेरी इस गवाही पर गवाह हो जाओ कि मैं गवाही देता हूँ कि मैंने फलां महीने के फलां साल का चाँद फलां दिन की शाम को देखा था।" उप-गवाह यहाँ आकर इस प्रकार गवाही दें: "मैं गवाही देता हूँ कि फलां बिन फलां ने मुझे अपनी इस गवाही पर गवाह बनाया कि उपरोक्त फलां बिन फलां ने फलां महीने के फलां साल का चाँद फलां दिन की शाम को देखा था, और उपरोक्त फलां बिन फलां ने मुझसे कहा: 'मेरी इस गवाही पर गवाह हो जाओ।'" फिर मूल गवाही में रुयत (देखने) की विभिन्न स्थितियों के संबंध में जो नियम गुज़रे हैं, उनका ध्यान रखना आवश्यक है; उदाहरण के लिए, रमजान के महीने में क्षितिज साफ़ था...

[पादलेख] 1. रद्दुल मुहतार, किताबुस-सौम (उपवास की पुस्तक), मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/103. 2. अल-हदीक़तुल नदिया, इस्लामी विज्ञान के प्रकारों में से तीसरा प्रकार, मकतबा नूरिया रज़विया, फैसलाबाद, 1/451.

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

[پہلا خانہ] عربی متن: مختصر الطحاوی للامام الاسبیجابی والظاھر انہ فی الاھلۃ التسعۃ لافرق بین الغیم والصحو فی قبول الرجلین لفقد العلۃ الموجبۃ لاشتراط الجمع الکثیر وھی توجہ الکل طالبین ویؤیدہ قولہ کما فی سائر الاحکام اھ ملتقطا -

اردو ترجمہ و تشریح: بحر الرائق میں امام اسبیجابی شرح مختصر طحاوی سے ہے اور ظاہر یہ ہے کہ ان نو چاندوں میں صفائی و عدم صفائی مطلع کا کچھ فرق نہیں ہر حال میں دو کی گواہی قبول ہو گی کہ وہ وجہ جو وہاں شرط جماعت عظیم کی باعث تھی کہ سب ہلال کو تلاش کرتے ہیں یہاں موجود نہیں کہ ان نو مہینوں کا چاند عام لوگ تلاش نہیں کرتے ہیں، اور اس کی تائید کرتا ہے امام اسبیجابی کا وہ فرمانا کہ ان میں وہ درکار ہے جو باقی تمام معاملات میں اھ ملتقطا

[سرخی] حدیقہ ندیہ میں ہے:

[دوسرا خانہ] عربی متن: اذا خلا الزمان من سلطان ذی کفایۃ فالامور مؤکلۃ الی العلماء ویلزم الامۃ الرجوع الیھم و یصیرون ولاۃ فاذا عسر جمعھم علی واحد استقل کل قطر باتباع علمائہ فان کثروا فالمتبع اعلمھم فان استووا اقرع بینھم - 2

اردو ترجمہ و تشریح: جب زمانہ ایسے سلطان سے خالی ہو جو معاملات شرعیہ میں کفایت کرسکے تو شرعی سب کام علماء کو سپرد ہونگے اور مسلمانوں پر لازم ہو گا کہ اپنے ہر معاملہ شرعیہ میں ان کی طرف رجوع کریں وہ علماء ہی قاضی و حاکم سمجھے جائیں گے، پھر اگر سب مسلمانوں کا ایک عالم پر اتفاق مشکل ہو تو ہر ضلع کے لوگ اپنے علماء کا اتباع کریں گے، اگر

ضلع میں عالم کثیر ہوں تو جو سب میں زیادہ احکام شریعت کا علم رکھتا ہے اس کی پیروی ہو گی، اور اگر علم میں برابر ہوں تو ان میں قرعہ ڈالیں ۱۲ منہ غفرلہ،

[تیسرا پیرا گراف] طریق دوم: شهادة علی الشهادة یعنی گواہوں نے چاند خود نہ دیکھا بلکہ دیکھنے والوں نے ان کے سامنے گواہی دی اور اپنی گواہی پر انہیں گواہ کیا، انہوں نے اس گواہی کی گواہی دی، یہ وہاں ہے کہ گواہان اصل حاضری سے معذور ہوں اور اس کا طریقہ یہ ہے کہ گواہ اصل گواہ سے کہے میری اس گواہی پر گواہ ہو جا کہ میں گواہی دیتا ہوں میں نے ماہ فلاں سنہ فلاں کا ہلال فلاں دن کی شام کو دیکھا۔ گواہان فرع یہاں آکر یوں شہادت دیں کہ میں گواہی دیتا ہوں کہ فلاں بن فلاں نے مجھے اپنی اس گواہی پر گواہ کیا کہ فلاں بن فلاں مذکور نے ماہ فلاں سنہ فلاں کا ہلال فلاں دن کی شام کو دیکھا اور فلاں بن فلاں مذکور نے مجھ سے کہا کہ میری اس گواہی پر گواہ ہو جا، پھر اصل شہادت رؤیت میں اختلاف احوال کے ساتھ جو احکام گزرے ان کا لحاظ ضرور ہے، مثلاً ماہِ رمضان میں مطلع صاف تھا

[حواشی] 1 رد المحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/ ۱۰۳ 2 الحدیقة الندیة، النوع الثالث من انواع العلوم اسلامیہ، مکتبہ نوریہ رضویہ فیصل آباد، ۱/ ۴۵۱

Volume 10 Fatawa Razawiyya

So, the testimony of only one person should not be heard until they describe seeing it in the wilderness or from a high place, otherwise, one person's testimony and on their testimony even just one witness, even if it is a concealed female slave, is sufficient. And for the remaining months, it is always necessary that for every witness's testimony, there must be two just men or one man and two just women, even if these same two men are witnesses for each of the two original witnesses. For example, where in the Eid festivals, only the testimony of two just persons is acceptable, Zaid and Amr, two just men, saw the moon, and each made Bakr and Khalid, two just men, witnesses to their testimony, such that Bakr and Khalid came here and each testified to the testimony of both Zaid and Amr, that is sufficient. It is not necessary that every witness has two separate witnesses. And it is also permissible for one original witness to come and testify himself, and the other witness sends two separate witnesses for his testimony. Yes, it is not permissible for one original witness to have two witnesses and for one of those two to also give their own personal testimony. It is stated in Durr-e-Mukhtar:

Arabic Text

Testimony upon testimony (hearsay evidence) is accepted, even if it is multiple, by way of juristic preference (istihsan) in every right, according to the correct view, except in cases of prescribed punishments (hadd) and retaliation (qisas). This is on the condition that the presence of the original witness is impossible due to illness or travel. The second (proxy witness) is satisfied with the original's absence to the extent that it would be impossible for him to spend the night with his family. More than one authority has deemed this good. In Al-Quhistani and Al-Sirajiyya, it is mentioned that the fatwa is based on this, and the author confirmed it. Or if the woman is secluded and does not mix with men, even if she goes out for a need or to a bathhouse.

Urdu Translation/Explanation

Testimony is accepted even if it reaches many levels one after another. For example, the original witnesses made Zaid and Amr witnesses; they made Bakr and Khalid witnesses to their "testimony upon testimony"; Khalid made Saeed and Hameed witnesses to his "testimony upon testimony", and so on. And according to the correct school of thought, this matter is permissible in every right except for Hudood and Qisas, provided that at the time when the testimony is delivered before the judge, it is impossible for the original witness to come there due to illness, travel, or being a secluded woman. According to Imam Abu Yusuf, it is not necessary for the distance to be three

Arabic Text

In Qunyah: "at the time of testimony before the judge" is a condition for all cases. And on the condition of the testimony of a full quorum (nisab), even if it is one man and two women for each original witness, or even if it's one woman, because the branches (proxy witnesses) of this and that do not vary. Its method is for the original witness to say, addressing the branch even if it's his son: "Bear witness to my testimony that I testify to such-and-such." And the branch says: "I bear witness that so-and-so made me a witness to his testimony of such-and-such and said to me: 'Bear witness to my testimony'."

Urdu Translation/Explanation

stages (manzil), but rather a distance where one cannot return home for the night after giving testimony is sufficient. Many scholars have liked this view, and it is in Al-Quhistani and Al-Sirajiyya that the fatwa is based on this. The author has accepted it. And a woman's seclusion means that she avoids gatherings of men, even if she goes out for some need of hers or goes to a bathhouse; it is so mentioned in Qunyah. And it is also a condition that for every original...

तो सिर्फ एक की गवाही तब तक नहीं सुनी जानी चाहिए जब तक कि वह जंगल में या किसी ऊंचे स्थान पर देखने का बयान न करे, वरना एक की गवाही और उसकी गवाही पर भी सिर्फ एक ही गवाह काफी है, चाहे वह एक गुप्त दासी ही क्यों न हो। और बाकी महीनों में यह हमेशा ज़रूरी है कि हर गवाह की गवाही पर दो न्यायप्रिय पुरुष या एक पुरुष और दो न्यायप्रिय महिला गवाह हों, चाहे वही दो पुरुष इन दो मूल गवाहों में से प्रत्येक के गवाह हों। उदाहरण के लिए, जहाँ ईदों में केवल दो न्यायप्रिय व्यक्तियों की गवाही स्वीकार्य है, ज़ैद और अम्र दो न्यायप्रिय पुरुषों ने चाँद देखा और प्रत्येक ने अपनी गवाही पर बक्र और खालिद, दो न्यायप्रिय पुरुषों को गवाह बना दिया, तो यहाँ आकर बक्र और खालिद में से प्रत्येक ने ज़ैद और अम्र दोनों की गवाही पर गवाही दी, यह काफी है। यह ज़रूरी नहीं है कि हर गवाह के अलग-अलग दो गवाह हों। और यह भी जायज़ है कि एक मूल गवाह खुद आकर गवाही दे और दूसरा गवाह अपनी गवाही पर दो अलग गवाह भेज दे। हाँ, यह जायज़ नहीं है कि एक मूल गवाह के दो गवाह हों और उन दोनों में से एक खुद अपनी व्यक्तिगत गवाही भी दे। दुर्र-ए-मुख्तार में है:

अरबी पाठ

गवाही पर गवाही (अनुश्रुत साक्ष्य) स्वीकार्य है, चाहे वह कितनी ही बार हो, हर अधिकार में इस्तिहसान (विधिक अधिमान) के आधार पर, सही विचार के अनुसार, सिवाय हद्द (निर्धारित दंड) और किसास (प्रतिशोध) के मामलों में। यह इस शर्त पर है कि बीमारी या यात्रा के कारण मूल गवाह की उपस्थिति असंभव हो। दूसरा (प्रतिनिधि गवाह) मूल की अनुपस्थिति से इस हद तक संतुष्ट है कि उसके लिए अपने परिवार के साथ रात बिताना असंभव हो। एक से अधिक अधिकारियों ने इसे अच्छा माना है। अल-कुहिस्तानी और अल-सिराजिया में उल्लेख है कि फतवा इसी पर आधारित है, और लेखक ने इसकी पुष्टि की है। या यदि महिला एकांतप्रिय है और पुरुषों

उर्दू अनुवाद/व्याख्या

गवाही स्वीकार्य है भले ही वह एक के बाद एक कितने ही स्तरों तक पहुँचे। उदाहरण के लिए, मूल गवाहों ने ज़ैद और अम्र को गवाह बनाया; उन्होंने अपनी इस "गवाही पर गवाही" के लिए बक्र और खालिद को गवाह बना दिया; खालिद ने अपनी इस "गवाही पर गवाही" के लिए सईद और हमीद को गवाह बना लिया (और इसी तरह)। और सही मज़हब (विचारधारा) के अनुसार यह बात हुदूद और किसास के अलावा हर हक (अधिकार) में जायज़ है, इस शर्त के साथ कि जिस समय काजी की उपस्थिति में गवाही दी गई, उस समय बीमारी, यात्रा या पर्दानशीन

अरबी पाठ

के साथ नहीं मिलती-जुलती है, भले ही वह किसी ज़रूरत के लिए या स्नानगृह के लिए बाहर जाए। कुन्या में: "काजी के सामने गवाही के समय" सभी मामलों के लिए एक शर्त है। और पूर्ण कोरम (निसाब) की गवाही की शर्त पर, भले ही वह प्रत्येक मूल गवाह के लिए एक पुरुष और दो महिलाएं हों, या भले ही वह एक महिला हो, क्योंकि इसकी और उसकी शाखाएं (प्रतिनिधि गवाह) भिन्न नहीं होती हैं। इसका तरीका यह है कि मूल गवाह शाखा (प्रतिनिधि) को संबोधित करते हुए कहे, भले ही वह उसका बेटा ही क्यों न हो: "मेरी गवाही के साक्षी बनो कि मैं अमुक-अमुक की गवाही देता हूँ।" और शाखा कहती है: "मैं गवाह हूँ कि अमुक व्यक्ति ने मुझे अपनी अमुक-अमुक की गवाही का गवाह बनाया और मुझसे कहा: 'मेरी गवाही के साक्षी बनो'।"

पृष्ठ 414/836

उर्दू अनुवाद/व्याख्या

महिला होने के कारण मूल गवाह का वहां आना कठिन हो। इमाम अबू यूसुफ के अनुसार, दूरी का तीन मंज़िल होना ज़रूरी नहीं है, बल्कि इतनी दूरी काफी है कि गवाही देकर वह रात को अपने घर न पहुँच सके। कई बुजुर्गों ने इस बात को पसंद किया है और कुहिस्तानी व सिराजिया में है कि फतवा इसी पर है। लेखक ने इसे स्वीकार किया है। और महिला का पर्दानशीन होना यह है कि वह पुरुषों की भीड़ से बचती हो, भले ही वह अपनी किसी ज़रूरत के लिए बाहर निकले या हमाम (स्नानगृह) जाए, कुन्या में ऐसा ही है। और यह भी शर्त है कि हर मूल...

تو صرف ایک کی گواہی مسموع نہ ہونی چاہئے جب تک کہ جنگل میں یا بلند مکان پر دیکھانہ بیان کرے ورنہ ایک کی شہادت اور اس کی شہادت پر بھی صرف ایک ہی شاہد اگرچہ کنیز مستورۃ الحال ہو بس ہے، اور باقی مہینوں میں یہ تو ہمیشہ ضرور ہے کہ ہر گواہ کی گواہی پر دو مرد یا ایک مرد دو عورت عادل گواہ ہوں اگرچہ یہی دو مرد ان دو اصل میں ہر ایک کے شاہد ہوں مثلاً جہاں عیدین میں صرف دو عادلوں کی گواہی مقبول ہے زید وعمرو دو عادلوں نے چاند دیکھا اور ہر ایک نے اپنی شہادت پر بکر و خالد دو مرد عادل کو گواہ کر دیا کہ یہاں آکر بکر اور خالد ہر ایک نے زید و عمر و دونوں کی گواہی پر گواہی دی کافی ہے یہ ضرور نہیں کہ ہر گواہ کے جدا جدا دو گواہ ہوں، اور یہ بھی جائز ہے کہ ایک اصل خود آکر گواہی دے اور دوسرا گواہ اپنی گواہی پر دو گواہ جدا گانہ کر بھیجے، ہاں یہ جائز نہیں کہ ایک گواہ اصل کے دو گواہ ہوں اور انہیں دونوں میں سے ایک خود اپنی شہادت ذاتی بھی دے۔ در مختار میں ہے۔

| الشهادة على الشهادة مقبولة وإن كثرت استحساناً في كل حق، على الصحيح، إلا في حد وقود بشرط تعذر حضور الاصل بمرض اوسفر و اكتفى الثاني بغيبته بحيث يتعذران يبيت بأهله واستحسنه غير واحد، وفي القهستاني والسراجية وعليه الفتوى واقره المصنف اوكون المرأة مخدرة لاتخالط الرجال وان خرجت لحاجة وحمام قنية عند الشهادة عند القاضي قيد للكل، وبشرط شهادة عدد نصاب ولو رجلا وامرأتين عن كل اصل، ولو امرأة، لاتغاير فرعي هذا وذاك، وكيفيتها ان يقول الاصل مخاطبا للفرع ولو ابنه، بحر، اشهد على شهادتى انى اشهد بكذا ويقول الفرع اشهد ان فلانا اشهدني على شهادته بكذا وقال لى اشهد على شهادتى | گواہی مقبول ہے اگرچہ یکے بعد دیگرے کتنے ہی درجے تک پہنچے مثلاً گواہان اصل نے زید و عمرو کو گواہ بنایا انہوں نے اپنی اس شہادت علی الشہادت پر بکر و

خالد کو گواہ کر دیا خالد نے اپنی اس شہادت علی الشہادت پر سعید و حمید کو شاہد بنالیا وعلی ھٰذاالقیاس) اور مذہب صحیح پر یہ امر حدود و قصاص کے سوا ہر حق میں جائز ہے اس شرط سے کہ جس وقت قاضی کے حضور ادائے شہادت ہوئی اُس وقت وہاں اصل گواہ کا آنا مرض یا سفر یا زنِ پردہ نشین ہونے کے باعث متعذر ہو اور امام ابی یوسف کے نزدیک تین منزل دُور ہونا ضرور نہیں بلکہ اتنی دُوری کافی ہے کہ گواہی دے کر رات کو اپنے گھر نہ پہنچ سکے بکثرت مشائخ نے اس قول کو پسند کیا اور قہستانی و سراجیہ میں ہے کہ اسی پر فتویٰ ہے۔ مصنف نے اسے مسلم رکھا اور عورت کی پردہ نشینی یہ کہ مردوں کے مجمع سے بچتی ہو اگرچہ اپنی کسی ضرورت کے لیے باہر نکلے یا حمام جائے، ایسا ہی قنیہ میں ہے۔ اور یہ بھی شرط ہے کہ ہر اصل |

Fatawa Razawiyya - Volume 10

[Box 1] Arabic: By this, it ends briefly. Urdu: Although a witness's testimony may complete the full quorum (Nisab) of evidence—meaning two men or one man and two women testify—it is not mandatory for every original witness to have two separate witnesses. The procedure is that the original witness (asl), even if addressing his own son as the substitute witness (far'), says: "Be a witness to my testimony, for I am giving this testimony." Then the substitute witness delivers the testimony by saying: "I testify that so-and-so made me a witness to his testimony and said to me, 'Be a witness to my testimony'." Briefly.

In the same discourse regarding the crescent of Ramadan:

[Box 2] Arabic: The testimony of one person against another is accepted, such as that of a slave or a woman, even if it is against someone like themselves.[2] Urdu: The testimony of one person against another—for example, the testimony of a slave or a woman—even if it is against someone like themselves, is accepted regarding the crescent moon of Ramadan, provided that the testimony of one person is admissible there, such as in the case of a cloudy horizon.

In Radd al-Muhtar it is stated:

[Box 3] Arabic: If two people testify to the testimony of one man, and one of them is also testifying to the matter himself, it is not permissible. This is as stated in Al-Muhit Al-Sarakhsi and Fatawa Al-Hindiyya. If one person testifies to their own knowledge and two others testify to someone else's testimony, it is valid. This is clearly stated in Al-Bazzaziyya. Briefly.[3] Urdu: If two witnesses testify regarding the testimony of one man, and one of them is himself an original witness, then this is not permissible. This is also stated in Fatawa Alamgiri from Al-Muhit of Imam Sarakhsi. However, if one person gave their own testimony and two others testified to another person's testimony, then it is correct. This is specified in Bazzaziyya. 12

In Fatawa Alamgiriyya, it is stated from Az-Zakheerah:

[Box 4] Arabic: The substitute witness (far') should mention the name of the original witness (asl), as well as the names of his father and grandfather, to the extent that if he omits this, the judge will not accept their testimony. This is as stated in Az-Zakheerah.[4] Urdu: The substitute witness should mention the name of the original witness and his father and grandfather; if he omits this, the judge will not accept his testimony. This is as stated in Az-Zakheerah. 12

Footnotes: 1. Durr al-Mukhtar, Chapter on Testimony upon Testimony, Mujtabai Press Delhi, 2/100 2. Durr al-Mukhtar, Book of Fasting, Mujtabai Press Delhi, 1/138 3. Radd al-Muhtar, Chapter on Testimony upon Testimony, Mustafa Al-Babi Egypt, 4/73 4. Fatawa Hindiyya, Eleventh Chapter on Testimony upon Testimony, Noorani Kutub Khana Peshawar, 3/524

फतावा रज़विया - जिल्द दहम (खंड 10)

[बॉक्स 1] अरबी: इसके साथ यह संक्षेप में समाप्त होता है। उर्दू: यद्यपि एक गवाह की गवाही पर शहादत (गवाही) का पूरा निसाब (न्यूनतम संख्या) पूरा हो जाए, यानी दो पुरुष या एक पुरुष और दो महिलाएँ गवाही दें, हाँ यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक मूल गवाह के पास दो अलग-अलग गवाह हों। इसकी प्रक्रिया यह है कि मूल गवाह (असल), भले ही वह उप-गवाह (फरअ) के रूप में अपने बेटे को संबोधित कर रहा हो, कहे: "मेरी इस गवाही पर गवाह बन जाओ कि मैं यह गवाही दे रहा हूँ।" फिर उप-गवाह इस तरह गवाही पेश करे: "मैं गवाही देता हूँ कि फलां व्यक्ति ने मुझे अपनी गवाही पर गवाह बनाया और मुझसे कहा कि मेरी इस गवाही पर गवाह बन जाओ।" संक्षेप में।

रमज़ान के चाँद के उसी बयान में है:

[बॉक्स 2] अरबी: और एक की गवाही दूसरे पर स्वीकार की जाती है, जैसे गुलाम या महिला, भले ही वह अपने जैसे ही व्यक्ति के खिलाफ हो।[2] उर्दू: एक की गवाही दूसरे पर, उदाहरण के लिए एक गुलाम या महिला की गवाही, भले ही वह अपने जैसे ही व्यक्ति पर हो, रमज़ान के चाँद के मामले में स्वीकार्य है, बशर्ते कि वहाँ एक व्यक्ति की गवाही सुनी जाने योग्य हो, जैसे कि बादलों वाले आसमान की स्थिति में।

रद अल-मुह्तार में है:

[बॉक्स 3] अरबी: यदि दो लोग एक ही व्यक्ति की गवाही पर गवाही दें, और उनमें से एक स्वयं भी उस मामले का गवाह हो, तो यह जायज़ नहीं है। ऐसा ही अल-मुहीत अल-सरख़सी और फतावा अल-हिंदिया में है। यदि एक व्यक्ति अपनी स्वयं की गवाही दे और दो अन्य व्यक्ति किसी और की गवाही पर गवाही दें, तो यह सही है। बज़ाज़िया में इसे स्पष्ट रूप से बताया गया है। संक्षेप में।[3] उर्दू: यदि दो गवाहों ने एक पुरुष की गवाही पर गवाही दी और उनमें से एक स्वयं मूल गवाह है, तो यह जायज़ नहीं है। फतावा आलमगीरी में इमाम सरख़सी के मुहीत से भी ऐसा ही है। और यदि एक ने स्वयं गवाही दी और अन्य दो ने किसी और की गवाही पर गवाही दी, तो यह सही है। बज़ाज़िया में इसका स्पष्ट उल्लेख है। १२

फतावा आलमगीरिया में 'ज़ख़ीरा' से उद्धृत है:

[बॉक्स 4] अरबी: उप-गवाह (फरअ) को चाहिए कि वह मूल गवाह (असल) का नाम, उसके पिता और दादा का नाम बताए, यहाँ तक कि यदि वह इसे छोड़ देता है, तो काज़ी (न्यायाधीश) उनकी गवाही स्वीकार नहीं करेगा। ज़ख़ीरा में ऐसा ही है।[4] उर्दू: उप-गवाह को चाहिए कि वह मूल गवाह और उसके पिता तथा दादा का नाम बताए, यहाँ तक कि यदि वह उसे छोड़ देगा तो हाकिम उसकी गवाही स्वीकार नहीं करेगा। ज़ख़ीरा में ऐसा ही है। १२

पादलेख (Footnotes): 1. दुर्रे मुख्तार, बाबूश शहादत अलल शहादत, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 2/100 2. दुर्रे मुख्तार, किताबुस सौम, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/138 3. रद अल-मुह्तार, बाबूश शहादत अलल शहादत, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 4/73 4. फतावा हिंदिया, ग्यारहवाँ अध्याय शहादत अलल शहादत के बारे में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 3/524

فتاویٰ رضویہ - جلد دہم

[بذلک اھ مختصرا-] گواہ اگرچہ عورت کی گواہی پر پور انصاب شہادۃ ہو یعنی دو مرد یا ایک مرد دو عورتیں گواہی دیں، ہاں یہ ضرور نہیں کہ ہر گواہ اصل کے دو دو جُدا گانہ گواہوں اور اس کی کیفیت یہ ہے کہ گواہ اصل گواہ فرع سے اگرچہ وہ اس کا بیٹا ہو خطاب کر کے کہے تو میری اس گواہی پر گواہ ہو جا کہ میں یہ گواہی دیتا ہوں اور گواہ فرع یوں ادائے شہادت کرے کہ میں گواہی دیتا ہوں کہ فلاں نے مجھے اپنی گواہی پر گواہ کیا اور مجھ سے کہا کہ میری اس گواہی پر گواہ ہو جا۔ اھ مختصراً۔

اُسی کے بیان ہلال رمضان میں ہے :

[وتقبل شہادۃ واحد علی اٰخر کعبد وانثیٰ ولو علیٰ مثلھما- 2] ایک کی گواہی دوسرے پر مثلاً غلام یا عورت کی شہادت اگرچہ اپنی ہی جیسے پر ہلال رمضان میں مقبول ہے جبکہ ایک کی گواہی وہاں مسموع ہونے کے قابل ہو جیسے بحالت ناصافی مطلع۔

ردالمحتار میں ہے :

[لو شہدا علی شہادۃ رجل واحد ھما یشھد بنفسہ ایضالم یجز کذا فی المحیط السرخسی فتاوی الھندیۃ ولو شھد واحد علی شھادۃ نفسہ وآخران علی شھادۃ غیرہ یصح وصرح بہ فی البزازیۃ اھ مختصراً 3] اگر دو گواہوں نے ایک مرد کی شہادت پر شہادت کی اور اُن میں ایک خود بذاتہ گواہ ہے تو یہ جائز نہیں، ایسا ہی فتاوی عالمگیری میں محیط امام سرخسی سے ہے اور اگر ایک نے خود گواہی دی اور دوسرے دو نے اور شخص کی شہادت پر شہادت ادا کی تو یہ درست ہے، بزازیہ میں اس کی تصریح ہے ۱۲

فتاویٰ عالمگیریہ میں ذخیرہ سے ہے :

[ینبغی ان یذکر الفرع اسم الشاھد الاصل واسم ابیہ وجدہ حتی لوترک ذلک فالقاضی لا یقبل شھادتھما کذا فی الذخیرۃ۔ 4] گواہ فرع کو چاہئے کہ گواہ اصل اور اس کے باپ اور دادا کا نام ذکر کرے یہاں تک کہ اسے چھوڑ دے گا تو حاکم اس کی گواہی قبول نہ کرے گا کذا فی الذخیرہ۔ ۱۲

حواشی: 1 دُر مختار باب الشہادت علی الشہادت مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۱۰۰ 2 دُر مختار، کتاب الصوم، مطبع مجتبائی دہلی، ۱/ ۱۳۸ 3 رد المحتار باب الشہادت علی الشہادۃ مصطفی البابی مصر ۴/ ۷۳ 4 فتاویٰ ہندیہ الباب الحادی عشر فی الشہادۃ علی الشہادۃ نورانی کتب خانہ پشاور، ۳/ ۵۲۴

Fatawa-e-Razawiyya, Volume 10

In 'Shahadat-ala-Shahadah' (testimony upon testimony), it is also necessary that until a judgment is passed according to it, the original witnesses must remain eligible for testimony and not deny the testimony. For instance, if the secondary witnesses (Faru') have not yet testified or have given testimony but a judgment hasn't been passed, and one of the original witnesses becomes blind, mute, insane, or—God forbid—an apostate, or says "I did not make these people witnesses to my testimony" or "I made them witnesses by mistake," then this testimony will become void. It is stated in Dur-re-Mukhtar:

Arabic	English Translation
تبطل شهادة الفروع بخروج اصله عن اهليتها كخرس وعمى، وبأنكار اصله الشهادة كقولهم مالنا شهادة اولم نشهد او اشهد ناهم وغلطنا اهـ مختصرا	The testimony of the secondary witnesses becomes void if the original witness loses eligibility for testimony, such as becoming mute or blind, or if the original witness denies the testimony, for example, if the original witnesses say, "We have no testimony," or "We did not testify," or "We made them witnesses but we were mistaken." (T)

Third Method: 'Shahadat-ala-al-Qaza,' meaning in another Islamic city, testimonies regarding the sighting of the new moon were presented before an Islamic ruler or Sharia judge (Qazi), and he decreed the proof of the sighting. Two just witnesses were present in that court of law (Dar-ul-Qaza) at the time of that testimony and decree. They said here, before the Islamic ruler, Sharia judge, or in his absence, before a Mufti, "We testify that before such-and-such ruler of such-and-land city, testimonies were presented regarding such-and-such new moon on such-and-such evening, and the said ruler decreed the proof of the moon for that evening based on those testimonies." It is mentioned in Fath-ul-Qadeer Sharh-e-Hidayah:

Arabic	English Translation
لوشهدوا ان قاضى بلد كذا شهد عنده اثنان برؤية الهلال فى ليلة كذا وقضى بشهادتهما جاز لهذا القاضي ان يحكم بشهادتهما لان قضاء القاضي حجة وقد شهدوا به ۔	If witnesses testified that before the judge of such-and-such city, two persons testified to seeing the new moon on such-and-such night, and he passed a judgment based on their testimony, then it is permissible for this judge to pass a judgment based on the testimony of these two, because the judge's decree is a proof (hujjat) and they have testified to it. (T)

Similarly, it is mentioned in Fatawa Qazikhan and Fatawa Khulasah, etc.

Arabic	English Translation
قلت وقيده فى التنوير تبعًا للذ خيرة عن مجموع النوازل بأستجماع شرائط	I say (Qultu): and it was restricted in 'at-Tanwir', following 'al-Dhakhirah', citing 'Majmu' al-Nawazil', by the fulfillment of conditions that the claim...

1. Durr-e-Mukhtar, Chapter on Testimony upon Testimony, Matba Mujtabai Delhi 2/100.
2. Fath-ul-Qadeer, Book of Fasting, Maktaba Nooria Razawiyya Sukkur 2/243.

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द 10 (दसवीं)

'शहादत-अल-शहादत' (गवाही पर गवाही) में यह भी ज़रूरी है कि उसके अनुसार फैसला होने तक, असल गवाह भी गवाही की योग्यता पर बने रहें और गवाही का खंडन न करें। उदाहरण के लिए, यदि फ़रा (गौण गवाहों) ने अभी गवाही नहीं दी है या दे दी है और अभी तक फैसला नहीं हुआ है, और असल गवाहों में से कोई अंधा, गूँगा, पागल, या—ईश्वर न करे—धर्मत्यागी हो गया, या कहा कि "मैंने इन गवाहों को अपनी गवाही का गवाह नहीं बनाया था" या "गलती से गवाह बनाया था," तो यह गवाही अमान्य हो जाएगी। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

अरबी	**हिंदी अनुवाद**
تبطل شهادة الفروع بخروج اصله عن اهليتها كخرس وعمى، وبأنكار اصله الشهادة كقولهم مالنا شهادة اولم نشهد او اشهد ناهم وغلطنا اهـ مختصرا	असल गवाह की योग्यता खत्म हो जाने के कारण गौण गवाहों की गवाही निरस्त हो जाती है, जैसे गवाह का गूँगा या अंधा हो जाना, या असल गवाह द्वारा गवाही से इनकार करना, जैसे असल गवाह कहें कि "हम गवाह नहीं हैं" या "हमने उन्हें गवाह नहीं बनाया" या "हमने उन्हें गवाह बनाया और गलत कहा।" (त)

तीसरा तरीका: 'शहादत-अल-क़ज़ा' यानी किसी दूसरे इस्लामी शहर में इस्लामी शासक या शरीयत के काज़ी के सामने चाँद देखने (रुयत-ए-हिलाल) पर गवाहियां दी गईं और उसने चाँद साबित होने का फैसला सुनाया। दो न्यायप्रिय गवाह उस गवाही और फैसले के समय अदालत (दारुल-क़ज़ा) में मौजूद थे। उन्होंने यहाँ के इस्लामी शासक, शरीयत के काज़ी या उनकी अनुपस्थिति में मुफ्ती के सामने कहा कि "हम गवाही देते हैं कि हमारे सामने अमुक शहर के अमुक शासक के यहाँ अमुक चाँद के बारे में अमुक दिन की शाम को गवाहियां दी गईं और उक्त शासक ने उन गवाहियों के आधार पर उस शाम के चाँद के सबूत का हुक्म दिया।" 'फ़तह अल-क़दीर शरह-ए-हिदाया' में है:

अरबी	**हिंदी अनुवाद**
لوشهدوا ان قاضى بلد كذا شهد عنده اثنان برؤية الهلال فى ليلة كذا وقضى بشهادتهما جاز لهذا القاضي ان يحكم بشهادتهما لان	अगर गवाहों ने गवाही दी कि फलां शहर के फलां काज़ी के पास फलां रात में चाँद देखने पर दो आदमियों ने गवाही दी और काज़ी ने उनकी गवाही पर फैसला दे दिया है, तो इस काज़ी के लिए उन दोनों की गवाही के आधार पर फैसला देना

अरबी	हिंदी अनुवाद
قضاء القاضي حجة وقد شهدوا به ۔	जायज़ है क्योंकि काज़ी का फैसला एक प्रमाण (हुज्जत) है और उन्होंने इस पर गवाही दी है। (त)

इसी तरह फ़तावा क़ाज़ीखां और फ़तावा ख़ुलासा आदि में है।

अरबी	हिंदी अनुवाद
قلت وقيده فى التنوير تبعًا للذ زلوا خيرة عن مجموع الن بأستجماع شرائط	मैंने कहा (क़ुल्तु): और 'अत-तन्वीर' में 'अज़-ज़खीरा' का अनुसरण करते हुए 'मजमूअ अल-नवाज़िल' के हवाले से यह शर्त लगाई गई कि दावा...

1. दुर्रे मुख्तार, बाबूश शहादा अला अल-शहादा, मतबा मुजतबाई दिल्ली 2/100।
2. फ़तह अल-क़दीर, किताबुल सोम, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर 2/243।

पृष्ठ 836 में से 416

شہادۃ علی الشہادۃ میں یہ بھی ضرور ہے کہ اُسکے مطابق حکم ہونے تک ، گواہانِ اصل بھی اہلیت شہادت پر باقی رہیں اور شہادت کی تکذیب نہ کریں مثلاً گواہانِ فرع نے ابھی گواہی نہ دی یادی اور اس پر ہنوز حکم نہ ہوا تھا کہ گواہانِ اصل سے کوئی گواہ اندھا یا گونگا یا مجنون یا معاذ اللہ مرتد ہو گیا یا کہا کہ میں نے ان گواہوں کو اپنی شہادت کا گواہ نہ کیا تھا یا غلطی سے گواہ کردیا تھا تو یہ شہادت باطل ہو جائے گی۔ در مختار میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
تبطل شهادة الفروع بخروج اصله عن اهليتها كخرس وعمى، وبأنكار اصله الشهادة كقولهم مالنا شهادة اولم نشهد او اشهد ناهم وغلطنا اهـ مختصرا	اصل شاہد کے اہلیت سے نکل جانے کے سبب سے فروع کی شہادت باطل ہو جاتی ہے مثلاً شاہد گونگا یا نابینا ہو گیا یا اصل شاہد شہادت سے انکاری ہو، مثلاً اصول یوں کہیں ہم گواہ نہیں یا ہم نے ان کو گواہ نہیں کیا یا ہم نے ان کو گواہ کیا اور غلط کہا۔ (ت)

طریق سوم: شہادۃ علی القضاء یعنی دوسرے کسی اسلامی شہر میں حاکم اسلام قاضی شرع کے حضور رؤیت ہلال پر شہادتیں گزریں اور اُس نے ثبوت ہلال کا حکم دیا، دو شاہدانِ عادل اس گواہی و حکم کے وقت حاضر دارالقضاء تھے، انہوں نے یہاں حاکم اسلام قاضی شرع یا وہ نہ ہو تو مفتی کے حضور کہا کہ ہم گواہی دیتے ہیں ہمارے سامنے فلاں شہر کے فلاں حاکم کے حضور فلاں ہلال کی نسبت فلاں دن کی شام کو ہونے کی گواہیاں گزریں اور حاکم موصوف نے اُن گواہیوں پر ثبوت ہلال مذکور شام فلاں روز کا حکم دیا، فتح القدیر شرح ہدایہ میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
لوشهدوا ان قاضی بلد کذا شهد عنده اثنان برؤیة الهلال فی لیلة کذا وقضی بشهادتهما جاز لهذا القاضي ان یحکم بشهادتهما لان قضاء القاضي حجة وقد شهدوا به ۔	اگر گواہوں نے گواہی دی کہ فلاں شہر کے فلاں قاضی کے پاس فلاں رات میں چاند دیکھنے پر دو آدمیوں نے گواہی دی تو قاضی ان کی شہادت پر فیصلہ دے دیا ہے تو اس قاضی کے لیے ان دونوں کی شہادت کی وجہ سے فیصلہ دینا جائز ہے کیونکہ قضائے قاضی حجت ہے اور انہوں نے اس پر گواہی دی ہے۔ (ت)

اسی طرح فتاوٰی قاضیخاں وفتاوٰی خلاصہ وغیرہما میں ہے۔

عربی متن	اردو ترجمہ
قلت وقیده فی التنویر تبعًا للذ خیرة عن مجموع النوازل بأستجماع شرائط	قلت تنویر میں ذخیرہ کی اتباع کرتے ہوئے مجموع النوازل کے حوالے سے نقل کرتے ہوئے یہ قید لگائی کہ دعوٰی

1 در مختار باب الشہادۃ علی الشہادۃ مطبع مجتبائی دہلی ۲/۱۰۰ 2 فتح القدیر کتاب الصوم مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/۲۴۳

Fatawa Rizwia, Volume 10

(Top Section) Arabic Text: The claim and its justification: Al-Allamah al-Shami provided two justifications for it. We have points of discussion on both which we have verified in our annotations. So, refer to it there, as it contains important benefits. Urdu Translation: It is necessary for all conditions to be met, and Allamah Shami has described two interpretations for it. We have a discussion on each of them. We have detailed the complete explanation in the marginalia of 'Radd al-Muhtar'. Observe it from there; it is highly important. (T)

(Middle Section) Fourth Method: The Judge's letter to another Judge (Kitab al-Qadhi ila al-Qadhi). That is, a Sharia judge appointed by the Sultan of Islam for the adjudication of cases, before whom Sharia testimony has been presented, writes a letter to the Sharia judge of another city stating that Sharia testimony on this subject has been established before me. In that letter, he writes his full name and the name and details of the addressee so that sufficient distinction is made. He entrusts that letter to two just witnesses, saying, "This is my letter addressed to the judge of such-and-such city; bring it carefully to that judge and testify that 'the judge of such-and-such city gave us this letter addressed to you and made us witnesses that this is his letter'." Now, if this [receiving] judge considers this testimony sufficient for proof according to his school of thought, he can act upon it. (And it is better that the writer-judge, after writing the letter, reads it to those witnesses or informs them of its content and seals the letter in their presence. And it is superior that he gives them the content written separately on an open paper so they can keep it in mind and testify about the content as well, stating that this is what is written in the letter, and then hand over the sealed letter to that judge. This is for greater precaution; otherwise, it is sufficient that he entrusts the letter to two men or one man and two just women, makes them witnesses, and they carefully bring it here to testify). Without this, if the letter is sent by mail or through his own representative, it will absolutely not be acceptable, even if it is known to be the letter of that judge and bears his seal and that of his judicial department. (And it is also necessary that until this letter reaches the addressee judge and he reads it, the writer remains alive and not dismissed; otherwise, if he dies or is removed before the letter is read, it will not be acted upon. And during his lifetime, it is also necessary that until the addressee judge issues a ruling according to this letter, the writer judge remains eligible for the office of judiciary. Otherwise, if before the ruling, the writer judge, for example,

becomes insane, apostate, or blind, the letter will become useless). It is mentioned in 'Durr-e-Mukhtar':

(Bottom Section) Arabic Text: The judge writes to another judge regarding his ruling. Even if the adversary is not present, he should not rule but record the testimony so that the addressee judge may rule based on the testimony according to his own opinion. He should read the letter to them or inform them of its content. Urdu Translation: One judge should write a letter of ruling to another judge. If the adversary is not present, the judge should not make a decision but record the testimony so that the addressee judge can issue a decision based on his own opinion through the testimony. And the writer-judge [should present] the said letter to the witnesses...

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम (10)

(शीर्ष अनुभाग) अरबी मूल: दावा और उसका औचित्य: अल-अल्लामा अल-शामी ने इसे दो स्पष्टीकरणों के साथ स्पष्ट किया। उनमें से प्रत्येक पर हमारी टिप्पणियाँ हैं जिन्हें हमने अपनी टिप्पणियों में सत्यापित किया है, इसलिए वहां इसे देखें, क्योंकि यह महत्वपूर्ण लाभों में से है। उर्दू अनुवाद: सभी शर्तों का पूरा होना आवश्यक है और अल्लामा शामी ने इसके लिए दो व्याख्याएँ बताई हैं। उनमें से प्रत्येक पर हमारी राय है। हमने 'रद्द अल-मुह्तार' के हाशिये में इसका पूरा विवरण दिया है। वहां इसे देखें, यह अत्यंत महत्वपूर्ण है। (त)

(मध्य अनुभाग) चौथा तरीका: काजी का दूसरे काजी को पत्र (किताब अल-काजी इला अल-काजी)। अर्थात्, इस्लाम के सुल्तान द्वारा मामलों के निपटारे के लिए नियुक्त किया गया शरिया काजी, जिसके सामने शरिया गवाही दी गई हो, दूसरे शहर के शरिया काजी के नाम पत्र लिखता है कि मेरे सामने इस विषय पर शरिया गवाही स्थापित हुई है। उस पत्र में वह अपना और प्राप्तकर्ता का पूरा नाम और पता लिखता है जिससे पर्याप्त अंतर स्पष्ट हो जाए। वह उस पत्र को दो न्यायप्रिय गवाहों को यह कहते हुए सौंपता है कि, "यह मेरा पत्र फलां शहर के काजी के नाम है; इसे सावधानीपूर्वक उस काजी के पास ले जाएं और गवाही दें कि 'फलां शहर के फलां काजी ने हमें आपके नाम यह पत्र दिया और हमें गवाह बनाया कि यह उनका पत्र है'।" अब, यदि यह (प्राप्त करने वाला) काजी अपने पंथ के अनुसार इस गवाही को प्रमाण के लिए पर्याप्त समझता है, तो वह उस पर अमल कर सकता है। (और बेहतर यह है कि पत्र लिखने वाला काजी पत्र लिखने के बाद उन गवाहों को सुना दे या उन्हें इसकी विषय-वस्तु बता दे और उनके सामने इसे सीलबंद कर दे। और श्रेष्ठ यह है कि वह उन्हें विषय-वस्तु एक अलग खुले कागज पर लिखकर दे दे ताकि वे उसे याद रख सकें और आकर विषय-वस्तु पर भी गवाही दें कि पत्र में यह लिखा है, और फिर सीलबंद पत्र उस काजी को सौंप दें। यह अधिक सावधानी के लिए है; अन्यथा इतना पर्याप्त है कि वह दो न्यायप्रिय पुरुषों या एक पुरुष और दो न्यायप्रिय महिलाओं को पत्र सौंपकर उन्हें गवाह बना ले और वे सावधानीपूर्वक यहाँ आकर गवाही दें)। इसके बिना, यदि पत्र डाक से भेजा गया या अपने आदमी के हाथ भेजा गया, तो यह कतई स्वीकार्य नहीं होगा, चाहे वह पत्र उसी काजी का ही क्यों न मालूम हो और उस पर उसकी और उसके न्यायिक विभाग की मुहर भी लगी हो। (और यह भी आवश्यक है कि जब तक यह पत्र प्राप्तकर्ता काजी तक न पहुँच जाए और वह इसे पढ़ न ले, तब तक लिखने वाला जीवित रहे और बर्खास्त न हो; अन्यथा यदि पत्र पढ़े जाने से पहले वह मर गया या हटा दिया गया, तो उस पर अमल

नहीं होगा। और जीवन काल के दौरान यह भी आवश्यक है कि जब तक प्राप्तकर्ता काजी इस पत्र के अनुसार फैसला न कर ले, तब तक लिखने वाला काजी न्यायपालिका के पद के योग्य बना रहे। अन्यथा, यदि फैसले से पहले लेखक काजी, उदाहरण के लिए, पागल, धर्मत्यागी या अंधा हो गया, तो पत्र बेकार हो जाएगा)। 'दुर्र-ए-मुख्तार' में है:

(नीचे का अनुभाग) अरबी मूल: काजी अपने फैसले के बारे में दूसरे काजी को लिखता है। यदि विरोधी उपस्थित न हो, तो उसे फैसला नहीं करना चाहिए, बल्कि गवाही दर्ज करनी चाहिए ताकि प्राप्तकर्ता काजी अपनी राय के अनुसार गवाही के आधार पर फैसला दे सके। उसे गवाहों के सामने पत्र पढ़ना चाहिए या उन्हें इसकी विषय-वस्तु के बारे में सूचित करना चाहिए। उर्दू अनुवाद: एक काजी दूसरे काजी की ओर आदेश पत्र लिखे। यदि विरोधी उपस्थित न हो, तो काजी फैसला न करे बल्कि गवाही लिख ले ताकि प्राप्तकर्ता काजी गवाही के माध्यम से अपनी राय के अनुसार फैसला जारी कर दे। और लेखक काजी उक्त पत्र को गवाहों पर...

पृष्ठ 836 में से 417

(اوپر کا حصہ) عربی عبارت: الدعوی ووجھہ العلامۃ الشامی بتوجیھین ، لنا فی کل منھما کلام حققناہ فیما علقناہ فراجعہ ثمہ فانہ من الفوائد المھمۃ۔ اردو عبارت: کے تمام شرائط کا پایا جانا ضروری ہے اور علامہ شامی نے اس کی دو توجیہات بیان کی ہیں ان میں سے ہر ایک پر ہمیں کلام ہے، اس کی پوری تفصیل ہم نے حاشیہ ردالمحتار میں بیان کردی ہے وہاں سے ملاحظہ کریں وہ نہایت ہی اہم ہے (ت)

(درمیانی حصہ) طریق چہارم: کتاب القاضی الی القاضی یعنی قاضی شرع جسے سلطانِ اسلام نے فصل مقدمات کے لئے مقرر کیا ہو اس کے سامنے شرعی گواہی گزری اُس نے دوسرے شہر کے قاضی شرع کے نام خط لکھا کہ میرے سامنے اس مضمون پر شہادتِ شرعیہ قائم ہوئی اور اُس خط میں اپنا اور مکتوب الیہ کا نام و نشان پورا لکھا جس سے امتیاز کافی واقع ہو اور وہ خط دو گواہانِ عادل کے سپرد کیا کہ یہ میرا خط قاضیِ فلاں شہر کے نام ہے وہ باحتیاط اس قاضی کے پاس لائے اور شہادت ادا کی آپ کے نام یہ خط فلاں قاضیِ فلاں شہر نے ہم کو دیا اور ہمیں گواہ کیا کہ یہ خط اس کا ہے اب یہ قاضی اگر اس شہادت کو اپنے مذہب کے مطابق ثبوت کے لیے کافی سمجھے تو اس پر عمل کر سکتا ہے (اور بہتر یہ ہے کہ قاضی کاتب خط لکھ کر ان گواہوں کو سُنا دے یا اس کا مضمون بتا دے اور خط بند کر کے اُن کے سامنے سر بمہر کر دے، اور اولٰی یہ کہ اس کا مضمون ایک کھلے ہوئے پرچے پر الگ لکھ کر بھی ان شہود کو دے دے کہ اسے یاد کرتے رہیں یہ آکر مضمون پر بھی گواہی دیں کہ خط میں یہ لکھا ہے اور سر بمہر خط اس قاضی کے حوالہ کریں یہ زیادہ احتیاط کے لیے ہے ورنہ خیر اسی قدر کافی ہے کہ دو مَردوں یا ایک مرد دو عورتوں عادل کو خط سپرد کر کے گواہ کرلے اور وہ باحتیاط یہاں لا کر شہادت دیں) بغیر اس کے

اگر خط ڈاک میں ڈال دیا یا اپنے آدمی کے ہاتھ بھیج دیا تو ہر گز مقبول نہیں اگرچہ وہ خط اسی قاضی کا معلوم ہوتا ہو اور اس پر اس کی اور اس کے محکمہ قضا کی مہر بھی لگی ہو (اور یہ بھی ضرور ہے کہ جب تک یہ خط قاضی مکتوب الیہ کو پہنچے اور وہ اسے پڑھ لے اُس وقت تک کاتب زندہ رہے اور معزول نہ ہو ورنہ اگر خط پڑھے جانے سے پہلے مر گیا یا برخاست ہو گیا تو اس پر عمل نہ ہوگا اور بحالت زندگی یہ بھی ضرور ہے کہ جب تک مکتوب الیہ اس خط کے مطابق حکم نہ کرلے اُس وقت تک کاتب عہدہ قضا کا اہل رہے ورنہ اگر حکم سے پہلے کاتب مثلاً مجنوں یا مرتد یا اندھا ہو گیا تو بھی خط بیکار ہوجائے گا۔ درمختار میں ہے :

(نیچے کا حصہ) عربی عبارت: القاضی یکتب الی القاضي بحکمه وان لم یکن الخصم حاضر الم یحکم وکتب الشهادة لیحکم المکتوب الیه بها علی رائه وقرأ الکتاب علیهم اواعلمهم به اردو عبارت: ایک قاضی دوسرے قاضی کی طرف حکم نامہ لکھے ، اگر خصم حاضر نہ ہو تو قاضی فیصلہ نہ کرے اور گواہی لکھ لے تاکہ قاضی مکتوب الیہ گواہی کے ذریعے اپنی رائے کے مطابق فیصلہ صادر کردے اور قاضی کاتب خط مذکور کو شہود پر

Volume 10 Fatawa Razvia

[Arabic Text]: ...and sealed in their presence and handed over to them after writing the address, which is to write his name and the name of the recipient, and the fame of both. The second [opinion] sufficed with him having them witness that it is his writing, and the fatwa is upon this. The letter becomes void upon the death of the writer or his dismissal before reading, and by the insanity of the writer, his apostasy, or being punished for slander (hadd al-qadhf), or his blindness, as he loses his eligibility. Likewise, it becomes void upon the death of the recipient due to loss of eligibility, unless he made it general. The letter of a judge is not accepted from a ruler, but rather from a judge appointed by the Imam. (Summary)

[Urdu Translation]: ...should read it or inform them of its contents, then write the address on the letter such that his own name and the name of the recipient are written, along with their fame, meaning the word or title by which they are well-known. And Imam Abu Yusuf considered it sufficient that the writing judge merely has witnesses testify that it is his letter. The fatwa is based on this opinion. The letter becomes void due to the death of the writing judge or his dismissal before the letter is read. Similarly, the letter becomes void if the writing judge becomes insane, an apostate, restricted due to slander (qadhf), or blind, as he loses his judicial eligibility. Likewise, the death of the recipient judge also renders the letter void due to the loss of judicial eligibility. However, in the case of the recipient judge's death, the letter does not become void if the writing judge makes it general, for example, by stating that this letter is addressed to whoever is the judge there. A letter is not accepted from just any ruler, but from a judge appointed by the Sultan. (Summary) (T)

It is stated in Durar wa Ghurar: [Arabic Text]: It is also not accepted except with the testimony of two men or one man and two women, because writing can be forged, as handwriting resembles handwriting and a seal resembles a seal. Thus, it is not established except with complete proof. (2)

[Urdu Translation]: A written document will not be accepted except after the testimony of two men or one man and women, because forgery occurs in writing, and one handwriting can resemble another, and similarly, one seal can resemble another. Therefore, without complete proof, the written document will not be established. (T)

Fifth Method: Istifada (Widespread knowledge), meaning an Islamic city where there is a Shariah judge (Qazi-e-Islam) from whom the rulings regarding the new moon are

issued, and who is himself a scholar and acting upon and established in those rulings, or there is complete reliance and commitment to trust some verified and reliable religious scholar...

1. Durr al-Mukhtar, Chapter: 'Letter from one Judge to another', Mujtabai Press, Delhi, 2/83-84
2. Durar al-Ghurar, Chapter: 'Letter from one Judge to another', Ahmad Kamil al-Kaina Press, Dar Sadr, Beirut, 2/414

जिल्द दशम फ़तावा रज़वियह

[अरबी पाठ]: ...और उनके सामने मुहर लगा दी गई और पता लिखने के बाद उन्हें सौंप दिया गया, जो कि अपना नाम और प्राप्तकर्ता का नाम और दोनों की प्रसिद्धि लिखना है। दूसरे [मत] ने इस पर पर्याप्त समझा कि वह उन्हें गवाह बना ले कि यह उसका लेखन है, और इसी पर फ़तवा है। लेखक की मृत्यु या पढ़ने से पहले उसकी बर्खास्तगी, लेखक के पागलपन, धर्मत्याग, या बदनामी के लिए दंडित (हद-ए-क़ज़फ़) होने, या उसके अंधा होने से पत्र अमान्य हो जाता है, क्योंकि वह अपनी पात्रता खो देता है। इसी तरह, पात्रता खोने के कारण प्राप्तकर्ता की मृत्यु पर भी यह अमान्य हो जाता है, जब तक कि उसने इसे सामान्य न किया हो। शासक की ओर से काज़ी का पत्र स्वीकार नहीं किया जाता है, बल्कि इमाम द्वारा नियुक्त काज़ी की ओर से स्वीकार किया जाता है। (संक्षिप्त)

[उर्दू अनुवाद]: ...पढ़े या उन्हें इसके विषय से अवगत करा दे, फिर पत्र पर पता इस प्रकार लिखे कि अपना और प्राप्तकर्ता का नाम और दोनों की प्रसिद्धि यानी वह शब्द या उपाधि अवश्य लिखे जिससे वे प्रसिद्ध हों। और इमाम अबू यूसुफ़ ने इस पर पर्याप्त समझा है कि लिखने वाला काज़ी केवल साक्षियों से इस बात की गवाही ले ले कि यह उसका पत्र है। फ़तवा इसी मत पर है। और पत्र पढ़े जाने से पहले लिखने वाले काज़ी की मृत्यु या उसकी बर्खास्तगी के कारण पत्र अमान्य हो जाता है। इसी तरह लिखने वाले काज़ी के पागल, धर्मत्यागी, क़ज़फ़ के कारण प्रतिबंधित होने या अंधा हो जाने पर न्याय करने की पात्रता समाप्त हो जाने के कारण पत्र अमान्य हो जाता है। इसी प्रकार प्राप्तकर्ता काज़ी की मृत्यु से भी न्याय की पात्रता समाप्त होने के कारण पत्र अमान्य हो जाएगा, परंतु इस स्थिति में प्राप्तकर्ता काज़ी की मृत्यु से पत्र अमान्य नहीं होता जब लिखने वाला काज़ी उसे सामान्य कर दे, उदाहरण के लिए इस तरह कि जो वहाँ का काज़ी हो यह पत्र उसकी ओर है। पत्र किसी भी शासक की ओर से स्वीकार्य नहीं है बल्कि उस काज़ी की ओर से स्वीकार्य है जो सुल्तान द्वारा नियुक्त हो। (संक्षिप्त) (त)

दुरर व ग़रर में है: [अरबी पाठ]: इसे भी दो पुरुषों या एक पुरुष और दो महिलाओं की गवाही के बिना स्वीकार नहीं किया जाता है, क्योंकि लेखन में जालसाज़ी हो सकती है, क्योंकि लिखावट लिखावट के समान होती है और मुहर मुहर के समान होती है। अत; यह पूर्ण प्रमाण के बिना सिद्ध नहीं होता है। (2)

[उर्दू अनुवाद]: लिखा हुआ दस्तावेज़ स्वीकार नहीं किया जाएगा जब तक कि दो पुरुषों या एक पुरुष और महिलाओं की गवाही न हो, क्योंकि लेखन में जालसाज़ी हो जाती है और एक लिखावट दूसरी लिखावट के समान हो सकती है, इसी प्रकार एक मुहर दूसरी मुहर के समान हो सकती है, अतः पूर्ण प्रमाण के बिना लेखन सिद्ध नहीं होगा। (त)

पाँचवाँ तरीका: इस्तफ़ाज़ा यानी जिस इस्लामी शहर में शरई हाकिम (काज़ी-ए-इस्लाम) हो कि चाँद के दर्शन के निर्णय वहीं से जारी होते हों और वह स्वयं विद्वान हो और उन निर्णयों में ज्ञान पर अमल करने वाला और अडिग हो या किसी शोधकर्ता विश्वसनीय धर्मगुरु पर पूर्णतः विश्वास और प्रतिबद्धता हो...

1. दुर्रे मुख़्तार, बाब: 'किताबुल क़ाज़ी इलल क़ाज़ी', मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 2/83-84
2. दुरर ग़रर, बाब: 'किताबुल क़ाज़ी इलल क़ाज़ी', मतबअ अहमद कामिल अल-काइना दार सादिर बेरुत, 2/414

पृष्ठ 418 / 836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

وختم عندھم وسلم الیھم بعد کتابة عنوانه وھو ان یکتب فیه اسمه واسم المکتوب الیه وشھر تھما واکتفی الثانی بان یشھد ھم انه کتابه وعلیه الفتوی، ویبطل الکتاب بموت الکاتب وعزله قبل القراءة وبجنون الکاتب وردته وحده لقذف وعمائه، لخروجه عن الاھلیة وکذا بموت المکتوب الیه لخروجه عن الاھلیة الا اذا عمم ولا یقبل کتاب القاضی من محکم بل من قاض مولی من قبل الامام (ملخصاً)۔

پڑھے یا انہیں اس کے مضمون سے آگاہ کر دے، پھر خط پر پتا یوں تحریر کرے کہ اپنا اور مکتوب الیہ کا نام اور دونوں کی شہرت یعنی وہ لفظ یا لقب ضرور لکھے جس سے وہ مشہور ہوں۔ اور امام ابو یوسف نے اس پر اکتفاء کیا ہے کہ قاضی کاتب شاہدوں کو صرف اس پر گواہ کر لے کہ وہ اس کا خط ہے۔ فتویٰ اسی قول پر ہے۔ اور خط پڑھے جانے سے قبل قاضی کاتب کی موت اور اس کی معزولی کے سبب باطل ہو جاتا ہے۔ اسی طرح قاضی کاتب کے مجنون، مرتد، محدود فی القذف اور نابینا ہو جانے پر بسبب نکل جانے اہلیت قضاء سے خط باطل ہو جاتا ہے، یونہی مکتوب الیہ قاضی کی موت سے سبب نکل جانے اہلیت قضاء سے خط باطل ہو جائے گا مگر اس صورت میں مکتوب الیہ قاضی کی موت سے خط باطل نہیں ہوتا جب کاتب قاضی تعمیم کر دے مثلاً یوں کہ جو وہاں کا قاضی ہو یہ خط اس کی طرف ہے، اور خط حکم کی طرف سے مقبول نہیں بلکہ اس قاضی کی طرف سے مقبول ہے جو سلطان کی طرف سے معین ہو (ملخصاً) (ت)

درر و غرر میں ہے: لا یقبله ایضا الابشھادة رجلین او رجل و امرأتین لان الکتاب قد یزوراذ الخط یشبه الخط والخاتم یشبه الخاتم فلا یثبت الابحجة تامة۔2

تحریر مقبول نہ ہوگی مگر دو مردوں کی گواہی یا ایک مرد اور خواتین کی گواہی کے بعد، کیونکہ تحریر میں جعلسازی ہو جاتی ہے اور تحریر دوسری تحریر کی مشابہ ہو سکتی ہے اسی طرح مہر دوسری مہر کے مشابہ ہو سکتی ہے لہذا حجتِ کاملہ کے بغیر تحریر کا ثبوت نہ ہو گا۔ (ت)

طریق پنجم: استفاضہ یعنی جس اسلامی شہر میں حاکم شرع قاضی اسلام ہو کہ احکام ہلال اُسی کے یہاں سے صادر ہوتے ہیں اور خود عالم اور ان احکام میں علم پر عامل و قائم یا کسی عالم دین محقق معتمد پر اعتماد کاملاً ملتزم و

1 در مختار باب کتاب القاضی الی القاضی مطبع مجتبائی دہلی ۲/۸۳-۸۴ 2 درر غرر، باب کتاب القاضی الی القاضی، مطبعہ احمد کامل الکائنہ دار صادر بیروت، ۲/۴۱۴

...is employed, or where there is no Shariah judge, then the Mufti of Islam is the point of reference for the public and the follower of commands, so that the commands for fasting and the two Eids are implemented by his fatwa. The common people, like cattle, do not decide for themselves Ramadan and Eid. Multiple groups arrived from there, and all of them unanimously gave news based on their knowledge that on such-and-such a day, fasting or Eid took place based on the sighting. Mere market rumors or floating news without knowing the source is not sufficient. If asked, the answer is usually "I heard it" or "people say", or at most, it traces back to some unknown person, the end of the chain being a mere narration from one or two individuals who stated it and it became widespread. Such news is not "Istifazah" (widespread reporting) at all; rather, multiple groups arriving from there are required who unanimously give that news. This news, although it is not a testimony of their own sighting, nor a testimony upon a testimony, nor explicitly a testimony upon the judgment of a judge, nor a testimony upon the judge's book; but from this widespread news, the occurrence of the sighting for fasting and Eid there will be proven with certainty or with a strong preponderance of opinion bordering on certainty. And since it is an Islamic city where there is a permanent adherence to commands and rulers, it will necessarily be assumed that the matter occurred by decree. In this way, the judgment of the judge, which is a Sharia proof, will be established. From this, it becomes clear that in a "dark city" where there is neither a Sharia judge nor a Mufti of Islam, or if there is a Mufti, he is incompetent and lacks discernment of Sharia rulings—like many of today's immature claimants, especially the Wahhabis, especially the non-conformists (Ghair-Muqallideen) and other such sinners, or some simple-natured Sunnis with deficient knowledge and lack of experience, or there is an investigative, reliable Mufti, an authoritative scholar, but the public is rebellious and does not wait for his commands, making decisions about Eid and Ramadan based on their own corrupt interpretations whenever they want—in such cities, even fame or mass reporting (Tawatur) is not acceptable at all, as it does not prove any Sharia argument. It is stated in Dur-ul-Mukhtar:

[Arabic Text Box]: Two witnesses testified that two such witnesses testified before the judge of Egypt regarding the sighting of the crescent moon and he ruled accordingly; the [local] judge shall rule based on their testimony because the judge's ruling is a proof and they testified to it. Not so if they testify to the sighting of others [without a judge's ruling], because that is a mere narration. Yes, if the news becomes

widespread (Istifadah) in the other city, it becomes binding on them according to the correct opinion of the school. Al-Mujtaba etc. (Summarized)

[Urdu Text Box]: Two witnesses testified that in such and such city's judge's presence, such and such two witnesses testified to seeing the moon and the judge issued a decision on it. So based on their testimony, this judge can also give a decision because the judge's verdict is a proof and those witnesses are present for it. However, the judge cannot give a decision in the case where they only testify to others' sighting because that is just a narration. Yes, if the news becomes famous in the other city, then according to the correct school of thought, fasting will become obligatory for them. Mujtaba etc. (Summarized) (T)

In Radd-ul-Muhtar it is stated:

---

1 Dur-ul-Mukhtar, Kitab-us-Saum, Matba' Mujtabai Delhi 1/149 Page 419 of 836

फ़तावा रिज़विया जिल्द दसवां

...नौकर है या जहाँ शरीअत का काज़ी नहीं है, वहाँ इस्लाम का मुफ़्ती अवाम का मरकज़ और अहकाम का पैरवी करने वाला होता है, ताकि रोज़े और ईदैन के अहकाम उसी के फ़तवे से लागू हों। आम लोग जानवरों की तरह खुद से ईद और रमज़ान तय नहीं कर लेते। वहाँ से कई जमातें आईं और सबने एक सुर में अपने इल्म से ख़बर दी कि वहाँ फ़लां दिन चाँद देखने की बुनियाद पर रोज़ा रखा गया या ईद मनाई गई। सिर्फ़ बाज़ार की अफ़वाह या ख़बर उड़ गई और कहने वाले का पता नहीं, यह काफ़ी नहीं है। पूछने पर यही जवाब मिलता है कि 'सुना है' या 'लोग कहते हैं', या बहुत पता चला तो किसी अनजान शख़्स तक बात पहुँची, सनद का आख़िरी सिरा बस एक-दो लोगों की कही हुई बात है कि उन्होंने बयान किया और वह मशहूर हो गई। ऐसी ख़बर हरगिज़ 'इस्तिफ़ाज़ह' (व्यापक रिपोर्ट) नहीं है, बल्कि वहाँ से आई हुई कई जमातें चाहिए जो मिल-जुलकर वह ख़बर दें। यह ख़बर अगरचे न तो अपनी चाँद देखने की गवाही है, न किसी गवाही पर गवाही है, न साफ़ तौर पर काज़ी के फ़ैसले पर गवाही है, न काज़ी की किताब पर गवाही है; लेकिन इस मशहूर ख़बर से यक़ीन के साथ या यक़ीन के क़रीब प्रबल संभावना के साथ वहाँ रोज़े और ईद के लिए चाँद का होना साबित हो जाएगा। और चूंकि वह इस्लामी शहर है और वहाँ अहकाम और हाकिमों की पाबंदी हमेशा रहती है, तो ज़रूर यही माना जाएगा कि मामला फ़ैसले के मुताबिक़ हुआ। इस तरह काज़ी का फ़ैसला, जो कि शरई दलील है, साबित हो जाएगा। और यहीं से साफ़ हुआ कि 'अंधेरे शहर' जहाँ न कोई शरीअत का काज़ी हो न इस्लाम का मुफ़्ती, या मुफ़्ती तो हो मगर नाअहल जिसे खुद शरीअत के अहकाम की पहचान न हो—जैसे आज कल के बहुत से कच्चे दावेदार, ख़ासकर वहाबी, ख़ासकर ग़ैर-मुक़ल्लिद वग़ैरह गुनेहगार, या कुछ सीधे-सादे सुन्नी जिनका इल्म कम और तजुर्बा नहीं है, या कोई तहक़ीक़ करने वाला भरोसेमंद मुफ़्ती, सनद वाला आलिम मौजूद है मगर अवाम खुदसर है, उसके अहकाम का इंतज़ार नहीं करती, अपनी ग़लत सोच के मुताबिक़ जब चाहें ईद और रमज़ान तय कर लेते हैं—ऐसे शहरों की शोहरत बल्कि तवातुर (लगातार रिपोर्ट) भी असल में क़ाबिले-क़ुबूल नहीं है क्योंकि इससे किसी शरई दलील का सबूत नहीं हुआ। दुर्रे-मुख़्तार में है:

[अरबी पाठ बॉक्स]: दो गवाहों ने गवाही दी कि मिस्र के काज़ी के पास दो ऐसे गवाहों ने चाँद देखने की गवाही दी और उसने उस पर फ़ैसला दिया; तो [स्थानीय] काज़ी उनकी गवाही पर फ़ैसला देगा क्योंकि काज़ी का फ़ैसला दलील है और उन्होंने इसकी गवाही दी। ऐसा नहीं होगा अगर वे दूसरों के चाँद देखने की गवाही दें [बिना काज़ी के फ़ैसले के], क्योंकि वह सिर्फ़ एक कहानी है। हाँ, अगर

दूसरे शहर में ख़बर आम (इस्तिफ़ाज़ह) हो जाए, तो मज़हब के सही कौल के मुताबिक़ उन पर [रोज़ा] लाज़िम हो जाएगा। मुज्तबा वग़ैरह (संक्षेप में)

[उर्दू पाठ बॉक्स]: दो गवाहों ने गवाही दी कि फ़लां शहर के काज़ी के पास चाँद देखने की फ़लां दो गवाहों ने गवाही दी है और काज़ी ने उस पर फ़ैसला जारी फ़रमा दिया है, तो उनकी गवाही की बिना पर यह काज़ी भी फ़ैसला दे सकता है क्योंकि काज़ी का फ़ैसला दलील है और उस पर वह गवाह मौजूद हैं। अलबत्ता इस सूरत में काज़ी फ़ैसला नहीं दे सकता जब वह सिर्फ़ दूसरों के चाँद देखने पर गवाही दें क्योंकि यह महज़ एक कहानी है। हाँ, अगर ख़बर दूसरे शहर में मशहूर हो जाती हो तो फिर सही मज़हब के मुताबिक़ उन पर रोज़ा लाज़िम हो जाएगा। मुज्तबा वग़ैरह (संक्षेप में) (त)

रद्दुल मुहतार में है:

---

1 दुर्रे मुख़्तार किताबुस सौम मतबअ मुज्तबाई दिल्ली १/१४९ पेज 419/836

ملازم ہے یا جہاں قاضی شرع نہیں تو مفتی اسلام مرجعِ عوام و متبع الاحکام ہو کہ احکامِ روزہ و عیدین اُسی کے فتوے سے نفاذ پاتے ہیں عوام کالانعام بطورِ خود عید و رمضان نہیں ٹھہرا لیتے وہاں سے متعدد جماعتیں آئیں اور سب یک زبان اپنے علم سے خبر دیں کہ وہاں فلاں دن بربنائے رؤیت روزہ ہوا یا عید کی گئی مجرد بازاری افواہ خبر اڑ گئی اور قائل کا پتا نہیں۔ پوچھو تو یہی جواب ملتا ہے کہ سُنا ہے یا لوگ کہتے ہیں، یا بہت پتا چلا تو کسی مجہول کا انتہا درجہ، منتہائے سند دو ایک شخصوں کے محض حکایت کہ انہوں نے بیان کیا اور شدہ شائع ہو گئی، ایسی خبر ہرگز استفاضہ نہیں بلکہ خود وہاں کی آئی ہوئی متعدد جماعتیں درکار ہیں جو بالاتفاق وہ خبر دیں، یہ خبر اگر چہ نہ خود اپنی رؤیت کی شہادت ہے نہ کسی شہادت پر شہادت، نہ بالتصریح قضائے قاضی پر شہادت نہ کتاب قاضی پر شہادت، مگر اس مستفیض خبر سے بالیقین یا بہ غلبہ ظن ملتحق بالیقین وہاں رؤیت صوم و عید کا ہونا ثابت ہوگا اور جبکہ وہ شہر اسلامی اور احکام و حکام کی وہاں پابندی دوامی ہے تو ضرور مظنون ہوگا کہ امر بحکم واقع ہوا تو اس طریق سے قضائے قاضی کہ حجتِ شرعیہ ہے ثابت ہو جائینگی اور یہیں سے واضح ہوا کہ تاریک شہر جہاں نہ کوئی قاضی شرع نہ مفتی اسلام، یا مفتی ہے مگر نااہل جسے خود احکامِ شرع کی تمیز نہیں، جیسے آج کل کے بہت مدعیانِ خامکار، خصوصاً وہابیہ، خصوصاً غیر مقلدین وغیرہ ہم فجار، یا بعض سلیم الطبع سنّی ناقص العلم نا تجربہ کار، یا مفتی محقق معتمد عالم مستند ہے مگر عوام خود سر، اس کے منتظر احکام نہیں، پیش خویش اپنے قیاسات فاسدہ پر جب چاہیں عید و رمضان قرار دے لیتے ہیں، ایسے شہروں کی شہرت بلکہ تواتر بھی اصلاً قابل قبول نہیں کہ اس سے کسی حجتِ شرعیہ کا ثبوت نہ ہوا، درمختار میں ہے :

| شہدوا انه شهد عند قاضی مصر کذا شاهدان برؤیته الهلال وقضی به، قضی القاضی بشها دتهما لان قضاء القاضی حجة وشهد وابه، لالو شهد و ابرؤیة غیرهم لانه حکایة نعم لو استفاض الخبر في البلدة الاخری لزمهم علی الصحیح من المذهب مجتبیٰ وغیرہ (ملخصاً) | دو گواہوں نے گواہی دی کہ فلاں شہر کے قاضی کے پاس چاند دیکھنے کی فلاں دو گواہوں نے گواہی دی ہے اور قاضی نے اس پر فیصلہ صادر فرما دیا ہے تو ان کی گواہی کی بنا پر یہ قاضی بھی فیصلہ دے سکتا ہے کیونکہ قاضی کی قضا حجت ہے اور اس پر وہ گواہ موجود ہیں البتہ اس صورت میں قاضی فیصلہ نہیں دے سکتا جب وہ صرف غیر رؤیت پر گواہی دیں کیونکہ یہ محض حکایت ہے، ہاں اگر خبر دوسرے شہر میں مشہور ہو جاتی ہو تو پھر صحیح مذہب کے مطابق ان پر روزہ لازم ہو جائے گا، مجتبیٰ وغیرہ (ملخصاً) (ت) |

ردالمحتار میں ہے :

---

1 درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۹ Page 419 of 836

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

[Box 1] (Arabic): This widespread report (istifadhah) is neither a testimony to a judge's verdict nor a testimony to another testimony. However, since it is at the level of a mass-transmitted report (khabar mutawatir) and it has been established through it that the people of that city fasted on such-and-such a day, it becomes necessary to act upon it. This is because a city is usually not devoid of a Shari'a judge. Therefore, their fasting must necessarily be based on the ruling of their Shari'a judge. Thus, that widespread report effectively conveys the aforementioned ruling, etc. (1)

(Urdu): This fame (widespread report) is neither a testimony to a judge's verdict nor to any other testimony. However, it is at the status of a mass-transmitted report (mutawatir), and it has been established that the people of a certain city fasted on that day, so it will be mandatory to act upon it because every city usually is not without a Shari'a ruler. So now, their fasting will only be based on the order of their Shari'a ruler, as if that fame is the transmission of the judge's ruling. etc. (T)

[Box 2] In the same (source) it is: (Arabic): Imam al-Rahmati said: The meaning of widespread report (istifadhah) is that multiple groups come from that city, each informing about the people of that city that they fasted based on a sighting, not just a rumor without knowledge of who spread it. This is as news often spreads where all the city's inhabitants talk about it, but the one who spread it is unknown. As mentioned in the Hadith, at the end of times, Satan will sit among the people and speak a word, then they will repeat it saying, "We do not know who said it." Such things are not even worth listening to, let alone establishing a ruling based on them. I say: This is a fine statement, and the quote from 'al-Dhakhirah' points to it—that when the report is widespread and verified—because verification does not exist through mere rumor. (2)

(Urdu): Imam Rahmati said: The meaning of fame (widespread report) is that multiple groups from that city should come and all of them inform that people in that city fasted after seeing the moon, and not just from such a rumor whose spreader is unknown. As it often happens that many news spread in the city and their spreader is not known, as it is in the Hadith that in the end times, Satan will come and sit among people and speak, people will state it and say we do not know who said this. So it is not even appropriate to listen to such things, let alone establish a ruling through them. I say: This talk is very good and the saying of 'Dhakhirah' points towards this,

that when the news is famous and established, because proof does not happen based on mere rumor. (T)

[Footnotes] 1. Radd al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa al-Babi Egypt 2/102 2. Radd al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa al-Babi Egypt 2/102

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

[बॉक्स 1] (अरबी): यह शोहरत (इस्तिफ़ाज़ा) न तो क़ाज़ी के फ़ैसले पर गवाही है और न ही किसी और गवाही पर, लेकिन जब यह ख़बर-ए-मुतवातिर (लगातार खबर) के दर्जे पर है और इससे यह साबित हुआ है कि फ़लां शहर के लोगों ने उस दिन रोज़ा रखा, तो इस पर अमल करना ज़रूरी होगा। क्योंकि हर शहर आमतौर पर शरई हाकिम से खाली नहीं होता, इसलिए उनका रोज़ा उनके शरई हाकिम के हुक्म पर आधारित होगा। इस तरह वह शोहरत दरअसल क़ाज़ी के हुक्म का नक़ल होना है। इत्यादि। (1)

(उर्दू): यह शोहरत न तो क़ाज़ी के फ़ैसले पर गवाही है और न ही किसी और गवाही पर, लेकिन यह ख़बर-ए-मुतवातिर के दर्जे पर फ़ाइज़ है और इससे यह साबित हुआ है कि फ़लां शहर के लोगों ने उस दिन रोज़ा रखा तो इस पर अमल लाज़िम होगा क्योंकि हर शहर आमतौर पर हाकिम-ए-शरई से खाली नहीं होता तो अब उनका रोज़ा उनके हाकिम-ए-शरई के हुक्म की बिना पर ही होगा गोया वह शोहरत हुक्म-ए-क़ाज़ी का मन्कूल होना है। इत्यादि। (त)

[बॉक्स 2] उसी में है: (अरबी): इमाम रहमती ने फ़रमाया: शोहरत (इस्तिफ़ाज़ा) का अर्थ यह है कि उस शहर से कई जमातें आएं और वे सभी यह जानकारी दें कि उस शहर में लोगों ने चाँद देखकर रोज़ा रखा है, न कि महज़ ऐसी अफ़वाह से जिसका फैलाने वाला मालूम न हो। जैसा कि अक्सर होता है कि बहुत सी ख़बरें शहर में फैल जाती हैं और उनके फैलाने वाले का पता नहीं होता। जैसा कि हदीस में है कि आख़िरी ज़माने में शैतान लोगों के बीच आकर बैठेगा और बात करेगा, लोग उसे बयान करेंगे और कहेंगे कि हम नहीं जानते यह बात किसने कही। तो ऐसी बातें सुनना ही मुनासिब नहीं है, फिर उनसे हुक्म साबित करना तो दूर की बात है। मैं कहता हूँ कि यह कलाम बहुत अच्छा है और 'अल-ज़ख़ीरा' का क़ौल भी इसी तरफ़ इशारा करता है—कि जब खबर मशहूर और साबित हो —क्योंकि महज़ अफ़वाह से साबित होना नहीं माना जाता। (2)

(उर्दू): इमाम रहमती ने फ़रमाया: शोहरत का मानी यह है कि उस शहर से मुतअद्दिद जमातें आएँ और वह तमाम यह इत्तला दें कि इस शहर में लोगों ने चाँद देख कर रोज़ा रखा है महज़ ऐसी अफ़वाह से नहीं जिसका फैलाने वाला मालूम न हो, जैसा कि अक्सर होता रहता है कि बहुत सी ख़बरें शहर में फैल जाती हैं और उनके फैलाने वाला मालूम नहीं होता, जैसा कि हदीस में है कि आख़िरी ज़माने में शैतान लोगों के दरमियान आकर बैठेगा और बात करेगा लोग उसे बयान करेंगे

और कहेंगे हम नहीं जानते यह बात किस ने कही, तो ऐसी बातें तो सुनना ही मुनासिब नहीं चह जाएका इन से हुक्म साबित किया जाए। इह (अत) क़ुल्त यह कलाम बहुत अच्छा है और इसी की तरफ़ क़ौल-ए-ज़ख़ीरा का इशारा है कि जब ख़बर मशहूर और साबित हो, क्यूँकि सुबूत महज़ अफ़वाह की बिना पर नहीं होता। (त)

[पादलेख] 1. रद अल-मुह्तार, रोज़े की किताब, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 102/2 2. रद अल-मुह्तार, रोज़े की किताब, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 102/2

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

[باکس 1] (عربی): هذه الاستفاضة لیس فیها شهادة علی قضاء قاض ولا علی شهادة لکن لما کانت بمنزلة الخبر المتواتر وقد ثبت بها ان اهل تلك البلدة صاموا یوم کذا لزم العمل بها لان البلدة لا تخلو عن حاکم شرعی عادة فلابد من ان یکون صومهم مبنیا علی حکم حاکمهم الشرعی فکانت تلك الاستفاضة بمعنی نقل الحکم المذکور الخ[1]

(اردو): یہ شہرت نہ تو قضاءِ قاضی پر شہادت ہے اور نہ ہی کسی اور شہادت پر، لیکن یہ خبر متواتر کے درجہ پر فائز ہے اور اس سے یہ ثابت ہوا ہے کہ فلاں شہر کے لوگوں نے اس دن روزہ رکھا تو اس پر عمل لازم ہوگا کیونکہ ہر شہر عادۃً حاکم شرعی سے خالی نہیں ہوتا تو اب ان کا روزہ ان کے حاکم شرعی کے حکم کی بنا پر ہی ہوگا گویا وہ شہرت حکمِ قاضی کا منقول ہونا ہے۔ الخ (ت)

[باکس 2] اُسی میں ہے: (عربی): قال الرحمتی معنی الاستفاضة ان تأتی من تلك بلدة جماعات متعددون کل منهم یخبر عن اهل تلك البلدة انهم صاموا عن رؤیة لا مجرد الشیوع من غیر علم بمن اشاعه کما قد تشیع اخبار یتحدث بها سائر اهل البلدة ولا یعلم من اشاعها کما ورد، ان فی اخر الزمان یجلس الشیطان بین الجماعة ویتکلم بالکلمة فیتحدثون بها ویقولون لا ندری من قالها فمثل هذا لا ینبغی ان یسمع فضلا من ان یثبت به حکم اه قلت وهو کلام حسن ویشیر الیه قول الذخیرة اذا استفاض وتحقق فان التحقق لا یوجد مجرد الشیوع ۔[2]

(اردو): امام رحمتی نے فرمایا: شہرت کا معنی یہ ہے کہ اس شہر سے متعدد جماعتیں آئیں اور وہ تمام یہ اطلاع دیں کہ اس شہر میں لوگوں نے چاند دیکھ کر روزہ رکھا ہے محض ایسی افواہ سے

نہیں جس کے پھیلانے والا معلوم نہ ہو، جیسا کہ اکثر ہوتا رہتا ہے کہ بہت سی خبریں شہر میں پھیل جاتی ہیں اور ان کے پھیلانے والا معلوم نہیں ہوتا، جیسا کہ حدیث میں ہے کہ آخری زمانے میں شیطان لوگوں کے درمیان آکر بیٹھے گا اور بات کرے گا لوگ اسے بیان کریں گے اور کہیں گے ہم نہیں جانتے یہ بات کس نے کہی، تو ایسی باتیں تو سننا ہی مناسب نہیں چہ جائیکہ ان سے حکم ثابت کیا جائے اھ قلت یہ کلام بہت اچھا ہے اور اسی کی طرف قول ذخیرہ کا اشارہ ہے کہ جب خبر مشہور اور ثابت ہو، کیونکہ ثبوت محض افواہ کی بنا پر نہیں ہوتا۔ (ت)

[حواشی] 1 رد المحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۱۰۲/۲ 2 رد المحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۱۰۲/۲

Fatawa Razawiyyah, Volume Ten

In 'Tanbih al-Ghafil wa al-Wasnan' regarding the rulings on the crescent moon of Ramadan, it is stated:

[Arabic Box:] Since widespread news (istifadah) is in the position of concurrent news (mutawatir), and it has been established through it that the people of that city fasted on such a day, then acting upon it becomes necessary. This is because by 'city', it means a city where there is a Sharia judge (Hakim Shar'i), etc. [Urdu Box:] When the news of the crescent moon being sighted becomes as famous as concurrent news (mutawatir), and it is established through it that the people of a certain city fasted upon seeing the moon, then acting upon such news will be mandatory. This is because by that 'city', it means one where there is a Sharia judge, etc. (T)

Regarding widespread news (istifadah), this research is by Allama Shami. According to this premise, those conditions are necessary where fasting and Eid are based on the command of a Sharia judge who is a scholar following the rules. Another possible scenario is that large groups come from another city and all unanimously report that people there described seeing the moon with their own eyes in front of them, and their account was such that it instilled Sharia certainty. Apparently, on this premise, it is not necessary for there to be a Sharia judge there because the sighting in itself is a Sharia proof.

[Arabic Box:] Due to the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): "Fast upon its sighting and break the fast upon its sighting." [Urdu Box:] The noble command of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is: "Observe the fast on seeing the moon and celebrate Eid on seeing the moon." (T)

When a mass group (jama'at-e-tawatur) reports their sighting to another mass group, then the sighting is established with certainty, and there remains no need for testimony. This is because in establishing rulings, concurrent news (tawatur) also takes the place of testimony; in fact, it is stronger than it, such that if testimony contradicts concurrent news, it should be rejected, while concurrent news on negation is accepted but testimony is unheard. It is stated in Alamgiriyah from Al-Muhit:

[Arabic Box:] If they are all found to be untrustworthy, reliance is placed upon that due to the concurrence of reports (tawatur al-akhbar). [Urdu Box:] If they are all

untrustworthy, even then reliance will be placed on it due to the concurrence of news. (T)

It is stated in Durr al-Mukhtar: "Testimony of concurrent negation is accepted." (Concurrent negation's testimony is acceptable. T). It is stated in Radd al-Muhtar:

[Arabic Box:] In Al-Nawadir, the second, testimony was given against it with a statement or... [Urdu Box:] In Nawadir, it is narrated from Imam Abu Yusuf that two witnesses...

1 Tanbih al-Ghafil wa al-Wasnan, a treatise from the treatises of Ibn Abidin, Ninth Treatise, Sohail Academy, Lahore, 1/252 2 Sahih Bukhari, Chapter: When you see the moon, then fast, Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 1/256 3 Fatawa Hindiyyah, Chapter Twelve, Regarding Impeachment and Accreditation, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 3/529 4 Durr al-Mukhtar, Chapter on Acceptance and Non-acceptance, Matba' Mujtabai, Delhi, 98/2

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

'तन्बीहुल ग़ाफ़िल वल वस्नान' में रमज़ान के चाँद के अहकाम के बारे में है:

[अरबी बॉक्स:] चूंकि इस्तिफ़ाज़ा (व्यापक समाचार) मुतवातिर ख़बर के दर्जे में है और इसके ज़रिए यह साबित हो गया है कि उस शहर के लोगों ने फ़लां दिन रोज़ा रखा, तो उस पर अमल करना लाज़िम हो गया, क्योंकि यहाँ शहर से मुराद वह शहर है जिसमें शरई हाकिम हो, वग़ैरह। [उर्दू बॉक्स:] जब चाँद नज़र आने की ख़बर, ख़बर-ए-मुतवातिर की तरह मशहूर हो, और उससे साबित हो जाए कि फ़लां शहर के लोगों ने चाँद नज़र आने पर रोज़ा रखा है तो ऐसी ख़बर पर अमल लाज़िम होगा क्योंकि उससे वह शहर मुराद होगा जिसमें हाकिम-ए-शरई होगा वग़ैरह। (त)

इस्तिफ़ाज़ा के बारे में यह तहक़ीक़ अल्लामा शामी की है और इस आधार पर वह शर्तें ज़रूरी हैं कि रोज़ा और ईद शरीअत के हाकिम, जो अहकाम का पालन करने वाला आलिम हो, के हुक्म पर आधारित हों। एक सूरत यह भी मुमकिन है कि दूसरे शहर से बड़ी जमाअतें आएं और सब एक साथ बयान करें कि वहाँ हमारे सामने लोग अपनी आँखों से चाँद देखना बयान करते थे, जिनका बयान शरई यक़ीन पैदा करने वाला था। ज़ाहिर है कि इस सूरत में वहाँ किसी हाकिम-ए-शरई का होना ज़रूरी नहीं है क्योंकि चाँद देखना अपने आप में एक शरई दलील है।

[अरबी बॉक्स:] क्योंकि हुज़ूर अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का फ़रमान है: "चाँद देखकर रोज़ा रखो और चाँद देखकर ईद करो।" [उर्दू बॉक्स:] हुज़ूर-ए-अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का फ़रमान-ए-मुबारक है कि चाँद देखने पर रोज़ा रखो और चाँद देखने पर ईद करो। (त)

जब मुतवातिर जमाअत, मुतवातिर जमाअत से उनके चाँद देखने की ख़बर देती है, तो चाँद देखना यक़ीन के साथ साबित हो जाता है और गवाही की ज़रूरत नहीं रहती, क्योंकि अहकाम साबित करने में मुतवातिर भी गवाही की जगह लेता है बल्कि उससे भी मज़बूत है, यहाँ तक कि अगर गवाही मुतवातिर के ख़िलाफ़ आए तो उसे रद्द कर दिया जाए, और नफ़ी (अस्वीकार) पर मुतवातिर क़बूल है और गवाही अनसुनी। आलमगीरिया में 'मुहीत' से है:

[अरबी बॉक्स:] अगर वे सब ग़ैर-मोतबर (अविश्वसनीय) भी हों, तब भी ख़बर के मुतवातिर होने की वजह से उस पर भरोसा किया जाएगा। [उर्दू बॉक्स:] अगर वह तमाम ग़ैर-सिक़ा (अविश्वसनीय) हों तब भी तवातिर-ए-ख़बर की बिना पर एतमाद किया जाएगा। (त)

'दुर्रे मुख्तार' में है: "नफ़ी मुतवातिर की गवाही क़बूल है।" (नफ़ी मुतवातिर की गवाही स्वीकार्य है। त)। 'रद्दुल मुहतार' में है:

[अरबी बॉक्स:] 'नवादिरात' में, दूसरे, उस पर गवाही दी गई इस कथन के साथ या... [उर्दू बॉक्स:] नवादिरात में इमाम अबू यूसुफ़ से मरवी (वर्णित) है कि दो गवाहों ने...

1 तन्बीहुल ग़ाफ़िल वल वस्नान, रिसाला इब्न आबिदीन के रसायल में से, नौवां रिसाला, सुहैल एकेडमी, लाहौर, 1/252 2 सहीह बुखारी, बाब: जब तुम चाँद देखो तो रोज़ा रखो, क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/256 3 फ़तावा हिन्दिया, बारहवां बाब: जिरह व तादील के बारे में, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 3/529 4 दुर्रे मुख्तार, क़बूलियत और अदम-ए-क़बूलियत का बाब, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 98/2

पृष्ठ 836 का 421

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

تنبیہ الغافل والوسنان علی احکام ہلالِ رمضان میں ہے:

[Arabic Box:] لمّا کانت الاستفاضة بمنزلة الخبر المتواتر وقد ثبت بها ان اهل تلك البلدة صامو ایوم کذا الزم العمل بها لان المراد بها بلدة فیها حاکم شرعی الخ1 [Urdu Box:] جب چاند نظر آنے کی خبر، خبرِ متواتر کی طرح مشہور ہو، اور اس سے ثابت ہوجائے کہ فلاں شہر کے لوگوں نے چاند نظر آنے پر روزہ رکھا ہے تو ایسی خبر پر عمل لازم ہوگا کیونکہ اس سے وہ شہر مراد ہوگا جس میں حاکم شرعی ہوگا الخ (ت)

درباره استفاضہ یہ تحقیق علامہ شامی کی ہے اور اس تقدیر پر وہ شرائط ضرور ہیں کہ صوم وعید بر بنائے حکم حاکم شرع عالم متبع احکام ہوا کرتا ہو، اور ایک صورت یہ بھی متصور کہ دوسرے شہر سے جماعات کثیرہ آئیں اور سب بالاتفاق بیان کریں کہ وہاں ہمارے سامنے لوگ اپنی آنکھ سے چاند دیکھنا بیان کرتے تھے جن کا بیان مورث یقین شرعی تھا ظاہر اس تقدیر پر وہاں کسی ایسے حاکم شرع کا ہونا ضرور نہیں کہ رؤیت فی نفسہا حجت شرعیہ ہے۔

[Arabic Box:] لقوله صلی الله تعالی علیه وسلم صوموا لرؤیته وافطروا لرؤیته۔2 [Urdu Box:] حضورِ اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا فرمانِ مبارک ہے کہ چاند دیکھنے پر روزہ رکھو اور چاند دیکھنے پر عید کرو۔ (ت)

جب جماعتِ تواتر، جماعتِ تواتر سے ان کی رؤیت کی ناقل ہے تو رؤیت بالیقین ثابت ہوگئی اور شہادت کی حاجت نہ رہی کہ اثباتِ احکام میں تواتر بھی قائم مقامِ شہادت بلکہ اس سے اقوی ہے کہ

شہادت برخلافِ تواتر آئے تو رد کر دی جائے اور نفی پر تواتر مقبول ہے اور شہادت نامسموع۔

عالمگیریہ میں محیط سے ہے:

[Arabic Box:] ان وجد کلھم غیر ثقات یعتمد علی ذلك بتواتر الاخبار۔3 [Urdu Box:] اگر وہ تمام غیر ثقہ ہوں تب بھی تواتر خبر کی بنا پر اعتماد کیا جائے گا۔ (ت)

درمختار میں ہے: شھادۃ النفي المتواتر مقبولۃ۔4 (نفی متواتر کی گواہی مقبول ہے۔ ت) ردالمحتار میں ہے:

[Arabic Box:] فی النوادر الثانی شہد علیہ بقول او [Urdu Box:] نوادر میں امام ابو یوسف سے مروی ہے کہ دو گواہوں نے

1 تنبیہ الغافل والوسنان رسالہ من رسائل ابن عابدین الرسالۃ التاسعۃ سہیل اکیڈمی لاہور 1/252 2 صحیح بخاری باب اذارایتم الہلال فصوموا قدیمی کتب خانہ کراچی 1/256 3 فتاوٰی ہندیہ الباب الثانی عشر فی الجرح والتعدیل نورانی کتب خانہ پشاور 529/3 4 درمختار باب القبول وعدمہ مطبع مجتبائی دہلی 98/2

Fatawa Razvia, Volume 10

Arabic Text

If testimony is given regarding a person's word or action, the charge against the defendant is established through the mention of place, time, or attributes. When such testimony pertains to hire (ijara), sale, contract (kitabah), divorce, emancipation, murder, or retaliation, and the one against whom the testimony is given proves by evidence that he was not present there on that day, the testimony is not accepted. However, Al-Muhit states under the 51st issue that if it is widespread (mutawatir) among people and everyone knows that this person was not at that place and time, then the lawsuit will not be heard and he shall be declared free of liability, for otherwise, it would necessitate denying what is self-evidently established. [1]

Urdu Translation

If testimony is given against someone regarding their word or action, the charge against the defendant will be established through the description of place, time, and characteristics. When this testimony pertains to matters like leasing, selling, writing (contracts), divorce, emancipation, murder, or retaliation, and if the person against whom the testimony is given proves by producing witnesses that they were not present there on that day, then that testimony will not be accepted. However, in Al-Muhit, under issue 51, it is stated that if it is established by mass report (mutawatir) among the people and everyone knows that this person was not present at that place and time until then, then the lawsuit will no longer be heard, and the person will be declared acquitted; otherwise, it would necessitate a denial of what is self-evidently proven. (t)

From Al-Uqud al-Durriyya on Fatawa Sughra: | Arabic Text | Urdu Translation | | :--- | :--- | | Evidence produced against what is famously widespread (Mashhur Mutawatir) is not accepted; it refers to news that is so well-known and heard among a vast number of people that their conspiring to lie is inconceivable. [2] | When witnesses are produced against what is famously and mass-reported (Mashhur Mutawatir), their testimony is not accepted. Mashhur Mutawatir refers to news that is famous and heard among such a vast number of people that their conspiring to lie is inconceivable. (t) |

Words of scholars, for example, the statement mentioned in Durr al-Mukhtar: "If the news becomes widespread in another city" [3] (If news becomes famous in another city. t) and the statement in Al-Dhakhira:

Arabic Text

Shams al-A’immah al-Halwani said: The correct position in the school of our companions (Hanafis) is that when news becomes widespread and established among the people of another city, the ruling of that city becomes binding upon them as well, etc. [4]

Urdu Translation

Shams al-A’immah al-Halwani said: The correct school of thought of our Hanafis is that if news becomes famous and agreed upon, then that ruling becomes binding upon the people of that city as well. (t)

---

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Acceptance and Non-acceptance, Mustafa al-Babi, Egypt, 4/331
2. Al-Uqud al-Durriyya, Book of Testimony and its requirements, Arg Bazaar, Kandahar, 1/361
3. Durr al-Mukhtar, Book of Fasting, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/129
4. Radd al-Muhtar, quoting Al-Dhakhira, Book of Fasting, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/102

फतावा रजविया, जिल्द 10

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
यदि किसी व्यक्ति के शब्द या कार्य के संबंध में गवाही दी जाती है, तो स्थान, समय या गुणों के उल्लेख के माध्यम से प्रतिवादी के विरुद्ध आरोप स्थापित हो जाता है। जब ऐसी गवाही पट्टे (इजारा), बिक्री, अनुबंध (किताबत), तलाक, मुक्ति, हत्या या प्रतिशोध से संबंधित हो, और जिसके विरुद्ध गवाही दी गई है वह सबूतों से साबित कर दे कि वह उस दिन वहां उपस्थित नहीं था, तो गवाही स्वीकार नहीं की जाती है। हालाँकि, 'अल-मुहीत' में 51वें मसले के तहत कहा गया है कि यदि लोगों के बीच यह व्यापक (मुतवातिर) है और हर कोई जानता है कि यह व्यक्ति उस स्थान और समय पर नहीं था, तो मुकदमे की सुनवाई नहीं होगी और उसे दोषमुक्त घोषित कर दिया जाएगा, अन्यथा यह स्वयं-सिद्ध रूप से स्थापित सत्य को नकारने जैसा होगा। [1]	यदि किसी के विरुद्ध उसके शब्द या कार्य के संबंध में गवाही दी जाती है, तो स्थान, समय और विशेषताओं के वर्णन के माध्यम से प्रतिवादी पर आरोप सिद्ध हो जाएगा। जब यह गवाही पट्टे (इजारा), बिक्री, लेखन (अनुबंध), तलाक, मुक्ति, हत्या या प्रतिशोध से संबंधित हो, और यदि वह व्यक्ति जिसके विरुद्ध गवाही दी गई है, गवाहों को पेश करके यह साबित कर देता है कि वह उस दिन वहां उपस्थित नहीं था, तो वह गवाही स्वीकार नहीं की जाएगी। हालाँकि, 'अल-मुहीत' में मसला 51 के तहत कहा गया है कि यदि लोगों के बीच व्यापक रिपोर्ट (मुतवातिर) द्वारा यह स्थापित हो जाए और सभी जानते हों कि यह व्यक्ति उस समय तक उस स्थान पर उपस्थित नहीं था, तो अब मुकदमे की सुनवाई नहीं होगी और उसे दोषमुक्त घोषित कर दिया जाएगा; अन्यथा, यह स्वयं-सिद्ध प्रमाण के खंडन के समान होगा। (त)

फतावा सुगरा से 'अल-उक़ूद अल-दुर्रिया' में: | अरबी पाठ | उर्दू अनुवाद | | :--- | :--- | | जो खबर प्रसिद्ध और व्यापक रूप से प्रचलित (मशहूर मुतवातिर) हो, उसके विरुद्ध पेश किया गया सबूत स्वीकार्य नहीं है; यह उस खबर को संदर्भित करता है जो इतने विशाल जनसमूह के बीच प्रसिद्ध और सुनी गई हो कि उनके झूठ बोलने के लिए एकजुट होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। [2] | जब प्रसिद्ध और व्यापक रूप से रिपोर्ट किए गए (मशहूर मुतवातिर) के विरुद्ध गवाह पेश किए जाते हैं, तो उनकी गवाही स्वीकार्य नहीं होती है। मशहूर मुतवातिर उस समाचार को कहते हैं जो इतने विशाल जनसमूह और लोगों के बीच प्रसिद्ध और सुना गया हो कि उनके झूठ बोलने के लिए एक साथ होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। (त) |

विद्वानों के वचन, उदाहरण के लिए 'दुर्रे मुख्तार' में उल्लेखित कथन: "यदि समाचार दूसरे शहर में व्यापक रूप से फैल जाए" [3] (यदि समाचार दूसरे शहर में प्रसिद्ध हो जाए। त) और 'अल-ज़ख़ीरा' का कथन:

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद
शम्स अल-अइम्मा अल-हलवानी ने कहा: हमारे साथियों (हनफियों) के मत में सही रुख यह है कि जब समाचार व्यापक हो जाता है और दूसरे शहर के लोगों के बीच सिद्ध हो जाता है, तो उस शहर का हुक्म (नियम) उन पर भी लागू हो जाता है, इत्यादि। [4]	शम्सुल अइम्मा हलवानी ने कहा कि हमारे हनफियों का सही मज़हब यह है कि अगर खबर मशहूर और मुत्तफ़िक़ हो जाए तो उस शहर वालों पर भी वह हुक्म लाज़िम हो जाता है। (त)

---

1. रद अल-मुह्तार, अध्याय स्वीकार्यता और गैर-स्वीकार्यता, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 4/331
2. अल-उक़ूद अल-दुर्रिया, गवाही की किताब और उसकी माँगें, अर्ग बाज़ार, कंधार, 1/361
3. दुर्रे मुख्तार, रोज़े की किताब, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/129
4. रद अल-मुह्तार, 'अल-ज़ख़ीरा' के हवाले से, रोज़े की किताब, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 2/102

عربی متن	اردو ترجمہ
فعل، یلزم علیه بذلك اجرة او بیع او کتابة او طلاق او عتاق او قتل او قصاص فی مکان او زمان او صفات فبرهن المشهود علیه انه لم یکن ثمه یومئذ لا تقبل لکن قال المحیط فی الحادی والخمسین ان تواتر عند الناس وعلم الکل عدم کونه فی ذلك المکان والزمان لاتسمع الدعوی ویقضی بفراغ الذمة لانه یلزم تکذیب الثابت بالضرورة۔ 1	کسی کے خلاف اس کے قول یا فعل پر گواہی دی تو مکان، وقت اور صفات کو بیان سے مدعاعلیہ پر الزام ثابت ہوجائے گا۔ جب یہ گواہی اجارہ، بیع، کتاب، طلاق، عتاق، قتل اور قصاص سے متعلق ہو، اور اگر مشہود علیہ گواہ قائم کر کے ثابت کرے کہ اس دن وہ وہاں موجود نہ تھا تو پھر گواہی مقبول نہ ہوگی۔ لیکن محیط میں مسئلہ ۵۱ کے تحت کہا کہ اگر لوگوں سے متواتراً ثابت ہو اور ہر کوئی جانتا ہو کہ یہ شخص اس وقت تک اس جگہ موجود نہ تھا تو اب دعوی قابل سماعت نہ ہوگا اور اسے بری الذمہ قرار دیا جائے گا ورنہ ثابت بالبداہت کی تکذیب لازم آئیگی (ت)

عقود الدریہ میں فتاوٰی صغیری سے ہے: | عربی متن | اردو ترجمہ | | :--- | :--- | | البینة اذا قامت علی خلاف المشهور المتواتر لا تقبل وهوان یشتهر ویسمع من قوم کثیر لا یتصور اجتماعهم علی الکذب۔ 2 | جب مشہور متواتر کے خلاف گواہ قائم ہوں تو انکی گواہی مقبول نہیں، مشہور متواتر وہ خبر ہے کہ اتنی کثیر قوم و کثیر لوگوں میں مشہور و مسموع ہو جن کا جھوٹا ہونا متصور نہ ہوسکتا ہو۔ (ت) |

کلام علماء مثلاً قول مذکور در مختار کے: لو استفاض الخبر في البلدة الاخری 3 (اگر دوسرے شہر میں خبر مشہور ہو جائے۔ت) اور قول ذخیرہ:

عربی متن	اردو ترجمہ
قال شمس الائمة الحلوانی الصحیح من مذهب اصحابنا ان الخبر اذا استفاض وتحقق فیما بین اهل البلدة الاخری یلزمهم حکم هذه البلدة اهـ وغیر ذلك۔ 4	شمس الائمة حلوانی نے کہا کہ ہمارے احناف کا صحیح مسلک یہ ہے کہ خبر مشہور و متفق ہو جائے تو اس شہر والوں پر بھی وہ حکم لازم ہو جاتا ہے۔(ت)

---

1. رد المحتار باب القبول وعدمه مصطفی البابی مصر ۴/۳۳۱
2. العقود الدریة کتاب الشهادة ومطالبه ارگ بازار قندهار ۱/۳۶۱
3. درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۲۹
4. رد المحتار بحوالہ الذخیرہ کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/۱۰۲

Undoubtedly, this covers this scenario as well, and Allah Almighty knows His commands best.

Sixth Method: Completing the count, meaning when thirty (30) full days of a month are completed, the crescent of the subsequent month is established automatically, even if there is no sighting, testimony, widespread report, etc., because it is certain that a month does not exceed thirty days. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Box 1] "If it is obscure to you, then complete the count to thirty." [1] Narrated by the two Shaykhs from Ibn 'Umar (may Allah be pleased with both of them).

If the horizon is cloudy, then complete the number of thirty. This has been narrated by Bukhari and Muslim from Hazrat 'Abdullah bin 'Umar (may Allah be pleased with both). (T)

This method is sufficient when the horizon is clear, even if the crescent is not visible, provided the previous crescent was established by clear sighting or the testimony of two just witnesses. Yes, if the crescent of Ramadan was accepted on the testimony of a single witness and according to that calculation thirty days are completed today, and now the horizon is bright/clear and the Eid crescent is not visible, then this completion of the count will not be sufficient; rather, keep one more fast tomorrow morning, because the proof of the previous crescent was not by full legal evidence (hujjat-e-tammah). The fact that the moon is not visible even after thirty days despite a clear horizon is clear evidence that the witness made a mistake. Conversely, if that (previous) crescent was established by full legal evidence of two just witnesses, then its non-visibility today despite the clear horizon will be attributed to the crescent being very thin and some small amount of vapor directly in front of it acting as a veil, which the eye mistakenly perceives as a clear horizon due to the general clarity of the atmosphere, or there is some other hidden unusual obstacle. However, if there is cloud or dust today, then they shall perform Eid after completing thirty days unconditionally, even if the Ramadan crescent was accepted on the testimony of a single witness, because now his mistake has not become manifest. It is mentioned in Tanwir:

[Box 2] "After fasting thirty days based on the words of two just persons, breaking the fast (Eid) becomes permissible, but not on the word of one just person." [2]

On the basis of two just witnesses, Eid-ul-Fitr is permissible when Ramadan fasts reach thirty, and it is not permissible on the testimony of one just person. (T)

It is in Durr al-Mukhtar:

[Box 3] "Ibn al-Kamal narrated from al-Dhakhirah that if the Eid crescent is clouded over, it is permissible by consensus, etc." [3] And its complete investigation is in Radd al-Muhtar and our commentary upon it.

Ibn al-Kamal narrated from Dhakhirah that if the horizon was cloudy, Eid is permissible by consensus, etc. (T) All its details are in Radd al-Muhtar and our marginal notes on it. (T)

---

1. Sahih Bukhari, Chapter: "When you see the crescent, fast," Qadeem Kutub Khana, Karachi, 1/256
2. Tanwir al-Absar with Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/149
3. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/149

निस्संदेह यह इस स्थिति को भी शामिल करता है, और अल्लाह तआला अपने आदेशों को सबसे बेहतर जानता है।

छठी विधि: गिनती पूरी करना, यानी जब एक महीने के तीस (30) दिन पूरे हो जाएं तो अगले महीने का चाँद अपने आप साबित हो जाएगा, चाहे उसके लिए चाँद देखना, गवाही देना, समाचार का फैलना आदि कुछ भी न हो, क्योंकि यह निश्चित है कि महीना तीस (30) दिन से अधिक का नहीं होता। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) फ़रमाते हैं:

[बॉक्स 1] "यदि तुम पर (बादल के कारण) अंधेरा हो जाए, तो गिनती तीस पूरी करो।" [1] इसे दोनों शेखों (बुखारी व मुस्लिम) ने इब्ने उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है।

अगर आसमान पर बादल छाए हों तो तीस (30) की गिनती पूरी करो। इसे बुखारी और मुस्लिम ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है। (त)

यह तरीका क्षितिज (मत्ला) साफ होने की स्थिति में पर्याप्त है, भले ही चाँद नज़र न आए, बशर्ते कि पिछला चाँद स्पष्ट दर्शन या दो न्यायप्रिय गवाहों की गवाही से साबित हो चुका हो। हाँ, अगर रमज़ान का चाँद एक गवाह की गवाही पर मान लिया गया था और उस हिसाब से आज तीस दिन पूरे हो गए और अब क्षितिज साफ है और ईद का चाँद नज़र नहीं आता, तो यह गिनती पूरी करना काफी नहीं होगा बल्कि सुबह एक रोज़ा और रखें, क्योंकि पिछले चाँद का सबूत पूर्ण प्रमाण (हुज्जते ताम्मह) से नहीं था, और क्षितिज साफ होने के बावजूद तीस दिन बाद भी चाँद नज़र न आना स्पष्ट प्रमाण है कि उस गवाह ने गलती की। और यदि वह चाँद पूर्ण प्रमाण यानी दो न्यायप्रिय गवाहों से साबित था, तो आज क्षितिज साफ होने के बावजूद नज़र न आने को इस पर माना जाएगा कि चाँद बहुत बारीक है और उसके ठीक सामने बहुत कम मात्रा में कोई वाष्प रुकावट बन गई है जिसे सामान्य क्षितिज की सफाई के कारण निगाह साफ क्षितिज समझ रही है, या इसके अलावा कोई और छिपा हुआ असामान्य कारण है। हाँ, अगर आज बादल या धूल है, तो बिल्कुल तीस दिन पूरे करके ईद मना लेंगे, चाहे रमज़ान का चाँद एक ही गवाह की गवाही से माना गया हो, क्योंकि अब उसकी गलती ज़ाहिर नहीं हुई। तनवीर में है:

[बॉक्स 2] "दो न्यायप्रिय लोगों के कहने पर तीस रोज़े रखने के बाद रोज़ा खोलना (इफ़्तार) जायज़ हो जाता है, और एक न्यायप्रिय व्यक्ति के कहने पर नहीं।" [2]

दो न्यायप्रिय गवाहों के आधार पर रमज़ान के रोज़े तीस हो जाने पर ईद-उल-फित्र जायज़ है और एक न्यायप्रिय गवाह की गवाही पर जायज़ नहीं। (त)

दुर्रे मुख़्तार में है:

[बॉक्स 3] "इब्ने कमाल ने 'ज़ख़ीरा' से नक़ल किया कि यदि ईद का चाँद बादल में छिप जाए तो सर्वसम्मति से जायज़ है आदि।" [3] और इसकी पूरी जांच 'रद-उल-मुह्तार' और उस पर हमारे हाशिये (टिप्पणी) में है।

इब्ने कमाल ने ज़ख़ीरा से नक़ल किया कि अगर क्षितिज पर बादल हों तो ईद सर्वसम्मति से जायज़ है आदि। (त) इसकी पूरी तफसील (विवरण) रद-उल-मुह्तार और उस पर हमारे हाशिये में है। (त)

---

1. सहीह बुखारी, अध्याय: जब तुम चाँद देखो तो रोज़ा रखो, कदीम कुतुब खाना, कराची, 1/256
2. तनवीरुल अबसार मय दुर्रे मुख़्तार, किताबुस सौम, मतबअ मुज्तबाई, देहली, 1/149
3. दुर्रे मुख़्तार शरह तनवीरुल अबसार, किताबुस सौम, मतबअ मुज्तबाई, देहली, 1/149

بلا شبہ اس صورت کو بھی شامل ، واللہ تعالٰی اعلم باحکامہ۔ طریق ششم : اکمال عدت یعنی جب ایک مہینہ کے تیس ۳۰ دن کامل ہوجائیں تو ماہ متصل کا ہلال آپ ہی ثابت ہو جائیگا اگرچہ اس کے لیے رویت شہادت حکم استفاضہ وغیرہ کچھ نہ ہو کہ مہینہ تیس ۳۰ سے زائد کا نہ ہونا یقینی ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

[Box 1] فان غم علیکم فاکملوا العدۃ ثلثین۔ ۱ رواہ الشیخان عن ابن عمر رضی اللہ تعالی عنہما۔ اگر مطلع ابر آلود ہو تو تیس ۳۰ کی تعداد مکمل کرو۔ اسے بخاری و مسلم نے حضرت عبد اللہ بن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا ہے۔ (ت)

یہ طریقہ صفائی مطلع کی حالت میں کافی ہے اگر چہ ہلال نظر نہ آئے جبکہ گزشتہ ہلال رؤیت واضحہ یا دو گواہان عادل کی شہادت سے ثابت ہو لیا ہو، ہاں اگر ایک گواہ کی شہادت پر ہلال رمضان مان لیا اور اس حساب سے تیس دن آج پورے ہو گئے اور اب مطلع روشن ہے اور عید کا چاند نظر نہیں آتا تو یہ اکمال عدت کافی نہ ہوگا بلکہ صبح ایک روزہ اور رکھیں کہ اگلے ہلال کا ثبوت حجت تامہ سے نہ تھا اور باوصف صفائی مطلع تیس کے بعد بھی چاند نظر نہ آنا صاف گواہ ہے کہ اس گواہ نے غلطی کی اور جبکہ وہ ہلال حجت تامہ دو گواہان عادل سے ثابت تھا تو آج بوصف صفائی مطلع نظر نہ آنا اس پر محمول ہوگا کہ ہلال بہت باریک ہے اور کوئی بخار قلیل المقدار خاص اُسی کے سامنے حاجب ہے جسے صفائی عامہ افق کے سبب نظر صفائی مطلع گمان کرتی ہے یا اس کے سوا کوئی اور مانع خفی خلاف معتاد ہے، ہاں اگر آج ابر غبار ہے تو مطلقاً تیس پورے کر کے عید کرلیں گے اگر چہ ہلال رمضان ایک ہی شاہد کی شہادت سے مانا ہو کہ اب اس کی غلطی ظاہر نہ ہوئی۔ تنویر میں ہے:

[Box 2] بعد صوم ثلثین بقول عدلین حل الفطر وبقول عدل لا۔ ۲ دو عادل گواہوں کی بنا پر رمضان کے روزے تیس ہو جانے پر عید الفطر جائز ہے اور ایک عادل کی شہادت پر جائز نہیں۔ (ت)

در مختار میں ہے:

[Box 3] نقل ابن الکمال عن الذخیرۃ انہ ان غم ھلال الفطر حل اتفاقا الخ ۳ وتمام تحقیقہ فی ردالمحتار وما علقنا علیہ۔ ابن کمال نے ذخیرہ سے نقل کیا کہ اگر مطلع ابر آلود ہوا تو عید بالاتفاق جائز الخ (ت) اسکی تمام تفصیل ردالمحتار اور اس پر ہمارے حاشیہ میں ہے۔ (ت)

---

۱ صحیح بخاری باب اذا رایتم الھلال فصوموا قدیم کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶ ۲ تنویر الابصار مع در مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۹ ۳ در مختار شرح تنویر الابصار ، کتاب الصوم ، مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۹

Fatawa Razvia, Volume 10

Seventh Way: Allama Shami (may Allah Almighty have mercy on him) has also counted hearing cannons as a means of proof for the crescent moon for the residents of the city's outskirts. It is obvious that the same conditions would apply here: that in an Islamic city, under the orders of a reliable Shari'ah ruler, cannon fire on the evening of the twenty-ninth only occurs when the sighting of the moon is legally proven; there should be absolutely no possibility of it being for greeting someone's arrival or departure, etc. Otherwise, if the city is Islamic but the Shari'ah rulings are not respected there, and the rulings are in the hands of the ignorant, modernists (Nechari), Rafidis, or other heretics who neither know the rules of Shari'ah nor care to follow them, but rather rule based on their deficient opinions, and the cannons are fired, such baseless matters cannot be worthy of consideration, as is evident. Then, where cannons are legally reliable, acting upon them is not exclusive to rural people; rather, upon investigation, even the city dwellers have no choice but to rely on them. For where does every person see or hear testimonies presented before the Shari'ah judge and his execution of the ruling? By the order of the ruler of Islam, for a general announcement, some such established and known sign is set, like cannon fire or a public proclamation, etc.

I say (Aqool): From this, it is apparent that in such an Islamic city, a public proclamation will also be acted upon, even to the extent that the uprightness (Adalat) of the proclaimer is not a condition when it is known that such an announcement cannot be made without the Sultan's order. It is stated in Alamgiriya:

The announcement of the Sultan's messenger is acceptable, whether the messenger is upright or a sinner, as mentioned in 'Jawahir al-Ikhlati'.[1] The announcement of the Sultan's messenger will be accepted whether the proclaimer is just or a sinner, as it is in Jawahir al-Ikhlati. (T)

It is in 'Radd al-Muhtar':

I say, and what is apparent is that fasting becomes obligatory for the rural people upon hearing the cannons or seeing the lanterns from the city because it is a manifest sign that provides a preponderance of belief (Ghalba al-Zann). And a preponderance of belief is an authority necessitating action, as the jurists (Fuqaha) have explicitly stated. The possibility that this action is for something other than Ramadan is remote, because on the night of doubt, such an action is usually not done for any purpose other than the establishment of Ramadan.[2] I say, and what is

apparent is that fasting becomes obligatory for the people of the villages upon hearing the cannons from the city or seeing the lanterns, because it is an obvious sign, from which a preponderance of opinion is obtained, and preponderance of opinion is a cause for action as the jurists have specified. And the possibility that this act is for some work other than Ramadan is far-fetched, because on the night of doubt, this act is usually not done for any work other than proving Ramadan. (T)

1. Fatawa Hindiyya, Book of Dislikes, Chapter One on Acting upon a Single Report, Nurani Kutub Khana Peshawar, 5/309.
2. Radd al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa al-Babi Egypt, 2/99.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम (खंड 10)

सातवां तरीका: अल्लामा शामी (अल्लाह उन पर रहम करे) ने शहर के बाहरी इलाकों के निवासियों के लिए अर्धचंद्राकार चाँद (हिलाल) के प्रमाण के साधन के रूप में तोपों की आवाज़ सुनने को भी गिना है। यह ज़ाहिर है कि यहाँ भी वही शर्तें लागू होंगी: कि एक इस्लामी शहर में, एक भरोसेमंद शरीयत शासक के आदेश के तहत, उनतीस की शाम को तोपें केवल तभी चलाई जाती हैं जब चाँद देखने का कानूनी सबूत मिल गया हो; किसी के आने या जाने की सलामी आदि की बिल्कुल भी संभावना नहीं होनी चाहिए। अन्यथा, यदि शहर इस्लामी है लेकिन वहां शरीयत के नियमों का सम्मान नहीं किया जाता है, और नियम अज्ञानी, आधुनिकतावादी (नैचरी), राफ़िदी या अन्य विधर्मियों के हाथों में हैं जिन्हें न तो शरीयत के नियम पता हैं और न ही वे उनका पालन करने की परवाह करते हैं, बल्कि अपनी अधूरी राय के आधार पर फैसला सुनाते हैं और तोपें चला दी जाती हैं, तो ऐसी निराधार बातें विचार के योग्य नहीं हो सकतीं, जैसा कि स्पष्ट है। फिर, जहाँ तोपें शरीयत की दृष्टि से विश्वसनीय हों, उन पर अमल करना केवल ग्रामीण लोगों के लिए ही नहीं है; बल्कि जाँच करने पर शहर के लोगों के पास भी उन पर भरोसा करने के अलावा कोई चारा नहीं है। क्योंकि हर व्यक्ति कहाँ शरीयत न्यायाधीश के सामने दी गई गवाहियों और उसके फैसले को लागू होते देखता या सुनता है? इस्लाम के शासक के आदेश से, आम घोषणा के लिए, कोई ऐसा ही स्थापित और प्रसिद्ध संकेत तय किया जाता है, जैसे तोप का दागना या सार्वजनिक उद्घोषणा आदि।

अक़ूल (मैं कहता हूँ): यहीं से स्पष्ट हुआ कि ऐसे इस्लामी शहर में मुनादी (घोषणा) पर भी अमल किया जाएगा, यहाँ तक कि उद्घोषक की न्यायप्रियता (अदालत) भी शर्त नहीं है जब यह ज्ञात हो कि सुल्तान के आदेश के बिना ऐसी घोषणा नहीं की जा सकती। आलमगीरिया में है:

सुल्तान के मुनादी (उद्घोषक) की खबर स्वीकार्य होगी, चाहे मुनादी न्यायप्रिय हो या पापी, जैसा कि 'जवाहर अल-इख़्लाती' में है।[1] सुलतान के मुनादी की खबर स्वीकार्य होगी चाहे मुनादी आदिल (न्यायप्रिय) हो या फासिक (पापी), जैसा कि जवाहर अल-इख़्लाती में है। (त)

'रद अल-मुहतार' में है:

मैंने कहा और स्पष्ट यही है कि ग्रामीणों पर शहर से तोपों की आवाज़ सुनने या लालटेन देखने से रोज़ा अनिवार्य हो जाता है क्योंकि यह एक ज़ाहिर संकेत है जिससे विश्वास की प्रबलता (ग़लबा-ए-ज़न्न) प्राप्त होती है। और विश्वास की प्रबलता अमल के लिए एक हुज्जत (प्रमाण) है जैसा कि फ़ुक़हा

(धर्मशास्त्रियों) ने स्पष्ट किया है। और यह संभावना कि यह कार्य रमज़ान के अलावा किसी अन्य काम के लिए हो, दूर की बात है क्योंकि शक की रात में यह कार्य आम तौर पर रमज़ान की पुष्टि के अलावा किसी और काम के लिए नहीं होता है।[2] मैंने कहा और ज़ाहिरी यही है कि गाँव के लोगों पर शहर से तोपों की आवाज़ सुनने और लालटेन देखने से रोज़ा वाजिब हो जाता है क्योंकि यह स्पष्ट संकेत है, इससे प्रबल धारणा प्राप्त होती है और प्रबल धारणा अमल का कारण बनती है जैसा कि फ़ुक़हा ने स्पष्ट किया है। और यह संभावना कि यह कार्य रमज़ान के अलावा किसी और कार्य के लिए हो, दूर की बात है क्योंकि शक की रात में यह कार्य आम तौर पर रमज़ान की पुष्टि के अतिरिक्त किसी अन्य कार्य के लिए नहीं होता है। (त)

1. फ़तावा हिन्दिया, किताब अल-कराहिया, बाब अल-अव्वल फ़ी अल-अमल बि-ख़बर वाहिद, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 5/309।
2. रद अल-मुहतार, किताब अल-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/99।

पृष्ठ 424/836

فتاوی رضویہ، جلد دہم

طریق ہفتم : علامہ شامی رحمہ اللہ تعالٰی نے توپیں سننے کو بھی حوالیِ شہر کے دیہات والوں کے واسطے دلائل ثبوت ہلال سے گنا۔ ظاہر ہے کہ یہاں بھی وہی شرائط مشروط ہوں گے کہ اسلامی شہر میں حاکم شرع معتمد کے حکم سے انتیس کی شام کو توپوں کے فائر صرف بحالت ثبوت شرعی رؤیت ہلال ہوا کرتے ہوں کسی کے آنے جانے کی سلامی وغیرہ کا اصلاً احتمال نہ ہو ورنہ شہر اگرچہ اسلامی ہو مگر وہاں احکام شرعیہ کی قدر نہیں احکام نہال بے خرد یا نیچری رافضی وغیرہ ہم بد مذہبوں کے حوالے ہیں جنہیں نہ قواعد شرعیہ معلوم نہ اُن کے اتباع کی پروا، اپنی رائے ناقص میں جو آیا اس پر حکم لگادیا، توپیں چل گئیں، تو ایسی بے سروپا باتیں کیا قابل لحاظ ہو سکتی ہیں کمالایخفی، پھر جہاں کی توپیں شرعاً قابل اعتماد ہوں اُن پر عمل اہل دیہات ہی کے ساتھ خاص نہیں بلکہ عندالتحقیق خاص اس شہر والوں کو بھی اُن پر اعتماد سے مفر نہیں کہ حاکم شرع کے حضور شہادتیں گزرنا اُس کا اُن پر حکم نافذ کرنا ہر شخص کہاں دیکھتا سنتا ہے بحکم حاکمِ اسلام اعلان عام کے لیے ایسی ہی کوئی علامت معہودہ معروفہ قائم کی جاتی ہے جیسے توپوں کے فائر یا ڈھنڈورا وغیرہ۔ اقول: یہیں سے ظاہر ہوا کہ ایسے اسلامی شہر میں منادی پر بھی عمل ہوگا حتی کہ اس کی عدالت بھی شرط نہیں جبکہ معلوم ہو کہ بے حکم سلطانی ایسا اعلان نہیں ہوسکتا۔ عالمگیریہ میں ہے :

خبر منادی السلطان مقبول عدلا کان او فاسقا کذا فی جواھر الاخلاطی۔[1] سلطان کے منادی کی خبر مقبول ہوگی خواہ منادی عادل ہو یا فاسق، جیسا کہ جواہر الخلاطی میں ہے (ت)

ردالمحتار میں ہے :

قلت والظاھر انه یلزم اھل القری الصوم بسماع المدافع اورؤیة القنادیل من المصر لانه علامة ظاھرة تفید غلبة الظن وغلبة الظن حجة موجبة للعمل کما صرحو به واحتمال کون ذلك لغیر رمضان بعید ، اذ لا یفعل مثل ذلك عادة فی لیلة الشك الا لثبوت رمضان۔[2] قلت اور ظاہری یہی ہے کہ اہل دیہات پر شہر سے توپوں کی آواز اور قندیلوں کو دیکھنے سے روزہ لازم ہو جاتا ہے کیونکہ یہ علامتِ ظاہر ہے اس سے غلبہ ظن حاصل ہوتا ہے اور غلبہ ظن، عمل کا موجب ہوتا ہے جیسا کہ فقہائے نے اس پر تصریح کی ہے، اور یہ احتمال کہ یہ عمل رمضان کے علاوہ کسی کام کے لیے ہو بعید ہے کیونکہ شک کی رات یہ عمل ثبوت رمضان کے علاوہ کسی اور کام کے لیے عادۃً نہیں ہوتا۔ (ت)

1 فتاوی ہندیہ کتاب الکراہیة الباب الاول فی العمل بخبر واحد نورانی کتب خانہ پشاور ۵/۳۰۹ 2 ردالمحتار، کتاب الصوم، مصطفی البابی مصر ۲/۹۹

Volume Ten Fatawa Rizvia

In Minhat al-Khaliq it is stated:

[Arabic Box]: They have not mentioned the practice among us based on apparent signs indicating the confirmation of the month, such as the firing of cannons in our time. The apparent view is that it is obligatory to act upon it for those who hear it and are absent from the city, such as the people of villages and the like, just as it is obligatory for the people of the city who did not see the ruler before the testimony of witnesses. This branch of jurisprudence was also mentioned by the Shafi'is; Ibn Hajar explicitly stated in Al-Tuhfah that confirmation is established by apparent signs which usually do not fail, such as seeing lamps hung on minarets. He said that the opposition of a group in this regard is not correct. End (1).

[Urdu Box]: Scholars have not mentioned that according to us, acting upon apparent signs—for instance, in our time, the firing of cannons which indicates the confirmation of the month—is mandatory. The apparent view is that acting upon it is obligatory for someone away from the city who hears the sound, like villagers etc., just as acting upon it is obligatory for those city dwellers who have not seen the ruler before the witnesses' testimony. This specific detail has also been stated by the Shafi'is. Ibn Hajar explicitly stated in Tuhfah that the proof of fasting is obtained from those apparent signs which are customarily known on such occasions, for example, seeing bright lamps hanging on minarets, and he added that a group has opposed this, which is not correct. End. (T)

Warning regarding the crescent of months other than Ramadan and Shawwal: Where a ruling is established here based on the sighting of another city—as in the four methods from the second to the fifth—the opinion of Allama Shami (may Allah the Almighty have mercy on him) regarding them is that if that other city is not situated so far to the west of this city that it could cause a difference in the sighting of the crescent moon, then those methods will be applicable for every crescent moon. Otherwise, they will not be reliable for months other than Ramadan and Shawwal. That is, if that city is so far to the west of this city—the distance of which some scholars have set at more than 72 miles, or its eastern longitude is less than this city's—and the sighting of the crescent for Dhu al-Hijjah, for example, occurred there through testimony, or testimony of judgment, or a judge's letter arrived, or recurring news was received, then it will not be acted upon here. Rather, they will depend on evidence coming from their own city, nearby places, or eastern cities, no matter how

distant they are. If no evidence is found, they will complete the count of thirty days. It is stated in Radd al-Muhtar:

[Arabic Box]: It is understood from their words in the Book of Hajj that the difference in horizons (matali') is considered therein, so it is not binding upon them...

[Urdu Box]: From the words of the jurists in the Book of Hajj, it is understood that the difference in horizons is considered in Hajj, therefore for these pilgrims...

---

1 Minhat al-Khaliq 'ala al-Bahr al-Ra'iq, Book of Fasting, before the chapter on what invalidates the fast, etc., H.M. Saeed Company Karachi, 2/402. Page 425 of 836

जिल्द दहम (खण्ड दस) फ़तावा रज़विया

मिन्हात अल-खालिक में है:

[अरबी बॉक्स]: उन्होंने हमारे बीच महीने की पुष्टि का संकेत देने वाले प्रत्यक्ष प्रतीकों पर अमल करने का उल्लेख नहीं किया है, जैसे हमारे समय में तोपों का चलना। और ज़ाहिर यही है कि शहर से दूर रहने वाले और आवाज़ सुनने वाले व्यक्ति पर, जैसे ग्रामीणों आदि पर, इस पर अमल करना वाजिब है, ठीक वैसे ही जैसे उन शहरवासियों के लिए वाजिब है जिन्होंने गवाहों की गवाही से पहले हाकिम को नहीं देखा हो। शाफ़इयों ने भी इस मसले का ज़िक्र किया है। इब्न हजर ने 'तुहफ़ा' में स्पष्ट किया है कि रोज़े की पुष्टि उन ज़ाहिर प्रतीकों से हो जाती है जो आमतौर पर नहीं चूकते, जैसे मीनारों पर लटके हुए जलते कंदीलों को देखना। उन्होंने यह भी कहा कि इस बारे में एक समूह का विरोध सही नहीं है। इति (1)।

[उर्दू बॉक्स]: विद्वानों ने यह उल्लेख नहीं किया कि हमारे निकट प्रत्यक्ष प्रतीकों पर अमल करना—उदाहरण के लिए, हमारे युग में तोपों का चलना जो महीने की पुष्टि का संकेत देते हैं—अनिवार्य है। और ज़ाहिर यही है कि शहर से दूर, आवाज़ सुनने वाले व्यक्ति पर इस पर अमल करना वाजिब है, जैसे कि ग्रामीणों आदि पर, जिस प्रकार इसका पालन उन शहरवासियों के लिए वाजिब है जिन्होंने गवाहों की गवाही से पहले हाकिम को नहीं देखा हो। यह विवरण शाफ़इयों ने भी व्यक्त किया है। इब्न हजर ने 'तुहफ़ा' में स्पष्ट किया है कि रोज़े की पुष्टि उन प्रत्यक्ष संकेतों से हो जाती है जो आदतन ऐसे अवसर पर प्रसिद्ध होते हैं, जैसे मीनारों पर लटके हुए रोशन कंदील देखना, और कहा कि एक समूह ने इसका विरोध किया है जो सही नहीं है। इति (त)।

रमज़ान और शव्वाल के अलावा चाँद के बारे में चेतावनी: जहाँ दूसरे शहर के चाँद देखने (रुआयत) से यहाँ हुक्म साबित किया जाए, जैसे दूसरी से पाँचवीं तक के चार तरीकों में, उनके बारे में अल्लामा शामी (रहमतुल्लाह अलैह) की राय यह है कि यदि वह दूसरा शहर इस शहर से इतना पश्चिम की ओर न हो जिससे चाँद देखने में अंतर आ सके तब तो वे तरीके हर चाँद के लिए काम देंगे, अन्यथा वे रमज़ान और शव्वाल के अलावा अन्य महीनों में विश्वसनीय नहीं होंगे। अर्थात् यदि वह शहर इस शहर से इतना पश्चिम में है—जिसकी सीमा कुछ विद्वानों ने 72 मील या उससे अधिक बताई है, या उसका पूर्वी देशांतर इस शहर के पूर्वी देशांतर से कम हो—और वहाँ ज़ुल-हिज्जा के चाँद की गवाही हुई, या फैसले पर गवाही हुई, या काज़ी का पत्र आया, या मुतवातिर ख़बर आई, तो यहाँ उस पर अमल नहीं

होगा। बल्कि अपने ही शहर या उसके निकटवर्ती स्थानों, या पूर्वी देशों से आए साक्ष्यों पर निर्भर करेंगे, चाहे वे कितनी ही दूरी पर क्यों न हों। और यदि साक्ष्य नहीं मिला तो तीस दिन पूरे करेंगे। 'रद अल-मुह्तार' में फ़रमाया है:

[अरबी बॉक्स]: हज की किताब में उनके शब्दों से यह समझा जाता है कि इसमें उदय-स्थलों (मतला) का अंतर मान्य है, इसलिए उन पर लाज़िम नहीं...

[उर्दू बॉक्स]: हज की किताब में फ़ुक़हा के कलाम से यह स्पष्ट होता है कि हज में क्षितिज (मतला) के अंतर का विचार किया जाता है, इसलिए इन हाजियों पर...

---

1 मिन्हात अल-खालिक अलल बहर अर-राइक, किताबुस सौम, रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों के अध्याय से पहले, आदि, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 2/402। पृष्ठ 425 / 836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

منحۃ الخالق میں ہے :

لم یذکروا عندنا العمل بالامارات الظاھرۃ الدالۃ علی ثبوت الشھر کضرب المدافع في زماننا والظاھر وجوب العمل بھا علی من سمعھا ممن کان غائبا عن المصر کاھل القری ونحوھا کما یجب العمل بھا علی اھل المصر الذین لم یروا الحاکم قبل شھادۃ الشھود وقد ذکر ھذا الفرع الشافعیۃ فصرح ابن حجر في التحفۃ انہ یثبت بالا مارۃ الظاھرۃ الدالۃ التي لاتتخلف عادۃ کرؤیۃ القنادیل المعلقۃ بالمنابر ومخالفۃ جمع فی ذلك غیر صحیحۃ اھ 1

علماء نے یہ ذکر نہیں کیا کہ ہمارے نزدیک اماراتِ ظاہر مثلاً ہمارے دور میں توپوں کا چلنا جو ثبوتِ ماہ پر دال ہیں، پر عمل لازم ہے، اور ظاہر یہی ہے کہ اس پر شہر سے غائب، آواز سننے والے پر عمل واجب ہے مثلاً اہل دیہات وغیرہ پر جیسا کہ اس پر عمل کرنا ان اہل شہر کیلئے واجب ہے جنہوں نے گواہوں کی گواہی سے پہلے حاکم کو نہ دیکھا ہو، اور یہ جزئیہ شوافع نے بھی بیان کیا ہے ابنِ حجر نے تحفہ میں تصریح کی ہے کہ روزے کا ثبوت ان علاماتِ ظاہرہ سے ہو جاتا ہے جو عادتاً اس موقع پر معروف ہوں مثلاً مناروں پر معلق قندیل روشن کا دیکھنا، اور کہا کہ ایک جماعت نے اس کی مخالفت کی ہے جو صحیح نہیں اھ (ت)

تنبیہ درباره ہلال غیر رمضان وشوال: جہاں دوسرے شہر کی رؤیت سے یہاں حکم ثابت کیا جائے جیسے دوم سے پنجم تک چار طریقوں میں اُن کے بارے میں علامہ شامی رحمہ اللہ تعالیٰ علیہ کی رائے یہ ہے کہ اگر وہ دوسرا شہر اس شہر سے اس قدر مغرب کو نہ ہٹا ہو جس کے باعث رؤیتِ ہلال میں اختلاف پڑ سکے جب تو وہ طریقے ہر ہلال میں کام دیں گے ورنہ غیر رمضان و شوال

میں معتبر نہ ہوں گے یعنی اگر وہ شہر اس شہر سے اتنا غربی ہے جس کی مقدار بعض علماء نے یہ رکھی ہے کہ بہتر ۷۲ میل یا زیادہ اُس کا طولِ شرقی اس کے طولِ شرقی سے کم ہو اور وہاں کی رؤیتِ ہلال ذی الحجہ پر مثلاً شہادت یا شہادت علی القضا گزری یا کتاب القاضی یا خبر متواتر آئی تو یہاں اس پر عمل نہ ہو گا بلکہ اپنے ہی شہر یا اس کے قریب مواضعِ یا شرقی بلاد سے اگرچہ کتنے ہی فاصلے پر ہوں ثبوت آنے پر مدار رکھیں گے، اور نہ ملا تو تیس کی گنتی پوری کریں گے۔ ردالمحتار میں فرمایا:

یفهم من کلامهم في کتاب الحج ان اختلاف المطالع فیه معتبر فلا یلزمهم

کتاب الحج میں فقہاء کے کلام سے مفہوم ہے کہ حج میں اختلافِ مطالع کا اعتبار ہے لہٰذا ان حجاج پر

---

1 منحۃ الخالق علی البحر الرائق، کتاب الصوم قبیل باب یفسد الصوم الخ، ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۴۰۲

Fatawa Razawiya, Volume 10

[Arabic Passage 1]: Nothing would be mandatory if it appeared that the moon was sighted in another city a day before them. Can the same be said regarding the sacrifice (Udhiyah) for non-pilgrims? I have not encountered this in my studies, but the apparent view is 'yes', because the difference in sighting horizons (ikhtilaf al-matali') is not considered for fasting as it is linked to the absolute sighting of the moon. This is contrary to sacrifice; for it, the apparent view is that it is like prayer times, which are binding on every people according to their own time. Thus, their sacrifice on the thirteenth day would be sufficient even if it were the fourteenth according to the sighting of others. (1)

[Urdu Translation 1]: Nothing will be mandatory if it appears that the moon was sighted in another city a day before them. Can the same be said regarding the sacrifice for those who are not pilgrims (non-Hajjis)? I have not found an answer to this in my study, but the apparent view is that it is valid. This is because in fasting, the difference in horizons is not taken into account as it is related to the absolute sighting of the moon. Contrary to sacrifice, in which the apparent view is that it is like prayer times, and would be mandatory for every people according to their own time. Thus, their sacrifice on the thirteenth day would be sufficient, even if it were the fourteenth day according to the sighting of others. (T)

I say: However, the correct view is contrary to this. The words of the scholars are clearly absolute and general, and there is room for discussion regarding this specification for several reasons.

[Arabic Passage 2]: For the Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) explained the reason for disregarding astronomical calculation by saying: 'We are an illiterate nation; we neither write nor calculate.' (2) As narrated by the two Shaikhs (Bukhari and Muslim), Abu Dawood, al-Nasa'i, and others from Ibn Umar (may Allah be pleased with them both). This reason applies to all crescents. Although this is contrary to analogy (qiyas), it does not prevent inclusion through indication (dalalah), even if it is prevented through analogy, as scholars have explicitly stated. Among them is the author of al-Shami himself in this very book. There is no doubt that Dhu al-Hijjah is exactly like al-Fitr.

[Urdu Translation 2]: The Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) stated the reason for dropping the consideration of calculation by saying: 'We are an illiterate nation; we neither write nor calculate.' As narrated by Bukhari, Muslim, Abu

Dawood, Nasa'i, etc., from Hadrat Ibn Umar (may Allah be pleased with them both). This reason applies to all lunar months. Although this is contrary to analogy, it does not prevent inclusion through indication, even if it prevents it through analogy, as scholars have clarified. Among them, Imam Shami himself has clarified this in this very book. There is no doubt that the crescent of Dhu al-Hijjah is exactly like the crescent of Eid al-Fitr.

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/105.
2. Sahih Bukhari, Chapter on the Prophet's (PBUH) saying 'We do not write and we do not calculate', Qadeemi Kutub Khana Karachi, 1/256; Sunan Abi Dawood Vol 1, Kitab al-Siyam, Matba Mujtabai Lahore, 1/317.

फ़तावा रज़विया, खंड 10

[अरबी गद्यांश 1]: कोई बात अनिवार्य नहीं होगी यदि यह स्पष्ट हो जाए कि किसी अन्य शहर में उनसे एक दिन पहले चाँद देखा गया था। क्या हज न करने वालों के लिए कुर्बानी (उधिया) के बारे में भी यही कहा जा सकता है? मैंने अपने अध्ययन में इसका उत्तर नहीं देखा है, लेकिन ज़ाहिर यही है कि 'हाँ', क्योंकि रोज़े के लिए क्षितिज के अंतर (इख्तिलाफ़ अल-मतले) को मान्यता नहीं दी जाती क्योंकि इसका संबंध चाँद के पूर्ण दर्शन (रौयत) से है। यह कुर्बानी के विपरीत है; इसके लिए ज़ाहिर यही है कि यह नमाज़ के समय की तरह है, जो हर कौम पर उनके अपने समय के अनुसार अनिवार्य होती है। इसलिए, तेरहवीं तारीख को उनकी कुर्बानी पर्याप्त होगी, भले ही दूसरों के चाँद देखने के अनुसार वह चौदहवीं तारीख हो। (1)

[उर्दू अनुवाद 1]: कोई बात अनिवार्य नहीं होगी, यदि यह ज़ाहिर हो जाए कि फलां शहर में एक दिन पहले चाँद देखा गया, क्या यही बात ग़ैर-हज्जाज (हज न करने वाले) के लिए कुर्बानी के बारे में कही जा सकती है या नहीं? मेरे मुतालअ (अध्ययन) में इसका जवाब नहीं आया लेकिन ज़ाहिर यही है कि मोतबर (मान्य) है क्योंकि रोज़े में इख्तिलाफ़े मताली (क्षितिज अंतर) का एतबार इसलिए नहीं किया जाता कि उसका ताल्लुक मुतलक रौयत से है, बखिलाफ़ कुर्बानी के इसमें ज़ाहिर यही है कि ये औकाते नमाज़ की तरह है कि हर कौम पर अपने-अपने वक्त के मुताबिक लाज़िम होगी तो उनकी तेरहवीं की कुर्बानी काफी हो जाएगी अगरचे ग़ैर की रौयत के मुताबिक वो चौदहवीं हो। (त)

मैं कहता हूँ: मगर सही इसके खिलाफ है, उलमा का कलाम साफ, मुतलक और आम है और इस तख़्सीस (विशिष्टता) में कई कारणों से कलाम (चर्चा) की गुंजाइश है।

[अरबी गद्यांश 2]: क्योंकि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हिसाब-किताब के विचार को छोड़ने का कारण यह बताया: 'हम एक अनपढ़ (उम्मी) कौम हैं; न हम लिखते हैं और न ही गणना करते हैं।' (2) जैसा कि शेख़ैन (बुखारी और मुस्लिम), अबू दाऊद, अल-नसाई और अन्य लोगों ने इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है। यह कारण सभी चाँद के महीनों (हिलाल) पर लागू होता है। यद्यपि यह सादृश्य (कयास) के विरुद्ध है, फिर भी यह संकेत (दलालाह) के माध्यम से शामिल होने से नहीं रोकता, भले ही यह सादृश्य के माध्यम से रोकता हो, जैसा कि विद्वानों ने स्पष्ट रूप से कहा है। उनमें से खुद इस किताब में अल्लामा शामी भी शामिल हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि ज़ुल-हिज्जा बिल्कुल ईदुल-फ़ितर के समान है।

[उर्दू अनुवाद 2]: रिसालत-मआब (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हिसाब व किताब के इस्कात (छोड़ने) की इल्लत (कारण) यह बयान फरमाई कि 'हम उम्मी लोग हैं, न लिखते हैं न हिसाब करते हैं', जैसा कि बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद और नसाई वगैरह ने हज़रत इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है और यह इल्लत तमाम चाँद के महीनों को शामिल है और यह अगरचे कयास के खिलाफ है लेकिन दलालतन इल्हाक़ से मानइ (बाधक) नहीं अगरचे कयासतन् मानइ है जैसा कि इस पर उलमा ने तसरीह (स्पष्टीकरण) की है और उनमें से खुद इसी किताब में इमाम शामी ने भी तसरीह की है, और इसमें कोई शक नहीं कि ज़ुल-हिज्जा का चाँद बऐनहि फित्र के चाँद के मुताबिक है।

1. रद्द अल-मुह्तार, किताबुस सौम, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 105/2.
2. सही बुखारी, नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के इस कौल का बाब 'हम न लिखते हैं और न हिसाब करते हैं', कदीमी कुतुब खाना कराची, 256/1; सुनन अबू दाऊद अव्वल, किताबुस सियाम, मतबअ मुजतबाई लाहौर, 317/1.

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

[Arabic Passage 1]: شئی لو ظهر انه رؤی فی بلدة اخری قبلهم بیوم وهل یقال کذلك فی حق الاضحیة لغیر الحجاج لم اره والظاهر نعم لان اختلاف المطالع انما لم یعتبر فی الصوم لتعلقه بمطلق الرؤیة وهذا بخلاف الاضحیة فالظاهر انها کأوقات الصلوة یلزم کل قوم العمل بما عندهم فتجزئ الاضحیة فی الیوم الثالث عشر وان کان علی رؤیا غیرهم هو الرابع عشر۔^1

[Urdu Translation 1]: کوئی شئی لازم نہ ہوگی، اگر یہ ظاہر ہوا کہ فلاں شہر میں ایک دن پہلے چاند دیکھا گیا، کیا یہی بات غیر حجاج کے لئے قربانی کے بارے میں کہی جاسکتی ہے یا نہیں؟ میرے مطالعہ میں اس کا جواب نہیں آیا لیکن ظاہر یہی ہے کہ معتبر ہے کیونکہ روزہ میں اختلاف مطالع کا اعتبار اس لئے نہیں کیا جاتا کہ اس کا تعلق مطلق رؤیت سے ہے بخلاف قربانی کے، اس میں ظاہر یہی ہے کہ یہ اوقات نماز کی طرح ہے کہ ہر قوم پر اپنے اپنے وقت کے مطابق لازم ہوگی تو انکی تیرہویں کی قربانی کافی ہوجائے گی اگر چہ غیر کی رؤیت کے مطابق وہ چودہویں ہو۔ (ت)

اقول: مگر صحیح اس کے خلاف ہے کلام علماء صاف مطلق و عام اور اس تخصیص میں بوجوہ کلام،

[Arabic Passage 2]: فان رسول الله تعالٰی علیه وسلم علل اسقاط اعتبار الحساب بأنّا امة امیة لانکتب ولا نحسب۔^2 کما رواه الشیخان وابوداؤد والنسائی وغیرهم عن ابن عمر رضی الله تعالٰی عنهما، وهذه العلة تعم الاهلة وهذا وان کان خلاف القیاس فلا یمتنع الالحاق به دلالة وان امتنع قیاسا کما

قد نص علیه العلماء ومنهم العلامة الشامی فی نفس هذا الکتاب، ولا شک ان ذا الحجة کالفطر سواء بسواء،

[Urdu Translation 2]: رسالتماب صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے حساب و کتاب کی اسقاط کی علّت یہ بیان فرمائی کہ ہم امّی لوگ ہیں نہ لکھتے ہیں نہ حساب کرتے ہیں، جیسا کہ بخاری، مسلم، ابوداؤد اور نسائی وغیرہ نے حضرت ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا ہے اور یہ علّت تمام چاندوں کو شامل ہے اور یہ اگرچہ قیاس کے مخالف ہے لیکن دلالۃً الحاق سے مانع نہیں اگر چہ قیاساً مانع ہے جیسے کہ اس پر علماء نے تصریح کی ہے اور ان میں سے خود اس کتاب میں امام شامی نے بھی تصریح کی ہے، اور اس میں کوئی شک نہیں کہ ذی الحجہ کا چاند بعینہ فطر کے چاند کے مطابق ہے

1۸ ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/۱۰۵ 2۸ صحیح بخاری باب قول النبی صلی اللہ علیہ وسلم لانکتب ولانحسب قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۲۵۶ ، سنن ابی داؤد اول کتاب الصیام مطبع مجتبائی لاہور ۱/۳۱۷

Volume 10 Fatawa Ridawiyya

[Arabic Column]: And indeed the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Eid al-Fitr is the day when people break their fast, and Eid al-Adha is the day when people offer sacrifices." [1] Tirmidhi narrated it with a sound chain of narration from the Mother of the Believers, Aisha al-Siddiqah (may Allah be pleased with her). And he (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Your Fitr is the day you break fast, and your Adha is the day you offer sacrifice." [2] Abu Dawood and al-Bayhaqi narrated it with a sound chain from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him).

Then I say: All this discourse is based on the assumption that reliance on sighting is only mentioned regarding fasting and Fitr, whereas it is not so. Rather, it is established similarly for sacrifice. Indeed, Abu Dawood and al-Daraqutni narrated from the Amir of Makkah, Harith bin Hatib (may Allah be pleased with him), that he said: "The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) made a covenant with us that we should perform the ritual [of sacrifice] based on sighting. If we do not see it and two just witnesses testify, we should perform the ritual based on their testimony." [3] Al-Daraqutni said: "This is a connected and sound chain of narration." [4] Thus, the basis [of the opposing argument] is severed.

[Urdu Column]: Because the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said that the day of Fitr is the day when people have broken their fast and sacrifice is on the day when people have offered sacrifice. Tirmidhi has narrated this with a sound chain of narration from the Mother of the Believers, Hazrat Aisha Siddiqah (may Allah be pleased with her). And he (peace and blessings of Allah be upon him) also said that your day of Fitr is that in which you break fast, and your day of Adha is that in which you offer sacrifice. Abu Dawood and Bayhaqi have narrated it with a sound chain of narration from Hazrat Abu Hurairah (may Allah be pleased with him). (T)

Then I say: (Then I say) All this discourse is in the case when it is accepted that the basis on sighting is mentioned only regarding fasting and Fitr, whereas it is not the case, but rather proof is also present for sacrifice in the same way. Imam Abu Dawood and Daraqutni have narrated from the Amir of Makkah Hazrat Harith bin Hatib (may Allah be pleased with him) that he said: "The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) had taken this covenant from us that we should sacrifice based on seeing the moon, and if we are unable to see the moon and two

just men give testimony, then we should sacrifice based on their testimony." Daraqutni said that its chain of narration is connected and sound.

Footnotes: 1. Al-Jami' al-Tirmidhi, Chapter on when Fitr and Adha occur, Amin Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi, 1/99. 2. Sunan Abi Dawud, Book of Fasting, Chapter on when people err regarding the crescent, Mujtabai Press Lahore, 1/318. 3. Sunan al-Daraqutni, Chapter on testimony regarding the sighting of the crescent, Nashr al-Sunnah Multan, 2/167. 4. Sunan al-Daraqutni, Chapter on testimony regarding the sighting of the crescent, Nashr al-Sunnah Multan, 2/167.

[अरबी स्तंभ]: और वास्तव में अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "फ़ित्र का दिन वह है जब लोग रोज़ा खोलते हैं, और अज़हा का दिन वह है जब लोग कुर्बानी देते हैं।" [1] तिरमिज़ी ने इसे उम्मुल मोमिनीन हज़रत आयशा सिद्दीका (रज़ियल्लाहु अन्हा) से एक सही सनद के साथ रिवायत किया है। और आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "तुम्हारी फ़ित्र का दिन वह है जिसमें तुम इफ़्तार करो, और तुम्हारी अज़हा का दिन वह है जिसमें तुम कुर्बानी करो।" [2] अबू दाऊद और बैहकी ने इसे हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से सही सनद के साथ रिवायत किया है।

फिर मैं कहता हूँ: यह सारा कलाम इस सूरत में है जब यह तस्लीम हो कि रुयत (चाँद देखना) पर मदार सिर्फ सौम (रोज़ा) और फ़ित्र के बारे में वारिद (उल्लेखित) है, हालांकि ऐसी बात नहीं है बल्कि इसी तरह का सुबूत तो कुर्बानी में भी है। इमाम अबू दाऊद और दारकुतनी ने मक्का के अमीर हज़रत हारिस बिन हातिब (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है कि उन्होंने कहा: "अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हमसे यह अहद (प्रतिज्ञा) लिया था कि हम चाँद देखने की बिना पर कुर्बानी करें और अगर हम चाँद न देख सकें और दो आदिल (न्यायप्रिय) आदमी गवाही दे दें तो उनकी शहादत की बिना पर कुर्बानी करें।" [3] दारकुतनी ने फरमाया: "इसकी सनद मुत्तसिल (निरंतर) और सही है।" [4] पस बुनियाद कट गई।

[उर्दू स्तंभ]: क्योंकि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फरमान है कि फ़ित्र का दिन वही है जिस दिन लोगों ने इफ़्तार किया और कुर्बानी उसी दिन है जिस दिन लोगों ने कुर्बानी दी। तिरमिज़ी ने इसे सही सनद के साथ उम्मुल मोमिनीन हज़रत आयशा सिद्दीका (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत किया है। और आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का यह भी फरमान है तुम्हारी फ़ित्र का दिन वह है जिसमें तुम इफ़्तार करो, और तुम्हारी अज़हा का दिन वह है जिसमें तुम कुर्बानी करो। इसे अबू दाऊद और बैहकी ने सही सनद के साथ हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। (त)

फिर मैं कहता हूँ: (फिर मैं कहता हूँ) यह तमाम कलाम इस सूरत में है जब यह तस्लीम हो कि रुयत पर मदार सिर्फ सौम और फ़ित्र के बारे में वारिद है हालांकि ऐसी बात नहीं बल्कि इसी तरह सुबूत तो कुर्बानी में भी है, इमाम अबू दाऊद और दारकुतनी ने अमीर मक्का हज़रत हारिस बिन हातिब

(रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है कि हमसे अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इस बारे में यह अहद लिया था कि हम चाँद देखने की बिना पर कुर्बानी करें और अगर हम चाँद न देख सकें और दो आदिल आदमी गवाही दे दें तो उनकी शहादत की बिना पर कुर्बानी करें। दारकुतनी ने फरमाया इसकी सनद मुत्तसिल और सही है।

पादलेख: 1. अल-जामी अत-तिरमिज़ी, बाब: फ़ित्र और अज़हा कब होते हैं, अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली, 1/99। 2. सुनन अबी दाऊ١, किताबुल सियाम, बाब: जब लोग चाँद के बारे में गलती करें, मतबा मुजतबाई लाहौर, 1/318। 3. सुनन अद-दारकुतनी, बाब: चाँद देखने पर गवाही, नश्र-उल-सुन्नत मुल्तान, 2/167। 4. सुनन अद-दारकुतनी, बाब: चाँद देखने पर गवाही, नश्र-उल-सुन्नत मुल्तान, 2/167।

جلد دہم فتاوی رضویہ

[عربی کالم]: وقد قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم الفطر یوم یفطر الناس والا ضحی یوم یضحی الناس، ۱ اخرجہ الترمذی بسند صحیح عن ام المومنین الصدیقۃ رضی اللہ تعالٰی عنہا وقال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فطر کم یوم یفطرون و اضحاکم یوم تضحون، ۲ رواہ ابوداؤد و البیہقی بسند صحیح عن ابی ہریرۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ ثم اقول: ھذا کلہ کلام معہ علی تسلیم ان النوط بالرؤیۃ انما ورد فی الصوم والفطر ولیس کذلک بل قد ثبت کذلک فی الاضحیۃ فقد اخرج ابوداؤد والدارقطنی عن امیر مکۃ الحارث بن حاطب رضی اللہ تعالٰی عنہ قال عہد الینا رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ان ننسک للرؤیۃ فان لم نرہ وشہد شاہد اعدل نسکنا بشہادتھما ۳ قال الدارقطنی ھذا اسناد متصل صحیح ۴ فانقطع مبنی

[اردو کالم]: کیونکہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا فرمان ہے کہ فطر کا دن وہی ہے جس دن لوگوں نے افطار کیا اور قربانی اسی دن ہے جس دن لوگوں نے قربانی دی۔ ترمذی نے اسے صحیح سند کے ساتھ اُم المومنین حضرت عائشہ صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا سے روایت کیا ہے۔ اور آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا یہ بھی فرمان ہے تمہاری فطر کا دن وہ ہے جس میں تم افطار کرو، اور تمہاری اضحیٰ کا دن وہ ہے جس میں تم قربانی کرو۔ اسے ابوداؤد اور بیہقی نے صحیح سند کے ساتھ حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے (ت)

ثم اقول: (پھر میں کہتا ہوں) یہ تمام کلام اس صورت میں ہے جب یہ تسلیم ہو کہ رؤیت پر مدار صرف صوم اور فطر کے بارے میں وارد ہے حالانکہ ایسی بات نہیں بلکہ اسی طرح ثبوت تو قربانی میں بھی ہے، امام ابوداؤد اور دار قطنی نے امیر مکہ حضرت حارث بن حاطب رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے کہ ہم سے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے اس بارے میں یہ

عہد لیا تھا کہ ہم چاند دیکھنے کی بناء پر قربانی کریں اور اگر ہم چاند نہ دیکھ سکیں اور دو عادل آدمی گواہی دے دیں تو ان کی شہادت کی بناء پر قربانی کریں۔ دار قطنی نے فرمایا اسکی سند متصل اور صحیح ہے

حواشی: 1 الجامع للترمذی، باب ما جاء فی الفطر والاضحیٰ متٰی یکون، امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۹۹/۱ 2 سنن ابی داؤد کتاب الصیام باب اذا اخطأ القوم الہلال مطبع مجتبائی لاہور ۳۱۸/۱ 3 سنن الدار قطنی باب الشادت علی رؤیۃ الہلال نشر السنۃ ملتان ۱۶۷/۲ 4 سنن الدار قطنی باب الشادت علی رؤیۃ الہلال نشر السنۃ ملتان ۱۶۷/۲

صفحہ 836 کا 427

Fatawa Razawiyya - Volume 10

The basis of the discussion has been concluded and the truth has become clear, all praise be to Allah. As for seeking evidence from the matter of Hajj, I say there is no proof in it, because in my view the Hajj issue is based on repelling great hardship. Its parallel is found in 'Al-Tanwir' and 'Al-Durr' [Al-Mukhtar]: if it becomes clear that the Imam led the prayer without ritual purity, the prayer is repeated but not the sacrifice, because some scholars stated that only the Imam himself repeats the prayer. Thus, it was deemed a matter open to juristic reasoning (Ijtihad). Al-Zayla'i. For instance, if witnesses testified that it was the day of Eid, and people prayed and then offered sacrifice, and it later became clear that it was actually the Day of Arafah, their prayer and sacrifice are considered valid because it is impossible to avoid such an error. Therefore, a ruling of permissibility is applied to protect the gathering of Muslims. Al-Zayla'i, summarized and corrected. Then, by the grace of Allah, I saw explicit clarification of this in 'Al-Lubab' and its commentary, rather in the very commentary related to 'Al-Durr al-Mukhtar', where it states: if witnesses testified after the standing (at Arafah) that their standing occurred after its time, their testimony is not accepted and the standing is valid by 'Istihsan' (juristic preference), such that even the standing of the witnesses remains valid; otherwise, severe hardship would inevitably result, etc. Thus, the truth has manifested, and all praise is due to Allah, Lord of the Worlds.

In short, these are the Shariah-prescribed methods for confirming the new moon; any other methods invented by people are entirely false, rejected, and unacceptable. What can be said about limiting the notions of the common folk, but the wrong methods currently more prevalent among the ignorant are also...

---

1. Durr al-Mukhtar, Book of Sacrifice, Mujtabai Press, Delhi, 232/2
2. Durr al-Mukhtar, Chapter of Hady (Sacrificial animal), Mujtabai Press, Delhi, 183/1

चर्चा का आधार समाप्त हो गया और सत्य स्पष्ट हो गया, ईश्वर की स्तुति हो। जहाँ तक हज के मामले से प्रमाण लेने की बात है, तो मैं कहता हूँ कि इसमें कोई प्रमाण नहीं है, क्योंकि मेरी राय में हज का मुद्दा भारी कठिनाई को दूर करने पर आधारित है। इसका समानांतर 'अल-तन्वीर' और 'अल-दुर्र' में मिलता है: यदि यह स्पष्ट हो जाए कि इमाम ने बिना शुद्धि के नमाज़ पढ़ाई, तो नमाज़ दोहराई जाएगी लेकिन कुर्बानी नहीं, क्योंकि कुछ विद्वानों ने कहा है कि केवल इमाम ही नमाज़ को दोहराएगा। इस प्रकार, यह इज्तिहाद (कानूनी तर्क) का विषय बन गया। अल-ज़ैलई। उदाहरण के लिए, यदि गवाहों ने गवाही दी कि यह ईद का दिन है, तो लोगों ने नमाज़ पढ़ी और फिर कुर्बानी दी, बाद में स्पष्ट हुआ कि वह अराफ़ा का दिन था, तो उनकी नमाज़ और कुर्बानी को वैध माना जाएगा क्योंकि ऐसी त्रुटि से बचना संभव नहीं है। इसलिए, मुसलमानों के समूह की सुरक्षा के लिए अनुमति का नियम लागू किया जाएगा। अल-ज़ैलई, सारांश संशोधित। फिर, अल्लाह की कृपा से, मैंने 'अल-लुबाब' और इसकी व्याख्या में इसका स्पष्ट उल्लेख देखा, बल्कि 'दुर्र अल-मुख्तार' से संबंधित व्याख्या में ही जहाँ लिखा है: यदि गवाहों ने वुक़ूफ़ (अराफ़ा में रुकना) के बाद गवाही दी कि उनका वुक़ूफ़ उसके समय के बाद हुआ था, तो उनकी गवाही स्वीकार नहीं की जाएगी और वुक़ूफ़ 'इस्तिहसान' (न्यायशास्त्रीय वरीयता) के आधार पर सही होगा, यहाँ तक कि गवाहों का वुक़ूफ़ भी सही रहेगा, अन्यथा भारी कठिनाई उत्पन्न होगी, आदि। तो अब सत्य प्रकट हो गया है, और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है, जो संसारों का स्वामी है।

संक्षेप में, चांद की पुष्टि के शरीयत द्वारा निर्धारित तरीके ये हैं; इनके अलावा लोगों द्वारा आविष्कृत अन्य सभी तरीके पूरी तरह से गलत, परित्यक्त और अस्वीकार्य हैं। आम लोगों के विचारों को सीमित करने के बारे में क्या कहा जाए, लेकिन आजकल अज्ञानियों के बीच जो गलत तरीके अधिक प्रचलित हैं वे भी...

---

1. दुर्र अल-मुख्तार, किताब अल-अज़हिया, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 232/2
2. दुर्र अल-मुख्तार, बाब अल-हद्य, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 183/1

البحث من رأسه واستبان الحق والله الحمد اماماً تمسك به من مسئلة الحج فاقول لاحجة فيها فانها فيما ارى لدفع الحرج العظيم ونظيره مافي التنوير والدر، تبين ان الامام صلى بغير طهارة تعاد الصلوة دون الاضحية لان من العلماء من قال لا يعيد الصلوة الا الامام وحده فكان للاجتهاد فيه مساغ زيلعی، كما لو شهدوا انه يوم العيد فصلو ا ثم ضحو ا ثم بان انه يوم عرفة اجز أتهم الصلوة والتضحية لانه لا يمكن التحرز عن مثل هذا الخطاء فيحكم بالجواز صيانة لجمع المسلمين زيلعی اه ملخصاً مصححاً، ثم رأيت بحمد الله التصريح به في اللباب وشرحه بل في نفس الشرح المتعلق به الدر المختار حيث قال شهد و ابعد الوقوف بوقوفهم بعد وقته، لا تقبل شهادتهم والوقوف صحيح استحساناً حتى الشهود للحرج الشديد الخ[2] فقد ظهر الحق والحمد لله رب العالمين ۔

تو بحث کی بنیاد ہی ختم ہو گئی اور حق واضح ہو گیا واللہ الحمد ، رہا معاملہ مسئلہ حج سے استدلال، تو میں کہتا ہوں کہ اس میں کوئی دلیل نہیں کیونکہ میرے خیال کے مطابق حج کا مسئلہ دفع حرج عظیم پر مبنی ہے اور اس کی نظیر تنویر اور در میں ہے کہ اگر واضح ہو گیا کہ امام نے بغیر طہارت کے نماز پڑھائی تو نماز لوٹائی جائے گی نہ کہ قربانی، کیونکہ بعض علماء نے یہ فرمایا کہ نماز کا صرف امام ہی اعادہ کرے، تو اب یہ مسئلہ اجتہادی قرار پایا، زیلعی۔ جیسا کہ گواہوں نے گواہی دی کہ یہ عید کا دن ہے تو لوگوں نے نماز پڑھی پھر قربانی دی، بعد میں واضح ہوا کہ یہ عرفہ کا دن تھا تو ان کی نماز اور قربانی جائز قرار دی جائے کیونکہ ایسی غلطی سے بچنا ممکن نہیں تو مسلمانوں کے اجتماع کے تحفظ کے پیش نظر جواز کا حکم ہی لگایا جائے گا زیلعی اہ ملخصاً مصححاً، بحمد اللہ پھر میں نے اللباب اور اس کی شرح بلکہ خود شرح در مختار کے مسئلہ سے متعلق در مختار میں تصریح دیکھی کہ اگر گواہوں نے وقوف عرفہ کے بعد گواہی

دی کہ یہ وقوف وقت کے بعد ہوا ہے تو یہ گواہی مقبول نہ ہوگی اور حاجیوں کا وقوف استحساناً صحیح ہو گا یہاں تک کہ گواہوں کا وقوف بھی صحیح ہوگا ورنہ حرج شدید لازم آئیگا الخ تو اب حق ظاہر ہو گیا والحمد للہ رب العالمین۔

غرض ثبوت ہلال کے شرعی طریقے یہ ہیں، ان کے سوا جس قدر طرق لوگوں نے ایجاد کئے محض باطل و مخذول و نا قابلِ قبول ہیں، خیالاتِ عوام کا حصر کیا ہو مگر آج کل جہال میں غلط طریقے جو زیادہ رائج ہیں وہ بھی

---

1 در مختار کتاب الاضحیہ مطبع مجتبائی دہلی ۲۳۲/۲ 2 در مختار باب الہدی مطبع مجتبائی دہلی ۱۸۳/۱

Fatawa Rizvia Volume 10

There are seven: First: Recital of Sighting (Hikayat-e-Ruyat): Meaning, some people arrive from somewhere and report that the moon was sighted there on such-and-such a day, and according to their calculation, today is such-and-such a date. It is evident that this is neither a 'testimony of sighting' (Shahadat-e-Ruyat) because they did not see it themselves, nor is it 'testimony upon testimony' (Shahadat ala ash-Shahadah) where the actual beholders would testify before them and appoint them to convey their testimonies, and then these people would testify here according to Sharia rules. Rather, it is merely a narration/recital which holds no weight in Sharia at all, even if these people are trustworthy and reliable, and those whose sighting they describe are also trustworthy and authoritative, and not ignorant. In the world, it is prevalent that someone comes, whoever they may be, brings news of someone's sighting, even if they don't give the name of that person or are not even acquainted with them, yet people rely on such vague news. It is stated in Fath al-Qadir, Bahr al-Raiq, and Alamgiriyyah, etc.:

If a group testifies that the people of such-and-such a city saw the crescent of Ramadan a day before you and they fasted, and according to their count today is the thirtieth, but these people [the witnesses] did not see the crescent themselves, then it is not permissible for them to break their fast tomorrow, nor can they omit the Tarawih prayers tonight. This is because they have neither testified to the sighting itself nor have they provided testimony upon the testimony of others; they have merely recounted the sighting of others.

Second: Rumor (Afwah): A rumor spreads in the city that the moon has been sighted at such-and-such a place. The ignorant mistake it for 'consecutive and widespread reporting' (Tawatur and Istifadah), whereas if you ask anyone, they say they heard it from someone else; no one gives precise information, or the source of the chain ends with just one or two people. To consider this as 'Istifadah' is pure ignorance. The correct forms of it are those which we mentioned in the fifth method. It is stated in Minhat al-Khaliq, a commentary on Bahr al-Raiq:

Know that what is meant by 'Istifadah' is the consecutive reporting (Tawatur) of news from those coming from the city where the sighting was established to the city where it was not. Mere widespread report (Shuhrat) is not enough, because sometimes a matter becomes famous based on the report of just one person, and this will undoubtedly not be sufficient because the saying of the jurists (Fuqaha) is that...

1 Fatawa Hindiyyah, Chapter 2 on Sighting of the Crescent, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/199; Bahr al-Raiq, Book of Fasting, H.M. Saeed Company Karachi, 2/207.

फ़तावा रज़विया जिल्द दस

सात हैं: प्रथम: रुयत की हिकायत (चाँद देखने की कहानी): यानी कुछ लोग कहीं से आए और ख़बर दी कि वहाँ फ़लाँ दिन चाँद देखा गया, वहाँ के हिसाब से आज तारीख यह है। ज़ाहिर है कि यह न तो रुयत की गवाही (शहादत-ए-रुयत) है क्योंकि उन्होंने खुद नहीं देखा, और न ही गवाही पर गवाही (शहादत अल-अश-शहादत) है कि देखने वाले उनके सामने गवाही देते और उन्हें अपनी गवाही पहुँचाने वाला बनाते और वे शरिया नियमों के अनुसार यहाँ गवाही देते। बल्कि यह मात्र एक कहानी है जिसका शरिया में कोई एतबार नहीं है, चाहे ये लोग भरोसेमंद और विश्वसनीय ही क्यों न हों और जिनके देखने का वे वर्णन कर रहे हैं वे भी विश्वसनीय हों और अज्ञानी न हों। दुनिया में तो यह प्रचलित है कि कोई आए, कैसा भी आए, किसी के देखने की ख़बर लाए चाहे वह उसका नाम भी न बताए बल्कि सिरे से उसे जानता भी न हो, लोग ऐसी अस्पष्ट ख़बरों पर भरोसा कर लेते हैं। फ़तह अल-क़दीर, बहर अल-राइक़ और आलमगीरिया आदि में है:

अगर किसी जमात (समूह) ने गवाही दी कि फ़लाँ शहर के लोगों ने तुमसे एक दिन पहले चाँद देखा और उन्होंने रोज़ा रखा है और यह दिन उनके हिसाब से तीसवाँ बनता हो, और इन लोगों (गवाहों) ने चाँद नहीं देखा था, तो उनके लिए अगले दिन इफ़्तार (रोज़ा खोलना) की इजाज़त नहीं है और न ही वे इस रात तरावीह छोड़ सकते हैं क्योंकि गवाहों ने न तो रुयत पर गवाही दी और न ही दूसरों की रुयत पर शहादत दी बल्कि उन्होंने दूसरों की रुयत की कहानी सुनाई है।

द्वितीय: अफ़वाह: शहर में ख़बर उड़ जाती है कि फ़लाँ जगह चाँद हुआ, जाहिल इसे तवातुर और इस्तिफ़ाज़ा (लगातार और व्यापक रिपोर्टिंग) समझ लेते हैं, जबकि जिससे पूछो वह सुनी-सुनाई बात कहता है, कोई ठीक पता नहीं देता, या स्रोत की श्रृंखला केवल एक या दो व्यक्तियों पर समाप्त हो जाती है। इसे इस्तिफ़ाज़ा समझ लेना निरा अज्ञान है। इसकी सही सूरतें वे हैं जिनका हमने पाँचवें तरीके में ज़िक्र किया। मिन्हत अल-ख़ालिक़, बहर अल-राइक़ की व्याख्या में है:

जान लो कि 'इस्तिफ़ाज़ा' से तात्पर्य उस शहर से जहाँ चाँद साबित हुआ, उस शहर में आने वाले लोगों की ख़बर का तवातुर (निरंतरता) है जहाँ यह साबित नहीं हुआ। केवल शोहरत (प्रसिद्धि) काफी नहीं है क्योंकि कभी-कभी किसी एक आदमी की ख़बर के आधार पर बात मशहूर हो जाती है और यह निस्संदेह पर्याप्त नहीं होगा क्योंकि फ़ुक़हा (विधिवेत्ताओं) का कहना यह है कि...

1 फ़तावा हिन्दिया, बाब 2 रुयत-ए-हिलाल के बारे में, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 1/199; बहर अल-राइक़, किताब अल-सौम, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 2/207

فتاوی رضویہ جلد دہم

سات ہیں: یکم حکایت رؤیت : یعنی کچھ لوگ کہیں سے آئے اور خبر دی کہ وہاں فلاں دن چاند دیکھا گیا وہاں کے حساب سے آج تاریخ یہ ہے ظاہر ہے کہ یہ نہ شہادت رؤیت ہے کہ انہوں نے خود نہ دیکھا، نہ شہادت علی الشہادت کہ دیکھنے والے ان کے سامنے گواہی دیتے اور انہیں اپنی گواہیوں کا حامل بناتے اور یہ حسب قواعد شرعیہ یہاں شہادت دیتے بلکہ مجرد حکایت جس کا شرع میں اصلاً اعتبار نہیں اگرچہ یہ لوگ بھی ثقہ معتمد ہوں اور جن کا دیکھنا بیان کریں وہ بھی ثقہ مستند ہوں نہ کہ جہال، جہاں میں تو یہ رائج ہے کہ کوئی آئے، کیسا ہی آئے، کسی کے دیکھنے کی خبر لائے اگرچہ خود اُس کا نام بھی نہ بتائے بلکہ سرے سے اُس سے واقف ہی نہ ہو، ایسی مہمل خبروں پر اعتماد کر لیتے ہیں۔ فتح القدیر و بحر الرائق و عالمگیر یہ وغیرہما میں ہے :

لو شهد جماعة ان اهل بلدة كذا رأوا هلال رمضان قبلكم بيوم فصاموا وهذا اليوم ثلثون بحسابهم ولم يرهؤلاء الهلال لايباح فطر غد ولا تترك التراويح فی هذه الليلة لانهم لم يشهد وابالرؤية ولاعلی شهادة غيرهم وانما حكوارؤية غيرهم۔ (اگر کسی جماعت نے گواہی دی کہ فلاں شہر کے لوگوں نے تم سے ایک دن پہلے چاند دیکھا اور انہوں نے روزہ رکھا ہے اور یہ دن اُن کے حساب سے تیسواں بنتا ہو اور ان لوگوں نے چاند نہیں دیکھا تھا تو ان کے لیے آئندہ دن افطار کی اجازت نہیں اور نہ یہ اس رات تراویح چھوڑ سکتے ہیں کیونکہ گواہوں نے نہ تو رؤیت پر گواہی دی اور نہ غیر کی رؤیت پر شہادت دی بلکہ انہوں نے رؤیت غیر کی حکایت کی ہے (ت))

دوم افواہ: شہر میں خبر اُڑ جاتی ہے کہ فلاں جگہ چاند ہوا، جاہل اسے تواتر واستفاضہ سمجھ لیتے ہیں حالانکہ جس سے پوچھے سُنی سُنائی کہتا ہے، ٹھیک پتا کوئی نہیں دیتا، یا منتہائے سند صرف

دو ایک شخص ہوتے ہیں اسے استفاضہ سمجھ لینا محض جہالت ہے، اُس کی صورتیں وہ ہیں جو ہم نے طریق پنجم میں ذکر کیں۔ منحۃ الخالق حاشیہ بحر الرائق میں ہے :

اعلم ان المراد بالاستفاضة تواتر الخبر من الواردين من بلدة الثبوت الى بلدة التى لم يثبت بها، لا مجرد الاستفاضة لانها قد تكون مبينة على اخبار رجل واحد مثلا فيشيع الخبر عنه ولا شك ان هذا (واضح ہو کہ شہرت سے مراد چاند ہونے والے شہر سے دوسرے شہر میں آنے والے لوگوں کی خبر کا تواتر ہے محض شہرت کافی نہیں کیونکہ بعض اوقات کسی ایک آدمی کی خبر کی بناء پر مشہور ہو جاتا ہے اور یہ بلاشبہ کافی نہ ہوگی کیونکہ فقہاء کا قول یہ ہے کہ)

1 فتاوی ہندیہ الباب الثانی فی رؤیۃ الھلال نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۱۹۹ ، بحر الرائق کتاب الصوم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۲۰۷

Fatawa Razawiyya Volume 10

“The saying of theirs is not sufficient based on the proof that when news spreads and is verified | When news is famous and verified because verification cannot happen except through what was mentioned. | For verification does not occur except with what we mentioned. (T)”

It has been repeatedly written to me that such fame often turns out to be completely baseless. In this very month of Dhu al-Hijjah, news spread that the moon was sighted in Anola. The ruling people there saw it, and even a particular name of a friend of this humble servant (faqir) was mentioned. He came and described his own sighting and the sighting of everyone there. This humble servant sent a reliable person to him; the reply came from there that there was thick cloud cover here, neither I saw it nor did anyone else. Then a rumor flew that every single person in Shahjahanpur saw it. This humble servant sent a reliable trustworthy person to a scholar friend of mine there. He said, "I will show you the reality of it." He took him by the hand and toured the city, going door to door asking when Eid is. They said Friday. He asked, "Did you see the moon?" They said, "No, I didn't see it." He asked, "Then why [Friday]?" There was no answer to this. The same answer was received from all over the city. Only one person said, "I saw the moon on Tuesday, and such-and-such persons were with me." Now this scholar, along with that reliable person, went to those other persons and inquired. They said he was lying. And he himself came with those two persons to that witness. Now he also retracted, saying, "Yes, I don't remember anything." Then news heated up that the moon was sighted in Rampur and Friday was declared as Eid. This humble servant sent two trustworthy persons to two noble scholars among their friends there. It was found that there too it was cloudy and no one saw it. Regarding this, it was only known that two persons came after seeing it from Delhi. Those scholars called those two witnesses and made them testify before those two trustworthy persons, making them complete the testimony using the words this humble servant had written for them. Both scholar gentlemen themselves did the authentication (tazkiyah) of those two original witnesses. Now those two branch witnesses came here and gave testimony upon testimony according to the Sharia rule. At that time, this humble servant gave the fatwa for Eid. Look, this is the state of rumors and news. There is no power or might except with Allah, the Most High, the Supreme.

Third: Letters and newspapers: The height of it is that a letter came from such-and-such place, or it was found written in such-and-such newspaper. Whereas we have

already explained in the fourth method that even a specific sealed and signed letter from a Shar'i judge (Hakim-e-Shar'), on which his own seal and the seal of the judiciary department are present and is written in his own hand, and addressed to the Shar'i judge here, is not acceptable at all unless two just witnesses, whom he had made witnesses to his record and handed over the letter, come here, give the letter to the Shar'i judge here, and testify. Then how can these postal postcards be worthy of attention? And newspaper rumors are not even worth mentioning at all. It is stated in Durr al-Mukhtar: "Action is not taken based on a letter (without testimony)."

1. Minhat al-Khaliq, marginalia of Bahr al-Ra'iq, Book of Fasting, before the chapter on what invalidates the fast, H.M. Saeed Company Karachi, 2/27.
2. Durr al-Mukhtar, Chapter: Book of the Judge to the Judge, Matba Mujtabai Delhi, 2/83.

फतावा रज़विया जिल्द 10

“उनका कहना प्रमाण के रूप में पर्याप्त नहीं है जब समाचार फैल जाए और सत्यापित हो जाए | जब समाचार प्रसिद्ध और सत्यापित हो क्योंकि सत्यापन उल्लेखित बात के अलावा नहीं हो सकता। | क्योंकि सत्यापन केवल उसी से होता है जिसका हमने उल्लेख किया है। (त)”

यह बार-बार लिखा गया है कि इस तरह की प्रसिद्धि अक्सर पूरी तरह निराधार निकलती है। इसी ज़िल हिज्जा के महीने में खबर फैली कि आँवला में चाँद हुआ है, वहाँ के अधिकारियों ने देखा और इस फ़क़ीर के एक विशेष दोस्त का नाम भी लिया गया। वह आए और अपनी दृष्टि और वहाँ सबके देखने का वर्णन करने लगे। फ़क़ीर ने उनके पास एक विश्वसनीय व्यक्ति को भेजा, वहाँ से उत्तर मिला कि यहाँ घना बादल था, न मैंने देखा और न ही किसी और ने देखा। फिर खबर उड़ी कि शाहजहाँपुर में तो एक-एक व्यक्ति ने देखा। फ़क़ीर ने वहाँ भी एक विश्वसनीय व्यक्ति को अपने एक विद्वान मित्र के पास भेजा। उन्होंने कहा, "मैं आपको इसकी वास्तविकता दिखाता हूँ।" उन्होंने उनका हाथ पकड़कर शहर का चक्कर लगाया, घर-घर जाकर पूछते फिर रहे थे कि ईद कब है। कहा गया शुक्रवार की। पूछा गया, "क्या चाँद देखा?" कहा, "नहीं देखा।" पूछा, "फिर क्यों?" इसका कोई जवाब नहीं था। पूरे शहर से यही जवाब मिला। केवल एक व्यक्ति ने कहा, "मैंने मंगलवार को चाँद देखा था और मेरे साथ अमुक-अमुक लोग भी थे।" अब यह विद्वान उस विश्वसनीय व्यक्ति के साथ उन अन्य व्यक्तियों के पास गए और उनसे पूछा। उन्होंने कहा कि वह झूठ बोल रहा था। और वह खुद उन दोनों व्यक्तियों के साथ उस गवाह के पास आए। अब वह भी पलट गए कि हाँ, कुछ याद नहीं। फिर खबर गर्म हुई कि रामपुर में चाँद देखा गया और शुक्रवार को ईद घोषित की गई। फ़क़ीर ने दो विश्वसनीय व्यक्तियों को वहाँ के दो विद्वान मित्रों के पास भेजा। पता चला कि वहाँ भी बादल था और किसी ने नहीं देखा। इस बारे में केवल इतना पता चला कि वहाँ दो व्यक्ति दिल्ली से देखकर आए हैं। उन विद्वानों ने उन दो गवाहों को बुलाकर उन दो विश्वसनीय व्यक्तियों के सामने गवाही दिलवाई और जो शब्द फ़क़ीर ने उन्हें लिखवाए थे, उन्हीं शब्दों में उनसे गवाही पूरी करवाई। दोनों विद्वान सज्जनों ने स्वयं उन दोनों मूल गवाहों का प्रमाणीकरण (तज़किया) किया। अब उन दोनों उप-गवाहों (फर'अ) ने यहाँ आकर शरीयत के नियम के अनुसार गवाही पर गवाही दी। उस समय फ़क़ीर ने ईद का फ़तवा दिया। देखिये, अफवाहों और समाचारों की यह स्थिति होती है। अल्लाह के अलावा कोई शक्ति या सामर्थ्य नहीं है, जो सबसे ऊँचा और महान है।

तीसरा: पत्र और समाचार: बड़ी बात यह होती है कि फलां जगह से पत्र आया, फलां अखबार में यह लिखा पाया। जबकि हम चौथे तरीके में वर्णन कर चुके हैं कि शरई हाकिम का विशेष मोहरबंद और हस्ताक्षरित पत्र, जिस पर उसकी अपनी और न्याय विभाग की मोहर लगी हो और उसके अपने हाथ का लिखा हो, और यहाँ के शरई हाकिम के नाम आए, तब भी वह तब तक स्वीकार्य नहीं है जब तक कि दो न्यायप्रिय गवाह, जिन्हें उसने अपनी किताब का गवाह बनाकर पत्र सौंपा हो, यहाँ आकर शरई हाकिम को पत्र देकर गवाही न दें। फिर ये डाक के पोस्टकार्ड क्या ध्यान देने योग्य हो सकते हैं? और अखबार की अफवाहें तो बिल्कुल ज़िक्र के लायक भी नहीं। दुर्र-ए-मुख्तार में है: "पत्र के आधार पर कार्य नहीं किया जाता (गवाही के बिना)।"

1. मिन्हातुल खालिक, हाशया बहरुल रायक, किताबुल सौम, रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों के अध्याय से पहले, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 2/27।
2. दुर्र-ए-मुख्तार, अध्याय: काज़ी का काज़ी के नाम पत्र, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 2/83।

पृष्ठ 430 का 836

لا یکفی بدلیل قولھم اذا استفاض الخبر و تحقق | جب خبر مشہور اور متحقق ہو کیونکہ تحقق مذکورہ بات کے علاوہ | فان التحقق لا یکون الا بما ذکرنا۔[1] | ہو ہی نہیں سکتا۔ (ت)

فقیر کو بارہا تحریر ہوا کہ ایسی شہرتیں محض بے سروپا نکلتی ہیں اسی ذی الحجہ میں خبر شائع ہوئی کہ آنولے میں چاند ہوا ہے وہاں عامل لوگوں نے دیکھا اور فقیر کے ایک دوست کا خاص نام بھی لیا گیا، وہ آئے اور خود اپنی رؤیت اور وہاں سب کا دیکھنا بیان کرتے تھے، فقیر نے اُن کے پاس ایک معتمد کو بھیجا وہاں سے جواب ملا کہ یہاں ابر غلیظ تھا نہ میں نے دیکھا نہ کسی اور نے دیکھا، پھر خبر اڑی کہ شاہجہان پور میں تو ایک ایک شخص نے دیکھا فقیر نے وہاں بھی ایک معتمد ثقہ کو اپنے ایک دوست عالم کے پاس بھیجا انہوں نے فرمایا اس کا حال میں آپ کو مشاہدہ کرائے دیتا ہوں، اُن کا ہاتھ پکڑ کر شہر میں گشت کیا، دروازہ دروازہ دریافت کرتے پھرتے عید کب ہے، کہا جمعہ کی، کہا کیا چاند دیکھا، کہا کہ دیکھا تو نہیں، کہا پھر کیوں؟ اس کا جواب کچھ نہ تھا، شہر بھر سے یہی جواب ملا، صرف ایک شخص نے کہا میں نے منگل کو چاند دیکھا تھا اور میرے ساتھ فلاں فلاں صاحب نے بھی۔ اب یہ عالم مع اُن معتمد کے دوسرے صاحب کے پاس گئے اُن سے دریافت کیا، کہا وہ غلط کہتا تھا، اور خود ان دونوں صاحبوں کے ساتھ ان گواہ صاحب کے پاس آئے، اب یہ بھی پلٹ گئے کہ ہاں کچھ یاد نہیں۔ پھر خبر گرم ہوئی کہ رامپور میں چاند دیکھا گیا اور جمعہ کی عید قرار پائی، فقیر نے دو ثقہ شخصوں کو وہاں کے دو علمائے کرام اپنے احباب کے پاس بھیجا معلوم ہوا وہاں بھی ابر تھا کسی نے بھی نہ دیکھا، اس بارے میں اتنا معلوم ہوا کہ وہاں دو شخص دہلی سے دیکھ کر آئے ہیں، ان علماء نے ان دو شاہدوں کو بلا کر ان دو ثقات کے سامنے شہادت دلوائی اور جو الفاظ فقیر نے انہیں لکھوا دئے تھے وہ ان سے کہلوا کر ان کو

تکمیل شہادت کرائی اور دونوں عالم صاحبوں نے خود ان دونوں شہود اصل کا تزکیہ کیا، اب ان دونوں فرع نے یہاں آکر شہادت علی الشہادت حسب قاعدہ شرعیہ دی اُس وقت فقیر نے عید کا فتویٰ دیا، دیکھئے افواہ اخبار کی یہ حالت ہوتی ہے، ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم۔

سوم خطوط و اخبار: بڑی دوڑی یہ ہوتی ہے کہ فلاں جگہ سے خط آیا، فلاں اخبار میں یہ لکھا پایا، حالانکہ ہم طریقِ چہارم میں بیان کر چکے کہ حاکم شرع کا خاص مُہری دستخطی خط جس پر خود اس کی اور محکمہ دارالقضا کی مُہر لگی اور اُس کے اپنے ہاتھ کا لکھا ہو، اور یہاں بھی حاکم شرع کے نام آئے، ہر گز بغیر دو شاہدوں عادل کے جنہیں لکھ کر اپنی کتاب کا گواہ بنا کر خط سپرد کیا اور یہاں اُنہوں نے حاکم شرع کو دے کر شہادت ادا کی ہو، مقبول نہیں، پھر یہ ڈاک کے پرچے کیا قابلِ التفات ہو سکتے ہیں، اور اخبار گپیں تو اصلاً نام لینے کے بھی قابل نہیں۔ در مختار میں ہے: لا یعمل بالخط[2] (خط پر عمل)

[1] منحۃ الخالق حاشیہ بحر الرائق کتاب الصوم قبیل باب ما یفسد الصوم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲۷/۲ [2] در مختار ، باب کتاب القاضی الی القاضی ، مطبع مجتبائی دہلی۔ ۸۳/۲

It will not be [done]. (T) In Hidayah it says: 'Al-Khattu yushbihu al-khatt falam yahsul al-ilm'[1] (One handwriting can resemble another, so definitive knowledge is not obtained. T)

Fourthly, the telegram: This is even more unreliable than a letter. In a letter, there is at least the mark of the writer's hand; here, even that is missing. So who would suggest acting upon it, except for the most ignorant of the ignorant, who hasn't even the slightest touch of knowledge? This humble servant [referring to the author] wrote a detailed fatwa in its refutation, which, by the grace of Allah Almighty, was endorsed by many scholars across India and published in Calcutta. A certain cleric from Gangoh, in one of his fatwas, deemed the news from a telegram as reliable in commercial matters and likened it to a written letter, arguing that a telegram is like a letter because the text consists of conventional characters from which the meaning is understood, whether produced by the movement of a pen or by the movement of a long stick or bamboo. (Until his statement): "In any case, the news via telegram is like a letter and is reliable. That is, writing in a letter is done with a pen; sending a telegram is like writing with a very long bamboo that stretches for thousands of miles. Just as the pen is reliable, so is this; in fact, this should be more reliable because there it's a small pen and here it's such a big bamboo, so reliability should increase proportionately. The turban should be in proportion to the pen." He ran his analogy well, but unfortunately, it remained utterly rejected and unsuccessful according to Sharia. Firstly: The differences between a letter and a telegram, which we have mentioned in our detailed fatwa, uproot this analogy from its very foundation. And even disregarding those, according to the ruling of Sharia, acting upon a letter itself is prohibited; then what role does this analogy of 'bamboo' have? If the ruling on the source of comparison (the letter) is void, then the subject of comparison (the telegram) is naturally void and useless. Maulana Lakhnawi, in his fatwas, also declared both letters and telegrams to be unreliable and coincided with the truth in this ruling. However, it is never correct to say that if news via telegram or letter reaches a degree of abundance (istifadhah), then it can be acted upon. Considering it part of 'istifadhah' is a manifest error. The meanings of 'istifadhah' that scholars have stated were mentioned in the fifth method: it requires multiple groups to arrive and give a unified statement. Here, even if letters or telegrams come from multiple places, firstly, they can never come under the chain of acceptable reports due to the reasons for their impermissibility which we have detailed in that fatwa.

Post office clerks, telegram operators, and mail carriers are often non-believers, or generally ignorant, or immoral transgressors. And even if we assume the opposite, this multiplicity would be in the content reported, not in the reporters. Even if the telegram operators here were trustworthy Muslims, there would never be so many multiple groups whose news would provide legal certainty (yaqin shar'i). Rather, in most cities, there are only one or two telegraph offices, and the main post office is only one, though there might be a few more branches for distribution in large cities. In any case, we will receive this letter or telegram through only a limited number of individuals. Then how is it related to 'istifadhah'? If Zaid comes and says that a hundred thousand people in a certain place saw the moon, would this become 'mustafid' news?

---

[1] Hidayah, Chapter: Book from the Qadi to the Qadi, Yusufi Press, Lucknow, 3/139.

नहीं किया जाएगा। (त) हिदाया में है: 'अल-ख़त्तु युश्बिहुल ख़त्त फ़लम यह्सुलुल इल्म'[1] (लिखावट, दूसरी लिखावट के समान हो सकती है तो पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ। त)

चतुर्थ तार (टेलीग्राम): यह पत्र से भी अधिक अविश्वसनीय है, पत्र में लेखक के हाथ का निशान तो होता है, यहाँ वह भी नहीं, तो इस पर अमल को कौन कहेगा सिवाय उस महामूर्ख के जिसे ज्ञान के नाम से भी स्पर्श नहीं, फ़क़ीर ने इसके खंडन में एक विस्तृत फ़तवा लिखा और अल्लाह तआला के अनुग्रह से इस पर भारत के अत्यधिक विद्वानों ने मुहरें लगाईं, जो कलकत्ता में छपकर प्रकाशित हुआ था। गंगोही मुल्ला ने अपने एक फ़तवे में तार के समाचार को व्यापारिक मामलों में विश्वसनीय ठहराया और इसे लिखित पत्र पर क़यास (तुलना) किया था कि तार का समाचार लिखित पत्र के समान है क्योंकि लेखन में पारिभाषिक अक्षर होते हैं जिससे अर्थ ज्ञात हो जाता है चाहे वे कलम की गति से उत्पन्न हों चाहे किसी लंबी लाठी या बाँस की गति से (उनके कथन तक) बहरहाल तार का समाचार पत्र के समान है और विश्वसनीय है, यानी पत्र में कलम से लिखते हैं तार देना ऐसा है कि किसी बड़े बाँस से जो हज़ारों कोस तक लंबा है लिख दिया तो जैसे वह विश्वसनीय है वैसे ही यह, बल्कि यह तो और अधिक विश्वसनीय होना चाहिए कि वहाँ छोटी सी कलम है और यहाँ इतना बड़ा बाँस, तो विश्वसनीयता भी उसी अनुपात में बढ़नी चाहिए, पगड़ी कलम की मात्रा के बराबर होनी चाहिए। क़यास तो उसने अच्छा दौड़ाया था मगर अफ़सोस कि शरीअत की दृष्टि में वह पूर्णतः खारिज और असफल रहा। प्रथम: पत्र और तार में जो अंतर हैं हमने अपने विस्तृत फ़तवे में उल्लेख किए हैं जो इस क़यास को जड़ से उखाड़ देते हैं और उनसे हटकर भी देखें तो शरीअत के आदेशानुसार पत्र पर ही अमल करना हराम है, फिर इस बाँस के क़यास का क्या काम, 'मक़ीस अलैहि' (जिससे तुलना की जाए) में नियम ही अमान्य है तो 'मक़ीस' (जिसकी तुलना की जाए) स्वयं ही रिक्त और व्यर्थ है। मौलवी साहब लखनवी ने अपने फ़तावा में पत्र और तार को अविश्वसनीय ही ठहराया और इस आदेश में सत्य का साथ दिया मगर यह कहना कदापि सही नहीं कि तार का समाचार या पत्र प्रचुरता (कसरत) के स्तर तक पहुँच जाए तो उस पर अमल हो सकता है, इसे 'इस्तिफ़ाज़ा' में सम्मिलित समझना स्पष्ट त्रुटि है। इस्तिफ़ाज़ा के जो अर्थ विद्वानों ने व्यक्त किए थे वे पाँचवीं विधि में उल्लिखित हुए, कि अनेक समूहों का आना और एक ही बात का बयान करना चाहिए। यहाँ यदि अनेक स्थानों से पत्र या तार आएँ भी तो प्रथम वे उन कारणों से जिनके कारण वे अमान्य हैं, जिन्हें हमने उस फ़तवे में विस्तार से उल्लेख किया है, हरगिज़ स्वीकार्य समाचारों की श्रेणी में नहीं आ सकते। डाक के मुंशी,

तार के बाबू, डाकिया अक्सर काफ़िर या सामान्यतः अज्ञानी या अनैतिक आचरण वाले होते हैं, और मान भी लिया जाए (जो कि गलत है) तो भी यह समाचारों की बहुलता हुई न कि समाचार देने वालों की, कि यहाँ तार लेने वाले बाबू यदि विश्वसनीय मुस्लिम भी हों तो भी वे कभी इतने अधिक समूह नहीं होंगे जिनकी समाचारों पर धार्मिक निश्चितता (यक़ीन-ए-शर्ई) प्राप्त हो बल्कि अधिकांश शहरों में केवल एक या दो तार घर होते हैं और मुख्य डाकघर तो एक ही होता है यद्यपि बड़े शहरों में वितरण के लिए दो चार शाखाएँ और भी हों। बहरहाल यह पत्र या तार हमें तो कुछ गिने-चुने व्यक्तियों के माध्यम से ही मिलेंगे फिर इस्तिफ़ाज़ा से क्या संबंध हुआ, क्या यदि ज़ैद आकर कह दे कि अमुक स्थान पर लाख व्यक्तियों ने चाँद देखा तो क्या यह समाचार 'मुस्तफ़ीज़' हो जाएगा?

---

[1] हिदाया, अध्याय: क़ाज़ी का पत्र क़ाज़ी के नाम, यूसुफ़ी प्रेस, लखनऊ, 3/139।

فتاوی رضویہ جلد دہم

نہیں کیا جائے گا۔ ت) ہدایہ میں ہے: الخط یشبہ الخط فلم یحصل العلم[1] (تحریر، دوسری تحریر کے مشابہ ہو سکتی ہے تو علم قطعی حاصل نہ ہوا۔ ت)

چہارم تار: یہ خط سے بھی زیادہ بے اعتبار، خط میں کاتب کے ہاتھ کی علامت تو ہوتی ہے، یہاں اس قدر بھی نہیں، تو اس پر عمل کو کون کہے گا مگر اجہل سا اجہل جسے علم کے نام سے بھی مس نہیں، فقیر نے اس کے رد میں ایک مفصل فتوی لکھا اور بحمد اللہ تعالٰی اس پر ہندوستان کے بکثرت علماء نے مہریں کیں کلکتے میں چھپ کر شائع ہوا تھا، گنگوہی مُلا نے اپنے ایک فتوی میں تار کی خبر اسباب میں معتبر ٹھہرائی اور اسے تحریر خط پر قیاس کیا تھا کہ تار کی خبر مثل تحریر خط کے ہے کیونکہ تحریر میں حروف اصطلاحی ہیں جس سے مطلب معلوم ہو جاتا ہے خواہ بحرکت قلم پیدا ہوں خواہ کسی لاٹھی یا بانس طویل کی حرکت سے (الی قولہ) بہر حال خبر تار کی مثل خط ہے اور معتبر ہے، یعنی خط میں قلم سے لکھتے ہیں تار دینا ایسا ہے کہ کسی بڑے بانس سے جو ہزاروں کوس تک لمبا ہے لکھ دیا تو جیسے وہ معتبر ہے ویسے ہی یہ، بلکہ یہ تو زیادہ معتبر ہونا چاہئے کہ وہاں چھوٹا سا قلم ہے اور یہاں اتنا بڑا بانس، تو اعتبار بھی اسی نسبت پر بڑھنا چاہئے، شملہ بہ مقدار قلم، قیاس تو اچھا دوڑاتا تھا مگر افسوس کہ شرعاً محض مردود و نا کام رہا۔ اولاً: خط و تار میں جو فرق ہیں ہم نے اپنے فتوی مفصل میں ذکر کئے جو اس قیاس کو از بیخ و بن بر کندہ کرتے اور ان سے قطع نظر بھی کیجئے تو بحکم شرع خط ہی پر عمل حرام، پھر اس بانس کے قیاس کا کیا کام، حکم مقیس علیہ میں باطل ہے تو مقیس آپ ہی عاری و عاطل ہے، مولوی صاحب لکھنوی نے اپنے فتاوی میں خط و تار کو بے اعتبار ہی ٹھہرایا اور اس حکم میں حق کی موافقت کی مگر یہ کہنا ہر گز صحیح نہیں کہ خبر تار یا خط بدرجہ کثرت پہنچ جائے تو

اس پر عمل ہو سکتا ہے، اسے استفاضہ میں داخل سمجھنا صریح غلط، استفاضے کے معنی جو علماء نے بیان فرمائے تھے وہ تھے کہ طریق پنجم میں مذکور ہوئے، متعدد جماعتوں کا آنا اور یک زبان بیان کرنا چاہئے، یہاں اگر متعدد جگہ سے خط یا تار آئے بھی تو اولاً وہ ان وجوہ ناجوازی سے جنہیں ہم نے اس فتوی میں مفصلاً ذکر کیا ہر گز بیان مقبول کے سلسلے میں نہیں آسکتے، ڈاک کے منشی، تار کے بابو، چٹھی رساں اکثر کفار یا عموماً مجاہیل یا فساق فجار ہوتے ہیں، اور بفرض باطل آئیں بھی تو یہ تعدد مخبر عنہ میں ہوانہ کہ مخبرین میں کہ یہاں تار لینے والے بابو اگر مسلمان ثقہ ہوں بھی تو ہر گز اتنی جماعات متعددہ نہ ہوں گی جن کی اخبار پر یقین شرعی حاصل ہو بلکہ عامہ بلاد میں صرف دو ایک ہی تار گھر ہوتے اور صدر ڈاک خانہ تو ایک ہی ہوتا ہے اگرچہ بڑے شہر میں تقسیم کے لیے دو چار برانچ اور بھی ہوں، بہر حال یہ خط یا تار ہم کو تو معدود ہی شخصوں کے ذریعہ سے ملیں گے پھر استفاضے سے کیا علاقہ ہوا، کیا اگر زید آکر کہہ دے کہ فلاں جگہ لاکھ آدمیوں نے چاند دیکھا تو یہ خبر مستفیض

---

[1] ہدایہ باب کتاب القاضی الی القاضی مطبع یوسفی لکھنو ۳/ ۱۳۹

Fatawa Ridawiyya (Volume 10)

...were called. And there is no power nor might except with Allah, the Most High, the Most Great.

Fifth: Statement of the Almanacs (Calendars): That such and such a day is the first (of the month). Initially, some Shafi'i scholars, some Mu'tazilites, and others held the view that the statement of trustworthy Muslim astrologers could be considered reliable in this matter. Some added a condition that if a large group of them unanimously states that the first of such and such a month is on such and such a day, then it is worthy of acceptance, although it is not binding on anyone to act upon it according to anyone. However, our noble Imams and the majority of prominent researchers do not accept this at all and do not consider acting upon it permissible. This is the truth, as the Noble Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him) has already clarified in an authentic Hadith the disregard and non-consideration of the astrologers' statements here. So, what is the room for acting upon it now? It is stated in 'Durr al-Mukhtar':

- No consideration is given to the statement of the timekeepers (astrologers), even if they are just, according to the (correct) school of thought. [1]
- According to the correct school of thought, the statement of the timekeepers is not reliable, even if they are just. (T)

It is stated in 'Radd al-Muhtar':

- Rather, it is mentioned in 'al-Mi'raj' that their statement is not reliable by consensus, and it is not permissible for an astrologer to act according to his own calculations. [2]
- Rather, it is mentioned in 'al-Mi'raj' that the statement of the timekeepers is not reliable by consensus, and it is not permissible for astrologers to follow their own calculations. (T)

When this is the state of the statements of reliable, trustworthy Muslim astrologers, then how can today's almanacs, which are generally published by Hindus and other non-believers, or some 'Naturalist' Muslims by name, or even some Muslims who follow these Hindu almanacs, be worthy of attention? For twenty years, this humble person (the author) has observed many famous almanacs. Firstly, the 'Misrani' astronomy itself is deficient and flawed, and then these almanac makers do not even have full discernment in it. Such gross and flagrant errors were seen in planetary

ephemerides that even an intelligent child would not fall into. Then what are they and what is their almanac? And who cares about their 'Dooj' (second day) or 'Parwa' (first day)!

Sixth: Conjectures and Indications: For example, "the moon was large, it was bright, it stayed for a long time, so it must have been from yesterday," or "it set late today, so it must be the fifteenth," or "it was seen on the twenty-eighth, so the month will be thirty days," or "we looked hard on the twenty-eighth and it wasn't seen, so the month will be twenty-nine days." These conjectures do not even have the weight of calculations, so acting upon them is pure ignorance and error. In the Hadith, the Radiant Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him) says:

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Mujtabai Press, Delhi, 1/148.
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Press, Egypt, 2/100.

फ़तावा रज़विया (खंड 10)

...कहलाए गए। और अल्लाह के सिवा कोई शक्ति और सामर्थ्य नहीं है, जो सबसे ऊँचा और महान है।

पाँचवाँ: पंचांगों (جنتریوں) का बयान: कि फलाँ दिन पहली (तारीख) है। शुरू में कुछ शाफ़ई विद्वानों, कुछ मुअतज़िला और अन्य लोगों का यह विचार था कि मुसलमान न्यायप्रिय ज्योतिषियों की बात इस मामले में विश्वसनीय हो सकती है। कुछ ने यह शर्त लगाई थी कि जब उनकी एक बड़ी जमात एक स्वर में यह बयान करे कि फलाँ महीने की पहली तारीख फलाँ दिन है, तो वह स्वीकार किए जाने योग्य है, हालांकि किसी के अनुसार उस पर अमल करना अनिवार्य नहीं है। लेकिन हमारे महान इमामों और अधिकांश प्रमुख शोधकर्ताओं ने इसे बिल्कुल भी स्वीकार नहीं किया है और इस पर अमल करना जायज़ नहीं मानते। यही सत्य है कि महान पैग़म्बर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) ने एक सही हदीस में ज्योतिषियों की बात को नज़रअंदाज़ करने और उसे ध्यान में न रखने को स्पष्ट कर दिया है। तो फिर अब उस पर अमल करने की क्या जगह है? 'दुर्र-ए-मुख़्तार' में है:

- सही मज़हब के अनुसार समय बताने वालों (ज्योतिषियों) की बात विश्वसनीय नहीं है, चाहे वे न्यायप्रिय ही क्यों न हों। [1]
- सही मज़हब के अनुसार समय बताने वालों की बात विश्वसनीय नहीं है, चाहे वे न्यायप्रिय हों। (त)

'रद्दुल मुहतार' में है:

- बल्कि 'अल-मेराज़' में है कि समय बताने वालों की बात सर्वसम्मति (इज्मा) से विश्वसनीय नहीं है और ज्योतिषी के लिए यह जायज़ नहीं है कि वह अपनी गणना पर अमल करे। [2]
- बल्कि 'मेराज़' में है कि समय बताने वालों की बात सर्वसम्मति से विश्वसनीय नहीं है और ज्योतिषियों के लिए यह जायज़ नहीं है कि वे अपनी गणना का पालन करें। (त)

जब विश्वसनीय मुसलमान ज्योतिषियों के बयानों का यह हाल है, तो आज के पंचांग, जो आम तौर पर हिंदुओं और अन्य गैर-मुस्लिमों द्वारा प्रकाशित किए जाते हैं, या कुछ नाममात्र के'नेचरी' मुसलमान, या कुछ मुसलमान जो इन्हीं हिंदुस्तानी पंचांगों का अनुसरण करते हैं, क्या वे ध्यान देने योग्य हो सकते हैं? फ़क़ीर (लेखक) ने बीस (20) वर्षों से बड़े-बड़े नामी पंचांग देखे हैं। पहली बात तो यह कि

'मिसरानी' खगोल विज्ञान ही अधूरा और त्रुटिपूर्ण है, फिर इन पंचांग बनाने वालों को इसकी पूरी समझ भी नहीं है। ग्रहों की गणनाओं (तक़वीमात) में ऐसी भयंकर और बड़ी गलतियाँ देखने में आईं कि कोई समझदार बच्चा भी उनमें न पड़ता। फिर ये क्या और इनका पंचांग क्या, और उनकी 'दूज' या 'परवा' की किसे परवाह!

छठा: अनुमान और संकेत: उदाहरण के लिए, "चाँद बड़ा था, चमकदार था, देर तक रहा तो ज़रूर कल का था," "आज देर से निकला तो ज़रूर पंद्रहवीं है," "अठ्ठाइसवीं को देखा गया था तो महीना तीस का होगा," "अठ्ठाइसवीं को बहुत देखा गया और नज़र नहीं आया तो महीना उनतीस का होगा।" ये अनुमान तो गणनाओं की भी हैसियत नहीं रखते, फिर उन पर अमल करना केवल अज्ञानता और भूल है। हदीस में है कि महान पैग़म्बर (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) फ़रमाते हैं:

1. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताबुल सौम, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/148।
2. रद्दुल मुहतार, किताबुल सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी प्रेस, मिस्र, 2/100।

کہلائے گئے ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم۔ پنجم جنتریوں کا بیان : کہ فلاں دن پہلی ہے، اول بعض علمائے شافعیہ و بعض معتزلہ و غیرہم کا خیال اس طرف گیا تھا کہ مسلمان عادل منجموں کا قول اس بارے میں معتبر ہو سکتا ہے اور بعض نے قید لگائی تھی کہ جب اُن کی ایک جماعت کثیر یک زبان بیان کرے کہ فلاں مہینے کی یکم فلاں روز ہے تو مقبول ہونے کے قابل ہے اگرچہ واجب العمل کسی کے نزدیک نہیں، مگر ہمارے ائمہ کرام اور جمہور محققین اعلام اسے اصلاً تسلیم نہیں فرماتے اور اس پر عمل جائز ہی نہیں رکھتے اور یہی حق ہے کہ حضور پر نور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم صحیح حدیث میں یہاں قولِ منجمین سے قطع نظر و عدمِ لحاظ کی تصریح فرما چکے، پھر اب اُس پر عمل کا کیا محل۔ در مختار میں ہے :

لا عبرۃ بقول الموقتین ولو عدولا علی المذہب۔1 | صحیح مذہب کے مطابق اہل توقیت کا قول معتبر نہیں اگرچہ وہ عادل ہو۔ (ت)

رد المحتار میں ہے :

بل فی المعراج لا یعتبر قولھم بالاجماع ولا یجوز للمنجم ان یعمل بحساب نفسہ۔2 | بلکہ معراج میں ہے کہ اہل توقیت کا قول بالاجماع معتبر نہیں اور منجمین کے لیے جائز نہیں کہ وہ اپنے حساب پر عمل پیرا ہوں (ت)

جب منجمین مسلمین ثقات عدول کے بیان کا یہ حال تو آجکل کی جنتریوں جو عموماً ہنود و غیرہم کفار شائع کرتے ہیں یا بعض نیچری نام کے مسلمان یا بعض مسلمان بھی، تو وہ بھی انہی ہندوانی جنتریوں کی پیروی سے، کیا قابل التفات ہو سکتی ہیں؟ فقیر نے بیس ۲۰ برس سے بڑی بڑی نامی

جنتریوں دیکھیں، اول مصرانی ہیئت ہی ناقص و مختل ہے پھر ان جنتری سازوں کو اس کی بھی پوری تمیز نہیں، تقویمات کواکب میں وہ وہ سخت فاحش غلطیاں دیکھنے میں آئیں جن میں کوئی سمجھ دار بچہ بھی نہ پڑتا پھر یہ کیا اور ان کی جنتری کیا، اور ان کی دوج اور پروا کی کسے پروا!

ششم قیاسات و قرائن : مثلاً چاند بڑا تھا روشن تھا دیر تک رہا تو ضرور کل کا تھا، آج بیٹھ کر نکلا تو ضرور پندرھویں ہے، اٹھائیسویں کو نظر آیا تھا مہینہ تیس کا ہوگا، اٹھائیسویں کو بہت دیکھا نظر نہ آیا مہینہ انتیس کا ہوگا۔ یہ قیاسات تو حسابات کی وقعت بھی نہیں رکھتے، پھر ان پر عمل محض جہل و زلل۔ حدیث میں ہے حضور پر نور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں :

1 در مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱۴۸/۱ 2 رد المحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۱۰۰/۲

Fatawa Razawiyya (Volume 10)

“Among the signs of the approach of the Hour is the swelling of the crescents.” — Narrated by al-Tabarani in 'al-Kabir' from Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him). One of the signs of the nearness of the Day of Judgment is that the new crescents will appear large. That is, they will seem big when viewed. (Narrated by al-Tabarani in al-Mu'jam al-Kabir from Hadhrat Abdullah bin Mas'ud, may Allah be pleased with him. — T)

In another Hadith, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: “Among the signs of the approach of the Hour is that the crescent will be seen plainly and it will be said it is of two nights.” — Narrated in 'al-Awsat' from Anas (may Allah be pleased with him). Among the signs of the Judgment is that the moon will be visible effortlessly, and it will be said that it is two nights old. (Narrated by al-Tabarani in 'al-Awsat' from Hadhrat Anas, may Allah be pleased with him. — T)

In Sahih Muslim from Abu al-Bakhtari Sa'id bin Fayruz: He said: We went out for Umrah and when we stopped at Batn Nakhlah, he said: We looked for the crescent. Some people said it is three nights old, while others said it is two nights old. Then we met Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them both) and mentioned it to him. He asked, "Which night did you see it?" We replied, "On such and such night." He said, "Verily, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) extended it (the period of its visibility) based on sighting, so it belongs to the night on which you saw it." We went for Umrah, and when we reached Batn Nakhlah, we saw the crescent. Someone said it is three nights old, someone said for two nights. We met Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them both) and told him we saw the crescent, some say it is three nights old, some say two. He asked: Which night did you see it? We said: Such and such night. He said: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) based its determination on the sighting, so it belongs to that night on which it was seen.

Seventh: Some inductive and some fabricated rules. For example: the fourth of Rajab will be the first of Ramadan. The first of Ramadan will be the tenth of Dhu al-Hijjah. The fifth of the next Ramadan will be the first of this Ramadan. If four consecutive months have been thirty days each, this one must be twenty-nine; if three consecutive months have been twenty-nine, this one must be thirty. The answer to them is simply this: “Allah has sent down no authority for them” [12:40] (The Holy

Truth has sent down no proof for these things). It is mentioned in 'Wajiz al-Imam al-Kardari':

1. Al-Mu'jam al-Kabir li-al-Tabarani, Hadith 10451, Al-Maktaba al-Faysaliyya, Beirut, 10/244
2. Kanz al-Ummal with reference to Tabarani Awsat, Hadith 38702, Muassasa al-Risala, Beirut, 12/420
3. Sahih Muslim, Chapter: No consideration for the largeness or smallness of the crescent, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/448
4. Al-Quran 12/40

फ़तावा रज़विया (खंड दसवां)

"क़यामत की नज़दीकी की निशानियों में से एक हिलाल (नया चाँद) का फूला हुआ होना है।" — इसे तबरानी ने 'अल-कबीर' में अब्दुल्ला बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। क़यामत की नज़दीकी की निशानियों में से है कि हिलाल (नया चाँद) फूले हुए निकलेंगे। यानी देखने में बड़े मालूम होंगे। (इसे तबरानी ने अल-मुअजम अल-कबीर में हज़रत अब्दुल्ला बिन मसूद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। — त)

दूसरी हदीस में है, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फरमाते हैं: "क़यामत की नज़दीकी की निशानी यह है कि चाँद साफ़ तौर पर नज़र आएगा और कहा जाएगा कि यह दो रातों का है।" — इसे अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से 'अल-औसत' में रिवायत किया गया है। क़यामत की निशानियों में से है कि चाँद बिना किसी मशक़्क़त के नज़र आएगा और कहा जाएगा कि यह दो रात का है। (इसे तबरानी ने 'औसत' में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। — त)

सहीह मुस्लिम शरीफ़ में अबुल बख़्तरी सईद बिन फ़ैरोज़ से है: उन्होंने कहा: हम उमराह के लिए निकले, जब हम बत्न-ए-नख़्ला में उतरे, उन्होंने कहा: हमने चाँद देखा। कुछ लोगों ने कहा कि यह तीन रातों का है, और कुछ ने कहा कि यह दो रातों का है। फिर हम अब्दुल्ला बिन अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से मिले और उनसे अर्ज़ की कि हमने हिलाल देखा, कोई कहता है कि यह तीन रातों का मामला है और कोई कहता है दो रातों का। उन्होंने पूछा: तुमने किस रात देखा? हमने कहा: फ़लाँ रात। उन्होंने कहा: रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इसका दारोमदार रूय्यत (देखने) पर रखा है, तो वह उसी रात का है जिस रात नज़र आया। हम उमराह के लिए चले जब बत्न-ए-नख़्ला में उतरे तो चाँद देखा, कोई बोला तीन रात का है, किसी ने कहा दो रात का, अब्दुल्ला बिन अब्बास रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से मिले उनसे अर्ज़ की कि हमने चाँद देखा, कोई कहता है तीन रातों का मामला है कोई दो रातों का, फ़रमाया: तुमने किस रात देखा? हमने कहा फ़लाँ रात। कहा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने इसका दारोमदार रूय्यत पर रखा है तो वह उसी रात का है जिस रात नज़र आया।

सातवाँ: कुछ आगमनात्मक (Inductive) और कुछ मनगढ़ंत नियम। जैसे: रजब की चौथी तारीख़ रमज़ान की पहली होगी। रमज़ान की पहली ज़िल-हिज्जा की दसवीं होगी। अगले रमज़ान की पाँचवीं इस रमज़ान की पहली होगी। चार महीने लगातार तीस-तीस के हो चुके हैं तो यह ज़रूर उनतीस का

होगा, तीन लगातार उनतीस के हुए हैं तो यह ज़रूर तीस का होगा। इनका जवाब बस इतना है: "अल्लाह ने इनके लिए कोई दलील नहीं उतारी।" [12:40] (हक़ सुब्हानहू ने इन बातों पर कोई दलील नहीं उतारी।) वजीज़ इमाम करदरी में है:

1. अल-मुअजम अल-कबीर लित-तबरानी, हदीस 10451, अल-मक्तबा अल-फैसलिया, बैरुत, 10/244
2. कँज़ुल उम्माल बहवाला तबरानी औसत, हदीस 38702, मुअस्ससतुल रिसाला, बैरुत, 12/420
3. सहीह मुस्लिम, बाब: इस बात का बयान कि चाँद के बड़े या छोटे होने का कोई एतबार नहीं, क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/448
4. अल-क़ुरआन 12/40

مِن اقتراب الساعة انتفاخ الأهلة - رواه الطبراني فی الکبیر عن عبداللہ بن مسعود رضي اللہ تعالی عنہ۔ قربِ قیامت کی علامات سے ہے کہ ہلال بھولے ہوئے نکلیں گے ۔ یعنی دیکھنے میں بڑے معلوم ہوں گے۔ (اسے طبرانی نے المعجم الکبیر میں حضرت عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ ت)

دوسری حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: من اقتراب الساعة ان یری الھلال قبلاً ویقال ھو للیلتین۔ رواہ فی الاوسط عن انس رضی اللہ تعالی عنہ۔ علاماتِ قیامت سے ہے کہ چاند بے تکلف نظر آئے گا کہا جائیگا دو رات کا ہے (اسے طبرانی نے اوسط میں حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ ت)

صحیح مسلم شریف میں ابوالبختری سعید بن فیروز سے ہے : قال خرجنا للعمرة فلما نزلنا ببطن نخلة قال تراءینا الھلال فقال بعض القوم ھو ابن ثلاث وقال بعض القوم ھو ابن لیلتین فقال ای لیلة رأیتموہ قال قلنا لیلة کذا وکذا، فقال ان رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم مدہ للرؤیة فھو للیلة رأیتموہ۔ ہم عمرے کو چلے جب بطن نخلہ میں اترے ہلال دیکھا، کوئی بولا تین رات کا ہے، کسی نے کہا دو رات کا، عبداللہ بن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما سے ملے اُن سے عرض کی کہ ہم نے ہلال دیکھا، کوئی کہتا ہے تین شب کا مدار ہے کوئی دو شب کا، فرمایا: تم نے کس رات دیکھا؟ ہم نے کہا فلاں شب۔ کہا رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے اس کا مدار رؤیت پر رکھا ہے تو وہ اسی رات کا ہے جس رات نظر آیا۔

ہفتم کچھ استقرائی کچھ اختراعی قاعدے: مثلاً رجب کی چوتھی رمضان کی پہلی ہوگی۔ رمضان کی پہلی ذی الحجہ کی دسویں ہوگی۔ اگلے رمضان کی پانچویں اس رمضان کی پہلی ہوگی۔ چار مہینے برابر تیں تیں کے ہوچکے ہیں یہ ضرور انیس کا، تین پے درپے انیس کے ہوئے ہیں یہ ضرور تیں کا ہوگا۔ ان کا جواب اسی قدر میں ہے: مَا أَنْزَلَ اللَّهُ بِهَا مِنْ سُلْطَانٍ (حق سبحانہ نے ان باتوں پر کوئی دلیل نہ اتاری۔) وجیز امام کردری میں ہے :

1 المعجم الکبیر للطبرانی حدیث ۱۰۴۵۱ المکتبة الفیصلیة بیروت ۲۴۴/۱۰ 2 کنز العمال بحوالہ طبرانی اوسط حدیث ۳۸۷۰۲ مؤسسة الرسالة بیروت ۴۲۰/۱۲ 3 صحیح مسلم باب بیان انه لا اعتبار بکبر الہلال و صغرہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۴۴۸/۱ 4 القرآن ۴۰/۱۲

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Arabic Quote]: Shahru Ramadan ja'a yaumal khameesi la yudahi aidan fi yaumal khameesi malam yatahaqqaq annahu yauman nahr, wa ma nuqila 'an Ali radiyallahu ta'ala 'anhu anna yauma awwalis saumi yauman nahr laisa bitashree'in kulli bal ikhbarun 'an ittefaqin fi hadhihis sanah wa kadha ma huwa ar-rabi'u min rajabin la yalzam an yakuna ghurrata ramadan bal qad yattafiqu - 1

[Urdu Translation]: If the month of Ramadan begins on a Thursday, the sacrifice (on Eid al-Adha) will not be valid on Thursday until it is proven that it is the day of sacrifice. What is narrated from Hazrat Ali (may Allah be pleased with him) that "the first day of fasting is the day of sacrifice" is not a universal Shariah rule, but rather a statement of a coincidence that occurred in that specific year. Similarly, it is not necessary for the fourth day of Rajab to be the first day of Ramadan, though it may occasionally happen so coincidentally. (T)

In Khizana al-Muftin, from Fatawa Kubra, it is stated:

[Arabic Quote]: Ma yurwa anna yauma nahrikum yauma saumikum kana waqa'a dhalikal 'ama bi'ainihi dunal abdalani min awwali yaumi ramadan ila ghurrati dhil hijjati thalathata ashurun fala yuwafiqu yauman nahr yaumas saumi illa an yatimma shahruni minath thalathati wa yanqusal wahidu fa'idha tammatish shuhuruth thalathatu tata'akharu 'anhu wa idha naqasatish shuhuruth thalathatu au shahruni taqaddama 'alaihi fala yasihhul i'timadu 'ala hadha - 2

[Urdu Translation]: What is narrated that "the day of your sacrifice is the day of your fasting" happened in that specific year and is not an eternal rule. Because from the first day of Ramadan to the first day of Dhu al-Hijjah, there are three months. There cannot be agreement between the day of sacrifice and the day of fasting except in the case where two of these three months are complete (30 days) and one is deficient (29 days). Now, if all three months are complete, there will be a delay, and if three or two are deficient, there will be an advancement. Therefore, reliance on this is not correct. (T)

This summary discussion is sufficient, and the full details of these rulings are in the treatises and issues of this humble person (Faqir). And with Allah is success, and Allah Almighty knows best.

Problem 204: From Pilibhit, asked by Abdul Jalil, Merchant. 13 Safar-ul-Muzaffar 1334 AH. To the respected Maulana Sahib, may your honor last, after the gift of the Sunnah greeting of Islam, the request is that this time...

Footnotes: 1. Fatawa Bazzaziyya on the margin of Fatawa Hindiyya, Book of Fasting, Chapter One, Noorani Kutub Khana Peshawar 2/92. 2. Khizana al-Muftin, Book of Fasting, Manuscript, 1/20.

फ़तावा रज़विया खंड 10

[अरबी उद्धरण]: शहरु रमज़ान जाअ यौमल खमीसी ला युदाही ऐज़न फ़ी यौमल खमीसी मालम यतहक़्क़क़ अन्नहू यौमन नहर, व मा नुक़िला अन अली रदियल्लाहु तआला अन्हु अन्ना यौम अव्वलिस सौमी यौमन नहर लैसा बितशरीइन कुल्ली बल इख़बारुन अन इत्तिफ़ाक़िन फ़ी हाज़िहिस सनह व कज़ा मा हुवा अर-राबीउ मिन रजबिन ला यलज़म अन यकूना ग़ुर्रत रमज़ान बल क़द यत्तफ़िक़ु - 1

[उर्दू अनुवाद]: रमज़ान का महीना गुरुवार को शुरू हुआ तो यौम-ए-ख़मीस (गुरुवार) को क़ुर्बानी जायज़ न होगी जब तक इस बात का सुबूत न हो जाए कि यह क़ुर्बानी का दिन है, और जो हज़रत अली रदियल्लाहु तआला अन्हु से मरवी है कि रोज़े का पहला दिन ईद का दिन होता है, यह शरीअत का कायदा-ए-कुल्लिया (सामान्य नियम) नहीं बल्कि उस साल इत्तिफ़ाक़न ऐसा हो जाने का बयान है। इसी तरह जो रजब का चौथा दिन है लाज़िम नहीं वह रमज़ान का पहला दिन हो हाँ कभी ऐसा इत्तिफ़ाक़न हो जाता है (त)।

ख़ज़ाना-उल-मुफ़्तीन में फ़तावा क़ुबरा से है:

[अरबी उद्धरण]: मा युरवा अन्ना यौम नह रिकुम यौम सौमिकुम काना वक़अ ज़ालिकल आम बि-ऐनिही दूनल अबदालानी मिन अव्वलि यौमि रमज़ान इला ग़ुर्रति ज़िल हिज्जति सलासता अशुरुन फ़ला युवाफ़िक़ु यौमन नहर यौमस सौमि इल्ला अन यतिम्म शहरुनी मिनस सलासति व यनकुसल वाहिदु फ़-इज़ा तम्तश शुहुरुस सलासतु तत-अख़रु अन्हु व इज़ा नक़सतिश शुहुरुस सलासतु औ शहरुनी तक़द्दम अलैहि फ़ला यसिहहुल इअतिमादु अला हाज़ा - 2

[उर्दू अनुवाद]: यह जो मरवी है कि तुम्हारी ईद का दिन तुम्हारे रोज़े का दिन है, यह हमेशा के लिए नहीं बल्कि मुअय्यन साल में ऐसा वाक़या हुआ था क्योंकि रमज़ान के पहले दिन से ले कर ज़िल हिज्जा के पहले दिन तक तीन माह होते तो यौम-ए-नहर और यौम-ए-सौम में मुवाफ़क़त (समानता) नहीं हो सकती मगर इस सूरत में कि जब इन तीन माह में से दो कामिल (30 दिन के) हों और एक नाक़िस (29 दिन का), अब अगर तीनों माह कामिल होते हैं तो उस से ताख़ुर (देरी) होगा और अगर तीन या दो नाक़िस हो जाते हैं तो फिर उस पर तक़द्दुम (बढ़त) होगा लिहाज़ा इस पर एतिमाद दुरुस्त नहीं। (त)

यह कलाम इजमाली (संक्षिप्त चर्चा) बक़द्र-ए-किफ़ायत है और इन अहकाम की तफ़सील-ए-ताम रसाएल व मसाएल-ए-फ़क़ीर में है वबिल्लाहित तौफ़ीक़, वल्लाहु तआला आलम।

मसला 204: पीलीभीत से, प्रार्थी अब्दुल जलील सौदागर। 13 सफ़र-उल-मुज़फ़्फ़र 1334 हिजरी। जनाब मौलाना साहब मुकर्रम दाम इकरामकुम बाद हदीया सलाम सुन्नत-उल-इस्लाम के गुज़ारिश यह है कि इस मर्तबा...

फुटनोट: 1. फ़तावा बज़ाज़िया, फ़तावा हिंदिया के हाशिये पर, किताब-उस-सौम, अध्याय एक, नूरानी कुतुब खाना पेशावर 2/92। 2. ख़ज़ाना-उल-मुफ़्तीन, किताब-उस-सौम, हस्तलिखित प्रति, 1/20।

पृष्ठ 434 / 836

شهر رمضان جاء یوم الخمیس لا یضحی ایضا في یوم الخمیس مالم یتحقق انه یوم النحر، وما نقل عن علی رضی اللہ تعالی عنه ان یوم اول الصوم یوم النحر لیس بتشریع کلی بل اخبار عن اتفاق فی هذه السنة وکذا ما هو الرابع من رجب لا یلزم ان یکون غرة رمضان بل قد یتفق ۔ 1 رمضان کا مہینہ جمعرات کو شروع ہوا تو یومِ خمیس کو قربانی جائز نہ ہوگی جب تک اس بات کا ثبوت نہ ہوجائے کہ یہ قربانی کا دن ہے، اور جو حضرت علی رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی ہے کہ روزے کا پہلا دن عید کا دن ہوتا ہے، یہ شریعت کا قاعدہ کلیہ نہیں بلکہ اس سال اتفاقاً ایسا ہوجانے کا بیان ہے۔ اسی طرح جو رجب کا چوتھا دن ہے لازم نہیں وہ رمضان کا پہلا دن ہو ہاں کبھی ایسا اتفاقاً ہو جاتا ہے(ت) خزانہ المفتین میں فتاوی کبری سے ہے: ما یروی ان یوم نحرکم یوم صومکم کان وقع ذلك العام بعینه دون الابدلان من اول یوم رمضان الی غرة ذی الحجة ثلاثة اشهر فلا یوافق یوم النحر یوم الصوم الا ان یتم شهر ان من الثلثة وینقص الواحد فاذا تمت الشهور الثلثة تتأخر عنه واذا نقصت الشهور الثلثة او شهران تقدم علیه فلا یصح الاعتماد علی هذا ۔ 2 یہ جو مروی ہے کہ تمہاری عید کا دن تمہارے روزے کا دن ہے، یہ ہمیشہ کے لیے نہیں بلکہ معین سال میں ایسا واقعہ ہوا تھا کیونکہ رمضان کے پہلے دن سے لے کر ذوالحجہ کے پہلے دن تک تین ماہ ہوتے تو یومِ نحر اور یومِ صوم میں موافقت نہیں ہوسکتی مگر اس صورت میں کہ جب ان تین ماہ میں سے دو کامل ہوں اور ایک ناقص، اب اگر تینوں ماہ کامل ہوتے ہیں تو اس سے تاخر ہوگا اور اگر تین یا دو ناقص ہو جاتے ہیں تو پھر اس پر تقدم ہوگا لہذا اس پر اعتماد درست نہیں۔ (ت) یہ کلام اجمالی بقدر کفایت ہے اور ان احکام کی تفصیل تام رسائل و مسائل فقیر میں ہے وباللہ التوفیق، واللہ تعالی اعلم۔ مسئلہ ۲۰۴:

از پیلی بھیت مسئولہ عبدالجلیل سوداگر ۱۳ صفر المظفر ۱۳۳۴ھ جناب مولانا صاحب مکرم دام اکرامکم بعد ہدیہ سلام سنت الاسلام کے گزارش یہ ہے کہ اس مرتبہ

1 فتاوی بزازیہ علی حاشیہ فتاوی ہندیہ کتاب الصوم الفصل الاول نورانی کتب خانہ پشاور ۲ / ۹۲

2 خزانہ المفتین، کتاب الصوم، قلمی نسخہ، ۱/ ۲۰

Volume 10 Fatawa Ridawiyyah Due to a difference in sighting the moon of Ramadan al-Mubarak, it often happens that Eid al-Fitr falls on the same day. For instance, Eid was celebrated on Friday in Bareilly as well. It has been heard that on Thursday evening after Maghrib, you stated that since today is the 30th of Ramadan, we will not perform Taraweeh prayers and will not fast from tomorrow, Friday. However, you did not command others to do the same. Later, through testimonies, it was established that the Ramadan moon appeared on Tuesday, making Thursday the 30th of Ramadan and Friday the day of Eid. Please write soon on a second card whether your conviction was based on people's reports or some other means of reassurance. Were the testimonies from people who came from Egypt or from which place in India was it verified? This is asked so it may be useful in the future. Explain and be rewarded. The Answer: Neither was the crescent of Ramadan seen here on Tuesday, nor the crescent of Eid on Thursday; there was thick cloud cover. On the night of Friday, I performed Taraweeh and intended to fast in the morning. Suddenly, news came of some people arriving from Misr (a nearby town) who had seen the crescent of Ramadan on Tuesday evening. They were summoned, their testimonies were taken, and a thorough investigation was conducted. At one o'clock at night, the command for Eid in the morning was given, and at that very time, announcements were made in the city, the old city, and the outskirts. This is how Eid was observed here on Friday, otherwise, rumors were being heard before, but a ruling cannot be based on them. Allah knows best. Problem 205: From Mandi Africa, sent by Haji Abdullah Haji Yaqub, 24 Muharram 1331 AH. In the city of Mandi, everyone follows the Shafi'i school of thought, and we are a few people of the Hanafi school. Here, 29 fasts were completed. On the 30th night, due to heavy clouds, the moon was not visible. However, after Maghrib prayer, telegrams arrived from three cities stating that the Shawwal moon had been sighted and tomorrow is Eid. But the local Qazi did not accept the telegraphic news, performed Taraweeh, and made everyone fast. But when the sun rose, after two hours, people came from orchards around Mandi city and testified they had seen the moon. Then the Qazi took testimonies from the witnesses and ordered to break the fast. Everyone broke their fast, and the Qazi himself broke it too. Due to it being very late that day, Eid prayer was not performed; it was performed the next day. Now other people tell us that we must make up for one fast. Our question is, do we have to observe a Qada (missed) fast for one day? The Answer: The Qazi did very well by not relying on the telegrams; that is how it should be. There is no reliability in letters or telegrams regarding the crescent moon. As for the few testimonies that came in the morning, if those people were reliable

and their testimonies for the Eid moon were acceptable, and they were at such a distance... Page 435 of 836

खंड 10 फतवा रज़विया रमजानुल मुबारक के चाँद को लेकर मतभेद होने के कारण, अक्सर ईदुल फित्र पर सहमति हो गई है। उदाहरण के लिए, बरेली में भी जुमे (शुक्रवार) को ईद मनाई गई। सुना गया है कि आपने जुमेरात (गुरुवार) की शाम मग़रिब के बाद फ़रमाया था कि चूँकि आज 30 रमज़ान है, इसलिए हम तरावीह नहीं पढ़ेंगे और कल जुमे से रोज़ा नहीं रखेंगे, लेकिन आपने दूसरों को ऐसा करने का आदेश नहीं दिया। बाद में गवाहियों से यह साबित हुआ कि रमज़ान का चाँद मंगल (मंगलवार) के दिन निकला था, जिससे जुमेरात 30 रमज़ान ठहरी और जुमे को ईद हुई। कृपया दूसरे कार्ड पर जल्द लिखें कि आपका विश्वास लोगों की बातों पर था या तसल्ली का कोई और ज़रिया था? क्या गवाहियाँ मिस्र (एक स्थानीय स्थान) से आए लोगों की थीं या हिन्दुस्तान के किस स्थान से इसकी पुष्टि हुई? यह इसलिए पूछा जा रहा है ताकि भविष्य में काम आए। बयान फ़रमाएं और सवाब (पुण्य) पाएँ। उत्तर: यहाँ न तो मंगल को रमज़ान का चाँद दिखाई दिया और न ही जुमेरात को ईद का चाँद; बादल बहुत घने थे। जुमे की रात मैंने तरावीह पढ़ी और सुबह रोज़ा रखने की नीयत की थी। अचानक मिस्र से कुछ लोगों के आने की ख़बर मिली जिन्होंने वहाँ मंगल की शाम को रमज़ान का चाँद देखा था। उन्हें बुलाया गया, उनकी गवाहियाँ ली गईं और पूरी जाँच-पड़ताल की गई। रात के एक बजे सुबह ईद का हुक्म दिया गया और उसी समय शहर, पुराने शहर और आस-पास के इलाक़ों में घोषणा कर दी गई। इस तरह यहाँ जुमे को ईद हुई, वरना अफ़वाहें तो पहले से सुनी जा रही थीं जिन पर कोई फ़ैसला नहीं लिया जा सकता था। वल्लाहु तआला आलम (अल्लाह बेहतर जानता है)। मसला 205: मंडी अफ्रीका से, प्रेषक हाजी अब्दुल्ला हाजी याकूब, 24 मुहर्रम 1331 हिजरी। मंडी शहर में सभी लोग शाफ़ई मज़हब के हैं और हम हनफ़ी मज़हब के कुछ लोग हैं। यहाँ 29 रोज़े हुए। 30वीं रात को घने बादलों के कारण चाँद नहीं दिखा, लेकिन मग़रिब की नमाज़ के बाद तीन शहरों से टेलीग्राम आए कि हमने शव्वाल का चाँद देख लिया है और कल ईद है। लेकिन यहाँ के क़ाज़ी साहब ने टेलीग्राम की ख़बर को स्वीकार नहीं किया और तरावीह की नमाज़ पढ़ी और पढ़ाई और सभी से रोज़ा भी रखवाया। लेकिन जब सूरज निकला, दो घंटे बाद मंडी शहर के आस-पास के बाग़ों से लोग आए और उन्होंने गवाही दी कि हमने चाँद देखा है। तब क़ाज़ी साहब ने गवाहों से गवाही लेकर रोज़ा खोलने का हुक्म दिया। तब सभी लोगों ने रोज़ा तोड़ दिया और ख़ुद क़ाज़ी साहब ने भी रोज़ा तोड़ दिया। उस दिन बहुत देर हो जाने के कारण ईद की नमाज़ नहीं पढ़ी गई, दूसरे दिन ईद की नमाज़ हुई। अब दूसरे लोग हमसे कहते हैं कि हमें एक रोज़े की क़ज़ा करनी चाहिए। अब हमारा सवाल यह है कि क्या हमें एक रोज़े की क़ज़ा करनी पड़ेगी? उत्तर: क़ाज़ी ने टेलीग्राम पर भरोसा न करके बहुत सही किया, ऐसा ही होना चाहिए था। चाँद के मामले में पत्र या टेलीग्राम का कोई भरोसा नहीं है।

सुबह जो कुछ गवाहियाँ मिलीं, अगर वे लोग विश्वसनीय थे और ईद के चाँद के बारे में उनकी गवाही स्वीकार्य थी और वे इतनी दूरी पर थे... पेज 435 का 836

جلد دہم فتاوی رضویہ رمضان المبارک کے چاند میں اختلاف ہو کر عید الفطر میں اکثر اتفاق ہو گیا ہے، چنانچہ بریلی میں بھی جمعہ کی عید ہوئی، سنا گیا ہے کہ آپ نے پنجشنبہ کی شام کو بعد مغرب ارشاد فرمایا تھا کہ چونکہ آج ۳۰ رمضان المبارک ہے اس وجہ سے ہم تراویح نہیں پڑھیں گے اور کل سے بروز جمعہ روزہ نہیں رکھیں گے لیکن دوسروں کو حکم نہیں دیتے ہیں، بعد کو شہادتوں سے چاند رمضان کا منگل کے دن ثابت ہو کر پنجشنبہ کو ۳۰ رمضان قرار پائی اور جمعہ کو عید ہوئی، کارڈ ثانی پر جلد تحریر فرمائیے کہ آپ کا یقین مردوں کی باتوں پر تھا یا ذریعہ اطمینان کوئی اور تھا اور شہادتیں مصر سے آئے ہوئے لوگوں کی ہیں یا ہندوستان سے کس مقام سے تحقیق ہوا اس لیے تصدیق کیا جاتا ہے کہ آئندہ کو کام آئے۔ بینواتوجروا الجواب: یہاں نہ منگل کو ہلال رمضان دکھائی دیا نہ پنجشنبہ کو ہلال عید، ابر تھا اور بہت گہرا، شب جمعہ میں میں نے تراویح پڑھیں اور صبح روزہ کی نیت کی تھی کہ دفعۃً مصر سے کچھ لوگوں کے آنے کی خبر سُنی جنہوں نے وہاں ہلال رمضان منگل کی شام کو دیکھا تھا وہ بلائے گئے اور انہوں نے شہادتیں دیں اور پوری تنقیح کی گئی اور رات کے ایک بجے صبح عید کا حکم دیا گیا اور اُسی وقت سے شہر وشہرِ کہنہ واطراف شہر میں اعلان کیا گیا، یوں یہاں جمعہ کی عید ہوئی ورنہ افواہیں تو پہلے سے سُنی جاتی تھیں جن پر حکم نہیں ہوسکتا تھا، واللہ تعالٰی اعلم مسئلہ ۲۰۵: از منڈی افریقہ مسئولہ حاجی عبداللہ حاجی یعقوب ۲۴ محرم ۱۳۳۱ھ منڈی شہر میں سب آدمی مذہب شافعی ہیں اور حنفی مذہب والے ہم چند آدمی ہیں، اب یہاں پر روزے ۲۹ ہوئے، ۳۰ کی رات کو ابر بہت ہونے کے سبب سے چاند دیکھنے میں نہیں آیا لیکن بعد نماز مغرب کے تین شہروں سے ٹیلی گراف آئے کہ ہم نے چاند دیکھا ہے شوال کا، اور کل عید ہے، لیکن یہاں کے قاضی صاحب نے ٹیلی گراف کی خبر کو قبول نہ کیا اور تراویح کی نماز پڑھی اور پڑھائی اور روزہ بھی سب سے رکھایا، لیکن

جب سورج طلوع ہوا، بعد دو ساعت کے منڈی شہر کے آس پاس کے باغیچوں سے آدمی آئے انہوں نے گواہی دی کہ ہم نے چاند دیکھا، تب قاضی صاحب نے شاہدوں سے گواہی لے کر روزہ کھولنے کا حکم دیا، تب تمام آدمیوں نے روزہ توڑ دیا اور خود بھی قاضی صاحب نے روزہ توڑ دیا، اُس دن بہت دیر ہونے کے سبب سے عید کی نماز نہیں پڑھی گئی دوسرے دن عید کی نماز ہوئی، اب ہم کو دوسرے آدمی کہتے ہیں کہ ہم کو ایک روزہ قضا کرنا چاہئے۔ اب ہمارا سوال یہ ہے کہ کیا ہم کو ایک روزہ قضا کرنا پڑے گا؟ الجواب: تار برقیوں پر کہ قاضی نے اعتبار نہ کیا بہت صواب کیا، ایسا ہی چاہئے تھا، در بارہ ہلال خط یا تار کا کچھ اعتبار نہیں، صبح کو جو چند شہادتیں گزریں وہ لوگ اگر ثقہ اور ہلال عید میں قابل شہادت تھے اور اتنے فاصلہ پر تھے

جلد دہم (Volume 10) فتاوی رضویہ (Fatawa Ridawiyya)

...if they were unable to come and testify at night, accepting their testimony and ordering the breaking of the fast is also correct. There is no need for a makeup fast (qada) for that day because it has been established by Sharia evidence that it was the day of Eid, not a day of Ramadan. And Allah Almighty knows best.

Problem 206: What do the scholars of religion say regarding this matter: what is the meaning of fame and widespread reports (shuhrat and istifadha) which are legally valid regarding the crescent moon? Is mere spreading and publicizing of news sufficient or not? Clarify and you shall be rewarded.

Answer: The core principle is that the basis of the matter is actually upon sighting (ru'yat), and that is all.

Arabic Text: قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم صوموا لرؤیتہ وافطر والرؤیتہ ۔ اخرجہ الشیخان و غیرھما والحدیث مشھور مستفیض۔

Urdu Translation: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Fast upon sighting it (the moon) and break your fast upon sighting it." This was narrated by the two Sheikhs (Bukhari and Muslim) and others, and this Hadith is famous and widely reported (mustafidh). (T)

And the proof of sighting is linked to testimony, for "Al-Bayyinah" (the evidence/ witness) is as its name implies, "mubinah" (clarifying). (Because a witness, like their name suggests, makes things clear. T). And the validity of testimony is linked to observation, for there is no testimony except from those who have witnessed. (Because testimony cannot occur without actual observation by witnesses. T). Testimony upon testimony and testimony upon a judicial ruling are acceptable; the reason for their acceptance is that they affirm the testimony of observation.

Arabic Text: اما الاولی فظاھر واما الاخری فلانہ لاحکم الاعن شہادۃ ومثبت المثبت مثبت۔

Urdu Translation: As for the first case, it is obvious. As for the latter, it is because a ruling can only be based on testimony, and that which affirms the affirmer is itself an affirmer. (T)

Therefore, any witness who lacks these elements is by no means acceptable. For example, if a group of reliable and upright people testify that the moon appeared in such-and-such a place, or the people of such-and-such a city fasted on such-and-such a day, or according to their calculation today is such-and-such a date, it will never be accepted. In fact, anyone who acts upon this will be a sinner, because this is neither

testimony of sighting, nor testimony upon testimony, nor testimony upon a judicial ruling; rather, it is mere narration which is in no way a legal proof. It is stated in Fath al-Qadir and Fatawa 'Alamgiriyya:

Arabic Text: انما يلزم الصوم على متأخري الرؤية	Urdu Translation: Fasting will be mandatory for those who see the moon later.

1 Sahih Bukhari, Chapter: When you see the moon, fast. Qadimi Kutub Khana, Karachi 1/256 Page 436 of 836

...कि अगर वे रात में आकर गवाही नहीं दे सकते थे, तो उनकी गवाही मानकर रोज़ा खोलने का हुक्म देना भी सही है और उस रोज़े की क़ज़ा नहीं क्योंकि शरीअत के सुबूत से यह साबित हो गया कि वह ईद का दिन था, न कि रमज़ान का रोज़ा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 206: दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि चाँद (हिलाल) के बारे में शोहरत और इस्तिफ़ाज़ा (प्रसिद्धि और व्यापक प्रसार) जो शरीअत में मान्य है, उसका क्या अर्थ है? और क्या केवल ख़बर का फैलना और मशहूर होना काफ़ी है या नहीं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: मूल सिद्धांत यह है कि मामले का आधार वास्तव में चाँद देखने (रुयत) पर है और बस।

अरबी पाठ: قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم صوموا لرؤیتہ وافطر والرؤیتہ ۔ اخرجہ الشیخان و غیرھما والحدیث مشھور مستفیض۔

उर्दू अनुवाद: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "चाँद देखकर रोज़ा रखो और चाँद देखकर ईद करो।" इसे बुखारी, मुस्लिम और अन्य मुहादिसीन ने रिवायत किया है, और यह हदीस मशहूर और प्रसिद्ध (मुस्तफ़िज़) है। (त)

और रुयत (चाँद देखने) का सुबूत गवाही (शहादत) पर निर्भर है, क्योंकि "अल-बय्यिनाह" (गवाह) अपने नाम की तरह "मुबीनह" (स्पष्ट करने वाली) है। (क्योंकि गवाह अपने नाम की तरह चीज़ों को स्पष्ट करने वाले होते हैं। त)। और गवाही की वैधता रुयत से जुड़ी है, क्योंकि चश्मदीद गवाहों के बिना कोई गवाही नहीं होती। (क्योंकि गवाही बिना देखे गवाहों के नहीं हो सकती। त)। गवाही पर गवाही और अदालती फ़ैसले पर गवाही स्वीकार्य होती है, उनकी स्वीकार्यता का कारण यह है कि वे प्रत्यक्ष गवाही की पुष्टि करते हैं।

अरबी पाठ: اما الاولی فظاھر واما الاخری فلانہ لاحکم الاعن شہادۃ ومثبت المثبت مثبت۔

उर्दू अनुवाद: जहाँ तक पहली बात है, वह स्पष्ट है। जहाँ तक दूसरी बात है, वह इसलिए कि कोई भी फ़ैसला केवल गवाही के आधार पर ही हो सकता है, और जो पुष्टि करने वाले की पुष्टि करे, वह भी पुष्टि करने वाला ही होता है। (त)

इसलिए, जो भी गवाह इन चीज़ों से रहित हो, वह कतई स्वीकार्य नहीं है। मिसाल के तौर पर, अगर भरोसेमंद और नेक लोगों की एक जमात यह गवाही दे कि फ़लां जगह चाँद निकला या फ़लां दिन

उस शहर वालों ने रोज़ा रखा या उनके हिसाब से आज फ़लां तारीख है, तो इसे हरगिज़ नहीं माना जाएगा। यहाँ तक कि जो इस पर अमल करेगा वह गुनाहगार होगा क्योंकि यह न तो चाँद देखने की गवाही है, न गवाही पर गवाही, और न ही अदालती फ़ैसले पर गवाही; बल्कि यह केवल एक सुनी-सुनाई कहानी है जो किसी भी तरह से हुज्जत (प्रमाण) नहीं है। 'फ़तह अल-क़दीर' और 'फ़तावा आलमगीरिया' में है:

अरबी पाठ: انما یلزم الصوم علی متأخري الرؤیۃ	उर्दू अनुवाद: देरी से चाँद देखने वालों पर रोज़ा तब लाज़िम (अनिवार्य) होगा।

1 सही बुखारी, बाब: जब तुम चाँद देखो तो रोज़ा रखो। कदीमी कुतुब खाना, कराची 1/256 पृष्ठ 436/836

جلد دہم فتاوی رضویہ

کہ رات کو آکر گواہی نہ دے سکتے تھے تو اُن کی گواہی مان کر روزہ کھولنے کا حکم دینا بھی صحیح ہے اور اُس روزہ کی قضا نہیں کہ ثبوت شرعی سے ثابت ہو گیا کہ وہ روز عید تھا نہ کہ روزہ رمضان کا۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲۰۶: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ شہرت واستفاضہ جو درباره ہلال شرعاً معتبر ہے اُس کے کیا معنی ہیں؟ اور مجرد شیوع و اشتہار خبر کافی ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: اصل یہ ہے کہ مدارِ کار حقیقۃً رؤیت پر ہے وبس،

قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: چاند صوموا لرؤیتہ وافطر والرؤیتہ ۔ اخرجہ دیکھنے پر روزہ رکھو اور چاند دیکھنے پر عید کرو۔ الشیخان و غیرھما والحدیث مشھور اسے بخاری، مسلم اور دیگر محدثین نے روایت کیا، اور مستفیض۔ یہ حدیث مشہور و معروف ہے (ت)

اور رؤیت کا ثبوت شہادت سے منوط فان البینۃ کاسمھا مبینۃ (کیونکہ بینہ (گواہ) اپنے نام کی طرح واضح کرنیوالے ہیں۔ ت) اور شہادت کی حلت رؤیت سے مربوط اذلا شہادۃ الاعن شہود (کیونکہ شہادت معاینہ کرنیوالوں کے بغیر نہیں ہوتی۔ ت) شہادت علی الشہادت والشہادت علی القضاء مقبول ہوتی ہے اُن کی وجہ قبول یہی ہے کہ وہ مثبت شہادت معاینہ ہیں،

اما الاولی فظاھر واما الاخری فلانہ لاحکم الاعن شہادۃ ومثبت المثبت مثبت۔ پہلی صورت تو واضح ہے، رہی دوسری تو وہ اس لیے کہ حکم شہادت کی بنا پر ہی ہو سکتا ہے اور مثبت کو ثابت کرنے والا مثبت ہی ہوتا ہے (ت)

تو ہر وہ گواہ کہ ان امور سے خالی ہو زنہار قابل قبول نہیں، مثلاً ایک جماعت ثقات عدول یوں گواہی دے کہ فلاں جگہ چاند ہوا یا فلاں دن اُس شہر والوں نے روزہ رکھا یا آج اُن کے حساب سے فلاں تاریخ ہے ہر گز نہ مانیں گے یہاں تک کہ جو اس پر عمل کرے گناہگار ہو گا کہ یہ نہ شہادت رؤیت ہے، نہ شہادت علی الشہادت، نہ شہادت علی القضاء بلکہ مجرد حکایت ہے جو کسی طرح حجت نہیں۔ فتح القدیر و فتاوی عالمگیریہ میں ہے:

انما یلزم الصوم علی متأخري الرؤیۃ تاخیر سے چاند دیکھنے والوں پر روزہ تب لازم ہوگا

1 صحیح بخاری باب اذا رایتم الھلال فصوموا قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶ Page 436 of 836

If the sighting of those [who saw it earlier] is established for them in a legally binding manner, even if a group testifies that the people of such-and-such a city saw the crescent of Ramadan a day before you and fasted, and this day is the thirtieth according to their calculation, but these people did not see the crescent themselves, it is not permissible for them to break the fast tomorrow, nor to omit the Tarawih prayers on this night. This is because they did not testify to the sighting themselves, nor to the testimony of others; they merely narrated the sighting of others. [Footnote 1]

Fasting will only become mandatory for those who saw the moon later when the proof of the moon's sighting is established for them in a legally binding manner. So much so that if a group testifies that the people of a certain city saw the moon a day before you and they fasted, and that day becomes the thirtieth according to their calculation, but these [local] people did not see the moon, then Eid is not permissible for them tomorrow, nor can they omit that night's Tarawih. This is because those people did not testify to seeing the moon themselves, nor did they testify to someone else's testimony of seeing the moon; they merely reported the sighting of others. (T)

However, if the news of the sighting in another city reaches such a level of widespread fame (Istifadah) that it results in certain and verified proof of the sighting, then the correct view is that it shall be taken into account. It is stated in Radd al-Muhtar:

It is stated in Al-Dhakhirah that Shams al-A'immah al-Halwani said: The correct view in the school of our companions (the Hanafis) is that when the news becomes widespread and verified among the people of another city, the ruling of that city becomes binding upon them. Similarly, it is mentioned in Al-Shurunbulaliyyah quoting Al-Mughni. [Footnote 2]

It is mentioned in Al-Dhakhirah that Shams al-A'immah Halwani said: The correct view of our Hanafi school is that when the news is famous and verified in another city, then the ruling of that city will be mandatory upon them. Similarly, in Al-Shurunbulaliyyah, it is mentioned with reference to Al-Mughni. (T)

But by no means is mere circulation and fame sufficient, as hundreds of reports, especially nowadays, spread such that the entire city talks about them, yet

experience bears witness that after investigation they turn out to be completely baseless. These are called rumors, not legal widespread transmission (Istifadah Shar'iyyah). Therefore, scholars explicitly state that such talk is entirely unreliable as long as there is no legal proof. In Al-Ikhtiyar Sharh al-Mukhtar, regarding the Day of Doubt (Yawm al-Shakk), it is written:

That is when people talk about the sighting but it is not established. [Footnote 3]

That is, there is talk of the sighting among the people, but there is no proof. (T)

---

1. Fath al-Qadir, Chapter on Sighting of the Moon, Maktabah Nuriyyah Rizviyyah, Sukkur, 2/243; Fatawa Hindiyyah, Second Chapter on Sighting of the Moon, Nurani Kutub Khana, Peshawar, 1/199.
2. Radd al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/102.
3. Al-Ikhtiyar li-Ta'lil al-Mukhtar, Book of Fasting, Mustafa al-Babi, Egypt, 1/130.

जब उनके पास उन लोगों का चाँद देखना शरीअत के मुताबिक़ साबित हो जाए, यहाँ तक कि अगर एक जमाअत ने गवाही दी कि फ़लाँ शहर के लोगों ने तुमसे एक दिन पहले रमज़ान का चाँद देखा और उन्होंने रोज़ा रखा है और यह दिन उनके हिसाब से तीसवाँ बनता है, लेकिन इन लोगों ने चाँद नहीं देखा, तो उनके लिए कल रोज़ा खोलना (ईद मनाना) जायज़ नहीं और न ही वे इस रात की तरावीह छोड़ सकते हैं, क्योंकि उन्होंने चाँद देखने की गवाही नहीं दी और न ही दूसरों के चाँद देखने की गवाही पर गवाही दी है, बल्कि उन्होंने महज़ दूसरों के चाँद देखने की बात बयान की है। [फुटनोट 1]

देरी से चाँद देखने वालों पर रोज़ा तब लाज़िम होगा जब उनके यहाँ चाँद का सबूत शरीअत के मुताबिक़ मुकम्मल हो जाए। यहाँ तक कि अगर किसी जमाअत ने गवाही दी कि फ़लाँ शहर वालों ने तुमसे एक दिन पहले चाँद देखा और उन्होंने रोज़ा रखा है और वह दिन उनके हिसाब से तीसवाँ बनता है, लेकिन इन लोगों ने चाँद नहीं देखा, तो उनके लिए कल ईद मनाना जायज़ नहीं और न ही वे उस रात की तरावीह छोड़ सकते हैं, क्योंकि उन लोगों ने चाँद देखने पर गवाही नहीं दी और न ही किसी और की चाँद देखने की गवाही पर गवाही दी है, उन्होंने दूसरों के चाँद देखने की बात को दोहराया है। (त)

हाँ, अगर दूसरे शहर में चाँद देखने की ख़बर इतनी मशहूर और फैली हुई (इस्तिफ़ाज़ा) हो जाए कि वह चाँद देखने का पक्का और प्रमाणित सबूत बन जाए, तो सही बात यह है कि उसे माना जाएगा। रद अल-मुह्तार में है:

अल-ज़खीरा में है कि शम्स अल-आइम्मा अल-हलवानी ने कहा: हमारे साथियों (हनफ़ी) के मसलक का सही नज़रिया यही है कि जब ख़बर दूसरे शहर के लोगों के बीच मशहूर और साबित हो जाए, तो उन पर उस शहर का हुक्म लाज़िम होगा। इसी तरह अल-शरुनबुलुलिया में अल-मुग़नी के हवाले से लिखा है। [फुटनोट 2]

ज़खीरा में है कि शम्स अल-आइम्मा हलवानी ने कहा: हमारे हनफ़ियों का सही मसलक यही है कि जब दूसरे शहर में ख़बर मशहूर और साबित हो जाए, तो उन पर उस शहर का हुक्म लाज़िम होगा। शरुनबुलुलिया में अल-मुग़नी के हवाले से इसी तरह है। (त)

मगर हरगिज़ सिर्फ़ अफ़वाह या मशहूरी काफ़ी नहीं है, क्योंकि सैकड़ों ख़बरें, ख़ासकर आज के दौर में, ऐसी उड़ती हैं जिनका पूरे शहर में चर्चा होता है, फिर अनुभव गवाह है कि जाँच के बाद वे बिल्कुल बेबुनियाद निकलती हैं। इन्हें अफ़वाह कहा जाता है, न कि शरई 'इस्तिफ़ाज़ा'। इसलिए, उलेमा साफ़ तौर पर फ़रमाते हैं कि ऐसी चर्चा बिल्कुल अविश्वसनीय है जब तक कि शरई सबूत न हो। 'अल-इख्तियार शरह अल-मुख़्तार' में यौम अल-शक्क (संदेह का दिन) के बारे में लिखा है:

वह यह है कि लोगों में चाँद देखने की चर्चा हो मगर साबित न हो। [फुटनोट 3]

वह यह है कि लोगों में चाँद देखने का चर्चा हो मगर सबूत न हो। (त)

---

1. फ़तह अल-क़दीर, चाँद देखने का बयान, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 2/243; फ़तावा हिंदिया, चाँद देखने का दूसरा अध्याय, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/199।
2. रद अल-मुह्तार, रोज़े की किताब, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/102।
3. अल-इख्तियार ली-तालील अल-मुख़्तार, रोज़े की किताब, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/130।

اذا ثبت عندھم رؤیة اولئك بطریق موجب حتی لو شھد جماعة ان اھل بلدة كذا رأوا ھلال رمضان قبلكم بیوم فصاموا وھذا الیوم ثلثون بحسابھم ولم یرھؤلاء الھلال لایباح فطر غد ولا ترك التراویح فی ھذہ اللیلة لانھم لم یشھدوا بالرؤیة ولا علی شھادة غیرھم وانما حكوا رؤیة غیرھم۔$1^$ تاخیر سے چاند دیکھنے والوں پر روزہ تب لازم ہوگا جب ان کے ہاں چاند کا ثبوت بطریق موجب شرعی ہو حتی کہ اگر کسی جماعت نے گواہی دی کہ فلاں اہل شہر نے تم سے پہلے ایک دن چاند دیکھا اور انہوں نے روزہ رکھا ہے اور یہ دن ان کے حساب سے تیسواں بنتا ہے، لیکن انہوں نے چاند نہیں دیکھا تو ان کے لیے آئندہ کل عید جائز نہیں اور نہ ہی اس رات کی وہ تراویح ترک کرسکتے ہیں کیونکہ ان لوگوں نے چاند کے دیکھنے پر گواہی نہیں دی اور نہ غیر کے چاند دیکھنے کی گواہی پر گواہی دی ہے انہوں نے دوسروں کی رؤیت کو حکایت کیا ہے (ت)

ہاں اگر رؤیت شہر دیگر کی خبر اس حد شہرت و استفاضہ کو پہنچے جو باعث ثبوت رؤیت یقینی و محقق ہوجائے تو صحیح یہ ہے کہ اعتبار کریں گے، ردالمختار میں ہے:

فی الذخیرة قال شمس الائمة الحلواني الصحیح من مذھب اصحابنا ان الخبر اذا استفاض وتحقق فیما بین اھل البلدة الاخری یلزمھم حكم ھذہ البلدة اھ ومثلہ فی الشرنبلالیة عن المغنی۔$2^$ ذخیرہ میں ہے کہ شمس الائمہ حلوانی نے کہا ہمارے احناف کا صحیح مذہب یہی ہے کہ جب دوسرے شہر میں خبر مشہور و متحقق ہو تو تب ان پر اس شہر کا حکم لازم ہوگا اھ شرنبلالیہ میں المغنی کے حوالے سے اسی طرح ہے۔ (ت)

مگر حاشا مجرد شیوع و شہرت کافی نہیں کہ صدہا خبریں خصوصاً آج کل ایسی اڑتی ہیں جن کا تمام شہر میں چرچا ہوتا ہے، پھر تجربہ گواہ ہے کہ بعد تنقیح محض بے اصل نکلتی ہیں انہیں افواہ کہتے ہیں، نہ استفاضہ شرعیہ، ولذا علماء تصریح فرماتے ہیں کہ ایسا چرچا محض نا معتبر جب تک ثبوت شرعی نہ ہو، اختیار شرح مختار میں یوم الشک کی نسبت لکھا:

ذلك بأن يتحدث الناس بالرؤية ولاتثبت.^{3} وہ یہ ہے کہ لوگوں میں رؤیت کا چرچا ہو مگر ثبوت نہ ہو۔ (ت)

---

^{1} فتح القدیر فصل فی رؤیۃ الھلال مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۲۴۳ ، فتاوی ہندیہ الباب الثانی فی رؤیۃ الھلال نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۱۹۹ ^{2} ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/ ۱۰۲ ^{3} الاختیار لتعلیل المختار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۱/ ۱۳۰

Indeed, the outward grandeur of such reports deceives common people, but after investigation, it is revealed what the true reality of the matter is, or their correct chain of transmission does not reach the end at all. Whoever you ask will say "I heard it." Some may even name their informant, but if you ask that informant, they will remain silent after saying "I heard it," or after a thousand efforts and much labor, the reality turns out to be that a letter came from so-and-so, or so-and-so sent a telegram; some travelers of respectable appearance were met who were saying that people saw it in such-and-such a city, or a relative of ours came from that distant city and related that thousands saw it there. The word "thousands" is certainly there, but it is not seen whether this number refers to the source from whom it is narrated or the narrator himself. In short, such rumors and stories are not even worthy of attention according to Shari'ah, nor can any ruling be established based on them. Therefore, you have heard the ruling of Imam Shams al-A'imma and [the authors of] Dhakhira, Mughni, and Imdad that our Imams did not consider mere widespread circulation and publicity sufficient, but rather added the condition of verification. Allama Abdul Ghani Nablusi says in Al-Hadiqa al-Nadiyya:

As for the report of mass-transmission (tawatur) among people from one to another regarding that, it is prohibited because the basis of everyone in it is conjecture, delusion, and estimation. The report becomes widespread from one to another such that if you asked every one of them about seeing it and witnessing it, he would say: "I did not witness it, but I only heard it." And as for the one who says "I witnessed it," his state will be investigated and you will find him relying on conjectures, delusional indicators, and speculative signs. Often, if you reflect and investigate, you will find that the report which you claimed was mass-transmitted is entirely based in its origin on the report of one or two people, etc., until the end of what he stated and excelled in, may Allah Almighty have mercy on him.

It is prohibited for some people to report a piece of information to others as mass-transmitted (mutawatir), because in this sequence, the relation of each one is based on conjecture, delusion, and estimation. A report becomes famous from one to another in such a way that if each one of them were asked: "Did you see it and witness it yourself?", he would say: "I did not witness it, but I heard it." And as for the one who says "I witnessed it," his state will be investigated and you will find him basing his testimony on speculative signs, delusional indicators, and conjectures. Often, if you reflect and search, you will find that the report which you presumed to be 'mutawatir' and authoritative is in reality the report of only one or two people, etc. What he said is excellent; may Allah Almighty shower His mercies upon him. (T)

And this assumption of "it has become certain to us" is not correct. Certainty is that which arises from legal proof (Hujjat Shari'iyya). Otherwise, was the weight of a group of reliable and upright people any less than these few unknown or fallen individuals, or the delusions and lack of precision in telegrams and letters? If you do justice, they were many degrees greater.

1 Al-Hadiqa al-Nadiyya, Class 9, Development of Nine Categories, Maktaba Nooria Rizvia, Faisalabad, 521/2 Page 439 of 836

वास्तव में ऐसी खबरों की बाहरी शान-ओ-शौकत आम लोगों को धोखा देती है, लेकिन जाँच के बाद पता चलता है कि मामले की हकीकत क्या है, या उनका सही सिलसिला (सनद) आखिर तक पहुँचता ही नहीं है। जिससे पूछो, वह कहेगा "सुना है।" कुछ अपने खबर देने वाले का नाम भी बताएंगे, उस खबर देने वाले से पूछो तो वह "सुना है" कहकर चुप हो जाएगा, या हज़ार कोशिशों और कड़ी मेहनत के बाद असलियत यह निकलेगी कि फलां का खत आया था, फलां ने तार भेजा था; कुछ सम्मानित दिखने वाले मुसाफिर मिले थे, वे कह रहे थे कि फलां शहर में लोगों ने देखा, हमारा फलां रिश्तेदार उस दूर के शहर से आया और उसने बताया कि वहाँ हज़ारों ने देखा। "हज़ारों" का शब्द तो बेशक है, लेकिन यह नहीं देखा गया कि यह संख्या उन लोगों में है जिनसे खबर ली गई है या खबर देने वाले में। संक्षेप में, ऐसी अफवाहें और किस्से शरीअत की दृष्टि से ध्यान देने योग्य भी नहीं हैं, और न ही उनके आधार पर कोई हुक्म (आदेश) साबित हो सकता है। इसीलिए इमाम शम्सुल अइम्मा और ज़खीरा, मुग़नी व इमदाद का फरमान सुन चुके कि हमारे इमामों ने केवल खबर का फैलना और मशहूर होना काफी नहीं समझा, बल्कि उसके साथ तहकीक (जाँच) की शर्त भी लगा दी। अल्लामा अब्दुल गनी नाबलुसी 'हदीका नदिया' में फरमाते हैं:

जहाँ तक लोगों में एक-दूसरे से मिलने वाली मुतवातिर (लगातार) खबर का सवाल है, तो यह वर्जित है क्योंकि इसमें सभी का आधार अनुमान, वहम और अटकलबाजी है। खबर का एक-दूसरे के बीच फैलना ऐसा होता है कि यदि आप उनमें से प्रत्येक से उसे देखने और प्रत्यक्ष करने के बारे में पूछें, तो वह कहेगा: "मैंने इसे प्रत्यक्ष नहीं देखा, बल्कि मैंने केवल सुना है।" और जो कहता है "मैंने इसे देखा है," उसकी स्थिति की जाँच की जाएगी और आप उसे अटकलों, वहमी संकेतों और काल्पनिक लक्षणों पर निर्भर पाएंगे। और अक्सर यदि आप विचार करें और जाँच करें, तो आप पाएंगे कि वह खबर जिसे आपने पूरी तरह से मुतवातिर होने का दावा किया था, वास्तव में मूल रूप से एक या दो लोगों की खबर पर आधारित है, इत्यादि। अल्लाह तआला उन पर रहमत फरमाए।

लोगों में किसी खबर का एक-दूसरे से मुतवातिर (लगातार) नकल करना मना है क्योंकि इस सिलसिले में उनमें से हर एक का संबंध गुमान, वहम और अनुमान से है। और खबर का एक-दूसरे से इस तरह मशहूर होना कि अगर उनमें से हर एक से पूछा जाए कि क्या तूने देखा है और मुशाहिदा किया है? तो वह कहेगा 'मैंने मुशाहिदा तो नहीं किया हाँ सुना है', और जो कहे 'मैंने मुशाहिदा किया है' तो उसके हाल की जाँच की जाएगी तो उसे गुमान वाली निशानियों, वहमी संकेतों और अटकलों को सनद बनाए हुए पाएगा। और अक्सर ऐसा होता है कि तू गौर और तलाश करे तो वह खबर जिसे तू मुतवातिर और मुस्तनद (प्रमाणित) मान रहा था, वह असल में एक या दो की खबर होती है इत्यादि। उन्होंने जो कहा बहुत खूब कहा, अल्लाह तआला उन पर रहमतें नाज़िल फरमाए। (त)

और यह ख्याल कि "हमें तो यकीन हो गया" सही नहीं है, यकीन वह है जो शरीअत की दलील से पैदा हो। वरना, क्या एक विश्वसनीय और न्यायप्रिय लोगों की जमात की अहमियत उन चंद अज्ञात या गिरे हुए लोगों या तारों और खतों के वहम और कमज़ोर पकड़ से कम थी? इंसाफ करें तो वे कई दर्जा बेहतर थे।

1 अल-हदीका अन-नदिया, नौवां प्रकार, नौ श्रेणियों का विकास, मकतबा नूरिया रिज़विया, फैसलाबाद, 521/2 पेज 439/836

واقعی ایسی خبروں کی ظاہری شوکت عام لوگوں کو دھوکا دیتی ہے مگر تفتیش کے بعد کھلتا ہے کہ حقیقت امر کیا ہے یا ان کی ٹھیک سند منتہی تک ملتی ہی نہیں، جس سے پوچھئے سنا، کہے گا، بعض اپنے مخبر کا نام بھی بتائیں اُن مخبر سے پوچھئے وہ سُنا کہہ کر چپ رہیں گے، یا ہزار کاوش و عرق ریزی اصل نکلی تو اتنی کہ فلاں کا خط آیا فلاں نے تار دیا چند مسافر معقول صورت ملے، کہتے تھے فلاں شہر میں لوگوں نے دیکھا ہمارا فلاں قریب اُس شہر بعید سے آیا بیان کیا وہاں ہزاروں نے دیکھا، ہزاروں کا لفظ تو بیشک ہے مگر یہ نہ دیکھا کہ منقول عنہم میں میں ہے یا ناقل میں، غرض ایسی افواہ و حکایات شرعاً قابلِ التفات بھی نہیں، نہ ان کی بنا پر کوئی حکم ثابت ہو، ولہذا امام شمس الائمہ و ذخیرہ و مغنی و امداد کا ارشاد سُن چکے کہ ہمارے ائمہ نے صرف استفاضہ و اشتہار کافی نہ جانا بلکہ اس کے ساتھ تحقیق ہو جانے کی قید زیادہ فرمائی۔

علامہ عبدالغنی نابلسی حدیقہ ندیہ میں فرماتے ہیں:

اما خبر التواتر من الناس لبعضهم بعضا بذلك فهو ممنوع لاسناد الكل فيه الی الظن والتوهم والتخمین واستفاضة الخبر من بعضهم لبعض بحیث لوسألت کل واحد منهم عن رؤیة ذلك و معاینته لقال لم اعاینه وانما سمعت، ومن قال عاینته تستکشف عن حاله فتراه مستندا الی ظنون وامارات وهمیة وعلامات ظنیة و ربما اذا تأملت وتفحصت وجدت خبر ذلك التواتر الذي تزعمه کله مستندا في الاصل الی خبر واحد او اثنین الی اخر ما افاد واجاد رحمه الله تعالی۔

کسی خبر کو لوگوں میں سے بعض کا بعض سے تواتر نقل کرنا ممنوع ہے کیونکہ اس سلسلہ میں ان میں سے ہر ایک کی نسبت ظن، وہم اور تخمین کی ہے، اور خبر کا ایک دوسرے سے اس طرح مشہور ہونا کہ اگر ان میں سے ہر ایک سے پوچھا جائے کہ تو نے دیکھا ہے اور مشاہدہ کیا ہے تو وہ کہے گا میں نے مشاہدہ تو نہیں کیا ہاں سُنا ہے، اور جو کہے میں نے مشاہدہ کیا ہے تو اس کا حال معلوم کیا جائے گا تو اسے علاماتِ ظنیہ اور اماراتِ وہمیہ اور ظنیات کو سند بنائے ہوئے پائیگا اور اکثر طور پر ایسا ہوتا ہے کہ تو غور و تلاش کرے تو وہ خبر جس کو تو متواتر و مستند گمان کر رہا تھا وہ اصل میں ایک یا دو کی خبر ہوتی ہے الخ انہوں نے جو کہا خوب کہا اللہ تعالیٰ ان پر رحمتیں نازل فرمائے (ت)

اور یہ زعم ہم کو تو یقین ہو گیا صحیح نہیں، یقین وہ ہے جو حجت شرعیہ سے ناشی ہو، یوں تو ایک جماعت ثقات عدول کی وقعت ان چند مجہولوں یا ساقطوں یا تار و خطوط کی اوہام و ضبط سے کیا کم تھی، انصاف کیجئے تو بدر جہا زائد تھے

1 الحدیقة الندیة الصنف التاسع تنمیة الاصناف التسعة مکتبہ نوریہ رضویہ فیصل آباد ۵۲۱/۲ Page of 836 439

Fatawa Rizvia Volume 10

Then why did the scholars of religion explicitly state its unreliability?

| As previously quoted from Al-Hindiyya, Al-Fath, and similar works in Al-Bahr al-Ra'iq, Al-Durr al-Mukhtar, Majma' al-Anhur, and other reliable books. | Just as it has been mentioned with reference to Al-Hindiyya and Al-Fath, similarly it is in Al-Bahr al-Ra'iq, Al-Durr al-Mukhtar, Majma' al-Anhur, and other reliable books. (T) |

In fact, that 'istifada' (widely circulated report) which is legally valid in Sharia means that groups upon groups, multiple parties come from that city and all unanimously report in one voice that people there observed fast after seeing the moon on such and such night, to the point that legal certainty is obtained from their news. It is stated in Radd al-Muhtar:

| Al-Rahmati said: The meaning of 'istifada' is that multiple groups come from that town, each of them informing about the people of that town that they fasted upon a sighting, not just a mere rumor without knowledge of who spread it, as sometimes news spreads which all the people of the town talk about but it is not known who spread it, as it is narrated that in the end of times the devil will sit among a group and speak a word, then they will talk about it and say 'we do not know who said it.' Something like this should not even be listened to, let alone for a ruling to be established by it. (I say) and this is a good statement, and to this points the saying of Al-Dhakheerah: 'When it is widely circulated and verified,' for verification is not found by mere rumor.[1] | Sheikh Rahmati said: The meaning of fame (istifada) is that multiple groups come from that city and all inform of this matter that the people there observed fast after seeing the moon, not merely from such a rumor whose spreader is unknown, as sometimes many things spread in a city but they do not know who spread them, as mentioned in the Hadith that in the end of times, Satan will sit among people and speak something, then people will narrate that conversation but will say 'we do not know who said this,' such a thing is not even worth hearing, let alone a ruling being established by it. (I say) This discourse is very beautiful, and the saying in Al-Dhakheerah that "When news is famous and verified, then it is necessary, otherwise mere fame is not proof" also points towards this. (T) |

It is in the same [book]:

[1] Radd al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa al-Babi Egypt, 102/2 Page 440 of 836

फ़तावा रिज़विया, खंड 10

फिर दीन के उलेमा ने इसकी अविश्वसनीयता को स्पष्ट क्यों किया?

| जैसा कि पहले अल-हिंदिया, अल-फतह और इसी तरह अल-बहर अल-राइक, अल-दुर्र अल-मुख्तार, मजमा अल-अन्हुर और अन्य विश्वसनीय किताबों से उद्धृत किया गया है। | जैसा कि हिंदिया और फतह के हवाले से गुजर चुका, इसी तरह बहर अल-राइक, दर्रे मुख्तार, मजमा अल-अन्हुर और अन्य विश्वसनीय किताबों में है। (त) |

बल्कि वह 'इस्तिफ़ाज़ा' जो शरीयत में मान्य है, उसका अर्थ यह है कि उस शहर से कई समूह, अनेक जमातें आएं और सब एक स्वर में यह बयान करें कि वहां फलां रात को चांद देखकर लोगों ने रोज़ा रखा, यहां तक कि उनकी खबर पर शरीयती विश्वास प्राप्त हो जाए। रद अल-मुह्तार में है:

| अल-रहमती ने कहा: इस्तिफ़ाज़ा का अर्थ यह है कि उस शहर से कई समूह आएं उनमें से प्रत्येक उस शहर के लोगों के बारे में सूचित करे कि उन्होंने चांद देखकर रोज़ा रखा है, न कि केवल एक अफ़वाह जिसकी उत्पत्ति का ज्ञान न हो, जैसा कि कभी-कभी खबरें फैलती हैं जिनके बारे में शहर के सभी लोग बात करते हैं लेकिन यह नहीं पता होता कि उन्हें किसने फैलाया, जैसा कि हदीस में आया है कि अंतिम समय में शैतान लोगों के बीच बैठेगा और कोई बात कहेगा, फिर लोग उस बात का ज़िक्र करेंगे लेकिन कहेंगे कि हमें नहीं पता कि यह बात किसने कही है। ऐसी बात तो सुनने लायक भी नहीं होती, फिर उससे कोई हुक्म साबित होने का तो सवाल ही नहीं। (मैं कहता हूँ) और यह एक अच्छी बात है और इसी की ओर अल-ज़खीरा का यह कथन संकेत करता है: 'जब वह प्रसिद्ध और सत्यापित हो जाए,' क्योंकि सत्यापन केवल अफ़वाह से प्राप्त नहीं होता।[1] | शेख रहमती ने फ़रमाया: शोहरत (प्रसिद्धि) का अर्थ यह है कि उस शहर से अनेक जमातें आएं और सभी इस बात की सूचना दें कि वहां के लोगों ने चांद देखकर रोज़ा रखा है, न कि केवल ऐसी अफ़वाह से जिसका फैलाने वाला ज्ञात न हो, जैसा कि कभी-कभी शहर में बहुत सी बातें फैल जाती हैं लेकिन वे यह नहीं जानते कि उन्हें किसने फैलाया है, जैसा कि हदीस में आया है कि अंतिम समय में शैतान लोगों के बीच आकर बैठेगा और वह कुछ बात करेगा तो लोग वह बात तो बयान करेंगे मगर कहेंगे कि हमें ज्ञान नहीं कि यह बात किसने कही है, ऐसी बात तो सुनने योग्य ही नहीं होती, फिर उससे हुक्म कैसे साबित होगा। (मैं कहता हूँ) यह बात बहुत ही सुंदर है और ज़खीरा का यह कथन कि "जब खबर प्रसिद्ध और

सत्यापित हो तो तब आवश्यक है वरना केवल प्रसिद्धि प्रमाण नहीं होती" भी इसी की ओर इशारा कर रहा है। (त) |

इसी में है:

[1] रद अल-मुह्तार, किताबुल-सौम, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 102/2 पृष्ठ 440 का 836

فتاوی رضویہ جلد دہم

پھر کیوں علمائے دین نے اسکی بے اعتباری کی تصریح فرمائی،

| کما مر نقلہ عن الہندیۃ والفتح ونحوہ فی البحر الرائق والدر المختار ومجمع الانہر وغیرھا من الاسفار۔ | جیسا کہ ہندیہ اور فتح کے حوالے سے گزر چکا، اسی طرح بحر الرائق، در مختار، مجمع الانہر اور دیگر کتب معتمدہ میں ہے۔ (ت) |

بلکہ وہ استفاضہ جو شرعاً معتبر ہے اس کے معنی یہ ہیں کہ اس شہر سے گروہ کے گروہ متعدد جماعتیں آئیں اور سب بالاتفاق یک زبان بیان کریں کہ وہاں فلاں شب چاند دیکھ کر لوگوں نے روزہ رکھا یہاں تک کہ ان کی خبر پر یقین شرعی حاصل ہو۔ ردالمختار میں ہے:

| قال الرحمتی معنی الاستفاضۃ ان تاتی من تلک البلدۃ جماعات متعددون کل منھم یخبر عن اھل تلک البلدۃ انھم صاموا عن رؤیۃ لا مجرد الشیوع من غیر علم بمن اشاعہ کما قد تشیع اخبار یتحدث بھا سائر اھل البلدۃ ولا یعلم من اشاعھا کما ورد ان فی آخر الزمان یجلس الشیطان بین الجماعۃ فیتکلم بالکلمۃ فیتحدثون بھا ویقولون لا ندری من قالھا فمثل ھذا لا ینبغی ان یسمع فضلا من ان یثبت بہ حکم اہ (قلت) وھو کلام حسن ویشیر الیہ قول الذخیرۃ اذا استفاض وتحقق فان التحقق لایوجد بمجرد الشیوع۔ [1] | شیخ رحمتی نے فرمایا: شہرت کا مفہوم یہ ہے کہ اس شہر سے متعدد جماعتیں آئیں اور تمام اس بات کی اطلاع دیں کہ وہاں کے لوگوں نے چاند دیکھ کر روزہ رکھا ہے محض ایسی افواہ سے نہیں جس کے پھیلانے والا معلوم نہ ہو، جیسا کہ بعض اوقات بہت سی باتیں شہر میں پھیل جاتی ہیں لیکن وہ یہ نہیں جانتے ہوتے کہ انہیں کس نے پھیلایا ہے، جیسا کہ حدیث میں وارد ہے کہ آخری زمانے میں شیطان لوگوں کے درمیان آکر بیٹھے گا اور وہ کچھ گفتگو کرے گا تو لوگ وہ گفتگو

بیان تو کریں گے مگر کہیں گے ہمیں علم نہیں کہ یہ بات کس نے کی ہے، ایسی بات تو قابلِ سماعت ہی نہیں ہوتی چہ جائیکہ اس سے حکم ثابت ہو اھ (میں کہتا ہوں) یہ کلام نہایت ہی خوبصورت ہے اور ذخیرہ کا یہ قول کہ "جب خبر مشہور و محقق ہو تو تب لازم ہے ورنہ محض شہرت ثبوت نہیں ہوتا" بھی اسی کی طرف اشارہ کر رہا ہے۔(ت) |

اسی میں ہے:

[1] ردالمختار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۱۰۲/۲ Page 440 of 836

[Box text] Ash-Shahadah bi-anna ahl-al-baldah ra'aw al-hilal wa samoo li'annaha la tafeed-ul-yaqeen falizhalika lam tuqbal illa idha kanat 'alal hukm au 'ala shahadati ghayrihim litakuna shahadatan mu'tabaratan wa illa fahiya mujarrad ikhbar bikhilaf al-istifadah fa'innaha tafeed-ul-yaqeen. Wallahu Ta'ala A'lam. Testifying that the people of a town saw the crescent and fasted is not accepted because it does not provide certainty. Therefore, such testimony is not acceptable unless it is based on a judge's ruling or the testimony of others so that it becomes a valid testimony. In such a case, it provides certainty; otherwise, it is merely information, unlike 'istifadah' (widespread report), which provides certainty. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 702: From Bahraich Chowk Bazaar, sent by Hafiz Muhammad Shafi Sahib, 26th of the Blessed Month, 1333 AH. If the crescent of Ramadan was seen by only one person during dusty or cloudy weather and the Qazi issued a fatwa declaring it to be the start of the month, will the first of Shawwal now be established after thirty days are completed, even if the moon is not visible that night due to dust or clouds? Or can this only be done if there is more than one reliable witness? Explain and you shall be rewarded.

Answer: When thirty fasts of the blessed month were completed by accepting the testimony of one person due to dust, and the Shawwal crescent was not visible due to clouds, then the correct view is that by consensus, Eid should be celebrated in this situation. However, if after thirty days the sky was clear and the Eid crescent was not seen, and the Ramadan crescent was accepted based on the statement of a single witness, then the preferred view is that Eid will not be celebrated. If fasting began based on the testimony of two reliable witnesses, then according to the more preferred view, Eid will be celebrated after thirty days even if the sky is clear and the moon is not visible. It is stated in 'Durr-ul-Mukhtar':

"After fasting thirty days based on the testimony of two reliable witnesses, breaking the fast (Eid) becomes lawful (by consensus) if the thirty-first night is cloudy. Likewise, it is the same if it is clear according to what has been authenticated in 'Ad-Dirayah', 'Al-Khulasah', and 'Al-Bazzaziyyah', and the Fatwa is in 'Al-Faydh'."

1. Rad al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/503-102
2. Durr-ul-Mukhtar, Kitab al-Sawm, before the chapter on what voids the fast, Matba' Mujtabai Delhi, 1/149

जिल्द दहम | फ़तावा रज़विया

[बॉक्स का टेक्स्ट] अश-शहादत बि-अन्ना अहल-अल-बलदह र'अव अल-हिलाल व सामू लिअन्नहा ला तफ़ीड-उल-यक़ीन फ़लिज़ालिका लम तुक़बल इल्ला इज़ा कानत अलल हुक्म अव अला शहादती ग़ैरिहिम लितकूना शहादतन मुअतबरतन व इल्ला फ़हिया मुजर्रद इख़बार बिखिलाफ़ अल-इस्तिफ़ादह फ़इन्नहा तफ़ीड-उल-यक़ीन। वल्लाहु तआला आलम। इस बात पर गवाही देना कि फलां शहर के लोगों ने चाँद देखकर रोज़ा रखा है, क्योंकि यह यक़ीन (निश्चितता) प्रदान नहीं करता है, इसलिए यह गवाही स्वीकार्य नहीं है। हाँ, इस सूरत में जब यह काज़ी के फ़ैसले पर हो या दूसरों की गवाही पर गवाह हों ताकि यह शहादत मुअतबर (विश्वसनीय) क़रार पाए, तो यह मुफीद-ए-यक़ीन है, वरना यह महज़ एक ख़बर होगी, 'इस्तिफ़ाज़ा' (व्यापक रिपोर्ट) के विपरीत, क्योंकि वह यक़ीन दिलाती है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 702: बहराइच चौक बाज़ार से, हाफ़िज़ मोहम्मद शफ़ी साहब द्वारा भेजा गया, 26 माहे मुबारक 1333 हिजरी। रमज़ान शरीफ़ का चाँद धूल या बादलों की स्थिति में सिर्फ़ एक व्यक्ति ने देखा और काज़ी ने उस पर चाँद होने का फ़तवा दे दिया। अब क्या शव्वाल की पहली तारीख तीस दिन पूरे होने पर साबित हो जाएगी, भले ही धूल या बादलों के कारण उस रात चाँद नज़र न आए? या क्या एक से अधिक विश्वसनीय गवाहों की ज़रूरत है? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

जवाब: जब धूल के कारण एक व्यक्ति की गवाही मानकर मुबारक महीने के तीस रोज़ा पूरे किए गए और बादलों के कारण शव्वाल का चाँद नज़र नहीं आया, तो सही यह है कि सर्वसम्मति से इस सूरत में ईद मना ली जाए। हाँ, अगर तीस दिनों के बाद आसमान साफ़ था और ईद का चाँद नज़र नहीं आया, और रमज़ान का चाँद सिर्फ़ एक गवाह के कहने पर माना गया था, तो बेहतर राय यह है कि ईद न मनाएं। और अगर दो आदिल (न्यायप्रिय) गवाहों की गवाही से रोज़ा रखे गए थे, तो ज़्यादा सही राय के अनुसार तीस दिन के बाद ईद कर लेंगे भले ही आसमान साफ़ हो और चाँद नज़र न आए। दुर्रे-मुख़्तार में है:

"दो विश्वसनीय व्यक्तियों की गवाही पर तीस दिन रोज़े रखने के बाद, रोज़ाना तोड़ना (ईद मनाना) हलाल है (सर्वसम्मति से) यदि इकतीसवीं रात बादलों वाली हो। इसी तरह, अगर आसमान साफ़ हो

तो भी यही हुक्म है जैसा कि 'अद-दिराया', 'अल-ख़ुलासा' और 'अल-बज़्ज़ाज़िया' में प्रमाणित किया गया है, और 'अल-फ़ैज़' में फ़तवा है।"

1. रद-अल-मुह्तार, किताब-उस-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/503-102
2. दुर्रे-मुख़्तार, किताब-उस-सौम, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/149

الشهادة بان اهل البلدة رأوا الهلال وصاموا لانها لا تفيد اليقين فلذالم تقبل الا اذا كانت على الحكم او على شهادة غيرهم لتكون شهادة معتبرة و الا فهي مجرد اخبار بخلاف الاستفاضة فانها تفيد اليقين - واللہ تعالیٰ اعلم اس بات پر گواہی کہ فلاں اہل شہر نے چاند دیکھ کر روزہ رکھا ہے چونکہ مفید یقین نہیں اس لیے گواہی مقبول نہیں، البتہ اس صورت میں جب قاضی کے فیصلہ ہو یا غیر کی گواہی پر گواہ ہوں تاکہ یہ شہادت معتبر قرار پائے تو مفید یقین ہے ورنہ یہ محض خبر ہوگی بخلاف استفاضہ، کیونکہ وہ مفید یقین ہوتی ہے، واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ۷۰۲: از بہرائچ چوک بازار مرسلہ حافظ محمد شفیع صاحب ۲۶ ماہ مبارک ۱۳۳۳ھ رمضان شریف کا چاند غبار یا ابر ہونے کی حالت میں صرف ایک شخص نے دیکھا اور قاضی نے اس پر فتویٰ چاند ہونے کا دے دیا اب کیا غرہ شوال اس سے تیس دن پورے ہو جانے پر ثابت ہو جائے گا گو چاند بوجہ غبار یا ابر کے اس رات کو نظر نہ آئے یا ایسا ایک سے زائد عادل گواہ ہونے پر کیا جا سکتا ہے، بینوا توجروا۔

الجواب: جبکہ ہلال ماہ مبارک بوجہ غبار ایک کی شہادت سے مان کر ۳۰ روزے پورے کئے اور ہلال شوال بوجہ ابر نظر نہ آیا تو صحیح یہ ہے کہ بالاتفاق اس صورت میں عید کرلی جائے، ہاں اگر تیس ۳۰ روزوں کے بعد مطلع صاف ہوا اور عید کا چاند نظر نہ آئے اور رمضان کا چاند شاہد واحد کے قول پر مانا تھا تو راجح یہ ہے کہ عید نہ کریں گے اور اگر دو عادلوں کی گواہی سے روزے رکھے تھے تو قول ارجح پر ۳۰ کے بعد عید کر لیں گے اگر مطلع صاف ہو اور ہلال نظر نہ آئے، در مختار میں ہے:

بعد صوم ثلثين بقول عدلين حل الفطر ـ (اتفاقا) ان كانت ليلة الحادى والثلثين متغيبة وكذا لو كان مصحية على ما صححه في الدراية والخلاصة والبزازية وفي الفيض الفتوى

1 ردالمحتار كتاب الصوم مصطفى البابى مصر ٢/ ٥٠٣-١٠٢ 2 در مختار كتاب الصوم قبيل مايفسد الصوم مطبع مجتبائى دہلى ١/ ١٤٩

Fatawa Ridawiyya - Volume 10

...regarding the permissibility of breaking the fast (Eid) - [Shami]. And if they fasted based on the statement of one reliable witness, it is not permissible [to celebrate Eid] according to the [Hanafi] school of thought; thus it was mentioned by the author. However, the statement that breaking the fast is permissible is by consensus. And in Al-Zayla'i, it is more likely that if it was cloudy, it is permissible, otherwise not. Its refinement is in Radd al-Muhtar and what we have commented upon it. And Allah Almighty knows best.

It is stated that the fatwa is on this view that Eid al-Fitr will be permissible (Shami). And if they had started fasting based on the statement of one reliable witness, then according to the correct school of thought, it is not proper to celebrate Eid [after 29 days]. The author has mentioned it in this way, but Ibn Kamal has quoted from 'Zakhira' that if the horizon is cloudy on the night of the moon, then Eid is permissible by consensus. In Zayla'i, it is stated that what is closer to the truth is that if the horizon is cloudy, then Eid is permissible, otherwise not. Its detail is in Radd al-Muhtar and in our marginalia on it. And Allah Almighty knows best (T).

Problem 208: From Afzalgarh, District Bijnor, sent by Yusuf Khan and others, 26 Ramadan 1333 AH. What do the scholars of religion say regarding this problem: the moon of Sha'ban was seen in most places, but many people did not see it. For example, in the town of Afzalgarh, approximately fifteen to twenty people claimed to have seen the moon on Sunday, while the rest of the town differed, meaning the rest did not see it. Now, during Ramadan, the sky remained overcast. Based on this, both parties completed 30 days of fasting. A small party started one day earlier and the larger party started one day later. Now Eid is approaching. If the sky is overcast, should the first and second parties celebrate Eid together, or separately after completing their full fasts? Even though each party will complete its own 30 fasts, if they both celebrate Eid together by agreement, then one party's fasts will be 30 and the other's will be 31. What should be done in such a situation? Explain the ruling and be rewarded.

The Answer: If among that small party there were two men or one man and two women who are trustworthy, legally reliable (Adil) according to Sharia, who are neither committers of major sins nor persistent in minor ones, nor of flighty behavior; and after seeing the crescent of Sha'ban on Sunday evening, they testified before a Sunni scholar or jurist (if present) using the word 'Ashhadu' (I testify), or if no

such scholar was present, they informed the Muslims of their sighting; and on that Sunday evening either the horizon was not clear, or people did not try to see the moon, or they tried at the wrong time, or the place from where those people saw the moon was elevated or outside the settlement; then in these cases...

---

1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/102-103 2 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, before the section on what invalidates the fast, Matba' Mujtabai Delhi, 1/149

फ़तावा रज़विया - जिल्द दस

...ईदुल-फ़ित्र की अनुमति के बारे में (शामी)। और यदि उन्होंने एक विश्वसनीय गवाह के कहने पर रोज़ा रखना शुरू किया था, तो मज़हब (हनफ़ी) के अनुसार ईद करना जायज़ नहीं है; लेखक ने इसे इसी तरह उल्लेख किया है। लेकिन ईद की अनुमति का कथन सर्वसम्मति से है। और ज़ैलई में है कि अधिक संभावना यह है कि यदि बादल हों तो जायज़ है, अन्यथा नहीं। इसका स्पष्टीकरण रद्दुल-मुह्तार और उस पर हमारे हाशिये में है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

इसमें है कि फ़तवा इसी कथन पर है कि ईदुल-फ़ित्र जायज़ होगी (शामी)। और अगर उन्होंने एक आदिल (विश्वसनीय) के कहने पर रोज़ा रखना शुरू किया था, तो सही मज़हब पर ईद करना सही नहीं है। लेखक ने इसी तरह इसका ज़िक्र किया है लेकिन इब्न कमाल ने 'ज़खीरा' से यह नक़ल किया है कि अगर चाँद की रात مطلع (क्षितिज) बादलों से भरा हो तो सर्वसम्मति से ईद जायज़ है। ज़ैलई में है कि हक़ के नज़दीक यह है कि अगर مطلع बादलों वाला हो तो ईद जायज़ है, वरना जायज़ नहीं। इसकी तफ़सील रद्दुल-मुह्तार और उस पर हमारे हाशिये में है। वल्लाहु तआला आलम (त)।

मसला २०८: अफ़ज़लगढ़, ज़िला बिजनौर से, प्रेषक यूसुफ़ खाँ व अन्य, २६ रमज़ान १३३३ हिजरी। धार्मिक विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि शाबान का चाँद अक्सर जगहों पर देखा गया और बहुत से लोगों ने नहीं देखा। उदाहरण के लिए, अफ़ज़लगढ़ कस्बे में लगभग पंद्रह-बीस लोग रविवार को चाँद देखने के इक़रारी हैं, बाकी पूरा कस्बा इसके विरुद्ध है, यानी बाकियों ने नहीं देखा। अब रमज़ान शरीफ़ में बादल छाए रहे, इसी आधार पर दोनों पक्षों ने ३० दिन पूरे करके रोज़े रखे। एक छोटे पक्ष ने एक दिन पहले और बड़े पक्ष ने एक दिन बाद रोज़े शुरू किए। अब ईद नज़दीक आ गई है, अगर बादल छाए रहे तो ईद पहले और दूसरे पक्ष को एक साथ करनी चाहिए या अपने-अपने पूरे रोज़े करके अलग-अलग करनी चाहिए? हालाँकि हर पक्ष अपने-अपने ३० रोज़े पूरे करेगा। अगर दोनों इत्तेफ़ाक़ से ईद करते हैं, तो एक पक्ष के ३० रोज़े होंगे और दूसरे के ३१ होंगे। ऐसी स्थिति में क्या करना चाहिए? बयान करें और पुण्य कमाएँ।

जवाब: अगर उस छोटे पक्ष में दो पुरुष या एक पुरुष और दो महिलाएँ शरीअत के अनुसार 'आदिल' और विश्वसनीय हों, जो न तो किसी बड़े गुनाह के अपराधी हों और न ही छोटे गुनाहों पर अड़े हों, और न ही ओछे स्वभाव के हों; और उन्होंने रविवार की शाम शाबान का चाँद देखकर वहाँ अगर कोई सुन्नी आलिम या फ़क़ीह मौजूद हो, तो उसके सामने 'अशहदु' (मैं गवाही देता हूँ) शब्द के साथ

गवाही दी हो; या वहाँ ऐसा कोई आलिम न था तो मुसलमानों को अपने चाँद देखने की ख़बर दी हो; और वहाँ रविवार की शाम या तो مطلع साफ़ न था या लोगों ने चाँद देखने की कोशिश नहीं की, या की तो बेवक़्त की, या उन देखने वालों ने जहाँ से देखा वह जगह ऊँची थी या बस्ती से बाहर थी; तो इन सूरतों में...

---

1 रद्दुल-मुह्तार, किताबुस-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/102-103 2 दुर्रे-मुख्तार, किताबुस-सौम, रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों के बयान से पहले, मतबअ मुज्तबाई दिल्ली, 1/149

علی حل الفطر اه (شامي) ولو صاموا بقول عدل لا یحل علی المذهب کذا ذکره المصنف لکن قول الفطر حل اتفاقا وفي الزیلعي الاشبه ان غم حل والا لا اه وتنقیحه فی رد المحتار وما علقنا علیه، واللہ تعالی اعلم۔ میں ہے کہ فتوٰی اسی قول پر ہے کہ عید الفطر جائز ہوگی اھ (شامي) اور اگر ایک عادل کے قول پر انہوں نے روزہ رکھنا شروع کیا تھا تو صحیح مذہب پر عید کرنا درست نہیں، مصنف نے اسی طرح اسے ذکر کیا ہے لیکن ابن کمال نے ذخیرہ سے یہ نقل کیا ہے کہ اگر چاند رات مطلع ابر آلود ہو تو بالاتفاق عید جائز ہے، زیلعی میں ہے کہ مشابہ بالحق یہ ہے کہ اگر مطلع ابر آلود ہو تو عید جائز، ورنہ جائز نہیں اھ اس کی تفصیل ردالمحتار اور اس پر ہمارے حواشی میں ہے، واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۲۰۸: از افضل گڑھ ضلع بجنور مرسلہ یوسف خاں وغیرہ ۲۶ رمضان ۱۳۳۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین مسئلہ ہذا میں کہ چاند شعبان کا اکثر جگہ دیکھا اور بہت سے آدمیوں نے نہیں دیکھا مثلاً قصبہ افضل گڑھ میں تخمیناً پندرہ بیس آدمی اقراری چاند دیکھنے ایک شنبہ کے ہیں باقی تمام قصبہ خلاف ہے یعنی باقی نے نہیں دیکھا، اب رمضان شریف میں ابر محیط رہا اسی بنا پر ۳۰ یوم پورے کر کے روزہ ہر دو فریق نے رکھا، تھوڑے فریق نے ایک یوم پیشتر اور زیادہ فریق نے ایک روز بعد رکھا، اب عید قریب آگئی اگر ابر محیط ہوا تو عید فریق اول و دوم کو ایک ساتھ کرنا چاہئے یا علیحدہ علیحدہ پورے روزے کرکے کرنا چاہئے حالانکہ ہر فریق اپنے اپنے روزے پورے ۳۰ کرے گا، اگر دونوں اتفاق سے عید کرتے ہیں تو ایک فریق کے روزے ۳۰ ہوتے ہیں دوسرے کے ۳۱ ہوتے ہیں، ایسی حالت میں کیا کرنا چاہئے؟ بینو اتوجروا الجواب: اگر اس کم فریق میں دو مرد یا ایک مرد و دو عورتیں ثقہ عادل شرعی جو نہ کسی کبیرہ کے مرتکب

ہوں نہ صغیرہ پر مصر، نہ خفیف الحرکات، اور انہوں نے ہلالِ شعبان شام یک شنبہ کو دیکھ کر وہاں اگر کوئی عالم فقیہ سنی المذہب دین دار ہے اس کے حضور بلفظ اشھد یعنی میں گواہی دیتا ہوں کہہ کر گواہی دی، یا وہاں ایسا کوئی عالم نہ تھا تو مسلمانوں کو اپنی رؤیت کی خبر دی اور وہاں شام یکشنبہ یا تو مطلع صاف نہ تھا یا لوگوں نے چاند دیکھنے کی کوشش نہ کی یا کی تو بے وقت کی، یا ان دیکھنے والوں نے جہاں سے دیکھا جگہ بلند پر یا آبادی سے باہر تھی تو ان صورتوں میں

---

1 ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/ ۱۰۳-۱۰۲ 2 درمختار کتاب الصوم قبیل مایفسد الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۹

Fatawa Razawiyya Volume 10

The 1st of Sha'ban was proven to be on Monday according to the conditions, and based on this, the first fast was necessarily on Wednesday. Those who did not fast must observe its qaza (makeup fast). Then, if the following Thursday marks the 30th of Ramadan, Eid will necessarily fall on Friday. Both parties will celebrate Eid on Friday by consensus. One group will have completed 30 fasts, while the other will have 29; those with 29 must observe one makeup fast. However, if in this group there were not even two just witnesses, or if they did not testify before a scholar of such quality using the word "Ashhadu" in the sense of testimony, or if the horizon was clear and the general public tried sufficiently to sight the moon at the right time but it was not seen, and there was no special circumstance like elevation or being outside the city among those people, then the 1st of Sha'ban was not proven on Monday. Those few who claim to have seen it are incorrect; they were mistaken (and this is also evident from the actual observation, as the crescent was not habitually visible on that day). Therefore, the 30th of Sha'ban fell on Wednesday, and the blessed month began on Thursday. If it is cloudy on Thursday the 29th, Friday will be the 30th, and it will not be permissible for the minority group to celebrate Eid on Friday based on their assumption. Instead, fasting will remain obligatory for them. The general public will have 30 days, and they too will have 30. The first fast on Wednesday will not be counted as Ramadan, even though they were commanded to fast that day due to their own sighting. This is all assuming that the beginning of Ramadan on Wednesday is not proven by any other legal evidence; otherwise, Eid naturally falls on Friday. It is stated in Radd al-Muhtar:

[Arabic Quote 1]: Regarding the remaining nine months (i.e., other than Ramadan and the two Eids), testimony is only accepted from two just, free men, or one man and two women, who have not been punished for false accusation, as in other rulings. (Reported in al-Bahr from the commentary of Imam al-Asbijabi [1]) [Urdu Explanation]: In the remaining nine months (i.e., except for the months of Ramadan, Eid-ul-Fitr, and Eid-ul-Adha), the testimony of two men or one man and two women will be accepted if they are just, free, and not punished for slander (Qadhf), as is common in other rulings. It is cited similarly in al-Bahr from the commentary of Imam al-Asbijabi. (T)

It is stated in Durr al-Mukhtar: [Arabic Quote 2]: The condition for breaking the fast (Eid) along with justice is the quorum of testimony and the word 'Ashhadu' (I bear witness). If they are in a town where there is no judge, they shall fast based on the

statement of one reliable person and break the fast based on the report of two just witnesses out of necessity. [2] (Summarized) [Urdu Explanation]: For the moon of Eid-ul-Fitr, in addition to justice, the quorum of testimony and the word of testimony (i.e., 'Ashhadu') are also necessary. If it is a city where there is no judge, then out of necessity, people should fast on the word of one reliable person and celebrate Eid-ul-Fitr based on the news of two just witnesses. (Summarized) (T)

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/103
2. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/148

शर्तों के अनुसार 1 शाबान सोमवार को साबित हुई और इसी आधार पर आवश्यकतानुसार बुधवार को पहला रोज़ा रखा गया। जिन्होंने रोज़ा नहीं रखा, वे इसकी कज़ा (बाद में रोज़ा) रखें। फिर अगले गुरुवार को रमज़ान के30 दिन पूरे होने पर आवश्यकतानुसार शुक्रवार को ईद हुई। दोनों पक्ष सर्वसम्मति से शुक्रवार को ईद मनाएंगे। एक पक्ष के30 रोज़े होंगे और दूसरे के29; 29 वाले एक कज़ा रखेंगे। और यदि इस पक्ष में दो गवाह भी न्यायप्रिय (आदिल) नहीं थे, या उन्होंने इस गुण वाले विद्वान के सामने 'अशहदु' (मैं गवाही देता हूँ) शब्द का प्रयोग करते हुए गवाही नहीं दी, या आसमान साफ़ था और आम लोगों ने समय पर चाँद देखने की भरपूर कोशिश की लेकिन नज़र नहीं आया, और उन लोगों में ऊँचाई पर होने या बस्ती से बाहर होने जैसी कोई विशेष स्थिति नहीं थी, तो इन स्थितियों में सोमवार को 1 शाबान साबित नहीं हुई। और वे कुछ लोग जो देखने का दावा करते हैं, वे गलत कह रहे हैं, उन्हें धोखा हुआ है (और वास्तविकता से भी यही प्रतीत होता है क्योंकि उस दिन चाँद सामान्यतः दिखने योग्य नहीं था)। इसलिए शाबान की 30 तारीख़ बुधवार को हुई, और मुबारक महीना गुरुवार से शुरू हुआ। यदि 29 गुरुवार को बादल छाए रहें, तो शुक्रवार 30 तारीख़ होगी, और उस अल्पसंख्यक पक्ष के लिए भी अपने अनुमान के आधार पर शुक्रवार को ईद मनाना जायज़ नहीं होगा, बल्कि उन पर भी रोज़ा रखना वाजिब होगा। आम लोगों के30 होंगे और उनके भी 30 ही होंगे। बुधवार का पहला रोज़ा रमज़ान में नहीं गिना जाएगा, हालाँकि उन्हें अपनी स्वयं की दृष्टि के कारण उस दिन भी रोज़ा रखने का आदेश था। यह सब उस स्थिति में है जब बुधवार को रमज़ान की शुरुआत किसी अन्य शरई प्रमाण से साबित न हो जाए, अन्यथा शुक्रवार को ही ईद है। रद अल-मुह्तार में है:

بقیۃ الاشھر التسعۃ (ای ماعدا رمضان و العیدین) لا یقبل فیھا الا شھادۃ رجلین اور رجل و امرأتین عدول احرار غیر محدودین کما فی سائر الاحکام، بحر عن شرح الامام الاسبیجابی۔
1 बाकी नौ महीनों में (अर्थात रमज़ान, ईद-उल-फ़ितर और ईद-उल-अज़हा के महीनों के अलावा), दो पुरुषों या एक पुरुष और दो महिलाओं की गवाही स्वीकार की जाएगी जो आदिल, आज़ाद और क़ज़फ़ (झूठे आरोप) में दंडित न हों, जैसा कि अन्य आदेशों में होता है। बहर में इमाम अस्बिजाबी की शरह (व्याख्या) से इसी तरह वर्णित है। (त)

दुर्र-ए-मुख़्तार में है: شرط للفطر مع العدالۃ نصاب الشھادۃ ولفظ اشھد ولو کانوا ببلدۃ لا حاکم فیھا صاموا بقول ثقۃ وافطروا باخبار عدلین للضرورۃ 2 (ملخصاً) ईद-उल-फ़ितर के चाँद

के लिए न्यायप्रियता के अलावा गवाही का निशाब और गवाही के शब्द (अर्थात अशहदु) का होना भी आवश्यक है। यदि वह ऐसा शहर हो जहाँ कोई हाकिम न हो, तो आवश्यकतानुसार एक विश्वसनीय (सिक़ा) व्यक्ति के कहने पर लोग रोज़ा रख लें और दो आदिल गवाहों की ख़बर पर ईद-उल-फ़ितर कर लें। (संक्षिप्त) (त)

1. रद अल-मुह्तार, किताब अस-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/103
2. दुर्र-ए-मुख़्तार, किताब अस-सौम, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 1/148

شرطوں سے یکم شعبان روزِ دو شنبہ کی ثابت ہوگئی اور اس کی بنا پر بضرورت چہار شنبہ کا پہلا روزہ ہوا، جنہوں نے نہ رکھا اس کی قضا رکھیں، پھر پنجشنبہ آئندہ کو رمضان کے ۳۰ ہو کر بضرورت جمعہ کی عید ہوگئی، دونوں فریق بالاتفاق جمعہ کی عید کرینگے، ایک کے ۳۰ روزے ایک کے ۲۹ ہوں گے، ۲۹ والے ایک قضا رکھیں گے، اور اگر اس فریق میں دو گواہ بھی عادل نہیں یا انہوں نے اس صفت والے عالم کے سامنے لفظ اشھد بمعنی مذکور شہادت نہ دی، یا مطلع صاف تھا اور عام لوگوں نے وقت پر چاند دیکھنے کی کافی کوشش کی اور نظر نہ آیا اور ان لوگوں میں کوئی خصوصیت مثل بلندی مقام یا بیرون آبادی کی نہ تھی تو ان صورتوں میں دو شنبہ کی یکم شعبان ثابت نہ ہوئی اور یہ بعض کہ دیکھنا بیان کرتے ہیں غلط کہتے ہیں ان کو دھوکا ہوا (اور نظر واقع سے بھی یہی معلوم ہوتا ہے اس لیے کہ اس دن ہلال عادۃً قابلِ رؤیت نہ تھا) لہٰذا شعبان کی ۳۰ چہار شنبہ کو ہوئی، اور یکم ماہِ مبارک پنجشنبہ سے ہو کر پنجشنبہ ۲۹ کو اگر ابر رہے جمعہ کی ۳۰ ہوگی اور اس کم فریق کو بھی جائز نہ ہوگا کہ اپنے زعم کی بنا پر جمعہ کی عید کرلے بلکہ ان پر بھی روزہ رکھنا واجب ہوگا، عام کے ۳۰ ہوں گے اور ان کے ۳۰ ہی ہوں گے، پہلا روزہ چہار شنبہ کا رمضان میں محسوب نہ ہوگا اگر چہ ان پر اپنی رؤیت عین کے سبب اس دن بھی روزہ کا حکم تھا، یہ سب اس صورت میں ہے کہ غرہ رمضان چہار شنبہ کا کسی اور ثبوت شرعی سے ثابت نہ ہو جائے ورنہ آپ ہی جمعہ کی عید ہے۔ ردالمحتار میں ہے:

بقیۃ الاشھر التسعۃ (ای ماعدا رمضان و العیدین) لا یقبل فیھا الا شھادۃ رجلین اور رجل و امرأتین عدول احرار غیر محدودین کما فی سائر الاحکام، بحر عن شرح الامام الاسبیجابی۔ 1 باقی نو ماہ (یعنی رمضان، عید الفطر اور عید الاضحی کے مہینوں کے علاوہ) میں ایسے دو مرد یا ایک مرد

دو خواتین کی گواہی قبول کی جائے گی جو عادل، آزاد اور محدود فی القذف نہ ہوں جیسا کہ بقیہ احکام میں ہوتا ہے، بحر میں شرح امام اسبیجابی سے اسی طرح منقول ہے۔ (ت)

درمختار میں ہے: شرط للفطر مع العدالۃ نصاب الشھادۃ ولفظ اشھد ولو کانوا ببلدۃ لا حاکم فیھا صاموا بقول ثقۃ وافطروا باخبار عدلین للضرورۃ 2 (ملخصاً) عید الفطر کے چاند کے لیے عدالت کے علاوہ نصاب شہادت اور لفظ شہادت (یعنی اشہد) کا ہونا بھی ضروری ہے اور وہ ایسا شہر ہو جہاں کوئی حاکم نہ ہو تو ضرورت کے پیش نظر ایک ثقہ کے قول پر لوگ روزہ رکھ لیں اور دو عادل گواہوں کی خبر پر عید الفطر کرلیں۔ (ملخصاً) (ت)

1 ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/ ۱۰۳ 2 درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۸

Fatawa Razawiyya Volume 10

In Radd al-Muhtar, after the mentioned passage, it is stated:

[Arabic Text]: And it is mentioned in Al-Imdad that in clear weather, it [other months] is like Ramadan and Eid-ul-Fitr, meaning a large congregation is necessary. He did not attribute this view to anyone, but Khair al-Din al-Ramli said that the apparent view for the nine months is that there is no difference between cloudy and clear skies in accepting the testimony of two men, because the cause requiring a large group is absent—namely, everyone searching for it. So, if two people testify to the crescent of Shaban in clear skies and it is proven under legal conditions, then Ramadan is established after thirty days of Shaban. Even if it were Ramadan in clear weather, it would not be proven by their news because its proof then is incidental. End. As for Ash-Shami, I say: When it is established that everyone is searching, the impediment is confirmed, so the testimony of a few is not accepted unless they were uniquely positioned closer to the sighting than the general public. Thus, their testimony is rejected, and they should not act upon it even for themselves, as in Al-Durr: If a legally responsible person sees the crescent of Ramadan or Eid and his statement is rejected due to legal evidence, he must fast absolutely and obligatorily. And in Radd al-Muhtar, he benefited...

[Urdu Translation/Explanation]: It is in Al-Imdad that if the horizon is clear, then (the rest of the months as well) are like Ramadan and Eid-ul-Fitr, i.e., the testimony of a large congregation is necessary. However, he did not attribute this statement to anyone. But Khair-ud-Din Ramli said that the apparent view is that in the matter of the moon for the remaining months, there is no difference between cloudy and non-cloudy conditions for the acceptance of two men's testimony because the effective cause ('illa) is absent here which is a condition for a large congregation, and that is everyone searching for the moon. Therefore, if two men gave testimony of the moon of Shaban in clear weather and after the completion of thirty days of Shaban, Ramadan is established, even though Ramadan is not established by the testimony of two persons in clear weather because now its establishment will be incidental (End of Shami's text). I say: So when everyone searching for the moon is established, the existence of an impediment is confirmed. Therefore, the testimony of some will not be accepted unless these few are unique compared to general people in being closer to seeing the moon (at a high place or outside the population). Thus, their testimony will be rejected and it will not be acted upon, to the extent that even the witnesses cannot act upon it. As in Al-Durr: Someone legally responsible saw the moon of

Ramadan and Eid-ul-Fitr but his statement was rejected based on legal evidence, then he must keep the fast obligatorily. In Radd al-Muhtar it is, Khair Ramli said...

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt 2/103
2. Durr Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba Mujtabai Delhi 1/148

फ़तावा रज़विया खंड 10

रद अल-मुह्तार में उल्लेखित इबारत के बाद दर्ज है:

[अरबी पाठ]: इमदाद में उल्लेख है कि साफ़ मौसम में यह (अन्य महीने) रमज़ान और ईद की तरह हैं, यानी एक बड़ी जमात की आवश्यकता होती है। उन्होंने इसे किसी के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया, लेकिन खैरुद्दीन अल-रमली ने कहा कि नौ महीनों के लिए स्पष्ट मत यह है कि दो पुरुषों की गवाही स्वीकार करने में बादल और साफ़ आसमान के बीच कोई अंतर नहीं है, क्योंकि बड़ी जमात की आवश्यकता का कारण अनुपस्थित है—अर्थात, सभी का खोजना। इसलिए, यदि दो लोग साफ़ आसमान में शाबान के चाँद की गवाही देते हैं और यह कानूनी शर्तों के तहत साबित हो जाता है, तो शाबान के तीस दिनों के बाद रमज़ान स्थापित हो जाता है। भले ही साफ़ मौसम में रमज़ान हो, लेकिन उनकी सूचना से यह साबित नहीं होगा क्योंकि तब इसका प्रमाण आकस्मिक होता है। समाप्त। जहाँ तक अल-शामी का सवाल है, मैं कहता हूँ: जब यह स्थापित हो जाता है कि हर कोई खोज रहा है, तो बाधा की पुष्टि हो जाती है, इसलिए कुछ लोगों की गवाही तब तक स्वीकार नहीं की जाती जब तक कि वे आम जनता की तुलना में देखे जाने के करीब अद्वितीय रूप से स्थित न हों। इस प्रकार, उनकी गवाही खारिज कर दी जाती है, और उन्हें स्वयं के लिए भी इस पर अमल नहीं करना चाहिए, जैसा कि अल-दुर्र में है: यदि कोई कानूनी रूप से जिम्मेदार व्यक्ति रमज़ान या ईद का चाँद देखता है और कानूनी साक्ष्य के कारण उसका बयान खारिज कर दिया जाता है, तो उसे अनिवार्य रूप से रोज़ा रखना चाहिए। और रद अल-मुह्तार में, उन्होंने लाभ उठाया...

[उर्दू अनुवाद/व्याख्या]: इमदाद में है कि अगर مطلع (क्षितिज) साफ़ हो (तो बाकी महीने भी) रमज़ान और ईद-उल-फित्र की तरह हैं, यानी बड़ी जमात की गवाही ज़रूरी है, लेकिन उन्होंने इस कौल (कथन) का श्रेय किसी की तरफ़ नहीं किया। मगर ख़ैर-उद-दीन रमली ने कहा कि ज़ाहिर यही है कि बाकी महीनों में चाँद के मामले में दो पुरुषों की गवाही की स्वीकार्यता के लिए बादलों वाले और बिना बादलों वाले मौसम में कोई अंतर नहीं होता, क्योंकि यहाँ वह 'इल्लत (कारण) ही अनुपस्थित है जो बड़ी जमात के लिए शर्त है, और वह है सबका चाँद की तलाश करना। इसलिए, अगर दो पुरुषों ने साफ़ मौसम में शाबान के चाँद की गवाही दी और शाबान के तीस दिन पूरे होने पर रमज़ान का प्रमाण मिल जाएगा, भले ही साफ़ मौसम में दो व्यक्तियों की गवाही से रमज़ान साबित नहीं होता, क्योंकि अब इसका प्रमाण गौण (अप्रत्यक्ष) होगा (शामी की इबारत समाप्त हुई)। मैं कहता हूँ: तो जब सबका चाँद तलाश करना साबित हो जाए तो रुकावट (मानअ) का प्रमाण हो जाएगा, इसलिए कुछ

लोगों की गवाही स्वीकार नहीं होगी जब तक कि ये कुछ लोग, आम लोगों की तुलना में चाँद देखने की स्थिति के करीब (ऊँची जगह या आबादी से बाहर) होने में अद्वितीय न हों। अतः उनकी गवाही अस्वीकार्य होगी और उस पर अमल नहीं किया जाएगा, यहाँ तक कि गवाह भी अमल नहीं कर सकते, जैसा कि 'दुर्र' में है: किसी शरीयत के पाबंद व्यक्ति ने रमज़ान और ईद-उल-फित्र का चाँद देखा लेकिन उसका कथन शरीयत के प्रमाण के आधार पर अस्वीकार कर दिया गया, तो वह अनिवार्य रूप से रोज़ा रखे। रद अल-मुह्तार में है, ख़ैर रमली ने...

1. रद अल-मुह्तार, किताब अस-सौम, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र 2/103
2. दुर्र मुख्तार, किताब अस-सौम, मतबा मुजतबाई दिल्ली 1/148

ردالمختار میں بعد عبارت مذکور ہے:

[عربی عبارت]: وذكر في المداد انها في الصحو كرمضان والفطر اي فلا بد من الجمع العظيم ولم يعزه لاحد لكن قال الخير الرملي الظاهر انه في الاهلة التسعة لافرق بين الغيم والصحو في قبول الرجلين لفقد العلة الموجبة لاشتراط الكثير وهي توجه الكل طالبين فلو شهدا في الصحو بهلال شعبان وثبت بشروط الثبوت الشرعي ثبت رمضان بعد ثلثين يوما من شعبان وان كان رمضان في الصحو لايثبت بخبر هما لان ثبوته حينئذ ضمني اهـ اما فی الشامی اقول: فاذا ثبت توجه الكل طالبين تحقق المانع فلا يقبل تفرد البعض ما لم يتفر دوا بما يقرب الرؤية لهم دون عامة الناس فكانت شهادتهم مردودة فلا يعملوا بها حتى في انفسهم كما في الدر رأى مكلف هلال رمضان او الفطر ورد قوله بدليل شرعی صام مطلقا وجوبا ۲ وفي رد المحتار وافاد

[اردو ترجمہ و تشریح]: امداد میں ہے کہ اگر مطلع صاف ہو (تو باقی ماہ بھی) رمضان اور عید الفطر کی طرح ہیں یعنی عظیم جماعت کی گواہی ضروری ہے، مگر انہوں نے اس قول کی نسبت کسی کی طرف نہیں کی لیکن خیر الدین رملی نے کہا کہ ظاہر یہی ہے کہ باقی مہینوں میں چاند کے معاملہ میں دو مردوں کی گواہی کی مقبولیت کے لیے ابر آلود اور غیر ابر آلود میں کوئی فرق نہیں ہوتا کیونکہ یہاں وہ علت ہی مفقود ہے جو جماعتِ کثیر کیلئے شرط ہے اور وہ ہے سب کا چاند کو تلاش کرنا، پس اگر دو مردوں نے صاف موسم میں شعبان کے چاند کی گواہی دی اور شعبان کے تیس دن مکمل ہونے پر رمضان کا ثبوت ہو جائے گا اگرچہ صاف موسم میں دو شخصوں کی گواہی سے رمضان ثابت نہیں ہوتا کیونکہ اب اس کا ثبوت ضمنًا ہو گا اھ (شامی کی عبارت ختم ہوئی) اقول: تو جب سب کا چاند تلاش کرنا ثابت ہو جائے تو مانع کا ثبوت ہو گا لہذا

بعض کی گواہی مقبول نہ ہوگی جب تک یہ بعض ، عام لوگوں کے مقابلہ میں چاند کی رؤیت کے قریب (بلند جگہ یا آبادی سے باہر) ہونے میں منفرد نہ ہوں پس ان کی شہادت مردود ہو گی اور اس پر عمل نہیں کیا جائیگا حتی کہ گواہ بھی عمل نہیں کر سکتے جیسا کہ در میں ہے کسی مکلف نے رمضان اور عید الفطر کا چاند دیکھا لیکن اس کا قول دلیل شرعی کی بنا پر رد کر دیا گیا تو وہ وجوبًا روزہ رکھے۔ رد المحتار میں ہے خیر رملی نے

1 ردالمختار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲ / ۱۰۳ 2 درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۴۸

Volume 10, Fatawa Rizwia

[Box - Arabic and Urdu text] Arabic Text: Al-Khair al-Ramli stated that if a group saw the crescent but their testimony was rejected because they did not constitute a 'great congregation' (Jam-e-Azim), the ruling for them remains the same. Note: If someone saw the moon and fasted, completing thirty days, he should not break the fast except with the Imam (leader/community), based on the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): "Your fasting is on the day you all fast, and your breaking fast is on the day you all break fast." This was narrated by Tirmidhi and others. And since people have not broken their fast on such a day, it is mandatory not to break it. This is what I have understood through juristic insight from their words, and the dispute is clear as you see, by the grace of Allah. And knowledge of the truth is with my Lord, and He is Most Knowing.

Urdu Text: It is in Radd al-Muhtar, Khair al-Ramli says: If a group sees the moon, but because it is not a large enough gathering (great congregation), their testimony is rejected, then the ruling for them is also the same (i.e., they should keep fasting). (T) Note: If the moon-sighter kept the fasts and completed thirty days, he should now celebrate Eid al-Fitr only with the Imam (and not alone), because the Noble Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) has said: "The day of fasting is the day when you all fast, and the day of Eid is the day when you all celebrate Eid." Tirmidhi and other Hadith scholars have narrated this. Since other people are not celebrating Eid on that day, it is obligatory for this person not to celebrate Eid either. This is the detail that this servant has understood from the words of the jurists. By the grace of Allah, the dispute has also become clear as you have read, and true knowledge is with my Lord, and He is Most Knowing. (T)

Issue 209 to 212: From Sahram Arabia, sent by Maulvi Zafaruddin Sahib, Head Teacher, 15 Dhu al-Hijjah 1336 AH. (1) Eid was held here on Thursday, but in Phulwari, according to the sighting of seven people and the order of Shah Badruddin Sahib, Eid was held on Wednesday. He wrote me a letter about this. Later, when I went to Bankipur, I came to know through an inquiry that seven people in Phulwari had seen the moon and Shah Sahib had given the order. Now, if Eid was on Wednesday, then the months of Dhu al-Qi'dah and Dhu al-Hijjah would both be considered 30 days long, even though Dhu al-Hijjah begins on Tuesday. However, nobody here has proof of this besides me. So, would it be permissible for people here to offer prayers based on my fatwa? Is it necessary for that news to reach this city officially for inquiry? (2) "The day of your fasting is the day of your sacrifice" - what kind of Hadith is this, in

which book is it found, and on what occasion did Hazrat Ali (may Allah be pleased with him) say it? Here, by consensus, Eid was on Saturday, but no person here...

Footnote 1: Radd al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa Al-Babi, Egypt, 2/98. Page 445 of 836

जिल्द 10, फ़तावा रज़विया

[बॉक्स - अरबी और उर्दू पाठ] अरबी पाठ: अल-खैर अल-रमली ने कहा कि यदि एक समूह ने चाँद देखा लेकिन 'जम-ए-अज़ीम' (बड़ी सभा) न होने के कारण उनकी गवाही खारिज कर दी गई, तो उनके लिए हुक्म वही रहेगा। चेतावनी: यदि चाँद देखने वाले ने रोज़े रखे और तीस रोज़े पूरे कर लिए, तो वह इमाम (समुदाय) के साथ ही रोज़ा खोले, क्योंकि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया है: "तुम्हारा रोज़ा उस दिन है जब तुम सब रोज़ा रखते हो, और तुम्हारा इफ़्तार (ईद) उस दिन है जब तुम सब इफ़्तार करते हो।" इसे तिर्मिज़ी और अन्य लोगों ने रिवायत किया है। और चूंकि लोग उस दिन रोज़ा नहीं खोल रहे हैं, इसलिए रोज़ा न खोलना वाजिब है। यह वह समझ है जो मैंने उनके शब्दों से प्राप्त की है, और जैसा कि आप देखते हैं, अल्लाह की कृपा से विवाद स्पष्ट है। सत्य का ज्ञान मेरे रब के पास है, और वह सबसे अधिक जानने वाला है।

उर्दू पाठ: रद-उल-मुहतार में है, खैर रमली ने कहा: यदि एक समूह चाँद देखता है, लेकिन बड़ी सभा न होने के कारण उनकी गवाही अस्वीकार कर दी गई, तो उनके लिए हुक्म भी यही है (यानी वे रोज़ा रखें)। (त) चेतावनी: यदि चाँद देखने वाले ने रोज़े रखे और तीस रोज़े पूरे कर लिए, तो अब वह ईद-उल-फ़ित्र इमाम के साथ ही मनाए (न कि अकेला), क्योंकि हुज़ूर सरवर-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का इरशाद है: "रोज़े का वह दिन है जिसमें तुम रोज़ा रखते हो और ईद का वह दिन है जिसमें तुम ईद मनाते हो।" इसे तिर्मिज़ी और अन्य मुहादिसीन ने रिवायत किया है, और बाकी अन्य लोग उस दिन ईद नहीं मना रहे हैं, इसलिए इस व्यक्ति पर वाजिब है कि वह ईद न मनाए। यह वह विवरण है जो बंदे ने फ़ुक़हा के कलाम से समझा है। अल्लाह की तौफ़ीक़ से अब विवाद भी स्पष्ट हो गया है जैसा कि आपने पढ़ लिया, और सत्य का ज्ञान मेरे रब के पास है, और वह सबसे अधिक जानने वाला है। (त)

मसला 209 से 212: सहराम अरबिया से, मौलवी ज़फ़रुद्दीन साहब मुदर्रिस अव्वल द्वारा भेजा गया, 15 ज़ुल-हिज्जा 1336 हिजरी। (1) यहाँ ईद गुरुवार को हुई, लेकिन फुलवारी में सात लोगों के चाँद देखने के अनुसार शाह बदरुद्दीन साहब के आदेश पर बुधवार को ईद हुई। उन्होंने मुझे इस बारे में पत्र लिखा। बाद में जब मैं बाँकीपुर गया, तो पूछताछ से पता चला कि फुलवारी में सात लोगों ने चाँद देखा था और शाह साहब ने आदेश दिया था। अब यदि ईद बुधवार को हुई, तो ज़ुल-क़ादा और ज़ुल-हिज्जा दोनों महीने 30 दिन के माने जाएंगे, भले ही ज़ुल-हिज्जा मंगलवार को पड़ता हो। लेकिन यहाँ मेरे अलावा किसी के पास इसका प्रमाण नहीं है। तो क्या मेरे फ़तवा देने से यहाँ के लोगों के लिए

नमाज़ पढ़ना जायज़ होगा? क्या उस समाचार का आधिकारिक पूछताछ के रूप में इस शहर में आना ज़रूरी है? (2) "तुम्हारे रोज़े का दिन तुम्हारी कुर्बानी का दिन है" - यह कैसी हदीस है, किस किताब में है, और हज़रत अली (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने यह किस अवसर पर फ़रमाया था? यहाँ सर्वसम्मति से शनिवार को ईद हुई, लेकिन यहाँ के किसी व्यक्ति ने...

पाद-लेख 1: रद-उल-मुहतार, किताब-उस-सौम, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 2/98. पेज 445 का 836

الخير الرملی، انه لو كانواجماعة وردت شهادتهم لعدم تكامل الجمع العظيم فالحكم فيهم كذلك - تنبيه : لو صام رأي هلال واكمل العدة لم يفطر الامع الامام لقوله صلى الله تعالى عليه وسلم صومكم يوم تصومون وفطر كم يوم تفطرون رواه الترمذي وغيره والناس لم يفطر وانی مثل هذا اليوم فوجب ان لايفطر نهراه ' هذا ما اخذته تفقها من كلامهم والنزاع واضح كما ترى بتوفيق الله والعلم بالحق عند ربی وهو تعالی اعلم۔

ردالمختار میں ہے خیر رملی نے کہا اگر چاند ، ایک جماعت دیکھے لیکن عظیم جماعت نہ ہونے کی بنا پر ان کی گواہی مسترد کردی گئی تو ان کا حکم بھی یہی ہے (یعنی وہ روزہ رکھیں)۔ (ت) تنبیہ : اگر چاند دیکھنے والے نے روزہ رکھا اور تیس روزے مکمل کئے تو اب وہ عید الفطر امام کے ساتھ ہی کرے (نہ کہ اکیلا) کیونکہ حضور سرور عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا ارشاد گرامی ہے "روزے کا وہ دن ہے جس میں تم روزہ رکھتے ہو اور عید کا وہ دن ہے جس میں تم عید کرتے ہو"۔ اسے ترمذی اور دیگر محدثین نے روایت کیا ہے ، اور باقی دیگر لوگ اس دن عید نہیں کر رہے لہذا اس شخص پر واجب ہے کہ وہ عید نہ کرے نہر اھ یہ وہ تفصیل ہے جو بندہ نے فقہاء کے کلام سے سمجھی ہے اور اللہ کی توفیق سے اب نزاع بھی واضح ہو گیا جیسا کہ آپ نے پڑھ لیا ، اور حق کا علم میرے رب کے پاس ہے، وھو تعالی اعلم (ت)

مسئلہ ۲۰۹ تا ۲۱۲ : از سہرام عربیہ مرسلہ مولوی ظفر الدین صاحب مدرس اول ۱۵ ذی الحجہ ۱۳۳۶ھ (۱) عید یہاں پنجشنبہ کو ہوئی مگر پھلواری میں سات آدمیوں کی رؤیت کے مطابق حسب الحکم شاہ بدر الدین صاحب چہار شنبہ کی عید ہوئی اس کے بارے میں انہوں نے مجھے خط لکھا پھر جب میں بانکی پور گیا تو بطور استفاظہ خبر مجھے پھلواری میں سات آدمیوں کا چاند دیکھنا

اور شاہ صاحب کا حکم دینا معلوم ہوا تو جب عید چہار شنبہ کی ہوئی تو ذیقعدہ و ذی الحجہ دونوں مہینوں کے چاند تیس ہی کے مانے جائیں جب بھی سہ شنبہ کو ذی الحجہ ہوتی ہے مگر اس طریقہ پر ثبوت یہاں سوائے میرے کسی کو نہیں، تو آیا میرے فتوی دینے سے یہاں کے لوگوں کو نماز پڑھنا جائز ہو گا خود اسی شہر میں وہ خبر بطور استفاظہ آنے کی ضرورت ہے۔ (۲) یوم صومکم یوم نحر کم یہ کیسی حدیث ہے اور کس کتاب میں ہے اور کس موقع پر حضرت علی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے فرمایا تھا یہاں بالاتفاق روز شنبہ کو عید ہوئی مگر یہاں کے کسی شخص نے نہ عید کا

1 ردالمختار كتاب الصوم مصطفى البابي مصر ۹۸/۲ Page 445 of 836

Fatawa Razawiyya Volume 10

The sighting of the moon for Dhu al-Qi'dah occurred exactly according to my fatwa and order. I have asked these questions for my own satisfaction, as I did not find proof in Shami, Qadi Khan, Sirajiyyah, Bahr al-Ra'iq, Alamgiriyyah, Fath al-Qadir, or Kafi. This is why I have troubled your presence. (3) Will today's scholars be considered as having the authority of a Qadi (Judge)? And what are the conditions for this? Is it for every scholar who has studied the curriculum textbooks and is engaged in teaching or preaching? (4) For the Eid-ul-Adha prayer, is it necessary for the people to see the moon themselves or for the sighting at another place to be proven through a legally binding method? Meaning, until it is so, will the prayer not be mandatory for them? Or, despite a general sighting in other cities, if the people of a certain place could not see it themselves due to clouds, nor could they obtain certain information from anywhere within ten days—even though when they woke up from this negligence, there was an opportunity to obtain proof through an obligatory method, but they did not do so—despite all this, if the Eid-ul-Adha prayer was performed on the day that was 10th Dhu al-Hijjah everywhere else but was the 9th according to their calculation, will this prayer be valid or not? And will the sacrifice performed be correct or not? Clarify and you will be rewarded. The Answer: (1) This testimony that "the people of such-and-such city saw the moon" is not acceptable even if the witnesses are a group, because this is neither a testimony of sighting (shahadah 'ala al-ru'yah) nor a testimony upon a testimony (shahadah 'ala al-shahadah). It is stated in Fath al-Qadir, Bahr al-Ra'iq, Alamgiriyyah, etc.: "If a group testifies that the people of such-and-such city saw the crescent of Ramadan a day before you, and they fasted, and according to their calculation this day is the thirtieth, but these [witnesses] did not see the crescent themselves, then it is not permitted to break the fast tomorrow, nor to omit the Tarawih prayers tonight. This is because they did not testify to the sighting itself, nor did they testify to the testimony of others; they only related the sighting of others." If a group of people testified that the people of such-and-such city saw the Ramadan crescent a day before you and they fasted, and according to their calculation it is the thirtieth day, but these people did not see the moon, then tomorrow they should not celebrate Eid, nor should they omit the Tarawih of that night. Because this group neither testified to seeing the moon nor to the testimony of others; they only narrated the sighting of others. (T) After widespread public knowledge (istifadhah), investigation is valid specifically in that city where there is a Shariah judge, so that it now becomes a testimony upon the ruling

(shahadah 'ala al-hukm). It is stated in Tanbih al-Ghafil al-Wasnan: "Since widespread report (istifadhah) is at the level of a mass-transmitted report (khabar mutawatir)..." When fame/notoriety is at the level of a mass-transmitted report, and from that fame...

---

1 Fath al-Qadir, Section on Moon Sighting, Maktaba Nooria Razavia Sukkur, 2/234; Fatawa Alamgiriyyah, Second Chapter on Moon Sighting, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/199; Bahr al-Ra'iq, Book of Fasting, H.M. Saeed Company Karachi, 2/270.

ज़िल क़ाद का चाँद देखना, बिल्कुल मेरे फ़तवे और हुक्म के मुताबिक़ हुआ। मैंने अपनी तसल्ली के लिए ये सवाल किए हैं। शामी, क़ाज़ीख़ान, सिराजिया, बहरुल राइक़, आलमगीरिया, फ़तह अल-क़दीर, काफ़ी में इसका सबूत नहीं मिला, इसलिए हुज़ूर को तकलीफ़ दी। (3) क्या आज के ज़माने के उलेमा क़ाज़ी (न्यायाधीश) के हुक्म में होंगे या नहीं? और इसके लिए क्या-क्या शर्तें हैं? क्या यह उन तमाम आलिमों के लिए है जिन्होंने दरसी किताबें पढ़ ली हैं और दरस (पढ़ाने) या वाज़ (उपदेश) में मशगूल हैं? (4) नमाज़-ए-ईद-उल-अज़हा के लिए लोगों का चाँद देखना या दूसरी जगह की रूयत (चाँद देखना) का तरीक़ा-ए-मोजिब से साबित होना इस मायने में ज़रूरी है कि जब तक ऐसा न होगा, उन लोगों पर नमाज़ वाजिब नहीं होगी? या आम शहरों में रूयत के बावजूद अगर किसी जगह के लोग बादलों की वजह से खुद न देख सके और न ही दस दिनों के अंदर कहीं से कोई यक़ीनी जानकारी हासिल कर सके हालांकि जब वे इस ग़फ़लत से बेदार हुए तो उनके पास तरीक़ा-ए-मोजिब के ज़रिए सबूत हासिल करने का मौक़ा था, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया, और इन सब बातों के बावजूद फिर नमाज़-ए-ईद-उल-अज़हा उस दिन पढ़ी जो हर जगह 10 ज़िल-हज्जा थी लेकिन उनके हिसाब से 9 थी, तो क्या यह नमाज़ होगी या नहीं? और जो क़ुरबानी की गई, वह सही हुई या नहीं? बयान कीजिए, सवाब मिलेगा। अल-जवाब (उत्तर): (1) यह गवाही कि 'फ़लां शहर वालों ने चाँद देखा' क़बूल नहीं है, भले ही गवाहों की एक जमात हो, क्योंकि यह न तो रूयत (देखने) पर गवाही है और न ही शहादत पर शहादत (गवाही पर गवाही)। फ़तह अल-क़दीर, बहरुल राइक़ और आलमगीरिया वग़ैरह में है: "अगर एक जमात गवाही दे कि फ़लां शहर के लोगों ने तुमसे एक दिन पहले रमज़ान का चाँद देखा और उन्होंने रोज़ा रखा और उनके हिसाब से आज तीसवाँ दिन है, लेकिन इन (गवाहों) ने चाँद नहीं देखा, तो कल रोज़ा खोलना जायज़ नहीं है और न ही इस रात तरावीह छोड़ना जायज़ है, क्योंकि उन्होंने न तो रूयत की गवाही दी और न ही दूसरों की गवाही पर गवाही दी, उन्होंने तो सिर्फ़ दूसरों की रूयत की हिकायत (वर्णन) की है।" अगर लोगों की एक जमात ने गवाही दी कि फ़लां शहर के लोगों ने तुमसे एक दिन पहले रमज़ान का चाँद देखा और उन्होंने रोज़ा रखा और उनके हिसाब से तीसवाँ दिन है, लेकिन इन लोगों ने चाँद नहीं देखा, तो कल वे ईद न करें और न ही उस रात की तरावीह छोड़ें, क्योंकि इस जमात ने न तो चाँद देखने पर गवाही दी और न ही दूसरों की गवाही पर गवाही दी, उन्होंने सिर्फ़ दूसरों के चाँद देखने की बात सुनाई है। (त) इस्तिफ़ाज़ा (प्रसिद्धि) के बाद तहक़ीक़ मोतबर (मान्य) है, ख़ासकर उस शहर में जहाँ हाकिम-ए-शरई

(शरिया न्यायाधीश) हो, ताकि अब यह शहादत अल-हुक्म (हुक्म पर गवाही) हो जाए। तंबीह अल-ग़ाफ़िल अल-वस्नान में है: "चूंकि इस्तिफ़ाज़ा, ख़बर-ए-मुतवातिर (निरंतर सूचना) के दर्जे में है..." जब शोहरत (प्रसिद्धि), ख़बर-ए-मुतवातिर के दर्जे पर हो और शोहरत से यह...

---

1 फ़तह अल-क़दीर, फ़स्ल फ़ी रूयत अल-हिलाल, मक्तबा नूरिया रज़विया सुक्कुर 2/234; फ़तावा आलमगीरिया, अल-बाब अल-थानी फ़ी रूयत अल-हिलाल, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर 1/199; बहरुल राइक़, किताबुल सौम, एच.एम. सईद कंपनी कराची 2/270।

چاند دیکھنا ذی قعدہ کا، صرف میرے فتویٰ و حکم کے مطابق ایسا ہوا میں نے اپنی تسلی کے لیے یہ سوالات کئے ہیں، شامی، قاضیخان، سراجیہ، بحر الرائق، عالمگیریہ، فتح القدیر، کافی میں ثبوت نہیں ملا، اس لئے حضور کو تکلیف دی۔ (۳) آج کل کے علماء قاضی کے حکم میں ہوں گے یا نہیں؟ اور اس کے لیے کیا کیا شرط ہے؟ یہ تمام عالم جس نے درسی کتابیں پڑھ لی ہوں اور درس یا وعظ میں مشغول ہو۔ (۴) نماز عید الاضحی کے لیے لوگوں کا چاند دیکھنا یا دوسری جگہ کی رؤیت بطریق موجب ثابت ہونا بائیں معنی ضرور ہے کہ جب تک نہ ہو گا ان لوگوں پر نماز واجب نہ ہو گی یا با وجود رؤیت عامہ بلاد اگر کسی جگہ کے لوگ بوجہ ابر خود نہ دیکھ سکے، نہ دس دن کے اندر کہیں سے کچھ معلومات یقینی بہم پہنچا سکے، حالانکہ جس وقت لوگ اس غفلت سے بیدار ہوئے تو اس کا موقع تھا کہ طریق موجب کے ذریعہ ثبوت حاصل کر سکتے تھے، مگر ایسا نہ کیا اور باوجود ان سب باتوں کے پھر نماز عید الاضحی اُس دن جو ہر جگہ ۱۰ ذی الحجہ تھی اور اُن کے حساب سے ۹ تھی یہ نماز ہو گی یا نہیں؟ اور قربانی جو کی گئی وہ ٹھیک ہوئی یا نہیں؟ بینوا توجروا الجواب: (۱) یہ گواہی کہ فلاں شہر والوں نے چاند دیکھا مقبول نہیں اگر چہ شاہد ایک جماعت ہو کہ یہ نہ شہادۃ علی الرؤیۃ نہ شہادۃ علی الشہادۃ۔ فتح القدیر و بحر الرائق و عالمگیریہ وغیرہا میں ہے: لو شهد جماعة ان اهل بلدة كذا رأوا هلال رمضان قبلكم بيوم فصاموا وهذا اليوم ثلثون بحسابهم ولم يرهؤلاء الهلال، لا يباح فطر غد ولا ترك التراويح فى هذه الليلة لانهم لم يشهد وابالرؤية ولا على شهادة غيرهم وانما حكوا رؤية غيرهم۔ اگر لوگوں کی جماعت نے گواہی دی کہ فلاں اہلِ شہر نے تم سے ایک دن پہلے رمضان کا چاند دیکھا اور انہوں نے روزہ رکھا اور اُن کے حساب سے تیسواں دن ہے لیکن ان لوگوں نے چاند نہیں دیکھا تو آئندہ کل وہ عید نہ کریں اور نہ ہی اس

رات کی تراویح ترک کریں کیونکہ اس جماعت نے نہ تو چاند دیکھنے پر گواہی دی اور نہ دوسروں کی شہادت پر گواہی دی، انہوں نے صرف دوسروں کی رؤیت کی حکایت کی ہے۔ (ت)

استفاضہ کے بعد تحقیق معتبر ہے خاص اس شہر کا جہاں حاکم شرعی ہو کہ اب یہ شہادۃ علی الحکم ہو گئی، تنبیہ الغافل الوسنان میں ہے: لما کانت الاستفاضۃ بمنزلۃ الخبر المتواتر جب شہرت، خبر متواتر کے درجہ پر ہو اور شہرت سے یہ

---

1 فتح القدیر فصل فی رؤیت الہلال مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۲۳۴، فتاوٰی عالمگیری الباب الثانی فی رؤیت الہلال نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۱۹۹، بحر الرائق کتاب الصوم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۲۷۰

"And it was established there that the people of that city fasted on such a day, then action based on it is necessary, because what is meant by it is a city in which there is a Shariah ruler."	**When a report becomes widespread to the level of continuous transmission (Tawatur), and it is proven through such fame that the people of a certain city fasted on a certain day, then acting upon it becomes obligatory. This is because it refers to a city that has some form of Shariah ruler (meaning the action was taken after the ruler's decision). - (T)**

(In Radd al-Muhtar it is stated:)

"So that widespread reporting (istifada) was in the sense of narrating the aforementioned ruling."	**That fame is in the sense of the aforementioned ruling being narrated. - (T)**

A Shariah ruler is either the Sultan of Islam or a Qazi (judge) appointed by him, or in matters of jurisprudence, a far-sighted and most learned jurist of the city, not the common Maulvis of today. This is the answer to question number 3. Nowadays, by just reading and teaching textbook curriculum, a person does not even enter the doorway of jurisprudence, let alone a preacher who requires no qualification other than eloquence of tongue, especially when he holds a singular view (Tafarrud) against all Imams in specific matters of moon sighting.

(2) Maula Ali did not say this; rather, it was narrated about Maula Ali (Karram Allah Wajhahu). This narration is not seen in any Hadith book. Jurists have mentioned it and also stated that this was for that specific year, not for all times, meaning it was for that year only and not for other years. It is in Fatawa Kubra and Khizanat-ul-Muftiyeen:

"What is narrated that 'the day of your sacrifice is the day of your fast' happened in that specific year, not forever."	**The narration that the day of your sacrifice is the same as the day of your fast was a matter for that specific year only, not permanent. - (T)**

In Wajiz-ul-Kardari it is stated:

"What is narrated from Ali (may Allah be pleased with him) that the first day of fasting is the day of sacrifice is not a general Shariah law."	**What is narrated from Hazrat Ali (may Allah be pleased with him) that the first day of fast is the day of sacrifice, this is not a general Shariah rule.**

1 Tanbih al-Ghafil wal-Wasnan, a treatise from the treatises of Ibn Abidin, treatise no. 9, Sohail Academy Lahore, 1/252. 2 Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/102. 3 Khizanat-ul-Muftiyeen, Kitab al-Sawm, manuscript, 20/1.

"और वहां यह सिद्ध हो गया कि उस शहर के लोगों ने अमुक दिन रोज़ा रखा, तो उस पर अमल करना अनिवार्य हो गया क्योंकि उससे तात्पर्य वह शहर है जिसमें कोई शरीय शासक हो।"

जब प्रसिद्धि (शहरत) मुतवातिर (लगातार खबर) के स्तर तक पहुँच जाए और उससे यह सिद्ध हो जाए कि फलां शहर के लोगों ने फलां दिन रोज़ा रखा है, तो उस पर अमल करना अनिवार्य होगा क्योंकि इससे तात्पर्य वही शहर है जिसमें कोई न कोई शरीय शासक (हाकिम-ए-शर्ई) होगा (यानी हाकिम के फैसले के बाद ही वहां अमल हुआ)। - (त)

(रद्द अल-मुह्तार में है:)

"तो वह इस्तेफ़ाज़ा (प्रसिद्धि) पूर्वोक्त निर्णय को व्यक्त करने के अर्थ में थी।"

वह प्रसिद्धि पूर्वोक्त निर्णय के वर्णित होने के अर्थ में है। - (त)

शरीय शासक इस्लाम का सुल्तान या उसके द्वारा नियुक्त काजी (मौली) होता है, या फिक़ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) के मामलों में शहर का दूरदर्शी और सबसे बड़ा फकीह, न कि आज के सामान्य मौलवी। प्रश्न संख्या 3 का यही उत्तर है। आज कल केवल दरसी किताबें पढ़ने-पढ़ाने से व्यक्ति फिक़ह के दरवाज़े में भी प्रवेश नहीं कर पाता, फिर एक उपदेशक (वाइज़) की तो बात ही क्या, जिसे वाक्पटुता के अलावा किसी योग्यता की आवश्यकता नहीं होती, विशेष रूप से जब चाँद देखने के विशिष्ट मसलों में उसका मत सभी इमामों से अलग हो।

(2) मौला अली ने ऐसा नहीं फ़रमाया, बल्कि मौला अली (करम अल्लाह वज्हहू) के बारे में रिवायत किया गया। यह रिवायत किसी हदीस की किताब में नज़र नहीं आती। फकीहों ने इसका उल्लेख किया और साथ ही यह भी स्पष्ट कर दिया कि यह उसी विशेष वर्ष के लिए था, न कि हमेशा के लिए, यानी उसी वर्ष के लिए था और अन्य वर्षों के लिए नहीं। फतावा कुबरा और ख़िज़ानतुल मुफ़्तीन में है:

"जो वर्णित है कि 'तुम्हारी क़ुर्बानी का दिन ही तुम्हारे रोज़े का दिन है' वह उसी विशिष्ट वर्ष में हुआ था, न कि हमेशा के लिए।"

यह जो वर्णित है कि तुम्हारी क़ुर्बानी का दिन ही तुम्हारे रोज़े का दिन है, यह केवल उसी एक निश्चित वर्ष का मामला था, स्थायी नहीं। - (त)

वजीज़ करदरी में है:

"जो अली (रज़ियल्लाहु अन्हु) से वर्णित है कि रोज़े का पहला दिन क़ुर्बानी का दिन है, यह कोई पूर्ण शरीय कानून नहीं है।"

जो हज़रत अली (रज़ियल्लाहु अन्हु) से वर्णित है कि रोज़े का पहला दिन ही क़ुर्बानी का दिन है, यह शरीयत का कोई सामान्य नियम (ज़ाबिता) नहीं है।

1 तन्बीह अल-ग़ाफ़िल वल-वस्नान, इब्न आबिदीन के रिसालों में से, रिसाला नंबर 9, सुहैल एकेडमी लाहौर 1/252। 2 रद्द अल-मुह्तार, किताबुस सौम, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र 2/102। 3 ख़िज़ानतुल मुफ़्तीन, किताबुस सौम, हस्तलिखित प्रति 20/1।

وقد ثبت بها ان اهل تلك البلدة صاموا يوم كذا لزم العمل بهالان المراد بها بلدة فيها حاكم شرعی-1

جب شہرت ، خبر متواتر کے درجہ پر ہو اور شہرت سے یہ ثابت ہوجائے کہ فلاں اہل شہر نے فلاں دن روزہ رکھا ہے تو اس پر عمل لازم ہوگا کیونکہ اس سے مراد وہی شہر ہے جس میں کوئی نہ کوئی حاکم شرعی ہوگا (یعنی حاکم کے فیصلہ کے بعد ہی وہاں عمل ہوا۔) - (ت)

(ردا لمحتار میں ہے:)

فكانت تلك الاستفاضة بمعنی نقل الحكم المذكور - 2

وہ شہرت بمعنی حکم مذکور کے منقول ہونے کے ہے۔ (ت)

حاکم شرعی سلطان اسلام یا قاضی مولی من قبلہ ہے، یا امور فقہ میں فقیہ بصیر افقہ بلد، نہ آج کل کے عام مولوی۔ یہی جواب سوال نمبر ۳ ہے۔ آج کل درسی کتابیں پڑھنے پڑھانے سے آدمی فقہ کے دروازے میں بھی داخل نہیں ہوتا نہ کہ واعظ جسے سوائے طلاقت لسان کوئی لیاقت جہاں درکار نہیں، خصوصاً جبکہ خاص مسائل رؤیت ہلال میں جمیع ائمہ سے تفرد ہو۔

(۲) مولی علی سے نہ فرمایا بلا لکہ مولی علی نے فرمایا کرم اللہ وجہہ ، یہ اثر کسی کتاب حدیث سے نظر میں نہیں، فقہاء نے ذکر کیا اور ساتھ ہی فرما دیا کہ یہ اسی عام (سال) کو تھا نہ عام کو ، یعنی اسی سال کے لئے تھا اور سالوں کے لئے نہیں۔ فتاوی کبری و خزانۃ المفتیین میں ہے:

مایروی ان یوم نحرکم یوم صومکم کان وقع ذلك العام بعینہ دون الابد۔ 3

یہ جو مروی ہے کہ تمہاری قربانی کا دن ہی تمہارے روزے کا دن ہے۔ یہ صرف اسی ایک معین سال کا معاملہ تھا دائمی نہیں۔ (ت)

وجیز کردری میں ہے:

مانقل عن علی رضی اللہ تعالٰی عنہ ان یوم اول الصوم یوم النحر لیس بتشریع کلی

جو حضرت علی رضی اللہ تعالٰی عنہ سے منقول ہے کہ روزے کا پہلا دن ہی قربانی کا دن ہے ، یہ ضابطہ شرعی کا

1 تنبیہ الغافل والوسنان رسالہ من رسائل ابن عابدین رسالہ نمبر ۹ سہیل اکیڈمی لاہور ۱ / ۲۵۲ 2 رد المحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲ / ۱۰۲ 3 خزانۃ المفتیین کتاب الصوم قلمی نسخہ ۱ / ۲۰

Volume 10 Fatawa Ridawiyya

Rather, it is an report regarding a coincidence in this year. [1] | What is narrated from Hazrat Ali (may Allah be pleased with him) that the first day of fasting is the day of sacrifice, is not a description of a Shari'ah regulation, but rather information about a coincidental matter in that same year. (T)

No blame was incurred for negligence in investigation, but without investigation, based merely on rumors, Eid and the sacrifice were not valid, even if it actually happened on the tenth [of Dhu al-Hijjah]. Just as the entry of time is a condition for the validity of prayer, similarly, the belief in the entry [of time] is also a condition. If one has doubt that there is no proof and prays haphazardly, the prayer is invalid even if the time has actually entered. Likewise, the Eid prayer, as every nullifier of the five daily prayers is also a nullifier of the Eid prayers; it is stated in Imdad al-Fattah, Maraqi al-Falah, and Radd al-Muhtar:

Belief in its entry is a condition so that the worship is performed with a firm intention, because doubt is not firm; so much so that if one prayed while believing that the time had not entered, and then it appeared that it had entered, it is not sufficient. [2] | The belief in the entry of time is also a condition for prayer so that worship is performed with a firm intention, because certainty does not arise from doubt. Even if someone prayed thinking that the time has not yet started, and later found out that the time had already started, in this case, his prayer will not be sufficient. (T)

In Radd al-Muhtar, the words of Imdad are as follows:

And likewise, the belief in its entry is a condition. If he doubts, his prayer is not valid even if it appears that it had entered. [3] | In the same way, the belief in the entry of time is also a condition. So if the person praying had a doubt about the time, his prayer would not be valid even if he later found out that the time had already started. (T)

In Bada'i' by Imam Malik al-Ulama, it is stated:

Everything that invalidates other prayers and what invalidates the Friday prayer, invalidates the two Eid prayers. [4] | Every thing that invalidates other prayers and the Friday prayer, also invalidates the Eid prayers. (T)

And when the prayer was not valid, the sacrifice was not valid, because in a city, the precedence of prayer is essential for the validity of the sacrifice (Udhiyah), otherwise it is just meat.

Footnotes: 1. Fatawa Bazzaziyya on the margin of Fatawa Hindiyya, Vol 1, Book of Testimony from the Book of Fasting, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 4/96. 2. Maraqi al-Falah with Hashiyah of at-Tahtawi, Chapter on the Conditions of Prayer, Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub, Karachi, p. 117. 3. Radd al-Muhtar, Chapter on the Conditions of Prayer, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/269. 4. Bada'i' al-Sana'i', section on explaining what invalidates it, H.M. Saeed Company, Karachi, 1/279.

जिल्द दहम (खंड 10) फ़तावा रिज़विया

बल्कि यह इस वर्ष की एक संयोगिक घटना की सूचना है। [1] | हज़रत अली (रज़ियल्लाहु अन्हु) से जो वर्णित है कि रोज़े का पहला दिन ही कुर्बानी का दिन है, यह शरीयत का कोई नियम नहीं है बल्कि उसी वर्ष के एक संयोगिक मामले के बारे में जानकारी है। (त)

जाँच-पड़ताल में कोताही के कारण कोई आरोप नहीं लगा, लेकिन बिना जाँच के महज़ अफवाहों के आधार पर ईद और कुर्बानी सही नहीं हुई, चाहे वास्तव में वह दस तारीख ही क्यों न हो। जिस प्रकार नमाज़ की वैधता के लिए समय का प्रवेश शर्त है, उसी तरह समय प्रवेश का विश्वास होना भी शर्त है। यदि किसी को संदेह हो कि सबूत नहीं है और अंदाज़ से नमाज़ पढ़ ली, तो नमाज़ अमान्य (फ़ासिद) है, भले ही समय वास्तव में प्रवेश कर चुका हो। इसी तरह ईद की नमाज़ भी, क्योंकि पाँचों नमाज़ों को अमान्य करने वाली हर चीज़ ईद की नमाज़ को भी अमान्य करती है। 'इमदाद अल-फ़त्ताह', 'मराक़ी अल-फ़लाह' और 'रद्द अल-मुह्तार' में है:

समय के प्रवेश का विश्वास होना शर्त है ताकि इबादत दृढ़ संकल्प (नियत) के साथ हो, क्योंकि संदेह से दृढ़ता नहीं आती। यदि किसी ने यह सोचते हुए नमाज़ पढ़ी कि समय अभी नहीं आया है, और बाद में पता चला कि समय आ चुका था, तो वह नमाज़ पर्याप्त नहीं होगी। [2] | नमाज़ के लिए समय के प्रवेश का विश्वास होना भी शर्त है ताकि दृढ़ संकल्प के साथ इबादत की जा सके क्योंकि संदेह से दृढ़ता उत्पन्न नहीं होती। यहाँ तक कि यदि किसी ने यह सोचते हुए नमाज़ पढ़ी कि अभी समय नहीं हुआ है और बाद में पता चला कि समय हो चुका था, तो इस स्थिति में उसकी नमाज़ पर्याप्त नहीं होगी। (त)

रद्द अल-मुह्तार में 'इमदाद' के शब्द इस प्रकार हैं:

और इसी तरह उसके प्रवेश का विश्वास शर्त है, अतः यदि संदेह हो तो नमाज़ सही नहीं है, भले ही बाद में पता चले कि समय प्रवेश कर चुका था। [3] | इसी तरह समय प्रवेश का विश्वास भी शर्त है, अतः यदि नमाज़ पढ़ने वाले को समय के बारे में संदेह था, तो उसकी नमाज़ नहीं होगी, भले ही बाद में पता चले कि समय प्रवेश कर चुका था। (त)

इमाम मलिक अल-उलेमा की 'बदाए' में है:

वह सब जो अन्य नमाज़ों को अमान्य करता है और जो जुमा की नमाज़ को अमान्य करता है, वह दोनों ईद की नमाज़ों को भी अमान्य करता है। [4] | हर वह चीज़ जो अन्य नमाज़ों और जुमा की नमाज़ को अमान्य करती है, वह ईदैन की नमाज़ को भी अमान्य करती है। (त)

और जब नमाज़ नहीं हुई, तो कुर्बानी भी नहीं हुई, क्योंकि शहर में कुर्बानी की वैधता के लिए नमाज़ का पहले होना ज़रूरी है, अन्यथा वह केवल मांस है।

पादलेख: 1. फ़तावा बज़ाज़िया, फ़तावा हिंदिया के हाशिये पर, जिल्द 1, गवाही का अध्याय, रोज़े की किताब से, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 4/96 2. मराक़ी अल-फ़लाह मय हाशियह अत-तहतावी, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, नूर मोहम्मद कारखाना तिज़ारत कुतुब, कराची, पृ. 117 3. रद्द अल-मुह्तार, नमाज़ की शर्तों का अध्याय, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 1/269 4. बदाए अल-सनाए, अमान्य करने वाली चीज़ों के बयान का अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 1/279

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

بل اخبار عن اتفاق في هذه السنة -[1] | جو حضرت علی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے منقول ہے کہ روزے کا پہلا دن ہی قربانی کا دن ہے، یہ ضابطہ شرعی کابیان نہیں بلکہ اسی سال اتفاقی معاملہ کے بارے میں اطلاع ہے۔ (ت)

تحقیق میں تقصیر سے الزام نہ ہوا مگر بے تحقیق محض افواہ پر عید و قربانی صحیح نہ ہوئی اگرچہ واقع میں دہم میں ہو، کہ جس طرح صحتِ نماز کے لیے دخولِ وقت شرط ہے یونہی اعتقادِ دخول بھی۔ اگر اسے شک ہے کہ ثبوت نہیں اور جزافاً نماز پڑھ لی نماز فاسد ہوئی اگرچہ وقت حقیقۃً ہو گیا ہو، یونہی نمازِ عید بھی کہ ہر مفسدِ صلواتِ خمس مفسدِ عیدین بھی ہے، امداد الفتاح و مراقی الفلاح و رد المحتار میں ہے:

یشترط اعتقاد دخوله لتکون عبادته بنیة جازمة لان الشك لیس بجازم حتی لوصلی وعنده ان الوقت لم یدخل فظهر انه کان قد دخل لاتجزیه-[2] | نماز کے لیے دخولِ وقت کا اعتقاد بھی شرط ہے تاکہ نیت جازمہ کے ساتھ عبادت ادا ہو کیونکہ شک سے جزم پیدا نہیں ہوتا حتیٰ کہ اگر کسی نے یہ خیال کرتے ہوئے نماز پڑھی کہ ابھی وقت داخل نہیں ہوا اور بعد میں پتا چلا کہ وقت داخل ہو چکا تھا تو اس صورت میں اس کی نماز کافی نہ ہوگی (ت)

رد المحتار میں امداد کے لفظ یہ ہیں:

وکذا یشترط اعتقاد دخوله فلوشك لم تصح صلوته وان ظهر انه قد دخل -[3] | اسی طرح دخولِ وقت کا اعتقاد بھی شرط ہے پس اگر نمازی کو وقت کے بارے میں شک تھا تو اس کی نماز نہ ہوگی اگرچہ بعد کو پتا چلے کہ وقت داخل ہو چکا تھا۔ (ت)

بدائع امام ملک العلماء میں ہے:

کل ما یفسد سائر الصلوات وما یفسد الجمعۃ یفسد صلوۃ العیدین-[4] | ہر وہ شئی جو باقی نمازوں اور نمازِ جمعہ کو فاسد کرتی ہے وہ نمازِ عیدین کو بھی فاسد کرتی ہے (ت)

اور جب نماز نہ ہوئی قربانی نہ ہوئی کہ شہر میں تقدم صلوٰۃ صحتِ اضحیہ ہے والافہو لحم

حواشی: 1. فتاوٰی بزازیہ علی حاشیہ فتاوٰی ہندیہ الاول فی الشہادۃ من کتاب الصوم نورانی کتب خانہ پشاور ۹۶/۴ 2. مراقی الفلاح مع حاشیہ الطحطاوی باب شروط الصلوٰۃ نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۱۱۷ 3. رد المحتار ، باب شروط الصلوٰۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۲۶۹/۱ 4. بدائع الصنائع فصل فی بیان ما یفسدھا ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲۷۹/۱

Fatawa Ridawiyyah Volume 10

...presented it to his family as stated in Hadith and Fiqh (otherwise it is meat prepared for his family before Eid, as clarified in Hadith and Fiqh. -Translator). And Allah Almighty knows best.

Problem 213: From Bareilly, asked by Ibn Sayyid Sahab. What do the scholars of religion say regarding this issue: Here on Thursday evening there were heavy clouds and the moon was not sighted, but the next day, seeing the moon somewhat large, some people thought it might be from yesterday. Although the calendar mentioned Eid for Sunday, it also listed the sighting as doubtful. In such a situation, should Eid be on Monday or Sunday according to Sharia? If Eid-ul-Adha is observed on Sunday, will it be correct or not? Explain and be rewarded.

Answer: In the pure Sharia, sighting (ru'yat) is what counts (whether seen here or through Sharia testimonies from another city). The Hadith states: "Indeed, Allah has linked it to its sighting" (Allah Almighty has based its determination on sighting. -Translator). Letters, telegrams, rational analogies, or reports from other cities have no fundamental validity in Sharia. For example, if some people come and state that Eid is on a certain day there or the moon was sighted there, it is not considered at all until reliable Sharia witnesses testify to their own sighting. It is stated in Durr al-Mukhtar:

If they testify to the sighting of others, it is not valid because it is a mere report.[2]	**In this case, proof will not be established if witnesses testify based on others' sightings, as this is just a narration. (T)**

The mention of 'doubtful' in calendars is itself doubtful and useless; even if they write with certainty, it is not credited in Sharia. It is stated in Durr al-Mukhtar:

| No consideration is given to the words of timekeepers (astronomers) even if they are just, according to the [correct] school of thought.[3] | According to the correct school of thought, the word of astronomers is not considered, even if they are just. (T) |

Taking the large size of the moon into account is also impermissible. The Hadith states:

| Among the signs of the approach of the Hour is the swelling of crescents.[4] Narrated by | It is among the signs of the nearness of the Day of Judgment that the crescent moon will appear large. |

1. Sunan al-Daraqutni, Kitab al-Siyam, Nashr al-Sunnah, Multan, 2/163
2. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/129
3. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/128
4. Al-Mu'jam al-Kabir lil-Tabarani, Hadith 10451, Al-Maktabah al-Faisaliyyah, Beirut, 10/244

फ़तावा रज़विया जिल्द दस

...उसके परिवार के लिए पेश किया जैसा कि हदीस और फ़िक़्ह में बताया गया है (वरना वह मांस है जो उसने अपने परिवार के लिए ईद से पहले तैयार किया था जैसा कि हदीस और फ़िक़्ह में स्पष्ट है। -अनु.)। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला २१३: बरेली से, मुस्तौलि इब्न सैयद साहब द्वारा दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि: यहाँ जुमेरात (गुरुवार) की शाम को घने बादल थे, चाँद नज़र नहीं आया, लेकिन अगले दिन चाँद को थोड़ा बड़ा देखकर कुछ लोगों के मन में यह ख्याल आया कि शायद यह कल का हो। हालाँकि जंतरी (कैलेंडर) में ईद इतवार (रविवार) की लिखी थी लेकिन साथ ही चाँद दिखने को संदिग्ध भी लिखा था। ऐसी स्थिति में शरीअत के अनुसार ईद पीर (सोमवार) को होनी चाहिए या इतवार को? अगर ईदुल अदहा इतवार को कर लें तो क्या यह सही होगा या नहीं? बयान फ़रमाएँ और सवाब पाएँ।

अल-जवाब: शरीअते मुतहरा में चाँद देखने (रुयत) का ही एतबार है (चाहे यहीं देखा जाए या दूसरे शहर के चाँद दिखने पर शरीअत के अनुसार गवाहियाँ दी जाएँ)। हदीस में फ़रमाया: "बेशक अल्लाह ने इसका मदार (आधार) रुयत (देखने) पर रखा है।" (अल्लाह तआला ने इसका आधार चाँद देखने पर रखा है। -अनु.) ख़त, तार, अक़्ली क़यासों या दूसरे शहरों के क़िस्सों का शरीअत में कोई एतबार नहीं है। मिसाल के तौर पर अगर कुछ लोग आकर कहें कि वहाँ फलां दिन की ईद है या वहाँ चाँद देखा गया है, तो इस पर तब तक कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा जब तक आदिल (विश्वसनीय) गवाह ख़ुद अपना देखना बयान न करें। दुर्रे मुख़्तार में है:

अगर उन्होंने दूसरों के चाँद देखने पर गवाही दी तो वह मान्य नहीं है क्योंकि यह केवल एक बयान (हिकायत) है।[2]

इस सूरत में सबूत नहीं होगा अगर गवाहों ने दूसरों की रुयत पर गवाही दी हो क्योंकि यह एक हिकायत है। (त)

जंतरियों में 'संदिग्ध' लिखना तो ख़ुद ही संदिग्ध और बेकार है; अगर वे यकीन के साथ भी लिखें तो भी शरीअत में उसका कोई एतबार नहीं है। दुर्रे मुख़्तार में है:

| समय बताने वालों (ज्योतिषियों) की बात का कोई एतबार नहीं है, चाहे वे नेक ही क्यों न हों, सही मज़हब के मुताबिक़।[3] | सही मज़हब के मुताबिक़ ज्योतिषियों की बात का एतबार नहीं है चाहे वे आदिल (नेक) हों। (त) |

चाँद के बड़े होने पर भी ध्यान देना नाजायज़ है। हदीस में फ़रमाया:

| कयामत के करीब होने की निशानियों में से एक यह है कि हिलाल (नया चाँद) बड़ा दिखाई देगा।[4] रिवायत है | क़यामत के करीब होने (की निशानियों) में से है कि चाँद (बड़ा हो) |

1. सुनन अल-दाराकुतनी, किताब अल-सियाम, नश्र अल-सुन्नाह, मुल्तान, २/१६३
2. दुर्रे मुख़्तार, किताब अल-सौम, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, १/१२९
3. दुर्रे मुख़्तार, किताब अल-सौम, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, १/१२८
4. अल-मुअजम अल-कबीर लिल-तबरानी, हदीस १०४५१, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया, बैरुत, १०/२४४

पृष्ठ ४४९ / ८३६

قدمہ لاھلہ کما نص علیہ حدیثاً وفقھاً (ورنہ وہ گوشت ہے جو اس نے اپنے اہل کے لیے عید سے پہلے تیار کیا جیسا کہ اس پر حدیث و فقہ میں تصریح ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۱۳: از بریلی مسئولہ ابن سید صاحب کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ یہاں شام پنجشنبہ کو ابر محیط تھا رؤیت نہ ہوئی مگر دوسرے دن چاند کو قدرے بڑا دیکھ کر بعض لوگوں کو یہ خیال پیدا ہوا کہ شاید کل کا ہو جنتری میں اگرچہ عید اتوار کی لکھی مگر ساتھ ہی رؤیت کو مشکوک لکھ دیا ہے ایسی صورت میں شرعاً عید دوشنبہ کی ہونی چاہئے یا اتوار کی ، اگر عید قربانی اتوار کو کرلیں تو درست ہوگی یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: شرع مطہر میں رؤیت کا اعتبار ہے (خود یہیں دیکھا جائے یا دوسرے شہر کی رؤیت پر شرعی شہادتیں گزریں) حدیث میں فرمایا :ان اللہ امدہ لرؤیتہ (اللہ تعالٰی نے اس کا مدار رؤیت پر رکھا ہے۔ت) خط یا تار یا عقلی قیاسوں یا دوسرے شہر کی حکایتوں کا شرع میں اصلاً اعتبار نہیں مثلاً کچھ لوگ آئے اور بیان کیا کہ وہاں فلاں دن کی عید ہے یا وہاں رؤیت ہوئی اس پر اصلاً لحاظ نہیں جب تک گواہانِ عادل شرعی خود اپنا دیکھنا نہ بیان کریں، درمختار میں ہے:

لالو شھدوا برؤیۃ غیرھم لانہ حکایۃ.2 **اس صورت میں ثبوت نہیں ہوگا اگر گواہوں نے غیروں کی رؤیت پر گواہی دی ہو کیونکہ یہ حکایت ہے (ت)**

جنتریوں کا مشکوک لکھنا تو آپ ہی مشکوک و مہمل ہے اگر وہ یقینی بھی لکھیں تو بھی شرع میں اس پر اعتبار نہیں، درمختار میں ہے:

| لاعبرة بقول الموقتین ولو عدو لا علی المذھب۔3 | صحیح مذہب کے مطابق نجومیوں کے قول کا اعتبار نہیں اگرچہ وہ عادل ہوں۔(ت) |

چاند کے بڑے ہونے پر بھی لحاظ ناجائز ہے ، حدیث میں فرمایا:

| اقتراب الساعة انتفاخ الاھلة۔4 رواہ | قربِ قیامت (کی نشانیوں) میں سے ہے کہ چاند (بڑا ہو) |

1 سنن الدارقطنی کتاب الصیام نشر السنة ملتان ۱۶۳/۲ 2 درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱۲۹/۱ 3 درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱۲۸/۱ 4 المعجم الکبیر للطبرانی حدیث ۱۰۴۵۱، المکتبة الفیصلیہ بیروت ۲۴۴/۱۰

Fatawa Razawiya, Volume 10

Al-Tabarani reported in Al-Kabir from Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him): Among the signs of the end of times is that the moon will appear large. At-Tabarani narrated it in Al-Mu'jam al-Kabir from Hadrat Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him). (T)

In another Hadith: "From the nearness of the Hour is that the crescent moon will be seen in advance, and it will be said it is for two nights." 1 Narrated in Al-Awsat from Anas (may Allah be pleased with him). Among the signs of the nearness of the Day of Judgment is that the crescent moon will be clear, so it will be said that it is of the second night. At-Tabarani narrated it in Al-Mu'jam al-Awsat from Hadrat Anas (may Allah be pleased with him). (T)

The essence of both Hadiths is that another sign of the end of times is that the crescent moon will appear swollen, and people will say it's from yesterday. Thus, in such a situation, celebrating Eid and sacrificing on Sunday is completely invalid and against Sharia. Eid is not a worldly celebration; it is a divine command. When it is not according to Sharia, it is merely useless, rather a sin. Suppose the moon appeared on Thursday, then the sacrifice prayer on Monday is undoubtedly correct. If it was on Friday, then prayer and sacrifice on Sunday are purely invalid. So, engaging in such a matter is against both Sharia and reason. Muslim brothers should perform Sharia acts according to Sharia; they should not let their personal opinions interfere. Success is from Allah, and Allah knows best.

Problem 212: Asked by Muhammad Amin Khan, Merchant of Sabzi Mandi Shahjahanpur, 20 Rajab 1334 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Sharia say on this issue? If the crescent of Ramadan Mubarak or the two Eids is observed by ten or five Muslim men, and all of them are deficient in Sharia practices —some shave their beards, some trim them short, some keep their private parts exposed, some's wives go before strangers without hijab, some take interest, some are involved in lying and backbiting, and others in forbidden acts. However, in all matters, they are so reliable that a Mufti has full confidence in their testimony that in this specific matter, i.e., witnessing as a Muslim, these people are not liars. And no pious person joins them in this testimony because pious and God-fearing people are very rare in the city, or in villages it happens that such people are more and the pious are rare. In this situation, will the fast of Ramadan Sharif become obligatory or not? And will the Eid prayer be valid or not? Is it permissible for a Mufti to decree the

obligation of fasting for the people of the city based on the testimony of such people despite his certainty? If one does not fast, is it a sin or not? And if one breaks the fast after starting it, is atonement (kaffarah) obligatory upon him or not?

1 Kanz al-Ummal, with reference to Tabarani Al-Awsat, Hadith 3870, Muassasat ar-Risalah Beirut, 12/220. Page 450 of 836

फतावा रज़विया, खंड 10

अत-तबरानी ने अल-कबीर में इब्न मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है: कयामत के करीब (की निशानियों) में से यह है कि चाँद बड़ा दिखाई देगा। इसे तबरानी ने मोजम कबीर में हज़रत इब्न मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। (त)

दूसरी हदीस में है: "कयामत के करीब होने की एक निशानी यह है कि नया चाँद देखा जाएगा, तो कहा जाएगा कि यह दो रातों का है।" 1 इसे अल-औसत में अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया गया है। कयामत के करीब की निशानियों में से यह है कि चाँद स्पष्ट होगा तो कहा जाएगा कि यह दूसरी रात का है। इसे तबरानी ने अल-मोजम अल-औसत में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। (त)

दोनों हदीसों का सार यह है कि कयामत के करीब होने की यह भी एक निशानी है कि चाँद फूला हुआ निकलेगा, लोग कहेंगे कि यह कल का है। ऐसी स्थिति में रविवार की ईद और कुर्बानी पूरी तरह से अमान्य और शरीयत के खिलाफ है। ईद कोई सांसारिक उत्सव नहीं है, यह अल्लाह का हुक्म है। जब यह शरीयत के अनुसार न हो, तो यह केवल व्यर्थ नहीं बल्कि गुनाह है। मान लीजिए अगर चाँद गुरुवार को ही हो गया है, तब भी सोमवार को कुर्बानी की नमाज़ निस्संदेह सही है। और अगर शुक्रवार को हुआ, तो रविवार को नमाज़ और कुर्बानी पूरी तरह बातिल (अमान्य) है। ऐसे मामले में पड़ना शरीयत और अकल दोनों के खिलाफ है। मुस्लिम भाइयों को चाहिए कि शरीयत के काम शरीयत के तरीके से करें, अपने ख्यालों को दखल न दें। और तौफीक अल्लाह से है, और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला 212: सायल (पूछने वाले) मुहम्मद अमीन खां, सब्जी मंडी शाहजहाँपुर के व्यापारी, 20 रजब 1334 हिजरी। दीन के उलेमा और मजबूत शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या फरमाते हैं कि रमज़ान मुबारक या दोनों ईदों का चाँद अगर दस या पांच मुस्लिम पुरुषों ने देखा, और वे सभी शरीयत के एतबार से कमजोर (गुनाहगार) हैं—कोई दाढ़ी मुंडाता है, कोई बहुत छोटी रखता है, कोई बेपर्दा रहता है, किसी की औरत बिना हिजाब के गैर-महर्मों के सामने जाती है, कोई सूद लेता है, कोई झूठ और गीबत में मुब्तला रहता है, और कोई अन्य मना किए गए कामों में। लेकिन वे सभी मामलों में इतने भरोसेमंद हैं कि मुफ्ती को उनकी गवाही पर पूरा यकीन होता है कि इस खास मामले में यानी गवाही देने में ये लोग झूठे नहीं हैं। और कोई परहेज़गार इस गवाही में उनके साथ शरीक

नहीं है क्योंकि शहर में परहेज़गार बहुत कम हैं, या देहातों में ऐसा होता है कि वहां ऐसे लोग ज़्यादा होते हैं और परहेज़गार बहुत कम। इस स्थिति में रमज़ान शरीफ का रोज़ा फ़र्ज़ होगा या नहीं? और ईद की नमाज़ सही होगी या नहीं? और मुफ्ती के लिए यकीन के बावजूद ऐसे लोगों की गवाही पर शहर वालों के लिए रोज़ा फ़र्ज़ होने का हुक्म देना जायज़ है या नहीं? अगर कोई रोज़ा न रखे तो गुनाह होगा या नहीं? और अगर रोज़ा रखकर तोड़ दे तो क्या उस पर कफ़्फ़ारा वाजिब है या नहीं?

1 कंज़ अल-उम्माल, तबरानी औसत के हवाले से, हदीस 3870, मुअस्ससतुर रिसाला बेरूत, 12/220. पृष्ठ 450 का 836

الطبرانی فی الکبیر عن ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ قربِ قیامت (کی نشانیوں) میں سے ہے کہ چاند بڑا نظر آئے گا۔ اسے طبرانی نے معجمِ کبیر میں حضرت ابنِ مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

دوسری حدیث میں ہے: من اقتراب الساعۃ ان یری الھلال قبلا فیقال ھو للیلتین۔ ۱ رواہ فی الاوسط عن انس رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ قربِ قیامت کی نشانیوں میں سے ہے کہ چاند واضح ہوگا تو کہا جائے گا کہ دوسری رات کا ہے۔ اسے طبرانی نے المعجم الاوسط میں حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

دونوں حدیثوں کا حاصل یہ کہ قربِ قیامت کی یہ بھی ایک علامت ہے کہ ہلال پھولا ہوا نکلے ، لوگ کہیں کل کا ہے ، پس ایسی صورت میں اتوار کی عید اور قربانی بالکل باطل اور خلافِ شرع ہے۔ عید کوئی دنیوی تقریب نہیں حکمِ الٰہی ہے ، جب مطابقِ شرع نہ ہو محض بیکار بلکہ گناہ ہے ، بالفرض اگر چاند پنجشنبہ ہی کو ہو گیا ہے جب بھی دوشنبہ کو نمازِ قربانی بلاشبہ صحیح ہے اور جمعہ کو ہوا تو یکشنبہ کو نماز و قربانی محض باطل ، تو ایسے امر میں پڑنا شرع اور عقل دونوں کے خلاف ہے ، مسلمان بھائیوں کو چاہئے کہ شرع کے کام شرع کے طور پر کریں اپنے خیالات کو دخل نہ دیں۔ وباللہ التوفیق، واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۱۲: مسئولہ محمد امین خاں تاجر سبز منڈی شاہجہانپور ۲۰ رجب ۱۳۳۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرعِ متین اس مسئلہ میں کہ ہلالِ رمضانِ مبارک یا عیدین اگر دس یا پانچ آدمیوں مسلمانوں نے مشاہدہ کیا اور کل ناقصانِ شرعی ہیں ، محلوق اللحیہ ہے کوئی قصر اللحیۃ ،

کوئی ستر کشادہ رکھتا ہے کسی کی عورت بلا حجاب پیشِ اجانب جاتی ہے، کوئی سُود لیتا ہے کوئی کذب و غیبت میں مبتلا رہتا ہے ، کوئی اور منہیات میں۔ لیکن وہ سب معاملات میں ایسے ثقہ ہیں کہ مفتی کو ان کی شہادت پر یقینِ تام ہوتا ہے کہ اس امرِ خاص یعنی شہادتِ مسلمان میں یہ لوگ کاذب نہیں اور کوئی متقی اس شہادت میں ان کا شریک نہیں کہ متقی پرہیزگار شہر میں بہت کمیاب ہیں ، یا دیہات میں ایسا اتفاق ہو کہ وہاں ایسے لوگ زیادہ ہوتے ہیں اور متقی پرہیزگار شاذ و نادر، اس صورت میں روزہ رمضان شریف کا فرض ہو گا یا نہیں؟ اور نمازِ عید درست ہو گی یا نہیں؟ اور مفتی کو ایسے لوگوں کی شہادت با وجود یقینِ اہلِ شہر پر فرضیتِ صوم کا حکم کرنا جائز ہے یا نہیں؟ اگر روزہ نہ رکھے تو اثم ہے یا نہیں؟ اور اگر کھا کر توڑ ڈالے تو اس پر کفارہ واجب ہے یا نہیں؟

1 کنزالعمال بحوالہ طبرانی اوسط حدیث ۳۸۷۰ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۲۲۰/۱۲ Page 450 of 836

The Answer: The correct view is that although a Muslim may be a transgressor (fasiq), he is capable of giving testimony, but it is impermissible to accept his testimony unless the judge has a strong inclination towards its truthfulness, as this also falls under the category of verification (tabayyun).

As Allah Almighty Said: "O you who have believed, if there comes to you a disobedient one with information, investigate, lest you harm a people out of ignorance and become, over what you have done, regretful." (1) (T) As Allah Almighty stated: "O believers! If any transgressor brings you news, then investigate it, lest you unknowingly inflict harm upon a people and then remain regretful of what you have done."

When the Mufti and people of fatwa have a strong inclination towards truthfulness regarding them, then his decree is a Shar'i proof; Ramadan and fasting will become obligatory, and after his decree, no commoner will have any room for disagreement. And Allah Almighty knows best.

Problem 215: From Faridkot State, District Ferozepur, submitted by Munshi Syed Muhammad Ali Foreman, 24 Ramadan-ul-Mubarak 1333 AH. What do the scholars say in this matter that it was known from the newspaper *Dabdaba-e-Sikandari* that the sighting of the new moon in the country of Assam occurred on Tuesday, making Wednesday the first day of fasting. Here in Punjab and generally in most parts of India and Marwar, the moon was sighted on Wednesday, making Thursday the first day of fasting. Now, what is the ruling for us in this situation? Is the Qada (making up) of that day obligatory for us, and up to what distance can one ruling for moon sighting be accepted? If on the 29th of Ramadan, which would be the 30th according to the calculation of Assam, the moon is not seen due to dust or clouds, should we complete thirty fasts here or should we celebrate Eid based on the investigation and confirmation from Assam? Let it also be clear that here at the sighting of Ramadan there was no dust or cloud, the sky was clear, and the moon was not visible even after effort. Please inform about this ruling quickly as the interval of Ramadan is short.

The Answer: In our school of thought, according to the correct and relied-upon view regarding Ramadan and Eid, the distance between cities is not considered at all. The sighting in the East is a proof for the people of the West and vice versa. However, the proof of sighting from another place must be in a sound Sharia-compliant manner. A

letter, telegram, newspaper report, market rumors, or mere tales from cities are completely unreliable. Instead, Sharia testimony or widespread Sharia reports (istifada) are required. It is stated in *Durr al-Mukhtar*:

1. Al-Quran 49/6 Page 451 of 836

उत्तर: सही यह है कि मुसलमान अगरचे फासिक (पापी) हो, वह गवाही देने के योग्य है लेकिन उसकी गवाही स्वीकार करना नाजायज़ है, सिवाय उस स्थिति के जब न्यायाधीश को उसकी सच्चाई पर प्रबल विश्वास हो, क्योंकि यह भी 'तबीय्युन' (जांच-पड़ताल) में शामिल है।

जैसा कि अल्लाह तआला ने फरमाया: य़ा अय्युहल्लज़ीना आमनू इन जा'अकुम फासिकुम बि-नबइन फ-तबैय्यनू अन तुसीबू कौमम बि-जहालतिन फ-तुसबिहू अला मा फ-अलतुम नादिमीन। (१) (त) जैसा कि अल्लाह तआला ने फरमाया: "ऐ ईमान वालो! अगर कोई फासिक तुम्हारे पास कोई खबर लाए तो तहकीक (जांच) कर लो कि कहीं किसी कौम को अनजाने में दुख न दे बैठो, फिर अपने किए पर पछताते रह जाओ।"

जब मुफ्ती और फतवा देने वाले लोगों को उनके बारे में सच्चाई का प्रबल विश्वास हो जाए, तो उनका हुक्म शरई दलील है; रमज़ान और रोज़े वाजिब हो जाएंगे और उनके हुक्म के बाद आम जनता में किसी को खिलाफत की गुंजाइश नहीं होगी। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला २१५: रियासत फरीदकोट, जिला फिरोजपुर से, प्रेषक मुंशी सैयद मोहम्मद अली फोरमैन, २४ रमज़ानुल मुबारक १३३३ हिजरी। क्या फरमाते हैं हुजूर फ़ैज़ गंजूर आला हजरत ताजुल उलूम अश-शरिया इस मामले में कि अखबार 'दबदबा-ए-सिकंदरी' से मालूम हुआ कि मुल्क असम में चाँद मंगलवार को देखा गया और बुधवार को पहला रोजा हुआ। यहाँ पंजाब और आमतौर पर हिंदुस्तान के अधिकांश हिस्सों और मारवाड़ में बुधवार को चाँद देखा गया और गुरुवार का पहला रोजा हुआ। अब इस स्थिति में हमारे लिए क्या हुक्म है? क्या हम पर उस दिन की कज़ा लाज़िम आएगी और कितनी दूरी तक चाँद देखने का एक ही हुक्म माना जा सकता है? अगर २९ रमज़ानुल मुबारक को जो असम के हिसाब से ३० हो जाएगी, चाँद न दिखे या धूल-गुबार की वजह से न देखा जा सके, तो क्या यहाँ पूरे तीस रोजे किए जाएं या असम की तहकीक और तस्दीक पर ईद कर ली जाए? यह भी स्पष्ट रहे कि यहाँ रमज़ान के चाँद के समय कोई धूल या बादल नहीं था, आसमान साफ था और काफी कोशिश के बाद भी चाँद नज़र नहीं आया। इस हुक्म से जल्दी सूचित फरमाएँ क्योंकि रमज़ान का समय कम रह गया है।

उत्तर: हमारे अइम्मा-ए-मज़हब (धर्मगुरुओं) के सही और विश्वसनीय मत के अनुसार रमज़ान और ईद के मामले में शहरों की दूरी का बिल्कुल भी विचार नहीं किया जाता। पूर्व की चाँद-देखनी पश्चिम वालों

पर हुज्जत (दलील) है और इसके विपरीत भी। हाँ, दूसरी जगह की चाँद-देखनी का प्रमाण सही शरई तरीके से होना चाहिए। पत्र, टेलीग्राम, अखबार की खबर, बाज़ार की अफवाहें या शहरों की कहानियाँ पूरी तरह से अविश्वसनीय हैं। इसके बजाय, शरई गवाही या शरई 'इस्तिफाज़ा' (व्यापक रिपोर्ट) आवश्यक है। 'दुर्र-ए-मुख्तार' में है:

1. अल-कुरान ४९/६ पृष्ठ ८३६ का ४५१

الجواب : صحیح یہ ہے کہ مسلمان اگرچہ فاسق ہو اہل شہادت ہے مگر اس کی شہادت قبول کرنی نا جائز ہے ماسوائے اس حالت کے کہ اس کے بارے میں کہ حاکم کو تمرّیِ صدق ہو کہ یہ بھی تبیّن میں داخل ہے۔

کما قال تعالٰی یَا أَیُّهَا الَّذِینَ آمَنُوا إِنْ جَاءَکُمْ فَاسِقٌ بِنَبَإٍ فَتَبَیَّنُوا أَنْ تُصِیبُوا قَوْمًا بِجَهَالَةٍ فَتُصْبِحُوا عَلَی مَا فَعَلْتُمْ نَادِمِینَ ط (۱) (ت) جیسا کہ اللہ تعالٰی نے فرمایا: اے ایمان والو! اگر کوئی فاسق تمہارے پاس کوئی خبر لائے تو تحقیق کر لو کہ کہیں کسی قوم کو بے جانے ایذا نہ دے بیٹھو، پھر اپنے کئے پر پچھتاتے رہ جاؤ۔

جب مفتی اہل فتوٰی کو ان کے بارے میں تمرّیِ صدق ہو تو اُس کا حکم حجتِ شرعیہ ہے، رمضان و فطر واجب ہو جائیں گے اور اس کے حکم کے بعد عوام میں کسی کو خلاف کی گنجائش نہ ہوگی۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۱۵: از ریاست فرید کوٹ ضلع فیروز پور مسئولہ منشی سید محمد علی فورمین ۲۴ رمضان المبارک ۱۳۳۳ھ کیا فرماتے ہیں حضور فیض گنجور اعلحضرت تاج العلوم الشرعیہ اس معاملہ میں کہ اخبار دبدبہ سکندری سے معلوم ہوا کہ ملک آسام میں رؤیت ہلال سہ شنبہ کو ہو کر چہار شنبہ کو پہلا روزہ ہوا، یہاں پنجاب اور عموماً اکثر حصہ ملک ہندوستان و مارواڑ میں چہار شنبہ کو رؤیت جمعرات کا پہلا روزہ ہوا اب اس صورت میں ہمارے واسطے کیا حکم ہے، کیا ہم پر اس روز کی قضاء لازم آئے گی اور کس قدر فاصلہ تک رؤیت ہلال کا ایک حکم مانا جاسکتا ہے؟ اگر ۲۹ رمضان المبارک کو جو رؤیت ملک آسام کے حساب سے ۳۰ ہو جائے گی چاند نہ دیکھے یا

گرد و غبار کی وجہ سے نہ دیکھا جاسکے تو یہاں پورے تیس روزے کئے جائیں یا ملک آسام کی تحقیق تصدیق پر عید کر لی جائے ، یہ بھی واضح خیال انور رہے کہ یہاں رؤیت رمضان پر کوئی غبار یا ابر نہیں تھا مطلع کھلا ہوا تھا چاند کوشش سے بھی نظر نہیں آیا۔ اس حکم سے جلد اطلاع فرمائیے کہ رمضان المبارک کا وقفہ کم رہ چکا ہے۔

الجواب: ہمارے ائمہ مذہب صحیح معتمد میں دربارہ رمضان و عید فاصلہ بلاد کا اصلاً اعتبار نہیں، مشرق کی رؤیت مغرب والوں پر حجت ہے وبالعکس، ہاں دوسری جگہ کی رؤیت کا ثبوت بروجہ صحیح شرعی ہونا چاہئے۔ خط یا تار، یا تحریر اخبار، افواہ بازار یا حکایت امصار محض بے اعتبار، بلالکہ شہادت شرعیہ یا استفاضہ شرعیہ درکار، در مختار میں ہے :

Fatawa Razawiyya Volume 10

Arabic Text: The difference in sighting horizons (ikhtilaf al-matali') is not considered valid according to the correct legal school, and the fatwa is based on this. Therefore, the people of the East are bound by the sighting of the people of the West, provided that their sighting reaches them through an obligatory legal method, as mentioned before[1]. Urdu Explanation: According to the correct school of thought, the difference in moon-sighting horizons is not reliable, and the fatwa is based on this. Thus, based on the sighting of the people of the West, fasting will be mandatory for the people of the East, provided that the report of their sighting reaches them through a Shar'i (legal) method, as has already been mentioned. (T)

In Radd al-Muhtar: Arabic Text: The phrase "through an obligatory method" means that two men bear witness to the testimony, or they testify to the judge's ruling, or the news becomes widespread (mustafid). This is contrary to when they simply inform that the people of such-and-such a city saw it, as that is merely a narration. H-[2] Urdu Explanation: The phrase "through an obligatory method" means that two men give evidence about the testimony, or they give evidence about the judge's decision, or the news becomes well-known. This is unlike the situation where they report that the people of a certain city have seen the moon, because that is just a story/ narration. H. (T)

In the same source: Arabic Text: Al-Rahmati said: The meaning of 'istifadah' (widespread report) is that multiple groups come from that city, each informing about the people of the city that they fasted based on a sighting, etc.[3] Urdu Explanation: Shaykh Rahmati stated: The concept of 'fame' (shuhrah/widespread report) is that multiple groups come from that city, and each one gives the information that the people of that city sighted the moon and started fasting, etc. (T)

Therefore, in the inquired situation, it is not permissible for us to act upon the news from Assam nor the news from Hyderabad. Rather, as long as there is no Shar'i proof, Thursday will be considered the first [of Ramadan]. And if, God forbid, there are clouds or dust on the next Thursday and no sighting occurs, it is forbidden to consider that Thursday as the 30th and celebrate Eid on Friday. Instead, in that case, fasting on Friday would also be obligatory for us, even if according to the principles of astronomy, the coming Friday is the 1st of Shawwal. Since the sighting on Tuesday was not proven for us, whoever did not even keep a voluntary (nafl) fast on

Wednesday, they do not have to make up (qada) for that fast because, for us, it was the 1st [of the month] on Saturday. And Allah Almighty knows best.

[1] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Mujtabai Press, Delhi, 1/149 [2] Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/105 [3] Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/105

फ़तावा रज़विया खंड १०

अरबी मूलपाठ: सही मज़हब के अनुसार उदय-स्थलों (क्षितिज) का अंतर मान्य नहीं है, और इसी पर फ़तवा है। इसलिए, पश्चिम के लोगों के चांद देखने पर पूर्व के लोगों पर रोज़ा अनिवार्य होगा, बशर्ते कि उनकी दृष्टि उन तक किसी अनिवार्य शरीयत के तरीके से पहुँचे, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है[1]। उर्दू स्पष्टीकरण: सही मज़हब के मुताबिक मतले (क्षितिज) का अंतर विश्वसनीय नहीं है, और फ़तवा इसी पर है, तो पश्चिम के लोगों के चांद देखने के आधार पर पूर्व के लोगों पर रोज़ा अनिवार्य होगा, बशर्ते कि उनका चांद देखना शरई तरीके से उन तक पहुँचे, जैसा कि गुज़र चुका है। (त)

रद-उल-मुहतार में है: अरबी मूलपाठ: "अनिवार्य तरीके से" वाक्यांश का अर्थ है कि दो पुरुष गवाही पर गवाही दें या वे काज़ी के फैसले पर गवाही दें या खबर प्रसिद्ध (मुस्तफ़िज़) हो जाए। यह उसके विपरीत है जब वे सूचित करते हैं कि फलां शहर के लोगों ने इसे देखा है, क्योंकि वह केवल एक वर्णन है। ह-[2] उर्दू स्पष्टीकरण: "बतरीक़-ए-मौजिव" (अनिवार्य तरीके से) से तात्पर्य यह है कि दो पुरुष गवाही पर गवाही दें या काज़ी के फैसले पर गवाही दें या खबर प्रसिद्ध हो जाए; इसके विपरीत उस स्थिति के जब वे यह खबर दें कि फलां शहर के लोगों ने चांद देखा है क्योंकि यह केवल एक कहानी/कथन है। ह। (त)

उसी में है: अरबी मूलपाठ: अल-रहमती ने कहा: 'इस्तिफ़ादा' (व्यापक प्रसार) का अर्थ यह है कि उस शहर से कई समूह आएं जिनमें से प्रत्येक शहर के लोगों के बारे में सूचित करे कि उन्होंने चांद देखने के आधार पर रोज़ा रखा है, इत्यादि।[3] उर्दू स्पष्टीकरण: शेख रहमती ने फ़रमाया: प्रसिद्धि का अर्थ यह है कि उस शहर से कई समूह आएं और हर एक यह सूचना दे कि उस शहर के लोगों ने चांद देखकर रोज़ा रखा है, इत्यादि। (त)

अतः पूछी गई स्थिति में हमारे लिए न तो असम की खबर पर अमल करना जायज़ है और न ही हैदराबाद की खबर पर, बल्कि जब तक शरई प्रमाण न हो, बृहस्पतिवार को ही पहली तारीख माना जाएगा। और यदि अगले बृहस्पतिवार को खुदा-न-खास्ता बादल या धूल हो और चांद न दिखे, तो यह हराम है कि उस बृहस्पतिवार को ३०वाँ मानकर शुक्रवार को ईद मना लें, बल्कि उस स्थिति में हम पर शुक्रवार का रोज़ा भी फ़र्ज़ होगा, भले ही खगोल विज्ञान के नियमों के अनुसार आने वाला शुक्रवार १ शव्वाल हो। और चूंकि हमें मंगलवार का चांद देखना प्रमाणित नहीं हुआ, तो जिसने बुधवार को

नफ़्ल की नीयत से भी रोज़ा नहीं रखा, उसे उस रोज़े की कज़ा करने की ज़रूरत नहीं है क्योंकि हमारे हक में १ तारीख शनिवार को थी। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[1] दुर्रे मुख्तार, किताबुस-सौम, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, १/१४९ [2] रद-उल-मुहतार, किताबुस-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, २/१०५ [3] रद-उल-मुहतार, किताबुस-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, २/१०५

فتاوی رضویہ جلد دہم

اختلاف المطالع غیر معتبر علی المذہب وعلیہ الفتوی فیلزم اہل المشرق برؤیۃ اہل المغرب اذا ثبت عندہم رؤیۃ اولئک بطریق موجب کما مر[1] صحیح مذہب کے مطابق مطالع کا اختلاف معتبر نہیں، اور فتویٰ اسی پر ہے، تو اہل مغرب کی رؤیت کی بناء پر اہل مشرق پر روزہ لازم ہوگا بشرطیکہ ان کی رؤیت بطریق شرعی ان تک پہنچے، جیسا کہ گزر چکا ہے (ت)

ردالمختار میں ہے: قولہ بطریق موجب کان یتحمل اثنان الشہادۃ او یشہدا علی حکم القاضی اویستفیض الخبر بخلاف مااذا اخبراان اہل بلدۃ کذا راوہ لانہ حکایۃ ح-[2] قولہ "بطریق موجب" سے مراد یہ ہے کہ دو مرد شہادت پر گواہی دیں یا قاضی کے فیصلہ پر گواہی دیں یا خبر مشہور ہو جائے بخلاف اس صورت کے کہ جب یہ خبر دیں کہ فلاں اہل شہر نے چاند دیکھا ہے کیونکہ یہ حکایت ہے، ح-(ت)

اسی میں ہے: قال الرحمتی معنی الاستفاضۃ ان تأتی من تلک البلدۃ جماعات متعددون کل منہم یخبر عن اہل البلدۃ انہم صاموا عن رؤیۃ الخ-[3] شیخ رحمتی نے فرمایا: شہرت کا مفہوم یہ ہے کہ اس شہر سے متعدد جماعتیں آئیں اور ہر ایک یہ اطلاع دے کہ اس شہر کے لوگوں نے چاند دیکھ کر روزہ رکھا ہے الخ(ت)

پس صورت مستفسرہ میں ہم کو نہ خبر آسام پر عمل جائز نہ خبر حیدرآباد، بلکہ جب تک ثبوت شرعی نہ ہو پنجشنبہ ہی کہ پہلی ہے، اور اگر آئندہ پنجشنبہ کو خدانخواستہ ابر یا غبار ہوا اور رؤیت نہ ہو تو حرام ہے کہ اس پنجشنبہ کو ۳۰ مان کر جمعہ کی عید کرلیں بلکہ اُس صورت میں ہم پر جمعہ کا روزہ بھی فرض ہوگا اگرچہ قواعد علم ہیأت سے جمعہ آئندہ یکم شوال ہے اور جبکہ

ہمیں سہ شنبہ کی رؤیت ثابت نہ ہوئی تو جس نے چہار شنبہ کو بہ نیت نفل بھی روزہ نہ رکھا اُس پر بھی اس روزہ کی قضاء نہیں کہ ہمارے حق میں یکم شنبہ کو تھی۔ واللہ تعالٰی اعلم

[1] در مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۹ [2] ردالمختار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/ ۱۰۵ [3] ردالمختار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/ ۱۰۵

Fatawa Razawiyya Volume Ten

1304 AH Al-Budur al-Ajilla fi Umur al-Ahilla With explanation Nur al-Adilla li al-Budur al-Ajilla With marginal notes Raf' al-'Illah 'an Nur al-Adilla (Detailed rulings on the sighting of the new moon)

Problem 216:

In the name of Allah, the Beneficent, the Merciful. Allah is the Lord of Muhammad, peace and blessings be upon him. (M) Note 1, Chapter One: Regarding the ruling on the sighting of the new moon and related issues and benefits, consisting of fifteen 'hilals' (points). Hilal No. 1: Searching for the Ramadan crescent after sunset on the 29th of Sha'ban is a communal obligation (Fard Kifayah). Note 1: Inside the parentheses, M, Sh, H refer to text, explanation, and marginal notes respectively.

Page 454 of 836

फतावा रज़विया खंड दस

१३०४ हिजरी अल-बद्रूरुल अजिल्ला फी उमूरिल अहिल्ला व्याख्या के साथ नूरुल अदिल्ला लिल-बद्रूरिल अजिल्ला हाशिया (टिप्पणी) के साथ रफ़उल इल्लत अन नूरिल अदिल्ला (चांद देखने के विस्तृत नियम)

मसाला २१६:

बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम अल्लाह रब्बे मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम (म) १, पहला अध्याय: चांद देखने के हुक्म और उससे संबंधित मसलों और फायदों के बारे में पंद्रह हिलाल (बिंदु) पर आधारित। हिलाल नंबर १: २९ शाबान को सूर्यास्त के बाद रमज़ान के चांद की तलाश करना फ़र्ज़-ए-किफ़ाया है। १: कोष्ठक के अंदर म, श, ह से क्रमशः मूल पाठ (मतन), व्याख्या (शरह) और टिप्पणी (हाशिया) अभिप्रेत है।

पृष्ठ ४५४ / ८३६

فتاوی رضویہ جلد دہم

۱۳۰۴ھ الْبُدُورُ الْاَجِلَّۃُ فِیْ اُمُورِ الْاَھِلَّۃِ مع شرح نُوْرُ الْاَدِلَّۃِ لِلْبُدُوْرِ الْاَجِلَّۃِ مع حاشیہ رَفْعُ الْعِلَّۃِ عَنْ نُوْرُ الْاَدِلَّۃِ (رؤیتِ ہلال کے تفصیلی احکام)

مسئلہ ۲۱۶:

بسم اللہ الرحمن الرحیم ط اللہ رب محمد صلی علیہ وسلم (م) عه ، فصل اول: رؤیتِ ہلال کے حکم اور اس کے متعلق مسائل و فوائد میں پندرہ ہلال پر مشتمل۔ ہلال نمبرا: ۲۹ شعبان کو غروب آفتاب کے بعد ہلال رمضان کی تلاش فرض کفایہ ہے۔ عه: قوسین کے اندر م، ش، ح سے بالترتیب متن، شرح اور حاشیہ مراد ہے۔

Fatawa Razawiya - Volume 10

(Sh) Number 1: Fard al-Kifayah, meaning if everyone abandons it, everyone is sinful, and if some do it sufficiently, the obligation is removed from everyone. The reason is evident: perhaps Sha'ban will be 29 days, making tomorrow Ramadan. If the moon is not sought, it's possible it appeared while people remained unaware. Thus, thinking it's still Sha'ban, a fast of Ramadan would be missed unjustly.

[Box - Arabic]: It is a communal obligation (Wajib Kifayah) to seek the crescent on the night of the thirtieth of Sha'ban because it is sometimes deficient [29 days] (Maraqi al-Falah). What is apparent from this is that it is obligatory (Iftiradh) because it is a means to reach an obligatory act (Fard) (Tahtawi) (Hashiya of Imam al-Tahtawi upon it). [Box - Urdu]: Seeking the moon on the thirtieth night of Sha'ban is Wajib Kifayah because sometimes it is deficient (Maraqi al-Falah). (T) From this, it is clear that this is a Fard because it is a means of reaching a Fard (Tahtawi).

Note: Hashiya Raf' al-Illah 'an Nur al-Adillah: I said "to a sufficient degree" (Biqadr-e-Kifayat). This humble servant [the author] added this phrase because if the moon is sought by someone whose testimony is not legally acceptable, then their searching or not searching is the same, and the legal objective intended by its obligation—establishing the crescent—is not achieved. For example, if the sky is clear and only one person searched, or if for the Eid crescent only women or slaves searched. Follow this analogy. I added it for further understanding, so let it be noted. (M) Number 2: Similarly, seeking the Eid crescent on the 29th of Ramadan. (Sh) Number 2: If the moon appeared and was not seen, people would unintentionally be involved in the prohibited act of fasting on the day of Eid.

[Box - Arabic]: Likewise, it is obligatory to seek the crescent of Shawwal on the evening of the twenty-ninth of Ramadan (Tahtawi). [Box - Urdu]: Similarly, seeking the moon of Shawwal on the evening of the twenty-ninth of Ramadan is also obligatory (Wajib) (Tahtawi) (T).

(M) Number 3: It is also necessary to seek the crescent of Dhu al-Hijjah on the 29th of Dhu al-Qi'dah. (Sh) Number 3: I say: This became necessary because knowing the timings of Hajj, the Eid prayer, sacrifice (Qurbani), and the Takbirat al-Tashreeq depends on it. Therefore, its search should be Wajib Kifayah for the general public and Fard Kifayah for the pilgrims. If, due to negligence, the moon was actually 29 days but was assumed to be 30, then the standing at 'Arafat (Wuquf-e-Arafah), which is the greatest and most essential pillar of Hajj, would occur outside its time on the

Day of Sacrifice (Yawm al-Nahr). While for common people, there is no fear of disturbance in a Fard act, difficulties will arise in necessary acts (Wajibat). For instance, if for some reason the Eid prayer is delayed until the 12th, what they consider the 12th is actually the 13th. And the days of prayer, which were the days of sacrifice (Ayam-e-Nahr), would have passed, and the prayer would be performed out of its designated time.

1 Maraqi al-Falah with Hashiya al-Tahtawi, Chapter on what establishes the crescent, Nur Muhammad Kutub Khana Karachi, p. 354. 2 Hashiya al-Tahtawi on Maraqi al-Falah, Chapter on what establishes the crescent, Nur Muhammad Kutub Khana Karachi, p. 354. 3 Hashiya al-Tahtawi on Maraqi al-Falah, Chapter on what establishes the crescent, Nur Muhammad Kutub Khana Karachi, p. 354.

फ़तावा रजविया - जिल्द दस

(श) नंबर 1: फ़र्ज़-ए-किफ़ाया, यानी अगर सब छोड़ दें तो सब गुनहगार, और अगर कुछ लोग ज़रूरत के मुताबिक इसे करें तो सबका ज़िम्मा उतर जाएगा। इसकी वजह साफ़ है कि शायद शाबान 29 का हो जाए, तो कल से रमज़ान है। अगर चाँद की तलाश न की गई, तो ताज्जुब नहीं कि चाँद हो जाए और लोग बेखबर रहें। तो कल शाबान समझकर रमज़ान का रोज़ा बेकार चला जाएगा।

[बॉक्स - अरबी]: शाबान की तीसवीं रात को चाँद की तलाश करना वाजिब किफ़ाया है क्योंकि कभी-कभी यह कम (29 दिन) होता है (मराक़ी अल-फ़लाह)। इससे ज़ाहिर है कि यह फ़र्ज़ है क्योंकि यह फ़र्ज़ तक पहुँचने का ज़रिया है (तह्तावी) (अल्लामा तह्तावी का इस पर हाशियह)। [बॉक्स - उर्दू]: शाबान की तीसवीं रात चाँद की तलाश करना वजूब-ए-किफ़ाया है क्योंकि बाज़ औक़ात वह नाक़िस होता है (मराक़ी अल-फ़लाह)। (त) इससे ज़ाहिर यही है कि यह फ़र्ज़ है क्योंकि फ़र्ज़ तक पहुँचने का यह वसीला है (त त)।

नोट: हाशियह रफ़्उल-इल्लह 'अन नूर-इल-अदिल्ला: मैंने कहा 'ज़रूरत के मुताबिक' (बक़द्र-ए-किफ़ायत)। फ़क़ीर (लेखक) ने यह शब्द इसलिए बढ़ा दिया कि अगर चाँद की तलाश ऐसे शख़्स ने की जिसकी गवाही शरीअत में स्वीकार्य नहीं है, तो उसका तलाश करना या न करना बराबर है और शरीअत का मक़सद जो इसके वाजिब होने से था यानी चाँद का साबित होना, वह हासिल नहीं हुआ। मिसाल के तौर पर, आसमान साफ़ होने की सूरत में सिर्फ एक आदमी ने तलाश किया, या ईद के चाँद के लिए सिर्फ औरतों या ग़ुलामों ने तलाश की। इसी पर क़यास करें। मैंने यह बात समझने के लिए बढ़ाई है, इसे नोट कर लिया जाए। (म) नंबर 2: इसी तरह 29 रमज़ान को ईद का चाँद देखना। (श) नंबर 2: अगर चाँद हो गया और नहीं देखा गया, तो अनजाने में ईद के दिन रोज़ा रखने के हराम काम में मुब्तला होंगे।

[बॉक्स - अरबी]: इसी तरह शव्वाल के हिलाल की तलाश रमज़ान की उनतीसवीं शाम को वाजिब है (त त)। [बॉक्स - उर्दू]: इसी तरह शव्वाल का चाँद उनतीसवें रमज़ान की शाम को देखना भी वाजिब है (त त) (त)।

(म) नंबर 3: 29 ज़ीक़ादा को ज़िल-हिज्जा के चाँद की तलाश भी ज़रूरी है। (श) नंबर 3: मैं कहता हूँ: यह इसलिए ज़रूरी हुआ कि हज, ईद की नमाज़, क़ुरबानी और तकबीरात-ए-तशरीक़ के वक़्त जानना इसी पर निर्भर है। लिहाज़ा इसकी तलाश आम लोगों पर वाजिब किफ़ाया होनी चाहिए और

हज यात्रियों पर फ़र्ज़-ए-किफ़ाया, कि वहाँ बेख़याली में चाँद 29 का हो गया और उसे 30 का मान लिया गया, तो वक़ूफ़-ए-अराफ़ा जो हज का सबसे बड़ा और ज़रूरी रुकन है, अपने वक़्त से बाहर यौम-उल-नह्र (क़ुरबानी के दिन) में होगा। और आम लोगों के लिए किसी फ़र्ज़ में ख़लल का डर तो नहीं है, लेकिन वाजिबात में दिक़्क़त आएगी। मिसाल के तौर पर, किसी ज़रूरत से ईद की नमाज़ में 12 तारीख़ तक देरी की गई, तो जिसे वे 12 तारीख़ समझ रहे हैं वह असल में 13 तारीख़ है। और नमाज़ के दिन जो क़ुरबानी के दिन (अयाम-ए-नह्र) थे, वे गुज़र चुके होंगे और नमाज़ बेवक़्त हो जाएगी।

1 मराक़ी अल-फ़लाह मअ हाशियह अल-तह्तावी, अध्याय: चाँद किस चीज़ से साबित होता है, नूर मुहम्मद कुतुब ख़ाना कराची, पृष्ठ 354। 2 हाशियह अल-तह्तावी अला मराक़ी अल-फ़लाह, पृष्ठ 354। 3 हाशियह अल-तह्तावी अला मराक़ी अल-फ़लाह, पृष्ठ 354।

पृष्ठ 836 का 455

فتاوی رضویہ - جلد دہم

(ش) نمبر ۱: فرض کفایہ، یعنی سب ترک کریں تو سب گنہگار، اور بعض بقدر کفایت یہ کریں تو سب پر سے اتر جائے، اور وجہ اس کی ظاہر ہے کہ شاید شعبان ۲۹ کا ہو جائے تو کل سے رمضان ہے۔ اگر چاند کا خیال نہ کیا تو عجب نہیں کہ ہو جائے اور یہ بے خبر رہیں۔ تو کل شعبان سمجھ کر ناحق رمضان کا روزہ جائے۔

[Box - Arabic]: یجب کفایة التماس الهلال لیلة الثلثین من شعبان لانه قد یکون ناقصاً (مراقی الفلاح) الظاهر منه الافتراض لانه یتوصل به الی الفرض (ط ط) (حاشیة العلامة الطحطاوی علیها)

[Box - Urdu]: شعبان کی تیسویں رات چاند کا تلاش کرنا وجوب کفایہ ہے کیونکہ بعض اوقات وہ ناقص ہوتا ہے (مراقی الفلاح) (ت) اس سے ظاہر یہی ہے کہ یہ فرض ہے کیونکہ فرض تک پہنچنے کا یہ وسیلہ ہے (ط ط)

عہ: حاشیہ رفع العلة عن نور الادلة: قلت بقدر کفایت، فقیر نے یہ لفظ اس لیے زائد کر دیا کہ اگر التماس ہلال ایسے شخص نے کیا جس کا بیان عند الشرع مقبول نہ ہو تو اس کا التماس کرنا نہ کرنا یکساں ہوا اور مقصود شرع کہ اس کے ایجاب سے تھا یعنی ثبوتِ ہلال، وہ حاصل نہ ہوا۔ مثلاً صفائے مطلع کی حالت میں صرف ایک آدمی نے تلاش کیا یا ہلال عید میں فقط عورتوں یا غلاموں نے تلاش کی، وعلی هذا القیاس انما زدته تفقهًا فلیحرر۔ (م) نمبر ۲: یوں ہی ۲۹ رمضان کو ہلالِ عید کی۔ (ش) نمبر ۲: اگر چاند ہو گیا اور نہ دیکھا تو نادانستہ عید کے دن روزہ حرام میں مبتلا ہوں گے،

[Box - Arabic]: كذا يجب التماس هلال شوال في غيوب التاسع والعشرين من رمضان (ط ط)

[Box - Urdu]: اسی طرح شوال کا چاند انتیسویں رمضان کی شام کو دیکھنا بھی واجب ہے (ط ط) (ت)

(م) نمبر ۳: ۲۹ ذیقعدہ کو ہلالِ ذی الحجہ کی تلاش بھی ضروری ہے۔ (ش) نمبر ۳: اقول: یہ یوں ضروری ہوا کہ حج و نماز عید و قربانی و تکبیراتِ تشریق کے اوقات جاننے اسی پر موقوف ہیں، تو اس کی تلاش عام لوگوں پر واجب کفایہ ہونی چاہئے اور اہلِ موسم پر فرض کفایہ کہ وہاں بے خیالی میں چاند ۲۹ کا ہو گیا اور بنا رکھا ۳۰ کا، تو وقوفِ عرفہ کہ حج کا فرض اعظم رکن اکبر ہے، اپنے وقت سے باہر یوم النحر میں واقع ہو گا اور عام لوگوں کو کسی فرض میں خلل کا اندیشہ نہیں، پر واجبات میں دقت آئے گی، مثلاً کسی ضرورت سے نماز عید کی تاخیر بارہویں تک چاہی تو یہ جسے بارہویں سمجھے ہیں وہ تیرہویں ہے۔ اور ایام نماز کہ ایام نحر تھے گزر چکے، نماز بے وقت ہوئی،

1 مراقی الفلاح مع حاشیۃ الطحطاوی فصل فیما یثبت بہ الھلال نور محمد کتب خانہ کراچی ص ۳۵۴

2 حاشیۃ الطحطاوی علی مراقی الفلاح فصل فیما یثبت بہ الھلال نور محمد کتب خانہ کراچی ص

3 ۳۵۴ حاشیۃ الطحطاوی علی مراقی الفلاح فصل فیما یثبت بہ الھلال نور محمد کتب خانہ کراچی ص ۳۵۴

Fatawa Razawiyya - Volume 10

Many people perform the sacrifice (Qurbani) on the twelfth; their sacrifices will be untimely. From the morning of Arafah, Takbeer is obligatory after every prayer. In reality, what is Arafah, they will not say the Takbeers considering it as the eighth day.

[Table Left Column (Arabic)]: "Just as that which leads to an obligation is obligatory, so too that which leads to a necessary act is necessary. Thus, the obligation upon the people of the season (pilgrims) and the necessity upon others is correct. All of this which I have mentioned is by way of jurisprudential understanding, and I hope it will be correct, if Allah Almighty wills." (T)

[Table Right Column (Urdu Translation)]: Just as the thing that leads to an obligation (Fard) is obligatory, in the same way, the thing that leads to a necessary (Wajib) act is necessary. So, for the people of the season, striving is obligatory and for others it is necessary. All that I have stated is as a matter of jurisprudence, and it is hoped that, if Allah Almighty wills, it will be correct. (T)

(M) Number 4: On the 29th of Rajab, search for the moon of Sha'ban, and on the 29th of Shawwal, also search for the moon of Dhu al-Qi'dah.

(Sh) Number 4: The command to search for the moon of Sha'ban is in a Hadith itself. The wisdom in it is that when the moon of Ramadan is not visible due to clouds, the command is to complete the count of Sha'ban as thirty days. When the Sha'ban moon is not known with certainty, how can its count be trusted? Similarly, if the moon of Dhu al-Hijjah is not seen, they will keep the count of Dhu al-Qi'dah as thirty, and the same situation will arise here.

[Table Left Column (Arabic Quote)]: "Similarly, they should seek the crescent of Sha'ban as well for the purpose of completing the number (1-E) (Fatawa Alamgiri) from Siraj al-Wahhaj. I say and I added (2) to it the crescent of Dhu al-Qi'dah for jurisprudential understanding."

[Table Right Column (Urdu Translation)]: In the same way, to complete the count, searching for the Sha'ban moon is also necessary (E). This is from Siraj al-Wahhaj in Fatawa Alamgiri. This servant adds by way of extraction that searching for the moon of Dhu al-Qi'dah is also necessary. (T)

Note 1 (Arabic): I say: It is in the Hadith itself: Tirmidhi narrated in Al-Jami' and Al-Hakim in Al-Mustadrak from Abu Huraira (may Allah be pleased with him) who said:

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Count the crescent of Sha'ban for Ramadan." (2) (M)

Note 1 (Urdu Translation): Tirmidhi in the Jami' and Hakim in the Mustadrak narrated from Hazrat Abu Huraira (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Count the crescent of Sha'ban for Ramadan." (2) (M). I say: On this, by way of inference, I have added the moon of Dhu al-Qi'dah (continued on the next page).

Note 2 (Arabic): I say: And I added to it the crescent of Dhu al-Qi'dah.

1 Al-Fatawa al-Hindiyya, Chapter Two on Sighting the Crescent, Dar al-Ma'rifa Beirut 1 / 179 2 Jami' al-Tirmidhi, Chapter on what has come regarding counting the crescent, Noor Muhammad Factory for Trade in Books Karachi 1 / 123

बहुत से लोग बारहवीं को कुर्बानी करते हैं, उनकी कुर्बानियां बेवक़्त होंगी। अरफ़ा की सुबह से हर नमाज़ के बाद तकबीर वाजिब होती है। वास्तविकता में जो अरफ़ा है, वे उसे आठवीं समझकर तकबीरें नहीं कहेंगे।

[तालिका बायां कॉलम (अरबी)]: "जैसे फ़र्ज़ तक पहुँचाने वाली चीज़ फ़र्ज़ होती है, उसी तरह वाजिब तक पहुँचाने वाली चीज़ वाजिब होती है। तो मौसम वालों (हाजियों) पर कोशिश करना फ़र्ज़ है और दूसरों पर वाजिब है। यह सब जो मैंने बयान किया है, वह फिकही समझ के तौर पर है और उम्मीद है कि इंशा अल्लाह तआला यह सही होगा।" (त)

[तालिका दायां कॉलम (उर्दू अनुवाद)]: जैसे फ़र्ज़ तक पहुँचाने वाली चीज़ फ़र्ज़ होती है, उसी तरह वाजिब तक पहुँचाने वाली चीज़ वाजिब होती है। तो मौसम वालों पर कोशिश करना फ़र्ज़ है और दूसरों पर वाजिब है। तमाम जो मैंने बयान किया यह बतोर तफ़क्कुह (समझ) है और उम्मीद है कि यह इंशा अल्लाह तआला सवाब (सही) होगा। (त)

(म) नंबर 4: 29 रजब को शाबान का चाँद और 29 शव्वाल को ज़ुल-क़ादा का चाँद भी तलाश करें।

(श) नंबर 4: शाबान का चाँद तलाश करने का हुक्म खुद हदीस 1 में है। इसमें हिकमत यह है कि जब बादलों की वजह से रमज़ान का चाँद नज़र न आए, तो हुक्म है कि शाबान की गिनती तीस पूरी कर लें। जब शाबान का चाँद निश्चित रूप से पता नहीं होगा, तो उसकी गिनती पर क्या भरोसा किया जा सकेगा। इसी तरह अगर ज़ुल-हिज्जा का चाँद नज़र न आए, तो ज़ुल-क़ादा की गिनती तीस रखेंगे, और वही बात यहाँ पेश आएगी।

[तालिका बायां कॉलम (अरबी उद्धरण)]: "इसी तरह, संख्या पूरी करने के लिए शाबान का चाँद तलाश करना भी ज़रूरी है (1-ई) (फ़तावा आलमगीरी) सिराज अल-वहाज से। मैं (लेखक) कहता हूँ और मैंने इसमें (2) ज़ुल-क़ादा का चाँद फिकही समझ के लिए जोड़ा है।"

[तालिका दायां कॉलम (उर्दू अनुवाद)]: यूँ ही एतमाम-ए-तादाद (गिनती पूरी करने) के लिए शाबान के चाँद की तलाश करना भी ज़रूरी है (ई)। यह फ़तावा आलमगीरी में सिराज वहाज से है। बंदा इस पर बतोर इस्तखराज (निष्कर्ष) इज़ाफ़ा करता है कि ज़ुल-क़ादा के चाँद की तलाश करना भी ज़रूरी है। (त)

नोट 1 (अरबी): मैं कहता हूँ: यह खुद हदीस में है: तिर्मिज़ी ने अल-जामी' में और हाकिम ने अल-मुस्तदरक में हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "रमज़ान के लिए शाबान के चाँद की गिनती करो।" (2) (म)

नोट 1 (उर्दू अनुवाद): तिर्मिज़ी ने जामी' में और हाकिम ने मुस्तदरक में हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "रमज़ान के लिए शाबान के चाँद को शुमार (गिनती) करो 2 (म)। मैंने कहा: इस पर मैंने बतोर इस्तिनबात ज़ुल-क़ादा के चाँद को (बाकी अगले पेज पर)।

नोट 2 (अरबी): मैं कहता हूँ: और मैंने इसमें ज़ुल-क़ादा का चाँद जोड़ दिया है।

1 अल-फ़तावा अल-हिन्दिया, बाब 2 हिलाल देखने के बारे में, दारुल मारिफ़ा बेरुत 1 / 179 2 जामी' अत-तिर्मिज़ी, बाब हिलाल की गिनती के बारे में जो आया है, नूर मोहम्मद कारख़ाना तजारत कुतुब कराची 1 / 123

पृष्ठ 456 / 836

بہت لوگ بارہویں کو قربانی کرتے ہیں ، ان کی قربانیاں بے وقت ہونگی ، عرفہ کی صبح سے ہر نماز کے بعد تکبیر واجب ہوتی ہے ، واقع میں جو عرفہ ہے یہ اُسے آٹھویں جان کر تکبیریں نہ کہیں گے۔

[Table Left Column (Arabic)]: وکما ان مایتوصل به الی الفرض فرض فکذا ان مایتوصل به الی الواجب واجب فصح الافتراض علی اهل الموسم والوجوب علی غیرهم هذا کله ما ذکرته تفقها وارجو ان یکون صوابا ان شاء الله تعالٰی۔ (ت)

[Table Right Column (Urdu Translation)]: جیسا کہ فرض تک پہنچانے والی چیز فرض ہوتی ہے اسی طرح واجب تک پہنچانے والی چیز واجب ہوتی ہے تو اہل موسم پر کوشش کرنا فرض اور دوسروں پر واجب ہے، تمام جو میں نے بیان کیا یہ بطور تفقہ ہے اور امید ہے کہ یہ ان شاء اللہ تعالٰی صواب ہو گا۔ (ت)

(م) نمبر ۴ : ۲۹ رجب کو ہلالِ شعبان، ۲۹ شوال کو ہلالِ ذیقعدہ کی بھی تلاش کریں۔

(ش) نمبر ۴ : ہلالِ شعبان کی تلاش کا حکم خود حدیث ۱؎ میں ہے ، حکمت اس میں یہ ہے کہ جب رمضان کا چاند بوجہ ابر نظر نہیں آتا تو حکم ہے کہ شعبان کی گنتی تیس پوری کر لیں۔ جب شعبان کا چاند بہ تحقق نہ معلوم ہو گا تو اس کی گنتی پر کیا یقین ہو سکے گا۔ یوں ہی اگر ذی الحجہ کا چاند نظر نہ آئے تو ذیقعدہ کی گنتی تیس رکھیں گے، اور وہی بات یہاں پیش آئے گی،

[Table Left Column (Arabic Quote)]: کذا ینبغی ان یلتمسوا ھلال شعبان ایضافی حق اتمام العدد ۱؎ ع) (فتاوی عالمگیریة) عن السراج الوھاج، قلت وزدت ۲؎ علیه ھلال ذی القعدة تفقھا۔

[Table Right Column (Urdu Translation)]: یوں ہی اتمامِ تعداد کے لیے شعبان کے چاند کا تلاش کرنا بھی ضروری ہے (ع) یہ فتاوٰی عالمگیری میں سراج وہاج سے ہے بندہ اس پر بطور استخراج اضافہ کرتا ہے کہ ذی القعدہ کے چاند کا بھی تلاش کرنا ضروری ہے۔ (ت)

عہ۱: قلت خود حدیث میں ہے : اخرج الترمذی فی الجامع والحاکم فی المستدرك عن ابی ھریرة رضی اللہ تعالی عنه قال قال رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم احصوا ھلال شعبان لرمضان ۔ ۲؎ (م)

ترمذی نے جامع میں اور حاکم نے مستدرک میں حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا کہ رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم نے فرمایا: رمضان کے لیے شعبان کے چاند کو شمار کرو ۲؎ (م) قلت اس پر میں نے بطور استنباط ذوالقعدہ کے چاند (باقی اگلے صفحے پر)

عہ۲: قلت، وزدت علیه ھلال ذی القعدہ

1 الفتاوی الھندیہ الباب الثانی فی رؤیۃ الھلال دارالمعرفۃ بیروت ۱ / ۱۷۹ 2 جامع الترمذی باب ما جاء فی احصاء ہلال نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ۱ / ۱۲۳

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

Caution: People are of three types: (1) Adil (Just), (2) Mastur (Hidden/Unknown state), (3) Fasiq (Open sinner). An 'Adil' is one who does not commit major sins (Note 1) and is not 'khafif-ul-harakat' (frivolous in actions, Note 2). A 'Mastur' is one whose hidden condition is such that nothing is known about him that would disqualify his testimony. And a 'Fasiq' is one who is openly bad in his deeds. The testimony of an 'Adil' is accepted everywhere. The testimony of a 'Mastur' is accepted regarding the crescent of Ramadan, and the testimony of a 'Fasiq' is not accepted anywhere. However, some wordings of certain narrations seemingly suggest that the testimony of a 'Fasiq' should also be heard regarding Ramadan. It is possible that the judge of that city holds this view, even though researchers have rejected it. So, if a 'Fasiq' knows that the local judge follows this school of thought, it will certainly be mandatory for him to give testimony, otherwise not. And since 'Adil' and 'Mastur' follow the same rule regarding Ramadan, they will also be equal in this obligation. As for the 'Adil', since he is always accepted, the obligation upon him is also absolute, whether it is for Ramadan, Eid al-Fitr, or Eid al-Adha.

[Table Section] (Arabic): It is mandatory for an 'Adil' to testify before the judge on the night he sees the moon, so that people do not wake up without fasting. This is among the individual obligations (Fard al-Ayn). As for the 'Fasiq', if he knows that the judge leans towards the opinion of al-Tahawi and accepts his word, it becomes mandatory for him. As for... (Urdu): It is mandatory for an 'Adil' that on the night he sees the moon, he gives testimony before the judge that same night, so that people do not start their morning without fasting. And this testimony is an individual obligation (Fard al-Ayn). And if a 'Fasiq' knows that the judge's inclination is towards the opinion of al-Tahawi and he accepts his word, then on him...

(Remaining footnote of the previous page): ...this reasoning of ours and the one before it regarding the crescent of Dhu al-Hijjah is not something that requires deep reflection, because such matters are annexed by way of 'Dalalat al-Nass' (textual indication), and it is something in which both jurists and commoners share, as stated by Allama Tahawi and others. 12 (T) Note 1: I say, not being a perpetrator of major sins includes persistence in minor sins, for a minor sin becomes a major one through persistence. As for the scholars' saying, "it is the abandonment of major sins and persistence in minor sins etc.," they intended clarification, not completing the definition, as is not hidden. (T) Note 2: I say, not being 'khafif-ul-harakat' means, for

example, eating while walking in the market or sitting to urinate on a public path. 12 (M)

1. Maraqi al-Falah with Hashiya al-Tahawi, section on how the crescent is established, Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub, Karachi, p. 358. Page 457 of 836

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

सावधानी (तनबीह): लोग तीन प्रकार के होते हैं: (1) आदिल (न्यायप्रिय), (2) मस्तूर (जिसकी स्थिति छुपी हो), (3) फासिक़ (खुला पापी)। 'आदिल' वह है जो बड़े गुनाह (कबीरा गुनाह, नोट 1) न करे और जिसकी हरकतें ओछी (खफीफ-उल-हरकात, नोट 2) न हों। 'मस्तूर' वह है जिसकी गुप्त स्थिति ऐसी हो कि उसके बारे में ऐसी कोई बात पता न हो जो उसकी गवाही को रद्द कर दे। और 'फासिक़' वह है जो प्रत्यक्ष रूप से बुरे कर्म करता है। आदिल की गवाही हर जगह स्वीकार्य है, और मस्तूर की रमज़ान के चाँद के मामले में, और फासिक़ की कहीं भी नहीं। लेकिन कुछ रिवायतों (वर्णनों) के कुछ शब्द प्रत्यक्ष रूप से इस ओर इशारा करते हैं कि रमज़ान के बारे में फासिक़ की गवाही भी सुन लेनी चाहिए। संभव है कि उस शहर का न्यायधीश (काज़ी) यही विचार रखता हो, हालाँकि शोधकर्ताओं ने इसे खारिज कर दिया है। तो जिस फासिक़ को पता हो कि यहाँ के न्यायधीश का यही नज़रिया (मस़लक) है, उस पर निश्चित रूप से गवाही देना अनिवार्य (वाजिब) होगा, अन्यथा नहीं। और रमज़ान के मामले में चूँकि आदिल और मस्तूर का एक ही हुक्म (नियम) है, तो वे इस अनिवार्यता में भी समान रहेंगे। जहाँ तक आदिल का सवाल है, चूँकि वह हमेशा स्वीकार्य है, इसलिए उस पर यह अनिवार्यता भी पूर्ण रूप से है, चाहे वह रमज़ान हो, ईदुल-फ़ित्र हो या ईदुल-अज़हा।

[तालिका अनुभाग] (अरबी): आदिल के लिए अनिवार्य है कि वह चाँद देखने की रात को न्यायधीश के पास गवाही दे ताकि लोग सुबह बिना रोज़े के न रहें। यह व्यक्तिगत कर्तव्यों (फर्ज़-ए-ऐन) में से है। जहाँ तक फासिक़ का सवाल है, यदि उसे पता है कि न्यायधीश तह़ावी के विचार की ओर झुकाव रखता है और उसकी बात स्वीकार कर लेता है, तो उस पर अनिवार्य है, और जहाँ तक... (उर्दू): आदिल पर अनिवार्य है कि उसने जिस रात चाँद देखा है, उसी रात न्यायधीश के पास गवाही दे ताकि लोग सुबह बिना रोज़े के न उठें, और यह गवाही फर्ज़-ए-ऐन है। और यदि फासिक़ जानता है कि न्यायधीश का झुकाव तह़ावी के विचार की ओर है और वह उसकी बात स्वीकार कर लेता है, तो उस पर...

(पिछले पृष्ठ के हाशिये का शेष भाग): ...हमारी यह समझ और इससे पहले वाली ज़ुल-हिज्जा के चाँद के बारे में ऐसी चीज़ नहीं है जिसमें बहुत विचार की आवश्यकता हो, क्योंकि इस तरह के मामले 'दलालात अल-नस्स' (पाठ के संकेत) के रूप में जुड़ जाते हैं और इसमें फ़ुक़्हा (कानूनविद) और आम लोग दोनों शामिल हैं, जैसा कि अल्लामा तह़ावी आदि ने स्पष्ट किया है। 12 (त) नोट 1: मैंने कहा कि कबीरा गुनाह करने वाला न हो। मेरा कहना है कि कबीरा गुनाह करने में छोटे गुनाह

(सग़ीरा गुनाह) पर अड़े रहना भी आ गया, क्योंकि सग़ीरा गुनाह अड़े रहने से कबीरा हो जाता है। विद्वानों का यह कहना कि 'कबीरा गुनाहों को छोड़ना और सग़ीरा पर अड़े न रहना आदि' तो इससे उनका उद्देश्य स्पष्टीकरण था, परिभाषा को पूरा करना नहीं, जैसा कि स्पष्ट है। (त) नोट 2: मैंने कहा कि हरकतें ओछी न हों, जैसे बाज़ार में खाते हुए चलना या सार्वजनिक सड़क पर चलते हुए रास्ते में पेशाब के लिए बैठना। 12 (म)

1. मराक़ी अल-फलाह मअ हाशियतुत तह़ावी, चाँद के साबित होने का अध्याय, नूर मुहम्मद कारख़ाना तिजारत कुतुब, कराची, पृ. 358। पृष्ठ 457 का 836

تنبیہ : لوگ تین قسم ہیں: (۱) عادل (۲) مستور (۳) فاسق عادل وہ مرتکبِ کبیرہ (عہ۱) یا خفیف (عہ۲) الحرکات نہ ہو۔ اور مستور پر پوشیدہ حال جس کی کوئی بات مسقطِ شہادت معلوم نہیں۔ اور فاسق جو ظاہراً بد افعال ہے۔ عادل کی گواہی ہر جگہ مقبول ہے اور مستور کی ہلالِ رمضان میں، اور فاسق کی کہیں نہیں۔ پر بعض روایات کے بعض الفاظ بظاہر اس طرف جاتے ہیں کہ رمضان میں فاسق کی شہادت بھی سن لیں۔ ممکن ہے کہ اس شہر کا حاکم شرع یہی خیال رکھتا ہو، اگر چہ محققین نے اسے رد کر دیا۔ تو جس فاسق کو معلوم ہو کہ یہاں کے حاکم کا یہ مسلک ہے اس پر بیشک گواہی دینی واجب ہوگی ورنہ نہیں، اور رمضان میں جبکہ عادل و مستور کا ایک حکم ہے، تو اس وجوب میں بھی یکساں رہیں گے۔ رہا عادل، جب وہ دائم المقبول ہے تو اس پر وجوب بھی مطلقاً ہے یعنی رمضان ہو خواہ عید الفطر خواہ عید الاضحٰی،

[جدول] (عربی): یلزم العدل ان یشھد عند الحاکم فی لیلۃ رؤیتہ کیلا یصبحو مفطرین ۱ وھی من فروض العین واما الفاسق ان علم ان الحاکم یمیل الی قول الطحاوی ویقبل قولہ یجب علیہ ، واما (اردو): عادل پر لازم ہے کہ اس نے جس رات چاند دیکھا ہے اسی رات حاکم کے پاس گواہی دے تاکہ لوگ صبح کو بے روزہ نہ اٹھیں، اور یہ گواہی فرضِ عین ہے، اور فاسق اگر جانتا ہے کہ حاکم کا میلان طحاوی کے قول کی طرف ہے اور اس کا قول قبول کر لیتا ہے تو اس پر

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ): کا اضافہ کیا ہے یہ اور اس سے پہلے ذوالحجہ کے چاند میں تفکر کی ضرورت نہیں کیونکہ اس طرح کے معاملات بطور دلالت النص ملحق ہو جاتے ہیں اور اس میں فقہاء اور عوام دونوں مشترک ہیں جیسا کہ اس پر علامہ طحاوی وغیرہ نے تصریح کی ہے ۱۲ (ت) عہ ۱ : قلت مرتکبِ کبیرہ نہ ہو اقول ارتکابِ کبیرہ میں اصرارِ صغیرہ بھی آگیا کہ صغیرہ

اصرار سے کبیرہ ہو جاتا ہے اما قول العلماء ھو ترك الکبائر والاصرار علی الصغائر الخ فارادوا الایضاح لا التتمیم کما لا یخفی (رہا علماء کا یہ قول کہ کبائر کا ترک اور صغائر پر اصرار الخ تو اس سے مراد وضاحت ہے نہ کہ تکمیلِ تعریف، جیسا کہ مخفی نہیں۔ ت) عہ ۲ : قلت خفیف الحرکات نہ ہو جیسے بازار میں کھاتے پھرنا یا شارعِ عام چلنے پر راہ میں پیشاب کو بیٹھنا ۱۲ (م)

۱ مراقی الفلاح مع حاشیۃ الطحاوی فصل فیما یثبت بہ الھلال نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳۵۸ صفحہ 457 از 836

Fatawa Ridawiyya Volume Ten

[Arabic portion]: Regarding a Mastoor (a person whose internal state of piety is unknown), there is a conflict between two narrations (as reported by Ash-Shami from Al-Halwani). I say: Since the acceptance of the Mastoor's testimony has been established, as will be discussed later, the dispute is resolved. Furthermore, the implication of the commentary indicates that a transgressor (Fasiq) is not obliged to testify if he is unaware of its necessity; this was conveyed by (Ad-Durr) from (Al-Bazzazi) and noted by (Ash-Shami). [Urdu portion]: It is mandatory to give testimony. As for a person whose state is hidden (Mastoor al-Haal), there is ambiguity between two reports concerning them (Sh. from Al-Halwani). I say: Since the testimony of a Mastoor is proven to be acceptable, as will soon follow, the dispute ends. The meaning of the commentary clarifies that if a sinner (Fasiq) is unaware of this matter, testimony is not mandatory for him; this is what (Ad-Durr) derived from (Al-Bazzazi) and (Ash-Shami) pointed out. (T)

Moreover, the cause of the obligation is that if the person who sighted the moon does not testify that same night, then on the morning of Ramadan, people would remain without fasting, and on the day of [Eid] al-Fitr, they would be fasting. Both scenarios are improper, and the blame for this would lie with the one who failed to testify.

[Arabic portion]: For delaying proof beyond the time of need is a sin. And Allah the Almighty said: “And do not conceal testimony, for whoever conceals it - his heart is indeed sinful.” [2:283] [Urdu portion]: Because delaying testimony past the time of need is a sin, the noble command of Allah Almighty is: Do not hide the testimony, and whoever hides it, his heart is a sinner. (T)

I say: However, regarding the crescent of Dhu al-Hijjah, there is no such urgent need until the eighth day that would be affected by delay. It simply needs to be known so that people are occupied with Takbir from the dawn of the Day of Arafah and the pilgrims prepare for their standing (Wuquf).

[Arabic portion]: If it is delayed until this point, then it must not be delayed beyond the time of need; rather, the sin is associated with it. Let the delay up to this point be as previously mentioned. This is what I have stated through legal understanding, so let it be recorded. [Urdu portion]: So if it is delayed until this point, there is no harm, but it should not be delayed beyond the time of actual need. Because he would

become a sinner by doing so, here the delay can be up to the seventh of Dhu al-Hijjah. This humble servant has said this by way of derivation; please preserve it. (T)

(m) Number 5: It is mandatory for a just person ('adil) who sights the crescent, unconditionally; and for a Mastoor during Ramadan; and for a sinner (Fasiq) when he believes the ruler will accept his testimony, that they present themselves before the Shariah judge on that same night for Ramadan and Eid al-Fitr, and by the eighth for Dhu al-Hijjah, to testify to the sighting.

1. Radd al-Muhtar, Kitab as-Sawm, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/91.
2. The Quran, 2/283.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

[अरबी भाग]: मस्तूर (जिसकी आंतरिक धार्मिक स्थिति अज्ञात हो) के बारे में दो रिवायतों के बीच विवाद है (जैसा कि अल-हलवानी से अश-शामी द्वारा रिपोर्ट किया गया है)। मैं कहता हूँ: चूंकि मस्तूर की गवाही की स्वीकार्यता स्थापित हो चुकी है, जैसा कि बाद में चर्चा की जाएगी, विवाद सुलझ गया है। इसके अलावा, व्याख्या का निहितार्थ इंगित करता है कि एक पापी (फ़ासिक़) गवाही देने के लिए बाध्य नहीं है यदि वह इसकी आवश्यकता से अनभिज्ञ है; यह (अद-दुर्र) द्वारा (अल-बज़्ज़ाज़ी) से व्यक्त किया गया था और (अश-शामी) द्वारा नोट किया गया था। [उर्दू भाग]: गवाही देना अनिवार्य (वाजिब) है। रहा मस्तूरुल हाल व्यक्ति, तो उसके बारे में दो रिवायतों का संदेह है (श. अल-हलवानी से)। मैं कहता हूँ: जब मस्तूर के कथन का स्वीकार्य होना सिद्ध है जैसा कि जल्द ही उल्लेख होगा, तो विवाद समाप्त हो गया। व्याख्या के अर्थ से यह स्पष्ट हुआ कि यदि कोई पापी इस मामले से अनभिज्ञ है, तो उस पर गवाही अनिवार्य नहीं है; यह वह है जो (दुर्र) ने (बज़्ज़ाज़ी) से प्राप्त किया और (शामी) ने इस पर संकेत किया। (त)

इसके अलावा, अनिवार्यता का कारण यह है कि यदि चाँद देखने वाले ने उसी रात गवाही नहीं दी, तो रमज़ान की सुबह लोग बिना रोज़े के उठेंगे, और [ईद] उल-फ़ित्र के दिन वे रोज़े से होंगे। ये दोनों स्थितियाँ अनुचित हैं, और इसका दोष गवाही न देने वाले पर होगा।

[अरबी भाग]: क्योंकि आवश्यकता के समय से परे गवाही में देरी करना पाप है। और अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "और गवाही को मत छुपाओ, और जो गवाही छुपाएगा - वास्तव में उसका दिल गुनहगार है।" [2:283] [उर्दू भाग]: क्योंकि ज़रूरत के समय से गवाही में देरी करना पाप है, अल्लाह तआला का पवित्र आदेश है: गवाही मत छुपाओ और जो गवाही छुपाएगा, उसका दिल गुनहगार है। (त)

मैं कहता हूँ: हालाँकि, ज़ुल-हिज्जा के चाँद के बारे में, आठवीं तारीख तक कोई ऐसी तत्काल आवश्यकता नहीं है जो देरी से प्रभावित हो। बस यह ज्ञात हो जाना चाहिए ताकि लोग अरफ़ा के दिन की फज्र से तकबीर में व्यस्त हों और हाजी वक़ूफ़ के लिए व्यवस्था करें।

[अरबी भाग]: यदि इसे इस बिंदु तक टाला जाता है, तो इसे आवश्यकता के समय से आगे नहीं टाला जाना चाहिए; बल्कि, पाप इसके साथ जुड़ा हुआ है। इस बिंदु तक की देरी वैसी ही होने दें जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है। यह वह है जो मैंने कानूनी समझ (फ़िक़्ह) के माध्यम से कहा है, अतः

इसे दर्ज किया जाए। [उर्दू भाग]: तो अगर यहाँ तक देरी करता है तो कोई हर्ज नहीं, लेकिन वास्तविक आवश्यकता के समय से आगे देरी न करे। क्योंकि ऐसा करने से वह गुनहगार होगा, यहाँ देरी ज़ुल-हिज्जा की सात तारीख तक हो सकती है। इस विनम्र सेवक ने यह निष्कर्ष (इस्तख़राज) के तौर पर कहा है; कृपया इसे सुरक्षित रखें। (त)

(म) नंबर 5: चाँद देखने वाले न्यायप्रिय (आदिल) व्यक्ति पर बिना किसी शर्त के, और रमज़ान के दौरान मस्तूर पर; और पापी (फ़ासिक़) पर जब उसे विश्वास हो कि शासक मेरी गवाही स्वीकार कर लेगा, यह अनिवार्य है कि वे रमज़ान और ईद-उल-फ़ित्र के लिए उसी रात, और ज़ुल-हिज्जा के लिए आठवीं तारीख तक शरिया न्यायाधीश के सामने उपस्थित होकर गवाही दें।

1. रद्द अल-मुह्तार, किताब अस-सौम, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 2/91।
2. अल-कुरान, 2/283।

पृष्ठ 836 का 458

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

المستور ففيه شبهة الرويتين (ش عن الحلواني) اقول: واذقد تقرر قبول المستور كما سيأتى فارتفع النزاع وقد افاد بمفهوم الشرح ان الفاسق لا يجب عليه ان لم يعلم ذلك وهو الذي افاد (در) عن البزازى ونبه عليه (ش)۔ گواہی دینا واجب ہے۔ رہا مستور الحال شخص تو اس کے بارے میں دو روایتوں کا شبہ ہے (ش عن الحلواني) اقول: جب مستور کے قول کا مقبول ہونا ثابت ہے جیسا کہ عنقریب آرہا ہے تو نزاع ختم ہو گیا اور مفہوم شرح سے یہ واضح ہوا ہے اگر فاسق اس معاملہ کو نہ جانتا ہو تو اس پر گواہی لازم نہیں، یہ وہ ہے جو (در) نے (بزاری) سے افادہ کی اور اس پر تنبیہ کی (شامی) نے۔ (ت)

پھر وجوب کا سبب یہ ہے کہ اگر دیکھنے والے نے اسی شب گواہی نہ دی تو ہلال رمضان میں صبح کو لوگ بے روزہ اٹھیں گے اور ہلال فطر میں روزہ دار۔ اور یہ دونوں ناروا جس کا الزام گواہی نہ دینے والے پر ہوگا۔

فان تاخير الحجة عن وقت الحاجة اثم، وقد قال تعالی وَلَا تَكْتُمُوا الشَّهَادَةَ ۚ وَمَن يَكْتُمْهَا فَإِنَّهُ آثِمٌ قَلْبُهُ ۗ 2 کیونکہ ضرورت وقت سے گواہی میں تاخیر گناہ ہے، اللہ تعالی کا ارشاد گرامی ہے: گواہی کو مت چھپاؤ اور جو گواہی چھپائے گا تو اندر سے اس کا دل گنہگار ہے۔ (ت)

اقول : مگر ہلال ذی الحجہ میں آٹھویں تک کوئی حاجت ایسی نہیں جو بوجہ تاخیر خلل پذیر ہو۔ بس یوں معلوم ہو جانا چاہئے کہ فجر عرفہ سے لوگ تکبیر میں مشغول ہوں اور حجاج سامانِ وقوف کریں،

فان اخر الی ھذا فلا یؤخّر وقت الحاجۃ ط انما کان الاثم بہ، فلیکن التاخیر الی ھنا سابقا ھذا ماقلتہ تفقھا فلیحرّر۔ پس اگر یہاں تک مؤخر کرتا ہے تو کوئی حرج نہیں، لیکن وقتِ حاجت سے مؤخر نہ کرے، ط کیونکہ اس سے گنہ گار ہوگا تو یہاں تاخیر سات ذوالحجہ تک ہوسکتی ہے۔ یہ بندہ نے بطورِ استخراج کہا ہے، اسے محفوظ کیجئے ۔ (ت)

(م) نمبر ۵: ہلال دیکھنے والے عادل پر مطلقاً اور مستور پر رمضان میں، اور فاسق پر جب سمجھے کہ حاکم میری گواہی مان لے گا، واجب ہے کہ رمضان وعید الفطر میں اسی شب، اور ذی الحجہ میں آٹھویں تک حاکم شرع کے پاس حاضر ہو کر رؤیت پر گواہی دے۔

1 رد المحتار کتاب الصوم دار احیاء التراث العربی بیروت ۲/۹۱ 2 القرآن ۲/۲۸۳

Fatawa Razviya Volume 10

(m) Number 6: Here, even a secluded woman should go out even if the husband does not grant permission, and even if a slave girl does not receive permission from her master. If they perceive that the proof of sighting [of the moon] depends on them, otherwise this going out will be unlawful.

(sh) Number 6: It is mandatory for a secluded slave girl to go out on that night. [Arabic: It is obligatory for a secluded slave girl to go out on her night] - 1 (d) (Durr-e-Mukhtar) i.e., the night of moon sighting 2 (sh) without her master's permission [Arabic: without the permission of her master] and let her testify as in al-Hafiziyyah 3 (d). Similarly, it is mandatory for a free woman to go out without her husband's permission; likewise, for a non-secluded woman and a married woman, it is even more so 4 (sh). Its place is when she is specifically required for testimony; otherwise, it is forbidden for her 5 (tt). The secluded slave girl must go out on that night. (d) refers to Durr al-Mukhtar, meaning the night of sighting. (sh) refers to Shami, meaning she should go out without her master's permission and give testimony as in Hafiziyah. (d) Similarly, it is mandatory for a free woman to go out without the husband's permission; likewise, the slave girl who is not secluded and the woman who is married, their going out will be by way of priority. (sh) This is when her testimony is specifically required; otherwise, her going out will be forbidden (tt). (t)

This ruling is for when the testimony is specifically dependent on these people; otherwise, it is not permissible for a secluded woman to go, or for a woman to go without her husband's permission, or for a male or female slave to go without the master's permission.

Tahtawi said [Arabic: Tahtawi said: and the apparent meaning is that the place for that is when the establishment of sighting is dependent [on it], otherwise it is not]: It is apparent that this is necessary when the proof of moon sighting depends on them; otherwise, it is not necessary. (sh) (t)

(m) Number 7: Where there are Islamic states, in those lands, the Sunni religious scholar who has the most knowledge of the science of jurisprudence is, by the command of Sharia, the leader of Muslims. It is mandatory for Muslims to refer to him in their religious matters and act upon his fatwas. So, on sighting the moon as well, it is obligatory to appear before him that night and give testimony.

1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Mujtabai Press Delhi 1/128

2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut 2/91
3. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Mujtabai Press Delhi 1/128
4. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut 2/91
5. Tahtawi 'ala Maraqi al-Falah, Kitab al-Sawm, Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi p. 358
6. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut 2/91

(म) नंबर 6: यहाँ तक कि पर्दानशीन महिला निकले चाहे पति अनुमति न दे, चाहे दासी को स्वामी की अनुमति न मिले। यदि वे समझें कि चाँद दिखने का प्रमाण उन पर निर्भर है, अन्यथा यह निकलना अवैध होगा।

(श) नंबर 6: पर्दानशीन दासी पर उस रात निकलना अनिवार्य है। [अरबी: पर्दानशीन दासी के लिए उस रात निकलना अनिवार्य है] - 1 (द) (दुर्रे मुख्तार) यानी चाँद दिखने की रात 2 (श) अपने स्वामी की अनुमति के बिना [अरबी: स्वामी की अनुमति के बिना] और वह गवाही दे जैसा कि हाफ़िज़िया में है 3 (द)। इसी प्रकार स्वतंत्र महिला पर भी बिना अनुमति पति के निकलना अनिवार्य है; इसी प्रकार वह महिला जो पर्दानशीन न हो और विवाहित महिला के लिए तो यह और भी प्राथमिकता वाला होगा 4 (श)। इसका स्थान तब है जब गवाही के लिए उसका निर्धारण हो अन्यथा उसका निकलना हराम होगा 5 (तत)। पर्दानशीन दासी पर उस रात निकलना अनिवार्य है। (द) से तात्पर्य दुर्रे मुख्तार है यानी चाँद रात। (श) से तात्पर्य शामी है यानी अपने स्वामी की अनुमति के बिना निकले और गवाही दे जैसा कि हाफ़िज़िया में है। (द) इसी प्रकार स्वतंत्र महिला पर भी बिना अनुमति पति के निकलना अनिवार्य है, इसी प्रकार वह दासी जो पर्दानशीन न हो और वह स्त्री जो विवाहित हो उनका निकलना तो प्रथम दृष्टया होगा। (श) यह उस समय है जब गवाही के लिए उसका निर्धारण हो अन्यथा उसका निकलना हराम होगा (तत)। (त)

यह नियम उस स्थिति में है जब विशेष रूप से इन्हीं लोगों पर गवाही निर्धारित हो अन्यथा पर्दानशीन का जाना या स्त्री का पति की अनुमति के बिना या दास व दासी का स्वामी की अनुमति के बिना निकलना उचित नहीं।

तहावी ने कहा [अरबी: तहावी ने कहा: और ज़ाहिर यही है कि इसका स्थान चाँद दिखने की पुष्टि पर निर्भर होने पर है, अन्यथा नहीं]: स्पष्ट यही है कि इसकी आवश्यकता उस समय है जब चाँद दिखने की पुष्टि उन पर निर्भर हो अन्यथा आवश्यक नहीं। (श) (त)

(म) नंबर 7: जहाँ रियासतें इस्लामी हैं, उन नगरों में जो सुन्नी मज़हब का आलिम-ए-दीन सबसे अधिक फ़िक़्ह (धर्मशास्त्र) का ज्ञान रखता हो, वह शरीयत के हुक्म से मुसलमानों का सरदार है। मुसलमानों

पर फ़र्ज़ है कि अपनी धार्मिक बातों में उसी की ओर रुख करें और उसके फतवों पर अमल करें। तो चाँद देखने पर भी वाजिब है कि उस रात उसके समक्ष उपस्थित होकर गवाही दें।

1. दुर्रे मुख्तार किताब अल-सौम, मतबा मुजतबाई दिल्ली 1/128
2. रद्द अल-मुह्तार किताब अल-सौम, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी बेरूत 2/91
3. दुर्रे मुख्तार किताब अल-सौम, मतबा मुजतबाई दिल्ली 1/128
4. रद्द अल-मुह्तार किताब अल-सौम, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी बेरूत 2/91
5. तहावी अला मराक़ी अल-फ़लाह किताब अल-सौम, नूर मुहम्मद कारखाना तिजारत कुतुब कराची पृ. 358
6. रद्द अल-मुह्तार किताब अल-सौम, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी बेरूत 2/91

पृष्ठ 459/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

(م) نمبر ۶: یہاں تک پردہ نشین نکلے اگرچہ شوہر اذن نہ دے ، اگرچہ کنیز اجازت مولٰی نہ پائے۔ اگر سمجھیں کہ ثبوت رؤیت ہم پر موقوف ہے ورنہ یہ نکلنا ناجائز ہوگا۔

(ش) نمبر ۶: یجب علی الجاریة المخدرة ان تخرج في لیلتها - ۱ (د) (درمختار) ای لیلة الرؤیة ۲ (ش) بلا اذن مولاها و تشهد کما في الحافظیة ۳ (د) وکذا یجب علی الحرة ان تخرج بلا اذن زوجها کذا غیر المخدرة والمزوجة بالاولی ۴ (ش) محله اذا تعیّنت للشهادة و الا حرم علیها ۵ (طط) پردہ نشین لونڈی پر اس رات نکلنا لازم ہے۔ (د) سے مراد درِ مختار ہے یعنی چاند رات۔ (ش) سے مراد شامی ہے یعنی اپنے مولٰی کی اجازت کے بغیر نکلے اور گواہی دے جیسا کہ حافظیہ میں ہے (د) اسی طرح آزاد عورت پر بھی بلا اجازت خاوند نکلنا لازم ہے ، اسی طرح وہ لونڈی جو پردہ نشین نہ ہو اور وہ عورت جو منکوحہ نہ ہو ان کا نکلنا تو بطریقِ اولٰی ہوگا (ش) یہ اس وقت ہے جب شہادت کے لیے اس کا تعین ہو ورنہ اس کا نکلنا حرام ہوگا (طط) ۔ (ت)

یہ حکم اس صورت میں ہے جب خاص انہی لوگوں پر گواہی متعین ہو ورنہ پردہ نشین کو جانا یا عورت کو بے اذنِ شوہر یا غلام و کنیز کو بے اجازتِ مولٰی نکلنا روا نہیں۔

قال ط (الطحاوی) والظاهر ان محل ذلك عند توقف اثبات الرؤیة والافلا ۶ (ش) طحاوی نے فرمایا : ظاہر یہی ہے کہ اس کی ضرورت اس وقت ہے جب رؤیتِ چاند کا اثبات ان پر موقوف ہو ورنہ ضروری نہیں (ش) (ت)

(م) نمبر ۷ : جہاں ریاستیں اسلامی ہیں ان بلاد میں جو عالم دین سنّی المذہب سب سے زیادہ علمِ فقہ رکھتا ہو وہ بحکمِ شرع سردارِ مسلمانان ہے، مسلمانوں پر فرض ہے کہ اپنی دینی باتوں میں اُسی

کی طرف رجوع کریں اور اُس کے فتووں پر عمل کریں، تو چاند دیکھنے پر بھی واجب ہے کہ اُس شب اُس کے حضور ہو کر ادائے شہادت کرے۔

۱ درِ مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۲۸ ۲ ردالمحتار کتاب الصوم دار احیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۹۱ ۳ درِ مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۲۸ ۴ ردالمحتار کتاب الصوم دار احیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۹۱ ۵ طحطاوی علی مراقی الفلاح کتاب الصوم نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳۵۸ ۶ ردالمحتار کتاب الصوم دار احیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۹۱

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

(Sh) Number 7: Allama Abdul Ghani bin Ismail Nabulsi (may Allah sanctify his secret) states in *Hadiqa al-Nadiyya Sharh al-Tariqa al-Muhammadiyya*:

"And in *Al-Itabi*: When an era is devoid of a competent sultan, then affairs are entrusted to the scholars, and it is obligatory upon the Ummah to refer to them in that time." - (T)

In the same [source]: "The most knowledgeable among them is to be followed. If they are equal in knowledge, then cast lots among them." - (T)

Note: Nowadays, even in Islamic states, judges and officials are often unlearned; therefore, the religious scholar takes precedence over them as well. And at the time of conflicting fatwas, acting upon the scholar's verdict is obligatory.

Story: In the time of Imam al-Haramayn Abu al-Ma'ali (mercy of Allah be upon him), testimonies were presented to the contemporary king regarding the crescent of the 29th. By the sultan's order, it was announced that tomorrow is Eid. This news reached Imam al-Haramayn. The testimonies were not acceptable. By the Imam's order, a second announcement was immediately made that by the order of Imam Abu al-Ma'ali, tomorrow is a fast. The next morning, the entire city woke up fasting. Jealous people reported this to the king in an exaggerated manner, saying that if the Imam wished, he could seize the kingdom. "Observe, his order was obeyed and the sultan's order was disregarded." The king, enraged, sent mace-bearers to bring him just as he was sitting. The Imam was wearing a cloak; he appeared in the court just like that. The royal anger doubled because it was not courtly attire. When questioned, he said: "Obeying the authorities (Ulul Amr) is mandatory. The order was to come as I was sitting, so I came just as I was sitting. As for the contrary announcement, what was the reason?" He replied: "The administration of the world is entrusted to you, and the administration of religion pertains to us." Divine awe overcame the king. He saw him off with full honor and punished the slanderers.

Note: The knowledge of religion is jurisprudence (Fiqh) and Prophetic traditions (Hadith); those who know logic and philosophy are not scholars. These matters pertain to Fiqh. So, the one who is more advanced in Fiqh is the greater religious scholar, even if the other has more involvement with Hadith and Exegesis (Tafsir). Furthermore, he would not be a religious scholar unless he is of the Sunni creed; for one with corrupt beliefs is trapped in 'compounded ignorance' (*jahl-e-murakkab*),

which is a thousand times worse than 'simple ignorance' (*jahl-e-baseet*), especially the non-conformists (*Ghayr Muqallidin*) who...

---

1 Al-Hadiqa al-Nadiyya, Third Category on Recommended Actions, Maktaba Nooria Razavia, Faisalabad 1 / 351 2 Al-Hadiqa al-Nadiyya, Third Category on Recommended Actions, Maktaba Nooria Razavia, Faisalabad 1 / 351

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

(श) नंबर 7: अल्लामा अब्दुल ग़नी बिन इस्माइल नाबुलसी (क़ुद्दिस सिर्रहु) 'हदीक़ा नदिय्या शरह तरीक़ा मोहम्मदिया' में फ़रमाते हैं:

"अताबी में है कि जब युग ऐसे बादशाह से ख़ाली हो जो सामर्थ्यवान हो, तो उस समय के मामले उलमा (विद्वानों) के सुपुर्द होंगे और उम्मत पर लाज़िम है कि उस समय वे उलमा की तरफ़ रुजू करें (उनसे मार्गदर्शन लें)।" - (त)

इसी में है: "विद्वानों में जो सबसे अधिक ज्ञानी होगा, लोग उसका अनुसरण करें। यदि वे ज्ञान में बराबर हों, तो उनके बीच क़ुर्रा (लाटरी) डाल लें।" - (त)

तम्बीह (चेतावनी): आजकल इस्लामी राज्यों में भी क़ाज़ी और हाकिम अक्सर अनपढ़ होते हैं, तो दीन का विद्वान उन पर भी प्रधान है। और फ़तवे में मतभेद के समय विद्वान के फ़तवे पर अमल करना ही वाजिब है।

हिकायत (कहानी): इमाम अल-हरमैन अबू अल-मआली (रहमतुल्लाहि अलैहि) के ज़माने में समय के बादशाह के यहाँ 29 तारीख़ के चाँद पर गवाहियाँ दी गईं। सुल्तान के हुक्म से ऐलान हुआ कि कल ईद है। यह ख़बर इमाम अल-हरमैन को पहुँची। गवाहियाँ स्वीकार्य नहीं थीं। इमाम के हुक्म से तुरंत दूसरा ऐलान हुआ कि इमाम अबू अल-मआली के हुक्म से कल रोज़ा है। सुबह पूरा शहर रोज़ेदार उठा। ईर्ष्यालु लोगों ने इस ख़बर को बढ़ा-चढ़ाकर बादशाह तक पहुँचाया कि अगर इमाम चाहें तो सल्तनत छीन लें। देखो, उन्हीं का हुक्म माना गया और सुल्तान के हुक्म की कोई परवाह नहीं हुई। बादशाह ने क्रोधित होकर चोबदार (रक्षक) भेजे कि वे जैसे बैठे हैं वैसे ही आ जाएँ। इमाम एक जुब्बा पहने हुए थे, वैसे ही दरबार में रौनक अफ़रोज़ हुए। शाही ग़ुस्सा और बढ़ गया क्योंकि लिबास दरबारी नहीं था। सवाल किया गया, तो फ़रमाया: 'उलुल अम्र' (अधिकारियों) की आज्ञा मानना वाजिब है। हुक्म था जैसे बैठे हैं आएँ मैं वैसे ही बैठा था चला आया। रहा विरोध में ऐलान का कारण? फ़रमाया: दुनिया का इंतज़ाम तुम्हारे सुपुर्द है और दीन का इंतज़ाम हमारे मुताल्लिक़ (संबंधित) है। बादशाह पर अल्लाह की हैबत तारी हो गई। पूरे सम्मान के साथ विदा किया और बुराई करने वालों को सज़ा दी।

तम्बीह: दीन का इल्म (ज्ञान) फ़िक़्ह और हदीस है, तर्क और दर्शन (मंतिक़ ओ फ़लसफ़ा) जानने वाले विद्वान नहीं हैं। ये मामले फ़िक़्ह से संबंधित हैं। तो जो फ़िक़्ह में अधिक है, वही बड़ा विद्वान है,

भले ही दूसरा हदीस और तफ़सीर में अधिक रुचि रखता हो। फिर भी वह दीन का विद्वान नहीं होगा बशर्ते कि वह सुन्नी संप्रदाय का हो; क्योंकि भ्रष्ट अक़ीदे (विश्वास) वाला 'जहले मुरक्कब' (जटिल अज्ञानता) में फंसा होता है जो 'जहले बसीत' (साधारण अज्ञानता) से हज़ार गुना बुरा है, विशेष रूप से ग़ैर-मुक़ल्लिद जो...

---

1 अल-हदीक़ा अल-नदिय्या, तीसरा प्रकार, मकतबा नूरिया रज़विया, फ़ैसलाबाद 1 / 351 2 अल-हदीक़ा अल-नदिय्या, तीसरा प्रकार, मकतबा नूरिया रज़विया, फ़ैसलाबाद 1 / 351

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

(ش) نمبر ۷: علامہ عبدالغنی بن اسماعیل نابلسی قدس سرہ حدیقہ ندیہ شرح طریقہ محمدیہ میں فرماتے ہیں:

وفی العتابی اذا خلا الزمان من سلطان ذی کفایۃ فالامور مؤکلۃ الی العلماء ویلزم الامۃ الرجوع الیھم- 1 عتابی میں ہے کہ جب دور ایسے بادشاہ سے خالی ہو جو صاحب قدرت ہو تو اس وقت امور علماء کے سپرد ہوں گے اور امت پر لازم ہے کہ اس وقت وہ علماء کی طرف رجوع کرے۔ (ت)

اسی میں ہے: المتبع اعلمھم فان استووا اقرع بینھم- 2 علماء میں جو سب سے زیادہ صاحب علم ہوگا لوگ اس کی اتباع کریں، اگر علم میں برابر ہوں تو ان میں قرعہ ڈال لیں۔ (ت)

تنبیہ: آج کل اسلامی ریاستوں میں بھی قضاۃ وحکام اکثر بے علم ہوتے ہیں، تو عالم دین ان پر بھی مقدم۔ اور وقتِ اختلافِ فتوٰی عالم پر ہی عمل واجب۔

حکایت: امام الحرمین ابوالمعالی رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ کے زمانے میں بادشاہ وقت کے یہاں ۲۹ کے ہلال پر گواہیاں گزریں۔ بحکم سلطان اعلان ہوا کہ کل عید ہے، یہ خبر امام الحرمین کو پہنچی۔ گواہیاں قابلِ قبول نہ تھیں، امام کے حکم سے معاً دوسرا اعلان ہوا کہ بحکم امام ابوالمعالی کل روزہ ہے۔ صبح کو تمام شہر روزہ دار اٹھا۔ حاسدوں نے یہ خبر خوب رنگ کر بادشاہ تک پہنچائی کہ اگر امام چاہیں تو سلطنت چھین لیں۔ ملاحظہ ہو کہ انہیں کا حکم مانا گیا اور حکم سلطان کی کچھ پروانہ ہوئی۔ بادشاہ نے برافروختہ ہو کر چوب دار بھیجے کہ جیسے بیٹھے ہیں تشریف لائیں۔ امام ایک جبہ پہنے تھے، ویسے ہی دربار میں رونق افروز ہوئے، اشتعال شاہی دوبالا ہوا کہ لباس درباری نہ تھا سوال کیا، فرمایا، اطاعت اولوالامر واجب ہے۔ حکم تھا جیسے بیٹھے ہیں آئیں، میں یوں ہی بیٹھا

تھا چلا آیا، رہا اعلان خلاف پر کیا باعث تھا؟ فرمایا: انتظامِ دنیا تمہارے سپرد ہے اور انتظامِ دین ہمارے متعلق۔ بادشاہ پر ہیبت حق طاری ہوئی۔ باعزاز تمام رخصت کیا اور بدگوئیوں کو سزا دی۔

تنبیہ: علم دین فقہ وحدیث ہے منطق و فلسفہ کے جاننے والے علماء نہیں، یہ امور متعلق بہ فقہ ہیں، تو جو فقہ میں زیادہ ہے وہی بڑا عالم دین ہے، اگرچہ دوسرا حدیث و تفسیر سے زیادہ اشتعال رکھتا ہو پھر بھی عالمِ دین نہ ہوگا مگر سنی المذہب کہ فاسد العقیدہ جہلِ مرکب میں گرفتار جو جہلِ بسیط سے ہزار درجہ بدتر، خصوصاً غیر مقلدین کہ

---

1 الحدیقۃ الندیۃ النوع الثالث فی المندوب الیھا مکتبہ نوریہ رضویہ فیصل آباد ۱ / ۳۵۱ 2 الحدیقۃ الندیۃ النوع الثالث فی المندوب الیھا مکتبہ نوریہ رضویہ فیصل آباد ۱ / ۳۵۱

Fatawa Razawiyyah, Volume 10

Trusting them in jurisprudence (Fiqh) and legal rulings (Fatwa) is like appointing a thief as a guard.

(M) Number 8: Where there is no religious scholar (Alim) present, testimony should be given in a gathering of Muslims, such as in the congregational (Jamia) mosque, etc.

(Sh) Number 8: [Arabic Text]: "And if a ruler is not found, he should testify in the mosque." | [Urdu Text]: If a ruler is not present, he should give testimony in the mosque (Jami' al-Rumuz).

(Ja) 1 Jami' al-Rumuz: [Arabic Text]: I say: The mosque was specifically designated for it as a place of gathering. | [Urdu Text]: I say: The mosque was specifically mentioned because it is a place of assembly and [Arabic Text]: the intent is public announcement so that it occurs wherever | [Urdu Text]: the purpose is announcement so that it happens in such a place where people [Arabic Text]: people are found gathered, as is not hidden. | [Urdu Text]: gather, as is not hidden (T).

(M) Number 9: He who delays giving testimony without a valid excuse and then later says "I had seen [the moon]," his testimony will be rejected.

(Sh) Number 9: An example of an excuse is, for instance, that he was not in the city, saw the moon in the villages, and has now just arrived from there; then his testimony will be heard. The meaning of delay is not to keep it pending after the time of need. For the sighting of the crescents of Ramadan and Eid al-Fitr, this is on the very first night.

[Table/Column Section] [Arabic Text]: They testified at the end of Ramadan regarding the sighting of its crescent before | [Urdu Text]: Witnesses testified on the last day of Ramadan that they had seen the moon [Arabic Text]: their fasting began by one day. If they were in the city, it is rejected for their abandonment | [Urdu Text]: for the city's people a day before their fasting started. If those witnesses [Arabic Text]: of Hisbah (civic duty), and if they came from outside, it is accepted. From Al-Fath. | [Urdu Text]: are residents of the city, the testimony will be rejected because they 2 (Sh) | [Urdu Text]: delayed in the testimony, and if they have come from outside the city, then their | [Urdu Text]: testimony will be accepted; this is cited from Al-Fath in Shami. (T)

(H) Note 9: [Arabic Text]: His saying "at the end of Ramadan". I say: Whoever | [Urdu Text]: His saying "at the end of Ramadan". I say: Whoever has well [Arabic Text]: has fully comprehended the evidence knows that "the end" is not a restriction, rather if | [Urdu Text]: understood the evidence, it will be clear to him that the word "the end" is not a restriction; rather, if [Arabic Text]: they testified the next day after the people awoke not fasting, | [Urdu Text]: they gave testimony the day after the people woke up without [Arabic Text]: "we saw the crescent last night," and they were in the city without an excuse, | [Urdu Text]: fasting, saying "we saw the crescent last night," and they were [Arabic Text]: they became transgressors (fasiq) and their testimony was rejected for their abandonment of Hisbah. And indeed | [Urdu Text]: city residents and there was no excuse, they will be declared transgressors (fasiq) [Arabic Text]: you have known this from the text of the scholars that testimony is from... | [Urdu Text]: and their testimony will be rejected because they violated their responsibility.

1. Jami' al-Rumuz, Kitab al-Sawm, Maktabat al-Islamiyyah, Gunbad Qamus Iran, 1/354
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/91

फ़तावा रज़विया, खंड 10

फ़िक़्ह और फ़तवे में उन पर भरोसा करना ऐसा ही है जैसे चोर को पहरेदार बनाना।

(म) नंबर 8: जहाँ कोई विद्वान (आलिम) न हो, वहाँ मुसलमानों के समूह में, जैसे जामा मस्जिद आदि में गवाही दें।

(श) नंबर 8: [अरबी]: "यदि शासक मौजूद न हो, तो वह मस्जिद में गवाही दे।" | [उर्दू]: अगर शासक मौजूद न हो तो वह मस्जिद में गवाही दे (जामि-उर-रुमूज़)

(जा) 1 जामि-उर-रुमूज़: [अरबी]: मैंने कहा: विशेष रूप से मस्जिद का उल्लेख इसलिए किया गया है क्योंकि वह सभा का स्थान है। | [उर्दू]: मैंने कहा: खास मस्जिद का ज़िक्र इसलिए कि वह सभा (मजमा) की जगह है और [अरबी]: उद्देश्य सार्वजनिक घोषणा है ताकि यह वहाँ हो जहाँ | [उर्दू]: मक़सद एलान होता है ताकि एलान ऐसी जगह हो जाए जहाँ लोग [अरबी]: लोग एकत्रित हों, जैसा कि स्पष्ट है। | [उर्दू]: जमा हों, जैसा कि छिपा नहीं है (त)

(म) नंबर 9: जो बिना किसी बहाने के गवाही देने में देरी करेगा और फिर कहेगा कि "मैंने देखा था", उसकी गवाही खारिज कर दी जाएगी।

(श) नंबर 9: बहाने का उदाहरण यह है कि मान लीजिए वह शहर में नहीं था, देहात में चाँद देखा था और अब वहाँ से आया है, तो उसकी गवाही सुन ली जाएगी, और देरी से वही मुराद कि ज़रूरत के समय के बाद उसे उठा कर न रखे। रमज़ान और ईद-उल-फ़ित्र के चाँद के मामले में यह पहली ही रात है।

[सारणी अनुभाग] [अरबी]: उन्होंने रमज़ान के अंत में चाँद देखने की गवाही दी | [उर्दू]: गवाहों ने रमज़ान के आखिरी दिन गवाही दी कि उन्होंने शहर के लोगों के[अरबी]: रोज़ा शुरू करने से एक दिन पहले। यदि वे शहर में थे, तो 'हिस्बा' (कर्तव्य) छोड़ने के कारण | [उर्दू]: रोज़ा शुरू करने से एक दिन पहले चाँद देखा था। अगर वे गवाह [अरबी]: इसे खारिज कर दिया गया, और यदि वे बाहर से आए हैं, तो इसे स्वीकार किया गया। अल-फ़तह से। | [उर्दू]: शहर के रहने वाले हों तो गवाही खारिज कर दी जाएगी क्योंकि उन्होंने 2 (श) | [उर्दू]: गवाही में देरी की है और अगर वे शहर के बाहर से आए हों तो उनकी | [उर्दू]: गवाही स्वीकार की जाएगी, यह फ़तह से शामी में है। (त)

(ह) नोट 9: [अरबी]: उनका कहना "रमज़ान के अंत में"। मैं कहता हूँ: जिसने | [उर्दू]: उनका कहना "रमज़ान के अंत में"। मैं कहता हूँ: जिस शख़्स ने [अरबी]: प्रमाण को अच्छी तरह समझ लिया है, उसे ज्ञात होगा कि "अंत" कोई बंधन नहीं है, बल्कि अगर | [उर्दू]: दलील को खूब जान लिया है उस पर स्पष्ट होगा कि "अख़ीर" का शब्द शर्त नहीं बल्कि अगर [अरबी]: उन्होंने उस दिन के अगले दिन गवाही दी जब लोग बिना रोज़े के सुबह उठे, | [उर्दू]: उन्होंने उस दिन से दूसरे दिन गवाही दी जब लोग सुबह बिना रोज़े के[अरबी]: कि "हमने कल रात चाँद देखा था" और वे बिना किसी बहाने के शहर में थे, | [उर्दू]: उठे, उन्होंने कहा हमने कल रात चाँद देखा और वे [अरबी]: तो वे फ़ासिक़ हो गए और उनकी गवाही 'हिस्बा' छोड़ने के कारण खारिज कर दी गई। और वास्तव में | [उर्दू]: शहर के रहने वाले थे और कोई बहाना भी न हो तो वे फ़ासिक़ करार पाएंगे [अरबी]: आपने विद्वानों के ग्रंथों से जाना है कि गवाही ... से है। | [उर्दू]: और उनकी गवाही खारिज कर दी जाएगी क्योंकि उन्होंने ज़िम्मेदारी का उल्लंघन किया।

1. जामि-उर-रुमूज़, किताब-उस-सौम, मकतबा इस्लामिया, गुंबद-ए-कामूस ईरान, 1/354
2. रद-उल-मुह्तार, किताब-उस-सौम, दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 2/91

पृष्ठ 461/836

فقه و فتوٰی میں ان پر اعتماد تو ایسا ہے جیسے چور کو پاسبان بنانا۔ (م) نمبر ۸: جہاں کوئی عالم بھی نہ ہو مجمع مسلمین مثلاً مسجد جامع وغیرہ میں گواہی دیں۔ (ش) نمبر ۸: وان لم یوجد حاکم یشهد فی المسجد | اگر حاکم موجود نہ ہو تو وہ مسجد میں گواہی دے (جامع الرموز) (جا) ۱ جامع الرموز قلت: انما خص المسجد له بمحل | قلت: خاص مسجد کا ذکر اس لیے کہ وہ محل اجتماع ہے اور الاجتماع و انما المقصود الاعلان لیحصل حیثما | مقصود اعلان ہوتا ہے تاکہ اعلان ایسی جگہ ہو جائے جہاں لوگ وجد وامجتمعین کما لا یخفی۔ | جمع ہوں، جیسا کہ مخفی نہیں (ت) (م) نمبر ۹: جو بلا عذر گواہی دینے میں تاخیر کرے گا پھر کہے گا میں نے دیکھا تھا اس کی گواہی مردود ہو گی۔ (ش) نمبر ۹: عذر کی صورت یہ کہ مثلاً شہر میں نہ تھا، دیہات میں دیکھا، وہاں سے اب آیا ہے، تو اس کی گواہی سن لیں گے، اور تاخیر سے وہی مراد کہ وقت حاجت کے بعد پھر نہ اٹھارکھے ہلال رمضان و عید الفطر میں پہلی ہی شب ہے۔ شهد وافی آخر رمضان عه برؤیة هلاله قبل | گواہوں نے رمضان کے آخری دن گواہی دی کہ انہوں نے اہل شہر صومهم بیوم ان کانوا في المصر ردّت لترکهم | کے روزہ شروع کرنے سے ایک دن پہلے چاند دیکھا تھا، اگر وہ گواہ الحسبة وان جاء وامن خارج قبلت من الفتح | شہر کے رہنے والے ہوں تو گواہی مسترد ہو گی کیونکہ انہوں نے ۲ (ش) | گواہی میں تاخیر کی ہے اور اگر وہ خارج شہر سے آئے ہوں تو ان کی | گواہی مقبول ہوگی، یہ فتح سے شامی میں ہے۔ (ت) (ح) عہ نمبر ۹: قوله في أخر رمضان، اقول من | قولہ فی آخر رمضان ۔ اقول : جس شخص نے دلیل کو خوب احاط بالدلیل علم ان الاخر لیس بقید بل لو | جان لیا ہے اس پر واضح ہوگا کہ "الاخر" کا لفظ قید نہیں بلکہ اگر شهد وامن غد بعد ما اصبح الناس مفطرین | انہوں نے اس دن سے دوسرے دن گواہی دی جب لوگ صبح بے انار أینا

الهلال البارحة وكانوا فی المصر ولا عذر | روزہ اٹھے، انہوں نے کہا ہم نے گزشتہ رات چاند دیکھا اور وہ شہر فسقوا وردت شہادتهم لترکهم الحسبة وقد | کے رہنے والے تھے اور عذر بھی کوئی نہ ہو تو وہ فاسق قرار پائیں علمت ذلك من نص العلماء ان الشهادة من | گے ان کی گواہی مسترد ہو گی کیونکہ انہوں نے ذمہ داری کی خلاف | ورزی

۱ جامع الرموز کتاب الصوم مکتبہ الاسلامیہ گنبد قاموس ایران ۳۵۴/۱ ۲ رد المحتار کتاب الصوم دار احیاء التراث العربی بیروت ۹۱/۲ Page 461 of 836

Fatawa Rizvia, Volume 10

[Arabic Box Text]: It is an individual obligation (fard al-ayn) and it is mandatory on the night of sighting, to the extent that a secluded woman or a married woman may go out without the permission of her husband or master [to testify] (Summary).

[Urdu Box Text]: ...as you have also known that scholars have clarified that testifying is an individual obligation and it is necessary to give testimony on the night of moon sighting, such that it is mandatory for secluded and married women to go out (to see the moon) without the permission of their husbands or masters. (T)

(M) No. 10: When the moon is sighted and the witness's testimony is not sufficient, immediately show it to such Muslims as possible whose testimony would be sufficient. Anyway, showing it to more people is better.

(Sh) No. 10: I say: If the horizon is not clear, clouds suddenly move and someone sees the moon, but they are not in a position where their testimony is acceptable—whether they are a sinner (fasiq), unknown (mastur), alone, or if there are only women or slaves—and for the Eid crescents, their sighting won't suffice. It is possible clouds might return. Therefore, with great haste, show it to such reliable Muslims whose testimonies would suffice. Allah Almighty says, "And cooperate in righteousness and piety" (Al-Quran 5:2). In this case, if capable, it should be mandatory to show it to reliable witnesses. If not, and their own testimony is enough, showing it to others is still good because a multitude of witnesses is better anyway. It might be that they consider their own testimony sufficient, but the religious authority (Hakim-e-Shar'a) does not trust it for some reason, necessitating more witnesses. All this I have mentioned as a matter of legal reasoning (tafaqquh) and I hope it is good, God willing. (The servant has said all this as an inference and it is hoped it will be correct, God willing. T)

(M) No. 11: On the evening when moon sighting is probable, until there is a decree from a religious authority or a fatwa from a scholar, never ever fire guns or set off noisy fireworks even for worldly purposes.

(Sh) No. 11: The established custom is that in an Islamic state, after verification of the moon sighting, cannons are fired, and in cities, guns or rockets are let off. Now, if the religious proof is established and the religious authority has given the order, then this action is commendable because it is done with a good intention. The prohibition of fireworks was due to wasting money, which doesn't apply here as it serves a

commendable purpose. Otherwise, there are two scenarios: one is doing this for a reason other than announcing the moon, like a son being born to a friend and firing guns, or just wasting money while idle by letting off rockets...

1. Maraqi al-Falah with Hashiyah al-Tahtawi, chapter on what establishes the crescent, Nur Muhammad Karkhana Kutub Karachi, p. 358; Radd al-Muhtar, Book of Fasting, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut 91/2.
2. Al-Quran 5/2

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम (खंड 10)

[अरबी बॉक्स टेक्स्ट]: यह व्यक्तिगत दायित्व (फ़र्ज़ अल-ऐन) है और यह देखने की रात में अनिवार्य है, यहाँ तक कि एक पर्दानशीन या विवाहित महिला अपने पति या स्वामी की अनुमति के बिना [गवाही देने के लिए] बाहर निकल सकती है। (संक्षेप)

[उर्दू बॉक्स टेक्स्ट]: ...जैसा कि आप यह भी जान चुके हैं कि उलेमा ने स्पष्ट किया है कि गवाही देना फ़र्ज़-ए-ऐन है और यह चाँद देखने वाली रात में ही गवाही देना लाज़िम है, यहाँ तक कि पर्दानशीन और विवाहित महिलाओं पर बिना इजाज़त शौहर और मौला के(चाँ› देखने के लिए निकलना लाज़िम है)। (त)

(म) नंबर १०: जब चाँद पर नज़र पड़े और देखने वालों की गवाही काफ़ी न हो, तो तुरंत जहाँ तक हो सके ऐसे मुसलमानों को दिखा दें, जिनकी गवाही काफ़ी हो, और वैसे भी दिखा देना चाहिए कि अधिकता बहरहाल बेहतर है।

(श) नंबर १०: मैं कहता हूँ: अगर आसमान साफ़ नहीं है, अचानक बादल हटा और उसे चाँद नज़र आया, अब वह इस क़ाबिल नहीं कि उसकी गवाही सुनी जाए, चाहे वह फ़ासिक़ हो या मस्तूर या अकेला या सिर्फ़ औरतें या ग़ुलाम हों और ईदैन (दोनों ईद) के चाँद के लिए इन लोगों का देखना काफ़ी न होगा। और अचरज नहीं कि बादल फिर आ जाए। इसलिए अत्यंत शीघ्रता करके ऐसे विश्वसनीय मुसलमानों को दिखा दे जिनकी गवाहियाँ काफ़ी हो जाएँ। अल्लाह तआला का फ़रमान है, "और नेकी और तक़वा (परहेज़गारी) पर एक दूसरे के साथ सहयोग करो।" (अल-क़ुरआन ५/२)। इस स्थिति में तो सामर्थ्य होने पर विश्वसनीय लोगों को दिखाना अनिवार्य होना चाहिए, और अगर ऐसा नहीं बल्कि उनकी अपनी गवाही काफ़ी है, फिर भी दूसरों को दिखाना अच्छा ही है क्योंकि गवाहों की अधिकता बहरहाल बेहतर है। क्या पता वे अपने नज़दीक अपनी गवाही काफ़ी समझें और हाकिम-ए-शरअ (धार्मिक अधिकारी) को किसी वजह से एतबार न आए तो और गवाहों की ज़रूरत पड़े। यह सब जो मैंने कहा है, समझ-बूझ (तफ़क़्क़ुह) के तौर पर कहा है और उम्मीद है कि इंशाअल्लाह यह बेहतर होगा। (बंदे ने यह सब कुछ निष्कर्ष के तौर पर कहा है और उम्मीद है कि इंशाअल्लाह यह सही होगा। त)

(म) नंबर ११: जिस शाम चाँद होने की संभावना हो, जब तक हाकिम-ए-शरअ का हुक्म या आलिम-ए-दीन का फ़तवा न हो, हरगिज़ किसी वजह से बंदूकें या आवाज़ वाली आतिशबाज़ी अपने दुनियावी कामों के लिए भी हरगिज़ न करें।

(श) नंबर ११: प्रथा यह तय पाई है कि जहाँ इस्लामी राज्य है, चाँद की पुष्टि के बाद तोपें दागी जाती हैं और शहरों में बंदूकें या हवाईयाँ (रॉकेट) छोड़ी जाती हैं। अब अगर शरीअत के अनुसार प्रमाण मिल गया और हाकिम-ए-शरअ ने भी हुक्म दे दिया, तो यह काम सराहनीय (मुस्तहसन) है क्योंकि यह एक अच्छी नीयत से किया जाता है। आतिशबाज़ी का नाजायज़ होना फ़ुज़ूलख़र्ची के कारण था, जो यहाँ लागू नहीं होता क्योंकि यहाँ एक नेक मक़सद है। वरना दो सूरतें हैं: एक यह कि चाँद के ऐलान के अलावा किसी और वजह से यह काम करें, जैसे दोस्त के घर बेटा पैदा हुआ और बंदूकें चलाईं, या खाली बैठे पैसे ज़ाया (नष्ट) करने के लिए हवाईयाँ छोड़ीं...

1. मराक़ी अल-फ़लाह मा ह़ाशिया अत-तह़तावी... पृ. ३५८; रद्द अल-मुह़तार... बेरूत ९१/२।
2. अल-क़ुरआन ५/२

पृष्ठ ८३६ में से ४६२

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

[عربی متن]: فروض العین وانها تجب فی لیلة الرؤیة حتی تخرج المخدرة والمنکوحة بدون اذن زوجها ومولاها ۱۲ (ملخصاً)

[اردو متن]: کی ہے اور آپ یہ بھی جان چکے کہ علماء نے تصریح کی ہے کہ شہادت فرض عین ہے اور یہ چاند دیکھنے والی رات میں ہی گواہی دینا لازم ہے حتی کہ پردہ نشین اور منکوحہ خواتین پر بغیر اجازت خاوند اور مولیٰ کے (چاند دیکھنے کے لیے نکلنا لازم ہے)۔ (ت)

(م) نمبر ۱۰: جب چاند پر نظر پڑے اور دیکھنے والوں کی گواہی کفایت نہ کرتی ہو، فوراً جہاں تک بن پڑے ایسے مسلمانوں کو دکھا دیں، جن کی گواہی کافی ہو، اور ویسے بھی دکھا دینا چاہئے کہ کثرت بہر حال بہتر ہے۔

(ش) نمبر ۱۰: اقول : اگر مطلع صاف نہیں، دفعتاً ابر ہٹا اور اسے چاند نظر پڑا، اب یہ اس قابل نہیں کہ اس کی گواہی مسموع ہو، خواہ فاسق ہے یا مستور یا اکیلا یا صرف عورتیں یا غلام ہیں اور ہلال ہلال عیدین تو ان لوگوں کا دیکھنا کافی نہ ہوگا۔ اور عجب نہیں کہ ابر پھر آجائے۔ لہذا نہایت تعجیل کرکے ایسے معتمد مسلمانوں کو دکھا دے جن کی گواہیاں کفایت کر جائیں قال اللہ تعالیٰ وَتَعَاوَنُوا عَلَی الْبِرِّ وَ التَّقْوٰی ۲ (اللہ تعالیٰ کا فرمان مبارک ہے۔ نیکی اور تقویٰ پر ایک دوسرے کے ساتھ تعاون کروت) اس صورت میں تو بشرط قدرت معتمدین کو دکھانا لازم ہونا چاہئے، اور اگر ایسا نہیں بلکہ خود ان کی گواہی بس ہے، تاہم اوروں کا دکھانا اچھا ہی ہے کہ کثرت شہود بہر حال بہتر ہے عجب کیا کہ یہ اپنے نزدیک اپنی گواہی کافی سمجھیں اور حاکم شرع کو کسی وجہ سے

اعتبار نہ آئے تو اور شہود کی حاجت پڑے ھذا کلہ ما ذکر تہ تفقھا و ارجو ان یکون حسنا ان شاء اللہ تعالیٰ (بندہ نے یہ تمام بطور استنباط کہا ہے اور امید ہے یہ ان شاء اللہ درست ہوگا ت)

(م) نمبر ۱۱: جس شام احتمال ہلال ہو جب تک حکم حاکم شرعی فتوٰی عالم دین نہ ہو ہرگز ہرگز کسی وجہ سے بندوقیں یا آواز کی آتش بازی اپنے دنیوی کاموں کے لیے بھی ہرگز نہ کریں۔

(ش) نمبر ۱۱: اصطلاح یوں ٹھہری ہوئی ہے کہ جہاں اسلامی ریاست ہے بعد تحقیق ہلال توپ کے فیر ہوتے ہیں اور شہروں میں بندوقیں یا ہوائیاں وغیرہ چھوڑتے ہیں، اب اگر ثبوت شرع ہو گیا اور حاکم شرع نے بھی حکم دے دیا جب تو یہ فعل مستحسن ہے کہ ایک نیت صالحہ سے کیا جاتا ہے اور آتشبازی کا ناجائز ہونا بوجہ اضاعت مال تھا، یہاں جاری نہیں کہ بعد غرض محمود کے اضاعت کہاں۔ ورنہ دو صورتیں ہیں: ایک یہ کہ اعلان ہلال کے سوا اور کسی وجہ سے یہ فعل کریں، مثلاً دوست کے گھر بیٹا پیدا ہوا، بندوقیں سر کریں، یا خالی بیٹھے مال ضائع کرنا چاہا، ہوائیاں،

1 مراقی الفلاح مع حاشیۃ الطحطاوی فصل فیما یثبت بہ الہلال نور محمد کارخانہ کتب کراچی ص ۳۵۸، رد المحتار کتاب الصوم داراحیاء التراث العربی بیروت ۹۱/۲ 2 القرآن ۲/۵

Fatawa Razawiya, Volume 10

...stop letting off rockets and firecrackers. This is prohibited as it will deceive Muslims. Secondly, the ignorant ones who, following their own ignorant rulings, started setting off firecrackers upon considering the news of moon sighting as correct according to their own estimation, without the command of a ruler or a scholar's fatwa. This is even more impermissible and forbidden, as it is an act of audacity against the noble station of the Sharia.

| The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "They gave fatwas without knowledge, so they went astray and led others astray." And from him (peace and blessings of Allah be upon him): "The most daring among you in giving fatwas is the most daring in entering the Fire." All this is also a matter of religious understanding, and I do not think anyone would disagree with it. And Allah is the Guide to what is correct. (T) | The decree of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) is: "Those who give fatwas without knowledge will themselves go astray and will lead others astray." It is also a blessed decree of the Noble Messenger (peace and blessings of Allah be upon him): "Whoever among you shows the most audacity in giving fatwas will be the most audacious in entering Hell." All this is by way of inference, and I believe that no one will oppose it. Allah alone is the Guide towards the right way. (T) |

(M) Number 12: Do not point towards the crescent moon after seeing it.

| It is disliked (makruh) to point at the crescent moon upon seeing it because it is an act of the people of Jahiliyyah (pre-Islamic ignorance). (Fath al-Qadir) | (Sh) Number 12: Because it is from the acts of ignorance. Pointing towards the moon upon seeing it is disliked because it is an act of the people of ignorance. (Fath al-Qadir) (T) |

(M) Number 13: Turn the face away after seeing the crescent moon.

| Indeed, the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), when he saw the crescent moon, would turn his face away from it. Abu Dawood narrated it from Qatadah as a 'mursal' report, and there are no supporting narrations, but its chain of transmission is trustworthy. | (Sh) Number 13: I say it is mentioned in the Hadith: When the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) saw the new moon, he would turn his (blessed) face away from it. Abu Dawood narrated it from Hazrat Qatadah as a 'mursal' report, and it has no witnesses (supporting narrations), and its chain is reliable. (T) |

1 Sahih Muslim, Chapter on the Lifting of Knowledge, Qadimi Kutub Khana Karachi 2/340 2 Sunan al-Darimi, Chapter on Fatwa, Hadith 159, Anshar al-Sunnah Multan 1/53 3 Fath al-Qadir, Chapter on Moon Sighting, Nooria Razawiya Sukkur 2/243 4 Sunan Abi Dawood, Book of Etiquette, Chapter on What a Man Says When Seeing the Crescent, Aftab-e-Alam Press Lahore 2/339

फतावा रज़विया, जिल्द 10

...हवाइयां और तोडियां (पटाखे) छोड़ना बंद करें। यह मना है क्योंकि इसमें मुसलमानों को धोखा होगा। दूसरे यह कि अज्ञानियों ने, जिन्होंने अपने अज्ञानतापूर्ण मसलों के आधार पर, किसी हाकिम के हुक्म या आलिम के फतवे के बिना, अपने नज़दीक चाँद देखने की खबर को सही मानकर आतिशबाजी शुरू कर दी। और यह भी बहुत अधिक नाजायज़ और हराम है कि शरीयत के बुलंद मर्तबे पर जुर्रत है।

| अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: जिन्होंने बिना ज्ञान के फतवा दिया, वे स्वयं भी गुमराह हुए और उन्होंने दूसरों को भी गुमराह किया। और उनसे (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) रिवायत है: फतवा देने में तुम में से जो सबसे अधिक साहसी है, वह आग (जहन्नम) के लिए सबसे अधिक साहसी है। यह सब भी समझ (फिकह) के तौर पर है, और मुझे नहीं लगता कि कोई इसके विरुद्ध होगा। और अल्लाह ही सही मार्ग का मार्गदर्शक है। (त) | अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का फरमान है: जो बिना ज्ञान के फतवा देंगे, वे खुद भी गुमराह होंगे और दूसरों को भी गुमराह करेंगे। रसालतमआब (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का यह भी मुबारक फरमान है: तुम में से जो फतवा देने में जितना अधिक साहस करेगा, वह नरक में जाने में उतना ही साहसी होगा। यह सब भी निष्कर्ष के तौर पर है और मेरा मानना है कि कोई भी इसका विरोध नहीं करेगा। अल्लाह ही सही दिशा में मार्गदर्शन करने वाला है। (त) |

(म) नंबर 12: हिलाल (नया चाँद) देखकर उसकी ओर इशारा न करें।

| चाँद देखने पर उसकी ओर इशारा करना मकरूह (नापसंद) है क्योंकि यह अज्ञानता के काल के लोगों का कार्य है (फतह अल-क़दीर) | (श) नंबर 12: क्योंकि यह अज्ञानता के कार्यों में से है। चाँद देखने पर उसकी ओर इशारा करना मकरूह है क्योंकि यह अज्ञानता के लोगों का कार्य है (फतह अल-क़दीर) (त) |

(म) नंबर 13: हिलाल देखकर चेहरा फेर लें।

| वास्तव में पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जब नया चाँद देखते थे, तो अपना चेहरा उससे फेर लेते थे। इसे अबू दाऊद ने कतादा से मुर्सल के रूप में वर्णित किया है, और इसका कोई अन्य साक्षी (प्रमाण) नहीं है, लेकिन इसकी श्रृंखला (सनद) विश्वसनीय है। | (श) नंबर 13: मैं कहता हूँ हदीस में है: हुज़ूर सय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जब नया चाँद देखते, तो अपना (मुबारक)

चेहरा उसकी ओर से फेर लेते। इसे अबू दाऊद ने हजरत कतादा से मुर्सल के रूप में रिवायत किया है और इसका कोई गवाह नहीं है और इसकी सनद विश्वसनीय है। (त) |

1 सही मुस्लिम, बाब रफ़ अल-इल्म, पुरानी किताबों की दुकान कराची 340/2 2 सुनन अल-दारीमी, बाब अल-फतवा, हदीस 159, अनशर अल-सुन्ना मुल्तान 1/53 3 फतह अल-क़दीर, चाँद देखने का अध्याय, नूरैया रज़विया सुक्कुर 2/243 4 सुनन अबी दाऊद, किताब अल-अदब, अध्याय: एक व्यक्ति क्या कहे जब वह चाँद देखे, आफताब आलम प्रेस लाहौर 339/2

فتاوی رضویہ جلد دھم

ہوائیاں، توڑیاں چھوڑیں۔ یہ ممنوع ہے کہ اس میں مسلمانوں کو دھوکا ہوگا۔ دوسرے یہ کہ جاہلوں نے جو اپنے جاہلانہ مسئلوں سے بے حکم حاکم و فتوی عالم اپنے نزدیک رؤیت کی خبر ٹھیک جان کر پٹاخہ بازی شروع کردی۔ اور یہ بھی زیادہ ناجائز و حرام ہے کہ منصب رفیع شرع پر جرات ہے۔

| قال رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم افتوا بغیر علم فضلوا واضلوا۔[1] وعنہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم اجر کم علی الفتیا اجر کم علی النار۔[2] ھذا کلہ ایضا تفقھا، ولا اظن احدا یخالف فیہ۔ واللہ الھادی للصواب۔ | رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا فرمان ہے: جو بغیر علم کے فتویٰ دیں گے خود بھی گمراہ اور دوسروں کو بھی گمراہ کریں گے۔ رسالتمآب صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا یہ بھی فرمانِ مبارک ہے: تم میں سے جو فتویٰ دینے میں زیادہ جرات کرے گا وہ جہنم میں جانے میں زیادہ جرات مند ہوگا۔ یہ تمام بھی بطور استخراج ہے اور میں گمان کرتا ہوں کہ اس میں کوئی مخالفت نہیں کرے گا۔ اللہ ہی صواب کی طرف رہنمائی فرمانے والا ہے۔ (ت) |

(م) نمبر ۱۲: ہلال دیکھ کر اس کی طرف اشارہ نہ کریں۔

| تکرہ الاشارۃ الی الھلال عند رؤیتہ لانہ فعل اھل الجاھلیۃ (فتح القدیر)[3] | (ش) نمبر ۱۲: کہ افعال جاہلیت سے ہے، چاند دیکھنے پر اس کی طرف اشارہ کرنا مکروہ ہے کیونکہ یہ اہلِ جاہلیت کا عمل ہے (فتح القدیر) (ت) |

(م) نمبر ۱۳: ہلال دیکھ کر منہ پھیر لے۔

| ان النبي صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کان اذارأی الھلال صرف وجھہ عنہ۔[4] رواہ ابوداؤد عن قتادۃ مرسلا ولا شواھد وسندہ ثقات۔ | (ش) نمبر ۱۳: اقول حدیث میں ہے: حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم جب نیا چاند دیکھتے اپنا منہ (مبارک) اس کی طرف سے پھیر لیتے۔ اسے ابوداؤد نے حضرت قتادہ سے مرسلاً روایت کیا ہے اور اس کا شاہد کوئی نہیں اور اس کی سند ثقہ ہے (ت) |

1 صحیح مسلم باب رفع العلم قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۳۴۰ 2 سنن الدارمی باب الفتیا حدیث ۱۵۹ انشر السنتہ ملتان ۱/ ۵۳ 3 فتح القدیر فصل فی رؤیۃ الہلال، نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۲۴۳ 4 سنن ابی داؤد کتاب الادب باب ما یقول الرجل اذارای الہلال آفتاب عالم پریس لاہور ۲/۳۳۹

Perhaps the reason for this is that it is a matter of polytheism, as stated by al-Munawi in al-Taysir. (T) I say: Or that the disbelievers worshipped it, and in Sharia, one is taught to supplicate to Allah (Exalted be His Glory) upon seeing it. So, it became preferable to turn away [from their practice] so that resemblance to the disbelievers does not become necessary. Allah and His Messenger (may Allah bless him and grant him peace) know best. (M) No. 14: What is famous among the ignorant, that such-and-such moon should be seen on a sword or on such-and-such mirror. This is all ignorance and folly; rather, the supplications mentioned in the Hadith are sufficient to be recited. (Sh) No. 14: Many supplications for sighting the crescent moon are mentioned in the Hadith, some of which are recorded in 'Hisn al-Hasin'. (H) No. 14: The humble servant, may Allah forgive him, gathers all the Hadith supplications as far as they are currently in his sight, along with references to the sources, and success is from Allah:

Arabic Supplications	**Urdu Translation**
(M) Allah is the Greatest, Allah is the Greatest. Praise be to Allah. There is no power nor strength except by Allah. O Allah, I ask You for the good of this month, and I seek refuge in You from the evil of destiny and the evil of the Day of Gathering.	(M) Allah is the Greatest, Allah is the Greatest, Praise be to Allah. The power to turn away from evil and to do good is only through the enablement of Allah Almighty. O Allah! I ask You for good in this month and seek Your protection from the evil of destiny and the evil of the Day of Judgment.

Arabic Supplications

(At-Tabarani) from 'Ubada bin al-Samit: "Crescent of good and guidance, I believe in the One Who created you." (Abu Dawood) from Qatada as a Mursal report: "O Allah, I ask You for the good of this (3 times). O Allah, I ask You for the good of this month and the good of destiny, and I seek refuge in You from its evil (3 times)." (At-Tabarani) from Rafi' bin Khadij with a good chain: "O Allah!"

Urdu Translation

(At-Tabarani) narrated from Hazrat Ubada bin Samit (may Allah be pleased with him): "O crescent of good and guidance, I have faith in your Creator." (Abu Dawood) narrated as Mursal from Hazrat Qatada: "O Allah! I ask You for good in this (3 times). O Allah! I ask You for the good of this month and for the good of destiny, and I seek Your protection from its evil (3 times)." (At-Tabarani) narrated from Hazrat Rafi bin Khadij (may Allah be pleased with him) with a good chain: "O Allah!"

1. Al-Taysir, under the Hadith "When he saw the crescent moon", Maktaba al-Imam al-Shafi'i, Riyadh, Saudi Arabia, 2/449.
2. Musnad Ahmad bin Hanbal, narrations of 'Ubada bin al-Samit, Dar al-Fikr, Beirut, 5/239.
3. Sunan Abi Dawood, Book of Manners, Chapter: What a man says when he sees the crescent moon, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 2/339.
4. Al-Mu'jam al-Kabir by al-Tabarani, Hadith 4409, al-Maktaba al-Faysaliya, Beirut, 4/276.

शायद इसकी वजह यह हो कि यह शिर्क की चीज़ है, जैसा कि अल-मुनावी ने 'अत-तयसीर' में उल्लेख किया है। (त) मैं कहता हूँ: या यह कि काफ़िरों ने इसकी इबादत की और शरीयत में इसे देख कर अल्लाह जल्ला जलालुहु से दुआ करने का आदेश आया, तो यह पसंदीदा हुआ कि चेहरा फेर लिया जाए ताकि काफ़िरों से समानता न हो। अल्लाह और उसके रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) बेहतर जानते हैं। (म) नंबर 14: यह जो जाहिलों में प्रसिद्ध है कि फलां चाँद तलवार पर देखे, फलां आईने पर। यह सब अज्ञानता और मूर्खता है, बल्कि हदीस में जो दुआएँ बताई गई हैं वे पढ़ना काफी हैं। (श) नंबर 14: हदीस में चाँद देखने की बहुत सी दुआएँ आई हैं, जिनमें से कुछ 'हिसन-ए-हसीन' में दर्ज हैं। (ह) नंबर 14: फ़क़ीर (अल्लाह तआला उसे क्षमा करे) जहाँ तक इस समय अपनी नज़र में हैं, हदीस की तमाम दुआओं को उनके स्रोतों के संकेतों के साथ जमा करता है, और सफलता अल्लाह से है:

अरबी दुआएं	उर्दू अनुवाद
(मी) अल्लाह सबसे बड़ा है, अल्लाह सबसे बड़ा है, तमाम प्रशंसा अल्लाह के लिए है, न बुराई से बचने की शक्ति है न नेकी करने की ताक़त, सिवाय अल्लाह की मदद के। ऐ अल्लाह! मैं तुझसे इस महीने की भलाई मांगता हूँ, और बुरी तक़दीर और क़यामत के दिन की बुराई से तेरी पनाह माँगता हूँ।	(मी) अल्लाह अकबर अल्लाह अकबर, अलहम्दुलिल्लाह, बुराई से फिरने और नेकी की ताक़त अल्लाह तआला की तौफ़ीक़ के बग़ैर नहीं। ऐ अल्लाह! मैं तुझसे इस माह में खैर माँगता हूँ और शर तक़दीर और शर क़यामत से तेरी पनाह ढूँढता हूँ।
(अत-तबरानी) उबादा बिन अल-सामित से रिवायत है, "खैर और हिदायत का चाँद, मैं उस पर विश्वास करता हूँ जिसने तुझे पैदा किया।" (अबू दाऊद) क़तादा से मुर्सल रिवायत के तौर पर: "ऐ अल्लाह, मैं तुझसे इसके खैर का सवाल करता हूँ (3 बार)। ऐ अल्लाह, मैं तुझसे इस महीने के खैर और तक़दीर के खैर का सवाल करता हूँ, और	(अतब) हज़रत उबादा बिन सामित रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से मरवी है: ऐ खैर ओ रुश्द के चाँद, मैं तेरे पैदा करने वाले पर ईमान रखता हूँ। (द) हज़रत क़तादा से मुर्सलन मरवी है: ऐ अल्लाह! मैं तुझसे इसमें खैर माँगता हूँ (3)। ऐ अल्लाह! मैं तुझसे इस माह की और तक़दीर की खैर माँगता हूँ और इसके शर से तेरी पनाह ढूँढता हूँ (3)। (तब्ब) हज़रत राफ़े

अरबी दुआएं	उर्दू अनुवाद
इसके शर से तेरी पनाह माँगता हूँ (3 बार)।" (अत-तबरानी) राफ़े बिन खदीज से हसन सनद के साथ: "ऐ अल्लाह!"	बिन खदीज रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से सनदे हसन के साथ मरवी है: ऐ अल्लाह!

1. अत-तयसीर हदीस के तहत "जब वे चाँद देखते", मकतबा अल-इमाम अल-शाफ़ई रियाद सऊदी अरब 2/449।
2. मुसनद अहमद बिन हंबल, उबादा बिन अल-सामित की रिवायतें, दार अल-फ़िक्र बेरुत 5/239।
3. सुनन अबी दाऊद, किताबुल अदब, बाब: चाँद देखने पर आदमी क्या कहे, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर 2/339।
4. अल-मुअजम अल-कबीर लित-तबरानी हदीस 4409, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया बेरुत 4/276।

شاید اس کی وجہ یہ ہو کہ شرک کی چیز ہے افادۃ المناوی فی التیسیر (مناوی نے تیسیر میں افادہ کیا۔ت) اقول: یا یہ کہ کفار نے اس کی عبادت کی اور شرع میں اسے دیکھ کر اللہ جل جلالہ سے دعا کرنی آئی، تو پسندیدہ ہوا کہ منہ پھیر کر کی جائے تاکہ کفار سے مشابہت نہ لازم آئے۔ واللہ و رسولہ اعلم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم۔ (م) نمبر ۱۴: یہ جو جاہلوں میں مشہور ہے کہ فلاں چاند تلوار پر دیکھے فلاں آئینے پر۔ یہ سب جہالت و حماقت ہے، بلکہ حدیث میں جو دعائیں فرمائیں وہ پڑھنی کافی ہیں۔ (ش) نمبر ۱۴: حدیث میں رؤیت ہلال کی بہت دعائیں عہ۱ آئیں، بعض حصن حصین میں مذکور ہیں۔ (ح) عہ نمبر ۱۴: فقیر غفر اللہ تعالٰی لہ جہاں تک اس وقت اپنی نظر میں ہیں تمام ادعیہ حدیث کو مع اشارہ رموز مخرجین جمع کرتا ہے و باللہ التوفیق:

عربی دعائیں	اردو ترجمہ
(می) اللہ اکبر اللہ اکبر الحمد للہ لا حول ولا قوۃ الا باللہ۔ اللھم انی اسئلک من خیر ھذا الشھر اعوذ بک من شر القدر ومن شر یوم المحشر۔	(می) اللہ اکبر اللہ اکبر، الحمد للہ، برائی سے پھرنے اور نیکی کی طاقت اللہ تعالٰی کی توفیق کے بغیر نہیں۔ اے اللہ میں تجھ سے اس ماہ میں خیر مانگتا ہوں اور شر تقدیر اور شر قیامت سے تیری پناہ ڈھونڈتا ہوں۔
(اطب) عن عبادہ بن الصامت، ھلال خیر ورشد امنت بالذی خلقک۔ (د) عن قتادۃ بلاغاً، اللھم انی اسئلک من خیر ھذا ۳ اللھم انی اسئلک من خیر ھذا الشھر وخیر القدر واعوذ بك من	(اطب) حضرت عبادہ بن صامت رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی ہے اے خیر و رشد کے چاند، میں تیرے پیدا کرنے والے پر ایمان رکھتا ہوں۔ (د) حضرت قتادہ سے مرسلاً مروی ہے اے اللہ! میں تجھ سے اس میں خیر مانگتا ہوں۔ (۳) اے اللہ! میں تجھ سے اس ماہ کی اور تقدیر کی خیر مانگتا

عربی دعائیں	اردو ترجمہ
شرہ ۳ (طب) عن رافع بن خدیج باسناد حسن اللھم	ہوں اور اس کے شر سے تیری پناہ ڈھونڈتا ہوں (۳) (طب) حضرت رافع بن خدیج رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے سند حسن کے ساتھ مروی ہے: اے اللہ!

1 التیسیر تحت حدیث کان اذا رای الھلال مکتبہ الامام الشافعی ریاض سعودیہ ۲/۴۴۹ 2 مسند احمد بن حنبل مرویات عبادہ بن الصامت دار الفکر بیروت ۲۳۹/۵ 3 سنن ابی داؤد کتاب الادب باب مایقول الرجل اذارای الھلال آفتاب عالم پریس لاہور ۲/۳۳۹ 4 المعجم الکبیر للطبرانی حدیث ۴۴۰۹ المکتبۃ الفیصلیہ بیروت ۲۷۶/۴

Arabic Text

Bring it (the new moon) over us with blessings, faith, peace, and Islam. (A, Q, T, K, Hub) - Narrated from Talhah bin Ubaydullah with a good chain (Hasan). And grant the ability to do what You love and are pleased with. (Hub) narrated from Talhah; (Tab) narrated from Ibn Umar. And tranquility, well-being, and good provision. (Sun) narrated from Hudair al-Sulami as Mursal. My Lord and your Lord is Allah. (Imi, T, K, Hub) narrated from Talhah; (Tab) narrated from Ibn Umar. Praise be to Allah who has taken away such and such month. Narrated from Qatadah as Balaghan. And (Sun) narrated from Abdullah bin Mutarrif: I ask You for the good of this month, its light, its blessing, its guidance, its purity, and its safety.

Urdu Translation

Make this moon for us one of blessing, faith, safety, and peace. (A, Q, T, K, Hub) It is narrated from Hazrat Talhah bin Ubaydullah with a good chain (Hasan). And grant the ability for that which You like and with which You are pleased. (Hub) from Talhah and (Tab) from Hazrat Ibn Umar have also narrated these words. I ask for peace, well-being, and good provision. (Sun) narrated from Hazrat Hudair al-Sulami as Mursal. My Lord and your Lord is Allah. (Imi, T, K, Hub) narrated from Hazrat Talhah and (Tab) narrated from Hazrat Ibn Umar. All praise be to Allah who took away the previous month. From Hazrat Qatadah as Balaghan, and (Sun) narrated from Hazrat Abdullah bin Mutarrif: O Allah! I ask You for the good of this month, its light, its blessing, its guidance, its purity, and its well-being.

(Sun) narrated the like of it. O Allah! Grant us its good, help, blessing, mercy, victory, and light, and we seek refuge in You from its evil and the evil of what follows it. (Moms) narrated this from Hazrat Ali (may Allah be pleased with him) as a Mauquf report. (T)

---

1. Jami' at-Tirmidhi, Book of Supplications, Amin Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi, 2/298
2. Al-Ihsan bi-Tartib Ibn al-Hibban, Hadith 885, Chapter of Supplications, Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 3/70
3. 'Amal al-Yawm wa al-Laylah, Hadith 625, Dairat al-Ma'arif, Hyderabad Deccan, India, p. 175
4. Jami' at-Tirmidhi, Book of Supplications, Amin Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi, 2/298

5. 'Amal al-Yawm wa al-Laylah, Hadith 627, Dairat al-Ma'arif, Hyderabad Deccan, India, p. 165
6. 'Amal al-Yawm wa al-Laylah, Hadith 627, Dairat al-Ma'arif, Hyderabad Deccan, India, p. 165
7. Al-Musannaf Ibn Abi Shaybah, Hadith 967, Book of Supplications, Idarat al-Quran wa al-Ulum al-Islamiyah, Karachi, 10/399-400

अरबी इबारत

इस (चाँद) को हम पर बरकत, ईमान, शांति और इस्लाम के साथ उदय कर। (अ, क़, त, क, हुब) - हज़रत तलहा बिन उबैदुल्लाह से एक अच्छी सनद (हसन) के साथ वर्णित है। और उस चीज़ की तौफीक दे जिसे तू पसंद करता है और जिससे तू राजी है। (हुब) ने तलहा से और (तब) ने हज़रत इब्न उमर से ये शब्द भी नकल किए हैं। और सुकून, सलामती और अच्छा रिज़क़। (सुन) ने हज़रत हुदैर अल-सुलमी से मुरसल के रूप में रिवायत किया। मेरा रब और तेरा रब अल्लाह है। (इमी, त, क, हुब) ने हज़रत तलहा से और (तब) ने हज़रत इब्न उमर से रिवायत किया। तमाम प्रशंसा उस अल्लाह के लिए है जो इस महीने को ले गया। हज़रत क़तादा से बलाग़न के रूप में वर्णित। और (सुन) ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुतर्रिफ़ से रिवायत किया: मैं तुझसे इस महीने की भलाई, इसके नूर, इसकी बरकत, इसके मार्गदर्शन, इसकी पवित्रता और इसकी सलामती का सवाल करता हूँ।

उर्दू अनुवाद

इस चाँद को हम पर बरकत, ईमान, सलामती और अमन वाला बना दे। (अ, क़, त, क, हुब) हज़रत तलहा बिन उबैदुल्लाह से सनद-ए-हसन के साथ मरवी है। और इस चीज़ की तौफीक दे जो तुझे पसंद हो और तू उससे राज़ी है। (हुब) ने तलहा से और (तब) ने हज़रत इब्न उमर से ये अल्फ़ाज़ भी नक़ल किए। सुकून, आफ़ियत और रिज़क़-ए-हसन माँगता हूँ। (सुन) ने हज़रत हुदैर अल-सुलमी से मुरसलन रिवायत किया। मेरा रब और तेरा रब अल्लाह है। (इमी, त, क, हुब) ने हज़रत तलहा से और (तब) ने हज़रत इब्न उमर से रिवायत किया। तमाम हम्द उस अल्लाह की जो गुज़शता माह उसे ले गया। हज़रत क़तादा से बलाग़न, और (सुन) ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुतर्रिफ़ से रिवायत किया है: ऐ अल्लाह! मैं तुझसे इस माह की खैर, इसका नूर, इसकी बरकत, इसकी हिदायत, इसकी तहारत और आफ़ियत माँगता हूँ।

(सुन) ने इसी के समान रिवायत किया। ऐ अल्लाह! हमें इसकी खैर, मदद, बरकत, रहमत, फ़तह और नूर अता फ़रमा और हम इसके और इसके बाद के शर से तेरी पनाह ढूँढते हैं। इसे (मोमस) ने हज़रत अली (रज़िअल्लाहु अन्हु) से मौक़ूफ़न रिवायत किया। (त)

---

1. जामी' अत-तिर्मिज़ी, अबवाब अल-दावात, अमीन कंपनी कुतुब ख़ाना रशीदिया दिल्ली, 2/298
2. अल-इहसान बि-तरतीब इब्न अल-हिब्बान, हदीस 885, बाब अल-अदइया, मुअस्ससत अल-रिसाला, बेरुत, 3/70

3. 'अमल अल-यौम व अल-लैला, हदीस 625, दायरात अल-मआरिफ़, हैदराबाद दक्कन, भारत, पृ. 175
4. जामी' अत-तिर्मिज़ी, अबवाब अल-दावात, अमीन कंपनी कुतुब ख़ाना रशीदिया दिल्ली, 2/298
5. 'अमल अल-यौम व अल-लैला, हदीस 627, दायरात अल-मआरिफ़, हैदराबाद दक्कन, भारत, पृ. 165
6. 'अमल अल-यौम व अल-लैला, हदीस 627, दायरात अल-मआरिफ़, हैदराबाद दक्कन, भारत, पृ. 165
7. अल-मुसन्नफ़ इब्न अबी शैबा, हदीस 967, किताब अल-दावात, इदारत अल-क़ुरआन व अल-उलूम अल-इस्लामिया, कराची, 10/399-400

عربی عبارت

اهله علينا باليمن والايمان والسلامة والاسلام - (ا ق ت ك حب) عن طلحة بن عبيد الله باسناد حسن، والتوفيق لما تحب وترضى- 2حب عن طلحة (طب) عن ابن عمر، والسكينة والعافية والرزق الحسن 3(سن)عن حدير السلمى مرسلا، ربى وربك الله- 4امى ت ك (حب) عن طلحة طب عن ابن عمر، الحمد لله الذى ذهب بشهر كذا 5وعن قتادة بلاغا (سن) عن عبد الله بن مطرف اسئلك من خير هذاالشهر ونوره وبركته وهداه وطهوره ومعافاته 6 (سن)مثله، اللهم ارزقنا خيره ونصره وبركته وفتحه ونوره ونعوذبك من شره وشرما بعده 7 (مومص)عن على موقوفا۔

اردو ترجمہ

اس چاند کو ہم پر برکت، ایمان، سلامتی اور امن والا بنا دے۔ (ا، ق ت ک حب) حضرت طلحہ بن عبید اللہ سے سندِ حسن کے ساتھ مروی ہے اور اس چیز کی توفیق دے جو تجھے پسند ہو اور تو اس سے راضی ہے (حب) نے طلحہ سے اور (طب) نے حضرت ابن عمر سے یہ الفاظ بھی نقل کئے سکون، عافیت اور رزقِ حسن مانگتا ہوں، (سن) نے حضرت حدیر السلمی سے مرسلًا روایت کیا میرا رب اور تیرا رب اللہ ہے (امی ت ک حب) نے حضرت طلحہ سے اور طب نے حضرت ابن عمر سے روایت کیا، تمام حمد اس اللہ کی جو گزشتہ ماہ اسے لے گیا، حضرت قتادہ سے بلاغًا، اور (سن) نے حضرت عبد اللہ بن مطرف سے روایت کیا ہے اے اللہ ! میں تجھ سے اس ماہ کی خیر، اس کا نور، اس کی برکت، اس کی ہدایت، اس کی طہارت اور عافیت مانگتا ہوں۔

(سن) نے اس کی مثل روایت کیا۔ اے اللہ ! ہمیں اس کی خیر، مدد، برکت، رحمت، فتح اور نور عطا فرما اور ہم اس کے اور اس کے مابعد کے شر سے تیری پناہ ڈھونڈتے ہیں۔ اسے (مومص) نے حضرت علی رضی اللہ عنہ سے موقوفاً روایت کیا۔ (ت)

---

1 جامع ترمذی ابواب الدعوات امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۲/۲۹۸ 2 الاحسان بترتیب ابن الحبان حدیث ۸۸۵ باب الادعیۃ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۳/۷۰ 3 عمل الیوم واللیلۃ حدیث ۶۲۵ دائرۃ المعارف حیدر آباد دکن انڈیا ص ۱۷۵ 4 جامع ترمذی ابواب الدعوات امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۲/۲۹۸ 5 عمل الیوم واللیلۃ حدیث ۶۲۷ دائرۃ المعارف حیدر آباد دکن انڈیا ص ۱۶۵ 6 عمل الیوم واللیلۃ حدیث ۶۲۷ دائرۃ المعارف حیدر آباد دکن انڈیا ص ۱۶۵ 7 المصنف ابن ابی شیبہ حدیث ۹۶۷ کتاب الدعوات ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۱۰/۳۹۹- ۴۰۰

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

(M) No. 15: Whenever you look at the moon, seek refuge with Allah from its evil. (Sh) No. 15: Tirmidhi, Nasa'i, and Hakim narrate from the Mother of the Believers, Siddiqah (Aisha), may Allah be pleased with her, that the Resplendent Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, saw the moon and said:

"O Aisha! Seek refuge with Allah from the evil of this, for this is the 'ghasiq' (darkness) when it settles."

Meaning, the 'ghasiq' mentioned in the Great Quran, "And from the evil of darkness (ghasiq) when it settles" (113:3), and the command to seek refuge from its evil refers to this very moon.

Section Two: Regarding matters in which the investigation of the new moon has no weight; consisting of twenty "Qamar" (Moon) points. (M) Qamar No. 16: The statement of astronomers (Ahl-e-Hay'at) has no weight, even if they are just and even if they are numerous; nor is it permissible to act upon it. (Sh) Qamar 1/16: Astronomers are those who discuss the states of the heavens and the movements of stars. They say according to their calculations that sighting will occur on such a day, such a month will be twenty-nine days, and such will be thirty. Although their statement is a calculation and can be correct, in the correct school of thought (Madhab), it has no weight even if they are reliable and just, and even if a large group of them unanimously agrees on one thing. For example, if they say on the 29th of Sha'ban that sighting will definitely occur today and tomorrow is the 1st of Ramadan. If the evening becomes cloudy and no reliable news of sighting is received, we will never declare it Ramadan; rather, it will remain the Day of Doubt (Yaum al-Shakk). Or if they say sighting cannot occur today and tomorrow is certainly the 30th of Sha'ban, yet a reliable testimony of sighting occurs today, we will accept it immediately and will not consider that according to astronomy, sighting was impossible today, or that the witness made a mistake or lied. The evidence for this issue and most upcoming issues up to Qamar 5 is that the Legislator (Prophet), peace and blessings of Allah be upon him, made the ruling of fasting and breaking the fast dependent on sighting. It is narrated in Sahihayn (Bukhari and Muslim) and others through numerous paths

from many Companions, may Allah be pleased with them, that the Most Noble Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, states:

1. Jami' al-Tirmidhi, Chapters of Tafsir, Surah al-Falaq, Nur Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi, 2/285
2. Al-Quran 113 / 3

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

(म) नंबर 15: चाँद पर जब कभी नज़र पड़े तो उसके शर (बुराई) से पनाह माँगे। (श) नंबर 15: तिर्मिज़ी, नसाई, हाकिम उम्मुल मोमिनीन सिद्दीका रज़ियल्लाहु अन्हा से रावी (रिवायत करने वाले) हैं कि हुज़ूरे पुरनूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने चाँद को देखकर फ़रमाया:

"ऐ आयशा! अल्लाह तआला की पनाह माँग इसके शर से, क्योंकि यही है वह अंधेरी डालने वाला जब डूबे या गहरा हो।"

यानी क़ुरआने अज़ीम में जिस 'ग़ासिक़' का ज़िक्र फ़रमाया 'व मिन शर्रि ग़ासिक़िन' (और अंधेरे के शर से) और उसके शर से पनाह माँगने का हुक्म आया, उससे यही चाँद मुराद है।

फ़स्ल दोयम (दूसरा अध्याय): उन उमूर (मामलों) में जिनका हिलाल (नया चाँद) की तहक़ीक़ (जाँच) के बारे में कुछ एतबार नहीं, बीस "क़मर" (चाँद) पर मुश्तमिल। (म) क़मर नंबर 16: अहले हय्यत (खगोलशास्त्रियों) की बात का कुछ एतबार नहीं, अगरचे वे आदिल (न्यायप्रिय) हों, अगरचे बहुत हों, और न ही ख़ुद उस पर अमल जायज़ है। (श) क़मर 1/16: अहले हय्यत वे लोग हैं जो आसमानों के हाल और सितारों की चाल से बहस (चर्चा) करते हैं, वे अपने हिसाब से बताते हैं कि फ़लाँ दिन रुइयत (चाँद दिखना) होगी, फ़लाँ महीना उनतीस का होगा, फ़लाँ तीस का। फिर उनकी बात चूँकि एक हिसाब है, ठीक भी पड़ती है, पर सही मज़हब में उसका कुछ एतबार नहीं, अगरचे वे षिक़ा आदिल (भरोसेमंद और न्यायप्रिय) हों, अगरचे उनकी जमाअत कसीर (बड़ी संख्या) एक ज़बान होकर एक ही बात पर इत्तेफ़ाक़ (सहमति) करे। मिसाल के तौर पर वे 29 शाबान को कहें कि आज ज़रूर रुइयत होगी, कल पहली रमज़ान है। शाम को बादल हो गया, रुइयत की ख़बर मोतबर (विश्वसनीय) न आई, तो हम हरगिज़ रमज़ान क़रार नहीं देंगे, बल्कि वही यौमुश-शक़ (संदेह का दिन) ठहरेगा। या वे कहें कि आज रुइयत नहीं हो सकती, कल यक़ीनन 30 शाबान है, फिर आज ही रुइयत पर मोतबर गवाही गुज़री (सामने आई), तो फ़ौरन क़बूल कर लेंगे और कुछ ख्याल न करेंगे कि बिनाए हय्यत (खगोलशास्त्र के आधार पर) तो आज रुइयत नामुमकिन थी। गवाह ने देखने में ग़लती की, या ग़लत कहा। इस मसले और आइंदा के अक्सर मसलों की दलील, जो क़मर 5 तक आएँगे, यह है कि शारेअ (धर्मशास्त्र निर्माता) सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सोम (रोज़ा) और फ़ित्र (ईद) का हुक्म रुइयत पर मुअल्लक़ (निर्भर) फ़रमाया। सहीहैन (बुख़ारी व मुस्लिम) वग़ैरह में बतरीक़े कसीरा (अनेक माध्यमों

से) बहुत से सहाबा रिज़वानुल्लाहि अलैहिम अजमईन से मरवी (वर्णित) है कि हुज़ूरे अक़दस सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम इरशाद फ़रमाते हैं:

1. जामि तिर्मिज़ी, अबवाबुत-तफ़्सीर, सूरह अल-फ़लक़, नूर मोहम्मद कारख़ाना तिज़ारत कुतुब कराची, 2/ 285
2. अल-क़ुरआन 113 / 3

पृष्ठ 466 का 836

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

(م) نمبر۱۵: چاند پر جب کبھی نظر پڑے تو اس کے شر سے پناہ مانگے۔ (ش) نمبر۱۵: ترمذی، نسائی، حاکم اُمّ المؤمنین صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا سے راوی حضورِ پُر نور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے چاند کو دیکھ کر فرمایا:

یا عائشۃ استعیذی باللہ من شر ھذا، فان ھذا ھو الغاسق اذا وقب۔ اے عائشہ ! اللہ تعالیٰ کی پناہ مانگ اس شر سے کہ یہی ہے وہ اندھیری ڈالنے والا جب ڈوبے یا گہنائے،

یعنی قرآنِ عظیم میں جس غاسق کا ذکر فرمایا وَمِنْ شَرِّ غَاسِقٍ اور اس کے شر سے پناہ مانگنے کا حکم آیا اس سے یہی چاند مراد ہے۔

فصل دوم: ان امور میں جن کا دربارہِ تحقیقِ ہلال کچھ اعتبار نہیں، بیس "قمر" پر مشتمل (م) قمر نمبر ۱۶: اہل ہیئت کی بات کا کچھ اعتبار نہیں اگر چہ عادل ہوں اگرچہ کثیر ہوں، نہ ہی خود اس پر عمل جائز۔ (ش) قمر ۱/۱۶: اہل ہیئت وہ لوگ جو آسمانوں کے حال اور ستاروں کی چال سے بحث کرتے ہیں، وہ اپنے حساب سے بتاتے ہیں کہ فلاں دن رؤیت ہو گی فلاں مہینہ انتیس کا ہو گا فلاں تیس کا۔ پھر ان کی بات کہ ایک حساب ہے ٹھیک بھی پڑتی ہے، پر صحیح مذہب میں اس کا کچھ اعتبار نہیں اگرچہ وہ ثقہ عادل ہوں، اگر چہ ان کی جماعت کثیر ایک زبان ایک ہی بات پر اتفاق کرے۔ مثلاً وہ ۲۹ شعبان کو کہیں آج ضرور رؤیت ہو گی کل یکم رمضان ہے۔ شام کو ابر ہو گیا، رؤیت کی خبر معتبر نہ آئی، ہم ہر گز رمضان قرار نہ دیں گے، بلکہ وہی یوم الشک ٹھہرے گا، یا وہ کہیں آج رؤیت نہیں ہو سکتی، کل یقیناً ۳۰ شعبان ہے، پھر آج ہی رؤیت پر معتبر گواہی گزری، فوراً قبول کر لیں گے اور کچھ خیال نہ کریں گے کہ بنائے ہیئت تو آج رؤیت ناممکن تھی۔ گواہ نے

دیکھنے میں غلطی کی، یا غلط کہا، دلیل اس مسئلے اور اکثر مسائلِ آئندہ کی جو قمر ۵ تک آئیں گے یہ ہے کہ شارع صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے صوم و فطر کا حکم رؤیت پر معلق فرمایا، صحیحین و غیر ہما میں بطریقِ کثیرہ بہت صحابہ رضوان اللہ تعالیٰ علیہم سے مروی کہ حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ارشاد فرماتے ہیں:

1 جامع ترمذی ابواب التفسیر سورۃ الفلق ، نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ۲/ ۲۸۵ 2 القرآن ۳ / ۱۱۳

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Box 1] Arabic: 1 - صومو الرؤیته وافطر الرؤیته فان اغمی علیکم فاکملوا عدّة شعبان ثلثین
Urdu Translation: Fast upon seeing the moon, and break the fast upon seeing it. And if the horizon is not clear, then complete the count of thirty days of Sha'ban. (T)

Thus, it is obligatory for us to act upon this. As for calculation, the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) disregarded it entirely, clearly stating:

[Box 2] Arabic: 2 - رواه الشیخان ابوداؤد و نسائی عن ابن عمر رضی اللہ تعالی عنہما۔ انّا امیة لا نکتب ولا نحسب الشهر هکذا وهکذا والشهر هکذا وهکذا
Urdu Translation: We are an illiterate nation; we neither write nor calculate. Raising the fingers of both hands three times, he said the month is so, so, and so. The third time he closed his thumb, meaning twenty-nine; and the month is so, so, and so, each time keeping all fingers open, meaning thirty. (Narrated by Imam Bukhari, Muslim, Abu Dawood, and Nasa'i from Ibn Umar, may Allah be pleased with them. T)

By the grace of Allah and His benevolence, we are the illiterate nation of our illiterate Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). What concern do we have with anyone's accounts and calculations? As long as the sighting is not proven, we will neither listen to anyone's calculation, nor accept their writing, nor look for signs, nor rely on estimations.

[Box 3] Arabic: لاعبرة بقول الموقتین ولو عد ولا' علی المذهب بل في المعراج' لا یعبتر قولهم بالاجماع ولا یجوز للمنجم ان یعمل بحساب نفسه وفی النهر' فلا یلزم بقول الموقتین انه ای الهلال یکون في السماء لیلة کذاوان کانوا عدولا في الصحیح کما في الایضاح اه وفی القنیة عن ابن مقاتل انه کان یسألهم ویعتمد علی قولهم اذا اتفق علیه جماعة منهم ثم نقل عن شرح السرخسی انه یبعد وعن مجد الائمة انه اتفق اصحاب ابي حنیفة الا النادر
Urdu Translation: According to the correct school of thought, the statement of astrologers is not reliable even if they are upright. In fact, it is in 'Al-Mi'raj' that their statement is not reliable by consensus, and it is not permissible for an astrologer to act on his own calculation. It is stated in 'An-Nahr' that the astrologers' claim that the moon will be in the sky on a certain night does not make fasting mandatory according to the authentic narration, even if the astrologer is upright, as stated in 'Al-Iydah'. In 'Al-Quniyah', it is narrated from Ibn Muqatil that astrologers should be questioned, and if a group of them agrees, their word should be relied upon. Then it is quoted from 'Sharh al-Sarakhsi' that this is far-fetched (contrary to reason). From Majd al-A'immah...

1. Sahih Bukhari, Kitab al-Sawm, Qadimi Kutub Khana Karachi 1/256

2. Sahih Bukhari, Kitab al-Sawm, Qadimi Kutub Khana Karachi 1/256

फतवा रज़विया जिल्द 10

[बॉक्स 1] अरबी: صومو الرؤيته وافطر الرؤيته فان اغمى عليكم فاكملوا عدّة شعبان ثلثين - 1 उर्दू अनुवाद: चाँद देखकर रोज़ा रखो, और चाँद देखकर रोज़ा खोलो। और अगर क्षितिज (मत्ला) साफ न हो, तो शाबान की गिनती तीस (30) पूरी कर लो। (त)

अतः हम पर इसी पर अमल करना फ़र्ज़ है। जहाँ तक गणना (हिसाब) का सवाल है, तो हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इसे पूरी तरह से खारिज कर दिया, उन्होंने साफ इरशाद फरमाया:

[बॉक्स 2] अरबी: انّا امية لا نكتب ولا نحسب الشهر هكذا وهكذا والشهر هكذا وهكذا - 2 رواه الشيخان ابوداؤد و نسائى عن ابن عمر رضى اللہ تعالى عنہما۔ उर्दू अनुवाद: हम एक उम्मी (अनपढ़) उम्मत हैं; न हम लिखते हैं और न ही गणना करते हैं। दोनों हाथों की उंगलियों को तीन बार उठाकर फरमाया कि महीना यूँ, यूँ और यूँ होता है। तीसरी बार में अँगूठा बंद फरमाया यानी उनतीस; और महीना यूँ, यूँ और यूँ होता है, हर बार सभी उंगलियाँ खुली रखीं यानी तीस। (इसे इमाम बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, नसाई ने इब्न उमर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया। त)

अल्हम्दुलिल्लाह, हम अपने नबी-ए-उम्मी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की उम्मी उम्मत हैं। हमें किसी के जोड़-घटाव या हिसाब-किताब से क्या लेना-देना? जब तक चाँद दिखना साबित न हो जाए, न हम किसी का हिसाब सुनेंगे, न कोई लिखा हुआ मानेंगे, न किसी संकेत को देखेंगे और न ही किसी अंदाज़े पर भरोसा करेंगे।

[बॉक्स 3] अरबी: لاعبرة بقول الموقتين ولو عد ولا' على المذهب بل في المعراج' لا يعبتر قولهم بالاجماع ولا يجوز للمنجم ان يعمل بحساب نفسه وفى النهر' فلا يلزم بقول الموقتين انه اى الهلال يكون في السماء ليلة كذاوان كانوا عدولا في الصحيح كما في الايضاح اه وفى القنية عن ابن مقات انه كان يسألهم ويعتمد على قولهم اذا اتفق عليه جماعة منهم ثم نقل عن شرح السرخسى انه يبعد وعن مجد الائمة انه اتفق اصحاب ابي حنيفة الا النادر उर्दू अनुवाद: सही मज़हब के अनुसार ज्योतिषियों का कहना विश्वसनीय नहीं है, भले ही वे न्यायप्रिय (आदिल) हों। बल्कि 'अल-मेराज' में है कि सर्वसम्मति (इज्मा) से उनकी बात विश्वसनीय नहीं है, और ज्योतिषी के लिए अपनी गणना पर कार्य करना जायज़ नहीं है। 'अन-नहर' में है कि ज्योतिषियों का यह कथन कि अमुक रात को आसमान पर चाँद दिखाई देगा, सही रिवायत के अनुसार उनके इस

कथन से रोज़ा अनिवार्य नहीं होगा, भले ही ज्योतिषी न्यायप्रिय हों जैसा कि 'अल-ईज़ाह' में है। 'अल-कुनियत' में इब्न मुकातिल से रिवायत है कि ज्योतिषियों से पूछा जाए और यदि उनके एक समूह में सहमति हो जाए, तो उनकी बात पर भरोसा किया जाए। फिर 'शरह अल-सरखसी' से उद्धृत किया गया है कि यह (तर्क से) दूर है। मजद अल-आइम्मा से...

1. सही बुखारी, किताब अस-सौम, कदीमी कुतुब खाना कराची 1/256
2. सही बुखारी, किताब अस-सौम, कदीमी कुतुब खाना कराची 1/256

पेज 467/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

[Box 1] صومو الرؤیته وافطر الرؤیته فان اغمی علیکم فاکملوا عدّة شعبان ثلثین - 1 چاند دیکھ کر روزہ رکھو، چاند دیکھ کر ختم کرو۔ اور اگر مطلع صاف نہ ہو تو تیس (30) کی گنتی پوری کر لو۔ (ت)

پس ہمیں اسی پر عمل فرض ہے، باقی رہا حساب، اسے خود حضور اقدس صلی اللہ علیہ وسلم نے یک لخت ساقط کر دیا، صاف ارشاد فرماتے ہیں،

[Box 2] انّا امیة لا نکتب ولا نحسب الشهر هکذا وهکذا والشهر هکذا وهکذا - 2 رواه الشیخان ابوداؤد و نسائی عن ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما۔ ہم امی امت ہیں، نہ لکھیں نہ حساب کریں دونوں ہاتھوں کی انگلیاں تین بار اٹھا کر فرمایا مہینہ یوں اور یوں اور یوں ہوتا ہے۔ تیسری دفعہ میں انگوٹھا بند فرمایا یعنی انتیس ' اور مہینہ یوں اور یوں ہوتا ہے، ہر بار سب انگلیاں کھلی رکھیں یعنی تیس۔ (اسے امام بخاری، مسلم، ابو داؤد، نسائی نے ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا۔ت)

ہم بحمد اللہ ولہ المنۃ اپنے نبی امی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی امی امت ہیں، ہمیں کسی کے حساب کتاب سے کیا کام، جب تک رؤیت ثابت نہ ہو گی نہ کسی کا حساب سنیں ' نہ تحریر مانیں، نہ قرائن دیکھیں، نہ اندازا جانیں۔

[Box 3] لاعبرة بقول الموقتین ولو عد ولا' علی المذهب بل في المعراج' لا یعبتر قولهم بالاجماع ولا یجوز للمنجم ان یعمل بحساب نفسه وفی النهر' فلا یلزم بقول الموقتین انه ای الهلال یکون في السماء لیلة کذاوان کانوا عدولا في الصحیح کما في الایضاح اه وفی القنیة عن ابن مقاتل انه کان یسألهم ویعتمد

على قولهم اذا اتفق عليه جماعة منهم ثم نقل عن شرح السرخسی انه يبعد وعن مجد الائمة انه اتفق اصحاب ابي حنيفة الا النادر صحیح مذہب کے مطابق نجومیوں کا قول معتبر نہیں اگرچہ وہ عادل ہوں، بلکہ معراج میں ہے کہ ان کا قول بالا جماع معتبر نہیں ' اور نجومی کو خود اپنے حساب پر عمل کرنا درست نہیں۔ نہر میں ہے نجومیوں کا یہ قول کہ فلاں رات کو آسمان پر چاند نظر آئے گا صحیح روایت کے مطابق ان کے اس قول سے روزہ لازم نہ ہو گا، اگرچہ نجومی عادل ہو جیسا کہ ایضاح میں ہے اھ قنیہ میں ابن مقاتل سے مروی ہے کہ نجومیوں سے سوال کیا جائے اور اگر ان کی ایک جماعت کا اتفاق ہو جائے تو ان کے قول پر اعتماد کیا جائے، پھر شرح سرخسی سے نقل کیا ہے کہ یہ بعید (از قیاس) ہے، مجد الائمہ سے---

1 صحیح بخاری کتاب الصوم قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶ 2 صحیح بخاری کتاب الصوم قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Boxed text left] And Ash-Shafi'i (states) that there is no reliance on their (astrologers') word. (Shami, summarized)

[Boxed text right] It is narrated that, except for some rare Hanafis, all other Hanafis and Shafi'is are unanimous that the word of astrologers will not be relied upon. (Shami, summarized)

Caution: The meaning of this issue is that what they say by way of astronomy is not acceptable. Otherwise, if they give testimony of sighting, they are like other people; their testimony will be accepted based on the same conditions under which others' testimony is heard. Furthermore, their being eligible for testimony is only when they do not hold beliefs in astronomical and astrological matters contrary to Sharia. They should only discuss the celestial rotations, planetary movements, rising and setting, stations, slow and fast motions, conjunctions, sextiles, trines, oppositions, etc., as a technical craft. Otherwise, for example, making rulings on matters of the unseen, raising disputes about auspicious and inauspicious times, following or making others follow horoscopes, looking at the four angles (ascendant, 4th, 7th, 10th houses), evaluating additional inclinations - this is religiously forbidden. And if done with belief, it is absolute disbelief (Kufr), and refuge is sought with Allah, Lord of the worlds. Similar to this is their saying that sighting is mandatory on a certain day and impossible on another. If they mean habitual necessity or impossibility, then fine, for the Sunnah of Allah does not change. But if they mean real and intellectual (necessity/impossibility), refuge is sought with Allah, it is open disbelief. May Allah protect us by His great favor, Amen. (May Allah Almighty keep us safe by His great favor, Amen - T)

It has been established among the people of astrology that as long as the moon is not eight degrees away from the sun, it can never be seen; this has been clarified by Al-Fadhil ar-Rumi. And when it is 12 degrees apart, it must be seen; this is stated by Allama ash-Sharif. Then, on the 29th, they calculate the positions of the sun and moon from the zodiacal spheres to find the separation. If it is found to be less than eight degrees, they rule that sighting will never happen today. If it is 12 or more than 12, they state with certainty that it will occur. If it is between the two, they consider the sighting of the crescent moon doubtful. The style of the astrologers of India is somewhat unique. This humble servant has seen many times that on the evening of the 29th, the moon is much more than 12 degrees away, yet they scheduled the

sighting for the next day. Anyway, the point here is that the Greek philosophers who devised these rules were not satisfied with them themselves; they explicitly state that the states of the moon have not been systematized to this day. Then what reliance is there on such doubtful and doubt-inducing talk?

[Boxed text left] "Glory be to You! We have no knowledge except what You have taught us. Indeed, You are the Knower, the Wise." (2:32) I say: and

[Boxed text right] Glory be to Your Essence, we have no knowledge except as much as You have taught us; undoubtedly, You alone are the All-Knowing and the All-Wise.

---

1 Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/100 2 Al-Quran 2/32

[बायाँ बॉक्स] और अल-शाफ़ई (कहते हैं) कि उनकी (ज्योतिषियों की) बात पर कोई भरोसा नहीं है। (शामी, सारांशित)

[दायाँ बॉक्स] यह उल्लेख किया गया है कि कुछ दुर्लभ हनफ़ियों को छोड़कर, बाकी सभी हनफ़ी और शाफ़ई इस बात पर एकमत हैं कि ज्योतिषियों की बात पर भरोसा नहीं किया जाएगा। (शामी, सारांशित)

चेतावनी: इस मसले का अर्थ यह है कि वे ज्योतिष शास्त्र के तौर पर जो कुछ कहते हैं वह स्वीकार्य नहीं है। अन्यथा यदि वे चाँद देखने की गवाही देते हैं, तो वे अन्य लोगों की तरह हैं; उनकी गवाही भी उन्हीं शर्तों के तहत स्वीकार की जाएगी जिनके तहत दूसरों की गवाही सुनी जाती है। फिर उनका गवाही के काबिल होना तभी है जब वे ज्योतिष शास्त्र और नक्षत्र विज्ञान की शरीयत के खिलाफ बातों पर विश्वास न रखते हों। उन्हें केवल तकनीकी रूप से आसमान के चक्करों, सितारों की चालों, उदय और अस्त, वक्र और सीधी गति, धीमी और तेज़ गति, युति, षडाष्टक, त्रिकोण, प्रतियुति आदि पर चर्चा करनी चाहिए। अन्यथा, उदाहरण के तौर पर, परोक्ष (ग़ैब) के मामलों पर आदेश देना, शुभ और अशुभ समय के विवाद उठाना, कुंडली के रास्ते पर चलना या चलाना, चार केंद्रों (लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम भाव) पर नज़र रखना, अतिरिक्त झुकाव की जांच करना - यह शरीयत के अनुसार वर्जित है। और यदि विश्वास (अक़ीदे) के साथ हो, तो यह निश्चित रूप से कुफ्र (अधर्म) है, और अल्लाह, संसार के प्रतिपालक, की शरण माँगी जाती है। इसी तरह उनका यह कहना है कि अमुक दिन चाँद दिखना अनिवार्य है और अमुक दिन असंभव। यदि वे सामान्य आदत के अनुसार अनिवार्य या असंभव होने का अर्थ लेते हैं, तो ठीक है क्योंकि अल्लाह की सुन्नत (नियम) बदलती नहीं है। लेकिन यदि वे वास्तविक और बौद्धिक (अनिवार्यता/असंभवता) का इरादा रखते हैं, तो अल्लाह की पनाह, यह खुला कुफ्र है। अल्लाह हमें अपने महान उपकार से सुरक्षित रखे, आमीन। (अल्लाह तआला अपने बड़े अहसान पर हमें सुरक्षित रखे, आमीन - त)

ज्योतिषियों के बीच यह तय हुआ है कि जब तक चाँद सूरज से आठ डिग्री दूर न हो, वह कभी दिखाई नहीं देता; अल-फाज़िल अल-रूमी ने इसे स्पष्ट किया है। और जब यह 12 डिग्री अलग होता है, तो वह अवश्य दिखाई देता है; अल्लामा अल-शरीफ ने इसे प्रमाणित किया है। फिर 29 तारीख को वे सूर्य और चंद्रमा की स्थितियों को राशि चक्र से निकालकर उनके बीच की दूरी देखते हैं। यदि यह

आठ डिग्री से कम पाई जाती है, तो वे आदेश दे देते हैं कि आज चाँद कभी नहीं दिखेगा। और यदि 12 या 12 से अधिक देखा जाता है, तो वे दृढ़ता से कह देते हैं कि अवश्य होगा। यदि इनके बीच की स्थिति हो, तो वे चाँद दिखने को संदिग्ध मानते हैं। भारत के ज्योतिषियों का अंदाज़ कुछ अलग ही है। इस फ़क़ीर (विनम्र सेवक) ने कई बार देखा है कि 29 की शाम को चाँद 12 डिग्री से बहुत अधिक दूर है, फिर भी उन्होंने कल का चाँद रखा। खैर, यहाँ यह कहना है कि यूनान के हकीमों ने जिन्होंने ये नियम बनाए, वे स्वयं भी उन पर संतुष्ट नहीं थे; वे स्पष्ट रूप से कहते हैं कि चंद्रमा की अवस्थाओं का आज तक कोई निश्चित नियम नहीं बन सका। फिर ऐसी संदिग्ध और संदेह पैदा करने वाली बातों पर क्या भरोसा किया जाए?

[बायाँ बॉक्स] "पवित्र है तेरी ज़ात, हमें कोई ज्ञान नहीं सिवाय उसके जो तूने हमें सिखाया, निस्संदेह तू ही सब जानने वाला और हिकमत वाला है।" (2:32) मैं कहता हूँ: और

[दायाँ बॉक्स] पवित्र है तेरी ज़ात, हमें ज्ञान नहीं मगर उतना जो तूने हमें सिखाया, निस्संदेह तू ही सब जानने वाला है और हिकमत वाला है।

---

1 रद्द अल-मुह्तार, किताब अस-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/100 2 अल-कुरान 2/32

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

[بایاں باکس] والشافعی انہ لا اعتماد قولھم 'ش ملخصاً

[دایاں باکس] سے مروی ہے کہ کچھ شاذ احناف کو چھوڑ کر باقی تمام احناف اور شوافع اس پر متفق ہیں کہ نجومیوں کے قول پر اعتماد نہیں کیا جائے گا، شامی ملخصاً (ت)

تنبیہ: اس مسئلہ کے یہ معنی ہیں کہ جو بات وہ بطور ہیأت کہیں مقبول نہیں ورنہ اگر شہادت رؤیت ادا کریں تو مثل اور لوگوں کے ہیں، جن شرائط سے اوروں کی گواہی سنی جاتی ہے اُن کی بھی گواہی قبول ہوگی، پھر اُن کا قابلِ شہادت ہونا جبھی ہے کہ ہیأت و نجوم کی خلافِ شرع باتوں پر اعتقاد نہ کرتے ہوں صرف صناعی طور پر آسمان کی گردشوں ، ستاروں کی چالوں ، طلوع و غروب، جوع و استقامت، بطؤ و سرعت، قرآن، تسدیس ترجیح، تثلیث، مقابلہ، اجتماع وغیرہ سے بحث کرتے ہوں، ورنہ مثلاً امورِ غیب پر احکام لگانا سعد و نحس کے خرخشے اٹھانا، زائچہ کے راہ پر چلنا چلانا ، اوتادِ ربع ، طالع رابع، عاشر، سابع پر نظر رکھنا زائد مائلہ کو جانچنا پرکھنا، شرعاً ہجر ہے۔ اور اعتقاد کے ساتھ ہو تو قطعاً کفر، والعیاذ باللہ رب العالمین۔ اسی قبیل سے ہے ان کا کہنا کہ فلاں دن رؤیت واجب ہے فلاں دن محال۔ اگر وجوب واستحالہ عادی مراد لیتے ہیں تو خیر کہ سنت اللہ کیلئے تبدیل نہیں ، ورنہ حقیقی و عقلی کا قصد معاذ اللہ کھلا ہوا کفر ہے۔ اعاذنا اللہ بمنہ العظیم، آمین (اللہ تعالٰی اپنے بڑے احسان پر ہمیں محفوظ رکھے، آمین۔ت)

اہلِ تنجیم میں قرار پایا ہے کہ جب تک چاند آٹھ درجے آفتاب سے دور نہیں ہوتا ہر گز نظر نہیں آتا صرح بہ الفاضل الرومی (اس پر فاضل رومی نے تصریح کی ہے۔ت) اور جب ۱۲ درجے جدا ہوتا ہے ضرور نظر آتا ہے نص علیہ علامۃ الشریف (علامہ شریف نے اس پر نص کی ہے۔ت) پھر ۲۹

تاریخ مغرب کی تقویم یعنی اُس وقت فلکِ بروج سے شمس و قمر کے مواضع نکال کر فصل دیکھتے ہیں اگر آٹھ درجے سے کم پایا حکم لگا دیا کہ آج رؤیت ہر گز نہ ہوگی اور ۱۲ یا ۱۲ سے زائد دیکھا تو جزم کر دیا کہ ضرور ہو گی، اور اس کے مابین معلوم ہوا تو رؤیتِ ہلال مشکوک رکھتے ہیں، پھر منجمانِ ہند کی ادا کچھ نرالی ہے۔ فقیر نے بارہا دیکھا کہ ۲۹ کی مغرب کو قمر ۱۲ درجے سے بہت زیادہ دُور ہے پھر بھی اُنہوں نے کل کی رؤیت رکھی۔ خیر یہاں یہ کہنا ہے کہ حکمائے یونان اُن کے قواعد وضع کر چکے خود بھی ان پر مطمئن نہیں، تصریح کرتے ہیں کہ احوالِ قمر کا آج تک انضباط نہ ہوا پھر ایسے شاک وشاک فیانہ شک بات کا کیا اعتبار،

[بایاں باکس] لَا عِلْمَ لَنَا إِلَّا مَا عَلَّمْتَنَا إِنَّكَ أَنْتَ الْعَلِيمُ الْحَكِيمُ ﴿32﴾ سبحٰنک ! اقول: و

[دایاں باکس] پاک ہے تیری ذات ہمیں علم نہیں مگر اتنا جو تُو نے ہمیں سکھایا، بلا شبہ تُو ہی جاننے والا ہے اور حکمت والا ہے

---

1 رد المحتار کتاب الصوم مصطفیٰ البابی مصر ۱۰۰/۲ 2 القرآن ۲ / ۳۲

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Right Column - Translation of the Arabic text into Urdu with additional commentary] I say, by this, that thing is refuted upon which Imam al-Subki from the Shafi'is relied, and al-Zarkashi from among them endorsed it. And some from among us Hanafis inclined towards them, saying that reliance on their word is permissible on the basis that calculation is definitive (qati') and testimony is speculative (zanni). We say that calculation too is not definitive in any matter, as you have known, and the possibility of error is not less than the possibility in the report of a just person. And the Lawgiver (peace and blessings of Allah be upon him) declared calculation as null and void and established testimony as certain. In short, the correct position is that relying on the experts of timing (astrologers) is not permissible. (T) Bukhari has narrated it in the Book of Fasting and titled the chapter: "The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: We neither write nor calculate." The attribution by the deceased scholar Abdul Hayy Lucknawi in "Al-Qawl al-Manshur" solely to Muslim is a shortcoming of study. 12 (T) I say: Here, the particle of exception should come after the word 'Shafi'i' because some of his followers also relied on the experts of astronomy, as you have heard. (T)

[Left Column - Arabic Text] And by this, what Imam al-Subki from the Shafi'is relied upon, and al-Zarkashi from among them deemed correct, is refuted. And some of our fellow [Hanafis] leaned towards those who permitted reliance on their (the astronomers') word, based on the assumption that calculation is definitive and testimony is speculative. We say: this calculation also is not definitive in any respect, as you have known, and the possibility of error is not less than its possibility in the report of a reliable person. The Legislator (Peace and Blessings of Allah be upon Him) has indeed invalidated calculation and placed testimony in the status of certainty. In short, the school's position is the absolute impermissibility of relying on them. 12. (H) 1/16: Note 2: Bukhari has narrated it in the Book of Fasting and titled a chapter for it: "The Saying of the Prophet (Peace and Blessings of Allah be upon Him): We do not write and we do not calculate." Thus, the deceased scholar Abdul Hayy al-Lucknawi in "Al-Qawl al-Manshur" fell short by attributing it only to Muslim. 12. (H) 1/16: Note 3: I say: It is better to delay the exception after the word 'al-Shafi'i' because some of his companions also relied on them, as you have heard. 12.

[Bottom Section - Urdu Notes] (M) Moon 2: In the end, it definitely stays for one or two nights; Number 7 above, the legal ruling in Shariah does not depend on this. (Sh) Moon 1/17: If the month is twenty-nine days, it stays for one night; if it is thirty, then

two nights. Then, this morning before sunrise, the moon was seen in the east, and regarding this evening, if legal testimony of sighting is given, it will undoubtedly be accepted. It will not be considered that since the moon was present until this morning, how could it become a crescent moon without setting?

[Bottom Two-Column Box] Left (Arabic): It was seen on the twenty-ninth day before the sun. Right (Urdu): The moon was seen on the twenty-ninth day before sunrise.

[दायां स्तंभ - अरबी पाठ का उर्दू में अनुवाद और अतिरिक्त टिप्पणी] मैं कहता हूँ, इससे उस बात का खंडन हो जाता है जिस पर शाफ़ईयों में से इमाम सुबकी ने भरोसा किया है और उनमें से ज़रकशी ने उसकी पुष्टि की है। और हम हनफियों में से कुछ ने उनकी ओर झुकाव किया कि उनके कथन पर भरोसा जायज़ है इस आधार पर कि गणना निश्चित (क़तई) होती है और गवाही अनुमानित (ज़न्नी)। हम कहते हैं कि गणना भी किसी मामले में निश्चित नहीं है जैसा कि आप जान चुके हैं, और गलती की संभावना एक न्यायपूर्ण व्यक्ति की रिपोर्ट में संभावना से कम नहीं है, और शरीयत देने वाले (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने गणना को व्यर्थ घोषित किया और गवाही को निश्चितता के समान ठहराया। संक्षेप में, सही मज़हब यही है कि समय के विशेषज्ञों (ज्योतिषियों) पर भरोसा करना जायज़ नहीं है। (त) इसे बुखारी ने 'किताब अल-सौम' (उपवास की पुस्तक) में रिवायत किया है और अध्याय का नाम है: "नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का कथन है कि हम न लिखते हैं और न गणना करते हैं।" दिवंगत विद्वान अब्दुल हई लखनवी का 'अल-क़ौल अल-मंशूर' में इसे केवल मुस्लिम की ओर मँढना अध्ययन की कमी है। 12 (त) मैं कहता हूँ: यहाँ अपवाद का शब्द 'शाफ़ई' शब्द के बाद होना चाहिए क्योंकि उनके अनुयायियों में से भी कुछ लोगों ने खगोलविदों पर भरोसा किया है जैसा कि आप सुन चुके हैं। (त)

[बायां स्तंभ - अरबी पाठ] और इसके द्वारा, उस चीज़ का खंडन किया जाता है जिस पर शाफ़ईयों में से इमाम सुबकी ने भरोसा किया था, और उनमें से ज़रकशी ने उसे सही ठहराया था। और हमारे कुछ [हनफी] साथियों ने उन लोगों की ओर झुकाव दिखाया जिन्होंने उनके(खगोलविदों के) कथन पर भरोसा करने की अनुमति दी, इस आधार पर कि गणना निश्चित है और गवाही अनुमानित है। हम कहते हैं: यह गणना भी किसी भी तरह से निश्चित नहीं है, जैसा कि आप जान चुके हैं, और गलती की संभावना एक विश्वसनीय व्यक्ति की रिपोर्ट में इसकी संभावना से कम नहीं है। व्यवस्थापक (अल्लाह की उन पर शांति और आशीर्वाद हो) ने वास्तव में गणना को अमान्य कर दिया है और गवाही को निश्चितता के स्तर पर रखा है। संक्षेप में, संप्रदाय की स्थिति उन पर पूरी तरह से भरोसा न करने की है। 12। (ह) 1/16: नोट 2: इसे बुखारी ने उपवास की पुस्तक में रिवायत किया है और इसके लिए एक अध्याय बनाया है: "नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का कथन: हम न लिखते हैं और न गणना करते हैं।" इस प्रकार, दिवंगत विद्वान अब्दुल हई लखनवी ने 'अल-क़ौल अल-मंशूर' में इसे केवल मुस्लिम की ओर मँढकर कमी की है। 12। (ह) 1/16: नोट 3: मैं कहता हूँ: अपवाद को 'शाफ़ई' शब्द

के बाद लाना बेहतर है क्योंकि उनके अनुयायियों में से भी कुछ ने उन पर भरोसा किया है, जैसा कि आपने सुना है। 12।

[नीचे का भाग - उर्दू नोट्स] (म) चाँद 2: अंत में, यह निश्चित रूप से एक या दो रातों के लिए रहता है; ऊपर नंबर 7, शरीयत में कानूनी फैसला इस पर निर्भर नहीं करता है। (श) चाँद 1/17: यदि महीना उनतीस दिन का होता है तो एक रात रहता है, तीस का हो तो दो रात। फिर आज सुबह सूर्योदय से पहले चाँद पूर्व की ओर देखा गया था, और आज शाम के संबंध में यदि देखने की कानूनी गवाही दी जाती है, तो उसे निस्संदेह स्वीकार किया जाएगा। यह विचार नहीं किया जाएगा कि चूंकि आज सुबह तक चाँद मौजूद था, तो बिना डूबे वह अर्धचंद्र (हिलाल) कैसे हो गया?

[नीचे का दो-स्तंभ वाला बॉक्स] बायां (अरबी): इसे उनतीसवें दिन सूरज से पहले देखा गया। दायां (उर्दू): सूर्योदय से पहले उनतीसवें दिन चाँद देखा गया।

पृष्ठ 836 का 469

[دایاں کالم] اقول اس سے اس کا رد ہو جاتا ہے جس پر شافعی میں سے امام سبکی نے اعتماد کیا ہے اور ان میں سے زرکشی نے اس کی تصویب کی۔ اور ہم احناف میں سے بعض نے ان کی طرف جھکاؤ کیا کہ ان کے قول پر اعتماد جائز ہے اس بناء پر کہ حساب قطعی ہوتا ہے اور شہادت ظنی۔ ہم کہتے ہیں کہ حساب بھی کسی معاملہ میں قطعی نہیں جیسا کہ آپ جان چکے، اور غلطی کا احتمال خبرِ عادل میں احتمال سے کم نہیں، اور شارع صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے حساب کو لغو قرار دیا اور شہادت کو بمنزلہ یقین فرمایا، الغرض مذہب صحیح یہی ہے کہ اہل توقیت (نجومیوں) پر اعتماد جائز نہیں (ت) اسے بخاری نے کتاب الصوم میں روایت کیا ہے اور باب کا نام "حضور علیہ الصلوۃ والسلام کا ارشاد گرامی ہے کہ ہم نہ لکھیں اور نہ حساب کریں" فاضل مرحوم عبدالحی لکھنوی کا "القول المنشور" میں اسے صرف مسلم کی طرف منسوب کرنا قلتِ مطالعہ ہے ۱۲ (ت)

اقول: یہاں حرف استثناء لفظ شافعی کے بعد ہونا چاہیئے کیونکہ ان میں سے کچھ حضرات نے اہل ہیئت پر اعتماد کیا ہے جیسا کہ آپ سن چکے ہیں۔ (ت)

[بایاں کالم] وبهذا يرد ما اعتمده الامام السبكى من الشافعية وصوبه الزركشى منهم وجنح اليه بعض منّا من جوز الاعتماد على قولهم بناء على ان الحساب قطعى والشهادة ظنى قلنا هذا الحساب ايضاً ليس من القطع فى شئ كما علمت واحتمال الغلط ليس باقل من احتماله فى خبر العدل والشارع صلى الله تعالٰى عليه وسلم قد الغى الحساب ونزل الشهادة بمنزلة اليقين وبالجملة فالمذهب عدم جواز الاعتماد عليهم اصلاً ۱۲۔ (ح) ۱/ ۱۶: عہ ۲: قد رواه البخارى فى كتاب الصوم وعقد له، باب قول النبى صلى الله تعالٰى عليه وسلم لا نكتب ولا نحسب، فقصر الفاضل المرحوم عبدالحى اللكهنوى فى "القول المنشور"

عزوہ علی مسلم تقصیر ۱۲۔ (ح) ۱/ ۱۶: عہ ۳: اقول: الاولی تاخیر الاستثناء بعد الشافعی لان من اصحابہ ایضا من اعتمد علیھم کما سمعت ۱۲۔

[نچلا حصہ] (م) قمر ۲: اخیر میں دو ایک رات ضرور بیٹھتا ہے نمبر ۷ اوپر شریعت میں اس پر مدار حکم نہیں۔ (ش) قمر ۱/ ۱۷: مہینہ انیس کا ہوتا ہے تو ایک رات بیٹھتا ہے، تیس کا ہو تو دو رات، پھر آج صبح کو طلوع شمس سے پہلے چاند جانب مشرق نظر آیا تھا اور آج شام کی نسبت شہادت شرعی رؤیت پر گزری، بلاشبہ قبول کی جائے گی اور یہ لحاظ نہ ہوگا کہ آج صبح تک تو چاند موجود تھا بن ڈوبے کیو نکر ہلال عہ ہو گیا۔

[نیچے والا خانہ] روی یوم التاسع والعشرین قبل الشمس | طلوع شمس سے پہلے انتیسویں دن کو چاند دیکھا گیا

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Arabic Text Block]: Then if it (the moon) is seen on the night of the thirtieth after sunset, and legal (Shariah) testimony is provided for it, the ruler gives a verdict based on the sighting at night, as is explicitly mentioned in the Hadith. No attention should be paid to the saying of the astronomers that it is impossible for it to be seen in the morning and then in the evening on the same day. How can it be so, when the leaders (Imams) of the four schools of thought have clarified that the correct position is that no consideration is given to the words of the astronomers. Summarized from Shami (T).

[Urdu Translation of the above]: The moon was seen on the twenty-ninth day before sunrise, then it was seen on the thirtieth night after sunset, and Shariah testimony was also provided for it. In such a case, the ruler should decide based on the night sighting as explicitly stated in the Hadith, and should not pay attention to the statement of the astronomers that it is impossible for the moon to be visible in both the morning and evening of the same day. How could it be otherwise, while the Imams of the [four] schools of thought have clarified that the correct position is that the words of astronomers are not reliable. Summarized from Shami (T).

(H) 7/17: Note: Both the moon and the sun have their own movement from west to east. The daily motion, due to which rising and setting occur daily, is from east to west. Therefore, the moon will be visible in the morning only when it is behind the sun, i.e., shifted towards the west. If it were ahead towards the east, the sun would rise before it. If the moon is deeper underground than the sun in the morning, how could it be seen? When it is behind, it will appear on the eastern horizon before the sun. While the sun is still underground, it can be seen provided the distance is not less than 8 degrees; otherwise, the sun's rays would hide it at such proximity and vision would not work. Similarly, in the evening, it is only seen in the west if it is ahead of the sun, i.e., shifted towards the east. If it were shifted towards the west, it would set before the sun. When it is ahead, it remains on the western horizon after sunset, and its visibility is possible provided the separation is not less than eight degrees. Once this is understood, if it is seen this morning and then also becomes a crescent in the evening, it would imply that in the morning it was eight degrees behind and by evening it became at least eight degrees ahead. It would have covered sixteen degrees in four watches (twelve hours). However, it never moves that much even in a full eight watches (twenty-four hours). This is why astronomers call the simultaneous sighting of morning and evening impossible. But when there is legal

Shariah proof, what is the room for denial? 'Verily, Allah has power over all things.' (Indubitably, Allah Almighty is capable of everything. - T)

(M) Moon 3 Number 18: The moon is not seen on the morning of the 29th night; Shariah does not listen to this either.

(S) 18/3: This claim is more specific than the first claim. There it was about being absent for one or two nights, regardless of whether it sets on the 29th or 30th. Here the specific claim is that it must set on the 29th; Shariah pays no regard to this either. For example, 29th Sha'ban.

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt 2/104 Page 470 of 836

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

[अरबी पाठ]: फिर अगर तीसवीं रात को सूर्यास्त के बाद चाँद देखा गया और उस पर शरीयत के अनुसार गवाही भी दी गई, तो हाकिम (शासक) रात के दर्शन के आधार पर निर्णय देगा, जैसा कि हदीस में स्पष्ट रूप से वर्णित है। ज्योतिषियों (खगोलविदों) की इस बात पर कोई ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए कि एक ही दिन में सुबह और फिर शाम को चाँद देखा जाना असंभव है। यह कैसे हो सकता है, जबकि चारों पंथों के इमामों ने स्पष्ट किया है कि सही मत यही है कि ज्योतिषियों की बात का कोई महत्व नहीं है। शामी से संक्षेपित।

[उपरोक्त का उर्दू अनुवाद]: सूर्योदय से पहले उनतीसवें दिन चाँद देखा गया, फिर सूर्यास्त के बाद तीसवीं रात को देखा गया और उस पर शरीयत के अनुसार गवाही भी हुई, तो हाकिम रात के दर्शन पर फ़ैसला दे जैसा कि इस पर हदीस में स्पष्टीकरण है और ज्योतिषियों के इस कथन की ओर ध्यान न दे क्योंकि यह संभव नहीं कि एक ही दिन में चाँद सुबह और शाम दिखाई दे। यह क्यों न हो, जबकि आइम्मा-ए-मज़ाहिब ने स्पष्ट किया है कि सही मज़हब यही है कि ज्योतिषियों के कथन का कोई ऐतबार नहीं। शामी से संक्षेपित (त)।

(ह) 7/17: नोट: चाँद और सूरज दोनों की अपनी गति पश्चिम से पूर्व की ओर है, और दैनिक गति जिसके कारण प्रतिदिन उदय और अस्त होता है, पूर्व से पश्चिम की ओर है। अत; चाँद सुबह के समय तभी दिखाई देगा जब वह सूरज के पीछे हो, यानी पश्चिम की ओर हटा हुआ हो। क्योंकि अगर वह पूर्व की ओर बढ़ा हुआ होता, तो सूरज उससे पहले उदय हो जाता। सुबह के समय यदि चाँद सूरज से भी अधिक ज़मीन के नीचे हो, तो वह कैसे दिखाई दे सकता है? और जब वह पीछे होता है, तो वह सूरज से पहले पूर्वी क्षितिज पर चमकेगा। जब सूरज अभी भी ज़मीन के नीचे होगा, तो वह देखा जा सकता है बशर्ते कि दूरी 8 डिग्री से कम न हो; अन्यथा, सूरज की किरणें इतनी निकटता में उसे छिपा लेंगी और दृष्टि काम नहीं करेगी। इसी तरह, शाम को पश्चिम में वह तभी दिखाई देता है जब वह सूरज से आगे हो, यानी पूर्व की ओर बढ़ा हुआ हो। क्योंकि अगर वह पश्चिम की ओर हटा हुआ होता, तो वह सूरज से पहले डूब जाता। और जब वह आगे होता है, तो वह सूर्यास्त के बाद पश्चिमी क्षितिज पर बना रहेगा। दृश्यता संभव है बशर्ते कि अलगाव आठ डिग्री से कम न हो। जब यह समझ लिया गया, तो अगर आज सुबह भी दिखाई दे और फिर शाम को भी नया चाँद (हिलाल) हो, तो इसका मतलब होगा कि सुबह वह आठ डिग्री पीछे था और शाम को कम से कम आठ डिग्री आगे हो गया। उसने चार पहर (बारह घंटे) में सोलह डिग्री की दूरी तय की। हालांकि, वह कभी भी पूर्ण आठ पहर (चौबीस घंटे)

में इतना नहीं चलता। यही कारण है कि खगोलशास्त्री सुबह और शाम के संयुक्त दर्शन को असंभव कहते हैं। लेकिन जब शरीयत का प्रमाण मौजूद हो, तो इनकार की कोई गुंजाइश नहीं है। 'निश्चय ही अल्लाह हर चीज़ पर सक्षम है।' (बेशक अल्लाह तआला हर चीज़ पर क़ादिर है। - त)

(म) क़मर 3 नंबर 18: उनतीसवीं रात की सुबह को चाँद दिखाई नहीं देता; शरीयत इसे भी नहीं मानती।

(श) 18/3: यह दावा पहले दावे से अधिक विशिष्ट है। वहाँ एक या दो रात बैठने की बात थी, चाहे वह 29 को डूबे या 30 को। यहाँ विशिष्ट दावा है कि वह 29 को ज़रूर डूबता है; शरीयत में इस पर भी विचार नहीं किया जाता। उदाहरण के लिए, 29 शाबान।

1. रद-उल-मुख़्तार, किताब अल-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 2/104 पृष्ठ 836 का 470

ثم رؤی لیلة الثلاثین بعد الغروب و شهدت بینة شرعیة بذلك فان الحاکم یحکم برؤیته لیلا کما هو نص الحدیث ولا یلتفت الی قول المنجمین انه لا یمکن رؤیته صباحاً ثم مساء فی یوم واحد، کیف وقد صرحت ائمة المذهب الاربعة بأن الصحیح انه لا عبرة بقول المنجمین 'ش ملخصاً۔

طلوعِ شمس سے پہلے انتیسویں دن کو چاند دیکھا گیا پھر غروب کے بعد تیسویں رات کو دیکھا گیا اور اس پر شرعی گواہی بھی ہوئی تو حاکم رات کی رؤیت پر فیصلہ دے جیسا کہ اس پر حدیث میں تصریح ہے اور اہلِ نجوم کے اس قول کی طرف توجہ نہ کرے کیونکہ یہ ممکن نہیں کہ ایک ہی دن میں چاند صبح اور شام دکھائی دے، یہ کیوں نہ ہو، حالانکہ ائمہ مذاہب نے تصریح کی ہے کہ صحیح مذہب یہی ہے کہ اہلِ نجوم کے قول کا اعتبار نہیں، شامی ملخصاً(ت)

(ح) ۷/۱۷: عہ چاند سورج دونوں کی اپنی چال مغرب سے مشرق کو ہے، اور حرکتِ یومیہ جس کے سبب طلوع و غروب روزانہ ہوتا ہے مشرق سے مغرب کو تو چاند صبح کے وقت جب ہی نظر آئیگا کہ سورج کے پیچھے ہو یعنی جانبِ مغرب ہٹا ہوا ہو کہ اگر جانبِ مشرق بڑھا ہو تو آفتاب اس سے پہلے طلوع کرے گا، صبح کے وقت چاند آفتاب سے بھی زیادہ زیر زمین اترا ہوگا نظر کیونکر آئے، اور جب پیچھے ہے تو افقِ مشرقی پر سورج سے پہلے چمک آئیگا، آفتاب ہنوز زیر زمین ہوگا، تو نظر آسکتا ہے بشرطیکہ ۸ درجے سے کم نہ ہو، ورنہ اتنے قرب میں سورج کی شعاعیں اسے چھپالیں گی، نظر کام نہ کر سکے گی۔ اسی طرح شام کو مغرب میں جب ہی نظر آتا ہے کہ سورج کے آگے یعنی جانبِ مشرق بڑھا ہو کہ اگر جانبِ مغرب ہٹا ہوگا تو سورج سے پہلے ڈوب جائے گا، اور جب آگے ہے تو افقِ غربی پر بعد غروبِ آفتاب باقی رہے تو نظر آنا ممکن

بشرطیکہ آٹھ درجہ سے کم فصل نہ ہو۔ جب یہ بات سمجھ لی تو اگر آج صبح کو نظر بھی آئے پھر شام کو ہلال بھی ہو تو لازم ہے کہ صبح کو آٹھ درجے پیچھے تھا شام کو لااقل آٹھ درجے آگے ہو گیا، چار پہر میں سولہ درجے طے کر گیا، حالانکہ وہ کبھی آٹھ پہر کامل میں بھی اتنا نہیں چلتا اس وجہ سے ہیأت والے اجتماعِ رؤیتِ صبح و شام کو ناممکن کہتے ہیں، مگر جب ثبوتِ شرعی ہو تو انکار کا کیا یار، اِنَّ اللہَ عَلٰی کُلِّ شَیْءٍ قَدِیرٌ (بلاشبہ اللہ تعالٰی ہر شئی پر قادر ہے۔ ت)

(م) قمر ۳ نمبر ۱۸: انتیس ۲۹ رات کی صبح کو چاند نظر نہیں آتا، شرع اسے بھی نہیں سنتی۔

(ش) ۱۸/۳: یہ دعوٰی دعوٰیِ اول سے اخص ہے وہاں دو ایک رات بیٹھنا تھا، عام ازیں کہ ۲۹ کو ڈوبے یا ۳۰ کو، یہاں خاص دعوٰی ہے کہ ۲۹ کو ضرور ڈوبتا ہے، شرع میں اس پر بھی لحاظ نہیں۔ مثلاً ۲۹ شعبان

1 ردالمحتار کتاب الصوم مصطفٰی البابی مصر ۲ / ۱۰۴ Page 470 of 836

Fatawa-e-Razvia Volume 10

On Sunday evening it was cloudy; Sharia witnesses reported the sighting, so it was determined that Ramadan started the next morning. Now, according to the count, on Monday the 29th of Ramadan, the moon was present before sunrise. If anyone thinks that Monday was the 1st, then why would the moon be visible on the morning of the 29th? It is certain that the witnesses made a mistake; Sha'ban was 30 days, and today is the 28th. If it's cloudy, Ramadan will complete 30 days based on this calculation. So this thought will be completely wrong; rather, it will remain the 29th of Monday and rulings will be based on it. *And the evidence for this along with the chain of narration has already been covered in our previous discussion.* (Translator's note: T).

(M) No. 19: When the moon is seen during the day before noon, it only happens if it had become a crescent the previous night. However, in the correct Mazhab (school of jurisprudence), even this is not considered.

(Sh) 19/4: For example, if on Thursday, the 29th of Sha'ban or the 29th of Ramadan, it was cloudy and there was no sighting, but the moon was seen before Friday noon, then although logic suggests it became a crescent on Friday night (otherwise it wouldn't be seen before noon), today should be the 1st. But in the correct Mazhab, this will not be considered, and today will be the 30th.

(Arabic Text)

Sighting it during the day [counts] for the coming night absolutely, according to the Mazhab. Al-Haddadi mentioned it (i.e., whether seen before or after the meridian according to the Mazhab, which is the view of Abu Hanifa and Muhammad). (Summarized) (Sh): It is necessitated by the Hadith, i.e., his statement (peace be upon him): "Fast upon its sighting and break fast upon its sighting." Thus, it is necessary for the sighting to precede the fasting and breaking of fast. The immediate meaning understood from it is the sighting at the evening of the end of

(Urdu Translation of Arabic)

The moon seen during the day, according to the correct Mazhab, will in all cases be counted for the coming night. Al-Haddadi mentioned this as the correct Mazhab, which is the Mazhab of Imam-e-Azam and Imam Muhammad, that whether it appears before or after the meridian (Shami), it is proven from the Prophetic Hadith—upon whose possessor be prayers and peace—which says: "Fast by seeing the moon and celebrate Eid by seeing the moon." From this, it is necessary for the moon sighting to happen before fasting and Eid. This conveys the immediate meaning that the moon sighting intended is that which

(Arabic Text)	(Urdu Translation of Arabic)
each month among the Sahaba, Tabi'un, and those after them. This is contrary to what is seen before the meridian on the thirtieth day, and the chosen [view]...	occurs on the last evening of every month. This is what the Sahaba, Tabi'un, and the scholars after them have said, contrary to being seen before the meridian on the thirtieth day, and the chosen of Imam-e-Azam...

^1 *Rad al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt 103/2.*

फ़तावा-ए-रज़विया, खंड 10

रविवार की शाम को बादल थे, शरई गवाहों ने चाँद देखने की गवाही दी, सुबह रमज़ान ठहरा, अब जो गिनती हुई तो 29 रमज़ान सोमवार को सूरज निकलने से पहले चाँद मौजूद था। इस पर कोई विचार करे कि सोमवार की पहली हुई तो आज 29 को चाँद सुबह के वक्त कैसे नज़र आता? ज़रूर है कि गवाहों ने गलती की, शाबान 30 का हुआ, आज 28 है, अगर बादल हो तो इसी हिसाब पर रमज़ान के30 पूरे होंगे। तो यह विचार पूरी तरह गलत होगा बल्कि वही सोमवार की 29 ठहरेगी और उसी पर अहकाम (आदेश) आधारित रहेंगे। और इस पर दलील और सनद हमारी पिछली चर्चा में आ चुकी है। (त)

(म) नंबर 19: दिन में दोपहर से पहले चाँद तभी नज़र आता है जब पिछली रात हिलाल (नया चाँद) हो चुका हो, लेकिन सही मज़हब में इसका भी कोई लिहाज़ (विचार) नहीं है।

(श) 19/4: यानी मिसाल के तौर पर जुमेरात 29 शाबान या 29 रमज़ान को बादल था और चाँद नज़र नहीं आया, जुमे (शुक्रवार) की दोपहर से पहले चाँद नज़र आया, तो हालाँकि कयास (तर्क) यही चाहता है कि जुमे की रात में हिलाल हो गया था, वरना दोपहर से पहले नज़र न आता। तो आज पहली होनी चाहिए। मगर सही मज़हब में इसका कुछ लिहाज़ न होगा और आज तीस (30) ही ठहरेगी।

(अरबी पाठ)

दिन के समय चाँद देखना आने वाली रात के लिए होगा, मज़हब के अनुसार। अल-हद्दादी ने इसका उल्लेख किया है (यानी चाहे ज़वाल से पहले देखा जाए या बाद में, उस मज़हब के अनुसार जो अबू हनीफ़ा और मुहम्मद का कथन है)। (संक्षेप में) (श): यह हदीस के कारण आवश्यक है, यानी उनका (उन पर शांति हो) कथन: "चाँ› देखकर रोज़ा रखो और चाँद देखकर इफ्तार (ईद) करो।" अतः रोज़े और ईद से पहले चाँद देखना ज़रूरी है। इससे तुरंत

(उर्दू अनुवाद)

दिन में देखा जाने वाला चाँद सही मज़हब के अनुसार हर हाल में आने वाली रात का गिना जाएगा। इसे हद्दादी ने उल्लेख किया है, सही मज़हब जो इमाम-ए-आज़म और इमाम मुहम्मद का मज़हब है, कि चाहे ज़वाल से पहले दिखाई दे या ज़वाल के बाद (शामी), यह इस नबवी हदीस से प्रमाणित है—जिसके स्वामी पर दरूद और सलाम हो—कि चाँद देखकर रोज़ा रखो और चाँद देखकर ईद करो, तो इससे चाँद का दीदार रोज़े और ईद से पहले होना ज़रूरी है, इससे यही अर्थ निकलता है

(अरबी पाठ)

समझ में आने वाला अर्थ हर महीने के अंत की शाम को चाँद देखना है, जैसा कि सहाबा, ताबईन और उनके बाद वालों के यहाँ था। यह तीसवें दिन ज़वाल से पहले दिखाई देने के विपरीत है, और चुनी हुई राय...

(उर्दू अनुवाद)

कि चाँद का दीदार जो हर महीने की आखिरी शाम को हो, वही मुराद (उद्देश्य) है। यही सहाबा, ताबईन और उनके बाद आने वाले विद्वानों ने कहा है, सिवाय तीसवें दिन ज़वाल से पहले दिखाई देने के, और इमाम-ए-आज़म की चुनी हुई राय...

^1 रद-उल-मुहतार, किताब-उस-सौम, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र *103/2.*

पृष्ठ 471/836

روز یکشنبہ کو شام کے وقت ابر تھا، گواہانِ شرعی نے رؤیت بیان کی، صبح کو رمضان ٹھہرا، اب جو گنتی ہوئی آئی تو ۲۹ رمضان دو شنبہ کو طلوعِ شمس سے پیشتر چاند موجود تھا، اس پر کوئی خیال کرے دوشنبہ کی پہلی ہوئی تو آج ۲۹ کو چاند صبح کے وقت کیونکر نظر آتا، ضرور ہے کہ گواہوں نے غلطی کی شعبان ۳۰ کا ہوا، آج ۲۸ ہے ابر ہوا تو اسی حساب پر رمضان کے ۳۰ پورے ہوں گے، تو یہ خیال محض غلط ہوگا بلکہ وہی دوشنبہ کی ۲۹ ٹھہرے گی اواسی پر بناء احکام رہے گی والدلیل علی ذلک مع السند قد انطوی فیما قدمنا (اور اس پر دلیل مع سند ہماری سابقہ گفتگو میں آچکی ہے۔ ت)

(م) نمبر ۱۹: دن کو دوپہر سے پہلے چاند جب ہی نظر آتا ہے کہ شبِ گزشتہ ہلال ہوچکا ہو، پر صحیح مذہب میں اس کا بھی لحاظ نہیں۔

(ش) ۱۹/۴: یعنی مثلاً پنجشنبہ ۲۹ شعبان یا ۲۹ رمضان کو ابر تھا رؤیت نہ ہوئی جمعہ کی دوپہر سے پہلے چاند نظر آیا تو اگرچہ قیاس یہی چاہتا ہے کہ شبِ جمعہ میں ہلال ہوگیا، ورنہ دوپہر سے پہلے نظر نہ آتا۔ تو آج پہلی ہونی چاہئے۔ مگر صحیح مذہب میں اس کا کچھ لحاظ نہ ہوگا اور آج تیس ہی ٹھہرے گی۔

| رؤیته بالنهار للیلة الآتیة مطلقاً علی المذهب ذکره الحدادی (ای سواء روی قبل الزوال او بعده علی المذهب الذی ہو قول ابی حنیفة و محمد (ملخصاً)(ش) اوجب الحدیث ای قوله علیه الصلوة والسلام صوموا لرؤیته وافطر والرویته، فوجب فسبق الرؤیة علی الصوم و الفطر و المفهوم المتبادر منه الرؤیة عند عشیة آخر کل شهر عند الصحابة والتابعین ومن بعدهم بخلاف ماقبل الزوال من الثلثین و المختار

| دن کو دیکھا جانے والا چاند مذہب صحیح کے مطابق ہر حال میں آئندہ رات کا شمار ہوگا۔ اسے حدادی نے ذکر کیا مذہب صحیح جو امام اعظم اور امام محمد کا مذہب ہے کہ مطابق خواہ زوال سے پہلے دکھائی دے یا زوال کے بعد، (شامی) یہ اس حدیث نبوی علی صاحبہا الصلوۃ والسلام سے ثابت ہے کہ چاند دیکھ کر روزہ رکھو اور چاند دیکھ کر عید کرو، تو اس سے چاند کی رؤیت کا روزے اور عید سے پہلے ہونا ضروری ہے، اس سے متباد در یہی مفہوم ہوتا ہے کہ چاند کی رؤیت جو ہر ماہ کی آخری شام کی ہو، مراد ہے۔ یہی صحابہ، تابعین اور ان کے بعد آنے والے اہل علم نے کہا ہے، بخلاف تیسویں دن کے ماقبل الزوال دکھائی دینے کے، اور مختار امام اعظم |

[1][8] رد المحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۱۰۳/۲

Fatawa Razawiyya, Volume 10

Arabic/Citations	Urdu Translation/Explanation
Their statement (ft) (Fath al-Qadir) and similarly it is explicitly stated as chosen in 'Ain (ع) and Khz (خز) (Khizanat al-Muftin) and S (ص) (Khulasa) and Q (ق) (Qadi Khan) and Mar (مرو) Bz (بزازية) (Bazzaziyya) and Jo (جو) (Jawahir al-Akhlati) and Maj (مج) (Majma' al-Anhur) and B (ب) (Bahr al-Ra'iq) and al-Ikhtiyar, Jami' al-Mudmarat, al-'Inaya, al-Ghiyathiyya, al-Tatar-khaniyya, al-Tajnis, and others.	And the opinion of Imam Muhammad is as such (in Fath al-Qadir) for it being chosen. Explicit mention of this is in 'Ain, Khizanat al-Muftin, Khulasa, Qadi Khan, Mar, Bazzaziyya, Jawahir al-Akhlati, Majma' al-Anhur, Bahr al-Ra'iq, al-Ikhtiyar, Jami' al-Mudmarat, al-'Inaya, al-Ghiyathiyya, al-Tatar-khaniyya, and al-Tajnis, etc. (T)

(H) 19/4: The restriction of "before midday" was placed because if it is seen after the decline (zawal), according to common books, it will not be considered the moon of the previous night, because even the moon of the thirtieth day is often seen during the day, but after the sun has passed its zenith (midday).

Arabic/Citations	Urdu Translation/Explanation
Thus it is in common books like al-Bada'i', al-Idah, al-Manzuma, al-Khaniyya, Tumm (طم), Sh (ش), al-Bazzaziyya, al-'Attabiyya, al-Dhakhira, al-Tatar-khaniyya, Jami' al-Rumuz, Jawahir al-Akhlati, al-Ikhtiyar, al-Bahr, al-Tabyin, al-Mujtaba, al-Qunya, Majma' al-Bahrayn and its commentary by Ibn Malik, the commentary of al-Kanz by Mulla Miskin, and others. And it occurred in Majma' al-Anhur following what is in al-Fath from al-Tuhfa that according to Abu Yusuf, if it is seen before the decline or after it until the time of 'Asr, then it is for the past night, and after that, it is for the future night.[2]	It is the same in common books, for example, Bada'i', Idah, Manzuma, Khaniyya, Tumm, Shami, Bazzaziyya, 'Attabiyya, Dhakhira, Tatar-khaniyya, Jami' al-Rumuz, Jawahir al-Akhlati, Ikhtiyar, Bahr, Tabyin, Qunya, Majma' al-Bahrayn and its commentary by Ibn Malik, and the commentary of Kanz by Mulla Miskin, etc. And in Majma' al-Anhur, following Fath, it is quoted from Tuhfa that the saying of Imam Abu Yusuf is: when the moon is seen before the decline or after it until 'Asr, it belongs to the previous night, and if it appears after that, it will belong to the following night. (T)

(M) Note No. 20: No consideration should be given to the moon being large.

[1] Kanz al-'Ummal with reference to Mu'jam al-Kabir, Hadith 38469, Maktabah al-Turath al-Islami, Egypt 12/220. [2] Kanz al-'Ummal with reference to Mu'jam al-Awsat, Hadith 38470, Maktabah al-Turath al-Islami, Egypt 12/220.

फतावा रज़विया, खंड दस

अरबी / उद्धरण

उनका कथन (फत) (फतह अल-क़दीर) और इसी तरह 'ऐन (ع) और खज़ (خز) (खज़ानत अल-मुफ़्तीन) और स (ص) (खुलासा) और क (ق) (क़ाज़ी ख़ान) और मर (مرو) बज़ (بزازية) (बज्जाज़िया) और जो (جو) (जवाहिरे अख़्लाती) और मज (مج) (मजमा अल-अन्हुर) और ब (ب) (बहर अर-रईक) और अल-इख्तियार, जामे अल-मुदमरात, अल-'इनाया, अल-ग़ियासिया, अल-तातारखानिया, अल-तजनीस आदि में इसके चयन का स्पष्ट उल्लेख है।

उर्दू अनुवाद / व्याख्या

और इमाम मुहम्मद का कथन यही है (फतह अल-क़दीर में) इसके चुने जाने पर। 'ऐन, ख़ज़ानत अल-मुफ़्तीन, खुलासा, क़ाज़ी खान, मर, बज्जाज़िया, जवाहिरे अख़्लाती, मजमा अल-अन्हुर, बहर अर-रईक, इख्तियार, जामे अल-मुदमरात, इनाया, ग़ियासिया, तातारखानिया और तजनीस आदि में स्पष्ट उल्लेख है। (त)

(ह) १९/४: "दोपहर से पहले" का प्रतिबंध इसलिए लगाया गया था क्योंकि यदि यह ज़वाल (दोपहर के ढलने) के बाद देखा जाता है, तो आम किताबों के अनुसार, इसे पिछली रात का चाँद नहीं माना जाएगा, क्योंकि तीसवीं तारीख का चाँद भी अक्सर दिन के दौरान देखा जाता है, लेकिन दोपहर ढलने के बाद।

अरबी / उद्धरण

इस प्रकार यह आम किताबों जैसे अल-बदई', अल-ईज़ाह, अल-मनज़ूमा, अल-ख़ानिया, तुम (طم), श (ش), अल-बज्जाज़िया, अल-'अत्ताबिया, अल-ज़ख़ीरा, अल-तातारखानिया, जामे अल-रुमूज़, जवाहिरे अख़्लाती, अल-इख्तियार, अल-बहर, अल-तबीन, अल-मुजतबा, अल-क़ुनिया, मजमा अल-बहरैन और इब्न मलिक द्वारा इसकी व्याख्या, मुल्ला मिस्कीन द्वारा अल-कंज की व्याख्या आदि में है। और मजमा अल-अन्हुर में फतह का अनुसरण करते हुए तुहफ़ा से यह बात आई है कि इमाम अबू यूसुफ

उर्दू अनुवाद / व्याख्या

आम किताबों में इसी तरह है जैसे बदई', ईज़ाह, मनज़ूमा, ख़ानिया, तुम, शामी, बज्जाज़िया, अत्ताबिया, ज़ख़ीरा, तातारखानिया, जामे अल-रुमूज़, जवाहिरे अख़्लाती, इख्तियार, बहर, तबीन, क़ुनिया, मजमा अल-बहरैन और इब्न मलिक द्वारा इसकी व्याख्या, और मुल्ला मिस्कीन द्वारा कंज की व्याख्या आदि। मजमा अल-अन्हुर में फतह की पैरवी में और वहां तुहफ़ा से है कि इमाम अबू यूसुफ का कहना यह है कि जब

अरबी / उद्धरण	उर्दू अनुवाद / व्याख्या
के अनुसार, यदि चाँद ज़वाल से पहले या उसके बाद 'अस्र के समय तक देखा जाता है, तो वह पिछली रात का होता है, और उसके बाद दिखाई देने पर वह आने वाली रात का होगा।[2]	चाँद ज़वाल से पहले या उसके बाद 'अस्र तक दिखाई दे तो वह पिछली रात का होता है और अगर इसके बाद नज़र आए तो वह आने वाली रात का होगा। (त)

(म) नोट नंबर २०: चाँद के बड़ा होने का कोई विचार नहीं किया जाना चाहिए।

[1] कंजुल उम्माल हवालह मोजम अल-कबीर हदीस 38469, मकतबा अत-तुराथ अल-इस्लामी मिस्र 12/220। [2] कंजुल उम्माल हवालह मोजम अल-औसत हदीस 38470, मकतबा अत-तुराथ अल-इस्लामी मिस्र 12/220।

عربی / حوالہ جات	اردو ترجمہ / تشریح
قولهما' (فت)(فتح القدير) وكذا صرح باختياره فی ع وخز (خزانة المفتين) و ص (خلاصة) و ق(قاضی خان) ومرو بز(بزازية) وجو (جواہر الاخلاطی) ومج(مجمع الانہر) وب(بحرالرائق) والاختيار وجامع المضمرات والعناية والغياثية والتتارخانية والتجنيس وغيرہا۔	اور امام محمد کا قول ہی ہے (فتح القدیر) اس کے مختار ہونے پر ع، خزانۃ المفتین، خلاصۃ، قاضی خاں، مر، بزازیہ، جواہر الاخلاطی، مجمع الانہر، بحر الرائق، اختیار، جامع المضمرات، عنایہ، غیاثیہ، تاتارخانیہ اور تجنیس وغیرہ میں تصریح ہے۔(ت)

(ح) ۱۹/۴ ع: دو پہر سے پہلے کی قید اس لئے لگائی کہ اگر بعد زوال نظر آیا تو عامہ کتب کے نزدیک گزشتہ رات نہ ٹھہرے گا کہ تیس کا چاند بھی اکثر دن سے نظر آجاتا ہے مگر دو پہر ڈھلنے کے بعد،

عربی / حوالہ جات	اردو ترجمہ / تشریح
هكذا فی عامة الكتب كالبدائع والايضاح والمنظومة والخانية وطم وش والبزازية والعتابية والذخيرة والتتارخانية وجامع الرموز وجواہر الاخلاطی والاختيار والبحر و التبيين والمجتبی والقنية ومجمع البحرين و شرحہ لابن ملك وشرح الكنز لملا مسكين وغيرها و	عام کتب میں اسی طرح ہے مثلاً بدائع، ایضاح، منظومہ، خانیہ، طم، شامی، بزازیہ، عتابیہ، ذخیرہ، تاتارخانیہ، جامع الرموز، جواہر الاخلاطی، اختیار، بحر، تبیین، قنیہ، مجمع البحرین اور اس کی شرح لابن ملک، اور شرح کنز لملا مسکین وغیرہ اور مجمع الانہر میں فتح کی اتباع میں اور وہاں تحفہ

عربی / حوالہ جات **اردو ترجمہ / تشریح**

وقع فی المجمع الانہر تبعالما فی الفتح من سے ہے کہ امام ابو یوسف کا قول یہ ہے کہ جب چاند

التحفة انه عند ابی یوسف اذا رؤی قبل الزوال زوال سے پہلے یا اس کے بعد عصر تک دکھائی دے

او بعده الی وقت العصر فللما ضیة وبعده تو وہ گزشتہ رات کا ہوتا ہے اور اگر اس کے بعد

للمستقبل2 نظر آئے تو وہ آئندہ رات کا ہوگا۔ (ت)

(م) قمرہ نمبر ۲۰: کے بڑے ہونے کا کچھ خیال نہ چاہئے۔

1 کنز العمال بحوالہ معجم الکبیر حدیث ۳۸۴۶۹ مکتبہ التراث الاسلامی مصر ۱۲ / ۲۲۰ 2 کنز العمال بحوالہ معجم الاوسط حدیث ۳۸۴۷۰ مکتبہ التراث الاسلامی مصر ۱۲ / ۲۲۰

Fatawa Razawiyya Volume 10

(Q) 20/5: Many people, upon seeing a large crescent moon, start saying it must be from yesterday or that today wasn't the 29th but the 30th, because a 29th-day moon isn't usually that large. This is their misconception. Sharia matters have already been discussed above, where conjectural talk has no place. Even if we follow the science of astronomy, God willing, this humble servant can prove that it's possible for a 29th-day moon to be larger than some 30th-day moons. And most importantly, to dispel doubts, Tabarani narrated in 'Mu'jam al-Kabir' from Hazrat Abdullah bin Masood (may Allah be pleased with him) that the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) said:

[Arabic]: 'Iqtirab as-Sa'ah intifakh al-ahillah' | [Translation]: One effect of the proximity of the Hour is that the crescents will appear large.

And in 'Mu'jam al-Awsat', it is narrated from Hazrat Anas bin Malik (may Allah be pleased with him) that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said:

[Arabic]: 'Min iqtirab as-Sa'ah an yura al-hilalu qubulan fayuqalu huwa lilailatayn.' | [Translation]: A sign of the proximity of the Hour is that the crescent will be seen directly, and the observer will say it is two nights old.

In Sahih Muslim, it is narrated from Abu al-Bakhtari that we went out for Umrah and saw the crescent in Batn Nakhla. Someone said it is three nights old, someone said two nights. We presented the situation to Hazrat Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them both). He asked, "On which night did you see it?" We said, "Such-and-such night." He said the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Table] - Arabic: 'Innallaha Ta'ala ammadahu (1) lil-ru'yati fahuwa li-lailati (2) ra'aytumuuhu.' | Urdu Translation: Allah has made it dependent on sighting, so it belongs to the night on which you saw it. - Footnote (1) in table: Meaning He made the time of fasting extend until the time of sighting the crescent. 12 (T) - Footnote (2) in table: In 'Al-Qawl al-Manshur', the learned scholar of Lucknow has written "li-ru'yati ra'aytumuuhu"; this is a scribal error. 12 (T) - Right side continuation: Allah the Almighty has extended the time of fasting until the time of sighting the crescent 12 (T), and in 'Al-Qawl al-Manshur', the Fazil of Lucknow has written "li-ru'yati ra'aytumuuhu"; this is a scribal error. 12 (T)

(M) Qamar 6: Neither pay attention to its height in number 21 nor to the long duration the moon remains visible.

(Q) 21/6: Many people, seeing the moon high up, also make similar conjectures. Some say if it were the 29th, it wouldn't be this...

---

1. Kanz al-Ummal, with reference to Mu'jam al-Kabir, Hadith 38469, Maktabat al-Turath al-Islami, Egypt, 14/220.
2. Kanz al-Ummal, with reference to Mu'jam al-Awsat, Hadith 38470, Maktabat al-Turath al-Islami, Egypt, 14/220.
3. Sahih Muslim, Kitab al-Siyam, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/348.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

(श) 20/5: बहुत से लोग चाँद को बड़ा देखकर कहने लगते हैं कि यह कल का है या आज 29 नहीं बल्कि 30 थी, क्योंकि 29 का चाँद इतना बड़ा नहीं होता। यह उनकी गलतफहमी है। शरीयत के मामले ऊपर बताए जा चुके हैं जहाँ कयास (अनुमान) की कोई जगह नहीं है। और अगर खगोल विज्ञान (एस्ट्रोनॉमी) के अनुसार भी चलें, तो इंशाअल्लाह यह फकीर साबित कर सकता है कि 29 का चाँद कुछ 30 के चाँद से बड़ा होना मुमकिन है। और सबसे बढ़कर भ्रम दूर करने वाली बात यह है कि तबरानी ने 'मोजम-ए-कबीर' में हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

[अरबी]: 'इक़्तिराबुस साअह इन्तिफ़ाख़ुल अहिल्लह' | [हिंदी अनुवाद]: क़यामत (प्रलय) के करीब होने का एक असर यह है कि हिलाल (नया चाँद) बड़े नज़र आएँगे।

और 'मोजम-ए-औसत' में हज़रत अनस बिन मलिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

[अरबी]: 'मिन इक़्तिराबिस साअति अन युरल हिलालु क़ुबुलन फ़युक़ालु हुवा लिलैतैन' | [हिंदी अनुवाद]: क़यामत के करीब होने की एक निशानी यह है कि हिलाल अचानक सामने नज़र आएगा और देखने वाला कहेगा कि यह दो रातों का है।

सहीह मुस्लिम शरीफ़ में अबुल बख्तरी से रिवायत है कि हम उमराह के लिए निकले और बत्ने नखला में हिलाल देखा। किसी ने कहा तीन रातों का है, किसी ने कहा दो रातों का। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) को यह बात बताई गई। उन्होंने पूछा, "तुमने किस रात देखा?" हमने कहा, "फ़लाँ रात।" उन्होंने कहा कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

[तालिका] - अरबी: 'इन्नल्लाहा तआला अम्दहू (1) लिरुय्यति फ़हुवा लिलैलति (2) रअयतुमुहू' | हिंदी अनुवाद: अल्लाह तआला ने इसे रुय्यत (देखने) पर निर्भर किया है, तो जिस रात तुमने देखा, यह उसी रात का है। - तालिका में टिप्पणी (1): अर्थात् अल्लाह ने रोज़े के समय को चाँद देखने के समय तक बढ़ा दिया है। 12 (त) - तालिका में टिप्पणी (2): लखनऊ के विद्वान की किताब 'अल-कौल अल-मंशूर' में "लिरुय्यति रअयतुमुहू" लिखा है, यह लिखने की गलती (तशहीफ़) है। 12 (त) - दाईं ओर विस्तार: अल्लाह तआला ने रोज़े के समय को चाँद देखने के ज़माने तक लंबा (मम्तद) किया है 12

(त) और 'अल-कौल अल-मंशूर' में फ़ाज़िल-ए-लखनवी ने "लिरुय्यति रअयतुमुहू" लिखा है, यह तशहीफ़ (लिखने की त्रुटि) है। 12 (त)

(म) कमर 6: न तो नंबर 21 के ऊँचा होने पर ध्यान दें और न ही चाँद के देर तक टिके रहने पर।

(श) 21/6: बहुत से लोग चाँद को ऊँचा देखकर भी इसी तरह की बातें करते हैं। कुछ कहते हैं कि अगर 29 का होता तो इतना...

---

1. कन्ज़ुल उम्माल, मोजमुल कबीर के हवाले से, हदीस 38469, मकतबतुत तुरासिल इस्लामी, मिस्र, 14/220
2. कन्ज़ुल उम्माल, मोजमुल औसत के हवाले से, हदीस 38470, मकतबतुत तुरासिल इस्लामी, मिस्र, 14/220
3. सहीह मुस्लिम, किताबुस सियाम, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/348

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

(ش) ۲۰/۵: بہت لوگ چاند کو بڑا دیکھ کر کہنے لگتے ہیں کہ کل کا ہے یا آج ۲۹ نہ تھی ۳۰ تھی کہ ۲۹ کا چاند اتنا بڑا نہیں ہوتا، یہ اُن کی خام خیالی ہے، شرعی معاملے تو اوپر ہو چکے کہ وہاں قیاسی باتوں کا دخل نہیں اور بطورِ علمِ ہیئت ہی چلئے تو ان شاء اللہ تعالٰی فقیر ثابت کر سکتا ہے کہ ۲۹ کا چاند بعض ۳۰ کے چاندوں سے بڑا ہونا ممکن۔ اور سب سے بڑھ کر دافعِ اوہام یہ ہے کہ طبرانی نے معجمِ کبیر میں حضرت عبد اللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کی کہ حضرت سیدِ عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: اقتراب الساعة انتفاخ الاهلة - قرب قیامت کا ایک اثر یہ ہے کہ ہلال بڑے نظر آئیں گے۔ اور معجم اوسط میں حضرت انس بن مالک رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی، حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: من اقتراب الساعة ان یری الهلال قبلا فیقال هو للیلتین الحدیث - قرب قیامت کی ایک علامت یہ ہے کہ ہلال سامنے ہی نظر پڑے گا دیکھنے والا کہے گا کہ دو رات کا ہے۔ صحیح مسلم شریف میں ابوالبختری سے مروی ہے کہ ہم عمرے کو نکلے بطنِ نخلہ میں ہلال دیکھا کسی نے کہا تین ۳ رات کا ہے، کسی نے کہا دو ۲ رات کا ہے۔ حضرت عبد اللہ بن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما سے حال عرض کیا، فرمایا: تم نے کس رات دیکھا؟ ہم نے کہا فلاں رات۔ کہا حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

ان اللہ تعالٰی امده عہ۱ للرؤیة فهو للیلة عہ۲ رأیتموه - اللہ تعالٰی نے اُسے رؤیت پر موقوف فرمایا ہے تو جس رات تم نے دیکھا اسی رات کا ہے۔ (ح) ۱۲/۵ : عہ۱ ای جعل وقت الصوم ممتد الٰی زمان رؤیة الهلال ۱۲- عہ۲ : وقع ههنا في القول المنشور للفاضل اللکهنوی لرؤیة رأیتموه وهو تصحیف ۱۲ اللہ تعالٰی نے وقتِ صوم کو رؤیت کا زمانہ تک طویل (ممتد) کیا ہے ۱۲ (ت) اور القول المنشور میں فاضل لکھنوی نے "لرؤیۃ رأیتموہ" تحریر کیا ہے یہ تصحیف ہے ۱۲ (ت)

(م) قمر ۶: نہ اس نمبر ۲۱ کے اونچے ہونے پر نظر قمر سے نہ اس کے دیر تک ٹھہرنے پر التفات۔ (ش) ۲۱/۶ بہت لوگ چاند کو اونچا دیکھ کر بھی ایسی ہی انگلیں دوڑاتے ہیں، بعض کہتے ہیں اگر ۲۹ کا ہوتا تو اتنا

---

1 کنز العمال بحوالہ معجم الکبیر حدیث ۳۸۴۶۹ مکتبۃ التراث الاسلامی مصر ۱۴/ ۲۲۰ 2 کنز العمال بحوالہ معجم الاوسط حدیث ۳۸۴۷۰ مکتبۃ التراث الاسلامی مصر ۱۴/ ۲۲۰ 3 صحیح مسلم کتاب الصیام قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۳۴۸

...does not stay. These are all just illusions that the Sharia does not pay attention to. Especially since these matters cannot be a universal rule from an astronomical point of view. I can, if Allah Almighty wills, prove that sometimes the crescent of the 29th is conceived to be higher and more long-lasting than some crescents of the 30th.

(H) 21/6 AH: Being high and remaining for a long time is probably due to an increase in the interval, and we have already clarified above that sometimes the one of the 29th is farther from the sun than the one of the 30th, so it will probably be just as high and will set in just as much time. Moreover, if you look at the subtleties of astronomy, despite the equality of the interval, in one state it being higher and more long-lasting is possible. This is based on long premises, if we were to talk about them, we would deviate far from the subject under consideration (12). And this is based on long premises; if we start discussing them, we will go far away from the topic under consideration. 12. (T)

(M) Qamar 8: Today's crescent Moon No. 22: It sets before the twilight, tomorrow's after it. This is also not reliable.

(Sh) 22/8: Twilight means the red twilight, i.e., that redness which remains in the west after sunset. The habit is such that the crescent which appeared that very night sets before the disappearance of that redness, and the one which appeared yesterday sets after it. Then this is also a matter of experience; in the correct school of thought (Mazhab), it is not relied upon.

In *Mukhtarāt al-Nawāzil*: It was said that if it sets after twilight, it is for the past [night], and if it sets before twilight, it is for the future [night]. End. Thus he mentioned it as weak, opposing the correct chosen school of thought, meaning it is for the future absolutely, in Maj., Waq., Qun., and Baz., and others from many books.

It is in *Mukhtarāt al-Nawāzil* that some said if the moon sets after the twilight, it will be of the previous night, and if it sets before the twilight, it will be of the coming night. But this weak saying is mentioned against the correct and chosen school of thought, and the correct school of thought is that the moon is for the coming night in every case. In Majma', Fath al-Qadir, Quniyah, Bazzaziyyah, and other reliable books, it is like this. (T)

(M) Qamar 9: The third night Moon No. 23: The moon does not set before Isha, but this is also not worth considering.

(Sh) 23/9: The majority habit is such that the moon of the third night does not set until the time of Isha arrives. In the noble Hadith regarding the Isha prayer:

The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) used to pray it at the time of the setting of the moon.	The Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) used to pray this prayer at the time when the third night's moon would set.

1. Fatawa Bazzaziyyah on the margin of Fatawa Hindiyyah, Book of Fasting, Noorani Kutub Khana Peshawar, 2/94.

...नहीं ठहरता। ये सब भी वैसे ही वहम हैं जिन पर शरीअत में ध्यान नहीं दिया जाता, विशेष रूप से ये बातें खगोल विज्ञान (ज्योतिष) के अनुसार भी पूर्ण नियम नहीं हो सकतीं। मैं इंशा अल्लाह साबित कर सकता हूँ कि कभी 29 का हिलाल (नया चाँद) 30 के कुछ हिलालों से ऊँचा और अधिक समय तक रहने वाला माना जा सकता है।

(ह) 21/6 हिजरी: ऊँचा होना और देर तक रहना संभवतः अंतराल की वृद्धि के कारण होता है और यह हम ऊपर स्पष्ट कर चुके हैं कि कभी 29 का चाँद 30 वाले की तुलना में सूरज से अधिक दूर होता है, तो संभवतः वह उतना ही ऊँचा भी होगा और उतनी ही देर में डूबेगा। इसके अलावा, यदि आप खगोल विज्ञान की बारीकियों पर नज़र डालें, तो अंतराल की समानता के बावजूद एक स्थिति में अधिक ऊँचा और अधिक समय तक टिकने वाला होना संभव है। यह लंबी प्रस्तावनाओं पर आधारित है, यदि हम उन पर बात करें तो हम विचाराधीन विषय से बहुत दूर निकल जाएंगे (12)। और यह लंबी प्रस्तावनाओं पर आधारित है; यदि हम उन पर चर्चा शुरू करें, तो हम विचाराधीन विषय से कहीं दूर निकल जाएंगे। 12. (त)

(म) क़मर 8: आज का हिलाल नंबर 22: शफ़क़ (सांध्य प्रकाश) से पहले डूबता है, कल का बाद में, यह भी विश्वसनीय नहीं है।

(श) 22/8: शफ़क़ से तात्पर्य 'शफ़क़-ए-अहमर' (लाल शफ़क़) है यानी वह लाली जो सूर्यास्त के बाद पश्चिम की ओर रहती है। आदत ऐसी है कि जो हिलाल उसी रात का होता है वह उस लाली के गायब होने से पहले डूब जाता है, और जो कल प्रकट हुआ था वह उसके बाद डूबता है। फिर यह भी अनुभव की बात है, सही मज़हब (विचारधारा) में इस पर भरोसा नहीं किया जाता।

मुख्तारत अल-नवाज़िल में है, और कहा गया कि यदि वह शफ़क़ के बाद डूबा तो वह पिछली [रात] का है, और यदि शफ़क़ से पहले डूबा तो वह भविष्य [की रात] का है। अतः उन्होंने इसे कमज़ोर बताते हुए सही चुने हुए मज़हब के विपरीत उल्लेख किया, जिसका अर्थ है कि वह पूर्णतः भविष्य के लिए

मुख्तारत अल-नवाज़िल में है, कुछ ने कहा कि यदि चाँद शफ़क़ के बाद डूबा तो वह पिछली रात का होगा और यदि शफ़क़ से पहले डूब गया तो वह आने वाली रात का होगा। लेकिन यह कमज़ोर कथन सही और मुख्तार (चुने हुए) मज़हब के विपरीत उल्लेख किया गया है, और सही मज़हब यह है कि वह चाँद हर हाल में आने वाली रात का होगा। मज्मअ,

है, मज्मअ, फ़तह, क़ुनिया और बज़्ज़िया आदि कई पुस्तकों में।	फ़तहुल क़दीर, क़ुनिया, बज़्ज़िया और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में ऐसा ही है। (त)

(म) क़मर 9: तीसरी रात नंबर 23: ईशा से पहले चाँद नहीं डूबता, पर यह भी विचारणीय नहीं है।

(श) 23/9: अधिकांशतः आदत ऐसी है कि तीसरी रात का चाँद तब तक नहीं डूबता जब तक ईशा का समय न हो जाए। हदीस शरीफ़ में ईशा की नमाज़ के संबंध में है:

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) इसे चाँद के डूबने के समय पढ़ा करते थे।	हुज़ूर सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) यह नमाज़ उस समय पढ़ा करते थे जिस समय तीसरी रात का चाँद डूबता था।

1. फ़तावा बज़्ज़िया, फ़तावा हिंदिया के हाशिये पर, किताब-उस-सौम (रोज़े का अध्याय), नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 2/94.

نہ ٹھہرتا۔ یہ سب بھی ویسے ہی اوہام ہیں جن پر شرع میں التفات نہیں، خصوصاً یہ باتیں تواز روئے ہیأت بھی کلیہ نہیں ہوسکتیں، میں ان شاء اللہ تعالیٰ ثابت کرسکتا ہوں کہ کبھی ۲۹ کا ۳۰ کے بعض ہلالوں سے اونچا اور دیر پا ہونا متصور۔

(ح) ۲۱/۶ھ : اونچا ہونا اور دیر تک رہنا غالباً زیادت فصل سے ہوتا ہے اور یہ ہم اوپر واضح کرچکے کہ کبھی ۲۹ کا بہ نسبت ۳۰ والے کے سورج سے دُور تر ہوتا ہے تو غالباً اتنا ہی اونچا بھی ہوگا اور اتنا ہی دیر میں ڈوبے گا۔ علاوہ ازیں دقائقِ ہیأت پر نظر کیجئے تو باوجود استوائے فصل ایک حالت میں بلند تر ودیر پاتر ہونا ممکنو ذلک یبتنی علی مقدمات طویلۃ لو تکلمنا علیھا لخرجنا عما نحن بصددہ (۱۲) اور یہ طویل مقدمات پر مبنی ہے اگر ہم ان پر گفتگو شروع کردیں تو زیر نظر موضوع سے کہیں دُور نکل جائیں گے ۱۲۔ (ت)

(م) قمر ۸: آج کا ہلال نمبر ۲۲: شفق سے پہلے ڈوبتا ہے کل کا بعد کو، یہ بھی معتبر نہیں۔

(ش) ۲۲/۸: شفق سے مراد شفق احمر ہے یعنی وہ سرخی جو غروبِ آفتاب کے بعد جانبِ مغرب رہتی ہے۔ عادت یوں ہے کہ جو ہلال اسی شب ہوا وہ اس سُرخی کے غائب ہونے سے پہلے ڈوب جاتا ہے، اور جو کل ظاہر ہوا تھا اس کے بعد غروب کرتا ہے۔ پھر یہ بھی تجربہ کی بات ہے، صحیح مذہب میں اس پر اعتماد نہیں

في مختارات النوازل وقيل ان غاب بعد الشفق فهو للماضية وان غاب قبل الشفق فهو للمستقبلة اهـ هكذا ذكره

مختار النوازل میں ہے بعض نے کہا کہ اگر شفق کے بعد چاند غروب ہو گیا تو وہ گذشتہ رات کا ہو گا اور اگر شفق سے پہلے غروب ہو گیا تو وہ آئندہ رات کا ہو گا لیکن یہ

ضعیف قول مذہب صحیح اور مختار کے مقابل ذکر کیا ہے،

مضعفا مقابلا لمذهب الصحيح المختار

اور مذہب صحیح یہ ہے کہ وہ چاند ہر حال میں آئندہ رات کا

اعنی کونه للمستقبلة مطلقا في مج وقت

ہو گا مجمع، فتح القدیر، قنیہ، بزازیہ، اور دیگر کتب معتمدہ

وق وبز وغیرها من اسفار کثیرة۔

میں یونہی ہے (ت)

(م) قمر ۹: تیسری رات نمبر ۲۳ عشاء سے پہلے چاند نہیں ڈوبتا، پر یہ بھی قابلِ لحاظ نہیں۔

(ش) ۲۳/۹: عادتِ اکثری یوں ہے کہ تیسری شب کا چاند غروب نہیں کرتا جب تک عشاء کا وقت نہ آجائے۔ حدیث شریف میں نمازِ عشاء کی نسبت ہے:

کان رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیه	حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم یہ نماز اس وقت
وسلم یصلیها لسقوط القمر	پڑھا کرتے جس وقت تیسری رات کا چاند ڈوبتا تھا

1 فتاوی بزازیہ علی ہامش فتاوی ہندیہ کتاب الصوم نورانی کتب خانہ پشاور ۲/ ۹۴

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

- Third: Narrated by Abu Dawood from Nu'man bin Bashir (may Allah be pleased with them both). The Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) used to perform this prayer at the time when the moon of the third night sets. (Reported by Abu Dawood from Nu'man bin Bashir, may Allah be pleased with them both. - T)

In matters of the new moon, Sharia does not disregard this either. For instance, if testimony is given that the moon was sighted today and tomorrow (Friday) is the 1st of Ramadan, then on the night following Saturday (which would be the third night according to that testimony), if it is observed that the moon sets right at the time of Maghrib before the time for Isha begins, leading to a doubt that it might be the second night, one should not pay heed to this and should consider it the third night. Warning: I say, and with Allah is the guidance: truly, acting upon this testimony is by no means in opposition to the Hadith, but rather strictly following its command. The Noble Presence, the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him), would observe the time for Isha and then begin the prayer; that would most likely coincide with that time, let's say it always coincided in the Prophetic era. From this, it does not necessarily follow that the Holy Prophet even once based the prayer time on that moonset, nor did he consider it an eternal impossibility, nor that because of it, the Shari'ah testimony regarding fasting—which the Sharia has placed on par with actual sighting—should be rejected.

He was asked about a case where the moon of the third night disappears before the entry of Isha time: should the testimony be acted upon or not? He replied: What is to be acted upon is what the evidence testified, for the Lawgiver has assigned testimony the status of certainty, and acting upon evidence is not in contradiction to the prayer of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). (Sh) summarizing from the Fatawa of Allama Shihab al-Ramli al-Kabir al-Shafi'i. This is very clear. Praise be to Allah. 12 (T) I say: By the praise of Allah, from our explanation... | Question: It was asked that when the moon of the third night disappears before the entry of Isha time, will the testimony be acted upon or not? So the answer given was that it will be acted upon as testified, because the Lawgiver (peace and blessings be upon him) has placed testimony in the position of certainty. Acting upon the witnesses is not contrary to the prayer of the Messenger of Allah (peace and blessings be upon him). This has been quoted summary-wise by Shami from the Fatawa of Allama Shihab al-

Ramli al-Kabir al-Shafi'i and it is very clear. Praise be to Allah. 12 (T) I say: By the grace of Allah, from our discourse it is clear...

(H) 23/9: Note: I say: And by this explanation of ours

1 Sunan Abi Dawood, Kitab al-Salat, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/60. 2 Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/100.

फतावा रज़विया, जिल्द 10

- तीसरा: अबू दाऊद ने नुमान बिन बशीर (अल्लाह उन दोनों से राज़ी हो) से रिवायत की। हुज़ूर सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) यह नमाज़ उस वक्त पढ़ा करते थे जब तीसरी रात का चाँद डूबता था। (इसे अबू दाऊद ने नुमान बिन बशीर रज़ियल्लाहु अन्हुमा से रिवायत किया है। - त)

हिलाल (चाँद) के मामले में शरीयत में इस पर भी ध्यान नहीं दिया जाता। मिसाल के तौर पर, गवाही मिली कि आज चाँद दिखा और कल शुक्रवार रमज़ान की पहली तारीख है। अब शनिवार के बाद जो रविवार की रात आई, जो उस गवाही के हिसाब से तीसरी रात थी, उसमें देखा गया कि चाँद मग़रिब के समय इशा का वक्त आने से पहले ही डूब गया, जिससे यह संदेह होता है कि आज दूसरी रात है। इस पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा और इसे तीसरी ही रात माना जाएगा। चेतावनी: मैं कहता हूँ, और तौफीक अल्लाह से है: निस्संदेह इस गवाही पर अमल करना हदीस के खिलाफ नहीं है, बल्कि बिल्कुल हदीस के हुक्म पर चलना है। हुज़ूर अकदस सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) इशा का वक्त देखकर नमाज़ शुरू फरमाते थे, वह अक्सर उसी वक्त के मुताबिक होती थी, मान लें कि उनके ज़माने में हमेशा ही मुताबिक रही हो। इससे यह लाज़िमी नहीं आता कि हुज़ूर ने एक बार भी उस डूबते चाँद पर नमाज़ के वक्त की बुनियाद रखी हो, न ही इसे हमेशा के लिए नामुमकिन माना, और न ही इसके कारण रोज़े के मामले में उस शरई गवाही को खारिज किया जिसे शरीयत ने आँखों से देखने के बराबर माना है।

उनसे सवाल किया गया कि जब तीसरी रात का चाँद इशा का वक्त शुरू होने से पहले गायब हो जाए, तो क्या गवाही पर अमल किया जाएगा या नहीं? उन्होंने जवाब दिया: अमल उस पर होगा जो गवाहों ने गवाही दी है क्योंकि शरीयत देने वाले ने गवाही को यकीन का दर्जा दिया है और गवाहों पर अमल करना हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की नमाज़ के खिलाफ नहीं है। 'शामी' ने अल्लामा शिहाब रम्ली अल-कबीर अल-शाफ़ई के फतावा से संक्षेप में उद्धृत किया है और यह बहुत स्पष्ट है। अल्लाह के लिए हम्द है। 12 (त) मैं कहता हूँ: अल्लाह की हम्द से, हमारी इस तक़रीर (व्याख्या) से स्पष्ट है... | सवाल किया गया कि जब तीसरी रात का चाँद इशा का वक्त शुरू होने से पहले गायब हो जाए तो क्या गवाही पर अमल किया जाएगा या नहीं? तो जवाब यह दिया गया कि उस पर अमल किया जाएगा जिस पर गवाही हुई है, क्योंकि शरीयत देने वाले (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने गवाही

को यकीन का दर्जा दिया है। गवाहों पर अमल करना हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की नमाज़ के खिलाफ नहीं है। यह 'शामी' ने अल्लामा शिहाब रम्ली अल-कबीर अल-शाफ़ई के फतावा से संक्षेप में उद्धृत किया है और यह बहुत स्पष्ट है। अल्लाह के लिए शुक्र है। 12 (त) मैं कहता हूँ: अल्लाह की हम्द से, हमारी इस तक़रीर से स्पष्ट है...

(ह) 23/9: नोट: मैं कहता हूँ: और हमारी इस व्याख्या के अनुसार

1 सुनन अबू दाऊद, किताबुल सलात, आफताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 1/60. 2 रद उल मुहतार, किताबुल सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/100.

पेज 475/836

لثالثۃ- رواہ ابوداؤد عن النعمان بن بشیر رضی اللہ تعالی عنہما۔ حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم یہ نماز اس وقت پڑھا کرتے جس وقت تیسری رات کا چاند ڈوبتا ہے (اسے ابوداؤد نے نعمان بن بشیر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا ہے۔ ت)

پر معاملہ ہلال میں شرعاً اس پر بھی التفات نہیں مثلاً گواہی گزری کہ آج چاند ہوا کل جمعہ کی یکم رمضان ہے اب شنبہ کے بعد جو شب یکشنبہ آئی کہ اس شہادت کی رُو سے تیسری شب تھی ، اس میں دیکھا تو چاند مغرب ہی کے وقت عشاء کا وقت آنے سے پہلے ڈوب گیا جس کے سبب گمان ہوتا ہے کہ آج شب دوم ہے اس کا کچھ خیال نہ کریں گے اور تیسری ہی رات قرار دیں گے۔ تنبیہ: اقول: وباللہ التوفیق بے شک اس شہادت پر عمل میں معاذ اللہ حدیث کی کچھ مخالفت نہیں، بلکہ عینِ حکمِ حدیث پر چلنا ہے۔ حضور اقدس سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم وقتِ عشاء دیکھ کر نماز شروع فرماتے، وہ اس اکثری امر کے سبب غالبا اس وقت سے موافق پڑتی، یوں سہی کہ زمانہ اقدس میں ہمیشہ ہی مطابق آئی ، اس سے یہ بھی لازم نہیں آتا کہ حضور نے ایک وقت بھی اس غروبِ قمر پر وقتِ نماز کی بنا رکھی ہو نہ کہ اسے ابدی غیر ممکن الحلف جانتے نہ کہ اس کے سبب امرِ صوم میں شہادت شرعیہ جسے شرع نے مثلِ رویت عین قرار دیا رد کی جائے۔

سئل فیما غاب الھلال باللیلۃ الثالثۃ قبل دخول وقت العشاء ھل یعمل بالشھادۃ امر لا ، اجاب، المعمول بہ ما شھدت البینۃ لان الشھادۃ نزلھا الشارع منزلۃ الیقین ولیس في العمل بالبینۃ مخالفۃ لصلوتہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم (ش) عن فتاوی العلامۃ الشھاب الرملي الکبیر الشافعي ملخصاً وھذا واضح جداً عہ واللہ الحمد۱۲۔ (ح) ۲۳/۹: عہ اقول : وبتقریر نا ھذا سوال کیا گیا کہ جب تیسری رات کا چاند دخولِ وقتِ عشاء سے پہلے غائب ہوجائے تو کیا شہادت پر عمل کیا جائے گا یا نہیں؟ تو جواب یہ دیا کہ

اس پر عمل کیا جائیگا جس پر گواہی ہوئی کیونکہ گواہی کو شارع علیہ الصلوۃ والسلام نے یقین کا مقام قرار دیا ہے اور گواہوں پر عمل کرنا حضور صلی اللہ علیہ وسلم کی نماز کے مخالف نہیں یہ شامی نے علامہ شہاب رملی الکبیر الشافعی کے فتاویٰ سے ملخصاً نقل کیا ہے اور یہ نہایت ہی واضح ہے، حمد اللہ کے لیے ہے ۱۲ (ت) اقول: بحمد اللہ ہماری اس تقریر سے واضح

1 سنن ابی داؤد کتاب الصلوۃ آفتاب عالم پریس لاہور ۱/۶۰ 2 ردالمحتار کتاب الصوم مصطفٰی البابی مصر ۲/۱۰۰

Fatawa Razawiya, Volume 10

Top Section (Arabic text with Urdu explanation): I say: By the grace of Allah, it has become clear from our discourse that there is no need for the laborious effort undertaken by the learned Abdul Hayy Lucknawi in *'Al-Qawl al-Manshur'* while answering this objection, claiming that there is nothing in the hadith indicating permanence; it might happen this way occasionally. And one should not be deceived by his statement regarding the word "kan" (was/used to) that it does not necessarily denote continuity and persistence, as Imam Nawawi has elaborated on this in the chapters on Supererogatory Prayers in the Commentary on Sahih Muslim. So thank Allah. (End of quote). Surely you have realized that there is no objection at all regarding the hadith even if "kan" always denoted permanence. Furthermore, there is much disagreement on this issue. We have written a treatise to explain this, named *'Al-Taj al-Mukallal fi Inarati Madlul Kan Yaf'al'*. Therefore, basing an escape from an objection on a matter that is disputed, especially when there is no necessity for it, is not reliable. 12 (T)

Middle Section: (M) Moon 10: The fourteenth moon rises before sunset, and the fifteenth moon rises after setting (sitting); both are unreliable indicators. (Sh) 11-24/10: The Islamic judge (Hakim-e-Shara) or a religious scholar, having taken legal testimony, determined the month of Shaban to be 29 days and ordered the start of Ramadan on Friday. Now, according to this calculation, on Friday night (Thursday night) the 15th, the moon rose before sunset. Many ignorant people will object, saying the ruling was wrong and it should have been a 30-day month, and Saturday was the first day, since today (Thursday night) the moon did not shine after setting. Or, the judge/scholar considered the testimony insufficient, completed 30 days of Shaban, and fixed the 1st of Ramadan on Saturday. On Friday night, the moon rose after setting. Ignorant people will ask, "Sir! According to the first day being Saturday, tonight should be the night of the full moon (shab-e-badr). Why then did the moon rise after setting? Surely Friday was the first day and today is the 15th." All such thoughts are merely absurd and meaningless, upon which legal rulings are not based at all. Sharia does not mandate that the judge or scholar must be aware of the actual state of affairs as it is with Allah, for that would be an unbearable burden (*takleef ma la yutaq*). Instead, Sharia obligates them to act upon what is proven by legal evidence (*dalil shar'i*), regardless of what the reality is with Allah. Even the Holy Prophet (peace and blessings be upon him), who knows what was and what will be, says:

Bottom Box: Indeed, you bring your disputes to me, and perhaps some of you… You bring your cases before me, and perhaps…

Page 477 of 836

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

शीर्ष भाग (अरबी पाठ और उर्दू स्पष्टीकरण): मैं कहता हूँ: अल्लाह की कृपा से, हमारे इस प्रवचन से यह स्पष्ट हो गया है कि फ़ाज़िल अब्दुल हई लखनवी ने 'अल-क़ौल अल-मंशूर' में इस आपत्ति का उत्तर देते हुए जो श्रम किया है, उसकी कोई आवश्यकता नहीं है, जिसमें उन्होंने दावा किया कि हदीस में ऐसा कुछ भी नहीं है जो निरंतरता को दर्शाता हो; ऐसा कभी-कभी हो सकता है। और उनके "कान" (था/हुआ करता था) शब्द के बारे में इस कथन से धोखा नहीं खाना चाहिए कि यह निरंतरता और दृढ़ता का नियम नहीं है, जैसा कि इमाम नववी ने सहीह मुस्लिम की व्याख्या में नफ़्ल नमाज़ों के अध्यायों में इस पर विस्तार से चर्चा की है। अतः अल्लाह का शुक्र अदा करें। (उद्धरण समाप्त)। निश्चित रूप से आप जान गए होंगे कि हदीस के साथ यहाँ कोई आपत्ति ही नहीं है, भले ही "कान" हमेशा निरंतरता को दर्शाता हो। इसके अलावा, इस मामले में बहुत मतभेद है। हमने इसे स्पष्ट करने के लिए एक शोध पत्र लिखा है जिसका नाम 'अत-ताज अल-मुकल्लल फ़ी इनारति मदलूल कान यफ़अल' रखा है। इसलिए, किसी आपत्ति से बचने के लिए ऐसी बात पर आधार रखना जो स्वयं विवादित हो, और उसकी आवश्यकता भी न हो, विश्वसनीय नहीं है। 12 (त)

मध्य भाग: (म) क़मर 10: चौदहवीं का चाँद सूरज डूबने से पहले निकलता है और पंद्रहवीं का चाँद डूबने (बैठने) के बाद, ये दोनों भी अविश्वसनीय संकेतक हैं। (श) 11-24/10: हाकिम-ए-शरा (इस्लामी न्यायाधीश) या धार्मिक विद्वान ने शरीयत की गवाही लेकर शाबान का महीना 29 का ठहराया और कल शुक्रवार के दिन रमज़ान का हुक्म दिया। अब इस हिसाब से जुमे की रात (गुरुवार की रात) 15 को चाँद डूबने से पहले निकला, तो बहुत से अज्ञानी आपत्ति करेंगे कि वह हुक्म गलत था बल्कि 30 का चाँद हुआ, और शनिवार पहली तारीख थी, फिर भी आज (गुरुवार की रात) चाँद डूबकर नहीं चमका। या, हाकिम और विद्वान ने गवाही को अपर्याप्त समझकर शाबान की गिनती 30 पूरी की और शनिवार से पहली रमज़ान रखी। जुमे की रात में चाँद डूबने के बाद निकला। अज्ञानी लोग कहेंगे कि "हुज़ूर! शनिवार की पहली के हिसाब से तो आज पूर्णिमा की रात (शबे-बद्र) होनी चाहिए। तो यह चाँद डूबकर क्यों निकला? ज़रूर शुक्रवार की पहली थी और आज पंद्रहवीं है।" ये और इस तरह के सभी विचार केवल व्यर्थ और बेतुके हैं, जिन पर कानूनी फैसलों का कोई आधार नहीं होता। शरीयत हाकिम या विद्वान पर यह अनिवार्य नहीं करती कि वे अल्लाह के नज़दीक की वास्तविक स्थिति को जान लें, क्योंकि यह एक असहनीय बोझ (तकलीफ़ मा ला युताक़) होगा। बल्कि शरीयत उन पर यही अनिवार्य करती है कि जो बात कानूनी साक्ष्यों (दलील-ए-शरई) से सिद्ध हो, उसी पर अमल करें, चाहे

अल्लाह के नज़दीक वास्तविकता कुछ भी हो। स्वयं हुज़ूर अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम), जो भूत और भविष्य का ज्ञान रखते हैं, फ़रमाते हैं:

निचला भाग: बेशक, तुम अपने विवाद मेरे पास लाते हो, और शायद तुम में से कुछ... तुम मेरे हुज़ूर अपने मुक़दमे पेश करते हो और शायद...

पृष्ठ 836 में से 477

اوپری حصہ (عربی عبارت اور اردو تشریح): اقول: بحمداللہ ہماری اس تقریر سے واضح ہوگیا کہ اس کی ضرورت نہیں جو فاضل عبدالحی لکھنوی نے القول المنشور میں اس اشکال کے جواب میں کہا کہ حدیث میں کوئی ایسی شئی نہیں جو دوام پر دال ہو، ہاں کبھی ایسا ہو جاتا تھا اور لفظ "کان" سے بھی ضابطہ نہیں ہونا چاہئے کیونکہ یہ دوام واستمرار پر دال نہیں ہوتا جیسا کہ شرح صحیح مسلم کے ابواب النوافل میں امام نووی نے اس پر تفصیلی گفتگو کی ہے۔ پس اللہ کا شکر ادا کرو انتہیٰ یقینا آپ نے جان لیا کہ حدیث کے ساتھ یہاں کوئی اشکال ہی نہیں اگرچہ کان ہمیشہ دوام پر دال ہو، علاوہ ازیں اس مسئلہ میں بہت زیادہ اختلاف ہے۔ ہم نے اس کے لیے ایک رسالہ لکھا جس کا نام "التاج المکلل فی انارۃ مدلول کان یفعل" رکھا ہے، لہٰذا پیچھا چھڑانے کے لئے ایسے معاملہ پر بنیاد رکھنا جو مختلف فیہ ہو اور ضرورت بھی نہ ہو قابل اعتماد نہیں ہے ۱۲ (ت)

درمیانی حصہ: (م) قمر ۱۰: چودھویں کا سورج ڈوبنے سے پہلے نکلتا ہے قمرا پندرھویں کا بیٹھ کر، یہ دونوں بھی نا معتبر ہیں۔ (ش) ۱۱-۱۰/۲۴: حاکم شرع یا عالم دین نے شہادت شرعیہ لے کر شعبان کا مہینہ ۲۹ کا ٹھہرایا اور کل بروز جمعہ رمضان کا حکم دیا، اب اس حساب سے شب جمعہ ۱۵ کو چاند غروب سے پہلے نکلا، تو بہت جاہل اعتراض کرینگے کہ وہ حکم غلط تھا بلکہ ۳۰ کا چاند ہوا، اور ہفتہ کی پہلی، جب تو آج چاند بیٹھ کر نہ چمکا، یا حاکم و عالم نے گواہی نا کافی سمجھ کر شعبان کی گنتی ۳۰ پوری کی، شنبہ سے یکم رمضان رکھی۔ شب جمعہ میں چاند بیٹھ کر نکلا، جاہل لوگ کہیں گے کیوں صاحب! ہفتہ کی پہلی سے تو آج شب بدر ہوتی ہے یہ چاند بیٹھ کر کیوں نکلا، ضرور جمعہ کی پہلی تھی اور آج پندرھویں، یہ اور اس قسم کے سب خیالات محض مہمل و بیہودہ ہیں جن پر اصلاً مدار احکام نہیں، نہ حاکم و عالم پر شرع یہ لازم فرمائے کہ عند اللہ جو بات

نفس الامر میں ہے اس پر مطلع ہوجائیں کہ یہ تکلیف مالا یطاق ہے، بلکہ شرع ان پر یہی فرض کرتی ہے کہ دلیل شرعی سے جو بات ثابت ہواس پر عمل کرو۔ عام ازیں کہ عند اللہ کچھ ہو ،خود حضور اقدس عالم ماکان و مایکون صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ارشاد فرماتے ہیں:

آخری خانہ: انکم تختصمون الی ولعل بعضکم ان تم میرے حضور اپنے مقدمات پیش کرتے ہو اور شاید

صفحہ 477 از 836

| "One of you may be more eloquent in his plea than the other, and I judge according to what I hear. So if I award him anything from his brother's right, he should not take it, for I am only cutting off a piece of fire for him." - Narrated by Ahmad and the Six from the Mother of the Believers Umm Salama (may Allah be pleased with her). | You present your cases before me, and perhaps one of you is more sharp-tongued in presenting his argument than the other. So, I issue a ruling based on what I hear. Thus, if I rule something for anyone from his brother's right, he should not take it, for I am cutting off a piece of fire for him. (Narrated by Imam Ahmad and the six Imams from Umm al-Mu'minin Umm Salama, may Allah be pleased with her. - T) |

Furthermore, although the moon rising before sunset on the fourteenth is common, and for this reason it is called 'Badr' (full moon), however, according to astronomical calculations, the opposite is also possible, as is not hidden from those who know (as is not hidden from the scholars. - T). And Allah Almighty knows best.

(M) Qamar 12: It is incorrect that the 4th of Ramadan is always the 25th of Rajab.

(Sh) 25/12: It is famous among the common people that the day on which the 4th of Rajab falls in a year, the 1st of Ramadan will fall on that same day. This is completely baseless. Its lack of Shariah basis is self-evident, and experience also testifies against it. Sometimes the 3rd of Rajab and the 1st of Ramadan have coincided.

| Being the fourth of Rajab does not necessitate it being the beginning of Ramadan; rather, it may sometimes coincide by chance (Bazzaziyya). | It is not mandatory for the 4th of Rajab to be the 1st of Ramadan; rather, sometimes it happens by coincidence (Bazzaziyya). (T) |

(M) Qamar 13: It is also not necessary for the 1st of Ramadan to be the 10th of Dhu al-Hijjah (Number 26).

(Sh) 26/13: In some reports of Mawla Ali (may Allah honor his face), it is mentioned that "the day of your fasting is the same as the day of your sacrifice." This was a factual statement for that specific year, not a permanent Shariah ruling. Often the 1st of Ramadan and the 10th of Dhu al-Hijjah fall on different days. For example, if the 1st of Ramadan is on Friday and the months of Ramadan, Shawwal, and Dhu al-Qi'dah are all 29 days, then Eid al-Adha will be on Wednesday. If two months are 29 days, it will be on Thursday. If all three are 30 days, it will be on Saturday. Yes, if two are 30 and one is 29, then it will definitely fall on Friday. But why must it always be so!

1 Sahih Bukhari, Chapter: The Imam's Admonition to the Litigants, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/1062. 2 Fatawa Bazzaziyya on the margins of Fatawa Hindiyya, Book of Fasting, Noorani Kutub Khana Peshawar, 4/96. Page 478 of 836

| "तुम में से कोई अपनी दलील पेश करने में दूसरे से अधिक वाकपटु हो सकता है, और मैं जो सुनता हूँ उसके अनुसार फ़ैसला देता हूँ। अतः यदि मैं किसी को उसके भाई के हक़ से कुछ दे दूँ, तो उसे वह नहीं लेना चाहिए, क्योंकि मैं उसके लिए आग का एक टुकड़ा काट रहा हूँ।" - इमाम अहमद और छह अइम्मा ने उम्मुल मोमिनीन उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत किया है। | तुम मेरे सामने अपने मुकदमे पेश करते हो और शायद तुम में से एक दूसरे से अपनी दलील पेश करने में अधिक वाकपटु (तेज़ ज़बान) हो, तो मैं जो सुनता हूँ उस पर फ़ैसला देता हूँ। अतः जिसके लिए मैं उसके भाई के हक़ में से कुछ फ़ैसला कर दूँ, वह उसे न ले, क्योंकि मैं उसके लिए आग का एक टुकड़ा काट रहा हूँ। (इसे इमाम अहमद और छह अइम्मा ने उम्मुल मोमिनीन उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत किया है। - त) |

इसके अलावा, चौदहवीं के चाँद का सूर्यास्त से पहले निकलना हालांकि अक्सर होता है, और इसी कारण इसे 'बद्र' (पूर्णिमा) कहा जाता है, लेकिन खगोल विज्ञान के अनुसार इसका विपरीत भी संभव है, जैसा कि विद्वानों पर छिपा नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

(म) क़मर १२: यह गलत है कि हमेशा रजब की २५ तारीख चौथी हो और रमज़ान की पहली हो।

(श) २५/१२: आम लोगों में प्रसिद्ध है कि साल में जिस दिन रजब की चौथी तारीख होगी, उसी दिन रमज़ान की पहली तारीख पड़ेगी। यह बात बिल्कुल निराधार है। इसका शरीयत में न होना तो स्वयं स्पष्ट है, और अनुभव भी इसके विपरीत गवाही देता है। कभी-कभी रजब की तीसरी और रमज़ान की पहली तारीख एक ही दिन पड़ी हैं।

| रजब की चौथी तारीख का रमज़ान की पहली तारीख होना ज़रूरी नहीं है; बल्कि कभी-कभी इत्तेफ़ाक़ से ऐसा हो जाता है (बज़ाज़िया)। | रजब की चौथी तारीख का रमज़ान की पहली तारीख होना ज़रूरी नहीं है, बल्कि कभी-कभी इत्तेफ़ाक़ से ऐसा हो जाता है (बज़ाज़िया)। (त) |

(म) क़मर १३: रमज़ान की पहली तारीख का (नंबर २६) ज़ुल-हिज्जा की १०वीं तारीख होना भी ज़रूरी नहीं है।

(श) २६/१३: मौला अली (करम अल्लाह वज्हहु-उल-करीम) के कुछ आसार (कथनों) में आया है कि "तुम्हारे रोज़े का दिन वही है जो तुम्हारी क़ुरबानी का दिन है।" यह उस वर्ष का एक वास्तविक

विवरण था, न कि हमेशा के लिए कोई शरीयत का नियम। कई बार १ रमज़ान और १० ज़ुल-हिज्जा अलग-अलग दिनों में पड़ते हैं। उदाहरण के लिए, यदि १ रमज़ान जुमे (शुक्रवार) को हो और रमज़ान, शव्वाल, ज़ुल-क़ादा तीनों महीने २९ दिन के हों, तो ईदुल-अज़हा बुधवार को होगी, और यदि दो महीने २९ के हों तो गुरुवार को, और यदि तीनों ३० के हों तो शनिवार को। हाँ, यदि दो ३० के हों और एक २९ का, तो बेशक जुमे को पड़ेगी। फिर वैसा ही होना क्यों ज़रूरी है!

---

1 सही बुखारी, बाब: मुइज़ा-तुल-इमाम लिल-खुसूम, क़दीमी कुतुब खाना कराची १/१०६२ 2 फ़तावा बज़ाज़िया, फ़तावा हिंदिया के हाशिये पर, किताब-उस-सौम, नूरानी कुतुब खाना पेशावर ४/९६ पेज ८३६ का ४७८

| یکون الحن بحجته من بعض فاقضی بنحو مما اسمع فمن قضیت له من حق اخیه شیأ فلا یأخذه فانما اقطع له قطعة من نار -۱ رواه احمد والستة عن ام المومنین ام سلمة رضی الله تعالی عنها- | تم میرے حضور اپنے مقدمات پیش کرتے ہو اور شاید تم پر ایک دوسرے سے زیادہ اپنی حجت بیان کرنے میں تیز زبان ہو تو میں جو سنوں اس پر حکم فرماؤں پس جس کے لیے میں اس کے بھائی کے حق سے کچھ حکم کروں وہ اسے نہ لے کہ یہ تو ایک آگ کا ٹکڑا ہے اس کے لیے قطع کرتا ہوں (اسے امام احمد و ائمہ ستہ نے ام المومنین ام سلمہ رضی اللہ تعالٰی عنہا سے روایت کیا ہے۔ ت) |

علاوہ بریں چاند کا چودھویں کو غروب شمس سے پہلے نکلنا اگر چہ اکثر ہے، اور اسی لئے اسے بدر کہتے ہیں مگر بحساب ہیات بھی اس کا خلاف ممکن، کما لایخفی علی من یعلمہ (جیسا کہ اہل علم پر مخفی نہیں۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

(م) قمر ۱۲: غلط ہے کہ ہمیشہ رجب نمبر ۲۵ کی چوتھی رمضان کی پہلی ہو۔

(ش) ۲۵/۱۲: عوام میں مشہور ہے کہ سال میں جس دن رجب کی چوتھی تھی اسی دن آکر رمضان کی پہلی پڑے گی۔ یہ بات محض بے اصل ہے، اس کا شرعی نہ ہونا تو خود ظاہر، تجربہ بھی خلاف پر شاہد۔ بعض دفعہ رجب کی تیسری اور رمضان کی پہلی مطابق ہوئی ہے۔

| ماھو الرابع من رجب لا یلزم ان یکون غرة رمضان بل قد یتفق (بز) 2 | رجب کی چوتھی کا رمضان کی پہلی ہونا لازم نہیں بلکہ بعض دفعہ اتفاقا ایسا ہو جاتا ہے (بزازیہ) (ت) |

(م) قمر ۱۳: رمضان کی پہلی نمبر ۲۶ ذی الحجہ کی دسویں ہونا بھی ضروری نہیں۔

(ش) ۲۶/۱۳: کہیں مولی علی کرم اللہ وجہہ الکریم کے بعض آثار میں آگیا کہ تمہارے روزہ کا دن وہی تمہاری قربانی کا دن ہے، یہ اُس سال کا ایک واقعی بیان تھا، نہ کہ ہمیشہ کے لیے حکم شرعی ہو۔ بار ہا یکم رمضان و دہم ذی الحجہ مختلف پڑتی ہیں، مثلا یکم رمضان جمعہ کی ہو اور رمضان شوال ذیقعدہ تینوں مہینے ۲۹ کے تو عید الضحیٰ چہار شنبہ کی ہوگی اور دو ۲۹ کے تو پنجشنبہ کی، اور تینوں تیس ۳۰ کے تو شنبہ کی۔ ہاں دو تیس کے اور ایک ۲۹ کا، تو بے شک جمعہ کی پڑے گی۔ پھر یو نہی ہونا کیا ضرور ہے!

---

1 صحیح بخاری باب موعظة الامام للخصوم قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۱۰۶۲ 2 فتاویٰ بزازیہ علی ہامش فتاویٰ ہندیہ کتاب الصوم نورانی کتب خانہ پشاور ۴ / ۹۶ Page 478 of 836

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Table Header/Content] Arabic Text: If the month of Ramadan starts on a Thursday and the day of Arafah also falls on a Thursday, then that will be the day of Arafah, not the day of Eid al-Adha, to the extent that sacrifice (qurbani) is not permissible on that day. The narration that "the day of your sacrifice is the day of your fasting" happened to be true for that specific year, not as a permanent rule. This is because there are three months from the first day of Ramadan to the beginning of Dhu al-Hijjah. The day of sacrifice will only match the day of fasting if two of those three months are complete (30 days) and one is incomplete (29 days). If all three months are complete, the day of sacrifice will be delayed, and if all three or two are incomplete, it will precede it. Therefore, relying on this is not correct. Taken from Al-Fatawa al-Kubra in Khazana (T).

(M) Qamar 12: Mostly, the 2nd or 5th of the previous Ramadan becomes the 1st of this Ramadan, but in Sharia, this is not relied upon. (Sh) 712/2: It is narrated from Sayyiduna Imam Ja'far (may Allah be pleased with him): "The fifth of the past Ramadan is the first of the coming Ramadan." (T) Some scholars said they experienced this for fifty years and it turned out to be correct. Some contemporaries wrote, "I have also been testing it for 12 years and find it correct." I say (The Author): But this humble one observed 9 Ramadans from 1297 AH until now, and a clear difference appeared in just a few years. For five years the calculation was correct, and according to this rule, the 5th of Ramadan 1301 AH should have been on Sunday...

Footnotes: 1. Khazanat-ul-Muftin, Kitab al-Sawm, manuscript 60/1 2. Al-Istibsar, Kitab al-Sawm, Dar-ul-Kutub al-Islamiyya, Tehran 6/2; Man La Yahduruhu al-Faqih, Dar-ul-Kutub al-Islamiyya, Tehran 8/2

Page 479 of 836

फतावा रज़विया, जिल्द 10

[तालिका सामग्री] अरबी पाठ: अगर रमज़ान का महीना जुमेरात (गुरुवार) को शुरू हो और अराफ़ा का दिन भी जुमेरात को ही पड़े, तो वह अराफ़ा का दिन होगा, ईदुल अज़हा (बकरीद) का दिन नहीं, यहां तक कि उस दिन कुर्बानी जायज़ नहीं होगी। जो रिवायत है कि "तुम्हारी कुर्बानी का दिन तुम्हारे रोज़े का दिन है", वह उस विशेष वर्ष के लिए सही था, न कि स्थायी नियम के रूप में। ऐसा इसलिए है क्योंकि रमज़ान के पहले दिन से ज़ुल-हिज्जा की शुरुआत तक तीन महीने होते हैं। कुर्बानी का दिन रोज़े के दिन से तभी मेल खाएगा जब उन तीन महीनों में से दो पूर्ण (30 दिन) हों और एक अपूर्ण (29 दिन) हो। यदि तीनों महीने पूर्ण हों, तो कुर्बानी का दिन बाद में आएगा, और यदि तीनों या दो अपूर्ण हों, तो यह पहले आएगा। इसलिए, इस पर भरोसा करना सही नहीं है। यह अल-फतावा अल-कुबरा के हवाले से खज़ाना में है (त)।

(म) क़मर 12: अक्सर पिछले रमज़ान की 2 या 5 तारीख इस रमज़ान की पहली तारीख होती है, लेकिन शरीयत में इस पर भरोसा नहीं किया जाता। (श) 712/2: सैयदना इमाम जाफ़र (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि: "पिछले रमज़ान की पांचवीं तारीख आने वाले रमज़ान की पहली तारीख होती है।" (त) कुछ विद्वानों ने कहा कि उन्होंने पचास वर्षों तक इसका अनुभव किया और यह सही निकला। कुछ समकालीनों ने लिखा, "मैं भी 12 वर्षों से इसका परीक्षण कर रहा हूँ और इसे सही पाता हूँ।" मैं कहता हूँ (लेखक): लेकिन इस फ़क़ीर ने 1297 हिजरी से अब तक के9 रमज़ानों में गौर किया, तो कुछ ही वर्षों में साफ फर्क नज़र आया। पांच वर्षों तक तो हिसाब ठीक था और इस नियम के अनुसार रमज़ान 1301 हिजरी की 5 तारीख रविवार को...

पादलेख: 1. खज़ानतुल मुफ़्तीन, किताबुस सौम, हस्तलिखित प्रति 60/1 2. अल-इस्तिबसार, किताबुस सौम, दारुल कुतुब अल-इस्लामिया, तेहरान 6/2; मन ला यहदुरुहुल फ़क़ीह, दारुल कुतुब अल-इस्लामिया, तेहरान 8/2

पृष्ठ 479 का 836

[جدول کا مواد] عربی متن: شهر رمضان اذا جاء یوم الخمیس ویوم عرفة جاء یوم الخمیس ایضا کان ذلك یوم عرفة لایوم الاضحی حتّٰی لاتجوز التضحیة فی هذا الیوم وما یروی ان یوم نحرکم یوم صومکم کان وقع ذلك العام بعینه دون الابدلان من اوّل یوم رمضان الی غرة ذی الحجة ثلثة اشهر لا یوافق یوم النحر یوم الصوم الا ان یتم شهران من الثلاثه وینقص الواحد فاذا تمت الشهور الثلاثة تأخر عنه واذا نقصت الشهور الثلاثة او شهران تقدم علیه فلا یصح الاعتماد علی هذا ۱ (خذ) عن الفتاوی الکبری۔

اردو ترجمہ: جب رمضان المبارک جمعرات کو آیا اور یومِ عرفہ بھی جمعرات ہی کو آیا تو اب یہ یومِ عرفہ تو ہو سکتا ہے یومِ اضحٰی نہیں ہو سکتا حتیٰ کہ اس دن قربانی جائز نہ ہوگی، اور جو یہ مروی ہے کہ تمہارا یومِ نحر تمہارے روزے کا دن ہے یہ ایک معین سال میں اتفاق ہوا تھا، نہ کہ دائمی ضابطہ ہے، کیونکہ رمضان کے پہلے دن سے لے کر ذوالحجہ کی ابتداء تک تین ماہ ہیں تو یومِ نحر یومِ صوم کے موافق تب ہی ہو گا جب ان تین ماہ میں سے دو کامل اور ایک ناقص ہو، تو جب تینوں کامل واقع ہوئے تو یومِ نحر اس سے مؤخر ہو جائے گا، اور اگر تینوں یا دو ناقص واقع ہوئے تو یومِ نحر اس پر مقدم ہو گا لہٰذا اس پر اعتماد صحیح نہیں ۔ یہ فتاوے الکبریٰ کے حوالے سے خزانہ میں ہے (ت)

(م) قمر ۱۲: اکثر ہی کہ اگلے رمضان کی نمبر ۲ یا ۵ ویں اس رمضان کی پہلی ہوتی ہے، پر شرع میں اس پر اعتماد نہیں۔ (ش) ۲/۷۱۲: سیدنا امام جعفر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے منقول ہے کہ:

خامس رمضان الماضی اوّل رمضان الآتی۔ ۲ گزشتنہ رمضان کی پانچویں آئندہ رمضان کی پہلی ہے۔ (ت) بعض علماء نے کہا اس کا پچاس برس تک تجربہ ہوا، ٹھیک اترا۔ بعض معاصرین نے لکھا، ۱۲ برس سے میں بھی تجربہ کرتا اور درست پاتا ہوں۔ اقول: مگر فقیر نے ۱۲۹۷ھ سے اب

تک کے ۹ رمضانوں میں خیال کیا چند ہی سال میں صاف فرق پڑ گیا۔ پانچ برس تک تو حساب ٹھیک تھا اور اس قاعدے کے مطابق رمضان ۱۳۰۱ھ کی پنجم روز یکشنبہ

حواشی: 1۔ خزانتہ المفتین کتاب الصوم قلمی نسخہ ۶۰/۱ 2۔ الاستبصار کتاب الصوم دارالکتب الاسلامیہ تہران ۶/۲ من لا یحضر الفقیہ دارالکتب الاسلامیہ تہران ۸/۲

Fatawa Razawiyya Volume 10

...it arrived, but according to the 1302 AH calendar, the 1st was expected that same day. However, this humble servant was in the countryside on Thursday, the 29th of Sha'ban. It was an open forest, a clear sky; no sign of clouds, dust, smoke, or any such obstacle. I and other Muslims with me kept observing carefully, but there was no sighting. News didn't even arrive on Friday night, so Eid was set for Saturday. Now, even if the 1302 AH calendar is considered wrong, the sky was not clear, and according to astronomical rules, the 1st was possible on Sunday too. So, if we follow the rule to keep the 1st on that day, the 5th would fall on Thursday. In 1303 AH, the 1st should also have been on Thursday, whereas even eye witnessing was wrong there, and impossible according to astronomical rules. Inevitably, it must be admitted that in 1303 AH, it broke. Despite this, even if it were constant, it's just one experience, not a Sharia ruling on which legal rulings can be based. (M) Qamar 15: There aren't more than four consecutive months of 29 days, but even this is not the basis. (Sh) 28/15: Imam Qastalani states in 'Irshad al-Sari Sharh Sahih Bukhari': "Deficiency (months of 29 days) may occur consecutively for two or three months, and it does not occur for more than four months." | Two or three (3) consecutive months can be of twenty-nine days; more than four months cannot be deficient (29 days). (T) Similarly, it is mentioned in the commentary of Sahih Muslim: "But it is expressed with the word 'qalu' (they said)."1 (T) Still, this is of the same nature—an experience or calculation that Sharia doesn't rely upon. For example, from Rabi' al-Thani to Rajab, there were four months of 29 days each. Now, if on the 29th of Sha'ban, testimony of sighting occurs, it will undoubtedly be accepted, and we won't think that now there would be five consecutive months of 29 days. (M) Qamar 16: Regarding these matters, the reliance on letters as common among people is purely rejected, even if sealed and the scribe is trustworthy and handwriting is well-known. (Sh) 29/16: Ignorant people, even some claimants of knowledge who consider themselves the jurist of the age and unique of the era, have a strange enthusiasm for relying on letters. If a letter arrives from one of their confidants, nothing remains of Sharia testimony; it's as if the letter is everything. It's as if 'Tafsir Hilalain' descended upon them from the lunar sphere. Then, what to say of the utter ignorants, there it goes beyond the letter to relying on the date of the letter, whereas scholars state that

letters are not to be relied upon, nor should they be acted upon, because a letter is just a letter...

1. Irshad al-Sari Sharh Sahih Bukhari, Kitab al-Sawm, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 3/357
2. Sharh Nawawi 'ala Sahih Muslim, Kitab al-Sawm, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/347 Page 480 of 836

फतावा रज़विया खंड 10

...आई, मगर 1302 हिजरी के कैलेंडर के अनुसार पहली उसी दिन संभावित थी, लेकिन यह फकीर (तुच्छ सेवक) 29 शाबान, गुरुवार को देहात में था। खुला जंगल, साफ आसमान था; बादल, धूल, धुआं या किसी भी बाधा का नाम-ओ-निशान नहीं था। मैं और मेरे साथ अन्य मुसलमान गौर से देखते रहे, मगर चांद नहीं दिखा। शुक्रवार की रात भी कोई खबर नहीं आई, तो शनिवार को ईद तय हुई। अब 1302 हिजरी के कैलेंडर को अगर गलत भी मान लें, तो आसमान साफ नहीं था और खगोलीय नियमों के अनुसार पहली रविवार को भी संभव थी। तो नियमों को सही करते हुए अगर पहली उसी दिन रखते, तो पांचवीं गुरुवार को पड़ती। 1303 हिजरी में भी पहली गुरुवार को होनी चाहिए थी, जबकि वहां आंखों देखी गवाही भी गलत थी और खगोलीय नियमों के अनुसार असंभव भी। अंततः यह मानना होगा कि 1303 हिजरी में क्रम टूट गया। इसके बावजूद, अगर यह स्थायी भी होता, तो भी यह केवल एक अनुभव है, कोई शरीयत का हुक्म नहीं जिस पर कानूनी आदेश आधारित हों। (म) कमर 15: लगातार चार महीने से ज्यादा 29 दिन के नहीं होते, पर इस पर भी भरोसा नहीं। (श) 28/15: इमाम कस्तलानी 'इरशाद अल-सारी शरह सहीह बुखारी' में फरमाते हैं: "दो या तीन लगातार महीने 29 दिन के हो सकते हैं, चार महीने से ज्यादा कम (29 दिन के) नहीं हो सकते।" | दो या तीन (3) लगातार महीने उनतीस (29) के हो सकते हैं, चार महीने से ज्यादा कम (29 दिन के) नहीं हो सकते। (त) इसी तरह शरह सहीह मुस्लिम में है: "लेकिन इसे 'कालू' (उन्होंने कहा) शब्द से व्यक्त किया गया है।"2 (त) फिर भी यह इसी श्रेणी का अनुभव है, या गणना है जिस पर शरीयत में भरोसा नहीं किया जाता। उदाहरण के लिए, रबी-उल-आख़िर से रजब तक चार महीने 29 दिन के होते आए, अब अगर 29 शाबान को चांद देखने की गवाही मिले, तो वह बिना संदेह स्वीकार होगी, और हम यह नहीं सोचेंगे कि अब लगातार पांच महीने 29 दिन के हो जाएंगे। (म) कमर 16: इन मामलों में खत (पत्र) पर भरोसा करना, जैसा कि आम लोगों में प्रचलित है, पूरी तरह अस्वीकार्य है, चाहे वह मुहर लगा हो और लेखक विश्वसनीय हो और लिखावट जानी-पहचानी हो। (श) 29/16: अज्ञानी लोग, बल्कि ज्ञान का दावा करने वाले कुछ ऐसे लोग भी जो खुद को इस युग का फकीह और अद्वितीय समझते हैं, पत्रों पर भरोसे का अजीब उत्साह रखते हैं। अगर उनके किसी विश्वासपात्र का पत्र आ जाए, तो शरीयत की गवाही का कोई मूल्य नहीं रह जाता, मानो पत्र ही सब कुछ हो। जैसे चंद्रमा के लोक से उन पर 'तफसीर हिलालैन' नाजिल हुई हो। फिर निरा अज्ञानियों का तो कहना ही क्या, वहां

तो पत्र से आगे बढ़कर पत्र की तारीख पर भरोसा किया जाता है, जबकि विद्वान फरमाते हैं कि पत्रों पर भरोसा नहीं किया जा सकता, न ही उन पर अमल किया जा सकता है, क्योंकि पत्र तो पत्र है...

1. इरशाद अल-सारी शरह सहीह बुखारी, किताब अस-सौम, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरुत, 3/357
2. शरह नववी अला सहीह मुस्लिम, किताब अस-सौम, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/347 पेज 480/836

آئی مگر ۱۳۰۲ھ بحساب تقویم یکم اسی دن مظنون تھی، مگر فقیر ۲۹ شعبان روز پنجشنبہ کو دیہات میں تھا کشادہ جنگل، صاف مطلع، ابر، غبار، دُخان کسی علّت کا نام نہ نشان۔ میں اور میرے ساتھ اور مسلمان ہر چند غور کرتے رہے رؤیت نہ ہوئی، شب جمعہ کی خبر بھی نہ آئی، شنبہ کی عید قرار پائی۔ اب ۱۳۰۲ھ کا حساب تقویم اگر غلط بھی مانئے تو مطلع صاف نہ تھا اور بحکم ہیأت یکم یکشنبہ بھی ممکن تھی، تو تصحیح قاعدہ کو اسی دن یکم رکھتے تو پنجم پنجشنبہ کی ٹھہرتی۔ ۱۳۰۳ھ میں یکم بھی جمعرات کو ہونی چاہئے حالانکہ وہ بشادت عین بھی غلط، اور بحکم ہیأت بھی ناممکن۔ لاجرم ماننا پڑے گا کہ ۱۳۰۳ھ میں ٹوٹ گیا۔ بااینہمہ اگر دائمہ بھی ہو تو صرف ایک تجربہ ہے، نہ حکم شرعی جس پر احکام شرعیہ کی بناء ہو سکے۔ (م) قمر ۱۵:: برابر چار مہینے سے زیادہ ۲۹ کے نہیں ہوتے، پر اس پر بھی مدار نہیں۔ (ش) ۲۸/۱۵:: امام قسطلانی ارشاد الساری شرح صحیح بخاری میں فرماتے ہیں: قد یقع النقص متوالیا شھرین او ثلثۃ ولا یقع اکثر من اربعۃ اشھر۔ 1 | دو یا تین ۳ ماہ مسلسل انتیس کے ہو سکتے ہیں، چار ماہ سے زائد ناقص نہیں ہو سکتے۔ (ت) اسی طرح شرح صحیح مسلم میں ہے: لیکن مصدرا بلفظۃ قالوا2 (لیکن اسے لفظ "قالوا" سے تعبیر کیا ہے۔ ت) پھر بھی یہ اسی قبیل سے تجربہ ہے، یا حساب جس پر شرع میں اعتماد نہیں۔ مثلاً ربیع الآخر سے رجب تک چار مہینے ۲۹ کے ہوتے آئے، اب شعبان کی ۲۹ کو شہادتِ رؤیت گزری، بلاشبہ مقبول ہوگی، اور یہ خیال نہ کریں گے کہ ۵ برابر ۲۹ کے ہوئے جاتے۔ (م) قمر ۱۶: ان امور میں خط کا اعتبار جس طرح عوام میں رائج محض مردود ہے اگرچہ مہر شدہ ہو اور کاتب ثقہ اور خط معروف۔ (ش) ۲۹/۱۶: جاہل لوگوں بلکہ بعض اُن مدعیانِ علم میں بھی جو بزعم خود فقیہ العصر وحید الدہر ہوں، اعتمادِ خط کا عجیب جوش ہے۔ اپنے کسی

معتمد کا خط آگیا اور شہادتِ شرعی میں کچھ باقی نہ رہا، گویا خط کا ہے کو ہے۔ خاص فلکِ قمر سے ان پر تفسیر ہلالین نازل ہوئی، پھر کورے جہال کا تو کہنا ہی کیا ہے، وہاں خط سے گزر کر تاریخ خط سے استناد ہوتا ہے، حالانکہ علماء فرماتے ہیں خط پر اعتماد نہیں، نہ اس پر عمل ہو کہ خط خط کے

1 ارشاد الساری شرح صحیح بخاری کتاب الصوم دار الکتاب العربی بیروت ۳ / ۳۵۷ 2 شرح نووی علی صحیح مسلم کتاب الصوم قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۳۴۷ Page 480 of 836

Fatawa Razawiyya Volume 10

...becomes similar and a city [Misr] can be like another city [Misr].

Arabic Text	Urdu Translation / Explanation
Established among Hanafi scholars is that there is no consideration for mere writing and paying attention to it. (Khairiyah[1]) Writing is not relied upon nor acted upon. (Khairiyah[2])	Among the Hanafi scholars, it is accepted that mere writing is not worthy of attention. (Khairiyah) Neither should writing be relied upon nor acted upon. (Khairiyah)
There is nothing in it except writing on paper; it is not among the legal proofs in anything. (Khairiyah, Margin[3]) Mere writing is a sign on which rulings cannot be based. (Khairiyah[4])	In this, there is nothing except writing on a sheet of paper, which is not any Shari'i proof. (Khairiyah) Mere writing is a sign; rulings cannot be based on it. (Khairiyah)
Our scholars explicitly stated the lack of reliance on writing and the lack of acting upon it. (Khairiyah[5] - Summary)	Our scholars have explicitly stated that writing cannot be relied upon or acted upon. (Khairiyah - Summary)
Consideration is for that for which Shari'i evidence is established, not for the writings and papers that exist. (Khairiyah[6])	Consideration is given to that on which there is Shari'i testimony, not to the presence of writings and paper. (Khairiyah)
It is only paper with writing on it, and it is not relied upon nor acted upon, as explicitly stated by many of our scholars. (Khairiyah[7])	Because it is merely paper on which there is writing, and it can neither be relied upon nor acted upon, as most of our scholars have explicitly stated. (Khairiyah)
Mere writing is not relied upon and not legally acted upon. (Khairiyah, Margin[8]) Paper and writing are not among the Shari'i proofs. (Khairiyah[9])	Shari'i-wise, writing can neither be relied upon nor acted upon. (Khairiyah) Paper and writing are not from Shari'i evidences. (Khairiyah)

1. Fatawa Khairiyah, Kitab al-Adab al-Qadhi, Dar al-Ma'rifah, Beirut - 12/2
2. Fatawa Khairiyah, Bab Khalal al-Muhadhir wa al-Sijillat, Dar al-Ma'rifah, Beirut - 16/2
3. Fatawa Khairiyah, Bab Khalal al-Muhadhir wa al-Sijillat - 24/2

4. Fatawa Khairiyah, Kitab al-Waqf, Dar al-Ma'rifah, Beirut - 119/1
5. Fatawa Khairiyah, Kitab al-Waqf, Dar al-Ma'rifah, Beirut - 118/1
6. Fatawa Khairiyah, Kitab al-Waqf, Dar al-Ma'rifah, Beirut - 200/1
7. Fatawa Khairiyah, Kitab al-Waqf, Dar al-Ma'rifah, Beirut - 203/1
8. Fatawa Khairiyah, Kitab al-Waqf, Dar al-Ma'rifah, Beirut - 209/1
9. Fatawa Khairiyah, Kitab al-Buyu', Dar al-Ma'rifah, Beirut - 228/1

...समान हो जाता है और मिस्र, मिस्र की तरह हो सकता है।

अरबी पाठ

हनफ़ी विद्वानों के बीच यह स्थापित है कि केवल लिखावट और उस पर ध्यान देने का कोई महत्व नहीं है। (ख़ैरिय्या[1]) लिखावट पर न तो भरोसा किया जाता है और न ही उस पर अमल किया जाता है। (ख़ैरिय्या[2])

इसमें कागज़ पर लिखावट के अलावा कुछ भी नहीं है; यह किसी भी चीज़ में कानूनी साक्ष्यों में से नहीं है। (ख़ैरिय्या, हाशिये[3]) केवल लिखावट एक संकेत है जिस पर आदेशों की बुनियाद नहीं रखी जा सकती। (ख़ैरिय्या[4])

हमारे विद्वानों ने लिखावट पर भरोसा न करने और उस पर अमल न करने को स्पष्ट रूप से बताया है। (ख़ैरिय्या[5] - सारांश)

विचार उस चीज़ का है जिसके लिए शरीयत का सबूत स्थापित हो, न कि मौजूद लिखावटों और कागज़ों का। (ख़ैरिय्या[6])

यह केवल लिखावट वाला कागज़ है, और इस पर न तो भरोसा किया जाता है और न ही अमल, जैसा कि हमारे कई विद्वानों ने स्पष्ट रूप से बताया है। (ख़ैरिय्या[7])

केवल लिखावट पर भरोसा नहीं किया जाता और कानूनी तौर पर अमल नहीं किया जाता। (ख़ैरिय्या,

उर्दू अनुवाद / स्पष्टीकरण

हनफ़ी विद्वानों के बीच यह सर्वमान्य है कि केवल लिखावट ध्यान देने योग्य नहीं है, ख़ैरिय्या। लिखावट पर न तो भरोसा किया जाए और न ही अमल, ख़ैरिय्या।

इसमें एक कागज़ पर लिखावट के अलावा कुछ नहीं है जो कोई शरई दलील नहीं है, ख़ैरिय्या। केवल लिखावट एक चिन्ह है, इस पर आदेशों की बुनियाद नहीं रखी जा सकती, ख़ैरिय्या।

हमारे विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि लिखावट पर भरोसा और अमल नहीं किया जा सकता, ख़ैरिय्या सारांश।

महत्व उसका है जिस पर शरई गवाही हो, न कि लिखावटों और कागज़ के मौजूद होने पर, ख़ैरिय्या।

क्योंकि वह कागज़ ही है जिस पर लिखा है और उस पर न भरोसा किया जा सकता है और न अमल, जैसा कि हमारे अधिकांश विद्वानों ने स्पष्ट किया है, ख़ैरिय्या।

शरई तौर पर लिखावट पर न भरोसा किया जा सकता है न अमल, ख़ैरिय्या। कागज़ और लिखावट शरई दलीलों से नहीं हैं, ख़ैरिय्या।

अरबी पाठ **उर्दू अनुवाद / स्पष्टीकरण**

हाशिये[8]) कागज़ और लिखावट शरई दलीलों में से
नहीं हैं। (ख़ैरिय्या[9])

1. फ़तावा ख़ैरिय्या, किताब अल-अदब अल-क़ाज़ी, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत - 12/2
2. फ़तावा ख़ैरिय्या, बाब ख़लाल अल-मुहादिर वल-सिजिल्लात, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत - 16/2
3. फ़तावा ख़ैरिय्या, बाब ख़लाल अल-मुहादिर वल-सिजिल्लात - 24/2
4. फ़तावा ख़ैरिय्या, किताब अल-वक़्फ़, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत - 119/1
5. फ़तावा ख़ैरिय्या, किताब अल-वक़्फ़, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत - 118/1
6. फ़तावा ख़ैरिय्या, किताब अल-वक़्फ़, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत - 200/1
7. फ़तावा ख़ैरिय्या, किताब अल-वक़्फ़, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत - 203/1
8. फ़तावा ख़ैरिय्या, किताब अल-वक़्फ़, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत - 209/1
9. फ़तावा ख़ैरिय्या, किताब अल-बुयू, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत - 228/1

فتاوی رضویہ جلد دہم

مشابہ ہوتا ہے اور مُصْر مُصْر کے مثل ہو سکتی ہے۔

عربی متن	اردو ترجمہ / تشریح
المقرر عند علماء الحنفية انه لا اعتبار بمجرد الخط والالتفات اليه خ[1] (خيريه) الخط لايعتمد عليه ولا يعمل به خ[2]	علمائے احناف کے ہاں یہ مسلم ہے کہ محض خط قابل توجہ نہیں، خیر یہ۔ خط پر نہ تو اعتماد کیا جائے نہ ہی عمل، خیر یہ۔
ليس الموجودفيه سوى خط في ورق ليس من حجج الشرع في شئ خ عه[3] مجرد الخط علامة لا تبنى عليها الاحكام خ[4]	اس میں ایک ورق پر خط کے علاوہ کچھ نہیں جو کوئی شرعی دلیل نہیں، خیر یہ۔ محض خط علامت ہے اس پر احکام کی بنیاد نہیں رکھی جاسکتی خیر یہ۔
صرح علماؤنابعدم الاعتماد على الخط وعدم العمل به خ[5]-ملخصاً	ہمارے علماء نے تصریح کی ہے کہ خط پر اعتماد اور عمل نہیں کیا جاسکتا خیر یہ ملخصاً۔
العبرة لما تقوم البينة الشرعية عليه لالما يوجد من الخطوط والكواغذ خ[6]	اعتبار اس کا ہے جس پر شرعی گواہی ہو، نہ کہ خطوط اور کاغذ موجود ہونے پر، خیر یہ۔
انما هو كاغذ به خط وهو لا يعتمد عليه ولايعمل به كما صرح به كثير من علمائنا خ[7]	کیونکہ وہ کاغذ ہی ہے جس پر تحریر ہے اور اس پر نہ اعتماد کیا جاسکتا ہے اور نہ عمل، جیسا کہ ہمارے اکثر علماء نے تصریح کی ہے خیر یہ۔
مجرد خط لا يعتمد عليه ولايعمل له شرعاً خ عه[8]-ليس الورق والخط من حجج الشرع خ[9]۔	

عربی متن **اردو ترجمہ / تشریح**

شرعی طور پر خط پر نہ اعتماد کیا جاسکتا ہے نہ

عمل خیر یہ۔ کاغذ اور خط دلائل شرعی سے نہیں خیر

یہ۔

1 فتاوی خیریة کتاب الادب القاضی دارالمعرفة بیروت- ۱۲/۲ 2 فتاوی خیریة باب خلل المحاضر والسجلات دارالمعرفة بیروت ۱۶/۲ 3 فتاوی خیریة باب خلل المحاضر والسجلات ۲۴/۲ 4 فتاوی خیریة کتاب الوقف دارالمعرفة بیروت ۱۱۹/۱ 5 فتاوی خیریة کتاب الوقف دارالمعرفة بیروت ۱۱۸/۱ 6 فتاوی خیریة کتاب الوقف دارالمعرفة بیروت ۲۰۰/۱ 7 فتاوی خیریة کتاب الوقف دارالمعرفة بیروت ۲۰۳/۱ 8 فتاوی خیریة کتاب الوقف دارالمعرفة بیروت ۲۰۹/۱ 9 فتاوی خیریة کتاب البیوع دارالمعرفة بیروت ۲۲۸/۱

Fatawa Razawiyya Volume 10

From the Book of Sales: Writing cannot be relied upon nor acted upon. And there is no doubt that 'writing' is general, whether it is written with a pen or with a stamp which is a seal. (Summarized from Khairiyyah) (T)

Apart from these, the humble servant has mentioned the statements of fifteen books regarding the unreliability of writing in the fatwa on telegrams included in the treatise "Azka al-Ihlal". Success is from Allah. Warning: Writing is acceptable in certain cases, for example, if a judge writes to another judge, it is a binding proof subject to many conditions.

(H) 29/16 Note 1: The third is from the Book of Claims, like the last one 12. These three are also from the Book of Claims like the last one 12 (T). (M) Qamar 17: A mere telegram, number 30, is useless and not worthy of attention even if it arrives from multiple cities. (Sh) 30/17: The humble servant, may Allah Almighty forgive him, wrote a detailed fatwa on this matter, and scholars from Badaun, Rampur, Hyderabad, and Delhi stamped it. That fatwa is mentioned at the end of the treatise "Azka al-Ihlal". God willing, in the discussion of 'istifadhah' (widespread report), we will also clarify that telegrams, whether from one place or from ten or twenty places, are all unreliable. That is, if multiple telegrams arrive in a city from different regions, they will still have no value because an abundance of telegrams has absolutely no connection with Shariah-compliant 'tawatur' (consecutive reports) and publicity. (M) Qamar 18, Number 31: A market rumor is essentially nothing. (Sh) 31/18: It is often seen that regarding the news of sighting, there is fame in the city and common people are talking about the moon, but upon investigation, there was no basis for it. This is called a rumor. The 'tawatur' and fame that Shariah accepts is something else. (M) Qamar 19, Number 32: A mere narrative is simply not heard (not admissible). (Sh) 32/19: A mere statement by witnesses that the moon appeared in such and such city, or such and such people saw the moon, or they started fasting from such and such day. It is a mere narrative which is not given any attention at all; rather, there must either be testimony of one's own observation, or...

---

1 Fatawa Khairiyyah, Kitab al-Da'wah, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 2/51 Page 482 of 836

किताबुल बुयूअ (क्रय-विक्रय की पुस्तक) से: लेखन पर न भरोसा किया जा सकता है और न ही उस पर अमल किया जा सकता है। और इसमें कोई संदेह नहीं कि 'लेखन' शब्द व्यापक है, चाहे वह कलम से लिखा गया हो या मुहर (छापे) से लगा हो। (खैरिया से संक्षिप्त) (त)

इनके अलावा लेखन की अविश्वसनीयता के बारे में पंद्रह किताबों के उद्धरण इस फकीर ने रिसाला 'अज़कल इहलाल' में शामिल टेलीग्राम संबंधी फतवे में दिए हैं। और सफलता अल्लाह की ओर से है। चेतावनी: लेखन कुछ स्थितियों में स्वीकार्य होता है, जैसे कि यदि एक काजी (न्यायाधीश) दूसरे काजी को पत्र लिखे, तो यह कई शर्तों के अधीन एक बाध्यकारी प्रमाण होता है।

(ह) 29/16 नोट 1: तीसरा 'किताबुल दावा' (दावों की पुस्तक) से है, अंतिम की तरह 12। ये तीनों भी अंतिम की तरह 'किताबुल दावा' से हैं 12 (त)। (म) कमर 17: मात्र टेलीग्राम नंबर 30 निरर्थक और ध्यान देने योग्य नहीं है, भले ही वह कई शहरों से आया हो। (श) 30/17: इस फकीर (अल्लाह उसे क्षमा करे) ने इस बारे में एक विस्तृत फतवा लिखा और बदायूं, रामपुर, हैदराबाद और दिल्ली के विद्वानों ने उस पर मुहरें लगाईं। वह फतवा रिसाला 'अज़कल इहलाल' के अंत में वर्णित है। इंशाल्लाह, 'इस्तिफ़ाज़ह' (व्यापक प्रसार) की चर्चा में हम यह भी स्पष्ट करेंगे कि टेलीग्राम जैसा एक स्थान का हो वैसा ही दस-बीस स्थानों का, सब अविश्वसनीय हैं। अर्थात, यदि किसी शहर में विभिन्न प्रदेशों से अनेक टेलीग्राम आएं तो भी उनकी कोई अहमियत नहीं होगी क्योंकि टेलीग्रामों की बहुतायत का शरीयत के'तवातुर' (निरंतरता) और प्रसिद्धि से मूल रूप से कोई संबंध नहीं है। (म) कमर 18, नंबर 31: बाज़ारी अफवाह मूल रूप से कुछ भी नहीं है। (श) 31/18: अक्सर देखा गया है कि चांद दिखने की खबर शहर में फैल गई और आम लोगों की ज़बान पर चांद-चांद की चर्चा होने लगी, लेकिन जाँच करने पर उसका कोई आधार नहीं था। इसे अफवाह कहते हैं। शरीयत जिस 'तवातुर' और प्रसिद्धि को स्वीकार करती है, वह कुछ और ही है। (म) कमर 19, नंबर 32: मात्र कथा पूरी तरह से सुनने योग्य (अमान्य) है। (श) 32/19: गवाहों का मात्र यह बयान कि फलां शहर में चांद हुआ, या फलां-फलां ने चांद देखा, या फलां दिन से रोज़ा रखा। यह मात्र एक कथा है जिस पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया जाता; बल्कि या तो अपने स्वयं के अवलोकन की गवाही होनी चाहिए, या...

---

1 फ़तावा खैरिया, किताबुल दावाह, दारुल मा'रिफ़ा, बेरुत, 2/51 पृष्ठ 836 में से 482

من کتاب البیوع لا یعتمد علی الخط ولا یعمل بہ ولاشك ان الخط اعم من ان یکون بالقلم او بالطابع الذی ھو الختم خ ملخصاً - کتاب البیوع میں ہے کہ خط پر نہ اعتماد کیا جاسکتا ہے نہ عمل، اور اس میں شک نہیں کہ خط سے مراد عام ہے خواہ وہ قلم سے تحریر کیا ہوا ہو یا اس پر مُہر مطبوع ہو خیریہ ملخصاً (ت)

ان کے سوا بے اعتبارئی خط پندرہ کتابوں کی عبارتیں فقیر نے فتوٰی تار مندرجہ رسالہ از کی الاہلال میں ذکر کیں وباللہ التوفیق۔ تنبیہ: خط بعض صورتوں میں مقبول ہوتا ہے ، کتاب القاضی الی القاضی یعنی حاکم شرع کو خط لکھے تو بشرائط کثیرہ حجت ملزمہ ہے ح) ۲۹/۱۶ عہ۱ : الثالثۃ من کتاب الدعوٰی کالاخیرۃ۱۲ | آخری کی طرح یہ تینوں بھی کتاب الد عوٰی سے ہیں ۱۲(ت) (م)

قمر ۱۷: تار محض نمبر ۳۰ مہمل اور ناقابل التفات اگرچہ متعدد شہروں سے وارد ہو۔ (ش)

۳۰/۱۷: فقیر غفراللہ تعالیٰ لہ نے اس بارے میں ایک مفصل فتوٰی لکھا اور علمائے بدایوں ورام پور و حیدر آباد و دہلی نے مُہریں کیں، وہ فتوٰی آخر رسالہ از کی الاہلال میں مذکور ہوا، اور ہم ان شاء اللہ بحث استفاضہ میں یہ بھی ظاہر کریں گے کہ تار جیسا ایک جگہ ویسا ہی دس بیس مقام کا، سب نامعتبر ہیں، یعنی اگر کسی شہر میں متعدد تار مختلف امصار سے آئیں تو ان کی بھی کچھ وقعت نہ ہوگی کہ کثرت تار شرعی تواتر و اشتہار سے اصلاً علاقہ نہیں۔ (م) قمر ۱۸ نمبر ۳۱: بازاری افواہ اصلاً کوئی چیز نہیں۔ (ش) ۳۱/۱۸: اکثر دیکھا گیا ہے کہ خبر رؤیت میں شہر میں شہرہ اور عام عوام کی زبان پر چاند چاند کا چرچا ہوگیا، پھر تحقیق کیجئے تو کچھ اصل نہ تھی۔ اسے افواہ کہتے ہیں۔ شرع جس تواتر و شہرت کو قبول فرماتی ہے وہ اور چیز ہے۔ (م) قمر ۱۹ نمبر ۳۲: مجرد حکایت محض نامسموع۔ (ش) ۳۲/۱۹: گواہوں کا مجرد بیان کہ فلاں شہر میں چاند ہوا، یا فلاں فلاں

نے چاند دیکھا، یا فلاں روز سے روزہ رکھا۔ مجرد حکایت ہے جس پر اصلاً التفات نہیں، بلکہ یا تو اپنے معائنہ کی شہادت ہو، یا

---

1 فتاویٰ خیریہ کتاب الدعوۃ دار المعرفہ بیروت ۵۱/۲ Page 482 of 836

Fatawa Razawiyya - Volume 10

Testimony upon testimony, or legal fame—this issue is very important to memorize. Not only the common people of today, but many who claim to have knowledge, and even some scholars, are found to be unaware of it.

[Boxed Text] Arabic: Allah is the Guide. This group did not testify to the sighting nor to the testimony of others. They only narrated the sighting of others, so their statement is not to be heeded. (Khazana). This issue has been explicitly mentioned in Durr, Tahawi, Tumm, Sha, Fath al-Qadir, Ayin, Ba, etc., as we have mentioned some of their texts in 'Azka al-Ihlal'. Urdu: And Allah alone grants guidance. This group did not give testimony of seeing the moon, nor did they give testimony upon the testimony of others. They merely narrated the sighting of others, so their statement will not be worthy of attention (Khazana). And in the issues of Durr, Tahawi, Tumm, Sha, Fath-ul-Qadir, Ayin, Ba, etc., this has been clarified. As we have mentioned some of their texts in 'Azka al-Ihlal'. (T)

(M) Qamar 20 Number 33: Customary certainty is of no use. May Allah send blessings upon the best of His creation, our master Muhammad, and his family and all his companions. And praise be to Allah, Lord of the worlds.

(Sh) 33/20: I say: This is an exquisite issue on which this humble servant (may Allah forgive him) has cautioned. Certainty is of two types: one is 'Shari' (Legal), which is obtained through the path of Sharia. The second is 'Urfi' (Customary), which, despite the absence of a Shari' method, results in satisfaction solely based on personal acceptances, established facts, experiences, popular reports, and external circumstances. Ignorant people do not know the difference between the 'Urfi' and 'Shari' percepts and consider it sufficient, complete, and Shari' evidence, although this is a clear error. For example, where the Pure Sharia has conditioned the number of witnesses as two men or one man and two women, even if one of our greatest, most reliable, most authoritative figures, whom people consider the most superior saint of the world, and who in reality is the Ghaus (spiritual pillar) of the time, testifies that "this happened in front of me and I saw it with my own eyes," the reliance we place on his word will never be greater than what we'd place on the word of two, four, ten, or twenty people, but Sharia will demand another witness, and in the case of adultery, three more. So even if three such people testify, it is inadmissible as the Holy Quran says: "then bring four witnesses" [24:4]. Although there is no doubt that

the informed listener would have no room for doubt in their statement. There will be thousands of such examples for this issue and...

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt 2/102; Fath al-Qadir, Kitab al-Sawm, Nooriya Razawiyya Sukkur 2/243.
2. Al-Quran 24/4 (Reference for the requirement of four witnesses).

फ़तावा रज़विया - जिल्द दसवां

शहादत पर शहादत या शरीअती शोहरत—यह मसला बहुत ज़रूरी और याद रखने के काबिल है। यह न सिर्फ आज के दौर के आम लोगों के लिए है, बल्कि इल्म का दावा करने वाले बहुत से लोग और बाज़ विद्वान भी इससे नावाकिफ़ पाए गए हैं।

[बॉक्स टेक्स्ट] अरबी: और अल्लाह ही हिदायत देने वाला है। इस जमात ने न तो चाँद देखने की गवाही दी और न ही दूसरों की गवाही पर गवाही दी है; उन्होंने केवल दूसरों के देखने का वर्णन किया है। इसलिए, उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया जाएगा। (ख़ज़ाना)। और इस मसले पर दुर्र, तहावी, टम, श, फ़तहुल कदीर, आइन, बा वग़ैरह ने तसरीह (स्पष्टीकरण) की है। जैसा कि उनमें से कुछ का ज़िक्र हमने अज़का अल-इहलाल में कर दिया है। उर्दू अनुवाद: और अल्लाह ही हिदायत अता फरमाने वाला है, इस जमात ने चाँद देखने की गवाही नहीं दी और न ही दूसरों की गवाही पर गवाही दी है; उन्होंने सिर्फ दूसरों की रुय्यत (देखने) की हिकायत (वर्णन) की है, लिहाज़ा उनका कौल (कथन) काबिले तवज्जो नहीं होगा, ख़ज़ाना। और इस मसले पर दुर्र, तहावी, टम, श, फ़तहुल कदीर, आइन, बा वग़ैरह ने तसरीह की है। जैसा कि उनमें से कुछ का ज़िक्र हमने अज़का अल-इहलाल में कर दिया है। (त)

(म) कमर 20 नंबर 33: उर्फी (प्रचलित) यकीन कुछ काम आने वाला नहीं, और अल्लाह की रहमत हो उसकी मखलूक में सबसे बेहतरीन हमारे आका मुहम्मद पर और उनकी आल और उनके तमाम असहाब पर। और तमाम तारीफें अल्लाह के लिए हैं जो तमाम जहानों का रब है।

(श) 33/20: अकूल (मैं कहता हूँ): यह एक नफीस (बढ़िया) मसला है जिस पर इस फ़कीर (अल्लाह उसे माफ़ करे) ने तंबीह (चेतावनी) की है, यकीन दो तरह का होता है: एक शरीई कि तरीकेए-शरअ से हासिल हो। दूसरा उर्फी कि बावजूद अदमे-तरीका-ए-शरीई (शरई तरीका न होने के बावजूद) सिर्फ अपने मक़बूलात व मुस्लिमात या तजरबात, मसहूरात और कराइन-ए-ख़ारिजिया के लिहाज़ से इतमीनान हासिल हो जाए। नावाकिफ़ लोग मदरक-ए-उर्फी व शरीई में तफ़रक़ा (अन्तर) न जानकर इसे काफ़ी व वाफ़ी व दलील-ए-शरीई गुमान करते हैं हालांकि यह सरीह (स्पष्ट) खता है, मसलन जहाँ शरअ मुतहर ने शहादत में अदद (संख्या) शर्त किया दो मर्द या एक मर्द दो औरतें हों, वहाँ हमारे आज़म किसी मोअतमद-ए-अजल मुस्तनद ने जिसे अफ़ज़ल औलिया-ए-आलम जानें, और वह वाक़य में भी गौस-ए-ज़माना ही हो। शहादत दी कि मेरे सामने ऐसा हुआ और मैंने बचश्मे-खुद (अपनी आँखों

से) देखा, हमें जो एतबार उसके फरमाने पर आएगा हरगिज़ दो चार दस बीस की बात पर भी उससे ज़्यादा न होगा मगर शरअ दूसरा गवाह और मांगेगी, और मामला-ए-ज़िना में तीन। तो अगर ऐसे ही तीन गवाही दें जब भी ना-मसमूअ (अस्वीकार्य) कि कुरआन करीम ने 'बि-अरबअते शुहदाअ' (चार गवाहों के साथ) फ़रमाया, अगरचे इसमें शक नहीं कि सामय-ए-मुत्तला (जानकार सुनने वाले) को उनके इरशाद में असलन महल्ले-शक न होगा। इसी तरह हज़ारों नज़ीरें इस मसले की होंगी और...

1. रदुल मुहतार किताबुस सौम मुस्तफा अल-बाबी मिस्र 2/102, फ़तहुल कदीर किताबुस सौम नूरिया रज़विया सुक्कुर 2/243
2. अल-कुरआन 24/4

شہادت پر شہادت، یا شرعی شہرت۔ یہ مسئلہ بہت ضروری الحفظ ہے۔ یہ صرف عوام بلکہ آج کل کے بہت مدعیانِ علم، بلکہ بعض ذی علم بھی ناواقف پائے،

[Boxed Text] واللہ الھادی ھذہ الجماعۃ لم یشھد و ابا لرؤیۃ ولا علی شھادۃ غیرھم وانما حکوا بالرؤیۃ غیرھم فلا یلتفت الی قولھم خز ، وقد نص علی المسئلۃ في دط طم ش فتح ب و غیرھا کما ذکرنا بعض نصوصھا في ازکی الاھلال۔ اور اللہ ہی ہدایت عطا فرمانے والا ہے، اس جماعت نے چاند دیکھنے کی گواہی نہیں دی اور نہ ہی دوسروں کی گواہی پر گواہی دی ہے انہوں نے صرف دوسروں کی رؤیت کی حکایت کی ہے لہذا ان کا قول قابل توجہ نہیں ہوگا، خزانہ۔ اور اس مسئلہ پر در، طحاوی، طم، ش، فتح القدیر، ع، ب وغیرہ نے تصریح کی ہے۔ جیسا کہ ان میں سے بعض کو ہم نے ازکی الاہلال میں ذکر کر دیا ہے(ت)

(م) قمر ۲۰ نمبر ۳۳: یقین عرفی کچھ بیکار آمد نہیں، وصلی اللہ علی خیر خلقہ سیدنا محمد وآلہ وصحبہ اجمعین والحمد للہ رب العالمین۔

(ش) ۳۳/۲۰ : اقول: یہ ایک نفیس مسئلہ ہے جس پر فقیر غفر اللہ تعالی لہ نے تنبیہ کی، یقین دو طرح کا ہوتا ہے: ایک شرعی کہ طریقہ شرع سے حاصل ہو۔ دوسرا عرفی کہ باوجود عدم طریقہ شرعی صرف اپنے مقبولات و مسلمات یا تجربات، مشہورات اور قرائن خارجیہ کے لحاظ سے اطمینان حاصل ہو جائے۔ ناواقف لوگ مدرک عرفی و شرعی میں تفرقہ نہ جان کر اسے کافی و وافی و دلیل شرعی گمان کرتے ہیں حالانکہ یہ صریح خطا ہے، مثلا جہاں شرع مطہر نے شہادت میں عدد شرط کیا دو مرد یا ایک مرد دو عورتیں ہوں، وہاں ہمارے اعظم کسی معتمد اجل مستند نے

جسے افضل اولیاء عالم جانیں، اور وہ واقع میں بھی غوث زمانہ ہی ہو۔ شہادت دی کہ میرے سامنے ایسا ہوا اور میں نے بچشم خود دیکھا، ہمیں جو اعتبار اس کے فرمانے پر آئے گا ہرگز دو چار دس بیس کی بات پر بھی اس سے زیادہ نہ ہوگا مگر شرع دوسرا گواہ اور مانگے گی، اور معاملہ زنا میں تین۔ تو اگر ایسے ہی تین گواہی دیں جب بھی نامسموع کہ قرآن کریم نے بائربعة شہداء فرمایا، اگرچہ اس میں شک نہیں کہ سامع مطلع کو ان کے ارشاد میں اصلاً محل شک نہ ہوگا۔ اسی طرح ہزاروں نظیریں اس مسئلہ کی ہوں گی اور

1 ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۱۰۲/۲ ، فتح القدیر کتاب الصوم نوریہ رضویہ سکھر ۲۴۳/۲ 2 القرآن ۴/۲۴

Fatawa Rizvia Volume 10

Furthermore, what weight do poor circumstantial evidences hold? It often happens to a learned person that, based on external factors, they have full confidence that the moon has appeared, but until there is Shar'i (legal) evidence, they never issue a ruling of sighting. Similarly, when the evidence is correctly weighted on the scale of Shariah, they are compelled to rule a sighting, even if, considering other matters, the existence of the crescent does not settle in their heart. It is in such instances that the difference between the scholar and the ignorant is revealed; when circumstantial evidences appear to the contrary, people start objecting to the scholar's ruling, while he knows that what he did was the correct opinion and he was bound by the Shar'i perception in any case. An indication towards this was also mentioned under point ten or eleven, and a more detailed explanation of these certainties is mentioned in the treatise 'Azka al-Ihlal'. And with Allah is success, and may the blessings of Allah Almighty be upon our master Muhammad, his family, and all his companions.

Benefit: In a Sahih (authentic) Hadith, the Holy Prophet (may peace and blessings of Allah be upon him) states:

شهران لا ينقصان شهرا عيد رمضان و ذى الحجة	**Both months of Eid do not become deficient, i.e., Ramadan and Dhul-Hijjah.**
رواه احمد والستة عن ابن ابي بكرة رضى الله تعالى عنه۔	(Imam Ahmad and the six Imams narrated this from Hazrat Ibn Abi Bakrah, may Allah Almighty be pleased with him. - T)

Some scholars have interpreted this to mean that these two months are not both 29 days long in the same year. It is in Sahih al-Bukhari:

| قال محمد لا يجتمعان كلاهما ناقص۔ | Muhammad bin Sirin says that these two months do not occur together such that both are deficient (i.e., 29 days). (T) |

Imam Sarra' stated: لا ينقصان جميعاً فى سنة واحدة (In one year, the two months of Eid do not coincide such that both are deficient. - T)

Imam Ahmad bin Hanbal (may Allah Almighty have mercy on him) stated:

| ان نقص رمضان تم ذوالحجة وان نقص ذو الحجة تم رمضان۔ | If Ramadan is 29 days, then Dhul-Hijjah will be 30; and if Dhul-Hijjah is 29, Ramadan will be 30. (T) |

1. Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Abdur Rahman Ibn Abi Bakrah (radi Allahu 'anhu), Dar al-Ma'rifah Beirut, 5/38; Sahih al-Bukhari, Kitab al-Sawm, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/256
2. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Sawm, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/256
3. Fath al-Bari Sharh Sahih al-Bukhari, Kitab al-Sawm, Dar al-Ma'rifah Beirut, 4/107
4. Sahih al-Bukhari, Kitab al-Sawm, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/256 Note: In Fath al-Bari, this statement is quoted from Imam Bazzar instead of Imam Sarra'.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

फिर बेचारे संकेतों (क़राइन) की क्या गिनती है? एक विद्वान को कई बार ऐसा अनुभव होता है कि बाहरी मामलों के आधार पर उसे चाँद होने का पूर्ण विश्वास होता है, लेकिन जब तक शरीअत का प्रमाण न हो, वह कभी भी चाँद देखने का आदेश नहीं देता। इसी प्रकार, जब प्रमाण शरीअत के तराजू पर ठीक उतरता है, तो वह विवश होकर चाँद देखने का आदेश देता है, भले ही अन्य मामलों को देखते हुए चाँद का होना दिल को न भाए। ऐसी ही जगह पर विद्वान और अज्ञानी का अंतर प्रकट होता है; जब संकेत इसके विपरीत दिखाई देते हैं, तो लोग विद्वान के आदेश पर आपत्ति करने लगते हैं, जबकि वह जानता है कि जो उसने किया वही सही राय थी और वह हर हाल में शरीअत की समझ का पालन करने के लिए बाध्य था। इस बात की ओर संकेत ग्यारहवें या बारहवें बिंदु के तहत भी गुज़रा है, और इन यकीनों की अधिक स्पष्ट व्याख्या 'अज़्का अल-इहलाल' नामक पुस्तिका में वर्णित है। और अल्लाह ही सफलता देने वाला है, और अल्लाह तआला का दरूद हो हमारे सरदार मुहम्मद पर, उनकी आल पर और उनके सभी साथियों पर।

फ़ायदा: सहीह हदीस में है कि हुज़ूर अक़दस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

شهران لا ينقصان شهرا عيد رمضان و ذى الحجة	**ईद के दोनों महीने कम (नाक़िस) नहीं होते, यानी रमज़ान और ज़ुल-हिज्जा।**
رواه احمد والستة عن ابن ابي بكرة رضى الله تعالى عنه۔	(इसे इमाम अहमद और छह इमामों ने हज़रत इब्न अबी बकरा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया है। - त)

कुछ विद्वानों ने इसका अर्थ यह लिया है कि ये दोनों महीने एक ही वर्ष में 29 दिनों के नहीं होते। सहीह बुखारी में है:

| قال محمد لا يجتمعان كلاهما ناقص۔ | मुहम्मद बिन सीरीन कहते हैं कि ये दो महीने इस स्थिति में एक साथ नहीं होते कि दोनों कम (यानी 29 के) हों। (त) |

इमाम सर्रा' ने फ़रमाया: لا ينقصان جميعاً فى سنة واحدة (एक वर्ष में ईद के दो महीने एक साथ नहीं आते कि दोनों ही कम हों। - त)

इमाम अहमद बिन हंबल रहमतुल्लाह अलैहि ने फ़रमाया:

| ان نقص رمضان تم ذوالحجة وان نقص ذو الحجة تم رمضان۔ | अगर रमज़ान 29 का होगा तो ज़ुल-हिज्जा 30 का, और अगर ज़ुल-हिज्जा 29 का होगा तो रमज़ान 30 का होगा। (त) |

1. मसनद अहमद बिन हंबल, अब्दुर रहमान इब्न अबी बकरा रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी, दार अल-मआरिफ़ बेरूत, 5/38; सहीह अल-बुखारी, किताब अस-सौम, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची, 1/256
2. सहीह अल-बुखारी, किताब अस-सौम, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची, 1/256
3. फ़तह अल-बारी शरह सहीह बुखारी, किताब अस-सौम, दार अल-मआरिफ़ बेरूत, 4/107
4. सहीह अल-बुखारी, किताब अस-सौम, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची, 1/256 नोट: फ़तह अल-बारी में इमाम सर्रा' के बजाय इमाम बज़ार से यह इबारत नक़ल की गई है।

پھر قرائن بے چارے کس گنتی شمار میں ہیں۔ ذی علم کو بارہا واقع ہوتا ہے کہ بہت امور خارجہ کے لحاظ سے چاند ہونے میں اطمینان کامل رکھتا ہے، مگر جب تک ثبوت شرعی نہ ہو ہر گز حکم روئیت نہیں کرتا۔ یوں ہی جب ثبوت میزان شرع پر ٹھیک اترے گا مجبوراً حکم روئیت کرے گا، اگر چہ بنظر امور دیگر کسی طرح ہلال کا ہونا دل پر نہ جمے۔ ایسی ہی جگہ عالم و جاہل کا فرق کھلتا ہے، جب قرائن اس کے خلاف ظاہر ہوتے ہیں جہاں جاہل حکم عالم پر اعتراض کرنے لگتے ہیں، حالانکہ وہ جانتا ہے کہ جو میں نے کیا وہی رائے صائب تھی اور مجھ پر بہر حال مدرک شرعی کی پابندی واجب اس امر کی طرف اشارہ زیر یا زدہم بھی گزرا، اور ان یقینوں کی زیادہ توضیح رسالہ ازکی الاھلال میں مذکور ہوئی، وباللہ التوفیق وصلی اللہ تعالی علی سیدنا محمد وآلہ وصحبہ اجمعین۔

فائدہ: صحیح حدیث میں ہے حضور اقدس صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

شهران لا ينقصان شهرا عيد رمضان و ذى الحجة — **عید کے دونوں مہینے ناقص نہیں ہوتے یعنی رمضان اور ذوالحجہ**

رواہ احمد والستة عن ابن ابي بكرة رضی اللہ تعالی عنہ۔ (اسے امام احمد اور ائمہ ستہ نے حضرت ابن ابی بکرہ رضی اللہ تعالی عنہ سے روایت کیا ہے۔ ت)

بعض علماء نے اس کے یہ معنی لیے ہیں کہ یہ دونوں مہینے ایک سال میں ۲۹ کے نہیں ہوتے۔ صحیح بخاری میں ہے:

| قال محمد لا یجتمعان کلاھما ناقص۔ | محمد بن سیرین کہتے یہ دو مہینے جمع نہیں ہوتے اس حال میں کہ دونوں ناقص (یعنی ۲۹ کے) ہوں۔ (ت) |

امام سرا-3 نے فرمایا: لا ینقصان جمیعاً فی سنة واحدة (ایک سال میں عید کے دو ماہ جمع نہیں ہوتے کہ دونوں ہی ناقص ہوں۔ ت)

امام احمد بن حنبل رحمہ اللہ تعالی نے فرمایا:

| ان نقص رمضان تم ذوالحجة وان نقص ذو الحجة تم رمضان۔ | رمضان ۲۹ کا ہو گا تو ذوالحجہ ۳۰ کا، اور ذوالحجہ ۲۹ کا ہوگا رمضان ۳۰ کا۔ (ت) |

1. مسند احمد بن حنبل مروی عن عبد الرحمن ابن ابی بکر رضی اللہ عنہ دار المعرفہ بیروت ۵/ ۳۸، صحیح البخاری کتاب الصوم قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶
2. صحیح البخاری کتاب الصوم قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶
3. فتح الباری شرح صحیح بخاری کتاب الصوم دار المعرفہ بیروت ۴/ ۱۰۷
4. صحیح البخاری کتاب الصوم قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۲۵۶ ف: فتح الباری میں امام سراء کی بجائے امام بزار سے یہ عبارت منقول ہے۔)

Fatawa Razawiya, Volume 10

And supporting this meaning is the Hadith narrated through Zaid bin Uqbah from Hazrat Samurah bin Jundab (may Allah be pleased with him) that 'Shahra Id la yakunani thamaniyata wa khamsina yawman' (The two months of Eid are not of 58 days).

Nevertheless, according to the researchers, this refers to the majority and predominant rule, not an eternal and everlasting one. Imam Tahawi (may Allah have mercy on him) says: 'Qad wajadnahuma yanqusani fi a'wamihim' (We have seen in years that both these months were of 29 days).

I say: Scholars have explained excellent meanings of the first Hadith, and the clear research is that their reward does not decrease even if they are full in count. As for the second Hadith, its authenticity is not known; if it is sahih (authentic), it is possible that it was narrated by meaning (naql bil-ma'na) by some narrators based on their own understanding. And Allah Almighty knows best.

In short, the point is that it is not necessary for such experiences to be permanent, and even if they were permanent, the rulings of Sharia do not depend on them. And Allah Almighty knows best, and Allah is the Guide, and may Allah Almighty's peace and blessings be upon the Master of the Messengers, Muhammad, and his family and all his companions.

---

1. Fath al-Bari Sharh Sahih al-Bukhari, Kitab al-Sawm, Dar al-Ma'rifah Beirut, 4/107
2. Sharh Ma'ani al-Athar, Kitab al-Siyam, H.M. Saeed Company Karachi, 1/381

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम (10)

और इस अर्थ का समर्थन वह हदीस करती है जो ज़ैद बिन उक़बा के माध्यम से हज़रत समुरह बिन जुंदब (रज़ियल्लाहु अन्हु) से वर्णित है कि 'शहरा ईद ला यकूनानी समानियता व खमसीना यौमन' [ईद के दोनों महीने ५८ दिन के नहीं होते]।

इसके बावजूद, शोधकर्ताओं के अनुसार, इससे अभिप्राय अधिकांशतः और अक्सर होने वाला हुक्म है, न कि हमेशा और स्थायी रहने वाला। इमाम तहावी (रहमतुल्लाहि अलैहि) फरमाते हैं: 'क़द वजदनाहुमा यनकुसानी फ़ी अवामिहिम' [हमने बरसों देखा कि ये दोनों महीने साल में २९ के हुए]।

मैं कहता हूँ: पहली हदीस के तो विद्वानों ने बहुत उम्दा अर्थ बयान किए हैं, और स्पष्ट शोध यही है कि इनका सवाब (पुण्य) नहीं घटता चाहे गिनती में पूरे हों, और दूसरी हदीस की प्रामाणिकता ज्ञात नहीं है; यदि वह सही हो तो संभव है कि कुछ रावियों (वर्णनकर्ताओं) ने अपनी समझ के आधार पर अर्थानुसार वर्णन (नक़्ल बिल-मा'ना) किया हो। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

संक्षेप में, उद्देश्य यह है कि ऐसे अनुभवों का स्थायी होना आवश्यक नहीं है, और यदि वे स्थायी हों भी तो शरीयत के अहकाम (नियम) उन पर निर्भर नहीं करते। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है, और अल्लाह ही मार्गदर्शन करने वाला है, और अल्लाह तआला की शांति और आशीर्वाद संदेष्टाओं के सरदार मुहम्मद और उनके परिवार और उनके सभी साथियों पर हो।

---

1. फ़त्ह अल-बारी शरह सहीह अल-बुख़ारी, किताब अल-सौम, दार अल-मआरिफ़ा बेरूत, 4/107
2. शरह मआनी अल-आसार, किताब अल-सियाम, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 1/381

पृष्ठ 485 का 836

اور اس معنی کی مؤید وہ حدیث ہے جو بطریق زید بن عقبہ حضرت سمرہ بن جندب رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی کہ شھرا عید لایکونان ثمانیة و خمسین یوماً ۱ عید کے دونوں مہینے ۵۸ دن کے نہیں ہوتے۔

بایں ہمہ محققین کے نزدیک اس سے اکثری اغلبی حکم مراد ہے۔ نہ کہ دائمی ابدی۔ امام طحاوی رحمۃ اللہ تعالٰی علیہ فرماتے ہیں: قد وجدناھما ینقصان فی اعوامھم ۲ نے برسوں دیکھا کہ یہ دونوں مہینے سال میں ۲۹ کے ہوئے۔

اقول: معند احدیث اول کے تو عمدہ معانی علماء نے بیان فرمائے، اور تحقیق روشن یہی ہے کہ اس کا ثواب نہیں گھٹتا اگرچہ گنتی میں پورے ہوں، اور حدیث دوم کی صحت معلوم نہیں، اگر صحیح ہو تو بعض رواۃ سے اپنی فہم کی بناء پر نقل بالمعنی محتمل، واللہ تعالٰی اعلم،

بالجملہ غرض یہ ہے کہ ایسے تجربات کا دائمی ہونا ضرور نہیں، اور دائمی ہوں بھی تو احکام شرع کا ان پر مدار نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم، واللہ الھادی وصلی اللہ تعالٰی علی سید المرسلین محمد وآلہ و صحبہ اجمعین ط

---

1 فتح الباری شرح صحیح البخاری کتاب الصوم دارالمعرفۃ بیروت ۱۰۷/۴ 2 شرح معانی الآثار کتاب الصیام ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۳۸۱/۱

Volume Ten Fatawa Razawiya

Invalidators of Fasting (Things that break the fast)

Problem 217 to 219: From Aligarh via Rahimullah Khan, 25th Ramadan al-Mubarak 1315 AH.

What do the scholars of religion say regarding this matter: (1) If a woman places any dry medicine in her body during Ramadan, will it cause any corruption (breaking) of the fast or not? (2) If a woman inserts a medicated suppository or inserts medicine with her finger into her body, or if a man inserts a finger, will the fast break or not? (3) If a woman is embraced or has a thought, and after some time when there is no desire left, drops have been discharged; while going to urinate or after urination, some thick white water comes out which looks like semen, will it be called semen or not? And will the fast break because of it or not? Please explain and be rewarded.

The Answer: (1) If during a state of fasting, i.e., from true dawn until sunset, whether in Ramadan or outside of it, dry or wet medicine or any object is placed in the vagina in such a way that it is completely hidden inside the internal vagina (farj-e-dakhil), the fast is invalidated. However, for example, if the medicine is tied in a cloth and placed in the vagina such that one end of the cloth remains outside the internal vagina, even if it is hidden in the external vagina (farj-e-kharij), the fast will not be invalidated. This remains true unless any part of the medicine seeps from the cloth and falls into the internal vagina, or the medicine is so wet that it drips from the cloth and touches the internal vagina, or due to movement the cloth moves up and becomes completely hidden inside the internal vagina. In these cases, the fast will be invalidated.

जिल्द दहुम फ़तावा रज़विया

मुफ़्सिदाते सौम (रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें)

मसअला २१७ से २१९: अलीगढ़ से, रहीम उल्लाह ख़ाँ के माध्यम से, २५ रमज़ानुल मुबारक १३१५ हिजरी।

इस मसअले में उलमा-ए-दीन क्या फ़रमाते हैं: (१) रमज़ान में अगर कोई औरत अपने जिस्म में कोई खुश्क (सूखी) दवा रखे, तो क्या रोज़े में कोई ख़राबी आएगी या नहीं? (२) औरत किसी दवा की बत्ती या उंगली से दवा अपने जिस्म में दाख़िल करे, या मर्द उंगली करे तो रोज़ा टूटेगा या नहीं? (३) औरत लिपटी या उसे कोई ख़याल आया, कुछ देर बाद जब ख़्वाहिश (इच्छा) बिल्कुल न रही, बूंदें निकल चुकी हों, पेशाब के वक़्त या पेशाब के बाद कुछ गाढ़ा सफ़ेद पानी निकले जिसकी शक्ल मनी (वीर्य) जैसी हो, तो क्या उसे मनी कहा जाएगा या नहीं? और क्या इससे रोज़ा टूटेगा या नहीं? बयान फ़रमाएं, सवाब पाएं।

अल-जवाब: (१) अगर रोज़े की हालत में, यानी सुब्ह सादिक़ के तुलू होने से सूरज डूबने तक, चाहे रमज़ान हो या ग़ैर-रमज़ान, खुश्क या तर दवा या कोई भी चीज़ शर्मगाह में इस तरह रखी जाए कि वह अंदरूनी शर्मगाह (फ़र्ज़-ए-दाख़िल) में पूरी तरह ग़ायब हो जाए, तो रोज़ा जाता रहेगा (टूट जाएगा)। और अगर मसलन दवा किसी कपड़े में बाँधकर शर्मगाह में इस तरह रखी जाए कि कपड़े का सिरा अंदरूनी शर्मगाह से बाहर रहे, चाहे वह बाहरी शर्मगाह (फ़र्ज़-ए-ख़ारिज) में ग़ायब हो जाए, तो रोज़ा नहीं जाएगा। जब तक कि दवा का कोई हिस्सा कपड़े से छनकर अंदरूनी शर्मगाह में न गिर जाए, या दवा इतनी तर (गीली) हो कि कपड़े से टपक कर अंदरूनी शर्मगाह में लग जाए, या हरकत (हिलने-डुलने) की वजह से कपड़ा ऊपर चढ़ जाए और बिल्कुल अंदरूनी शर्मगाह में ग़ायब हो जाए, इन सूरतों में रोज़ा जाता रहेगा।

पेज ४८७ ऑफ ८३६

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

مفسدات صوم (روزہ توڑ دینے والی اشیاء)

مسئلہ ۲۱۷ تا ۲۱۹: از علی گڑھ بوساطت رحیم اللہ خاں ۲۵ رمضان المبارک ۱۳۱۵ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں : (۱) رمضان میں عورت کوئی دوا خشک اپنے جسم میں رکھے تو روزے میں کچھ فساد آئے گا یا نہیں؟ (۲) عورت بتی کسی دوا کی یا انگلی سے دوا اپنے جسم میں داخل کرے، یا مرد انگلی کرے تو روزہ ٹوٹے گا یا نہیں؟ (۳) عورت کو لپٹا یا یا خیال باندھا، کچھ دیر بعد جس وقت کہ خواہش بالکل نہ رہی بوندیں خارج ہو چکی ہیں، پیشاب کو جاتے وقت بعد پیشاب کے کچھ گاڑھا پانی سفید نکلے جس کی شکل منی کی سی ہو تو اس کو منی کہا جائے گا یا نہیں؟ اور روزہ اس سے ٹوٹے گا یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: (۱) اگر روزے کی حالت میں یعنی طلوع صبح صادق سے غروب شمس تک رمضان خواہ غیر رمضان میں دوا خشک یا تر خواہ کوئی چیز فرج میں اس طرح رکھی گئی کہ فرج داخل کے اندر بالکل غائب کر دی تو روزہ جاتا رہا، اور اگر مثلاً دوا کسی کپڑے میں باندھ کر فرج میں اس طرح رکھی کہ کپڑے کا سرا فرج داخل سے باہر رہا اگر چہ فرج خارج میں غائب ہو جائے تو روزہ نہ جائے گا جب تک دوا کا کوئی حصہ کپڑے سے چھین کر فرج داخل کے اندر نہ گرے یا دوا ایسی تر ہو کہ کپڑے میں ٹپک کر فرج داخل میں لگے یا حرکت کے سبب کپڑا چڑھ جائے کہ بالکل فرج داخل کے اندر غائب ہو جائے، ان صورتوں میں روزہ جاتا رہے گا۔

Fatawa Ridawiyya Volume 10

In 'Tanwir al-Absar' and 'al-Durr al-Mukhtar': (If someone inserts a stick) or similar object (into their rectum while one end remains outside), the fast is not broken. If it is completely hidden inside, it is invalidated. Similarly, if one swallows a piece of wood or a thread even if a morsel is tied to it; unless something detaches from it [remaining inside, then it's invalidated]. The implication is that the 'Istiqrar' (stabilization/settling) of what enters the cavity is a condition for invalidation. (Badai'). Also, if a woman inserts cotton; if it disappears, the fast is invalidated, and if an end of it remains in her outer vulva, it is not (the fast is not broken). - End of summary 1. In 'Radd al-Muhtar': What enters the cavity, if it disappears within it, it is invalidated, and this is what is meant by 'Istiqrar'. If it does not disappear, but rather a part of it remains outside or it is connected to something outside, it is not invalidated due to the lack of stabilization 2 - And Allah Almighty knows best.

In 'Tanwir al-Absar' and 'Dur al-Mukhtar' it is stated: If someone inserted a wooden stick (oud etc.) into the rectum in such a way that one end of it is outside, the fast does not break. And if they push it all inside, it will break. The same rule applies to someone who swallows wood or a thread even if a morsel is tied to it, but in the case where something detaches from the morsel and remains inside, the fast will break. The gist of this is that for the substance entering the stomach to cause invalidation, its 'Istiqrar' (settling/remaining) there is a condition (Badai'). If a woman inserted cotton which disappeared, the fast will be invalidated, and if any part of it remains protruding in the outer vulva, the fast will not be invalidated (meaning the fast will not break). In 'Radd al-Muhtar' it is stated that whatever entered the cavity, if it disappeared inside, the fast will be invalidated, and this is exactly what is meant by 'Istiqrar'. If it does not disappear, rather some side of it remains outside or it remains connected to an external thing, then due to the lack of 'Istiqrar', the fast will not be invalidated. And Allah Almighty knows best (T).

(2) The ruling for a wick (suppository) and medicine was mentioned in the previous issue. As for inserting a finger into the vulva, a woman's fast will only be invalidated in four scenarios: One is that upon inserting the finger, in that same state while the finger is touching the vulva, the woman experiences ejaculation/orgasm; because the essence of breaking a fast (al-fitr) is present, which is the emission of semen due to physical contact, as mentioned in 'Al-Hidayah' and others (in this case the meaning of

'Iftar' was found and that is the discharge of semen due to physical contact, Hidaya etc. T). Second, that the finger is wet with something like water or oil such that its moisture detaches and adheres to the inner vulva. Third, that a dry finger was inserted and it became so wet from the moisture of the vulva that it could now detach from it and stick to another thing; after that, withdrawing the finger and [reinserting it] similarly...

---

1 Dur al-Mukhtar, Chapter on what invalidates fasting, Mujtabai Delhi, 1/149 2 Radd al-Muhtar, Chapter on what invalidates fasting, Mustafa al-Babi Egypt, 2/107 3 Radd al-Muhtar, Chapter on what invalidates fasting, Mustafa al-Babi Egypt, 109/2

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

'तनवीर अल-अब्सार' और 'अल-दुर्र अल-मुख्तार' में है: (यदि किसी ने लकड़ी का टुकड़ा डाला) या उसके जैसा कुछ (अपने मलाशय में और उसका एक सिरा बाहर है), तो रोज़ा नहीं टूटता। और यदि वह उसे पूरी तरह गायब कर दे (अंदर कर ले), तो रोज़ा फ़ासिद (अमान्य) हो जाता है। और यही नियम है यदि कोई लकड़ी या धागा निगल ले चाहे उसमें निवाला बँधा हो; जब तक कि उसमें से कुछ अलग न हो जाए [अंदर रह जाए]। इसका अर्थ यह है कि शरीर के खोखले हिस्से (जौफ़) में प्रवेश करने वाली चीज़ का वहाँ ठहरना (इस्तिक़रार) रोज़ा टूटने की शर्त है। (बदाइ')। और यदि महिला ने रुई का टुकड़ा डाला; यदि वह गायब हो गया तो रोज़ा फ़ासिद है और यदि उसका एक सिरा बाहरी योनि में रह गया तो नहीं (रोज़ा नहीं टूटेगा)। - 1 संक्षेप में। 'रद अल-मुह्तार' में है: जो शरीर के जौफ़ में प्रवेश किया, यदि वह उसमें गायब हो गया तो रोज़ा फ़ासिद है और 'इस्तिक़रार' से यही मुराद है। और यदि वह गायब न हो, बल्कि उसका एक हिस्सा बाहर रहे या वह किसी बाहरी चीज़ से जुड़ा रहे, तो इस्तिक़रार की कमी के कारण रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा 2 - और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

'तनवीर अल-अब्सार' और 'दुर्र अल-मुख्तार' में है: किसी ने ऊद (की लकड़ी वगैरह को) मलाशय (rectum) में इस तरह दाखिल किया कि उसका एक किनारा बाहर हो तो रोज़ा नहीं टूटता, और अगर सब अंदर चढ़ा ले तो टूट जाएगा और यही हुक्म है उसका जो कोई लकड़ी निगल ले या धागा अगरचे उसमें निवाला बँधा हुआ हो मगर इस सूरत में कि जब निवाले से कुछ जुदा होकर अंदर रह जाए तो रोज़ा टूट जाएगा, इसका हासिल यह है कि पेट में दाखिल होने वाली चीज़ का वहाँ (पेट में) इस्तिक़रार (ठहरना) फ़साद के लिए शर्त है (बदाइ')। अगर औरत ने रुई दाखिल की जो गायब हो गई तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा, और अगर उसकी कोई तरफ बाहरी योनि में निकली हुई रही तो रोज़ा फ़ासिद न होगा (यानी रोज़ा नहीं टूटेगा)। 'रद अल-मुह्तार' में है कि जो कुछ जौफ़ में दाखिल हुआ अगर वह गायब हो गया तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा, और इस्तिक़रार से यही मुराद है और अगर गायब न हो बल्कि उसकी कोई जानिब बाहर बाकी रह गई या बाहरी चीज़ से मुत्तसिल (जुड़ी) रही तो अदम-ए-इस्तिक़रार (ठहराव की कमी) की वजह से रोज़ा फ़ासिद न होगा, वल्लाह तआला आलम (त)।

(2) बत्ती और दवा का हुक्म पिछले मसले में गुज़र चुका है, और उंगली योनि (फ़र्ज) में दाखिल करने से औरत का रोज़ा सिर्फ चार सूरत में फ़ासिद होगा: एक यह कि उंगली दाखिल करने से उसी हालत

में कि उंगली योनि को मस (स्पर्श) कर रही है औरत को इनज़ाल (orgasm/ejaculation) हो जाए; क्योंकि इफ़्तार का अर्थ पाया गया और वह शारीरिक संपर्क(मुबाशरत) की वजह से मनी (semen) का निकलना है, जैसा कि हिदाया वगैरह में है (इस सूरत में मानी-ए-इफ़्तार पाया गया और वह मुबाशरत की वजह से मनी का ख़रूज है, हिदाया वगैरह त)। दूसरे यह कि उंगली पानी या तेल की तरह किसी चीज़ से ऐसी तर हो कि उसकी तरी छूटकर अंदरूनी योनि में लगे। तीसरे यह कि सूखी उंगली दाखिल की वह योनि की रुطबत (नमी) से ऐसी तर हो गई कि अब उससे छूटकर दूसरी चीज़ में लगे, उसके बाद उंगली बाहर करके ऐसी ही...

---

1 दुर्रे मुख्तार, बाब मा युफ़सिदुस सौम, मुज्तबाई दिल्ली, 1/149 2 रद अल-मुह्तार, बाब मा युफ़सिदुस सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/107 3 रद अल-मुह्तार, बाब मा युफ़सिदुस सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 109/2

पृष्ठ 836 का 488

تنویر الابصار اور در مختار میں ہے: کسی نے عود (کی لکڑی وغیرہ کو) دبر میں اس طرح داخل کیا کہ ایک کنارہ اس کا باہر ہو تو روزہ نہیں ٹوٹتا، اور اگر سب اندر چڑھالے تو ٹوٹ جائے گا اور یہی حکم ہے اس کا جو کوئی لکڑی نگل لے یا دھاگہ اگرچہ اس میں لقمہ بندھا ہوا ہو مگر اس صورت میں کہ جب لقمہ سے کچھ جُدا ہو کر اندر رہ جائے تو روزہ ٹوٹ جائے گا، اس کا حاصل یہ ہے کہ پیٹ میں داخل ہونے والی چیز کا وہاں (پیٹ میں) استقرار (ٹھہرنا) فساد کے لیے شرط ہے بدائع، اگر عورت نے روئی داخل کی جو غائب ہو گئی تو روزہ فاسد ہو جائیگا، اور اگر اس کی کوئی طرف فرج خارج میں نکلی ہوئی رہی تو روزہ فاسد نہ ہوگا (یعنی روزہ نہیں ٹوٹے گا) اھ اختصاراً۔ ردالمحتار میں ہے کہ جو کچھ جوف میں داخل ہوا اگر وہ غائب ہو گیا تو روزہ فاسد ہو جائے گا، اور استقرار سے یہی مراد ہے اور اگر غائب نہ ہو بلکہ اس کی کوئی جانب خارج باقی رہ گئی یا خارج شئی سے متصل رہی تو عدم استقرار کی وجہ سے روزہ فاسد نہ ہوگا، واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

في تنوير الابصار والدر المختار (ادخل عودا) ونحوه (في مقعدته وطرفه خارج) وان غيبه فسد وكذا لو ابتلع خشبة اوخيطاً ولفيه لقمة مربوطة الان ينفصل منها شئ ومفاده ان استقرار الداخل فى الجوف شرط للفساد، بدائع، ولو ادخلت قطنة ان غابت فسد وان بقى طرفها في فرجها الخارج لا (لم يفطر) اهـ ١ ملتقطاً وفي ردالمحتار مادخل في الجوف ان غاب فيه فسد وهو المراد بالاستقرار وان لم يغب بل بقى طرف منه في الخارج اوكان متصلا بشئ خارج لا يفسد لعدم استقراره ٢- والله تعالى اعلم۔

واللہ تعالیٰ اعلم

(۲) بتی اور دوا کا حکم مسئلہ سابقہ میں گزرا، اور انگلی فرج میں داخل کرنے سے عورت کا روزہ صرف چار صورت میں فاسد ہو گا: ایک یہ کہ انگلی داخل کرنے سے اُسی حالت میں کہ انگلی فرج کو مس کر رہی ہے عورت کو انزال ہو جائے لو جود معنی الفطر وھو الامناء عن مباشرة كما في الهداية وغيرها (اس صورت میں معنی افطار پایا گیا اور وہ مباشرت کی وجہ سے منی کا خروج ہے، ہدایہ وغیرہ ت) دوسرے یہ کہ انگلی پانی یا روغن کی مانند کسی شے سے ایسی تر ہو کہ اس کی تری چھوٹ کر فرج داخل میں لگے۔ تیسرے یہ کہ خشک انگلی داخل کی وہ فرج کی رطوبت سے ایسی تر ہو گئی کہ اب اس سے چھوٹ کر دوسری چیز میں لگے، بعدہ انگلی باہر کر کے ایسی ہی

---

1 درمختار باب مایفسد الصوم مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۹ 2 ردالمحتار باب مایفسد الصوم مصطفی البابی مصر ۲/ ۱۰۷ 3 ردالمحتار باب مایفسد الصوم مصطفی البابی مصر ۲/۱۰۹

In a state of moisture, then inside that the moisture broke off and attached inside the inner vagina. Fourth, a severed finger separated from the body was disappeared inside the inner vagina such that no part remained outside. These rulings are also evident from this issue, it is the same whether the finger belongs to a man or the woman herself.

Arabic Text	**Urdu Translation**
If he inserts his dry finger into his anus or her vagina, it does not break [the fast], but if it is wet, it is invalidated. - From *Al-Multaqat*	If someone inserted a finger into the anus or a woman inserted it into her own vagina, the fast will not break, and if the finger was wet, the fast will break. (With brevity)

In *Radd al-Muhtar*: | Arabic Text | Urdu Translation | | His saying 'if it is wet, it is invalidated' is because some moisture remains inside. | His saying 'if the (finger) was wet, the fast will break', this is because in this case some moisture will remain inside the anus and vagina. |

In *Hashiyah al-Tahtawi*: | Arabic Text | Urdu Translation | | The apparent meaning of his words implies that the one who inserts into her vagina is a man, but the ruling is the same. | The apparent requirement of the text is that the one inserting the finger into the woman's vagina is a man, whereas (in both cases whether it be a man or a woman) the ruling is the same. |

In *Fath al-Qadir*: | Arabic Text | Urdu Translation | | If one inserts a finger into the anus or the inner vagina, the fast is not invalidated unless it is moistened with water or oil according to the preferred view. It is said that makeup fast (Qada) and a ritual bath (Ghusl) become mandatory upon him. | If someone inserted a finger into a man's anus or a woman's inner vagina, the fast will not be invalidated according to the preferred view, except in the case when it is moistened with water or oil. Some have said that in such a case, the makeup of the fast and Ghusl will become mandatory. |

1. *Durr al-Mukhtar*, Chapter: What invalidates the fast, Mujtabai Delhi, 1/149
2. *Radd al-Muhtar*, Chapter: What invalidates the fast, Mustafa al-Babi Egypt, 2/108
3. *Hashiyah al-Tahtawi* on *al-Durr al-Mukhtar*, Chapter: What invalidates the fast, Dar al-Ma'rifah Beirut, 1/451

4. *Fath al-Qadir*, Chapter: What necessitates Qada and Kaffarah, Nooria Razvia Sukkur, 2/267

गीलेपन की स्थिति में, फिर अंदर का गीलापन अलग होकर भीतरी योनि (فرج داخل) में लग गया। चौथा यह कि शरीर से अलग कटी हुई उंगली भीतरी योनि के अंदर इस तरह गायब कर दी गई कि कोई हिस्सा बाहर न रहा, ये नियम भी इसी मसले से स्पष्ट हैं, इसमें कोई फर्क नहीं पड़ता कि उंगली पुरुष की हो या महिला की अपनी।

अरबी मूलपाठ	**उर्दू अनुवाद**
यदि वह अपनी सूखी उंगली गुदा या योनि में प्रविष्ट करे, तो उपवास नहीं टूटता, लेकिन यदि वह गीली हो तो टूट जाता है। - 'अल-मुल्तक़त' से संक्षेप में।	यदि किसी ने गुदा में उंगली डाली या महिला ने अपनी योनि में उंगली डाली तो रोज़ा नहीं टूटेगा, और यदि उंगली गीली थी तो रोज़ा टूट जाएगा। (संक्षेप में)

रद अल-मुहतार में है: | अरबी मूलपाठ | उर्दू अनुवाद | | उनका कहना 'यदि वह गीली हो तो टूट जाता है' क्योंकि अंदर कुछ नमी शेष रह जाती है। | उनका कहना कि यदि (उंगली) गीली हुई तो रोज़ा टूट जाएगा, यह इसलिए है कि इस स्थिति में गुदा और योनि के भीतरी भाग में कुछ नमी बाकी रह जाएगी। |

हाशिया तहतावी में है: | अरबी मूलपाठ | उर्दू अनुवाद | | उनकी बात का स्पष्ट अर्थ यह है कि योनि में डालने वाला पुरुष है, जबकि नियम एक ही है। | शब्द का स्पष्ट अर्थ यह है कि महिला की योनि में उंगली डालने वाला पुरुष हो, जबकि (दोनों स्थितियों में चाहे पुरुष हो या महिला) नियम एक ही है। |

फ़तह अल-क़दीर में है: | अरबी मूलपाठ | उर्दू अनुवाद | | यदि कोई पुरुष की गुदा या महिला की भीतरी योनि में उंगली डाले, तो पसंदीदा मत (मुस्तार) के अनुसार रोज़ा खराब नहीं होता, जब तक कि वह पानी या तेल से गीला न हो। कहा गया है कि उस पर क़ज़ा और ग़ुस्ल अनिवार्य हो जाता है। | यदि किसी ने पुरुष की गुदा या महिला की भीतरी योनि में उंगली डाली तो पसंदीदा मत पर रोज़ा फ़ासिद (खराब) नहीं होगा, सिवाय उस स्थिति के जब वह पानी या तेल के साथ गीली हो। कुछ ने कहा है कि ऐसी स्थिति में रोज़े की क़ज़ा और ग़ुस्ल अनिवार्य हो जाएगा। |

1. दुर्रे मुख़्तार, अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें, मुजतबाई दिल्ली, 1/149

2. रद अल-मुहतार, अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/108
3. हाशिया तहतावी अल दुर्रे मुख़्तार, अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें, दार अल-मारिफ़ा बेरूत, 1/451
4. फ़तह अल-क़दीर, अध्याय: क़ज़ा और कफ़्फ़ारा को अनिवार्य करने वाली चीज़ें, नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/267

تری کی حالت میں پھر اندر کی کہ تری بچھوٹ کر فرج داخل میں لگی۔ چوتھے یہ کہ انگلی کٹی ہوئی جسم سے جدا تھی وہ فرج داخل کے اندر غائب کردی گئی کہ سرا باہر نہ رہا، یہ احکام بھی اسی مسئلہ سے ظاہر ہیں ان میں برابر ہے خواہ انگلی مرد کی ہو یا عورت خود اپنی۔

عربی متن	اردو ترجمہ
ادخل اصبعہ الیابسۃ فی دبرہ او فرجھا لم یفطر ولو مبتلۃ فسد اھ 'ملتقطاً	اگر کسی نے انگلی دُبر میں دی یا عورت نے اپنی فرج میں داخل کی تو روزہ نہیں ٹوٹے گا، اور اگر انگلی تر تھی تو روزہ ٹوٹ جائے گا اھ اختصاراً (ت)

ردالمحتار میں ہے: | عربی متن | اردو ترجمہ | | قولہ ولو مبتلۃ فسد لبقاء شئی من البلۃ فی الداخل- 2 | قولہ اگر (انگلی) تر ہوئی تو ٹوٹ جائے گا، یہ اس لیے ہے کہ اس صورت میں داخل دبر و فرج میں کچھ تری باقی رہ جائے گی۔ (ت) |

حاشیہ طحطاوی میں ہے: | عربی متن | اردو ترجمہ | | ظاہر کلامہ یقتضی ان الذی ادخل فی فرجھا الرجل والحکم واحد- 3 | ظاہر کلام کا تقاضا یہ ہے کہ فرج عورت میں انگلی داخل کرنے والا مرد ہو، حالانکہ (دونوں صورتوں میں خواہ مرد ہو یا عورت) حکم ایک ہے (ت) |

فتح القدیر میں ہے: | عربی متن | اردو ترجمہ | | لو ادخل الاصبع فی دبرہ او فرجھا الداخل لا یفسد الصوم الا ان تکون مبلولۃ بماء اودھن علی المختار وقیل یجب علیہ القضاء والغسل۔ 4 | اگر کسی نے مرد کی دبر یا عورت کی فرج داخل میں انگلی داخل کی تو مختار قول پر روزہ فاسد نہ ہو

گا مگر اس صورت کہ جب وہ پانی یا تیل کے ساتھ تر ہو۔ بعض نے کہا ہے کہ ایسی صورت میں روزہ کی قضاء اور غسل لازم ہو جائے گا۔ (ت) |

1 در مختار باب مایفسد الصوم مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۹ 2 ردالمحتار ، باب مایفسد الصوم ، مصطفی البابی مصر ۲/ ۱۰۸ 3 حاشیہ طحطاوی علی الدر المختار باب مایفسد الصوم دارالمعرفتہ بیروت ۱/ ۴۵۱ 4 فتح القدیر باب مایوجب القضاء والکفارۃ نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۲۶۷

Fatawa Razviyya Volume 10

Note: The mention of water and oil regarding moisture on a finger in books like Fath al-Qadir, Maraqi al-Falah, Fatawa Zahiriyya, Fatawa Hindiyya, etc., is merely for illustration and depiction, not for limitation or restriction. Even if milk or ghee were mixed with saliva, the ruling is clearly the same: the basis is simply any moisture from outside entering and remaining in an internal cavity (jauf), as stated in Radd al-Muhtar. Therefore, in Durr al-Mukhtar, the term 'mubtallah' (wetted) is used generally. There is no doubt that when vaginal moisture sticks to a finger and comes out, it becomes external moisture. Now, if it re-enters the internal vagina from the outside and remains there, it will definitely invalidate the fast. Just as if one swallows saliva before it leaves the mouth, there is no harm to the fast; but if it is swallowed after being separated from the mouth, the fast will be broken, as mentioned in Radd al-Muhtar from Bada'i and similarly in many other books. As for the scholars' statement that if earwax is removed and the needle/stick with the wax is reinserted into the ear a second or third time, the fast is not broken by consensus. It is in Al-Bazzaziya, Nur al-Idah, Durr al-Mukhtar, etc.:

(Arabic) The wording is from Al-Wajiz: They agreed that if someone scratches their ear with a stick, then pulls it out and there is wax on its tip, then reinserts it a second or third time similarly, it does not invalidate [the fast].[1]	**The text of Al-Wajiz is: The jurists are in agreement that if someone scratched their ear with a stick (oud), then when the stick was taken out, there was wax on its tip; if this same stick is now inserted again twice or thrice into the ear in the same way, the fast will not be invalidated. (T)**

This is different from that issue. The reason for the fast not breaking there is that in scratching the ear, the needle does not reach the brain, so the wax did not enter the internal cavity, contrary to here where the internal vagina is itself a cavity. In Maraqi al-Falah, it is:

(Arabic) Scratching the ear with a stick so that wax from the ear canal comes out on it, then reinserting that stick repeatedly into the ear does not invalidate the fast by consensus, as in Al-Bazzaziya, due to the non-arrival of the fast-breaking substance to the brain.[2] And Allah Almighty knows best.	**If the ear is scratched with a stick, and then when the stick is withdrawn, earwax from inside comes on it, and then that stick is inserted into the ear several times, the fast will not be invalidated by consensus, as it is in Al-Bazzaziya, because nothing that breaks the fast reached the brain. And Allah Almighty knows best. (T)**

[1] Fatawa Bazzaziya on the margin of Fatawa Hindiyya, Book of Fasting, Noorani Kutub Khana Peshawar, 4/98 [2] Maraqi al-Falah with Marginalia of Tahtawi, Chapter on what does not invalidate the fast, Anwar Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi, p. 362

फतावा रज़विया जिल्द दहम (दसवीं)

नोट: फ़तहुल क़दीर, मराक़िल फ़लाह, फतावा ज़हीरिया और फतावा हिन्दिया आदि आम किताबों में उंगली की नमी में पानी और तेल का जो ज़िक्र है, वह महज़ मिसाल और समझाने के लिए है, न कि किसी चीज़ को सीमित या प्रतिबंधित करने के लिए। यदि लार में दूध या घी भी मिला हो, तब भी स्पष्ट रूप से यही हुक्म है कि आधार केवल बाहरी नमी का आंतरिक गुहा (जौफ़) में प्रवेश करना और वहीं रह जाना है, जैसा कि रद्दुल मुहतार में उल्लेख किया गया है। इसीलिए दुर्रे मुख़्तार में 'मुब्तल्ला' (भीगा हुआ) शब्द का सामान्य प्रयोग किया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब योनि की नमी उंगली से लगकर बाहर आती है, तो वह बाहरी नमी बन जाती है। अब, यदि वह बाहर से आंतरिक योनि में प्रवेश करके वहीं रह जाती है, तो वह निश्चित रूप से रोज़ा तोड़ देगी। जिस प्रकार लार को मुँह से बाहर निकलने से पहले निगल लेने से रोज़े में कोई समस्या नहीं होती, लेकिन यदि मुँह से अलग होने के बाद उसे निगला जाए तो रोज़ा टूट जाएगा, जैसा कि बदाइ से उद्धृत करते हुए रद्दुल मुहतार में और इसी तरह की अन्य कई किताबों में है। रहा विद्वानों का यह कहना कि यदि कान से मैल निकाला गया और मैल लगी हुई सलाई को दोबारा या तीसरी बार कान में डाला गया, तो सर्वसम्मति से रोज़ा नहीं टूटेगा। अल-बज़ज़िया, नूरुल ईज़ाह और दुर्रे मुख़्तार आदि में है:

(अरबी) अल-वजीज़ के शब्द हैं: उनका इस पर इत्तेफ़ाक़ है कि यदि किसी ने लकड़ी से अपना कान खुजाया, फिर लकड़ी निकाली और उसके सिरे पर मैल थी, फिर उसे दूसरी और तीसरी बार इसी तरह डाला, तो इससे रोज़ा फ़ासिद (अमान्य) नहीं होता।[1]

वजीज़ का पाठ यह है: फ़ुक़हा (धर्मशास्त्रियों) की इस पर सहमति है कि यदि किसी ने लकड़ी (ऊद) के साथ अपना कान खुजाया, फिर जब लकड़ी बाहर निकाली तो उसके सिरे पर मैल थी; अब यदि इसी लकड़ी को दोबारा या तीसरी बार उसी तरह (कान में) डाला गया तो रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा। (त)

यह उस मसले से अलग है। वहाँ रोज़ा न टूटने का कारण यह है कि कान खुजाने में सलाई दिमाग़ तक नहीं पहुँचती, इसलिए मैल आंतरिक गुहा (जौफ़) में दाखिल नहीं हुआ, इसके विपरीत यहाँ आंतरिक योनि स्वयं एक जौफ़ (गुहा) है। मराक़िल फ़लाह में है:

(अरबी) लकड़ी से कान खुजाना जिससे कान के मार्ग से मैल उस पर आ जाए, फिर उस लकड़ी को बार-बार कान में डालना सर्वसम्मति से रोज़ा फ़ासिद नहीं करता, जैसा कि अल-बज़ज़िया में है, क्योंकि रोज़ा तोड़ने वाली कोई चीज़ दिमाग़ तक नहीं पहुँची।[2] और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

यदि कान को लकड़ी के साथ खुजाया गया और जब लकड़ी बाहर निकाली गई तो उस पर कान के अंदर से मैल आई, फिर उस लकड़ी को कई बार कान में डाला गया तो सर्वसम्मति से रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा, जैसा कि बज़ज़िया में है, क्योंकि रोज़ा तोड़ने वाली कोई चीज़ दिमाग़ तक नहीं पहुँची। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है। (त)

[1] फतावा बज़ज़िया हशिया फतावा हिन्दिया पर, किताबुस सौम, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 4/98 [2] मराक़िल फ़लाह मअ हशिया तहतावी, बाब फ़ी माला युफ़सिदुस सौम, अनवर मुहम्मद कारखाना तिजारत कुतुब कराची, पृ. 362

تنبیہ: فتح القدیر و مراقی الفلاح و فتاوٰی ظہریہ و فتاوٰی ہندیہ وغیرہ عامہ کتب میں جو انگلی کی تری میں آب و روغن کا ذکر ہے محض تمثیل و تصویر ہے، نہ تخصیص و تقیید کہ اگر دودھ یا گھی لعاب دہن میں تر ہو جب بھی بداہتہً حکم یہی ہے کہ مدار صرف کسی تری کا خارج سے جوف میں جا کر رہ جانا ہے کما افادہ فی ردالمحتار (جیسا کہ ردالمحتار میں بیان ہوا-ت) ولہذا در مختار میں مطلق مبتلۃ (تر ہوئی-ت) فرمایا، اور شک نہیں کہ فرج کی رطوبت جب انگلی سے لگ کر باہر آئی اب وہ بھی رطوبتِ خارجہ ہو گئی، اب دوبارہ جو باہر سے جا کر فرج داخل کے اندر رہ جائے گی ضرور فسادِ صوم لائے گی۔ جس طرح لعاب دہن اگر قبلِ خروج اسے نگل جائے روزہ میں خلل نہیں، اور اگر دہن سے جُدا کر دینے کے بعد کھائے گا روزہ جائے گا کما فی ردالمحتار عن البدائع و مثلہ فی کثیر من الکتب (جیسا کہ بدائع سے ردالمحتار میں اور اسی طرح اکثر کتب میں ہے-ت) رہا علماء کا فرمانا کہ اگر کان سے میل نکالا اور میل لگی ہوئی سلائی دوبارہ سہ بارہ کان میں کی تو بالا جماع روزہ نہ جائے گا۔ بزازیہ و نورالایضاح و درمختار وغیرہما میں ہے:

واللفظ للوجیز، اجمعوا انہ لو وجیز کی عبارت یہ ہے فقہاء کا اس پر اتفاق ہے کہ اگر کسی نے حك اذنہ بعود فاخرج العود عود (لکڑی) کے ساتھ اپنا کان کھرچا پھر لکڑی جب باہر نکالی وعلی راسہ درن ثم ادخلہ ثانیا تو اس کے سرے پر میل تھی اب اسی لکڑی کو دوبارہ یا سہ بارہ وثالثا کذالك انہ لا یفسد۔[1] اسی طرح (کان میں) داخل کیا تو روزہ فاسد نہ ہوگا۔(ت)

وہ اس مسئلہ سے جدا ہے وہاں روزہ نہ ٹوٹنے کی وجہ یہ ہے کہ کان کریدنے میں سلائی دماغ تک نہیں جاتی تو میل جوف میں داخل نہ ہوا، بخلاف یہاں کے کہ فرج داخل خود جوف ہے۔ مراقی الفلاح میں ہے:

حك اذنه بعود فخرج عليه درن مماني الصماخ ثم ادخله ای العود مرارا الی اذنه لا یفسد صومه بالاجماع، کما في البزازیة جلعدم وصول المفطر الی الدماغ[2]، واللہ تعالیٰ اعلم.

اگر کان کو لکڑی کے ساتھ کھرچا پھر جب لکڑی واپس نکالی تو اس پر کان کے اندر سے میل آئی پھر اس لکڑی کو کئی دفعہ کان میں داخل کیا تو بالا تفاق روزہ فاسد نہ ہوگا، جیسا کہ بزازیہ میں ہے کیونکہ کوئی چیز روزہ توڑنے والی دماغ تک نہیں پہنچی۔ واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

[1] فتاوی بزازیہ علی حاشیہ فتاوی ہندیہ کتاب الصوم نورانی کتب خانہ پشاور ۴ / ۹۸ [2] مراقی الفلاح مع حاشیہ طحطاوی باب فی مالایفسد الصوم انور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳۶۲

Volume 10 Fatawa Razawiyya

(3) Semen is distinguished from other fluids by its color, smell, consistency, etc. In any case, in the situation inquired about, whatever came out, even if it was semen, if it came out without lust after urination when lust had completely subsided, then neither is ghusl (ritual bath) obligatory nor is the fast affected in any way. Merely forming a thought does not break the fast at all, even if ejaculation occurs with lust during such imagination. However, if ejaculation occurs while hugging, kissing, or touching, the fast will be invalidated and compensation (qada) will be mandatory. If lust still persists after finishing these acts, and in the state where he is separated from the woman's body, semen descends and comes out with lust, then although ghusl will be obligatory, the fast will not be broken because this ejaculation did not occur from those acts but from mere imagination.

[Arabic Box Text]: In Al-Durr al-Mukhtar: If he ejaculated due to thinking, even if it was prolonged, or if one engaged in intercourse forgot [he was fasting] and withdrew immediately upon remembering, and similarly at dawn, and if he ejaculated after withdrawing, because it is like a wet dream, the fast is not broken. (Summarized). From this, the ruling of the issue under discussion is known by a greater degree, as is not hidden. And Allah Almighty knows best.

[Urdu Explanation in Box]: It is stated in Durr al-Mukhtar that if ejaculation occurred from thinking, even if that thinking was long, or if one started intercourse forgetfully and stopped immediately upon remembering the fast, the ruling is the same if he stopped intercourse right at dawn. If the exit of semen occurred after stopping, the fast will not be invalidated because it is like a wet dream. (Abridged). From this, the ruling on the matter under discussion is known more appropriately, which is very clear. And Allah Almighty knows best. (T)

Issue 220 to 221: 26 Safar 1317 AH (1) A person slept in the early part of the night after eating betel leaf (paan). Upon waking in the morning, he intends to fast. Will the fast be valid or not? (2) While fasting, if someone performs istinja (cleaning after relief) with water and more [waste] is expelled, and he continues to perform istinja as usual, does the fast remain or not? Explain and you will be rewarded.

Answer: (1) If the paan was eaten and only a few pieces of betel nut remained stuck in the teeth, the fast will be valid. If after morning there was still such a large amount

of residue in the mouth whose substance or juice is likely to go down the throat with saliva, then the fast will not be valid.

1. Durr al-Mukhtar, Chapter on what invalidates the fast, Mujtabai Press Delhi, 1/149-150. Page 491 of 836

भाग 10 फ़तावा रज़विया

(3) वीर्य अपने रंग, गंध और गाढ़ेपन आदि के कारण अन्य पानी के समान तरल पदार्थों से अलग होता है। बहरहाल, पूछी गई स्थिति में जो कुछ निकला, भले ही वह वीर्य ही हो, यदि वह पेशाब के बाद तब निकला जब कामेच्छा पूरी तरह शांत हो चुकी थी और बिना किसी कामेच्छा के, तो न तो ग़ुस्ल (स्नान) अनिवार्य होगा और न ही रोज़े में कोई व्यवधान आएगा। केवल मन में विचार लाने से रोज़ा बिल्कुल नहीं टूटता, भले ही उसी कल्पना की स्थिति में कामेच्छा के साथ स्खलन हो जाए। हाँ, गले लगाने, चूमने या छूने की स्थिति में यदि स्खलन हो जाए तो रोज़ा टूट जाएगा और उसकी कज़ा (भरपाई) अनिवार्य होगी। यदि इन क्रियाओं के समाप्त होने के बाद भी कामेच्छा बनी रही और इस स्थिति में कि वह स्त्री के शरीर से अलग है, वीर्य उतरा और कामेच्छा के साथ निकला, तो हालाँकि ग़ुस्ल अनिवार्य होगा लेकिन रोज़ा नहीं टूटेगा क्योंकि यह स्खलन उन क्रियाओं से नहीं हुआ बल्कि केवल कल्पना के कारण हुआ।

[अरबी पाठ]: "अद-दुर्र अल-मुख्तार" में है: यदि वह सोचने के कारण स्खलित हो गया, भले ही वह सोच लंबी थी, या यदि कोई व्यक्ति सहवास में लिप्त था और [भूल गया कि वह रोज़े से है] और याद आते ही तुरंत अलग हो गया, और इसी तरह भोर होने पर, और यदि अलग होने के बाद स्खलित हुआ, क्योंकि यह स्वप्नदोष की तरह है, तो रोज़ा नहीं टूटता। (संक्षेप में)। इससे विचाराधीन मसले का हुक्म बेहतर तरीके से ज्ञात हो जाता है, जैसा कि स्पष्ट है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[बॉक्स में उर्दू अनुवाद]: दुर्रे मुख्तार में है कि अगर सोचने से इंजाल (स्खलन) हो गया अगरचे वह सोच तवील (लंबी) थी या निसियान (भूलवश) जमाअ (संभोग) शुरू किया था, रोज़ा याद आने पर फ़ौरन छोड़ दिया, इसी तरह हुक्म है अगर उसने तुलू-ए-फज्र (भोर) होते ही जमाअ छोड़ दिया, अगर छोड़ने के बाद मनी (वीर्य) का खुरूज (निकलना) हुआ इससे रोज़ा फासिद (अमान्य) न होगा क्योंकि यह एहतलाम (स्वप्नदोष) की तरह है। इससे ज़ेरे बहस मसले का हुक्म बतरीके औला (बेहतर ढंग से) मालूम हो गया जो निहायत ही वाज़ेह (स्पष्ट) है, वल्लाहु तआला आलम। (त)

मसला 220 से 221: 26 सफ़र 1317 हिजरी (1) एक व्यक्ति पान खाकर रात के पहले पहर में सो गया, सुबह उठकर रोज़े की नीयत करता है, रोज़ा सही होगा या नहीं? (2) रोज़े की हालत में अगर कोई पानी से इस्तिन्जा (शौच के बाद सफाई) करे और बाकी अपशिष्ट निकलना जारी रहे और वह नियमानुसार इस्तिन्जा करने में व्यस्त रहे तो रोज़ा रहा या नहीं? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

जवाब: (1) अगर पान खा लिया था और मुँह में सिर्फ सुपारी के कुछ दाने दाँतों में लगे रह गए तो रोज़ा सही हो जाएगा। और अगर सुबह के बाद भी मुँह में इतना अधिक उगाल (अवशेष) था जिसके पदार्थ या रस का थूक के साथ गले में जाना संभावित है, तो रोज़ा नहीं होगा।

1. दुर्रे मुख्तार, बाबू मा युफ़्सिदुस सौम, मकतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/149-150. पेज 491/836

(۳) منی اپنی رنگت اور بو اور قوام وغیرہ کے باعث اور پانیوں سے ممتاز ہو جاتی ہے بہر حال صورتِ مستفسرہ میں جو کچھ نکلا اگرچہ منی ہی ہو جبکہ بالکل شہوت ساکن ہو جانے کے بعد بلا شہوت بعد پیشاب نکلا تو اس سے نہ غسل واجب ہو نہ روزے میں کچھ خلل آیا اور مجرد خیال باندھنے سے تو روزہ اصلاً نہیں جاتا اگرچہ اسی حالت تصور ہی میں شہوت کے ساتھ انزال ہو جائے، ہاں لپٹانے یا بوسہ لینے یا ہاتھ لگانے کی حالت میں اگر انزال ہو تو روزہ فاسد ہو کر قضا لازم آئے گی اور ان افعال کے ختم کے بعد شہوت ہنوز باقی رہی اور اس حالت میں کہ یہ عورت کے جسم سے جدا ہے منی اُتری اور بشہوت نکلی تو اگرچہ غسل واجب ہوگا مگر روزہ نہ جائے گا کہ یہ انزال اُن افعال سے نہ ہوا بلکہ مجرد تصور ہوا۔

[Arabic Box]: فی الدر المختار انزل بفکر وان طال او نزع المجامع حال کونہ ناسیا فی الحال عند ذکرہ وکذا عند طلوع الفجر وان امنی بعد النزع لانہ کالاحتلام لم یفطرا ھـ ۱ ملتقطاً وبہ یعلم ما ذکرنا بالاولی کما لا یخفی۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

[Urdu in Box]: در مختار میں ہے کہ اگر سوچنے سے انزال ہو گیا اگر چہ وہ سوچ طویل تھی یا نسیا نا جماع شروع کیا تھا، روزہ یاد آنے پر فوراً چھوڑ دیا، اسی طرح حکم ہے اگر اس نے طلوعِ فجر ہوتے ہی جماع چھوڑ دیا، اگر چھوڑنے کے بعد منی کا خروج ہوا اس سے روزہ فاسد نہ ہوگا کیونکہ یہ احتلام کی طرح ہے اھ مختصراً۔ اس سے زیر بحث مسئلہ کا حکم بطریق اولیٰ معلوم ہو گیا جو نہایت ہی واضح ہے، واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ۲۲۰ تا ۲۲۱: ۲۶ صفر ۱۳۱۷ھ (۱) ایک شخص پان کھا کے اوّل شب میں سویا، صبح کو اٹھ کر نیت روزہ کرتا ہے، روزہ درست ہوگا یا نہیں؟ (۲) حالتِ روزہ میں اگر کوئی پانی سے استنجا کرے اور باقی اخراج ہو اور بدستور استنجا کرنے میں مشغول رہے تو روزہ رہا یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب: (۱) اگر پان کھا لیا تھا منہ میں صرف چند دانے چھالیا کے دانتوں میں لگے رہ گئے تو روزہ صحیح ہو جائے گا اور اگر صبح کے بعد بھی ایسا اگال کثیر منہ میں تھا جس کا جرم خواہ عرق لعاب کے ساتھ حلق میں جانا مظنون ہے تو روزہ نہ ہوگا۔

1 در مختار باب ما یفسد الصوم مجتبائی دہلی ۱۴۹-۱/۱۵۰ Page 491 of 836

Fatawa Razawiya, Volume 2

(2) It does not cause any disruption in the fast due to the absence of anything that breaks the fast. And Allah Almighty knows best.

Problem 222: Asked by Abdul Rahman Sahib Jaunpuri from Golra, District Rawalpindi, 26 Safar 1332 AH. What do the scholars of the religion and the muftis of the firm Sharia say about this issue: those who are habitual users of betel leaf (paan), tobacco, or snuff (naswar) - if they place paan, tobacco, or snuff in their mouths while fasting but do not let its substance enter the throat, will the fast be broken or not? And if it is broken, will only a make-up fast (qaza) be necessary, or also an expiation (kaffara)? Please state with reasons. Explain, and you shall be rewarded.

The Answer: When paan is kept in the mouth, its juice will definitely reach the throat. And the type of tobacco that is eaten, if put in the mouth, its substance will certainly enter the throat along with saliva. As for snuff, it is a very fine substance; when it is sniffed up, it will definitely reach the brain. And the objectives of those seeking them will be fulfilled in this way. In jurisprudence (fiqh), such a strong suspicion is treated like certainty. These are all satanic whispers. If the fast is broken by using these things, not only is a make-up fast (qaza) necessary, but also expiation (kaffara), as they involve bodily benefit and the fulfillment of desire. And even if, hypothetically, a state of certain caution could be imagined in them, there would still be no doubt about their prohibition, just as obscene touching is prohibited even if it doesn't result in ejaculation. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "He who falls into doubtful matters falls into that which is forbidden, like a shepherd who grazes his flock near a sanctuary (hima), and he is about to let them graze in it." One who enters into doubtful matters will enter into the forbidden, just like a person grazing goats near a protected area is close to entering into the forbidden. And Allah Almighty knows best (T).

Problem 223: From Calcutta Pur near hospital E.B.S.R., 1st Rabi-ul-Awwal 1332 AH. What do the scholars of the religion say about this issue: under what circumstances is a fast not valid? For example, if a person eats so much the previous night that in the morning he has sour burps, is the fast valid or not? If not, what went wrong? Secondly, in what circumstances does a fast not remain valid?

The Answer: A sour burp does not break the fast; this is not written in any book. The fast is broken by three things by consensus, even though...

1. Sahih Muslim, Chapter on Taking Halal and Avoiding Doubts, Qadimi Kutub Khana Karachi, 2/28. Page 492 of 836

फ़तावा रज़विया, खंड 2

(2) इससे रोज़े में कोई व्यवधान नहीं आता क्योंकि रोज़ा तोड़ने वाली कोई चीज़ नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 222: मुस्तौला अब्दुल रहमान साहिब जौनपुरी, गोलड़ा, ज़िला रावलपिंडी, 26 सफ़र 1332 हिजरी। विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले पर क्या कहते हैं: जो लोग पान, तंबाकू या नसवार के आदी हैं, अगर वे रोज़े की हालत में पान, तंबाकू या नसवार मुँह में रख लें और उसके कण गले के अंदर न जाने दें, तो क्या रोज़ा टूट जाएगा या नहीं? और अगर टूट जाए, तो क्या सिर्फ़ कज़ा (बदले का रोज़ा) ज़रूरी होगा या कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) भी? कृपया कारणों सहित बताएँ। समझाएँ और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: जब पान मुँह में रखा जाता है, तो उसका रस निश्चित रूप से गले में जाएगा। और जिस तरह का तंबाकू खाया जाता है, उसे मुँह में डालने पर उसका अंश लार के साथ गले में ज़रूर जाएगा। जहाँ तक नसवार की बात है, वह बहुत बारीक चीज़ है; जब उसे ऊपर की ओर सूंघा जाएगा, तो वह निश्चित रूप से मस्तिष्क तक पहुँचेगा। और चाहने वालों के उद्देश्य भी इसी तरह पूरे होंगे। फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) में ऐसी प्रबल शंका को निश्चितता के समान माना जाता है। ये सब शैतानी वसवसे (शंकाएँ) हैं। इन चीज़ों के इस्तेमाल से रोज़ा टूटने पर न केवल कज़ा बल्कि कफ़्फ़ारा भी ज़रूरी होगा क्योंकि इनमें शरीर को लाभ पहुँचाना और इच्छाओं की पूर्ति शामिल है। और अगर मान भी लिया जाए कि इनमें पूरी सावधानी मुमकिन है, तब भी इनके निषेध में कोई संदेह नहीं होगा, जैसे कि बिना स्खलन के अश्लील स्पर्श वर्जित है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "जो व्यक्ति संदिग्ध चीज़ों में पड़ता है, वह हराम (वर्जित) में पड़ता है, जैसे वह चरवाहा जो किसी संरक्षित क्षेत्र (हिमा) के पास पशु चराता है, और वह उसमें प्रवेश करने ही वाला होता है।" जो संदेहों में पड़ता है, वह हराम में शामिल हो जाएगा, जैसे संरक्षित जगह के पास बकरियाँ चराने वाला क़रीब है कि वह हराम में प्रवेश कर जाए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 223: कलकत्ता पुर अस्पताल ई.बी.एस.आर. के पास से, 1 रबी-उल-अव्वल 1332 हिजरी। विद्वान इस मसले पर क्या कहते हैं कि किन स्थितियों में रोज़ा नहीं होता? उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति पिछली रात इतना खा ले कि सुबह उसे खट्टी डकारें आएँ, तो रोज़ा हुआ या नहीं? यदि नहीं, तो क्या खराबी हुई? दूसरी बात यह कि किन स्थितियों में रोज़ा सही नहीं रहता?

उत्तर: खट्टी डकार से रोज़ा नहीं टूटता, यह किसी किताब में नहीं लिखा है। रोज़ा तीन चीज़ों से टूटता है, आम सहमति से, हालाँकि...

1. सहीह मुस्लिम, बाब अख़्ज़ल हलाल व तर्कुश शुबहात, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची, 2/28।

(۲) اس سے روزہ میں کوئی خلل نہیں آتا لعدم المفطر۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲۲۲: مسئولہ عبدالرحمان صاحب جونپوری از گولڑہ ضلع راولپنڈی ۲۶ صفر ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ جو لوگ پان یا تمباکو یا نسوار کے عادی ہیں وہ اگر روزہ کی حالت میں پان تمباکو کو نسوار منہ میں رکھ لیں اور اس کا جرم حلق کے اندر نہ جانے دیں تو روزہ ٹوٹ جائیگا یا نہیں؟ اور بصورت ٹوٹ جانے کے قضا لازم آئے گی یا کفارہ؟ مدلل بیان کیجئے، بینوا توجروا

الجواب: پان جب منہ میں رکھا جائے گا اُس کا عرق ضرور حلق میں جائیگا، اور تمباکو کی جیسی کھائی جاتی ہے وہ اگر منہ میں ڈالی جائیگی تو یقینا اس کا جرم لعاب کے ساتھ حلق میں جائے گا اور نسوار تو بہت باریک چیز ہے جب اوپر کو سونگھی جائے گی ضرور دماغ کو پہنچے گی اور ان طلب والوں کے مقاصد بھی یونہی برآئیں گے اور فقہیات میں ایسا مظنون مثل متیقن ہے، یہ سب شیطانی وسوسے ہیں، ان چیزوں کے استعمال سے جو روزہ جائے اس کی فقط قضا نہیں بلکہ کفارہ بھی ضرور ہوگا کہ ان میں صلاح بدن و قضائے شہوت ہے اور اگر بالفرض ان میں احتیاط یقینی کی صورت متصور بھی ہوتی جب بھی ممانعت میں شک نہ تھا جیسے مباشرتِ فاحشہ کہ بے انزال ناقص نہیں مگر ممنوع ضرور ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: من وقع فی الشبہات فی الحرام کالراعی یرعی حول الحمی یوشک ان یرتع فیہ۱۔ واللہ تعالی اعلم۔ جو شبہات میں داخل ہوتا ہے وہ حرام میں داخل ہوجائے گا جیسا کہ محفوظ جگہ کے قریب بکریاں چرانے والا قریب ہے کہ وہ حرام میں واقع ہوجائے۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۲۲۳: از کلکتہ پور نزدیک اسپتال ای، بی، ایس، آر، یکم ربیع الاول ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ روزہ کس کس حالت میں نہیں ہوتا؟ مثلاً اگر کوئی شخص پچھلے کو اتنا زیادہ کھالے کہ صبح کو اُسے کھٹی ڈکاریں آئیں تو روزہ ہوا یا نہیں؟ اگر نہیں ہوا تو کیا خرابی واقع ہوئی؟ دوسری یہ بات کہ روزہ کس کس حالت میں درست نہیں رہتا؟

الجواب: کھٹی ڈکار سے روزہ نہیں جاتا، یہ کسی کتاب میں نہیں لکھا۔ روزہ تین باتوں سے جاتا ہے اجماع اگر چہ

۱ صحیح مسلم، باب اخذ الحلال و ترک الشبہات، قدیمی کتب خانہ کراچی، ۲/۲۸ Page 492 of 836

...if ejaculation does not occur, and second, touch when ejaculation does occur, and third, when something from outside enters the body cavity in such a way that no part of it remains outside. For example, if a piece of meat is tied to a string and swallowed while the string remains outside, then if it is pulled back out, the fast will not be broken. But if the string does not remain outside, or if while pulling it out, the piece of meat or some part of it remains in the cavity, then the fast is lost.

All of this is explicitly stated in Al-Durr al-Mukhtar and other books. And Allah Almighty knows best.

This entire matter is clarified in Durr-e-Mukhtar and other books. And Allah Almighty knows best. (T)

Issue 224: Sent by Qari Abdul Nabi, student, 2 Rajab-ul-Murajab 1333 AH. What do the scholars of religion and the jurists of the clear Shariah say regarding this issue: is it permissible for a fasting person to undergo phlebotomy (bloodletting) or to use a syringe (injection) for gonorrhea, or not? And if phlebotomy or a syringe is used, will the fast become invalid or not?

The Answer: Phlebotomy will not break the fast; however, it is appropriate to avoid it out of concern for weakness. And an injection will not break a man's fast, but it will break a woman's. And Allah Almighty knows best.

[1] Durr al-Mukhtar, Chapter: What invalidates the fast, Mujtabai Delhi, 1/150.

जिल्द दहम | फ़तावा रज़विया

...इंजाल (वीर्यपात) न हो, और दूसरा मसह जब इंजाल हो, और तीसरा बाहर से कोई चीज़ पेट के अंदर इस तरह दाखिल हो कि बाहर उसका कोई सम्बंध न रहे। उदाहरण के लिए, धागे में गोश्त का टुकड़ा बाँध कर निगल लिया और धागा बाहर है, तो अगर उसे निकाल लेगा तो रोज़ा नहीं जाएगा। और अगर धागा बाहर न रहा या निकालने में गोश्त या उसका कोई हिस्सा पेट में रह गया, तो रोज़ा जाता रहा।

यह सब अल-दुर्र अल-मुख्तार और अन्य किताबों में स्पष्ट रूप से वर्णित है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

इन सब पर दुर्र-ए-मुख़्तार और अन्य किताबों में स्पष्टीकरण है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है (त)।

मसला 224: प्रेषक क़ारी अब्दुल नबी, छात्र, 2 रजब-उल-मुरज्जब 1333 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि रोज़ेदार के लिए नश्तर लगवाना (रक्त मोक्षण) और सुज़ाक में पिचकारी (इंजेक्शन) लगवाना जायज़ है या नहीं? और अगर नश्तर लगवाया या पिचकारी लगवाई तो रोज़ा बातिल (अमान्य) हो जाएगा या नहीं?

उत्तर: नश्तर लगवाने से रोज़ा नहीं जाएगा, हाँ कमज़ोरी के डर से इससे बचना बेहतर है। और पिचकारी से मर्द का रोज़ा नहीं जाएगा, लेकिन औरत का रोज़ा टूट जाएगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[1] दुर्र-ए-मुख़्तार, अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें, मुजतबाई दिल्ली 1/150।

पृष्ठ 836 का 493

انزال نہ ہو، اور ۲مس جبکہ انزال ہو، اور ۳باہر سے کوئی چیز جوف میں اس طرح داخل ہو کہ باہر اس کا علاقہ نہ رہے مثلاً ڈورے میں بوٹی باندھ کر نگل لی اور ڈور باہر ہے تو اگر اسے نکال لے گا روزہ نہ جائے گا اور اگر ڈور باہر نہ رہی یا نکالنے میں بوٹی یا اس کا کچھ حصہ جوف میں رہ گیا تو روزہ جاتا رہا،

کل ذالك منصوص علیه في الدر المختار وغیره من الاسفار- واللہ تعالیٰ اعلم۔

اس تمام پر در مختار اور دیگر کتب میں تصریح ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ۲۲۴: مرسلہ قاری عبدالنبی طالب علم ۲ رجب المرجب ۱۳۳۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ روزہ دار کو فصد کھلوانا اور سوزاک میں پچکاری لگوانا جائز ہے یا نہیں؟ اور فصد یا پچکاری لگوایا تو روزہ باطل ہو جائے گا یا نہیں؟

الجواب: فصد سے روزہ نہ جائے گا، ہاں ضعف کے خیال سے بچے تو مناسب، اور پچکاری سے مرد کا روزہ نہ جائے گا عورت کا جاتا رہے گا۔ واللہ تعالیٰ اعلم

۱ در مختار باب ما یفسد الصوم مجتبائی دہلی ۱/ ۱۵۰

Fatawa Razawiya Volume 10

Al-I'lam bi-hal al-bukhur fi al-siyam (1315 AH) (Information regarding taking incense smoke while in a state of fasting)

In the name of Allah, the Most Merciful, the Most Compassionate. Allah is the Lord of Muhammad, peace and blessings be upon him.

Problem 225: From Junagadh Kathiawar, Circle Madar al-Maham, sent by Maulvi Amiruddin Sahib, 5 Dhu al-Qi'dah 1315 AH.

What do the scholars of the religion say about this issue: At the shrine of a perfect saint (Arif Billah), twelve to fifteen gentlemen gather after 4:00 PM for Fatiha. During the Fatiha, incense (frankincense) is always burned at some distance from the noble shrine. The attendees stand near the noble shrine and recite Fatiha, but none of the attendees has any intention whatsoever of inhaling the fragrance or smoke. If smoke enters the nose or throat etc. without any intention or purpose, will the fast be invalidated? During the blessed month of Ramadan, a person stated that the fast was broken due to this light smoke and expiation (kaffara) became mandatory. And where the incense is burning, the fasting person stands separately from there, even though it's the same place. Please clarify, and may you be rewarded.

Page 495 of 836

फतावा रजविया खंड दसवाँ

अल-इलाम बि-हाल अल-बखुर फि अस-सियाम (१३१५ हिजरी) (रोजे की हालत में धुनी लेने के बारे में सूचना)

बिस्मिल्लाहिर रहमानिर रहीम। अल्लाह मुहम्मद का रब है, उन पर दरूद और सलाम हो।

मसला २२५: जूनागढ़ काठियावाड़ सर्कल मदार-उल-महाम से, मौलवी अमीर उद्दीन साहब द्वारा प्रेषित, ५ ज़िलक़ाद १३१५ हिजरी।

दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: एक कामिल आरिफ़ बिल्ला (सिद्ध संत) के मज़ार पर दोपहर ४ बजे के बाद बारह-पंद्रह सज्जन फातिहा के लिए उपस्थित होते हैं। फातिहा के समय हमेशा मज़ार शरीफ़ से कुछ दूरी पर लोबान जलाया जाता है और उपस्थित लोग मज़ार शरीफ़ के पास खड़े होकर फातिहा पढ़ते हैं, लेकिन उपस्थित लोगों में से किसी का भी इरादा खुशबू या धुआँ लेने का बिल्कुल नहीं होता। यदि बिना किसी इरादे या उद्देश्य के धुआँ नाक और गले आदि में चला जाए, तो क्या रोजा टूट जाएगा? रमज़ान के मुबारक महीने में एक व्यक्ति ने कहा कि इस हल्के धुएँ से रोजा टूट गया और कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) अनिवार्य हो गया, जबकि जहाँ लोबान जलता है, रोजेदार वहाँ से अलग खड़े होते हैं, भले ही स्थान एक ही हो। बयान करें, आपको पुण्य मिलेगा।

पृष्ठ ८३६ में से ४९५

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

الاعلام بحال البخور فی الصیام ۱۳۱۵ھ (حالتِ روزہ میں دُھونی لینے کے بارے میں اطلاع)

بسم اللہ الرحمن الرحیم اللہ رب محمد صلی علیہ وسلم ا

مسئلہ ۲۲۵: از جوناگڑھ کاٹھیاواڑ سرکل مدار المہام مرسلہ مولوی امیر الدین صاحب ۵ ذیقعدہ ۱۳۱۵ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک کامل عارف باللہ کے مقبرہ میں بارہ بارہ پندرہ پندرہ حضرات مل کر بعد ۴ بجے دن کے فاتحہ کے لیے حاضر ہوتے ہیں اور بوقت فاتحہ ہمیشہ مزار شریف سے کچھ فاصلہ پر لوبان جلایا جاتا ہے اور حاضرین مزار شریف کے قریب کھڑے ہو کر فاتحہ پڑھتے ہیں مگر حضار میں سے کسی شخص کا ارادہ خوشبو یا دُھواں لینے کا ہر گز نہیں ہوتا، اگر بغیر قصد وارادے کے دُھواں ناک و حلق وغیرہ میں چلا جائے تو کیا روزہ فاسد ہو جائے گا؟ ماہِ رمضان المبارک میں ایک شخص نے بیان کیا کہ اس خفیف دُھوئیں سے روزہ جاتا رہا اور کفارہ لازم آیا، اور جہاں لوبان جلتا ہے روزہ دار وہاں سے علیحدہ کھڑے ہوتے ہیں اگرچہ مکان ایک ہے۔ بینوا توجروا

Fatawa Razawiyya Volume 10

The Answer:

All praise is due to Allah Almighty, Who made fasting obligatory for us as a means of purification and made this religion easy, and peace and blessings be upon the purest essence, who is the finest fragrance in all the gardens of the Most Merciful, and upon his family and companions, who followed him in such a way that no dust of misguidance could reach them from any side. (T)

In the primary texts, commentaries, and general fatwa books of the school of thought upon which the religion is based, there are clear and absolute clarifications that if smoke or dust enters the throat or brain on its own, provided the fasting person did not enter it intentionally, the fast will not be broken, even if the person remembered they were fasting at that time. It is stated in Al-Wiqayah, Al-Nuqayah, Al-Islah, Al-Multaqa, Al-Tanwir, etc.:

And the wording for Al-Islah: if dust, smoke, or a fly enters his throat, he does not break his fast[1].	**The words of Al-Islah are: If dust, smoke, or a fly enters the throat, the fast will not break. (T)**

[1] In Ghurar Matn of Durar, it says:

If dust, smoke, or a fly enters his throat, even if he remembers (the fast), it is not invalidated[2].	**If dust, smoke, or a fly entered the throat of a fasting person while he remembered his fast, the fast will not be corrupted. (T)**

[3] It is stated in Al-Bidayah, [4]Al-Hidayah, [5]Wani, and [6]Al-Kafi:

And the wording for Al-Kafi: If a fly enters his throat while he is mindful of his fast, it is invalidated according to analogy (Qiyas) because what breaks the fast has reached his interior, and its being something that does not provide nourishment does not contradict invalidation, like soil. But according to juristic preference (Istihsan), it is not invalidated because it is impossible to avoid it.	**The text of Al-Kafi is: If a fly entered the throat of a fasting person while he remembered his fast, the fast will be corrupted according to analogy... because something that breaks the fast entered his throat, and its not being a nutritious substance is not contrary to invalidation, just like the ruling for soil. And by way of juristic preference, the fast will not be corrupted because avoiding it is not possible.**

[1] Durr al-Mukhtar, Chapter on what invalidates fasting, Mujtabai Delhi, 1/149 [2] Ghurar with Durar al-Hukkam, Chapter on reasons for invalidation, Ahmad Kamil al-Ka'ina Dar al-Sa'ada Beirut 1/202

फ़तावा रज़विया दसवाँ खंड

उत्तर:

तमाम तारीफें अल्लाह अज़्ज़वजल के लिए हैं जिसने हम पर पाकीज़गी के लिए रोज़े फ़र्ज़ किए और इस दीन को आसान बनाया, और दरूद ओ सलाम हो उस पाकीज़ा ज़ात पर जो खुशबू के लिहाज़ से रहमान के तमाम बागों में सबसे आला हैं, और आपकी आल और असहाब पर जिन्होंने आपकी इस तरह पैरवी की कि उन्हें किसी भी तरफ से गुमराही की कोई धूल नहीं लग सकी। (त)

मज़हब की बुनियादी किताबों, शरहों और आम फ़तावा की किताबों में, जिन पर मज़हब का दारोमदार है, स्पष्ट रूप से यह बताया गया है कि यदि धुआं या धूल हलक या दिमाग में खुद-ब-खुद चला जाए, जबकि रोज़ेदार ने इसे जानबूझकर अंदर न लिया हो, तो रोज़ा नहीं टूटेगा, भले ही उस समय रोज़ा याद था। 'विकाया', 'नुकाया', 'इस्लाह', 'मुल्तका' और 'तन्वीर' आदि में लिखा है:

और 'इस्लाह' के शब्द यह हैं: उसके हलक में धूल, धुआं या मक्खी चली गई, तो उसका रोज़ा नहीं टूटेगा।[1]

'इस्लाह' के शब्द ये हैं: हलक में अगर धूल, धुआं या मक्खी दाखिल हो गई तो रोज़ा नहीं टूटेगा। (त)

[1] 'ग़ुरर मतन दुरर' में है:

यदि उसके हलक में धूल, धुआं या मक्खी चली जाए, भले ही उसे (रोज़ा) याद हो, तो वह खराब नहीं होता।[2]

रोज़ेदार के हलक में धूल, धुआं या मक्खी चली गई जबकि उसे रोज़ा याद था, तो रोज़ा फासिद (खराब) नहीं होगा। (त)

[3] 'बिदाया', [4]'हिदाया', [5]'वानी' और [6]'काफ़ी' में है:

और शब्द 'काफ़ी' के हैं: यदि रोज़े की स्थिति में किसी के हलक में मक्खी चली जाए जबकि उसे अपने रोज़े का ध्यान हो, तो क़ियास (तर्क) के अनुसार रोज़ा फासिद हो जाएगा, क्योंकि रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ उसके पेट तक पहुँच गई है, और इसका पोषक तत्व न होना फासिद होने के विपरीत नहीं है, जैसे कि मिट्टी का नियम है। लेकिन इस्तिहसान के अनुसार रोज़ा फासिद नहीं होगा क्योंकि इससे बचना संभव नहीं है।

'काफ़ी' की इबारत यह है: रोज़ेदार के हलक में मक्खी चली गई जबकि उसे रोज़ा याद था, तो क़ियास के अनुसार रोज़ा फासिद हो जाएगा... क्योंकि रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ उसके हलक में चली गई और उसका ग़ैर-पोषण वाली चीज़ होना फासिद होने के खिलाफ़ नहीं है जैसे कि मिट्टी का हुक्म है, और इस्तिहसानन रोज़ा फासिद नहीं होगा क्योंकि उससे बचना मुमकिन नहीं है।

[1] दुर्र-ए-मुख्तार, बाब युफ़सिदुस सौम, मुजतबाई दिल्ली, 1/149 [2] ग़ुरर मअ दुररुल हुक्काम, बाब मौजीबुल अफ़साद, अहमद कामिल अल-काइना, दारुस सआदा बेरूत, 1/202

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

الجواب:

الحمد للہ الذی فرض علینا الصیام طھرا وجعل ھذا الدین یسرا والصلوۃ والسلام علی اطیب ریحان الرحمٰن طیبا ونشرا وعلی اٰلہ وصحبہ الذین من اقتفاھم لایصل الیہ دخان الضلال وردا ولا صدرا۔ تمام تعریف اللہ عزوجل کی جس نے طہارت کے لیے ہم پر روزے فرض فرمائے اور اس دین کو آسان بنایا، اور صلوٰۃ وسلام ہو اس ذات اقدس پر جو خوشبو کے لحاظ سے رحمان کے تمام گلستان میں اعلیٰ ہیں، اور آپ کے آل واصحاب پر جنہوں نے آپ کی اس طرح اتباع کی کہ انہیں کسی بھی طرف سے گمراہی کی کوئی غبار لاحق نہ ہوسکے۔(ت)

متون وشروح وفتاوٰی عامہ کتب مذہب میں جن پر مدار مذہب ہے علی الاطلاق تصریحات روشن ہیں کہ دُھواں یا غبار حلق یا دماغ میں آپ چلا جائے کہ روزہ دار نے بالقصد اسے داخل نہ کیا ہو تو روزہ نہ جائے گا اگرچہ اس وقت روزہ ہونا یاد تھا۔’وقایہ و[2]نقایہ و[3]اصلاح و[4]ملتقی و[5]تنویر وغیرہما میں ہے:

واللفظ للاصلاح دخل غبار اودخان او اصلاح کے الفاظ یہ ہیں: حلق میں اگر غبار، دُھواں یا مکھی ذباب حلقہ لم یفطر[1]۔ داخل ہوگئی تو روزہ نہ ٹوٹے گا۔(ت)

[1]غرر متن درر میں ہے:

دخل حلقہ غبار او دخان او ذباب روزہ دار کے حلق میں غبار، دُھواں یا مکھی چلی گئی حالانکہ ولو ذاکرا لم یفسد[2]۔ اسے روزہ یاد تھا تو روزہ فاسد نہ ہوگا(ت)

[3]بدایہ و[4]ہدایہ و[5]وانی و[6]کافی میں ہے:

واللفظ للكافي، لو دخل حلقہ ذباب وھو ذاکر لصومہ یفسد قیاسا لوصول المفطر الی جوفہ وکونہ مما لایتغذی لاینافی الفساد کالتراب وفی الاستحسان لا یفسد لانہ لا یمکن التحرز عنہ فان

کافی کی عبارت یہ ہے روزہ دار کے حلق میں مکھی چلی گئی حالانکہ اسے روزہ یاد تھا روزہ قیاساً فاسد ہوجائے گا۔ اس لئے کہ روزہ توڑنے والی چیز اس کے حلق میں چلی گئی اور اس کا غذا والی چیز نہ ہونا فساد کے منافی نہیں جیسا کہ مٹی کا حکم ہے اور استحساناً روزہ فاسد نہ ہوگا کیونکہ اس سے بچنا ممکن نہیں ہے

[1] در مختار، باب یفسد الصوم، مجتبائی دہلی، ۱/۱۴۹ [2] غرر مع دررالحکام باب موجب الافساد احمد کامل الکائنہ دارالسعادۃ بیروت ۱/۲۰۲

Fatawa-e-Razviya - Volume 10

Arabic Text	Urdu Translation/Explanation
The fasting person finds no way but to open his mouth to speak, so it became like the ruling for dust and smoke. - 1	Because a fasting person has to open their mouth to speak, the ruling for a fly is the same as for dust and smoke. (T)

In "Fath al-Qadir": | His statement "it resembles dust and smoke when they enter the throat, for it is not possible to avoid their entry because they enter from the nose if the mouth is closed, and it also becomes like the moisture that remains in the mouth after rinsing." - 2 | The author's statement that the entry of a fly is like dust and smoke because when they enter the throat, it is not possible to avoid their entry; even if the mouth is closed, they will enter through the nose, and this is also like the moisture that remains in the mouth after rinsing. (T) |

In the text of "Nur al-Idah" and "Imdad al-Fattah": | The fast is not invalidated if smoke enters his throat without his action, or dust, even if it is flour mill dust, or a fly, or the trace of the taste of medicine, while he remembers his fast. - 3 | In these cases, the fast does not break when smoke enters the throat unintentionally, or dust whether from a flour mill, or a fly, or if the trace of the taste of medicine enters the mouth, even if the person remembers they are fasting. (T) |

In "Khaniya", "Khulasa", "Dhakhira", and "Al-Muftiyyin": | And the wording is for Khaniya: If smoke, dust, the scent of perfume, or a fly enters his throat, his fast is not invalidated. - 4 | The wording of Khaniya is this: If smoke, dust, the fragrance of perfume, or a fly enters the throat, the fast will not be invalidated. (T) |

In "Siraj al-Wahhaj" and "Al-Hindiyyah":

---

1. Hidaya, Chapter on what necessitates Qada and Kaffarah, Al-Maktabah al-Arabiyyah Karachi 1/198
2. Fath al-Qadir, Chapter on what necessitates Qada and Kaffarah, Nooriya Rizwiya Sukkur 2/258
3. Nur al-Idah, What does not invalidate the fast, Matba' Alimi, Lahore p. 64
4. Fatawa Qazi Khan, Chapter on what does not invalidate the fast, Munshi Naval Kishore Lucknow 1/98

फतावा-ए-रज़विया - खंड १०

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद/व्याख्या
रोज़ेदार के पास बात करने के लिए अपना मुँह खोलने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता है, इसलिए यह धूल और धुएं की तरह हो गया। - १	क्योंकि रोज़ेदार को बात करने के लिए मुँह खोलना पड़ता है, इसलिए मक्खी का हुक्म धूल और धुएं की तरह है। (त)

"फ़तह अल-क़दीर" में है: | उनका कथन "यह धूल और धुएं जैसा है जब वे गले में प्रवेश करते हैं, क्योंकि उनके प्रवेश से बचना संभव नहीं है क्योंकि यदि मुँह बंद हो तो वे नाक से प्रवेश करते हैं, और यह उस नमी की तरह भी हो जाता है जो कुल्ला करने के बाद मुँह में रह जाती है।" - २ | लेखक का कथन है कि मक्खी का प्रवेश धूल और धुएं की तरह है क्योंकि जब वे गले में प्रवेश करते हैं, तो उनके प्रवेश से बचना संभव नहीं होता; यदि मुँह बंद भी हो, तो वे नाक के ज़रिए प्रवेश कर जाएंगे, और यह उस नमी की तरह भी है जो कुल्ला करने के बाद मुँह में रह जाती है। (त) |

"नूर अल-ईज़ाह" पाठ "इमदाद अल-फ़त्ताह" में है: | रोज़ा खराब नहीं होता यदि बिना किसी क्रिया के उसके गले में धुआं प्रवेश कर जाए, या धूल, भले ही वह आटे की चक्की की धूल हो, या मक्खी, या दवाओं के स्वाद का अंश, जबकि उसे अपने रोज़े की याद हो। - ३ | इन स्थितियों में रोज़ा नहीं टूटता जब गले में बिना इरादे के धुआं प्रवेश कर जाए, या धूल चाहे वह आटे की चक्की की हो, या मक्खी, या दवाओं के स्वाद का असर मुँह में प्रवेश कर जाए, भले ही रोज़ेदार को रोज़ा याद हो। (त) |

"खानिया", "खुलासा", "ज़खीरा" और "अल-मुफ़्तिय्यीन" में है: | और शब्दावली खानिया के लिए है: यदि धुआं, धूल, इत्र की खुशबू या मक्खी उसके गले में प्रवेश कर जाए, तो उसका रोज़ा खराब नहीं होता। - ४ | खानिया की इबारत यह है: गले में धुआं, धूल, इत्र की खुशबू या मक्खी प्रवेश कर जाए तो रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा। (त) |

"सिराज अल-वहाज" और "हिंदिया" में है:

---

1. हिदाया, क़ज़ा और कफ़्फ़ारा को वाजिब करने वाली चीजों का अध्याय, अल-मकतबा अल-अरबिय्या कराची १/१९८
2. फ़तह अल-क़दीर, क़ज़ा और कफ़्फ़ारा को वाजिब करने वाली चीजों का अध्याय, नूरिय्या रिज़विया सुक्कुर २/२५८

3. नूर अल-ईज़ाह, जिनसे रोज़ा फ़ासिद नहीं होता, मतबा अलीमी, लाहौर पृ. ६४
4. फतावा क़ाज़ी खान, उन चीजों का अध्याय जिनसे रोज़ा फ़ासिद नहीं होता, मुंशी नवल किशोर लखनऊ १/९८

पृष्ठ ८३६ में से ४९७

عربی عبارت	اردو ترجمہ/تشریح
الصائم لا یجد بدا من ان یفتح فمه لیتکلم فصار کالغبار والدخان - 1	کیونکہ روزہ دار کو بات کرنے کے لئے منہ کھولنا پڑتا ہے تو مکھی کا حکم غبار اور دھوئیں کی طرح ہے۔ (ت)

"فتح القدیر" میں ہے: | قوله فاشبه الغبار والدخان اذا دخلا في الحلق فانه لا یستطاع الاحتراز عن دخولهما لدخولهما من الانف اذا طبق الفم وصار ایضا کبلل یبقی في فیه بعد المضمضة - 2 | مصنف کا قول مکھی کا داخل ہونا غبار اور دھوئیں کی طرح ہے کیونکہ جب وہ حلق میں داخل ہوجائیں تو ان کے دخول سے بچنا ممکن نہیں ہوتا، منہ اگر بند بھی ہو تو وہ ناک کے ذریعے داخل ہوجائیں گے اور یہ اس تری کی مانند بھی ہے جو کلی کے بعد منہ میں رہ جاتی ہے۔ (ت) |

"نور الایضاح" متن امداد الفتاح میں ہے: | لا یفسد الصوم لو دخل حلقه دخان بلا صنعه او غبار ولو غبار الطاحون او ذباب او اثر طعم الادویة وهو ذاکر لصومه - 3 | ان صورتوں میں روزہ نہیں ٹوٹتا جب حلق میں بلا قصد دھواں داخل ہوجائے یا غبار خواہ وہ آٹے کی چکی کا ہو یا مکھی یا دوائیوں کے ذائقے کا اثر منہ میں داخل ہوجائے اگرچہ روزہ دار کو روزہ دار ہونا یاد ہو۔ (ت) |

"خانیہ" و "خلاصہ" و "ذخیرہ" و "المفتین" میں ہے: | واللفظ للخانیة اذا دخل الدخان او الغبار او ریح العطر او الذباب حلقه لا یفسد صومه - 4 | خانیہ کی عبارت یہ ہے: حلق میں دھواں، غبار، عطر کی خوشبو یا مکھی داخل ہوجائے تو روزہ فاسد نہیں ہوگا۔ (ت) |

"سراج الوہاج" و "ہندیہ" میں ہے:

---

1. ہدایۃ باب مایوجب القضاء والکفارۃ المکتبۃ العربیۃ کراچی 198/1

2. فتح القدیر باب مایوجب القضاء والکفارۃ نوریہ رضویہ سکھر 258/2

3. نور الایضاح مالایفسد الصوم مطبع علیمی، لاہور ص ۶۴

4. فتاویٰ قاضی خان الفصل فیما لایفسد الصوم منشی نولکشور لکھنو 98/1

صفحہ 836 میں سے 497

If dust from a mill, the taste of medicines, dust from threshing or similar substances, or smoke, or dust flying through the air or caused by the hooves of animals and similar things enter the throat of a fasting person, the fast does not break. [1]

If dust from a mill, the taste of medicines, dust from horse running or its equivalent, smoke, or dust flying by wind or by hooves of animals and the like enters the throat of a fasting person, the fast is not broken. (T)

It is stated in 18 Al-Wajiz, 19 Al-Anqurwi, and 20 Waqi'at al-Muftin: | If a fly, smoke, or dust enters the throat, or if wetness remains after rinsing the mouth and it is swallowed with saliva, the fast does not break. [2] | If a fly, smoke, or dust enters the throat of a fasting person, or if moisture remains in the mouth after rinsing and they swallow it along with their saliva, the fast will not break. | | :--- | :--- |

However, if a fasting person intentionally and knowingly (not out of forgetfulness) introduces the smoke or dust of aloeswood, frankincense, or any other substance into their throat or brain—for example, by lighting incense and bringing it close to their body to inhale the smoke so it reaches the brain or throat—in this case, the fast will be invalidated. It is stated in 21 Durr al-Mukhtar:

Its summary is that if a person introduces smoke into their throat, their fast is broken, regardless of what kind of smoke it is, even if it is aloeswood or ambergris, provided they remember the fast because it is possible to avoid it. One should be cautious of this as Al-Shurunbulali has detailed. [3]

Its summary is that if a fasting person intentionally introduces smoke into their throat, their fast will break, whether that smoke is of oud or ambergris, if they remember they are fasting, because avoiding it is possible. One should remain alert to this, as detailed discussions have been held on this by Shurunbulali. (T)

Allama Shurunbulali stated in his three books, 22 Ghunyat Dhawi al-Ahkam, 23 Imdad al-Fattah, and 24 Maraqi al-Falah: | These are the words of Maraqi: and in what we have mentioned there is an indication that whoever introduces smoke into their throat by their own action in any form of introduction, their fast is invalidated. | The text of Maraqi al-Falah is as follows: what we have mentioned indicates that if

someone deliberately introduced smoke into the throat regardless of the form of introduction, their fast is invalidated. | | :--- | :--- |

1. Fatawa Hindiyya, Chapter Four: On what invalidates the fast, Noorani Kutub Khana Peshawar 1/203.
2. Fatawa Anqurwi, Book of Fasting, Dar al-Isha'at al-Arabiya, Kandahar, Afghanistan 15/1.
3. Durr al-Mukhtar, Chapter: On what invalidates the fast, Mujtabai Delhi 1/149.

यदि चक्की की धूल, दवाओं का स्वाद, थ्रेसिंग की धूल या इसी तरह की चीज़ें, या धुआं, या हवा से उड़ने वाली धूल, या जानवरों के खुरों से उड़ने वाली धूल आदि किसी रोज़ेदार के गले में प्रवेश कर जाए, तो रोज़ा नहीं टूटता। [१]

यदि रोज़ेदार के गले में चक्की की धूल, दवाओं का स्वाद, घोड़े के दौड़ने की धूल या उसके समान कोई धूल, धुआं, हवा के माध्यम से उड़ने वाली धूल, या चौपायों और उनके समान जानवरों के खुरों से उड़ने वाली धूल चली जाए, तो रोज़ा नहीं टूटता। (त)

१८ 'अल-वजीज', १९ 'अल-अन्कुरवी' और २० 'वाकियात अल-मुफ्तीन' में है: | यदि मक्खी, धुआं या धूल गले में चली जाए, या कुल्ला करने के बाद मुँह में नमी रह जाए और उसे लार के साथ निगल लिया जाए, तो रोज़ा नहीं टूटता। [२] | रोज़ेदार के गले में मक्खी, धुआं या धूल चली गई, या कुल्ला करने के बाद मुँह में नमी रह गई और उसने उसे थूक के साथ निगल लिया, तो रोज़ा नहीं टूटेगा। |
| :--- | :--- |

हाँ, यदि कोई रोज़ेदार अपने इरादे और इच्छा से ऊद या लोबान या किसी भी चीज़ का धुआं या धूल जानबूझकर (रोज़ा याद होने की स्थिति में) अपने गले या दिमाग में पहुँचाता है, जैसे कि सुगंधित धूप (बखूर) जलाकर और उसे अपने शरीर के पास लाकर धुआं सूंघे ताकि वह दिमाग या गले में जाए, तो ऐसी स्थिति में रोज़ा टूट जाएगा। २१ 'दुर्रे मुख्तार' में है:

इसका सारांश यह है कि यदि कोई व्यक्ति जानबूझकर अपने गले में धुआं पहुँचाता है, तो उसका रोज़ा टूट जाता है, चाहे वह धुआं किसी भी प्रकार का हो, यहाँ तक कि ऊद या अंबर का ही क्यों न हो, बशर्ते उसे रोज़ा याद हो, क्योंकि इससे बचना संभव है। इस पर सतर्क रहना चाहिए, जैसा कि शरुनबुलाली ने विस्तार से बताया है। [३]

इसका सारांश यह है कि यदि किसी रोज़ेदार ने जानबूझकर अपने गले में धुआं पहुँचाया तो उसका रोज़ा टूट जाएगा, चाहे वह धुआं ऊद का हो या अंबर का, यदि उसे रोज़ा याद हो क्योंकि इससे बचना संभव है। इस पर सावधान रहना चाहिए, जैसा कि इस पर शरुनबुलाली की विस्तृत चर्चा है। (त)

अल्लामा शरुनबुलाली ने २२ 'गुनिया दवी अल-अहकाम', २३ 'इमदाद अल-फत्ताह' और २४ 'मराकी अल-फलाह', तीनों किताबों में फ़रमाया है: | ये 'मराकी' के शब्द हैं: और जो हमने उल्लेख किया है,

उसमें यह संकेत है कि जो कोई भी अपनी क्रिया से धुआं अपने गले में पहुँचाता है, प्रवेश का तरीका चाहे जो भी हो, उसका रोज़ा टूट जाता है। | 'मराकी अल-फलाह' का इबारत (पाठ) यह है: हमने जो कुछ ज़िक्र किया है उसमें यह संकेत है कि यदि किसी ने जानबूझकर गले में धुआं पहुँचाया, चाहे प्रवेश का कोई भी तरीका हो, रोज़ा फ़ासिद (अमान्य) हो गया। | | :--- | :--- |

1. फ़तावा हिन्दिया, चौथा अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों के बारे में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर १/२०३।
2. फ़तावा अन्कुरविया, रोज़ा की किताब, दारुल इशाअतुल अरबिया कंधार अफ़गानिस्तान १५/१।
3. दुर्रे मुख्तार, अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों के बारे में, मुजतबाई दिल्ली १/१४९।

पृष्ठ ४९८ / ८३६

لو دخل حلقه غبار الطاحونة اوطعم الادوية او غبار الهرس واشباهه، او الدخان او ماسطح من غبار التراب دهواں، ہوا کے ذریعے اڑنے والی، چوپایوں اور اس کے بالريح او بحوافر الدواب واشباه ذلك لم يفطره۔ ۱

اگر روزہ دار کے حلق میں چکی کا غبار، ادویات کا ذائقہ، گھوڑے کے دوڑنے یا اس کی ہم مثل کی غبار، ہم مثل کی وجہ سے اڑنے والی غبار چلی جائے تو روزہ نہیں ٹوٹتا۔ (ت)

۱۸ وجیز و ۱۹ انقروی و ۲۰ واقعات مفتین میں ہے: | دخل الذباب او الدخان او الغبار حلقه او بقی بلل بعد المضمضة فابتلعه مع البزاق لم يفطر۔ ۲ | روزہ دار کے حلق میں مکھی، دھواں یا غبار چلی گئی یا کلی کے بعد تری منہ میں رہ گئی اور اسے وہ تھوک کے ساتھ نگل گیا تو روزہ نہیں ٹوٹے گا۔ | | :--- | :--- |

ہاں اگر صائم اپنے قصد و ارادہ سے اگر یا لوبان خواہ کسی شئے کا دھواں یا غبار اپنے حلق یا دماغ میں عمداً بے حالت نسیان صوم داخل کرے، مثلاً بخور سلگائے اور اسے اپنے جسم سے متصل کرکے دھواں سونگھے کہ دماغ یا حلق میں جائے تو اس صورت میں روزہ فاسد ہوگا۔ ۲۱ در مختار میں ہے:

مفاده انه لو ادخل حلقه الدخان افطر ای دخان کان ولو عوداً او عنبراً لو ذاکراً لامکان التحرز عنه فلیتنبه له کما بسطه الشرنبلالی- ۳

اس کا خلاصہ یہ ہے کہ اگر کسی روزہ دار نے بقصد اپنے حلق میں دھواں داخل کیا تو اس کا روزہ ٹوٹ جائے گا خواہ وہ دھواں عود یا عنبر کا ہو، اگر اسے روزہ یاد ہو کیونکہ اس سے بچنا ممکن ہے اس پر متنبہ رہنا چاہئے، جیسا کہ اس پر شرنبلالی سے تفصیلی گفتگو کی ہے۔ ت

علامہ شرنبلالی نے ۲۲ غنیہ ذوی الاحکام و ۲۳ امداد الفتاح و ۲۴ مراقی الفلاح تینوں کتابوں میں فرمایا: | وهذا لفظ المراقي وفيما ذكرنا اشارة الى انه من ادخل بصنعه دخاناً حلقه باي صورة كان الادخال، فسد صومه | مراقی الفلاح کی عبارت یہ ہے جو کچھ ہم نے ذکر کیا اس میں یہ اشارہ ہے کہ اگر کسی نے ارادۃً حلق میں دھواں داخل کیا خواہ ادخال کی کوئی صورت فسد صومہ | | :---: | ---: |

1 فتاوٰی ہندیہ الباب الرابع فیما یفسد الصوم نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۲۰۳ 2 فتاوٰی انقرویہ کتاب الصوم دارالاشاعۃ العربیۃ قندھار افغانستان ۱۵/۱ 3 در مختار باب ما یفسد الصوم مجتبائی دہلی ۱/۱۴۹

Fatawa Razawiyya, Volume 10

Whether it is smoke from ambergris, aloeswood, or anything else, even if one burns incense and brings it close to themselves and inhales the smoke while remembering their fast, the fast is broken. This is because it was possible to avoid bringing the substance that breaks the fast into the stomach and brain. This is something many people are heedless of, so one should be alert to it. It should not be imagined that this is like smelling a rose, rosewater, or musk, because there is a clear difference between air perfumed with the scent of musk and the like, and the essence (particles) of smoke reaching the stomach through one's own action. (T)

Similarly, it is mentioned in "Radd al-Muhtar" quoting from "Imdad al-Fattah" and in "Tahtawiyya" from "Ghuniyya". 2. In "Majma' al-Anhur", a commentary on "Multaqa al-Abhur", it says:

On this basis, if one introduces [smoke] into their throat, their fast is invalidated. Even if one burns incense, inhales its smoke, and thus brings it into their throat while remembering the fast, the fast is broken. This is because jurists have distinguished between 'entry' (dukhul - passive) and 'introducing' (idkhal - active) in many places, as 'introducing' is the person's own act, and it is possible to avoid it. This is supported by the statement of the author of "Al-Nihayah": "If a fly enters the throat, the fast is not invalidated because the factor contrary to fasting is not present, which is introducing something from the outside to the inside." This is something many are heedless of, so one should pay attention to it. (T)

1 Maraqi al-Falah with Hashiyah al-Tahtawi, Chapter explaining what does not break the fast, Nur Muhammad Karkhana Tijarat Kutub, Karachi, pp. 361-62 2 Majma' al-Anhur, Chapter on what necessitates invalidation, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/245

चाहे वह अंबर का धुआं हो या ऊद का या किसी और चीज़ का, यहाँ तक कि जिसने लोबान (धूनी) जलाई और उसे अपने पास किया और उसका धुआँ सूंघा जबकि उसे रोज़ा याद था, तो उसका रोज़ा टूट जाएगा। क्योंकि इस स्थिति में पेट और दिमाग को रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ से बचाना संभव है। और यह उन चीज़ों में से है जिससे बहुत से लोग गाफ़िल (अनजान) रहते हैं, इसलिए इस पर विशेष ध्यान दें। यह भ्रम न पालें कि यह फूल या कस्तूरी सूंघने जैसा है, क्योंकि कस्तूरी आदि की सुगंध और धुएं के सार (कण), जो जानबूझकर गले में पहुँचता है, के बीच एक बहुत स्पष्ट अंतर है। (त)

इसी प्रकार 'रद-उल-मुहतार' में 'इमदाद-उल-फ़त्ताह' और 'तहतावीया' में 'ग़ुनिया' से उद्धृत करते हुए निर्धारित किया गया है। 2. 'मजमअ-उल-अनहुर' शरह 'मुल्तका-उल-अबहुर' में है:

इस आधार पर, यदि किसी रोज़ेदार ने उपरोक्त चीज़ों में से किसी को अपने गले में उतारा, तो उसका रोज़ा अमान्य हो जाएगा। यहाँ तक कि जिसने धूनी दी और उसके धुएं को सूंघा और रोज़ा याद होने के बावजूद उसे अपने गले में पहुँचाया, तो उसका रोज़ा टूट जाएगा, क्योंकि न्यायविदों ने कई स्थानों पर 'स्वयं प्रवेश' (दखुल) और 'प्रवेश कराने' (इदखाल) के बीच अंतर किया है, क्योंकि 'इदखाल' रोज़ेदार का अपना कार्य है जिससे बचना संभव है। इसकी पुष्टि 'निहाया' के लेखक के इस कथन से होती है कि: 'जब मक्खी पेट में चली जाए तो रोज़ा नहीं टूटता, क्योंकि रोज़े के विरुद्ध कोई चीज़ नहीं पाई गई, और वह बाहर से किसी वस्तु को भीतर पहुँचाना है।' इससे बहुत से लोग अनजान हैं, इसलिए इस पर ध्यान देना चाहिए। (त)

1 मराकी अल-फ़लाह मा हशियह अत-तहतावी, रोज़ा न तोड़ने वाली चीज़ों के विवरण पर अध्याय, नूर मुहम्मद कारखाना तिजारत कुतुब, कराची, पृष्ठ 361-62 2 मजमअ अल-अनहुर, रोज़ा टूटने के कारणों पर अध्याय, दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 1/245

فتاوٰی رضویہ ، جلد دہم

سواء کان دخان عنبرا و عود او غیر ھما حتی من تبخر ببخور فآواہ الی نفسہ و اشتم دخانا ذاکرا لصومہ افطر لامکان التحرز عن ادخال المفطر جوفہ و دماغہ وھذا مما یغفل عنہ کثیر من الناس فلیتنبہ لہ ولا یتوھم انہ کشم الورد ومائہ والمسک لوضوح الفرق بین ھواء تطیب بریح المسک و شبھہ وبین جوھر دخان وصل الی جوفہ بفعلہ۔1

ہو تو روزہ ٹوٹ جائے گا خواہ وہ دھواں عنبر، عود یا ان کے ہم مثل کسی کا ہو حتیٰ کہ جس نے دھونی سلگائی اور اپنے قریب کر کے اس کا دھواں سونگھا حالانکہ روزہ یاد تھا روزہ ٹوٹ جائے گا کیونکہ اس صورت میں پیٹ اور دماغ کو روزہ توڑنے والی شے سے محفوظ رکھنا ممکن ہے، یہ ان چیزوں میں سے ہیں جن سے اکثر لوگ غافل ہیں، لہذا اس پر خصوصی توجہ دیجئے، یہ وہم نہ کیا جائے کہ یہ تو پھول اور کستوری سونگھنے کی طرح ہی ہے کیونکہ خوشبو کی مہک اور جوہر دخان میں جو ارادۃً جوف میں جائے بڑا واضح فرق ہے (ت)

اسی طرح "رد المحتار" میں "امداد الفتاح" اور "طحطاویہ" میں "غنیہ" سے نقل فرما کر مقرر رکھا۔ 2 مجمع الانہر شرح ملتقی الابحر میں ہے:

علی ھذا لو ادخل حلقہ فسد صومہ حتی ان من تبخر ببخور فاستشم دخانہ فادخلہ حلقہ ذاکرا لصومہ افطر لانھم فرقوا بین الدخول و الادخال فی مواضع عدیدۃ لان الادخال عملہ والتحرز ممکن ویؤیدہ قول صاحب النھایۃ اذا دخل الذباب جوفہ لا یفسد صومہ لم یوجد ما ھو ضد الصوم وھو ادخال الشئ من الخارج الی الباطن وھذا مما یغفل عنہ کثیر فلیتنبہ لہ۔2

اس بناء پر اگر کسی روزہ دار نے مذکورہ اشیاء میں سے کسی چیز کو اپنے حلق میں داخل کیا تو اس کا روزہ فاسد ہو جائیگا حتیٰ کہ جس نے بخور کے ساتھ دھونی دی اور اس کا دھواں سونگھا اور روزہ یاد ہوتے ہوئے حلق میں داخل کیا تو روزہ ٹوٹ جائے گا کیونکہ فقہاء نے متعدد جگہ پر دخول اور ادخال میں فرق کیا ہے کیونکہ ادخال صائم کا اپنا عمل ہے جس سے بچنا ممکن ہے اس کی تائید صاحب نہایہ کا یہ قول کرتا ہے کہ جب مکھی پیٹ میں داخل ہوگئی تو روزہ نہیں ٹوٹے گا کیونکہ کوئی ایسی چیز نہیں پائی گئی جو روزہ کی ضد ہو اور وہ خارج سے کسی شے کا باطن میں داخل کرنا ہے، اس سے بہت سے لوگ غافل ہیں لہذا اس پر توجہ چاہئے۔ (ت)

1 مراقی الفلاح مع حاشیۃ الطحطاوی باب فی بیان ما لا یفسد الصوم نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۶۲ - ۳۶۱ 2 مجمع الانہر، باب موجب الفساد، دار احیاء التراث العربی بیروت ۱/ ۲۴۵

Fatawa Rizwia, Volume 10

^8 Footnote 8 from Hashiyat al-Kanz by Allama Sayyid Abi al-Sa'ud al-Azhari and then in Tahtawi 'ala al-Maraqi states:

[Boxed Text] Arabic: The wording is for the first, his saying "or dust enters his throat", and the restriction of "entering" is to avoid "intentional insertion". That is why they clearly stated that intentionally inhaling smoke from an incense burner invalidates the fast. Urdu: The phrase "dust enters the throat" uses the term "entry" to distinguish it from "intentional insertion." This is why jurists have explicitly stated that intentionally inhaling smoke from an incense burner invalidates the fast. (T)

Firstly, it is clear that the case mentioned in the question is a case of accidental "entry", not a form of "intentional insertion." Therefore, the ruling that it breaks the fast is considered purely baseless and without origin.

I say (Aqool): And with Allah's guidance and through Him reaching the heights of verification. The investigation of the matter and the clarification of the objective, by the guidance of the Sovereign All-Knowing, is that the reality of fasting is confined to abstaining from things that legally break the fast, and religious obligations are limited to one's capacity. The negation of reality necessarily leads to the negation of the thing itself. Distinguishing between necessity and non-necessity in this regard is rationally and traditionally invalid and discarded. For example, the reality of marriage is offer and acceptance, even if from the guardian's side. Now, if a person is in a place where there is no guardian nor an Islamic ruler, and due to extreme need for a woman, the state reaches real insanity such that capacity of disposal is lost, then due to this severe necessity, it will never be permissible for a woman to become his wife by mere offer without acceptance. Or take the reality of Zakat, which is giving ownership to a poor person, etc. If it happens that no recipient is found, as will happen in the blessed time of our Master Messiah (peace be upon him), then it is not possible that due to necessity, Zakat detaches from its reality and giving it to a wealthy person is considered Zakat. Pillars (of an act) dropped due to necessity are pillars of the 'amplitude' (expanded rules) of the pillars, not the pillars of the original reality. Otherwise, the realization of a thing without its reality is a rational impossibility. So, we cannot distinguish between necessity and non-necessity in things that contradict the core nature (of an act). Now, if we look at things that enter the fasting person's body from outside, we find various ways. Some of them are those which a fasting person cannot avoid at any time, like air. Some are those with

which occasional involvement is necessary for everyone, and complete avoidance is impossible, like the entry of dust and smoke. In one way or another, a person needs proximity to them, and they are not avoidable in their essence. A person cannot avoid speaking, and even if one does not speak, how can one survive without breathing? And air is their carrier and all...

1. Fath al-Mu'in, Annotation on Sharh Mulla Miskeen, Chapter: What invalidates the fast, H.M. Saeed Company, Karachi 1/431; Tahtawi 'ala Maraqi al-Falah, Chapter: Statement of what does not invalidate the fast, Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub, Karachi p. 362.

फतावा रज़विया, जिल्द दहुम (खंड 10)

^8 अल्लामा सैय्यद अबी अल-सऊद अल-अज़हरी की हाशिया अल-कन्ज़ और फिर तहतावी अल-मराक़ी में है:

[बॉक्स टेक्स्ट] अरबी: शब्द पहले के लिए हैं, उनका कहना है "या उसके गले में धूल प्रवेश कर गई", और "प्रवेश करने" (दुक़ूल) का प्रतिबंध "जानबूझकर डालने" (इदख़ाल) से बचने के लिए है। इसीलिए उन्होंने स्पष्ट किया कि अगरबत्ती/धूनी के धुएं को जानबूझकर लेना रोज़ा तोड़ देता है। उर्दू: शब्द "गले में धूल का प्रवेश" में 'प्रवेश' का प्रतिबंध 'जानबूझकर डालने' से बचने के लिए है, इसीलिए फ़ुक़हा (धर्मशास्त्रियों) ने स्पष्ट किया कि धूनी के धुएं को जानबूझकर सूंघना रोज़ा तोड़ने वाला है। (त)

प्रारंभ में यह स्पष्ट है कि प्रश्न में वर्णित स्थिति 'प्रवेश' (आकस्मिक) की है न कि 'जानबूझकर डालने' की, अतः इसमें रोज़ा टूटने का आदेश देना पूरी तरह से निराधार और आधारहीन विचार है।

मैं कहता हूँ (अक़ूल): और अल्लाह की तौफ़ीक़ से और उसी के माध्यम से शोध की ऊँचाइयों तक पहुँचते हुए। मामले की जाँच और उद्देश्य का स्पष्टीकरण, सर्वज्ञ स्वामी की सहायता से, यह है कि रोज़ा की वास्तविकता शरीयत के अनुसार रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों से रुकने में समाहित है, और शरीयत की ज़िम्मेदारियाँ व्यक्ति की क्षमता तक सीमित हैं। वास्तविकता का अभाव निश्चित रूप से वस्तु के अभाव की ओर ले जाता है। इस संबंध में आवश्यकता और अनावश्यकता के बीच अंतर करना तर्कसंगत और पारंपरिक रूप से अमान्य और त्याज्य है। उदाहरण के लिए, विवाह की वास्तविकता प्रस्ताव और स्वीकृति है, भले ही वह वली (अभिभावक) की ओर से हो। अब, यदि कोई व्यक्ति ऐसी जगह पर हो जहाँ न तो कोई वली हो और न ही कोई इस्लामी शासक, और स्त्री की अत्यधिक आवश्यकता के कारण स्थिति वास्तविक पागलपन तक पहुँच जाए कि निर्णय लेने की क्षमता खो जाए, तो इस गंभीर आवश्यकता के कारण यह कभी संभव नहीं होगा कि कोई महिला बिना स्वीकृति के केवल प्रस्ताव मात्र से उसकी पत्नी बन जाए। या ज़कात की वास्तविकता को लें, जो कि एक गरीब व्यक्ति को मालिक बनाना है, आदि। यदि ऐसा हो कि कोई प्राप्तकर्ता न मिले, जैसा कि हमारे स्वामी मसीह (ईसा अलैहिस्सलाम) के बरकत वाले समय में होने वाला है, तो यह संभव नहीं है कि आवश्यकता के कारण ज़कात अपनी वास्तविकता से अलग होकर किसी धनी व्यक्ति को देना ज़कात मान लिया जाए। आवश्यकता के कारण छूटने वाले स्तंभ (अरकान) केवल नियमों के'विस्तार' वाले स्तंभ होते हैं, मूल वास्तविकता के स्तंभ नहीं। अन्यथा, बिना वास्तविकता के किसी चीज़ का

अस्तित्व में आना तर्कसंगत रूप से असंभव है। इसलिए, हम मूल प्रकृति के विरुद्ध होने वाली चीज़ों में आवश्यकता और अनावश्यकता के बीच अंतर नहीं कर सकते। अब, यदि हम उन चीज़ों को देखें जो बाहर से रोज़ेदार के पेट में प्रवेश करती हैं, तो हम विभिन्न तरीके पाते हैं। उनमें से कुछ वे हैं जिनसे एक रोज़ेदार किसी भी समय बच नहीं सकता, जैसे हवा। कुछ वे हैं जिनमें हर व्यक्ति का कभी-न-कभी शामिल होना अनिवार्य है, और उनसे पूरी तरह बचना असंभव है, जैसे धूल और धुएं का प्रवेश। किसी न किसी तरह मनुष्य को उनकी निकटता की आवश्यकता होती है और वे अपनी मूल प्रकृति में बचाव योग्य नहीं हैं। मनुष्य को बोलने से छुटकारा नहीं है, और यदि वह न भी बोले, तो बिना सांस लिए कैसे रह सकता है? और हवा उनकी वाहक होती है और सभी...

1. फ़तह अल-मुईन, हाशिया अला शरह मुल्ला मिस्कीन, अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें, एच.एम. सईद कंपनी, कराची 1/431; तहतावी अला मराक़ी अल-फ़लाह, अध्याय: रोज़ा न तोड़ने वाली चीज़ों का वर्णन, नूर मोहम्मद कारखाना तिज़ारत कुतुब, कराची पृ. 362

पृष्ठ 500/836

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

8؎ حاشیہ الکنز للعلا مۃ السید ابی السعود الازہری پھر طحطاوی علی المراقی میں ہے:

[باکس ٹیکسٹ] عربی: واللفظ للاول قولہ اودخل حلقہ غبار والتقیید بالدخول للاحتراز عن الادخال ولھذا صرحوا بأن الاحتواء علی المبخرۃ مفسد - ۱ اردو: قولہ "دخل حلقہ غبار" دخول کی قید ادخال سے احتراز کے لئے اسی لئے فقہاء نے تصریح کی کہ بخور دان پر محتوی ہونا مفسد روزہ ہے۔ (ت)

بدایۃً واضح کہ صورتِ مذکورہ سوال صورتِ دخول ہے نہ کہ شکلِ ادخال، تو اس میں انتقاضِ صوم کا حکم محض بے سند وبے اصل خیال۔

اقول: وباللہ التوفیق وبہ الوصول الی ذری التحقیق تحقیقِ مقام وتنقیحِ مرام بتوفیق الملک العلام یہ ہے کہ حقیقتِ صوم امساک عن المفطرات الشرعیہ میں محصور، اور تکالیفِ شرعیہ قدر وسع پر مقصور، اور انتفائے حقیقت کو انتفائے شے قطعاً لازم وضرور، جس میں ضرورت وعدمِ ضرورت کا تفرقہ عقلاً ونقلاً باطل ومہجور، مثلاً حقیقتِ نکاح ایجاب وقبول ہے اگرچہ جانبِ ولی سے، اب اگر کوئی شخص ایسی جگہ ہو جہاں نہ کوئی ولی نہ حاکمِ اسلام اور بوجہ شدتِ احتیاجِ زن حالت تا بجنون حقیقی پہنچے کہ اہلیتِ تصرف سے خارج ہو جائے تو اس ضرورتِ شدیدہ کے لحاظ سے ہرگز روانہ ہوگا کہ کوئی عورت بمجرد ایجاب بے قبول اس کی زوجہ بن جائے یا حقیقتِ زکوٰۃ کہ تملیکِ فقیرالخ ہے، اگر کہیں ایسا ہو کہ مصرف کوئی نہ ملے جیسا کہ زمانِ برکت نشانِ سیدنا مسیح کلمۃ اللہ صلوٰۃ اللہ تعالٰی وسلامہ علیہ میں ہونے والا ہے تو یہ ممکن نہیں کہ براہِ ضرورت زکوٰۃ اپنی حقیقت سے منسلخ ہو کر کسی غنی کو دینا زکوٰۃ قرار پائے، ارکان ساقط بضرورت،

حقیقتِ ارکانِ سعت ہوتے ہیں نہ ارکانِ اصل حقیقت، ورنہ تحققِ شے بے حقیقت شئی محالِ عقلی ہے تو منافیاتِ سنخِ ذات میں ضرورت وبے ضرورت سے تفرقہ نہیں کرسکتے، اب ہم ان اشیاء کو جو خارج سے جوفِ صائم میں داخل ہوں نظر کریں تو انحائے مختلفہ کو پاتے ہیں ان میں بعض وہ ہیں جن سے کسی وقت صائم کو احتراز ممکن نہیں، جیسے ہوا، بعض وہ جن سے احیاناً تلبس ہر شخص کو ضرور، اور ان سے تحرز کلی نا مقدور، جیسے دخولِ غبار ودخان کہ کسی نہ کسی طرح انسان کو ان سے قرب کی حاجت ضروری ہے اور وہ اپنی حدِ ذات میں ممکن الاحتراز نہیں، آدمی کو کلام سے چارہ نہیں، اور کلام نہ بھی کرے تو بے تنفس کیونکر گزرے، اور ہوا کہ ان کی حامل ہوتی ہے اور تمام

1 فتح المعین حاشیہ علی شرح ملا مسکین باب ما یفسد الصوم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/۴۳۱، طحطاوی علی مراقی الفلاح باب فی بیان مالا یفسد الصوم نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳۶۲

Fatawa Razawiyya, Volume 10

...stays filled and moves in the atmosphere, carried everywhere. Even if a person keeps their mouth shut, it can enter through the nose. And there are some things from which one can always avoid, though rarely some individuals may face circumstances that force them into compulsion, like food and drink, and the intentional intake of smoke and dust, as this is one's own act; man is not purely helpless in this. The pure Shariah, being Wise and Merciful, just as it excluded the first category entirely from the list of things that invalidate the fast—because if it were considered, fasting would become impossible and the obligation of fasting would be an unbearable burden—similarly, it did not include the second category absolutely among the fast-breakers. If they were considered fast-breakers, one of two situations would arise: either the ruling of breaking the fast is always established, which leads back to the same unbearable burden; or, in a time of necessity, despite the occurrence of a fast-breaker, the fast is considered to remain intact, which would imply the persistence of a thing while its essence is negated, or the coexistence of an entity with its contradictory essence, and this is false. We have just said that necessity does not affect fundamental realities. Therefore, it is never seen in the pure Shariah that it designates a specific thing as a fast-breaker and then, in some cases, due to necessity, waives the ruling of breaking the fast. For example, look at the books of jurisprudence:

Firstly: A person near death is forced to take medicine. How severe was their necessity that made breaking the fast permissible! Yet, the ruling that the fast is broken was not removed.

Secondly: Someone stands with a sword over one's head, saying "If you don't eat, I will kill you." What a dire necessity! The command will be "Eat," but it won't be that the fast remains.

Thirdly: Who has a greater necessity than a person in the throes of starvation? For them, the sin of consuming carrion or forbidden things is removed, and eating enough to sustain life becomes obligatory. But it's not that if this state occurs while fasting, the fast doesn't break due to necessity.

Fourthly: Sleep is equal for everyone. "Sleep is the brother of death." (T) What trick is there for one sleeping to save themselves? What means of avoidance? Yet, this "impossibility of avoidance" did not bring the ruling of the fast's persistence. If something enters the throat while sleeping, the same ruling of invalidation will apply

to the fast. In short, it is among the self-evident truths to a student of jurisprudence that the pure Shariah, once it considers something a fast-breaker, does not differentiate between necessity and its absence. The consideration of necessity is only to the extent that breaking the fast becomes permissible, or even obligatory, but that a fast-breaker ceases to be a fast-breaker is impossible. Thus, it is proven that this consensus-based principle of reason, tradition, and the Shariah rule of the verse "Allah does not burden a soul beyond its capacity" (Al-Qur'an 2:286) has made it necessary that the second category also be excluded from the list of fast-breakers, and that a Shariah-recognised fast-breaker is confined only to the third category. By the grace of Allah Ta'ala, this enlightened discourse has clarified that for something not to be a fast-breaker, just as the third category requires a rare occurrence...

---

1. Al-Qur'an 2/286 Page 501 of 836

...वातावरण में भरा रहता है और गतिशील रहता है, हर जगह साथ रहता है। अगर आदमी मुँह बंद भी रखे तो यह नाक के रास्ते दाखिल हो सकता है। और कुछ वे चीजें हैं जिनसे हमेशा बचा जा सकता है, हालाँकि विरल मामलों में कुछ व्यक्तियों को ऐसी स्थितियाँ पेश आ सकती हैं जो उन्हें मजबूरी में डाल दें, जैसे भोजन और पेय, और धुआँ और धूल का जानबूझकर सेवन, क्योंकि यह तो स्वयं का कार्य है; मनुष्य इसमें पूरी तरह मजबूर नहीं है। पावन शरीयत ने, जो हकीम (बुद्धिमान) और रहीम (दयालु) है, जिस प्रकार पहली श्रेणी को पूरी तरह से रोज़ा तोड़ने वाली चीजों (मुफ़त्तिरात) से बाहर रखा - क्योंकि यदि इसे ध्यान में रखा जाता तो रोज़ा रखना असंभव हो जाता और रोज़े का कर्तव्य एक असहनीय बोझ बन जाता - उसी प्रकार दूसरी श्रेणी को भी पूरी तरह से रोज़ा तोड़ने वाली चीजों में नहीं रखा। यदि उन्हें रोज़ा तोड़ने वाला माना जाए, तो दो स्थितियाँ होंगी: या तो रोज़ा टूटने का हुक्म हमेशा बना रहे, तो वही असहनीय बोझ वाली बात होगी; या ज़रूरत के समय, रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ के होने के बावजूद, रोज़ा बना हुआ माना जाए, तो यह किसी चीज़ के अस्तित्व को उसकी वास्तविकता के बिना मानना होगा, या किसी चीज़ और उसके विपरीत स्वभाव का एक साथ होना अनिवार्य होगा, और यह असत्य है। हमने अभी कहा है कि वास्तविकता के बारे में ज़रूरत कारगर नहीं होती। इसलिए पावन शरीयत से यह कभी नहीं देखा गया कि वह किसी चीज़ को विशेष रूप से रोज़ा तोड़ने वाला करार दे और फिर कुछ स्थानों पर ज़रूरत के मद्देनज़र रोज़ा टूटने का हुक्म को समाप्त कर दे। उदाहरण के लिए, फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) की किताबों पर नज़र डालें:

पहला: एक व्यक्ति मृत्यु के निकट हो गया और उसे मजबूरी में दवा पीनी पड़ी। उसकी ज़रूरत कितनी गंभीर थी जिसने रोज़ा तोड़ना जायज़ कर दिया! लेकिन रोज़ा टूटने का हुक्म नहीं हटा।

दूसरा: कोई सिर पर तलवार लिए खड़ा है कि "खाओ, वरना मार डालूँगा।" कैसी सख़्त ज़रूरत है! हुक्म होगा कि "खा ले," लेकिन यह नहीं होगा कि रोज़ा बना रहे।

तीसरा: भुखमरी से पीड़ित व्यक्ति की ज़रूरत से ज़्यादा किसकी ज़रूरत होगी? जिसके लिए मुर्दार (मरा हुआ जानवर) या हराम चीज़ों का पाप खत्म हो जाता है, और जीवन बचाने भर के लिए खाना फर्ज़ हो जाता है। लेकिन ऐसा नहीं है कि यदि यह स्थिति रोज़े की हालत में हो तो ज़रूरत के कारण रोज़ा न टूटे।

चौथा: सोना सबके लिए समान है। "नींद मौत की बहन है।" (त) सोते हुए व्यक्ति के पास बचने का क्या उपाय है, परहेज़ का क्या चारा है? लेकिन इस "बचने की असंभवता" ने रोज़ा बने रहने का हुक्म नहीं दिया। अगर सोते समय गले में कुछ चला जाए, तो रोज़े पर वही बिगाड़ का हुक्म आएगा। संक्षेप में, फ़िक़्ह के खादिम के नज़दीक यह स्वतः स्पष्ट है कि पावन शरीयत कभी किसी चीज़ को रोज़ा तोड़ने वाला मानकर ज़रूरत और ज़रूरत की अनुपस्थिति में अंतर नहीं करती। ज़रूरत का विचार केवल इस सीमा तक होता है कि रोज़ा खोलना जायज़ या कभी फ़र्ज़ हो जाए, लेकिन रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ रोज़ा तोड़ने वाली न रहे, यह असंभव है। तो साबित हुआ कि अक्ल, नक़्ल और शरीयत के इस सर्वसम्मत सिद्धांत और आयत "अल्लाह किसी जान पर उसकी सामर्थ्य से अधिक बोझ नहीं डालता" (अल-क़ुरआन 2/286) ने वाजिब किया कि दूसरी श्रेणी भी प्रचलित रूप से रोज़ा तोड़ने वाली चीजों की गिनती से बाहर हो और शरीयत के अनुसार रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ सिर्फ तीसरी श्रेणी तक ही सीमित हो। अल्लाह तआला के शुक्र से इस रौशन तक़रीर से स्पष्ट हो गया कि रोज़ा न टूटने के लिए जिस तरह तीसरी श्रेणी की ज़रूरत विरल है...

---

1. अल-क़ुरआन २ / २८६ पेज 501 of 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

فضا میں بھری اور متحرک رہتی، جابجا لیے پھرتی ہے، آدمی منہ بند بھی رکھے تو یہ ناک کی راہ سے داخل ہو سکتے ہیں اور بعض وہ جن سے ہمیشہ تحرز کر سکتا ہے اگرچہ نادراً بعض اشخاص کو بعض حالات ایسے پیش آئیں کہ تلبیس پر مجبور کریں، جیسے طعام و شراب، اور انہیں دخان وغبار کا بالقصد ادخال کہ یہ تو اپنا فعل ہے انسان اس میں مجبور محض نہیں، شرع مطہر نے کہ حکیم و رحیم ہے جس طرح قسم اول کو مطلقا شمار مفطرات سے خارج فرمایا کہ اگر اسے ملحوظ رکھیں تو صوم ممتنع اور تکلیف روزہ تکلیف بالمال ٹھہرے، اسی قسم ثانی کو مطلقاً شمار مفطرات میں نہ رکھا اگر مفطر مانیں تو دو حال سے خالی نہیں، یا تو حکم فطر ہمیشہ ثابت رکھیں تو وہی تکلیف مالا یطاق ہوتی ہے یا وقت ضرورت باوصف حصول مفطر روزہ باقی جانیں تو بقائے شے مع انتفائے حقیقت یا اجتماع ذات و منافی ذات لازم آئے اور یہ باطل ہے، ہم ابھی کہہ آئے ہیں کہ درباره حقائق ضرورت کارگر نہیں ہوتی ولہٰذا شرع مطہر سے ہر گز معہود نہیں کہ کسی شے کو بخصوصہ مفطر قرار دے کر بعض جگہ بنظر ضرورت حکم افطار ساقط فرمایا مثلاً کتب فقہیہ پر نظر ڈالے،

اولاً: بیمار قریب مرگ ہو گیا مجبوراً دوا پنی ضرورت کیسی شدید تھی جس نے روزہ توڑنا جائز کردیا مگر روزہ ٹوٹنے کا حکم مرتفع نہ ہوا۔

ثانیاً: تلوار سر پر لئے کھڑا ہے کہ نہیں کھاتا تو قتل کردے گا کیسی سخت ضرورت ہے حکم ہوگا کھا لے مگر یہ نہ ہوگا کہ روزہ نہ جائے۔

ثالثاً: مخمصہ والے مضطر کی ضرورت سے زیادہ کس کی ضرورت ہے، جس کے لئے مردار سے مردار حرام سے حرام میں اثم زائل، اور بقدر حفظ رمق، تناول فرض ہوا مگر یہ نہیں کہ یہ حالت بصورت صوم واقع ہو تو ضرورت کے لحاظ سے روزہ نہ ٹوٹے۔

رابعاً: سونا برابر ہوتا ہے النوم اخوالموت (نیوند موت کی بہن ہے۔ت) سوتے کے پاس بچنے کا کیا حیلہ، احتراز کا کیا چارہ، مگر یہ ناممکن الاحترازی، بقائے صوم کا حکم نہ لائی، سوتے میں حلق میں کچھ چلا جائے تو روزے پر وہی فساد کا حکم آئے گا، غرض خادم فقہ کے نزدیک بدیہیات سے ہے کہ شرع مطہر کبھی کسی چیز کو مفطر مان کر ضرورت و عدم ضرورت کا فرق نہیں فرماتی، لحاظ ضرورت صرف اس قدر ہوتا ہے کہ افطار جائز بلکہ کبھی فرض ہو جائے مگر مفطر مفطر نہ رہے یہ ناممکن، تو ثابت ہوا کہ اس اصل اجماعی عقل و نقل و قاعدہ شرعیہ آیہ لَا یُکَلِّفُ اللّٰہُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَھَا (اللہ تعالٰی کسی نفس کو اس کی طاقت سے بڑھ کر مکلف نہیں ٹھہراتا۔ت) نے واجب کیا کہ قسم ثانی بھی رائجاً اعداد مفطرات سے مجبور اور مفطر شرعی صرف قسم ثالث میں محصور ہو۔ بحمداللہ تعالٰی اس تقریر منیر سے روشن ہوا کہ مفطر نہ ہونے کے لئے جس طرح قسم سوم کی ضرورت نادرہ

Fatawa Razawiya, Volume 10

...which happens by chance to some fasters in certain circumstances, like the compulsion of one who has broken the fast, the one for whom it is disliked (makruh), the sleeper, or the sick person, cannot be sufficient. Similarly, the continuous, necessary, and uninterrupted need of the first type is also not required; rather, the general, actual necessity of the second type is sufficient. And when, based on this, that thing remains excluded from being counted as a fast-breaker, then one cannot separate or detail the times and states of necessity, otherwise the same impossibility would follow which we have already refuted logically and traditionally. So, the entry of smoke and dust without intention and choice, whenever and wherever found, can never inherently be a fast-breaker. There is no room to say that accidental entry in a certain place occurred because of going there, and had one not gone, it would not have happened, and since going was intentional, avoidance was possible. Imam Kurdari states in 'Al-Wajiz':

Arabic	**Urdu Translation**
If water remains after rinsing the mouth and one swallows it with saliva, the fast is not broken because avoidance is difficult.[1]	If some water remains in the mouth after rinsing and the fasting person swallows it with saliva, the fast will not break because it is impossible to avoid this. (T)
In 'Fath', regarding the same issue:	
It becomes like the moisture that remains in the mouth after rinsing.[2]	This is like the moisture that remains in the mouth after rinsing. (T)
In 'Shurunbulaliyah', from Imam Zayla'i:	
If dust or a fly enters his throat while he remembers his fast, it does not break because he cannot refrain from it, so it is like the moisture that remains in the mouth after rinsing.[3]	When dust or a fly enters the throat of a fasting person, even if he remembers the fast, it will not be invalidated because he is not capable of avoiding it. This is like the moisture that remains in his mouth after rinsing. (T)
In 'Sharh al-Multaqa' by Allama Abdul Rahman al-Rumi, it says:	
Because he cannot refrain from it; for if he closes his mouth, he cannot avoid	The fasting person is not capable of stopping it because even if he keeps his mouth closed, he still does not have the

Arabic	Urdu Translation
entry through the nose, so it becomes like the moisture that remains...	power to avoid the entry of dust through the nose. So it is just like that...

1. Bazaziya on the margin of Fatawa Hindiyyah, Kitab al-Sawm, Noorani Kutub Khana Peshawar, 4/100.
2. Fath al-Qadir, Chapter on what necessitates Qada, Nooriya Razawiya Sukkur, 2/258.
3. Ghuniyat Dhawi al-Ahkam, margin of Durr al-Mukhtar, Chapter on causes of invalidation, Matba' Ahmed Kamil al-Kahina, Dar Sa'adat, 1/202.

फतावा रज़विया, जिल्द दसवां

...जो संयोगवश कुछ रोज़ेदारों को कुछ परिस्थितियों में होता है, जैसे रोज़ा तोड़ने वाले, मकरूह (नापसंद), सोने वाले और बीमार की मजबूरी पर्याप्त नहीं हो सकती, इसी तरह पहले प्रकार की स्थायी और अनिवार्य निरंतर आवश्यकता भी आवश्यक नहीं है, बल्कि केवल दूसरे प्रकार की सामान्य व्यावहारिक आवश्यकता ही पर्याप्त है। और जब इसके आधार पर वह चीज़ रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों (मुफ़्तिरात) की गणना से बाहर रही, तो अब आवश्यकता के समय और स्थितियों का विवरण और अलगाव नहीं किया जा सकता, अन्यथा वही असंभावना उत्पन्न होगी जिसे हम पहले ही तार्किक और पारंपरिक रूप से अमान्य कर चुके हैं। इसलिए, बिना किसी इरादे और विकल्प के धुएं और धूल का प्रवेश, जब कभी और जहाँ भी पाया जाए, मूल रूप से रोज़ा तोड़ने वाला नहीं हो सकता। यह कहने की कोई गुंजाइश नहीं है कि अमुक स्थान पर संयोगवश प्रवेश वहाँ जाने के कारण हुआ, और यदि कोई वहाँ न जाता तो ऐसा नहीं होता, और चूंकि वहाँ जाना जानबूझकर था, इसलिए बचाव संभव था। इमाम करदरी 'अल-वजीज़' में फरमाते हैं:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
यदि कुल्ला करने के बाद पानी बच जाए और वह उसे लार के साथ निगल ले, तो रोज़ा नहीं टूटेगा क्योंकि इससे बचना कठिन है।[1]	यदि कुल्ला करने के बाद मुँह में कुछ पानी रह जाए और रोज़ेदार उसे थूक के साथ निगल जाए, तो रोज़ा नहीं टूटेगा क्योंकि इससे बचना संभव नहीं है। (त)
'फ़तह' से इसी विषय में उल्लेख है:	
यह उस नमी की तरह हो जाता है जो कुल्ला करने के बाद मुँह में रह जाती है।[2]	यह उस नमी की तरह है जो कुल्ला करने के बाद मुँह में रह जाती है। (त)
'शुरुनबुलालिया' में इमाम ज़ैलई से है:	
यदि रोज़ा याद होने की स्थिति में उसके गले में धूल या मक्खी प्रवेश कर जाए, तो रोज़ा नहीं टूटता क्योंकि वह इसे रोकने में असमर्थ है, अतः यह उस नमी की तरह है जो कुल्ला करने के बाद मुँह में रह जाती है।[3]	जब रोज़ेदार के गले में धूल या मक्खी प्रवेश कर जाए, भले ही उसे रोज़ा याद हो, तो रोज़ा खराब नहीं होगा क्योंकि वह इससे बचने में सक्षम नहीं है। यह उस नमी की तरह है जो कुल्ला करने के बाद उसके मुँह में रहती है। (त)

अरबी	उर्दू अनुवाद
अल्लामा अब्दुल रहमान अल-रूमी की 'शरह अल-मुल्तका' में है:	
क्योंकि वह इसे रोकने में सक्षम नहीं है; क्योंकि यदि वह मुँह बंद कर ले, तब भी वह नाक के माध्यम से प्रवेश को रोकने में सक्षम नहीं है, अतः यह उस नमी की तरह हो जाता है जो...	रोज़ेदार इसे रोकने में सक्षम नहीं है क्योंकि अगर वह मुँह बंद भी रखे, तब भी वह नाक के ज़रिये धूल के प्रवेश से बचने की शक्ति नहीं रखता, तो यह वैसा ही है जैसे कि वह...

1. बज़ज़िया हशिया फतावा हिंदिया पर, किताब अल-सौम, नूरानी कुतुब खाना पेशावर १००/४
2. फ़तह अल-कदीर, बाब मा युजिब अल-क़ज़ा, नूरिया रज़विया सुक्कुर २५८/२
3. ग़ुनिया ज़वी अल-अहकाम हशिया दुर्रे मुख्तार पर, बाब मुजिब अल-इफसाद, मतबा अहमद कामिल अल-काहिना दार सआदत २०२/१

पृष्ठ ८३६ का ५०२

کہ اتفاقاً بعض صائمین کو بعض احوال میں لاحق ہو جیسے مفطر و مکروہ و نائم و مریض کی مجبوری کافی نہیں ہو سکتی، یونہی قسم اول کی ضرورت دائمہ لازمہ غیر منقطع بھی درکار نہیں بلکہ صرف قسم دوم کی ضرورت عامہ فعلیہ بس ہے اور جب اس کی بناء پر وہ شے شمار مفطر سے خارج رہی تو اب تفصیل و تفریق اوقات و حالات ضرورت، نہیں کر سکتے ورنہ وہی استحالہ لازم آئے گا جسے ہم ابھی عقلاً و نقلاً باطل کر چکے بس دخولِ دخان و غبار بے قصد و اختیار کبھی کہیں پایا جائے اصلاً مفسد صوم نہیں ہو سکتا، نہ اس کہنے کی گنجائش کہ فلاں جگہ اتفاق دخول وہاں جانے سے ہوا نہ جاتا نہ ہوتا، اور جانا قصداً تھا تو ممکن الاحتراز ہوا۔ امام کردری وجیز میں فرماتے ہیں:

عربی عبارت	**اردو ترجمہ**
اذا بقی بعد المضمضۃ ماء فابتلعہ بالبزاق ثم لم یفطر لتعذر الاحتراز ۱۔	اگر کلی کے بعد منہ میں کچھ پانی باقی رہ جائے اور روزہ دار اسے تھوک کے ساتھ نگل جائے تو روزہ نہیں ٹوٹے گا کیونکہ اس سے بچنا ممکن نہیں۔(ت)
فتح سے اسی مسئلہ میں گزرا: صار کبلل یبقی فی فیہ بعد المضمضۃ۲	یہ اس تری کی طرح ہے جو کلی کے بعد منہ میں باقی رہ جاتی ہے۔(ت)

شرنبلالیہ میں امام زیلعی سے ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
اذا دخل حلقہ غبار او ذباب و ھو ذاکر لصومہ لا یفطر لانہ لا یقدر علی الامتناع عنہ فصار کبلل یبقی فی فیہ بعد المضمضۃ۳۔	جب روزہ دار کے حلق میں غبار یا مکھی داخل ہوجائے اگرچہ اسے روزہ یاد ہو تو روزہ فاسد نہ ہوگا کیونکہ اس سے بچنے پر قادر نہیں یہ اس تری کی طرح ہے جو کلی کے بعد اس کے منہ میں باقی رہتی ہے۔(ت)
شرح الملتقی للعلامہ عبدالرحمن الرومی میں ہے:	
انہ لا یقدر علی الامتناع عنہ فانہ اذا طبق الفم لایستطاع الاحتراز عن الدخول من الانف فصار کبلل یبقی فی	روزہ دار اسے روکنے پر قادر نہیں کیونکہ اگر منہ بند بھی رکھے پھر بھی ناک کے ذریعے غبار کے دخول سے احتراز کی طاقت نہیں رکھتا تو یہ یو نہی جیسے کہ وہ

1 بزازیہ بر حاشیہ فتاوٰی ہندیہ کتاب الصوم نورانی کتب خانہ پشاور ۱۰۰/۴ 2 فتح القدیر باب مایوجب القضاۃ نوریہ رضویہ سکھر ۲۵۸/۲ 3 غنیہ ذوی الاحکام حاشیہ در المختار باب موجب الافساد مطبعہ احمد کامل الکاہنہ دار سعادت ۲۰۲/۱

Fatawa Rizvia - Volume 10

Regarding what remains after rinsing the mouth[1] - The moisture that remains in the mouth after rinsing (T). Observe, the moisture that remains in the mouth after rinsing has not been declared a nullifier of the fast by the Sharia due to the difficulty of avoiding it. Now, it is not considered at all whether this rinsing itself was avoidable or not; even if rinsing occurred without necessity, that moisture will not break the fast, although it could certainly be said that its entry resulted from this rinsing—if he hadn't rinsed, it wouldn't have happened—and since rinsing without necessity was avoidable, it was possible to avoid it. It is stated in al-Bazzaziyyah:

"It is disliked to put water in the mouth without necessity, and according to the manifest reports (Zahir al-Riwayah), there is no harm in it because the purpose is purification; therefore, it is like rinsing the mouth." (T) Putting water into the mouth without necessity is disliked, and according to the manifest reports, there is no harm in it because the objective is cleanliness, hence it is like rinsing. (T)

The extent is that rinsing without necessity is not even disliked according to the manifest reports, although it will soon be mentioned that tasting soup to check saltiness without necessity is disliked and impermissible. The reason is that the pure Sharia has excluded it (rinsing) from the category of fast-breaking things. Now, necessity or lack thereof will not be considered, nor will any possibility of it being a fast-breaker arise such that dislike would apply.

Then I say: Success is with Allah. The pinnacle of research is established on this point: that entry without intention, in whatever form (entry without intent, however it happens. T), is not fit to break the fast at all. Therefore, the noble scholars have based the point of difference solely on 'entry' (dukhul) versus 'introducing' (idkhal). No instance of 'entry' was included among the fast-breakers, as you have heard from their texts (T). However, there is a subtle point here: the cause of a thing that leads to another thing (the cause of a thing is what leads to it. T) is of two types: one is an absolute or predominant cause, after which the occurrence of the effect is habitually certain or overwhelmingly likely, such that in jurisprudence it is joined with certainty.

The second is a rare cause, after which the effect occurs only occasionally. It is not far-fetched to call the intent of the first type the 'intent of the effect,' because when the intender knows that after this, the effect will certainly or mostly occur, and he intentionally commits the cause, then it's as if he has committed to the occurrence of the effect. In this sense, we can consider such 'entry' as falling under the category of

'introducing' (idkhal). But the second type is not at all capable of this. It is quite clear that this cause will not be a sufficient cause. And after this, the occurrence of the effect...

---

1 Majma' al-Anhur Sharh Multaqa al-Abhur, Chapter on Causes of Invalidation, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 1/245 2 Al-Bazzaziyyah on the margin of Fatawa Hindiyyah, Book of Fasting, Noorani Kutub Khana Peshawar, 2/105

फतावा रज़विया - जिल्द दसवीं

इसमें (कुल्ली के बाद)[1]: नमी जो कुल्ली के बाद मुँह में बाकी रह जाती है (त)। देखो, कुल्ली के बाद जो नमी मुँह में बाकी रहती है, उसे शरीयत ने इससे बचना मुश्किल होने के कारण रोज़ा तोड़ने वाला नहीं माना। अब यहाँ यह बिलकुल नहीं देखा जाएगा कि यह कुल्ली खुद भी मुमकिनुल एहतराज़ (बचने के योग्य) थी या नहीं; अगर बिना ज़रूरत कुल्ली की गई तब भी वह नमी रोज़ा तोड़ने वाली नहीं होगी, हालाँकि ज़रूर कह सकते थे कि इसका दाखिल होना इस कुल्ली करने से हुआ, अगर वह न करता तो न होता, और बिना ज़रूरत कुल्ली करना मुमकिनुल एहतराज़ था। बज़ाज़िया में है:

"बिना ज़रूरत मुँह में पानी डालना मकरूह है, और ज़ाहिर रिवायत के मुताबिक इसमें कोई हर्ज नहीं है क्योंकि मक्सद पाकी है, इसलिए यह कुल्ली की तरह है।" (त) बिना ज़रूरत मुँह में पानी डालना मकरूह है और ज़ाहिर रिवायत के अनुसार इसमें कोई समस्या नहीं है क्योंकि उद्देश्य सफाई है, अतः यह कुल्ली की तरह है। (त)

यहाँ तक कि बिना ज़रूरत कुल्ली करना ज़ाहिर रिवायत में मकरूह भी नहीं है, हालाँकि जल्द ही आएगा कि बिना ज़रूरत नमक देखने के लिए शोरबा चखना मकरूह और नाजायज़ है। इसकी वजह वही है कि शरीयत-ए-मुतह्ह ने इसे रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों से बाहर रखा है, तो अब ज़रूरत या बिना ज़रूरत पर नज़र नहीं होगी और न ही इसमें रोज़ा टूटने का कोई अंदेशा पैदा होगा कि कराहत (नापसंदगी) आए।

फिर मैं कहता हूँ: और तौफीक अल्लाह ही की तरफ से है। तहकीक (अनुसंधान) इस बात पर टिकी है कि बिना इरादा (जैसे भी हो) दाखिल होना (बिना इरादा दाखिला जैसे भी हो। त) असल में रोज़ा तोड़ने के काबिल नहीं है। इसीलिए उलेमा-ए-किराम ने फर्क का मदार सिर्फ'दखोल' (प्रवेश) और 'इदखाल' (प्रवेश कराना) पर रखा है। 'दखोल' की किसी भी सूरत को मुफ्तिर (रोज़ा तोड़ने वाला) में शामिल नहीं किया जैसा कि आपने उनके नसूस (ग्रंथों) से सुना (त)। मगर यहाँ एक बारीक नुक्ता है: किसी चीज़ का सबब (कारण) जो चीज़ तक पहुँचाने वाला होता है (त) दो तरह का है: एक 'मुफ्ज़ी कुल्लिया' (पूर्ण कारण) या अक्सर जिसके बाद सबब का वाकई होना आदत के मुताबिक यकीनी या गालिब गुमान (प्रबल संभावना) हो, जिसे फिकह में यकीन के बराबर माना जाता है।

दूसरा 'मुफ्ज़ी नादिरा' (दुर्लभ कारण) जिसके बाद मुसब्बब (प्रभाव) कभी-कभी वाकई हो। पहली किस्म के इरादे को मुसब्बब का इरादा कहना गलत नहीं होगा, क्योंकि जब इरादा करने वाले को

मालूम है कि इसके बाद मुसब्बब ज़रूर या अक्सर वाकई होना ही है और उसने इरादे से सबब को अंजाम दिया, तो गोया उसने मुसब्बब के वाकई होने को लाज़िम कर लिया। इस मायने में हम सोच सकते हैं कि ऐसा दखोल (प्रवेश) 'इदखाल' (प्रवेश कराना) की श्रेणी में होगा। लेकिन दूसरी किस्म हरगिज़ इसके काबिल नहीं है। यह ज़ाहिर है कि यह सबब काफी सबब नहीं होगा। और इसके बाद मुसब्बब का वाकई होना...

---

1 मजमा अल-अन्हुर शरह मुल्तका अल-अब्हुर, बाब मुजिबुल फसाद, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बैरुत, 1/245 2 बज़ाज़िया बर हाशियह फतावा हिन्दिया, किताबुल सौम, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 2/105

فیہ بعد المضمضۃ ۱- تری جو کُلّی کے بعد منہ میں باقی رہ جاتی ہے (ت) دیکھو کُلّی کے بعد جو تری منہ میں باقی رہتی ہے اسے بھی شرع نے اسی تعذرِ تحرز کی بنا پر مفسد نہ ٹھہرایا اب وہاں یہ لحاظ ہرگز نہیں کہ یہ کُلّی خود بھی ممکن الاحتراز تھی یا نہیں، اگر محض بے ضرورت کُلّی کی جب بھی وہ تری ناقضِ صوم نہ ہوگی حالانکہ ضرور کہہ سکتے تھے کہ یہ اس کا دخول اس کلی کرنے سے ہوا، نہ کرتا نہ ہوتا، اور کُلّی بے ضرورت تھی تو ممکن الاحتراز ہوا۔ ۳ بزاز یہ میں ہے:

یکرہ ادخال الماء فی الفم بلا ضرورۃ وفی ظاہر الروایۃ لاباس لان المقصود التطھیر فکان کالمضمضۃ ۲- بلا ضرورت پانی کا منہ میں داخل کرنا مکروہ ہے اور ظاہر روایت کے مطابق اس میں کوئی حرج نہیں کیونکہ مقصود تطہیر ہے لہذا یہ کُلی کی طرح ہے (ت) حد یہ کہ بے ضرورت کُلی کرنی ظاہر الروایۃ میں مکروہ بھی نہیں حالانکہ عنقریب آتا ہے کہ بے ضرورت نمک دیکھنے کے لئے شور با چکھنا مکروہ و ناجائز ہے ، توجہ وہی کہ شرع مطہر اسے شمار مفطرات سے خارج فرما چکی تو اب ضرورت و عدم ضرورت پر نظر نہ ہو گی نہ اس میں کسی مفطر کا احتمال پیدا ہو گا کہ کراہت آئے۔

ثم اقول: وباللہ التوفیق اس پر تو عرشِ تحقیق مستقر ہوا کہ دخولِ بلا صنعہ کیف ما کان (بلا قصد دخول جیسے بھی ہو ۔ت) اصلا صالح افطار نہیں، ولہذا علمائے کرام نے مدارِ فرق صرف دخول و ادخال پر رکھا، دخول کا کوئی فرد مفطر میں داخل نہ کیا کما سمعت من نصوصھم (جیسا کہ ان کی تصریحات آپ سُن چکے ۔ت) مگر یہاں ایک نکتہ دقیقہ اور ہے سببِ شئی مفضی الی الشئی (شئی

کا سبب شئی تک پہنچانے والا ہوتا ہے۔ت) دو قسم ہے: ایک مفضی کلیّہ یا غالبا جس کے بعد وقوع مسبب عادتِ متیقن یا مظنونِ بظنِ غالب ہو کہ فقیہات میں وہ بھی ملتحق بالیقین۔

دوسرا مفضی نادراً جس کے بعد مسبّب کبھی واقع ہو جائے قسم اوّل کے قصد کو قصدِ مسبّب کہنا مستبعد نہیں کہ جب صاحبِ قصد کو معلوم کہ اس کے بعد مسبّب ضرور یا اکثر واقع ہی ہوتا ہے اور اس نے سبب کا ارتکاب بالقصد کیا تو گویا وقوعِ سبب کا التزام کر چکا بایں معنی خیال کر سکتے ہیں کہ ایسا دخول داخلِ شقِ ادخال ہوگا ، مگر قسم دوم ہر گز اس قابل نہیں ، پُر ظاہر کہ یہ سبب سببِ کافی نہ ہوگا ۔ اور اس کے بعد وقوع مسبب

---

1 مجمع الانہر شرح ملتقی الابحر باب موجب الفساد داراحیاء التراث العربی بیروت ۱/ ۲۴۵ 2 بزاز یہ بر حاشیہ فتاوی ہندیہ کتاب الصوم نورانی کتب خانہ پشاور ۲/ ۱۰۵

Fatawa Ridawiyyah Volume 10

[Arabic Quote 1]: The most correct opinion is that it invalidates [the fast] because it reaches the head. Reaching something that has bodily benefit is disregarded, just as if someone inserted a stick into their anus and it disappeared[1].

[Urdu Explanation]: If one bathed or dived into water and water entered the ear, by consensus, the fast will not be invalidated. However, if water was put into the ear, there is a difference of opinion. The most correct view is that the fast will be invalidated because it reaches the brain. The entry of something into the brain that does not provide bodily benefit is disregarded, similar to if someone inserted a wood piece into their anus and it disappeared. (T)

In Fath al-Qadir, it is stated: [Arabic Quote 2]: Invalidation occurs when one puts water into their ear, not when it enters without their own action, such as when one wades through a river[2].

[Urdu Explanation]: The fast will be invalidated only when one puts water into their own ear. It will not be invalidated if water enters without one's own action, such as when diving into a river. (T)

See how clear the explanations are: the intention of such a cause is not an intention of the consequence. Even in this scenario, despite the action causing it, they describe the occurrence of the consequence as being without one's own doing (without one's own action). Now, looking at our current issue: standing far away from where incense is burning, let alone intending to inhale the smoke, not even being near the smoke – to any sensible person, this cannot be considered a predominant cause for smoke entry. Otherwise, it would have been necessary for lighting a fire during the day in Ramadan or cooking food for the evening to be forbidden and a cause for breaking the fast. Perhaps even these objectors themselves would be included in this. If there were a desire for the possibility of avoidance, although upon investigation it has no bearing on things that break the fast, as we have explained with a clear reason around which no web of doubt can hover (T), it is obviously attainable. Was it not possible to cook everything by Suhoor (pre-dawn meal) or rely on market items in the evening? Especially the Arabs, who were used to relying on dates anyway. Yes, the food cooked at Suhoor would get cold or market items wouldn't taste as good; this is not 'impossibility of avoidance' but rather a matter of taste. Does satisfying the tongue's taste make it permissible to keep daily fasts and then nullify them? Far from being present in a house where there is smoke, the texts of scholars are reliable

witnesses that even cooking food yourself or baking bread from morning till evening is not a predominant cause of smoke entry. Firstly: It is in Hindiyyah, Tatarkhaniyyah, Bahr al-Ra'iq, Durr al-Mukhtar, Radd al-Muhtar, etc.:

[1] Jawahir al-Akhlati, Kitab al-Sawm, Manuscript, p. 47 [2] Fath al-Qadir, Chapter on what necessitates makeup (qada), Nuriyah Ridawiyyah Sukkur, 2/267

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

[अरबी उद्धरण १]: सबसे सही राय यह है कि यह [रोज़ा] तोड़ देता है क्योंकि यह सिर तक पहुँचता है। शरीर के लिए फायदेमंद चीज़ का पहुँचना मान्य नहीं है, जैसे कि अगर किसी ने अपने गुदा में लकड़ी डाली और वह गायब हो गई।

[उर्दू व्याख्या]: अगर नहाया या पानी में डुबकी लगाई और पानी कान में चला गया तो सर्वसम्मति से रोज़ा फासिद (खराब) नहीं होगा। और अगर कान में पानी डाला गया तो इसमें मतभेद है। सबसे सही बात यह है कि रोज़ा फासिद हो जाएगा क्योंकि यह दिमाग तक पहुँच जाता है। दिमाग तक ऐसी चीज़ का पहुँचना जिसमें शरीर का सुधार (फायदा) न हो, मान्य नहीं है, जैसे कि अगर किसी ने अपने गुदा में लकड़ी डाली और वह गायब हो गई। (त)

फ़त्ह अल-क़दीर में है: [अरबी उद्धरण २]: फ़साद (खराबी) तब होती है जब वह खुद अपने कान में पानी डाले, न कि जब वह उसके अपने काम के बिना अंदर जाए, जैसे कि जब वह नदी में उतरे।

[उर्दू व्याख्या]: रोज़े की खराबी तब होगी जब वह खुद अपने कान में पानी डाले। अपने काम के बिना पानी अंदर जाने से रोज़ा खराब नहीं होगा, जैसे कि कोई नदी में गोता लगाए। (त)

देखें कितनी स्पष्ट व्याख्याएँ हैं कि ऐसे कारण का इरादा परिणाम का इरादा नहीं है, यहाँ तक कि इस स्थिति में, कारण के कार्य के बावजूद, वे परिणाम के होने को 'बिना खुद के किए' (अपने काम के बिना) कहते हैं। अब अगर हम अपने मौजूदा मसले को देखें: ऐसी जगह जहाँ अगरबत्ती सुलग रही हो, उससे काफी दूर खड़ा होना, धुआँ लेने का इरादा तो दूर की बात है, धुएँ के पास तक न होना - किसी भी बुद्धिमान व्यक्ति के नज़दीक यह धुआँ अंदर जाने का प्रबल कारण नहीं हो सकता। वरना तो रमज़ान मुबारक में दिन में आग जलाना या शाम के लिए खाना पकाना हराम और रोज़ा तोड़ने का कारण होना चाहिए था। शायद ये आपत्ति करने वाले खुद भी इसमें शामिल हों। और अगर बचाव की संभावना की ही इच्छा हो, हालांकि तहकीक़ के मुताबिक रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों में इसका कोई दखल नहीं है, जैसा कि हमने इसे ऐसी स्पष्ट वजह के साथ बयान किया है जिसके इर्द-गिर्द संदेह का कोई जाला नहीं बुन सकता (त), तो वह स्पष्ट रूप से प्राप्त है। क्या यह मुमकिन नहीं था कि जो कुछ पकाना हो उसे सहरी तक पका लें या शाम के वक्त बाज़ारी चीज़ों पर संतोष करें? खासकर अरब के लोग जो वैसे भी खजूरों पर गुज़ारा करने के आदी थे। हाँ, सहरी का पका हुआ खाना ठंडा हो जाता या बाज़ारी चीज़ों में मज़ा नहीं आता; यह बचाव की नामुमकिनियत नहीं बल्कि ज़बान का स्वाद ठहरा।

क्या इसके लिए रोज़ रोज़े रखकर उन्हें बेकार कर देना जायज़ हो जाता? जिस घर में धुआँ हो वहाँ मौजूद होना तो दूर, विद्वानों के ग्रंथ गवाह हैं कि खुद खाना पकाना, सुबह से शाम तक रोटी बनाना भी धुआँ अंदर जाने का प्रबल कारण नहीं है। अव्वल: हिन्दिया, तातारखनिया, बहर-उर-राइक़, दुर-ए-मुख़्तार और रद-उल-मुहतार आदि में है:

[1] जवाहर अल-अख्लाती, किताबुस सौम, पांडुलिपि, पृ. 47 [2] फ़त्ह अल-क़दीर, बाब मा युजिब अल-क़ज़ा, नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/267

पृष्ठ 506/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

والاصح ھو الفساد دلوصولہ الی الراس و وصول مالافیہ صلاح البدن غیر معتبر کمالوادخل خشبۃ فی دبرہ وغیبھا[1]۔ اگر غسل کیا یا پانی میں غوطہ زن ہوا تو پانی کان میں داخل ہو گیا بالاتفاق روزہ فاسد نہ ہوگا اور اگر پانی کان میں داخل کیا تو اس میں اختلاف ہے اصح قول یہ ہے کہ روزہ فاسد ہو جائے گا کیونکہ یہ دماغ تک پہنچ جاتا ہے اور دماغ تک ایسی چیز کا پہنچنا جس میں اصلاح بدن نہ ہو غیر معتبر ہے، جیسا کہ اگر کسی نے اپنی دبر میں لکڑی داخل کی اور وہ غائب ہو گئی (ت)

فتح القدیر میں ہے: الفساد اذا أدخل الماء أذنہ لا اذا دخل بغیر صنعہ کما اذا خاض نھرا[2]۔ روزے کا فساد تب ہوگا جب خود اپنے کان میں پانی داخل کرے، اپنے عمل کے بغیر پانی داخل ہونے سے فاسد نہ ہوگا جیسا کہ نہر میں غوطہ زن ہوا۔ (ت)

دیکھو کیسی صریح تصریحیں ہیں کہ ایسے سبب کا قصد قصد مسبّب نہیں، یہاں تک کہ اس صورت میں با وصفِ فعل سبب وقوع مسبّب کو بغیر صنعہ (اپنے عمل کے بغیرت) فرماتے ہیں۔ اب ہم اپنے مسئلہ دائرہ کو دیکھیں تو کسی مکان میں جہاں بخور سلگتا ہو موضع بخور سے جدا دُور جا کھڑا ہونا کہ دُھواں لینے کا قصد درکنار دُھوئیں کے پاس تک نہ ہو، ہر گز کسی عاقل کے نزدیک دخول دخان کا سبب غالب نہیں ہو سکتا ورنہ واجب تھا کہ رمضان المبارک میں دن کو آگ روشن ہونا، شام کے لئے کچھ کھانا پکنا حرام و باعث افطار صیام ہوتا اس میں تو شاید خود یہ معترضین بھی شامل ہوں اور امکان احتراز ہی کی ہوس ہوا گرچہ عند التحقیق مفطرات میں اس کو دخل نہیں کما بیناہ بابین وجھ لا یحوم حولہ حمٰی شبھۃ (ہم نے اسے ایسی واضح وجہ کے ساتھ بیان کیا جس سے شبہ کا کوئی جالا ڈھانپ نہیں سکتا) تو وہ بداہۃً حاصل، کیا ممکن نہ تھا کہ جو کچھ

پکانا ہو سحری تک پکا رکھیں یا شام کے وقت بازاری اشیاء پر قناعت کریں خصوصاً اہلِ عرب کہ ویسے بھی کھجوروں پر قناعت کے عادی تھے، ہاں سحر کا پکا سرد ہو جاتا یا بازاری اشیاء میں مزہ نہ آتا، یہ عدم امکانِ تحرز نہ ہوا زبان کا مزہ ٹھہرا، کیا اس کے لئے روز روزے رکھ کر باطل کر دینا حلال ہو جاتا، جس گھر میں دُھواں ہو وہاں موجود ہونا درکنار، نصوص علماء شاہد عدل، کہ خود کھانا پکانا، صبح سے شام تک روٹی لگانا بھی دخول دخان کا سبب غالب نہیں، اولا: ہندیہ و تاتارخانیہ و بحر الرائق و در مختار و ردالمحتار وغیرہا میں ہے:

[1] جواہر الاخلاطی کتاب الصوم قلمی نسخہ ص ۴۷ [2] فتح القدیر باب مایوجب القضاء نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۲۶۷

Fatawa Razawiyyah, Volume 10

[Table 1] [Left Column - Arabic]: According to the wording of Ad-Durr, it is not permissible to engage in labor that leads to such weakness. Thus, for example, a baker should bake for half a day and rest for the remainder. If he claims that this amount of work is insufficient for his needs, he is refuted by the example of the shortest days of winter [when a full day's work is equal to half a summer day]. [Right Column - Urdu]: In the words of Ad-Durr, any action is not permissible which makes one so weak [that it interferes with fasting]. For instance, a baker should bake bread for half the day and rest for the remaining part. Then, if that person says that this much work does not suffice for me, he should be proven wrong by the shortest days of winter. (T)

Observe, it is said to the baker that if baking bread throughout the day during summers causes such weakness that it interferes with the performance of the fast, then he should bake for half the day. Because he used to bake all day during short days, after excluding the time for prayers etc., half a day in summer would be nearly equivalent to that. It is not being said that weakness will come when it will come, and regardless of a quarter day, the smoke from baking bread entering the throat and brain would ruin the fast itself. Secondly: In [38] Sirajiyyah etc. it is stated:

[Table 2] [Left Column - Arabic]: A female slave who intentionally broke her fast in Ramadan due to weakness caused by her service to her master, such as cooking or other tasks, it is permissible [lit. spacious], and it is necessary for the slave to refrain from what makes him incapable of performing obligatory duties. [Right Column - Urdu]: That female slave who, in view of the weakness arising from serving her master, for example, cooking food etc., broke her fast out of compulsion, then it is permissible. And the command for a male slave is that he should stop doing such works that make him unable to perform obligatory duties. (T)

It was stated that the female slave suffered such weakness from the labor of cooking that she was forced to break the fast; this is permissible and she should observe makeup fasts. Why is it not stated that cooking itself is the reason for breaking the fast, and it is not permissible for the female slave to obey her master in this? In [39] Zahiriyyah, [40] Walwalajiyyah, and Bahr ar-Raiq etc. it is stated:

[Table 3] [Left Column - Arabic]: A female slave may refrain from following the command of the master if that makes her incapable of performing the obligatory duties, because she remains on the original status of freedom regarding obligatory

duties. [Right Column - Urdu]: For a female slave, it is permissible to refrain from such orders of the master by which she will become unable to perform an obligatory duty (Fard), because in terms of performing obligatory duties, she is essentially free. (T)

Footnotes: 1. Durr al-Mukhtar, Book of Fasting, Mujtabai Press Delhi, 1/152. 2. Fatawa Sirajiyyah, Book of Fasting, Munshi Nawal Kishore Lucknow, p. 29. 3. Bahr ar-Raiq, Section on Excuses, H.M. Saeed Company Karachi, 2/81-82.

फ़तावा रज़विया, खंड 10

[तालिका 1] [बायाँ कॉलम - अरबी]: "दुर-ए-मुख़्तार" के शब्दों के अनुसार, ऐसा कोई भी काम करना जायज़ नहीं है जो कमज़ोरी पैदा कर दे। उदाहरण के लिए, एक नानबाई आधे दिन रोटी पकाए और बाकी दिन आराम करे। यदि वह कहे कि इतना काम मेरे लिए पर्याप्त नहीं है, तो सर्दियों के सबसे छोटे दिनों के उदाहरण से उसकी बात का खंडन किया जाए। [दायाँ कॉलम - उर्दू]: दुर के शब्दों में, कोई ऐसा कार्य जायज़ नहीं है जो कमज़ोर कर दे। तो नानबाई उदाहरण के लिए ऐसा करे कि आधे दिन रोटी पकाए और बाकी दिन आराम करे। फिर यदि वह व्यक्ति कहे कि इतना कार्य मुझे पर्याप्त नहीं है, तो उसकी बात को झुठलाया जाए, सर्दियों के सबसे छोटे दिन होते हैं। (त)

देखिए, नानबाई से कहा जा रहा है कि यदि गर्मी के दिनों में पूरे दिन रोटी पकाने से ऐसी कमज़ोरी पैदा हो जो रोज़ा रखने में बाधा डाले, तो वह आधे दिन पकाए। क्योंकि सर्दियों के छोटे दिनों में वह पूरे दिन पकाता था, नमाज़ों आदि का समय निकाल कर गर्मियों का आधा दिन उसी के लगभग बराबर होगा। यह नहीं कहा जा रहा कि कमज़ोरी जब आएगी तब आएगी, और चौथाई दिन तो क्या, रोटी पकाने से निकलने वाला धुआँ जो गले और दिमाग में जाकर रोज़ा ही खराब कर देगा। दूसरा: [38] सिराजिया आदि में है:

[तालिका 2] [बायाँ कॉलम - अरबी]: एक दासी जिसने जानबूझकर रमज़ान में अपने मालिक की सेवा (जैसे खाना बनाना आदि) से उत्पन्न कमज़ोरी के कारण रोज़ा तोड़ दिया, तो यह जायज़ है, और दास के लिए आवश्यक है कि वह उन कार्यों से परहेज करे जो उसे अनिवार्य कर्तव्यों को निभाने में असमर्थ बना दें। [दायाँ कॉलम - उर्दू]: वह दासी जिसने अपने मालिक की सेवा, जैसे खाना बनाना आदि, से पैदा होने वाली कमज़ोरी के कारण मजबूरन रोज़ा तोड़ दिया, तो यह जायज़ है। और गुलाम के लिए यह हुक्म है कि वह ऐसे कामों से रुक जाए जो फ़र्ज़ों की अदायगी से लाचार कर देने वाले हों। (त)

यह कहा गया कि दासी को खाना पकाने की मेहनत से इतनी कमज़ोरी हुई कि उसे मजबूरन रोज़ा तोड़ना पड़ा, यह जायज़ है और उसे कज़ा रखनी चाहिए। यह क्यों नहीं कहते कि खाना पकाना ही रोज़ा तोड़ने का कारण है, और दासी के लिए जायज़ नहीं है कि वह इस मामले में अपने मालिक की आज्ञा माने। [39] ज़हीरिया, [40] वलवालजीया और बहर-उर-राईक़ आदि में है:

[तालिका 3] [बायाँ कॉलम - अरबी]: एक दासी के लिए अपने मालिक के आदेश का पालन करने से मना करना जायज़ है यदि वह उसे अनिवार्य कर्तव्यों के पालन में असमर्थ बना दे, क्योंकि अनिवार्य कर्तव्यों के संबंध में वह अपनी मूल स्वतंत्रता पर बनी रहती है। [दायाँ कॉलम - उर्दू]: दासी के लिए मालिक के ऐसे आदेशों से रुक जाना जायज़ है जिससे वह फ़र्ज़ अदा करने में असमर्थ हो जाएगी, क्योंकि फ़र्ज़ की अदायगी के मामले में वह मूल रूप से स्वतंत्र है। (त)

पाद-टिप्पणी: 1. दुर-ए-मुख़्तार, किताब-उस-सौम, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/152. 2. फ़तावा सिराजिया, किताब-उस-सौम, मुंशी नवल किशोर लखनऊ, पृ. 29. 3. बहर-उर-राईक़, फ़स्ल-फ़िल-अवारिज़, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 2/81-82.

पृष्ठ 507/836

والنظم للدر، لا یجوز ان یعمل عملا یتصل بہ الی الضعف فیخبز نصف النہار ویستریح الباقي فان قال لا یکفیني کذب باقصر ایام الشتاء ۱۔ در کے الفاظ میں کوئی ایسا عمل جائز نہیں جو کمزور کر دے تو نانبائی مثلاً یوں کرے کہ نصف دن روٹی پکائے اور باقی دن آرام کرے، پس اگر وہ شخص کہے کہ اس قدر عمل مجھے کفایت نہیں کرتا تو اس کی تکذیب کی جائے سردیوں کے سب سے چھوٹے دن ہیں (ت)

دیکھو نان پز کو فرماتے ہیں اگر گرمی کے دنوں میں سارے دن روٹی لگانے سے وہ ضعف پیدا ہو کہ ادائے صیام میں خلل انداز ہو تو آدھے دن پکائے کہ چھوٹے دنوں میں دن بھر پکاتا تھا، نمازوں وغیرہ کے وقت نکال کر گرمیوں کا نصف دن اسی کے قریب قریب ہو جائے گا، یہ نہیں فرماتے کہ ضعف تو جب آئے گا آئے گا اور چوتھائی دن درکنار روٹی پکانے سے دُھواں جو حلق و دماغ میں جا کر روزہ ہی کھو دے گا۔ ثانیاً: ۳۸ سراجیہ وغیرہما میں ہے:

امۃ افطرت في رمضان متعمدۃ لضعف اصابھا من عمال السید من طبخ او غیرہ کان واسعاً وقضیۃ للمملوك ان یمتنع عما یعجزہ عن اداء الفرائض ۲۔ وہ لونڈی جس نے اپنے مالک کی خدمت مثلاً کھانا پکانا وغیرہ پیدا ہونے والے ضعف کے پیش نظر مجبوراً روزہ توڑ دیا تو جائز ہے اور غلام کو یہ حکم ہے کہ وہ ایسے کاموں سے رُک جائے جو ادائے فرائض سے عاجز کر دینے والے ہوں (ت)

یہ فرمایا کہ کنیز کو پکانے کی محنت سے ضعف ایسا لاحق ہوا کہ مجبوراً روزہ توڑنا پڑا، جائز ہے اور قضا رکھے، یہ کیوں نہیں فرماتے کہ سرے سے پکانا ہی سببِ افطار ہے، اور کنیز کو

جائز نہیں کہ اس میں مولیٰ کی اطاعت کرے۔ ۳۹ ظہیریہ و ۴۰ ولو الجیہ و بحر الرائق وغیرہما میں ہے:

للامة ان تمتنع من امتثال امر المولي اذا كان ذلك يعجزها عن اقامة الفرائض لانها مبقاة على اصل الحرية في حق الفرائض۳۔ لونڈی کے لئے مولیٰ کے ایسے احکام سے رک جانا ہے جس سے وہ ادائے فرض سے عاجز آجائے گی کیونکہ ادائے فرض کے اعتبار سے وہ اصلاً آزاد ہے۔ (ت)

۱ درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۵۲ ۲ فتاوٰی سراجیہ کتاب الصوم منشی نولکشور لکھنؤ ص ۲۹ ۳ بحر الرائق فصل فی العوارض ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/۸۱-۸۲

Volume 10 Fatawa Ridawiyya

Thirdly: It is stated in 'Nur al-Idah' and 'Maraqi al-Falah':

Arabic Text	Urdu Translation
It is disliked for a fasting person to taste something due to the risk of invalidating the fast. Chewing food without an excuse is also disliked, such as when a woman can find someone else to chew food for her child (e.g., finding a woman who is not fasting due to menstruation, in which case chewing for the fasting woman is disliked). However, if there is no alternative, there is no harm in chewing to protect the child. It is permissible for a woman to taste food if her husband is ill-tempered, so she can check the saltiness, etc. If the husband is of good character, then tasting is not permissible for her. The ruling for a slave girl is the same. I say, a hired worker (servant) is also under this ruling. (T)	It is disliked for a fasting person to taste anything as it risks invalidating the fast. Similarly, chewing food without a valid excuse is also disliked, such as if a woman can find someone else to chew for her child (for example, if she finds a menstruating woman, then for the fasting woman to chew is disliked). If there is no alternative but to chew, there is no harm in doing so for the child's protection. For a woman, tasting food is permissible if her husband is ill-tempered, so she can check the salt, etc.; however, if the husband is good-natured, then tasting is not permissible. The ruling for a slave girl is the same. I say, a hired servant also falls under this ruling. (T)

In the marginal notes of 'Tahtawi':

Arabic Text	Urdu Translation
His words "likewise the hired worker" refer to one hired for cooking. (2)	The phrase "likewise the hired servant" refers to the cook. (T)

In 'Kanz', 'Bahr', 'Nahr', 'Hindiyyah', etc.:

Arabic Text	Urdu Translation
The wording of the first two is: It is disliked to taste or chew something without an excuse because it exposes the fast to invalidation. The fast is not broken due to the absence of 'iftar' (breaking) in form and meaning. The condition	The wording of the first two books is: Tasting or chewing something without a valid excuse is disliked because it risks invalidating the fast. This will not break the fast because technically and meaningfully, 'breaking fast' (iftar) hasn't

Arabic Text

"without an excuse" is added because tasting with an excuse is not disliked, as stated in 'Khaniyya' regarding a woman whose husband or master is ill-tempered; there is no harm in her tasting with her tongue. Chewing with an excuse is when a woman cannot find someone (like a menstruating or postpartum woman or others) to chew food for her child.

Urdu Translation

occurred. The condition "without an excuse" was added because in the case of a valid excuse, tasting is not disliked, as mentioned in 'Khaniyya' regarding a woman or slave girl whose husband or master is ill-tempered; if such an excuse exists, there is no harm in tasting with the tongue. The excuse for chewing is, for example, when there is no woman to chew for the child...

1. Maraqi al-Falah with Hashiyah al-Tahtawi, Chapter on what is disliked for a fasting person, Nur Muhammad Karkhana Tijarat Kutub, Karachi, p. 731
2. Maraqi al-Falah with Hashiyah al-Tahtawi, Chapter on what is disliked for a fasting person, Nur Muhammad Karkhana Tijarat Kutub, Karachi, p. 731

तीसरा: 'नूर अल-ईदाह' और 'मराक़ी अल-फलाह' में है:

अरबी पाठ

रोज़ेदार के लिए किसी चीज़ का चखना मकरूह है क्योंकि इसमें रोज़ा खराब होने की संभावना है। बिना किसी मज़बूरी के भोजन चबाना भी मकरूह है, जैसे यदि कोई महिला बच्चे के लिए किसी अन्य चबाने वाले को पा सकती है (जैसे एक ऐसी महिला जो मासिक धर्म में होने के कारण रोज़ा नहीं रख रही, ऐसी स्थिति में रोज़ेदार महिला के लिए चबाना मकरूह है)। हालांकि, यदि इसके अलावा कोई विकल्प न हो, तो बच्चे की सुरक्षा के लिए ऐसा करने में कोई हर्ज नहीं है। महिला के लिए भोजन चखना जायज़ है यदि उसका पति बदमिज़ाज हो ताकि वह नमक आदि की जांच कर सके। यदि पति अच्छे स्वभाव का है, तो उसके लिए चखना जायज़ नहीं है। दासी (लौंडी) का भी यही हुक्म है। मैं कहता हूँ कि मज़दूर (अज़ीर) भी इसी हुक्म में है। (त)

उर्दू अनुवाद

रोज़ेदार के लिए किसी चीज़ का चखना मकरूह है क्योंकि यह रोज़े को फ़ासिद करने के प्रयास के समान है। इसी तरह भोजन को बिना किसी मज़बूरी के चबाना भी मकरूह है, जैसे अगर किसी महिला को बच्चे के लिए चबाने वाला कोई और मिल जाए (उदाहरण के लिए, एक मासिक धर्म वाली महिला मिल जाए, तो रोज़ेदार महिला के लिए चबाना मकरूह है)। यदि चबाने के अलावा कोई और रास्ता न हो, तो बच्चे की सुरक्षा के लिए ऐसा करने में कोई हर्ज नहीं है। और महिला के लिए भोजन चखना जायज़ है यदि उसका पति बदमिज़ाज हो ताकि वह नमक आदि चख सके। और यदि शोहर अच्छे स्वभाव वाला हो, तो चखना जायज़ नहीं है। और लौंडी का हुक्म भी इसी तरह है। मैं कहता हूँ मज़दूर भी इसी हुक्म में है। (त)

हाशिया 'तहतावी' में है:

अरबी पाठ

उनके शब्द "कज़ा अल-अज़ीर" का अर्थ है खाना पकाने वाला मज़दूर। (2)

उर्दू अनुवाद

उनके शब्द "कज़ा अल-अज़ीर" यानी खाने पकाने का मज़दूर। (त)

'कंज', 'बहर', 'नहर', और 'हिन्दिया' आदि में है:

अरबी पाठ

पहले के दोनों ग्रंथों के शब्द ये हैं: बिना किसी मज़बूरी के किसी चीज़ का चखना और चबाना मकरूह है क्योंकि यह रोज़ा खराब करने की ओर ले जाता है। लेकिन इससे रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा क्योंकि तकनीकी और अर्थगत रूप से 'इफ़्तार' (रोज़ा तोड़ना) नहीं पाया गया। "बिना उज़्र" की शर्त इसलिए लगाई गई क्योंकि मज़बूरी में चखना मकरूह नहीं है, जैसा कि '़ख़ानिया' में उस महिला और दासी के बारे में कहा गया है जिसका पति या मालिक बदमिज़ाज हो। यदि ऐसी मज़बूरी हो, तो ज़बान से चखने में कोई हर्ज नहीं है। और चबाने के लिए मज़बूरी यह है कि, उदाहरण के लिए, महिला को बच्चे के लिए भोजन चबाने हेतु कोई अन्य महिला (जैसे मासिक धर्म या प्रसव के बाद की स्थिति वाली) न मिले।

उर्दू अनुवाद

पहली दोनों किताबों का इबारत यह है कि बिना किसी मज़बूरी के किसी चीज़ को चखना और चबाना मकरूह है क्योंकि यह रोज़ा खराब करने की कोशिश है, इससे रोज़ा फ़ासिद नहीं होगा क्योंकि तकनीकी और अर्थगत रूप से 'इफ़्तार' नहीं पाया गया। "बिना उज़्र" की क़ैद इसलिए लगाई गई क्योंकि मज़बूरी की स्थिति में चखना मकरूह नहीं है, जैसा कि 'खानिया' में उस महिला और दासी के बारे में है जिसका पति या मालिक बदमिज़ाज हो। यदि ऐसी मज़बूरी हो, तो ज़बान से चखने में कोई हर्ज नहीं है और चबाने में मज़बूरी यह है, उदाहरण के लिए, कोई महिला नहीं जो बच्चे के लिए...

1. मराक़ी अल-फलाह मअ हाशिया अत-तहतावी, रोज़ेदार के लिए मकरूह चीज़ों का अध्याय, नूर मोहम्मद कारखाना तिजारत कुतुब, कराची, पृष्ठ 731
2. मराक़ी अल-फलाह मअ हाशिया अत-तहतावी, रोज़ेदार के लिए मकरूह चीज़ों का अध्याय, नूर मोहम्मद कारखाना तिजारत कुतुब, कराची, पृष्ठ 731

पृष्ठ 508 / 836

جلد دہم فتاوی رضویہ

ثالثاً: نور الایضاح و مراقی الفلاح میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
کرہ للصائم ذوق شئ لما فیہ من تعرض الصوم للفساد وکرہ مضغہ بلا عذر کالمراۃ اذا وجدت من یمضغ الطعام لصبیھا کمفطرۃ لحیض، اما اذا لم تجد بدا منہ فلا بأس بمضغھا لصیانۃ الولد وللمراۃ ذوق الطعام اذا کان زوجھا سئی الخلق لتعلم ملوحتہ وان کان حسن الخلق فلا یحل لھا وکذا الامۃ قلت کذا الاجیر (1)	روزہ دار کے لئے کسی شے کا چکھنا مکروہ ہے کیونکہ یہ روزہ کو فاسد کرنے کے درپے ہونا ہے۔ اسی طرح طعام کا چبانا بھی بلا عذر مکروہ ہے جیسے خاتون بچے کے لئے کسی دوسرے کو چبانے والا پالے (مثلاً حائضہ عورت کو پائے تو چبانا مکروہ ہے) عورت کو اگر چبانے کے سوا چارہ نہ ہو تو بچے کی حفاظت کے لئے ایسا کرنے میں کوئی ہرج نہیں، اور خاتون کے لئے طعام کا چکھنا بھی جائز ہے جبکہ خاوند بد خلق ہو تاکہ وہ نمک وغیرہ چکھ سکے اور شوہر حسن اخلاق والا ہے تو پھر چکھنا جائز نہیں۔ اور لونڈی کا حکم اسی طرح ہے۔ میں کہتا ہوں اجیر بھی اسی حکم میں ہے (ت)

حاشیہ طحطاوی میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
قولہ کذا الاجیر اي للطبخ (2) قولہ "کذا الاجیر" یعنی کھانے پکانے کا مزدور۔ (ت)	

کنز و بحر و نہر و ہندیہ وغیرہا میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
واللفظ للاولين كره ذوق شئ و مضغه بلا عذر لما فيه من تعريض الصوم للفساد ولا يفسد صومه لعدم الفطر صورة ومعنى قيد بقوله بلا عذر لان الذوق بعذر لا يكره كما قال في الخانية، فيمن كان زوجها سئى الخلق او سيدها، لا بأس بان تذوق بلسانها و المضغ بعذر بان لم تجد المرأة من يمضغ لصبيها الطعام من حائض او نفساء او غيرهما	پہلی دونوں کتب کی عبارت یہ ہے بلا عذر شئی کا چکھنا اور چبانا مکروہ ہے کیونکہ یہ فسادِ صوم کے درپے ہونا ہے، اس سے روزہ فاسد نہ ہوگا کیونکہ صورۃً و معنیً افطار نہیں پایا گیا "بلا عذر" کی قید اس لئے لگائی کہ عذر کی صورت میں چکھنا مکروہ نہیں، جیسا کہ خانیہ میں اس عورت و لونڈی کے بارے میں ہے جس کا خاوند یا مولیٰ بد خلق ہو، اگر ایسا عذر ہو تو زبان کے ساتھ چکھنے میں حرج نہیں اور چبانے میں عذر یہ ہے مثلاً کوئی خاتون نہیں جو بچے کے لئے...

1۔ مراقی الفلاح مع حاشیۃ الطحطاوی فصل فیما یکرہ للصائم نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۷۳۱ 2۔ مراقی الفلاح مع حاشیۃ الطحطاوی فصل فیما یکرہ للصائم نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۷۳۱

Fatawa Razawiyya, Volume II

(Arabic Text)

One who is not fasting and finds no cooked food or milk ready: there is no harm [in chewing for a child] out of necessity. Do you not see that it is permissible for her [a mother] to break her fast if she fears for her child? Thus, chewing is permissible with greater reason. (Summarized)[1]

(Urdu Translation)

Chewing food, for example, by a woman in menses or postnatal bleeding, or someone who is not fasting, when neither cooked bread nor milk is available, then there is no harm in view of necessity. Do you not know that when a woman fears the loss of her child, she can skip the fast? Therefore, chewing [food for the child] would be permissible with greater priority. (T)

It is in *Fath al-Qadir*:

(Arabic Text)

Tasting is not breaking the fast, but it carries the potential to become so, as something of it might precede into the throat. For whoever hovers around a prohibited boundary is likely to fall into it. (Ended)[2]

(Urdu Translation)

Summarized: Tasting does not break the fast; rather, there is a possibility that something might enter the throat (i.e., it is a cause for breaking the fast), because one who goes near a restricted area is likely to enter it. The previous passages have concluded with brevity. (T)

Look, if a slave-girl cooks for her master, or a woman for her husband, or a baker for wages while fasting, [jurists] say it is not permissible for them to taste salt when the master, husband, or employer is of good character and lenient, such that they will not be harsh regarding more or less salt. But if they are ill-tempered and cross-natured, they allow it. For chewing something for a child, they set a condition: that no menstruating or postpartum woman or any person not fasting is available who could chew, and the child cannot be given milk or other things that do not require chewing. Simultaneously, they also state that the fast is not broken by tasting or chewing, but there is a possibility that it might enter the throat; hence, it became impermissible without necessity. However, they do not say that cooking itself is not permissible from the start. It has just been mentioned that slaves and slave-girls should not obey the master in such matters; wives and employees are in the second category. Furthermore, it is apparent that salt entering the throat is by no means a total or dominant cause; it is not even an equal cause. Yes, it is a close possibility. Therefore,

the Al-Muhaqqiq 'al-Itlaq [Ibn al-Humam] expressed it using the word 'possibility'. Now, the motive for these permissions to cook is not devoid of two scenarios: either the matter is the same as the inhalation of smoke—which, having been legally excluded from the category of things that break the fast, leaves the basis of the ruling on the actual intention of intake; without it, when there is no breaking of the fast, then why should there be dislike in approaching it? Or, if the intention of the cause is considered dominant, then the result stands as mandatory.

---

[1] *Al-Bahr al-Ra'iq*, Chapter: What spoils the fast, H.M. Saeed Company, Karachi, 2/279-80. [2] *Fath al-Qadir*, Chapter: What necessitates Qada and Kaffarah, Nooria Razvia, Sukkur, 2/268.

फ़तावा रज़विया, जिल्द II

(अरबी पाठ)

जो रोज़े से नहीं है और उसे पका हुआ भोजन या दूध तैयार नहीं मिलता: ज़रूरत के लिए [बच्चे के लिए चबाने में] कोई हर्ज नहीं है। क्या आप नहीं देखते कि एक माँ के लिए रोज़ा तोड़ना जायज़ है यदि उसे अपने बच्चे के लिए डर हो? इसलिए, चबाना तो प्राथमिकता के आधार पर जायज़ होगा। (संक्षिप्त)[1]

(उर्दू अनुवाद)

भोजन चबाना, उदाहरण के लिए, मासिक धर्म या प्रसव के बाद के रक्तस्राव वाली महिला द्वारा, या कोई ऐसा व्यक्ति जो रोज़े में न हो, और जब न पकी हुई रोटी और न ही दूध उपलब्ध हो, तो ज़रूरत को देखते हुए कोई हर्ज नहीं है। क्या आप नहीं जानते कि जब किसी महिला को अपने बच्चे के नुकसान का डर हो, तो वह रोज़ा छोड़ सकती है? इसलिए, [बच्चे के लिए] चबाना तो प्राथमिकता के तौर पर जायज़ होगा। (त)

फ़तह अल-क़दीर में है:

(अरबी पाठ)

चखना रोज़ा तोड़ना नहीं है, लेकिन इसमें यह संभावना बनी रहती है कि वह रोज़ा टूटने का कारण बन जाए, क्योंकि इसमें से कुछ गले के नीचे जा सकता है। जो कोई भी वर्जित सीमा के पास घूमता है, उसके उसमें गिरने की संभावना होती है। (समाप्त)[2]

(उर्दू अनुवाद)

संक्षेप में: चखना रोज़ा तोड़ना नहीं है बल्कि इसमें यह संभावना होती है कि कहीं कोई चीज़ हलक़ (गले) में न चली जाए (यानी रोज़ा टूटने का कारण है), क्योंकि जो सुरक्षित स्थान के पास जाता है, संभव है कि वह उसमें प्रवेश कर जाए। पिछली इबारतें (कथन) संक्षेप के साथ समाप्त हुईं। (त)

देखिए, यदि कोई दासी अपने मालिक के लिए, या कोई महिला अपने पति के लिए, या कोई रसोइया मज़दूरी पर रोज़े की हालत में खाना पकाए, तो [विद्वान] उसे नमक चखना जायज़ नहीं बताते, यदि मालिक, पति या नियोक्ता खुश-मिजाज़ और नरम स्वभाव के हों कि वे नमक की कमी-बेशी पर सख़्ती नहीं करेंगे। और यदि वे बद-मिजाज़ और चिड़चिड़े हों, तो वे इसे जायज़ रखते हैं। और बच्चे के लिए कोई चीज़ चबाकर देने में शर्त लगाते हैं कि जब कोई मासिक धर्म या प्रसव वाली महिला या कोई बिना रोज़े वाला व्यक्ति ऐसा न मिले जो चबा सके और न ही बच्चे को दूध या अन्य ऐसी चीजें दी जा सकें जिनमें चबाने की ज़रूरत न हो। साथ ही वे यह भी फरमाते हैं कि चखने या चबाने से रोज़ा नहीं जाता, बल्कि संभावना है कि शायद हलक़ में चला जाए; इसलिए बिना ज़रूरत के यह नाजायज़

हुआ। लेकिन वे यह नहीं कहते कि सिरे से खाना पकाना ही हलाल नहीं है। अभी गुज़रा कि गुलाम और दासी ऐसे हुक्मों में मालिक की बात न मानें; फिर पत्नी और कर्मचारी तो दूसरे दर्जे में हैं। और फिर यह ज़ाहिर है कि नमक किसी भी तरह से हलक़ में चले जाने का कुल या मुख्य कारण कैसा, बराबर का कारण भी नहीं है; हाँ, निकट संभावना है। इसीलिए मुहक़्क़िक़ अली अल-इतलाक़ ने 'संभावना' शब्द का उपयोग किया। अब, खाना पकाने की इन अनुमतियों का उद्देश्य दो स्थितियों से खाली नहीं है: या तो बात वही है कि धुएँ का प्रवेश—जिसे शरीयत के अनुसार रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों के दायरे से बाहर रखा जा चुका है, कार्य का आधार वास्तव में प्रवेश के इरादे पर रहा; इसके बिना जब रोज़ा ही नहीं टूटता, तो उसके करीब जाने और जोखिम उठाने में नापसंदगी क्यों हो? या यदि कारण का इरादा प्रबल माना जाए, तो परिणाम अनिवार्य ठहरता है।

---

[1] अल-बह्र अर-रैक, अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 2/279-80. [2] फ़तह अल-क़दीर, अध्याय: कज़ा और कफ़ारा को वाजिब करने वाली चीज़ें, नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 2/268.

(عربی متن)	(اردو ترجمہ)
من لا یصوم ولم تجد طبیخاً ولا لبناً حلیباً لا باس به للضرورة، الاتری انه یجوز لها الافطار اذا خافت علی الولد فالمضغ اولی ۱۔ (ملخصاً)	طعام چبانے مثلاً حائضہ یا نفاس والی کوئی عورت یا جو روزہ دار نہ ہوں، اور نہ روٹی پکی ہوئی اور نہ دودھ میسر ہو تو اب ضرورت کے پیش نظر کوئی حرج نہیں، کیا آپ نہیں جانتے کہ جب کسی خاتون کو بچہ کے ضائع ہونے کا خوف ہو تو روزہ چھوڑ سکتی ہے، تو چبانا تو بطریق اولیٰ جائز ہوگا۔ (ت)

فتح القدیر میں ہے:

(عربی متن)	(اردو ترجمہ)
الذوق لیس بافطار بل یحتمل ان یصیر ایاه اذ قد یسبق شئ منه الی الخلق فان من حام حول الحمی یوشك ان یقع فیه انتهت ۔ ۲	مختصرات ۔ چکھنا افطار نہیں بلکہ اس میں یہ احتمال ہوتا ہے کہ کہیں کوئی شئے حلق میں چلی جائے (یعنی افطار کا سبب ہے) کیونکہ جو محفوظ جگہ کے قریب جاتا ہے قریب ہے کہ اس میں داخل ہو جائے۔ گزشتہ عبارتیں اختصار کے ساتھ ختم ہوگئیں۔ (ت)

دیکھو کنیز مولیٰ یا عورت شوہر کے لئے یانان پز مزدوری پر روزے میں کھانا پکائے تو اسے نمک چکھنا جائز نہیں بتاتے جبکہ مولیٰ و شوہر و مستاجر خوش خلق و حلیم ہوں کہ نمک کی کمی بیشی پر سختی نہ کریں گے اور کج خلق و بد مزاج ہوں تو روا رکھتے ہیں، اور بچہ کو کوئی چیز چبا کر دینے میں شرط لگاتے ہیں کہ جب کوئی حیض یا نفاس والی عورت خواہ کوئی بے روزہ

دار ایسا نہ ملے جو چبا سکے، نہ بچہ کو دودھ وغیرہ اشیاء جن میں چبانے کی حاجت نہ ہو دے سکے اور ساتھ ہی یہ بھی فرماتے ہی کہ چکھنے چبانے سے روزہ جاتا نہیں بلکہ احتمال ہے کہ شاید حلق میں چلا جائے، لہٰذا بے ضرورت ناجائز ہوا مگر یہ نہیں فرماتے کہ سرے سے پکانا ہی حلال نہیں۔ ابھی گزر چکا کہ غلام و کنیز ایسے احکام میں اطاعت مولیٰ نہ کریں، پھر زن واجیر تو دوسرے درجے میں ہیں، اور پھر ظاہر کہ نمک ہر گز حلق میں چلے جانے کا سبب کلی یا اغلبی کیسا، سبب مساوی بھی نہیں، ہاں احتمال قریب ہے۔ و لہٰذا محقق علی الاطلاق نے بلفظ احتمال ہی تعبیر فرمایا، اب پکانے کی ان اجازتوں کا منشا دو حال سے خالی نہیں یا تو امر وہی ہے کہ دخول دخان جبکہ شرعاً دائرہ مفطرات سے خارج ہو چکا مدار کار حقیقۃً قصد ادخال پر رہا، بغیر اس کے جب افطار ہی نہیں تو اس کے قرب و تعریض میں کراہت کیوں ہو، یا اگر قصد سبب اغلب مسبّب ٹھہراؤ تو واجب

---

[1] بحر الرائق باب ما یفسد الصوم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۸۰- ۲۷۹ [2] فتح القدیر باب ما یوجب القضاء والکفارہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۲۶۸

That the causal link for smoke entry due to cooking etc. is even weaker and rarer than the entry of soup during tasting, and indeed experience also bears witness to its rarity. When smoke enters the throat, its bitterness is felt, and the body's natural defensive mechanism immediately repels it; and when it enters the brain, its burning sensation is felt and it causes distress to the brain. This situation occurs rarely to those who cook, not all the time or every day. So, standing further away from the smoke would be an even rarer cause; how can intending the cause be called intending the result? Necessarily, if it occurs here, it is just mere entry which all books have explicitly stated is never a breaker of the fast. In short, a clear look at the principles and branches of Sharia leads towards this: that causes are absolutely disregarded. Therefore, just as bathing or going into a river during the blessed Ramadan did not become prohibited, although water also enters the ears because of it. Cooking food during the day and lighting fires for other tasks did not become prohibited. It did not become mandatory to completely suspend the shops of Muslim bakers, confectioners, blacksmiths, goldsmiths, etc., although they have an affinity with smoke. It did not become necessary to have a strike in the markets of surgeons, butchers, sugar-makers, and confectioners because it causes an abundance of flies. Grinding grain during the day, winnowing grain, going out and walking in the streets did not become prohibited, although they are likely not free from dust. Similarly, sweeping in mosques or even in homes, especially since floors were unpaved in the first era. Apothecaries grinding medicines, farmers winnowing grain in the wind to clean it. Masons tearing down mud walls. Travelers traveling in windy deserts. A fasting army riding on horses passing through soft lands—these are likely causes for the entry of dust, yet their prohibition is not mentioned anywhere. In fact, the fasting of military mujahideen is proven from Hadiths, and the permissibility of complete necessity is explicitly textually stated. In any case, such certain and definite causes that are not predominant are entirely ignored. Therefore, the honorable scholars have described the corruption of fast due to incense (bakhur) in this way: that if one leans over it, meaning bows down so much that it is as if it is contained inside his body and his body encompasses it. And in Shurunbulaliya, Imdad, Maraqi, Tahtawi, Shami, and Majma' al-Anhur, they did not stop at this, but rather 'he brought the incense-burner close to himself' meaning he brought the censer close to his body, but rather explicitly added to it 'and smelled its smoke' by bringing it near and sniffing the smoke upwards. This specific intent of intake and its being a breaker of

fast is beyond dispute, and the ruling of breaking the fast on the situation in the query is a false notion. This is what research necessitates. And Allah, Glorified be He, is the Guardian of Success, and Praise be to Allah, the Lord of the worlds.

1. Maraqi al-Falah with Tahtawi's commentary, chapter explaining what does not break the fast, Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi, p. 361.
2. Ghunyat Dhawi al-Ahkam, commentary on Durr al-Hukkam, chapter on what necessitates corruption (of fast), Kamil al-Ka'ina Press, Dar Sa'adat Egypt 1/202.

कि खाना पकाने आदि के कारण धुएं के प्रवेश का कारण उससे भी अधिक कमज़ोर और दुर्लभ है जो शोरबा चखने के लिए उसके प्रवेश का है, और वास्तव में अनुभव भी इसकी दुर्लभता का गवाह है। जब धुआं गले में जाता है, तो उसकी कड़वाहट महसूस होती है और शरीर की रक्षा प्रणाली उसे तुरंत बाहर निकाल देती है; और जब वह मस्तिष्क में जाता है, तो उसकी जलन महसूस होती है और मस्तिष्क को कष्ट देती है। यह स्थिति खाना पकाने वालों के साथ कभी-कभार ही होती है, न कि हर समय या हर दिन। तो धुएं से दूर खड़े होना और भी दुर्लभ कारण होगा; उसके इरादे को परिणाम का इरादा कहना कैसे संभव है? अनिवार्य रूप से, यदि यहाँ कुछ होता है, तो वह केवल प्रवेश है जिसके बारे में सभी पुस्तकों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि यह रोज़ा तोड़ने वाला बिल्कुल नहीं है। संक्षेप में, शरिया के सिद्धांतों और उप-नियमों पर स्पष्ट नज़र इसी ओर ले जाती है कि ऐसे कारणों को पूरी तरह से नज़रअंदाज़ किया जाता है। इसलिए, जिस प्रकार रमज़ान-ए-मुबारक में नहाना या नदी में जाना हराम नहीं हुआ, हालांकि इसके कारण कान में पानी भी चला जाता है। दिन में खाना पकाना और अन्य कार्यों के लिए आग जलाना हराम नहीं हुआ। मुस्लिम नानबाइयों, हलवाइयों, लोहारों, सुनारों आदि की दुकानों को पूरी तरह बंद कर देना वाजिब नहीं हुआ, हालांकि उनका धुएं से गहरा संबंध है। जराहों (सर्जनों), कसाइयों, चीनी बनाने वालों, हलवाइयों के बाज़ार में हड़ताल करना अनिवार्य नहीं हुआ कि यह मक्खियों की अधिकता का कारण है। दिन में चक्की पीसना, अनाज फटकना, बाहर निकलना और गलियों में चलना हराम नहीं हुआ, हालांकि वे संभवतः धूल से मुक्त नहीं होते। इसी तरह मस्जिदों बल्कि घरों में भी झाड़ू देना, विशेष रूप से पहली सदी में जब फ़र्श कच्चे होते थे। पंसारियों का दवाएं कूटना, किसानों का अनाज हवा में उड़ाकर साफ़ करना। राजमिस्त्रियों का मिट्टी की दीवार गिराना। यात्रियों का तेज़ हवा वाले रेगिस्तान में सफ़र करना। रोज़ेदार सेना का घोड़ों पर सवार होकर नरम ज़मीनों से गुज़रना—ये धूल प्रवेश के संभावित कारण हैं, फिर भी उनकी मनाही कहीं भी ज़िक्र नहीं है। बल्कि फ़ौजी मुजाहिदीन का रोज़ा हदीसों से साबित है और ज़रूरत के लिए पूरी अनुमति तो स्पष्ट रूप से वर्णित है। बहरहाल, ऐसे निश्चित और यकीनी कारण जो प्रबल नहीं हैं, उन्हें पूरी तरह से नज़रअंदाज़ किया गया है। इसलिए, विद्वानों ने लोबान (बखूर) के कारण रोज़ा बिगड़ने की व्याख्या इस प्रकार की है कि यदि कोई उसके ऊपर झुक जाए, यानी इतना झुक जाए कि मानो धुआं उसके शरीर के अंदर समा जाए और उसका शरीर उसे घेर ले। और शरुन्बुलालीया, इमदाद, मराकी, तहतावी, शामी और मजमा अल-अन्हुर में तो यहीं बस नहीं किया गया कि 'उसने

लोबानदान को अपने शरीर के पास कर लिया' बल्कि साफ़ तौर पर इसमें इज़ाफ़ा किया गया 'और उसका धुआं सूंघा' यानी करीब लाकर धुएं को ऊपर की ओर सूंघा। अंदर लेने का यह विशेष इरादा और इसके कारण रोज़ा टूटना निर्विवाद है, और प्रश्न में दी गई स्थिति पर रोज़ा तोड़ने का हुक्म देना गलत विचार है। यही शोध के लिए उचित है। और अल्लाह सुब्हानहू ही सफलता देने वाला है, और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो तमाम जहानों का रब है।

1. मराकी अल-फ़लाह मअ हाशिया तहतावी, रोज़ा न तोड़ने वाली चीज़ों के बयान का अध्याय, नूर मोहम्मद कारखाना तिजारत कुतुब कराची, पृ. 361.
2. ग़ुनियत ज़वी अल-अहकाम हाशिया दुर अल-हुक्काम, रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों का अध्याय, मतबआ कामिल अल-काइना दार सआदत मिस्र 1/202.

کہ دخولِ دخان کے لئے طبخ وغیرہ کی سببیت اُس سے بھی اضعف و نادر تر ہو جو دخول شوربا کے لئے ذوق کی اور فی الواقع تجربہ بھی اس کی ندرت کا گواہ، دھواں جب حلق میں جاتا ہے اس کی تلخی محسوس ہوتی اور طبیعت کی دافعہ فورا دفع کرتی ہے، اور جب دماغ میں جاتا اس کی سوزش معلوم ہوتی اور دماغ کو اذیت دیتی ہے، یہ حالت کھانا پکانے والوں کو شاذ و نادر واقع ہوتی ہے نہ کہ ہر وقت یا ہر روز، تو دھویں سے دُور جدا کھڑا ہونا اور بھی زیادہ سبب شاذ تر ہوگا، اُسکے قصد کو قصدِ مسبّب کہنا کیونکر ممکن، لاجرم یہاں اگر ہوگا تو وہی محض دخول جسے تمام کُتب میں تصریحا فرمایا کہ ہر گز مفسدِ صوم نہیں، بالجملہ اصول و فروع شرعیہ پر نظر ظاہر اسی طرف منجر کہ اسباب علی الاطلاق ساقط النظر، و لہٰذا جس طرح رمضان مبارک میں نہانا، دریا میں جانا حرام نہ ہوا حالانکہ اس کے سبب کان میں پانی بھی چلا جاتا ہے۔ دن کو کھانا پکانا اور ہم کاموں کے لیے آگ جلا نا حرام نہ ہوا۔ مسلمان نانبائیوں، حلوائیوں، لوہاروں، سُناروں وغیرہ ہم کی دُکانیں قطعاً معطل کردینا واجب نہ ہو حالانکہ ان میں دھوئیں سے مناسبت ہے۔ جرّاروں، قصابوں، شکر سازوں، حلوائیوں کا بازار ہڑتال کردینا لازم نہ ہوا کہ کثرت مگس کا موجب ہے۔ دن کو چکی پیسنا، غلہ پھٹکنا، باہر نکلنا گلیوں میں چلنا حرام نہ ہوا۔ حالانکہ وہ غالباً غبار سے خالی نہیں ہوتیں۔ یونہی مساجد بلکہ گھروں میں بھی جھاڑو دینا خصوصاً صدرِ اول میں فرش کچے ہوتے تھے۔ عطاروں کا دوائیں کوٹنا، مزارعوں کا غلہ ہوا پر اُڑا کر صاف کرنا۔ معماروں کا مٹی کی دیوار گرانا۔ مسافروں کا خوب چلتی ہوئی ریگستان میں سفر کرنا۔ فوج صائمین کا گھوڑوں پر سوار نرم زمینوں سے گزرنا کہ غالباً دخولِ غبار کے اسباب ہیں ان کی حرمت بھی کہیں مذکور نہیں بلکہ فوجی مجاہدوں کا روزہ احادیث سے ثابت اور بے ضرورت کُلّی کا جواز تو

صراحتاً منصوص، بہرحال اس قدر تو قطعی یقینی اسباب غیر غالبہ کِلّیۃً نا ملحوظ، لہٰذا علمائے کرام نے بخور کے سبب فسادِ صوم ہونے کی یہی تصویر فرمائی کہ اگر دانِ پر محتوی ہو جائے یعنی ایسا جھک جائے کہ گویا وہ اس کے جسم کے اندر اور اس کا بدن اُس پر مشتمل ہے اور شرنبلالیہ و امداد و مراقی و طحطاوی و شامی و مجمع الانہر میں تو اس پر بھی قناعت نہ فرمائی کہ فآواہ الی نفسہ بخوردان کو اپنے بدن کے متصل کرلیا بلکہ صراحتاً اس پر زیادت کی واشتم دخانہ قریب کرکے اس کا دھواں اُوپر کو سونگھا، یہ خاص قصدِ ادخال اور اس کا مفطر ہونا بے مقال اور صورتِ سوال پر حکمِ افطار باطل خیال ہذا ینبغی التحقیق واللہ سبحانہ ولی التوفیق والحمد للہ رب العالمین

1 مراقی الفلاح مع حاشیہ طحطاوی باب فی بیان ما لا یفسد الصوم، نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی، ص ۳۶۱ 2 غنیۃ ذوی الاحکام حاشیہ در الحکام باب موجب الافساد مطبعہ کامل الکائنہ دار سعادت مصر ۱ / ۲۰۲

Fatawa Razawiyyah Volume 10

(The right of investigation was this alone; Allah Subhanuhu is the master of success, and praise be to Allah, Lord of the worlds. - T) And to impose kaffarah (expiation) on it is a clear slander. For kaffarah, a complete crime is necessary, and what complete crime can there be without intent and without will? Even if, for the sake of argument, a broken fast were wrongly assumed in this situation, can anyone show a precedent from the Shariah where a ruling for kaffarah was given for an unintentional breaking of the fast? Well, this is just smoke entering the throat or brain without intent; even unintentional sexual intercourse does not necessitate kaffarah, which is the greatest and most heinous of fast-breaking acts. It is stated in Tanwir al-Absar:

Arabic: In jama'a fi ramadana ada'an au akala au shariba 'amdan qada wa kaffara. [1]	**If one intentionally had sexual intercourse or ate/drank while observing Ramadan, both makeup (qada) and expiation (kaffarah) will be necessary. (T)**

In Durr al-Mukhtar, it says: "Intentionally" refers to all [the mentioned acts]. [2] ("Intentionally" is a condition related to each one. - T) In Radd al-Muhtar, it says:

Arabic: Al-muradu ta'ammudu al-iftari wan-nasi wa in ta'ammada isti'mal al-mufattiri lam yata'ammad al-iftar. [3]	**Here, intention to break the fast is meant. A person who forgets, although he intends to eat or drink, does not intend to break the fast. (T)**

This issue is from the self-evident principles of jurisprudence; it is free from the need for further clarification.

Arabic: Qultu: wa innama atnabna al-kalama fi hadha al-maqami hirşan 'ala ihkami al-ahkami wa idghami al-awhami ihtirasan an la ya'thura 'athirun hina ya'thuru 'ala bahthin lil-'allamati ash-shurunbulali fi hadha al-marami haythu qala rahimahu Allahu ta'ala fi Ghuniyati Dhawil Ahkam: qawluhu au dakhala halqahu ghubarun au atharu ta'mi al-adwiyati fihi liannahu la yumkinu al-ihtirazu minha a.h. li-dukhulihi minal-anfi idha atbaqa al-famu kama fil-Fath. Qultu fahaadha yufeedu	**I say: We have engaged in such a long conversation at this place so that there is stability in the rulings and elimination of doubts, and if you become aware of Allama Shurunbulali's discussion, you will be protected from everyone's objection. He (may Allah Almighty have mercy on him) said in Ghuniyat Dhawil Ahkam: "His saying 'or if dust or the taste of medicines enters the throat of a fasting person because it is not possible to avoid it' because even if the mouth is closed, entry will occur through the nose, as it is in Fath al-Qadeer." I say: This text is indicating...**

---

1. Tanwir al-Absar, text in Durr al-Mukhtar, Chapter on what breaks the fast and what does not, Mujtabai Delhi, 1/151
2. Durr al-Mukhtar, Chapter on what breaks the fast and what does not, Mujtabai Delhi, 1/151
3. Radd al-Muhtar, Chapter on what breaks the fast and what does not, Mustafa al-Babi Egypt, 2/118

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

(अनुसंधान का अधिकार यही था, अल्लाह सुब्हानहू ही सफलता का मालिक है और तमाम प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो तमाम जहानों का रब है। - त) और इस पर कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) अनिवार्य करना तो स्पष्ट आरोप है। कफ़्फ़ारा के लिए पूर्ण अपराध आवश्यक है और बिना इरादे और बिना इच्छा के कौन सा पूर्ण अपराध हो सकता है? यदि तर्क के लिए गलत तरीके से इस स्थिति में भी रोज़ा टूटना मान लिया जाए, तो क्या कोई शरीअत से इसकी कोई मिसाल बता सकता है कि जहाँ बिना इरादे के रोज़ा टूटने पर कफ़्फ़ारा का हुक्म दिया गया हो? भला यह तो बिना इरादे के गले या दिमाग में धुआँ जाना है; बिना इरादे के संभोग भी तो कफ़्फ़ारा का कारण नहीं बनता जो सबसे बड़ा और सबसे घृणित रोज़ा तोड़ने वाला कार्य है। तनवीर अल-अबसार में है:

अरबी: इन जामाअ फ़ी रमज़ाना अदान औ अकल्या औ शरीबा अम्दन क़ज़ा व कफ़्फ़रा। [1]	**अगर रमज़ान की अदायगी में जानबूझकर संभोग किया या खा-पी लिया तो कज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों अनिवार्य होंगे। (त)**

दुर्र अल-मुख्तार में है: "जानबूझकर" सभी के लिए है। [2] ("जानबूझकर" की शर्त हर एक से संबंधित है। - त) रद अल-मुह्तार में है:

अरबी: अल-मुरादु तअम्मुदु अल-इफ़्तारी वन-नासी व इन तअम्मदा इस्तिअमल अल-मुफ़त्तिरी लम यतअम्मद अल-इफ़्तार। [3]	**यहाँ रोज़ा तोड़ने का इरादा मुराद है, भूल जाने वाला व्यक्ति यद्यपि खाने-पीने का इरादा तो करता है मगर उसका रोज़ा तोड़ने का इरादा नहीं होता। (त)**

यह मसला फ़िक़्ह की स्वयंसिद्ध बातों में से है, यह स्पष्टीकरण की आवश्यकता से मुक्त है।

अरबी: क़ुल्तु: व इन्नमा अतनाबना अल-कल्यामा फ़ी हाज़ा अल-मक़ामि हिर्सान अ़ला इहकामि अल-अहकामि व इधगामि अल-औहामि इहतिरासान अन ला यअथुरा आ़थ़िरुन हीना यअथुरु अ़ला बहसिन लिल-अ़ल्लामति अश-शुरुनबुलाली फ़ी हाज़ा अल-मरामि हैथु काला रहिमहु अल्लाहु तआ़ला फ़ी ग़ुनियत ज़विल अहकाम: क़ौलुहु औ दखला हल्कहु ग़ुबारुन औ अथ़रु तअ़मि अल-अद्वियति फ़ीहि लिअन्नहु ला युमकिनु अल-इहतिराज़ु मिन्हा अ.ह. लि-दुख़ुलिहि मिनल-अन्फ़ि इज़ा अत्बक़ा अल-फ़मु कमा फ़िल-फ़तह। क़ुल्तु फ़हाज़ा युफ़ीदु

मैंने कहा: हमने इस मुकाम पर इतनी लंबी बातचीत इसलिए की है ताकि हुक्मों में मजबूती और संदेहों का उन्मूलन हो और अगर आप अल्लामा शरुनबुलाली की बहस से अवगत हों तो वहाँ हर किसी के एतराज़ से सुरक्षित हो जाएँगे। उन्होंने (रहमतुल्लाह तआला अलैहि) ग़ुनियत ज़विल अहकाम में फरमाया: "उनका कहना 'या रोज़ेदार के गले में धूल या दवाओं का ज़ायका दाखिल हो जाए क्योंकि इससे बचना मुमकिन नहीं' क्योंकि अगर मुँह बंद भी हो तो नाक के ज़रिए प्रवेश हो जाएगा, जैसा कि फ़तह अल-क़दीर में है।" मैंने कहा: यह इबारत बता रही है...

---

1. तनवीर अल-अबसार मतन दर मुख्तार, बाबू मा युफ़्सिदुस सौम व मा ला युफ़्सिदुहू, मुजतबाई दिल्ली, 1/151
2. दर मुख्तार, बाबू मा युफ़्सिदुस सौम व मा ला युफ़्सिदुहू, मुजतबाई दिल्ली, 1/151
3. रद अल-मुह्तार, बाबू मा युफ़्सिदुस सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/118

فتاوی رضویہ جلد دہم

(تحقیقی کا حق یہی تھا اللہ سبحانہ ہی توفیق کا مالک ہے والحمد للہ رب العالمین۔ ت) اور اس پر ایجاب کفارہ تو صریح بہتان۔ کفارہ کے لئے جنایت کاملہ چاہئے اور بے قصد و بے ارادہ کون سی جنایت کاملہ ہو سکتی ہے، اگر بفرض غلط اس صورت میں روزہ جانا بھی ٹھہرالیتے تو کیا شرع سے کوئی اس کی نظیر بتا سکتا ہے کہ بلا قصد جو افطار واقع ہو اس میں حکم کفارہ دیا گیا ہو، بھلا یہ تو بلا ارادہ حلق یا دماغ میں دھواں جاتا ہے، بلا تعمد جماع بھی تو موجب کفارہ نہیں جو اکبر و اشفع مفطرات ہے۔ تنویر الابصار میں ہے :

ان جامع فی رمضان اداء او اکل او شرب عمدا قضی و کفر [1]

اگر ادائے رمضان عمداً جماع کیا یا کھا پی لیا تو قضاء و کفارہ دونوں لازم ہوں گے۔ (ت)

در مختار میں ہے: عمدا راجع للکل [2] (قصداً کی قید ہر ایک سے متعلق ہے۔ ت) رد المحتار میں ہے :

المراد تعمد الافطار والناس وان تعمد استعمال المفطر لم یتعمد الافطار [3]

یہاں ارادہ افطار مراد ہے، بھول جانے والا اگر چہ کھانے پینے کا قصد تو کرتا ہے مگر اس کا افطار کا ارادہ نہیں ہوتا۔ (ت)

یہ مسئلہ بد یہیات فقہیہ سے ہے حاجت ایضاح سے غنی۔

قلت: وانما اطنبنا الكلام في هذا المقام حرصا على احكام الاحكام وادغام الاوهام احتراسا ان لايعثر عاثر حين يعثر على بحث للعلامة الشرنبلالى فى هذا المرام حيث قال رحمه الله تعالى في غنية ذوى الاحكام قوله او دخل حلقه غبارا او اثر طعم الادوية فيه لانه لا يمكن الاحتراز منها اه لدخوله من الانف اذا اطبق الفم كما في الفتح قلت فهذا يفيد

قلت : ہم نے اس مقام پر اتنی طویل گفتگو اس لئے کی ہے کہ احکام میں استحکام اور اوہام کا ازالہ ہو اور اگر آپ علامہ شرنبلالی کی بحث پر مطلع ہوں تو وہاں ہر کسی کے اعتراض سے محفوظ ہو جائیں انہوں (رحمہ اللہ تعالیٰ) نے غنیہ ذوی الاحکام میں فرمایا قولہ یا روزہ دار کے حلق میں غبار یا ادویات کا ذائقہ داخل ہو جائے کیونکہ اس سے احتراز ممکن نہیں اھ کیونکہ اگر منہ بند بھی ہو تو ناک کے ذریعے دخول ہو جائیگا، جیسا کہ فتح القدیر میں ہے ، قلت یہ عبارت بتارہی ہے

---

1 تنویر الابصار متن در مختار باب ما یفسد الصوم وما لا یفسده مجتبائی دہلی ۱/۱۵۱ 2 در مختار باب ما یفسد الصوم وما لا یفسده مجتبائی دہلی ۱/۱۵۱ 3 ردالمحتار باب ما یفسد الصوم مصطفی البابی مصر ۲/۱۱۸

Volume 10 Fatawa Razawiyya

[Table Content] Arabic Text: Indeed, if one finds a way to avoid engaging in work that causes dust to enter the throat, and yet performs it, it invalidates [the fast]. [Reference 1] Syed Tahtawi mentioned in the commentary on 'Maraqi' and 'Al-Durr' (the wording is from the first): his statement "or if dust enters his throat etc." - from this, the ruling for those whose profession is sifting or things which necessarily involve dust is known, and that is the absence of fasting. In 'Sakbul Anhar' from the author: if a way is found to avoid engaging in what causes entry [of dust] etc., and it is indicated by the reasoning of the impossibility of precaution. [Reference 2] Syed Shami said in 'Radd al-Muhtar': his statement "due to the impossibility of precaution from it" - this implies that if one finds a way to avoid engaging etc., [from] Shurunbulaliyyah. [Reference 3] To summarize: it is thought that the matter under discussion is from the category of engaging in a cause from which precaution is possible. The reality of the matter is that the investigating scholar (may Allah have mercy on him) does not deny that the basis of rulings here is solely on the distinction between 'entering' (dakhul) and 'making enter' (idkhal). Didn't you hear what was previously mentioned from his statement in his text: "the fast is not invalidated."

Urdu Text Translation: If it is possible to avoid engaging in such work which causes dust to enter the throat, and then if the work is done, the fast will be invalidated. Syed Tahtawi said in Hashiya Maraqi and Hashiya Durr, and this passage is from the first book: the statement "or dust entered the throat of the fasting person etc." - from this, the ruling for those people is known who sift wheat or do such work with which dust is mandatory, and that is not being in a state of fasting. In Sakb-ul-Anhar, it is from the author: if there is a way to avoid such work from which entry of dust occurs, now if such work is done, the fast will be invalidated. The reason is this cause that avoiding it is not possible. Syed Shami said in Radd-ul-Muhtar: the statement "if avoiding it is possible etc." from Shurunbulaliyah. So from this, it was assumed that the issue under discussion is among those where here it is possible to avoid being engaged in the cause of dust. And the reality of the matter is that Allama (may Allah Almighty have mercy on him) is not a denier of this fact that the basis of rulings here is only on the difference between entry and making to enter. Have you not observed that it passed earlier with reference to the text that the fast will not be invalidated in this case.

[Footnotes] 1. Ghaniyat-ul-Dhawi al-Ahkam, Hashiya Durar al-Hukkam, Chapter on Causes of Invalidation, Ahmed Kamil al-Kahinah, Dar Sa'adat, Egypt, 1/202. 2. Tahtawi

'ala Maraqi al-Falah, Chapter on Explaining what does not invalidate fast, Noor Muhammad Karkhana Tijarat Kutub Karachi, p. 362. 3. Radd al-Muhtar, Chapter on what invalidates fast and what does not, Mustafa al-Babi Egypt 2/106.

जिल्द दहम (दसवाँ भाग) फ़तावा रज़विया

[पाठ तालिका] अरबी पाठ: वास्तव में, यदि किसी काम में व्यस्तता से बचा जा सके जिससे गले में धूल जाती है और फिर भी वह किया जाए, तो वह [रोज़ा] अमान्य कर देता है। [संदर्भ 1] सैय्यद तहतावी ने 'मराक़ी' और 'अल-दुर' की टिप्पणियों में उल्लेख किया है (शब्द पहली पुस्तक से हैं): उनका कथन "या यदि रोज़ेदार के गले में धूल प्रवेश करती है आदि" - इससे उन लोगों के लिए नियम ज्ञात होता है जिनका पेशा छानना है या ऐसी चीजें जिनमें धूल अनिवार्य है, और वह है रोज़ा न होना। 'सकबुल अन्हर' में लेखक से: यदि प्रवेश [धूल के] आदि से बचने का मार्ग मिल जाए, और यह सावधानी बरतने की असंभवता के तर्क से सूचित होता है। [संदर्भ 2] सैय्यद शामी ने 'रद अल-मुह्तार' में कहा है: उनका कथन "उससे सावधानी की असंभवता के कारण" - इसका तात्पर्य है कि यदि कोई बचने का मार्ग पाता है आदि, [शुरुनबुलालिया से]। [संदर्भ 3] संक्षेप में: यह माना जाता है कि विचाराधीन मामला उस श्रेणी से है जिसमें ऐसे कारण में शामिल होना है जिससे सावधानी संभव है। मामले की वास्तविकता यह है कि जांच करने वाले विद्वान (अल्लाह उन पर दया करे) इस तथ्य से इनकार नहीं करते हैं कि यहाँ नियमों का आधार पूरी तरह से 'प्रवेश' (दखुल) और 'प्रवेश कराने' (इदखाल) के बीच के अंतर पर है। क्या आपने वह नहीं सुना जो उनके मूल पाठ के उनके कथन से पहले उल्लेख किया गया था: "रोज़ा अमान्य नहीं होता।"

उर्दू पाठ अनुवाद: यदि ऐसे काम में व्यस्त रहने से बचा जा सकता है जिससे धूल गले में चली जाती है, तो अब यदि काम किया गया तो रोज़ा फ़ासिद (टूट) हो जाएगा। सैय्यद तहतावी ने हाशिया मराक़ी और हाशिया दुर में कहा है और यह इबारत पहली किताब की है: उनका कथन "या रोज़ेदार के गले में धूल चली गई आदि" - इससे उन लोगों का हुक्म मालूम हो गया जो गेहूँ छानते हैं या ऐसे काम करते हैं जिनके साथ धूल लाज़मी है और वह है रोज़े का न होना। सकबुल अन्हर में लेखक से है: अगर ऐसे काम से बचने का चारा हो जिससे धूल का दाख़िला होता है, अब अगर ऐसा अमल किया तो रोज़ा फ़ासिद हो जाएगा। दलील यह इल्लत (कारण) है कि इससे बचना मुमकिन नहीं। सैय्यद शामी ने रद-उल-मुह्तार में फ़रमाया: "इससे बचना मुमकिन हो तो आदि" शुरुनबुलालिया से। तो इससे गुमान कर लिया गया है कि ज़ेर-ए-बहस मसला उनमें से है यहाँ धूल वाले सबब में मशग़ूल होने से बचना मुमकिन है। और हक़ीक़त-ए-अम्र यह है कि अल्लामा (रहमतुल्लाह अलैह) इस बात के मुनकिर (इनकारी) नहीं कि अहकाम का मदार यहाँ फ़क़त दुख़ूल (प्रवेश) और इद्ख़ाल (प्रवेश

कराने) के फ़र्क़ पर है। क्या आपने मुलाहिज़ा नहीं किया कि मतन के हवाले से पीछे गुज़रा कि रोज़ा इस सूरत में फ़ासिद न होगा।

[पाद टिप्पणियाँ] 1. गनियतुल दवी अल-अहकाम, हाशिया दुरर अल-हुक्काम, रोज़ा टूटने के कारणों का अध्याय, अहमद कामिल अल-काहिना, दार सआदत, मिस्र, 1/202। 2. तहतावी अला मराक़ी अल-फ़लाह, रोज़ा न तोड़ने वाली चीज़ों के बयान का अध्याय, नूर मुहम्मद कारखाना तिजारत कुतुब कराची, पृ. 362। 3. रद अल-मुह्तार, रोज़ा तोड़ने और न तोड़ने वाली चीज़ों का अध्याय, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 2/106।

मजलिस-ए-दावत-ए-इस्लामी पृष्ठ 836 का 512

جلد دہم فتاوی رضویہ

[جدول متن] عربی کالم: انه اذا وجد بدا من تعاطي مايدخل غباره في حلقه افسد لوفعل اهـ ١ وقال السيد الطحطاوی في حاشية على المراقی و على الدر واللفظ للاولى قوله اودخل حلقه غبار الخ به عرف حكم من صناعته الغربلة اوالاشياء التي يلزمها الغبار وهو عدم الصوم وفي سكب الانهر عن المؤلف ولو وجد بدا من تعاطي مايدخل الخ ويدل عليه التعليل بعدم امكان التحرز ٢ اهـ وقال السيد الشامي في ردالمحتار قوله لعدم امكان التحرز عنه هذا يفيد انه اذا وجد بدا من تعاطي الخ شرنبلاليه ٣ اهـ ملخصا فيظن ان مانحن فيه من باب تعاطی سبب ممكن التحرز عنه، وحقيقة الامر ان العلامة الباحث رحمه الله تعالى لاينكر ان مدار الاحكام ههنا على التفرقة بين الدخول والادخال، فحسب اما سمعت الى مامر من قوله فی متنه لايفسد الصوم۔

اردو کالم: اگر ایسے کام میں مشغولیت سے چارہ ہو جس سے غبار حلق میں داخل ہو جاتی ہے تو اب اگر عمل کیا تو روزہ فاسد ہو جائے گا، سید طحطاوی نے حاشیہ مراقی اور حاشیہ در میں کہا ہے اور یہ عبارت پہلی کتاب کی ہے قولہ یا غبار روزہ دار کے حلق میں داخل ہو گئی الخ اس سے ان لوگوں کا حکم معلوم ہو گیا جو گیہوں چھانتے یا ایسے کام کرتے ہیں جن کے ساتھ غبار لازمی ہے اور وہ ہے روزہ کا نہ ہونا، سکب الانہر میں مؤلف سے ہے اگر ایسے کام سے بچنے کا چارہ ہو جس سے دخول غبار ہوتا ہے اب اگر ایسا عمل کیا تو روزہ فاسد ہو جائے گا، دلیل یہ علت ہے کہ اس سے بچنا ممکن نہیں اھ سید شامی نے ردالمحتار میں فرمایا قولہ "اس سے بچنا ممکن ہو تو الخ شرنبلالیہ اھ تو اس سے گمان کر لیا گیا ہے کہ زیر بحث مسئلہ ان میں سے ہے یہاں غبار والے سبب میں مشغول ہونے سے بچنا ممکن ہے اور حقیقت امر یہ ہے کہ علامہ رحمہ اللہ تعالیٰ اس بات

کے منکر نہیں کہ احکام کا مدار یہاں فقط دخول اور ادخال کے فرق پر ہے کیا آپ نے ملاحظہ نہیں کیا کہ متن کے حوالے سے پیچھے گزرا کہ روزہ اس صورت میں فاسد نہ ہوگا

[حواشی] 1 غنیہ ذوی الاحکام حاشیہ درر الحکام باب موجب الفساد احمد کامل الکاہنہ دار سعادت مصر ۲۰۲/۱ 2 طحطاوی علی مراقی الفلاح باب بیان مالایفسد الصوم نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳٦۲ 3 ردالمحتار باب مایفسد الصوم ومالا یفسدہ مصطفیٰ البابی مصر ۱۰٦/۲

Fatawa Razvia, Volume 10

When smoke enters the throat without intention or action, it has already been mentioned from its two commentaries and the marginalia of Durar that this is an indication that if the fasting person himself introduced the smoke, his fast would be broken. His statement 'because in this case it is possible to avoid the introduction of things that break the fast,' therefore in 'Dur', the profound scholar Al-Ala'i, while summarizing the words of Shurunbulali, summarized only one letter, which is the difference between 'entering' (dukhul) and 'introducing' (idkhal), as we have previously placed their words before you. From what we have stated, the viewpoint of the scholar (may Allah have mercy on him) is that if the cause necessarily leads to the effect, then the intention of that cause is the intention of the effect itself. Thus, it will be from the category of intentional introduction. If this is correct, it will only be where the cause is definitively or predominantly leads to the effect. The proof for this is that in the three books, the ruling of invalidation [of the fast] is based solely on engaging in those causes. Their words are: 'if he did so, the fast would be broken'; they did not say 'if he did it and it entered'. This is because their focus was on the fact that doing such things itself causes entry; therefore, they sufficed with mentioning it. Otherwise, no sane person, let alone such a scholar, would say that merely these actions...

---

1. Nur al-Idah, Chapter on what invalidates the fast, Alimi Press, Lahore, p. 64.
2. Maraqi al-Falah with Tahtawi's marginalia, Chapter on explaining what invalidates the fast, Noor Muhammad Bookstore, Karachi, p. 361.
3. Ghunyat Dhawi al-Ahkam with Durar's marginalia, Chapter on causes of invalidation, Ahmad Kamil Press, Dar al-Sa'adah, Egypt, 1/202.

फतावा रज़विया, जिल्द 10

जब धुआँ गले में बिना इरादे और क्रिया के प्रवेश कर गया, तो इसकी दोनों व्याख्याओं और दुरर के हाशिया के हवाले से यह बात पहले ही कही जा चुकी है कि यह इस ओर संकेत है कि यदि रोज़ा रखने वाले ने स्वयं धुआँ अंदर किया तो उसका रोज़ा टूट जाएगा। उनका यह कथन कि 'क्योंकि इस स्थिति में रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों के प्रवेश से बचना संभव है,' इसीलिए 'दुर' में विद्वान अल्लामा अल-अलाई ने शरुन्बुलाली के शब्दों का सार प्रस्तुत करते हुए केवल एक अक्षर का सार निकाला है और वह 'प्रवेश' (दुखुल) और 'प्रविष्ट करने' (इदखाल) के बीच का अंतर है, जैसा कि हमने पहले उनके शब्दों को आपके सामने रखा है। हमारे द्वारा दिए गए विवरण से अल्लामा (अल्लाह उन पर रहम करे) का दृष्टिकोण यह है कि यदि कारण अनिवार्य रूप से परिणाम की ओर ले जाता है, तो उस कारण का इरादा परिणाम का ही इरादा माना जाएगा। इस प्रकार, यह जानबूझकर प्रविष्ट करने की श्रेणी में आएगा। यदि यह सही है, तो यह केवल वहीं होगा जहाँ कारण निश्चित रूप से या प्रबल संभावना के साथ परिणाम की ओर ले जाता है। इसका प्रमाण यह है कि तीनों पुस्तकों में रोज़ा टूटने का नियम केवल उन कारणों में लिप्त होने को माना गया है। उनके शब्द ये हैं: 'यदि उसने ऐसा किया तो रोज़ा टूट जाएगा'; उन्होंने यह नहीं कहा 'यदि किया और वह अंदर चला गया,' क्योंकि उनकी दृष्टि इस पर थी कि ऐसे कार्य करना ही प्रवेश का कारण है, इसलिए उन्होंने केवल इसके उल्लेख पर ही संतोष किया। अन्यथा, कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति, यहाँ तक कि ऐसा विद्वान भी यह नहीं कहेगा कि केवल इन कार्यों से...

---

1. नूरुल ईज़ा, अध्याय: रोज़ा बिगाड़ने वाली चीज़ें, अलमी प्रेस, लाहौर, पृष्ठ 64.
2. मराक़ी अल-फ़लाह और हाशिया तहतावी, अध्याय: रोज़ा बिगाड़ने वाली चीज़ों का वर्णन, नूर मुहम्मद व्यापार पुस्तकालय, कराची, पृष्ठ 361.
3. ग़ुनिया ज़वी अल-अहकाम और हाशिया दुरर, अध्याय: रोज़ा टूटने का कारण, अहमद कामिल प्रेस, दार अल-सआदा, मिस्र, 1/202.

पृष्ठ 836 में से 513

جب دھواں حلق میں بلا قصد و عمل داخل ہوا، اس کی دونوں شروحات اور حاشیہ درر کے حوالے سے یہ قول بھی گزر چکا کہ یہ اس بات کی طرف اشارہ ہے کہ روزہ دار نے اگر خود دھوئیں کو داخل کیا تو روزہ ٹوٹ جائے گا، قولہ کیونکہ اس صورت میں روزہ توڑنے والی اشیاء کے ادخال سے احتراز ممکن ہے اس لئے در میں علامہ مدقق علائی نے شرنبلالی کے کلام کی تلخیص کرتے ہوئے صرف ایک حرف کی تلخیص کی ہے اور وہ دخول اور ادخال میں فرق ہے جیسا کہ پیچھے ہم نے ان کے الفاظ آپ کے سامنے رکھے ، جو ہم نے بیان کیا اس سے علامہ رحمہ اللہ تعالٰی کا مطمح نظریہ ہے کہ سبب اگر لازمی طور پر مفضی ہے تو اس سبب کا قصد مسبب کا ہی قصد ہوگا تو یہ ادخال بالقصد کے باب سے ہوگا، اگر یہ درست ہے تو یہ صرف وہاں ہی ہوگا جہاں سبب قطعی یا ظن غالب کے طور پر مفضی ہوگا اس پر دلیل یہ ہے کہ تینوں کتب میں حکم فساد کا مدار محض ان اسباب میں مشغول ہونے کو قرار دیا ہے ، ان کے الفاظ یہ ہیں "اگر اس نے ایسا کیا تو روزہ ٹوٹ جائے گا"، یہ نہیں کہا "اگر کیا اور داخل ہوگیا"، کیونکہ ان کی نظر اس پر تھی کہ ایسے اسباب کا کرنا ہی دخول کا موجب ہے لہٰذا اس کے ذکر پر اکتفاء فرمایا ورنہ کوئی عاقل چہ جائیکہ ایسا فاضل یہ بات کہے کہ محض ان کاموں

---

۱ نور الایضاح باب مایفسد الصوم مطبع علیمی لاہور ص ۶۴ ۲ مراقی الفلاح مع حاشیہ طحطاوی باب فی بیان مایفسد الصوم نور محمد کارخانہ تجارت کتب کراچی ص ۳۶۱ ۳ غنیہ ذوی الاحکام مع حاشیہ درر باب موجب الافساد مطبع احمد کامل الکائنہ دار سعادۃ مصر ۱ / ۲۰۲

The mere performance of these acts invalidates the fast, even if nothing enters. Furthermore, he (may Allah have mercy on him) certainly knew that being in a house where there is incense is not a prevailing cause for the entry of smoke. This is why he specified in his three books the condition of "bringing it towards oneself"; in fact, he was not even content with that until he added "and smelling its smoke." Thus, it has become as clear as the sun in broad daylight that what the eminent scholar said there has no bearing on our issue under discussion.

Then I say: By the grace of Allah, it has become clear from this that the issues we mentioned earlier, such as cooking, tasting, bathing, diving into water, grinding flour, sifting grain, and walking in streets, etc., do not refute the scholar's discussion. In justifying the scholar's discussion, my deficient mind has reached this ultimate point. However, a comprehensive issue from the textual dictates is raised against it, for which there is no answer, because the entry of moisture there is not just a prevailing cause, but a total cause, and the fasting person's engagement in it, even if without necessity or even without need, does not break the fast by consensus. If it is said that it is mentioned in 'Nawadir' that there is dislike in it, perhaps the respondent would say that the reason for the ruling of not breaking the fast in rinsing the mouth is not merely the impossibility of precaution, but another thing as well, and that is its being a small quantity following the saliva, as the jurists have said regarding the meat which (is between the teeth).

फतावी रज़विया (Fatawa Razawiyya) खंड १०

इन कार्यों को करने मात्र से रोज़ा टूट जाता है, भले ही कोई चीज़ अंदर न जाए। इसके अलावा, वह (अल्लाह उन पर रहम करे) निश्चित रूप से जानते थे कि जिस घर में लोबान (बखूर) हो, वहां होना धुएँ के प्रवेश का कोई प्रबल कारण नहीं है। यही कारण है कि उन्होंने अपनी तीनों किताबों में "उसे अपने करीब लाने" की शर्त लगाई है; वास्तव में, वे इतने से भी संतुष्ट नहीं हुए जब तक कि उन्होंने यह नहीं जोड़ा "और उसका धुआं सूंघना।" इस प्रकार, यह दोपहर के सूरज की तरह स्पष्ट हो गया है कि प्रख्यात विद्वान ने वहां जो कहा है, उसका हमारे उपचाराधीन मुद्दे से कोई संबंध नहीं है।

फिर मैं कहता हूँ: अल्लाह की कृपा से इससे स्पष्ट हो गया कि जो मुद्दे हमने पहले बताए जैसे खाना पकाना, चखना, स्नान करना, पानी में डुबकी लगाना, चक्की पीसना, अनाज पटकना और गलियों में चलना आदि, ये सब विद्वान की चर्चा का खंडन नहीं करते। विद्वान की चर्चा की पुष्टि में मेरी अल्प बुद्धि इसी चरम बिंदु तक पहुंची है। हालाँकि, स्पष्ट ग्रंथों से एक व्यापक मुद्दा इस पर खड़ा होता है जिसका कोई उत्तर नहीं है, क्योंकि वहां नमी का प्रवेश केवल एक प्रबल कारण ही नहीं बल्कि एक पूर्ण कारण है, और रोज़ेदार का इसमें व्यस्त होना, चाहे बिना ज़रूरत या बिना किसी आवश्यकता के ही क्यों न हो, सर्वसम्मति से रोज़ा नहीं तोड़ता। यदि यह कहा जाए कि 'नवादिर' में उल्लेख है कि इसमें कराहत (नापसंदगी) है, तो शायद जवाब देने वाला यह कहे कि कुल्ला करने में रोज़ा न टूटने के हुक्म का कारण केवल बचाव की असंभवता ही नहीं है, बल्कि एक और चीज़ भी है, और वह इसका लार के साथ होने वाली थोड़ी मात्रा में होना है, जैसा कि फकीहों (धर्मशास्त्रियों) ने उस मांस के बारे में कहा है जो (दांतों के बीच हो)।

पृष्ठ ८३६ का ५१४

مجرد تعاطی تلك الافعال یفسد الصوم وان لم یدخل شئی ثم ھو رحمه الله تعالی دار یقیناً ان الکینونة فی بیت فیه بخور لیس سبباً غالباً لدخول الدخان ولذا علق الفساد فی کتبه الثلثة "بإیوائه الی نفسه" بل ولم یقنع به حتی زاد "واشتم دخانه" فقد وضح اتضاح الشمس فی رابعة النهار ان لامساس بمسألتنا لما بحث العلامة الفاضل هناك۔

میں مشغول ہونا روزہ توڑ دیتا ہے اگر چہ کوئی شئی داخل نہ ہوتی ہو، پھر علامہ رحمہ اللہ تعالیٰ یہ بھی یقیناً جانتے ہیں کہ جس گھر میں بخور ہو وہاں موجود ہونا دھوئیں کے دخول کا سبب غالب نہیں ہے، یہی وجہ ہے کہ تینوں کتب میں یہ قید لگائی ہے کہ اسے اپنے قریب کرے بلکہ اس پر بھی اکتفا نہ کیا حتی کہ یہ زائد کیا کہ اس کا دھواں سونگھے، اب تو روشن دن کی طرح واضح ہوگیا کہ علامہ فاضل نے جو یہاں کہا ہے اس کا تعلق ہمارے زیرِ بحث مسئلہ سے نہیں ہے۔

ثم اقول: وبه ظهر ولله الحمد انه لایرد علی بحثه ماقد منّاً من مسائل الطبخ والذوق و الاغتسال وخوض الماء والطحن والسف و دخول الطرقات وامثالها، فهذا غایة ماوصل الیه ذهنی القاصر فی تصحیح بحثه لکن یرد علیه من المنصوصات مسألة المضمضة ورود اً لا مردله فانها سبب اغلبی بل کلی لدخول البلل ولم یکن تعاطیها ولو بلا ضرورة بل بلا حاجة لیفسد الصوم بالاجماع وان قیل فی النوادر بکراهتها ولعل مجیباً یجیب بأن لیس الحامل فیه علی الحکم بعدم الفطر مجرد امتناع التحرز بل وشئی آخر وهو کونه قلیلا تابعاً للریق کما قالوا فی لحم بین اسنانه قال فی الهدایة لو

ثم اقول: بحمد اللہ اس سے واضح ہو گیا کہ جو ہم نے پیچھے مسائل بیان کئے مثلاً کھانا پکانا، چکھنا، غسل کرنا، پانی میں غوطہ لگانا، چکی پیسنا، غلہ پھٹکنا اور گلیوں میں چلنا وغیرہ، یہ سب

علامہ کی بحث کارڈ نہیں کرتے۔ علامہ کی بحث کی تصحیح میں بندہ کا ذہنِ قاصر اسی انتہائی مقام پر پہنچا ہے، لیکن اس پر منصوصات میں سے مسئلہ کلی کرنا ایسا وارد ہوتا ہے جس کا جواب نہیں کیونکہ وہاں تری کا دخول سبب اغلب ہی تک نہیں بلکہ کلی سبب ہے اور روزہ دار کا اس میں مشغول ہونا اگر چہ بلا ضرورت بلکہ بلا حاجت ہو حالانکہ اس صورت میں روزہ بالاتفاق نہیں ٹوٹتا، اگر یہ کہا جائے کہ نوادر میں ہے کہ اس میں کراہت تو ہے تو شاید جواب دینے والا یہ کہے کہ کلی میں عدمِ فطر کے حکم کا باعث محض احتراز کا امتناع ہی نہیں بلکہ ایک اور شئی بھی ہے اور وہ اس کا قلیل اور تھوک کے تابع ہونا ہے جیسا کہ فقہاء نے اس گوشت کے بارے میں کہا ہے جو

Fatawa Rizvia Volume 10

[Arabic Text]: Eating meat between the teeth: if it is a small amount, it does not break the fast because a small amount is considered part of the teeth like one's saliva, unlike a large amount because it does not remain between the teeth. The dividing line is the size of a chickpea; less than that is considered small (qaleel). [End of citation from Al-Hidayah] [Urdu Text]: ...gets stuck in the teeth. In Al-Hidayah, it is mentioned that if someone eats meat stuck between their teeth, if it was a small amount, the fast will not break because a small amount is considered incidental to the teeth like saliva, unlike a large amount, because it cannot remain between the teeth. The difference between a small and large amount is that if it is the size of a chickpea, it is large, and if it is less than that, it is small.

[Arabic Text]: I say: This reasoning is also not very helpful here because the reason for not breaking the fast is the impossibility of precaution. So the matter returns to what actually occurred. In Al-Fath, it is stated that it is considered 'incidental' because it is impossible to avoid traces of food remaining around the teeth, even if very small. Then, these traces move with the incidental saliva from their place to the throat. Thus, it was impossible to link the breaking of the fast specifically to that trace. Therefore, it is linked to a 'large amount,' which is what invalidates the prayer, as it was considered 'large' in the context of prayer. Some scholars have distinguished between 'small' and 'large' based on whether swallowing that substance requires the aid of saliva or not. If aid is needed, it is small; otherwise, it is large. This is an excellent distinction because the only thing preventing the ruling of breaking the fast after it reaches the cavity is the difficulty of avoiding it, and this point applies here... [Urdu Text]: I say: This point is also not useful here because the reason for the fast not breaking was stated to be the impossibility of avoiding moisture. So the matter returns to the same point. In Al-Fath, it is declared incidental because it is impossible for traces not to remain around the teeth after eating, even if that trace is very minute. Then it moves from its place towards the throat with saliva. So now it is not possible to link the breaking of the fast precisely to that trace; yes, it will be related to a large amount, and that is such a quantity that would invalidate the prayer because it was considered large in the matter of prayer. Some of the elders have differentiated between small and large by whether the help of saliva is needed to swallow that thing or not. If help is required, it is small, otherwise large. And this is a very good distinction because the only thing preventing the rule of the fast not

breaking after reaching the cavity is that avoiding it was not easy, and this point is present in this...

1. Al-Hidayah, Chapter on what necessitates Qada and Kaffarah, Al-Maktaba Al-Arabiyya, Karachi, 1/198. Page 515 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

[अरबी पाठ]: दांतों के बीच का मांस खाना: यदि वह कम मात्रा में हो, तो रोज़ा नहीं टूटता क्योंकि कम मात्रा को दांतों के साथ लार की तरह माना जाता है, अधिक मात्रा के विपरीत क्योंकि वह दांतों के बीच नहीं रह सकती। विभाजक रेखा चने के दाने के बराबर है; उससे कम को 'कलील' (कम) माना जाता है। [अल-हिदाया से उद्धरण समाप्त] [उर्दू पाठ]: ...दांतों में फंस जाता है। हिदाया में है कि किसी ने दांतों के बीच फंसा हुआ मांस खा लिया, अगर वह थोड़ा था तो रोज़ा नहीं टूटेगा क्योंकि 'कलील' दांतों के अधीन होने की वजह से थूक के समान होगा, 'कसीर' (अधिक) के विपरीत, क्योंकि वह दांतों के बीच बाकी नहीं रह सकता। और कलील और कसीर में अंतर यह है कि अगर चने के बराबर हो तो कसीर और उससे कम हो तो कलील।

[अरबी पाठ]: मैं कहता हूँ: यहाँ यह बात भी उपयोगी नहीं है क्योंकि रोज़ा न टूटने का कारण यही बताया गया है कि बचाव मुमकिन नहीं है। तो मामला फिर उसी तरफ लौट आया। 'फ़तह' में है कि इसे 'ताबे' (अधीन) इसलिए माना गया क्योंकि खाने के बाद दांतों के आसपास भोजन के अवशेष रहने से बचना नामुमकिन है, चाहे वह अवशेष बहुत कम ही क्यों न हो। फिर वह अवशेष अधीन थूक के साथ अपनी जगह से हलक़ की तरफ चला जाता है। इसलिए अब रोज़ा टूटने को विशेष रूप से उस अवशेष के साथ जोड़ना मुमकिन न रहा। हाँ, यह 'कसीर' से संबंधित होगा और वह इतनी मात्रा है जो नमाज़ को फ़ासिद (अमान्य) कर दे, क्योंकि उसे नमाज़ के मामले में कसीर माना गया है। कुछ उलेमाओं ने कलील और कसीर में इस तरह अंतर किया है कि उस चीज़ को निगलने के लिए थूक की मदद की ज़रूरत है या नहीं। अगर मदद दरकार है तो कलील वरना कसीर। और यह बहुत अच्छा अंतर है क्योंकि पेट में पहुँचने के बाद रोज़ा न टूटने के हुक्म में रुकावट सिर्फ यह है कि उससे बचना आसान न था और यह बात इसमें मौजूद है... [उर्दू पाठ]: मैं कहता हूँ: यहाँ यह बात भी मुफ़ीद (उपयोगी) नहीं क्योंकि रोज़ा न टूटने की वजह यही बयान की गई कि नमी से बचना मुमकिन नहीं तो मामला फिर उसी तरफ लौट आया जहाँ था। फ़तह में है कि ताबे इसलिए करार दिया कि खाने के बाद दांतों के आसपास असर का बाकी न रहना नामुमकिन है अगरचे वह असर बहुत कलील हो, फिर वह थूक के साथ अपनी जगह से हलक़ की तरफ चला जाता है। तो अब रोज़ा टूट जाने को विशेष रूप से उस असर के साथ मुताल्लिक़ करना मुमकिन न रहा, हाँ कसीर से मुताल्लिक़ होगा और वह इतनी मक़दार (मात्रा) है जो नमाज़ को फ़ासिद कर दे क्योंकि उसे नमाज़ के मामले में कसीर एतबार किया गया है। मशाईख़ में से बाज़ ने कलील और कसीर में यूँ फ़र्क़ किया कि उस

चीज़ को निगलने के लिए थूक की मदद की ज़रूरत है या नहीं, अगर मदद दरकार है तो कलील वरना कसीर। और यह बहुत ख़ूब फ़र्क़ है क्योंकि ज़ौफ़ (पेट) में पहुँचने के बाद रोज़ा न टूटने के हुक्म में रुकावट सिर्फ यह है कि उससे एहतराज़ (बचाव) आसान न था और यह बात इसमें...

1. अल-हिदाया, बाब मा युजिबुल क़ज़ा वल-कफ्फ़ारा, अल-मक्तबा अल-अरबिया, कराची, 1/198. पृष्ठ 515 का 836

جلد دہم، فتاوٰی رضویہ

[عربی عبارت]: اکل لحمابین اسنانہ فان کان قلیلا لم یفطر لان القلیل تابع لاسنانہ بمنزلۃ ریقہ، بخلاف الکثیر لانہ لایبقی فیما بین الاسنان والفاصل مقدار الحمصۃ ومادونھا قلیل۱ ھـ [اردو عبارت]: دانتوں میں پھنس جاتا ہے۔ ہدایہ میں ہے کسی نے دانتوں کے درمیان پھنسا ہوا گوشت کھا لیا اگر وہ تھوڑا تھا تو روزہ نہیں ٹوٹے گا کیونکہ قلیل دانتوں کے تابع ہونے کی وجہ سے بمنزلہ تھوک ہو گا، بخلاف کثیر کے، کیونکہ وہ دانتوں کے درمیان باقی نہیں رہ سکتا اور قلیل و کثیر میں فرق یوں ہے کہ اگر چنے کی مقدار ہو تو کثیر اور اس سے کم ہو تو قلیل اھـ

[عربی عبارت]: اقول: ولا یجدی فان عدم الافطار ھھنا ایضا انما ھو معلل بعدم امکان التحرز، فرجع الامر الی ما وقع، قال في الفتح وانما اعتبر تابعا لانہ لایمکن الامتناع عن بقاء اثر مامن المآ کل حوالی الاسنان وان قل ثم یجری مع الریق التابع من محلہ الی الحق فامتنع تعلیق الفطار بعینہ فیعلق بالکثیر وھو ما یفسد الصلوۃ لانہ اعتبر کثیرا فی فصل الصلوۃ ومن المشائخ من جعل الفاصل کون ذٰلك مما یحتاج فی ابتلاعہ الی الاستعانۃ بالریق او لا الاول قلیل والثانی کثیروھو حسن لان المانع من الحکم بالافطار بعد تحقق الوصول کونہ لا یسھل الاحتراز عنہ و ذٰلك فیما [اردو عبارت]: اقول: یہاں یہ بات بھی مفید نہیں کیونکہ روزہ نہ ٹوٹنے کی وجہ یہی بیان کی گئی کہ تری سے بچنا ممکن نہیں تو معاملہ پھر اسی طرف لوٹ آیا جہاں تھا، فتح میں ہے تابع اس لیے قرار دیا کہ کھانے کے بعد دانتوں کے ارد گرد اثر کا باقی نہ رہنا ناممکن ہے اگرچہ وہ اثر بہت قلیل ہو پھر وہ تھوک کے ساتھ اپنی جگہ سے حلق کی طرف چلا جاتا ہے تو اب روزہ ٹوٹ جانے کو بعینہ اس اثر کے ساتھ متعلق کرنا ممکن نہ رہا، ہاں کثیر سے متعلق ہو گا اور وہ اتنی مقدار ہے جو نماز کو فاسد کر دے کیونکہ اسے نماز کے معاملہ میں کثیر اعتبار کیا گیا ہے، مشائخ میں سے بعض نے قلیل و کثیر میں یوں

فرق کیا کہ اس شئی کو نگلنے کے لئے تھوک کی مدد کی ضرورت ہے یا نہیں، اگر مدد درکار ہے تو قلیل ورنہ کثیر ، اور یہ بہت خوب فرق ہے کیونکہ جوف میں وصول کے بعد روزہ نہ ٹوٹنے کے حکم میں مانع صرف یہ ہے کہ اس سے احتراز آسان نہ تھا اور یہ بات اس میں

1 الہداية باب مايوجب القضاء والكفارة المكتبة العربية كراچی ۱/ ۱۹۸ Page 515 of 836

Fatawa Razawiya Volume 10

It can naturally enter the cavity along with saliva, but not when it is intentionally introduced, as the fasting person is not compelled in that case. Allama Shurunbulali himself has quoted this statement explicitly in 'Al-Maraqi' and by implication in 'Al-Ghuniyah', endorsing it. Praise be to Allah, this also strengthens the foundations of our stance: the crux of the matter is the difference between 'entering' (dukhul) and 'introducing' (idkhal). Furthermore, regarding 'entering', it is inappropriate to consider whether its cause was easily avoidable. Don't you see that a person is not compelled to eat what remains in their teeth, such as meat and similar items? Instead, they can suffice with something like milk. Then, if it were conceded that engaging in activities that usually cause dust to enter falls under 'introducing' that breaks the fast, it would follow that it must break the fast in all situations, even if one is in dire need of those activities, as we have explained their reality previously. Therefore, a person who has no means of sustenance for the day and cannot earn a living except through professions like sifting flour, running horses, baking bread, or cooking—all of which cause dust to enter—and is not capable of any other business due to extreme necessity and lack of alternatives, such a person would be like a patient, a sleeper, someone under duress, or one in severe hunger. So, if those individuals do not deserve the cancellation...

यह लार के साथ गले के अंदर खुद से जा सकता है, लेकिन यह उस स्थिति में लागू नहीं होता जहाँ जानबूझकर डाला गया हो, क्योंकि रोज़ेदार उसमें मजबूर नहीं है। अल्लामा शुरनबुलाली ने इस बात को 'अल-मराकी' में स्पष्ट रूप से और 'अल-ग़ुनिया' में संक्षेप में इसे पुख्ता करते हुए उद्धृत किया है। अल्हम्दुलिल्लाह, यह भी हमारी इस चर्चा की बुनियाद को मज़बूत करता है कि फ़र्क का आधार 'प्रवेश' (दखुल) और 'प्रविष्ट करना' (इदखाल) पर है, इसके अलावा कोई अंतर नहीं है। और 'प्रवेश' के मामले में इस बात पर विचार करना उचित नहीं है कि इसका कारण ऐसा था जिससे बचना आसान था। क्या आप गौर नहीं करते कि इंसान दांतों में फंसी हुई चीज़ जैसे मांस आदि को खाने के लिए मजबूर नहीं है, बल्कि इंसान का उससे सुरक्षित रहना मुमकिन है, मिसाल के तौर पर दूध आदि के ज़रिये। फिर अगर यह मान लिया जाए कि ऐसे कामों में व्यस्त होना जिनसे आम तौर पर धूल का प्रवेश हो जाता है, रोज़ा तोड़ने वाला है, तो यह हर हाल में रोज़ा टूटने का कारण बनेगा, चाहे व्यक्ति उनका मोहताज ही क्यों न हो, जैसा कि हम पीछे इसकी वास्तविकता स्पष्ट कर चुके हैं। तो वह व्यक्ति जिसके पास दिन गुज़ारने के लिए कुछ न हो और वह आटा छानने, घोड़े दौड़ाने, रोटी बनाने और पकाने आदि के अलावा, जो धूल के प्रवेश का कारण हैं, किसी और काम में सक्षम न हो, तो ऐसा व्यक्ति मरीज़, सोने वाले, मजबूर और सख्त ज़रूरत वाले की तरह होगा। अतः यदि वे लोग विलोपन के पात्र नहीं हैं...

يجري بنفسه مع الريق الى الجوف لافيما يتعهد فى ادخاله لانه غير مضطر فيه اهـ وقد نقل كلامه العلامة الشرنبلالى نفسه فى المراقى تصريحاً وفى الغنية تلويحاً مقرا عليه، وهذا ايضاً بحمد الله تعالى مشيد اركان مانحونا اليه من ان المناط هو الفرق بالدخول والادخال لاغير وان لا نظر فى الدخول الى كون سببه مما يستهل التحرز عنه، الاترى ان الانسان غير مضطر الى اكل ما يبقى شئى منه فى اسنانه كاللحم وامثاله. بل يمكن الاجتزاء بمثل اللبن ثم ان سلم له ان تعاطى الاسباب الغالبة من باب الادخال المفطر لوجب ان يكون مفطرا مطلقا وان احتاج اليها كما قد منا بحقيقته فليس من لم يكن عنده ما يغنيه يومه ولم يقدر على الاكتساب الابحرفة غربلة وهرس وخبز وطبخ ونحوها مما يدخل فيه الغبار و الدخان باجل ضرورة واقل حيلة من مريض او نائم او مكره او ذى مخمصة فاذالم يستحق اولئك اسقاط

جاری ہو سکتی ہے جو تھوک کے ساتھ جوف میں جائے، لیکن اس میں جاری نہیں ہو سکتی جس کا ادخال عمداً ہو کیونکہ اس میں روزہ دار مجبور نہیں اھ علامہ شرنبلالی نے یہ کلام مراقی میں تصریحاً اور غنیہ میں اختصار کے ساتھ اسے ثابت رکھتے ہوئے نقل کیا ہے، بحمد اللہ یہ بھی ہماری اس گفتگو کی بنیادوں کو مستحکم کرتا ہے کہ فرق کا مدار دخول اور ادخال پر ہے، اس کے علاوہ کوئی فرق نہیں اور دخول میں اس طرف نظر کرنا بھی مناسب نہیں کہ اس کا سبب ہونا ایسا تھا جس سے بچنا آسان تھا، کیا آپ ملاحظہ نہیں کرتے کہ دانتوں میں جو بچ جاتا ہے مثلاً گوشت وغیرہ تو انسان اس کے کھانے پر مجبور نہیں بلکہ انسان کا اس سے محفوظ رہنا ممکن بھی ہے، مثلاً دودھ وغیرہ کے ذریعے، پھر اگر یہ تسلیم کر لیا جائے ایسے اسباب میں مشغول ہونا جن سے غالباً دخول غبار ہو جاتا ہے اور روزہ ٹوٹ جاتا ہے، تو ضروری ہوگا کہ یہ ہر حال میں روزہ ٹوٹنے کا سبب بنے اگرچہ آدمی ان کا محتاج ہو، جیسا کہ ہم پیچھے اس کی حقیقت بیان کر آئے، تو

وہ شخص جس کے پاس دن گزارنے کے لیے کوئی چیز نہ ہو اور وہ آٹا چھاننے، گھوڑا دوڑانے، روٹی کھانے اور پکانے وغیرہ جو دخول غبار کا سبب ہیں ان کے علاوہ کسی کاروبار پر قادر بھی نہ ہو تو ایسا شخص مریض، سونے والے، مکرہ اور صاحب اضطرار سے ضرورت

Fatawa Razawiya Volume 10

[Boxed Text - Arabic & Urdu] Ruling on breaking the fast: How can someone of a lower status deserve it when he himself has generalized the dust in his text to include flour-mill dust? Thus, the most appropriate, lenient, and closest to the principles for acceptance in my view is the absolute statement upon which all texts, commentaries, and fatwas proceeded until the middle of the eleventh century, when Allama al-Shurunbulali came. He looked into it as he did, and indeed he did well and excelled in his three books when he linked the invalidation of the fast with incense to the intentional inhalation of smoke. And the knowledge of the truth belongs to the Gracious Sovereign. (Translation of the above into Urdu): There is no increase in [one case] and no decrease in a legal stratagem. When the aforementioned people are not entitled to the waiver of the ruling of breaking the fast, then how will someone of a lower degree of disability be entitled to it? The Allamah himself has considered general dust in the text, like the dust of a grinding stone. So, it will be more in accordance with the principles and more worthy of acceptance. In my view, it is that general application which continued to be narrated in all texts, commentaries, and fatwas until the middle of the eleventh century, until the era of Allamah Shurunbulali arrived. He reflected upon it as was befitting his stature. He did very well by writing in his three books that intentionally smelling the smoke of incense invalidates the fast. The knowledge of truth is for Allah Almighty, the Owner and the Bestower. (T)

All praise be to Allah. This wonderful answer, revealing the truth and removing the veil, was completed in a few sessions at the beginning of Dhu al-Qi'dah al-Haram. Chronogrammatically, it is named "Al-I'lam bi-Hal al-Bukhur fi al-Siyam". May Allah Almighty's blessings and peace be upon our master and leader Muhammad, his family, and his companions. And Allah, Glorified and Exalted, knows best, and His knowledge, may His glory be magnified, is most perfect and most firm.

Issue 226: Submitted by Amanat Ali Shah, resident of town Nawab Ganj, district Bareilly, 17 Ramadan 1331 AH. Before this, I had asked you whether a fasting person should take a dip (bath) or not? And whether they should apply kohl (surma) or not? For one person says that let alone taking a dip, if water reaches above the navel, the fast will break, and kohl should be applied after the Asr prayer. And another person also said that one should sleep after applying kohl. And should a fasting person smell fragrance or not? And should they put oil in the head or not? And should they rub oil on the body or not? And should they smell snuff (hilas) or not? And should they use miswak or not? And should they chew the wood of miswak or not? And should they

do khilal (cleaning between teeth) or not? And should they rub tooth powder (manjan) or not?

[कोष्टक में इबारत - अरबी और उर्दू] इफ़्तार (रोज़ा तोड़ने) का हुक्म: जो लोग उनसे कम दर्जे के हैं, वे इसके हक़दार कैसे हो सकते हैं जबकि उन्होंने स्वयं अपने मूल पाठ में धूल के हुक्म को आम रखा है यहाँ तक कि चक्की की धूल को भी। इसलिए मेरे नज़दीक सिद्धांतों के सबसे अधिक अनुकूल और स्वीकार्य वही सामान्य बात है जो ग्यारहवीं सदी के मध्य तक सभी ग्रंथों, व्याख्याओं और फ़तवों में चली आ रही थी। यहाँ तक कि अल्लामा शुरुनबुलाली का दौर आया, उन्होंने इस पर विचार किया जैसा कि उनकी शान के लायक था। उन्होंने अपनी तीनों किताबों में यह लिखकर बहुत अच्छा किया कि जानबूझकर अगरबत्ती या लोबान का धुआँ सूंघने से रोज़ा टूट जाता है। हक़ का इल्म मालिक और उपकार करने वाले अल्लाह तआला के पास है। (उपरोक्त का उर्दू से हिंदी अनुवाद): ...में ज्यादा और हीले (बहाने) में कम नहीं होता, तो जब उक्त लोग रोज़ा न तोड़ने के हुक्म के हक़दार नहीं हैं, तो उनसे कम दर्जे का मजबूर व्यक्ति कैसे हक़दार होगा? अल्लामा ने खुद मतन (मूल पाठ) में आम धूल का एतबार किया है जैसे चक्की की धूल, तो यह उसूल के ज़्यादा मुआफ़िक़ (अनुकूल) और मुनासिब होगी और क़बूल के ज़्यादा लायक। मेरे नज़दीक वह इत्तलाक़ (सामान्य नियम) है जिस पर ग्यारहवीं सदी के मध्य तक तमाम मतून (ग्रंथों), शरुहात (व्याख्याओं) और फ़तावा की नक़ल जारी रही हत्ता कि अल्लामा शुरुनबुलाली का दौर आया तो उन्होंने इस पर ग़ौर-ओ-फ़िक्र किया जो उनकी शान के लायक था। उन्होंने अपनी तीनों किताबों में यह लिखकर बहुत ही ख़ूब किया कि बखूर (धूप/लोबान) का धुआँ जानबूझकर सूंघने से रोज़ा फ़ासिद (टूट) हो जाता है। हक़ का इल्म मालिक और एहसान फ़रमाने वाले अल्लाह तआला के लिए है। (त)

अलहम्दुलिल्लाह, यह अद्भुत उत्तर, सच्चाई को उजागर करने वाला और पर्दा हटाने वाला, ज़ुल-क़ादा अल-हराम की शुरुआत की कुछ बैठकों में पूरा हुआ। तारीख़ी लिहाज़ से इसका नाम "अल-इलाम बि-हाल अल-बखूर फ़ी अस-सियाम" रखा गया। अल्लाह तआला की रहमत और सलामती हो हमारे आका और मौला मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) पर और उनकी आल और असहाब पर। अल्लाह सुब्हानहु व तआला सबसे बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान पूर्ण और अत्यंत ठोस है।

मसला २२६: प्रेषक अमानत अली शाह, निवासी कस्बा नवाब गंज, जिला बरेली, १७ रमज़ान १३३१ हिजरी। इससे पहले मैंने आपसे सवाल किया था कि रोज़ेदार को गोता (डुबकी) लगाना चाहिए या नहीं? और सुरमा लगाना चाहिए या नहीं? क्योंकि एक व्यक्ति कहता है कि गोता लगाना तो दूर, अगर नाभि के ऊपर पानी पहुँच जाए तो रोज़ा टूट जाएगा, और सुरमा असर की नमाज़ के बाद लगाना

चाहिए। और एक व्यक्ति ने यह भी कहा कि सुरमा लगाकर सोना चाहिए। और रोज़ेदार को खुशबू सूंघनी चाहिए या नहीं? और सिर में तेल डालना चाहिए या नहीं? और बदन पर तेल मलना चाहिए या नहीं? और हिलास (नसवार) सूंघनी चाहिए या नहीं? और मिसवाक करना चाहिए या नहीं? और मिसवाक की लकड़ी चबानी चाहिए या नहीं? और दाँतों में खिलाल (सफ़ाई) करना चाहिए या नहीं? और मंजन मलना चाहिए या नहीं?

पृष्ठ ५१७/८३६

فتاوی رضویہ جلد دہم

[Boxed Text] حکم الفطر فأنی یستحقه من هو دونهم وقد جری هو بنفسه فی متنه علی تعمیم الغبار غبار الطاحونة فالاوفق الارفق الالصق بالاصول بالقبول عندی ہوالاطلاق الذی جرت علیہ المتون والشروح والفتاوی قاطبة الی اواسط القرن الحادی عشر حتی جاء العلامة الشرنبلالی فنظر ما نظر ولقد احسن واجاد في کتبہ الثالثة اذا علق الفساد بالبخور علی اشتمام الدخان والعلم بالحق عند الملك المنان۔ میں زیادہ اور حیلہ میں کم نہیں ہوتا، توجب مذکورہ لوگ اسقاط حکم افطار کے مستحق نہیں تو جوان سے کم درجہ کا معذور ہے وہ اسقاط کا کیسے مستحق ہوگا، علامہ نے خود متن میں عام غبار کا اعتبار کیا ہے جیسے چکی کی غبار، تو اصول کے زیادہ موافق و مناسب ہوگی اور قبول کے زیادہ لائق۔ میرے نزدیک وہ اطلاق ہے جس پر گیارہویں صدی کے وسط تک تمام متون وشروحات اور فتاوی کی نقل جاری رہی حتی کہ علامہ شرنبلالی کا دور آیا تو انہوں نے اس پر غور و فکر کیا جو ان کی شان کے لائق تھا، انہوں نے اپنی تینوں کتب میں یہ لکھ کر بہت ہی خوب کیا کہ بخور کا دھواں قصداً سونگھنے سے روزہ فاسد ہو جاتا ہے۔ حق کا علم مالک اور احسان فرمانے والے اللہ تعالٰی کے لئے ہے۔ (ت)

الحمدللہ یہ جواب عجاب، کاشف صواب، ورافع حجاب اوائل ذی القعدۃ الحرام کے چند جلسوں میں تمام اور بلحاظ تاریخ "الاعلام بحال البخور في الصیام" نام ہوا، وصلی اللہ تعالٰی علی سیدنا و مولانا محمد وآلہ وصحبہ وبارک وسلم، واللہ وسبحانہ و تعالی اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

مسئلہ ۲۲۶: مسئولہ امانت علی شاہ ساکن قصبہ نواب گنج ضلع بریلی ۱۷ رمضان ۱۳۳۱ھ اس سے پہلے میں نے آپ سے سوال کیا تھا کہ روزہ دار کو غوطہ لگانا چاہئے یا نہیں؟ اور سرمہ لگانا چاہئے یا نہیں؟ تو ایک شخص کہتا ہے کہ غوطہ لگانا کیا بلکہ ناف کے اوپر پانی پہنچ جائے گا تو

روزہ ٹوٹ جائے گا، اور سرمہ بعد عصر کے لگانا چاہئے۔ اور ایک شخص نے یہ بھی کہا کہ سرمہ لگا کر سونا چاہئے، اور روزہ دار کو خوشبو سونگھنا چاہئے یا نہیں؟ اور سر میں تیل ڈالنا چاہئے یا نہیں؟ اور بدن پر روغن ملنا چاہئے یا نہیں؟ اور ہلاس سونگھنا چاہئے یا نہیں؟ اور مسواک کرنا چاہئے یا نہیں؟ اور مسواک کی لکڑی چبانا چاہئے یا نہیں؟ اور دانتوں میں خلال کرنا چاہئے یا نہیں؟ اور منجن ملنا چاہئے یا نہیں؟

Fatawa Razawiyya, Volume 10

The Answer: That person is wrong; if being in contact with water on the outside of the body broke the fast, then bathing or performing wudu would also break it. Yes, if it enters the cavity through passages other than the pores, the fast will break, but this does not happen during a dip/dive. Observe the open passages like nostrils during a dip; water does not reach into them either. Applying kohl (surma) is also permitted at all times; one may even apply it and go to sleep. If, upon waking, the color of the kohl appears in the phlegm, there is no harm, as it reached through the pores. The eyes, God forbid, are not like the openings of the ears or nose, where entry would be detrimental to the fast. A fasting person can smell fragrance; smelling something whose particles do not reach the brain is permissible, as opposed to the smoke of frankincense (loban), which if sniffed and it reaches the brain, will break the fast. A fasting person can apply oil to the head, as this too involves no passage other than pores. Oil can also be rubbed on the body and absorbed well. However, it cannot be put into the ears; if put, the fast will break. It is forbidden (haram) for a fasting person to take snuff; if any particle of it reaches the brain, the fast will break. Using a miswak is a Sunnah; it can be done at any time, although it is better not to do so if, during the late afternoon or at the time of Asr, wood splinters break off or a taste is perceived from chewing it. There is no harm in using a toothpick (khilal), but no food residue from the night should remain in the teeth for one to extract during the day. However, if one had just finished sahoor and morning dawned, then using a toothpick now is not an issue. One should not rub tooth powder (manjan) while fasting.

Page 518 of 836

उत्तर: वह व्यक्ति गलत कहता है; यदि शरीर के ऊपर पानी होने से रोज़ा टूट जाता, तो नहाने से भी टूट जाता और वज़ू से भी। हाँ, यदि छिद्रों (pores) के अलावा अन्य रास्तों से शरीर के भीतरी भाग (cavity) में पानी पहुँचे तो रोज़ा टूट जाएगा, लेकिन डुबकी लगाने में ऐसा नहीं होता। डुबकी लगाकर खुले हुए छिद्रों जैसे नथुनों को देखें, उनमें भी पानी नहीं पहुँचता। सुरमा भी हर समय लगाने की अनुमति है और इसे लगाकर सोया भी जा सकता है। सोने के बाद भी यदि बलगम में सुरमे का रंग आ जाए तो कोई हर्ज नहीं है क्योंकि यह रोमछिद्रों के माध्यम से पहुँचा है। आँखों में, ईश्वर न करे, कान या नाक की तरह सुराख़ नहीं हैं कि उनमें प्रवेश रोज़े के लिए हानिकारक हो। रोज़ा रखने वाला खुशबू सूँघ सकता है; ऐसी चीज़ सूँघने से जिसके अंश दिमाग में न चढ़ें, रोज़ा नहीं टूटता। इसके विपरीत यदि लोबान के धुएँ को सूँघा जाए और वह दिमाग तक पहुँच जाए, तो रोज़ा टूट जाएगा। रोज़ा रखने वाला सिर में तेल डाल सकता है, क्योंकि इसमें भी रोमछिद्रों के अलावा कोई रास्ता नहीं है। शरीर पर भी तेल मला जा सकता है और अच्छी तरह सोख लिया जा सकता है, हाँ, कानों में नहीं डाला जा सकता, यदि डालेगा तो रोज़ा टूट जाएगा। रोज़ा रखने वाले के लिए नसवार (nasal tobacco) लेना हराम है; यदि इसका कोई भी कण दिमाग तक पहुँचा तो रोज़ा टूट जाएगा। मिसवाक करना सुन्नत है, इसे किसी भी समय किया जा सकता है, हालांकि यदि तीसरे पहर या अस्र के समय चबाने से लकड़ी के टुकड़े टूटें या स्वाद महसूस हो तो बेहतर है कि न किया जाए। ख़िलाल (दाँत कुरेदना) करने में कोई हर्ज़ नहीं है, लेकिन दाँतों में रात का कोई बचा हुआ भोजन नहीं रहना चाहिए जिसे दिन में ख़िलाल के ज़रिये निकाला जाए। हाँ, यदि सहरी खाकर फारिग हुआ था और सुबह हो गई, तो अब ख़िलाल करने में कोई हर्ज़ नहीं है। रोज़े में मंजन नहीं मलना चाहिए।

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

الجواب: وہ شخص غلط کہتا ہے، پانی بدن کے اوپر ہونے سے روزہ جائے تو نہانے سے بھی جائے، وضو سے بھی جائے۔ ہاں جوف کے اندر مسام کے سوا منافذ سے پہنچے تو روزہ جائے گا مگر غوطے میں ایسا نہیں، غوطہ لگا کر کھلے ہوئے منفذ نتھنوں کو دیکھئے کہ ان میں بھی پانی نہیں پہنچتا اور سُرمہ بھی ہر وقت لگانے کی اجازت ہے اور لگا کر سو بھی سکتا ہے اور سونے سے بھی کھکھار میں سُرمہ کی رنگت آجائے تو کچھ حرج نہیں کہ یہ مسام سے پہنچا اور آنکھوں میں معاذ اللہ کان یا ناک کے سوراخ نہیں کہ ان میں داخل روزہ کو مضر ہو۔ روزہ دار خوشبو سُونگھ سکتا ہے، سُونگھنے سے جس کے اجزاء دماغ میں نہ چڑھیں بہ خلاف اگر لوبان کے دھویں کے کہ اسے سونگھ کر دماغ کو چڑھ جائے گا تو روزہ جاتا رہے گا۔ روزہ دار سر میں روغن ڈال سکتا ہے، کہ یہ بھی مسام میں کوئی منفذ نہیں بدن پر بھی روغن مل سکتا ہے مل کر خوب جذب کر سکتا ہے، ہاں کانوں میں نہیں ڈال سکتا، اگر ڈالے گا روزہ جاتا رہے گا۔ روزہ دار کو ناس لینا حرام ہے اس کا کوئی ذرہ دماغ کو پہنچا تو روزہ جاتا رہے گا۔ مسواک کرنا سنّت ہے، ہر وقت کر سکتا ہے، اگرچہ تیسرے پہر یا عصر کو چبانے سے لکڑی کے ریزے چھوٹیں یا مزہ محسوس ہو تو نہ چاہئے۔ خلال کرنے میں تو کوئی مضائقہ نہیں مگر رات کا دانتوں میں کچھ بچا رہنا نہ چاہئے جسے دن کو خلال سے نکالے، ہاں سحری کھا کر فارغ ہوا تھا کہ صبح ہوگئی تو اب ہی خلال کرے گا اس کا حرج نہیں، روزہ میں منجن ملنا نہ چاہئے۔

صفحہ 836 کا 518

Volume Ten Fatawa Razawiyya

Chapter on Compensation and Expiation (Al-Qada wal-Kaffarah)

Problem 27: From Bengal, District Kamar-la, Pargana Sarail, Post Office Haran-Bir, Village Bhupan, sent by Asim Ali Sahib, 20 Ramadan-ul-Mubarak 1320 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: Is it permissible or not to use the Holy Quran as a ruse (heelah) in exchange for the expiation (kaffarah) of the deceased's prayers, fasts, etc.? Please guide us with strong proofs and references from authentic books, because in this country of Bengal, most scholars consider the aforementioned ruse permissible, and those who call it impermissible are met with willingness to quarrel and asked to state the proof. Therefore, trouble is caused to your Eminence. Explain with proof, you will be rewarded by the Sublime. (Explain with evidence and receive a reward from Allah Almighty. - T)

The Answer: This ruse is of two types: First: That for all the prayers, fasts, etc., that are owed by the deceased, the Holy Quran itself be given to a poor person as expiation. That is, the noble Mushaf itself should be made the compensation and expiation for these obligations. Wherever they do it this way, their view is that the Quran is a priceless thing, who can estimate its price? So even if there are millions of expiations, they will all be fulfilled in one Mushaf. Therefore, they [calculate] the age of the deceased and his makeup prayers...

जिल्द दहम (खंड 10) फतावा रज़विया

बाब अल-क़ज़ा वल-कफ़्फ़ारा (नमाज़ों और रोज़ों की क़ज़ा और प्रायश्चित का अध्याय)

मसला २७: बंगाल, ज़िला कमर-ला, परगना सरायिल, डाकखाना हरन बीड़, गाँव भूपन से, प्रेषक आसिम अली साहब, २० रमज़ान-उल-मुबारक १३२० हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि मृतक की नमाज़ और रोज़ा आदि के कफ़्फ़ारे (प्रायश्चित) के बदले में कुरान शरीफ़ को हीला (तदबीर/छल) बनाना जायज़ है या नहीं? मज़बूत दलीलों और विश्वसनीय किताबों के संदर्भों के साथ मार्गदर्शन फ़रमाएं क्योंकि इस मुल्क बंगाल में अक्सर उलमा (विद्वान) उक्त हीले को जायज़ समझते हैं, और जो इसे नाजायज़ कहता है उसके साथ वे झगड़ने को तैयार हो जाते हैं और कहते हैं कि दलील पेश करो, इसलिए हुज़ूर-ए-पुरनूर (आप) को कष्ट दिया जा रहा है। 'बय्यिनू बिल-दलील तूजरू इन्दल-जलील' (दलील के साथ बयान करें और अल्लाह तआला से पुण्य पाएँ। - त)

जवाब: यह हीला दो तरह का है: पहला: यह कि मृतक के ज़िम्मे जितनी भी नमाज़ें, रोज़े आदि हों, उन सब के कफ़्फ़ारे में खुद कुरान मजीद ही किसी मिस्कीन (ग़रीब) को दे दिया जाए, यानी मुसहफ़-ए-मुबारक को ही इन फ़रायज़ (कर्तव्यों) का मुआवज़ा और कफ़्फ़ारा बना लिया जाए। यहाँ जहाँ इस तरह करते हैं, उनका ख़्याल है कि कुरान एक बेशक़ीमती चीज़ है, उसकी कीमत का अंदाज़ा कौन लगा सकता है? तो अगर लाखों कफ़्फ़ारे भी हों, तो एक मुसहफ़ में सब अदा हो जाएँगे। इसलिए उन्हें मृतक की उम्र और उसकी क़ज़ा...

पृष्ठ ८३६ में से ५२०

جلد دہم فتاوی رضویہ

باب القضاء والکفارۃ

مسئلہ ۲۷: از بنگال ضلع کمر لا پر گنہ سرائل ڈاک خانہ ہرن بیڑ موضع بھوپن مرسلہ عاصم علی صاحب ۲۰ رمضان المبارک ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ میت کے نماز و روزہ وغیرہ کے کفارے کے عوض میں قرآن شریف کو حیلہ کرنا جائز ہے یا نہیں؟ مع دلائل قویہ و حوالہ کتب معتبرہ ارشاد فرمایا جائے کیونکہ اس ملک بنگالہ میں اکثر علماء حیلہ مذکورہ کو جائز رکھتے ہیں اور جو نا جائز کہتا ہے اس کے ساتھ جھگڑنے پر آمادہ ہوتے ہیں اور کہتے ہیں کہ دلیل بیان کرو، اس لیے حضور پُر نور کو تکلیف دی جاتی ہے۔ بینوا بالدلیل توجروا عند الجلیل (دلیل کے ساتھ بیان کرو اور اللہ تعالیٰ سے اجر پاؤ۔ت)

الجواب: یہ حیلہ دو طور پر ہے: اول: یہ کہ نماز روزے وغیرہ جس قدر ذمہ میت ہوں سب کے کفارے میں خود قرآن مجید ہی مسکین کو دے دیا جائے یعنی مصحف مبارک ہی کو ان فرائض کا معاوضہ و کفارہ بنا لیا جائے، یہاں جہاں اسی طرح کرتے ہیں ان کا خیال ہے کہ قرآن بے بہا چیز ہے اس کی قیمت کا کون اندازہ کر سکتا ہے تو اگر لاکھوں کفارے ہوں ایک مصحف میں سب ادا ہو جائیں گے، ولہذا انہیں میت کی عمر اور اس کی قضا

Fatawa Razawiya Volume Ten

There is no need to even calculate the prayers and fasts, because calculation is only done when there is a possibility of some deficiency, and where in every way certainly more is being given, why calculate? This method is certainly absolutely void and useless. The pure Shariah has specified wealth for expiation (kaffara), that for every prayer and every fast, half a Sa' of wheat or one Sa' of barley or their value. The purpose of Shariah in this is, on one hand, to benefit the poor, and on the other hand, through His perfect mercy, to relieve the servant who neglected obligations from accountability by taking a monetary penalty, God willing. Therefore, for every prayer and fast, a fixed amount of wealth was specified so that a distinction remains between fewer and more offenses. He who has left a few becomes pure by giving a little wealth, and for him who has left many, the penalty increases according to that calculation. Regarding the Holy Mushaf (Quran), there are two aspects: One is the consideration of paper, ink, and binding; in this respect, it is property (maal), and its buying and selling happen on this basis. In this sense, its value is whatever price it is gifted for in the market—whether one rupee, two rupees, or ten-fifteen, whatever its status. In this respect, if it is given in expiation, then the amount of wealth given will be determined by its market price. If expiation is performed, only as many prayers and fasts will be compensated as correspond to those prices. For example, if five Sa' of wheat cost one rupee, and this Holy Mushaf that was given had a gift value (hadya) of two rupees, it means ten Sa' of wheat were given. It would only be compensation for twenty prayers or twenty fasts. How can the expiation for a lifetime of prayers be paid with an item worth a few rupees? The second aspect is the consideration of the Divine Word written in it, which is not wealth at all; rather, it is the ancient, noble attribute of the One, the Eternal, Majestic and Exalted, established with His Holy Essence, and through His Grace, manifest in our pages, our hearts, our tongues, our eyes, our ears, and our hearts through writing, memorization, recitation, looking, listening, and understanding. So, for His Noble Countenance is all praise as befits His Majesty, the Greatness of His Generosity, and His Favors. The common people were right when they said it is priceless, but wrong in thinking that its price is beyond limits; rather, it is priceless in the sense that it is beyond and above evaluation and monetary value. In this sense, it cannot be expiation, because expiation is made with wealth, and that (the Word of God) is not wealth. It is in 'Al-Hidayah':

La yuqta'u fi sariqatil mushafi liannahu la maliyata lahu 'ala	One's hand is not cut off for stealing the Mushaf because, in consideration of the written content, it

i'tibaril maktubi wa ihrazuhu liajlihi la lil jildi wal awraq.	has no monetary value. Its protection is for the sake of the writing, not for the binding and pages. (T)

1 Al-Hidayah, Chapter: what involves cutting and what does not, Al-Maktabat-ul-Arabiyyah, Karachi, 2/52

नमाज़ों और रोज़ों का हिसाब करने की भी ज़रूरत नहीं होती, क्योंकि हिसाब तो तब किया जाता है जब कुछ कमी की संभावना हो, और जहाँ हर तरह से निश्चित रूप से ज़्यादा ही चीज़ दी जा रही है, वहाँ हिसाब किस लिए? यह तरीका निश्चित रूप से पूरी तरह से बातिल (अमान्य) और व्यर्थ है। शरीअत-ए-मुतह्हरा (पवित्र शरीयत) ने कफ़्फ़ारे (प्रायश्चित) में एक विशेष धन निर्धारित किया है कि हर नमाज़ और हर रोज़े के बदले आधा सा' गेहूँ या एक सा' जौ या उनकी कीमत दी जाए। इससे शरीयत का मक़सद एक ओर ग़रीबों को लाभ पहुँचाना है और दूसरी ओर अपनी पूर्ण दयालुता से फ़राज़ (अनिवार्य कर्तव्यों) को छोड़ने पर आर्थिक दंड लेकर, अल्लाह ने चाहा तो, बंदा-ए-तारिक (कर्तव्य छोड़ने वाले) को जवाबदेही से मुक्त करना है। इसीलिए हर नमाज़ और रोज़े के लिए एक निश्चित मात्रा में धन निर्धारित किया गया ताकि कम और ज़्यादा गुनाहों में अंतर रहे। जिसने थोड़े छोड़े हैं वह थोड़ा माल देकर पाक हो जाए, और जिसने ज़्यादा छोड़े हैं उस पर उसी हिसाब से जुर्माना बढ़ता जाए। मुसहफ़ शरीफ़ (कुरान मजीद) के दो पहलू हैं: एक कागज़, स्याही और जिल्द का विचार, इस लिहाज़ से वह एक माल (संपत्ति) है और इसी आधार पर उसकी खरीद-बिक्री होती है। इस अर्थ में उसकी कीमत वही है जितने में बाज़ार में उसका हद्य (भेंट मूल्य) हो, चाहे एक रुपया हो, दो रुपये हो या दस-पंद्रह, जो भी हैसियत हो। इसी लिहाज़ से अगर वह कफ़्फ़ारे में दिया जा सकता है, तो बाज़ार के भाव से जितने दामों पर हद्य हुआ, उतना ही माल देना माना जाएगा। और अगर कफ़्फ़ारा अदा हुआ तो केवल उतनी ही नमाज़ों और रोज़ों का अदा होगा जो उन दामों के बराबर हों। उदाहरण के तौर पर, अगर एक रुपये के पाँच सा' गेहूँ आते हैं और यह मुसहफ़ शरीफ़ जो दिया गया उसका हद्य दो रुपये था, तो मानो दस सा' गेहूँ दिए गए। यह केवल बीस नमाज़ों या बीस रोज़ों का मुआवज़ा हुआ। दो-चार रुपये की कीमत वाली चीज़ से जीवन भर की नमाज़ों का कफ़्फ़ारा कैसे अदा हो सकता है? दूसरा पहलू उस कलाम-ए-करीम (ईश्वरीय वाणी) का विचार है जो उसमें लिखा है; वह असल में माल नहीं है, बल्कि वह उस अहद-ओ-समद (अद्वितीय और बेनवाज़) अल्लाह जल्ल-व-अला की क़दीम (अनादि) और करीम सिफ़त (गुण) है जो उसकी पाक ज़ात से क़ायम है और उसके करम से हमारे कागज़ों, हमारे सीनों, हमारी ज़बानों, हमारी आँखों, हमारे कानों, हमारे दिलों पर लिखावट, हिफ़्ज़ (कंठस्थ), तिलावत, देखने, सुनने और समझने में प्रकाशित है। तो उसकी करीम ज़ात के लिए वैसी ही हम्द (प्रशंसा) है जैसी उसकी जलालत, उसकी सख़ावत की महानता और उसके एहसानों के योग्य है। आम लोगों ने सच कहा कि वह बेबहा (अमूल्य) है, पर गलत समझा कि उसकी कीमत सीमा

से बाहर है; बल्कि वह इस अर्थ में बेबहा है कि वह मूल्यांकन और भौतिक मूल्य से ऊपर और परे है। इस अर्थ में वह कफ़्फ़ारा नहीं हो सकता क्योंकि कफ़्फ़ारा माल से होता है और वह माल नहीं है। 'हिदाया' में है:

لا يقطع في سرقة المصحف لانه لمالية له على اعتبار المكتوب واحرازه لاجله لا للجلد والاوراق۔	मुसहफ़ की चोरी में हाथ काटना नहीं है क्योंकि लिखे हुए के लिहाज़ से यह भौतिक मूल्य से ऊपर है। इसकी सुरक्षा लिखे हुए की वजह से है न कि जिल्द और कागज़ों की वजह से। (त)

1 हिदाया, बाब मा यकताउ फ़ीहि व मा ला यकताउ, अल-मकतबत-उल-अरबिया, कराची, 52/2

نمازوں روزوں کا حساب کرنے کی بھی حاجت نہیں ہوتی کہ حساب تو جب کیجیے کہ کچھ کمی کا احتمال ہو اور جہاں ہر طرح یقیناً زیادہ ہی چیز جا رہی ہے وہاں حساب کس لئے۔ یہ طریقہ یقیناً قطعاً باطل و مہمل ہے شرع مطہر نے کفارے میں مال معین فرمایا ہے کہ ہر نماز ہر روزے کے عوض نیم صاع گندم یا ایک صاع جو یا ان کی قیمت۔ اور اس سے مقصود شرع ادھر نفع رسانی مساکین ہے اُدھر اپنی رحمت کاملہ سے ترکِ فرائض پر مالِ جرمانہ لے کر ان شاء اللہ بندہ تارک کو مطالبہ سے سبکدوش فرمانا، ولہٰذا ہر نماز روزہ کے ایک مقدار مال معین فرمائی کہ جرم کم و زائد میں امتیاز رہے، جس نے تھوڑے چھوڑے ہیں تھوڑا مال دے کر پاک ہو جائے، جس نے زیادہ چھوڑے اس پر اُسی حساب سے جرمانہ بڑھتا جائے، مصحف شریف میں دو لحاظ ہیں: ایک کاغذ و سیاہی و جلد کا اعتبار، اس لحاظ سے وہ ایک مال ہے اسی لحاظ سے اس کی بیع و شراء ہوتی ہے، بایں معنیٰ اس کی قیمت وہی ہے جتنے پر بازار میں ہدیہ ہو، روپیہ دو روپیہ یادس پندرہ جو حیثیت ہو اسی لحاظ سے وہ کفارے میں دیا جاسکتا ہے تو بازار کے بھاؤ سے جتنے داموں پر ہدیہ ہوا اسی قدر مال دینا ٹھہرے گا، اور کفارہ ادا ہوا تو صرف اتنے ہی نماز روزوں کا ادا ہوگا جو ان داموں کے مقابل ہوں مثلاً روپے کے پانچ صاع گیہوں آتے ہیں اور یہ مصحف شریف کہ دیا گیا دو روپے ہدیہ کا تھا تو گویا دس صاع گیہوں دئے گئے صرف بیس نمازوں یا بیس روزوں کا عوض ہوئے، دو چار روپے مالیت کی چیز سے عمر بھر کی نمازوں کا کفارہ کیونکر ادا ہوسکتا ہے۔

دوسرا لحاظ اس کلامِ کریم کا اعتبار ہے جو اس میں لکھا ہے اصلاً مال نہیں بلکہ وہ اس احد صمد جل و علا کی صفت قدیمہ کریمہ اس کی ذاتِ پاک سے قائم اور اس کے کرم سے ہمارے ورقوں، ہمارے سینوں، ہماری زبانوں، ہماری آنکھوں، ہمارے کانوں، ہمارے دلوں پر کتابت و حفظ و

تلاوت و نظر و سماعت و فہم میں متجلی ہے، فلوجھہ الکریم الحمد کما ینبغی لجلالہ و عظم جودہ و افضالہ، عوام نے سچ کہا کہ وہ بے بہا ہے اور غلط سمجھا کہ اس کہ قیمت حد سے سوا ہے بلکہ وہ بے بہا بایں معنیٰ ہے کہ تقویم و مالیت سے پاک وورا ہے بایں معنیٰ وہ کفارہ نہیں ہوسکتا کہ کفارہ مال سے ہوتا ہے اور وہ مال نہیں۔ ہدایہ میں ہے:

لا یقطع في سرقة المصحف لانه لمالیة له علی اعتبار المکتوب واحرازه لاجله لا للجلد والاوراق۔ چوری مصحف میں قطع ید نہیں کیونکہ مکتوب کے اعتبار سے یہ مالیت سے بالاتر ہے باقی اس کی حفاظت مکتوب کی وجہ سے ہوئی ہے نہ کہ جلد اور اوراق کی وجہ سے۔ (ت)

1 ہدایہ باب ما یقطع فیہ ومالا یقطع المکتبۃ العربیہ کراچی ۲/۵۲

Fatawa Razawiya, Volume 10

In Fath al-Qadir it is stated:

| No hand-cutting is applicable for stealing a Mushaf (copy of the Quran). Imam Shafi'i said that the hand shall be cut. There is also a narration from Imam Abu Yusuf to this effect, because it is protected wealth, bought and sold; and also because its pages are wealth, and whatever is written in it increases its value and does not decrease it. The reasoning of the manifest school of thought (Zahir al-Madhab) is that value follows the subordinate, which is the paper, and not the primary, which is the written text (T). | لا فی سرقة المصحف وقال الشافعی یقطع وھو روایة عن ابی یوسف لانه مال محرز یباع ویشتری ولان ورقه مال وبما کتب فیه ازداد به ولم ینتقص وجه الظاھران المالیة للتبع وھی الاوراق المتبوع وھو المکتوب[1]۔ |

Similarly, it is mentioned in Kafi Sharh al-Wafi, Tabyin al-Haqa'iq, Bahr al-Ra'iq, Radd al-Muhtar, and other reliable books. In summary, that which is priceless in the Mushaf, i.e., the Quran, is not wealth that can serve as an expiation (kaffarah). And that which is wealth, i.e., the paper and the binding, is not priceless such that it could serve as a substitute for a lifetime of prayers and fasts. To consider it wealth based on the paper and of immense value based on the writing, and then to offer it as expiation for the deceased's entire life, or even seven generations, is like Zaid owing someone a hundred thousand rupees and wanting to pay it off by giving a Mushaf worth one rupee, or even a section worth one anna, claiming it is worth millions or billions. By this logic, one could write the name of Allah on a fingernail-sized piece of paper and give it to settle a debt of millions of rupees, arguing that the value of one majestic name of Allah is more than the world and everything in it. Just as such a trick is not presented in the dealings of people, similarly it is not presented in the religion of the Lord of Honor (Azza wa Jalla). It is stated in the Hadith: "The debt of Allah has more right to be paid." (T)

The second method: Calculate the total missed prayers, fasts, etc., of the deceased and determine their expiation. For example, if it comes to a thousand mounds of wheat, sell the Mushaf to a needy person in exchange for that much wheat or its value. Let them accept it. They have received the Mushaf, and a debt of a thousand mounds of wheat, or for example three thousand rupees, has become due from them as the price of the Mushaf. Now tell them, "The wheat or money that you owe us, we have given it to you as expiation for so-and-so deceased person." The poor

person should say, "I have accepted." This trick is not specific to the Great Quran but applies to any book, cloth, or...

---

1 Fath al-Qadir, Chapter: On what the hand is cut and what it is not cut for, Al-Maktabah al-Arabiyyah, Karachi, 5/132. 2 Sahih al-Bukhari, Chapter: Whoever dies while owing fasts, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/262.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

फ़त्ह अल-क़दीर में है:

| मुसहफ़ (क़ुरआन की प्रति) की चोरी में हाथ काटना नहीं है। इमाम शाफ़ई ने कहा कि हाथ काटा जाएगा। इमाम अबू यूसुफ़ से भी एक रिवायत यही है क्योंकि यह सुरक्षित माल है, बेचा और खरीदा जाता है; और इसलिए भी कि इसके पन्ने माल हैं, और जो कुछ इसमें लिखा है उससे इसके मूल्य में वृद्धि होगी न कि कमी। ज़ाहिर-ए-मज़हब (स्पष्ट विचारधारा) की दलील यह है कि मूल्य अनुवर्ती (अधीन) का होता है यानी पन्नों का, न कि मुख्य का जो कि लिखावट है। (त) | لا فی سرقة المصحف وقال الشافعی یقطع وھو روایة عن ابی یوسف لانه مال محرز یباع ویشتری ولان ورقه مال وبما کتب فیه ازداد به ولم ینتقص وجه الظاھران المالیة للتبع وھی الاوراق المتبوع وھو المکتوب[1]۔ |

इसी तरह काफ़ी शरह अल-वाफ़ी, तबीयन अल-हक़ाएक़, बह्र अल-राएक़, रद अल-मुह्तार और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में है। संक्षेप में, मुसहफ़ में जो चीज़ अनमोल है यानी क़ुरआन, वह ऐसा माल नहीं है जो कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) बन सके। और जो माल है यानी काग़ज़ और जिल्द, वह इतना अनमोल नहीं है कि जीवन भर की नमाज़ और रोज़ों का बदला हो सके। काग़ज़ के आधार पर माल मानना और लिखावट के आधार पर उसे बेहद मूल्यवान समझकर मृत व्यक्ति के पूरे जीवन, बल्कि सात पीढ़ियों का कफ़्फ़ारा करना वैसा ही है जैसे ज़ैद पर किसी के एक लाख रुपये बकाया हों और वह उसके बदले एक रुपये का मुसहफ़ शरीफ़, बल्कि एक आने का कोई पारा देकर अदा करना चाहे कि यह लाखों करोड़ों रुपये का है और अनमोल है। इस तरह तो एक आयत या नाख़ून के बराबर काग़ज़ पर एक 'इस्म-ए-अल्लाह' (अल्लाह का नाम) लिखकर दे दीजिए और करोड़ों रुपये का कर्ज़ उतार दीजिए कि दुनिया और जो कुछ इसमें है, एक इस्म-ए-जलालत की क़ीमत नहीं हो सकती। जैसे बंदों के लेन-देन में यह हीला (बहाना/तरीका) पेश नहीं किया जाता, वैसे ही रब्बुल इज़्ज़त (अज़्ज़ा व जल्ला) के दीन में भी नहीं। हदीस में इरशाद हुआ: "अल्लाह का दीन पूरा किए जाने का ज़्यादा हक़ रखता है।" (त)

दूसरा तरीक़ा: यह कि मृत व्यक्ति पर जितनी भी नमाज़ें, रोज़े आदि कज़ा हों, उन सब का हिसाब लगाएँ और उसका कफ़्फ़ारा निश्चित करें। उदाहरण के लिए, यदि एक हज़ार मन गेहूँ बनते हैं, तो मुसहफ़ शरीफ़ को इतने गेहूँ या उनकी क़ीमत के बदले एक मिस्कीन (ज़रूरतमंद) के हाथ बेच दें।

वह उसे स्वीकार कर ले। उसे मुसहफ़ मिल गया और उस पर एक हज़ार मन गेहूँ या उदाहरण के लिए तीन हज़ार रुपये मुसहफ़ की क़ीमत के रूप में ऋण हो गए। अब उससे कहें, "इतने गेहूँ या रुपये जो तुम्हें हमें देने हैं, वे हमने फ़लाँ मृत व्यक्ति के कफ़्फ़ारे में तुम्हें दे दिए।" फ़क़ीर कहे, "मैंने स्वीकार किया।" यह हीला केवल क़ुरआन अज़ीम के साथ ही विशेष नहीं है, बल्कि हर किताब या कपड़े या...

---

1 फ़त्ह अल-क़दीर, बाब: मा युक्ता' फ़ीही व मा ला युक्ता', अल-मकतब अल-अरबिया, कराची, 5/132. 2 सहीह अल-बुख़ारी, बाब: मन माता व अलैहि सौमुन, क़दीमी कुतुब ख़ाना, कराची, 1/262.

فتح القدیر میں ہے:

| مصحف کی چوری میں قطع ید نہیں اور امام شافعی نے کہا قطع ید ہے۔ امام ابو یوسف سے بھی ایک روایت یہی ہے کیونکہ یہ مال محفوظ ہے ، بیچا اور خریدا جاتا ہے ، اور اس لیے بھی کہ اس کے اوراق مال ہیں اور جو کچھ اس میں تحریر ہے اس سے مالیت میں اضافہ ہوگا نہ کہ کمی۔ ظاہر مذہب کی دلیل یہ ہے کہ مالیت تابع یعنی اوراق کی ہیں نہ کہ متبوع کی جو کہ مکتوب ہے (ت) |

لا فی سرقة المصحف وقال الشافعی یقطع وھو روایة عن ابی یوسف لانه مال محرز یباع ویشتری ولان ورقه مال وبما کتب فیه ازداد به ولم ینتقص وجه الظاھران المالیة للتبع وھی الاوراق المتبوع وھو المکتوب[1]۔ |

اسی طرح کافی شرح وافی و تبیین الحقائق وبحر الرائق و رد المحتار و غیر ہا معتمدات اسفار میں ہے۔ بالجملہ مصحف میں جو چیز بے بہا ہے یعنی قرآن وہ مال نہیں کہ کفارہ بن سکے، اور جو مال ہے یعنی کاغذ و جلد ، وہ بے بہا نہیں کہ عمر بھر کی نماز روزوں کا بدلہ ہو سکے، کاغذ کے اعتبار سے مال ٹھہرانا اور مکتوب کے لحاظ سے بیحد قیمت سمجھ کر میت کی تمام عمر بلکہ ہفت پشت کا کفارہ کرنا ایسا ہے جیسے زید پر کسی کے لاکھ روپے آتے ہوں وہ اس کے بدلے ایک روپے کا مصحف شریف بلکہ ایک آنے کا کوئی پارہ دے کر ادا ہو جانا چاہئے کہ یہ لاکھوں کروڑوں روپے کا ہے بے بہا ہے یوں تو ایک آیت بلکہ ناخن برابر کاغذ پر ایک اسم اللہ لکھ کر دے دیجئے اور کروڑوں روپے کا قرضہ اتار دیجئے کہ دنیا و مافیہا ایک اسم جلالت کی قیمت نہیں ہوسکتی جیسے بندوں کے دین میں یہ حیلہ پیش نہیں کیا جاتا ویسے ہی رب العزت عزوجلالہ کے

دین میں۔ حدیث میں ارشاد ہوا: فدین اللہ احق ان یقضی[2] (اللہ تعالیٰ کا دین زیادہ حق رکھتا ہے کہ اسے پورا کیا جائے ۔ت)

دوسرا طریقہ : یہ کہ میت پر جس قدر نماز روزے وغیرہ ہا قضا ہوں سب کا حساب لگائیں اور اس کا کفارہ معین کریں کہ مثلاً ہزار من گندم ہوئے مصحف شریف اتنے گیہوں یا ان کی قیمت کے عوض مسکین کے ہاتھ بیچ کریں وہ قبول کرلے مصحف تو اس نے پایا اور اس پر ہزار من گندم یا مثلاً تین ہزار روپے ثمن مصحف کے دین ہو گئے ، اب اس سے کہیں کہ اتنے گیہوں یا روپے جو ہمارے تجھ پر واجب الادا ہیں وہ ہم نے فلاں میت کے کفارہ میں تجھے دئے ، فقیر کہے میں نے قبول کئے۔ یہ حیلہ قرآن عظیم کے ساتھ خاص نہیں بلکہ ہر کتاب یا کپڑے یا

---

1 فتح القدیر باب ما یقطع فیہ ومالا یقطع المکتبۃ العربیۃ کراچی ۵/ ۱۳۲ 2 صحیح بخاری باب من مات وعلیہ صوم قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۲۶۲

Fatawa Razawiya, Volume 10

It can be from vessels and the like; the later scholars of Delhi wrote this stratagem (hila), but in the view of jurisprudence (Fiqh), this also does not seem correct. This humble one (may the Mighty Lord forgive him) mentioned its research in Muneer, his fatwa. It is sufficient here that wealth should be given in expiation (kaffara), and a debt that has been waived is not wealth. It is in *Tabyin al-Haqa'iq*:

If someone has a debt against a poor person and releases him from it, the zakat on it falls away because it is like destruction. So, if he releases him from a part, the zakat on that part falls away for the reason mentioned, but the zakat on the remainder does not fall away, even if he intends it to be a payment for the remainder. This is because what is waived is not wealth, while the remainder can be wealth. Thus, the remainder is better than it, so waiving for it is not permissible.[1]

If someone had a debt against a poor person and he forgave it, absolving him from the debt, then the Zakat on that debt will lapse because it is like property that has been destroyed. And if some of it is forgiven, then based on the aforementioned reasoning, the Zakat for that portion will lapse, but the Zakat for the remaining portion will not lapse, even if he counts the forgiven portion as Zakat for the remainder, because the portion that is forgiven is not wealth, and it is possible for the remaining portion to be wealth, and the remaining portion is better than it. Therefore, waiving from it will not be permissible. (T)

Rather, it is necessary to collect that debt from him, take possession of it, and then give it in expiation. In *Durr al-Mukhtar*:

If he made a will for his prayers, and one-third of his estate consists of debts owed by those in hardship, and the executor (wasi) left it to them as ransom (fidya), it does not suffice him. Taking possession is necessary, then giving it in charity to them.[2] End. The full discussion on "Removing Doubts" (Izalat al-Awham) is in our Fatwa. Whoever has something bothering their heart should refer to it and not

Someone made a will for his missed prayers while one-third of his property was debt owed by destitute people. The executor waived the debt of those destitute people as a ransom (fidya) for the prayers. This would not be sufficient because it is necessary to take possession of this property first, after which it would be permissible to give it as charity to them. For "Removal of Doubts", a detailed discussion is in our Fatawa; whoever has any doubt in their heart should study it

be hasty. And Allah Almighty knows best.	and not act in haste. And Allah Almighty knows best.

Problem 228: From Bilgram, District Hardoi, Mohalla Maidan Pura, sent by Hazrat Syed Ibrahim Miyan Sahib, 14 Ramadan-ul-Mubarak 1311 AH. On the night of Tuesday, 12 Ramadan-ul-Mubarak, we woke up at around half-past four, quickly we...

[1] Tabyin al-Haqa’iq, Book of Zakat, Al-Matba'a al-Kubra al-Amiriyya, Egypt, 1/258. [2] Durr al-Mukhtar, Section on Wills of a Dhimmi and others, Mujtabai, Delhi, 2/337.

फतावा रज़विया, खंड दसवां

यह बर्तन आदि से हो सकता है; दिल्ली के बाद के विद्वानों ने यह हिला (तरीका) लिखा है, लेकिन फिक़्ही नज़र में यह भी सही नहीं लगता। इस गुनहगार (अल्लाह उसे माफ़ करे) ने इसकी मुनीरा में अपनी फतावा में तहकीक ज़िक्र की है। यहाँ इतना ही काफी है कि कफ़्फ़ारे में माल देना चाहिए और वह क़र्ज़ जिसे माफ़ कर दिया गया, माल नहीं है। 'तबीन अल-हक़ाएक' में है:

यदि किसी का किसी गरीब पर क़र्ज़ हो और वह उसे उससे मुक्त कर दे, तो उसकी ज़कात गिर जाती है क्योंकि यह विनाश के समान है। इसलिए यदि वह उसे कुछ भाग से मुक्त कर दे, तो बताए गए कारण से उस भाग की ज़कात गिर जाती है, लेकिन शेष भाग की ज़कात नहीं गिरती, भले ही वह शेष के लिए भुगतान का इरादा रखता हो। ऐसा इसलिए है क्योंकि जो गिराया गया है वह माल नहीं है, जबकि शेष माल हो सकता है। इस प्रकार, शेष उससे बेहतर है, इसलिए उससे गिराना (माफ़ करना) जायज़ नहीं है।[1]

अगर किसी का फ़क़ीर पर क़र्ज़ था, माफ़ करके क़र्ज़ से उसे बरी कर दिया तो उस क़र्ज़ की ज़कात साक़ित (ख़त्म) हो जाएगी क्योंकि यह हलाक होने वाले माल की तरह है। और अगर कुछ माफ़ किया तो मज़कूरा दलील की बिना पर उतने हिस्से की ज़कात साक़ित हो जाएगी, लेकिन बाक़ी हिस्से की ज़कात साक़ित न होगी, अगरचे वह साक़ित होने वाले हिस्से को बाक़ी की ज़कात में शुमार करे क्योंकि साक़ित होने वाला माल नहीं है और बाक़ी रहने वाला माल होना मुमकिन है और बक़िया हिस्सा उससे बेहतर है लिहाज़ा इससे इसक़ात (माफ़ करना) जायज़ न होगा। (त)

बल्कि ज़रूरी है कि वह क़र्ज़ उससे वसूल करके क़ब्ज़े में लाकर कफ़्फ़ारे में दें। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

यदि उसने अपनी नमाज़ों के लिए वसीयत की और उसकी संपत्ति का एक तिहाई हिस्सा तंगहाल लोगों पर क़र्ज़ था, और वसीय (निष्पादक) ने नमाज़ों के फ़िदये के तौर पर उसे उनके लिए छोड़ दिया, तो यह उसके लिए पर्याप्त नहीं है। क़ब्ज़ा करना ज़रूरी है, फिर उन पर सदक़ा (दान) करना।[2] अंत। "इज़ालत अल-औहाम" (भ्रमों को दूर करना) पर पूरी चर्चा हमारी फतावा में है। जिसके दिल में

किसी ने अपनी नमाज़ों के लिये वसीयत की इस हाल में कि उसका सुलुस (एक तिहाई) माल तंग दस्तों पर क़र्ज़ था, तो वसी ने नमाज़ों के फ़िद्यह के तौर पर उन तंग दस्तों का क़र्ज़ छोड़ दिया तो यह काफ़ी न होगा क्योंकि पहले इस माल पर क़ब्ज़ा ज़रूरी है, उसके बाद उन पर सदक़ा करना जायज़ होगा। इ.ह. (अत-तमाम)। इज़ालतुल औहाम के लिए तफ़सीली गुफ़्तगू

कोई बात खटक रही हो उसे इसे देखना चाहिए और जल्दी नहीं करनी चाहिए। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

हमारी फ़तावा में है, जिसके सीने में कोई शय खटक रही हो वह उसका मुतालआ करे और जल्दबाज़ी से काम न ले। वल्लाहु तआला आलम।

मसला 228: बिलग्राम, ज़िला हरदोई, मोहल्ला मैदान पुरा से, प्रेषक हज़रत सैय्यद इब्राहिम मियाँ साहब, 14 रमज़ान-उल-मुबारक 1311 हिजरी। मंगल की रात 12 रमज़ान-उल-मुबारक को हम लोगों की आँख क़रीब साढ़े चार बजे खुली, जल्दी-जल्दी हम लोगों ने...

[1] तबीन अल-हक़ाएक, किताब अल-ज़कात, अल-मतबा अल-कुबरा अल-अमीरिया, मिस्र, 1/258। [2] दुर्रे मुख़्तार, फ़स्ल फ़ी वसाया अल-ज़िम्मी व ग़ैराहु, मुज्तबाई दिल्ली, 2/337।

برتن وامثالہا سے ہوسکتا ہے، دہلی کے متاخرین علماء نے یہ حیلہ لکھا مگر نظرِ فقہی میں یہ بھی صحیح نہیں آتا، فقیر غفرلہ المولٰی القدیر نے اس کی تحقیق منیر اپنے فتاوٰی میں ذکر کی یہاں اسی قدر کافی کہ کفارے میں مال دینا چاہئے اور دین کہ ساقط کردیا مال نہیں۔ تبیین الحقائق میں ہے:

لوکان لہ دین علی فقیر فابرأہ منہ سقط زکوتہ عنہ لانہ کالھلاك فلو ابرأہ عن البعض سقط زکوۃ ذلك البعض لما قلنا وزکوۃ الباقی لاتسقط عنہ ولو نوی بہ الاداء عن الباقی لان الساقط لیس بمال والباقی یجوز ان یکون مالافکان الباقی خیرا منہ فلا یجوز الساقط عنہ۱۔ (ت)

اگر کسی کا فقیر پر قرض تھا معاف کرکے قرض سے اسے بری کردیا تو اس قرض کی زکوٰۃ ساقط ہو جائے گی کیونکہ ہلاک ہونے والے مال کی طرح ہے اور اگر کچھ معاف کیا تو مذکورہ دلیل کی بنا پر اتنے حصہ کی زکوٰۃ ساقط ہو جائے گی لیکن باقی حصہ کی زکوٰۃ ساقط نہ ہوگی اگرچہ وہ ساقط ہونیوالے حصہ کو باقی کی زکوٰۃ میں شمار کرے کیونکہ ساقط ہونے والا مال نہیں اور باقی رہنے والا مال ہونا ممکن ہے اور بقیہ حصہ اس سے بہتر ہے لہذا اس سے اسقاط جائز نہ ہوگا۔

بلکہ ضرور ہے کہ وہ دین اس سے وصول کرکے قبضہ میں لاکر کفارے میں دیں۔ در مختار میں ہے:

اوصی لصلواتہ و ثلث مالہ دیون کسی نے اپنی نمازوں کے لئے وصیت کی اس حال میں کہ اس کا ثلث مال تنگ دستوں پر قرض تھا تو وصی نے نمازوں کے فدیہ کے طور پر ان تنگ دستوں کا قرض چھوڑ دیا تو یہ کافی

ثم التصدق علیھم۲ اھ و تمام الکلام علی ازالۃ الاوھام فی فتاوٰنا فلیرا جعھا من یتخالج فی صدرہ شئی ولا یعجل، واللہ تعالٰی اعلم۔

نہ ہوگا کیونکہ پہلے اس مال پر قبضہ ضروری ہے اس کے بعد ان پر صدقہ کرنا جائز ہوگا اھ ازالہ اوہام کے لئے تفصیلی گفتگو ہمارے فتاوٰی میں ہے، جس کے سینے میں کوئی شے کھٹک رہی ہو وہ اس کا مطالعہ کرے اور جلد بازی سے کام نہ لے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲۲۸: از بلگرام ضلع ہردوئی محلہ میدان پورہ مرسلہ حضرت سید ابراہیم میاں صاحب ۱۴ رمضان المبارک ۱۳۱۱ھ شب سہ شنبہ ۱۲ رمضان المبارک کو ہم لوگوں کی آنکھ قریب ساڑھے چار بجے کھلی، جلد جلد ہم لوگوں نے

1 تبیین الحقائق کتاب الزکوۃ المطبعۃ الکبری الامیریۃ مصر ۱ / ۲۵۸ 2 در مختار فصل فی وصایا الذمی وغیرہ مجتبائی دہلی ۲ / ۳۳۷

Fatawa-e-Razvia Volume 10

...meaning they were smoking hookah after eating suhoor when suddenly the Adhan was called. They immediately rinsed their mouths and got busy with other tasks. In the morning, they recounted the incident to an elder, who spoke words that implied the invalidation of the fast, causing great concern. Once we realized that the fast was certainly invalid, several of us, about ten people, ate during the day around 12 PM in that same month, i.e., we broke the fast. Later, when we mentioned it to others, they cautioned us, saying it was inappropriate to eat. We do not have the capacity for expiation (kaffarah), nor do we seemingly have the strength to fast for two consecutive months. Now, whatever your opinion is, please inform us. Explain and be rewarded.

The Answer: Nowadays, as the sun is at the beginning of the sign of Aries, in cities near the latitudes of Bareilly and Bilgram, suhoor should be eaten until 4:00 AM. By 4:30 AM, morning has long begun; eating or drinking anything at that time is meaningless. That fast certainly did not occur, and its makeup (qada) is obligatory. However, for those who are not sick or traveling, it was mandatory out of respect and sanctity for the blessed month to remain like a fasting person throughout the day even if the fast was lost. Eating intentionally during the day thereafter was forbidden (haram) and a sin; repentance (tawba) should be made. But since there was no fast to begin with that could be broken by that eating, there is no relation to expiation (kaffarah). And Allah Almighty knows best.

Problem 229: From Khurja, District Bulandshahr. What do the scholars of religion say regarding this matter: Zaid was fasting during Ramadan. Towards the end of the blessed Ramadan, while he was fasting, he experienced a headache, diarrhea, and vomited several times. The pain was very severe. Finally, at 4:00 PM after Zuhr, due to the fear of the illness worsening, medical medicine was given to him while fasting, thus breaking the fast. In such a situation, the matter to be inquired about is whether, because of breaking the fast, sixty fasts should be kept, sixty poor people should be fed, or nothing should be done? After recovering from the pain, the remaining seven or eight fasts were not kept until Eid al-Fitr due to weakness and debility. What is the Sharia's ruling in this case? Explain and be rewarded.

The Answer: In this case, there are neither sixty fasts nor sixty poor people to feed; in short, there is no expiation (kaffarah). There is only a makeup (qada) for the fast that

was broken and for those fasts that were not kept—one fast in exchange for each day, and that's it.

In 'Al-Durr al-Mukhtar', among the permissible reasons for breaking a fast are the fear of death or loss of mental capacity, even if due to thirst or hunger.

In 'Durr-e-Mukhtar', among the justifying factors, i.e., things that make not fasting permissible, are: fear of death or fear of loss of mental capacity, whether this fear is due to thirst or hunger.

फ़तावा-ए-रज़विया खंड 10

...यानी सहरी खाकर हुक्का पी रहे थे कि अचानक अज़ान हो गई, तुरंत कुल्ली करके और कामों में व्यस्त हो गए। सुबह एक बुजुर्ग से सारा हाल कहा गया, उन्होंने इस तरह की बातें कहीं जिससे रोज़ा बातिल (अमान्य) मालूम हुआ, जिससे बहुत चिंता हुई। जब हम लोगों ने जान लिया कि रोज़ा निश्चित रूप से नहीं है, तब हम कुछ आदमियों ने दिन को यानी 12 बजे उसी महीने में खाना खा लिया और यह मामला लगभग दस आदमियों के साथ हुआ यानी रोज़ा खोल लेना। बाद में जब अन्य लोगों से चर्चा हुई, तो उन्होंने आगाह किया और कहा कि खाना खाना उचित नहीं था। हममें कफ़्फ़ारा की सामर्थ्य नहीं है, यहाँ तक कि दो महीने लगातार रोज़े रखने की भी ज़ाहिरा तौर पर शक्ति नहीं है। अब जैसा आपका विचार हो, सूचित फरमाएँ। बयान करें और सवाब पाएँ।

उत्तर: आजकल जब सूरज बुर्ज-ए-हमल (मेष राशि) की शुरुआत में है, बरेली और बिलग्राम के पास के अक्षांश वाले शहरों में सहरी 4:00 बजे तक खानी चाहिए। साढ़े चार बजे कब की सुबह हो चुकी होती है, उस समय खाने-पीने का कोई मतलब ही नहीं था। वह रोज़ा निश्चित रूप से नहीं हुआ, उसकी क़ज़ा फ़र्ज़ है। लेकिन बीमार और मुसाफ़िर के अलावा अन्य लोगों के लिए रोज़ा चले जाने की स्थिति में भी बरकत वाले महीने के अदब और सम्मान के कारण दिन भर रोज़ेदार की तरह रहना वाजिब था। दिन में फिर जो जानबूझकर खाया वह हराम था और गुनाह हुआ, तौबा की जाए। मगर रोज़ा तो था ही नहीं जिसे उस खाने ने तोड़ा हो, इसलिए कफ़्फ़ारे से कोई संबंध नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 229: खुरजा, जिला बुलंदशहर से। दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि ज़ैद रमज़ान शरीफ़ में रोज़े से थे। रमज़ानुल मुबारक के अंत में जब वह रोज़े से थे, उनके सिर में दर्द हुआ और दस्त आए और कई बार उल्टियाँ हुईं। दर्द की बहुत तेज़ तकलीफ़ थी, अंततः4 बजे बीमारी बढ़ने के डर से ज़ुहर के बाद रोज़े की हालत में डॉक्टरी दवा पिला दी गई, रोज़ा तुड़वा दिया गया। ऐसी स्थिति में पूछने योग्य बात यह है कि रोज़ा तोड़ने के कारण क्या साठ रोज़े रखे जाएँ या साठ मिस्कीनों को खाना खिलाया जाए या कुछ न किया जाए? दर्द से आराम मिलने के बाद जो आठ-सात रोज़े बाकी थे, वे कमज़ोरी और निर्बलता के कारण ईद-उल-फ़ित्र तक नहीं रखे गए। ऐसी स्थिति में शरीअत का क्या हुक्म है? बयान करें और सवाब पाएँ।

उत्तर: इस स्थिति में न साठ रोज़े हैं न साठ मिस्कीन, संक्षेप में कफ़्फ़ारा नहीं है। सिर्फ उस रोज़े की जो तोड़ दिया और उन रोज़ों की जो नहीं रखे, क़ज़ा है। हर रोज़े के बदले एक रोज़ा और बस।

'अल-दुर्रुल मुख्तार' में रोज़ा तोड़ने के जायज़ कारणों में से हलाकत (मौत) का डर या अक़्ल के नुक़सान का डर है, चाहे वह प्यास या भूख की वजह से हो।

'दुर्रे मुख्तार' में मबीहात (जायज़ करने वाली चीज़ों) में से है यानी रोज़ा न रखने को मुबाह (अनुमति योग्य) करने वाली चीज़ों में ये हैं: हलाकत का डर या अक़्ल के नुक़सान का डर, यह डर चाहे प्यास से हो।

पृष्ठ 524 का 836

یعنی سحری کھا کر حقہ پی رہے تھے کہ یکایک اذان ہوگئی فوراً کُلّی کرکے اور کاموں میں مصروف ہو گئے، صبح کو ایک بزرگ سے سب حال کہا گیا انہوں نے اس قسم کے کلمات کہے جس سے ابطالِ صیام معلوم ہوا نہایت تشویش ہوئی، جب ہم لوگوں نے جان لیا کہ روزہ یقیناً نہیں ہے تب ہم چند آدمیوں نے دن کو یعنی ۱۲ بجے اسی ماہ کھا لیا اور یہ امر تخمیناً دس آدمیوں سے واقع ہوا اعنی روزہ کھول لینا، بعد کو اور لوگوں سے ذکر ہوا تو ان لوگوں نے تنبیہ کی اور کہا کہ کھانا کھانا مناسب نہ تھا استطاعت کفارہ نہیں حتی کہ دو ماہ متواتر روزے رکھنے کی بھی بظاہر قدرت نہیں، اب جیسی رائے ہو مطلع فرمایا جائے۔ بینوا توجروا

الجواب: آج کل کہ آفتاب اوائل برج حمل میں ہے۔ بریلی، بلگرام کے قریب قریب عرض کے شہروں میں سحری چار بجے تک کھانی چاہئے، ساڑھے چار بجے کب کی صبح ہو چکی ہے، اس وقت کچھ کھانے پینے کے معنی ہی نہ تھے، وہ روزہ یقیناً نہ ہوا اس کی قضا فرض ہے مگر غیر مریض و مسافر کو روزہ جاتے رہنے کی بھی حالت میں بوجہ ادب و حُرمتِ ماہِ مبارک دن بھر مثل روزہ رہنا واجب تھا، دن کو پھر جو قصداً کھایا حرام تھا گناہ ہوا، توبہ کی جائے، مگر روزہ تو تھا ہی نہیں جسے اس کھانے نے توڑا ہو، لہٰذا کفارے سے کچھ علاقہ نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲۲۹: از خورجہ ضلع بلند شہر کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید رمضان شریف میں روزہ سے تھے اخیر رمضان المبارک میں جبکہ وہ روزہ سے تھے ان کے دردِ صدر میں ہوا اور دست آئے اور استفراغ کئی بار ہوا، درد کی بہت سخت تکلیف تھی، بالآخر ۴ بجے بخوفِ ترقیِ مرض بعد ظہر ڈاکٹری دوا حالتِ صوم میں پلا دی گئی، روزہ تڑوا دیا گیا، ایسی حالت

میں دریافت طلب امر یہ ہے کہ روزہ توڑنے کی وجہ سے آیا ساٹھ روزے رکھے جائیں یا ساٹھ مسکین کھلائے جائیں یا کچھ نہ کیا جائے؟ درد سے آرام ہونے کے بعد جو آٹھ سات روزے باقی تھے وہ بوجہ ضعف و ناطاقتی کے نہیں رکھے گئے تا عید الفطر۔ ایسی صورت میں شارع کا کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا

الجواب: اس صورت میں نہ ساٹھ روزے ہیں نہ ساٹھ مسکین غرض کفارہ نہیں صرف اُس روزہ کی جو توڑ ڈالا اور ان روزوں کی جو نہ رکھے قضا ہے ہر روزہ کے بدلے ایک روزہ و بس۔

فی الدر المختار من مبیحات الفطر خوف هلاک او نقصان عقل و لو بعطش او جوع

در مختار میں عوارض مبیحہ سے ہے یعنی روزہ نہ رکھنے کو مباح کرنے والی چیزوں میں سے یہ ہیں ہلاکت کا خوف یا نقصان عقل کا خوف، یہ خوف خواہ پیاس سے ہو

Volume 10 Fatawa-e-Razvia

[Box 1] Intense hunger or snakebite [1]. Due to severe hunger or being bitten by a snake (in these cases, breaking the fast is permissible). (T)

[Box 2] It is stated in Shami: Therefore, he should drink medicine that benefits him [2]. It is permissible for a fasting person to drink medicine that provides them benefit. (T)

Issue 230: From Bahraich Chowk Bazar, sent by Hafiz Muhammad Shafi Sahib, 26th of the Blessed Month 1333 AH. If the crescent moon of Ramadan was sighted in Makkah Mukarramah or in countries distant from India on the 29th of Sha'ban, and for example, in Bahraich the moon was not seen on that date but on the 30th of Sha'ban, in this case, is it obligatory for the residents of Bahraich to make up for one fast upon gaining certain knowledge of the sighting elsewhere? Zaid says that in the mentioned situation, making up for one fast is not necessary because when the moon is sighted in a nearby country it is considered, but a distant country's sighting is not considered in this matter. Amr's opinion is contrary to this, meaning he insists on the obligation of making up the fast. Provide a clear ruling and you shall be rewarded.

The Answer: Amr's opinion is correct. The sound and relied-upon position of our noble Imams is that regarding the crescent of Ramadan and Eid, the difference in moon-sighting horizons is not considered. If a sighting occurs in the East, it is a proof for the West, and a sighting in the West is a proof for the East, but the proof must be established through Shariah-compliant means. A letter, telegram, newspaper report, market rumors, or hearsay from other cities are purely unreliable. As we have detailed in our Fatawa with such depth that further addition is difficult. (T) It is stated in Durr-ul-Mukhtar:

[Arabic Box] "The difference of horizons is not considered according to the [Hanafi] school, and most of the scholars are upon this, and the fatwa is based on this opinion. Therefore, it is obligatory for the people of the East to follow the sighting of the people of the West if the sighting is established before them through a mandatory legal method [3]." (Summarized) And Allah the Almighty knows best.

According to the correct school of thought, the difference in horizons is not taken into account. Most Mashaikh (scholars) are of this view and the fatwa is based on this statement. Therefore, it is obligatory for the people of the East to fast based on the

sighting of the people of the West, provided that the sighting is proven to them through Shariah-prescribed means. And Allah the Almighty knows best. (T)

[Footnotes] 1. Durr-ul-Mukhtar, Chapter on Obstacles, Mujtabai Delhi, 1/152. 2. Radd-ul-Muhtar, Chapter on Obstacles, Mustafa al-Babi Egypt, 2/126. 3. Durr-ul-Mukhtar, Book of Fasting, Mujtabai Delhi, 1/149.

जिल्द दहम (खंड 10) फतावा-ए-रज़विया

[बॉक्स 1] तीव्र क्षुधा या सर्पदंश [1]। बहुत अधिक भूख लगने या सांप के काटने के कारण (इन स्थितियों में रोज़ा छोड़ना जायज़ है) (टी)।

[बॉक्स 2] शामी में लिखा है: इसलिए, उसे वह दवा पीनी चाहिए जो उसे लाभ दे [2]। रोज़ा रखने वाले के लिए ऐसी दवा पीना जायज़ है जो उसे लाभ पहुँचाए। (टी)

मसला 230: बहराइच चौक बाज़ार से, हाफ़िज़ मोहम्मद शफ़ी साहिब द्वारा प्रेषित, 26 मुबारक महीना 1333 हिजरी। यदि रमज़ान शरीफ़ का चाँद मक्का मुकर्रमा में या भारत से दूर के देशों में 29 शाबान को देखा गया हो, और उदाहरण के लिए, बहराइच में उस तारीख को चाँद दिखाई नहीं दिया, बल्कि 30 शाबान को चाँद हुआ, तो क्या इस स्थिति में बहराइच के निवासियों के लिए निश्चित ज्ञान होने पर एक रोज़े की कज़ा करना अनिवार्य है? ज़ैद का कहना है कि उपर्युक्त स्थिति में एक रोज़े की कज़ा अनिवार्य नहीं है क्योंकि जब पास के देश में चाँद दिखाई दे तो उसे माना जाता है, दूर के देश की दृष्टि का इस मामले में कोई महत्व नहीं है। अम्र की राय इसके विपरीत है, यानी वह कज़ा के अनिवार्य होने पर ज़ोर देता है। स्पष्ट निर्णय दें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर (अल-जवाब): अम्र की बात सही है। हमारे प्रतिष्ठित इमामों का सही और विश्वसनीय मत यही है कि रमज़ान और ईद के चाँद के बारे में उदय स्थलों (क्षितिज) के अंतर का कोई महत्व नहीं है। यदि पूर्व में चाँद दिखाई दे तो वह पश्चिम पर प्रमाण है, और पश्चिम वाला पूर्व पर, लेकिन इसका प्रमाण शरीयत के अनुसार होना चाहिए। केवल पत्र, टेलीग्राम, समाचार पत्र की रिपोर्ट, बाज़ार की अफ़वाहें या शहरों की सुनी-सुनाई बातें विश्वसनीय नहीं हैं। जैसा कि हमने अपने फ़तवों में विस्तार से बताया है कि उस पर और कुछ जोड़ना कठिन है। (टी) दुर्रे मुख़्तार में है:

[अरबी बॉक्स] "सही मत के अनुसार उदय स्थलों का अंतर मान्य नहीं है, और अधिकांश विद्वान इसी पर हैं और फ़तवा भी इसी कथन पर है। इसलिए, पश्चिम वालों की चाँद की दृष्टि के आधार पर पूर्व वालों के लिए रोज़ा रखना अनिवार्य होगा, बशर्ते कि उनके यहाँ चाँद की दृष्टि शरीयत के मान्य माध्यम से सिद्ध हो [3]।" (संक्षिप्त) और अल्लाह सर्वज्ञानी है।

सही मत के अनुसार उदय स्थलों (क्षितिज) के अंतर का कोई विचार नहीं किया जाता है। अधिकांश मशायख़ इसी विचार के हैं और फ़तवा इसी पर है। अत; पूर्व के लोगों के लिए पश्चिम के लोगों की

दृष्टि के आधार पर रोज़ा रखना अनिवार्य होगा, बशर्ते कि उनके पास शरीयत के अनुसार चाँद होने का प्रमाण हो। और अल्लाह सर्वज्ञानी है। (टी)

[पाद-टिप्पणियाँ] 1. दुर्रे मुख़्तार, फ़सल फ़िल अवारिज़, मुज्तबाई दिल्ली, 1/152. 2. रद्दुल मुहतार, फ़सल फ़िल अवारिज़, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/126. 3. दुर्रे मुख़्तार, किताबुल सोम, मुज्तबाई दिल्ली, 1/149.

पृष्ठ 525 का 836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

[پہلا خانہ] شدید اولسعۃ حیۃ ۱۔ سخت بھوک کی وجہ سے یا سانپ کے کاٹنے سے ہو (ان صورتوں میں روزے کا ترک جائز ہے) (ت)

[دوسرا خانہ] شامی میں ہے: فلہ شرب دواء ینفعہ ۲۔ روزہ دار کے لئے ایسی دوا کا پینا جائز ہے جو اسے نفع دے۔ (ت)

مسئلہ ۲۳۰: از بہرائچ چوک بازار مرسلہ حافظ محمد شفیع صاحب ۲۶ ماہ مبارک ۱۳۳۳ھ اگر رمضان شریف کا چاند مکہ معظمہ یا ہندوستان سے دور دراز ملکوں میں ۲۹ شعبان کو ہوا اور مثلاً بہرائچ میں اس تاریخ کو چاند نہیں نظر آیا بلکہ ۳۰ شعبان کو چاند ہوا کیا اس صورت میں بہرائچ کے باشندوں کو ایک روزہ کی قضا علم و واقفیت قطعی ہونے پر لازم آتی ہے یا نہیں؟ زید کہتا ہے صورت مذکورہ میں قضا ایک روزہ کی لازم نہیں اس لیے کہ جب قریب ملک میں چاند نظر آئے تو اس کا اعتبار ہے دُور ملک کا اس بارے میں اعتبار نہیں، عمرو کا قول اس کے برخلاف ہے یعنی وہ قضا لازم ہونے کا التزام کرتا ہے۔ بینوا توجروا

الجواب: عمرو کا قول صحیح ہے، ہمارے ائمہ کرام کا مذہب صحیح و معتمد یہی ہے کہ دربارہ ہلالِ رمضان و عید اختلاف مطالع کا کچھ اعتبار نہیں، اگر مشرق میں رؤیت ہو مغرب پر حجت ہے، اور مغرب میں تو مشرق پر، مگر ثبوت برو جہ شرعی چاہئے، خط یا تار یا تحریر اخبار یا افواہ بازار یا حکایتِ امصار محض بے اعتبار۔ کما فصلناہ فی فتاوٰنا بما لا مزید علیہ (جیسا کہ اس کی ایسی تفصیل اپنے فتاویٰ میں تحریر کی ہے جس پر اضافہ دشوار ہے۔ ت) درمختار میں ہے:

[عربی خانہ] اختلاف المطالع غیر معتبر علی المذہب وعلیہ اکثر المشائخ وعلیہ الفتوی فیلزم اھل المشرق برؤیۃ اھل المغرب اذا ثبت عندھم رؤیۃ اولئك بطریق موجب ۳ (ملخصاً) واللہ تعالٰی اعلم۔

مذہبِ صحیح کے مطابق مطالع کے اختلاف کا اعتبار نہیں، اس پر اکثر مشائخ ہیں اور فتوٰی اسی قول پر ہے، لہٰذا اہل مشرق پر اہل مغرب کی رؤیت کی بناء پر روزہ رکھنا لازم ہوگا بشرطیکہ ان کے ہاں ثبوتِ چاند موجبِ شرعی سے ثابت ہو۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

[حواشی] ۱ درمختار، فصل فی العوارض، مجتبائی دہلی ، ۱ / ۱۵۲ ۲ ردالمحتار فصل فی العوارض مصطفی البابی مصر ۲ / ۱۲۶ ۳ درمختار کتاب الصوم مجتبائی دہلی ۱ / ۱۴۹

Fatawa Razawiyya - Volume X

Problem 231: From the locality of Daru, District Nainital, asked by Abdul Jalil Khan, 13 Safar al-Muzaffar 1337 AH. What do the scholars of religion and muftis of the clear Sharia say about this matter: Zaid ate Suhoor (pre-dawn meal) from 4:30 to 5:00. While coming out into the house courtyard, some whiteness was noticed in the eastern sky, and the morning Adhan (call to prayer) had also occurred. Since three fasts had already been observed, the fast was kept. During the day, some people said that this fast was not valid, so he broke it at one o'clock in the afternoon. Under these circumstances, is one day of Qada (restitution) mandatory or sixty days? Furthermore, if fasts of the month of fasting (Ramadan) have been missed and not yet fulfilled, according to some, is there a ruling of sixty days for one missed fast, or must only one be kept for each? Explain and be rewarded. The Answer: In this blessed Ramadan, there was no possibility of the time lasting until five o'clock. Since Suhoor was eaten until five o'clock, the fast undoubtedly did not occur at all for the act of breaking it to be applicable. Qada is mandatory, and there is no Kaffarah (expiation). Yes, if one does not have a fast in the blessed month of Ramadan for any reason, it is mandatory for a person without a religious excuse to remain like a fasting person throughout the day, and eating and drinking is prohibited. Eating at one o'clock was a second sin; repentance is obligatory. Allah Almighty knows best. The Qada for one fast is only one. The ruling of sixty days is for Kaffarah, applicable when someone, without a religious excuse, intentionally breaks an obligatory fast of Ramadan for which the intention was made at night, using food, medicine, or something beneficial, provided no such condition arose until evening that would have made fasting unnecessary today by Sharia. In that case, as a penalty for the crime, sixty consecutive fasts must be observed. Otherwise, for a fast that was simply not kept, the Qada is only one day. Allah Almighty knows best.

Problem 232: From Gondal, Kathiawar region, asked by Abdul Sattar bin Muhammad Ismail, 12 Rajab 1334 AH. During the blessed month of Ramadan, a person, after eating Suhoor before dawn and intending to fast, stopped eating and drinking. Afterwards, while engaging in playful interaction with his wife, he ejaculated without intercourse. Whether this happened before dawn or after dawn, is his fast still valid, or should he perform Qada or give Kaffarah? And what is the ruling for the woman? The Answer: There is no ruling for the woman, and there is no Kaffarah for the man either. If the ejaculation occurred before dawn, there is no Qada either. If it happened after dawn, but he was not touching her at that time and it occurred

merely from the persistence of thought, even then there is no Qada. Otherwise, he should complete this fast and keep one fast as a substitute for it. And Allah Almighty knows best.

फ़तावा रज़विया - जिल्द दहम

मसला 231: मौज़ू दरु, ज़िला नैनीताल से, सायल अब्दुल जलील ख़ां, 13 सफ़र अल-मुज़फ़्फ़र 1337 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन इस मसले में कि ज़ैद ने सहरी का खाना साढ़े चार बजे से पांच बजे तक खाया। घर के बाहर सहन में निकलने से आसमान पर पूर्व (मशरिक़) में कुछ सफेदी मालूम हुई और सुबह की अज़ान भी हो गई। चूंकि तीन रोज़े पहले हो चुके थे, इसलिए रोज़ा रख लिया गया। दिन में कुछ लोगों ने कहा कि यह रोज़ा नहीं हुआ, इसलिए दोपहर एक बजे रोज़ा तोड़ दिया। ऐसी सूरत में, क्या एक रोज़ा क़ज़ा लाज़िम है या साठ? दूसरा यह कि माहे-रमज़ान में जो रोज़े क़ज़ा हो गए हों और वे अभी तक अदा न हुए हों, तो बाज़ लोगों के अनुसार, एक क़ज़ा के बदले क्या साठ का हुक्म है या हर वक्त में एक ही रखना होगा? बयान फ़रमाएं और सवाब पाएं। अल-जवाब: इस रमज़ान शरीफ़ में पांच बजे तक किसी भी तरह वक्त न था। जब पांच बजे तक सहरी खाई गई, तो रोज़ा बिला शुबा हुआ ही नहीं कि उसे तोड़ने की बात सादिक़ आए। क़ज़ा लाज़िम है और कफ़्फ़ारा नहीं। हाँ, रमज़ान मुबारक में अगर किसी वजह से रोज़ा न हो, तो बिना शरई उज़्र (बहाने) के दिन भर रोज़ेदार की तरह रहना वाजिब है और खाना-पीना हराम है। दोपहर एक बजे खाना खाना दूसरा गुनाह था, तौबा फ़र्ज़ है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। एक रोज़े की क़ज़ा सिर्फ़ एक ही है। साठ रोज़ों का हुक्म कफ़्फ़ारा में है, जब किसी ने बिना शरई उज़्र के रमज़ान शरीफ़ का अदा रोज़ा, जिसकी नियत रात से की थी, जानबूझकर खाने, दवा या किसी फ़ायदा पहुँचाने वाली चीज़ से तोड़ दिया हो, और शाम तक कोई ऐसी स्थिति पैदा न हुई हो जिसके कारण शरअ के मुताबिक़ आज रोज़ा रखना ज़रूरी न रहता। ऐसी सूरत में उस मुजरिम के जुर्माने में साठ रोज़े लगातार रखने होते हैं। वैसे जो रोज़ा न रखा हो, उसकी क़ज़ा सिर्फ़ एक रोज़ा है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 232: गोंडल, काठियावाड़ क्षेत्र से, सायल अब्दुल सत्तार बिन मोहम्मद इस्माइल, 12 रजब 1334 हिजरी। माहे-रमज़ान मुबारक में एक शख़्स ने सुबह सादिक़ से पहले सहरी का खाना खाकर रोज़े की नियत की और खाना-पीना बंद किया। उसके बाद अपनी मनकूहा (पत्नी) से हँसी-मज़ाक़ करते हुए बिना हमबिस्तरी के फारिग (इजनाल) हो गया। यह मामला सुबह सादिक़ से पहले हुआ या सुबह सादिक़ के बाद? अब उसका रोज़ा रहा या उसे क़ज़ा करनी चाहिए या कफ़्फ़ारा देना चाहिए? और औरत के लिए क्या हुक्म है? अल-जवाब: औरत के लिए कोई हुक्म नहीं है और मर्द पर भी कफ़्फ़ारा नहीं है। अगर इंजाल सुबह सादिक़ से पहले हुआ, तो क़ज़ा भी नहीं है। और अगर सुबह

सादिक़ के बाद हुआ, लेकिन उस वक्त वह उसे छू नहीं रहा था और वह केवल पुराने ख़याल के बाकी रहने से हुआ, तब भी क़ज़ा नहीं है। वरना इस रोज़े को पूरा करे और उसके बदले एक रोज़ा रखे। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

सफ़ा 526 का 836

فتاویٰ رضویہ - جلد دہم

مسئلہ ۲۳۱: از موضوع در و ضلع نینی تال مسئولہ عبد الجلیل خاں ۱۳ صفر المظفر ۱۳۳۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید نے طعام سحری ساڑھے چار بجے سے پانچ بجے تک کھانا باہر صحن مکان میں نکلنے سے کچھ سفیدی شرق میں آسمان پر معلوم ہوئی اور اذانِ صبح بھی ہوگئی چونکہ تین روزے ہو چکے تھے روزہ رکھ لیا گیا دن میں کچھ اشخاص نے کہا یہ روزہ نہیں ہوا اس واسطے ایک بجے دن کو توڑ ڈالا، پس اندریں صورت ایک روزہ قضا واجب ہوا یا ساٹھ؟ دیگر یہ کہ ماہِ صیام میں جو روزے قضا ہو گئے ہوں اور وہ قضا بھی ادا نہ ہوئے تو بقول بعض بالعوض ایک قضا کے کیا ساٹھ کا حکم ہے یا ہر وقت میں ایک ہی رکھنا ہوگا؟ بینوا توجروا الجواب: اس رمضان شریف میں پانچ بجے تک کسی طرح وقت نہ تھا جبکہ پانچ بجے تک سحری کھائی تو روزہ بلا شبہ ہوا ہی نہیں کہ توڑنا صادق آئے قضا لازم ہے اور کفارہ نہیں، ہاں رمضان مبارک میں اگر کسی وجہ سے روزہ نہ ہو تو غیر معذور شرعی کو دن بھر روزہ کی طرح رہنا واجب اور کھانا پینا حرام، ایک بجے کھانا کھا لیا یہ دوسرا گناہ ہوا، توبہ فرض ہے واللہ تعالیٰ اعلم ایک روزہ کی قضا ایک ہی ہے ساٹھ کا حکم کفارہ میں ہے کہ کسی نے بلا عذر شرعی رمضان المبارک کا ادا روزہ جس کی نیت رات سے کی تھی بالقصد کسی غذا یا دوا یا نفع رساں شئی سے توڑ ڈالا اور شام تک کوئی ایسا عارضہ لاحق نہ ہوا جس کے باعث شرعاً آج روزہ رکھنا ضرورت نہ ہوتا تو اُس مجرم کے جرمانہ میں ساٹھ روزے پے در پے رکھنے ہوتے ہیں ویسے جو روزہ نہ رکھا ہو اس کی قضا صرف ایک روزہ ہے واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۳۲: از گونڈل علاقہ کاٹھیاواڑ مسئولہ عبدالستار بن محمد اسمعیل ۱۲ رجب ۱۳۳۴ھ ماہِ رمضان المبارک میں ایک شخص نے قبل صبح صادق سحری کا کھانا کھا کر روزے کی نیت کر

کے کھانا پینا بند کیا، بعد اس کے اپنی منکوحہ سے خوش طبعی کرتے ہوئے بلا جماع منزل ہوا اور یہ امر قبل صبح صادق یا بعد صبح صادق ہوا اب اس کا روزہ رہا یا قضا کرے یا کفارہ دے؟ اور عورت کے لیے کیا حکم ہے؟ الجواب: عورت کے لئے کچھ حکم نہیں اور مرد پر بھی کفارہ نہیں، اور اگر انزال قبل صبح صادق ہوا تو قضا بھی نہیں، اور بعد صبح صادق ہوا اور اس وقت مس وغیرہ نہیں کر رہا تھا اُس کے بعد مجرد بقائے تصور سے واقع ہوا جب بھی قضا نہیں، ورنہ اس روزہ کو پورا کرے اور ایک روزہ اس کے عوض رکھے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

صفحہ 526 از 836

Fatawa Razawiyya Volume 10

Problem 233: What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say regarding this matter: if two gentlemen force a person to break their fast, what is the ruling for them? And what should the person who breaks the fast do, and what is the ruling for them? If a fast is broken due to someone else's pressure, what will be the ruling for both parties?

The Answer: One who forcibly makes someone break an obligatory Sharia fast without necessity or Sharia compulsion is a personification of Satan and deserves the fire of Hell. And for the one who breaks an obligatory fast just because of someone's pressure or coercion, without a true compulsion, there is punishment. If it was a fast of Ramadan, then according to the conditions, expiation (kaffarah) is obligatory upon them, which involves fasting for sixty consecutive days. And Allah Almighty knows best. From Lahore, queried by Gulab Khalifa, 11 Safar al-Muzaffar 1334 AH.

Problem 234: To the honorable presence of the noble family, may your prosperity continue. After offering respects, the humble submission is: regarding a person who does not fast in this month of Ramadan and wants to complete the fasts later as per the Messenger's command, please write [the ruling], because they do not have the strength to keep them this month due to physical weakness and infirmity. I am troubling you for this reason, please write clearly. Also, a person does not fast but has a woman fast on their behalf; please state whether a man must have a man [fast for him] or a woman a woman? It is a non-mahram woman who is fasting for him. That's all.

The Answer: A person who is so ill that they cannot fast—fasting would harm them, increase the illness, or prolong its duration—and this is proven by experience or by the statement of a skilled Muslim physician who is not a sinner (fasiq), then for as many days as this condition lasts, even if the entire month, they can skip the fasts. After regaining health, they must keep the missed fasts (qada), from one to thirty days. Having someone else fast in one's place is completely invalid and meaningless. Bodily worship performed by one cannot absolve another; neither by a man fasting for a man nor for a woman. And Allah Almighty knows best.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (भाग 10)

मसला २३३: दीन के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अगर दो व्यक्ति किसी व्यक्ति का रोज़ा ज़बरदस्ती तुड़वा दें, तो उनके लिए क्या हुक्म है? और जो व्यक्ति रोज़ा तोड़े वह क्या करे और उसके लिए क्या हुक्म है? यदि किसी दूसरे के दबाव डालने से रोज़ा तोड़ा जाए, तो दोनों पक्षों के लिए क्या हुक्म होगा?

उत्तर: बिना किसी ज़रूरत और शरीय मजबूरी के ज़बरदस्ती फ़र्ज़ रोज़ा तुड़वाने वाला साक्षात शैतान है और जहन्नम की आग का हक़दार है। और बिना किसी सच्ची मजबूरी के महज़ किसी के दबाव डालने या हावी होने की वजह से फ़र्ज़ रोज़ा तोड़ देने वाले पर अज़ाब (दंड) है। और अगर वह रमज़ान का रोज़ा था, तो शर्तों के अनुसार उस पर कफ़्फ़ारा वाजिब है, जिसमें साठ रोज़े लगातार रखने होते हैं। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। लाहौर से, पूछने वाले: गुलाब ख़लीफ़ा, ११ सफ़र अल-मुज़फ़्फ़र १३३४ हिजरी।

मसला २३४: महान परिवार के आदरणीय हज़रात की सेवा में, आपकी समृद्धि बनी रहे। आदाब पेश करने के बाद, तुच्छ निवेदन यह है कि जो व्यक्ति रमज़ान के इस महीने में रोज़ा न रखे और बाद में पूरे रोज़े रखे जैसा कि रसूल का हुक्म हो, इस बारे में लिख कर बताएँ क्योंकि इस महीने में रोज़ा रखने की ताक़त नहीं है, शरीर में कमज़ोरी और निर्बलता है। मैं आपको इस कारण कष्ट दे रहा हूँ, कृपया साफ़ तौर पर लिख कर बताएँ। और एक व्यक्ति रोज़ा नहीं रखता है, अपनी जगह एक औरत से रोज़ा रखवाता है; आप बताएँ कि क्या मर्द का मर्द को (रोज़ा रखना) लाज़िम है या औरत का औरत को? वह एक ग़ैर औरत है जिससे वह रोज़ा रखवाता है। फ़क़त।

उत्तर: जो ऐसा मरीज़ है कि रोज़ा नहीं रख सकता—रोज़ा रखने से उसे नुक़सान होगा, बीमारी बढ़ेगी या स्वास्थ्य लाभ में देरी होगी—और यह बात अनुभव से सिद्ध हो या किसी ऐसे कुशल मुस्लिम डॉक्टर (तबीब) के बयान से हो जो गुनाहगार (फ़ासिक़) न हो, तो जितने दिनों तक यह स्थिति रहे, चाहे पूरा महीना ही क्यों न हो, वह रोज़ा छोड़ सकता है और स्वस्थ होने के बाद उसकी क़ज़ा रखे, जितने रोज़े छूटे हों, एक से तीस तक। अपने बदले दूसरे से रोज़ा रखवाना पूरी तरह बातिल (अमान्य) और अर्थहीन है। शारीरिक इबादत एक के करने से दूसरे के ऊपर से नहीं उतर सकती, न मर्द के बदले मर्द के रखने से, न औरत के। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

पेज 527 ऑफ़ 836

فتاوی رضویہ جلد دہم

مسئلہ ۲۳۳: کیا فرماتے ہیں علمائے دین ومفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ اگر دو صاحب کسی شخص کا روزہ زبردستی تڑوا دیں ان کے لیے کیا حکم ہے؟ اور جو صاحب روزہ توڑیں وہ کیا کریں اور اُن کے لیے کیا حکم ہے؟ دوسرے کسی صاحب کے بار ڈالنے سے روزہ توڑا جائے تو ہر دو صاحبان کے لئے کیا حکم ہوگا؟

الجواب: بلا ضرورت و مجبوری شرعی فرض روزہ زبردستی تڑوانے والا شیطان مجسم و مستحقِ نارِ جہنم ہے اور بغیر سچی مجبوری کے فقط کسی کے بار ڈالنے یا زیر کرنے سے فرض روزہ توڑ دینے والے پر عذاب ہے، اور روزہ ادائے رمضان تھا تو حسب شرائط اس پر کفارہ واجب جس میں ساٹھ روزے لگاتار رکھنے ہوتے ہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ از لاہور مسئولہ گلاب خلیفہ ۱۱ صفر المظفر ۱۳۳۴ھ

مسئلہ ۲۳۴: بخدمت شریف جناب عالی خاندان دام اقبالکم بعد ادائے آداب کے عرضِ کمترین کی یہ ہے کہ جو شخص اس ماہِ رمضان میں روزہ نہ رکھے اور بعد میں پورا روزہ رکھے جس طرح حکم رسول ہو تحریر فرمائیں کیونکہ اس ماہ میں طاقت نہیں ہے رکھنے کی، کمزوری و ناقتی بدن میں ہے۔ جناب کو اس وجہ پر تکلیف دیتا ہوں صاف تحریر فرمائیں، اور ایک شخص روزہ نہیں رکھتا ہے اپنے عوض ایک عورت کو روزہ رکھتا ہے، آپ فرمائیں مرد کا مرد کو لازم ہے یا عورت کا عورت کو؟ غیر عورت ہے جس کو روزہ رکھتا ہے۔ فقط

الجواب: جو ایسا مریض ہے کہ روزہ نہیں رکھ سکتا روزہ سے اُسے ضرر ہوگا، مرض بڑھے گا یا دن کھینچیں گے، اور یہ بات تجربہ سے ثابت ہو یا مسلم طبیبِ حاذق کے بیان سے جو فاسق نہ ہو

تو جتنے دنوں یہ حالت رہے اگرچہ پورا مہینہ وہ روزہ ناغہ کرسکتا ہے اور بعد صحت اس کی قضا رکھے، جتنے روزے چھوٹے ہوں ایک سے تیس تک۔ اپنے بدلے دوسرے کو روزہ رکھوانا محض باطل وبے معنی ہے، بدنی عبادت ایک کے کئے دوسرے پر سے نہیں اُتر سکتی، نہ مرد کے بدلے مرد کے رکھنے سے نہ عورت کے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

صفحہ 527 از 836

Fatawa Razawiyya Volume 10

Chapter of Fidyah (Redemption)

Problem 235: Asked by Qazi Abdul Hamid Sahib, Prayer Leader from the town of Kakri, 28 Muharram 1332 AH.

What do the scholars of religion and the experts of the illustrious Sharia say regarding this matter: if an Imam does not fast due to an excuse but instead feeds one poor person daily for the certain replacement of the fast, is he allowed to lead the Tarawih prayer or not? And is there any harm in him leading the Tarawih? Please provide an answer.

The Answer: Some ignorant people have assumed that fidyah (redemption) for fasting is permissible for everyone if they face any difficulty during the fast. This is absolutely not the case. Fidyah is only prescribed for a "Shaikh-e-Faani" (an extremely old person) who, due to advanced age, truly lacks the strength to fast, and there is no hope of future strength because weakness will increase with age. The command of fidyah is for such an individual. A person who is capable of fasting and is not suffering from an illness where fasting would be harmful must fast himself, even if it is difficult. The discomfort of hunger, thirst, heat, and dryness is, essentially, an integral part of fasting, and fasting was commanded for this very purpose. If not fasting were permitted due to fear of these difficulties, then, God forbid, the command to fast would become meaningless and redundant. If the mentioned Imam is genuinely suffering from an illness where fasting would cause harm, he is permitted to defer (qada) the fast until he recovers. If he feeds a poor person in the meantime, it is commendable and carries reward, provided he does not consider it a substitute for the fast and maintains a sincere intention to fast the missed days once he regains his health. In this situation, he can lead the prayers. However, if he is not suffering from such an illness and misses fasts due to a lack of resolve, then he is a grave sinner (fasiq). Appointing him as an Imam is a sin, and performing prayer behind him is prohibitively disliked (Makruh-e-Tahrimi). And Allah the Almighty knows best.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

बाब-उल-फ़िदिया (प्रायश्चित का अध्याय)

मसला 235: प्रेषक: क़ाज़ी अब्दुल हमीद साहब, पेश इमाम, कस्बा ककड़ी, 28 मुहर्रम 1332 हिजरी।

दीन के उलेमा और शरीयत के माहिर इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि अगर इमाम किसी उज़्र (बहाने/कारण) की वजह से रोज़ा नहीं रखता, लेकिन रोज़े के बदले में यक़ीनी तौर पर हर रोज़ एक मिस्कीन (ग़रीब) को खाना खिला देता है, तो क्या वह तरावीह की नमाज़ पढ़ा सकता है या नहीं? और तरावीह पढ़ाने में कोई हर्ज तो नहीं है? जवाब अता फ़रमाएँ।

जवाब: कुछ जाहिलों ने यह समझ लिया है कि रोज़े का फ़िदिया हर उस शख़्स के लिए जायज़ है जिसे रोज़े में थोड़ी तकलीफ़ हो। ऐसा हरगिज़ नहीं है। फ़िदिया सिर्फ़ 'शैख़-ए-फ़ानी' (अत्यंत वृद्ध व्यक्ति) के लिए है, जो बुढ़ापे की वजह से रोज़ा रखने की ताक़त नहीं रखता और न ही भविष्य में ताक़त की उम्मीद है, क्योंकि उम्र बढ़ने के साथ कमज़ोरी ही बढ़ेगी। ऐसे शख़्स के लिए फ़िदिया का हुक्म है। जो शख़्स ख़ुद रोज़ा रख सकता हो और वह ऐसा मरीज़ न हो जिसे रोज़ा रखने से नुक़सान होता हो, उस पर ख़ुद रोज़ा रखना फ़र्ज़ है, चाहे कितनी ही तकलीफ़ हो। भूख, प्यास, गर्मी और खुश्की की तकलीफ़ तो रोज़े का हिस्सा है, और रोज़े का हुक्म इसी हिकमत के लिए दिया गया है। अगर इन चीज़ों के डर से रोज़ा न रखने की इजाज़त मिल जाए, तो माज़ अल्लाह रोज़े का हुक्म ही बेकार और बेअसर हो जाएगा। अगर ज़िक्र किया गया इमाम वाक़ई किसी ऐसी बीमारी में मुब्तला है जिसमें रोज़ा रखने से नुक़सान पहुँचता है, तो सेहत मिलने तक उसे रोज़ा क़ज़ा करने की इजाज़त है। इस दौरान अगर वह किसी मिस्कीन को खाना खिला दे तो यह मुस्तहब (पसंदीदा) है और इसमें सवाब है, बशर्ते कि वह इसे रोज़े का बदल न समझे और सच्चे दिल से यह नियत रखे कि जब सेहतयाब होगा तो जितने रोज़े क़ज़ा हुए हैं उन्हें पूरा करेगा। इस सूरत में वह इमामत कर सकता है। लेकिन अगर वह वैसा मरीज़ नहीं है और महज़ कम-हिम्मती की वजह से रोज़े छोड़ता है, तो वह सख़्त फ़ासिक़ है। उसे इमाम बनाना गुनाह है और उसके पीछे नमाज़ पढ़ना मकरूह-ए-तहरीमी है। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

पृष्ठ 836 में से 528

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

باب الفدیہ

مسئلہ ۲۳۵: مسئولہ قاضی عبدالحمید صاحب پیش امام از قصبہ ککڑی ۲۸ محرم ۱۳۳۲ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین و فضلائے شرع متین اس مسئلہ میں کہ امام اگر عذر سے روزہ نہیں رکھتا ہے پر اعادہ روزہ کا یقینی ایک مسکین کو ہمیشہ کھانا کھلا دیتا ہے مگر نماز تراویح پڑھا سکتا ہے یا نہیں؟ اور تراویح کے پڑھانے میں حرج تو نہیں ہے؟ جواب دو

الجواب: بعض جاہلوں نے یہ خیال کر لیا ہے کہ روزہ کا فدیہ ہر شخص کے لئے جائز ہے جبکہ روزے میں اسے کچھ تکلیف ہو، ایسا ہر گز نہیں، فدیہ صرف شیخ فانی کے لیے رکھا ہے جو بہ سبب پیرانہ سالی حقیقۃً روزہ کی قدرت نہ رکھتا ہو، نہ آئندہ طاقت کی امید کہ عمر جتنی بڑھے گی ضعف بڑھے گا اُس کے لیے فدیہ کا حکم ہے، اور جو شخص روزہ خود رکھ سکتا ہو اور ایسا مریض نہیں جس کے مرض کو روزہ مضر ہو، اس پر خود روزہ رکھنا فرض ہے اگر چہ تکلیف ہو۔ بھوک پیاس گرمی خشکی کی تکلیف تو گویا لازمِ روزہ ہے اور اسی حکمت کے لیے روزہ کا حکم فرمایا گیا ہے، اس کے ڈر سے اگر روزہ نہ رکھنے کی اجازت ہو تو معاذ اللہ روزے کا حکم ہی بیکار و معطل ہو جائے، امام مذکور اگر واقعی کسی ایسے مرض میں مبتلا ہے جسے روزہ سے ضرر پہنچتا ہے تو تا حصولِ صحت اُسے روزہ قضا کرنے کی اجازت ہے اُس کے بدلے اگر مسکین کو کھانا دے تو مستحب ہے ثواب ہے جبکہ اُسے روزہ کا بدلہ نہ سمجھے اور سچے دل سے نیت رکھے کہ جب صحت پائے گا جتنے روزے قضا ہوئے ہیں ادا کرے گا۔ اس صورت میں

وہ امامت کر سکتا ہے اور اگر ویسا مریض نہیں اور کم ہمتی کے سبب روزے قضا کرتا ہے تو سخت فاسق ہے اور اسے امام بنانا گناہ، اور اس کے پیچھے نماز مکروہِ تحریمی۔ واللہ تعالیٰ اعلم

Fatawa Razawiya Volume 10

1316 AH Explanations of the Rulings for the Compensation (Fidya) of Prayer and Fasting (Detailed rulings on the fidya for prayers and fasts after death)

www.dawateislami.net

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. Allah is the Lord of Muhammad, peace and blessings be upon him.

Problem 236 to 247: From Patna, Lodi Katra locality, sent by Qazi Muhammad Abdul Wahid Sahib Firdausi, 10 Safar 1316 AH. In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. All praise is due to Allah, Lord of the worlds. What do the scholars of religion say regarding these matters:

(1) The fidya for the fasts of the deceased person, which is written in books of jurisprudence as half a sa' (measure) of wheat or one sa' of barley; how has this weight been equated with the weights in India? In books of jurisprudence, where it is written as two seers of wheat or four seers of barley per fast, is that calculated at 20 'gande' (units) or nineteen 19 'gande'? In short, if someone in Patna district wants to give fidya, by what weight should they give it per fast?

(2) In which category will the calculation for rice be: wheat or barley? That is, will 2 'asar' (units) of rice be given per fast like wheat, or 4 'asar' like barley? And if rice can be given, are all types of rice calculated the same, or are Basmati, Saleema, Joshanda like wheat, and coarse rice like barley?

फ़तावा रज़विया जिल्द १०

१३१६ हिजरी नमाज़ और रोज़े के फ़िदिया (मुआवज़ा) के अहकाम की व्याख्या (मृत्यु के बाद नमाज़ और रोज़े के फ़िदिया के विस्तृत नियम)

www.dawateislami.net

बिस्मिल्लाहिर रहमानिर रहीम अल्लाह मुहम्मद का रब है, उन पर शांति और आशीर्वाद हो।

मसला २३६ से २४७: पटना, मोहल्ला लोदी कटरा से प्रेषित, काज़ी मुहम्मद अब्दुल वाहिद साहब फ़िरदौसी द्वारा, १० सफ़र १३१६ हिजरी। बिस्मिल्लाहिर रहमानिर रहीम। अल्हम्दुलिल्लाहि रब्बिल आलमीन। इन मसलों में दीन के उलेमा क्या फ़रमाते हैं:

(१) मृतक के रोज़े का फ़िदिया जो फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) की किताबों में आधा सा' (एक माप) गेहूँ या एक सा' जौ लिखा है, उस वज़न का मिलान इस हिन्दुस्तान के किस वज़न के बराबर किया गया है? फ़िक़्ह की किताबों में जो प्रति रोज़ा दो सेर गेहूँ या चार सेर जौ लिखा है, क्या वह २० 'गंडे' के हिसाब से है या उन्नीस १९ 'गंडे' के? संक्षेप में, यदि पटना ज़िले में कोई व्यक्ति फ़िदिया देना चाहे तो वह प्रति रोज़ा किस वज़न से देगा?

(२) चावल का हिसाब किस श्रेणी में होगा: गेहूँ में या जौ में? यानी प्रति रोज़ा चावल गेहूँ की तरह २ 'असार' दिया जाएगा या जौ की तरह ४ 'असार'? और यदि चावल दिया जा सकता है, तो क्या चावल की सभी किस्में एक ही हिसाब में हैं, या बासमती, सलीमा, जोशांदा गेहूँ की तरह हैं और मोटा चावल जौ की तरह है?

पृष्ठ ८३६ में से ५३०

۱۳۱۶ھ تَفاسیر الاحکام لِفدیۃ الصّلوٰۃ والصّیام (بعد از موت نماز و روزہ کے فدیہ کے تفصیلی احکام)

www.dawateislami.net

بسم اللہ الرحمٰن الرحیم ط اللہ رب محمد صلی علیہ وسلم

مسئلہ ۲۳۶ تا ۲۴۷: از پٹنہ محلہ لودی کٹرہ مرسلہ قاضی محمد عبدالوحید صاحب فردوسی ۱۰ صفر ۱۳۱۶ھ بسم اللہ الرحمٰن الرحیم الحمد للہ رب العالمین کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسئلوں میں :

(۱) موتی کے روزہ کا فدیہ جو فقہ کی کتابوں میں نصف صاع گیہوں یا ایک صاع جو لکھا ہے، اس وزن کی تطبیق اس ہندوستان کے کس وزن کے برابر کی گئی ہے، کتب فقہ میں جو فی روزہ دو سیر گیہوں یا چار سیر جو لکھا ہے وہ ہیں ۲۰ گنڈے کے حساب سے ہے یا انیس ۱۹ گنڈے کے؟ غرض پٹنہ ضلع میں اگر کوئی شخص فدیہ دینا چاہے تو وہ کس وزن سے فی روزہ دے گا؟

(۲) چاول کا حساب کس چیز میں ہو گا گیہوں میں یا جو میں؟ یعنی فی روزہ چاول مثل گیہوں کے ۲ اثار یا مثل جو کے ۴ اثار دیا جائے گا؟ اور اگر چاول دیا جاسکتا ہے تو کل اقسام کے چاول ایک ہی حساب میں ہیں یا باسمتی، سلیما، جو شاندہ مثل گیہوں کے اور موٹا چاول مثل جو کے ہے؟

Fatawa Razawiyya Volume 10

(3) Can paddy (dhan), like barley, be given at the rate of four (4) seers per fast or not? (4) If someone has many previous fasts for which fidyah (expiation) is due, should it be paid all at once or can it be paid in installments? For example, if the late Zaid owes fidyah for 30 fasts, should sixty (60) seers of wheat be given all at once, or is it permissible to give it in portions of one or two seers at a time? Another scenario arises: if Zaid only owes fidyah for one fast, can he give those two seers of wheat in portions of a quarter-pao each eight times, or half-seer portions four times, or not? (5) Can the fidyah for multiple fasts be given to one person on the same day, or should it be given to different people over different days? For example, if the late Zaid owed fidyah for ten fasts, can it all be given to one person at once in a single day, or to one person continuously for ten days, or to ten people in a single day, or to ten different people over ten days? Four forms of this emerge, which are as follows: First form: All ten fasts' fidyah is given to one person at once on a single day. Second form: It is given to the same person continuously for ten days. Third form: It is given to ten people in a single day. Fourth form: It is given to ten people over ten days. Are all four of these forms permissible or not? (6) Who are the people eligible for this? Can it be given to a Syed? Is there a ruling to give it to poor relatives? If it is given to household servants without deducting it from their salary or meals, is it permissible or not? (7) Is it better to give grain or its equivalent price based on the market rate at that time; which is more appropriate? And does the same rule apply to cash as to grain, or is there a difference? (8) If a poor person owes some money as a debt and is eligible to receive fidyah, can that debt be counted as the fidyah for fasts or not? (9) While paying fidyah, is it necessary to say the words "this grain or cash is the fidyah for such-and-such person's fast," or is "Innamal A'malu bin Niyat"[1] (Actions are judged by intentions) sufficient?

[1] Sahih Bukhari, Chapter: How Revelation Started, Qadeemi Kutub Khana Karachi 1/2

(3) क्या धान, जौ की तरह, प्रति रोज़ा चार (4) सेर दिया जा सकता है या नहीं? (4) यदि किसी पर पिछले बहुत से रोज़ों का फ़िदिया (प्रायश्चित) बकाया है, तो क्या वह सारा एक ही बार में अदा करे या किश्तों में दे सकता है? उदाहरण के लिए, यदि स्वर्गीय ज़ैद के ज़िम्मे 30 रोज़ों का फ़िदिया बाकी है, तो क्या साठ (60) सेर गेहूँ एक ही बार में देना चाहिए या एक-एक, दो-दो करके अदा करने की अनुमति है या नहीं? इसमें एक स्थिति यह भी निकलती है कि यदि ज़ैद के ज़िम्मे केवल एक ही रोज़े का फ़िदिया बाकी हो, तो क्या वह उन दो सेर गेहूँ को पाव-पाव करके8 बार में या आधा-आधा सेर करके4 बार में दे सकता है या नहीं? (5) कई रोज़ों का फ़िदिया एक ही दिन में एक ही व्यक्ति को दे सकते हैं या रोज़-रोज़ अलग-अलग लोगों को देना चाहिए? उदाहरण के लिए, यदि स्वर्गीय ज़ैद के ज़िम्मे दस रोज़ों का फ़िदिया देना था, तो क्या यह सारा एक ही व्यक्ति को एक ही दिन में एक साथ दे दिया जाए, या एक ही आदमी को लगातार दस दिन तक दिया जाए, या एक ही दिन में दस आदमियों को दिया जाए, या दस दिन करके अलग-अलग दस आदमियों को दिया जाए। इसकी चार स्थितियाँ बनती हैं, जो इस प्रकार हैं: पहली स्थिति: एक ही दिन एक ही व्यक्ति को दसों रोज़ों का फ़िदिया एक साथ दे दिया जाए। दूसरी स्थिति: एक ही आदमी को दस दिनों तक बराबर दिया जाए। तीसरी स्थिति: एक ही दिन में दस आदमियों को दिया जाए। चौथी स्थिति: दस दिन करके दस आदमियों को दिया जाए। क्या ये चारों स्थितियाँ जायज़ हैं या नहीं? (6) इसके पात्र (मुस्तहिक) कौन-कौन लोग हैं? क्या सैय्यद को दे सकते हैं या नहीं? क्या रिश्तेदारों में जो गरीब हैं उन्हें देने का हुक्म है या नहीं? घर के नौकर-चाकर को अगर दें और उनके वेतन या भोजन से न काटें, तो जायज़ है या नहीं? (7) अनाज देना बेहतर है या उसकी कीमत तय करके जो उस समय बाज़ार भाव हो, कौन सा अधिक उपयुक्त है? और नकद रुपये का भी वही हुक्म है जो अनाज का है, या कोई अंतर है? (8) यदि किसी गरीब पर रुपये का कर्ज बकाया है और वह फ़िदिया पाने का पात्र है, तो क्या वह रुपया रोज़े के फ़िदिया में दे सकता है या नहीं? (9) फ़िदिया अदा करते समय क्या ये शब्द कहना ज़रूरी है कि "यह अनाज या नकद फ़लां के रोज़े का फ़िदिया है" या "इन्नमल आमालु बिन निय्यात"[1] (कर्मों का दारोमदार नीयतों पर है) काफी है?

[1] सही बुखारी, अध्याय: वह्य कैसे शुरू हुई, क़दीमी कुतुब खाना कराची 1/2 पृष्ठ 836 में से 531

(۳) دھان مثل جو کے فی روزہ چار ۴ سیر دے سکتے ہیں یا نہیں؟ (۴) فدیہ روزہ کا اگر کسی کے ذمہ بہت سابقہ ہے تو وہ کل بیک وقت ادا کرے یا دفعات جزو جزو کر کے دے سکتا ہے مثلاً زید متوفی کے ذمہ ۳۰ روزوں کا فدیہ باقی ہے تو یہ ۶۰ ساٹھ سیر گیہوں بیک وقت دینا چاہئے یا ایک ایک دودو کر کے ادا کر دینے کا مجاز ہے کہ نہیں؟ اس میں ایک صورت یہ بھی نکلتی ہے کہ اگر زید کے ذمہ ایک ہی روزہ کا فدیہ باقی رہے تو وہ اس دو سیر گیہوں کو پاؤ پاؤ کر کے ۸ دفعہ یا آدھ آدھ سیر کر کے ۴ دفعہ دے سکتا ہے یا نہیں؟ (۵) متعدد روزوں کا فدیہ کل ایک ہی دن ایک شخص کو دے سکتے ہیں یا روز روز دوسرے دوسرے کو دینا چاہئے؟ مثلاً زید متوفی کے ذمہ دس روزوں کا فدیہ چاہئے تھا اگر یہ ادا کیا جائے تو کل ایک ہی شخص کو ایک ہی دن بیک وقت بیک دفعہ دے دے یا ایک ہی آدمی کو دس روز پیہم دے یا ایک ہی دن میں دس آدمیوں کے دے دے یا دس روز کر کے دوسرے دوسرے کو دے، اس کی چار ۴ شکلیں نکلیں، وھو ھذا: شکل اول: ایک ہی دن ایک شخص کو کل دسوں روزوں کا بیک دفعہ بیک وقت دیا جائے۔ شکل دوم: ایک ہی آدمی کو دس روزوں تک برابر دیا جائے۔ شکل سوم: ایک ہی دن میں دس آدمیوں کو دیا جائے۔ شکل چہارم: دس روز کر کے دس آدمیوں کو دیا جائے۔ یہ چاروں شکلیں جائز ہیں یا نہیں؟ (۶) اس کے مستحق کون کون اشخاص ہیں؟ سید کو دے سکتے ہیں یا نہیں؟ اقربا میں جو لوگ غریب ہیں ان کو دینے کا حکم ہے یا نہیں؟ گھر کے نوکر چاکر کو اگر دیں اور مشاہرہ یا کھانے میں وضع نہ کریں تو جائز ہے یا نہیں؟ (۷) غلہ دینا بہتر ہے یا اس کی قیمت باندھ کر جو اُس زمانہ میں نرخ بازار ہو، کون زیادہ مناسب ہے؟ اور نقد روپیہ کا بھی کل وہی حکم ہے جو غلہ کا ہے یا فرق ہے؟ (۸) اگر کسی غریب کے ذمہ روپیہ قرض کا باقی ہے اور فدیہ پانے کا مستحق ہے تو وہ روپیہ فدیہ

میں روزے کے دے سکتا ہے یا نہیں؟ (۹) فدیہ ادا کرتے وقت یہ لفظ کہنا چاہئے کہ یہ غلہ یا نقد فلاں کے روزہ کا فدیہ ہے یا انما الاعمال بالنیات ۱ (اعمال کا دارومدار نیتوں پر ہے۔ت) کافی ہے؟

۱ صحیح بخاری باب کیف کان بدو الوحی قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۲ Page 531 of 836

Fatawa-e-Razvia - Volume 10

(10) Is there a difference in the rulings for the fidyah (expiation) of a frail old person (shaikh fani) and a deceased person, or is the ruling the same for both? If there is a difference, what is it? (11) If a person gives fidyah for missed fasts while still alive, even though they are not a frail old person, is that fast waived from them or not? (12) If Zaid passed away and had obligatory fasts remaining, can his heirs or relatives observe those fasts on his behalf or not? Please explain and be rewarded.

The Answer: (1) Weights vary by region, so we provide calculations in tolas and British Rupees so that everyone can easily adapt them to their local prevailing weights. The fidyah or expiation for one fast or one prayer, or the Sadaqah al-Fitr for one person, is half a saa' of wheat and one saa' of barley. A saa' is two hundred and seventy (270) tolas, and half a saa' is one hundred and thirty-five (135) tolas. One tola is twelve mashas, one masha is eight rattis, and one ratti is eight grains of rice. The prevailing British silver rupee coin is eleven mashas. It is stated in Radd al-Muhtar:

Arabic Original	**Urdu Translation**
Know that the saa' is four muds, and the mud is forty istars, and the istar (with a kasra on the hamza) is four and a half mithqals, as stated in the commentary of Durar al-Bihar. Excerpt concluded.	It should be known that a saa' is four muds, a mud is forty istars, and an istar is four and a half mithqals, as mentioned in the commentary of Durar al-Bihar. (T)

A saa' is four muds, each mud is forty istars, and each istar is four and a half mithqals. Thus, each mud is one hundred and eighty (180) mithqals, and a mithqal is four and a half mashas. Therefore, the Shari'i dirham, which is 7/10 (seven-tenths) of a mithqal...

Arabic Original	**Urdu Translation**
In al-Durr al-Mukhtar: Every ten dirhams are equal in weight to seven mithqals.	In Dur-e-Mukhtar it is: Every ten dirhams are equal to the weight of seven mithqals. (T)

...is twenty-five rattis and one-fifth of a ratti, which means 3 mashas and 1-1/5 surkh. It is stated in Jawahir al-Akhlati:

Arabic Original	Urdu Translation
The Shari'i dirham is twenty-five grains and one-fifth of a grain.	The Shari'i dirham is twenty-five rattis and one-fifth of a ratti. (T)

1. Radd al-Muhtar, Chapter of Sadaqat al-Fitr, Mustafa al-Babi Egypt, 2/83.
2. Al-Durr al-Mukhtar, Chapter of Zakat al-Mal, Mujtabai Delhi, 1/133.
3. Al-Jawahir al-Akhlati (Manuscript), Book of Zakat, p. 22.

फ़तावा-ए-रज़विया - जिल्द दस

(10) क्या एक बूढ़े व्यक्ति (शेख-ए-फ़ानी) और एक मृतक के फ़िदया (प्रायश्चित) के नियमों में कोई अंतर है, या दोनों के लिए नियम समान है? और यदि अंतर है, तो वह क्या है? (11) यदि कोई व्यक्ति जीवित रहते हुए ही छोड़े गए रोज़ों का फ़िदया दे देता है, जबकि वह बूढ़ा और कमज़ोर (शेख-ए-फ़ानी) नहीं है, तो क्या वह रोज़ा उसके ज़िम्मे से खत्म हो जाएगा या नहीं? (12) यदि ज़ैद का निधन हो गया और उस पर कुछ अनिवार्य रोज़े शेष रह गए, तो क्या उसके उत्तराधिकारी या रिश्तेदार उन रोज़ों के बदले रोज़ा रख सकते हैं या नहीं? कृपया मार्गदर्शन करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: (1) अलग-अलग शहरों में वज़न अलग-अलग होते हैं, इसलिए हम तोले और ब्रिटिश रुपयों के अनुसार हिसाब बता रहे हैं ताकि हर व्यक्ति अपने यहाँ प्रचलित वज़न के साथ इसे आसानी से जोड़ सके। एक रोज़ा या एक नमाज़ का फ़िदया या कफ़्फ़ारा, या एक व्यक्ति का सदक़ा-ए-फ़ित्र, ये सब गेहूं से आधा साअ (sa') और जौ से एक साअ है। साअ दो सौ सत्तर (270) तोले है, आधा साअ एक सौ पैंतीस (135) तोले है। एक तोला बारह माशे, एक माशा आठ रत्ती, और एक रत्ती आठ चावल के बराबर है। प्रचलित ब्रिटिश चांदी का रुपया ग्यारह माशे का है। 'रद्दुल मुहतार' में उल्लेख है:

अरबी मूल	**उर्दू अनुवाद**
जान लें कि साअ चार मुद (mud) है, और मुद चालीस इस्तार (istar) है, और इस्तार (हमज़ा पर ज़ेर के साथ) साढ़े चार मिस्काल (mithqal) है, जैसा कि दुर्रुल बिहार की व्याख्या में संक्षिप्त रूप में है।	यह ज्ञात होना चाहिए कि साअ चार मुद है, और मुद चालीस इस्तार है, और इस्तार साढ़े चार मिस्काल है, जैसा कि दुर्रुल बिहार की व्याख्या में है। (त)

साअ चार मुद है, हर मुद चालीस इस्तार है और हर इस्तार साढ़े चार मिस्काल है, तो हर मुद एक सौ अस्सी (180) मिस्काल हुआ, और मिस्काल साढ़े चार माशे का है। और इसलिए शरीअती दिरहम, जो मिस्काल का 7/10 (सात-दसवां) हिस्सा है...

अरबी मूल	**उर्दू अनुवाद**
दुर्रुल मुख्तार में है: प्रत्येक दस दिरहम का वज़न सात मिस्काल के बराबर है।	दुर-ए-मुख्तार में है: प्रत्येक दस दिरहम का वज़न सात मिस्काल के बराबर है। (त)

...पच्चीस रत्ती और रत्ती का पाँचवाँ हिस्सा हुआ, यानी 3 माशा 1-1/5 सुर्ख। 'जवाहरुल अख़्लाती' में है:

अरबी मूल	उर्दू अनुवाद
शरीअती दिरहम पच्चीस दाने और दाने का पाँचवाँ हिस्सा है।	शरीअती दिरहम पच्चीस रत्तियाँ और रत्ती का पाँचवाँ हिस्सा है। (त)

1. रद्दुल मुहतार, बाब सदक़ा अल-फ़ित्र, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/83
2. अल-दुर्रुल मुख्तार, बाब ज़कात अल-माल, मुज्तबाई दिल्ली, 1/133
3. अल-जवाहरुल अख़्लाती (हस्तलिखित), किताब अल-ज़कात, पृष्ठ 22

(۱۰) شیخ فانی اور موتی کے فدیہ کے احکام میں کوئی فرق ہے یا دونوں کا ایک حکم ہے، اور اگر فرق ہے تو وہ کونسا فرق ہے؟ (۱۱) اگر اپنی زندگی میں ہی روزہ قضا شدہ کا فدیہ کوئی شخص دے دے حالانکہ وہ شیخ فانی نہیں ہے تو وہ روزہ اس سے ساقط ہو گیا یا نہیں؟ (۱۲) اگر زید نے انتقال کیا اور اس کے ذمہ روزہ فرض باقی رہ گیا ہے تو اس کے وارث یا اقربا اس روزہ کے بدلے میں روزہ رکھ سکتے ہیں یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: (۱) وزن بلاد میں مختلف ہوتے ہیں لہذا ہم تولوں اور انگریزی روپوں کا حساب بتاتے ہیں کہ ہر شخص اپنے یہاں کے وزن رائج کو باسانی اس سے تطبیق دے سکے، ایک روزہ یا ایک نماز کا فدیہ یا کفارہ میں ایک مسکین کی خوراک یا ایک شخص کا صدقہ فطر یہ سب گیہوں سے نیم صاع اور جو سے ایک صاع ہے۔ صاع دوسو ستر ۲۷۰ تولے ہے، نیم صاع ایک سو پینتیس ۱۳۵ تولے۔ تولہ بارہ ماشہ ، ماشہ آٹھ رتی، رتی آٹھ چاول۔ انگریزی روپیہ سکہ رائج گیارہ ماشے ہے۔ ردالمختار میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
اعلم ان الصاع اربعة امداد والمد بالاستار اربعون والاستار بکسر الهمزة بالمثاقیل اربعة ونصف کذا فی شرح درر البحار اھ ملخصاً۔	معلوم ہونا چاہئے کہ صاع چار مُد اور مُد چالیس استار اور استار (ہمزہ پر کسرہ کے ساتھ) ساڑھے چار مثقال ہے، جیسا کہ شرح درر البحار میں ہے اھ ملخصاً (ت)

صاع چار مُد ہے اور ہر مُد چالیس استار اور ہر استار ساڑھے چار مثقال، تو ہر مُد ایک سو اسی ۱۸۰ مثقال ہوا اور مثقال ساڑھے چار ماشہ ہے ولہذا درہم شرعی کہ مثقال کا ۷/۱۰ سات عشر ہے۔

عربی عبارت	اردو ترجمہ
في الدرالمختار كل عشرة دراهم وزن سبعة مثاقيل ۲۔	درمختار میں ہے ہر دس درہم بوزن سات مثقال کے ہے۔ (ت)

پچیس رتی اور پانچواں حصہ رتی کا ہوا یعنی ۳ ماشہ ۱-۱/۵ سرخ۔ جواہر الاخلاطی میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
الدرهم الشرعی وعشرون حبة وخمس حبة ۳۔	درہم شرعی پچیس رتیاں اور رتی کا پانچواں حصہ ہے (ت)

1. ردالمحتار باب صدقۃ الفطر مصطفی البابی مصر ۲ / ۸۳
2. الدر المختار باب زکوۃ المال مجتبائی دہلی ۱ / ۱۳۳
3. الجواہر الاخلاطی (قلمی نسخہ) کتاب الزکوۃ ص ۲۲

Fatawa Razawiya, Volume 10

It is mentioned in 'Kashf al-Ghata':

(Arabic Text)	(Urdu Translation)
Know that according to us, the 'Sa' of Iraq' is reliable, and it consists of eight 'Ratl'. A 'Ratl' is twenty 'Astar', an 'Astar' is four and a half 'Mithqal', a 'Mithqal' is twenty 'Qirat', and a 'Qirat' is one 'Habbah' plus four-fifths of a 'Habbah'. The 'Habbah', called 'Surkh' in Persian, is the eighth part of a 'Masha'. Therefore, a 'Mithqal' is determined to be four and a half 'Masha'[1].	Let it be clear that according to us, the Iraqi 'Sa' is reliable and it is eight 'Ratl'. A 'Ratl' consists of twenty 'Astar' and an 'Astar' is of four and a half 'Mithqal'. A 'Mithqal' is of twenty 'Qirat' and a 'Qirat' is of one 'Habbah' and four-fifths of a 'Habbah'. The 'Habbah', which is called 'Surkh' in Persian, is the eighth part of a 'Masha'. Therefore, now a 'Mithqal' is determined to be four and a half 'Masha'. (T)

According to this calculation, two hundred (200) 'Dirhams' of silver's Nisab equals fifty-two and a half 'Tolas', and twenty (20) 'Mithqals' of gold's Nisab equals seven and a half 'Tolas'. Thus, the weight of a quarter 'Sa' is eight hundred and ten 'Mashas', which is sixty-seven and a half (67.5) 'Tolas', and a half 'Sa' is 135 'Tolas'. Where a 'Seer' is equal to one hundred English rupees (i.e., ninety-three 'Tolas' and nine 'Mashas'), as in Bareilly, half a 'Sa' is slightly less than one and a half 'Seer' (i.e., one 'Seer', seven 'Chhattanks', two 'Mashas' and six and a half 'Rattis'), and a full 'Sa' is slightly less than half a 'Paao' and three 'Seers' (i.e., three 'Seers', five 'Mashas' and one 'Ratti'). With the English 'Seer', which is eighty rupees weight (i.e., full seventy-five 'Tolas') and is prevalent in Delhi and Lucknow, half a 'Sa' is three and a half 'Seers' plus one and a half 'Chhattanks' plus one-tenth of a 'Chhattank'. In Rampur state, where a 'Seer' is ninety-six rupees weight (i.e., full ninety 'Tolas'), one full 'Sa' is three 'Seers'. Other regions should be calculated based on this same rule. (T)

(2 & 3) If any grain other than wheat and barley, such as rice or paddy, is given, its weight will not be considered. Instead, the price of that one 'Sa' of barley or half 'Sa' of wheat will be taken into account. If the quantity given matches that value, it is sufficient. For example, if the price of half a 'Sa' of wheat is two (2) Annas, then only half a 'Seer' of rice costing four 'Seers' per Rupee will suffice, and five 'Seers' of paddy costing forty 'Seers' per Rupee would be required. It is stated in 'Dur-re-Mukhtar':

(Arabic Text)	(Urdu Translation)
"Whatever has not been specified by text (Nass), such as millet (Bajra) and bread, its value (price) is considered."[2]	Things for which no specific text is mentioned, like millet and bread, their monetary value is taken into consideration. (T)

[1] Kashf al-Ghata, chapter on rulings of Dua, Sadaqah etc. from good deeds for the deceased, Ahmadi Press, Delhi, p. 68 [2] Al-Durr al-Mukhtar, chapter on Sadaqat-ul-Fitr, Mujtabai Delhi, 1/125

फ़तावा रज़विया, जिल्द दस

'कश्फ़ुल ग़ता' में है:

(अरबी पाठ)

यह जान लें कि हमारे निकट इराकी 'साअ' (Sa') विश्वसनीय है और वह आठ 'रतल' का होता है। एक रतल में बीस 'अस्तार' होते हैं, और एक अस्तार साढ़े चार 'मिस्क़ाल' का होता है। एक मिस्क़ाल बीस 'क़ीरात' का और एक क़ीरात एक 'हब्बा' और हब्बा के चार-पाँचवें हिस्से (4/5) का होता है। हब्बा, जिसे फ़ारसी में 'सुर्ख' कहा जाता है, वह माशे का आठवां हिस्सा होता है। अत; अब एक मिस्क़ाल साढ़े चार माशे का निर्धारित हुआ।[1]

(उर्दू अनुवाद)

स्पष्ट रहे कि हमारे निकट इराकी 'साअ' विश्वसनीय है और वह आठ रतल है, रतल बीस अस्तार का होता है और अस्तार साढ़े चार मिस्क़ाल का, मिस्क़ाल बीस क़ीरात का और क़ीरात एक और हब्बा के चार-पांचवें हिस्से का होता है, और हब्बा जिसे फ़ारसी में सुर्ख़ कहा जाता है वह माशे का आठवाँ हिस्सा होता है, अतः अब मिस्क़ाल साढ़े चार माशे करार पाया। (त)

इसी गणना के अनुसार, चाँदी के निसाब के दो सौ (200) दिरहम साढ़े बावन (52.5) तोले होते हैं और सोने के निसाब के बीस (20) मिस्क़ाल साढ़े सात तोले होते हैं। इस प्रकार, चौथाई 'साअ' की मात्रा आठ सौ दस माशे यानी साढ़े सड़सठ (67.5) तोले हुई और आधा 'साअ' 135 तोले हुआ। जहाँ एक 'सेर' सौ अंग्रेजी रुपयों के बराबर हो (अर्थात तिरानवे तोले नौ माशे), जैसे बरेली में, वहां आधा 'साअ' डेढ़ सेर से कुछ कम यानी एक सेर सात छटाँक दो माशे साढ़े छह रत्ती हुआ। और एक 'साअ' आधा पाव कम तीन सेर और पाँच माशे एक रत्ती हुआ। अंग्रेजी सेर से, जो अस्सी रुपये भर यानी पूरे पचहत्तर तोले का है और दिल्ली व लखनऊ में प्रचलित है, वहाँ साढ़े तीन सेर और डेढ़ छटाँक और छटाँक का दसवाँ हिस्सा हुआ। रामपुर रियासत का सेर छियानवे रुपये यानी पूरे नब्बे तोले का है, वहाँ पूरे तीन सेर का एक 'साअ' होगा। इसी नियम के आधार पर अन्य क्षेत्रों का अनुमान लगाया जाए। (त)

(2 और 3) गेहूँ और जौ के अलावा चावल, धान आदि किसी भी प्रकार का अनाज दिया जाए, तो उसमें वजन का विचार नहीं किया जाएगा, बल्कि उसी एक 'साअ' जौ या आधा 'साअ' गेहूँ की कीमत को ध्यान में रखा जाएगा। यदि दी गई मात्रा की कीमत उस मूल्य के बराबर है, तो वह पर्याप्त है। उदाहरण के लिए, यदि आधा 'साअ' गेहूँ की कीमत दो (2) आने है, तो चार सेर प्रति रुपया वाले

चावल का केवल आधा सेर पर्याप्त होगा, और चालीस सेर प्रति रुपया वाले धान का पाँच सेर देना होगा। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

(अरबी पाठ)	(उर्दू अनुवाद)
"जिन वस्तुओं का स्पष्ट उल्लेख (नस्स) नहीं है, जैसे बाजरा और रोटी, उनमें मूल्य का विचार किया जाता है।"[2]	वे चीज़ें जिनका स्पष्ट उल्लेख नहीं है, जैसे बाजरा और रोटी, तो उनमें उनकी कीमत का विचार किया जाता है। (त)

[1] कश्फ़ुल ग़ता, फ़स्ल दुआ और सदक़ा के अहकाम और मृतकों के लिए नेक अमाल के बयान में, अहमदी प्रेस, दिल्ली, पृ. 68 [2] अल-दुर्रुल मुख़्तार, बाब सदक़तुल फ़ित्र, मुज्तबाई दिल्ली, 1/125

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

کشف الغطاء میں ہے:

| بدانکہ معتبر نزد ماصاع عراقی ست وآں ہشت رطل ست، ورطل بیست استار، واستار چہار و نیم مثقال، و مثقال بیست قیراط، و قیراط یک حبہ و چہار خمس حبہ، وحبہ کہ آنرا بفارسی سُرخ گویند ہشتم حصہ ماشہ است، پس مثقال چہار و نیم ماشہ باشد ۱۔ | واضح رہے ہمارے نزدیک عراقی صاع معتبر ہے اور وہ آٹھ رطل ہے، رطل میں بیس استار کا ہوتا ہے اور استار ساڑھے چار مثقال کا، مثقال بیس قیراط کا اور قیراط ایک اور حبہ کے چار خمس کا ہوتا ہے، اور حبہ جسے فارسی میں سُرخ کہا جاتا ہے وہ ماشہ کا آٹھواں حصہ ہوتا ہے، لہٰذا اب مثقال ساڑھے چار ماشے قرار پایا۔ (ت) |

اسی حساب سے دوسو ۲۰۰ درہم نصابِ فضہ کے ساڑھے باون تولہ اور بیس ۲۰ مثقال نصابِ ذہب کے ساڑھے سات تولے ہوتے ہیں، پس چہارم صاع کی مقدار آٹھ سو دس ماشے یعنی ساڑھے سڑسٹھ (۶۷-۱/۲) تولے ہوئے اور نیم صاع ۱۳۵ تولے اور اس انگریزی روپیہ سے ایک سو چالیس روپیہ بھر جہاں سیر سو روپے بھر یعنی ترانوے تولے نو ماشے کا ہو جیسے بریلی، وہاں نیم صاع کے کچھ کم ڈیڑھ سیر یعنی ایک سیر سات چھٹانک دوماشے ساڑھے چھ رتی ہوئے، اور ایک صاع کے آدھ پاؤ کم تین سیر اور پانچ ماشے رتی، اور انگریزی سیر سے کہ اسی روپے بھر یعنی پورے پچھتر تولے کا ہے، اور دہلی و لکھنؤ میں وہی رائج ہے، ساڑھے تین سیر اور ڈیڑھ چھٹانک اور دسواں حصہ چھٹانک کا ریاست رام پور کا سیر چھیانوے روپے یعنی پورے نوے تولے کا ہے وہاں تین سیر کامل کا ایک صاع وعلٰی ہذا القیاس فی سائر البقاع (اسی قاعدے پر باقی علاقوں کو قیاس کیا جائے۔ ت)

(۲ و ۳) گندم وجو کے سوا چاول دھان وغیرہ کوئی غلہ کسی قسم کا دیا جائے اُس میں وزن کا کچھ لحاظ نہ ہوگا بلکہ اُسی ایک صاع جو یا نیم صاع گندم کی قیمت ملحوظ رہے گی اگر اس کی قیمت کے قدر ہے تو کافی مثلاً نیم صاع گیہوں کی قیمت دو ۲ آنے ہے تو روپے کے چار سیر والے چاول سے صرف آدھ سیر کافی ہوں گے، اور چالیس سیر والے دھان سے پانسیر دینے ہوں گے، درمختار میں ہے :

| مالم ینص علیه کذرة وخبز یعتبر فیه القیمة ۲۔ | وہ چیزیں جن پر نص مذکور نہیں مثلاً باجرہ اور روٹی، تو ان میں قیمت کا اعتبار ہے (ت) |

۱ کشف الغطاء فصل در احکام دعا و صدقہ و نحو ان از اعمال خیر برائے میت مطبع احمدی، دہلی ص ۶۸ ۲ الدر المختار، باب صدقۃ الفطر، مجتبائی دہلی، ۱/ ۱۲۵

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

In *Al-Hindiyya*: "It is obligatory only from four items: wheat, barley, dates, and raisins. For grains other than these, only the value is considered. (Summarized)" | This is mandatory only in these four things: wheat, barley, dates, and raisins. And for grains other than these, only the value will be considered. (Summarized) (T)

In *Al-Lubab*: "These are four types, there is no fifth for them. As for other types of grains, it is not permissible except by considering the value, such as rice, corn, black gram, lentils, chickpeas, and so on." | There are only four types of them, there is no fifth. Therefore, for grains other than these, the value will be considered, for example, rice, millet, black gram, lentils, and chickpeas, etc. (T)

(54) Regarding the *fidya* (expiation) for prayers and fasting, all four scenarios in the fifth question are undoubtedly permissible, and all scenarios of the fourth question are also valid. However, in the case where a poor person is to be given less than half a *sa'* (a measurement), the preferred opinion is that it is not permissible. This has been firmly stated in *Sirajiyya*, *Durr al-Mukhtar*, *Al-Hindiyya*, etc., and this is the chosen opinion of Imam Abu Laith.

In *As-Sirajiyya*: "It is not permissible to pay for one prayer to two poor people." In *Ad-Durr*: "If he gives less than half a *sa'* to a poor person, it is not valid; however, if he gives the whole amount to one, it is valid." In *Al-Hindiyya* quoting from *At-Tatarkhaniyya* from *Al-Walajiyya*: "If someone gives the *fidya* of five prayers as nine *mudd* (a measurement) to one poor person and one *mudd* to another poor person, Faqih Abu Laith has chosen the opinion that it is valid for four prayers but not for the fifth." | It is written in *Sirajiyya* that giving the *fidya* of one prayer to two poor people is not permissible. And in *Durr* it is mentioned that if less than half a *sa'* is given to a poor person, it will not be valid; yes, if the whole amount is given to him, it is valid. And in *Al-Hindiyya*, quoting from *Tatarkhaniyya* from *Walajiyya*, it says that if someone gave the *fidya* of five prayers as nine *mudd* to one poor person and one *mudd* to another, then Faqih Abu Laith says that the *fidya* for four prayers will be fulfilled, but not for the fifth.

1. *Al-Fatawa al-Hindiyya*, Chapter 8 regarding Sadaqat al-Fitr, Nurani Kutub Khana Peshawar, 1/191.
2. *Al-Lubab al-Manasik* with *Irshad al-Sari*, Chapter on Rulings of Sadaqah, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, p. 64.

3. *Fatawa Sirajiyya*, Chapter on Making up Missed Prayers, Naval Kishore Lucknow, p. 17.
4. *Durr al-Mukhtar*, Chapter on Making up Missed Prayers, Mujtabai Delhi, 1/101.

फतावा रज़विया, जिल्द दहुम

हिन्दिया में है: "यह केवल चार चीज़ों में अनिवार्य है: गेहूं, जौ, खजूर और किशमिश। इनके अलावा अन्य अनाज के लिए केवल मूल्य ही मान्य होगा। (सारांश)" | यह केवल इन चार चीज़ों में लाज़िम है: गंदम (गेहूं), जौ, खजूर और मुनक़्क़ा। और इनके अलावा जो अनाज हैं, उनमें केवल उनकी कीमत का ही एतबार (विचार) होगा। (त)

लुबाब में है: "ये चार किस्में हैं, पांचवीं कोई नहीं है। अन्य अनाज के प्रकारों के लिए मूल्य के विचार के बिना अनुमति नहीं है, जैसे चावल, मक्का, उड़द, मसूर, चने आदि।" | इनकी चार ही किस्में हैं, पांचवीं कोई नहीं। इसलिए इनके अलावा अनाज में कीमत का ही एतबार होगा, जैसे चावल, बाजरा, माश (उड़द), मसूर और चने वग़ैरा। (त)

(५४) नमाज़ और रोज़े के फ़िदया (प्रायश्चित) में पांचवें सवाल की चारों सूरतें तो निःसंदेह जायज़ हैं और चौथे सवाल की भी सभी सूरतें जायज़ हैं, मगर जिसमें फ़क़ीर को आधा सा' से कम देना हो, उसमें प्रसिद्ध (राजिह) मत यह है कि यह जायज़ नहीं है। सिराजिया, दुर्रे मुख़्तार और हिन्दिया आदि में इसी पर ज़ोर दिया गया है और इमाम अबू लैथ का चुना हुआ मत यही है।

सिराजिया में: "एक नमाज़ का फ़िदया दो गरीबों को देना जायज़ नहीं है।" दुर्रे मुख़्तार में: "अगर किसी गरीब को आधा सा' से कम दिया जाए तो जायज़ न होगा; हाँ, अगर उसे पूरा दे दिया जाए तो जायज़ है।" हिन्दिया में ततारख़ानिया के हवाले से और वहां वलवालजिया से है: "अगर किसी ने पांच नमाज़ों का फ़िदया नौ मुद्द एक फ़क़ीर को और एक मुद्द एक फ़क़ीर को दिया, तो फ़क़ीह अबू लैथ कहते हैं कि चार नमाज़ों का फ़िदया अदा हो जाएगा, पांचवीं का नहीं।" | सिराजिया में है कि एक नमाज़ का फ़िदया दो फ़क़ीरों को देना जायज़ नहीं। और दुर में है कि अगर किसी फ़क़ीर को आधा सा' से कम दिया तो जायज़ न होगा, हाँ अगर उसे तमाम (पूरा) दे दिया तो जायज़ है। और हिन्दिया में ततारख़ानिया से, वहां वलवालजिया से है कि अगर किसी ने पांच नमाज़ों का फ़िदया नौ मुद्द एक फ़क़ीर को दिया और एक मुद्द एक फ़क़ीर को, तो फ़क़ीह अबू लैथ कहते हैं कि वह फ़िदया चार नमाज़ों का अदा हो जाएगा, पांचवीं का नहीं।

1. अल-फ़तावा अल-हिन्दिया, अध्याय ८, सदक़तुल फ़ित्र के बारे में, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, १/१९१।

2. अल-लुबाब अल-मनासिक साथ में इरशाद अल-सारी, सदक़ा के अहकाम का अध्याय, दार अल-किताब अल-अरबी बैरुत, पृष्ठ ६४।
3. फ़तावा सिराजिया, छूटी हुई नमाज़ों की कज़ा का अध्याय, नवल किशोर लखनऊ, पृष्ठ १७।
4. दुर्रे मुख़्तार, छूटी हुई नमाज़ों की कज़ा का अध्याय, मुजतबाई दिल्ली, १/१०१।

पृष्ठ ८३६ में से ५३४

ہندیہ میں ہے: انما تجب من اربعة اشیاء من الحنطة والشعیر والتمر والزبیب و ما سواہ من الحبوب لا یجوز الا بالقیمة اھ ملتقطا۔ | یہ صرف ان چار چیزوں میں لازم ہے گندم، جو، کھجور، اور منقہ۔ اور جو ان کے سوا غلہ جات ہیں ان میں فقط قیمت کا ہی اعتبار ہو گا اھ ملتقطا (ت)

لباب میں ہے: ھذہ اربعة انواع لا خامس لھا و اما غیرھا من انواع الحبوب فلا یجوز الا باعتبار القیمة کالارز والذرة والماش والعدس والحمص وغیر ذلك۔ | ان کی چار ہی اقسام ہیں پانچویں کوئی نہیں، لہذا ان کے علاوہ غلہ جات میں قیمت ہی کا اعتبار ہوگا مثلاً چاول، باجرہ، ماش، مسور اور چنے وغیرہ (ت)

(۵۴) فدیہ نماز و روزہ میں سوال پنجم کی چاروں صورتیں تو بلاشبہ جائز ہیں اور سوال چہارم کی بھی سب صورتیں روا، مگر جس میں فقیر کو نصف صاع سے کم دینا ہو اس میں قول راجح عدم جواز ہے، سراجیہ، ودر مختار و ہندیہ وغیرہ میں اسی پر جزم کیا اور یہی مختار امام ابواللیث ہے۔

فی السراجیة لا یجوز ان یؤدی عن صلوة لفقیرین اھ و فی الدر لوادی للفقیر اقل من نصف صاع لم یجز ولو اعطاہ الکل جاز اھ و فی الھندیة عن التتارخانیة عن الوالجیة لو دفع عن خمس صلوات تسع امنان لفقیر واحد و منا لفقیر واحد اختار الفقیه انه یجوز عن اربع صلوات و لا یجوز عن | سراجیہ میں ہے کہ ایک نماز کا فدیہ دو فقراء کو دینا جائز نہیں اھ اور در میں ہے اگر کسی فقیر کو نصف صاع سے کم دیا تو جائز نہ ہوگا، ہاں اگر اسے تمام دے دیا تو جائز ہے اھ اور ہندیہ میں تاتار خانیہ سے وہاں ولوالجیہ سے ہے کہ اگر کسی نے پانچ نمازوں کا فدیہ نو مدا یک فقیر کو دیا اور ایک مدا یک فقیر کو، تو فقیہ ابواللیث کہتے ہیں کہ وہ فدیہ چار نمازوں کا ادا ہوجائے گا پانچویں۔

1 الفتاوی الہندیۃ الباب الثامن فی صدقۃ الفطر نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۱۹۱ 2 اللباب المناسک مع ارشاد الساری فصل فی احکام الصدقۃ دار الکتاب العربی بیروت ص ۶۴ 3 فتاوی سراجیہ باب قضاء الفوائت نولکشور لکھنؤ ص ۱۷ 4 در مختار، باب قضاء الفوائت مجتبائی دہلی، ۱/۱۰۱

Fatawa Rizwia, Volume 10

[Arabic Text]: ...fifth prayer etc. (1). And in 'Al-Bahr' it is mentioned that Sheikh Abu Bakr al-Iskaf said it would be the compensation for all prayers. Abu al-Qasim says, and this is the chosen view of Faqih Abu al-Layth, that it will be compensation for four prayers but not the fifth because that would cause separation. And since in the expiation of an oath (kaffarah al-yamin) it is not permissible to give less than half a 'sa' (a unit of measure) to each poor person, the same rule applies here. Thus, the conclusion is that the expiation for prayer differs from the expiation for an oath in that a specific number of recipients is not a condition, but it is similar in that if less than half a 'sa' is given to one poor person, it is not valid (2). And in the issue of 'Zihar' (a form of divorce) in 'Al-Tanwir', it is stated that if one poor person is fed for sixty days, it is permissible (3). I say (the author): when it is permissible there, where number is a condition, then here it is even more so permissible where number is not a condition. (T)

[Urdu Column]: ...not the fifth, etc. In Al-Bahr it is written that Sheikh Abu Bakr al-Iskaf stated it would be compensation for all prayers. Abu al-Qasim says, and this is the preferred opinion of Faqih Abu al-Layth, that it would be compensation for four prayers but not the fifth because this would result in separation. And in the expiation of an oath, each poor person cannot be given less than half a 'sa'; the rule here is the same. So the result is that the expiation for prayer is different from the expiation of an oath in that the number of recipients is not a condition, but it is similar in that if a poor person is given less than half a 'sa', it is not valid. In the issue of 'Zihar' in 'Tanwir', it is stated that if a single poor person is fed for sixty days, it will be valid. I say: when it is valid there where number is a condition, then it must surely be valid here where number is not a condition. (T)

(6) Its eligibility (masraf) is the same as that of Sadaqah al-Fitr, expiation of an oath, and other obligatory expiations and charities. Rather, it cannot even be given to a Hashimi, such as a Sheikh, Alwi, or Abbasi. It cannot be given to a wealthy person or the minor child of a wealthy person; it cannot be given to a non-believer. It cannot be given to the descendants of the person giving fidiya, such as a son, daughter, grandson, granddaughter, or to those of whom the person giving fidiya is a descendant, such as mother, father, grandfather, grandmother, maternal grandfather, or maternal grandmother. It can be given to other relatives such as brothers, sisters, paternal uncles, maternal uncles, aunts, nephews, and nieces,

provided there are no other impediments. Similarly, it can be given to servants as long as it is not counted as part of their wages.

[Arabic]: In Radd al-Muhtar: The eligibility of Zakat is the eligibility... [Urdu]: In Radd al-Muhtar it is mentioned: That which is the eligibility of Zakat is the eligibility for Sadaqah al-Fitr.

Footnotes: 1. Al-Fatawa al-Hindiyyah, Chapter: Qada al-Fawa'it, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/125 2. Al-Bahr al-Ra'iq, Chapter: Qada al-Fawa'it, HM Saeed Company Karachi, 1/91 3. Tanwir al-Absar Matn Durr al-Mukhtar, Chapter: Al-Kaffarah, Matba' Mujtabai Delhi, 1/251

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

[अरबी पाठ]: ...पाँचवीं नमाज़ इत्यादि (1)। और 'अल-बहर' में है कि शेख अबू बक्र अल-इस्काफ़ ने कहा कि वह सभी नमाज़ों का फ़िदिया (मुआवज़ा) होगा। अबुल क़ासिम कहते हैं, और यही फ़क़ीह अबुल लैस का पसंदीदा मत है, कि यह चार नमाज़ों का फ़िदिया होगा पाँचवीं का नहीं क्योंकि इससे तफ़रीक़ (बंटवारा) होगी। और चूंकि क़सम के कफ़्फ़ारे में हर मिसकीन (निर्धन) को आधा 'सा' (एक माप) से कम नहीं दिया जा सकता, यहाँ भी यही हुक्म है। अतः परिणाम यह हुआ कि नमाज़ का कफ़्फ़ारा क़सम के कफ़्फ़ारे से इस लिहाज़ से अलग है कि इसमें तादाद (संख्या) शर्त नहीं है, लेकिन इस लिहाज़ से समान है कि अगर एक फ़क़ीर को आधे 'सा' से कम दिया जाए तो वह जायज़ नहीं (2)। और 'अल-तन्वीर' में ज़िहार (तलाक़ का एक रूप) के मसले में है कि अगर एक ही फ़क़ीर को साठ दिन खाना खिलाया जाए तो यह जायज़ होगा (3)। मैं कहता हूँ (लेखक): जब वहाँ जायज़ है जहाँ तादाद शर्त है, तो यहाँ तो और भी अधिक जायज़ होना चाहिए जहाँ तादाद शर्त नहीं है। (त)

[उर्दू कॉलम]: ...पाँचवीं का नहीं इत्यादि। बहर में है कि शेख अबू बक्र अल-इस्काफ़ ने कहा कि वह तमाम नमाज़ों का फ़िदिया होगा। अबुल क़ासिम कहते हैं, और यही फ़क़ीह अबुल लैस का मुख्तार (पसंदीदा) है, कि यह चार नमाज़ों का फ़िदिया होगा पाँचवीं का नहीं क्योंकि इससे तफ़रीक़ होगी। और कफ़्फ़ारा-ए-क़सम में हर मिसकीन को आधा सा से कम नहीं दिया जा सकता, यहाँ भी हुक्म इसी तरह है। तो हासिल यह हुआ कि नमाज़ का कफ़्फ़ारा इस लिहाज़ से कफ़्फ़ारा-ए-क़सम से अलग है कि इसमें तादाद शर्त नहीं, और इस लिहाज़ से मुवाफ़िक़ (समान) है कि अगर एक फ़क़ीर को आधा सा से कम दिया जाए तो जायज़ नहीं। तन्वीर के मसला-ए-ज़िहार में है कि अगर एक ही फ़क़ीर को साठ दिन खाना खिलाया तो यह जायज़ होगा। मैंने कहा: जब यह वहाँ जायज़ है जहाँ तादाद शर्त है, तो वहाँ तो और भी ज़्यादा जायज़ होना चाहिए जहाँ तादाद शर्त नहीं है। (त)

(६) इसका मस्रफ़ (पात्रता) सदक़ा-ए-फ़ित्र और कफ़्फ़ारा-ए-यमीन (क़सम का कफ़्फ़ारा) व अन्य वाजिब कफ़्फ़ारों और सदक़ात के समान है। बल्कि किसी हाशमी जैसे शेख, अलवी या अब्बासी को भी नहीं दे सकते। धनी व्यक्ति या धनी व्यक्ति के ना-बा़लिग़ फ़क़ीर बच्चे को नहीं दे सकते; काफ़िर को नहीं दे सकते। जो फ़िदिया देने वाले की संतान में है जैसे बेटा, बेटी, पोता, पोती, नाती, नातिन, या वह जिसकी संतान में फ़िदिया देने वाला है जैसे माँ-बाप, दादा-दादी, नाना-नानी, उन्हें नहीं दे सकते। और क़रीबी रिश्तेदार जैसे भाई, बहन, चाचा, मामू, ख़ाला, फूफी, भतीजा, भतीजी, भांजा, भांजी,

इनको दे सकते हैं जब तक कि कोई अन्य रुकावट न हो। इसी प्रकार नौकरों को भी दिया जा सकता है जब तक कि इसे उनकी मज़दूरी में न गिना जाए।

[अरबी/उर्दू]: रद्दुल मुह्तार में है: जो ज़कात का मस्रफ़ है वही सदक़ा-ए-फ़ित्र का मस्रफ़ है।

पाद-टिप्पणियाँ (फुटनोट्स): 1. अल-फ़तावा अल-हिन्दिया, अध्याय: क़ज़ा अल-फ़वाइत, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 1/125 2. अल-बहर अल-राइक़, अध्याय: क़ज़ा अल-फ़वाइत, एच एम सईद कंपनी कराची, 1/91 3. तन्वीर अल-अब्सार मतन दुर्र अल-मुख्तार, अध्याय: अल-कफ़्फ़ारा, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/251

الصلوة الخامسة اھ ۱ وفي البحر قال ابوبکر الاسکاف یجوز ذلك کله وقال ابوالقاسم وھو اختیار الفقیه ابی اللیث یجوز عن اربع صلوات دون الخامسة لانه متفرق ولایجوز ان یعطی کل مسکین اقل من نصف صاع فی کفارة الیمین فکذلك ھذا فالحاصل ان کفارة الصلوة تفارق کفارة الیمین فی حق انه لا یشترط فیھا العدد وتوافقھا من حیث انه لوادی اقل من نصف صاع الی فقیر واحد لا یجوز اھ ۲- وفی ظھار التنویر جاز لـواطعم واحد استین یوماً اھ ۳ قلت فاذا جاز ھذا فیما یشترط فیه التعدد فما لا یشترط فیه اولی بالجواز-

کا نہیں اھ بحر میں ہے کہ شیخ ابوبکر اسکاف نے کہا کہ وہ تمام نمازوں کا فدیہ ہوگا، ابوالقاسم کہتے ہیں اور یہی فقیہ ابواللیث کا مختار ہے کہ یہ چار نمازوں کا فدیہ ہوگا پانچویں کا نہیں کیونکہ اس سے تفریق ہوگی، اور کفارہ قسم میں ہر مسکین کو نصف صاع سے کم نہیں دیا جاسکتا، یہاں بھی حکم اسی طرح ہے، تو حاصل یہ ہوا کہ نماز کا کفارہ اس لحاظ سے کفارہ قسم سے الگ ہے کہ اس میں تعداد شرط نہیں، اور اس لحاظ سے موافق ہے کہ اگر ایک فقیر کو نصف صاع سے کم دیا جائے تو جائز نہیں۔ تنویر کے مسئلہ ظہار میں ہے کہ اگر ایک ہی فقیر کو ساٹھ دن کھانا کھلایا تو یہ جائز ہوگا اھ قلت جب یہ وہاں جائز یہاں تعداد شرط ہے تو وہاں بطریق اولٰی جائز ہونا چاہئے جہاں تعدد شرط نہیں ہے۔(ت)

(۶) مصرف اس کا مثل مصرف صدقہ فطر و کفارہ یمین و سائر کفارات و صدقات واجبہ ہے بلکہ کسی ہاشمی مثلاً شیخ علوی یا عباسی کو بھی نہیں دے سکتے۔ غنی یا غنی مرد کے نابالغ فقیر بچے کو نہیں دے سکتے کافر کو نہیں دے سکتے، جو صاحب فدیہ کی اولاد میں ہے جیسے بیٹا بیٹی، پوتا پوتی، نواسا نواسی، یا صاحب فدیہ جس کی اولاد میں جیسے ماں باپ، دادا دادی، نانا

نانی، انہیں نہیں دے سکتے ، اور اقربا مثلاً بہن بھائی، چچا ، ماموں خالہ، پھوپھی، بھتیجا، بھتیجی، بھانجا، بھانجی، ان کو دے سکتے ہیں جبکہ اور موانع نہ ہوں، یونہی نوکروں کو جبکہ اجرت میں محسوب نہ کریں۔

في ردالمحتار مصرف الزكوة هو مصرف | ردالمحتار میں ہے جو زکوٰۃ کا مصرف ہے وہی صدقہ فطر کا مصرف ہے،

١ الفتاوی الہندیۃ باب قضاء الفوائت نورانی کتب خانہ پشاور ١/ ١٢٥ ٢ البحر الرائق باب قضاء الفوائت ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ١/ ٩١ ٣ تنویر الابصار متن درمختار باب الکفارۃ مطبع مجتبائی دہلی ١/ ٢٥١

Arabic Text

Also for Sadaqah al-Fitr, expiation (kaffara), vows (nazr), and other such obligatory charities (Sadaqat al-Wajibah) as mentioned in al-Quhustani ^{1}. I say: This is consistent with the rectification of what is narrated from Abu Yusuf regarding the impermissibility of giving any obligatory charity to a dhimmi (non-Muslim subject). It is stated in al-Durr: It (Zakat) cannot be given to a dhimmi, but it is permissible to give other than it and other than 'Ushr and Kharaj to a dhimmi, even if it is obligatory like a vow, expiation, or Fitra, contrary to the second (Imam Muhammad). Al-Hawi al-Qudsi gave a fatwa according to his view (end of quote) ^{2}. And in it: If a teacher gives it (Zakat) to an assistant (Khalifa), it is valid if he would have worked for him even if he had not given it; otherwise, not (end of quote) ^{3}. And in Mi'raj al-Diraya, then al-Hindiyya: Similarly is the ruling for what is given to servants, men and women, on Eids and other occasions with the intention of Zakat ^{4}.

Urdu Translation/Commentary

Expiation, vows, and other obligatory charities have the same place of expenditure (Masraf). Quhustani. I say: (I say. T) This path has been adopted according to the rectification of the opinion narrated from Imam Abu Yusuf that obligatory charities are not permissible to be given to any dhimmi kafir. In al-Durr: (Zakat) cannot be given to a dhimmi; however, charities other than Zakat, Ushr, and Kharaj can be given to a dhimmi even if they are obligatory charities, for example, vows, expiation, and Sadaqah al-Fitr. There is a difference of opinion of Imam Abu Yusuf in this; Hawi al-Qudsi has given a fatwa on the mentioned Imam's opinion (end of quote). And in the same: If a teacher gave Zakat to his assistant, if he works in such a way that even if the teacher did not give it, he would still do his work, then giving in such a case is correct, otherwise not (end of quote). And in Mi'raj al-Diraya and al-Hindiyya: The same is the ruling for that amount which is given with the intention of Zakat on the occasion of Eid etc. to male or female servants (T).

Obligatory charities cannot be given to spouses either. I say: When the fidyah (compensation) for prayer and fasting is given after death, the requirement of jurisprudential (fiqhi) insight is that it is permissible to give the wife's fidyah to a poor husband immediately, and to give the husband's fidyah to a poor wife after the iddah (waiting period) has passed, because marriage no longer exists and the husband

becomes a stranger upon the death of the wife, and therefore touching her is not allowed.

Arabic Text	Urdu Translation/Commentary
In al-Durr al-Mukhtar: It is not spent on those between whom there is marriage, even if separated ^{5}. Al-Shami said: i.e.	In Durr al-Mukhtar: Zakat should not be given to those between whom there is a marital relationship, even if the woman is given a final divorce (talaq-e-bain).

---

1. Radd al-Muhtar, Bab al-Masraf, Mustafa al-Bani, Egypt, 2/64
2. Durr al-Mukhtar, Bab al-Masraf, Mujtabai, Delhi, 1/141
3. Durr al-Mukhtar, Bab al-Masraf, Mujtabai, Delhi, 1/142
4. al-Fatawa al-Hindiyya, Bab al-Sabi' fi al-Masarif, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/190
5. Durr al-Mukhtar, Bab al-Masraf, Mujtabai, Delhi, 1/141

अरबी पाठ

सदाक़तुल फ़ित्र, कफ़्फ़ारा, नज़्र और इसी तरह के अन्य वाजिब सदक़ात के लिए भी वही हुक्म है जैसा कि कुहुस्तानी ^{1} में है। मैं कहता हूँ: यह इमाम अबू यूसुफ़ से रिवायत किए गए उस मत की तसहीह (सुधार/पुष्टि) के अनुसार है कि वाजिब सदक़ात में से कुछ भी किसी ज़िम्मी काफ़िर को देना जायज़ नहीं है। अद-दुर्र में कहा गया है: ज़िम्मी को (ज़कात) नहीं दी जा सकती, और इसके अलावा और उश्र व खिराज के अलावा ज़िम्मी को देना जायज़ है, भले ही वह वाजिब हो जैसे नज़्र, कफ़्फ़ारा और फ़ितरा, इसके विपरीत जैसा कि इमाम मुहम्मद (अस-सानी) का मत है। हावी अल-क़ुदसी ने इमाम अबू यूसुफ़ के मत पर फ़तवा दिया है (समाप्त) ^{2}। और उसी में: यदि किसी शिक्षक ने अपने खलीफ़ा (सहायक) को ज़कात दी, यदि वह इस तरह काम करता है कि यदि वह उसे न भी देता तब भी वह उसके लिए काम करता, तो यह मान्य है, अन्यथा नहीं (समाप्त) ^{3}। और मेराज अद-दिराया, फिर अल-हिंदिया में है: इसी प्रकार वह हुक्म है जो ईद आदि के अवसर पर ज़कात की नीयत से खादिमों (पुरुषों और महिलाओं) को दिया जाता है ^{4}।

उर्दू अनुवाद/व्याख्या

कफ़्फ़ारा, नज़्र और अन्य सदक़ात-ए-वाजिबा का भी वही मसरफ़ (उपयोग का स्थान) है। कुहुस्तानी। मैं कहता हूँ: (मैं कहता हूँ। त) यह उस राह को अख्तियार किया गया है जो इमाम अबू यूसुफ़ से रिवायत किए गए कौल (मत) की तसहीह के मुताबिक है कि सदक़ात-ए-वाजिबा किसी काफ़िर-ए-ज़िम्मी को देना नाजायज़ है। दुर्र में है कि ज़िम्मी को (ज़कात) नहीं दी जा सकती, अलबत्ता ज़कात, उश्र और खिराज के अलावा सदक़ात ज़िम्मी को दिए जा सकते हैं, चाहे वे सदक़ा-ए-वाजिब ही हों मसलन नज़्र, कफ़्फ़ारा और सदक़ा-ए-फ़ित्र। इसमें इमाम अबू यूसुफ़ का इख्तिलाफ़ है, इमाम मजकूर (उल्लेखित इमाम) के कौल पर हावी अल-क़ुदसी ने फ़तवा दिया है (समाप्त)। और उसी में है कि अगर मौल्लिम (शिक्षक) ने अपने खलीफ़ा को ज़कात दी, अगर वह इस तरह काम करता है कि अगर मौल्लिम न देता तब भी वह उसका काम करता, ऐसी सूरत में देना दुरुस्त है वरना नहीं (समाप्त)। और मेराज अद-दिराया और हिंदिया में है: इसी तरह हुक्म है उस रकम का जो बह नीयत-ए-ज़कात ईद वगैरह के मौके पर खादिम मर्दों या औरतों को दी जाती है (त)।

वाजिब सदक़ात पति-पत्नी को भी नहीं दिए जा सकते। मैं कहता हूँ: जब नमाज़ और रोज़े का फ़िद्या मृत्यु के बाद दिया जाए, तो फ़िक़्ही दृष्टिकोण की मांग यह है कि पत्नी का फ़िद्या निर्धन पति को तुरंत

और पति का फ़िद्या निर्धन पत्नी को इद्दत गुज़रने के बाद देना जायज़ है, क्योंकि अब वैवाहिक संबंध (ज़ौजियत) नहीं रही और पति, पत्नी की मृत्यु होते ही अजनबी हो जाता है और इसलिए उसे छूना जायज़ नहीं है।

अरबी पाठ	**उर्दू अनुवाद/व्याख्या**
अद-दुर्र अल-मुख्तार में है: ज़कात उन पर खर्च नहीं की जाती जिनके बीच वैवाहिक संबंध हो, चाहे तलाक (मुबाना) हो चुका हो ^{5}। अश्-शामी ने कहा यानी...	दुर्र-ए-मुख्तार में है कि ज़कात उनको न दी जाए जिनके दरमियान ज़ौजियत (वैवाहिक संबंध) का ताल्लुक हो, चाहे खातून को तलाक़-ए-बाइन (दी जा चुकी हो)।

---

1. रद अल-मुह्तार, बाब अल-मसरफ़, मुस्तफा अल-बानी, मिस्र, 2/64
2. दुर्र-ए-मुख्तार, बाब अल-मसरफ़, मुजतबाई, दिल्ली, 1/141
3. दुर्र-ए-मुख्तार, बाब अल-मसरफ़, मुजतबाई, दिल्ली, 1/142
4. अल-फ़तावा अल-हिंदिया, अल-बाब अस-साबे फ़ि अल-मसारिफ़, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/190
5. दुर्र-ए-मुख्तार, बाब अल-मसरफ़, मुजतबाई, दिल्ली, 1/141

عربی عبارت	اردو ترجمہ/تشریح
ایضا لصدقة الفطر والكفارة والنذر وغیرذلك من الصدقات الواجبة كما في القهستاني ^{1}- اقول: وهو متمش على تصحیح ما عن ابی یوسف من عدم جواز شئی من الصدقات الواجبة لكافر ذمی قال في الدرلا تدفع (ای الزكوة) الی ذمی وجاز دفع غیرها وغیر العشر والخراج الیه ای الذمی ولو واجباً كنذر وكفارة وفطرة خلافا للثانی وبقوله یفتی حاوی القدسی اه ^{2} وفیه لو دفعها المعلم لخلیفة ان كان بحیث یعمل له لولم یعطه صح والا لا اه ^{3} وفي معراج الدرایة ثم الهندیة وكذا مایدفعه الی الخدم من الرجال والنساء في الاعیاد وغیرها بنیة الزكوة ^{4}-	کفارہ، نذر اور دیگر صدقات واجبہ کا بھی وہی مصرف ہے قہستانی۔اقول: (میں کہتا ہوں۔ت) یہ اس راہ کو اختیار کیا گیا جو امام ابو یوسف سے مروی قول کی تصحیح کے مطابق ہے کہ صدقات واجبہ کسی کافر ذمی کو دینا ناجائز ہے۔در میں ہے ذمی کو (زکوٰۃ) نہیں دی جاسکتی البتہ زکوٰۃ، عشر اور خراج کے علاوہ صدقات ذمی کو دئے جاسکتے خواہ وہ صدقہ واجبہ ہی ہوں مثلاً نذر، کفارہ اور صدقہ فطر، اس میں امام ابو یوسف کا اختلاف ہے، امام مذکور کے قول پر حاوی قدسی نے فتویٰ دیا ہے اھ اور اسی میں ہے اگر معلم نے اپنے خلیفہ کو زکوٰۃ دی اگر وہ اس طرح کام کرتا ہے کہ اگر معلم نہ دیتا تب بھی وہ اس کا کام کرتا ایسی صورت میں دینا درست ہے ورنہ نہیں اھ اور معراج الدرایہ اور ہندیہ میں ہے اسی طرح حکم ہے اس رقم کا جو بہ نیت زکوٰۃ عید وغیرہ کے موقعہ پر خدام مردوں یا عورتوں کو دی جاتی ہے (ت)

صدقات واجبہ زوجین کو بھی نہیں دے سکتے۔اقول: فدیہ نماز و روزہ جب بعد مرگ دیا جائے تو مقتضائے نظر فقہی یہ ہے کہ زوجہ کا فدیہ شوہر فقیر کو فوراً اور شوہر کا زوجہ فقیرہ کو بعد

عدت گزرنے کے دینا جائز ہو کہ اب زوجیت نہ رہی اور شوہر زوجہ کے مرتے ہی اجنبی ہو جاتا ہے و لہذا اسے مس جائز نہیں۔

عربی عبارت	اردو ترجمہ/تشریح
فی الدرالمختار لایصرف الی من بینهما زوجية ولو مبانة 5^8 قال الشامي ای	درمختار میں ہے کہ زکوٰۃ ان کو نہ دی جائے جن کے درمیان زوجیت کا تعلق ہو خواہ خاتون کو طلاق بائنہ

---

1. ردالمحتار باب المصرف مصطفی البانی مصر ۲/ ۶۴
2. درمختار باب المصرف مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۱
3. درمختار باب المصرف مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۲
4. الفتاوی الہندیۃ الباب السابع فی المصارف نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۱۹۰
5. درمختار باب المصرف مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۱

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Box 1 - Right Side - Arabic Text] Regarding the 'iddah (waiting period), even if it is after three [divorces], [from] Nahar, Mi'raj ad-Dirayah. (1) And in Radd al-Muhtar, on the authority of Badai' [of] Imam Malik al-Ulama: A woman may wash her husband, because the permissibility of washing is derived from the marriage; thus it remains as long as the marriage remains. Marriage after death persists until the 'iddah expires, unlike when she dies, in which case he may not wash her, due to the termination of the right of marriage for lack of the subject, thus he becomes a stranger. (2) And Allah Almighty knows best.

[Box 1 - Left Side - Urdu Translation/Commentary] ...has occurred. Alama Shami said, meaning she is in 'iddah even if three divorces have taken place. This is in 'Nahar' from 'Mi'raj ad-Dirayah'. (1) In 'Radd al-Muhtar', it is from 'Badai' of Imam Malik-ul-Ulama that a woman can give ghusl (ritual bath) to her husband because the permissibility of ghusl was obtained due to marriage, so as long as marriage remains, permissibility also remains. Marriage remains even after the husband's death until the 'iddah passes. This is contrary to the situation when the wife dies; the husband cannot give her ghusl because marriage has ended due to the absence of the subject, therefore the husband will now be considered a stranger. And Allah Almighty knows best. (T)

(7) Paying the value is better, but giving food is preferable during famine.

[Box 2 - Right Side - Arabic Text] In ad-Durr al-Mukhtar: Paying the value, i.e., dirhams, is better than paying in kind according to the verdict-given (mufta bihi) position, [from] Jawharah [and] Bahr on the authority of az-Zahiriyyah. This applies in times of ease; in times of hardship, paying in kind is better. (3)

[Box 2 - Left Side - Urdu Translation/Commentary] In 'Durr-ul-Mukhtar', it is stated that according to the mufta bihi school, paying the value, i.e., dirhams, is better than giving the actual item. In 'Jawharah' and 'Bahr', it is cited from 'Zahiriyyah' that this is for normal circumstances, i.e., in times of ease. If there is a time of hardship and famine, then giving the actual item will be better. (T)

[Urdu section below boxes] Other rules for cash and grain are the same, except for that difference which is specifically considered due to weight in wheat and barley. In Sharia-mandated expiation (isqat), the value is considered. For example, suppose the price of half a sa' of wheat is two annas and one sa' of barley is one anna; then

something worth one anna, like cloth, a book, rice, millet etc., can be given based on value. However, a quarter sa' of wheat is not enough even if its price equals one sa' of barley, because for the four items upon which Sharia text has been issued—namely wheat, barley, dates, raisins—the value is not considered in them; however much weight is mandatory in Sharia must be given.

[Footnotes] 1 Radd al-Muhtar, Bab al-Masraf, Mustafa al-Babi Egypt, 29/2 2 Radd al-Muhtar, Bab al-Jana'iz, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 576/1 3 ad-Durr al-Mukhtar, Bab al-Sadaqat al-Fitr, Mujtabai Delhi, 145/1

फतावा रज़विया जिल्द १०

[बॉक्स १ - दाहिनी ओर - अरबी पाठ] इद्दत (प्रतीक्षा अवधि) के संबंध में, भले ही यह तीन [तलाक] के बाद हो, [नहर, मेराज अद-दिराया से]। (१) और रद्द अल-मुह्तार में, इमाम मलिक अल-उलमा की बदाए के हवाले से: एक महिला अपने पति को गुस्ल दे सकती है, क्योंकि गुस्ल की वैधता विवाह से प्राप्त होती है; इस प्रकार यह तब तक बनी रहती है जब तक विवाह बना रहता है। मृत्यु के बाद विवाह इद्दत समाप्त होने तक बना रहता है, इसके विपरीत जब वह मर जाती है, तो वह उसे गुस्ल नहीं दे सकता, क्योंकि विषय की कमी के कारण विवाह के अधिकार की समाप्ति हो जाती है, इस प्रकार वह अजनबी हो जाता है। (२) और अल्लाह सर्वशक्तिमान सबसे बेहतर जानता है।

[बॉक्स १ - बाईं ओर - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] ...हो चुका हो। अल्लामा शामी ने फरमाया यानी वह इद्दत में हो अगरचे तीन तलाकें हो चुकी हों। यह 'नहर' में 'मेराज अद-दिराया' से है। (१) 'रद्द अल-मुह्तार' में इमाम मलिक-उल-उलमा की 'बदाए' से है कि महिला अपने पति को गुस्ल (अनुष्ठानिक स्नान) दे सकती है क्योंकि गुस्ल की अनुमति विवाह के कारण प्राप्त हुई थी, इसलिए जब तक विवाह शेष है, अनुमति भी शेष रहेगी। विवाह पति की मृत्यु के बाद भी इद्दत गुजरने तक बना रहता है। यह उस स्थिति के विपरीत है जब पत्नी मर जाती है; पति उसे गुस्ल नहीं दे सकता क्योंकि विषय के न रहने के कारण विवाह समाप्त हो गया है, इसलिए पति अब अजनबी माना जाएगा। और अल्लाह सर्वशक्तिमान सबसे बेहतर जानता है। (त)

(७) मूल्य देना बेहतर है, लेकिन अकाल के दौरान भोजन देना बेहतर है।

[बॉक्स २ - दाहिनी ओर - अरबी पाठ] अद-दुर अल-मुख्तार में: फतवा-दिए गए (मुफ्ता बिही) मत के अनुसार वस्तु के रूप में भुगतान करने की तुलना में मूल्य, यानी दिरहम, देना बेहतर है, जवहरा [और] बह्र में अज़-ज़हीरिय्या के हवाले से। यह आसानी के समय में लागू होता है; कठिनाई के समय में, वस्तु के रूप में भुगतान करना बेहतर है। (३)

[बॉक्स २ - बाईं ओर - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] 'दुर-उल-मुख्तार' में है कि मुफ्ता बिही मज़हब के अनुसार कीमत यानी दिरहम अदा करना असल चीज़ देने से बेहतर है। 'जवहरा' और 'बह्र' में ज़हीरिय्या से है कि यह आम हालात यानी आसानी के वक्त है। अगर किसी वक्त शिद्दत और अकाल हो तो असल चीज़ का देना अफज़ल होगा। (त)

[बक्से के नीचे उर्दू अनुभाग] नकद और अनाज के अन्य नियम समान हैं, सिवाय उस अंतर के जो विशेष रूप से गेहूं और जौ में वजन के विचार के कारण मान्य है। शरीयत द्वारा अनिवार्य प्रायश्चित (इस्क़ात) में, मालियत (मूल्य) का ध्यान रखा जाता है। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि आधा साअ गेहूं की कीमत दो आने है और एक साअ जौ की एक आना; तो एक आने की कीमत की कोई भी चीज़ जैसे कपड़ा, किताब, चावल, बाजरा आदि कीमत के लिहाज़ से दी जा सकती है। हालांकि, चौथाई साअ गेहूं काफी नहीं है भले ही उनकी कीमत भी एक साअ जौ के बराबर हो जाए, क्योंकि चार चीज़ें जिन पर शरीयत का स्पष्ट आदेश आ चुका है - यानी गेहूं, जौ, खजूर, किशमिश - उनमें कीमत का ऐतबार नहीं है; जितना वजन शरीयत के अनुसार वाजिब है, उतना ही देना होगा।

[पाद टिप्पणियाँ] 1 रद्द अल-मुह्तार, बाब अल-मसरफ, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 29/2 2 रद्द अल-मुह्तार, बाब अल-जनाइज़, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बेरूत, 576/1 3 अद-दुर अल-मुख्तार, बाब अस-सदक़ात अल-फितर, मुजतबाई दिल्ली, 145/1

पृष्ठ ८३६ का ५३७

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

[Box 1 - Left Column - Arabic] فی العدة ولو بثلاث نهر معراج الدرایه اهـ ۱ وفی ردالمحتار عن بدائع الامام ملك العلماء المرأة تغسل زوجها لان اباحة الغسل مستفادة بالنكاح فتبقی مابقی النكاح والنكاح بعد الموت باق الی ان تنقضی العدة بخلاف مااذا ماتت فلا یغسلها لانتهاء ملك النكاح لعدم المحل فصار اجنبیا ۲، واللہ تعالٰی اعلم۔

[Box 1 - Right Column - Urdu] ہو چکی ہو اھ علامہ شامی نے فرمایا یعنی وہ عدت میں ہو اگر چہ تین طلاقیں ہو چکی ہوں یہ نہر میں معراج الدرا یہ سے ہے اھ ردالمختار میں امام ملک العلماء کی بدائع سے ہے کہ خاتون اپنے خاوند کو غسل دے سکتی ہے کیونکہ غسل کی اباحت نکاح کی وجہ سے حاصل ہوئی تو جب تک نکاح باقی ہے اباحت بھی باقی رہے اور نکاح تو خاوند کی موت کے بعد بھی باقی رہتا ہے یہاں تک کہ عدت گزر جائے بخلاف اس صورت کے جب بیوی فوت ہو جائے تو خاوند اسے غسل نہیں دے سکتا کیونکہ محل نہ رہنے کی وجہ سے نکاح ختم ہو گیا لہٰذا اب خاوند اجنبی قرار پائے گا واللہ تعالٰی اعلم (ت)

(۷) قیمت افضل ہے مگر قحط میں کھانا دینا بہتر،

[Box 2 - Left Column - Arabic] فی الدرالمختار دفع القیمة ای الدراهم افضل من دفع العین علی المذهب المفتی به، جوهرة بحر عن الظهیریة وهذا فی السعة امام فی الشدة فدفع العین افضل ۳۔

[Box 2 - Right Column - Urdu] در مختار میں ہے مفتی بہ مذہب کے مطابق قیمت یعنی دراھم کا ادا کرنا عین شے سے افضل ہے جوہرہ اور بحر میں ظہیریہ سے ہے کہ یہ عام حالات یعنی آسانی کے وقت ہے اگر کسی وقت شدت اور قحط ہو تو عین شئی کا دینا افضل ہوگا۔ (ت)

باقی احکام نقد وغلہ یکساں ہیں مگر وہ تفاوت جو خاص گندم وجو میں بسبب اعتبار وزن معتبر ، شرعی اسقاط میں لحاظ مالیت کا ہے مثلاً فرض کیجئے کہ نیم صاع گندم کی قیمت دو آنہ ہے اور ایک صاع جو کی ایک آنہ تو ایک آنہ کی قیمت کی کوئی چیز کپڑا، کتاب، چاول، باجرا وغیرہ باللحاظ قیمت بجودے سکتے ہیں اگرچہ گندم کی قیمت نہ ہوئی مگر چہارم صاع گندم کافی نہیں اگرچہ قیمت اُن کی بھی ایک صاع جو کے برابر ہو گئی کہ چار چیزیں جن پر نص شرعی وارد ہو چکی ہے یعنی گندم، جو، خرما، کشمش ان میں قیمت کا اعتبار نہیں، جتنا وزن شرعاً واجب ہے اُس قدر دینا ہوگا۔

1 ردالمختار باب المصرف مصطفی البابی مصر ۲/۲۹ 2 ردالمختار باب الجنائز داراحیاء التراث العربی بیروت ۱/۵۷۶ 3 الدر المختار باب الصدقة الفطر مجتبائی دہلی ۱/۱۴۵

Fatawa Razawiya, Volume 10

In Muhit al-Imam al-Sarakhsi and then in al-Hindiyyah, it is stated: "If someone pays a quarter of a sa' of high-quality wheat, the value of which reaches the value of half a sa' of barley, it will not be considered valid for the whole. Instead, it will count for itself and he is obligated to complete the rest. Likewise, a quarter of a sa' of wheat for a whole sa' of barley is not permissible." Summarized from al-Bada'i: "Value is only considered where the specific item is not explicitly mentioned in the text." (T)

The market price of today will not be considered on the day of payment; rather, the price on the day it became obligatory. For example, if on that day the price of half a sa' of wheat was two annas and today it is one anna, then one anna will not be sufficient. It is mandatory to give two annas. And if it was one anna and has now become two annas, then two annas are not necessary; one anna is sufficient.

In al-Durr al-Mukhtar, it is stated: "It is permissible to pay the value in Zakat, 'Ushr, Kharaj, Sadaqat al-Fitr, vows, and expiations (Kaffarah) other than manumission (manumission requires the actual freeing of a person). The value is considered according to the day it became obligatory (wujub), whereas according to the opinion of the two companions (Sahibayn), the value on the day of payment will be considered. (T)"

(8) Here multiple situations exist: the person liable for fidyah pays it during their life, such as an elderly person (Sheikh-e-Fani) for their fasts; or after their death, the heir pays it of their own accord without a will; or it is paid by the command of a will. In the case of a will, this debt was incurred on the debtor after the death of the testator (mowrith), for example, if someone usurped something from the estate and consumed it, such that its compensation became a debt upon them; or it is a debt from the testator's lifetime. So these are four scenarios. In the last scenario, the ruling of invalidity is explicitly stated in al-Durr al-Mukhtar etc., meaning Zaid owed fidyah for prayers, fasts, etc., and he willed that from my wealth...

1. Al-Fatawa al-Hindiyyah, Chapter 8, regarding Sadaqat al-Fitr, Nurani Kutub Khana, Peshawar, 1/192.
2. Bada'i al-Sana'i, Book of Zakat, H.M. Saeed, Karachi, 2/317.
3. Al-Durr al-Mukhtar, Chapter on Zakat of Sheep, Mujtabai Delhi, 1/133.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दस

मुहीते इमाम सरख़सी फिर हिन्दिया में है कि अगर किसी ने ऐसी अच्छी गेहूं का चौथाई सा' (sa') अदा किया जिसकी क़ीमत जौ के आधे सा' तक पहुँच जाती है तो यह पूरे की तरफ़ से जायज़ नहीं, बल्कि यह अपनी तरफ़ से तोहफ़ा है, बाक़ी को पूरा करना उस पर लाज़िम होगा, और इसी तरह गेहूं का चौथाई सा' जो जौ के पूरे सा' की क़ीमत को पहुँच जाए, देना जायज़ नहीं। 'अह' बदाइ' में है क्योंकि क़ीमत का लिहाज़ वहां है जहाँ नक़्ल (हदीस आदि) में चीज़ को स्पष्ट रूप से तय नहीं किया गया। (त)

क़ीमत में आज का बाज़ार भाव मान्य नहीं होगा जिस दिन अदा कर रहे हैं, बल्कि वाजिब होने के दिन का। मिसाल के तौर पर उस दिन आधे सा' गेहूं की क़ीमत दो आने थी, आज एक आना है, तो एक आना काफ़ी न होगा। दो आने देना लाज़िम है, और अगर (वाजिब होने के दिन) एक आना थी अब दो आने हो गई तो दो आने ज़रूरी नहीं, एक आना ही काफ़ी है।

दुर्रे मुख़्तार में है कि ज़कात, उश्र, ख़राज, सदक़ा-ए-फ़ित्र, मन्नत और ग़ुलाम आज़ाद करने के अलावा कफ़्फ़ारे में क़ीमत देना जायज़ है और क़ीमत वाजिब होने के दिन के लिहाज़ से होगी और साहिबैन की राय के मुताबिक़ अदा करने के दिन की क़ीमत का लिहाज़ किया जाएगा। (त)

(८) यहाँ कई सूरतें हैं: फ़िद्या वाला अपनी ज़िन्दगी में फ़िद्या अदा करता है जैसे बुढ़ापे की वजह से रोज़ा न रख पाने वाला (शैख़े फ़ानी); या उसके बाद वारिस बिना वसीयत के अपनी मर्ज़ी से देता है या वसीयत के हुक्म से अदा किया जाता है और वसीयत की सूरत में कर्ज़दार पर यह कर्ज़ मौरिस की मौत के बाद आया है, जैसे किसी ने विरासत के माल से कोई चीज़ छीन कर इस्तेमाल कर ली कि उसका हर्जाना उस पर कर्ज़ हो गया या कर्ज़ मौरिस की ज़िन्दगी का है। तो ये चार सूरतें हैं। आख़िरी सूरत में न होने का हुक्म दुर्रे मुख़्तार वग़ैरह में साफ़ लिखा है यानी ज़ैद पर नमाज़, रोज़े वग़ैरह का फ़िद्या था उसने वसीयत की कि मेरे माल से...

1. अल-फ़तावा अल-हिन्दिया, बाब ८, सदक़ा-ए-फ़ित्र के बारे में, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर १/१९२
2. बदाइ' अस्सनाइ', किताबुज़्ज़कात, एच एम सईद कराची २/३१७
3. अद-दुर्रुल मुख़्तार, बाब ज़कातुल् ग़नम, मुज्तबाई दिल्ली १/१३३

पृष्ठ ५३८/८३६

في محيط الامام السرخسی ثم الهندية، لوادی ربع صاع من حنطة جيدة تبلغ قيمته قيمة نصف صاع من شعير لا يجوز عن الكل، بل يقع عن نفسه وعليه تكميل الباقی وكذا لا يجوز ربع صاع من حنطة عن صاع من شعير اه ۱ ملخصاً، في البدائع لان القيمة انما تعتبر في غير المنصوص عليه ۲ محیط امام سرخسی پھر ہندیہ میں ہے کہ اگر کسی نے ایسی جید گندم کا چوتھائی صاع ادا کیا جس کی قیمت جو کے نصف صاع کو پہنچ جاتی ہے تو یہ کل کی طرف سے جائز نہیں بلکہ یہ اپنی طرف سے عطیہ ہے، باقی کی تکمیل کرنا اس پر لازم ہوگا، اور اسی طرح گندم کا چوتھائی صاع جو جو کے صاع کی قیمت کو پہنچ جائے دینا جائز نہیں اہ بدائع میں ہے کیونکہ قیمت کا اعتبار وہاں ہے جہاں نص میں عین کی تصریح نہیں۔(ت)۔

قیمت میں نرخ بازار آج کا معتبر نہ ہوگا جس دن ادا کر رہے ہیں بلکہ روز وجوب کا مثلاً اس دن نیم صاع گندم کی قیمت دو آنے تھی آج ایک آنہ ہے تو ایک آنہ کافی نہ ہوگا۔ دو آنے دینا لازم، اور ایک آنہ تھی اب دو آنے ہو گئی تو دو آنے ضرور نہیں ایک آنہ کافی۔

في الدرالمختار جاز دفع القيمہ فی زكوة وعشر وخراج وفطرة ونذروكفارة غير العتاق وتعتبر القيمة يوم الوجوب وقالايوم الاداء ۳ درمختار میں ہے کہ زکوۃ، عشر، خراج، صدقہ فطر، نذر، عتاق کے علاوہ کفارہ میں قیمت کا دینا جائز ہے اور قیمت یوم وجوب کے اعتبار سے ہوگی اور صاحبین کی رائے کے مطابق یومِ ادا کی قیمت کا اعتبار کیا جائے گا۔ (ت)

(۸) یہاں صورتیں متعدد ہیں، فدیہ والا اپنی حیات میں فدیہ ادا کرتا ہے جیسے شیخ فانی روزے کا یا اس کے بعد وارث بلا وصیت بطورِ خود دیتا ہے یا بحکم وصیت ادا کیا جاتا ہے اور در صورت

وصیت مدیون پر یہ دین بعد موتِ مورث، حادث ہوا ہے جیسے کسی نے ترکہ سے کوئی چیز غصب کر کے صرف کر ڈالی کہ اس کے تاوان کا اس پر دین آیا یا دینِ حیاتِ مورث کا ہے تو یہ چار صورتیں ہیں۔ صورتِ اخیر میں عدم صحت کا حکم در مختار وغیرہ میں مصرح ہے یعنی زید پر نماز روزے وغیرہ ہما کا فدیہ تھا اس نے وصیت کی کہ میرے مال

1 الفتاوی الهندية الباب الثامن في صدقة الفطر نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۱۹۲ 2 بدائع الصنائع کتاب الزکوۃ ایچ ایم سعید کراچی ۲/ ۳۱۷ 3 الدر المختار باب زکوۃ الغنم مجتبائی دہلی ۱/ ۱۳۳

Fatawa Razawiyya Volume 10

...paying from Amr, who was poor and was a debtor to Zaid during Zaid's lifetime. The executor (wasi) left that debt as fidyah for Amr; the fidyah was not [considered] paid.

It is mentioned a little before the "Chapter of the Executor" (Bab al-Wasi) that if someone made a will for fidyah for his prayers, and one-third of his estate was a debt owed by destitute individuals, and the executor waived that debt for those destitute individuals as fidyah for the prayers, it will not be sufficient. This is because possession (of the wealth) is first necessary, and after that, if it is given to them as charity, then it will be valid. If the person said, "Let one-third of my wealth be given in charity," and then he died, and a usurper, for instance, seized one-third of the property and destroyed it (even though he was poor), and the executor did not reclaim that property from him but let it count as charity for him, then it would be permissible. This is because after death, the executor is considered to have had possession. This is contrary to the case where the property is a debt owed by someone. All these issues are narrated from "Al-Qunya". [End]

In "Radd al-Muhtar", concerning the statement "The deceased made a will for his prayers or fasts", (from the book) Minah. Concerning the statement "it will not suffice", but according to some it is sufficient. In "Al-Qunya" it is stated that our teacher said: "The first statement is more beloved to me until another narration is found." Concerning the statement "contrary to debt", referring to the previous issue, because the property was not in possession before death. As for the matter if someone...

1. Al-Durr al-Mukhtar, Chapter on Wills of the Dhimmi, Mujtabai Delhi, 2/334.
2. Radd al-Muhtar, Chapter on Wills of the Dhimmi, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 5/477.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (खंड 10)

...से अदा करना अम्र फ़कीर हयात ज़ैद से ज़ैद का मदयून था, वसी ने वह दैन (कर्ज़) फ़िद्या में अम्र को छोड़ दिया फ़िद्या अदा न हुआ।

'बाब अल-वसी' से थोड़ा पहले उल्लेख है कि किसी ने अपनी नमाज़ों पर फ़िद्या की वसीयत की और उसके माल का तिहाई हिस्सा तंगदस्त लोगों पर कर्ज़ था, वसी ने वह हिस्सा उन तंगदस्तों पर नमाज़ों के फ़िद्या के तौर पर छोड़ दिया तो यह काफ़ी न होगा क्योंकि पहले क़ब्ज़ा ज़रूरी है और उसके बाद उन पर सदक़ा करे तो तब दुरुस्त होगा। अगर उसने कहा कि मेरा तिहाई माल सदक़ा कर दिया जाए फिर वह फ़ौत हो गया और किसी ग़ासिब (हड़पने वाले) ने मिसाल के तौर पर तिहाई माल ग़सब कर लिया और उसे हलाक (नष्ट) कर दिया (हालाँकि वह ग़रीब था), वसी ने बतौर सदक़ा वह माल उससे वापस नहीं लिया बल्कि उसी के पास रहने दिया तो यह जाइज़ होगा क्योंकि मौत के बाद वसी को क़ब्ज़ा हासिल था। यह उस सूरत के विपरीत है जब माल किसी पर क़र्ज़ हो। ये तमाम मसाइल 'क़ुनया' से वर्णित हैं।

'रद्द अल-मुह्तार' में है, उनका कथन 'मृतक ने अपनी नमाज़ों या रोज़ों के बारे में वसीयत की', मिन्ह। उनका कथन 'यह पर्याप्त नहीं होगा', लेकिन कुछ के अनुसार यह पर्याप्त है। 'क़ुनया' में है कि हमारे उस्ताद ने फ़रमाया: 'मुझे पहला कथन बहुत प्रिय है जब तक कि कोई दूसरी रिवायत न मिल जाए'। उनके कथन 'कर्ज़ के विपरीत' का अर्थ पिछले मसले के संदर्भ में है, क्योंकि माल मौत से पहले क़ब्ज़े में नहीं होगा। रहा यह मामला कि अगर किसी ने...

1. अल-दुर्र अल-मुख्तार, फ़स्ल फ़ी वसाया अल-ज़िम्मी, मुजतबाई दिल्ली, 2/334
2. रद्द अल-मुह्तार, फ़स्ल फ़ी वसाया अल-ज़िम्मी, दार इहया अल-तुरास अल-अरबी बेरुत, 5/477

पेज 539 / 836

سے ادا کرنا عمرو فقیر حیات زید سے زید کا مدیون تھا، وصی نے وہ دین فدیہ میں عمرو کو چھوڑ دیا فدیہ ادا نہ ہوا۔

باب الوصی سے تھوڑا پہلے ہے کسی نے اپنی نمازوں پر فدیہ کی وصیت کی اور اس کے مال کا تہائی حصہ تنگ دست لوگوں پر دین تھا وصی نے وہ حصہ ان تنگ دستوں پر نمازوں کے فدیہ کے طور پر چھوڑ دیا تو کافی نہ ہوگا کیونکہ پہلے قبضہ ضروری ہے اور اس کے بعد ان پر صدقہ کرے تو تب درست ہوگا، اگر اس نے کہا میرا تہائی مال صدقہ کردیا جائے پھر وہ فوت ہوگیا اور کسی غاصب نے مثلاً تہائی مال غصب کر لیا اور اسے ہلاک کردیا (حالانکہ وہ غریب تھا) وصی نے بطور صدقہ وہ مال اس سے نہ لیا تو جائز ہوگا کیونکہ موت کے بعد وصی کو قبضہ حاصل تھا بخلاف اس صورت کے جب مال کسی پر قرض ہو، یہ مسائل قنیہ سے مروی ہیں اھ

ردالمحتار میں ہے قولہ "فوت ہونے والے نے اپنی نمازوں یا روزوں کے بارے میں وصیت کی" ، منح۔ قولہ "یہ کفایت نہیں کرے گا" لیکن بعض کے نزدیک یہ کافی ہے۔ قنیہ میں ہے کہ ہمارے استاذ نے فرمایا مجھے پہلا قول بہت محبوب ہے حتی کہ کوئی دوسری روایت آجائے۔ قولہ "بخلاف قرض" یعنی گزشتہ مسئلہ میں کیونکہ مال موت سے پہلے قبضہ میں نہیں ہوگا۔ باقی رہا یہ معاملہ کہ اگر کسی نے

1 الدرالمختار، فصل فی وصایا الذمی، مجتبائی دہلی، ۲/ ۳۳۴ 2 ردالمختار فصل فی وصایا الذمی دار احیاء التراث العربی بیروت ۵ / ۴۷۷

Fatawa Rizvia, Volume 10

If someone willed for the expiation (kaffara) of prayers and the mentioned situation occurs, will it be sufficient due to the acquisition of possession after death or not? This should be considered. By his words "and the issue remains the same" (al-mas’ala bi-haliha), he refers to the issue of usurpation (ghasb). What this humble servant wrote in the margins of Radd al-Muhtar is as follows:

He meant by his words "and the issue remains the same" the issue of usurpation, and I found myself writing on it the following:

I say: By the grace of Allah and all praise is for Him. In my view, the issues of ransom (fidya) and usurpation are based on the principle that a bequest of wealth (wasiyya bil-maal) does not include a debt as long as it remains a debt. However, when that debt becomes a tangible asset (ayn) through possession, the bequest then includes it. This is explicitly stated in "Al-Zahiriyya" in these words: "If there were one hundred (dirhams) in cash (ayn) and one hundred dirhams as a debt owed by a stranger, and a man willed one-third of his property to another man, he shall take one-third of the cash, not from the debt. Do you not see that if someone swears an oath that they have no property, while people owe them debts, they have not broken their oath? Then, as parts of the debt are collected, one-third will be taken from it until the entire debt is collected. This is because when the collected amount becomes defined wealth, it is joined with what was initially a tangible asset. It cannot be argued: 'Why was the owner's right not established in the debt before it was defined? How can it be established after it is defined?' For we say that such a matter is not impossible. Do you not see that for the person in whose favor one-third..."

I say: By the grace of Allah and all praise is for Him. I say that in my view, the issue of ransom and usurpation is based on the fact that the bequest of property does not include the debt as long as it remains a debt. Yes, when that debt becomes cash due to possession, the bequest will include it, as explicitly stated in the Zahiriyyah in these words: when one hundred dirhams were cash and one hundred dirhams were a debt on a stranger, the deceased willed a third of the property, then that property will be taken from the third of the cash, not from the debt. Don't you know if a man takes an oath that he has no property even though he has to take a loan from people, his oath will not be broken? Then whatever portion from the debt is collected, one-third will be taken from it until the whole debt is collected, so that when the collected property is specified, it will be added to the property that was cash initially. This objection

cannot be raised that when the owner's right in the debt was not proven before being specified, then how will the right be proven after being specified? Because we say such an affair is not impossible. Do you not know that one for whom a third...

फ़तावा रिज़विया, जिल्द 10

यदि किसी ने नमाज़ों के कफ़्फ़ारे (प्रायश्चित) की वसीयत की और स्थिति वही हो जो बताई गई है, तो क्या मृत्यु के बाद कब्ज़ा प्राप्त होने के कारण यह पर्याप्त होगा या नहीं? इस पर विचार किया जाना चाहिए। "अल-मसअला बि-हालिहा" से तात्पर्य ग़सब (अवैध कब्ज़ा) का मसला है। रद अल-मुह्तार के हाशिए पर इस बंदे (लेखक) ने जो कुछ लिखा है, वह इस प्रकार है:

उनका अपने कथन "मसला ज्यों का त्यों है" से आशय ग़सब का मसला था, और मैंने स्वयं को उस पर यह लिखते हुए पाया:

मैं कहता हूँ: अल्लाह की तौफ़ीक़ से और उसी की प्रशंसा है। मेरे नज़दीक फ़िद्या और ग़सब का मसला इस बात पर आधारित है कि माल की वसीयत (वसीयत बिल-माल) तब तक कर्ज़ (ऋण) को शामिल नहीं करती जब तक वह कर्ज़ रहे। हाँ, जब वह कर्ज़ कब्ज़ा मिलने के कारण नकद (ऐन) बन जाए, तो वसीयत उसे शामिल कर लेगी। जैसा कि "ज़हीरिया" में इन शब्दों के साथ स्पष्ट किया गया है: "जब सौ (दिरहम) नकद हों और सौ दिरहम किसी अजनबी पर कर्ज़ हों, और एक व्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति के लिए अपने एक-तिहाई माल की वसीयत की हो, तो वह नकद के एक-तिहाई से हिस्सा लेगा, न कि कर्ज़ से। क्या आप नहीं देखते कि यदि कोई व्यक्ति कसम खाता है कि उसके पास कोई माल नहीं है, जबकि लोगों पर उसका कर्ज़ है, तो उसकी कसम नहीं टूटती? फिर कर्ज़ से जो भी हिस्सा प्राप्त होगा, उसमें से एक-तिहाई तब तक लिया जाएगा जब तक पूरा कर्ज़ अदा न हो जाए। क्योंकि जब प्राप्त राशि निर्धारित धन बन जाती है, तो वह उस चीज़ के साथ जुड़ जाती है जो शुरू से ही नकद थी। यह नहीं कहा जा सकता कि 'जब निर्धारित होने से पहले कर्ज़ में उसका अधिकार स्थापित नहीं हुआ, तो निर्धारित होने के बाद कैसे स्थापित हो सकता है?' क्योंकि हम कहते हैं कि इस तरह का मामला असंभव नहीं है। क्या आप नहीं जानते कि जिस व्यक्ति के पक्ष में एक-तिहाई..."

मैं कहता हूँ: अल्लाह की तौफ़ीक़ और उसी के लिए प्रशंसा है। मैं कहता हूँ कि मेरे नज़दीक फ़िद्या और ग़सब का मसला इस पर आधारित है कि माल की वसीयत कर्ज़ को शामिल नहीं करती जब तक वह कर्ज़ है। हाँ, जब वह कर्ज़ कब्ज़ा मिलने के कारण नकद हो जाए तो वसीयत उसे शामिल कर लेगी जैसा कि ज़हीरिया में इन शब्दों के साथ स्पष्ट किया गया है कि जब एक सौ दिरहम नकद और एक सौ दिरहम किसी अजनबी पर कर्ज़ थे, तो मरने वाले ने एक-तिहाई माल की वसीयत की, तो अब नकद के एक-तिहाई से वह माल लिया जाएगा न कि कर्ज़ से। क्या आपको ज्ञात नहीं कि यदि कोई

व्यक्ति शपथ लेता है कि उसके पास माल नहीं है जबकि उसने लोगों से ऋण लेना है, तो उसकी शपथ नहीं टूटेगी? फिर कर्ज़ में जो हिस्सा प्राप्त होगा, उससे एक-तिहाई लिया जाएगा यहाँ तक कि सारा कर्ज़ प्राप्त हो जाए। जब प्राप्त होने वाला माल निर्धारित हो जाए, तो वह उस माल के साथ जुड़ जाएगा जो शुरू में नकद था। यह आपत्ति नहीं की जा सकती कि जब निर्धारित होने से पहले कर्ज़ में स्वामी का अधिकार सिद्ध नहीं हुआ, तो निर्धारित होने के बाद अधिकार कैसे सिद्ध होगा? क्योंकि हम कहते हैं कि इस प्रकार का मामला असंभव नहीं होता। क्या आप नहीं जानते कि जिसके पक्ष में एक-तिहाई...

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

نمازوں کے کفارہ کی وصیت کی اور صورت مذکورہ ہی ہو تو موت کے بعد حصول قبضہ کی وجہ سے یہ کافی ہو گا یا نہیں اس پر غور کیا جائے اھ والمسئلة بحالها سے مراد مسئلہ غصب ہے ردالمحتار کے حاشیہ پر بندہ نے جو کچھ تحریر کیا ہے وہ یہ ہے۔

ارادبقوله والمسألة بحالها مسألة الغصب، ورأيتنى كتبت عليه مانصه

اقول: وبالله التوفيق وله الحمد تبتنى عندى مسألتا الفديه والغصب على ان الوصية بالمال لاتتناول الدين ماكان ديناً فاذا صار عيناً بالقبض تناولته كما صرح به فى الظهيرية حيث قال اذا كان مائة عين ومائة درهم على اجنبى دين فاوصى لرجل بثلث ماله فانه يا خذ ثلث العين دون الدين الاترى ان حلف ان لامال له وله ديون على الناس لم يحنث ثم مخرج من الدين اخذ منه ثلثه حتى يخرج الدين كله لانه لما تعين الخارج مالاً، التحق بماكان عينًا في الابتداء، ولا يقال لم لم يثبت حقه في الدين قبل ان يتعين كيف يثبت حقه فيه اذا تعين لانا نقول مثل هذا غير ممتنع الاترى

اقول: اللہ کی توفیق اور اسی کے لیے حمد ہے، سے کہتا ہوں میرے نزدیک فدیہ اور غصب کا مسئلہ اس پر مبنی ہے کہ وصیت بالمال دین کو شامل ہی نہیں جب تک وہ دین رہے، ہاں جب وہ دین قبضہ کی وجہ سے عین ہو جائے تو پھر وصیت اسے شامل ہو گی جیسا کہ ظہیریہ میں ان الفاظ سے صراحت کی ہے کہ جب ایک سو درہم عین اور ایک سو درہم کسی اجنبی پر دین تھے تو فوت ہونے والے نے تہائی مال کی وصیت کی تو اب عین کی تہائی سے وہ مال لیا جائے گا نہ کہ دین سے کیا آپ کے علم میں نہیں اگر کوئی آدمی حلف اٹھاتا ہے کہ اس کے پاس مال نہیں حالانکہ اس نے لوگوں سے قرض لینا ہے تو اس کی قسم نہیں ٹوٹے گی، پھر دین میں جو حصہ خارج ہو گا اس

سے تہائی لیا جائے یہاں تک کہ سارا دین خارج ہو جائے کہ جب خارج ہونے والا مال متعین ہو جائے تو اس مال کے ساتھ لاحق ہو جائے گا جو ابتدائی طور پر عین تھا یہ اعتراض نہیں کیا جاسکتا کہ جب متعین ہونے سے پہلے دین میں مالک کا حق ثابت نہیں ہوا تو متعین ہو جانے کے بعد حق کیسے ثابت ہوگا کیونکہ ہم کہتے ہیں اس طرح کا معاملہ ممتنع نہیں ہوتا، کیا آپ نہیں جانتے کہ جس کے حق میں تہائی

The right of one for whom a third of the wealth has been bequeathed is not established in retaliation (qisas); but when it is converted into wealth, his right is established therein. (End) This reconciles the two statements of Khania, which says that debts are not included in a bequest of wealth, and Wahbania, which says that their inclusion is more appropriate, as inclined towards in Minhat al-Khaliq. So refer to it regarding miscellaneous matters of judgment. As for the issue of fidyah (redemption), since the debt existed before death and the executor intended to waive it before taking possession, executing the bequest in something it does not cover is not permissible unless possession is taken and it is given in charity. In the case of usurpation (ghasb), as the wealth was in physical form at the time of death, and the usurper's possession, its destruction, and its conversion into debt all occurred after death, the bequest covers it, making it permissible. This is what appeared to me, and through it, the answer becomes clear to what the commentator (al-Muhashi) hesitated over by saying 'let it be referred back' (yuraja'). For there is no ambiguity from this perspective, unless it is proven that paying expiations (kaffarat) by waiving a debt is fundamentally not permissible, and there is a pause in this, so let it be referred back. Let them verify what I have written. (End of my note)

The ruling for the remaining forms is subject to investigation and review. I say: and with Allah is the guidance. The matter is plausible, and a speaker can say that the Sharia rule is 'perfect performance for what is perfect, not perfect for what is deficient'. Therefore, no prayer, whether obligatory or missed, is permissible during the three prohibited times, except for today's Asr prayer or a funeral prayer brought during these times, so that they may be performed as they became obligatory at that time.

जिसके लिए एक तिहाई माल की वसीयत की गई हो, उसका अधिकार किसास (प्रतिशोध) में सिद्ध नहीं होता, लेकिन जब वह माल में परिवर्तित हो जाता है, तो उसमें उसका अधिकार सिद्ध हो जाता है। (समाप्त) इससे खानिया और वहबानिया के दोनों कथनों में समन्वय हो जाता है। खानिया में है कि माल की वसीयत में ऋण शामिल नहीं होते। वहबानिया में है कि ऋणों का इसमें शामिल होना अधिक उपयुक्त है, जैसा कि मिन्नत अल-खालिक में इसी ओर झुकाव है। तो इसके लिए मिन्नत अल-खालिक में न्याय के विविध मामलों की ओर संदर्भ लें। रहा फ़िदिया का मामला, तो ऋण मृत्यु से पहले था और वसीयत करने वाले ने कब्ज़ा लेने से पहले ही इसे समाप्त करने का इरादा किया था, इसलिए ऐसी चीज़ में वसीयत का निष्पादन जो उसमें शामिल ही नहीं है, तब तक उचित नहीं होगा जब तक कि कब्ज़ा न ले लिया जाए और उसे दान न कर दिया जाए। और गसब (ज़बरन कब्ज़ा) के मामले में, मृत्यु के समय माल ठोस रूप में था, फिर गसब करने वाले का कब्ज़ा, उसका उसे नष्ट करना और उसका ऋण बनना ये सब मृत्यु के बाद हुआ है, तो वसीयत इसे कवर करेगी, इस प्रकार यह जायज़ है। यह वह था जो मुझ पर स्पष्ट हुआ। और इससे उस चीज़ का उत्तर भी आ गया जिसमें अल्लामा मुहाशी ने 'युराजअ' (पुनर्विचार) शब्द से रोक लगा दी थी, क्योंकि इस दृष्टि से इस पर कोई अस्पष्टता नहीं है, सिवाय इसके कि जब यह सिद्ध हो जाए कि ऋण छोड़कर कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) का भुगतान करना मौलिक रूप से जायज़ ही नहीं है, और इसमें रुकावट है, तो पुनर्विचार किया जाना चाहिए। मैंने जो लिखा है उसकी वे पुष्टि करें। (मेरा नोट समाप्त)

बाकी स्थितियों का आदेश जाँच और समीक्षा के अधीन है। मैं कहता हूँ: और अल्लाह की सहायता से। यह मामला विचारणीय है, और एक कहने वाला कह सकता है कि शरीयत का नियम 'पूर्ण प्रदर्शन पूर्ण के लिए है, न कि पूर्ण अपूर्ण के लिए'। इसलिए, तीन निषिद्ध समयों में कोई भी नमाज़, चाहे वह अदा हो या कज़ा, जायज़ नहीं है, सिवाय आज की अस्र की नमाज़ के या उस जनाज़े की नमाज़ के जो इन्हीं समयों में लाया गया हो, ताकि वे उसी समय अदा किए जा सकें जैसे वे अनिवार्य हुए थे।

पृष्ठ 836 का 541

مال کی وصیت کی گئی اس کا حق قصاص میں ثابت نہیں ہوتا وہ جب تبدیل ہو کر مال بن جائے تو اس میں اس کا حق ثابت ہو جائے گا اھ اس سے خانیہ اور وہبانیہ کے دونوں اقوال میں تطبیق ہو جائے گی۔ خانیہ میں ہے کہ دیون وصیت بالمال میں داخل نہیں ہوتے۔ وہبانیہ میں ہے کہ دیون کا اس میں دخول زیادہ مناسب ہے جیسا کہ منحۃ الخالق میں اسی طرف میلان ہے تو اس کے لیے منحۃ الخالق میں قضا کے متفرق مسائل کی طرف رجوع کرو۔ رہا مسئلہ فدیہ کا معاملہ تو دین موت سے پہلے تھا اور وصی نے قبضہ سے پہلے ہی اس کے اسقاط کا ارادہ کیا تو یہ وصیت کا ایسی چیز میں اجرا ہوگا جس کو یہ شامل ہی نہیں، تو جب تک قبضہ نہ ہو اور صدقہ نہ کیا جائے یہ جائز نہ ہوگا اور مسئلہ غصب میں وفات کے وقت مال عین تھا، پھر غاصب کا قبضہ، اس کا اسے ہلاک کرنا اور اس کا دین بننا یہ سب موت کے بعد ہوا ہے تو اسے وصیت شامل ہوگی تو اس طرح یہ جائز ہے، یہ وہ تھا جو مجھ پر واضح ہوا۔ اور اس سے اس چیز کا جواب بھی آگیا جس میں علامہ محشی نے لفظ "یراجع" سے توقف کیا کیونکہ اس اعتبار سے اس پر کوئی غبار نہیں، مگر جب یہ ثابت ہو جائے کہ کفارات کی ادائیگی ترکِ دین سے اصلاً جائز ہی نہیں اور اس میں توقف ہے، چاہئے یہ کہ جو ہم نے تحریر کیا ہے اس تمام کا مطالعہ کیا جائے اھ میرا حاشیہ ختم ہوا۔ (ت)

باقی صور کا حکم قابل تفتیش و مراجعت ہے۔ اقول: وباللہ التوفیق امر متحمل ہے اور قائل کہہ سکتا ہے کہ قاعدہ شرعیہ ادائے کامل بہ کامل ہے، نہ کامل بنا قص۔ ولہذا اوقات ثلاثہ میں کوئی نماز ادا و قضا جائز نہیں، مگر آج کی عصر یا اس جنازے کی نماز جو انہیں اوقات میں لایا گیا لتأدیھما حینئذ کما وجبتا

And the issues with their reasonings have been mentioned in the texts and commentaries (because their fulfillment is happening in the same way as they were obligatory, and all these issues are mentioned with their reasonings in the texts and commentaries. - Translator). In fasts, none is deficient, and missed (Qadha) prayers are generally complete; therefore, yesterday's Asr prayer cannot be performed as Qadha today as the sun sets. And property which is a debt upon someone is not complete property until it is received; it is deficient, especially when it is upon a bankrupt person as that is, so to speak, dead property. Therefore, the acquisition of ownership of property that does not result in wealth and riches [is not sufficient]; if Zaid has a hundred thousand rupees as a debt upon a bankrupt person, as long as he does not possess the minimum wealth (Nisab) himself, he is poor and can accept Zakat.

In Al-Ashbah: Whoever has a debt upon a bankrupt person who acknowledges it, is poor according to the preferred view (1).	**In Ashbah it is stated: Whoever has a debt upon such a person who is a bankrupt acknowledger, then according to the chosen saying, he is poor. (T)**

In fact, colloquially, debt is not even called wealth. If hundreds of thousands are spread in debts and one has nothing in hand, he can take an oath that "I have no wealth," as previously mentioned from 'az-Zahiriyya' and similar is in 'al-Bahr', 'at-Tanwir', and other books. (Translator) Therefore, the Zakat of any 'Ain' (existing asset) i.e., present Nisab, cannot be fulfilled by forgiving a debt with the intention of Zakat, because the present Nisab is complete wealth, so deficient wealth cannot be its Zakat. Rather, even the Zakat of a debt to be received in the future will not be fulfilled by forgiving the debt, because a remaining debt is better than a dropped debt. A dropped debt can never become wealth now, while in a remaining debt, there is a possibility that it might be received and become wealth. Yes, if the Nisab was a debt upon a poor person and one forgives the whole or part of it, then the Zakat of the forgiven amount is dropped, because deficient can be fulfilled by deficient.

In Ad-Durr al-Mukhtar: If one absolves a poor person from the Nisab, it is valid and it (the Zakat obligation) drops from him. Know that fulfilling debt with debt, and 'Ain' (present asset) with 'Ain' and with debt is permissible, but fulfilling debt with 'Ain' and with a debt that will be received soon, both of these are not permissible. (End) (2) In Tabyin al-Haqa'iq: If someone has [a debt] upon a poor person...

In Durr al-Mukhtar it is: If someone absolved a poor person from the Nisab, it will be correct and Zakat will be dropped from him. It should be clear that fulfillment of debt from debt, and fulfillment of 'Ain' from 'Ain', and from debt both are permissible, but fulfillment of debt from 'Ain' and from that debt which will soon be received, both are not permissible. (End) In Tabyin al-Haqa'iq it is if someone has upon a poor person...

1 Al-Ashbah wa an-Naza'ir, Kitab al-Zakat, Dar al-Qur'an wal-'Ulum al-Islamiyya Karachi, 1/220. 2 Ad-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Mujtaba'i Delhi, 1/130.

फ़तावा रज़विया जिल्द दस

और मसले अपनी दलीलों के साथ मतून (मूल पाठों) और शरूहात (व्याख्याओं) में वर्णित हैं (क्योंकि उनकी अदायगी उसी तरह हो रही है जिस तरह वे वाजिब हुए थे और ये तमाम मसले अपनी दलीलों के साथ मूल पाठों और व्याख्याओं में वर्णित हैं। त) रोज़ों में कोई कमतर नहीं और क़ज़ा नमाज़ें सामान्यतः कामिल (पूर्ण) हैं, इसीलिए कल की अस्र आज सूरज डूबते समय क़ज़ा नहीं की जा सकती। और जो माल किसी पर ऋण (क़र्ज़) हो, जब तक प्राप्त न हो जाए, वह पूर्ण माल नहीं बल्कि कमतर (नाक़िस) है, विशेषकर जब वह किसी कंगाल (मुफ़लिस) पर हो, क्योंकि वह तो मानो मरा हुआ माल है। इसलिए माल का स्वामित्व प्राप्त होना जिससे धन और संपन्नता न आए [पर्याप्त नहीं]; यदि ज़ैद के एक लाख रुपये किसी कंगाल पर ऋण हों, जब तक उसके पास निसाब (न्यूनतम आवश्यक धन) न हो, वह निर्धन है और स्वयं ज़कात ले सकता है।

'अल-अश्बाह' में है: जिसका ऋण किसी ऐसे कंगाल पर हो जो उसे स्वीकार करता हो, वह पसंदीदा मत (मुख़्तार क़ौल) के अनुसार निर्धन है (१)।

अश्बाह में है: जिसका किसी ऐसे व्यक्ति पर ऋण हो जो कंगाल और इक़रार करने वाला हो, तो मुख़्तार क़ौल पर वह निर्धन है। (त)

बल्कि बोलचाल में ऋण को माल ही नहीं कहते। यदि लाखों रुपये ऋण में फैले हों और पास कुछ न हो, तो वह क़सम खा सकता है कि "मेरा कोई माल नहीं है", जैसा कि पहले 'ज़हीरिया' के हवाले से गुज़रा, और वैसा ही 'बह्र', 'तनवीर' और अन्य पुस्तकों में है (त)। इसलिए किसी 'ऐन' यानी मौजूद निसाब की ज़कात, ज़कात की नीयत से ऋण माफ़ कर देने से अदा नहीं हो सकती, क्योंकि मौजूद निसाब पूर्ण माल है, तो कमतर माल उसकी ज़कात नहीं हो सकता। बल्कि जो ऋण भविष्य में मिलने वाला है, उसकी ज़कात भी ऋण माफ़ी से अदा नहीं होगी क्योंकि शेष ऋण, समाप्त ऋण से बेहतर है। समाप्त ऋण अब कभी माल नहीं बन सकता, जबकि शेष ऋण में संभावना है कि शायद प्राप्त होकर माल बन जाए। हाँ, जो निसाब किसी निर्धन पर ऋण था, उसे कोई पूरा या कुछ हिस्सा माफ़ कर दे, तो माफ़ की गई राशि की ज़कात समाप्त हो गई क्योंकि कमतर से कमतर की अदायगी हो सकती है।

'दुर्रे मुख़्तार' में है: यदि किसी ने निर्धन को निसाब से मुक्त कर दिया तो यह सही होगा और उससे ज़कात समाप्त हो जाएगी। स्पष्ट रहे कि ऋण की अदायगी ऋण से, और 'ऐन' (मौजूद संपत्ति) की अदायगी 'ऐन' से और ऋण से, दोनों जायज़ हैं; लेकिन ऋण की अदायगी 'ऐन' से और उस ऋण से जो शीघ्र ही प्राप्त होगा, इन दोनों से जायज़ नहीं है। (समाप्त) (२) 'तबीईनुल हक़ाएक़' में है: यदि किसी का निर्धन पर...

दुर्रे मुख़्तार में है: अगर किसी ने फ़क़ीर को निसाब से बरी कर दिया तो सही होगा और उससे ज़कात साक़ित (समाप्त) हो जाएगी। वाज़ेह रहे कि दैन (ऋण) की अदायगी दैन से और ऐन की अदायगी ऐन से, और दैन दोनों से जायज़ है लेकिन दैन की अदायगी ऐन से और उस दैन से जो अनक़रीब मक़बूज़ (प्राप्त) होगा, इन दोनों से जायज़ नहीं (समाप्त)। तबीईनुल हक़ाएक़ में है अगर किसी का फ़क़ीर पर...

१ अल-अश्बाह वन-नज़ाइर, किताबुज़-ज़कात, दारुल क़ुरआन वल-उलूमुल इस्लामिया कराची, १/२२० २ दुर्रे मुख़्तार किताबुज़-ज़कात मुज्तबाई दिल्ली, १/१३०

والمسائل بتعلیلھا تھا مذکورۃ متونا وشروحا (کیونکہ ان کی ادائیگی اس طرح ہو رہی ہے جس طرح وہ واجب ہوئے تھے اور یہ تمام مسائل اپنی تعلیلات کے ساتھ متون اور شروحات میں مذکور ہیں۔ ت) روزوں میں کوئی ناقص نہیں اور قضا نمازیں عموماً کامل ہیں و لہذا کل کی عصر آج آفتاب ڈوبتے قضا نہیں کی جاسکتی اور جو مال کسی پر دین ہو جب تک وصول نہ ہو مال کامل نہیں ناقص ہے خصوصا جبکہ کسی مفلس پر ہو کہ وہ تو گویا مردہ مال ہے ولہذا حاصل ملک مال کہ تمول و غنا نہیں ہوتا زید کے لاکھ روپے کسی مفلس پر قرض آتے ہوں جب تک پاس نصاب نہ ہو فقیر ہے خود زکوۃ لے سکتا ہے۔

فی الاشباہ من لہ دین علی مفلس اشباہ میں ہے جس کا کسی ایسے شخص پر قرض ہو جو مقر، فقیر علی المختار ۱۔ مفلس اقرار کرنے والا ہو تو مختار قول پر وہ فقیر ہے۔(ت)

بلکہ عرفاً دین کو مال ہی نہیں کہتے اگر لاکھوں قرض میں پھیلے ہوں اور پاس کچھ نہیں تو قسم کھا سکتا ہے کہ میرا کچھ مال نہیں کما تقدم عن الظھیریۃ ومثلہ في البحر والتنویر وغیرھما (جیسا کہ ظہیریہ کے حوالے سے پہلے گزرا، اس کی مثل بحر، تنویر، اور دیگر کتب میں ہے۔ ت) ولہذا کسی عین یعنی نصاب موجود کی زکوۃ ، دین بہ نیت زکوۃ معاف کر دینے سے ادا نہیں ہو سکتی کہ نصاب موجود مالِ کامل ہے تو مال ناقص اس کی زکوۃ نہیں ہو سکتا بلکہ جو دین آئندہ ملنے کا ہے اس کی زکوۃ بھی معافی دین سے ادا نہ ہو گی کہ دین باقی ، دین ساقط سے بہتر ہے ، دین ساقط اب کبھی مال نہیں ہو سکتا اور دین باقی میں احتمال ہے شاید وصول ہو کر مال ہو جائے ، ہاں جو نصاب کسی فقیر پر دین تھی وہ کل یا بعض اسے معاف کر دے تو قدر معاف شدہ کی زکوۃ ساقط ہو گئی کہ ناقص ناقص سے ادا ہو سکتا ہے۔

فی الدرالمختار، لو ابرأالفقیر عن النصاب صح و سقط عنہ، واعلم ان اداء الدین عن الدین و العین عن العین وعن الدین یجوز واداء الدین عن العین وعن دین سیقبض لا یجوز اھ ۲ فی تبیین الحقائق لو کان لہ

در مختار میں ہے : اگر کسی نے فقیر کو نصاب سے بری کردیا تو صحیح ہو گا اور اس سے زکوۃ ساقط ہو جائیگی۔ واضح رہے کہ دین کی ادائیگی دین سے اور عین کی ادائیگی عین سے، اور دین دونوں سے جائز ہے لیکن دین کی ادائیگی عین سے اور اس دین سے جو عنقریب مقبوض ہو گا ان دونوں سے جائز نہیں اھ تبیین الحقائق میں ہے اگر کسی کا فقیر پر

1 الاشباہ والنظائر، کتاب الزکوۃ، دارالقرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی، ۱/۲۲۰ 2 در مختار کتاب الزکوۃ مجتبائی دہلی، ۱/۱۳۰

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Section 1] Arabic Text: If there is a debt on a poor person and he (the creditor) waives it, the zakat on it is dropped, whether or not he intended it as zakat. This is because it is like lost wealth. If he waives a part of it, then based on the previous reasoning, zakat for that part is dropped. However, zakat for the remainder is not dropped, even if an intention of payment from the remainder was made, because what is waived is no longer wealth, while the remainder has the potential to be wealth. Thus, the remainder is considered better than what was waived, and therefore the obligation cannot be dropped through it. Ah. [1] Urdu Translation: If there was a debt and he freed the poor person from the loan, then zakat will be dropped from it, whether or not he intended zakat by it. This is because it is like wealth that has been destroyed. And if he waived a part, then based on the previous argument, zakat will be dropped from that part, but zakat will not be dropped from the remainder even if the intention of payment from the remainder was made, because what is waived is not wealth and it is possible for the remainder to be wealth, so the remainder was better than the dropped one, hence there will be no dropping of obligation from it. Ah. (T)

This luminous discourse, by the grace of the Almighty, necessitates that by forgiving a debt, the Fidya (expiation) is absolutely not fulfilled until it is received and then given as Fidya. On this premise, there is a legal device (heela) customary among the people of India, and some later scholars of India have mentioned it in 'Kashf al-Ghata' as follows:

[Section 2] Persian Text: The customary way is that the total years of the deceased's life are calculated. The period of puberty, which is twelve years for a male and nine years for a female, is subtracted. For the remaining life, for every six obligatory prayers of the day and night, three complete Sa' are taken. A full month is counted as thirty days, so the Fidya for the prayers of one year (which is 360 days) amounts to one thousand and eighty Sa'. Then fifteen Sa' for the Fidya of Ramadan are added, making the total Fidya for the entire year one thousand and ninety-five Sa'. In this same manner, calculate for all the years of a person's life and determine the amount according to the current price, based on the necessity of hardship (usrat). Urdu Translation: It is well-known that they calculate all the years of the deceased's life. Subtracting the minimum period of puberty, which is twelve years for a male and nine years for a female, for the remaining life, they take three Sa' against (equivalent to) six prayers of every day and night. And thirty days of each month are counted, so

the Fidya for prayers of one year (consisting of 360 days) becomes one thousand and eighty Sa', and they increase 15 Sa' for the Fidya of Ramadan, so the Fidya for the whole year becomes one thousand and ninety-five (1095) Sa'. Thus, the calculation for all the years of life should be done in this same manner, and its price according to its total... hardship (usrat).

1 Tabyin al-Haqa'iq, Kitab al-Zakat, Al-Matba'ah al-Kubra al-Amiriyah, Egypt, 1 / 258
Page 543 of 836

फतवा रज़विया, जिल्द दहुम (खंड 10)

[अनुभाग 1] अरबी पाठ: किसी गरीब पर कर्ज था, और उसने (ऋणदाता ने) उसे माफ कर दिया। उससे जकात समाप्त हो गई, चाहे उसने उससे जकात की नियत की हो या नहीं, क्योंकि यह विनाश की तरह है। और यदि उसने उसका कुछ हिस्सा माफ कर दिया, तो हमारे कहे अनुसार उस हिस्से की जकात समाप्त हो गई। और बाकी की जकात समाप्त नहीं होगी, भले ही उसने उससे बाकी की अदायगी की नियत की हो, क्योंकि जो समाप्त हुआ वह धन नहीं है, और बाकी का धन होना मुमकिन है, तो वह समाप्त भाग से बेहतर ठहरा; इसलिए उससे दायित्व समाप्त नहीं होगा। अ़ [1] उर्दू अनुवाद: ऋण था उसने फ़कीर को ऋण से मुक्त कर दिया तो उससे ज़कात समाप्त हो जाएगी चाहे उससे ज़कात की उसने नियत की हो या न, क्योंकि ये नष्ट होने वाले धन की तरह है और अगर कुछ हिस्सा माफ किया तो पूर्व तर्क के आधार पर उस हिस्से से ज़कात समाप्त हो जाएगी लेकिन बाकी से ज़कात समाप्त न होगी भले ही बाकी से अदायगी की नियत की गई हो क्योंकि जो माफ किया गया वह धन नहीं है और जो बाकी है उसका धन होना मुमकिन है तो बाकी माफ किए गए से बेहतर ठहरा, अतः उससे सुकूत (समाप्ति) नहीं होगा। अ़ (त)

यह शानदार प्रवचन, सर्वशक्तिमान की कृपा से, यह मांग करता है कि ऋण माफ करने से फ़िद्या (प्रायश्चित) पूर्णतः तब तक अदा नहीं होता जब तक कि उसे प्राप्त करके फ़िद्या में न दिया जाए। इसी आधार पर भारत के लोगों में एक कानूनी युक्ति (हीला) प्रचलित है, और भारत के कुछ बाद के विद्वानों ने इसे 'कश्फ़ुल ग़िता' में उल्लेख किया है कि:

[अनुभाग 2] फ़ारसी पाठ: रिवाज यह है कि मृतक के जीवन के वर्षों की गणना की जाती है। वयस्कता की अवधि, जो पुरुषों में बारह वर्ष और महिलाओं में नौ वर्ष है, घटा दी जाती है। शेष जीवन के लिए, दिन-रात की हर छह अनिवार्य नमाजों के बदले तीन पूर्ण साअ़ लिए जाते हैं। एक पूरे महीने को तीस दिन का माना जाता है, ताकि एक साल की नमाजों का फ़िद्या (जो 360 दिन है) एक हजार अस्सी साअ़ प्राप्त हो। फिर पंद्रह साअ़ रमजान का फ़िद्या बढ़ा देते हैं, जिससे पूरे वर्ष का फ़िद्या एक हजार पचानवे साअ़ हो जाता है। इसी तरह पूरे जीवन के वर्षों का हिसाब करें और कुल योग के अनुसार उसकी कीमत तय करें, तंगी (उसरत) की आवश्यकता के आधार पर। उर्दू अनुवाद: प्रसिद्ध यह है कि मय्यत की उम्र के तमाम सालों का हिसाब लगाते हैं, कम से कम वयस्कता की अवधि जो पुरुष में बारह साल और महिला में नौ साल है निकाल कर बाकी उम्र हर दिन रात की छह नमाजों के मुक़ाबले (हिसाब से) तीन साअ़ लेते हैं और हर महीने के तीस दिन गिने जाते हैं यहाँ तक कि एक

साल (जो 360 दिनों का है) की नमाजों का फ़िद्या एक हजार अस्सी साअ़ बनता है और 15 साअ़ रमजान का फ़िद्या बढ़ाते हैं तो पूरे वर्ष का फ़िद्या एक हजार पचानवे (1095) साअ़ ठहरा। अतः इसी प्रकार जीवन के सभी वर्षों का हिसाब कर लिया जाए और उसके कुल योग के अनुसार उसकी कीमत... तंगी (उसरत)।

1 तबीनुल हक़ाइक़, किताबुज़ ज़कात, अल-मत्बा अल-कुबरा अल-अमीरिया, मिस्र, 1 / 258 पृष्ठ 543 का 836

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

[پہلا حصہ] عربی عبارت: دین علی فقیر فأبرأہ عنہ سقط منہ زکوۃ نوی بہ عن الزکوۃ او لا لانہ کالہلاک ولو ابرأہ عن البعض سقط زکوۃ ذلک البعض لما قلنا وزکوۃ الباقی لا تسقط ولو نوی بہ الاداء عن الباقی لان الساقط لیس بمال والباقی یجوز ان یکون مالا فکان خیرا منہ فلا یجوز الساقط عنہ اھ[1]۔

اردو ترجمہ: دین تھا اس نے فقیر کو قرض سے بری کردیا تو اس سے زکوٰۃ ساقط ہوجائے گی خواہ اس سے زکوٰۃ کی اس نے نیت کی ہو یا نہ، اس لیے کہ یہ ہلاک ہونے والے مال کی طرح ہے اور اگر بعض نے ساقط کیا تو سابقہ دلیل کی بنا پر بعض سے ساقط ہوجائے گی لیکن باقی سے زکوٰۃ ساقط نہ ہوگی اگرچہ باقی سے ادائیگی کی نیت کی گئی ہو کیونکہ جو ساقط ہے مال نہیں اور جو باقی ہے اس کا مال ہونا ممکن ہے تو باقی ساقط سے بہتر ٹھہرا لہذا اس سے سقوط نہیں ہوگا اھ (ت)

یہ تقریر منیر بتوفیق القدیر اقتضاء کرتی ہے کہ دین معاف کرنے سے فدیہ مطلقاً ادانہ ہو جب تک وصول کر کے فدیہ میں نہ دی، اس تقدیر پر وہ حیلہ ہند والوں میں متعارف ہے اور بعض متاخرین فضلائے ہند نے اسے کشف الغطاء میں ذکر کیا کہ :

[دوسرا حصہ] فارسی عبارت: متعارف چنان ست کہ حساب کنند سالہائے میت را داد نی مدت بلوغ کہ در مرد دوازدہ سال و در زن نہ سال ست وضع کنند باقی را مقابل ہر شش نماز واجب شبانہ روز سہ صاع کامل گیرند و ماہ کامل سی روز اعتبار کنند تا فدیہ نماز ہائے یک سال کہ سی صد و شصت روزست یک ہزار و ہشتاد صاع حاصل آید و پازدہ صاع فدیہ رمضان افزایند ہمگی فدیہ تمام سال یک ہزار و نود و پنج صاع شود ہمیں طریق سالہائے تمام عمر را حساب کنند و حاصل آن را موافق قیمت مبلغ مشخص نمایند و بنا بر ضرورت عسرت اردو ترجمہ: معروف یہ ہے کہ میت کی

عمر کے تمام سالوں کا حساب لگاتے ہیں، کم از کم مدتِ بلوغ جو مرد میں بارہ سال اور عورت میں نو سال ہے نکال کر باقی عمر ہر دن رات کی چھ نمازوں کے مقابل (اعتبار سے) تین صاع لیتے ہیں اور ہر ماہ کے تیس دن شمار کئے جاتے ہیں حتیٰ کہ ایک سال (جو تین سو ساٹھ دنوں کا ہے) کی نمازوں کا فدیہ ایک ہزار اسی صاع بنتا ہے اور ۱۵ صاع رمضان کا فدیہ زیادہ کرتے ہیں تو تمام سال کا فدیہ ایک ہزار پچانوے (۱۰۹۵) صاع ٹھہرا، پس اسی طریقے سے تمام سالوں کا حساب کرلیا جائے اور اس کے حاصل کے مطابق اس کی قیمت... عسرت۔

1 تبیین الحقائق کتاب الزکوۃ المطبعۃ الکبری الامیریہ مصر 1 / 258 Page 543 of 836

Fatawa Rizwia, Volume 10

[Table Header omitted in source, content below]

(Left column - Persian text in source): Sell a Quran (Mushaf) to a poor person for a certain amount of gold and hand it over so that that amount becomes a debt upon him. Then say to him: "This amount which is a debt upon you, I have given to you as compensation (fidya) for the prayers and fasts of such-and-such deceased person, amounting to this much." He should say "I have done so." And if they calculate the amount and give the Quran as its equivalent for fidya, and he accepts, it will also suffice.

(Right column - Urdu translation/explanation): Give it. If there is hardship, sell a copy of the Quran (Mushaf) to some poor person for that amount of money and let it become a debt upon him. After this, tell him: "The debt that has come upon you, I have given to you as fidya for the prayers and fasts of such-and-such person." That poor person should accept it. If they do not calculate the price and gift the Quran along with its quantity/material so that this material becomes his responsibility, and then grant it in lieu of fidya and he accepts, then this will also suffice. (T)

Simple acquittal (ibra) is incomplete and insufficient. A clear indication of this is that in most authoritative books of the school of thought (madhhab), the legal stratagem (hila) mentioned for the needy is very difficult and lengthy to perform, as the learned author himself admits. After mentioning the common method, he wrote:

(Left column - Persian text in source): What is famous and narrated in most books is that whatever amount of wheat is available should be given to a poor person as fidya under this name. He accepts it, then they ask for it back from him and take it, then give it back to him again under the same name. They repeat this until the fidya for prayers and fasts is fully paid. This stratagem is not free from formality/trouble.

(Right column - Urdu translation/explanation): What is famous and narrated in most books is that whatever wheat is available should be given to a poor person as fidya for prayers and fasts. He should accept it. After that, take it from him as a gift (hiba), then give it back as fidya. Do this repeatedly until the fidya for prayers and fasts is complete. This stratagem is not free from formality/trouble. (T)

I say (Aqool): This beautiful stratagem (hila jameela) has been explicitly mentioned in Durr-ul-Mukhtar, Bazaziyah, Khulasah, Alamgiriyah, Bahr-ur-Raiq, Ghuniyah, Sagheeri, commentaries of Munyah, Fath-ul-Allah-il-Mu'een, Hashiyah Kanz, Minhat-

ul-Khaliq, Tahtawi on Durr-ul-Mukhtar, and Radd-ul-Muhtar. All of them, adding to what is in the commentary, have mentioned this issue in the Chapter of Compensating Missed Acts (Qaza-ul-Fawaat). (T). And also in Jami'-ur-Rumuz, Quhistani, commentaries of Nuqayah...

1. Kashf-ul-Ghita, Chapter on Rulings of Supplication, Charity and similar good deeds for the deceased, Matba' Ahmadi Delhi, p. 67
2. Kashf-ul-Ghita, Chapter on Rulings of Supplication, Charity and similar good deeds for the deceased, Matba' Ahmadi Delhi, p. 68

फ़तावा रज़विया, खंड 10

(तालिका सामग्री) बायां कॉलम (फारसी मूल पाठ): एक कुरान (मुसहफ़) को एक गरीब व्यक्ति को सोने की एक निश्चित मात्रा में बेचें और उसे सौंप दें ताकि वह मात्रा उस पर ऋण हो जाए। फिर उससे कहें: "यह राशि जो आप पर ऋण है, मैंने आपको फलां मृतक की नमाज़ और रोज़ों के फ़िदया (मुआवज़े) के रूप में दी है, जो इतनी मात्रा तक पहुँचती है।" वह कहे "मैंने ऐसा किया।" और यदि वे राशि की गणना करें और कुरान को उसके बदले में फ़िदया के रूप में दें और वह उसे स्वीकार कर ले, तो यह भी पर्याप्त होगा।

दायां कॉलम (उर्दू अनुवाद/व्याख्या): दे दी जाए। यदि तंगी हो तो एक मुसहफ़ को उस राशि पर किसी गरीब को बेच दें और इसे उसके ज़िम्मे ऋण कर दें। इसके बाद उससे कहें कि तेरे ज़िम्मे जो ऋण आया है यह फलां की नमाज़ और रोज़ों के फ़िदया में मैंने तुझे दिया है। वह फ़कीर कि उसे स्वीकार करता हो। अगर कीमत का हिसाब न करें और कुरान को उसकी मात्रा के साथ उपहार दें ताकि यह सामग्री उसके ज़िम्मे हो जाए और उसे फ़िदया के बदले में दान कर दें और वह स्वीकार कर ले, तो यह भी पर्याप्त हो जाएगा। (त)

केवल बरी करना (इबरा) अधूरा और अपर्याप्त है। इस पर एक स्पष्ट प्रमाण यह भी है कि धर्म के अधिकांश विश्वसनीय ग्रंथों में ज़रूरतमंदों के लिए जो उपाय (हीला) बताया गया है, वह बहुत कठिन और लंबा है, जैसा कि विद्वान लेखक ने स्वयं स्वीकार किया है। प्रचलित तरीके का उल्लेख करते हुए उन्होंने लिखा:

बायां कॉलम (फारसी मूल पाठ): अधिकांश पुस्तकों में प्रसिद्ध और वर्णित यह है कि जो भी गेहूं उपलब्ध हो, उसे इस नाम से फ़कीर को फ़िदया के रूप में दिया जाए और वह स्वीकार करे। उसके बाद उससे वापस मांगें और ले लें, फिर उसे उसी नाम से दोबारा दें। इसी तरह बार-बार करें जब तक कि नमाज़ और रोज़े का फ़िदया पूरी तरह से अदा न हो जाए। यह उपाय औपचारिकता/कठिनाई से मुक्त नहीं है।

दायां कॉलम (उर्दू अनुवाद/व्याख्या): प्रसिद्ध और अधिकांश पुस्तकों में वर्णित यह है कि जो भी गेहूं उपलब्ध हो, नमाज़ रोज़े के फ़िदया के रूप में उसे फ़कीर को दिया जाए, वह स्वीकार करे। इसके बाद उससे उपहार के रूप में ले लें फिर उसे फ़िदया के रूप में दे दें। इसी तरह बार-बार करें यहाँ तक कि नमाज़ और रोज़े का फ़िदया पूरा हो जाए। और यह उपाय औपचारिकता से मुक्त नहीं। (त)

मैं कहता हूँ (अक़ूल): इसी सुंदर उपाय (हीला जमीला) का स्पष्ट उल्लेख दुर्रे मुख़्तार, बज़ाज़िया, खुलासा, आलमगीरिया, बहरुल राइक़, ग़ुनिया, स़ग़ीरी, मुनिया की व्याख्याओं, फ़तहुल्लाह अल मुईन, हाशिया कंज़, मिन्हातुल ख़ालिक़, और तहतावी अला अल दुर्रे मुख़्तार व रद्दुल मुहतार में किया गया है। इन सब ने टीका (शराह) में जो कुछ है उस पर और अधिक जोड़ते हुए इस मसले का उल्लेख 'बाबू क़ज़ाउल फ़वात' (छूटे हुए कार्यों की क्षतिपूर्ति का अध्याय) में किया है। (त)। और जामिउर रुमूज़, क़ुहिस्तानी, ऩक़ाया की व्याख्याओं...

1. कशफ़ुल ग़िता, मृतक के लिए दुआ, दान और इसी तरह के अच्छे कार्यों के प्रावधानों पर अध्याय, मतबअ अहमदी दिल्ली, पृष्ठ ६७
2. कशफ़ुल ग़िता, मृतक के लिए दुआ, दान और इसी तरह के अच्छे कार्यों के प्रावधानों पर अध्याय, मतबअ अहमदी दिल्ली, पृष्ठ ६८

पृष्ठ ५४४ का ८३६

فتاوی رضویہ، جلد دہم

(بایاں کالم - فارسی متن): مصحفے را بمثل آنقدر زر بدست فقیری فروشند و تسلیم نمایند تا آنقدر زر بر ذمہ اش دین شود پس بگویند کہ این قدر زر را کہ بر ذمہ تو دین ست عوض فدیہ نماز و روزہ ہائے فلاں میت کہ بائیں قدر می رسد ترا دادیم و بگوید فلاں کردیم و اگر مبلغ حساب بکنند و قرآن را بمثل آں را عوض فدیہ بودے بخشند داد قبول نماید نیز کفایت می کنند۱۔

(دایاں کالم): دے دی جائے ، اگر تنگ دستی ہو تو ایک مصحف کو اس مقدار کے زر پر کسی فقیر کو فروخت کر دیں اور یہ اس کے ذمہ دین کر دیں اس کے بعد اسے کہیں کہ تیرے ذمہ جو دین آیا ہے یہ فلاں کی نماز اور روزوں کا فدیہ میں نے تجھے دیا ہے وہ فقیر کہ اسے قبول کرتا ہو ، اگر قیمت کا حساب نہ کریں اور قرآن کو اس کی مقدار جنس کے ساتھ ہدیہ کریں تاکہ یہ جنس اس کے ذمہ ہو جائے اور اسے فدیہ کے عوض بخش دیں اور وہ قبول کرے تو یہ بھی کفایت کر جائے گا (ت)

ابرا محض ناتمام و ناکافی ہے اور اس پر ایک قرینہ واضحہ یہ بھی ہے کہ عامہ کتب معتمدہ مذہب میں ضرورت مند کے لیے جو حیلہ اس کا ارشاد فرمایا سخت دقت طلب اور بہت طول عمل ہے جس کا خود ان فاضل کو اعتراف ہے ، یہ متعارف طریقہ ذکر کر کے لکھا:

(بایاں کالم - فارسی متن): و مشہور و منقول در اکثر کتب چنانست کہ قدرے گندم کہ میسر شود منجملہ فدیہ بایں نام بہ فقیر دہند واو قبول کند پس از وے طلب نمایند و بستانند باز بوے بد ہمان نام دہند و بمچنیں مکرر کنند تا آنکہ فدیہ نماز و روزہ در فدیہ ہا تمام ادا شود وایں حیلہ خالی از تکلف نیست۲۔

(دایاں کالم): مشہور اور اکثر کتب میں منقول یہ ہے کہ جو بھی گندم میسر ہو نماز روزہ کے فدیہ کے طور پر اسے فقیر کو دیا جائے وہ قبول کرے اس کے بعد اس سے بطور ہبہ لے لیں پھر اسے بطور فدیہ دے دیں اسی طرح بار بار کریں حتی کہ نماز و روزہ کا فدیہ مکمل ہو جائے اور یہ حیلہ تکلف سے خالی نہیں۔ (ت)

اقول : اسی حیلہ جمیلہ کی تصریح فرمائی در مختار و بزازیہ و خلاصہ و عالمگیر یہ و بحر الرائق و غنیہ و صغیری شروح منیہ و فتح اللہ المعین حاشیہ کنز و منحۃ الخالق و طحطاوی علی الدر المختار و رد المحتار میں زائدین علی مافی الشرح کلہم فی باب قضاء الفوات (جو شرح میں ہے اس پر اضافہ کرتے ہوئے ان سب نے یہ مسئلہ باب قضاء الفوات میں ذکر کیا ہے۔ت) اور جامع الرموز و ر جندی شروح نقایہ و

۱ کشف الغطا فصل در احکام دعا و صدقہ و نحوان از اعمال خیر برائے میت مطبع احمدی دہلی ص ۶۷ ۲ کشف الغطا فصل در احکام دعا و صدقہ و نحوان از اعمال خیر برائے میت مطبع احمدی دہلی ص ۶۸

Volume 10

Fatawa Ridawiyyah

Tahtawi in *Maraqi al-Falah*, *Kulluhum fi al-Sawm* (all of them mentioned this issue in the Book of Fasting). The same was cited by Allama Abdul Ghani bin Ismail Nabulsi (may his secret be sanctified) in the commentary of *Hidayah* by Ibn al-Humam from his noble father Allama Ismail bin Abdul Ghani Nabulsi, the annotator of *Durar wa Ghurar*. He quoted it from *Ahkam al-Jana'iz* as in *Manhat al-Khaliq*. Similarly, the great Imam Nasir al-Din Abu al-Qasim Muhammad bin Yusuf Husayni Samarqandi stated it in *Multaqat*, as mentioned in the commentary of *Mukhtasar al-Wiqayah* by Abd al-Ali. Likewise, Allama al-Muhaqqiq al-Ala'i in *Durr al-Muntaqa* (commentary of *Multaqa*) and Allama Sharif Abu al-Saud al-Azhari in the commentary of *Nur al-Idah* have explicitly mentioned it, as in the commentary of Sayyid Ahmad al-Masri. This is also mentioned in *Tabyin al-Maharim* by Allama Sinan al-Din Yusuf Makki, as in *Shifa al-Alil wa Ball al-Ghalil* by Allama al-Shami. All these statements and more are before me now; rather, its attribution to the books of the branches (Furu') and principles (Usul) of our Imams is evident from *Shifa al-Alil*.

Arabic Original

Where he said: Know that what I have seen mentioned in the books of our Imams, both in Furu' and Usul, is that if a person does not make a will for the *fidyah* (expiation) of fasting, it is permissible for his guardian (wali)—who is someone authorized to dispose of his property through inheritance or executorship—to donate it on his behalf. They said: Even if he (the guardian) does not own anything, he should borrow something and give it to a poor person, then ask him to give it back as a gift, then give it to another, and so on until the *fidyah* is completed.

Urdu Translation

Its words are: According to my study, it is mentioned in the books of our Imams, whether Furu' or Usul, that when the deceased has not made a will for the *fidyah* of fasting, his guardian can give the *fidyah* as a voluntary act. And by 'guardian' is meant the person who can dispose of his property by virtue of being an heir or an executor. The jurists have also said that if the guardian does not own anything, he should borrow from someone and give it to a poor person, then take it back from him as a gift, and then give it to a poor person again. This should be done repeatedly until the *fidyah* is completed. (T)

And the distinguished Sayyid Ala-ud-Din Shami in *Minhat al-Jalil* attributed it to the primary texts (Mutun), commentaries (Shuruh), and marginal notes (Hawashi).

Arabic Original	Urdu Translation
Where he said: What is explicitly mentioned in their words—in primary texts, commentaries, and marginal notes—is that the one who undertakes...	Its phrasing is: It is explicitly stated in primary texts, commentaries, and marginal notes that the guardian can do all this, and the guardian...

1 *Shifa al-Alil*, a treatise from the Treatises of Ibn Abidin, Seventh Treatise, Suhail Academy Lahore, 1/196.

जिल्द दहम

फतावा रज़विया

तहतावी ने मराकी अल-फलाह में कुल्लुहुम फी अल-सौम (इन सभी ने रोज़े की किताब में इस मसले का ज़िक्र किया है)। इसी को अल्लामा अब्दुल गनी बिन इस्माइल नबुलसी (क़ुद्दिस सिर्रहु) ने इब्न अल-हुमाम की हिदाया की शरह में अपने वालिद माजिद अल्लामा इस्माइल बिन अब्दुल गनी नबुलसी, जो दुरर व ग़ुरर के हाशिया निगार हैं, से नक़ल फ़रमाया है। उन्होंने इसे अहकाम अल-जनाइज़ से नक़ल किया जैसा कि मन्हात अल-ख़ालिक़ में है। इसी तरह इमाम अजल नासिरुद्दीन अबू अल-क़ासिम मुहम्मद बिन यूसुफ़ हुसैनी समरकंदी ने मुल्तक़त में स्पष्ट रूप से फ़रमाया है जैसा कि शरह मुख़्तसर अल-विक़ाया अब्दुल अली में है। इसी तरह अल्लामा मोहक़्क़िक़ अलाई ने दुर-ए-मुंतक़ा शरह मुल्तक़ा में और अल्लामा शरीफ़ अबू अल-सऊद अज़हरी ने शरह नूर अल-ईज़ाह में इसकी तसरीह फ़रमाई है जैसा कि सैयद अहमद मिस्री की शरह में है। यही अल्लामा सिनानुद्दीन यूसुफ़ मक्की की तबीन अल-महारिम में ज़िक्र है जैसा कि अल्लामा शामी की शिफ़ा अल-अलील व बल्ल अल-गलील में है। ये सभी इबारतें और उनसे ज़्यादा इस वक़्त फ़क़ीर (लेखक) के सामने हैं, बल्कि शिफ़ा अल-अलील से हमारे इमामों की.फ़ुरूअ (शाखाओं) और उसूल की किताबों की तरफ़ इसकी निस्बत ज़ाहिर है।

अरबी मूल

जहाँ उन्होंने कहा: जान लें कि हमारे इमामों की .फ़ुरूअ और उसूल की किताबों में जो मैंने देखा है, वह यह है कि यदि कोई व्यक्ति रोज़े के फ़िदिया (प्रायश्चित) के लिए वसीयत नहीं करता है, तो उसके वली (संरक्षक)—जो विरासत या वसीयत के माध्यम से उसकी संपत्ति का निपटान करने का अधिकार रखता है—के लिए यह जायज़ है कि वह उसकी ओर से इसे दान कर दे। उन्होंने कहा: भले ही उसके पास कुछ न हो, वह किसी से उधार ले और किसी फ़कीर

उर्दू अनुवाद

इसके शब्द ये हैं: मेरे अध्ययन के अनुसार हमारे इमामों की किताबें चाहे.फ़ुरूअ हों या उसूल, उनमें यह उल्लेख है कि जब मृतक ने रोज़े के फ़िदिया की वसीयत न की हो, तो उसका वली नफ़्ल (स्वैच्छिक) के रूप में फ़िदिया दे सकता है। और वली से मुराद वह व्यक्ति है जो उसकी संपत्ति में वारिस या वसीय होने के नाते तसर्रुफ़ (उपयोग) कर सकता हो। फ़ुक़हा (धर्मशास्त्रियों) ने यह भी फ़रमाया है कि अगर वली किसी चीज़ का मालिक न हो, तो किसी से उधार लेकर फ़कीर को दे, उससे हिबा के तौर

अरबी मूल	उर्दू अनुवाद
को दे, फिर उससे इसे उपहार (हिबा) के रूप में वापस ले ले, फिर किसी दूसरे को दे, और इसी तरह करता रहे जब तक कि फ़िदिया पूरा न हो जाए।	पर वापस ले ले, फिर फ़कीर को दे, इसी तरह बार-बार किया जाए यहाँ तक कि फ़िदिया पूरा हो जाए। (त)

और फाजिल सैयद अलाउद्दीन शामी ने मिन्हात अल-जलील में इसे मतून (मूल पाठों), शुरूह (व्याख्याओं) और हवाशी (हाशियों) की ओर निस्बत किया है।

अरबी मूल	उर्दू अनुवाद
जहाँ उन्होंने कहा: और उनके कलाम में मतून, शुरूह और हवाशी में जो मन्सूस (लिखित) है, वह यह है कि जो वली बनता है...	इसकी इबारत यह है: मतून, शुरूह और हवाशी में यह मन्सूस है, यह सारा कुछ वली कर सकता है, और वली...

---

1 शिफ़ा अल-अलील, रसाईल-ए-इब्न आबिदीन का एक रिसाला, सातवाँ रिसाला, सुहैल अकादमी लाहौर, 1/196।

جلد دہم

فتاویٰ رضویہ

طحطاوی علی مراقی الفلاح میں کلھم فی الصوم (ان سب نے کتاب الصوم میں یہ مسئلہ ذکر کیا ہے۔ ت) اسی کو علامہ عبدالغنی بن اسماعیل نابلسی قدس سرہ القدسی نے شرح ہدایہ ابن الہمام میں اپنے والد ماجد علامہ اسماعیل بن عبدالغنی نابلسی محشی درر و غرر انہوں نے احکام الجنائز سے نقل فرمایا کما فی منحۃ الخالق (جیسا کہ منحۃ الخالق میں ہے۔ت) اسی پر امام اجل ناصر الدین ابو القاسم محمد بن یوسف حسینی سمرقندی نے ملتقط میں نص فرمایا کما فی شرح مختصر الوقایۃ عبد العلی (جیسا کہ شرح مختصر الوقایہ عبد العلی میں ہے۔ت) اسی طرح علامہ مدقق علائی نے درمنتقی شرح ملتقی اور علامہ شریف ابوالسعود ازہری نے شرح نورالایضاح میں تصریح فرمائی کما فی شرحہ للسید احمد المصری (جیسا کہ سید احمد مصری کی شرح میں ہے۔ت) یہی تبیین المحارم، علامہ سنان الدین یوسف مکی میں مذکور کما فی شفاء العلیل و بل العلیل للعلامۃ الشامی (جیسا کہ شفاء العلیل و بل العلیل للعلاّمہ الشامی میں ہے۔ت) یہ سب عبارات اور ان سے زائد اس وقت فقیر کے پیش نظر ہیں بلکہ شفاء العلیل سے ہمارے ائمہ کی کتب فروع و اصول کی طرف اس کی نسبت ظاہر۔

عربی متن **اردو ترجمہ**

حیث قال اعلم المذکور فیما رأیتہ من کتب ائمتنا فروعاً واصولا انہ اذا لم یوص بفدیۃ الصوم یجوز ان یتبرع

اس کے الفاظ یہ ہیں میرے مطالعہ کے مطابق ہمارے ائمہ کی کتب خواہ فروع یا اصول میں ہوں یہ مذکور ہے کہ جب میت نے فدیہ صوم کی وصیت نہ کی ہو تو اس کا ولی بطور نفل

عربی متن	اردو ترجمہ
منه وليه وهو من له التصرف في ماله بوراثة او وصاية قالوا اولولم يملك شيئاً ايستقرض الولي شئيًا فيدفعه للفقير ثم يستوهبه منه ثم يدفعه لاخر وهكذا حتى يتم۔ 1	فدیہ دے سکتا ہے، اور ولی سے مراد وہ شخص ہے جو اس کے مال میں بطور وارث یا وصی ہونے کے ناطے سے تصرف کر سکتا ہو، فقہاء نے یہ بھی فرمایا ہے کہ اگر ولی کسی شئے کا مالک نہ ہو تو کسی سے قرض لے کر فقیر کو دے اس سے بطور ہبہ واپس لے پھر فقیر کو دے، اسی طرح بار بار کیا جائے حتی کہ فدیہ پورا ہوجائے۔(ت)

اور فاصل سید علاء الدین شامی نے منۃ الجلیل میں اسے متون و شروح و حواشی کی طرف نسبت کیا

عربی متن	اردو ترجمہ
حيث قال والمنصوص في كلامهم متونا و شروحا و حواشي ان الذي يتولى	اس کی عبارت یہ ہے متون، شروح اور حواشی میں یہ منصوص ہے یہ سارا کچھ ولی کر سکتا ہے، اور ولی

1 شفاء العلیل، رسالہ من رسائل ابن عابدین، الرسالۃ السابعۃ، سہیل اکیڈمی لاہور ۱/۱۹۶

[Arabic Box 1]: That is only the Wali (guardian), and the Wali refers to the one who has the authority to dispose of the deceased's wealth through a will or inheritance. If the deceased did not own anything, the heir can do this from their own wealth if they wish. If the heir does not have wealth, they can seek a gift from someone else or take a loan, give it to a poor person (Faqir), and then the poor person gifts it back to them. This process is repeated until the objective is achieved. - 1 [Urdu Translation 1]: ...means the person who can dispose of the deceased's property by virtue of being an executor or an heir. If the deceased does not own anything, the heir can perform this strategy even with their own property, so that they give it to a poor person, and then the poor person returns it as a gift. They should do this until the objective is fulfilled. (T)

These are the texts of the scholars from the early Imams to the later scholars of our time, in which no method for settling religious obligations (Dain) is mentioned except this method of Daur (circling/revolving). The extreme hardship in the method of Daur is not hidden. It is stated in Al-Wajiz of Imam Kardari:

[Arabic Box 2]: If he does not have wealth, let him borrow half a Sa' and give it to a needy person (Miskin). Then the needy person gives it as charity to the heir, then the heir to the needy person, and so on, until half a Sa' is completed for every prayer, as we mentioned. - 2 [Urdu Translation 2]: If the heir does not have wealth, let them borrow half a Sa' and give it to a needy person. Then that needy person should give it as charity to the heir, then the heir to the needy person; this should be done repeatedly until half a Sa' becomes the fidiya (expiation) for every prayer, as we have mentioned. (T)

Exactly the same regarding half a Sa' is in Bahr-ul-Raiq, Khulasa, Hindiyyah, Tahtawi on Nur-ul-Idah, Abi Saud on Miskin, Multaqat, Barjandi, Durr-e-Mukhtar, and other reliable books. Now suppose Zaid died at the age of seventy-two (72) years; excluding twelve years (of childhood), sixty (60) years remain. Do not take three hundred and sixty (360) days for each year as chosen in Kashf-ul-Ghita; a lunar year never exceeds three hundred and fifty-five (355) days.

[Arabic Box 3]: This is the customary (Urfi) year based on the sightings of the crescent moon. As for the actual year, it is a few hours less than that, as detailed in its place. I say, and similarly, there is no need for us to take the solar year as three hundred and... [Urdu Translation 3]: This is the customary year which is based on the moon. As

for the actual year, it is some hours less than this, as detailed in its appropriate place. I say, similarly, we have no need to take the solar year as three hundred and sixty-five days.

1. Munyat al-Jalil, Risala from the treatises of Ibn Abidin, Al-Risala al-Thaminah, Suhail Academy Lahore, 1/212
2. Al-Fatawa al-Bazzaziyya on the margin of Fatawa al-Hindiyyah, the nineteenth [chapter] regarding missed acts, Kutub Khana Peshawar 3/69

फतावा रिज़विया | जिल्द दहम (खंड 10)

[अरबी बॉक्स 1]: यह केवल वली (संरक्षक) है, और वली से तात्पर्य उस व्यक्ति से है जिसे वसीयत या विरासत के माध्यम से मृतक की संपत्ति के निपटान का अधिकार है। यदि मृतक के पास कुछ भी नहीं था, तो उत्तराधिकारी यदि चाहे तो अपनी संपत्ति से ऐसा कर सकता है। यदि उत्तराधिकारी के पास संपत्ति नहीं है, तो वह किसी और से उपहार मांग सकता है या ऋण ले सकता है, उसे किसी गरीब (फकीर) को दे सकता है, और फिर फकीर उसे वापस उपहार में दे सकता है। यह प्रक्रिया तब तक दोहराई जाती है जब तक कि उद्देश्य प्राप्त न हो जाए। - 1 [उर्दू अनुवाद 1]: ...से मुराद वह शख्स है जो मय्यत (मृतक) के माल में उसकी वसीयत या वारिस होने की हैसियत से तसर्रुफ़ (उपयोग) कर सकता हो और मय्यत अगर किसी शै का मालिक न हो तो वारिस अपने माल से भी यह हीला (युक्ति) कर सकता है ताकि किसी फकीर को दे फिर फकीर से बतौर हिबा (उपहार) वापस ले ले इसी तरह करे यहाँ तक कि मक़सूद हो जाए। (त)

ये अइम्मा मुतक़द्दिमीन (प्राचीन इमामों) से लेकर हमारे ज़माने तक के उलेमा-ए-मुताअख़िरीन (आधुनिक विद्वानों) के नुसूस (ग्रंथों के अंश) हैं जिनमें इस तरीका-ए-दौर (चक्र विधि) के सिवा तरीका-ए-दीन (धार्मिक दायित्व चुकाने की विधि) का असल में पता नहीं दिया और तरीका-ए-दौर में जो सख़्त तकलीफ़ है वह छिपी नहीं है। वजीज़ इमाम करदरी में है:

[अरबी बॉक्स 2]: यदि उसके पास धन नहीं है, तो उसे आधा सा' उधार लेना चाहिए और उसे किसी जरूरतमंद (मिस्कीन) को देना चाहिए। फिर मिस्कीन उसे उत्तराधिकारी को दान के रूप में देता है, फिर उत्तराधिकारी मिस्कीन को, और इसी तरह, जब तक कि हर नमाज़ के लिए आधा सा' पूरा न हो जाए, जैसा कि हमने उल्लेख किया है। - 2 [उर्दू अनुवाद 2]: अगर वारिस के पास माल न हो तो वारिस निस्फ सा' (आधा सा') क़र्ज़ ले और किसी मिस्कीन को दे फिर वह मिस्कीन उस वारिस पर सदक़ा करे फिर वारिस, मिस्कीन पर सदक़ा करे इसी तरह बार बार किया जाए हत्ता कि हर हर नमाज़ का फ़िदिया निस्फ सा' हो जाए जैसे हम ज़िक्र कर आए। (त)

ब-ऐनही (बिल्कुल) इसी तरह नीम सा' (आधा सा'), बहर-उल-राइक़ व ख़ुलासा व हिन्दिया व तहतावी अली नूर-उल-ईज़ाह व अबी सऊद अली मिस्कीन व मुल्तक़त व बरजंदी व दुर्रे-मुख़्तार वग़ैरा मोतमदात अस्फार (भरोसेमंद किताबों) में है। अब फर्ज़ कीजिये कि ज़ैद ने बहत्तर (72) साल की उम्र में वफ़ात पाई, बारह बरस निकाल कर साठ (60) रहे। हर साल के दिन तीन सौ साठ (360) न

रखिये जिस तरह कश्फ़-उल-ग़िता में इख़्तियार किया गया है; हर साल क़मरी (चंद्र वर्ष) कभी तीन सौ पचपन (355) दिन से ज़ायद (अधिक) नहीं होता।

[अरबी बॉक्स 3]: यह चन्द्रमा के दर्शन पर आधारित प्रथागत (उर्फी) वर्ष है। जहाँ तक वास्तविक वर्ष की बात है, तो वह उससे कुछ घंटे कम होता है, जैसा कि उसके स्थान पर विस्तार से बताया गया है। मैं कहता हूँ, और इसी तरह, हमें सौर वर्ष को तीन सौ और... लेने की आवश्यकता नहीं है। [उर्दू अनुवाद 3]: यह उर्फी साल है जो चाँद की बिना पर होता है, रहा हक़ीक़ी साल तो वह इससे कुछ साअतें (घंटे) कम होता है जैसा कि इसकी तफ़सील अपने मक़ाम पर की गई है, अक़ूल (मैं कहता हूँ) इसी तरह हमें शम्सी साल (सौर वर्ष) तीन सौ पैंसठ दिन का लेने की ज़रूरत (नहीं)।

1. मुन्यात अल-जलील, रसाईल इब्न आबिदीन से एक शोध-पत्र, अल-रिसाला अल-सामिना, सुहैल अकादमी लाहौर, 1/212
2. अल-फ़तावा अल-बज़ाज़िया अल हाशिये फ़तावा-ए-हिन्दिया, उन्नीसवाँ [अध्याय] छूटे हुए कार्यों के बारे में, कुतुब खाना पेशावर, 3/69

[عربی باکس 1]: ذلک انما ہو الولی وان المراد بالولی من لہ ولایۃ التصرف فی مالہ بوصایۃ او وراثۃ وان المیت لولم یملك شیئاً یفعل لہ ذلک الوارث من مالہ ان شاء فان لم یکن للوارث مال یستوھب من الغیر او یستقرض ببلیہ فعہ للفقیر ثم یستوھبہ من الفقیر وھکذا الی ان یتم المقصود - 1 [اردو ترجمہ 1]: سے مراد وہ شخص ہے جو میت کے مال میں اس کی وصیت یا وارث ہونے کی حیثیت سے تصرف کر سکتا ہو اور میت اگر کسی شے کا مالک نہ ہو تو وارث اپنے مال سے بھی یہ حیلہ کر سکتا ہے تاکہ کسی فقیر کو دے پھر فقیر سے بطور ہبہ واپس لے اسی طرح کرے یہاں تک کہ مقصود ہو جائے۔ (ت)

یہ ائمہ متقدمین سے لے کر ہمارے زمانے تک کے علمائے متاخرین کے نصوص ہیں جن میں سوا اس طریقہ دور کے طریقہ دین کا اصلاً پتا نہ دیا اور طریقہ دور میں جو سخت تکلیف ہے مخفی نہیں ۔ وجیز امام کردری میں ہے :

[عربی باکس 2]: ان لم یکن لہ مال یستقرض نصف صاع و یعطیہ المسکین ثم یتصدق بہ المسکین علی الوارث الی المسکین ثم الوارث الی المسکین ثم وثم حتی یتم لکل صلوۃ نصف صاع کما ذکرنا - 2 [اردو ترجمہ 2]: اگر وارث کے پاس مال نہ ہو تو وارث نصف صاع قرض لے اور کسی مسکین کو دے پھر وہ مسکین اس وارث پر صدقہ کرے پھر وارث ، مسکین پر صدقہ کرے اسی طرح بار بار کیا جائے حتی کہ ہر ہر نماز کا فدیہ نصف صاع ہو جائے جیسے ہم ذکر کر آئے (ت)

بعینہ اسی طرح نیم صاع، بحر الرائق و خلاصہ و ہندیہ و طحطاوی علی نور الایضاح و ابی السعود علی مسکین و ملتقط و بر جندی و در مختار و غیرہا معتمدات اسفار میں ہے۔ اب فرض کیجئے کہ

زید نے بہتر ۷۲ سال کی عمر میں وفات پائی ، بارہ برس نکال کر ساٹھ ۶۰ رہے۔ ہر سال کے دن تین سو ساٹھ ۳۶۰ نہ رکھئے جس طرح کشف الغطاء میں اختیار کیا ہر سال قمری کبھی تین سو پچپن ۳۵۵ دن سے زائد نہیں ہوتا۔

[عربی باکس 3]: ہذا العرفی المأخوذ بالاہلۃ اما الحقیقی فیکون اقل منہا بساعات کما فصل فی محلہ ، اقول وکذا لاحاجۃ بنا الی اخذ الشمسیۃ ثلثمائۃ و [اردو ترجمہ 3]: یہ عرفی سال ہے جو چاند کی بنا پر ہوتا ہے، رہا حقیقی سال تو وہ اس سے کچھ ساعتیں کم ہوتا ہے جیسا کہ اس کی تفصیل اپنے مقام پر کی گئی ہے اقول اسی طرح ہمیں شمسی سال تین سو پینسٹھ دن کا لینے کی ضرورت (نہیں۔)

1 منیۃ الجلیل، رسالہ من رسائل ابن عابدین، الرسالۃ الثامنہ، سہیل اکیڈمی لاہور ، ۱ / ۲۱۲ 2 الفتاویٰ البزازیہ علی حاشیہ فتاویٰ ہندیہ التاسع عشر فی الفوائت کتب خانہ پشاور ۳/ ۶۹

صفحہ 836 کا 546

[Left Arabic Column]: ...sixty-five days as done in 'Ahkam al-Jana'iz' saying: It is appropriate that the fidyah (compensation) for prayer be calculated by the solar year as a precaution, without considering the quarter-day. For if the years of age are calculated by the lunar calendar, we know with certainty that the days do not exceed what we calculate, and that which is certain does not require precaution. If it is said: Perhaps they took the excess to cover for the prayers the deceased might have missed? I said: They [the jurists] said after that, then the age of the deceased is calculated, then twelve years are subtracted for the period of puberty if the deceased was male, and nine years if a female, etc. as in 'Ahkam al-Jana'iz' as well. So when they have covered the entire life, what remains that would be an anomaly requiring precaution?

[Right Urdu Column]: No, as has been adopted in 'Ahkam al-Jana'iz' while stating that for the fidyah of prayer, a solar year should be considered as a precaution, except for the quarter of a day. Because when the years of age are considered by the lunar calendar, then surely the days will not be more according to our calculation, and there is no need for precaution in a certain matter. If it is said that they have taken extra days because perhaps the deceased had been negligent in some prayers, then that fidyah would cover it. I say: After that, the jurists have said that the age of the deceased should then be counted, and twelve years should be excluded from it for the period of reaching puberty if he is male, and if female, then nine years should be excluded, etc. as is also in 'Ahkam al-Jana'iz'. So when they are talking about the entire life, then nothing remains excluded for which precaution is needed. (T)

So, these three hundred and fifty-five [days] are sufficient. Thus, there are two thousand one hundred and thirty (2130) fidyahs for one year's prayers, and adding 30 fidyahs for Ramadan al-Mubarak, it makes two thousand one hundred and sixty (2160). Multiplying these by sixty results in one lakh twenty-nine thousand six hundred (129,600). There should be so many rounds (daur) of charity and gifting between the heir and a poor person for the fidyah to be fulfilled. This was only the fidyah for fasting and prayer, and many more fidyahs and kaffarahs (expiations) remain. For example, (3) Suppose thousands of rupees in Zakat had accumulated

upon him, and the price of half a sa' is two annas, then eight thousand 'daur' (rounds) of giving and taking are required with the intention of paying Zakat. (4) Sacrifices (Qurbani), if the price per sacrifice is kept at only one rupee, then for sixty sacrifices, four hundred and eighty (480) 'daurs' would be needed. (5) Kaffarahs for oaths, ten separate poor people are required for each oath; giving ten times to one person will not be enough. (6) For every prostration of recitation (Sajda Tilawat), one fidyah like that of one prayer should be paid as a precaution, even if it is not obligatory according to the correct opinion, as...

1. Minhat al-Khaliq, with reference to Ahkam al-Jana'iz, Hashiyah Bahr al-Ra'iq, Chapter: Making up for Missed Prayers, HM Saeed Company, Karachi 90/2.
2. Minhat al-Khaliq, with reference to Ahkam al-Jana'iz, Hashiyah Bahr al-Ra'iq, Chapter: Making up for Missed Prayers, HM Saeed Company, Karachi 90/2.

[बायां अरबी पक्ष]: ...पैंसठ दिन जैसा कि 'अहकाम अल-जनाइज़' में किया गया है, यह कहते हुए कि: उचित है कि नमाज़ के फ़िदिया की गणना सावधानी के तौर पर सौर वर्ष के अनुसार की जाए, बिना दिन के चौथाई हिस्से के विचार किए। क्योंकि यदि आयु के वर्षों की गणना चंद्रमा के अनुसार की जाए, तो हम निश्चित रूप से जानते हैं कि दिन हमारी गणना से अधिक नहीं होंगे, और जो निश्चित है उसमें सावधानी की आवश्यकता नहीं होती। यदि यह कहा जाए: शायद उन्होंने अधिक दिन इसलिए लिए ताकि उन नमाज़ों की भरपाई हो सके जो मृतक ने छोड़ दी होंगी? मैंने कहा: उन्होंने (फ़ुक़हा) उसके बाद कहा है, फिर मृतक की आयु की गणना की जाती है, फिर उसमें से उसके बालिग होने की अवधि के लिए बारह वर्ष घटाए जाते हैं यदि मृतक पुरुष था, और नौ वर्ष यदि वह महिला थी, इत्यादि जैसा कि 'अहकाम अल-जनाइज़' में भी है। तो जब उन्होंने पूरे जीवन को कवर कर लिया है, तो क्या शेष रहता है जो एक विसंगति होगी जिसके लिए सावधानी की आवश्यकता हो?

[दायां उर्दू पक्ष]: नहीं, जैसा कि 'अहकाम अल-जनाइज़' में यह कहते हुए लिया गया है कि नमाज़ के फ़िदिया में एहतियातन (सावधानीवश) सौर वर्ष का विचार करना चाहिए, सिवाय दिन के चौथाई हिस्से के। क्योंकि जब उम्र के वर्षों का विचार चाँद के एतबार से है, तो यकीनन दिन हमारे हिसाब से ज़्यादा न होंगे और यकीनी बात में एहतियात की मोहताजी नहीं होती। अगर यह कहा जाए कि उन्होंने ज़ायद (अतिरिक्त) दिन इसलिए लिए हैं शायद मय्यित ने बाज़ नमाज़ों में कोताही की हो तो उसका फ़िदिया हो जाए। मैंने कहा: उसके बाद फ़ुक़हा ने फ़रमाया है फिर मय्यित की उम्र शुमार की जाए, उससे बुलूग़ (वयस्कता) की मुद्दत बारह साल ख़ारिज कर दी जाए अगर वह मुज़क्कर (पुरुष) हो, और अगर मोअन्नस (स्त्री) है तो नौ साल ख़ारिज की जाए इत्यादि जैसा कि 'अहकाम-ए-जनाइज़' में भी है। तो जब वह सारी उम्र की बात कर रहे हैं तो उससे ख़ारिज कोई नहीं रहा जिसके लिए एहतियात की ज़रूरत हो। (त)

तो यही तीन सौ पचपन [दिन] काफ़ी हैं। इस प्रकार एक वर्ष की नमाज़ों के दो हज़ार एक सौ तीस (2130) फ़िदि हुए, और 30 फ़िदि रमज़ान-उल-मुबारक के मिलाकर दो हज़ार एक सौ साठ (2160) हुए। उन्हें साठ में गुणा करने से एक लाख उनतीस हज़ार छह सौ (129600) होते हैं। वारिस और फ़क़ीर के बीच इतनी बार सदक़ा और हिबा का फेर (दौर) होना चाहिए तब फ़िदिया अदा होगा। यह

केवल रोज़े और नमाज़ का फ़िदिया हुआ और अभी बहुत से फ़िदिे और कफ़्फ़ारे बाकी हैं। उदाहरण के लिए, (3) ज़कात फ़र्ज़ कीजिए, हज़ारों रुपये ज़कात के उस पर जमा हो गए थे और आधा सा' की कीमत दो आने है, तो ज़कात देने और लेने की नीयत से आठ हज़ार 'दौर' (चक्कर) दरकार हैं। (4) कुर्बानियाँ, यदि प्रति कुर्बानी केवल एक रुपया कीमत रखें तो साठ कुर्बानियों के लिए चार सौ अस्सी (480) दौर होंगे। (5) कसमों के कफ़्फ़ारे, हर किस्म के लिए दस मिस्कीन (ग़रीब) अलग-अलग दरकार हैं; एक को दस बार देना काफी नहीं होगा। (6) हर सज्दा-ए-तिलावत के लिए भी एहतियातन एक फ़िदिया, एक नमाज़ की तरह, अदा करना चाहिए, हालाँकि सही कौल के मुताबिक यह वाजिब नहीं है, जैसा कि...

1. मिन्हातुल ख़ालिक़ बहवाला अहकाम अल-जनाइज़ हाशिया बहरुर राइक़, बाब क़ज़ा-उल-फ़वाइत, एच.एम. सईद कंपनी कराची 90/2
2. मिन्हातुल ख़ालिक़ बहवाला अहकाम अल-जनाइज़ हाशिया बहरुर राइक़, बाब क़ज़ा-उल-फ़वाइत, एच.एम. सईद कंपनी कराची 90/2

पृष्ठ 836 का 547

خمسة وستين يوما كما فعل في احكام الجنائز قائلا ينبغي ان تحسب فدية الصلوة بالسنة الشمسية اخذا بالاحتياط من غير اعتبار ربع اليوم اهـ فأن سن العمراذا حسبت بالقمر يات علمنا قطعا ان الايام لاتزيد على مانحسب والمقطوع به لا يحتاج الى الاحتياط فان قيل لعلهم اخذ والزائد ليقع عما يؤد عنه من الصلوات التى عسى ان يكون الميت فرط فيها قلت قالوا بعد ذلك ثم يحسب سن الميت فيطرح منه اثنا عشرة سنة لمدة ببلوغه ان كان الميت ذكرا وتسع سنين ان كانت انثى الخ كما في احكام الجنائز ايضا فأ ذا اتوا على جميع العمر فما ذا عسى ان يكون شاذا يحتاط له۔ | نہیں جیسا کہ احکامِ جنائز میں یہ کہتے ہوئے لیا گیا ہے کہ فدیہ نماز میں احتیاطاً شمسی سال کا اعتبار کرنا چاہئے ماسوائے دن کے چوتھائی حصہ کے اهـ کیونکہ جب عمر کے سالوں کا اعتبار چاند کے اعتبار سے ہے تو یقیناً دن ہمارے حساب سے زائد نہ ہوں گے اور یقینی بات

میں احتیاط کی محتاجی نہیں ہوتی، اگر یہ کہا جائے کہ انہوں نے زائد دن اس لیے لئے ہیں شاید میت نے بعض نمازوں میں کوتاہی کی ہو تو اس کا فدیہ ہوجائے قلت اس کے بعد فقہاء نے فرمایا ہے پھر میت کی عمر شمار کی جائے اس سے ببلوغ کی مدت بارہ سال خارج کردی جائے اگر وہ مذکر ہو، اور اگر مؤنث ہے تو نو سال خارج کی جائے الخ جیسا کہ احکام جنائز میں بھی ہے تو جب وہ ساری عمر کی بات کر رہے ہیں تو اس سے خارج کوئی نہیں رہا جس کے لیے احتیاط کی ضرورت ہو۔(ت)

تو یہی تین سو پچپن کافی ہیں پس ایک سال کی نمازوں کے دو ہزار ایک سو تیس (۲۱۳۰) فدیے ہوئے، اور تمہیں ۳۰ فدیئے یعنی فدیے رمضان المبارک کے ملا کر دو ہزار ایک سو ساٹھ ۲۱۶۰ ، انہیں ساٹھ میں ضرب دینے سے ایک لاکھ انتیس ہزار چھ سو (۱۲۹۶۰۰) ہوتے ہیں، اتنی بار وارث و فقیر میں تصدق و ہبہ کی الٹ پھیر ہونی چاہئے تو فدیہ ادا ہو، یہ صرف صوم وصلوٰۃ کا فدیہ ہوا اور ہنوز اور بہت فدیے و کفارے باقی ہیں مثلاً (۳) زکوۃ فرض کیجئے ہزاروں روپے زکوۃ کے اس پر مجتمع ہو گئے تھے اور نیم صاع کی قیمت دو آنے ہے تو آٹھ ہزار دور بہ نیت زکوۃ دینے لینے کو درکار ہیں (۴) قربانیاں، اگر فی قربانی ایک ہی روپیہ قیمت رکھئے تو ساٹھ قربانیوں کے لیے چار سو اسی ۴۸۰ دور ہوں۔ (۵) قسموں کے کفارے، ہر قسم کے لیے دس

مسکین جدا جدا درکار ہیں ایک کو دس بار دینا کافی نہ ہوگا (۶) ہر سجدہ تلاوت کے لیے بھی احتیاطا ایک فدیہ مثل ایک نماز کے ادا چاہئے وان لم یجب علی الصحیح کما

1 منحة الخالق بحوالہ احکام الجنائز حاشیہ بحر الرائق باب قضاء الفوائت ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۹۰/۲ 2 منحة الخالق بحوالہ احکام الجنائز، حاشیہ بحر الرائق، باب قضاء الفوائت، ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۹۰/۲

Volume 10 Fatawa Razawiyya

In 'Al-Tatarkhaniyya' (though according to the correct opinion it is not obligatory, as mentioned in 'Tatarkhaniyya'): (7) Sadaqat al-Fitr for oneself and one's family for whom it was not paid, (8) as many optional fasts as were invalidated and their makeup (Qadha) was not performed, (9) whichever vows (Nadhar) were made and not fulfilled, (10) the tithe (Ushr) or tax (Kharaj) of the land that remained unpaid, and other many such things,

[Table/Box Start] (Arabic Text): As mentioned by some in 'Radd al-Muhtar', and many more additions were made in 'Shifa al-Alil', and a detailed explanation of most of them is in 'Minat al-Jalil'. So refer to them if you want details. In 'Al-Durr al-Mukhtar', a general rule was stated: for every purely bodily worship, the executor (wasi) should feed (give fidyah) on behalf of the deceased after death for every obligatory act like Sadaqat al-Fitr. If the worship is monetary, like Zakat, the required amount should be paid from the deceased's wealth. If it is a combination, like Hajj, someone should perform Hajj on behalf of the deceased from the deceased's estate. Thus in 'Al-Bahr'. I say: The discourse in 'Al-Bahr' is more comprehensive and beneficial, where it says: Prayer is like fasting, and for every Witr, half a Sa' (of grain) should be paid. The remaining rights of Allah the Almighty are also the same, whether they are monetary or physical, pure worship or containing an element of maintenance like Sadaqat al-Fitr, or vice versa like Ushr, or pure maintenance like expenditures (nafaqat), or containing a meaning of punishment like expiations (kaffarat). (Summary)

(Urdu Translation/Commentary): Some of these are mentioned in 'Radd al-Muhtar', upon which many additions were made in 'Shifa al-Alil', and in 'Minat al-Jalil' there is a detailed explanation of major points among them. If you want details, refer to them. In 'Durr-e-Mukhtar', this general rule was stated, the summary of which is that every worship which is bodily (like prayer), the executor, after the person's death, should give fidyah on behalf of the deceased for every obligatory act equal to the amount of Sadaqat al-Fitr. If the worship is monetary, e.g., Zakat, the executor should pay the required amount on behalf of the deceased, and if it is a combination of monetary and bodily, like Hajj, then send someone to perform Hajj from the deceased's wealth. Thus in 'Al-Bahr'. I say: the discourse of 'Al-Bahr' is very comprehensive and beneficial; its words are that prayer is like fasting, and for every Witr, half a Sa' should be paid, and the matter of the remaining rights of Allah Almighty is also similar, whether they are monetary or bodily, pure worship or containing an element of maintenance like Sadaqat al-Fitr, or the opposite like Ushr, or pure maintenance like

expenditures, or containing the meaning of punishment like expiations. (Summary) (T) [Table/Box End]

No fixed limit can be set for these; it should be to the extent that a strong suspicion of discharge of responsibility is attained. And Allah Almighty accepts good deeds and wipes away bad ones. (May Allah Almighty accept good deeds and end evils. T)

1. Al-Durr al-Mukhtar, Book of Fasting, Chapter on Incidents, Mujtabai Delhi, 1/153
2. Al-Bahr al-Raiq, Chapter on Incidents, H.M. Saeed Company Karachi, 2/285

जिल्द दहुम फ़तावा रज़विया

'अत-तातारखालिया' में है (यद्यपि सही कौल के मुताबिक़ वाजिब नहीं जैसा कि तातारखालिया में है। त): (7) सदक़ात-ए-फ़ित्र अपने और अपने बाल-बच्चों के जिनकी तरफ़ से अदा न हुए हों, (8) जितने नवाफ़िल फ़ासिद हुए और उनकी क़ज़ा न की, (9) जो-जो मन्नतें मानीं और अदा न कीं, (10) ज़मीन का उश्र या इख़राज जो अदा से रह गया हो वग़ैरह वग़ैरह अशिया-ए-कसीरा,

[कोष्टक प्रारंभ] (अरबी पाठ): जैसा कि 'रद अल-मुह्तार' में कुछ का ज़िक्र है और 'शिफ़ा अल-अलिल' में बहुत इज़ाफ़ा किया गया है, और 'मिन्नत अल-जलील' में अधिकांश की विस्तृत व्याख्या है, अतः यदि आप विवरण चाहते हैं तो उनका संदर्भ लें। 'अल-दुर्र अल-मुख़्तार' में एक सामान्य नियम दिया गया है: हर उस इबादत के लिए जो शारीरिक (बदनी) हो, वसीयत को पूरा करने वाला व्यक्ति (वसी) व्यक्ति की मृत्यु के बाद प्रत्येक अनिवार्य कार्य के बदले सदक़ा-ए-फ़ित्र के बराबर फ़िद्या खिलाए। यदि इबादत माली (वित्तीय) हो, जैसे ज़कात, तो मय्यत के धन से आवश्यक राशि निकाली जाए। और यदि यह मिश्रित हो, जैसे हज, तो मय्यत के धन से किसी व्यक्ति द्वारा हज कराया जाए। 'अल-बहर' में ऐसा ही है। मैं कहता हूँ: 'अल-बहर' का कथन अधिक व्यापक और लाभदायक है जहाँ कहा गया है: नमाज़ रोज़े की तरह है, और प्रत्येक वित्र के लिए आधा सा' (अनाज) दिया जाए। अल्लाह सर्वशक्तिमान के शेष अधिकार भी इसी तरह हैं, चाहे वे वित्तीय हों या शारीरिक, शुद्ध इबादत हों या उनमें भरण-पोषण (मऊना) का अर्थ हो जैसे सदक़ा-ए-फ़ित्र, या इसके विपरीत जैसे उश्र, या शुद्ध भरण-पोषण जैसे नफ़क़ा (खर्च), या उसमें दंड का अर्थ हो जैसे कफ़्फ़ारा। (संक्षिप्त)

(उर्दू अनुवाद/व्याख्या): इनमें से बाज़ का ज़िक्र 'रद अल-मुह्तार' में है, इस पर बहुत सा इज़ाफ़ा 'शिफ़ा अल-अलिल' में किया और 'मिन्नत अल-जलील' में इनमें से बड़ी-बड़ी की तफ़्सील है। अगर तफ़्सील चाहते हो तो उसकी तरफ़ रुजू' करो। 'दुर्रे मुख़्तार' में यह ज़ाबता-ए-कुल्लिया बयान किया जिसका हासिल यह है कि हर वह इबादत जो बदनी हो (जैसे नमाज़) तो वसी उसके मरने के बाद मय्यत की तरफ़ से हर वाजिब के एवज़ सदक़ा-ए-फ़ित्र की मिक़दार फ़िद्या दे, अगर इबादत माली हो मसलन ज़कात तो वसी मिक़दार-ए-वाजिब मय्यत की तरफ़ से अदा करे और अगर माली और بدنی का मुरक्कब हो जैसे हज तो किसी शख़्स को भेज कर मय्यत के माल से हज कराए। 'कज़ा फ़िल बहर'। मैंने कहा 'बहर' का कलाम बहुत जामे' और नाफ़े है, उसके अल्फ़ाज़ यह हैं कि नमाज़, रोज़े की तरह है और हर वित्र के एवज़ निस्फ़ सा' अदा किया जाए और अल्लाह तआला के बक़िया हुक़ूक़ का मामला भी इसी तरह है ख़्वाह वह माली हों या बदनी, इबादत-ए-महज़ हों या उसमें

ज़िम्मेदारी का पहलू भी हो मसलन सदक़ा-ए-फ़ित्र या इसका अक्स हो मसलन उश्र या इसमें महज़ ज़िम्मेदारी हो मसलन नफ़क़ात या इसमें मा'ना-ए-उक़ूबत हो मसलन कफ़्फ़ारात। (मुल्ख़्ख़सन - सारांश) (त) [कोष्टक समाप्त]

उनके लिए कोई हद्द मुअय्यन नहीं कर सकते, इस क़दर होना चाहिए कि बराअत-ए-ज़िम्मा पर ज़न्न (प्रबल गुमान) हासिल हो। और अल्लाह तआला नेकियाँ क़बूल फ़रमाता है और बुराइयां ख़त्म करता है। (अल्लाह तआला हसनात को क़बूल करे और बुराइयों को ख़त्म करे। त)

1. अल-दुर्र अल-मुख़्तार, किताब अल-सौम, फ़स्J फ़िल अवारिज़, मुज्तबाई दिल्ली, 1/153
2. अल-बहर अल-राइक़, फ़स्ल फ़िल अवारिज़, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 2/285

पेज 548 का 836

جلد دہم فتاوی رضویہ

فی التاتار خانیۃ (اگرچہ صحیح قول کے مطابق واجب نہیں جیسا کہ تاتارخانیہ میں ہے ۔ ت) (۷) صدقات فطر اپنے اور اپنے اہل وعیال کے جس قدر ادا نہ ہوئے ہوں (۸) جتنے نوافل فاسد ہوئے اور ان کی قضانہ کی (۹) جو جو منتیں مانیں اور ادانہ کیں (۱۰) زمین کا عشر یا اخراج جو ادا سے رہ گیا وغیرہ وغیرہ اشیائے کثیرہ،

[باکس شروع] علی ماذکر بعضھا فی رد المحتار وزاد کثیرا فی شفاء العلیل وفصل جلھا فی منۃ الجلیل فراجعھا ان اردت التفصیل وافاد فی الدر المختار ضابطۃ کلیۃ ان ماکان عبادۃ بدنیۃ فان الوصی یطعم عنہ بعد موتہ عن کل واجب کالفطرۃ والمالیۃ کالزکوۃ یخرج عنہ القدر الواجب والمرکب کالحج یحج عنہ رجلا من مال المیت بحراھ ۱ قلت وکلام البحر اجمع وانفع حیث قال الصلوۃ کالصوم، ویؤدی عن کل وتر نصف صاع، وسائر حقوقہ تعالیٰ کذلک مالیا کان او بدنیا عبادۃ محضۃ او فیہ معنی المؤنۃ کصدقۃ الفطر او عکسہ کالعشر او مؤنۃ محضۃ کالنفقات او فیہ معنی العقوبۃ کالکفارات اھ ۲ (ملخصاً)

ان میں سے بعض کا تذکرہ ردالمختار میں ہے اس پر بہت سا اضافہ شفاء العلیل میں کیا اور منۃ الجلیل میں ان میں سے بڑی بڑی کی تفصیل ہے اگر تفصیل چاہتے ہو تو اس کی طرف رجوع کرو۔ درمختار میں یہ ضابطہ کلیہ بیان کیا جس کا حاصل یہ ہے ہر وہ عبادت جو بدنی ہو (جیسے نماز) تو وصی اس کے مرنے کے بعد میت کی طرف سے ہر واجب کے عوض صدقۃ الفطر کی مقدار فدیہ دے، اگر عبادت مالی ہو مثلاً زکوۃ تو وصی مقدارِ واجب میت کی طرف سے ادا کرے اور اگر مالی اور بدنی کا مرکب ہو جیسے حج تو کسی شخص کو بھیج کر میت کے مال سے حج کرائے کذا فی البحر اھ قلت بحر کا کلام بہت جامع اور نافع ہے اس کے الفاظ یہ ہیں کہ نماز، روزے کی طرح

ہے اور ہر وتر کے عوض نصف صاع ادا کیا جائے اور اللہ تعالٰی کے بقیہ حقوق کا معاملہ بھی اسی طرح ہے خواہ وہ مالی ہوں یا بدنی، عبادتِ محضہ ہوں یا اس میں ذمہ داری کا پہلو بھی ہو مثلاً صدقۃ الفطر یا اس کا عکس ہو مثلاً عشر یا اس میں محض ذمہ داری ہو مثلاً نفقات یا اس میں معنی عقوبت ہو مثلاً کفارات اھ (ملخصاً) (ت) [باکس ختم]

ان کے لیے کوئی حد معین نہیں کر سکتے اس قدر ہونا چاہئے کہ برائت ذمہ پر ظن حاصل ہو واللہ تعالٰی یقبل الحسنات ویقبل السیئات (اللہ تعالٰی حسنات کو قبول کرے اور برائیوں کو ختم کرے۔ ت)

1 الدر المختار کتاب الصوم فصل فی العوارض مجتبائی دہلی ۱/۱۵۳ 2 البحر الرائق فصل فی العوارض ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/۲۸۵

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

Observe the difficulty of thousands and millions of circulations and the ease of this Indian method, where in a single instance, all kinds of fidya (compensations), expiations, and accountabilities for him and his seven generations can be paid simultaneously just by saying two words. The agreement of all the scholars of the school of thought, from beginning to end, on choosing that hardship and abandoning this ease is a clear indication that, in their view, there was no way towards that facility; otherwise, there would not have been a consensus on that hardship while abandoning it. In short, there are two ways to pay fidya from a debt:

One is the method mentioned previously in the text of Durr al-Mukhtar, Kitab al-Wasaya: that after recovering the debt from the debtor and taking possession, one should then give it back as fidya.

The second is mentioned in Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat: that one gives the fidya money and takes it back while coming. If the debtor does not want to give it, one should reach out and take it, because one is taking one's actual right.

| Where it is said: The stratagem of permissibility is that the creditor gives his zakat to the poor debtor, then takes it back from him against his debt. If the debtor refuses, he should extend his hand and take it, because he has come upon the very substance of his right. If he (the debtor) prevents him, he should take him to the judge so that he (the judge) makes him pay it.[1] | Its words are: The strategy for paying zakat from existing wealth against a debt is that the poor debtor is handed his zakat, then the zakat amount is taken back from him in exchange for the debt. If the debtor does not give it, he should grab his hand and snatch it because he has received the genus of his right. Then if the debtor-poor person resists, he should take him to the judge so that he may have him give it. (T) |

Similarly, it is mentioned in Dhakhira, Hindiya, Ashbah, etc. As for the situation where the debt owed by the poor person—or now something sold to him to make him a debtor—is left as fidya, no trace of its permissibility is found at all in the words of the scholars. Rather, apparently, impermissibility is understood. Therefore, caution lies in not taking such an action until a clear statement of its permissibility is found from the masters of the school. This is what has become apparent to me, and the knowledge of the truth is with my Lord. (T)

Benefit (Faidah): Scholars have sought to reduce the 'daur' (circulation) as much as possible. Allama Shams al-Quhistani assumed the circulation with three 'sa' (measures) so that in each turn, a full day's prayers are paid. In Ahkam al-Jana'iz, the circulation was kept at four thousand seventy-two "4072" dirhams so that according to these times and cities, in each cycle, there is a fidya for one year's prayers. In Radd al-Muhtar, the cycle is one year.

[1] Al-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Zakat, Mujtabai Delhi 1/130

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवां

इन हज़ारों लाखों बार के फेरबदल की कठिनाई को देखें और इस हिंदी तरीके की सुगमता को कि एक ही बार में उसके और उसकी सात पीढ़ियों के तमाम प्रकार के फ़िद्ये, कफ़्फ़ारे और मुआख़ज़े (जवाबदेही) दो शब्द कहने मात्र से अदा हो सकते हैं। तो शुरू से अंत तक संप्रदाय के सभी विद्वानों का इस कठिनाई को चुनने और इस सुगमता को छोड़ने पर सहमत होना एक स्पष्ट संकेत है कि उनके अनुसार उस आसानी की ओर कोई रास्ता नहीं था; अन्यथा उस कठिनाई पर आम सहमति नहीं होती। कुल मिलाकर, ऋण (कर्ज़) से फ़िद्या अदा करने के दो तरीके हैं:

पहला वह जो 'दुर्रे मुख्तार', 'किताबुल वसाया' के पूर्वोक्त पाठ में वर्णित है कि ऋणी (कर्ज़दार) से ऋण वसूल करके कब्ज़ा करने के बाद फिर उसे फ़िद्या में दे दे।

दूसरा वह जो 'दुर्रे मुख्तार', 'किताबुल ज़कात' में वर्णित है कि फ़िद्या का धन देकर आते समय वापस ले ले। यदि ऋणी न देना चाहे तो हाथ बढ़ाकर ले ले क्योंकि वह अपना वास्तविक अधिकार ले रहा है।

| जैसा कि कहा गया है: अनुमति का तरीका यह है कि वह अपने निर्धन ऋणी को अपनी ज़कात दे, फिर उससे अपने ऋण के बदले उसे वापस ले ले। यदि ऋणी मना करे, तो वह अपना हाथ बढ़ाकर उसे ले ले क्योंकि उसने अपने अधिकार की वस्तु पा ली है। यदि वह (ऋणी) उसे रोके, तो वह उसे काज़ी के पास ले जाए ताकि वह उसे दिलवा दे।[1] | इसके शब्द ये हैं: मौजूद माल की ज़कात ऋण से अदा करने की युक्ति यह है कि गरीब ऋणी को अपनी ज़कात सौंप दे, फिर उससे ऋण के बदले ज़कात की राशि वापस ले ले। यदि ऋणी न दे, तो उसका हाथ पकड़कर छीन ले क्योंकि उसे उसके हक की वस्तु मिल गई है। फिर यदि ऋणी-गरीब विरोध करे, तो उसे काज़ी के पास ले जाए कि वह उसे दिलवा देगा। (त) |

इसी तरह 'ज़ख़ीरा', 'हिन्दिया', 'अशबाह' आदि में भी है। बाकी यह स्थिति कि जो ऋण गरीब पर था या अब उसके हाथ कुछ बेचकर उसे ऋणी बना लिया, इसे फ़िद्या में छोड़ दिया जाए, इसके जायज़ होने का कोई सुराग विद्वानों के शब्दों में बिल्कुल नहीं मिलता, बल्कि स्पष्ट रूप से नाजायज़ होना समझ में आता है। अतः सावधानी इसी में है कि जब तक संप्रदाय के उस्तादों से इसके जायज़ होने का स्पष्ट उल्लेख न मिले, तब तक ऐसा कदम न उठाया जाए। यह मुझ पर स्पष्ट हुआ है और सत्य का ज्ञान मेरे रब के पास है। (त)

फ़ायदा: विद्वानों ने जहाँ तक संभव हो 'दौर' (चक्र) को कम करने पर ध्यान दिया है। अल्लामा शम्स क़ुहिस्तानी ने तीन 'सा' से 'दौर' माना है ताकि प्रत्येक बार में एक पूर्ण दिन की नमाज़ अदा हो जाए। 'अहकामुल जनाइज़' में चार हज़ार बहत्तर "4072" दिरहम से 'दौर' रखा गया ताकि इन समयों और शहरों के हिसाब से प्रत्येक चक्र में एक वर्ष की नमाज़ का फ़िद्या हो। 'रद्दुल मुहतार' में एक वर्षीय चक्र है।

[1] अल-दुर्र अल-मुख्तार, किताबुल ज़कात, मुज्तबाई दिल्ली 1/130

ان ہزاروں لاکھوں بار کے ہیر پھیر کی دقت دیکھئے اور اس ہندی طریقہ کی سہولت کہ ایک ہی دفعہ میں اُس کے اور اس کی سات پشت کے تمام انواع واقسام کے فدیے ، کفارے ، مواخذے دو حرف کہنے میں معا ادا ہوسکتے ہیں تو اول تا آخر تمام علمائے مذہب کا اس کلفت کے اختیار اور اس سہولت کے ترک پر اتفاق قرینہ واضحہ ہے کہ اُن کے نزدیک اُس آسانی کی طرف راہ نہ تھی ورنہ اسے چھوڑ کر اس مشقت پر اطباق نہ ہوتا بالجملہ دین سے فدیہ ادا کرنے کی دو صورتیں ہیں :

ایک وہ کہ در مختار کتاب الوصایا عبارت مذکورہ سابقاً میں ذکر فرمائی کہ مدیون سے دین وصول کرکے بعد قبضہ پھر اسے فدیہ میں دے دے۔

دوسری وہ کہ در مختار کتاب الزکوۃ میں مذکور ہوئی کہ مال فدیہ میں دے کر آتے میں واپس کرے اگر مدیون نہ دینا چاہے ہاتھ بڑھا کر لے لے کہ اپنا عین حق لیتا ہے،

| حیث قال وحیلۃ الجواز ان یعطی مدیونہ الفقیر زکوتہ ثم یا خذھا عن دینہ ولو امتنع المدیون مد یدہ واخذھا لکونہ ظفر بجنس حقہ فان ما نعہ رفعہ للقاضی[1]۔ | اس کے الفاظ یہ ہیں مال موجود کی زکوۃ دین سے ادا کرنے کی تدبیر یہ ہے کہ فقیر مقروض کو اپنی زکوۃ حوالہ کردے پھر اس سے دین کے عوض زکوۃ کی رقم واپس لے لے ، اگر مقروض نہ دے تو اس کا ہاتھ پکڑ کر چھین لے کیونکہ یہ اسے اس کے حق کی جنس ملی ہے پھر اگر مدیون فقیر مزاحمت کرے تو اس کو قاضی کے پاس لے جائے کہ وہ اس سے دلوادے گا۔ (ت) |

اسی طرح ذخیرہ و ہندیہ و اشباہ و غیرہا میں ہے باقی یہ صورت کہ جو دین فقیر پر آتا تھا یا اب اس کے ہاتھ کچھ بیچ کر مدیون کرلیا یہ فدیہ میں چھوڑ دیا جائے اس کے جواز کا پتا کلمات علماء سے اصلاً نہیں چلتا بلکہ ظاہر عدم جواز مفہوم ہوتا ہے تو احتیاط اس میں ہے کہ جب تک مشائخ مذہب سے اُس کے جواز کے پتے کی تصریح نہ ملے ایسے امر پر اقدام نہ کیا جائے ھذا ما ظھر لی والعلم بالحق عند ربی (یہ مجھ پر ظاہر ہوا ہے اور حق کا علم میرے رب کے پاس ہے۔ت)

فائدہ: علماء نے حتی الامکان تقلیل دور پر نظر فرمائی ہے ، علامہ شمس قہستانی نے تین صاع سے دور فرض کیا کہ ہر بار میں ایک دن کامل کی نماز ادا ہو۔ احکام الجنائز میں چار ہزار بہتر " ۴۰۷۲ " درہم سے دور رکھا کہ ان اعصار وامصار کے حساب سے ہر دَور میں ایک سال کی نماز کا فدیہ ہو۔ ردالمحتار میں دُور یک سالہ۔

[1] الدر المختار کتاب الزکوۃ مجتبائی دہلی ۱ / ۱۳۰

Fatawa Razawiyya Volume 10

After mentioning, he said if one takes a loan more than that, then in each turn, more would be discharged.

[Arabic Text]: ویشمل کل ذلك وما سواه مأنى منة الجلیل ومما تعارفه الناس ونص علیه اهل المذهب ان الواجب اذا کثر اداروا صرة مشتملة على نقود او غیرها کجواهر او حلى او ساعة وبنوا الامر على اعتبار القیمة الخ۔

This includes everything and anything else mentioned in *Munyat al-Jalil*, and what is common among people, as the scholars of the school of thought have stated that when the obligations are numerous, they pass around a bag containing cash or other items like gems, necklaces, jewelry, or a watch, and they base the matter on the consideration of value, etc. (T)

These are all clarifications, and every person of understanding, after realizing the calculation, can reduce the burden as much as possible, until if it is possible to obtain a loan for a short while of an amount equal to all the properties calculated for all ransoms (fidyah), expiations (kaffarah), and demands, then there will be no need for the 'dawr' (circular exchange) where a person sells something for that amount to a poor person, and if expiation for an oath is also included, to ten people. Then, by giving that borrowed property as ransom, he takes back the sold item for the price and pleases the hearts of the poor by giving them something according to his capacity. There are still many details left in this matter, but to avoid lengthiness, the pen has been restrained from mentioning them. And Allah Almighty knows best.

(9) The intention of the giver is sufficient; there is no need for words.

[Arabic Text]: کما صرحوا به في الزکوة وقال العلامة السید الحموي في شرح الاشباه والنظائر العبرة لنیة الدافع لا للعلم المدفوع الیه اهـ وفي رد المحتار لا اعتبار للتسمیة الخ ۳ وقد فصلناه في زکوة فتاونا۔

As they have stated in the issue of Zakat, and Allama Sayyid al-Hamawi said in the commentary on *Al-Ashbah wa'l-Naza'ir*: "The consideration is for the intention of the giver, not for the knowledge of the one to whom it is given." End quote. And in *Radd al-Muhtar*: "No consideration is given to the naming," etc. We have given the full detail of this in our Fatawa in the Book of Zakat. (T)

However, scholars consider it appropriate to mention it verbally as well, to the extent that in the method of payment, they suggest naming the deceased's father and

grandfather, such that it is said to the needy person: "This wealth is for you for so many fasts or so many [days] of such and such, son of such and such..."

---

1 *Munyat al-Jalil*, a treatise from the treatises of Ibn Abidin, the eighth treatise, Suhail Academy Lahore, 1/212. 2 *Ghamz 'Uyun al-Basa'ir* with *al-Ashbah wa'l-Naza'ir*, Book of Zakat, Idarat al-Qur'an wal-'Ulum al-Islamiyya, Karachi, 1/221. 3 *Radd al-Muhtar*, Book of Zakat, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/11.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (खंड 10)

जिक्र करके कहा कि इससे अधिक ऋण लें तो हर बार में अधिक साक़ित (समाप्त) होगा।

[अरबी पाठ]: ويشمل كل ذلك وما سواه مأنى منة الجليل ومما تعارفه الناس ونص عليه اهل المذهب ان الواجب اذا كثر اداروا صرة مشتملة على نقود او غيرها كجواهر او حلى او ساعة وبنوا الامر على اعتبار القيمة الخ۔

यह सब शामिल है, इसके अलावा जो मुनियतुल जलील में है कि जो लोगों के यहाँ प्रसिद्ध है, उसी पर अहल-ए-मज़हब ने स्पष्ट किया है कि जब वाजिब (दायित्व) अधिक हों तो एक थैली जिसमें नकदी वगैरह जैसे जवाहरात, हार, ज़ेवर या घड़ी हो, उसे घुमाते हैं और मामले का आधार मूल्य के विचार पर रखा गया है, इत्यादि। (त)

ये सब स्पष्टीकरण हैं और हर समझदार व्यक्ति गणना को समझने के बाद यथासंभव कमी कर सकता है, यहाँ तक कि अगर संभव हो कि जितनी संपत्ति तमाम फ़िद्यों, कफ़्फ़ारों, माँगों के बारे में गिनी गई है, वह सब एक बार में थोड़ी देर के लिए किसी से ऋण मिल सके तो दौर की आवश्यकता ही नहीं रहेगी कि कोई वस्तु उतनी संपत्ति के बदले फ़कीर के हाथ बेचे, और अगर कफ़्फ़ारा-ए-क़सम भी शामिल है तो दस के हाथ। फिर वह ऋण में ली गई संपत्ति फ़िद्ये में देकर बेची गई वस्तु को मूल्य में ले ले और सामर्थ्य के अनुसार फ़क़ीरों को कुछ देकर उनका दिल खुश कर दे। अभी इस मसले में बहुत विवरण बाकी हैं, जो लंबाई के विचार से उनके ज़िक्र से हाथ रोक लिया गया। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

(९) देने वाले की नीयत (इरादा) काफी है, शब्द की आवश्यकता नहीं है।

[अरबी पाठ]: كما صرحوا به في الزكوة وقال العلامة السيد الحموي في شرح الاشباه والنظائر العبرة لنية الدافع لا للعلم المدفوع اليه اهـ وفي رد المحتار لا اعتبار للتسمية الخ ٣ وقد فصلناه في زكوة فتاونا۔

जैसा कि ज़कात के मसले में इसकी स्पष्ट व्याख्या मौजूद है, अल्लामा सैयद हमवी ने शरह अल-अशबाह वन-नज़ायर में फ़रमाया कि देने वाले की नीयत का एतबार है, जिसे दी जा रही है उसे मालूम होना ज़रूरी नहीं है। (समाप्त) रद-उल-मुहतार में है कि ज़बान से नाम लेने का एतबार नहीं है इत्यादि। हमने इसका पूरा विवरण अपने फ़तावा की किताब-उज़-ज़कात में दिया है। (त)

मगर ज़बान से भी कह देने को विद्वान उचित बताते हैं, यहाँ तक कि अदायगी के तरीके में मृत के पिता-दादा तक का नाम लेना फ़रमाते हैं कि मिस्कीन से कहा जाए कि यह माल तुझे फ़लाँ बिन फ़लाँ के इतने रोज़ों या इतनी...

---

1 मुनियतुल जलील, इब्न आबिदीन के रिसालों में से एक रिसाला, आठवाँ रिसाला, सुहैल अकादमी लाहौर, 1/212। 2 ग़म्ज़ उयून अल-बसायर मअ अल-अशबाह वन-नज़ायर, किताब-उज़-ज़कात, इदारातुल कुरान वल-उलूम अल-इस्लामिया कराची, 1/221। 3 रद-उल-मुह्तार, किताब-उज़-ज़कात, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी बेरुत, 2/11।

فتاوی رضویہ جلد دہم

ذکر کرکے کہا اس سے زیادہ قرض لے تو ہر بار میں زیادہ ساقط ہو،

[Arabic Text]: ویشمل کل ذلك وما سواہ مأنی منة الجلیل ومما تعارفه الناس ونص علیه اهل المذهب ان الواجب اذا کثر اداروا صرة مشتملة علی نقود او غیرها کجواهر او حلی او ساعة وبنوا الامر علی اعتبار القیمة الخ۔

یہ تمام کو شامل ہے، اس کے علاوہ جو منیۃ الجلیل میں ہے کہ جو لوگوں کے ہاں معروف ہے اسی پر اہل مذہب نے تصریح کی کہ جب واجب کثیر ہوں تو ایک تھیلی میں نقدی وغیرہ مثلاً جواہر ، ہار ، زیور ڈال کر دور کریں تو فقہاء نے قیمت کا اعتبار کیا ہے الخ (ت)

یہ سب واضحات ہیں اور ہر فہیم بعد ادراک حساب حتی المقدور تخفیف دور کر سکتا ہے یہاں تک کہ اگر ممکن ہو کہ جس قدر اموال تمام فدیوں، کفاروں، مطالبوں کی بابت محسوب ہوئے سب دفعۃً تھوڑی دیر کے لیے کسی سے قرض مل سکیں تو دور کی حاجت ہی نہ رہے گی کہ کوئی شے اتنے اموال کے عوض فقیر کے ہاتھ بیچے، اور اگر کفارہ قسم بھی شامل ہے تو دس کے ہاتھ پھر وہ اموال قرضہ گرفتہ فدیہ میں دے کر شئی مبیع کو ثمن میں لے لے اور حسب مقدرت فقراء کو کچھ دے کر ان کا دل خوش کر دے، ہنوز اس مسئلہ میں بہت تفصیل باقی ہیں کہ بخیال طول ان کے ذکر سے عنان کشی ہوئی۔ واللہ تعالٰی اعلم

(۹) دینے والے کی نیت کافی ہے لفظ کی حاجت نہیں،

[Arabic Text]: كما صرحوا به في الزكوة وقال العلامة السيد الحموي في شرح الاشباه والنظائر العبرة لنية الدافع لا للعلم المدفوع اليه اهـ وفي رد المحتار لا اعتبار للتسمية الخ ۳ وقد فصلناه في زكوة فتاونا۔

جیسا کہ مسئلہ زکوۃ میں اس کی تصریح موجود ہے علامہ سید حموی نے شرح الاشباہ والنظائر میں فرمایا دینے والے کی نیت کا اعتبار ہے، اسے معلوم ہونا ضروری نہیں جسے دی جارہی ہو اھ ردالمحتار میں ہے زبان سے نام لینے کا اعتبار نہیں الخ ہم نے اس کی پوری تفصیل اپنے فتاوی کے کتاب الزکوۃ میں دی ہے۔(ت)

مگر زبان سے بھی کہہ دینے کو علماء مناسب بتاتے ہیں یہاں تک کہ طریقہ ادا میں میت کے باپ دادا تک کا نام لینا فرماتے ہیں کہ مسکین سے کہا جائے یہ مال تجھے فلاں بن فلاں کے اتنے روزوں یا اتنی

---

1 منیة الجلیل ، رسالہ من رسائل ابن عابدین ، الرسالة الثامنة ، سہیل اکیڈمی لاہور ۱ / ۲۱۲ 2 غمز عیون البصائر مع الاشباہ والنظائر کتاب الزکوۃ ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۱ / ۲۲۱ 3 رد المحتار کتاب الزکوۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۱۱

Fatawa Razawiyya Volume 10

Regarding the fidya (expiation) for prayers, [if] it is given, and he says 'I have accepted it'. It is mentioned in Sharh al-Niqayah by Allama Quhistani:

Arabic Text: ينبغي ان يقول الدافع للمسكين فى كل مرة انى ادفعك مال كذا فديه صوم كذا لفلان بن فلان المتوفى ويقول المسكين قبلته - 1 English Translation: It is appropriate for the one giving to the needy person to say each time, "I am giving you this much wealth as fidya for the fasts of so-and-so, son of so-and-so, the deceased." And the needy person says, "I have accepted it."

Urdu Translation: مسکین کو دینے والا ہر دفعہ کہے میں تجھے فلاں بن فلاں میت کی طرف سے فدیہ صوم کے طور پر مال دے رہا ہوں اور مسکین کہے میں نے اسے قبول کیا۔ (ت)

In Minhat al-Khaliq, Sharh Hidaya by Ibn Ammar, and Ahkam al-Jana'iz it is stated:

Arabic Text: يقول المسقط لواحد من الفقراء هكذا افلان بن فلان ويذكر اسمه و ابيه، فاتته صلوات سنة ، هذه فديتها من ماله ، نملكك اياها ويعلم ان المال المدفوع اليه صار ملكا له ثم يقول الفقير هكذا و انا قبلتها و تملكتها منک - 2 English Translation: The one paying the expiation says to one of the poor as follows: "This is so-and-so, son of so-and-so"—and he mentions his name and his father's—"a year's worth of prayers were missed by him; this is their fidya from his wealth. We make you the owner of it." And he should know that the wealth given to him has become his property. Then the poor person says: "Thus, and I have accepted it and taken ownership of it from you."

Urdu Translation: وارث فقراء میں سے کسی ایک کو یوں کہے کہ یہ فلاں بن فلاں ہے، میت کا نام اس کے والد کا نام ذکر کر کے کہے اس کی سال کی نمازیں فوت ہو گئی تھیں ہم ان کے فدیہ کے طور پر اس مال کا تجھے مالک بنا رہے ہیں، اور وہ مال فقیر کی ملک میں چلانا معلوم کرے، پھر فقیر یوں کہے میں نے قبول کیا اور تجھ سے اسے اپنی ملک میں لیا۔ (ت)

It is clear that these are all recommendations (awlawiyyat) upon which the validity of payment does not depend.

Arabic Text: كما علمت فلا نظر لما يوهمه كلام الفاضل المعاصر فى منة الجليل حيث قال ويدفع عن الجناية على الحرم والاحرام مما يوجب دما او صدقة نصف صاع او دون ذلك فلابد من التعرض لاخراجها بان يقال خذ هذا عن جناية على حرم او احرام اهـ وانما الواجب التعرض فى النية والقول يعم النفسى - 3 English Translation: As you have known, no heed should be paid to what the words of the contemporary scholar in 'Minat al-Jalil' might imply, where he said: "Payment is made for a violation (jinayah) against the Haram or Ihram which necessitates a sacrifice (dam) or a charity (sadaqah) of half a sa' or less than that. So,

it is necessary to specify while giving it by saying: 'Take this for a violation against the Haram or Ihram.'" End of quote. Indeed, what is obligatory is specifying in the intention, and speech includes internal speech.

Urdu Translation: جیسا کہ آپ جان چکے، اس کی طرف توجہ نہ کی جائے جس کا وہم فاضل معاصر کے رسالہ منتہ الجلیل میں کلام سے پیدا ہو رہا ہے انہوں نے کہا حرم اور احرام میں جس جنایت کی وجہ سے دم لازم آیا ہو یا نصف صاع صدقہ یا اس سے کم صدقہ لازم آیا ہو تو اس کے نکالتے وقت یہ کہنا ضروری ہے کہ یہ حرم یا احرام میں جنایت کا فدیہ ہے تو اُسے وصول کر اھ کیونکہ تعرض نیت میں ضروری ہے اور قول کلام نفسی

Footnotes: 1. Jami al-Rumuz, Chapter on things that cause invalidation, Maktaba Islamia, Gunbad Qamus, Iran, 1/70-73 2. Minhat al-Khaliq, Marginalia on Bahr al-Ra'iq, Chapter on making up missed prayers, H.M. Saeed Company, Karachi, 2/90 3. Minat al-Jalil, a treatise from the treatises of Ibn Abidin, Eighth Treatise, Sohail Academy, Lahore, 1/224

फतावा रज़विया जिल्द 10

नमाज़ों के फ़िदिया (प्रायश्चित) के बारे में, [अगर] वह देता है और कहता है 'मैंने स्वीकार किया', अल्लामा कुहिस्तानी की शरह अल-निकाया में है:

अरबी पाठ: ينبغي ان يقول الدافع للمسكين فى كل مرة انى ادفعك مال كذا فديه صوم كذا لفلان بن فلان المتوفى ويقول المسكين قبلته - 1 हिन्दी अनुवाद: मिस्कीन को देने वाले को चाहिए कि वह हर बार कहे, "मैं तुम्हें फलां बिन फलां (मृतक) के रोजों के फिदिये के रूप में इतना माल दे रहा हूँ।" और मिस्कीन कहे, "मैंने इसे स्वीकार किया।"

उर्दू अनुवाद: مسکین کو دینے والا ہر دفعہ کہے میں تجھے فلاں بن فلاں میت کی طرف سے فدیہ صوم کے طور پر مال دے رہا ہوں اور مسکین کہے میں نے اسے قبول کیا۔ (ت)

मिन्हातुल खालिक और शरह हिदाया इब्ने अम्मार और अहकामुल जनाइज़ में है:

अरबी पाठ: يقول المسقط لواحد من الفقراء هكذا افلان بن فلان ويذكر اسمه و ابيه، فاتته صلوات سنة ، هذه فديتها من ماله ، نملكك اياها ويعلم ان المال المدفوع اليه صار ملكا له ثم يقول الفقير هكذا و انا قبلتها و تملكتها منک - 2 हिन्दी अनुवाद: फिदिया अदा करने वाला गरीबों में से किसी एक से इस तरह कहे: "यह फलां बिन फलां है"—और उसका और उसके पिता का नाम बताए—"उसकी एक साल की नमाज़ें छूट गई थीं; यह उसके माल से उनका फिदिया है। हम तुम्हें इसका मालिक बनाते हैं।" और उसे यह जान लेना चाहिए कि उसे दिया गया माल उसकी मिल्कियत (संपत्ति) हो गया है। फिर गरीब व्यक्ति कहे: "इस प्रकार, और मैंने इसे स्वीकार किया और तुमसे इसका स्वामित्व ग्रहण किया।"

उर्दू अनुवाद: وارث فقراء میں سے کسی ایک کو یوں کہے کہ یہ فلاں بن فلاں ہے، میت کا نام اس کے والد کا نام ذکر کر کے کہے اس کی سال کی نمازیں فوت ہو گئی تھیں ہم ان کے فدیہ کے طور پر اس مال کا تجھے مالک بنا رہے ہیں، اور وہ مال فقیر کی ملک میں چلانا معلوم کرے، پھر فقیر یوں کہے میں نے قبول کیا اور تجھ سے اسے اپنی ملک میں لیا۔ (ت)

यह स्पष्ट है कि ये सब प्राथमिकताएँ(औलवियात) हैं जिन पर अदायगी की वैधता निर्भर नहीं करती है।

अरबी पाठ: كما علمت فلا نظر لما يوهمه كلام الفاضل المعاصر فى منة الجليل حيث قال ويدفع عن الجناية على الحرم والاحرام مما يوجب دما او صدقة نصف صاع او دون ذلك فلابد من التعرض لاخراجها بان يقال خذ هذا عن جناية على حرم او احرام اهـ وانما الواجب التعرض فى النية والقول يعم النفسى - 3 हिन्दी अनुवाद: जैसा कि आप जान चुके हैं, उस बात पर ध्यान न दिया जाए जिसका भ्रम समकालीन विद्वान के'मिन्नतुल जलील' के शब्दों से उत्पन्न हो सकता है, जहाँ उन्होंने कहा: "हरम या एहराम के विरुद्ध उल्लंघन (जिनायत) के लिए अदायगी की जाती है जिससे बलि (दम) या आधा साअ या उससे कम का सदका अनिवार्य होता है। अत; इसे देते समय यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि: 'इसे हरम या एहराम के उल्लंघन के लिए लो।'" उद्धरण समाप्त। वास्तव में, नीयत में स्पष्ट करना अनिवार्य है, और वाणी में आंतरिक वाणी भी शामिल है।

उर्दू अनुवाद: جیسا کہ آپ جان چکے، اس کی طرف توجہ نہ کی جائے جس کا وہم فاضل معاصر کے رسالہ منتہ الجلیل میں کلام سے پیدا ہو رہا ہے انہوں نے کہا حرم اور احرام میں جس جنایت کی وجہ سے دم لازم آیا ہو یا نصف صاع صدقہ یا اس سے کم صدقہ لازم آیا ہو تو اس کے نکالتے وقت یہ کہنا ضروری ہے کہ یہ حرم یا احرام میں جنایت کا فدیہ ہے تو اُسے وصول کر اھ کیونکہ تعرض نیت میں ضروری ہے اور قول کلام نفسی

पादलेख: 1. जामेउर रुमुज़, फसल मोजिबुल अफ़साद, मकतबा इस्लामिया, गुंबद क़ामूस, ईरान, 1/70-73 2. मिन्हातुल खालिक, हाशिया बहरुल रैक, बाब कज़ाउल फ़वाइत, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 2/90 3. मिन्नतुल जलील, इब्ने आबिदीन के रिसालों में से एक, आठवां रिसाला, सुहेल एकेडमी, लाहौर, 1/224

فتاوی رضویہ جلد دہم

نمازوں کے فدیہ میں دیا، وہ کہے میں نے قبول کیا، شرح نقایہ علامہ قہستانی میں ہے:

Arabic Text: ینبغی ان یقول الدافع للمسکین فی کل مرۃ انی ادفعك مال کذا فدیه صوم کذا لفلان بن فلان المتوفی ویقول المسکین قبلته - 1

Urdu Translation: مسکین کو دینے والا ہر دفعہ کہے میں تجھے فلاں بن فلاں میت کی طرف سے فدیہ صوم کے طور پر مال دے رہا ہوں اور مسکین کہے میں نے اسے قبول کیا۔ (ت)

منحۃ الخالق و شرح ہدایتہ ابن عمار و احکام الجنائز میں ہے:

Arabic Text: یقول المسقط لواحد من الفقراء ھکذا افلان بن فلان ویذکر اسمه و ابیه، فاتته صلوات سنة ، ھذه فدیتها من ماله ، نملکك ایاھا ویعلم ان المال المدفوع الیه صار ملکا له ثم یقول الفقیر ھکذا و انا قبلتها و تملکتها منک - 2

Urdu Translation: وارث فقراء میں سے کسی ایک کو یوں کہے کہ یہ فلاں بن فلاں ہے، میت کا نام اس کے والد کا نام ذکر کر کے کہے اس کی سال کی نمازیں فوت ہو گئی تھیں ہم ان کے فدیہ کے طور پر اس مال کا تجھے مالک بنا رہے ہیں، اور وہ مال فقیر کی ملک میں چلانا معلوم کرے، پھر فقیر یوں کہے میں نے قبول کیا اور تجھ سے اسے اپنی ملک میں لیا۔ (ت)

پر ظاہر کہ یہ سب اولویتیں ہیں جن پر توقف ادا نہیں۔

Arabic Text: کما علمت فلا نظر لما یوھمه کلام الفاضل المعاصر فی منة الجلیل حیث قال ویدفع عن الجنایة علی الحرم والاحرام مما یوجب دما او صدقة نصف صاع او دون ذلك فلابد من التعرض

لاخراجها بان يقال خذ هذا عن جناية على حرم او احرام اهـ وانما الواجب التعرض فى النية والقول يعم النفسى - 3

Urdu Translation: جیسا کہ آپ جان چکے، اس کی طرف توجہ نہ کی جائے جس کا وہم فاضل معاصر کے رسالہ منتہ الجلیل میں کلام سے پیدا ہو رہا ہے انہوں نے کہا حرم اور احرام میں جس جنایت کی وجہ سے دم لازم آیا ہو یا نصف صاع صدقہ یا اس سے کم صدقہ لازم آیا ہو تو اس کے نکالتے وقت یہ کہنا ضروری ہے کہ یہ حرم یا احرام میں جنایت کا فدیہ ہے تو اُسے وصول کر اھ کیونکہ تعرض نیت میں ضروری ہے اور قول کلام نفسی

Footnotes: 1. جامع الرموز فصل موجب الافساد مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۱ / ۷۰- ۷۳ 2. منحة الخالق حاشیہ بحر الرائق باب قضاء الفوائت ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲ / ۹۰ 3. منة الجلیل رسالہ من رسائل ابن عابدین الرسالة الثامنة سہیل اکیڈمی لاہور ۱ / ۲۲۴

Understand this. And Allah knows best. It includes [this], so understand, and Allah Almighty knows best (T).

(10) There are several differences: (1) An elderly person (Shaykh Fani) will give the fidyah (ransom) for fasting during their lifetime and it will be sufficient. Provided that weakness does not disappear and strength return during life. However, one cannot give fidyah for prayers because continuous disability is not established for it until the moment of death. If one cannot stand, they should pray sitting; if they cannot sit, they should pray lying down by gestures. (2) Giving fidyah for fasting during life is mandatory for an elderly person if capable; it is not mandatory after death unless they make a bequest from their property. (3) If an elderly person gives fidyah for fasting in their life, its sufficiency will be certain as there is explicit textual evidence (nas) for it. Similarly, if they bequeath fidyah for fasting. There is doubt in fidyah for fasting without a bequest and fidyah for prayer with a bequest, and the doubt is stronger for fidyah for prayer without a bequest. Allah is sufficient for us and He is the best Disposer of affairs. (4) During life, fidyah for fasting is from the entire wealth of the elderly person. After death, without a bequest or without the permission of heirs, it will not be executed for more than one-third.

[Table/Box Content] In Tanweer al-Absar and Durr al-Mukhtar: "If someone passes away and has missed prayers, and they bequeathed for expiation (kaffarah), then for every prayer, fidyah equal to Sadaqah al-Fitr should be given. The same rule applies to Witr and fasting. Furthermore, this fidyah shall only be paid from one-third of their estate. If someone gave fidyah for their prayer during their terminal illness (marad al-mawt), it is not valid. Contrary to fasting, for which giving fidyah during terminal illness is permissible." It is stated in Radd al-Muhtar: "When someone bequeaths for the fidyah of fasting, a ruling of absolute permissibility shall be given. And if they did not bequeath but the heir voluntarily paid fidyah as a supererogatory act, then Imam Muhammad stated in az-Ziyadat: 'If...'"

---

1 Durr al-Mukhtar, Chapter of Making up Missed Prayers, Mujtabai Press, Delhi, 1/101.

तो समझ लें। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। इसमें शामिल है, अतः समझ लें और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है (त)।

(10) कई अंतर हैं: (1) शेख़ फ़ानी (अत्यधिक वृद्ध) अपने जीवन में रोज़े का फ़िद्या देगा और वह पर्याप्त होगा। बशर्ते कि जीवन में अक्षमता समाप्त न हो जाए और शक्ति वापस न आ जाए। लेकिन वह नमाज़ का फ़िद्या नहीं दे सकता क्योंकि इसके लिए निरंतर अक्षमता मृत्यु तक सिद्ध नहीं होती। यदि खड़ा न हो सके तो बैठकर पढ़े, यदि बैठ न सके तो लेटकर इशारे से पढ़े। (2) शेख़ फ़ानी पर जीवन में रोज़े का फ़िद्या देना वाजिब है यदि वह समर्थ हो; मृत्यु के बाद तब तक वाजिब नहीं जब तक कि वह अपने माल में वसीयत न करे। (3) यदि शेख़ फ़ानी जीवन में रोज़े का फ़िद्या दे दे, तो इसके पर्याप्त होने पर यकीन किया जाएगा क्योंकि इसमें स्पष्ट प्रमाण (नस्स) मौजूद है। इसी प्रकार यदि वह रोज़े के फ़िद्या की वसीयत करे। बिना वसीयत रोज़े के फ़िद्या और वसीयत के साथ नमाज़ के फ़िद्या में संदेह है, और बिना वसीयत नमाज़ के फ़िद्या में संदेह अधिक प्रबल है। और अल्लाह हमारे लिए काफी है और वह बेहतरीन कार्यसाधक है। (4) जीवन में शेख़ फ़ानी पर रोज़े का फ़िद्या उसके पूरे माल में से है और मृत्यु के बाद बिना वसीयत, वारिसों की अनुमति के बिना तिहाई (एक-तिहाई) से अधिक में लागू नहीं होगा।

[बॉक्स सामग्री] तनवीर अल-अब्सार और दुर्र अल-मुख्तार में है: "अगर कोई मर गया और उसकी नमाज़ें रह गई थीं और उसने कफ़्फ़ारे की वसीयत की, तो हर नमाज़ के बदले सदक़ा-ए-फ़ित्र के बराबर फ़िद्या दिया जाए। यही हुक्म वित्र और रोज़े का है। शेष यह फ़िद्या केवल उसके तिहाई माल से अदा किया जाएगा। अगर किसी ने अपनी नमाज़ का फ़िद्या मरज़-उल-मौत (अंतिम बीमारी) में दिया तो वह सही नहीं है। रोज़े के विपरीत, क्योंकि उसका फ़िद्या मरज़-उल-मौत में देना जायज़ है।" रद अल-मुह्तार में है: "जब किसी ने रोज़े के फ़िद्या की वसीयत की तो निश्चित रूप से इसके जायज़ होने का हुक्म दिया जाएगा। और अगर उसने वसीयत नहीं की लेकिन वारिस ने नफ़्ल (ऐच्छिक) के तौर पर फ़िद्या अदा कर दिया, तो इमाम मुहम्मद ने 'ज़ियादात' में फ़रमाया कि अगर..."

---

1 दुर्र अल-मुख्तार, छूटी हुई नमाज़ों को पूरा करने का अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/101।

فتاوی رضویہ - جلد دہم

فافہم۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ کو شامل ہوتا ہے، فافہم واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

(۱۰) متعدد فرق ہیں: (۱) شیخ فانی اپنی حیات میں روزہ کا فدیہ دے گا اور وہ کافی ہوگا۔ اگر زندگی میں عجز زائل ہو کر قوت نہ آجائے مگر نماز کا فدیہ نہیں دے سکتا کہ اس سے عجز مستمر متحقق نہیں ہوتا مگر دم واپسیوں کھڑے ہو کر نہ ہو سکے بیٹھ کر پڑھے، بیٹھ کر نہ ہو سکے لیٹ کر اشارہ سے پڑھے۔ (۲) شیخ فانی پر روزہ کا فدیہ حیات میں دینا واجب ہے اگر قادر ہو، بعد مرگ وجوب نہیں جب تک اپنے مال میں وصیت نہ کرے۔ (۳) شیخ فانی کہ زندگی میں روزہ کا فدیہ دے اس کے کافی ہونے پر یقین کیا جائے گا کہ اس میں صراحۃً نص وارد، یونہی اگر فدیہ روزہ کی وصیت کرے اور فدیہ روزہ بے وصیت اور فدیہ نماز بوسیعت میں شبہ ہے اور فدیہ نماز بے وصیت میں شبہ اقویٰ، وحسبنا اللہ ونعم الوکیل۔ (۴) زندگی میں فدیہ صوم شیخ فانی پر اس کے کل مال میں ہے اور بعد مرگ بے وصیت، بے اجازت ورثہ ثلث سے زائد میں نافذ نہ ہوگی۔

[جدول/باکس کا مواد] عربی: في تنویر الابصار والدرالمختار، لومات و علیه صلوات فائتة واوصی بالکفارة یعطی لکل صلوة کالفطرة وکذا الوترو الصوم وانما یعطی من ثلث ماله ولو فدی عن صلوته في مرضه لا یصح بخلاف الصوم اهـ ملخصا، وفي رد المحتار اذا اوصی بفدیة الصوم یحکم بالجواز قطعا، واذا لم یوص فتطوع بها الوارث فقال محمد في الزیادات یجزیه اردو: تنویرالابصار اور درمختار میں ہے اگر کوئی فوت ہوا اور اس کی نمازیں رہ گئی تھیں اور اس نے کفارہ کی وصیت کی تو ہر نماز کے عوض صدقہ فطر کے برابر فدیہ دیا جائے، اسی طرح وتر اور روزے کا حکم ہے، باقی یہ فدیہ صرف اس کے تہائی مال سے ادا کیا جائیگا، اگر کسی نے اپنی نماز کا فدیہ مرض موت میں دیا تو صحیح نہیں۔ بخلاف روزہ کے کہ اس کا فدیہ مرض موت میں دینا جائز ہے۔

ردالمحتار میں ہے جب کسی نے فدیہ صوم کی وصیت کی تو قطعاً جواز کا حکم دیا جائے، اور اگر اس نے وصیت نہ کی مگر وارث نے بطور نفل فدیہ ادا کر دیا تو امام محمد نے زیادات میں فرمایا اگر

---

1 درمختار باب قضاء الفوائت مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۰۱

Fatawa Razviya - Volume 10 Page 553

[Table Header: Left side Arabic text, Right side Urdu translation]

Arabic side: God willing, this ransom (fidya) will suffice. Likewise, he linked it to the Divine Will when someone bequeaths a ransom for prayers. So, when he has not made a testament, the doubt is stronger. And in 'Al-Tanwir' and 'Al-Durr', it is mandatory for the heir to give ransom on behalf of the deceased based on the testament. If the heir gives it as an act of kindness, then God willing, it is permissible. And the 'Shaikh Fani' (an old person unable to fast) must give ransom if wealthy. If he becomes capable of fasting later, he must make up for it (qada), because the permanence of inability is a condition for the substitute—that is, to be a substitute for the fasts with ransom, permanent inability is required. These excerpts are mentioned in brief. In 'Al-Bahr al-Ra'iq', in the chapter on fasting, it is restricted to the testament because if the deceased does not make a testament, nothing will be mandatory for the heirs, just like the matter of Zakat.

Urdu side: God willing, this ransom will suffice. Likewise, they have linked it to the will of Allah Almighty. When someone has willed for the ransom of prayers, if he has not willed, the doubt will be very strong. Also, in 'Tanwir' and 'Durr', it is mandatory for the heir to give ransom on behalf of the deceased based on the testament. And if the heir has given the ransom as a favor, then God willing, this giving of ransom is permissible. And if the 'Sheikh Fani' is wealthy, then it is mandatory for him to give ransom. And if he becomes capable of fasting, he should perform qada (compensatory fast) because permanent inability is a condition; that is, for the ransom to be a substitute for the fast, permanent inability is a condition. All these statements are mentioned briefly. In the chapter on fasting in 'Al-Bahr al-Ra'iq', it is restricted with a testament because if the deceased does not make a testament, nothing will be mandatory for the heirs, as is the case with Zakat. (T)

[Main Text below table] There are other differences besides these which are apparent from studying 'Al-Bahr al-Ra'iq' etc., but as far as the amount of ransom etc. are concerned, the rules mentioned in the previous nine issues are the same for life and death. And Allah Almighty knows best.

(11) It is not in 'Kanz' for the 'Shaikh Fani' that he pays ransom. (Let the 'Shaikh Fani' pay the ransom. T). Qada (making up the missed fast) is obligatory only on the non-failing. If death occurs before qada, then the testament for ransom is obligatory, as in 'Radd al-Muhtar' and other travel books. (T) And Allah Almighty knows best.

(12) In 'Al-Bahr al-Ra'iq', it is stated that the guardian (wali) should neither fast nor pray on behalf of the deceased because in the Hadith of Nasa'i, it says: no one [should fast or pray for another].

Note: i.e., in his 'Sunan al-Kubra' from Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both). (M)

[Footnotes] 1. Radd al-Muhtar, Chapter on Making up Missed Prayers, Mustafa al-Babi Egypt, 1/541 2. Durr Mukhtar, Chapter on What Nullifies Fasting, Mujtabai Delhi, 1/153 3. Al-Bahr al-Ra'iq, Section on Impediments, H.M. Saeed Company Karachi, 2/284 4. Kanz al-Daqaiq, Section on Impediments, H.M. Saeed Company Karachi, p. 70

फ़तावा रज़विया - जिल्द 10 पृष्ठ 553

[तालिका शीर्षक: बायीं ओर अरबी पाठ, दायीं ओर उर्दू अनुवाद]

अरबी पक्ष: ईश्वर ने चाहा तो यह फ़िदिया (प्रायश्चित) पर्याप्त होगा। इसी तरह उन्होंने इसे ईश्वर की इच्छा से जोड़ा जब किसी ने नमाज़ के फ़िदिया की वसीयत की हो। अतः जब उसने वसीयत न की हो, तो संदेह और भी गहरा होगा। और 'तन्वीर' एवं 'दुर' में है कि वसीयत के आधार पर वारिस के लिए मृतक की ओर से फ़िदिया देना अनिवार्य है। और यदि वारिस परोपकार के रूप में फ़िदिया दे दे, तब भी ईश्वर ने चाहा तो यह फ़िदिया देना वैध है। और 'शेख फ़ानी' (अत्यधिक वृद्ध व्यक्ति) यदि धनी हो तो उस पर फ़िदिया देना अनिवार्य है। और यदि वह रोज़ा रखने में सक्षम हो जाए, तो वह कज़ा (क्षतिपूर्ति) करे, क्योंकि असमर्थता का बने रहना प्रतिनिधि होने की शर्त है—अर्थात फ़िदिया के ज़रिए रोज़ों का विकल्प बनने के लिए स्थायी असमर्थता शर्त है। ये सभी उद्धरण संक्षेप में दिए गए हैं। 'बहर अल-राइक़' के रोज़े के अध्याय में इसे वसीयत के साथ प्रतिबंधित किया गया है क्योंकि यदि मृतक वसीयत न करे, तो वारिसों पर कुछ भी अनिवार्य नहीं होगा, जैसा कि ज़कात का मामला है।

उर्दू पक्ष: अल्लाह ने चाहा तो यह फ़िदिया पर्याप्त होगा। इसी तरह उन्होंने इसे सर्वशक्तिमान अल्लाह की इच्छा से जोड़ा है। जब किसी ने नमाज़ के फ़िदिया के लिए वसीयत की हो, यदि उसने वसीयत नहीं की है, तो संदेह बहुत प्रबल होगा। इसके अलावा, 'तन्वीर' और 'दुर्र' में, वसीयत के आधार पर वारिस के लिए मृतक की ओर से फ़िदिया देना अनिवार्य है। और यदि वारिस ने एहसान के रूप में फ़िदिया दिया है, तो इन्शाअल्लाह, फ़िदिया का यह देना जायज़ है। और यदि 'शेख फ़ानी' अमीर है, तो उसके लिए फ़िदिया देना अनिवार्य है। और यदि वह रोज़ा रखने में सक्षम हो जाता है, तो उसे कज़ा करनी चाहिए क्योंकि स्थायी अक्षमता एक शर्त है; अर्थात्, फ़िदिया रोज़े का विकल्प होने के लिए, स्थायी अक्षमता एक शर्त है। ये सभी कथन संक्षेप में उल्लिखित हैं। 'अल-बहر अल-राइक़' में रोज़े के अध्याय में, इसे वसीयत के साथ सीमित किया गया है क्योंकि यदि मृतक वसीयत नहीं करता है, तो वारिसों पर कुछ भी अनिवार्य नहीं होगा, जैसा कि ज़कात का मामला है। (त)

[तालिका के नीचे मुख्य पाठ] इनके अलावा और भी अंतर हैं जो 'अल-बहर अल-राइक़' आदि के अध्ययन से स्पष्ट हैं, लेकिन जहाँ तक फ़िदिया की मात्रा आदि का प्रश्न है, पिछले नौ मसलों में वर्णित नियम जीवन और मृत्यु के लिए समान हैं। और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

(11) 'कन्ज़' में 'शेख फ़ानी' के लिए यह नहीं है कि वह फ़िदिया अदा करे। (शेख फ़ानी फ़िदिया अदा करे। त)। कज़ा (छूटे हुए रोज़े को पूरा करना) केवल गैर-फ़ानी (जो स्थायी रूप से अक्षम न हो) पर अनिवार्य है। यदि कज़ा से पहले मृत्यु हो जाती है, तो फ़िदिया की वसीयत अनिवार्य है, जैसा कि 'रद्द अल-मुह्तार' और अन्य यात्रा पुस्तकों में है। (त) और अल्लाह सर्वशक्तिमान बेहतर जानता है।

(12) 'अल-बहर अल-राइक़' में कहा गया है कि वली (अभिभावक) को मृतक की ओर से न तो रोज़ा रखना चाहिए और न ही नमाज़ पढ़नी चाहिए क्योंकि नसाई की हदीस में है: कोई भी [दूसरे के लिए रोज़ा या नमाज़ न पढ़े]।

नोट: अर्थात्, इब्न अब्बास (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हों) से उनकी 'सुनन अल-कुबरा' में। (म)

[पादलेख] 1. रद्द अल-मुह्तार, छूटी हुई नमाज़ों की कज़ा का अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 1/541 2. दुर्रे मुख़्तार, रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों का अध्याय, मुजतबाई दिल्ली, 1/153 3. अल-बहर अल-राइक़, बाधाओं पर अनुभाग, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 2/284 4. कन्ज़ अद-दक़ाइक़, बाधाओं पर अनुभाग, एच.एम. सईद कंपनी कराची, पृ. 70

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

ان شاء اللہ تعالی وکذا علقه بالمشیئة فیما اذا اوصی بفدیة الصلوة فاذا لم یوص فالشبهة اقوی وفي التنویر والدر فدی لزوما عن المیت ولیه بوصیة وان تبرع ولیه جاز ان شاء اللہ تعالی والشیخ الفانی یفدی وجوبا لو موسرا ومتی قدر قضی لان استمرار العجز شرط الخلیفه اھ 2 (الکل بالا لتقاط) وفي صوم البحر الرائق وقید بالوصیة لانه لولم یأمر لا یلزم الورثة شئ کازکوة 3

اللہ تعالیٰ نے چاہا تو یہ فدیہ کفایت کر جائے گا، اسی طرح انہوں نے اسے مشیت باری تعالیٰ سے معلق فرمایا، جب کسی نے نماز کے فدیہ کی وصیت کی تو جب اس نے وصیت نہ کی ہو تو شبہ بہت قوی ہوگا۔ نیز تنویر اور در میں ہے وصیت کی بنا پر وارث کو میت کی طرف سے فدیہ دینا لازم ہے اور اگر وارث نے بطور احسان فدیہ دے دیا تب بھی ان شاء اللہ یہ فدیہ دینا جائز ہے، اور شیخ فانی اگر امیر ہو تو اس پر فدیہ دینا لازم ہے اور اگر روزہ رکھنے پر قادر ہو گیا تو قضا کرے کیونکہ دوام عجز کا شرط ہے یعنی فدیہ کے روزے کا خلیفہ ہونے کے لیے دوام عجز شرط ہے، یہ تمام عبارتیں اختصاراً ذکر کی گئی ہیں۔ بحر الرائق کے باب الصوم میں ہے وصیت کے ساتھ مقید اس لئے کیا کہ اگر میت وصیت نہ کرے تو ورثاء پر کوئی شئے لازم نہ ہوگی، جیسا کہ زکوۃ کا معاملہ ہے۔ (ت)

ان کے سوا اور فرق ہیں کہ مطالعہ بحر الرائق وغیرہ سے ظاہر مگر مقدار فدیہ وغیرہ جس قدر احکام نو مسائل سابقہ میں مذکور ہوئے ان میں فدیہ حیات و ممات یکساں ہے، واللہ تعالیٰ اعلم۔ (۱۱) نہ کنز میں ہے للشیخ الفانی و ھو یفدی 4 (شیخ فانی فدیہ ادا کرے۔ ت) فقط غیر فانی پر قضا فرض ہے پیش از قضا قضا آ جائے تو فدیہ کی وصیت واجب، کما فی ردالمحتار وغیرہ من الاسفار (جیسا کہ رد المحتار اور دیگر کتب میں ہے۔ ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔ (۱۲) انه فی البحر الرائق، الولی لا یصوم

عنه و لا یصلی لحدیث النسائی عه لا یصوم بحر الرائق میں ہے ولی میت کی طرف سے نہ روزہ رکھے نہ نماز پڑھے کیونکہ حدیث نسائی میں ہے کوئی

عه : ای فی سننه الکبری عن ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنهما (م)

1 رد المحتار باب قضاء الفوائت مصطفی البابی مصر ۱/۵۴۱ 2 در مختار باب ما یفسد الصوم مجتبائی دہلی ۱/۱۵۳ 3 البحر الرائق فصل فی العوارض ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/۲۸۴ 4 کنز الدقائق فصل فی العوارض ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۷۰

Fatawa Razawiyya, Volume 10

No one can fast for another, nor can anyone pray for another. And Allah knows best.

Problem 248: From the old city of Bareilly, submitted by Muhammad Shafi' Ali Khan (deceased), 24 Sha'ban 1330 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: a person is 75 years old and, due to weakness, does not have the endurance or strength to fast. In such a case, what should he do? How should the expiation (kaffara) for the fasts be handled, and should it be given daily? Please explain and be rewarded.

The Answer: Lack of strength can be either real or due to a lack of resolve. Lack of resolve is not considered; often, the devil puts in the heart that 'we will never be able to do this work and if we do, we will die or fall ill.' Then, when it is done with trust in God, Allah enables it to be completed and no harm comes. It then becomes clear that it was a deception from the devil. Many people at the age of 75 observe fasts. Yes, there may be some so weak that they cannot fast at 75, so one must judge properly after avoiding the whispers of the devil. This is one point. Secondly, some truly do not have the strength to fast in the summer but can do so in the winter; they also cannot give expiation (kaffara). Instead, it is obligatory for them to make up for the missed summer fasts by fasting in the winter. The third point is that some cannot fast continuously for a month but can fast with gaps of one or two days; in that case, it is obligatory to fast as many as possible, and those missed should be made up in the winter. The fourth point is that any young or old person who is so weak due to some illness that they cannot fast is also not permitted to give expiation. Instead, they should wait for the illness to pass. If death occurs before recovery, then at that time they should make a will for the expiation. In short, expiation is only when one cannot fast in summer or winter, neither continuously nor sporadically, and there is no hope of the excuse (reason for inability) going away. For example, an elderly person whom old age has made so weak that he cannot even observe sporadic fasts in the winter. Since old age is not something that goes away, such a person is commanded to give expiation. For each fast, the expiation is one and three-quarter seers of wheat plus an 'athni' (eight-anna coin) by Bareilly weight, or three and a half seers of barley plus one rupee. Allah Almighty knows best. He has the choice to give the expiation daily, pay for the whole month in advance, or give it to several poor people or all to one poor person after the month ends; all are permissible.

1. Al-Bahr al-Ra'iq, chapter on impediments, H.M. Saeed Company Karachi, 2/285

फ़तावा रज़विया, जिल्द दस (10)

कोई किसी की ओर से न रोज़ा रखे और न नमाज़ पढ़े। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 248: पुराने शहर बरेली से, प्रेषित मोहम्मद शफ़ी अली ख़ान (स्वर्गीय), 24 शाबान 1330 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि एक व्यक्ति की उम्र 75 साल है और कमज़ोरी के कारण रोज़ा रखने की बर्दाश्त और ताक़त नहीं है। ऐसी स्थिति में उसे क्या करना चाहिए और रोज़ों का कफ़्फ़ारा किस प्रकार होगा और क्या कफ़्फ़ारा हर रोज़ दिया जाए? बयान फ़रमाएं, पुण्य प्राप्त करें।

अल-जवाब: ताक़त न होना एक तो हक़ीक़त में होता है और एक कम हिम्मत के कारण होता है। कम हिम्मत का कोई ऐतबार नहीं है; अक्सर शैतान दिल में डालता है कि 'हमसे यह काम हरगिज़ नहीं हो सकेगा और करेंगे तो मर जाएंगे या बीमार पड़ जाएंगे।' फिर जब ख़ुदा पर भरोसा करके किया जाता है, तो अल्लाह तआला उसे पूरा करा देता है और कोई नुक़सान नहीं पहुँचता। तब पता चलता है कि वह शैतान का धोखा था। 75 साल की उम्र में बहुत से लोग रोज़े रखते हैं। हाँ, ऐसे कमज़ोर भी हो सकते हैं जो 75 साल की उम्र में न रख सकें, तो शैतान के वसवसों (भ्रमों) से बचकर बहुत सही तरीक़े से जांच करनी चाहिए। यह तो एक बात हुई। दूसरी यह कि उनमें से कुछ को गर्मियों में रोज़ा रखने की ताक़त हक़ीक़त में नहीं होती, लेकिन वे सर्दियों में रख सकते हैं; वे भी कफ़्फ़ारा नहीं दे सकते। बल्कि उन पर फ़र्ज़ है कि गर्मियों के छूटे हुए रोज़ों की क़ज़ा सर्दियों में करें। तीसरी बात यह है कि उनमें से कुछ लगातार महीने भर के रोज़े नहीं रख सकते लेकिन एक-दो दिन छोड़कर रख सकते हैं, तो जितने रख सकें उतने रखना फ़र्ज़ है और जो रह जाएं वे सर्दियों में रख लें। चौथी बात यह है कि जिस जवान या बूढ़े को किसी बीमारी के कारण ऐसी कमज़ोरी हो कि रोज़ा न रख सकें, उन्हें भी कफ़्फ़ारा देने की अनुमति नहीं है, बल्कि बीमारी के जाने का इंतज़ार करें। अगर स्वास्थ्य लाभ से पहले मृत्यु आ जाए, तो उस समय कफ़्फ़ारे की वसीयत कर दें। संक्षेप में, कफ़्फ़ारा तब है जब रोज़ा न गर्मी में रखा जा सके न सर्दी में, न लगातार न अलग-अलग, और जिस कारण से ताक़त न हो, उस कारण के दूर होने की उम्मीद न हो। जैसे वह बूढ़ा जिसे बुढ़ापे ने इतना कमज़ोर कर दिया हो कि वह सर्दियों में भी अलग-अलग अंतराल पर रोज़े नहीं रख सकता। चूँकि बुढ़ापा जाने वाली चीज़ नहीं है, ऐसे व्यक्ति के लिए कफ़्फ़ारे का हुक्म है। हर रोज़े के बदले पौने दो सेर गेहूं और ऊपर आठ आना (अठन्नी) बरेली के वज़न से, या साढ़े तीन सेर जौ और ऊपर एक रुपया। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। उसे इख़्तियार (विकल्प) है कि रोज़ का रोज़ा कफ़्फ़ारा दे या महीने भर का पहले

ही अदा कर दे या महीना ख़त्म होने के बाद कई फ़क़ीरों को दे या सब एक ही फ़क़ीर को दे, सब जायज़ है।

1. अल-बहरुर रैक़, फ़स्ल फ़िल अवारिज़, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 2/285

पृष्ठ 554/836

فتاوی رضویہ جلد دہم

احد عن احد ولا یصلی احد عن احد اھ واللہ تعالٰی اعلم۔ شخص کسی کی طرف سے نہ روزہ رکھے اور نہ نماز پڑھے۔ اھ، واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۲۴۸: از شہر کہنہ بریلی مسئولہ محمد شفیع علی خاں مرحوم ۲۴ شعبان ۱۳۳۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص کی عمر ۷۵ سال کی ہے اور بوجہ کمزوری کے برداشت اور طاقت روزہ رکھنے کی نہ ہوا ایسی صورت میں اس کو کیا کرنا چاہئے اور کفارہ روزوں کا کس طرح ہوا اور کفارہ ہر روز دیا جائے۔ بینوا توجروا

الجواب: طاقت نہ ہونا ایک تو واقعی ہوتا ہے اور ایک کم ہمتی سے ہوتا ہے کم ہمتی کا کچھ اعتبار نہیں، اکثر اوقات شیطان دل میں ڈالتا ہے کہ ہم سے یہ کام ہرگز نہ ہو سکے اور کریں گے تو مر جائیں گے، بیمار پڑ جائیں گے، پھر جب خدا پر بھروسہ کر کے کیا جاتا ہے تو اللہ تعالٰی ادا کرا دیتا ہے کچھ بھی نقصان نہیں پہنچتا، معلوم ہوتا ہے کہ وہ شیطان کا دھوکا تھا ۷۵ برس عمر میں بہت لوگ روزے رکھتے ہیں، ہاں ایسے کمزور بھی ہو سکتے ہیں کہ ۷۵ برس کی عمر میں نہ رکھ سکیں تو شیطان کے وسوسوں سے بچ کر خوب صحیح طور پر جانچ چاہئے، ایک بات تو یہ ہوئی، دوسری یہ کہ ان میں بعض کو گرمیوں میں روزہ کی طاقت واقعی نہیں ہوتی مگر جاڑوں میں رکھ سکتے ہیں یہ بھی کفارہ نہیں دے سکتے بلکہ گرمیوں میں قضا کر کے جاڑوں میں روزے رکھنا ان پر فرض ہے، تیسری بات یہ ہے کہ ان میں بعض لگاتار مہینہ بھر کے روزے نہیں رکھ سکتے مگر ایک دو دن بیچ کر کے رکھ سکتے ہیں تو جتنے رکھ سکیں اتنے رکھنا فرض ہے جتنے قضا ہو جائیں جاڑوں میں رکھ لیں، چوتھی بات یہ ہے کہ جس جوان یا بوڑھے کو

کسی بیماری کے سبب ایسا ضعف ہو کہ روزہ نہیں رکھ سکتے انہیں بھی کفارہ دینے کی اجازت نہیں بلکہ بیماری جانے کا انتظار کریں، اگر قبل شفا موت آجائے تو اس وقت کفارہ کی وصیت کر دیں، غرض یہ ہے کہ کفارہ اس وقت ہے کہ روزہ نہ گرمی میں رکھ سکیں نہ جاڑے میں، نہ لگاتار نہ متفرق، اور جس عذر کے سبب طاقت نہ ہو اس عذر کے جانے کی امید نہ ہو، جیسے وہ بوڑھا کہ بڑھاپے نے اسے ایسا ضعیف کر دیا کہ گنڈے دار روزے متفرق کر کے جاڑے میں بھی نہیں رکھ سکتا، تو بڑھاپا تو جانے کی چیز نہیں ایسے شخص کو کفارہ کا حکم ہے، ہر روزے کے بدلے پونے دوسیر گیہوں اتھنی اوپر بریلی کی تول سے، یا ساڑھے تین سیر جو ایک روپیہ بھر اوپر۔ واللہ تعالیٰ اعلم، اسے کفارہ کا اختیار ہے کہ روز کا روزہ دے یا مہینہ بھر کا پہلے ہی ادا کر دے یا ختم ماہ کے بعد کئی فقیروں کو دے یا سب ایک ہی فقیر کو دے سب جائز ہے۔

1 البحر الرائق، فصل فی العوارض، ایچ ایم سعید کمپنی کراچی، ۲/۲۸۵

Fatawa Rizwia Volume 10

Problem 249: From Madrasa Ahle Sunnat-o-Jamaat Bareilly, questioned by Maulvi Ashraf Ali Sahib, student, 29 Dhu al-Qi'dah 1332 AH. A person passed away and had some obligatory fasts and prayers remaining. Now, it is desired to pay fidyah (expiation) for his prayers and fasts. Who is eligible for this fidyah? To what kind of people should it be given? Explain and be rewarded. Answer: Those who are eligible for Zakat are also eligible for this: poor, needy Muslims who are not Hashimis, nor their descendants, nor is the deceased their descendant. Allah the Almighty knows best.

Problem 250: From Marehra Sharif, District Etah, Sarkar Kalan, sent by Hazrat Syed Muhammad Miyan Sahib (may his blessings last), 7 Shaban 1331 AH. Please inform me about the amount of fidyah for fasting intended for a 'Sheikh-e-Fani' (a terminally ill or very old person unable to fast), calculated in terms of an English seer of 80 tolas. In the fatwa within 'Bariq al-Nur' in Fatawa Rizwia, the amount for one 'Sa' (a measure) is stated as eight 'Ratl', and each 'Ratl' is 36 rupees weight. By this calculation, one Sa' equals 288 rupees weight, but it is written as 188 there; perhaps it was written in error. I recall that in last year's 'Iftar-o-Sahar' advertisement, the amount for Sadaqah al-Fitr was written as two and a quarter seers plus one English eight-anna coin weight. This remains different from the Sa' amount in that fatwa, whether it be 288 or 188. In any case, I only wish to find out the amount of Sadaqah al-Fitr and fidyah based on an 80-tola seer. That is all. Answer: The Sa' is indeed 270 tolas, which in current Indian coinage weighs 288 rupees, as each rupee is 11.25 mashas. However, it is better and more cautious that the Sadaqah of wheat be paid using the measure of barley's Sa'. That is, in the measure where 144 rupees weight of barley fits, give that much weight in wheat. It is obvious that wheat will be more in weight as it is heavier than barley. This humble servant obtained a Sa' of barley and filled it with wheat without pressing or changing it, and upon weighing, it was exactly 351 rupees. Therefore, for Sadaqah al-Fitr, fidyah for fasting, etc., giving half a Sa' of wheat, which is a little over 175.5 rupees weight, is more cautious. In terms of the Bareilly seer, this is a little over one and three-quarter seers, and in terms of an 80-rupee weight seer, it is two seers plus three 'Chhatanks' and the weight of an eight-anna coin. Allah the Almighty knows best.

Problem 251: From Gonda, Mohalla Nabi Ganj, house of Maulvi Nawazish Ahmad, questioned by Hafiz Muhammad Ishaq, 23 Dhu al-Qi'dah 1331 AH. What is the definition of 'Sheikh-e-Fani'? Is there a specific age fixed for it or not? What are the

Sharia rulings for such a person regarding prayer, fasting, wudu (ablution), and ghusl (ritual bath)? Explain and be rewarded.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (दसवीं)

मसला २४९: मदरसा अहले सुन्नत व जमाअत बरेली से, मुस्तौ़ला (पूछने वाले) मौलवी अशरफ़ अली साहब तालिब-ए-इल्म, २९ ज़ीक़ादा १३३२ हिजरी। एक व्यक्ति का निधन हो गया और उस पर कुछ अनिवार्य रोज़े और कुछ समय की नमाज़ें बाकी रह गईं। अब उनकी नमाज़ और रोज़े का फ़िद्या (प्रायश्चित) अदा करना चाहते हैं, तो इस फ़िद्ये का हक़दार कौन है, किस प्रकार के लोगों को दिया जाए? बयान फ़रमाएं पुण्य प्राप्त होगा। जवाब: इसके वही हक़दार हैं जो ज़कात के हक़दार हैं: ग़रीब, मोहताज मुसलमान जो न हाशमी हों, न उनकी औलाद, और न ही मरने वाला उनकी औलाद हो। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला २५०: मारहरा शरीफ़, ज़िला एटा, सरकार-ए-कलां से, प्रेषक हज़रत सैयद मुहम्मद मियां साहब (दामत बरकातुहुम), ७ शाबान १३३१ हिजरी। 'शेख-ए-फ़ानी' (अत्यधिक वृद्ध व्यक्ति जो रोज़ा न रख सके) के रोज़े के फ़िद्ये की मात्रा, जो ८० तोले के अंग्रेजी सेर के हिसाब से कितनी होगी, इस बारे में सूचित फ़रमाएं। फ़तावा रज़विया में 'बारिक़ अल-नूर' के फ़तवे में एक 'साअ' की मात्रा आठ 'रत्ल' और हर 'रत्ल' की मात्रा ३६ रुपये बताई गई है। इस हिसाब से एक साअ २८८ रुपये के वजन के बराबर हुआ, लेकिन वहां १८८ लिखा है; शायद गलती से लिखा गया हो। मुझे याद है कि पिछले साल के'इफ़्तार-ओ-सहर' विज्ञापन में सदक़ा-ए-फ़ित्र की मात्रा सवा दो सेर और एक अंग्रेज़ी अठन्नी के बराबर लिखी थी। यह उस फ़तवे की साअ की मात्रा से, चाहे वह २८८ हो या १८८, बहरहाल अलग रहती है। मैं केवल ८० तोले के सेर के हिसाब से सदक़ा-ए-फ़ित्र और फ़िद्ये की मात्रा जानना चाहता हूँ। बस। जवाब: साअ वही २७० तोले है, जिसका वज़न चालू भारतीय सिक्के के हिसाब से २८८ रुपये के बराबर होता है, क्योंकि यह रुपया सवा ग्यारह माशे का है। लेकिन बेहतर और एहतियात (सावधानी) इसी में है कि गेहूं का सदक़ा जौ के साअ के हिसाब से अदा किया जाए। यानी जिस बर्तन में १४४ रुपये वज़न के बराबर जौ आ जाए, उतना ही वज़न गेहूं का दिया जाए। ज़ाहिर है कि गेहूं वज़न में ज़्यादा आएगा क्योंकि वह जौ से भारी होता है। मुझ फ़क़ीर ने जौ का एक साअ लिया और उसमें बिना दबाए या बदलाव किए गेहूं भर कर तोला, तो पूरे ३५१ रुपये वज़न हुआ। तो सदक़ा-ए-फ़ित्र, रोज़े का फ़िद्या आदि के लिए आधा साअ गेहूं देना, जो १७५.५ रुपये (पौन दो सौ रुपये और अठन्नी) के वज़न के बराबर है, ज़्यादा एहतियात वाला है। बरेली के सेर के हिसाब से यह पौने दो सेर से थोड़ा ऊपर है, और ८० रुपये के सेर के हिसाब से दो सेर, तीन छटांक और एक अठन्नी वज़न हुआ। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला २५१: गोंडा, मोहल्ला नबी गंज, मौलवी नवाज़िश अहमद के घर से, मुस्तौ़ला हाफ़िज़ मुहम्मद इसहाक, २३ ज़ीक़ादा १३३१ हिजरी। 'शेख-ए-फ़ानी' की परिभाषा क्या है और क्या इसकी उम्र की कोई संख्या निश्चित है या नहीं? ऐसे व्यक्ति के लिए नमाज़, रोज़ा, वज़ू और ग़ुस्ल जैसे शरीअत के अहकाम (नियम) क्या हैं? बयान फ़रमाएं, पुण्य प्राप्त होगा।

पृष्ठ ५५५ (कुल ८३६ में से)

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

مسئلہ ۲۴۹: از مدرسہ اہلسنت وجماعت بریلی، مسئولہ مولوی اشرف علی صاحب طالبعلم ۲۹ ذیقعدہ ۱۳۳۲ھ ایک شخص نے انتقال کیا اور اس کے ذمہ کچھ روزہ فرض اور کچھ وقتوں کی نماز رہ گئی اب اس کی نماز روزہ کا فدیہ ادا کرنا چاہتے ہیں تو اس فدیہ کا کون مستحق ہے، کس قسم کے لوگوں کو دیا جائے؟ بینوا توجروا الجواب: اس کے وہی مستحق ہیں جو زکوۃ کے مستحق ہیں، فقیر محتاج مسلمان کہ نہ ہاشمی ہوں، نہ اس کی اولاد، نہ یہ اُن کی اولاد۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۵۰: از مارہرہ شریف ضلع ایٹہ سرکار کلاں، مرسلہ حضرت سید محمد میاں صاحب دامت برکاتہم ۷ شعبان ۱۳۳۱ھ فدیہ صوم جو شخص فانی کے لیے ہو اس کی مقدار بحساب انگریزی اسی تولہ کے سیر سے کیا ہے اس سے مطلع فرمایا جاؤں فتویٰ رضویہ میں فتویٰ بارق النور میں ایک صاع کی مقدار آٹھ رطل اور ہر رطل کی مقدار ۳۶ روپے بھر ہے اس حساب سے ایک صاع دو سو اٹھاسی روپیہ بھر ہوا مگر اس میں ایک سو اٹھاسی بھر لکھا ہے شاید غلطی سے لکھا گیا ہو مجھے خیال پڑتا ہے کہ سال گزشتہ کے اشتہار افطار و سحر میں صدقہ فطر کی مقدار سوا دو سیر اور ایک اٹھنی انگریزی بھر لکھی ہوئی تھی یہ اس فتاویٰ کے مقدار صاع سے جو دو سو اٹھاسی ہو یا ایک سو اٹھاسی ہو بہر حال مختلف رہتی ہے میں صرف بحساب اسی تولہ سیر کے مقدار صدقہ فطر وفدیہ دریافت کرنا چاہتا ہوں فقط الجواب: صاع وہی دوسوستر تولے ہے جس کا سکہ رائج ہند سے دوسواٹھاسی روپے بھر وزن ہوا کہ یہ روپیہ سواگیارہ ماشے ہے مگر احسن وا حوط یہ ہے کہ گیہوں کا صدقہ جو کی صاع سے ادا کیا جائے یعنی جس پیمانہ میں ایک سوچوالیس ۱۳۴ روپے بھر جو آئیں اُس بھر گیہوں دئے جائیں ظاہر ہے کہ گیہوں وزن میں زیادہ آئیں گے جو سے بھاری ہیں فقیر نے صاع شعیری حاصل کیا اور اس میں گیہوں بلا تکویم و تغییر بھر کر تولے تو

پورے تین سواکاون ۳۵۱ روپے بھر ہوئے تو صدقہ فطر فدیہ صوم وغیرہ میں نیم صاع گندم کے اٹھنی اوپر پونے دو سو روپے بھر گیہوں دینا احوط ہے جس کے بریلی کے سیر سے اٹھنی بھر اوپر پونے دوسیر ہوئے اور اسی روپے بھر کے سیر سے اٹھنی بھر اور تین چھٹانک دوسیر ہوئے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۵۱: از گونڈہ محلہ نبی گنج مکان مولوی نوازش احمد مسئولہ حافظ محمد اسحق ۲۳ ذیقعدہ ۱۳۳۱ھ شیخ فانی کی تعریف کیا ہے اور اس کی عمر کی کچھ تعداد بھی معین ہے یا نہیں، احکام شرعیہ مثل نماز، روزہ، وضو و غسل کے کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا

Fatawa Razawiya Volume 10

The Answer: The age of Sheikh-e-Fani (an elderly person who cannot fast) is written as eighty or ninety years, but in reality, the basis of the ruling depends on their condition. If a hundred-year-old man is capable of fasting, he is not considered a Sheikh-e-Fani. Conversely, if a seventy-year-old becomes so weak and frail due to old age that they no longer have the strength to fast, then they are a Sheikh-e-Fani. In essence, a Sheikh-e-Fani is one whom old age has made so weak, and since the cause of this weakness is old age, there is no hope of it diminishing. For such a person, the ruling is to pay Fidya (compensation) instead of fasting. Regarding prayer and purification, the ruling is the same for both the elderly and the young; to whatever extent a person is excused at any given time and in any condition, they will be granted relief according to the necessity. Allah Almighty says: "Allah does not burden a soul beyond its capacity." [1] (This is the blessed command of Allah Almighty: He only commands everyone according to their strength.) And Allah Almighty knows best.

1 Al-Quran 2/286 Page 556 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (दसवीं)

अल-जवाब (उत्तर): शेख-ए-फ़ानी (अत्यधिक वृद्ध व्यक्ति जो रोज़ा रखने में असमर्थ हो) की उम्र अस्सी या नब्बे साल लिखी गई है, लेकिन हकीकत में हुक्म की बुनियाद उसकी हालत पर है। अगर सौ साल का बूढ़ा रोज़ा रखने में सक्षम है, तो वह शेख-ए-फ़ानी नहीं है। और अगर कोई सत्तर साल की उम्र में बुढ़ापे और कमज़ोरी के कारण इतना कमज़ोर हो जाए कि उसमें रोज़ा रखने की ताक़त न रहे, तो वह शेख-ए-फ़ानी है। कुल मिलाकर, शेख-ए-फ़ानी वह है जिसे बुढ़ापे ने इतना कमज़ोर कर दिया हो, और चूंकि इस कमज़ोरी का कारण बुढ़ापा है, इसलिए इसके दूर होने की कोई उम्मीद नहीं है। ऐसे व्यक्ति के लिए रोज़े के बदले फ़िदया (मुआवज़ा) देने का हुक्म है। बाकी नमाज़ और पाकी (तहारत) के बारे में बूढ़े और जवान सभी के लिए एक ही हुक्म है; जो व्यक्ति जिस समय, जिस स्थिति में जितनी बात से मजबूर होगा, उसे ज़रूरत के मुताबिक छूट दी जाएगी। अल्लाह तआला फ़रमाता है: "अल्लाह किसी जान पर उसकी ताक़त से ज़्यादा बोझ नहीं डालता।" [1] (अल्लाह तआला का मुबारक फ़रमान है: अल्लाह हर किसी को उसकी ताक़त के मुताबिक ही हुक्म देता है।) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

1 अल-क़ुरआन 2/286 पेज 556/836

الجواب: شیخ فانی کی عمر اسی یا نوے سال لکھی ہے اور حقیقتًا بنائے حکم اس کی حالت پر ہے اگر سو برس کا بوڑھا روزہ پر قادر ہے شیخ فانی نہیں اور اگر وہ ستر برس میں بوجہ ضعف بینہ بڑھاپے سے ایسا زار و نزار ہو جائے کہ روزہ کی طاقت نہ رہے تو شیخ فانی ہے۔ غرض شیخ فانی وہ ہے جسے بڑھاپے نے ایسا ضعیف کردیا ہو، اور جب اس ضعف کی علت بڑھاپا ہوگا تو اس کے زوال کی اُمید نہیں اُسے روزے کے عوض فدیہ کا حکم ہے باقی نماز و طہارت کے بارہ میں پیر جوان سب کا ایک حکم ہے، جو جس وقت جس حالت میں جتنی بات سے معذور ہوگا بقدر ضرورت تا وقت اسے تخفیف دی جائے گی قال تعالیٰ لَا یُکَلِّفُ اللّٰہُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَہَا ط 1 (اللہ تعالیٰ کا مبارک فرمان ہے اللہ ہر کسی کو اس کی طاقت کے مطابق ہی حکم دیتا ہے۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم

1 القرآن ۲/۲۸۶ Page 556 of 836

Fatawa Razawiyya Volume Ten

Disliked Actions (Makruhat) of Fasting

Problem 252: From Bilgram Sharif, Mohalla Maidan Pura, sent by Hazrat Syed Ibrahim Sahib, 18 Dhul-Qi'dah 1311 AH. What do the scholars of the religion say about this matter: how is it to use tooth powder (manjan) made of almond, charcoal, betel nut, flowers, etc., while fasting? And what is the ruling regarding the miswak (tooth-stick)? Please explain and be rewarded.

The Answer: Miswak is absolutely permissible even after midday (zawal). Tooth powder (manjan) is not impermissible or forbidden as long as there is sufficient assurance that no part of it will enter the throat. However, without a valid necessity, it is certainly disliked (makruh). It is stated in Durr al-Mukhtar: "It is disliked for the fasting person to taste something." (t) And Allah Ta'ala knows best.

Problem 253 to 254: From Aligarh via Rahimullah Khan, 25 Ramadan al-Mubarak 1315 AH. What do the scholars of the religion say about this matter, please explain and be rewarded: (1) While fasting, if one embraces or lies with their wife such that desire overcomes them and pre-seminal fluid (madhi) is discharged, will the fast become disliked (makruh) or will it be broken?

---

1 Al-Durr al-Mukhtar, Chapter on what invalidates the fast, Mujtabai Delhi 1/152.

फतावा रज़विया दसवाँ खंड

रोज़े के मकरूहात (अवांछनीय कार्य)

मसला २५२: बिलग्राम शरीफ, मोहल्ला मैदान पुरा से हज़रत सैयद इब्राहिम साहब द्वारा प्रेषित, १८ ज़िल-क़ादा १३११ हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस बारे में क्या कहते हैं कि रोज़े की हालत में बादाम, कोयला, सुपारी और फूल आदि से बने मंजन का इस्तेमाल करना कैसा है? और मिस्वाक के बारे में क्या हुक्म है? बयान करें और सवाब पायें।

जवाब: मिस्वाक करना पूरी तरह जायज़ है चाहे ज़वाल (दोपहर) के बाद हो। मंजन नाजायज़ या हराम नहीं है बशर्ते कि इस बात का पूरा भरोसा हो कि उसका कोई अंश गले में नहीं जाएगा, लेकिन बिना किसी सही ज़रूरत के ऐसा करना मकरूह ज़रूर है। 'दुर्रे मुख्तार' में है: "रोज़ेदार के लिए किसी चीज़ को चखना मकरूह है।" (त) और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला २५३ से २५४: अलीगढ़ से रहीमउल्लाह खां के माध्यम से, २५ रमज़ानुल मुबारक १३१५ हिजरी। उलेमा-ए-दीन इस मसले में क्या कहते हैं, बयान करें और सवाब पायें: (१) रोज़े में अपनी बीवी से लिपटना या पास लेटना जिससे इच्छा प्रबल हो जाए और मज़ी (स्खलन से पहले निकलने वाला तरल) निकल आए, तो क्या रोज़ा मकरूह होगा या टूट जाएगा?

---

१ अल-दुर्र अल-मुख्तार, रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों का अध्याय, मुजतबाई दिल्ली १/१५२।

पृष्ठ ८३६ में से ५५८

فتاوی رضویہ جلد دہم

مکروھاتِ صوم

مسئلہ ۲۵۲: از بلگرام شریف محلہ میدان پورہ مرسلہ حضرت سید ابراہیم صاحب ۱۸ ذیقعدہ ۱۳۱۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ روزے میں منجن جو بادام، کوئلہ، سپاری وگل وغیرہ کا بنتا ہے اُس کا استعمال کرنا کیسا ہے اوردرباره مسواک کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا

الجواب: مسواک مطلقاً جائز ہے اگرچہ بعد زوال، اور منجن ناجائز و حرام نہیں بلکہ اطمینان کافی ہو کہ اس کا کوئی جزو حلق میں نہ جائے گا، مگر بے ضرورتِ صحیحہ کراہت ضرور ہے۔ در مختار میں ہے: کرہ لہ ذوق شیئی (روزہ دار کو شے کا چکھنا مکروہ ہے۔ت) واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۲۵۳ تا ۲۵۴: از علی گڑھ بوساطت رحیم اللہ خاں ۲۵ رمضان المبارک ۱۳۱۵ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں، بینوا توجروا: (۱) روزے میں اپنی عورت کو لپٹانا یا پاس لیٹنا جس سے خواہش غالب ہو اور مذی نکلے تو روزہ مکروہ ہوگا یا جاتا رہے گا؟

---

1 الدرالمختار باب مایفسد الصوم مجتبائی دہلی ۱/۱۵۲

Fatawa Rizvia Volume 10

(2) Does looking at a woman's private parts break the fast or not?

The Answer: (1) There is no scenario in which these actions would break the fast as long as ejaculation does not occur. Simply lying next to each other, without skin contact or kissing, is not even disliked (makruh). Embracing, kissing, or skin contact is prohibited and disliked if it leads to a fear of breaking the fast due to overwhelming lust—meaning there's a fear that one won't be able to restrain oneself and might engage in intercourse (God forbid) or experience ejaculation during these acts. However, if there is no such fear, there is no harm. But "mubasharat-e-fahisha" (obscene contact), which involves embracing with naked bodies such that the male organ touches the female organ, is absolutely disliked during fasting. Similarly, in Siraj al-Wahhaj, "bosa-e-fahisha" (obscene kissing) is also declared absolutely disliked. Obscene kissing is defined as taking the woman's lips into one's own mouth and biting/chewing them. Sucking the tongue is even more disliked. If a woman's saliva enters his mouth while sucking her tongue, he must spit it out. If it goes down the throat, the fast will be broken, let alone being disliked. And if he intentionally swallows it while experiencing pleasure, then atonement (kaffarah) will also be mandatory.

In al-Durr al-Mukhtar: Kissing, touching, and embracing are disliked if one is not safe from what breaks the fast [intercourse or ejaculation]. If one is safe, there is no harm. [Summary] In Radd al-Muhtar: It is stated in al-Siraj with certainty that "obscene kissing"—which is chewing her lips—is absolutely disliked, whether one feels safe or not. In al-Nahr, it's mentioned that according to the famous report, there is detailed nuance regarding kissing. In Zahir al-Riwayah, "obscene contact" follows the same ruling. From Imam Muhammad, its absolute dislike is narrated, and this is the narration from Hasan. It is said that this is the correct view. Al-Fath preferred the view of it being disliked, and al-Walwalijiyyah stated it with certainty without mentioning any disagreement. And "obscene contact" means when they embrace while they both are...

In Durr al-Mukhtar, it says: Kissing, touching, and embracing are disliked if there is a fear of intercourse or ejaculation which breaks the fast. If there is no such fear, there is no harm. In Radd al-Muhtar, it says: In al-Siraj, it is determined that obscene kissing—which is taking her lips in one's mouth and pressing them—is absolutely disliked, regardless of whether there is fear of breaking the fast or not. In al-Nahr, it is stated that according to the famous report, there is detail in kissing. In Zahir al-Riwayah, the same ruling applies to obscene contact. From Imam Muhammad, its absolute dislike is narrated, and this is the narration from Hasan. Some say this is the correct view. In al-Fath, being disliked is chosen as the preferred view. And in al-Walwalijiyyah, the dislike is stated with certainty. And by obscene contact, it is meant that...

1 Al-Durr al-Mukhtar, Chapter on what breaks the Fast, Mujtabai Delhi, 1/152

फ़तावा रज़विया खंड दसवाँ

(२) क्या औरत की शर्मगाह देखना रोज़े को तोड़ता है या नहीं?

उत्तर: (१) इन कार्यों से रोज़ा टूटने की कोई सूरत नहीं है जब तक कि वीर्यपात (इन्ज़ाल) न हो। और बस पास लेटना जिसमें शरीर का स्पर्श या चुंबन न हो, मकरूह (नापसंद) भी नहीं है। गले लगना, चुंबन लेना या शारीरिक स्पर्श करना, यदि तीव्र कामेच्छा के कारण रोज़ा बिगड़ने का डर हो—यानी यह डर हो कि वह स्वयं पर नियंत्रण नहीं रख पाएगा और (अल्लाह न करे) संभोग में शामिल हो जाएगा या इन क्रियाओं के दौरान वीर्यपात हो जाएगा—तो ये सभी कार्य मकरूह और वर्जित हैं। और यदि ऐसा डर न हो तो कोई हर्ज नहीं है। लेकिन "मुबाशरत-ए-फ़ाहिशा" (अश्लील संपर्क), जिसका अर्थ है नग्न शरीरों के साथ इस तरह लिपटना कि जननांगों का स्पर्श हो, रोज़े में पूर्णतः मकरूह है। इसी प्रकार, सिराज अल-वहाज में "बोसा-ए-फ़ाहिशा" (अश्लील चुंबन) को भी पूर्णतः मकरूह कहा गया है। अश्लील चुंबन का अर्थ है स्त्री के होंठों को अपने होंठों में लेकर चबाना। जीभ चूसना और भी अधिक मकरूह है। यदि जीभ चूसने से स्त्री की लार उसके मुँह में आ जाए, तो उसे थूक देना चाहिए। यदि वह गले से नीचे उतर गई, तो मकरूह होने की बात तो दूर, रोज़ा ही टूट जाएगा। और यदि जानबूझकर आनंद की स्थिति में उसे निगल लिया, तो कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) भी अनिवार्य होगा।

अल-दुर्र अल-मुख्तार में है: चुंबन, स्पर्श और गले मिलना मकरूह है यदि रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ों (संभोग या वीर्यपात) से सुरक्षा न हो। यदि सुरक्षा हो तो कोई हर्ज नहीं। [संक्षेप] रद्द अल-मुह्तार में है: सिराज में यह निश्चित रूप से कहा गया है कि अश्लील चुंबन—जो कि उसके होंठों को चबाना है—पूर्णतः मकरूह है, चाहे रोज़ा टूटने का डर हो या न हो। अल-नहर में है कि प्रसिद्ध रिवायत के अनुसार चुंबन के मामले में विस्तार है। ज़ाहिर अल-रिवाया में अश्लील संपर्क का भी यही हुक्म है। इमाम मुहम्मद से इसकी पूर्णतः मकरूह होने की रिवायत है, और यह हसन की रिवायत है। कहा गया है कि यही सही है। अल-फ़तह में मकरूह होने को ही चुना गया है, और वलवालिजिया में बिना किसी मतभेद के मकरूह होने की बात कही गई है। और अश्लील संपर्क से तात्पर्य यह है कि जब वे दोनों गले मिलें और वे...

दुर्रे मुख्तार में है: बोसा (चुंबन) लेना, छूना और गले मिलना मकरूह है अगर संभोग या वीर्यपात का डर हो जिससे रोज़ा टूट जाता है, और अगर रोज़ा टूटने का डर न हो तो कोई हर्ज नहीं। रद्दुल मुह्तार में है: सिराज में इस पर ज़ोर दिया गया है कि अश्लील चुंबन यह है कि उसके दोनों होंठों को अपने मुँह में लेकर दबाना पूर्णतः मकरूह है, चाहे रोज़ा बिगड़ने का डर हो या न हो। नहर में है कि मशहूर रिवायत के मुताबिक चुंबन में तफ़सील (विस्तार) है। ज़ाहिरुल रिवायत में अश्लील संपर्क का भी यही हुक्म है और इमाम मुहम्मद से मुतलक़ (पूर्णत:) इसकी कराहत (नापसंदगी) वर्णित है और यह रिवायत हसन से है, कुछ ने कहा कि यही सही है। ज़िक्र के इख़्तिलाफ़ (मतभेद) के बिना फ़तह में कराहत को ही मुख्तार (पसंदीदा) माना गया है, और वलवालिजिया में कराहत पर यक़ीन का इज़हार किया गया है। और अश्लील संपर्क से मुराद (तात्पर्य) यह है...

1 अल-दुर्र अल-मुख्तार, अध्याय रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें, मुजतबाई दिल्ली, 1/152

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

(۲) عورت کی شرمگاہ دیکھنا روزے کو توڑے گا یا نہیں؟

الجواب: (۱) ان افعال سے روزہ جانے کی تو کوئی صورت ہی نہیں جب تک انزال نہ ہو اور خالی پاس لیٹنا جس میں بدن پچھونا یا بوسہ لینا کچھ نہ ہو مکروہ بھی نہیں رہا، لپٹنا یا بوسہ لینا یا بدن پچھونا ان میں اگر بہ سبب غلبہ شہوت فساد صوم کا اندیشہ ہو یعنی خوف ہے کہ صبر نہ کر سکے گا اور معاذ اللہ جماع میں مبتلا ہو جائے گا یا بلا جماع ہی ان افعال کی حالت میں انزال ہو جائے گا تو یہ سب فعل مکروہ ممنوع ہیں اور اگر یہ اندیشہ نہ ہو تو کچھ حرج نہیں، مگر مباشرت فاحشہ یعنی ننگے بدن لپٹنا کہ ذکر فرج کو مس کرے روزے میں مطلقاً مکروہ ہے۔ اسی طرح سراج وہاج میں بوسہ فاحشہ کو بھی مطلقاً مکروہ فرمایا، بوسہ فاحشہ عورت کے لب اپنے لبوں میں لے کر چبائے، اور زبان چوسنا بدرجہ اولیٰ مکروہ جبکہ عورت کا لعاب دہن جو اس کی زبان چوسنے سے اس کے منہ میں آئے تھوک دے، اور اگر حلق میں اتر گیا تو کراہت در کنار روزہ ہی جاتا رہے گا، اور اگر قصداً بحالت لذت پی لیا تو کفارہ بھی لازم آئے گا۔

فی الدرالمختار کرہ قبلة ومس و معانقة ان لم یأمن المفسد وان امن لاباس ۱۸ملخصا وفي رد المختار جزم فی السراج بان القبلة الفاحشة بان یمضغ شفتیها تکرہ علی الاطلاق ای سواء أمن اولا، قال فی النهر، والمعانقة علی التفصیل في المشهور وکذا المباشرة الفاحشة فی ظاہر الروایة وعن محمد کراهتها مطلقاً وہو روایة الحسن، قیل وہو الصحیح اہ واختار الکراہة فی الفتح وجزم بها فی الولوالجیة بلاذکر خلاف، وہی ان یعانقها وہما

در مختار میں ہے: بوسہ لینا، چھونا اور معانقہ کرنا مکروہ ہے اگر جماع یا انزال مفسد روزہ کا خوف ہو، اور اگر مفسد روزہ کا خوف نہ ہو تو کوئی حرج نہیں۔ ردالمحتار میں ہے: سراج میں اس پر جزم کیا ہے کہ بوسہ فاحشہ یہ ہے کہ اس کے دونوں ہونٹ اپنے منہ میں لے کر دبانا مطلقاً مکروہ ہے خواہ فساد روزہ سے خوف ہو یا نہ ہو۔ نہر میں ہے مشہور روایت کے مطابق بوسہ میں تفصیل ہے ظاہر الروایہ میں مباشرت فاحشہ کا بھی یہی حکم ہے اور امام محمد سے مطلق اس کی کراہت مروی ہے اور یہ روایت حسن سے ہے، بعض نے کہا یہی ہے اہ ذکر اختلاف کے بغیر فتح میں کراہت کو مختار قرار دیا ہے، اور ولوالجیہ میں کراہت پر جزم کا اظہار ہے۔ اور مباشرت فاحشہ سے مراد یہ ہے

1 الدر المختار باب مایفسد الصوم مجتبائی دہلی ۱/ ۱۵۲

Fatawa Rizvia, Volume 10

[Left Column - Arabic] Naked people embracing and their private parts touching; rather, it is said in 'al-Dhakhira' that this is disliked (makruh) without disagreement because it usually leads to intercourse. From this, it is known that the narration of Imam Muhammad is not because what is in 'Zahir al-Riwayah' and what was mentioned from 'al-Nahr' is not appropriate. Then I saw in 'al-Tatarkhaniyya' from 'al-Muhit' the explicit statement of what I mentioned regarding the reconciliation between the two narrations and that there is no difference between them, praise be to Allah. Briefly. [1] In 'al-Durr', the criterion is the arrival of what contains bodily benefit into the cavity. From this is the saliva of a beloved; it entails expiation (kaffarah) because the meaning of bodily benefit is present in it, as in 'al-Diraya' and others. [2] And Allah Almighty knows best.

[Right Column - Urdu Translation of above] That man and woman embrace in a state where both are naked and the man's private part touches the woman's private part; rather, it is stated in 'al-Dhakhira' that such an act is disliked by consensus because it usually becomes a cause for intercourse. From this, it was also known that the narration of Imam Muhammad is an explanation of 'Zahir al-Riwayah', and what was mentioned with reference to 'An-Nahr' is not appropriate. Then I saw an explicit statement on this in 'Tatar Khaniya' from 'al-Muhit' which I mentioned while harmonizing the two narrations, that there is no difference between them, praise be to Allah. Briefly. In 'al-Durr', the criterion for identifying food and medicine is that something reaches the stomach which causes the betterment of the body (it is called food or medicine). The saliva of a beloved falls under this category; if someone swallows it, since bodily betterment is present in such a case, therefore they must pay expiation (kaffarah) as mentioned in 'al-Dirayah' etc. And Allah Almighty knows best. (t)

[Middle Section] (2) No. Even if he looks repeatedly, until ejaculation occurs just by looking without touching. However, in this case, there is certainly dislike (karahah). In 'al-Durr al-Mukhtar', if one ejaculates by looking, even if at her private parts repeatedly, the fast is not broken. [3] And Allah Almighty knows best. [Urdu Translation]: In 'Durr-e-Mukhtar' it is stated: if ejaculation occurs by looking, even if looking at the woman's private parts repeatedly, the fast will not break. And Allah Almighty knows best (t).

[Footnotes] 1. Radd al-Muhtar, Chapter: What Nullifies Fasting, etc., Mustafa al-Babi Egypt, 2/122-23. 2. Durr-e-Mukhtar, Chapter: What Nullifies Fasting, Mujtabai Delhi, 1/151. 3. Durr-e-Mukhtar, Chapter: What Nullifies Fasting, Mujtabai Delhi, 1/149.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवीं

[बायां कॉलम - अरबी] नग्न अवस्था में आलिंगन करना और गुप्तांगों का स्पर्श करना; बल्कि 'अल-ज़खीरा' में कहा गया है कि यह बिना किसी असहमति के मकरूह (नापसंद) है क्योंकि यह अक्सर संभोग का कारण बनता है। इससे यह ज्ञात होता है कि इमाम मुहम्मद का वर्णन इसलिए नहीं है क्योंकि 'ज़ाहिर अल-रिवायत' में जो है और 'अल-नहर' से जो उल्लेख किया गया है वह उचित नहीं है। फिर मैंने 'अल-मुहीत' से 'अल-तातारखनिया' में उन दो वर्णनों के बीच सामंजस्य के बारे में जो मैंने उल्लेख किया था, उसका स्पष्ट कथन देखा कि उन दोनों में कोई अंतर नहीं है, अल्लाह का शुक्र है। संक्षेप में। १ 'अल-दुर' में नियम यह है कि शरीर के लिए लाभकारी वस्तु का पेट में पहुँचना। इसी में प्रेमी की लार भी शामिल है; इसमें कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) अनिवार्य है क्योंकि इसमें शारीरिक लाभ का तत्व मौजूद है, जैसा कि 'अल-दराया' आदि में वर्णित है। २ और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[दायां कॉलम - उपरोक्त का उर्दू अनुवाद] कि पुरुष और स्त्री दोनों इस अवस्था में आलिंगन करें कि दोनों नग्न हों और पुरुष का गुप्तांग महिला के गुप्तांग को स्पर्श कर रहा हो, बल्कि 'ज़खीरा' में यह कहा गया है कि ऐसा कृत्य सर्वसम्मति से मकरूह (नापसंद) है क्योंकि यह अक्सर संभोग का कारण बन जाता है। इससे यह भी पता चला कि इमाम मुहम्मद का वर्णन 'ज़ाहिर अल-रिवायत' का बयान है और जो कुछ 'अन-नहर' के हवाले से गुजरा वह उचित नहीं है। फिर मैंने 'तातार खानिया' में 'अल-मुहीत' से इस पर स्पष्टीकरण देखा जो मैंने दोनों वर्णनों में सामंजस्य बिठाते हुए उल्लेख किया है कि उन दोनों में कोई अंतर नहीं है, अल्लाह का शुक्र है। संक्षेप में। 'अल-दुर' में भोजन और औषधि की पहचान का नियम यह है कि पेट में ऐसी वस्तु का पहुँचना जो शरीर के सुधार का कारण हो (वह भोजन या औषधि कहलाती है)। प्रिय का लार इसी श्रेणी से है, यदि कोई उसे निगल जाए, तो ऐसी स्थिति में चूँकि शरीर का सुधार मौजूद है, इसलिए वह कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) अदा करे जैसा कि 'दराया' आदि में है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

[मध्य भाग] (२) नहीं। भले ही वह बार-बार दोहरा कर देखे, यहाँ तक कि देखने ही की स्थिति में बिना छुए स्खलन हो जाए, हाँ इस स्थिति में मकरूह होना निश्चित है। 'अल-दुर अल-मुख़्तार' में है, यदि देखने से स्खलन हो जाए, चाहे वह उसके गुप्तांगों को बार-बार देखना ही क्यों न हो, रोज़ा नहीं टूटता। ३ और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। [उर्दू अनुवाद]: 'दुर्रे मुख़्तार' में है कि यदि देखने से स्खलन

हो जाए, भले ही स्त्री के गुप्तांग की ओर बार-बार नज़र हो, रोज़ा नहीं टूटेगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है (त)।

[पादलेख] १. रद्द अल-मुह्तार, अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, २/१२२-२३। २. दुर्रे मुख़्तार, अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें, मुस्तबाई दिल्ली, १/१५१। ३. दुर्रे मुख़्तार, अध्याय: रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें, मुस्तबाई दिल्ली, १/१४९।

पृष्ठ ५६०/८३६

[بایاں کالم - عربی] متجردان ویمس فرجہ فرجہا بل قال فی الذخیرۃ ان ھذا مکروہ بلا خلاف لانہ یفضی الی الجماع غالبا اھ و بہ علم ان روایۃ محمد لیس لکون ما فی ظاھر الروایۃ ومامر عن النھر لیس مما ینبغی ثم رأیت في التتار خانیۃ عن المحیط، التصریح بما ذکرتہ من التوفیق بین الروایتین وانہ لافرق بینھما واللہ الحمد اھ باختصار ۱ وفی الدر، الضابط وصول مافیہ صلاح بدنہ لجوفہ ومنہ ریق حبیبہ فیکفر لوجود معنی صلاح البدن فیہ، درایۃ، وغیرھا ۲ واللہ تعالی اعلم۔

[دایاں کالم - اردو ترجمہ] کہ مرد عورت دونوں معانقہ کریں اس حال میں کہ دونوں ننگے ہوں اور مرد کا فرج خاتون کی شرمگاہ کو مس کر رہا ہو، بلکہ ذخیرہ میں یہ کہا ہے کہ ایسا عمل بالاتفاق مکروہ ہے کیونکہ یہ غالباً جماع کا سبب بن جاتا ہے اھ اس سے یہ بھی معلوم ہو گیا کہ امام محمد کی روایت ظاہر روایت کا بیان ہے اور جو کچھ نہر کے حوالے سے گزرا وہ مناسب نہیں، پھر میں نے تاتار خانیہ میں محیط سے اس پر تصریح دیکھی جو میں نے دونوں روایات میں مطابقت دیتے ہوئے ذکر کی ہے کہ ان دونوں میں کوئی فرق نہیں واللہ الحمد اھ اختصاراً۔ در میں ہے غذا اور دوا کی شناخت کا ضابطہ یہ ہے پیٹ میں ایسی شئی کا پہنچ جانا جو بدن کی اصلاح کا سبب ہو (وہ غذا یا دوا کہلاتی ہے) محبوب کا لعاب دہن اسی قبیل سے ہے، اگر کوئی نگل جائے تو ایسی صورت میں چونکہ اصلاح بدن موجود ہے لہذا وہ کفارہ ادا کرے جیسا کہ درایۃ وغیرہ میں ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ (ت)

[درمیانی حصہ] (۲) نہ۔ اگرچہ بار بار بتکرار دیکھے، یہاں تک کہ دیکھنے ہی کی حالت میں بے بچھوئے انزال ہو جائے، ہاں اس صورت میں کراہت ضرور ہے، فی الدرالمختار انزل بنظر ولوالی

فرجها مرارا لم یفطر ۳ واللہ تعالٰی اعلم۔ در مختار میں ہے اگر انزال ہو جائے نظر کرنے سے اگرچہ عورت کی شرمگاہ کی طرف نظر مکرر ہو روزہ نہ ٹوٹے گا۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

[حواشی] 1 ردالمحتار باب ما یفسد الصوم الخ مصطفی البابی مصر ۲/ ۲۳- ۱۲۲ 2 در مختار باب ما یفسد الصوم مجتبائی دہلی ۱/ ۱۵۱ 3 در مختار باب ما یفسد الصوم مجتبائی دہلی ۱/ ۱۴۹

Volume Two Fatawa Razawiyyah

Problem 255: From Faridpur district Bareilly, sent by Qazi Muhammad Nabi Jan Sahib, 27th Ramadan Mubarak 1318 AH. What do the scholars of religion say regarding this: there is a person who needs ritual bath (ghusl), but he fasted. However, intentionally, he did not perform ghusl until the time of Zuhr. He performed ghusl at the time of the Zuhr prayer. Was his fast valid or did it go away? The Answer: The fast will be valid even if he doesn't bathe until evening. Yes, for leaving prayer, he will be guilty of an extremely severe major sin. And Allah Almighty knows best.

Problem 256: From Bankipur Patna, Mohalla Muradpur, sent by Ali Hasan Sahib, merchant, 23rd Muharram Sharif 1332 AH. What do the scholars of religion say in this matter: Zaid kept the fast of Ramadan in a state of ritual impurity (janabat) and intentionally did not perform ghusl all day until the time of breaking the fast (iftar). So, will this fast of his be valid without any deficiency or not? And is purity a condition for fasting or not? And is there any physical worship that is valid without purity? The Answer: That person became guilty of severe major sins and deserving of the punishment of Hell for intentionally missing his prayers, but this did not cause any deficiency or interruption in the fast. By the consensus of the four Imams, purity is not a condition for fasting. The Lord Almighty says: "It has been made lawful for you to go to your wives on the night of the fasts." [1] It has been made lawful for you to have intercourse with your wives during the nights of fasting. (T) The noble verse has declared intercourse and being in a state of having had intercourse permissible in every part of the night, and it is not just a mere permission, but stated in the form of an instructive command: "So now have intercourse with them and seek that which Allah has ordained for you." [2] And now have intercourse with them and seek what Allah Almighty has written for you. (T) And it is clear that the last part of the night is also included in the 'night of the fasts', and that too is included in the command of 'it is made lawful for you' and 'have intercourse with them'. To start the morning in a state of janabat and remain in a state of impurity until the completion of ghusl becomes inherently necessary in fasting. Thus, the Great Quran is the authority on its permissibility and entry under the instructive command. If this caused any deficiency or interruption in the fast...

1. Al-Quran 2/187
2. Al-Quran 2/187

मसला २५५: फरीदपुर जिला बरेली से प्रेषक काज़ी मुहम्मद नबी जान साहब, २७ रमज़ान मुबारक १३१८ हिजरी। धर्म के विद्वान इस बारे में क्या कहते हैं: एक व्यक्ति है जिसे ग़ुस्ल (स्नान) की आवश्यकता है लेकिन उसने रोज़ा रखा, मगर उसने जानबूझकर ज़ुहर के समय तक ग़ुस्ल नहीं किया, ज़ुहर की नमाज़ के समय ग़ुस्ल किया। क्या उसका रोज़ा रहा या चला गया? उत्तर: रोज़ा हो जाएगा चाहे वह शाम तक न नहाए। हाँ, नमाज़ छोड़ने के कारण वह अत्यंत गंभीर बड़े गुनाह (कबीरा गुनाह) का अपराधी होगा। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला २५६: बांकीपुर पटना, मोहल्ला मुरादपुर से प्रेषक अली हसन साहब व्यापारी, ४३ मुहर्रम शरीफ़ १३४१ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मसले में क्या कहते हैं कि ज़ैद ने रमज़ान शरीफ़ का रोज़ा जनावत (अपवित्रता) की स्थिति में रखा और जानबूझकर पूरे दिन इफ़्तार के समय तक ग़ुस्ल नहीं किया तो क्या उसका यह रोज़ा बिना किसी कमी के सही होगा या नहीं? और रोज़े के लिए शुद्धि (तहारत) शर्त है या नहीं? और क्या ऐसी कोई शारीरिक इबादत भी है जो बिना शुद्धि के सही हो? उत्तर: वह व्यक्ति जानबूझकर नमाज़ें खोने के कारण बड़े गुनाहों का अपराधी और जहन्नुम के अज़ाब का हक़दार हुआ मगर इससे रोज़े में कोई कमी या व्यवधान नहीं आया। चारों इमामों की सर्वसम्मति से रोज़े के लिए शुद्धि शर्त नहीं है। रब्ब अज़्ज़ व जल्ल फ़रमाता है: "रोज़े की रातों में तुम्हारे लिए बीवियों से सहवास हलाल किया गया है।" [१] रोज़े की रातों में तुम्हारे लिए बीवियों से जमाअ हलाल किया गया है। (त) पाक आयत ने रात के हर हिस्से में जमाअ और जमाअ की अवस्था में होने को हलाल फ़रमाया और केवल अनुमति ही नहीं बल्कि निर्देशात्मक आज्ञा के रूप में फ़रमाया: "तो अब उनसे सहवास करो और तलाश करो जो अल्लाह तआला ने तुम्हारे लिए लिख रखा है।" [२] और अब उनसे मुबाशरत (शारीरिक संबंध) करो और तलाश करो जो अल्लाह तआला ने तुम्हारे लिए लिख रखा है। (त) और यह स्पष्ट है कि रात का अंतिम हिस्सा भी रोज़े की रात में शामिल है, और वह भी 'अुहिल्ला लकुम' और 'बाशिरूहुन' की आज्ञा में शामिल है। और उसे जनावत की स्थिति में सुबह करना और ग़ुस्ल पूरा होने तक रोज़े में अपवित्र रहना अनिवार्य रूप से आवश्यक हो जाता है। अतः क़ुरआन अज़ीम इसकी हलाल होने और निर्देशात्मक आज्ञा के अंतर्गत आने का शासक है। अगर इससे रोज़े में कोई कमी या व्यवधान...

1. अल-क़ुरआन २/१८७

2. अल-क़ुरआन २/१८७

पृष्ठ ५६१ (कुल ८३६ में से)

جلد دوم فتاویٰ رضویہ

مسئلہ ۲۵۵: از فرید پور ضلع بریلی مرسلہ قاضی محمد نبی جان صاحب ۲۷ رمضان مبارک ۱۳۱۸ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس بارہ میں ایک شخص ہے اس کو حاجتِ غسل کی ہے مگر روزہ اس نے رکھا مگر قصداً بوقتِ ظہر تک اُس نے غسل نہ کیا، وقتِ نمازِ ظہر کے غسل کیا، کیا روزہ اُس کا رہا یا گیا؟ الجواب: روزہ ہو جائے گا اگرچہ شام تک نہ نہائے، ہاں ترکِ نماز کے سبب سخت اشد کبیرہ گناہ کا مرتکب ہوگا۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۲۵۶: از بانکی پور پٹنہ محلہ مراد پور مرسلہ علی حسن صاحب تاجر ۲۳ محرم شریف ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید نے رمضان شریف کا روزہ جنابت کی حالت میں رکھا اور قصداً دن بھر افطار کے وقت تک غسل نہیں کیا تو کیا یہ روزہ اُس کا بغیر کسی نقص کے درست ہوگا یا نہیں؟ اور روزے کے لیے طہارت شرط ہے یا نہیں؟ اور کیا کوئی ایسی عبادت بدنی بھی ہے جو بے طہارت صحیح ہو؟ الجواب: وہ شخص نمازیں عمداً کھونے کے سبب سخت کبائر کا مرتکب اور عذابِ جہنم کا مستوجب ہوا مگر اس سے روزے میں کوئی نقص و خلل نہ آیا طہارت باجماعِ ائمہ اربعہ شرطِ صوم نہیں۔ رب عزوجل فرماتا ہے: أُحِلَّ لَكُمْ لَيْلَةَ الصِّيَامِ الرَّفَثُ إِلَى نِسَائِكُمْ[1] روزے کی راتوں میں تمہارے لئے بیویوں سے جماع حلال کیا گیا ہے۔ (ت) آیہ کریمہ نے ہر جزو شب میں جماع و تلبّس بالجماع حلال فرمایا اور محض تحلیل ہی نہیں بلکہ بصیغہ امر ارشادی ارشاد ہوا۔ فَالْآنَ بَاشِرُوهُنَّ وَابْتَغُوا مَا كَتَبَ اللَّهُ لَكُمْ[2] اور اب ان سے مباشرت کرو اور تلاش کرو جو اللہ تعالیٰ نے تمہارے لیے لکھ رکھا ہے (ت) اور ظاہر ہے کہ جزو اخیرِ شب کو بھی لیلۃ الصیام شامل، اور وہ بھی اس احل لکم اور باشروھن کے امر میں داخل، اور اسے

بحالت جنابت صبح کرنا اور تا تمامی غسل، روزے میں جنب رہنا بدایۃً لازم، تو قرآن عظیم اس کی حلّت و دخول زیر امر ارشادی پر حاکم۔ اگر اس سے روزے میں کوئی نقص و خلل

1 القرآن ۲/ ۱۸۷ 2 القرآن ۲/ ۱۸۷

He would have surely made an exception for that part. Then, the Lawgiver (peace and blessings of Allah be upon him) practically demonstrated its flawlessness and lack of disruption. In Sahihayn (Bukhari and Muslim), it is narrated from the Mothers of the Believers, Aisha Siddiqa and Umm Salama (may Allah be pleased with them both):

Arabic	Urdu Translation
"Indeed, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) used to be reached by dawn while in a state of ritual impurity (janaba) from his wives, then he would perform ghusl (bath) and observe the fast."[1]	The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) used to have intimacy with the pure wives, and morning would arrive while he had not yet bathed; after that, he would perform ghusl and keep the fast.

In Sahih Muslim, Muwatta Malik, Sunan Abi Dawud, and Nasai, it is narrated from the Mother of the Believers, Siddiqa (may Allah be pleased with her):

Arabic	Urdu Translation
A man said to the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) while he was standing at his door, and I was listening: "O Messenger of Allah! I wake up in the morning in a state of ritual impurity (janaba) and I intend to fast." The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) replied: "I too wake up in a state of ritual impurity and I intend to fast, then I perform ghusl and observe the fast." The man said: "O Messenger of Allah! You are not like us. Allah has forgiven all your past and future sins." On hearing this, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) became angry and said: "Indeed, I hope that I am the one who fears Allah the most among you and knows best what things I should avoid."[2]	That is, the Radiant Messenger (peace and blessings of Allah be upon him) was standing near his noble door. A person submitted to him while I was listening, "O Messenger of Allah! I wake up in the morning in a state of janaba and the intention is for fasting." The Messenger (peace and blessings of Allah be upon him) said, "I myself do so." He submitted, "What is our equality with your presence? Allah (the Mighty and Sublime) has granted you complete forgiveness forever." Upon this, the Holy Messenger (peace and blessings of Allah be upon him) became angry and said, "Indeed, I hope that I have more fear of Allah (the Mighty and Sublime) than all of you, and I know more than all of you about those things from which I should refrain."

This authentic hadith has clearly shown that this does not cause any defect in the fast; otherwise, since he was the questioner, silence would not have been maintained in the context of explanation. What silence? The final statement made it even clearer that there is nothing to fear in this, nor is it among the things to be avoided. Furthermore, it is evident that a fast is indivisible; whatever causes a defect in it, if it occurs throughout the entire fast, it will cause a defect, and if it occurs in any subtle part at its beginning or end, it will cause harm.

[1] Al-Sahih al-Bukhari, Chapter: The Faster Waking up in a State of Janaba, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/258. [2] Sunan Abi Dawud, Book of Fasting, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/325.

वह निश्चित रूप से उस हिस्से के लिए अपवाद बना देते, फिर शरियत के मालिक (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने व्यावहारिक रूप से इसके दोषरहित और बिना किसी व्यवधान के होने की पुष्टि कर दी। सहीहैन में उम्मुल मोमिनीन आयशा सिद्दीका और उम्मुल मोमिनीन उम्मे सलमा (रज़ियल्लाहु अन्हा) से वर्णित है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
"बेशक अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) अपनी पत्नियों के कारण जनाबत (अशुद्धि) की स्थिति में होते थे जब फज्र (भोर) हो जाती थी, फिर वे ग़ुस्ल (स्नान) करते और रोज़ा रखते थे।"[1]	अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) अज़वाजे मुतहरात (पवित्र पत्नियों) से कुर्बत (निकटता) फ़रमाते और सुबह हो जाती जब तक न नहाते, उसके बाद ग़ुस्ल फ़रमाते और रोज़ा रखते थे।

सहीह मुस्लिम, मुअत्ता इमाम मालिक, सुनन अबी दाऊद और निसाई में उम्मुल मोमिनीन सिद्दीका (रज़ियल्लाहु अन्हा) से वर्णित है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
एक व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से कहा, जबकि वे अपने द्वार पर खड़े थे और मैं सुन रही थी: "हे अल्लाह के रसूल! मैं सुबह जनाबत की स्थिति में उठता हूँ और मेरा रोज़े का इरादा होता है।" अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "मैं भी सुबह जनाबत की स्थिति में उठता हूँ और मेरा रोज़े का इरादा होता है, फिर मैं ग़ुस्ल करता हूँ और रोज़ा रखता हूँ।" उस व्यक्ति ने कहा: "हे अल्लाह के रसूल! आप हमारी तरह नहीं हैं, अल्लाह ने आपके अगले-पिछले तमाम गुनाह माफ़ कर दिए हैं।" इस पर अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)	यानी हुज़ूर पुरनूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) अपने दरवाज़ा-ए-अकदस (पवित्र द्वार) के पास खड़े थे, एक व्यक्ति ने हुज़ूर से अर्ज़ की और मैं सुन रही थी कि "या रसूलल्लाह! मैं सुबह को जुनब (अशुद्ध) उठता हूँ और नीयत रोज़े की होती है।" हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया, "मैं खुद ऐसा करता हूँ।" उसने अर्ज़ की, "हुज़ूर की हमारी क्या बराबरी? हुज़ूर को तो अल्लाह अज़्ज़वजल ने हमेशा के लिए पूरी माफ़ी अता फ़रमा दी है।" इस पर हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ग़ज़बनाक (क्रोधित) हुए और फ़रमाया, "बेशक

अरबी	उर्दू अनुवाद
नाराज़ हुए और फ़रमाया: "बेशक मैं उम्मीद रखता हूँ कि मैं तुम सब से ज़्यादा अल्लाह से डरता हूँ और मैं तुम सब से ज़्यादा उन बातों को जानता हूँ जिनसे मुझे बचना चाहिए।"[2]	मैं उम्मीद रखता हूँ कि मुझे तुम सब से ज़्यादा अल्लाह अज़्ज़वजल का ख़ौफ़ है और मैं तुम सब से ज़्यादा जानता हूँ कि किन-किन बातों से मुझे बचना चाहिए।"

इस सहीह हदीस ने खूब वाज़ेह (स्पष्ट) कर दिया कि इससे रोज़े में कोई नक़्स (दोष) नहीं आता, वरना वे साहब-ए-सायल (सवाल करने वाले) थे, बयान के मौक़े पर सुकूत (चुप्पी) न की जाती। सुकूत कैसा? आख़िरी इर्शाद ने इसे और भी रौशन कर दिया कि इसमें डर की कोई बात नहीं है, न ही यह उस चीज़ में शामिल है जिससे बचना चाहिए। और फिर ज़ाहिर है कि रोज़ा ग़ैर-मुतज़ज्ज़ी (अविभाज्य) है; जो चीज़ उसमें नक़्स पैदा करेगी, यदि वह पूरे रोज़े में हो तो नक़्स का कारण होगी, और यदि वह उसके आरम्भ या अंत के किसी भी छोटे हिस्से में हो, तो भी नुक़सान पहुँचाएगी।

[1] सहीह अल-बुख़ारी, अध्याय: रोज़ेदार का जनाबत की स्थिति में सुबह करना, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/258। [2] सुनन अबी दाऊद, किताबुल सौम, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 1/325।

آتا ضرور اتنے حصے کا استثناء فرمادیتا، پھر صاحبِ شرع صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے عملاً اس کا بے نقص و بے خلل ہونا فرمادیا۔ صحیحین میں ام المومنین عائشہ صدیقہ وام المومنین ام سلمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
ان رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کان یدر کہ الفجر وھو جنب من اھلہ ثم یغتسل و یصوم-1	رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم ازواجِ مطہرات سے قربت فرماتے اور صبح ہو جاتی جب تک نہ نہاتے اس کے بعد غسل فرماتے اور روزہ رکھتے-

صحیح مسلم و مؤطا مالک و سُنن ابی داؤد و نسائی میں اُمّ المومنین صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا سے ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
ان رجلا قال لرسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم وھو واقف علی الباب و انا اسمع یا رسول اللہ انی اصبح جنبا وانا ارید الصیام فقال رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم وانا اصبح جنباً وانا ارید الصیام فاغتسل واصوم فقال الرجل یا رسول اللہ انك لست مثلنا قد	یعنی حضور پُر نور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اپنے دروازہ اقدس کے پاس کھڑے تھے ایک شخص نے حضور سے عرض کی اور میں سُن رہی تھی کہ یا رسول اللہ! میں صبح کو جنب اٹھتا ہوں اور نیت روزے کی ہوتی ہے حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا میں خود ایسا کرتا ہوں اُس نے عرض کی حضور کی ہماری کیا برابری، حضور کو تو اللہ عزوجل نے ہمیشہ کے لیے پوری معافی عطا

عربی متن	اردو ترجمہ
غفر الله لك ما تقدم وما تأخر فغضب رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم وقال انى ارجوان اكون اخشيكم لله اعلمكم بما اتقى -2	فرمادی ہے۔ اس پر حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم غضب ناک ہوئے اور فرمایا: بیشک میں امید رکھتا ہوں کہ مجھے تم سب سے زیادہ اللہ عزوجل کا خوف ہے اور میں تم سب سے زیادہ جانتا ہوں جن جن باتوں سے مجھے بچنا چاہئے۔

اس حدیثِ صحیح نے خوب واضح فرمادیا کہ اس سے روزہ میں کوئی نقص نہیں آتا ورنہ وہ صاحبِ سائل تھے محل بیان میں سکوت نہ فرمایا جاتا، سکوت کیسا اخیر کے ارشاد نے اور بھی روشن فرمادیا کہ اس میں کوئی بات خوف کی نہیں، نہ یہ اس میں داخل جس سے بچنا چاہئے۔ اور پھر ظاہر کہ روزہ غیر متجزی ہے جو چیز اس میں نقص پیدا کرے گی اگر سارے روزے میں ہوئی تو موجبِ نقص ہوگی اور اس کے اوّل یا آخر کسی لطیف حصہ میں ہوئی تو ضرر دے گی،

1 الصحیح البخاری باب الصائم یصبح جنبا قدیمی کتب خانہ کراچی ۲۵۸/۱ 2 سنن ابی داؤد کتاب الصائم آفتاب عالم پریس لاہور ۳۲۵/۱

Fatawa Razvia Volume Ten

Therefore, our honorable scholars have established from these verses and Hadiths that if a person remains in a state of ritual impurity (janabat) for the entire day, it does not harm the fast in any way.

It is stated in **Maraqi al-Falah**: "Or if one wakes up in a state of ritual impurity, even if they remain in that state for a day or several days, because Allah Almighty's glorious command 'So now cohabit with them' implies that cohabitation is permissible until shortly before dawn, making a bath (ghusl) necessary after that. And the saying of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), 'I have woken up in a state of ritual impurity while intending to fast; I will take a bath and fast.'" Or if someone starts their morning in a state of impurity, even if they remain in that state for one or several days, because the Almighty's command "Now you may cohabit" requires that cohabitation be permissible until a little before dawn and the bath be mandatory thereafter. And the Holy Prophet's (peace and blessings be upon him) statement: "I woke up in a state of impurity while intending to fast, I will perform ghusl and keep the fast." (T)

It is stated in **al-Bahr al-Ra'iq**: "If one wakes up in a state of ritual impurity, it does not harm him; as mentioned in al-Muhit." If someone started the morning in a state of impurity, it is not harmful; it is mentioned similarly in al-Muhit. (T)

It is stated in **'Alamgiriyyah**: "Whoever wakes up in a state of ritual impurity or has a nocturnal emission during the day, it does not harm him; as mentioned in Muhit al-Sarkhasi." One who starts the morning in a state of impurity or experiences a nocturnal emission during the day, this does not harm them. It is mentioned similarly in Muhit al-Sarkhasi. (T)

Yes, there will be a difference in the spiritual radiance (nooraniyat) of the fast due to the commission of a major sin (missing prayer), not because the person was in a state of impurity; for if impurity itself caused a difference in radiance, then merely waking up in that state would also affect it. Rather, it is because the prayer was missed. To the extent that if prayer were possible in a state of impurity, then remaining impure all day or even for a whole month would not diminish the radiance gained through fasting. This difference due to the missed prayer is like wrongfully hitting someone while fasting; however, no one would say there is a defect in the essence of the fast itself. The view that sin causes a defect in the fast is a flawed Zahiri doctrine. An example of this is someone wearing silk...

1. *Maraqi al-Falah with Hashiyah al-Tahtawi, Chapter on what does not break the fast, Noor Muhammad Kutub Khana, Karachi, p. 362.*
2. *al-Bahr al-Ra'iq, Chapter on what does not break the fast, H.M. Saeed Company, Karachi, 2/273.*
3. *al-Fatawa al-Hindiyyah, Chapter Eight on what breaks the fast, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/200.*

इसलिए हमारे उलेमा-ए-किराम ने इन्हीं आयतों और हदीसों से साबित किया है कि अगर कोई पूरे दिन नापाकी (जनाबत) की हालत में रहे, तब भी रोज़े को कोई नुकसान नहीं पहुँचता।

मराक़ी अल-फलाह में है: "या किसी ने हालत-ए-जनाबत में सुबह की, अगरचे वह इसी हालत में एक दिन या कई दिन रहा, क्योंकि अल्लाह तआला का इरशाद-ए-गिरामी 'अब तुम मुबाशरत कर सकते हो' इस बात का तक़ाज़ा करता है कि फज्र से थोड़ा सा पहले तक मुबाशरत जायज़ हो और उसके बाद ग़ुस्ल लाज़िम हो, और हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का इरशाद-ए-गिरामी 'मैंने हालत-ए-जनाबत में सुबह की है और मैं रोज़े का इरादा रखता हूँ, मैं ग़ुस्ल करूँगा और रोज़ा रखूँगा'।" या किसी ने हालत-ए-जुन्ब में सुबह की अगरचे वह इसी हालत में एक दिन या कई दिन रहा, क्योंकि अल्लाह तआला का इर्शाद-ए-गिरामी "अब तुम मुबाशरत कर सकते हो" इस बात का मक़्तज़ी है कि फ़ज्र से थोड़ा सा पहले तक मुबाशरत जाइज़ हो और इसके बाद ग़ुस्ल लाज़िम हो, और हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का इर्शाद-ए-गिरामी "मैंने हालत-ए-जनाबत में सुबह की है और मैं रोज़े का इरादा रखता हूँ, मैं ग़ुस्ल करूँगा और रोज़ा रखूँगा।" (त)

बहर-उर-राईक़ में है: "अगर किसी ने हालत-ए-जनाबत में सुबह की तो उसे नुकसान नहीं देता, इसी तरह अल-मुहीत में है।" अगर किसी ने हालत-ए-जुन्ब में सुबह की तो नुकसानदेह नहीं, मुहीत में इसी तरह है। (त)

आलमगीरिया में है: "जो हालत-ए-जनाबत में सुबह करे या दिन में उसे एहतलाम (स्वप्नदोष) हो जाए, तो यह उसे नुकसान नहीं देता, मुहीत अल-सरख़सी में इसी तरह है।" जिसने हालत-ए-जनाबत में सुबह की या दिन को एहतलाम हो गया तो यह उसे नुकसानदेह नहीं। मुहीत सरख़सी में इसी तरह है। (त)

हाँ, बड़े गुनाह (नमाज़ छोड़ने) के कारण रोज़े की नूरानियत (आध्यात्मिक चमक) में फर्क आएगा, न कि इसलिए कि वह नापाक था। अगर जनाबत से नूरानियत में फर्क आता तो केवल जनाबत की हालत में सुबह करने से भी आता, बल्कि इसलिए कि नमाज़ छूट गई। यहाँ तक कि अगर जनाबत की हालत में नमाज़ मुमकिन होती, तो दिन भर या महीने भर नापाक रहने से भी रोज़े की नूरानियत में कमी न आती। नमाज़ छूटने की वजह से यह फर्क वैसा ही होगा जैसे रोज़े में किसी को ज़ुल्म के साथ मारने से होता है; मगर कोई यह नहीं कहेगा कि रोज़े की असलियत में ही कोई कमी आ गई।

गुनाह के कारण रोज़े में ख़लल आना ज़ाहिरियों का एक फ़ासिद (ग़लत) मज़हब है। इसकी मिसाल ऐसी है जैसे कोई रेशमी...

---

1. मराक़ी अल-फ़लाह अला हाशियात-तहतावी, बाब फ़ी बयान मा ला युफ़्सिदुस सौम, नूर मोहम्मद कुतुब ख़ाना, कराची, पृ. *362*
2. अल-बहर-उर-राईक़, बाब फ़ी बयान मा ला युफ़्सिदुस सौम, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, *2/273*
3. अल-फ़तावा अल-हिन्दिया, आठवाँ अध्याय, रोज़ा तोड़ने वाली चीज़ें, नूरानी कुतुब ख़ाना, पेशावर, *1/200*

ولہذا ہمارے علمائے کرام نے انہیں آیات واحادیث سے ثابت فرمایا کہ اگر تمام دن جنب رہا جب بھی روزہ کو کچھ مضر نہیں۔

مراقی الفلاح میں ہے: او اصبح جنباً ولو استمر علی حالتہ یوماً او ایاماً لقولہ تعالٰی فالئن باشروھن لاستلزام جواز المباشرۃ الی قبیل الفجر وقوع الغسل بعد ضرورۃ و قولہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم و انا اصبح جنباً و انا ارید الصیام واغتسل واصوم۔[1] یا کسی نے حالتِ جنب میں صبح کی اگرچہ وہ اسی حالت میں ایک دن یا کئی دن رہا، کیونکہ اللہ تعالٰی کا ارشاد گرامی "اب تم مباشرت کرسکتے ہو" اس بات کا مقتضی ہے کہ فجر سے تھوڑا سا پہلے تک مباشرت جائز ہو اور اس کے بعد غسل لازم ہو، اور حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا ارشاد گرامی "میں نے حالتِ جنابت میں صبح کی ہے اور میں روزے کا اراہ رکھتا ہوں میں غسل کروں گا اور روزہ رکھوں گا۔ (ت)

بحر الرائق میں ہے: لو اصبح جنباً لا یضرہ کذا فی المحیط[2]۔ اگر کسی نے حالتِ جنب میں صبح کی تو نقصان دہ نہیں، محیط میں اسی طرح ہے۔ (ت)

عالمگیریہ میں ہے: و من اصبح جنباً واحتلم فی النہار لم یضرہ کذا فی محیط السرخسی[3]۔ جس نے بحالتِ جنابت صبح کی یادن کو احتلام ہو گیا تو یہ اسے نقصان دہ نہیں۔ محیط سرخسی میں اسی طرح ہے (ت)

ہاں بوجہ ارتکابِ کبیرہ اس کی نورانیت بالصوم میں فرق آئے گا، نہ اس لیے کہ جنب تھا کہ جنابت سے نورانیت میں تفاوت آتا تو بحالِ جنابت صبح کرنے سے بھی آتا بلکہ اس لیے کہ نماز فوت کی، یہاں تک کہ اگر نماز بحالِ جنابت ہو سکتی تو دن بھر بلکہ مہینہ بھر جنب رہنے سے بھی حصولِ

نورانیت بصوم میں فرق نہ ہوتا، یہ فرق بوجہ فوتِ نماز ایسا ہو گا جیسے روزہ میں کسی کو ظلماً مارنے سے، مگر اس سے کوئی نہ کہے گا کہ نفسِ صوم میں کوئی نقص آگیا، گناہ کے سبب روزے میں خلل آنا ظاہر یہ کا مذہب فاسد ہے، اس کی نظیر ایسی ہے کہ کوئی ریشمیں

---

1 مراقی الفلاح علی حاشیہ الطحطاوی باب فی بیان مالایفسد الصوم نور محمد کتب خانہ کراچی ص ۳۶۲ 2 البحر الرائق، باب فی بیان مالایفسد الصوم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲۷۳/۲ 3 الفتاوی الہندیۃ الباب الثامن ما یفسد الصوم نورانی کتب خانہ پشاور ۲۰۰/۱

Volume 10 Fatawa Razawiyya

If one recites the Glorious Quran while wearing clothes, it causes no defect in the recitation nor any reduction in its reward. However, due to the darkness of sins, pure radiance is no longer present for him. He is included among those about whom He says:

| Arabic: 1 وَاٰخَرُوْنَ اعْتَرَفُوْا بِذُنُوْبِهِمْ خَلَطُوْا عَمَلًا صَالِحًا وَّ اٰخَرَ سَيِّئًا ط | Urdu Translation: And there are some others who admitted their sins and mixed one good deed and another bad one. (T) |

It is in Durr al-Mukhtar:

| Arabic: 2 قرأ القران و لم يعمل بموجبه يثاب على قرأته كمن يصلى و يعصى | Urdu Translation: If someone recited the Wise Quran but did not act upon its commands, he will receive a reward for the recitation, just as someone prays and also commits sin. (T) |

It is in Tahawi and Radd al-Muhtar:

| Arabic: 3 يثاب على قرأته وان كان يأثم بترك العمل فالثواب من جهة والاثم من اخرى | Urdu Translation: Reward will be gained for the recitation of the Quran even if one becomes a sinner due to abandoning the practice; so, reward is from one direction and sin is from the other direction. (T) |

There are many physical acts of worship for which purity (Taharah) is not a condition, such as recitation from memory and I’tikaf in the mosque, as Wudu is not necessary for these two. Also, looking at the Glorious Quran without touching it, looking at the honored Ka'bah from outside the mosque, looking at a scholar with respect, looking at parents with love, and shaking hands with a scholar—all these are physical acts of worship and are permissible even in a state of Janabah (ritual impurity). It is mentioned in a Hadith that the Master of the Universe (may Allah the Almighty's peace and blessings be upon him) says:

| Arabic: خمس من العبادة قلة الطعم والقعود فى المساجد والنظر الى الكعبة والنظر الى المصحف والنظر الى وجه العالم 4- رواه فى مسند الفردوس عن ابى هريرة رضى الله تعالى عنه - | Urdu Translation: Five things are from worship: eating less, sitting in the mosque, looking at the Ka'bah, looking at the Quran, and looking at the scholar's face. (It has been narrated in Musnad Firdous from Hazrat Abu Huraira (Allah be pleased with him). T) |

1 Quran 9:102 2 Ad-Durr al-Mukhtar, Kitab al-Hazr wal-Ibaha, Mujtabai Delhi, 2/248 3 Radd al-Muhtar, Kitab al-Hazr wal-Ibaha, Mustafa al-Babi Egypt, 5/281 4 Al-Firdous bi-Ma’thur al-Khitab, Hadith 2969, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah Beirut, 2/195

जिल्द दहम (खंड 10) फ़तावा रज़विया

यदि कोई कपड़े पहनकर महान कुरान का पाठ करता है, तो इससे न तो पाठ में कोई दोष होता है और न ही इसके पुण्य में कोई कमी आती है। हाँ, पापों के अंधेरे के कारण उसके लिए शुद्ध नूरानियत (दिव्य प्रकाश) नहीं रही। वह उन लोगों में शामिल हो गया जिनके बारे में वह (अल्लाह) फ़रमाता है:

| अरबी: 1 وَاٰخَرُوْنَ اعْتَرَفُوْا بِذُنُوْبِهِمْ خَلَطُوْا عَمَلًا صَالِحًا وَّ اٰخَرَ سَيِّئًا ط | उर्दू अनुवाद: और कुछ और हैं जो अपने गुनाहों के मुक़र (स्वीकार करने वाले) हुए और मिलाया एक काम अच्छा और दूसरा बुरा। (त) |

दुर्रे मुख्तार में है:

| अरबी: 2 قرأ القران و لم يعمل بموجبه يثاب على قرأته كمن يصلى و يعصى | उर्दू अनुवाद: किसी ने कुरान हकीम पढ़ा लेकिन उसके अहकाम (आदेशों) पर अमल न किया तो तिलावत (पाठ) पर सवाब (पुण्य) मिलेगा, जैसा कि कोई नमाज़ पढ़े और गुनाह भी करे। (त) |

तहावी और रद्दुल मुहतार में है:

| अरबी: 3 يثاب على قرأته وان كان يأثم بترك العمل فالثواب من جهة والاثم من اخرى | उर्दू अनुवाद: क़िरात-ए-कुरान पर सवाब मिलेगा अगरचे तर्कए-अमल (अमल छोड़ना) की वजह से गुनाहगार होगा, तो सवाब एक जहत (दिशा) से और गुनाह दूसरी जहत से है। (त) |

बहुत सी शारीरिक इबादतें ऐसी हैं जिनमें पाकी (तहारत) शर्त नहीं है, जैसे याद से पाठ करना और मस्जिद में एतिकाफ़ करना कि इन दोनों में वज़ू ज़रूरी नहीं है। और महान कुरान को बिना छुए देखना, काबा मुअज़्ज़मा को मस्जिद के बाहर से देखना, किसी आलिम (विद्वान) को सम्मान की दृष्टि से देखना, माता-पिता को प्रेम की दृष्टि से देखना, आलिम से मुसाफ़ा (हाथ मिलाना) करना—ये सब शारीरिक इबादतें हैं और जनाबत (अशुद्धि) की स्थिति में भी जायज़ हैं। हदीस में है कि सैयदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

| अरबी: خمس من العبادة قلة الطعم والقعود فى المساجد والنظر الى الكعبة والنظر الى المصحف والنظر الى وجه العالم 4- رواه فى مسند الفردوس عن ابى هريرة رضى الله تعالى عنه - | उर्दू अनुवाद: पाँच चीज़ें इबादत से हैं: कम खाना और मस्जिद में बैठना और काबा

को देखना और मुसहफ़ को देखना और आलिम का चेहरा देखना। (इसे मुसनद फ़िरदौस में हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया गया है। त) |

1 अल-कुरान 9/102 2 अद-दुरुल मुख्तार, किताबुल हज़्र वल इबाहत, मुजतबाई दिल्ली, 2/248 3 रद्दुल मुहतार, किताबुल हज़्र वल इबाहत, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 5/281 4 अल-फ़िरदौस बि-मासूरुल खिताब, हदीस 2969, दारुल कुतुब अल-इल्मिया बेरुत, 2/195

पृष्ठ 564/836

کپڑے پہن کر قرآن عظیم کی تلاوت کرے اس سے نہ تلاوت میں کوئی نقص ہوا نہ اُس کے ثواب میں کمی، ہاں ظلمتِ گناہ ملنے کے باعث اُس کے لیے نورانیت خالصہ نہ رہی۔ یہ ان میں داخل ہوا جن کو فرماتا ہے:

| عربی: وَاٰخَرُوْنَ اعْتَرَفُوْا بِذُنُوْبِهِمْ خَلَطُوْا عَمَلًا صَالِحًا وَّ اٰخَرَ سَيِّئًا ط 1 | اردو ترجمہ: اور کچھ اور ہیں جو اپنے گناہوں کے مقر ہوئے اور ملایا ایک کام اچھا اور دوسرا برا۔ (ت) |

درمختار میں ہے:

| عربی: قرأ القران و لم یعمل بموجبه یثاب علی قرأته کمن یصلی و یعصی 2 | اردو ترجمہ: کسی نے قرآن حکیم پڑھا لیکن اس کے احکام پر عمل نہ کیا تو تلاوت پر ثواب ملے گا، جیسا کہ کوئی نماز پڑھے اور گناہ کرے۔ (ت) |

طحاوی وردا لمحتار میں ہے:

| عربی: یثاب علی قرأته وان کان یأثم بترك العمل فالثواب من جهة والاثم من اخری 3 | اردو ترجمہ: قرأتِ قرآن پر ثواب ملے گا اگرچہ ترک عمل کی وجہ سے گناہ گار ہوگا، تو ثواب ایک جہت سے اور گناہ دوسری جہت سے ہے۔ (ت) |

بہت عبادات بدنیہ ہیں جن میں طہارت شرط نہیں، جیسے یادِ پر تلاوت اور مسجد میں اعتکاف کہ ان دونوں میں وضو ضرور نہیں اور قرآن عظیم کو بے چھوئے دیکھنا، کعبہ معظمہ پر بیرونِ مسجد سے نظر کرنا، عالم کو بنگاہِ تعظیم دیکھنا، ماں باپ کو بنظرِ محبت دیکھنا، عالم سے مصافحہ

کرنا، یہ سب عبادات بدنیہ ہیں اور سب بحالِ جنابت بھی روا ہیں۔ حدیث میں ہے حضور سیدِ عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

| عربی: خمس من العبادة قلة الطعم والقعود فی المساجد والنظر الی الکعبة والنظر الی المصحف والنظر الی وجه العالم 4- رواه فی مسند الفردوس عن ابی هریرة رضی الله تعالٰی عنه - | اردو ترجمہ: پانچ چیزیں عبادت سے ہیں کم کھانا اور مسجد میں بیٹھنا اور کعبہ کو دیکھنا اور مصحف کو دیکھنا اور عالم کا چہرہ دیکھنا۔ (اسے مسند فردوس میں حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا گیا ہے۔ ت) |

1 القرآن 9/ 102 2 الدرالمختار کتاب الحظر والاباحۃ مجتبائی دہلی 2/ 248 3 ردالمحتار کتاب الحظر والاباحۃ مصطفٰی البابی مصر 5/ 281 4 الفردوس بمأثور الخطاب حدیث 2969 دار الکتب العلمیہ بیروت 2/ 195

Volume Ten Fatawa Razawiya

It is narrated by Darqutni and others that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Five things are acts of worship: looking at the Mushaf (Quran), looking at the Kaaba, looking at one's parents, and looking into Zamzam - which washes away sins - and looking at the face of a scholar."

In the Sahihain (Bukhari and Muslim), it is narrated from Abu Huraira (may Allah be pleased with him): "The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) met me while I was in a state of ritual impurity (Janaba). He took my hand, and I walked with him until he sat down. Then I slipped away, went home, performed Ghusl, and returned while he was still sitting. He said, 'Where were you, O Abu Huraira?' I explained the situation to him. He replied, 'Subhan-Allah, O Abu Huraira! Verily, a believer does not become impure.' (T)"

And the most superior and exalted of all bodily acts of worship, for which neither minor nor major ritual purification is a condition, is the remembrance of Allah (Dhikr-e-Ilahi). It is evident that supplication (Dua) and remembrance (Dhikr) are worship; in fact, remembrance is the essence of all acts of worship. Allah Almighty said: "...and establish prayer for My remembrance"[3] (Establish prayer for My remembrance. T). And there is a Hadith from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him):

"Supplication (Dua) is the marrow (essence) of worship[4] - Narrated by Tirmidhi from Anas (may Allah be pleased with him) -"

Supplication is the essence of worship (Narrated by Tirmidhi from Anas, may Allah be pleased with him. T). And that purification is not a condition for them is manifest. The Mother of the Believers, Siddiqa (may Allah be pleased with her), says:

[1] Kanz al-Ummal, with reference to Darqutni, Hadith 43494, At-Turath al-Islami, Egypt, 5/880. [2] Sahih al-Bukhari, Book of Ghusl, Chapter: A Junub person going out and walking in the market, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/42. [3] Al-Quran 20/14. [4] Jami' al-Tirmidhi, Chapters on Supplications, Chapter on the Virtue of Supplication, Amin Company, Delhi, 2/173.

जिल्द दसवीं फ़तावा रज़विया

दारक़ुत्नी वग़ैरह की रिवायत यूँ है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: "पांच चीजें इबादत में से हैं: मुसहफ़ (कुरआन) को देखना, काबा को देखना, माँ-बाप को देखना, और ज़मज़म के अन्दर नज़र करना - जिससे गुनाह झड़ते हैं - और आलिम का चेहरा देखना।"

सहीहैन में अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से है: "रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से अचानक मुलाक़ात हो गई हालांकि मैं हालते-जनाबत (नापाकी की हालत) में था, तो आप ने मेरा हाथ पकड़ लिया। मैं आप के साथ चलता रहा यहाँ तक कि आप तशरीफ़ फ़रमा हुए तो मैं चुपके से निकल गया, रिहाइश गाह में जाकर ग़ुस्ल किया फिर वापस आया तो आप तशरीफ़ फ़रमा थे, फ़रमाया: ऐ अबू हुरैरा! कहाँ चले गए थे? मैंने सारी बात अर्ज़ की। तो आप ने फ़रमाया: सुब्हान-अल्लाह, अबू हुरैरा! मोमिन नापाक नहीं होता। (त)"

और अफ़ज़ल व आला तमाम इबादत-ए-बदनीया जिनके लिए तहारत-ए-सुग़रा (वज़ू) या कुबरा (ग़ुस्ल) कुछ शर्त नहीं, ज़िक्रेइलाही है और दुआ व ज़िक्र का इबादत होना बदीही (स्पष्ट) है बल्कि ज़िक्र ही असल जुमला इबादात है, अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "मेरी याद के लिए नमाज़ क़ायम रख"[3] (मेरी याद के लिए नमाज़ क़ायम रख। त) और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से हदीस है:

"दुआ इबादत का मग़्ज़ (सार) है[4] - इसे तिरमिज़ी ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है -"

दुआ इबादत का सार है (इसे तिरमिज़ी ने हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। त)। और उनके लिए तहारत शर्त न होना ज़ाहिर है, उम्मुल मोमिनीन सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अन्हा फ़रमाती हैं:

1 कन्ज़ अल-उम्माल, बहवाला दारक़ुत्नी हदीस 43494, अत-तुराथ अल-इस्लामी, मिस्र, 5/880। 2 सहीह अल-बुख़ारी, किताब अल-ग़ुस्ल, बाब अल-जुनुब यख़रुजु वा यमशी फ़िल-सूक़, क़दीमी कुतुब ख़ाना, कराची, 1/42। 3 अल-कुरआन 20/14। 4 जामिअ् अल-तिरमिज़ी, अबवाब अद-दअ्वात, मा जाआ फ़ी फ़ज़्ल अद-दुआ, अमीन कम्पनी, दिल्ली, 2/173।

पेज 565/836

دارقطنی وغیرہ کی روایت یوں ہے کہ فرماتے ہیں صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم: خمس من العبادة النظر الی المصحف والنظر الی الکعبة والنظر الی الوالدین والنظر في زمزم وھي تحط الخطایا والنظر في وجه العالم - پانچ چیزیں عبادت سے ہیں مصحف کو دیکھنا اور ماں باپ کو دیکھنا اور زمزم کے اندر نظر کرنا اور اس سے گناہ اترتے ہیں اور عالم کا چہرہ دیکھنا۔

صحیحین میں ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہے: لقیني رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیه وسلم وانا جنب فاخذ بیدي فمشیت معه حتی قعد فانسللت فاتیت الرحل فاغتسلت ثم جئت وھو قاعد فقال این کنت یا ابا ھریرة فقلت له فقال سبحان اللہ یا با ھریرة ان المؤمن لا یتنجس - رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے اچانک ملاقات ہوگئی حالانکہ میں حالتِ جنابت میں تھا تو آپ نے میرا ہاتھ پکڑ لیا میں آپ کے ساتھ چلتا رہا حتی کہ آپ تشریف فرما ہوئے تو میں چپکے سے نکل گیا رہائش گاہ میں جا کر غسل کیا پھر واپس آیا تو آپ تشریف فرما تھے، فرمایا: اے ابوہریرہ! کہاں چلے گئے تھے؟ میں نے ساری بات عرض کی۔ تو آپ نے فرمایا: سبحان اللہ، ابوہریرہ! مومن ناپاک نہیں ہوتا۔ (ت)

اور افضل و اعلٰی تمام عبادات بدنیہ جن کے لیے طہارت صغرٰی، نہ کبرٰی، کچھ شرط نہیں، ذکرِ الٰہی ہے اور دعا وز کر کا عبادت ہونا بدیہی ہے بلکہ ذکر ہی اصل جملہ عبادات ہے قال تعالٰی أَقِمِ الصَّلَوٰةَ لِذِكْرِي ۝ ۳ (میری یاد کے لیے نماز قائم رکھ ت) اور نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے حدیث ہے:

الدعاء مخ العبادة ۴ - رواہ الترمذی عن انس رضی اللہ تعالی عنہ - دعا مغز عبادت ہے (اسے ترمذی نے حضرت انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ت) اور ان کے لیے طہارت شرط نہ ہونا ظاہر، ام المؤمنین صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا فرماتی ہیں:

1 کنزالعمال، بحوالہ دارقطنی حدیث ۴۳۴۹۴ التراث الاسلامی مصر ۸۸۰/۵ 2 الصحیح للبخاری کتاب الغسل باب الجنب یخرج ویمشی فی السوق قدیمی کتب خانہ کراچی ۴۲/۱ 3 القرآن ۲۰ / ۱۴ 4 جامع الترمذی ابواب الدعوات ماجاء فی فضل الدعاء امین کمپنی دہلی ۱۷۳/۲

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Arabic Text]: The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) used to remember Allah at all times. [Urdu Translation]: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) used to perform the remembrance of Allah at all times. (Narrated by Muslim, Abu Dawood, Tirmidhi, and Ibn Majah. - T)

A person in a state of major ritual impurity (Junub) is permitted to recite Surah Al-Fatiha and Ayat al-Kursi with the intention of supplication and praise. This matter is well-known and recorded in books. And Allah knows best.

Issue 257: 26 Rajab 1319 AH Question: What do the scholars of religion say regarding keeping a voluntary (nafl) fast on Friday? A person kept a Friday fast; another told him that Friday is the Eid of believers and fasting on this day is disliked (makruh), and insisted until he made him break the fast after midday. He also showed him that it is written as makruh in the book 'Sirr al-Qulub'. In such a situation, is there any expiation (kaffarah) due on the one who broke the fast? And is there any blame on the one who caused it to be broken? Explain, and you shall be rewarded.

Answer: Keeping a Friday fast specifically with the intention that it is Friday, desiring it exclusively, is disliked (makruh). However, it is not the kind of dislike that makes breaking it mandatory. If the intention was not specifically for that reason, then there is no dislike at all. If that second person was unaware of the "disliked intention," then his objection was complete foolishness from the start, and breaking the fast is a grave audacity against the Shariah. Even if he were aware, merely stating the ruling would have sufficed; it was not permissible to make him break the fast, especially after midday—an authority over voluntary fasts which no one possesses except parents. Both the one who broke it and the one who caused it to be broken are sinners. The one who broke the fast must make it up (qada), but there is no expiation (kaffarah) at all. And Allah knows best.

1. Sunan Ibn Majah, Chapters on Purification, H.M. Saeed Company Karachi, p. 26.

फ़तावा रज़विया, खंड 10

[अरबी पाठ]: नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) हर समय अल्लाह का ज़िक्र करते थे। [उर्दू अनुवाद]: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) अपने सभी समयों में अल्लाह का ज़िक्र करते थे। (इसे मुस्लिम, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी और इब्न माजह ने रिवायत किया है। - त)

जुनुब (अशुद्ध अवस्था) वाले व्यक्ति को दुआ और प्रशंसा की नीयत से सूरह फातिहा और आयतुल कुरसी पढ़ने की अनुमति है। यह मसला बहुत प्रसिद्ध है और किताबों में दर्ज है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 257: 26 रजब 1319 हिजरी सवाल: दीन के उलमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि जुमे का नफ़्ल रोज़ा रखना कैसा है? एक व्यक्ति ने जुमे का रोज़ा रखा, दूसरे ने उससे कहा कि जुमा मोमिनों की ईद है, इस दिन रोज़ा रखना मकरूह है, और ज़िद करके दोपहर के बाद रोज़ा तुड़वा दिया और किताब 'सिर्रुल कुलूब' में मकरूह होना लिखा हुआ दिखाया। ऐसी स्थिति में रोज़ा तोड़ने वाले पर कफ़्फ़ारा लाज़िम है या नहीं? और तुड़वाने वाले पर कोई इल्ज़ाम है या नहीं? बयान फरमाएं, सवाब पायें।

जवाब: जुमे का रोज़ा विशेष रूप से इस नीयत से रखना कि आज जुमा है, मकरूह है, लेकिन वह ऐसी कराहत नहीं है कि रोज़ा तोड़ना लाज़िम हो। और अगर विशेष रूप से यह नीयत न थी, तो बिल्कुल भी कराहत नहीं है। उस दूसरे व्यक्ति को यदि 'मकरूह नीयत' की जानकारी नहीं थी, तो उसका ऐतराज़ करना ही सिरे से मूर्खता थी, और रोज़ा तुड़वा देना शरीयत पर बड़ी जुर्रत है। और अगर जानकारी थी भी, तब भी मसला बता देना काफी था, न कि रोज़ा तुड़वाना, और वह भी दोपहर के बाद, जिसका अधिकार नफ़्ल रोज़े में माता-पिता के अलावा किसी को नहीं है। तोड़ने वाला और तुड़वाने वाला दोनों गुनहगार हुए। तोड़ने वाले पर कज़ा लाज़िम है, कफ़्फ़ारा बिल्कुल नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

1. सुनन इब्न माजह, तहारत के अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची, पृष्ठ 26।

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

کان النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم یذکر اللہ علی کل احیانہ۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اپنے جمیع اوقات میں ذکر الٰہی فرماتے تھے (اسے مسلم ، ابوداؤد، ترمذی اور ابن ماجہ نے روایت کیا ہے۔ ت)

جنب کو بہ نیت دعا و ثنا الحمد و آیۃ الکرسی پڑھنے کی اجازت ہے والمسئلۃ مشھورۃ وفی الکتب مزبورۃ (یہ مسئلہ نہایت مشہور ہے اور کتب میں مسطور ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۲۵۷: ۲۶ رجب ۱۳۱۹ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جمعہ کا روزہ نفل رکھنا کیسا ہے۔ ایک شخص نے جمعہ کا روزہ رکھا دوسرے نے اس سے کہا جمعہ عید المومنین ہے روزہ رکھنا اس دن میں مکروہ ہے اور باصرار بعد دوپہر کے روزہ تڑوا دیا اور کتاب سرالقلوب میں مکروہ ہونا لکھا ہے دکھلایا ایسی صورت میں روزہ توڑنے والے کے ذمے کفارہ ہے یا نہیں؟ اور تڑوانے والے کو کوئی الزام ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: جمعہ کا روزہ خاص اس نیت سے کہ آج جمعہ ہے اس کا روزہ بالتخصیص چاہئے مکروہ ہے مگر نہ وہ کراہت کہ توڑنا لازم ہو، اور اگر خاص بہ نیت تخصیص نہ تھی تو اصلاً کراہت بھی نہیں، اُس دوسرے شخص کو اگر نیتِ مکروہہ پر اطلاع نہ تھی جب تو اعتراض ہی سرے سے حماقت ہوا، اور روزہ توڑ دینا شرع پر سخت جرات، اور اگر اطلاع بھی ہوئی جب بھی مسئلہ بتا دینا کافی نہ تھا کہ روزہ تڑوانا، اور وہ بھی بعد دوپہر کے، جس کا اختیار نفل روزے میں والدین کے سوا کسی کو نہیں، توڑنے والا اور تڑوانے والا دونوں گنہ گار ہوئے، توڑنے والے پر قضا لازم ہے کفارہ اصلاً نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

1 سنن ابن ماجہ ابواب الطہارۃ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۲۶

Volume 10 Fatawa Razviya

Statement of Suhoor and Iftar

Problem 258 to 260: From Pendra Road, Bilaspur district, Central Province, sent by Munshi Atiq Ahmad Sahib, 13 Dhu al-Qi'dah 1317 AH. What do the scholars of religion say regarding these issues: (1) "Now, have relations with them and seek what Allah has ordained for you. And eat and drink until the white thread becomes distinct to you from the black thread [of dawn]. Then complete the fast until the night."[1] Now you can have sexual intercourse, eat and drink until then, then complete the fast until night, and do not have sexual intercourse while you [are in i'tikaf in the mosques]. (T) " ...and do not have relations with them while you are staying in the mosques. These are the limits of Allah, so do not approach them."[2] Are these four conditional commands and the apparent prohibition of the end of the verse related to the noble verse "These are the limits of Allah, so do not approach them" (T) or not? If not, why was the plural form (Limits) used? If it is only related to the final prohibition, then how do "limits of Allah" apply to just one thing?

(2) As in "the white thread from the black thread"[3] (so that the white thread becomes clear from the black thread. T)

---

[1] Al-Quran 2/187 [2] Al-Quran 2/187 [3] Al-Quran 2/187

खंड 10 फ़तावा रज़विया

सहरी और इफ्तार का बयान

मसाला 258 से 260: पेंड्रा रोड जिला बिलासपुर मुल्क-ए-मुतवस्सित (मध्य प्रांत) से मुंशी अतीक अहमद साहब द्वारा प्रेषित, 13 ज़ुल-क़ादा 1317 हिजरी। धर्म के विद्वान इन मसलों में क्या फरमाते हैं: (1) "अब तुम उनके साथ समागम (मबाशरत) कर सकते हो, और उसे तलाश करो जो अल्लाह ने तुम्हारे लिए लिख दिया है। और खाओ और पियो जब तक कि सुबह की सफेद धागा काले धागे से तुम्हारे लिए स्पष्ट न हो जाए। फिर रात तक रोज़ा पूरा करो।"[1] अब तुम मबाशरत कर सकते हो, खाओ पियो, यहाँ तक, फिर रोज़ा को रात तक पूरा करो, और न मबाशरत करो जबकि तुम [मस्जिदों में एतिकाफ़ में] हो। (त) " ...और उनके साथ मबाशरत न करो जबकि तुम मस्जिदों में एतिकाफ़ में हो। ये अल्लाह की सीमाएँ हैं, इसलिए उनके करीब न जाओ।"[2] क्या ये चार सशर्त आदेश और अंत में आयत में ज़ाहिर होने वाली मनाही, आयत करीमा "ये अल्लाह की सीमाएँ हैं, इसलिए उनके करीब न जाओ" (त) से संबंधित है या नहीं? यदि नहीं, तो जमा (बहुवचन) का सिग़ा (शब्द रूप) क्यों इस्तेमाल किया गया? यदि यह केवल अंतिम मनाही से संबंधित है, तो 'हुदूद-अल्लाह' (अल्लाह की सीमाएँ) किस तरह एक पर लागू होती हैं?

(2) जैसा कि "सफेद धागा काले धागे से"[3] (सफेद धागा काले धागे से स्पष्ट हो जाए। त)

---

[1] अल-कुरान 2/187 [2] अल-कुरान 2/187 [3] अल-कुरान 2/187

पृष्ठ 568/836

سحرو افطار کا بیان

مسئلہ ۲۶۰ تا ۲۵۸: از پنڈرا روڈ ضلع بلاسپور ملک متوسط مرسلہ منشی عتیق احمد صاحب ۱۳ ذیقعدہ ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین ان مسائل میں: (۱) فَالْآنَ بَاشِرُوهُنَّ وَابْتَغُوا مَا كَتَبَ اللَّهُ لَكُمْ وَكُلُوا وَاشْرَبُوا حَتَّى يَتَبَيَّنَ لَكُمُ الْخَيْطُ الْأَبْيَضُ مِنَ الْخَيْطِ الْأَسْوَدِ مِنَ الْفَجْرِ ثُمَّ أَتِمُّوا الصِّيَامَ إِلَى اللَّيْلِ ۱ اب تم مباشرت کر سکتے ہو، کھاؤ پیو، یہاں تک، پھر روزہ کو رات تک پورا کرو، اور نہ مباشرت کرو جبکہ تم۔(ت) وَلَا تُبَاشِرُوهُنَّ وَأَنْتُمْ عَاكِفُونَ فِي الْمَسَاجِدِ ۗ تِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ فَلَا تَقْرَبُوهَا ۲ ان چاروں اوامر مشروطہ و نہی ظاہر آیہ آخر، آیہ کریمہ تِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ فَلَا تَقْرَبُوهَا (یہ اللہ کی حدود ہیں ان کے قریب نہ جاؤ۔ ت) سے متعلق ہے یا نہیں، اگر نہیں ہے تو جمع کا صیغہ کیوں فرمایا گیا ، اگر صرف نہی آخر سے متعلق ہے تو حدود اللہ کس طرح ایک پر عائد۔

(۲) جیسا کہ الْخَيْطُ الْأَبْيَضُ مِنَ الْخَيْطِ الْأَسْوَدِ ۳ (سفید دھاگا کالے دھاگے سے واضح ہو جائے۔ ت)

---

۱ القرآن ۲ / ۱۸۷ ۲ القرآن ۲ / ۱۸۷ ۳ القرآن ۲ / ۱۸۷

Fatawa Razawiya Volume 10

...some of the Companions (may Allah be pleased with them) understood it to mean literal threads, then "from the dawn (until it breaks - Translator)" was revealed. Similarly, was the revelation of "these are the limits set by Allah (Translator)" also like this, where some continued to eat until the morning brightness appeared, causing concern for the integrity of the fast, and thus "these are the limits set by Allah" was revealed after these four rulings? Or even after this verse was revealed, did the practice of eating until dawn breaks continue as a general rule, with everyone usually eating suhoor? (3) Was the practice of the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him) eating suhoor very close to dawn continuous or occasional, as reported in some hadiths? And if it was a continuous practice, did it remain so until the end? Similarly, is permission generally given to everyone until the very last moment by design, or only in the case where someone happens to reach the last moment at that time? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: (1) It refers to all the aforementioned rulings. In Ma'alim it is stated:

These are the limits of Allah, meaning those rulings which He has mentioned regarding fasting and Itikaf (Translator).

In Baydawi it is stated: "i.e., the rulings that have been mentioned previously (Translator)." And Allah knows best. (2) The revelation of this verse was not like that of "from the dawn." Delaying suhoor is recommended (mustahabb) and Sunnah. In authentic hadiths, the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) commanded the hastening of breaking the fast (iftar) and the delaying of the pre-dawn meal (suhoor), and said: "My Ummah will always remain in goodness as long as they hasten the iftar and delay the suhoor." However, "hastening the iftar" means that once one is certain of sunset, they should break the fast immediately, not letting doubt or misgivings interfere, nor waiting until a part of the night has passed like the Rafidis without reason. Such haste that there is still doubt about sunset is forbidden and invalidates the fast. And "delaying suhoor" means to eat until the break of dawn...

1. Ma'alim al-Tanzil with al-Khazin, under the verse 'Tilka hududu Allah etc.', Mustafa al-Babi, Egypt, 1/165.
2. Baydawi (Anwar al-Tanzil) on the margin of the Holy Quran, Mustafa al-Babi, Egypt, 1/21.

3. Quran 2/187.
4. Sahih Bukhari, chapter on hastening iftar, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/263; Musnad Ahmad ibn Hanbal, narrated from Abu Dharr, Dar al-Fikr, Beirut, 5/175.

फ़तावा रज़विया खंड 10

...कुछ सहाबा (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने इसे वास्तविक धागे समझ लिया था, फिर "फ़ज्र (सवेरा होने) तक - अनुवादक" नाज़िल हुआ। क्या "तिल्का हुदूदुल्लाह (ये अल्लाह की सीमाएँ हैं - अनुवादक)" का नुज़ूल भी इसी तरह हुआ था, जबकि कुछ लोग सुबह की सफ़ेदी तक खाते रहे जिससे रोज़े में ख़लल आने का अंदेशा हुआ और इन चार अहकाम के बाद "तिल्का हुदूदुल्लाह" नाज़िल हुई? या इस आयत के नाज़िल होने पर भी सुबह ज़ाहिर होने तक खाने का मामूल लगातार जारी रहा और आमतौर पर हर कोई सहरी खाता रहा। (3) हुज़ूर सरवर-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का सहरी खाना बिल्कुल सुबह के करीब होना स्थायी (दवामी) था या इत्तिफ़ाकी (कभी-कभार), जैसा कि कुछ हदीसों में वर्णित है? और अगर यह स्थायी मामूल था, तो क्या यह अंत तक रहा? और क्या इसी तरह आमतौर पर सबको आखिरी वक्त तक की इजाज़त जानबूझकर (बिल-कस्द) है या उस हालत में कि जब किसी को आखिरी वक्त ही मिला हो? बयान फरमाएँ, आपको अज्र मिलेगा।

जवाब: (1) यह तमाम ज़िक्र किए गए अहकाम की तरफ इशारा है, 'मआलिम' में है:

तिल्का हुदूदुल्लाह यानी ये वो अहकाम हैं जिनका ज़िक्र उसने रोज़े और एतिकाफ के बारे में फ़रमाया है (अनुवादक)।

बैज़ावी में है: "यानी वो अहकाम जो पीछे ज़िक्र हुए हैं (अनुवादक)।" वल्लाहु तआला आलम। (2) इस आयत का नुज़ूल "मिनल फ़ज्र" की तरह नहीं है। सहरी की ताख़ीर (देरी) मुस्तहब और सुन्नत है। सहीह अहादीस में नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने इफ़्तार में जल्दी करने और सहूर (सहरी) में देरी करने का हुक्म फ़रमाया और इरशाद हुआ: "मेरी उम्मत हमेशा ख़ैर (भलाई) पर रहेगी जब तक वे इफ़्तार में जल्दी और सहरी में देरी करेंगे।" मगर इफ़्तार में जल्दी करने का मतलब यह है कि जब सूर्यास्त का यक़ीन हो जाए तो फ़ौरन इफ़्तार कर ले, वहम और वसवसे को दखल न दे और न ही बिना किसी वजह के राफ़िज़ियों की तरह रात का एक हिस्सा दाख़िल होने का इंतज़ार करे। ऐसी जल्दी कि अभी सूर्यास्त में शक हो, हराम और रोज़ा तोड़ने वाली है। और सहरी की ताख़ीर का मतलब यह है कि उस वक्त तक खाए जब तक फ़ज्र का उदय (तुलू)...

1. मआलिम अत-तन्ज़ील मअ अल-ख़ाज़िन, आयत 'तिल्का हुदूदुल्लाह' आदि के तहत, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/165।

2. बैज़ावी (अनवार अत-तन्ज़ील) अली हाशिया अल-क़ुरआन अल-करीम, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/21।
3. अल-क़ुरआन 2/187।
4. सहीह बुख़ारी, बाब तअजील अल-इफ़्तार, क़दीमी कुतुब ख़ाना, कराची, 1/263; मुसनद अहमद बिन हंबल, अबू ज़र से वर्णित, दार अल-फ़िक्र, बैरूत, 5/175।

میں بعض صحابہ رضی اللہ عنہم نے حقیقی تاگے کو سمجھا تو مِنَ الْفَجْرِ (فطر ہونے تک۔ت) نازل ہوا، تلک حدود اللہ (یہ اللہ کی حدود ہیں۔ت) کا نزول بھی کیا اسی طرح ہوا ہے جبکہ بعض نے سفید ہ صبح تک کھایا ہو جس سے اندیشہ روزے میں خلل ہونے کے باعث ان احکامِ اربعہ کے بعد تلک حدود اللہ نازل ہوئی ہو یا یہ آیت نازل ہونے پر بھی صبح ظاہر ہونے تک کھانے کا معمول برابر جاری رہا عموماً ہر ایک سحری کھاتا رہا۔ (۳) حضور سرور عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا سحری کھانا بالکل قریبِ صبح کے دوامی تھا یا اتفاقی، جیسا کہ بعض حدیثوں میں مروی ہے اور اگر معمول دوامی تھا تو کیا آخر تک رہا اور اسی طرح عموماً سب کو اجازتِ تا آخر وقت بالقصہ ہے یا اس حالت میں کہ آخر وقت ہی اس کو ملا ہو تب۔ بینوا توجروا الجواب: (۱) سب احکامِ مذکورہ کی طرف اشارہ ہے، معالم میں ہے:

تلک حدود اللہ یعنی تلک الاحکام التی ذکرھا فی الصیام والاعتکاف۱۔ | یہ اللہ کی حدود ہیں یعنی یہ وہ احکام ہیں جن کا ذکر اس نے روزے اور اعتکاف کے بارے میں فرمایا ہے (ت)

بیضاوی میں ہے: ای الاحکام التی ذکرت۲ (یعنی وہ احکام جو پیچھے ذکر ہوئے ہیں۔ت) واللہ تعالٰی اعلم (۲) اس آیت کا نزول مِنَ الْفَجْرِ۳ کے طور پر نہیں سحری کی تاخیر مستحب و مسنون ہے، احادیث صحیحہ میں نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے تعجیلِ افطار و تاخیرِ سحور کا حکم فرمایا اور ارشاد ہوا: "میری امت ہمیشہ خیر سے رہے گی جب تک افطار میں جلدی اور سحری میں دیر کرے گی۔"۴ مگر تعجیلِ افطار کے معنی یہ ہیں کہ جب غروبِ آفتاب پر یقین ہو جائے فوراً افطار کرلے وہم و وسوسہ کو دخل نہ دے نہ بلاوجہ رافضیوں کی طرح شب کا ایک حصہ داخل ہونے کا

انتظار کرے، ایسی جلدی کہ ہنوز غروب میں شک ہو حرام و مفسدِ صوم۔ اور تاخیرِ سحری کے معنی یہ ہیں کہ اُس وقت تک کھائے جب تک طلوعِ فجر

1 معالم التنزیل مع الخازن تحت آیت تلک حدود اللہ الخ مصطفی البابی مصر ۱ / ۱۶۵ 2 بیضاوی (انوار التنزیل) علی حاشیۃ القرآن الکریم مصطفی البابی مصر ۱ / ۲۱ 3 القرآن ۲ / ۱۸۷ 4 صحیح بخاری باب تعجیل الافطار قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۲۶۳، مسند احمد بن حنبل مروی از ابوذر دار الفکر بیروت ۵ / ۱۷۵

Fatawa Razawiyya, Volume 10

...does not have a predominant opinion. Contrary to Iftar, where in a state of doubt, the fast is lost. The reason for this difference is that a general principle of the pure Sharia is: 'Certainty is not dispelled by doubt' (Al-Yaqinu la yazulu bish-shakk). Until there was doubt about the dawn of Fajr at night, there was certainty of the remaining night. Even with the occurrence of doubt, this certainty will not be dispelled, and the ruling of the night will remain until there is a predominant opinion of the dawn of Fajr. Therefore, it was said: 'until the white thread becomes clear to you' (Quran 2:187), meaning until the white thread is well-manifest for you. And in Iftar, until sunset became doubtful, there was certainty of the day, so even in a state of doubt, that same certainty is held, and the day will be considered as remaining, and at that time, breaking the fast would be considered breaking it during the day. This has been the practice since the time of the Companions (may Allah be pleased with them) based on these principles.

(3) Delaying Suhur in the aforementioned sense is absolutely recommended (mustahab) and a Sunnah; it is not specific to the situation where eyes open late. This delay was the continuous practice of the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him). Yes, no one's knowledge can be equal to that of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). He is the master of revelation, the possessor of the knowledge given to him of the first and the last (a compendium of the knowledge of all predecessors and successors - T), and the one of whom it is said: 'And [He] taught you what you did not know, and the favor of Allah upon you has been great' (Quran 4:113). There are moments of reality where the common boundary is just an instant; distinguishing them truly is beyond human power. The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) was aware of them, so occasionally such a delay occurred that others were not capable of it. One night, after eating Suhur, he started the morning prayer after an interval only as long as it takes a person to recite fifty verses. In such matters, the ability to follow is not possible; for us, the ruling is the same as mentioned in the answer to the second question. And Allah knows best.

Problem 261: From Old City, Bareilly, 7 Rajab 1320 AH. What do the scholars of religion say regarding the famous issue that the night in Ramadan Sharif should be divided into seven parts, and when one part of the night remains, one should stop eating and drinking? Is this rule correct or not? Explain and you will be rewarded.

Answer: This rule is not correct at all; rather, a part of the night still remains when dawn breaks, and sometimes the seventh...

1 Al-Quran 4/113

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसम

...का प्रबल विचार (ज़न-ए-ग़ालिब) न हो। इफ़्तार के विपरीत कि वहां संदेह की स्थिति में रोज़ा ज़ाया हो जाता है, अंतर का कारण यह है कि मुतह्र शरीअत का एक सामान्य नियम है: "निश्चितता संदेह से समाप्त नहीं होती" (अलयक़ीन ला यज़ूलु बिश्शक्क)। जब तक रात में सुबह की सफ़ेदी (तुलू-ए-फ़ज्र) के बारे में संदेह नहीं हुआ था, तक तक रात के बने रहने का यक़ीन था। संदेह होने पर भी यह यक़ीन समाप्त नहीं होगा और रात ही का हुक्म रहेगा जब तक कि तुलू-ए-फ़ज्र का प्रबल विचार न हो जाए। इसीलिए कहा गया: "यहाँ तक कि तुम्हारे लिए सफ़ेद धागा स्पष्ट हो जाए" (क़ुरान २:१८७), यानी यहाँ तक कि सफ़ेद धागा तुम्हारे लिए अच्छी तरह ज़ाहिर हो जाए। और इफ़्तार में जब तक सूर्यास्त संदिग्ध नहीं हुआ था, तब तक दिन का यक़ीन था, तो संदेह की स्थिति में भी वही यक़ीन हासिल होगा, और दिन को शेष समझा जाएगा, और उस समय रोज़ा खोलना दिन में खोलना माना जाएगा। सहाबा किराम (रज़ियल्लाहु अन्हुम) के ज़माने से अब तक इन्हीं नियमों पर अमल रहा है।

(३) उपर्युक्त अर्थ में सहरी में देरी करना पूर्णतः मुस्तहब (पसंदीदा) और सुन्नत है; यह केवल उसी स्थिति की विशेषता नहीं है कि आख़िरी वक़्त आँख खुली हो। हुज़ूर सरवर-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की यही निरंतर आदत थी। हाँ, हुज़ूर अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के बराबर किसी का ज्ञान नहीं हो सकता, हुज़ूर वह्य के स्वामी, अव्वलीन और आख़रीन के ज्ञान के ज्ञाता (तमाम पिछले और बाद वाले लोगों के ज्ञान के संग्रहकर्ता - त) और "अल्लाह ने आपको वह सब सिखाया जो आप नहीं जानते थे और आप पर अल्लाह का बड़ा फ़ज़ल है" (क़ुरान ४:११३) के स्वामी हैं। वे क्षण वास्तविकता के हैं जिनमें उभयनिष्ठ सीमा केवल एक पल की होती है, उनकी वास्तविक पहचान मानव शक्ति से बाहर है। हुज़ूर अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) उससे अवगत थे, इसलिए कभी-कभी ऐसी देरी हुई जिसके लिए दूसरा कोई सक्षम नहीं है। एक रात सहरी खाने के बाद केवल इतने अंतराल पर कि व्यक्ति पचास आयतें पढ़ ले, सुबह की नमाज़ शुरू कर दी। ऐसे मामलों में अनुसरण करने की शक्ति नहीं है, हमारे लिए वही हुक्म है जो दूसरे प्रश्न के उत्तर में वर्णित हुआ। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला २६१: पुराना शहर, बरेली, ७ रजब १३२० हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि यह जो मसला मशहूर है कि रमज़ान शरीफ़ में रात के सात हिस्से किए जाएँ और जब रात का एक हिस्सा बाकी रहे तो खाना-पीना छोड़ दिया जाए, क्या यह मसला सही है या नहीं? बयान फरमाएं, आपको सवाब मिलेगा।

अल-जवाब: यह नियम बिल्कुल सही नहीं है, बल्कि रात का हिस्सा अभी बाकी रहता है कि सुबह हो जाती है और कभी सातवाँ...

१ अल-क़ुरान ४/११३

पृष्ठ ५७० / ८३६

کا ظن غالب نہ ہو۔ بخلاف افطار کے کہ وہاں بحالت شک روزہ جاتا رہتا ہے، وجہ فرق یہ ہے کہ شرع مطہر کا قاعدہ کلیہ ہے کہ الیقین لایزول بالشك یعنی شک سے یقین زائل نہیں ہوتا۔ رات میں طلوع فجر کا جب تک شک نہ ہوا تھا بقائے لیل پر یقین تھا وقوع شک سے بھی یہ یقین زائل نہ ہوگا اور رات ہی کا حکم رہے گا جب تک طلوع فجر کا ظن غالب نہ ہو۔ و لہذا ارشاد فرمایا : حَتّٰی یَتَبَیَّنَ لَکُمُ الْخَیْطُ الْأَبْیَضُ یہاں تک کہ سفید ڈور تمہارے لیے خوب ظاہر ہو جائے۔ اور افطار میں غروب شمس جب تک مشکوک نہ ہوا تھا دن پر یقین تھا تو حالت شک میں بھی وہی یقین حاصل، اور دن باقی سمجھا جائے گا اور اُس وقت روزہ کھولنا دن میں کھولنا ٹھہرے گا، زمانہ صحابہ کرام رضی اللہ تعالی عنہم سے اب تک انہیں قواعد پر عمل رہا ہے۔

(۳) تاخیر سحور بمعنی مذکور مطلقاً مستحب و مسنون ہے، صرف اسی حالت کی خصوصیت نہیں کہ اخیر وقت آنکھ کھلی ہو، عادتِ مستمرہ حضور سرور عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی یہی تاخیر تھی ہاں حضور اقدس صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کے برابر کسی کا علم نہیں ہوسکتا، حضور صاحب وحی، صاحب علمتہ علم الاولین والاخرین (تمام اولین و آخرین کے علوم کے جامع۔ ت) و صاحب عَلَّمَكَ مَا لَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ وَكَانَ فَضْلُ اللَّهِ عَلَيْكَ عَظِيمًا (اللہ نے تعلیم دی ہر اس کی جو آپ نہ جانتے تھے اور اللہ کا آپ پر فضل عظیم ہے۔ ت) ہیں اوقات حقیقت جن میں حد مشترک صرف ایک آن ہوتی ہے، اُن کا امتیاز حقیقی طاقت بشری سے خارج ہے، حضور اقدس صلی اللہ تعالی علیہ وسلم اُس پر مطلع تھے، لہذا احیانا ایسی تاخیر واقع ہوئی کہ دوسرا اس پر قادر نہیں، ایک شب سحری تناول فرمانے کے بعد صرف اتنے وقفہ پر کہ آدمی پچاس آیات پڑھ لے نماز صبح شروع

فرمادی۔ ایسے امور میں اتباع کی قدرت نہیں، ہمارے لیے وہی حکم ہے جو جواب سوال ثانی میں مذکور ہوا۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۲۶۱: از شہر کہنہ، بریلی ۷ رجب ۱۳۲۰ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ یہ مسئلہ جو مشہور ہے کہ رمضان شریف میں رات کے سات حصے کئے جائیں، جب ایک حصہ رات کا باقی رہے کھانا پینا ترک کردے، آیا یہ مسئلہ صحیح ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: یہ قاعدہ ہرگز صحیح نہیں بلکہ رات کا ہنوز حصہ باقی رہتا ہے کہ صبح ہو جاتی ہے اور کبھی ساتواں

1 القرآن ۴ / ۱۱۳

...eighth, ninth, until sometimes it remains only about a tenth part; at that time it becomes morning. At the beginnings (ru'oos) of the zodiac signs, we provide an approximate chart for Bareilly and cities with similar latitudes, from which the details of this summary will be clear. The period from the alignment of the sun's center with the true horizon in the west, until the alignment of the center in the east, is the 'astronomical night'. And from the passing of the sun's last edge below the sensory horizon (in the second sense) in the west, until the rising of the sun's first edge from the same horizon in the east, is the 'customary night'. In its calculation, minutes of refraction from both sides are also subtracted from the astronomical night. And the period from the aforementioned sensory horizon without the sun's edge passing until the dawn of true morning (Fajr Sadiq) is the 'Shariah night'. In the calculation of Fajr as well, the minutes of refraction on the side of sunrise are excluded from the remaining time. This chart is the humble servant's (faqir's) own invention, of which this is the summary statement, and anyone with some understanding of this art can be told the details as well. Success is with Allah, and praise and favor belong to Allah, and Allah Subhaanahu wa Ta'ala knows best.

[Table Header: Solar Date | Head of Zodiac | ... astronomical data ... | Estimated Proportion] [Row 1] 30 March | Aries (Hamal) | ... | 40/357 Ninth part [Row 2] 22 April | Taurus (Sawr) | ... | 21/166 Eighth part [Row 3] 22 May | Gemini (Jauza) | ... | 91/622 Seventh part [Row 4] 22 June | Cancer (Sartan) | ... | 16/101 Sixth part, slightly less [Row 5] 22 July | Leo (Asad) | ... | 91/622 Seventh part [Row 6] 22 August | Virgo (Sunbulah) | ... | 83/662 Eighth part [Row 7] 23 September | Libra (Meezan) | ... | 79/712 Ninth part [Row 8] 22 October | Scorpio (Aqrab) | ... | 79/762 Two parts out of nineteen [Row 9] 22 November | Sagittarius (Qaws) | ... | 41/401 Tenth part [Row 10] 22 December | Capricorn (Jadi) | ... | 16/164 Tenth part [Row 11] 22 January | Aquarius (Dalw) | ... | 41/401 Tenth part [Row 12] 21 February | Pisces (Hut) | ... | 79/762 Two parts out of nineteen

Footnote: Ah: That is, the ninth part, slightly less.

...आठवाँ, नवाँ, यहाँ तक कि कभी सिर्फ़ दसवाँ हिस्सा लगभग रहता है, उस समय सुबह होती है। राशियों के आरम्भ (रुऊस) के लिए हम बरेली और उसके समान अक्षांश वाले शहरों के लिए एक अनुमानित चार्ट दे रहे हैं जिससे इस संक्षिप्त विवरण का विस्तार स्पष्ट हो जाएगा। पश्चिमी दिशा में वास्तविक क्षितिज पर सूर्य के केंद्र के मिलन से लेकर पूर्वी दिशा में केंद्र के मिलन तक 'खगोलीय रात्रि' (astronomical night) है। और पश्चिमी दिशा में संवेदी क्षितिज (दूसरे अर्थ में) से सूर्य के अंतिम किनारे के गुजरने से लेकर पूर्वी दिशा में उसी क्षितिज से सूर्य के पहले किनारे के उदय होने तक 'लोकप्रिय रात्रि' (customary night) है। इसकी गणना में दोनों तरफ के अपवर्तन के मिनट (minutes of refraction) भी खगोलीय रात्रि से घटा दिए जाते हैं। और उक्त संवेदी क्षितिज से सूर्य के किनारे के गुजरे बिना सुबह-ए-सादिक (सच्ची भोर) तक 'शरीयत की रात्रि' है। फज्र की गणना में भी सूर्योदय की ओर के अपवर्तन के मिनट शेष समय से अलग रखे जाते हैं। यह चार्ट स्वयं इस फ़क़ीर (विनम्र सेवक) का आविष्कार है जिसका यह संक्षिप्त विवरण है और जो व्यक्ति इस कला में कुछ ज्ञान रखता है उसे विस्तार से भी बताया जा सकता है। सफलता अल्लाह की ओर से है, और प्रशंसा तथा अनुग्रह अल्लाह के लिए है, और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

[तालिका शीर्षक: सौर तिथि | राशि का सिरा | ... खगोलीय डेटा ... | अनुमानित अनुपात] [पंक्ति १] ३० मार्च | मेष (हम्ल) | ... | ४०/३५७ नवाँ हिस्सा [पंक्ति २] २२ अप्रैल | वृष (सौर) | ... | २१/१६६ आठवाँ हिस्सा [पंक्ति ३] २२ मई | मिथुन (जौज़ा) | ... | ९१/६२२ सातवाँ हिस्सा [पंक्ति ४] २२ जून | कर्क(सरतान) | ... | १६/१०१ छठा हिस्सा, थोड़ा कम [पंक्ति ५] २२ जुलाई | सिंह (असद) | ... | ९१/६२२ सातवाँ हिस्सा [पंक्ति ६] २२ अगस्त | कन्या (सुम्बुला) | ... | ८३/६६२ आठवाँ हिस्सा [पंक्ति ७] २३ सितंबर | तुला (मीज़ान) | ... | ७९/७१२ नवाँ हिस्सा [पंक्ति ८] २२ अक्टूबर | वृश्चिक (अक़रब) | ... | ७९/७६२ उन्नीस हिस्सों में से दो हिस्से [पंक्ति ९] २२ नवंबर | धनु (क़ौस) | ... | ४१/४०१ दसवाँ हिस्सा [पंक्ति १०] २२ दिसंबर | मकर (जदी) | ... | १६/१६४ दसवाँ हिस्सा [पंक्ति ११] २२ जनवरी | कुंभ (दल्व) | ... | ४१/४०१ दसवाँ हिस्सा [पंक्ति १२] २१ फरवरी | मीन (हूत) | ... | ७९/७६२ उन्नीस हिस्सों में से दो हिस्से

पाद-टिप्पणी: अह: यानी नवाँ हिस्सा थोड़ा कम।

पृष्ठ ८३६ में से ५७१

آٹھواں، نواں، یہاں تک کہ کبھی صرف دسواں حصہ تقریباً رہتا ہے اُس وقت صبح ہوتی ہے ہم رُوس ، بروج کے لیے بریلی اور اس کے موافق العرض شہروں میں ایک تقریبی نقشہ دیتے ہیں جس سے اس اجمال کی تفصیل ظاہر ہوگی ، افق حقیقی پر انطباقِ مرکزِ شمس، جانب مغرب سے، اُسی پر انطباق مرکز، جانب شرق تک شب نجومی ہے اور افق حسی بالمعنی الثانی سے تجاوز کنارہِ آخرین شمس، جانب مغرب سے اُسی افق سے ارتفاع کنارہ اولین شمس، جانب شرق تک شب عرفی ہے اس کی تحصیل میں دونوں جانب کے دقائق انکسار بھی شب نجومی سے ساقط کئے جاتے ہیں اور افق حسی مذکور بے تجاوز کنارہِ آفرین شمس سے طلوع فجر صادق تک شب شرعی ہے تحصیل فجر میں بھی جانب طلوع شمس کے دقائق انکسار وقت باقی سے مستثنیٰ ہیں۔ یہ نقشہ خود فقیر کا ایجاد ہے جس کا اجمالی بیان یہ ہوا اور جو شخص اس فن میں کچھ ادراک رکھتا ہو اسے تفصیل بھی بتائی جاسکتی ہے، وباللہ التوفیق واللہ الحمد والمنۃ واللہ سبحانہ وتعالیٰ اعلم۔

[جدول کے عنوانات: تاریخ شمسی | راس برج | ... حسابی کالم ... | تخمینی نسبت] [سطر ۱] ۳۰ مارچ | حمل | ... | ۴۰/۳۵۷ نواں حصہ [سطر ۲] ۲۲ اپریل | ثور | ... | ۲۱/۱۶۶ آٹھواں حصہ [سطر ۳] ۲۲ مئی | جوزا | ... | ۹۱/۶۲۲ ساتواں حصہ [سطر ۴] ۲۲ جون | سرطان | ... | ۱۶/۱۰۱ چھٹا حصہ قدرے کم [سطر ۵] ۲۲ جولائی | اسد | ... | ۹۱/۶۲۲ ساتواں حصہ [سطر ۶] ۲۲ اگست | سنبلہ | ... | ۸۳/۶۶۲ آٹھواں حصہ [سطر ۷] ۲۳ ستمبر | میزان | ... | ۷۹/۷۱۲ نواں حصہ [سطر ۸] ۲۲ اکتوبر | عقرب | ... | ۷۹/۷۶۲ انیس حصوں سے دو حصے [سطر ۹] ۲۲ نومبر | قوس | ... | ۴۱/۴۰۱ دسواں حصہ [سطر ۱۰] ۲۲ دسمبر | جدی | ... |

۱۶/۱۶۴ دسواں حصہ [سطر ۱۱] ۲۲ جنوری | دلو | ... | ۴۱/۴۰۱ دسواں حصہ [سطر ۱۲] ۲۱ فروری | حوت | ... | ۷۹/۷۶۲ انیس حصوں سے دو حصے

حاشیہ: عہ: یعنی نواں حصہ قدرے کم

صفحہ ۵۷۱ از ۸۳۶

This is a brief table:

Date	Zodiac Sign	Ratio of morning and night (conventional)	Zodiac Sign	Date
22 June	Cancer	A bit less than a sixth	Cancer	22 June
23 July	Leo	A bit more than a seventh	Gemini	22 May
24 August	Virgo	An eighth	Taurus	21 April
24 September	Libra	A ninth	Aries	20 March
24 October	Scorpio	A bit less than a ninth	Pisces	20 February
23 November	Sagittarius	A bit more than a tenth	Aquarius	21 January
22 December	Capricorn	A bit less than a tenth	Capricorn	22 December

From these statements, it is clear that just as the morning of the Summer Solstice (Ras al-Sartan) is the largest among all mornings of the year in terms of ratio—no other morning being such a large part of its night—it is also the longest in duration among all mornings. Conversely, although the morning of the Winter Solstice (Ras al-Jaddi) has the smallest ratio among all mornings—no other morning being such a small part of its night—it is not the shortest in duration. Rather, it is the longest dawn in the southern hemisphere. The shortest dawn of the year is at the Equinoxes, but it does not have the smallest ratio; rather, it has a larger ratio in the southern hemisphere compared to all others. Furthermore, it has become clear that the idea of the morning's duration being absolutely dependent on the day—such that as the day shortens, the morning shortens, and as it lengthens, the morning increases—or being absolutely dependent on the night—always following the night's decrease and increase, as some ignorant contemporary calculators have assumed, taking it as a portion of either day or night—is purely incorrect. Instead, the morning follows solar declination in its increase and decrease. At the equinoxes, where declination is nil, the morning is at its shortest duration. Then, as declination increases, the duration of the morning increases until it reaches its maximum at the solstices. Subsequently, as declination decreases, the morning shortens until it returns to its minimum duration at the equinox. The maximum values at the visible pole's solstice are even greater than those at the hidden pole's solstice. Or, for general understanding, say that the

morning follows the larger part in both northern and southern hemispheres. In the northern hemisphere, the day is longer than the night; the morning increases and decreases with its length. In the southern hemisphere, the night is longer than the day; the morning follows it in growth and shrinkage. Starting from its minimum duration at the vernal equinox, it begins to increase with the day. When the day reached its maximum at the summer solstice, the morning also reached its peak. Then, as the day began to shorten, the morning also retreated and shortened step-by-step until it reached the same minimum at the autumnal equinox. Now, it began to increase with the night. When the winter solstice showed the 'Shab-e-Yalda' (darkest and longest night), the morning also reached its maximum duration in this hemisphere. Further, night...

जिल्द दसवाँ | फ़तावा रज़विया

संक्षिप्त तालिका यह है:

तिथि	राशि	सुबह और रात का अनुपात (प्रचलित)	राशि	तिथि
२२ जून	कर्क	छठे हिस्से से कुछ कम	कर्क	२२ जून
२३ जुलाई	सिंह	सातवें हिस्से से कुछ ज्यादा	मिथुन	२२ मई
२४ अगस्त	कन्या	आठवाँ हिस्सा	वृष	२१ अप्रैल
२४ सितम्बर	तुला	नौवाँ हिस्सा	मेष	२० मार्च
२४ अक्टूबर	वृश्चिक	नौवें हिस्से से थोड़ा कम	मीन	२० फरवरी
२३ नवम्बर	धनु	दसवें हिस्से से कुछ ज्यादा	कुंभ	२१ जनवरी
२२ दिसम्बर	मकर	दसवें हिस्से से कुछ कम	मकर	२२ दिसम्बर

इन बयानों से यह स्पष्ट हुआ कि कर्क राशि (ग्रीष्म संक्रांति) की सुबह जिस तरह पूरे वर्ष की सभी सुबहों में अनुपात के आधार पर सबसे बड़ी है कि कोई भी सुबह अपनी रात का इतना बड़ा हिस्सा नहीं होती, वैसे ही वह अपनी अवधि (मात्रा) में भी सभी सुबहों से अधिक है कि इतनी लंबी अवधि किसी भी सुबह को नहीं मिलती। इसके विपरीत मकर राशि (शीत संक्रांति) की सुबह, हालांकि अनुपात में सभी सुबहों में सबसे कम है कि कोई सुबह अपनी रात का इतना छोटा हिस्सा नहीं होती, लेकिन वह अवधि में सबसे कम नहीं है बल्कि दक्षिणी गोलार्ध में सबसे अधिक अवधि की भोर (फज्र) है। साल में सबसे छोटी भोर 'एतेदालीन' (विषुव) की भोर है, मगर वह अनुपात में सबसे कम नहीं बल्कि दक्षिणी गोलार्ध में सभी अनुपातों से अधिक है। साथ ही यह भी स्पष्ट हुआ कि सुबह की अवधि का छोटा या बड़ा होना पूरी तरह से दिन के अधीन होना कि जैसे-जैसे दिन घटे सुबह छोटी होती जाए और जैसे-जैसे दिन बढ़े सुबह बढ़े, या पूरी तरह रात के अधीन होना कि इसकी कमी-बेशी हमेशा रात की कमी-बेशी पर निर्भर रहे, जैसा कि आज कल के अनजान गणनाकारों ने इसे दिन या रात का एक टुकड़ा समझ कर मान लिया है, सरासर गलत है। बल्कि सुबह अपनी कमी-बेशी में सूर्य के झुकाव (मेल-ए-शम्सी) के अधीन है। विषुव (एतेदालीन) पर जहाँ झुकाव शून्य होता है, सुबह सबसे छोटी अवधि की होती है। फिर जैसे-जैसे झुकाव बढ़ता जाता है, सुबह की अवधि बढ़ती जाती है यहाँ तक कि संक्रांति (इंकलाब) पर अपनी अधिकतम सीमाओं तक पहुँच जाती है। फिर जैसे-जैसे झुकाव घटता है, सुबह छोटी होती जाती है यहाँ तक कि विषुव पर फिर अपनी न्यूनतम सीमाओं पर आ जाती

है। और दृश्य ध्रुव की संक्रांति के अधिकतम मान, अदृश्य ध्रुव की संक्रांति के अधिकतम मानों से भी अधिक होते हैं। या सामान्य समझ के लिए यूँ कहें कि सुबह दोनों उत्तरी और दक्षिणी गोलार्धों में 'बड़े' के अधीन है। उत्तरी गोलार्ध में दिन रात से बड़ा होता है, सुबह इसकी कमी और वृद्धि के साथ बढ़ती-घटती है। और दक्षिणी गोलार्ध में रात दिन से बड़ी होती है, सुबह इसकी वृद्धि और कमी के साथ चलती है। मेष राशि (वसन्त विषुव) पर अपनी न्यूनतम अवधि तक पहुँचकर दिन के साथ बढ़ना शुरू हुई, जब ग्रीष्म संक्रांति में दिन अपनी चरम वृद्धि पर आया, सुबह भी अधिकतम वृद्धि पर पहुँच गई। फिर दिन घटना शुरू हुआ, सुबह भी उन्हीं कदमों पर पीछे लौटते हुए घटती चली गई यहाँ तक कि शरद विषुव (एतेदाल-ए-ख़िफी) पर फिर उसी न्यूनतम मान पर आ गई। अब रात के साथ बढ़ना शुरू किया, जब शीत संक्रांति ने 'शबे यल्दा' (अंधेरी और लंबी रात) दिखाई, सुबह भी इस गोलार्ध में अपने अधिकतम मान पर पहुँच गई। आगे रात...

مختصر جدول یہ ہے:

تاریخ	برج	نسبت صبح و شب عرفی	برج	تاریخ
۲۲ جون	سرطان	چھٹا حصہ کچھ کم	سرطان	۲۲ جون
۲۳ جولائی	اسد	ساتواں حصہ کچھ زیادہ	جوزا	۲۲ مئی
۲۴ اگست	سنبلہ	آٹھواں حصہ	ثور	۲۱ اپریل
۲۴ ستمبر	میزان	نواں حصہ	حمل	۲۰ مارچ
۲۴ اکتوبر	عقرب	نواں حصہ قدے کم	حوت	۲۰ فروری
۲۳ نومبر	قوس	دسواں حصہ کچھ زیادہ	دلو	۲۱ جنوری
۲۲ دسمبر	جدی	دسواں حصہ اس سے کچھ کم	جدی	۲۲ دسمبر

ان بیانوں سے واضح ہوا کہ راس السرطان کی صبح جس طرح تمام سال میں سب صبحوں سے باعتبار نسبت بڑی ہے کہ کوئی صبح اپنی رات کا اتنا بڑا حصہ نہیں ہوتی، یونہی وہ مقدار میں بھی جمیع صبحوں سے زائد ہے کہ اتنی مدت کوئی صبح نہیں پاتی مگر اس کے خلاف راس الجدی کی صبح با آنکہ نسبت میں تمام صبحوں سے کم ہے کہ کوئی صبح اپنی رات کا اتنا چھوٹا حصہ نہیں ہوتی لیکن وہ مقدار میں سب سے کم نہیں بلکہ نصف جنوبی میں سب سے زائد مقدار کی فجر ہے، سال میں سب سے چھوٹی فجر فجر اعتدالین ہے مگر وہ نسبت میں سب سے کم نہیں بلکہ نصف جنوبی میں سب نسبتوں سے زائد ہے، نیز روشن ہوا کہ صبح کا اپنی مقدار چھوٹی بڑی ہونے میں مطلقاً تابع روز ہونا کہ جتنا دن گھٹے صبح چھوٹی ہوتی جائے اور جتنا بڑھے ترقی پائے، یا مطلقاً

تابع شب ہونا کہ ہمیشہ اس کی کمی فزونی رات کی کمی کا ہش وبیش پر رہے جیسا کہ آج کل کے ناواقف محاسبوں میں کسی نے اسے نہار کسی نے لیل کا ٹکڑا سمجھ کر گمان کیا ہے محض غلط ہے بلکہ صبح اپنی کمی بیشی میں میل شمسی کی تابع ہے اعتدالین پر کہ میل منتفی ہوتا ہے صبح سب سے چھوٹی مقدار پر ہوتی ہے پھر جتنا میل بڑھتا جاتا ہے صبح کی مقدار زیادہ ہوتی جاتی ہے یہاں تک کہ انقلاب پر اپنی اعظم مقادیر پر آتی ہے، پھر جس قدر میل گھٹتا ہے صبح چھوٹی ہوتی جاتی ہے حتی کہ اعتدال پر پھر اپنی انقص مقادیر پر آتی ہے اور انقلاب قطب ظاہر کے اعظم مقادیر، انقلاب قطب خفی کے اعظم مقادیر، سے بھی اعظم ہوتی ہے، یا عام فہمی کے لیے یوں کہئے کہ صبح ہر دو نصف شمالی و جنوبی میں بڑے کی تابع ہے نصف شمالی میں دن، رات سے بڑا ہوتا ہے صبح اس کی زیادت وقلت کے ساتھ بڑھتی گھٹتی ہے اور نصف جنوبی میں رات، دن سے بڑی ہوتی ہے، صبح افزائش و کاہش میں اس کے ساتھ چلتی ہے، راس الحمل پر اپنی اقل مقدار تک پہنچ کر دن کے ساتھ بڑھنی شروع ہوئی، جب انقلاب صیفی میں دن اپنی نہایت زیادت پر آیا، صبح بھی غایت ازدیاد پر پہنچی، پھر دن گھٹنا شروع ہوا، صبح بھی انہیں قدموں پر رجعت قہقری کرتی ہوئی گھٹتی چلی یہاں تک کہ اعتدال خریفی پر پھر اسی اقل مقادیر پر آگئی، اب رات کے ساتھ فزونی کرنے لگی جب انقلاب شتوی نے شب یلدا (اندھیری اور طویل رات) دکھائی صبح بھی اس نصف میں اپنی اعظم مقادیر پر آئی، آگے رات

It continued to decrease; even in the morning, it returned to decreasing in the same manner, until at the vernal equinox, it again reached its minimum quantity, and so it continues as long as Allah Almighty wills, and Allah Almighty knows best.

---

www.dawateislami.net I.T. Majlis of Dawat-e-Islami

यह कम होती रही, सुबह भी दस्तूर के मुताबिक उल्टे पाँव कमी पर लौटी, यहाँ तक कि वसंत विषुव (इतिदाल-ए-रबी'ई) पर फिर न्यूनतम मात्रा में हुई, और इसी तरह जब तक अल्लाह तआला चाहे, और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

کم ہوتی چلی، صبح بھی بدستور الٹے پاؤں کمی پر پلٹی، حتی کہ اعتدال ربیعی پر پھر انقص مقدار ہوئی، وھکذا الی ما شاء اللہ تعالی، واللہ تعالی اعلم۔

Volume 10 Fatawa Razawiya

Hidayat al-Jinan bi-Ahkam-i-Ramadan 1323 AH (The path to Paradise through the rules of Ramadan)

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

Masala 262: From Shahjahanpur, Mohalla Jagdal Nagar, near the railway station, sent by Muhammad Fasahatullah Khan, 7 Ramadan-ul-Mubarak 1323 AH.

After offering respects, I submit that an advertisement has been published and distributed by Maulvi Azam Shah Sahib regarding Iftar and Sehri times for Ramadan-ul-Mubarak, along with some rulings on fasting, printed on the front and back of a chart. Since there was a dispute last year in Shahjahanpur regarding the moon for Eid-ul-Adha, it is necessary to investigate this chart. Today, the provided chart for Iftar and Sehri was compared with the charts of Maulvi Azam Shah and Maulvi Riyasat Ali Khan Sahib. There is a significant difference between Azam Shah's chart and your chart regarding Sehri times, whereas your chart and Maulvi Riyasat Ali Khan's chart are almost identical. In such a situation, great harm is being caused, and will continue to be caused, to those with less knowledge. For instance, yesterday a woman ate her pre-dawn meal (Sehri) at 4:40. When Maulvi Azam learned of this, he told her that her fast was void, so she broke her fast.

Page 574 of 836

खंड १० फतावा रजविया

हिदायत अल-जिनान बि-अहकाम-ए-रमज़ान १३२३ हिजरी (रमज़ान के नियमों में स्वर्ग का मार्ग)

अल्लाह के नाम से, जो अत्यंत दयालु और असीम कृपावान है।

मसला २६२: शाहजहाँपुर, मोहल्ला जगदल नगर, रेलवे स्टेशन के पास से, प्रेषक: मोहम्मद फसाहतुल्लाह खां, ७ रमज़ान-उल-मुबारक १३२३ हिजरी।

आदर सत्कार के बाद, मैं निवेदन करता हूँ कि मौलवी आज़म शाह साहब ने रमज़ान-उल-मुबारक के इफ्तार और सहरी के बारे में और रोज़े के कुछ मसलों के बारे में एक विज्ञापन छपवाकर बँटवाया है, जो एक नक़्शे (चार्ट) के आगे और पीछे लिखे हुए हैं। चूँकि पिछले साल शाहजहाँपुर में ईदुल अज़हा के चाँद को लेकर विवाद हुआ था, इसलिए इस नक़्शे की जाँच करना आवश्यक है। आज रोज़े के इफ्तार और सहरी के नक़्शे की तुलना मौलवी आज़म शाह और मौलवी रियासत अली खां साहब के नक़्शे से की गई। सहरी के समय के बारे में आज़म शाह के नक़्शे और आपके नक़्शे में बहुत अंतर पाया गया, जबकि आपका नक़्शे और मौलवी रियासत अली खां का नक़्शे लगभग समान हैं। ऐसी स्थिति में कम पढ़े-लिखे लोगों का बड़ा नुकसान हो रहा है और होगा। क्योंकि कल एक महिला ने ४:४० पर सहरी खाई, और जब मौलवी आज़म को उसकी स्थिति का पता चला, तो उन्होंने कहा कि रोज़ा चला गया (अमान्य हो गया), जिस पर उसने रोज़ा तोड़ दिया।

पृष्ठ ५७४ / ८३६

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

ھدایۃ الجنان باحکام رمضان ۱۳۲۳ھ (رمضان کے احکام میں جنت کی راہ)

بسم اللہ الرحمن الرحیم

مسئلہ ۲۶۲: از شاہجہانپور محلہ جگدل نگر متصل اسٹیشن ریلوے مرسلہ محمد فصاحت اللہ خاں ۷ رمضان المبارک ۱۳۲۳ھ

بعد ادائے آداب کے عرض پرداز ہوں کہ ایک اشتہار مولوی اعظم شاہ صاحب نے بابت افطار وسحری رمضان المبارک و نیز چند مسائل روزے کے جو اوپر نقشہ اور پشت پر نقشہ لکھے ہیں، شائع کرکے تقسیم کرائے ہیں جو کہ شاہجہانپور میں سال گزشتہ میں بابت چاند عید اضحی نزاع ہو چکا ہے اس خیال سے اس نقشہ کی بابت تحقیقات کرنا ضروری ہے۔ آج کے روزے کا نقشہ دیا ہوا بابت افطار و سحری اور نقشہ مولوی اعظم شاہ اور نقشہ مولوی ریاست علی خان صاحب کا مقابلہ کیا گیا جو اعظم شاہ کے نقشہ اور آپ کے نقشہ سے بہت فرق آیا بابت سحری کے ، اور آپ کا نقشہ اور مولوی ریاست علی خاں کا نقشہ قریب قریب ہے جو کہ اب ایسی حالت میں بڑا نقصان کم علموں کا ہو رہا ہے اور ہوگا کیونکہ کل کے روز ایک عورت نے چار بج کر چالیس منٹ پر سحری کھائی ، اور جب اس کی حالت مولوی اعظم کو معلوم ہوئی تو انہوں نے فرمایا کہ روزہ جاتا رہا اس پر اس نے روزہ توڑ ڈالا۔

Fatawa-e-Razvia, Volume 10

When Maulvi Riyasat Ali Khan Sahib was asked, he said that his fast was valid because it was the time for eating Sahur. Furthermore, it should be known whether the rulings mentioned in this advertisement regarding Ramadan al-Mubarak, Iftar timings, Sahur timings, and Tarawih rulings are correct or not. This humble servant is sending the said advertisement for your high service, and after reviewing the entire advertisement, please pay attention to its correctness or incorrectness. If there is an error, please provide the answer with references to the book for each mistake. If the schedule (map/timetable) is wrong, it is enough to state that the schedule is wrong. Regarding the sending of this advertisement, the respected and noble Maulvi Riyasat Ali Khan Sahib also emphasized it. When I mentioned that I would send this advertisement to Bareilly, he said, "Definitely send it, so that after the answer arrives from there, the correctness or error of that advertisement can be announced." That is all.

The Answer: After the customary Sunnah greetings, the request is made. After the question, the answer is obligatory, and at the time of obligation, declaring the truth is necessary. The art of determining correct timings, which is called the science of 'Tawqit' (chronometry), is something that not only students in India but most scholars are unaware of. It is neither included in the curriculum nor can it be learned from textbooks on astronomy (Hai'at). Whatever rulings Maulvi Masih-ud-Din Khan Kakorvi and others have formulated are not only insufficient but lead to grave errors. Similarly, an unacquainted person cannot benefit from the two-letter table of Mirza Khairullah Munajjim. If someone sought extensive research and used the first table of 'Tadeel al-Nahar' from Zij Bahadur Khani, it has nothing to do with Sahur, and it is also deficient for Iftar unless several necessary corrections are incorporated with it. Then, one who knows those corrections has no need for those tables. This humble servant (Faqir) has not relied solely on bookish knowledge in this art, nor on empty geometric proofs, nor on experience and observation alone. Instead, I combined all of them and, by divine grace, utilized my mental innovations extensively, until, by the grace of Allah, I aligned proof and observation. My schedule, by Allah's grace, is not an exaggeration. Anyone who knows astronomy and geometry will find it in accordance with proofs. And anyone who has a keen eye and can distinguish between true dawn (Subh-e-Sadiq) and false dawn (Subh-e-Kazib) will find it matching observation. In my schedules, for Bareilly-like Sahur and Iftar, there is a five-minute precaution (Ihtiyat), and for other cities, almost the same time is given with the same

accuracy, keeping about four to five precautionary minutes. Any schedule that contradicts the time given by me, rest assured, is that much incorrect, regardless of who prepared it. If two schedules are to be given correctly and formally, they can only differ to the extent that someone kept one or two precautionary minutes less and someone more, or someone delved deeper into the sub-minute fractions while someone else acted with ease, considering it unnecessary. That's all. Now you can see for yourself that...

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द दहम

जब मौलवी रियासत अली खां साहब से दरयाफ़्त किया गया तो फ़रमाया कि उनका रोज़ा था क्योंकि वह वक्त सहरी खाने का था और नीज़ इस इश्तिहार में जो मसाइल बाबत रमज़ानुल मुबारक और वक़्त इफ़्तार और वक़्त सहरी और मसाइल तरावीह के लिखे हैं वह भी मालूम होना चाहिए कि सही लिखे हैं या नहीं, बंदा इश्तिहार-ए-मज़कूर रवाना ख़िदमत-ए-आली करता है और बाद मुलाहज़ा जुमला इश्तिहार के इसके सही और ग़ैर सही पर तवज्जो फ़रमाई जाए, और अगर ग़लत है तो जिस जिस मसला में ग़लती हो उसका जवाब ब-हवाला किताब अर्काम फ़रमा दीजिये, अगर नक्शा ग़लत हो तो बाबत नक्शा के इसी क़द्र काफ़ी है कि नक्शा ग़लत है और इस इश्तिहार के भेजने की बाबत जनाब मख़दूम व मुकर्रम मौलवी रियासत अली खां साहब ने भी ताकीद फ़रमाई थी जब मैंने अर्ज़ किया था कि इस इश्तिहार को बरेली रवाना करूंगा तो फ़रमाया कि ज़रूर भेज दो ताकि वहां से जवाब आने के बाद उस इश्तिहार की सेहत और ग़लती का एलान करा दिया जाए। फ़क़त।

अल-जवाब: बाद मरासिम-ए-सुन्नत-ए-मुल्तमिस, बाद सवाल, जवाब वाजिब और वक़्त-ए-वुजूब इज़हार-ए-सवाब लाज़िम, औक़ात-ए-सही निकालने का फ़न जिसे इल्म-ए-तौक़ीत कहते हैं, हिन्दुस्तान के तलबा तो तलबा अक्सर उलमा इससे ग़ाफ़िल हैं, न वह दर्स में रखा गया है न हैअत (खगोल विज्ञान) की दर्सी किताबों से आ सकता है और जो कुछ मसला मौलवी मसीह उद्दीन खां काकोरवी वग़ैरह बना गए वह फ़क़त नाकाफ़ी ही नहीं बल्कि सख़्त अग़लात (ग़लतियों) में डालने वाला है, यूँही मिर्ज़ा खैरुल्लाह मुनज्जम की दो हर्फी जदवल से कोई ना-वाक़िफ़-ए-फ़न नफ़अ नहीं पा सकता, अगर किसी ने बड़ी तहक़ीक़ात चाही तो ज़ीज-ए-बहादुर ख़ानी की जदवल अव्वल तादील-उल-नहार से काम लिया सहरी को तो उनसे कुछ तअल्लुक़ ही नहीं और इफ़्तार में भी नाक़िस है जब तक मुतअ़द्दिद ज़रूरी इस्लाहें उसके साथ शरीक न हों, फिर जिसे वह इस्लाहें आती हैं उसे इन जदवल की क्या हाजत, फ़क़ीर ने इस फ़न में न निरी किताबी बातों पर एतमाद किया, न खाली दलाईल-ए-हिन्दसा पर, न तन्हा तजरुबा व मुशाहिदा पर, बल्कि सब को जमा किया और ब-तौफ़ीक़-ए-इलाही अपनी ज़ेहनी जिद्दतों से बहुत कुछ काम लिया यहां तक ब-फ़ज़्लिही तआला बुरहान व अयान को मुताबिक़ कर दिया, मेरा नक्शा ब-फ़ज़्लिही तआला गज़ाफ़ नहीं होता जो हैअत व हिन्दसा जानता हो वह उसे बराहीन के मुताबिक़ पाएगा, और जो निगाह रखता हो सुब्ह-ए-सादिक़ व काज़िब को देख कर पहचान सकता हो वह उसे मुशाहिदा से मुवाफ़िक़ पाएगा, मेरे नक्शों में बरेली की सी सहरी व इफ़्तार में पाँच-पाँच मिनट की एहतियात होती है और दूसरे शहरों का तक़रीबन यही वक़्त

भी इसी सेहत के साथ दिया जाता है कि कम व बेश चार पाँच मिनट एहतियाती रहें। जो नक्शा मेरे बताए हुए वक़्त से जितना मुखालिफ़ हो यक़ीन जानिये कि वह उतना ही ग़लत है अगरचे किसी का बनाया हुआ हो, दो नक्शे अगर सही बाक़ायदा देने हों तो सिर्फ इस क़द्र फ़र्क़ कर सकते हैं कि एहतियाती मिनट किसी ने दो एक कम रखे किसी ने ज़ाइद, या एक मिनट की तहतानी कसरों (सेकंडों) में किसी ने ज़्यादा तअम्मुक़ (गहराई) किया किसी ने बे-ज़रूरत समझ कर मुसाहलत से काम लिया बस। अब आप ख़ुद देख सकते हैं कि

جب مولوی ریاست علی خاں صاحب سے دریافت کیا گیا تو فرمایا کہ اُس کا روزہ تھا کیونکہ وہ وقت سحری کھانے کا تھا اور نیز اس اشتہار میں جو مسائل بابت رمضان المبارک اور وقت افطار اور وقت سحری اور مسائل تراویح کے لکھے ہیں وہ بھی معلوم ہونا چاہئیے کہ صحیح لکھے ہیں یا نہیں، بندہ اشتہار مذکور روانہ خدمت عالی کرتا ہے اور بعد ملاحظہ جملہ اشتہار کے اس کے صحیح اور غیر صحیح پر توجہ فرمائی جائے، اور اگر غلط ہے تو جس جس مسئلہ میں غلطی ہو اُس کا جواب بحوالہ کتاب ارقام فرمادیجئے ، اگر نقشہ غلط ہو تو بابت نقشہ کے اسی قدر کافی ہے کہ نقشہ غلط ہے اور اس اشتہار کے بھیجنے کی بابت جناب مخدوم و مکرم مولوی ریاست علی خاں صاحب نے بھی تاکید فرمائی تھی جب میں نے عرض کیا تھا کہ اس اشتہار کو بریلی روانہ کروں گا تو فرمایا کہ ضرور بھیج دو تاکہ وہاں سے جواب آنے کے بعد اُس اشتہار کی صحت اور غلطی کا اعلان کرا دیا جائے۔ فقط

الجواب: بعد مراسمِ سنتِ ملتمس، بعد سوال، جواب واجب اور وقت وجوب اظہار صواب لازم، اوقاتِ صحیح نکالنے کا فن جسے علم توقیت کہتے ہیں، ہندوستان کے طلبہ تو طلبہ اکثر علماء اس سے غافل ہیں، نہ وہ درس میں رکھا گیا ہے نہ ہیئت کی درسی کتابوں سے آ سکتا ہے اور جو کچھ مسئلہ مولوی مسیح الدین خاں کا کوروی وغیرہ بنا گئے وہ فقط ناکافی ہی نہیں بلکہ سخت اغلاط میں ڈالنے والا ہے، یونہی مرزا خیر اللہ منجم کی دو حرفی جدول سے کوئی ناواقف فن نفع نہیں پاسکتا، اگر کسی نے بڑی تحقیقات چاہی تو زیج بہادر خانی کی جدول اول تعدیل النہار سے کام لیا سحری کو تو اُن سے کچھ تعلق ہی نہیں اور افطار میں بھی ناقص ہے جب تک متعدد ضروری اصلاحیں اُس کے ساتھ شریک نہ ہوں، پھر جسے وہ اصلاحیں آتی ہیں اُسے ان جدول کی کیا

حاجت، فقیر نے اس فن میں نہ نری کتابی باتوں پر اعتماد کیا، نہ خالی دلائل ہندسہ پر، نہ تنہا تجربہ و مشاہدہ پر، بلکہ سب کو جمع کیا اور بتوفیق الٰہی اپنی ذہنی جدتوں سے بہت کچھ کام لیا یہاں تک بفضلہ تعالیٰ برہان و عیان کو مطابق کر دیا، میرا نقشہ بفضلہ تعالیٰ گزاف نہیں ہوتا جو ہیئت و ہندسہ جانتا ہو وہ اُسے براہین کے مطابق پائے گا، اور جو نگاہ رکھتا ہو صبحِ صادق و کاذب کو دیکھ کر پہچان سکتا ہو وہ اسے مشاہدہ سے موافق پائے گا، میرے نقشوں میں بریلی کی سی سحری وافطار میں پانچ پانچ منٹ کی احتیاط ہوتی ہے اور دوسرے شہروں کا تقریبًا یہی وقت بھی اسی صحت کے ساتھ دیا جاتا ہے کہ کم و بیش چار پانچ منٹ احتیاطی رہیں۔ جو نقشہ میرے بتائے ہوئے وقت سے جتنا مخالف ہو یقین جانئے کہ وہ اتنا ہی غلط ہے اگرچہ کسی کا بنایا ہوا ہو، دو نقشے اگر صحیح باقاعدہ دینے ہوں تو صرف اس قدر فرق کرسکتے ہیں کہ احتیاطی منٹ کسی نے دو ایک کم رکھے کسی نے زائد، یا ایک منٹ کی تحتانی کسروں میں کسی نے زیادہ تعمق کیا کسی نے بے ضرورت سمجھ کر مساہلت سے کام لیا بس۔ اب آپ خود دیکھ سکتے ہیں کہ

Fatawa Razawiyya Volume 10

How much difference there is in this Maulvi Sahib's map between Shahjahanpur, Bareilly, Budaun, Pilibhit, Delhi, Rampur, Lucknow, and Moradabad. At times here and in Shahjahanpur, times for Suhoor (pre-dawn meal) are given in both maps with a difference of twenty to twenty-eight minutes, and for Delhi, it starts at two minutes and reduces to half a minute, but for Pilibhit, it reached such progress due to Allah's grace that initially the time was coming correctly, and towards the end of the month, as it increased, the margin of caution did not remain even as a mark, but rather it was found that if it were to be scrutinized, it would not be surprising if some part of the morning came. The fact is that the Maulvi Sahib has suggested the timings for Shahjahanpur as a model for other cities, considering only the difference in longitude between them, whereas times change due to latitude as well. The difference in latitude between two cities originally results not only from the difference in longitude but also from the difference in latitude, leading to differences of hours in sunrise, sunset, and Isha. This is the case for Shahjahanpur and Pilibhit, where a difference of twenty-one minutes cannot be justified in any way. The same is the case with Calcutta, where at the end of the dates, there was a slight lack of caution for twenty-two years, and the special times for Calcutta published from here until November 21 can be matched with those. In those, there is not much difference in Iftar times, but its effect is also significant; for example, in Shahjahanpur, while the minutes of caution were decreasing, at the very end only one remained. But on Delhi, a calamity has descended that from the beginning until the end, it was before sunset, especially at the end, Iftar was written five minutes before sunset. Shahjahanpur is a city where someone ate Suhoor until 4:40 am; his fast was definitely valid, he broke the fast five minutes before sunset, he committed a severe sin, and his fast was invalidated. The ruling was completely wrong. Abu Dawood, Darimi narrated from Abu Hurairah (May Allah be pleased with him), that the Messenger of Allah (May Allah's peace and blessings be upon him) said:

| Whoever gives a ruling (fatwa) without knowledge, the sin of it is upon the one who gave the ruling. | | :--- | :--- | | (Whoever gave a fatwa without knowledge, its burden is upon the one who gave the fatwa.) | | (T) |

If the watch was correct, then surely more than fifteen minutes of time were remaining. O Muslims! This is religion; it is God's favor that learning it is an obligation upon me. Let rules and proofs of astronomy and geometry be aside, recognizing the time is an individual obligation (Fard-e-Ain) for every Muslim. It is a pity that

thousands of people, even many learned ones, cannot distinguish between Subh-e-Sadiq (true dawn) and Subh-e-Kazib (false dawn) by looking at them, and on top of that, the confusing statements in books of astronomy etc. have further deluded them. Truth...

---

1. Sunan Abi Dawood, Chapter on Caution in Fatwa, i.e., Al-Fatwa, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 159/2

इन मौलवी साहब के नक्शे में शाहजहाँपुर, बरेली, बदायूँ, पीलीभीत, दिल्ली, रामपुर, लखनऊ और मुरादाबाद के बीच कितना अंतर है। कभी यहाँ और शाहजहाँपुर के दोनों नक्शों में सुहूर (सहरी) के समय में बीस से अट्ठाईस मिनट का अंतर दिया गया है, और दिल्ली के लिए यह दो मिनट से शुरू होकर आधा मिनट रह जाता है, लेकिन पीलीभीत के लिए अल्लाह के करम से यह इस कदर तरक्की हुई कि शुरू में समय ठीक आया और महीने के अंत में बढ़ते-बढ़ते एहतियात (सावधानी) का मिनट का निशान भी नहीं रहा, बल्कि तहक़ीक़ की जाए तो कोई ताज्जुब नहीं कि सुबह का कुछ हिस्सा आ गया हो। बात यह है कि मौलवी साहब ने शाहजहाँपुर के समय को मॉडल मानकर अन्य शहरों के लिए तजवीज़ किया है, केवल उनके बीच देशांतर (longitude) के अंतर को ध्यान में रखते हुए, जबकि समय अक्षांश (latitude) के कारण भी बदलते हैं। दो शहरों के बीच अक्षांश का अंतर मूल रूप से केवल देशांतर के अंतर से नहीं बनता, यही हाल कलकत्ता का है कि तारीखों के अंत में बाइस वर्षों तक सावधानी की कुछ कमी रही और 21 नवंबर तक यहाँ से प्रकाशित कलकत्ता के विशेष समयों का उनसे मिलान किया जा सकता है। उनमें इफ्तार के समय में बहुत अधिक अंतर नहीं है लेकिन इसका थोड़ा प्रभाव भी बहुत है, उदाहरण के लिए शाहजहाँपुर में सावधानी के मिनट घटते-घटते अंत में केवल एक रह गया। मगर दिल्ली पर आफ़त आई है कि शुरू से अंत तक सूर्यास्त से पहले था, विशेष रूप से अंत में सूर्यास्त से पाँच मिनट पहले इफ्तार लिखा गया। शाहजहाँपुर वह शहर है जहाँ किसी ने सुबह 4:40 तक सहरी खाई; उसका रोज़ा निश्चित रूप से सही था, उसने सूर्यास्त से पाँच मिनट पहले इफ्तार किया, वह घोर अपराधी हुआ और उसका रोज़ा न होने का हुक्म बिल्कुल गलत था। अबू दाऊद, दारमी ने अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया:

| जिसने बिना ज्ञान के फतवा दिया, उसका पाप उस पर है जिसने उसे फतवा दिया। | | :--- | :--- | | (जिसने बे-इल्म फतवा दिया उसका वबाल फतवा देने वाले पर है।) | | (त) |

अगर घड़ी सही थी तो यकीनन पंद्रह मिनट से ज्यादा वक्त बाकी था। मुसलमानों! यह दीन है, जिस पर खुदा की देन है कि इसका सीखना मुझ पर दीन (अनिवार्य) है। खगोल विज्ञान और ज्यामिति के नियमों और प्रमाणों को एक तरफ रख दें, समय की पहचान करना तो हर मुसलमान पर फर्ज़-ए-ऐन (अनिवार्य कर्तव्य) है। अफसोस कि हजारों लोग यहाँ तक कि बहुत विद्वान भी सुबह-ए-सादिक और

सुबह-ए-काज़िब को देखकर ठीक से नहीं पहचान सकते और उस पर खगोल शास्त्र की किताबों के भ्रमित बयानों ने उन्हें और धोखे में डाल दिया है। सच...

---

1. सुनन अबी दाऊद, बाब-अत-तौक़ी फ़िल फ़तवा यानी अल-फ़तवा, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 159/2

ان مولوی صاحب کے نقشے میں کتنا فرق ہے، شاہجہان پور، بریلی، بدایوں، پیلی بھیت، دہلی، رامپور، لکھنؤ، مراد آباد کے وقت یہاں اور شاہجہان پور والے دونوں نقشوں میں دئے ہیں ان میں ہر شہر کے لیے سحری کے اوقات میں بیس بائیس منٹ تک کا فرق ہے اور دہلی کے لیے تو ۲۸ منٹ تک ہے کہ دومنٹ کم آدھا گھنٹا ہوا مگر پیلی بھیت کے لیے اللہ اعلم کس وجہ سے اس قدر ترقی واقع ہوئی کہ ابتداء میں وقت ٹھیک آیا اور آخر ماہ میں بڑھتے بڑھتے احتیاطی منٹ کا بھی اصلاً نشان نہ رہا کنارے ہی پر آگیا بلکہ تدقیق کی جائے تو عجب نہیں کہ کچھ حصہ صبح کا آجائے۔ بات یہ ہے کہ مولوی صاحب نے شاہجہان پور کے وقت بطور خود تجویز کرکے باقی شہروں کے لیے صرف اُن کا تفاوت طول جو ان کے خیال میں تھا گھٹا بڑھا لیا حالانکہ تبدل اوقات میں بڑا حصہ تفاوت عرض کا ہے دو شہروں میں تفاوت طول اصلاً نہ ہو صرف اختلاف عرض سے طلوع و غروب و عشامیں گھنٹوں کا فرق پڑجاتا ہے شاہجہان پور و پیلی بھیت میں اکیس منٹ کا تفاوت کسی طرح نہیں بنتا، یہی حال کلکتے کا ہے کہ اخیر کی تاریخوں میں کچھ ہی خفیف نام احتیاط کا رہ گیا ہے دو ۲۲ سال ہوئے کہ خاص کلکتے کے اوقات یہاں سے شائع ہوئے تھے ۲۱ نومبر سے ۲۸ تک تاریخیں اس سال بھی پڑی ہیں ان سے ملا کر دیکھ سکتے ہیں پرچہ مرسل ہے افطار کے اوقات میں اتنا زیادہ تفاوت نہیں مگر اس کا تھوڑا بھی بہت ہے، مثلاً شاہجہان پور میں احتیاطی منٹ گھٹتے گھٹتے آخر میں صرف ایک ہی رہ گیا مگر دہلی پر آفت پوری ہے اول سے آخر تک غروب سے پہلے افطار لکھا خصوصاً آخر میں تو پانچ منٹ پیش از غروب افطار ہوئی ہے، شاہجہان پور میں جس نے ۴:۴۰ منٹ تک سحری کھائی اس کا روزہ یقیناً صحیح ہوا، وہ

عورت توڑنے سے سخت گنہگار ہوئی اس کا روزہ نہ ہونے کا حکم محض غلط تھا۔ ابوداؤد، دارمی ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے راوی، رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

| من افتی بغیر علم کان اثمه علی من افتاه- | | :--- | :--- | | جس نے بے علم فتوی دیا اس کا وبال فتوی دینے والے پر ہے۔ | | (ت) |

اگر گھڑی صحیح تھی تو یقیناً پاؤ گھنٹے سے زیادہ وقت باقی تھا۔ مسلمانوں! یہ دین ہے، جس پر خدا کی دین ہے کہ اس کا سیکھنا مجھ پر دین ہے قواعد وبراہین ہیئت وہندسہ بالائے طاق سہی، وقت پہچاننا تو ہر مسلمان پر فرض عین ہے، افسوس کہ ہزاروں آدمی حتی کہ بہت ذی علم بھی صبح صادق وکاذب کی ٹھیک تمیز دیکھ کر نہیں بتاسکتے اور اس پر کتب ہیئت وغیرہ کی پریشان بیانوں نے انہیں اور دھوکے میں ڈالا ہے، سچ

---

1 سنن ابی داؤد باب التوقی فی الفتیا ای الفتوی آفتاب عالم پریس لاہور ۱۵۹/۲

Fatawa Razawiya Volume 10

Imam Hujjat al-Islam Ghazali (may his secret be sanctified) said that initially, it is difficult for a person to distinguish between these two dawns. If one observes repeatedly and carefully, by the grace of Allah, both dawns become well-recognized so that one can tell at first glance whether the true dawn (Subh Sadiq) has occurred or not. Here, people are in confusion due to several reasons; it is necessary to explain them so that Muslims can understand and avoid errors.

I say: and with Allah is the success (i.e., I say this, and success comes from Allah Almighty. - T). Firstly, in the Hadith, the false dawn (Subh Kazib) is called 'mustatil' (oblong/long), and the true dawn (Subh Sadiq) is called 'mustatir' (spread out). The ignorant imagine that the false dawn is a thin white line like a thread, and as soon as the whiteness widens slightly, the true dawn has occurred. This is a complete misconception and delusion. In the prevailing darkness of the night, how could a thin thread be visible? The false dawn also certainly has width and appears two or three yards, or even more, wide in sight. Rather, the meaning of the Hadith is what the Radiant Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) taught with a gesture of his noble hand: that the whiteness spread east to west is the false dawn, and spreading both noble hands with fingers joined—meaning the whiteness spreading south to north along the horizon—is the true dawn.

Secondly: In some books, the reason for naming it 'Subh Kazib' (false dawn) is written as 'ya'qubuhu zulmatun fal-ufuqu yukadhibuhu', meaning darkness follows it, so the horizon belies it. This whiteness claims dawn has arrived, but the horizon refutes it; therefore, it is called false dawn. Modern scholars have understood this to mean that the whiteness of the false dawn disappears and then it becomes dark again before the true dawn emerges. However, this is completely false. Once the whiteness of the false dawn begins, it keeps increasing until the end; darkness never returns there until sunrise. Instead, the meaning is that the whiteness of the false dawn appears very high above the horizon, and 'behind it'—meaning below it towards the horizon—it is completely dark. When the true dawn spreads, this darkness is replaced by light.

Thirdly: In some books of astronomy and, following them, in some books of jurisprudence like Radd al-Muhtar, it is written that true dawn occurs when the sun is 15 degrees below the horizon, and false dawn occurs only three degrees before that, i.e., at 18 degrees of depression. However, thousands of observations testify that this

is also completely incorrect. Rather, when the sun's depression reaches nearly 18 degrees, true dawn certainly occurs. The false dawn happens many degrees before that. Tonight, the eighth night of the blessed month, I personally observed that while the sun was still more than thirty-three degrees below the horizon, the false dawn was showing its glimmer, and there was still more than a full hour left for the true dawn.

Note: i.e., Saadullah Sahib Rampuri 12.

फ़तावा रज़विया खंड दस

इमाम हुज्जत-उल-इस्लाम ग़ज़ाली (कुद्दिसा सिर्रहु अल-आली) ने फ़रमाया कि शुरू में इंसान के लिए इन दोनों सुबह के बीच अंतर करना मुश्किल होता है। यदि कोई बार-बार और गौर से देखता रहे, तो अल्लाह की कृपा से दोनों सुबहें अच्छी तरह पहचान में आ जाती हैं, ताकि वह पहली नज़र में देखकर कह सके कि अभी सुबह-ए-सादिक हुई है या नहीं। यहाँ कई कारणों से लोग भ्रम में हैं; उनका वर्णन करना ज़रूरी है ताकि मुसलमान समझ लें और गलतियों से बचें।

मैं कहता हूँ: और अल्लाह की मदद से सफलता है (अर्थात, मैं यह कहता हूँ और सफलता अल्लाह तआला की ओर से है। - त)। सबसे पहले, हदीस में सुबह-ए-काज़िब को 'मुस्ततील' (लंबी) और सुबह-ए-सादिक को 'मुस्ततीर' (फैली हुई) कहा गया है। नासमझ लोग समझते हैं कि सुबह-ए-काज़िब धागे की तरह एक बारीक सफ़ेदी है, और जैसे ही सफ़ेदी थोड़ी चौड़ी हुई तो सुबह-ए-सादिक हो गई। यह पूरी तरह से गलत और वहम है। रात के घने अंधेरे में एक बारीक धागा कैसे दिख सकता है? सुबह-ए-काज़िब की भी निश्चित रूप से चौड़ाई होती है और नज़र में दो-तीन गज़ बल्कि उससे भी ज़्यादा चौड़ी दिखती है। बल्कि हदीस का अर्थ वह है जो स्वयं हुज़ूर पुर नूर (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने अपने पवित्र हाथ के इशारे से सिखाया कि पूर्व से पश्चिम तक जो सफ़ेदी फैली होती है वह सुबह-ए-काज़िब है, और दोनों पवित्र हाथों की उंगलियों को मिलाकर हाथ फैलाना—यानी उत्तर से दक्षिण तक क्षितिज पर फैलने वाली सफ़ेदी सुबह-ए-सादिक है।

दूसरा: कुछ किताबों में सुबह-ए-काज़िब के नामकरण का कारण यह लिखा है कि 'याक़ुबुहू ज़ुल्मतुन फल-उफ़ुक़ु युकज़्ज़िबुहू', जिसका अर्थ है कि उसके पीछे अंधेरा होता है, इसलिए क्षितिज उसे झुठलाता है। यह सफ़ेदी कह रही है कि सुबह हो गई, लेकिन क्षितिज उसे झुठलाता है, इसलिए इसे सुबह-ए-काज़िब (झूठी सुबह) कहते हैं। वर्तमान काल के विद्वानों ने इसका यह अर्थ समझ लिया कि सुबह-ए-काज़िब की सफ़ेदी गायब हो जाती है और उसके बाद अंधेरा हो जाता है, फिर सुबह-ए-सादिक निकलती है। जबकि यह पूरी तरह से गलत है। सुबह-ए-काज़िब की सफ़ेदी जहाँ से शुरू होती है, वह अंत तक बढ़ती ही जाती है; सूरज निकलने तक वहाँ कभी अंधेरा नहीं होता। बल्कि इसका अर्थ यह है कि सुबह-ए-काज़िब की सफ़ेदी क्षितिज से बहुत ऊपर दिखाई देती है और 'उसके पीछे—यानी क्षितिज की ओर उसके नीचे—पूरी तरह अंधेरा होता है। जब सुबह-ए-सादिक फैलती है, तो यह अंधेरा भी रोशनी में बदल जाता है।

तीसरा: खगोल विज्ञान की कुछ पुस्तकों और उनके अनुसरण में कुछ फ़िक़्ह (इस्लामी कानून) की किताबों जैसे रद-उल-मुहतार में लिखा गया है कि जब सूरज क्षितिज से 15 डिग्री नीचे होता है, तब सुबह-ए-सादिक का समय होता है, और सुबह-ए-काज़िब उससे केवल तीन डिग्री पहले यानी 18 डिग्री के झुकाव पर होती है। लेकिन हज़ारों बार का अवलोकन गवाह है कि यह भी पूरी तरह गलत है। बल्कि जब सूरज का झुकाव लगभग 18 डिग्री रह जाता है, तो उस समय निश्चित रूप से सुबह-ए-सादिक हो जाती है। सुबह-ए-काज़िब उससे कई डिग्री पहले हो चुकी होती है। मैंने आज ही रात, जो कि मुबारक महीने की आठवीं रात है, अपनी आँखों से देखा कि सूरज अभी क्षितिज से तैंतीस डिग्री से भी ज़्यादा नीचे था और सुबह-ए-काज़िब अपनी झलक दिखा रही थी, जबकि सुबह-ए-सादिक होने में एक पूरे घंटे से भी ज़्यादा का समय बचा था।

नोट: यानी सादुल्लाह साहब रामपुरी 12।

فرمایا امام حجۃ الاسلام غزالی قدس سرہ العالی نے کہ ابتداء میں انسان کو ان دونوں صبح میں امتیاز مشکل ہوتا ہے بکثرت بار بار بغور مشاہدہ کرتا رہے تو بعنایت الٰہی دونوں صبحیں خوب نگاہ میں پچ جاتی ہیں کہ بہ نگاہ اولیں دیکھ کر کہہ سکتا ہے کہ ابھی صبح صادق ہوئی یا نہ ہوئی، یہاں متعدد وجوہ سے لوگ اشتباہ میں ہیں ان کا بیان کر دینا ضرور ہے کہ مسلمان سمجھ لیں اور اغلاط سے بچیں۔ فاقول: وباللہ التوفیق (پس میں کہتا ہوں اور توفیق اللہ تعالی سے ہے۔ ت) اولاً صبح کاذب کو حدیث میں مستطیل یعنی لمبی اور صادق کو مستطیر پھیلی ہوئی فرمایا ہے، ناواقف گمان کرتے ہیں کہ صبح کاذب کوئی ڈورے کی مثل باریک سفید ہے اور جہاں ذرا چوڑی سفیدی ہوئی تو صبح صادق ہو گئی یہ محض غلط و ہم ہے، رات کی چھائی ہوئی اندھیری میں باریک ڈورا کیا نظر آسکتا صبح کاذب بھی ضرور عرض رکھتی ہے اور نگاہ میں دو تین گز بلکہ اس سے زیادہ تک چوڑی ہوتی ہے بلکہ حدیث کی مراد وہ ہے جو خود حضور پُر نور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے دستِ اقدس کے اشارے سے تعلیم فرمائی کہ شرقاً غرباً جو سفیدی پھیلی ہوتی ہے وہ صبح کاذب ہے اور دونوں دستِ مبارک کی کلے کی انگلیاں ملا کر ہاتھ پھیلائے یعنی جنوباً شمالاً افق میں پھیلنے والی سپیدی صبح صادق ہے۔ ثانیا: بعض کتب میں صبح کاذب کی وجہ تسمیہ یہ لکھی کہ یعقبہ ظلمۃ فالافق یکذبہ یعنی اس کے عقب میں ظلمت ہوتی ہے، یہ سپیدی تو کہہ رہی ہے صبح ہوگئی، افق اس کی تکذیب کرتی ہے لہذا اسے صبح کاذب کہتے ہیں۔ اس کے معنے علمائے عصر زمانہ قریب نے یہ سمجھ لیے کہ صبح کاذب کی سپیدی جا کر اُس کے بعد اندھیرا ہو جاتا ہے پھر صبح صادق نکلتی ہے حالانکہ یہ محض باطل ہے، صبح کاذب کی سپیدی جہاں شروع ہوتی ہے وہ اخیر تک بڑھتی ہی جاتی ہے ہرگز غروب آفتاب تک وہاں تاریکی نہیں آتی بلکہ اس کے معنی یہ

ہیں کہ صبح کاذب کی سپیدی افق سے بہت اونچی ظاہر ہوتی ہے اور اس کے عقب میں اس کے پیچھے یعنی افق میں اس کے نیچے بالکل اندھیرا ہوتا ہے، جب صبح صادق پھیلتی ہے یہ تاریکی بھی روشنی سے بدل جاتی ہے۔ ثالثا: بعض کتب ہیئت اور ان کے اتباع سے بعض کتب فقہ مثل ردالمحتار میں لکھ دیا کہ جب آفتاب افق سے ۱۵ درجے نیچے رہتا ہے وقت صبح صادق ہوتی ہے اور صبح کاذب اس سے صرف تین درجے پہلے یعنی ۱۸ درجے کے انحطاط پر ہوتی ہے مگر ہزاروں بار کا مشاہدہ شاہد ہے کہ یہ بھی محض غلط ہے بلکہ جب آفتاب کا انحطاط قریب ۱۸ درجے کے رہ جاتا ہے اس وقت یقیناً صبح صادق ہو جاتی ہے، صبح کاذب اس سے بہت درجوں پہلے ہو چکتی ہے، میں نے آج ہی رات کہ شب ہشتم ماہ مبارک ہے بچشم خود معائنہ کیا کہ آفتاب ہنوز تینتیس درجے سے زیادہ افق سے نیچا تھا کہ صبح کاذب اپنی جھلک دکھا رہی تھی، صبح صادق ہونے کو ایک گھنٹے کامل سے بھی زیادہ وقت باقی تھا۔ عه : یعنی سعداللہ صاحب رام پوری ۱۲

Fourth: When common people hear about the rising of dawn, they imagine in their conjecture that this whiteness, rising from the horizon (i.e., the edge of the earth), becomes visible to us in houses or on rooftops when it reaches a height, just as the sun and other stars appear in the city after a delay from their actual rising. Based on this, seeing the dawn, they think it happened much earlier since it has reached such a height. However, this is merely their delusion; rather, this whiteness is created in our sight much higher than the horizon. Suppose a person is in a forest or even in the sea where nothing like trees, dust, clouds, etc., obstructs the vision at all. Even there, this whiteness will occur much above the horizon, and the entire edge of the sky below it will be dark. This is called "Ta'qubah Zulmat" (there is darkness behind it). To make it understandable for one's intellect, understand it this way: it is necessary in reality that the sun's rays first bring whiteness to that part which is adjacent to the edge of the earth, but it was never felt, nor can it be. The congestion of vapors in the horizon and the sight lines passing through hundreds of miles of vapor and other densities to reach the horizon makes even a bright thing like sunlight look so dull that instead of whiteness, redness is perceived, and there is no intensity at all. Then how is this faint, weak whiteness capable of being seen at the horizon, which is less clear and very far from the sight? It will always shine above where there is proximity to the sight and the place is clearer compared to the horizon.

Fifth: It occurs in some books that dawn is the seventh part of the night. People take this as general for every season and every place. However, the scholar who said this meant it for that specific season and latitude; otherwise, dawn in our lands certainly ranges from the sixth to the tenth part of the night, a detailed table of which this humble servant has written in his Fatawa. Even in this blessed month, dawn is from the ninth to the tenth part of the night. Those who apply the seventh part will make night into day themselves. Now, with the success granted by Allah Almighty, we clearly describe the forms of this whiteness that occur from the beginning of Subh-e-Kazib (false dawn) until the spreading of Subh-e-Sadiq (true dawn), which has not been written in any book to date. This is our observation of years, and one who understands it carefully will, InshaAllah Almighty, very quickly gain the ability to distinguish between Subh-e-Kazib and Sadiq:

(1) At a height of several spears above the horizon on the eastern side, where the sun is about to rise today, in its line, i.e., in the plane of the zodiac circle on the sphere of vapors, a faint spot of whiteness appears in the darkness of the night, surrounded on

all sides by the darkness of the night in this manner: [A diagram showing a light oval shape inside a dark rectangle]. This is the foundation of Subh-e-Kazib being laid.

(2) As the sun gets closer to the horizon, this whiteness progresses, but in reverse progression, i.e., from above...

चौथा: आम लोग जब सुबह का उदय होना सुनते हैं, तो वे अपने अनुमान में यह कल्पना करते हैं कि यह सफेदी क्षितिज यानी जमीन के किनारे से उठती हुई जब ऊंचाई पर आती है, तो हमें घरों में या छतों पर दिखाई देती है, जैसे सूरज और अन्य तारे शहर में अपने उदय के काफी समय बाद दिखाई देते हैं। इस आधार पर, वे सुबह होते देख कर समझते हैं कि यह बहुत पहले हो चुकी है क्योंकि यह इतनी ऊंचाई पर आ गई है। हालांकि, यह भी केवल उनका भ्रम है; बल्कि यह सफेदी हमारी नज़रों में क्षितिज से काफी ऊपर ही पैदा होती है। मान लीजिए कि कोई व्यक्ति जंगल या समुद्र में हो जहाँ दृष्टि के सामने पेड़, धूल, बादल आदि जैसी कोई चीज़ बिल्कुल भी बाधा न बने। वहां भी यह सफेदी क्षितिज से काफी ऊपर ही उत्पन्न होगी और उसके नीचे आसमान का पूरा किनारा अंधेरा होगा। इसे "ताकुबा ज़ुल्मत" (इसके पीछे अंधेरा होता है) कहा गया है। अपनी समझ के लिए इसे इस तरह समझें: वास्तव में यह आवश्यक है कि सूरज की किरणें पहले उस हिस्से में सफेदी लाएँ जो जमीन के किनारे से सटा हुआ है, लेकिन वह कभी महसूस नहीं हुई, न हो सकती है। क्षितिज में वाष्प का जमाव और दृष्टि रेखाओं का सैकड़ों मील के वाष्प और अन्य घनत्वों को पार करके क्षितिज तक जाना, सूरज की धूप जैसी चमकदार चीज़ को इतना धुंधला कर देता है कि सफेदी के बजाय लाली महसूस होती है और तेज़ी का नामोनिशान नहीं होता। फिर यह हल्की कमज़ोर सफेदी इस काबिल कहाँ कि क्षितिज में नज़र आ सके जो साफ़ भी कम है और नज़रों से बहुत दूर भी है? यह तो हमेशा ऊपर ही चमकेगी जहाँ नज़रों से निकटता भी है और स्थान क्षितिज की तुलना में अधिक साफ़ है।

पांचवां: कुछ किताबों में आया है कि सुबह रात का सातवां हिस्सा है। लोग इसे हर मौसम और हर जगह के लिए सामान्य मान लेते हैं। हालांकि, जिस विद्वान ने ऐसा कहा, वह उस मौसम और उस अक्षांश (latitude) के लिए विशिष्ट था; अन्यथा निश्चित रूप से हमारे देशों में सुबह रात के छठे हिस्से से दसवें हिस्से तक होती है, जिसकी विस्तृत तालिका इस तुच्छ सेवक (फकीर) ने अपने फतावा में लिखी है। इस मुबारक महीने में भी सुबह रात के नौवें हिस्से से दसवें हिस्से तक है। जो लोग सातवां हिस्सा लागू करेंगे, वे खुद ही रात को दिन बना देंगे। अब हम अल्लाह तआला की तौफीक से सुबह-ए-काज़िब (झूठी सुबह) की शुरुआत से सुबह-ए-सादिक (सच्ची सुबह) के फैलने तक इस सफेदी के जो रूप सामने आते हैं, उनका स्पष्ट विवरण देते हैं जो आज तक किसी किताब में नहीं लिखा गया। यह हमारा वर्षों का अवलोकन है और इसे ध्यान से समझने वाला इंशाअल्लाह तआला बहुत जल्द सुबह-ए-काज़िब और सादिक में अंतर करने की क्षमता हासिल कर लेगा:

(1) क्षितिज से कई नेजों की ऊंचाई पर पूर्व दिशा में जहाँ से आज सूरज निकलने वाला हो, उसकी सीध में यानी वाष्प के गोले (sphere of vapors) पर राशि चक्र (zodiac circle) की सतह में रात के अंधेरे में सफेदी का एक हल्का धब्बा पैदा होता है जिसे चारों तरफ से रात के अंधेरे ने इस तरह घेरा होता है: [एक आरेख जिसमें एक गहरे रंग के आयत के अंदर एक हल्का अंडाकार आकार दिखाया गया है]। यह सुबह-ए-काज़िब की नींव पड़ती है।

(2) जैसे-जैसे सूरज क्षितिज के करीब आता जाता है, यह सफेदी बढ़ती जाती है, लेकिन उल्टी प्रगति में, यानी ऊपर से...

पृष्ठ ८३६ का ५७८

رابعاً: عوام صبح کا طلوع ہونا سنتے ہیں تو اپنے زعم میں یہ گمان کرتے ہیں کہ افق یعنی زمین کے کنارہ سے یہ سپیدی اٹھتی ہوئی جب بلندی پر آتی ہے تو ہمیں مکانوں میں یا چھت پر دکھائی دیتی ہے جیسے آفتاب وغیرہ ستارے شہر میں اپنے طلوع سے دیر کے بعد نظر آتے ہیں اس بنا پر وہ صبح ہوتی دیکھ کر سمجھتے ہیں کہ بہت پہلے ہو چکی ہے جب تو اتنی بلندی آ گئی ہے حالانکہ یہ بھی ان کا محض وہم ہے بلکہ یہ سفیدی افق سے بہت اونچی ہی ہماری نظروں میں پیدا ہوتی ہے۔ فرض کیجئے کہ آدمی جنگل بلکہ سمندر میں ہو کہ نگاہ کے سامنے درخت، غبار، ابر وغیرہ کوئی شے اصلاً حائل نہ ہو تو وہاں بھی یہ بیاض افق سے بہت اوپر ہی حادث ہو گی اور اس کے نیچے تمام کنارہ آسمان تاریک ہوگا، اسی کو "تعقبہ ظلمۃ" (اس عقب میں ظلمت ہوتی ہے۔ت) کہا گیا، اپنی ہی سمجھ کے قابل یوں سمجھیں کہ نظر بواقع ضرور ہے کہ آفتاب کی کرنیں پہلے اُس حصے میں سپیدی لاتی ہوں گی جو کنارہ زمین کے متصل ہے مگر وہ نہ کبھی محسوس ہوئی، نہ ہو، افق میں بخارات کا ازدحام اور خطوط نظر کا صد ہا میل بخار وغیرہ کثافت کو طے کر کے افق تک جانا، آفتاب کی دھوپ جیسی روشن چیز کو کتنا میلا کر کے دکھاتا ہے کہ سپیدی کی جگہ سرخی معلوم ہوتی ہے اور تیزی نام کو نہیں ہوتی پھر یہ خفیف ضعیف سپیدی کیا اس قابل ہے کہ افق میں نظر آ سکے جو صاف بھی کم ہے اور نظر سے دُور بھی بہت ہے یہ تو ہمیشہ اوپر چمکے گی جہاں نظر سے قرب بھی ہے اور جگہ بہ نسبت افق صاف تر ہے۔

خامساً: بعض کتب میں واقع ہوا کہ صبح رات کا ساتواں حصہ ہے، اسے لوگ ہر موسم میں وہر مقام کے لیے عام سمجھ لیے، حالانکہ جن عالم نے ایسا فرمایا وہ اُس موسم اور اُس عرض بلد کے لیے خاص تھا ورنہ یقیناً صبح ہمارے بلاد میں رات کے چھٹے حصے سے دسویں حصے تک

ہوتی جس کی مفصل جدول فقیر نے اپنے فتاوی میں لکھی ہے اس ماہ مبارک میں بھی صبح رات کے نویں حصے سے دسویں حصے تک ہے، جو لوگ ساتواں حصہ لگائیں گے وہ آپ ہی رات کو دن بنائیں گے، اب ہم بتوفیق اللہ تعالی صبح کاذب کے شروع سے صبح صادق کے انتشار تک جو صورتیں اس سپیدی کی پیش آتی ہیں اُن کا واضح بیان کرتے ہیں جو آج تک کسی کتاب میں نہ لکھا گیا جو ہمارا برسوں کا مشاہدہ ہے اور جسے بغور سمجھ لینے والا ان شاء اللہ تعالیٰ بہت جلد صبح کاذب و صادق میں امتیاز کا ملکہ پیدا کر سکتا ہے:

(۱) افق سے کئی نیزے بلندی پر جانب مشرق آج جہاں سے آفتاب نکلنے کو ہو، اس کی سیدھ میں یعنی دائرہ منطقۃ البروج کی سطح کرہ بخار پر رات کی اندھیری میں ایک خفیف سپیدی کا دھبہ پیدا ہوتا ہے جسے چاروں طرف سے رات کی اندھیری گھیرے ہوئے ہے اس انداز پر: [ایک خاکہ جس میں ایک سیاہ مستطیل کے اندر ایک ہلکا بیضوی نشان دکھایا گیا ہے]۔ یہ صبح کاذب کی بنیاد پڑتی ہے۔

(۲) جوں جوں آفتاب افق کے نزدیک آتا جاتا ہے یہ سپیدی ترقی کرتی ہے مگر ترقی معکوس یعنی اوپر سے

...it continues to grow downwards. It had shone very high above the horizon and there was darkness for a long distance below. Now that high whiteness remains in its place, and whiteness below it and into it continues to merge until it gradually approaches the horizon. But in all these states, it exists in the form of a long column, as if a white sheet has been hung from top to bottom, such that whiteness is limited to that area and there is absolute darkness all around these shapes. [Boxes in the form of images are to be made here, Vol. 10, p. 572] (3) After all these shapes, on both sides of the lower part of this column, a very slight brownish-gray color appears for a very short distance, which is sometimes distinguishable and immediately vanishes from below the sight in this manner ■. Now this is the time when Subh Sadiq (True Dawn) wants to lift the veil from its bright face, but it is not yet dawn because 'tabyin' (distinctness/manifestation) is a condition for it, and this is not yet distinct: "...until the white thread of dawn becomes distinct to you from the black thread [of night]." [1] The noble command of Allah Almighty is: "...until the thread of whiteness becomes clear to you from the thread of blackness by the breaking of dawn." (T) Until all these states, it is only Subh Kadhib (False Dawn), and the time for Isha prayer and eating Sahur (pre-dawn meal) remains by consensus. (4) After this, those two sides become white, although their whiteness is inclined towards darkness, and its width from south to north is very slight. On this pattern, this is the beginning of dawn, and our noble scholars have a difference of opinion at this time: some have declared it as dawn and this is more cautious, while some ■ considering the condition of visibility and spreading, have kept it also under the ruling of Subh Kadhib, and this is more accommodating. In all these states, there is absolute darkness around all the upper parts of the column. (5) After this, this whiteness of both sides starts spreading south and north from moment to moment and spreads within a short while. In this way ■ this is the certain, unanimous Subh Sadiq, and that column still remains as before, and there is darkness on its three sides. But this true whiteness, as it spreads south and north, simultaneously rises from bottom to top. Contrary to the whiteness of false dawn which used to grow from top to bottom, until now that white column gradually disappears as it gets lost in this scattered whiteness, meaning that of its sides...

[1] Al-Quran 2/187 Page 579 of 836

...नीचे की ओर बढ़ती जाती है, क्षितिज से बहुत ऊपर चमकी थी और नीचे दूर तक अंधेरा था। अब वह ऊँची सफेदी तो अपनी जगह रहती है और उसके नीचे सफेदी और उसमें मिलती जाती है यहाँ तक कि धीरे-धीरे क्षितिज के करीब तक आने को होती है, मगर इन सब हालतों में वह एक लंबे स्तंभ की स्थिति में होती है जैसे कि एक सफेद चादर ऊपर से नीचे लटकाई गई हो कि इसी हद तक सफेदी है और आस-पास बिल्कुल अंधेरा इन शक्लों पर। [यहाँ इमेज की शक्ल में डिब्बे बनाने हैं, जिल्द 10, पृष्ठ 572] (३) इन तमाम शक्लों के बाद इस स्तंभ के निचले हिस्से के दोनों पहलुओं पर बहुत ही थोड़ी दूर तक एक हल्का भूरापन-धूसर रंग पैदा होता है जो कभी समझ में आता है और तुरंत नज़र के नीचे से निकल जाता है, इस तरह पर ■ अब यह वह वक्त है कि सुबह सादिक़ अपने रोशन चेहरे से नक़ाब उठाना चाहती है, मगर अभी तक सुबह नहीं क्योंकि उसके लिए 'तबीईन' (स्पष्ट होना) शर्त है और यह स्पष्ट नहीं: "...जब तक कि तुम्हारे लिए सुबह की सफेदी का धागा (रात की) सियाही के धागे से अलग होकर साफ़ नज़र न आने लगे।" १ अल्लाह तआला का इरशाद-ए-गिरामी है: यहाँ तक कि तुम्हारे लिए ज़ाहिर हो जाए सफेदी का डोरा सियाही के डोरे से पौ फट कर। (त) इन तमाम हालतों तक सुबह काज़िब ही है और नमाज़-ए-इशा और सहरी खाने का वक्त बिल-इत्तिफ़ाक़ (सर्वसम्मति से) बाकी है। (४) इसके बाद वे दोनों पहलू सफेद हो जाते हैं, हालांकि उनकी सफेदी अंधेरे की ओर झुकी होती है और दक्षिण-उत्तर में इसकी चौड़ाई बहुत कम होती है, इस स्थिति पर यह सुबह की शुरुआत है और इस वक्त में हमारे मशायख़ किराम के बीच मतभेद है: कुछ ने इसे सुबह करार दिया है और यही ज़्यादा एहतियात वाला है, कुछ ने ■ ज़ाहिर होने और फैलने की शर्त के लिहाज़ से इसे भी सुबह काज़िब के हुक्म में रखा है और यही ज़्यादा गुंजाइश वाला है। इन तमाम हालतों में स्तंभ के तमाम ऊपरी हिस्सों के आस-पास नितांत कालापन होता है। (५) इसके बाद दोनों पहलुओं की यह सफेदी पल-भर में दक्षिण-उत्तर में फैलना शुरू होती है और थोड़ी ही देर में फैल जाती है। इस तरह पर ■ यह निश्चित और सर्वसम्मत सुबह सादिक़ है और वह स्तंभ अभी भी पहले की तरह बरकरार है, और उसके तीन तरफ सियाही होती है, मगर यह सच्ची सफेदी जैसे-जैसे दक्षिण-उत्तर में फैलती है, साथ ही नीचे से ऊपर चढ़ती जाती है। सुबह काज़िब की सफेदी के विपरीत जो ऊपर से नीचे बढ़ती आती थी, अब वह सफेद स्तंभ धीरे-धीरे इस बिखरी हुई सफेदी में गुम होते-होते मिट जाता है यानी उसके आस-पास की...

१ अल-क़ुरआन २/१८७ पृष्ठ ८३६ का ५७९

نیچے کو بڑھتی جاتی ہے، افق سے بہت اونچی چمکی تھی اور نیچے دور تک اندھیرا تھا اب وہ اونچی سپیدی تو اپنی جگہ رہتی ہے اور اس کے نیچے سپیدی اور اس میں ملتی جاتی ہے یہاں کہ شدہ شدہ افق کے قریب تک آنے کو ہوتی ہے مگر ان سب حالتوں میں وہ ایک طولانی ستون کی حالت میں ہوتی ہے گویا ایک سفید چادر اوپر سے نیچے لٹکائی گئی ہے کہ اسی حد تک سپیدی ہے اور آس پاس بالکل اندھیرا ان شکلوں پر یہاں امیج کی شکل میں ڈبے بنانے ہیں جلد ۱۰ ص ۵۷۲ (۳) ان تمام اشکال کے بعد اس عمود کے حصہ زیریں کے دونوں پہلوؤں پر نہایت تھوڑی دور تک ایک خفیف بھورا پن خاکستری رنگ پیدا ہوتا ہے کہ کبھی تمیز میں آتا ہے اور معاً نگاہ کے نیچے سے نکل جاتا ہے اس طرز پر ■ اب یہ وہ وقت کہ صبح صادق اپنے رُخِ روشن سے نقاب اُٹھایا چاہتی ہے مگر ہنوز صبح نہیں کہ اس کے لئے تبیین شرط ہے اور یہ متبین نہیں: حَتّٰی یَتَبَیَّنَ لَکُمُ الْخَیْطُ الْاَبْیَضُ مِنَ الْخَیْطِ الْاَسْوَدِ مِنَ الْفَجْرِ ؕ 1 اللہ تعالیٰ کا ارشاد گرامی ہے: یہاں تک کہ تمہارے لئے ظاہر ہو جائے سفیدی کا ڈورا سیاہی کے ڈورے سے پو پھٹ کر۔ (ت) ان تمام حالتوں تک صبح کاذب ہی ہے اور نمازِ عشاء اور سحری کھانے کا وقت بالاتفاق باقی ہے۔ (۴) اس کے بعد وہ دونوں پہلو سپید ہو جاتے ہیں اگر چہ ان کی سپیدی مائل بہ تیرگی ہوتی ہے اور جنوباً شمالاً اس کا عرض بہت خفیف ہوتا ہے، اس وضع پر یہ ابتدائے صبح ہے اور اس وقت میں ہمارے مشائخ کرام کو اختلاف ہے: بعض نے اُسے صبح قرار دیا اور یہی احوط ہے، بعض نے ■ بلحاظ شرطِ استظارہ و انتشار اسے بھی صبح کاذب کے حکم میں رکھا اور یہی اوسع ہے۔ ان جمیع حالتوں میں عمود کے تمام بالائی حصے کے آس پاس نری سیاہی ہوتی ہے۔ (۵) اس کے بعد دونوں پہلوؤں کی یہ سپیدی آناً فاناً جنوباً شمالاً پھیلنا شروع ہوتی ہے اور ایک خفیف دیر میں پھیل جاتی ہے۔ اس طور پر

■ یہ یقینی اجماعی صبح صادق ہے اور ہنوز وہ عمود بدستور باقی، اور اس کے تین طرف سیاہی ہوتی ہے مگر یہ سچی سپیدی جیسی جیسی جنوب شمال میں پھیلتی ہے ساتھ ہی نیچے سے اوپر چڑھتی جاتی ہے۔ برعکس سپیدی کاذب کے کہ اوپر سے نیچے بڑھتی آتی تھی یہاں تک کہ اب وہ عمود سپید رفتہ رفتہ اس منتشر سپیدی میں گم ہوتے ہوتے فنا ہو جاتا ہے یعنی اُس کے اطراف کی

Fatawa Razawiyya - Volume 10

Whiteness surrounds all the darkness, and now the shape of this column is no longer distinguishable in these forms.

[Diagrams: Example 5, Example 4, Example 3]

(6) Now, as this whiteness increases in the sky, it also turns towards the earth and illuminates the courtyards and roofs. This is the time of Isfar (daybreak), which is the recommended time for Fajr prayer, and praying it earlier in the darkness is contrary to what is recommended.

(7) When the sun comes closer to the horizon, this whiteness brings redness, then goldenness, then a brilliant whiteness adjacent to it is sunrise. Leave aside the fifth shape which is the consensus morning (Subh-e-Sadiq). Even the fourth shape, in this blessed Ramadan and several Ramadans before it, in Bareilly and Shahjahanpur, on the third night's morning, never occurred exactly at five o'clock according to the clocks that were nine minutes slower than current ones. Anyone can test and see in the final dates; it will certainly not occur even by 5:15. So, how can the ruling of not fasting at 4:40 be correct? I submit another identifying mark for distinction: a shape resembling the letter 'Kaaf' (ک) is formed by several stars in the sky in this manner... Today, this 'Kaaf' rises late in the night. During these days, the very bright star Venus (Zuhra) is at a distance of one spear's length from it. In Bareilly, the column of Subh-e-Kazib (false dawn) these days is around the vertical part (Alif) of this 'Kaaf' and extends to Venus. Then, Subh-e-Sadiq (true dawn) manifests from both sides of Venus towards the south and north. Regarding the timings, it manifests in this shape.

[Diagram text:] - In Shahjahanpur too, the position will be close to this. - Star Venus (Zuhra). - Directions are easy. - Muslims should remember the position of these seven stars; they form the letter 'Kaaf'. - Map at quarter to five on the 4th of blessed Ramadan.

The discussion regarding timings is finished. As for the issues mentioned in the advertisement, they also contain severe errors in abundance. For example: firstly, making the testimony of one reliable person a condition for the new moon of Ramadan in cloudy or dusty conditions is contrary to the reliable, manifest, and corrected narration of the school of thought. Great Imams like Imam Shams al-A'imma al-Halwani, Imam Burhan al-Din al-Farghani, Imam al-Bazzazi, and others have corrected this view. Considering current times, reliance on it is mandatory

because here, even 'Mastoor' (one whose internal state is unknown) testimony is acceptable. That is, someone whose transgression (fisq) is not known and whose apparent state is righteous. The author of the school of thought, Imam Muhammad (may Allah be pleased with him), explicitly stated that in the matter of the Ramadan crescent, the testimony of both a reliable (thiqa) and a non-reliable person is acceptable. By 'non-reliable', he means the 'Mastoor' whose inner uprightness is unknown. Today, since finding a 'thiqa' is difficult, this Zahir-al-Riwayah...

फ़तावा रज़विया - भाग १०

सारी स्याही (अंधेरे) को सफेदी घेर लेती है और अब इस स्तंभ (कॉलम) की आकृति इन रूपों में स्पष्ट नहीं रहती।

[चित्र: उदाहरण ५, उदाहरण ४, उदाहरण ३]

(६) अब यह सफेदी जिस तरह आसमान पर बढ़ी, ज़मीन की ओर भी झुकती है और आँगन व छतों को रोशन कर देती है। यह 'इसफ़ार' का समय है जो सुबह की नमाज़ का मुस्तहब (पसंदीदा) समय है, और इससे पहले अंधेरे में नमाज़ पढ़ना मुस्तहब के खिलाफ है।

(७) जब सूरज क्षितिज के और करीब आता है, तो यह सफेदी लाली लाती है, फिर सुनहरापन, फिर उसके पास चमकती सफेदी सूर्योदय है। पाँचवीं आकृति जो सर्वसम्मत सुबह है उसे रहने दें, तो चौथी आकृति भी इस मुबारक रमज़ान और उससे पहले के कई रमज़ानों में बरेली और शाहजहाँपुर में तीसरी रात की सुबह उन घड़ियों से भी जो पिछले साल तक वर्तमान घड़ियों से नौ मिनट कम थीं, कभी किसी दिन ठीक पाँच बजे भी नहीं हुई। और अंतिम तारीखों में जो चाहे आज़माकर देख ले, सवा पाँच बजे तक भी हरगिज़ नहीं होगी। तो ४ बजकर ४० मिनट पर रोज़ा न होने का हुक्म कैसे सही हो सकता है? पहचान के लिए एक और निशानी पेश करता हूँ: आसमान पर कुछ सितारों से एक आकृति अक्षर 'काफ़' (ک) की तरह इस तरह बनती है... यह 'काफ़' आजकल पिछली रात को उदय होता है। इन दिनों इससे एक भाले की दूरी पर बहुत चमकदार सितारा 'ज़ोहरा' (वीनस) है। बरेली में 'सुब्ह-ए-काज़िब' का स्तंभ आजकल इस 'काफ़' के'अलिफ़' यानी मध्य भाग के चारों ओर होता है और ज़ोहरा तक फैलता है। फिर ज़ोहरा के दोनों तरफ से दक्षिण और उत्तर की ओर 'सुब्ह-ए-सादिक' की चमक दिखाई देती है, इस आकृति पर।

[चित्र का पाठ:] - शाहजहाँपुर में भी स्थिति इसके करीब-करीब होगी। - सितारा ज़ोहरा (वीनस)। - दिशाओं को समझना आसान है। - मुसलमान इन सात सितारों की स्थिति याद कर लें, यही अक्षर 'काफ़' बनता है। - रमज़ान मुबारक की चौथी तारीख को पौने पाँच बजे का नक्शा।

समय के बारे में चर्चा समाप्त हुई। जहाँ तक विज्ञापन में वर्णित मसलों का सवाल है, उनमें भी भारी गलतियाँ हैं। उदाहरण के लिए: पहला, बादल और धूल की स्थिति में रमज़ान के चाँद के लिए एक विश्वसनीय (थिका) गवाह की शर्त रखना, इस मज़हब के विश्वसनीय और प्रमाणित वर्णन के विरुद्ध है। महान इमामों जैसे इमाम शम्सुल अइम्मा हलवानी, इमाम बुरहानुद्दीन फ़रग़ानी, इमाम बज़्ज़ाज़ी आदि

ने जिसकी तस्दीक की है और वर्तमान समय को देखते हुए उस पर भरोसा करना वाजिब है क्योंकि यहाँ 'मस्तूर' की गवाही भी स्वीकार्य है। अर्थात वह व्यक्ति जिसकी बुराई (फ़िस्क़) ज्ञात नहीं है और जिसका प्रत्यक्ष आचरण नेक है। मज़हब के लेखक इमाम मुहम्मद (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने स्पष्ट किया है कि रमज़ान के चाँद के मामले में 'थिका' और 'ग़ैर-थिका' दोनों की गवाही स्वीकार्य है। 'ग़ैर-थिका' से तात्पर्य उसी 'मस्तूर' से है जिसकी आंतरिक धार्मिकता अज्ञात है। चूँकि आज के दौर में 'थिका' मिलना कठिन है, इसलिए यह 'ज़ाहिर-अर-रिवायत'...

पृष्ठ ५८० / ८३६

ساری سیاہی کو سپیدی گھیر لیتی ہے اور اب اس عمود کی صورت متمیز نہیں رہتی ان صورتوں پر

[مثال ۵، مثال ۴، مثال ۳]

(۶) اب یہ سپیدی جس طرح آسمان پر بڑھی زمین کی جانب بھی متوجہ ہوتی اور صحن و بام کو روشن کر دیتی ہے یہ وقت اسفار ہے کہ نماز صبح کا مستحب وقت ہے اور اس پہلے اندھیرے میں پڑھنی خلاف مستحب۔

(۷) جب آفتاب اور زیادہ قریب افق آتا ہے یہ سپیدی سرخی لاتی ہے پھر سنہرا پن پھر چمکدار سپیدی اُس کے متصل طلوع آفتاب ہے، پانچویں شکل جو اجماعی صبح ہے اسے جانے دیجئے، تو چوتھی شکل بھی اس رمضان مبارک اور اس سے پہلے کے متعدد رمضانوں میں بریلی و شاہجہان پور میں تیسری شب کی صبح ان گھڑیوں سے بھی جو پار سال تک حال کی گھڑیوں سے نو منٹ کم تھیں کبھی کسی دن ٹھیک پانچ بجے بھی نہ ہوئی اور اخیر تاریخوں میں جو چاہے آزما کر دیکھ لے، سوا پانچ بجے تک بھی ہرگز نہ ہوگی تو چار بج کر ۴۰ منٹ پر روزہ نہ ہونے کا حکم کیونکہ صحیح ہو سکتا ہے تمیز کے لیے ایک اور پہچان گزارش کروں، آسمان پر چند کواکب سے ایک شکل حرف کاف بنتی ہے اس وضع پر ... یہ کاف آج کل پچھلی رات کو طالع ہوتا ہے اس سے ایک نیزے کے فاصلے پر ان دنوں بڑا روشن ستارہ زہرہ ہے، بریلی میں صبح کاذب کا عمود آج کل اس کاف کے الف یعنی حصہ وسطانی کے گرد ہوتا ہے اور زہرہ تک پھیلتا ہے پھر زہرہ کے دونوں

پہلوؤں سے جنوب و شمال کو صبح صادق تجلی کرتی ہے اس شکل پر، اوقات کے متعلق تجلی کرتی ہے اس شکل پر،

[نقشہ کی عبارت:] - شاہجہان پور میں بھی لغت اسی کے قریب قریب ہو گی۔ - ستارہ زہرہ - سمت اورایم کے آسان ہے - مسلمان ان سات کواکب کی وضع کو یاد کر لیں یہی حرف کاف بنتا ہے - رمضان مبارک کی چوتھی تاریخ کو پونے پانچ بجے کا نقشہ

اوقات کے متعلق بیان سے فراغ ہوا۔ رہے مسائل مذکورہ اشتہار، ان میں بھی سخت اغلاط بشدت ہیں، مثلاً : اول ہلال رمضان بحال ابر و غبار ایک ثقہ کی گواہی شرط کرنی اس مذہب معتمد و ظاہر الروایہ مصححہ کے خلاف ہے کہ اجلہ ائمہ مثل امام شمس الائمہ حلوانی و امام برہان الدین فرغانی و امام بزازی و غیر ہم نے جس کی تصحیح فرمائی اور نظر بحال زمانہ اس پر اعتماد واجب ہے کہ یہاں شہادت مستور بھی مقبول ہے یعنی جس کا فسق معلوم نہیں اور اس کا ظاہر حال صلاح ہے محرر مذہب امام محمد رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے تصریح فرمائی کہ ہلال رمضان میں ثقہ و غیر ثقہ دونوں کی شہادت مقبول ہے غیر ثقہ سے وہی مستور مراد جس کی عدالت باطنی مجہول ہے آج کل ثقہ کی کامیابی ظاہر ہے تو اس ظاہر الروایہ

Fatawa Razawiyya Volume 10

Explicit deviation from a corrected interpretation is an unacceptable ignorance. It is stated in 'Al-Kafi' of Imam Hakim Shaheed:

Acceptance of the testimony of a Muslim man and a Muslim woman, whether the witness is just (aadil) or not[1]	**The testimony of a Muslim man and woman will be accepted, whether the witness is just or not. (T)**

In 'Durr al-Mukhtar' it is stated: "Al-Bazzazi has declared it correct."[2] (T - Al-Bazzazi has declared it correct.) In 'Fath al-Qadir' it is stated: "Al-Halwani has adopted this."[3] (T - Al-Halwani has adopted this.) In 'Radd al-Muhtar' it is stated:

Similarly, it was declared correct in 'Al-Mi'raj' and 'Al-Tajnis', and 'Nur al-Idah' followed it. It is also the apparent narration (Zahir al-Riwayah). Imam Hakim Shaheed collected in 'Al-Kafi' the words of Imam Muhammad from his books which are 'Zahir al-Riwayah'. By 'other than just', it refers to one whose state is concealed (mastur al-hal).[4] - Summary	**It was called correct in 'Al-Mi'raj' and 'Al-Tajnis', 'Nur al-Idah' also adopted it, and this is also the 'Zahir al-Riwayah'. So, Hakim Shaheed has gathered in 'Al-Kafi' those words of Imam Muhammad which are mentioned in his books, and this is the 'Zahir al-Riwayah'. And by 'non-just' (ghayr aadil), it means being of concealed state (mastur al-hal). (T)**

Second: To add the condition of conformity with rational rules along with conformity with Shariah rules for the acceptance of testimony is also against the relied-upon school of thought (Mazhab-e-Mu'tamad). Regarding the sighting of the moon, as much rational matter as the Pure Shariah has accepted—for example, the moon cannot be seen on the 28th—that much has entered the rules of Shariah. Beyond that, the rules which astronomers have fabricated regarding the moon based on their conjectures and estimates, the Shariah has not paid any attention to them at all and has explicitly stated:

"We are an unlettered nation; we neither write nor calculate. The month is like this, like this, and like this."[5] (Al-Hadith)	**We are an unlettered nation; we do not write nor do we know calculation. The month is like this, like this, and like this. (Al-Hadith). (T)**

In 'Durr al-Mukhtar' it is stated:

No consideration is given to the statement of the timekeepers (astronomers), even if they are just.

According to the school of thought, the statement of astronomers is not acceptable even if...

[1] Radd al-Muhtar, referring to Al-Kafi lil-Hakim, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/98-99 [2] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Mujtabai Delhi, 1/138 [3] Fath al-Qadir, Kitab al-Sawm, Nooriya Razawiyya Sukkur, 2/250 [4] Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/98-99 [5] Sunan Abi Dawud, Kitab al-Sawm, Aftab-e-Alam Press Lahore, 1/317

फ़तावा रज़विया खंड 10

एक सही व्याख्या से स्पष्ट रूप से विचलन करना अस्वीकार्य अज्ञानता है। इमाम हाकिम शहीद की 'अल-काफ़ी' में लिखा है:

एक मुस्लिम पुरुष और एक मुस्लिम महिला की गवाही स्वीकार की जाएगी, चाहे गवाह न्यायपूर्ण (आदिल) हो या न हो।[1]

मुस्लिम पुरुष और महिला की गवाही स्वीकार की जाएगी, चाहे गवाह न्यायपूर्ण हो या न हो। (त)

'दुर्रे मुख़्तार' में कहा गया है: "बज़ाज़ी ने इसे सही करार दिया है।"[2] (त - बज़ाज़ी ने इसे सही करार दिया है।) 'फ़तह अल-क़दीर' में कहा गया है: "हलवानी ने इसे अपनाया है।"[3] (त - हलवानी ने इसे अपनाया है।) 'रद्द अल-मुह्तार' में कहा गया है:

इसी तरह, 'अल-मेराज' और 'अल-तजनीस' में इसे सही बताया गया, और 'नूर अल-ईज़ाह' ने भी इसी का पालन किया। यही ज़ाहिर अल-रिवायत भी है। इमाम हाकिम शहीद ने 'अल-काफ़ी' में इमाम मुहम्मद की उन बातों को संकलित किया है जो उनकी किताबों में वर्णित हैं और यही ज़ाहिर अल-रिवायत है। और 'गैर-आदिल' (अन्यायपूर्ण) से तात्पर्य है जिसका हाल गुप्त हो (मस्तूरुल हाल)।[4] - संक्षेप में

'अल-मेराज' और 'अल-तजनीस' में इसे सही कहा गया, 'नूर अल-ईज़ाह' ने भी इसे अपनाया, और यही ज़ाहिर अल-रिवायत भी है। तो हाकिम शहीद ने 'अल-काफ़ी' में इमाम मुहम्मद के उन वचनों को इकट्ठा किया है जो उनकी किताबों में ज़िक्र हैं, और यही ज़ाहिर अल-रिवायत है। और गैर-आदिल से मुराद मस्तूरुल हाल होना है। (त)

दूसरा: गवाही की स्वीकार्यता के लिए शरीयत के नियमों के साथ-साथ तर्क के नियमों की अनुकूलता की शर्त जोड़ना भी विश्वसनीय मज़हब (मज़हब-ए-मोतमिद) के विरुद्ध है। चाँद दिखने के संबंध में जितनी तर्कसंगत बात पाक शरीयत ने स्वीकार की है—जैसे कि चाँद 28 तारीख को नहीं हो सकता—वह शरीयत के नियमों में शामिल हो गई है। इसके अलावा चाँद के बारे में खगोलविदों (अहले हियत) ने अपने अनुमानों और अटकलों के आधार पर जो नियम गढ़े हैं, शरीयत ने उन पर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया और स्पष्ट रूप से फ़रमाया:

"हम एक अनपढ़ (उम्मी) कौम हैं; न हम लिखते हैं और न ही गणना करते हैं। महीना इस तरह, इस तरह और इस तरह होता है।"[5] (हदीस)

हम उम्मी उम्मत हैं, न लिखते हैं और न ही हिसाब जानते हैं; महीना इस तरह, इस तरह, इस तरह है। (हदीस)। (त)

'दुर्रे मुख़्तार' में कहा गया है:

समय बताने वालों (खगोलविदों) की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा, भले ही वे न्यायपूर्ण हों।

मज़हब के अनुसार खगोलविदों की बात स्वीकार्य नहीं है भले ही...

[1] रद्द अल-मुह्तार, अल-काफ़ी लिल-हाकिम के संदर्भ में, किताबुल सोम, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 2/98-99 [2] दुर्रे मुख़्तार, किताबुल सोम, मुजतबाई दिल्ली, 1/138 [3] फ़तह अल-क़दीर, किताबुल सोम, नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/250 [4] रद्द अल-मुह्तार, किताबुल सोम, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, 2/98-99 [5] सुनन अबी दाऊद, किताबुल सोम, आफताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, 1/317

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

مصحح بالتحریح سے عدول صریح جہل نا مقبول، کافی امام حاکم شہید میں ہے:

تقبل شهادة المسلم والمسلمة عدلان الشاہد او غیر عدل[1]۔

مسلمان مرد اور عورت کی شہادت مقبول ہوگی خواہ شاہد عادل ہو یا نہ ہو۔ (ت)

در مختار میں ہے: صححه البزازي[2] (اس کو بزازی نے صحیح قرار دیا ہے۔ت) فتح القدیر میں ہے: وبه اخذ الحلوانی[3] (اسے حلوانی نے اختیار کیا ہے۔ت) ردالمحتار میں ہے:

وكذا صححه في المعراج والتجنيس ومشى عليه في نورالايضاح وانه ظاهر الرواية ايضا فان لحاكم الشهيد في الكافي جمع كلام محمد في كتبه التي هي ظاهر الرواية والمراد بغير العدل المستور[4]- ملخصاً

معراج اور تجنیس میں اسے صحیح کہا، نورالایضاح نے بھی اسی کو اختیار کیا، اور ظاہر روایت بھی یہی ہے تو حاکم شہید نے الکافی میں امام محمد کا وہ کلام جمع کیا ہے جو ان کی کتب میں مذکور ہے اور یہی ظاہر الروایۃ ہے اور غیر عادل سے مراد مستورالحال ہونا ہے۔ (ت)

دوم: قبول شہادت کے لیے مطابقت قواعد شرعیہ کے ساتھ مطابقت قواعد عقلیہ کی قید بڑھانی بھی خلافِ مذہب معتمد ہے، رویتِ ہلال میں جس قدر عقلی بات کہ شرع مطہر نے بھی قبول فرمائی ہے مثلاً اٹھائیس کو چاند نہیں ہوسکتا اتنی قواعد شرعیہ میں آگئی اس سے زائد جو قواعد اہلِ ہیئت نے درباره ہلال اپنے ظنون و تخمینات سے گھڑے ہیں شرع نے اصلاً اُن کی التفات نہ فرمایا اور صراحتاً ارشاد فرمایا:

انّ اُمّۃ اُمّیۃ لانکتب ولا نحسب ہم اُمّی امت ہیں نہ لکھتے ہیں اور نہ ہی حساب جانتے ہیں

الشھر ھکذا وھکذا وھکذا [5] الحدیث مہینہ اس طرح، اس طرح، اس طرح ہے، الحدیث۔ (ت)

در مختار میں ہے:

لاعبرۃ بقول الموقتین ولو عدولا مذہب کے مطابق نجومیوں کا قول مقبول نہیں اگرچہ

[1] ردالمحتار بحوالہ کافی للحاکم کتاب الصوم مصطفٰی البابی مصر ۲/۹۹-۹۸ [2] درمختار، کتاب الصوم مجتبائی دہلی، ۱/۱۳۸ [3] فتح القدیر، کتاب الصوم، نوریہ رضویہ سکھر ۲/۲۵۰ [4] ردالمحتار کتاب الصوم مصطفٰی البابی مصر ۲/۹۹-۹۸ [5] سنن ابی داؤد کتاب الصوم آفتاب عالم پریس لاہور ۱/۳۱۷

Fatawa Razawiyya (Volume 10)

Upon the Madhhab (School of Law) 1- They must be just (upright). (T) In Radd al-Muhtar, it is stated: Nay, in al-Mi'raj it is mentioned that their [astrologers'] word is not considered valid by consensus [Ijma'], nor is it permissible for an astrologer to act according to his own calculation. 2 Rather, it is mentioned in al-Mi'raj that the opinion of astrologers is not reliable by consensus, and it is not permissible for an astrologer to act upon his own calculations either. (T)

I say (Aqool): These are the instructions of the Pure Sharia, the Knower of what was and what will be (Aalim Ma Kana wa Ma Yakoon). The Divinely Guided Knower (Prophet), peace and blessings of Allah be upon him, knew that the movement of the two luminaries (sun and moon) is certainly according to the pre-ordained calculation of the Almighty, the All-Knowing: "That is the decree of the Almighty, the All-Knowing." (3) (This is the design of the Mighty, the All-Knowing - T). And why would he not know, while it was revealed to him that "The sun and the moon [move] by precise calculation." (4) (The sun and the moon are according to a calculation - T). Despite this, this Knower of realities, peace and blessings of Allah be upon him, regarding the sighting of the crescent moon, completely invalidated and set aside calculation; because the Prophet knew that these are not from those definitive calculations mentioned in the noble verse "by calculation" (bihusban), but rather they are the deficient and unorganized estimates of later astronomers whose deviation is not difficult. Therefore, the leader of astronomers, Ptolemy, in the Almagest, although he set a separate chapter for the appearance and disappearance of fixed stars, did not mention the sighting of the new moon at all because he was essentially unable to systematize it. And what the later ones wrote, after those severe mutual disagreements (which are evident from the study of Sharh al-Mawaqif and Sharh Zij Sultan, etc.), they themselves could not provide any correct rule, being examples of the verse: "They follow nothing but conjecture and they do nothing but guess." (5) (They follow naught but conjecture, and they do but guess - T). Therefore, errors have frequently occurred in these calculations of the astrologers. Just a few years ago, it was written in calendars that Ramadan would be 30 days without any doubt, but from here, a schedule for Sahur and Iftar was published for a month of 29 days. By the grace of Allah, such a clear and common sighting occurred on the 29th that there was no disagreement at all. One of the opponents told some close friends, "I was waiting on the 29th with the chart in my hand."

1 Durr al-Mukhtar, Book of Fasting, Mujtabai Press, Delhi, 1/148. 2 Radd al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa al-Babi, Egypt, 100/2. 3 Quran 96/6 4 Quran 5/55 5 Quran 26/10

मज़हब के अनुसार १। वह न्यायप्रिय (आदिल) हों। (त) रद्द अल-मुह्तार में है: बल्कि अल-मेराज में है कि ज्योतिषियों का कथन सर्वसम्मति (इज्मा) से मान्य नहीं है, और एक ज्योतिषी के लिए अपने स्वयं के गणित पर कार्य करना भी वैध नहीं है। २। बल्कि मेराज में है कि ज्योतिषियों की बात सर्वसम्मति से विश्वसनीय नहीं है, और ज्योतिषी के लिए अपने हिसाब पर भी अमल करना जायज़ नहीं। (त)

मैं कहता हूँ (अक़ूल): ये पावन शरीअत के निर्देश हैं, जो हुआ और जो होगा उसके ज्ञाता (आलिम मा काना व मा यकून) हैं। अल्लाह के ज्ञानी नबी, सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम, को ज्ञात था कि दोनों प्रकाशमान पिण्डों (सूर्य और चंद्रमा) की गति निश्चित रूप से उस सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ के निर्धारित गणित पर है: "यह उस प्रभु की व्यवस्था है जो प्रभुत्वशाली और सर्वज्ञ है।" ३। (यह उस प्रभु की योजना है जो महान और सब कुछ जानने वाला है। त)। और उन्हें मालूम क्यों न होता, जबकि उन पर यह अवतरित हुआ कि "सूर्य और चंद्रमा एक हिसाब से हैं।" ४। (सूर्य और चंद्रमा गणना के अधीन हैं। त)। इसके बावजूद, हक़ीक़तों के इस ज्ञाता नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने चाँद देखने के मामले में हिसाब (गणना) को पूरी तरह अमान्य और निरर्थक करार दिया, क्योंकि हुज़ूर जानते थे कि ये वे निश्चित गणनाएँ नहीं हैं जिनका उल्लेख पवित्र आयत 'बि-हुस्बान' में है, बल्कि ये बाद के ज्योतिषियों के अधूरे और अव्यवस्थित अनुमान हैं जिनका गलत होना मुश्किल नहीं। इसीलिए खगोलशास्त्रियों के इमाम टोलेमी (Ptolemy) ने 'अल्मागेस्ट' में, हालांकि स्थिर तारों के उदय और अस्त होने के लिए एक अलग अध्याय रखा, लेकिन चाँद देखने का ज़रा भी उल्लेख नहीं किया क्योंकि वह मूल रूप से इसे व्यवस्थित करने में असमर्थ था। और बाद के लोगों ने जो कुछ लिखा, उन गंभीर आपसी मतभेदों के बाद (जो शर्ह अल-मवाक़िफ़ और शर्ह ज़ीज सुल्तान आदि के अध्ययन से स्पष्ट हैं), वे स्वयं भी कोई सही नियम नहीं बता सके वे इस आयत के उदाहरण बने रहे: "वे केवल अनुमान के पीछे चलते हैं और वे केवल अटकलें लगाते हैं।" ५। (वे केवल गुमान का अनुसरण करते हैं और वे केवल कयास लगाते हैं। त)। अतः ज्योतिषियों की इन गणनाओं में अक्सर त्रुटियां हुई हैं। अभी कुछ साल पहले की बात है कि कैलेंडर में रमज़ान को बिना किसी संदेह के ३० दिन का लिखा गया था, और यहाँ से सहरी और इफ्तार का नक्शा २१ दिनों के महीने का प्रकाशित हुआ। अल्लाह के फ़ज़्ल से २९ तारीख को चाँद का ऐसा साफ़ और सार्वजनिक दीदार हुआ कि उसमें बिल्कुल कोई मतभेद नहीं रहा। विरोधियों में से एक व्यक्ति ने कुछ खास दोस्तों से कहा, "मैं २९ तारीख को नक्शा हाथ में लिए इंतज़ार करता रहा।"

१ दुर्रे मुख्तार, किताबुस सौम, मताब-ए-मुजतबाई दिल्ली, १/१४८ २ रद्द अल-मुह्तार, किताबुस सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, १००/४ ३ अल-क़ुरआन ९६/६ ४ अल-क़ुरआन ५/५० ५ अल-क़ुरआन २६/१ ·

पृष्ठ ५८२ ऑफ़ ८३६

علی المذھب ۱۔ وہ عادل ہوں ۔ (ت) رد المحتار میں ہے: بل فی المعراج لا یعتبر قولھم بالاجماع ولا یجوز للمنجم ان یعمل بحساب نفسہ ۲۔ بلکہ معراج میں ہے کہ نجومیوں کا قول بالاتفاق معتبر نہیں، اور منجم کے لیے اپنے حساب پر بھی عمل کرنا جائز نہیں۔ (ت)

اقول: یہ شرع مطہر عالم ماکان ومایکون کے ارشادات ہیں عالم الٰہی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کو معلوم تھا کہ سیر نیرین ضرور اُس عزیز علیم کے حساب مقدر پر ہے ذٰلِکَ تَقْدِیْرُ الْعَزِیْزِ الْعَلِیْمِ ۳ (یہ سادھا ہے زبردست جاننے والے کا۔ت) اور کیوں نہ معلوم ہوتا حالانکہ انہیں پر نازل ہوا کہ الشَّمْسُ وَالْقَمَرُ بِحُسْبَانٍ ۴ (سورج اور چاند حساب سے ہیں۔ت) بایں ہمہ اس عالم حقائق عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے در باب رؤیت ہلال حساب کو یک لخت ابطال واہمال فرمایا کہ حضور جانتے تھے کہ یہ اُن محاسبات قطعیہ سے نہیں جن کا ذکر کریمہ بحسبان میں ہے بلکہ ناقص و نامنضبط متاخرینِ اہل ہیئت کے تخمینات ہیں جن کا تخلف دشوار نہیں، ولہذا امام اہل ہیئت بطلیموس نے مجسطی میں باآنکہ ثوابت تک کے ظہور واخفا کے لیے فصل جداگانہ وضع کی، رؤیت ہلال کا اصلاً ذکر نہ کیا کہ وہ اصلاً اس کے انضباط پر قادر نہ ہو اور متاخرین نے جو کچھ لکھا اُن شدید باہمی اختلافات کے بعد (جو مطالعہ شرح مواقف وشرح زیج سلطان وغیرہ سے ظاہر ہیں) خود بھی کوئی ضابطہ صحیحہ نہ بتاسکے اِنْ یَّتَّبِعُوْنَ اِلَّا الظَّنَّ وَاِنْ ہُمْ اِلَّا یَخْرُصُوْنَ ۵ (وہ پیچھے نہیں جاتے مگر گمان کے اور وہ تو نہیں مگر اٹکلیں دوڑاتے ہیں۔ت) کے مصداق رہے، ولہذا منجمین کے ان حسابات میں اکثر خطا پڑی ہے، ابھی چند سال کا ذکر ہے کہ رمضان مبارک جنتریوں میں بلا اشتباہ ۳۰ روز کا لکھا تھا اور یہاں سے نقشہ سحری وافطار میں ۲۹ دن کا مہینہ شائع ہوا بفضلہ

تعالیٰ ایسی صاف عام رؤیت ۲۹ کی ہوئی جس میں اصلاً اختلاف نہ ہوا، مخالفین میں سے ایک صاحب نے بعض خاص احباب سے کہا میں ۲۹ کو نقشہ ہاتھ میں لیے منتظر رہا۔

۱ درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۴۸ ۲ رد المحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/۱۰۰ ۳ القرآن ۹۶/۶ ۴ القرآن ۵/۵۵ ۵ القرآن ۲۶/۱۰

Fatawa Rizvia, Volume 10.

...that moon sighting wouldn't happen today, and they immediately rush to charts to see when the 29-day month occurred, although this was their naive thinking. It is clarified here in the charts that it's based on the principles of astronomy, whereas in the pure Shariah, the basis is on sighting. If sighting is contrary to it, the chart will not be considered. In short, how can such intellectual rules be worthy of consideration, due to which the Shari'i testimony of a trustworthy and just person is rejected?

| From this, the response to Imam Subki Shafi'i's discourse also emerges, that testimony is speculative (dhanni) and calculation is definitive (qat'i). This is because he (may Allah have mercy on him) equated it with other astronomical calculations like sunrise, sunset, transition, almanac, and eclipse. However, the matter is not like that. Rather, in terms of beginning and end, it is like the calculation of an eclipse's time, or rather in terms of rank, it is of an even lower degree because it becomes certain after repeated observations one after another. Contrary to the aforementioned, whoever experiences it like I have will gain knowledge like mine. This is why the Shafi'i researchers who came after him also rejected his view and established that the consideration is for Shari'i testimony even if it contradicts those intellectual rules, as detailed in Radd al-Muhtar. (T) | From this, the response to Imam Subki Shafi'i's discourse also emerges, that testimony is speculative (dhanni) and calculation is definitive (qat'i). This is because he (may Allah have mercy on him) equated it with other astronomical calculations like sunrise, sunset, transition, almanac, and eclipse. However, the matter is not like that. Rather, in terms of beginning and end, it is less than an eclipse, or rather in terms of rank, it is of an even lower degree because an eclipse becomes certain after repeated observations one after another. Contrary to the aforementioned, whoever experiences it like I have will gain knowledge like mine. This is why the Shafi'i researchers who came after him also rejected his view and established that the consideration is for Shari'i testimony even if it contradicts those intellectual rules, as detailed in Radd al-Muhtar. (T) |

Third: In the blessed month of Ramadan, when the horizon is clear, absolute rejection of the testimony of one trustworthy person is against the refined school of thought. Rather, it is restricted, according to the clarification of the recorder of Imam Muhammad's (may Allah have mercy on him) school of thought, to the case where that individual's solitariness in sighting is contrary to the apparent fact. Otherwise, if he came from outside the city and the city residents did not see, or if he was at a

height while people were on the ground, or people did not make an effort to search for the crescent, then even with a clear horizon, the testimony of one is acceptable according to the Zahir al-Riwayah, which is corrected, relied upon, and refined. It says in Durr al-Mukhtar:

| It is corrected in 'Al-Aqdiyah' that sufficiency with one witness, if he comes from outside the city or was on... | In the 'Book of Judgments' (Kitab al-Aqdiyah), the correction is made that sufficiency with one witness is correct if he comes from outside the city or... |

फ़तावा रिज़विया, खंड 10.

...कि आज चाँद नहीं दिखेगा और तुरंत नक्शे लेकर पहुँच जाएँ कि 29 का महीना कब हुआ, हालाँकि यह उनकी कच्ची सोच थी। यहाँ नक्शों में स्पष्ट कर दिया गया है कि यह खगोल विज्ञान के नियमों पर आधारित है, जबकि पवित्र शरीयत में चाँद देखने (रुपयेत) पर ही दारोमदार है। यदि चाँद दिखना इसके विरुद्ध हो, तो नक्शे का विचार नहीं किया जाएगा। संक्षेप में, ऐसे तर्कसंगत नियम कैसे विचारणीय हो सकते हैं, जिनके कारण एक विश्वसनीय और न्यायप्रिय व्यक्ति की शरीयत के अनुसार गवाही को अस्वीकार कर दिया जाए?

| इससे इमाम सुबकी शाफई की बातचीत का उत्तर भी आ गया कि गवाही अनिश्चित (ज़न्नी) है और गणना निश्चित (क़तई) है, क्योंकि उन्होंने (अल्लाह उन पर रहम करे) इसे अन्य खगोलीय गणनाओं जैसे कि सूर्योदय, सूर्यास्त, परिवर्तन, पंचांग और ग्रहण के समान माना है। हालाँकि मामला ऐसा नहीं है, बल्कि यह शुरुआत और अंत के मामले में ग्रहण के समय की गणना के समान है, या बल्कि पद के मामले में उससे भी निचले स्तर पर है क्योंकि यह बार-बार के अवलोकन से पुख्ता हो जाता है। इसके विपरीत, जो भी मेरी तरह अनुभव करेगा उसे मेरी तरह ही ज्ञान होगा। यही कारण है कि उनके बाद आने वाले शाफई शोधकर्ताओं ने भी उनकी बात का खंडन किया है और यह साबित किया है कि विचार शरीयत की गवाही का ही है चाहे वह उन तर्कसंगत नियमों के विपरीत ही क्यों न हो, जैसा कि रद-उल-मुहतार में विस्तार से बताया गया है। (त) | इससे इमाम सुबकी शाफई की बातचीत का उत्तर भी आ गया कि गवाही अनिश्चित (ज़न्नी) है और गणना निश्चित (क़तई) है, क्योंकि उन्होंने (अल्लाह उन पर रहम करे) इसे अन्य खगोलीय गणनाओं जैसे कि सूर्योदय, सूर्यास्त, परिवर्तन, पंचांग और ग्रहण के समान माना है। हालाँकि मामला ऐसा नहीं है, बल्कि यह शुरुआत और अंत के मामले में ग्रहण से भी कम, या बल्कि पद के मामले में उससे भी निचले स्तर पर है क्योंकि एक ग्रहण बार-बार के अवलोकन से पुख्ता हो जाता है। इसके विपरीत, जो भी मेरी तरह अनुभव करेगा उसे मेरी तरह ही ज्ञान होगा। यही कारण है कि उनके बाद आने वाले शाफई शोधकर्ताओं ने भी उनकी बात का खंडन किया है और यह साबित किया है कि विचार शरीयत की गवाही का ही है चाहे वह उन तर्कसंगत नियमों के विपरीत ही क्यों न हो, जैसा कि रद-उल-मुहतार में विस्तार से बताया गया है। (त) |

तीसरा: रमज़ान के महीने में आकाश साफ़ होने की स्थिति में एक विश्वसनीय व्यक्ति की गवाही को पूरी तरह से नकार देना परिष्कृत विचारधारा के विरुद्ध है। बल्कि इमाम मुहम्मद (अल्लाह उन पर

रहम करे) के विचार के अनुसार यह उस स्थिति तक सीमित है जब उस अकेले का चाँद देखना ज़ाहिर के खिलाफ हो। अन्यथा यदि वह शहर के बाहर से आया हो और शहर वालों ने न देखा हो, या वह ऊंचाई पर था और लोग ज़मीन पर थे, या लोगों ने चाँद ढूँढने की कोशिश नहीं की, तो साफ़ आकाश में भी एक की गवाही 'ज़ाहिर-उर-रिवायत' (प्रमाणित परंपराओं) के अनुसार स्वीकार्य है। दुर्रे मुख्तार में है:

| 'अल-अक़्ज़िया' में इस बात की पुष्टि की गई है कि एक गवाह पर भरोसा करना सही है यदि वह शहर के बाहर से आया हो या... | 'किताबुल अक़्ज़िया' में इस बात की पुष्टि की गई है कि एक गवाह पर भरोसा करना सही है यदि वह शहर के बाहर से आया हो या... |

पृष्ठ 583 में से 836

کہ آج رؤیت نہ ہو اور فوراً نقشے لے کر پہنچوں کہ ۲۹ کا مہینہ کب ہوا، حالانکہ یہ ان کی خام خیالی تھی، یہاں نقشوں میں تصریح کر دی جاتی ہے کہ بر بنائے قواعد علم ہیئت ہے، شرع مطہر میں رؤیت پر مدار ہے، اگر رؤیت اس کے خلاف ہو نقشہ پر لحاظ نہ ہو گا، بالجملہ ایسے قواعد عقلیہ کیا قابل لحاظ ہو سکتے ہیں جن کے سبب ثقہ عادل کی شہادت شرعیہ رد کی جائے۔

| وبه ظهر الجواب عما ذكر ههنا الامام السبكى الشافعى ان الشهادة ظنية والحساب قطعى فانه رحمه الله تعالٰى ظن انه كسائر حسابات الهيئة من الطلوع والغرب والتحويل والتقويم والخسوف وليس كذلك بل هو مثل حساب وقت الكسوف بداية ونهاية بل ادون رتبة فانه يتم بعد تكرار الاعمال الطوال مرة بعد اخرى بخلاف هذا و من جرب تجربتى عرف معرفتى لا جرم رده كل من جاء بعده من محققى الشافعية ايضاً و حققوا ان العبرة بالشهادة الشرعية وان خالفت تلك القواعد العقلية كما فصله فى رد المحتار۔ |

اس سے امام سبکی شافعی کی گفتگو کا جواب بھی آگیا کہ شہادت ظنی ہے اور حساب قطعی، کیونکہ انہوں نے اسے باقی حسابات مثلاً طلوع، غروب، تحویل، تقویم اور خسوف کی حالت پر قیاس کیا ہے حالانکہ معاملہ ایسا نہیں ہے بلکہ یہ تو ابتداء وانتہا کے اعتبار سے کسوف بلکہ رتبہ کے اعتبار سے اس سے بھی کم درجہ پر ہے کیونکہ یہ یکے بعد دیگرے تکرار عمل سے تام ہو جاتا ہے۔ بخلاف مذکورہ کے، جو بھی مجھ جیسا تجربہ کرے گا اسے ہماری طرح ہی معرفت ہوگی، یہی وجہ ہے کہ ان کے بعد آنے والے محققین شافعی نے بھی ان کا رد کیا ہے اور یہی ثابت کیا کہ اعتبار شہادت شرعیہ کا ہے اگرچہ وہ قواعد عقلیہ کے مخالف ہو، جیسا کہ اس کی تفصیل ردالمحتار میں ہے۔(ت) |

سوم: رمضان مبارک میں بحال صفائی مطلع ایک ثقہ کی گواہی مطلقاً رد کر دینا مذہب منقح کے خلاف ہے بلکہ وہ بتصریح محرر مذہب امام محمد رحمہ اللہ تعالیٰ اس حالت سے مقید ہے جبکہ اس اکیلے کا رؤیت سے تفرد خلاف ظاہر ہو ورنہ اگر بیرون شہر سے آیا اور اہل شہر نے نہ دیکھا یا یہ بلندی پر تھا اور لوگ زمین پر، یا لوگوں نے تلاش ہلال میں کوشش نہ کی تو صفائی مطلع میں بھی ایک کی شہادت ظاہر الروایۃ مصححہ معتمدہ منقحہ پر مقبول ہے۔ درمختار میں ہے:

| صحح فی الاقضیہ، الاکتفاء بواحد، ان جاء بخارج البلد اوکان علی | کتاب الاقضیہ میں اس بات کی تصحیح ہے کہ ایک گواہ پر اکتفاء درست ہے جبکہ وہ بیرون شہر سے |

Volume 10 Fatawa Razawiyya

A high place and its preference by Zahiruddin[1]. In "Kitab al-Aqdiya," it is corrected that relying on a single witness is correct when they come from outside the city or are at a high location, and Zahiruddin has stated this as the chosen opinion. (T)

In "Radd al-Muhtar," it is stated:

"It was also relied upon in 'al-Fatawa al-Sughra,' and this is the statement of al-Tahawi. Imam Muhammad alluded to it in the book 'al-Istihsan' from 'al-Asl.' It says in 'al-Nihayah': If someone comes from outside the city or was in an elevated place, it is accepted according to us. The phrase 'according to us' indicates it is the view of our three Imams (may Allah Almighty be pleased with them). It is affirmed in 'al-Muhit,' and its opposing view was mentioned with the word 'it is said' (qila), clearly indicating that this is 'Zahir al-Riwayah' (the manifest narration), and it is indeed so. It appears to me that there is no contradiction between them because the narration requiring a massive crowd is understood to apply when the witness is from the city in a non-elevated place. Thus, the second narration qualifies the absolute nature of the first narration, etc., in brief." (T)

Here there are three narrations, all three are corrected (musaḥḥaḥah), and all three are 'Zahir al-Riwayah'. The humble author has explained in his annotations to Hashiya Shami that all of them are accepted and acted upon in their respective contexts. In jurisprudence, the great task is the perception of the refined (munqah) statement. Success is from Allah.

Fourth: When Ramadan has been established by the testimony of two upright witnesses, and after 30 days, on the thirty-first night...

[1] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/138. [2] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/101.

जिल्द दसवीं फ़तावा रज़विया

ऊँचा स्थान और ज़हीर उद्दीन का उसका चुनाव[1]। "किताब अल-अक़्ज़िया" में इस बात की पुष्टि की गई है कि एक गवाह पर भरोसा करना सही है जब वह शहर के बाहर से आया हो या वह किसी ऊँची जगह पर हो, और ज़हीर उद्दीन ने इसी को पसंदीदा कहा है। (त)

"रद्द अल-मुह्तार" में है:

"अल-फ़तावा अल-सुग़रा में भी इसी पर भरोसा किया गया है और यही इमाम तहावी का कथन है। इमाम मुहम्मद ने 'अल-अस्ल' की किताब 'अल-इस्तिहसान' में इसी ओर इशारा किया है। 'अल-निहाया' में कहा गया है: जब गवाह शहर के बाहर से आया हो या वह किसी ऊँची जगह पर हो, तो हमारे नज़दीक उसकी गवाही स्वीकार्य होगी। यहाँ 'हमारे नज़दीक' शब्द यह स्पष्ट कर रहा है कि यह हमारे तीनों इमामों (अल्लाह तआला उन पर राज़ी हो) का कथन है। 'अल-मुहीत' में इस पर पक्का यक़ीन जताया गया है और इसके विपरीत कथन को 'क़ील' (कहा गया है) शब्द के साथ उल्लेख किया गया है, जिसमें स्पष्ट है कि यह 'ज़ाहिर अर-रिवायत' है, और यह इसी तरह है। मेरे नज़दीक इन रिवायतों में कोई विरोधाभास नहीं है क्योंकि बड़ी भीड़ की शर्त वाली रिवायत उस स्थिति पर लागू होती है जब गवाह शहर का हो और किसी ऊँची जगह पर न हो। तो अब दूसरी रिवायत पहली मुतलक़ (सामान्य) रिवायत के लिए मुक़य्यद (विशिष्ट) बन जाएगी आदि संक्षेप में।" (त)

यहाँ तीन रिवायतें (वर्णन) हैं और तीनों प्रमाणित हैं, और तीनों 'ज़ाहिर अर-रिवायत' हैं। फ़क़ीर ने अपनी हाशया शामी की टिप्पणियों में स्पष्ट किया है कि वे सभी अपने-अपने संदर्भों में स्वीकार्य और अमल में लाने योग्य हैं। फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) में बड़ा काम इसी परिष्कृत (मुनक़्क़ह) कथन को समझना है। सफलता अल्लाह की ओर से है।

चौथा: जब रमज़ान दो न्यायप्रिय गवाहों की गवाही से साबित हुआ हो और ३० रोज़ों के बाद इकतीसवीं रात...

[1] दुर्रे मुख्तार, किताबुस सौम, मतबा मुजतबाई, दिल्ली १३८/१ [2] दुर्रे मुख्तार, किताबुस सौम, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र १०१/२

पृष्ठ ८३६ का ५८४

جلد دہم فتاوی رضویہ

مکان مرتفع واختارہ ظھیر الدین[1]۔ کتاب الاقضیہ میں اس بات کی تصحیح ہے کہ ایک گواہ پر اکتفاء درست ہے جبکہ وہ بیرونِ شہر سے آیا ہو یا وہ کسی جگہ بلند پر ہو، اور ظہیر الدین نے اسی کو مختار کہا ہے۔ (ت)

رد المحتار میں ہے:

واعتمده في الفتاوی الصغری ایضاً وھو قول الطحاوی واشار الیه الامام محمد فی کتاب الاستحسان من الاصل قال في النهایة اذا جاء من خارج المصر او کان في موضع مرتفع فانه یقبل عندنا اه فقوله عندنا یدل علی انه قول ائمتنا الثلثة رضی الله تعالی عنهم وقد جزم به في المحیط وعبر عن مقابله بقیل ففیه التصریح بأنه ظاهر الروایة وھو کذلك، ویظهر لی ان لا منافاة بینهما لان روایة اشتراط الجمع العظیم محمولة علی ما اذا کان الشاهد من المصر في مکان غیر مرتفع فتکون الروایة الثانیة مقیدة لاطلاق الروایة الاولی الخ اه باختصار۔

فتاوی صغریٰ میں بھی اسی پر اعتماد کیا ہے اور یہی امام طحاوی کا قول ہے، امام محمد کی اصل کتاب الاستحسان میں اسی کی طرف اشارہ کیا ہے، فرمایا: نہایہ میں ہے جب گواہ بیرونِ شہر سے آیا ہو وہ کسی بلند جگہ پر ہو تو ہمارے نزدیک اس کی گواہی مقبول ہوگی اھ نہایہ کا عندنا یہ واضح کر رہا ہے کہ یہ تینوں ائمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہم کا قول ہے۔ محیط میں اس پر جزم ہے اور اس کے مقابل قول "قیل" سے ذکر کیا اور اس میں تصریح ہے کہ یہ ظاہر الروایت ہے، اور وہ اسی طرح ہے، میرے نزدیک ان روایات میں کوئی منافات نہیں کیونکہ یہ روایت کہ جمِ غفیر کا

ہونا ضروری ہے، یہ اس صورت پر محمول ہے جب گواہ شہری بلند جگہ والا نہ ہو، تو اب دوسری روایت پہلی مطلق روایت کے لئے مقید بن جائے گی الخ اھ اختصاراً (ت)

یہاں تین روایتیں ہیں اور تینوں مصححہ، اور تینوں ظاہر الروایۃ ہیں، اور فقیر نے اپنی تعلیقات حاشیہ شامی میں بیان کیا ہے کہ وہ سب اپنے اپنے محامل پر مقبولہ معمولہ ہیں، اور فقہ میں بڑا کام یہی قولِ منقح کا ادراک ہے وباللہ التوفیق۔

چہارم: جب رمضان دو عادلوں کی شہادت سے ثابت ہوا ہو اور ۳۰ روزوں کے بعد اکتیسویں شب

[1] در مختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۳۸ [2] در مختار کتاب الصوم مصطفیٰ البابی مصر ۲/۱۰۱

Fatawa-e-Razvia Volume 10

Despite the clarity of the horizon, if the crescent moon is not sighted, there is intense disagreement among scholars. There was no need to mention such a rare case in the announcement. And if it was mentioned, it was necessary to follow the 'Mufta Bihi' (fatwa-given) position. Here, the Mufta Bihi position is the one pointed out in the announcement by its weakness—that is, Eid should be celebrated even if the moon is not sighted. Rather, Allama Nuh said that this is the school of thought of our three Imams (may Allah be pleased with them), and the second opinion, that 31 fasts should be kept, belongs only to some Mashaikh (scholars). In that case, it is not worthy of consideration at all. In 'Tanwir al-Absar' it says:

[Table 1] Left (Arabic): After fasting thirty [days based on] two just [witnesses], breaking the fast becomes lawful. -1 Right (Urdu): Eid-ul-Fitr becomes permissible after thirty days based on the testimony of two just witnesses. (T)

In 'Rad al-Muhtar' it says:

[Table 2] Left (Arabic): That is, by consensus if the night of the thirty-first is cloudy; and similarly if it is clear, according to what has been authenticated in al-Diraya, al-Khulasa, and al-Bazzaziya. -2 Right (Urdu): That is, this permissibility is by consensus when the thirty-first night's horizon is cloudy, and according to the authentication of Diraya, Khulasa, and Bazzaziya, even if the horizon is not cloudy, the same ruling applies. (T)

In the same [book] it is written:

[Table 3] Left (Arabic): And Allama Nuh cited consensus on the permissibility of breaking the fast in the second case as well, from al-Bada'i, al-Siraj, and al-Jawhara. He said: 'The meaning of consensus is the agreement of our three Imams. The disagreement reported in it belongs only to some Mashaikh.' I say: 'And in al-Fayd, the fatwa is on the permissibility of breaking the fast.' -3 Right (Urdu): Allama Nuh cited from Bada'i, Siraj, and Jawhara that in the second case (when the horizon is not cloudy on the thirty-first night) there is also consensus on the permissibility of Eid-ul-Fitr. He then stated that by consensus here, the agreement of our three Imams is meant, and any disagreement reported is from some Mashaikh. I say that in 'Faydh' it is stated that the fatwa is for the permissibility of breaking the fast. (T)

Calling the 'Mufta Bihi' school of thought, or rather the correct and reliable school of all our Imams, weak, and [favoring] the opinion of some Mashaikh over it...

1 Durr al-Mukhtar, Commentary on Tanwir al-Absar, Book of Fasting, Mujtabai Press Delhi, 1/149 2 Rad al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa al-Babi Egypt, 2/102 3 Rad al-Muhtar, Book of Fasting, Mustafa al-Babi Egypt, 2/102

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द दहम

बावस्फ़ सफ़ाए मत़्ला हिलाल नज़र न आए तो उलमा को इख़्तिलाफ़े शदीद है ऐसी नादिर सूरत के ज़िक्र की इश्तिहार में हाजत न थी, और ज़िक्र हुआ तो मज़हबे मुफ़्ता बिही का इत्तिबाअ ज़रूर था और यहाँ मुफ़्ता बिही यही है जिसके ज़ोअफ़ (कमज़ोरी) की तरफ़ इश्तिहार में इशआर किया यानी ईद कर ली जाए अगरचे चाँद नज़र न आए, बल्कि अल्लामा नूह ने फ़रमाया कि यही मज़हब हमारे अइम्मए सलासा रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम का है, और दूसरा क़ौल कि ३१ रोज़े रखे जाएँ सिर्फ़ बाज़ मशाइख़ का है तो इस तक़दीर पर तो वो अस्लन क़ाबिले लिहाज़ न रहा। तनवीरुल अबसार में है:

[कोष्टक 1] अरबी: तीस (रोज़ों) के बाद दो आदिल (गवाहों) से फ़ित्र हलाल होता है। -1 उर्दू: तीस रोज़ों के बाद दो आदिल गवाहों की शहादत पर ईद उल फ़ित्र जाइज़ होती है (त)

रद्दुल मुहतार में है:

[कोष्टक 2] अरबी: यानी इत्तिफ़ाक़न अगर इकतीसवीं रात (मत़्ला) अबर-आलूद हो और इसी तरह अगर साफ़ हो, उस पर जो दराया, ख़ुलासा और बज़ाज़िया में सहीह करार दिया गया। -2 उर्दू: यानी ये जवाज़ बिल-इत्तिफ़ाक़ है जब इकतीसवीं रात मत़्ला अबर आलूद हो और दराया, ख़ुलासा और बज़ाज़िया की तस्हीह के मुताबिक़ अगर मत़्ला अबर आलूद न भी हो तब भी यही हुक्म है। (त)

इसी में है:

[कोष्टक 3] अरबी: और अल्लामा नूह ने दूसरी सूरत में भी फ़ित्र के हलाल होने पर इत्तिफ़ाक़ नक़्ल किया है बदाएअ, सिराज और जोहरा से। उन्होंने कहा, और इत्तिफ़ाक़ से मुराद हमारे तीनों अइम्मा का इत्तिफ़ाक़ है और इसमें जो इख़्तिलाफ़ नक़्ल हुआ है वह सिर्फ बाज़ मशाइख़ का है। मैं कहता हूँ कि फ़ैज़ में है, फ़तवा फ़ित्र के हलाल होने पर है। -3 उर्दू: अल्लामा नूह ने बदाएअ, सिराज और जोहरा से नक़्ल किया कि दूसरी सूरत (जब इकतीसवीं रात मत़्ला अबर आलूद न हो) में भी जवाज़े ईद-उल-फ़ित्र पर भी इत्तिफ़ाक़ है और फिर कहा यहाँ इत्तिफ़ाक़ से मुराद हमारे तीनों अइम्मा का इत्तिफ़ाक़ है और इसमें जो इख़्तिलाफ़ मन्क़ूल है वो बाज़ मशाइख़ का है। मैं कहता हूँ फ़ैज़ में है फ़तवा जवाज़े फ़ित्र पर है (त)

मज़हबे मुफ़्ता बिही बल्कि अपने तमाम अइम्मा के मज़हबे सहीह व मोअतमिद को ज़ईफ़ बताना और उसके मुक़ाबले बाज़ मशाइख़ के क़ौल...

1 दुर्रे मुख़्तार शरह तनवीरुल अबसार किताबुस्सौम मत़्बा मुजतबाई देहली १/१४९ 2 रद्दुल मुहतार किताबुस्सौम मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र २/१०२ 3 रद्दुल मुहतार किताबुस्सौम मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र २/१०२

सफ़ा 585/836

باوصف صفائے مطلع ہلال نظر نہ آئے تو علماء کو اختلاف شدید ہے ایسی نادر صورت کے ذکر کی اشتہار میں حاجت نہ تھی، اور ذکر ہوا تو مذہب مفتی بہ کا اتباع ضرور تھا اور یہاں مفتی بہ یہی ہے جس کے ضعف کی طرف اشتہار میں اشعار کیا یعنی عید کر لی جائے اگرچہ چاند نظر نہ آئے، بلکہ علامہ نوح نے فرمایا کہ یہی مذہب ہمارے ائمہ ثلاثہ رضی اللہ تعالٰی عنہم کا ہے، اور دوسرا قول کہ ۳۱ روزے رکھے جائیں صرف بعض مشائخ کا ہے تو اس تقدیر پر تو وہ اصلاً قابل لحاظ نہ رہا۔ تنویر الابصار میں ہے:

بعد صوم ثلثین عدلین حل الفطر-1 | تیس روزوں کے بعد دو عادل گواہوں کی شہادت پر عید الفطر جائز ہوتی ہے (ت)

رد المحتار میں ہے:

ای اتفاقا ان کانت لیلۃ حادی والثلثین متغیبۃ وکذا لومصحیۃ علی ما صححہ في الدرایۃ والخلاصۃ والبزازیۃ-2 | یعنی یہ جواز بالاتفاق ہے جب اکتیسویں رات مطلع ابر آلود ہو اور درایہ، خلاصہ اور بزازیہ کی تصحیح کے مطابق اگر مطلع ابر آلود نہ بھی ہو تب بھی یہی حکم ہے۔ (ت)

اسی میں ہے:

ونقل العلامۃ نوح الاتفاق علی حل الفطر في الثانیۃ ایضًا عن البدائع والسراج والجوھرۃ قال والمراد اتفاق ائمتنا الثلثۃ وما حکی فیھا من الخلاف انما ھو لبعض المشائخ، قلت وفی الفیض، الفتوی علی حل الفطر-3 | علامہ نوح نے بدائع، سراج اور جوہرہ سے نقل کیا کہ دوسری صورت (جب اکتیسویں رات مطلع ابر آلود نہ ہو) میں بھی جواز عیدالفطر پر بھی اتفاق ہے اور پھر کہا یہاں اتفاق سے

مراد ہمارے تینوں ائمہ کا اتفاق ہے اور اس میں جو اختلاف منقول ہے وہ بعض مشائخ کا ہے۔ میں کہتا ہوں فیض میں ہے فتویٰ جواز فطر پر ہے (ت)

مذہب مفتی بہ بلکہ اپنے تمام ائمہ کے مذہب صحیح و معتمد کو ضعیف بتانا اور اس کے مقابل بعض مشائخ کے قول

1 در مختار شرح تنویر الابصار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۴۹ 2 رد المحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/۱۰۲ 3 رد المحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/۱۰۲

Fatawa Razawiya Volume X

Relying on them by the decree of Durr-ul-Mukhtar, Tas-hih al-Quduri, etc., is ignorance and a violation of consensus. Fifth: Restricting the 'Day of Doubt' (Yawm al-Shakk) only to when the horizon is clear on the 30th of Sha'ban is purely false; rather, if the horizon is not clear, the day after the 29th of Sha'ban is unanimously the Day of Doubt, and fasting on that day with the intention of Ramadan is prohibited. If there is a disagreement, it is whether the 30th of Sha'ban is also a Day of Doubt when the horizon is clear. In Mi'raj al-Dirayah Sharh al-Hidayah, al-Mujtaba Sharh al-Quduri, and Jami' al-Rumuz Sharh al-Niqayah, it is clearly stated that it is not essentially a Day of Doubt. However, in Durr-ul-Mukhtar, citing Sharh Majma' al-Ayni from Zahidi, it is mentioned that based on the non-consideration of the difference in moon-sighting locations (ikhtilaf al-matali'), it is also a Day of Doubt because sighting might have occurred elsewhere. It is in Radd al-Muhtar:

[Arabic]: Al-Quhistani restricted it to when it is cloudy; if it is clear and no one sees [the moon], then it is not a Day of Doubt (End). Similar is in Mi'raj from al-Mujtaba.[1] [Urdu]: Quhistani restricted it to the situation when the horizon is cloudy; if the horizon is not cloudy and no one saw the moon either, then this will not be a Day of Doubt. Similar is cited in Mi'raj from al-Mujtaba. (T)

In Durr-ul-Mukhtar it is said:

[Arabic]: It is the thirtieth day of Sha'ban even if there is no cause (i.e., clouds), i.e., based on the opinion of non-consideration of difference in sightings, because of the possibility of sighting occurring in another city. [From] Sharh al-Majma' by al-Ayni from Zahidi.[2] [Urdu]: The Day of Doubt will be the thirtieth day of Sha'ban even if there is no cause (i.e., the horizon is clear), meaning on the opinion in which difference in sightings is not considered because the proof of sighting could occur in another city. This is narrated from Zahidi in Imam al-Ayni's Sharh al-Majma'. (T)

I say: Thus, Zahidi's statement became inconsistent, and the statement of Mi'raj remained safe from contradiction, and similar is in Tabyin al-Haqa'iq and other reliable works. And that is most manifest and clear, that doubt is a state of equilibrium between two sides. The same is in Bahr al-Ra'iq:

[Arabic]: It is the equality of the two sides of perception from negation and affirmation.[3] [Urdu]: Doubt is the equality of both sides of perception of negation and affirmation. (T)

[1] Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt 2/95 [2] Durr-ul-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Mujtabai Delhi 1/71 [3] Bahr al-Ra'iq, Kitab al-Sawm, H.M. Saeed Company Karachi 2/246 Page 586 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

दुर-ए-मुख़्तार और तसहीह अल-क़ुदूरी आदि के हुक्म के अनुसार उन पर भरोसा करना जहालत और इज्मा (आम सहमति) का उल्लंघन है। पाँचवाँ: 30 शाबान को मतला (क्षितिज) साफ़ होने के साथ यौम-ए-शक (संदेह का दिन) को ख़ास करना सरासर ग़लत है, बल्कि अगर मतला साफ़ न हो तो 29 शाबान के बाद वाला दिन सर्वसम्मति से यौम-ए-शक है और रमज़ान की नीयत से उसका रोज़ा रखना मना है। अगर मतभेद है तो इसमें है कि क्या मतला साफ़ होने की स्थिति में भी 30 शाबान यौम-ए-शक है या नहीं। मेराज अद-दिराया शरह हिदाया, मुज्तबा शरह क़ुदूरी और जामे अर-रुमूज़ शरह निक़ाया में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि वह मूल रूप से यौम-ए-शक नहीं है। और दुर-ए-मुख़्तार में शरह मजमा अल-ऐनी के हवाले से ज़ाहिदी से उद्धृत किया गया है कि अलग-अलग जगहों पर चाँद दिखने (इख़्तिलाफ़-ए-मताले) को न मानने के आधार पर वह भी यौम-ए-शक है क्योंकि शायद कहीं और चाँद दिख गया हो। रद अल-मुह्तार में है:

[अरबी]: अल-क़ुहिस्तानी ने इसे बादलों के होने की स्थिति तक सीमित किया है; यदि साफ़ हो और कोई न देखे तो वह यौम-ए-शक नहीं है। (समाप्त) इसी तरह मेराज में मुज्तबा से उद्धृत है।[1] [उर्दू]: क़ुहिस्तानी ने इसे उस सूरत के साथ सीमित किया है जब मतला बादलों से घिरा हो, अगर मतला बादलों से घिरा न हो और किसी ने चाँद भी न देखा हो तो यह यौम-ए-शक नहीं होगा। मेराज में मुज्तबा के हवाले से इसी तरह उल्लेखित है। (त)

दुर-ए-मुख़्तार में है:

[अरबी]: यह शाबान का तीसवां दिन है चाहे कोई कारण (बादल) न हो, यानी उस राय पर जिसमें मतला के अंतर को नहीं माना जाता क्योंकि दूसरे शहर में चाँद दिखने का सबूत हो सकता है। ऐनी द्वारा रचित शरह अल-मजमा में ज़ाहिदी से।[2] [उर्दू]: यौम-ए-शक शाबान का तीसवां दिन होगा चाहे इल्लत (यानी बादल) न हो (अर्थात मतला साफ़ हो), यानी उस राय पर जिसमें इख़्तिलाफ़-ए-मताले का एतबार नहीं है क्योंकि किसी दूसरे शहर में रूयत (चाँद देखना) का सुबूत हो सकता है। यह इमाम ऐनी की शरह मजमा में ज़ाहिदी के हवाले से उल्लेखित है। (त)

अक़ूल (मैं कहता हूँ): तो ज़ाहिदी का बयान परस्पर विरोधी हो गया और मेराज का बयान विरोध से सुरक्षित रहा, और उसी के समान तबयीन अल-हक़ाएक़ और अन्य विश्वसनीय किताबों में है। और

वही सबसे अधिक स्पष्ट और उज्ज्वल है कि शक दोनों पक्षों की बराबरी की स्थिति है। यही बहर अर-राइक़ में है:

[अरबी]: यह नफी (नकार) और इसबात (पुष्टि) की धारणा के दोनों पक्षों की बराबरी है।[3] [उर्दू]: नफी और इसबात की धारणा के दोनों पक्षों के बराबर होने को शक कहते हैं। (त)

[1] रद अल-मुह्तार, किताब अस-सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 2/95 [2] दुर-ए-मुख़्तार, किताब अस-सौम, मुज्तबाई दिल्ली 1/71 [3] बहर अर-राइक़, किताब अस-सौम, एच.एम. सईद कंपनी कराची 2/246 पृष्ठ 836 में से 586

پر اعتماد کرنا بحکم در مختار و تصحیح القدوری وغیرہ ہما جہل وخرق اجماع ہے۔ پنجم : ۳۰ شعبان کو مطلع صاف ہونے کے ساتھ یوم شک کی تخصیص محض باطل ہے بلکہ مطلع صاف نہ ہو تو ۲۹ شعبان کے بعد کا دن بالاتفاق یوم الشک ہے اور بہ نیتِ رمضان اس کا روزہ رکھنا ممنوع، اختلاف اگر ہے تو اس میں ہے کہ بحال صفائے مطلع بھی ۳۰ شعبان یوم الشک ہے یا نہیں، معراج الدرایہ شرح ہدایہ و مجتبی شرح قدوری و جامع الرموز شرح نقایہ میں تصریح کی کہ وہ اصلاً یوم الشک نہیں، اور در مختار میں بحوالہ شرح مجمع العینی زاہدی سے نقل کیا کہ بر بنائے عدم اعتبار اختلاف مطالع وہ بھی یوم الشک ہے کہ شاید کہیں اور رؤیت ہوئی ہو، رد المحتار میں ہے :

القهستاني قيده بما اذا غم فلو مصحية ولم ير احد فليس بيوم شك اهـ ومثله في المعراج عن المجتبى۔[1]

قہستانی نے اسے اس صورت کے ساتھ مقید کیا جب مطلع ابر آلود ہو، اگر مطلع ابر آلود نہ ہو اور کسی نے چاند بھی نہ دیکھا ہو تو یہ یوم شک نہ ہوگا اھ معراج میں مجتبی کے حوالے سے اسی طرح منقول ہے۔ (ت)

در مختار میں ہے:

هو يوم الثلثين من شعبان وان لم يكن علة اى على القول لعدم اعتبار اختلاف المطالع لجواز تحقق الرؤية فى بلدة اخرى، شرح المجمع للعيني عن الزاهدى[2]۔ یوم شک شعبان کا تیسواں دن ہوگا اگرچہ علت نہ ہو (یعنی مطلع صاف ہو) یعنی اس قول پر جس میں اختلاف مطالع کا اعتبار نہیں کیونکہ

کسی دوسرے شہر میں رؤیت کا ثبوت ہو سکتا ہے۔ یہ امام عینی کی شرح مجمع میں زاہدی کے حوالے سے منقول ہے۔ (ت)

اقول: تو کلام زاہدی مضطرب ہوا اور کلام معراج معارض سے سالم رہا اور اُسی کے مثل تبیین الحقائق وغیرہ معتمدات میں ہے اور وہی اظہر وازہر ہے کہ شک استوائے طرفین کی حالت ہے۔ یہی بحر الرائق میں ہے :

ھو استوا طرفی الادراك من النفی والاثبات[3]۔ نفی و اثبات کے ادراک کی دونوں اطراف کے برابر ہونے میں شک ہے (ت)

[1] ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۹۵/۲ [2] درمختار کتاب الصوم مجتبائی دہلی ۷۱/۱ [3] بحر الرائق کتاب الصوم ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲۴۶/۲ Page 586 of 836

Fatawa Razawiyya Volume 10

And when the horizon is clear and the moon is not visible at all, how far-fetched is it for doubt to be established based only on the remote possibility that proof of sighting might come from somewhere else?

For merely sighting [the moon] in another city is not binding upon us unless proven through Shariah means; it is a possibility without evidence, so how can it oppose the conviction obtained from sound sensory observation in clear visibility? So understand.

Merely seeing it in another city is not sufficient for it to be binding on us until it is proven through a legal Sharia method. This is a mere possibility without proof. Now, how can this be compared to or oppose the opinion obtained through correct observation and sound senses? Think about it. (T)

Sixthly: To say that for those who do not consider the difference of horizons, fasting should be permissible according to their view on a day of doubt (Yawm al-Shakk), is very strange and is contrary to and incorrect according to both views. When there is no sighting on the 30th of Sha'ban, there is absolutely no difference of opinion between the two views that fasting for Ramadan on that day is a sin. The difference lies in the cause of the ruling; those who, due to the clarity of the horizon, do not designate it as a day of doubt, do so because of the Hadith "Do not precede Ramadan by fasting one or two days" (T). It is quoted from Durr al-Mukhtar in the advertisement itself:

But according to the opposing view, it is not [a day of] doubt and should not be fasted at all.

According to the opposing view, it is not the day of doubt, so now fasting should never be observed. (T)

It is in Radd al-Muhtar:

And it is not permissible to fast it initially, neither as obligatory nor as voluntary.

Before Ramadan, neither obligatory nor voluntary fast should be kept. (T)

Also in the same:

Because it is a precaution in fasting for the elite, unlike the day of doubt.

Because in keeping this fast there is no precaution for the elite, unlike the day of doubt. (T)

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Mujtabai Press Delhi, 1/174 2 Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi Egypt, 2/95 3 Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, 2/95-96

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

और जब क्षितिज साफ़ हो और चाँद बिलकुल दिखाई न दे, तो केवल इस दूर की संभावना पर कि शायद कहीं और से चाँद दिखने का प्रमाण मिल जाए, संदेह का स्थापित होना कितना दूर की बात है।

केवल दूसरे शहर में चाँद देखना हमारे लिए तब तक अनिवार्य नहीं है जब तक कि वह शरीयत के तरीक़े से सिद्ध न हो जाए। यह बिना प्रमाण के केवल एक संभावना है, तो यह उस धारणा के विरुद्ध कैसे हो सकता है जो साफ़ मौसम में सही इंद्रियों के माध्यम से प्राप्त होती है? सो समझें।

महज़ दूसरे शहर में देख लेना हमारे लिए अनिवार्य होने के लिए काफ़ी नहीं है जब तक कि शरई तरीक़े से इसका सबूत न हो, यह तो बिना दलील महज़ संभावना है, अब यह उस गुमान के मुक़ाबले और विरोध में कैसे हो सकता है जो सही इंद्रियों से सही रूप में चाँद देखने से हासिल होता है? गौर करो (त)।

छठा: यह कहना कि जो लोग क्षितिज के अंतर (इख़्तिलाफ़-ए-मतालए) का विचार नहीं करते, उनके मत के अनुसार 'यौम-ए-शक़' (संदेह के दिन) का रोज़ा जायज़ होना चाहिए, बहुत ही अजीब है, और यह दोनों मतों के विपरीत और गलत है। ३० शाबान को जब चाँद न दिखे, तो इसमें दोनों पक्षों में कोई मतभेद नहीं है कि उस दिन रमज़ान का रोज़ा रखना गुनाह है। मतभेद हुक्म के कारण में है; वे लोग जो क्षितिज साफ़ होने की स्थिति में उसे 'यौम-ए-शक़' नहीं मानते, उनके अनुसार "रमज़ान से पहले एक या दो दिन रोज़ा न रखो" (त), स्वयं विज्ञापन में 'दुर्रे मुख्तार' से उद्धृत किया गया है:

लेकिन इसके विपरीत मत के अनुसार, यह संदेह का दिन नहीं है और इसमें बिलकुल रोज़ा नहीं रखा जाएगा।

इसके विपरीत मत पर यौम-ए-शक़ नहीं है, तो अब हरगिज़ रोज़ा न रखा जाएगा। (त)

रद्दुल मुहतार में है:

और इसकी शुरुआत में रोज़ा रखना जायज़ नहीं है, न फ़र्ज़ और न नफ़्ल।

रमज़ान से पहले न फ़र्ज़ी रोज़ा रखा जाए और न नफ़्ली। (त)

इसी में है:

क्योंकि यह विशिष्ठ लोगों (ख़्वास) के लिए रोज़ा रखने में एहतियात (सावधानी) है, जो यौम-ए-शक़ के विपरीत है।	**इसलिए कि इस रोज़े के रखने में ख़्वास के लिए कुछ एहतियात नहीं, यौम-ए-शक़ के विपरीत। (त)**

---

1 दुर्रे मुख्तार, किताबुस सौम, मत्तबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/174 2 रद्दुल मुहतार, किताबुस सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/95 3 रद्दुल मुहतार, किताबुस सौम, 2/95-96

اور جبکہ مطلع صاف ہواور چاند اصلاً نظر نہ آئے تو صرف اس احتمال بعید پر کہ شاید کہیں اور سے رؤیت کا ثبوت آجائے شک متحقق ہونا کس درجہ بعید ہے۔

فان مجرد الرؤیة بلدة اخری لا یلزمنا محض دوسرے شہر میں دیکھ لینا ہمارے لیے لزوم کو مالم تثبت بطریق شرعي وھو احتمال کافی نہیں جب تک طریق شرعی سے اس کا ثبوت نہ ہو ، لامن دلیل فلا یعارض الظن الحاصل یہ تو بغیر دلیل محض احتمال ہے ، اب یہ اس ظن کے مقابل من استقراء الحس الصحیح في و معارض کیسے ہو سکتا ہے جو حس صحیح سے رؤیت المرائ الصریح فافھم۔ صحیحہ میں حاصل ہوتا ہے غور کرو (ت)

ششم : یہ کہنا کہ جو لوگ اختلاف مطالع کا اعتبار نہیں کرتے اُن کے قول پر روزہ شک کا جائز ہونا چاہئے سخت عجیب، اور دونوں قول سے مخالف و غیر مصیب ہے۔ ۳۰ شعبان کو جب رؤیت نہ ہو تو اس میں ہر گز اختلاف قولین نہیں کہ اُس دن روزہ رمضان رکھنا گناہ ہے ، اختلافِ علت حکم میں ہے ، جو بحال صفائے مطلع اُسے یوم الشک نہ قرار دیں ، اُن کے نزدیک اس لیے کہ لا تقدموا رمضان بصوم یوم ولا یومین (رمضان سے پہلے ایک یا دو دن روزہ نہ رکھو۔ ت) ، خود اشتہار میں درمختار سے نقل کیا :

اما علی مقابلہ فلیس بشک ولا اسکے مخالف قول پر یومِ شک نہیں تو اب ہرگز روزہ نہ رکھا یصام اصلاً ۔ جائے گا۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے :

ولا یجوز صومہ ابتداء لا فرضاً ولا نفلاً۔ **رمضان سے پہلے نہ فرضی روزہ رکھا جائے اور نہ نفلی (ت)**

اسی میں ہے :

لانہ احتیاط فی صومہ للخواص بخلاف یوم الشک۔ **اس لیے کہ اس روزہ کے رکھنے میں خواص کے لیے کچھ احتیاط نہیں برخلاف یوم شک کے۔ (ت)**

---

1 درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۷۴ 2 ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۲/۹۵ 3 ردالمحتار کتاب الصوم ۲ / ۹۶-۹۵

Fatawa Razvia Volume 10

And for those who call it 'Yawm al-Shakk' (the Day of Doubt) even in this state, it is because for them:

Whoever fasts on the Day of Doubt has disobeyed Abu al-Qasim, peace and blessings of Allah be upon him. [1] (t)	**Whoever fasts on the Day of Doubt has disobeyed Abu al-Qasim, peace and blessings of Allah be upon him. (t)**

It is stated in Durr al-Mukhtar:

Fasts should not be observed on the Day of Doubt, which is the 30th of Shaban even if there is no obstruction. Except for voluntary fasts; other types are disliked (makruh) [2] (Summarized).	**Fasts should not be observed on the Day of Doubt, which is the 30th of Shaban even if there is no obstruction. Yes, voluntary fasts can be kept; other than that, it is disliked (makruh). (t)**

Seventh: What is the evidence for this invented reasoning that "surely the moon must have appeared somewhere in the world on that day"? They themselves quoted from 'Durr al-Mukhtar' and 'Sharh Majma' al-Ayni' that: "Because it is permissible for the sighting to be verified in another city." [3] (Because the proof of sighting can exist in another city - t). Not because of "the necessity of the occurrence of sighting in some place in the world" (That the occurrence of sighting in any corner of the world is mandatory and necessary - t).

Eighth: If sighting were necessary somewhere or other on every 29th, then according to the doctrine of our noble Imams (may Allah be pleased with them)—which is the relied-upon fatwa—that differences in horizons (Ikhtilaf-e-Matali') are not considered, it would necessitate that Ramadan always lasts for only 29 days. This is because the moon would "certainly" have appeared somewhere in the world, and differing horizons aren't valid. However, this is contrary to the consensus of the Ummah and clear texts.

Ninth: When it is known "by necessity" that sighting must have occurred somewhere, then the instruction of the Imams—that if sighting is proven elsewhere through Sharia-compliant evidence like testimony or widespread reports (istifada), it becomes binding upon us, otherwise not—as stated in 'Durr al-Mukhtar' and other texts, would become sheer nonsense, futile, and even false. If the occurrence of sighting elsewhere is known with certainty, what more proof is needed than certainty? Is

there a need for testimony even for self-evident facts? Alas, from the path of Sharia-obligated proofs of scholars...

---

1. Sunan Abi Dawud, Chapter on the Dislike of Fasting on the Day of Doubt, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 95-96/2.
2. Durr al-Mukhtar, Book of Fasting, Mujtabai Press, Delhi, 71/1.
3. Durr al-Mukhtar, Book of Fasting, Mujtabai Press, Delhi, 71/1.

फ़तावा रज़विया खंड 10

और जो इस स्थिति में भी इसे 'यौम-अल-शक़' (संदेह का दिन) कहते हैं, उनके लिए यह इसलिए है कि:

जिसने संदेह के दिन रोज़ा रखा, उसने अबुल क़ासिम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नाफरमानी की। 1- (त)

जिसने संदेह के दिन रोज़ा रखा, उसने हुज़ूर अबुल क़ासिम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की नाफरमानी की। (त)

'दुर्र-ए-मुख्तार' में है:

संदेह के दिन रोज़ा न रखा जाए, और यह शाबान का तीसवां दिन हो सकता है भले ही कोई बाधा न हो। सिवाय नफ़्ली रोज़े के इसके अलावा अन्य मकरूह हैं 2- (संक्षिप्त)।

संदेह के दिन रोज़ा न रखा जाए, और यह शाबान का तीसवां दिन हो सकता है भले ही कोई बाधा न हो, हाँ नफ़्ली रोज़ा रखा जा सकता है, इसके अलावा मकरूह है। (त)

सातवाँ: इस मनगढ़ंत तर्क के लिए क्या प्रमाण है कि "निश्चित रूप से उस दिन दुनिया में कहीं न कहीं चाँद दिखा होगा"? उन्होंने खुद विज्ञापन में 'दुर्र-ए-मुख्तार' और 'शरह मजमा-अल-ऐनी' से इतना उद्धृत किया कि: "क्योंकि दूसरे शहर में चाँद दिखने की पुष्टि संभव है।" 3 (क्योंकि दूसरे शहर में रुइयत (चाँद दिखने) का प्रमाण हो सकता है - त)। न कि "दुनिया के किसी स्थान पर रुइयत का होना अनिवार्य है" (दुनिया के किसी भी कोने में रुइयत का होना अनिवार्य और आवश्यक है - त)।

आठवाँ: यदि हर 29 तारीख को कहीं न कहीं रुइयत (चाँद का दिखना) अनिवार्य मान लिया जाए, तो हमारे महान इमामों (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के उस सिद्धांत के आधार पर—जिस पर फतवा है और हमेशा से भरोसा किया गया है—कि क्षितिज के अंतर (इख़्तिलाफ़-ए-मताली) का कोई महत्व नहीं है, तो यह आवश्यक हो जाएगा कि रमज़ान हमेशा 29 दिनों का ही हो। क्योंकि चाँद "निश्चित रूप से" दुनिया में कहीं दिखा होगा और क्षितिज का अंतर मान्य नहीं है। जबकि यह उम्मत की आम सहमति और स्पष्ट धार्मिक आदेशों के विरुद्ध है।

नौवाँ: जब यह मान लिया जाए कि "निश्चित रूप से" कहीं न कहीं रुइयत हुई ही होगी, तो इमामों का यह कहना कि यदि दूसरी जगह रुइयत शरीयत के प्रमाणों जैसे गवाही और 'इस्तिफाज़ा' से सिद्ध हो जाए तो हम पर रोज़ा अनिवार्य होगा अन्यथा नहीं—जैसा कि 'दुर्र-ए-मुख्तार' और अन्य पुस्तकों में

स्पष्ट है—व्यर्थ, निरर्थक और यहाँ तक कि गलत और झूठा हो जाएगा। जब निश्चित रूप से दूसरी जगह रुइयत का होना ज्ञात है, तो निश्चितता से बढ़कर और क्या प्रमाण चाहिए? क्या स्वतः सिद्ध तथ्यों के लिए भी गवाही की आवश्यकता है? दुखद है कि विद्वानों के शरीयत-आधारित तरीकों से...

---

1. सुनन अबी दाऊद, यौम-अल-شक़ के रोज़े की नापसंदगी का अध्याय, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 95-96/2.
2. दुर्र-ए-मुख्तार, किताब-उस-सौम, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 71/1.
3. दुर्र-ए-मुख्तार, किताब-उस-सौम, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 71/1.

पृष्ठ 588/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

اور جواس حال میں بھی یوم الشک کہیں ان کے نزدیک اس لیے کہ:

من صام یوم الشك فقد عصی ابا القاسم جس نے یومِ شک کا روزہ رکھا اس نے حضور ابوالقاسم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم 1- (ت) صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی نافرمانی کی۔ (ت)

در مختار میں ہے:

لا یصام یوم الشك ھو یوم الثلاثین من شعبان وان لم یکن علة . الا تطوعا ویکرہ غیرہ 2- (ملخصا) یومِ شک میں روزہ نہ رکھا جائے اور یہ شعبان کا تیسواں دن ہو سکتا ہے اگرچہ کوئی علت نہ ہو، ہاں نفلی روزہ رکھا جا سکتا ہے، اس کے علاوہ مکروہ ہے (ت)

ہفتم : اس ایجادی اختراعی حکم کی یہ تعلیل " کیونکہ بالضرور دنیا میں اس روز چاند ہوا ہوگا" اس بالضرور پر کیا دلیل، خود ہی اشتہار میں در مختار و شرح مجمع عینی سے اتنا نقل کیا کہ: لجواز تحقق الرؤیة في بلدة اخری 3 (کیونکہ دوسرے شہر میں رویت کا ثبوت ہو سکتا ہے۔ت) نہ کہ لوجوب وقوع الرؤیة في مکان من الدنیا (دنیا کے کسی گوشے میں رویت کا وقوع واجب و لازم۔ت)

ہشتم : اگر ہر ۲۹ کو کہیں نہ کہیں رویت ہونی ضرور ہو تو عدم اعتبار اختلافِ مطالع پر کہ ہمارے ائمہ کرام رضی اللہ تعالٰی عنہم کا وہی مذہب ہے اور اسی پر فتوٰی اور اسی پر اعتماد ہے ہمیشہ رمضان ۲۹ ہی دن کا ہونا لازم ہو کہ بالضرور دنیا میں چاند ہوا ہوگا اور اختلافِ مطالع معتبر نہیں حالانکہ یہ اجماعِ اُمت و نصوصِ صریحہ کے خلاف ہے۔

نہم: جب بالضرورۃ کہیں نہ کہیں رویت ہونی معلوم، تو ائمہ کا ارشاد کہ ثبوتِ شرعی مثل شہادت و استفاضہ شرعیہ سے دوسری جگہ رویت ثابت ہو تو ہم پر لازم ہوگا ورنہ نہیں کما نص علیه في

الدر المختار وسائر الاسفار (جیسا کہ در مختار اور دیگر کتب میں اس پر تصریح ہے۔ ت) محض لغو و مہمل بلکہ غلط و باطل ہو، کہ جب یقینا دوسری جگہ وقوعِ رویت معلوم ہے تو یقین سے زیادہ اور کون سا ثبوت چاہئے، کیا ضروریات کے لیے بھی گواہی کی حاجت ہے افسوس کہ علماء کے طریقِ موجب شرعی سے

---

1 سنن ابی داؤد باب کراہیۃ صوم یوم الشک آفتاب عالم پریس لاہور ۹۵-۲/۹۶ 2 درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/۷۱ 3 درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱/۷۱

Fatawa Razviya - Volume Ten

...restricted it, if the publicized fatwa were seen, it would be known that it is itself proven by necessity, and there is no power nor strength except with Allah, the High, the Magnificent.

Tenthly: Now this reasoning will be strange, for it will merely invalidate the claim itself; when the sighting is known by necessity, then for those who do not consider the difference in horizons (Ikhtilaf al-Matali), where did this "Day of Doubt" (Yawm al-Shakk) come from? Rather, it is the Day of Certainty (Yawm al-Yaqeen) for them. And what does it mean for fasting to be permissible? Rather, it should be obligatory, as it is certainly Ramadan. In short, to consider sighting necessary and binding somewhere or the other on every 29th [of the month] is, God forbid, to declare the noble Imams as opponents of the consensus of Muslims, opponents of categorical texts, and as insane—something no one but an irreligious person or a madman would agree with. Yes, call it a possibility; then if it happened, it would be the Day of Doubt, and fasting on the Day of Doubt is not permissible, so where did the permissibility come from?

Eleventhly: To declare the consideration of the difference in horizons in Ramadan and Eid-ul-Fitr as the saying of verified Hanafi scholars, traditionists of the school, and mujtahids of legal reports is a pure false accusation. In fact, its non-consideration is the school of our noble Imams and great Mujtahids (may Allah be pleased with them), and the fatwa is based on this. This is the position of the majority, the most cautious (ahwat), and the strongest (aqwa) in terms of evidence. Thus, for numerous reasons, acting upon it is obligatory, and deviating from it is not permissible at all. In Tanwir al-Absar, Durr al-Mukhtar, Bahr al-Ra'iq, Fatawa Khulasa, etc., it is stated:

[Table Header/Content]: (Arabic): Ikhtilaf al-matali ghayr mu'tabar 'ala zahir al-madhhab wa 'alayhi akthar al-masha'ikh wa 'alayhi al-fatwa (1). (Urdu Translation): The difference in horizons is not reliable according to the apparent school (Zahir al-Madhhab), most elders have this opinion, and the fatwa is based on this (T).

In Radd al-Muhtar, it says: (Arabic): Huwa al-mu'tamad 'indana 'inda al-Malikiyya wa al-Hanabila (2). (Urdu Translation): It is what is relied upon (al-mu'tamad) according to us, the Malikis, and the Hanbalis (T).

In Fath al-Qadir, it is mentioned: Taking the apparent report (Zahir al-Riwayah) is more cautious (ahwat) (3). (Acting on the Zahir al-Riwayah is more cautious. T). In

Bahr al-Ra'iq, it is written: Caution lies in acting upon the stronger of the two evidences (4). (Acting on the stronger of the two evidences is better. T).

Footnotes: 1. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Mujtabai Press, Delhi, 1/149 2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/105 3. Fath al-Qadir, Kitab al-Sawm, Nooriya Razviya, Sukkur, 2/243 4. Radd al-Muhtar, referring to Al-Nahr, Preface of the Book, Mustafa al-Babi, Egypt, 1/54

फ़तावा रज़विया - दसवीं जिल्द

...प्रतिबंधित किया, यदि विज्ञापित फतवा देखा जाता तो पता चलता कि यह स्वयं अनिवार्य रूप से सिद्ध है और अल्लाह के सिवा कोई शक्ति या सामर्थ्य नहीं है जो सर्वोच्च और महान है।

दसवां: अब यह तर्क विचित्र होगा क्योंकि यह स्वयं दावे को ही पूरी तरह से अमान्य कर देगा; जब अनिवार्य रूप से चाँद का दिखना ज्ञात हो, तो जो लोग उदय-स्थलों के अंतर (इख़्तिलाफ़-ए-मताले) पर विचार नहीं करते, उनके पास यह 'संदेह का दिन' (यौम अल-शक़) कहाँ से आया? बल्कि उनके लिए तो यह 'निश्चितता का दिन' (यौम अल-यक़ीन) है। और रोज़ा रखने के वैध होने का क्या अर्थ है? बल्कि इसे अनिवार्य होना चाहिए, क्योंकि यह निश्चित रूप से रमज़ान है। संक्षेप में, प्रत्येक 29 तारीख को कहीं न कहीं चाँद दिखने को आवश्यक और अनिवार्य मान लेना, अल्लाह की पनाह, महान इमामों को मुसलमानों की सर्वसम्मति का विरोधी, स्पष्ट धर्मग्रंथों का विरोधी और पागल घोषित करना है, जिससे एक अधर्मी या पागल के अलावा कोई सहमत नहीं होगा। हाँ, इसे एक संभावना कहें; फिर यदि ऐसा हुआ, तो वह संदेह का दिन होगा और संदेह के दिन का रोज़ा जायज़ नहीं है, तो फिर यह वैधता कहाँ से आई?

ग्यारहवां: रमज़ान और ईद-उल-फ़ित्र में उदय-स्थलों के अंतर पर विचार करने को हनफ़ी शोधकर्ताओं, पंथ के परंपराविदों और न्यायविदों के कथनों के रूप में घोषित करना सरासर गलत आरोप है। वास्तव में, इस पर विचार न करना ही हमारे आदरणीय इमामों और महान मुजतहिदीन (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) का पंथ है और इसी पर फतवा है। यही बहुमत का मत है, और प्रमाण के दृष्टिकोण से सबसे अधिक सावधानीपूर्ण और सबसे सशक्त है। अत; कई कारणों से इस पर अमल करना अनिवार्य है और इससे हटना कतई जायज़ नहीं है। तनवीरुल अबसार, दुर्रे मुख्तार, बहरुर रैक, और फ़तावा खुलासा आदि में है:

[तालिका विवरण]: (अरबी): इख़्तिलाफ़ुल मतालिअ ग़ैर मु'तबरुन अला ज़ाहिरिल मज़हबि व अलैहि अक्सरुल मशाइख़ि व अलैहिल फ़तवा (1)। (उर्दू अनुवाद): ज़ाहिर मज़हब पर उदय-स्थलों के अंतर का कोई एतबार नहीं है, अधिकांश मशाइख़ की यही राय है और इसी पर फतवा है (त)।

रद्दुल मुह्तार में है: (अरबी): हुवल मुअतमदु इन्दना इन्दल मालिकिय्यति वल हनाबिलति (2)। (उर्दू अनुवाद): हमारे, मालिकी और हनबलियों के यहाँ यही मुअतमद (विश्वसनीय) है (त)।

फ़ह्तुल क़दीर में है: ज़ाहिर अल-रिवायत पर अमल करना अधिक सावधानीपूर्ण (अहवत) है (3)। (ज़ाहिर अल-रिवायत पर अमल करना अधिक सावधानीपूर्ण है। त)। बहरुर रैक में है: सावधानी दोनों प्रमाणों में से जो अधिक प्रबल हो, उस पर अमल करने में है (4)। (दोनों दलीलों में से जो अधिक सशक्त हो, उस पर अमल करना बेहतर है। त)।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. दुर्रे मुख्तार, किताबुस सौम, मटबा मुजतबाई दिल्ली, 1/149 2. रद्दुल मुह्तार, किताबुस सौम, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 2/105 3. फ़ह्तुल क़दीर, किताबुस सौम, नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/243 4. रद्दुल मुह्तार बहवाला अल-नहर, ख़ुत्बा किताब, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 1/54

مقید کیا، اشتہاری فتوی دیکھتے تو معلوم ہوتا کہ خود ہی بالضرور ثابت ہے ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم۔

دہم : اب یہ تعلیل عجب ہو گی کہ خود مدعا کا ابطال محض کرے گی، جب بالضرور رویتِ رؤیت معلوم تو جو لوگ اختلافِ مطالع کا اعتبار نہیں کرتے ان کے نزدیک یہ یوم الشك کدھر سے آیا بلکہ یقین یوم الیقین ہے اور روزہ جائز ہونا کیا معنی، بلکہ فرض ہونا چاہئے کہ یقیناً رمضان ہے، بالجملہ ہر ۲۹ کو کہیں نہ کہیں رؤیت ضروری و لازم مان لینا معاذ اللہ ائمہ کرام کو مخالفِ اجماعِ مسلمین و مخالفِ نصوصِ قاطعہ و مجانین قرار دینا ہے جس پر راضی نہ ہو گا مگر بددین یا مجنون، ہاں احتمال کہئے ، پھر اگر ہوا تو یوم الشك ہوا اور یوم الشك کا روزہ جائز نہیں، پھر جواز کدھر سے آیا۔

یازدہم : رمضان وفطر میں اعتبار اختلاف مطالع کو قول محققین حنفیہ و محدثین مذہب و مجتہدین روایات فقہیہ قرار دینا محض غلط تہمت ہے بلکہ اُس کا عدمِ اعتبار ہی ہمارے ائمہ کرام و مجتہدین عظام رضی اللہ تعالٰی عنہم کا مذہب ہے اور اسی پر فتوی ہے، اور اسی پر جمہور، اور یہی احوط واقوی من حیث الدلیل، تو بوجوہِ کثیرہ اسی پر عمل واجب، اور اس سے عدول ہرگز جائز نہیں۔

تنویرالابصار ودرمختار وبحر الرائق وفتاوی خلاصہ وغیرہ میں ہے :

اختلاف المطالع غیر معتبر علی ظاھر المذھب و علیہ اکثر المشائخ وعلیہ الفتوی 1۔ ظاہر مذہب پر اختلاف مطالع کا اعتبار نہیں ، اکثر مشائخ کی یہی رائے ہے اور اسی پر فتوی ہے (ت)

ردالمختار میں ہے :

هو المعتمد عندنا عند المالکیة والحنابلة 2۔ ہمارے، مالکیہ اور حنابلہ کے ہاں یہی معتمد ہے (ت)

فتح القدیر میں ہے : الاخذ بظاھر الروایة احوط 3 (ظاہر الروایۃ پر عمل احوط ہے۔ ت)۔ بحر الرائق میں ہے : الاحتیاط، العمل بأقوی الدلیلین 4 (دونوں دلیلوں سے قوی پر عمل بہتر ہے۔ ت)

1 در مختار، کتاب الصوم، مطبع مجتبائی دہلی، ۱/۱۴۹ 2 ردالمحتار کتاب الصوم مصطفٰی البابی مصر ۱۰۵/۲ 3 فتح القدیر ، کتاب الصوم ، نوریہ رضویہ سکھر ، ۲۴۳/۲ 4 ردالمحتار بحوالہ النہر خطبہ کتاب مصطفٰی البابی مصر ۱/۵۴

Fatawa Razawiyya - Volume Ten

In 'Uqud al-Durriya' it is stated: 'Action should be taken upon what the majority (of scholars) follow.' In 'Fatawa Khairiya' it is stated:

Arabic	Urdu Translation
They have explicitly stated that whatever departs from 'Zahir al-Riwaya' is neither the school of Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) nor his opinion.	The jurists have clarified that what is outside of 'Zahir al-Riwaya' is neither the school of thought of Imam Abu Hanifa (may Allah be pleased with him) nor his saying. (T)

In 'Bahr' it is stated:

Arabic	Urdu Translation
Whatever departs from 'Zahir al-Riwaya' is an opinion from which he (the Imam) retracted, and a retracted opinion remains no longer his opinion. (Summary)	That which is outside of 'Zahir al-Riwaya' is a retracted opinion, and a retracted opinion is not the saying of you (Imam-e-Azam). (T)

In 'Shami' it is stated:

Arabic	Urdu Translation
Whatever contradicts 'Zahir al-Riwaya' is not the school of our companions (Hanafi scholars).	The opinion which is contrary to 'Zahir al-Riwaya' is not the school of thought of our associates. (T)

In the same (book) it is stated: 'One should act upon that which the Fatwa is based.' So, against all these great sayings, can the statement of one or two later scholars calling a contradictory view "more similar" (ashbah) cast any doubt or be worthy of attention? In 'Durr al-Mukhtar' it is stated:

Arabic	Urdu Translation
Giving a judgement or Fatwa based on an outweighed (Marjooh) opinion is ignorance and a violation of Consensus (Ijma).	Decision and Fatwa based on an outweighed opinion is pure ignorance and opposition to Consensus. (T)

It is in 'Radd al-Muhtar'.

Footnotes: 1. Uqud al-Durriya, Various Issues and Benefits regarding Prohibition and Permissibility, Haji Abdul Ghaffar and Sons, Kandahar Afghanistan 2/356 2. Fatawa

Khairiya, Book of Divorce, Dar al-Ma'rifa Beirut 1/52 3. Bahr al-Raiq, Book of Judgement, H.M. Saeed Company Karachi 6/20 4. Radd al-Muhtar, Book of Reviving Dead Lands, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut 5/28 5. Radd al-Muhtar, Chapter on Sadaqat-ul-Fitr, Dar Ihya al-Turath al-Arabi Beirut 2/78 6. Durr al-Mukhtar, Preface to the book, Mujtabai Delhi, 1/15

फ़तावा रज़विया - जिल्द दसवीं

'उक़ूद अद-दुर्रिया' में है: 'उस पर अमल किया जाए जिस पर बहुमत (विद्वान) हों।' 'फ़तावा खैरिया' में है:

अरबी

उन्होंने स्पष्ट किया है कि जो कुछ 'ज़ाहिर अल-रिवायत' से बाहर है, वह न तो इमाम अबू हनीफ़ा (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) का मज़हब है और न ही उनका कथन।

उर्दू अनुवाद

फ़ुक़हा (न्यायविदों) ने यह स्पष्ट कर दिया है कि जो ज़ाहिर अल-रिवायत से बाहर है, वह न तो इमाम अबू हनीफ़ा (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) का मज़हब है और न ही उनका कथन। (त)

'बहर' में है:

अरबी

जो ज़ाहिर अल-रिवायत से बाहर है वह वापस लिया गया (मर्जू' अनहु) कथन है, और वापस लिया गया कथन उनका कथन नहीं रहता। (संक्षेप में)

उर्दू अनुवाद

जो ज़ाहिर अल-रिवायत से बाहर हो वह मर्जू' अनहु (वापस लिया गया) कथन होता है और मर्जू' अनहु आप (इमाम-ए-आज़म) का कथन नहीं होता। (त)

'शामी' में है:

अरबी

जो ज़ाहिर अल-रिवायत के विपरीत है, वह हमारे साथियों (हनफ़ी विद्वानों) का मज़हब नहीं है।

उर्दू अनुवाद

जो कथन ज़ाहिर अल-रिवायत के विरुद्ध हो वह हमारे असहाब (साथियों) का मज़हब नहीं होता। (त)

उसी में है: 'जिस पर फ़तवा हो उस पर अमल किया जाए।' तो इन तमाम महान कथनों के विरुद्ध एक या दो बाद के विद्वानों का किसी विपरीत विचार को "अधिक सदृश" (अशबह) कह देना क्या कोई संदेह पैदा कर सकता है या ध्यान देने योग्य हो सकता है? 'दुर्र अल-मुख़्तार' में है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
कमज़ोर (मर्जूह) कथन पर निर्णय या फ़तवा देना अज्ञानता और सर्वसम्मति (इज्मा) का उल्लंघन है। 'रद्द अल-मुह्तार' में है।	मर्जूह (कमज़ोर) कथन पर फ़ैसला और फ़तवा देना कोरी अज्ञानता और इज्मा (सर्वसम्मति) का विरोध है। (त)

पादलेख: 1. उक़ूद अद-दुर्रिया, विभिन्न मुद्दे और लाभ, हाजी अब्दुल गफ़्फ़ार एंड संस, कंधार अफगानिस्तान 2/356 2. फ़तावा खैरिया, तलाक की किताब, दार अल-मआरिफ़ा बेरूत 1/52 3. बहर अल-राइक़, न्याय की किताब, एच.एम. सईद कंपनी कराची 6/20 4. रद्द अल-मुह्तार, मृत भूमि को पुनर्जीवित करने की पुस्तक, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी बेरूत 5/28 5. रद्द अल-मुह्तार, सदक़ा-ए-फ़ित्र का अध्याय, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी बेरूत 2/78 6. दुर्र अल-मुख़्तार, पुस्तक की प्रस्तावना, मुज्तबाई दिल्ली, 1/15

पृष्ठ 590/836

فتاوی رضویہ - جلد دہم

عقودالدریہ میں ہے: العمل بما علیہ الاکثر (عمل اس پر کیا جائے جس پر اکثر ہوں۔ت) فتاوی خیریہ میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
صرحوا بانه ان ماخرج عن ظاهر الرواية ليس مذهبا لابی حنيفة رضی الله تعالیٰ عنه ولا قولاله -[2]	فقہاء نے اس کی تصریح کی ہے کہ ظاہر الروایہ سے جو خارج ہے وہ نہ تو امام ابو حنیفہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا مذہب ہوتا ہے اور نہ ہی قول (ت)

بحر میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
ما خرج عن ظاهر الرواية فهو مرجوع عنه و المرجوع عنه لم يبق قولاله - (ملخصاً)	جو ظاہر الروایہ سے خارج ہو وہ قول مرجوع عنہ ہوتا ہے اور مرجوع عنہ آپ (امام اعظم) کا قول نہیں ہوتا۔ (ت)

شامی میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
ما خالف ظاہر الروایہ لیس مذہباً لأصحابنا-[4]	جو قول ظاہر الروایہ کے خلاف ہو وہ ہمارے اصحاب کا مذہب نہیں ہوتا (ت)

اسی میں ہے: العمل بما علیہ الفتوٰی (جس پر فتوٰی ہو اس پر عمل کیا جائے۔ ت) توان تمام عظیم قولوں کے خلاف دو ایک متاخرین علماء کا قول خلاف کو اشبہ کہہ دینا کیا شبہ ڈال سکتا یا کیا قابل التفات ہو سکتا ہے، در مختار میں ہے:

عربی متن	اردو ترجمہ
الحکم والفتیا بالقول المرجوح جھل وخرق للاجماع-[6]	قول مرجوح پر فیصلہ اور فتوٰی محض جہالت اور اجماع کی مخالفت ہے۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے۔

حواشی: 1. عقود الدریۃ، مسائل و فوائد شتی من الحظر والاباحۃ حاجی عبدالغفار و پسران قندھار افغانستان ۳۵۶/۲ 2. فتاوٰی خیریہ کتاب الطلاق دارالمعرفہ بیروت ۵۲/۱ 3. بحر الرائق کتاب القضاء ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲۰/۶ 4. ردالمحتار کتاب احیاء الموات، داراحیاء التراث العربی بیروت ۲۸/۵ 5. ردالمحتار باب صدقۃ الفطر داراحیاء التراث العربی بیروت ۷۸/۲ 6. در مختار مقدمہ کتاب، مجتبائی دہلی ، ۱۵/۱

Fatawa Rizwia Volume Ten

[Arabic Box] As the saying of Muhammad in the presence of the saying of Abu Yusuf when it is not authenticated or its reason is not strong; and more futile than this is giving a fatwa against the Zahir al-Riwayah when it is not authenticated, and likewise giving a fatwa on a retracted saying. [End (T)]

Twelfthly, I say: And with Allah is the success. The conclusions reached by our noble Imams (may Allah be pleased with them) on the throne of research are not such that their pillars would be shaken by anyone's attempts. Those who consider the difference in horizons (ikhtilaf al-matali') valid in moon sighting should explain what is meant by this, and what is the distance at which the difference in horizons becomes valid?

Firstly, those who advocate for this differ among themselves, and the differences are as much as eightfold. In 'Al-Jawahir', 'Al-Lubab', etc., it was fixed as a month's journey. Based on a standard daily stage of twelve 'kos' (and since a mile here is 5/8 of a 'kos'), a one-day distance is 19.2 miles, and a full month's journey is 765 miles, which is 192 'farsakh'. In 'Al-Jawahir', this limit is argued for using the story of our master Solomon (peace be upon him):

[Arabic Box] "Its morning course was a month's journey and its evening course was a month's journey." [Quran 34:12]. He said: Indeed, he would move every morning and evening from one region to another, and the distance between each was a month's journey. [End (T)]

What kind of evidence is this? "Look at his face and ask about his condition." Therefore, in 'Iqaz al-Wusnan', after quoting this, it is said: "There is room for consideration in the indication of the story for this [matter]." [End (T)]

1. Radd al-Muhtar, Introduction to the Book, Chapter: It is not permissible to act on weak opinions even for oneself, Mustafa al-Babi Egypt, 1/55.
2. Al-Quran 34/12.
3. Tanbih al-Ghafil wal-Wusnan from the treatises of Ibn Abidin, citing Al-Quhistani from Al-Jawahir, Suhail Academy Lahore, 1/250.
4. Tanbih al-Ghafil wal-Wusnan from the treatises of Ibn Abidin, citing Al-Quhistani from Al-Jawahir, Suhail Academy Lahore, 1/250.

फ़तावा रज़विया खंड दसवां

[अरबी बॉक्स] जैसा कि इमाम मुहम्मद का कथन इमाम अबू यूसुफ़ के कथन की उपस्थिति में है, जबकि उसे सही न ठहराया गया हो या उसका प्रमाण दृढ़ न हो; और इससे भी अधिक निरर्थक ज़ाहिर अल-रिवाया के विरुद्ध फ़तवा देना है जबकि उसे सही न ठहराया गया हो, और इसी प्रकार उस कथन पर फ़तवा देना जिससे रुजू (वापसी) किया गया हो। [समाप्त (त)]

बारहवाँ, मैं कहता हूँ: और अल्लाह ही तौफ़ीक़ देने वाला है। हमारे सम्मानित इमामों (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) ने जिस शोध पर अपनी नींव रखी है, वह ऐसी नहीं है कि किसी के डगमगाने से डगमगा जाए। चाँद देखने के संदर्भ में जो लोग क्षितिजों के अंतर (इख्तिलाफ़-ए-मताल'ए) को मान्य मानते हैं, वे थोड़ा समझाएँ कि इससे क्या तात्पर्य है, और वह कितनी दूरी है जिसमें क्षितिजों का अंतर मान्य होगा?

प्रथम, इस बात को मानने वाले स्वयं आपस में मतभेद रखते हैं और वह मतभेद भी आठ गुना का है। 'अल-जवाहर' और 'अल-लुबाब' आदि में इसे एक महीने की यात्रा के रूप में निर्धारित किया गया है। दैनिक बारह कोस की सामान्य मंज़िल के अनुसार (चूंकि यहाँ का मील कोस का 5/8 है), एक दिन की यात्रा 19.2 मील हुई और पूरे महीने की यात्रा 765 मील, जो 192 फ़रसख़ हुई। 'अल-जवाहर' में इस सीमा के लिए हमारे आका सुलेमान (अलैहिस्सलाम) के क़िस्से से तर्क दिया गया है:

[अरबी बॉक्स] "उसकी सुबह की मंज़िल एक महीने की राह और शाम की मंज़िल एक महीने की राह।" [क़ुरआन 34:12] कहा गया कि वे हर सुबह और शाम एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र की ओर प्रस्थान करते थे और उनके बीच एक महीने की यात्रा की दूरी होती थी। [समाप्त (त)]

यह कैसा प्रमाण है? "उसका चेहरा देखो और उसका हाल पूछो।" और इसीलिए 'ईक़ाज़ अल-वुस्नान' में इसे उद्धृत करने के बाद कहा गया है: "इस मसले पर इस घटना के प्रमाण होने में विचार की गुंजाइश है।" [समाप्त (त)]

1. रद अल-मुह्तार, मुक़द्दमा किताब, मतलव: कमज़ोर राय पर अमल करना स्वयं के लिए भी जायज़ नहीं है, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 1/55.
2. अल-क़ुरान 34/12.

3. तनबीह अल-ग़ाफ़िल वल-वुस्रान, इब्ने आबिदीन के रिसालों से, अल-कुहिस्तानी के हवाले से अल-जवाहर से, सुहैल एकेडमी लाहौर, 1/250.
4. तनबीह अल-ग़ाफ़िल वल-वुस्रान, इब्ने आबिदीन के रिसालों से, अल-कुहिस्तानी के हवाले से अल-जवाहर से, सुहैल एकेडमी लाहौर, 1/250.

पेज 591/836

فتاوی رضویہ جلد دہم

[Arabic Box] کقول محمد مع وجود قول ابی یوسف اذا لم یصح او یقو وجھہ واولی من ھذا بالبطلان، الافتاء بخلاف ظاھر الروایۃ اذا لم یصح والافتاء با لقول المرجوع عنہ اھ جیسا کہ امام محمد کا قول امام ابو یوسف کے قول کی موجودگی میں جبکہ اس کی تصحیح نہ کی گئی ہو یا اس کی دلیل قوی نہ ہو اور اولیٰ بالطلان ہے ظاہر الروایہ کے مخالف پر فتویٰ دینا جبکہ اس کی تصحیح نہ کی گئی ہو اور اسی طرح قول مرجوع عنہ پر فتویٰ دینا ہے اہ (ت)

دوازدہم اقول: وباللہ التوفیق ہمارے ائمہ کرام رضی اللہ تعالیٰ عنہم جس پر عرش تحقیق مستقر فرمائیں وہ ایسا نہیں ہوتا کہ اس کے ارکان کسی کے متزلزل کئے متزلزل ہو جائیں، رؤیتِ ہلال میں اختلاف مطالع معتبر ماننے والے ذرا سمجھ کر بتائیں کہ اس اعتبار سے کیا مراد، اور وہ کتنی مسافت ہے جس میں اختلاف مطالع معتبر ہوگا: اولاً اس کے قائلین اس بارے میں خود مختلف ہیں اور مختلف بھی اتنے کہ آٹھ گنے کا فرق، جواہر و لباب وغیرہما میں اُسے ایک مہینہ کی راہ سے مقرر کیا، روزانہ بارہ کوس کی منزل معتاد کے لحاظ سے از انجا کہ میل یہاں کے کوسوں کا ۸/۵ ہے ۲. ۱۹ میل مسافت یکروزہ ہوئی اور مہینہ بھر کی راہ ۷۶۵ میل جس کے ۱۹۲ فرسخ ہوئے، جواہر میں اس تحدید پر قصہ سیدنا سلیمان علیہ الصلوٰۃ والسلام سے استدلال کیا:

[Arabic Box] غُدُوُّھَا شَھْرٌ وَّ رَوَاحُھَا شَھْرٌ ۲ قال فإنہ قد انتقل کل غدو ورواح من اقلیم الی اقلیم وبین کل منھما مسیرۃ شھر ۳۔ اس کی صبح کی منزل ایک مہینہ کی راہ اور شام کی منزل ایک مہینہ کی راہ۔ فرمایا وہ ہر صبح و شام ایک اقلیم سے دوسرے اقلیم کی طرف تشریف لے جاتے اور ان کے درمیان ایک ماہ کی مسافت ہوتی۔ (ت)

یہ دلیل کیسی ہے، رُدِیش ہمیں و حالت بپرس (اس کا چہرہ دیکھو اور اس کا حال پوچھو۔ ت) و لہذا ایقاظ الوسنان میں اسے نقل کر کے کہا: في دلالة القصة على ذلك نظر ٤ (اس مسئلہ پر واقعہ کی دلالت محل نظر ہے۔ ت)

1 ردالمحتار مقدمہ کتاب مطلب لا یجوز العمل بالضعیف حتی لنفسہ مصطفی البابی مصر ۱/۵۵ 2 القرآن ۳۴/ ۱۲ 3 تنبیہ الغافل والوسنان عن رسائل ابن عابدین بحوالہ القہستانی عن الجواہر سہیل اکیڈمی لاہور ۱/ ۲۵۰ 4 تنبیہ الغافل والوسنان عن رسائل ابن عابدین بحوالہ القہستانی عن الجواہر سہیل اکیڈمی لاہور ۱/ ۲۵۰

Fatawa Ridawiyya - Volume 10

In Radd al-Muhtar, it is stated: "The flaw in this reasoning is not hidden." (T) Taj al-Tabrizi said: "A difference in horizons (Ikhtilaf al-Matali') is not possible in less than seventy-two miles." Allama Ramli Shafi'i adopted this view in Sharh al-Minhaj and mentioned his father's fatwa on it. In Iqaz al-Wasnan, this was called more appropriate (awla).

Arabic Context	Urdu Explanation
Where it says: "The preferred view is what Al-Taj mentioned, that the difference of horizons is not possible in less than twenty-four farsakhs. This is because it is apparent from his saying 'not possible' etc., that he estimated it based on astronomical rules, and there is nothing preventing their consideration here, just as they are considered for prayer times." (T)	The words are: "The first opinion, mentioned by Taj al-Tabrizi, that a difference in horizons is not possible in less than twenty-four farsakhs is preferred. This is because his phrase 'not possible' etc. indicates that he estimated it according to astronomical rules, and there is no obstacle to considering them here, just as they are considered in the times of prayer." (T)

What a difference between twenty-four (24) and one hundred and ninety-two (192), a full eight-fold difference! And this was bound to happen since the light of knowledge of the Mujtahid Imams was not with this.

Arabic Text	Urdu Translation
"Had it been from other than Allah, they would surely have found in it much discrepancy."	"And if it had been from anyone other than God, they would certainly have found in it much contradiction." (T)

Secondly, all these gentlemen stated this absolutely, without specifying any direction or side. However, in most inhabited regions, especially the cities of India and their many examples like the holy land of Arabia etc., where the latitude is within the total inclination or not much different from it, if this difference is considered valid, it would mean that the sighting in a western city is not an argument for an eastern one. It's possible that in the eastern city, at the time of sunset, the separation between the sun and moon was small, such that the moon's crescent was not far enough from the sun's rays to be visible. When the celestial motion brought the two luminaries to the horizon of the western city, during that time, the separation became sufficient for a sighting. But why should the sighting of the eastern city be absolutely invalid in the

western one, especially when the latitude is identical or close, such that the horizon's slant and verticality are the same? It is obvious that when it became sightable in the east, in the west, the separation and visibility would increase even more, and to the south and...

---

1 Radd al-Muhtar, chapter on difference of horizons, Mustafa al-Babi Egypt, 3/105 2 Tanbih al-Ghafil wal-Wasnan from the treatises of Ibn Abidin, Suhail Academy Lahore, 1/250 3 Al-Quran, 4/82

फतावा रज़विया - जिल्द दस

रद-अल-मुह्तार में फरमाया गया: "इस दलील में जो दोष है, वह छिपा नहीं है।" (त) ताज तबरीज़ी ने कहा: "बहत्तर मील से कम में मताले (क्षितिज) का अंतर संभव नहीं।" अल्लामा रमली शाफई ने शरह मिन्हाज में इसी को अपनाया और इसी पर अपने पिता का फतवा बताया। ईकाज़ुल वस्नान में इसी को 'औला' (बेहतर) कहा गया है।

अरबी संदर्भ

जहाँ कहा गया है: "पहला कथन बेहतर है जो ताज तबरीज़ी ने उल्लेख किया कि मतले का अंतर चौबीस फरसख से कम संभव नहीं। क्योंकि उनकी बात 'संभव नहीं' आदि से यह स्पष्ट है कि उन्होंने खगोलीय नियमों से अनुमान लगाया है और इस स्थान पर उन्हें मानने में कोई बाधा नहीं है, जैसे कि नमाज़ के समय के लिए उन्हें माना जाता है।" (त)

उर्दू स्पष्टीकरण

शब्द ये हैं कि: "पहला कथन जो ताज तबरीज़ी ने ज़िक्र किया कि मतले का अंतर चौबीस फरसख से कम संभव नहीं, बेहतर है। क्योंकि उनकी बात 'संभव नहीं' आदि से ज़ाहिर यह है कि उन्होंने खगोलीय नियमों से अंदाज़ा लगाया है और इस मकाम पर उनका एतबार करने में कोई रुकावट नहीं जैसे नमाज़ के औकात में उनका एतबार है।" (त)

कहाँ चौबीस (२४) और कहाँ एक सौ बानवे (१९२), पूरे आठ गुना का फर्क है! और ऐसा होना ही था क्योंकि मुजतहिद इमामों के इल्म का नूर इसके साथ नहीं था।

अरबी पाठ

"अगर वह अल्लाह के अलावा किसी और की तरफ़ से होता, तो वे उसमें बहुत मतभेद पाते।"

उर्दू अनुवाद

"और अगर वह अल्लाह के सिवा किसी और के पास से होता, तो ज़रूर इसमें बहुत इख्तिलाफ़ (मतभेद) पाते।" (त)

दूसरे, इन सभी महानुभावों ने इसे मुतलक (निरपेक्ष) फरमाया है, सिम्त (दिशा) या जानिब (पक्ष) की कोई विशिष्टता नहीं रखी। हालाँकि आबाद दुनिया, विशेष रूप से भारत और उनके जैसे कई स्थानों जैसे पवित्र अरब भूमि आदि में, जहाँ अर्ज़-ए-बैल (अक्षांश) कुल झुकाव के भीतर है या उससे बहुत अलग नहीं है, यदि यह इख्तिलाफ़ (अंतर) मोतबर (मान्य) हो, तो वह इस प्रकार होगा कि पश्चिमी शहर का चाँद देखना पूर्वी शहर के लिए दलील न हो। मुमकिन है कि पूर्वी शहर में सूर्यास्त के समय सूरज और चाँद के बीच की दूरी कम थी और चाँद की किरणें सूरज की किरणों से इतनी अलग नहीं

हुई थीं कि चाँद देखा जा सके। जब खगोलीय गति उन दोनों को पश्चिमी शहर के क्षितिज पर ले गई, तो उस समय के दौरान दूरी इतनी बढ़ गई कि चाँद देखा जा सके। लेकिन पश्चिमी शहर में पूर्वी शहर का चाँद देखना मुतलकन (पूरी तरह से) क्यों नाकाबिले-एतबार हो, विशेष रूप से जब अर्ज़ मुत्तहिद (समान अक्षांश) या करीब हो, ताकि क्षितिज का झुकाव और सीधापन एक जैसा हो? यह तो स्पष्ट है कि जब पूर्व में देखने योग्य दूरी हो गई थी, तो पश्चिम में तो दूरी और दृश्यता और भी बढ़ जाएगी, और दक्षिण और...

---

1 रद-अल-मुह्तार, मताले के अंतर का अध्याय, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र, ३/१०५ 2 तन्बीहुल गाफ़िल वल वस्नान, इब्न आबिदीन के रिसालों से, सुहैल एकेडमी लाहौर, १/२५० 3 अल-कुरान, ४/८२

ردالمحتار میں فرمایا: لایخفی مافی ھذا الاستدلال (اس استدلال میں جو نظر ہے ہو مخفی نہیں۔ ت)
تاج تبریزی نے کہا: بہتر میل سے کم میں اختلاف مطالع ممکن نہیں۔ علامہ رملی شافعی نے شرح منہاج میں اسی کو اختیار کیا اور اسی پر اپنے والد کا فتوٰی بتایا۔ ایقاظ الوسنان میں اسی کو اولٰی کہا،

عربی عبارت	اردو وضاحت
حیث قال فالاولی ماذکر التاج من ان اختلاف المطالع لایمکن فی اقل من اربعة وعشرین فر سخااولی لان الظاھر من قولہ لایمکن الخ انہ قدرہ بالقواعد الفلکیة ولا مانع من اعتبارھا ھھنا کاعتبارھا فی اوقات الصلٰوۃ۔[2]	الفاظ یہ ہیں کہ پہلا قول کہ تاج تبریزی نے جو ذکر کیا کہ اختلاف مطالع چوبیس فرسخ سے کم ممکن نہیں اولٰی ہے کیونکہ یہ ان کے قول لایمکن الخ سے ظاہر یہ ہے کہ انہوں نے قواعد فلکیہ سے اندازہ لگایا ہے اور اس مقام پر ان کا اعتبار کرنے میں کوئی مانع نہیں جیسا کہ اوقات نماز میں ان کا اعتبار ہے۔ (ت)

کہاں چوبیس ۲۴ کہاں ایک سو بانوے ۱۹۲ ، پورے آٹھ گنے کا فرق ہے، اور ضرور ہونا تھا کہ ائمہ مجتہدین کا نور علم اس کے ساتھ نہیں،

عربی عبارت	اردو ترجمہ
وَلَوْ کَانَ مِنْ عِنْدِ غَیْرِ اللہِ لَوَجَدُوْا فِیْہِ اخْتِلَافًا کَثِیْرًا[3]	اور اگر وہ غیر خدا کے پاس سے ہوتا تو ضرور اس میں بہت اختلاف پاتے۔(ت)

ثانیا سب حضرات نے مطلق فرمایا کوئی تخصیص سمت و جانب کی نہ رکھی حالانکہ معظم معمورہ خصوصاً بلاد ہندوستان اور ان کے امثال کثیرہ مثل خطہ مقدسہ عرب وغیرہ میں جہاں عرض میل کلی کے اندر ہے یا اس سے بہت متفاوت نہیں، یہ اختلاف معتبر ہو تو یونہی کہ غربی شہر کی رؤیت شرقی پر حجت نہ ہو کہ ممکن کہ شرقی میں وقت غروبِ شمس فصل نیرین کم تھا قمر کا شعاع شمس سے انفصال قابلِ رؤیت ہلال نہ ہوا تھا جب حرکت فلکیہ نیریں کو بلد غربی کی افق پر لے گئے اتنی دیر میں انفصال بقدر استدلال ہو گیا مگر غربی میں شرقی کی رؤیت مطلقاً کیوں نامعتبر ہو خصوصاً جب کہ عرض متحد یا متقارب ہو کہ اضطجاع وانتصاب افق یکساں ہو، بدِ ظاہر کہ جب مشرق میں بعد قابلِ رؤیت ہو چکا تھا تو غربی میں تو اور زیادہ فصل و ظہور ہو جائے گا، اور جنوب و

---

1 ردالمحتار مطلب فی اختلاف المطالع مصطفی البابی مصر ۳/ ۱۰۵ 2 تنبیہ الغافل والوسنان من رسائل ابن عابدین سہیل اکیڈمی لاہور ۱/ ۲۵۰ 3 القرآن ۴/ ۸۲

Fatawa Rizwia, Volume 10

In the north, it is not necessary for there to be a gap of 192 miles at 24 Farsakh. Suppose the sun is in the north and the moon at that time is stationary without inclination, and one city is 8 degrees north of the equator, which is less than a month's journey away, and another is at 17 degrees, which is a gap of more than two months. This is because after extreme precision, it has been proven that one degree of the Earth (Note 'A') is 365,155 feet, and a foot is 1/3 yard, and a mile is 1,760 yards. Thus, one terrestrial degree is 69.129 miles. Dividing the one-month path of 767.5 by this gives 11.097028, and all three cities are under the same meridian. Now, suppose in the mentioned scenario, the new moon is sighted at the equator; then sighting is not necessary in the further city, let alone the middle city, even though the distance is less than a month's journey. This is because at the equator, the sun will set quickly, leading to darkness sooner, which helps in sighting. There, the horizon is vertical, so the sun will move away from the horizon quickly after sunset, and the twilight glow that hinders sighting will diminish soon. Also, the moon's altitude will be higher, so it will remain above the horizon for a longer time, which also supports sighting. On the contrary, in a northern city, all matters are the opposite. And in the same scenario, suppose the moon is sighted in the further city; then sighting will definitely occur in the middle city and even more so at the equator, as the supporting factors for sighting are abundant there, even though the distance is more than two months' journey. Thus, it is known that in the north-south direction, sometimes a distance of less than one month brings a difference in sighting, and sometimes even a distance of more than two months does not bring a difference. Now, this discourse leads to the point that the distance between cities should not be considered authoritative, even though the texts of those who believe in the difference of horizons are explicit about it. Neither is the difference in latitude authoritative nor the difference in eastern longitude, but only the difference in western longitude is authoritative. That is, if someone's western longitude is a month's journey away from this city, i.e., 8 degrees 18 minutes, then the sighting there...

Note 'A': I say: And from more precise calculation, it is 364,609 feet because the Earth's equatorial semi-diameter is 3,963.296 miles and the polar semi-diameter is 3,949.792 miles. So, the mean semi-diameter is 3,956.543. Then from even more extreme precision, Diameter : Circumference :: 1 : 3.14159265. Logarithm of diameter 1.299790 and logarithm of mean 3.5973159, total 3.72729588. Since the ratio of halves is like the ratio of doubles, subtracting the logarithm of 180 (2.2552725) from

this, or rather adding it, results in 1.8391933, whose number is 69.052. These are the miles of one degree of circumference. And yards being 121,536, the feet are 364,609 approximately. Thus the same objective is proven, as is not hidden (as is obvious - T). Now the result of the division will be 8.4621258, which is 8 degrees 20 minutes 28 seconds 23 thirds 12 fourths. May Allah forgive him. (M)

उत्तर में 24 फ़रसख़ के साथ 192 का अंतर होना आवश्यक नहीं है। मान लें कि सूर्य उत्तर में है और चंद्रमा उस समय बिना झुकाव के स्थिर है, और एक शहर भूमध्य रेखा से 8 डिग्री उत्तर में है जो कि एक महीने के रास्ते से कम है, और दूसरा 17 डिग्री पर है जो कि दो महीने से अधिक का अंतर है। ऐसा इसलिए क्योंकि अत्यधिक सूक्ष्म जांच के बाद यह सिद्ध हुआ है कि पृथ्वी (नोट 'अ') का एक डिग्री 365,155 फीट है और एक फीट 1/3 गज है और एक मील 1,760 गज है, तो एक भू-डिग्री 69.129 मील हुई। एक महीने की राह 767.5 को इस पर विभाजित करने से 11.097028 प्राप्त होते हैं। और तीनों शहर एक ही मध्याह्न रेखा के नीचे हैं। अब मान लें कि उक्त स्थिति में भूमध्य रेखा पर नया चाँद दिखाई दिया, तो दूर के शहर में क्या, बीच वाले शहर में भी दर्शन अनिवार्य नहीं हैं, हालाँकि दूरी एक महीने के रास्ते से कम है। इसका कारण यह है कि भूमध्य रेखा पर सूर्य जल्दी अस्त होगा, जिससे अंधेरा जल्दी होकर दर्शन में सहायक होगा। वहाँ क्षितिज लंबवत है, इसलिए सूर्यास्त के बाद सूर्य क्षितिज से जल्दी दूर हो जाएगा और संध्या की लाली जो दर्शन में बाधक होती है, जल्दी कम हो जाएगी। साथ ही चंद्रमा की ऊंचाई अधिक होगी, इसलिए वह देर तक क्षितिज के ऊपर रहेगा, जो दर्शन का समर्थन करेगा। इसके विपरीत उत्तरी शहर में सभी बातें इसके उलट हैं। और इसी स्थिति में मान लें कि दूर के शहर में चाँद दिखा, तो बीच के शहर और भूमध्य रेखा पर तो और भी अधिक निश्चितता के साथ दिखेगा क्योंकि वहाँ दर्शन के सहायक कारक प्रचुर मात्रा में हैं, हालाँकि दूरी दो महीने के रास्ते से अधिक है। अतः यह ज्ञात हुआ कि उत्तर-दक्षिण दिशा में कभी एक महीने से भी कम की दूरी दर्शन में अंतर लाती है और कभी दो महीने से अधिक की दूरी भी अंतर नहीं लाती। अब यह चर्चा इस ओर ले जाएगी कि शहरों के बीच की दूरी मान्य नहीं होनी चाहिए, हालाँकि दर्शन के अंतर (इख़्तिलाफ़-ए-मताल) को मानने वालों के उद्धरण इस बारे में स्पष्ट हैं। न तो अक्षांश का अंतर मान्य है और न ही पूर्वी देशांतर का अंतर, बल्कि केवल पश्चिमी देशांतर का अंतर ही मान्य है। अर्थात जिसका पश्चिमी देशांतर इस शहर से एक महीने की राह यानी 8 डिग्री 18 मिनट हो, वहाँ के दर्शन...

नोट 'अ': मैं कहता हूँ: और अधिक सूक्ष्मता से यह 364,609 फीट है क्योंकि पृथ्वी का भूमध्यरेखीय अर्धव्यास 3,963.296 मील है और ध्रुवीय अर्धव्यास 3,949.792 मील है। तो औसत अर्धव्यास 3,956.543 हुआ। फिर और अधिक सूक्ष्मता से, व्यास : परिधि :: 1 : 3.14159265। व्यास का लघुगणक 1.299790 और औसत का लघुगणक 3.5973159, कुल 3.72729588। चूँकि आधे का

अनुपात दोगुने के अनुपात के समान होता है, तो 180 के लघुगणक 2.2552725 को इसमें से घटाने पर, या यूँ कहें कि जोड़ने पर, परिणाम 1.8391933 प्राप्त हुआ, जिसकी संख्या 69.052 है। ये परिधि के एक डिग्री के मील हुए। और गज 121,536 होने पर फीट 364,609 लगभग हुए। इस प्रकार वही उद्देश्य सिद्ध होता है जैसा कि गुप्त नहीं है (जैसा कि स्पष्ट है - त)। अब विभाजन का परिणाम 8.4621258 होगा, अर्थात 8 डिग्री 20 मिनट 28 सेकंड 23 थर्ड 12 फोर्थ। अल्लाह उसे क्षमा करे। (म)

पृष्ठ 593/836

شمال میں ۲۴ فرسخ در کنار ۱۹۲ کا فصل ہونا ضرور نہیں، فرض کیجئے آفتاب شمالی ہے اور قمر وقت استقلال عدیم المیل اور ایک شہر خط استواء سے ۸ درجہ شمال کو ہے کہ ایک مہینہ کی راہ سے کم، فاصلہ ہوا، اور دوسرا سترہ ۱۷ درجے کہ دو مہینے سے بھی زیادہ فصل ہوا، اس لئے کہ غایت تدقیق کے بعد ثابت ہوا ہے کہ زمین عہ کا ایک درجہ ۳۶۵۱۵۵ قدم ہے اور قدم ۱/۳ گز اور میل ۱۷۶۰ گز، تو ایک درجہ ارضیہ ۶۹.۱۲۹ میل ہوا، راہ ایک ماہ ۷۶۷.۵ کو اس پر تقسیم کرنے سے ۱۱.۰۹۷۰۲۸ ہوتے ہیں اور تینوں شہر ایک ہی نصف النہار کے نیچے ہیں۔ اب فرض کیجئے کہ صورت مذکورہ میں خط استواء میں رؤیت ہلال ہوئی تو شہر ابعد درکنار شہر وسطانی میں بھی رؤیت ضرور نہیں، حالانکہ ایک ماہہ راہ سے کم فاصلہ ہے، اس لئے کہ خط استواء میں ادھر تو آفتاب جلد ڈوبے گا تو اندھیرا جلد ہو کر رؤیت کا معین ہوگا، ادھر افق منتصب ہے تو آفتاب بعد غروب جلد افق سے دور ہو کر نور شفق کہ عائق رؤیت ہوتا جلد کم ہو جائے گا، ادھر قمر کا ارتفاع زائد ہے تو دیر تک بالائے افق رہے گا اور یہ بھی مؤید رؤیت ہو گا۔ بخلاف بلد شمالی کہ وہاں سب امور بالعکس ہیں، اور اسی صورت میں فرض کیجئے کہ شہر ابعد میں رؤیت ہوئی تو شہر وسطانی درکنار خط استواء میں بھی بدرجہ اولیٰ رؤیت ہو گی کہ مؤیدات رؤیت وہاں بافراط ہیں حالانکہ دو ماہہ راہ سے زیادہ کا فاصلہ ہے، تو معلوم ہوا کہ جنوباً شمالاً کبھی ایک مہینہ سے بھی کم کا فاصلہ اختلاف رؤیت لاتا ہے اور کبھی دو مہینے سے زیادہ کا بھی فاصلہ اختلاف نہیں لاتا۔ اب یہ تقریر اس طرف لے جائے گی کہ شہروں کا باہم بعد معتبر نہ ہو حالانکہ اختلاف مطالع ماننے والوں کی عبارات اس میں نص ہیں، نہ تفاوت عرض معتبر ہو نہ تفاوت طول شرقی بلکہ

صرف تفاوت طول غربی معتبر ہو، یعنی جس کا طول غربی اس شہر سے یک ماہہ راہ یعنی ۸ درجے ۱۸ دقیقے ہو وہاں کی رؤیت

عہ: اقول: اور تدقیق ادق سے ۳۶۴۶۰۹ قدم اس لئے کہ زمین کا نصف قطر استوائی ۳۹۶۳.۲۹۶ میل ہے اور نیم قطر قطبی ۳۹۴۹.۷۹۲ پس نیم قطر معدل ۳۹۵۶.۵۴۳ پھر کمال تدقیق ادق سے قطر : محیط : : ۱ : ۳.۱۴۱۵۹۲۶۵ لوغار قطر ۱.۲۹۹۷۹۰ ولوغار ثم معدل ۳.۵۹۷۳۱۵۹ مجموعہ ۳.۷۲۷۲۹۵۸۸ پھر نسبت انصاف مثل نسبت اضعاف ہے تو ۱۸۰ کے لوگار تھم ۲.۲۵۵۲۷۲۵ کو اس سے تفریق کیا بلکہ ۲.۲۵۵۲۷۲۵ سے جمع کیا حاصل ۱.۸۳۹۱۹۳۳ عدد وش ۶۹.۰۵۲ یہ ایک درجہ محیطیہ کے میل ہوئے اور گز ۱۲۱۵۳۶ تو قدم ۳۶۴۶۰۹ بالرفع یوں بھی وہی مطلب ثابت ہے کمالایخفی (جیسا کہ پوشیدہ نہیں۔ ت) اب حاصل قسمت ۸.۴۶۲۱۲۵۸ ہو گا یعنی ۸ درجے ۲۰ دقیقے ۲۸ ثانیے ۲۳ ثالثے ۱۲ منہ غفر اللہ تعالیٰ لہ (م)

Fatawa Razvia, Volume 10

...be considered reliable, but it will not hold because the difference in latitude also definitely causes a difference in sighting, some reasons for which have just been hinted at. Therefore, its dismissal from consideration is impossible; the difference in latitude will be to such an extent that in one city the crescent moon might be visible, while in another city at that same time, the moon would have already gone below the horizon. Sighting or non-sighting of the moon aside, in short, it doesn't work out this way either. The reality of the matter is that those who set limits have merely stated a limit superficially. If it comes down to scrutiny, they themselves would not be able to establish its boundaries until the Day of Judgment.

Thirdly, setting all this aside, our question now turns to what is meant by 'difference' in this context. Does it mean such a distance between two cities that when the moon is visible in one, sighting is always impossible in the other? Is this the difference in moon-sighting positions (ikhtilaf-e-matale) that they consider reliable? Or is it simply such a distance that while sighting is possible in one, it being not sighted in the other is possible? In short, looking at the distance between two cities, should there be an impossibility of sight in the second city, or a possibility of non-sight? Firstly, it is certainly false; there is no distance in the world such that just by the distance of space, without regard to the specific condition of the crescent moon, it makes sighting on the 29th impossible in the second location. Those who believe in a reliable difference have stated a maximum limit of a month's journey, and even they cannot deny that thousands of times the moon was of the 29th here, and also at a distance of months' journey away. Rather, when it is the 29th here, the further west you go in this latitude, the more it will surely be the 29th by a higher degree. Therefore, necessarily the second [option] is intended. And now, certainly, the path of defining limits is blocked. A month's journey is a lot; 24 farsakh (leagues) distance, upon which Taj Tabrizi claimed that difference is not possible in less than that, and Allama Shami, by way of having a good opinion, remarked that his claim must be based on astronomical rules.

I say: Astronomical rules do not support this impossibility at all; rather, they explicitly refute it. One degree of the earth is certainly less than 24 farsakh, as it is 69 miles (and it is better), but even with a western distance of one degree or less, a difference in sighting is possible. Regarding when the crescent moon is fit for sighting, although there is a great deal of disagreement in statements—I have ten opinions before me at this time, the reason for which is: "Had it been from other than Allah..." (t)—but

later astronomers, after long-term experience upon which they settled their opinion, state that the elongation between the luminaries (Sun and Moon) should be more than ten and a quarter degrees, and the 'rectified distance' (bu'd-e-mu'addal) should not be less than ten. It is stated in Zij-e-Sultani:

[Boxed Text] If the 'rectified distance' between ten and twelve degrees, and the elongation is more than ten and a quarter, the crescent moon can be seen, albeit thin. (1) | If the 'rectified distance' is between ten (10) and twelve degrees, and the elongation is more than ten and a quarter (10.25) degrees, the moon can be seen once. (t)

1. Zij-e-Sultani

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

...विश्वसनीय माना जाए, लेकिन यह बात भी नहीं बनेगी क्योंकि अक्षांश (latitude) का अंतर भी निश्चित रूप से दृष्टि-भेद (difference in sighting) लाता है, जिसके कुछ कारणों की ओर अभी संकेत किया जा चुका है। अतः इसे दृष्टि से ओझल करना असंभव है; अक्षांश के अंतर से यहाँ तक तो होगा कि एक शहर में हिलाल (नया चाँद) दिखाई दे रहा हो और दूसरे शहर में चाँद उस समय क्षितिज के नीचे जा चुका हो। हिलाल का दिखना या न दिखना तो दूर की बात रही, संक्षेप में इस तरह भी बात ठीक नहीं बैठती। और हकीकत यह है कि सीमा निर्धारित करने वालों ने केवल सतही तौर पर एक सीमा बता दी है। यदि जाँच-परख पर आएँ तो कयामत तक वे खुद इसकी सीमा निर्धारित नहीं कर सकेंगे।

तीसरे, इन सबसे हटकर अब हमारा वह सवाल उठता है कि इस अंतर (ikhtilaf) के संदर्भ में क्या अर्थ है? क्या दो शहरों के बीच ऐसा फासला कि जब चाँद एक में दिखाई दे, तो दूसरे में दिखना हमेशा असंभव हो? क्या यह वह 'इख्तिलाफ़-ए-मताले' (उदय स्थानों का अंतर) है जिसे वे विश्वसनीय मानते हैं? या केवल ऐसा फासला कि एक में दिखने के साथ दूसरे में न दिखना संभव हो, यह विश्वसनीय है? कुल मिलाकर, दो शहरों के बीच की दूरी को देखते हुए दूसरे शहर में दिखने की असंभावना होनी चाहिए या न दिखने की संभावना? पहला तो निश्चित रूप से गलत है; दुनिया में कोई ऐसा फासला नहीं है जो केवल दूरी की वजह से, हिलाल की विशेष स्थिति का ध्यान रखे बिना, दूसरी जगह २९ तारीख के चाँद को असंभव बना दे। विश्वसनीय अंतर मानने वालों ने अधिकतम एक महीने की राह बताई है, और वे भी इससे इंकार नहीं कर सकते कि हज़ारों बार यहाँ भी २९ का चाँद हुआ और यहाँ से महीनों की राह के फासले पर भी हुआ। बल्कि जब यहाँ २९ का हो, तो इस अक्षांश में पश्चिम की ओर जितना बढ़ेंगे, वह और भी अधिक स्पष्ट रूप से २९ का ही होगा। तो निश्चित रूप से दूसरा ही उद्देश्य है और अब निश्चित रूप से सीमा निर्धारण का मार्ग बंद है। एक महीने की राह तो बहुत है, २४ फरसाख का फासला जिस पर ताज तबरेज़ी ने दावा किया कि इससे कम में अंतर संभव नहीं, और अल्लामा शामी ने सद्भावना के आधार पर फरमाया कि उनका यह दावा खगोलीय नियमों (qawaid-e-falakiya) पर आधारित होगा।

मैं कहता हूँ: खगोलीय नियम इस असंभावना का बिल्कुल भी समर्थन नहीं करते बल्कि स्पष्ट रूप से इसे नकारते हैं। पृथ्वी का एक डिग्री निश्चित रूप से २४ फरसाख से कम है कि यह ६९ मील है (और वह बेहतर), लेकिन एक डिग्री बल्कि उससे भी कम पश्चिमी फासले पर भी दृष्टि-भेद संभव है। इस

बारे में कि हिलाल कब दिखने योग्य होता है, यद्यपि कथनों में बहुत अंतर है - इस समय मेरे सामने दस कथन हैं, जिसका कारण वही "अगर यह अल्लाह के सिवा किसी और की ओर से होता..." (त) है - लेकिन बाद के खगोलविदों ने दीर्घकालिक अनुभवों के बाद जिस पर अपनी राय स्थिर की, वह यह है कि दोनों प्रकाशकों (सूर्य और चंद्रमा) की दूरी सवा दस (१०.१५) डिग्री से अधिक हो और 'बुअद-ए-मुअद्दल' (संशोधित दूरी) १० से कम न हो। 'ज़ीज-ए-सुल्तानी' में है:

[Boxed Text] यदि 'बुअद-ए-मुअद्दल' दस और बारह डिग्री के बीच हो और 'बुअद सवा' दस से अधिक हो, तो हिलाल को बारीक देखा जा सकता है। (१) | यदि 'बुअद-ए-मुअद्दल' दस (१०) और बारह डिग्री के बीच हो और दूरी सवा दस (१०.१५) डिग्री से अधिक हो, तो चाँद एक बार देखा जा सकता है। (त)

1. ज़ीज-ए-सुल्तानी

पृष्ठ ५९४/८३६

معتبر ہو، مگر بنے گی یہ بھی نہیں کہ تفاوت عرض بھی قطعاً اختلاف رؤیت لاتا ہے جس کے بعض وجوہ کی طرف ابھی اشارہ ہو چکا تو اس کا نظر سے اسقاط ناممکن، تفاوت عرض سے یہاں تک تو ہوگا کہ ایک شہر میں ہلال مرئی ہو اور دوسرے شہر میں چاند اس وقت زیر زمین جاچکا ہو رؤیت و عدم رؤیت ہلال تو بالائے طاق رہی، غرض یوں بھی ٹھیک نہیں آتی، اور حقیقت امر یہ ہے کہ تحدید کرنے والوں نے محض سرسری طور پر ایک حد کہہ دی تنقیح پر آئیے تو قیامت تک وہ خود اس کی حد بست نہ کر سکیں گے۔

ثالثاً اس سب سے قطع نظر کیجئے تو اب ہمارا وہ سوال متوجہ ہے کہ اس اعتبار اختلاف سے کیا مراد، آیا دو شہروں کا ایسا فصل کہ چاند جب ایک میں مرئی ہو تو دوسرے میں رؤیت ہمیشہ ناممکن ہو، یہ وہ اختلافِ مطالع ہے جسے معتبر مانتے ہیں یا صرف ایسا فصل کہ ایک میں رؤیت ہونے کے ساتھ دوسرے میں رؤیت نہ ہونا ممکن ہو یہ معتبر ہے، بالجملہ بنظرِ فاصلہ بلدین دوسرے شہر میں عدمِ امکان چاہئے یا امکانِ عدم، اوّل تو یقیناً باطل ہے دنیا میں کوئی فاصلہ ایسا نہیں کہ ایک جگہ ۲۹ کی رؤیت کو صرف بفصلِ مسافت بے لحاظ خصوصِ حال ہلال دوسری جگہ محال کرتا ہو، اختلافِ معتبر ماننے والوں نے بڑی حد یک ماہہ راہ بتائی، اور انہیں بھی انکار نہیں ہو سکتا کہ ہزارہا بار یہاں بھی ۲۹ کا چاند ہوا اور یہاں سے مہینوں راہ کے فاصلے پر بھی ہوا بلکہ جب یہاں ۲۹ کا ہو تو اس عرض میں غرب کو جتنا بڑھیے بدرجہ اولٰی ۲۹ ہی کا ہو گا تو بالضرورۃ ثانی ہی مقصود اور اب بالیقین راہِ تحدید مسدود، مہینے بھر کی راہ تو بہت ہے، ۲۴ فرسخ کا فاصلہ جس پر تاج تبریزی نے ادعا کیا کہ اس سے کم میں اختلاف ممکن نہیں، اور علامہ شامی نے براہ تحسین ظن فرمایا کہ اُن کا یہ دعویٰ قواعدِ فلکیہ پر مبنی ہوگا۔

اقول: ہرگز قواعدِ فلکیہ اس عدمِ امکان کے ساتھ مساعد نہیں بلکہ صراحتہً اس کا رد کرتے ہیں، ایک درجہ زمین یقیناً ۲۴ فرسنگ سے کم ہے کہ یہ ۶۹ میل ہے اور وہ بہتر ، مگر ایک درجے بلکہ اس سے کم فصلِ غربی پر بھی اختلافِ رؤیت ممکن، دربارہ ہلال کہ کب صالح رؤیت ہوتا ہے اگرچہ اختلافِ اقوال بکثرت ہے، اس میں دس قول تو اس وقت میرے پیشِ نظر ہیں جن کی وجہ وہی ولوکان من عند غیر اللہ (اگر وہ غیر خدا کے پاس سے ہوتا) ہے مگر متاخرین اہل ہئیت نے بعد تطاولِ تجارب جس پر استقرارِ رائے کیا، وہ یہ ہے کہ نیرین میں بُعد، سوا دس ۱۰ درجے سے زائد ہو اور بُعدِ معدل ۱۰ سے کم نہ ہو۔ زیج سلطانی میں ہے:

[Boxed Text] اگر بُعدِ معدل میان دہ درجہ و دوازدہ درجہ باشد و بُعد سوا، از دہ بیش تر باشد ہلال بتواں دید باریک-۱ | بُعدِ معدل اگر دس ۱۰ اور بارہ درجہ کے درمیان ہو اور بُعد، سوا دس ۱۰ درجہ سے زائد ہو تو چاند ایک بار دیکھا جاسکتا ہے (ت)

۱ زیج سلطانی

صفحہ ۵۹۴ از ۸۳۶

Fatawa Razvia Volume 10

Allama Abdul Ali Barjandi states in his commentary: Until both conditions are met, the crescent will not be visible, and what is customary in this time is this 1. — As long as these two conditions are not met, the moon cannot be seen, and this is what is customary in this time (T). Now, suppose that here at sunset time, it was one and a quarter 'Mat'ah' (meaning one minute less than ten degrees), then the crescent moon was not visible. And since a one-degree mean motion occurs in 4 minutes, and during this period the moon's advance is about two minutes or sometimes even more, when the moon reached the sighting location one degree or even less distance from this city, it exceeded ten degrees, and sighting became possible. Similarly, it is possible to argue the case through moon's altitude and other differences. Thus, it is proven that a difference is possible even at less than 24 or even 23 'Farsakh' (leagues). Now, no way remains except that no fundamental limit be set; rather, either always look at the specific condition of the moon, its possibility and impossibility of evidence for every place every month, or say absolutely that the sighting of one city is fundamentally not valid for another, even if the distance is less than 24 'Farsakh'. The latter is rejected by consensus; even those who consider differences valid are never proponents of such generality and absoluteness. And there is no way towards the former, except through those long, detailed calculations of visual length, visual width, horizontal refraction, horizontal parallax, sunset adjustment, right ascension distance, etc., after which often nothing but doubt and conjecture remains. These are the very calculations which the Pure Shariah has completely discarded and invalidated regarding the crescent moon. So, by the grace of Allah Almighty, it has become clear, not just like a bright crescent but like a sun lifting its veil, that considering the difference of horizons (Ikhtilaf-e-Matale) as valid was itself against research, and that it was not supported by Hadith but was far and distant from the very consensus-based Hadith that must be followed. Furthermore, not just for Ramadan and Shawwal, but for any month, the Pure Shariah does not invite towards it at all. Our Imams' refined school of thought is of such high degree of precise investigation that even those who claim to be researchers cannot even catch a whiff of it. "Haza yanbaghi at-tahqiq wallahu ta'ala wali-ut-tawfiq" (This is how research should be, and Allah Almighty is the grantor of success. T). Did they not know that differences of horizons occur? Certainly, they knew, but they also knew that opening this door would lead towards that deficient calculation system which Mustafa (peace and blessings be upon him) had already rejected. Consequently, it

was clearly stated that the difference of horizons is fundamentally not valid. "Indeed, Allah has extended it for its sighting." 2 The Almighty has based everything on sighting; if sighting is proven through Sharia evidence, then no matter how much the distance is, it counts. And if not, then it doesn't, no matter how close it is. And from here it becomes clear...

1 Sharh Zij-e-Sultani by Abdul Ali Al-Barjandi 2 Sahih Muslim, Kitab al-Siyam, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/349 Page 595 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

अल्लामा अब्दुल अली बरजंदी शरह (टीका) में फ़रमाते हैं: जब तक दोनों शर्तें पूरी न हों, हिलाल (नया चाँद) दिखाई नहीं देगा, और इस ज़माने में यही प्रचलित है १। — जब तक ये दोनों शर्तें न पाई जाएँ चाँद नज़र नहीं आ सकता और इस ज़माने में यही मुआरिफ़ (प्रचलित) है (त)। अब मान लीजिए कि यहाँ सूर्यास्त के समय सवा १ 'मताह' (यानी दस अंश से एक मिनट कम) था, तो हिलाल देखने योग्य नहीं था। और चूंकि ४ मिनट में एक अंश की औसत गति होती है, और इस अवधि में चंद्रमा की बढ़त लगभग दो मिनट या कभी-कभी उससे भी अधिक होती है, तो जब चंद्रमा इस शहर से एक अंश या उससे भी कम दूरी पर देखने के स्थान पर पहुँचा, तो वह दस अंश से अधिक हो गया और चाँद दिख गया। इसी प्रकार चंद्रमा की ऊँचाई आदि के अंतर के माध्यम से भी तर्क देना संभव है। तो सिद्ध हुआ कि २४ बल्कि २३ फ़रसरख (कोश) से भी कम का अंतर संभव है। अब कोई रास्ता नहीं बचा सिवाय इसके कि कोई मौलिक सीमा न बांधी जाए; बल्कि या तो हमेशा हर जगह हर महीने के लिए हिलाल की विशेष स्थिति, उसके प्रमाण की संभावना और असंभवता पर गौर कीजिए, या फिर पूर्णतः कह दीजिए कि एक शहर का चाँद देखना दूसरे के लिए कतई मान्य नहीं है, चाहे दूरी २४ फ़रसरख से भी कम हो। दूसरा विकल्प सर्वसम्मति से खारिज है; मतभेद को मान्य मानने वाले भी ऐसी व्यापकता और निरपेक्षता के पक्षधर कभी नहीं रहे। और पहले विकल्प की ओर कोई रास्ता नहीं है, सिवाय उन लंबी और सूक्ष्म गणनाओं के जैसे कि दृश्य लंबाई, दृश्य चौड़ाई, क्षैतिज अपवर्तन, क्षैतिज पैरालैक्स, सूर्यास्त समायोजन, विषुवदंश दूरी आदि, जिनके बाद भी अक्सर संदेह और अनुमान के अलावा कुछ हाथ नहीं आता। ये वही गणनाएँ हैं जिन्हें शरीयत-ए-मुतहरा ने हिलाल के मामले में पूरी तरह से निरस्त और अमान्य कर दिया है। तो अल्लाह तआला के फ़ज़ल से यह बात न केवल चमकते चाँद की तरह बल्कि घूंघट हटाने वाले सूरज की तरह स्पष्ट हो गई कि मतला (क्षितिज) के अंतर को मान्य मानना ही शोध के विरुद्ध था, और यह कि उसे हदीस का समर्थन प्राप्त नहीं था बल्कि वह उसी सर्वसम्मत हदीस के आदेश से बहुत दूर था जिसका पालन करना अनिवार्य है। इसके अलावा, न केवल रमज़ान और शव्वाल, बल्कि किसी भी महीने में शरीयत-ए-मुतहरा इसकी ओर कतई आमंत्रित नहीं करती। और हमारे इमामों का परिष्कृत मज़हब शोध के उस उच्च स्तर पर है जिसकी हवा तक शोध का दावा करने वालों को नहीं लगती। "हकज़ा यनबग़ी अत-तहक़ीक़ वल्लाहु तआला वली-उत-तौफ़ीक़" (शोध इसी तरह होना चाहिए और सफलता देने वाला अल्लाह तआला ही है। त)। क्या उन्हें मालूम नहीं था कि मतला का अंतर होता है? यकीनन मालूम था, लेकिन साथ ही वे

यह भी जानते थे कि इसका दरवाज़ा खोलना उसी अधूरी गणना प्रणाली की ओर ले जाएगा जिसे मुस्तफ़ा (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पहले ही नकार चुके हैं। अंततः साफ़ फ़रमा दिया गया कि मतला का अंतर कतई मान्य नहीं है। "बेशक अल्लाह ने इसे इसके देखने के लिए बढ़ा दिया है।" २ अल्लाह तआला ने मदार (आधार) देखने पर रखा है; अगर देखना शरीयत के प्रमाण से सिद्ध है, चाहे कितनी ही दूरी क्यों न हो, तो वह मान्य है। और यदि नहीं, तो नहीं, चाहे वह कितना ही करीब क्यों न हो। और यहीं से ज़ाहिर होता है...

१ शरह ज़ीज-ए-सुलतानी ले-अब्दुल अली अल-बरजंदी २ सहीह मुस्लिम, किताब अल-सियाम, कदीमी कुतुब खाना कराची, १/३४९ पृष्ठ ५९५ ऑफ ८३६

علامہ عبدالعلی بر جندی شرح میں فرماتے ہیں: تاہر دو شرط وجود نگیر دہلال مرئی نہ شود و متعارف درین زمان این ست ۱۔ — جب تک یہ دونوں شرطیں نہ پائی جائیں چاند نظر نہیں آسکتا اور اس زمانہ میں یہی متعارف ہے (ت) اب فرض کیجئے کہ یہاں وقت غروب بعد سوا ۱ مطاحہ لفظا یعنی دس درجہ سے ایک دقیقہ کم تھا تو ہلال قابل رویت نہ تھا اور ایک درجہ حرکت وسطیٰ ۴دقیقہ میں ہے اور اس مدت میں سبق قمر تقریباً دو ۲ دقیقے بلکہ کبھی اس سے بھی زائد ہے تو جب قمر اس شہر سے ایک درجہ بلکہ کم فاصلے کے مقام رویت پر آیا بعد دس درجے سے زائد ہو گیا اور رویت ہو گئی، اسی طرح ارتفاع قمر وغیرہ اختلاف کے ذرائع سے بھی تقریر مدعا ممکن، تو ثابت ہوا کہ ۲۴ بلکہ ۲۳ فرسخ سے کم بھی اختلاف ممکن ہے ، اب کوئی راہ نہ رہی سوا اس کے کہ حد اصلانہ باندھی جائے بلکہ یا تو ہمیشہ ہر جگہ ہر ماہ کے لیے خصوص حال ہلال، حال و محال استدلال پر نظر کیجئے یا مطلقاً کہہ دیجیے کہ ایک شہر کی رویت دوسرے کے لیے اصلاً معتبر نہیں اگر چہ ۲۴ فرسخ سے بھی کم فاصلہ ہو ، ثانی تو بالاجماع مردود ہے اختلاف معتبر ماننے والے بھی ایسے عموم و اطلاق کے ہرگز قائل نہیں ، اور اوّل کی طرف راہ نہیں ، مگر انہیں حسابات دقیقہ طویلہ مرئی و عرض مرئی و انکسار افقی اختلاف منظر افقی و تعدیل الغروب و بُعد معدل وغیرہا کے ذرائع سے جن کے بعد بھی بہت اوقات سوء ظن و تخمین کے کچھ ہاتھ نہ آئے گا۔ یہ وہی محاسبات ہیں جن کو شریعت مطہرہ دربارہ ہلال یک لخت ساقط و باطل فرما چکی، تو بحمد اللہ تعالیٰ نہ ہلال روشن بلکہ آفتاب پردہ بر افگن کی طرح آشکار ہوا کہ اختلاف مطالع معتبر ماننا ہی خلاف تحقیق تھا اور یہ کہ وہ مؤید بحدیث نہیں بلکہ وہی حدیث مجمع علیہ کے ارشاد واجب الانقیاد سے دُور و سحیق تھا اور یہ کہ نہ صرف رمضان و شوال بلکہ کسی مہینے میں شرع

مطہر اُس کی طرف اصلاً دعوت نہیں فرماتی اور یہ کہ ہمارے ائمہ کا مذہب مہذب اس اعلیٰ درجہ تدقیق انیق پر ہوتا ہے کہ مدعیان تحقیق تک اس کی ہوا بھی نہیں آتی ھکذا ینبغی التحقیق واللہ تعالیٰ ولی التوفیق (تحقیق یوں ہی ہونی چاہئے اور توفیق کا مالک اللہ ہے۔ ت) کیا انہیں معلوم نہ تھا اختلاف مطالع ہوتا ہے، ضرور معلوم تھا، مگر ساتھ ہی یہ بھی جانتے تھے کہ اسکا فتح باب اسی حساب ناقص النصاب کی طرف کھینچ کر لے جائے گا، جسے مصطفیٰ صلی اللہ علیہ وسلم رَد فرما چکے ہیں، لاجرم صاف فرما دیا کہ اختلاف مطالع اصلاً معتبر نہیں ان اللہ امدہ لرویتہ ۲ حق تعالیٰ نے مدار رویت پر رکھا ہے، اگر رویت ثبوت شرعی سے ثابت ہے اگر چہ کتنا ہی فاصلہ ہو، اور نہیں تو نہیں اگر چہ کتنا ہی قریب ہو، اور یہیں سے ظاہر

۱ شرح زیج سلطانی لعبدالعلی البر جندی ۲ صحیح مسلم کتاب الصیام قدیمی کتب خانہ کراچی

It has been stated that comparing moon sighting with the prayer timings regarding the difference in horizons (Ikhtilaf-e-Matali) is a false analogy (Ma’al Faariq). The calculations for sunrise, sunset, dawn, twilight, first shadow, second shadow, and prominent heights are definite and governed by comprehensive rules. In contrast, for the calculations of moon sighting (Ruyat-e-Hilal), the ancient astronomers, finding it beyond their capacity, did not pay any attention to it at all. Later scholars, after a thousand struggles and disagreements, eventually wrote like Allama Al-Barjundi: "In summary, establishing a definite rule for it through research is difficult, rather impossible." From this, it becomes clear that considering the difference in horizons on a journey of just one month's distance according to the proven rules of astronomy —as occurred in the Fatawa of Maulvi Abdul Hai Sahib Lakhnawi, Vol. 1, 1st Ed., p. 309 —arose purely from a lack of deep reflection. Furthermore, our discourse makes it clear that defining the difference in horizons to mean that a sighting is possible in one city but not in another—as occurred on the same page of his work—is entirely false. Here, there is no disagreement regarding 'possibility and impossibility' (Imkan wa Imtina); rather, it is about 'occurrence and the possibility of non-occurrence', as we clarified previously. Maulvi Sahib himself, returning towards the truth at the end of the same fatwa on page 310, wrote the meaning of the difference in horizons as: "It is possible that the crescent is seen in one place and not in another." This statement is still ambiguous. He wrote more clearly in Vol. 2, p. 417: "If there is such a great distance between two cities that a difference in horizons occurs, it can happen that the crescent rises in one place and not on that day in the other." Regarding Maulvi Sahib's claim, based on Imam Zayla’i writing "ashbah" (more likely), that "this is the school of the Hanafi Hadith scholars," it is merely a claim. Imam Zayla’i is not the founder of the school, nor are the Hanafi Hadith scholars limited to them. Who among the Hadith scholars can be equal to Abu Hanifa, Abu Yusuf, and Muhammad (may Allah be pleased with them), whose school is that the difference in horizons is not taken into account? And if the quality of being a Hadith scholar is pure even among the later scholars, is Imam Ibn al-Humam, who reached the rank of Ijtihad, any less of a scholar? He has stated that acting upon 'Zahir al-Riwayah' (the prominent narrations) is more precautionary. As for the Hadith of Kuraib, where he saw the Ramadan crescent in Syria on a Friday night and then came to Medina and informed Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them both), who replied: "We saw it on Saturday night, so we will complete 30 days according to our own

count." Kuraib asked: "Will you not suffice with the sighting and order of Amir Muawiyah (may Allah be pleased with him)?" He replied: "No, this is how the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) commanded us."[1] Imam Zayla'i relied on this, and based on it, the aforementioned Maulvi Sahib stated it to be in accordance with the Hadith. I say: The mentioned Hadith is a specific incident (waqi'atu 'ayn), not a general rule (la 'umuma laha) (this is a special...

---

1 Jami' Tirmidhi, Chapters on Fasting, Amin Company, Kutub Khana Rashidiyah Delhi, p. 87.

यह स्पष्ट हो गया कि नमाज़ों के बारे में 'इख्तिलाफ-ए-मताली' (क्षितिज का अंतर) पर इसका कयास (तुलना) पूरी तरह से दोषपूर्ण (मअ़ अल-फ़ारिक़) है। सूर्योदय, सूर्यास्त, सुबह, शाम, साये (मिसल अव्वल व सानी) और ऊंचाइयों की गणनाएँ स्पष्ट और निर्धारित व्यापक नियमों पर आधारित हैं। इसके विपरीत, चांद देखने (रुयत-ए-हिलाल) की गणना के मामले में, प्राचीन खगोलविदों ने इसे अपनी क्षमता से बाहर पाकर इसकी ओर ध्यान ही नहीं दिया। और बाद के विद्वानों ने हज़ारों उलझनों और मतभेदों के बाद अंततः अल्लामा बरजंदी की तरह लिख दिया कि, संक्षेप में, शोध के माध्यम से इसका एक निश्चित नियम बनाना अत्यंत कठिन, बल्कि असंभव है। और यहीं से यह स्पष्ट हो गया कि मात्र एक महीने की यात्रा की दूरी पर खगोल विज्ञान के प्रमाणित नियमों के अनुसार 'इख्तिलाफ-ए-मताली' को मानना—जैसा कि मौलवी अब्दुल हई साहब लखनवी के फ़तावा, खंड 1, प्रथम संस्करण, पृष्ठ 309 पर हुआ—पूरी तरह से गहन विचार की कमी के कारण था। साथ ही, हमारे विवेचन से यह भी स्पष्ट हुआ कि 'इख्तिलाफ-ए-मताली' का यह अर्थ निकालना कि एक शहर में चाँद दिख सकता है और दूसरे में नहीं—जैसा कि उन्हीं के उसी पृष्ठ पर हुआ—पूर्णतः असत्य है। यहाँ 'संभव और असंभव' (इमकान व इम्तिना) का मतभेद बिल्कुल नहीं है, बल्कि 'होने और न होने की संभावना' का है, जैसा कि हमने पहले स्पष्ट किया है। स्वयं उक्त मौलवी साहब ने उसी फ़तवे के अंत में पृष्ठ 310 पर सत्य की ओर लौटते हुए 'इख्तिलाफ-ए-मताली' का अर्थ इस प्रकार लिखा: "यह संभव है कि एक स्थान पर चाँद देखा जाए और दूसरे स्थान पर नहीं।" यह कथन अभी भी अस्पष्टता रखता है। खंड 2, पृष्ठ 417 पर उन्होंने अधिक स्पष्ट रूप से लिखा: "यदि दो शहरों के बीच इतनी दूरी है कि क्षितिज में अंतर आता है, तो ऐसा हो सकता है कि एक स्थान पर चाँद का उदय हो और दूसरे स्थान पर उस दिन न हो।" और इमाम जैलई द्वारा "अशबह" (अधिक समानता वाला) लिख देने पर उक्त मौलवी साहब का यह कहना कि "यही हनफ़ी मुहद्दिसों (हदीस विद्वानों) का मत है," मात्र एक दावा है। जैलई साहब संप्रदाय के संस्थापक नहीं हैं और न ही हनफ़ी मुहद्दिस उनमें सिमटे हुए हैं। अबू हनीफ़ा, अबू यूसुफ़ और मुहम्मद (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) के समान कौन से मुहद्दिस होंगे जिनका मत 'इख्तिलाफ-ए-मताली' को स्वीकार न करना है? और यदि मुहद्दिस होना परवर्ती विद्वानों में ही शुद्ध माना जाए, तो इज्तिहाद के पद पर आसीन इमाम इब्न अल-हुमाम क्या कम मुहद्दिस हैं, जो कह चुके हैं कि 'ज़ाहिर अल-रिवायत' पर अमल करना ही अधिक सुरक्षित है। रही कुरैब की हदीस कि उन्होंने शाम देश में रमज़ान का चाँद जुमे की रात को देखा, फिर मदीना मुनव्वरा आकर अब्दुल्लाह बिन

अब्बास (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) को बताया, तो उन्होंने कहा: "हमने सनीचर की रात को देखा, इसलिए हम अपनी गणना के अनुसार 30 दिन पूरे करेंगे।" कुरैब ने पूछा: "क्या आप अमीर मुआविया (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के देखने और आदेश पर संतोष नहीं करेंगे?" उन्होंने उत्तर दिया: "नहीं, अल्लाह के रसूल (उन पर अल्लाह की शांति और कृपा हो) ने हमें ऐसा ही आदेश दिया है।"[1] जिससे इमाम जैलई ने प्रमाण लिया और इसके आधार पर उक्त मौलवी साहब ने इसे हदीस के अनुकूल बताया। मैं कहता हूँ: उक्त हदीस एक विशिष्ट घटना (वाकि'अ़तु ऐन) है, कोई सामान्य नियम (ला उमूम लहा) नहीं (यह एक विशेष...

---

1 जामिअ़ तिर्मिज़ी, रोज़ों के अध्याय, अमीन कंपनी, कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली, पृष्ठ 87।

ہوا کہ درباره صلوات اختلافِ مطالع پر اس کا قیاس محض مع الفارق ہے حسابِ طلوع و غروب و صبح و شفق و مثل اول و ثانی واضحاک جلیلہ ومنضبطات کلیہ ہیں۔ بخلاف حساباتِ رویتِ ہلال کہ قدماء اہلِ ہیئت نے اپنے بوتے کا روگ نہ پا کر سرے سے اس کی طرف التفات ہی نہ کیا اور متاخرین نے ہزار اضطراب واختلاف کے بعد آخر علامہ بر جندی کی طرح لکھ دیا کہ، بالجملہ ضبط آں بر سبیلِ تحقیق متعسر ست بلکہ متعذر (رؤیتِ ہلال کا تحقیقی ضابطہ انتہائی مشکل اور متعذر ہے۔ت) اور یہیں سے ظاہر ہوا کہ یک ماہبہ راہ پر اختلافِ مطالع کو بحسب قواعد مبرہنہ علمِ ہیئت ماننا جیسا کہ مولوی عبدالحئی صاحب لکھنوی سے اپنے فتاوی جلد اول طبع اول ص ۳۰۹ پر واقع ہوا، محض قلتِ تدبر سے ناشی تھا، نیز ہماری تقریر سے ظاہر ہوا کہ اختلافِ مطالع کے یہ معنی قرار دینا کہ ایک شہر میں رؤیت ہو سکتی ہے دوسرے میں نہیں جیسا کہ انہیں سے اسی صفحہ پر واقع ہوا، محض باطل ہے یہاں ہرگز امکان وامتناع کا اختلاف نہیں بلکہ وقوع و امکانِ عدم کا، کما اوضحنا سابقاً (جیسا کہ سابقہ گفتگو میں ہم نے اسے واضح کردیا ہے۔ت) خود مولوی صاحب مذکور نے اسی فتوے کے آخر میں صفحہ ۳۱۰ پر حق کی طرف رجوع کرکے اختلافِ مطالع کے معنی یوں لکھے : "یہ ممکن ہے کہ ایک جگہ ہلال دیکھا جائے اور دوسری جگہ نہیں۔" یہ عبارت پھر بھی متحمل ہے، جلد دوم ص ۴۱۷ پر صاف تر لکھا: "اگر دو شہروں میں اس قدر بعدِ مسافت ہے کہ اختلافِ مطالع ہوتا ہے اور یہ ہو سکتا ہے کہ ایک جگہ طلوعِ ہلال ہواور دوسری جگہ اس روز نہ ہو۔" اور ایک امام زیلعی کے "اشبہ" لکھ دینے پر مولوی صاحب مذکور کا فرمانا کہ "یہی مذہبِ محدثینِ حنفیہ کا ہے" محض دعوی ہے، زیلعی صاحبِ مذہب نہیں نہ محدثینِ حنفیہ ان میں منحصر، ابو حنیفہ و ابو یوسف و محمد رضی اللہ تعالی عنہم کے برابر کون

سے محدثین ہوں گے جن کا مذہب عدمِ اعتبارِ اختلافِ مطالع ہے، اور محدثی اگر محدثین و متاخرین ہی سے خالص ہے تو بالغ مرتبہ اجتہاد امام ابن الہمام کیا کم محدث ہیں، جو فرماچکے کہ، ظاہر الروایۃ ہی پر عمل احوط ہے۔ رہی حدیثِ کریب کہ انہوں نے ملکِ شام میں رمضان مبارک کا چاند شبِ جمعہ کو دیکھا پھر مدینہ طیبہ میں عبد اللہ بن عباس رضی اللہ تعالی عنہما سے آکر بیان کیا انہوں نے فرمایا ہم نے شبِ شنبہ میں دیکھا تو ہم اپنے ہی حساب سے ۳۰ پورے کریں گے، کریب نے کہا کیا آپ امیر معاویہ رضی اللہ تعالی عنہ کی رؤیت و حکم پر اکتفا نہ کریں گے فرمایا: لا، ھکذا امرنا رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم 1 (نہیں، رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے ہمیں یہی حکم دیا۔ت) جس سے امام زیلعی نے استناد کیا اور اس کی بنا پر مولوی صاحب مذکور نے اسے موافقِ حدیث بتایا۔ اقول: حدیثِ مذکور واقعۃُ عین لا عموم لھا (یہ ایک خاص

---

1 جامع ترمذی ابواب الصیام امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ص ۸۷

Vol. 10 Fatawa Razawiyya

It is an incident; its ruling is not general. (t) On a clear horizon, many Imams do not accept the testimony of a single person. It is possible that Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both) did not accept it for this very reason, and the order of Amir Muawiya (may Allah be pleased with him) could not be proven without the required quorum of witnesses anyway. It is stated in Tanwir:

Witnesses said that they had testified before the city judge in such a manner... etc. (t)	**They testified that they testified before the judge of Egypt as follows... etc.**

In Radd al-Muhtar, it is stated:

The word "shahadu" (they testified) here applies the plural to more than one person; in some copies, it appears as "shahada" with a dual pronoun, and this is better. (t)	**His saying 'they testified' is an application of the plural to more than one, and in some manuscripts, it is 'witnessed' with the dual pronoun, which is preferable.[2]**

In Durr al-Mukhtar, it is stated:

It will become obligatory for the people of the East to fast based on the sighting of the people of the West when their sighting is proven through a binding Shariah method as mentioned before. (t)	**The people of the East are bound by the sighting of the people of the West if the sighting of the latter is proven to them through a binding legal method as previously mentioned.[3]**

In Radd al-Muhtar, it is stated:

Two people should give testimony upon testimony, or testify to a complete ruling, or the news should become famous. (t)	**Either two people bear witness to a testimony, or they testify to the judge's ruling, or the news becomes widespread.[4]**

Therefore, Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both) said no. At first glance, this answer came to the mind of this humble person (the author), then I saw that Imam Muhaqqiq ala al-Itlaq gave a reply in Fath al-Qadir and also hinted at some parts of it, saying:

It can be said that in the statement of Hazrat Ibn Abbas...

It may be said that the indication in his saying...

[1] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/149 [2] Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/102 [3] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Sawm, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/149 [4] Radd al-Muhtar, Matlab fi Ikhtilaf al-Matali', Mustafa al-Babi, Egypt, 2/105

जिल्द दसवीं फ़तावा रज़वियह

यह एक वाकया है; इसका हुक्म आम नहीं है। (त) साफ़ आसमान होने की सूरत में बहुत से इमाम एक शख़्स की गवाही नहीं मानते। मुमकिन है कि इब्ने अब्बास (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) ने इसी बिना पर न मानी हो, और अमीर मुआविया (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) का हुक्म तो गवाही की तयशुदा तादाद के बग़ैर साबित हो ही नहीं सकता था, तनवीर में है:

गवाहों ने कहा कि उन्होंने शहर के काज़ी के पास इस तरह गवाही दी है इल्ख़ (त)

उन्होंने गवाही दी कि उन्होंने मिस्र के काज़ी के पास इस तरह गवाही दी... इल्ख़[1]

रद्दुल मुहतार में है:

यहाँ 'शहदू' लफ़्ज़ जमा का इतलाक़ एक से ज़्यादा पर है, कुछ नुस्ख़ों में तस्निया की ज़मीर के साथ 'शहदा' है और यही ज़्यादा बेहतर है। (त)

उनका क़ौल 'शहदू' (उन्होंने गवाही दी) एक से ज़्यादा पर जमा (बहुवचन) का इतलाक़ है, और कुछ नुस्ख़ों में तस्निया (द्विवचन) की ज़मीर के साथ 'शहदा' है और यही बेहतर है।[2]

दुर्रे मुख्तार में है:

अहले मशरिक़ (पूर्व के लोगों) पर अहले मग़रिब (पश्चिम के लोगों) की रूयत (चाँद देखना) पर रोज़ा रखना तब लाज़िम आएगा जब उनकी रूयत शरीअत के मुअज्ज़ब तरीक़े से साबित हो जाए जैसा कि पहले ज़िक्र हो चुका है। (त)

अहले मशरिक़ पर अहले मग़रिब की रूयत की बिना पर रोज़ा लाज़िम होगा जब उनके पास उनकी रूयत शरीअत के मुताबिक़ साबित हो जाए जैसा कि गुज़रा है।[3]

रद्दुल मुहतार में है:

दो आदमी गवाही पर गवाही दें या मुकम्मल हुक्म पर गवाही दें या ख़बर मशहूर हो जाए। (त)

या तो दो आदमी गवाही पर गवाही दें या काज़ी के मुकम्मल हुक्म पर गवाही दें या ख़बर मशहूर हो जाए।[4]

लिहाज़ा हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा) ने 'नहीं' फ़रमाया। पहली नज़र में यही जवाब इस फ़क़ीर (लेखक) के ख़याल में आया था, फिर देखा कि इमाम मुहक़्क़िक़ अलल इतलाक़ ने फ़तह अल-क़दीर में जवाब दिया और इसके कुछ हिस्सों की तरफ इशारा भी किया, फ़रमाते हैं:

यूँ कहा जा सकता है कि हज़रत इब्ने अब्बास के इर्शाद में...

कहा जा सकता है कि उनके क़ौल में इशारा...

[1] दुर्रे मुख्तार, किताबुस सौम, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/149 [2] रद्दुल मुहतार, किताबुस सौम, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/102 [3] दुर्रे मुख्तार, किताबुस सौम, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/149 [4] रद्दुल मुहतार, मतलब फ़ी इख़्तिलाफ़ अल-मताली, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 2/105

पेज 597/836

جلد دہم فتاوی رضویہ

واقعہ ہے اس کا حکم عمومی نہیں۔ ت بجال صفائے مطلع بکثرت ائمہ ایک کی گواہی نہیں مانتے ممکن کہ ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما نے اسی بنا پر نہ مانی ہو، اور امیر معاویہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا حکم تو بے نصاب شہادت ثابت ہو ہی نہ سکتا تھا، تنویر میں ہے:

گواہوں نے کہا کہ انہوں نے قاضی شہر کے پاس اس طرح شھدوا انہ شھد عند قاضی مصر کذا الخ[1] **گواہی دی ہے الخ (ت)**

ردالمحتار میں ہے:

قولہ "شھدوا" یہاں جمع کا اطلاق ایک سے زائد پر ہے، بعض نسخوں میں ضمیر تثنیہ کے ساتھ شہدا ہے اور یہی اولیٰ ہے۔ (ت) **قولہ شھدوا من اطلاق الجمع علی مافوق الواحد وفی بعض النسخ شہدا بضمیر التثنیۃ وھو اولیٰ[2]۔**

درمختار میں ہے:

اہل مشرق پر اہل مغرب کی رؤیت روزہ رکھنا لازم تب آئے گا جب ان کی رؤیت بطریقِ موجب شرعی ثابت ہو گی جیسا کہ گزرا ہے (ت) **یلزم اھل المشرق برؤیۃ اھل المغرب اذا ثبت عندھم رؤیۃ اولئك بطریق موجب کما مرّ[3]۔**

ردالمحتار میں ہے:

دو آدمی شہادت پر شہادت دیں یا حکم تام پر شہادت دیں یا خبر مشہور ہو۔ (ت) **کان یتحمل اثنان الشھادۃ او یشھدا علی حکم القاضی او یستفیض الخبر[4]۔**

لہٰذا حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما نے لا فرمایا: بنگاہِ اولیں یہ جواب فقیر کے خیال میں آیا تھا، پھر دیکھا امام محقق علی الاطلاق نے فتح القدیر میں اور جواب دیا اور اس کے بعض کی طرف بھی اشارہ کیا، فرماتے ہیں:

یوں کہا جا سکتا ہے کہ حضرت ابن عباس کے ارشاد قد یقال ان الاشارۃ فی قولہ

[1] درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱۴۹/۱ [2] ردالمحتار کتاب الصوم مصطفی البابی مصر ۱۰۲/۲ [3] درمختار کتاب الصوم مطبع مجتبائی دہلی ۱۴۹/۱ [4] ردالمحتار مطلب فی اختلاف المطالع مصطفی البابی مصر ۱۰۵/۲

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Box 1] Column 1 (Arabic): "Thus, regarding what transpired between him and Umm al-Fadl, there is no proof in it at that time. Because if something similar to his words came before us, we would not base a ruling on it, as he did not testify to the testimony of another, nor to the judge's verdict. If it is said that his report about Muawiyah's fasting includes it because he was the Imam, the answer is that he did not use the word 'testimony.' Even if accepted, he is a single witness, and a judge's ruling is not established by the testimony of a single person. Allah, glorified and exalted be He, knows best. Adhering to the apparent narration is safer. [End]"

"I say: But in the Hadith it says, 'Did you see it?' I said, 'Yes.' Reporting in Ramadan is sufficient. So what the humble one mentioned is better."

Column 2 (Urdu Translation): "In 'Thus' there is an indication of what transpired between him and Hazrat Umm Fadl, so now this is not a proof because if a matter similar to his words were to come before us, we would not decide based on it. This is because the one making such a statement has neither given testimony upon another's testimony nor upon a ruler's decision. If someone raises a question that the report of Hazrat Muawiyah's fasting implies this testimony because he was the leader (Amir), the answer will be that the word 'testimony' is not mentioned here. And even if this point is conceded, he is alone, so a judge's decision for performance (qada) would not be mandatory based on his testimony. Allah Almighty, the Great and Most High, knows best, and acting upon the apparent narration is more cautious. [End]"

"I say: It is in the Hadith, 'Have you seen it?' I said 'Yes', and for Ramadan, this information alone is sufficient. Therefore, what this humble servant has mentioned is superior. (T)"

[Paragraph]: "With this, the aforementioned Mawlawi Sahib would have had a basis for reliance on the Hadith only if a distance of one month's journey between Damascus and Medina Tayyiba was proven; otherwise, the Hadith itself would be against him, as is not hidden (as it is not hidden. T). Here, one thing is also noteworthy: the aforementioned Mawlawi Sahib has cited the text of Tatar Khaniyya in three places in his Fatawa:"

[Box 2] Column 1 (Arabic): "If the people of a city see the crescent moon, does that become obligatory for every other city? The scholars have differed over this. Some of

them said it is not obligatory; rather, what is considered for the people of a city is their own sighting. In Al-Khaniyya, it is stated that according to the apparent narration, the difference in moon-sighting horizons is not taken into account. And in Al-Quduri..."

Column 2 (Urdu Translation): "When the people of one city see the moon, will fasting be mandatory for the people of every city? There is a difference of opinion among the scholars on this. Some have said that fasting is not mandatory because of it; for the people of every city, their own sighting is considered. It is in Khaniyya that, according to the apparent narration, the difference in moon-sighting horizons is not considered. And Quduri..."

[Footnotes]: 1. Fath al-Qadir, Kitab al-Sawm, Nooriya Razawiyya, Sukkur, 2/243. 2. Fath al-Qadir, Kitab al-Sawm, Nooriya Razawiyya, Sukkur, 2/243.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दस

[बॉक्स १] कॉलम १ (अरबी): "इसी प्रकार, जो उनके और उम्मे फ़ज़ल के बीच हुआ, उसमें उस समय कोई प्रमाण नहीं है। क्योंकि अगर उनकी बातों जैसा मामला हमारे सामने आए, तो हम उस पर फ़ैसला नहीं करेंगे, क्योंकि उन्होंने न तो किसी की गवाही पर गवाही दी और न ही हाकिम के फ़ैसले पर। यदि कहा जाए कि हज़रत मुआविया के रोज़े की उनकी खबर इसमें शामिल है क्योंकि वे इमाम थे, तो उत्तर दिया जाएगा कि उन्होंने 'गवाही' शब्द का प्रयोग नहीं किया। और यदि इसे मान भी लिया जाए, तो वे अकेले हैं, और एक व्यक्ति की गवाही से काज़ी पर फ़ैसला वाजिब नहीं होता। अल्लाह सुब्हानहू व तआला सबसे बेहतर जानता है। ज़ाहिर-ए-रिवायत पर अमल करना अधिक सुरक्षित है। (इति)"

"मैं कहता हूँ: लेकिन हदीस में है, 'क्या तुमने उसे देखा?' मैंने कहा, 'हाँ।' और रमज़ान में सूचना देना ही पर्याप्त है। अतः इस तुच्छ सेवक ने जो ज़िक्र किया वह बेहतर है।"

कॉलम २ (उर्दू अनुवाद): " 'हकज़ा' (इसी प्रकार) में उस बात की ओर संकेत है जो उनके और हज़रत उम्मे फ़ज़ल के बीच हुई थी, तो अब यह कोई दलील नहीं है क्योंकि अगर उनके कलाम जैसा मामला हमारे सामने आ जाए तो हम उस पर फ़ैसला नहीं करेंगे, क्योंकि ऐसा बयान करने वाले ने न तो किसी की गवाही पर गवाही दी है और न ही किसी हाकिम के फ़ैसले पर। अगर कोई सवाल उठाए कि हज़रत मुआविया के रोज़े की सूचना इस गवाही में निहित है क्योंकि वे अमीर थे, तो इसका जवाब यह दिया जाएगा कि यहाँ 'गवाही' शब्द का ज़िक्र नहीं है। और अगर इस बात को मान भी लिया जाए, तो वे अकेले हैं, तो उनकी गवाही से काज़ी पर क़ज़ा का फ़ैसला लाज़िम नहीं होगा। अल्लाह तआला महान और सर्वोच्च बेहतर जानता है और ज़ाहिर-उर-रिवायत पर अमल करना अधिक एहतियात वाला है। (इति)"

"मैं कहता हूँ: हदीस में है, 'तूने उसे देखा है?' मैंने कहा, 'हाँ', और रमज़ान के लिए यह सूचना ही काफ़ी है। तो इस तुच्छ सेवक ने जो ज़िक्र किया वह बेहतर है। (त)"

[पैराग्राफ़]: "इसके साथ, पूर्वोक्त मौलवी साहब को हदीस से आधार तब मिलता जब दमिश्क और मदीना तैयबा के बीच एक महीने की यात्रा की दूरी सिद्ध की जाती, अन्यथा हदीस स्वयं उनके भी विरुद्ध होगी जैसा कि छिपा नहीं है (जैसा कि छिपा नहीं है। त)। यहाँ एक बात यह भी ध्यान देने योग्य है कि पूर्वोक्त मौलवी साहब ने अपने फ़तावा में तीन जगह तातार ख़ानिया की इबारत उद्धृत की है:"

[बॉक्स २] कॉलम १ (अरबी): "जब एक शहर के लोग नया चाँद देख लेते हैं, तो क्या वह हर दूसरे शहर के हक़ में लाज़िम हो जाता है? उलेमाओं में इस पर मतभेद है। उनमें से कुछ ने कहा कि यह लाज़िम नहीं है; बल्कि हर शहर के लोगों के लिए उनकी अपनी दृष्टि ही मान्य है। ख़ानिया में है कि ज़ाहिर-ए-रिवायत के अनुसार उदय-स्थलों (मताल-ए) के अंतर का कोई महत्व नहीं है। और क़ुदूरी में..."

कॉलम २ (उर्दू अनुवाद): "जब एक शहर वालों ने चाँद देखा तो क्या हर शहर वालों पर रोज़ा लाज़िम होगा? इसमें उलेमाओं का मतभेद है, कुछ ने कहा है इससे रोज़ा लाज़िम नहीं, हर शहर वालों के हक़ में उनकी अपनी दृष्टि (रूयत) ही मान्य है। ख़ानिया में है कि ज़ाहिर-उर-रिवायत के मुताबिक़ मताल-ए के अंतर का कोई एतबार नहीं, और क़ुदूरी..."

[पाद-टिप्पणी]: १. फ़तह-उल-क़दीर, किताब-उस-सौम, नूरिया रज़विया, सुक्कुर, २/२४३। २. फ़तह-उल-क़दीर, किताब-उस-सौम, नूरिया रज़विया, सुक्कुर, २/२४३।

पृष्ठ ५९८/८३६

فتاوی رضویہ جلد دہم

[جدول ۱] کالم ۱ (عربی): ھکذا الی نحو ما جری بینہ وبین ام الفضل و حینئذ لا دلیل فیہ لان مثل ما وقع من کلامہ لو وقع لنا لم نحکم بہ لانہ لم یشھد علی شھادۃ غیرہ ولا علی حکم الحاکم، فان قیل اخبارہ عن صوم معاویۃ یتضمنہ لانہ الامام یجاب بأنہ لم یأت بلفظ الشھادۃ ولو سلم فھو واحد لا یثبت بشھادتہ وجوب القضاء علی القاضی واللہ سبحانہ و تعالی اعلم و الاخذ بظاھر الروایۃ احوط اھ

اقول: لکن في الحدیث قال انت رایتہ قلت نعم و الاخبار في رمضان کاف فما ذکر الفقیر اولـ

کالم ۲ (اردو ترجمہ): ھکذا میں اس بات کی طرف اشارہ ہے جو ان کے اور حضرت ام فضل کے درمیان جاری ہوئی تو اب یہ دلیل نہیں کیونکہ ان کے کلام کی طرح ہمارے سامنے معاملہ آ جائے تو ہم اس پر فیصلہ نہیں کریں گے کیونکہ ایسا بیان کرنے والے نے نہ تو کسی کی شہادت پر گواہی دی ہے اور نہ کسی حاکم کے فیصلہ پر، اگر کوئی سوال اٹھائے کہ حضرت معاویہ کے روزہ کی اطلاع اس گواہی کو متضمن ہے کیونکہ وہ امیر تھے، اس کا جواب یہ دیا جائے گا کہ یہاں لفظ شہادت کا ذکر نہیں، اور اگر اس بات کو تسلیم کر بھی لیا جائے تو وہ تنہا ہیں، تو ان کی شہادت سے قاضی پر قضا کا فیصلہ لازم نہ ہو گا اللہ تعالی بزرگ و برتر بہتر جانتا ہے اور ظاہر الروایتہ پر عمل احوط ہے اھ

اقول: حدیث میں ہے تو نے اسے دیکھا ہے، میں نے کہا ہاں، اور رمضان کے لیے یہ اطلاع ہی کافی ہے، تو بندہ حقیر نے جو ذکر کیا وہ اولیٰ ہے (ت)

[عبارت]: معہذا مولوی صاحب مذکور کو حدیث سے استناد اس وقت پہنچتا کہ دمشق ومدینہ طیبہ میں ایک ماہ بہ راہ کا فصل ثابت کیا جاتا ورنہ حدیث خود ان کے بھی مخالف ہوگی کما لا یخفی

(جیسا کہ مخفی نہیں ہے۔ ت) یہاں ایک امر یہ بھی قابل تنبیہ ہے کہ مولوی صاحب مذکور نے اپنے فتاوی میں تین جگہ عبارت تاتار خانیہ:

[جدول ۲] کالم ۱ (عربی): اهل بلدة اذا رأوا الهلال هل يلزمه ذلك في حق كل بلدة اخرى اختلف المشائخ فيه، فبعضهم قالو الا يلزم ذلك فانما المعتبر في حق اهل بلدة رؤيتهم وفى الخانية لا عبرة لاختلاف المطالع في ظاهر الرواية وفي القدورى

کالم ۲ (اردو ترجمہ): جب ایک شہر والوں نے چاند دیکھا تو کیا ہر شہر والوں پر روزہ لازم ہو گا ؟ اس میں مشائخ کا اختلاف ہے، بعض نے کہا ہے اس سے روزہ لازم نہیں، ہر شہر والوں کے حق میں ان کی اپنی رؤیت ہی معتبر ہے۔ خانیہ میں ہے ظاہر الروایت کے مطابق اختلافِ مطالع کا اعتبار نہیں، اور قدوری

[حواشی]: ۱ فتح القدير كتاب الصوم نوريہ رضويہ سكهر ۲۴۳/۲ ۲ فتح القدير كتاب الصوم نوريہ رضويہ سكهر ۲۴۳/۲

If there is a difference between two cities such that the horizons (sightings) do not differ, it becomes obligatory. Shams al-A'immah al-Halwani mentioned that this is the correct view in the school of our companions.

It states that when the difference between two cities is such that the horizons do not differ, it becomes binding. Shams al-A'immah al-Halwani stated that this is the correct position in our school of thought. (T)

He cited it and apparently thought that Imam Shams al-A'immah's correction refers to considering the difference [in horizons], whereas he is saying "the school of our companions" and it is clear that the school of our companions is nothing but Zahir al-Riwayah as we have already quoted previously (as we mentioned earlier. T). And Zahir al-Riwayah is nothing but not considering the difference [in horizons] as Maulvi Sahab himself admitted, writing on page 162, Vol 2:

According to most Hanafi scholars, in accordance with Zahir al-Riwayah, there is absolutely no consideration given to the difference in horizons.

In accordance with Zahir al-Riwayah, most Hanafi scholars do not consider the difference in horizons at all. (T)

On page 417, Vol 2, it is said: When it is proven in any city that the moon was sighted in such-and-such city, they shall be ruled accordingly, even if there is a great distance between the two cities, and this is Zahir al-Riwayah.

No doubt, then in Ghunyat Dhuwi al-Ahkam it is said: Imam al-Halwani said the correct view in the school of our companions is that when news becomes widespread and verified in another city, the ruling of that city becomes binding upon them.

Imam Halwani said the correct school of our companions is that when news is famous and verified in another city, then the ruling of the first city's people becomes binding on the people of the second city. (T)

In Maslak-e-Munqasit Sharh-e-Mansik-e-Mutawassit it is said:

If it is proven in one city, it becomes binding on all other people according to Zahir al-Riwayah, and upon this are most of the scholars.

When proof is established in a city, then according to Zahir al-Riwayah it becomes binding on the rest of the people; this is the view of most scholars.

1. Majmu'ah Fatawa Abdul Hai, Book of Fasting, Matba' Yusufi Lucknow 5/265, 2/273; Fatawa Tatarkhania, Book of Fasting, Idaratul Quran wal Uloom al-Islamia Karachi 5/2.
2. Majmu'ah Fatawa Muhammad Abdul Hai, Book of Fasting, Matba' Yusufi Lucknow 1/277.
3. Majmu'ah Fatawa Muhammad Abdul Hai, Book of Fasting, Matba' Yusufi Lucknow 1/266.
4. Ghunyat Dhuwi al-Ahkam, Hashiyah Durr al-Hukkam, Book of Fasting, Ahmad Kamil al-Kainah fi Dar al-Sa'adat Beirut 1/201.

यदि दो शहरों के बीच का अंतर ऐसा हो कि उदय-स्थलों (क्षितिजों) में कोई भिन्नता न हो, तो यह अनिवार्य हो जाता है। शम्स अल-अइम्मा अल-हलवानी ने उल्लेख किया है कि हमारे साथियों के मज़हब (विचारधारा) में यही सही है।

इसमें है कि जब दो शहरों के बीच इतना अंतर हो जिससे उदय-स्थलों (क्षितिजों) में भिन्नता न हो, तो लाज़िम (अनिवार्य) होगा। शम्स अल-अइम्मा हलवानी ने ज़िक्र किया है कि हमारे मज़हब में यही सही है। (त)

उन्होंने इसे उद्धृत किया और ज़ाहिरी तौर पर यह सोचा कि इमाम शम्स अल-अइम्मा का सुधार अंतर को मानने की ओर इशारा करता है, हालांकि वह "मज़हब असहाबना" (हमारे साथियों का मज़हब) कह रहे हैं और यह स्पष्ट है कि हमारे साथियों का मज़हब ज़ाहिर-उर-रिवायत के अलावा कुछ नहीं है जैसा कि हम पहले उद्धृत कर चुके हैं (जैसा कि हमने पहले ज़िक्र कर दिया है। त)। और ज़ाहिर-उर-रिवायत अंतर को न मानने के अलावा कुछ नहीं है जैसा कि स्वयं मौलवी साहब ने स्वीकार किया है, जिल्द 2, सफ़ा 162 पर लिखा है:

अधिकांश हनफ़ी उलेमाओं (विद्वानों) के नज़दीक ज़ाहिर-उर-रिवायत के अनुसार उदय-स्थलों के अंतर का बिल्कुल भी विचार नहीं किया जाता।

ज़ाहिर-उर-रिवायत के अनुसार अधिकांश हनफ़ी उलेमाओं के नज़दीक उदय-स्थलों के अंतर का बिल्कुल भी विचार नहीं किया जाता। (त)

जिल्द 2, सफ़ा 417 पर कहा गया: जब किसी शहर में यह साबित हो जाए कि फलां शहर में चाँद देखा गया है, तो उन पर उसी के अनुसार हुक्म दिया जाएगा चाहे दोनों शहरों के बीच बहुत अधिक दूरी हो और यही ज़ाहिर-उर-रिवायत है।

निःसंदेह, फिर 'ग़ुनिया ज़ुवी अल-अहकाम' में कहा गया है: इमाम अल-हलवानी ने कहा कि हमारे साथियों के मज़हब में सही बात यह है कि जब खबर दूसरे शहर में प्रसिद्ध और पुष्ट हो जाए, तो उन पर उस शहर का हुक्म लाज़िम हो जाता है।

इमाम हलवानी ने फरमाया कि हमारे साथियों का सही मज़हब यही है कि जब खबर दूसरे शहर में मशहूर और पुख़्ता (सत्यापित) हो जाए, तो फिर दूसरे शहर वालों पर पहले शहर के लोगों का हुक्म लाज़िम होगा। (त)

मसल्क मुन्क़सित शरह मन्सिक मुतवस्सित में फरमाया:

यदि एक शहर में साबित हो जाए, तो ज़ाहिर-उर-रिवायत के अनुसार बाकी सभी लोगों पर लाज़िम होगा और इसी पर अधिकांश उलेमा हैं।	**जब शहर में सुबूत (प्रमाण) हो जाए, तो ज़ाहिर-उर-रिवायत के मुताबिक बाकी लोगों पर लाज़िम होगा, अधिकांश उलेमा का यही मत है।**

---

1. मजमुआ फतावा अब्दुल हई, किताबुस सौम, मतबा यूसुफी लखनऊ 5/265, 2/273; फतावा तातारखानिआ किताबुस सौम, इदारतुल कुरान वल उलूम अल-इस्लामिया कराची 5/2।
2. मजमुआ फतावा मुहम्मद अब्दुल हई, किताबुस सौम, मतबा यूसुफी लखनऊ 1/277।
3. मजमुआ फतावा मुहम्मद अब्दुल हई, किताबुस सौम, मतबा यूसुफी लखनऊ 1/266।
4. ग़ुनिया ज़ुवी अल-अहकाम हाशिया दुररुल हुक्काम किताबुस सौम, अहमद कामिल अल-काइनह फी दारुल सहादत बेरुत 1/201।

اذا كان بين البلدتين تفاوت لا يختلف المطالع يلزمه وذكر شمس الائمة الحلواني انه الصحيح من مذهب اصحابنا .

میں ہے جب دونوں شہروں کے درمیان اتنا تفاوت ہو جس سے مطالع میں اختلاف نہ ہو تو لازم ہوگا، شمس الائمہ حلوانی نے ذکر کیا ہے کہ ہمارے مذہب میں صحیح یہی ہے۔ (ت)

نقل کی اور ظاہراً خیال کیا کہ تصحیح امام شمس الائمہ اعتبار اختلاف کی طرف ناظر ہے حالانکہ وہ مذہب اصحابنا فرما رہے ہیں اور ظاہر ہے کہ مذہب اصحابنا نہیں مگر ظاہر الروایۃ کما قد منا نقولہ فیما سبق (جیسا کہ ہم نے پہلے تذکرہ کردیا ہے۔ ت) اور ظاہر الروایہ نہیں مگر عدم اعتبار اختلاف جیسا کہ خود مولوی صاحب کو اعتراف، ج ۲ ص ۱۶۲ پر لکھا:

نزد اکثر مشائخ حنفیہ موافق ظاہر الروایۃ اختلاف مطالع را مطلقاً اعتبار نیست .

ظاہر الروایۃ کے موافق اکثر مشائخ حنفیہ کے نزدیک اختلاف مطالع کا مطلقاً اعتبار نہیں (ت)

ج ۲ ص ۴۱۷ پر کہا: جب کسی شہر میں ثابت ہو جائے کہ فلاں شہر میں چاند ہوا تو ان پر موافق اس کے حکم دیا جائے گا گو دونوں شہروں میں بُعدِ مسافت ہو اور یہی ظاہر الروایۃ ہے۔

لاجرم پھر غنیہ ذوی الاحکام میں فرمایا: قال امام حلوانی نے فرمایا ہمارے اصحاب کا صحیح الامام الحلوانی الصحیح من مذهب اصحابنا ان الخبر اذا استفاض فی بلدة اخری وتحقق يلزمهم حكم تلك البلدة .

مذہب یہی ہے کہ جب خبر دوسرے شہر میں مشہور و متحقق ہو جائے تو پھر دوسرے شہر والوں پر پہلے اہل شہر کا حکم لازم ہوگا۔ (ت)

مسلک منقسط شرح منسک متوسط میں فرمایا:

ان ثبت فی مصر لزم سائر الناس فی ظاهر الرواية و عليه اكثر المشائخ

جب شہر میں ثبوت ہو جائے تو ظاہر الروایۃ کے مطابق باقی لوگوں پر لازم ہوگا، اکثر مشائخ کی یہی

---

[1] مجموعہ فتاویٰ عبد الحی کتاب الصوم مطبع یوسفی لکھنؤ ۵/ ۲۶۵، ۲/ ۲۷۳، فتاویٰ تاتارخانیہ کتاب الصوم ادارۃ القرآن والعلوم الاسلامیہ کراچی ۵/۲ [2] مجموعہ فتاویٰ محمد عبد الحی کتاب الصوم مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/ ۲۷۷ [3] مجموعہ فتاویٰ محمد عبد الحی کتاب الصوم مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/ ۲۶۶ [4] غنیہ ذوی الاحکام حاشیہ در الحکام کتاب الصوم احمد کامل الکائنہ فی دار السعادت بیروت ۱/ ۲۰۱

Fatawa Rizvia, Volume 10

[Arabic]: And Abu al-Layth and Shams al-A'immah al-Halwani used to issue fatwas based on this, and it is the choice (Mukhtar) of the author of al-Tajrid, al-Kafi, and other shaykhs.[1] [Urdu]: The opinion is that Faqih Abu al-Layth and Shams al-A'immah Halwani have also issued fatwas on this; for the author of Tajrid and Kafi and other shaykhs, this is the chosen (Mukhtar) position. (T)

It is stated in reliable books like Khulasah, Alamgiriyah, etc.:

[Arabic]: The fatwa of Faqih Abu al-Layth is upon this, and Shams al-A'immah al-Halwani used to issue fatwas on this. He said: If the people of the West see the moon of Ramadan, fasting becomes obligatory for the people of the East.[2] [Urdu]: Faqih Abu al-Layth's fatwa is on this; Shams al-A'immah, while giving a fatwa on this, says that if the people of the West see the crescent of Ramadan, then the fast of Ramadan becomes mandatory for the people of the East. (T)

See how clear the statements are that Imam Shams al-A'immah's fatwa is on this, that the difference of horizons is not credible at all. In short, after knowing that the non-credibility of the difference of horizons is the Zahir al-Riwayah (established position) and the fatwa is on it, and it is the relied-upon position of the majority and the numerous sayings, there is no way to deviate from it. However, Alhamdulillah, Maulvi Lakhnau Sahib, in the third volume of his Fatawa, has clearly returned towards the truth, saying on page 76:

[Arabic Question]: Does the sighting in one place serve as a ruling for another place, or is the difference of horizons credible? [Urdu Question]: Question: Does the ruling of sighting in one place apply to another place, or is the difference in horizons credible?

[Arabic Answer]: The difference of horizons is not credible, and the ruling of one place is beneficial for another place if the news of the sighting becomes famous and widespread. It is mentioned in Durr al-Mukhtar: "The difference of horizons is not credible according to Zahir al-Madhhab, and the majority of shaykhs are upon this, and the fatwa is upon it," as in al-Bahr from al-Khulasah, end. It is mentioned in Jami' al-Rumuz: "The correct position from the madhhab of our companions is that it is binding." [Urdu Answer]: Answer: The difference of horizons is not taken into account, and the ruling of one place is credible and useful for another place when the news becomes famous and spreads to the surrounding areas. In the Zahir al-

Madhhab, the difference of horizons is not credible; this is the saying of most shaykhs and the fatwa is also on this. Similarly in al-Bahr from al-Khulasah, end. And in Jami' al-Rumuz, it is mentioned that this is the correct madhhab of our Imams.

[1] Maslak Munqasit Sharh Mansik Mutawassit, Chapter on the confusion of the day of Arafah etc., Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, p. 143. [2] Fatawa Hindiyyah, Book of Fasting, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/198-99.

फतावा रजविया, खंड दस

[अरबी]: और इसी पर अबू अल-लैथ और शम्स अल-अइम्मा अल-हलवानी फतवा दिया करते थे और यही तजरीद, अल-काफी के लेखक और अन्य शेखों का चुना हुआ मत है।[1] [उर्दू]: राय है, फकीह अबुल लैथ और शम्सुल अइम्मा हलवानी ने भी इसी पर फतवा दिया है, साहब-ए-तजरीद व काफी और अन्य मशाईख के यहाँ यही मुख्तार (पसंदीदा) है। (त)

खुलासा और आलमगीरिया आदि विश्वसनीय किताबों में फरमाया है:

[अरबी]: फकीह अबू अल-लैथ का फतवा इसी पर है और शम्स अल-अइम्मा अल-हलवानी इसी पर फतवा दिया करते थे। उन्होंने कहा: यदि पश्चिम के लोग रमजान का चांद देख लें, तो पूर्व के लोगों पर रोजा रखना अनिवार्य हो जाता है।[2] [उर्दू]: फकीह अबुल लैथ का फतवा इसी पर है, शम्सुल अइम्मा इसी पर फतवा देते हुए कहते हैं कि अगर अहले मगरिब (पश्चिम के लोग) रमजान का चांद देख लें तो अहले मशरिक (पूर्व के लोग) पर रमजान का रोजा लाजिम हो जाएगा। (त)

देखो कैसी स्पष्ट स्पष्टीकरण हैं कि इमाम शम्सुल अइम्मा का फतवा इसी पर है कि इख्तिलाफ-ए-मताले (क्षितिज का अंतर) बिल्कुल भी मान्य नहीं है, संक्षेप में यह जानने के बाद कि इख्तिलाफ-ए-मताले का अमान्य होना ही 'जाहिर-उर-रिवायत' (प्रसिद्ध रिवायत) है और इसी पर फतवा है और वही बहुमत का विश्वसनीय और अधिक प्रचलित मत है, इससे हटने का कोई रास्ता नहीं है। लेकिन अल्हम्दुलिल्लाह, मौलवी लखनऊ साहब ने अपने फतावा के तीसरे खंड में सच्चाई की ओर स्पष्ट रूप से वापसी की है, पृष्ठ 76 पर वे कहते हैं:

[अरबी प्रश्न]: क्या एक स्थान पर चांद देखना दूसरे स्थान के लिए मान्य आदेश होगा या क्षितिज का अंतर मान्य है? [उर्दू प्रश्न]: सवाल: क्या एक जगह रूयत (चांद देखने) का हुक्म दूसरी जगह पर लागू होता है या इख्तिलाफ-ए-मताले मोअतबर (मान्य) है?

[अरबी उत्तर]: क्षितिज का अंतर मान्य नहीं है, और एक स्थान का आदेश दूसरे स्थान के लिए लाभदायक है यदि देखने की खबर प्रसिद्ध और प्रसारित हो जाए। दुर्रे मुख्तार में आता है: "जाहिर अल-मज़हब के अनुसार क्षितिज का अंतर मान्य नहीं है, और अधिकांश शेख इसी पर हैं और फतवा भी इसी पर है," जैसा कि अल-बह्र में अल-खुलासा से उद्धृत है, समाप्त। जामि' अल-रुमूज़ में उल्लेख है: "हमारे साथियों के मज़हब से सही बात यह है कि यह अनिवार्य है।" [उर्दू उत्तर]: जवाब: इख्तिलाफ-ए-मताले का एतबार नहीं है और एक जगह का हुक्म दूसरी जगह के लिए मोअतबर व

मुफीद होता है जबकि खबर मशहूर होकर अतराफ (आसपास) में फैल जाए, जाहिर मजहब में इख्तिलाफ-ए-मताले का एतबार नहीं, अक्सर मशाईख का यही कौल है और फतवा भी इसी पर है, जैसा कि अल-बह्र में अल-खुलासा से है, समाप्त। और जामि-उर-रुमूज़ में यह उल्लेख है कि हमारे अइम्मा (इमामों) का सही मजहब यही है।

[1] मसलक मुन्कासित शरह मनसिक मुतवस्सित, फस्ल फि इशतिबाह यौम-ए-अरफा आदि, दारुल किताब अल-अरबी बेरूत, पृ. 143। [2] फतावा हिन्दिया, किताबुल सौम, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 1/198-99।

جلد دہم فتاوٰی رضویہ

وبه کان یفتی ابو اللیث وشمس الائمة الحلوانی وهو مختار صاحب التجرید والکافی وغیرهم من المشائخ-1 رائے ہے، فقیہ ابواللیث اور شمس الائمہ حلوانی نے بھی اسی پر فتوٰی دیا ہے، صاحب تجرید و کافی اور دیگر مشائخ کے ہاں یہی مختار ہے۔(ت)

خلاصہ و عالمگیر یہ وغیرہما معتمدات میں فرمایا:

علیه فتوی الفقیه ابی اللیث وبه کان یفتی شمس الائمة الحلوانی قال لورأی اهل مغرب هلال رمضان یجب الصوم علی اهل المشرق-2 فقیہ ابواللیث کا اسی پر فتوٰی ہے، شمس الائمہ اسی پر فتوٰی دیتے ہوئے کہتے ہیں کہ اگر اہل مغرب رمضان کا چاند دیکھ لیں تو اہل مشرق پر رمضان کا روزہ لازم ہو جائے گا۔(ت)

دیکھو کیسی صریح تصریحات ہیں کہ امام شمس الائمہ کا فتوٰی اسی پر ہے کہ اختلافِ مطالع اصلاً معتبر نہیں، بالجملہ بعد اس جاننے کے کہ اختلافِ مطالع کا نا معتبر ہونا ہی ظاہر الروایۃ ہے اور اسی پر فتوٰی ہے اور وہی معتمد جمہور و قولِ کثیر ہے، اس سے عدول کی کوئی راہ نہیں مگر الحمد للہ مولوی لکھنو صاحب نے اپنے فتاوٰی کی جلد سوم میں حق کی طرف صاف رجوع کی، صفحہ ۷۶ پر کہتے ہیں:

سوال: رؤیت یکجا مفید حکم بجائے دیگرے شود یا آنکہ اختلافِ مطالع معتبر ست۔ سوال: آیا ایک جگہ رؤیت کا حکم دوسری جگہ پر لاگو ہوتا ہے یا اختلاف مطالع معتبر ہے؟ جواب: اختلاف مطالع معتبر نیست و حکم یکجا مفید حکم بجائے دیگرے شود اگر خبر رؤیت مشتہر شود و انتشار پذیرد و در مختار مے آرد و اختلاف المطالع غیر معتبر علی ظاهر المذهب وعلیه الکثر المشائخ و علیه

الفتوی بحر عن الخلاصة انتہیٰ در جامع رموز مے آرد الصحیح من مذھب اصحابنا انه یلزم جواب:

اختلافِ مطالع کا اعتبار نہیں ہے اور ایک جگہ کا حکم دوسری جگہ کے لیے معتبر و مفید ہوتا ہے جبکہ خبر مشہور ہو کر اطراف میں پھیل جائے، ظاہر مذہب میں اختلاف مطالع کا اعتبار نہیں، اکثر مشائخ کا یہی قول ہے اور فتویٰ بھی اسی پر ہے کذافی البحر عن الخلاصہ انتہیٰ، اور جامع الرموز میں یہ مذکور ہے ہمارے ائمہ کا صحیح مذہب یہی ہے

1 مسلک منقسط شرح منسک متوسط فصل فی اشتباہ یوم عرفہ الخ دار الکتاب العربی بیروت ص ۱۴۳ 2 فتاویٰ ہندیہ کتاب الصوم نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۹۹-۱۹۸

Fatawa Razawiyya Volume 10

If news becomes widespread in another city -summarized-

that when news becomes famous in another city, then fasting becomes obligatory. (T)

This is the same correct view according to the doctrine of our companions, that previously the statement was understood to be attributed to the contrary, and in response to another question, the testimony from a distant place was accepted absolutely, pages 73 and 74:

Question: Witnesses testified on the 29th of Ramadan that we saw the moon of Ramadan a day earlier, according to which today is the 30th of Ramadan. Will their testimony be accepted or not?

Answer: If the witnesses were present there and remained silent from the first of Ramadan and gave testimony on the 29th of Ramadan, their testimony will not be accepted, and if they come traveling from a distant place, their testimony will be accepted. As in Al-Khulasah.

Question: The witnesses testified on the 29th of Ramadan that we had seen the moon of Ramadan one day before, according to that calculation today is the 30th of Ramadan, so is the testimony of these witnesses acceptable or not?

Answer: If the witnesses are residents of the same place and remained silent on the first day of Ramadan and are now giving testimony on the 29th of Ramadan, then their testimony will not be accepted. And if they have come traveling from a distant place, then their testimony will be accepted. As mentioned in Al-Khulasah. (T)

In Al-Khulasah. (T)

This third volume was written by Maulvi Sahib himself by formulating questions, and in it, he has corrected the errors of the previous volumes at many places. It is essential for those who see his fatwas to take this into consideration. For a long time, there was a thought to write a comprehensive statement on the issue of 'different moon sighting horizons' so that the clouds of disagreement disappear and the horizon appears clear. Praise be to Allah that today that time has come, and all praise is for Allah in the beginning and the end, and may Allah's peace and blessings be upon the full moon of manifestation from Bathaa (Prophet Muhammad) and upon his family and companions who are the stars of guidance.

Thirteen and a half 'Sa' of wheat is the ransom for a fast and the charity of Fitr. It is one hundred and thirty-five Tolas. According to English weight, it is eighty (80) Rupees weight, and a Rupee is eleven and a quarter Mashas. It did not become two

'Seers' less half a 'Pao', but rather two 'Seers' less three 'Chhatanks' and the twentieth part of a 'Chhatank', as we have mentioned in our Fatawa volume in the "Account of Sadaqat-ul-Fitr".

---

1. Majmua Fatawa Muhammad Abdul Hai Lakhnavi, Chapter on Sighting the Crescent Moon, Yusufi Press Lucknow, 1/70-73
2. Majmua Fatawa Muhammad Abdul Hai Lakhnavi, Chapter on Sighting the Crescent Moon, Yusufi Press Lucknow, 1/73
3. Fatawa Razawiyya (Modern) Present volume, page 239

फ़तावा रज़विया, खंड 10

यदि दूसरे शहर में समाचार व्यापक हो जाए -संक्षिप्त-

कि जब समाचार दूसरे शहर में प्रसिद्ध हो जाए तो रोज़ा अनिवार्य हो जाता है। (त)

हमारे साथियों के सिद्धांत के अनुसार यही सही विचार है, कि पहले कथन को इसके विपरीत माना गया था, और एक अन्य प्रश्न के उत्तर में भी, दूर के स्थान से गवाही को पूर्णतः स्वीकार किया गया, पृष्ठ 73 और 74:

प्रश्न: गवाहों ने 29 रमज़ान को गवाही दी कि हमने रमज़ान का चाँद एक दिन पहले देखा था, जिसके अनुसार आज 30 रमज़ान है। क्या उनकी गवाही स्वीकार की जाएगी या नहीं?

उत्तर: यदि गवाह वहीं मौजूद थे और पहली रमज़ान से खामोश रहे और २९ रमज़ान को गवाही दी, तो उनकी गवाही मक़बूल नहीं होगी, और यदि वे किसी दूर के स्थान से यात्रा करके आते हैं, तो गवाही मक़बूल होगी। जैसा कि अल-खुलासा में है।

प्रश्न: गवाहों ने २९ रमज़ान को यह गवाही दी कि हमने रमज़ान का चाँद एक दिन पहले देखा था इस हिसाब से आज ३० रमज़ान बनता है तो इन गवाहों की गवाही मक़बूल (स्वीकार्य) या नहीं?

उत्तर: अगर गवाह उसी स्थान के रहने वाले हों और रमज़ान के पहले दिन खामोश रहे और अब २९ रमज़ान की गवाही दे रहे हैं तो उनकी गवाही मक़बूल न होगी और अगर कहीं दूर के मुक़ाम से सफ़र करके आए हों तो उनकी शहादत (गवाही) क़बूल की जाएगी। जैसा कि अल-खुलासा में है। (त)

अल-खुलासा में। (त)

यह तीसरा खंड मौलवी साहब ने स्वयं प्रश्न तैयार करके लिखा है, और इसमें उन्होंने कई स्थानों पर पिछले खंडों की त्रुटियों को सुधारा है। उनके फतवे देखने वालों के लिए इसका ध्यान रखना आवश्यक है। लंबे समय से यह विचार था कि 'विभिन्न क्षितिजों पर चाँद दिखने' (इख्तिलाफ-ए-मतालए) के मुद्दे पर एक विस्तृत विवरण लिखा जाए ताकि असहमति के बादल छँट जाएँ और क्षितिज स्पष्ट दिखाई दे। अल्लाह का शुक्र है कि आज वह समय आ गया है, और आदि और अंत में सभी प्रशंसा अल्लाह के लिए है, और अल्लाह की शांति और आशीर्वाद बत्हा से प्रकट होने वाले पूर्ण चंद्रमा (पैगंबर मुहम्मद) और उनके परिवार और साथियों पर हो जो मार्गदर्शन के सितारे हैं।

साढ़े तेरह 'साअ' गेहूँ एक रोज़े का फ़िद्या और फ़ित्र का सदक़ा है। यह एक सौ पैंतीस तोला है। अंग्रेजी वजन के अनुसार यह अस्सी (80) रुपये के बराबर है, और एक रुपया सवा ग्यारह माशे का है। यह दो 'सेर' से आधा 'पाव' कम नहीं हुआ, बल्कि दो 'सेर' से तीन 'छटांक' और एक 'छटांक' का बीसवां हिस्सा कम है, जैसा कि हमने अपने फ़तावा खंड में "सदक़ा-ए-फ़ित्र के वर्णन" में उल्लेख किया है।

---

1. मजमुआ फतावा मोहम्मद अब्दुल हई लखनवी, रुयत-ए-हिलाल का अध्याय, यूसुफी प्रेस लखनऊ, 1/70-73
2. मजमुआ फतावा मोहम्मद अब्दुल हई लखनवी, रुयत-ए-हिलाल का अध्याय, यूसुफी प्रेस लखनऊ, 1/73
3. फतावा रज़विया (आधुनिक) वर्तमान खंड, पृष्ठ 239

اذا استفاض الخبر في البلدة الاخرى کہ جب خبر دوسرے شہر میں مشہور ہو جائے تو روزہ لازم ہو جاتا ہے۔ (ت) ملخصاً۔

یہ وہی صحیح من مذہب اصحابنا ہے کہ پہلے قول خلاف کی طرف منسوب سمجھا گیا تھا اور ایک اور سوال کے جواب میں بھی مطلقاً مقام بعید کی شہادت مقبول مانی، ص ۷۴ و ۷۳:

سوال: گواہان بروز بست و نہم از رمضان گواہی دادند کہ ما ہلالِ رمضان یک روز قبل دیدہ ایم کہ بداں حساب امر وز سیم رمضان ست پس شہادت ایشاں مقبول خواھد شد یانہ؟

جواب: اگر گواہاں ہما نجا بودند و از اول رمضان ساکت ماندہ بست و نہم رمضان گواہی دادند گواہی ایشاں مقبول نخواھد شد و اگر از سفر از مقام بعید می آیند شہادت مقبول خواھد شد کذا فی الخلاصۃ ۔

سوال: گواہوں نے ۲۹ رمضان کو یہ گواہی دی کہ ہم نے رمضان کا چاند ایک روز پہلے دیکھا تھا اس حساب سے آج ۳۰ رمضان بنتا ہے تو ان گواہوں کی گواہی مقبول یا نہ؟

جواب: اگر گواہ اسی مقام کے رہنے والے ہوں اور رمضان کے پہلے دن خاموش رہے اور اب ۲۹ رمضان کی گواہی دے رہے ہیں تو ان کی گواہی مقبول نہ ہوگی اور اگر کہیں دور کے مقام سے سفر کرکے آئے ہوں تو ان کی شہادت قبول کی جائیگی کذا فی الخلاصۃ۔ (ت)

فی الخلاصہ۔ (ت)

یہ تیسری جلد مولوی صاحب نے آپ ہی سوالات قائم کرکے لکھی ہے اور اس میں بہت جگہ پہلی جلدوں کے اغلاط کی اصلاح کردی ہے ان کے فتاویٰ دیکھنے والے کو اس کا لحاظ ضرور ہے، مدت سے خیال تھا کہ مسئلہ اختلاف مطالع میں ایک بیان شافی لکھا جائے کہ ابر اختلاف اٹھ کر مطلع صاف نظر آئے، الحمد اللہ کہ آج کا وقت آیا وللہ الحمد فی الاولی والاخری وصلی اللہ تعالیٰ علی بدر تجلی من البطحاء وعلی آلہ وصحبہ نجوم الھدی۔

سیزدہم نیم صاع گیہوں سے روزے کا فدیہ اور فطر کا صدقہ ہے ایک سو پینتیس تولہ ہے انگریزی سے اسی ۸۰ روپے بھر ہے اور روپیہ سوا گیارہ ماشے کا ہے آدھ پاؤ کم دو سیر نہ ہوا بلکہ تین چھٹانک اور بیسواں حصہ چھٹانک کا کم دو سیر، جیسا کہ ہم نے اپنے فتاویٰ جلد "صدقہ فطر کے بیان" میں

---

1 مجموعہ فتاویٰ محمد عبدالحی لکھنوی باب رؤیتِ ہلال مطبع یوسفی لکھنو ۱/ ۷۳-۷۰ 2 مجموعہ فتاویٰ محمد عبدالحی لکھنوی باب رؤیتِ ہلال مطبع یوسفی لکھنو ۱/ ۷۳ 3 فتاویٰ رضویہ (جدید) جلد ہذا صفحہ ۲۳۹

It has been explained in detail, and this fatwa has also been published in 'Tuhfa-e-Hanfia Azeemabad'. According to the Bareilly seer (weight), which is equal to a full hundred rupees, it is one seer, seven chhatank, two mashas, and six and a half ratti. According to the Rampur seer, which is ninety-six, it is exactly one and a half seers. Memorize this and do not forget it.

Fourteenthly, one who has not fasted due to a valid religious excuse should, if not difficult, eat and drink discreetly as much as possible out of respect for the holy month. However, the absolute obligation to eat nothing in front of someone fasting requires proof.

Fifteenthly, if one eats things like paper, pebbles, or dust, which are neither medicine nor food nor naturally appealing, even if one eats a bellyful instead of just a sesame seed's worth, only qaza (makeup fast) is required; no kaffarah (expiation) will be due. Similarly, intentionally breaking a fast through enemas or other such things mentioned hereafter is also included, but there is no kaffarah in those cases. Furthermore, kaffarah is only for breaking a fast of Ramadan during its time, provided the person was not an excused person (sahib-e-uzr), nor did any natural excuse (samawi uzr) such as menstruation or illness arise that day, nor was the breaking done under duress or compulsion, and the intention for the fast was made at night. It is stated in 'Durr-al-Mukhtar':

"Then, kaffarah is only due if the intention was made at night, he was not coerced, and no factor that waives it, like illness or menstruation, occurred." (1) Then kaffarah will be due if the intention was made at night, he was not forced, and no condition for skipping kaffarah, like illness, menstruation, etc., occurred. (T)

It is stated in 'Radd-al-Muhtar': "His words 'masqit' (waiving factor) mean a divine/ natural occurrence in which the servant has no role, nor in its cause." - Rahmati. (2) His words 'masqit' mean that natural affliction in which a human has no hand, nor in its cause. - Rahmati. (T)

So, these absolute rulings in the advertisement are all incorrect. Sixteenthly, in kaffarah, there is a sequence prescribed by Sharia. First, one must free a slave. If one does not have the capacity, then two consecutive months of fasting. If that is also not possible, then the final step is to feed sixty needy people, as Allah Almighty has explicitly stated in the verse of Zihar. Perhaps freeing a slave was not mentioned in

the advertisement because where are slaves to be found here? However, not maintaining the sequence between fasting and sixty needy people is not correct.

(1) Durr-al-Mukhtar, Chapter on what invalidates the fast and what doesn't, Mujtabai Press, Delhi, 1/151 (2) Radd-al-Muhtar, Discussion on Kaffarah, Mustafa al-Bani, Egypt, 1/120

इसे विस्तार से समझाया गया है, और यह फ़तवा 'तोहफ़ा-ए-हनफ़िया अज़ीमाबाद' में भी प्रकाशित हुआ है। बरेली के सेर (वजन) के अनुसार, जो पूरे सौ रुपये के बराबर है, यह एक सेर, सात छटाँक, दो माशे और साढ़े छह रत्ती है। रामपुर के सेर के अनुसार, जो छियानबे का है, यह ठीक डेढ़ सेर है। इसे याद रखें और भूलें नहीं।

चौदहवें, जिसने किसी वैध धार्मिक बहाने के कारण रोज़ा नहीं रखा है, उसे यदि कठिनाई न हो, तो पवित्र महीने के सम्मान में यथासंभव छिपकर खाना-पीना चाहिए। हालाँकि, रोज़ेदार के सामने कुछ भी न खाने का पूर्ण दायित्व प्रमाण की आवश्यकता रखता है।

पंद्रहवें, यदि कोई कागज़, कंकड़ या धूल जैसी चीज़ें खाता है, जो न तो दवा हैं, न भोजन और न ही स्वभाव से पसंद की जाने वाली चीज़ें हैं, तो चाहे वह तिल भर के बजाय पेट भर कर भी खा ले, केवल कज़ा (छूटे हुए रोज़े की भरपाई) अनिवार्य होगी; कोई कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) नहीं होगा। इसी प्रकार, एनीमा या आगे उल्लिखित अन्य चीज़ों के माध्यम से जानबूझकर रोज़ा तोड़ना भी इसमें शामिल है, लेकिन इनमें कफ़्फ़ारा नहीं है। इसके अलावा, कफ़्फ़ारा केवल रमज़ान के रोज़े को उसके समय के दौरान तोड़ने के लिए है, बशर्ते कि वह व्यक्ति माज़ूर (बीमार या अक्षम) न हो, न ही उस दिन मासिक धर्म या बीमारी जैसा कोई दैवीय बहाने (समावी उज़्र) उत्पन्न हुआ हो, न ही रोज़ा किसी मजबूरी या दबाव में तोड़ा गया हो, और रोज़े की नियत रात में की गई हो। 'दुर्र-अल-मुख़्तार' में कहा गया है:

"फिर, कफ़्फ़ारा तभी अनिवार्य है जब रात में नियत की गई हो, उस पर दबाव न डाला गया हो, और उसे छोड़ने का कोई कारण जैसे बीमारी या मासिक धर्म उत्पन्न न हुआ हो।" (1) फिर कफ़्फ़ारा तब होगा जब रात को नियत की गई हो और मजबूर भी न हो और कफ़्फ़ारा छोड़ने का कोई कारण जैसे बीमारी और मासिक धर्म वगैरह का सामना न हुआ हो। (त)

'रद-अल-मुह्तार' में कहा गया है: "उसके शब्द 'मस्क़ित' (छूट दिलाने वाला कारक) का अर्थ है एक ईश्वरीय/प्राकृतिक घटना जिसमें बंदे का कोई हाथ नहीं है और न ही उसके कारण में।" - रहमती। (2) उसके शब्द 'मस्क़ित' का अर्थ है वह प्राकृतिक संकट जिसमें बंदे का कोई दखल न हो और न उसके कारण में दखल हो। - रहमती। (त)

तो विज्ञापन में दिए गए ये पूर्ण नियम सब गलत हैं। सोलहवें, कफ़्फ़ारा में शरीयत द्वारा निर्धारित एक क्रम है। सबसे पहले, एक गुलाम आज़ाद करना है। यदि इसकी सामर्थ्य न हो, तो लगातार दो महीने

के रोज़े। यदि यह भी संभव न हो, तो अंतिम स्तर साठ गरीबों को खाना खिलाना है, जैसा कि अल्लाह तआला ने ज़िहार की आयत में स्पष्ट किया है। शायद गुलाम आज़ाद करने का ज़िक्र विज्ञापन में इसलिए नहीं किया गया क्योंकि यहाँ गुलाम कहाँ मिलेंगे, लेकिन रोज़ों और साठ गरीबों के बीच क्रम का पालन न करना सही नहीं है।

(1) दुर्र-अल-मुख़्तार, अध्याय रोज़ा तोड़ने वाली और न तोड़ने वाली चीज़ों पर, मुज्तबाई प्रेस, दिल्ली, 1/151 (2) रद-अल-मुह्तार, कफ़्फ़ारा पर चर्चा, मुस्तफ़ा अल-बानी, मिस्र, 1/120

पृष्ठ 602 / 836

فتاوی رضویہ جلد دہم

مشرحاً بیان کیا ہے اور یہ فتوٰی تحفہ حنفیہ عظیم آباد میں چھپ بھی گیا ہے اور بریلی کے سیر سے کہ پورے سو روپے بھر کا ہے ایک سیر سات چھٹانک دو ماشے ساڑھے چھ رتی اور رامپور کے سیر سے کہ چھیانوے کا ہے پورا ڈیڑھ سیر ، فاحفظ ولا تزل چہاردہم جس نے بعذر شرعی روزہ نہ رکھا اسے دقت نہ ہو تو حرمت ماہِ مبارک کے لحاظ سے حتی الوسع چھپا کر کھانا پینا چاہئے مگر کسی روزہ دار کے سامنے کچھ نہ کھانے کا مطلقا وجوب محتاج دلیل ہے۔ پانزدہم کاغذ یا کنکر یا خاک وغیرہ اشیا کو کہ نہ دوا ہیں نہ غذا، نہ مرغوب طبع، اگر تل بھر نہیں پیٹ بھر کھالے گا صرف قضا ہوگی کفارہ نہ آئے گا۔ یونہی روزہ توڑ نا عمداً حقنہ وغیرہ ہائے اشیائے مذکورہ مابعد کو بھی شامل، مگر اس میں کفارہ نہیں۔ نیز کفارہ صرف ادارہ رمضان کے توڑنے میں ہے، جبکہ یہ نہ صاحب عذر تھا نہ اس دن میں کوئی آسمانی عذر مثل حیض یا مرض پیدا ہو جائے، نہ ہی توڑ نا کسی کے جبر واکراہ سے ہوا اور روزے کی نیت رات سے کی ہو، در مختار میں ہے:

ثم انما یکفر ان نوی لیلا ولم یکن مکرھا ولم یطرأ مسقط کمرض و حیض۔ (1) پھر کفارہ تب ہو گا جب تک رات کو نیت کی ہو اور مجبور بھی نہ ہو اور کفارہ چھوڑنے کا کوئی عارضہ مثل مرض و حیض وغیرہ کے لاحق نہ ہوا ہو (ت)

ردالمحتار میں ہے: قولہ مسقط ای سماوی لاصنع لہ فیہ ولا فی سببہ۔ رحتمی۔ (2) قولہ مسقط یعنی وہ عارضہ سماوی جس میں بندے کا کوئی دخل نہ ہو اور نہ اس کے سبب میں دخل ہو ، رحمتی۔ (ت)

تو یہ اشتہاری مطلق احکام سب غلط ہیں۔ شانزدہم کفارے میں شرعاً ترتیب ہے سب میں پہلے ایک غلام آزاد کرنا ہے، اس کی طاقت نہ ہو تو دو مہینے کے لگاتار روزے، یہ بھی نہ ہو سکے تو اخیر درجہ ساٹھ مسکین کما نص اللہ تعالٰی علیہ فی آیۃ الظہار (جیسا کہ اللہ تعالیٰ نے آیت ظہار میں تصریح فرمادی ہے۔ت) غلام آزاد کرنا تو شاید اشتہار میں اس لیے مذکور نہ ہوا کہ یہاں غلام کہاں، مگر روزوں اور ساٹھ مسکینوں میں ترتیب نہ رکھنا صحیح نہیں،

(1) درمختار باب ما یفسد الصوم ومالا یفسد مطبع مجتبائی دہلی 1/151 (2) ردالمحتار مطلب فی الکفارۃ مصطفیٰ البانی مصر 1/120

If this is not ignorance, it is even worse, as it is making others out to be ignorant and astray. Seventeenth: Fasting does not break by masturbation unless there is ejaculation. It is in Durr al-Mukhtar: "He masturbated but did not ejaculate" (If one masturbates and there is no ejaculation, the fast will not break). So this absolute statement is also incorrect. Eighteenth: Deliberate vomiting also does not break the fast unless it is a mouthful while remembering that one is fasting. It is in Radd al-Muhtar:

[Arabic Box]: There is no breaking of the fast in all cases according to the most correct opinion, except in repeating [the act] and inducing vomit, provided it is a mouthful and while remembering [the fast], Sharh al-Multaqa. [Urdu Translation Box]: According to the most correct saying, breaking of the fast will not occur in all these [cases], except in the situation where one swallows back the vomit or induces vomit himself, provided it is a mouthful and one remembers being in a state of fasting. Sharh al-Multaqa (T).

Nineteenth: Repeating things that break the fast but do not require expiation (kaffarah), like an enema etc., does not absolutely necessitate expiation unless done with the intent of sin. It is in Durr al-Mukhtar:

[Arabic Box]: In every case where expiation is absent, its place is when that act is not committed by him time after time for the purpose of intending sin. If he does it repeatedly, it becomes mandatory as a deterrent. [Urdu Translation Box]: The situation where expiation is not necessary is when that act is not performed by that person repeatedly with the intent of sinning. So, if he repeats this act, expiation will become mandatory as a punishment. (T)

And although from this text Allamah Tahtawi inferred that doing it even twice would make expiation mandatory, and Allamah Shami quoted and kept it, but even they are not certain of this meaning, they only said:

[Arabic Box]: Its apparent meaning is that with the second time, expiation becomes mandatory for him, even if there is an interval of several days. [Urdu Translation Box]: The apparent meaning is that if done a second time, expiation is mandatory, even if there is a gap of several days in between. (T)

And in the view of this humble servant, this still requires further review. If that were the meaning, then saying "marratan ukhra" (another time) would have been

sufficient; "marratan ba'da ukhra" (one time after another) apparently points towards frequent repetition. Let it be reviewed.

Footnotes: 1. Durr al-Mukhtar, Chapter: What spoils the fast and what does not, Mujtabai Delhi, 1/150 2. Radd al-Muhtar, Discussion on Expiation, Mustafa al-Babi Egypt, 2/120 3. Durr al-Mukhtar, Chapter: What spoils the fast etc., Mujtabai Delhi, 1/151 4. Radd al-Muhtar, Chapter: What spoils the fast etc., Mustafa al-Babi Egypt, 2/115

फतावी रिज़विया जिल्द दहम

यदि यह अज्ञानता नहीं है, तो यह और भी बुरा है क्योंकि यह दूसरों को अज्ञानी और पथभ्रष्ट ठहराना है। सत्रहवाँ: हस्तमैथुन से रोज़ा नहीं टूटता जब तक कि वीर्यपात न हो। दुर्र-ए-मुख़्तार में है: 'उसने हस्तमैथुन किया और वीर्यपात नहीं हुआ' (यदि हस्तमैथुन किया और वीर्यपात नहीं हुआ, तो रोज़ा नहीं टूटेगा)। अतः यह पूर्ण कथन भी गलत है। अठारहवाँ: जानबूझकर उल्टी करने से भी रोज़ा नहीं जाता, जब तक कि रोज़ा याद होने की स्थिति में मुँह भर कर न हो। रद्द-उल-मुह्तार में है:

[अरबी बॉक्स]: सबसे सही मत के अनुसार इन सभी मामलों में इफ़्तार नहीं होगा, सिवाय [उस कार्य को] दोहराने और उल्टी करने के, बशर्ते कि वह मुँह भर कर हो और रोज़ा याद हो, शरह अल-मुल्ताक़ा। [उर्दू अनुवाद बॉक्स]: सबसे सही कथन के अनुसार इन सभी में इफ़्तार नहीं होगा, सिवाय उस स्थिति में जब उल्टी को वापस लौटाया जाए या स्वयं उल्टी की जाए, बशर्ते कि मुँह भर कर हो और रोज़ा होना याद हो। शरह अल-मुल्ताक़ा (त)

उन्नीसवाँ: रोज़ा तोड़ने वाली वे चीज़ें जिन पर कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) नहीं है, जैसे एनीमा (حقنہ) आदि, उन्हें दोबारा करना तब तक कफ़्फ़ारा का कारण नहीं बनता जब तक कि पाप के इरादे से न हो। दुर्र-ए-मुख़्तार में है:

[अरबी बॉक्स]: हर वह स्थिति जिसमें कफ़्फ़ारा नहीं है, उसका स्थान तब है जब वह कार्य उसके द्वारा पाप के इरादे से बार-बार न किया गया हो। यदि वह इसे बार-बार करता है, तो उसे रोकने के लिए कफ़्फ़ारा अनिवार्य हो जाता है। [उर्दू अनुवाद बॉक्स]: जिस स्थिति में कफ़्फ़ारा अनिवार्य नहीं है, उसका स्थान यह है कि जब उस व्यक्ति से वह कार्य पाप के इरादे से बार-बार न हुआ हो, अतः यदि वह उस कार्य को दोहराएगा, तो सज़ा के तौर पर कफ़्फ़ारा अनिवार्य होगा। (त)

और यद्यपि इस इबारत से अल्लामा तहतावी ने यह अनुमान लगाया कि दो ही बार करने में कफ़्फ़ारा अनिवार्य कर देंगे और अल्लामा शामी ने इसे उद्धृत करके बनाए रखा, लेकिन उन्हें भी इस अर्थ पर पूर्ण विश्वास नहीं है, उन्होंने केवल इतना कहा:

[अरबी बॉक्स]: इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि दूसरी बार करने से उस पर कफ़्फ़ारा अनिवार्य हो जाता है, चाहे बीच में कई दिनों का अंतर हो। [उर्दू अनुवाद बॉक्स]: ज़ाहिर यह है कि अगर दूसरी बार किया तो कफ़्फ़ारा अनिवार्य है, चाहे दरमियान में कई दिनों का फ़ासला हो। (त)

और इस फ़क़ीर के नज़दीक यह अभी भी पुनर्विचार का मोहताज है, अगर यही मुराद होती तो 'मर्तन उख़रा' (दूसरी बार) कहना काफ़ी था; 'मर्तम बाद उख़रा' (एक बार के बाद दूसरी बार) ज़ाहिरा तौर पर बार-बार दोहराने की ओर इशारा है। इस पर पुनः विचार किया जाना चाहिए।

पाद टिप्पणियाँ: 1. दुर्र-ए-मुख़्तार, बाब: मायफ़ुसिद उस-सौम व मा ला युफ़्सिदुहु, मुज्तबाई दिल्ली 1/150 2. रद्द-उल-मुह्तार, मतलब फ़िल कफ़्फ़ारा, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 2/120 3. दुर्र-ए-मुख़्तार, बाब: मायफ़ुसिद उस-सौम आदि, मुज्तबाई दिल्ली 1/151 4. रद्द-उल-मुह्तार, बाब: मायफ़ुसिद उस-सौम आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 2/115

पृष्ठ 603/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

یہ اگر جہل نہ ہو تو سخت تر ہے کہ تجہیل و تضلیل ہے۔ ہفدہم جلق سے روزہ نہیں ٹوٹتا جب تک اس سے انزال نہ ہو۔ در مختار میں ہے : استمنی بہ ولم ینزل ۱ (مشت زنی کی، انزال نہ ہوا تو روزہ نہیں ٹوٹے گا۔) تو یہ اطلاق بھی غلط ہے۔ بیجدہم قصداً قے کرنے سے بھی روزہ نہیں جاتا مگر جبکہ روزہ یاد ہونے کی حالت میں منہ بھر کر ہو۔ ردالمحتار میں ہے :

[Arabic Box]: لا فطر فی الکل علی الاصح الا فی الاعادۃ والاستقاء بشرط الملاء مع التذکیر شرح الملتقی ۲۔ [Urdu Translation Box]: اصح قول کے مطابق ان تمام میں افطار نہ ہو گا البتہ اس صورت میں جب قے کو لوٹائے یا خود قے کرے بشرطیکہ منہ بھر کر ہو روزہ ہونا یاد ہو، شرح الملتقی (ت)

نوزدہم مفطراتِ غیر مکفرات مثلِ حقنہ و غیرہا کا مطلقاً دوبارہ کرنا موجب کفارہ نہیں جب تک بقصدِ معصیت نہ ہو۔ در مختار میں ہے :

[Arabic Box]: کل ما انتفی فیہ الکفارۃ محلہ ما اذا لم یقع ذلك منہ مرّۃ بعد اخری لاجل قصد المعصیۃ فان فعلہ وجبت زجرالہ ۳۔ [Urdu Translation Box]: جس صورت میں کفارہ لازم نہ ہو اس کا محل یہ ہے کہ جب اس شخص سے وہ فعل بتکرار گناہ کے قصد سے صادر نہ ہو، پس اگر اس فعل کو مکرر کرے گا تو زجراً کفارہ واجب ہو گا۔ (ت)

اور اس عبارت سے اگر چہ علامہ طحطاوی نے یہ استظہار کیا کہ دوہی بار کرنے میں کفارہ واجب کر دیں گے اور علامہ شامی نے اسے نقل کرکے مقرر رکھا مگر اس معنی پر جزم انہیں بھی نہیں، اتنا ہی فرمایا ہے :

[Arabic Box]: ظاہرہ انہ بالمرۃ الثانیۃ تجب علیہ الکفارۃ ولو حصل فاصل بأیام ۴۔ [Urdu Translation Box]: ظاہر یہ ہے کہ اگر دوسری دفعہ کیا تو کفارہ لازم اگر چہ درمیان میں متعدد ایام کا فاصلہ ہو (ت)

اور فقیر کے نزدیک یہ ہنوز محتاجِ مراجعت ہے، اگر یہ مراد ہوتی تو مرۃ اخری (دوبارہ کرنا) کہنا کافی تھا مرۃ بعد اخری (بار بار کرنا) ظاہر اً بار بار تکرار کی طرف ناظر ہے فلیراجع و

حواشی: ۱۔ درمختار باب مایفسد الصوم ومالا یفسدہ، مجتبائی دہلی ۱/۱۵۰ ۲۔ ردالمحتار مطلب فی الکفارۃ مصطفی البابی مصر ۲/۱۲۰ ۳۔ درمختار باب مایفسد الصوم الخ مجتبائی دہلی ۱/۱۵۱ ۴۔ ردالمحتار باب مایفسد الصوم الخ مصطفی البابی مصر ۲/۱۱۵

Should be considered. (t) And Allah Almighty knows best.

A pregnant woman, just like a nursing mother, is permitted to skip fasting only if there is a strong presumption (Ghalba-e-Zan) of harm to herself or the child, not absolutely as claimed by the advertisement.

Twenty-first: When there is a dispute regarding the number of rak'ahs in Tarawih prayer—whether twenty or eighteen have been offered—there are numerous different scenarios. The poor author has detailed all of them, established their principles, and researched their rulings in the annotations (Ta'liqat) of Radd al-Muhtar. Briefly, it is submitted here that in a state of absolute disagreement between the Imam and the congregation, the followers are neither absolutely commanded to pray two extra rak'ahs, nor are they absolutely commanded to pray alone. Furthermore, this ruling is not specifically for when the Imam is uncertain of the number. For example, if the followers are certain that twenty rak'ahs are complete while the Imam is in doubt or certain of only eighteen, then the followers will not pray those two extra rak'ahs at all, neither in congregation nor alone. When they are certain that their Tarawih is complete, how can they be commanded to do more based on the Imam's doubt or certainty? One person's certainty cannot be overruled by another's, let alone by their doubt.

It is stated in Radd al-Muhtar:

Arabic	**Urdu Translation**
If the Imam is certain of a deficiency, they must repeat it, except for those among them who are certain of completion. [1]	If the Imam is certain of a lesser number, repeating is mandatory for them, except for the one who is certain of completion. (t)

It is stated in Fath al-Qadir:

Arabic	**Urdu Translation**
Because his certainty is not invalidated by the certainty of another. [2]	Because his certainty cannot be invalidated by another's certainty. (t)

And if the followers are certain of eighteen rak'ahs while the Imam is in doubt about twenty, then the Imam himself shall also lead two more rak'ahs, following the

certainty of the followers, and these shall be performed in congregation. It is stated in Durr al-Mukhtar:

Arabic	Urdu Translation
If the Imam and the congregation disagree: if the Imam is certain, he does not repeat; otherwise, he repeats based on their word. [3]	If there is a disagreement between the Imam and the followers, if the Imam has certainty, he should not repeat; otherwise, the repetition will occur because the word of the followers is considered reliable. (t)

---

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Sujud al-Sahw, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/50.
2. Fath al-Qadir, Chapter on Sujud al-Sahw, Nooria Razvia, Sukkur, 1/457.
3. Durr al-Mukhtar, Chapter on Sujud al-Sahw, Mujtabai, Delhi, 1/103.

फ़तावा-ए-रज़विया, खंड 10

विचारणीय है। (त) और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

गर्भवती महिला को भी, स्तनपान कराने वाली माँ की तरह, रोज़ा न रखने की अनुमति केवल उसी स्थिति में है जब उसे अपने या बच्चे के नुकसान की प्रबल आशंका (ग़लबा-ए-ज़न) हो, न कि पूर्णतः जैसा कि विज्ञापन में दावा किया गया था।

इक्कीसवाँ: जब तरावीह की रकातों की संख्या में विवाद हो कि बीस पढ़ी गईं या अठारह, तो इसमें बहुत सी विभिन्न स्थितियाँ हैं। उन सबकी पूरी तफ़सील, उनके सिद्धांतों की स्थापना और उनके आदेशों की तहक़ीक़ व प्राप्ति फ़क़ीर (लेखक) ने 'रद्द अल-मुह्तार' की टिप्पणियों (ता'लीक़ात) में ज़िक्र की है। यहाँ संक्षेप में इतना निवेदन है कि इमाम और कौम (मक्तदी) के बीच पूर्ण मतभेद की स्थिति में, न तो मक्तदियों को दो रकात (अतिरिक्त) पढ़ने का पूर्ण आदेश है, न ही अकेले पढ़ने का पूर्ण आदेश है, और न ही यह आदेश इमाम के किसी संख्या पर निश्चित न होने के साथ विशेष है। उदाहरण के लिए, मक्तदियों को यकीन है कि बीस पूरी हो गईं और इमाम को संदेह था या अठारह का ही यकीन है, तो मक्तदी बिल्कुल भी दो रकात नहीं पढ़ेंगे, न जमात के साथ और न अकेले, क्योंकि जब उन्हें तरावीह पूरी होने का यकीन है, तो अब उन्हें इमाम के शक या यकीन के आधार पर अधिक का आदेश कैसे दिया जा सकता है? अपने यकीन पर किसी दूसरे का यकीन भी हाकिम (निर्णायक) नहीं हो सकता, शक तो दूर की बात है।

रद्द अल-मुह्तार में है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
अगर इमाम को कमी का यकीन हो, तो उन पर दोहराना लाज़िम है, सिवाय उनके जिन्हें पूर्ण होने का यकीन हो। [1]	अगर इमाम को कम का यकीन हो तो उन पर दोहराना लाज़िम है मगर उनमें से जिसे पूरा होने का यकीन हो। (त)

फ़तह अल-क़दीर में है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
क्योंकि उसका यकीन किसी दूसरे के यकीन से बातिल (अमान्य) नहीं होता। [2]	क्योंकि उसका यकीन किसी दूसरे के यकीन से बातिल नहीं हो सकता। (त)

और अगर मक्तदियों को अठारह का यकीन है और इमाम को बीस में शक हो, तो इमाम स्वयं भी दो और पढ़ेगा और मक्तदियों के यकीन का अनुसरण (इक्तिदा) करेगा और वे जमात से पढ़ी जाएँगी। दुर्रे मुख्तार में है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
अगर इमाम और कौम में मतभेद हो: अगर इमाम यकीन पर है तो नहीं दोहराएगा, अन्यथा उनके कहने पर दोहराएगा। [3]	अगर इमाम और मक्तदियों के बीच मतभेद हो जाए, अगर इमाम को यकीन हो तो न दोहराए और अगर यकीन न हो तो मक्तदियों की बात विश्वसनीय होने के कारण दोहराया जाएगा। (त)

---

1. रद्द अल-मुह्तार, बाब सुजूद अल-सह्व, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 2/50.
2. फ़तह अल-क़दीर, बाब सुजूद अल-सह्व, नूरिया रज़विया, सक्खर, 1/457.
3. दुर्रे मुख्तार, बाब सुजूद अल-सह्व, मुज्तबाई, दिल्ली, 1/103.

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

لیحرر (غور طلب ہے۔ت) واللہ تعالٰی اعلم

بستم حاملہ کو بھی مثل مرضعہ روزہ نہ رکھنے کی اجازت اسی صورت میں ہے کہ اپنے یا بچے کے ضرر کا اندیشہ غلبہ ظن کے ساتھ ہو نہ کہ مطلقاً جیسا کہ اشتہار نے زعم کیا۔

بست و یکم جب رکعاتِ تراویح میں اختلاف پڑے کہ بیس پڑھیں یا اٹھارہ، تو اس میں نہایت کثرت سے مختلف صورتیں ہیں، اُن کی تمام تر تفصیل اور اُن کے اصول کی تاصیل اور اُن کے احکام تحقیق و تحصیل فقیر نے تعلیقاتِ ردالمحتار میں ذکر کی یہاں اجمالاً اتنا گزارش کہ نہ مطلقاً اختلافِ امام و قوم کی حالت میں مقتدیوں کو دو رکعت پڑھنے کا حکم، نہ مطلقاً تنہا پڑھنے کا حکم، نہ یہ حکم مطلقاً امام کو کسی عدد پر یقین نہ ہونے کے ساتھ خاص، مثلاً مقتدیوں کا یقین ہے کہ بیس ہو گئی اور امام کو شک تھا یا اٹھارہ کا یقین ہی ہے تو مقتدی اصلاً دو رکعت نہ پڑھیں گے، نہ جماعت سے نہ تنہا، کہ جب انہیں تراویح کامل ہو جانے کا یقین ہے تو اب انہیں امام کے شک یا یقین سے زیادہ کا کیونکر حکم ہو سکتا ہے، اپنے جزم پر غیر کا جزم بھی حاکم نہیں ہو سکتا نہ کہ شک، ردالمحتار میں ہے:

عربی	اردو ترجمہ
لو تیقن الامام بالنقص لزمھم الاعادۃ الامن تیقن منھم بالتمام ۱۔	اگر امام کو کم کا یقین ہو تو ان پر اعادہ لازم ہے مگر ان میں سے جسے تکمیل کا یقین ہو(ت)

فتح القدیر میں ہے:

عربی	اردو ترجمہ
لان یقینه لا یبطل بیقین غیره ۲۔	کیونکہ اس کا یقین کسی دوسرے کے یقین سے باطل نہیں ہوسکتا۔ (ت)

اور اگر مقتدیوں کو ۱۸ کا یقین ہے اور امام کو بیس کا شک ہو تو خود امام بھی دو اور پڑھے گا اور یقینِ مقتدیاں کی اقتداء کرے گا اور جماعت سے پڑھی جائیں گی۔ درمختار میں ہے:

عربی	اردو ترجمہ
لو اختلف الامام والقوم فلو الامام علی یقین لم یعد والا عاد بقولهم ۳۔	اگر امام اور مقتدیوں کے درمیان اختلاف ہو گیا اگر امام کو یقین ہو تو اعادہ نہ کرے اور اگر یقین نہ ہو تو مقتدیوں کا قول معتبر ہونے کی وجہ سے اعادہ ہوگا۔(ت)

---

۱ ردالمحتار باب سجود السہو دار احیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۵۰ ۲ فتح القدیر باب سجود السہو نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۴۵۷ ۳ در مختار باب سجود السہو مجتبائی دہلی ۱/ ۱۰۳

Fatawa Rizvia Volume 10

In Fath al-Qadir, it is stated: If the Imam repeated the prayer and the followers repeated it with him, their following of him is correct. If the Imam repeated the prayer and the people repeated it following him, their following will be correct. (T)

Twenty-second: A Hafiz who has completed one recitation (of the Quran) and now wishes to recite it again in another location on different dates where people have not yet heard the Great Quran; according to the correct and reliable school of thought, there is no reason at all for its impermissibility, nor does it make sense for there to be no reward for listening to the Quran. It is evident that during those nights, he too will be performing Taraweeh, not just voluntary (nafl) prayers. Therefore, he can certainly be the Imam of Taraweeh, and when he can be the Imam of Taraweeh, how can he be forbidden from reciting the Great Quran again? And when it is not forbidden, undoubtedly whatever portion of the Great Quran he recites in it will be within the correct Sunnah Taraweeh. Then, what is the meaning of not receiving a reward? And the reasoning that "he is now reciting voluntary (nafl) and the followers want to hear what is obligatory" is even more flawed and weak. Even the first completion (Khatm) in Taraweeh is not obligatory (wajib), it is only a Sunnah. Repeating the completion, although not a Sunnah Mu'akkadah for the Hafiz, is before the performance [of the act]. After the occurrence of the Sunnah, let alone that, however much he recites, the obligation (Fard) will be fulfilled, because the initial obligation in prayer, even if it is a single verse, if the entire Great Quran is recited in one rak'ah, it all counts as obligatory (Fard), because it is an individual instance of "recite what is easy of the Quran" (Divine Command). Therefore, if someone forgets the Surah and goes into Ruku' (bowing), and then remembers it during Ruku', the command is to leave the Ruku', stand up, recite the Surah, and then perform the Ruku' again. Although adding a Surah was only mandatory (wajib), and abandoning an obligatory (fard) act for a mandatory (wajib) one is not permissible—like someone who forgets the first sitting (Qa'da al-Ula) and stands up straight, it is not permissible for him to return because the sitting was mandatory and the standing is obligatory—but the Surah he recites will also count as an obligation. Thus, an obligation was abandoned for an obligation. Therefore, if he stands up and recites the Surah, and thinking that he has already performed the Ruku', does not repeat the Ruku', the prayer will become invalid because the obligation that was abandoned for an obligation is gone. It was obligatory for him to repeat the Ruku'.

In Radd al-Muhtar, it is stated: In al-Mubtaghi: If one forgets the Surah and bows, he should abandon the bowing, return to the standing position, and recite... In al-Bahr: when he returns and recites the Surah... In al-Mubtaghi, it is stated: If one forgot to recite the Surah and performed Ruku', then let him leave the Ruku' and return to the standing position (Qiyam) and recite. End. It is in [al-]Bahr that when he returned and recited the Surah, then the Surah as...

---

1 Fath al-Qadir, Chapter on Sijdah al-Sahw, Nooria Razavia, Sukkur 7/454

फ़तावा रज़विया जिल्द दस

फत्ह अल-क़दीर में है: इन आआद अल-इमाम अल-सलात व आआदु म'अहू मुक़्तदीन बिही सह्ह इक़्तिदाउहुम। अगर इमाम ने नमाज़ दोहराई और लोगों ने उसकी इक़्तिदा में (नमाज़) दोहराई तो उनकी इक़्तिदा दुरुस्त होगी। (त)

बाईसवाँ: एक हाफ़िज़ जो एक बार (कुरान) खत्म कर चुका है और अब दूसरी तारीखों में दूसरी जगह सुनाना चाहता है जहाँ अभी लोगों ने क़ुरान-ए-अज़ीम नहीं सुना है, तो सही और विश्वसनीय मत के अनुसार इसकी मनाही का कोई कारण नहीं है, और न ही इस क़ुरान को सुनने का सवाब न मिलने का कोई अर्थ है। ज़ाहिर है कि उन रातों में वह भी तरावीह ही पढ़ेगा, न कि केवल नफ़्ल। तो वह ज़रूर तरावीह का इमाम हो सकता है, और जब वह तरावीह का इमाम बन सकता है, तो दोबारा क़ुरान-ए-अज़ीम पढ़ने से उसे कैसे रोका जा सकता है? और जब इससे मना नहीं है, तो निस्संदेह वह उसमें जो कुछ भी क़ुरान-ए-अज़ीम पढ़ेगा, वह सुन्नत के अनुसार सही तरावीह में ही होगा। फिर सवाब न मिलने का क्या अर्थ? और यह तर्क देना कि "वह अब नफ़्ल सुना रहा है और मुक़्तदी वाजिब सुनना चाहते हैं", और भी अधिक दोषपूर्ण और कमज़ोर है। तरावीह में पहला ख़त्म (समापन) भी वाजिब नहीं है, केवल सुन्नत है। दोबारा ख़त्म करना, हालाँकि हाफ़िज़ पर सुन्नत-ए-मुअक्कदा नहीं है, लेकिन यह अमल से पहले की बात है। सुन्नत के अदा होने के बाद, जितनी भी तिलावत की जाएगी वह फ़र्ज़ ही अदा होगा क्योंकि नमाज़ में प्रारंभिक फ़र्ज़ चाहे एक ही आयत हो, लेकिन यदि पूरा क़ुरान-ए-अज़ीम एक रकअत में पढ़ा जाए, तो वह सब फ़र्ज़ ही माना जाएगा, क्योंकि यह इस आयत का हिस्सा है: "क़ुरान में से जो आसान हो उसे पढ़ो" (ईश्वरीय आदेश)। इसलिए, यदि कोई सूरह भूलकर रुकू में चला जाए और फिर रुकू में उसे याद आए, तो आदेश है कि वह रुकू को छोड़े और खड़ा होकर सूरह पढ़े और फिर दोबारा रुकू करे। हालाँकि सूरह मिलाना केवल वाजिब था और वाजिब के लिए फ़र्ज़ को छोड़ना जायज़ नहीं है—जैसे कोई पहला कायदा (क़अदह ऊला) भूलकर सीधा खड़ा हो जाए, तो अब उसका लौटना जायज़ नहीं क्योंकि कायदा वाजिब था और क़ियाम (खड़ा होना) फ़र्ज़ है—लेकिन वह जो सूरह पढ़ेगा वह भी फ़र्ज़ ही होगा। तो फ़र्ज़ के लिए फ़र्ज़ को छोड़ा गया। इसलिए, यदि वह खड़ा होकर सूरह पढ़े और यह सोचकर कि रुकू तो पहले ही कर चुका हूँ, दोबारा रुकू न करे, तो नमाज़ बातिल (अमान्य) हो जाएगी, क्योंकि वह फ़र्ज़ जो फ़र्ज़ के लिए छोड़ा गया था, वह खत्म हो चुका था। उस पर रुकू दोबारा करना फ़र्ज़ था।

रद अल-मुह्तार में है: फ़ी अल-मुब़तग़ी लव सहा अन अल-सूरत फ़-रक़'अ यर्फ़ुद अल-रुकूअ व यऊदु इल-अल-क़ियामि व यक़रउ अह् फ़ी अल-ब़हर अन्नहु इज़ा आ'द व क़रअ अल-सूरत। मुब़तग़ी में है: अगर सूरह पढ़ना भूल गया और रुकू कर लिया, तो रुकू छोड़कर क़ियाम की तरफ लौट आए और क़िराअत करे। इह्त (समाप्त) ब़हर में है: जब लौटकर सूरह पढ़ी तो सूरह बतौर...

---

1 फत्ह अल-क़दीर, बाब सुजूद अल-सह्व, नूरिया रज़विया, सुक्कुर 7/454

فتاوی رضویہ جلد دہم

فتح القدیر میں ہے: ان اعاد الامام الصلوۃ واعادو ا معہ مقتدین بہ صح اقتدائھم۔ اگر امام نے اعادہ نماز کیا اور لوگوں نے اس کی اقتدا میں اعادہ کیا تو ان کی اقتدا درست ہو گی۔ (ت)

بست و دوم حافظ کہ ایک بار ختم کر چکا اب دوسری تاریخوں میں دوسری جگہ سنانا چاہتا ہے جہاں ابھی لوگوں نے قرآن عظیم نہیں سنا ہے تو مذہب صحیح و معتمد پر اس کے عدم جواز کی اصلاً کوئی وجہ نہیں نہ اس قرآن سننے کا ثواب نہ ہونے کے کوئی معنی ، ظاہر ہے کہ ان راتوں میں وہ بھی تراویح ہی پڑھے گا نہ کہ نفل محض، تو ضرور تراویح کا امام ہو سکتا ہے اور جب امامِ تراویح ہو سکے گا تو دوبارہ قرآنِ عظیم پڑھنے سے کیونکر ممنوع ہو سکتا ہے، اور جب اس سے ممنوع نہیں تو بلاشبہ جو کچھ قرآنِ عظیم اُس میں پڑھے گا وہ تراویح صحیحہ مسنونہ ہی میں ہوگا، پھر ثواب نہ ملناچہ معنیٰ، اور اس کی یہ تعلیل کہ "وہ اب نفل سناتا ہے اور مقتدی واجب سننا چاہتے ہیں " اس سے بھی زیادہ فاسد و علیل۔ تراویح میں پہلا ختم بھی واجب نہیں صرف سنّت ہی ہے اور دوبارہ ختم کرنا اگر چہ حافظ پر سنّت مؤکدہ نہ تھامگر یہ قبل ایقاع ہے بعد وقوع سنّت در کنار جتنا پڑھے گا فرض ادا ہو گا کہ نماز میں فرضِ ابتدائی اگرچہ ایک ہی آیت ہے مگر سارا قرآن عظیم اگر ایک رکعت میں پڑھے سب فرض ہی واقع ہوتا ہے لانہ فرد فاقْرَءُوا مَا تَیَسَّرَ مِنَ الْقُرْآنِ ط (کیونکہ یہ بھی (ارشاد باری تعالیٰ) "جو قرآن میں سے آسان ہے پڑھو" کا فرد ہے ۔ت) ولہذا اگر سُورت بھول کر رکوع میں چلا جائے پھر رکوع میں یاد آئے تو حکم ہے کہ رکوع کو چھوڑے اور کھڑا ہو کر سُورت پڑھے اور پھر رکوع کرے حالانکہ ضمِ سورت صرف واجب تھا اور واجب کے لیے رفضِ فرض جائز نہیں جیسے قعدہ اولیٰ بھول کر جو سیدھا کھڑا ہو جائے اب اسے عود حلال نہیں کہ قعدہ واجب تھا اور قیام فرض ہے مگر سورت جو پڑھے گا یہ بھی فرض

واقع ہو گی تو فرض کے لیے رفضِ فرض ہوا، ولہذا اگر کھڑا ہو کر سُورت پڑھے اور اس خیال سے کہ رکوع تو پہلے کر چکا ہوں دوبارہ رکوع نہ کرے نماز باطل ہو جائیگی کہ فرض کے لیے جو فرض چھوڑا گیا وہ جاتا رہا تھا اس پر فرض تھا کہ رکوع دوبارہ کرتا۔

ردالمحتار میں ہے: فی المبتغی لوسھا عن السورۃ فرکع یرفض الرکوع و یعود الی القیام ویقرأ اھ فی البحرانہ اذا عاد و قرأ السورۃ المبتغٰی میں ہے اگر سُورت پڑھنا بھول گیا رکوع کر لیا تو رکوع چھوڑ کر قیام کی طرف لوٹ آئے اور قرأت کرے اھ بحر میں ہے جب لوٹ کر سُورت پڑھی تو سورت بطورِ

---

1 فتح القدیر باب سجود السہو نوریہ رضویہ سکھر ۷/ ۴۵۴

Fatawa-e-Razviya Volume 10

صارت فرضاً فقد عاد من فرض الی فرض لان کل فرض طولہ یقع فرضاً اہ ملتقطاً	**If the obligation is fulfilled, then this was a return from one obligation to another because the duration of every obligation is also included in the obligation. [Multaqata] (T)**

It is a very clear matter to recite a second completion (of the Quran) on subsequent nights for new people. If, hypothetically, a person finishes their Taraweeh today and then leads other people in Taraweeh on the same night and recites the Great Quran, it cannot be said that there will be no reward for listening to this Quran. According to the preferred narration of Imam Qazi Khan, it is evident that they consider following one who is performing voluntary prayers in Taraweeh to be permissible without any dislike; they only mention dislike in the case of the Imam if he intends to lead, otherwise, there is no dislike for him either. It is stated in Khaniya:

لوصلی العشاء والتراویح والوتر فی منزلہ ثم ام قوماً آخرین فی التراویح ونوی الامامۃ کرہ ولایکرہ للقوم، ولو لم ینوالامامۃ اولا وشرع فی الصلوۃ و اقتدی بہ الناس فی التراویح لم یکرہ لواحد منہما	**If someone offered Isha, Taraweeh, and Witr prayers at home, then led another group of people in Taraweeh with the intention of leading, it is disliked. However, it is not disliked for the congregation. If he did not initially intend to lead but had started the prayer and then people followed him in Taraweeh, then it is not disliked for either of them. (T)**

And according to the preferred narration of Imam Shams al-A'immah Sarakhsi, although this is impermissible and the Taraweeh of those people will not be valid,

لان التراویح سنۃ مستقلۃ شرعت بوجہ مخصوص فلا تتأدی الابہ۔	**Because Taraweeh is an independent Sunnah prescribed in a specific way, so it cannot be fulfilled except through that way.** Because the Taraweeh prayer is an independent Sunnah which is prescribed for a specific reason, it will only be fulfilled through that specific reason. (T)

And this is the most correct view, and the fatwa is based on this. It is stated in Alamgiriya from Muhit:

الامام يصلى التراويح فى مسجدين فى كل مسجد على الكمال لا يجوز۔	**It is not permissible for an Imam to lead full Taraweeh prayers in two mosques.** If one Imam leads complete Taraweeh prayers in two mosques, it is not permissible. (T)

1. Radd al-Muhtar, Chapter on Prostrations of Forgetfulness, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, 1/500
2. Fatawa Qazi Khan, Section on the Intention for Taraweeh, Naval Kishore, Lucknow, 1/111
3. Fatawa Hindiyya, Section on Taraweeh, Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/116

صارت فرضاً فقد عاد من فرض الی فرض لان کل فرض طولہ یقع فرضاً اہ ملتقطاً

फर्ज़ अदा हो गई तो यह एक फर्ज़ से दूसरे फर्ज़ की तरफ लौटना हुआ क्योंकि हर फर्ज़ की लम्बाई भी फर्ज़ में शामिल होती है। (मुल्तक़ता) (त)

एक बार ख़त्म करके दूसरी रातों में दूसरा ख़त्म नए लोगों को सुनाना तो निहायत साफ़ मामला है। अगर बिल-फर्ज़ कोई व्यक्ति आज अपनी तरावीह पढ़कर आज ही रात और लोगों की इमामत तरावीह में करे और क़ुरआन-ए-अज़ीम सुनाए, तो यह नहीं कह सकते कि इस क़ुरआन सुनने का सवाब नहीं होगा। इमाम क़ाज़ी ख़ां की पसंदीदा रिवायत पर तो ज़ाहिर है कि वह महज़ नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे तरावीह की इक़्तिदा बिला-कराहत जाइज़ मानते हैं, सिर्फ़ इमाम के हक़ में कराहत कहते हैं अगर वह इमामत की नीयत करे, वरना उस पर भी कराहत नहीं। ख़ानिया में फ़रमाया:

لوصلی العشاء والتراویح والوتر فی منزلہ ثم ام قوماً آخرین فی التراویح ونوی الامامۃ کرہ ولایکرہ للقوم، ولو لم ینوالامامۃ اولا وشرع فی الصلوۃ و اقتدی بہ الناس فی التراویح لم یکرہ لواحد منہما

अगर किसी ने नमाज़-ए-इशा, तरावीह और वित्र घर पर अदा किए, फिर तरावीह में लोगों की इमामत की नीयत से इमामत की तो यह मकरूह है लेकिन कौम के लिए यह मकरूह नहीं है। और अगर पहले उसने इमामत की नीयत नहीं की थी, नमाज़ शुरू कर दी थी कि लोगों ने तरावीह में उसकी इक़्तिदा कर ली तो अब किसी के हक़ में कराहत नहीं। (त)

और इमाम शम्सुल अइम्मा सरख़सी की पसंदीदा रिवायत पर अगरचे यह नाजाइज़ है और उन लोगों की तरावीह न होंगी,

لان التراویح سنۃ مستقلۃ شرعت بوجہ مخصوص فلا تتأدی الابہ۔

क्योंकि तरावीह एक स्वतंत्र सुन्नत है जो एक विशिष्ट तरीके से निर्धारित की गई है, इसलिए यह उसके बिना पूरी नहीं हो सकती।

क्योंकि नमाज़-ए-तरावीह स्वतंत्र सुन्नत है जो विशेष कारण पर मशरूअ है तो यह उसी विशेष कारण के साथ ही अदा होगी। (त)

और यही सबसे सही है और इसी पर फ़तवा है, आलमगीरिया में मुहीत से है:

الامام یصلی التراویح فی مسجدین فی کل مسجد علی الکمال لا یجوز۔	**एक इमाम का दो मस्जिदों में पूरी तरह से तरावीह की नमाज़ पढ़ाना जाइज़ नहीं है।** एक इमाम जो दो मस्जिदों में मुकम्मल तौर पर नमाज़-ए-तरावीह पढ़ाए तो यह जाइज़ नहीं है। (त)

---

1. रद-उल-मुहतार, बाब सुजूद-उस-सह्व, दार-ए-इह्या-उत-तुरास-अल-अरबी, 1/500
2. फ़तावा क़ाज़ी ख़ां, फ़स्ल फ़ी नियत-इत-तरावीह, नवल किशोर लखनऊ, 1/111
3. फ़तावा हिंदीया, फ़स्ल फ़ी-त-तरावीह, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, 1/116

पृष्ठ संख्या: 836 का पृष्ठ 606

صارت فرضاً فقد عاد من فرض الی فرض لان کل فرض طولہ یقع فرضاً اہ ملتقطاً

فرض ادا ہو گی تو یہ ایک فرض سے دوسرے فرض کی طرف لوٹنا ہوا کیونکہ ہر فرض کی طوالت بھی فرض میں شامل ہوتی ہے اہ ملتقطاً (ت)

ایک بار ختم کر کے دوسری راتوں میں دوسرا ختم نئے لوگوں کو سنانا تو نہایت صاف امر ہے اگر بالفرض کوئی شخص آج اپنی تراویح پڑھ کر آج ہی رات اور لوگوں کی امامت تراویح میں کرے اور قرآن عظیم سنائے تو یہ نہیں کہہ سکتے کہ اس قرآن سننے کا ثواب نہ ہوگا۔ روایت مختارہ امام قاضی خاں پر تو ظاہر ہے کہ وہ متنفل محض کے پیچھے تراویح کی اقتداء بلا کراہت جائز مانتے ہیں، صرف امام کے حق میں کراہت کہتے ہیں اگر نیت امامت کرے ورنہ اس پر بھی کراہت نہیں، خانیہ میں فرمایا:

لوصلی العشاء والتراویح والوتر فی منزلہ ثم ام قوماً آخرین فی التراویح ونوی الامامۃ کرہ ولایکرہ للقوم، ولو لم ینوالامامۃ اولا وشرع فی الصلوۃ و اقتدی بہ الناس فی التراویح لم یکرہ لواحد منہما

اگر کسی نے نماز عشاء، تراویح اور وتر گھر ادا کئے پھر تراویح میں لوگوں کی امامت کی نیت سے تراویح کی امامت کی تو یہ مکروہ ہے لیکن قوم کے لیے یہ مکروہ نہیں ہے اور اگر اولاً اس نے امامت کی نیت نہ کی تھی نماز میں شروع ہوا تھا کہ لوگوں نے تراویح میں اقتدا کر لی تو اب کسی کے حق میں کراہت نہیں۔ (ت)

اور روایت مختارہ امام شمس الائمہ سرخسی پر اگرچہ یہ ناجائز ہے اور ان لوگوں کی تراویح نہ ہوں گی،

لان التراویح سنة مستقلة شرعت بوجہ مخصوص فلا تتأدی الابہ۔

کیونکہ تراویح ایک مستقل سنت ہے جو مخصوص طریقے سے مقرر کی گئی ہے، اس لیے یہ اس کے بغیر ادا نہیں ہو سکتی۔

کیونکہ نمازِ تراویح مستقل سنت ہے جو وجہ مخصوص پر مشروع ہے تو یہ اسی وجہ مخصوص کے ساتھ ہی وہ ادا ہو گی (ت)

اور یہی اصح ہے اور اسی پر فتوٰی ہے، عالمگیریہ میں محیط سے ہے:

الامام یصلی التراویح فی مسجدین فی کل مسجد علی الکمال لا یجوز۔

ایک امام کا دو مسجدوں میں مکمل طور پر تراویح کی نماز پڑھانا جائز نہیں ہے۔

ایک امام جو دو مسجدوں میں مکمل طور پر نمازِ تراویح پڑھائے تو یہ جائز نہیں ہے (ت)

---

1. ردالمحتار باب سجود السھو داراحیاء التراث العربی ۱/۵۰۰
2. فتاوٰی قاضیخان فصل فی نیۃ التراویح نولکشور لکھنو ۱/۱۱۱
3. فتاوٰی ہندیہ فصل فی التراویح نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۱۱۶

Fatawa Rizwia Volume Ten

In the same work, from *Jami' al-Mudmarat Sharh al-Quduri*: "The verdict (fatwa) is based on this [view]."[1] In *Jawhara-e-Nayyira*: "If an Imam leads the full Taraweeh prayer in two separate mosques, Imam Abu Bakr al-Iskaf said it is not permissible, while Abu Nasr stated it is permissible for the congregants of both mosques. Abu al-Layth chose the opinion of al-Iskaf, and that is what is correct."[2] If an Imam leads full Taraweeh prayers in two mosques, Sheikh Abu Bakr al-Iskaf said it is not permissible, and Sheikh Abu Nasr said it is permissible for the people of both mosques; Sheikh Abu al-Layth adopted al-Iskaf's view and this is the correct one. (T)

Also, from *Al-Muhit* in *Hindiyyah*: "If someone performs Taraweeh behind an imam who is offering an obligatory (Fard), Witr, or voluntary (Nafl) prayer, the more correct view is that such following (Iqtida) is not valid because it is disliked (Makruh) and contrary to the practice of the righteous predecessors."[3] If someone performed Taraweeh prayer following a person who was praying an obligatory, Witr, or voluntary prayer, this following is not correct because it is disliked and contrary to the practice of the predecessors. (T)

However, this does not mean that the prayer itself is invalid; not being Taraweeh is one thing, and the prayer not being established at all is another. "Do you not see that the reason (illah) given is dislike (karahat) and opposition to tradition (Ma'thur)? These two neither negate the following (Iqtida) nor do they invalidate the prayer." Have you not seen that the cause was designated as dislike and opposition to tradition, and these two are not contrary to following (the imam) nor do they invalidate the prayer. (T)

So, even if that prayer is certainly not Taraweeh, it is a valid prayer and purely voluntary (Nafl). In purely voluntary prayer, listening to the Quran is also obligatory (Fard), and there is no reason why there should be no reward for fulfilling this obligation. Therefore, the reward for listening to the Quran exists here as well. Yes, according to the preferred legal opinion (*mufta biha*) in this specific case—namely, when an imam leads others after finishing his own Taraweeh on the same night—it can be said they will not receive the reward for completing the Quran *within* Taraweeh, as it is not [technically] Taraweeh. But in the first scenario, there is no basis for even that claim, as that prayer is undoubtedly Taraweeh and that completion is a completion within Taraweeh. The fact is that in this matter as well, Maulvi Sahab has... Maulvi Abdul Hai Sahab...

[1] Fatawa Hindiyyah, Section on Taraweeh, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/116. [2] Al-Jawhara al-Nayyira, Chapter on Qiyam in the month of Ramadan, Maktaba Imdadia Multan, 1/118. [3] Fatawa Hindiyyah, Section on Taraweeh, Noorani Kutub Khana Peshawar, 1/117.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (दसवीं)

इसी में 'जामे-उल-मुज़मरात शरह क़ुदूरी' से है: "अल-फ़तवा अला ज़ालिक" १ (फ़तवा इसी क़ौल पर है)। 'जौहरा-ए-नय्यिरा' में है: "अगर कोई इमाम दो मस्जिदों में मुकम्मल तौर पर नमाज़-ए-तरावीह पढ़ाए तो इमाम अबू बक्र अल-इस्काफ़ ने फ़रमाया यह जायज़ नहीं, और अबू नसर ने कहा दोनों मस्जिदों वालों के लिए जायज़ है। अबू अल-लैस ने इस्काफ़ के क़ौल को चुना और यही सही है।" २ अगर कोई इमाम दो मस्जिदों में मुकम्मल तौर पर नमाज़-ए-तरावीह पढ़ाए तो शेख़ अबू बक्र इस्काफ़ ने फ़रमाया यह जायज़ नहीं, और शेख़ अबू नसर ने कहा दोनों मस्जिदों वालों के लिए जायज़ है, शेख़ अबुल लैस ने इस्काफ़ के क़ौल को इख़्तियार किया और यही सही है। (त)

इसके अलावा 'हिन्दिया' में 'मुहीत' से है: "अगर किसी ने तरावीह की नमाज़ ऐसे इमाम के पीछे पढ़ी जो फ़र्ज़, वित्र या नफ़्ल नमाज़ पढ़ रहा था, तो सही क़ौल यह है कि ऐसी इक़्तदा (अनुकरण) दुरुस्त नहीं क्योंकि यह मकरूह (नापसंद) है और पूर्वजों (सलफ़) के अमल के ख़िलाफ़ है।" ३ अगर किसी ने नमाज़-ए-तरावीह ऐसे शख़्स की इक़्तदा में अदा की जो फ़र्ज़ या वित्र या नफ़्ल पढ़ रहा था तो यह इक़्तदा दुरुस्त नहीं क्योंकि यह मकरूह और अमल-ए-अस्लाफ़ के मुख़ालिफ़ है। (त)

मगर इसके ये मायने नहीं कि नमाज़ ही नहीं होगी; तरावीह न होना एक बात है और नमाज़ का न होना दूसरी बात है। "क्या आपने नहीं देखा कि इसकी वजह कराहत और रिवायत के विरोध को बताया गया है? ये दोनों न तो इक़्तदा के विपरीत हैं और न ही नमाज़ को ख़राब करती हैं।" आपने देखा नहीं कि इल्लत (कारण) कराहत और मुख़ालफ़त-ए-मासूर को क़रार दिया गया है और ये दोनों इक़्तदा के मनाफ़ी नहीं और न ही नमाज़ को फ़ासिद (अमान्य) करती हैं। (त)

तो वह नमाज़ अगरचे तरावीह नहीं, यक़ीनन सही नमाज़ और केवल नफ़्ल है, और केवल नफ़्ल में भी क़ुरआन सुनना फ़र्ज़ है और इस फ़र्ज़ की अदायगी पर सवाब (पुण्य) न मिलने की कोई वजह नहीं है, तो क़ुरआन सुनने का सवाब यहाँ भी है। हाँ, मुफ़्ता-बिहा (जिस पर फ़तवा दिया गया है) रिवायत के अनुसार इस विशिष्ट मामले में—अर्थात् जब इमाम अपनी तरावीह पढ़कर उसी रात दूसरों की इमामत करे—यह कहा जा सकता है कि उन्हें तरावीह में क़ुरआन मुकम्मल करने (ख़त्म-ए-क़ुरआन) का सवाब नहीं मिलेगा क्योंकि वह तरावीह नहीं है। और पहली स्थिति में तो इसकी भी कोई गुंजाइश नहीं है क्योंकि वह नमाज़ निस्संदेह तरावीह है और वह ख़त्म, तरावीह में ही ख़त्म है। बात यह है कि इस मसले में भी मौलवी साहब ने मौलवी अब्दुल हई साहब...

१ फ़तावा हिन्दिया, तरावीह का अध्याय, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, १/११६। २ अल-जौहरातुन-नय्यिरा, रमज़ान के महीने में क़ियाम का अध्याय, मक्तबा इमदादिया मुल्तान, १/११८। ३ फ़तावा हिन्दिया, तरावीह का अध्याय, नूरानी कुतुब ख़ाना पेशावर, १/११७।

فتاوی رضویہ جلد دہم

اسی میں جامع المضمرات شرح قدوری سے ہے: الفتوی علی ذلک ۱ (فتوی اسی قول پر ہے)۔ جوہرہ نیرہ میں ہے: لو صلی امام التراویح فی مسجدین فی کل مسجد علی الکمال قال ابوبکر الاسکاف لایجوز وقال ابو نصر یجوز لاھل المسجدین واختار ابو اللیث قول الاسکاف وھو الصحیح ۲۔ اگر کوئی امام دو مساجد میں مکمل طور پر نماز تراویح پڑھائے تو شیخ ابوبکر اسکاف نے فرمایا یہ جائز نہیں، اور شیخ ابونصر نے کہا دونوں مساجد والوں کے لئے جائز ہے، شیخ ابواللیث نے اسکاف کے قول کو اختیار کیا اور یہی صحیح ہے (ت)

نیز ہندیہ میں محیط سے ہے: لوصلی التراویح مقتدیا بمن یصلی مکتوبۃ او وترا ونافلۃ الاصح انہ لایصح الاقتداء بہ لانہ مکروہ مخالف لعمل السلف ۳۔ اگر کسی نے نماز تراویح ایسے شخص کی اقتدا میں ادا کی جو فرض یا وتر یا نفل پڑھ رہا تھا تو یہ اقتداء درست نہیں کیونکہ یہ مکروہ اور عمل اسلاف کے مخالف ہے (ت)

مگر اس کے یہ معنی نہیں کہ نماز ہی نہ ہوگی ، تراویح نہ ہونا اور بات ہے اور نماز نہ ہونا اور بات، الاتری انہ انما علل بالکراھۃ ومخالفۃ الماثور وھما لاینفیان الاقتداء ولا یفسدان الصلوۃ۔ آپ نے دیکھا نہیں کہ علت کراہت اور مخالفت ماثور کو قرار دیا گیا ہے اور یہ دونوں اقتداء کے منافی نہیں اور نہ ہی نماز کو فاسد کرتی ہے (ت)

تو وہ نماز اگر چہ تراویح نہیں یقینا نماز صحیح و نفل محض ہے اور نفل محض میں بھی استماع قرآن فرض ہے اور اس ادائے فرض پر ثواب نہ ہونے کی کوئی وجہ نہیں تو قرآن سننے کا ثواب یہاں بھی ہے ہاں روایت مفتی بہا پر اس صورت خاصہ میں یعنی جبکہ امام اپنی تراویح پڑھ کر

اسی رات اوروں کی امامت کرے یہ کہہ سکتے ہیں کہ تراویح میں ختم قرآن کا انہیں ثواب نہ ملے گا کہ یہ تراویح نہیں، اور صورت اولیٰ میں تو اس کی طرف بھی اصلاً راہ نہیں کہ وہ نماز بلا شبہ تراویح اور وہ ختم ختم فی التراویح ہے، بات یہ ہے کہ اس مسئلہ میں بھی مولوی صاحب نے مولوی عبدالحی صاحب...

۱ فتاوی ہندیہ فصل فی التراویح نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۱۱۶ ۲ الجوہرۃ النیرہ باب قیام شہر رمضان مکتبہ امدادیہ ملتان ۱/۱۱۸ ۳ فتاوی ہندیہ فصل فی التراویح نورانی کتب خانہ پشاور ۱/۱۱۷

Fatawa Razawiya - Volume 10

...followed Lakhnavi. Molvi Sahab Lakhnavi quotes from Khazanat al-Riwayāt:

| Al-Saghnāqī said: An Imam finished the Qur'an in Tarāwīḥ once, and finished it a second time with another group; this second group does not exit from being followers of the Sunnah, because the Imam has fulfilled the Sunnah and it has become voluntary (nafl) for him. Thus they achieve the reward of nafl prayer but do not achieve the reward of Tarāwīḥ prayer.[1] | Sheikh Saghnāqī says: If the Imam has finished the Qur'an once in Tarāwīḥ, the second group will not be considered to have fulfilled the Sunnah, because the Imam had already fulfilled the Sunnah. Now it is nafl for him; people will get the reward of nafl prayer but will not get the reward of Tarāwīḥ prayer. (T) |

It is evident that its basis is that weak opinion that when the completion of the Qur'an occurs, Tarāwīḥ no longer remains a Sunnah.

| As is made clear by his saying "they achieve the reward of nafl prayer" and his saying "and they do not achieve the reward of Tarāwīḥ prayer." | As his statement is making clear that they will get the reward of nafl prayer, and also this statement that they will not get the reward of Tarāwīḥ prayer. (T) |

And this opinion is weak and unaccepted. The most correct (aṣaḥḥ), reliable, and followed view is that even if the completion occurs, Tarāwīḥ remains Sunnat Mu'akkadah throughout the entire holy month. On this, certainty was expressed in Jawharah and the same was called most correct in Sirāj al-Wahhāj. It is stated in 'Ālamgīriyah:

| If the completion occurs on the night of the nineteenth or twenty-first, Tarāwīḥ are not to be abandoned for the rest of the month because they are Sunnah. Thus it is in al-Jawharah al-Nayyirah. The most correct is that abandoning it is disliked (makrūh) for him, as it is in al-Sirāj al-Wahhāj.[2] | If the Qur'an is finished on the nineteenth or twenty-first, Tarāwīḥ should not be abandoned in the rest of the month because these are Sunnah, as it is in Al-Jawharah al-Nayyirah. The most correct is that abandonment of Tarāwīḥ is disliked, as it is in Al-Sirāj al-Wahhāj. |

So now there remains no choice to deviate from this. It is stated in Fatawa Khayriyah, Volume One:

| You are aware that after the specification of its being the most correct, one does not deviate from it towards another.[3] | You are aware that when specification is found on a ruling being the most correct, there will be no deviation towards another saying. (T) |

In its second volume it is stated: "Where the most correct (aṣaḥḥ) is proven, one does not deviate from it."[4] (When the most correct is proven, then from it...

---

[1] Majmū'ah Fatāwā with reference to Khazanat al-Riwayāt, Kitāb al-Ṣalāh, Maṭba' Yūsufī Lucknow, 1/142. [2] Fatāwā Hindiyyah, Chapter on Tarāwīḥ, Nūrānī Kutub Khānah Peshawar, 1/118. [3] Fatāwā Khayriyah, Kitāb al-Ṭalāq, Dār al-Ma'rifah Beirut, 1/39. [4] Fatāwā Khayriyah, Kitāb al-Ṣulḥ, Kitāb al-Ṭalāq, 2/104.

फतावा रज़विया - जिल्द 10

...लखनवी का अनुसरण किया है। मौलवी साहब लखनवी 'ख़ज़ानत-उर-रिवायत' से उद्धृत करते हैं:

| अस-सग़नाक़ी ने कहा: यदि एक इमाम ने तरावीह में एक बार क़ुरआन ख़त्म किया और फिर दूसरी क़ौम के साथ दोबारा ख़त्म किया, तो यह दूसरी क़ौम सुन्नत अदा करने वाली नहीं मानी जाएगी क्योंकि इमाम सुन्नत अदा कर चुका था, अब उसके लिए वह नफ़्ल है। इसलिए लोग नफ़्ल नमाज़ का सवाब तो पाएंगे लेकिन तरावीह का सवाब नहीं पाएंगे।[1] | शेख़ सग़नाक़ी कहते हैं इमाम ने एक मर्तबा तरावीह में क़ुरआन ख़त्म किया तो दूसरी क़ौम सुन्नत को अदा करने वाली क़रार नहीं पाएगी क्योंकि इमाम सुन्नत अदा कर चुका था अब इसके लिए वह नफ़्ल है, लोग नमाज़ नफ़्ल का सवाब तो पाएंगे मगर तरावीह का सवाब नहीं पाएंगे। (त) |

ज़ाहिर है कि इसका मबनी (आधार) वह क़ौल ज़ईफ़ (कमज़ोर मत) है कि जब ख़त्म-ए-क़ुरआन हो जाए तो तरावीह सुन्नत नहीं रहतीं,

| जैसा कि उनका यह क़ौल वाज़ेह (स्पष्ट) कर रहा है "वे नफ़्ल नमाज़ का सवाब पाएंगे" और उनका यह क़ौल "वे तरावीह का सवाब नहीं पाएंगे"। | जैसा कि उनका यह क़ौल वाज़ेह कर रहा है कि वे नमाज़ नफ़्ल का सवाब पाएंगे और यह क़ौल भी कि वे तरावीह का सवाब नहीं पाएंगे। (त) |

और यह क़ौल ज़ईफ़ व ना-माख़ूज़ है। अस़ह (सबसे सही) व मोतमद (विश्वसनीय) व मामूल-बह (जिस पर अमल हो) यही है कि ख़त्म अगरचे हो जाए तरावीह सारे माह-ए-मुबारक में सुन्नत-ए-मुअक्कदा हैं, इसी पर 'जौहरा' में जज़्म (दृढ़ता) किया और इसी को 'सिराज अल-वहाज' में 'अस़ह' कहा। 'आलमगीरिया' में है:

| अगर क़ुरआन उन्नीसवीं या इक्कीसवीं रात को ख़त्म हो जाए, तो महीने के शेष दिनों में तरावीह नहीं छोड़नी चाहिए क्योंकि ये सुन्नत हैं। जैसा कि 'अल-जौहरा अल-नय्यिरा' में है। अस़ह यह है कि तरावीह का तर्क(छोड़ना) मकरूह है, जैसा कि 'अस-सिराज अल-वहाज' में है।[2] | अगर क़ुरआन उन्नीसवीं या इक्कीसवीं को ख़त्म हो गया तो बाक़ी माह में तरावीह को तर्क न किया जाए क्योंकि ये सुन्नत हैं, जैसा कि 'अल-जौहरा अल-नय्यिरा' में है। अस़ह यह है कि तरावीह का तर्क मकरूह है, जैसा कि 'अस-सिराज अल-वहाज' में है। |

तो अब इससे उदूल (पलायन/हटना) का इख़्तियार न रहा। 'फ़तावा खैरिया' जिल्द अव्वल में फ़रमाया:

| आप बाख़बर हैं कि जब किसी हुक्म के'अस़ह' होने पर तसरीह (स्पष्टीकरण) मिल जाए, तो दूसरे क़ौल की तरफ़ उदूल नहीं किया जाएगा।[3] | आप बाख़बर हैं कि जब इस हुक्म के अस़ह होने पर तसरीह मिल जाए तो दूसरे क़ौल की तरफ़ उदूल नहीं किया जाएगा। (त) |

उसी की जिल्द स़ानी (दूसरी) में फ़रमाया: "जहाँ अस़ह का सुबूत हो तो फिर उससे उदूल नहीं किया जाता।"[4] (जब अस़ह का सुबूत हो तो फिर उससे...

---

[1] मजमुआ फतावा बहवाला ख़ज़ानत-उर-रिवायत किताबुस-सलात मतबा यूसुफी लखनऊ 1/142 [2] फतावा हिंदिया फ़स्ल फ़ित-तरावीह नूरानी कुतुब खाना पेशावर 1/118 [3] फतावा खैरिया किताबुत-तलाक़ दारुल मारिफ़ा बेरुत 1/39 [4] फतावा खैरिया किताबुस-सुल्ह किताबुत-तलाक़ 2/104

لکھنوی کا اتباع کیا ہے۔ مولوی صاحب لکھنوی خزانہ الروایات سے ناقل ہیں:

| قال السغناقي، امام ختم فی التراویح مرة و ختم ثانیا بغیر هذا القوم لا یخرج هذا القوم الثانی عن السنیة لان الامام خرج السنیة فصار له نفلا فیدرکون ثواب صلوة النفل ولا یدرکون ثواب صلوة التراویح[1]۔ | شیخ سغناقی کہتے ہیں امام نے ایک مرتبہ تراویح میں قرآن ختم کیا تو دوسری قوم سنت کو ادا کرنے والی قرار نہیں پائے گی کیونکہ امام سنت ادا کر چکا تھا اب اس کے لئے وہ نفل ہے، لوگ نماز نفل کا ثواب تو پائیں گے مگر تراویح کا ثواب نہیں پائیں گے (ت) |

ظاہر ہے کہ اس کا مبنی وہ قول ضعیف ہے کہ جب ختم قرآن ہو جائے تو تراویح سنت نہیں رہتیں،

| کما یفصح عنه قوله یدرکون ثواب صلوة النفل وقوله ولا یدرکون ثواب صلوة التراویح۔ | جیسا کہ ان کا یہ قول واضح کر رہا ہے کہ وہ نماز نفل کا ثواب پائیں گے اور یہ قول بھی کہ وہ تراویح کا ثواب نہیں پائیں گے۔ (ت) |

اور یہ قول ضعیف وناماخوذ ہے اصح و معتمد ومعمول بہ یہی ہے کہ ختم اگر چہ ہو جائے تراویح سارے ماہ مبارک میں سنت مؤکدہ ہیں، اسی پر جوہرہ میں جزم کیا اور اسی کو سراج وہاج میں اصح کہا۔ عالمگیریہ میں ہے:

| لوحصل الختم لیلة التاسع عشر او الحادی و العشرین لا یترك التراویح فی بقیة الشهر لانها سنة کذا في الجوهرة النیرة الاصح انه یکره له الترك کذا فی السراج الوهاج[2]۔ | اگر قرآن انیسویں یا اکیسویں کو ختم ہو گیا تو باقی ماہ میں تراویح کو ترک نہ کیا جائے کیونکہ یہ سنت ہیں، جیسا کہ الجوہرۃ النیرہ میں ہے۔ اصح یہ ہے کہ تراویح کا ترک مکروہ ہے، جیسا کہ السراج الوہاج میں ہے۔ |

تواب اس سے عدول کا اختیار نہ رہا۔ فتاوٰی خیریہ جلد اول میں فرمایا:

| انت علی علم بانه بعد التنصیص علی اصحیته لا یعدل عنه الی غیره[3]۔ | آپ باخبر ہیں کہ جب اس حکم کے اصح ہونے پر تصریح مل جائے تو دوسرے قول کی طرف عدول نہیں کیا جائیگا (ت) |

اسی کی جلد ثانی میں فرمایا: حیث ثبت الاصح لا یعدل عنه[4] (جب اصح کا ثبوت ہو تو پھر اس سے

---

[1] مجموعہ فتاوی بحوالہ خزانہ الروایات کتاب الصلوۃ مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/ ۱۴۲ [2] فتاوی ہندیہ فصل فی التراویح نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۱۱۸ [3] فتاوٰی خیریہ کتاب الطلاق دار المعرفۃ بیروت ۱/ ۳۹ [4] فتاوٰی خیریہ کتاب الصلح کتاب الطلاق ۲/ ۱۰۴

Fatawa Rizvia Volume 10

No deviation should be made. (Note) Maulvi Lakhnawi himself has written:

[Box 1] Left (Persian): The fatwa and the chosen opinion of researchers is that Tarawih is a separate Sunnah and Khatam (completion of Quran) is a separate Sunnah. Neither is dependent on the other, so after the completion, the Sunnah status of Tarawih will remain as it was. Right (Urdu): According to the fatwa and the chosen opinion of researchers, Tarawih is a separate Sunnah and the completion of the Quran is a separate Sunnah. These two are not dependent on each other, therefore, after the completion of the Quran, the Sunnah status of Tarawih will remain established as it was before. (T)

Despite knowing this, deviation from the fatwa was not at all permissible, and to avoid this, Maulvi Lakhnawi's justification is that:

[Box 2] Left (Persian/Arabic): On the basis of the fatwa, although Tarawih will be waived from the followers because in the Sunnah of Tarawih both the Imam and the follower are equal, there is a difficulty in the waiver of Khatam because jurists write in the chapter of following (Iqtida) that the weakness of the Imam's prayer, even if in one pillar, is a hindrance to following, as mentioned in Durr-ul-Mukhtar etc. However, following a resident by a traveler is correct during the time, and he completes four units, but not after the time in things that change, because it is the following of an obligatory-prayer performer behind a voluntary-prayer performer in the case of the sitting (Qa'da) if following in the first two units, or in recitation if following in the last two units. In this case, despite both Imam and follower having performed the Takbir of obligatory prayer, due to weakness in one part of the Imam's prayer, the ruling of invalidity of following was given. Thus, based on this, in the question's case, the ruling of non-waiver of Khatam from followers will also be given. Right (Urdu): On the basis of the fatwa, although Tarawih will be waived from the followers' responsibility because the Imam and followers are equal in the Sunnah of Tarawih, there is a difference regarding the waiver of Khatam because jurists, in the chapter of following (Iqtida), consider even a single pillar's weakness in the Imam's prayer as a hindrance to following, as mentioned in Durr-ul-Mukhtar etc. Following a resident by a traveler is correct during the time, and he performs four units, but later a change occurs, so following will not be correct. Because now, if he follows in the first two units, then regarding the sitting (Qa'da), the following of an obligatory-prayer performer behind a voluntary-prayer performer will become necessary, and if he follows in the last two

units, the same defect will follow regarding recitation. End. Although in this case, both Imam and follower said the Takbir of obligatory prayer, the ruling of invalidity of following was issued due to weakness in one part of the Imam's prayer. This...

1. Majmu'a Fatawa, Kitab-us-Salat, Matba' Yusufi, Lucknow, 2/134
2. Majmu'a Fatawa, Kitab-us-Salat, Matba' Yusufi, Lucknow, 1/135

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (दसवाँ भाग)

अदूल (विचलन) न किया जाए। (त) खुद मौलवी लखनवी साहब ने लिखा है:

[बॉक्स 1] बायां (फ़ारसी): मफ़्ती बे और मुख्तार मोहक़िक़ीन का मत यह है कि तरावीह एक अलग सुन्नत है और ख़त्म-ए-क़ुरआन एक अलग सुन्नत है। इन दोनों में से कोई भी दूसरे के अधीन नहीं है, इसलिए ख़त्म के बाद तरावीह की सुन्नियत उसी तरह बनी रहेगी जैसी थी। दायां (उर्दू): मफ़्ती बे और मुख्तार मोहक़िक़ीन के यहाँ यह है कि तरावीह अलग सुन्नत है और ख़त्म-ए-क़ुरआन अलग सुन्नत है। ये दोनों एक दूसरे के ताबे (अधीन) नहीं हैं, लिहाज़ा क़ुरआन के बाद सुन्नियत-ए-तरावीह उसी तरह क़ायम रहेगी जैसे पहले थी। (त)

इसके बावजूद भी मफ़्ती बे से फिरना (विचलित होना) हरगिज़ जायज़ नहीं था और इससे बचने के लिए मौलवी लखनवी साहब की यह तौजीह (स्पष्टीकरण) कि:

[बॉक्स 2] दायां (उर्दू): मफ़्ती बे के आधार पर अगरचे तरावीह मुक़्तदियों (अनुयायियों) के ज़िम्मे से साक़ित (समाप्त) हो जाएँगी क्योंकि सुन्नत-ए-तरावीह में इमाम और मुक़्तदी दोनों बराबर हैं, लेकिन ख़त्म के साक़ित होने में मतभेद है क्योंकि फ़ुक़हा (न्यायविद) इक़्तिदा (अनुसरण) के अध्याय में इमाम की नमाज़ की कमज़ोरी को, चाहे वह एक ही रुक्न (स्तंभ) में हो, इक़्तिदा के लिए बाधक मानते हैं जैसा कि 'दुर्रे मुख्तार' आदि में है। मुसाफ़िर (यात्री) का मुक़ीम (निवासी) के साथ वक़्ती नमाज़ में इक़्तिदा सही है और वह चार रकात भी अदा करे, लेकिन बाद में बदलाव आ जाता है, लिहाज़ा इक़्तिदा दुरुस्त नहीं होगी क्योंकि अब अगर पहली दो रकातों में इक़्तिदा करेगा तो क़ायदा (बैठने) के लिहाज़ से फ़र्ज़ अदा करने वाले का मुतनफ़्फ़िल (नफ़्ल पढ़ने वाले) के पीछे इक़्तिदा करना लाज़िम आएगा और अगर आख़िरी दो रकातों में इक़्तिदा करे तो क़िरात (पाठ) के लिहाज़ से यही ख़राबी लाज़िम आएगी। अंत। हालांकि इस सूरत में इमाम और मुक़्तदी दोनों ने फ़र्ज़ की तकबीर-ए-तहरीमा कही थी, लेकिन इमाम की नमाज़ के एक हिस्से की कमज़ोरी की वजह से इक़्तिदा के फ़साद (अमान्यता) का हुक्म जारी हो गया। इस...

1. मजमूआ फ़तावा, किताबुस सलात, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 2/134
2. मजमूआ फ़तावा, किताबुस सलात, मतबा यूसुफी, लखनऊ, 1/135

पेज 609 का 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

عدول نہ کیا جائے۔ت) خود مولوی لکھنوی صاحب نے لکھا:

[Box 1] مفتٰی بہ و مختار متحقین آنست کہ تراویح سنّت علیحدہ است و ختم سنّت علیحدہ پیچ ازیں ہر دو تابع دیگر نیست پس بعد ختم سنیت تراویح باقی خواھد ماند چنانکہ بود۔ 1 مفتی بہ اور مختار محققین کے ہاں یہ ہے کہ تراویح الگ سنت اور ختم قرآن الگ سنت ہے۔ یہ دونوں ایک دوسرے کے تابع نہیں لہذا قرآن کے بعد سنیت تراویح اسی طرح قائم رہے گی جیسے کہ پہلے تھی۔ (ت)

باوصف اس جاننے کے پھر مفتی بہ سے عدول ہرگز روا نہ تھا اور اس بچنے کے لئے مولوی لکھنوی صاحب کی یہ توجیہ کہ:

[Box 2] قول مفتی بہ پر۔ اگر چہ تراویح از ذمہ مقتدیاں ساقط خواھد شد چہ در سنت تراویح امام و مقتدی ہر دو برابر اند لیکن در سقوط ختم اشکا لیست چہ فقہا در باب اقتداء ضعف نماز امام را اگر چہ بہ یک رکن باشد مانع اقتداء می نویسند چنانچہ در در مختار وغیرہ مذکور است اما اقتداء المسافر بالمقیم فیصح في الوقت و یتم لا بعدہ فیما یتغیر لانہ اقتداء المفترض بالمتنفل في حق القعدۃ لواقتداء في الاولیین او القراءۃ لو اقتداء في الأخیریین۔ 2 انتہی دریں صورت باوجودیکہ امام و مقتدی ہر دو تحریمہ فرض بستہ، سبب ضعف یک جز از اجزاء نماز امام حکم بفساد اقتداء دادہ شد پس بناء علیہ در صورت سوال ہم حکم بعدم سقوط ختم از مقتدیان دادہ خواھد شد و ہمیں امر از عبارت قول مفتی بہ پر اگر چہ تراویح مقتدیوں کے ذمہ سے ساقط ہو جائیں گی کیونکہ سنت تراویح میں امام اور مقتدی دونوں برابر ہیں لیکن ختم کے سقوط میں اختلاف ہے کیونکہ فقہاء اقتداء کے باب میں نماز امام کے ضعف کو اگر چہ وہ ایک رکن میں ہو مانع اقتداء قرار دیتے ہیں جیسا کہ درمختار وغیرہ

میں ہے، مسافر کی اقتداء مقیم کے ساتھ وقتی نماز میں صحیح ہے اور وہ ادا بھی چار رکعت کرے لیکن بعد میں تبدیلی آجاتی ہے لہذا اقتداء درست نہیں ہو گی کیونکہ اب اگر پہلی دور کعات میں اقتداء کرے گا تو قعدہ کے اعتبار سے فرض ادا کرنے والے کی متنفل کی اقتداء لازم آئے گی اور اگر آخری دور کعات میں اقتداء کرے تو قرآت کے اعتبار سے یہی خرابی لازم آئیگی انتہی، حالانکہ اس صورت میں امام اور مقتدی دونوں نے فرض کی تکبیر تحریمہ کہی لیکن نماز امام کے ایک جزء کے ضعف کی وجہ سے فساد اقتداء کا حکم جاری ہو گیا۔ اس

1 مجموعہ فتاوی کتاب الصلوۃ مطبع یوسفی لکھنؤ ۲/ ۱۳۴ 2 مجموعہ فتاوی کتاب الصلوۃ مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/ ۱۳۵

[Right Box - Arabic Text]: Saghna'i [it is understood from Saghna'i that] whenever a dispute arises regarding the falling away or non-falling away of the completion [of the Quran], it is necessary for the Imam to vow a second completion along with Tarawih, saying: "For Allah, it is upon me to complete the Quran in the Tarawih prayer," so that his completion becomes obligatory and the following of the followers (muqtadis) becomes valid, as detailed in Khizanat al-Riwayah. And Allah knows best. Written by Muhammad Abdul Hai, may he be forgiven.

[Left Box - Urdu Commentary]: Based on the aforementioned question, the ruling will be that the completion of the Quran will not fall away from the responsibility of the followers, and this is what is understood from the text of Saghna'i. Therefore, wherever there is a dispute regarding the falling away or non-falling away of the completion, it is necessary for the Imam to make a vow for a second completion in Tarawih, saying: "For the sake of Allah's pleasure, the completion of the Quran is binding upon me in the Tarawih prayer," so that the completion of the Quran becomes obligatory upon him and the followers' following also becomes valid, as detailed in Khizanat-ul-Riwayah. And Allah knows best. The writer: Muhammad Abdul Hai, may he be forgiven. (T)

[Main Text]: In all fairness, adding to 'Shatranj' is better than 'Baghlah'. Firstly, in Sunnah and voluntary prayers, being 'weaker' does not prevent the validity of building upon it (following), otherwise, just as a person wearing clothes cannot pray behind one who is naked, similarly, one wearing a turban could not pray behind one wearing a cap because he is 'weaker' than the followers in terms of Sunnah. Secondly, to accept that Tarawih will fall away from the followers' responsibility and then to say it is necessary for the Imam to make a vow so that the followers' following becomes valid is a clear contradiction. Thirdly, the meaning of the Saghna'i text is definitely not that despite the validity of Tarawih, the completion will not fall away from the followers' responsibility just because the Imam has already finished once. Rather, its basis was explicitly that Tarawih prayers were for the purpose of the completion. When the completion was done, the Tarawih prayers also ended. Now the Imam is praying mere voluntary (Nafl) prayers, and Tarawih is not offered behind someone praying Nafl. Therefore, it was clarified that they will receive the reward of Nafl, not the reward of Tarawih. This meaning is clearly opposite to that meaning, not in agreement. Fourthly, it has been known from the beginning that congregational voluntary prayer by public invitation is not prescribed. When Tarawih prayers were

established in congregation, they would be limited to the inherited and narrated manner. And that is such that both Imam and follower make the intention for Tarawih; here 'weaker' and 'stronger' have no role. Therefore, the correction was given above that just as Tarawih will not be valid behind someone praying Nafl, similarly, they will not be performed behind someone praying an obligatory (Fard) prayer, even though the person praying Fard is certainly of greater strength. So, until a clear proof is provided...

[Footnote]: 1. Majmu'ah Fatawa regarding whether after one completion of the Quran it is Sunnah of Tarawih etc., Matba' Yusufi Lucknow, 1/251-52.

[दाहिना बॉक्स - अरबी]: सघनाई [से यह समझा जाता है कि] जब भी (कुरआन) समापन के समाप्त होने या न होने के संबंध में कोई विवाद उत्पन्न होता है, तो इमाम के लिए यह आवश्यक है कि वह तरावीह के साथ दूसरे समापन की मन्नत (नज़्र) माने और कहे: "अल्लाह के लिए, मैं तरावीह की नमाज़ में कुरआन पूरा करने की मन्नत मानता हूँ," ताकि उसका समापन अनिवार्य (वाजिब) हो जाए और मुक़्तदियों (अनुयायियों) का अनुसरण करना मान्य हो जाए, जैसा कि खिज़ानत-उल-रिवायह में विस्तार से बताया गया है। और अल्लाह बेहतर जानता है। मुहम्मद अब्दुल हई द्वारा लिखित, अल्लाह उन्हें क्षमा करे।

[बायाँ बॉक्स - उर्दू व्याख्या]: उपरोक्त प्रश्न के आधार पर, यही आदेश होगा कि मुक़्तदियों के ज़िम्मे से कुरआन का समापन समाप्त नहीं होगा, और सघनाई के कथन से यही बात समझ में आ रही है। इसलिए, जहाँ भी समापन के गिरने या न गिरने में मतभेद हो, वहाँ इमाम के लिए ज़रूरी है कि वह तरावीह में दूसरे समापन की मन्नत मानते हुए कहे कि मुझ पर अल्लाह की रज़ा के लिए तरावीह की नमाज़ में कुरआन का समापन लाज़िम है, ताकि उस पर कुरआन का समापन वाजिब हो जाए और मुक़्तदियों का अनुसरण भी सही हो जाए, जैसा कि खिज़ानत-उल-रिवायह में इसका विवरण है। और अल्लाह बेहतर जानता है। लेखक: मुहम्मद अब्दुल हई, अल्लाह उन्हें क्षमा करे। (त)

[मुख्य पाठ]: ईमानदारी से कहें तो, 'शतरंज' में इज़ाफ़ा 'बग़ला' से बेहतर है। पहली बात यह कि सुन्नत और नवाफ़िल (ऐच्छिक नमाज़) में दर्जा कम होना (अज़अफ़ियत) अनुसरण की वैधता में बाधक नहीं हो सकता, अन्यथा जिस तरह नग्न व्यक्ति के पीछे कपड़े पहने हुए व्यक्ति की नमाज़ नहीं हो सकती, उसी तरह टोपी पहनने वाले के पीछे पगड़ी बाँधने वाले की नमाज़ नहीं हो पाएगी क्योंकि वह सुन्नत के मामले में मुक़्तदियों से कमज़ोर (अज़अफ़) है। दूसरी बात, यह मानकर कि मुक़्तदियों के ज़िम्मे से तरावीह साक़ित (समाप्त) हो जाएगी, फिर यह कहना कि इमाम पर मन्नत मानना लाज़िम है ताकि मुक़्तदियों का अनुसरण सही हो, यह स्पष्ट विरोधाभास है। तीसरी बात, सघनाई की इबारत का यह अर्थ बिल्कुल नहीं है कि तरावीह के सही होने के बावजूद सिर्फ इस आधार पर कि इमाम एक बार ख़त्म कर चुका है, मुक़्तदियों के ज़िम्मे से ख़त्म साक़ित नहीं होगा। बल्कि इसका आधार स्पष्ट रूप से यह था कि तरावीह ख़त्म (कुरआन पूरा करने) के लिए थीं। जब ख़त्म हो गया तो तरावीह भी समाप्त हो गईं। अब इमाम मात्र नफ़्ल पढ़ रहा है और नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे तरावीह अदा नहीं होतीं। इसीलिए यह स्पष्ट किया गया कि वे नफ़्ल का सवाब पाएंगे, तरावीह का सवाब नहीं पाएंगे। यह

अर्थ उस अर्थ के स्पष्ट विपरीत है, न कि आपस में एक। चौथी बात, शुरू से ही ज्ञात है कि सार्वजनिक निमंत्रण के माध्यम से नफ़्ल की जमाअत शरीयत में नहीं है। और जब तरावीह जमाअत के साथ स्थापित हुईं, तो वे उसी तरीके तक सीमित होंगी जो विरासत में मिला है और वर्णित (मासूर) है। और वह इस तरह है कि इमाम और मुक़्तदी सभी तरावीह की नियत करते हैं, यहाँ कमज़ोर और ताक़तवर का कोई दखल नहीं। इसलिए ऊपर यह शुद्धि की गई कि जिस तरह नफ़्ल पढ़ने वाले के पीछे तरावीह साक़ित नहीं होगी, उसी तरह फ़र्ज़ पढ़ने वाले के पीछे भी अदा नहीं होगी, जबकि फ़र्ज़ पढ़ने वाला निश्चित रूप से अधिक शक्तिशाली स्थिति में है। तो जब तक स्पष्ट प्रमाण से सबूत न दिया जाए...

[पाद टिप्पणी]: १. मजमुआ फ़तावा इस बारे में कि एक बार कुरआन ख़त्म करने के बाद क्या तरावीह सुन्नत है आदि, मतबा यूसुफी लखनऊ, १ / २५१-५२।

पृष्ठ ८३६ का ६१०

[دایاں باکس - عربی]: سغنائی مفہوم شود ہر گاہ در باب سقوط ختم و عدم سقوط آں اختلاف واقع شد پس امام را لازم کہ ختم ثانی را مع تراویح بر خود نذر کردہ گیرد و گوید للہ ان اختم القرآن فی صلٰوۃ التراویح تا ختم او واجب شود و اقتدائے مقتدیان درست شود چنانچہ در خزانتہ الروایۃ تفصیل آں مذکور ست واللہ اعلم حررہ محمد عبدالحی عفا عنہ ۱ ۔

[بایاں باکس - اردو]: پر بناء کرتے ہوئے سوال مذکور کے جواب میں یہی حکم ہوگا کہ مقتدیوں کے ذمہ سے ختم قرآن ساقط نہیں ہو گا، اور عبارت سغنائی سے یہی بات مفہوم ہو رہی ہے لہٰذا جہاں بھی سقوط وعدم سقوط ختم میں اختلاف ہو جائے وہاں امام کے لیے ضروری ہے کہ وہ تراویح میں دوسرے ختم کی نذر مانتے ہوئے کہے کہ مجھ پر اللہ کی رضا کی خاطر نماز تراویح میں ختم قرآن لازم تاکہ اس پر ختم قرآن واجب ہو جائے اور مقتدیوں کی اقتداء بھی درست ہو جائے ، جیسا کہ خزانہ الروایۃ میں اس کی تفصیل ہے واللہ اعلم المحرر محمد عبد الحی عفا عنہ (ت)

[اصل متن]: انصافاً شطرنج میں اضافہ بغلہ سے بہتر اولاً سنن و نوافل میں اضعفیت مانع صحت بناء نہیں ہو سکتی ورنہ جس طرح عاری کے پیچھے لابس کی نماز نہیں ہو سکتی یونہی کلاہ پوش کے پیچھے عمامہ بند کی نماز نہ ہو سکے کہ وہ سنیت میں مقتدیوں سے اضعف ہے۔ ثانیاً یہ مان کر کہ مقتدیوں کے ذمہ سے تراویح ساقط ہو جائیگی پھر یہ فرمانا کہ امام پر نذر ماننا لازم کہ اقتدائے مقتدیان درست ہو صریح تناقض ہے۔ ثالثاً عبارت سغنائی کا ہرگز یہ مفاد نہیں کہ باوصف صحتِ تراویح صرف اس بنا پر کہ امام ایک بار ختم کر چکا ہے مقتدیوں کے ذمہ سے ختم ساقط نہ ہو گا بلکہ اس کا مبنی صراحۃً وہی تھا کہ تراویح ختم کے لیے تھیں جب ختم ہو چکا تراویح بھی

ختم ہو گئیں تو امام نفل محض پڑھ رہا ہے اور متنفل کے پیچھے تراویح ادا نہیں ہوتیں، ولہٰذا تصریح کی کہ ثوابِ نفل پائیں گے ثوابِ تراویح نہ پائیں گے، یہ مفاد اس مفاد کے صریح مضاد ہے نہ کہ باہم اتحاد۔ رابعاً شروع سے معلوم ہے کہ جماعتِ نفل بہ تداعی مشروع نہیں اور تراویح باجماعت وارد ہوئیں تو وجہ متوارث ماثور پر مقصر ہوں گی اور وہ یونہی ہے کہ امام مقتدی سب نیتِ تراویح کرتے یہاں اضعف و اقویٰ کو دخل نہیں، ولہٰذا اوپر تصحیح گزری کہ تراویح جس طرح متنفل کے پیچھے ساقط نہ ہو گی یونہی مفترض کے پیچھے بھی ادا نہ ہوں گی حالانکہ مفترض یقیناً اعظم قوت پر ہے تو جب تک دلیل صریح سے ثبوت نہ دیا جائے

[حاشیہ]: ۱ مجموعہ فتاویٰ درینکہ بعد یک ختم قرآن آیا سنت تراویح الخ مطبع یوسفی لکھنو ۱ / ۲۵۱-۵۲

That for an Imam to have completed the Quran once [elsewhere] is also against what is reported and traditionally inherited. To analogize this [with other situations] is purely meaningless. In short, while it is certainly reported that Taraweeh cannot be performed behind one who is praying a voluntary prayer (Nafl), it is nowhere reported that a Hafiz is disqualified from leading others just because he has finished reading the Quran once. Your personal opinion without any transmission [from sources] is not a valid or acceptable argument.

Fifthly, rather the matter is quite the opposite. In this very Khizanat-ul-Riwayat, it is quoted from Kanz-ul-Fatawa:

Arabic	English Translation
A man led a people in Taraweeh and completed [the Quran] in it, then led another group of people; for him is the reward of excellence (virtue) and for them is the reward of completion (Khatm).[1]	If someone finished the Quran while leading Taraweeh and then led another group of people, then the Imam would get the reward of virtue, and the people would get the reward of the completion (Khatm). (T)

This is a clear specific ruling and a direct refutation of your view. The statement of Qadi Gujarati that "This book is not well-known among scholars, so it cannot be relied upon" is not accepted. The author of Kanz-ul-Fatawa is Imam Ahmad bin Muhammad bin Abi Bakr Hanafi, the author of Majma-ul-Fatawa and Khizanat-ul-Fatawa. Kashf-uz-Zunun has described him with the words "Shaikh" and "Imam":

Arabic	English Translation
Where it said: Kanz-ul-Fatawa is by Shaikh Imam Ahmad bin Muhammad, the author of Majma-ul-Fatawa al-Hanafi.[2]	His words are: Kanz-ul-Fatawa is the book of Shaikh Imam Ahmad bin Muhammad Hanafi, the author of Majma-ul-Fatawa. (T)

Sixthly, we will soon clarify that even through a vow (Nazr), the problem will not be solved. People like the scholar of Lucknow are ones who say "Abu Hanifa said so, but the truth is this." For the author of Khizanat-ul-Riwayat to follow a later Indian Qadi like Jagan Gujarati in such a way is very strange and far-fetched.

Arabic	English Translation
But Allah does what He wills. And praise be to Allah for showing the straight path. And Allah, the Glorious and Exalted, [knows best].	Allah acts according to His will, and all praise and glorification belong to Allah for providing correct guidance. Allah Almighty knows better, whose being is most holy and supreme. (T)

Twenty-third, if that issue and reasoning were accepted, then if the aforementioned Hafiz also made a vow that I will [lead] Taraweeh...

---

[1] Khizanat-ul-Riwayat [2] Kashf-uz-Zunun, Chapter 'Kaf', Publications of Maktabat al-Muthanna, Baghdad 2/1518

कि इमाम का एक बार (कहीं और) कुरान मुकम्मल कर लेना भी रिवायतों और परंपराओं के खिलाफ है, उस पर इसका कयास (तुलना) करना पूरी तरह अर्थहीन है। संक्षेप में, जबकि यह निश्चित रूप से वर्णित है कि नफल (स्वैच्छिक) नमाज पढ़ने वाले के पीछे तरावीह नहीं हो सकती, लेकिन कहीं भी यह वर्णित नहीं है कि एक बार कुरान खत्म कर लेने के कारण हाफ़िज़ दूसरों की इमामत से हटा दिया जाए। आपकी अपनी राय बिना किसी हवाले के सही दलील और स्वीकार्य नहीं है।

पांचवां, बल्कि मामला इसके विपरीत है। इसी 'ख़ज़ानतुल रिवायात' में 'कन्ज़ुल फतावा' से उद्धृत है:

अरबी	**हिंदी अनुवाद**
रज्जुलु अम्मा क़ौमन फ़ीत तरावीहि व ख़तमा फ़ीहा सुम्मा अम्मा क़ौमन आख़रीना लहु सवाबुल फ़ज़ीला व लहुम सवाबुल ख़त्म - 1	किसी ने तरावीह में इमामत करते हुए कुरान खत्म किया फिर दूसरे लोगों की इमामत की तो अब इमाम के लिए फ़ज़ीलत (श्रेष्ठता) का सवाब और लोगों के लिए ख़त्म का सवाब होगा (त)

यह एक स्पष्ट विवरण है और आपके विचार का सीधा खंडन है। काज़ी गुजराती का यह कहना कि "यह किताब विद्वानों के बीच प्रसिद्ध नहीं है इसलिए इस पर भरोसा नहीं किया जा सकता" स्वीकार नहीं है। 'कन्ज़ुल फतावा' के लेखक इमाम अहमद बिन मुहम्मद बिन अबी बक्र हनफी हैं, जो 'मज्मउल फतावा' और 'ख़ज़ानतुल फतावा' के भी लेखक हैं। 'कश्फ़ुज़ ज़ुनून' में उन्हें 'शेख़' और 'इमाम' शब्दों के साथ वर्णित किया गया है:

अरबी	**हिंदी अनुवाद**
हैसु काला कन्ज़ुल फतावा लिश शेख़िल इमाम अहमद बिन मुहम्मद साहिबि मज्मइल फतावल हनफी - 2	उनके शब्द ये हैं: कन्ज़ुल फतावा, शेख़ इमाम अहमद बिन मुहम्मद हनफी, साहिबे मज्मउल फतावा की किताब है (त)

छठा, हम जल्द ही स्पष्ट करेंगे कि 'नज़्र' (मन्नत) से भी समस्या का समाधान नहीं होगा। लखनवी फाज़िल (विद्वान) जैसे लोग हैं जो कहते हैं कि "अबू हनीफ़ा ने ऐसा कहा है लेकिन सच यह है"। 'ख़ज़ानतुल रिवायात' के लेखक के लिए जगन गुजराती जैसे एक बाद के भारतीय काज़ी का इस तरह अनुसरण करना बहुत अजीब और बेतुका है।

अरबी	हिंदी अनुवाद
वलकिनल्लाहु यफ़अलु मा युरीदु वल हम्दु लिल्लाहि अला अराअतिस सबीलिस्सदीदी वल्लाहु सुब्हानहू व तआला	अल्लाह अपने इरादे के मुताबिक करता है और सही मार्गदर्शन प्रदान करने पर अल्लाह की ही प्रशंसा है और अल्लाह तआला बेहतर जानता है जिसकी जात निहायत ही पवित्र और महान है (त)

तेईसवां, अगर उस मसले और दलील को स्वीकार कर लिया जाए, तो उक्त हाफ़िज़ अगर मन्नत भी मान ले कि मैं तरावीह...

---

1. ख़ज़ानतुल रिवायात
2. कश्फ़ुज़ ज़ुनून, बाब अल-काफ, मक्तबतुल मुसन्ना बगदाद, 2/1518

पृष्ठ 611 का 836

کہ امام کا ایک بار ختم کئے ہوئے ہونا بھی ماثور و متوارث کے خلاف ہے اس پر اس کا قیاس محض بے معنی ہے بالجملہ متنفل کے پیچھے تراویح نہ ہونا تو ضرور منقول بلکہ اس پر فتاوائے فحول، اور ایک بار ختم قرآن پڑھ لینے کے باعث حافظ کا امامتِ دیگراں سے معزول ہونا کہیں منقول نہیں اور آپ کی اپنی رائے سے بے نقل صحیح حجت و مقبول نہیں۔

خامساً بلکہ امر بالعکس ہے خود اسی خزانۃ الروایات میں کنز الفتاوٰی سے منقول:

عربی	اردو ترجمہ
رجل ام قوما فی التراویح وختم فیھا ثم امر قوم اخرین لہ ثواب الفضیلۃ ولھم ثواب الختم - 1	کسی نے تراویح میں امامت کرتے ہوئے قرآن ختم کیا پھر دوسرے لوگوں کی امامت کی تو اب امام کے لیے ثواب فضیلت اور لوگوں کے لیے ختم کا ثواب ہوگا (ت)

یہ صریح جزئیہ ہے اور آپ کے خیال کا صاف رد اور قاضی گجراتی کا ارشاد کہ ھذا الکتاب غیر مشہور بین العلماء فلا وثوق بہ (یہ کتاب علماء کے درمیان مشہور نہیں لہذا اس پر اعتماد نہیں کیا جا سکتا ہے۔ ت) مسلم نہیں، صاحب کنز الفتاوٰی امام احمد بن محمد بن ابی بکر حنفی مصنف مجمع الفتاوٰی و خزانۃ الفتاوٰی ہیں کشف الظنون میں انہیں بلفظ شیخ و امام وصف کیا:

عربی	اردو ترجمہ
حیث قال کنز الفتاوی للشیخ الامام احمد بن محمد صاحب مجمع الفتاوی الحنفی - 2	ان کے الفاظ یہ ہیں کنز الفتاوٰی، شیخ امام احمد بن محمد حنفی صاحب مجمع الفتاوٰی کی کتاب ہے (ت)

سادساً ہم عنقریب واضح کرتے ہیں کہ نذر سے بھی عقدہ کشائی نہ ہو گی امثال فاضل لکھنوی سے قال ابو حنیفہ والحق کذا (امام ابو حنیفہ نے اسی طرح فرمایا ہے مگر حق یہ ہے۔ ت) فرمانے والے ہیں، مصنف خزانۃ الروایات ایک متاخر ہندی قاضی جگن گجراتی کی ایسی تقلید سخت عجیب و بعید۔

عربی	اردو ترجمہ
ولکن اللہ یفعل ما یرید والحمد للہ علی اراء ۃ السبیل السدید واللہ سبحانہ وتعالی	اللہ اپنے ارادے کے مطابق کرتا ہے اور صحیح رہنمائی فرمانے پر اللہ تعالیٰ ہی کی حمد وثنا ہے اور اللہ تعالیٰ بہتر جانتا ہے جس کی ذات نہایت ہی مقدس و بالا ہے (ت)

بست و سوم اگر وہ مسئلہ و تعلیل قبول کر لیے جائیں تو حافظ مذکور اگر نذر بھی مان لے کہ میں تراویح...

---

1 خزانۃ الروایات 2 کشف الظنون باب الکاف منشورات مکتبۃ المثنیٰ بغداد ۲/ ۱۵۱۸

Fatawa Razawiyya Volume 10

Even if I perform it with a congregation and the completion of the Quran, its validity is still not established, because the obligation on the followers was an original one, while the obligation of a vow (nadhr) is accidental. An accidental obligation is weaker than an original one, and building something stronger upon something weaker is not correct. It is stated in Fath al-Mu'in, then in Tahtawi, then in Radd al-Muhtar:

[Arabic Quote 1: Building the strong upon the weak is only prohibited if the strength is inherent. If it occurs due to a vow, as is the case here, then it is not [prohibited]. Hence, it is said in Sharh al-Munyah that a vow is like a supererogatory prayer (nafl). — 1]

[Urdu Translation of Quote 1: Building the strong upon the weak is prohibited only when the strength is inherent. If it is accidental due to a vow, as is the case here, then it is not a hindrance. At the same place in Sharh al-Munyah, it is stated that a vow is like a supererogatory prayer (nafl). (t)]

Even if the 'weak' is not a hindrance, the reasons for obligation are different, even then building upon it is not correct. For example, a person making a vow cannot follow another person making a vow, rather a person making a vow cannot follow one performing an obligatory (fard) prayer, even though the fard is stronger. The reason is that the causes (for the prayers) are separate. It is in Durr al-Mukhtar:

[Arabic Quote 2: It is not valid for one who has made a vow to follow one performing an obligatory prayer, nor another person who has made a vow, because each of them is like one performing a different obligation, unless one of them vowed exactly what the other vowed, due to unity. 2 ah]

[Urdu Translation of Quote 2: It is not correct for a person who has made a vow to follow one performing an obligatory prayer or another person who has made a vow, because both of them are performing separate obligations. However, it will be permissible in the case where the vow of both is one, because unity will be achieved in that case. Ah (t)]

Maulavi Sahib here has also followed Fadil Lakhnawi, and Fadil Lakhnawi followed Qadi Jagan Hindi, as per his own reference. And the truth is most deserving of being followed (al-haqqu ahaqqu an yuttaba'). (t)

Twenty-fourth: The research is that one who has prayed the obligatory prayer with the congregation and the Tarawih alone can join the congregation for Witr. But one who has prayed the obligatory prayer alone, even if they prayed Tarawih with the congregation, cannot join the Witr congregation. We have established this in our Fatawa with sufficient and healing detail (as we have provided a satisfying discussion on this in our Fatawa). (t)

1. Radd al-Muhtar, Chapter of Witr and Nawafil, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/261-4; Tahtawi 'ala al-Durr al-Mukhtar, Chapter of Witr and Nawafil, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/297.
2. Durr al-Mukhtar, Chapter of Imamah, Mujtabai, Delhi, 1/84.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

अगर मैं इसे जमाअत और कुरान की समाप्ति के साथ अदा करूंतो भी इसकी स्वीकार्यता सिद्ध नहीं होती क्योंकि मुक्तदियों (अनुयायियों) पर अनिवार्यता (वजुब) मौलिक थी, जबकि मन्नत (नज़्र) की अनिवार्यता आकस्मिक है। आकस्मिक अनिवार्यता मौलिक से कमजोर है, और कमजोर पर मजबूत की नींव रखना सही नहीं है। 'फ़तह अल-मुईन', फिर 'तहतावी' और फिर 'रद्द अल-मुह्तार' में लिखा है:

[अरबी उद्धरण 1: कमजोर पर मजबूत की नींव रखना केवल तभी वर्जित है जब मजबूती स्वाभाविक हो। यदि यह मन्नत के कारण हो, जैसा कि यहाँ है, तो यह [वर्जित] नहीं है। इसी स्थान पर 'शरह अल-मुन्याह' में है कि मन्नत नफ़्ल (स्वैच्छिक प्रार्थना) की तरह होती है। — 1]

[उर्दू अनुवाद उद्धरण 1: मजबूत की नींव कमजोर पर तब वर्जित है जब मजबूती स्वाभाविक हो, यदि मन्नत की वजह से आकस्मिक हो जैसा कि यहाँ है तो फिर बाधक नहीं। इसी स्थान पर शरह मुनिया में है कि नज़्र (मन्नत) नफ़्ल की तरह होती है। (त)]

भले ही 'कमजोर' बाधक न हो, अनिवार्यता के कारण अलग-अलग हैं, तब भी उस पर नींव रखना सही नहीं है। उदाहरण के लिए, मन्नत मानने वाला दूसरे मन्नत मानने वाले का अनुसरण नहीं कर सकता, बल्कि मन्नत मानने वाला फर्ज़ (अनिवार्य प्रार्थना) करने वाले का भी अनुसरण नहीं कर सकता, जबकि फर्ज़ अधिक मजबूत है। कारण यह है कि उनके उद्देश्य (सबब) अलग-अलग हैं। 'दुर्र अल-मुख्तार' में है:

[अरबी उद्धरण 2: मन्नत मानने वाले के लिए फर्ज़ अदा करने वाले और (दूसरे) मन्नत अदा करने वाले का अनुसरण करना सही नहीं है, क्योंकि वे दोनों अलग-अलग अनिवार्यताओं को पूरा कर रहे हैं, जब तक कि उनमें से एक ने वही मन्नत न मानी हो जो दूसरे ने मानी है, एकता के कारण। 2 आह]

[उर्दू अनुवाद उद्धरण 2: नज़्र (मन्नत) मानने वाले के लिए फर्ज़ अदा करने वाले और नज़्र अदा करने वाले की पैरवी (इख्तेदा) सही नहीं क्योंकि ये दोनों अलग अलग फ़राइज़ अदा कर रहे हैं अलबत्ता इस सूरत में जायज़ होगी जब दोनों की नज़्र एक हो क्योंकि इस सूरत में एकता (इत्तेहाद) हासिल होगा। आह (त)]

मौलवी साहब ने यहाँ भी फाज़िल लखनवी का अनुसरण किया है और फाज़िल लखनवी ने अपने संदर्भ के अनुसार काजी जगन हिंदी का, 'वल हक्कु अहक्कु अन युत्तबा' (सत्य ही अनुसरण के योग्य है)। (त)

चौबीसवीं शोध यह है कि जिसने फर्ज़ जमाअत के साथ पढ़ी और तरावीह अकेले पढ़ी, वह वित्र की जमाअत में शामिल हो सकता है। लेकिन जिसने फर्ज़ अकेले पढ़ी हो, भले ही उसने तरावीह जमाअत के साथ पढ़ी हो, वह वित्र की जमाअत में शामिल नहीं हो सकता। हमने अपने फतावा में इस पर पर्याप्त और संतोषजनक चर्चा की है। (त)

1. रद्द अल-मुह्तार, बाब अल-वित्र वल नवाफिल, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 1/261-4; तहतावी अला अल-दुर्र अल-मुख्तार, बाब अल-वित्र वल नवाफिल, दार अल-मआरिफ़ा, बेरूत, 1/297।
2. दुर्र अल-मुख्तार, बाब अल-इमामाह, मुजतबाई, दिल्ली, 1/84।

पृष्ठ 612 का 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

مع جماعت و ختم قرآن ادا کروں گا تو اب بھی کار برآری مسلم نہیں کہ مقتدیوں پر وجوب اصلی تھا اور نذر کا وجوب عارضی ہے اور وہ وجوب اصلی سے ، اضعف ہے ، تو اضعف پر اقوٰی کی بناء صحیح نہیں۔ فتح اللہ المعین پھر طحطاوی پھر ردالمحتار میں ہے :

بناء القوی علی الضعیف انما یمنع اذا کانت القوۃ ذاتیۃ فلو عرضت بالنذر کما ھنا فلا ومن ھنا قال في شرح المنیۃ النذر کالنفل -1

قوی کی بناء ضعیف پر تب منع ہے جب قوت ذاتی ہو ، اگر نذر کی وجہ سے عارضی ہو جیسا کہ یہاں ہے تو پھر مانع نہیں۔ اسی مقام پر شرح منیہ میں ہے کہ نذر نفل کی طرح ہوتی ہے (ت)

اور ضعیف بھی مانع تو سبب وجوب مختلف ہیں جب بھی بناء صحیح نہ ہوئی جیسے نذر ناذر کی اقتداء نہیں کر سکتا بلکہ ناذر مفترض کی اقتداء نہیں کر سکتا حالانکہ فرض اقوٰی ہے تو سبب وہی کہ سبب جدا ہے۔ درمختار میں ہے :

لا یصح اقتداء ناذر بمفترض ولا بناذر لان کلا منھما کمفترض فرضا اخر الا اذا نذر احد ھما عین منذور الاخر للاتحاد2 اھ

نذر ماننے والے کے لیے فرض ادا کرنے والے اور نذر ادا کرنے والے کی اقتداء صحیح نہیں کیونکہ یہ دونوں الگ الگ فرائض ادا کر رہے ہیں البتہ اس صورت میں جائز ہوگی جب دونوں کی نذر ایک ہو کیونکہ اس صورت میں اتحاد حاصل ہوگا اھ (ت)

مولوی صاحب نے یہاں بھی فاضل لکھنوی کا اتباع کیا اور فاضل لکھنوی نے حسب حوالہ خود قاضی جگن ہندی کا، والحق احق ان یتبع (جبکہ حق ہی اتباع کے لائق ہے۔ت)

بست و چھارم تحقیق یہ ہے کہ جس نے فرض جماعت سے پڑھے اور تراویح تنہا وہ تو جماعت وتر میں شریک ہو سکتا ہے، اور جس نے فرض تنہا پڑھے ہوں اگرچہ تراویح جماعت سے پڑھی ہوں وہ وتر کی جماعت میں داخل نہیں ہو سکتا وقد حققناہ فی فتاؤنا بما یکفي ویشفی (جیسا کہ ہم نے اپنے فتاویٰ میں اس پر تسلی بخش گفتگو کی ہے۔ ت)

1. ردالمحتار باب الوتر والنوافل دار احیاء التراث العربی بیروت ۱/۲۶۱-۴، طحطاوی علی الدر المختار باب الوتر والنوافل دارالمعرفتہ بیروت ۱/۲۹۷
2. در مختار باب الامامۃ مجتبائی دہلی ۱/۸۴

Fatawa-e-Razvia Volume X

In Durr al-Mukhtar it is stated: "If one did not pray Tarawih with the Imam, he may pray Witr with him." (1) | If someone has not performed Tarawih with the Imam, he can perform Witr with the Imam (T)

In Jami' al-Rumuz it is stated: "But if he did not pray the Fard (obligatory prayer) with him, he should not follow him in Witr." (2) | If the Fard prayer was not performed with the Imam, then one should not follow the Imam in Witr prayer (T)

In Radd al-Muhtar it is stated: "However, if he prayed it in congregation with another person and then prayed Witr with him, there is no dislike." (3) | If the Fard was performed following someone else, and then Witr is prayed with a second Imam, there will be no dislike in this (T)

Maulvi Abdul Hayy Sahab Lakhnawi has also narrated its prohibition from the noble jurists, although solely on the basis that its reason did not enter his understanding, he expressed his own contrary opinion, writing in his Fatawa:

In Quniyah from 'Ayn al-A'immah and in Tatar-Khaniyah from 'Ali bin Ahmad (may Allah the Exalted have mercy on him) it is recorded that whoever has not performed Fard in congregation should not perform Witr in congregation either. Similarly, it is mentioned in Ghuniyah and others, but what strong, reliable reason for non-permissibility is known? The truth of permissibility seems evident. End (4) | In Quniyah, it is narrated from 'Ayn al-A'immah and in Tatar-Khaniyah from 'Ali bin Ahmad (may Allah have mercy on him) that the person who does not perform Fard with the congregation should not perform Witr with the congregation either. And the same is mentioned in Ghuniyah etc. But a strong and reliable reason for its impermissibility could not be known, permissibility seems to be the truth. End (T)

Against the explicit texts of Imam 'Ayn al-A'immah Karabisi, Imam 'Ali bin Ahmad, Quniyah, Ghuniyah, Jami' al-Rumuz, and Radd al-Muhtar, there is no reason to act upon your "it is not known" (not being able to understand the reason), as is not hidden (from the learned). (T)

1. Durr al-Mukhtar, Chapter on Witr and Nawafil, Mujtabai Press, Delhi, 1/99.
2. Jami' al-Rumuz, Section on Witr and Nawafil, Maktaba Islamiya, Gonbad-e Qabus, Iran, 1/216.
3. Radd al-Muhtar, Chapter on Witr and Nawafil, Discussion on Tarawih Prayer, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/476.

4. Majmu'ah-e-Fatawa, Book of Prayer, Yusufi Press, Lucknow, 1/135-136.

फतावा-ए-रजविया जिल्द दसवीं

दुर्र अल-मुख्तार में है: "अगर किसी ने इमाम के साथ तरावीह नहीं पढ़ी, तो वह उनके साथ वित्र पढ़ सकता है।" (1) | यदि किसी ने इमाम के साथ तरावीह अदा नहीं की है, तो वह इमाम के साथ वित्र अदा कर सकता है (त)

जामे अल-रुमुज़ में है: "लेकिन अगर उसने उनके साथ फ़र्ज़ नहीं पढ़ा, तो वह वित्र में उनका अनुसरण न करे।" (2) | अगर फ़र्ज़ इमाम के साथ अदा न किए हों, तो फिर वित्र में इमाम का अनुसरण न करे (त)

रद्द अल-मुह्तार में है: "लेकिन अगर उसने उसे (फ़र्ज़ को) किसी और के साथ जमात से पढ़ा, फिर उसके साथ वित्र पढ़ा, तो इसमें कोई नापसंदगी (कराहियत) नहीं है।" (3) | अगर फ़र्ज़ किसी और की इक़्तिदा में अदा किए, फिर वित्र दूसरे इमाम के साथ पढ़े, तो अब कराहियत न होगी (त)

मौलवी अब्दुल हई साहब लखनवी ने भी फुक़हा-ए-किराम से इसकी मनाही ही नक़ल की है, हालांकि सिर्फ इस बिना पर कि इसकी वजह उनकी समझ में न आई, उन्होंने अपनी ख़ास मुख़ालिफ़ राय दी, अपने फतावा में लिखते हैं:

कुनिया में ऐन अल-आइम्मा से और ततार खानिया में अली बिन अहमद (अल्लाह तआला उन पर रहमत करे) से मर्क़ूम (लिखित) है कि जिस किसी ने जमाअत के साथ फ़र्ज़ अदा न की हो, वह वित्र भी जमाअत के साथ अदा न करे। और इसी तरह गुनिया वगैरह में भी ज़िक्र है, लेकिन जवाज़ न होने की कौन सी क़वी (मज़बूत) और मो'तमिद-ब (विश्वसनीय) वजह मालूम है? जवाज़ ही हक़ मालूम होता है। समाप्त (4) | कुनिया में ऐन अल-आइम्मा से और ततार खानिया में अली बिन अहमद (रहमतुल्लाह अलैह) से मरवी है कि जो शख़्स फ़र्ज़ जमात के साथ अदा न करे, वह वित्र भी जमात से न पढ़े। और इसी तरह गुनिया वगैरह में मज़कूर है। लेकिन इसके अदम-ए-जवाज़ (अवैधता) पर क़वी (मज़बूत) और मोतमिद-ब-वजह (विश्वसनीय कारण) मालूम नहीं हो सकी, जवाज़ ही हक़ मालूम होता है। समाप्त (त)

इमाम ऐन अल-आइम्मा कराबीसी, इमाम अली बिन अहमद, कुनिया, गुनिया, जामे अल-रुमुज़ और रद्द अल-मुह्तार के सरीह (स्पष्ट) नुसूस (इबारतों) के मुक़ाबले सिर्फ आपकी "मालूम नहीं हो सकी" पर अमल की कोई वजह नहीं है, जैसा कि पोशीदा (छिपा हुआ) नहीं है। (त)

1. दुर्र अल-मुख्तार, बाब अल-वित्र वल-नवाफ़िल, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/99.
2. जामे अल-रुमुज़, फ़स्ल फ़िल-वित्र वल-नवाफ़िल, मकतबा इस्लामिया, गुंबद क़ामूस, ईरान, 1/216.
3. रद्द अल-मुह्तार, बाब अल-वित्र वल-नवाफ़िल, बहस सलात-उत-तरावीह, दार इहया अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 1/476.
4. मजमुआ-ए-फतावा, किताबुस-सलात, यूसुफ़ी प्रेस, लखनऊ, 1/135-136.

فتاوی رضویہ جلد دہم

در مختار میں ہے: لو لم یصل التراویح بالامام یصلی الوتر معہ۔ 1 | اگر کسی نے تراویح امام کے ساتھ ادا نہیں کی تو وتر امام کے ساتھ ادا کر سکتا ہے (ت)

جامع الرموز میں ہے: لکنہ اذا لم یصل الفرض معہ لا یتبعہ فی الوتر۔ 2 | اگر فرض امام کے ساتھ ادا نہ کئے ہوں تو پھر وتر میں امام کی اتباع نہ کرے (ت)

رد المحتار میں ہے: اما لو صلاہا جماعۃ مع غیرہ ثم صلی الوتر معہ لا کراہۃ۔ 3 | اگر فرض کسی اور کی اقتداء میں ادا کیے پھر وتر دوسرے امام کے ساتھ پڑھے تو اب کراہت نہ ہوگی (ت)

مولوی عبدالحی صاحب لکھنوی نے بھی فقہائے کرام سے اس کی ممانعت ہی نقل کی اگرچہ صرف اس بنا پر کہ اس کی وجہ اپنی سمجھ میں نہ آئی، اپنی خاص رائے مخالف بتائی، اپنے فتاوی میں لکھتے ہیں:

در قنیہ از عین الائمہ و در تاتار خانیہ از علی بن احمد رحمہ اللہ تعالی مرقوم کہ ہر کہ فرض باجماعت ادا نہ کردہ باشد وتر ہم بجماعت ادانہ سازد و ہمچنین در غنیہ و غیر ہماند کورست لیکن کدامی وجہ قوی معتد بہ عدم جواز معلوم نمی شود حق جواز معلوم می شود انتہی۔ 4 | قنیہ میں عین الائمہ سے اور تاتار خانیہ میں علی بن احمد رحمہ اللہ تعالی سے مروی ہے کہ جو شخص فرض جماعت کے ساتھ ادا نہ کرے وہ وتر بھی جماعت سے نہ پڑھے۔ اور اسی طرح غنیہ وغیرہ میں مذکور ہے۔ لیکن اس کے عدم جواز پر قوی و معتمد بہ وجہ معلوم نہیں ہوسکی جواز حق معلوم ہوتا ہے انتہی (ت)

امام عین الائمہ کرابیسی و امام علی بن احمد وقنیہ و غنیہ و جامع الرموز و رد المحتار کے نصوص صریحہ کے مقابل صرف آپ کی "معلوم نمی شود" (معلوم نہیں ہو سکی۔ت) پر عمل کی کوئی وجہ نہیں، کما لا یخفی (جیسا کہ پوشیدہ نہیں ہے ۔ت)

1 در مختار باب الوتر والنوافل مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۹۹ 2 جامع الرموز فصل فی الوتر والنوافل مکتبہ اسلامیہ گنبد قاموس ایران ۱/ ۲۱۶ 3 رد المحتار باب الوتر والنوافل مبحث صلوۃ التراویح دار احیاء التراث العربی بیروت ۱/ ۴۷۶ 4 مجموعہ فتاوی کتاب الصلوۃ مطبع یوسفی لکھنؤ ۱/ ۳۶-۱۳۵

Fatawa Razawiyya Volume 10

Issue Twenty-Five: There is no specific age limit under twelve years; rather, the correct and chosen opinion is that no prayer of adults is permissible behind a minor, even if they are one day short of fifteen years. Reaching puberty is a condition for leading adults, whether it is through the appearance of signs like wet dreams and ejaculation, or by completing fifteen years of age. It is stated in Durr al-Mukhtar:

Arabic	Urdu
لا يصح اقتداء رجل بصبي مطلقا ولا فى نفل على الاصح-	An adult male following a child in prayer is not valid at all, even in supererogatory (nafl) prayers, according to the most correct opinion. (T)

Issue Twenty-Six: A verse of prostration (Sajdah) that is recited in prayer makes prostration immediately obligatory. If delayed by three verses, one will be a sinner. Then, if one intentionally did not perform the prostration nor did it within the bowing (ruku'), whereby the prostration of recitation could have been fulfilled by the bowing, its correction cannot be made through the prostration of forgetfulness (sajdah sahw), as that is for mistakes, not for intentional omissions. And if one forgets to perform the prostration of recitation and has exited the sanctity of the prayer, even then the prostration of forgetfulness cannot be performed, as exiting the sanctity is an obstacle to the prostration of recitation, just as it is an obstacle to the prostration of forgetfulness. However, if one is still within the sanctity of the prayer, has not spoken, has not stood up to walk away, and then remembers, he should perform the prostration of recitation in the prayer. But if it was delayed due to forgetfulness, for example, remembered in the second rak'ah that a prostration of recitation was required and is performed now, then the ruling for the prostration of forgetfulness applies, even though the prostration of recitation was performed within the prayer. It is stated in Durr al-Mukhtar:

Arabic	Urdu
هى على التراخى ان لم تكن صلوتية فعلى الفور لصير ورتها جزأ منها ويأثم بتا خيرها ويقضيها ما دامه في حرمة الصلوة ولو بعد السلام، فتح-	Prostration of recitation becomes obligatory with the possibility of delay provided that the said prostration did not become mandatory within the prayer. Because if it became mandatory in prayer, then it is necessary to perform it immediately within the prayer because now it has become a part of the prayer. Therefore, one will be a sinner for delaying it, and one can

Arabic	Urdu
	perform its makeup as long as one is within the sanctity of the prayer, even if it is after the salutations (salam). Fath. (T)

It is stated in Radd al-Muhtar:

Arabic	Urdu
قوله ولو بعد السلام ای ناسیاً ما دام فی المسجد	His statement 'even after the salam' means for one who forgets, as long as he is in the mosque, he can perform the prostration. (T)

---

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Salat, Mujtabai, Delhi, 1/84 2 Durr al-Mukhtar, Bab Sujud al-Tilawah, Mujtabai, Delhi, 1/105 3 Radd al-Muhtar, Bab Sujud al-Tilawah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/518

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (10)

मसला पच्चीसवाँ: बारह साल से कम उम्र की कोई विशिष्टता नहीं है, बल्कि सही और पसंदीदा राय यह है कि किसी भी बालिग की नमाज़ नाबालिग के पीछे जायज़ नहीं है, चाहे वह पंद्रह साल से एक दिन भी कम हो। बालिगों की इमामत के लिए बालिग होना शर्त है, चाहे वह एहतलाम (स्वप्नदोष) और इंज़ाल जैसे लक्षणों के प्रकट होने से हो या पूरे पंद्रह साल होने पर। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

अरबी	उर्दू
لا يصح اقتداء رجل بصبي مطلقا ولا فى نفل على الاصح-	बालिग मर्द का बच्चे के पीछे इक्तिदा (अनुकरण) करना बिल्कुल भी सही नहीं है, चाहे वह नफ़्ल नमाज़ ही क्यों न हो, सबसे सही मज़हब यही है। (त)

मसला छब्बीसवाँ: आयते सजदा जिसकी नमाज़ में तिलावत की जाए, उसका सजदा फ़ौरन वाजिब है। अगर तीन आयतों की देरी की गई तो वह गुनहगार होगा। फिर अगर जानबूझकर सजदा नहीं किया और न ही रुकू में उसकी नियत की (क्योंकि रुकू से भी सजदा-ए-तिलावत अदा हो जाता है), तो उसकी भरपाई सजदा-ए-सहव से नहीं हो सकती क्योंकि वह सजदा-ए-सहव है न कि सजदा-ए-अमद (जानबूझकर छोड़ा गया सजदा)। और अगर सजदा-ए-तिलावत करना भूल गया और नमाज़ की हुरमत (दायरे) से बाहर निकल गया, तो अब भी सजदा-ए-सहव नहीं हो सकता क्योंकि नमाज़ से बाहर निकलना जैसे सजदा-ए-तिलावत के लिए रुकावट है, वैसे ही सजदा-ए-सहव के लिए भी रुकावट है। हाँ, अगर नमाज़ की हुरमत में बाकी है, बात नहीं की, उठकर चला नहीं गया और याद आ गया, तो सजदा-ए-तिलावत नमाज़ में कर ले, लेकिन अगर भूलकर देरी से किया, मिसाल के तौर पर दूसरी रकात में याद आया कि सजदा-ए-तिलावत करना था और अब अदा किया, तब भी सजदा-ए-सहव का हुक्म है चाहे सजदा-ए-तिलावत नमाज़ में ही अदा हो गया हो। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

अरबी	उर्दू
هى على التراخى ان لم تكن صلوتية فعلى الفور لصير ورتها جزأ منها ويأثم بتا خيرها ويقضيها ما دامه	सजदा-ए-तिलावत लाज़िम होता है देरी के तौर पर, बशर्ते कि उक्त सजदा नमाज़ में लाज़िम न हुआ हो, क्योंकि अगर नमाज़ में लाज़िम हुआ तो फ़ौरन नमाज़ के अंदर करना ही ज़रूरी है क्योंकि अब वह नमाज़ का हिस्सा बन गया है, इसलिए उसकी देरी से गुनहगार होगा

अरबी	उर्दू
في حرمة الصلوة ولو بعد السلام، فتح-	और उसकी कज़ा (भरपाई) बजा ला सकता है जब तक वह नमाज़ की हुरमत के अंदर है, चाहे सलाम के बाद ही क्यों न हो। फ़त्ह। (त)

'रद्दुल मुहतार' में है:

अरबी	उर्दू
قوله ولو بعد السلام ای ناسیاً ما دام فی المسجد	उनका कहना 'भले ही सलाम के बाद हो' यानी भूलने वाला व्यक्ति जब तक मस्जिद में है, सजदा अदा कर सकता है। (त)

---

1 दुर्रे मुख्तार, किताब अल-सलात, मुजतबाई, दिल्ली, 1/84 2 दुर्रे मुख्तार, बाब सुजूद अल-तिलावत, मुजतबाई, दिल्ली, 1/105 3 रद्दुल मुहतार, बाब सुजूद अल-तिलावत, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 1/518

بست و پنجم: بارہ برس سے کم عمر تخصیص نہیں بلکہ صحیح و مختار یہ ہے کہ نابالغ کے پیچھے بالغوں کی کوئی نماز جائز نہیں اگر چہ ایک دن کم پندرہ برس کا ہو، امامت بالغین کے لیے بلوغ شرط ہے خواہ یہ ظہور آثار مثل احتلام وانزال خواہ بتمامی پانزدہ سال۔ درمختار میں ہے:

عربی	اردو
لا یصح اقتداء رجل بصبي مطلقا ولا فی نفل علی الاصح-	بالغ مرد کی اقتداء بچے کے پیچھے مطلقاً اگر چہ نفل نماز میں ہو اصح مذہب پر درست نہیں ہے (ت)

بست و ششم: آیت سجدہ کہ نماز میں تلاوت کی جائے سجدہ فوراً واجب ہے، اگر تین آیت کی تاخیر کی گنہ گار ہوگا، پھر اگر عمداً سجدہ نہ کیا نہ مقار کوع کیا کہ سجدہ تلاوت رکوع سے ادا ہو جاتا تو اس کی اصلاح سجدہ سہو سے نہیں ہو سکتی کہ وہ سجدہ سہو ہے کہ نہ سجدہ عمد، اور اگر سجدہ تلاوت کرنا بھول گیا اور حرمت نماز سے باہر نکل گیا تو اب بھی سجدہ سہو نہیں ہو سکتا کہ حرمت سے خروج جیسا کہ مانع سجدہ تلاوت ہے یوں ہی مانع سجدہ سہو، ہاں اگر حرمت نماز میں باقی ہے کلام نہ کیا اٹھ کر چلا نہ گیا اور یاد آیا تو سجدہ تلاوت نماز میں کیا مگر سہواً بتأخیر مثلاً دوسری رکعت میں یاد آیا کہ سجدہ تلاوت چاہئے تھا اور اب ادا کیا جب بھی سجدہ سہو کا حکم ہے اگر چہ سجدہ تلاوت نماز میں ادا ہو گیا، در مختار میں ہے:

عربی	اردو
ھی علی التراخی ان لم تکن صلوتیۃ فعلی الفور لصیر	سجدہ تلاوت لازم ہوتا ہے تراخی کے طور بشر طیکہ سجدہ مذکورہ نماز میں لازم نہ ہوا کیونکہ اگر نماز میں لازم ہوا تو فی

عربی	اردو
ورتها جزأ منها ويأثم بتا خيرها ويقضيها ما دامه في حرمة الصلوة ولو بعد السلام، فتح۔	الفور نماز کے اندر کرنا ہی ضروری ہے کیونکہ اب وہ نماز کی جز بن گیا ہے لہٰذا اس کی تاخیر سے گنہ گار ہوگا اور اس کی قضا بجا لا سکتا ہے جب تک وہ حرمت نماز کے اندر ہے اگر چہ سلام کے بعد ہو، فتح۔ (ت)

ردالمحتار میں ہے:

عربی	اردو
قوله ولو بعد السلام ای ناسیاً ما دام فی المسجد	قولہ سلام کے بعد الخ یعنی بھول جانے والا شخص جب تک مسجد میں ہے سجدہ ادا کر سکتا ہے (ت)

---

1 درمختار کتاب الصلوۃ مجتبائی دہلی ۱/ ۸۴ 2 درمختار باب سجود التلاوۃ مجتبائی دہلی ۱/ ۱۰۵

3 درالمحتار باب سجود التلاوۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۱/ ۵۱۸

Fatawa Razawiyya, Volume 10

It is stated in the same: "If one delayed the prostration of recitation (Sajdah al-Tilawah) from its place during prayer, then prostration of forgetfulness (Sajdah al-Sahw) is mandatory upon him, as is decisively stated in 'Al-Khulasah'; meaning no reliance shall be placed on anything that contradicts it, and it has been authenticated in 'Al-Walwaljiyah'." (T)

Similarly, it is in 'Durr al-Mukhtar': "Prostration of forgetfulness is mandatory for leaving a necessary (Wajib) act inadvertently. Thus, there is no prostration in intentional abandonment. It is said, except in four instances." Forgetting to perform a Wajib act makes Sajdah al-Sahw mandatory, hence there will be no Sajdah al-Sahw for intentional abandonment. According to some, Sajdah al-Sahw becomes necessary for intentional abandonment of a Wajib in only four specific instances. (T)

In 'Radd al-Muhtar': "He indicated its weakness following 'Nur al-Idah' for its opposition to the well-known opinion, and Allama Qasim refuted it saying that no origin for it is known in narrations, nor is there any intellectual basis for it." Following 'Nur al-Idah', he indicated its weakness because this opinion is against the famous view. Allama Qasim refuted it saying that no basis for this opinion is known in any narration, nor is there any rational proof for it. (T)

Twenty-seventh: Regarding the sighting of the moon, testimony via telegram is legally (Shar'i) absolutely void and unreliable. We have investigated this in our Fatawa to such an extent that nothing more can be added (We have explained it in great detail in our Fatawa, making any addition difficult. -T). The status of its Shar'i unreliability reached a point of consideration because here too, the Mawlawi Sahib followed Mawlawi Abdul Hayy Sahab Lakhnawi. Mawlawi Sahab Lakhnawi, despite clarifying the unreliability of telegrams in various places, states in Volume 1, page 523, in this chapter (i.e., Moon Sighting) that mere news, telegram, or handwritten script is not sufficient unless a written document reaches in the manner of 'Kitab al-Qadi ila al-Qadi' (the writing of one judge to another. -T). The rule 'one handwriting resembles another' is well-known. 4. Similarly, page 540, according to juristic principles, mere news from telegrams etc. regarding...

1. Radd al-Muhtar, Chapter of Prostration of Forgetfulness, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/79.
2. Durr al-Mukhtar, Chapter of Prostration of Forgetfulness, Mujtabai Delhi, 1/102.

3. Radd al-Muhtar, Chapter of Prostration of Forgetfulness, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/79.
4. Majmu'a Fatawa, Book of Fasting, Matba Yusufi Lucknow, 1/272.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

इसी में है: "अगर नमाज़ में सजदा-ए-तिलावत को उसके स्थान से विलंबित कर दिया जाए, तो उस पर सजदा-ए-सहव अनिवार्य होगा जैसा कि 'अल-ख़ुलासा' में निश्चित रूप से है; अर्थात् इसके विपरीत किसी बात पर भरोसा नहीं किया जाएगा, और 'अल-वालवालजिया' में भी इसकी पुष्टि की गई है।" (त)

इसी प्रकार 'दुर्रे मुख्तार' में है: "भूलवश वाजिब कार्य को छोड़ने पर सजदा-ए-सहव अनिवार्य होता है। अतः जानबूझकर छोड़ने पर सजदा नहीं है। कहा गया है, सिवाय चार स्थितियों के।" भूलकर वाजिब छोड़ने में सजदा-ए-सहव वाजिब होता है, इसलिए जानबूझकर छोड़ने में सजदा-ए-सहव नहीं होगा। कुछ लोगों की राय में केवल चार स्थानों पर जानबूझकर वाजिब छोड़ने में सजदा-ए-सहव अनिवार्य हो जाता है। (त)

'रद्दुल मुहतार' में है: "उन्होंने 'नूरुल ईदाह' का अनुसरण करते हुए इसके कमज़ोर होने का संकेत दिया है क्योंकि यह प्रसिद्ध मत के विरुद्ध है, और अल्लामा क़ासिम ने इसे यह कहकर नकारा है कि रिवायत में इसका कोई आधार ज्ञात नहीं है और न ही अक्ल में इसका कोई आधार है।" 'नूरुल ईदाह' का अनुसरण करते हुए उन्होंने इसके ज़ईफ़ (कमज़ोर) होने की ओर इशारा किया है क्योंकि यह मत मशहूर के ख़िलाफ़ है, और अल्लामा क़ासिम ने इसकी इस प्रकार तरदीद (खंडन) की है कि इस क़ौल (कथन) की रिवायत में कोई असल (आधार) मालूम नहीं और न ही इस पर कोई अक़्ली दलील मौजूद है। (त)

सताइसवाँ: चाँद दिखने के बारे में तार (टेलीग्राम) की गवाही शरई तौर पर पूर्णतः बातिल और ना-मोतबर है। हमने अपने फ़तावा में इसकी इतनी तहक़ीक़ बयान की है कि इससे अधिक संभव नहीं (हमने अपने फ़तावा में इसकी पूरी तफ़्सील बयान कर दी है जिस पर इज़ाफ़ा करना कठिन है। -त)। शरई ना-मोतबरी का दर्जा एतबार तक पहुँचा क्योंकि यहाँ भी मौलवी साहब ने मौलवी अब्दुल हई साहब लखनवी का अनुसरण किया है। मौलवी साहब लखनवी ने हालाँकि जगह-जगह तार की ना-मोतबरी को साफ़ किया है, जिल्द अव्वल, सफ़ा ५२३ पर इस बाब (यानी रुयते हिलाल) में फ़रमाते हैं कि सिर्फ़ ख़बर, तार या दस्तावेज़ काफ़ी नहीं जब तक कि वह 'किताबुल क़ाज़ी इलल क़ाज़ी' (एक क़ाज़ी का दूसरे क़ाज़ी को लिखना। -त) के रूप में न पहुँच जाए। नियम 'एक लिखावट दूसरी

लिखावट के समान होती है' प्रसिद्ध है। ४. इसी तरह सफ़ा ५४०, फ़िक़ही क़ायदों के अनुसार तार वगैरह की केवल ख़बरें...

1. रद्दुल मुहतार, बाब सुजूदुस सहव, दार इहया-उत-तुरास अल-अरबी, बेरूत, 2/79।
2. दुर्रे मुख्तार, बाब सुजूदुस सहव, मुज्तबाई दिल्ली, 1/102।
3. रद्दुल मुहतार, बाब सुजूदुस सहव, दार इहया-उत-तुरास अल-अरबी, बेरूत, 2/79।
4. मजमुआ फ़तावा, किताबुस सौम, मतबा यूसुफी लखनऊ, 1/272।

اسی میں ہے: لو اخر التلاوية عن موضعها فان عليه سجود السهو كما فی الخلاصة جازما، بانه لااعتماد علی مایخالفه وصححه في الولوالجية- اگر نماز میں سجدہ تلاوت مؤخر کر دیا تو اس کی وجہ سے سجدہ سہو آئے گا جیسا کہ خلاصہ میں بطور جزم بیان ہے یعنی اس کے مخالف قول پر اعتماد نہیں کیا جائیگا، والوالجیہ نے بھی اس قول کی تصحیح کی ہے۔ (ت)

ایضاً درمختار میں ہے: سجود السهو يجب بترك واجب سهوا افلا سجود فی العمد قيل الافی اربع-۲ بھول کر ترک واجب میں سجدہ سہو واجب ہوتا ہے لہذا قصداً ترک میں سجدہ سہو نہیں ہوگا، بعض کی رائے میں صرف چار مقامات پر عمداً ترک واجب میں سجدہ سہو لازم ہو جاتا ہے (ت)

ردالمحتار میں ہے: اشار الی ضعفه تبعاً لنور الايضاح لمخالفته للمشهور وقد رده العلامة قاسم بانه لايعلم له اصل فی الرواية ولاوجه فی الدراية-۳ نور الایضاح کی اتباع کرتے ہوئے انہوں نے اس کے ضعیف ہونے پر اشارہ کیا ہے کیونکہ یہ قول مشہور کے خلاف ہے، اور علامہ قاسم نے اس کی یوں تردید کی ہے کہ اس قول کی روایت میں کوئی اصل معلوم نہیں اور نہ ہی اس پر کوئی عقل دلیل موجود ہے (ت)

بست و ہفتم درباره ہلال تار کی گواہی شرعاً محض باطل و نامعتبر و حققناه فی فتاؤنا بما لا مزید علیہ (ہم نے اس کی اپنے فتاوٰی میں خوب تفصیل بیان کی ہے جس پر اضافہ دشوار۔ ت) نامعتبر شرعی کا درجہ اعتبار کو پہنچا کیونکہ، یہاں بھی مولوی صاحب نے مولوی عبدالحئی صاحب لکھنوی کا اتباع کیا ہے مولوی صاحب لکھنوی نے با آنکہ جابجا خود بے اعتبارِ تار کی تصریح کی، جلد اول ص ۵۲۳ اس باب (یعنی رؤیت ہلال) میں صرف خبر، تار یا تحریر خطی کافی نہیں

جب تک کہ بطور کتاب القاضی الی القاضی (قاضی کا دوسرے قاضی کی طرف لکھنا۔ ت) کی تحریر نہ پہنچے، قاعدہ الخط یشبہ الخط (تحریر دوسری تحریر کے مشابہ ہوتی ہے۔ ت) کا مشہور ہے۔ ۴۔ ایضاً صفحہ ۵۴۰ بحسب ضوابط فقیہ مجرد اخبارات تار وغیرہ در باب

۱ ردالمحتار باب سجود السھو داراحیاء التراث العربی بیروت ۲ / ۷۹ ۲ درمختار باب سجود السھو مجتبائی دہلی ۱ / ۱۰۲ ۳ ردالمحتار باب سجود السھو داراحیاء التراث العربی بیروت ۲ / ۷۹ ٤ مجموعہ فتاوی کتاب الصوم مطبع یوسفی لکھنو ۱ / ۲۷۲

Fatawa Rizvia Volume 10

The ruling on fasting and breaking the fast is not reliable. 1 - It is written on page 106:

Indeed, regarding the sighting of the new moon, the fame (widespread reporting) of news is reliable. If news arrives from a city that the moon was seen there last night, or this matter was known through a telegraph, then until it becomes famous through numerous writings and multiple reports, it should not be relied upon. 2

The fame of reports regarding the sighting of the new moon is reliable. If news comes from a city that the moon was sighted there last night, or if this news is received via telegram, it will not be considered reliable until it gains fame through multiple written records and numerous reports. (T)

The meaning of it becoming famous cannot be that once the news is famous in this city that a telegram has arrived from such and such place, then that same telegram, whose news was sharia-wise insufficient and unreliable according to the rules of jurisprudence, would become reliable. No sane person would think so. Otherwise, if the news of a sinner, a transgressor, a drunkard, or an adulterer spreads in the city that he states he saw the moon himself, then it should be considered reliable. However, a telegram is even more unreliable than that, because a sinner belongs to the category of witnesses (whose testimony might be considered under certain conditions). Therefore, if a Sharia judge accepts his testimony, the ruling will become correct, even if the judge is sinful. This is explicitly mentioned in al-Fath, al-Bahr, and ad-Durr, etc., among the illustrious books. (Detailed in Fath, Bahr, Durr and other famous books. T). And a telegram fundamentally lacks the capacity for testimony. Yes, perhaps the meaning is that if multiple telegrams arrive from that city, it will be considered reliable and it will be included in that "istifadah" (widespread transmission) and "shuhrah" (fame) which the jurists have considered reliable regarding the sighting of the new moon. But it was not considered that this multiplicity will be in the source, not in the reporter, as here also the telegram operator (babu) will be the reporter for all these telegrams, while most of them are non-believers. Thus, this fabricated "istifadah" would be worse than a sinner or transgressor shouting in the market that a hundred thousand people in such and such city have seen the moon. Would that be called "istifadah"? Certainly not. Even if there were multiple telegraph offices and suppose news came to each office from that city, would a few non-believers, sinners, or unknown people come and say that

such and such residents of such and such place described seeing the moon to us? Then this mere narration would reach the level of "istifadah"? God forbid! The poor telegram operator is not even a witness to this much. He just received a signal in the telegram and understood some technical characters from it, which he, in extreme haste and complete uncertainty, took down on a paper and handed to a peon. The person sending the signal himself (regarding) the sighting of the moon...

1- Majmu'a Fatawa, Kitab al-Sawm, Matba' Yusufi Lucknow, 2/37 2- Majmu'a Fatawa, Kitab al-Sawm, Matba' Yusufi Lucknow, 2/26

फ़तावा रिज़विया खंड 10

रोज़ा और इफ़्तार का हुक्म विश्वसनीय नहीं है। 1 - पेज 106 पर यह लिखा है:

वास्तव में चांद देखने के मामले में खबरों की प्रसिद्धि विश्वसनीय है। यदि किसी शहर से खबर आए कि पिछली रात वहां चांद देखा गया है या तार के माध्यम से यह बात पता चली है, तो जब तक वह कई लेखों और अनेक खबरों के माध्यम से प्रसिद्ध न हो जाए, उस पर भरोसा नहीं किया जाना चाहिए। 2

चांद देखने के संबंध में खबरों की प्रसिद्धि विश्वसनीय है। यदि किसी शहर से यह खबर आए कि पिछली रात उस स्थान पर चांद देखा गया है या तार के माध्यम से यह खबर ज्ञात हो, तो जब तक कई लेखों और अनेक खबरों के माध्यम से यह खबर प्रसिद्धि प्राप्त न कर ले, इसका एतबार (भरोसा) नहीं किया जाएगा। (त)

इसके प्रसिद्ध हो जाने से यह अर्थ नहीं हो सकता कि जब इस शहर में खबर प्रसिद्ध हो गई कि फलां जगह से तार आया है, तो अब वही तार जिसकी खबर शरीयत के अनुसार अपर्याप्त और फ़िक़्ह के नियमों के अनुसार अविश्वसनीय थी, विश्वसनीय हो जाएगी। कोई भी बुद्धिमान ऐसा नहीं सोचेगा। अन्यथा, यदि किसी पापी, दुराचारी, शराबी या व्यभिचारी की खबर शहर में फैल जाए कि वह स्वयं चांद देखने का बयान करता है, तो उसे विश्वसनीय मान लिया जाना चाहिए। हालाँकि, तार उससे भी अधिक अविश्वसनीय है, क्योंकि पापी तो गवाही देने वालों में से है। इसलिए, यदि शरीयत का न्यायाधीश उसकी गवाही स्वीकार कर ले, तो हुक्म सही हो जाएगा, भले ही न्यायाधीश पापी हो। अल-फ़तह, अल-बहर और अद-दुर्र आदि प्रसिद्ध पुस्तकों में इसका स्पष्ट उल्लेख है। (फ़तह, बहर, दुर्र आदि अन्य प्रसिद्ध पुस्तकों में इस पर स्पष्टीकरण है। त)। और तार में मौलिक रूप से गवाही की योग्यता नहीं होती। हाँ, शायद इसका मतलब यह हो कि जब उस शहर से कई तार आएं तो उन पर भरोसा किया जाए और यह उस 'इस्तिफ़ाज़ा' (व्यापक प्रसार) और 'शुहरत' (प्रसिद्धि) में शामिल होगा जिसे न्यायविदों ने चांद देखने के बारे में विश्वसनीय माना है। लेकिन यह नहीं सोचा गया कि यह बहुलता (तअद्दुद) स्रोत में होगी, न कि रिपोर्टर (रावी) में, क्योंकि यहाँ भी तार बाबू इन सभी तारों का रिपोर्टर होगा, जबकि उनमें से अधिकांश काफ़िर (अविश्वासी) होते हैं। तो यह मनगढ़ंत 'इस्तिफ़ाज़ा' उस पापी-दुराचारी से भी बदतर होगा जो बाज़ार में चिल्लाता फिरे कि फलां शहर में लाख लोगों ने चांद देखा है। क्या उसे 'इस्तिफ़ाज़ा' कहा जाएगा? हरगिज़ नहीं। और जहाँ तार घर भी अनेक हों और मान लें कि हर कार्यालय में उस शहर से खबर आई, तो क्या कुछ काफ़िर या पापी या अज्ञात लोग

आकर कह दें कि फलां जगह के फलां फलां निवासियों ने हमारे सामने चांद देखना बयान किया है, तो क्या यह मात्र वर्णन 'इस्तिफ़ाज़ा' की सीमा तक पहुँच जाएगा? अल्लाह माफ़ करे! बेचारा तार बाबू तो इतनी बात का भी गवाह नहीं है। उसने तो तार में एक हलचल (सिग्नल) पाई और उससे कुछ तकनीकी शब्द समझे, जिन्हें उसने अत्यंत जल्दबाज़ी में और पूर्ण अनिश्चितता के साथ एक काग़ज़ पर उतारा और चपरासी के हवाले कर दिया। सिग्नल देने वाले भी स्वयं चांद देखने...

1- मजमुआ फ़तावा, किताबुल सौम, मतबा युसुफी लखनऊ, 2/37 2- मजमुआ फ़तावा, किताबुल सौम, मतबा युसुफी लखनऊ, 2/26

पृष्ठ 616/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

حکم صوم وافطار معتبر نہیں ۱- صفحہ ۱۰۶ پر یہ لکھا:

واقعی در باب رؤیتِ ہلال شہرت اخبار رؤیتِ ہلال کے بارے میں خبروں کی شہرت معتبر

معتبرست اگر از شہرے خبرے رسیدہ کہ بہ ہے، اگر کسی شہر سے یہ خبر آئے کہ گزشتہ رات

شب گذشتہ در آنجا رؤیت شدہ یا بوساطت تار اس جگہ چاند دیکھا گیا ہے یا تار کے ذریعے یہ

برقی دریافت این امر شدہ تا وقتیکہ شہرت آن خبر معلوم ہو تو جب تک کثیر تحریروں اور متعدد

نہ شود از تحریرات کثیرہ واخبار عدیدہ معلوم خبروں کے ذریعے یہ خبر شہرت حاصل نہ کرے

نہ شود اعتبار آں نباید ساخت ۲- اس کا اعتبار نہیں کیا جائے گا۔ (ت)

اس کی شہرت ہو جانے سے یہ تو مراد نہیں ہو سکتی کہ جب اس شہر میں خبر مشہور ہو گئی کہ فلاں جگہ سے تار آیا ہے تو اب وہی تار جس کی خبر شرعاً ناکافی اور بحسبِ ضوابطِ فقیہ نامعتبر تھی معتبر ہو جائیگا اسے تو کوئی عاقل گمان نہ کرے گا ورنہ کسی فاسق، فاجر، شراب خور، زناکار کی خبر شہر میں اڑ جائے کہ وہ اپنا چاند دیکھنا بیان کرتا ہے تو چاہئے کہ معتبر ہو جائے، حالانکہ تار اس سے بھی زیادہ بے اعتبار، کہ فاسق اہل شہادت ہے ولہٰذا اگر حاکم شرع اس کی شہادت قبول کرلے حکم صحیح ہو جائے گا اگرچہ حاکم آثم ہو نص علیہ فی الفتح والبحر ودروغیرہ من الاسفار الغر (فتح، بحر، در وغیرہ دیگر مشہور کتب میں اس پر تصریح ہے۔ ت) اور تار اصلاً اہلیتِ شہادت نہیں رکھتا، ہاں شاید یہ مراد ہو کہ جب اس شہر سے متعدد تار آئیں تو اعتبار کیا جائے گا اور یہ اُس استفاضہ و شہرت میں داخل ہوگا جسے فقہائے کرام نے درباره رؤیتِ ہلال معتبر رکھا ہے مگر خیال نہ کیا کہ یہ تعدد ہو گا تو مروی عنہ میں نہ راوی میں کہ یہاں بھی تار بابو ان سب تاروں کا ناقل ہو گا حالانکہ اُن میں اکثر کفار ہوتے ہیں تو یہ استفاضہ مخترعہ اُس سے

بھی بدتر ہوگا کہ ایک فاسق فاجر سرِ بازار پکارتا پھرے کہ فلاں شہر میں لاکھ آدمیوں نے چاند دیکھا ہے کیا اسے استفاضہ کہیں گے حاشا وکلا، اور جہاں تار گھر متعدد بھی ہوں اور فرض کریں کہ ہر آفس میں اُس شہر سے خبر آئی تو کیا چند کافر یا فاسق یا مجہول آکر کہہ دیں کہ فلاں جگہ کے فلاں فلاں سُکان نے ہم سے اپنا چاند دیکھنا بیان کیا تو یہ حکایتِ محضہ تاحدِ استفاضہ پہنچے گی، استغفر اللہ تار والا تو بے چارہ اتنی بات کا بھی گواہ نہیں اُس نے تو تار میں ایک حرکت پائی اور اس سے کچھ حروفِ مصطلحہ سمجھے جو نہایت جلدی میں کمالِ بے جزمی کے ساتھ ایک کاغذ پر لے کر چپراسی کے حوالے کئے، حرکت دینے والے بھی خود رؤیتِ ہلال

۱- مجموعہ فتاویٰ کتاب الصوم مطبع یوسفی لکھنؤ ۳۷/۲ ۲- مجموعہ فتاویٰ کتاب الصوم مطبع یوسفی لکھنؤ ۲۶/۲

...were not the ones. They were the Bengali clerks, Hindus, or Christians, etc., of that place. The actual moon-sighters did not come to them personally. They would write on a slip of paper, or if they didn't know English themselves, they would get it translated into English by some Hindu or other non-believer and send it to the telegraph office through a servant or a passerby. The clerk there would then send it here. He couldn't care less whether the person whose name is on the telegram actually sent it himself or if someone just got a fake telegram sent in his name. If the Shariah were to consider news from such a flimsy chain as reliable, it would be a disaster. These are the absurdities of telegrams. Even thousands of verbal rumors spoken by Muslims before our very eyes in the market never constitute Shariah-compliant 'Istifadha' (widespread testimony) until they reach the level of proof and investigation. Then, what is the result of multiple telegrams other than a few rupees being deposited into the government treasury? To understand the meaning of 'Istifadha' which the Shariah has declared reliable, look at what is stated in 'Rad al-Muhtar':

Arabic Text

Sheikh al-Rahmati said: The meaning of Istifadha is that multiple groups come from that city, each reporting about the people of that city that they fasted based on a sighting, not just a rumor where the source is unknown. Just as many reports spread throughout a city and the one who spread them is unknown; such a thing is not even worth listening to, let alone establishing a Shariah ruling by it. (End of quote). I say: This is an excellent discourse, and the words of 'al-Dhakhira' also point to this: 'When it becomes widespread (istafada) and verified', for verification is not found merely by a rumor.

Urdu Translation

Sheikh Rahmati says that the meaning of Istifadha is that multiple groups come from that city and everyone gives this information that they have kept the fast after seeing the moon. It is not based merely on such a rumor whose spreader is unknown, as many things spread in cities and their spreader is not known. Therefore, it is not appropriate even to listen to such a thing, let alone prove a Shariah ruling from it. (End quote). I say: This discourse is very good. The same point is in these words of 'al-Dhakhira' that when it becomes famous and verified, then it will become binding, because proof and verification are not obtained merely from rumors. (T)

See, Istifadha is the name for multiple groups coming from that city and all reporting with one voice that the sighting occurred there and the fast was kept after seeing the moon. Unverified news, whose chain of authority is unknown, even if it is on the tongues of all the city's people, is not worth paying attention to, let alone proving a Shariah ruling from it. Be just, this is the very state of a telegram; the people of the city cannot even tell whose hands were involved in this dissemination, or who wrote the telegram forms.

---

[1] Rad al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/9 Page 617 of 836

...वाले नहीं थे, वे वहां के बंगाली बाबू या हिंदू या ईसाई आदि थे। उनके पास चांद देखने वाले खुद नहीं आए। एक पर्चे पर लिखकर या खुद अंग्रेजी न जानने पर किसी हिंदू आदि काफिरों से अंग्रेजी कराकर किसी नौकर-चाकर या राहगीर के हाथ तार (टेलीग्राम) दफ्तर में भेज दिया। वहां का बाबू उसे यहाँ भेज देगा, उसे इस बात से कोई सरोकार नहीं कि जिसके नाम से तार जा रहा है उसने खुद भेजा है या किसी ने उसके नाम से महज झूठ बोलकर तार भिजवा दिया है। ऐसे कमज़ोर सिलसिले की खबर को अगर शरीयत विश्वसनीय मान ले तो कयामत आ जाए। ये तो तार के बेकार मामले हैं। हमारी आँखों के सामने मुसलमानों की ज़ुबान से निकली बाज़ार की हज़ारों अफ़वाहें कभी भी 'इस्तिफ़ाज़ा-ए-शरिया' (शरिया सम्मत व्यापक गवाही) नहीं होतीं जब तक कि वे सुबूत और जांच की कसौटी पर न उतरें। फिर कई तारों का इसके सिवा क्या नतीजा निकला कि सरकार के खजाने में कुछ रुपये जमा हो गए! शरीयत ने जिस 'इस्तिफ़ाज़ा' को विश्वसनीय माना है, उसका अर्थ समझिए, 'रद्दुल मुहतार' में लिखा है:

अरबी इबारत

शेख रहमती ने कहा: इस्तिफ़ाज़ा का अर्थ यह है कि उस शहर से कई समूह आएँ और उनमें से हर कोई उस शहर के लोगों के बारे में सूचना दे कि उन्होंने चाँद देखकर रोज़ा रखा, न कि केवल एक ऐसी अफ़वाह जिसका फैलाने वाला ज्ञात न हो। जैसा कि कई खबरें पूरे शहर में फैल जाती हैं और उनके फैलाने वाले का पता नहीं होता; ऐसी बात सुनने के लायक भी नहीं है, उससे कोई शरिया हुक्म साबित करना तो दूर की बात है। (समाप्त)। मैं कहता हूँ: यह बहुत अच्छा कथन है और 'अल-ज़खीरा' के शब्द भी इसी ओर इशारा करते हैं: 'जब वह व्यापक (इस्तफ़ादा) और प्रमाणित हो जाए', क्योंकि केवल अफ़वाह से प्रमाणिकता सिद्ध नहीं होती।

उर्दू अनुवाद

शेख रहमती कहते हैं कि इस्तिफ़ाज़ा का अर्थ यह है कि उस शहर से कई जमातें (समूह) आएँ और हर कोई यह जानकारी दे कि उन्होंने चाँद देखकर रोज़ा रखा है। यह महज़ ऐसी अफ़वाह से नहीं होना चाहिए जिसका फैलाने वाला मालूम न हो, जैसा कि शहरों में बहुत सी बातें फैल जाती हैं और उनका फैलाने वाला पता नहीं होता। इसलिए ऐसी बात सुनना भी उचित नहीं है, उससे कोई शरीयत का हुक्म साबित करना तो बहुत दूर की बात है। (समाप्त)। मैं कहता हूँ: यह बात बहुत ही अच्छी है। 'अल-ज़खीरा' के इन शब्दों में भी यही बात है कि जब वह प्रसिद्ध और प्रमाणित हो जाए, तभी वह अनिवार्य होगा क्योंकि सुबूत और प्रमाणिकता केवल अफ़वाह से नहीं होती। (त)

देखिये, इस्तिफ़ाज़ा उसका नाम है कि उस शहर से कई जमातें आएँ और सब एक ज़ुबान होकर यह खबर दें कि वहाँ चाँद देखा गया और चाँद देखकर रोज़ा रखा गया। बिना जाँच-पड़ताल की खबरें जिनका कोई पुख्ता स्रोत मालूम न हो, चाहे वे पूरे शहर के लोगों की ज़ुबान पर हों, कान धरने के काबिल नहीं होतीं, उनसे किसी शरीयत के हुक्म का साबित होना तो बहुत दूर है। इंसाफ कीजिये, तार (टेलीग्राम) की भी यही हालत है; शहर के लोग यह भी नहीं बता सकते कि यह खबर किन लोगों के हाथों फैली, या तार के फॉर्म किसने लिखे।

---

[1] रद्दुल मुहतार, किताबुस सौम, दार इह्याउत तुरासुल अरबी, बेरुत, 2/9 पृष्ठ 617 / 836

والے نہ تھے وہ وہاں کے بنگالی بابو یا ہندو یا نصاریٰ وغیرہم تھے، اُن کے پاس چاند دیکھنے والے خود نہ آئے، ایک پرچے پر لکھ کر یا خود انگریزی نہ جانی تو کسی ہندو وغیرہ کفار سے انگریزی کراکرسی نوکر چاکر یا راہ چلتے کے ہاتھ تار آفس میں بھیج دی وہ وہاں کا بابو یہاں بھیج دے گا اس کی بلا کو بھی غرض نہیں کہ جس کے نام سے تار جاتا ہے خود وہ بھیجتا بھی ہے یا کسی نے محض جھوٹ اس کی طرف سے تارڈلوایا ہے ایسے نفیس سلسلے کی خبر اگر شرع معتبر کرے تو قیامت ہے، یہ تو تار کے مہملات ہیں، زبانوں کی کہی ہوئی خود ہمارے آگے مسلمانوں کی ادا کی ہوئی ہزار افواہ بازار ہرگز استفاضہ شرعیہ نہیں جب تک پایہ ثبوت و تحقیق کو نہ پہنچیں پھر متعدد تاروں سے سوا اس کے کہ گورنمنٹ کے خزانے میں چند روپے داخل ہو گئے، اور کیا نتیجہ! یہاں جو استفاضہ شرع نے معتبر فرمایا اس کے معنی معلوم کیجئے،

ردالمختار میں ہے :

عربی عبارت	**اردو ترجمہ**
قال الرحمتي معنى الاستفاضة ان تاتى من تلك البلدة جماعات متعددون كل منهم يخبر عن اهل تلك البلدة انهم صاموا من رؤية لا مجرد الشيوع من غير علم بمن اشاعه كما قد تشيع اخبار يتحدث بها سائر اهل البلدة ولا يعلم من اشاعها فمثل هذا لا ينبغى ان يسمع فضلا من ان يثبت به حكم اهـ قلت	شیخ رحمتی کہتے ہیں کہ استفاضہ کا معنی یہ ہے کہ اس شہر سے متعدد جماعتیں آئیں اور ہر کوئی یہ اطلاع دے کہ انہوں نے چاند دیکھ کر روزہ رکھا ہے محض ایسی افواہ سے نہیں کہ جس کے پھیلانے والا معلوم نہ ہو جیسا کہ بہت سے باتیں شہروں میں پھیل جاتی ہیں اور ان کے پھیلانے والا معلوم نہیں ہوتا، تو ایسی بات سُننا مناسب نہیں چہ جائیکہ اس سے کوئی حکم شرعی

عربی عبارت	اردو ترجمہ
وھو کلام حسن ویشیر الیه قول الذخیرة اذا استفاض وتحقق فان التحقق لا یوجد بمجرد الشیوع۔	ثابت کیا جائے اھ قلت یہ کلام بہت ہی خوب ہے، ذخیرہ کے ان الفاظ میں بھی یہی بات ہے کہ جب مشہور و متحقق ہو جائے تب لازم ہوگا کیونکہ ثبوت و تحقیق محض افواہ سے نہیں ہوگا۔ (ت)

دیکھئے استفاضہ اس کا نام ہے کہ اُس شہر سے متعدد جماعتیں آئیں اور سب یک زبان خبر دیں کہ وہاں رؤیت ہوئی اور روزہ چاند دیکھ کر رکھا، بے تحقیق خبریں جن کی سند معلوم نہیں اگرچہ تمام اہل شہر کی زبان پر ہوں، کان رکھنے کے قابل نہیں ہوتیں، نہ کہ ان سے کسی حکم شرعی کا اثبات، انصاف کیجئے تو تار کی یہی حالت ہے شہر والے ہرگز یہ بھی نہیں بتا سکتے کہ یہ اشاعت کن لوگوں کے ہاتھوں سے ہوئی، تار کے فارم کس نے لکھے،

---

[1] ردالمحتار کتاب الصوم داراحیاء التراث العربی بیروت ۹/۲ Page 617 of 836

Fatawa Rizwia, Volume 10

Who went to give the form to the telegraph clerk? Who was the telegraph clerk there? Who is the peon here who delivered it? Who was he? It remains that 'its spreader is unknown' (T). And along with linguistic 'Istifadah' (general widespread knowledge), it was not verified as legal (sharia) 'Istifadah'. From here it is clear that the present-day system, upon which the Maulvi of Lucknow relied, is of no use here. The system is that a telegram, if sent, will be dispatched within its three prescribed periods; there will be no difference in that. If the addressee is found, it will be delivered to him. If it is not delivered due to an office error, the charge will be refunded within such period. There is no arrangement at all to verify the identity of the person who comes to send the telegram—whether it is the person himself or another person giving it wrongly under his name. Nor is there an arrangement to ensure the form writer correctly translated the speaker's words, or whether he said something and could not convey it in the cramped words of the telegram, or left the meaning incomplete to save on charges. There is no arrangement that the senders, receivers, and deliverers of telegrams should be just, trustworthy, and pious, leave aside being even Muslims. So what purpose did the said arrangement serve? See further details in the 'Fatawa of this humble one'. Disregarding all these flaws, the basis on which the acceptance of 'Istifadah' was founded is completely missing here in common cities. The basis was that through 'Istifadah', it would be established with certainty that fasting occurred in that city, and cities are usually not devoid of a Sharia judge. Fasting and Eid rulings are always based on the decision of an Islamic judge. Thus, from that 'Istifadah', it would be known that the Sharia judge in that city gave a ruling, and his ruling is a Sharia proof, hence acceptable, just as two just witnesses might testify: 'Before us, testimonies were presented to such-and-such Sharia judge, and he gave a ruling.' In 'Radd al-Muhtar', it is stated:

Arabic	**Urdu Translation**
Since 'Istifadah' is like a 'Mutawatir' report (continuously reported news), and it has been established through it that the people of that city fasted on such-and-such a day, it becomes necessary to act upon it. This is because a city is usually not devoid of a Sharia judge. Therefore, their fasting must have been based on the ruling of their Sharia judge. Thus, that	Since 'Istifadah' is like a 'Mutawatir' report, and through it, it is proven that the people of that city fasted on a certain day, it will be acted upon. Because a city is usually not without a Sharia judge, their fasting will inevitably be based on the decision of their Sharia judge. So now

Arabic	Urdu Translation
'Istifadah' is equivalent to reporting the aforementioned ruling.[1]	'Istifadah' will mean the reporting of the said ruling. (T)

[1] Radd al-Muhtar, Kitab al-Sawm, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/94.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

तार बाबू को फॉर्म देने कौन गया, वहां का तार बाबू कौन था, यहाँ कौन है चपरासी कि दे गया कौन था तो वही रहा कि 'ला यअलमु मन अशाअहा' (इसे मशहूर करने वाले का ज्ञान नहीं। त) और इस्तिफ़ाज़ा लुग़वी (भाषाई प्रसिद्धि) के साथ तहक़ीक़ मुतहक़्क़क़ न हुआ कि इस्तिफ़ाज़ा शरई होता, और यहीं से ज़ाहिर कि इंतज़ामे ज़माना हाल जिस पर मौलवी लखनवी साहब ने एतमाद व इत्तिका किया यहाँ कुछ भी बकार आमद नहीं, इंतज़ाम इसका है कि तार जो दिया जाए अपनी तीन मुक़र्ररह मीआदों पर भेज दिया जाएगा इसमें फ़र्क़ न आएगा मक्तूब अलैहि मिला तो उसे पहुँचा दिया जाएगा, ऑफ़िस की ग़लती से न पहुँचा तो महसूल इतनी मुद्दत तक वापस दिया जाएगा, यह इंतज़ाम। अस्लन नहीं कि तार देने जो आए इसकी शनाख़्त ली जाए कि आया वही है या दूसरा शख़्स ग़लत-सलत उसके नाम से देता है, न इसका इंतज़ाम है कि फॉर्म लिखने वाले ने कलामे क़ाइल का सही तर्जुमा किया है या उसने कुछ कहा और यह तार के तंग लफ़्ज़ों में उसे अदा न कर सका, या महसूल के बचाव को मतलब नाक़िस रह गया, न इसका इंतज़ाम है कि तार देने, लेने, पहुँचाने वाले आदिल, सिक़ह, मुत्तक़ी हों न दर किनारा, मुसलमान ही हों, फिर इंतज़ामे मज़्कूर ने क्या काम दिया, बाक़ी तफ़्सील फ़तावाए फ़क़ीर में मुलाहज़ा हो और इन तमाम ख़राबियों से क़तअ नज़र कीजिये तो क़बूले इस्तिफ़ाज़ा जिस अम्र पर मबनी था यहाँ आमह बिलाद में सिरे से वह मबनी ही मफ़क़ूद है, मबनी यह था कि इस्तिफ़ाज़ा से उस शहर में रोज़ा होना बिल-यक़ीन साबित होगा और शहर आदतन हाकिमे शरअ से ख़ाली नहीं होता और रोज़ा व ईद हुक्मे हाकिमे इस्लाम ही से हुआ करते हैं तो इस इस्तिफ़ाज़ा से मालूम होगा उस शहर में हाकिमे शरअ ने हुक्म दिया और उसका हुक्म हुज्जते शरइया है लिहाज़ा मक़बूल होगा जैसे दो गवाह आदिल गवाही दें कि हमारे सामने फ़लाँ हाकिमे शरअ के यहाँ शहादतें गुज़रीं और उसने हुक्म दिया। रद-उल-मुह्तार में है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
चूँकि 'इस्तिफ़ाज़ा' मुतवातिर ख़बर की तरह है और इससे यह साबित हो गया है कि उस शहर के लोगों ने फ़लाँ दिन रोज़ा रखा है, तो इस पर अमल लाज़िम होगा क्योंकि शहर आदतन शरई हाकिम से खाली नहीं होता। तो लाज़मी तौर पर उनका रोज़ा उनके शरई हाकिम के फ़ैसले पर आधारित	जब इस्तिफ़ाज़ा ख़बर-ए-मुतवातिर की तरह है और इससे यह साबित हो गया कि उस शहर के लोगों ने फ़लाँ दिन रोज़ा रखा है तो इस पर अमल होगा क्योंकि आदतन शहर हाकिमे शरई से ख़ाली नहीं होता तो ऐसी सूरत में ला-महाला उनका रोज़ा उनके हाकिमे शरई के फ़ैसले पर

अरबी	उर्दू अनुवाद
होगा। इस तरह वह इस्तिफ़ाज़ा उक्त हुक्म की नकल के अर्थ में होगा।[1]	مبنی होगा तो अब इस्तिफ़ाज़ा ब-माना हुक्मे मज़्कूर का नक़ल करना होगा। (त)

[1] रद-उल-मुह्तार, किताब-उस-सौम, दार इहया-उत-तुरास-उल-अरबी, बैरूत 2/94.

تار بابُو کو فارم دینے کون گیا، وہاں کا تار بابُو کون تھا، یہاں کون ہے چپراسی کہ دے گیا کون تھا تو وہی رہا کہ لایعلم من اشاعھا (اسے مشہور کرنے والے کا علم نہیں ۔ت) اور استفاضہ لغوی کے ساتھ تحقق متحق نہ ہوا کہ استفاضہ شرعی ہوتا، اور یہیں سے ظاہر کہ انتظام زمانہ حال جس پر مولوی لکھنوی صاحب نے اعتماد واتکال کیا یہاں کچھ بھی بکار آمد نہیں، انتظام اس کا ہے کہ تار جو دیا جائے اپنی تین مقررہ میعادوں پر بھیج دیا جائے گا اس میں فرق نہ آئے گا مکتوب الیہ ملا تو اسے پہنچادیا جائے گا، آفس کی غلطی سے نہ پہنچا تو محصول اتنی مدت تک واپس دیا جائے گا، یہ انتظام اصلاً نہیں کہ تار دینے جو آئے اس کی شناخت لی جائے کہ آیا وہی ہے یا دوسرا شخص غلط سلط اُس کے نام سے دیتا ہے، نہ اس کا انتظام ہے کہ فارم لکھنے والے نے کلام قائل کا صحیح ترجمہ کیا ہے یا اُس نے کچھ کہا اور یہ تار کے تنگ لفظوں میں اُسے ادا نہ کر سکا، یا محصول کے بچاؤ کو مطلب ناقص رہ گیا، نہ اسکا انتظام ہے کہ تار دینے، لینے، پہنچانے والے عادل، ثقہ، متقی ہو نارد کنار، مسلمان ہی ہوں، پھر انتظام مذکور نے کیا کام دیا، باقی تفصیل فتاوائے فقیر میں ملاحظہ ہو اور ان تمام خرابیوں سے قطع نظر کیجئے تو قبول استفاضہ جس امر پر مبنی تھا یہاں عامہ بلاد میں سرے سے وہ مبنی ہی مفقود ہے، مبنی یہ تھا کہ استفاضہ سے اُس شہر میں روزہ ہونا بالیقین ثابت ہوگا اور شہر عادۃً حاکم شرع سے خالی نہیں ہوتا اور روزہ وعید حکم حاکم اسلام ہی سے ہوا کرتے ہیں تو اس استفاضہ سے معلوم ہوگا اس شہر میں حاکم شرع نے حکم دیا اور اس کا حکم حجت شرعیہ ہے لہذا مقبول ہوگا جیسے دو گواہ عادل گواہی دیں کہ ہمارے سامنے فلاں حاکم شرع کے یہاں شہادتیں گزریں اور اس نے حکم دیا۔ ردالمحتار میں ہے:

عربی **اردو ترجمہ**

الاستفاضة لما كانت بمنزلة الخبر المتواتر وقد ثبت بها ان اهل تلك البلدة صاموا يوم كذا لزم العمل بها لان البلدة لاتخلو عن حاكم شرعی عادة فلا بد من ان يكون صومهم مبنيا على حكم حاكمهم الشرعی فكانت تلك الاستفاضة بمعنى نقل الحكم المذكور ۱-

جب استفاضہ خبرِ متواتر کی طرح ہے اور اس سے یہ ثابت ہو گیا کہ اس شہر کے لوگوں نے فلاں دن روزہ رکھا ہے تو اس پر عمل ہوگا کیونکہ عادۃً شہر حاکم شرعی سے خالی نہیں ہوتا تو ایسی صورت میں لامحالہ ان کا روزہ ان کے حاکم شرعی کے فیصلے پر مبنی ہوگا تو اب استفاضہ بمعنی حکم مذکور کا نقل کرنا ہوگا۔ (ت)

۱- ردالمحتار کتاب الصوم داراحیاء التراث العربی بیروت ۹۴/۲

Fatawa Rizwia Volume 10

In the common cities here, there is neither a Sharia judge nor people bound by Sharia rulings. Even if there was widespread information (istifaza), what then? Allah is sufficient for us, and there is no power or might except with Allah. Twenty-eighth: The investigation of the difference in moon sighting locations (ikhtilaf-e-matale) has been explained in a most elegant and superior manner, praise be to Allah. From this, it is clear that it is never reliable for any crescent moon. An instruction from Mustafa ﷺ:

We are an illiterate nation; we do not write, nor do we calculate. The month is like this, like this, and like this... (Hadith) We are an illiterate nation; we do not write, nor do we calculate. We count the month like this and like this. (Hadith) (t)

This is sufficient to completely invalidate and ignore [calculations], as its basis every month is on unreliable calculations which the pure Sharia has completely disregarded. However, regarding the crescent of Eid-ul-Adha, Allama Shami (may Allah have mercy on him) experienced a human error/confusion. He surmised that it should be considered here. He himself does not state this as a matter of the madhhab (school of thought) but merely expresses his own opinion and clarifies that he has not seen this ruling in any book. He bases it on two points—or rather, just one point. Had he not revealed the basis of his thought, doubt would have remained that perhaps there is some subtle point here. But, praise be to Allah, his statement clarified the matter. In both these points, the eminent opinion of Allama Shami faltered, so there is absolutely no way to follow them. The first point he mentioned was that the difference in sightings was deemed unreliable for fasting because the Hadith related it to general sighting: whenever the moon is seen anywhere, sighting has occurred. This is unlike sacrifice (Udhiya), where such a connection has not been reported. The second point is that from the speech of scholars in the "Book of Hajj," it is understood that regarding Hajj, the difference in sightings is reliable. Thus, if witnesses come after the standing [at Arafat] saying today was the tenth, it will not be accepted. It is stated in Rad al-Muhtar:

Difference in sightings is not considered; rather, acting upon the earliest sighting is mandatory. This is the reliable position for us (Hanafis), Malikis, and Hanbalis, because the address in the blessed Hadith "Fast upon seeing it [the moon]" includes general sighting. (t) Difference in sightings will not be considered; rather, acting upon the first sighting of the moon will be mandatory. This is the reliable position for us

(Hanafis), Malikis, and Hanbalis, because the blessed Hadith "Soomo li-ru'yatihi" (Fast upon seeing the moon) includes the command for general sighting. (t)

1 Sunan Abi Dawud, Kitab al-Siyam, Aftab Alam Press, Lahore, 1/311 2 Rad al-Muhtar, Matlab fi Ikhtilaf al-Matali, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/96

फतावा रिज़विया जिल्द दहुम (दसवीं)

यहाँ आम शहरों में न तो शरई हाकिम हैं और न ही लोग शरई आदेशों के पाबंद हैं, फिर अगर शोहरत (इस्तिफ़ाज़ा) हो भी गई तो क्या, और हमारे लिए अल्लाह काफी है और अल्लाह के सिवा कोई शक्ति नहीं है। अट्ठाईसवाँ: उदय स्थलों के अंतर (इख्तिलाफ़-ए-मतालए) की जाँच-पड़ताल, अल्लाह की प्रशंसा के साथ, बेहतरीन और सुंदर तरीके से बयान की जा चुकी है, जिससे स्पष्ट है कि वह मूल रूप से कभी भी किसी हिलाल (नया चाँद) में विश्वसनीय होने के योग्य नहीं है। मुस्तफ़ा ﷺ का एक फरमान:

हम एक अनपढ़ उम्मत हैं; हम न लिखते हैं और न ही गणना जानते हैं। महीना ऐसे और ऐसे और ऐसे होता है... (हदीस) हम अनपढ़ उम्मत हैं, न लिखते हैं और न हिसाब जानते हैं, हम महीने को यूँ यूँ गिनते हैं। (हदीस) (त)

यह पूरी तरह से इसके खंडन और उपेक्षा के लिए पर्याप्त है, क्योंकि हर महीने इसका आधार उन अविश्वसनीय गणनाओं पर है जिन्हें पाक शरीयत ने पूरी तरह से खारिज कर दिया है। हालाँकि, ईदुज़-ज़ुहा के हिलाल के संबंध में अल्लामा शामी (रहमहुल्लाह) को मानवीय स्वभाव के कारण एक भ्रम हुआ और उन्हें लगा कि यहाँ इसे विश्वसनीय माना जाना चाहिए। वे स्वयं इसे मज़हब (विचारधारा) का मसला नहीं बताते, बल्कि केवल अपनी एक राय कहते हैं और स्पष्ट करते हैं कि मैंने यह आदेश किसी किताब में नहीं देखा। वे इसे दो बातों पर—या यूँ कहें कि केवल एक ही बात पर आधारित करते हैं। यदि वे अपने इस विचार का कारण स्पष्ट न करते, तो संदेह बना रहता कि शायद यहाँ कोई बारीक नुक्ता हो। लेकिन, अल्लाह का शुक्र है कि उनके बयान ने मामला साफ कर दिया। उन दोनों बातों में अल्लामा शामी की राय में चूक हुई है, इसलिए उनके अनुसरण का कोई रास्ता नहीं है। पहली बात उन्होंने यह कही कि रोज़े के मामले में उदय स्थलों का अंतर इसलिए अविश्वसनीय था क्योंकि हदीस ने उसे सामान्य दृष्टि (रऊयत) से जोड़ा था: जब कहीं भी चाँद देखा गया, तो रऊयत हो गई। इसके विपरीत, कुर्बानी (उज़हिया) के संबंध में वैसा कोई संदर्भ नहीं आया है। दूसरी बात यह है कि "किताबुल हज" में विद्वानों के कथनों से यह समझ आता है कि हज के संबंध में उदय स्थलों का अंतर विश्वसनीय है। अतः यदि अरफ़ात में ठहरने के बाद गवाह आएँ कि आज दसवीं थी, तो उसे स्वीकार नहीं किया जाएगा। रद्दुल मुहतार में कहा गया है:

उदय स्थलों के अंतर का विचार नहीं किया जाएगा, बल्कि पहले चाँद दिखने पर अमल करना अनिवार्य होगा। यही हमारे (हनफ़ी), मालिकी और हनबली संप्रदायों के यहाँ मान्य है क्योंकि हदीस-ए-पाक "चाँद देखकर रोज़ा रखो" (सोमू ले-रऊयतेही) में संबोधन सामान्य रऊयत (चाँद देखने) को शामिल है। (त) उदय स्थलों के अंतर का कोई विचार नहीं होगा, बल्कि पहले चाँद की दृष्टि पर अमल करना अनिवार्य होगा और यही हमारे (हनफ़ियों), मालिकिया और हनाबिला के यहाँ विश्वसनीय है क्योंकि हदीस-ए-पाक "सोमू ले-रऊयतेही" (चाँद देखकर रोज़ा रखो) में संबोधन सामान्य दृष्टि को शामिल करता है। (त)

1 सुनन अबी दाऊद, किताब अल-सियाम, आफ़ताब आलम प्रेस, लाहौर, 1/311 2 रद्दुल मुहतार, मतलब फ़ी इख्तिलाफ़ अल-मताली, दार इह्या अल-तुरास अल-अरबी, बेरूत, 2/96

یہاں عامہ بلاد میں نہ حاکم شرعی نہ لوگ پابندِ احکام شرعیہ، پھر استفاضہ ہوا بھی تو کیا وحسبنا اللہ ولا حول ولا قوۃ الا باللہ۔ بست و ہشتم مسئلہ اختلاف مطالع کی تحقیق اعلٰی وجہ انیق پر بحمد اللہ تعالٰی بیان ہو چکی جس سے روشن کہ وہ اصلاً کبھی کسی ہلال میں معتبر ہونے کے قابل نہیں۔ مصطفٰی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا ایک ارشاد: انا امۃ امیۃ لا نکتب ولا نحسب، الشھر ھکذا و ھکذا و ھکذا الحدیث۔ ہم امّی امت ہیں نہ لکھتے ہیں اور نہ حساب جانتے ہیں ہم ماہ کو یوں یوں شمار کرتے ہیں الحدیث (ت)

مطلقاً اس کے ابطال و اہمال کو کافی و وافی، کہ اس کی بنا ہر مہینے میں انہیں حسابات غیر مضبوط پر ہے جن کو شرع مطہر یکسر ساقط النظر فرما چکی، مگر درباره ہلال اضحی علامہ شامی رحمتہ اللہ تعالٰی علیہ کو براہِ بشریت ایک اشتباہ واقع ہوا اور انہیں گمان گزرا یہاں اس کا اعتبار چاہئے وہ خود بھی اسے مسئلہ مذہب نہیں بتاتے صرف اپنی ایک رائے کہتے اور تصریح فرماتے ہیں کہ یہ حکم میں نے کسی کتاب میں نہ دیکھا اور اس کی بناء دو بلکہ ایک ہی امر پر کرتے ہیں اگر وہ اپنے اس خیال کا منشا ظاہر نہ فرماتے تو شبہ رہتا کہ شاید یہاں کوئی دقیقہ ہو مگر الحمد للہ کہ ان کے بیان نے امر واضح کر دیا اُن دونوں امر میں علامہ شامی کی رائے سامی سے لغزش ہوئی ہے تو ان کے اتباع کی طرف ہرگز سبیل نہیں۔ امر اول یہ فرمایا کہ اختلاف مطالع صوم میں تو اس لیے نامعتبر ہوا تھا کہ حدیث نے اُسے مطلق رؤیت سے متعلق فرمایا تھا جب کہیں چاند دیکھا گیا رؤیت ہوگئی بخلاف اضحیہ کہ اس کا ویسا تعلق وارد نہیں۔ امر دوم یہ کہ کلام علما سے کتاب الحج میں مفہوم ہوتا ہے درباره حج اختلاف مطالع معتبر ہے تو اگر بعد وقوف گواہ گزریں کہ آج دسویں تھی قبول نہ کی جائے گی۔ ردالمحتار میں فرمایا:

لا يعتبر اختلافها بل يجب العمل بالاسبق رؤية وهو المعتمد عندنا و عند المالكية و الحنابلة لتعلق الخطاب عاماً بمطلق الرؤية في حديث صوموا لرؤيته 2 اختلافِ مطالع کا اعتبار نہ ہوگا بلکہ پہلے چاند کی رؤیت پر عمل واجب ہوگا اور یہی ہمارے (احناف)، مالکیہ اور حنابلہ کے ہاں معتمد ہے کیونکہ حدیثِ پاک "صوموا لرؤیته" (چاند دیکھنے پر روزہ رکھو) میں خطاب مطلق رؤیت کو شامل ہے۔ (ت)

1 سنن ابی داؤد کتاب الصیام آفتاب عالم پریس لاہور ۱ / ۳۱۱ 2 ردالمحتار مطلب فی اختلاف المطالع دار احیاء التراث العربی بیروت ۹۶/۲

صفحہ 619 کا 836

Fatawa Rizwia, Volume 10

Note: It is understood from the words of scholars in the Book of Hajj that differences in moon sightings (Matali') are taken into account there. Therefore, nothing is obligatory upon the pilgrims if it appears that the moon was seen in another city a day before them. Would the same be said regarding sacrifice (Qurbani) for non-pilgrims? I have not seen a ruling on this, but it seems so, because differences in sightings were not considered in fasting due to its connection to general sighting. This is contrary to sacrifice; the apparent view is that it is like prayer times, where every people must act according to their own timing. (T)

I say (Aqool): Both are not correct. Praise be to Allah, regarding sacrifice as well, the same type of Hadith has arrived as was there for fasting and breaking fast. The Sharia has linked it to general sighting just as those two. It is narrated in Sunan Abi Dawood from the Ameer of Makkah, Harith bin Hatib (may Allah be pleased with him):

"The Messenger of Allah (peace be upon him) exhorted us to perform sacrifice based on the sighting. If we do not see it and two just witnesses testify, then we should sacrifice based on their testimony."

Imam Daraqutni said: "This chain of narration is connected and authentic" (its chain is connected and sound. - T). And in Hajj, the rejection of testimony is not based on the difference in sightings, otherwise, if witnesses reported a sighting from a month's distance, it would be acceptable, whereas scholars reject it absolutely. Rather, the reason is to avoid hardship, as stated in al-Lubab and Sharh al-Lubab. That is, from distances of thousands of miles, from all regions and corners of the earth, millions of servants of God come for Hajj...

---

1. Radd al-Muhtar, Discussion on differences in sightings, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/96.
2. Sunan Abi Dawood, Book of Fasting, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/319.
3. Daraqutni, Chapter of Testimony on the Sighting of the Crescent, Hadith no. al-Nashr al-Niya Multan, 2/17.

फतावा रिज़विया, जिल्द 10

चेतावनी (तनबीह): हज की किताब में विद्वानों की बातों से यह समझ में आता है कि वहां चंद्रमा देखने के विभिन्न स्थानों (मतले) के अंतर का विचार किया जाता है। इसलिए, यदि यह स्पष्ट हो जाए कि किसी अन्य शहर में उनसे एक दिन पहले चंद्रमा देखा गया था, तो हज करने वालों पर कुछ भी अनिवार्य नहीं होगा। क्या गैर-हज यात्रियों के हक में कुर्बानी के बारे में भी यही कहा जाएगा? इस बारे में कोई आदेश मेरी नज़र से नहीं गुज़रा, ज़ाहिर यही है (कि मतले के अंतर का विचार होगा) क्योंकि रोज़े में मतले के अंतर का विचार इसलिए नहीं है कि हदीस शरीफ में रोज़े का संबंध सामान्य दर्शन (रूत) से है, कुर्बानी के विपरीत कि उसमें ज़ाहिर यही है कि यह नमाज़ के समय की तरह है, हर समुदाय पर अपने समय के अनुसार अमल करना अनिवार्य होगा। (त)

मैं कहता हूँ (अकूल): दोनों सही नहीं हैं। अल्हम्दुलिल्लाह, कुर्बानी के बारे में भी वैसी ही हदीस आई है जैसी रोज़ा और इफ़्तार के बारे में थी। शरीयत ने उसे भी सामान्य दर्शन से वैसा ही जोड़ा है जैसा कि उन दोनों को। सुनन अबी दाऊद शरीफ में मक्का के अमीर हारिस बिन हातिब (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है:

"अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने हमें वसीयत फरमाई कि दर्शन (चाँद देखने) पर कुर्बानी करें, फिर अगर हमें दर्शन न हो और दो न्यायप्रिय गवाह गवाही दें, तो हम उनकी गवाही से कुर्बानी कर लें।"

इमाम दारकुतनी ने फरमाया: "इसकी सनद जुड़ी हुई और सही है" (इसकी सनद मुत्तसिल और सही है। - त)। और हज में गवाही को अस्वीकार करना मतले के अंतर के आधार पर नहीं है, वरना अगर गवाह एक महीने की दूरी से दर्शन की रिपोर्ट दें तो वह स्वीकार्य होनी चाहिए, जबकि विद्वान इसे पूर्णतः अस्वीकार करते हैं। बल्कि इसका कारण कठिनाई को दूर करना है, जैसा कि अल-लुबाब और शरह अल-लुबाब में स्पष्ट है। यानी हज़ारों मील की दूरी से, दुनिया के तमाम कोनों और क्षेत्रों से लाखों अल्लाह के बंदे हज के लिए...

---

1. रद अल-मुह्तार, मतले के अंतर पर चर्चा, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 2/96.
2. सुनन अबी दाऊद, रोज़े की किताब, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 1/319.

3. दारकुतनी, अर्धचंद्र के दर्शन पर गवाही का अध्याय, हदीस संख्या अल-नश्र अल-निया मुल्तान, 2/17.

تنبیہ : کتب الحج میں کلام علماء سے یہ مفہوم ہوتا ہے کہ حج میں اختلاف مطالع کا اعتبار ہے کیونکہ اگر واضح ہوجائے کہ کسی دوسرے شہر میں ایک دن پہلے چاند دیکھا گیا تھا تو اب حجاج پر کوئی شے بھی لازم نہ ہوگی ، اور کیا قربانی کے بارے میں غیر حجاج کے حق میں بھی یہی کہا جائے گا ؟ اس بارے میں حکم میری نظر سے نہیں گزرا، ظاہر یہی ہے (کہ اختلاف مطالع کا اعتبار ہوگا) کیونکہ صوم میں اختلاف مطالع کا اعتبار اس لیے نہیں کہ حدیث مبارک میں روزہ کا تعلق مطلق رؤیت سے ہے، بخلاف قربانی کے کہ اس میں ظاہر یہی ہے کہ یہ اوقات نماز کی طرح ہے ہر قوم پر اپنے اوقات کے مطابق عمل لازم ہوگا ۔ (ت)

تنبیہ: یفھم من کلامھم في کتاب الحج ان اختلاف المطالع فیه معتبر فلا یلزمھم شئ لو ظھر انه رؤی في بلدة اخری قبلھم بیوم وھل یقال کذلك في حق الاضحیة لغیر الحجاج لم اره والظاہر نعم لان اختلاف المطالع انما لم یعتبر في الصوم لتعلقه بمطلق الرؤیة وھذا بخلاف الاضحیة فالظاہر انھا کاوقت الصلوة یلزم کل قوم العمل بما عندھم ۔1

اقول: دونوں صحیح نہیں ، الحمد للہ درباره اضحیہ بھی ویسی ہی حدیث وارد ہے جیسی صوم و افطار میں تھی شرع نے اُسے بھی مطلق رؤیت سے ویسا ہی متعلق فرمایا ہے جیسا اُن دونوں کو سنن ابی داؤد شریف میں امیر مکہ حارث بن حاطب رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہے :

قال عھد الینا رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ان ننسک للرؤیة فان لم نرہ وشھد شاہدا عدل نسکنا بشہادتھما ۔2

ہمیں رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے وصیت فرمائی کہ رؤیت پر قربانی کریں پھر اگر ہمیں رؤیت نہ ہو اور دو گواہ عادل گواہی دیں تو ان کی گواہی سے قربانی کر لیں۔

امام دار قطنی نے فرمایا: ہذا اسناد متصل صحیح 3 (اس کی سند متصل اور صحیح ہے۔ت)۔ اور حج میں ردِ شہادت نہ بر بنائے اعتبار اختلاف ہے ورنہ مہینہ بھر سے فاصلہ کی رؤیت گواہ بیان کریں تو مقبول ہو، حالانکہ علماء مطلقاً رد فرماتے ہیں بلکہ اس کی وجہ دفع حرج ہے جیسا کہ لباب وشرح لباب میں تصریح ہے یعنی ہزار ہا کوس کے فاصلوں سے تمام اقطار واطراف زمین سے لاکھوں بندہ خدا حج کے لیے

---

1 رد المحتار مطلب فی اختلاف المطالع داراحیاء التراث العربی بیروت ۹۶/۲ 2 سنن ابی داؤد کتاب الصیام آفتاب عالم پریس لاہور ۳۱۹/۱ 3 دار قطنی باب الشہادت علی رؤیتہ الہلال حدیث نمبر النشر النیہ ملتان ۱۷/۲

Fatawa Razawiyya Volume 10

...They have come now that the time has passed, witnesses have come to testify that you performed the stay at Arafah on the tenth, your Hajj was not valid. What a massive hardship this is! The expenditure of millions of rupees by hundreds of thousands of people and the physical hardships endured have all gone to waste. Now, either this magnificent and vast assembly must remain in Makkah al-Mukarramah for a whole year, to the point where they find no bread and no grain remains for the residents of Makkah, or they must be ordered to return to their homelands and then return next year with the same millions in expenses and physical hardships. Proving those two witnesses wrong is far easier than facing these two calamities.

And Allah the Almighty has said: "And He has not placed upon you any hardship in the religion." Allah the Almighty's blessed command is: Allah has not made the religion difficult for you. (T)

Therefore, those same scholars clarify that if time still remains and rectification is possible, the testimony will be accepted; then where does the consideration for the difference of horizons remain? It is stated in Durr al-Mukhtar:

Arabic	Urdu Translation
If they testify after the stay, that their stay was after its time, their testimony is not accepted, and the stay is valid by preference (istihsan) until the testimony, due to severe hardship; and before it, i.e., before its time, it is accepted if rectification is possible at night with the majority of them, otherwise not.	If witnesses testify after the stay at Arafat that the pilgrims' stay occurred after its designated time, the testimony will not be accepted, and as a matter of preference, the pilgrims' stay will be considered valid, otherwise severe hardship would inevitably follow. And if witnesses testified before the stay, the testimony will be accepted provided that rectification can be made at night along with the majority of people, otherwise not. (T)

It is stated in the same Radd al-Muhtar:

Arabic	Urdu Translation
If they testify after the stay but before its time, their testimony is accepted, unlike the testimony that	If witnesses testify after the stay that the stay occurred before its time, then the testimony will be accepted. This is in contrast to the

Arabic	Urdu Translation
they stayed after its day, for rectification is not possible at all, therefore it was not accepted. (Summarized)	situation where the testimony is that the stay occurred after the Day of Arafah, because in that case, rectification is not possible, and therefore the testimony will not be accepted. (T)

1. Al-Quran 22/78
2. Durr al-Mukhtar, Chapter of Hady, Mujtabai Delhi, 1/183
3. Radd al-Muhtar, Chapter of Hady, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/251-52

फ़तावा रज़विया जिल्द दहुम

...हाज़िर हुए अब कि वक़्त गुज़र गया, गवाह गवाही देने आए कि तुमने दसवीं को वुक़ूफ़-ए-अरफ़ा किया, तुम्हारा हज नहीं हुआ। कितना बड़ा हर्ज-ए-अज़ीम (भारी नुक़सान) है, लाखों बंदों के करोड़ों रुपयों का ख़र्च और जानों की मशक़्क़तें सब बर्बाद गईं। अब या तो साल भर और यह तमाम लश्कर-हा-ए-अज़ीमुश्शान मक्का मुअज़्ज़मा में पड़े रहें कि न उन्हें रोटी नसीब हो न अहल-ए-मक्का के लिए दाना बचे, या हुक्म दिया जाए कि सब अपने वतनों को वापस जा कर वैसे ही करोड़ों के ख़र्च और जानों की मशक़्क़त से फिर साल-ए-आइंदा हाज़िर हों। इन दोनों आफ़तों से उन दोनों गवाहों की तग़लीज़ (झूठा साबित करना) आसान तर है।

और अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "और उसने तुम पर दीन में कोई तंगी नहीं रखी।" अल्लाह तआला का इरशाद-ए-मुबारक है: अल्लाह ने तुम पर दीन में तंगी नहीं फ़रमाई। (त)

और इसीलिए वही उलेमा तसरीह (स्पष्ट व्याख्या) फ़रमाते हैं कि अगर वक़्त अभी बाक़ी है और तदारुक (सुधार) मुमकिन है तो गवाही मक़बूल होगी, फिर एतबार-ए-इख़्तिलाफ़-ए-मतालअ (क्षितिज के अंतर का विचार) कहाँ रहा। 'दुर्रे मुख़्तार' में है:

अरबी	**उर्दू अनुवाद**
यदि वे वुक़ूफ़ के बाद गवाही दें कि उनका वुक़ूफ़ उसके समय के बाद हुआ, तो उनकी गवाही स्वीकार नहीं की जाएगी, और वुक़ूफ़ इस्तिहसानन सही है जब तक कि अत्यधिक कठिनाई के कारण गवाही न हो; और उससे पहले, अर्थात उसके समय से पहले, गवाही स्वीकार की जाएगी यदि रात में उनमें से अधिकांश के साथ सुधार संभव हो, अन्यथा नहीं।	अगर वुक़ूफ़-ए-अरफ़ात के बाद गवाहों ने गवाही दी कि हाजियों का वुक़ूफ़ वक़्त के बाद हुआ है तो गवाही मक़बूल न होगी और इस्तिहसानन हाजियों का वुक़ूफ़ सही होगा वर्ना हर्ज-ए-शदीद लाज़िम आएगा, और अगर गवाहों ने गवाही वुक़ूफ़ से पहले दी तो गवाही मक़बूल होगी बशर्ते कि रात को अक्सर लोगों के साथ तदारुक हो सके वरना नहीं। (त)

ख़ुद इसी 'रद्दुल मुह्तार' में है:

अरबी	उर्दू अनुवाद
यदि वे वुक़ूफ़ के बाद उसके समय से पहले गवाही दें, तो उनकी गवाही स्वीकार की जाएगी, उस गवाही के विपरीत कि उन्होंने उसके दिन के बाद वुक़ूफ़ किया, क्योंकि सुधार बिल्कुल भी संभव नहीं है, इसलिए इसे स्वीकार नहीं किया गया। (सारांश)	अगर वुक़ूफ़ के बाद गवाहों ने यह गवाही दी कि वुक़ूफ़ वक़्त से पहले हुआ है तो गवाही मक़बूल होगी, बख़िलाफ़ उस सूरत के जब यह गवाही हो कि वुक़ूफ़ यौम-ए-अरफ़ा के बाद हुआ क्योंकि इस सूरत में तदारुक मुमकिन नहीं इसलिए गवाही मक़बूल न होगी। (त)

1. अल-क़ुरआन २२/७८
2. दुर्रे मुख़्तार, बाबुल हदिय, मुज्तबाई दिल्ली, १/१८३
3. रद्दुल मुहतार, बाबुल हदिय, दार इह्या अत-तुरास अल-अरबी, बैरुत, २/२५१-५२

पृष्ठ ६२१/८३६

حاضر ہوئے اب کہ وقت گزر گیا گواہ گواہی دینے آئے کہ تم نے دسویں کو وقوف عرفہ کیا تمہارا حج نہ ہوا، کتنا بڑا حرج عظیم ہے، لاکھوں بندوں کے کروڑوں روپے کا خرچ اور جانوں کی مشقتیں سب برباد گئیں، اب یا تو سال بھر اور یہ تمام لشکر ہائے عظیم الشان مکہ معظمہ میں پڑے رہیں کہ نہ انہیں روٹی نصیب ہو نہ اہلِ مکہ کے لیے دانہ بچے یا حکم دیا جائے کہ سب اپنے وطنوں کو واپس جا کر ویسے ہی کروڑوں کے خرچ اور جانوں کی مشقت سے پھر سال آئندہ حاضر ہوں ان دونوں آفتوں سے اُن دونوں گواہوں کی تغلیط آسان تر ہے۔

وقد قال اللہ تعالٰی وَ مَا جَعَلَ عَلَیْکُمْ فِی الدِّیْنِ مِنْ حَرَجٍ ط اللہ تعالٰی کا ارشاد مبارک ہے: اللہ نے تم پر دین میں تنگی نہیں فرمائی۔ (ت)

وللہٰذا وہی علماء تصریح فرماتے ہیں کہ اگر وقت ہنوز باقی اور تدارک ممکن ہے گواہی مقبول ہو گی پھر اعتبار اختلافِ مطالع کدھر رہا۔ در مختار میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
شھدوا بعد الوقوف، بوقوفھم بعد وقتہ لا تقبل شھادتھم، والوقوف صحیح استحسانا حتی الشھود للحرج الشدید و قبلہ ای قبل وقتہ قبلت ان امکن التدارک لیلا مع اکثرھم والا لا۔	اگر وقوفِ عرفات کے بعد گواہوں نے گواہی دی کہ حاجیوں کا وقوف وقت کے بعد ہوا ہے تو گواہی مقبول نہ ہوگی اور استحساناً حاجیوں کا وقوف صحیح ہوگا ورنہ حرج شدید لازم آئے گا، اور اگر گواہوں نے گواہی وقوف سے پہلے دی تو گواہی مقبول ہو گی بشرطیکہ رات کو اکثر لوگوں کے ساتھ تدارک ہوسکے ورنہ نہیں۔ (ت)

خود اسی رد المحتار میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
لو شھدوا بعد الوقوف قبل وقتہ قبلت شھادتھم بخلاف الشھادۃ بأنھم وقفوا بعد یومہ فان التدارک غیر ممکن اصلا فلذا لم تقبل (ملخصاً)	اگر وقوف کے بعد گواہوں نے یہ گواہی دی کہ وقوف وقت سے پہلے ہوا ہے تو گواہی مقبول ہو گی، بخلاف اس صورت کے جب یہ گواہی ہو کہ وقوف یوم عرفہ کے بعد ہوا کیونکہ اس صورت میں تدارک ممکن نہیں اس لیے گواہی مقبول نہ ہو گی۔ (ت)

1 القرآن ۲۲/ ۷۸ 2 در مختار باب الہدی مجتبائی دہلی ۱/ ۱۸۳ 3 ردالمحتار باب الہدی داراحیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۲۵۱-۵۲

صفحہ ۶۲۱/۸۳۶

Fatawa Razawiyya, Volume 10

After these clarifications, to think towards the credibility of the difference in horizons (matali') is merely human nature.

"Thus Allah shows you His signs in the horizons and in yourselves so that you may take heed." | In the same way, Allah Almighty shows you His signs in the horizons and within yourselves so that you may receive advice. (T)

In designating twenty-nine rupees and forty paisas (29.40) as the Nisab, perhaps the Maulana followed Maulana Abdullah Sahab Lakhnawi; however, it is not correct. The correct amount is fifty-six (56) rupees, as proven from Jawahir Akhlati, and we have discussed it in detail in our Fatawa.

Thirdly, regarding the statement that Laylat al-Qadr falls unanimously on the 21st, 23rd, 25th, and 29th, and also unanimously on the 27th of Ramadan, perhaps by "unanimously" (bil-ittifaq) he means the opinion of the majority (qawl-e-jamhoor). Otherwise, using "unanimously" creates a severe contradiction; because it would imply that according to those who believe in these dates, there would be two nights of Laylat al-Qadr in one Ramadan: one according to their specific view and the second on the 27th according to the agreed-upon view. Similarly, there are many errors in this advertisement. However, after the blessed days, if justice and guidance are sought, then thirty refutations are few for you. And Allah, the Pure and Most High, knows best, and His knowledge, glorified be His majesty, is most complete and most decisive.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

इन स्पष्टीकरणों के बाद, मताल (क्षितिज) के अंतर की विश्वसनीयता की ओर सोचना केवल मानवीय स्वभाव है।

"इस प्रकार अल्लाह तुम्हें अपनी निशानियाँ क्षितिजों में और तुम्हारे अपने भीतर दिखाता है ताकि तुम नसीहत हासिल करो।" | इसी तरह, अल्लाह तआला तुम्हें अपनी निशानियाँ क्षितिजों में और तुम्हारे अपने अंदर दिखाता है ताकि तुम नसीहत प्राप्त करो। (त)

उन्तीस रुपये चालीस पैसे (29/40) को निसाब के रूप में निर्धारित करने में, शायद मौलवी साहब ने मौलवी अब्दुल्ला साहब लखनवी का अनुसरण किया है; लेकिन वह सही नहीं है। सही छप्पन (56) रुपये है, जैसा कि जवाहर अख़लाती से सिद्ध है, और हमने अपने फ़तावा में इसका विस्तार से उल्लेख किया है।

तीसरी बात, 21, 23, 25, 29 तारीख को सर्वसम्मति (बिला-इत्तेफ़ाक़) से शब-ए-क़द्र और 27 रमज़ान को सर्वसम्मति से शब-ए-क़द्र कहने में शायद 'सर्वसम्मति' से उनका तात्पर्य बहुमत की राय (क़ौल-ए-जम्हूर) है। अन्यथा 'सर्वसम्मति' कहने से इसका मुकाबला एक गंभीर विरोधाभास पैदा करता है; वर्ना यह मानना अनिवार्य होगा कि इन तारीखों में शब-ए-क़द्र मानने वालों के नज़दीक एक रमज़ान में दो-दो शब-ए-क़द्र होंगी, एक उनके अपने विशिष्ट कथन के अनुसार और दूसरी 27 तारीख को सर्वसम्मत कथन के अनुसार। इसी तरह, इस विज्ञापन में बहुत सी गलतियाँ हैं। लेकिन मुबारक दिनों के बाद, यदि न्याय और मार्गदर्शन की आवश्यकता हो, तो आपके लिए 30 खंडन (रद) भी कम हैं। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है, और उसका ज्ञान, उसकी महिमा बुलंद हो, सबसे पूर्ण और सबसे अटल है।

ان تصریحات کے بعد اس سے اعتبار اختلاف مطالع کی طرف خیال جانا محض شانِ بشریت ہے۔

کذلك یریکم اللہ اٰیتہ فی الافاق وفی انفسکم | اسی طرح اللہ تعالٰی تمہیں اپنی نشانیاں دکھاتا ہے آفاق میں اور لعلکم تذکرون۔ | خود تمہارے اندر تاکہ تم نصیحت حاصل کرو۔ (ت)

بست و نہم چالیس ۲۹/۴۰ روپے کو نصاب قرار دینے میں بھی شاید مولوی صاحب نے مولوی عبدالہ صاحب لکھنوی کا اتباع کیا ہے ، مگر وہ صحیح نہیں، صحیح چھپن ۵۶ روپے ہے جیسا کہ جواہر اخلاطی سے ثابت ہے اور ہم نے اپنے فتاوٰی میں اسے مفصل ذکر کیا۔

سیم تاریخ ۲۱، ۲۳، ۲۵، ۲۹ کو شب قدر بالاتفاق اور ۲۷ رمضان کو شب قدر بالاتفاق فرمانے میں شاید اتفاق سے مراد قولِ جمہور ہو اگر چہ بالاتفاق سے اس کا مقابلہ سخت موہِم خلاف ہے ورنہ لازم آئے گا کہ ان تاریخوں میں شب قدر ماننے والوں کے نزدیک ایک رمضان میں دو دو شبِ قدر ہوں، ایک ان کے قول خاص کے مطابق اور دوسری ۲۷ کو قولِ متفق علیہ کے موافق۔ یونہی اس اشتہار میں اغلاط بکثرت ہیں مگر بعد ایام مبارک، اگر انصاف و ہدایت مطلوب ہو تمہیں ۳۰ رد کیا کم ہیں، واللہ سبحنہ و تعالٰی اعلم و علمہ جل مجدہ اتم و احکم۔

Fatawa Rizvia | Volume 10

Daru al-Qubh 'an Darki Waqt as-Subh 1326 AH (Removal of shortcomings in understanding True Dawn)

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. Allah is the Lord of Muhammad, peace and blessings be upon him.

Issue 263: From Bazaar Lal Kurti Camp Meerut, sent by Sheikh Muhammad Ehsan-ul-Haq Hanafi Qadri, 12 Ramadan 1326 AH. What do the scholars of the manifest religion and the jurists of the firm Sharia say on this matter: is there any universal rule or principle in Sharia regarding Subh Sadiq (true dawn) through which it can be determined that Subh Sadiq occurs at a certain time, such that there is no need to observe it with the eyes? Or is there no calculation or universal rule, but rather it depends solely on visual observation? If there is no universal rule, then what is the meaning of what is written in "Miftah al-Salat" with reference to "Khizanat al-Riwayāt" that the seventh part of the night is Fajr (dawn)? Explain and be rewarded.

The Answer: The pure Muhammadi Sharia—upon its possessor be the best of prayers and salutations—has established these times for prayer, fasting, Hajj (pilgrimage), Zakat, the waiting period (iddah) of death and divorce, the duration of pregnancy, Ila, the postponement for an impotent person, the end of menstruation and postnatal bleeding, and other such matters...

फतावा रज़विया | जिल्द दहुम (दसवीं)

दरु अल-कुभ 'अन दर्की वक़्त अस-सुब्ह १३२६ हिजरी (सुब्ह सादिक को समझने में कोताही का निवारण)

बिस्मिल्लाहिर रहमानिर रहीम अल्लाह रब्ब ए मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम

मसला २६३: बाज़ार लाल कुर्ती कैंप मेरठ से, प्रेषक शेख मोहम्मद एहसान-उल-हक़ हनफ़ी क़ादरी, १२ रमज़ान १३२६ हिजरी। दीन-ए-मुबीन के विद्वान और शरीयत-ए-मतीन के मुफ़्ती इस बारे में क्या कहते हैं कि क्या शरीयत में सुब्ह सादिक (सच्ची भोर) का कोई ऐसा सार्वभौमिक नियम या सिद्धांत है जिसके माध्यम से यह ज्ञात हो सके कि सुब्ह सादिक अमुक समय पर होती है, और आँखों से देखने की आवश्यकता न रहे? या फिर कोई हिसाब या सार्वभौमिक नियम नहीं है, बल्कि यह पूरी तरह से आँखों से देखने पर निर्भर है? यदि कोई सार्वभौमिक नियम नहीं है, तो 'मिफ़्ताह अल-सलात' में 'ख़ज़ाना अल-रिवायात' के हवाले से जो लिखा है कि रात का सातवाँ हिस्सा फ़ज्र है, इसका क्या अर्थ है? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर: मुहम्मदी शरीयत-ए-मुतहरा ने—जिसके प्रवर्तक पर सर्वश्रेष्ठ प्रार्थनाएँ और अभिवादन हों—नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात, मृत्यु और तलाक़ की इद्दत (प्रतीक्षा अवधि), गर्भावस्था की अवधि, ईला (Ila), नपुंसक के लिए स्थगन, मासिक धर्म और प्रसवोत्तर रक्तस्राव की समाप्ति, और इसी तरह के अन्य मामलों के लिए ये समय निर्धारित किए हैं...

पेज ६२४ / ८३६

درء القبح عن درك وقت الصبح ۱۳۲۶ھ (صبح صادق کو سمجھنے میں کوتاہی کا ازالہ)

بسم اللہ الرحمن الرحیم اللہ رب محمد صلی اللہ علیہ وسلم

مسئلہ ۲۶۳: از بازار لال کرتی کیمپ میرٹھ مرسلہ شیخ محمد احسان الحق حنفی قادری ۱۲ رمضان ۱۳۲۶ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین مبین و مفتیان شرع متین اس باب میں کہ شریعت میں صبح صادق کا کوئی کلیہ قاعدہ ہے جس کے ذریعہ سے معلوم ہو جایا کرے کہ صبح صادق فلاں وقت ہوتی ہے، اور آنکھوں سے دیکھنے کی کچھ ضرورت نہ رہے یا کوئی حساب اور کلیہ قاعدہ نہیں ہے بلکہ آنکھوں سے دیکھنے ہی پر منحصر ہے، اگر قاعدہ کلیہ نہیں ہے تو مفتاح الصلوۃ میں جو بحوالہ خزانہ الروایات لکھا ہے کہ رات کا ساتواں حصہ فجر ہوتا ہے اس کا کیا مطلب ہے؟

بینواتوجروا الجواب: شریعتِ مطہرہ محمدیہ علی صاحبہا افضل الصلوۃ والتحیہ نے نماز روزہ حج وزکوۃ وعدت وفات و طلاق و مدتِ حمل و ایلا وتاجیل عنین و منتہائے حیض و نفاس و غیر ذلک امور کے لئے یہ اوقات مقرر فرمائے

That is, the perception of dawn, sunrise, sunset, noon, the two shadows, day, month, and year—all of these are based on sighting and observation. There is nothing among them that can be perceived without observation, solely through calculation or rational laws. Indeed, sighting and observation are a sufficient cause for perceiving all of these. This was befitting the status of this universal, complete, and comprehensive Shariah, which was revealed for the whole world. Most people cannot be burdened with the intricacies of astronomical calculations and tables. By saying, "We are an unlettered nation; we do not write or calculate" (T), He opened a simple and clear path for all His servants. For all these times, the All-Wise, the Most Merciful (Exalted be His Majesty) has appointed two clear signs: the moon and the sun, by observing whose changing states both the elite and the common people can perceive all the required Sharia times.

As Allah Almighty said: "And We have made the night and the day two signs, and We erased the sign of the night and made the sign of the day visible that you may seek bounty from your Lord and may know the number of years and the account [of time]. And everything We have set out in detail."

And Allah Almighty said: "They ask you about the new moons. Say, 'They are measurements of time for the people and for Hajj.'"

Allah Almighty said: "And eat and drink until the white thread of dawn becomes distinct to you from the black thread [of night]. Then complete the fast until the night."

And the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Fast when you see it [the crescent] and break the fast when you see it." (T)

Then among them are some whose basis remains solely on sighting, and that is the crescent (Hilaal), for Allah has extended it.

1. Sunan Abi Dawud, Kitab al-Siyam, Aftab-e-Alam Press Lahore, 31/71
2. Al-Quran, 17/12
3. Al-Quran, 2/189
4. Al-Quran, 2/187
5. Sahih Bukhari, Kitab al-Sawm, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/256

फतावा रज़विया जिल्द दसवीं

यानी सुबह का निकलना, सूरज का निकलना, सूरज का डूबना, दोपहर, दो साये, दिन, महीना और साल—इन सबका ज्ञान चाँद या सूरज को देखने और अवलोकन पर आधारित है। इनमें से कोई भी ऐसा नहीं है जो बिना देखे केवल किसी गणना या तर्क के नियम से जाना जा सके। हाँ, देखना और अवलोकन इन सबके ज्ञान के लिए पर्याप्त कारण है और यही इस सार्वभौमिक, पूर्ण और व्यापक शरीयत की शान के योग्य था जो पूरी दुनिया के लिए उतारी गई है। इनमें से अधिकतर लोग ऐसे हैं जिन्हें ज्योतिषीय गणनाओं और तालिकाओं की बारीकियों का कष्ट नहीं दिया जा सकता। "हम एक निरक्षर उम्मत हैं, न लिखते हैं और न गणना करते हैं" (त) कहकर उन्होंने अपने सभी दासों के लिए एक सरल और स्पष्ट रास्ता खोल दिया। इन सभी समयों के लिए हकीम और रहीम (अज़-व-जल्ला) ने दो स्पष्ट निशानियाँ नियुक्त कर दीं: चाँद और सूरज, जिनकी बदलती स्थितियों को देखकर खास और आम लोग सभी आवश्यक शरीयत समयों को जान सकें।

जैसा कि अल्लाह तआला ने फरमाया: "और हमने रात और दिन को दो निशानियाँ बनाया, फिर हमने रात की निशानी को मिटा दिया और दिन की निशानी को दिखाने वाली बनाया ताकि तुम अपने रब का फज़्ल (कृपा) तलाश करो और बरसों की गिनती और हिसाब जानो। और हमने हर चीज़ को अच्छी तरह अलग-अलग ज़ाहिर फ़रमा दिया।"

और अल्लाह तआला का इरशाद है: "वे आपसे नए चाँद के बारे में पूछते हैं। आप कह दीजिए, 'वे लोगों के लिए और हज के लिए समय की निशानियाँ हैं।"

अल्लाह तआला ने फ़रमाया: "खाओ और पियो यहाँ तक कि तुम्हारे लिए सुबह की सफेद पट्टी काली पट्टी से साफ ज़ाहिर हो जाए, फिर रात आने तक रोज़े पूरे करो।"

और रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) का इरशाद-ए-अकदस है: "तुम चाँद देखकर रोज़ा रखो और चाँद देखकर रोज़ा छोड़ो।" (त)

फिर उनमें से कुछ वे हैं जिनका आधार केवल देखने पर ही रहा, वह चाँद (हिलाल) है कि बेशक अल्लाह ने इसे बढ़ाया है।

1. सुनन अबी दाऊद, किताबुल सियाम, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, 31/71
2. अल-क़ुरआन, 17/12

3. अल-क़ुरआन, 2/189

4. अल-क़ुरआन, 2/187

5. सहीह बुखारी, किताबुल सौम, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/256

पेज 625/836

یعنی طلوعِ صبح و شمس و غروبِ شمس و نصف النہار و مثلین و روز و ماہ و سال ان سب کے ادراک کا مدار رویت و مشاہدہ پر ہے ان میں کوئی ایسا نہیں جو بغیر مشاہدہ مجرد کسی حساب یا قانونِ عقلی سے مدرک ہو جاتا ، ہاں رویت و مشاہدہ ان سب کے ادراک کا سببِ کافی ہے اور یہی اس شریعتِ عامہ تامہ شاملہ کاملہ کے لائقِ شان تھا کہ تمام جہان کے لیے اتری ہے اور ان میں اکثر وہ ہیں کہ دقائقِ محاسبات ہیئت وز تیج کی تکلیف انہیں نہیں دی جاسکتی ، انا امۃ امیۃ لانکتب ولا نحسب (ہم امی امت ہیں نہ لکھتے ہیں اور نہ حساب کرتے ہیں۔ ت) فرما کر اپنے تمام غلاموں کے لیے ایک آسان اور واضح راستہ کھول دیا اور ان تمام اوقات کے لیے حکیم رحیم عزوجلالہ نے دو کھلی نشانیاں مقرر فرمادیں چاند اور سورج جن کے اختلافِ احوال پر نظر کرکے خواص و عوام سب اوقاتِ مطلوبہ شرعیہ کا ادراک کر سکیں۔

کما قال تعالٰی: جیسا کہ اللہ تعالٰی نے فرمایا: وَ جَعَلْنَا الَّیْلَ وَ النَّهَارَ اٰیَتَیْنِ فَمَحَوْنَآ اٰیَةَ الَّیْلِ وَ جَعَلْنَآ اٰیَةَ النَّهَارِ مُبْصِرَةً لِّتَبْتَغُوْا فَضْلًا مِّنْ رَّبِّكُمْ وَ لِتَعْلَمُوْا عَدَدَ السِّنِیْنَ وَ الْحِسَابَؕ وَ كُلَّ شَیْءٍ فَصَّلْنٰهُ تَفْصِیْلًا اور ہم نے رات اور دن کو دو نشانیاں بنایا تو رات کی نشانی مٹی ہوئی رکھی اور دن کی نشانیاں دکھانے والی کہ اپنے رب کا فضل تلاش کرو اور برسوں کی گنتی اور حساب جانو اور ہم نے ہر چیز خوب جدا جدا ظاہر فرمادی۔

و قال تعالٰی: اور اللہ تعالٰی کا ارشاد ہے: یَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الْاَهِلَّةِؕ قُلْ هِیَ مَوَاقِیْتُ لِلنَّاسِ وَ الْحَجِّ تم سے چاند کو پوچھتے ہیں تم فرمادو وہ وقت کی علامتیں ہیں لوگوں اور حج کے لیے۔

قال تعالیٰ: اور اللہ تعالیٰ کا یہ ارشاد: کُلُوْا وَ اشْرَبُوْا حَتّٰی یَتَبَیَّنَ لَکُمُ الْخَیْطُ الْاَبْیَضُ مِنَ الْخَیْطِ الْاَسْوَدِ مِنَ الْفَجْرِ ثُمَّ اَتِمُّوا الصِّیَامَ اِلَی الَّیْلِ کھاؤ اور پیو یہاں تک کہ تمہارے لیے ظاہر ہو جائے سفیدی کا ڈورا سیاہی کے ڈورے سے پو پھٹ کر، پھر رات آنے تک روزے پورے کرو۔

و قال صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم: رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم کا ارشادِ اقدس ہے: صوموا لرویته وافطر والرویته تم چاند دیکھ کر روزہ رکھو اور چاند دیکھ کر روزہ چھوڑو۔ (ت)

پھر ان میں بعض تو وہ ہیں جن کا مدار صرف رویت پر ہی رہا وہ ہلال کہ ان اللہ امده

1 سنن ابی داود کتاب الصیام آفتاب عالم پریس لاہور ۳۱/۷۱ 2 القرآن ۱۷/۱۲ 3 القرآن ۲/۱۹۰ 4 القرآن ۲/۱۸۷ 5 صحیح بخاری کتاب الصوم قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۲۵۶

Calculation was indeed definitive; whatever aspect it lacked, repeated observation revealed through experience. Now, the definitive judgment has come into our hands through the combination of two definitives: experience and calculation. For instance, if sunrise and sunset were meant in the astronomical sense—meaning the alignment of the sun's center with the true horizon at the eastern and western ends—then there would be no need for observation to know them. Knowing the city's latitude and the declination of the sun would be sufficient to tell their time, through which we could prepare tables of solar adjustment for every latitude. However, in the pure Sharia, these [astronomical] sunrises and sunsets hold no weight. What is required is the conventional (urfi) sunrise and sunset, meaning the appearance of the sun's rays in the east or the total disappearance of the sun's disk from view in the west. Even in this, if only the sun's radius was the factor involved, there would be no difficulty. After discovering every part of the sun and its center from the center of the world, we could find the value of its radius for each day, which is provided in the Almagest (Jadwal al-Malak) tables. But above the earth, from 45 to 52 miles, there is an envelope of varying dense atmospheric vapors. The passage of visual rays first through this dense medium and then through the clear medium to reach the horizon causes refraction (inkisar) for the visual rays by the command of the Wise All-Mighty. Because of this, the sun or any celestial body begins to appear before it actually reaches the true horizon in the east. Conversely, in the west, even though no edge remains on the true horizon, it continues to be visible to us for a long time. It is this very refraction that has kept hundreds of timekeepers (muwaqqiteen) in perplexity and prevented calculations of sunrise and sunset from being accurate. This is the major complication due to which common almanac makers' sunrise and sunset times are incorrect today. Reason had no formula to determine the magnitude of this refraction such that it would no longer depend on observation. Yes, years of repeated observations have proven its average magnitude to be 33 celestial minutes. Now we have a formula: subtract 9 seconds of parallax (ikhtilaf-e-manzar) from these 33 minutes, and add the sun's radius to the remainder. This will be the amount of the sun's depression (inhitat). That is, at the time of sunrise or sunset, the sun will be this many minutes below the true horizon. Once the amount of depression is known, the rules for determining time and ascendant (tala') from the components of the circle of altitude, provided in the science of astronomy and zij (astronomical tables), became accessible. It became easy for us to decree that in a certain city on a certain day, the

sun will rise at such-and-such hours, minutes, and seconds, and set at such-and-such. Although more moisture or density in the air brings some variation in refraction, which can be perceived with a thermometer and barometer, and that cannot happen before the occurrence, this difference is not significant enough to cause any change in the required general Sharia rulings. Similarly, perceiving the 'two shadows' (mithlayn) and the shadow's length was also very easy through calculation: from the city's latitude and the sun's declination, find its maximum altitude, then from the tables find the true shadow for that altitude...

हिसाब तो निश्चित ही था; जिस बात का इसमें अभाव था, उसे बार-बार के अवलोकन ने अनुभव के माध्यम से बता दिया। अब अनुभव और गणना, इन दो निश्चितताओं के मिलन से एक निश्चित आदेश हमारे हाथ लग गया है। उदाहरण के लिए, यदि सूर्योदय और सूर्यास्त से तात्पर्य खगोलीय अर्थ में होता —यानी पूर्व और पश्चिम के दोनों किनारों पर वास्तविक क्षितिज के साथ सूर्य के केंद्र का संरेखण—तो उन्हें जानने के लिए अवलोकन की कोई आवश्यकता नहीं होती। शहर का अक्षांश और सूर्य का झुकाव (क्रांति) जानना ही उनके समय को बताने के लिए पर्याप्त होता, जिसके माध्यम से हम प्रत्येक अक्षांश के लिए सौर समायोजन की तालिकाएँ तैयार कर लेते। लेकिन पवित्र शरीयत में इन (खगोलीय) सूर्योदय और सूर्यास्त का कोई महत्व नहीं है। इसके लिए पारंपरिक (उर्फी) सूर्योदय और सूर्यास्त की आवश्यकता है, जिसका अर्थ है पूर्व में सूर्य की किरणों का चमकना या पश्चिम में सूर्य की पूरी डिस्क का दृष्टि से ओझल हो जाना। इसमें भी, यदि केवल सूर्य की त्रिज्या ही एकमात्र कारक होती, तो कोई कठिनाई नहीं होती। दुनिया के केंद्र से सूर्य के प्रत्येक भाग और उसके केंद्र का पता लगाने के बाद, हम प्रत्येक दिन के लिए उसकी त्रिज्या का मान ज्ञात कर सकते थे, जो 'जदवल-उल-मुल्क' (पंचांग तालिकाओं) में दिया गया होता है। लेकिन पृथ्वी के ऊपर, 45 से 52 मील तक, अलग-अलग सघन वायुमंडलीय वाष्प का एक घेरा है। हकीम (सर्वज्ञ) अल्लाह के आदेश से, दृश्य किरणों का पहले इस सघन माध्यम और फिर साफ माध्यम से होकर क्षितिज तक पहुँचना दृश्य किरणों के लिए अपवर्तन (इन्किसार) का कारण बनता है। इसी कारण, सूर्य या कोई भी तारा पूर्व में वास्तविक क्षितिज पर आने से पहले ही दिखाई देने लगता है। और पश्चिम में, हालांकि वास्तविक क्षितिज पर उसका कोई किनारा नहीं बचता, फिर भी वह हमें काफी देर तक दिखाई देता रहता है। यह अपवर्तन ही वह चीज़ है जिसने सैकड़ों समयपालकों (मुवक्कितीनों) को दुविधा में रखा और सूर्योदय एवं सूर्यास्त की गणना को सटीक नहीं होने दिया। यही वह बड़ी जटिलता है जिसके कारण आज आम पंचांग बनाने वालों के सूर्योदय और सूर्यास्त गलत होते हैं। बुद्धि के पास इस अपवर्तन की मात्रा का पता लगाने के लिए कोई ऐसा नियम नहीं था जिससे वह अवलोकन की मोहताज न रहे। हाँ, वर्षों के बार-बार के अवलोकन ने यह सिद्ध कर दिया है कि इसकी औसत मात्रा 33 खगोलीय मिनट है। अब हमारे पास एक नियम आ गया है कि इन 33 मिनटों में से 9 सेकंड के लंबन (दृष्टिभेद) को घटाकर शेष में सूर्य की त्रिज्या जोड़ दें। यह सूर्य के अवनमन (इन्हिताद) की मात्रा होगी। अर्थात, सूर्योदय या सूर्यास्त के समय सूर्य वास्तविक क्षितिज से इतने मिनट नीचे होगा। जब अवनमन की मात्रा ज्ञात हो

गई, तो ऊंचाई के वृत्त के घटकों से समय और लग्न (ताले) ज्ञात करने के नियम, जो खगोल विज्ञान और 'जीज' में दिए गए हैं, सुलभ हो गए। और हमारे लिए यह आदेश देना आसान हो गया कि अमुक शहर में अमुक दिन सूर्य इतने बजकर इतने मिनट और इतने सेकंड पर उगेगा और इतने पर डूबेगा। यद्यपि हवा में सामान्य से अधिक नमी या घनत्व अपवर्तन में कुछ कमी-बेशी लाता है, जिसका पता थर्मामीटर और बैरोमीटर से लगाया जा सकता है, और वह घटना से पहले संभव नहीं है, लेकिन यह अंतर इतना महत्वपूर्ण नहीं है कि आवश्यक सामान्य शरई नियमों में कोई फर्क पड़े। इसी तरह, 'मिस्लैन' (दो परछाईं) और छाया का पता लगाना भी गणना से बहुत आसान था कि शहर के अक्षांश और सूर्य का झुकाव से उसकी अधिकतम ऊंचाई ज्ञात करें, फिर तालिका से उस ऊंचाई की वास्तविक छाया ज्ञात करके..

पृष्ठ ८३६ का ६२७

حساب تو قطعی تھاہی، جتنی بات کی طرف اسے راہ نہ تھی وہ مکرر رؤیت نے براہِ تجربہ بتادی اور اب تجربہ و حساب دو قطعیوں سے مل کر حکم قطعی ہمارے ہاتھ آگیا مثلاً طلوع و غروب اگر نجومی مراد ہوتے یعنی مرکزِ شمس کا افقِ حقیقی پر طرفینِ شرق و غرب میں انطباق کہ ان کے جاننے کے لیے رؤیت کی کچھ حاجت نہ تھی، شہر کا عرض اور جزرِ شمس کا میل ہونا ہی اُن کا وقت بتانے کے لیے کافی و وافی ہوتا جس کے ذریعہ سے ہم ہر عرض کے لیے جداول تعدیل النہار تیار کر لیتے ہیں مگر شرعِ مطہر میں اس طلوع و غروب کا کچھ اعتبار نہیں، طلوع و غروب عرفی درکار ہے یعنی جانبِ شرق آفتاب کی کرن چمکنا یا جانبِ غرب کل قرصِ آفتاب نظر سے غائب ہو جانا اس میں بھی اگر صرف نصف قطر آفتاب کا قدم درمیان ہوتا تو دقت نہ تھی، مرکز عالم سے آفتاب کا ہر جز و مرکزِ شمسی پر بعد دریافت کر کے ہر روز کے نصف قطر کی مقدار دریافت کر سکتے تھے جس کی جدول الملک میں دی ہوئی ہوتی ہے مگر بالائے زمین ۴۵ میل سے ۵۲ میل تک علی الاختلاف بخاراتِ ہوا، غلیظ کا محیط ہونا اور شعاعِ بصر کا پہلے اس ملاءِ غلیظ پھر اُس کے بعد ملاءِ صافی میں گزر کر افق میں پہنچنا حکیمِ عزوجل کے حکم سے اشعہ بصریہ کے لیے موجبِ انکسار ہوا جس کے سبب آفتاب یا کوئی کوکب قبل اس کے کہ جانبِ شرق افقِ حقیقی پر آئے نظر آنے لگتا ہے اور جانبِ غرب با آنکہ افقِ حقیقی پر اس کا کوئی کنارہ باقی نہیں رہتا، دیر تک ہمیں نظر آتا رہتا ہے، یہ انکسار ہی وہ چیز ہے جس نے صدہا موقتین کو پیچ و تاب میں رکھا اور طلوع و غروب کا حساب ٹھیک نہ ہونے دیا اور یہی وہ بھاری پیچ ہے جس سے آجکل عام جنتریوں والوں کے طلوع و غروب غلط ہوتے ہیں اس انکسار کی مقدار مدت دریافت کرنے کو عقل کے پاس کوئی قاعدہ نہ تھا جس سے وہ محتاج رؤیت نہ رہتی، ہاں سالہا سال کے

مکرر مشاہدہ نے ثابت کیا کہ اس کی مقدار اوسطاً ۳۳ دقیقہ فلکیہ ہے، اب ضابطہ ہمارے ہاتھ آگیا کہ ان ۳۳ دقیقوں سے اختلافِ منظر کے ۹ ثانیہ منہا کرکے باقی پر اس کا نصف قطرِ شمس زائد کریں، یہ مقدارِ انحطاطِ شمس ہوگی یعنی طلوع یا غروب کے وقت آفتاب اُفقِ حقیقی کے اتنے دقیقے نیچے ہوگا، جب قدرِ انحطاط معلوم ہوئی تو دائرہ ارتفاع کے اجزاء سے وقت و طالع معلوم کرنے کے قاعدوں نے جو علمِ ہیأت و زیج میں دئے ہوئے ہیں راہ پائی اور ہمیں حکم لگانا آسان ہو گیا کہ فلاں شہر میں فلاں دن اتنے گھنٹے منٹ سکنڈ پر آفتاب طلوع کرے گا اور اتنے پر غروب معمول سے زیادہ ہوا میں رطوبت یا کثافت اگرچہ انکسار میں کچھ کمی بیشی لاتی ہے جس کا ادراک تھر مامیٹر اور بیر و میٹر سے ممکن، اور وہ قبل از وقوع نہیں ہو سکتا، مگر یہ تفاوت معتد بہ نہیں جس سے عام احکامِ مطلوبہ شرعیہ میں کوئی فرق پڑے یونہی مثلین وسایہ کا ادراک بھی حساب سے بہت آسان تھا کہ عرض بلد و میل شمس سے اس کا غایۃ الارتفاع پھر جدول سے اتنے ارتفاع کا ظل اصلی معلوم کرکے

Fatawa Razawiyya Volume 10

...by increasing it by one or two lengths, the altitude for such shadow and the time for that altitude could be determined, but here too the same refraction is involved, for a celestial body cannot escape the clutches of refraction until it is exactly at the zenith. However, observation showed the total horizontal refraction, and through proportionality, partial refractions were perceived, the tables for which this humble servant (faqir) has provided in his writings on geometry. By examining these, those laws again found a path, and it became easy for us to predict the time of 'Asr every day before it occurred. Sunrise, sunset, and twilight were not even related to refraction because at those times the sun is not before the eyes at all for the refraction of visual rays to be considered; there, reason had no way at all to perceive how deep the sun would be below the horizon when dawn would break or how deep it would go when twilight would fade. Thus, there was a need for observation itself, and observations repeated over hundreds of years proved that at both these times, the sun is approximately eighteen degrees below. This is knowledge that remained hidden from most astronomers; they would throw out conjectures in the dark. They differed regarding the sun's depression at the time of the False Dawn (Subh Kadhib); some said seventeen degrees, some eighteen, some stated nineteen (19), and eighteen is well-known, and the Commentary on Chaghmini followed this. For the True Dawn (Subh Sadiq), some stated fifteen degrees. Allamah Birjandi quoted this in the Marginalia of Chaghmini with the words "it has been said" (qila) and kept it as established, and this is what misled Allamah Khalil Kamli into stating a gap of only three degrees between the two dawns, which was quoted in Rad al-Muhtar and held as reliable. However, all these are meaningless fancies. The pure Shariah has not said anything in this regard; it has taught the forms of dawn: that the False Dawn is longitudinal from East to West, and the True Dawn is latitudinal from South to North. We have said above that there is no path for any rational proof to know the amount of depression; it depends solely on observation, and observation is a just witness. The claim that at the time of the False Dawn the depression is 17, 18, or 19 degrees and at the time of True Dawn it is 15 degrees, and that the difference between True and False is only three degrees, is all purely false. Rather, True Dawn occurs at 18 degrees of depression, and the False Dawn occurs many degrees before that. This humble servant has observed with his own eyes that according to astronomical calculations, the sun was still 33 degrees below the horizon and the False Dawn was quite bright. It is the personal experience of this humble servant over many years

regarding True Dawn that at the time of its commencement, in every season, the sun has always been found to be exactly 18 degrees below the horizon. As for the False Dawn, with which no legal ruling is associated, there has been no occasion for detailed investigation until now. Yes, this much is certainly known from my observation: that the gap between it and True Dawn is more than 15 degrees, not 3 degrees. Inevitably, the proof is in the Commentary on Mawahib al-Rahman, then Shurunbulaliyya on al-Durar, then Abu al-Sa'ud on al-Kanz, etc.

...उस पर एक या दो गुना बढ़ाकर इतने साये के लिए ऊंचाई (इरतफ़ा') और उस ऊंचाई के लिए समय मालूम कर लेते, लेकिन यहाँ भी वही अपवर्तन (इनकिसार) का कदम दरमियान है कि कोई तारा जब तक ठीक शिरोबिंदु (सम्त-उल-रास) पर न हो, अपवर्तन के चंगुल से बच नहीं सकता। मगर अवलोकन (रूयत) ने कुल क्षैतिज अपवर्तन (इनकिसार-ए-उफ़क़ी-ए-कुल्ली) बताया और आनुपातिकता से आंशिक अपवर्तन (इनकिसारात-ए-जज़िया) ज्ञात हुए, जिसकी सारणी इस फ़कीर ने ज्यामिति पर अपने लेखों में दी है। उनके अवलोकन से फिर उन्हीं कानूनों ने रास्ता पाया, और हर दिन के लिए अस्र का समय होने से पहले बताना हमारे लिए आसान हो गया। सूर्योदय, सूर्यास्त और सांध्य प्रकाश (शफ़क़) का तो अपवर्तन से भी संबंध न था क्योंकि उस समय सूर्य आँखों के सामने होता ही नहीं कि दृष्टि किरणों का अपवर्तन लिया जाए; वहां तर्क के पास इस बोध का कोई रास्ता ही न था कि सूर्य क्षितिज से कितना नीचे होगा कि सुबह होगी या कितना नीचे जाएगा कि सांध्य प्रकाश डूब जाएगा। तो फिर अवलोकन की ही आवश्यकता पड़ी और सैकड़ों वर्षों के निरंतर अवलोकन ने सिद्ध किया कि इन दोनों समयों पर सूर्य लगभग अठारह डिग्री नीचे होता है। यह वह ज्ञान है जो अधिकांश खगोलविदों पर गुप्त रहा, वे अंधकार में अटकलें लगाते रहे। 'सुब्ह-ए-काज़िब' (असली भोर से पहले की रोशनी) के समय सूर्य के झुकाव के बारे में वे मतभेद में रहे; किसी ने सत्रह डिग्री कहा, किसी ने अठारह, किसी ने उन्नीस (19) बताया, और अठारह प्रसिद्ध है, और इसी पर 'शरह चग़मीनी' ने अनुसरण किया। और 'सुब्ह-ए-सादिक़' (असली भोर) के लिए कुछ ने पंद्रह डिग्री बताया है। अल्लामा बिरजंदी ने इसे 'हाशिया चग़मीनी' में "कहा गया है" (क़ील) शब्द के साथ उद्धृत किया और इसे स्थिर रखा, और इसी ने अल्लामा खलील कामली को भी धोखा दिया कि दोनों सुबहों में केवल तीन डिग्री का अंतर बताया जिसे 'रद्द-उल-मुहतार' में उद्धृत किया गया और विश्वसनीय माना गया, जबकि ये सब निरर्थक कल्पनाएं हैं। पवित्र शरीयत ने इस विषय में कुछ निर्देश दिया ही नहीं, उसने तो सुबह के रूपों की शिक्षा दी है कि 'सुब्ह-ए-काज़िब' पूर्व से पश्चिम की ओर लंबी (लंबवत) होती है और 'सुब्ह-ए-सादिक़' दक्षिण से उत्तर की ओर फैली हुई (क्षैतिज) होती है। और हम ऊपर कह चुके हैं कि झुकाव की मात्रा जानने की ओर किसी बौद्धिक तर्क का रास्ता नहीं है, यह केवल अवलोकन के आधार पर है, और अवलोकन एक न्यायपूर्ण गवाह है कि 'सुब्ह-ए-काज़िब' के समय 17, 18 या 19 डिग्री और 'सादिक़' के समय 15 डिग्री झुकाव होना और सादिक़ व काज़िब में केवल तीन डिग्री का अंतर होना सब पूर्णतः असत्य है। बल्कि 18 डिग्री झुकाव पर 'सुब्ह-ए-सादिक़' हो

जाती है और उससे कई डिग्री पहले 'सुब्ह-ए-काज़िब'। इस फ़कीर ने स्वयं अपनी आँखों से देखा कि खगोल विज्ञान की गणनाओं के अनुसार सूर्य अभी क्षितिज से 33 डिग्री नीचे था और 'सुब्ह-ए-काज़िब' काफी उज्ज्वल थी। 'सुब्ह-ए-सादिक़' के बारे में वर्षों से फ़कीर का व्यक्तिगत अनुभव है कि इसकी शुरुआत के समय हमेशा हर मौसम में सूर्य क्षितिज के नीचे 18 डिग्री पर ही पाया गया है। और 'सुब्ह-ए-काज़िब' के लिए, जिससे कोई कानूनी नियम संबंधित नहीं था, अब तक विस्तार से जांच का अवसर नहीं मिला। हाँ, इतना अपने अवलोकन से निश्चित रूप से ज्ञात हुआ कि इसमें और 'सुब्ह-ए-सादिक़' में 15 डिग्री से भी अधिक का अंतर है, न कि 3 डिग्री। अनिवार्यत; प्रमाण 'शरह मवाहिब-उर-रहमान', फिर 'शुरुनबुलालिया अलल-दुरर', फिर 'अबू अल-सऊद अलल-कन्ज़' आदि में है।

पृष्ठ 628/836

اُس پر ایک یادو مثل بڑھا کر اتنے ظل کے لیے ارتفاع اور اس ارتفاع کے لیے وقت معلوم کر لیتے مگر یہاں بھی اُسی انکسار کا قدم درمیان ہے کہ کوکب جب تک ٹھیک سمت الراس پر نہ ہوا نکسار کے پنجے سے نہیں چھوٹ سکتا مگر رؤیت نے انکسار افقی کلی بتایا اور تناسب سے انکسارات جزئیہ مدرک ہوئے جن کی جدول فقیر نے اپنے تحریراتِ ہندسہ میں دی ہے اس کے ملاحظہ سے پھر انہیں قوانین نے راہ پائی، اور ہر روز کے لیے وقت عصر پیش از وقوع ہمیں بتانا آسان ہوا، طلوع و غروب شفق کو تو انکسار سے بھی علاقہ نہ تھا کہ اُس وقت آفتاب پیشِ نگاہ ہوتا ہی نہیں کہ بصر کی شعاعوں کا انکسار لیا جائے وہاں سرے سے عقل کو اس ادراک کی راہ نہ تھی کہ آفتاب افق سے کتنا نیچا ہو گا کہ صبح طلوع کرے گی یا کتنا نیچا جائے کہ شفق ڈوب جائے گی تو پھر رؤیت ہی کی احتیاج پڑی اور صدہا سال کے تکرر مشاہدہ نے ثابت کیا کہ آفتاب ان دونوں وقت تقریباً اٹھارہ درجے نیچے ہوتا ہے، یہ وہ علم ہے جو اکثر ہیأت دانوں پر مخفی رہا، رجماً بالغیب باتیں اڑاتے، صبح کا ذب کے وقت انحطاطِ شمس میں مختلف ہوئے، کسی نے سترہ درجہ کہا کسی نے اٹھارہ، کسی نے انیس ۱۹ بتائے، اور مشہور اٹھارہ ہے، اور اسی پر شرح چغمینی نے مشی کی، اور صبح صادق کے لیے بعض نے پندرہ درجے بتائے ہیں۔ اسے علامہ بر جندی نے حاشیہ چغمینی میں بلفظ قد قیل نقل کیا اور مقرر رکھا، اور اسی نے علامہ خلیل کاملی کو دھوکا دیا کہ دونوں صبحوں میں صرف تین درجہ کا فاصلہ بتایا جسے ردالمحتار میں نقل کیا اور معتمد رکھا، حالانکہ یہ سب ہوسات بے معنی ہیں، شرعِ مطہر نے اس باب میں کچھ ارشاد فرمایا ہی نہیں، اس نے تو صبح کی صورتیں تعلیم فرمائی ہیں کہ صبح کاذب شرقا غربا مستطیل ہوتی ہے اور صبح صادق جنوبا شمالاً مستطیر، اور ہم اُوپر کہہ آئے کہ مقدارِ انحطاط جاننے کی طرف کسی برہانِ

عقلی کو راہ نہیں صرف مدار رؤیت پر ہے، اور رؤیت شاہد عدل ہے کہ صبح کاذب کے وقت ۱۷ ۱۸ یا ۱۹ درجے اور صادق کے وقت ۱۵ درجے انحطاط ہونا اور صادق و کاذب میں صرف تین درجے کا تفاوت ہونا سب محض باطل ہے بلکہ ۱۸ درجہ انحطاط پر صبح صادق ہو جاتی ہے اور اس سے بہت درجے پہلے صبح کاذب، فقیر نے بچشمِ خود مشاہدہ کیا کہ محاسباتِ علم ہیأت سے آفتاب ہنوز ۳۳ درجے افق سے نیچا تھا اور صبح کاذب خوب روشن تھی، صبح صادق کے سالہا سال سے فقیر کا ذاتی تجربہ ہے کہ اس کی ابتداء کے وقت ہمیشہ ہر موسم میں آفتاب ۱۸ ہی درجہ زیرِ افق پایا ہے، اور صبح کاذب کے لیے جس سے کوئی حکم شرعی متعلق نہ تھا اب تک اہتمام کا موقع نہ ملا، ہاں اتنا اپنے مشاہدہ سے یقیناً معلوم ہوا کہ اس میں اور صبح صادق میں ۱۵ درجے سے بھی زائد فاصلہ ہے نہ کہ ۳ درجہ، لاجرم برہان شرح مواہب الرحمن پھر شربنلالیہ علی الدرر پھر ابوالسعود علی الکنز وغیرہما میں ہے۔

Fatawa-e-Razawiyya, Volume 10

Arabic: The whiteness does not disappear until near a third of the night. - 1

Urdu: Whiteness ends near a third of the night. (T)

This is the same elongated whiteness which he mentions always stays until near a third of the night in his country, as indicated by the word of restriction (*Hasr*). (As the word *Hasr* is indicative of this. - T) And it is evident that in those lands, the night reaches 14 hours or even more. Its third is approximately four hours and forty-five minutes. By way of comparison, it is known for certain that the amount of time the whiteness remains during the night on one side, the remaining part of the night on the other side will be equal to it. Thus, according to this statement, the duration of false dawn (*Subh Kadhib*) in winter nights there would be four hours and forty-five minutes. And it is known that the duration of true dawn (*Subh Sadiq*) there is not more than one hour and forty-five minutes. So, a distance of three hours was established between true and false dawn, not just three degrees. However, Imam Zayla'i stated in *Tabyin al-Haqa'iq*:

Arabic: It is narrated from al-Khalil that he said, "I saw the whiteness in Makkah (may Allah Almighty honor it) one night, and it did not disappear until after midnight." 2

Urdu: It is narrated from Shaykh Khalil that he said: "I saw whiteness one night in Makkah (may Allah Almighty grant it more greatness), and it ended after midnight." (T)

It is clear that if that whiteness in Makkah Mukarramah which lasted until midnight is possible, it can only be the long whiteness of Cancer (the zodiac sign), otherwise, in Makkah Mukarramah, its dawn and the spreading twilight (*Shafaq-e-Mustatir*) are not even an hour and a half long. If the observation and narration of Khalil bin Ahmad al-'Arudi is correct, then on that day there would be a distance of approximately five hours between both dawns. This is certainly very far-fetched, but there is no doubt that the opinion of "three degrees" is invalid and abandoned. From this, it becomes clear that considering this statement of *Al-Burhan* or this observation of Khalil as a means to weaken the school of Imam al-A'zam (may Allah be pleased with him) regarding the time of Maghrib—

Arabic: As occurred from al-Tarabulsi in *al-Burhan*, so he deviated from following the researcher Ibn al-Humam despite his strong adherence to him.

Urdu: As is mentioned from al-Tarabulsi in *al-Burhan*, he deviated from following the researcher Ibn al-Humam here, although he normally follows him strictly. (T)

—is a pure error. According to the Imam, the time of Maghrib lasts until the spreading white twilight (*Shafaq-e-Abyad-e-Mustatir*), which is an analogue of true dawn (*Fajr Sadiq*). It never stays until even a third or even a quarter of the night in those lands. And this which is so long-lasting is the long whiteness (*Bayad-e-Daraz*), an analogue of false dawn (*Subh Kadhib*).

---

1. *Tanbih Dhawi al-Ahkam*, Marginalia on *Durr al-Mukhtar*, Book of Prayer, Ahmad Kamil, Dar Sa'adat, Beirut, 1/51.
2. *Tabyin al-Haqa'iq*, Book of Prayer, Matba' Kubra Amiriyyah, Egypt, 1/81.

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द दहम

अरबी: सफेदी रात की एक तिहाई के करीब तक नहीं जाती। - 1

उर्दू: सफेदी, रात की एक तिहाई के करीब खत्म हो जाती है। (त)

यह वही आयताकार (elongated) सफेदी है जिसे वह अपने मुल्क में हमेशा रात की एक तिहाई के करीब तक रहने का जिक्र करते हैं, जैसा कि 'हसर' (सीमितता) का शब्द इस पर दलालत करता है। (जैसा कि हसर का लफ्ज़ इस पर दाल है। - त) और यह स्पष्ट है कि उन शहरों में रात 14 घंटे और उससे भी अधिक तक पहुँचती है, जिसकी एक तिहाई लगभग पौने पाँच घंटे (4:45) है। तुलनात्मक नियम के अनुसार यह निश्चित रूप से ज्ञात है कि रात के जितने हिस्से तक इधर यह सफेदी रहेगी, उधर रात का उतना ही हिस्सा बाकी रहेगा। तो इस बयान के अनुसार, वहां सर्दियों की रातों में सुबह-ए-काज़िब (झूठा सवेरा) की अवधि पौने पाँच घंटे हुई। और यह ज्ञात है कि वहां सुबह-ए-सादिक (सच्चा सवेरा) की अवधि पौने दो घंटे (1:45) से अधिक नहीं है। तो सुबह-ए-सादिक और सुबह-ए-काज़िब के बीच तीन घंटे का फासला साबित हुआ न कि सिर्फ तीन डिग्री। लेकिन इमाम जैलई ने 'तबीनुल हकाइक' में फरमाया:

अरबी: अल-खलील से रिवायत है कि उन्होंने कहा: "मैंने मक्का शरीफ (अल्लाह उसे और अधिक सम्मान दे) में एक रात सफेदी देखी, तो वह आधी रात के बाद ही खत्म हुई।" 2

उर्दू: शेख खलील से मनकूल है कि मैंने मक्का (अल्लाह तआला उसे और बुज़ुर्गी अता फरमाए) में एक रात सफेदी देखी तो वह निस्फ (आधी) रात के बाद खत्म हुई। (त)

जाहिर है कि मक्का मुअज्जमा में वह सफेदी जो आधी रात तक रही, अगर मुमकिन है तो वह वही 'सरतान' (कर्क राशि) की लंबी सफेदी है, वरना मक्का मुअज्जमा में उसकी सुबह और शफ़क-ए-मुस्ततीर (फैलती हुई लाली/सफेदी) डेढ़ घंटे की भी नहीं है। तो अगर खलील बिन अहमद उरूज़ी का देखना और रिवायत करना सही है, तो उस दिन दोनों सुबहों (सादिक और काज़िब) के बीच लगभग पांच घंटे का फासला होगा। यह बहुत ही दूर की बात जरूर है, लेकिन इस बात में कोई शक नहीं कि 'तीन डिग्री' वाला कथन गलत और त्याज्य है। और यहीं से यह स्पष्ट हुआ कि 'अल-बुरहान' के इस बयान या खलील के इस मुशाहिदे को मग़रिब के वक्त के बारे में इमाम-ए-आजम (अल्लाह उन पर राजी हो) के मज़हब को कमजोर करने का ज़रिया समझना—

अरबी: जैसा कि अल-तराबलुसी से अल-बुरहान में हुआ, तो उन्होंने मोहक्किक इब्न अल-हुमाम के अनुसरण से विचलन किया बावजूद इसके कि वे उनका बहुत मजबूती से अनुसरण करते हैं।

उर्दू: जैसा कि बुरहान में तराबलुसी से है, उन्होंने मोहक्किक इब्न-ए-हुमाम के अनुसरण से यहाँ इनहिराफ (विचलन) किया हालांकि वह उनके सख्त पैरोकार हैं। (त)

—सरासर गलती है। इमाम के नज़दीक मग़रिब का वक्त शफ़क-ए-अ़ब्यज़-ए-मुस्ततीर (फैलती हुई सफेद लाली) तक है जो सुबह-ए-सादिक के समान है। वह कभी भी उन देशों में एक तिहाई क्या, चौथाई रात तक भी नहीं रहती। और यह जो इतनी देर तक रहने वाली है, वह 'बयाज़-ए-दराज़' (लंबी सफेदी) है जो सुबह-ए-काज़िब के समान है।

---

1. तन्बीह ज़वील अहकाम, हाशिया दर्रुल मुख्तार, किताबुस सलात, अहमद कामिल, दारुस सहादत बेरूत, 1/51
2. तबीनुल हकाइक, किताबुस सलात, मतबा कुबरा अमीरिया, मिस्र, 1/81

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

البیاض لا یذھب الا قریبا من ثلث اللیل - 1 سفیدی، تہائی رات کے قریب ختم ہو جاتی ہے۔ (ت)

یہ وہی سپیدی مستطیل ہے جسے وہ اپنے ملک میں ہمیشہ تہائی رات کے قریب تک رہتی فرماتے ہیں کما دل علیہ الحصر (جیسا کہ حصر کا لفظ اس پر دال ہے۔ت) اور ظاہر ہے کہ اُن بلاد میں رات ۱۴ گھنٹے اور اس سے بھی کچھ زائد تک پہنچتی ہے جس کی تہائی تقریباً پونے پانچ گھنٹے اور بحکمِ مقابلہ قطعاً معلوم ہے کہ ادھر جتنے حصہ شب تک یہ سپیدی رہے گی اُدھر اُتنا ہی حصہ شب کا باقی رہے گا ___ تو اس بیان پر لیالی شتامیہ میں صبح کاذب کی مقدار وہاں پونے پانچ گھنٹے ہوئی، اور معلوم ہے کہ وہاں صبح صادق کی مقدار پونے دو گھنٹے سے زائد نہیں، تو صبح صادق و کاذب میں تین گھنٹے تک کا فاصلہ ثابت ہوا نہ کہ صرف تین ہی درجے۔ مگر امام زیلعی نے تبیین الحقائق میں فرمایا:

روی عن الخلیل انہ قال رأیت البیاض بمکۃ شرفھا اللہ تعالٰی لیلۃ فماذھب الا بعد نصف اللیل۔ 2

شیخ خلیل سے منقول ہے کہ میں نے مکہ (اللہ تعالٰی اسے اور بزرگی عطا فرمائے) میں ایک رات سفیدی دیکھی تو وہ نصف رات کے بعد ختم ہوئی۔ (ت)

ظاہر ہے کہ مکہ معظمہ میں وہ سپیدی کہ آدھی رات تک رہی، اگر ہو سکتی ہے تو وہی سرطان کی بیاضِ دراز، ورنہ مکہ معظمہ میں اس کی صبح و شفقِ مستطیر ڈیڑھ گھنٹہ بھی نہیں، تو خلیل بن احمد عروضی کی رؤیت و روایت اگر صحیح ہے اُس دن دونوں صبح میں تقریباً پانچ گھنٹے کا فاصلہ ہو گا یہ بہت بعید ضرور ہے مگر اس قدر میں شک نہیں کہ تین درجے کا قول فاسد و

مہجور ہے، اور یہیں سے ظاہر ہوا کہ برہان کے اس بیان یا خلیل کی اس رؤیت کو درباره وقتِ مغرب مذہبِ امامِ اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ کا ذریعہ تضعیف جاننا،

کما وقع عن الطرابلسی فی البرهان فعدل عن اتباع المحقق ابن الهمام مع شدة تأسیسه به۔

جیسا کہ برہان میں طرابلسی سے ہے، انہوں نے باتباع محقق ابن الہمام یہاں سے عدول کر لیا حالانکہ وہ ان کی شدید اتباع کرتے ہیں (ت)

محض خطا ہے، امام کے نزدیک وقتِ مغرب شفقِ ابیضِ مستطیر تک ہے جو فجرِ صادق کی نظیر ہے، وہ کبھی ان بلاد میں تہائی کیا چوتھائی رات تک بھی نہیں رہتی، اور یہ جو اس قدر دیر پا ہے بیاضِ دراز نظیرِ صبحِ کاذب ہے

---

1 تنبیہ ذوی الاحکام حاشیہ در المختار کتاب الصلوٰۃ احمد کامل دار سعادت بیروت ۱/۵۱ 2 تبیین الحقائق کتاب الصلوٰۃ مطبع کبرٰی امیر یہ مصر ۱/۸۱

Fatawa Rizvia, Volume 10

...that like it, it is entirely dropped from Sharia rulings, as mentioned in 'Ba'd Haza au Nahvuhu au Ma al-Tabyin' (A reference to some of it or its like in Tabyin is intended. — Translator).

Then I say: (The translator says:) The invalidity of the dawn (Subh Sadiq) being at a 15-degree depression and the correctness of the 18-degree depression is also proven by a famous incident mentioned in Fath al-Qadir, Bahr al-Raiq, Durr al-Mukhtar, and general reliable books. A query was brought to our noble scholars from Bulgar that during the short summer nights, they do not find the time for Isha prayer; the white twilight (shafaq-e-abyaz) remains until midnight, and before it disappears, dawn breaks in the east. Imam Burhan al-Din al-Kabir ordered them to perform Isha as a missed prayer (qaza), while Imam Baqali and Imam Shams al-Aimmah al-Halwani and others stated that Isha is dropped for them [1]. In short, the unavailability of Isha time in those nights is agreed upon. Now, if the depression for dawn was 15 degrees, they would have found the Isha time even on the shortest night of the year, i.e., the night of the summer solstice (tahwil-e-saratan); not a single night would be missed, let alone multiple nights. Listen to the evidence for this: the northern latitude of Bulgar is 49.5 degrees, as stated in Zij al-Samarqandi then Zij al-Ulugh Begi (as in the Samarqandi and Ulugh Begi astronomical tables. — Translator). And the maximum declination (mayl-e-kulli), i.e., the declination of the Tropic of Cancer (Ras al-Saratan) at that time, was slightly more than 23.5 degrees. At the time of the Samarqand observatory, about five hundred years ago (Footnote 1), it was 23 degrees 30 minutes 17 seconds. That is, more than 23.5 degrees by 17 seconds. So in the time of Imam Shams al-Aimmah al-Halwani, which was about 875 years ago (Footnote 2), it would have been even more. And if you take Nasir al-Din al-Tusi's Maragheh observatory, it was 23 degrees 35 minutes in his time. Well, do not listen to that; it has been experienced that his calculations are somewhat weak. So considering the proportion, as it is now 23 degrees 27 minutes with a small fraction, let's take the declination of that time as 23 degrees 33 minutes. Then, the maximum depression of the sun at the meridian circle (tahwil-e-daira nisf al-layl) there was 16 degrees 57 minutes, or say approximately 17 degrees. And the depression for dawn is 15 degrees, then certainly this is the depression for white twilight, as there is balance and symmetry from both sides. Based on this estimation, after sunset, until the sun's depression below the horizon increased to 15 degrees, it was Maghrib time according to the school of

Imam-e-Azam. Then after that, while the depression progressed from there and reached 17 degrees at midnight, then...

Footnote 1: The starting year of the Zij (astronomical table) is 'Zamar Kha', i.e., 841 Hijri. Footnote 2: The death of the Imam is around 450 Hijri, i.e., in 478 or 526. (Translator)

[1] Durr al-Mukhtar, Kitab al-Salat, Mujtabai Delhi, 1/60.

फ़तावा रज़विया, खंड १०

...कि उसी की तरह शरीयत के अहकाम से पूरी तरह साक़ित (ख़त्म) हो जाए, जैसा कि 'बाज़ हाज़ा औ नहवुहु औ मा अत-तबीन' में है (इसके कुछ या इसके जैसे की तरफ़ तबीन में इशारा है। — अनु.)।

फिर मैं कहता हूँ: (अनुवादक कहता है:) सुब्ह सादिक़ के लिए १५ डिग्री झुकाव (depression) होने का अमान्य होना और १८ डिग्री झुकाव की सत्यता उस प्रसिद्ध घटना से भी सिद्ध है जो फ़तहुल क़दीर, बहरुर रैक़, दुर्रे मुख़्तार और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में वर्णित है। हमारे बुज़ुर्गों के पास बुल्गार से एक सवाल आया था कि गर्मियों की छोटी रातों में उन्हें इशा का समय नहीं मिलता; आधी रात तक सफेद शफ़क़ (shafaq-e-abyaz) रहती है और उसके डूबने से पहले ही पूर्व से सुब्ह सादिक़ उदय हो जाती है। इमाम बुरहानुद्दीन कबीर ने आदेश दिया कि इशा की क़ज़ा पढ़ें, जबकि इमाम बक़ाली और इमाम शम्सुल अइम्मा हलवानी आदि ने फ़रमाया कि उन पर से इशा साक़ित है [1]। संक्षेप में, उन रातों में वहाँ इशा का समय न पाना सर्वसम्मत है। अब यदि सुब्ह सादिक़ का झुकाव १५ डिग्री होता, तो साल की सबसे छोटी रात, यानी कर्क संक्रांति की रात में भी उन्हें इशा का समय मिल जाता; एक रात भी छूटती नहीं, न कि कई रातें। इसका प्रमाण सुनिए: बुल्गार का उत्तरी अक्षांश साढ़े ४९ डिग्री है, जैसा कि ज़ीज अल-समरकंदी और फिर ज़ीज अल-उलुग बेगी में है (जैसा कि समरकंदी और उलुग बेगी खगोलीय तालिकाओं में है। — अनु.)। और उस समय कर्क रेखा (रास अल-सरतान) का झुकाव २३.५ डिग्री से कुछ अधिक था। समरकंद वेधशाला के समय, लगभग पाँच सौ साल पहले (पाद-टिप्पणी १), यह २३ डिग्री ३० मिनट १७ सेकंड था। यानी २३.५ डिग्री से १७ सेकंड अधिक। तो इमाम शम्सुल अइम्मा हलवानी के समय में, जो पौने नौ सौ साल पहले (पाद-टिप्पणी २) गुज़रे, यह और भी अधिक रहा होगा। और यदि तुसी की मराग़ा वेधशाला को लें, तो उनके समय में यह २३ डिग्री ३५ मिनट रहा है। खैर, उसे न सुनें; अनुभव हुआ है कि उनके गणना कार्यों में कुछ कमज़ोरी है। तो अनुपात के लिहाज़ से, जैसा कि अब २३ डिग्री २७ मिनट थोड़े अंतर के साथ है, उस समय का झुकाव २३ डिग्री ३३ मिनट मान लें। तो वहाँ कर्क रेखा का अधिकतम झुकाव, यानी आधी रात के समय, १६ डिग्री ५७ मिनट था, या लगभग १७ डिग्री कहें। और सुब्ह का झुकाव १५ डिग्री है, तो निश्चित रूप से यही सफ़ेद शफ़क़ का झुकाव है, क्योंकि दोनों तरफ से संतुलन और समरूपता है। इस अनुमान पर, सूर्यास्त के बाद जब तक क्षितिज से सूर्य का झुकाव बढ़ते-बढ़ते १५

डिग्री तक पहुँचता, इमाम-ए-आज़म के मज़हब में मग़रिब का समय था। फिर उसके बाद जब झुकाव वहाँ से बढ़कर आधी रात को १७ डिग्री तक पहुँचा, फिर...

पाद-टिप्पणी १: ज़ीज की शुरुआत का वर्ष 'ज़मार ख़ा' है, यानी ८४१ हिजरी। पाद-टिप्पणी २: इमाम की मृत्यु ४५० हिजरी के आसपास है, यानी ४७८ या ५२६ में। (अनु.)

[1] दुर्रे मुख़्तार, किताबुस सलात, मुजतबाई दिल्ली, १/६०।

کہ اُسی کی طرح احکامِ شرعیہ سے یکسر ساقط والی بعض ھذا اونحومنہ اومأالتبیین (اس کے بعض یا اس کے مثل کی طرف تبیین میں اشارہ ہے۔ت)

ثم اقول: (پھر میں کہتا ہوں۔ت) صبح صادق کے لیے ۱۵ درجے انحطاط ہونے کا بطلان اور ۱۸ درجے انحطاط کی صحت، اس واقعہ مشہورہ سے بھی ثابت ہے جو فتح القدیر و بحر الرائق و در مختار میں وعامہ کتب معتبرہ میں مذکور کہ بلغار سے ہمارے مشائخ کرام کے حضور استفتاء آیا تھا کہ گرمیوں کی چھوٹی راتوں میں ان کو وقتِ عشاء نہیں ملتا آدھی رات تک شفقِ ابیض رہتی ہے اور وہ ابھی نہ ڈوبی کہ مشرق سے صبح صادق طلوع کر آئی، امام برہان الدین کبیر نے حکم دیا کہ عشاء کی قضاء پڑھیں اور امام بقالی و امام شمس الائمہ حلوانی وغیرہما نے فرمایا ان پر سے عشاء ساقط ہے ۱۔ بالجملہ ان راتوں میں وہاں وقتِ عشاء نہ پانا متفق علیہ ہے، اب اگر انحطاط صبح صادق ۱۵ درجے ہوتا تو سال کی سب سے چھوٹی رات یعنی شبِ تحویل سرطان میں بھی ان کو وقت عشاء ملتا ایک رات بھی فوت نہ ہوتا نہ کہ راتوں، اس پر دلیل سنئے، بلغار کا عرضِ شمالی ساڑھے انچاس درجے ہے کما فی الزیج السمرقندی ثم الزیج الالوغ بیکی (جیسا کہ سمرقندی اور الوغ بیگی زیج میں ہے۔ت) اور میل کلی یعنی راس السرطان کا میل اُس زمانے میں ۲۳-۱/۲ درجے سے کچھ زائد تھا کہ اس کی مقدارِ زمانہ رصد سمر قند میں جسے تقریباً پانسو برس عہ ۱ ہوئے لح ل ع تھی یعنی ۲۳-۱/۲ درجے سے ۱۷ ثانیہ زیادہ تو زمانہ امام شمس الائمہ حلوانی میں جسے پونے نو سو برس عہ ۲ گزرے اور بھی زائد ہوگا اور طوسی کا رصدِ مراغہ لیجئے تو وہ اپنے ہی زمانہ میں الح لہ کارہا ہے یعنی ۲۳ درجے ۳۵ دقیقے، خیر اس کی نہ سنئیے اس پر تجربہ ہوا ہے کہ اعمال میں کچا ہے، تو بلحاظ تناسب کہ اب الح الر یعنی ۲۳ درجے ۲۷ دقیقے معہ کسر

خفیف ہے اس وقت کا میل الح لح بالرفع رکھئے یعنی ۲۳ درجے ۳۳ دقیقے تو وہاں راس السرطان کی غایت انحطاط یعنی وقتِ بلوغ دائرہ نصف اللیل ۱۶ درجے ۵۷ دقیقے تھی یا تقریباً ۱۷ درجے کہئے اور انحطاط صبح ۱۵ درجے ہے تو قطعاً یہی انحطاط شفق ابیض ہے کہ جانبین سے تعادل و تناظر ہے، اس تقدیر پر بعد غروبِ شمس جب تک افق سے آفتاب کا انحطاط بڑھتے بڑھتے ۱۵ درجے تک پہنچا امام اعظم کے مذہب میں وقتِ مغرب تھا پھر اس کے بعد جبکہ انحطاط اس سے ترقی کر کے آدھی رات کو ۱۷ درجے تک پہنچا پھر

عہ ۱ : مبدء زیج سنہ ضمار کہا ہے یعنی آٹھ سو اکتالیس ہجری۔) عہ ۲ : وفات امام حدود ۴۵۰ ہجری میں ہے یعنی ۴۷۸ یا ۵۲۶ میں ۱۲ منہ۔)

۱ در مختار کتاب الصلوۃ مجتبائی دہلی ۱ / ۶۰

It became less than that after midnight, then remained at 15 degrees, at which time morning (dawn) occurred. In the interval where the depression changed by approximately four degrees, it was certainly Isha time by consensus. So what does the loss of Isha time mean? And if you want to know the duration of time, then for northern latitude 27°-30' and northern declination 32° 33' = 54' 7-5+ after the assumed zenith distance 105 = 013 half 56 82 30 sine 9589365 first sine 105-105 half of aforementioned 93 31 30 sine 8037403 second sine 78174556 - secant of latitude then 4-43 10 start of Isha time 76777 503 - secant of declination 20 16 13 start of morning time 89967981 i.e., at 10:43:40 PM Maghrib ended and at 1:16:20 AM morning started, so there was more than 2-2-1 hours for Isha time. And when in that night where the maximum depression is at its minimum, such a long time was found, then in other summer nights where the depression is even more, even more time will be available. This would mean that the unanimously agreed-upon issue would certainly become wrong. Yes, if you take the depression of dawn and twilight as 18 degrees, then 30 9 + 81 = 86 30 or the entire latitude 70-30 max assumed 81 = 22 30 i.e., anything whose northern declination is twenty-two and a half degrees or more, in that, exactly at midnight, the depression will be 18 degrees or even less, which is sufficient for the appearance of whiteness (dawn). Thus, in the entire night, there will not be a single moment when the horizon becomes dark for Isha time to begin. And now this will not only be at the Tropic of Cancer, but from 14 degrees of Gemini to 16 degrees of Cancer, the same situation will persist, the duration of which is one month and three days, or even more. *Hakaza yanbaghi al-tahqiq wallahu waliyy-ut-tawfiq* (This is how the investigation should be, and Allah is the giver of success. - Trans.) From this entire explanation, three things become clear, making the answer to the question bright and evident:

(1) Fundamentally, the basis is sighting (ru'yat); the Lawgiver (peace and blessings be upon him) did not prescribe any formula or calculation in the causes, nor could reason alone determine the amount of dawn's depression. (2) Yes, sighting provided those correct experiences from which a general rule was obtained, and it became possible to tell the time without seeing. (3) Since whatever rule exists here will be derived from sighting, as both Sharia and reason are silent, therefore, of necessity...

Majlis of Dawat-e-Islami

(1) i.e., the meridian circle towards the nadir 12. - From the author. Page 631 of 836

आधी रात ढलने के बाद वह उससे कम हुआ, फिर 15 डिग्री रहा, उस वक्त सुबह हुई। इस बीच में जब अवसाद (डिप्रेशन) लगभग चार डिग्री बदला, तो निश्चित रूप से सर्वसम्मति से वह इशा का समय था। तो इशा का समय खत्म होने का क्या मतलब? और यदि आप समय की अवधि जानना चाहते हैं, तो उत्तरी अक्षांश 27°-30' और उत्तरी झुकाव 32° 33' = 54' 7-5+ कल्पित शिरोबिंदु दूरी 105 = 013 आधा 56 82 30 ज्या (sine) 9589365 पहली ज्या 105-105 उपरोक्त का आधा 93 31 30 ज्या 8037403 दूसरी ज्या 78174556 - अक्षांश का छेदक (secant) फिर 4-43 10 इशा के समय की शुरुआत 76777 503 - झुकाव का छेदक 20 16 13 सुबह के समय की शुरुआत 89967981 यानी रात 10:43:40 बजे मग़रिब समाप्त हुआ और 1:16:20 बजे सुबह शुरू हुई, तो इशा के लिए 2-2-1 घंटे से अधिक समय रहा। और जब उस रात में जिसमें अधिकतम अवसाद न्यूनतम है, इतना लंबा समय मिला, तो गर्मी की अन्य रातों में जहाँ अवसाद इससे भी अधिक है, और भी अधिक समय मिलेगा। इससे सर्वसम्मत मसला निश्चित रूप से गलत हो जाएगा। हाँ, यदि आप सुबह और गोधूलि का अवसाद 18 डिग्री लेते हैं, तो 30 9 + 81 = 86 30 या पूरा अक्षांश 70-30 अधिकतम कल्पित 81 = 22 30 यानी जिस किसी का उत्तरी झुकाव साढ़े बाईस डिग्री या उससे अधिक होगा, उसमें ठीक आधी रात को अवसाद 18 डिग्री या उससे भी कम होगा, जो सफेदी (फज्र) के प्रकट होने के लिए पर्याप्त है। तो पूरी रात में एक पल के लिए भी क्षितिज अंधेरा होकर इशा का समय नहीं आएगा। और अब यह न केवल कर्क रेखा पर होगा, बल्कि मिथुन के14 डिग्री से कर्क के16 डिग्री तक यही स्थिति बनी रहेगी, जिसकी अवधि एक महीना तीन दिन या उससे भी अधिक है। हकज़ा यन्बग़ी अत-तहक़ीक़ वल्लाहु वलीयुत-तौफ़ीक़ (जाँच इसी तरह होनी चाहिए थी, और अल्लाह ही सफलता देने वाला है। - त.) इस पूरे विवरण से तीन बातें स्पष्ट हुईं जिनसे प्रश्न का उत्तर स्पष्ट और प्रकट होता है:

(1) मूल रूप से आधार देखना (रूयत) है; शरीअत निर्माता (उन पर शांति और आशीर्वाद हो) ने कारणों में कोई नियम या गणना निर्धारित नहीं की, न ही केवल तर्क सुबह के अवसाद की मात्रा बता सकता था। (2) हाँ, देखने ने वे सही अनुभव दिए जिनसे एक सामान्य नियम प्राप्त हुआ और बिना देखे समय बताना संभव और सुलभ हो गया। (3) चूँकि यहाँ जो भी नियम होगा वह देखने से ही प्राप्त होगा, क्योंकि शरीअत और तर्क दोनों शांत हैं, इसलिए अनिवार्य रूप से...

मजलिस-ए-दावत-ए-इस्लामी

(1) यानी नादिर (nadir) की ओर मध्याह्न वृत्त 12। - लेखक से। पृष्ठ 836 में से 631

آدھی رات ڈھلے اُس سے کم ہوتا پھر ۱۵ درجے رہا اُس وقت صبح ہوئی، اس بیچ میں کہ تقریباً چار درجے انحطاط بدلا، یقیناً اجماعاً وقت عشا تھا، تو فوتِ عشا کیا معنے، اور اگر مقدار وقت جاننا چاہو تو عرض شمالی ۲۷-۳۰ میل شمالی ۳۲ ۳۳ = ۵۴ ۷-۵+ بعد سمتی مفروض ۱۰۵ = ۰۱۳ نصف ۵۶ ۸۲ ۳۰ جیبہ ۹۵۸۹۳۶۵ جیب اول ود-۱۰۵ نصف مذکور ۹۳ ۳۱ ۳۰ جیبہ ۸۰۳۷۴۰۳ جیب دوم ۷۸۱۷۴۵۵۶ ائی- قاطع عرض پس ۴-۴۳ ۱۰ شروع وقت عشا ۷۶۷۷۷ ۵۰۳ ای- قاطع میل ۲۰ ۱۶ ۱۳ شروع وقت صبح ۸۹۹۶۷۹۸۱ ای یعنی رات کے ۱۰ بج کر ۴۳ منٹ ۴۰ سیکنڈ پر مغرب ختم ہو گیا اور ایک بج کر ۱۶ منٹ ۲۰ سیکنڈ پر صبح شروع ہوئی تو ۱-۲-۲ گھنٹے سے زیادہ وقت عشاء رہا اور جب اس رات میں جس کا غایتہ الانحطاط یعنی نہایت قلت میں ہے اتنا طویل وقت ملا تو گرمی کی اور راتوں میں کہ انحطاط اس سے بھی زائد ہے اور بھی زیادہ وقت ہاتھ آئے گا اور یہ متفق علیہ مسئلہ یقیناً غلط ہو جائے گا، ہاں جب صبح و شفق کا انحطاط ۱۸ درجے لیجئے تو ۳۰۹ +۸۱ = ۳۰ ۸۶ یا تمام العرض ۷۰-۳۰ غایت مفروضہ ۸۱ = ۲۲ ۳۰ یعنی جس چیز کا میل شمالی ساڑھے بائیس درجے یا اس زائد ہو گا اس میں ٹھیک آدھی رات کو انحطاط ۱۸ درجے یا اس سے بھی کم ہو گا جو ظہور بیاض کے لیے کافی ہے تو تمام رات میں ایک آن کو بھی افق مظلم ہو کر وقت عشاء نہ آئے گا اور اب یہ فقط راس السرطان ہی پر نہیں بلکہ ۱۴ درجے جوزا سے ۱۶ درجے سرطان تک یہی حال رہے گا جس کی مقدار ایک مہینہ تین دن بلکہ زائد ہوئی ہکذا ینبغی التحقیق واللہ ولی التوفیق (تحقیق اسی طرح مناسب تھی، توفیق کا اللہ ہی مالک ہے۔ ت) اس تمام بیان سے تین باتیں واضح ہوئیں جن سے جواب سوال روشن و مبین :

(۱) اصلاً مدارِ رویت ہے شارع علیہ الصلوٰۃ والسلام نے اسباب میں کوئی ضابطہ و حساب ارشاد نہ فرمایا، نہ عقل صرف مقدار انحطاط صبح بتا سکتی تھی۔ (۲) ہاں رویت نے وہ تجربات صحیحہ دئے جن سے قاعدہ کلیہ ہاتھ آیا اور بے دیکھے وقت بتانا ممکن و میسر ہوا۔ (۳) از انجا کہ یہاں جو قاعدہ ہو گا رویت ہی سے مستفاد ہو گا کہ شرع و عقل دونوں ساکت ہیں تو لاجرم

Fatawa Rizvia Volume Ten

Any rule that opposes vision or the laws derived from it must necessarily be void. For when a branch contradicts its root, the branch, by its own admission, is a liar because its truth was dependent on it; when the foundation is void, it itself is void. This rule that dawn is the seventh part of the night is among those false and corrupt rules against which vision and the laws of gifted vision are, by consensus, just witnesses of its falsehood. And Allah Almighty knows best.

Issue 264: From Pilibhit, Qazi Mohalla, sent by Qazi Mumtaz Hussain Sahib Mumtaz, 20 Ramadan 1317 AH. When the time for the pre-dawn meal (suhoor) is about to end, a drum is beaten at the mosque. Some say it is permissible and some say it is impermissible. What is the ruling on this?

Answer: The drum for suhoor, based on common established terminology for permission or prohibition, is permissible as there is no prohibition anywhere. It is stated in 'Durr al-Muntaqa', the commentary of 'al-Multaqa':

ينبغى ان يكون بوق الحمام يجوز كقرب النوبة[1]	**The horn for the bathhouse should be permissible just as the drum is permissible (T).**

It is stated in 'Radd al-Muhtar':

ينبغى ان يكون طبل السحر في رمضان لا يقاظ النائمين للسحور كبوق الحمام تامل[2] ۔ و اللہ تعالیٰ اعلم	**Beating a drum at suhoor time in Ramadan to wake up those sleeping for suhoor is just like the horn sounded for the bathhouse; reflect upon it. And Allah Almighty knows best (T).**

Issue 265: From Koh Almora, Rani Dhara, asked by Hakim Maulvi Khalilullah Khan Sahib (may he be safe), 7th of the blessed month 1333 AH. Requesting schedules for suhoor and iftar; Sahibzada Nawab Dulha Sahib is asking for them. A difference of one or two minutes should be considered.

Answer: I am sending the schedules. In Almora and Bareilly during this blessed month, the average difference for suhoor is minus five (-5), meaning the time ends that many minutes before the time in Bareilly. And for iftar, the average is plus one (+1-1/4), meaning the time from Bareilly...

---

1. Durr al-Muntaqa 'ala Hashiyat Majma' al-Anhur, Chapter on Miscellaneous Matters from Kitab al-Karahiyah, Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/553.

2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Hazr wa al-Ibahah, Mustafa al-Babi, Egypt, 5/27.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (दसवीं)

जो नियम दृष्टि (रूयित) या इसके द्वारा दिए गए नियमों का विरोध करे, वह स्वयं अमान्य होना अनिवार्य है। क्योंकि जब शाखा मूल का खंडन करती है, तो शाखा अपनी स्वीकारोक्ति से झूठी हो जाती है क्योंकि उसकी सत्यता उसी पर आधारित थी। जब आधार ही अमान्य है तो वह स्वयं अमान्य है। यह नियम कि प्रभात रात का सातवाँ भाग होता है, उन्हीं अमान्य और भ्रष्ट नियमों में से है जिसके अमान्य होने पर दृष्टि और दृष्टि के ईश्वरीय उपहार के नियम सर्वसम्मति से न्यायपूर्ण गवाह हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला २६४: पीलीभीत, काज़ी मुहल्ला से, प्रेषक काज़ी मुमताज़ हुसैन साहब मुमताज़, २० रमज़ान १३१७ हिजरी। सहरी के भोजन का जब समय समाप्त होने वाला होता है, तो मस्जिद में नगाड़ा बजाया जाता है। कुछ लोग कहते हैं कि यह जायज़ है और कुछ कहते हैं कि नाजायज़ है। इसमें क्या हुक्म है?

अल-जवाब: सहरी का नगाड़ा अनुमति या निषेध की जिस प्रसिद्ध शब्दावली पर निर्धारित किया जाए, वह जायज़ है क्योंकि कहीं निषेध नहीं है। 'दुर्रे मुंतक़ा' शरह 'अल-मुंतक़ा' में है:

ينبغى ان يكون بوق الحمام يجوز كقرب النوبة[1]	**हम्माम का हॉर्न (भोंपू) जायज़ होना चाहिए जैसा कि नगाड़ा जायज़ है (त)।**

रद-उल-मुहतार में है:

ينبغى ان يكون طبل السحر في رمضان لا يقاظ النائمين للسحور كبوق الحمام تامل[2] ۔ و اللہ تعالیٰ اعلم	**रमज़ान में सहरी के समय सोने वालों को सहरी के लिए जगाने हेतु नगाड़ा बजाना उसी तरह है जैसे हम्माम के लिए हॉर्न बजाया जाता है; विचार करें। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है (त)।**

मसला २६५: कोह अल्मोड़ा, रानी धारा से, प्रार्थी हकीम मौलवी ख़लीलुल्लाह ख़ान साहब (सल्लमाहु), ७ मुबारक महीना १३३३ हिजरी। सहरी और इफ़्तार के नक़्शे (समय-सारणी) प्रदान किए जाएं साहबज़ादा नवाब दूल्हा साहब मांग रहे हैं। एक-दो मिनट का अंतर देख लिया जाएगा।

अल-जवाब: नक़्शे भेजता हूँ। अल्मोड़ा और बरेली में इस मुबारक महीने में सहरी का औसत अंतर घटा पाँच (-५) है यानी इतने मिनट समय बरेली से पहले समाप्त हो जाता है। और इफ़्तार का औसत जमा एक (+१-१/४) है यानी बरेली के समय से...

---

1. दुर्रे मुंतक़ा अला हाशिया मजमा अल-अनहुर, किताब अल-कराहिया, दार इह्या अल-तुरास अल-अरबी, बेरूत, २/५५३।
2. रद-उल-मुहतार, किताब अल-हज़र वल इबाहत, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, ५/२७।

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

جو قاعدہ رؤیت یا اس کے دئیے ہوئے قوانین کی مخالفت کرے، خود باطل ہونا لازم، کہ فرع جب تکذیب اصل کرے تو فرع باقرار خود کاذب ہے کہ اس کا صدق اس پر مبتنی تھا، جب مبنی باطل یہ خود باطل، یہ قاعدہ کہ صبح رات کا ساتواں حصہ ہوتی ہے انہیں قواعد باطلہ فاسدہ سے ہے کہ رؤیت و قوانین عطیہ رؤیت، بالاتفاق اس کے بطلان پر شاہد عدل ہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲۶۴: از پیلی بھیت قاضی محلہ مرسلہ قاضی ممتاز حسین صاحب ممتاز ۲۰ رمضان ۱۳۱۷ھ طعام سحری کا جب وقت نہیں رہتا ہے تو در مسجد پر نقارہ بجایا جاتا ہے بعض کہتے ہیں کہ جائز ہے اور بعض کہتے ہیں ناجائز ہے، اس میں کیا حکم ہے؟

الجواب: سحری کا نقارہ اجازت یا ممانعت جس اصطلاح معروف پر مقرر کیا جائے اجازت ہے کہ کہیں ممانعت نہیں، درمنتقٰی شرح الملتقٰی میں ہے:

ینبغی ان یکون بوق الحمام یجوز کقرب النوبۃ[1] **حمام کا توتا جائز ہونا چاہئے جیسا کہ نقارہ جائز ہے (ت)**

ردالمحتار میں ہے:

ینبغی ان یکون طبل السحر في رمضان لا یقاظ النائمین للسحور کبوق الحمام تامل[2] ۔ و اللہ تعالٰی اعلم **رمضان میں سحری کے وقت سونے والوں کو جگانے کے لیے طبل اسی طرح ہے جیسے حمام کے لیے توتا بجایا جاتا ہے، غور کیجئے، واللہ تعالٰی اعلم (ت)**

مسئلہ ۲۶۵: از کوہ الموڑہ رانی دھارہ مسئولہ حکیم مولوی خلیل اللہ خاں صاحب سلمہ ۷ ماہ مبارک ۱۳۳۳ھ سحر و افطار کے نقشے عطا ہوں صاحبزادہ نواب دولھا صاحب مانگتے ہیں، ایک دو منٹ کا تفاوت دیکھ لیا جائے گا۔

الجواب: نقشے بھیجتا ہوں، الموڑے اور بریلی میں اس ماہ مبارک میں سحری کا اوسط تفاوت منفی پانچ (۵-) ہے یعنی اتنے منٹ وقت بریلی سے پہلے ختم ہے اور افطار کا اوسط مثبت ایک (+۱/۴-۱) یعنی وقت بریلی سے

---

1. درمنتقٰی علی حاشیۃ مجمع الانہر فصل فی المتفرقات من کتاب الکراھیۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۲ / ۵۵۳
2. ردالمحتار کتاب الحظر والاباحۃ مصطفی البابی مصر ۵ / ۲۷

...after one and a quarter minutes. However, this calculation is for flat ground; it will differ on a mountain, and that difference will vary according to the altitude. If the altitude is two thousand feet, sunset will be approximately four minutes later, and sunrise will be that much earlier. Therefore, until it is known how high that place is, an answer cannot be given. If you note down the exact time of sunrise or sunset on any day using a precise clock and write to me, I can calculate from that how high the place is. And Allah Almighty knows best.

Problem 266: From Sahawar, District Etah, sent by Syed Firdaus Ali Sahab, 21st Ramadan-ul-Mubarak 1328 AH. After greetings and the desire to kiss your feet, it is submitted that on the 5th of Ramadan Sharif, Saturday, corresponding to September 10th, fast-breaking (Iftar) in a mosque was done at quarter to seven by railway time. Please inform us how much difference there is from the railway time on that day. Respectfully, that is all.

The Answer: In Sahawar, whose North latitude is 27 degrees 28 minutes and East longitude is 78 degrees 53 minutes, on the 5th of the blessed month, Saturday, corresponding to September 10, 1910, sunset occurred at exactly six twenty-six and a quarter minutes. Thus, if that clock which showed half-past six for Iftar was correct, the fast was completed without difficulty as three and three-quarter minutes had passed since sunset. The practice before this of breaking the fast at quarter to seven was against the Sunnah. Such delay in Iftar is disliked (Makruh). Railway time is fourteen minutes and twenty-eight seconds ahead of Sahawar's local time. And Allah Almighty knows best.

Problem 267: From Allahabad Sadar Bazaar, Muhammad Hashmatullah Sahab, 19th Ramadan 1331 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: a person is the Imam of a mosque, and everyone breaks their fast upon his call to prayer (Adhan). He orders to delay breaking the fast, to the extent that it has been tested many times that stars appeared. He was even shown the star, but he still said there are two minutes left. In this situation, does any defect occur in the fast? If any occurs, what should be done?

The Answer: When one is certain that the sun has completely and fully set, it is Sunnah to break the fast immediately. It is stated in the Hadith: "My Ummah will continue to be in good state as long as they hasten the Iftar and delay the Suhoor."[1]

Always my Ummah will be in goodness as long as they hasten the fast-breaking and delay the pre-dawn meal.

[1] Musnad Ahmad bin Hanbal, Narrations of Abu Dharr, Dar-ul-Fikr Beirut, 5/175.

جلد دہم (दसवाँ भाग) فتاوی رضویہ (फतावा रज़विया)

...सवा मिनट बाद। लेकिन यह गणना समतल जमीन के लिए है, पहाड़ पर अंतर पड़ेगा, और वह अंतर ऊंचाई के अनुसार अलग-अलग होगा। यदि ऊंचाई दो हजार फीट है, तो सूर्यास्त लगभग चार मिनट बाद होगा, और सूर्योदय उतना ही पहले। इसलिए, जब तक यह ज्ञात न हो कि वह स्थान कितना ऊँचा है, उत्तर नहीं दिया जा सकता। यदि आप किसी भी दिन सूर्योदय या सूर्यास्त का सही समय एक सटीक घड़ी से देखकर लिखें, तो मैं उससे गणना कर लूँ कि वह स्थान कितना ऊँचा है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला २६६: सहावर, जिला एटा से, प्रेषक सैयद फ़िरदौस अली साहब, २१ रमज़ानुल मुबारक १३२८ हिजरी। अदब और कदमबोसी की तमन्ना के बाद निवेदन है कि ५ रमज़ान शरीफ़, शनिवार, १० सितंबर के दिन एक मस्जिद में इफ़्तार रेलवे समय के अनुसार पौने सात बजे किया गया। कृपया सूचित करें कि उस दिन रेलवे समय से कितना अंतर है? सम्मान सहित, बस।

उत्तर: सहावर में, जिसका उत्तरी अक्षांश २७ डिग्री २८ मिनट और पूर्वी देशांतर ७८ डिग्री ५३ मिनट है, ५वीं मुबारक महीने के शनिवार, १० सितंबर १९१० के दिन सूर्यास्त सही समय ६ बजकर सवा २६ मिनट पर हुआ। तो वह घड़ी जिसमें साढ़े छह पर इफ़्तार किया गया, यदि सही थी, तो रोज़ा बिना किसी संकोच के हो गया क्योंकि सूर्यास्त को पौने चार मिनट बीत चुके थे। इससे पहले जो पौने सात पर इफ़्तार करने की प्रथा थी, वह सुन्नत के खिलाफ थी। इफ़्तार में इतनी देरी मकरूह (नापसंद) है। रेलवे का समय सहावर के अपने समय से चौदह मिनट अठ्ठाईस सेकंड तेज़ है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला २६७: इलाहाबाद सदर बाज़ार से, मुहम्मद हशमतुल्लाह साहब, १९ रमज़ान १३३१ हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि एक व्यक्ति मस्जिद का इमाम है और सभी लोग उसकी अज़ान से रोज़ा इफ़्तार करते हैं। वह इफ़्तार में देरी करने का आदेश देता है, यहाँ तक कि कई बार यह आज़माया गया है कि तारे निकल आए। उसे तारा दिखाया भी गया, फिर भी उसने कहा कि अभी दो मिनट की देरी है। इस स्थिति में क्या रोज़े में कोई कमी आती है? यदि कोई कमी आती है, तो क्या करना चाहिए?

उत्तर: जब सूर्य के पूरी तरह डूबने का यकीन हो जाए, तो तुरंत इफ़्तार करना सुन्नत है। हदीस में फरमाया गया है: "मेरी उम्मत तब तक भलाई पर रहेगी जब तक वे इफ़्तार जल्दी करेंगे और सहरी में देरी करेंगे।" १-

1. मुसनद अहमद बिन हंबल, रिवायत अबू ज़र, दारुल फ़िक्र बेरूत ५/१७५

سوا منٹ بعد۔ لیکن یہ حساب ہموار زمین کا ہے پہاڑ پر فرق پڑے گا، اور وہ فرق بتفاوت بلندی متفاوت ہوگا، اگر دو ہزار فٹ بلندی ہے تو غروب تقریباً چار منٹ بعد ہوگا، اور طلوع اسی قدر پہلے ، لہذا جب تک یہ نہ معلوم ہو کہ وہ جگہ کس قدر بلند ہے جواب نہیں دے سکتا۔ اگر کسی دن کے طلوع یا غروب کا وقت صحیح گھڑی سے دیکھ کر لکھو تو میں اس سے حساب کر لوں کہ وہ جگہ کتنی بلند ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۲۶۶: از سہادر ضلع ایٹہ مرسلہ سید فردوس علی صاحب ۲۱ رمضان المبارک ۱۳۲۸ھ بعد آداب و تمنائے قدمبوسی گزارش ہے کہ ۵ رمضان شریف یوم شنبہ مطابق ۱۰ ستمبر کو افطار روزہ ایک مسجد میں ریلوے ٹائم سے پونے سات بجے روزہ افطار کیا جاتا تھا مطلع فرمائیے کہ اس روز ریلوے ٹائم سے کس قدر فرق ہے، زیادہ حدادب فقط

الجواب: سہادر میں جس کا عرض شمالی الرص ح ۲۷ درجے ۲۸ دقیقے اور طول شرقی غ رخ ۷۸ درجے ۵۳ دقیقے ہے پنجم ماہ مبارک روز شنبہ مطابق ۱۰ ستمبر ۱۹۱۰ء کو غروب آفتاب صحیح وقت سے چھ بج کر سوا چھبیس منٹ پر ہوا تو وہ گھڑی جس کے ساڑھے چھ پر افطار کیا گیا اگر صحیح تھی روزہ بے تکلف ہو گیا کہ غروب کو پونے چار منٹ گزر چکے تھے اس سے پہلے جو پونے سات پر افطار کرتے تھے خلاف سنت تھا افطار میں اتنی تاخیر مکروہ ہے ریلوے وقت سہادر کے اپنے وقت سے چودہ منٹ اٹھائیس سیکنڈ تیز ہے واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۶۷: از الہ آباد صدر بازار محمد حشمت اللہ صاحب ۱۹ رمضان ۱۳۳۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک شخص امام مسجد ہے اور سب لوگ روزہ اس کی اذان سے

افطار کرتے ہیں اور وہ دیر سے افطار کا حکم دیتا ہے یہاں تک کہ کئی مرتبہ آزمایا گیا ہے کہ تارانکل آیا اس کو تارادکھا بھی دیا گیا تو اس پر بھی اس نے کہا کہ ابھی دو منٹ کی دیر ہے تو اس حالت میں کچھ روزہ میں نقص تو واقع نہیں ہوتا ہے؟ اگر کوئی واقع ہوتا ہے تو کیا کرنا چاہئے؟

الجواب: جب آفتاب تمام و کمال ڈوبنے پر یقین ہو جائے فوراً روزہ کی افطار سنت ہے ، حدیث میں فرمایا: لا تزال امتی بخیر ما عجلوا الفطر واخروا السحور 1۔ ہمیشہ میری امت خیر سے رہے گی جب تک افطار میں جلدی اور سحری میں دیر کریں۔

1 مسند احمد بن حنبل روایات ابوذر دارالفکر بیروت ۵/ ۱۷۵

But it is not permissible to be so quick that sunset becomes doubtful and one breaks the fast, or to take so long in Sahri (pre-dawn meal) that a doubt about dawn arises. The appearance of stars is not a reliable proof, as some stars begin to shine during the day. Yes, besides stars, the planets mostly shine in our city after sunset. If one of these stars starts shining and even then he does not break the fast and insists on a delay of two minutes, then this is the way of the Rafidis (Shias), and it is a cause of great deprivation and lack of blessing. He should repent, and Allah the Exalted knows best. In such a situation, Muslims should not persist; once they are certain of sunset, they should break the fast. And Allah the Exalted knows best.

Issue 268: From Koh Almora, Rani Dhara, questioned by Hakim Maulvi Khalilullah Sahib (may he be preserved), 7th of the Blessed Month (Ramadan), 1333 AH.

After offering the greetings of Islam and the necessary requirements of humble respect, it is submitted to your grace-filled presence that your noble letter arrived, honoring and distinguishing me. Yesterday, the elevation of this bungalow was ascertained. There is an instrument for measuring elevation that indicates how high one is above sea level. It is a small instrument, like a small box, round like a watch, with a needle that moves over the numbers of elevation. In short, yesterday it was observed, and through it, the following elevation was found: 5,550 feet above the water level. Therefore, Sahibzada Nawab Dulha Sahib asked me to write and inquire what time would be calculated according to this calculation. However, this elevation can provide the correct time only if the location is level. Here, there are mountains to the east and west, due to which sunrise is delayed and sunset occurs earlier. This hill, which is on the western side, is three hundred or four hundred feet higher than us. And the eastern mountain is probably six hundred feet high. To the north, on the fifteen-day path, a snow-covered mountain is visible, upon which the sun's rays fall very early. If the horizon is clear, its glisten is clearly visible here, while there are no rays on the nearby mountains and people are performing prayers. Almora's settlement also exists on the eastern and western mountains; houses are built everywhere, and there is not much difference from this bungalow and the city proper, i.e., the market. Now, if two minutes are added for every thousand feet, then eleven minutes plus one and a quarter minutes for the longitude or latitude of the city, a total of twelve and a quarter minutes will have to be added. According to this calculation, today's Iftar should be at 0:23 minutes (11+12=23). But in my opinion, darkness appears from the east before 20 minutes. However, there is a lot of redness

in the western clouds, and some redness is found on the clouds in all four directions. Since the aforementioned Sahibzada Sahib desires research, this humble servant has reported the overall conditions here. I hope to be honored with a correct answer. In the maps that came from Rampur, according to the calculation of this map...

लेकिन इतनी जल्दी जायज़ नहीं कि सूर्यास्त (मगरिब) संदिग्ध हो जाए और वह रोज़ा इफ़्तार कर ले, या सहरी में इतनी देर कर दे कि सुबह का संदेह होने लगे। तारों का कोई विश्वसनीय प्रमाण नहीं है क्योंकि कुछ तारे दिन में ही चमकने लगते हैं। हाँ, सितारों के अलावा जो ग्रह हैं, वे अक्सर हमारे शहर में सूर्यास्त के बाद चमकते हैं। अगर इन सितारों में से कोई चमकने लगे और फिर भी वह इफ़्तार न करे और दो मिनट की देरी की बात कहे, तो यह राफ़ज़ियों (शियाओं) का तरीक़ा है, और यह बहुत बड़ी महरूमी और बरकत की कमी का कारण है। उसे तौबा करनी चाहिए। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। इस स्थिति में मुसलमानों को अड़े नहीं रहना चाहिए; जब सूर्यास्त का पूरा यक़ीन हो जाए, तो इफ़्तार कर लेना चाहिए। वल्लाहु तआला आलम।

मसअला २६८: कोह अल्मोड़ा, रानी धारा से, सवालकर्ता हकीम मौलवी खलील उल्लाह साहब (अल्लाह उनकी रक्षा करे), ७ रमज़ान १३३३ हिजरी।

इस्लाम के सलाम और विनीत सम्मान के आवश्यक शिष्टाचार के बाद, आपकी सेवा में विनम्र निवेदन है कि आपका प्रतिष्ठित पत्र प्राप्त हुआ, जिससे मुझे गौरव और विशिष्टता मिली। कल इस कोठी की ऊँचाई ज्ञात की गई। ऊँचाई मापने का एक यंत्र होता है जो समुद्र तल से ऊँचाई बताता है। यह एक छोटा सा यंत्र है जो एक छोटी डिबिया की तरह होता है, जैसे गोल घड़ी, इसमें एक सुई होती है जो ऊँचाई के अंकों पर घूमती है। संक्षेप में, कल उसे देखा गया और उसके माध्यम से निम्नलिखित ऊँचाई प्राप्त हुई: समुद्र तल से ५५५० फीट। इसलिए साहिबज़ादा नवाब दूल्हा साहब ने मुझसे कहा कि अब लिखकर भेजें कि इस हिसाब से क्या समय निकलता है। लेकिन यह ऊँचाई तभी सही समय बता सकती है जब जगह समतल हो। यहाँ पूर्व और पश्चिम में पहाड़ हैं, जिसके कारण सूर्योदय देर से और सूर्यास्त जल्दी होता है। यह पहाड़ी जो पश्चिमी ओर है, हमसे ३०० या ४०० फीट ऊँची है। और पूर्वी ओर का पहाड़ शायद ६०० फीट का होगा। उत्तर की ओर, पंद्रह दिन के रास्ते पर, एक बर्फ़ का पहाड़ दिखाई देता है जिस पर सूर्य की किरणें बहुत पहले पड़ती हैं। अगर क्षितिज साफ़ हो तो उसकी चमक यहाँ साफ़ दिखाई देती है, जबकि पास के पहाड़ों पर कहीं किरणें नहीं होतीं और लोग नमाज़ पढ़ रहे होते हैं। अल्मोड़ा की आबादी पूर्वी और पश्चिमी पहाड़ों पर भी है; चारों तरफ घर बने हुए हैं और इस कोठी तथा मुख्य शहर यानी बाज़ार से अधिक अंतर नहीं है। अब यदि प्रत्येक एक हज़ार फीट पर दो मिनट बढ़ा दिए जाएं तो ग्यारह मिनट और सवा मिनट शहर के देशांतर या

अक्षांश के कुल सवा बारह मिनट जोड़ने होंगे। इस हिसाब से आज का इफ़्तार ०:२३ मिनट पर होना चाहिए (११+१२=२३)। लेकिन मेरे विचार में, २० मिनट से पहले ही पूर्व से अंधेरा छाने लगता है। हालाँकि पश्चिमी बादलों में काफ़ी लाली होती है और चारों ओर के बादलों पर भी कुछ हद तक लाली देखी जाती है। चूँकि उपर्युक्त साहिबज़ादा साहब शोध (रिसर्च) चाहते हैं, इसलिए इस तुच्छ सेवक ने यहाँ की समग्र स्थिति रिपोर्ट कर दी है। आशा है कि सही उत्तर से सम्मानित किया जाएगा। रामपुर से जो नक़्शे आए हैं, उनमें इस नक़्शे के हिसाब से...

पेज ६३४ ऑफ़ ८३६

مگر اتنی جلدی جائز نہیں کہ غروب مشکوک ہو اور افطار کرے یا سحری میں اتنی دیر لگائے کہ صبح کا شک پڑ جائے اور تارے کی سند نہیں بعض تارے دن سے چمک آتے ہیں ہاں، ستاروں کے سوا جو کواکب ہیں وہ اکثر ہمارے بلد میں غروب آفتاب کے بعد چمکتے ہیں اگر ان ستاروں میں سے کوئی ستارہ چمک آتا ہے اور پھر وہ افطار نہیں کر دیتا اور دو منٹ کی دیر بتاتا ہے تو یہ رافضیوں کا طریقہ ہے، اور بہت محرومی و بے برکتی ہے، اُسے توبہ کرنی چاہئے واللہ تعالیٰ اعلم اس صورت میں مسلمان اس پر نہ رہیں جب غروب پر یقین ہو جائے افطار کریں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۶۸: از کوہ الموڑہ رانی دھارہ مسئولہ حکیم مولوی خلیل اللہ صاحب سلمہ ۷ ماہ مبارک ۱۳۳۳ھ

بعد از اہدائے سلام سنت الاسلام و لوازم آداب تسلیمات فدویانہ، معروض خدمت فیض درجت آنکہ والا نامہ گرامی بشرف صدور لایا، مفخر و ممتاز فرمایا، کل اس کوٹھی کی بلندی دریافت کی گئی بلندی دریافت کرنے کا ایک آلہ ہوتا ہے جو سطح سمندر سے جس قدر بلند ہو وہ بتاتا ہے، ایک چھوٹا سا آلہ ہے جو کہ چھوٹی سی ڈبیہ کی طرح ہوتا ہے مثل گھڑی کے گول، اس میں سوئی ہوتی ہے جو کہ بلندی کے نمبروں پر گشت کرتی ہے، غرض وہ کل دیکھا گیا اس کے ذریعہ سے ذیل کی بلندی دریافت ہوئی، پانچ ہزار پانچ سو پچاس فٹ سطح آب سے بلندی ہے اس لئے صاحبزادہ نواب دولھا صاحب نے مجھ سے فرمایا کہ اب لکھ بھیجو کہ اس حساب سے کیا وقت نکلتا ہے، لیکن یہ بلندی اُس وقت ٹھیک وقت بتا سکتی ہے جبکہ یہ جگہ ہموار ہو یہاں شرقاً و غرباً پہاڑ ہے جس باعث سے طلوع مؤخر اور غروب مقدم ہوتا ہے اور یہ ٹیکری پہاڑ جو کہ مغربی جانب ہے ہم

سے تین سو یا چار سو فٹ بلند ہے اور شرقی جانب کا پہاڑ غالباً چھ سو فٹ ہوگا اور شمالی جانب پندرہ روزہ کے راستہ پر برف کا پہاڑ نظر آتا ہے جس پر شعاع آفتاب کی بہت پہلے پڑتی ہے اور مطلع صاف ہو تو اس کی چمک یہاں پر بخوبی نظر آتی ہے اور قریب کے پہاڑوں پر کہیں شعاع نہیں ہوتی اور لوگ نماز پڑھتے ہوتے ہیں اور شرق و غرب جو پہاڑ ہے اس پر بھی الموڑہ ہی کی آبادی ہے، سب طرف مکانات بنے ہوئے ہیں اور اس کوٹھی سے اور خاص شہر یعنی بازار سے چنداں تفاوت نہیں، اب اگر ایک ہزار فٹ پر دو منٹ بڑھا جائیں تو گیارہ منٹ اور سوا منٹ طول یا عرض بلد کا کل سوا بارہ منٹ جمع کرنا پڑیں گے، جس حساب سے آج کا افطار ۰.۲۳ منٹ پر ہونا چاہئے (۱۱+۱۲=۲۳) لیکن میرے خیال میں ۲۰ منٹ سے پیشتر ہی مشرق سے سیاہی نمودار ہو جاتی ہے لیکن مغربی بادلوں میں خوب سرخی اور چاروں طرف کسی قدر بادلوں پر سرخی پائی جاتی ہے، چونکہ صاحبزادہ صاحب موصوف کو تحقیق مطلوب ہے اس لئے خاکسار نے یہاں کی مجموعی کیفیت گزارش کردی، امید کہ جواب باصواب سے ممتاز فرمایا جائے، رام پور سے جو نقشے آئے ہیں اُن میں اس نقشے کے حساب

fatawa rizvia Volume 10

...of three to four minutes, rather it is, meaning sunset is delayed by four minutes.

The Answer: Walaikum Assalam wa Rahmatullahi wa Barakatuh. The delay in sunrise and advance in sunset due to eastern and western mountains is not valid; they are like the walls of a house. Neither are those rays that illuminate by falling on snow-capped mountains worthy of consideration while those mountains are higher than it; they are like the moonlight of the night, as it is only by the sun's rays falling on the moon that light is produced. Nor is the rule of 'four proportionalities' applicable here, such that if it was four minutes at two thousand feet, then it would be two at one thousand and eleven at five and a half thousand. Instead, here there is an increase in a decreasing manner. Whatever the difference is at each altitude, at double that altitude, it will be less than double. For example, at a height of one hundred feet, the horizon drops by 0.10 minutes, and at one thousand feet by only 0.33 minutes, not ten times 0.10. And at four thousand feet, one degree and seven minutes, not 0.33 times four which would be two degrees and fourteen minutes, i.e., it would be double if it were forty times 0.10 minutes, which would be exactly seven degrees. And judge accordingly. I calculated that at an altitude of 5550 feet, the horizon dropped by one degree, 19 minutes, and 0.10 seconds. Due to this, at the beginning of the blessed month when the solar declination (cancer) was at 20 degrees, the difference in sunrise and sunset in Almora compared to level ground was 6 minutes and 47 seconds. That is, sunrise was that much earlier and sunset that much later. And at the end of the blessed month when the declination is at 18 degrees of Leo, the difference will be 6 minutes and 25 seconds. This 22-second difference is due to the difference in solar declination. In short, in the late current Ramadan, understand it as six and a half minutes. Thus, considering latitude and longitude, a total of seven and three-quarter minutes will be added to the Iftar time of Bareilly, which also includes precautionary minutes. Regarding the 12 minutes you increased for the 13th of the blessed month corresponding to July 7, adding 7 (12 + 7 = 19) brings us to what you wrote: "In my opinion, darkness appears from the east even before 20 minutes." It is not out of place to value the maps of not just Rampur but all of India in their left sense, for those poor souls do it thinking it is good in their own estimation, even though this is a fatwa, and a fatwa without knowledge is strictly forbidden. And Allah Almighty knows best.

Problem 269 to 270: From Arwa Namla, Post Office Achhnera, District Agra, Muhammad Sadiq Ali Khan Sahab, Ramadan 1330 AH. (1) What thing is

recommended (sunnah) to break the fast with? (2) In the blessed Ramadan, after breaking the fast and performing the Maghrib prayer, many people gather and smoke hookah, due to which they become unconscious and lose awareness; tremors occur in their hands and feet. Is this state legally (Sharia-wise) intoxicating (muskir) or not? Is smoking such hookah permissible or not? Explain and be rewarded.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

...तीन से चार मिनट का, बल्कि है यानी सूर्यास्त चार मिनट विलंबित है।

उत्तर: वा अलैकुम अस्सलाम व रहमतुल्लाही व बरकातुह। पूर्वी और पश्चिमी पहाड़ों के कारण सूर्योदय में देरी और सूर्यास्त में जल्दी का कोई महत्व नहीं है, वे घर की दीवारों की तरह हैं। न ही वे किरणें जो बर्फीले पहाड़ों पर गिरकर रोशनी देती हैं, कुछ विचारणीय हैं, जबकि वे पहाड़ उससे ऊंचे हों; वे रात की चाँदनी की तरह हैं कि चाँद पर सूर्य की किरणें पड़ने से ही रोशनी पैदा होती है। यहाँ 'समानुपात के चार' (proportion) का नियम लागू नहीं होता कि यदि दो हजार फीट पर चार मिनट थे, तो एक हजार पर दो और साढ़े पांच हजार पर ग्यारह होंगे। बल्कि यहाँ घटते क्रम में वृद्धि है। प्रत्येक ऊँचाई पर जो अंतर है, उससे दोगुनी ऊँचाई पर वह दोगुने से कम होगा। उदाहरण के लिए, सौ फीट की ऊँचाई पर क्षितिज 0.10 मिनट नीचे गिरता है और एक हजार फीट पर केवल 0.33 मिनट, न कि 0.10 का दस गुना। और चार हजार फीट पर एक डिग्री सात मिनट, न कि 0.33 का कि दो डिग्री चौदह मिनट, यानी उससे दोगुना होता कि 0.10 मिनट का चालीस गुना कि पूरे सात डिग्री होता। और इसी पर अन्य का अनुमान लगाओ। मैंने गणना की कि 5550 फीट की ऊँचाई पर क्षितिज एक डिग्री 19 मिनट और 0.10 सेकंड गिरा। इस कारण मुबारक महीने की शुरुआत में जब सौर क्रांति (कर्क) 20 डिग्री पर थी, अल्मोड़ा में समतल भूमि की तुलना में सूर्योदय और सूर्यास्त में 6 मिनट 47 सेकंड का अंतर था। यानी सूर्योदय उतना ही पहले और सूर्यास्त उतना ही बाद में। और मुबारक महीने के अंत में जब क्रांति सिंह राशि के18 अंश पर होगी, तो अंतर 6 मिनट 25 सेकंड होगा। यह 22 सेकंड का अंतर सौर क्रांति के अंतर के कारण है। संक्षेप में, वर्तमान रमजान के अंत में साढ़े छह मिनट, तो इस अंतर को समझें और अक्षांश-देशांतर के आधार पर कुल पौने आठ मिनट बरेली के इफ्तार समय में जोड़े जाएंगे, जिसमें एहतियाती (सावधानी) मिनट भी शामिल हैं। 13 मुबारक महीने तदनुसार 7 जुलाई के संबंध में जो आपने 12 मिनट बढ़ाए, उसमें 7 बढ़ाएं(12 + 7 = 19), वही बात आ गई जो आपने लिखी कि "मेरे विचार में 20 मिनट से पहले ही पूर्व से कालापन दिखाई देने लगता है।" केवल रामपुर ही नहीं, बल्कि पूरे भारत के नक्शों के वाम अर्थ (गलत अर्थ) की कदर करना अनुचित नहीं जानता, क्योंकि वे बेचारे अपने अनुमान में तो अच्छा समझकर करते हैं, हालाँकि यह फतवा है और बिना ज्ञान के फतवा देना सख्त हराम है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 269 से 270: अरवा नमला, डाकखाना अचनेरा, जिला आगरा, मुहम्मद सादिक अली खां साहब, रमजान 1330 हिजरी से। (1) रोज़ा इफ्तार करना किस चीज़ से मसनून (सुन्नत) है? (2) रमज़ान मुबारक में रोज़ा इफ्तार के बाद मग़रिब की नमाज़ पढ़कर बहुत से आदमी इकट्ठा होकर हुक्का पीते हैं जिससे वे बेहोश हो जाते हैं, कुछ सुध-बुध नहीं रहती, हाथ-पैरों में कंपन (रअशा) होने लगता है। क्या यह स्थिति शरई तौर पर नशा (मुस्क़िर) है या नहीं? ऐसा हुक्का पीना जायज़ है या नहीं? बयान फरमाएँ और सवाब पाएँ।

पेज 635 / 836

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

سے تین چار منٹ کا، بلکہ ہے یعنی غروب چار منٹ مؤخر ہے۔ الجواب: و علیکم السلام و رحمۃ اللہ و برکاتہ، شرقی غربی پہاڑوں کے سبب تاخرِ طلوع و تقدمِ غروب معتبر نہیں، وہ دیوار ہائے مکان کی مثل ہیں، نہ وہ شعاعیں کہ کوہ برف پر پڑ کر روشنی دیتی ہیں کچھ قابل لحاظ نہیں جبکہ وہ پہاڑ اس سے بلند تر ہو وہ شب کی چاندنی کے مثل ہیں کہ چاند پر شعاعِ شمس ہی پڑ کر روشنی پیدا ہوتی ہے۔ نہ یہاں اربعہ متناسبہ ہے کہ دو ہزار فٹ پر چار منٹ تھے تو ہزار پر دو اور ساڑھے پانچ ہزار پر گیارہ ہوں بلکہ یہاں تزاید علی سبیل التناقص ہے، ہر بلندی پر جو تفاوت ہے اس سے دو چند پر دو چند سے کم ہوگا مثلاً سو فٹ بلندی پر افق ۰.۱۰ دقیقے نیچے گرتا ہے اور ہزار فٹ پر صرف ۰.۳۳ دقیقے، نہ کہ ۰.۱۰ کا دس گنا، اور چار ہزار فٹ پر ایک درجہ سات دقیقے، نہ کہ ۰.۳۳ کہ دو درجے چودہ دقیقے، یعنی اس سے دو چند ہوتا کہ ۰.۱۰ دقیقے کا چالیس گنا کہ پورے سات درجے ہوتا و قس علی ہذا (اور اس پر قیاس کرو۔ ت) ۵۵۵۰ فٹ بلندی پر میں نے حساب کیا افق ایک درجہ ۱۹ دقیقے ۰.۱۰ ثانیے گرا، جس کے سبب شروع ماہ مبارک میں کہ تقویم سرطانی کہ ۲۰ درجے پر تھی، طلوع و غروب الموڑہ میں ہموار زمین کے اعتبار سے ۶ منٹ ۴۷ سیکنڈ تفاوت تھا یعنی طلوعِ شمس اس قدر پہلے اور غروب اس قدر بعد اور آخر ماہ مبارک میں کہ تقویم اسد کے ۱۸ پر ہو گی تفاوت ۶ منٹ ۲۵ سیکنڈ ہوگا، یہ ۲۲ سیکنڈ کا فرق تفاوتِ میلِ شمسی کے باعث ہے، غرض اواخر رمضان حال میں ساڑھے چھ منٹ، تو یہ فرق سمجھئے اور سوامنٹ بلحاظ عرض طول مجموع پونے آٹھ منٹ وقت افطار بریلی پر بڑھیں گے جس میں احتیاطی منٹ بھی شامل ہیں۔ ۱۳ ماہ مبارک مطابق ۷ جولائی کی نسبت جو تم نے ۱۲ منٹ بڑھائے ۷ بڑھاؤ (۱۲ + ۷ = ۱۹) وہی بات آگئی جو تم نے لکھی کہ "میرے خیال میں ۲۰ منٹ سے پہلے ہی مشرق سے

سیاہی نمودار ہو جاتی ہے۔" ایک رامپور کیا ہندوستان بھر کے نقشوں کی بائیں معنیٰ قدر کرنا بے جا نہیں جانتا کہ وہ بیچارے اپنے گمان میں تو اچھا سمجھ کر کرتے ہیں، اگرچہ یہ فتویٰ ہے اور بے علم فتویٰ سخت حرام ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۶۹ تا ۲۷۰: از اروہ نملہ ڈاک خانہ اچنیرہ ضلع آگرہ محمد صادق علی خاں صاحب رمضان ۱۳۳۰ھ (۱) روزہ افطار کرنا کس چیز سے مسنون ہے؟ (۲) رمضان مبارک میں روزہ افطار کے بعد نمازِ مغرب پڑھ کر بہت سے آدمی جمع ہو کر حقہ پیتے ہیں جس سے بیہوش ہوتے ہیں کچھ خبر نہیں رہتی، ہاتھ پیروں میں رعشہ ہو جاتا ہے، آیا یہ حالت شرعاً مسکر ہے یا نہیں؟ ایسا حقہ پینا جائز ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا

Fatawa Razawiya Volume 10

The Answer:

(1) Fresh dates, if not then dry dates, and if not then water. In Sunan Abi Dawud and Jami' al-Tirmidhi, with a reliable chain from Anas (may Allah be pleased with him):

"The Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him) used to break his fast before praying with fresh dates. If there were no fresh dates, then dry dates, and if there were no dry dates, then he would take a few sips of water." (And Allah knows best - T)

(2) Smoking hookah like this at any time is prohibited. This state is not intoxication but languor (tafteer), and both intoxication and languor are forbidden. In the Hadith of the Mother of the Believers, Umm Salama (may Allah be pleased with her):

"The Messenger of Allah (may Allah's peace and blessings be upon him) forbade every intoxicant and languor-inducing substance."

And the detailed ruling is in our treatise 'Huqqat al-Marjan limuhimmi Hukm al-Dukhan'. And Allah knows best.

Problem 712: From Banaras, Kandi Garh Tola locality, near the clinic, sent by Hakim Abdul Ghafoor Sahib, 12 Ramadan 1312 AH. What do the scholars of religion say regarding this issue: Should the Iftar prayer "Allahumma laka sumtu wa 'ala rizqika aftartu" be recited before breaking the fast or after breaking the fast? In 'Mazahir-e-Haq' by Nawab Qutbuddin Hasan and 'Ash'at al-Lam'at' by Sheikh Abdul Haq, the translation of 'aftartu' is in the past tense, which proves that the Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him) recited this prayer after breaking the fast. Ibn Malik has also written this. Nawab Qutbuddin Hasan Dehlvi has quoted Ibn Malik's statement in 'Mazahir-e-Haq', a commentary on Mishkat, that the Prophet recited the said prayer after Iftar. However, some books state that the prayer mentioned above should be recited before Iftar. Please explain and be rewarded.

The Answer:

In reality, its timing is after breaking the fast.

From Abu Dawud on the authority of Mu'adh bin Zahra (may Allah be pleased with him).

1. Jami' al-Tirmidhi, Chapter on what is recommended for breaking fast, Amin Company Delhi 1/88; Sunan Abi Dawud, Chapter on what to break fast with, Aftab-e-Alam Press Lahore 1/321.
2. Sunan Abi Dawud, Book of Drinks, Aftab-e-Alam Press Lahore 2/163.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

अल-जवाब:

(१) ताज़ी खजूर, और न हो तो सूखी खजूर, और न हो तो पानी। सुनन अबी दाऊद और जामि' तिर्मिज़ी में हसन सनद के साथ हज़रत अनस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से मरवी है:

"हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम नमाज़ अदा करने से पहले ताज़ी खजूर से रोज़ा इफ़्तार फ़रमाते, अगर ताज़ी खजूरें न होतीं तो सूखी खजूरें इस्तेमाल फ़रमाते, अगर खजूरें न होतीं तो पानी के चंद घूँट पीते। वल्लाहु तआला आलम। (त)"

(२) ऐसा हुक़्क़ा पीना कभी भी हो, हराम है, और यह हालत नशा (सुक्र) नहीं बल्कि सुस्ती (तफ़्तीर) है, और सुक्र व तफ़्तीर दोनों हराम हैं। उम्मुल मोमिनीन उम्मे सलमा रज़ियल्लाहु तआला अन्हा की हदीस में है:

"रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम हर नशा लाने वाली और सुस्ती पैदा करने वाली चीज़ से मना फ़रमाते थे। (त)"

और मसले की तफ़्सील हमारे रिसाले 'हुक्कतुल मरजान लिमुहम्मे हुक्मुल दुखान' में है। वल्लाहु तआला आलम।

मसला ७१२: बनारस मोहल्ला कंडी गढ़ टोला, मुत्तसिल शफ़ाख़ाना से मरसूला हकीम अब्दुल ग़फ़ूर साहब, १२ रमज़ान १३१२ हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि दुआ-ए-इफ़्तार "अल्लाहुम्मा लका सुमतु व अला रिज़्क़िका अफ़्तरतु" इफ़्तार से पहले पढ़नी चाहिए या इफ़्तार के बाद? मज़ाहिर-ए-हक़ नवाब क़ुतुबुद्दीन हसन और अश'अतुल लम'आत शेख अब्दुल हक़ में 'अफ़्तरतु' का तर्जुमा माज़ी (past tense) में है जिससे साबित होता है कि यह दुआ आँहज़रत सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम इफ़्तार के बाद पढ़ते थे, चुनाँचे इब्न मलिक ने भी इसको लिखा है। इब्न मलिक के क़ौल को कि आँहज़रत सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम दुआ-ए-मज़कूर इफ़्तार के बाद पढ़ते थे, नवाब क़ुतुबुद्दीन हसन देहलवी ने 'मज़ाहिर-ए-हक़' शरह मिश्कात में नक़ल किया है, लेकिन बाज़ किताबों में लिखते हैं कि दुआ-ए-मज़कूर बाला इफ़्तार से पहले पढ़नी चाहिए। बयान फ़रमायें सवाब पायें।

अल-जवाब:

हक़ीक़त में इसका वक़्त इफ़्तार के बाद है।

अबू दाऊद में हज़रत मुआज़ बिन ज़हरा रज़ियल्लाहु अन्हु से।

1. जामि' तिर्मिज़ी बाब मा युस्तहब अलैहिल इफ़्तार, अमीन कम्पनी देहली १/८८; सुनन अबी दाऊद बाब मा युफ़्तिर अलैह, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर १/३२१।
2. सुनन अबी दाऊद किताबुल अशरबा, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर २/१६३।

पृष्ठ ६३६ / ८३६

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

الجواب:

(۱) خرمائے تر، اور نہ ہو تو خشک، اور نہ ہو تو پانی۔ سنن ابی داؤد و جامع ترمذی میں بسند حسن انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہے:

کان النبي صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم یفطر قبل ان یصلی علی رطبات فان لم تکن رطبات فتمیرات وان لم تکن تمیرات فحسا حسوات من ماء ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ ترجمہ: حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نماز ادا کرنے سے پہلے تر کھجور سے روزہ افطار فرماتے، اگر تر کھجوریں نہ ہوتیں تو خشک کھجوریں استعمال فرماتے، اگر کھجوریں نہ ہوتیں تو پانی کے چند گھونٹ پیتے۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

(۲) ایسا حقہ پینا کبھی ہو، حرام ہے، اور یہ حالت سکر نہیں بلکہ تفتیر ہے، اور سکر و تفتیر دونوں حرام۔ ام المؤمنین ام سلمہ رضی اللہ تعالٰی عنہا کی حدیث میں ہے:

نھی رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم عن کل مسکر ومفتر ۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ہر نشہ آور مفتّر سے منع فرماتے تھے (ت)

اور تفصیل مسئلہ ہمارے رسالہ حقہ المرجان لمھم حکم الدخان میں ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۷۱۲: از بنارس محلہ کنڈی گڑ ٹولہ متصل شفاخانہ مرسلہ حکیم عبدالغفور صاحب ۱۲ رمضان ۱۳۱۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ دعاء افطار اللھم لک صمت وعلی رزقك افطرت قبل از افطار پڑھنی چاہئے یا بعد افطار؟ مظاہر حق نواب قطب الدین حسن واشعۃ اللمعات شیخ عبدالحق میں ترجمہ افطرت کا بصیغہ ماضی ہے جس سے ثابت ہوتا ہے کہ یہ دُعا

آنحضرت صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم بعد افطار کے پڑھتے تھے، چنانچہ ابن ملک نے بھی اس کو لکھا ہے، قول ابن ملک کو کہ آنحضرت صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم دُعا مذکور بعد افطار کے پڑھتے تھے نواب قطب الدین حسن دہلوی نے مظاہر حق شرح مشکوۃ میں نقل کیا ہے، لیکن بعض کتابوں میں لکھتے ہیں کہ دعا مذکور بالا قبل افطار پڑھنی چاہئے۔ بینوا توجروا۔

الجواب:

فی الواقع اس کا محل بعد افطار ہے،

ابو داؤد عن معاذ بن زھرۃ ابو داؤد میں حضرت معاذ بن زہرہ رضی اللہ عنہ سے

1 جامع ترمذی باب ما یستحب علیہ الافطار امین کمپنی دہلی ۸۸/۱، سنن ابی داؤد باب مایفطر علیہ آفتاب عالم پریس لاہور ۳۲۱/۱ 2 سنن ابی داؤد کتاب الاشربہ آفتاب عالم پریس لاہور ۱۶۳/۲

Fatawa Razawiyya, Volume 10

| It was reported to him that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) used to say when he broke his fast: 'O Allah, for You I have fasted and with Your provision I have broken my fast.' Thus, 'afṭara' (he broke fast) is interpreted to mean the intention to break the fast, diverting from its literal meaning without necessity, which is not permissible. And it is the same case with 'afṭartu' (I broke my fast). | That the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) used to recite this prayer at the time of breaking the fast: "O Allah! I kept the fast for Your pleasure, and broke it upon Your provision." So here, to take 'afṭara' to mean the intention of breaking fast and avoiding the literal meaning without necessity is not permissible, even though this is the case. And a similar matter is in 'afṭartu' (T). |

Mawlana Ali Qari (may Allah have mercy on him) says in Mirqat, a commentary on Mishkat: | (When he broke his fast, he said) i.e., he prayed. And Ibn al-Malik said it means he recited it after breaking the fast. And Allah knows best. | (When he broke fast, he said) i.e., he prayed. Ibn al-Malik said that he used to recite this prayer after breaking the fast, etc. And Allah Almighty knows best (T). |

---

1. Sunan Abi Dawud, Chapter: Words said at Iftar, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/322.
2. Mirqat Sharh Mishkat, Book of Fasting, Miscellaneous Issues, Maktaba Imdadia Multan, 4/258.

फतवा रज़विया, खंड 10

| उन्हें यह ख़बर मिली कि नबी (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) जब इफ़्तार करते थे तो यह दुआ पढ़ते थे: 'ऐ अल्लाह! मैंने तेरे लिए रोज़ा रखा और तेरे दिए हुए रिज़्क़ से इफ़्तार किया'। यहाँ 'अफ़्तरा' (उसने इफ़्तार किया) से मुराद इफ़्तार का इरादा करना लिया गया है और बिना किसी ज़रूरत के इसके हक़ीक़ी मानी से फेर दिया गया है, जो जायज़ नहीं है। और यही मामला 'अफ़्तरतु' (मैंने इफ़्तार किया) में भी है। | कि रसालत-मआब (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) इफ़्तार के वक़्त यह दुआ पढ़ते थे: "ऐ अल्लाह! मैंने तेरी रज़ा की ख़ातिर रोज़ा रखा, तेरे रिज़्क़ पर इफ़्तार किया"। तो यहाँ 'अफ़्तरा' से मुराद इफ़्तार का इरादा लेना और हक़ीक़ी मानी से बे-ज़रूरत एराज़ (परहेज़) करना है, हालाँकि यह जायज़ नहीं है और इसी तरह का मामला 'अफ़्तरतु' में है (त)। |

मौलाना अली क़ारी (अलैहिब बारी) मिरक़ात शरह मिश्कात में फ़रमाते हैं: | (जब वह इफ़्तार करते तो कहते) यानी दुआ करते, और इब्न-उल-मलिक ने कहा यानी इफ़्तार के बाद यह दुआ पढ़ते थे। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। | (जब इफ़्तार करते तो कहते) यानी दुआ करते, इब्न-उल-मलिक ने कहा कि इफ़्तार के बाद यह दुआ पढ़ते थे, इत्यादि। अल्लाह तआला बेहतर जानता है (त)। |

---

1. सुनन अबी दाऊद, बाब: इफ़्तार के वक़्त कहने वाली बात, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस लाहौर, 1/322.
2. मिरक़ात शरह मिश्कात, किताबुस-सोम, मुतफ़र्रिक़ मसाइल, मक्तबा इमदादिया मुल्तान, 4/258.

पृष्ठ 637 का 836

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

| انه بلغه ان النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کان اذا افطر اللھم لك صمت وعلی رزقك[1] فحمل افطر علی معنی ارادة الافطار وصرف عن الحقیقة من دون حاجة الیه وذا لا یجوز وھکذا فی افطرت۔ | کہ رسالتمآب صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم افطار کے وقت یہ دُعا پڑھتے : "اے اللہ ! میں نے تیری رضا کی خاطر روزہ رکھا، تیرے رزق پر افطار کیا" تو یہاں افطر سے مراد ارادہ افطار لینا اور حقیقی معنی سے بے ضرورت اعراض کرنا ہے حالانکہ یہ جائز نہیں اور اسی طرح کا معاملہ "افطرت" میں ہے (ت) |

مولانا علی قاری علیہ الباری مرقاۃ شرح مشکوٰۃ میں فرماتے ہیں: | (کان اذا افطر قال) ای دعا وقال ابن الملك ای قرأ بعد الافطار[2] الخ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ | (جب افطار کرتے تو کہتے) یعنی دُعا کرتے ابن الملک نے کہا کہ افطار کے بعد یہ دُعا پڑھتے تھے الخ۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت) |

---

1 سنن ابی داؤد باب القول عند الافطار آفتاب عالم پریس لاہور ۱/ ۳۲۲ 2 مرقاۃ شرح مشکوٰۃ کتاب الصوم مسائل متفرقہ مکتبہ امدادیہ ملتان ۴/ ۲۵۸

Volume 10 Fatawa-e-Razvia

Al-Urus al-Mi'tar fi Zaman Da'wat al-Iftar (1312 AH) (The perfume-laden bridegroom in the description of the time of the prayer for breaking the fast)

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. Allah is the Lord of Muhammad, peace and blessings be upon him.

Issue 272: From Banaras, Pitar Kunda neighborhood, sent by Maulana Muhammad Abdul Majeed Sahib Chishti Faridi Panipati, 15 Ramadan-ul-Mubarak 1312 AH. What do our scholars (may the All-Forgiving have mercy on them and keep them until the Day of Judgment) say regarding the prayer for breaking the fast "O Allah, for You I have fasted and with Your provision I have broken my fast"? Some scholars state that it should be recited before breaking the fast. Thus, it is mentioned in the treatise 'Tanbih al-Anam fi Adab al-Siyam': "Reciting this 'O Allah, for You I have fasted...' before breaking the fast is Sunnah" [End of quote]. Others state that it should be recited at the time of breaking the fast. Thus, it is mentioned in the treatise 'Miftah al-Jannah' authored by the late Maulana Karamat Ali Jaunpuri: "And at the time of breaking the fast, it is Sunnah to say 'O Allah, for You I have fasted...'" [End of quote]. And the book...

1. Tanbih al-Anam fi Adab al-Siyam
2. Treatise Miftah al-Jannah, Maulana Karamat Ali

जिल्द दसवीं फ़तावा-ए-रज़विया

अल-अरुस अल-मे'तार फ़ी ज़मन दावत अल-इफ़्तार (1312 हिजरी) (इफ़्तार की दुआ के वक्त के बयान में खुशबूदार दूल्हा)

बिस्मिल्लाहिर रहमानिर रहीम अल्लाह मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) का रब है।

मसअला 272: बनारस, मोहल्ला पितर कुंडा से प्रेषक मौलवी मुहम्मद अब्दुल मजीद साहब चिश्ती फरीदी पानीपती, 15 रमजान-उल-मुबारक 1312 हिजरी। हमारे उलेमा (अल्लाह उन पर रहम फरमाए और उन्हें कयामत के दिन तक बाकी रखे) इस बारे में क्या फरमाते हैं कि रोज़ा इफ़्तार करने की दुआ "ऐ अल्लाह, मैंने तेरे लिए रोज़ा रखा और तेरे दिए हुए रिज्क से इफ़्तार किया" के बारे में कुछ उलेमा कहते हैं कि इसे इफ़्तार से पहले पढ़ना चाहिए। चुनांचे रिसाला 'तन्बीह-उल-अनाम फी आदाब-उस-सियाम' में है: "और इफ़्तार से पहले यह पढ़ना 'ऐ अल्लाह, मैंने तेरे लिए रोज़ा रखा...' सुन्नत है।" (इन्तेहा - समाप्त)। और कुछ फरमाते हैं कि इफ़्तार के वक्त पढ़ना चाहिए। चुनांचे मरहूम मौलाना करामत अली जौनपुरी द्वारा रचित रिसाला 'मिफ्ताह-उल-जन्नत' में है: "और इफ़्तार के वक्त सुन्नत है कि कहे 'ऐ अल्लाह, मैंने तेरे लिए रोज़ा रखा...'" (इन्तेहा - समाप्त)। और किताब...

1. तन्बीह-उल-अनाम फी आदाब-उस-सियाम
2. रिसाला मिफ्ताह-उल-जन्नत, मौलवी करामत अली

पेज 638 का 836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

العروس المعطار في زمن دعوة الافطار ۱۳۱۲ھ (افطار کی دُعا کے وقت کے بیان میں عطر آلود دُولھا)

بسم اللہ الرحمن الرحیم اللہ رب محمد صلی علیہ و سلم

مسئلہ ۲۷۲: از بنارس محلہ پتر کنڈہ مرسلہ مولوی محمد عبد المجید صاحب چشتی فریدی پانی پتی ۱۵ رمضان المبارک ۱۳۱۲ھ ہمارے علماء رحمھم الغفار وابقاہم الی یوم القرار، اس میں کیا فرماتے ہیں کہ دعائے افطار روزہ اللھم لك صمت وعلی رزقك افطرت کو بعض علماء فرماتے ہیں کہ قبل افطار کہے، چنانچہ رسالہ تنبیہ الانام فی آداب الصیام میں ہے: اور قبل افطار کے یہ پڑھنا اللھم لك صمت الخ سنت ہے ۱ انتہی۔ اور بعض فرماتے ہیں کہ وقتِ افطار کہے ۔ چنانچہ رسالہ مفتاح الجنۃ مؤلفہ مولانا کرامت علی جونپوری مرحوم میں ہے: اور افطار کے وقت سنّت ہے کہ کہے اللھم لك صمت ۲ الخ انتہی۔ اور کتاب

1 تنبیہ الانام فی آداب الصیام 2 رسالہ مفتاح الجنۃ، مولوی کرامت علی

Fatawa Rizvia Volume 10

In 'Jawahir-ul-Ahkam', authored by Maulvi Abdullah known as Mastan Shah Mysore, it is quoted from 'Al-Kifayah': For example, the Sunnah is to recite this supplication at the time of breaking the fast: "Allahumma laka sumtu..." [1] etc. And in 'Risala Khair-ul-Kalam fi Masail-as-Siyam' authored by the late Maulvi Muhammad Abdul Halim of Lucknow, it states:

[Table/Box Start] Arabic: The Sunnah at the time of Iftar is to say: "Allahumma laka sumtu" [2] etc. End. Urdu: At the time of Iftar, the Sunnah is to pray: "O Allah! I have fasted for You," etc. (T) [Table/Box End]

And in 'Noor-ul-Hidaya', an Urdu translation and commentary of 'Sharh Wiqaya' by Maulvi Waheed-uz-Zaman, it is written: When one breaks the fast, he should say: "Allahumma laka sumtu wa 'ala rizqika aftartu," meaning "O Allah! For You alone I fasted, and with Your provision I break my fast." Abu Dawud narrated that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) used to do so. [3] End. And in 'Rasail Arkan-e-Arba'a' by our Maulana and guide, Maulvi Abdul Halim, in the treatise on fasting, it states:

[Table/Box Start] Arabic: It is appropriate to say at the time of Iftar: 'Allahumma laka sumtu wa 'ala rizqika aftartu.' Narrated from Mu'adh bin Zuhra that he said: It reached me that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), when he broke his fast, would say: 'Allahumma laka sumtu wa 'ala rizqika aftartu.' Narrated by Abu Dawud. [4] End. Urdu: At the time of Iftar, one should say: "O Allah! I have fasted for You and broken my fast with Your provision," because it is narrated from Hazrat Mu'adh bin Zuhra (may Allah be pleased with him) that he received word that when the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) broke his fast, he would say: "O Allah! I have fasted for Your sake and broken my fast with Your provision." Abu Dawud narrated this. End. (T) [Table/Box End]

And in 'Risala Ta'leem-us-Siyam', it says: Mu'adh bin Zuhra said that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) used to say at the time of Iftar:

[Table/Box Start] Arabic/Urdu: "Allahumma laka sumtu wa 'ala rizqika aftartu," narrated by Abu Dawud as a Mursal Hadith. [5] End. Urdu: "O Allah! I have fasted for Your sake and broken my fast with Your provision." Abu Dawud narrated it as Mursal. (T) [Table/Box End]

And in Sheikh Abdul Haq Dehlawi's (may his secret be sanctified) 'Madarij-un-Nubuwwah', it is stated:

---

1. Jawahir-ul-Ahkam, Maulvi Abdullah.
2. Risala Khair-ul-Kalam fi Masail-as-Siyam, Maulvi Abdul Halim.
3. Noor-ul-Hidaya, Urdu Translation of Sharh Wiqaya, Book of Fasting, Chapter of Disliked Acts, H.M. Saeed Company, Karachi, 1/761.
4. Rasail Arkan-e-Arba'a, explanation that it is recommended to break the fast with dates, Maktaba Islamia, Quetta, p. 215.
5. Risala Ta'leem-us-Siyam.

फ़तवा रज़विया खंड 10

मौलवी अब्दुल्ला, जिन्हें मस्तान शाह मैसूरी के नाम से जाना जाता है, द्वारा लिखित 'जवाहर-ुल-अहकाम' में 'अल-किफ़ाया' के हवाले से लिखा है: उदाहरण के लिए, सुन्नत यह है कि इफ्तार के समय यह दुआ पढ़ें: 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु...' [1] आदि। और लखनऊ के स्वर्गीय मौलवी मुहम्मद अब्दुल हलीम द्वारा लिखित 'रिसाला खैर-उल-कलाम फ़ी मसाइल-अस-सियाम' में है:

[टेबल/बॉक्स शुरू] अरबी: इफ्तार के समय सुन्नत यह है कि कहे: 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु' [2] आदि। अंत। उर्दू: इफ्तार के समय सुन्नत यह है कि दुआ मांगे: हे अल्लाह! मैंने तेरे लिए रोज़ा रखा आदि। (त) [टेबल/बॉक्स समाप्त]

और मौलवी वहीदुज़-ज़मां द्वारा लिखित 'शरह विक़ाया' के उर्दू अनुवाद और व्याख्या 'नूर-उल-हिदाया' में है: जिस समय इफ्तार करे, कहे: 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु व अला रिज़क़िका अफ़्तरतु', यानी हे अल्लाह! तेरे ही लिए मैंने रोज़ा रखा था और तेरे दिए हुए रिज़्क (भोजन) से इफ्तार करता हूँ। अबू दाऊद ने रिवायत की है कि हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ऐसा ही करते थे। [3] अंत। और हमारे मौलाना और मार्गदर्शक मौलवी अब्दुल हलीम द्वारा लिखित 'रसाइल अरकान-ए-अ़रबा' में रोज़े के रिसाले में है:

[टेबल/बॉक्स शुरू] अरबी: "इफ्तार के समय कहना चाहिए: 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु व अला रिज़क़िका अफ़्तरतु'। मुआज़ बिन ज़ोहरा से रिवायत है, उन्होंने कहा: मुझे यह बात पहुँची है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) जब इफ्तार करते थे, तो कहते थे: 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु व अला रिज़क़िका अफ़्तरतु'। इसे अबू दाऊद ने रिवायत किया है।" [4] अंत। उर्दू: इफ्तार के समय यह कहना चाहिए: हे अल्लाह! मैंने तेरे लिए रोज़ा रखा और तेरे रिज़्क पर इफ्तार किया, क्योंकि हज़रत मुआज़ बिन ज़ोहरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मन्कूल है कि मुझे यह बात पहुँची है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) जब इफ्तार फ़रमाते तो कहते: हे अल्लाह! मैंने तेरी खातिर रोज़ा रखा और तेरे रिज़्क पर इफ्तार किया, इसे अबू दाऊद ने रिवायत किया। अंत। (त) [टेबल/बॉक्स समाप्त]

और 'रिसाला तालीम-उस-सियाम' में है: मुआज़ बिन ज़ोहरा ने कहा कि हज़रत (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) इफ्तार के वक्त इस तरह कहते थे:

[टेबल/बॉक्स शुरू] अरबी/उर्दू: 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु व अला रिज़्क़िका अफ़्तरतु', इसे अबू दाऊद ने मुरसल रिवायत किया। [5] अंत। उर्दू: हे अल्लाह! मैंने तेरी खातिर रोज़ा रखा और तेरे रिज़्क पर इफ्तार किया। इसे अबू दाऊद ने मुरसल रिवायत किया। (त) [टेबल/बॉक्स समाप्त]

और शेख अब्दुल हक़ (क़ुद्दिसा सिर्रहु) की 'मदारिज-उन-नुबुव्वह' में है:

---

1. जवाहर-उल-अहकाम, मौलवी अब्दुल्ला।
2. रिसाला खैर-उल-कलाम फ़ी मसाइल-अस-सियाम, मौलवी अब्दुल हलीम।
3. नूर-उल-हिदाया अनुवाद शरह विक़ाया, किताब-उस-सौम, बाब-ए-मक़रूहात, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, 1/761।
4. रसाईल अरकान अरबा, बयान कि खजूर से इफ्तार मुस्तहब है, मकतबा इस्लामिया, क्वेटा, पृ. 215।
5. रिसाला तालीम-उस-सियाम।

पृष्ठ 639/836

فتاوی رضویہ جلد دہم

جواہر الاحکام تصنیف مولوی عبداللہ معروف بہ مستان شاہ میسوری میں نقلاً عن الکفایہ ہے۔ مثلاً سنت وہی ہے کہ وقت افطار یہ دعا کہئے اللھم لك صمت ۱ الخ انتہی۔ اور رسالہ خیر الکلام فی مسائل الصیام مولفہ جناب مولوی محمد عبد الحلیم مرحوم لکھنوی میں ہے :

[Table/Box Start] وقت افطار سنت آنست کہ بہ گوید اللھم لك صمت ۲ الخ انتہی۔ افطار کے وقت سنت یہ ہے کہ دعا مانگے : اے اللہ ! میں نے تیرے لیے روزہ رکھا الخ (ت) [Table/Box End]

اور نور الہدایہ ترجمہ اردو شرح وقایہ مؤلفہ مولوی وحید الزمان میں ہے : جس وقت افطار کرے کہے اللھم لك صمت و علی رزقك افطرت یعنی اے اللہ ! تیرے ہی واسطے میں نے روزہ رکھا تھا اور تیرے رزق پر افطار کرتا ہوں۔ روایت کیا اس کو ابو داؤد نے کہ ایسا ہی کرتے تھے آنحضرت صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ۳ انتہی۔ اور رسائل ارکان اربعہ مؤلفہ مولانا و مقتدانا جناب مولوی عبد الحلیم کے رسالہ صوم میں ہے :

[Table/Box Start] وینبغی ان یقول عند الافطار اللھم لك صمت وعلی رزقك افطرت عن معاذبن زھرۃ قال بلغنی ان رسول اللہ کان اذا افطر قال اللھم لك صمت و علی رزقك افطرت، رواہ ابوداؤد انتہی ۴۔ افطار کے وقت یہ کہنا چاہئے اے اللہ ! میں نے تیرے لیے روزہ رکھا اور تیرے رزق پر افطار کیا، کیونکہ حضرت معاذ بن زہرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مروی ہے کہ مجھے یہ بات پہنچی ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم جب افطار فرماتے تو کہتے اے اللہ ! میں نے

تیری خاطر روزہ رکھا اور تیرے رزق پر افطار کیا، اسے ابو داؤد نے روایت کیا انتہی (ت)

[Table/Box End]

اور رسالہ تعلیم الصیام میں ہے: معاذ بن زہرہ نے کہا حضرت (صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم) افطار کے وقت یوں کہتے تھے:

[Table/Box Start] اللھم لك صمت و علی رزقك افطرت، رواہ ابوداؤد مرسلا ۵ انتہی۔ اے اللہ ! میں نے تیری خاطر روزہ رکھا اور تیرے رزق پر افطار کیا۔ اسے ابوداؤد نے مرسلاً روایت کیا۔ (ت) [Table/Box End]

اور شیخ عبد الحق قدس سرہ کی مدارج النبوۃ میں ہے :

---

۱ جواہر الاحکام، مولوی عبداللہ ۲ رسالہ خیر الکلام فی مسائل الصیام، مولوی عبد الحلیم ۳ نور الہدایہ ترجمہ شرح وقایہ، کتاب الصوم باب مکروہات ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۱/ ۷۶۱ ۴ رسائل ارکان اربعہ بیان انہ یستحب الافطار بالتمر مکتبہ اسلامیہ کوئٹہ ص ۲۱۵ ۵ رسالہ تعلیم الصیام

Fatawa Razawiyya Volume 10

- At the time of breaking the fast (Iftar), he would say: "O Allah, for You I have fasted..." etc. until the end. | The Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) would say at the time of Iftar: "O Allah! I have kept the fast for You..." until the end (T).
- And in the same book 'Asha'at al-Lam'at', in the translation of the Hadith of Mu'adh bin Zuhrah, it is stated: When the Prophet used to break his fast, he would say: "O Allah, for You I have fasted. My Lord! I kept the fast for Your pleasure and with the provision You provided, I broke the fast." 2 Until the end. | The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) when he broke the fast, would say: "Allahumma laka sumtu" - O Allah! I have kept the fast for Your pleasure and "wa 'ala rizqika aftartu" - and I have broken the fast with the sustenance provided by You. Until the end (T).

And some say that this prayer (dua) should be recited after breaking the fast. Accordingly, in 'Mazhar-e-Haq', the Urdu translation of 'Mishkat' authored by late Maulvi Qutbuddin Dehlvi, it is stated: Ibn Malik said that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) used to say these words (i.e., Allahumma laka sumtu etc.) after breaking the fast. 3 Until the end. So, which among these opinions is the correct one? Furthermore, does 'at the time of Iftar' mean 'before breaking the fast', and are the first opinion and this opinion essentially the same? Or does it mean 'after breaking the fast', making the previous opinion and this opinion essentially the same? Additionally, is the translation of the word 'aftartu' as "I am breaking the fast" (as done by the author of 'Nur al-Hidaya' in the Urdu translation of 'Sharh al-Wiqaya') correct, or is "I have broken the fast" (as done by the Sheikh, may his soul be sanctified, in 'Asha'at al-Lam'at') correct? And even assuming the second translation is correct, will it be proven that this prayer occurs after breaking the fast or not? Moreover, Zaid says that in the Hadith's wording "idha aftarta qala Allahumma laka sumtu..." (When you broke the fast, he said: O Allah, for You I have fasted... T), 'idha' is a conditional particle, 'aftarta' is a verbal sentence acting as the condition, 'qala' with its hidden subject and the statement 'Allahumma laka sumtu...' is the response (jaza). But Amr says 'idha' is the conditional particle, 'aftara' is the condition, and 'faqad qala' is the response. Thus, this sentence is complete, and 'Allahumma laka sumtu' is a separate sentence in its own right; it has no connection to 'qala'. So, whose opinion among the two is correct? Also, Zaid says that 'Allahumma laka

sumtu...' is a prayer (dua), while Amr says it is not, because a prayer is a speech that includes a request, and since this does not, it is not a prayer either. So, in both cases, which one is correct...

1 Madarij-un-Nabuwwah, Chapter 10, on types of worship, fourth type regarding fasting, Nooriya Razawiyya, Sukkur, 1/469 2 Asha'at al-Lam'at, Book of Fasting, Third Section, Nooriya Razawiyya, Sukkur, 2/84 3 Mazhar-e-Haq Translation of Mishkat al-Masabih, Book of Fasting, Dua for Iftar, Dar-ul-Isha'at Karachi, 2/314

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (दसवीं)

- इफ़्तार के वक़्त फ़रमाते: 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु' आदि, अंत तक। | हुज़ूर-ए-अकरम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम इफ़्तार के वक़्त फ़रमाते: ऐ अल्लाह! मैंने तेरे लिए (रोज़ा) रखा आदि, अंत तक (त)।
- और उन्हीं की 'अशअतुल लम्आत' में हदीस मुआज़ बिन ज़ोहरा के अनुवाद में है: जब हुज़ूर इफ़्तार करते तो कहते 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु', ऐ मेरे रब! मैंने तेरी रज़ा के लिए रोज़ा रखा और तेरे दिए हुए रिज़्क पर मैंने रोज़ा खोला। २ अंत तक। | हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम जब इफ़्तार करते, फ़रमाते: 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु' - ऐ अल्लाह! मैंने तेरी रज़ा के लिए रोज़ा रखा और 'व अला रिज़क़िका अफ़्तरतु' - और तेरे अता किए हुए रिज़्क पर रोज़ा इफ़्तार किया। अंत तक (त)।

और कुछ कहते हैं कि इस दुआ को इफ़्तार के बाद कहना चाहिए। चुनाँचे 'मज़ाहिर-ए-हक़' उर्दू अनुवाद 'मिशकात' जिसके लेखक जनाब मौलवी क़ुतुबुद्दीन मरहूम देहलवी हैं, उसमें है: इब्ने मलिक ने कहा है कि हज़रत (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) इन शब्दों (यानी 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु' आदि) को इफ़्तार के बाद कहते थे। ३ अंत तक। तो इन कथनों में सही कथन कौन सा है? और क्या इफ़्तार के वक़्त से मुराद इफ़्तार से पहले है और पहले कथन और इस कथन का अर्थ एक ही है? या इफ़्तार के बाद मुराद है और पिछले कथन और इस कथन का अर्थ एक ही है? और साथ ही क्या शब्द 'अफ़्तरतु' का अनुवाद "इफ़्तार करता हूँ" (जैसा कि 'नूरुल हिदाया' के लेखक ने 'शरह विक़ाया' के उर्दू अनुवाद में किया है) सही है या "इफ़्तार किया मैंने" (जैसा कि शेख़ क़ुद्दिस सिर्रहु ने 'अशअतुल लम्आत' में किया है) सही है? और साथ ही क्या अनुवाद की शुद्धता की स्थिति में इस दुआ का इफ़्तार के बाद होना साबित होगा या नहीं? और यह भी कि ज़ैद कहता है कि हदीस के शब्द "इज़ा अफ़्तरता क़ाला अल्लाहुम्मा लका सुमतु..." (जब इफ़्तार करते तो फ़रमाते: ऐ अल्लाह! मैंने तेरे लिए रोज़ा रखा... त) में 'इज़ा' शर्तिया शब्द है, 'अफ़्तरा' क्रियात्मक वाक्य शर्त है, 'क़ाला' अपने छिपे हुए कर्ता और 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु...' कथन के साथ जज़ा (परिणाम) है। लेकिन अम्र कहता है 'इज़ा' शर्त है, 'अफ़्तरा' शर्त है और 'फ़क़द क़ाला' जज़ा है। तो यह बात तो यहीं पूरी हो गई, अब 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु' अपने आप में एक अलग वाक्य है; इसका 'क़ाला' से कोई संबंध नहीं है। तो दोनों में से सही कथन किसका है? और यह भी कि ज़ैद कहता है 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु...'

दुआ है और अम्र कहता है नहीं, क्योंकि दुआ वह कलाम होता है जिसमें कुछ माँगने का भाव हो, और इसमें ऐसा नहीं है तो यह दुआ भी नहीं है। तो दोनों में सही कौन है...

१ मदारिजुन नुबुव्वह, अध्याय १०, इबादतों के प्रकार, चौथा प्रकार रोज़ा, नूरिया रज़विया सुक्कुर, १/४६९ २ अशअतुल लम्आत, किताबुस सौम, तीसरा भाग, नूरिया रज़विया सुक्कुर, २/८४ ३ मज़ाहिर-ए-हक़ अनुवाद मिशकातुल मसाबीह, किताबुस सौम, इफ़्तार की दुआ, दारुल इशाअत कराची, २/३१४

पृष्ठ ८३६ में से ६४०

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

- ودروقتِ افطار فرمودے اللہم لك صمت الخ انتہٰی۔ | حضورِ اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم افطار کے وقت فرماتے اے اللہ ! میں نے تیرے لیے رکھا الخ انتہٰی (ت)

- اور اُنہیں کی اشعۃ اللمعات میں حدیث معاذ بن زہرہ کے ترجمہ میں ہے: بود آنحضرت چون افطاری کردی گفت اللھم لك صمت خداوند برائے رضائے تو روزہ داشتہ ام وعلی رزقك افطرت وبر روزی تو کہ رسانیدی می کشادم روزہ را ۲ انتہٰی۔ | حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم جب افطار کرتے، فرماتے اللھم لك صمت اے اللہ ! میں نے تیری رضا کیلئے روزہ رکھا وعلی رزقك افطرت اور تیرے عطا کردہ رزق پر روزہ افطار کیا انتہٰی (ت)

اور بعض کہتے کہ اس دعا کو بعد افطار کہے۔ چنانچہ مظاہر حق ترجمہ اردو مشکوٰۃ مؤلفہ جناب مولوی قطب الدین مرحوم دہلوی میں ہے: ابن ملک نے کہا ہے کہ حضرت (صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم) ان کلمات (یعنی اللھم لك صمت الخ) کو بعد افطار کہتے تھے۳ انتہٰی۔ تو ان قولوں میں صحیح قول کون سا ہے؟ اور نیز اس میں کہ وقت افطار سے مراد قبل از افطار ہے اور پہلے قول اور اس قول کا مآل واحد ہے یا بعد افطار اور پچھلے قول اور اس قول کا مآل واحد ہے اور نیز اس میں کہ لفظ افطرت کا ترجمہ "افطار کرتا ہوں" میں "جیسا کہ مؤلف نور الہدایہ ترجمہ اردو شرح وقایہ نے کیا ہے صحیح ہے یا "افطار کیا میں نے" جیسا کہ شیخ قدس سرہ نے اشعۃ اللمعات میں کیا ہے صحیح ہے؟ اور نیز اس میں کہ بر تقدیر صحت ترجمہ ثانی کے اس دُعا کا بعد افطار ہونا ثابت ہو گا یا نہیں؟ اور نیز اس میں کہ زید تو کہتا ہے کہ حدیث کے لفظ اذا افطرت قال اللھم لك صمت الخ (جب افطار کرتے تو فرماتے اے اللہ ! میں نے تیرے لیے روزہ رکھا الخ۔ت) میں اذا حرفِ شرط

ہے، افطر جملہ فعلیہ شرط ہے، قال اپنے فاعل ضمیر مستتر اور اللھم لك الخ مقولہ کے ساتھ جزا ہے۔ اور عمرو کہتا ہے اذا حرفِ شرط، افطر شرط، اور فقد قال جزا۔ بس یہ کلام تو تمام ہو چکا اب اللھم لك صمت برأسہ اور نیز ایک دوسرا کلام ہے قال سے اس کو کچھ تعلق نہیں تو دونوں میں صحیح قول کس کا ہے؟ اور نیز اس میں زید تو کہتا ہے کہ اللھم لك صمت الخ دُعا ہے اور عمرو کہتا ہے نہیں، کیونکہ دُعا تو وہ کلام ہوتا ہے جو کہ متضمنِ مضمون طلب ہو، اور یہ ایسا نہیں تو دُعا بھی نہیں، تو دونوں میں صحیح

۱ مدارج النبوۃ باب دہم در انواع عبادات نوع چہارم در صوم نوریہ رضویہ سکھر ۱/ ۴۶۹ ۲ اشعۃ اللمعات کتاب الصوم فصل ثالث نوریہ رضویہ سکھر ۲/ ۸۴ ۳ مظاہر حق ترجمہ مشکوۃ المصابیح کتاب الصوم افطار کی دعا دارالاشاعت کراچی ۲/ ۳۱۴

Fatawa Razawiya, Volume 10

Whose statement is this? And also, in this, is the word 'inda' (near/at) an adverb or not? If it is, is it an adverb of time meaning 'at the time of' or an adverb of place meaning 'near' or 'beside'? And also regarding the statement of the late Maulana Bahr al-Ulum, "And it is appropriate that he says 'inda al-Iftar'", should the translation be "And it is appropriate that he says at the time of breaking the fast" or "And it is appropriate that he says near the breaking of the fast"? Please clarify and be rewarded.

The Answer:

I say: And with Allah is success and through Him is the attainment of the heights of investigation. The requirement of evidence is that one should recite the supplication after breaking the fast. Firstly, the aforementioned Hadith was narrated by Abu Dawood, Ibn al-Sunni in the book 'Amal al-Yawm wa al-Laylah', and al-Bayhaqi in 'Shu'ab al-Iman' as follows:

Narrated by Mu'adh bin Zuhra that the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him), when he broke his fast, used to say: "All praise is due to Allah who helped me so I fasted, and provided for me so I broke my fast."	**It is narrated from Hazrat Mu'adh bin Zuhra that when the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him) broke his fast, he used to say: "All praise is for Allah who helped me so that I kept the fast and granted me sustenance so that I broke the fast." (T)**

And also Ibn al-Sunni in the aforementioned book, and al-Tabarani in 'al-Mu'jam al-Kabir', and al-Daraqutni in 'Sunan' narrated it with a connected chain as follows:

Narrated by Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both) that the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him), when he broke his fast, used to say: "O Allah, for You we fasted and with Your provision we broke our fast, so accept from us; indeed, You are the All-Hearing, the All-Knowing."	**It is narrated from Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both) that the Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him) used to say this prayer when he broke his fast: "O Allah! We fasted for You and broke the fast on Your provision, accept from us, for You are the Hearer and the Knower." (T)**

Also, the Hadith of Abu Dawood, al-Nasa'i, al-Daraqutni, al-Hakim, and others:

Narrated from Ibn Umar (may Allah be pleased with them both)	**It is narrated from Hazrat Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both)**

1. Shu'ab al-Iman, Chapter on Fasting, Hadith 3902, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 3/406; Kitab Amal al-Yawm wa al-Laylah, Chapter on what to say when breaking fast, Hadith 279, Ma'arif Numaniya, Hyderabad Deccan, p. 128.
2. Kitab Amal al-Yawm wa al-Laylah, Chapter on what to say when breaking fast, Hadith 280, Ma'arif Numaniya, Hyderabad Deccan, p. 128; Sunan al-Daraqutni, Chapter on Kissing for the Faster, Hadith 21, Nashr al-Sunnah, Multan, 2/185.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम (10)

यह किसका कथन है? साथ ही, क्या शब्द 'इन्द' (Inda) एक अव्यय है या नहीं? यदि है, तो क्या यह समय का अव्यय है जिसका अर्थ 'समय' है या स्थान का अव्यय है जिसका अर्थ 'नज़दीक' या 'पास' है? इसके अलावा, मौलाना बहर-उल-उलूम मरहूम के कथन "व-यम्बग़ी अन-यक़ूला इन्द अल-इफ़्तार" का अनुवाद "और उचित है कि कहे इफ़्तार के समय" होना चाहिए या "और उचित है कि कहे इफ़्तार के नज़दीक"? स्पष्ट करें, पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर:

मैं कहता हूँ: और अल्लाह की सहायता से ही सफलता है और उसी के माध्यम से शोध की ऊंचाइयों तक पहुंच संभव है। साक्ष्य की आवश्यकता यह है कि रोज़ा इफ़्तार करने के बाद दुआ पढ़नी चाहिए। प्रथम, उपर्युक्त हदीस को अबू दाऊद, इब्न अल-सुन्नी ने 'अमल अल-यौम वल-लैला' में और बैहक़ी ने 'शुअ़ब अल-ईमान' में इस प्रकार वर्णित किया है:

हज़रत मुआ़ज़ बिन ज़ुहरा से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) जब इफ़्तार करते तो यह पढ़ते: "तमाम प्रशंसा अल्लाह के लिए है जिसने मेरी सहायता की तो मैंने रोज़ा रखा और मुझे रिज़्क़ दिया तो मैंने इफ़्तार किया।"	**हज़रत मुआ़ज़ बिन ज़ुहरा से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) जब इफ़्तार फ़रमाते तो यह पढ़ते: सब हम्द अल्लाह की जिसने मेरी मदद फ़रमाई कि मैंने रोज़ा रखा और मुझे रिज़्क़ अता फ़रमाया कि मैंने इफ़्तार किया। (त)**

और साथ ही इब्न अल-सुन्नी ने उपरोक्त किताब में और तबरानी ने 'अल-मुअ़जम अल-कबीर' में और दारक़ुतनी ने 'सुनन' में इस प्रकार रिवायत की:

हज़रत इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हुमा) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) जब इफ़्तार करते तो यह दुआ पढ़ते: "ऐ अल्लाह! हमने तेरे लिए रोज़ा रखा और तेरे दिए हुए रिज़्क़ पर इफ़्तार किया, हमारी तरफ़ से क़बूल फ़रमा, बेशक तू सुनने और जानने वाला है।"

हज़रत इब्न अब्बास रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हुमा से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम जब इफ़्तार फ़रमाते तो यह दुआ पढ़ते: ऐ अल्लाह! हमने तेरे लिए रोज़ा रखा और तेरे रिज़्क़ पर इफ़्तार किया, हमारी तरफ़ से क़बूल फ़रमा तू सुनने और जानने वाला है। (त)

इसके अलावा अबू दाऊद, नसाई, दारक़ुतनी, हाकिम आदि की हदीस:

हज़रत इब्न उमर रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हुमा से

हज़रत अब्दुल्लाह इब्न उमर रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हुमा से रिवायत है

1. शुअ़ब अल-ईमान, बाब फ़ी अल-सियाम, हदीस 3902, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरूत, 3/406; किताब अमल अल-यौम वल-लैला, बाब मा-यक़ूलु इज़ा अफ़तरा, हदीस 279, मआरिफ़ नोमानिया, हैदराबाद दकन, पृ. 128
2. किताब अमल अल-यौम वल-लैला, बाब मा-यक़ूलु इज़ा अफ़तरा, हदीस 280, मआरिफ़ नोमानिया, हैदराबाद दकन, पृ. 128, सुनन अल-दारक़ुतनी, बाब अल-क़िब्ला लिल-साइम, हदीस 21, नश्र अल-सुन्ना, मुल्तान, 2/185

فتاوی رضویہ جلد دہم

قول کس کا ہے؟ اور نیز اس میں کہ لفظ عند ظرف ہے یا نہیں؟ اگر ہے تو ظرفِ زمان بمعنی وقت ہے یا ظرفِ مکان بمعنی نزدیک اور پاس کے؟ اور نیز اس میں کہ مولانا بحر العلوم مرحوم کے قول "وینبغی ان یقول عند الافطار" کا ترجمہ "اور لائق ہے کہ کہے وقت افطار کے" کرنا چاہئے یا "اور لائق ہے یہ کہ کہے نزدیک افطار کے" بینوا توجروا۔

الجواب:

اقول: وباللہ التوفیق وبہ الوصول الی ذری التحقیق مقتضائے دلیل یہ ہے کہ دُعا روزہ افطار کر کے پڑھے اولاً حدیثِ مذکورہ کو ابی داؤد کہ ابن السنی نے کتاب عمل الیوم واللیلہ اور بیہقی نے شعب الایمان میں یوں روایت کی:

عن معاذ بن زهرة قال كان رسول الله صلى الله عليه وسلم اذا افطر قال الحمد لله الذى اعاننى فصمت ورزقنى فافطرت	**حضرت معاذ بن زہرہ سے مروی ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم جب افطار فرماتے تو یہ پڑھتے: سب حمد اللہ کی جس نے میری مدد فرمائی کہ میں نے روزہ رکھا اور مجھے رزق عطا فرمایا کہ میں نے افطار کیا۔ (ت)**

اور نیز ابن السنی نے کتاب مذکور اور طبرانی نے معجم کبیر اور دار قطنی نے سنن میں موصولاً یوں تخریج کی:

عن ابن عباس رضی اللہ تعالی عنھما قال کان رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم اذا افطر قال اللھم لك صمنا وعلی رزقك افطرنا فتقبل منا انك انت السمیع العلیم

حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے مروی ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم جب افطار فرماتے تو یہ دعا پڑھتے: اے اللہ! ہم نے تیرے لیے روزہ رکھا اور تیرے رزق پر افطار کیا، ہماری طرف سے قبول فرما تو سننے اور جاننے والا ہے۔ (ت)

نیز حدیثِ ابی داؤد ونسائی ودار قطنی و حاکم و غیرہم:

عن ابن عمر رضی اللہ تعالی عنھما حضرت عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے مروی ہے

1 شعب الایمان باب فی الصیام حدیث ۳۹۰۲ دار الکتب العلمیہ بیروت ۳ / ۴۰۶، کتاب عمل الیوم واللیلۃ باب مائیقول اذا افطر حدیث ۲۷۹ معارف نعمانیہ حیدر آباد کن ص ۱۲۸ 2 کتاب عمل الیوم واللیلۃ باب مائیقول اذا افطر حدیث ۲۸۰ معارف نعمانیہ حیدر آباد کن ص ۱۲۸، سنن الدار قطنی باب القبلۃ للصائم حدیث ۲۱ نشر السنۃ ملتان ۲ / ۱۸۵

Fatawa Razawiyya Volume 10

The Prophet (may Allah the Almighty bless him and grant him peace) said when he broke his fast: "Thirst has gone, the veins are moistened, and the reward is confirmed, if Allah the Almighty wills." - 1	**When the Messenger of Allah (may Allah the Almighty bless him and grant him peace) broke his fast, he would say: Thirst is gone, the veins have become moist, and if Allah the Almighty willed, the reward has been established. (T)**

The clear benefit of all these is that "breaking the fast" is the condition and "saying thus" is its result. Merely saying it without the actual occurrence is not possible. Where would the consequence, which is an inherent part of being a result, come from? To declare 'Allahumma' as a fresh statement is something that even a beginner student of grammar (one who reads the commentary on Mi'at Amil) would not accept. A result does not precede its condition; rather, it follows and is dependent on it, as is not hidden from anyone with the slightest common sense. (Rather, the result is subsequent to the condition and dependent on it, as is clear to anyone who has even a little connection with this art. - T). True simultaneous occurrence is not reasonable here because at the exact time of breaking the fast by eating and drinking, i.e., when something is being swallowed, reciting is usually not possible. Therefore, following immediately is intended, and that is the objective. Yes, in breaking the fast by consensus, true simultaneous occurrence is the goal, but it is certainly not intended here as is not hidden (as is not secret. - T). From this, it became clear that the outcome of the second and third statements is the same. The point of expression suggests immediate succession because the word 'after' also includes disconnected succession, which is contrary to the purpose. Therefore, using the word "at the time" (waqt) negates separation. During the impossibility of simultaneous occurrence, although succession can cover both preceding and succeeding, the state of reciprocation prevents precedence. Hence, where precedence is known from outside, the interpretation of 'intention' etc. is practiced in the condition.

As in the saying of Allah, the Mighty and Sublime: "When you stand up for prayer, wash your faces..." 2 And in a Hadith, the Messenger of Allah (may Allah the Almighty bless him and grant him peace), when entering the toilet, would say: "O Allah, I seek refuge in You from the male and female devils." 3 Narrated by Imams Ahmad and the Six from Anas.

As in the blessed saying of Allah, the Mighty and Sublime: "When you intend for prayer, wash your faces." In the Hadith of the Messenger of Allah (may Allah the Almighty bless him and grant him peace), it says: "When someone intends to enter the toilet, they should say: O Allah! I seek refuge in You from the impure and the wicked." This was narrated by Imam Ahmad and the six Imams from Hazrat Anas.

1 Sunan Abi Dawood, Chapter on Saying at the Time of Breaking the Fast, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/321; Sunan al-Daraqutni, Chapter on Kissing for the Fasting Person, Nashr al-Sunnah, Multan, 2/185. 2 Al-Quran 5/6. 3 Jami' al-Tirmidhi, Chapter on What to Say When Entering the Toilet, Amin Company Kutub Khana Rashidiyah, Delhi, 1/3.

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

पैगंबर (अल्लाह उन पर कृपा करे और उन्हें शांति प्रदान करे) ने कहा जब उन्होंने अपना रोज़ा खोला: "प्यास चली गई है, नसें नम हो गई हैं, और इनाम पक्का हो गया है, अगर अल्लाह सर्वशक्तिमान ने चाहा।" - 1

जब अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) इफ़्तार करते तो फ़रमाते: प्यास बुझ गई, नसें तर हो गईं, और यदि अल्लाह ने चाहा तो सवाब (पुण्य) पक्का हो गया। (त)

इन सब का स्पष्ट निष्कर्ष यही है कि इफ़्तार 'शर्त' है और 'ऐसा कहना' उसकी 'जज़ा' (प्रतिफल) है। शब्द के अर्थ से विहीन होकर केवल कथन का घटित होना संभव नहीं है। वह परिणाम कहाँ से आएगा जो जज़ा होने के लिए अनिवार्य है? 'अल्लाहुम्मा' को एक नया वाक्य मानना ऐसी बात है जिसे व्याकरण का प्रारंभिक छात्र (मिअत-ए-आमिला की व्याख्या पढ़ने वाला) भी स्वीकार नहीं करेगा। और जज़ा शर्त से पहले नहीं होती, बल्कि उसके बाद आती है और उस पर आधारित होती है, जैसा कि उस व्यक्ति पर स्पष्ट है जिसके पास ज़रा भी समझ हो। (बल्कि जज़ा शर्त के बाद आती है और उस पर आधारित होती है, जैसा कि हर उस व्यक्ति पर स्पष्ट है जिसका इस विधा से थोड़ा भी संबंध है। - त)। यहाँ वास्तविक सामयिकता तर्कसंगत नहीं है क्योंकि खाने-पीने के द्वारा इफ़्तार के ठीक समय पर, यानी जिस समय कोई चीज़ गले से नीचे उतारी जा रही हो, सामान्य रूप से पाठ करना संभव नहीं है। इसलिए, तुरंत बाद का अर्थ ही अभिप्रेत है, और यही उद्देश्य है। हाँ, सर्वसम्मति से इफ़्तार में वास्तविक सामयिकता ही उद्देश्य है, लेकिन यहाँ वह निश्चित रूप से अभिप्रेत नहीं है जैसा कि छिपा नहीं है (जैसा कि गुप्त नहीं है। - त)। यहीं से स्पष्ट हुआ कि दूसरे और तीसरे कथन का निष्कर्ष एक ही है। शब्द चयन का संकेत निरंतरता की ओर है क्योंकि 'बाद' शब्द विच्छिन्न उत्तरवर्तित को भी शामिल करता है, जो उद्देश्य के विरुद्ध है। इसलिए "वक्त" शब्द के साथ अभिव्यक्ति अलगाव को नकारती है। सामयिकता की असंभवता के समय, हालांकि अनुवर्तन पूर्व और पश्चात दोनों को शामिल कर सकता है, लेकिन प्रतिदान की स्थिति पूर्वता को रोकती है। इसीलिए जहाँ बाहर से पूर्वता ज्ञात हो, वहाँ शर्त में 'इरादा' आदि की व्याख्या की जाती है।

जैसा कि अल्लाह अज़्वजल के कथन में है: "जब तुम नमाज़ के लिए खड़े हो, तो अपने चेहरे धो लो..." 2 और एक हदीस में है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जब शौचालय में प्रवेश करते तो कहते: "ऐ अल्लाह, मैं अपवित्र नर और मादा जिन्न से तेरी शरण चाहता हूँ।" 3 इसे इमाम अहमद और छह हदीस के इमामों ने अनस से रिवायत किया है।

जैसा कि अल्लाह अज़्वजल के मुबारक इरशाद में है: "जब तुम नमाज़ का इरादा करो तो अपने चेहरे धो लो।" अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की हदीस में है, "जब कोई शौचालय में प्रवेश करने का इरादा करे तो कहे: ऐ अल्लाह! मैं नापाक और खबीस से तेरी शरण में आता हूँ।" इसे इमाम अहमद और अइम्मा-ए-सित्ता ने हज़रत अनस से रिवायत किया है।

1 सुनन अबी दाऊद, इफ़्तार के समय कहने का अध्याय, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 1/321; सुनन अद-दाराक़ुत्नी, रोज़ेदार के चुंबन का अध्याय, नश्र अल-सुन्नत, मुल्तान, 2/185। 2 अल-क़ुरान 5/6। 3 जामि' अत-तिर्मिज़ी, शौचालय में प्रवेश करते समय क्या कहना चाहिए का अध्याय, अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया, दिल्ली, 1/3।

فتاوی رضویہ جلد دہم

قال کان النبي صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کہ جب رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم افطار کرتے اذا افطر قال ذھب الظمأ وابتلت العروق تو فرماتے : پیاس چلی گئی ، رگیں تر ہو گئیں ، اور اگر وثبت الاجر ان شاء اللہ تعالی - 1 اللہ تعالیٰ نے چاہا تو اجر ثابت ہو گیا (ت)

ان سب کا مفاد صریح یہی ہے افطر شرط اور قال کذا اس کی جزا، مجرد قول کہ مقولے سے معرا کر لیا جائے صلاحیت وقوع ہی نہیں رکھتا، ترتب کہ لازم جزائیت ہے کہاں سے آئیگا ، اللھم کو کلام مستانف قرار دینا ایسی بات ہے کہ شرع مائۃ عامل خواں بھی قبول نہ کرے گا، اور جزا شرط سے مقدم نہیں ہوتی بل یعقبہ ویترتب علیہ کما لا یخفی علی کل من لہ ادنی مسکۃ (بلکہ جزا شرط سے مؤخر اور اس پر مترتب ہوتی ہے جیسا کہ ہر اس شخص پر واضح ہے جو اس فن کے ساتھ تھوڑا سا بھی تعلق رکھتا ہے۔ت) اور مقارنت حقیقیہ یہاں معقول نہیں کہ عین وقت افطار بالاکل والشرب یعنی جس وقت کوئی مطعوم حلق سے اتارا جائے عادۃ خاص اُس حالت میں قرات نا تیسر ، لاجرم تعقیب مراد ، وھو المقصود ہاں افطار بالاجماع میں اقتران حقیقی مقصود مگر وہ یہاں قطعاً مراد نہیں کما لا یخفی (جیسا کہ پوشیدہ نہیں۔ ت) یہیں سے واضح ہوا کہ قول ثانی و ثالث کا مآل ایک ہی ہے اور نکتہ تعبیر اشعار ببعدیت متصلہ ہے کہ لفظ بعد بعدیت منفصلہ کو بھی شامل ، اور وہ خلاف مقصود ہے۔ لہذا بلفظ "وقت۔" تعبیر کہ نافی انفصال ہو ، ہنگام استحالہ مقارنہ اگرچہ معاقبہ تقدم وتاخر دونوں کو متناول ، مگر حالت مجازات مانع تقدم ہے، ولہذا جہاں خارج سے تقدم معلوم ، شرط میں تاویل ارادہ وغیرہ معمول ،

كما فی قوله عز وجل اِذَا قُمْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ فَاغْسِلُوْا وُجُوْهَكُمْ 2 وفي حديث كان رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم اذا دخل الخلاء قال اللهم اني اعوذ بك من الخبث و الخبائث 3، رواه الائمة احمد والستة عن انس

جیسا کہ اللہ عزوجل کے مبارک ارشاد میں ہے جب تم نماز کا ارادہ کرو تو چہرے کو دھو لو۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی حدیث میں ہے ، جب کوئی بیت الخلاء میں داخل ہونے کا ارادہ کرے تو کہے اے اللہ ! میں ناپاک و خبیث سے تیری پناہ میں آتا ہوں۔ اسے امام احمد اور ائمہ ستہ نے حضرت انس

1 سنن ابی داؤد باب القول عند الافطار آفتاب عالم پریس لاہور ۳۲۱/۱، سنن الدار قطنی باب القبلة للصائم نشر السنة ملتان ۱۸۵/۲ 2 القرآن ۶/۵ 3 جامع ترمذی باب ما یقول اذا دخل الخلاء امین کمپنی کتب خانہ رشید یہ دہلی ۳/۱

Narrated by Ibn Malik (may Allah be pleased with him), but in the mentioned situation, interpreting the word 'aftara' (broke the fast) as the 'intention to break the fast' is a deviation from literal truth without a necessity that compels it, nor is there a context that invites it. Therefore, this should not be done, nor should it be accepted. (T)

Narrated by Ibn Malik (may Allah be pleased with him), but in the mentioned case, interpreting the word 'iftar' as the 'intention to break fast' is turning away from literal truth without need, and there is no clue for a metaphorical meaning here either. Therefore, this should not be done, nor should it be accepted. (T)

Secondly, in these supplications, 'aftartu' (I have broken fast) and 'aftarna' (we have broken fast), 'dhahaba-z-zama' (thirst is gone), 'ibtallat-il-uruq' (veins have become moist) are all past tense forms. Breaking the fast verbally is not conceivable in a way similar to contracts where an enactment is intended; rather, it is necessarily informative. Thus, if recited before breaking the fast, all these would also require a metaphorical interpretation, which is contrary to the original rule. Texts must be taken at their literal meaning unless a pressing necessity arises. And where is the necessity? (As long as there is no compulsion, texts should be interpreted literally, and here there is no such need or compulsion. T). This also shows that the translation by Hazrat Sheikh Muhaqqiq (may Allah illuminate his noble grave) is correct, and 'I am breaking fast' (present tense) is an unjustified deviation from reality. Curiously, now the need for a metaphorical interpretation remains.

Since we have previously explained that simultaneity and immediate connection are impossible here, it is necessary to interpret the present tense as future, and breaking fast as the intention to break fast.

Because we have already stated that simultaneity and connection are impossible here, the present tense will be taken in the sense of future, and 'iftar' in the sense of 'intention to break fast'. (T)

Thirdly, in the Mursal traditions of Ibn al-Sunni and Bayhaqi, the word 'Alhamdulillah' appears, supporting the delay, as praising God after eating is standard practice, just as mentioning His name is before eating.

Fourthly, it is obvious, and perhaps even the claimant of performing it beforehand would agree, that these prayers are not to be recited during the day as the time for

Iftar has not yet arrived. Now, if 'Amr' recites these prayers after sunset and then breaks his fast, while 'Zaid' breaks his fast immediately after sunset and then recites them, we must see whose action is more beloved to Allah (Exalted and Majestic). The Hadith is a fair witness that Zaid's action is more pleasing to Allah, for the Lord of Honor, Blessed and Exalted be He, says:

"Indeed, the most beloved of My servants to Me are those who are quickest to break the fast."[1] (Narrated by Imam Ahmad and...

"Of My servants, the most beloved to Me are those who are quickest to break the fast." (Narrated by...

[1] Jami' at-Tirmidhi, Chapter on Hastening Iftar, Amin Company, Kutubkhana Rashidiya, Delhi, 1/88.

इब्न मलिक (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत है, लेकिन ज़िक्र की गई सूरत में शब्द 'अफ़्तरा' (रोज़ा खोला) को 'इरादे' पर महमूल करना बिना ज़रूरत हक़ीक़त से फेरना है जिस पर कोई मजबूरी नहीं है और न ही यहाँ कोई ऐसा संदर्भ है जो इसकी ओर बुलाए। इसलिए, ऐसा नहीं किया जाना चाहिए और न ही इसे स्वीकार किया जाना चाहिए। (त)

इब्न मलिक (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत है लेकिन ज़िक्र की गई सूरत में शब्द 'इफ़्तार' को 'इफ़्तार के इरादे' पर महमूल करना बिना ज़रूरत हक़ीक़त से फेरना है और यहाँ कोई मजाज़ (लाक्षणिक प्रयोग) का संकेत भी नहीं है, इसलिए ऐसा न किया जाए और न ही इसे स्वीकार किया जाए। (त)

दूसरा यह कि इन दुआओं में 'अफ़्तरतु' (मैंने इफ़्तार किया) और 'अफ़्तरना' (हमने इफ़्तार किया), 'ज़हबज़्ज़मा' (प्यास चली गई), 'इब्तल्लतुल उरुक़' (रगें तर हो गईं) सभी माज़ी (भूतकाल) के शब्द हैं। और शब्दों के साथ इफ़्तार करना उस तरह मुमकिन नहीं है जैसे अनुबन्धों की घोषणा (इन्शा) में होता है; बल्कि यह निश्चित रूप से समाचार (अख़बार) देना है। तो इफ़्तार से पहले पढ़ने की सूरत में ये सब भी मजाज़ (लाक्षणिक प्रयोग) के मोहताज होंगे, जो असल के खिलाफ है। 'नसूस' (धार्मिक ग्रंथों) को उनके शाब्दिक अर्थों पर ही महमूल किया जाना चाहिए जब तक कि कोई ज़रूरत न हो। और यहाँ क्या ज़रूरत है? (जब तक कोई मजबूरी न हो, नसूस को ज़ाहिर पर ही महमूल करना चाहिए और यहाँ कोई ज़रूरत और मजबूरी नहीं है। त)। यहाँ से भी साफ़ हो गया कि हज़रत शैख़ मोहक़्क़िक़ (नूरुल्लाह मरक़दहुश्शरीफ़) का अनुवाद ही सही है और 'इफ़्तार करता हूँ' बिना वजह हक़ीक़त से हटना है। ताज्जुब तो यह है कि अब मजाज़ की ज़रूरत ही नहीं रही।

चूँकि हमने पहले ही बयान कर दिया है कि यहाँ साथ होना और जुड़ाव असंभव है, इसलिए वर्तमान काल को भविष्य काल के अर्थ में और इफ़्तार को इफ़्तार के इरादे के अर्थ में लेना आवश्यक है।

क्योंकि हमने पहले बयान कर दिया कि यहाँ साथ होना और जुड़ाव असंभव है, इसलिए वर्तमान काल को भविष्य काल के अर्थ में और इफ़्तार को इफ़्तार के इरादे के अर्थ में लिया जाएगा। (त)

तीसरा यह कि इब्न-उस-सुन्नी और बैहक़ी की 'मुर्सल' रिवायतों में 'अल्हम्दुलिल्लाह' शब्द है जो देरी की ताईद करता है, क्योंकि खाने के बाद 'हम्द' (तारीफ़) करना ही मशहूर तरीक़ा है, जैसे खाने से पहले 'बिस्मिल्लाह' कहना।

चौथा यह कि यह तो साफ़ है और शायद समय से पहले पढ़ने का दावा करने वाले को भी मंज़ूर हो कि ये दुआएं दिन में पढ़ लेने की नहीं हैं क्योंकि अभी इफ़्तार का वक़्त भी नहीं आया। अब अगर 'अम्र' सूरज डूबने के बाद ये दुआएं पढ़कर इफ़्तार करे और 'ज़ैद' सूरज डूबने के बाद फ़ौरन इफ़्तार करके पढ़े, तो देखना चाहिए कि इसमें किसका काम अल्लाह (अज़्ज़-ओ-जल्ल) को ज़्यादा पसंद है। हदीस गवाह है कि ज़ैद का काम अल्लाह तआला को ज़्यादा पसंद है क्योंकि रब्बुल इज़्ज़त तबारक-ओ-तआला फ़रमाता है:

"मेरे बन्दों में मुझे वे सबसे ज़्यादा प्रिय हैं जो इफ़्तार करने में जल्दी करते हैं।"[1] (इमाम अहमद ने रिवायत किया और...

"मुझे अपने बंदों में वह ज़्यादा प्यारा है जो उनमें सबसे ज़्यादा जल्दी इफ़्तार करता है।" (इसे...

[1] जामिअ तिरमिज़ी, बाब मा जाअ फ़ी ता'जीलिल इफ़्तार, अमीन कम्पनी, कुतुबखाना रशीदिया, दिल्ली, १/८८।

بن مالك رضی اللہ تعالٰی عنہ، اما ھھنا فحمل "افطر" علی الارادۃ، عدول عن الحقیقۃ من دون حاجۃ تحمل علیہ ولا صارف یدعو الیہ، فلا یفعل ولا یقبل۔

بن مالک رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے لیکن مذکورہ صورت میں لفظ افطر کو ارادہ افطار پر محمول کرنا بے ضرورت حقیقت سے اعراض ہے اور یہاں کوئی مجاز پر قرینہ بھی نہیں، لہذا ایسا نہ کیا جائے اور نہ اسے قبول کیا جائے۔ (ت)

ثانیاً ان ادعیہ میں افطرت (میں نے افطار کیا) اور افطرنا (ہم نے افطار کیا)، ذھب الظمأ (پیاس چلی گئی) ابتلت العروق (رگیں تر ہو گئیں) سب صیغے ماضی ہیں اور افطار باللفظ متصور نہیں کہ مثل عقود انشاء مقصود لاجرم اخبار متعین، تو تقدیم علی الافطار میں یہ سب بھی ارتکاب تجوز کے محتاج ہوں گے کہ خلاف اصل ہے والنصوص یجب حملھا علی ظواھر ھا مالم تمس حاجۃ واین حاجۃ (جب تک کوئی مجبوری نہ ہو نصوص کو ظاہر پر ہی محمول کرنا چاہئے اور یہاں کوئی ضرورت و مجبوری نہیں۔ت) یہاں سے بھی ظاہر ہوا کہ ترجمہ حضرت شیخ محقق نور اللہ مرقدہ الشریف ہی صحیح ہے اور "افطار کرتا ہوں" بلاوجہ حقیقت سے عدول۔ طرفہ یہ کہ اب حاجت تجوز باقی۔

لما قدمنا من امتناع المقارنۃ فلا بد من تأویل الحال بالاستقبال والافطار بالارادۃ۔

کیونکہ ہم نے پہلے بیان کردیا کہ یہاں مقارنت و اتصال ممتنع ہے لہذا حال کو بمعنی استقبال اور افطار بمعنی ارادہ افطار کیا جائے گا۔ (ت)

ثالثاً مرسل ابن السنی وبیہقی میں لفظ الحمدللہ اور مؤید تاخیر کہ حمد بعد اکل معہود ہے جس طرح قبل اکل تسمیہ۔

رابعاً یہ تو ظاہر ہے اور شاید مدعی تقدیم کو بھی مسلم ہو کہ یہ دعائیں دن میں پڑھ لینے کی نہیں کہ ہنوز وقت افطار بھی نہ آیا، اب اگر عمر و بعد غروب شمس یہ دعائیں پڑھ کر افطار کرے اور زید بعد غروب فوراً افطار کر کے پڑھے تو دیکھنا چاہئے کہ اس میں کس کا فعل اللہ عز و جل کو زیادہ محبوب ہے ، حدیث شاہد عادل ہے کہ فعل زید زیادہ پسند حضرت جلا و علا ہے کہ رب العزت تبارک و تعالٰی فرماتا ہے :

ان احب عبادی الیّ اعجلھم فطرا ۱ ، مجھے اپنے بندوں میں وہ زیادہ پیارا ہے جو ان میں سب سے زیادہ جلد افطار کرتا ہے (اسے رواہ الامام احمد و

۱ جامع ترمذی باب ما جاء فی تعجیل الافطار امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۸۸/۱

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Table 1] [Arabic Text]: At-Tirmidhi narrated and graded it as fair (Hasan), and Ibn Khuzaymah and Ibn Hibban in their Sahih collections narrated from Abu Huraira (may Allah be pleased with him) from the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) from his Lord, Exalted and Sanctified. [Urdu Translation]: Imam Ahmad and Tirmidhi classified it as 'Hasan'. Ibn Khuzaymah and Ibn Hibban quoted in their respective 'Sahih' collections from Hazrat Abu Huraira (may Allah be pleased with him); he narrated from the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), and he (the Prophet) mentioned it from Allah, Blessed and Exalted; meaning, this is a Hadith Qudsi. (T)

There is no doubt that in the mentioned situation, if Zaid's breaking of the fast (Iftar) was prompt, then this method is more beloved and pleasing to the Great Lord, may His Majesty be glorified and His bounty be universal. This is a second support for the fact that the time of Iftar and the period immediately after Iftar lead to the same conclusion: that when Iftar is done promptly after sunset, it is most preferred and excellent. And the concurrence of Iftar and supplication, its ease, and the non-existence of a time for Iftar before sunset—all these mean that the intended and understood form is immediate succession.

Fifthly, the narrators of the holy actions of the Luminous Presence, the Master of Messengers (peace and blessings of Allah be upon him), also deny this. It was his noble custom that he would command someone nearby to go to a high place and keep watching the sun. That person would observe, and the Holy Presence (peace and blessings of Allah be upon him) would be waiting for his report. As soon as he submitted that the sun had set, the Exalted Presence (peace and blessings of Allah be upon him) would partake of dates, etc.

[Table 2] [Arabic Text]: Al-Hakim narrated and authenticated it from Sahl ibn Sa'd, and at-Tabarani in 'Al-Kabir' from Abu al-Darda (may Allah be pleased with both). This is the hadith of Sahl: he said that when the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) was fasting, he would order a man to ascend a high place, and when he said, "The sun has set," he (the Prophet) would break his fast. And the wording of Abu al-Darda's hadith is: "He ordered a man to stand on a high ground, and when he said, 'The sun has truly set,' he would break his fast." [Urdu Translation]: Al-Hakim has quoted from Hazrat Sahl bin Sa'd (may Allah be pleased with him) and declared it 'Sahih' (authentic), and Tabarani has narrated in 'Al-Kabir' from Hazrat Abu

Darda (may Allah be pleased with him). The words of the Hadith from Sahl are: When Allah's Messenger (peace and blessings of Allah be upon him) was fasting, he would command someone to go to a high place to observe the moon [Note: likely a typo for sun], when he says the sun has set, he would then break his fast. The words of Abu al-Darda's hadith are: He used to command someone to stand on a high place of the earth and watch the sun; when he says the sun has set.

Footnotes: 1. Al-Mustadrak lil-Hakim, Kitab al-Sawm, Dar al-Fikr, Beirut, 1/434. 2. Majma' al-Zawa'id, with reference to Tabarani Kabir, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 3/155.

फ़तावा रज़विया खंड 10

[तालिका 1] [अरबी पाठ]: अल-तिर्मिज़ी ने इसे रिवायत किया और हसन कहा, और इब्न खुज़ैमा और इब्न हिब्बान ने अपनी सहीह में हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से, उन्होंने नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से और उन्होंने अपने रब तआला व तक़द्दस से ज़िक्र किया। [उर्दू अनुवाद]: इमाम अहमद और तिर्मिज़ी ने इसे 'हसन' कहा है। इब्न खुज़ैमा और इब्न हिब्बान ने अपनी-अपनी 'सहीह' में हज़रत अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से नक़ल किया है, उन्होंने नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से और आप ने अल्लाह तबारक व तआला से ज़िक्र किया, यानी यह हदीस-ए-कुदसी है। (त)

इसमें कोई संदेह नहीं है कि उपरोक्त स्थिति में यदि ज़ैद का इफ़्तार जल्द हुआ, तो यही तरीका बड़े रब (अल्लाह) को अधिक पसंद और उसकी रज़ा के अनुसार है, जिसकी महिमा महान है और जिसकी कृपा व्यापक है। यह इस बात का दूसरा समर्थन है कि इफ़्तार का समय और इफ़्तार के बाद का परिणाम एक ही है कि जब इफ़्तार सूर्यास्त के बाद जल्दी हो, तो वह अधिक प्रिय और उत्तम है। और इफ़्तार और दुआ का एक साथ होना, इसकी सुगमता, और सूर्यास्त से पहले इफ़्तार के समय का न होना—यह सब संकेत देते हैं कि अभीष्ट रूप तुरंत बाद वाला ही है।

पाँचवीं बात यह है कि रोशन मौजूदगी, रसूलों के सरदार (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पवित्र कार्यों को बताने वाले भी इसी का इनकार करते हैं। उनकी पवित्र आदत थी कि पास के किसी व्यक्ति को आदेश देते कि वह ऊंचाई पर जाकर सूरज को देखता रहे। वह देखता रहता और हुज़ूर-ए-अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) उसकी खबर का इंतज़ार करते। जैसे ही वह निवेदन करता कि सूरज डूब गया है, तो हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) खजूर आदि ग्रहण फरमाते।

[तालिका 2] [अरबी पाठ]: हाकिम ने इसे रिवायत किया और हज़रत सहल बिन साद से सहीह कहा और तबरानी ने 'अल-कबीर' में हज़रत अबू दरदा (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से। सहल की हदीस यह है: उन्होंने कहा कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जब रोज़े से होते, तो किसी आदमी को ऊँचे स्थान पर चढ़ने का आदेश देते, और जब वह कहता कि सूरज डूब गया है, तो आप इफ़्तार करते। और अबू दरदा की हदीस के शब्द हैं: आपने एक आदमी को ज़मीन के ऊँचे स्थान पर खड़े होने का आदेश दिया, फिर जब उसने कहा कि सूरज निश्चित रूप से डूब गया है, तो आपने इफ़्तार किया। [उर्दू अनुवाद]: हाकिम ने हज़रत सहल बिन साद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से उद्धृत कर उसे

'सहीह' कहा है और तबरानी ने 'अल-कबीर' में हज़रत अबू दरदा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है। हदीस-ए-सहल के शब्द ये हैं: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जब रोज़ादार होते, तो किसी व्यक्ति को ऊँची जगह पर जाकर चाँद [संभवतः सूरज का अर्थ] देखने का आदेश देते। जब वह कहता कि सूरज डूब गया है, तो आप इफ़्तार फरमाते। हदीस-ए-अबू दरदा के शब्द ये हैं: आप किसी व्यक्ति को ज़मीन के ऊँचे स्थान पर खड़े होकर सूरज देखने का आदेश देते, जब वह कहता सूरज डूब।

पाद-टिप्पणियाँ: 1. अल-मुस्तदरक लिल-हाकिम, किताबुस-सौम, दारुल-फ़िक्र, बेरूत, 1/434. 2. मज्मउज़-ज़वाइद, हवालह तबरानी कबीर, दारुल-किताब अल-अरबी, बेरूत, 3/155.

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

[پہلا خانہ] الترمذی وحسنہ وابنا خزیمۃ وحبان فی صحیحہ عن ابی ہریرۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ عن النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم عن ربہ تعالٰی و تقدس۔ امام احمد اور ترمذی نے حسن کہا۔ ابن خزیمہ اور ابن حبان نے اپنی اپنی صحیح میں حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے نقل کیا انہوں نے نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے اور آپ نے اللہ تبارک و تعالٰی سے ذکر کیا، یعنی یہ حدیث قدسی ہے۔ ت)

شک نہیں کہ صورتِ مذکورہ میں زید کا افطار جلد تر ہوا تو یہی طریقہ زیادہ پسند و مرضیِ رب اکبر ہو ا جَلَّ جلالہ ، و عَمَّ نوالہ، یہ دوسرا مؤید ہے اس کا کہ وقت الافطار و بعد الافطار کا مآل واحد ہے کہ جب افطار غروبِ شمس کے بعد جلد ہو تو احب وافضل ، اور مقارنت افطار و دُعا، ناتیسر اور پیش از غروب، وقتِ افطار معدوم ، تو وہ صورت بعدیت متصلہ ہی مقصود و مفہوم۔

خامساً فعل اقدس حضورِ پُر نور سید المرسلین صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم بتانے والے بھی اسی کا انکار کرتے ہیں ، عادتِ کریمہ تھی کہ قریب کسی کو حکم فرماتے کہ بلندی پر جا کر آفتاب کو دیکھتا رہے، وہ نظر کرتا ہوتا اور حضورِ اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اس کی خبر کے منتظر ہوتے ، اُدھر اُس نے عرض کی کہ سُورج ڈوبا ادھر حضور والا صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے خرما وغیرہ تناول فرمایا،

[دوسرا خانہ] الحاکم وصححہ عن سھل بن سعد و الطبرانی فی الکبیر عن ابی الدرداء رضی اللہ تعالٰی عنھما وھذا حدیث سھل قال کان رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اذا کان صائماً امر رجلا اوفی علی نشز فاذا قال غابت الشمس افطر ۱ و لفظ حدیث ابی الدرداء امر رجلا یقوم علی نشز من

الارض فاذا قال قد وجبت الشمس افطر ۲۔ حاکم نے حضرت سہل بن سعد رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے نقل کر کے صحیح کہا اور طبرانی نے الکبیر میں حضرت ابو درداء رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ حدیث سہل کے الفاظ یہ ہیں : رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم جب روزہ دار ہوتے تو کسی شخص کو بلند جگہ پر جا کر چاند دیکھنے کا حکم فرماتے ، جب وہ کہتا سورج ڈوب گیا ہے، تو پھر افطار فرماتے، حدیث ابو الدرداء کے الفاظ یہ ہیں کسی شخص کو حکم دیتے زمین کے اونچے مقام پر کھڑے ہو کر سُورج دیکھو جب وہ کہتا سورج ڈوب۔

حواشی: 1 المستدرک للحاکم کتاب الصوم دارالفکر بیروت ۴۳۴/۱ 2 مجمع الزوائد بحوالہ طبرانی کبیر دارالکتاب العربی بیروت ۱۵۵/۳

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Arabic Box Text]: In 'Kashf al-Ghumma an Jami' al-Umma' by the Gnostic Imam Sayyidi Abd al-Wahhab al-Sha'rani (may Allah sanctify his divine secret): Sayyidah Aisha (may Allah be pleased with her) said, "I saw the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) while he was fasting, waiting for the sunset with a date in his hand. As soon as it disappeared, he put it in his mouth." (1)

[Urdu Box Text]: It is mentioned in 'Kashf al-Ghumma an Jami' al-Umma' by Imam Arif Sayyidi Abdul Wahhab Sha'rani (may Allah sanctify his secret) that a statement of Sayyidah Aisha (may Allah be pleased with her) is narrated as follows: "I saw the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) in the state of fasting, he was holding a date and waiting for the sun to set; as soon as it set, he put the date in his mouth." (T)

These three Hadiths also indicate that the breaking of the fast happened so quickly that there was essentially no gap between the news of sunset and the breaking of the fast, as is evident (T). Consequently, it was clearly stated that this supplication (dua) occurred after breaking the fast. Maulana Ali al-Qari (may Allah's mercy be upon him), in 'Mirqat Sharh Mishkat', under the aforementioned Hadith of Abu Dawood, states:

[Arabic Box Text]: "The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) used to say when he broke his fast..." meaning he would supplicate. Ibn al-Malik said, "meaning he recited [it] after breaking the fast" (2) etc.

[Urdu Box Text]: When the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) broke his fast, he would say... meaning he would supplicate. Ibn al-Malik said that you would recite these words after breaking the fast, etc. (T)

From this text, it is also proven that 'Allahumma laka sumtu...' etc. is a supplication (dua). 'Dua' means to call out, and what could be a better calling out than saying 'O Allah' (Allahumma)? Furthermore, in the same 'Mirqat', it is explicitly stated that "Every remembrance (dhikr) is a supplication (dua) and every supplication is a remembrance." (3) (T). In Sahih Bukhari Sharif, a chapter is titled: 'Chapter on Supplication after Prayer' (Bab al-Dua ba'd al-Salah), and in it, this Hadith is brought:

[Arabic Box Text]: "Recite 'SubhanAllah' ten times, 'Alhamdulillah' ten times, or 'Allahu Akbar' ten times after every prayer." (4)

[Urdu Box Text]: You should say 'Subhan Allah' ten times, 'Alhamdulillah' ten times, and 'Allahu Akbar' ten times after every prayer. (T)

Similarly, in the 'Chapter on Supplication when descending into a valley' (this chapter is about what to supplicate when one enters a valley), reference is made to the Hadith of Jabir (may Allah be pleased with him):

Footnotes: 1. Kashf al-Ghumma an Jami' al-Umma, Kitab al-Sawm, Dar al-Fikr, Beirut, 1/255 2. Mirqat Sharh Mishkat, Kitab al-Sawm, Maktabah Imdadiya, Multan, 2/258 3. Mirqat Sharh Mishkat, Kitab al-Da'wat, Al-Maktabah al-Habibiyya, Quetta, 5/135 4. Sahih Bukhari, Al-Dua ba'd al-Salah, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 2/937

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (10)

[अरबी बॉक्स]: 'कश्फ अल-गुम्मा अन जमी अल-उम्मा' में इमाम अल-आरिफ सैयदी अब्दुल वहाब अल-शारानी (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र करे) के हवाले से सैयदा आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) का बयान नक़्ल है: "मैंने अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को रोज़े की हालत में देखा, आप खजूर पकड़े सूरज के डूबने का इंतज़ार कर रहे थे, जैसे ही वह ओझल हुआ आपने उसे अपने मुँह में डाल लिया।" (1)

उर्दू बॉक्स: 'कश्फ अल-गुम्मा अन जमी अल-उम्मा' में इमाम आरिफ सैयदी अब्दुल वहाब शारानी (अल्लाह उनके रूहानी राज़ को मुकद्दस करे) में सैयदा आयशा (रज़ियल्लाहु अन्हा) का बयान इस तरह वर्णित है कि "मैंने अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को रोज़े की हालत में देखा, आप खजूर पकड़े सूरज के डूबने का इंतज़ार फ़रमा रहे थे, जैसे ही वह डूबा आपने खजूर मुँह में डाल ली।" (त)

ये तीनों हदीसें भी इफ़्तार में जल्दी करने का पता देती हैं कि सूरज डूबने की खबर और इफ़्तार के बीच असल में कोई फासला नहीं था, जैसा कि स्पष्ट है (त)। लिहाज़ा यह साफ़ तौर पर कहा गया कि यह दुआ इफ़्तार के बाद हुई। मौलाना अली अल-क़ारी (रहमतुल्लाह अलैहि), 'मिर्क़ात शरह मिश्क़ात' में अबू दाऊद की उक्त हदीस के तहत फ़रमाते हैं:

[अरबी बॉक्स]: "नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) जब इफ़्तार फ़रमाते तो कहते..." यानी दुआ फ़रमाते। इब्न अल-मलिक ने कहा, "अर्थात इफ़्तार के बाद पढ़ते थे" (2) आदि।

इस इबारत से यह भी साबित हो गया कि 'अल्लाहुम्मा लका सुमतु...' आदि एक दुआ है। 'दुआ' का अर्थ पुकारना है, और 'ऐ अल्लाह' (अल्लाहुम्मा) से बेहतर पुकार और क्या होगी? बल्कि इसी 'मिर्क़ात' में स्पष्ट किया गया है कि "हर ज़िक्र दुआ है और हर दुआ ज़िक्र है।" (3) (त)। सहीह बुखारी शरीफ़ में बाब है: 'नमाज़ के बाद दुआ का बाब' और इसमें यह हदीस लाये हैं:

[अरबी बॉक्स]: "तुम हर नमाज़ के बाद दस बार सुब्हान अल्लाह, दस बार अल्हम्दुलिल्लाह या दस बार अल्लाहू अकबर कहो।" (4)

उर्दू बॉक्स: तुम हर नमाज़ के बाद दस दफ़ा सुब्हान अल्लाह और दस दफ़ा अल्हम्दुलिल्लाह और दस दफ़ा अल्लाहू अकबर कहो। (त)

इसी तरह 'जब किसी घाटी में उतरें तो दुआ करें' के बाब में (यह बाब इस बारे में है कि जब कोई घाटी में उतरे तो क्या दुआ करे) हज़रत जाबिर (रज़ियल्लाहु अन्हु) की हदीस की तरफ इशारा किया गया है:

पाद-टिप्पणी: 1. कश्फ अल-गुम्मा अन जमी अल-उम्मा, किताब अस-सौम, दार अल-फ़िक्र, बेरूत, 1/255 2. मिर्क़ात शरह मिश्क़ात, किताब अस-सौम, मकतबा इमदादिया, मुल्तान, 2/258 3. मिर्क़ात शरह मिश्क़ात, किताब अद-दावत, अल-मकतबा अल-हबीबिया, क्वेटा, 5/135 4. सहीह बुखारी, अद-दुआ बाद अस-सलाह, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 2/937

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

[عربی عبارت]: وفی کشف الغمة عن جمیع الامة۔ للامام العارف سیدی عبد الوهاب الشعرانی قدس سره الربانی کانت عائشة رضی الله تعالی عنها تقول رأیت رسول الله صلی الله تعالی علیه وسلم وهو صائم یترصد غروب الشمس بتمرة فلما توارت القاها في فیه۔ 1

[اردو ترجمہ]: گیا ہے تو آپ افطار فرماتے۔ کشف الغمہ عن جمیع الامہ للامام عارف سیدی عبدالوہاب شعرانی قدس سرہ الربانی میں سیدہ عائشہ رضی اللہ تعالٰی عنہا کا بیان یوں منقول ہے کہ میں نے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کو روزے کی حالت میں دیکھا آپ کھجور پکڑے سورج کے غروب ہونے کا انتظار فرما رہے ہیں، جیسے ہی وہ ڈوبا آپ نے کھجور منہ میں ڈال لی۔ (ت)

یہ تینوں حدیثیں بھی اُس تقدیم افطار کا پتا دیتی ہیں کہ اخبار وافطار میں اصلاً فصل نہ تھا کما لایخفی (جیسا کہ مخفی نہیں۔ ت) لاجرم تصریح فرمائی کہ یہ دُعا افطار کے بعد واقع ہوئی، مولانا قاری رحمۃ الباری مرقاۃ شرح مشکوٰۃ میں زیر حدیث مذکور ابی داؤد فرماتے ہیں:

[عربی عبارت]: ان النبی صلی الله تعالی علیه وسلم کان اذا افطر قال ای دعا وقال ابن الملك ای قرأ بعد الافطار 2 الخ۔

[اردو ترجمہ]: رسالتمآب صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم جب افطار فرماتے تو کہتے یعنی دُعا فرماتے، ابن الملک نے کہا کہ آپ افطار کے بعد یہ کلمات پڑھتے الخ (ت)

اس عبارت سے یہ بھی ثابت ہو گیا کہ اللھم لك صمت الخ دُعا ہے، دُعا کے معنی پکارنا، اور اللھم سے بہتر کون سا پکارنا ہوگا، بلکہ اسی مرقاۃ میں تصریح فرمائی کہ کل ذکر دعا وکل دعاء ذکر 3

(ہر ذکر دعا ہے اور ہر دُعا ذکر ہے۔ت) صحیح بخاری شریف میں باب وضع کیا: باب الدعاء بعد الصلاۃ (نماز کے بعد دُعا کے بارے میں باب) اور اسی میں حدیث لائے:

[عربی عبارت]: تسبحون فی دبر کل صلوۃ عشرا وتحمدون عشرا او تکبرون عشرا۔ 4

[اردو ترجمہ]: تم ہر نماز کے بعد دس دفعہ سبحان اللہ اور دس دفعہ الحمد اللہ اور دس دفعہ اللہ اکبر کہو۔ (ت)

یونہی باب الدعاء اذا ھبط وادیاً (یہ باب اس بارے میں ہے کہ جب کسی وادی میں اُترے تو دُعا کرے۔ت) میں حدیثِ جابر رضی اللہ تعالٰی عنہ کی طرف اشارہ کیا:

حواشی: 1 کشف الغمہ عن جمیع الامۃ کتاب الصوم دار الفکر بیروت ۱ / ۲۵۵ 2 مرقاۃ شرح مشکوٰۃ کتاب الصوم مکتبہ امدادیہ ملتان ۲ / ۲۵۸ 3 مرقاۃ شرح مشکوٰۃ کتاب الدعوات المکتبہ الحبیبیہ کوئٹہ ۵ / ۱۳۵ 4 صحیح بخاری الدعاء بعد الصلاۃ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲ / ۹۳۷

Volume 10 Fatawa-e-Razvia

(Arabic) وقال كنا اذا صعدنا كبرنا واذا نزلنا سبحنا۔	**(Urdu) When we ascended, we would say 'Allahu Akbar' (Allah is the Greatest), and when we descended, we would say 'Subhan Allah' (Glory be to Allah). (T)**

Similarly, in the chapter "Supplication when intending a journey or returning" (This chapter is about what to pray when one intends to travel or returns from a journey - T), the Hadith "He would say Takbeer on every high ground..." is mentioned. In fact, the Holy Prophet (may peace and blessings of Allah be upon him) himself referred to Dhikr (remembrance) as Dua (supplication) in many Hadiths. In Sahih Bukhari and Sahih Muslim, it is recorded:

(Arabic) عن ابی موسیٰ الاشعری رضی اللہ تعالیٰ عنہ قال کنا مع النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فی سفر فکنا اذا علونا کبرنا فقال النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ایہا الناس اربعوا علی انفسکم فانکم لا تدعون اصم ولا غائبا ولکن تدعون سمیعا بصیرا۔	**(Urdu) It is narrated from Hazrat Abu Musa al-Ash'ari (may Allah be pleased with him): "We were traveling with the Holy Prophet (may peace and blessings of Allah be upon him). When we reached a high place, we would say the Takbeer. The Prophet (may peace and blessings of Allah be upon him) said: 'O people, be gentle with yourselves, for you are not calling upon one who is deaf or absent. You are calling upon the One Who is All-Hearing and All-Seeing.'" (T)**

In Jami' at-Tirmidhi, it is narrated:

(Arabic) عن عبد اللہ بن عمرو بن العاص رضی اللہ تعالیٰ عنہما قال قال رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم خیر الدعاء دعاء یوم عرفۃ وخیر ماقلت انا والنبیون من قبلی لا الہ الا اللہ وحدہ لا شریک لہ، لہ الملک و لہ الحمد وھو علی کل شئ قدیر قال الترمذی حدیث حسن غریب قال منادی خیر ماقلت ای ما دعوت۔	(Urdu) It is narrated from Hazrat 'Abdullah bin 'Amr bin al-'As (may Allah be pleased with them both): "The Messenger of Allah (may peace and blessings of Allah be upon him) said: 'The best supplication is the supplication of the day of 'Arafah, and the best of what I and the Prophets before me have said is: There is no deity worthy of worship except Allah, Alone, without partner. To Him belongs the kingdom and to Him is all praise, and He is over all things Powerful.' At-Tirmidhi said this Hadith is 'Hasan Gharib'. Munawi explained 'Khayru ma qultu' as 'the best prayer I made'." (T)

1. Sahih Bukhari, Chapter: At-Tasbeeh when descending..., Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 1/420.
2. Sahih Bukhari, Chapter: Al-Dua when intending a journey, Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 2/944.
3. Sahih Bukhari, Chapter: Al-Dua when ascending a height, Qadeemi Kutub Khana, Karachi, 2/944.
4. Jami' at-Tirmidhi, Chapter: On the virtue of 'La hawla wa la quwwata...', Qanpani Kutub Khana Rasheediya, Delhi, 2/198.
5. At-Taysir Sharh Jami' as-Saghir, under the Hadith 'Khayr al-Dua', Maktaba al-Imam al-Shafi'i, Riyadh, 1/525.

जिल्द दहम फ़तावा-ए-रज़विया

(अरबी) وقال كنا اذا صعدنا كبرنا واذا نزلنا سبحنا۔	**(उर्दू) जब हम ऊपर चढ़ते तो 'अल्लाहू अकबर' कहते और जब नीचे उतरते तो 'सुभान अल्लाह' कहते। (त)**

इसी तरह 'बाब अद-दुआ इज़ा अरादा सफ़रा औ रजा' (यह अध्याय इस बारे में है कि जब कोई यात्रा का इरादा करे या यात्रा से लौटे तो क्या दुआ माँगे - त) में हदीस है कि "आप हर बुलंदी पर तकबीर कहते थे..."। वास्तव में स्वयं हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने कई हदीसों में ज़िक्र (अल्लाह का स्मरण) को दुआ कहा है। बुखारी और मुस्लिम (सहीहैन) में है:

(अरबी) عن ابی موسیٰ الاشعری رضی اللہ تعالیٰ عنہ قال کنا مع النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فی سفر فکنا اذا علونا کبرنا فقال النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ایہا الناس اربعوا علی انفسکم فانکم لا تدعون اصم ولا غائبا ولکن تدعون سمیعا بصیرا۔	**(उर्दू) हज़रत अबू मूसा अशअरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि हम हुज़ूर अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के साथ सफ़र कर रहे थे। जब हम किसी ऊँची जगह पर चढ़ते तो तकबीर कहते। हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "ऐ लोगों! अपने आप पर नरमी बरतो, क्योंकि तुम किसी बहरे या ग़ायब को नहीं पुकार रहे हो। तुम उसे पुकार रहे हो जो सब कुछ सुनने वाला और देखने वाला है।" (त)**

जामे तिर्मिज़ी में है:

(अरबी) عن عبد الله بن عمرو بن العاص رضى الله تعالىٰ عنهما قال قال رسول الله صلى الله تعالىٰ عليه وسلم خير الدعاء دعاء يوم عرفة وخير ماقلت انا والنبيون من قبلى لا اله الا الله وحده لا شريک له، له الملک و له الحمد وهو على كل شئ قدير قال الترمذى حديث حسن غريب قال منادى خير ماقلت اى ما دعوت۔

(उर्दू) हज़रत अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "सबसे बेहतरीन दुआ अराफ़ा के दिन की दुआ है, और सबसे बेहतर वह दुआ है जो मैंने और मुझसे पहले नबियों ने माँगी: अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं, वह अकेला है, उसका कोई शरीक नहीं, उसी की बादशाही है और उसी के लिए तमाम तारीफें हैं, और वह हर चीज़ पर कादिर (शक्तिशाली) है।" तिर्मिज़ी ने कहा कि यह हदीस 'हसन ग़रीब' है। मुनावी ने 'खैर मा कल्तु' का अनुवाद 'जो मैंने दुआ की' किया है। (त)

---

1. सहीह बुखारी, अध्याय: अत्तस्बीह इज़ा हबता..., कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/420.
2. सहीह बुखारी, अध्याय: अद-दुआ इज़ा अरादा सफ़रा, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 2/944.
3. सहीह बुखारी, अध्याय: अद-दुआ इज़ा अला अकबता, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 2/944.
4. जामे तिर्मिज़ी, अध्याय: ला हौला व ला कुव्वता की फ़ज़ीलत में, कंपनी कुतुब खाना रशीदिया, दिल्ली, 2/198.
5. अत-तयसीर शरह जामे सगीर, हदीस 'खैर अद-दुआ' के तहत, मकतबा अल-इमाम अल-शाफ़ई, रियाद, 1/525.

جلد دہم فتاوٰی رضویہ

قال کنا اذا صعدنا کبرنا واذا نزلنا سبحنا۔ **جب ہم اوپر چڑھتے تو اللہ اکبر اور جب نیچے اترتے تو سبحان اللہ کہتے (ت)**

یوں ہی باب الدعاء اذا ارادہ سفرا او رجع (یہ باب اس بارے میں ہے کہ جب سفر کا ارادہ کرے یا سفر سے لوٹے تو دعا کرے۔ ت) میں حدیث یکبر علی کل شرف الخ (آپ ہر بلندی پر تکبیر کہتے۔ ت) لائے بلکہ خود حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے احادیث کثیرہ میں ذکر کو دعا فرمایا، صحیحین میں ہے:

عن ابی موسٰی الاشعری رضی اللہ تعالٰی عنہ قال کنا مع النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فی سفر فکنا اذا علونا کبرنا فقال النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ایہا الناس اربعوا علی انفسکم فانکم لا تدعون اصم ولا غائبا ولکن تدعون سمیعا بصیرا۔

حضرت ابو موسٰی اشعری رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہے ہم حضور اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے ساتھ سفر کر رہے تھے جب ہم بلند جگہ پر چڑھتے تو تکبیر کہتے۔ حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: اپنے آپ پر نرمی کرو کیونکہ تم کسی بہرے اور غائب کو نہیں پکار رہے تم تو سننے اور دیکھنے والے کو پکار رہے ہو۔ (ت)

جامع ترمذی میں ہے:

عن عبد الله بن عمرو بن العاص رضی الله تعالیٰ عنہما قال قال رسول الله صلی الله تعالیٰ علیہ وسلم خیر الدعاء دعاء یوم عرفۃ وخیر ماقلت انا والنبیون من قبلی لا الہ الا الله وحدہ لا شریک لہ، لہ الملک و لہ الحمد وھو علی کل شئ قدیر قال الترمذی حدیث حسن غریب قال منادی خیر ماقلت ای ما دعوت۔

حضرت عبداللہ بن عمرو بن عاص رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا سب سے بہتر دعا یوم عرفہ کی دعا ہے، اور سب سے بہتر یہ دعا ہے جو میں نے اور مجھ سے پہلے انبیاء نے مانگی: اللہ کے سوا کوئی معبود نہیں، اس کا کوئی شریک نہیں، ملک و حمد اسی کے لئے ہے اور وہ ہر شئے پر قادر ہے، ترمذی نے کہا یہ حدیث حسن غریب ہے، منادی "خیر ما قلت" کا ترجمہ "جو میں نے دعا کی" کیا ہے۔ (ت)

---

1. صحیح بخاری باب التسبیح اذا ھبط والید یا تقدیمي کتب خانہ کراچی ۴۲۰/۱
2. صحیح بخاری باب الدعاء اذا اراد سفر ا قدیمي کتب خانہ کراچی ۹۴۴/۲
3. صحیح بخاری باب الدعاء اذا علا عقبة قدیمي کتب خانہ کراچی ۹۴۴/۲
4. جامع الترمذی باب في فضل لا حول ولا قوۃ میں کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۱۹۸/۲
5. التیسیر شرح جامع صغیر تحت حدیث خیر الدعاء مکتبہ الامام الشافعي ریاض ۵۲۵/۱

Tirmidhi, Nasa'i, Ibn Majah, Ibn Hibban, and Hakim narrated from Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with them both):

[Arabic] The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The best remembrance is 'La ilaha illallah' (there is no god but Allah) and the best supplication is 'Alhamdulillah' (all praise is for Allah)." Tirmidhi classified it as Hasan (good) and Hakim as Sahih (authentic). (T)

Furthermore, an allusion is more eloquent than an explicit statement. One who says "Allahumma laka sumtu" (O Allah! I fasted for You. T) presents the sincerity of worship for the sake of Allah, and Allah Almighty says:

[Arabic] "Indeed, Allah does not allow the reward of the doers of good to be lost." Allah Almighty does not let the reward of any virtuous person go to waste. (T)

And He says: "Fasting is for Me, and I am its reward." (T) Then, by saying "ala rizqika aftartu" (upon Your provision I have broken my fast. T), he performs the duty of thanking for the blessing. And the Lord, the Majestic and Exalted, says: "If you are grateful, I will surely increase you [in favor]." (T) If two people present themselves at the king's palace, and one pleads, "O King! Give me this," while the other says, "O King! I obey your command with all my heart and eat from what you have provided," judge for yourself: whose manner of requesting is more beautiful?

[Poetry in Arabic] Shall I mention my need, or is your modesty sufficient for me, for indeed modesty is your character? When a person praises you one day, the praise itself suffices him from your favor. A generous one whom neither morning nor evening changes from his noble character toward the creation.

(Shall I mention my need, or is Your modesty enough for me, which is Your adornment?)

---

1. Jami' al-Tirmidhi, Chapter: The Supplication of a Muslim is Accepted, Amin Company, Kutub Khana Rashidiyah, Delhi, 2/174.
2. Al-Quran 9/120.
3. Mishkat, Kitab al-Sawm, Section One, Mujtabai Delhi, p. 173.
4. Al-Quran 14/7.

तिर्मिज़ी, नसाई, इब्न माजाह, इब्न हिब्बान, और हाकिम ने जाबिर बिन अब्दुल्ला (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) से रिवायत की है:

[अरबी] अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "सबसे उत्तम ज़िक्र 'ला इलाहा इल्लल्लाह' है और सबसे उत्तम दुआ 'अल्हम्दुलिल्लाह' है।" तिर्मिज़ी ने इसे हसन कहा और हाकिम ने इसे सहीह करार दिया। (त)

इसके अतिरिक्त, संकेत स्पष्ट कथन से अधिक प्रभावशाली होता है। जो कहता है "अल्लाहुम्मा लका सुमतु" (हे अल्लाह! मैंने तेरे लिए रोज़ा रखा। त), वह अल्लाह के लिए इबादत का इखलास (निष्ठा) पेश करता है, और अल्लाह अज़्ज़वजल फरमाता है:

[अरबी] "निश्चित रूप से अल्लाह नेकी करने वालों का प्रतिफल व्यर्थ नहीं करता।" अल्लाह तआला किसी नेक इंसान का बदला ज़ाया नहीं करता। (त)

और फरमाता है: "रोज़ा मेरे लिए है और मैं ही उसका बदला हूँ।" (त) फिर "अला रिज़्क़िका अफ़्तरतु" (तेरे दिए हुए रिज़्क़ पर मैंने इफ्तार किया। त) कहकर नेमत का शुक्र अदा करता है। और रब जल्ल व अला फरमाता है: "यदि तुम कृतज्ञ रहोगे, तो मैं तुम्हें और अधिक दूँगा।" (त) यदि दो व्यक्ति बादशाह के दरबार में उपस्थित हों, एक कहे "हे बादशाह! मुझे यह दे दे," जबकि दूसरा कहे "हे बादशाह! मैं तेरे आदेश को सिर-माथे पर रखता हूँ और तेरा ही दिया हुआ खाता हूँ," तो न्याय कीजिए: किसका याचना करने का ढंग श्रेष्ठ है?

[अरबी कविता] क्या मैं अपनी ज़रूरत का ज़िक्र करूँ या तुम्हारी हया (संकोच) ही मेरे लिए काफ़ी है, क्योंकि हया ही तुम्हारा स्वभाव है? जब कोई व्यक्ति एक दिन तुम्हारी प्रशंसा करता है, तो तुम्हारी कृपा के लिए उसकी वह प्रशंसा ही उसे पर्याप्त हो जाती है। वह उदार जिसे सुबह-शाम सृष्टि के प्रति अपने नेक स्वभाव से नहीं बदलते।

(क्या मैं अपनी ज़रूरत का ज़िक्र करूँ या आपकी हया ही मेरे लिए काफ़ी है, जो आपका आभूषण है?)

1. जामी' अत-तिर्मिज़ी, अध्याय: मुसलमान की दुआ कबूल होती है, अमीन कंपनी, कुतुब खाना रशीदिया, दिल्ली, 2/174।
2. अल-कुरान 9/120।
3. मिश्कात, किताब अल-सौम, अनुभाग एक, मुजतबाई दिल्ली, पृष्ठ 173।
4. अल-कुरान 14/7।

ترمذی، نسائی، ابن ماجہ، ابن حبان، حاکم جابر بن عبداللہ رضی اللہ تعالی عنہما سے راوی:

قال رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم افضل الذکر لا الہ الا اللہ وافضل الدعاء الحمد للہ۔ حسنہ الترمذی وصححہ الحاکم۔ | رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: سب سے بہتر ذکر لا الہ الا اللہ اور افضل دعا الحمد للہ ہے۔ ترمذی نے اسے حسن کہا اور حاکم نے اسے صحیح قرار دیا۔ (ت)

معہذا کنایہ تصریح سے ابلغ ہے اللھم لکل صمت (اے اللہ! میں نے تیرے لیے روزہ رکھا۔ت) کہنے والا اخلاص عبادت لوجہ اللہ عرض کرتا ہے اور اللہ عزوجل فرماتا ہے:

اِنَّ اللّٰہَ لَا یُضِیْعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِیْنَ ۔ | اللہ تعالیٰ کسی نیکو کار کا اجر ضائع نہیں کرتا۔ (ت)

اور فرماتا ہے: الصوم لی و انا اجزی بہ (روزہ میرے لیے ہے اور میں ہی اس کی جزا ہوں۔ت) پھر علی رزقک افطرت (تیرے رزق پر میں نے افطار کیا۔ت) کہہ کر شکر نعمت بجالاتا ہے۔ اور رب جل وعلا فرماتا ہے: لَئِنْ شَکَرْتُمْ لَاَزِیْدَنَّکُمْ (اگر تم شکر کرو تو میں تمہارے لیے اضافہ کروں گا۔ت) اگر دو شخص بادشاہ کے درِ دولت پر حاضر ہوں، ایک عرض کرے اے بادشاہ! مجھے یہ دے دے۔ دوسرا عرض کرے اے بادشاہ! میں تیرا فرمان سر آنکھوں سے بجالاتا ہوں اور تیرا ہی دیا کھاتا ہوں انصاف کیجئے۔ حُسنِ طلب کس کا حصہ ہے۔

أأذکر حاجتی ام قد کفانی حیاؤک ان شیمتک الحیاء اذا اثنی علیک المرء یوما کفاہ من توضک الثناء کریماً لا یغیرہ صباح عن الخلق الکریم ولا مساء (کیا میں اپنی حاجت ذکر کروں یا آپ کا حیاء ہی میرے لیے کافی ہے، جو آپ کا زیور ہے۔)

1 جامع ترمذی باب ان دعوة المسلم مستجابة امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۲/۱۷۴ 2 القرآن ۹/۱۲۰ 3 مشکوة کتاب الصوم الفصل الاول مجتبائی دہلی ص ۱۷۳ 4 القرآن ۱۴/۷

Fatawa Razawiya, Volume 10

(When someone praised You on any day, the brilliance of Your praise was sufficient for him. Such a Generous Being that while bestowing favors upon creation morning and evening, no change occurs.) In short, the view that is acceptable and supported by reason and tradition is the second and third opinion. The terms 'Waqt al-Iftar' (time of breaking fast), 'Ind al-Iftar' (at breaking fast), 'Ba'd al-Iftar' (after breaking fast), 'Hangam-e-Iftar' (moment of breaking fast), 'Nazdik-e-Iftar' (near breaking fast), and 'Pas-e-Iftar' (following breaking fast) all convey the same essence. 'Nazdik' is the translation of 'Ind'. And whether 'Ind' is a spatial adverb (Zarf-e-Makan) as stated in 'Al-Itqan al-Sharif' (as mentioned in Itqan Sharif - Ed.), or refers to both time and space as specified in 'Al-Qamus' (as explicitly stated in Qamus - Ed.), the distinction depends on the word it precedes, as explained in 'Taj al-Arus' (as detailed in Taj al-Arus - Ed.). However, there is no doubt that when 'Ind' is applied to a temporal context, it signifies temporal proximity. No sane person would claim that 'Ind al-Subh' (at dawn) implies spatial proximity to dawn. The principle is that the word 'Ind' is coined for absolute proximity, whether physical or conceptual, as detailed in 'Musallam al-Thubut', 'Sharh al-Kafiya' of Al-Radi, and other authoritative texts (as explicitly stated in Musallam al-Thubut, Sharh Kafiya al-Radi, and other reliable books - Ed.). Proximity with spatial entities is spatial; with temporal entities, it is temporal; and from the One transcending space and time, it is proximity of status/rank, as in the divine words: "In the presence of a Sovereign Omnipotent" (Quran 54:55) (as mentioned in the honorable words of Allah Almighty: (In the presence of a King of great power - Ed.)). Thus, considering the root meaning, 'Ind' in linguistics meant 'side' or 'region', as in 'Al-Qamus' (as mentioned in Qamus - Ed.). Unification of direction necessitates proximity. Identifying it as a spatial adverb is correct because true direction is specific to spatial objects. Yet, considering it in a way that this physical and conceptual proximity encompasses everything, including temporal aspects, then calling it both a temporal and spatial adverb is also correct.

[Boxed Text:] This is what has become clear to me, and it has other usages. | یہ تمام وہ تھا جو مجھ پر آشکار ہوا اس کے دیگر استعمالات

1. Al-Itqan fi Ulum al-Qur'an, Type 40: In knowing the meanings of particles, Mustafa al-Babi, Egypt, 1/165.
2. Al-Qamus al-Muhit, under chapter 'Ain', section 'Dal', Mustafa al-Babi, Egypt, 1/330.

3. Taj al-Arus, under chapter 'Ain', section 'Dal', Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/356-434.
4. Musallam al-Thubut, Issues of particles of attachment, Matba' Ansari, Delhi, p. 68.
5. Al-Qur'an 55/52.
6. Al-Qamus al-Muhit, under chapter 'Ain', section 'Dal', Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 1/330.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

(जब किसी दिन किसी ने आपकी प्रशंसा की, तो आपकी प्रशंसा का प्रकाशित होना ही उसके लिए पर्याप्त था। ऐसा कृपालु कि सुबह-शाम सृष्टि पर कृपा करते हुए कोई परिवर्तन घटित नहीं होता।) संक्षेप में, स्वीकार्य और तर्क एवं परंपरा द्वारा समर्थित वही दूसरा और तीसरा विचार है। 'वक़्त-उल-इफ़्तार' (इफ़्तार का समय), 'इंद-अल-इफ़्तार' (इफ़्तार के समय), 'बाद-अल-इफ़्तार' (इफ़्तार के बाद), 'हंगाम-ए-इफ़्तार' (इफ़्तार के क्षण), 'नज़दीक-ए-इफ़्तार' (इफ़्तार के निकट), और 'पस-ए-इफ़्तार' (इफ़्तार के पीछे), इन सब का सार एक ही है। 'नज़दीक' का अनुवाद 'इंद' है। और 'इंद' चाहे स्थानवाचक विशेषण (ज़र्फ़ए-मकान) हो जैसा कि 'अत-इतकान अल-शरीफ़' में बताया गया है (जैसा कि इतकान शरीफ़ में है - सं.), या कालवाचक और स्थानवाचक दोनों हो जैसा कि 'अल-क़ामूस' में उल्लेख है (जैसा कि इस पर क़ामूस में स्पष्टीकरण है - सं.), इसका अंतर उस शब्द पर निर्भर करेगा जिसके साथ यह आता है, जैसा कि 'ताज अल-अरूस' में स्पष्ट किया गया है (जैसा कि इसका विवरण ताज अल-अरूस में है - सं.)। लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब 'इंद' कालवाचक शब्द पर आता है, तो यह केवल काल संबंधी निकटता का अर्थ देगा। कोई बुद्धिमान व्यक्ति यह नहीं कहेगा कि 'इंद-अस-सुब्ह' (सुबह के समय) का अर्थ सुबह के स्थान की निकटता है। मूल बात यह है कि 'इंद' शब्द निरपेक्ष निकटता के लिए बनाया गया है, चाहे वह शारीरिक (इंद्रियजन्य) हो या वैचारिक, जैसा कि 'मुसल्लम अल-थुबूत', 'शरह अल-क़ाफ़िया' (रज़ी द्वारा) और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में स्पष्ट किया गया है (जैसा कि मुसल्लम अल-थुबूत, शरह काफ़िया रज़ी और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में इस पर स्पष्टीकरण है - सं.)। स्थानवाचक वस्तुओं से निकटता स्थान संबंधी होगी; कालवाचक वस्तुओं से काल संबंधी; और जो स्थान और काल से ऊपर है, उससे निकटता प्रतिष्ठा या पद की होगी, जैसा कि अल्लाह तआला का फरमान है: "एक महान शक्ति वाले सम्राट की उपस्थिति में" (54:55) (जैसा कि अल्लाह तआला के इरशाद-ए-ग़रामी में है: (महान शक्ति वाले सम्राट की उपस्थिति में - सं.))। मूल अर्थ को देखते हुए, भाषा में 'इंद' का अर्थ पक्ष या दिशा था, जैसा कि 'अल-क़ामूस' में है (जैसा कि क़ामूस में है - सं.)। दिशा की एकता निकटता को अनिवार्य बनाती है। इसे स्थानवाचक विशेषण कहना सही है क्योंकि वास्तविक दिशा केवल स्थानवाचक वस्तुओं के लिए विशिष्ट है। और इस स्थिति को देखते हुए कि यह शारीरिक और वैचारिक निकटता सभी को शामिल करते हुए कालवाचक वस्तुओं को भी अपने घेरे में ले लेती है, तो इसे कालवाचक और स्थानवाचक दोनों कहना भी सही है।

[कोष्ठक में पाठ:] هذا ما ظهر لی وله استعمالات أخر | यह सब वह था जो मुझ पर स्पष्ट हुआ और इसके अन्य उपयोग भी हैं।

1. अल-इतकान फ़ी उलूम अल-क़ुरआन, प्रकार 40: अर्थों की पहचान, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/165.
2. अल-क़ामूस अल-मुहीत, अध्याय 'ऐन', अनुभाग 'दाल', मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 1/330.
3. ताज अल-अरूस, अध्याय 'ऐन', अनुभाग 'दाल', इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 2/356-434.
4. मुसल्लम अल-थुबूत, मसाइल अदावत अल-तलीक़, मतबा अंसारी, दिल्ली, पृ. 68.
5. अल-क़ुरआन 55/52.
6. अल-क़ामूस अल-मुहीत, अध्याय 'ऐन', अनुभाग 'दाल', इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरुत, 1/330.

جب کسی دن کسی نے آپ کی تعریف کی تو آپ کی ثنا کا روشن ہونا ہی اس کیلئے کافی تھا، ایسا کریم کہ صبح و شام مخلوق کو نوازتے ہوئے کوئی تغیر واقع نہیں ہوتا) بالجملہ قابل قبول و مؤید بالمعقول والمنقول وہی قول ثانی و ثالث ہے اور وقت الافطار و عند الافطار و بعد الافطار و ہنگام افطار و نزدیک افطار و پس افطار، سب کا حاصل ایک ہی ہے، نزدیک ترجمہ عند ہے، اور عند خواہ ظرف مکان ہو کما افادہ فی الاتقان الشریف (جیسا کہ اتقان شریف میں ہے۔ت) خواہ ظرف زمان و مکان دونوں کما نص علیہ فی القاموس (جیسا کہ اس پر قاموس میں تصریح ہے۔ ت) امتیاز بحسب مدخول علیہ ہوگا کما بینہ في تاج العروس (جیسا کہ اس کی تفصیل تاج العروس میں ہے۔ ت) مگر شک نہیں کہ زمان، زمانی پر داخل ہو کر افادہ قرب زمانی ہی کرے گا، کوئی عاقل نہ کہے گا کہ عند الصبح کا حاصل قرب مکان صبح ہے، اصل یہ کہ وضع عند قرب مطلق کے لیے ہے، حسی ہو یا معنوی، کما صرح بہ في مسلم الثبوت وشرح الکافیۃ لرضی وغیرھا من المعتبرات (جیسا کہ مسلم الثبوت، شرح کافیہ للرضی اور دیگر معتبر کتب میں اس پر تصریح کی ہے۔ت) مکانیات سے قرب مکانی ہوگا، زمانیات سے قرب زمانی، متعالی عن المکان والزمان سے قرب مکانت، کما فی قولہ تعالیٰ عِنْدَ مَلِيْكٍ مُّقْتَدِرٍ ۵۵ (جیسا کہ اللہ تعالیٰ کے ارشاد گرامی میں ہے: (عظیم قدرت والے بادشاہ کے حضور۔ ت) تو نظر باصل معنی کہ عند لغت میں بمعنی جانب و ناحیہ تھا کما فی القاموس (جیسا کہ قاموس میں ہے۔ ت) اور اتحاد جہت مستلزم قرب، اور وہ ہنگام حقیقت قرب مکانی کہ جہت حقیقیہ مختص بمکانیات ہے، اُسے ظرف مکان کہیں صحیح اور نظر بحال کہ یہ قرب حسی و معنوی سب کو شامل ہو کر زمانیات کو بھی متناول ہو گیا ظرف زمان و مکان دونوں کہیں بھی صحیح،

هذا ما ظهر لی وله استعمالات أخر | یہ تمام وہ تھا جو مجھ پر آشکار ہوا اس کے دیگر استعمالات

1 الاتقان فی علوم القرآن النوع الاربعون فی معرفۃ معانی الادوات مصطفی البابی مصر ۱/ ۱۶۵ 2 القاموس المحیط تحت فصل العین باب الدال مصطفی البابی مصر ۱/ ۳۳۰ 3 تاج العروس تحت فصل العین باب الدال احیاء التراث العربي بیروت ۲/ ۳۵۶-۴۳۴ 4 مسلم الثبوت مسائل ادوات التعلیق مطبع انصاری دہلی ص ۶۸ 5 القرآن ۵۵/۵۲ 6 القاموس المحیط تحت فصل العین باب الدال احیاء التراث العربي بیروت ۱/ ۳۳۰

Volume 10 Fatawa Ridawiyyah

[Arabic Text]: It (the word "Inda" - at/near) is stripped of the meaning of spatial containment and takes meanings like judgment and belief, such as when you say, "This is according to (at) Abu Hanifa," or meaning favor and kindness, as in Allah Almighty's words: "If you complete ten, it is of your own accord (from you)" [1] etc., as mentioned by Al-Hariri in Durrat al-Ghawwas. This is not the place for its detailed exposition.

[Urdu Translation of the above]: There are meanings other than spatial containment as well, for example, judgment and belief, as if it is said, "this is the saying of Imam Abu Hanifa," or in the sense of favor and kindness, for example, the blessed command of Allah Almighty: "So if you complete ten, it is your favor." Besides these, there are other meanings mentioned by Hariri in Durrat al-Ghawwas, but this is not the place for detail. (T)

In meanings like "secondly" and "Iftar," the intended meaning is proximity in time. Every rational person knows that "Inda al-Iftar" (at the time of Iftar) means the time of breaking the fast, not the place of breaking the fast—i.e., the location where the person was when breaking the fast, because breaking the fast is not something that occupies a place. (The place where the one breaking the fast is at the time of Iftar; otherwise, Iftar itself does not reside in a place. T). If a person broke their fast in a place today and came back after six months and read the mentioned supplication at that same place, or sat there for twelve hours and read the supplication in the morning, would the instruction "to say at the time of Iftar" (saying it at the time of Iftar. T) be fulfilled just because the location is the same? Inevitably, one must admit that "Inda" here implies unity of time, and by unity, immediate succession is meant. These are all clear and grand points, whose explanation is like wasting time, but what can be done when faced with misplaced doubts and unnecessary questions.

By the grace of Allah Almighty, these explanations answer all questions and clearly show that the requirement of the Sunnah is that there should be no gap at all between knowing the sun has set and the immediate breaking of the fast with dates or water before the prayer. These supplications should follow that. Yes, sometimes "Iftar" is used as the opposite of "Suhoor," referring to the meal a fasting person eats in the evening.

[Arabic Box]: Ibn Khuzaymah in his Sahih, and through him Al-Bayhaqi and Abu al-Shaykh ibn Hibban in al-Thawab, reported from Salman al-Farisi (may Allah be

pleased with him) directly from the Prophet (peace and blessings be upon him) regarding the virtues of the month of Ramadan: "Whoever provides Iftar for a fasting person in it, it will be a means of forgiveness for his sins and freedom of his neck from hellfire."

[Urdu Translation of the Box]: Ibn Khuzaymah in Sahih, and through the same chain, Bayhaqi and Abu al-Shaykh ibn Hibban in Al-Thawab, narrated from Hazrat Salman al-Farisi (may Allah be pleased with him) directly that the Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) stated regarding the virtues of Ramadan: "Whoever provided Iftar for someone, his sins are forgiven and his neck is freed from hell."

[1] Al-Quran 28/27 Page 649 of 836

जिल्द दशम (दसवीं) फतावा रज़विया

[अरबी पाठ]: इसमें 'इंदा' (पास/पर) शब्द स्थान के अर्थ से हटकर निर्णय और विश्वास के अर्थ में आता है, जैसे आप कहें "यह इमाम अबू हनीफा के अनुसार (उनके पास) है," या कृपा और एहसान के अर्थ में, जैसे अल्लाह तआला का फरमान है: "फिर यदि आप दस पूर्ण करें तो यह आपकी ओर से (एहसान) है" [1] आदि, जैसा कि हरीरी ने दुर्रत अल-गव्वास में उल्लेख किया है। यह इसके विस्तार का स्थान नहीं है।

[उपरोक्त का उर्दू अनुवाद]: स्थान के अर्थ के अलावा अन्य अर्थ भी हैं, उदाहरण के लिए, निर्णय और विश्वास, जैसे कि कहा जाता है, "यह इमाम अबू हनीफा का कहना है," या पक्ष और दया के अर्थ में, उदाहरण के लिए, अल्लाह सर्वशक्तिमान का धन्य आदेश: "तो यदि आप दस पूरे करते हैं, तो यह आपका एहसान है।" इनके अलावा, हरीरी द्वारा दुर्रत अल-गव्वास में वर्णित अन्य अर्थ भी हैं, लेकिन यह विवरण के लिए स्थान नहीं है। (त)

'दूसरे' और 'इफ्तार' जैसे अर्थों में, अभिप्रेत अर्थ समय की निकटता है। हर बुद्धिमान व्यक्ति जानता है कि 'इंदा अल-इफ्तार' (इफ्तार के समय) का अर्थ इफ्तार का समय है, न कि इफ्तार का स्थान—यानी वह स्थान जहाँ व्यक्ति इफ्तार करते समय था, क्योंकि इफ्तार कोई ऐसी चीज़ नहीं है जो स्थान में समा जाए। (इफ्तार के समय जहाँ इफ्तार करने वाला हो; अन्यथा इफ्तार स्वयं स्थान में नहीं समाता। त)। यदि किसी व्यक्ति ने आज एक स्थान पर रोज़ा इफ्तार किया और छह महीने बाद आकर उसी स्थान पर उक्त दुआ पढ़ी, या बारह घंटों तक वहीं बैठा रहा और सुबह दुआ पढ़ी, तो क्या "इफ्तार के समय कहने" (इफ्तार के समय कहना। त) का हुक्म पूरा हो गया क्योंकि स्थान वही है? अनिवार्य रूप से, यह मानना होगा कि यहाँ 'इंदा' से समय की एकता ही अभिप्रेत है, और एकता से तत्काल बाद का समय मुराद है। ये सभी स्पष्ट और महत्वपूर्ण बातें हैं, जिनका स्पष्टीकरण समय की बर्बादी जैसा है, लेकिन क्या किया जाए जब गलत वहम और अनावश्यक प्रश्न सामने आते हैं।

अल्लाह तआला के अनुग्रह से, इन स्पष्टीकरणों से सभी प्रश्नों के उत्तर मिल गए हैं और यह स्पष्ट रूप से प्रकट हो गया है कि सुन्नत का तकाज़ा यही है कि सूर्यास्त की जानकारी और नमाज़ से पहले खजूर या पानी के साथ जल्दी इफ्तार करने के बीच कोई अंतर नहीं होना चाहिए। ये दुआएं उसके बाद होनी चाहिए। हाँ, कभी-कभी 'इफ्तार' का उपयोग 'सहूर' के विपरीत उस भोजन के लिए किया जाता है जो रोज़ेदार शाम को खाता है।

[अरबी बॉक्स]: इब्न खुज़ैमा ने अपनी सहीह में, और उनके माध्यम से बैहक़ी और अबू अल-शेख इब्न हिब्बान ने 'अल-थवाब' में हज़रत सलमान फारसी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मरफूअन (सीधे नबी से) रिवायत की है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने रमजान की फज़ीलत के बारे में फरमाया: "जिसने इसमें किसी रोज़ेदार को इफ्तार कराया, वह उसके गुनाहों की माफी और उसकी गर्दन को जहन्नुम से आज़ाद कराने का ज़रिया होगा।"

[बॉक्स का उर्दू अनुवाद]: इब्न खुज़ैमा ने सहीह में, और इसी तरीके से बैहक़ी और अबू अल-शेख इब्न हिब्बान ने अल-थवाब में हज़रत सलमान फ़ारसी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से मरफूअन बयान किया कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने रमज़ान के गुणों के बारे में फ़रमाया: "जिसने किसी को इफ़्तार कराया, उसके पाप माफ़ कर दिए जाते हैं और उसकी गर्दन नरक से मुक्त कर दी जाती है।"

[1] अल-कुरान 28/27 पृष्ठ 649 / 836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

منسلخ فیھا عن معنی الظرفیۃ کالحکم والاعتقاد کقولك ھذا عند ابی حنیفۃ والفضل والاحسان کقولہ تعالیٰ فَاِنْ اَتْمَمْتَ عَشْرًا فَمِنْ عِنْدِكَ 1 وغیرہ ذلك کما ذکرہ الحریري فی درۃ الغواص لیس ھذا مقام تفصیلھا۔ بھی ہیں جو معنی ظرفیت کے علاوہ ہیں، مثلاً حکم اور اعتقاد جیسا کہا جائے یہ امام ابو حنیفہ کا قول ہے یا بمعنی فضل و احسان کے "مثلاً۔" اللہ تعالیٰ کا مبارک فرمان ہے پس اگر آپ دس مکمل کریں تو تمہارا احسان ہے، ان کے علاوہ دیگر معانی بھی ہیں جنہیں حریری نے درۃ الغواص میں ذکر کیا ہے لیکن یہ مقام تفصیل نہیں (ت)

معانی از قبیل ثانیا اور افطار منجملہ معانی تو اس مراد وہی قرب زمانی، ہر ذی عقل جانتا ہے کہ عند الافطار کے معنی حین الافطار ہیں نہ کہ فی مکان الافطار، ای مکان کان فیہ المفطر حین افطر والا فالافطار لیس مما یحل فی المکان (افطار کے وقت جہاں افطار کرنے والا ہو، ورنہ افطار خود مکان میں حلول نہیں کرتا۔ ت) کیا آج اگر کسی شخص نے ایک جگہ روزہ افطار کیا اور چھ مہینے بعد آکر اس جگہ پر دُعاءِ مذکور پڑھ لے یا چار پہر تک وہیں بیٹھا رہا صبح کو دُعا پڑھے تو یقول عند الافطار (افطار کے وقت کہے ۔ ت) کا حکم ادا ہوگیا کہ آخر مکان تو وہی ہے، لاجرم ماننا پڑے گا کہ یہاں عند سے اتحادِ زمان ہی مفاد اور اتحاد سے وہی تعقیب متصل مراد، یہ سب واضحات جلیلہ ہیں جن کی اِضاحت گویا وقت کی اِضاعت، مگر کیا کیجئے کہ بعد وہم واہم ورود سوال حاجت از احت۔

ان تقریرات سے بحمد اللہ تعالی تمام سوالوں کا جواب ہو گیا اور روشن طور پر منجلی ہوا کہ مقتضائے سنّت یہی ہے کہ بعدِ غروب جو خُرے یا پانی وغیرہ از قبل نماز افطار معجل کرتے ہیں

اُس میں اور علم بغروب شمس میں اصلاً فصل نہ چاہئے یہ دعائیں اس کے بعد ہوں، ہاں کبھی افطار مقابل سحور اس کھانے کو کہتے ہیں جو صائم شام کو کھاتا ہے۔

ابن خزیمة فی صحیحه و من طریق البیهقی و ابو الشیخ بن حبان فی الثواب عن سلمان الفارسی رضی الله تعالی عنه یرفعه الی النبی صلی الله علیه وسلم فی فضائل شهر رمضان، قال من فطر فیه صائما کان مغفرة لذنوبه وعتق رقبته ابن خزیمہ نے صحیح میں، اور اسی طریق سے بیہقی نے اور ابو الشیخ بن حبان نے الثواب میں حضرت سلمان فارسی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مرفوعاً بیان کیا کہ رسول اللہ صلی اللہ علیہ وسلم نے بیان فرمایا جس نے کسی کا روزہ افطار کروایا اس کے گناہ معاف اور اس کی گردن جہنم سے آزاد

Fatawa Razawiyya Volume 10

...from the Hellfire. And for him shall be a reward like his (the fasting person's) reward, without the reward of the fasting person being diminished in the slightest. They (the companions) said: O Messenger of Allah! Not all of us find that which provides iftar for a fasting person. [Hadith 1] And in the narration of Abu al-Shaykh: I said: O Messenger of Allah! What do you see if that is not with him? He said: "Then a handful of food." I said: What do you see if he doesn't have that, even a morsel of bread? He said: "Then a sip of milk." I said: What do you see if he doesn't have that? He said: "Then a drink of water." [Hadith 2] And in the hadith of Abu Dawud and others with an authentic chain from Anas (may Allah be pleased with him): The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) came to Sa'd ibn 'Abadah, who brought bread and olive oil. He ate, and then the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The fasting people have broken their fast with you, the righteous have eaten your food, and the angels have sent blessings upon you." [Hadith 3] In another version: Once we had iftar with the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him). Olives were presented to his holy service. He and all of us ate. When we finished, he said: "The righteous have eaten your food, the angels have sent blessings upon you, and your..."

1. Sahih Ibn Khuzaymah, Chapter on the Virtues of the Month of Ramadan, Al-Maktab al-Islami, Beirut, 3/192.
2. Kanz al-Ummal with reference to Hubb Hadith 23658, Muassasat al-Risala, Beirut, 8/470, Al-Targhib wa al-Tarhib with reference to Ibn Hibban in the Book of Reward, Al-Targhib fi It'am al-Ta'am, Mustafa al-Babi, Egypt, 3/144.
3. Sunan Abi Dawud, Book of Foods, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 2/182.

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

...जहन्नम से। और उसे रोज़ेदार के बराबर सवाब मिलेगा और रोज़ेदार के सवाब में भी कोई कमी नहीं होगी। सहाबा ने अर्ज़ किया: ऐ अल्लाह के रसूल! हममें से हर कोई इतना नहीं पाता जिससे रोज़ेदार को इफ़्तार करा सके। [हदीस 1] और अबू अल-शेख़ की रिवायत में है: मैंने अर्ज़ किया: ऐ अल्लाह के रसूल! आप क्या कहते हैं अगर किसी के पास इतना (समान) न हो? फ़रमाया: "तो एक मुट्ठी अनाज ही सही।" मैंने अर्ज़ किया: अगर उसके पास रोटी का टुकड़ा भी न हो? फ़रमाया: "दूध का एक घूँट।" मैंने अर्ज़ किया: अगर यह भी न हो? फ़रमाया: "पानी का एक घूँट पेश कर दे।" [हदीस 2] और अबू दाऊद वगैरह में सही सनद के साथ हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मरवी है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) साद बिन उबादा के पास आए, उन्होंने रोटी और ज़ैतून पेश किया, आपने उसे खाया और फिर फ़रमाया: "तुम्हारे यहाँ रोज़ेदारों ने इफ़्तार किया, तुम्हारा खाना नेक लोगों ने खाया और तुम पर फ़रिश्तों ने रहमत की दुआ की।" [हदीस 3] दूसरी रिवायत के लफ़्ज़ हैं: एक बार हमने रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के साथ इफ़्तारी की। आपकी ख़िदमत-ए-अक़दस में ज़ैतून पेश किया गया, आपने और हम सबने उसे खाया। जब फ़ारिग हुए तो फ़रमाया: "तुम्हारा खाना नेक लोगों ने खाया, तुम्हारे लिए फ़रिश्तों ने दुआ की और तुम्हारे..."

1. सही इब्न खुज़ैमा, बाब फ़ज़ाइल शहर-ए-रमज़ान, अल-मक्तब अल-इस्लामी, बेरूत, 3/192.
2. कंज़ अल-उम्माल हवाल-ए-हुब्ब हदीस 23658, मुअस्ससत अर-रिसाला, बेरूत, 8/470, अल-तरग़ीब व अल-तरहीब हवाल-ए-इब्न हिब्बान फ़ी किताबुल सवाब, अल-तरग़ीब फ़ी इतआम अत-तआम, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, 3/144.
3. सुनन अबी दाऊद, किताबुल अतइमा, आफ़ताब-ए-आलम प्रेस, लाहौर, 2/182.

पेज 650 / 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

من النار۔ وکان لہ مثل اجرہ من غیران ینقص من اجرہ شئ۔ قالوا یا رسول اللہ لیس کلنا یجد ما یفطر الصائم ۱ الحدیث وفي روایة ابي الشیخ فقلت یا رسول اللہ افرأیت ان لم یکن ذلك عندہ؟ قال فقبضہ من طعام ، قلت افرأیت ان لم یکن عندہ ، لقمة خبز قال فمذقة من لبن قال افرأیت ان لم یکن عندہ قال فشربة من ماء ۲ وفي حدیث ابی داؤد و غیرہ بسند صحیح عن انس رضی اللہ تعالی ان النبي صلی اللہ تعالی علیہ وسلم جاء الی سعد بن عبادة فجاء بخبز و زیت فاکل ثم قال النبي صلی اللہ علیہ وسلم افطر عندکم الصائمون واکل طعامکم الابرار وصلت علیکم الملئکة ۳ وفی لفظ افطرنا مرة مع رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فقر بوا الیہ زیتا فاکل و اکلنا حتی فرغ قال اکل طعامکم الابرار وصلت علیکم الملئکة وافطر عندکم الصائمون۔

ہو جائے گی، اور اس کے لیے روزہ دار کے برابر اجر ہوگا اور روزہ دار کے اجر میں بھی کمی نہ ہو گی۔ صحابہ نے عرض کیا یا رسول اللہ! ہم میں سے کچھ ایسے بھی ہیں جو روزہ دار کو سیر ہو کر کھانا کھلانے کی طاقت نہیں رکھتے الحدیث۔ اور ابوالشیخ کی روایت میں ہے میں نے عرض کیا یا رسول اللہ! اس کے بارے میں کیا حکم ہے جس کے پاس اتنا نہ ہو؟ فرمایا تو ایک مٹھی طعام سہی۔ میں نے عرض کیا اگر اس کے پاس روٹی کا ٹکڑا نہ ہو؟ فرمایا دودھ کا گھونٹ۔ عرض کیا اگر یہ بھی نہ ہو؟ فرمایا پانی کا گھونٹ پیش کر دے۔ اور ابو داؤد وغیرہ میں سند صحیح کے ساتھ حضرت انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مروی ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سعد بن عبادہ کے پاس آئے، انہوں نے روٹی اور زیتون پیش کیا، آپ نے تناول کیا اور فرمایا تمہارے پاس روزہ داروں نے افطار کیا، تمہارا کھانا ابرار نے کھایا اور تم پر ملائکہ نے رحمت کی دعا کی۔ دوسری روایت کے الفاظ ہیں: ایک دفعہ ہم نے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے ساتھ

افطاری کی۔ آپ کی خدمت اقدس میں زیتون پیش کیا گیا آپ نے اور ہم سب نے تناول کیا جب فارغ ہوئے فرمایا: تمہارے کھانے کو نیک لوگوں نے کھایا تمہارے لیے ملائکہ نے دعا کی اور تمہارے

1 صحیح ابن خزیمہ باب فضائل شہر رمضان المکتب الاسلامی بیروت ۱۹۲/۳ 2 کنز العمال بحوالہ حب حدیث ۲۳۶۵۸ موسسۃ الرسالۃ بیروت ۴۷۰/۸ ، الترغیب والترہیب بحوالہ ابن حبان فی کتاب الثواب الترغیب فی اطعام الطعام مصطفی البابی مصر ۱۴۴/۳ 3 سنن ابی داؤد کتاب الاطعمۃ آفتاب عالم پریس لاہور ۱۸۲/۲

Fatawa Rizvia Volume 10

Those observing the fast have broken their fast. (T) Before this evening meal, a supplication has been narrated in which these words are also found:

| Al-Daraqutni in Al-Afrad from Anas (may Allah be pleased with him): He said, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "When food is brought near to one of you while he is fasting, let him say: In the name of Allah, and all praise is for Allah. O Allah, for You I have fasted and with Your provision I have broken my fast, and in You I have placed my trust. Glory be to You and praise be to You. Accept it from me; indeed, You are the All-Hearing, the All-Knowing." | Imam al-Daraqutni narrated in 'al-Afrad' from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "When food is brought to you and you are in a state of fasting, say these words: Beginning with the name of Allah, all praise is for Allah. O Allah! I fasted for You and broke my fast with Your provision, and I placed my trust in You. Your being is holy and praise is Yours, accept it from me, indeed You are the Hearer and Knower." (T) |

Hadith of Tabarani:

| Narrated from Anas (may Allah be pleased with him): He said, the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) would say when he broke his fast: "In the name of Allah, O Allah, for You I have fasted and with Your provision I have broken my fast." | It is narrated from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him) that when the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) broke his fast, he would say: "With the name of Allah, O Allah! I fasted for You and broke my fast with Your provision." (T) |

I say that the apparent naming indicates precedence; if by 'Iftar' this evening meal is meant in the aforementioned sense, then the matter is clear; otherwise, due to the intensity of its weakness, it is not worthy of being used as evidence. In its chain of narration, Dawud bin Al-Zabarqan is discarded (matruk).

| It is stated in Taqrib al-Tahdhib: [He is] discarded (matruk), al-Azdi called him a liar. End. I say... | In Taqrib al-Tahdhib it is said that he is discarded (matruk) and al-Azdi has called him a liar. End. I say... |

---

1. Kanz al-Ummal, with reference to Qutni in al-Afrad, Hadith 27348, Maktaba al-Turath al-Islami, Aleppo, 8/509.

2. Majma al-Zawaid, with reference to Tabarani al-Awsat, Chapter: What to say when breaking the fast, Dar al-Kitab, Beirut, 8/156.
3. Taqrib al-Tahdhib, under the letter 'Dal', Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 1/279.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

रोज़ा रखने वालों ने इफ़्तार किया। (त) इसी शाम के खाने से पहले एक दुआ वारिद हुई है उसमें भी ये अल्फ़ाज़ मौजूद हैं:

| अल-दारे-क़ुत्नी फ़ी अल-अफ़राद अन अनस रज़ियल्लाहु अन्हु: क़ाल क़ाल रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम इज़ा क़ुर्रिबा इला अहदिकुम तआमुहू व हुवा साइमुन फलयक़ुल: बिस्मिल्लाहि वल हमदु लिल्लाहि अल्लाहुम्मा लका सुमतु व अला रिज़क़िका अफ़तरतु व अलैका तवक्कलतु सुब्हानका व बिहमदिका तक़ब्बल मिन्नी इन्नका अन्तस-समीउल अलीम। | इमाम दारे-क़ुत्नी ने अफ़राद में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से नक़ल किया कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: "जब तुम्हारे पास खाना लाया जाए और तुम रोज़ा की हालत में हो तो ये कलमात कहो: अल्लाह के नाम के साथ शुरू, तमाम तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं, ऐ अल्लाह! मैंने तेरे लिए रोज़ा रखा और तेरे रिज़्क पर इफ़्तार किया और तुझ पर तवक्कुल किया, तेरी ज़ात पाक है और तेरी ही तारीफ़ है, मुझसे क़ुबूल फ़रमा ले, बेशक तू ही सुनने और जानने वाला है।" (त) |

तबरानी की हदीस:

| अन अनस रज़ियल्लाहु अन्हु क़ाल कानन-नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम इज़ा अफ़तरा क़ाल बिस्मिल्लाहि अल्लाहुम्मा लका सुमतु व अला रिज़क़िका अफ़तरतु। | हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जब इफ़्तार फ़रमाते तो कहते: "अल्लाह के नाम के साथ, ऐ अल्लाह! मैंने तेरे लिए रोज़ा रखा और तेरे रिज़्क पर इफ़्तार किया।" (त) |

मैं कहता हूँ कि ज़ाहिर तस्मिया (नाम लेना) पहले होने का इशारा देता है; अगर इफ़्तार से यही ज़िक्र किया गया शाम का खाना मुराद है, तब तो मामला साफ़ है, वरना वो बहुत ज़्यादा कमज़ोरी की वजह से दलील बनाने के क़ाबिल नहीं, इसकी सनद में दाऊद बिन अल-ज़बरक़ान 'मतरूक' (त्यागा हुआ) है।

| क़ाल फ़ी अल-तक़रीब अल-तहज़ीब मतरूक कज़्ज़बहुल अज़दी अह क़ुलतु। | तक़रीब अल-तहज़ीब में है कि ये मतरूक है और अज़दी ने इसे झूठा कहा है। अह, मैं कहता हूँ... |

---

1. कन्ज़ अल-उम्माल, हदीस 27348, दारे-क़ुत्नी अफ़राद के हवाले से, मकतबा अल-तुराथ अल-इस्लामी, हलब, 8/509।

2. मजमा अल-ज़वाइद, तबरानी औसत के हवाले से, इफ़्तार के समय पढ़ने वाली दुआ का बाब, दार अल-किताब, बेरूत, 8/156।
3. तक़रीब अल-तहज़ीब, हर्फ'दाल' के तहत, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरूत, 1/279।

पृष्ठ 651/836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

پاس روزہ داروں نے افطار کیا۔ (ت) اسی طعامِ شام سے پہلے ایک دُعا وارد ہوئی ہے اُس میں بھی یہ الفاظ موجود ہیں:

| الدار قطنی فی الافراد عن انس رضی اللہ تعالٰی عنہ قال قال رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اذا قرب الی احدکم طعامہ وھو صائم فلیقل، بسم اللہ و الحمد للہ اللھم لک صمت وعلی رزقک افطرت وعلیک توکلت سبحنک وبحمدک تقبل منی انك انت السمیع العلیم 1- | امام دار قطنی نے افراد میں حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے نقل کیا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: "جب تمہارے پاس کھانا لایا جائے اور تم حالتِ روزہ میں ہو تو یہ کلمات کہو اللہ کے نام کے ساتھ شروع، تمام حمد اللہ کے لیے ہے، اے اللہ! میں نے تیرے لیے روزہ رکھا اور تیرے رزق پر افطار کیا اور تجھ پر توکّل کیا، تیری ذاتِ مقدس ہے اور حمد تیری ہے، مجھ سے قبول فرمالے، بیشک تُو سُننے اور جاننے والا ہے"۔ (ت) |

حدیثِ طبرانی:

| عن انس رضی اللہ تعالٰی عنہ قال کان النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اذا افطر قال بسم اللہ اللھم لک صمت وعلی رزقک افطرت 2- | حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم جب افطار فرماتے تو کہتے: "اللہ کے نام کے ساتھ، اے اللہ! میں نے تیرے لیے روزہ رکھا اور تیرے رزق پر افطار کیا" (ت) |

میں کہ ظاہر تسمیہ مشعرِ تقدیم ہے، اگر افطار سے یہی طعامِ شام بمعنی مذکور مراد، جب تو امر واضح ہے، ورنہ وہ بسببِ شدّت ضعف قابلِ احتجاج نہیں، اس کی سند میں داؤد بن الزبرقان متروک ہے۔

| قال فی التقریب التھذیب متروك کذبه الازدی اھ قلت 3 | التقریب التہذیب میں ہے کہ یہ متروک ہے اور ازدی نے اسے کاذب کہا ہے اھ میں کہتا ہوں |

---

1 کنز العمال بحوالہ قطنی فی الافراد حدیث ۲۷۳۴۸ مکتبہ التراث الاسلامی حلب ۵۰۹/۸ 2 مجمع الزوائد بحوالہ طبرانی اوسط باب مایقول اذا افطر دار الکتاب بیروت ۱۵۶/۸ 3 تقریب التہذیب تحت حرف الدال دار الکتب العلمیہ بیروت ۲۷۹/۱

Fatawa Razawiyya

Volume 10

And similarly Al-Juzajani as in Al-Mizan — | Juzajani has also said, as it is in Al-Mizan. (T)

This is the final word on this issue. I hope that this research and detail will not be found outside of this writing. All praise be to Allah, and by Him is success. We ask Him for guidance on the path. And Allah, the Glorified and Exalted, knows best.

Page 652 of 836

फ़तावा रज़विया

दसवाँ खंड

और इसी प्रकार अल-जौज़जानी ने कहा, जैसा कि अल-मीज़ान में है — | जौज़जानी ने भी कहा है, जैसा कि मीज़ान में है। (त)

यह इस मसले में आख़िरी कलाम (बात) है, उम्मीद करता हूँ कि यह शोध और विस्तार इस लेखन के अलावा कहीं और नहीं मिलेगा। तमाम प्रशंसा अल्लाह के लिए है और उसी से सफलता है, हम उसी से सीधे रास्ते की हिदायत माँगते हैं, और अल्लाह सुब्हानहु व तआला सबसे बेहतर जानता है।

पृष्ठ 652 / 836

فتاوی رضویہ

جلد دہم

وکذا الجوزجانی کما فی المیزان- | جوزجانی نے بھی کہا ہے، جیسا کہ میزان میں ہے۔ (ت)

یہ اس مسئلہ میں آخر کلام ہے، امید کرتا ہوں کہ یہ تحقیق و تفصیل اس تحریر کے غیر میں نہ ملے گی، وللہ الحمد وبہ التوفیق ایاہ نسأل ھدایۃ الطریق، واللہ سبحانہ وتعالٰی اعلم۔

صفحہ 652 از 836

Volume 10 | Fatawa-e-Razawiyya

Supererogatory Fasting (Nafl Fasting)

Issue 273: From Banaras, Mohalla Manpur near Kol Chunzah, High Stairs, sent by Abdul Sattar. 15th Shawwal 1317 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: should a fast be observed on the 27th date of the month of Rajab or not? Explain and be rewarded.

The Answer: Bayhaqi in "Shu'ab al-Iman" and Daylami in "Musnad al-Firdaws" narrated from Salman al-Farisi (may Allah be pleased with him) in a Marfu' tradition (attributed to the Prophet):

Arabic Text	**English Translation**
In Rajab there is a day and a night; whoever fasts that day and stands (in prayer) during that night, it is as if they fasted for a hundred years and stood (in prayer) for a hundred years. It is when three (days) remain of Rajab, and on it, Allah Almighty sent Muhammad (peace and blessings of Allah be upon him). - 1	In Rajab there is one day and night, whoever fasts on this day and spends that night in supererogatory prayers, it will be equal to fasting for a hundred years and night vigil for a hundred years, and that is the 27th of Rajab. On this date, Allah the Almighty sent Muhammad (peace and blessings of Allah be upon him) [as a Messenger].

Al-Bayhaqi said it is Munkar (denied/unreliable).[2] (Imam Bayhaqi has called this narration Munkar.) Also, in the same [source], via the route of Aban...

---

1. Al-Firdaws bi-Ma'thur al-Khitab, Hadith 2381, Dar al-Kutub al-Ilmiyah Beirut 3/142, Shu'ab al-Iman, Hadith 3811, Dar al-Kutub al-Ilmiyah Beirut 3/474
2. Kanz al-Ummal with reference to [Shu'ab al-Iman] 'Hab', Hadith 35129, Maktabat al-Turath al-Islami Beirut 12/312

नफ़्ल रोज़ा

मसाला २७३: बनारस, मोहल्ला मानपुर, कोल चोंज़ा के पास, ऊँची सीढ़ी, मुर्सला (भेजने वाला) अब्दुल सत्तार। १५ शव्वाल १३१७ हिजरी। दीन के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं कि २७ रजब का रोज़ा रखना चाहिए या नहीं? बयान करें, सवाब पायें।

जवाब: बैहक़ी ने "शुअबुल ईमान" में और दैलमी ने "मुस्नद अल-फ़िरदौस" में हज़रत सलमान फ़ारसी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मरफ़ूअ रिवायत की है:

अरबी इबारत	**हिन्दी अनुवाद**
रजब में एक दिन और रात है; जो उस दिन रोज़ा रखे और उस रात (नमाज़ में) खड़ा रहे, वह ऐसा है जैसे उसने सौ साल रोज़े रखे और सौ साल (इबादत में) खड़ा रहा। यह तब है जब रजब के तीन दिन बाक़ी हों, और उसी में अल्लाह तआला ने मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को भेजा। - १	रजब में एक दिन और रात है, जो इस दिन रोज़ा रखे और वह रात नफ़्ल नमाज़ों में गुज़ारे, वह सौ साल के रोज़ों और सौ साल की रात की इबादत के बराबर होगा, और वह २७ रजब है। इसी तारीख़ को अल्लाह अज़्ज़वजल ने मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) को मबऊस फ़रमाया।

बैहक़ी ने कहा कि यह मुनकर है।[2] (इमाम बैहक़ी ने इस रिवायत को मुनकर कहा है।) साथ ही इसी में अबान के ज़रिए...

---

1. अल-फ़िरदौस बि-मासूर अल-ख़िताब, हदीस २३८१, दारुल कुतुब अल-इल्मिया बेरुत १४२/३, शुअबुल ईमान हदीस ३८११, दारुल कुतुब अल-इल्मिया बेरुत ३/४७४
2. कंज़ुल उम्माल हन्नवाला 'हब' हदीस ३५१२९, मकतबतुल तुरास अल-इस्लामी बेरुत ३१२/१२

صوم نفل

مسئلہ ۲۷۳: از بنارس محلہ مانپور متصل کول چونزہ اونچی سیڑھی مرسلہ عبدالستار ۱۵ شوال ۱۳۱۷ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ۲۷ تاریخ ماہِ رجب کی، روزہ رکھنا چاہئے یا نہیں؟ بینوا توجروا

الجواب: بیہقی شعب الایمان اور دیلمی نے مسند الفردوس میں سلمان فارسی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مرفوعاً روایت کی:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
فی رجب یوم ولیلۃ من صام ذلك الیوم وقام تلك اللیلۃ کان کمن صام من الدھر مائۃ سنۃ وقام مائۃ سنۃ وھو لثلث بقین من رجب وفیہ بعث اللہ تعالی محمد اصلی اللہ تعالی علیہ وسلّم - ۱	رجب میں ایک دن اور رات ہے جو اس دن کا روزہ رکھے اور وہ رات نوافل میں گزارے سو برس کے روزوں اور سو برس کے شب بیداری کے برابر ہو ، اور وہ ۲۷ رجب ہے اسی تاریخ اللہ عزوجل نے محمد صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کو مبعوث فرمایا۔

قال البیھقی منکر ۲ (امام بیہقی نے اس روایت کو منکر کہا ہے۔ ت) نیز اسی میں بطریق ابان

---

۱ الفردوس بماثور الخطاب حدیث ۲۳۸۱ دار الکتب العلمیہ بیروت ۱۴۲/۳، شعب الایمان حدیث ۳۸۱۱ دار الکتب العلمیہ بیروت ۳/ ۴۷۴ ۲ کنزالعمال بحوالہ حب حدیث ۳۵۱۲۹ مکتبۃ التراث الاسلامی بیروت ۳۱۲/۱۲

Fatawa Razawiyya - Volume 10

Reported marfu' from Hazrat Anas bin 'Iyad (may Allah be pleased with him): In Rajab, there is a night for which the reward of a hundred years of virtues is recorded for the one who performs good deeds in it, and that is with three nights remaining of Rajab [the 27th night]. So whoever prays twelve rak'ats in it, reciting Surah al-Fatihah and a Surah of the Qur'an in each rak'at, and recites Tashahhud in each [two] rak'ats and gives Salam at the end of them, then says: "SubhanAllah wal Hamdulillah wa la ilaha illallah wallahu Akbar" a hundred times, seeks forgiveness from Allah a hundred times, and sends blessings upon the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) a hundred times, and supplicates for himself for whatever he wishes from the matters of his world and the hereafter, and becomes fasting in the morning, then indeed Allah responds to all his supplications except that he supplicates for a sin. 1- Al-Bayhaqi said: This is weaker than what was before it. 2- Ibn Hajar said: There are two accused narrators in it. 3

(Urdu translation from the page): In Rajab, there is a night in which the person who does good deeds receives the reward of a hundred years of virtues. And it is the twenty-seventh night of Rajab. Whoever prays twelve rak'ats in it, reciting Surah Fatiha and a Surah in every rak'at, and recites Al-Tahiyyat after every two rak'ats, and at the end after the Salam says: "SubhanAllah wal Hamdulillah wa la ilaha illallahu wallahu Akbar" a hundred times, seeks forgiveness a hundred times, sends blessings (Durood) a hundred times, and asks for whatever he wants for his world and the hereafter, and keeps a fast in the morning, then Allah Almighty will accept all his prayers except the one that is for a sin. (Bayhaqi says this narration is weaker than the previous narration. Hafiz Ibn Hajar says its two narrators are accused of lying. - T)

Narrated from Anas (may Allah be pleased with him) in Fawaid Hunad: "Prophethood was bestowed in the twenty-seventh of Rajab. So whoever fasts on that day and supplicates at the time of his breaking the fast, it will be an atonement for ten years [of sins] for him." 4- Its chain of narration is rejected (munkar).

(Urdu translation from the page): Prophethood was bestowed upon me on the 27th of Rajab. Whoever fasts on this day and supplicates at the time of Iftar, let it be an atonement for ten years of sins. (Its chain of narration is munkar. - T)

Footnotes: 1. Shu'ab al-Iman, Hadith 3812, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 3/474. 2. Kanz al-Ummal, with reference to Shu'ab al-Iman, Hadith 35170, Muassasat al-Risalah, Beirut, 12/312. 3. Ma Thabata bis-Sunnah with Urdu translation, with

reference to Ibn Hajar mentioning the month of Rajab, Idara Na'imiyyah Razawiyyah, Lal Khooh Mochi Gate Lahore, p. 252. 4. Tanzih al-Shari'ah, with reference to Fawaid Hunad, Book of Fasting, Hadith 51, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 3/161.

फ़तावा रज़विया - जिल्द दस

हज़रत अनस बिन अयाज़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मरफूअन रिवायत है: रजब में एक रात ऐसी है जिसमें नेक अमल करने वाले के लिए सौ साल की नेकियों का सवाब लिखा जाता है, और वह रजब की सत्ताईसवीं रात है। जो इसमें बारह रकअत पढ़े, हर रकअत में सूरह फातिहा और एक सूरह पढ़े, और हर दो रकअत पर तशहुद (अत-तहियात) पढ़े और आख़िर में सलाम के बाद सौ बार 'सुब्हानअल्लाह वलहम्दुलिल्लाह व ला इलाहा इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर' कहे, सौ बार अस्तग़फ़ार करे, सौ बार नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर दरूद भेजे और फिर अपनी दुनिया व आख़िरत की जो चाहे दुआ मांगे और सुबह को रोज़ा रखे, तो अल्लाह तआला उसकी तमाम दुआएं क़बूल फ़रमाता है सिवाय उस दुआ के जो किसी गुनाह के लिए हो। १- बैहक़ी ने कहा: यह पिछली रिवायत से भी ज़्यादा ज़ईफ़ है। २- इब्ने हजर ने कहा: इसमें दो मुत्तहम (आरोपित रावी) हैं। ३

(पेज से उर्दू अनुवाद): रजब में एक रात है कि इसमें नेक अमल करने वाले को सौ बरस की नेकियों का सवाब है और वह रजब की सत्ताईसवीं शब है जो इसमें बारह रकअत पढ़े हर रकअत में सूरह फातिहा और एक सूरत, और हर दो रकअत पर अत-तहियात और आख़िर में बाद सलाम सुब्हानअल्लाह वलहम्दुलिल्लाह व ला इलाहा इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर सौ बार, अस्तग़फ़ार सौ बार, दरूद सौ बार, और अपनी दुनिया व आख़िरत से जिस चीज़ की चाहे दुआ मांगे और सुबह को रोज़ा रखे तो अल्लाह तआला उसकी सब दुआएं क़बूल फ़रमाए सिवाए उस दुआ के जो गुनाह के लिए हो। (बैहक़ी फ़रमाते हैं यह रिवायत साबिक़ा रिवायत से ज़्यादा ज़ईफ़ है। हाफ़िज़ इब्ने हजर कहते हैं इसके दो रावी मुत्तहम बिल-किज़ब (झूठ बोलने के आरोपी) हैं। - त)

फ़वाइद हुनाद में अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मरवी है: "सत्ताईस रजब को नबुव्वत अता हुई, जो इस दिन का रोज़ा रखे और इफ़्तार के वक़्त दुआ करे, उसके लिए दस साल का कफ़्फ़ारा होगा।" ४- इसकी सनद मुनकर है।

(पेज से उर्दू अनुवाद): २७ रजब को मुझे नबुव्वत अता हुई जो इस दिन का रोज़ा रखे और इफ़्तार के वक़्त दुआ करे दस बरस के गुनाहों का कफ़्फ़ारा हो (इसकी अस्नाद मुनकर है। - त)

फ़ुटनोट्स: 1. शुअबुल ईमान, हदीस ३८१२, दारुल कुतुब अल-इल्मिया, बेरुत, ३/४७४। 2. कन्ज़ुल उम्माल, बहवाला शुअबुल ईमान, हदीस ३५१७०, मुअस्ससतुर रिसाला, बेरुत, १२/३१२। 3. मा थबता बिस्सुन्नह मय उर्दू तर्जमा, बहवाला इब्ने हजर ज़िक्र माहे रजब, इदारा नईमिया रज़विया लाल खूह

मोची गेट लाहौर, पृ. २५२। 4. तन्ज़ीहुश शरीआ, बहवाला फ़वाइद हुनाद किताबुस सौम हदीस ५१, दारुल कुतुब अल-इल्मिया, बेरुत, ३/१६१।

بن عیاش حضرت انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مرفوعاً مروی: فی رجب لیلۃ یکتب للعامل فیھا حسنات مائۃ سنۃ، وذلک لثلاث بقین من رجب فمن صلی فیہ اثنتی عشرۃ رکعۃ یقرأ فی کل رکعۃ فاتحۃ الکتاب وسورۃ من القرآن، ویتشہد فی کل رکعۃ ویسلم فی آخرہن، ثم یقول، سبحن اللہ والحمدللہ ولا الہ الا اللہ واللہ اکبر مائۃ مرۃ ویستغفر اللہ مائۃ مرۃ ویصلی عن النبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم مائۃ مرۃ ویدعو لنفسہ ماشاء من امر دنیاہ واخرتہ ویصبح صائماً فان اللہ یستجیب دعاء کلہ الان یدعو فی معصیۃ 1۔ قال البیہقی ہو اضعف من الذی قبلہ، 2 قال ابن حجر فیہ متہمان۔ 3

رجب میں ایک رات ہے کہ اس میں عمل نیک کرنے والے کو سو برس کی نیکیوں کا ثواب ہے اور وہ رجب کی ستائیسویں شب ہے جو اس میں بارہ رکعت پڑھے ہر رکعت میں سورہ فاتحہ اور ایک سورت، اور ہر دور کعت پر التحیات اور آخر میں بعد سلام سبحن اللہ والحمد للہ ولا الہ الا اللہ واللہ اکبر سو بار، استغفار سو بار، درود سو بار، اور اپنی دنیا و آخرت سے جس چیز کی چاہے دعا مانگے اور صبح کو روزہ رکھے تو اللہ تعالٰی اس کی سب دعائیں قبول فرمائے سوائے اس دعا کے جو گناہ کے لیے ہو۔ (بیہقی فرماتے ہیں یہ روایت سابقہ روایت سے زیادہ ضعیف ہے۔ حافظ ابن حجر کہتے ہیں اس کے دو راوی متہم بالکذب ہیں۔ ت)

فوائد ہناد میں انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی : بعث نبیاً فی السابع والعشرین رجب فمن صام ذلک الیوم ودعا عند افطارہ کان لہ کفارۃ عشر سنین 4۔ اسنادہ منکر۔

۲۷ رجب کو مجھے نبوت عطا ہوئی جو اس دن کا روزہ رکھے اور افطار کے وقت دعا کرے دس برس کے گناہوں کا کفارہ ہو (اس کی اسناد منکر ہے۔ ت)

حواشی: 1 شعب الایمان حدیث ۳۸۱۲ دارالکتب العلمیۃ بیروت ۳/ ۴۷۴ 2 کنزالعمال بحوالہ شعب الایمان حدیث ۳۵۱۷۰ مؤسسۃ الرسالۃ بیروت ۱۲/ ۳۱۲ 3 ماثبت بالسنۃ مع اردو ترجمہ بحوالہ ابن حجر ذکر ماہ رجب ادارہ نعیمیہ رضویہ لال کھوہ موچی گیٹ لاہور ص ۲۵۲ 4 تنزیہ الشریعۃ بحوالہ فوائد ہناد کتاب الصوم حدیث ۵۱ دار الکتب العلمیۃ بیروت ۳/ ۱۶۱

In the compilation (Juz') of Abu Mu'adh al-Marwazi, via Shahr ibn Hawshab, it is narrated as a Mawquf report from Abu Hurayrah (may Allah be pleased with him):

[Arabic Box: Whoever fasts on the twenty-seventh day of Rajab, Allah records for him the reward of fasting sixty months; and it is the day on which Jibril descended upon Muhammad (may Allah's blessings and peace be upon him) with the Message.]

Whoever keeps the fast of the twenty-seventh of Rajab, Allah Almighty writes for him the reward of sixty months' fasts; and that is the day on which Jibril (peace be upon him) descended to Muhammad (may Allah Almighty send peace and blessings upon him) with the message of prophethood.

From 'Tanzih al-Shariah' in 'Ma Thabata bi al-Sunnah':

[Arabic Box: And this is the most sound of what has been narrated regarding this meaning.]

This is better than all the Hadiths that have come in this chapter. In short, there is a basis for it, and in matters of virtuous deeds, a weak (Da'if) Hadith is accepted by the consensus of the Imams, and Allah Almighty knows best.

Problem 774: 12 Shaban al-Mu'azzam 1321 AH What do the scholars of religion say regarding this issue: whether fasting on the 27th date of the blessed month of Rajab holds more virtue compared to other fasts excluding Ramadan, or not? And if it does, what is the reason? And besides this fast, which other fasts throughout the year has the Messenger of Allah (may Allah Almighty send peace and blessings upon him) instructed to keep? And if someone keeps the fast on the 27th of Rajab al-Murajjab, how much reward will they be entitled to? And also regarding other fasts? And if someone forbids others and is a denier themselves, who is that person? Are they a sinner or not? Please clarify and be rewarded.

The Answer: For fasting and other righteous deeds, the best days after the blessed month of Ramadan are the ten days of Dhu al-Hijjah. The Messenger of Allah (may Allah Almighty send peace and blessings upon him) says:

[Arabic Box: There are no days in which righteous deeds are more beloved to Allah Almighty than these ten days. They (the companions) said, "O Messenger of Allah..."]

Righteous deeds on no other days are more beloved to Allah the Almighty than these ten days. The Companions submitted, "O Messenger of Allah..."

---

1. Tanzih al-Shariah, citing Juz' Abi Mu'adh, Book of Fasting, Hadith 41, Dar al-Kutub al-Ilmiyah, Beirut, 3/161.
2. Tanzih al-Shariah, citing Juz' Abi Mu'adh, Book of Fasting, Hadith 41, Dar al-Kutub al-Ilmiyah, Beirut, 3/161; Ma Thabata bi al-Sunnah with Urdu translation, mention of the month of Rajab, Iradah Na'imiyah Razawiyya, Lal Khooh, Mochi Gate, Lahore, p. 234.

जुज़' अबी मुआज़ मरवज़ी में शहर इब्न हौशब के माध्यम से अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से मौक़ूफ़न वर्णित है:

[अरबी बॉक्स: जिसने रजब की सत्ताईसवीं तारीख को रोज़ा रखा, अल्लाह उसके लिए साठ महीनों के रोज़ों का सवाब लिखता है; और यह वह दिन है जिसमें जिब्रील मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर संदेश लेकर उतरे।]

जो रजब की सत्ताईसवीं का रोज़ा रखे तो अल्लाह तआला उसके लिए साठ महीनों के रोज़ों का सवाब लिखे, और वह वह दिन है जिसमें जिब्रील अलैहिस्सलातो वस्सलाम मुहम्मद सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के लिए पैग़म्बरी लेकर नाज़िल हुए।

'तन्ज़ीह अश्-शरीअह' से 'मा सबता बिस्सुन्नह' में है:

[अरबी बॉक्स: और इस विषय में जो कुछ वर्णित है, उनमें से यह सबसे उत्तम है।]

यह उन सब हदीसों से बेहतर है जो इस बाब (अध्याय) में आई हैं। संक्षेप में, इसके लिए आधार (असल) मौजूद है और आमाल के फ़ज़ाइल (पुण्य कर्मों की महिमा) में ज़ईफ़ (कमज़ोर) हदीस इमामों की सर्वसम्मति से स्वीकार्य है, और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला ७७४: १२ शाबानुल मुअज़्ज़म १३२१ हिजरी दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि मुबारक महीना रजब की २७ तारीख को रोज़ा रखना रमज़ान के अलावा अन्य रोज़ों की तुलना में फ़ज़ीलत रखता है या नहीं? और अगर रखता है तो क्या कारण है? और इस रोज़े के अलावा साल भर के दौरान और कौन-कौन से रोज़े ऐसे हैं जिन्हें हज़रत रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने रोज़ा रखने के लिए इरशाद फ़रमाया है? और अगर कोई व्यक्ति २७ रजबुल मुरज्जब को रोज़ा रखे तो वह कितने सवाब का हक़दार होगा? और साथ ही अन्य रोज़ों में? और अगर कोई दूसरों को मना करे और स्वयं इसका खंडन करे, तो वह कौन है? गुनहगार है या नहीं? बयान फरमाएँ, पुण्य पाएँ।

उत्तर: रोज़ा और अन्य नेक आमाल के लिए रमज़ान मुबारक के बाद सब दिनों से अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) ज़िल हिज्जा के दस दिन हैं, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

[अरबी बॉक्स: नेक अमल अल्लाह तआला को इन दस दिनों से ज़्यादा किसी और दिन के पसंद नहीं हैं। उन्होंने अर्ज़ किया, "ऐ अल्लाह के रसूल..."]

दस दिनों से ज़्यादा किसी दिन का नेक अमल अल्लाह अज़्ज़वजल को महबूब नहीं, सहाबा ने अर्ज़ की, "या रसूलुल्लाह..."

---

1. तन्ज़ीह अश्-शरीअह, जुज़' अबी मुआज़, किताबुस सौम, हदीस ४१ के हवाले से, दारुल कुतुब अल-इल्मिया, बेरुत, १६१/३।
2. तन्ज़ीह अश्-शरीअह, जुज़' अबी मुआज़, किताबुस सौम, हदीस ४१ के हवाले से, दारुल कुतुब अल-इल्मिया, बेरुत, १६१/३; 'मा सबता बिस्सुन्नह' उर्दू अनुवाद के साथ, माह-ए-रजब का ज़िक्र, इरादा नईमिया रज़विया, लाल खोह, मोची गेट, लाहौर, पृष्ठ २३४।

جزء ابی معاذ مروزی میں بطریق شہر ابن حوشب ابوہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے موقوفاً مروی :

[من صام یوم سبع وعشرین من رجب کتب اللہ لہ صیام ستین شھرا وھو الیوم الذی ھبط فیہ جبریل علی محمد صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم بالرسالۃ۔]

جو رجب کی ستائیسویں کا روزہ رکھے تو اللہ تعالیٰ اس کے لیے ساٹھ مہینوں کے روزوں کا ثواب لکھے ، اور وہ وہ دن ہے جس میں جبریل علیہ الصلوۃ والسلام محمد صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے لیے پیغمبری لے کر نازل ہوئے۔

تنزیہ الشریعۃ سے ماثبت بالسنۃ میں ہے :

[وھذا امثل ما ورد فی ہذا المعنی۔]

یہ ان سب حدیثوں سے بہتر ہے جو اس باب میں آئیں ۔ بالجملہ اس کے لیے اصل ہے اور فضائلِ اعمال میں حدیث ضعیف باجماعِ ائمہ مقبول ہے واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۷۷۴: ۱۲ شعبان المعظم ۱۳۲۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ روزہ رکھنا ماہِ مبارک رجب کی ۲۷ تاریخ کو سوار رمضان کے بہ نسبت اور روزوں کے فضیلت رکھتا ہے یا نہیں؟ اور اگر رکھتا ہے تو کیا وجہ ہے اور ماسوا اس روزے کے درمیان سال بھر کے اور کون کون روزہ ایسا ہے جس کو حضرت رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے ارشاد واسطے روزہ رکھنے کے فرمایا ہے، اور اگر کوئی شخص روزہ ۲۷ رجب المرجب کو رکھے تو کس قدر

مستحق ثواب کا ہوگا؟ اور نیز دوسرے روزوں میں؟ اور اگر کوئی منع کرے اوروں کو ، اور منکر ہو خود، تو وہ کون ہے گنہگار ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب : صوم وغیرہ اعمالِ صالحہ کے لیے بعدِ رمضان مبارک سب دنوں سے افضل عشر ذوالحجہ ہے، رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

[ما من ایام العمل الصالح فیھن احب الی اللہ تعالی من ھذہ الایام العشر قالوا یا رسول اللہ]

دس دنوں سے زیادہ کسی دن کا عمل صالح اللہ عزوجل کو محبوب نہیں، صحابہ نے عرض کی یا رسول اللہ

---

1 تنزیہ الشریعۃ، بحوالہ جزء ابی معاذ کتاب الصوم حدیث ۴۱ دار الکتب العلمیہ بیروت ۱۶۱/۳ 2 تنزیہ الشریعۃ، بحوالہ جزء ابی معاذ کتاب الصوم حدیث ۴۱ دار الکتب العلمیہ بیروت ۱۶۱/۳، ماثبت بالسنۃ مع اردو ترجمہ ذکر ماہ رجب ارادہ نعیمیہ رضویہ لال کھوہ موچی گیٹ لاہور ص ۲۳۴

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Table Column 1: Arabic Text] "Nor Jihad in the cause of Allah?" He said, "Nor Jihad in the cause of Allah, except for a man who goes out with his life and his wealth and then does not return with anything of that." - Narrated by al-Bukhari, at-Tirmidhi, Abu Dawud, Ibn Majah, and at-Tabarani in 'al-Kabir' with a good chain, and al-Bayhaqi, all of them from Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both); and at-Tabarani in it with a sound chain from Ibn Mas'ud; and al-Bazzar in his Musnad with a fair chain; and Abu Ya'la with a sound chain; and Ibn Hibban in his Sahih from Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with them all).

It is narrated from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "There are no days in which worship is more beloved to Allah than the ten days of Dhul-Hijjah. Fasting each day of them is equivalent to fasting a year, and standing every night of them is equivalent to standing the Night of Decree (Laylat al-Qadr)." - Narrated by at-Tirmidhi, Ibn Majah, and al-Bayhaqi.

[Table Column 2: Urdu Translation] "And not Jihad in the path of Allah?" He said: "And not Jihad in the path of Allah, except for he who sets out with his life and wealth and then brings nothing back of them." (Narrated by Bukhari, Tirmidhi, Abu Dawud, Ibn Majah, and Tabarani in al-Mu'jam al-Kabir with a good chain, and Bayhaqi, all from Hazrat Abdullah bin Abbas (may Allah be pleased with them); and in it Tabarani from Hazrat Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him); and Bazzar in his Musnad with a fair chain; and Abu Ya'la with a sound chain; and Ibn Hibban in his Sahih from Hazrat Jabir bin Abdullah (may Allah be pleased with them all). (T))

No worship is more pleasing to Allah Almighty than the ten days of Dhul-Hijjah; the fast of each day is equal to the fasts of a year and the standing of each night is equal to the standing of Laylat al-Qadr. (Narrated by Tirmidhi, Ibn Majah, and Bayhaqi. T)

[Bottom Section] Especially the day of Arafah, which is the best day of the year; fasting on it is equivalent to thousands of fasts according to a sound Hadith, and it is an atonement for sins of two complete years, one past and one coming.

The Six Imams except al-Bukhari from Abu Qatadah (may Allah be pleased with him) | Apart from Bukhari, the Six Imams narrated from Hazrat Abu Qatadah (may Allah be pleased with him).

[Footnotes] 1. Jami' at-Tirmidhi, Chapter on action in the ten days, Amin Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi, 1/94; Al-Sunan al-Saghir by al-Bayhaqi, Chapter on righteous deeds in the ten days, etc., Dar al-Kutub al-Ilmiyyah Beirut, 1/378. 2. Jami' at-Tirmidhi, Chapter on action in the ten days, Amin Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi, 1/94; Sunan Ibn Majah, Chapter on fasting the ten days, H.M. Saeed Company Karachi, p. 125.

फतवा रज़विया, जिल्द 10

[तालिका कॉलम 1: अरबी पाठ] "न ही अल्लाह की राह में जिहाद?" उन्होंने कहा, "न ही अल्लाह की राह में जिहाद, सिवाय उस आदमी के जो अपनी जान और माल के साथ निकला और फिर उसमें से कुछ भी लेकर वापस नहीं आया।" - बुखारी, तिर्मिज़ी, अबू दाऊद, इब्न माजाह, और तबराणी ने 'अल-कबीर' में एक अच्छी सनद के साथ, और बैहक़ी, इन सभी ने इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है; और तबराणी ने इसमें इब्न मसूद से एक सहीह सनद के साथ; और बज़ार ने अपनी मुसनद में एक हसन सनद के साथ; और अबू यअला ने एक सहीह सनद के साथ; और इब्न हिब्बान ने अपनी सहीह में जाबिर बिन अब्दुल्लाह (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से रिवायत किया है।

अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "अल्लाह को ज़िल-हिज्जा के दस दिनों की इबादत से ज़्यादा किसी और दिन की इबादत पसंद नहीं है। उनमें से हर दिन का रोज़ा एक साल के रोज़ों के बराबर है, और उनमें से हर रात का क़याम शब-ए-क़द्र के क़याम के बराबर है।" - तिर्मिज़ी, इब्न माजाह, और बैहक़ी द्वारा रिवायत।

[तालिका कॉलम 2: उर्दू अनुवाद] "और न राह-ए-खुदा में जिहाद?" फरमाया: "और न राह-ए-खुदा में जिहाद मगर वो कि अपनी जान व माल ले कर निकले फिर उन में से कुछ वापस न लाए।" (इसे बुखारी, तिर्मिज़ी, अबू दाऊद, इब्न माजाह और तबराणी ने अल-मुअजम अल-कबीर में सनद-ए-जय्यद के साथ और बैहक़ी तमाम हज़रात ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से रिवायत किया है, और इस में तबराणी ने हज़रत इब्न मसूद रज़ियल्लाहु तआला अन्हु और बज़ार ने अपनी मुसनद में सनद-ए-हसन के साथ और अबू यअला ने सनद-ए-सहीह के साथ और इब्न हिब्बान ने अपनी सहीह में हज़रत जाबिर बिन अब्दुल्लाह रज़ियल्लाहु तआला अन्हुम अजमईन से रिवायत किया है। (त))

अल्लाह अज़्ज़वजल को अशरा-ए-ज़िल-हिज्जा से ज़्यादा किसी दिन की इबादत पसंदीदा नहीं, उन के हर दिन का रोज़ा एक साल के रोज़ों और हर शब का क़याम शब-ए-क़द्र के बराबर है। (इसे तिर्मिज़ी, इब्न माजाह और बैहक़ी ने रिवायत किया है। त)

[नीचे का अनुभाग] खास तौर पर यौम-ए-अरफ़ा कि साल का सबसे अफ़ज़ल दिन है, इसका रोज़ा सहीह हदीस से हज़ारों रोज़ों के बराबर है और दो साल कामिल के गुनाहों की माफ़ी, एक साल गुज़िश्ता और एक साल आइंदा।

अइम्मा-ए-सित्ता सिवाय बुखारी के अबू क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु से | बुखारी के अलावा अइम्मा-ए-सित्ता ने हज़रत अबू क़तादा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया।

[फ़ुटनोट्स] 1. जामि' अत-तिर्मिज़ी बाब मा जाअ फिल अमल फी अय्याम अल-अश्र अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली 1/94; अल-सुनन अल-सगीर लिल-बैहक़ी बाब अल-अमल अल-सालेह फिल-अश्र अलख दार अल-कुतुब अल-इलमिया बेरूत 1/378। 2. जामि' अत-तिर्मिज़ी बाब मा जाअ फिल अमल फी अय्याम अल-अश्र अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली 1/94; सुनन इब्न माजाह बाब सियाम अल-अश्र एच.एम. सईद कंपनी कराची पृ. 125।

पृष्ठ 657 का 836

ولا الجہاد فی سبیل اللہ قال ولا الجہاد فی سبیل اللہ الا رجلا خرج بنفسہ ومالہ ثم لم یرجع من ذلک بشیئی۔ رواہ البخاری والترمذی وابوداؤد وابن ماجۃ والطبرانی فی الکبیر بسند جید والبیہقی کلھم عن ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنھما والطبرانی فیہ بسند صحیح عن ابن مسعود والبزار فی مسندہ بسند حسن وابو یعلی بسند صحیح وابن حبان فی صحیحہ عن جابر بن عبد اللہ رضی اللہ تعالٰی عنھم اجمعین۔

اور نہ راہِ خدا میں جہاد؟ فرمایا: اور نہ راہِ خدا میں جہاد مگر وہ کہ اپنی جان و مال لے کر نکلے پھر ان میں سے کچھ واپس نہ لائے (اسے بخاری، ترمذی، ابوداؤد، ابن ماجہ اور طبرانی نے المعجم الکبیر میں سند جید کے ساتھ اور بیہقی تمام حضرات نے حضرت عبد اللہ بن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا ہے، اور اس میں طبرانی نے حضرت ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ اور بزار نے اپنی مسند میں سند حسن کے ساتھ اور ابو یعلی نے سند صحیح کے ساتھ اور ابن حبان نے اپنی صحیح میں حضرت جابر بن عبد اللہ رضی اللہ تعالٰی عنہم اجمعین سے روایت کیا ہے۔ (ت)

ابو ہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: ما من ایام احب الی اللہ ان یتعبد لہ فیھا من عشر ذی الحجہ یعدل صیام کل یوم منھا بصیام سنۃ و قیام کل لیلۃ منھا بقیام لیلۃ القدر۔ رواہ الترمذی وابن ماجۃ والبیہقی۔

اللہ عزوجل کو عشرہ ذی الحجہ سے زیادہ کسی دن کی عبادت پسندیدہ نہیں، اُن کے ہر دن کا روزہ ایک سال کے روزوں اور ہر شب کا قیام شب قدر کے برابر ہے۔ (اسے ترمذی، ابن ماجہ اور بیہقی نے روایت کیا ہے۔ت)

خصوصاً روزِ عرفہ کہ افضلِ ایام سال ہے، اس کا روزہ صحیح حدیث سے ہزاروں روزوں کے برابر ہے اور دو سال کامل کے گناہوں کی معافی، ایک سال گزشتہ اور ایک سال آئندہ۔

الائمۃ الستۃ الا البخاری عن ابی قتادۃ رضی اللہ عنہ | بخاری کے علاوہ ائمہ ستہ نے حضرت ابو قتادہ رضی اللہ عنہ سے روایت کیا۔

1 جامع الترمذی باب ما جاء فی العمل فی ایام العشر امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۱/ ۹۴، السنن الصغیر للبیہقی باب العمل الصالح فی العشر الخ دار الکتب العلمیہ بیروت ۱/ ۳۷۸ 2 جامع الترمذی باب ما جاء فی العمل فی ایام العشر امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۱/ ۹۴، سنن ابن ماجہ باب صیام العشر ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۱۲۵

Fatawa Razawiyya Volume 10

(Arabic Text)	(Urdu Translation/Explanation)
It is narrated that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) was asked about fasting on the Day of Arafah. He said, "It expiates the sins of the past year and the coming year." And in Abu Ya'la, with a sound chain of narration from Sahl bin Sa'd (may Allah be pleased with him), he said: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Whoever fasts on the Day of Arafah, the sins of two consecutive years will be forgiven for him." And in Tabarani with a good chain, and al-Bayhaqi—and the wording is his—from the Mother of the Believers (may Allah be pleased with her), she said: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) used to say, "Fasting on the Day of Arafah is like fasting for a thousand days."	It is narrated that when the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) was asked about the Day of Arafah, he said: This becomes an expiation for the sins of the past and coming year. And Abu Ya'la has narrated with a sound chain from Hazrat Sahl bin Sa'd (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: Whoever keeps a fast on the day of Arafah, his sins of two consecutive years are forgiven. And in Tabarani with a good chain and in Bayhaqi—and the words are of Bayhaqi—it is narrated from the Mother of the Believers (may Allah be pleased with her) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) used to say that the reward for the fast of Arafah is equal to the fasts of a thousand days. (T)

After all days, the most excellent fast is the fast of Ashura, i.e., the 10th of Muharram. In it is the forgiveness of sins of one past year. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

(Arabic Text)	(Urdu Translation/Explanation)
"Whoever fasts on the Day of Arafah, he is forgiven for the year before it and the year after it. And whoever fasts on Ashura, he is forgiven for a year." Narrated by al-Tabarani with a good chain in his al-Mu'jam al-Awsat	Whoever kept the fast of Arafah, his sins of the year before and the year after are forgiven, and whoever kept the fast of Ashura, the sins of one year of his are forgiven. Tabarani has narrated this in Mu'jam al-Awsat from Hazrat Abu Sa'id al-

(Arabic Text)	(Urdu Translation/Explanation)
from Abu Sa'id al-Khudri (may Allah be pleased with him).	Khudri (may Allah be pleased with him) with a good chain. (T)

1. Sahih Muslim, Kitab al-Siyam, Qadimi Kutub Khana Karachi 1/368; Sunan Ibn Majah, Bab Siyam al-Ashr etc., H.M. Saeed Company Karachi, p. 125.
2. Musnad Abu Ya'la, Hadith 5107, Mu'assasat 'Ulum al-Qur'an Beirut 2/505.
3. Shu'ab al-Iman, Hadith 3762, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah Beirut 3/357.
4. Al-Targhib wa al-Tarhib, citing Mu'jam al-Awsat, al-Targhib fi Sawm Yawm Arafah etc., Mustafa al-Babi Egypt 2/112.

फतावा रज़विया जिल्द 10

(अरबी पाठ)

रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से अराफह के दिन रोज़ा रखने के बारे में पूछा गया। आपने फ़रमाया, "यह पिछले साल और आने वाले साल के गुनाहों का कफ़ारा (प्रायश्चित) है।" और अबू याला में सही सनद के साथ सहल बिन साद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है, उन्होंने कहा: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: "जिसने अराफह के दिन रोज़ा रखा, उसके लगातार दो सालों के गुनाह माफ़ कर दिए जाएंगे।" और तबरानी में हसन सनद के साथ और बैहक़ी में—और शब्द बैहक़ी के हैं—उम्मुल मोमिनीन (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत है, उन्होंने कहा: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाया करते थे, "अराफह के दिन का रोज़ा हज़ार दिनों के रोज़ों के बराबर है।"

(उर्दू अनुवाद/व्याख्या)

से रिवायत किया कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से यौमे अराफह के बारे में दरयाफ़्त किया गया तो फ़रमाया यह साले गुज़श्ता और आइंदा के गुनाहों का कफ़ारा बन जाता है। और अबू याला ने सनदे सही के साथ हज़रत सहल बिन साद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: जिस ने अराफह के दिन रोज़ा रखा उस के मुसलसल दो सालों के गुनाह माफ़ हो जाते हैं। और तबरानी में सनदे हसन के साथ और बैहक़ी ने और बैहक़ी के अल्फ़ाज़ हैं उम्मुल मोमिनीन (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत किया गया है रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाया करते कि अराफह के रोज़े का सवाब हज़ार दिन के रोज़ों के बराबर है। (त)

फिर सब दिनों से अफ़ज़ल रोज़ा आशूरा यानी दहम मुहर्रम का रोज़ा है इस में एक साल गुज़श्ता के गुनाहों की मग़फ़िरत है, रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

(अरबी पाठ)

"जिसने अराफह के दिन रोज़ा रखा, उसके पिछले साल और अगले साल के गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं। और जिसने आशूरा का रोज़ा रखा, उसके एक साल के गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं।" इसे तबरानी ने अपनी अल-मुअजम अल-औसत में अबू

(उर्दू अनुवाद/व्याख्या)

जिस ने अराफह का रोज़ा रखा उस के पहले और आइंदा के साल के गुनाह माफ़ हो जाते हैं और जिस ने आशूरा का रोज़ा रखा उस के एक साल के गुनाह माफ़ कर दिए जाते हैं। इसे तबरानी ने मुअजम अल-औसत में हज़रत अबू

(अरबी पाठ)

सईद अल-खुदरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से हसन सनद के साथ रिवायत किया है।

(उर्दू अनुवाद/व्याख्या)

सईद खुदरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से सनदे हसन के साथ रिवायत किया है (त)

1. सही मुस्लिम किताब अस-सियाम क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची 1/368, सुनन इब्न माजह बाब सियाम अल-अश्र आदि एच.एम. सईद कंपनी कराची पृ. 125
2. मुसनद अबू याला हदीस 5107 मुअस्ससतु उलूमि अल-कुरान बेरुत 2/505
3. शेब अल-ईमान हदीस 3762 दार अल-कुतुब अल-इल्मिया बेरुत 3/357
4. अत-तरग़ीब वत-तरहीब बहवाला मुअजम औसत अत-तरग़ीब फ़ी सौमि यौमि अराफह आदि मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 2/112

पृष्ठ 658 का 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

| قال سئل رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم عن صوم یوم عرفة قال یکفر السنة الماضیة والباقیة ولابی یعلی بسند صحیح عن سھل بن سعد رضی اللہ تعالی عنہ قال قال رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم من صام یوم عرفة غفر لہ ذنب سنتین متتابعین وللطبرانی بسند حسن والبیھقی واللفظ لہ عن ام المؤمنین رضی اللہ تعالی عنھا قالت کان رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم یقول صیام یوم عرفة کسیام الف یوم- | سے روایت کیا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے یومِ عرفہ کے بارے دریافت کیا گیا تو فرمایا یہ سال گذشتہ اور آئندہ کے گناہوں کا کفارہ بن جاتا ہے۔ اور ابو یعلی نے سندِ صحیح کے ساتھ حضرت سہل بن سعد رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: جس نے عرفہ کے دن روزہ رکھا اس کے مسلسل دوسالوں کے گناہ معاف ہو جاتے ہیں۔ اور طبرانی میں سندِ حسن کے ساتھ اور بیہقی نے اور بیہقی کے الفاظ ہیں ام المومنین رضی اللہ تعالٰی عنہا سے روایت کیا گیا ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرمایا کرتے کہ عرفہ کے روزہ کا ثواب ہزار دن کے روزوں کے برابر ہے۔ (ت) |

پھر سب دنوں سے افضل روزہ عاشورہ یعنی دہم محرم کا روزہ ہے اس میں ایک سال گذشتہ کے گناہوں کی مغفرت ہے، رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں :

| من صام یوم عرفة غفر لہ سنة امامہ وسنة خلفہ ومن صام عاشوراء غفر لہ سنة - رواہ الطبرانی بسند حسن فی معجمہ الاوسط عن ابی سعید ن الخدری رضی اللہ تعالٰی عنہ- | جس نے عرفہ کا روزہ رکھا اس کے پہلے اور آئندہ کے سال کے گناہ معاف ہو جاتے ہیں اور جس نے عاشوراء کا روزہ رکھا اس کے ایک سال کے گناہ معاف کر دئے جاتے ہیں۔ اسے طبرانی نے معجم الاوسط میں حضرت ابو سعید خدری رضی اللہ تعالٰی عنہ سے سندِ حسن کے ساتھ روایت کیا ہے (ت) |

1 صحیح مسلم کتاب الصیام قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۳۶۸، سنن ابن ماجہ باب صیام العشر الخ ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۱۲۵ 2 مسند ابو یعلی حدیث ۵۱۰۷ مؤسسہ علوم القرآن بیروت ۲/ ۵۰۵ 3 شعب الایمان حدیث ۳۷۶۲ دار الکتب العلمیہ بیروت ۳/ ۳۵۷ 4 الترغیب والترہیب بحوالہ معجم اوسط الترغیب فی صوم یوم عرفہ الخ مصطفی البابی مصر ۲/ ۱۱۲

Volume Ten Fatawa Razawiyya

A fast on every day of Muharram is equal to the fasts of an entire month.

[Arabic Column]: Al-Tabarani has narrated in Al-Mu'jam al-Kabir and Al-Saghir from Ibn Abbas (may Allah be pleased with them) with a chain that has no harm, from the Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him): "Whoever fasts one day of Muharram, for him there are thirty virtues for every day." 1 [Urdu Column]: Al-Tabarani has narrated in Al-Mu'jam al-Kabir and Al-Saghir from Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with them) with such a chain in which there is no harm, that the Messenger of Allah (may Allah's peace and blessings be upon him) said: "Whoever kept one fast of Muharram, for him there are thirty virtues for every day." (T)

The Messenger of Allah (may Allah's peace and blessings be upon him) says:

[Arabic Column]: "The most virtuous fast after Ramadan is [in] Sha'ban, in honor of Ramadan." 2 - Narrated by Tirmidhi who termed it 'gharib' (uncommon/singular), and Al-Bayhaqi mentioned it in 'Al-Shu'ab', and it contains a narrator named Sadaqah bin Musa. [Urdu Column]: "The most virtuous fasts after Ramadan are the fasts of Sha'ban for the honor of Ramadan." (Tirmidhi narrated it and called it 'gharib', and Al-Bayhaqi mentioned it in 'Shu'ab al-Iman', and there is a narrator named Sadaqah bin Musa in it. T)

So, it is not correct to say that the fast of the 27th of Rajab is superior to all fasts after Ramadan. Yes, some hadiths have been narrated regarding its excellence which this humble servant has mentioned in his fatwas. The best among them is a 'mawquf' (attributed to a companion) hadith from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him):

[Arabic Column]: "Whoever fasts on the twenty-seventh day of Rajab, Allah Almighty records for him the reward of fasting for sixty months." 3 [Urdu Column]: "Whoever fasts on the 27th of Rajab, Allah Almighty records for him the reward of five years' worth of fasting."

In such matters, a 'mawquf' hadith is considered 'marfu' (attributed to the Prophet) because personal opinion has no role at all in determining the specific amount of reward. Furthermore, by the consensus of the Imams, a weak (da'if) hadith is acceptable in matters of virtuous deeds (Fada'il al-A'mal), as we have explained in detail in our treatise 'Al-Hadu al-Kafi fi Hukm al-Dha'af' 4 (the full detail of which is

difficult to add upon, we have [provided] in our treatise 'Al-Hadu al-Kafi fi Hukm al-Dha'af').

1 Al-Mu'jam al-Kabir, Hadith 11082, Al-Maktabah al-Faysaliyyah, Beirut, 11/271. 2 Jami' al-Tirmidhi, Chapters of Zakat, Chapter on what has been narrated regarding the excellence of charity, Amin Company Delhi 1/84; Shu'ab al-Iman, Hadith 3819, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut 3/477. 3 Tanzih al-Shari'ah, with reference to Juz' Abi Mu'adh, Kitab al-Sawm, Hadith 21, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut 1/191. 4 For its study, see the treatise "Munir al-Ayn fi Hukm Taqbil al-Ibahamayn", which is in Fatawa Razawiyya (Modern) Volume 5, page 429.

जिल्द दशम (दसवां खंड) फ़तावा रज़विया

मुहर्रम के हर दिन का रोज़ा एक महीने के रोज़ों के बराबर है।

[अरबी कॉलम]: तबरानी ने मुअजम अल-कबीर और अल-सगीर में इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से ऐसी सनद के साथ रिवायत किया है जिसमें कोई हर्ज नहीं, नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से: "जिसने मुहर्रम का एक दिन रोज़ा रखा, उसके लिए हर दिन के बदले तीस नेकियाँ हैं।" १ [उर्दू कॉलम]: तबरानी ने मुअजम अल-कबीर और सगीर में हज़रत इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से ऐसी सनद के साथ रिवायत किया है जिसमें कोई हर्ज नहीं, कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: जिसने मुहर्रम का एक रोज़ा रखा उसके लिए हर दिन में तीस नेकियाँ हैं। (त)

रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

[अरबी कॉलम]: "रमज़ान के बाद सबसे अफ़ज़ल रोज़ा रमज़ान के सम्मान में शाबान का है।" २ - इसे तिर्मिज़ी ने रिवायत किया और इसे 'ग़रीब' कहा, और बैहक़ी ने 'अल-शुअब' में इसका ज़िक्र किया और इसमें एक रावी सदक़ा बिन मूसा है। [उर्दू कॉलम]: "रमज़ान के बाद सबसे अफ़ज़ल शाबान के रोज़े हैं, रमज़ान के सम्मान के लिए।" (इसे तिर्मिज़ी ने रिवायत करके'ग़रीब' कहा और बैहक़ी ने 'शुअब अल-ईमान' में ज़िक्र किया, और इसमें एक रावी सदक़ा बिन मूसा है। त)

तो २७ रजब के रोज़े को रमज़ान के बाद सब रोज़ों से अफ़ज़ल कहना सही नहीं, हाँ कुछ अहादीस उसकी फ़ज़ीलत में मरुवी हुई हैं जिन्हें फ़क़ीर ने अपने फ़तावा में ज़िक्र किया, उन सब में बेहतर हदीस 'मौक़ूफ़' अबू हुरैरा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से है:

[अरबी कॉलम]: "जिसने रजब के सत्ताइसवें दिन का रोज़ा रखा, अल्लाह तआला उसके लिए साठ महीनों के रोज़ों का सवाब लिखता है।" ३ [उर्दू कॉलम]: "जो २७ रजब का रोज़ा रखे अल्लाह तआला उसके लिए पाँच बरस के रोज़ों का सवाब लिखे।"

ऐसी जगह मौक़ूफ़ हदीस 'मरफ़ूअ' है कि अज्र की मिक़दार (मात्रा) के निर्धारण में राय (व्यक्तिगत विचार) का कोई दखल नहीं, और ज़ईफ़ हदीस 'फ़ज़ाइल-ए-अमाल' में इमामों के सर्वसम्मति (इज्मा) से मक़बूल है जैसा कि हमने अपने रिसाला 'अल-हादु अल-काफ़ी फ़ी हुक्म अल-ज़आफ़' में विस्तार से बताया है ४ (जिसकी पूरी तफ़सील, जिस पर इज़ाफ़ा करना दुश्वार है, हमने अपने रिसाला 'अल-हादु अल-काफ़ी फ़ी हुक्म अल-ज़आफ़' में दी है)।

१ अल-मुअजम अल-कबीर, हदीस 11082, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया, बैरुत, 11/271. २ जामि' अल-तिर्मिज़ी, अबवाब अल-ज़कात, बाब मा जाआ फ़ी फ़ज़्ल अल-सदक़ा, अमीन कंपनी दिल्ली 1/84; शुअब अल-ईमान, हदीस 3819, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बैरुत 3/477. ३ तन्ज़ीह अल-शरिया, जुज़ अबी मुआज़ किताब अल-सौम के हवाले से, हदीस 21, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बैरुत 1/191. ४ इसके अध्ययन के लिए रिसाला "मुनीर अल-ऐन फ़ी हुक्म तक़्बील अल-इबहामैन" मुलाहिज़ा हो जो फ़तावा रज़विया (जदीद) जिल्द 5 के पृष्ठ 429 पर है।

جلد دہم فتاوٰی رضویہ

محرم کے ہر دن کا روزہ ایک مہینہ کے روزوں کے برابر ہے۔

الطبراني في الكبير الصغير عن ابن عباس رضي الله تعالى عنهما بسند لا بأس به عن النبي صلى الله تعالى عليه وسلم من صام يوما من المحرم فله بكل يوم ثلثون حسنة ۱۔ | طبرانی نے معجم الکبیر اور صغیر میں حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہما سے ایسی سند کے ساتھ روایت کیا ہے جس میں کوئی حرج نہیں، کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: جس نے محرم کا ایک روزہ رکھا اس کے لیے ہر دن میں تیس نیکیاں ہیں (ت)

رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

افضل الصوم بعد رمضان، شعبان لتعظیم رمضان ۲۔ رواہ الترمذی واستغربہ والبیھقي في الشعب وفیہ صدقۃ بن موسی۔ | رمضان کے بعد سب سے افضل شعبان کے روزے ہیں تعظیمِ رمضان کے لیے۔ (اسے ترمذی نے روایت کر کے غریب کہا اور بیہقی نے شعب الایمان میں ذکر کیا، اور اس میں ایک راوی صدقہ بن موسٰی ہے۔ ت)

تو ۲۷ رجب کے روزے بعدِ رمضان سب روزوں سے افضل کہنا صحیح نہیں، ہاں بعض احادیث اُس کی فضیلت میں مروی ہوئیں کہ فقیر نے اپنے فتاوی میں ذکر کیں، اُن سب میں بہتر حدیث موقوف ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے ہے:

من صام یوم سبع عشرین من رجب کتب اللہ تعالی لہ صیام ستین شھرا ۳۔ | جو ۲۷ رجب کا روزہ رکھے اللہ تعالٰی اُس کے لیے پانچ برس کے روزوں کا ثواب لکھے۔

ایسی جگہ حدیث موقوف مرفوع ہے کہ تعیینِ مقدارِ اجر کی طرف رائے کو اصلاً راہ نہیں، اور حدیثِ ضعیف فضائلِ اعمال میں باجماعِ ائمہ مقبول ہے کما فصلنا ہ بما لا مزید علیہ فی رسالتنا الھاد الکاف فی حکم الضعاف ۴ (اس کی پوری تفصیل جس پر اضافہ دشوار ہے، ہم نے اپنے رسالہ الھاد الکاف فی حکم الضعاف)

۱ المعجم الکبیر حدیث ۱۱۰۸۲، المکتبۃ الفیصلیہ بیروت ۱۱ / ۲۷۱ ۲ جامع الترمذی ابواب الزکوۃ باب ماجاء فی فضل الصدقۃ امین کمپنی دہلی ۱/ ۸۴، شعب الایمان حدیث ۳۸۱۹ دار الکتب العلمیہ بیروت ۳ / ۴۷۷ ۳ تنزیہ الشریعہ بحوالہ جزء ابی معاذ کتاب الصوم حدیث ۲۱ دار الکتب العلمیہ بیروت ۱/ ۱۹۱ ۴ اس کے مطالعہ کے لیے رسالہ "منیر العین فی حکم تقبیل الابہامین" ملاحظہ ہو جو فتاوی رضویہ (جدید) جلد ۵ کے ص ۴۲۹ پر ہے۔

Fatawa Rizvia, Volume 10

...has mentioned in them. (T) In authentic (Sahih), good (Hasan), and sound (Salih) hadiths, virtues of many other fasts have also been mentioned, such as the six fasts of Shawwal and Ayyam-e-Beed (the 13th, 14th, and 15th of each lunar month), as each of them brings the reward of fasting for the whole year, for "Whoever brings a good deed shall have ten times the like thereof" [Quran 6:160]. (T) Fasting on Monday and Thursday, and fasting on Wednesday and Thursday leads to freedom from Hellfire. And fasting on Wednesday, Thursday, and Friday creates houses of pearls, rubies, and emeralds in Paradise. Moreover, fasting on Friday—that is, when Thursday or Saturday is also included with it—is narrated to be equal to fasting for ten thousand years. (Reported by Al-Bayhaqi from Abu Huraira, may Allah be pleased with him, as a marfu' tradition). To forbid fasting is to forbid goodness and falls under the burden of being a "withholder of good" (Manna' lil-khayr) unless a Shariah prohibition is proven inherently or incidentally. Besides the 27th, there are many hadiths regarding fasts in the month of Rajab, some of which are sound in themselves and some through multiple narrations. Sheikh-ul-Muhaqqiq Maulana Abdul Haq Muhaddith Dehlvi, may his powerful secret be sanctified, has explained them in detail in 'Ma Thabata bis-Sunnah'.

[Arabic Box Text]: "And what is narrated from al-Faruq al-A'zam (may Allah be pleased with him): 'So-and-so, Rajab was also venerated by the Jahiliyyah (pre-Islamic people), and the era was close, and the rulings were not clear to many of the Bedouins, so an increase was feared, and for everyone is a direction to which he turns.' And Allah knows best."

[Urdu Box Text]: And what is narrated from Farooq al-A'zam (may Allah be pleased with him) is because the people of Jahiliyyah also used to venerate Rajab; the time of Jahiliyyah was close before Islam, and many Arabs were not well-informed about the rulings. Therefore, there was a fear of self-initiated additions regarding the description of Rajab's fasts, while for everyone, there is a path for their actions. And Allah knows best. (T)

Issue 275: From village Saraiyan, district Bareilly, sent by Amir Ali Sahab, 1331 AH. Most women keep a fast called "Mushkil Kusha Ali" (Ali, the Remover of Difficulties).

What is its status? The Answer: Fasting is specifically for Allah Almighty. If they keep the fast for Allah and dedicate its reward to Maula Ali...

1. Quran 6:160
2. Kanz al-Ummal, Hadith 24191, Mu'assasat al-Risalah, Beirut, 12/564; At-Targhib wat-Tarhib regarding fasting on Wednesdays, etc., Mustafa al-Babi, Egypt, 2/126.
3. Shu'ab al-Iman, Hadith 3738, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 3/79.
4. At-Targhib wat-Tarhib regarding fasting on Wednesdays, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/126.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवां

...में किया है। त) सहीह, हसन और सालेह अहादीस में और भी बहुत से रोज़ों के फ़ज़ाइल आए हैं जैसे शश-ईद (शव्वाल के छह रोज़े) और अय्यामे-बीज़ कि दोनों में हर एक साल भर के रोज़ों का सवाब लाता है कि "जो कोई नेकी लाए, उसे उसका दस गुना मिलेगा" [कुरआन 6:160]। (त) पीर और जुमेरात का रोज़ा, और बुध और जुमेरात का रोज़ा जहन्नम से आज़ादी दिलाते हैं। और बुध, जुमेरात और जुमा का रोज़ा जन्नत में मोती, याकूत और ज़बरजद का घर बनाते हैं। बल्कि जुमा का रोज़ा यानी जब उसके साथ जुमेरात या सनीचर भी शामिल हो, मरवी हुआ कि दस हज़ार साल के रोज़ों के बराबर है। (इसे बैहक़ी ने हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से मरफ़ूअ़न नक़्ल किया है। त) रोज़े से रोकना भलाई से रोकना है और 'मन्नाअ़ लिल-ख़ैर' (भलाई से रोकने वाला) के वबाल में दाख़िल होना है, जब तक कि ज़ाती या आरज़ी तौर पर शरीअ़ती मुमानअ़त साबित न हो। 27 के अलावा रजब के रोज़ों के बारे में बहुत सी अहादीस वारिद हुई हैं, जिनमें से कुछ अपने आप में और कुछ मुतअ़द्दद बार सालेह रुत्बा रखती हैं। शैख़-ए-मुहक्क़िक़ मौलाना अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी .क़ुद्दसा सिर्रुहुल क़वी ने 'मा सबता बिस-सुन्नह' में उनकी तफ़्सील बयान की है।

[अरबी बॉक्स पाठ]: "और जो फ़ारूक़-ए-आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है: 'फलां रजब की ताज़ीम जाहिलियत वाले भी करते थे और वह दौर करीब था और बहुत से अ'राब (देहातियों) पर अहकाम वाज़ेह नहीं हुए थे, तो ज़्यादती का ख़ौफ़ था, और हर एक के लिए एक रुख़ है जिसकी तरफ़ वह मुड़ता है।' वल्लाहु तआ़ला अ़'लम।"

[उर्दू बॉक्स पाठ का अनुवाद]: और जो फ़ारूक़-ए-आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु से मरवी है, वह इसलिए कि जाहिलियत वाले भी रजब की ताज़ीम करते थे। इस्लाम से पहले जाहिलियत का ज़माना क़रीब था और बहुत से अरबों पर अहकाम अच्छी तरह वाज़ेह नहीं हो सके थे, तो इसलिए रजब के रोज़ों के मुतअ़ल्लिक़ बयान में ख़ुद से इज़ाफ़ा करने का ख़दशा मौजूद था, जबकि हर एक के लिए अपने अमल की राह है। वल्लाहु तआ़ला अ़'लम। (त)

मसला 275: ग्राम सरैंया, ज़िला बरेली, प्रेषक अमीर अली साहब, 1331 हिजरी। अक्सर औरतें 'मुश्किल कुशा अली' का रोज़ा रखती हैं, यह क्या है? अल-जवाब: रोज़ा ख़ास अल्लाह अ़ज़्ज़वजल के लिए है, अगर अल्लाह का रोज़ा रखें और उसका सवाब मौला अली की नज़्र करें...

1. अल-कुरआन 6:160

2. कन्ज़ुल उम्माल हदीस 24191 मुअ़स्ससतुर रिसाला बैरूत 12/564, अत-तरग़ीब वत-तरहीब फ़ी सौमिल अरबिआ़ इलख़ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 2/126
3. शुअ़बुल ईमान हदीस 3738 दारुल कुतुबुल इल्मिया बैरूत 3/79
4. अत-तरग़ीब वत-तरहीब फ़ी सौमिल अरबिआ़ मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 2/126

فتاوی رضویہ جلد دہم

میں کی ہے۔ ت) احادیثِ صحاح و حسن و صوالح میں اور بھی بہت روزوں کے فضائل آئے ہیں جیسے شش عید و ایام بیض کہ دونوں میں ہر ایک سال بھر کے روزوں کا ثواب لاتا ہے کہ مَنْ جَاءَ بِالْحَسَنَةِ فَلَهٗ عَشْرُ اَمْثَالِهَا ۱ (جس نے کوئی نیکی کی اسے اس کا دس گنا اجر ملے گا۔ ت) روزہ دوشنبہ و روزہ پنجشنبہ و روزہ چہار شنبہ و پنجشنبہ کہ دوزخ سے آزاد ہیں ۲ اور روزہ چہار شنبہ و پنجشنبہ و جمعہ کہ جنت میں گوہر و یاقوت و زبرجد کا گھر بناتے ہیں ۳ بلکہ روزہ جمعہ یعنی جب اس کے ساتھ پنجشنبہ یا شنبہ بھی شامل ہو مروی ہوا کہ دس ہزار برس کے روزوں کے برابر ہے ٤ رواہ البیھقی عن ابی ھریرۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ مرفوعاً (اسے بیہقی نے حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مرفوعاً نقل کیا ہے۔ت) روزہ سے منع کرنا خیر سے منع کرنا اور مناع للخیر (خیر سے روکنے والا) کے وبال میں داخل ہونا ہے جب تک ذاتاً یا عارضاً ممانعت شرعیہ نہ ثابت ہو، ۲۷ کے علاوہ روزہ ہائے رجب میں احادیث کثیرہ وارد ہیں جن میں بعض خود اور بعض بتعدد مرتبہ صالح رکھتی ہیں، شیخ محقق مولانا عبدالحق محدث دہلوی قدس سرہ القوی نے ماثبت بالسنۃ میں ان کی تفصیل فرمائی۔

[Arabic Box Text]: وَمَا یُروی عَن الفَارُوق الاعظم رضي اللہ تعالٰی عنہ فلان رجب کانت تعظمه الجاهلية ايضاً وقد كان العهد قريباً والاحكام لم تتبين عند كثير من الاعراب فتخشى الزيادة ولكل وجهة هو موليها۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

[Urdu Box Text]: اور جو فاروق اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ سے مروی ہے پس اس لئے کہ اہل جاہلیت بھی رجب کی تعظیم کرتے تھے زمانہ جاہلیت اسلام سے قبل قریب تھا اور بہت سے عربوں پر احکام اچھی طرح واضح نہ ہوسکے تھے تو اس لئے رجب کے روزوں کے متعلق بیان

میں از خود اضافہ کرنے کا خدشہ موجود ہے جبکہ ہر ایک کیلئے اپنے عمل کی راہ ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

مسئلہ ۲۷۵: از موضع سرائیاں ضلع بریلی مرسلہ امیر علی صاحب ۱۳۳۱ھ اکثر عورتیں مشکل کشا علی کا روزہ رکھتی ہیں کیا ہے؟ الجواب: روزہ خاص اللہ عزوجل کے لیے ہے، اگر اللہ کا روزہ رکھیں اور اس کا ثواب مولا علی کی نذر کریں

۱ القرآن ۶/۱۶۰ ۲ کنز العمال حدیث ۲۴۱۹۱ مؤسسۃ الرسالہ بیروت ۱۲/ ۵۶۴، الترغیب والترہیب فی صوم الاربعاء الخ مصطفی البابی مصر ۲/۱۲۶ ۳ شعب الایمان حدیث ۳۷۳۸ دار الکتب العلمیہ بیروت ۳/ ۷۹ ٤ الترغیب والترہیب فی صوم الاربعاء مصطفی البابی مصر ۲/۱۲۶

Fatawa Razawiyyah Volume 10

...there is no harm, but they do this: they keep the fast until midnight, they do not break it in the evening, they open the house doors after midnight and pray for something, and at that time they break the fast. This is a satanic ritual, and Allah Almighty knows best.

Issue 276: From Bilgram Sharif, Mohalla Maidan Pura, sent by Hazrat Sahibzada Syed Ibrahim Miyan Sahib Qadri, may his blessings endure. 23 Ramadan 1312 AH.

Question: What do the scholars of religion say regarding the issue of whether the i'tikaf of the last ten days of Ramadan Sharif is fulfilled in full ten days, or is it also permissible in the last three or four days? One person states that the purpose of the legislation of i'tikaf is for the honor and attainment of Laylat al-Qadr, and this is achieved in perfection. Another person states that it is also permissible in three or four days, as has been seen.

Answer: The i'tikaf of the last ten days is Sunnah Mu'akkadah 'ala al-Kifayah, which the enlightened master of the world (peace and blessings of Allah be upon him) practiced with regularity and persistence. It is for the entire last ten days; if even one day is less, the Sunnah will not be fulfilled. Yes, there is no set limit for Nafl (voluntary) i'tikaf; it can be for even a moment, even if one is not fasting. Therefore, one should make the intention of i'tikaf whenever they enter the mosque for prayer, so that this second act of worship is gained for free. It is stated in Durr al-Mukhtar:

[Table Content] Arabic: سنة مؤكدة فى العشر الاخير من رمضان اى سنة كفاية كما فى البرهان وغيره۔ Urdu: It is Sunnah Mu'akkadah in the last ten days of Ramadan, i.e., Sunnah al-Kifayah, as is mentioned in al-Burhan etc. (T)

In the same [book] it is stated:

[Table Content] Arabic: واقله نفلا ساعة من ليل اونهار عند محمد، وهو ظاهر الرواية عن الامام لبناء النفل على المسامحة وبه يفتى و الساعة فى عرف الفقهاء جزء من الزمان لا جزء من اربعة وعشرين كما يقوله المنجمون Urdu: According to Imam Muhammad, the minimum voluntary (Nafl) i'tikaf can be for an hour (a moment) of day or night, and this is also the Zahir al-Riwayah (established narration) from the Great Imam (Abu Hanifa), because voluntary acts are based on ease, and upon this is the fatwa. In the terminology of jurists, "sa'at" (hour/moment) refers to a portion of time, not one out of twenty-four hours as stated by timekeepers (astronomers).

1 Durr al-Mukhtar, Chapter on I'tikaf, Mujtabai Delhi, 1/156 Page 661 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

...तो कोई हर्ज नहीं, लेकिन इसमें वे यह करती हैं कि रोज़ा आधी रात तक रखती हैं, शाम को इफ़्तार नहीं करतीं, आधी रात के बाद घर के दरवाज़े खोलकर कुछ दुआ मांगती हैं, उस समय रोज़ा इफ़्तार करती हैं, यह शैतानी रस्म है, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 276: बिलग्राम शरीफ़, मोहल्ला मैदान पुरा से, हज़रत साहबज़ादा सैयद इब्राहिम मियां साहब कादरी, दामत बरकातुहुम द्वारा प्रेषित। 23 रमज़ान 1312 हिजरी।

प्रश्न: दीन के उलेमा इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि रमज़ान शरीफ़ के आख़िरी अशरे (दस दिनों) का एतिकाफ़ पूरे दस दिनों में अदा होता है या आख़िरी तीन-चार दिनों में भी जायज़ है? एक व्यक्ति का बयान है कि एतिकाफ़ की शरीअत का मक़सद लैलतुल क़द्र का शरफ़ और उसे पाना है, यह कामिल तौर पर हासिल होगा। दूसरे व्यक्ति का बयान है कि तीन-चार दिनों में भी जायज़ है, ऐसा देखा गया है।

उत्तर (अल-जवाब): आख़िरी अशरे का एतिकाफ़ सुन्नत-ए-मुअक्कदा अलल किफ़ाया है, जिस पर हुज़ूर पुर नूर सय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने पाबंदी और निरंतरता बरती। यह पूरे आख़िरी अशरे का एतिकाफ़ है, एक दिन भी कम हो तो सुन्नत अदा न होगी। हाँ, नफ़्ली एतिकाफ़ के लिए कोई सीमा निर्धारित नहीं है, यह एक पल के लिए भी हो सकता है, चाहे वह बिना रोज़े के हो। इसलिए चाहिए कि जब नमाज़ के लिए मस्जिद में आएँ तो एतिकाफ़ की नीयत कर लें ताकि यह दूसरी इबादत मुफ़्त में हासिल हो जाए। दुर्रे मुख्तार में है:

[तालिका सामग्री] अरबी: سنة مؤكدة فى العشر الاخير من رمضان اى سنة كفاية كما فى البرهان وغيره۔ उर्दू: रमज़ान के आख़िरी अशरे में सुन्नत-ए-मुअक्कदा है यानी सुन्नत-ए-किफ़ाया है, जैसा कि बुरहान वग़ैरा में है। (त)

इसी में है:

[तालिका सामग्री] अरबी: واقله نفلا ساعة من ليل اونهار عند محمد، وهو ظاهر الرواية عن الامام لبناء النفل على المسامحة وبه يفتى و الساعة فى عرف الفقهاء جزء من الزمان لا جزء من اربعة وعشرين كما يقوله المنجمون उर्दू: इमाम मोहम्मद के नज़दीक कम से कम नफ़्ली एतिकाफ़ दिन और रात में एक घड़ी (क्षण) का भी हो सकता है और इमाम आज़म से भी

ज़ाहिरुर रिवायत में है क्योंकि नफ़्ल की बुनियाद आसानी पर है और इसी पर फ़तवा है। फ़ुक़हा (विधिवेत्ताओं) के अनुसार 'साअत' (घड़ी) का अर्थ समय का एक हिस्सा है न कि चौबीस घंटों में से एक घंटा जैसा कि खगोलविद (नजमी) कहते हैं।

1 दुर्रे मुख्तार, बाबुल एतिकाफ़, मुज्तबाई दिल्ली, 1/156 पेज 661 / 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

...تو حرج نہیں مگر اس میں یہ کرتی ہیں کہ روزہ آدھی رات تک رکھتی ہیں، شام افطار نہیں کرتیں، آدھی رات کے بعد گھر کے کواڑ کھول کر کچھ دعا مانگتی ہیں اس وقت روزہ افطار کرتی ہیں، یہ شیطانی رسم ہے، واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲۷۶: از بلگرام شریف محلہ میدان پورہ مرسلہ حضرت صاحبزادہ سید ابراہیم میاں صاحب قادری دامت برکاتہم ۲۳ رمضان ۱۳۱۲ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ اعتکاف آخر عشرہ رمضان شریف کا پورے دس روز میں ادا ہوتا ہے یا تین چار روز آخر میں بھی جائز ہے؟ ایک شخص کا بیان ہے کہ مقصود مشروعیت اعتکاف کے واسطے شرف اور ادراک لیلۃ القدر کی ہے یہ کامل وہ میں حاصل ہوگا، دوسرے شخص کا بیان ہے تین چار روز میں بھی جائز ہے ایسا دیکھا گیا ہے۔

الجواب: اعتکاف عشرہ اخیرہ کی سنتِ مؤکدہ علی وجہ الکفایہ ہے، جس پر حضور پُر نور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے مواظبت و مداومت فرمائی پورے عشرہ اخیرہ کا اعتکاف ہے، ایک روز بھی کم ہو تو سنت ادا نہ ہوگی، ہاں اعتکافِ نفل کے لیے کوئی حد مقرر نہیں، ایک ساعت کا بھی ہو سکتا ہے، اگرچہ بے روزہ ہو۔ ولہذا چاہئے کہ جب نماز کو مسجد میں آئے نیتِ اعتکاف کر لے کہ یہ دوسری عبادت مفت حاصل ہو جائے گی، در مختار میں ہے:

[جدول] سنة مؤكدة فى العشر الاخير من رمضان اى سنة كفاية كما فى البرهان وغيره۔ | رمضان کے آخری عشرہ میں سنت مؤکدہ ہے یعنی سنتِ کفایہ ہے، جیسا کہ برہان وغیرہ میں ہے۔ (ت)

اسی میں ہے :

[جدول] واقله نفلا ساعة من ليل اونهار عند محمد، وهو ظاهر الرواية عن الامام لبناء النفل على المسامحة وبه يفتى و الساعة فى عرف الفقهاء جزء من الزمان لا جزء من اربعة وعشرين كما يقوله المنجمون | امام محمد کے نزدیک کم سے کم نفلی اعتکاف دن و رات میں ایک گھڑی کا بھی ہو سکتا ہے اور امام اعظم سے بھی ظاہر الروایت میں ہے کیونکہ نفل کی بناء آسانی پر ہے اور اسی پر فتویٰ ہے، عرف فقہا میں ساعت کا مفہوم زمانے کا ایک جزو ہے نہ کہ چوبیس گھنٹوں میں سے ایک گھنٹہ جو کہ اہل توقیت

Fatawa Ridawiyya Volume 10

As mentioned in Ghurar al-Adhkar etc. | This is the position, as mentioned in Ghurar al-Adhkar etc. (T)

In Fath al-Qadir: Al-I'tikaf is divided into obligatory (Wajib), which is that vowed (al-mandhur) immediately or conditionally; and emphasized Sunnah (Sunnah Mu'akkadah), which is the i'tikaf of the last ten days of Ramadan; and recommended (Mustahabb), which is other than these two[2]. | I'tikaf is divided into Wajib, Sunnah Mu'akkadah, and Mustahabb. Wajib is that for which a vow (Nadhr) was made, whether immediate or conditional. Sunnah Mu'akkadah is the i'tikaf of the last ten days of Ramadan. And Mustahabb is what is besides these two mentioned cases. (T)

In Radd al-Muhtar: The Sunnah (i'tikaf) is the i'tikaf of the full ten days[3], and Allah Almighty knows best. | The Sunnah i'tikaf is the full ten days of Ramadan. And Allah Almighty knows best. (T)

---

[1] Durr al-Mukhtar, Chapter of I'tikaf, Mujtabai Press Delhi, 1/156-57 [2] Fath al-Qadir, Chapter of I'tikaf, Maktaba Nooriya Razawiyya Sukkur, 2/305 [3] Radd al-Muhtar, Chapter of I'tikaf, Mustafa al-Babi Egypt, 2/143

फ़तावा रज़विया जिल्द १० (भाग 10)

जैसा कि ग़ुरर अल-अज़कार आदि में है - | यही रुख़ है, जैसा कि ग़ुरर अल-अज़कार आदि में है। (त)

फ़तहु अल-क़दीर में है: एतिकाफ़ वाजिब, सुन्नत-ए-मुअक्कदा और मुस्तहब में विभाजित है। वाजिब वह है जिसकी मन्नत (नज़्र) मानी गई हो चाहे वह तत्काल हो या किसी शर्त पर; सुन्नत-ए-मुअक्कदा वह है जो रमज़ान के आख़िरी दस दिनों का एतिकाफ़ है; और मुस्तहब वह है जो इन दोनों के अलावा हो[2]। | एतिकाफ़ वाजिब, सुन्नत-ए-मुअक्कदा और मुस्तहब पर विभाजित है। वाजिब वह है जिसकी मन्नत मानी गई हो चाहे फ़ौरन (तत्काल) हो या मुअल्लक़ (शर्त पर), और सुन्नत-ए-मुअक्कदा वह रमज़ान के आख़िरी दस दिनों का एतिकाफ़ है, और मुस्तहब वह है जो इन दो उल्लिखित स्थितियों के अलावा है। (त)

रद्दुल मुहतार में है: मस्नुन (सुन्नत) एतिकाफ़ पूरे दस दिनों का है[3], और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। | सुन्नत एतिकाफ़ रमज़ान का पूरा अशरा (दस दिन) है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

---

[1] दुर्र-ए-मुख़्तार, बाबुल एतिकाफ़, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/156-57 [2] फ़तहु अल-क़दीर, बाबुल एतिकाफ़, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, 2/305 [3] रद्दुल मुहतार, बाबुल एतिकाफ़, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/143

पृष्ठ 662 का 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

كما في غرر الاذكار و غيره - | کا موقف ہے، جیسا کہ غرر الاذکار وغیرہ میں ہے۔ (ت)

فتح القدیر میں ہے: الاعتكاف ينقسم الى واجب وهو المنذور تنجيزا او تعليقا والى سنة مؤكدة وهو اعتكاف العشر الاواخر من رمضان والى مستحب وهو ماسواهما[2]۔ | اعتکاف واجب، سنتِ مؤکدہ اور مستحب پر منقسم ہے، واجب جس کی نذر مانی گئی ہو خواہ فی الفور یا معلق ہو، اور سنتِ مؤکدہ وہ رمضان کے آخری عشرہ کا اعتکاف ہے، اور مستحب جو ان مذکورہ دونوں صورتوں کے علاوہ ہے (ت)

ردالمحتار میں ہے: المسنون هو اعتكاف العشر بتمامه[3]، والله تعالٰی اعلم۔ | سنت اعتکاف وہ رمضان کا پورا عشرہ ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

---

[1] در مختار باب الاعتکاف مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۵۶-۵۷ [2] فتح القدیر باب الاعتکاف مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲/۳۰۵ [3] ردالمحتار باب الاعتکاف مصطفٰی البابی مصر ۲/۱۴۳

Volume Ten Fatawa Razvia

Book of Hajj

Problem 772: Asked by Wahid Yar Khan Sahib from Bareilly, 4 Dhu al-Qi'dah 1324 AH. What do the scholars of religion say on this matter: is it permissible for a woman to go for Hajj or not?

The Answer: The obligation of Hajj is the same for men and women; whoever has the means for the journey, it is obligatory upon them, whether male or female. One who does not perform it will deserve the punishment of Hell. For a woman, there is an additional condition: it is forbidden for her to travel for the journey without being accompanied by her husband or a mahram (unmarriageable kin). This is not specific to Hajj; if she goes even a day's journey without a husband or mahram, she will be a sinner. Yes, once the obligatory Hajj is performed, it is not appropriate for a woman to go repeatedly; the more she remains behind the veil, the better. It is mentioned in the Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), after performing Hajj with the Mothers of the Believers, said: "This [Hajj] is enough, then stay in your houses (mats of the house)." This is a guidance regarding priority, not that a second Hajj is prohibited for women. Mother of the Believers Siddiqah (may Allah be pleased with her) performed Hajj again after that. And Allah knows best.

Problems 778 to 280: From Etah, 8 Ramadan Mubarak, sent by Ishaq, Assistant Teacher at Tehsil School. Respected Maulana Sahib! Please consider the following situation and write down the answers: (1) Zaid has the personal means for the expenses of the journey and transportation. If his parents do not give permission for Hajj to Makkah al-Mukarramah, can the aforementioned Hajj take place or what?

Page 664 of 836

खंड दस फ़तावा रज़विया

किताबुल हज्ज

मसला ७७२: प्रार्थी वाहिद यार ख़ां साहब, बरेली से ४ ज़िल-क़ादा १३२४ हिजरी। धर्मगुरु इस विषय में क्या कहते हैं कि स्त्री का हज पर जाना सही है या नहीं?

उत्तर: हज की अनिवार्यता (फ़र्ज़ियत) में पुरुष और स्त्री का एक ही हुक्म है; जो रास्ते का सामर्थ्य रखता हो उस पर फ़र्ज़ है, चाहे पुरुष हो या स्त्री। जो इसे अदा नहीं करेगा, वह नर्क की सजा का पात्र होगा। स्त्री के मामले में इतनी बात अधिक है कि उसे बिना पति या महरम (जिससे विवाह वर्जित हो) के साथ लिए यात्रा पर जाना हराम है। इसमें हज की कोई विशेषता नहीं है; यदि वह एक दिन के रास्ते पर भी बिना पति या महरम के जाएगी, तो वह गुनहगार होगी। हाँ, जब फ़र्ज़ अदा हो जाए, तो स्त्री के लिए बार-बार जाना उचित नहीं है; वह जितना पर्दे के भीतर रहे उतना ही बेहतर है। हदीस में इस प्रकार आया है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने मोमिनों की माताओं (अपनी पत्नियों) को हज कराने के बाद फ़रमाया: "यह (हज) हो गया, फिर घर की चटाइयाँ (अर्थात घर में रहो)।" फिर यह भी प्राथमिकता (औलवियत) का आदेश है, न कि स्त्री के लिए दूसरा हज नाजायज़ है। उम्मुल मोमिनीन सिद्दीक़ा (रज़ियल्लाहु अन्हा) ने इसके बाद फिर हज किया। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसला ७७८ से २८०: एटा से, ८ रमज़ान मुबारक, प्रेषक इसहाक़, सहायक शिक्षक, तहसील स्कूल। जनाब मौलाना साहब! निम्नलिखित स्थिति पर विचार करके उत्तर अवश्य लिख दें: (१) ज़ैद के पास यात्रा और आने-जाने का ख़र्च अपने व्यक्तिगत सामर्थ्य से है। यदि माता-पिता मक्का मुकर्रमा के हज के लिए अनुमति न दें, तो क्या उक्त व्यक्ति का हज हो सकता है या क्या स्थिति है?

पृष्ठ ८३६ का ६६४

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

کتاب الحج

مسئلہ ۷۷۲ : مسئولہ واحد یار خاں صاحب از بریلی ۴ ذی قعدہ ۱۳۲۴ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ عورت کا حج کو جانا درست ہے یا نہیں ؟

الجواب : حج کی فرضیت میں عورت مرد کا ایک حکم ہے ، جو راہ کی طاقت رکھتا ہو اُس پر فرض ہے مرد ہو یا عورت ، جو ادا نہ کرے گا عذاب جہنم کا مستحق ہو گا ۔ عورت میں اتنی بات زیادہ ہے کہ اُسے بغیر شوہر یا محرم کے ساتھ لیے ، سفر کو جانا حرام ، اس میں کچھ حج کی خصوصیت نہیں ، کہیں ایک دن کے راستہ پر بے شوہر یا محرم جائے گی تو گنہگار ہو گی ، ہاں جب فرض ادا ہو جائے تو بار بار عورت کو مناسب نہیں کہ وہ جس قدر پردے کے اندر ہے اُس قدر بہتر ہے ۔ حدیث میں اس قدر ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے امہات المومنین کو حج کرا کر فرمایا ھذہ ثم حصر البیوت یہ ایک حج ہو گیا اس کے بعد گھر کی چٹائیاں ۔ پھر یہ بھی اولویت کا ارشاد ہے نہ کہ عورت کو دوسرا حج ناجائز ہے ، ام المومنین صدیقہ رضی اللہ تعالیٰ عنہا نے اس کے بعد پھر حج کیا ۔ واللہ تعالٰی اعلم ۔

مسئلہ ۷۷۸ تا ۲۸۰ : از ایٹہ ۸ رمضان مبارک مرسلہ اسحاق نائب مدرس تحصیلی اسکول جناب مولانا صاحب ! عرض حال ذیل کو ملاحظہ فرما کر جواب ضرور ضرور لکھ دیجئے گا : (۱) زید خرچ زاد راہ آمد و رفت کا اپنی ذات خاص سے رکھتا ہے اگر والدین اجازت حج مکہ معظمہ کی نہ دیں تو حج نامبردہ کا ہو سکتا ہے یا کیا ؟

(2) The debt on the parents is minimal, and the value of their landed property is far greater than that. (3) The mentioned Zaid has no wife or small children.

The Answer: Since Zaid has the means from his personal wealth, Hajj is obligatory (Fard) upon him. In an obligatory Hajj, the permission of parents is not required; rather, parents do not have the authority to forbid it. It is incumbent upon Zaid to proceed for Hajj even if his parents prevent him. The parents being in debt does not interfere with the obligation on this person. And Allah Almighty knows best, and His knowledge, may His glory be exalted, is most complete and most wise.

Problem 281: From the Old City, queried by Syed Muhammad Noorullah Sahib Ashrafi Jilani, Clerk of Darul Ifta Ahl-e-Sunnat, Bareilly, 8 Dhul-Hijjah 1323 AH. What do the scholars of religion and the jurists of the firm Shariah say regarding this matter: Whenever Zaid is encouraged to perform Hajj due to the possibility of it, he says, "We have often helped the pilgrims, therefore performing Hajj is not obligatory for us," and he does not accept the word of any scholar. So, is Hajj legally waived for him because of this?

The Answer: This statement is a word of disbelief (kufr). Hajj cannot be waived by helping pilgrims. It is obligatory for this person to repent and renew his Islam; he should perform a renewal of marriage and a renewal of Islam. And Allah Almighty knows best.

Problem 282: From Budaun, Maulvi Mohalla, house of Ata Ahmed Sahib, on behalf of the wife of the late Shah Abul Hussain Sahib, may he be forgiven, 7 Ramadan 1329 AH. Honorable Maulana Sahib! After the Sunnah greeting, let it be clear that I have an urgent need and distress to inquire about a matter that has occurred. It is this: This year as I go for the Hajj of the House of Allah, I am going with the intention of Hajj-e-Badal on behalf of my spiritual guide and grandfather, Hazrat Shah Aal-e-Rasool (may Allah be pleased with him). Upon arriving in Marehra, a new matter was discovered about which I was completely unaware until today. That matter is that the late, forgiven lady mother who had gone to the House of Allah, fell ill there with her final illness and passed away on the 28th of Dhul-Hijjah after reaching the place of Mina, and the Hajj was not completed. So now, performing Hajj on behalf of my late mother has become mandatory for me. Since I am taking my nephew with me as a Mahram, whose age is 19 years and this is the first time he is going to the House of Allah, the matter to be inquired from you is whether I should have this young man

perform Hajj on behalf of my late mother and myself perform Hajj on behalf of my spiritual guide?

(२) माता-पिता पर ऋण कम है और ज़मींदारी की वास्तविकता उससे कहीं अधिक मूल्य की है। (३) उपरोक्त ज़ैद की न तो पत्नी है और न ही छोटे बच्चे।

उत्तर: चूंकि ज़ैद के पास अपने निजी धन से क्षमता है, इसलिए उस पर हज फ़र्ज़ है। फ़र्ज़ हज में माता-पिता की अनुमति की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि माता-पिता को रोकने का अधिकार नहीं है। ज़ैद के लिए ज़रूरी है कि वह हज के लिए जाए, भले ही माता-पिता उसे रोकें। माता-पिता पर ऋण होना इस व्यक्ति पर हज की अनिवार्यता में बाधा नहीं डालता। अल्लाह तआला बेहतर जानता है और उसका ज्ञान, उसकी महिमा बुलंद हो, सबसे पूर्ण और सबसे सटीक है।

मसला 281: पुराने शहर से, सैयद मोहम्मद नूरुल्लाह साहब अशरफ़ी जिलानी द्वारा पुछा गया, लिपिक दारुल इफ़्ता अहल-ए-सुन्नत, बरेली, 8 ज़ुल-हिज्जा 1323 हिजरी। धर्म के विद्वान और शरीयत के मुफ़्ती इस मामले में क्या कहते हैं कि ज़ैद को जब भी हज की संभावना होने के कारण हज के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, तो वह कहता है कि हमने कई बार हज यात्रियों की मदद की है, इसलिए हम पर हज करना फ़र्ज़ नहीं है, और वह किसी विद्वान की बात नहीं मानता। तो क्या इससे शरीयत के अनुसार हज उस पर से समाप्त हो गया?

उत्तर: यह शब्द कुफ़्र (अविश्वास) का शब्द है। हज यात्रियों की मदद करने से हज समाप्त नहीं हो सकता। इस व्यक्ति पर तौबा और इस्लाम का नवीनीकरण फ़र्ज़ है। उसे निकाह का नवीनीकरण और इस्लाम का नवीनीकरण करना चाहिए। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला 282: बदायूँ से, मौलवी मोहल्ला, अता अहमद साहब का घर, स्वर्गीय और क्षमा प्राप्त शाह अबुल हुसैन साहब की पत्नी की ओर से, 7 रमज़ान 1329 हिजरी। आदरणीय मौलाना साहब! सुन्नत सलाम के बाद स्पष्ट हो कि मुझे एक घटित मामले के बारे में पूछने की सख्त ज़रूरत और व्याकुलता है। वह यह है कि इस साल मैं जो बैतुल्लाह (अल्लाह के घर) के हज पर जा रही हूँ, तो अपने पीर व मुर्शिद दादा साहब हज़रत शाह आल-ए-रसूल (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) की ओर से 'हज-ए-बदल' के इरादे से जा रही हूँ। मारेहरा पहुँचने पर एक नई बात पता चली जिससे मैं आज तक बिल्कुल अनजान थी। वह बात यह है कि स्वर्गीय और क्षमा प्राप्त पूज्य माता जी जो बैतुल्लाह गई थीं, वहां जाकर उन्हें मृत्यु रोग हो गया और 28 ज़ुल-हिज्जा को मिना पहुँचकर उनका देहांत हो गया और हज पूरा नहीं हुआ। तो अब मुझ पर मरहूमा माँ की ओर से हज करना लाज़िमी (अनिवार्य) हो गया है। चूँकि मैं

अपने साथ महरम के तौर पर भतीजे को ले जा रही हूँ जिसकी उम्र 19 साल है और यह भतीजा पहली बार बैतुल्लाह जा रहा है, तो आपसे यह बात पूछनी है कि क्या मैं इस लड़के से मरहूमा माँ की ओर से हज करवा दूँ और खुद पीर व मुर्शिद की ओर से हज करूँ?

पृष्ठ 665 / 836

(۲) والدین پر قرضہ قلیل اور حقیقت زمینداری اس سے کہیں زیادہ قیمت کی ہے۔ (۳) زید مذکور کی اہلیہ نیز عیال اطفال سے کوئی نہیں ہے۔

الجواب: جبکہ زید اپنے ذاتی روپے سے استطاعت رکھتا ہے تو حج اس پر فرض ہے، اور حجِ فرض میں والدین کی اجازت درکار نہیں بلکہ والدین کو ممانعت کا اختیار نہیں، زید پر لازم ہے کہ حج کو چلا جائے اگرچہ والدین مانع ہوں، والدین پر قرض ہونا اس شخص پر فرضیت میں خلل انداز نہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ جل مجدہ اتم واحکم۔

مسئلہ ۲۸۱: از شہر کہنہ مسئولہ سید محمد نور اللہ صاحب اشرفی جیلانی محرر دار الافتا اہل سنت بریلی ۸ ذی الحجہ ۱۳۲۳ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ زید کو بوجہ ہونے امکان حج کے جب کبھی حج کی ترغیب دی تو کہتا ہے کہ ہم نے حاجیوں کی اکثر مدد کی ہے پس ہم پر حج کرنا فرض نہیں ہے، اور کسی عالم کا قول نہیں مانتا، پس کیا اس سے حج شرعاً ساقط ہے؟

الجواب: یہ کلمہ کفر ہے، حاجیوں کی مدد کرنے سے حج ساقط نہیں ہوسکتا، اس شخص پر توبہ و تجدید اسلام فرض ہے، تجدید نکاح و تجدید اسلام کرے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۸۲: از بدایوں مولوی محلہ مکان عطا احمد صاحب از طرف اہلیہ شاہ ابوالحسین صاحب مرحوم و مغفور ۷ رمضان ۱۳۲۹ھ حضرت جناب مولانا صاحب! بعد سلام سنت واضح ہو مجھ کو سخت ضرورت و انتشار برائے دریافت ایک امر واقع ہو گیا وہ یہ ہے کہ میں اس سال جو حج بیت اللہ کو جاتی ہوں تو باراده حج بدل اپنے پیر و مرشد جناب نانا صاحب حضرت شاہ آل رسول رضی

اللہ تعالیٰ عنہ کے جاتی ہوں مارہرہ آکر ایک امر جدید دریافت ہوا کہ جس سے آج اور اب تک بے خبر محض تھی، وہ امر یہ ہے کہ جناب مرحومہ مغفورہ والدہ صاحبہ جو بیت اللہ تشریف لے گئی تھیں وہاں جاکر ان کو مرض الموت پیدا ہوا اور بتاریخ ۲۸ ٹھویں ذی الحجہ مقام منیٰ پہنچ کر انتقال ہو گیا اور حج نہیں ہوا، تو مجھ پر اب حج والدہ مغفورہ لازمی ہو گیا، چونکہ میں اپنے ہمراہ بوجہ محرمیت برادرزادہ کو لیے جاتی ہوں جس کی عمر ۱۹ سال کی ہے اور اول مرتبہ یہ برادر زادہ بیت اللہ جاتا ہے تو دریافت طلب آپ سے یہ امر ہے کہ میں اس بچہ سے حج والدہ مغفورہ کرادوں اور خود حج بعوض پیروشد

...perform, and in the past, I have performed the Hajj for my husband and my late father, and it has been eighteen years since my personal Hajj was completed. If the Hajj for the deceased mother cannot be performed by the nephew, then I will stay for a year and perform both the Hajj for the spiritual guide (Murshid) and the mother myself. Please provide a swift answer to these matters.

The Answer: After offering respectful greetings, it is requested that if the Hajj became obligatory (Fard) for the respected mother (may Allah have mercy on her) in that same year, and before that year there was not enough wealth etc. for Hajj to be obligatory, then by the grace of Allah, her Hajj has been performed. In fact, it has been performed in such a way that, if Allah wills, she will continue to perform Hajj every year until the Day of Judgment. And if it had become obligatory before that year, then certainly the obligation of Hajj remained upon her. If the respected [person/daughter] performs it on her behalf or gets it performed, it is a great reward. Now, it should be seen whether this young man (nephew), since reaching puberty, ever had enough wealth and means during the Hajj season for Hajj to become obligatory on him, or whether it has not become obligatory on him until now. If it never became obligatory on him at all, then the respected [person/daughter] should get him to perform Hajj on behalf of the late mother and perform it yourself on behalf of the enlightened and rightful spiritual guide and mentor (Radhiyallahu Anhu). If Hajj has already become obligatory on him, he would be a sinner for performing Hajj on behalf of another, but the Hajj for the person he performs it for will be valid. The sin will be upon him. In such a case, it is also disliked (Makruh) to ask him to perform Hajj on behalf of another, as it is like commanding someone to commit a sin. More than this would be a breach of etiquette!

Problem 283: From Nawab Maulvi Sultan Ahmad Khan Sahib, 22 Dhu al-Qi'dah 1322 AH. What do the scholars of religion say regarding the conditions for Hajj-e-Badal (proxy Hajj)? Explain and you shall be rewarded.

The Answer: Hajj-e-Badal, which means performing the obligatory Hajj on behalf of another as a representative to discharge their obligation, is subject to these conditions: (1) The person on whose behalf Hajj is being performed must have had Hajj become obligatory on them before the proxy Hajj is arranged. If a poor person got Hajj performed and then became wealthy, they must perform Hajj themselves. (2) The Mahjuj Anhu (the one on whose behalf Hajj is performed) must be unable to

perform it personally before the proxy (na'ib) stays at Arafat. If they arranged Hajj while having the ability and then became unable, re-arranging the Hajj (injaj) becomes necessary. (3) If the inability was potentially removable, such as imprisonment or illness, then the condition is that it persists until death. If after the proxy Hajj the person becomes capable themselves, performing it personally becomes obligatory. This is contrary to inability that is not capable of being removed, such as blindness, unless miraculously...

फ़तावा-ए-रज़विया - जिल्द दहम (खंड 10)

...करूँ और मैं पहले अपने पति और अपने स्वर्गीय पिता का हज करके आ चुकी हूँ और मेरा अपना निजी हज अठारह वर्ष पहले हो चुका था। यदि भतीजे से स्वर्गवासी माता का हज न हो सके तो मैं स्वयं एक वर्ष रुककर अपने मुर्शिद (आध्यात्मिक गुरु) और माता दोनों का हज करूँगी। इन विषयों का उत्तर शीघ्र प्रदान करें।

उत्तर: श्रद्धापूर्वक अभिवादन के बाद निवेदन है कि यदि आदरणीया माता (अल्लाह उन पर कृपा करे) पर उसी वर्ष हज अनिवार्य (फ़र्ज़) हुआ था और उससे पहले के वर्षों में इतना धन आदि नहीं था कि हज फ़र्ज़ होता, तो अल्लाह के अनुग्रह से उनका हज संपन्न हो गया। बल्कि इस प्रकार संपन्न हुआ कि इंशाअल्लाह वह प्रलय तक हर वर्ष हज करती रहेंगी। और यदि उस वर्ष से पहले ही फ़र्ज़ हो चुका था, तो निश्चित रूप से हज का दायित्व उन पर शेष रहा। यदि आदरणीया उनकी ओर से हज करें या करवाएं तो यह महान पुण्य (अज्र) है। अब यह देखना चाहिए कि यह साहबज़ादे (भतीजे) जब से वयस्क हुए हैं, क्या किसी वर्ष हज के दिनों में उनके पास इतना धन और सामान था कि उन पर हज फ़र्ज़ हो गया हो, या अब तक उन पर फ़र्ज़ नहीं हुआ है। यदि उन पर मूलतः फ़र्ज़ नहीं हुआ है, तो आदरणीया उनसे स्वर्गीय माता की ओर से हज करवाएं और स्वयं प्रबुद्ध एवं सत्य मुर्शिद-ए-बरहक़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) की ओर से करें। और यदि उन पर स्वयं हज फ़र्ज़ हो चुका हो, तो वे दूसरे की ओर से हज करने के कारण गुनहगार होंगे, परन्तु जिसकी ओर से हज करेंगे उसका हज अदा हो जाएगा, गुनाह उन पर रहेगा। और ऐसी स्थिति में उनसे दूसरे का हज करवाना भी मकरूह (नापसंद) है क्योंकि यह एक गुनाह का हुक्म देना है। शिष्टाचार की सीमा इससे अधिक कुछ कहने की अनुमति नहीं देती!

मसला २८३: नवाब मौलवी सुल्तान अहमद खाँ साहब की ओर से, २२ ज़ीक़ादा १३२२ हिजरी। धर्म के विद्वान इस विषय में क्या कहते हैं कि हज-ए-बदल (प्रतिनिधि हज) की क्या-क्या शर्तें हैं? स्पष्ट करें, आपको पुण्य मिलेगा।

उत्तर: हज-ए-बदल, अर्थात दूसरे की ओर से प्रतिनिधि के रूप में अनिवार्य हज करना ताकि उसके ऊपर से दायित्व समाप्त हो जाए, इन शर्तों के साथ मशरूत (अनुबंधित) है: (१) जिसकी ओर से हज किया जाए, हज करवाने से पहले उस पर हज फ़र्ज़ हो चुका हो। यदि किसी निर्धन ने हज करवा दिया और फिर धनी हो गया, तो उसे स्वयं हज करना फ़र्ज़ होगा। (२) महजूज अन्हु (जिसकी ओर से हज

हो रहा है) हज-ए-बदल करने वाले प्रतिनिधि (नायब) के अराफ़ात में ठहरने (वक़ूफ़-ए-अरफ़ा) से पहले स्वयं हज करने से असमर्थ हो। यदि समर्थ रहते हुए हज करवाया और फिर असमर्थ हो गया, तो नए सिरे से हज करवाना (इंज़ाज) अनिवार्य होगा। (३) यदि असमर्थता ऐसी थी जिसका दूर होना संभव था, जैसे जेल या बीमारी, तो शर्त यह है कि वह मृत्यु तक बनी रहे। यदि हज के बाद व्यक्ति स्वयं सक्षम हो गया, तो उसे स्वयं हज करना फ़र्ज़ होगा। इसके विपरीत वह असमर्थता जो दूर होने योग्य नहीं है, जैसे अंधापन, जब तक कि अलौकिक रूप से...

کروں اور میں سابق میں اپنے شوہر اور اپنے والد مغفور کا حج کر کے آئی ہوں اور میرا ذاتی حج عرصہ اٹھارہ سال ہوا کہ ہوچکا تھا، اگر برادر زادہ سے حج والدہ مرحومہ نہ ہوسکتا ہو تو میں خود قیام کر کے ایک سال تک دونوں حج مرشد و والدہ کروں، ان امور کا جواب جلد مرحمت ہو۔

الجواب: بعد ادائے تسلیم خادمانہ ملتمس اگر حضرت کی والدہ ماجدہ رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہا پر اسی سال حج فرض ہوا تھا اس سے پہلے کسی برس میں مال وغیرہ اتنا نہ تھا کہ حج فرض ہوتا تو جب تو ان کا حج بفضلہ تعالیٰ ادا ہوگیا، بلکہ ایسا ادا ہوا کہ ان شاء اللہ قیامت تک ہر سال حج ادا کرتی رہیں گی، اور اگر اس سال سے پہلے فرض ہوچکا تھا تو البتہ حج فرض اُن پر باقی رہا، حضرت ان کی طرف سے ادا فرمائیں یا ادا کرا دیں تو اجر عظیم ہے، اب دیکھا جائے کہ یہ صاحبزادے جب سے بالغ ہوئے کسی سال زمانہ حج میں مال وغیرہ اتنا سامان ان کے پاس تھا کہ ان پر حج فرض ہو گیا یا اب تک ان پر فرض نہ ہوا اور اگر ان پر اصلاً فرض نہ ہوا تو حضرت ان کو والدہ ماجدہ کی طرف سے حج کرا دیں اور خود پُر نور پیر و مرشد بر حق رضی اللہ تعالیٰ عنہ کی طرف سے کریں، اور اگر خود ان پر حج فرض ہو لیا ہو تو یہ دوسرے کی طرف سے حج کرنے سے گنہگار ہوں گے مگر حج جس کی طرف سے کریں گے ادا ہو جائے گا ان پر گناہ رہے گا اور ایسی صورت میں ان سے حج غیر کرانا بھی مکروہ ہے کہ ایک گناہ کا حکم دینا ہے، زیادہ حد ادب ! مسئلہ ۲۸۳: از نواب مولوی سلطان احمد خاں صاحب ۲۲ ذیقعدہ ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ حج بدل کی کیا کیا شرائط ہیں؟ بینو اتوجروا الجواب: حج بدل یعنی نیابۃً دوسرے کی طرف سے حج فرض ادا کرنا کہ اُس پر سے اسقاطِ فرض کرے ان شرائط سے مشروط ہے: (۱) جس کی طرف سے حج کیا جائے قبل الحجاج اس پر حج فرض ہو، اگر فقیر نے

حج کرا دیا پھر غنی ہوا خود حج کرنا فرض ہوگا۔ (۲) محجوج عنہ حج بدل یعنی نائب کے وقوفِ عرفہ کرنے سے پہلے خود ادا سے عاجز ہو، اگر بحال قدرت حج کرایا پھر عاجز ہو گیا از سر نو انجاج لازم ہوگا۔ (۳) عجز اگر ممکن الزوال تھا مثل حبس و مرض، تو شرط ہے کہ تادمِ مرگ قائم رہے، اگر بعد حج خود قادر ہوا خود ادا فرض ہو گی بخلاف اس عجز کے کہ قابل زوال نہیں، جیسے نابینائی اگر بطور خرقِ عادت

Even if additional Hajj rituals are performed, repetition is not necessary. (4) The person performing Hajj on behalf of another (Hajj-e-Badal) should intend a single Hajj on behalf of only one 'Mahjuj-un-anhu' (the person for whom Hajj is being done), for example: 'I enter Ihram on behalf of so-and-so' or 'O Allah, I am present on behalf of so-and-so'. If he does not intend on his behalf, or intends two Hajj rituals—one on his behalf and one for himself, or on behalf of two people—one for one person and one for another principal (muneeb), then it will not be sufficient. (5) This Hajj must be by the command of the 'Mahjuj-un-anhu'. Hajj on behalf of another without permission will not be sufficient, except when an heir performs or arranges Hajj on behalf of his deceased ancestor, as he stands in his place as a successor (khalifa). (6) Expenses for travel and all other Hajj expenditures must be entirely or mostly from the wealth of the 'Mahjuj-un-anhu'. (7) If the Hajj is during the lifetime of the 'Mahjuj-un-anhu', then only the person he commanded must perform it. If that person has it done by someone else, it will not be fulfilled. If it is after the death of the 'Mahjuj-un-anhu', the appointee can appoint someone else in his place, even if the deceased named him specifically in the will to perform Hajj. However, if he had explicitly forbidden it, saying only he should perform it and no one else, then someone else will not be sufficient. (8) The person performing Hajj-e-Badal should travel most of the way on a mount. If, despite having sufficient funds for expenses, he performs Hajj on foot, he must return the expenses, and the Hajj will not be credited to the 'Mahjuj-un-anhu'. (9) If the 'Mahjuj-un-anhu' is from the 'Afaqi' (outside the Miqat boundaries), it is necessary that an Afaqi Hajj be performed on his behalf. If he sent someone for Hajj, but that person entered Ihram for Umrah first and then entered Ihram for Hajj from Makkah, it will not count as Hajj on his behalf because this becomes a 'Makki' Hajj, not an 'Afaqi' one. Yes, if close to Hajj, he goes out towards the Miqat and enters Ihram from there, then it is permissible as it becomes an Afaqi Hajj, not Makki. (10) He should not contravene instructions; for example, if he was commanded to perform Hajj-e-Ifrad (Hajj alone) but he performed Hajj-e-Qiran or Hajj-e-Tamattu, he must return the expenses and the Hajj will not count on behalf of the principal. (11) The person performing Hajj-e-Badal must perform a valid Hajj this time. Hajj by an immature child or an insane person is not sufficient. However, Hajj by a 'Murahiq' (a child nearing puberty) is sufficient. Similarly, if he invalidates the Hajj, it will not be sufficient even if he makes it up later. There are twenty (20) conditions in

'Mansak-e-Mutaqassit'; they have been condensed into these eleven. And Allah Almighty knows best.

---

1. Al-Mansak al-Mutaqassit with Irshad al-Sari, Chapter on Hajj on behalf of another, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 292. Page 667 of 836

अतिरिक्त हज कार्य (अहनाज) भी हो जाएं तो दोहराना जरूरी नहीं। (4) हज-ए-बदल करने वाला केवल एक ही 'महजूज अनहु' (जिसकी ओर से हज किया जा रहा है) की ओर से एक ही हज की नीयत करे, जैसे: 'मैंने फ़लाँ की ओर से एहराम बांधा' या 'ऐ अल्लाह! मैं फ़लाँ की ओर से हाज़िर हूँ'। यदि उसने उसकी ओर से नीयत नहीं की या दो हज की नीयत की—एक उसकी ओर से और एक अपनी ओर से, या दो व्यक्तियों की ओर से नीयत की—एक उसके लिए और एक किसी अन्य मुनीब (प्रधानाचार्य) के लिए, तो यह पर्याप्त नहीं होगा। (5) यह हज महजूज अनहु के आदेश से होना चाहिए। बिना अनुमति किसी दूसरे की ओर से हज पर्याप्त नहीं होगा, सिवाय इसके कि जब वारिस अपने पूर्वज की ओर से हज करे या कराए, क्योंकि वह उत्तराधिकारी के रूप में उनके स्थान पर खड़ा होता है। (6) आने-जाने के खर्च और हज के अन्य सभी खर्च पूर्णतः या अधिकांशतः महजूज अनहु के धन से होने चाहिए। (7) यदि हज महजूज अनहु के जीवनकाल में हो, तो जिसे उसने आदेश दिया वही हज करे। यदि वह किसी और से करा दे, तो हज अदा नहीं होगा। और यदि महजूज अनहु की मृत्यु के बाद हो, तो नियुक्त व्यक्ति अपनी जगह किसी और को नियुक्त कर सकता है, भले ही मृतक ने वसीयत में उसका नाम लेकर कहा हो कि 'फ़लाँ मेरी ओर से हज करे'। हाँ, यदि उसने स्पष्ट रूप से मना किया था कि वही करे, दूसरा नहीं, तो अब दूसरा पर्याप्त नहीं है। (8) हज-ए-बदल करने वाला अधिकांश रास्ता सवारी पर तय करे। यदि पर्याप्त खर्च होने के बावजूद वह पैदल हज करेगा, तो उसे खर्च वापस करना होगा और हज उसकी ओर से नहीं माना जाएगा। (9) जब महजूज अनहु 'आफ़ाक़ी' (मीक़ात की सीमाओं से बाहर रहने वाला) हो, तो अनिवार्य है कि उसकी ओर से आफ़ाक़ी हज किया जाए। यदि उसने हज के लिए भेजा, उसने उमरा का एहराम बांधा और उमरा के बाद मक्का मुअज़्ज़मा से हज का एहराम बांधा, तो उसकी ओर से हज नहीं होगा क्योंकि यह हज 'मक्की' हो गया, आफ़ाक़ी नहीं। हाँ, यदि हज के करीब वह मीक़ात की ओर निकल जाए और वहाँ से हज का एहराम बांधे, तो जायज़ है क्योंकि वह आफ़ाक़ी हज हुआ, मक्की नहीं। (10) आदेश का उल्लंघन न करे; उदाहरण के लिए, यदि उसे केवल हज (इफ़राद) के लिए कहा गया था लेकिन उसने क़िरान या तमत्तु किया, तो वह खर्च वापस करेगा और हज उसकी ओर से नहीं होगा। (11) हज-ए-बदल करने वाला इस बार सही हज अदा करे। नासमझ बच्चे या पागल का हज पर्याप्त नहीं है। हाँ, 'मुराहिक़' (यौवन के करीब का बच्चा) का हज पर्याप्त है। इसी तरह, यदि उसने हज को फ़ासिद (अमान्य) कर

दिया, तो वह पर्याप्त नहीं होगा भले ही वह उसकी क़ज़ा (भरपाई) ही क्यों न करे। 'मंसक-ए-मुतक़स्सित' में बीस (20) शर्तें हैं, वे इन ग्यारह में आ गई हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

---

1. अल-मंसक अल-मुतक़स्सित मअ इरशाद अल-सारी, बाबुल हज अनिल ग़ैर, दारुल किताब अल-अरबी, बेरुत, पृ. 292। पृष्ठ 667 of 836

بعدِ احناج زائد بھی ہو جائے اعادہ ضرور نہیں۔ (۴) حج بدل کرنے والا تنہا ایک محجوج عنہ کی طرف سے حج واحد کی نیت کرے مثلاً احرمت عن فلان یا اللھم لبیک عن فلان ۱ اگر اس کی طرف سے نیت نہ کی یا دو حج کی نیت کی ایک اس کی طرف سے ایک اپنی طرف سے یا دو شخصوں کی طرف سے نیت کی ایک اس کی جانب ایک منیبِ آخر کی جانب سے، تو کافی نہ ہوگا۔ (۵) یہ حج بامر محجوج عنہ ہو بلا اجازت دوسرے کی طرف سے حج کافی نہ ہوگا مگر جبکہ وارث اپنے مورث کی طرف سے حج کرے یا کرائے لقیامہ مقامہ خلافۃً۔ (۶) مصارف آمد و رفت و سائر نفقہ حج کل یا اکثر مال محجوج عنہ سے ہوں۔ (۷) حج اگر بحیات محجوج عنہ ہو تو جسے اس نے امر کیا وہی حج کرے، وہ دوسرے سے کرا دے گا تو ادا نہ ہوگا اور اگر بعدِ وفات محجوج عنہ ہے تو مامور دوسرے کو بھی اپنی جگہ قائم کرسکتا ہے اگرچہ میت نے اس کا نام لے کر وصیت کی ہو کہ فلاں میری طرف سے حج کرے، ہاں اگر صراحۃً اس نے نہی کر دی تھی کہ وہی کرے، نہ دوسرا، تو اب دوسرا کافی نہیں۔ (۸) حج بدل کرنے والا اکثر راستہ سواری پر طے کرے اگر باوصف گنجائش نفقہ پیادہ حج کرے گا نفقہ واپس دے گا اور حج اس کی طرف سے نہ ہوگا۔ (۹) محجوج عنہ جب اہل آفاق سے ہو تو لازم ہے کہ اس کی طرف سے حج آفاقی کیا جائے اگر اس نے حج کو بھیجا اس نے عمرہ کا احرام باندھا بعد عمرہ مکہ معظمہ سے احرام حج باندھا اس کی طرف سے حج نہ ہوگا کہ یہ حج مکی ہوانہ آفاقی، ہاں اگر قریب حج میقات کی طرف نکل کر احرام حج میقات سے باندھے تو جائز ہے کہ حج آفاقی ہوانہ مکی۔ (۱۰) مخالفت نہ کرے مثلاً تنہا حج کے لیے امر کیا تھا اس نے قران یا تمتع کیا نفقہ واپس دے گا اور حج اس کی طرف سے نہ ہوگا۔ (۱۱) حج بدل کرنے والا حج صحیح اس دفعہ میں ادا کرے، ناعاقل بچے یا مجنون کا حج کافی نہیں، ہاں

مراہق کا کافی ہے، یونہی اگر وہ حج فاسد کر دیا کافی نہ ہوگا اگرچہ قضا بھی کرے۔ بیس ۲۰ شرطیں منسک متقسط میں ہیں انہیں گیارہ میں آگئیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم

---

1 المنسک المتقسط مع ارشاد الساری باب الحج عن الغیر دار الکتاب العربی بیروت ص ۲۹۲)

Fatawa Rizwia Volume 10

Issue 284: From Marehra Mutahira, the holy shrine of Hazrat Syed Hamid Hasan Mian Sahib Qibla, may his blessings endure. 16 Shawwal 1331 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: A widow, fifty-five years of age, has already sent people twice on her behalf to perform Hajj-e-Badal. Some people told her that those Hajjs were not valid and she should go for Hajj herself. Because she didn't have a mahram, she got married, but she is weak and ill. In this situation, were those Hajj-e-Badals fulfilled, or is Hajj now obligatory for her, or what is the ruling? Clarify and be rewarded. The Answer: For anyone who has Hajj-e-Badal performed on their behalf during their lifetime due to inability and compulsion, the condition for the validity of that Hajj is that the compulsion must persist until the end of their life. If, after the Hajj-e-Badal, the compulsion ceases and they gain the ability to perform Hajj themselves, then all the Hajj-e-Badals performed on their behalf previously are nullified as obligatory acts. They remain as voluntary (nafl) rewards, but the obligation is not fulfilled. Now it is obligatory for them to perform Hajj themselves. If they neglect it, the time passes, and they become disabled again, it is necessary to have Hajj-e-Badal performed again. Yes, if someone's disability is such that it normally never goes away and they had Hajj-e-Badal performed, and afterwards, purely by Divine power, for example through the miracle of a saint, that permanent excuse is removed - for example, a blind person had Hajj-e-Badal performed and then the Lord of Honor gave them sight - then their Hajj-e-Badal is not nullified, that is sufficient. If they perform Hajj themselves, it's a blessing, otherwise the obligation is fulfilled. Such a removal of excuse through a miracle that defies norms is not considered under regular rules. This is the legal (Sharia) ruling. From the nature of the question, it's clear that the woman either didn't have such a genuine compulsion previously that she couldn't go, or there was a compulsion due to illness, weakness, etc., which later ceased, as she intended to perform Hajj herself. A clear proof of this is her getting married for this purpose, otherwise what need did a fifty-five-year-old woman have for marriage? In any case, in both scenarios, those two Hajj-e-Badals were either insufficient from the start or are now nullified. Only the reward for voluntary Hajj remains. The obligation remains on her neck; she should perform it herself. If she is helpless and without hope, then she should have Hajj-e-Badal performed again. Success is from Allah, and Allah Almighty knows best.

Issue 285 to 288: From Pir Bahor Bankipur, from Muhammad Ismatullah Sahib. 29 Muharram 1332 AH. What do the scholars of religion and the jurists of the clear

Sharia say regarding this matter: A wealthy person wants to have Hajj-e-Badal performed on behalf of his deceased wife (who was wealthy and had a firm intention and desire for Hajj). Therefore, may the ruling of the noble Sharia be declared for him in the following matters.

फ़तावा रिज़विया खंड 10

मसाला 284: मारहरा मुतहरा, दरगाह मुक़द्दस हज़रत सैय्यद हामिद हसन मियां साहब क़िबला, दामत बरकातुहुम से, 16 शव्वाल 1331 हिजरी। धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: एक विधवा, जिसकी उम्र पचपन वर्ष है, पहले ही अपनी ओर से लोगों को भेजकर दो बार हज-ए-बदल करवा चुकी है। इस पर कुछ लोगों ने उससे कहा कि वे हज मान्य नहीं हुए और वह स्वयं हज पर जाए। महरम न होने के कारण उसने निकाह कर लिया, लेकिन वह कमज़ोर और बीमार है। इस स्थिति में, क्या वे हज-ए-बदल अदा हो गए या अब उस पर हज वाजिब है, या क्या हुक्म है? स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें। उत्तर: जीवनकाल में जो कोई भी अक्षमता और मजबूरी के कारण अपनी ओर से हज-ए-बदल करवाता है, उस हज की वैधता के लिए शर्त यह है कि वह मजबूरी जीवन के अंत तक बनी रहे। यदि हज-ए-बदल के बाद मजबूरी समाप्त हो गई और स्वयं हज करने की क्षमता प्राप्त हो गई, तो उससे पहले अपनी ओर से करवाए गए सभी हज-ए-बदल निरस्त हो गए। वे केवल नफ़्ल (स्वैच्छिक) पुण्य के रूप में रह गए, फ़र्ज़ पूरा नहीं हुआ। अब उस पर फ़र्ज़ है कि वह स्वयं हज करे। फिर यदि उसने लापरवाही की और समय बीत गया और अब फिर से मजबूरी आ गई, तो नए सिरे से हज-ए-बदल कराना अनिवार्य है। हाँ, यदि किसी की अक्षमता ऐसी हो जो सामान्यतः कभी दूर नहीं होती और उसने हज-ए-बदल करवा लिया, और उसके बाद विशुद्ध रूप से ईश्वरीय शक्ति से, उदाहरण के लिए किसी वली के चमत्कार से, वह स्थायी बहाना दूर हो गया - जैसे किसी अंधे व्यक्ति ने हज-ए-बदल करवाया था और फिर सम्मान के स्वामी ईश्वर ने उसे आँखें दे दीं - तो उसका वह हज-ए-बदल निरस्त नहीं हुआ, वही पर्याप्त है। यदि वह स्वयं हज करता है तो यह सौभाग्य है, अन्यथा फ़र्ज़ पूरा हो गया। चमत्कार के माध्यम से बहाने का ऐसा दूर होना जो सामान्य नियमों के विरुद्ध हो, उसे (नियम परिवर्तन के लिए) मान्य नहीं माना जाता। शरीयत का मसला तो यह है। और सवाल की स्थिति से स्पष्ट है कि औरत ने पहले जो दो हज-ए-बदल करवाए, या तो वह वास्तव में ऐसी मजबूरी नहीं थी कि वह स्वयं न जा सकती, या बीमारी और कमज़ोरी आदि के कारण मजबूरी थी जो बाद में समाप्त हो गई, क्योंकि उसने स्वयं हज करने का इरादा किया। इसका स्पष्ट प्रमाण उसी नियत से उसका निकाह करना है, अन्यथा एक पचपन वर्षीय महिला को निकाह की क्या आवश्यकता थी? बहरहाल, इन दोनों स्थितियों में से जो भी हो, वे दोनों हज-ए-बदल या तो शुरू से ही अपर्याप्त थे या अब निरस्त हो गए हैं। केवल नफ़्ल का सवाब रह गया है। फ़र्ज़ गर्दन पर बाकी है; वह स्वयं इसे अदा

करे। और यदि वह लाचार और निराश हो जाए, तो फिर से हज-ए-बदल करवाए। और सफलता अल्लाह से है, और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

मसाला 285 से 288: पीर बहोर बांकीपुर से, मुहम्मद इस्मतुल्लाह साहब की ओर से, 29 मुहर्रम 1332 हिजरी। धर्म के विद्वान और स्पष्ट शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या कहते हैं: एक संपन्न व्यक्ति अपनी मृत पत्नी की ओर से हज-ए-बदल करवाना चाहता है (जो धनवान थीं और हज का पक्का इरादा और शौक रखती थीं)। अतः निम्न मामलों में उनके लिए शरीयत का हुक्म स्पष्ट किया जाए।

पृष्ठ 668/836

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

مسئلہ ۲۸۴: ازمارہرہ مطہرہ درگاہ مقدس حضرت سید حامد حسن میاں صاحب قبلہ دامت برکاتہم ۱۶ شوال ۱۳۳۱ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک بیوہ پچپن برس کی عمر ہے دوبارہ پہلے اپنی طرف سے لوگوں کو بھیج کر حج بدل کرا چکی ہے اس سے بعض صاحبوں نے کہا کہ وہ حج نہ ہوئے خود حج کو جا اس نے محرم نہ ہونے کی وجہ سے نکاح کیا مگر ضعیفہ مریضہ ہے اس صورت میں اس کے وہ حج بدل ادا ہو گئے یا اب خود اس پر حج لازم ہے یا کیا حکم ہے؟ بینوا توجروا۔ الجواب: زندگی میں جو کوئی حج بدل اپنی طرف سے بوجہ عجز و مجبوری کرائے اس حج کی صحت کے لیے شرط یہ ہے کہ وہ مجبوری آخر عمر تک مستمر رہے، اگر حج کے بعد مجبوری جاتی رہی اور بذات خود حج کرنے پر قدرت پائی تو اس سے پہلے جتنے حج بدل اپنی طرف سے کرائے ہوں سب ساقط ہو گئے حج نفل کا ثواب رہ گیا فرض ادا نہ ہوا، اب اس پر فرض ہے کہ خود حج کرے پھر اگر غفلت کی اور وقت گزر گیا اور اب دوبارہ مجبوری لاحق ہوئی تو ازسرنو حج بدل کرانا ضرور ہے، ہاں اگر کسی کی معذوری ایسی ہو جو عادۃً اصلاً زوال پذیر نہیں اور اس نے حج بدل کرالیا اور اس کے بعد بمحض قدرت الٰہی مثلاً کسی ولی کی کرامت سے وہ عذر نا قابل الزوال زائل ہو گیا مثلاً اندھے نے حج بدل کرایا تھا پھر رب العزت نے اسے آنکھیں دے دیں تو اس کا وہ حج بدل ساقط نہ ہوا وہی کافی ہے، خود اگر حج کرے سعادت ہے ورنہ فرض ادا ہو گیا، ایسازوال عذر کہ کرامت خرق عادت ہو معتبر نہیں، مسئلہ شرعیہ تو یہ ہے اور صورت سوال سے ظاہر کہ عورت نے پہلے جو دو حج بدل کرائے یا تو وہ حقیقتاً ایسی مجبوری نہ تھی کہ خود نہ جاسکتی یا مرض و ضعف و غیرہما کی وجہ سے مجبوری تھی اور بعد کو وہ مجبوری زائل ہوگئی کہ اس نے خود حج کا قصد کیا جس پر دلیل روشن ، اسی

نیت سے اس کا نکاح کرنا ہے ورنہ پچپن سالہ عورت کو نکاح کی کیا حاجت تھی، بہر حال ان دونوں صورتوں میں کوئی شکل ہو وہ دونوں حج بدل یا تو سرے سے ناکافی تھے یا اب ساقط ہو گئے، صرف ثواب نفل رہا، فرض گردن پر باقی ہے خود ادا کرے، اور مجبور و ناامید ہو تو پھر حج بدل کرائے۔ واللہ التوفیق واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۸۵ تا ۲۸۸: از پیر بہوڑ بانکی پور از محمد عصمت اللہ صاحب ۲۹ محرم ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک خوشحال شخص اپنی متوفی بیوی کی طرف سے (جو دولت مند تھیں اور شوق حج کا مصمم ارادہ رکھتی تھیں) حج بدل کرانا چاہتے ہیں لہذا ان کو امور ذیل میں حکم شرع شریف ناطق فرمایا جائے۔

Fatawa Razawiyya Volume 10

(1) Can a person who is capable and has already performed their obligatory Hajj perform Hajj al-Badal (proxy Hajj) on behalf of someone else or not? (2) Can a person who is not capable and for whom Hajj is not obligatory be appointed for Hajj al-Badal or not? (3) In any case, is it sufficient to appoint the person performing Hajj al-Badal by providing the expenses for the Hajj period specifically in Makkah al-Mukarramah, or not? (4) If the person performing Hajj al-Badal is chosen from near the residence of the person on whose behalf it is being performed, and all travel expenses are provided, would that be better, or should they be appointed from Mumbai or specifically from Makkah al-Mukarramah until the Hajj? Explain with references from books, and you will be rewarded by Allah, the Giver. (Explain with reference to the book so that you may receive a reward from Allah Al-Wahhab - Translator)

Answer: (1) They can do it. Allah Almighty knows best. (2) There is a difference of opinion on this, and it is better to avoid it. Allah Almighty knows best. (3) The types of Hajj al-Badal that are commissioned in this manner cannot discharge the obligation. Hajj is a worship composed of both physical and financial elements. For one upon whom Hajj was obligatory and who passed away without performing it, it is clear that they became incapable regarding the physical part. It is the mercy of the Lord, Mighty and Majestic, that He accepts Hajj al-Badal on their behalf from only the financial portion if they made a will. Further mercy upon mercy is that the Hajj arranged by the heir is also accepted, even if the deceased did not make a will. The person performing Hajj al-Badal should depart from the same city where the deceased resided so that the financial expenditure is complete; arranging Hajj from Makkah al-Mukarramah is not included in this. As for the reward, there is hope for good. However, those commissioning the Hajj take a fee for it, and when a fee is taken, where is the reward? And if they themselves do not receive a reward, what will they convey to the deceased? Particularly, some reckless individuals commit the injustice of taking money for Hajj al-Badal from four different people. May Allah Almighty guide the Muslims. Allah Almighty knows best. (4) Its answer has already been given above; expenses for both coming and going should be provided. Allah Almighty knows best.

Problem 289: From Meerut, post office Bahadur Garh, asked by Mr. Muhammad Sadiq, 22 Muharram al-Haram 1339 AH. Noble and venerable scholars! What is your ruling on this issue: a person went for Hajj al-Badal, and the one commissioning the Hajj gave him forty rupees for four months' expenses for his children, and gave him

fifty rupees for his own expenses up to Makkah al-Mukarramah, saying "I will provide the remaining expenses upon reaching Makkah al-Mukarramah," and the ship ticket for Hajj...

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

(1) क्या कोई समर्थ व्यक्ति जो अपना अनिवार्य हज पूरा कर चुका है, किसी और की ओर से हज-ए-बदल (प्रॉक्सी हज) कर सकता है या नहीं? (2) क्या कोई असमर्थ व्यक्ति जिस पर हज अनिवार्य नहीं है, हज-ए-बदल के लिए नियुक्त किया जा सकता है या नहीं? (3) किसी भी स्थिति में, क्या हज-ए-बदल करने वाले व्यक्ति को विशेष रूप से मक्का मुकर्रमा में हज की अवधि के खर्च देकर नियुक्त करना पर्याप्त है या नहीं? (4) यदि हज-ए-बदल करने वाले व्यक्ति को उस व्यक्ति के निवास स्थान के पास से चुना जाए जिसकी ओर से हज किया जा रहा है, और आने-जाने का सारा खर्च दिया जाए, तो क्या यह बेहतर होगा या उसे केवल मुंबई या विशेष रूप से मक्का मुकर्रमा से हज तक के लिए नियुक्त किया जाना चाहिए? किताबों के हवाले से स्पष्ट करें, अल्लाह वहाब से इनाम पाएँ। (किताब के हवाले से बयान कीजिए ताकि अल्लाह अल-वहाब से अज्र पाएँ- अनु.)

उत्तर: (1) कर सकता है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (2) इसमें मतभेद है और इससे बचना ही बेहतर है। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (3) इस प्रकार के हज-ए-बदल जो कराए जाते हैं उनसे अनिवार्य दायित्व (फर्ज़) पूरा नहीं हो सकता। हज शारीरिक और आर्थिक दोनों इबादतों का मिश्रण है। जिस पर हज फर्ज़ था और वह बिना किए मर गया, स्पष्ट है कि वह शारीरिक हिस्से से तो लाचार हो गया। यह रब्बे अज्ज़वजल की दया है कि वह उसकी ओर से केवल आर्थिक हिस्से से हज-ए-बदल स्वीकार फरमाता है यदि वह वसीयत कर गया हो। और दया पर दया यह है कि वारिस द्वारा हज कराना भी स्वीकार किया जाता है चाहे मृतक ने वसीयत न की हो। हज-ए-बदल करने वाले को उसी शहर से जाना चाहिए जो मृतक का शहर था ताकि आर्थिक व्यय पूर्ण हो; मक्का मुकर्रमा से ही हज करा देना इसमें शामिल नहीं है। रही बात सवाब (पुण्य) की, तो उसकी भी भलाई की उम्मीद है। हज कराने वाले साहब इस पर पारिश्रमिक (उजरत) लेते हैं, और जब पारिश्रमिक लिया गया तो सवाब कहाँ? और जब उन्हें स्वयं सवाब नहीं मिला तो मृतक को क्या पहुँचाएंगे? विशेष रूप से कुछ लापरवाह लोग यह जुल्म करते हैं कि चार-चार व्यक्तियों से हज-ए-बदल के पैसे ले लेते हैं। अल्लाह तआला मुसलमानों को हिदायत दे। अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (4) इसका उत्तर ऊपर आ चुका है और आने-जाने दोनों का खर्च दिया जाना चाहिए। अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला २८९: मेरठ डाकखाना बहादुरगढ़ से, प्रेषक मुहम्मद सादिक साहब, २२ मुहर्रम अल-हराम १३३९ हिजरी। आदरणीय विद्वानो! इस मामले में क्या हुक्म है कि कोई व्यक्ति हज-ए-बदल के लिए गया और हज कराने वाले ने उसे उसके बच्चों के चार महीने के खर्च के लिए चालीस रुपये दिए, और

उसे मक्का मुकर्रमा तक के खर्च के लिए पचास रुपये दिए और कहा कि "बाकी खर्च मक्का मुकर्रमा पहुँचने पर दूँगा", और हज के जहाज का टिकट...

पेज ८३६ का ६६९

فتاوی رضویہ جلد دہم

(۱) مستطیع شخص جو اپنا فرض ادا کر چکا کسی دوسرے کی طرف سے حج بدل کر سکتا ہے یا نہیں ؟ (۲) غیر مستطیع جس پر حج فرض نہیں ہے حج بدل کے واسطے مقرر ہو سکتا ہے یا نہیں ؟ (۳) بہر کیف حج بدل کرنے والے کو خاص مکہ معظمہ میں وہاں کا زمانہ حج کا خرچ دے کر مقرر کر لینا کافی ہے یا نہیں ؟ (۴) حج بدل کرنے والا شخص مبدل منہ کے مقامِ قیام کے قریب باش لیا جائے اور آمد و رفت کا تمام خرچ اس کو دیا جائے تو یہ افضل ہو گا یا صرف بمبئی یا خاص مکہ معظمہ میں حج تک مقرر کر لیا جائے ؟ وبینوا ابحو الۃ الکتاب توجروا عند اللہ الوھاب (کتاب کے حوالے سے بیان کیجئے اللہ وہاب سے اجر پائیے ۔ ت)

الجواب: (۱) کر سکتا ہے واللہ تعالٰی اعلم۔ (۲) اس میں اختلاف ہے اور بہتر احتراز واللہ تعالٰی اعلم۔ (۳) اس قسم کے حج بدل جو کرائے جاتے ہیں اُن سے فرض تو اُتر سکتا نہیں، حج عبادتِ بدنی اور مالی دونوں سے مرکب ہے، جس پر حج فرض تھا اور معاذ اللہ بے کئے مر گیا ظاہر ہے کہ بدنی حصہ سے تو عاجز ہو گیا رب عزوجل کی رحمت کہ صرف مالی حصہ سے اس کی طرف سے حج بدل قبول فرماتا ہے جبکہ وہ وصیت کر جائے اور رحمت پر رحمت یہ کہ وارث کا حج کرانا بھی قبول فرمایا جاتا ہے اگرچہ میت نے وصیت نہ کی، حج بدل والے کو اسی شہر سے جانا چاہئے جو شہر میت کا تھا تا کہ مالی صرف پورا ہو، مکہ معظمہ سے حج کرا دینا اس میں داخل نہیں، رہا ثواب اس کی امید بھی بخیر ہے، حج کرانے والے صاحب اس پر اجرت لیتے ہیں اور جب اجرت لی ثواب کہاں، اور جب انہیں کو ثواب نہ ملا میت کو کیا پہنچائیں گے، خصوصاً بعض متہور یہ ظلم کرتے ہیں کہ چار چار شخصوں سے حج بدل کے روپے لے لیتے ہیں، اللہ تعالٰی

مسلمانوں کو ہدایت فرمائے واللہ تعالیٰ اعلم۔ (۴) اس کا جواب اوپر آ چکا اور خرچ آمد و رفت دونوں دیا جائے واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۲۸۹: از میر ٹھ ڈاک خانہ بہادر گڑھ مسئولہ محمد صادق صاحب ۲۲ محرم الحرام ۱۳۳۹ھ

علماء عظام و کرام! اس مسئلہ میں کیا ارشاد ہوتا ہے کہ کوئی شخص حج بدل کو گیا اور حج کرنے والے نے چالیس روپے اس کے بال بچوں کے خرچ کے واسطے چار ماہ کے لیے دیے اور پچاس روپے اس کو خرچ کے واسطے مکہ معظمہ تک دیے اور کہا کہ باقی خرچ مکہ معظمہ جا کر دے دوں گا، اور ٹکٹ جہاز کا حج

Fatawa-e-Razvia Volume 10

...he took it on behalf of the person who appointed him. By the command of Allah Almighty, after traveling six hundred miles, the ship returned due to a fire breaking out. Now, the person who arranged for Hajj said, "Return the ship ticket to me," so he immediately returned it. The person performing Hajj-e-Badal (proxy pilgrimage) said, "Why are you taking the ticket back? I will go on another ship whether you go or not; give me the remaining expenses." The person who arranged for Hajj said, "I am not going myself now; I am no longer having it done on behalf of my father." So, the person performing Hajj-e-Badal immediately returned the ticket. For one and a half months, the person performing Hajj-e-Badal lived on those fifty rupees, and the train fare from Mumbai to Moradabad was also spent from those same fifty rupees for one journey. Now, the person who arranged for Hajj says, "Calculate and return whatever money is left with you." The person who was to perform Hajj-e-Badal said, "Everything I had was spent." Now, is the person who was to perform Hajj-e-Badal liable to pay any money? Furthermore, the person performing Hajj-e-Badal suffered a loss of two months of time, and his monthly income was thirty-two rupees.

The Answer: If the mentioned person spent that money on the intended task, he is not liable for compensation. However, if he spent it on any other personal task, then compensation is mandatory. Regarding the claim that the money was spent on the intended task, the statement of the mentioned person under oath is reliable. He has no right to receive compensation for the loss of time, even if his monthly income were a thousand rupees. And Allah Almighty knows best.

From Patna, Azeemabad, sent by Muhammad Umar Sahib, 13 Ramadan al-Mubarak 1321 AH.

Problem 290 to 291: (1) A person is intending to visit the Holy House of Allah (Hajj). He has an ailment such that after defecation, red drops continue to pass for more than an hour, making it impossible for him to be without a loincloth. After an hour, when the drops stop, he performs istinja (cleansing) and wears clothes. How should such a person, who cannot be without a loincloth, wear the Ihram? Because the lower sheet of the Ihram will become impure daily, and due to old age and illnesses, he is also unable to perform Ghusl (ritual bath). Should he just perform Tayammum instead of Ghusl, or what? (2) In winter, can one wrap a blanket, etc., over the Ihram sheets, or what? If not, what is the way to be protected from the harshness of winter? Provide a ruling, you will be rewarded.

फतावा-ए-रज़विया जिल्द १० (भाग १०)

...उसने उसे (हज) कराने वाले की ओर से ले लिया। खुदावंद तआला के हुक्म से जहाज छह सौ मील जाकर आग लगने के कारण वापस आ गया। अब हज कराने वाले ने कहा कि जहाज का टिकट मुझे वापस कर दो, तो उसने तुरंत वापस कर दिया। इस हज बदल करने वाले ने कहा कि आप टिकट वापस क्यों लेते हैं, अब मैं दूसरे जहाज में चला जाऊंगा चाहे आप जाएं या न जाएं बाकी और खर्च मुझे दे दीजिए। हज कराने वाले ने कहा कि मैं खुद तो जाता ही नहीं हूँ, अब मैं पिता की ओर से नहीं कराता हूँ। तो हज बदल कराने वाले ने तुरंत टिकट वापस कर दिया। डेढ़ महीने तक हज बदल करने वाले ने उन पचास रुपयों में से खाया और मुंबई से मुरादाबाद तक का रेल का किराया भी उन्हीं पचास रुपयों में से एक तरफ का खर्च हुआ। अब हज कराने वाले कहते हैं कि हिसाब करके जो रुपया तुम्हारे पास बचा है वह हमें दे दो। हज बदल करने वाले ने कहा कि मेरे पास सब खर्च हो गया। अब हज बदल करने वाले के जिम्मे रुपया देना आता है या नहीं? और हज बदल करने वाले का दो महीने का नुकसान हुआ और हज बदल करने वाले की मासिक आय बत्तीस रुपये थी।

उत्तर: अगर उक्त व्यक्ति ने वह रुपया उसी काम में खर्च किया है तो उस पर कोई हर्जाना नहीं है। और अगर उसे छोड़कर किसी अपने निजी काम में खर्च किया है तो हर्जाना अनिवार्य है। और इस बात में कि वे रुपये उसी काम में खर्च हुए, उक्त व्यक्ति का शपथ के साथ दिया गया बयान विश्वसनीय है। उसे समय के नुकसान का मुआवजा पाने का कोई अधिकार नहीं है, चाहे उसकी मासिक आय एक हजार रुपये ही क्यों न हो। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

पटना, अज़ीमाबाद से प्रेषित, मुहम्मद उमर साहिब, 13 रमजान अल-मुबारक 1321 हिजरी।

मसला 290 से 291: (1) एक व्यक्ति बैतुल्लाह शरीफ (हज) के लिए जाने का इरादा रखता है और उसे एक बीमारी है कि मल त्याग के बाद एक घंटे से अधिक समय तक लाल बूंदें लगातार आती रहती हैं, जिससे वह लंगोट के बिना नहीं रह सकता। एक घंटे के बाद जब बूंदें रुक जाती हैं, तब वह इस्तजा (सफाई) करके कपड़े पहनता है। तो ऐसा व्यक्ति जो लंगोट के बिना नहीं रह सकता, एहराम कैसे बांधे? क्योंकि एहराम का निचला कपड़ा तो रोजाना नापाक (अपवित्र) हो जाया करेगा, और बुढ़ापे और बीमारियों के कारण वह गुसल (स्नान) करने में भी मजबूर है। तो क्या वह गुसल के बदले केवल तयम्मुम कर ले या क्या करे? (2) सर्दियों में एहराम की चादरों के अलावा क्या कोई कंबल

आदि ऊपर से ओढ़ा जा सकता है? यदि नहीं, तो सर्दी की मार से सुरक्षित रहने का क्या तरीका है? उत्तर दें, पुण्य के भागी बनें।

पृष्ठ 670 का 836

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

...کرنے والے کی طرف سے اس نے لے لیا خداوند تعالیٰ کے حکم سے جہاز چھ سو میل جاکر بوجہ آگ لگنے کے واپس آگیا ، اب حج کرانے والے نے کہا کہ ٹکٹ جہاز کا مجھے واپس کردو، تو اس نے فوراً واپس کردیا اور اس حج بدل کرنے والے نے یہ کہا کہ آپ ٹکٹ واپس کیوں لیتے ہیں ، اب میں دوسرے جہاز میں چلا جاؤنگا چاہے آپ جائیں یا نہ جائیں باقی اور خرچ مجھے دے دیجئے ، حج کرانے والے نے کہا کہ میں خود تو جاتا ہی نہیں ہوں اب میں باپ کی طرف سے نہیں کراتا ہوں ، تو حج بدل کرانے والے نے فوراً ٹکٹ واپس کردیا اور ڈیڑھ ماہ حج بدل کرنے والے نے اس پچاس روپے میں سے کھایا اور کرایہ ریل کا ممبئی سے مراد آباد تک انہیں پچاس روپے سے خرچ ہوا ایک طرف ، اب حج بدل کرنے والے یہ فرماتے ہیں کہ حساب کر کے جو روپیہ تمہارے پاس بچا ہے وہ ہم کو دے دو، حج بدل کرنیوالے نے یہ کہا کہ میرے پاس سب خرچ ہوگیا ، اب حج بدل کرنے والے کے ذمہ روپیہ دینا آتا ہے یا نہیں ، اور حج بدل کرنے والے کا حرج دو ماہ کا ہوا اور حج بدل کرنے والے کی آمدنی ماہوار بتیس روپے کی تھی۔

الجواب: اگر وہ روپیہ شخص مذکور نے اسی کام میں اٹھائے تو ان کا تاوان اس پر نہیں اور اگر اس سے جدا کسی اپنے ذاتی کام میں اٹھائے تو تاوان لازم ہے اور اس بات میں کہ اسی کام میں وہ روپے صرف ہوئے شخص مذکور کا قول قسم کے ساتھ معتبر ہے اور حرجہ پانے کا اسے استحقاق نہیں اگرچہ اس کی ماہوار آمدنی ہزار روپے ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

از پٹنہ عظیم آباد مرسلہ محمد عمر صاحب ۱۳ رمضان المبارک ۱۳۲۱ھ

مسئلہ ۲۹۰ تا ۲۹۱ : (۱) ایک شخص عازم بیت اللہ شریف ہے اور اس کے ایک عارضہ یہ ہے کہ بعد اجابت قطرات سرخ زائد از ایک گھنٹہ برابر آیا کرتے ہیں کہ بغیر لنگوٹ نہیں رہ سکتا ہے ، بعد ایک گھنٹے کے جب قطرات موقوف ہوں تب استنجا کرکے کپڑا پہنتا ہے ، تو ایسا شخص جو بغیر لنگوٹ نہیں رہ سکتا احرام کیونکر باندھے کیونکہ لنگ احرام تو روز ناپاک ہوا کرے گا اور بسبب پیری اور بیماریوں کے غسل سے بھی مجبور ہے تو صرف تیمم بعوض غسل کرلے یا کیا؟ (۲) سرما میں سوا چادر احرام کے کوئی کمبل وغیرہ اوپر سے اوڑھ سکتا ہے یا کیا؟ اور نہیں تو صدمہ سرما سے محفوظ رہنے کی کیا صورت ہے؟ بینوا توجروا

Fatawa Razawiya, Volume 10

The Answer: Wearing a loincloth (langot) in Ihram is absolutely permissible, provided it is not sewn, because the prohibition of wearing sewn garments is based on customary usage, or covering the head and face. In an unsewn loincloth, neither of these two things is present.

Text from Ad-Durr al-Mukhtar

In Ad-Durr al-Mukhtar: After entering Ihram, one must avoid covering the face and head, unlike the rest of the body. One should avoid wearing shirts and trousers, meaning any garment tailored to fit the whole or part of the body. One should also avoid wearing a cloak (qaba). However, if the person in Ihram does not put their hands into the sleeves of the cloak, it is permissible, unless they button it or fasten it with a pin, then it is not permissible. By consensus, it is permissible for a person in Ihram to use a shirt or a cloak as a sheet/shawl, or to wrap themselves in a cloak as a quilt while sleeping, etc. - 1

Urdu Translation/Explanation

In Durr al-Mukhtar, it says: The pilgrim should avoid covering his face and head, unlike the rest of the body, and avoid wearing a shirt and trousers, meaning avoid wearing any garment that is made according to the size of a person's entire stature or part of the body, and avoid wearing a qaba (cloak). Or if the pilgrim does not put his hands in both sleeves of the qaba, it is permissible, but if he fastens it with a button or a pin, it is not permissible. And by consensus, it is permissible for the pilgrim to use a shirt and jubba (robe) as a sheet or wrap the jubba as a quilt while sleeping, etc. (T)

And in the state of such severe necessity, even if the loincloth were forbidden, permission would be granted because "necessities make the forbidden permissible." (Necessities make the prohibited things permissible. T) Umm al-Mu'minin (Aisha) may Allah be pleased with her, during the Hajj journey, ordered those carrying her litter to wear drawers (underwear) under their lower garment (tahband) due to a specific necessity, as mentioned in Sahih al-Bukhari. - 2 (As it is in Sahih al-Bukhari. T) It is permissible to cover oneself with a blanket, woolen cloth, or woolen shawl, etc., unsewn clothes, even if there are several of them. In fact, while sleeping, placing a cotton-padded garment or cloak over the body, leaving the face uncovered, or spreading it underneath is also not forbidden. Even while awake, one can throw these over the shoulders, provided they do not put their hands in the sleeves, nor tie buttons, nor fasten them by any other means, as we have already stated from 'Ad-Durr'. This is because it is not considered "customary wearing" (since it is not how it's

habitually worn. T). Nevertheless, for a weak person, two measures should be considered: first, it is more appropriate to perform 'Tamattu' (a type of Hajj), as it is better than 'Ihlaaj' and the duration of Ihram will be shorter, i.e., from the alignment of Yalamlam, which comes after Aden in the sea, only for the Umrah Ihram.

1. Ad-Durr al-Mukhtar, Book of Hajj, Section on Ihram, Mujtabai Press Delhi, 1/162
2. Sahih al-Bukhari, Chapter on what the pilgrim wears, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/209

फतावा रज़विया, खंड 10

उत्तर: एहराम में लंगोट बाँधना बिल्कुल जायज़ है बशर्ते कि वह सिला हुआ न हो, क्योंकि सिला हुआ कपड़ा पहनने की मनाही सामान्य तरीके से पहनने या सर और चेहरे को ढंकने से है। और बिना सिले लंगोट में ये दोनों बातें नहीं हैं।

अद-दुर अल-मुख्तार का पाठ

अद-दुर अल-मुख्तार में है: एहराम के बाद मुहरिम (एहराम की स्थिति में व्यक्ति) चेहरे और सर को ढंकने से परहेज़ करे, शरीर के बाकी हिस्सों के विपरीत। वह कमीज़ और पतलून पहनने से बचे, यानी हर उस लिबास से जो शरीर के पूरे या किसी हिस्से के माप के अनुसार बनाया गया हो। और कुबा (चोगा) पहनने से परहेज़ करे। हाँ, अगर मुहरिम कुबा की दोनों आस्तीनों में अपने हाथ न डाले तो जायज़ है, बशर्ते कि वह उसे बटन या पिन से न जोड़े, तो जायज़ नहीं है। और सर्वसम्मति से यह जायज़ है कि मुहरिम कमीज़ और जुब्बे (चोगे) को चादर की तरह इस्तेमाल करे या सोते समय आदि जुब्बे को रज़ाई की तरह लपेट ले। - 1

उर्दू अनुवाद/व्याख्या

दुर्रे मुख्तार में है: मुहरिम चेहरे और सर को ढंकने से परहेज़ करे बख़िलाफ़ बाकी बदन के, और कमीज़ और शलवार पहनने से बचे, यानी हर उस लिबास को पहनने से परहेज़ करे जो इंसान के तमाम क़द या कुछ बदन के मुवाफ़िक़ बनाया जाता है, और क़बा पहनने से परहेज़ करे। या अगर मुहरिम क़बा की दोनों आस्तीनों में अपने हाथ न डाले तो जायज़ है मगर यह कि इसे घुंडी या कांटे से अटका दे तो जायज़ नहीं, और बा-इत्तेफ़ाक़ यह जायज़ है कि मुहरिम कमीज़ और जुब्बा को बतौर चादर इस्तेमाल में लाए या सोने वगैरह की हालत में जुब्बा को बतौर लिहाफ़ लपेट ले। (त)

और ऐसी गंभीर ज़रूरत की स्थिति में, अगर लंगोट वर्जित भी होता, तो भी अनुमति दी जाती क्योंकि "ज़रूरतें वर्जित चीज़ों को जायज़ बना देती हैं।" (ज़रूरतें ममनुआत को भी मुबाह कर देती हैं। त) उम्मुल मोमिनीन (आयशा) रज़ियल्लाहु अन्हा ने हज की यात्रा के दौरान अपने पालकी ढोने वालों को एक विशेष ज़रूरत के कारण तहबंद के नीचे तन्बान यानी जांघिया पहनने का आदेश दिया था, जैसा कि सहीह बुखारी में है। - 2 (जैसा कि सहीह बुखारी में है। त) कंबल या ऊनी चादर आदि बिना सिले कपड़े, चाहे वे कई हों, ओढ़ने की अनुमति है। बल्कि सोते समय ऊपर से रुई का अंगरखा या लबादा चेहरे को छोड़कर शरीर पर डाल लेना या नीचे बिछा लेना भी मना नहीं है। यहाँ तक कि जागते समय भी इन्हें कंधों पर डाल सकता है बशर्ते आस्तीन में हाथ न डाले, न बटन बाँधे और न ही किसी अन्य साधन से उसे बंद करे, जैसा कि हम 'दुर' के हवाले से बता चुके हैं। क्योंकि यह "सामान्य पहनावा"

नहीं है (क्योंकि यह आदतन पहनने की तरह नहीं है। त)। फिर भी, एक कमज़ोर व्यक्ति के लिए दो उपायों पर विचार करना चाहिए: पहला, 'तमत्तु' करना अधिक उचित है क्योंकि यह 'इहलाज' से श्रेष्ठ है और एहराम की अवधि भी कम होगी, यानी यलमलम के समानांतर से जो समुद्र में अदन से आगे आएगा, केवल उमरा का एहराम।

1. दुर्रे मुख्तार, किताबुल हज, एहराम का अध्याय, मुजतबाई प्रेस दिल्ली, 1/162
2. सहीह बुखारी, मुहरिम के पहनावे का अध्याय, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/209

فتاوی رضویہ جلد دہم

الجواب: احرام میں لنگوٹ باندھنا مطلقاً جائز ہے سو لانہ ہو کہ ممانعت لبس مخیط بروجہ معتاد سے ہے یا سر اور منہ کے چھپانے سے اور نادو ختہ لنگوٹ میں دونوں باتیں نہیں۔

متنِ درالمختار	**اردو ترجمہ**
فی الدرالمختار بعد الاحرام یتقی ستر الوجہ والراس بخلاف بقیۃ البدن و لبس قمیص وسراویل ای کل معمول علی قدر بدن او بعضہ وقباء و لولم یدخل یدیہ فی کمیہ جاز الا ان یزررہ اویخللہ ویجوز ان یرتدی بقمیص وجبۃ ویلتحف بہ فی نوم وغیرہ اتفاقاً-1	در مختار میں ہے محرم چہرہ اور سر کو ڈھانپنے سے پرہیز کرے بخلاف بقیہ بدن کے، اور قمیص اور شلوار پہننے سے بچے، یعنی ہر اس لباس کو پہننے سے پرہیز کرے جو انسان کے تمام قد یا بعض بدن کے موافق بنایا جاتا ہے، اور قبا پہننے سے پرہیز کرے یا اگر محرم قبا کی دونوں آستینوں میں اپنے ہاتھ نہ ڈالے تو جائز ہے مگر یہ کہ اسے گھنڈی یا کانٹے سے اٹکا دے تو جائز نہیں، اور باتفاق یہ جائز ہے کہ محرم قمیص وجبہ کو بطور چادر استعمال میں لائے یا سونے وغیرہ کی حالت میں جبہ کو بطور لحاف لپیٹ لے۔ (ت)

اور ایسی ضرورت شدیدہ کی حالت میں تو اگر لنگوٹ نا جائز بھی ہوتا اجازت دی جاتی لان الضرورات تبیح المحظورات (ضرورتیں ممنوعات کو بھی مباح کردیتی ہیں۔ ت) ام المومنین رضی اللہ تعالٰی عنہا نے سفر حج میں اپنے حاملان محمل کریم کو ایک ضرورت خاصہ کے سبب تہہ بند کے نیچے تنبان یعنی جانگیا پہننے کا حکم دیا کما فی صحیح البخاری-2 (جیسا کہ صحیح بخاری میں ہے۔ ت) کمل یا بانات یا اونی چادر وغیرہ بے سلے کپڑے اگر چہ دو چار ہوں اوڑھنے کی اجازت ہے بلکہ سوتے وقت اُوپر روئی کا انگر کھا نپٹہ لبادہ چہرہ چھوڑ کر بدن پر ڈال لینا یا

نیچے بچھالینا بھی ممنوع نہیں بلکہ بیداری میں بھی انہیں کندھوں پر ڈال سکتا ہے جبکہ آستین میں ہاتھ نہ ڈالے، نہ بند باندھے، نہ کسی اور ذریعہ سے بندش کرے کما قد مناہ عن الدر و ذلک لانہ لیس من اللبس المعتاد (جیسا کہ ہم درکے حوالے سے بیان کر آئے کیونکہ یہ عادۃً پہننے کی طرح نہیں ہیں۔ ت) بایں ہمہ ضعیف کمزور کو دو تدبیریں اور ملحوظ رہیں تو انسب اولاً تمتع کرے کہ تباج کرنے سے افضل بھی ہے اور احرام کی مدت بھی کم ہوگی یعنی محاذات یلملم سے کہ سمندر میں عدن سے آگے آئیگی، صرف عمرے کا احرام

1 در مختار کتاب الحج فصل فی الاحرام مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۶۲ 2 صحیح بخاری باب مالبس المحرم قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۲۰۹

Fatawa Razawiya, Volume 10

...bind it. Upon reaching Makkah al-Mu'azzamah, complete the Umrah by performing Tawaf and Sa'i, and then remove the Ihram. Now, one can stay in Makkah al-Mu'azzamah without Ihram until the 8th of Dhu al-Hijjah, wearing whatever one wishes, wrapping whatever one wants, and wearing a turban on the head. This Ihram period would only be for about five days. Afterwards, on the 8th, bind the Ihram for Hajj again and proceed to Mina. After returning from Arafat and Muzdalifah on the 10th, when one returns to Mina and performs the Ramy (stoning) of Jamrat al-Aqaba and offers the sacrifice (Qurbani) which was obligatory due to Tamattu', then shave the head or trim the hair. The Ihram is then lifted, except for sexual relations with women (which will become lawful after Tawaf al-Ziyarah). Everything that was forbidden by Ihram becomes lawful. Thus, this second Ihram did not even last for a full three days.

Secondly: From here in Bombay, have something made in the shape of a veranda using bamboo strips, having three walls, each about half a yard or slightly more in height, with a flat roof and the front completely open. Cover the three walls and the roof with cotton or whatever you like. While sleeping, place this structure at the head-side and enter your head through its opening so that your face remains under its shade. You may cover the rest of your body with a cloth. Now, because of this structure, the head will be protected from wind and cold, and the requirement of not covering the head or face will also not be violated.

In "Al-Durr al-Mukhtar" in the chapter of Ihram: It is not forbidden (for the Muhrim) to use a bathhouse or seek shade under a house or a litter (camel-saddle) as long as it does not touch his head or face. If it touches either of them, it is disliked (Makruh). Similarly, it is mentioned that the jurists said: if a Muhrim goes under the cover (Kiswah) of the Kaaba and it touches his head or face, it is disliked; otherwise, there is no harm in it. (T)

In the chapter of Ihram in "Durr al-Mukhtar", it states: It is not prohibited for a Muhrim to go to a hammam (bath) or to stay in the shade of a house or a litter which does not cover his head and face. If it covers either of them, it is Makruh (disliked). It is also mentioned therein that the jurists have said: if a Muhrim enters under the cover of the Kaaba and the cover touches his head or face, it is disliked, and if not, there is no harm. (T)

For purification from major ritual impurity (Janabat), one should perform Tayammum himself when unable to bathe. As for the Sunnah bath (Ghusl) at the time of entering Ihram, if one is unable to do it, Tayammum is not prescribed as a substitute, because that bath is for cleanliness, not for ritual purification, as ritual purity is already present. Tayammum provides ritual purity, not physical cleanliness; in fact, getting dust on the body is contrary to cleanliness. Therefore, such a person should do nothing in place of that bath; only Wudu (ablution) is sufficient.

1 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Hajj, Chapter on Ihram, Mujtabai Press, Delhi, 1/162. 2 Durr al-Mukhtar, Kitab al-Hajj, Chapter on Ihram, Mujtabai Press, Delhi, 1/162.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दस

...बाँधें, मक्का मुअज़्ज़मा पहुँचते ही तवाफ़ और सई से उमराह पूरा करके एहराम खोल दें, अब बिना किसी हिचकिचाहट के आठ ज़िलहिज्जा तक मक्का मुअज़्ज़मा में बिना एहराम के ठहर सकते हैं, जो चाहें पहनें, ओढ़ें, सिर पर इमामा बाँधें, जो चाहें करें। यह एहराम केवल पाँच दिन तक रहेगा। इसके बाद आठवीं को फिर हज का एहराम बाँधें और मिना जाएँ, अरफ़ात और मुज़दलिफ़ा से लौटकर दसवीं तारीख़ को जब फिर मिना आएँगे और जमरतुल अक़बा की रमी करके कुर्बानी करेंगे जो तमत्तु के कारण वाजिब थी, उसके बाद सिर मुंडवाएँ या बाल कटवाएँ तो एहराम खुल गया सिवाय औरतों के(कि तवाफ़-ए-ज़ियारत के बाद हलाल होंगी)। जो कुछ एहराम ने हराम किया था वह सब हलाल हो गया, तो यह एहराम पूरे तीन दिन भी न रहा।

दूसरा: यहाँ बम्बई से दालान की शक्ल की एक चीज़ खपच्चियों की बनवा लें जिसकी तीन दीवारें हों, हर एक आधा गज़ या थोड़ा ज़्यादा ऊँची और ऊपर छत चपटी हो और सामने का दरवाज़ा बिल्कुल खाली हो, तीनों दीवारों और छत को रुई वगैरह जिससे चाहें मढ़ लें। सोते समय सिरहाने इस चीज़ को रखकर अपना सिर इसके दरवाज़े से अंदर करें कि चेहरा इसके साये में रहे, बाकी बदन पर कपड़ा डाल लें। अब इस चीज़ की वजह से सिर हवा और सर्दी से महफ़ूज़ हो गया और सिर व चेहरे का न छुपाना भी लाज़िम न आया।

अद्दुरुल मुख्तार के एहराम के अध्याय में है: मुहरिम (एहराम की स्थिति में व्यक्ति) के लिए हमाम में जाना या किसी घर या कजावा (ऊँट की पालकी) के साये में जाना मना नहीं है जब तक कि वह उसके सिर या चेहरे को न छुए। अगर उनमें से किसी को छूता है तो यह मकरूह है। इसी तरह इसमें यह भी है कि फ़ुक़हा (विधिवेत्ताओं) ने कहा है कि अगर मुहरिम काबा के ग़िलाफ़ के नीचे दाखिल हो जाए और ग़िलाफ़ उसके सिर या चेहरे को छू जाए तो कराहत है और अगर नहीं तो कोई हर्ज नहीं। (त)

दर्रे मुख्तार की फ़स्ल एहराम में है (मुहरिम) का हम्माम में जाना या ऐसे घर या कजावा के साये में जाना मना नहीं जो उसके सिर और चेहरे को न ढाँपे, अगर इनमें से किसी को ढाँपता है तो मकरूह है और इसमें यह भी है कि फ़ुक़हा ने कहा है कि अगर मुहरिम ग़िलाफ़-ए-काबा के नीचे दाखिल हो गया और उसके सिर या चेहरे को ग़िलाफ़ लगा तो कराहत है और अगर नहीं तो कोई हर्ज नहीं। (त)

जनाबत (बड़ी नापाकी) से पाकी के लिए तो आप ही तयम्मुम करेगा, जबकि नहाने पर क़ादिर न हो, और एहराम के वक़्त जो ग़ुस्ल सुन्नत है उस पर क़ुदरत न हो तो उसके बदले तयम्मुम जायज़ नहीं क्योंकि वह ग़ुस्ल सफ़ाई के लिए है न कि पाकी के लिए, क्योंकि पाकी तो पहले से हासिल है और तयम्मुम से पाकी हासिल होती है न कि सफ़ाई, बल्कि बदन पर धूल लगना सफ़ाई के ख़िलाफ़ है, तो ऐसा शख़्स उस ग़ुस्ल के बदले कुछ न करे, सिर्फ़ वज़ू काफ़ी है।

1 दुर्रे मुख्तार किताबुल हज फ़स्ल फ़िल एहराम मतबअ मुज्तबाई दिल्ली 1/162 2 दुर्रे मुख्तार किताबुल हज फ़स्ल फ़िल एहराम मतबअ मुज्तबाई दिल्ली 1/162

पृष्ठ 672 / 836

فتاوی رضویہ جلد دہم

باندھے، مکہ معظمہ پہنچتے ہی طواف و سعی سے عمرہ بجا لاکر احرام کھول دے، اب بلا تکلف ہشتم ذی الحجہ تک بلا احرام مکہ معظمہ میں قیام کر سکتا ہے جو چاہے پہنے، اوڑھے، سر سے عمامہ باندھے، جو چاہے کرے۔ یہ احرام صرف پانچ روز رکھنا ہوگا۔ بعدہ آٹھویں کو پھر احرام حج کا باندھے مٹی کو جائے، عرفات و مزدلفہ سے پلٹ کر دسویں تاریخ جب پھر مٹی میں آئیگا اور جمرۃ العقبہ کی رمی کرکے قربانی جواس پر بوجہ تمتع واجب تھی بجالائیگا، اس کے بعد سر منڈائے یا بال کتروائے، احرام کھل گیا سوا عورتوں کے (کہ بعد طواف زیارت حلال ہوں گی) جو کچھ احرام نے حرام کیا تھا سب حلال ہوگیا، تو یہ احرام پورے تین دن بھی نہ رہا۔

ثانیاً: یہاں بمبئی سے دالان کی شکل کی ایک چیز کھپیوں کی بنوالے جس کی تین دیواریں ہوں ہر ایک آدھ گز یا قدرے زائد کی اور اوپر چھت پٹی ہو اور دروازہ زمین بالکل خالی ہو، تینوں دیوار اور چھت کو روئی وغیرہ جس سے چاہیں منڈھ لیں، سوتے وقت سرہانے اس مکان کو رکھ کر سر اس کے دروازہ سے داخل کریں کہ چہرہ اس کے سائے میں رہے، باقی بدن پر کپڑا ڈال لیں، اب اس مکان کی وجہ سے سر ہوا سے سرد سے محفوظ ہوگیا اور رو، وسر کا چھپانا بھی لازم نہ آیا۔

فی الدر المختار من فصل الاحرام، لا یتقی (ای المحرم) الاستحمام والاستظلال ببیت و محمل لم یصب راسه او وجهه فلو اصاب احدهما کره اھ وفیه ایضا قالوا لو دخل تحت ستر الکعبة فاصاب راسه او وجهه کره و الافلا بأس به۔

در مختار کی فصل احرام میں ہے (محرم) کا حمام میں جانا یا ایسے گھر یا کجاوہ کے سایہ میں جانا منع نہیں جو اس کے سر اور چہرہ کو نہ ڈھانپے، اگر ان میں سے کسی کو ڈھانپتا ہے تو مکروہ ہے اور اس میں یہ بھی ہے فقہا نے کہا ہے کہ اگر محرم غلافِ کعبہ کے نیچے داخل ہو گیا اور اس کے سر یا چہرہ کو غلاف لگا تو کراہت ہے اور اگر نہیں تو کوئی حرج نہیں۔ (ت)

جنابت سے طہارت کے لیے تو آپ ہی تیمم کرے گا، جبکہ نہانے پر قادر نہ ہو، اور احرام کے وقت جو غسل مسنون ہے اس پر قدرت نہ ہو تو اس کے عوض تیمم مشروع نہیں کہ وہ غسل نظافت کے لیے ہے نہ طہارت کے لیے، کہ طہارت تو حاصل ہے اور تیمم سے طہارت ہوتی نہ نظافت بلکہ بدن پر غبار لگنا خلاف نظافت ہے، تو ایسا شخص اس غسل کے عوض کچھ نہ کرے صرف وضو کافی ہے۔

1 در مختار کتاب الحج فصل فی الاحرام مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۶۲ 2 در مختار کتاب الحج فصل فی الاحرام مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۶۲

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Top-left box - Arabic]: In Al-Durr al-Mukhtar: Whoever intends to enter into Ihram should perform Wudu, and washing (Ghusl) is preferable. It is for cleanliness, not for ritual purity. Therefore, performing Tayammum in the absence of water is not prescribed because it involves getting soiled [with dust]. That is, this soiling is necessary in cases where there is dust. Otherwise, if one performs Tayammum on washed marble, it would be permissible because there is no longer a risk of soiling. And Allah the Almighty knows best.

[Top-right box - Urdu Translation]: It is in Durr-e-Mukhtar that whoever intended to enter into Ihram should perform Wudu, Ghusl is more excellent for them, and this is keeping cleanliness in view, not for ritual purity. If the pilgrim does not have water, they should not perform Tayammum in place of Wudu because it is getting soiled in dust. End. Meaning this soiling is necessary in those cases where there is dust. If Tayammum is done on washed marble, it will be permissible because there is no longer a risk of soiling. And Allah the Almighty knows best. (T)

Problem 292: From Bombay, Qasaban neighborhood, adjacent to Craft Market, Ghoray Babu's house. Question from Honorable Sayyid Hamid Husain Miyan Sahib, may his shadow endure. 4 Dhu al-Qi'dah 1329 AH.

Highly respected, dear [Sir], may your high shadow endure. Peace be upon you and the mercy of Allah and His blessings. Pilgrims are often under the absolute control of the guides (Mu'allims) and Bedouins. Often, they depart on the 7th of Dhu al-Hijjah, stay in Mina, and leave Mina on the night of the 9th to reach in the morning, and also depart from Muzdalifah in the latter part of the night. You are well aware of the harsh temperament of the Bedouins; they don't listen to anyone. What can be done except that you pray that the Bedouins stay in those places daily as per the commands? This humble one (faqir) will make an intensive effort provided that other pilgrims support my words. If this faqir were alone, he wouldn't care for the company of the caravan and would follow the prescribed times entirely according to the writing of the booklet. And even now, God willing, he will follow as far as possible. May Allah Almighty help me, Amen, then Amen!

Secondly, is it permissible to perform Rami (stoning) as a proxy on behalf of incapacitated and non-incapacitated women for all three days? Because besides the crowd, the caravan departs before noon on the 12th. I will be left alone, and after performing Rami after Zawāl (noon), I will rejoin the caravan. Peace be upon you.

The Answer: Presented for the high, blessed, and exalted observation of Hazrat Maulana Sayyid Hamid Husain Miyan Sahib, may your blessings continue. Peace be upon you and the mercy of Allah and His blessings. After paying respects, it is submitted: if the caravan members together [urge] the Mutawwifs...

---

[1] Durr al-Mukhtar, Book of Hajj, Section on Ihram, Mujtabai Press, Delhi, 1/163

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

[ऊपरी बायां बॉक्स - अरबी]: दुर्र-ए-मुख्तार में: जिसने एहराम का इरादा किया, वह वुज़ू करे, और ग़ुस्ल (स्नान) उसके लिए अधिक प्रिय (बेहतर) है। यह स्वच्छता के लिए है, न कि अनुष्ठानिक शुद्धता के लिए। इसलिए, पानी की अनुपलब्धता पर इसके लिए तयम्मुम निर्धारित नहीं है, क्योंकि यह दूषित (धूल से लथपथ) होना है। समाप्त। अर्थात, कुछ स्थितियों में जहाँ धूल पहुँचती है। अन्यथा, यदि कोई धुले हुए संगमरमर पर तयम्मुम करता है, तो यह जायज़ है और यह दूषित होना नहीं होगा। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है।

[ऊपरी दायां बॉक्स - उर्दू अनुवाद]: दुर्र-ए-मुख्तार में है कि जिसने एहराम का इरादा किया वह वुज़ू करे, ग़ुस्ल उसके लिए अफ़ज़ल है, और यह बात नज़ाफ़त (स्वच्छता) के मद्देनज़र है, तहारत (पवित्रता) के लिए नहीं। यदि मुहरिम (एहराम बाँधने वाला) के पास पानी न हो, तो वह वुज़ू के स्थान पर तयम्मुम न करे क्योंकि यह तो मिट्टी में लथपथ होना है। समाप्त। यानी यह लथपथ होना उन स्थितियों में आवश्यक है जहाँ धूल हो। यदि धुले हुए संगमरमर पर तयम्मुम किया गया, तो जायज़ होगा क्योंकि अब लथपथ होने का कोई डर नहीं। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 292: बम्बई से, क़साबान मोहल्ला, क्राफ्ट मार्केट के पास, गोरे बाबू साहब का घर। प्रश्नकर्ता: हज़रत सय्यद हामिद हुसैन मियां साहब, दाम ज़िल्लहुम, 4 ज़ुल-क़ादा 1329 हिजरी।

अत्यधिक सम्मानित, प्रिय [महोदय], आपकी उच्च छाया बनी रहे। आप पर शांति और अल्लाह की दया और उसकी बरकतें हों। हाजी अक्सर मुअल्लिमों और बद्दुओं के पूर्ण नियंत्रण में होते हैं। अक्सर, वे 7 ज़ुल-हिज्जा को रवाना होकर मिना में रुकते हैं और नौवीं की रात मिना शरीफ़ से रवाना होकर सुबह पहुँचते हैं, और मुज़दलिफ़ा से भी पिछली रात में रवाना हो जाते हैं। आप बद्दुओं के कड़े मिज़ाज से अच्छी तरह परिचित हैं; वे किसी की बात नहीं सुनते। इसके अलावा क्या किया जा सकता है कि आप प्रार्थना करें कि बद्दू उन समयों में रोज़ाना वहाँ रहें जिनके बारे में आदेश है। यह फक़ीर (तुच्छ सेवक) गहन प्रयास करेगा, बशर्ते अन्य हाजी मेरी बात का समर्थन करें। अगर यह फक़ीर अकेला होता, तो वह कारवां के साथ की परवाह नहीं करता और पुस्तिका के लेखन के अनुसार निर्धारित समयों का पूरी तरह पालन करता। और अब भी, इंशा अल्लाह, यथासंभव पालन करेगा। अल्लाह तआला मेरी मदद करे, आमीन, फिर आमीन!

दूसरा यह कि क्या अक्षम और सक्षम महिलाओं की ओर से तीनों दिनों के लिए वकालत (प्रतिनिधि) के रूप में रमी (कंकड़ मारना) जायज़ है या नहीं? क्योंकि भीड़ के अलावा, 12 तारीख को दोपहर से पहले कारवां रवाना हो जाता है। मैं अकेला रह जाऊँगा, और ज़वाल (दोपहर) के बाद रमी करके कारवां से मिलूँगा। वस्सलाम।

उत्तर: हज़रत मौलाना सय्यद हामिद हुसैन मियां साहब के आली, बरकत वाले और ऊँचे दरबार में अवलोकन के लिए। आप पर शांति और अल्लाह की दया और उसकी बरकतें हों। आदाब पेश करने के बाद अर्ज़ है: यदि कारवां के लोग मिलकर मुतव्विफ़ों को...

---

[1] दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-हज, एहराम से संबंधित खंड, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/163

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

[بایاں باکس - عربی]: في الدرالمختار من شاء الاحرام توضأ وغسله احب، وهو للنظافة لا للطهارة فالتيمم له عند العجز من الماء ليس بمشروع لانه تلوث اھ ای فی بعض الصور حیث یصیب الغبار والافمن تیمم علی مرمر مغسول جاز ولم یکن تلوثا۔ واللہ سبحانہ و تعالی اعلم۔

[دایاں باکس - اردو ترجمہ]: در مختار میں ہے جس نے احرام کا ارادہ کیا وہ وضو کرے، غسل اس کے لیے افضل ہے اور یہ بات نظافت کے پیش نظر ہے طہارت کے لیے نہیں، اگر محرم کے پاس پانی نہیں تو وضو کی جگہ تیمم نہ کرے کیونکہ یہ تو مٹی میں ملوث ہونا ہے اھ یعنی یہ تلوث ان صورتوں میں لازم آتا ہے جہاں غبار ہو، اگر دھوئے ہوئے سنگِ مرمر پر تیمم کیا تو جائز ہوگا کیونکہ اب تلوث کا خطرہ نہیں۔ واللہ سبحانہ و تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۲۹۲: از بمبئی محلہ قصاباں متصل کرافٹ مارکیٹ مکان گورے بابو صاحب مسئولہ حضرت سید حامد حسین میاں صاحب دام ظلہم ۴ ذیقعدہ ۱۳۲۹ھ

معظمی مکرمی مدظلہ العالی السلام علیکم ورحمۃ اللہ وبرکاتہ، حجاج قطعی معلم وبدویان کے قبضہ میں ہوتے ہیں اکثر، ۷ ذی الحجہ کو روانہ ہو کر منی میں قیام کرتے ہیں اور شب نہم منی شریف سے روانہ ہو کر صبح پہنچتے ہیں اور مزدلفہ سے بھی پچھلی شب میں روانہ ہو جاتے ہیں، آپ حضرات بدویان کی سخت مزاجی سے خوب واقف ہیں وہ کسی کا کہا نہیں سنتے، کیا کیا جائے بجز اس کے کہ آپ دعا فرمادیں کہ بدویان انہیں اوقات میں روزانہ ہوں جن کی بابت حکم ہے، فقیر کوشش بلیغ کرے گا بشر طیکہ دیگر حجاج نے میرے کلام کی تائید کی، اگر فقیر تنہا ہوتا تو کچھ قافلہ کی ہمراہی کی پروانہ کرتا اور پورے طور پر حسب تحریر رسالہ، اوقات معینہ کی پابندی

کرتا اور اب بھی ان شاء اللہ حتی المقدور پابندی کرے گا، اللہ تعالیٰ میری امداد فرمائے، آمین ثم آمین!

دوم یہ کہ عورت معذور اور غیر معذور کی جانب سے وکالۃً ہر سہ یوم رمی جائز ہے یا نہیں، کیونکہ علاوہ مجمع بارہویں تاریخ قبل دوپہر قافلہ روانہ ہوتا ہے میں تنہا رہ جاؤں گا، بعد زوال رمی کرکے قافلہ سے آملوں گا، والسلام

الجواب: بشرف ملاحظہ عالیہ بابرکت والا درجت حضرت مولانا سید حامد حسین میاں صاحب قبلہ دامت برکاتہم، السلام علیکم ورحمۃ اللہ وبرکاتہ۔ بعد ادائے آداب معروض، مطوفون کو اگر اہل قافلہ مل کر

---

[1] درمختار کتاب الحج فصل فی الاحرام مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۶۳

Or if a single person who is influential in their eyes forces them, they have to comply; the humble writer (faqir) has experience of this. And if they do not agree and it's out of necessity, then staying in Mina until morning on the ninth night and moving towards Arafat after the sun rises is Sunnah. If this is abandoned out of necessity, it will not cause any defect in the Hajj. Being present within the boundaries of Muzdalifah from the time of true dawn (Subh-e-Sadiq) on the tenth date until sunrise, even for a moment, is sufficient for fulfilling the obligation (Wajib). So if Subh-e-Sadiq occurs before leaving the boundaries of Muzdalifah, the Wajib is fulfilled even if the Sunnah was abandoned. Yes, if one left so early in the night that Subh-e-Sadiq had not yet occurred and one left the boundaries of Muzdalifah, then indeed the Wajib was abandoned and a sacrifice (Dam) will be due. But the Bedouins do not do this. Sharia itself also permits women, extremely weak men, and the sick to leave during the night for fear of the crowd; they will not have to pay any penalty. The practice of needing to leave before noon on the twelfth date has now become a habit there, and in our school of thought and according to Zahir al-Riwayah, this is a sin. The humble writer forced the ignorant and, praise be to Allah, had to stop them so that I and all the men and women with me left after performing the stoning (Ramy) after noon. Where they absolutely refuse to listen and there is a genuine fear of being left behind, this is a state of necessity; one can act upon a weak narration and perform Ramy before noon and depart. Being a woman is not an excuse for appointing a deputy for Ramy. Yes, if someone is so sick that they cannot go for Ramy, then with their permission, another person can perform Ramy on their behalf. Or if someone is unconscious, Ramy can be performed on their behalf without their permission. In 'Lubab and Sharh Lubab' regarding the Sunnahs of Hajj, it is stated:

Arabic Quote	Translation
والخرج من مكة الى عرفة يوم التروية والبيوتة بمنى ليلة عرفة الالحادث من الضروريات والدفع منه الى عرفة بعد طلوع الشمس-1	On the Day of Tarwiya, the pilgrim should leave Makkah for Arafat and spend the night of Arafah in Mina, provided there is no hindrance or necessity, and then go from Mina to Arafat after sunrise. (T)

In the same work's chapter on the departure to Mina, it is stated:

Arabic Quote	Translation
وان بات بغير منى تلك الليلة جاز واساء-2	If a pilgrim spends this night in a place other than Mina, it is permissible but contrary to etiquette. (T)

1 Lubab and Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter: Sunan-ul-Hajj, Dar al-Kutub al-Arabi, Beirut, p. 51 2 Lubab and Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter: Ar-Rawah ila Mina, Dar al-Kutub al-Arabi, Beirut, p. 712

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (खंड 10)

या एक ही व्यक्ति जो उनके नज़दीक प्रभावशाली हो, मजबूर करे तो उन्हें मानना पड़ता है, फ़कीर (लेखक) को इसका अनुभव है। और यदि वे न मानें और मजबूरी हो, तो नौवीं रात मिना में सुबह तक ठहरना और सूरज निकलने पर अराफ़ात की ओर चलना सुन्नत है। मजबूरीवश इसे छोड़ने से हज में कोई दोष नहीं आएगा। मुज़दलिफ़ा की सीमाओं के भीतर दसवीं तारीख की सुबह-ए-सादिक़ (सच्ची भोर) से सूर्योदय तक किसी भी तरह मौजूद होना, चाहे वह एक क्षण के लिए ही क्यों न हो, वाजिब (कर्तव्य) पूरा करने के लिए पर्याप्त है। अतः यदि मुज़दलिफ़ा की सीमाओं से बाहर निकलने से पहले सुबह-ए-सादिक़ हो गई, तो वाजिब पूरा हो गया भले ही सुन्नत छूट गई हो। हाँ, यदि कोई रात में इतना जल्दी चल दिया कि सुबह-ए-सादिक़ नहीं हुई थी और वह मुज़दलिफ़ा की सीमाओं से बाहर निकल गया, तो निश्चित रूप से वाजिब छूट गया और कुर्बानी (दम) देनी पड़ेगी। लेकिन बेदुइन ऐसा नहीं करते। शरीयत स्वयं भी महिलाओं, अत्यंत कमज़ोर पुरुषों और बीमारों को भीड़ के डर से रात में ही चल देने की अनुमति देती है; उन्हें कोई जुर्माना नहीं देना होगा। बारहवीं तारीख को दोपहर (ज़वाल) से पहले चल देने की ज़रूरत अब वहाँ एक आदत बन गई है, और हमारे मज़हब में और ज़ाहिर-अर-रिवैया के अनुसार यह गुनाह है। फ़कीर ने तो जाहिलों को मजबूर किया और अल्लाह का शुक्र है कि उन्हें रोकना पड़ा, ताकि मैं और मेरे साथ के सभी पुरुष और महिलाएँ दोपहर के बाद रमी (कंकड़ मारना) करके रवाना हुए। जहाँ वे बिलकुल न मानें और पीछे रह जाने का वास्तविक डर हो, तो यह मजबूरी की स्थिति है; कमज़ोर रिवायत पर अमल करके ज़वाल से पहले रमी करके जाया जा सकता है। महिला होना रमी में प्रतिनिधि (नायब) बनाने के लिए कोई बहाना नहीं है। हाँ, यदि कोई इतना बीमार हो कि रमी के लिए न जा सके तो उसकी अनुमति से दूसरा उसकी ओर से रमी कर सकता है। या जो बेहोश हो, उसकी अनुमति के बिना उसकी ओर से रमी की जा सकती है। 'लुबाब व शरह लुबाब' में हज की सुन्नतों के बारे में उल्लेख है:

अरबी उद्धरण	**अनुवाद**
والخرج من مكة الى عرفة يوم التروية والبيوتة بمنى ليلة عرفة الالحادث من الضروريات والدفع منه الى عرفة بعد طلوع الشمس-1	यौम-ए-तरविया को मक्का से अराफ़ात की ओर हाजी निकले और अरफ़ा की रात मिना में बिताए, बशर्ते कि कोई रुकावट या मजबूरी न हो, और फिर मिना से सूर्योदय के बाद अराफ़ात जाए। (त)

इसी ग्रंथ के मिना की ओर प्रस्थान वाले अध्याय में है:

अरबी उद्धरण	अनुवाद
وان بات بغير منى تلك الليلة جاز واساء-2	यदि हाजी ने यह रात मिना के अलावा किसी और जगह बिताई, तो यह जायज़ है लेकिन अदब के ख़िलाफ़ है। (त)

---

1 लुबाब व शरह लुबाब मा इरशाद-उस-सारी, अध्याय: सुनन-उल-हज, दार अल-कुतुब अल-अरबी, बेरूत, पृष्ठ 51 2 लुबाब व शरह लुबाब मा इरशाद-उस-सारी, अध्याय: अर-रवाह इला मिना, दार अल-कुतुब अल-अरबी, बेरूत, पृष्ठ 712

یا ایک ہی شخص جوان کے نزدیک ذی وجاہت ہو مجبور کریں تو ان کو ماننا پڑتا ہے ، فقیر کو اس کا تجربہ ہے اور اگر نہ مانیں اور مجبوری ہو تو نویں رات منیٰ میں صبح تک ٹھہرنا اور آفتاب چمکنے پر عرفات کو چلنا سنت ہے مجبورانہ اس کے ترک سے حج میں کوئی نقص نہ آئے گا مزدلفہ کی حدود کے اندر دسویں تاریخ کے طلوع صبح صادق سے طلوع آفتاب تک کسی طرح موجود ہونا اگر چہ ایک لحظہ ہو ادائے واجب کے لیے کافی ہے تو اگر حدود مزدلفہ سے نکل جانے سے پہلے صبح صادق ہو گئی تو واجب ادا ہو گیا اگر چہ سنت ترک ہوگئی، ہاں اگر اتنی رات سے چل دیا کہ صبح صادق نہ ہونے پائی اور مزدلفہ کی حدود سے نکل گیا تو بے شک واجب ترک ہوا، قربانی دینی آئے گی مگر بدوی ایسا نہیں کرتے اور عورتوں اور نہایت کمزور مردوں اور بیماروں کو بخوف ہجوم خود شرع بھی رات سے چل دینے کی اجازت فرماتی ہے، انہیں کوئی جرمانہ دینا نہ ہوگا، بارہویں تاریخ قبل زوال چل دینے کی ضرورت اب وہاں عادت نکالی ہے، اور یہ ہمارے مذہب وبظاہر الروایۃ میں گناہ ہے، فقیر نے تو جاہلوں کو مجبور کیا اور بحمد اللہ ان کو روکنا پڑا کہ میں اور میرے ساتھ کے سب مرد و عورت بعد زوال رمی کرکے روانہ ہوئے جہاں وہ ہرگز نہ مانیں اور پیچھے رہ جانے میں اندیشہ صحیح ہو تو یہ صورت مجبوری کی ہے، ضعیف روایت پر عمل کر کے قبل زوال رمی کرکے جاسکتا ہے، عورت ہونا رمی میں نیابت کے لیے عذر نہیں، ہاں ایسا بیمار ہو کہ رمی کو نہ جاسکے تو اس سے اجازت لے کر دوسرا اس کی طرف سے رمی کر سکتا ہے یا جو غشی میں ہو تو اسکی بلا اجازت اسکی طرف سے رمی ہو سکتی ہے، لباب و شرح لباب سننِ حج میں ہے :

| والخروج من مكة الی عرفة یوم التروية والبیوتة بمنی لیلة عرفة الالحادث من الضروریات والدفع منه الی عرفة بعد طلوع الشمس-۱ | یومِ ترویہ کو مکہ سے عرفات کی طرف حاجی نکلے اور عرفہ کی رات منیٰ میں بسر کرے بشرطیکہ کوئی مانع اور مجبوری نہ ہو اور پھر منیٰ سے طلوع آفتاب کے بعد عرفات جائے۔ (ت) |

اسی کی فصل الرواح الی منیٰ میں ہے:

| وان بات بغیر منی تلك اللیلة جاز واساء-۲ | اگر منیٰ کے علاوہ کسی اور جگہ حاجی نے یہ رات بسر کی تو جائز مگر خلافِ ادب ہے۔ (ت) |

---

1 لباب وشرح لباب مع ارشاد الساری باب سنن الحج دار الکتب العربی بیروت ص ۵۱ 2 لباب وشرح لباب مع ارشاد الساری فصل فی الرواح الی منیٰ دار الکتب العربی بیروت ص ۷۱۲

Fatawa Razawiyya - Volume 10

In its section on staying (Wuquf) at Muzdalifah, it is stated: Stay at Muzdalifah is mandatory (Wajib). Its time begins from the second dawn (Subh-e-Sadiq) of the Day of Sacrifice (Yawm al-Nahr) and its final time is the sunrise of the same day. Therefore, whoever stayed in Muzdalifah before dawn or after sunrise, his stay is not considered valid (i.e., the Wuquf will not be recognized). The mandatory duration is one moment, and its essential element (Rukn) is being present there during this period, whether by one's own action or the action of another, whether there was an intention or not, and whether one knew it was Muzdalifah or not. If a pilgrim leaves the stay at Muzdalifah and departs at night, then a sacrifice (Dam) will be mandatory in such a case. If there is an illness, or physical weakness due to old age or young age is evident, or if it is a woman who fears the crowd, then nothing will be mandatory. (T)

In its section on the time of stoning (Ramy) during the two days, it is stated: The time for stoning the three pillars (Jamarat) on the second and third days of the Days of Sacrifice (Tashreeq) is after the sun's decline (Zawal). According to the famous narration, i.e., according to the majority (Jamhoor), stoning before Zawal is not permissible. Some have said it is permissible, but this is contrary to the 'Zahir al-Riwayah' (manifest narration). In this matter, there is another narration specifically for the second day of the Days of Tashreeq, as mentioned in Marghinani: if a pilgrim has intended to return on this day, he can stone before Zawal; however, doing it after Zawal would be better, and for this person, stoning before Zawal...

[1] Lubab and Sharh al-Lubab with Irshad al-Sari, Chapter on Wuquf at Muzdalifah, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, p. 174. Page 675 of 836

फ़तावा रज़विया - जिल्द दहुम (दसवाँ भाग)

मज़दलिफ़ा में ठहरने (वक़ूफ़) के अध्याय में है: मज़दलिफ़ा का वक़ूफ़ लाज़िम है, इसकी शुरुआत यौम-ए-नहर (क़ुर्बानी के दिन) की दूसरी सुब्ह-ए-सादिक़ से होती है और इसका अंतिम समय उसी दिन का सूर्योदय है। तो जो सुब्ह-ए-सादिक़ से पहले या सूर्योदय के बाद मज़दलिफ़ा में ठहरा, उसके ठहरने का एतबार नहीं (यानी वक़ूफ़ मान्य नहीं होगा)। वाजिब मात्रा एक घड़ी है और इसका रुकन (अनिवार्य अंग) यह है कि उस अवधि में वहां स्वयं मौजूद होना अपने कार्य से हो या किसी दूसरे के कार्य से, नीयत हो या न हो, उसे मज़दलिफ़ा का ज्ञान हो या न हो। अगर मज़दलिफ़ा का वक़ूफ़ छोड़कर हाजी रात को ही वापस आ गया तो ऐसी स्थिति में दम (बलि) लाज़िम होगा, अगर कोई बीमारी हो या बुढ़ापे या बचपन की कमज़ोरी साफ़ हो या कोई महिला हो जो भीड़ से डरती हो तो अब कोई चीज़ लाज़िम न होगी। (त)

दो दिनों में रमी (कंकड़ मारना) के समय के अध्याय में है: अय्याम-ए-नहर (तशरीक़) के दूसरे और तीसरे दिन तीनों जमरात को रमी का समय ज़वाल (दोपहर ढलने) के बाद होता है। प्रसिद्ध रिवायत यानी जम्हूर के अनुसार ज़वाल से पहले रमी जायज़ नहीं है। कुछ ने कहा है कि जायज़ है, लेकिन यह ज़ाहिर-उर-रिवायत के ख़िलाफ़ है। इस मसले में एक और रिवायत भी है जो अय्याम-ए-तशरीक़ के दूसरे दिन के साथ विशिष्ट है क्योंकि मर्ग़ीनानी में वर्णित है: और अगर हाजी ने इस दिन लौटने का इरादा कर लिया है तो वह ज़वाल से पहले रमी कर सकता है, हाँ ज़वाल के बाद करे तो अफ़ज़ल होगा, और ज़वाल से पहले उस व्यक्ति के लिए रमी...

[1] लुबाब और शर्ह लुबाब मा इरशाद-उस-सारी, मज़दलिफ़ा में वक़ूफ़ का अध्याय, दार-उल-किताब अल-अरबी बेरुत, पृ. 174. पृष्ठ 675 का 836

اسی کی فصل وقوف بالمزدلفہ میں ہے: الوقوف بها واجب واول وقته طلوع الفجر الثاني من يوم النحر وأخر طلوع الشمس منه فمن وقف بها قبل طلوع الفجر او بعد طلوع الشمس لا يعتد به، وقدر الواجب منه ساعة وركنه كينونته بمزدلفة بفعل نفسه او غيره، نواه اولم ينو علم بها اولم يعلم ولو ترک الوقوف بها فدفع ليلا فعليه دم الا اذا كان لمرض او ضعف بيئة من كبر او صغر او يكون امرأة تخاف الزحام فلا شئ عليها۔[1] مزدلفہ کا وقوف لازم ہے، ابتدا اس کی یومِ نحر کی طلوعِ فجر ثانی سے ہوتی ہے اور اس کا اخیر وقت اسی دن کا طلوعِ آفتاب ہے تو جو طلوعِ فجر سے پہلے یا طلوعِ شمس کے بعد مزدلفہ میں ٹھہرا اسکے ٹھہرنے کا اعتبار نہیں (یعنی وقوف معتبر نہیں ہوگا) مقدار واجب ایک ساعت ہے اور اس کا رکن یہ ہے کہ اس مدت میں وہاں خود موجود ہونا اپنے عمل سے یا غیر کے عمل سے ہو، نیت ہو یا نہ ہو، اسے مزدلفہ کا علم ہو یا نہ ہو، اگر مزدلفہ کا وقوف ترک کرکے رات کو ہی حاجی واپس آگیا تو ایسی صورت میں دم لازم ہوگا، اگر کوئی مرض ہو یا کبر وصغر کی وجہ سے واضح ہو یا کوئی خاتون ہو جو ازدحام سے ڈرتی ہو تو اب کوئی شے لازم نہ ہوگی۔ (ت)

اسی کی فصل وقت الرمی فی الیومین میں ہے: وقت رمی الجمار الثلث فی الیوم الثانی یجوز قبلہ فی المشهور ای عند الجمهور، وقيل يجوز وهو خلاف ظاهر الرواية، وفي المسألة رواية اخرى مختصة باليوم الثانی من ايام التشريق، لما في المرغيناني لو اراد ان ينفر في هذا اليوم له ان يرمی قبل الزوال وان رمی بعده فهو افضل وانما لا يجوز قبل الزوال. من ایامِ نحر میں دوسرے اور تیسرے دن تینوں جمرات کو رمی کا وقت زوال کے بعد ہوتا ہے مشہور روایت یعنی جمہور کے ہاں زوال سے پہلے رمی جائز نہیں بعض نے کہا جائز ہے لیکن یہ ظاہر الروایت کے خلاف ہے، اس مسئلہ میں ایک

اور روایت بھی ہے جو ایامِ تشریق کے دوسرے دن کے ساتھ مخصوص ہے کیونکہ مرغینانی میں مذکور ہے: اور اگر حاجی نے اس دن لوٹنے کا ارادہ کرلیا ہے تو زوال سے پہلے رمی کرسکتا ہے، ہاں بعد از زوال کرے تو افضل ہوگی، اور زوال سے پہلے اس شخص کے لیے رمی

[1] لباب وشرح لباب مع ارشاد الساری فصل فی الوقوف بالمزدلفہ دار الکتاب العربی بیروت ص ۱۷۴

Fatawa Razawiyya, Volume 10

| (Arabic): He does not intend to depart (nafr). This is narrated by Al-Hasan from Abu Hanifa 1-. | (Urdu): It is not permissible for one who does not intend to return. Imam Hasan has narrated this from Imam Abu Hanifa (may Allah Ta'ala have mercy on him). (T) |

In the same chapter regarding the conditions of stoning (Ramy):

| (Arabic): Fifth: That one performs stoning personally. Appointing a proxy is not permissible when one has the capacity; it is permissible in case of an excuse. If someone performs stoning on behalf of a patient who cannot perform it, by his command, or for someone unconscious even without command, or for a child without discernment or an insane person, it is permissible. It is better to place the stones in their palms and their companions throw them. In Al-Hawi from Al-Muntaqa from Muhammad: if a patient is in a state where he prays sitting, stoning performed on his behalf is valid and nothing is due from him. Perhaps the reason is that if he can pray standing, then he has the capacity to be present at the place of stoning, whether riding or being carried, so appointing a proxy for him is not permissible. 2 Summarized, and Allah Ta'ala knows best. | (Urdu): The fifth condition is to perform stoning oneself; despite having the capacity, appointing a proxy is not correct. Yes, it is permissible at the time of an excuse. If someone performed stoning at the request of such a patient who does not have the strength, or if a pilgrim was unconscious even if he did not ask for stoning, or if stoning was done on behalf of a child who lacks discernment or on behalf of an insane person, then it will be valid. It is better that the stones are placed in the hands of the incapacitated individuals and then their companions perform the stoning. It is narrated in 'Al-Hawi' from 'Al-Muntaqa' from Imam Muhammad that when a patient is in such a state that he performs prayer only while sitting, then if someone else performs stoning on his behalf, nothing will be mandatory upon him. Perhaps the reason for this is that when he can perform prayer standing, he will now have the capacity to go for stoning, whether he goes riding or is carried there; now appointing a proxy on his behalf will not be correct. Summarized, and Allah Ta'ala knows best. (T) |

Issue 293: From the city of Bareilly, queried by Hazrat Satna Bibi Sahiba (may her shadow be extended). In Hajj, eight people shared one camel for sacrifice; was the Hajj completed or not, and should the sacrifice be repeated? Explain and be rewarded.

The Answer: Hajj is completed. If at the time of donning the Ihram, the intention was only for Hajj (Hajj-e-Ifrad), then sacrifice was not fundamentally necessary, nor is there any need for anything in its place now. Yes, if both Hajj and Umrah intentions were made together in Ihram (Hajj-e-Qiran), or if in Ihram only...

1. Lubab and Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter on the time of stoning in two days, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, pp. 161 to 85.
2. Lubab and Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter on the rulings of stoning and its conditions, etc., Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 166. Page 676 of 836

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (खंड 10)

| (अरबी): वह प्रस्थान (नफ़्र) का इरादा नहीं रखता। अल-हसन ने अबू हनीफा से ऐसा ही वर्णन किया है 1-। | (उर्दू): जो लौटने का इरादा न रखता हो, उसके लिए यह जायज़ नहीं है। इमाम हसन ने इमाम अबू हनीफा (अल्लाह तआला उन पर रहम करे) से इसी तरह रिवायत किया है। (त) |

इसी की रमी (कंकरियां मारने) की शर्तों के अध्याय में है:

| (अरबी): पांचवीं शर्त: स्वयं रमी करना। सामर्थ्य होने पर किसी को अपना प्रतिनिधि (नायब) बनाना जायज़ नहीं है; मजबूरी (उज़्र) के समय जायज़ है। यदि किसी ने ऐसे मरीज़ के कहने पर रमी की जो सामर्थ्य नहीं रखता, या हाजी बेहोश था चाहे उसने रमी का न कहा हो, या जिस बच्चे में समझ न हो उसकी ओर से या पागल की ओर से रमी कर दी गई, तो वह जायज़ होगी। बेहतर यह है कि कंकरियाँ मजबूर व्यक्तियों के हाथों में रख दी जाएँ और फिर उनके साथी रमी करें। 'अल-हावी' में 'अल-मुंतका' के हवाले से इमाम मुहम्मद से वर्णित है कि जब मरीज़ ऐसी स्थिति में हो कि वह केवल बैठकर नमाज़ पढ़ता हो, तो उसकी ओर से की गई रमी मान्य है और उस पर कुछ भी अनिवार्य नहीं है। शायद इसका कारण यह है कि जब वह खड़े होकर नमाज़ पढ़ सकता है, तो उसमें रमी के स्थान पर पहुँचने की सामर्थ्य होगी, चाहे सवारी पर या उठाकर ले जाया जाए; इसलिए उसकी ओर से प्रतिनिधि बनाना सही नहीं होगा। 2 संक्षेपित, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। | (उर्दू): पांचवीं शर्त यह है कि स्वयं रमी करे; सामर्थ्य होने के बावजूद प्रतिनिधि (नायब) बनाना सही नहीं है। हाँ, मजबूरी (उज़्र) के समय जायज़ है। यदि किसी ने ऐसे मरीज़ के कहने पर रमी की जो शक्ति नहीं रखता, या हाजी बेहोश था चाहे उसने रमी के लिए न कहा हो, या जिस बच्चे में समझ न हो उसकी ओर से या पागल की ओर से रमी कर दी गई, तो वह जायज़ होगी। बेहतर यह है कि कंकरियाँ मजबूरों के हाथों में रख दी जाएँ और उनके साथी रमी करें। 'हावी' में 'मुंतका' से इमाम मुहम्मद से रिवायत है कि जब मरीज़ इस हाल में हो कि सिर्फ बैठ कर नमाज़ अदा करता हो, तो उसकी तरफ़ से किसी ने रमी कर दी तो उस पर कोई चीज़ लाज़िम न होगी। शायद इसकी वजह यह है कि जब वह नमाज़ खड़े हो कर अदा कर सकता हो, तो अब उसके लिए रमी के लिए जाने की कुदरत होगी, चाहे सवार होकर जाए या उसे उठा कर ले जाया जाए; अब उसकी तरफ़ से नायब बनाना दुरुस्त न होगा। मुल्ख़ुसा वल्लाहु तआला आलम (त) |

मसला २९१: बरेली शहर से, साहिबा सतना बीबी साहिबा मद ज़िल्लहुम द्वारा पूछा गया। हज में एक ऊँट में आठ लोगों ने मिलकर कुर्बानी की, तो हज हुआ या नहीं और क्या कुर्बानी दोबारा करनी होगी? बयान करें और सवाब पाएँ।

अल-जवाब (उत्तर): हज हो गया। फिर एहराम बांधते समय केवल हज की नीयत की थी, तो कुर्बानी मूल रूप से ज़रूरी नहीं थी और न ही अब उसके बदले किसी चीज़ की ज़रूरत है। हाँ, अगर एहराम में हज और उमराह दोनों की नीयत एक साथ की थी या एहराम में केवल...

1. लुबाब और शरह लुबाब मय इरशाद-उस-सारी, दो दिनों में रमी के समय का अध्याय, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरूत, पृष्ठ 161 से 85.
2. लुबाब और शरह लुबाब मय इरशाद-उस-सारी, रमी के अहकाम और उसकी शर्तें आदि का अध्याय, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरूत, पृष्ठ 166. पेज 676 ऑफ 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

| لایرید النفر کذا روی الحسن عن ابي حنیفة 1- | جائز نہیں جو لوٹنے کا ارادہ نہ رکھتا ہو۔ امام حسن نے امام ابو حنیفہ رحمۃ اللہ تعالٰی سے یوں ہی نقل کیا ہے۔ (ت) |

اسی کی فصل شرائط رمی میں ہے:

| الخامس ان یرمی بنفسه فلا تجوز النیابة عند القدرة تجوز عند العذر، فلورمی عن مریض لا یستطیع الرمی بامره او مغمی علیه ولو بغیر امره او صبی غیر ممیز او مجنون جاز، والا فضل ان توضع الحصی فی اکفهم فیرمونها ای رفقاؤهم ففی الحاوی عن المنتقی عن محمد، اذا کان المریض بحیث یصلی جالسا رمی عنه ولا شئ علیه اھ ولعل وجهه انه اذا کان یصلی قائماً فله القدرة علی حضور المرمی راکبا او محمولا فلا یجوز النیابه عنه 2 اھ ملخصات واللہ تعالی اعلم۔ | پانچویں شرط یہ ہے کہ خود رمی کرے قدرت کے باوجود نائب بنانا درست نہیں، ہاں عذر کے وقت جائز ہے، اگر کسی نے ایسے مریض کے کہنے پر رمی کی جو طاقت نہیں رکھتا، یا حاجی پر غشی طاری تھی اگرچہ اس نے رمی کا نہ کہا ہو، یا جس بچے کو شعور نہ ہو اس کی طرف سے یا دیوانے کی طرف سے رمی کردی تو جائز ہوگی۔ افضل یہ ہے کہ کنکریاں معذوروں کے ہاتھوں میں رکھ دئے جائیں تو ان کے رفیق رمی کریں۔ حاوی میں المنتقی سے امام محمد سے مروی ہے جب مریض اس حال میں ہو کہ صرف بیٹھ کر نماز ادا کرتا ہو تو اس کی طرف سے کسی نے رمی کردی تو اس پر کوئی شئے لازم نہ ہوگی اھ شاید اسکی وجہ یہ ہے کہ جب وہ نماز کھڑے ہو کر ادا کرسکتا ہو تو اب اس کے لیے رمی کے لیے جانے کی قدرت ہوگی خواہ سوار ہو کر جائے یا اسے اٹھا کر لے جایا جائے اب اس کی طرف سے نائب بنانا درست نہ ہوگا۔ ملخصا واللہ تعالٰی اعلم (ت) |

مسئلہ ۲۹۳: از شہر بریلی مسئولہ حضرت ستنا بی بی صاحبہ مد ظلہا حج میں ایک اونٹ آٹھ آدمیوں نے شریک ہو کر قربانی کی تو حج ہوا یا نہیں اور قربانی دوبارہ کرے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔ الجواب: حج ہو گیا پھر احرام باندھتے وقت تنہا حج کی نیت باندھی تھی تو قربانی اصلاً ضرور نہ تھی نہ اب اس کے بدلے کسی چیز کی حاجت ہے، ہاں اگر احرام میں حج اور عمرہ دونوں کی نیت ایک ساتھ باندھی تھی یا احرام میں فقط

1 لباب و شرح لباب مع ارشاد الساری فصل فی وقت الرمی فی الیومین دار الکتاب العربی بیروت ص ۱۶۱ تا ۸۵ 2 لباب و شرح لباب مع ارشاد الساری فصل فی احکام الرمی و شرائط الخ دار الکتاب العربی بیروت ص ۱۶۶ Page 676 of 836

Fatawa Rizvia, Volume 10

...having performed Umrah with the intention and then putting on the Ihram for Hajj in Makkah al-Mukarramah, then the sacrifice (Qurbani) was indeed obligatory. And if more than seven people participated in one camel, then that sacrifice was not valid. In this case, two sacrifices are mandatory: one original and one as a penalty. Their cost should be sent to the Haram Sharif and the sacrifices performed there. Allah knows best.

Problem 294 to 295: (1) A pilgrim gave the price of Dam-e-Shukriya (sacrifice of gratitude) as charity instead. Has this Dam-e-Shukriya been fulfilled on his behalf or not? Another person gave the price of Dam-e-Taqseer (sacrifice for deficiency) as charity; has the sacrifice been fulfilled on his part or not? (2) If those individuals who did not perform Dam-e-Shukriya and Dam-e-Taqseer in Mina, come here [to India] and participate in buying a cow like a regular sacrifice and slaughter it and distribute it as charity here, will this action be valid in India or not? Please explain and may you be rewarded.

Answer: (1) No, because here the act of slaughtering itself is intended and sacrificing a life for the sake of Allah Almighty; therefore, the price is not sufficient in its stead. It is stated in Al-Lubab:

Value is not permissible in Hady (sacrificial animal) of a vow, just as it is not permissible in other types of Hady. And Allah Almighty knows best. | Giving the price of the Hady of a vow is not permissible, just as it is not permissible for other types of Hady. And Allah Almighty knows best. (T)

If a thousand cows or camels are slaughtered in India, it will not be fulfilled because for this, the Haram (the sacred precinct of Makkah) is a condition. It is stated in Durr al-Mukhtar:

The Haram is specified, and Mina is not specifically meant. i.e., for Dam-e-Shukr and Jabr. Ash-Shami said, as previously mentioned, it is a name for the livestock offered to the Haram etc. I say, Allah Almighty has said: 'Hady reaching the Kaaba'. And Allah Almighty knows best. | The Haram is specified, Mina is nothing special i.e. for the sacrifice of gratitude and for that sacrifice which is for the removal of deficiency. Imam Shami said that it was mentioned earlier that this is the name of those offerings, which are animals taken towards the Haram, etc. I say, the blessed

command of Allah Almighty is thus: 'That Hady which is to reach the Kaaba.' And Allah Almighty knows best. (T)

1. Lubab al-Manasik with Irshad al-Sari, Chapter on Obligation of Hady, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 315.
2. Durr al-Mukhtar, Kitab al-Hajj, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/183.
3. Radd al-Muhtar, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/272.

फतावा रज़विया, जिल्द दसवीं

...उमरा की नियत करके अदा करके फिर हज का एहराम मक्का मुअज्जमा में बांधा था तो अलबत्ता कुर्बानी वाजिब थी और एक ऊंट में सात से ज्यादा शरीक न हो सकते थे तो वह कुर्बानी न हुई, इस सूरत में अलबत्ता दो कुर्बानियां लाजिम हैं एक असल और एक जुर्माने की, उनकी कीमत भेज कर हरम शरीफ में कराई जाएं। वल्लाह तआला आलम।

मसला 294 ता 295: (1) एक हाजी ने दम-ए-शुक्रिया के एवज उसकी कीमत खैरात की, अब यह दम-ए-शुक्रिया उसकी जानिब से अदा हुआ या नहीं? दूसरे साहब ने दम-ए-तकसीर की कीमत खैरात की, उसकी ज़िम्मे से दम अदा हुआ या नहीं? (2) अगर वह साहब जिन्होंने दम-ए-शुक्रिया और दम-ए-तकसीर मिना में न ज़ब्ह किया वहां आकर एक गाय खरीद कर मिस्ल-ए-कुर्बानी के शरीक होकर और उसको ज़ब्ह करके खैरात यहाँ कर दें तो वह फेल हिन्द में दुरुस्त होगा या नहीं? बय्यानू तूजरू

अल-जवाब: (1) न, कि यहाँ खुद ज़ब्ह मक़सूद है और अल्लाह अज़्ज़वजल के लिए जान देना, तो कीमत उसके बदले में काफी नहीं, लुबाब में है:

नज़र के हदी में कीमत जायज़ नहीं जैसा कि अन्य हदियों में जायज़ नहीं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। | नज़र के हदी की कीमत अदा करना जायज़ नहीं जैसा कि अन्य हदियों में जायज़ नहीं। वल्लाह तआला आलम (त)

अगर हिन्दुस्तान में हज़ार गाएँ या ऊँट ज़ब्ह कर दें अदा न होगा कि इसके लिए हरम शर्त है। दुर्र-ए-मुख्तार में है:

हरम मुतअय्यन है मिना कुछ खास नहीं यानी दम-ए-शुक्र और उस दम के लिए जो नुक्सान के इजाले के लिए हो। इमाम शामी ने कहा कि पहले गुज़रा कि यह उन हदाया का नाम है जो जानवर हरम की तरफ ले जाए जाते हैं वग़ैरह। मैं कहता हूँ अल्लाह तआला का फरमान मुबारक यूँ है: 'वह हदी जो काबा को पहुँचने वाली है'। वल्लाह तआला आलम। | हरम मुतअय्यन है मिना कुछ खास नहीं यानी दम-ए-शुक्र और उस दम के लिए जो नुक्सान के इजाले के लिए हो, इमाम शामी ने कहा कि पहले गुज़रा कि यह उन हदाया का नाम है जो जानवर हरम की तरफ ले जाए जाते हैं वग़ैरह, मैं कहता हूँ

अल्लाह तआला का फ़रमान मुबारक यूँ है वह हदी जो काबा को पहुँचने वाली है, वल्लाह तआला आलम (त)

1. लुबाब अल-मनासिक मआ इरशाद अल-सारी, फसल फी इजाब अल-हदी, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरुत, पृ. 315।
2. दुर्र-ए-मुख्तार, किताब अल-हज, मतबा मुजतबाई, दिल्ली, 1/183।
3. रद अल-मुहतार, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 2/272।

पृष्ठ 677 का 836

عمرہ کی نیت کر کے ادا کر کے پھر حج کا احرام مکہ معظمہ میں باندھا تھا تو البتہ قربانی واجب تھی اور ایک اونٹ میں سات سے زیادہ شریک نہ ہو سکتے تھے تو وہ قربانی نہ ہوئی ، اس صورت میں البتہ دو قربانیاں لازم ہیں ایک اصل اور ایک جرمانہ کی ، ان کی قیمت بھیج کر حرم شریف میں کرائی جائیں ۔ واللہ تعالٰی اعلم

مسئلہ ۲۹۴ تا ۲۹۵: (۱) ایک حاجی نے دمِ شکریہ کے عوض اس کی قیمت خیرات کی ، اب یہ دمِ شکریہ اس کی جانب سے ادا ہوا یا نہیں ؟ دوسرے صاحب نے دمِ تقصیر کی قیمت خیرات کی ، اس کی ذمہ سے دم ادا ہوا یا نہیں ؟ (۲) اگر وہ صاحب جنہوں نے دمِ شکریہ اور دمِ تقصیر منٰی میں نہ ذبح کیا وہاں آکر ایک گائے خرید کر مثلِ قربانی کے شریک ہو کر اور اس کو ذبح کر کے خیرات یہاں کر دیں تو وہ فعل ہند میں درست ہوگا یا نہیں ؟ بینوا توجروا

الجواب: (۱) نہ، کہ یہاں خود ذبح مقصود ہے اور اللہ عزوجل کے لیے جان دینا، تو قیمت اس کے بدلے میں کافی نہیں ، لباب میں ہے :

لا تجوز القیمۃ فی ھدی النذر کما لا تجوز فی غیرہ من الھدایا۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ | نذر کے ہدی کی قیمت ادا کرنا جائز نہیں جیسا کہ دیگر ہدیوں میں جائز نہیں۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

اگر ہندوستان میں ہزار گائیں یا اونٹ ذبح کر دیں ادا نہ ہوگا کہ اس کے لیے حرم شرط ہے ۔ در مختار میں ہے :

یتعین الحرم المنی اھ ای لدم شکر و جبر قال الشامی لما تقدم انہ اسم لما یھدی من النعم الی الحرم الخ قلت وقد قال تعالٰی ھَدْیًا بٰلِغَ الْکَعْبَۃِ ۔ واللہ تعالٰی اعلم | حرم متعین ہے منٰی کچھ خاص نہیں اھ یعنی دم

شکر اور اس دم کے لیے جو نقصان کے ازالہ کے لیے ہو ، امام شامی نے کہا کہ پہلے گزرا کہ یہ ان ہدایا کا نام ہے جو جانور حرم کی طرف لے جائے جاتے ہیں الخ ، میں کہتا ہوں اللہ تعالیٰ کا فرمان مبارک یوں ہے وہ ہدی جو کعبہ کو پہنچنے والی ہے ، واللہ تعالیٰ اعلم (ت)

1. لباب المناسک مع ارشاد الساری فصل فی ایجاب الہدی دارالکتاب العربی بیروت ص ۳۱۵
2. درمختار کتاب الحج مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۸۳
3. ردالمحتار مصطفی البابی مصر ۲/ ۲۷۲

Fatawa Rizvia Volume 10

Problem 296: From Pilibhit, sent by Hazrat Maulana Wasi Ahmad Sahib Muhaddith Surti (may Allah's mercy be upon him), 13 Ramadan 1325 AH. If a person travels a long distance to perform a voluntary (Nafl) Hajj and does not visit the Master of the Universe (peace and blessings be upon him), can he be the subject of the hadith: "He who performs Hajj and does not visit me has wronged me"? Are residents of Makkah who perform Nafl Hajj and do not visit the holy shrine after that also subjects of this hadith or not?

The Answer: "Whoever performs Hajj" is certainly general, including both residents of Makkah and those from outside. The repetition of the cause entails the repetition of the command. To interpret "and did not visit me" as referring only to a total abandonment is contrary to the obvious original meaning. In the eye of faith, undoubtedly, visiting is necessary every time, and this is indeed the practice of Muslims. Al-Fakihi al-Makki (d. 982 AH) says in his book 'Husn al-Tawassul fi Ziyarat Afdal al-Rusul' (may Allah's blessings and peace be upon him):

[Arabic Text] "When a commanded act depends on a recurring cause, the demand for the act from the person responsible is repeated with the repetition of the cause. An example is responding to the caller to prayer (Muezzin); the response is required, as a group has stated, every time the call (Adhan) is made and repeated. Similarly, it appears that visiting is required for the one who is able every time they perform Hajj, based on the implication of this report and similar ones. Thus, it is more emphasized for a resident of Makkah than for others not to miss the visit after their Hajj, especially in the year of their Hajj. For proximity of house makes the close one like a neighbor, and a neighbor who abandons visiting has acted unjustly, especially if he incurs debts to satisfy his desires and maintain his habits but does not do so for what is the noblest of his acts of worship. End quote."

[Urdu Translation/Explanation] "When a commanded act depends on a recurring cause, the demand for the act also repeats with the repetition of the cause. Accepting the Muezzin's invitation to prayer is of this kind; whenever the Adhan repeats, the response is demanded, as a group has stated. From this, it's clear that whenever a capable person performs Hajj, they should present themselves at the Prophetic court (peace and blessings be upon its occupant) based on this and other prophetic decrees. This is even more emphasized for Makkans compared to non-Makkans: after

Hajj, especially in the year of performance, they shouldn't miss the visit because proximity of residence makes the close one a neighbor."

1. Husn al-Tawassul fi Ziyarat Afdal al-Rusul (peace and blessings of Allah be upon him).

फतावा रिज़विया जिल्द दसम

मसला २९६: पीलीभीत से, हज़रत मौलाना वसी अहमद साहब मुहद्दिस सूरती (अल्लाह की उन पर रहमत हो) द्वारा भेजा गया, १३ रमज़ान १३२५ हिजरी। यदि कोई व्यक्ति नफ़्ल (स्वैच्छिक) हज के लिए लंबी दूरी तय करता है और कायनात के आका (उन पर शांति और आशीर्वाद हो) की ज़ियारत नहीं करता है, तो क्या वह इस हदीस का विषय हो सकता है: "जिसने हज किया और मेरी ज़ियारत नहीं की, उसने मुझ पर ज़ुल्म किया"? क्या मक्का मुअज़्ज़मा के निवासी जो नफ़्ल हज के बाद रौज़ा-ए-अकदस की ज़ियारत नहीं करते, वे इस हदीस के दायरे में आते हैं या नहीं?

अल-जवाब (उत्तर): "जिसने हज किया" निश्चित रूप से सामान्य है, इसमें मक्का के निवासी और बाहरी लोग दोनों शामिल हैं। कारण की पुनरावृत्ति आदेश की पुनरावृत्ति को अनिवार्य करती है। "मेरी ज़ियारत नहीं की" को केवल पूर्ण त्याग के रूप में व्याख्यायित करना स्पष्ट मूल अर्थ के विपरीत है। ईमान की नज़र में, निस्संदेह, हर बार ज़ियारत करना आवश्यक है, और वास्तव में यही मुसलमानों का अमल (अभ्यास) है। फाकेही मक्की (देहांत ९८२ हिजरी) अपनी पुस्तक 'हुस्न अल-तवस्सुल फी ज़ियारत अफ़ज़ल अल-रुसुल' (अल्लाह की उन पर शांति और आशीर्वाद हो) में फ़रमाते हैं:

[अरबी पाठ] "जब कोई आदेशित कार्य किसी ऐसे कारण पर निर्भर करता है जो दोहराया जाता है, तो उस कार्य की मांग भी कारण की पुनरावृत्ति के साथ दोहराई जाती है। इसका एक उदाहरण मुअज़्ज़िन (अज़ान देने वाले) का जवाब देना है; जवाब की मांग की जाती है, जैसा कि एक समूह ने कहा है, हर बार जब अज़ान दी जाती है और दोहराई जाती है। इसी तरह, यह प्रतीत होता है कि सक्षम व्यक्ति के लिए हर बार हज करने पर ज़ियारत आवश्यक है, इस रिपोर्ट और इसी तरह की अन्य रिपोर्टों के निहितार्थ के आधार पर। इस प्रकार, मक्का के निवासी के लिए दूसरों की तुलना में अपने हज के बाद ज़ियारत न चूकने पर अधिक ज़ोर दिया जाता है, विशेष रूप से अपने हज के वर्ष में। क्योंकि घर की निकटता पास वाले को पड़ोसी जैसा बना देती है, और वह पड़ोसी जो मिलने (ज़ियारत) को छोड़ देता है, उसने अन्याय किया है, खासकर अगर वह अपनी इच्छाओं को पूरा करने और अपनी आदतों को बनाए रखने के लिए कर्ज लेता है, लेकिन वह ऐसा उसके लिए नहीं करता जो उसके इबादत (पूजा) के कार्यों में सबसे महान है। इति।"

[उर्दू अनुवाद/व्याख्या] "जब कोई आदेशित कार्य किसी ऐसे कारण पर निर्भर करता है जिसमें पुनरावृत्ति है, तो कारण की पुनरावृत्ति पर उत्तरदायी व्यक्ति से उस कार्य की मांग भी दोहराई जाएगी।

मुअज़्ज़िन की नमाज़ की दावत को स्वीकार करना भी इसी श्रेणी में है; जब भी अज़ान दोहराई जाएगी, उत्तर देने की मांग होगी जैसा कि एक समूह का कहना है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सक्षम व्यक्ति जब भी हज करे, इस और अन्य नबवी आदेशों के आधार पर नबवी दरबार (शांति और आशीर्वाद हो) में हाज़िरी दे। गैर-मक्की लोगों की तुलना में मक्की लोगों को इसकी अधिक ताकीद (ज़ोर) है कि हज के बाद, विशेष रूप से हज की अदायगी के वर्ष में, ज़ियारत के लिए हाज़िरी न चूकें क्योंकि घर की निकटता पास वाले को पड़ोसी बना देती है।"

1. हुस्न अल-तवस्सुल फी ज़ियारत अफ़ज़ल अल-रुसुल (अल्लाह की उन पर शांति और आशीर्वाद हो)।

पृष्ठ ८३६ का ६७८

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

مسئلہ ۲۹۶: از پیلی بھیت مرسلہ حضرت مولانا وصی احمد صاحب محدث سورتی رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ ۱۳ رمضان ۱۳۲۵ھ جو شخص دُور دراز سفر کرکے حج نفل کرے اور زیارتِ سرورِ کائنات علیہ التحیۃ والصلوٰۃ نہ کرے تو وہ مصداق اس حدیث کا ہوسکتا ہے کہ "جو شخص حج کرے اور میری زیارت نہ کرے تو اس نے مجھ پر ظلم کیا۔" جو لوگ کہ ساکن مکہ معظمہ کے ہیں اور نفل حج کے بعد روضہ اقدس کی زیارت نہ کریں تو اس حدیث کے مصداق ہیں یا نہیں؟

الجواب: من حجّ (جس نے بھی حج کیا ت) یقیناً عام ہے مکی و آفاقی سب کو شامل اور تکرارِ سبب تکرارِ حکم کو مستلزم، اور لم یزرنی (میری زیارت نہ کی۔ ت) کے صدق کو ترکِ کلی کی طرف مشیر ماننا خلافِ اصلِ متبادر، نظرِ ایمانی میں بلاشبہ ہر بار زیارت لازم، اور اسی پر مسلمین کا عمل لاجرم، فاکہی مکی متوفی ۹۸۲ھ کتاب حسن التوسل فی زیارۃ افضل الرسل صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم میں فرماتے ہیں:

لما مور به اذاكان مرتباً على سبب يتكرر طلبه من المكلف بتكرر السبب، فمن ذلك اجابة المؤذن فتطلب الاجابة، على ماقاله جمع كلما وجد الاذان و يتكرر، ومنه فيما يظهر الزيارة للمستطيع كلما حج، بناء على مقتضى هذا الخبر ونحوه فيتأكد على نحو المكي اكثر من تاكده على غيره ان لايفوت الزيارة بعد حجه لاسيما فى عام حجه فان قرب الدار يصير القريب كالجار والجار التارك للمزار قد جار، سيما اذا كان يرتكب الديون فى تحصيل شهوته، وعدم قطع عادته ولا يرتكبها فيما هو اشرف عباداته اھ

جب مامور بہ کسی ایسے سبب پر مترتب ہو جس میں تکرار ہے تو سبب کے تکرار پر مکلف سے مامور بہ کے مطالبہ کا بھی تکرار ہوگا، مؤذن کی دعوتِ نماز کو قبول کرنا بھی اسی قبیل سے

ہے، تو جب بھی اذان کا تکرار ہوگا اجابت کا مطالبہ ہوگا جیسا کہ ایک جماعت کا قول ہے اس سے یہ واضح ہوجاتا ہے کہ صاحب استطاعت جب بھی حج کرے اس اور دیگر فرمانِ نبوی کی بنا پر، دربارِ نبوی علیٰ صاحبہا الصلوۃ والسلام میں حاضری دے، غیر مکی لوگوں کی نسبت مکی لوگوں کو اس کی زیادہ تاکید ہے کہ حج کے بعد خصوصاً حج کی ادائیگی کے سال، زیارت کیلئے حاضری کو فوت نہ کرے کیونکہ قربِ دار، قریبی کو پڑوسی بنا دیتا ۱

۱ حسن التوسل فی زیارۃ افضل الرسل صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم

I say: the emphasis on the people of Makkah is greater because their excuse is less, as indicated. And Allah Almighty knows best. ...is, and if he is a neighbor and abandons the visitation, it is as if he has committed oppression, especially when he even resorts to debt to fulfill his own desires and habits, but does not spend on those actions which are most virtuous in worship. Finis. I say: this emphasis will be more frequent for the people of Makkah because their excuse is less, as he indicated towards this. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 297 to 298: From Hafiz Muhammad Ayaz Sahib, Najibabad, District Bijnor, Pathan Pura Mohalla, Muharram 1332 AH. What do the scholars of religion and jurists of the firm Shariah say regarding the following issues? Please provide guidance according to the ruling of the noble Shariah. May Allah Almighty grant a great reward. (1) If a person reaches Makkah al-Mukarramah in the month of Sha'ban and stays there during Ramadan al-Sharif, and performs Tawaf, kissing of the Black Stone, etc., with complete tranquility, will the reward be the same as it is during the days of Hajj, or will there be some difference? Will he get the reward of a hundred thousand for one prayer, as in Hajj, and will charities etc. be like that too, or not? Even though the said person will definitely perform the pillars of Hajj during the days of Hajj as well. (2) If a person reaches Madinah in the month of Sha'ban and stays there during Ramadan al-Mubarak, continuously visiting the Pure Sanctuary (Raudah Mutahharah), and then reaches Makkah al-Mukarramah with the caravan from Madinah Munawwarah to perform the pillars of Hajj; OR if he goes to Madinah Munawwarah first in the month of Shawwal, and after leisurely visiting the Presence of the Holy Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him), goes to Makkah al-Mukarramah, performs the pillars of Hajj there, and then returns to his home—in these cases, will the said person receive the reward of the same degree as is for going to Madinah Tayyibah after the Hajj of the House of Allah, or will it be somewhat less? In short, is it correct to go to Madinah Munawwarah first and from there come to the House of Allah with a caravan and return home after performing the pillars of Hajj? And is its reward like going after visiting Madinah Sharif or not? Please honor us with an answer for Allah's sake; there is a lot of dispute over this here. May Allah Almighty grant the rewards of both worlds.

The Answer: (1) The reward for deeds in the respected Sanctuary (Haram) is in consideration of that holy land, not specific to the time of Hajj. The reward of a hundred thousand for one good deed will be the same in other times as it is during

the Hajj period. As for the Tawaf of the Ka'bah al-Mu'azzamah performed during Hajj, if it is an obligatory (fard) Tawaf, then it is obvious that no other thing can reach the reward of an obligatory act, and...

मैंने कहा: मक्का वालों पर ताकीद ज़्यादा है क्योंकि उनका उज़्र (बहाना) कम है, जैसा कि उसकी तरफ इशारा किया गया। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। ...है, और पड़ोसी होकर ज़ियारत का तारक हो तो गोया उसने ज़ुल्म किया, खुसूसन जब अपने शौक़ और आदत को पूरा करने में तो क़र्ज़ तक का इर्तिकाब करता हो और उन आमाल में खर्च नहीं करता जो इबादत में अफ़ज़ल हैं। अतं। मैं कहता हूँ मक्की लोगों पर यह ताकीद अक्सर होगी क्योंकि उनका उज़्र कम है जैसा कि उन्होंने इस तरफ इशारा फ़रमाया। वल्लाहु तआला आलम (त)

मसला 297 ता 298: हाफ़िज़ मुहम्मद अयाज़ साहब अज़ नजीबाबाद जिला बिजनौर मोहल्ला पठान पुरा मोहर्रम 1332 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन व मुफ़्तियान-ए-शरअ-ए-मतीन मसाइल-ए-ज़ैल में बमौजब हुक्म-ए-शरअ-ए-शरीफ़ इर्शाद फ़रमायें अल्लाह तआला अज्र-ए-अज़ीम अता फ़रमाये। (1) अगर माह-ए-शाबान में कोई शख़्स मक्का मुअज़्ज़मा पहुँच जाए और रमज़ान शरीफ़ में वहाँ क़याम करे और निहायत इत्मीनान से तवाफ़ व संग-ए-अस्वद शरीफ़ का बोसा वग़ैरा अदा करे तो जैसा सवाब अय्याम-ए-हज में होता है वैसा ही होगा या इसमें कुछ फ़र्क़ होगा और वही सवाब एक नमाज़ का मिलेगा जैसा कि एक लाख का और सदक़ात वग़ैरा में भी इसी के मिसल होगा या नहीं, हालाँकि शख़्स-ए-मज़कूर अय्याम-ए-हज में भी अरकान-ए-हज ज़रूर अदा करेगा। (2) अगर माह-ए-शाबान में कोई शख़्स मदीना पहुँच जाए और वहाँ रमज़ान-उल-मुबारक में क़याम करे और रौज़ा-ए-मुतहरा की ज़ियारत करता रहे और हमराह क़ाफ़िला मदीना मुनव्वरा के मक्का मुअज़्ज़मा पहुँच कर हज के अरकान अदा करे या माह-ए-शव्वाल में अव्वल मदीना मुनव्वरा जाए और वहाँ ज़ियारत-ए-हुज़ूर-ए-अक़दस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से इत्मीनान के साथ फ़राग़त पाकर मक्का मुअज़्ज़मा जाए और वहाँ हज के अरकान अदा करके अपने मकान को चला आए, तो इन सूरतों में शख़्स-ए-मज़कूर को सवाब इसी दर्जे का मिलेगा जैसा कि हज-ए-बैतुल्लाह शरीफ़ के बाद मदीना तैय्यबा जाने का होता है या कुछ कम होगा? हासिल-ए-कलाम यह कि अव्वल मदीना मुनव्वरा जाना और वहाँ से क़ाफ़िले के साथ बैतुल्लाह शरीफ़ आना और अरकान-ए-हज अदा करके मकान को वापस आ जाना दुरुस्त है या नहीं और इसका सवाब मिसल बा'द मदीना शरीफ़ जाने के है या नहीं? इन्दल्लाह जवाब से मुशर्रफ़ फ़रमायें, इसके ऊपर यहाँ बहुत झगड़ा हो रहा है, अल्लाह तआला सवाब-ए-दारैन अता फ़रमाये।

अल-जवाब: (1) हरम-ए-मोहतरम के आमाल का सवाब उस ज़मीन-ए-पाक के एतबार से है, न ज़मान-ए-हज की खुसूसियत से, एक नेकी पर लाख का सवाब जैसे ज़माना-ए-हज में होगा वैसे ही दीगर औक़ात में, और तवाफ़-ए-काबा-ए-मुअज़्ज़मा जो हज में किया जाएगा अगर वो तवाफ़ फ़र्ज़ है जब तो ज़ाहिर है कि फ़र्ज़ के सवाब को दूसरी चीज़ नहीं पहुँच सकती और...

पेज 679/836

قلت وانما جعل التاکید علی المکی اکثر لان عذرہ اقل کما اشارہ الیہ۔ واللہ تعالٰی اعلم۔ ہے اور پڑوسی ہو کر زیارت کا تارک ہو تو گویا اس نے ظلم کیا، خصوصاً جب اپنے شوق اور عادت کو پورا کرنے میں تو قرض تک کا ارتکاب کرتا ہو اور ان اعمال میں خرچ نہیں کرتا جو عبادات میں افضل ہیں اھ میں کہتا ہوں مکی لوگوں پر یہ تاکید اکثر ہو گی کیونکہ ان کا عذر اقل ہے جیسا کہ انہوں نے اس طرف اشارہ فرمایا۔ واللہ تعالٰی اعلم (ت)

مسئلہ ۲۹۷ تا ۲۹۸: حافظ محمد ایاز صاحب از نجیب آباد ضلع بجنور محلہ پٹھان پورہ محرم ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین مسائل ذیل میں بموجب حکم شرع شریف ارشاد فرمایئے اللہ تعالٰی اجر عظیم عطا فرمائے۔ (۱) اگر ماہ شعبان میں کوئی شخص مکہ معظمہ پہنچ جائے اور رمضان شریف میں وہاں قیام کرے اور نہایت اطمینان سے طواف و سنگ اسود شریف کا بوسہ وغیرہ ادا کرے تو جیسا ثواب ایام حج میں ہوتا ہے ویسا ہی ہوگا یا اس میں کچھ فرق ہوگا اور وہی ثواب ایک نماز کا ملے گا جیسا کہ ایک لاکھ کا اور صدقات وغیرہ میں بھی اسی کے مثل ہوگا یا نہیں، حالانکہ شخص مذکور ایام حج میں بھی ارکان حج ضرور ادا کرے گا۔ (۲) اگر ماہ شعبان میں کوئی شخص مدینہ پہنچ جائے اور وہاں رمضان المبارک میں قیام کرے اور روضہ مطہرہ کی زیارت کرتا رہے اور ہمراہ قافلہ مدینہ منورہ کے مکہ معظمہ پہنچ کر حج کے ارکان ادا کرے یا ماہ شوال میں اول مدینہ منورہ جائے اور وہاں زیارت حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے اطمینان کے ساتھ فراغت پا کر مکہ معظمہ جائے اور وہاں حج کے ارکان ادا کر کے اپنے مکان کو چلا آئے، تو ان صورتوں میں شخص مذکور کو ثواب اسی درجہ ملے گا جیسا کہ حج بیت اللہ شریف کے بعد مدینہ طیبہ جانے کا ہوتا ہے یا کچھ کم ہوگا؟ حاصل کلام یہ کہ

اول مدینہ منورہ جانا اور وہاں سے قافلہ کے ساتھ بیت اللہ شریف آنا اور ارکان حج ادا کر کے مکان کو واپس آ جانا درست ہے یا نہیں اور اس کا ثواب مثل بعد مدینہ شریف جانے کے ہے یا نہیں؟ عند اللہ جواب سے مشرف فرمائیے، اس کے اوپر یہاں بہت جھگڑا ہو رہا ہے ، اللہ تعالیٰ ثواب دارین عطا فرمائے۔

الجواب: (۱) حرم محترم کے اعمال کا ثواب اس زمین پاک کے اعتبار سے ہے، نہ زمان حج کی خصوصیت سے، ایک نیکی پر لاکھ کا ثواب جیسے زمانہ حج میں ہوگا ویسے ہی دیگر اوقات میں، اور طواف کعبہ معظمہ جو حج میں کیا جائے گا اگر وہ طواف فرض ہے جب تو ظاہر ہے کہ فرض کے ثواب کو دوسری چیز نہیں پہنچ سکتی اور

If it is the circumambulation (tawaf) of Umrah, then performing it in the blessed month of Ramadan will be much more rewarding than in Dhu al-Hijjah due to the difference of opinion among scholars regarding the validity of Umrah during the months of Hajj. (Because scholars differ about the permissibility of Umrah in the months of Hajj). It is mentioned in the Hadith that the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Boxed Text] "Umrah in Ramadan is equivalent to Hajj with me. And Allah knows best." | "In the blessed month of Ramadan, one Umrah is equivalent to Hajj with me. And Allah knows best."

The noble scholars have mentioned both scenarios: whether one presents oneself before the Great Master (in Medina) first and then performs Hajj—this would be like the Sunnah prayers preceding the Fard (obligatory) prayers of Fajr, and visiting the holy court will, God willing, provide the means for the acceptance of Hajj, by the grace of Allah the Generous, then His Compassionate and Merciful Messenger (upon him and his family be the most noble blessings and peace). And if one wishes, one may visit after Hajj—this would be like the Sunnah prayers after the Fard of Maghrib. If Hajj is accepted (Mabrur), it will purify one from sins and make one worthy of visiting the luminous grave.

Become pure first, then cast your eyes upon that Pure Being. (First become pure, then attain the honor of visiting those with blessed manners).

All this applies if Medina Tayyiba does not fall on the way to Makkah Mu'azzama. If it does, as is the case for those coming from Syria, then visiting the luminous court first is necessary; it is contrary to etiquette to go for Hajj without visiting. And Allah knows best.

Issue 299: Presented by Munshi Muhammad Atiq Ahmed, resident of Pilibhit, dated 12 Rajab 1321 AH. To the most learned of scholars, most excellent of the virtuous, most complete of the perfect, sun of the sky of Sharia, shining moon of Tariqa, bestower of light to the hearts of believers, illuminator of religion and the world, judge of the department of faith, under the beloved of the Compassionate, the Master of the World (peace and blessings of Allah be upon him), supporter of the firm religion, the Sunnis, eradicator of misguidance, disbelief, and innovation, possessor of overwhelming proof, the Renewer of the present century, a sign among

the signs of Allah, refuge of excellence, aware of reality, Imam of scholars and the virtuous, pilgrim of the two holy sanctuaries, our master and guide, his excellency Maulana Molvi Muhammad Ahmad Raza Khan Sahib, Fazil-e-Barelvi, may his blessings and bounties continue. What is the decree regarding the Hejaz Railway, which will facilitate the journey and visitation etc. of the two holy sanctuaries (may Allah increase them in honor and greatness) for Muslims, and for the inhabitants there, especially those living in the sacred sanctuary of Medina Munawwara, to have everything easily available to them...

---

1. Sahih Muslim, Chapter on the Virtue of Umrah in Ramadan, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/409.

यदि वह उमराह का तवाफ़ है, तो रमज़ान के मुबारक़ महीने में इसका तवाफ़ ज़िल-हिज्जा की तुलना में बहुत अधिक (पुण्यदायी) होगा क्योंकि हज के महीनों में उमराह की वैधता के बारे में विद्वानों के बीच मतभेद है। (क्योंकि विद्वान हज के महीनों में उमराह की अनुमति के बारे में मतभेद रखते हैं)। हदीस में है कि सैयदुल आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

[बॉक्स टेक्स्ट] "रमज़ान में उमराह मेरे साथ हज के बराबर है। और अल्लाह बेहतर जानता है।" | "रमज़ान मुबारक़ में एक उमराह मेरे साथ हज के बराबर है। और अल्लाह बेहतर जानता है।"

विद्वानों ने दोनों स्थितियों का उल्लेख किया है: चाहे पहले सरकार-ए-आजम की बारगाह में हाज़िर हो, उसके बाद हज करे—यह वैसा ही होगा जैसे फज्र के फ़र्ज़ों से पहले सुन्नतें होती हैं, और पवित्र दरबार में हाज़िरी, इंशा अल्लाह अल-करीम, हज की स्वीकार्यता का साधन बन जाएगी, फिर उनके दयालु और कृपालु रसूल (उन पर और उनके परिवार पर श्रेष्ठ दरूद और सलाम हो)। और यदि चाहे तो हज के बाद हाज़िर हो—यह वैसा ही होगा जैसे मग़रिब के फ़र्ज़ों के बाद सुन्नतें। यदि हज मबरूर (स्वीकृत) है, तो वह उसे पापों से पवित्र करके इस योग्य बना देगा कि वह रौज़ा-ए-अनवर की ज़ियारत करे।

पाक शो अव्वल व पस दीदा बर आं पाक अंदाज़ (पहले शुद्ध हो जाओ, फिर मुबारक़ अदा वालों की ज़ियारत का सम्मान पाओ।)

यह सब उस स्थिति में है जब मक्का मुअज़्ज़मा जाते समय मदीना तैयबा रास्ते में न पड़े। और यदि ऐसा है जैसा कि शाम (सीरिया) से आने वालों के लिए है, तो पहले दरबार-ए-अनवर में हाज़िरी ज़रूरी है, यह अदब के ख़िलाफ़ है कि हाज़िरी दिए बिना हज के लिए चला जाए। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला 299: मुंशी मोहम्मद अतीक अहमद साहब, निवासी पीलीभीत द्वारा दिनांक 12 रजब 1321 हिजरी को प्रस्तुत। आलिमों में सबसे बड़े आलिम, फ़ज़ीलत वालों में सबसे श्रेष्ठ, पूर्णता प्राप्त लोगों में सबसे पूर्ण, शरीयत के आसमान के सूरज, तरीक़त के चमकते चाँद, मोमिनों के दिलों को नूर देने वाले, दीन व दुनिया को रोशन करने वाले, ईमान के विभाग के हाकिम, रहमान के हबीब और दुनिया के सरदार (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के मातहत, मज़बूत दीन के समर्थक, सुन्नी, गुमराहियों, कुफ़्र और बिदअत को मिटाने वाले, प्रबल प्रमाण के स्वामी, वर्तमान सदी के मुजद्दिद, अल्लाह की

निशानियों में से एक निशानी, फ़ज़ीलत की पनाहगाह, हक़ीक़त से आगाह, आलिमों और फ़ाज़िलों के इमाम, हरमैन शरीफैन के हाजी, हमारे मौलाना और मुक़्तदा, आली जनाब मौलवी मुहम्मद अहमद रज़ा ख़ाँ साहब फ़ाज़िल-ए-बरेलवी (उनकी बरकतें और फ़ैज़ हमेशा रहें), इस बारे में क्या हुक्म है कि हिजाज़ रेलवे जो हरमैन शरीफ़ैन (अल्लाह उनकी इज़्ज़त और बड़ाई बढ़ाए) की यात्रा और ज़ियारत आदि को मुसलमानों के लिए आसान कर देगी और वहाँ के निवासियों, विशेष रूप से मदीना मुनव्वरा के हरम-ए-मोहतरम में रहने वालों को हर चीज़ आसानी से उपलब्ध होने का...

---

1. सहीह मुस्लिम, रमज़ान में उमराह की फ़ज़ीलत का अध्याय, क़दीमी कुतुब ख़ाना कराची 1/409.

اگر وہ طوافِ عمرہ ہے تو رمضان مبارک میں اس کا طواف ذی الحجہ سے بہت زیادہ ہوگا لاختلاف العلماء فی نفس جواز العمرۃ شہر الحج (کیونکہ علماء کا حج کے مہینے میں جواز عمرہ کے بارے میں اختلاف ہے ت) حدیث میں ہے حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

[Boxed Text] عمرۃ فی رمضان تعدل حجۃ معی۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ | رمضان مبارک میں ایک عمرہ میرے ساتھ حج کے برابر۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

علمائے کرام نے دونوں صورتیں لکھی ہیں چاہے پہلے سرکار اعظم میں حاضر ہو اس کے بعد حج کرے یہ ایسا ہوگا جیسے صبح کے فرضوں سے سنتیں مقدم ہیں اور حاضری بارگاہِ مقدس اس کے لیے قبول حج کا سامان فرمادے گی ان شاء اللہ الکریم ثم رسولہ الرؤف الرحیم علیہ وعلی آلہ اکرم الصلوٰۃ والتسلیم، اور چاہے تو حج کے بعد حاضر ہو یہ ایسا ہوگا جیسے مغرب کے فرضوں کے بعد سنتیں۔ حج اگر مبرور ہے اُسے گناہوں سے پاک کرکے اس قابل کردے گا کہ زیارت قبر انور کرے ع

پاک شو اول و پس دیدہ بر آں پاک انداز (پہلے پاک ہو جاؤ پھر مبارک ادا والوں کی زیارت کا شرف پاؤ ت)

یہ سب اس صورت میں ہے کہ مکہ معظمہ کو جاتے میں مدینہ طیبہ راستہ میں نہ پڑے اور اگر ایسا ہے جیسا شام سے آنے والوں کے لیے تو پہلے حاضری دربار انور ضروری ہے، خلافِ ادب ہے کہ بے حاضر ہوئے حج کو چلا جائے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۲۹۹: پیش کردہ منشی محمد عتیق احمد صاحب ساکن پیلی بھیت بتاریخ ۱۲ رجب ۱۳۲۱ھ بحضرت اعلم العلماء، افضل الفضلاء، اکمل الکملاء، آفتاب آسمان شریعت، ماہتاب درخشاں طریقت، نور بخش قلوب مومنین، روشن فرمائے دین و دنیا، حاکم محکمہ ایمان، ما تحت حبیب الرحمان سرورِ عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم، حامی دین متین، اہل سنت، ماحی ضلالت و کفر و بدعت، صاحبِ حجتِ قاہرہ، مجدد مائتہ حاضرہ، آیۃ من آیات اللہ، فضیلت پناہ، حقیقت آگاہ، امام العلماء والفضلاء، حاج الحرمین الشریفین مولانا و مقتدانا، عالی جناب مولوی محمد احمد رضا خاں صاحب فاضل بریلوی دامت برکاتہم وافاضاتہم، اس بارے میں کیا ارشاد ہے کہ حجاز ریلوے جو حرمین شریفین زاد ہما اللہ شرفاً وتعظیماً کے سفر و زیارت وغیرہ کو مسلمانوں پر آسان کر دے گی اور وہاں کے ساکنین خصوصاً حرم محترم مدینہ منورہ کے رہنے والوں کو بہر شئی بہ آسانی میسر آنے کا

---

1 صحیح مسلم باب فضل العمرۃ فی رمضان قدیمی کتب خانہ کراچی ۴۰۹/۱

Fatawa Razawiya, Volume 10

...will it be, God willing, worthy of aid and assistance from the people of Islam or not? While the Exalted Sultan is making great efforts and endeavors to have it built and operated specifically with the money of Muslims. And will the reward for this assistance reach the contributors or not? Because some suspect that the construction of the railway itself is a misrepresentation; some are hesitant thinking that the money does not reach there, although this matter has been found satisfactory. Sealed receipts from the post office etc. have arrived from Constantinople with sufficient proof. In some places, especially in Pilibhit, Muslims, upon learning that your presence has forbidden giving contributions – for which reason all Muslims who remain obedient to your presence's command, which in fact is the correct command of Allah and His Messenger (peace and blessings of Allah be upon him), have refrained from giving and taking contributions – but what is your presence's instruction in this regard? State it and you shall be rewarded.

The Answer:

The Hejaz Railway is a matter of benefit and comfort for Muslims; participating in it with a pious intention will, God willing, be a cause for reward and blessing. The thought of some pilgrims that the construction of the railway is false, but rather people in the middle have raised this deception, and the money that goes falls into the embezzlement of the treacherous – the first part of this is sheer error and ill-thinking, and that too against clear certainty. And the latter part, though possible to be correct in some places, and experience is a witness that it will certainly be correct somewhere, many liars and traitors stand up in such matters, but not all are the same, nor is ill-thinking permitted after obtaining means of satisfaction. And even if it were so, the Muslim who gave for the sake of Allah the Exalted will receive the reward for his intention. "For his reward has then surely fallen upon Allah" [1] (then its reward became incumbent upon Allah - Translator). This humble servant never refused to assist in it. However, some ignorant claimants of knowledge had said that assistance in it is obligatory because the lack of security on the path is a hindrance in the obligation of Hajj, and the construction of the railway will remove this hindrance, and a precursor to an obligation is itself obligatory – I had refuted this, stating that it is pure ignorance. Firstly, by the praise of Allah the Exalted, there is absolutely no insecurity on the path. He to whom the Holy Sovereign has granted that noble journey and along with it bestowed the eye of faith and sound reason, has made a comparison and realized that despite there being only one or two outposts within

twelve stages, by His praise, there is such peace and security there as is in a state of every-step outpost and guard duty here. In the caravan with which this humble servant was present in the court of his Lord from the threshold of His beloved (Glorious is His Majesty, and peace and blessings of Allah be upon him) in 1295 AH, the caravan would be there after Zawal having prayed Zuhr and Asr, and at the time of Maghrib would make a brief stop so people could pray the Fard and Witr of Maghrib and Isha. The Shafi'is would do so according to their school of thought, and the Hanafis would act upon the imitation of others out of necessity, which is allowed in cases of necessity under those conditions detailed in jurisprudence.

---

1. Al-Quran 4/100

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

...इंशा अल्लाह तआला, क्या यह अहले इस्लाम की मदद और सहायता के योग्य होगा या नहीं? जबकि सुल्तान-ए-मुअज़्ज़म इसे विशेष रूप से मुसलमानों के पैसे से बनवाने और चलाने के लिए बहुत कोशिश और प्रयास कर रहे हैं। और क्या इस सहायता का सवाब चंदा देने वालों को मिलेगा या नहीं? क्योंकि कुछ लोगों को गुमान होता है कि रेल का बनना ही गलत बयान है, कुछ झिझकते हैं कि रुपया वहाँ तक पहुँचता ही नहीं, जबकि यह मामला संतोषजनक पाया गया है, कुस्तुनतुनिया से मुहरबंद डाकघर आदि की रसीदें पर्याप्त प्रमाण के साथ आई हैं। कुछ स्थानों पर, विशेष रूप से पीलीभीत में, मुसलमानों ने यह जानकर कि हुज़ूर ने चंदा देने से मना फरमाया है – इस कारण से सभी मुसलमान जो हुज़ूर के हुक्म के फरमाबरदार रहते हैं, जो वास्तव में अल्लाह और उसके रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) का सही हुक्म होता है, चंदा देने और लेने से रुक गए हैं – लेकिन इस बारे में हुज़ूर का क्या इरशाद है? बयान फरमाएँ, आपको सवाब मिलेगा।

जवाब:

हिजाज़ रेलवे मुसलमानों के लाभ और आराम की चीज़ है, नेक नियत से इसमें शामिल होना इंशा अल्लाह तआला सवाब और बरकत का कारण है। कुछ हाजियों का यह सोचना कि रेल बनना ही गलत है, बल्कि बीच के लोगों ने यह स्वांग रचा रखा है और जो पैसा जाता है वह बेईमानों के कब्ज़े में चला जाता है – इसमें पहला वाक्य सरासर गलत और बदगुमानी है, वह भी स्पष्ट यकीन के खिलाफ। और पिछला वाक्य, हालांकि कुछ जगहों पर सही होना मुमकिन है, और अनुभव गवाह है कि कहीं न कहीं ज़रूर सही होगा, ऐसे मामलों में बहुत से झूठे और बेईमान खड़े हो जाते हैं, लेकिन न तो सब एक जैसे हैं और न ही इत्मीनान के ज़रिए हासिल होने के बाद बदगुमानी की इजाज़त है। और अगर मान भी लें, तो जिस मुसलमान ने अल्लाह तआला के लिए दिया, वह अपनी नियत पर सवाब पाएगा। "तो उसका सवाब अल्लाह के ज़िम्मे हो गया" [1] (तो उसका सवाब अल्लाह के ज़िम्मे हो गया। - त)। फ़क़ीर ने इसमें मदद से कभी इनकार नहीं किया। अलबत्ता, कुछ इल्म के जाहिल दावेदारों ने यह कह दिया था कि इसमें मदद करना फ़र्ज़ है क्योंकि रास्ते में असुरक्षा के कारण हज की फ़र्ज़ियत में रुकावट है, रेल का बनना इस रुकावट को दूर करेगा, और फ़र्ज़ का ज़रिया फ़र्ज़ होता है – मैंने इसका खंडन किया था कि यह महज़ जहालत है। अव्वल तो अल्लाह तआला के फज़्ल से रास्ते में हरगिज़ असुरक्षा नहीं है। जिसे हक़ सुब्हानहू ने वह मुकद्दस सफ़र अता किया और उसके साथ ईमान की आँख और अक्ल-ए-सलीम (सही समझ) अता की है, उसने तुलना की और जान लिया कि

वहाँ बारह मंज़िलों के अंदर सिर्फ एक-दो चौकियाँ होने के बावजूद, खुदा के शुक्र से, वह अमन-ओ-अमान रहता है जो यहाँ हर कदम पर चौकी-पहरे की हालत में होता है। जिस काफ़िले में यह फ़क़ीर 1295 हिजरी में अपने रब के दरबार में उसके हबीब की बारगाह में हाज़िर होता था (जल्ला जलालुहू व सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम), काफ़िला ज़वाल के बाद ज़ुहर और अस्र की नमाज़ पढ़कर वहाँ होता और मग्रिब के समय थोड़ा रुकता ताकि लोग मग्रिब और इशा के फ़र्ज़ और वित्र पढ़ लें। शाफ़ई अपने मज़हब के अनुसार ऐसा करते और हनफ़ी ज़रूरत के समय दूसरों की तक़लीद पर अमल करते जो ज़रूरत की हालत में उन शर्तों पर जायज़ है जो फ़िक़्ह में विस्तार से वर्णित हैं।

---

1. अल-क़ुरआन 4/100

فتاوی رضویہ، جلد دہم

ذریعہ ہو گی ان شاء اللہ تعالیٰ قابل امداد واعانت اہل اسلام ہے یا نہیں، جبکہ حضور سلطان المعظم اُس کو خاص مسلمانوں کے روپے سے تعمیر واجرا کرانے میں بہت سعی و کوشش فرما رہے ہیں اور اس اعانت کو اجرِ چندہ دہندگان کو ملے گا یا نہیں؟ کیونکہ بعض کو گمان ہوتا ہے کہ ریل کا بننا ہی غلط بیانی ہے، بعض تردد کرتے ہیں کہ روپیہ وہاں تک پہنچتا ہی نہیں، حالانکہ یہ امر قابل اطمینان پایا گیا ہے، قسطنطنیہ سے رسیدات مہری ڈاکخانہ وغیرہ بسند کافی آئی ہیں، بعض مقاموں خاص کر پیلی بھیت میں مسلمانوں نے یہ معلوم کر کے کہ حضور والا نے چندہ دینے کو منع فرمایا ہے اس سبب سے سب مسلمان کہ مطیع حکم حضور کے رہتے ہیں جو دراصل صحیح حکم خدا اور رسول صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا ہوتا ہے، چندہ دینے لینے سے باز رہے لیکن اس بارے میں ارشاد حضور کیا ہے؟ بینوا توجروا

الجواب:

حجاز ریلوے مسلمانوں کے نفع و آرام کی چیز ہے، نیت صالحہ سے اس میں شرکت ان شاء اللہ تعالیٰ باعث اجر و برکت ہے۔ بعض حاجیوں کو یہ خیال کہ ریل بننا ہی غلط ہے بلکہ بیچ کے لوگوں نے یہ شعبدہ اٹھا رکھا ہے روپیہ جو جاتا ہے تغلبِ خائنان میں آتا ہے، اس میں پہلا فقرہ محض غلط وسوء ظن ہے وہ بھی صریح یقین کے مقابل، اور پچھلا فقرہ اگرچہ بعض مواضع پر صحیح ہونا ممکن، اور تجربہ شاہد ہے کہ ضرور کہیں صحیح ہوگا، ایسے معاملات میں بہت کاذب وخائن کھڑے ہو جاتے ہیں، مگر نہ سب یکساں ہیں نہ بعد حصولِ ذرائع اطمینان، اجازت سوء گمان ہے اور بالفرض ہو بھی، تو مسلمان جس نے لوجہ اللہ تعالیٰ دیا اپنی نیت پر اجر پائے گا فَقَدْ وَقَعَ

أَجْرُهُ عَلَى اللهِ ط [1] (تو اس کا ثواب اللہ کے ذمہ ہو گیا۔ ت) فقیر نے اس میں اعانت پر کبھی انکار نہ کیا، البتہ بعض جاہلانِ علم ادعانے یہ کہہ دیا تھا کہ اس کی اعانت فرض ہے کہ بے امنی راہ کے باعث فرضیت حج میں خلل ہے، ریل کا بننا اس خلل کا ازالہ کرے گا، اور مقدمہ فرض فرض ہوتا ہے اس کا میں نے رد کیا تھا کہ یہ محض جہالت ہے، اول بحمد اللہ تعالٰی ہرگز راہ میں بے امنی نہیں، جسے حق سبحانہ نے وہ سفر کریم بخشا اور اس کے ساتھ ایمان کی آنکھ اور عقل سلیم عطا کی ہے اُس نے موازنہ کیا اور معلوم کر لیا ہے وہاں با آنکہ بارہ منزل کے اندر صرف دو ایک چوکیاں ہیں، بحمدہ تعالٰی وہ امن وامان رہتی ہے کہ یہاں قدم قدم پر چوکی پہرے کی حالت میں ہو، جس قافلہ میں یہ فقیر ۱۲۹۵ھ میں اپنے رب کے دربار سے اس کے حبیب کی سرکار میں حاضر ہوتا تھا جل جلالہ، وصلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم، قافلہ بعد زوال ظہر وعصر پڑھ کر وہاں ہوتا اور وقت مغرب خفیف قیام کرتا کہ لوگ مغرب وعشاء کے فرض و وتر پڑھ لیتے، شافعیہ اپنے مذہب پر ایسا کرتے اور حنفیہ بضرورت تقلید غیر پر عامل ہوتے کہ بحالت ضرورت اُن شرائط پر کہ فقہ میں مفصل ہیں

---

1 القرآن ۴ / ۱۰۰

It has happened like this, but this humble servant, by the grace of Allah, according to the school of my Imam (May Allah have mercy on him), used to pray every prayer exactly at its prescribed time, as determined by Allah and His Messenger (Exalted be He and peace and blessings of Allah be upon him). I would have to dismount for Asr and Isha prayers, and the caravan would move far ahead. I would then hurry to catch up. For call of nature, people would also sit nearby thinking the caravan might get far; I didn't like this and would go far behind some tree or hill. During this as well, the caravan would move far away. Many times, in the loneliness of the day and the darkness of night, I encountered Bedouins. They were armed and I was unarmed, but never did anyone except exchange greetings like "Assalamu Alaikum" and "Wa Alaikum Assalam," "Masakum Allah bil-Khairi was-Sa'adah, Sabba-hakum Allah bir-Rida wan-Na'eem" (Peace be upon you and peace be upon you too, may Allah Almighty make the night good and the morning blessed, and bestow His pleasure and favors. - translator's note) In essence, no one ever bothered me, Praise be to Allah. An occasional occurrence here and there is not called insecurity. Here, several incidents have happened while going from the city to the station at night, and many events have occurred while going from Aonla to Budaun at night. No sensible person would consider the city or the road insecure based on such coincidences. Then over there, in a state where in twelve stages there is only one fort, Rabigh, and no sign of police posts or guards anywhere; if accidental incidents occur, considering it insecurity and a hindrance to the obligation of Hajj, what is it if not weakness of faith? Ill-natured people who treat Bedouins with meanness and stinginess in caravans, and because of this, do not fully compensate them for their services which are not legally or customarily binding on them (although observation and experience show that those noble-natured people are satisfied with little for much and provide services beyond the call of duty; yes, they certainly dislike the mean and vile-natured). Therefore, if any hardship befalls those foolish people, it is the result of their own meanness and stinginess. They come here and narrate it with all sorts of exaggerations, and by adding their own margins to groundless old and new rumors, they tell them to Muslims and discourage them from visiting the presence of God and the Messenger. This is a sketch of their state of faith. "There is no power or strength except with Allah, the Most High, the Supreme" and "Allah is sufficient for us and He is the best Disposer of affairs." And if, God forbid, insecurity is assumed to such an extent that it prevents the obligation of Hajj, then even if this railway is taken as a

source of peace and security, it will not be a precursor to the performance of the obligation because due to insecurity, Hajj is not obligatory at all. Yes, it would be a precursor for the obligation to become due, meaning if this exists then Hajj becomes obligatory. A precursor for an obligation to become due is not even recommended, let alone obligatory. For example, accumulating enough wealth that remains after basic needs reach the amount of Nisab and a year passes over it is a precursor for the obligation of Zakat; if this happens then Zakat becomes obligatory, but it is not recommended at all. In short, every sensible person knows that providing the means for performing an obligatory act is obligatory, not providing the means for the obligation itself to occur. It is stated in Durr al-Mukhtar:

| If a father gifted wealth to his son to perform Hajj, then on him [it is...] | لو وهب الاب لابنه مالا يحج به |

ऐसा हुआ है, लेकिन यह तुच्छ सेवक, अल्लाह के अनुग्रह से, अपने इमाम (अल्लाह उन पर दया करे) के पंथ के अनुसार, हर नमाज़ को उसके निर्धारित समय पर ही पढ़ता था, जैसा कि अल्लाह और उसके रसूल (अल्लाह उन पर कृपा और शांति बरसाए) ने तय किया है। मुझे असर और ईशा की नमाज़ के लिए उतरना पड़ता, और काफिला बहुत आगे निकल जाता। मैं जल्दी करके उनसे मिल जाता। शौच आदि के लिए भी लोग इस डर से कि काफिला दूर न हो जाए, पास ही बैठ जाते थे; मुझे यह पसंद नहीं आता था और मैं दूर किसी पेड़ या पहाड़ की आड़ में जाता था। इसमें भी काफिला दूर निकल जाता। दिन की तन्हाइयों और रात के अंधेरों में कई बार बद्दू मिले, वे हथियारबंद थे और मैं निहत्था, लेकिन कभी किसी ने "अस्सलामु अलैकुम" और "वा अलैकुम अस्सलाम", "मसाकुम अल्लाह बिल-खैर वस-सआदा", "सबहुकुम अल्लाह बिर-रज़ा वन्-नईम" (आप पर शांति हो और आप पर भी शांति हो, अल्लाह रात को खैर और सुबह को मुबारक करे, अल्लाह अपनी रज़ा और नेमतों से नवाज़े। - अनु.) के अलावा किसी ने कोई छेड़छाड़ नहीं की, अल्लाह की प्रशंसा हो। कभी इत्तेफाक से कोई घटना हो जाना बदअमनी (असुरक्षा) नहीं कहलाता। यहाँ शहर से स्टेशन जाते हुए रात में कई वारदातें हो चुकी हैं और रात को आँवला से बदायूँ जाने में तो कितनी ही घटनाएँ हुई हैं। कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति ऐसी इत्तेफाकी घटनाओं पर शहर या रास्ते को असुरक्षित नहीं मानेगा। फिर वहाँ उस हाल में कि बारह पड़ावों के बीच केवल एक किला 'राबिग' मिलता है और जगह-जगह चौकी-पहरे का कोई निशान नहीं; अगर इत्तेफाकी वारदातें हो जाएँ तो उसके कारण असुरक्षा मानना और हज की फर्ज़ियत (अनिवार्यता) में बाधा समझना, ईमान की कमजोरी नहीं तो और क्या है? ओछी प्रकृति के लोग जो काफिलों में बद्दुओं के साथ ओछापन और कंजूसी का बर्ताव करते हैं और इस कारण उनकी सेवा का फल, जो उन पर शरीयत या प्रथा के अनुसार किसी तरह अनिवार्य नहीं है, पूरा नहीं देते (जबकि अवलोकन और अनुभव यह है कि वे उदार प्रकृति के लोग थोड़े पर बहुत खुश हो जाते हैं और मामूली सेवा से बढ़कर काम करते हैं; हाँ, वे नीच और ओछी प्रकृति वालों को नापसंद ज़रूर करते हैं)। इस कारण यदि उन मूर्खों को कोई तकलीफ पहुँचती है, तो वह उन्हीं की नीचता और कंजूसी का परिणाम है। वे यहाँ आकर उसे तरह-तरह की रंग-आमेज़ी के साथ बयान करते हैं और निराधार नई-पुरानी अफवाहों में अपनी तरफ से बातें जोड़कर मुसलमानों को सुनाते हैं और उन्हें अल्लाह और रसूल के दरबार में हाजिरी से हतोत्साहित करते हैं। यह उनकी ईमान की स्थिति का एक खाका है। "ला हौला वला कुव्वता इल्ला बिल्लाहिल अलीयिल अजीम" (अल्लाह के सिवा

कोई शक्ति और सामर्थ्य नहीं है) और "हसबुनल्लाह व निमल वकील" (अल्लाह हमारे लिए पर्याप्त है और वह सबसे अच्छा कार्यसाधक है)। और अगर खुदा न खास्ता असुरक्षा को इस हद तक मान लिया जाए कि वह हज की फर्ज़ियत में बाधक हो, तो अब यह रेल चाहे अमन-ओ-अमान का ज़रिया भी मान ली जाए, तो यह 'मुकद्दमा-ए-फर्ज़' (फर्ज़ का आधार) नहीं होगी क्योंकि असुरक्षा के कारण हज फर्ज़ ही नहीं है। हाँ, यह 'मुकद्दमा-ए-फर्ज़ियत' (अनिवार्य होने का आधार) होगी कि यदि यह हो जाए तो हज फर्ज़ हो जाए, और मुकद्दमा-ए-फर्ज़ियत, फर्ज़ तो दूर की बात, मुस्तहब (पसंदीदा) भी नहीं होता। उदाहरण के लिए, इतना धन इकट्ठा करना कि मूल आवश्यकताओं से बचकर निसाब की मात्रा तक रहे और उस पर एक साल गुजर जाए, ज़कात की फर्ज़ियत का मुकद्दमा है कि ऐसा हो तो ज़कात फर्ज़ हो, लेकिन वह मूल रूप से मुस्तहब नहीं है। संक्षेप में, हर बुद्धिमान जानता है कि वाजिब (अनिवार्य) को अदा करने के साधनों को उपलब्ध कराना वाजिब होता है, न कि वाजिब होने के कारणों को। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

| अगर पिता ने बेटे को हज के लिए धन उपहार में दिया तो उस पर [हज...] | لو وهب الاب لابنه مالا يحج به |

पृष्ठ 682 / 836

ایسا ہوا ہے، مگر یہ فقیر بحمد اللہ اپنے امام رحمہ اللہ تعالٰی کے مطابق مذہب، ہر نماز خاص اس کے وقت مقرر ہی میں پڑھتا جن کی تعیین اللہ ورسول جل وعلا وصلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمادی ہے، مجھے عصر وعشاء کے لیے اُترنا پڑتا، قافلہ دُور نکل جاتا، میں جلدی کرکے مل جاتا، قضائے حاجت کے لیے بھی لوگ اس خیال سے کہ قافلہ بعید نہ ہو جائے نزدیک ہی بیٹھ جاتے ہیں، مجھے یہ پسند نہ آتا اور دور کسی پیڑ یا پہاڑ کی آڑ میں جاتا اس میں بھی لوگ، قافلہ دور نکل جاتا، دن کی تنہائیوں اور رات کی اندھیریوں میں بارہا بدوی ملے وہ مسلح تھے اور میں نہتا، مگر کبھی سوا السلام علیکم و علیکم السلام ، مساکم اللہ بالخیر والسعادۃ صبحکم اللہ بالرضاء والنعیم (تم پر سلام ہو اور تم پر بھی سلام ہو، اللہ تعالٰی رات خیر اور صبح مبارک کرے، اللہ اپنی خوشنودی اور انعامات سے نوازے۔ ت) کے اصلاً کسی نے کوئی تعرض نہ کیا وللہ الحمد، اتفاقاً کہیں کوئی واقعہ ہو جانا بدامنی نہیں کہلاتا، یہاں شہر سے اسٹیشن کو جاتے ہوئے شب میں متعدد واردات ہو چکیں اور رات کو آنولے سے بدایوں جانے میں تو کتنے ہی وقائع ہوئے، کوئی عاقل ایسے اتفاقیات پر شہر یا راہ میں بدامنی نہ مانے گا پھر وہاں اس حال پر کہ بارہ "منزل تک بیچ میں صرف ایک قلعہ رابغ ملتا ہے جگہ جگہ چوکی پہروں کا نشان نہیں، اگر اتفاقی واردات ہو جائیں تو اس کے باعث بدامنی ماننا، فرضیت حج میں خلل جاننا، ضعفِ ایمان نہیں، تو کیا ہے، لئیم الطبع لوگ جو قافلوں میں بدویوں سے دنائت و خست کا برتاؤ کرتے ہیں اور اس سبب وہ ان کی خدمت گزاری کہ ان پر شرعاً عرفاً کسی طرح لازم نہیں، پوری نہیں کرتے (حالانکہ مشاہدہ وہ تجربہ ہے کہ وہ کریم الطبع بندے قلیل پر کثیر راضی ہو جاتے اور ادنٰی خدمت سے بڑھ کر کام دیتے ہیں، ہاں خسیس دنی الطبع کو ضرور مکروہ رکھتے ہیں) اس باعث سے اگر کوئی تکلیف ان

سفہاء کو پہنچ جاتی ہے تو انہیں کی لؤم و خست کا نتیجہ ہے اسے طرح طرح کی رنگ آمیزیوں کے ساتھ یہاں آکر بیان کرتے اور محض بے اصل نئی پرانی افواہ اپنے حواشی بڑھا کر مسلمانوں کو سناتے اور انہیں حاضری بارگاہِ خدا اور رسول سے بددل کرتے ہیں یہ ان کی ایمانی حالت کا خاکہ ہے ولا حول ولا قوۃ الا باللہ العلی العظیم وحسبنا اللہ ونعم الوکیل اور اگر معاذاللہ بدامنی اس حد کی فرض کی جائے، کہ مانعِ فرضیت حج ہو، تو اب یہ ریل اگر مورثِ امن وامان بھی لی جائے تو مقدمہ فرض نہ ہوگی کہ بسببِ بے امنی حج فرض ہی نہیں، ہاں مقدمہ فرضیت ہوگی کہ یہ ہو جائے تو حج فرض ہو اور مقدمہ فرضیت، فرض درکنار مستحب بھی نہیں ہوتا، مثلاً اتنا مال جمع کرنا کہ حوائجِ اصلیہ سے بچ کر قدرِ نصاب رہے اور اس پر سال گزرے، مقدمہ فرضیت زکوٰۃ ہے کہ ایسا ہو تو زکوٰۃ فرض ہو مگر وہ اصلاً مستحب نہیں، غرض ہر عاقل جانتا ہے کہ اسباب ادائے واجب کا مہیا کرنا واجب ہوتا ہے، نہ کہ اسباب وجوب کا۔ در مختار میں ہے:

| لو وھب الاب لابنہ مالا یحج بہ | اگر والد نے بیٹے کو حج کے لیے مال ہبہ کیا تو اس پر |

[Arabic Box Left]: Acceptance of it is not obligatory, because it is not necessary to fulfill the conditions of obligation[1]. [Urdu Box Right]: Acceptance is not necessary because fulfilling the conditions is not necessary. (T)

This was a refutation of the ignorance of those ignorant people posing as scholars, otherwise, this humble servant (faqeer) has never objected to the rail travel itself or the aiding through donations. It is certainly necessary for Muslims that if they take courage in this good deed, they should obtain means of reassurance and involve trustworthy, pious, and righteous people of their city, such as the honorable Maulana al-Asad al-Asad al-Ashad al-Arshad Maulana Maulvi Muhammad Wasi Ahmad Sahib Muhaddith Surti, or Maulana Maulvi Hakim Muhammad Khalil-ur-Rahman Sahib, or Maulana Qazi Hafiz Khalil-ud-Din Hasan Sahib, or the esteemed Munshi Muhammad Atiq Ahmad Sahib, may Allah keep them safe, as intermediaries. And success is from Allah, and Allah Almighty knows best.

---

[1] Durr-e-Mukhtar, Book of Hajj, Mujtabai Press, Delhi, 1/160.

[अरबी बॉक्स]: इसे स्वीकार करना अनिवार्य नहीं है, क्योंकि अनिवार्यता की शर्तों को पूरा करना आवश्यक नहीं है[1]। [उर्दू बॉक्स]: स्वीकार करना आवश्यक नहीं है क्योंकि शर्तों को प्राप्त करना आवश्यक नहीं है। (त)

यह उन विद्वान कहलाने वाले अज्ञानियों की अज्ञानता का खंडन था, अन्यथा फ़कीर ने कभी भी रेल यात्रा या चंदा देने पर आपत्ति नहीं की। मुसलमानों के लिए यह अवश्य आवश्यक है कि यदि वे इस नेक कार्य में साहस करें, तो वे इत्मीनान (संतुष्टि) के साधन प्राप्त कर लें और अपने शहर के विश्वसनीय, धार्मिक और नेक लोगों को शामिल करें, जैसे कि माननीय मौलाना अल-असद अल-असद अल-अशद अल-अरशद मौलाना मौलवी मुहम्मद वसी अहमद साहब मुहद्दिस सूरती, या मौलाना मौलवी हकीम मुहम्मद खलीलुर्रहमान साहब, या मौलाना काजी हाफिज खलील उद्दीन हसन साहब, या सम्मानित मुंशी मुहम्मद अतीक अहमद साहब (अल्लाह उन्हें सुरक्षित रखे) को मध्यस्थ बनाएँ। और सफलता अल्लाह की ओर से है, और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

---

[1] दुर्रे मुख़्तार, किताबुल हज, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/160।

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

[عربی باکس]: لم یجب قبولہ لان شرائط الوجوب لایجب تحصیلھا[1]۔ [اردو باکس]: قبول کرنا لازم نہیں کیونکہ شرائط کا حاصل کرنا لازم نہیں۔ (ت)

یہ ان جاہلانِ عالم نما کی جہالت کا رد تھا ورنہ نفسِ ریل و اعانتِ چندہ پر فقیر نے کبھی اعتراض نہ کیا، مسلمانوں کو اتنا ضرور ہے کہ اس امرِ خیر میں ہمت کریں تو ذرائع اطمینان حاصل کر لیں اور اپنے شہر کے معتمد متدین صلحا مثل جناب مولانا الاسد الاسد الاشد الارشد مولانا مولوی محمد وصی احمد صاحب محدث سورتی یا مولانا مولوی حکیم محمد خلیل الرحمن صاحب یا مولانا قاضی حافظ خلیل الدین حسن صاحب یا مکرم منشی محمد عتیق احمد صاحب سلمہم کو متوسط کریں، وباللہ التوفیق، واللہ تعالٰی اعلم۔

---

[1] در مختار کتاب الحج مطبع مجتبائی دہلی 160/1

Volume 10 Fatawa Rizvia

1305 AH Saiqal-ur-Rain 'an Ahkam Mujawarat-il-Haramayn (Removal of Doubts Regarding the Rulings of Residing in the Two Holy Sanctuaries)

Problem 300: From Gorakhpur, Mohalla Ghosi Pura, asked by Maulana Maulvi Hakim Abdullah Sahib, 22 Jumadi al-Ula 1305 AH. In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

[Table Content]

Arabic Text: What is your opinion, may Allah Ta'ala have mercy on you, regarding a legally responsible (mukallaf) man who has parents and two young daughters who are not dependent on him for their livelihood? He possesses provisions and a means of transport, and he wishes to migrate alone to the Two Holy Sanctuaries (may Allah increase them in honor and greatness). This is because he does not find enough wealth to cover the provisions for all of them together. He also thinks that if he were to ask their permission for migration, they would not grant it at all. So, is migration permissible for him according to Sharia law or not? Explain with supporting evidence.

Urdu Translation: O noble scholars (may Allah have mercy on you), what is your opinion about this legally responsible (mukallaf) person who has parents and two daughters who are not financially dependent on him? This person also has travel provisions and a vehicle, etc., and he wants to migrate alone to the Two Holy Sanctuaries (may Allah Ta'ala further increase their honor and glory) because he does not have the strength to bear the expenses of all of them, and he also suspects that if he...

जिल्द दसवीं फ़तावा रिज़विया

१३०५ हिजरी सैक़ल-उर-रैन अन अहकाम मुजावरत-इल-हरमैन (हरमैन शरीफ़ैन में रहने के अहकाम से संबंधित शंकाओं का निवारण)

मसला ३००: गोरखपुर, मोहल्ला घोसी पुरा से, सायल: मौलाना मौलवी हकीम अब्दुल्लाह साहब, २२ जमादी-उल-उला १३०५ हिजरी। बिस्मिल्लाहिर रहमानिर रहीम

[तालिका सामग्री]

अरबी पाठ: आप विद्वानों का (अल्लाह आप पर रहम फ़रमाए) उस उत्तरदायी (मुकल्लफ़) व्यक्ति के बारे में क्या कहना है जिसके माता-पिता और दो छोटी बेटियां हैं जो अपनी जीविका के लिए उस पर निर्भर नहीं हैं? उसके पास सफ़र का खर्च और सवारी मौजूद है, और वह अकेले हरमैन शरीफ़ैन (अल्लाह उनकी गरिमा और महानता और बढ़ाए) की ओर हिजरत करना चाहता है। इसका कारण यह है कि उसके पास इतना धन नहीं है कि वह उन सबके सफ़र का खर्च उठा सके और उसका यह भी मानना है कि यदि वह उनसे हिजरत की अनुमति माँगेगा तो वे उसे बिलकुल अनुमति नहीं देंगे। तो क्या शरीअत के कानून के अनुसार उसके लिए हिजरत करना जायज़ है या नहीं? प्रमाण के साथ स्पष्ट करें।

उर्दू अनुवाद: ऐ विद्वानों (अल्लाह तुम पर रहमत फ़रमाए), इस उत्तरदायी व्यक्ति के बारे में आपकी क्या राय है जिसके ऐसे माता-पिता और दो बेटियां हैं जो आर्थिक रूप से इस व्यक्ति के मोहताज नहीं हैं? इस व्यक्ति के पास यात्रा के लिए रसद और सवारी आदि भी है, और वह चाहता है कि वह अकेले हरमैन शरीफ़ैन (अल्लाह तआला उनके सम्मान और महिमा में और वृद्धि फ़रमाए) हिजरत कर जाए क्योंकि वह उन सभी के खर्च उठाने की सामर्थ्य नहीं रखता और उसे यह भी संदेह है कि यदि वह...

पृष्ठ ६८४ / ८३६

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

۱۳۰۵ھ صیقل الرّین عن احکام مجاورۃ الحرمین (حرمین شریفین میں سکونت کے احکام سے متعلق شبہات کا ازالہ)

مسئلہ ۳۰۰: از گورکھپور محلہ گھوسی پورہ مسئولہ مولانا مولوی حکیم عبداللہ صاحب ۲۲ جمادی الاولی ۱۳۰۵ھ بسم اللہ الرحمن الرحیم

[جدول کا متن]

عربی متن: ماقولکم رحمکم اللہ تعالی فی رجل مکلف لہ ابوان و بنتان صغیرتان لایفتقرون الیہ فی المعاش ولہ زاد و راحلۃ یریدان یہاجر وحدہ الی الحرمین الشریفین زادھما اللہ شرفا وتعظیما وذلک لانہ لا یجد مالا یسع زادھم جمیعا ویظن انہ لو استجازھم فی الھجرۃ لا یجیزوہ اصلا، فھل تجوز لہ الھجرۃ بحکم الشرع ام لا، بینوا بسند

اردو ترجمہ: اے علماء کرام (اللہ تم پر رحمت فرمائے) اس مکلّف کے بارے میں تمہاری کیا رائے ہے جس کے ایسے والدین اور دو بیٹیاں ہیں جو معاشی اعتبار سے اس شخص کی محتاج نہیں، اس شخص کے لیے زادِراہ اور سواری وغیرہ بھی ہو، اور وہ چاہتا ہے کہ وہ تنہا حرمین شریفین (اللہ تعالیٰ ان کے شرف و عظمت میں اور اضافہ فرمائے) ہجرت کر جائے کیونکہ وہ تمام کے خرچہ کی طاقت نہیں رکھتا اور یہ بھی گمان رکھتا ہے کہ اگر ان

Fatawa Rizvia, Volume 10

Question: If one seeks permission for migration from the aforementioned individuals, they will not grant it. In such a situation, is migration religiously permissible for him or not? Please clarify in the light of the Quran and Sunnah. May Allah reward you on the Day of Judgment. (T)

The book and the text; may you be rewarded with good news on the Day of Reckoning.

The Answer:

[Arabic Column] O Allah, grant the guidance of truth and righteousness. Praise be to Allah alone, and peace and blessings be upon the one after whom there is no prophet, and upon his noble and honored family and companions. Being kind to parents is among the greatest obligations and most important acts of worship, to the extent that Allah Almighty linked gratitude to them with gratitude to Himself. He commanded, "Give thanks to Me and to your parents." And the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) declared kindness to parents to be superior to Jihad in the way of Allah. (Narrated by) Ahmad, the two Sheikhs (Bukhari & Muslim), Abu Dawood, and Nasa'i from Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him). He said: I asked the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), "Which deed is most beloved to Allah?" He replied, "Prayer at its appointed time." I asked, "Then what?" He said, "Kindness to parents." I asked, "Then what?" He said, "Jihad in the way of Allah." I said, and it is not...

[Urdu Column] O Allah, grant the guidance of truth and righteousness. Praise be to Allah alone, whose essence and attributes are without partner. Peace and blessings be upon that personage after whom there is no prophet, and upon his noble and honored family and companions. Excellence in conduct towards parents is among the greatest obligations and important acts of worship, to the extent that Allah the Exalted and Sublime has linked gratitude to them with gratitude to Himself by giving this command: "Become grateful to Me and to your parents." And the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) has declared goodness towards parents to be superior to Jihad in the way of Allah. Imam Ahmad, Bukhari, Muslim, Abu Dawood, and Nasa'i have narrated from Hazrat Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with him) that: I submitted to the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him), "Which action is most beloved to Allah?" He said, "Prayer on time." I

submitted, "Which action is after that?" He said, "Good conduct towards parents." I submitted, "What is after that?" He said, "Jihad in the way of Allah,"

1 Sahih Bukhari, Kitab al-Adab, Qadeemi Kutub Khana, Karachi 882/2

फतावा रजविया, खंड 10

प्रश्न: यदि कोई उपर्युक्त व्यक्तियों से हिजरत (प्रवास) की अनुमति मांगेगा, तो वे अनुमति नहीं देंगे। ऐसी स्थिति में, क्या उसके लिए धार्मिक रूप से हिजरत करना जायज़ है या नहीं? कृपया कुरान और सुन्नत की रोशनी में स्पष्ट करें। अल्लाह आपको कयामत के दिन प्रतिफल प्रदान करे। (त)

किताब और इबारत; हिसाब के दिन आपको शुभ समाचार के साथ पुरस्कृत किया जाए।

उत्तर:

[अरबी कॉलम] ऐ अल्लाह, सत्य और सही मार्ग का मार्गदर्शन प्रदान कर। सारी प्रशंसा केवल अल्लाह के लिए है, और उस पर शांति और आशीर्वाद हो जिसके बाद कोई नबी नहीं है, और उसके सम्मानित और आदरणीय परिवार और साथियों पर। माता-पिता के प्रति दयालु होना सबसे बड़े कर्तव्यों और सबसे महत्वपूर्ण इबादतों में से है, यहाँ तक कि अल्लाह सर्वशक्तिमान ने उनके प्रति कृतज्ञता को अपनी कृतज्ञता के साथ जोड़ दिया। उसने आदेश दिया, "मेरा और अपने माता-पिता का शुक्रिया अदा करो।" और पैगंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने माता-पिता के प्रति दयालुता को अल्लाह की राह में जिहाद से श्रेष्ठ घोषित किया है। अहमद, दो शेख (बुखारी और मुस्लिम), अबू दाऊद और नसाई ने अब्दुल्ला बिन मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है। उन्होंने कहा: मैंने अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से पूछा, "अल्लाह को कौन सा कार्य सबसे अधिक प्रिय है?" उन्होंने उत्तर दिया, "समय पर नमाज़।" मैंने पूछा, "फिर क्या?" उन्होंने कहा, "माता-पिता के साथ दयालुता।" मैंने पूछा, "फिर क्या?" उन्होंने कहा, "अल्लाह की राह में जिहाद।" मैंने कहा, और यह नहीं है...

[उर्दू कॉलम] ऐ अल्लाह, सत्य और सही मार्ग की तौफीक प्रदान करें। प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो अपनी ज़ात और सिफ़ात में बेमिसाल है। शांति और आशीर्वाद उस हस्ती पर हो जिसके बाद कोई नबी नहीं है, और उसके सम्मानित और आदरणीय वंश और साथियों पर। माता-पिता के साथ अच्छा व्यवहार करना सबसे बड़े कर्तव्यों और महत्वपूर्ण इबादतों में से है, यहाँ तक कि अल्लाह सुब्हानहु व ता'आला ने उनके प्रति कृतज्ञता को अपनी कृतज्ञता के साथ जोड़ते हुए यह आदेश दिया: "मेरे प्रति कृतज्ञ बनो और अपने माता-पिता के प्रति।" और हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने माता-पिता के साथ नेकी को अल्लाह की राह में जिहाद से श्रेष्ठ घोषित किया है। इमाम अहमद, बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, और नसाई ने हज़रत अब्दुल्ला बिन मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत की है कि: मैंने

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से अर्ज़ किया: अल्लाह ता'आला के यहाँ कौन सा अमल सबसे अधिक प्रिय है? फरमाया: समय पर नमाज़। मैंने अर्ज़ किया: इसके बाद कौन सा अमल है? फरमाया: माता-पिता के साथ अच्छा व्यवहार। अर्ज़ किया: इसके बाद क्या? फरमाया: अल्लाह की राह में जिहाद,

1 सहीह बुखारी, किताब अल-अदब, कदीमी कुतुब खाना, कराची 882/2

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

مذکورہ افراد سے ہجرت کی اجازت چاہئے گا تو وہ اجازت نہیں دیں گے ایسی صورت میں اس کے لیے شرعاً ہجرت جائز ہے یا نہیں؟ کتاب وسنت کی روشنی میں واضح فرمادیں، اللہ تعالٰی تمہیں یومِ قیامت اجر عطا فرمائے گا۔ (ت)

الکتاب والعبارۃ توجروا یوم الحساب بالبشارۃ

الجواب:

[Arabic Column] اللھم ھدایۃ الحق والصواب الحمد للہ وحدہ والصلوۃ والسلام علی من لانبی بعدہ وعلی آلہ وصحبہ المکرمین عندہ برالو الدین من اعظم الواجبات واھم القربات حتی قرن المولی سبحانہ وتعالی شکرھا بشکرہ، اذ امر عز من أمر، ان اشکر لی ولوالدیك ، وقد فضلہ النبي صلی اللہ تعالی علیہ وسلم علی الجھاد في سبیل اللہ (اخرج) احمد و الشیخان وابوداؤد والنسائی عن عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالی عنہ، قال سألت رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم ای العمل احب الی اللہ قال الصلوۃ علی وقتھا، قلت ثم ای، قال ابوالوالدین، قلت ثم ای، قال الجھاد في سبیل اللہ' قلت، ولیس

[Urdu Column] اے اللہ حق و صواب کی توفیق عطا فرمائیں، حمد ہے اللہ کے لیے جو ذات صفات میں لاشریک ہے، صلوٰۃ وسلام ہو اس ذات پر جس کے بعد کوئی نبی نہیں اور مکرم و محترم آل واصحاب پر۔ والدین کے ساتھ حسنِ سلوک اعظم واجبات اور اہم عبادات میں سے ہے حتی کہ اللہ تعالٰی سبحانہ وتعالٰی نے ان کی شکرگزاری کو اپنے شکریہ کے ساتھ متصل فرماتے ہوئے یہ حکم دیا "میرے شکر گزار بنو اور اپنے والدین کے" اور حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے والدین کے ساتھ نیکی کو اللہ تعالٰی کی راہ میں جہاد سے افضل قرار دیا ہے۔ امام احمد، بخاری،

مسلم، ابوداؤد، نسائی نے حضرت عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا کہ میں نے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے عرض کیا: اللہ تعالیٰ کے ہاں کون سا عمل زیادہ محبوب ہے؟ فرمایا: وقت پر نماز، میں نے عرض کیا: اس کے بعد کون سا عمل ہے؟ فرمایا: والدین کے ساتھ حسنِ سلوک۔ عرض کیا: اس کے بعد کیا؟ فرمایا: اللہ کی راہ میں جہاد،

1 صحیح بخاری کتاب الادب قدیمی کتب خانہ کراچی ۸۸۲/۲

Fatawa Razawiya, Volume 10

(Arabic Text Column) Righteousness towards parents is not merely about not disobeying their explicit commands while contradicting them in other matters. Rather, righteousness is to not do what they dislike even if they have not explicitly spoken to you about it. Indeed, obedience and keeping them pleased are both obligatory, while disobedience and causing displeasure are both prohibited. This displeasure and pleasure are not restricted to what has been previously explicitly stated, as is obvious. It is sufficient for you what was narrated by at-Tirmidhi, Ibn Hibban, and al-Hakim (who authenticated it), and at-Tabarani from Abdullah bin Amr, and al-Bazzar from Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them): that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: 'The pleasure of the Lord is in the pleasure of the father, and the displeasure of the Lord is in the displeasure of the father.' (1) In Musnad al-Bazzar, the word 'parents' is used in both places. (2) The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) signaled to those who intended Jihad and Hijrah to return and serve their parents, and there is no mention in the hadith that they were in need of them. Narrated by Ahmad and the six [canonical books] except Ibn Majah.

(Urdu Text Column) I say that being good to them (parents) does not mean that one should only not disobey their explicit commands and then oppose them in other matters. Indeed, goodness is that they should not be troubled in any matter even if they do not command the children in that matter, because obedience and keeping them pleased are both obligatory, and disobedience and displeasing them are both forbidden. And this pleasing and displeasing is not restricted only to their explicit commands, as is not hidden. For this, this narration is sufficient proof where Imam Tirmidhi, Ibn Hibban, Hakim (who authenticated it), and Tabarani narrated from Hazrat Abdullah bin Amr (may Allah be pleased with him), and Bazzar narrated from Hazrat Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them), that the Mercy for the Worlds (peace and blessings of Allah be upon him) said: 'The pleasure of the Lord is in the pleasure of the father, and the displeasure of the Lord is in the displeasure of the father.' In Musnad Bazzar, at both places, the word 'parents' is used instead of 'father'. Some people sought permission to stay with you (peace and blessings of Allah be upon him), but you ordered them to serve their parents. In these ahadith, it is nowhere clarified that the parents were in need of their service. Narrated by Imam Ahmad, Ibn Majah.

Footnotes: 1. Jami' at-Tirmidhi, Chapter on the excellence of pleasing parents, Amin Company Delhi, 12/2 2. At-Targhib wat-Tarhib with reference to Al-Bazzar, Book of Piety and Joining Ties, Mustafa al-Babi Egypt, 3/322

फ़तावा रज़विया, खंड 10

(अरबी पाठ स्तंभ) माता-पिता के प्रति नेकी का अर्थ यह नहीं है कि केवल उनके स्पष्ट आदेशों की अवज्ञा न की जाए और अन्य मामलों में उनका विरोध किया जाए। बल्कि नेकी यह है कि वे काम न किए जाएं जिन्हें वे नापसंद करते हैं, भले ही उन्होंने इसके बारे में आपसे स्पष्ट रूप से न कहा हो। वास्तव में, आज्ञापालन और उन्हें प्रसन्न रखना दोनों अनिवार्य हैं, और अवज्ञा एवं उन्हें अप्रसन्न करना दोनों निषिद्ध (हराम) हैं। और यह अप्रसन्नता और प्रसन्नता केवल उन बातों तक सीमित नहीं है जो पहले स्पष्ट रूप से बताई गई हैं, जैसा कि स्पष्ट है। आपके लिए वही पर्याप्त है जो तिर्मिज़ी, इब्न हिब्बान, और हाकिम (जिन्होंने इसे सही बताया है), और तबरानी ने अब्दुल्ला बिन अम्र से, और बज़ार ने अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुम) से रिवायत किया है: कि पैग़ंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: 'प्रभु की रज़ा पिता की रज़ा में है, और प्रभु की अप्रसन्नता पिता की अप्रसन्नता में है।' (1) मुसनद अल-बज़ार में दोनों स्थानों पर 'वालिदैन' (माता-पिता) शब्द का प्रयोग किया गया है। (2) पैग़ंबर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उन लोगों को वापस जाने और अपने माता-पिता की सेवा करने का संकेत दिया जो जिहाद और हिजरत का इरादा रखते थे, और हदीस में इसका कोई उल्लेख नहीं है कि वे उनकी सेवा के मोहताज थे। इसे अहमद और इब्न माजा को छोड़कर छह (हदीस की किताबों) ने रिवायत किया है।

(उर्दू पाठ स्तंभ) मैं कहता हूँ कि उनके(माता-पिता) के साथ नेकी का मतलब यह नहीं है कि केवल उनके स्पष्ट आदेश की नाफ़रमानी न की जाए और इसके अलावा अन्य मामलों में उनका विरोध किया जाए। बल्कि नेकी यह है कि उन्हें किसी भी मामले में परेशान न किया जाए, भले ही वे संतान को किसी बात का आदेश न दें, क्योंकि आज्ञापालन और उन्हें प्रसन्न रखना दोनों अनिवार्य हैं, और अवज्ञा एवं उन्हें अप्रसन्न करना दोनों हराम हैं। और यह प्रसन्नता और अप्रसन्नता केवल उनके स्पष्ट आदेशों तक ही सीमित नहीं है, जैसा कि छिपा नहीं है। इसके प्रमाण के रूप में यह रिवायत ही काफी है कि इमाम तिर्मिज़ी, इब्न हिब्बान, हाकिम (जिन्होंने इसे सही कहा है) और तबरानी ने हज़रत अब्दुल्ला बिन अम्र (रज़ियल्लाहु अन्हु) से और बज़ार ने हज़रत अब्दुल्ला बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया कि रहमतुल-लिल-आलमीन (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: 'रब की रज़ा पिता की रज़ा में है और रब की नाराज़गी पिता की नाराज़गी में है।' मुसनद बज़ार में दोनों स्थानों पर पिता की जगह माता-पिता शब्द है। कुछ लोगों ने आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के

पास रहने की अनुमति चाही, तो आपने उन्हें माता-पिता की सेवा करने का आदेश दिया। इन हदीसों में कहीं भी यह स्पष्ट नहीं है कि माता-पिता उनकी सेवा के मोहताज थे। इमाम अहमद, इब्न माजा।

पाद टिप्पणियाँ: 1. जामिअत-तिर्मिज़ी, माता-पिता की रज़ा की फ़ज़ीलत का अध्याय, अमीन कंपनी दिल्ली, 12/2 2. अत-तरग़ीब वत-तरहीब, अल-बज़ार के हवाले से, किताबुल बिर्र वल सिला, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 3/322

(عربی متن کا کالم) البران لاتعصیهما اذا صرحا بشئ وتخا لفهما فی ما سوی ذلك ولكن البران لاتاتی مایکرهانه وان لم یخاطباك فیه بشئ فانه الطاعة والارضاه کلاهما واجبان والمعصیة والاسخاط جمیعا محرمان وهذا اعنی السخط والرضا لایختصان بما تقدما فیه بصریح البیان کما لایخفی۔ وحسبك ما اخرج الترمذی وابن حبان والحاکم وصححه والطبرانی عن عبداللہ بن عمرو، والبزار عن عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالی عنهم انه صلی اللہ تعالی علیه وسلم قال رضی الرب فی رضی الوالد وسخط الرب فی سخط الوالد^1 ، ولفظ البزار الوالدین فی الموضعین^2 وقد اشار النبی صلی اللہ تعالی علیه وسلم من اراد الجهاد و الهجرة الیه صلی اللہ تعالی علیه وسلم ان یرجع فیخدم ابویه ولیس فی الحدیث انهما کانا مفتقرین الیه ، اخرج احمد والستة الا ابن ماجة

(اردو متن کا کالم) میں کہتا ہوں نیکی ان کے ساتھ یہ نہیں کہ ان کے حکم کی صریح کی تو نافرمانی نہ کی جائے اور اس کے علاوہ میں ان کی مخالفت کی جائے، ہاں نیکی یہ ہے کہ کسی معاملہ میں بھی انھیں پریشان نہ کیا جائے اگرچہ وہ اولاد کو کسی معاملہ کا حکم نہ دیں، کیونکہ طاعت اور راضی کرنا دونوں واجب ہیں اور نافرمانی اور ناراض کرنا دونوں حرام ہیں اور یہ ناراض اور راضی کرنا ان کے صریح حکم کے ساتھ ہی مخصوص نہیں، جیسا کہ مخفی نہیں۔ اس پر دلیل یہ روایت ہی کافی ہے کہ امام ترمذی، ابن حبان، حاکم (انھوں نے اسے صحیح کہا ہے) اور طبرانی نے حضرت عبداللہ بن عمرو رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے اور بزار نے حضرت عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا کہ رحمتہ للعالمین صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: رب کی رضا والد کی رضا میں ہے اور رب کی ناراضگی والد کی ناراضگی میں ہے، مسند بزار میں دونوں مقامات پر والد کی جگہ والدین کا لفظ ہے، کچھ لوگوں نے آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے

پاس رہنے کی اجازت چاہی آپ نے انھیں والدین کی خدمت کا حکم دیا، ان احادیث میں یہ کہیں تصریح نہیں کہ والدین ان کی خدمت کے محتاج تھے، امام احمد، ابن ماجہ

حواشی: 1 جامع الترمذی باب ماجاء من الفضل فی رضا الوالدین امین کمپنی دہلی ۱۲/۲ 2 الترغیب والترہیب بحوالہ البزار کتاب البر والصلۃ مصطفی البابی مصر ۳/ ۳۲۲

Volume 10 Fatawa Razawiyya

[Left Column - Arabic] On the authority of Abdullah bin Amr bin al-Aas (may Allah be pleased with them), and reported by Muslim and others from Abu Hurairah (may Allah be pleased with him), he said: A man came to the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and asked his permission for Jihad. He asked, "Are your parents alive?" He replied, "Yes." He said, "Then perform Jihad by serving them." [1]

I say: I am not saying that the mere absence of mention is a mention of absence, such that you might return to saying it is a specific incident with no general application. For how do you know, perhaps they were in need of him? Rather, I am saying that the issues were not clarified, and the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) did not seek clarification. Omitting the question (about their need) is evidence of the absolute nature (of the ruling).

Muslim recorded in a narration from Ibn Umar (may Allah be pleased with them both), he said: A man approached the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) and said, "I pledge allegiance to you for migration and Jihad, seeking reward from Allah Almighty." He asked, "Is either of your parents alive?"

[Right Column - Urdu Translation] In addition to the six Imams from Hazrat Abdullah bin Amr bin Aas (may Allah be pleased with them), Muslim and other Hadith scholars from Hazrat Abu Hurairah (may Allah be pleased with him) narrated that a person presented himself before the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and sought permission to go for Jihad. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) asked, "Are your parents alive?" He replied, "Yes." He said, "Go and work hard in their service."

I say that I am not saying that the mere absence of mention is a mention of absence, such that this objection arises that this is a specific incident whose ruling is not general. Who knows if those parents were in need of service. I am saying that the questioner did not state their need, nor did the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) ask for details. Not asking the question is evidence that being in need is not necessary.

Imam Muslim narrated in a report from Hazrat Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both) that a person presented himself before the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and submitted: "O Master! I wish to pledge allegiance on your blessed hand for migration and Jihad in the path of Allah

for the sake of reward and merit from Allah Almighty." You asked: "Is either of your parents..."

[Footnote] 1. Sahih Muslim, Chapter on Benevolence to Parents, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 2/313

खंड 10 फ़तावा रज़विया

[बायाँ कॉलम - अरबी] अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन अल-आस (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) के हवाले से, और मुस्लिम और अन्य लोगों ने अबू हुरैरा (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के हवाले से रिवायत की है, उन्होंने कहा: एक व्यक्ति नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पास आया और उनसे जिहाद के लिए अनुमति माँगी। उन्होंने पूछा: "क्या तुम्हारे माता-पिता जीवित हैं?" उसने कहा: "हाँ।" उन्होंने कहा: "तो उनमें (उनकी सेवा में) जिहाद करो।" [1]

मैं कहता हूँ: मैं यह नहीं कहता कि केवल उल्लेख न होना अभाव का उल्लेख है, जिससे कि आप यह कहने लगें कि यह एक विशिष्ट मामला है और सामान्य नहीं है। आप क्या जानें, शायद वे उसके ज़रूरतमंद रहे हों? बल्कि, मैं कहता हूँ कि मुद्दों को स्पष्ट नहीं किया गया था, और नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने स्पष्टीकरण नहीं माँगा। अतः प्रश्न को छोड़ देना पूर्ण प्रकृति का प्रमाण है।

और मुस्लिम ने इब्न उमर (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो) के एक वृत्तांत में उद्धृत किया है, उन्होंने कहा: एक व्यक्ति अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के पास आया और कहा, "मैं आपसे हिजरत और जिहाद के लिए बैअत करता हूँ, अल्लाह सर्वशक्तिमान से प्रतिफल की कामना करता हूँ।" उन्होंने पूछा: "क्या तुम्हारे माता-पिता में से कोई जीवित है?"

[दायाँ कॉलम - उर्दू अनुवाद] इसके अलावा छह इमामों ने हज़रत अब्दुल्ला बिन अम्र बिन आस (अल्लाह उन दोनों से राज़ी हो) से, और मुस्लिम और अन्य हदीस के विद्वानों ने हज़रत अबू हुरैरा (अल्लाह उनसे राज़ी हो) से रिवायत की है कि एक व्यक्ति ने रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की पवित्र सेवा में उपस्थित होकर जिहाद पर जाने की अनुमति माँगी। आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने पूछा: "क्या तुम्हारे माता-पिता जीवित हैं?" उसने अर्ज़ की: "हाँ।" फरमाया: "जाओ उनकी सेवा में मेहनत करो।"

मैं कहता हूँ कि मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि केवल उल्लेख न होना अभाव का उल्लेख है, ताकि यह आपत्ति हो कि यह एक विशिष्ट घटना है जिसका नियम सामान्य नहीं है। क्या पता कि वे माता-पिता सेवा के ज़रूरतमंद हों। मैं तो यह कह रहा हूँ कि पूछने वाले ने अपनी ज़रूरतमंद स्थिति का वर्णन नहीं किया और न ही रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने विस्तार पूछा। प्रश्न न करना इस बात का प्रमाण है कि ज़रूरतमंद होना अनिवार्य नहीं है।

इमाम मुस्लिम ने एक रिवायत में हज़रत अब्दुल्ला बिन उमर (अल्लाह उन दोनों से राज़ी हो) से रिवायत की है कि एक व्यक्ति ने हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की खिदमत में हाज़िर होकर अर्ज़ किया: "आका! मैं अल्लाह तआला से अज्र और सवाब की खातिर हिजरत और अल्लाह की राह में जिहाद के लिए आपके पवित्र हाथ पर बैअत करना चाहता हूँ।" आपने पूछा: "क्या तुम्हारे माता-पिता में से कोई एक..."

[पाद-टिप्पणी] 1. सहीह मुस्लिम, बाब अल-बिर्र अल-वालिदैन, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 2/313

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

[بایاں کالم - عربی] عن عبدالله بن عمر وبن العاص رضی الله تعالی عنهم، ومسلم وغیره عن ابی هریرة رضی الله تعالی عنه، قال جاء رجل الی النبي صلی الله تعالی علیه وسلم فاستاذنه في الجهاد فقال احی والداك، قال نعم، قال ففیهما فجاهد 1۔

قلت ولا اقول ان مجرد عدم الذکر ذکر العدم، حتی ترجع تقول واقعة حال فلا شمول، فما یدریك لعلها کانا مفتقرین الیه، وانما اقول ان المسائل لم یبین، والنبي صلی الله تعالی علیه وسلم لم یستبن، فترك السؤال دلیل الارسال۔

واخرج مسلم في روایة له عن ابن عمر رضی الله تعالی عنهما قال اقبل رجل الی رسول الله صلی الله تعالی علیه وسلم، فقال ابایعك علی الهجرة والجهاد ابتغی الاجر من الله تعالی، قال فهل من والدیك احد حی،

[دایاں کالم - اردو ترجمہ] کے علاوہ ائمہ ستہ نے حضرت عبد اللہ بن عمرو بن عاص رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے، اور مسلم اور دیگر محدثین نے حضرت ابو ہریرہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا کہ ایک شخص نے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی خدمت اقدس میں حاضر ہو کر جہاد پر جانے کی اجازت چاہی، آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے پوچھا: کیا تیرے والدین زندہ ہیں؟ عرض کی: ہاں۔ فرمایا: جاؤ ان کی خدمت میں محنت کرو،

میں کہتا ہوں میں یہ نہیں کہہ رہا ہوں کہ محض عدمِ ذکر ذکرِ عدم ہے، حتیٰ کہ یہ اعتراض ہو کہ یہ تو ایک مخصوص واقعہ ہے جس کا حکم عام نہیں، کیا علم کہ وہ والدین محتاج خدمت ہوں، میں

تو یہ کہہ رہا ہوں کہ سائل نے ان کی محتاجی بیان نہیں کی اور نہ ہی رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے اس کی تفصیل پوچھی، سوال کا نہ کرنا اس بات پر دلیل ہے کہ محتاج ہونا ضروری نہیں۔

امام مسلم نے ایک روایت میں حضرت عبداللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما سے روایت کیا ایک شخص نے حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی خدمت اقدس میں حاضر ہو کر عرض کیا، آقا! میں اللہ تعالیٰ سے اجر وثواب کی خاطر ہجرت اور اللہ کی راہ میں جہاد کے لیے آپ کے دستِ اقدس پر بیعت چاہتا ہوں، آپ نے پوچھا: تیرے والدین میں سے کوئی ایک

[حاشیہ] 1 صحیح مسلم باب بر الوالدین قدیمی کتب خانہ کراچی ۳۱۳/۲

Fatawa Razawiyyah, Volume 10

[Hadith]: He (the Prophet ﷺ) said, "Yes, rather both?" He said, "Do you seek reward from Allah Almighty?" He replied, "Yes." He said, "Then return to your parents and serve them with excellence." [Translation]: Is he alive? He submitted: Yes, rather both are alive. He said: So you seek reward and recompense from Allah Almighty? He submitted: Yes. He said: Go to your parents and serve them well. (1)

[Hadith]: Abu Dawud narrated from him (may Allah be pleased with him) with the wording: A man came to the Messenger of Allah (may Allah bless him and grant him peace) and said, "I have come to pledge allegiance to you for migration (Hijrah), while I left my parents weeping." He said, "Return to them and make them laugh just as you made them weep." [Translation]: Imam Abu Dawud narrated from the same companion (may Allah be pleased with him) in these words: A person came to the presence of the Messenger of Allah (may Allah bless him and grant him peace) and submitted: "I have come to you to pledge allegiance for migration while I have left my parents weeping." He (the Prophet ﷺ) said: "Go back to their service and make them happy just as you have made them cry." (2)

[Hadith]: He also narrated from Abu Sa'id al-Khudri (may Allah be pleased with him) that a man migrated from Yemen to the Messenger of Allah (may Allah bless him and grant him peace). He (the Prophet ﷺ) asked, "Do you have anyone in Yemen?" He said, "My parents." He asked, "Did they give you permission?" He said, "No." He said, "Return to them and seek their permission. If they give you permission, then go for Jihad; otherwise, serve them." [Translation]: He also narrated from Hazrat Abu Sa'id al-Khudri (may Allah be pleased with him) that a person migrated from Yemen and came to the presence of the Messenger of Allah (may Allah bless him and grant him peace). He (the Prophet ﷺ) asked: "Is there any dear one of yours in Yemen?" He submitted: "My parents are there." He asked: "Did they give you permission for this?" He submitted: "No." He said: "Go to their service and seek permission; if they give you permission then go for Jihad, and if they do not give permission then serve your parents." (3)

Footnotes: 1. Sahih Muslim, Chapter on being good to parents, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 2/313. 2. Sunan Abi Dawud, Book of Jihad, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/342. 3. Sunan Abi Dawud, Book of Jihad, Aftab-e-Alam Press, Lahore, 1/343-4.

फ़तावा रज़विया, खंड दसवां

[हदीस]: उन्होंने (नबी ﷺ) पूछा, "क्या वे जीवित हैं?" उसने कहा, "हाँ, बल्कि दोनों।" उन्होंने पूछा, "क्या तुम अल्लाह तआला से सवाब और प्रतिफल चाहते हो?" उसने कहा, "हाँ।" उन्होंने फ़रमाया, "तो अपने माता-पिता के पास वापस जाओ और उनकी अच्छी तरह सेवा करो।" [अनुवाद]: क्या वे जीवित हैं? निवेदन किया: हाँ बल्कि दोनों जीवित हैं, फ़रमाया: तो तुम अल्लाह तआला से सवाब और प्रतिफल चाहते हो? निवेदन किया: हाँ। फ़रमाया: माता-पिता के पास जाओ और उनकी अच्छी तरह सेवा करो। (1)

[हदीस]: अबू दाऊद ने उन्हीं (रज़ियल्लाहु अन्हु) से इन शब्दों में रिवायत की है: एक व्यक्ति रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सेवा में आया और कहा, "मैं आपके पास हिजरत पर बैअत करने आया हूँ और मैं अपने माता-पिता को रोते हुए छोड़ आया हूँ।" उन्होंने फ़रमाया, "उनके पास वापस जाओ और उन्हें उसी तरह खुश करो जैसे तुमने उन्हें रुलाया है।" [अनुवाद]: इमाम अबू दाऊद ने इसी सहाबी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से इन शब्दों में रिवायत दर्ज की है: एक व्यक्ति रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सेवा में उपस्थित हुआ और निवेदन किया: "मैं आपके पास हिजरत पर बैअत के लिए आया हूँ इस हाल में कि मैं अपने माता-पिता को रोते हुए छोड़ आया हूँ।" आपने फ़रमाया: "उनकी सेवा में वापस जाओ और उसी तरह खुश करो जैसे तुमने उन्हें रुलाया है।" (2)

[हदीस]: उन्होंने हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से यह भी रिवायत की है कि एक व्यक्ति यमन से हिजरत करके रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सेवा में आया। आपने पूछा, "क्या यमन में तुम्हारा कोई अपना है?" उसने कहा, "मेरे माता-पिता हैं।" आपने पूछा, "क्या उन्होंने तुम्हें अनुमति दी है?" उसने कहा, "नहीं।" आपने फ़रमाया, "उनके पास वापस जाओ और उनसे अनुमति माँगो। यदि वे तुम्हें अनुमति दें तो जिहाद करो, अन्यथा उनकी सेवा करो।" [अनुवाद]: उन्होंने हज़रत अबू सईद ख़ुदरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से यह भी रिवायत किया है कि एक व्यक्ति यमन से हिजरत करके रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की पावन सेवा में आया, आपने (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पूछा: "क्या यमन में तुम्हारा कोई अज़ीज़ (प्रिय) है?" उसने निवेदन किया: "मेरे माता-पिता हैं।" आपने पूछा: "क्या उन्होंने तुम्हें इस बात की अनुमति दी है?" उसने निवेदन किया: "नहीं।" आपने फ़रमाया: "उनकी सेवा में जाकर अनुमति माँगो; यदि वे तुम्हें अनुमति दे दें तो जिहाद पर जाओ और अगर अनुमति न दें तो माता-पिता की सेवा करो।" (3)

पाद-लेख: 1. सहीह मुस्लिम, बाब: माता-पिता के साथ भलाई, पुरानी कुतुब ख़ाना, कराची, 2/313. 2. सुनन अबू दाऊद, किताबुल जिहाद, आफ़ताबे आलम प्रेस, लाहौर, 1/342. 3. सुनन अबू दाऊद, किताबुल जिहाद, आफ़ताबे आलम प्रेस, लाहौर, 1/343-4.

قال نعم بل کلاھما ، قال فتبتغی الاجر من اللہ تعالی ، قال نعم ، قال فارجع الی والدیك فاحسن صحبتھما (۱) زندہ ہے؟ عرض کیا: ہاں بلکہ دونوں زندہ ہیں، فرمایا: تو اللہ تعالی سے ثواب واجر چاہتا ہے، عرض کیا: ہاں۔ فرمایا: والدین کے پاس جاؤ اور ان کی خوب خدمت کرو۔

واخرج ابوداؤد عنہ رضی اللہ تعالی عنہ بلفظ جاء رجل الی رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فقال جئت ابایعك علی الھجرۃ وترکت ابوی یبکیان ، قال فارجع الیھما فاضحکھما کما ابکیتھما (۲)۔ امام ابو داؤد نے اسی صحابی رضی اللہ تعالی عنہ سے ان الفاظ میں روایت ذکر کی ہے ایک شخص رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کی خدمت اقدس میں حاضر ہوا اور عرض کیا میں آپ کے پاس ہجرت پر بیعت کے لیے آیا ہوں اس حال میں کہ میں والدین کو روتے ہوئے چھوڑ آیا ہوں، فرمایا: ان کی خدمت میں واپس جاؤ اور اس طرح خوش کرو جیسے تم نے انھیں رُلایا ہے۔

واخرج ایضا عن ابی سعید الخدری رضی اللہ تعالی عنہ ان رجلا ھاجر من الیمن الی رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم، فقال ھل لك احد بالیمن، فقال ابوای، قال اذنالك ، قال لا ، قال فارجع الیھما فاستأذنھما فان اذنا لك فجاھد والا فبرھما (۳)۔ انھوں نے حضرت ابوسعید خدری رضی اللہ تعالی عنہ سے یہ بھی روایت کیا ہے کہ ایک شخص یمن سے ہجرت کرکے رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کی خدمت اقدس میں آیا، آپ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے پوچھا: یمن میں تیرا کوئی عزیز ہے؟ عرض کیا: میرے والدین ہیں، فرمایا: انھوں نے تجھے اس بات کی اجازت دی ہے؟ عرض کیا: نہیں، فرمایا: ان کی خدمت میں جا کر اجازت طلب کرو اگر تجھے اجازت دے دیں تو جہاد پر جاؤ اور اگر اجازت نہ دیں تو والدین کی خدمت کرو۔

(۱) صحیح مسلم باب برالوالدین قدیمی کتب خانہ کراچی ۳۱۳/۲ (۲) سنن ابوداؤد کتاب الجہاد آفتاب عالم پریس لاہور ۱/ ۳۴۲ (۳) سنن ابوداؤد کتاب الجہاد آفتاب عالم پریس لاہور ۱/ ۴-۳۴۳

An-Nasa'i, Ibn Majah, and Al-Hakim (who stated it is authentic according to Muslim's criteria) and At-Tabarani with a good chain of narration recorded from Mu'awiyah bin Jahimah that Jahimah (may Allah be pleased with him) came to the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and said: "O Messenger of Allah! I intend to participate in a military campaign and have come to seek your advice." He asked, "Do you have a mother?" He replied, "Yes." He said, "Then stay with her, for indeed Paradise is at her feet."

And the wording in At-Tabarani is: Jahimah (may Allah be pleased with him) narrated, "I came to the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) seeking advice on Jihad. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) asked me, 'Are your parents alive?' I replied, 'Yes.' He said, 'Commit yourself to serving them, for indeed Paradise is under their feet.'"

And this was also narrated - meaning by At-Tabarani - from Talhah bin Mu'awiyah Al-Sulami (may Allah be pleased with him) who said: I came to the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and said: "O Messenger of Allah! I intend to perform Jihad in the path of Allah." He asked, "Is your mother alive?" I said, "Yes." The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Stay [at her feet]..."

1 Sunan an-Nasa'i, Kitab al-Jihad, Maktaba Salafiyya Lahore, 2/28 2 Al-Mu'jam al-Kabir, Hadith 12202, Al-Maktaba al-Faysaliyya Beirut, 2/289

अन-नसाई, इब्न माजाह, और अल-हाकिम (जिन्होंने कहा कि यह मुस्लिम की शर्तों के अनुसार सही है) और अत-तबरानी ने एक अच्छी सनद के साथ हज़रत मुआविया बिन जाहिमा से रिवायत की है कि जाहिमा (रज़ियल्लाहु अन्हु) नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की बारगाह में आए और अर्ज़ किया: "ऐ अल्लाह के रसूल! मैं जिहाद का इरादा रखता हूँ और आपसे मशवरा लेने आया हूँ।" आपने पूछा: "क्या तुम्हारी माँ हैं?" उन्होंने अर्ज़ किया: "हाँ।" आपने फ़रमाया: "तो उनकी ख़िदमत करो, क्योंकि जन्नत उनके पैरों के पास है।"

और अत-तबरानी के शब्द ये हैं: हज़रत जाहिमा (रज़ियल्लाहु अन्हु) बयान करते हैं कि मैंने रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की ख़िदमत में हाज़िर होकर जिहाद के लिए मशवरा माँगा। आप (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने मुझसे फ़रमाया: "क्या तुम्हारे माँ-बाप ज़िंदा हैं?" मैंने अर्ज़ किया: "हाँ, ज़िंदा हैं।" आपने फ़रमाया: "उनकी ख़िदमत को लाज़िम जानो क्योंकि जन्नत उनके पैरों के पास है।"

और इसी यानी अत-तबरानी ने हज़रत तल्हा बिन मुआविया अल-सुल्मी (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत की है कि मैं नबी अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की ख़िदमत में आया और अर्ज़ किया: "ऐ अल्लाह के रसूल! मैं अल्लाह की राह में जिहाद का इरादा रखता हूँ।" आपने पूछा: "क्या तुम्हारी माँ ज़िंदा हैं?" मैंने अर्ज़ किया: "हाँ।" रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) ने फ़रमाया: "उनके पैरों में [रहिए]..."

1 सुनन नसाई, किताब अल-जिहाद, मकतबा सलफ़िया लाहौर, 2/28 2 अल-मुअजम अल-कबीर, हदीस 12202, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया बेरूत, 2/289

واخرج النسائی وابن ماجة وحاکم وقال صحیح علی شرط مسلم، والطبرانی باسناد جید، عن معاویة بن جاهمة ان جاهمة رضی الله تعالی عنه جاء الی النبي صلی الله تعالی علیه وسلم، فقال یا رسول الله! اردت ان اغزو و قد جئتك استشیرك، فقال هل لك من ام، قال نعم، قال فالزمها فان الجنة عند رجلیها۔

نسائی، ابن ماجہ، حاکم (اور کہا یہ شرطِ مسلم کے مطابق صحیح ہے) اور طبرانی نے سندِ جید کے ساتھ حضرت معاویہ بن جاہمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے نقل کیا کہ حضرت جاہمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی خدمتِ اقدس میں آئے اور عرض کیا: یا رسول اللہ! میں جہاد کا ارادہ رکھتا ہوں میں آپ کی خدمت میں مشورہ کے لیے حاضر ہوا ہوں، فرمایا: تمہاری والدہ ہیں؟ عرض کیا: ہیں۔ فرمایا: پس ان کی خدمت کرو کیونکہ جنت ان کے قدموں میں ہے۔

ولفظ الطبرانی قال اتیت النبي صلی الله تعالی علیه وسلم استشیره في الجهاد، فقال النبي صلی الله تعالی علیه وسلم الك والدان، قلت نعم، قال الزمهما فان الجنة تحت ارجلهما۔

اور طبرانی میں روایت کے الفاظ یہ ہیں حضرت جاہمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا بیان ہے کہ میں نے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی خدمتِ اقدس میں حاضر ہو کر جہاد کے لیے مشورہ طلب کیا، آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے مجھ سے فرمایا: کیا تمہارے والدین زندہ ہیں؟ عرض کیا: زندہ ہیں۔ فرمایا، ان کی خدمت کو لازم جانو کیونکہ جنت ان کے قدموں میں ہے۔

واخرج هذا اعنی الطبرانی عن طلحة بن معاویة السلمی رضی الله تعالی عنه قال اتیت النبي صلی الله تعالی علیه وسلم، فقلت یا رسول الله انی ارید الجهاد في سبیل الله، قال امك حیة، قلت نعم، قال النبی صلی الله تعالی علیه وسلم الزم

طبرانی نے حضرت طلحہ بن معاویہ السلمی رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے کہ میں نبی اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی خدمت میں آیا اور عرض کیا: یا رسول اللہ! میں اللہ کی راہ میں جہاد کا ارادہ رکھتا ہوں، فرمایا: تمہاری والدہ زندہ ہیں؟ عرض کیا: ہاں۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: ان کے قدموں میں

1 سنن نسائی کتاب الجہاد مکتبہ سلفیہ لاہور ۲۸/۲ 2 المعجم الکبیر حدیث ۱۲۲۰۲ المکتبۃ الفیصلیہ بیروت ۲۸۹/۲

Fatawa Rizvia, Volume 10

(Arabic Text): ...at her feet, for there is Paradise [1]. This is the Fatwa (legal ruling) of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) regarding migration to Medina while the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) was physically present among the Companions. Now, what would be the state of going to one of the Two Holy Sanctuaries (Haramayn) after the passing of the Master of both worlds (peace and blessings of Allah be upon him)! Reflect a little on how the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) commanded people to return and serve their fathers and mothers. Observe also what command the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) gave to the person who came without seeking permission from his parents: 'Return and seek permission.' Furthermore, notice how the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) beautifully guided the one who came leaving his parents weeping: 'Go and make them laugh as you made them weep.' If you ask for permission, you know that they will not grant it. And if you ask for permission, you know they will be deeply grieved and saddened by your departure without their consent. So, beware, and again beware, of leaving them while they are weeping. And this is the best of the successors (Tabi'un) according to the testimony of the Master of the worlds (peace and blessings of Allah be upon him)...

(Urdu Text): Stay there, that is where Paradise is. This is the Fatwa of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) regarding migration to Medina at a time when he was physically present among his Companions. Now, imagine the situation of going to either of the two Holy Cities (Makkah or Medina) after the passing of the Master of both worlds (peace and blessings of Allah be upon him)! Just consider how the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) commanded people to return to the service of their fathers and mothers. Also observe the command given to a person who came without seeking permission from his parents: 'Go back and get permission.' Pay attention also to the beautiful guidance he gave to the person who left his parents crying: 'Go and make them laugh just as you made them cry.' Having read all this, in the current situation, if you ask for permission and they do not grant it, it is clear that they will be severely distressed and saddened by your separation; that is why they are not granting permission. Therefore, leaving them in tears is absolutely not permissible. Let us read about the actions of such a personality about whom Imam Muslim, in his Sahih, has recorded from Hazrat Umar (may Allah be pleased with him)...

[1] Al-Mu'jam al-Kabir, Hadith 8162, Al-Maktabah al-Faysaliyyah, Beirut, 8/273 Page 690 of 836

फतावा रज़विया, खंड 10

(अरबी पाठ): ...उनके पैरों के पास, क्योंकि वहीं जन्नत है [1]। यह मदीना की ओर हिजरत (प्रवास) के बारे में अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का उस समय का फतवा है जब आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) सहाबा के बीच प्रत्यक्ष जीवन के साथ मौजूद थे। अब दोनों जहानों के मालिक (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के विसाल (निधन) के बाद हरमैन (मक्का और मदीना) में से किसी एक में जाने का क्या हाल होगा! ज़रा विचार करें कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने लोगों को अपने माता-पिता की सेवा में लौटने का किस तरह आदेश दिया है। यह भी देखें कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उस व्यक्ति को क्या आदेश दिया जो माता-पिता से अनुमति लिए बिना आया था: 'वापस जाओ और अनुमति लो।' साथ ही इस पर भी ध्यान दें कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उस व्यक्ति का कितना सुंदर मार्गदर्शन किया जो अपने माता-पिता को रोता हुआ छोड़ आया था: 'जाओ और उन्हें उसी तरह हँसाओ जिस तरह तुमने उन्हें रुलाया है।' यदि आप अनुमति मांगेंगे, तो आप जानते हैं कि वे अनुमति नहीं देंगे। और यदि आप अनुमति मांगेंगे, तो आप जानते हैं कि वे आपकी अनुमति के बिना विदाई पर गहरे शोक और दुःख में डूब जाएंगे। इसलिए, सावधान रहें, और फिर से सावधान रहें, उन्हें रोते हुए छोड़ने से। और यह जहानों के मालिक (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की गवाही के अनुसार उत्तराधिकारियों (ताबिईन) में सबसे श्रेष्ठ हैं...

(उर्दू पाठ): वहीं रहो, वही जन्नत है। यह मदीना की ओर हिजरत के बारे में रसूल अल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का उस समय का फतवा है जब आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) सहाबा के बीच ज़ाहिरी हयात के साथ तशरीफ़ फर्मा थे। अब सैयदुल कौनैन (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के विसाल के बाद हरमैन में से किसी एक में जाने का हाल क्या होगा! ज़रा गौर कीजिये कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने लोगों को अपने आबा और उम्माहात (माता-पिता) की ख़िदमत में लौटने का किस अंदाज़ में हुक्म दिया है। यह मुलाहिज़ा भी कीजिये कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उस शख़्स को क्या हुक्म दिया जो वालिदैन से इजाज़त लिए बग़ैर आया था कि वापस जाओ और इजाज़त लो। इस पर भी तवज्जो कीजिये कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने उस शख़्स की कितनी प्यारी रहनुमाई फ़रमाई जो अपने वालिदैन को रोता हुआ छोड़कर आया था कि जाओ उनको उसी तरह हँसाओ जिस तरह उन्हें रुलाया है। जब आपने यह सब कुछ पढ़ लिया तो अब सूरते मज़कूरा में अगर वालिदैन से इजाज़त मांगे और वो इजाज़त नहीं दे रहे, तो वाज़ेह बात है कि वो तुम्हारी जुदाई

पर सख़्त परेशान व ग़मगीन होंगे, तभी तो वो आपको इजाज़त नहीं दे रहे। तो अब रोते हुए छोड़कर जाना हरगिज़ जाइज़ नहीं। आइये एक ऐसी शख़्सियत का अमल पढ़ते हैं जिनके बारे में इमाम मुस्लिम ने अपनी 'सहीह' में हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से उल्लेख किया है...

[1] अल-मुअजम अल-कबीर, हदीस 8162, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया, बेरुत, 8/273 पृष्ठ 836 में से 690

فتاوىٰ رضويہ ، جلد دہم

(عربی متن): رجليها فثم الجنة ^1 - فهذه فتوى النبي صلى الله تعالى عليہ وسلم في الهجرة الى المدينة ورسول الله صلى الله تعالى عليہ وسلم بين اظهرهم ، فكيف بجوار احد الحرمين بعد وفاة سيد الكونين صلى الله تعالى عليہ وسلم فانظر كيف امرهم ان يرجعوا ويلزموا ارجل ابائهم وامهاتهم، وانظر كيف امر من لم يستأذن، ان يرجع فليستأذن، وانظر كيف هدى من اتى وتركهما يبكيان، ان يضحكهما كما ابكاهما وانت ان استأذنت، فقد علمت انهما لا يأذنان ان استأذنت فقد علمت انهما لا شد حزنا وجدا، بك ان فارقت وما اذنت، فإياك ثم اياك ان تتركهما وهما يبكيان - وهذا خيرالتابعين بشهادة سيد العالمين صلى الله تعالىٰ عليہ تعالى عليه

(اردو متن): رہو، وہی جنت ہے۔ یہ مدینہ کی طرف ہجرت کے بارے میں رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کا اس وقت کا فتویٰ ہے جب آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم صحابہ کے درمیان ظاہری حیات کے ساتھ تشریف فرما تھے اب سید الکونین صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے وصال کے بعد حرمین میں سے کسی ایک میں جانے کا حال کیا ہوگا ! ذرا غور کیجئے کہ آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے لوگوں کو اپنے اباء اور امہات کی خدمت میں لوٹنے کا کس انداز میں حکم دیا ہے ، یہ ملاحظہ بھی کیجئے کہ آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے اس شخص کو کیا حکم دیا جو والدین سے اجازت لیے بغیر آیا تھا کہ واپس جاؤ اور اجازت لو، اس پر یہ بھی توجہ کیجئے کہ آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے اس شخص کی کتنی پیاری رہنمائی فرمائی جو اپنے والدین کو روتا ہوا چھوڑ کر آیا تھا کہ جاؤ ان کو اسی طرح ہنساؤ جس طرح انھیں رلایا ہے، جب آپ نے یہ سب کچھ پڑھ لیا تو اب صورت مذکورہ میں اگر والدین سے اجازت مانگے وہ اجازت نہیں دے رہے تو واضح بات ہے کہ وہ تمھاری جدائی پر سخت پریشان و غمگین ہوں گے تبھی تو وہ آپ کو اجازت نہیں دے

رہے، تو اب روتے ہوئے چھوڑ کر جانا ہرگز جائز نہیں۔ آئیے ایک ایسی شخصیت کا عمل پڑھتے ہیں جن کے بارے میں امام مسلم نے اپنی صحیح میں حضرت عمر رضی اللہ

۱۸ المعجم الکبیر حدیث ۸۱۶۲ المکتبة الفیصلیة بیروت ۲/۸ ۳ ۷ Page 690 of 836

Fatawa Razawiya, Volume 10

...and peace, narrated via Umar (may Allah be pleased with him) in Sahih Muslim[1], and from the Hadith of Ali (may Allah honor his face) in Al-Hakim[2] with a sound chain, meaning the friend of Allah, our leader Uwais al-Qarni (may Allah be pleased with him). His service to his mother and kindness towards her prevented him from coming to the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) and being honored with that most important and greatest honor, which is the companionship of the Prophet of Allah (peace and blessings of Allah be upon him). So, what do you think of this which people call 'Hijrah' (migration), while it is not Hijrah? Indeed, true Hijrah is the abandonment of sins. We ask for success from the Lord of hearts.

Al-Bukhari, Abu Dawood, and al-Nasa'i narrated from Ibn Umar (may Allah be pleased with both of them) that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "A Muslim is one from whose tongue and hand other Muslims are safe, and a Muhajir (migrant) is one who abandons what Allah the Almighty has forbidden."[3]

And how beautiful is what the brother from Ajam (non-Arab) said: If you are in Yemen but are with me (in thought), you are before me. And if you are before me but are not with me (in thought), you are in Yemen.

And this is the meaning of what another poet said:

1. Sahih Muslim, Chapter on the Virtues of Uwais al-Qarni, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 2/311.
2. Al-Mustadrak al-Hakim, Merits of Uwais al-Qarni, Dar al-Fikr, Beirut, 3/403.
3. Sahih Bukhari, Chapter: From whom Muslims are safe from his tongue, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/6.

फतावा रज़विया, खंड दस

...और शांति, हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) के माध्यम से मुस्लिम[1] में उनकी सहीह में और हज़रत अली (करमल्लाहु वज्हहुल करीम) की हदीस से हाकिम[2] में सही सनद के साथ रिवायत है कि सैयदुल मुरसलीन (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: सभी ताबेईन में सबसे श्रेष्ठ व्यक्तित्व वली अल्लाह हज़रत सैयदुना ओवैस करनी (रज़ियल्लाहु अन्हु) हैं। उन्हें रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की खिदमत में आकर सबसे उच्च और श्रेष्ठ स्थान यानी हुज़ूर नबी पाक (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सोहबत पाने से केवल अपनी माँ की सेवा और उनके साथ अच्छा व्यवहार ही रोके हुए था। अब ज़रा सोचिए इस अमल का क्या स्थान है जिसे लोगों ने हिजरत का नाम दे रखा है, हालाँकि यह हरगिज़ हिजरत नहीं है, हिजरत तो असल में गुनाहों को छोड़ना है। हम दिलों के रब से इसकी तौफीक चाहते हैं।

बुखारी, अबू दाऊद और नसाई ने हज़रत इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: मुसलमान वह है जिसकी ज़ुबान और हाथ से दूसरा मुसलमान सुरक्षित रहे, और मुहाजिर वह है जो उन चीज़ों को छोड़ दे जिनसे अल्लाह तआला ने मना फरमाया है।[3]

और अखुल अजम (अजमी भाई) ने क्या खूब कहा है: अगर तू यमन में है और मेरे ख्यालों में है, तो तू मेरे सामने है। और अगर तू मेरे सामने है लेकिन मेरे ख्यालों में नहीं, तो तू यमन में है।

यही बात किसी और शायर ने इस तरह कही है:

1. सहीह मुस्लिम, ओवैस करनी के गुणों का अध्याय, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 2/311।
2. अल-मुस्तदरक अल-हाकिम, ओवैस करनी के गुण, दारुल फिक्र, बेरुत, 3/403।
3. सहीह बुखारी, अध्याय: वह जिससे मुसलमान उसकी ज़ुबान से सुरक्षित रहें, कदीमी कुतुब खाना, कराची, 1/6।

पृष्ठ ८३६ का ६९१

وسلم المروية من طريق عمر رضي الله تعالى عنه، عند مسلم[1] في صحيحة ومن حديث على كرم الله وجهه عند الحاكم [2] بسند صحيح اعنى ولى الله سيدنا اويس القرني رضي الله تعالى عنه منعته خدمة امه والبربها ان ياتى رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم ويتشرف بذاك الشرف الاهم الاعظم، هو صحبة نبى الله صلى الله تعالى عليه وسلم، فما ظنك بهذا الذى يسميه الناس هجرة وماهو بهجرة وانما الهجرة هجران الذنوب، نسأل توفيقه من رب القلوب۔

تعالٰی عنہ سے اور حاکم نے حضرت علی کرم اللہ وجہہ الکریم سے سند صحیح کے ساتھ روایت کیا کہ سید المرسلین صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا : تمام تابعین میں افضل شخصیت ہے یعنی ولی اللہ حضرت سید نا اویس قرنی رضی اللہ تعالٰی عنہ۔ انھیں رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی خدمت اقدس میں آکر اعلیٰ وافضل مقام حضور نبی پاک صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی صحبت پانے سے مانع فقط والدہ کی خدمت اور حسن سلوک ہی تھا، اب ذرا سوچئے اس عمل کا کیا مقام ہے جسے لوگوں نے ہجرت کا نام دے رکھا ہے حالانکہ یہ ہرگز ہجرت نہیں ، ہجرت تو حقیقۃ گناہوں کا چھوڑنا ہے، ہم رب قلوب سے اسکی توفیق کے طلبگار ہیں۔

اخرج البخاري وابوداؤد والنسائى عن ابن عمر رضي الله تعالى عنهما قال قال النبى صلى الله تعالى عليه وسلم المسلم من سلم المسلمون من لسانه ويده والمهاجر من هجر ما نهى الله تعالى عنه[3]۔

بخاری ، ابوداؤد اور نسائی نے حضرت ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما سے روایت کیا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا : مسلمان وہ ہے جس کی زبان اور ہاتھ سے دوسرا مسلمان محفوظ ہوا اور مہاجر وہ ہے جو ان چیزوں کو چھوڑ دے جن سے اللہ تعالٰی نے منع فرمایا ہے۔

وما احسن ماقال اخو العجم: اور اخوا العجم نے کیا خوب کہا ہے : گر در یمنی و با منی پیش منی اگر تو یمن میں ہے اور میرے تصور میں ہے تو میرے سامنے ہے ور پیش منی و بے منی در یمنی اور اگر تو میرے سامنے ہے لیکن میرے تصور میں نہیں تو تو یمن میں ہے، کسی اور شاعر نے بھی یہی بات یوں کہی ہے :

وھو معنی ما قال آخر:

1 صحیح مسلم باب من فضائل اویس قرنی قدیمی کتب خانہ کراچی ۲/ ۳۱۱ 2 المستدرک للحاکم مناقب اویس قرنی دارالفکر بیروت ۳/ ۴۰۳ 3 صحیح بخاری باب من سلم المسلمون من لسانه قدیمی کتب خانہ کراچی ۶/۱

صفحہ 836 کا 691

Fatawa Razawiyya - Volume 10

Many who live far away achieve their desire, and many who live nearby die in deprivation and failure. My master, the gnostic of Allah, Abu Muhammad al-Marjani (may Allah the Almighty have mercy on him) used to say: Many are with us but they are not with us, and many are far from us but they are with us. End quote. For one on whom the whispers of Satan are hidden, confusion occurs between evil and good, and Satan leads him towards sins through the door of good deeds. Only the practicing scholars can be aware of this matter. For this reason, the condemnation of a worshipper without religious understanding (fiqh) has been mentioned, and an evil example of such a worshiper was stated in a hadith narrated by Abu Nu'aym in 'Hilya' from Hazrat Wathilah bin al-Asqa' (may Allah the Almighty be pleased with him). This is more severe than what was narrated by al-Tirmidhi and Ibn Majah from Hazrat Ibn Abbas (may Allah the Almighty be pleased with them both) that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah the Almighty be upon him) said: "One jurist (faqih) is more severe against Satan than a thousand worshippers."

If the one who intends to migrate knows that...

---

1 2 Hilyat al-Awliya, Translation 318, Khalid bin Ma'dan, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 5/219 3 Jami' al-Tirmidhi, Chapter: What has been narrated regarding the excellence of Fiqh, Amin Company, Delhi, 2/93 Page 692 of 836

बहुत से दूर रहने वाले अपनी मुराद पा लेते हैं और बहुत से करीब रहने वाले महरूम और नामुराद मरते हैं। सैयदी आरिफ बिल्लाह अबू मुहम्मद अल-मरजानी (रहमतुल्लाह अलैहि) फरमाते हैं: बहुत से लोग हमारे साथ रहते हुए भी हमारे साथ नहीं हैं और बहुत से हमसे दूर हैं मगर हमारे साथ होते हैं। जिस इंसान पर शैतान के वसवसे छिपे हों, उस पर बुराई और अच्छाई में भ्रम हो जाता है और शैतान उसे नेकियों के रास्ते से बुराइयों की तरफ ले जाता है। इस बात से केवल अमल करने वाले विद्वान (उलमा) ही अवगत हो सकते हैं। इसी कारण से बिना दीन की समझ (फ़िक़्ह) के इबादत करने वाले की निंदा की गई है और ऐसे इबादत गुज़ार की एक बुरी मिसाल उस हदीस में बयान हुई है जिसे अबू नुऐम ने 'हिल्यतुल औलिया' में हज़रत वासिला बिन अस्का (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। यह उससे भी सख्त है जिसे तिर्मिज़ी और इब्ने माजा ने हज़रत इब्ने अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से बयान किया है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "एक फकीह शैतान पर एक हज़ार इबादत गुज़ारों से ज़्यादा भारी है।"

हिजरत का इरादा करने वाला अगर यह जान ले कि...

---

1 2 हिल्यतुल औलिया, अनुवाद 318, खालिद बिन मदान, दारुल किताब अल-अरबी, बेरूत, 5/219
3 जामिउत तिर्मिज़ी, बाब: फ़िक़्ह की फज़ीलत के बारे में जो बयान हुआ, अमीन कंपनी, दिल्ली, 2/93 पृष्ठ 692 का 836

بہت سے دور رہنے والے مراد پالیتی ہیں اور بہت سے قریب رہنے والے محروم و نامراد مرتے ہیں۔ سیدی عارف باللہ ابو محمد المرجانی رحمہ اللہ تعالٰی فرماتے ہیں: بہت سے لوگ ہمارے ساتھ رہتے ہوئے بھی ہمارے ساتھ نہیں اور بہت سے ہم سے دور ہیں مگر ہمارے ساتھ ہوتے ہیں اھ جس پر شیطان کے وساوس مخفی ہوں اس انسان پر شر و خیر میں التباس ہو جاتا ہے اور شیطان اسے حسنات سے سیئات کی طرف لے جاتا ہے اور اس بات سے عامل علماء ہی آگاہ ہوسکتے ہیں۔ اسی وجہ سے بغیر دین فہمی کے عبادت کرنے والے کی مذمت آئی ہے اور ایسے عابد کی اس حدیث میں بری مثال بیان ہوئی جو ابو نعیم نے حلیہ میں حضرت واثلہ بن اسقع رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کی ہے، یہ اس سے سخت ہے جسے ترمذی اور ابن ماجہ نے حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے بیان کیا ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا: ایک فقیہ شیطان پر ہزار عابد سے زیادہ سخت ہے۔

ہجرت کا ارادہ کرنے والا اگر یہ جان لے کہ

---

1 2 حلیۃ الاولیاء ترجمہ ۳۱۸ خالد بن معدان دار الکتاب العربی بیروت ۵ / ۲۱۹ 3 جامع الترمذی باب ماجاء فی فضل الفقہ امین کمپنی دہلی ۲ / ۹۳ صفحہ 836 کا 692

Fatawa Razawiyya Volume 10

What is the punishment for distressing parents? Therefore, one should abandon the intention of migration. As it is reported from the Holy Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him) that he said: "If Jurayj the Monk had been a jurist and a scholar, he would have known that answering his mother's call is more superior than worshipping his Lord." [Footnote 1: Narrated by Al-Hasan bin Sufyan in his Musnad, Al-Hakim Al-Tirmidhi in Nawadir, Ibn Qani in Mu'jam, and Al-Bayhaqi in Shu'ab al-Iman from Shahr bin Hawshab, from Hawshab bin Yazid, from the Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him)].

These were the Hadiths; as for the jurists, Allama Bahr in 'Al-Bahr al-Raiq' detailed the specifics of permission and prohibition in the matter of a child performing Hajj without parental permission. Then he said: All this discussion is regarding the obligatory Hajj. As for voluntary (nafl) Hajj, obedience to parents is absolutely superior, as stated in 'Al-Multaqat'. This was quoted by Allama Ibn Abidin in 'Radd al-Muhtar'. [Footnote 2]

I say: This is their ruling regarding Hajj where you intend to return. How can it be permissible when you are determined not to return? A very excellent principle has been stated in 'Al-Fatawa al-Hindiyya' regarding such matters, which is...

---

1. Nawadir al-Usul, Chapter 117, Dar Sader Beirut, p. 152; Shu'ab al-Iman, Chapter on Kindness to Parents, Hadith 8870, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah Beirut, 2/195.
2. Al-Bahr al-Raiq, Book of Hajj, H.M. Saeed Company Karachi, 2/309.

माता-पिता को परेशान करने में क्या सज़ा है? अतः हिजरत (प्रवास) का इरादा त्याग दें। जैसा कि नबी-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से वर्णित है कि उन्होंने फ़रमाया: "यदि जुरैज राहब फ़क़ीह और आलिम होते, तो उन्हें ज्ञात होता कि अल्लाह की इबादत से अपनी माँ के बुलावे का उत्तर देना अधिक श्रेष्ठ है।" [पादलेख 1: हसन बिन सुफ़यान ने मुसनद में, हकीम तिर्मिज़ी ने नवादिरात में, इब्न क़ानि ने मुअजम में और बैहक़ी ने शुआबुल ईमान में शहर बिन हौशब से, उन्होंने हौशब बिन यज़ीद से, उन्होंने नबी-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से बयान किया है]।

ये तो हदीसें थीं; जहाँ तक फ़क़ीहों का प्रश्न है, अल्लामा बहर ने 'अल-बहरुल राइक' में माता-पिता की अनुमति के बिना संतान के हज पर जाने के संबंध में विस्तार से अनुमति और निषेध का विवरण लिखा है। फिर उन्होंने कहा: यह सारी चर्चा फ़र्ज़ हज के बारे में है। जहाँ तक नफ़्ल हज का संबंध है, तो उसमें हर स्थिति में माता-पिता की आज्ञा मानना ही श्रेष्ठ है, जैसा कि 'अल-मुल्तक़त' में स्पष्ट किया गया है। इसे अल्लामा इब्न आबिदीन ने 'रद्दुल मुह्तार' में उद्धृत किया है। [पादलेख 2]

मैं कहता हूँ: उन्होंने यह हुक्म हज के बारे में दिया है जिसमें आप वापस लौटने का इरादा रखते हैं। यह कैसे जायज़ हो सकता है जबकि आप वापस न लौटने का संकल्प रखते हों? 'फ़तावा हिन्दिया' में ऐसे मसलों के बारे में बहुत अच्छा नियम बताया गया है, वह यह है...

---

1. नवादिरात अल-उसूल, अध्याय 117, दार सादिर बेरुत, पृष्ठ 152; शुआबुल ईमान, माता-पिता के साथ भलाई का अध्याय, हदीस 8870, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया बेरुत, 2/195।
2. अल-बहरुल राइक, हज की किताब, एच.एम. सईद कंपनी कराची, 2/309।

والدین کو پریشان کرنے میں کیا سزا ہے تو ہجرت کا ارادہ ترک کر دے۔ جیسا کہ نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے ہے کہ جریج راہب فقیہ و عالم ہوتا تو اسے معلوم ہوتا کہ اللہ تعالٰی کی عبادت سے والدہ کے بلاوے کا جواب اولٰی ہے، حسن بن سفین نے مسند میں، حکیم ترمذی نے نوادر میں، ابن قانع نے معجم میں اور بیہقی نے شعب الایمان میں شہر بن حوشب سے، انہوں نے حوشب بن یزید سے، انہوں نے نبی اکرم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم سے بیان کیا ہے: [حاشیہ 1]

یہ تو احادیث تھیں، باقی رہے فقہا، تو علامہ بحر نے بحر الرائق میں تفصیلاً رخصت کی تفصیل تحریر کی، اور جبکہ اجازت والد کے بغیر اولاد کو حج کرنے سے منع کیا پھر فرمایا یہ تمام بحث حج فرض میں ہے، رہا نفل حج، تو اس میں اطاعت والدین ہر حال میں اولٰی ہے جیسا کہ ملتقط میں ہے اھ اسے علامہ ابن عابدین نے ردالمحتار میں نقل کیا ہے۔ [حاشیہ 2]

میں کہتا ہوں یہ انہوں نے حج کے بارے میں حکم دیا ہے جس میں تو واپس کوچ کا ارادہ رکھتا ہے یہ کیسے جائز ہو سکتا ہے جبکہ تو واپس نہ ہو نیکا عزم رکھتا ہے۔ فتاوٰی ہندیہ میں ایسے مسائل کے بارے میں بہت عمدہ ضابطہ بیان کیا ہے، وہ یہ ہے

---

1 نوادر الاصول الاصل السابع عشر والمائۃ دار صادر بیروت ص ۱۵۲، شعب الایمان باب فی برالوالدین حدیث ۸۸۷۰ دار الکتب العلمیہ بیروت ۲/ ۱۹۵ 2 بحر الرائق کتاب الحج ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۳۰۹/۲

صفحہ 836 کا 693

Volume Ten Fatawa Ridawiyya

[Arabic Text]: Since it is stated: 'If an adult child performs an act that has no harm in religion or the world for his parents, but they dislike it, then seeking permission is necessary if it can be avoided.' Thus, it is judged that there is no escape from seeking permission, even if there is no harm to them at all in what he intends. This is the ruling of the issue as you see. I have no say in this or that, but I say that living as a neighbor [in a holy place] is not permissible in its origin even if the parents permit it, so how can it be permissible when they dislike it and are saddened by it? This is the statement of the Imam [Abu Hanifa], and the fearful and cautious scholars have followed this statement of his, as mentioned in ash-Shami from al-Ihya, and al-Majma' and others have affirmed this.

[Urdu Text]: An adult offspring should not do any religious or worldly work that is harmless to the parents but they dislike it. If it is avoidable, then taking permission from parents will be necessary. That is, even if it is not harmful, there is no way out without the parents' permission. This was the ruling of the matter, but I have no dispute in it. When I say that living as a neighbor [in a holy place] is not permissible even if parents permit it, then how will it be permissible when they dislike it and are worried about it? This is the statement of the Imam [Abu Hanifa]. Cautious and God-fearing scholars have adopted this statement of yours, as mentioned in Shami from Ihya. Al-Majma' and others have expressed certainty on this.

[Arabic Text]: I say: This statement is the strongest in terms of evidence, the best in terms of interpretation, the most correct to rely upon, and the most upright in speech. It is not for a Hanafi to bypass his statement and choose the statement of another, such as his two companions [Abu Yusuf and Muhammad], except due to a manifest weakness in its evidence or a necessity that calls for opposing his statement. Until the two virtuous and great scholars, our master Zain bin Nujaim al-Misri and Sheikh Khair al-Din al-Ramli, explicitly stated that one should not act upon or issue a fatwa except according to his [Imam Abu Hanifa's] statement, may Allah be pleased with him, and one should not deviate from his statement to their statement.

[Urdu Text]: I say this statement is strong in terms of evidence, best in terms of interpretation, most correct in terms of reliance, and balanced in terms of discourse. And it is not allowed for any Hanafi to abandon your statement and act upon the statement of someone else, like the Sahibayn [the two companions]. Yes, it is permissible in the case when the evidence for your statement is clearly weak or there

is an extreme need to oppose your statement. Even two great learned scholars, Maulana bin Nujaim Misri and Sheikh Khairuddin Ramli, have clarified that only your (Allah be pleased with him) statement will be acted upon and fatwa will be given, and it will not be deviated from to the statement of Sahibayn or anyone else.

1. Fatawa Hindiyyah, Book of Abominations, Chapter 26, Nurani Kutub Khana Peshawar, 5/365 Page 694 of 836

जिल्द दहम फ़तावा रज़विया

[अरबी पाठ]: जैसा कि कहा गया है: 'यदि कोई वयस्क संतान ऐसा कार्य करती है जिसमें माता-पिता के लिए धर्म या दुनिया में कोई नुकसान नहीं है, लेकिन वे इसे नापसंद करते हैं, तो अनुमति लेना आवश्यक है यदि उससे बचने का कोई रास्ता हो।' अतः, यह निर्णय दिया गया है कि अनुमति लेने से कोई छुटकारा नहीं है, भले ही उसके इरादे में उन्हें कोई नुकसान न हो। यह इस मसले का हुक्म है जैसा कि आप देख रहे हैं। मुझे इसमें या उसमें कुछ कहने की ज़रूरत नहीं है, लेकिन मैं कहता हूँ कि पड़ोस में रहना (पवित्र स्थान में) मूल रूप से जायज़ नहीं है भले ही माता-पिता अनुमति दें, तो यह उस समय कैसे जायज़ होगा जब वे इसे नापसंद करें और इससे दुखी हों? यही इमाम साहब का कथन है, और भयभीत और सतर्क विद्वानों ने उनके इसी कथन को अपनाया है, जैसा कि शामी में 'इह्या' से उद्धृत है। 'मजमा' और अन्य में इस पर दृढ़ता व्यक्त की गई है।

[उर्दू पाठ]: कि बालिग औलाद कोई दीनी या दुनियावी ऐसा काम न करे जो वालिदैन के लिए ग़ैर मुज़िर (हानिरहित) और नापसंद हो, और अगर ज़रूरी हो तो वालिदैन से इजाज़त लेना ज़रूरी होगा। यानी अगरचे नुकसानदेह न भी हो तब भी वालिदैन की इजाज़त के बगैर चारा नहीं, ये तो मसला का हुक्म था लेकिन मुझे इसमें कलाम नहीं है और जबकि मैं ये कहता हूँ कि मुजावरत (पड़ोस में रहना) इस सूरत में भी जायज़ नहीं जबकि वालिदैन इजाज़त दें तो उस वक्त कैसे जायज़ होगी जब वो इसे पसंद न करें और इस पर परेशान हों, और यही इमाम साहब का कौल (कथन) है, मोहतात (सतर्क) और ख़ाइफ़ (ईश्वरभक्त) अहल-ए-इल्म ने आप के इसी कौल को इख्तियार किया है जैसा कि शामी में 'इह्या' से है। 'मजमा' वगैरह में इस पर जज़्म (निश्चितता) का इज़हार किया गया है।

[अरबी पाठ]: मैं कहता हूँ: यह कथन प्रमाण के लिहाज़ से सशक्त है, व्याख्या के लिहाज़ से सर्वोत्तम है, भरोसे के लिहाज़ से सबसे सही है और कहने के लिहाज़ से सबसे संतुलित है। किसी हनफी के लिए यह अनुमति नहीं है कि वह उनके कथन को छोड़कर किसी दूसरे, जैसे कि साहबैन (इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद) के कथन पर अमल करे, सिवाय इसके कि उनके प्रमाण में स्पष्ट कमज़ोरी हो या कोई ऐसी ज़रूरत हो जो उनके कथन के विरोध की मांग करे। यहाँ तक कि दो महान विद्वानों, हमारे स्वामी ज़ैन बिन नुजैम अल-मिस्री और शेख खैरुल दीन अल-रमली ने स्पष्ट किया है कि आप (इमाम अबू हनीफा) रज़ियल्लाहु अन्हु के कथन के अलावा किसी और पर न तो अमल किया जाएगा और न ही फतवा दिया जाएगा, और उनके कथन से साहबैन के कथन की ओर नहीं मुड़ा जाएगा।

[उर्दू पाठ]: मैं कहता हूँ ये कौल दलील के एतबार से कवी (मज़बूत), तावील के लिहाज़ से अहसन (बेहतर) है, एतमाद के लिहाज़ से असलह (सबसे सही) और कील-ओ-काल (संवाद) के लिहाज़ से मोतदिल (संतुलित) है। और किसी हनफी के लिए ये इजाज़त नहीं कि वो आप के कौल को तर्क (त्याग) कर के किसी दूसरे मसलन साहबैन के कौल पर अमल करे, हाँ इस सूरत में जायज़ होता है जब आप के कौल की दलील वाज़ेह (स्पष्ट) तौर पर कमज़ोर हो या आप के कौल की मुखालफत की अशद (अत्यंत) ज़रूरत दरपेश हो, हत्ता कि दो अज़ीम फ़ाज़िल अहल-ए-इल्म मौलाना बिन नुजैम मिस्री और शैख खैरउद्दीन रमली ने तसरीह (स्पष्टता) की है कि आप रज़ियल्लाहु तआला अन्हु के कौल पर अमल और फतवा दिया जाएगा, इससे साहबैन या किसी और के।

1. फ़तावा हिन्दिया, किताबुल कराहियत, बाब 26, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 5/365 पेज 836 का 694

حیث قال الابن البالغ یعمل عملا لاضرر فیه دیناً ولا دنیا بوالدیه وهما یکرهانه فلا بد من الاستیذان فیه اذ کان له منه بد ۱ اه فقد حکم ان لا محید من الاستیذان وان لم یکن بهما ضرر اصلا فیما اراد، فهذا حکم المسئلة کما تری، ومالی التکلم في هذا وذاك ولکن اقول ان المجاورة لا تحل من اصلها وان اذن الابوان، فکیف اذا کرها وحزنا بها هذا هو قول الامام وبقوله قال الخائفون المحتاطون من العلماء کما في الشامي عن الاحیاء و بہ جزم المجمع وغیرہ۔

کہ بالغ اولاد کوئی دینی یا دنیوی ایسا کام نہ کرے جو والدین کے لیے غیر مضر اور نا پسند ہو، اور اگر ضروری ہو تو والدین سے اجازت لینا ضروری ہو گا اھ یعنی اگر چہ نقصان دہ نہ بھی ہو تب بھی والدین کی اجازت کے بغیر چارہ نہیں، یہ تو مسئلہ کا حکم تھا لیکن مجھے اس میں کلام نہیں ہے اور جبکہ میں یہ کہتا ہوں کہ مجاورت اس صورت میں بھی جائز نہیں جبکہ والدین اجازت دیں تو اس وقت کیسے جائز ہو گی جب وہ اسے پسند نہ کریں اور اس پر پریشان ہوں، اور یہی امام صاحب کا قول ہے، محتاط اور خائف اہل علم نے آپ کے اسی قول کو اختیار کیا ہے جیسا کہ شامی میں احیاء سے ہے۔ مجمع وغیرہ میں اس پر جزم کا اظہار کیا ہے۔

قلت وهو لا قوی دلیلا والا حسن تاویلا والاصلاح تعویلا والاقوم قیلا ولیس لحنفی ان یجتاز من قوله ویختار قول غیرہ کصاحبیه مثلا الا لضعف بین في دلیله او ضرورة تدعو الی مخالفة قیله، حتی صرح الفاضلان العلامتان مولنا زین بن نجیم المصری والشیخ خیر الدین الرملي انه لا یعمل ولا یفتی الابقوله رضي الله تعالی عنه ولا یعدل عن قول الی قولهما

میں کہتا ہوں یہ قول دلیل کے اعتبار سے قوی تاویل کے لحاظ سے احسن ہے، اعتماد کے لحاظ سے اصلح اور قیل و قال کے لحاظ سے معتدل ہے۔ اور کسی حنفی کے لیے یہ اجازت نہیں کہ وہ آپ کے قول کو ترک کر کے کسی دوسرے مثلاً صاحبین کے قول پر عمل کرے، ہاں اس صورت میں جائز ہوتا ہے جب آپ کے قول کی دلیل واضح طور پر کمزور ہو یا آپ کے قول کی مخالفت کی اشد ضرورت درپیش ہو، حتی کہ دو عظیم فاضل اہل علم مولانا بن نجیم مصری اور شیخ خیر الدین رملی نے تصریح کی ہے کہ آپ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے قول پر عمل اور فتویٰ دیا جائے گا، اس سے صاحبین یا کسی اور کے

۱ فتاویٰ ہندیہ کتاب الکراہیۃ الباب السادس والعشرون نورانی کتب خانہ پشاور ۳۶۵/۵ Page 694 of 836

I say: Turning away from the statement of one of them is not permissible unless there is a necessity, although some scholars have stated that the fatwa is based on the statement of both [Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad], as mentioned in the chapter of Salah in 'Al-Bahr' and the chapter of Testimonies in 'Al-Fatawa al-Khayriyya'. However, look at the Commander of the Faithful, Umar al-Faruq al-A'zam (may Allah be pleased with him). When he finished his pilgrimage, he would circulate among the people and say: "O people of Yemen, go to your Yemen! O people of Iraq, go to your Iraq! O people of Sham, return to your Sham! For indeed, this [leaving] makes the House of your Lord more awe-inspiring in your eyes," or as he (may Allah be pleased with him) said.

I say: This was when the people were only Sahaba (Companions) or Tabi'in (Successors), and they were at the peak of etiquette and utmost reverence. So what would be the state of the people of our time, the people of such and such [vices]? Allah is the helper for the rectification of conditions. The Imam of Dar al-Hijrah, the scholar of Medina, Malik ibn Anas (may Allah have mercy on him), was asked: "Which is more beloved to you, staying [near the Kaaba] or returning?" He replied: "The Sunnah is to perform Hajj and then return," as mentioned by Allama Muhammad al-Abdari in his 'Madkhal'.

---

1. Fatawa al-Khayriyya, Book of Testimonies, Dar al-Ma'rifa, Beirut, 2/33; Al-Bahr al-Ra'iq, Book of Salah, H.M. Saeed Company, Karachi, 1/246.
2. Al-Madkhal, Chapter on Mentioning Some Things the Pilgrim Should Imagine During Hajj, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 2/253.
3. Al-Madkhal, Chapter on Mentioning Some Things the Pilgrim Should Imagine During Hajj, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 2/253.

मैं कहता हूँ: उनमें से किसी एक के कथन से विमुख होने की अनुमति नहीं है जब तक कि कोई आवश्यकता न हो, हालाँकि कुछ विद्वानों ने स्पष्ट किया है कि फ़तवा दोनों (इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद) के कथन पर है, जैसा कि 'अल-बहर' के नमाज़ के अध्याय में और 'फ़तावा अल-खैरिया' के गवाही के अध्याय में है। जबकि अमीरुल मोमिनीन हज़रत उमर फ़ारूक़-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) को देखें, जब वे हज से फ़ारिग होते तो लोगों में दौरा करते और फ़रमाते: ऐ यमन वालो! यमन चले जाओ, ऐ इराक़ वालो! इराक़ चले जाओ, ऐ शाम वालो! अपने वतन शाम लौट जाओ ताकि तुम्हारे ज़हनों में तुम्हारे रब के घर की हैबत खूब बनी रहे।

मैं कहता हूँ: यह उस दौर की बात है जब लोग या तो सहाबा थे या ताबेईन, जो अत्यंत शिष्ट और अत्यंत सम्मान करने वाले थे। हमारे इस दौर का क्या हाल होगा, अल्लाह ही हालात के सुधार की तौफीक दे। इमाम-ए-दारुल हिजरत, मदीना के आलिम हज़रत इमाम मालिक बिन अनस (रहमतुल्लाहि अलैहि) से पूछा गया कि आपको मुजावरत (वही रुकना) पसंद है या लौटना? फ़रमाया: सुन्नत यह है कि हज किया जाए फिर वापस हो, जैसा कि अल्लामा मुहम्मद अब्दरी ने 'मदखल' में ज़िक्र किया है।

---

1. फ़तावा अल-खैरिया, किताबुश शहादात, दारुल माआरिफ़ा बेरूत 2/33, अल-बहरुर रैक, किताबुस सलात, एच.एम. सईद कंपनी कराची 1/246
2. अल-मदखल, फ़स्ल फ़ी ज़िक्रि बा'ज़ि मा युतसव्वरुल हाज्जु फ़ी हज्जिही, दारुल किताबुल अरबी बेरूत 2/253
3. अल-मदखल, फ़स्ल फ़ी ज़िक्रि बा'ज़ि मा युतसव्वरुल हाज्जु फ़ी हज्जिही, दारुल किताबुल अरबी बेरूत 2/253

اوقول احدھما الاضرروررة وان صرح المشائخ بان الفتوی علی قولھما۱ کما فی صلوۃ البحر وشھادات الخیریۃ وھذا امیر المؤمنین عمر الفاروق الاعظم رضی اللہ تعالی عنہ، کان اذا فرغ من حجہ یدور فی الناس ویقول یا اھل الیمن یمنکم ویا اھل العراق عراقکم ویا اھل الشام شامکم ۲ فانہ اھیب لبیت ربکم فی اعینکم، او کما یقول رضی اللہ تعالی عنہ قول کی طرف اعراض کی اجازت نہیں البتہ اس صورت میں جو مذکور ہے اگر چہ کچھ مشائخ نے تصریح کی ہے کہ فتویٰ صاحبین کے قول پر ہے جیسا کہ بحر کے باب الصلوۃ میں اور فتاویٰ خیریہ کے باب الشہادات میں ہے حالانکہ امیر المومنین حضرت عمر فاروق اعظم رضی اللہ تعالی عنہ کو دیکھئے وہ جب حج سے فارغ ہوتے تو لوگوں میں دورہ کرتے اور فرماتے: اے اہل یمن! یمن چلے جاؤ، اے اہل عراق! عراق چلے جاؤ، اے اہل شام! اپنے وطن شام لوٹ جاؤ تا کہ تمہارے ذہنوں میں تمہارے رب کی گھر کی ہیبت خوب قائم رہے۔

قلت وکان ھذا والناس انما ھم صحابۃ او تابعون وھم مأھم من غایۃ الادب ونھایۃ الاجلال، فما بال اھل الزمان اھل کیت وذیت، واللہ المستعان لاصلاح الاحوال، وقد سئل امام دار الھجرۃ، عالم المدینۃ مالك بن انس رحمہ اللہ تعالی ایما احب الیك المجاورۃ او القفول فاجاب ان السنۃ الحج ثم القفول۳ کما نقلہ العلامۃ محمد العبدری فی مدخلہ۔ میں کہتا ہوں یہ اس دور کی بات ہے جب صحابہ یا تابعین تھے جو نہایت مؤدب اور نہایت ہی احترام واکرام کرنے والے تھے، ہمارے اس دور کا کیا حال ہوگا، اللہ تعالیٰ ہی اصلاح و احوال کی توفیق دے، امام دار الہجرت، عالم مدینہ حضرت امام مالک بن انس رحمہ اللہ تعالیٰ سے پوچھا گیا کہ آپ کو مجاورت محبوب ہے یا لوٹنا؟ فرمایا: سنت یہ ہے کہ حج کیا جائے پھر واپس ہو، جیسا کہ علامہ محمد عبدری نے مدخل میں ذکر کیا ہے۔

١ فتاوی خیریہ کتاب الشهادات دارالمعرفة بیروت ٢ / ٣٣، بحر الرائق کتاب الصلوة ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ١ / ٢٤٦ ٢ المدخل فصل فی ذکر بعض مایتصور الحاج فی حجہ دارالکتاب العربی بیروت ٢ / ٢٥٣ ٣ المدخل فصل فی ذکر بعض مایتصور الحاج فی حجہ دارالکتاب العربی بیروت ٢ / ٢٥٣

Fatawa Razawiya, Volume Ten

(Arabic Column) I say: Indeed, he intended the Sunnah of the Companions except for the Emigrants (Muhajireen). As for the Emigrants, they were restricted from staying, so their words do not indicate it becoming a Sunnah, as is obvious. Then, Al-Abdari narrated from some of the greatest saints—may their secrets be sanctified—that one stayed in Makkah for forty years and did not urinate in the Sanctuary (Haram) nor did he lie down. He said: For someone like this, staying nearby (mujawara) is recommended, or they are commanded to do so. The place is a place of profit, not a place of loss. Thus, one deprives themselves of profit due to the lack of etiquette (adab) that proceeds from them and the lack of respect. "He said": And it was related to me by the noble master Abu Abdullah Al-Qadi (may Allah Almighty have mercy on him) that he needed to relieve himself while in Madinah. He went out to one of those places and intended to fulfill his need there, when he heard a caller from the unseen (hatif) forbidding him from that. He said, "The pilgrims (Hujjaj) do this." The caller answered him by saying, "And where are the pilgrims? And where are the pilgrims? And where are the pilgrims?" three times. So he left the town until he fulfilled his need, then he returned. End. "He spoke at length on it until he said": Then, if it were supposed that the resident does not directly...

(Urdu Column) I say: Here Imam Malik, by Sunnah, meant the Sunnah of companions other than the Emigrants. As for the Emigrant companions, staying in Makkah was forbidden for them, therefore their return is not indicative of the Sunnah, as is clear. Then Sheikh Abdari narrated about some great saints (may their secrets be sanctified) that they stayed in Makkah for forty years but did not urinate in the Sanctuary of the Kaaba nor did they lie down there. Then he said: For such people, staying nearby is recommended, or they can be given permission. And this place is purely for benefit and not loss; otherwise, due to lack of etiquette and lack of respect, a person deprives himself of the benefit. Then he said: I was told about the noble master Abu Abdullah Al-Qadi (may Allah Almighty have mercy on him) that he felt the need to relieve himself in the city of Madinah. He went towards a place in the city and intended to fulfill his need there, when a voice from the unseen came forbidding him from this act. He said, "All pilgrims do this." In response, the voice came three times: "Where are the pilgrims? Where are the pilgrims? Where are the pilgrims?" Then he went outside the city and relieved himself and then returned. End. After a long conversation, he writes: Suppose the resident does not perform any such act as mentioned, then his...

Footnote: 1 Al-Madkhal, chapter on mentioning some things a pilgrim avoids during his Hajj, Dar al-Kutub al-Ilmiyya, Beirut, 4/253.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवीं

(अरबी कॉलम) मैंने कहा: वास्तव में उन्होंने मुहाजिरीन (प्रवासियों) के अलावा सहाबा की सुन्नत का इरादा किया था। जहाँ तक मुहाजिरीन का सवाल है, वे ठहरने से रोके गए थे, इसलिए उनके शब्द सुन्नत होने का संकेत नहीं देते, जैसा कि छिपा नहीं है। फिर, अल-अब्दरी ने कुछ महान औलिया—अल्लाह उनके रहस्यों को पवित्र करे—से वर्णन किया कि उनमें से एक चालीस साल तक मक्का में रहे और उन्होंने हरम में पेशाब नहीं किया और न ही वे लेटे। उन्होंने कहा: ऐसे व्यक्ति के लिए, पास में रहना (मुजावरत) अनुशंसित है, या उन्हें ऐसा करने का आदेश दिया गया है। यह स्थान लाभ का स्थान है, हानि का नहीं। इस प्रकार, कोई व्यक्ति अदब (शिष्टाचार) और सम्मान की कमी के कारण स्वयं को लाभ से वंचित कर लेता है। "उन्होंने कहा": और महान सैय्यद अबू अब्दुल्ला अल-क़ाज़ी (अल्लाह उन पर रहमत करे) ने मुझे बताया कि उन्हें मदीना में रहते हुए हाजत (शौच) की ज़रूरत महसूस हुई। वे उन स्थानों में से एक की ओर गए और वहाँ अपनी ज़रूरत पूरी करने का इरादा किया, तभी उन्होंने एक गैबी आवाज़ (हातिफ़) को उन्हें ऐसा करने से मना करते हुए सुना। उन्होंने कहा, "हाजी (हुज्जाज) ऐसा करते हैं।" हातिफ़ ने उन्हें यह कहते हुए उत्तर दिया, "और कहाँ हैं हाजी? और कहाँ हैं हाजी? और कहाँ हैं हाजी?" तीन बार। इसलिए वे शहर से बाहर चले गए जब तक कि उन्होंने अपनी ज़रूरत पूरी नहीं कर ली, फिर वे लौट आए। संक्षिप्त। "उन्होंने इस पर विस्तार से बात की जब तक कि उन्होंने कहा": फिर, यदि यह मान लिया जाए कि निवासी सीधे तौर पर...

(उर्दू कॉलम) मैंने कहा: यहाँ इमाम मालिक ने सुन्नत से मुराद ग़ैर-मुहाजिरीन सहाबा की सुन्नत ली है। मुहाजिरीन सहाबा की बात करें तो उनके लिए मक्का में ठहरना मना था, इसलिए उनका वापस जाना सुन्नत होने का सबूत नहीं है, जैसा कि स्पष्ट है। फिर शेख अब्दरी ने कुछ महान औलिया (अल्लाह उनके रहस्यों को पवित्र करे) के बारे में यह भी ज़िक्र किया कि वे चालीस साल तक मक्का में रहे लेकिन काबा के हरम में पेशाब नहीं किया और न ही वहाँ लेटे। फिर उन्होंने कहा: ऐसे लोगों के लिए मुजावरत (पास रहना) मुस्तहब (पसंदीदा) है, या उन्हें इसकी अनुमति दी जा सकती है। और यह स्थान पूरी तरह लाभ का है और नुकसान का नहीं; अन्यथा, अदब और सम्मान की कमी के कारण इंसान खुद को लाभ से वंचित कर लेता है। फिर उन्होंने कहा: मुझे महान सैय्यद अबू अब्दुल्ला अल-क़ाज़ी (अल्लाह उन पर रहमत करे) के बारे में बताया गया कि उन्हें मदीना शहर में हाजत (शौच) की ज़रूरत महसूस हुई। वे शहर की एक जगह की ओर गए और वहाँ हाजत पूरी करने का इरादा किया, तभी गैब से एक आवाज़ आई जो उन्हें इस काम से मना कर रही थी। उन्होंने कहा, "सभी

हाजी ऐसा करते हैं।" जवाब में आवाज़ तीन बार आई: "कहाँ के हाजी? कहाँ के हाजी? कहाँ के हाजी?" फिर वे शहर से बाहर चले गए और हाजत पूरी की और फिर वापस आए। संक्षिप्त। लंबी बातचीत के बाद वे लिखते हैं: मान लें कि निवासी कोई ऐसा काम नहीं करता जैसा ज़िक्र किया गया है, तो उसके..

पादलेख: 1 अल-मदखल, हज के दौरान हाजी द्वारा परहेज की जाने वाली कुछ चीजों के ज़िक्र पर अध्याय, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरूत, 4/253।

فتاوی رضویہ، جلد دہم

(عربی کالم) قلت وانما اراد سنة الصحابة ما عدا المهاجرين اما المهاجرون فقد كانوا عن الاقامة محجورين، فلا يدل قولهم على استنانه كما لا يخفى، ثم ان العبدری نقل من بعض اكابر الاولياء قدست اسرارہم ان جاور بمكة اربعين سنة ولم يبل فی الحرم ولم يضطجع، قال فمثل هذا تستحب له المجاورة اويو مربہا والموضع موضع ربح لا موضع خسارة، فيحرم نفسه الربح لقلة الادب الذي يصدر منه وقلة الاحترام "قال" وقد حكى لی السيد الجليل ابو عبدالله القاضی رحمة الله تعالى عليه انه احتاج الى قضاء حاجة الانسان وهو في المدينة فخرج الى موضع من تلك المواضع وعزم ان يقضی حاجته فيه ، فسمع هاتفا ينهاه عن ذلك فقال الحجاج يعملون هذا، فاجابه الهاتف بان قال واين الحجاج و اين الحجاج ثلاث مرات، فخرج من البلد حتى قضى حاجة ثم رجع اهـ "وقد اطال الكلام فيه الى ان قال" ثم لو فرض ان المجاور لا يباشر

(اردو کالم) قلت یہاں امام مالک نے سنت سے مراد غیر مہاجرین صحابہ کی سنت لی ہے، رہے مہاجرین صحابہ، تو ان کے لیے مکہ میں اقامت ممنوع تھی، لہذا ان کا لوٹنا سنت پر دال نہیں جیسا کہ واضح ہے۔ پھر شیخ عبدری نے بعض اکابر اولیاء قدست اسرارہم کے بارے میں یہ بھی نقل کیا کہ وہ چالیس سال مکہ میں رہے مگر حرم کعبہ میں پیشاب نہ کرتے اور نہ ہی وہاں لیٹتے تھے، پھر فرمایا ایسے لوگوں کے لیے مجاورت مستحب ہے، یا انھیں کو اجازت دی جا سکتی ہے اور یہ مقام سراپا نفع ہے خسارہ نہیں تو قلت ادب اور قلت احترام کی بنا پر انسان خود کو نفع سے محروم نہ کرے، پھر فرمایا مجھے السید الجلیل ابو عبداللہ القاضی رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ کے بارے میں بیان کیا گیا کہ انھیں شہر مدینہ میں رفع حاجت کی ضرورت پیش آئی تو وہ شہر میں ایک مقام کی طرف گئے اور وہاں قضائے حاجت کا ارادہ کیا تو غیب سے آواز آئی جو اس عمل سے انھیں منع

کر رہی تھی تو انھوں نے کہا تمام حجاج ایسا کرتے ہیں، تو جواب میں تین دفعہ آواز آئی، کہاں کے حجاج، کہاں کے حجاج، کہاں کے حجاج۔ پھر وہ شہر سے باہر چلے گئے اور رفع حاجت کی اور پھر لوٹے اھ طویل گفتگو کے بعد لکھتے ہیں کہ بالفرض مجاورت کرنے والا کوئی ایسا عمل نہیں کرتا جو ذکر ہوا تو اس کے

حاشیہ: 1 المدخل فصل فی ذکر بعض مایتوقی الحاج فی حجه دار الکتاب العربی بیروت ۲۵۳/۴

Volume Ten Fatawa Razawiyya

...based on what was previously mentioned, at that time residence (Majaawarat) becomes recommended for him, as long as it does not interfere with another act of worship that is greater than it, such as kindness to elderly parents and fulfilling what is obligatory upon him regarding the maintenance of kinship ties for those who desire that through physical presence with them, not merely sending greetings through letters or otherwise. It is said: the objective is to prioritize compliance with the noble Shariah; thus, what it has prioritized should be prioritized, and what it has deferred should be deferred. So, 'Majaawarat' with the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is by following his commands and abstaining from his prohibitions in whatever place it may be; this is true 'Majaawarat'. It is stated in the book 'Al-Qut' (i.e., by Sayyidi Abu Talib Al-Makki, may Allah have mercy on him): some of the predecessors said: how many a man in the land of Khurasan is closer to this House (the Kaaba) than those who are circumambulating it! Some would say: for you to be in your own land while your heart is longing and attached to this House is better for you than being in it while you are weary of your stay and your heart is attached to another land. (Condensed).

Indeed, if I wished, I could have prolonged the discourse by the grace of the All-Knowing in achieving the objective, but for me, in this place, the words of Imam ibn al-Humam are sufficient, because...

1. Al-Madkhal, section on mentioning some things that occur to the pilgrim during his pilgrimage, etc., Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 2/255.
2. Al-Madkhal, section on mentioning some things that occur to the pilgrim during his pilgrimage, etc., Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 2/256.

भाग दस फतावा रजविया

...जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, तब उसके हक में 'मजावारत' (पवित्र स्थानों के पास निवास) मुस्तहब (पसंदीदा) होगी, बशर्ते कि इससे कोई बड़ी इबादत बीच में न आए, जैसे बूढ़े माता-पिता के साथ अच्छा व्यवहार और सेवा, और उन लोगों के साथ मेल-जोल जो सिला-ए-रहमी (रिश्तेदारी निभाना) के आधार पर अनिवार्य है और जो व्यक्ति की वहां उपस्थिति की मांग करते हों, न कि केवल लिखित सलाम आदि की। फिर लिखा है कि उद्देश्य शरीअत-ए-मुतह्हरा के आदेशों को प्राथमिकता देना है; अतः जिसे शरीअत ने प्राथमिकता दी है उसे प्राथमिकता दी जानी चाहिए और जिसे पीछे रखा है उसे पीछे रखा जाना चाहिए। हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के साथ 'मजावारत' का अर्थ है उनके आदेशों का पालन करना और उनकी मनाही से बचना, चाहे व्यक्ति किसी भी स्थान पर रह रहा हो; यही वास्तविक 'मजावारत' है। 'किताब अल-क़ूत' (सैयदी अबू तालिब अल-मक्की रहमतुल्लाही अलैहि की) में लिखा है: कुछ पूर्वजों ने कहा: खुरासान की धरती पर रहने वाले बहुत से लोग इस बैतुल्लाह (काबा) के उन लोगों से अधिक निकट हैं जो इसका तवाफ़ कर रहे हैं! कुछ ने कहा: तुम्हारा अपने शहर में होना और तुम्हारा हृदय इस घर के प्रति लालायित और जुड़ा होना तुम्हारे लिए उस स्थिति से बेहतर है कि तुम स्वयं वहाँ हो और अपने निवास से ऊब चुके हो और तुम्हारा हृदय किसी और स्थान से जुड़ा हो। (संक्षिप्त)।

वास्तव में, यदि मैं चाहता तो सर्वज्ञ के अनुग्रह से इस उद्देश्य की प्राप्ति पर चर्चा को और लंबा खींच सकता था, लेकिन इस स्थान पर मेरे लिए इमाम इब्न अल-हुमाम के शब्द ही पर्याप्त हैं, क्योंकि...

1. अल-मदखल, हज के दौरान हाजी के साथ पेश आने वाली कुछ बातों के उल्लेख का अध्याय, आदि, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरूत, 2/255।
2. अल-मदखल, हज के दौरान हाजी के साथ पेश आने वाली कुछ बातों के उल्लेख का अध्याय, आदि, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरूत, 2/256।

पृष्ठ 697 / 836

شیئاً مما تقدم ذکرہ حینئذ تکون المجاورۃ مستحبۃ فی حقہ، مالم یخل بعبادۃ أخری ھی اکبر منھا، کبر الوالدین والقیام بما وجب علیہ، من صلۃ الرحم لمن یحب ذلك بالحضور معہ، دون ارسال السلام بالکتابۃ وغیرہ "قال" والمقصودان یقدم امتثال الشرع الشریف فیقدم ماقدمہ ویؤخر ما اخرہ، فالمجاورۃ مع النبی صلی اللہ تعالی علیہ وسلم باتباع اوامرہ واجتناب نواھیہ فی ای موضع کان ھذہ ھی المجاورۃ "قال" ومن کتاب القوت (ای السیدی ابی طالب المکی رحمہ اللہ تعالی) قال بعض السلف کم من رجل بأرض خراسان اقرب الی ھذا البیت ممن یطوف بہ، وکان بعضھم یقول، لان تکون ببلدك وقلبك مشتاق متعلق بھذا البیت خیر لك من ان تکون فیہ وانت متبرم بمقامك وقلبك متعلق الی بلد غیرہ ۱ھ ملتقطاً۔

حق میں مجاورت مستحب ہوگی بشر طیکہ اس سے کوئی بڑی عبادت درمیان میں حائل نہ ہو مثلاً بوڑھے والدین کے ساتھ حسن سلوک وخدمت اور ان لوگوں کی خدمت جو صلہ رحمی کی بناء پر لازم ہے اور وہ اس کے موجود ہونے کا تقاضا کرتا ہو نہ کہ محض تحریری سلام وغیرہ کا، پھر لکھا مقصود شرع شریف کے احکام کو مقدم کرنا ہے، لہذا جسے شریعت نے مقدم رکھا ہے اسے مقدم رکھا جائے اور جسے شریعت نے مؤخر رکھا ہے اسے مؤخر رکھا جائے، حضور صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کی مجاورت آپ کے اوامر کی اتباع اور نواہی سے اجتناب کی صورت میں ہے خواہ انسان کسی جگہ مقیم ہو، اور اصلا مجاورت یہی ہے، اور فرمایا کتاب القوت (لامام ابو طالب مکی رحمۃ اللہ تعالیٰ) میں بعض اسلاف سے ہے بہت سے خراسان میں رہائش پذیر اس بیت اللہ کے ان لوگوں سے زیادہ قریب ہیں جو اس کا طواف کررہے ہیں، بعض نے فرمایا بندہ اپنے شہر میں ہوا اور اس کا دل اللہ تعالی کے گھر سے متعلق ہو یہ اس سے بہتر ہے کہ بندہ بیت اللہ میں ہو اور دل کسی اور شہر کے ساتھ وابستہ ہو اھ اختصاراً۔

انی لو شئت لطولت الکلام بتوفیق العلام فی تحقیق المرام ولکن حسبی فی هذا المقام کلام الامام بن الهمام

اگر میں چاہوں تو اس مقصد پر اللہ تعالی کی توفیق سے اور بھی طویل گفتگو کی جاسکتی ہے لیکن اس مقام پر مجھے امام ابن ہمام کی گفتگو ہی کافی ہے کیونکہ

۱ المدخل فصل فی ذکر بعض مایعتور الحاج فی حجه الخ دار الکتاب العربی بیروت ۲۵۵/۲ ۲ المدخل فصل فی ذکر بعض مایعتور الحاج فی حجه الخ دار الکتاب العربی بیروت ۲۵۶/۲

Fatawa Ridawiyya Volume 10

"Since there is no perfume after the bride" [An Arabic proverb]. He [may Allah Almighty sanctify his noble secret and benefit us in both worlds through His magnificent grace] said in 'Fath al-Qadir', the commentary on 'Al-Hidayah': The scholars differed regarding the dislike (karahah) of residing (mujawarah) in Makkah. Some Shafi'is mentioned that according to the preferred view, it is recommended, but when there is a strong suspicion of committing prohibited acts, then it is disliked. This is also the view of Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad (may Allah Almighty have mercy on them both). According to Imam Abu Hanifa and Imam Malik (may Allah Almighty have mercy on them both), residing there is disliked. I say: What is meant here by 'dislike' is 'prohibitive dislike' (karahat-e-tahrimi), because when the word 'dislike' is used without qualification, this is what is intended. The researcher's subsequent statement also serves as evidence for this: "The condition of a few people is not mentioned as a restriction for the permissibility of residency." It was further written that Imam Abu Hanifa said Makkah is not the 'Abode of Hijrah' (Dar al-Hijrah). When Imam Malik was asked about this, he said: It is appropriate for people that they return after performing Hajj, and this view is most beloved and most precautionary, because doing otherwise is exposing oneself to danger. This is because human nature is such that repeated occurrences against one's desires cause boredom and distress in life, and similarly...

1. Fath al-Qadir, Kitab al-Hajj, Masa'il Manthurah, Nooriya Ridawiyya, Sukkur, 3/93
2. Fath al-Qadir, Kitab al-Hajj, Masa'il Manthurah, Nooriya Ridawiyya, Sukkur, 3/94

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

"शादी के बाद इत्र का क्या काम" [एक अरबी मुहावरा]। उन्होंने [अल्लाह तआला उनके पाक राज़ को मुक़द्दस करे और हमें दोनों जहाँ में उनके अज़ीम फ़ज़्ल से फ़ायदा पहुँचाए] 'फ़तह अल-क़दीर' (हिदाया की शराह) में फ़रमाया: मक्का मुकर्रमा में मुजावरत (निवास) के मकरूह होने या न होने के बारे में उलेमा का इख्तिलाफ़ है। कुछ शाफ़ईया ने कहा कि मुख़्तार क़ौल के मुताबिक़ यह मुस्तहब है, लेकिन जब ग़ालिब गुमान ममनुआत के इर्तिकाब का हो तो फिर मकरूह है। इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद [अल्लाह तआला उन दोनों पर रहमत फ़रमाए] का भी यही क़ौल है। इमाम अबू हनीफ़ा और इमाम मलिक [अल्लाह तआला उन दोनों पर रहमत फ़रमाए] के नज़दीक मुजावरत मकरूह है। मैं कहता हूँ यहाँ कराहत से मुराद 'कराहते तहरीमी' है क्योंकि जब लफ़्ज़ कराहत मुतलक़ हो तो उससे यही मुराद होती है। मुहक़्क़िक़ का आइंदा क़ौल भी इसी पर दलील है कि "कम लोगों के हाल को जवाज़-ए-मुजावरत के लिए बतौरे क़ैद ज़िक्र नहीं किया जाता"। आगे लिखा है कि इमाम अबू हनीफ़ा फ़रमाते थे कि मक्का 'दारुल हिजरत' नहीं है। इमाम मलिक से जब इस बारे में पूछा गया तो उन्होंने फ़रमाया: लोगों के लिए मुनासिब यही है कि वे हज अदा करके वापस हो जाएँ और यह क़ौल निहायत महबूब है और यही अहवत (सावधानीपूर्ण) है क्योंकि इसके ख़िलाफ़ करने में अपने आप को ख़तरे में डालना है। क्योंकि इंसानी तबियत यह है कि बार-बार ख़िलाफ़-ए-ख़्वाहिश होने से उसकी ज़िंदगी में मलाल और परेशानी पैदा होती है, इसी तरह...

1. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-हज, मसाइल मन्सूरा, नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 3/93
2. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-हज, मसाइल मन्सूरा, नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 3/94 पेज 698 of 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

اذ لا عطر بعد عروس قال قدسنا اللہ تعالی بسرہ الکریم ونفعنا فی الدارین بفضلہ، الفخیم فی فتح القدیر شرح الہدایۃ اختلف العلماء فی کراہۃ المجاورۃ بمکۃ وعدمہا فذکر بعض الشافعیہ ان المختار استحبابہا الا ان یغلب علی ظنہ الوقوع فی المحذور وہذا قول ابی یوسف ومحمد رحمہما اللہ تعالٰی وذہب وابو حنیفۃ ومالک رحمہما اللہ تعالٰی الی کراہتہا۔ قلت والمراد کراہۃ التحریم اذا ہو المحمل عند الاطلاق وبدلیل قول المحقق فیما سیأتی "لا ینذکر حالہم قیدا فی جواز الجوار" اھ (قال) وکان ابو حنیفۃ یقول انہا لیست بدار ہجرۃ وقال مالک وقد سئل عن ذلک، ماکان الناس یرحلون الیہا الا فی نیۃ الحج، والرجوع وہو اعجب وہذا احوط لما فی خلافہ من تعریض النفس علی الخطر اذ طبع الانسان التبرم والملل من توارد ما یخالف ہواہ فی المعیشۃ وزیادۃ الانبساط البخل

شادی کے بعد عطر کیا کرنا ہے انھوں نے (اللہ تعالٰی ہمیں دارین میں ان کے علوم وفوض سے بہرہ ور فرمائے) نے فتح القدیر شرح ہدایہ میں فرمایا: مکہ مکرمہ کی مجاورت مکروہ ہے یا نہیں، اس بارے میں علماء کا اختلاف ہے، بعض شافعیہ نے کہا کہ مختار قول کے مطابق مستحب ہے لیکن جب غالب گمان ممنوعات کے ارتکاب کا ہو تو پھر مکروہ ہے، امام ابو یوسف اور امام محمد رحمہما اللہ تعالٰی کا بھی یہی قول ہے امام ابو حنیفہ اور امام مالک رحمہما اللہ تعالٰی کے نزدیک مجاورت مکروہ ہے۔ میں کہتا ہوں یہاں کراہت سے مراد تحریمی ہے کیونکہ جب لفظ کراہت مطلقاً ہو تو اس سے یہی مراد ہوتی ہے۔ اھ محقق کا آئندہ قول بھی اسی پر دلیل ہے کہ قلیل لوگوں کے حال کو جوازِ مجاورت کے لیے بطورِ قید ذکر نہیں کیا جاتا اھ آگے لکھا امام ابو حنیفہ نے فرمایا مکہ مقامِ دار الہجرت نہیں ، امام مالک سے جب اسی بارے میں پوچھا گیا تو فرمایا لوگوں کے لیے مناسب یہی ہے کہ وہ حج ادا کر کے واپس ہو جائیں، اور یہ قول نہایت محبوب ہے اور یہی احوط

ہے کیونکہ اس کے خلاف کرنے میں اپنے آپ کو خطرے میں ڈالنا ہے کیونکہ انسانی طبیعت یہ ہے کہ بار بار خلافِ خواہش کرنے سے اس کی زندگی میں ملال و پریشانی پیدا ہوتی ہے، اسی طرح

1 فتح القدیر کتاب الحج مسائل منثورہ نوریہ رضویہ سکھر ۳/۹۳ 2 فتح القدیر کتاب الحج مسائل منثورہ نوریہ رضویہ سکھر ۳/۹۴ Page 698 of 836

Fatawa Rizvia - Volume 10

Frequent repetition is contrary to the respect that is desired; constant gazing leads to a decrease in reverence and honor. Also, humans are prone to error, as the Prophet (peace and blessings be upon him) said: "Every son of Adam is a sinner."

I say: It has been recorded by Imam Ahmad, Tirmidhi, Ibn Majah, and Al-Hakim from Hazrat Anas (may Allah be pleased with him) that the Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) said: "Every son of Adam is a sinner, and the best of sinners are those who repent." [End of quote]

It is further mentioned: The punishment for sins is also multiplied, as narrated from Hazrat Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him). If this narration is authentic, then well and good; otherwise, there is no doubt that committing a sin in the Sanctuary (Haram) of Allah is an act of extreme misfortune and makes one a severe criminal deserving of punishment. (Later it is written) Each of these matters is a cause of the displeasure of Allah Almighty. Since this is a human tendency, the only way to avoid it is to depart from that area. No one can claim immunity from these matters unless they are deluded. Do you not know about Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with them both)? He was a companion of the Messenger of Allah, among the beloved, and was prayed for by him, yet he migrated to Ta'if.

[1] Fath al-Qadir, Book of Hajj, Miscellaneous Issues, Nuriyah Razawiyah Sukkur, 3/93. [2] Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Anas (may Allah be pleased with him), Dar al-Fikr Beirut, 3/198.

फ़तावा रिज़विया - जिल्द दसवीं

अत्यधिक आवृत्ति सम्मान के विपरीत है जिसकी अपेक्षा की जाती है; बार-बार देखने से आदर और सम्मान में कमी आती है। साथ ही, मनुष्य त्रुटियों का स्थान है, जैसा कि पैगंबर (उन पर शांति और आशीर्वाद हो) ने फरमाया: "आदम की हर संतान गुनहगार है।"

मैं कहता हूँ: इसे इमाम अहमद, तिर्मिज़ी, इब्न माजा और हाकिम ने हज़रत अनस (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है कि अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फरमाया: "आदम की हर संतान गुनहगार है, और सबसे अच्छे गुनहगार वे हैं जो तौबा (पछतावा) कर लेते हैं।"

आगे लिखा है: पापों पर सज़ा भी कई गुना होती है, जैसा कि हज़रत इब्न मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से वर्णित है। यदि यह रिवायत सही है, तो बहुत अच्छी बात है; अन्यथा इसमें कोई संदेह नहीं कि अल्लाह के हरम (पवित्र स्थल) में पाप करना अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है और यह कठोर दंड का पात्र अपराधी बनाता है। (आगे चलकर लिखा है) इनमें से प्रत्येक मामला अल्लाह तआला की नाराजगी का कारण है। चूँकि यह मानवीय स्वभाव है, इसलिए बचने का एकमात्र तरीका उस स्थान से हट जाना है। कोई भी इन मामलों से बचने का दावा नहीं कर सकता जब तक कि वह धोखे में न हो। क्या आपको हज़रत इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) के बारे में नहीं पता जो अल्लाह के रसूल के सहाबी हैं, प्रिय लोगों में से हैं, और उनके लिए हुज़ूर की दुआ है, फिर भी वे हिजरत करके ताइफ़ चले गए।

[1] फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-हज्ज, मुतफ़र्रिक मसाइल, नूरियह रज़वियह सुक्कुर, 3/93. [2] मुसनद अहमद बिन हंबल, हज़रत अनस से वर्णित, दार अल-फ़िक्र बेरूत, 3/198.

पृष्ठ 699 / 836

بما یحب من الاحترام لما یکثر تکررہ علیہ ومداومۃ نظرہ الیہ وایضاً الانسان محل الخطاء کما قال علیہ السلام کل بنی آدم خطاء - ۱ قلت اخرجہ احمد والترمذي وابن ماجۃ والحاکم عن انس عن النبی صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کل بنی آدم خطاء و خیر الخطائین التوابون [2] اھ (قال) والمعاصی تضاعف، علی ما روی عن ابن مسعود رضی اللہ تعالی عنہ ، ان صح والا فلا شک، انہا فی حرم اللہ افحش واغلظ فتنہض سبباً لغلظ الموجب وھو العقاب وساق الکلام الی ان قال وکل من ھذہ الامور سبب لمقت اللہ تعالی واذا کان ھذا سبحیۃ البشر فالسبیل النزوع عن ساحتہ، وقل من یطمئن الی نفسہ فی دعوھا البرائۃ من ھذہ الامور، الا وھو فی ذلک مغرور، لایری الی ابن عباس رضی اللہ تعالی عنہما من اصحاب رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم المحبین الیہ المـ مدعولہ کیف اتخذ

کثرت کے ساتھ ادب کے منافی ہے بے تکلفی اور بار بار دیکھنے سے ادب و احترام میں کمی واقع ہو جاتی ہے اور یہ بھی کہ انسان خطاء کا محل ہے، حضور علیہ الصلوۃ السلام کا مبارک ارشاد ہے : ہر آدمی محل خطاء ہے۔ میں کہتا ہوں اسے امام احمد ، ترمذی اور ابن ماجہ اور حاکم نے حضرت انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: ہر آدم محل خطاء ہے اور بہتر خطاکار وہ ہیں جو توبہ کر لینے والے ہوتے ہیں اھ پھر لکھا گناہوں پر سزا بھی کئی گناہ ہے جیسا کہ حضرت ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے مروی ہے، اگر یہ روایت صحیح ہے تو فبہا ورنہ اس میں کوئی شک نہیں کہ اللہ کے حرم میں گناہ نہایت ہی بد بختی اور سخت قابلِ گرفت مجرم ہے جو عقاب و سزا کا مستحق بنادے گا (آگے چل کر لکھا) ان میں ہر امرا اللہ تعالیٰ کی ناراضگی کا سبب ہے، اور جب یہ بشری تقاضا ہے تو بچنے کی صورت فقط اس میدان سے نکل جانا ہے، اور کوئی بھی ان امور سے بچنے کا دعوٰی نہیں کر سکتا ماسوائے ان

لوگوں کے جو دھوکا میں ہیں، کیا حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما کے بارے میں علم نہیں جو صحابی رسول ہیں، محبوب لوگوں میں سے ہیں، اور ان کے لیے حضور کی دعا ہے ہجرت کر کے وہ طائف چلے گئے۔

[1] فتح القدیر کتاب الحج مسائل منثورہ نوریہ رضویہ سکھر ۳/۹۳ [2] مسند احمد بن حنبل مروی از انس رضی اللہ عنہ دارالفکر بیروت ۳/۱۹۸

Fatawa Ridawiyya - Volume 10

Taif as a residence, and he said: "I would rather commit fifty sins in Rukbah (a place near Taif) than commit a single sin in Mecca."

I say that by this prayer, he points towards the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): "O Allah! Give Ibn Abbas understanding of religion," and the saying of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him): "O Allah! Grant him knowledge of the Book." Both these prayers are in Bukhari and Muslim. The definition of a 'Faqih' (jurist) was given by Imam Hasan Basri (may Allah have mercy on him) as follows: One who withdraws from the world, desires the hereafter, and is aware of his own faults is called a Faqih. Such people are undoubtedly worthy of residing near Mecca. By Allah, Hazrat Ibn Abbas (may Allah be pleased with them) was among the greatest of such people, but great men always consider themselves small and humble. Consider the difference: those who do not commit mistakes fear punishment, while those who are not safe from sin claim safety.

Then he wrote on the authority of Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him) that in no city is a servant held accountable for a mere intention of evil before performing the deed except in Mecca. Then he recited this verse:

1. Fath al-Qadir, Kitab al-Hajj, Masa'il Manthurah, Nooriya Ridawiyya Sukkur, 3/93.
2. Sahih Bukhari, Chapter on placing water near the washroom, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/26.
3. Sahih Bukhari, Chapter on the saying of the Prophet (pbuh) "O Allah, teach him the Book", Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/17.

ताइफ़ निवास के रूप में, और उन्होंने कहा: "मुझे रुकबा (ताइफ़ के पास एक जगह का नाम) में पचास पाप करना इससे अधिक प्रिय है कि मैं मक्का में एक पाप करूँ।"

मैं कहता हूँ कि इस दुआ से नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की इस दुआ की ओर इशारा है: "ऐ अल्लाह! इब्न अब्बास को दीन की समझ अता फरमा।" और नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की यह दुआ भी है: "ऐ अल्लाह! इब्न अब्बास को किताब का इल्म अता फरमा।" ये दोनों दुआएँ बुखारी और मुस्लिम में हैं। 'फकीह' की परिभाषा इमाम हसन बसरी (रहमतुल्लाहि अलैहि) ने इस प्रकार की है: दुनिया से विमुख रहने वाला, आखिरत का शौक रखने वाला और अपने दोषों से अवगत व्यक्ति फकीह कहलाता है। ऐसे लोग निस्संदेह मक्का के पड़ोस के योग्य हैं। अल्लाह की कसम, हज़रत इब्न अब्बास (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) उन महान लोगों में से भी बड़े थे, लेकिन महापुरुष हमेशा खुद को छोटा और लाचार समझते हैं। ज़रा अंतर देखिए: जो गलती नहीं करता वह अज़ाब से डरता है और जो गुनाह से सुरक्षित नहीं वह सलामती का दावा करता है।

फिर लिखा हज़रत इब्न मसूद (रज़ियल्लाहु अन्हु) से है कि किसी भी शहर में बंदे को अमल से पहले महज़ बुराई के इरादे पर पकड़ नहीं होती सिवाय मक्का के, फिर यह आयत पढ़ी:

1. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-हज्ज, मसाइल मन्शूरा, नूरिया रिज़विया सुक्कुर, 3/93.
2. सहीह बुखारी, बैतुल खला के पास पानी रखने का अध्याय, कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/26.
3. सहीह बुखारी, नबी करीम (सल्ल.) के इस फरमान का अध्याय "ऐ अल्लाह इसे किताब का इल्म दे", कदीमी कुतुब खाना कराची, 1/17.

الطائف دارًا، وقال لان اذنب خمسین ذنباً برکبة، وھو موضع بقرب الطائف احب الی من ان اذنب واحدًا بمکة- اور فرمایا : رُکبہ (طائف کے قریب جگہ کا نام ہے) کے مقام پر پچاس گناہ کرنا مجھے اس سے زیادہ پسند ہے کہ میں مکہ میں ایک گناہ کروں۔

قلت یشیر بالدعاء الی قولہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم اللھم فقھہ في الدین، وقولہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم اللھم علمہ الکتاب، اخرجھما الشیخان ، وانما الفقیہ کما قالہ الامام الحسن البصري رحمہ اللہ تعالی الزاھد فی الدنیا الراغب فی الآخرۃ البصیرۃ بعیوب نفسہ ومثل ھذا یتأھل للجوار لاشك واللہ قد کان ابن عباس من اعظم اھلہ و لکن الاکابر انفسھم یستصغرون فانظر الی الفرق، من لا یسئم یخشی السأمۃ ومن لا یسلم یدعی السلامۃ- میں کہتا ہوں دعا سے آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی اس دعا کی طرف اشارہ ہے: "اے اللہ! ابن عباس کو دین کی سمجھ عطا فرما۔" اور آپ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی یہ دعا بھی ہے: "اے اللہ! ابن عباس کو کتاب کا علم عطا فرما۔" یہ دونوں دعائیں بخاری و مسلم میں ہیں، فقیہ کی تعریف امام حسن بصری رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہ نے یوں کی ہے: دنیا سے اعراض کرنے والا، آخرت کا شوق رکھنے والا، اور اپنے عیوب سے آگاہ شخص فقیہ کہلاتا ہے۔ ایسے لوگ بلاشبہ مجاورت مکہ کے اہل ہیں اور اللہ کی قسم حضرت ابن عباس رضی اللہ تعالیٰ عنہما ان اہل لوگوں میں سے بھی بڑے ہیں لیکن اکابر ہمیشہ اپنے آپ کو چھوٹا اور عاجز سمجھتے ہیں، غور تو کیجئے کتنا فرق ہے ان میں کہ جو غلطی نہیں کرتا وہ عذاب سے ڈرتا ہے اور جو گناہ سے محفوظ نہیں وہ سلامتی کا دعویٰ کرتا ہے۔

(قال) وعن ابن مسعود رضي الله تعالى عنه مامن بلدة يؤاخذ العبد فيها بالهداية قبل العمل الامكة و پھر لکھا حضرت ابن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے ہے کہ کسی شہر میں عمل سے پہلے محض برائی کے ارادے پر گرفت نہیں مگر مکہ میں، پھر یہ آیت تلاوت کی:

1 فتح القدیر کتاب الحج مسائل منثورہ نوریہ رضویہ سکھر ۹۳/۳ 2 صحیح بخاری باب وضع الماء عند الخلاء قدیمی کتب خانہ کراچی ۲۶/۱ 3 صحیح بخاری باب قول البنی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اللھم علمہ الکتاب قدیمی کتب خانہ کراچی ۱۷/۱

He recited this verse: "And whoever intends therein any deviation [by doing] wrong, We will make him taste a painful punishment." Sa'id bin al-Musayyib said to someone who came from Medina seeking knowledge: "Return to Medina, for we have heard that a resident of Mecca does not die until the Sanctuary (Haram) becomes like a non-sanctuary (Hill) to him, because he violates its sanctity." It is narrated from Umar (may Allah be pleased with him): "A sin committed in Mecca is more severe to me than seventy sins committed elsewhere." Yes, there are individuals among the servants of Allah whom He has chosen and purified from the demands of natural inclinations; they are the successful dwellers in the vicinity by virtue of the multiplication of good deeds and prayers without their being nullified by mistakes and sins. (Then he enumerated ahadith in this regard). Then he said: "However, those who succeed in this while remaining safe from its nullification are very few. So, Islamic jurisprudence (fiqh) is not built based on them, nor is their state mentioned as a condition for the permissibility of residing in the vicinity (of the Haram). This is because the nature of human souls is to make false claims and to hasten towards claiming mastery and ability over what is required for what they aim at and seek, while they are the biggest liars."

1 Fath al-Qadir, Book of Hajj, Miscellaneous Issues, Maktaba Nuriya Razaviya, Sukkur, 3/92-93.

फ़तावा रज़विया, खंड दस

उन्होंने इस आयत का पाठ किया: "और जो कोई इसमें किसी अन्याय का नाहक इरादा करे, हम उसे दर्दनाक अज़ाब चखाएँगे।" सईद बिन अल-मुसय्यिब ने मदीना से ज्ञान प्राप्त करने के लिए मक्का आए एक व्यक्ति से कहा: "मदीना लौट जाओ, क्योंकि हमने सुना है कि मक्का का निवासी तब तक नहीं मरता जब तक कि हरम उसके लिए हराम काम करने की वजह से आम जगह (हिल) जैसा न हो जाए, क्योंकि वह इसकी पवित्रता का ख्याल नहीं रखता।" हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत है: "मक्का में किया गया एक गुनाह, दूसरे स्थानों पर किए गए सत्तर गुनाहों से अधिक गंभीर है।" हाँ, अल्लाह के कुछ ऐसे बंदे हैं जिन्हें उसने चुना है और स्वभाव की इच्छाओं से शुद्ध किया है; वे ही उस पड़ोस (मक्का) में रहने वाले सफल लोग हैं, जिन्हें बिना गुनाहों और बुराइयों के नेक कार्यों और प्रार्थनाओं की श्रेष्ठता और उच्च स्थान प्राप्त होता है। (फिर उन्होंने इस बारे में हदीसें बयान कीं)। फिर उन्होंने कहा: "लेकिन गुनाहों से सुरक्षित रहकर सफलता पाने वाले बहुत कम हैं। इसलिए, फ़िक़्ही (इस्लामी कानून) हुक्म उनके आधार पर नहीं बनाया जाता है और न ही उनके हाल को पड़ोस में रहने के लिए शर्त के रूप में उल्लेख किया जाता है। क्योंकि मानवीय स्वभाव झूठे दावे करने और उन शर्तों को पूरा करने की क्षमता का दिखावा करने की ओर बढ़ता है जिनकी ओर वह आकर्षित होता है, जबकि वह बहुत बड़ा झूठा होता है।"

1 फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-हज, मसाइल-ए-मन्शूरा, मकतबा नूरिया रज़विया, सुक्कुर, 3/92-93।

पृष्ठ 836 का 701

تلا هذه الآية ومن يرد فيه بإلحاد بظلم نذقه من عذاب اليم، وقال سعيد بن المسيب للذی جاء من اهل المدينة يطلب العلم ارجع الی المدينة فانا نسمع ان ساكن مكة لايموت حتی يكون الحرم عنده بمنزلة الحل لما يستحل من حرمها، وعن عمر رضی الله تعالی عنه خطيئة اصيبها بمكة اعز علی من سبعين خطيئة بغيرها، نعم افراد من عباد الله استخلصهم وخلصهم من مقتضيات الطباع، فاولئك هم اهل الجوار الفائزون بفضيلة من تضاعف الحسنات والصلوات من غير ما يحبطها من الخطيئات والسيئات ۱ (ثم سرد احاديث فی ذلک) ثم قال لكن الفائز بهذا مع السلامة من احباطه اقل القليل، فلا يبنی الفقه باعتبارهم ولا يذكر حالهم قيدا فی جواز الجوار، لان شان النفوس الدعوی الكاذبة والمبادرة الی دعوة الملكة والقدرة علی ما يشترط فيما تتوجه اليه وتطلبه وانها لأكذب

اور جو اس میں کسی زیادتی کا ناحق ارادہ کرے تو ہم اسے درد ناک عذاب چکھائیں گے، اور حضرت بن مسیب رضی اللہ تعالی عنہ نے مدینہ طیبہ سے طلب علم کے لیے مکہ آنے والے سے فرمایا: مدینہ طیبہ کی طرف واپس چلے جاؤ ہم نے سن رکھا ہے کہ ساکن مکہ نہیں فوت ہوتا حتی کہ حرم اس کے ہاں بمنزل حل کے ہو جاتی ہے کیونکہ وہ اس کی حرمت کا پاس نہیں کرتا۔ حضرت عمر رضی اللہ تعالی عنہ سے ہے: مکہ میں کیا جانے والا گناہ دوسرے مقام کے ستر گناہوں سے بدتر ہوتا ہے، ہاں اللہ تعالیٰ کے کچھ بندے ایسے ہوتے ہیں جنہوں نے اپنی طبائع کے تقاضوں کو صاف وخاص کر لیا ہے وہی اس پڑوس و مجاورت کے اہل ہیں، وہ ہی حسنات اور عبادات کے فضیلت و درجات پانے والے ہیں اور وہ سیئات اور گناہوں سے محفوظ رہتے ہیں، (پھر اس سلسلہ میں احادیث ذکر کیں) پھر کہا: لیکن گناہوں میں گرنے سے محفوظ و سلامتی کے ساتھ کامیاب ہونے والے بہت ہی کم ہوتے ہیں اور قلیل لوگوں کے اعتبار سے فقہی حکم کی بنا نہیں

ہوتی اور نہ ہی جواز مجاورت کے لیے ان کے حال کو بطور قید ذکر کیا جاتا ہے، کیونکہ انسانی فطرت یہ ہے کہ جھوٹے دعویٰ اور تجربہ کے اعلان میں پیش رفت کرتے ہوئے اور شرائط پر قدرت کا اظہار کرتے ہوئے مطلوب کی طرف بڑھتا ہے حالانکہ وہ

۱ فتح القدیر کتاب الحج مسائل منثورہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۳/۹۲۔۹۳

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[Right Column - Urdu Translation/Explanation] ...he is extremely deceitful in his oaths, so what would he be like in his claims? And Allah Almighty knows best. Based on this, it is necessary that the ruling for residing in the Pure City (Medina) be the same, even if an increase in punishment for sins or their intensity is absent there. (I say, because mercy in the Pure City is more, kindness is more abundant, generosity is widest, and forgiveness is fastest, as is witnessed and experienced, and all praise is due to Allah, Lord of the worlds. Nonetheless) the fear of weariness and the fear of lack of etiquette leading to a breach of the obligation of reverence and majesty exists, and this also hinders residency. Yes, those individuals who are angelic in character, their staying and dying there is perfect bliss. - Summarized and clarified. You have seen how well the researcher spoke here; this is a very fine detail. May Allah Almighty grant them a reward. They clarified that although the matter of residency is permissible, it is on the condition of 'tautheeq' (trustworthiness/firmness) which can only be achieved through divine guidance (taufeeq), as they specified. In 'Sharh al-Lubab', they termed it correct, and in 'Durr al-Mukhtar', they expressed certainty on this. However, since the people of 'tautheeq' are very few, and the rulings of jurisprudence are not based on the rare and few, but on the predominant majority, it is better to state a general prohibition, just as...

[Left Column - Arabic Original Text] ...what would be the case when one swears an oath, so how would it be when one makes a claim? And Allah Almighty knows best. Based on this, it is necessary that residing in the Noble City be likewise, for even if the doubling or greatness of sins is absent therein (1). (I say: that is because mercy in the City is more, kindness is more abundant, generosity is wider, and forgiveness is faster as is witnessed and experienced, and all praise is due to Allah, Lord of the worlds. Nonetheless) the fear of weariness and lack of etiquette leading to a breach of the obligation of reverence and majesty remains, and it is also a barrier, except for individuals with (angelic) dispositions (2). - Summarized and clarified. And it is, as you see, in a position of goodness; they have indeed benefited greatly. May the Generous One, Blessed and Exalted be He, reward him. He clarified that the matter, even if in reality it is on the permissibility of residency on the condition of 'tautheeq', which is divine guidance ('taufeeq') upon investigation as specified and corrected in 'Sharh al-Lubab' and affirmed in 'al-Durr al-Mukhtar'. However, since the people of 'tautheeq' were the fewest of the few, and the rulings of jurisprudence are only built upon the

predominant majority, not the rare and minor, the proper approach is to state a general prohibition, just as...

[Footnotes] 1. Fath al-Qadir, Book of Hajj, Miscellaneous issues, Maktabah Nuriyyah Razawiyyah Sukkur 3/94 2. Fath al-Qadir, Book of Hajj, Miscellaneous issues, Maktabah Nuriyyah Razawiyyah Sukkur 3/94

फतावा रज़विया, खंड 10

[दायां कॉलम - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] ...वह अपनी कसमों में अत्यंत झूठा होता है, तो अपने दावों में वह कैसा होगा? और अल्लाह ही बेहतर जानने वाला है। इसी आधार पर यह आवश्यक है कि मदीना तैयबा में निवास (मजावरत) का भी यही हुक्म हो, चाहे यहाँ गुनाहों पर सज़ा में इज़ाफ़ा या उनकी तीव्रता न हो। (मैं कहता हूँ, क्योंकि मदीना तैयबा में रहमत अधिक, मेहरबानी प्रचुर, उदारता सबसे व्यापक और क्षमा सबसे तेज़ होती है जैसा कि प्रत्यक्ष और परीक्षित है, और तमाम प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो सारे जहानों का रब है। इसके बावजूद) उकता जाने का डर और वहाँ के आदर-सम्मान में शिष्टाचार की कमी का डर तो मौजूद है, और यह भी तो निवास करने से रोकता है। हाँ, वे व्यक्ति जो फ़रिश्ता स्वभाव के हों, उनका वहाँ ठहरना और देहांत होना पूर्ण सौभाग्य है। - संक्षेप में स्पष्ट किया गया। आपने देखा कि यहाँ शोधकर्ता ने कितनी अच्छी चर्चा की है; यह बहुत ही बेहतरीन विवरण है। अल्लाह उन्हें इसका बदला दे। उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि यद्यपि निवास का मामला जायज़ है, लेकिन 'तौसीक़' (दृढ़ता) की शर्त पर, जो केवल ईश्वरीय मार्गदर्शन (तौफ़ीक़) के रूप में ही प्राप्त हो सकती है, जैसा कि उन्होंने स्पष्ट किया है। 'शरह अल-लुबाब' में उन्होंने इसे सही कहा, और 'दुर अल-मुख्तार' में भी इसी पर दृढ़ता व्यक्त की। लेकिन चूंकि 'तौसीक़' वाले लोग बहुत ही कम होते हैं, और फ़िक़्ह (इस्लामी न्यायशास्त्र) के नियम दुर्लभ और कम पर नहीं, बल्कि सामान्य बहुमत पर आधारित होते हैं, इसलिए अब पूर्ण रूप से मना करना ही बेहतर है, जैसा कि...

[बायां कॉलम - अरबी मूल पाठ] ...जब कसम का यह हाल है तो दावों का क्या होगा? और अल्लाह ही बेहतर जानने वाला है। इसी आधार पर मदीना मुशर्रफ़ा में निवास का हुक्म भी इसी तरह होना चाहिए, भले ही उसमें गुनाहों का कई गुना होना या उनकी महानता न पाई जाए (1)। (मैं कहता हूँ: यह इसलिए है क्योंकि मदीना में दया अधिक है, कृपा अधिक प्रचुर है, उदारता अधिक व्यापक है और क्षमा अधिक तीव्र है जैसा कि प्रत्यक्ष और अनुभवी है, और सभी प्रशंसा अल्लाह के लिए है, जो दुनिया का भगवान है। इसके बावजूद) उकता जाने का डर और आदर एवं गरिमा के कर्तव्य के उल्लंघन की ओर ले जाने वाले शिष्टाचार की कमी बनी रहती है, और यह भी एक बाधा है, सिवाय उन व्यक्तियों के जिनके पास (दिव्य) स्वभाव है (2)। - संक्षेप में और स्पष्ट रूप से। और जैसा कि आप देख रहे हैं, यह बहुत अच्छी बात है; उन्होंने वास्तव में बहुत लाभ पहुँचाया है। उदार दाता, जो धन्य और महान है, उन्हें प्रतिफल दे। उन्होंने स्पष्ट किया कि मामला, भले ही वास्तव में 'तौसीक़' की शर्त पर निवास की अनुमति पर हो, जो जांच करने पर ईश्वरीय मार्गदर्शन (तौफ़ीक़) है जैसा कि 'शरह

अल-लुबाब' में निर्दिष्ट और सही किया गया है और 'अल-दुर अल-मुख्तार' में इसकी पुष्टि की गई है। हालाँकि, चूँकि 'तौसीक़' के लोग बहुत कम थे, और फ़िक़्ह के नियम केवल प्रचुर बहुमत पर आधारित होते हैं, न कि दुर्लभ और अल्प पर, इसलिए सही तरीका यह है कि पूर्ण प्रतिबंध लगाया जाए, जैसा कि...

[पादलेख] 1. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-हज, विविध मुद्दे, मकतबा नूरिय्या रज़विय्या सुक्कुर 3/94 2. फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-हज, विविध मुद्दे, मकतबा नूरिय्या रज़विय्या सुक्कुर 3/94

[دایاں کالم] اپنی قسموں میں نہایت جھوٹا ہوتا ہے تو اپنے دعووں میں وہ کیا ہوگا، اور اللہ تعالیٰ ہی بہتر جاننے والا ہے، اس بنا پر یہ ضروری ہے کہ مدینہ طیبہ میں مجاورت کا بھی یہی حکم ہو اگر چہ یہاں گناہوں پر سزا میں اضافہ یا ان کی شدت مفقود ہے۔ میں کہتا ہوں، کیونکہ مدینہ طیبہ میں رحمت اکثر لطف وافر، کرم سب سے وسیع اور عفو سب سے جلدی ہوتا ہے جیسا کہ شاہد مجرب ہے والحمد للہ رب العالمین، اس کے باوجود) اکتانے کا ڈر اور وہاں کے احترام وتوقیر میں قلت ادب کا خوف تو موجود ہے اور یہ بھی تو مجاورت سے مانع ہے، ہاں وہ افراد جو فرشتہ صفت ہوں تو ان کا وہاں ٹھہرنا اور فوت ہونا سعادتِ کاملہ ہے اھ اختصاراً۔ آپ نے دیکھا اس جگہ محقق نے کتنی اچھی گفتگو کی یہ نہایت ہی عمدہ تفصیل ہے اللہ تعالیٰ انہیں اجر عطا فرمائے، انہوں نے یہ واضح فرمادیا کہ اگرچہ مجاورت کا معاملہ جائز ہے مگر بشرطِ توثیق جو بصورتِ توفیق الٰہی ہی حاصل ہو سکتی ہے جیسا کہ اس پر انہوں نے تصریح کی ہے شرح اللباب میں اس کو صحیح کہا، درمختار میں اسی پر جزم کا اظہار کیا مگر چونکہ اہلِ توثیق بہت ہی کم ہوتے ہیں اور احکام فقہ کی بناء نادر و قلیل پر نہیں ہوتی بلکہ غالب کثیر پر ہوتی ہے تو اب مطلقاً منع کہنا ہی بہتر ہے جیسا کہ۔

[بایاں کالم - عربی عبارت] مایکون اذا حلفت فکیف اذا ادعت واللہ تعالی اعلم وعلی ھذا فیجب کون الجوار فی المدینۃ المشرفۃ کذلك فان تضاعف السیئات اوتعاظمھا وان فقد فیھا۱۔ (قلت وذلك لان الرحمۃ فی المدینۃ اکثر واللطف اوفر والکرم اوسع والعفو اسرع کما ھو شاھد مجرب والحمد للہ رب العالمین ومع ذلك) فمخافۃ السامۃ وقلت الادب المفضی الی الاخلال بواجب التوقیر والاجلال، قائم وھو ایضاً مانع،الا للافراد ذوی الملکات۲۔ اہ مختصرا موضحاً وھو کما تری من الحسن بمکان فقد افادوا

جاد، اثابه الجواد تبارك وتعالى، وابان ان الامر، وان كان فى الواقع على جواز الجوار بشرط التوثيق وهو التوفيق عند التحقيق كما نص عليه وصححه فى شرح اللباب وجزم به فى الدرالمختار الا ان اهل التوثيق لما كانوا اقل قليل واحكام الفقه انما تبتنى على الغالب الكثير دون النادر اليسير فالوجه هو اطلاق المنع كما

[حواشى] 1 فتح القدير كتاب الحج مسائل منثوره مكتبہ نوريہ رضويہ سكهر ٣ / ٩٤ 2 فتح القدير كتاب الحج مسائل منثوره مكتبہ نوريہ رضويہ سكهر ٣ / ٩٤

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Right Column - Urdu Translation/Explanation] This is the position of Imam (Allah be pleased with him). For this reason, the eminent scholars who wrote marginalia on 'Al-Durr al-Mukhtar', such as Al-Halabi, Al-Tahtawi, and then Al-Shami, all cited the text of 'Fath al-Qadir', stipulated the condition of reliability (tawthiq), and then stated: "This is a sound view; hence, it would have been appropriate for the commentator to explicitly state the detestability (karahat) and omit the condition of reliability." Ibn Abidin added that this is necessary considering the condition of most people, especially in the context of this era. And Allah is the One whose help is sought. I was greatly pleased with the statement of Allama Mulla Ali Qari in 'Maslak al-Mutaqassit Sharh al-Mansak al-Mutawassit', where, as far as I know, he corrected the aforementioned discussion by saying: "If these Imams were in our time and became aware of our circumstances, they would have explicitly declared the prohibition (hurmat) etc." I say: A parallel to this exists in 'Al-Durr al-Mukhtar' under the issue of 'a woman entering a public bath (hammam)', where it is stated that in our time there is no doubt about its detestability due to the certainty of uncovering private parts (awrah). The Absolute Researcher (Al-Muhaqqiq al-ala al-Itlaq) preceded him in 'Al-Fath' in stating the same, and similar to it is what Al-Ala'i also mentioned in 'Al-Durr al-Muntaqa Sharh al-Multaqa' regarding the necessity of maintenance (nafaqah) for a student.

[Left Column - Original Arabic Text] هو مذہب الامام رضی اللہ تعالیٰ عنہ و لذا اخذ الفاضلون المحشون العلامة الحلبی ثم الطحطاوی ثم الشامی کلهم فی حواشی الدر، فی اشتراطه التوثیق حیث نقلوا کلام الفتح، ثم قالوا وهو وجیہ، فکان ینبغی للشارح ان ینص علی الکراهة ویترك التقیید بالتوثیق[1] اھ زاد ابن عابدین ای اعتبار للغالب من حال الناس لاسیما اهل هذا الزمان واللہ المستعان[2] ھ ولقد اعجبنی قول العلامة علی القاری، فی مسلك المتقسط شرح المنسك المتوسط، مع تصحیحہ ما علمت حیث یقول لو کانت الائمة في زماننا وتحقق لهم شاننا لصرحوا بالحرمة[3] الخ. قلت ونظیرہ ما قال في الدر المختار في مسئلة دخول المرأة الحمام ان فی زماننا لا شك في الکراهة لتحقق کشف العورة[4] اھ وقد سبقہ الی ذلك المحقق علی الاطلاق في الفتح، ونحوها ما ذکر العلائی ایضا فی الدر المنتقی شرح الملتقی

[Footnotes] [1] Tahtawi on Al-Durr al-Mukhtar, Book of Hajj, Chapter of Al-Hadi, Dar al-Ma'rifah, Beirut, 1/562 [2] Radd al-Muhtar, Book of Hajj, Section on Residing in Medina etc., Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 2/256 [3] Maslak al-Mutaqassit with Irshad al-Sari, Chapter on Consensus on the best of lands etc., Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 352 [4] Durr al-Mukhtar, Chapter of Corrupt Leasing, Mujtabai Press, Delhi, 2/178

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

[दायाँ कॉलम - उर्दू अनुवाद/व्याख्या] यह इमाम (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) का मत है। इसी कारण 'अल-दुर्र अल-मुख्तार' पर हाशिये (टिप्पणियाँ) लिखने वाले प्रतिष्ठित विद्वानों हलबी, तहतावी और फिर शामी, सभी ने 'फ़तह अल-क़दीर' की इबारत को उद्धृत किया और विश्वसनीयता (तौसीक़) की शर्त लगाई। फिर उन्होंने कहा: "यही बेहतर है; इसलिए टीकाकार (शारह) को चाहिए था कि वह नापसंदगी (कराहत) को स्पष्ट रूप से बताते और विश्वसनीयता की शर्त को छोड़ देते।" इब्न आबिदीन ने यह जोड़ा कि यह अधिकांश लोगों की स्थिति के आधार पर आवश्यक है, विशेष रूप से इस युग के संदर्भ में। और अल्लाह ही सहायता करने वाला है। मुझे अल्लामा मुल्ला अली क़ारी का 'मसलक अल-मुतकस्सित शरह अल-मंसक अल-मुतवस्सित' में यह कथन बहुत पसंद आया, जहाँ जैसा कि मुझे मालूम है, उन्होंने उपर्युक्त चर्चा को सही करते हुए कहा: "यदि ये इमाम हमारे समय में होते और हमारी परिस्थितियों से अवगत होते, तो वे (मजावरत के) हराम (निषिद्ध) होने को स्पष्ट कर देते आदि।" मैं कहता हूँ: इसका उदाहरण 'अल-दुर्र अल-मुख्तार' में 'स्त्री का स्नानागार (हमाम) में जाना' के विषय में मिलता है कि हमारे समय में इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह मकरूह (नापसंद) है क्योंकि इसमें बे-परदगी (नग्नता) का होना निश्चित है। 'फ़तह' में मुहाक़्क़िक़ अली अल-इतलाक़ ने भी उनसे पहले यही लिखा है, और इसी तरह का उल्लेख अल-अलाई ने 'अल-दुर्र अल-मुंतक़ा शरह अल-मुल्तक़ा' में एक विद्यार्थी के लिए भरण-पोषण (नफ़क़ा) की अनिवार्यता के संबंध में किया है।

[बायाँ कॉलम - मूल अरबी पाठ] هو مذہب الامام رضی اللہ تعالیٰ عنہ و لذا اخذ الفاضلون المحشون العلامة الحلبی ثم الطحطاوی ثم الشامی کلهم فی حواشی الدر، فی اشتراطه التوثیق حیث نقلوا کلام الفتح، ثم قالوا وهو وجیہ، فکان ینبغی للشارح ان ینص علی الکراهة ویترک التقیید بالتوثیق[1] اھ زاد ابن عابدین ای اعتبار للغالب من حال الناس لاسیما اهل هذا الزمان واللہ المستعان[2] ھ ولقد اعجبنی قول العلامة علی القاری، فی مسلك المتقسط شرح المنسك المتوسط، مع تصحیحہ ما علمت حیث یقول لو کانت الائمة في زماننا وتحقق لهم شاننا لصرحوا بالحرمة[3] الخ۔ قلت ونظیرہ ما قال في الدر المختار في مسئلة دخول المرأة الحمام ان فی زماننا لا شك في الکراهة لتحقق کشف العورة[4] اھ وقد سبقہ الی ذلك المحقق علی الاطلاق في الفتح، ونحوها ما ذکر العلائی ایضا فی الدر المنتقی شرح الملتقی

[पादलेख (फ़ुटनोट्स)] [1] अल-दुर्र अल-मुख्तार पर तहतावी, किताबुल हज, बाबुल हदी, दारुल मारिफ़ा, बेरूत 1/562 [2] रदुल मुहतार, किताबुल हज, मदीना में निवास का मामला आदि, दार इह्या अल-तुराथ अल-अरबी, बेरूत 2/256 [3] मसलक अल-मुतकस्सित साथ में इरशाद अल-सारी, श्रेष्ठ शहरों पर सर्वसम्मति का अध्याय आदि, दारुल किताब अल-अरबी, बेरूत पृ. 352 [4] दुर्र मुख्तार, अवैध पट्टे का अध्याय, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 2/178

[دایاں کالم - اردو ترجمہ و تشریح] امام رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا مذہب ہے، یہی وجہ ہے کہ در مختار پر حواشی لکھنے والے فاضل علماء حلبی، طحطاوی پھر شامی سب نے فتح القدیر کی عبارت نقل کرکے توثیق کی شرط لگائی اور پھر کہا یہی بہتر ہے لہٰذا شارح کو چاہئے تھا کہ وہ کراہت پر تصریح کرنا اور توثیق کی قید ترک کر دیتا اھ ابن عابدین نے یہ اضافہ کیا کہ یہ اکثر لوگوں کے حال کے اعتبار خصوصاً اس دور کے حوالے سے ضروری ہے اور اللہ تعالیٰ ہی مدد فرمانے والا ہے اھ مجھے علامہ ملا علی قاری کا "مسلک متقسط شرح المنسک المتوسط" میں یہ قول بہت پسند آیا، جیسا مجھے معلوم ہے انھوں نے مذکور گفتگو کی تصحیح کرتے ہوئے کہا اگر یہ ائمہ ہمارے دور میں ہوتے اور ہمارے احوال سے آگاہ ہوتے تو مجاورت کے حرام ہونے کی تصریح کرتے الخ میں کہتا ہوں اس کی نظیر درمختار میں "عورت کا حمام میں جانا" کے تحت ہے کہ ہمارے دور میں یہ مکروہ ہے کیونکہ بے پردگی ہوتی ہے اھ اور اس سے پہلے فتح میں محقق علی الاطلاق نے بھی یہی لکھا ہے وہ بھی اسی کی مثل ہے جو حافظ علائی نے الدر المنتقی شرح الملتقی میں طالب علم کے وجوب نفقہ کے بارے

[بایاں کالم - اصل عربی متن] ھو مذہب الامام رضی اللہ تعالیٰ عنہ و لذا اخذ الفاضلون المحشون العلامۃ الحلبی ثم الطحطاوی ثم الشامی کلھم فی حواشی الدر، فی اشتراطہ التوثیق حیث نقلوا کلام الفتح، ثم قالوا وھو وجیہ، فکان ینبغی للشارح ان ینص علی الکراھۃ ویترک التقیید بالتوثیق ۱ اھ زاد ابن عابدین ای اعتبار للغالب من حال الناس لاسیما اھل ھذا الزمان واللہ المستعان ۲ ھ ولقد اعجبنی قول العلامۃ علی القاری، فی مسلك المتقسط شرح المنسك المتوسط، مع تصحیحہ ما علمت حیث یقول لو کانت الائمۃ في زماننا وتحقق لھم شاننا لصرحوا بالحرمرۃ ۳ الخ۔ قلت ونظیرہ ما قال في الدر

المختار في مسئلة دخول المرأة الحمام ان فى زماننا لا شك في الكراهة لتحقق كشف العورة ۴ اھ وقد سبقہ الی ذلك المحقق على الاطلاق في الفتح، ونحوها ما ذكر العلائی ایضا فی الدر المنتقی شرح الملتقی

[حواشی] ۱ طحطاوی على الدر المختار كتاب الحج باب الہدی دار المعرفہ بیروت ۱/ ۵۶۲ ۲ ردالمختار كتاب الحج مطلب فی المجاورة بالمدينة الخ دار احياء التراث العربی بیروت ۲/ ۲۵۶ ۳ مسلك المتقسط مع ارشاد الساری فصل اجمعوا على افضل البلاد الخ دار الكتاب العربی بیروت ص ۳۵۲ ۴ در مختار باب الاجارة الفاسدة مطبع مجتبائی دہلی ۲/ ۱۷۸

Fatawa Rizvia - Volume Ten

[Arabic Column] Regarding the obligation of maintenance for a student of religious knowledge: Verily, this applies when there is righteousness in him, as mentioned in 'Al-Khulasah'. Therefore, the author of 'Al-Munyah' and 'Al-Qunyah' said: 'I give a fatwa on the lack of its obligation, for only a few of them are of good conduct and engaged in religious knowledge, while the majority of them (so and so - and he mentioned their flaws, then he said, meaning al-Haskafi): As for those who are contrary to them, they are rare in this era; thus, a separate ruling is not specified to avoid the hardship of distinguishing between the reformer and the corrupter, etc.' I say: From this category is their ruling on the prohibition of 'Sama' (audition) even without musical instruments, for it excites what is in the hearts, and most people are captives of carnal desires. Therefore, the preferred view is prohibition to close the door to temptation, even if there is some benefit for men adorned with virtues, cleared of vices, whose desires have died, rather whose very selves have vanished [in devotion]. Thus, 'Sama' remains purely beneficial, and by this, the lengthy dispute is terminated. Whoever among the saints (Awliya) practiced it, attained its goodness; and whoever among the jurists (Fuqaha) forbade it, removed its harm. For all of them is reward for the sincerity with which they advised.

[Urdu Column] ...it was written that this is when there is goodness in him and no deviance, as is in 'Khulasah'. For this reason, the author of 'Munyah' and 'Qunyah' said: 'I issue a fatwa on the non-obligation (of maintenance) because very few of them are possessors of good character and seekers of religious knowledge, and most of them (are such and such - and then he mentioned the students of his time. Then Haskafi said) those who are contrary to them are very few in this era, and now, because it has become difficult to distinguish between the reformer and the corrupter, a separate ruling cannot be stated for them, etc.' I say: From this same category is the prohibition of 'Sama', whether or not it is with musical instruments, because it excites the emotions of the heart, and now most people have become captives of carnal desires. Therefore, it is correct to forbid 'Sama' to close the door of temptation, although it is also beneficial for some people who are adorned with virtues, free from vices, and whose carnal desires have died, rather their very beings have become total humility and submissiveness. In that case, 'Sama' is indeed beneficial. The long-standing dispute on this issue is also ended by this: whoever among the saints (Awliya) heard 'Sama' did right and it became a source of good for him, and whoever among the jurists... [text ends]

1 Ad-Durr al-Muntaqa on the margin of Majma' al-Anhur, Chapter on Child Support, Dar Ihya at-Turath al-Arabi, Beirut 1/500. Page 704 of 836

फ़तावा रिज़विया - जिल्द दहम (खंड 10)

[अरबी कॉलम] धार्मिक ज्ञान के विद्यार्थी के भरण-पोषण की अनिवार्यता के संबंध में: वास्तव में, यह तब लागू होता है जब उसमें धार्मिकता हो, जैसा कि 'अल-खुलासा' में वर्णित है। इसीलिए, 'अल-मुनया' और 'अल-कुनया' के लेखक ने कहा: 'मैं इसके अनिवार्य न होने का फतवा देता हूँ, क्योंकि उनमें से केवल कुछ ही अच्छे आचरण वाले और धार्मिक ज्ञान में लीन हैं, जबकि उनमें से अधिकांश (ऐसे-ऐसे हैं - और उन्होंने उनकी कमियों का उल्लेख किया, फिर उन्होंने कहा, यानी अल-हसकफी): जहाँ तक उनके विपरीत लोगों की बात है, वे इस युग में दुर्लभ हैं; इस प्रकार, सुधारक और भ्रष्ट के बीच अंतर करने की कठिनाई से बचने के लिए एक अलग नियम निर्दिष्ट नहीं किया गया है, आदि।' मैं कहता हूँ: इसी श्रेणी से 'समा' (आध्यात्मिक श्रवण) को प्रतिबंधित करने का उनका नियम है, भले ही वह वाद्ययंत्रों के बिना हो, क्योंकि यह उन भावनाओं को उत्तेजित करता है जो दिलों में हैं, और अधिकांश लोग शारीरिक इच्छाओं के कैदी हैं। इसलिए, प्रलोभन के द्वार को बंद करने के लिए निषेध ही पसंदीदा दृष्टिकोण है, भले ही गुणों से सुसज्जित, दोषों से मुक्त पुरुषों के लिए कुछ लाभ हो, जिनकी इच्छाएँ मर चुकी हैं, बल्कि जिनका अस्तित्व ही [भक्ति में] विलीन हो गया है। इस प्रकार, 'समा' विशुद्ध रूप से लाभदायक रहता है, और इससे लंबा विवाद समाप्त हो जाता है। संतों (औलिया) में से जिसने भी इसका अभ्यास किया, उसने इसकी अच्छाई प्राप्त की; और न्यायविदों (फुक़हा) में से जिसने भी इसे प्रतिबंधित किया, उसने इसके नुकसान को दूर किया। उन सभी के लिए उस ईमानदारी के लिए प्रतिफल है जिसके साथ उन्होंने सलाह दी।

[उर्दू कॉलम] ...लिखा गया कि यह तब है जब उसमें अच्छाई हो और कोई विचलन न हो, जैसा कि 'खुलासा' में है। इसी कारण से, 'मुनया' और 'कुनया' के लेखक ने कहा: 'मैं भरण-पोषण की अनिवार्यता न होने का फतवा देता हूँ क्योंकि उनमें से बहुत कम अच्छे चरित्र के स्वामी और धार्मिक ज्ञान के साधक हैं, और उनमें से अधिकांश (ऐसे और वैसे हैं - और फिर उन्होंने अपने समय के छात्रों का उल्लेख किया। फिर हसकफी ने कहा) जो उनके विपरीत हैं वे इस युग में बहुत कम हैं, और अब, क्योंकि सुधारक और भ्रष्ट के बीच अंतर करना कठिन हो गया है, उनके लिए एक अलग नियम नहीं बताया जा सकता, आदि।' मैं कहता हूँ: इसी श्रेणी से 'समा' का निषेध है, चाहे वह वाद्ययंत्रों के साथ हो या नहीं, क्योंकि यह हृदय की भावनाओं को उत्तेजित करता है, और अब अधिकांश लोग शारीरिक इच्छाओं के कैदी बन गए हैं। इसलिए, प्रलोभन के द्वार को बंद करने के लिए 'समा' को वर्जित करना ही सही है, हालांकि यह उन कुछ लोगों के लिए भी फायदेमंद है जो गुणों से सुसज्जित हैं, दोषों से

मुक्त हैं, और जिनकी शारीरिक इच्छाएँ मर चुकी हैं, बल्कि जिनका अस्तित्व पूरी तरह से विनम्रता और अधीनता बन गया है। उस स्थिति में, 'समा' वास्तव में लाभदायक है। इस मुद्दे पर लंबे समय से चला आ रहा विवाद भी इससे समाप्त हो जाता है: संतों (औलिया) में से जिसने 'समा' सुना, उसने सही किया और यह उसके लिए अच्छाई का स्रोत बना, और न्यायविदों में से जिसने... [पाठ समाप्त]

1 अद-दुर्र अल-मुंतक़ा, मजमा अल-अन्हूर के हाशिए पर, बाल सहायता पर अध्याय, दार इहया अत-तुराथ अल-अरबी, बेरुत 1/500। पृष्ठ 704 / 836

فتاوٰی رضویہ ، جلد دہم

[عربی متن] فی وجوب نفقة طالب العلم، ان هذا اذا كان به رشد، كما فی الخلاصة ولذا قال صاحب المنية والقنية انا افتی بعدم وجوبها فان قليلا منهم حسن السيرة مشتغلا بالعلم الديني واكثرهم (كذا وكذا وذكر من مساويهم، ثم قال اعنی الحصكفی) واما من كان بخلافهم فنادر في هذا الزمان فلايفرد بالحكم دفعا لحرج التمييز بين المصلح والمفسد الخ۔ قلت ومن هذا القبيل حكمهم بتحريم السماع المجرد عن المزامير فأنه يهيج ما فی القلوب واكثر الناس اسارى الشهوات فالوجه المنع سدا لباب الفتنة وان كان نفع شي في حق رجال تحلوا بالفضائل وتخلوا عن الرذائل وماتت شهواتهم بل فنت ذواتهم فبقی السماع محض الانتفاع وبه انقطع تطويل النزاع، فمن فعله من الاولياء فقد اصاب خيره ومن منعه من الفقهاء فقد ازال ضيره فلهم الاجر بما نصحوا

[اردو ترجمہ] میں لکھا کہ یہ اس وقت ہے جب اس میں نیکی ہو اور بے راہ روی نہ ہو، جیسا کہ خلاصہ میں ہے، اسی لیے صاحب منیہ و قنیہ نے کہا میں عدمِ وجوب کا فتوٰی دیتا ہوں کیونکہ ان میں بہت کم طلبہ اچھے کردار کے حامل اور علمِ دین کے حاصل کرنے والے ہیں اور ان میں سے اکثر (ایسے ایسے ہیں اور پھر اپنے دور کے طلبہ کا ذکر کیا۔ پھر حصکفی نے کہا) جو ان کے خلاف ہیں وہ اس دور میں بہت کم ہیں اور اب مصلح اور مفسد میں فرق مشکل ہو جانے کی وجہ سے ان کے لیے الگ حکم بیان نہیں کیا جاسکتا الخ میں کہتا ہوں اسی قبیل سے سماع کا حرام ہونا ہے خواہ وہ مزامیر کے ساتھ نہ ہو، کیونکہ وہ دل کے جذبات کو ابھارتا ہے، اور اب اکثر لوگ شہواتِ نفسانیہ کے قیدی بن چکے ہیں۔ لہذا فتنہ کے دروازے کو بند کرنے کے لیے سماع سے منع کرنا ہی درست ہے اگرچہ یہ ایسے کچھ لوگوں کے لیے نافع بھی ہے جو فضائل سے مزین، رذائل سے خالی ہو اور ان کی نفسانی خواہشات مر چکی ہوں بلکہ ان کی ذات سراپا خشوع و خضوع

ہوچکی ہو تو پھر سماع واقعۃً نافع ہوتا ہے۔ اس مسئلہ میں جو طویل نزاع ہے اس سے وہ بھی ختم ہو جاتا ہے اولیاء میں سے جس نے سماع سنا اس نے درست کیا اور اس کے لیے خیر بنا فقہاء میں سے جس نے

1 الدر المنتقی علی حاشیہ مجمع الانہر فصل فی نفقۃ الطفل دار احیاء التراث العربی بیروت ۱/ ۵۰۰

Fatawa Razawiyya Volume Ten

And for the people there is permission as long as they are fit, and for everyone there is reward and glad tidings; correctness and praise belong to Allah, the Lord of lords.

In summary, the ruling is the non-permissibility of neighboring (residing near holy places) at all in our time. A wise person has no choice but to take precautions for themselves and avoid following paths that mostly lead to destruction. Whoever believes their soul to be truthful has indeed believed a liar, and they will observe it themselves. There is no power to avoid evil and perform good except through the guidance of Allah, the Exalted, the Great. Since the matter is as described here, the basis of the question falls away entirely, as it has become clear that what the questioner thought was good is not actually good. Allah is requested to grant goodness and protect from harm, and He, Glory be to Him and Exalted is He, knows best, and His majesty is most perfect and most wise. Peace and blessings of Allah Almighty be upon our master Muhammad and his family and companions. (T)

Page 705 of 836

और लोगों के लिए अनुमति है जब तक कि वे योग्य हों, और हर एक के लिए सवाब और शुभ समाचार है; शुद्धि और प्रशंसा अल्लाह, स्वामियों के स्वामी के लिए है।

संक्षेप में, हमारे समय में (पवित्र स्थानों के) पड़ोस में रहने की बिल्कुल अनुमति नहीं है। एक बुद्धिमान व्यक्ति अपने लिए केवल सावधानी का मार्ग अपनाता है और हर उस रास्ते से बचता है जिससे विनाश में गिरने का डर हो। जिसने अपने मन को सच्चा माना, उसने वास्तव में एक झूठे को सच माना है, और वह स्वयं इसका अनुभव करेगा। बुराई से बचने और नेकी करने की शक्ति अल्लाह के मार्गदर्शन के बिना नहीं है, जो सर्वोच्च और महान है। जब मामला वैसा ही है जैसा यहाँ वर्णित है, तो प्रश्न का आधार पूरी तरह समाप्त हो जाता है, क्योंकि यह स्पष्ट हो गया है कि जिसे प्रश्नकर्ता ने अच्छा समझा था वह वास्तव में अच्छा नहीं है। अल्लाह से प्रार्थना है कि वह भलाई प्रदान करे और हानि से बचाए, और वह पवित्र और सर्वोच्च है, सबसे अधिक जानने वाला है और उसकी महिमा सबसे पूर्ण और सबसे बुद्धिमान है। अल्लाह तआला की शांति और आशीर्वाद हमारे स्वामी हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा और उनके परिवार और साथियों पर हो। (त)

पृष्ठ 836 का 705

اور لوگوں کے لیے اجازت ہے جب تک کہ وہ صلاحیت رکھتے ہوں، اور ہر ایک کے لیے ثواب اور بشارت ہے، درستی اور حمد رب الارباب کے لیے ہے۔

بالجملہ ہمارے دور میں مجاورت کی قطعاً اجازت نہیں۔ عقلمند اپنے لیے فقط احتیاط ہی کی راہ اپناتا ہے اور ہر اس راستہ سے اجتناب کرتا ہے جس سے ہلاکت میں گرنے کا خدشہ ہو، جس نے اپنے نفس کو سچا سمجھا اس نے جھوٹے کی تصدیق کی اور خود اس کا مشاہدہ بھی کرے گا۔ برائی سے بچنے اور نیکی بجالانے کی طاقت اللہ تعالٰی جو بلند و عظیم ہے کی توفیق کے بغیر نہیں، جب معاملہ یہ ہے جو یہاں بیان ہوا تو اب سرے سے سوال ہی ختم ہو گیا کیونکہ جس شے کو سائل نے خیر تصور کیا تھا وہ خیر ہی نہیں، اللہ تعالٰی سے دعا ہے وہ خیر کی توفیق دے اور نقصان سے بچائے اور وہی مقدس و اعلم ہے اس کا علم کامل و اکمل ہے، اس کے رسول اور ہمارے آقا حضرت محمد مصطفی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم پر درود و سلام ہو اور آپ کے آل و اصحاب پر بھی۔(ت)

صفحہ 836 کا 705

Fatawa Razviyya, Volume 10

Conditions of Hajj

Problem 301: From Patna Azimabad, Bakhshi Mohalla, submitted by Munshi Ali Husain Sahab, 25 Sha'ban 1331 AH.

What do the scholars of religion say regarding this issue: Zaid is an elderly man of nearly seventy years, suffering from tremors, and is unable to travel alone. Never in his days of health and youth did he possess enough wealth for Hajj to become obligatory upon him. Now, the situation is that he has sold his assets etc., and has five hundred rupees, which is his entire capital. Due to weakness and ailments, he wishes to move to another city where his relatives reside and buy a house there. In this scenario, is it obligatory for him to perform Hajj himself or have it performed by proxy (Hajj-e-Badal) by paying for it, or not? Please clarify and be rewarded.

The Answer:

In the queried situation, Hajj is not fundamentally obligatory for Zaid. According to the corrected school of thought (Zahir al-Riwayah) of our Imam-e-Azam (Imam Abu Hanifa) RA, such health that is capable of this blessed journey is a condition for the obligation (wujub) itself, such that without it, Hajj would not be obligatory at all—neither going in person nor sending someone else. According to the corrected school of thought of the Sahibayn (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad) RAs, although the aforementioned health is not a condition for obligation (shart-e-wujub), it is a condition for the obligation of performance (shart-e-wujub-e-ada). Thus, if it is absent, one is not required to go in person, but it is obligatory to arrange for a proxy Hajj with one's own funds during one's lifetime or after death. However, it is a consensus among the jurists that wealth must be surplus to all fundamental needs and sufficient for travel expenses; without this, Hajj does not become obligatory. A house is among the original necessities of life. After purchasing or building it, in this era when the expenses of Hajj have nearly doubled compared to the recent past...

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द 10

हज की शर्तें

मसाला 301: पटना अज़ीमाबाद, बख्शी मोहल्ला से मुंशी अली हुसैन साहब द्वारा प्रस्तुत, 25 शाबान 1331 हिजरी।

धर्म के विद्वान इस मामले में क्या कहते हैं: ज़ैद लगभग सत्तर वर्ष का एक वृद्ध व्यक्ति है, जो कंपन की बीमारी (पार्किंसंस जैसे लक्षण) से ग्रस्त है और अकेले यात्रा करने में असमर्थ है। अपने स्वास्थ्य और जवानी के दिनों में उसके पास कभी इतना धन नहीं था कि उस पर हज अनिवार्य (फ़र्ज़) हो। अब स्थिति यह है कि उसने अपनी संपत्ति आदि बेच दी है और उसके पास पाँच सौ रुपये हैं, जो उसकी कुल जमा पूँजी है। कमजोरी और बीमारियों के कारण वह दूसरे शहर में बसना चाहता है जहाँ उसके रिश्तेदार रहते हैं और वहाँ एक घर खरीदना चाहता है। इस स्थिति में, क्या उस पर स्वयं हज के लिए जाना या पैसे देकर किसी और से हज करवाना (हज-ए-बदल) अनिवार्य है या नहीं? कृपया स्पष्ट करें और पुण्य प्राप्त करें।

उत्तर:

पूछी गई स्थिति में ज़ैद पर हज मूल रूप से अनिवार्य नहीं है। हमारे इमाम-ए-आज़म (इमाम अबू हनीफ़ा) रहमतुल्लाह अलैह के प्रमाणित मत (ज़ाहिर अल-रवाया) के अनुसार, ऐसा स्वास्थ्य जो इस मुबारक यात्रा के योग्य हो, हज अनिवार्य होने की एक शर्त है। इसके बिना हज शुरू से ही अनिवार्य नहीं होता, न स्वयं जाना और न ही किसी और को भेजना। और साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद) रहमतुल्लाह अलैह के प्रमाणित मत में, यद्यपि उक्त स्वास्थ्य अनिवार्यता की शर्त (शर्त-ए-वुजूब) नहीं है, बल्कि प्रदर्शन की अनिवार्यता की शर्त (शर्त-ए-वुजूब-ए-अदा) है, इसलिए यदि वह स्वास्थ्य न हो तो स्वयं जाना आवश्यक नहीं है, लेकिन अपने बदले अपने पैसों से अपने जीवनकाल में या मृत्यु के बाद हज करवाना अनिवार्य है। लेकिन सभी न्यायविदों (फ़ुक़हा) के सर्वसम्मत मत के अनुसार, धन का सभी मूलभूत आवश्यकताओं से अधिक होना और आने-जाने के खर्चों के लिए पर्याप्त होना अनिवार्यता की शर्त है, जिसके बिना हज अनिवार्य ही नहीं होता। और घर बुनियादी ज़रूरतों में से एक है। घर खरीदने या बनाने के बाद, इस दौर में जब हज के खर्च हाल के बीते समय की तुलना में लगभग दोगुने हो गए हैं...

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

شرائط حج

مسئلہ ۳۰۱: از پٹنہ عظیم آباد بخشی محلہ مسئولہ منشی علی حسین صاحب ۲۵ شعبان ۱۳۳۱ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زید معمر قریب ہفتاد سال مریض رعشہ کہ تنہا سفر کے قابل نہیں کبھی اپنے زمانہ صحت و شباب میں اتنے مال کا مالک نہ ہوا کہ اس پر حج فرض ہوتا، اب کہ حالت یہ ہے اس نے اپنا مال وغیرہ بیچا اور پانچسو روپے اس کے پاس ہو گئے کہ یہی کل سرمایہ اس کا ہے۔ بوجہ ضعف و امراض دوسرے شہر میں جہاں اس کے اعزہ ہیں سکونت کرنا اور وہاں مکان خرید نا چاہتا ہے، اس صورت میں اس پر خود حج کو جانا یا روپیہ دے کر حج بدل کرانا واجب ہے یا نہیں؟ بینوا توجروا۔

الجواب:

صورتِ مستفسرہ میں زید پر حج اصلاً واجب نہیں۔ ہمارے امامِ اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے مذہبِ مصحح ظاہر الروایہ میں تو ایسی تندرستی جو اس سفر مبارک کے قابل ہو شرطِ وجوب ہے کہ بغیر اس پر حج سرے سے واجب ہی نہ ہوتا، نہ خود جانا نہ دوسرے کو بھیجنا، اور صاحبین رحمہما اللہ تعالیٰ کے مذہب مصحح میں اگر چہ تندرستی مذکور شرطِ وجوب نہیں، شرطِ وجوبِ ادا ہے کہ وہ نہ ہو تو خود جانا لازم نہیں مگر اپنے عوض اپنے روپے سے اپنی حیات میں یا بعد موت حج کرانا واجب ہے مگر مال جملہ حاجات سے فاضل، جانے آنے کے قابل باتفاقِ فقہائے کرام شرطِ وجوب ہے کہ بے اس کے حج واجب ہی نہیں ہوتا، اور مکان حاجاتِ اصلیہ سے ہے اس کی

خریداری یا بنانے کے بعد اس زمانے میں کہ اب مصارفِ حج بہت قریب گزرے ہوئے زمانے سے تقریباً دو چند ہو گئے۔

Saving so much that it covers all the expenses for going, staying, and returning for Hajj, and for Zaid in this state where there is neither wealth nor the power to earn, nor any means of livelihood remains, is not reasonable. Therefore, by consensus, or at least according to the correct and explicit opinion of the founder of the school (may Allah be pleased with him), there is undoubtedly no obligation for Zaid to have Hajj performed on his behalf, and as for going himself, it does not hold the status of an obligation at all by consensus. "Allah does not burden any soul beyond its capacity" (The Qur'an). It is stated in Tanveer-ul-Absar, Durr-ul-Mukhtar, and Radd-ul-Muhtar:

Arabic Text

Hajj is obligatory upon every free, sane, adult Muslim who is physically healthy, i.e., safe from afflictions that prevent performing the necessary tasks of travel. Therefore, Hajj is not obligatory on a paralyzed person, one struck by hemiplegia, or an elderly person who cannot remain steady on a riding animal. Similarly, it is not obligatory on a blind person even if they find a guide. According to the Zahir al-Madhhab from the Imam [Abu Hanifa], it is neither obligatory upon themselves to go, nor is it obligatory to appoint a deputy, and this is also one report from the two companions [Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad]. However, the Zahir al-Riwayah from the two companions is that it is obligatory for them to have Hajj performed by a proxy. From 'At-Tuhfah', it appears that the opinion of the two companions is preferred; it is the same in 'Al-Isbijabi'; and in 'Al-Fath' it is called strong. In 'Al-Lubab', a difference in the authentication

Urdu Translation

Hajj is mandatory for every free, adult Muslim who is healthy (meaning safe from every such affliction despite which travel cannot be undertaken; hence Hajj is not obligatory for the lame, those struck with paralysis, and such elderly people who cannot stay steady on a ride. Similarly, it is not obligatory for the blind even if they have a helper). According to the apparent school of thought of the Imam, it is neither mandatory upon them personally nor is it mandatory to appoint a proxy, and one narration from the two companions is the same. The apparent narration from the two companions is that it is mandatory for them to have Hajj-e-Badal performed; from Tuhfah it clearly appears that the opinion of the two companions is preferred, same is in Isbijabi, and in Fath it was called strong. In Al-Lubab, differences in the authentication of opinions are narrated, in its commentary it is mentioned that in Nihayah the first opinion was taken, in

Arabic Text

of opinions is cited. In its commentary, it says that 'An-Nihayah' followed the first opinion, and 'Al-Bahr al-'Amiq' says it is the correct opinion, while Qadi Khan in 'Sharh al-Jami' authenticated the second opinion, and many Mashaikh (scholars) chose it. (End quote from Radd-ul-Muhtar).

Urdu Translation

Bahr-al-Ameeq it is said that this is the correct opinion, Qadi Khan in Sharh-al-Jami has called the second opinion correct, and many Mashaikh have chosen it (End quote from Radd-ul-Muhtar). One who is capable of [providing] provision and a ride.

1. Al-Qur'an 2/286
2. Durr-ul-Mukhtar Sharh Tanveer-ul-Absar, Kitab al-Hajj, Matba' Mujtabai Delhi, 1/159-160
3. Radd-ul-Muhtar, Kitab al-Hajj, Mustafa al-Babi Egypt, 2/154

इतना बचाना कि उससे हज के लिए जाने, आने और रहने के भी तमाम खर्च हों और जैद के लिए इस हालत में कि न माल है न कमाने की शक्ति, कुछ आजीविका का साधन भी न रहे, उचित नहीं है। इसलिए सर्वसम्मति से, वरना कम से कम मज़हब के इमाम (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) के सही और स्पष्ट मज़हब के अनुसार तो बिना किसी संदेह के जैद पर हज करवाना भी अनिवार्य नहीं है और स्वयं हज के लिए जाना तो सर्वसम्मति से अनिवार्यता का रूप ही नहीं रखता। 'अल्लाह किसी जान पर उसकी शक्ति से अधिक बोझ नहीं डालता' (कुरआन)। तनवीर-उल-अबसार, दुर्र-उल-मुख्तार और रद-उल-मुहतार में है:

अरबी पाठ

हज हर उस स्वतंत्र, बालिग मुस्लिम पर अनिवार्य है जो शारीरिक रूप से स्वस्थ हो, अर्थात उन आपदाओं से सुरक्षित हो जिनके कारण यात्रा के आवश्यक कार्य नहीं किए जा सकते। इसलिए, पंगु, लकवाग्रस्त और ऐसे वृद्ध व्यक्ति पर हज अनिवार्य नहीं है जो सवारी पर स्थिर नहीं रह सकता। इसी प्रकार अंधे व्यक्ति पर भी अनिवार्य नहीं है चाहे उसे कोई सहायक मिल जाए। इमाम साहब के ज़ाहिर-ए-मज़हब के अनुसार न उन पर स्वयं जाना अनिवार्य है और न ही प्रतिनिधि नियुक्त करना, और साहिबैन से भी एक रिवायत यही है। साहिबैन से ज़ाहिर-उर-रिवायत यह है कि उन पर हज-ए-बदल करवाना अनिवार्य है। 'तहफ़ा' से यही ज़ाहिर होता है कि साहिबैन का कथन चुनिंदा है, 'इसबीजाबी' में भी ऐसा ही है, 'फ़तह' में इसे पुष्ट कहा गया है। 'अल-लुबाब' में कथनों के प्रमाणीकरण में मतभेद वर्णित है, इसकी व्याख्या में है कि 'निहाया' में पहले कथन को अपनाया गया है,

उर्दू अनुवाद (हिन्दी रूपांतरण)

हज हर मुस्लिम आज़ाद बालिग सेहत मंद पर लाज़िम है (यानी हर उस आफ़त से महफ़ूज़ हो जिसके बावजूद सफ़र नहीं किया जा सकता, पस लूले, फ़ालिज ज़दा और ऐसे बड़े बूढ़े पर हज फ़र्ज़ नहीं जो सवारी पर क़ायम नहीं रह सकता। इसी तरह नाबीना पर भी फ़र्ज़ नहीं अगरचे कोई उसका मुआविन हो, इमाम साहब के ज़ाहिर मज़हब के मुताबिक़ न उनकी ज़ात पर लाज़िम और न उन पर नाएब बनाना लाज़िम है, और एक रिवायत साहिबैन से यही है। ज़ाहिर-उर-रिवायत साहिबैन से यह है कि उन पर हज बदल करवाना लाज़िम है, तोहफ़ा से ज़ाहिर यही मालूम होता है कि साहिबैन का क़ौल मुख़्तार है, इसबीजाबी में इसी तरह है फ़तह में इसको क़वी कहा। अल-लुबाब में तसहीह अक़वाल में इख़्तेलाफ़ मनक़ूल है, इसी की शरह में है कि निहाया में पहले क़ौल को लिया गया है, बहर अल-अमीक़ में है कि यही

अरबी पाठ	उर्दू अनुवाद (हिन्दी रूपांतरण)
'बहर-ए-अमीक' में है कि यही मज़हब सही है, क़ाज़ी ख़ान ने 'शरह अल-जामी' में दूसरे कथन को सही कहा है, और इसे कई मशायख ने चुना है। (अतः रद-उल-मुहतार का उद्धरण समाप्त)।	मज़हब सही है, क़ाज़ी ख़ान ने शरह अल-जामी में दूसरे क़ौल को सही कहा है, और इसे कसीर उल-मशायख़ ने इख़्तियार किया (अह श) ऐसे ज़ाद-ए-राह और सवारी पर क़ादिर हो।

1. अल-कुरआन 286/2
2. दुर्र-ए-मुख्तार शरह तनवीर-उल-अबसार, किताबुल हज, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/159-160
3. रद-उल-मुहतार किताबुल हज, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/154

पृष्ठ 707/836

اتنا بچنا کہ اس سے حج کے لیے جانے آنے رہنے کے بھی تمام مصارف ہوں اور زید کے لیے اس حالت میں کہ نہ اور مال نہ کسب پر قدرت ، کچھ ذریعہ معاش بیچ بھی رہے معقول نہیں لہذا بالاتفاق ورنہ علی التنزیل صاحب مذہب رضی اللہ تعالی عنہ کے مذہب صحیح صریح پر تو بلا شبہہ زید پر حج کرانا بھی نہیں اور خود حج کو جانا تو بالا جماع اصلا صورت وجوب نہیں رکھتا لا یکلف اللہ نفسا الا وسعھا (اللہ کسی جان پر بوجھ نہیں ڈالتا مگر اس کی طاقت بھر ۔ت) تنویر الابصار ودر مختار وردالمحتار میں ہے :

عربی متن	اردو ترجمہ
الحج فرض علی مسلم حر مکلف صحیح البدن ای سالم عن الآفات المانعة عن القیام بما لا بد منه فی السفر فلا یجب علی مقعد ومفلوج وشیخ کبیر لا یثبت علی الراحلة بنفسه واعمی وان وجد قائدا لا بانفسهم ولا بالنیابة فی ظاهر المذهب عن الامام وهو روایة عنهما وظاهر الروایة عنهما وجوب الاحجاج علیهم، وظاهر التحفة اختیار قولهما وکذا الاسبیجابی وقواه فی الفتح، وحکی فی اللباب اختلاف التصحیح وفی شرح انه مشی علی الاول فی النهایة وقال	حج ہر مسلم آزاد بالغ صحت مند پر لازم ہے (یعنی ہر اس آفت سے محفوظ ہو جس کے باوجود سفر نہیں کیا جاسکتا، پس لولے، فالج زدہ اور ایسے بڑے بوڑھے پر حج فرض نہیں جو سواری پر قائم نہیں رہ سکتا۔ اسی طرح نابینا پر بھی فرض نہیں اگرچہ کوئی اس کا معاون ہو، امام صاحب کے ظاہر مذہب کے مطابق نہ ان کی ذات پر لازم اور نہ ان پر نائب بنانا لازم ہے ، اور ایک روایت صاحبین سے یہی ہے۔ ظاہر الروایۃ صاحبین سے یہ ہے کہ ان پر حج بدل کروانا لازم ہے، تحفہ سے ظاہر یہی معلوم ہوتا ہے کہ صاحبین کا قول مختار ہے، اسیجابی میں اسی طرح ہے فتح میں اس کو قوی کہا۔

عربی متن	اردو ترجمہ
	اللباب میں تصحیح اقوال میں اختلاف منقول ہے ، اسی
فی البحر العمیق انه المذهب الصحیح وان	کی شرح میں ہے کہ نہایہ میں پہلے قول کو لیا گیا ہے ،
الثانی صححه قاضیخان في شرح الجامع	بحر العمیق میں ہے کہ یہی مذہب صحیح ہے، قاضیخان
واختاره کثیر من المشائخ ا هـ ش بصیرت	نے شرح الجامع میں دوسرے قول کو صحیح کہا ہے،
ذی زاد وراحلة	اور اسے کثیر المشائخ نے اختیار کیا اھ ش) ایسے
	زادراہ اور سواری پر قادر ہو

1 القرآن ۲/۲۸۶ 2 در مختار شرح تنویر الابصار کتاب الحج مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۶۰-۱۵۹ 3 ردالمحتار کتاب الحج مصطفی البابی مصر ۲/ ۱۵۴

(Arabic section with Urdu translation): Whatever is in excess of one's necessities, including their residence and its repair. If a person has enough wealth to purchase a house and a servant, but the remaining amount is not sufficient for Hajj, then Hajj is not obligatory for them, according to 'Khulasa'. And it is recorded in 'Al-Nahr' that if someone is dependent on a profession, it is a condition that their capital remains intact; otherwise, this condition does not apply. The amount of capital varies according to different people, as stated in 'Bahr'. And by profession (business), it is meant an amount from which one can obtain sufficient livelihood for themselves and their family, according to 'Al-Multaqatat' (summary). And Allah subhanahu wa ta'ala knows best. (T)

Problem 302: What do the scholars of religion say regarding this matter: Performing Hajj has been obligatory for Hinda for a long time. Now that she intends to go, her Mahrams (prohibited male relatives) cannot go due to various obstacles. There is one Mahram who is fearless in committing forbidden acts, and it is not expected of him to handle the arrangements of the journey. It is possible to take him. Also, a pious woman and a nephew of Hinda's husband, who has been before her since childhood and is religious and sensible, are going. If she does not go with them, there seems to be no other way to go, and the obligation will remain unfulfilled. In this situation, should Hinda go or not? And if she goes, with whom should she go? Explain and be rewarded.

Answer: It is impermissible for a woman to travel for Hajj or any other purpose without a Mahram. A husband's nephew is not a Mahram, and a sinful (fasiq) Mahram is useless; his presence is equivalent to his absence. Also, the companionship of a pious woman is not sufficient according to Imam Azam (may Allah have mercy on him). However, if she went without a Mahram and performed the Hajj, the obligation is discharged, and the Hajj is performed with dislike (karahah), while the sin for this impermissible act remains separate. Therefore, since Hajj had become obligatory for Hinda due to the fulfillment of conditions, and now a Mahram's companionship is unavailable, the remedy is...

1. Durr al-Mukhtar Sharh Tanwir al-Absar, Kitab al-Hajj, Mujtabai Press, Delhi, 1/160
2. Radd al-Muhtar, Kitab al-Hajj, Mustafa al-Babi, Egypt, 156/2

(अरबी भाग का उर्दू अनुवाद): जो उसकी आवश्यकताओं से अधिक हो, उनमें उसका आवास और उसकी मरम्मत भी शामिल है। यदि उसके पास इतना धन है कि वह आवास और सेवक खरीदता है और उसके बाद इतना धन नहीं बचता जो हज के लिए पर्याप्त हो, तो उस पर हज फ़र्ज़ (अनिवार्य) नहीं होगा, 'ख़ुलासा'। और 'नहर' में है कि यदि वह किसी पेशे का मोहताज है, तो उसके लिए पूँजी का शेष रहना भी शर्त है, और यदि मोहताज नहीं है, तो फिर यह शर्त नहीं होगी। अलग-अलग लोगों के हिसाब से पूँजी अलग-अलग हो सकती है, 'बहर'। और पेशे (कारोबार) से अभिप्राय उतना है जिससे वह अपने और अपने परिवार के लिए पर्याप्त आजीविका प्राप्त कर सके, संक्षिप्त। अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 302: क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि हंदा पर काफी समय से हज अदा करना फ़र्ज़ था। अब जाने का इरादा किया तो उसके महरम (जिनसे विवाह वर्जित है) किन्हीं बाधाओं के कारण नहीं जा सकते। एक महरम ऐसा है जो बुराईयों के कामों में बेखौफ़ है और उससे यात्रा के कार्यों को पूरा करने की उम्मीद नहीं है। उसे साथ ले जाना संभव है। और एक परहेज़गार महिला और हंदा के पति का एक भतीजा, जो बचपन से उसके सामने रहा है, धार्मिक और समझदार है, जा रहे हैं। यदि वह उनके साथ नहीं जाएगी तो फिर जाने की कोई सूरत नज़र नहीं आती, फ़र्ज़ रह जाएगा। इस स्थिति में हंदा को जाना चाहिए या नहीं? और जाए तो किसके साथ जाए? बयान करें, पुण्य पाएँ।

जवाब: महिला के लिए बिना महरम के हज या किसी और काम के लिए यात्रा करना नाजायज़ है। पति का भतीजा महरम नहीं है, और पापी (फासिक़) महरम बेकार है, उसका होना या न होना बराबर है। और परहेज़गार महिला का साथ इमाम-ए-आज़म (रहमतुल्लाह अलैह) के नज़दीक पर्याप्त नहीं है। लेकिन अगर बिना महरम के चली गई और हज कर लिया, तो फ़र्ज़ साक़ित (पूरा) हो जाएगा और हज नापसंदगी के साथ अदा होगा, इस नाजायज़ काम का गुनाह अलग है। अतः जब हंदा पर शर्तों के पूरा होने के कारण हज फ़र्ज़ हो गया था और अब महरम का साथ नहीं मिल रहा है, तो समाधान यही है कि...

1. दुर्रे मुख्तार शरह तनवीरुल अबसार किताबुल हज, मतबा मुजतबाई देहली 1/160
2. रद-उल-मुहतार किताबुल हज, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 156/2

فضلا عما لابد منه ومنه المسكين ومرمته ولوكان عنده ما لواشترى به مسكنا وخادما لا يبقى بعده ما يكفي للحج لايلزمه خلاصة، وحرر في النهر انه يشترط بقاء رأس مال لحرفته ان احتاجت لذلك و الا لا (وراس المال يختلف باختلاف الناس بحر، والمراد ما يمكنه الاكتساب به قدر كفايته وكفاية عياله اه ملتقطات والله سبحانه و تعالى اعلم۔

جو اس کی ضروریات سے زائد ہو، ان میں اس کی رہائش اور اس کی مرمت بھی ہے، اگر اس کے پاس مال ہے کہ وہ رہائش اور خادم خریدتا ہے اور باقی اتنا مال نہیں بچتا جو حج کے لیے کافی ہو اس پر حج فرض نہیں ہو گا، خلاصہ۔ اور نہر میں ہے اگر وہ کسی کاروبار کا محتاج ہے تو اس کے لیے سرمایہ کا باقی رہنا بھی شرط ہے اور اگر محتاج نہیں تو پھر یہ شرط نہ ہوگی، مختلف لوگوں کے اعتبار سے سرمایہ مختلف ہو سکتا ہے، بحر۔ اور کاروبار سے مراد اتنا ہے جس سے اپنی اور اپنے عیال کے لیے بقدر کفایت روزی حاصل ہو سکے اہ اختصار۔ واللہ سبحانہ و تعالیٰ اعلم(ت)

مسئلہ ۳۰۲: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ادائے حج ہندہ پر مدت سے فرض تھا اب جانے کا قصد کیا تو محارم اس کے بوجہت موانع نہیں جاسکتے، ایک محرم کو کہ ارتکاب مناہی سے بیباک ہے اور انصرام سفر کے کاموں کا اس سے متوقع نہیں۔ لے جانا ممکن ہے اور ایک عورت متقیہ اور ایک بھتیجا شوہر ہندہ کا کہ بچپن سے اس کے سامنے ہوتی دیندار و ہوشیار ہے جاتے ہیں ان کے ساتھ نہ جائے گی تو پھر جانے کی کوئی صورت نظر نہیں آتی، فرض رہ جائے گا، اس صورت میں ہندہ کو جانا چاہئے یا نہیں؟ اور جائے تو کس کے ساتھ جائے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: عورت کو بغیر محرم کے حج خواہ کسی اور کام کے واسطے سفر کرنا نا جائز ہے اور بھتیجا شوہر کا محرم نہیں، اور محرم فاسق بیکار ہے اس کا ہونا نہ ہونا برابر ہے اور معیتِ زنِ متقیہ کی امام اعظم رحمۃ اللہ علیہ کے نزدیک کافی نہیں لیکن اگر بغیر محرم کے چلی گئی اور حج کر لیا تو فرض ساقط اور حج مع الکراہۃ ادا، اس فعل ناجائز کی معصیت جُدا، پس جب ہندہ پر بسبب اجتماع شرائط کے حج فرض ہوگیا تھا اور اب معیتِ محرم کی نہیں ملتی تو چارہ کار یہی ہے

1 درمختار شرح تنویر الابصار کتاب الحج مطبع مجتبائی دہلی ۱/۱۶۰ 2 ردالمحتار کتاب الحج مصطفیٰ البابی مصر ۱۵۶/۲

Fatawa Razvia Volume 10

If there is a fear that she might get married and then the husband does not go for Hajj, she would be stuck and the Hajj wouldn't happen either. Or there is an apprehension that the husband might not be of a compatible nature; perhaps she only needed him for a few days but became bound for life, or she doesn't want to be bound to a husband at all, needing marriage only to fulfill this necessity (of having a mahram for Hajj). Then, I say: The remedy for this is to marry on the condition that "If you do not go with me for Hajj this year, one irrevocable divorce (Talaq-e-Bain) will be effective upon me, and when I return after Hajj and step into my house, one irrevocable divorce will immediately be effective upon me." In this way, if he doesn't go, the divorce will occur. And if he goes, upon return, as soon as the woman steps into her house, she will be out of the marriage contract. An even better and easier way is to marry on the condition that "I have authority over myself at all times, to give myself one irrevocable divorce whenever I wish." This way, whether he goes or not, or upon return, the woman will always have the choice to remain in the marriage if she wishes, or separate herself by giving herself an irrevocable divorce. It is stated in Durr-ul-Mukhtar:

Arabic	Urdu Translation
With a husband or a mahram who is adult, sane, not a Magian, and not a profligate, for a woman, even if she is old. Is marriage necessary for her? If she performs Hajj without a mahram, it is permissible though disliked.	Whether the woman is old, it is necessary for her to have a husband or an adult mahram, provided that the mahram is not a profligate or a Magian. Is marriage mandatory for a woman for Hajj? There are two opinions on this. If a woman performs Hajj without a mahram, it will be valid but disliked (makruh). (T)

In Radd-ul-Muhtar, it is stated:

Arabic	Urdu Translation
His saying "two opinions" – both are based on whether the presence of a husband or mahram is a condition for the obligation (wujub) itself or a condition for the obligation of performance (wujub al-ada). What is chosen in Al-Fath is that, along with health and safety of the path, it is a	The phrase "two opinions" refers to whether having a husband or mahram is a condition for the Hajj to become obligatory in essence, or a condition for performing the obligation. The preferred view in 'Al-Fath' is that if there is health and the path is safe, then it is a condition

Arabic

condition for the obligation of performance. Thus, a will (wasiyyat) is mandatory if illness or fear of the path prevents it, or if a husband or mahram is not found. According to the second view, marriage becomes mandatory in the absence of a mahram. According to the first view, none of this is mandatory.

Urdu Translation

for the performance of the obligation. If illness or fear of the way hinders it, then making a will regarding Hajj becomes necessary, or if there is no husband or mahram, then marriage would be necessary in the absence of a mahram. According to the first opinion, none of these things are mandatory.

[1] Durr-ul-Mukhtar, Book of Hajj, Mujtabai Press, Delhi, 1/21-160.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

यदि यह डर हो कि शायद उसने निकाह कर लिया और फिर वह (पति) नहीं गया तो वह फंस जाएगी और हज भी नहीं होगा, या यह डर हो कि पति अनुकूल स्वभाव का न निकले; होना तो यह चाहिए था कि कुछ दिनों के लिए हो लेकिन वह जीवन भर के लिए पाबंद हो गई, या उसे पति के साथ पाबंद रहना मंज़ूर ही न हो, और वह सिर्फ इस ज़रूरत को दूर करने के लिए निकाह चाहती हो, तो मैं कहता हूँ: इसका उपाय यह है कि वह इस शर्त पर निकाह करे कि "अगर तुम इस साल मेरे साथ हज पर नहीं गए तो मुझ पर एक तलाक़-ए-बाइन (अटल तलाक़) हो जाए, और जब मैं हज के बाद वापस आऊँ और अपने घर में कदम रखूँ तो तुरंत मुझ पर तलाक़-ए-बाइन हो जाए।" इस तरह, अगर वह नहीं गया तो तलाक़ हो जाएगी और अगर गया तो वापसी पर जैसे ही महिला अपने घर में कदम रखेगी, वह निकाह से बाहर हो जाएगी। और इससे भी बेहतर और आसान तरीका यह है कि वह इस शर्त पर निकाह करे कि "मुझे हर समय अपने आप पर अधिकार हो कि जब चाहूँ खुद को एक तलाक़-ए-बाइन दे दूँ।" इस तरह, उसके न जाने या वापस आने पर और उसके बाद भी हर समय महिला को अधिकार रहेगा कि चाहे तो उसकी पत्नी बनी रहे या अपनी मर्जी से खुद को एक तलाक़-ए-बाइन देकर अलग हो जाए। 'दुर्रे मुख्तार' में है:

अरबी

पति या बालिग, बुद्धिमान महरम के साथ, जो मजूसी या फासिक न हो, एक महिला के लिए चाहे वह बूढ़ी ही क्यों न हो। क्या उस पर निकाह अनिवार्य है? यदि उसने बिना महरम के हज कर लिया तो वह नापसंदगी (कराहियत) के साथ जायज़ होगा।

उर्दू अनुवाद

महिला चाहे बूढ़ी हो, उसके लिए पति या बालिग महरम का होना ज़रूरी है बशर्ते कि वह महरम फासिक (अधर्मी) और मजूसी (अग्निपूजक) न हो। क्या हज के लिए महिला पर निकाह ज़रूरी है? इस बारे में दो राय हैं, अगर महिला ने बिना महरम के हज कर लिया तो मकरूह (नापसंद) होने के बावजूद हज हो जाएगा। (त)

'रद्दुल मुहतार' में है:

अरबी

उनका यह कहना कि "दो राय हैं" - ये दोनों इस बात पर आधारित हैं कि पति या महरम की

उर्दू अनुवाद

"दो राय" इस बात पर आधारित हैं कि पति या महरम का होना वजूब (अनिवार्यता) के लिए शर्त

अरबी

मौजूदगी वजूब (अनिवार्यता) की शर्त है या वजूब-ए-अदा (अदायगी की अनिवार्यता) की शर्त है। 'अल-फतह' में जो चुना गया है वह यह है कि सेहत और सुरक्षित रास्ते के साथ यह वजूब-ए-अदा की शर्त है। इसलिए यदि बीमारी या रास्ते का डर रुकावट हो, या पति और महरम न मिले तो वसीयत करना वाजिब होगा। महरम की अनुपस्थिति में निकाह करना ज़रूरी होगा। और पहली राय के अनुसार, इनमें से कुछ भी वाजिब नहीं है।

उर्दू अनुवाद

है या वजूब-ए-अदा (अदायगी) के लिए। 'फतह' में जो विचार पसंदीदा है वह यह है कि स्वास्थ्य और सुरक्षित मार्ग होने की स्थिति में यह अदायगी की अनिवार्यता के लिए शर्त है। अगर बीमारी या रास्ते का डर बाधक है तो हज के लिए वसीयत करना अनिवार्य होगा या पति और महरम न होने की स्थिति में महरम की अनुपस्थिति में निकाह करना ज़रूरी होगा, और पहली राय के अनुसार इनमें से कुछ भी अनिवार्य नहीं है।

[1] दुर्रे मुख्तार, किताबुल हज, मतबा मुज्तबाई, दिल्ली, 21/1-160

کہ نکاح کرے، اگر یہ خوف ہو کہ شاید اس نے نکاح کر لیا اور پھر نہ گیا تو یہ پھنس گئی اور حج بھی نہ ہوا، یا اندیشہ ہو کہ شوہر موافق مزاج نہ نکلے چاہئے تو تھا چند روز کے لئے اور پابند ہو گئی عمر بھر کی ، یا سرے سے اسے پابند شوہر رہنا منظور ہی نہ ہو، صرف اس ضرورت کی رفع تک کہ نکاح چاہئے، تو اقول: (میں کہتا ہوں۔ ت) اس کی تدبیر یہ ہے کہ اس شرط پر نکاح کرے کہ اگر تو اس سال میرے ساتھ حج کو نہ جائے تو مجھ پر ایک طلاق بائن ہو اور جب بعد حج میں واپس آؤں اور اپنے مکان میں قدم رکھوں تو فوراً مجھ پر طلاق بائن ہو، یوں اگر وہ نہ گیا تو طلاق ہو جائے گی اور اگر گیا تو واپسی پر عورت جس وقت اپنے مکان میں قدم رکھے گی نکاح سے نکل جائے گی، اور بہتر اور آسان تر یہ ہے کہ اس شرط پر نکاح کرے کہ مجھے ہر وقت اپنے نفس کا اختیار ہو کہ جب کبھی چاہوں اپنے آپ کو ایک طلاق بائن دے لوں، یوں اس کے نہ جانے یا واپس آنے پر اور اس کے بعد بھی ہر وقت عورت کو اختیار رہے گا مرضی ہو اس کی زوجیت میں رہے نہ مرضی ہو اپنے آپ کو ایک طلاق بائن دے کر جدا ہو جائے، در مختار میں ہے:

عربی عبارت	**اردو ترجمہ**
مع زوج او محرم بالغ عاقل غیر مجوسی ولا فاسق لامرأۃ ولو عجوزا وھل یلزمھا التزوج ولو حجت بلا محرم جاز مع الکراھۃ[1] ۔	عورت خواہ بوڑھی ہو اس کے لیے خاوند یا محرم بالغ کا ہونا ضروری ہے بشرطیکہ وہ محرم فاسق اور مجوسی نہ ہو کیا عورت پر حج کے لیے نکاح ضروری ہے، اس بارے میں دو قول ہیں، اگر عورت نے بغیر محرم حج کر لیا تو جائز مع الکراہت ہوگا۔ (ت)

ردالمختار میں ہے:

عربی عبارت	اردو ترجمہ
قوله قولان هما مبنيان على ان وجود الزوج او المحرم شرط وجوب امر شرط وجوب الاداء والذى اختاره فى الفتح انه مع الصحة وأمن الطريق شرط وجوب الاداء فيجب الايصاء ان منع المرض وخوف الطريق اوله يوجد زوج ولا محرم ويجب عليهما التزوج عند فقد المحرم وعلى الاول لا يجب شيئ من ذلك	قولہ قولان، یہ دونوں اس بنا پر ہیں کہ خاوند یا محرم کا ہونا نفس وجوب کے لیے شرط ہے یا وجوب ادا کے لیے، فتح میں جو مختار ہے وہ یہ ہے کہ صحت اور راہ پر امن ہو تو وجوب ادا کے لیے شرط ہے، اگر مرض یا راستہ کا خوف مانع ہے تو حج کے بارے میں وصیت لازم ہوگی یا خاوند اور محرم نہیں تو محرم کی عدم موجودگی میں نکاح کرنا ضروری ہوگا، اور پہلے قول پر ان میں سے کوئی چیز بھی واجب نہیں

[1] در مختار کتاب الحج مطبع مجتبائی دہلی ۲۱/۱ - ۱۶۰

[Arabic Text Column] As it is in Al-Bahr and Al-Nahr. Al-Bada'i declared the first [view] as correct, while Al-Nihayah gave preference to the second following Qadi Khan, and this was also chosen in Al-Fath. (End quote) I say: However, in Al-Lubab, it is definitively stated that marriage is not obligatory for her, even though he proceeded on making the mahram or husband a condition for performance [of Hajj]. This was preferred in Al-Jawharah and by Ibn Amir Hajj in Al-Manasik, as the author stated in his Minah. He said its reason is that her purpose is not achieved by marriage, because the husband has the right to refuse to go out with her after he possesses her [in marriage], and she cannot gain freedom from him. Often, he does not harmonize with her, so she would suffer loss through him, unlike the mahram; for if he agrees, she spends on him, and if he refuses, she keeps her maintenance and abandons the Hajj. (End quote) Understand what is in [Hashiyat al-Shami]. I say: Yes, the way out of all these is what I mentioned: that she marries on the condition that she possesses an irrevocable divorce (talaq ba'in) with which she can divorce herself whenever she wishes. So, if he does not go out with her, or does not harmonize with her, or she does not want him, she can free herself and there is no hardship upon her. And Allah Almighty knows best.

[Urdu Text Column] As it is in Bahr and Nahr, Bada'i stated the first to be correct and Nihayah gave preference to the second following Qadi Khan, and the same was chosen in Fath. (End quote) I say: In Al-Lubab, it is stated with certainty that marriage is not mandatory for this woman despite the fact that they also said that a mahram or husband is a condition for the obligation of performance. It was preferred in Al-Jawhara and by Ibn Amir Hajj in Al-Manasik, just as the author said in his Minah, and the reason for this is that it is not necessary for this woman's purpose to be fulfilled through marriage. It is possible that the husband may not grant permission after marriage, and the woman may not be able to get free from him. Many times there is no harmony between husband and wife, hence there will be a loss from marriage, unlike the mahram; if he agrees with the woman, she will spend on him, and if he stops, she will also stop spending and abandon the Hajj. (End quote) Understand what is in [Hashiyat al-Shami]. I say: (I say - T) In all these situations, the escape is in what we mentioned: the woman should marry on the condition that the woman will be the owner of an irrevocable divorce and will be able to give it to herself whenever she wants. Now, if the husband does not go with her or does not harmonize or does

not give an answer, she will find freedom from him and there is no hardship upon her. And Allah Almighty knows best. (T)

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Hajj, Mustafa al-Babi Egypt, 2/158 Page 710 of 836

[अरबी पाठ स्तंभ] जैसा कि 'अल-बह्र' और 'अन-नह्र' में है। 'अल-बदाइ' ने पहले विचार को सही बताया, जबकि 'अन्-निहाया' ने क़ाज़ी ख़ां का अनुसरण करते हुए दूसरे को प्राथमिकता दी है, और 'अल-फ़तह' में भी इसी को चुना गया है। (समाप्त) मैं कहता हूँ: हालाँकि, 'अल-लुबाब' में यह निश्चित रूप से कहा गया है कि उस पर विवाह करना अनिवार्य नहीं है, भले ही वे हज की अदायगी के लिए महरम या पति को एक शर्त बनाने पर चले हों। इसे 'अल-जौहरा' में और इब्न अमीर हाज ने 'अल-मनासिक' में प्राथमिकता दी है, जैसा कि लेखक ने अपनी 'मिनह' में कहा है। उन्होंने कहा कि इसका कारण यह है कि विवाह से उसका उद्देश्य पूरा नहीं होता, क्योंकि पति को अधिकार है कि वह उसके स्वामित्व (निकाह) के बाद उसके साथ बाहर जाने से मना कर दे, और वह उससे छुटकारा पाने में सक्षम न हो सके। अक्सर वह उसके साथ तालमेल नहीं रखता, इसलिए उसे उससे नुक़सान होगा, महरम के विपरीत; क्योंकि अगर वह सहमत होता है, तो वह उस पर खर्च करती है, और अगर वह मना करता है, तो वह अपना भरण-पोषण रोक लेती है और हज छोड़ देती है। (समाप्त) समझें जो [हाशिया अल-शमी] में है। मैं कहता हूँ: हाँ, इन सभी से निकलने का रास्ता वही है जिसका मैंने ज़िक्र किया: कि वह इस शर्त पर निकाह करे कि वह एक 'तलाक़-ए-बाइन' (अपरिवर्तनीय तलाक़) की मालिक होगी जिससे वह जब चाहे खुद को तलाक़ दे सके। अत; यदि वह उसके साथ नहीं जाता, या उसके साथ तालमेल नहीं बिठाता, या वह उसे नहीं चाहती, तो वह खुद को आज़ाद कर सकती है और उस पर कोई कठिनाई नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

[उर्दू पाठ स्तंभ] जैसा कि 'बह्र' और 'नह्र' में है, 'बदाइ' ने पहले को सही बताया और 'निहाया' ने क़ाज़ी ख़ां के अनुसरण में दूसरे को प्राथमिकता दी है, और 'फ़तह' में भी इसी को अपनाया गया है। (समाप्त) मैं कहता हूँ 'अल-लुबाब' में इस पर ज़ोर दिया गया है कि इस महिला पर निकाह करना लाज़िम नहीं है, बावजूद इसके कि उन्होंने भी यह कहा कि महरम या पति अदायगी के लिए शर्त है। इसे 'जौहरा' में और इब्न अमीर हाज ने 'मनासिक' में प्राथमिकता दी, जैसा कि लेखक ने अपनी 'मिनह' में कहा और इसकी वजह यह है कि निकाह से इस महिला का उद्देश्य पूरा होना ज़रूरी नहीं है। मुमकिन है कि पति निकाह के बाद इजाज़त न दे और वह महिला उससे छुटकारा पाने में सक्षम भी न हो। बहुत बार पति-पत्नी में तालमेल नहीं रहता, इसलिए निकाह से नुक़सान होगा, महरम के विपरीत; अगर वह महिला के साथ तालमेल रखेगा तो वह उस पर खर्च करेगी और अगर वह रुक जाता है तो वह खर्च भी रोक कर हज छोड़ देगी। (समाप्त) समझें जो [शामी] में है। अक़ूल (मैं कहता

हूँ): (मैं कहता हूँ - टी) इन तमाम सूरतों में बचाव इसमें है जो हमने ज़िक्र किया, महिला इस शर्त पर निकाह करे कि महिला तलाक़-ए-बाइन की मालिक होगी और जब चाहे अपने आप को दे सकेगी। अब अगर पति उसके साथ नहीं जाता या तालमेल नहीं रखता या जवाब नहीं देता तो उससे ख़लासी (छुटकारा) पाए और इस पर कोई तंगी नहीं, वल्लाहु तआला आलम। (टी)

1. रद अल-मुह्तार, किताबुल हज, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/158 पेज 710/836

[عربی متن] كما في البحر وفى النهر وصحح الاول في البدائع ورجح الثاني في النهاية تبعا لقاضي خان واختاره في الفتح اه قلت لكن جزم فى اللباب بأنه لا يجب عليها التزوج مع انه مشى على جعل المحرم او الزوج شرط اداء، ورجح هذا في الجوهرة وابن امير حاج في المناسك كما قاله المصنف في منحه قال ووجهه انه لا يحصل غرضها بالتزوج لان الزوج له ان يمتنع من الخروج معهما بعد ان يملكها ولا تقدر على الخلاص منه وربما لا يوافقها فتتضرر منه بخلاف المحرم فانه ان وافقها انفقت عليه وان امتنع امسكت نفقتها وتركت الحج اه فافهم 1 اه ما فى ش اقول: نعم المخلص من هذه كلها ما ذكرت من ان تتزوج بشرط ان تملك طلقة بائنة تطلق بها نفسها متى شاءت فان لم يخرج معها او لم يوافقها او لم ترده تخلص نفسها ولا حرج عليها والله تعالیٰ اعلم۔

[اردو ترجمہ] جیسا کہ بحر اور نہر میں ہے، بدائع نے اول کو صحیح بتایا اور نہایہ نے قاضی خاں کی اتباع میں دوسرے کو ترجیح دی ہے، اور فتح میں بھی اسی کو اختیار کیا ہے اھ میں کہتا ہوں اللباب میں اس پر جزم ہے کہ اس عورت پر نکاح کرنا لازم نہیں باوجودیکہ انھوں نے بھی یہ کہا کہ محرم یا خاوند وجوب ادا کے لیے شرط ہے اسے جوہرہ میں اور ابن امیر حاج نے المناسک میں اسی کو ترجیح دی، جیسا کہ مصنف نے اپنی منح میں کہا اور اس کی وجہ یہ ہے کہ نکاح سے اس عورت کی غرض کا پورا ہونا ضروری نہیں ممکن ہے خاوند نکاح کے بعد اجازت نہ دے اور وہ عورت اس سے خلاصی پر قادر بھی نہ ہو، بہت دفعہ خاوند بیوی میں موافقت نہیں رہتی لہٰذا نکاح سے نقصان ہوگا، بخلاف محرم کے، اگر وہ عورت کی موافقت کرے گا تو اس پر خرچ کرے گی اور اگر وہ رک جاتا ہے تو وہ خرچ بھی روک کر حج چھوڑ دے گی اھ فافہم ما فی ش اقول : (میں کہتا ہوں ۔ ت) ان تمام صورتوں میں بچت اس میں ہے جو ہم نے ذکر کیا، عورت اس شرط پر نکاح

کرے کہ عورت طلاق بائنہ کی مالک ہوگی اور جب چاہے اپنے آپ کو دے سکے گی اب اگر خاوند اس کے ساتھ نہیں جاتا یا موافقت نہیں کرتا یا جواب نہیں دیتا تو اس سے خلاصی پائے اور اس پر کوئی تنگی نہیں، واللہ تعالٰی اعلم (ت)

1 ردالمحتار کتاب الحج مصطفی البابی مصر ۲/۱۵۸ Page 710 of 836

Fatawa Razawiya, Volume 10

Problem 303: From Pilibhit, Mohalla Bashir Khan, sent by Muhammad Abdul Latif Khan Sahib Raees, 8 Shawwal 1322 AH.

Honorable Maulvi Sahib, my respected master, peace be upon you. After greetings, I submit that my widowed sister-in-law currently intends to go for Hajj to the Holy House of Allah. In fact, she intends to depart soon, but there is no Mahram (a male relative with whom marriage is prohibited) accompanying her. The person going with her is a distant relative brother and has been an employee of hers for a long time, but the mentioned person is not careful. Local scholars forbid going with a non-Mahram person. Her biological brother went to Makkah last year and will return with her. Please state according to the Sharia whether it is permissible or impermissible for the sister-in-law to go with such a person? Please inform me with the answer soon.

Answer: The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Arabic]: It is not permissible for a woman who believes in Allah and the Last Day to travel for a distance of a day and a night except with a Mahram who can protect her.

[Urdu translation of Hadith]: It is not permissible for a woman who believes in Allah and the Last Day to travel even for one stage (Manzil) except with a Mahram who protects her.

Meaning, if the Mahram is a child, insane, Majusi (fire-worshipper), or an immodest transgressor, then traveling with him is also prohibited because protection will not be possible or there will be a fear of lack of protection. Going for Hajj is for reward, but going without a Mahram will result in a sin being recorded for every step instead of a reward. I am not saying this specifically for this occasion but telling a general rule: if a woman wants to go for Hajj and does not find a Mahram and does not have a husband, the method is to marry an equal (Kufu) and take him along. Then, if she wants to keep the marriage and fears she will be bound to another, the strategy is to marry an equal on the condition that "When I return to my house from the Hajj journey, as soon as I step into the house, one irrevocable divorce (Talaq-e-Bain) will immediately take effect upon me," then appoint a representative (Wakeel).

1. Sahih Bukhari, Book on 'How the Prayer is Shortened', etc., Qadimi Kutub Khana, Karachi 1/147-148. Sahih Muslim, Book on 'A Woman Traveling with a Mahram for Hajj', etc., Qadimi Kutub Khana, Karachi 1/433-434. Sunan Abi

Dawud, Book of Rituals, Chapter 'A Woman Performs Hajj Without a Mahram', Aftab-e-Alam Press, Lahore 1/221. Al-Targhib wa al-Tarhib, Chapter 'Prohibition of a Woman Traveling', Mustafa al-Babi, Egypt 2/37.

फतावा रज़विया, जिल्द दहम (10)

मसला 303: पीलीभीत, मोहल्ला बशीर खां से, प्रेषक मुहम्मद अब्दुल लतीफ़ खां साहब रईस, 8 शव्वाल 1322 हिजरी।

आदरणीय मौलवी साहब, मेरे सम्मानित स्वामी, आप पर शांति हो। सलाम के बाद निवेदन है कि मेरी विधवा भाभी वर्तमान में अल्लाह के पवित्र घर की हज यात्रा पर जाने का इरादा रखती हैं। वास्तव में उनकी रवानगी का इरादा है, लेकिन उनके साथ कोई महरम (निकट पुरुष संबंधी) नहीं है। जो व्यक्ति उनके साथ जा रहा है, वह उनके दूर के रिश्ते का भाई है और काफी समय से उनके यहाँ कर्मचारी है, लेकिन वह व्यक्ति सावधान नहीं है। यहाँ के विद्वान गैर-महरम के साथ जाने से मना करते हैं। भाभी के सगे भाई पिछले साल मक्का शरीफ गए थे और वापसी में वह उनके साथ आएंगे। कृपया शरीयत के अनुसार बतायें कि क्या भाभी का ऐसे व्यक्ति के साथ जाना जायज़ है या नाजायज़? कृपया जल्द जवाब दें।

उत्तर: अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं:

[अरबी]: अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखने वाली किसी महिला के लिए यह जायज़ नहीं है कि वह एक दिन और एक रात की दूरी की यात्रा करे, सिवाय इसके कि उसके साथ कोई महरम हो जो उसकी रक्षा करे।

[हदीस का उर्दू अनुवाद]: हलाल नहीं उस औरत को कि ईमान रखती हो अल्लाह और क़यामत पर कि एक मंज़िल का भी सफ़र करे मगर महरम के साथ जो उसकी हिफ़ाज़त करे।

यानी अगर महरम बच्चा, पागल, मजूसी (अग्नि-पूजक) या निर्लज्ज पापी हो, तो उसके साथ भी यात्रा करना हराम है क्योंकि उससे सुरक्षा नहीं हो पाएगी या असुरक्षा का डर होगा। हज पर जाना सवाब के लिए है, लेकिन बिना महरम के जाने में सवाब के बदले हर कदम पर गुनाह लिखा जाएगा। मैं विशेष रूप से इस अवसर के लिए नहीं कह रहा बल्कि एक सामान्य मसला बता रहा हूँ कि जो महिला हज पर जाना चाहे और उसे महरम न मिले और उसका पति न हो, तो उसका तरीका यह है कि वह किसी 'कुफ़ु (बराबर के योग्य पुरुष) से निकाह कर ले और उसे साथ ले जाए। फिर अगर वह निकाह को बरकरार रखना चाहे और डर हो कि वह दूसरे के अधीन हो जाएगी, तो इसकी तदबीर यह है कि (फलां) कुफ़ु से इस शर्त पर निकाह करे कि "जब मैं हज की यात्रा से अपने घर वापस

आऊं तो घर में कदम रखते ही मुझ पर तुरंत एक तलाक़-ए-बाइन (अटल तलाक) हो जाए," फिर वकील नियुक्त करे।

1. सहीह बुखारी, बाब 'फी कम युक्सुरुस्सलात', आदि, कदीमी कुतुब खाना कराची 1/147-148। सहीह मुस्लिम, बाब 'सफरुल मरअह मअ महरमिन इलल हज्ज', आदि, कदीमी कुतुब खाना कराची 1/433-434। सुनन अबी दाऊद, किताबुल मनासिक, बाब 'अल-मरअह तहज्जु बि-ग़ैरि महरमिन', आफ़ताबे आलम प्रेस लाहौर 1/221। अत-तर्गीब वत-तरहीब, बाब 'तरहीबुल मरअह अन तुसाफ़िरा', मुस्तफा अल-बाबी मिस्र 2/37।

فتاویٰ رضویہ ، جلد دہم

مسئلہ ۳۰۳: از پیلی بھیت محلہ بشیر خاں مرسلہ محمد عبداللطیف خاں صاحب رئیس ۸ شوال ۱۳۲۲ھ جناب مولوی صاحب مخدوم بندہ سلامت، بعد سلام نیاز کے عرض یہ ہے میری بھاوج بیوہ فی الحال ارادہ حج بیت اللہ شریف کے جانے کا رکھتی ہیں بلکہ بھاوج صاحبہ کا قصد حال میں روانگی کا ہے مگر ہمراہ ان کے کوئی شخص محرم نہیں ہے، جو شخص کہ ان کے ہمراہ جاتا ہے وہ ان کے دور کے رشتہ کا بھائی ہے اور عرصہ سے بھاوج صاحبہ کے پاس ملازم ہے مگر شخص مذکور محتاط نہیں ہے یہاں کے علماء نا محرم شخص کے ہمراہ جانے سے منع فرماتے ہیں اور بھاوج صاحبہ کے حقیقی بھائی مکہ شریف سال گذشتہ میں گئے ہوئے ہیں واپس میں وہ ان کے ہمراہ آئیں گے، جناب بموجب شرع شریف یہ ارقام فرمائے کہ بھاوج صاحبہ کا ایسے شخص کے ہمراہ جانا جائز ہے یا ناجائز؟ جواب سے جلد مطلع فرمائے۔ الجواب: رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

لا یحل لا مرأۃ تؤمن باللہ والیوم الآخر ان تسافر مسیرۃ یوم ولیلۃ الامع ذی رحم محرم یقوم علیھا | حلال نہیں اس عورت کو کہ ایمان رکھتی ہو اللہ اور قیامت پر کہ ایک منزل کا بھی سفر کرے مگر محرم کے ساتھ جو اس کی حفاظت کرے۔

یعنی بچہ یا مجنون یا مجوسی یا بے غیرت فاسق نہ ہوا ایسا اگر محرم ہو تو اس کے ساتھ بھی سفر حرام ہے کہ اس سے حفاظت نہ ہوسکے گی یا نا حفاظتی کا اندیشہ ہوگا، حج کا جانا ثواب کے لیے ہے اور بے محرم جانے میں ثواب کے بدلے ہر قدم پر گناہ لکھا جائے گا، میں خاص اس موقع کے لیے نہیں کہتا بلکہ عام مسئلہ بتاتا ہوں کہ جو عورت حج کو جانا چاہے اور محرم نہ پائے اور شوہر نہ رکھتی ہو اس کا طریقہ یہ ہے کہ کسی کفو سے نکاح کر کے اسے ساتھ لے جائے پھر اگر

نکاح کو باقی رکھنا چاہے اور اندیشہ ہو کہ دوسرے کی پابند ہو جائیگی تو اس کی تدبیر یہ ہے کہ (فلاں) کفو کے ساتھ نکاح کرنے کا اس شرط پر کہ جب میں سفر حج سے اپنے مکان پر واپس آؤں مکان میں قدم رکھتے ہی فوراً مجھ پر ایک طلاق بائن ہو، پھر وکیل کرے۔

1 صحیح بخاری باب فی کم یقصر الصلوۃ وسمہ النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم یوماً ولیلۃ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۱۴۸ - ۱۴۷، صحیح مسلم باب سفر المرأۃ مع محرم الی الحج وغیرہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۴۳۴ - ۴۳۳، سنن ابوداؤد کتاب المناسک باب المرأۃ تحج بغیر محرم آفتاب عالم پریس لاہور ۱/ ۲۲۱، الترغیب والترہیب ترہیب المراۃ ان تسافر الخ مصطفی البابی مصر ۲/ ۳۷

Let this attorney perform the marriage in this way, i.e., he should say to him: "I have given so-and-so daughter of so-and-so, son of so-and-so, my client, in your marriage for this amount of dower (Mahr) on the condition that when that woman returns home after Hajj and enters the house, one irrevocable divorce (Talaq-e-Bain) shall immediately take place upon her." The husband should say: "I have accepted her on this condition." Now, as soon as she enters the house after her return, she will immediately leave his marriage, which he cannot stop in any way. And for one who is certain of finding a Mahram upon returning from Makkah al-Mukarramah, she should make the condition thus: "As soon as I reach Makkah al-Mukarramah, an irrevocable divorce shall be upon me." Upon reaching Makkah al-Mukarramah, an irrevocable divorce will occur. However, if privacy (Khalwat) occurs in between, then staying there (Makkah al-Mukarramah) until the end of the waiting period (Iddah) days will be mandatory. And if there is no privacy, then this difficulty will also not exist. In any case, for a woman who has a guardian (Wali), it will be necessary that the said marriage is performed with a person who is not so low in caste, religion, profession, or conduct that marriage with him becomes a cause of disgrace and shame for her guardian. Or if he is such a person, the guardian should be informed of his condition and give explicit permission before the marriage; otherwise, the marriage will not be valid. And Allah, the Glorified and Most High, knows best.

Problem 304: From Abdul Jabbar Khan, from Mohalla Jasoli, Bareilly, 8 Shawwal 1324 AH.

What do the scholars of the firm religion say about this: a wealthy widow who has the means to go for the Hajj of the Noble House of Allah, whose age is approximately forty or forty-five years, and who has been a widow for a period of 23 or 24 years, with only one or two teeth remaining in her mouth and grey hair. That widow, for the journey of Hajj to the Noble House of Allah, through or along with her maternal uncle (Mamun) by relation, before whom she has appeared without a veil like before her mother since the day of her birth until now, and also her sisters, mother, etc., appear before him without a veil. The uncle's age is approximately 70 or 80 years, and he is going for the Hajj of the Noble House of Allah with his wife, child, and also a slave husband-born and another female servant. If the said widow goes on the journey to the House of Allah at her own expense with such a maternal uncle whose definition has been given above and who cannot be considered less than a biological maternal uncle, and returns to her homeland after being honored with Hajj and pilgrimage,

then is seeing her face and meeting her forbidden (Haram) or permissible (Halal) for her relatives? Or is it allowed or disallowed? Or will she receive reward or punishment? Or nothing?

The Answer:

"There is no change in the command of Allah." No one can change the command of Allah. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says:

"It is not permissible for a woman who believes in Allah and the Last Day to travel for three days [distance], and in [another narration] even for one stage of travel [without a Mahram]."

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

यह वकील इसी तरह निकाह करे यानी उनसे कहे कि मैंने फ़लाँ बिन्त फ़लाँ बिन फ़लाँ अपनी मुवक्किला को इतने महर के बदले इस शर्त पर तेरे निकाह में दिया कि जब वह औरत हज के बाद अपने घर वापस आए और मकान में दाखिल हो, तो फ़ौरन उस पर एक तलाक़-ए-बाइन (अटल तलाक़) हो जाए। शौहर कहे कि मैंने उसे इस शर्त पर क़बूल किया। अब वापसी के बाद घर में आते ही वह फ़ौरन उसके निकाह से निकल जाएगी, जिसे वह किसी तरह नहीं रोक सकता। और जिसे मक्का मुअज़्ज़मा से वापसी पर महरम मिलने का यक़ीन हो, वह इस तरह शर्त करे कि मक्का मुअज़्ज़मा पहुँचते ही मुझ पर तलाक़-ए-बाइन हो जाए। मक्का मुअज़्ज़मा पहुँचते ही तलाक़-ए-बाइन वाक़े हो जाएगी। लेकिन अगर बीच में ख़लवत (एकांत) वाक़े हुई हो, तो इद्दत के दिन पूरे होने तक वहाँ (मक्का मुअज़्ज़मा में) क़ियाम (ठहरना) लाज़िम होगा। और अगर ख़लवत न हो, तो यह दिक़्क़त भी नहीं होगी। और हर हाल में जिस औरत का वली (सरपरस्त) हो, उसके लिए यह ज़रूरी होगा कि ज़िक्र किया गया निकाह ऐसे शख़्स से करे जो क़ौम, मज़हब, पेशे या चाल-चलन में इतना कमतर न हो कि उससे निकाह उसके वली के लिए नंग-ओ-आर (शर्म और रुसवाई) का बाइस बने। या अगर वह ऐसा शख़्स है, तो वली को उसके इस हाल पर मुत्तला (सूचित) करके निकाह से पहले साफ़ तौर पर इजाज़त दे देनी चाहिए, वरना निकाह नहीं होगा। वल्लाहु सुब्हानहू व तआला आलम (और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है)।

मसला ३०४: अब्दुल जब्बार ख़ाँ साहब, मोहल्ला जसोली, बरेली, ८ शव्वाल १३२४ हिजरी।

क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन-ए-मतीन इस बारे में कि एक बेवा औरत, जो मालदार है और हज-ए-बैतुल्लाह शरीफ़ जाने की ताक़त रखती है, जिसकी उम्र तक़रीबन चालीस या पैंतालीस साल है, और उसे बेवा हुए २३ या २४ साल का अर्सा बीत चुका है। उसके मुँह में दो-एक दाँत और दाढ़ें बची हैं और बाल खिचड़ी (सफेद और काले) हैं। वह बेवा हज-ए-बैतुल्लाह शरीफ़ के सफ़र के लिए अपने रिश्ते के मामूँ के ज़रिए या उनके साथ, जिनके सामने वह पैदा होने के दिन से आज तक अपनी वालिदा की तरह बे-परदा आती है, और उसकी बहनें, वालिदा वगैरह भी उनके सामने बे-परदा आती हैं। मामूँ की उम्र तक़रीबन ७० या ८० साल है और वह मामूँ अपनी बीवी, बच्चे, और एक ग़ुलाम और दूसरी खादिमा के साथ हज-ए-बैतुल्लाह शरीफ़ जा रहे हैं। अगर वह बेवा औरत अपने ऐसे मामूँ के साथ, जिनकी तारीफ़ ऊपर की जा चुकी है और जिन्हें हक़ीक़ी मामूँ से कम नहीं समझा जा सकता, अपने ख़र्च से बैतुल्लाह शरीफ़ के सफ़र पर जाए और हज और ज़ियारत से मुशर्रफ़ होकर अपने

वतन वापस आ जाए, तो उसकी सूरत देखना और उससे मिलना उसके रिश्तेदारों के लिए हराम है या हलाल? या जायज़ है या नाजायज़? या उसे सवाब मिलेगा या अज़ाब? या कुछ नहीं?

अल-जवाब:

"ला तबदील लि-हुक्मिल्लाह" (अल्लाह के हुक्म में कोई तब्दीली नहीं)। अल्लाह के हुक्म को कोई बदलने वाला नहीं। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

"किसी ऐसी औरत के लिए हलाल नहीं जो अल्लाह तआला और क़यामत के दिन पर ईमान रखती हो कि वह तीन दिन का सफ़र करे, और (एक रिवायत में है) कि वह एक मंज़िल का सफ़र भी (बग़ैर महरम के) करे।"

पेज 712 ऑफ़ 836

یہ وکیل یونہی نکاح کرے یعنی ان سے کہے میں نے فلانہ بنت فلاں بن فلان اپنی موکلہ کو اتنے مہر کے عوض اس شرط پر تیرے نکاح میں دیا کہ جب وہ عورت بعد حج اپنے گھر واپس آئے مکان میں داخل ہو فوراً اس پر ایک طلاق بائن ہو ، شوہر کہے میں نے اسے اس شرط پر قبول کیا ، اب بعد واپسی گھر میں آتے ہی فوراً اس کے نکاح سے نکل جائے گی جسے وہ کسی طرح نہیں روک سکتا ، اور جسے مکہ معظمہ سے واپسی پر محرم ملنے کا یقین ہو یوں شرط کرے کہ مکہ معظمہ پہنچتے ہی مجھ پر طلاق بائن ہو مکہ معظمہ پہنچتے ہی طلاق بائن واقع ہو جائے گی ، مگر اگر بیچ میں خلوت واقع ہو وے تو تا انقضائے ایام عدت وہاں (مکہ معظمہ) قیام لازم ہو گا اور خلوت نہ ہو تو یہ دقت بھی نہ ہو گی اور ہر حال میں جو عورت ولی رکھتی ہو اس کے لیے یہ ضرور ہو گا کہ نکاح مند کور ایسے شخص سے کرے جو قوم یا مذہب یا پیشہ یا چال چلن میں ایسا کم نہ ہو کہ اس سے نکاح اس کے ولی کے لیے باعث ننگ و عار ہو ، یا اگر ایسا شخص ہے تو ولی اس کے اس حال پر مطلع ہو کر پیش از نکاح صریح اجازت دے دے ورنہ نکاح نہ ہو گا ، واللہ سبحانہ و تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۳۰۴: عبدالجبار خاں صاحب از محلہ جسولی بریلی ۸ شوال ۱۳۲۴ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین متین اس بارے میں کہ ایک بیوہ عورت مالدار جس کو مقدور حج بیت اللہ شریف کے جانے کا ہو ، جس کی عمر تخمیناً چالیس یا پنتالیس سال ہے اور اس کو بیوہ ہوئے عرصہ ۲۳ یا ۲۴ سال کا ہوا اور اس کے منہ میں دو ایک دانت داڑھ باقی ہیں اور سر کھچڑی ہے ، وہ بیوہ سفر حج بیت اللہ شریف بوساطت یا ہمراہ اپنے رشتہ کے ماموں جن کے سامنے روز

پیدائش سے اس وقت تک بے پردہ مثل اپنے والدہ کے آتی ہے اور نیز اس کی اور ہمشیرگان و والدہ وغیرہ ان کے سامنے بے پردہ آتی ہوں ، اور ماموں کی عمر تخمیناً ۷۰ یا ۸۰ برس کی ہے اور وہ ماموں مع اپنی بی بی اور بچہ اور نیز ایک غلام خاوند زاد و دیگر عورت ملازمہ کے حج بیت اللہ شریف جاتے ہیں ، اگر وہ بیوہ مذکور اپنے ایسے ماموں رشتہ دار جن کی تعریف اوپر ہو چکی ہے جس کو حقیقی ماموں سے کم خیال نہیں کیا جا سکتا ہے ان کے ہمراہ اپنے خرچ سے سفر بیت اللہ شریف کو جائے اور حج و زیارت سے مشرف ہو کر اپنے وطن کو واپس آجائے تو اس کی صورت دیکھنا اور اس سے ملنا اس کے رشتہ داروں کو حرام ہے یا حلال؟ یا جائز ہے یا ناجائز؟ یا ثواب پائے گی یا عذاب؟ یا کچھ نہیں؟

الجواب:

لا تبدیل لحکم اللہ، اللہ کے حکم کو کوئی بدلنے والا نہیں۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

لا یحل لا مرأة تؤمن باللہ والیوم الآخران تسافر ثلثۃ ایام، وفي | حلال نہیں کسی عورت کو جو اللہ تعالیٰ اور قیامت کے دن پر ایمان رکھتی ہو کہ ایک منزل بھی سفر کو جائے

Fatawa Razawiyya Volume 10

[Arabic Boxed Text]: رواية يوماً وليلة الا ومعها زوجها او ذو رحم محرم او كما لفظه وهذا معناه۔
[Urdu Translation]: Until her husband or a relative with whom marriage is permanently forbidden is with her.

If she wishes to go, it is mandatory for her to take one of her mahrams along or marry someone for the duration of the Hajj journey until her return, even if he is an eighty-seven-year-old man who goes and returns with her. The objective is simply that the act of traveling without a mahram or husband is not applicable; whether matrimonial relations occur or not is not the point. And if there is a fear that he will not grant a divorce after the return, the marriage should be conducted such that the woman says: "I give myself in marriage to you on the condition that when you take me for Hajj and return, as soon as I reach my house, a 'Talaq-e-Bain' (irrevocable divorce) shall occur upon me, or if you do not go for Hajj with me this year in this caravan, then a 'Talaq-e-Bain' shall occur upon me." The man should say: "I accept this on the condition that when I take you for Hajj (and so on)." In this way, if he does not go with her, divorce will occur, and if he goes with her, divorce will occur upon reaching back. Every step she takes without him will be recorded as a sin. Due to these numerous sins, it is not wrong if relatives do not meet her. And Allah Subhanah wa Ta'ala knows best.

Problem 305: Asked by Hafiz Muhammad Abdul Latif Sahib, Aligarh. 27 Muharram 1332 AH. What do the Muftis of the noble Sharia say regarding this issue: An elderly woman of seventy years or a chaste young woman traveled alone or with a non-mahram for the purpose of Hajj to the Holy Harams. After traveling a considerable distance, should she be sent back from the path in that state? And if she reached the Kaaba and Arafat and performed all the rites of Hajj with their Sunnahs, Wajibats, and Fara'id (obligatory acts), will her Hajj be valid or not? Will the solitude of travel be an obstacle to or invalidate the Hajj? And would it be appropriate to turn her back from that path? Explain based on the Book and the Sunnah, and may you be rewarded by explaining the rulings of the Quran and Sharia. (Explain this in detail from the Quran and Sunnah, may Allah Almighty reward you for explaining the commands of the Quran and Sharia. T)

Answer: Whether a woman is chaste or elderly, it is forbidden (haram) for her to travel without a husband or a mahram. If she is chaste, then those whom on her...

Footnotes: 1 Sahih Bukhari, Chapter on how much to shorten prayers, etc., Qadimi Kutub Khana Karachi 1/178; Sahih Muslim, Chapter on a woman's travel with a mahram for Hajj etc., Qadimi Kutub Khana Karachi 1/433-434; Sunan Abu Dawood, Chapter on a woman performing Hajj without a mahram, Aftab-e-Alam Press Lahore 1/242; At-Targhib wat-Tarhib, warning against a woman traveling alone without a mahram, Mustafa Al-Babi Egypt 3/271.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

[अरबी बॉक्स]: رواية يوماً وليلة الا ومعها زوجها او ذو رحم محرم او كما لفظه وهذا معناه۔
[उर्दू अनुवाद]: जब तक साथ में पति या वह रिश्तेदार न हो जिससे हमेशा-हमेशा के लिए निकाह हराम है।

यदि वह जाना चाहती है, तो उस पर अनिवार्य है कि वह अपने किसी महरम को साथ ले जाए या हज से वापसी तक के लिए निकाह कर ले, चाहे वह सतासी (87) साल की उम्र का ही क्यों न हो जो उसके साथ जाए और वापस आए। उद्देश्य केवल यह है कि बिना महरम या पति के जाने की स्थिति न बने; वैवाहिक संबंधों के होने या न होने से कोई सरोकार नहीं है। और यदि यह डर हो कि वह वापसी के बाद तलाक नहीं देगा, तो निकाह इस तरह किया जाए कि महिला कहे: "मैंने खुद को तुम्हारे निकाह में दिया इस शर्त पर कि जब तुम मुझे हज पर ले जाओगे और वापस आओगे, तो वापस अपने घर पहुँचते ही मुझ पर 'तलाक़-ए-बाइन' (अपरिवर्तनीय तलाक) हो जाए, या यदि तुम इस साल इस काफिले के साथ मेरे साथ हज पर नहीं जाओगे, तो मुझ पर 'तलाक़-ए-बाइन' हो जाए।" पुरुष कहे: "मैंने इसे इस शर्त पर स्वीकार किया कि जब मैं तुम्हें हज पर ले जाऊँगा (आदि)।" इस प्रकार यदि वह साथ नहीं जाएगा तो तलाक हो जाएगा, और यदि साथ जाएगा तो वापस पहुँचते ही तलाक हो जाएगा। उसके बिना रखे गए हर कदम पर गुनाह लिखा जाएगा। इन अनेक गुनाहों के कारण यदि रिश्तेदार उससे न मिलें तो यह गलत नहीं है। और अल्लाह सुब्हानहु व तआला बेहतर जानता है।

मसला 305: प्रार्थी हाफिज़ मोहम्मद अब्दुल लतीफ़ साहब अलीगढ़ी, 27 मुहर्रम 1332 हिजरी। शरीयत के मुफ्ती इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि एक वृद्ध महिला जो सत्तर साल की है या एक जवान पाकबाज़ महिला, हज के इरादे से अकेले या किसी गैर-महरम के साथ हरमैन की यात्रा पर निकली। जब उसने बहुत अधिक दूरी तय कर ली, तो क्या उसे उस रास्ते से उसी स्थिति में वापस बुला लेना चाहिए? और यदि वह काबा और अराफ़ात पहुँच गई और हज के सभी अरकान (नियम), सुन्नत, वाजिबात और फ़राइज़ के साथ अदा कर लिए, तो उसका हज अदा होगा या नहीं? और क्या यात्रा का अकेलापन हज के लिए बाधक या उसे नष्ट करने वाला होगा? और क्या उस रास्ते से लौटाना उचित होगा? कुरान और सुन्नत की रोशनी में विस्तार से बताएं और अल्लाह आपको कुरान और शरीयत के हुक्म बताने पर अज्र (पुण्य) दे। (किताब और सुन्नत से इसकी तफसील बयान कीजिए, अहकाम-ए-कुरान और शरीयत के बयान पर अल्लाह तआला तुम्हें अज्र अता फरमाएगा। त)

जवाब: औरत चाहे पाकबाज़ हो या बूढ़ी, उसे बिना पति या महरम के यात्रा पर जाना हराम है। अगर वह पाकबाज़ है तो जिनसे उस पर...

पाद टिप्पणियाँ: 1 सहीह बुखारी, अध्याय: नमाज़ कितनी छोटी की जाए आदि, कदीमी कुतुब खाना कराची 1/178; सहीह मुस्लिम, अध्याय: महिला का महरम के साथ हज आदि के लिए यात्रा करना, कदीमी कुतुब खाना कराची 1/433-434; सुनन अबू दाऊद, अध्याय: महिला का बिना महरम हज करना, आफताब-ए-आलम प्रेस लाहौर 1/242; अत-तरगीब वत-तरहीब, महिला का बिना महरम अकेले यात्रा करने की चेतावनी, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र 3/271।

पृष्ठ 836 का 713

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

روایة یوماً ولیلة الا ومعها زوجها او ذو رحم محرم او کما لفظه وهذا معناه۔ جب تک ساتھ میں شوہر یا وہ رشتہ دار نہ ہو جس سے ہمیشہ ہمیشہ کو نکاح حرام ہے۔

جانا چاہے تو اس پر لازم ہے کہ اپنے کسی محرم کو ساتھ لے یا حج سے واپسی تک کے لئے نکاح کرلے اگرچہ ستراسی برس کی عمر والے سے جو اس کے ساتھ جائے آئے کہ مقصود صرف یہ ہے کہ بے محرم یا شوہر کے جانا صادق نہ ہو، باقی مقاصد زوجیت ہونے نہ ہونے سے بحث نہیں، اور اگر اندیشہ ہو کہ وہ بعد واپسی کے طلاق نہ دے گا تو نکاح یوں کیا جائے کہ عورت کہے میں نے اپنے نفس کو تیرے نکاح میں دیا اس شرط پر کہ جب تو مجھے حج کو لے جائے اور واپس آئے تو واپس اپنے مکان پر پہنچتے ہی مجھ پر طلاق بائن ہو یا اگر تو اس سال اس قافلہ کے ساتھ حج کو میرے ہمراہ نہ جائے تو مجھ پر طلاق بائن ہو مرد کہے میں نے یہ قبول کیا اس شرط پر کہ جب میں تجھے حج کو لے جاؤں (الی آخرہ) یوں اگر وہ ساتھ نہ جائے تو طلاق ہو جائے گی، اور ساتھ جائے تو واپس پہنچتے ہی طلاق ہو جائے گی بغیر اس کے جو قدم رکھے گی گناہ لکھا جائے گا، ان گناہانِ کثیرہ کے باعث اگر رشتہ دار اس سے نہ ملیں تو بے جا نہیں۔ واللہ سبحانہ و تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۳۰۵: مسئولہ حافظ محمد عبداللطیف صاحب علی گڑھی ۲۷ محرم ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں مفتیانِ شرع متین اس مسئلہ میں کہ ایک عورت ضعیفہ ستر سال یا نوجوان عفیفہ نے تن تنہا یا غیر محرم کے ساتھ بقصدِ حج حرمین کا سفر کیا جب بہت کچھ مسافت طے کر چکی تو اس کو راستہ سے اسی حالت میں واپس کر لیا جائے اور اگر وہ خانہ کعبہ اور عرفات میں پہنچ گئی اور ارکانِ

حج بتمامہ مع سنن و واجبات و فرائض ادا کئے تو اس کا حج ادا ہوگا یا نہیں؟ اور سفر کی تنہائی مانع و مفسدِ حج ہوگی یا نہیں؟ اور اس راستہ سے لوٹانا مناسب ہوگا یا نہیں؟ بینوا بالکتاب والسنة وتوجروا ببیان احکام القرآن والشریعة (کتاب و سنت سے اس کی تفصیل بیان کیجئے، احکام قرآن وشریعت کے بیان پر اللہ تعالی تمہیں اجر عطا فرمائے گا۔ ت)

الجواب: عورت اگرچہ عفیفہ یا ضعیفہ ہو اسے بے شوہر یا محرم سفر کو جانا حرام ہے، یہ عفیفہ ہے تو جن سے اس پر

حواشی: 1 صحیح بخاری باب فی کم یقصر الصلوة الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۱۷۸، صحیح مسلم باب سفر المرأة مع محرم الی الحج و غیرہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۴۳۴۔ ۴۳۳، سنن ابو داؤد باب المرأة تحج بغیر محرم آفتاب عالم پریس لاہور ۱/ ۲۴۲، الترغیب والترھیب ترھیب المرأة ان تسافر وحدہا بغیر محرم مصطفی البابی مصر ۳/ ۲۷۱

Fatawa Razawiyya, Volume 10

There is a fear that he is not chaste, and she is weak, so especially during the journey for Hajj, she is in greater need of a Mahram because a weak woman needs another person's assistance more for boarding and disembarking from a ship or camel. Yes, if she goes, she will be a sinner, and a sin will be recorded for every step, but the Hajj will be valid since the company of a Mahram is not a condition for the validity of Hajj. As for returning, if her husband or Mahram can accompany her for Hajj, then that is appropriate. In this situation, returning is not appropriate; if there is no husband or Mahram, or if there is one but he cannot go for Hajj, then if she has not yet traveled the distance of a journey, returning is obligatory. If she has already covered the distance of a journey, then the husband or Mahram should bring her back because that removes the sin, and removing sin is obligatory.

Allah Almighty says: "O you who have believed, protect yourselves and your families from a Fire." (Quran 66/6) And the Master of both worlds (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Whoever among you sees an evil, let him change it with his hand." (Sahih Muslim)

And if she does not have a husband or Mahram, then if she has reached so far that the distance to Makkah Muazzama is not a "travel distance" (safar distance), for example, she reached Jeddah, then she should continue and not return, because returning would involve traveling without a Mahram, which is forbidden.

For example, if this woman's husband gave her an irrevocable divorce or died; if it was a city and the distance between this woman and her home city is not a travel distance, then she should return. And if there is a travel distance for her home city and the distance for the destination is less, then she should continue the journey.

Then after Hajj, she should stay in Makkah Muazzama. Returning home without a Mahram, or even visiting Madina Tayyiba, is impossible. This is the woman who put herself in trouble. There is no remedy for her except that some Mahram of hers goes and brings her, like he wanted to go that year and went, or like a Mahram of hers was a minor until that year and now has reached puberty and can bring her. If even this is not possible, the remedy is marriage; she should get married and then either return with her husband or stay there. And if...

1. Quran 66/6

2. Sahih Muslim, Chapter: Forbidding evil is part of faith, Qadeemi Kutub Khana Karachi 1/51

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

अंदेशा है कि वह पाकबाज़ नहीं है, और यह कमज़ोर है, तो सफर में, विशेष रूप से हज में, एक महरम की और अधिक आवश्यकता है क्योंकि एक कमज़ोर महिला को जहाज़ या ऊंट पर चढ़ाने और उतारने के लिए दूसरे व्यक्ति की अधिक ज़रूरत होती है। हाँ, अगर वह चली जाएगी तो गुनहगार होगी, हर कदम पर गुनाह लिखा जाएगा, लेकिन हज हो जाएगा क्योंकि महरम का साथ होना हज की वैधता के लिए शर्त नहीं है। जहाँ तक वापसी की बात है, अगर उसका पति या महरम उसके साथ हज के लिए जा सकता है, तो यही उचित है। इस स्थिति में वापसी करना उचित नहीं है; अगर पति या महरम नहीं है, या है लेकिन हज पर नहीं जा सकता, तो अगर उसने अभी तक सफर की दूरी (मुद्दत-ए-सफर) तय नहीं की है, तो वापसी अनिवार्य है। और अगर उसने सफर की दूरी तय कर ली है, तो पति या महरम उसे वापस लाएँ क्योंकि इसमें गुनाह का निवारण है, और गुनाह का निवारण फर्ज़ है।

अल्लाह तआला का इरशाद-ए-गरामी है: "ऐ ईमान वालो! अपने आप को और अपने घर वालों को आग से बचाओ।" (अल-क़ुरआन 6/66) और सरकार-ए-दो आलम (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) का फरमान-ए-मुबारक है: "तुम में से जो बुराई देखे, वह उसे अपनी ताक़त (हाथ) से रोके।" (सहीह मुस्लिम)

और अगर उसके पास पति और महरम नहीं है, तो अगर वह इतनी दूर पहुँच गई है कि मक्का मुअज़्ज़मा तक का सफर मुद्दत-ए-सफर नहीं है, उदाहरण के लिए जेद्दा पहुँच गई है, तो अब वह चली जाए और वापस न हो, क्योंकि वापसी में बिना महरम के सफर होगा और वह हराम है।

उदाहरण के लिए, इस महिला को उसके पति ने तलाक़-ए-बाइन दे दी या वह मर गया। अगर वह शहर था और उस महिला और उसके वतन के बीच मुद्दत-ए-सफर नहीं है, तो वह महिला लौट आए। और अगर उसके वतन के लिए मुद्दत-ए-सफर हो और मंज़िल के लिए मुद्दत-ए-सफर कम हो, तो सफर जारी रखे। (त)

फिर हज के बाद मक्का मुअज़्ज़मा में कयाम (निवास) करे। बिना महरम के घर वापस आना, बल्कि मदीना तय्यिबा की हाज़िरी भी असंभव है। यह वह महिला है जिसने खुद अपने आप को मुसीबत में डाला। उसके लिए कोई चारा नहीं है सिवाय इसके कि उसका कोई महरम जाकर उसे लाए, जैसे कि वह उस साल जाना चाहता था और गया, या जैसे उस साल तक उसका कोई महरम नाबालिग था,

अब बालिग हो गया और उसे ला सकता है। और अगर यह भी न हो, तो चारा निकाह है; निकाह करे फिर पति के साथ चाहे वापस आए या वहीं मुकीम (निवासी) रहे, और अगर...

1. अल-क़ुरआन 6/66
2. सहीह मुस्लिम, बाब बयान कौन अल-नही अनिल मुनکر मिनल ईमान, कदीमी कुतुब खाना कराची 1/51

पेज 714 ऑफ़ 836

اندیشہ ہے وہ تو عفیف نہیں، اور یہ ضعیف ہے تو سفر خصوصاً حج میں اور زیادہ محتاج محرم ہے کہ جہاز یا اونٹ پر چڑھانے اتارنے کے لیے ضعیفہ کو دوسرے شخص کی زیادہ حاجت ہے۔ ہاں اگر چلی جائے گی گنہگار ہوگی، ہر قدم پر گناہ لکھا جائے گا، مگر حج ہو جائے گا کہ معیت محرم شرطِ صحتِ حج نہیں، رہی واپسی اگر اس کا شوہر یا محرم اس کے ساتھ حج کو جاسکتا ہے تو یہی مناسب ہے۔ اس صورت میں واپسی کرنا مناسب نہیں، اگر زوج یا محرم کوئی نہیں یا ہے مگر حج کو نہیں جاسکتا تو اگر ابھی مدتِ سفر تک نہیں گئی ہے واپسی لازم ہے، اور اگر مدتِ سفر تک قطع کر چکی تو شوہر یا محرم ہو تو واپس لائیں کہ اس میں ازالہ گناہ ہے اور ازالہ گناہ فرض ہے۔

قال اللہ تعالٰی یٰٓاَیُّہَا الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا قُوْٓا اَنْفُسَکُمْ وَ اَہْلِیْکُمْ نَارًا ط (القرآن ۶/۶۶) - اللہ تعالٰی کا ارشادِ گرامی ہے: اے ایمان والو! اپنے آپ کو اور اپنے اہل کو آگ سے بچالو۔ (ت)

وقال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم من رأی منکم منکرًا فلیغیرہ بیدہ ط (صحیح مسلم باب بیان کون النہی عن المنکر من الایمان قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۵۱) - اور سرکارِ دو عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا فرمان مبارک ہے: تم میں سے جو برائی دیکھے اسے طاقت سے روکے۔ (ت)

اور اگر شوہر و محرم نہیں رکھتی تو اگر اتنی دور پہنچ گئی کہ مکہ معظمہ تک مدتِ سفر نہیں مثلاً جدہ پہنچ گئی تو اب چلی جائے اور واپس نہ ہو کہ واپسی میں سفر بلا محرم ہے اور وہ حرام ہے۔

وکانت کمن ابانہا زوجہا اومات عنہا ولو فی مصر ولیس بینہا وبین مصرہا مدۃ سفر رجعت و لوبین مصرہا مدۃ و بین مقصدھا اقل مضت۔ - مثلاً اس عورت کو خاوند نے طلاقِ بائن دے دی یا وہ فوت ہوگیا اگر وہ شہر تھا اور اس عورت اور اس کے وطن کے درمیان مدتِ سفر نہیں تو وہ عورت لوٹ آئے اور اگر اس کے وطن کے لیے مدتِ سفر ہو اور مقصد کے لیے مدتِ سفر کم ہو تو سفر جاری رکھے۔ (ت)

پھر بعدِ حج مکہ معظمہ میں اقامت کرے بلا محرم گھر کو واپس آنا بلکہ مدینہ طیبہ کی حاضری ناممکن ہے، یہ وہ عورت ہے جس نے خود اپنے آپ کو بلا میں ڈالا، اس کے لیے چارہ کار نہیں مگر یہ کہ اس کا کوئی محرم جاکر اسے لائے، یوں کہ اس سال وہ جانا چاہتا تھا اس سال گیا یا یوں کہ اس سال تک اس کا کوئی محرم نابالغ تھا اب بالغ ہوا اور لاسکتا ہے، اور یہ بھی نہ ہو تو چارہ کار نکاح ہے نکاح کرے پھر شوہر کے ساتھ چاہے واپس آئے یا وہیں مقیم رہے، اور اگر

1. القرآن ۶/۶۶
2. صحیح مسلم باب بیان کون النہی عن المنکر من الایمان قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/ ۵۱

Fatawa Razawiyya Volume 10

If there is the duration of a journey on both sides, then it is without much hardship; however, neither going nor coming can be free from sin except by obtaining a Mahram or acquiring a husband. If she wants to remain under the husband's control forever, then the remedy for this is that she should marry on the condition that my affairs will remain in my hands; whenever I wish, I can give myself a 'Talaq-e-Bain' (irrevocable divorce). And if this too is impossible, then all doors are closed from every side, she is completely constrained. If reliable and trustworthy women are available for the return journey, she should act upon the school of Imam Shafi'i (may Allah be pleased with him) and return with them. And if they are available for going, she should go with them and return with them, as following another school in necessity is undoubtedly permissible, as stated in 'Al-Durr al-Mukhtar' etc. (as it is in Durr al-Mukhtar etc. - T). Therefore, it was said: 'The difference of opinion among my companions is a mercy for you.' (The difference of opinion among my companions is a mercy for you. - T). This is what has become clear to me, and the knowledge of truth is with my Lord, so let it be examined and reviewed. (This became clear to me and the knowledge of truth is with my Lord. - T). And Allah knows best.

Problem 306 & 307: Sent by Hafiz Muhammad Ayaz Sahib from Najibabad town, Bijnor district, Pathan Pura locality, 24 Muharram al-Haram 1332 AH. What do the scholars of religion and the muftis of the firm Sharia say on the following matters according to the command of the noble Sharia, based on Quran, Hadith and the beliefs of the Ahl al-Sunnah? May Allah Almighty grant a great reward: (1) A person who has money consisting of salary, bribes etc., and it is surplus to his domestic expenses etc., is Hajj of the Noble House of Allah obligatory on this person or not? If it is obligatory, will the Hajj be valid with this money or not? If it will not be valid, what should be the way for him so that Hajj is performed and he also deserves the reward? (2) A person has money for the expenses of Hajj of the Noble House of Allah, but due to not having full health, he is unable to go himself. Is Hajj obligatory on him or not? If it is, in what way can Hajj be performed so that this person is relieved of the obligation? Clarify and you shall be rewarded.

The Answer: (1) If he never had enough lawful wealth with which he could perform Hajj, even if there were thousands of rupees from bribes, then Hajj never became obligatory on him, because bribe money is like usurped wealth; he is not its owner. And if lawful wealth...

[1] Tahdhib Tarikh Dimashq, translation of Sulayman ibn Kathir, Dar al-Ihya al-Turath al-Arabi Beirut, 2/285; Kanz al-Ummal, Hadith 1002, Muassasat al-Risala Beirut, 1/199.

फ़तावा रज़विया खंड दसवाँ

यदि दोनों ओर यात्रा की अवधि है, तो यह बिना अधिक कठिनाई के है; हालाँकि, न तो जाना और न ही आना पाप से मुक्त हो सकता है, सिवाय महरम प्राप्त करने या पति प्राप्त करने के। यदि वह हमेशा पति के नियंत्रण में रहना चाहती है, तो इसका उपाय यह है कि वह इस शर्त पर निकाह करे कि मेरा मामला मेरे हाथ में रहेगा; जब चाहूँ अपने आप को 'तलाक-ए-बाइन' (अपरिवर्तनीय तलाक) दे लूँ। और यदि यह भी असंभव हो, तो सभी ओर से दरवाजे बंद हैं, वह पूरी तरह से विवश है। यदि वापसी के लिए विश्वसनीय और भरोसेमंद महिलाएं मिलें, तो इमाम शाफ़ई (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) के मज़हब पर अमल करते हुए उनके साथ वापस आए। और यदि जाने के लिए मिलें, तो उनके साथ जाए और उन्हीं के साथ वापस आए, क्योंकि आवश्यकता पड़ने पर दूसरे मज़हब का अनुसरण करना निस्संदेह जायज़ है, जैसा कि 'अल-दुर्रुल मुख्तार' आदि में है। (जैसा कि दुर्रुल मुख्तार आदि में है। - टी)। इसलिए कहा गया: 'मेरे साथियों का मतभेद तुम्हारे लिए रहमत है।' (मेरे साथियों का मतभेद तुम्हारे लिए रहमत है। - टी)। यह वह है जो मुझ पर स्पष्ट हुआ है, और सत्य का ज्ञान मेरे रब के पास है, अतः इसे जाँचा और समीक्षा की जाए। (यह मुझ पर स्पष्ट हुआ और सत्य का ज्ञान मेरे रब के पास है। - टी)। और अल्लाह ही बेहतर जानता है।

मसला ३०६ और ३०७: मुर्सला (प्रेषित) हाफ़िज़ मुहम्मद अयाज़ साहब, कस्बा नजीबाबाद, जिला बिजनौर, मोहल्ला पठान पुरा, २४ मुहर्रम अल-हराम १३३२ हिजरी। दीन के उलेमा और मज़बूत शरीयत के मुफ़्ती इन मसाइल (समस्याओं) में कुरान, हदीस और अहले सुन्नत के अकीदे के अनुसार शरीयत-ए-मुतह्हरा के हुक्म के मुताबिक क्या फ़रमाते हैं? अल्लाह तआला अज़्र-ए-अज़ीम (बड़ा प्रतिफल) प्रदान करे: (१) जिसके पास वेतन और रिश्वत आदि का रुपया शामिल हो और वह उसके घरेलू खर्च आदि से अधिक हो, तो क्या उस व्यक्ति पर हज्ज-ए-बैतुल्लाह शरीफ़ फ़र्ज़ है या नहीं? यदि फ़र्ज़ है, तो क्या उस रुपये से हज अदा होगा या नहीं? यदि नहीं होगा, तो उसके लिए क्या तरीका होना चाहिए जिससे हज भी अदा हो जाए और वह सवाब का भी हक़दार हो? (२) जिस व्यक्ति के पास हज्ज-ए-बैतुल्लाह शरीफ़ के खर्च के लिए रुपया मौजूद है, लेकिन वह व्यक्ति पूर्ण स्वास्थ्य न होने के कारण स्वयं जाने से मजबूर है, तो क्या उस पर हज फ़र्ज़ है या नहीं? यदि है, तो वह किस तरह से हज अदा हो सकता है जिससे यह व्यक्ति दायित्व मुक्त हो जाए? बयान करें और पुण्य पायें।

जवाब: (१) यदि उसके पास कभी इतना हलाल माल नहीं रहा जिससे वह हज कर सके, भले ही रिश्वत के हजारों रुपये हों, तो उस पर हज फ़र्ज़ ही नहीं हुआ, क्योंकि रिश्वत का माल छीने हुए माल की तरह है, वह उसका मालिक ही नहीं है। और यदि हलाल माल...

---

[1] तहज़ीब तारीख़ दमिश्क, सुलेमान बिन कसीर का अनुवाद, दार अल-इह्या अल-तुराथ अल-अरबी बेरूत, २/२८५; कँज़ अल-उम्माल, हदीस १००२, मुअस्ससत अल-रिसाला बेरूत, १/१९९।

पृष्ठ ७१५ / ८३६

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

دونوں طرف مدت سفر ہے تو بلا سخت تر ہے اور جانا آنا کوئی بھی بے گناہ نہیں ہوسکتا، مگر بہ حصول محرم یا تحصیل شوہر، شوہر کے قبضے میں اگر ہمیشہ رہنا چاہے تو اس کا یہ علاج ہے کہ اس شرط پر نکاح کرے کہ میرا کام میرے ہاتھ میں رہے گا جب چاہوں اپنے آپ کو طلاق بائن دے لوں، اور اگر یہ بھی ناممکن ہو تو سب طرف سے دروازے بند ہیں پوری مضطرہ ہے، اگر ثقہ معتمدہ عورتیں واپسی کے لیے ملیں تو مذہب امام شافعی رضی اللہ تعالی عنہ پر عمل کر کے ساتھ واپس آئے، اور جانے کے لیے ملیں تو انکے ساتھ جائے انھیں کے ساتھ واپس آئے کہ تقلید غیر عندالضرورۃ بلا شبہ جائز ہے کما فی الدرالمختار وغیرہ (جیسا کہ درمختار وغیرہ میں ہے۔ت) اس لیے ارشاد ہوا کہ اختلاف اصحابی لکم رحمۃ (میرے صحابہ کا اختلاف تمہارے لیے رحمت ہے۔ت) ھٰذا ما ظھر لی والعلم بالحق عند ربی فلیحرر و لیراجع (یہ مجھ پر واضح ہوا اور حق کا علم میرے رب کے پاس ہے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم۔

مسئلہ ۳۰۶ و ۳۰۷: مرسلہ حافظ محمد ایاز صاحب از قصبہ نجیب آباد ضلع بجنور محلہ پٹھان پور ۲۴ محرم الحرام ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیانِ شرع متین مسائل ذیل میں موافق حکم شرع شریف بموجب قرآن و حدیث عقائد اہل سنت ارشاد فرمائے اللہ تعالٰی اجرِ عظیم عطا فرمائے : (۱) جس کے پاس روپیہ تنخواہ ورشوت وغیرہ کا شامل ہوا اور اس کے خرچ خانگی وغیرہ سے فاضل ہو تو اس شخص پر حج بیت اللہ شریف فرض ہے یا نہیں؟ اگر فرض ہے تو اس روپے سے حج ادا ہوگا یا نہیں؟ اگر نہیں ادا ہوگا تو اس کے واسطے کیا صورت ہونی چاہئے کہ جس سے حج بھی ادا ہو جائے اور ثواب کا بھی مستحق ہو؟ (۲) جس شخص کے پاس روپیہ واسطے خرچ حج بیت اللہ شریف موجود ہے لیکن وہ شخص بوجہ پوری تندرستی نہ ہونے کے خود

جانے سے معذور ہے تو اس پر حج فرض ہے یا نہیں؟ اگر ہے تو وہ کس صورت سے حج ادا ہو سکتا ہے کہ جس سے یہ شخص سبکدوش ہو؟ بینوا توجروا۔

الجواب: (۱) اگر اس کے پاس مال حلال کبھی اتنا نہ ہوا جس سے حج کر سکے اگرچہ رشوت کے ہزارہا روپے ہوئے تو اس پر حج فرض ہی نہ ہوا کہ مالِ رشوت مثل مغصوب ہے وہ اس کا مالک ہی نہیں، اور اگر مالِ حلال

---

[1] تہذیب تاریخ دمشق ترجمہ سلیمان بن کثیر داراحیاء التراث العربی بیروت ۲/ ۲۸۵، کنزالعمال حدیث ۱۰۰۲ موسسۃ الرسالہ بیروت ۱/ ۱۹۹

Fatawa Razawiyya, Volume 10

[If a person] has this much [wealth] or had it at some point, then Hajj is obligatory upon him. However, spending haram wealth such as bribes etc. on it is forbidden, and that Hajj will not be acceptable, although the obligation will be dropped. It is stated in a Hadith that when a person goes for Hajj with haram wealth and says "Labbayk", an angel responds:

Neither is your presence accepted, nor is your service accepted, and your Hajj is rejected back at your face until you return this haram wealth that is in your hands.	**La Labbayk wa la Sa'dayk hatta tarudda ma fi yadayka wa hajjuka mardudun 'alayk.[1]**

The remedy for him is to take a loan and fulfill the obligation. (2) If the excuse is such that it prevents travel, for example, [loss of] eyes or feet, and there is no hope of recovery from this excuse, then he should arrange for Hajj Badal (Hajj by proxy) on his behalf. If the excuse does not prevent travel, he should go himself. If it prevents travel but recovery is hoped for, like a severe fever or pain etc., then he cannot arrange Hajj Badal but should wait for recovery; once healed, he should go himself. If the time [of Hajj] arrives before recovery, he should leave a will for Hajj Badal. If he did not commit any negligence on his part, i.e., from the time Hajj became obligatory no travel impediment occurred and the time came before recovery, he will not be held accountable. But if even one year passed in which he could have gone and did not go, then he is a sinner, and seeking forgiveness is mandatory. And arranging Hajj Badal is obligatory. And Allah Almighty knows best.

Problem 308: Question 308: From Hafiz Muhammad Ayaz Sahib, from the town of Najibabad, district Bijnor, 20 Safar 1332 AH. What do the scholars of religion and jurists of the clear Sharia say regarding the following matter? In a previous inquiry regarding the Hajj of the Holy House of Allah, Your Eminence stated that one who has wealth mixed with bribes etc. should take a loan to perform Hajj. End. Now, kindly state from where he should repay that loan? An objector says that, firstly, since the money from bribes etc. is not his property, he has nothing else, and there is a prohibition against performing Hajj by taking a loan. And even if, hypothetically, he took a loan for Hajj and repaid it with his own money which is from bribes etc. that he has, what difference does it make? It was because of his own money that he took the loan. Therefore, this money is exactly like his own money. So, provide sufficient evidence and proof for satisfaction, as this person is very eager to go for Hajj.

[1] Irshad-us-Sari ila Manasik li-Mulla Ali Qari, Chapter on Miscellaneous Matters, Dar al-Kutub al-Arabi, Beirut, p. 423.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवां

यदि उसके पास इतना धन है या किसी मौसम में था, तो उस पर हज फ़र्ज़ है, मगर रिश्वत वगैरह हराम माल का उसमें खर्च करना हराम है और वह हज काबिले-क़ुबूल (स्वीकार्य) नहीं होगा, हालाँकि फ़र्ज़ साक़ित (समाप्त) हो जाएगा। हदीस में फ़रमाया गया है कि जो हराम माल लेकर हज को जाता है, जब वह 'लब्बैक' कहता है, तो फ़रिश्ता जवाब देता है:

न तेरी हाज़िरी क़ुबूल न तेरी ख़िदमत क़ुबूल, और तेरा हज तेरे मुँह पर मरद्दूद (अस्वीकृत), जब तक तू यह हराम माल जो तेरे हाथ में है, वापस न दे।	**ला लब्बैक वला सअदैक हत्ता तरुद्दा मा फ़ी यदैक व हज्जुका मरद्दूदुन अलैका।[1]**

इसके लिए उपाय यह है कि क़र्ज़ लेकर फ़र्ज़ अदा करे। (२) उज़्र (कारण) अगर ऐसा हो कि यात्रा में बाधा हो, जैसे आँखें या पैर न हों और उस उज़्र के ख़त्म होने की कोई उम्मीद न हो, तो अपनी तरफ से 'हज बदल' करा दे। और अगर उज़्र यात्रा में बाधा न हो, तो खुद जाए। और अगर यात्रा में बाधा हो मगर ठीक होने की उम्मीद हो, जैसे तेज़ बुखार या दर्द वगैरह, तो हज बदल नहीं करा सकता बल्कि ठीक होने का इंतज़ार करे; जब शिफ़ा (स्वास्थ्य) मिल जाए तो खुद जाए। और अगर शिफ़ा से पहले समय आ जाए, तो हज बदल की वसीयत कर जाए। अगर अपनी तरफ से कोई कोताही न की थी, यानी जब से हज फ़र्ज़ हुआ था तब से यात्रा में कोई रुकावट नहीं थी और ठीक होने से पहले समय आ गया, तो उस पर पकड़ नहीं होगी। और अगर एक साल भी ऐसा गुज़रा था कि जा सकता था और नहीं गया, तो गुनहगार हुआ, तौबा करना वाजिब है। और हज बदल कराना फ़र्ज़ है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ३०८: मसला ३०८: प्रेषित: हाफ़िज़ मोहम्मद अयाज़ साहब, क़स्बा नजीबाबाद, जिला बिजनौर, २० सफ़र १३३२ हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन और मुफ़्तियान-ए-शरअ इस मसले में: हुज़ूर ने पहले इस्तिफ़्ता (प्रश्न) में बैतुल्लाह शरीफ़ के हज के बारे में यह फ़रमाया है कि जिसके पास रिश्वत वगैरह का माल शामिल है, उसे चाहिए कि क़र्ज़ लेकर हज अदा करे। (इति)। अब आगे यह फ़रमाएँ कि वह क़र्ज़ा कहाँ से अदा करे? एतराज़ करने वाला कहता है कि अव्वल तो जब रिश्वत वगैरह का रुपया उसकी मिल्कियत नहीं है, तो उसके पास और कुछ नहीं है और क़र्ज़ लेकर हज अदा करने की मनाही है। और बिलफ़र्ज़ अगर क़र्ज़ लेकर हज के वास्ते रखा और अपने उस रुपए से जो रिश्वत वगैरह का उसके पास है उससे क़र्ज़ अदा कर दिया, तो वह क्या हुआ? उसी अपने रुपए की वजह से

तो उसने क़र्ज़ लिया था। लिहाज़ा यह रुपया भी हूबहू अपने ही रुपए जैसा हुआ। तो इसके लिए काफी दलील और सुबूत फ़रमाएँ ताकि तसल्ली हो जाए। यह शख़्स हज के लिए जाने का बहुत मुश्ताक (इच्छुक) है।

[1] इरशाद-उस-सारी इला मनासिक लि-मुल्ला अली क़ारी, बाब अल-मुतफ़र्रक़ात, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरूत, पृष्ठ ४२३।

اس قدر اس کے پاس ہے یا کسی موسم میں ہوا تھا تو اس پر حج فرض ہے مگر رشوت وغیرہ حرام مال کا اس میں صرف کرنا حرام ہے اور وہ حج قابل قبول نہ ہوگا اگرچہ فرض ساقط ہو جائے گا، حدیث میں ارشاد ہوا جو مال حرام لے کر حج کو جاتا ہے جب وہ لبیک کہتا ہے فرشتہ جواب دیتا ہے:

لا لبیك ولا سعدیك حتی ترد ما في یدیك وحجك مردود علیك

نہ تیری حاضری قبول نہ تیری خدمت قبول ، اور تیرا حج تیرے منہ پر مردود، جب تک تو یہ حرام مال جو تیرے ہاتھ میں ہے واپس نہ دے۔

۱۔

اس کے لیے چارہ کار یہ ہے کہ قرض لے کر فرض ادا کرے۔ (۲) عذر اگر ایسا ہو کہ مانع سفر ہے مثلاً آنکھیں یا پاؤں نہیں اور اس عذر کے زوال کی کوئی امید نہیں تو اپنی طرف سے حج بدل کرادے، اور اگر عذر مانع سفر نہیں تو خود جائے، اور اگر مانع سفر ہے مثلاً زوال کی امید ہے جیسے تپ شدید یا درد وغیرہ تو حج بدل نہیں کرا سکتا بلکہ زوال کا انتظار کرے، جب شفاء ہو جائے خود جائے، اور اگر قبل شفا وقت آجائے تو حج بدل کی وصیت کر جائے، اگر اپنی طرف سے کوئی تقصیر نہ کی تھی یعنی جب سے حج فرض ہوا تھا نہ مانع سفر لاحق تھا اور قبل زوال وقت آگیا اس پر مواخذہ نہ ہوگا، اور اگر ایک سال بھی ایسا گزر گیا تھا کہ جاسکتا تھا اور نہ گیا تو گنہگار ہوا، استغفار واجب ہے۔ اور حج بدل کرانا فرض ہے، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۳۰۸: مسئلہ ۳۰۸: مسئولہ حافظ محمد ایاز صاحب از قصبہ نجیب آباد ضلع بجنور ۲۰ صفر ۱۳۳۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین و مفتیان شرع متین مسئلہ ذیل میں حضور نے پہلے استفتاء

میں بابت حج بیت اللہ شریف یہ ارشاد فرمایا ہے کہ جس کے پاس مال رشوت وغیرہ کا شامل ہے اس کو چاہئے قرض لے کر حج ادا کرے انتہی، اب آئندہ یہ ارشاد فرمائے کہ وہ قرضہ کہاں سے ادا کرے؟ معترض کہتا ہے کہ اول تو جب رشوت وغیرہ کا روپیہ اس کی ملک نہیں ہے تو اس کے پاس اور کچھ نہیں اور قرض لے کر حج ادا کرنے کی ممانعت ہے، اور بالفرض اگر قرض لے کر حج کے واسطے رکھا اور اپنے روپے سے جو رشوت وغیرہ کا اس کے پاس ہے اس سے قرض ادا کر دیا تو وہ کیا ہوا اسی اپنے روپے کی وجہ سے تو اس نے قرض لیا تھا لہذا یہ روپیہ بھی بعینہ اپنے ہی روپے کی مثل ہوا تو اس واسطے دلیل و ثبوت کافی ارشاد ہو کہ تسکین ہو جائے یہ شخص حج کے واسطے جانے کا بہت ہی مشتاق ہے۔

۱ ارشاد الساری الی مناسک لملا علی قاری باب المتفرقات دار الکتاب العربی بیروت ص ۴۲۳

Fatawa Ridawiyyah Volume 10

The Answer: The money taken as a loan is lawful (halal) wealth because it was obtained through a valid Shar'i contract; there is no reason for impurity (khubth) in it. It is explicitly stated in Alamgiri and other reliable books that if someone whose wealth is unlawful (haram) invites Zaid or gives him something and says 'I inherited it or I borrowed it,'[1] then taking it and eating from the invitation is lawful. And when Hajj had become obligatory (fard) for him and now he no longer has lawful wealth, only unlawful wealth, and Hajj with unlawful wealth is rejected (mardud), then what other remedy is there but to obtain lawful wealth through some means, go for Hajj, and fulfill the obligation? A loan is also a means of obtaining lawful wealth. In any case, the obligation was fulfilled. Yes, there is difficulty for him in repaying the loan because it is not permissible for him to spend unlawful wealth for his own use. However, this is a separate issue; it has no relation to Hajj. If he wants salvation, he should return the unlawful wealth to its owner or heirs, and if they cannot be found, then give it in charity (sadaqah), and repay the loan by earning through lawful means. If it gets paid off, then well and good; otherwise, it is mentioned in the Hadith that taking a loan for Hajj, Jihad, or marriage puts that debt upon the kindness of Allah Almighty.[2] And if he followed his desires and did not pay attention to lawful wealth, repaid the loan from that same haram wealth, and continued to spend it on his own expenses, then this is one sin. Not performing Hajj would have been two sins; escaping one sin is no small matter. And Allah Almighty knows best.

Problem 309: From Maulvi Abul Mahasin Muhammad Sajjad Bihari, Senior Teacher and Manager of Madrasa Anwar-ul-Uloom, Gaya City, 12 Shawwal 1334 AH. Respected Maulana, Assalamu Alaikum wa Rahmatullahi wa Barakatuh. How are you? The reason for writing this petition is: what order should be given to the general Muslims regarding Hajj this year in view of the current situation? Your Excellency's opinion would be correct. Can the news of the conditions of the Sharif of Makkah and the events of the current war be a cause for the lapse of obligation (isqat-e-wujub) or not? Even if, for the sake of argument, such a possibility of lapse of obligation exists, what fatwa should be given on such an occasion? Hoping that you will honor me with a correct answer.

The Answer: If the rumors are proven true that there is no peace/safety on the way, then it will not be obligatory because 'those who can find a way to it'[3] (those who can travel to it - T) would not apply. But this is for the one on whom Hajj becomes obligatory in that very year, and those...

[1] Fatawa Hindiyyah, Chapter 12 on Gifts and Invitations, Noorani Kutub Khana Peshawar, 5/342 [2] Majma' al-Zawa'id, Chapter on one who intends to pay debt and is concerned about it, Dar al-Kitab Beirut, 4/133 [3] Al-Quran 3/97

उत्तर: ऋण के रूप में ली गई राशि हलाल धन है क्योंकि यह एक वैध शरई अनुबंध के माध्यम से प्राप्त की गई थी, इसलिए इसमें अशुद्धि (खुब्थ) का कोई कारण नहीं है। आलमगीरी और अन्य विश्वसनीय पुस्तकों में स्पष्ट रूप से उल्लेख है कि जिस व्यक्ति का धन हराम है, यदि वह ज़ैद को आमंत्रित करता है या उसे कुछ देता है और कहता है 'वरिस्तहु औ इस्तक़रज़्तहु' (मुझे यह विरासत में मिला है या मैंने इसे उधार लिया है),[1] तो उसे लेना और उस दावत का भोजन करना हलाल है। और जब उस पर हज फ़र्ज़ हो चुका था और अब उसके पास हलाल धन नहीं रहा, केवल हराम धन है, और हराम धन से किया गया हज अस्वीकार्य (मरदूद) है, तो इसके अलावा क्या उपाय है कि किसी माध्यम से हलाल धन प्राप्त करके हज पर जाए और फ़र्ज़ अदा करे? ऋण भी हलाल धन प्राप्त करने का एक माध्यम है। बहरहाल, फ़र्ज़ तो अदा हो गया। हाँ, ऋण चुकाने में उसे कठिनाई है क्योंकि हराम धन को अपने किसी उपभोग में खर्च करना उसके लिए जायज़ नहीं है। हालाँकि, यह एक अलग मुद्दा है; इसका हज से कोई संबंध नहीं है। यदि वह मोक्ष चाहता है, तो उसे हराम धन उसके मालिक या वारिसों को लौटा देना चाहिए, और यदि वे न मिलें, तो उसे दान (सदक़ा) कर देना चाहिए, और हलाल तरीके से धन कमाकर ऋण चुकाना चाहिए। यदि भुगतान हो गया तो बहुत अच्छा; अन्यथा हदीस में कहा गया है कि हज, जिहाद या निकाह के लिए लिया गया ऋण अल्लाह अज़्ज़वजल के ज़िम्मे करम पर है।[2] और यदि उसने अपनी इच्छाओं का पालन किया और हलाल धन की ओर ध्यान नहीं दिया, उसी हराम धन से ऋण चुकाया और उसे अपने खर्चों में लगाता रहा, तो यह एक गुनाह है। हज न करना दो गुनाह होते; एक गुनाह से बच जाना कोई छोटी बात नहीं है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

मसला ३०९: मौलवी अबुल महासिन मुहम्मद सज्जाद बिहारी साहब, प्रथम शिक्षक और प्रबंधक, मदरसा अनवार-उल-उलूम, शहर गया, १२ शव्वाल १३३४ हिजरी। मौलाना साहब, अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाही व बरकातहू। मिज़ाज शरीफ! इस अर्ज़ी को लिखने का कारण यह है कि वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए इस वर्ष आम मुसलमानों को हज के बारे में क्या आदेश दिया जाए? आपकी राय सही होगी। क्या मक्का के शरीफ की स्थितियों और वर्तमान युद्ध की घटनाओं की खबर वजूद-ए-हज के समाप्त होने (इसक़ात-ए-वुजुब) का कारण बन सकती है या नहीं? यदि तर्क के लिए इस प्रकार की संभावना मान भी ली जाए, तो ऐसे अवसर पर क्या फतवा दिया जाना चाहिए? आशा है कि आप सही उत्तर से नवाज़ेंगे।

उत्तर: यदि अफवाहों से यह वास्तव में सिद्ध हो जाए कि रास्ते में शांति/सुरक्षा नहीं है, तो हज अनिवार्य नहीं होगा क्योंकि 'मनिस्तताआ इलैहि सबीला'[3] (जो वहां तक पहुँचने का सामर्थ्य रखता हो। टी) की शर्त पूरी नहीं होगी। लेकिन यह उसके लिए है जिस पर उसी वर्ष हज अनिवार्य होता है और जो...

[1] फ़तावा हिंदिया, अध्याय 12, उपहार और दावतों के बारे में, नूरानी कुतुब खाना पेशावर, 5/342 [2] मजमा अल-ज़वाइद, उस व्यक्ति के बारे में जो ऋण चुकाने का इरादा रखता है और उसके बारे में चिंतित रहता है, दार अल-किताब बेरूत, 4/133 [3] अल-कुरान 3/97

पृष्ठ 717/836

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

الجواب: روپیہ کہ قرض لیا گیا کہ ایک مال حلال ہے کہ عقد صحیح شرع سے حاصل کیا تو اس میں خبث کی کوئی وجہ نہیں، عالمگیری وغیرہ کتب معتمدہ میں تصریح ہے کہ جس کا مال حرام ہے وہ اگر زید کی دعوت کرے یا اسے کچھ دے اور کہے ورثتہ او استقرضتہ ۱ یہ مال مجھے ترکہ میں ملا ہے یا میں نے قرض لیا ہے، تو اس کا لینا اور دعوت کھانا حلال ہے اور جب حج اس کے فرض ہو چکا تھا اور اب اس کے پاس مالِ حلال نہ رہا صرف مال حرام ہے اور مال حرام سے حج مردود ہے، تو چارہ کار سوا اس کے کیا ہے کہ کسی ذریعہ سے حلال مال حاصل کرکے حج کو جائے اور فرض ادا کرے، قرض بھی ذریعہ حلال ہے، بہر فرض تو ادا ہو گیا، ہاں ادائے قرض میں اس پر دقت ہے کہ مال حرام کو اپنے کسی مصرف میں صرف کرنا اسے جائز نہیں، مگر یہ مسئلہ جدا گانہ ہے حج سے اسے تعلق نہیں، اپنی نجات چاہے تو مال حرام اس کے مالک کو یا وارثوں کو پہنچائے اور نہ ملیں تو تصدق کرے اور وجہ حلال سے مال پیدا کرکے قرض ادا کرے اگر ادا ہو گیا فبہا ورنہ حدیث میں ارشاد ہوا ہے کہ حج یا جہاد یا نکاح کے لیے قرض لے وہ قرض اللہ عزوجل کے ذمہ کرم پر ہے، ۲ اور اگر پیروی نفس کی اور مال حلال کی طرف توجہ نہ کی اسی حرام سے قرض ادا کیا اور اپنے مصارف میں صرف کرتا رہا تو یہ ایک گناہ ہے اور حج ادا نہ کرنا تو دو گناہ تھے ایک گناہ سے بچ گیا یہ کیا کم ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ مسئلہ ۳۰۹: مولوی ابو المحاسن محمد سجاد بہاری صاحب مدرس اول و مہتمم مدرسہ انوار العلوم شہر گیا ۱۲ شوال ۱۳۳۴ھ مولانا صاحب السلام علیکم ورحمۃ اللہ وبرکاتہ، مزاج شریف! باعث تحریر عریضہ ہذا یہ ہے کہ اس سال نظر بحالات موجودہ حج کے متعلق عام مسلمین کو کیا حکم دیا جائے، جناب عالی کی رائے صائب ہو گی کیا خبر احوال شریف مکہ و موجودہ جنگ کے واقعات مسقط وجوب ہو

سکتے ہیں یا نہیں؟ اگر بالفرض اس قسم کا احتمال مسقط وجوب ہو بھی تو ایسے موقع پر فتویٰ کیا دینا چاہئے، امید کہ جواب بالصواب سے سرفراز فرمائیں گے۔

الجواب: افواہ کا اعتبار اگر واقعی ثابت ہو کہ راستہ میں امن نہیں تو وجوب نہ ہو گا کہ مَنِ اسْتَطَاعَ إِلَيْهِ سَبِيلًا۳ (جو اس تک چل سکے۔ ت) صادق نہ آیا مگر یہ اس کے لیے ہے جس پر اسی سال وجوبِ حج ہوتا اور جن

۱ فتاویٰ ہندیہ الباب الثانی عشر فی الہدایہ والضیافات نورانی کتب خانہ پشاور ۵ / ۲ ۳۴۲ مجمع الزوائد باب فیمن نوی دینہ واھتم بہ دار الکتاب بیروت ۴ / ۳ ۱۳۳ القرآن ۳ / ۹۷

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

...already became obligatory on them earlier, and due to their negligence they have not performed it yet, the obligation cannot be waived from them. The utmost is that in a year where there is no peace, the obligation to perform it will not be established, but when, by the permission of Allah Almighty, peace is restored, it will become obligatory to perform. And Allah Almighty knows best.

Problem 310: From Qadri Ganj, Birbhum District, Bengal province, sent by Syed Zahoor-ul-Hussain Sahib Qadri Razzaqi Kirmani, 23 Jamadi-ul-Ula 1336 AH.

Question: Is the sacred shrine of the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him), or rather the city of Medina, superior to the Divine Throne (Arsh), the Kursi, and the Holy Kaaba, or not?

Answer: The pure soil (turbat-e-athar), i.e., that part of the earth which is in contact with the luminous body [of the Prophet], is superior even to the Great Kaaba and the Divine Throne. This has been explicitly stated by Aqeel al-Hanbali, and scholars have accepted it with general approval. (Abu Aqeel Hanbali has clarified this and all scholars have accepted it. - Trans.)

As for the upper part of the shrine, it is not included in this. The Great Kaaba is superior to the city of Medina, although there is a difference of opinion regarding which is superior between the rest of Medina (excluding the place of the pure soil) and the rest of Mecca (excluding the Honored Kaaba). Most side with the latter (Mecca), but our path is the former (Medina), and this is also the school of thought of Umar al-Farooq (may Allah be pleased with him). In a Hadith of Tabarani, it is explicitly stated that "Medina is superior to Mecca." (Medina - upon its inhabitant be blessings and peace - is superior to Mecca. - Trans.) And Allah Almighty knows best.

---

1. Maslak al-Mutaqassit with Irshad al-Sari, Chapter on Visiting the Master of the Messengers (peace and blessings of Allah be upon him), Dar al-Kutub al-Arabi, Beirut, p. 336.
2. Al-Mu'jam al-Kabir of al-Tabarani, Hadith 4501, Al-Maktaba al-Faysaliyya, Beirut, 2/288.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

...पहले से ही उन पर अनिवार्य हो चुका है और अपनी सुस्ती की वजह से अब तक अदा नहीं किया, उन पर से अनिवार्यता समाप्त नहीं हो सकती। अंततः यह कि जिस वर्ष शांति न हो, अनिवार्यता (अदा करने की) साबित नहीं होगी, लेकिन जब अल्लाह तआला की अनुमति से शांति हो जाए तो उसे अदा करना अनिवार्य होगा। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला 310: कादरी गंज, जिला बीरभूम, बंगाल प्रांत से, प्रेषक सैयद ज़हूर-उल-हुसैन साहब कादरी रज़ाकी किरमानी, 23 जमादी-उल-उला 1336 हिजरी।

प्रश्न: क्या हुज़ूर सरवर-ए-कायनात (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का मज़ार-ए-अकदस बल्कि मदीना तय्यबा अर्श, कुर्सी और काबा शरीफ़ से अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) है या नहीं?

उत्तर: तुर्बत-ए-अतहर यानी वह ज़मीन जो जिस्म-ए-अनवर से मिली हुई है, काबा मुअज़्ज़मा बल्कि अर्श से भी अफ़ज़ल है। अकील अल-हनबली ने इसे स्पष्ट किया है और विद्वानों ने इसे स्वीकार किया है। (अबू अकील हनबली ने इसकी स्पष्ट व्याख्या की है और तमाम उलेमा ने इसे कुबूल किया है। - अनु.)

जहाँ तक मज़ार शरीफ़ के ऊपरी हिस्से की बात है, वह इसमें शामिल नहीं है। काबा मुअज़्ज़मा मदीना तय्यबा से अफ़ज़ल है, हाँ इस बात में मतभेद है कि मदीना तय्यबा (तुर्बत-ए-अतहर के स्थान को छोड़कर) और मक्का मुअज़्ज़मा (काबा मुकर्रमा को छोड़कर) इन दोनों में कौन अफ़ज़ल है। अधिकांश लोग दूसरे पक्ष (मक्का) की ओर हैं, लेकिन हमारा मार्ग पहला (मदीना) है और यही हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) का मज़हब है। तबरानी की हदीस में साफ़ तौर पर ज़िक्र है कि "अल-मदीनातु अफ़ज़लु मिम मक्का" (मदीना - जिस पर रहने वाले पर दुरूद व सलाम हो - मक्का से अफ़ज़ल है। - अनु.)। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

---

1. मस्लक अल-मुतकस्सित मआ इरशाद अल-सारी, बाब ज़ियारत सैयिद अल-मुरसलीन सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरूत, पृ. 336.
2. अल-मुअजम अल-कबीर लित-तबरानी, हदीस 4501, अल-मकतबा अल-फ़ैसलिया, बेरूत, 2/288.

فتاوی رضویہ جلد دہم

پر پہلے سے واجب ہو لیا ہے اور اپنی کاہلی سے اب تک ادا نہ کیا ان پر سے وجوب ساقط نہیں ہو سکتا، غایت یہ کہ جس سال امن نہ ہو ناثابت ہو ، وجوب ادا نہ ہو گا جب باذنہ تعالیٰ امن ہو جائے واجب الادا ہو گا۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۳۱۰: از قادری گنج ضلع بیرم بھوم ملک بنگالہ مرسلہ سید ظہور الحسین صاحب قادری رزاقی کرمانی ۲۳ جمادی الاولی ۱۳۳۶ھ

حضور سرورِ کائنات (صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم) کا مزار اقدس بلکہ مدینہ طیبہ عرش و کرسی و کعبہ شریف سے افضل ہے یا نہیں؟

الجواب: تربت اطہر یعنی وہ زمین کہ جسم انور سے متصل ہے کعبہ معظمہ بلکہ عرش سے بھی افضل ہے صرح بہ عقیل الحنبلی وتلقاہ العلماء بالقبول (اس پر ابو عقیل حنبلی نے تصریح کی اور تمام علماء نے اسے قبول کیا ۔ ت)

باقی مزار شریف کا بالائی حصہ اس میں داخل نہیں کعبہ معظمہ مدینہ طیبہ سے افضل ہے، ہاں اس میں اختلاف ہے کہ مدینہ طیبہ سوائے موضع تربت اطہر اور مکہ معظمہ سوائے کعبہ مکرمہ ان دونوں میں کون افضل ہے ، اکثر جانب ثانی ہیں اور اپنا مسلک اول اور یہی مذہب فاروق اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ ہے، طبرانی کی حدیث میں تصریح ہے کہ المدینہ افضل من مکۃ (مدینہ (علی صاحبہا الصلوۃ والسلام) مکہ سے افضل ہے۔ ت) واللہ تعالیٰ اعلم۔

---

1 مسلک متقسط مع ارشاد الساری باب زیارۃ سید المرسلین صلی اللہ علیہ وسلم دار الکتاب العربی بیروت ص ۳۳۶ 2 المعجم الکبیر للطبرانی حدیث ۴۵۰۱ المکتبہ الفیصلیہ بیروت ۲۸۸/۲

Fatawa Razawiya Volume 10

Chapter on Offenses in Hajj (Explanation of Hajj Offenses)

Issue 311: From Ujjain, at the house of Mir Khadim Ali Sahib, Assistant. Sent by Mulla Yaqub Ali Khan. 4 Rajab 1311 AH.

What do the scholars of religion say regarding this issue: if a person in the state of Ihram forgetfully puts a cloth on their head for a short while, the ruling is to give a 'mann' of wheat. If it is not given in Mecca but given here, what is the ruling? Does it cause any defect in Hajj, as this is commendable, and if one has to cover the head due to some excuse, what is the ruling?

Answer: Any man who covers his entire head or one-fourth of it while in the state of Ihram in a manner that is customarily considered covering the head—such as wearing a cap, tying a turban, wrapping a shawl over the head, putting a cloth on the head due to the sun, tightening the head due to pain, or tying a bandage because of a wound (not carrying a bundle, box, or tray etc. on the head, as these are not included in covering the head)—is absolutely required to pay a penalty. This applies even if it happened forgetfully, while sleeping, while unconscious, or even due to an excuse. However, there is no defect in the validity of the Hajj; yes, it is a type of shortcoming for which a penalty has been fixed as compensation, just as the prostration of forgetfulness (Sajda Sahw) is for forgetfully omitting a mandatory act in prayer. The difference between having an excuse and not having one is this: if someone covers their head without an excuse for a full day or a full night or longer, then they must perform a sacrifice specifically within the Haram whenever they wish; there is no other method of expiation. If it was covered for such a duration due to an excuse, such as fever, cold, a wound, or pain, then they have a choice: perform a sacrifice in the Haram, or wherever they wish [give] three Sa' of wheat or, for example, six Sa' of barley to six poor people, or three...

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (10)

बाब अल-जिनायात फ़िल-हज (हज के अपराधों का बयान)

मसला 311: उज्जैन से, मीर खादिम अली साहब असिस्टेंट के मकान से, मुर्सला मुल्ला याकूब अली खां। 4 रजब 1311 हिजरी।

दीन के विद्वान इस मसले में क्या फ़रमाते हैं कि जो व्यक्ति एहराम की स्थिति में भूलवश थोड़ी देर के लिए अपने सिर पर कपड़ा डाल ले, तो हुक्म है कि एक मन गेहूं दे; और जो मक्का में न देकर यहाँ दे, तो क्या हुक्म है? हज में तो कोई खलल (कमी) नहीं आता क्योंकि यह मुस्तहब है, और यदि किसी मजबूरी (उज़्र) के कारण सिर ढकना पड़े, तो क्या हुक्म है?

जवाब: जो पुरुष एहराम की हालत में अपना पूरा या चौथाई सिर ढके जिसे सामान्यतः सिर ढकना कहा जाए—जैसे टोपी पहनना, इमामा (साफ़ा) बाँधना, सिर से चादर ओढ़ना, धूप के कारण सिर पर कपड़ा डालना, दर्द के कारण सिर कसना, घाव की वजह से पट्टी बाँधना (सिर पर गठरी, संदूक या तश्तरी आदि उठाना इसमें शामिल नहीं है क्योंकि इसे सिर ढकना नहीं माना जाता)—उस पर पूर्णतः जुर्माना वाजिब है, चाहे वह भूल से हो, चाहे सोते में, चाहे बेहोशी में, या चाहे किसी मजबूरी से हो। हालांकि, हज की वैधता में कोई खलल नहीं आता। हाँ, यह एक प्रकार की कमी है जिसकी भरपाई के लिए जुर्माना तय किया गया है, जैसे नमाज़ में भूलवश वाजिब छूट जाने पर सज्दा-ए-सह्व। मजबूरी और बिना मजबूरी में इतना अंतर है: यदि बिना किसी मजबूरी के एक पूरा दिन या पूरी रात या उससे अधिक समय तक सिर ढका रहा, तो विशेष रूप से हरम में ही एक कुर्बानी करनी होगी जब चाहे करे, कफ़्फ़ारे का दूसरा कोई तरीका नहीं है। और यदि किसी मजबूरी जैसे बुखार, सर्दी, घाव या दर्द के कारण इतनी अवधि तक सिर ढका रहा, तो उसे अधिकार होगा कि हरम में कुर्बानी करे, या जहाँ चाहे तीन सा' गेहूं या मिसाल के तौर पर छह सा' जौ, छह गरीबों को दे या तीन...

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

باب الجنایات فی الحج (جنایاتِ حج کا بیان)

مسئلہ ۳۱۱: از اوجین مکان میر خادم علی صاحب اسٹنٹ مرسلہ ملا یعقوب علی خاں ۴ رجب ۱۳۱۱ھ

کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ جو شخص احرام میں ذرا دیر سر پر بھولے سے کپڑا ڈال لے تو حکم ہے کہ من گیہوں دے اور جو مکہ میں نہ دے یہاں دے کیا حکم ہے؟ حج میں تو خلل نہیں کہ یہ مستحب ہے اور اگر کسی عذر کے سبب سر چھپانا پڑے تو کیا حکم ہے؟

الجواب: جو مرد اپنا سارا یا چوتھائی سر بحالتِ احرام چھپائے جسے عادۃً سر چھپانا کہیں، جیسے ٹوپی پہننا، عمامہ سر باندھنا، سر سے چادر اوڑھنا، دُھوپ کے باعث سر پر کپڑا ڈالنا، درد کے سبب سر کسنا، زخم کی وجہ سے پٹی باندھنا (نہ گٹھڑی یا صندوق یا خوان وغیرہ کا سر پر اٹھانا کہ یہ سر چھپانے میں داخل نہیں) اس پر مطلقاً جرمانہ واجب ہے اگرچہ بھولے سے، اگرچہ سوتے میں، اگرچہ بیہوشی میں اگر چہ عذر سے، مگر صحتِ حج میں خلل نہیں، ہاں ایک طرح کا قصور ہے جس کی تلافی کو جرمانہ مقرر ہوا، جیسے نماز میں سہوًا ترک واجب سے سجدہ، عذر و بے عذر میں اتنا فرق ہے اگر بے عذر ایک دن کامل یا ایک رات کامل یا اس سے زائد سر چھپارہا تو خاص حرم میں ایک قربانی ہی کرنی ہوگی جب چاہے کرے، دوسرا طریقہ کفارہ کا نہیں اور عذر مثلاً بخار یا سردی یا زخم یا درد کے سبب اتنی مدت چھپایا تو اختیار ہوگا حرم میں قربانی کرے یا جہاں چاہے یا تین صاع گیہوں یا مثلاً چھ صاع جو، چھ مسکینوں کو دے یا تین

Fatawa Ridawiyya - Volume 10

He may observe the fasts as he pleases. If he remained covered for less than the duration of a full day or night, regardless of how brief the duration was, then in the absence of a valid excuse, a specific charity equivalent to Sadaqah al-Fitr becomes mandatory. This means half a 'sa' of wheat or, for instance, one 'sa' of barley, which may be given anywhere. In the case of a valid excuse, he has a choice: either to give this charity or to observe one fast anywhere he wishes. One 'sa' equals two hundred and seventy tolas, and the English silver rupee weighs eleven and a quarter mashas. Thus, in a place where a 'seer' weighs one hundred rupees, such as our city of Bareilly, according to the local weight, a 'sa' amounts to two and three-quarter seers plus half a 'pao', five mashas, and five ratti. Half a 'sa' equals one and a quarter seers plus three 'chhatanks', six and a half ratti, and two mashas, which is slightly less than one and a half seers. Half of this half 'sa' is termed 'mudd' and 'mann' in Arabic. Therefore, for covering the head with a cloth for a brief period, the ruling is not for a 'mann' of wheat; rather, the reliable narration specifies two 'mann'.

[Table Content] Arabic Text: "In al-Durr al-Mukhtar: A sacrifice (dam) is mandatory for every adult pilgrim (muhrim), even if it was done out of forgetfulness, ignorance, or compulsion. Thus, it is mandatory for a sleeping person who covered his head or covered his head (i.e., all of it or a quarter of it) with something customary. However, by carrying a tub or a load, there is nothing due upon him. (If covered for) a full day or a full night. And for less than that (which includes one hour or less), he should give half a 'sa' of wheat as charity, like Sadaqah al-Fitr (this indicates that the restriction of half a 'sa' of wheat is incidental, so it is permissible to give one 'sa' of dates or barley, from al-Quhistani). And if it was due to an excuse (excuses include fever, cold, injury, boil, headache, migraine, and lice), and (as for error, forgetfulness, fainting, compulsion, sleep, and inability to pay the expiation, these are not considered excuses), he has a choice: if he wishes, he can sacrifice in the Haram, or give three 'sa' of food to six needy people wherever he wishes, or fast for three days, even if they are separate."

Urdu Translation/Commentary: "In Durr al-Mukhtar and Radd al-Muhtar, it is stated that a sacrifice (dam) is mandatory for every adult pilgrim (muhrim), whether the act was done out of forgetfulness, ignorance, compulsion, or while asleep. If a pilgrim covers their entire head or a quarter of it as a habit for a full day or a full night, a sacrifice is required. If someone carries a tub or a bundle, nothing is mandatory. If the head is covered for less than a day (the term 'less' includes one hour and less

than that), then one 'sa' of wheat shall be given as charity, like Sadaqah al-Fitr (this passage indicates that the mention of half a 'sa' of wheat is incidental and not restrictive; thus, one 'sa' of dates or barley may be given, as per al-Quhistani). Even if it was due to an excuse (excuses include fever, cold, wounds, boils, migraines, headaches, and lice; however, error, forgetfulness, fainting, compulsion, sleep, or inability to pay expiation do not qualify as excuses), he has the choice: he can sacrifice in the Haram, give three 'sa' of food to six needy people wherever he wishes, or observe three fasts, even on non-consecutive days (this applies in the case of...)"

वह जैसे चाहे रोज़े रख सकता है। यदि वह पूरे दिन या रात की अवधि से कम समय के लिए ढका रहा, चाहे वह कितनी ही कम अवधि क्यों न हो, तो बिना किसी वैध बहाने के, सदका-ए-फ़ित्र के समान एक विशिष्ट दान अनिवार्य हो जाता है। इसका अर्थ है आधा 'सा' गेहूं या, उदाहरण के लिए, एक 'सा' जौ, जो कहीं भी दिया जा सकता है। वैध बहाने की स्थिति में, उसके पास विकल्प होगा: या तो वह यह दान दे या जहाँ चाहे एक रोज़ा रख ले। एक 'सा' दो सौ सत्तर तोले के बराबर होता है, और अंग्रेजी चांदी का रुपया सवा ग्यारह माशे का होता है। इस प्रकार, जिस स्थान पर एक 'सेर' सौ रुपये के बराबर होता है, जैसे हमारे शहर बरेली में, वहां के वजन के अनुसार, एक 'सा' पौने तीन सेर प्लस आधा 'पाव', पांच माशे और पांच रत्ती के बराबर होता है। आधा 'सा' सवा सेर प्लस तीन 'छटांक', साढ़े छह रत्ती और दो माशे के बराबर होता है, जो डेढ़ सेर से थोड़ा कम है। इस आधे 'सा' के आधे को अरबी में 'मुद्द' और 'मन' कहा जाता है। इसलिए, थोड़े समय के लिए सिर पर कपड़ा डालने के लिए, एक 'मन' गेहूं का नियम नहीं है; बल्कि, विश्वसनीय विवरण में यह दो 'मन' के लिए है।

[तालिका सामग्री] अरबी पाठ: "अल-दुर्र अल-मुख्तार में: प्रत्येक वयस्क तीर्थयात्री (मुहरिम) के लिए एक बलिदान (दम) अनिवार्य है, भले ही वह भूलवश, अज्ञानता या मजबूरी में किया गया हो। इस प्रकार, सोते हुए व्यक्ति के लिए अनिवार्य है जिसने अपना सिर ढक लिया या अपना सिर (यानी, इसका पूरा या एक चौथाई हिस्सा) किसी प्रथागत चीज़ से ढक लिया। हालाँकि, टब या बोझ ढोने से उस पर कुछ भी अनिवार्य नहीं है। (यदि ढका हुआ हो) पूरे दिन या पूरी रात के लिए। और उससे कम के लिए (जिसमें एक घंटा या उससे कम शामिल है), उसे दान के रूप में गेहूं का आधा 'सा' देना चाहिए, जैसे सदका-ए-फ़ित्र (यह इंगित करता है कि गेहूं के आधे 'सा' का प्रतिबंध आकस्मिक है, इसलिए अल-कुहिस्तानी के अनुसार खजूर या जौ का एक 'सा' देना स्वीकार्य है)। और यदि यह किसी बहाने के कारण था (बहानों में बुखार, सर्दी, चोट, फोड़ा, सिरदर्द, माइग्रेन और जूं शामिल हैं), और (जहाँ तक गलती, भूल, बेहोशी, मजबूरी, नींद और प्रायश्चित भुगतान करने में असमर्थता का सवाल है, इन्हें बहाना नहीं माना जाता है), उसके पास विकल्प है: यदि वह चाहे तो हरम में बलिदान कर सकता है, या जहाँ चाहे छह जरूरतमंद लोगों को भोजन के तीन 'सा' दे सकता है, या तीन दिन रोज़ा रख सकता है, भले ही वे अलग-अलग हों।"

उर्दू अनुवाद/टीका: "दुर्रे मुख्तार और रद-उल-मुहतार में उल्लेख है कि प्रत्येक वयस्क तीर्थयात्री (मुहरिम) के लिए एक बलिदान (दम) अनिवार्य है, चाहे वह कार्य भूलवश, अज्ञानता, मजबूरी में या

नींद की स्थिति में किया गया हो। यदि कोई मुहरिम आदत के रूप में पूरे दिन या पूरी रात के लिए अपना पूरा सिर या उसका एक चौथाई हिस्सा ढक लेता है, तो बलिदान आवश्यक होगा। यदि कोई टब या गठरी उठाता है, तो कुछ भी अनिवार्य नहीं है। यदि सिर दिन भर से कम समय के लिए ढका गया हो (शब्द 'कम' में एक घंटा और उससे कम भी शामिल है), तो गेहूं का एक 'सा' दान के रूप में दिया जाएगा, जैसे सदका-ए-फ़ित्र (यह लेख इंगित करता है कि गेहूं के आधे 'सा' का उल्लेख आकस्मिक है और प्रतिबंधात्मक नहीं है; इस प्रकार, अल-कुहिस्तानी के अनुसार, खजूर या जौ का एक 'सा' दिया जा सकता है)। भले ही यह किसी बहाने के कारण हो (बहानों में बुखार, सर्दी, घाव, फोड़े, माइग्रेन, सिरदर्द और जूं शामिल हैं; हालाँकि, गलती, भूल, बेहोशी, मजबूरी, नींद, या प्रायश्चित देने में असमर्थता बहाने के रूप में मान्य नहीं हैं), उसके पास विकल्प है: वह हरम में बलिदान कर सकता है, जहाँ चाहे छह जरूरतमंद लोगों को तीन 'सा' भोजन दे सकता है, या तीन रोज़े अलग-अलग दिनों में रख सकता है (यह उस स्थिति में है...)"

पृष्ठ 836 का 721

روزے جس طرح چاہے رکھ لے، اور اگر کامل دن یا رات کی مدت سے کم چھپا رہا اگرچہ کتنی ہی تھوڑی دیر کو تو بے عذری کی صورت میں صدقہ فطر کی طرح خاص صدقہ ہی لازم ہوگا، یعنی نیم صاع گیہوں یا مثلاً ایک صاع جو کہ جہاں چاہے دے اور بصورت عذر مختار ہو گا چاہے یہ صدقہ دے یا ایک روزہ جہاں چاہے رکھ لے۔ ایک صاع دو سو ستر تولے کا ہوتا ہے اور سکہ انگریزی روپیہ سواگیارہ ماشے کا، تو جہاں سو روپے بھر کا سیر ہے جیسے ہمارے شہر بریلی میں وہاں کی تول سے صاع پانچ ماشے پانچ رتی اوپر آدھ پاؤ پونے تین سیر کا ہوا، اور نصف صاع دو ماشے ساڑھے چھ رتی اوپر تین چھٹانک سوا سیر کا یعنی کچھ کم ڈیڑھ سیر، اس نصف صاع کے آدھے کو عربی میں مد اور من کہتے ہیں۔ تو ذرا دیر کپڑا سر پر ڈالنے میں من بھر گیہوں کا حکم نہیں بلکہ معتمد روایت میں دو من کا ہے۔

| فی الدر المختار، الواجب دم علی محرم بالغ و لو ناسیاً او جاہلاً او مکرھاً فیجب علی نائم غطی راسه او ستر راسه (ای کله او ربعه) بمعتاد، اما بحمل اجانة او عدل فلا شی علیه، یوماً کاملاً او لیلة کاملة وفی الاقل (شمل الاقل الساعة الواحدة او مادونها) تصدق بنصف صاع من بر، کالفطرة (افاد ان التقیید بنصف الصاع من البر اتفاقی فیجوز اخراج الصاع من التمر او الشعیر من القهستانی) و بعذر (ومن الاعذار الحمی والبرد والجرح والقرح والصداع والشقیقة والقمل) و (اما الخطاء والنسیان والاغماء والاکراہ و النوم وعدم القدرة علی الکفاره فلیست بأعذار خیر ان شاء ذبح في الحرم او تصدق بثلاثة اصوع طعام علی ستة مساکین این شاء اوصام ثلثة ایام ولو متفرقة | در مختار اور ردالمحتار میں ہے ہر محرم بالغ پر دم واجب ہوتا ہے خواہ اس نے وہ عمل نسیاناً یا جہالۃً یا مجبوراً کیا ہو یا حالتِ نیند میں محرم نے اگر بطور عادت پورا دن یا پوری رات سر ڈھانپ لیا (تمام سر یا چوتھائی

سر) تو دم لازم ہوگا، اگر کسی نے ٹب یا گٹھڑی اٹھائی تو کوئی شے لازم نہیں، اور اگر دن سے کم وقت سر ڈھانپا (لفظ اقل ایک ساعت اور اس سے کم کو بھی شامل ہے) تو گندم کا ایک صاع صدقہ کیا جائیگا جیسے فطرانہ (یہ عبارت بتارہی ہے کہ نصف صاع گندم کا تذکرہ اتفاقی ہے احترازی نہیں، تو ایک صاع کھجور یا جو دے سکتے ہیں، قہستانی(اگر چہ عذر کی وجہ سے ہو (اعذار میں سے بخار، سردی، زخم، پھوڑا، شقیقہ وسر کا درد اور جوں کا ہونا ہے لیکن عمل خطا، نسیاناً، اغماء، مجبوری نیند یا کفارہ پر عدم قدرت، یہ عذر نہیں بن سکتے) اسے اختیار ہے چاہے حرم میں دم ذبح کرے یا جہاں چاہے چھ مساکین کو تین صاع طعام دے دے یا تین روزے متفرق طور پر رکھ لے (یہ اس صورت میں ہے |

Fatawa Razawiya Volume 10

هذا فيما يجب فيه الدم اما ما يجب فيه الصدقة ان شاء تصدق بما وجب عليه من نصف صاع او اقل على مسكين او صام يوما كما في اللباب) 1 Both passages are summarized, and in Al-Shami as well, it is mentioned that fasting is not restricted to the Haram, so he can fast wherever he wishes. 2. And it also states that all obligatory expiations are due upon delay, so they can be performed at any time. 3. And Allah Almighty knows best.

Where blood [sacrifice] is mandatory and in cases where charity is mandatory, if one wishes, one can give half a sa' or less to a poor person or keep one day's fast, Al-Lubab) Both these statements are brief, and in Fatawa Shami it is also mentioned that similarly, fasting is not specific to the Haram; one can fast wherever one wants. And it is also mentioned there that it is not mandatory to pay all obligatory expiations immediately, therefore, whenever it is paid, it will be fulfilled. And Allah Almighty knows best. (T)

Issue 312: From Hafiz Abdul Majid, Town Tehsil Swar, Special Territory State of Rampur, Tuesday 10 Rabi al-Akhir 1334 AH. Is it permissible according to Sharia for a person in Ihram to use joinings (stitching/joining of cloth)?

Answer: One should avoid sewn things, and the state of necessity is an exception. And Allah Almighty knows best.

Issue 313: From Mumbai, Qassaban locality, adjacent to Crawford Market, Gore Babu's house, inquired by Hazrat Syed Hamid Hussain Miyan Sahib Qibla, may his shadow endure, 4 Dhu al-Qi'dah 1329 AH. Respected and honored one, may his high shadow endure, Peace be upon you and the mercy and blessings of Allah. A few matters need clarification; please inform via return mail, bearing the trouble. It would not be far from elder's compassion. First: That women place a fan of palm leaves over their faces. Certainly, that fan touches the temples, nose, and mouth, and the face also remains hidden. What should be done in the state of Ihram? While praying, when there is no place for Purdah (seclusion), if the fan is held high, it will barely stay. Besides, it is difficult to keep the face hidden from the eyes of non-Mahrams (unrelated men). Regarding this, clearly...

1. Durr al-Mukhtar, Chapter of Criminal Offenses, Mujtabai Press Delhi 1/173 to 175, Radd al-Muhtar, Chapter of Criminal Offenses, Mustafa Al-Babi Egypt 2/217 to 228
2. Radd al-Muhtar, Chapter of Criminal Offenses, Mustafa Al-Babi Egypt 3/228

3. Radd al-Muhtar, Chapter of Criminal Offenses, Mustafa Al-Babi Egypt 2/217

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (खंड 10)

(यह उस बारे में है जिसमें रक्त [बलि] अनिवार्य है; जहाँ तक दान का सवाल है, यदि वह चाहे तो जो उस पर अनिवार्य है, आधे सा' या उससे कम किसी गरीब को दान कर दे, या एक दिन का उपवास रखे जैसा कि अल-लुबाब में है) 1. दोनों उद्धरण संक्षिप्त हैं, और शामी में भी इसी तरह है कि उपवास हरम तक सीमित नहीं है, वह जहाँ चाहे उपवास रख सकता है। 2. और इसमें यह भी है कि सभी अनिवार्य प्रायश्चित (कफ्फारा) विलंब के साथ देय हैं, इसलिए वे किसी भी समय अदा किए जा सकते हैं। 3. और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

जहाँ दम (बलि) लाज़िम होता है और जिस स्थिति में सदका (दान) लाज़िम होगा तो अगर चाहे तो आधा सा' या उससे कम किसी गरीब को दे दे या एक दिन का रोज़ा रख ले, अल-लुबाब) ये दोनों इबारतें मुख्तसर (संक्षिप्त) हैं, और फ़तावा शामी में भी इसी तरह है कि इसी तरह रोज़ा हरम के साथ विशिष्ट नहीं है जहाँ चाहे रख सकता है, और इसमें यह भी है कि तमाम वाज़िब कफ़्फ़ारों (प्रायश्चितों) की अदायगी तुरंत लाज़िम नहीं है लिहाज़ा वह जिस वक्त भी अदा करेगा अदा हो जाएगा। वल्लाह तआला आलम। (त)

मसला 312: हाफ़िज़ अब्दुल मजीद, कस्बा तहसील सवार, विशेष क्षेत्र रियासत रामपुर, मंगलवार 10 रबी-उल-आख़िर 1334 हिजरी। एहराम की स्थिति में मुहरिम (एहराम बाँधने वाला) के लिए कपड़ों में जोड़ लगाना शरीयत के अनुसार जायज़ है या नहीं?

उत्तर: सिली हुई चीज़ से बचना चाहिए और ज़रूरत की स्थिति अपवाद है। वल्लाह तआला आलम।

मसला 313: मुम्बई, कस्साबां मोहल्ला, क्रॉफ़र्ड मार्केट के पास, गोरे बाबू का घर, हज़रत सैय्यद हामिद हुसैन मियां साहिब क़िबला (उनका साया बना रहे) द्वारा पूछा गया, 4 ज़िलक़ाद 1329 हिजरी। आदरणीय सम्मानीय (मद ज़िल्लहु अल-आली), आप पर शांति और अल्लाह की दया और बरकतें हों। कुछ बातें पूछनी हैं; कृपया वापसी डाक से सूचित करने का कष्ट करें। यह बुजुर्गों की दया से दूर नहीं होगा। पहला: यह कि औरतें चेहरे पर खजूर का पंखा लगा लेती हैं, निश्चित रूप से वह पंखा कनपटी और नाक और मुँह से लगता है और चेहरा ढका भी रहता है। एहराम की स्थिति में

क्या करना चाहिए? नमाज़ पढ़ते समय, जब परदे की जगह न हो, पंखा ऊँचा उठाना मुश्किल से रुकेगा। इसके अलावा, गैर-महरमों की नज़र से चेहरा छुपाना मुश्किल है। इस बारे में साफ़...

1. दुर्र अल-मुख्तार, बाब अल-जिनायात, मतबा मुज्तबाई दिल्ली 1/173 से 175, रद अल-मुह्तार, बाब अल-जिनायात, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 2/217 से 228
2. रद अल-मुह्तार, बाब अल-जिनायात, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 3/228
3. रद अल-मुह्तार, बाब अल-जिनायात, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 2/217

(هذا فیما یجب فیه الدم اما ما یجب فیه الصدقة ان شاء تصدق بما وجب علیه من نصف صاع او اقل علی مسکین او صام یوما کما في اللباب) ۱ اه ملتقطین وفي الشامیة ایضا وکذا الصوم لا یتقید بالحرم فیصومه این شاء ۲ اه وفیها ایضا الکفارات کلها واجبة علی التراخی فیکون مؤدیانی ای وقت ۳ اه واللہ تعالی اعلم۔

جہاں دم لازم ہوتا ہے اور جس صورت میں صدقہ لازم ہوگا تو اگر چاہے تو نصف صاع یا اس سے کم کسی مسکین کو دے دے یا ایک دن کا روزہ رکھ لے، اللباب) اہ دونوں عبارتیں مختصر ہیں، اور فتاوی شامی میں بھی اسی طرح ہے کہ اور اسی طرح روزہ حرم کے ساتھ مخصوص نہیں جہاں چاہے رکھ سکتا ہے اھ، اور اس میں یہ بھی ہے کہ تمام کفارات واجبہ کی ادائیگی فی الفور لازم نہیں لہٰذا وہ جس وقت بھی ادا کرے ادا ہو جائے گا اھ واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۳۱۲: از حافظ عبدالمجید قصبہ تحصیل سوار خاص علاقہ ریاست رامپور بروز سہ شنبہ ۱۰ ربیع الآخر ۱۳۳۴ھ محرم کو احرام میں جوڑ لگانا عند الشرع جائز ہے یا نہیں؟

الجواب: سلی ہوئی چیز سے بچنا چاہئے اور حالت ضرورت مستثنے ہے۔ واللہ تعالیٰ اعلم

مسئلہ ۳۱۳: از بمبئی محلہ قصاباں متصل کرافٹ مارکیٹ مکان گورے بابو صاحب مسئولہ حضرت سید حامد حسین میاں صاحب قبلہ دام ظلہم ۴ ذیقعدہ ۱۳۲۹ھ معظمی مکرمی مد ظلہ العالی السلام علیکم ورحمتہ اللہ وبرکاتہ چند امور دریافت طلب ہیں بہ گوارائے تکلیف بواپسی ڈاک مطلع فرمایئے بعید از شفقت بزرگانہ نہ ہوگا، اول: یہ کہ مستورات منہ پر پنکھا کھجور کا لگا لیتی ہیں یقینا وہ پنکھا کنپٹی اور ناک اور منہ سے لگتا ہے اور چہرہ پوشیدہ بھی رہتا ہے احرام کی حالت میں کیا

کرنا چاہئے، نماز پڑھتے وقت جبکہ پردہ کی جگہ نہ ہو پنکھا اونچا اٹھا ہو مشکل سے رکے گا، علاوہ ازیں چہرہ نامحرمان کی نظر سے مخفی رکھنا دشوار ہے اس کے متعلق صاف

۱ درمختار باب الجنایات مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۷۳ تا ۱۷۵، ردالمختار باب الجنایات مصطفی البابی مصر ۲ / ۲۱۷ تا ۲۲۸ ۲ ردالمختار باب الجنایات مصطفی البابی مصر ۳ / ۲۲۸ ۳ ردالمختار باب الجنایات مصطفی البابی مصر ۲ / ۲۱۷

Fatawa Ridawiyyah Volume 10

...written in words that can be understood.

Second (2): This humble servant is accustomed to eating tobacco with betel leaf (pan), although not a single drop of saliva goes down the throat. Not eating tobacco will cause severe discomfort. It is also mentioned that a very small amount of musk and saffron is present in this tobacco; a small amount of tobacco is sent for your observation.

The Answer: By the honor of the high observation of the blessed and highly ranked gentlemen, Hazrat Maulana Syed Shah Hamid Hussain Miyan Sahib Qiblah, may his blessings endure. Peace be upon you, and the mercy of Allah and His blessings. After performing respects, it is submitted: tie the fan (cloth or headcover used as a fan) firmly on the head so that it stays up, and let it be large so that in the habit of keeping it up, the face remains hidden from strangers. Even then, if it occasionally slips onto the face or touches the temple, nose, or mouth, as long as it does not cover one-fourth of the mouth's area, there is no expiation (kaffarah), neither sacrifice (qurbani) nor charity (sadaqah), because one-fourth of the mouth was not covered nor did it remain continuously for four watches (approx. 12 hours). In this case, it would be dislikeable (karahat) and sinful if done intentionally, but since it is unintentional and not maintained, there is no accountability. However, if one-fourth of the mouth's area is covered, then giving charity (sadaqah) will certainly become necessary. If there is a sincere commitment to follow the commands issued by the Pure Shariah, then He Who issued the commands helps and makes it easy. Regarding tobacco that is cooked by adding fragrance into its essence (qiwam), eating it is absolutely permissible, even if it gives a fragrance. Yes, choosing it solely for the purpose of fragrance is not free from dislikeability. If the focus is not towards the fragrance but towards the other usual benefits of tobacco, then there is no harm. And if unbaked fragrance like musk etc. is included in it and it is giving fragrance, then also there is no expiation, though dislikeability is definitely there. This dislikeability is not dependent on the stain/spit (peek) touching; even tying fragrance in the corner of a garment is prohibited. Yes, if the musk added was so little that it doesn't give a fragrance or the fragrance has faded over time, then there is no dislikeability either. It is mentioned in 'Lubab' and 'Sharh al-Lubab':

[Arabic Quote Table] Arabic Text: At-Teebu iza akhalatahu bi-ta'amin qad tubikha fala shay-a alaihi ittifaqan, sawa-un yujadu reehuhu aw la, li-annahu bil-khalti wat-tabkhi

yaseeru mustahlakan fala yu'tabaru wujuduhu aslan. Wa in khalatuhu bima yu'kalu bila tabkhin kaz-za'farani bil-milhi fal-'ibratu bil-ghalabati. Fa in kanal-ghalibu al-milhu ay ajza'uhu la ta'muhu wa launuhu...

Urdu Translation in Table: If fragrance is mixed in some food that was cooked, then nothing will be mandatory for the Muhrim (person in Ihram) by consensus, whether the scent remains or not, because it has been destroyed and ended by mixing and cooking; now its existence will not be considered at all. And if it is mixed in an edible item but not cooked in it, like saffron being mixed in salt, then dominance (prevalence) will be considered. If the salt's parts (meaning its substance, not taste and color) are more, then now nothing is mandatory...

...शब्दों में लिखें जो समझ में आ सकें।

दूसरा (2): यह कि फ़क़ीर पान के साथ तंबाकू खाने का आदी है, हालांकि लार का एक कतरा भी गले से नीचे नहीं उतरता, तंबाकू न खाने की वजह से बहुत तकलीफ़ होगी। इस तंबाकू में कस्तूरी (मुश्क) और केसर (ज़ाफ़रान) की बहुत कम मात्रा होने की बात भी कही जाती है। आपके अवलोकन के लिए थोड़ा सा तंबाकू भेजा जा रहा है।

अल-जवाब (उत्तर): माननीय हज़रात, बरकत वाले और ऊंचे दर्जे के हज़रत मौलाना सैयद शाह हामिद हुसैन मियां साहब क़िबला, उनकी बरकतें बनी रहें, अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह व बरकातहु। आदाब पेश करने के बाद अर्ज़ है: पंखे (सर को ढंकने वाला कपड़ा) को सर पर मज़बूती से बांधें ताकि वह उठा रहे और बड़ा हो ताकि उठाए रखने की आदत में चेहरा अजनबियों से छुपा रहे। फिर भी अगर कभी-कभार चेहरा पर ढलक आए या कनपटी या नाक या मुंह से लगे, अगर मुंह के हिस्से के एक चौथाई तक न पहुंचे, तो कोई कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) नहीं है, न क़ुर्बानी न सदक़ा, क्योंकि न तो एक चौथाई मुंह छुपाया गया और न ही चार पहर (लगभग 12 घंटे) तक लगातार रहा। इस सूरत में नापसंदगी (कराहत) और गुनाह होता अगर वह जानबूझकर होता, लेकिन चूंकि वह बिना इरादे के है और उसे बरकरार नहीं रखा गया, तो कोई पकड़ नहीं है। हां, अगर मुंह का एक चौथाई हिस्सा छुप जाएगा, तो सदक़ा देना ज़रूर ज़रूरी होगा। शरीअत-ए-मुतह्हरा ने जो हुक्म दिए हैं, अगर सच्चे दिल से उनका पालन करने का इरादा हो, तो वही (अल्लाह) हुक्मों में मदद करता है और उन्हें आसान कर देता है। तंबाकू जिसे उसके सार (क़वाम) में खुशबू डालकर पकाया गया हो, उसे खाना बिल्कुल जायज़ है, चाहे वह खुशबू देता हो। हां, केवल खुशबू के इरादे से उसे अपनाना नापसंदगी से खाली नहीं है, और अगर ध्यान खुशबू की तरफ न हो बल्कि तंबाकू के अन्य फायदों की तरफ हो, तो कोई हर्ज नहीं है। और अगर बिना पकाए खुशबू जैसे कस्तूरी आदि इसमें शामिल हो और खुशबू दे रही हो, तब भी कोई कफ़्फ़ारा नहीं है, अलबत्ता नापसंदगी ज़रूर है। यह नापसंदगी पीक लगने पर निर्भर नहीं है, क्योंकि खुशबू को पल्लू में बांधना भी मना है। हां, अगर कस्तूरी इतनी कम पड़ी कि खुशबू न दे या समय बीतने के कारण खुशबू खत्म हो गई हो, तो नापसंदगी भी नहीं है। 'लुबाब' और 'शरह अल-लुबाब' में है:

[अरबी उद्धरण तालिका] अरबी पाठ: الطيب اذا اخلطہ بطعام قد طبخ فلا شئ عليه اتفاقا سواء يوجد ريحه اولا لانه بالخلط والطبخ يصير مستہلكاً فلا يعتبر وجوده اصلاً وان خلطہ بما يؤكل بلا طبخ كالزعفران بالملح فالعبرة بالغلبۃ۔ فان كان الغالب الملح ای اجزاہ لا طعمہ ولونہ

हिंदी अनुवाद: अगर खुशबू किसी ऐसे खाने में मिलाई गई जिसे पकाया गया, तो अब मोहरिम (एहराम में व्यक्ति) पर आम सहमति से कुछ भी अनिवार्य नहीं होगा, चाहे सुगंध बनी रहे या नहीं, क्योंकि वह मिलने और पकने से खत्म हो गई है; अब उसके अस्तित्व का कोई विचार नहीं किया जाएगा। और अगर वह खाने वाली चीज़ में मिली लेकिन उसमें पकी नहीं, जैसे केसर नमक में मिल जाए, तो अधिकता (ग़ल्बा) का विचार होगा। अगर नमक के हिस्से (यानी उसका द्रव्य, स्वाद और रंग नहीं) ज़्यादा हैं, तो अब कुछ भी अनिवार्य नहीं...

الفاظ میں تحریر فرمائے جو سمجھ میں آسکے۔

دوم ۲: یہ کہ فقیر تمباکو پان کے ساتھ کھانے کا عادی ہے اگر چہ لعاب ایک قطرہ بھی حلق سے نیچے نہیں اترتا، تمباکو نہ کھانے کے سبب سخت تکلیف ہوگی، اس تمباکو میں قدرے قلیل مشک و زعفران کا ہونا بھی بیان کیا جاتا ہے آپ کے ملاحظہ کے واسطے قدرے تمباکو مرسل ہے۔

الجواب: بشرف ملاحظہ عالیہ حضرات بابرکت والا درجت حضرت مولانا سید شاہ حامد حسین میاں صاحب قبلہ دامت برکاتہم السلام علیکم ورحمۃ اللہ وبرکاتہ، بعد ادائے آداب معروض پنکھا سر پر مضبوط باندھیں کہ اٹھار ہے اور بڑا ہو کہ اٹھارہنے کی عادت میں چہرہ اجانب سے چھپا رہے پھر بھی اگر احیاناً چہرہ پر ڈھلک آئے یا کنپٹی یا ناک یا منہ سے لگے اگر منہ کی ٹکی کے چہارم تک نہ پہنچے تو کفارہ کچھ نہیں، نہ قربانی نہ صدقہ کہ نہ چہارم منہ چھپایا نہ چار پہر تک اسے دوام رہا، اس صورت میں کراہت و معصیت ہوتی مگر جبکہ وہ بلا قصد ہے اور اسے قائم رکھا گیا تو مواخذہ نہیں، ہاں اگر چہارم منہ کی ٹکی چھپ جائے گی تو ضرور صدقہ دینا آئے گا، احکام جو شرع مطہر نے ارشاد فرمائے صدق دل سے ان کا اہتمام ہو تو وہی جس کے احکام میں مدد فرماتا اور آسان کر دیتا ہے، تمباکو کہ قوام میں خوشبو ڈال کر پکائی گئی جب تو اس کا کھانا مطلقاً جائز ہے اگر چہ خوشبو دیتی ہو، ہاں خوشبو ہی کے قصد سے اسے اختیار کرنا کراہت سے خالی نہیں اور نظر جانب خوشبو نہ ہو بلکہ حسب عادت دیگر منافع تمباکو کی طرف تو کچھ حرج نہیں اور اگر بے پکائے خوشبو مشک وغیرہ اس میں شامل ہو اور خوشبو دے رہا ہو جب بھی کفارہ کچھ نہیں البتہ کراہت ضرور ہے، یہ کراہت پیک لگنے پر موقوف نہیں کہ خوشبو کا آنچل میں باندھنا

بھی ناجائز ہے، ہاں اگر مشک اتنی کم پڑی کہ خوشبو نہ دے یا مدت گزرنے سے اتر گئی کہ اب خوشبو جاتی رہی تو کراہت بھی نہیں، لباب و شرح لباب میں ہے:

[جدول] عربی عبارت: الطیب اذا اخلطہ بطعام قد طبخ فلا شئ علیہ اتفاقا سواء یوجد ریحہ اولا لانہ بالخلط والطبخ یصیر مستہلکاً فلا یعتبر وجودہ اصلاً وان خلطہ بما یؤکل بلا طبخ کالزعفران بالملح فالعبرۃ بالغلبۃ۔ فان کان الغالب الملح ای اجزاہ لا طعمہ ولونہ

اردو ترجمہ: اگر خوشبو کسی ایسے کھانے میں ملائی جسے پکایا گیا تو اب محرم پر کوئی شی لازم نہ ہوگی خواہ مہک باقی ہو یا نہ ہو کیونکہ وہ اختلاط اور پکنے سے ہلاک و ختم ہو گئی اب اس کے وجود کا کوئی اعتبار نہیں ہوگا، اور اگر وہ کھانے والی چیز میں ملی لیکن اس میں پکی نہیں جیسے زعفران نمک میں مل جائے تو غلبہ کا اعتبار ہوگا، اگر نمک کے اجزاء (ذائقہ اور رنگ نہیں) زائد ہیں تو اب کوئی شی لازم...

Volume Ten / Fatawa Razviya

Arabic: فلاشی علیہ من الجزاء غیرانہ اذا کان رائحتہ موجودة کـرہ اکلہ مغلوبا غیر مطبوخ و ان کان الغالب الطیب ففیہ الدم فانہ حینئذ کالزعفران الخالص فیجب الجزاء و ان لم تظھر رائحتہ 1 اہ ملخصا محررا۔ Urdu/English Translation: There will be no [penalty] except that if the fragrance remained, then eating it will be Makruh (disliked) because it is overcome but not cooked. And if the fragrance is predominant, then a 'Dam' (animal sacrifice) will be required because it will be like pure saffron; so now punishment (penalty) will be mandatory whether the fragrance is apparent or not. (Summary of edited text). (T)

It is included in the prohibitions of Ihram: Arabic: التطیب و اکل الطیب و شد ہ بطرف ثوبہ ای ربط طیب یفوح ریحہ واللہ تعالیٰ اعلم۔ Urdu/English Translation: Applying perfume, eating perfume, and tying such perfume in the corner of a garment whose fragrance is spreading. And Allah Almighty knows best. (T)

Problem 315: Inquiry from Shafqat Ali of Mohalla Zakheera, Bareilly City, 3 Rabi' al-Akhir 1322 AH. What do the scholars of religion say regarding this matter: A woman has enough capital given by her father, brother, and husband that she can easily perform Hajj. The said woman has a firm intention to perform Hajj this year, but despite every entreaty and request, her husband does not give her permission. Her real brothers also intend to perform Hajj this time. The said woman considers this opportunity very suitable. In this case, can this woman go and perform Hajj with her brothers without her husband's permission or not?

The Answer: When Hajj is obligatory for a woman, there is absolutely no need for the husband's permission. Arabic: فالاصح ان افتراض الحج فوري و قال صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم لا طاعة لاحد فی معصیة اللہ 3۔ Urdu/English Translation: It is correct that the obligation of Hajj should be fulfilled immediately, and the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "There is no obedience to anyone in disobedience to Allah." (T)

1 Lubab wa Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter on Eating and Drinking Perfume, Dar-ul-Kitab-ul-Arabi, Beirut, pp. 211 to 213. 2 Lubab wa Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter on Prohibitions of Ihram, Dar-ul-Kitab-ul-Arabi, Beirut, p. 81. 3 Musnad Ahmad bin Hanbal, Remaining Hadith of Hakam bin Amr al-Ghafari, Dar-ul-Fikr, Beirut, 7/75.

जिल्द दस / फतावा रज़विया

अरबी: فلاشی علیہ من الجزاء غیرانہ اذا کان رائحتہ موجودۃ کـرہ اکلہ مغلوبا غیر مطبوخ و ان کان الغالب الطیب ففیہ الدم فانہ حینئذ کالزعفران الخالص فیجب الجزاء و ان لم تظھر رائحتہ 1 اہ ملخصا محررا۔ उर्दू/हिंदी अनुवाद: [जुर्माना] नहीं होगा, सिवाय इसके कि अगर महक बाकी थी तो उसका खाना मकरूह होगा क्योंकि वह मगलूब (दब गया) है मगर पका हुआ नहीं, और अगर खुशबू गालिब (प्रधान) है तो उसमें दम (बलि) आएगा क्योंकि वह खालिस (शुद्ध) ज़ाफ़रान की तरह होगा, तो अब सज़ा लाज़िम होगी चाहे महक न हो। (संपादित पाठ का सारांश)। (त)

एहराम की पाबंदियों में यह भी है: अरबी: التطیب و اکل الطیب و شد ہ بطرف ثوبہ ای ربط طیب یفوح ریحہ واللہ تعالیٰ اعلم۔ उर्दू/हिंदी अनुवाद: खुशबू लगाना, खुशबू खाना, और कपड़े के कोने में ऐसी खुशबू बांधना जिसकी महक फैल रही हो। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

मसला 315: प्रेषक शफ़क़त अली, मोहल्ला ज़ख़ीरा, बरेली शहर। 3 रबी-उल-आख़िर 1322 हिजरी। क्या फ़रमाते हैं उलेमा-ए-दीन इस मसले में कि एक औरत जिसके पास उसके बाप, भाई और शौहर का दिया हुआ इतना सरमाया (धन) मौजूद है कि जिससे वह बख़ूबी हज कर सकती है। मुसम्मात (उक्त महिला) का इरादा अब के साल हज करने का मुसम्मम (दृढ़) है मगर बावजूद हर मिन्नत ओ समाजत के उसका शौहर उसको इजाज़त नहीं देता। उसके हक़ीक़ी भाई भी अब की मर्तबा हज का इरादा रखते हैं, यह मौक़ा भी मुसम्मात ने निहायत मुनासिब समझा है। इस सूरत में यह औरत बिला इजाज़त अपने शौहर के हमराह (साथ) जाकर हज अदा कर सकती है या नहीं?

अल-जवाब: जबकि औरत पर हज फ़र्ज़ है, शौहर की इजाज़त की हरगिज़ ज़रूरत नहीं। अरबी: فالاصح ان افتراض الحج فوري و قال صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم لا طاعۃ لاحد فی معصیۃ اللہ 3۔ उर्दू/हिंदी अनुवाद: यही दुरुस्त है कि फ़रीज़ा-ए-हज फ़ौरन अदा किया जाए, और हुज़ूर (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया: अल्लाह की नाफ़रमानी में किसी की इताअत (आज्ञा पालन) नहीं करनी चाहिए। (त)

1 लुबाब व शरह लुबाब मअ इरशाद-उस-सारी, खुशबू खाने और पीने का अध्याय, दार-उल-किताब-उल-अरबी, बेरुत, पृ. 211 से 213। 2 लुबाब व शरह लुबाब मअ इरशाद-उस-सारी, एहराम की पाबंदियां, दार-उल-किताब-उल-अरबी, बेरुत, पृ. 81। 3 मुसनद अहमद बिन हंबल, बक़िया हदीस हकम बिन अम्र अल-ग़फ़ारी, दार-उल-फ़िक्र, बेरुत, 7/75।

فلاشی علیہ من الجزاء غیرانہ اذا کان رائحتہ موجودۃ کرہ اکلہ مغلوبا غیر مطبوخ و ان کان الغالب الطیب ففیہ الدم فانہ حینئذ کالزعفران الخالص فیجب الجزاء و ان لم تظھر رائحتہ 1 اہ ملخصا محررا۔ نہ ہوگی ماسوائے اس کے کہ اگر مہک باقی تھی تو اس کا کھانا مکروہ ہوگا کیونکہ وہ مغلوب ہے مگر پکی ہوئی نہیں، اور اگر غالب خوشبو ہے تو اس میں دم آئیگا کیونکہ وہ خالص زعفران کی طرح ہوگا تو اب سزا لازم ہوگی خواہ مہک نہ ہو گی اھ ملخصا محررا۔ (ت)

اسی کے محرماتِ احرام میں ہے: التطیب و اکل الطیب و شد ہ بطرف ثوبہ ای ربط طیب یفوح ریحہ واللہ تعالیٰ اعلم۔ خوشبو لگانا، خوشبو کھانا، کپڑے کے کنارے میں ایسی خوشبو باندھنا جس کی مہک پھیل رہی ہو۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔ (ت)

مسئلہ ۳۱۵: مسئولہ شفقت علی از محلہ ذخیرہ بریلی شہر ۳ ربیع الآخر ۱۳۲۲ھ کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ ایک عورت جس کے پاس اس کے باپ بھائی خاوند کا دیا ہوا اتنا سرمایہ موجود ہے کہ جس سے وہ بخوبی حج کرسکتی ہے مسماۃ مذکورہ کا ارادہ اب کے سال حج کرنے کا مصمم ہے مگر باوجود ہر منت و سماجت کے اس کا خاوند اس کو اجازت نہیں دیتا، اس کے حقیقی بھائی بھی اب کی مرتبہ حج کا ارادہ رکھتے ہیں، یہ موقع بھی مسماۃ مذکور نے نہایت مناسب سمجھا ہے اس صورت میں یہ عورت بلا اجازت اپنے خاوند کے ہمراہ جا کر حج ادا کر سکتی ہے یا نہیں؟ الجواب: جبکہ عورت پر حج فرض ہے اجازت شوہر کی ہرگز حاجت نہیں، فالاصح ان افتراض الحج فوري و قال صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم لا طاعۃ لاحد فی معصیۃ اللہ 3۔ یہی درست ہے کہ فریضہ حج فوراً ادا کیا جائے، اور حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: اللہ کی نافرمانی میں کسی کی اطاعت نہیں کرنی چاہئے۔ (ت)

1 لباب وشرح لباب مع ارشاد الساری فصل فی اکل الطیب وشربہ دار الکتاب العربی بیروت ص ۲۱۱ تا ۲۱۳ 2 لباب وشرح لباب مع ارشاد الساری فی محرمات الاحرام دار الکتاب العربی بیروت ص ۸۱ 3 مسند احمد بن حنبل بقیہ حدیث حکم بن عمرو الغفاری دارالفکر بیروت ۷/۷۵

Volume 10 Fatawa Razawiyyah

For a woman, a major condition is to be accompanied by her husband or a Mahram (unmarriageable kin). Since her brother is going now, who knows if another Mahram will be available later? If she misses this chance, she may be deprived of performing Hajj. She should hurry and leave immediately with her brother. And Allah knows best.

Issue 316: What do the scholars of religion say regarding the ruling on visiting [the shrine of] the Master of the Universe, peace and blessings of Allah be upon him? And what is the Sharia ruling for someone who, despite having the means, neglects it, or prevents others, or denies its excellence? Please explain and be rewarded.

The Answer: Visiting the pure and luminous presence of the Master of the Messengers, peace and blessings of Allah be upon him, is certainly and definitively, by the consensus of Muslims, among the most superior of devotions and greatest of good deeds. No one would deny its virtue and excellence except a misguided heretic, or an utterly ignorant, foolish, and heedless individual, a minion of devils. May Allah, the Lord of the worlds, protect us. There is a definitive consensus on this. And why shouldn't there be? The Great Quran itself calls towards it and encourages Muslims. Allah the Almighty said:

"And if, when they had wronged themselves, they had but come unto thee and asked forgiveness of Allah, and the Messenger had asked forgiveness for them, they would have found Allah Forgiving, Merciful." (Quran 4:64) Meaning: If it happens that when they wrong their souls, i.e., commit sins and crimes, they come to your refuge-providing court and seek forgiveness from God, and the Messenger seeks forgiveness for them, then they will surely find Allah, the Mighty and Sublime, Most Forgiving and Merciful.

Imam Subki in 'Shifa al-Siqam' and Shaykh Muhaqqiq in 'Jazb al-Qulub' state: "Scholars have understood from this verse both the states of the Holy Presence, peace and blessings of Allah be upon him: his lifetime and after his passing. And the leading authors of pilgrimage rites (Manasik) from every school of thought have counted the recitation of this verse as part of the etiquette of visiting the luminous shrine." Allama Samhudi Shafi'i states in 'Wafa al-Wafa': "The Hanafis consider the noble visit to be close to obligatory (wajib), and similarly, the Malikis and Hanbalis have explicitly stated so."

1. Quran 4:64

2. Jazb al-Qulub, Chapter 15, Regarding the ruling on visiting the grave of the Prophet (PBUH), Lucknow, p. 211.
3. Wafa al-Wafa, Section 2, Regarding other proofs for visiting, etc., Dar Ihya al-Turath al-Arabi, Beirut, 4/1366.

जिल्द दस फ़तावा रज़विया

एक महिला के लिए एक बड़ी शर्त यह है कि वह अपने पति या मेहरम (जिनसे विवाह हराम हो) के साथ रहे। इस समय उसका भाई जा रहा है, पता नहीं आगे कोई मेहरम साथ मिले न मिले तो वह हज से वंचित रह जाए। उसे बहुत जल्दी करनी चाहिए और फ़ौरन अपने भाई के साथ चली जाना चाहिए। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मसला 316: दीन के विद्वान (उलेमा) इस मसले में क्या कहते हैं कि हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़ियारत (दर्शन) का क्या हुक्म है? और सामर्थ्य होने के बावजूद इसे छोड़ने वाला या इसमें बाधा डालने वाला और इसकी फ़ज़ीलत (महिमा) से इंकार करने वाला शरीयत की नज़र में कैसा है? स्पष्ट करें और पुण्य पाएँ।

उत्तर: रसूलो के सरदार, नूर से भरे हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की पाकीज़ा ज़ियारत यकीनी तौर पर और मुसलमानों की आम सहमति (इज्मा) के साथ, सबसे श्रेष्ठ इबादतों और महानतम नेक कार्यों में से है। इसकी फ़ज़ीलत और खूबी से केवल वही व्यक्ति इंकार करेगा जो गुमराह, विधर्मी या कोई बहुत बड़ा अज्ञानी, मूर्ख, लापरवाह और शैतानों का गुलाम हो। अल्लाह रब्बुल आलमीन की पनाह। इस पर एक निश्चित आम सहमति है। और क्यों न हो, स्वयं महान कुरान इसकी ओर बुलाता है और मुसलमानों को प्रेरित करता है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया:

"और अगर जब उन्होंने अपनी जानों पर ज़ुल्म किया था, वे तुम्हारे पास हाज़िर होते और अल्लाह से माफ़ी माँगते और रसूल भी उनके लिए माफ़ी की दुआ करते, तो वे अल्लाह को तौबा कुबूल करने वाला मेहरबान पाते।" (कुरान 4:64) अर्थात: यदि ऐसा हो कि जब वे अपनी जानों पर ज़ुल्म करें, यानी गुनाह और अपराध करें, तो वे आपकी बेकसों की पनाह वाली दरगाह में हाज़िर हों, फिर खुदा से माफ़ी माँगें और रसूल भी उनके लिए माफ़ी चाहें, तो वे निश्चित रूप से अल्लाह अज़्ज़-व-जल्ल को तौबा कुबूल करने वाला और मेहरबान पाएँगे।

इमाम सुबकी 'शिफ़ा अस-सिक़ाम' में और शेख मुहक़्क़िक 'जज़्ब अल-कुलूब' में फ़रमाते हैं: "विद्वानों ने इस आयत से हुज़ूर अकदस सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के जीवन काल और देहावसान (मृत्यु) के बाद, दोनों स्थितियों को शामिल समझा है। और हर मज़हब के इमामों और मनासिक (हज के नियमों) के लेखकों ने रौज़ा-ए-अनवर पर हाज़िरी के समय इस आयत के पाठ को ज़ियारत के शिष्टाचार में

गिना है।" अल्लामा समहूदी शाफ़ई 'वफ़ा अल-वफ़ा' में फ़रमाते हैं: "हनफ़ी ज़ियारत-ए-शरीफ़ को वाजिब के करीब कहते हैं, और इसी तरह मालिकी और हंबली विद्वानों ने भी स्पष्ट किया है।"

1. कुरान 4:64
2. जज़्ब अल-कुलूब, अध्याय 15, नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की कब्र की ज़ियारत के हुक्म के बारे में, लखनऊ, पृष्ठ 211
3. वफ़ा अल-वफ़ा, दूसरा खंड, ज़ियारत के अन्य प्रमाणों के बारे में, दार इह्या अल-तुरास अल-अरबी, बेरुत 4/1366

पेज 725/836

عورت کے لیے ایک بڑی شرط شوہر یا محرم کا ساتھ رہنا ہے، اس وقت تو اس کا بھائی جارہا ہے کیا معلوم کہ آگے کوئی محرم ساتھ ہو نہ ملے تو حج سے محروم رہے، نہایت جلدی کرے اور فوراً بھائی کے ساتھ چلی جائے۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ ۳۱۶: کیا فرماتے ہیں علمائے دین اس مسئلہ میں کہ زیارت حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا کیا حکم ہے اور با وجود قدرت اس کا تارک یا مانع و منکر فضل شرعاً کیسا ہے؟ بینوا توجروا۔

الجواب: زیارت سراپا طہارت حضور پر نور سید المرسلین صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم بالقطع والیقین باجماع مسلمین افضل قربات و اعظم حسنات سے ہے جس کی فضیلت و خوبی کا انکار نہ کرے گا مگر گمراہ بد دین یا کوئی سخت جاہل، سفیہ غافل، سخرہ شیاطین والعیاذ باللہ رب العالمین۔ اس قدر پر تو اجماع قطعی قائم، اور کیوں نہ ہو، خود قرآن عظیم اس کی طرف بلاتا اور مسلمانوں کو رغبت دلاتا ہے، اللہ تعالیٰ نے فرمایا:

وَلَوْ اَنَّهُمْ اِذْ ظَّلَمُوْٓا اَنْفُسَهُمْ جَآءُوْكَ فَاسْتَغْفَرُوا اللّٰهَ وَاسْتَغْفَرَ لَهُمُ الرَّسُوْلُ لَوَجَدُوا اللّٰهَ تَوَّابًا رَّحِيْمًا یعنی اگر ایسا ہو کہ وہ جب اپنی جانوں پر ظلم یعنی گناہ وجرم کریں تیری بارگاہ بیکس پناہ میں حاضر ہوں پھر خدا سے مغفرت مانگیں اور مغفرت چاہے ان کے لیے رسول، تو بیشک اللہ عزوجل کو توبہ قبول کرنے والا مہربان پائیں۔

امام سبکی شفاء السقام اور شیخ محقق جذب القلوب میں فرماتے ہیں: "علماء نے اس آیت سے حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے حالِ حیات و حالِ وفات دونوں حالتوں کو شمول سمجھا

اور ہر مذہب کے ائمہ مصنفین مناسک نے وقت حاضری مزار پر انوار اس آیت کی تلاوت کو آداب زیارت سے گنا۔" 2 علامہ سمہودی شافعی وفاء الوفاء میں فرماتے ہیں: "حنفیہ زیارت شریف کو قریب بہ واجب کہتے ہیں، اور اسی طرح مالکیہ و حنبلیہ نے تصریح کی۔" 3

1 القرآن ۴/۶۴ 2 جذب القلوب باب پانزدہم در بیان حکم زیارۃ قبر النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم لکھنؤ ص ۲۱۱ 3 وفاء الوفاء الفصل الثانی فی بقیۃ ادلۃ الزیارۃ الخ دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/۱۳۶۶

Fatawa-e-Razawiyya Volume 10

In the books of our school of jurisprudence (Madhhab), such as Manasik-e-Farsi, Tarabulsi, Kirmani, Ikhtiyar Sharh-e-Mukhtar, Fatawa-e-Zahiriyya, Fath al-Qadir, Khizana-tul-Muftiyyin, Mansik-e-Mutawassit, Maslak-e-Muqtasit, Minah al-Ghaffar, Maraqi al-Falah and its commentary Hashiya-e-Tahtawi, Majma al-Anhur, Sunan al-Huda, Alamgiri, etc., it has been explicitly stated to be close to obligatory (Wajib). In fact, a categorical statement (Nass) is reported from the founder of our school, Sayyiduna Imam-e-Azam (Imam Abu Hanifa), as mentioned in 'Jadhb al-Qulub':

[Persian text]: Visiting the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), according to Abu Hanifa, is among the most excellent recommended acts (Mandubaat) and most emphasized desirable acts (Mustahabbat), close to the rank of obligatory acts (Wajibaat). 1 [Urdu translation]: Visiting Mustafa (peace and blessings of Allah be upon him), according to Imam-e-Azam (may Allah have mercy on him), is among the most excellent recommended acts and the highest desirable acts, close to the rank of obligatory acts. (T)

And some Maliki and Shafi'i imams explicitly call it obligatory, and this is also reported from the Zahiri school. Imam Ibn al-Hajj al-Makki al-Maliki in 'al-Madkhal' and Imam Subki Shafi'i in 'Tahdhib al-Talib' quote from Imam Abdul Haq bin Muhammad:

"Imam Abu Imran al-Fasi al-Maliki said: Visiting the noble grave of the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) is obligatory." 2

Imam Qadi Iyad al-Maliki in 'ash-Shifa' quotes from Imam Abu 'Amr:

"It is obligatory to travel and visit the noble grave of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him)." 3

The inclination of Imam Qastalani (commentator of Sahih al-Bukhari, Shafi'i), Imam Ibn Hajar al-Makki (Shafi'i), Allama Ali al-Qari (Hanafi), and other scholars is also towards this. In fact, some words of Imam Subki also point in this direction. He stated in 'ash-Shifa':

"Visiting the grave involves honoring the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), and honoring the Prophet of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) is obligatory." 4

Similarly, it is mentioned in 'Mawahib al-Ladunniyah ash-Sharifa', and there is no doubt that the apparent evidence necessitates this. In the Hadith reported by Ibn 'Adi and others, the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) says:

[Arabic text]: Whoever performs the Hajj and does not visit me, he has indeed treated me harshly (or shunned me). 5 [Urdu translation]: Whoever performs Hajj and does not come to visit me, undoubtedly he has been harsh towards me.

1. Jadhb al-Qulub, Chapter 15, on the ruling regarding visiting the Prophet's grave (peace be upon him), Nawal Kishore Lucknow, p. 210.
2. Wafa al-Wafa, citing Abdul Haq, Section 2, regarding other aspects of visitation, Dar Ihya at-Turath al-Arabi, Beirut, 4/1364.
3. Kitab ash-Shifa, Qadi Iyad, Chapter on the ruling regarding visiting the grave, published by Shirkah Sahafiyyah in the Ottoman Lands, 2/57.
4. Shifa al-Saqam, Chapter 5, on the point that visitation is an act of worship, Maktabah Nuriyya Razawiyya, Faisalabad, p. 83.
5. Al-Kamil by Ibn 'Adi, biography of al-Nu'man Shibli al-Bahili, Dar al-Fikr, Beirut, 7/2480.

फतावा रज़विया जिल्द दशम

हमारी मज़हब की किताबों में, जैसे मनासिक फ़ारसी, तराबलसी, किरमानी, इख़्तियार शरह मुख्तार, फतावा ज़हीरिया, फ़तह अल-क़दीर, खज़ाना-तुल-मुफ़्तियान, मन्सक-ए-मुतवस्सित, मस्क-ए-मुक़तसित, मिनह अल-ग़फ़्फ़ार, मराक़ी अल-फ़लाह और उसकी शरह हाशिया-ए-तहतावी, मजमा अल-अन्हुर, सुनन अल-हुदा, आलमगीरी वग़ैरा में इसके क़रीब वाजिब होने की तसरीह (स्पष्टीकरण) की गई है, बल्कि ख़ुद साहब-ए-मज़हब सय्यदुना इमाम-ए-आज़म से इस पर नस (स्पष्ट कथन) मंक़ूल है, 'जज़ब अल-क़ुलूब' में है:

[फ़ारसी]: ज़ियारत आँहज़रत सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम नज़द अबी हनीफ़ा अज़ अफ़ज़ल मंदूबात व औकद मुस्तहब्बात अस्त क़रीब बह दर्जा वाजिबात। 1 [हिंदी अनुवाद]: मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की ज़ियारत इमाम-ए-आज़म रहमतुल्लाह तआला के नज़दीक अफ़ज़ल मंदूबात और आला मुस्तहब्बात में से है, वाजिबात के दर्जे के क़रीब। (त)

और बाज़ मालकी और शाफ़ई इमाम तो साफ़-साफ़ वाजिब कहते हैं और यही मज़हब ज़ाहिरिया से मंक़ूल है। इमाम इब्न अल-हाज मक्की मालकी 'मदख़ल' और इमाम सुबकी शाफ़ई 'तहरीब अल-तालिब' में इमाम अब्दुल हक़ बिन मुहम्मद से नक़ल फ़रमाते हैं:

"इमाम अबू इमरान फ़ासी मालकी ने फ़रमाया हुज़ूर सय्यद-ए-आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की क़ब्र शरीफ़ की ज़ियारत वाजिब है।" 2

इमाम क़ाज़ी अयाज़ मालकी 'शिफ़ा शरीफ़' में इमाम अबू अम्र से नक़ल करते हैं:

"हुज़ूर वाला सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की क़ब्र-ए-अक़्दस की तरफ़ सफ़र करके जाना वाजिब है।" 3

इसी तरफ़ इमाम क़स्तलानी (शारह सहीह बुख़ारी, शाफ़ई), इमाम इब्न हजर मक्की (शाफ़ई), अल्लामा अली क़ारी (हनफ़ी) वग़ैरा उलमा का रुझान है, बल्कि इमाम सुबकी के बाज़ कलमात भी इसी तरफ़ इशारा करते हैं। 'शिफ़ा शरीफ़' में फ़रमाया:

"क़ब्र की ज़ियारत में नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की ताज़ीम है और अल्लाह के नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की ताज़ीम वाजिब है।" 4

इसी तरह 'मवाहिब अल-लदुन्निया शरीफ़' में है, और इसमें कोई शक नहीं कि ज़ियारत की दलील इसी का तक़ाज़ा करती है। इब्न अदी वग़ैरा की हदीस में है कि हुज़ूर अक़्दस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं:

[अरबी]: मन हज्ज अल-बैत वलम यज़ुरनी फ़क़द जफ़ानी। 5 [हिंदी अनुवाद]: जो हज करे और मेरी ज़ियारत के लिए हाज़िर न हो, बेशक उसने मेरे साथ बेरुखी (जफ़ा) की।

1. जज़ब अल-क़ुलूब, बाब 15, नबी की क़ब्र की ज़ियारत के हुक्म के बयान में, नवल किशोर लखनऊ, पृ. 210।
2. वफ़ा अल-वफ़ा, हक़ के हवाले से, दूसरा अनुभाग, ज़ियारत के बाक़ी पहलुओं के बारे में, दार इह्या अत-तुराथ अल-अरबी, बेरूत, 4/1364।
3. किताब-अश-शिफ़ा, क़ाज़ी अयाज़, क़ब्र की ज़ियारत के हुक्म का अध्याय, उस्मानी मुल्क में शर्कत-ए-सहाफ़िया द्वारा प्रकाशित, 2/57।
4. शिफ़ा अल-सक़ाम, पाँचवाँ बाब, इस बयान में कि ज़ियारत एक नेक अमल है, मकतबा नूरया रज़विया फ़ैसलाबाद, पृ. 83।
5. कामिल इब्न अदी, अल-नोमान शिबली अल-बाहिली की जीवनी, दार अल-फ़िक्र बेरूत, 7/2480।

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

ہماری کتب مذہب میں مناسک فارسی و طرابلسی و کرمانی و اختیار شرح مختار و فتاوٰی ظہیریہ و فتح القدیر و خزانۃ المفتین و منسک متوسط و مسلک متقسط و منح الغفار و مراقی الفلاح و حاشیہ طحطاویہ علی المراقی و مجمع الانہر و سنن الہدٰی و عالمگیری وغیرہ میں اس کے قریب واجب ہونے کی تصریح کی بلکہ خود صاحب مذہب سیدنا امام اعظم سے اس پر نص منقول ، جذب القلوب میں ہے:

زیارت آنحضرت صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نزد ابی حنیفہ از افضل مندوبات و اوکد مستحبات است قریب بہ درجہ واجبات۔ 1 | زیارت مصطفٰی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم امام اعظم رحمۃ اللہ تعالٰی کے نزدیک افضل مندوبات و اعلٰی مستحبات سے ہے درجہ واجبات کے قریب۔ (ت)

اور بعض ائمہ مالکیہ و شافعیہ تو صاف صاف واجب کہتے ہیں اور یہی مذہب ظاہر یہ سے منقول۔ امام ابن الحاج مکی مالکی مدخل اور امام سبکی شافعی تہذیب الطالب امام عبد الحق بن محمد سے نقل فرماتے ہیں: "امام ابو عمران فاسی مالکی نے فرمایا قبر شریف حضور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی زیارت واجب ہے۔" 2 امام قاضی عیاض مالکی شفا شریف میں امام ابو عمرو سے ناقل: "قبر اقدس حضور والا صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی طرف سفر کر کے جانا واجب ہے۔" 3 اسی طرف امام قسطلانی شارح صحیح بخاری شافعی و امام ابن حجر مکی شافعی و علامہ علی قاری حنفی و غیر ہم علماء کا میلان ہے بلکہ بعض کلمات امام سبکی بھی اسی طرف ناظر ، شفا شریف میں فرمایا: "زیارت قبر میں نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی تعظیم ہے اور نبی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی تعظیم واجب۔" 4 اسی طرح مواہب لدنیہ شریف میں ہے، اور شک نہیں کہ ظاہر دلیل

اسی کو مقتضی۔ ابن عدی وغیرہ کی حدیث میں ہے حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

من حج البيت و لم يزرني فقد جفاني۔ 5 | جو حج کرے اور میری زیارت کو حاضر نہ ہو بیشک اس نے مجھ پر جفا کی۔

1 جذب القلوب باب پانزدہم در بیان حکم زیارۃ قبر النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نولکشور لکھنؤ ص ۲۱۰ 2 وفاء الوفاء بحوالہ عبد الحق الفصل الثانی فی بقیہ ادویۃ الزیارۃ دار احیاء التراث العربی بیروت ۴/ ۱۳۶۴ 3 کتاب الشفا قاضی عیاض فصل فی حکم زیارۃ قبر مطبوعہ شرکت صحافیہ فی البلاد العثمانیہ ۲/ ۵۷ 4 شفاء السقام الباب الخامس فی تقریر کون الزیارۃ قربۃ مکتبہ نوریہ رضویہ فیصل آباد ص ۸۳ 5 کامل ابن عدی ترجمہ النعمان شبلی الباہلی دار الفکر بیروت ۷/ ۲۴۸۰

Fatawa Razawiyya Volume 10

Allama Ali Qari in Sharh-ul-Lubab terms its chain (isnad) as Hasan (good), and similarly in Sharh Shifa and Durrah Mudiyyah, and Imam Ibn Hajar in Jawhar-ul-Munazzam considers it authoritative. In both these books, he stated: "It is forbidden to treat the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) with cruelty/neglect; since not visiting him implies neglect, it is forbidden." It is stated in Madarij-un-Nubuwwah:

(Persian)

"The author of Mawahib said that this is evident regarding the prohibition of neglecting the visit, because it involves neglect and causing pain to the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). While neglect and causing pain to the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is forbidden by consensus, therefore, it is mandatory to remove this neglect, and that will be through visiting; thus, the visit is mandatory."^2

(Urdu Translation)

The author of Mawahib said that it is clear regarding the prohibition of not visiting because it contains neglect towards the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and causes him pain, while neglect and causing pain to the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is forbidden by consensus. Therefore, it is mandatory to visit to remove this neglect. (T)

After this statement, Imam Qastallani says: "In short, whoever despite having the means neglects the visit, he has treated the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) with neglect, and this was not the right the Prophet had over us."^3 Similarly, regarding the neglect of visiting being a cause of cruelty, several Hadiths have been narrated which my noble father (may Allah sanctify his secret) mentioned in Jawahir-ul-Bayan Sharif. There is no doubt that although there might be discussion about individual reports, collectively they reach the level of Hasan (good), and even if it is 'Hasan li-ghayrihi' (good due to others), it is sufficient for presenting evidence. Suiting this is the story of Hazrat Bilal (may Allah be pleased with him), which Imam Ibn Asakir and others narrated from Hazrat Abu Darda (may Allah be pleased with him). Imam Subki in Shifa, Allama Samhudi in Wafa, and Imam Ibn Hajar in Jawhar have called its chain 'Jayyid' (excellent). When Hazrat Bilal (may Allah be pleased with him) resided in Syria, he was honored with a vision of the radiant Prophet, the Master of the Beloveds (peace and blessings of Allah be upon him) in a dream, who said:

(Arabic)	(Urdu Translation)
What is this neglect, O Bilal? Has the time not yet come for you to visit me, O Bilal!	O Bilal! What is this neglect? O Bilal! Have you not yet remembered the time to come and visit me?

Hazrat Bilal (may Allah be pleased with him) woke up sad, fearful, and trembling, and immediately intended for the radiant shrine, traveling towards Medina.

---

^1 Al-Jawhar al-Munazzam, Ibn Hajar Makki, Fasl Awwal, Matba'ah Khairiyyah Egypt, p. 8 ^2 Madarij-un-Nubuwwah, Wasl dar dhikr gham-o-alam mufariqat-e-Anhazrat (SAW), Maktabah Nooria Razawiyya Sukkur, 2/444 ^3 Al-Mawahib al-Laduniyyah, Maqsad 'Ashir, Fasl Thani, al-Targhib fi Ziyaratihi (SAW), al-Maktabah al-Islamiyyah Beirut, 4/517

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम

अल्लामा अली क़ारी 'शरह-उल-लुबाब' में इसकी सनद को हसन बताते हैं, और वही 'शरह शिफ़ा' व 'दुर्रह मुदिय्यह' में और इमाम इब्न हजर 'जौहर-उल-मुनाज़्ज़म' में इसे दलील के तौर पर पेश करते हैं। इन्हीं दोनों किताबों में उन्होंने फरमाया: "नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के साथ जफ़ा (बेरुखी) हराम है, तो ज़ियारत न करना जफ़ा को शामिल है, इसलिए यह हराम हुआ।"^1 'मदारिज-उन-नुबुव्वह' में है:

(फारसी)

"मवाहिब के लेखक ने फरमाया कि ज़ियारत छोड़ने की हुरमत (निषेध) पर यह ज़ाहिर है क्योंकि इसमें हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के साथ जफ़ा और उन्हें ईज़ा (कष्ट) पहुँचाना है। चूँकि हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के साथ जफ़ा और ईज़ा इजमा (सर्वसम्मति) से हराम है, इसलिए इस जफ़ा को दूर करना वाजिब है, जो ज़ियारत से होगा; अतः ज़ियारत वाजिब है।"^2

(उर्दू अनुवाद)

मवाहिब के लेखक ने फरमाया कि ज़ियारत न करने की हुरमत पर यह ज़ाहिर है क्योंकि इसमें हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) से जफ़ा है और आपको ईज़ा है, जबकि हुज़ूर अलैहिस्सलाम से जफ़ा और ईज़ा बिल-इजमा हराम है। तो इस जफ़ा को दूर करने के लिए ज़ियारत वाजिब है। (त)

इमाम क़स्तलानी इस इबारत के बाद फरमाते हैं: "संक्षेप में यह कि जो सामर्थ्य होने के बावजूद ज़ियारत छोड़ दे, उसने हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) के साथ जफ़ा की, और हुज़ूर का हम पर यह हक़ न था।"^3 इसी तरह ज़ियारत छोड़ने के जफ़ा होने के बारे में कई हदीसें आई हैं जिन्हें मेरे वालिद-ए-मुअज्ज़म (अल्लाह उनके राज़ को पाक करे) ने 'जवाहर-उल-बयान शरीफ' में ज़िक्र फरमाया है। इसमें कोई शक नहीं कि अगरचे व्यक्तिगत रिवायतों पर चर्चा हो सकती है, लेकिन सामूहिक रूप से वे 'हसन' के दर्जे तक पहुँचती हैं, और हसन अगरचे 'लि-ग़ैरही' हो, तब भी दलील पेश करने के लिए काफी है। इसी से मिलता-जुलता हज़रत बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हु) का किस्सा है जिसे इमाम इब्न असाकिर वगैरह ने हज़रत अबू दरदा (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। इमाम सुबकी ने 'शिफ़ा' में, अल्लामा समहूदी ने 'वफ़ा' में और इमाम इब्न हजर ने 'जौहर' में इसकी सनद को 'जय्यिद' (बेहतरीन) कहा है कि जब हज़रत बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हु) ने शाम में निवास किया, तो उन्हें स्वप्न में हुज़ूर पुरनूर, सैयदुल महबूबीन (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की ज़ियारत का सौभाग्य प्राप्त हुआ, जिन्होंने फरमाया:

(अरबी)	(उर्दू अनुवाद)
ऐ बिलाल! यह कैसी जफ़ा है? ऐ बिलाल! क्या अभी तक वह वक़्त नहीं आया कि तुम मेरी ज़ियारत के लिए आओ?	ऐ बिलाल! यह क्या जफ़ा है, ऐ बिलाल! क्या अभी तुझे वह वक़्त याद न आया कि मेरी ज़ियारत को हाज़िर हो?

हज़रत बिलाल (रज़ियल्लाहु अन्हु) दुखी और भयभीत होकर जाग उठे और तुरंत मदीना की ओर रौनक़-अफ़रोज़ मज़ार की ज़ियारत के लिए रवानगी का इरादा किया।

---

^1 अल-जौहर अल-मुनाज़्ज़म, इब्न हजर मक्की, फ़स्ल अव्वल, मतबा ख़ैरिया मिस्र, पृ. 8 ^2 मदारिज-उन-नुबुव्वह, वस्ल दर ज़िक्र ग़म-ओ-अलम मुफ़ारिकत-ए-आनहज़रत (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम), मकतबा नूरया रज़विया सुक्कुर, 2/444 ^3 अल-मवाहिब अल-लदुनिय्या, मक्सद आशिर, फ़स्ल थानी, अल-तरग़ीब फ़ी ज़ियारतिही (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम), अल-मकतबा अल-इस्लामिया बेरुत, 4/517

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

علامہ علی قاری شرح لباب میں اس کی سند کو حسن اور وہی شرح شفاء و درہ مضیہ اور امام ابن حجر جو ہر منظم میں محتج بہ فرماتے ہیں، انہی دونوں کتابوں میں فرمایا: "نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی جفا حرام ہے تو زیارت نہ کرنا متضمنِ جفا ہے حرام ہوا"۔[1] مدارج النبوۃ میں ہے:

(فارسی)

"صاحب مواہب گفتہ ایں ظاہر است در حرمت ترک زیارت زیرا کہ دریں جفا و اذائی اوست و جفا و اذائی آنحضرت صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم حرام ست باجماع پس واجب باشد ازالہ جفاو آں بزیارت خواہد پس زیارت واجب باشد۔"[2]

(اردو ترجمہ)

صاحب مواہب نے فرمایا کہ زیارت نہ کرنے کی حرمت پر یہ ظاہر ہے کیونکہ اس میں حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سے جفا ہے اور آپ کو ایذا ہے جبکہ حضور علیہ الصلوۃ والسلام سے جفا اور ایذا بالاجماع حرام ہے، تو اس جفا کے ازالہ کے لیے زیارت واجب ہے۔ (ت)

امام قسطلانی اس عبارت کے بعد فرماتے ہیں: "بالجملہ جو باوجود قدرت کے ترک زیارت کرے اس نے حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم پر جفا کی اور حضور کا ہم پر یہ حق نہ تھا،"[3] اسی طرح ترکِ زیارت کے موجب جفا ہونے میں متعدد حدیثیں آئیں کہ حضرت والد علام قدس سرہ نے جواہر البیان شریف میں ذکر فرمائیں اور شک نہیں کہ افراد میں اگرچہ کلام ہو مجموع حسن تک مترقی، اور حسن اگرچہ لغیرہ ہو محل احتجاج میں کافی، اور اسی کے مناسب قصہ حضرت بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ ہے کہ امام ابن عساکر وغیرہ نے حضرت ابو درداء رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا اور امام سبکی نے شفاء اور علامہ سمہودی نے وفا اور امام ابن حجر نے جو ہر میں اس کی سند کو جید کہا کہ جب حضرت بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ نے شام میں سکونت اختیار

فرمائی خواب میں حضور پر نور سید المحبوبین صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی زیارت سے شرفیاب ہوئے کہ ارشاد فرماتے ہیں:

(عربی) **(اردو ترجمہ)**

ماهذه الجفوة يا بلال اما آن لك ان اے بلال! یہ کیا جفا ہے، اے بلال! کیا ابھی تجھے وہ وقت یاد نہ تزورنی يا بلال! آیا کہ میری زیارت کو حاضر ہو۔

بلال رضی اللہ تعالیٰ عنہ غمگین و ترساں و ہراساں بیدار ہوئے اور فوراً قصد مزار پر انوار جانب مدینہ شدالرحال

1^8 الجوہر المنظم ابن حجر مکی فصل اول مطبعہ خیریہ مصر ص ۸ ^82 مدارج النبوۃ وصل در ذکر غم والم مفارقت آنحضرت صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۲ / ۴۴۴ ^83 المواہب اللدنیہ مقصد عاشر فصل ثانی الترغیب فی زیارتہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم المکتبۃ الاسلامی بیروت ۴ / ۵۱۷

Fatwa Razawiyya, Volume 10

He said, when he attained the honor of presence (at the Prophet's grave), he began to cry and rub his face on that sacred earth. The two grandsons, Hazrat Hussain and Hasan (may Allah the Almighty be pleased with them, their grandfather, and bless them all), arrived. Bilal (may Allah the Almighty be pleased with him) embraced and kissed them. The princes said, "We long for your Adhan (call to prayer)." He went up to the roof of the Prophet's mosque where he used to give the Adhan during the sacred era. When he said "Allahu Akbar, Allahu Akbar," a tremor ran through the whole of Medina. When he said "Ashhadu alla ilaha illallah," the trembling of Medina doubled. When he reached the words "Ashhadu anna Muhammadan Rasulullah," young maiden girls came out from behind their veils, and a roar arose among the people that the Holy Prophet (may Allah the Almighty send peace and blessings upon him) had come out from his luminous shrine. After the passing of the beloved of the Lord of Majesty (may Allah the Almighty send peace and blessings upon him), the men and women of Medina never cried as much as they did on that day. [Footnote 1]

In my prayer, the curve of your eyebrow came to my mind; a state ensued where the prayer niche itself began to cry out. (When your bow-like eyebrow came to my mind during prayer, in a state of selflessness, the mosque became occupied with sighs and weeping).

And furthermore, that Hadith could also support the obligation (of visiting), which Imam Ibn Asakir and Imam Ibn al-Najjar narrated in the book "Al-Durrat al-Thaminah" from Anas (may Allah the Almighty be pleased with him) that the Holy Prophet (may Allah the Almighty send peace and blessings upon him) said:

“There is no one from my Ummah (nation) who has the means and yet does not visit me, for whom there is an excuse.” My follower who, despite having the means, does not visit me, has no excuse for it. [Footnote 2]

So much so that some Shafi'i Imams state that the noble visit (to the Prophet's grave) is mandatory like the Hajj. Allama Abdul Ghani bin Ahmed bin Shah Abdul Quddus Chishti Gangohi (may his secret be sanctified), a student of Imam Allama Ibn Hajar Makki (may Allah the Almighty have mercy on them), says in "Sunan al-Huda": "I heard my teacher Ibn Hajar (may Allah strengthen Islam by his survival) saying that the noble visit is, according to some of our Shafi'i companions, mandatory like Hajj, and in their view, there is no difference between 'Wajib' (mandatory) and 'Fard' (obligatory)." [Footnote 3]

In short, the statement of its obligation (Wujub) is more evident from the perspective of evidence, and more beloved and manifest in the eye of faith. And it is close to obligation (Wujub) as stipulated by the scholars of the four schools of thought, and even the text of Imam-e-Azam (may Allah the Almighty be pleased with him) himself is close to it and practically equivalent, and the statement is 'Sunnah'.

---

1. Shifa al-Saqam, Chapter Three, Maktaba Nooriya Razawiyya, Faisalabad, p. 53.
2. Al-Mawahib al-Ladunniyyah, Tenth Objective, Second Section, Encouragement for visiting [the Prophet], Al-Maktab al-Islami, Beirut, 1/475.
3. Sunan al-Huda, Abdul Ghani bin Ahmed.

फ़तावा रज़विया, खंड 10

उन्होंने कहा, जब उन्हें (नबी की कब्र पर) उपस्थिति का सम्मान मिला, तो वे रोने लगे और अपना चेहरा उस पवित्र मिट्टी पर मलना शुरू कर दिया। दोनों पोते, हज़रत हुसैन और हसन (अल्लाह उन पर, उनके दादा पर प्रसन्न हो और उन सभी पर शांति और आशीर्वाद भेजे) वहाँ आए। बिलाल (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) ने उन्हें गले लगा लिया और चूमने लगे। शहज़ादों ने कहा, "हमें आपकी अज़ान सुनने की बहुत इच्छा है।" वे पैगंबर की मस्जिद की छत पर गए जहाँ वे पवित्र युग के दौरान अज़ान दिया करते थे। जब उन्होंने "अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर" कहा, तो पूरे मदीना में एक सिहरन दौड़ गई। जब उन्होंने "अशहदु अल्ला इलाहा इल्लल्लाह" कहा, तो मदीना का कांपना दोगुना हो गया। जब वे इन शब्दों पर पहुँचे कि "अशहदु अन्ना मुहम्मदन रसूलुल्लाह", तो कुंवारी युवा लड़कियाँ अपने पर्दों से बाहर निकल आईं और लोगों में शोर मच गया कि पवित्र पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) अपने प्रकाशमय मज़ार से बाहर आ गए हैं। जलाल के रब के प्रिय (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) के इंतकाल के बाद, मदीना के पुरुषों और महिलाओं को कभी भी वैसा रोना नहीं पड़ा जैसा उस दिन हुआ था। [पाद टिप्पणी 1]

मेरी नमाज़ में, आपकी भौंहों का घुमाव मुझे याद आया; ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई कि प्रार्थना आला (मेहराब) स्वयं चिल्ला उठा। (जब नमाज़ के दौरान आपकी कमान जैसी भौंहों की याद आई, तो बेखुदी की हालत में मस्जिद आह और पुकार में व्यस्त हो गई)।

और इसके अलावा, वह हदीस भी इसके अनिवार्य (वजह) होने का समर्थन कर सकती है जिसे इमाम इब्न असाकिर और इमाम इब्न अल-नज्जार ने 'अल-दुर्रत अल-थमीना' पुस्तक में अनस (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) से रिवायत किया है कि पवित्र पैगंबर (उन पर अल्लाह की शांति और आशीर्वाद हो) ने फरमाया:

"मेरी उम्मत (राष्ट्र) में से ऐसा कोई नहीं है जिसके पास साधन हों और फिर भी वह मेरी ज़ियारत न करे, जिसके लिए कोई बहाना हो।" मेरा वह अनुयायी जो साधन होने के बावजूद मेरी ज़ियारत नहीं करता, उसके पास इसके लिए कोई बहाना नहीं है। [पाद टिप्पणी 2]

यहाँ तक कि कुछ शाफ़ई इमाम ज़ियारत-ए-शरीफ़ा को हज की तरह फ़र्ज़ बताते हैं। अल्लामा अब्दुल ग़नी बिन अहमद बिन शाह अब्दुल क़ुद्दूस चिश्ती गंगोही (उनका रहस्य पवित्र हो), जो इमाम अल्लामा इब्न हजर मक्की (अल्लाह उन पर दया करे) के छात्र हैं, 'सुनन अल-हुदा' में कहते हैं:

"मैंने अपने उस्ताद इब्न हजर (अल्लाह उनके रहने से इस्लाम को मज़बूत करे) को यह कहते सुना कि ज़ियारत-ए-शरीफ़ा हमारे कुछ शाफ़ई साथियों के नज़दीक हज की तरह वाजिब है, और उनके नज़दीक 'वाजिब' और 'फ़र्ज़' में कोई अंतर नहीं है।" [पाद टिप्पणी 3]

संक्षेप में, इसके अनिवार्य (वजह) होने का कथन साक्ष्य की दृष्टि से अधिक स्पष्ट है, और ईमान की दृष्टि में अधिक प्रिय और प्रकट है। और यह अनिवार्यता के निकट है जैसा कि चारों विचारधाराओं (मज़ाहिब-ए-अरबा) के विद्वानों ने निर्धारित किया है, यहाँ तक कि स्वयं इमाम-ए-आज़म (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) का पाठ भी इसके निकट और व्यावहारिक रूप से समकक्ष है, और कथन 'सुन्नत' है।

---

1. शिफ़ा अल-सकाम, अध्याय तीन, मकतबा नूरया रज़विया, फ़ैसलाबाद, पृ. 53।
2. अल-मवाहिब अल-लदुन्निया, दसवां उद्देश्य, दूसरा खंड, ज़ियारत के लिए प्रोत्साहन, अल-मकतब अल-इस्लामी, बेरूत, 1/475।
3. सुनन अल-हुदा, अब्दुल ग़नी बिन अहमद।

فرمایا، جب شرف حضور پایا قبر انور کے حضور رونا اور منہ اس خاک پر ملنا شروع کیا، دونوں صاحبزادے حضرات حسین و حسن رضی اللہ تعالٰی علی جدہما وعلیہما وبارک وسلم تشریف لائے، بلال رضی اللہ تعالٰی عنہ انھیں گلے لگا کر پیار کرنے لگے، شہزادوں نے فرمایا ہم تمھاری اذان کے مشتاق ہیں یہ سقف مسجد انور پر جہاں زمانہ اقدس میں اذان دیتے تھے گئے، جس وقت اللہ اکبر اللہ اکبر کہا تمام مدینہ میں لرزہ پڑ گیا، جب اشھد ان لا الہ الا اللہ کہا مدینہ کا لرزہ دوبالا ہوا، جب اس لفظ پر پہنچے کہ اشھد ان محمد رسول اللہ کنواری نوجوان لڑکیاں پردوں سے نکل آئیں اور لوگوں میں غل پڑ گیا کہ حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم مزار پر انوار سے باہر تشریف لے آئے، انتقالِ حضور محبوب ذی الجلال صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے بعد کسی دن مدینہ منورہ کے مرد وزن میں وہ رونا نہ پڑا تھا جو اس دن ہوا ۱؎

در نمازم خم ابروئے تو بر یاد آمد حالتے رفت کہ محراب بفریاد آمد (جب آپ کی کمان ابرو، مجھے نماز میں یاد آئی، تو بیخودی کی حالت میں مسجد آہ وبکا میں مصروف ہو گئی)

اور نیز وہ حدیث بھی مؤید وجوب ہو سکتی ہے جسے امام ابن عساکر اور امام ابن النجار نے کتاب الدرۃ الثمینہ میں انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا کہ حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں:

ما من احد من امتی لہ سعۃ ثم لم یزرنی فلیس لہ عذر۔ میرا جو امتی باوصف مقدرت میری زیارت نہ کرے اس کے لیے کوئی عذر نہیں۔ ۲؎

حتی کہ بعض ائمہ شافعیہ زیارت شریفہ کو مثل حج فرض بتاتے ہیں، علامہ عبدالغنی بن احمد بن شاہ عبدالقدوس چشتی گنگوہی قدس سرہ شاگرد امام علامہ ابن حجر مکی رحمہم اللہ تعالیٰ سنن الہدیٰ میں فرماتے ہیں: "میں نے اپنے استاذ ابن حجر (ایّد اللہ الاسلام ببقائہ) کو فرماتے سنا کہ زیارت شریفہ ہمارے بعض اصحاب شافعیہ کے نزدیک مثل حج واجب ہے اور ان کے نزدیک واجب فرض میں کچھ فرق نہیں۔" ۳؎

بالجملہ قول وجوب من حیث الدلیل اظہر اور نظر ایمانی میں احب واز ہر ہے اور قریب وجوب کہ علمائے مذاہب اربعہ بلکہ خود امام اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ کا منصوص اس کے قریب اور حکماً مقارب، اور قولِ سنت

۱؎ شفاء السقام الباب الثالث مکتبہ نوریہ رضویہ فیصل آباد ص ۵۳ ۲؎ المواھب اللدنیہ مقصد عاشر فصل ثانی الترغیب فی زیارۃ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم المکتب الاسلامی بیروت ۱/ ۴۷۵ ۳؎ سنن الہدیٰ عبدالغنی بن احمد

This does not contradict that jurists also call "obligatory" (Wajib) as "Sunnah," meaning what is established through Hadith. Imam Muhammad (may Allah have mercy on him) called the Eid prayer "Sunnah," even though it is Wajib according to the Hanafis. Rather, in a general application, recommended (Mustahab) and meritorious (Mandoob) actions also include obligations. And since Fard (mandatory) and Wajib are shared in the ruling of action and the sin of the omittee, and there is no terminology difference among the Shafi'is, applying "Fard" to "Wajib" for them and drawing an analogy with Hajj is not far-fetched. Based on this discourse, all actions will agree, and as clarified by scholars like Allama Shami and others, initiating agreement is better than maintaining disagreement. Undoubtedly, regarding the obligation or proximity to obligation that the majority of the leaders of the schools of thought clarify, they are unanimous on the sinfulness of the person who omits it. In any case, it is firmly concluded that despite having the ability, one who abandons the visitation (Ziyarah) is certainly deprived, blamed, unfortunate, ill-omened, sinful, a transgressor, and cruel. Seek refuge with Allah from what He is not pleased with. Therefore, past and subsequent religious scholars and reliable leaders have consistently cast severe reproach and prolonged condemnation on those who abandon the visitation, stating that it can never be a mere abandonment of a recommended act. Allama (may Allah have mercy on him), a student of Imam Ibn al-Humam, said in 'Lubab': "Abandoning the visitation is great negligence and severe disrespect." [1]

And Imam Ibn Hajar Makki (may his secret be sanctified), in 'Jawhar al-Munazzam,' has depicted a major calamity for the one who abandons the visitation. He (may Allah Almighty have mercy on him) says: "Be warned! The Noble Messenger (peace and blessings of Allah be upon him) has warned you to the utmost degree against abandoning the visitation and described its calamities such that if you reflect on them, you would fear your own destruction and an evil end. The Messenger clearly stated that abandoning the visitation is cruelty. Similarly, it has come in an authentic Hadith that 'It is cruelty not to send blessings upon me after hearing my mention.' This proves that despite having the ability, abandoning the visitation and hearing the noble mention and not sending blessings are equal, as both are acts of cruelty. Thus, the one who abandons the visitation should fear all those punishments and atrocities mentioned in the Hadiths for the one who abandons sending blessings—that he is wretched, unsuccessful, humiliated, deserving of fire, distant from God and His

Messenger. Gabriel the Trustworthy and the Master of the Universe (peace and blessings of Allah be upon him) prayed for him to suffer all these punishments and be rejected from the Divine court. He has forgotten the path to Paradise, is extremely miserly, cursed, faithless, and will be deprived of the world-adorning vision of the beauty of his Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). Seek refuge with Allah, the Blessed and Exalted. Remind him of these things who, despite having power, did not perform the noble visitation due to laziness and negligence; perhaps...

---

1 Lubab al-Manasik with Irshad al-Sari, Chapter on the Visitation of the Master of Messengers, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 433

यह इसके विपरीत नहीं है कि फुक़हा (विधिवेत्ता) वाजिब को भी "सुन्नत यानी जो हदीस से साबित हो" सुन्नत कहते हैं। इमाम मुहम्मद (रहमतुल्लाह अलैहि) ने ईद की नमाज़ को, जो हनफ़ियों के नज़दीक वाजिब है, सुन्नत कहा है। बल्कि व्यापक अर्थ में मुस्तहब और मंदूब भी वाजिबात में शामिल होते हैं। और जब फ़र्ज़ और वाजिब अमल के हुक्म और छोड़ने वाले के गुनाह में साझीदार हैं, और शाफ़ियों के यहाँ शब्दावली में कोई फ़र्क़ नहीं है, तो उनके नज़दीक वाजिब पर फ़र्ज़ का प्रयोग और हज के साथ समानता देना दूर नहीं है। इस बयान के अनुसार सभी कार्य एकमत हो जाएँगे और अल्लामा शामी जैसे विद्वानों की स्पष्ट व्याख्या के अनुसार, असहमति को बनाए रखने के बजाय सहमति व्यक्त करना बेहतर है। और निस्संदेह, वुजुब (अनिवार्यता) या वुजुब के करीब होने के बारे में जिसका स्पष्टीकरण अधिकांश पंथों के इमाम करते हैं, वे इसे छोड़ने वाले के गुनाह पर एकमत हैं। बहरहाल, यह दृढ़ता से कहा जाता है कि क्षमता होने के बावजूद ज़ियारत (दर्शन) को छोड़ने वाला निश्चित रूप से वंचित, निन्दित, अभागा, अशुभ, पापी, अपराधी, ज़ालिम और निर्दयी है। अल्लाह की पनाह उन बातों से जिनसे वह राज़ी नहीं है। इसलिए, पूर्ववर्ती और बाद के विद्वानों और विश्वसनीय इमामों ने ज़ियारत छोड़ने वाले पर कड़ी निंदा और लंबे समय तक तिरस्कार किया है, यह कहते हुए कि यह हरगिज़ मुस्तहब का छोड़ना नहीं हो सकता। अल्लामा (रहमतुल्लाह अलैहि), जो इमाम इब्न अल-हुमाम के छात्र थे, ने 'लुबाब' में कहा: "ज़ियारत छोड़ना बड़ी गफ़लत (लापरवाही) और सख्त बेअदबी (अपमान) है।" [१]

और इमाम इब्न हजर मक्की (क़ुद्दिस सिर्रहु) ने तो 'जौहर अल-मुनज़्ज़म' में ज़ियारत छोड़ने वाले पर क़यामत-ए-कुबरा क़ायम कर दी है। वह (रहमतुल्लाह अलैहि) फ़रमाते हैं: "सावधान हो जाओ! हुज़ूर अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने तुम्हें ज़ियारत छोड़ने से अत्यधिक डराया है और उसकी विपत्तियों के बारे में वह सब बयान किया है कि यदि तुम उस पर गौर करो तो अपने विनाश और बुरे अंजाम का डर महसूस करोगे। हुज़ूर ने साफ फ़रमा दिया कि ज़ियारत छोड़ना ज़फ़ा (क्रूरता) है। और इसी तरह सही हदीस में आया है कि 'मेरा ज़िक्र सुनकर मुझ पर दुरूद न पढ़ना ज़फ़ा है।' इससे साबित हुआ कि क्षमता होने के बावजूद ज़ियारत छोड़ना और ज़िक्र-ए-अक़दस सुनकर दुरूद छोड़ना, दोनों समान हैं क्योंकि दोनों क्रूरता हैं। अतः ज़ियारत छोड़ने वाले पर उन सभी अज़ाबों और बुराइयों का डर है जो दुरूद छोड़ने वाले के लिए हदीसों में आए हैं कि वह अभागा, असफल, ज़लील व ख्वार, आग का हक़दार, खुदा और रसूल से दूर है। इन सब अज़ाबों और बारगाह से मरदूद

(तिरस्कृत) होने की दुआ जिब्रील अमीन और हुज़ूर सैय्यद-ए-आलम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने की है। वह जन्नत का रास्ता भूल गया, हद दर्जे का कंजूस, लानती, बेदीन है, अपने नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के दीदार-ए-जमाल-ए-जहाँ आरा से महरूम रहेगा। अल्लाह की पनाह! जो लोग शक्ति होने के बावजूद सुस्ती और काहिली के कारण ज़ियारत-ए-शरीफ़ नहीं करते, उन्हें ये बातें याद दिलाओ, शायद...

---

१ लुबाब अल-मनासिक मआ इरशाद अल-सारी, बाब ज़ियारत सैय्यद अल-मुर्सलीन, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरुत, पृ. ४३३

اس کے منافی نہیں فقہاء واجب کو بھی "کہ سنت یعنی جو حدیث سے ثابت ہو" سنت بولتے ہیں۔ امام محمد رحمہ اللہ تعالیٰ علیہ نے نماز عید کو کہ حنفیہ کے نزدیک واجب ہے، ہے سنت کہا، بلکہ اطلاق اعم میں مستحب و مندوب بھی واجبات کو شامل، اور فرض و واجب جبکہ حکم عمل و اثم تارک میں مشارک، اور شافعیہ کے یہاں فرق اصطلاح نہیں تو ان کے نزدیک واجب پر اطلاق فرض اور حج سے تمثیل بعید نہیں، اس تقریر پر سب افعال متفق ہو جائیں گے اور بہ تصریح علماء مثل علامہ شامی وغیرہ ابدائے وفاق ابقائے خلاف سے اولی اور بیشک وجوب و قرب وجوب کہ جمہور ائمہ مذاہب جس کی تصریح کرتے ہیں، تارک کے اثم پر یک زبان، بہرحال جزم کیا جاتا ہے کہ باوجود قدرت تارک زیارت قطعاً محروم و ملوم و بد بخت و مشوم و آثم و گنہگار و ظالم و جفا کار ہے، والعیاذ باللہ ممالا یرضاہ، لا جرم سلفاً و خلفاً علماء دین و ائمہ معتمدین تارک زیارت پر طعن شدید و تشنیع مدید کرتے آئے کہ ترک مستحب ہرگز نہیں ہو سکتی، علامہ رحمت اللہ علیہ تلمیذ امام ابن ہمام نے لباب میں فرمایا: "ترک زیارت بڑی غفلت اور سخت بے ادبی ہے۔" [1]

اور امام ابن حجر مکی قدس سرہ الملکی نے تو جوہر منظم میں تارک زیارت پر قیامت کبری قائم فرمائی، فرماتے ہیں رحمہ اللہ تعالیٰ: "خبر دار ہو حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے تجھے ترک زیارت سے حد درجہ ڈرایا اور اس کی آفتوں سے وہ کچھ بیان فرمایا کہ اگر تو اسے غور سے سمجھے تو اپنے اوپر ہلاکت و بد انجامی کا خوف کرے، حضور نے صاف فرما دیا کہ ترک زیارت جفا ہے۔ اور یونہی صحیح حدیث میں آیا کہ "میرا ذکر سن کر مجھ پر درود نہ پڑھنا جفا ہے۔" اس سے ثابت ہوا کہ باوجود قدرت ترک زیارت اور ذکر اقدس سن کر ترک درود، دونوں یکساں ہیں کہ دونوں جفائیں، تو تارک زیارت پر ان سب عذابوں اور شناعتوں کا خوف ہے جو

تارک درود کے لئے حدیثوں میں آئیں کہ وہ شقی، نامراد، ذلیل و خوار، مستحق نار، خدا اور رسول سے دور ہے، اس پر ان سب عذابوں اور نیز مردود بارگاہ ہونے کی دعا جبریل امین و حضور سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمائی، وہ راہ جنت بھول گیا، حد بھر کا بخیل، ملعون، بے دین ہے، اپنے نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے دیدار جمال جہاں آرا سے محروم رہے گا، والعیاذ باللہ تبارک و تعالیٰ ان باتوں کو یاد کر کے اسے خبر دے جس نے با وصف قدرت براہ سستی و کسل، زیارت شریف نہ کی، شاید

---

1 لباب المناسک مع ارشاد الساری باب زیارۃ سید المرسلین دار الکتاب العربی بیروت ص ۴۳۳

Fatawa Rizvia Volume 10

Hearing this, one should repent from these evils and turn towards Allah Almighty. One should not be cruel to this Prophet, who is the means (Wasilah) for him and the entire world towards Allah, the Mighty and Sublime. We have seen many who, despite having the means, abandoned visiting (the Prophet's shrine); Allah Almighty made a clear and perceptible darkness appear on their faces and made them so lethargic in good deeds that they left worship, became immersed in worldly affairs, and remained in that state until death. (Summarized) And refuge is sought with Allah, Glory be to Him, the Exalted.

After this, the Imam wrote those severe and terrifying incidents, hearing which a Muslim's heart would tremble. May Allah Almighty keep us in His protection, for the sake of His beloved, close, and answering Prophet, peace and blessings be upon him, Ameen! Let a Muslim reflect: when this is the state of one who abandons the visit, what will be the state of one who prevents it or denies its excellence! It is clearer than the sun that such a person is strayed, irreligious, a violator of the consensus of Muslims, and deserving of severe warning: "We shall leave him to what he has turned to and drive him into Hell—and an evil destination it is." (Quran 4:115).

Imam Ibn Hajar says in Afdal al-Qura: "Whoever disputes its merit, his dispute will be the cause of his destruction and disgrace in this world and the hereafter." Imam Subki says in Shifa al-Siqam Sharif: "Visiting the Prophet (peace and blessings be upon him) and traveling towards it from all parts of the world is among the greatest means of closeness to Allah, as has been known among Muslims of the East and West for ages. Today, some rejected ones (i.e., Ibn Taymiyyah and his followers), prompted by Satan, have begun to cast doubt upon it. But alas! Where would this find a place in a Muslim's heart? This is but the mischief-making of a rejected one, the burden of which will fall upon him." Imam Ahmad Qastalani says in Mawahib al-Sharifah: "Visiting the blessed grave is a very great act of proximity, a very great hope-giving obedience, and a path towards extremely high ranks. Whoever holds a belief contrary to this has removed the noose of Islam from his neck and has opposed God, His Messenger, and the congregation of renowned Imams."

1. Jawhar al-Munazzam, Ibn Hajar Makki, Arabic, Third Chapter on Warning against Abandoning the Visit, Khayriyya Press, Egypt, pp. 28-30.
2. Al-Quran 4/115.
3. Afdal al-Qura.

4. Shifa al-Siqam, Sixth Chapter on Traveling Towards it being a Proximity, Maktaba Nooria Razvia, Faisalabad, p. 102.
5. Al-Mawahib al-Ladunniyyah, Tenth Objective, Second Chapter on Encouragement to Visit, Al-Maktab al-Islami, Beirut, 4/507.

यह सुनकर उन बुराइयों से तौबा करे और अल्लाह तआला की तरफ रुजू लाए, अपने इस नबी पर जफ़ा न करे जो उसके और तमाम जहान के लिए अल्लाह अज़्ज़वजल की तरफ से वसीला हैं, और हमने बहुत से उन लोगों को देखा जिन्होंने कुदरत होने के बावजूद ज़ियारत छोड़ दी, अल्लाह तआला ने उनके चेहरों पर साफ़ महसूस होने वाली तारीकी (अंधेरा) ज़ाहिर कर दी और नेकियों में उन्हें ऐसा सुस्त कर दिया कि वे इबादत छोड़ कर दुनिया में पड़ गए और मरते दम तक इसी हाल पर रहे। (सारांश) और अल्लाह सुब्हानहू व तआला की पनाह।

इसके बाद इमाम ने वे सख्त खौफनाक वाकयात लिखे जिन्हें सुनकर मुसलमान का दिल कांप उठे, अल्लाह तआला अपनी पनाह में रखे, अपने प्यारे हबीब, करीबी और दुआ कुबूल करने वाले सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के सदके में, आमीन! मुसलमान गौर करे कि जब ज़ियारत छोड़ने वाले का यह हाल है, तो इसे रोकने वाले या इसकी फ़ज़ीलत का इनकार करने वाले का क्या हाल होगा! सूरज से भी ज़्यादा रौशन है कि ऐसा शख्स गुमराह, बददीन, मुसलमानों के इजमा (आम सहमति) को तोड़ने वाला और सख्त चेतावनी का हक़दार है: "हम उसे उसी हाल पर छोड़ देंगे जिस पर वह फिरा है और उसे दोज़ख में दाखिल करेंगे और वह क्या ही बुरा ठिकाना है।" (कुरआन 4:115)।

इमाम इब्ने हजर 'अफ़ज़ल अल-क़ुरा' में फ़रमाते हैं: "जो इसकी खूबी में बहस करेगा, उसकी यह बहस दुनिया और आखिरत में उसकी तबाही और रुसवाई का सबब बनेगी।" इमाम सुबकी 'शिफ़ा अस-सिक़ाम' शरीफ़ में फ़रमाते हैं: "नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की ज़ियारत और दुनिया के कोने-कोने से उसकी तरफ सफ़र करना अल्लाह की कुर्बत (निकटता) के सबसे बड़े ज़रियाओं में से है, जैसा कि सदियों से पूरब और पश्चिम के मुसलमानों में मशहूर है। आजकल कुछ मरदूद (यानी इब्ने तैमिया और उसके हिमायती) शैतान के सिखाए से इसमें शक डालने लगे हैं, लेकिन अफ़सोस! यह बात किसी मुसलमान के दिल में कहाँ जगह पा सकती है? यह तो एक मरदूद की फ़ितना-परस्ती है जिसका बोझ उसी पर पड़ेगा।" इमाम अहमद क़स्तलानी 'मवाहिब शरीफ़ा' में फ़रमाते हैं: "क़ब्र मुबारक़ की ज़ियारत बहुत बड़ी कुर्बत और बहुत बड़ी उम्मीद वाली इबादत है और निहायत बुलंद दर्जों की तरफ रास्ता है। जो इसके खिलाफ अकीदा रखे, उसने इस्लाम की रस्सी का

फंदा अपनी गर्दन से निकाल दिया और खुदा, रसूल और मशहूर इमामों की जमात का विरोध किया।"

1. जौहर अल-मुनज़्ज़म, इब्ने हजर मक्की अरबी, तीसरा अध्याय ज़ियारत छोड़ने की चेतावनी के बारे में, मतबा खैरिया मिस्र, पृ. 28-30
2. अल-कुरआन 4/115
3. अफ़ज़ल अल-क़ुरा
4. शिफ़ा अस-सिक़ाम, छठा अध्याय उसके सफ़र के कुर्बत होने के बारे में, मकतबा नूरिया रज़विया फैसलाबाद, पृ. 102
5. अल-मवाहिब अल-लदुन्निया, दसवां मक़सद, दूसरा अध्याय ज़ियारत के प्रोत्साहन के बारे में, अल-मकतब अल-इस्लामी बेरुत, 4/507

یہ سن کر ان برائیوں سے توبہ کرے اور اللہ تعالیٰ کی طرف رجوع لائے، اپنے اس نبی پر جفانہ کرے جو اس کا اور تمام جہاں کا اللہ عزوجل کی طرف سے وسیلہ ہیں، اور ہم نے بہت تارکان زیارت بحال قدرت کو دیکھا کہ اللہ تعالیٰ نے ان کے چہروں پر صریح محسوس تاریکی ظاہر کردی اور نیکیوں میں انھیں ایسا سست کردیا کہ عبادت چھوڑ کر دنیا میں پڑ گئے اور مرتے دم تک اس حال پر رہے۔ (ملخصاً) والعیاذ باللہ سبحانہ و تعالیٰ۔

اس کے بعد امام نے وہ سخت ہولناک واقعے لکھے جنھیں سن کر مسلمان کا دل کانپ اٹھے، اللہ تعالیٰ اپنی امان میں رکھے صدقہ اپنے پیارے حبیب قریب مجیب صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا، آمین! مسلمان غور کرے جب تارک زیارت کا یہ حال، اس کے مانع یا منکر فضیلت کا کیا حال ہوگا! آفتاب سے زیادہ روشن کہ ایسا شخص گمراہ، بددین، خارق اجماع مسلمین، مستحق وعید شدید، نُوَلِّهٖ مَا تَوَلّٰى وَنُصْلِهٖ جَهَنَّمَؕ وَسَآءَتْ مَصِيْرًا (ہم اسے اس کے حال پر چھوڑ دیں گے اور اسے دوزخ میں داخل کریں گے اور کیا ہی بری جگہ پلٹنے کی ، ت) ہے۔

امام ابن حجر افضل القریٰ میں فرماتے ہیں: "جو اس کی خوبی میں نزاع کرے گا اس کا نزاع کرنا دنیا و آخرت میں اس کی تباہی و رسوائی کا باعث ہوگا"۔ امام سبکی شفاء السقام شریف میں فرماتے ہیں: "نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی زیارت و اطراف عالم سے اس کی طرف سفر اعظم قربات الٰہی سے ہے جیسا کہ مدتوں سے شرق و غرب کے مسلمانوں میں معروف ہے، آج کل بعض مردود (یعنی ابن تیمیہ اور اس کے ہوا خواہ) شیطان کے سکھائے سے اس میں شک ڈالنے لگے مگر ہیہات یہ مسلمان کے دل میں کہاں جگہ پاتی، یہ تو ایک مردود کی فتنہ پردازی ہے جس کا وبال اسی پر پڑے گا۔ امام احمد قسطلانی مواہب شریفہ میں فرماتے ہیں: "قبر مبارک کی زیارت

بہت بڑی قربت اور بہت بڑی امید کی اطاعت اور نہایت بلند درجوں کی طرف راہ ہے جو اس کے خلاف اعتقاد کرے اس نے رسن اسلام کا حلقہ اپنی گردن سے نکال دیا اور خدا اور رسول و جماعت مشاہیر ائمہ کا خلاف کیا۔"

1۔ جوہر منظم ابن حجر مکی عربی فصل ثالث فی التحذیر من ترک زیارت صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم مطبعہ خیریہ مصر ص ۲۸ تا ۳۰ 2۔ القرآن ۴/ ۱۱۵ 3۔ افضل القریٰ 4۔ شفاء السقام الباب السادس فی کون السفر الیہا قربۃ مکتبہ نوریہ رضویہ فیصل آباد ص ۱۰۲ 5۔ المواہب اللدنیہ مقصد عاشر فصل ثانی الترغیب فی زیارۃ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم المکتب الاسلامی بیروت ۴/ ۵۰۷

Fatawa Razawiyya Volume 10

To the extent that some scholars explicitly state that the noble visit (Ziyarat Sharifa) being an act of closeness (qurbat) is from the essentials of religion (zaruriyat-e-deen) and label its denier as an infidel. In 'Durrah Madhiyyah' of Maulana Ali Qari, it is stated: "Some eminent scholars have gone to the extent of saying that the noble visit being an act of closeness is known of necessity from the religion, and the ruling of disbelief (kufr) is for its denier." 1 Allama Shihabuddin Khafaji Misri, in 'Naseem al-Riyad', a commentary on 'Shifa' by Qadi Iyad, states: "Ibn Taymiyyah and his followers like Ibn Qayyim forbade the visit to the noble grave of the Master of the Universe, peace and blessings of Allah be upon him, and traveling towards it. This is his atrocious speech for which the scholars declared him an infidel (Takfir), and Imam Subki wrote an independent book on this." 2

I say: The humble servant (Faqir) - may Allah forgive him - by the grace of Allah, has mentioned the exquisite discourse and excellent justification of the statement of Takfir along with a sound response in the original fatwa. This much is sufficient here. May the Almighty Lord, for the sake of His Noble Beloved, peace and blessings be upon him, grant his true love and true respect, and may He take us from this world while being in his love, honor, and reverence, and by His universal grace and great bounty, bless and favor us with his visit in this world and the hereafter. Ameen, Ameen, O Most Merciful of the merciful. And may the peace and blessings of Allah be upon the Master of the Messengers, Muhammad, and his family and all his companions.

And Allah knows best, and His knowledge is most complete and most perfect.

Muhammadi Hanafi Qadri

Written by: The sinful servant Ahmad Raza al-Barelwi, may he be forgiven, by the sake of Muhammad al-Mustafa, the Unlettered Prophet, peace and blessings of Allah be upon him and his family.

1 Durrah Madhiyyah 2 Naseem al-Riyad, chapter on the ruling regarding visiting his grave, peace and blessings be upon him, Dar al-Fikr, Beirut 3/512

फ़तावा रज़विया जिल्द दस

यहाँ तक कि कुछ विद्वान स्पष्ट रूप से शरीफ़ ज़ियारत (पवित्र दर्शन) के समीप होने को धर्म की अनिवार्यताओं (ज़रूरियात-ए-दीन) में से बताते हैं और इसके इनकार करने वाले को काफ़िर कहते हैं। मौलाना अली क़ारी की 'दुर्रह मदिय्या' में है: "कुछ श्रेष्ठ विद्वानों ने यहाँ तक कहा है कि शरीफ़ ज़ियारत का नैकट्य होना धर्म से आवश्यक रूप से ज्ञात है, और इसके इनकार करने वाले पर कुफ़्र का हुक्म है।" 1 अल्लामा शिहाबुद्दीन खफ़ाजी मिस्री, क़ाज़ी अयाज़ की 'शिफ़ा' की व्याख्या 'नसीम अल-रियाद' में फ़रमाते हैं: "सय्यिद-ए-आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की पवित्र कब्र की ज़ियारत और उसकी ओर यात्रा करने से इब्न तैमिया और इब्न क़य्यिम जैसे उनके अनुयायियों ने मना किया, और यह उनकी वह घिनौनी बात है जिसके कारण विद्वानों ने उनका तक़फ़ीर (काफ़िर घोषित करना) किया और इमाम सुबकी ने इस पर एक स्वतंत्र पुस्तक लिखी।" 2

मैं कहता हूँ: तक़फ़ीर के कथन की उत्तम व्याख्या और श्रेष्ठ औचित्य के साथ सटीक उत्तर फ़क़ीर (क्षमाप्रार्थी) ने अल्लाह के सहयोग से मूल फ़तवे में उल्लेख किया है। यहाँ इतना पर्याप्त है। मौला तआला अपने हबीब-ए-करीम अलैहिस्सलाम के सदक़े में उनकी सच्ची मुहब्बत और सच्चा अदब अता फ़रमाए, और उन्हीं की मुहब्बत, ताज़ीम, अदब और तक़रीम पर दुनिया से उठाए, और अपने सामान्य करम और महान कृपा से दुनिया और आख़िरत में उनकी ज़ियारत से सम्मानित और लाभान्वित फ़रमाए। आमीन, आमीन, ऐ सबसे बड़े रहम करने वाले। और अल्लाह तआला की रहमत हो रसूलों के सरदार मुहम्मद पर और उनकी आल और उनके तमाम सहाबा पर।

और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है और उसका इल्म सबसे पूर्ण और सबसे मज़बूत है।

मुहम्मदी हनफ़ी क़ादरी

लेखक: गुनहगार बंदा अहमद रज़ा बरेलवी, अल्लाह उन्हें माफ़ फ़रमाए, मुहम्मद मुस्तफ़ा नबी-ए-उम्मी के वसीले से, अल्लाह उन पर और उनकी आल पर रहमत और सलामती भेजे।

1 दुर्रह मदिय्या 2 नसीम अल-रियाद, कब्र की ज़ियारत के हुक्म पर अध्याय, दारुल फ़िक्र बैरूत 3/512

पेज 731 / 836

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

یہاں تک کہ بعض علماء صراحتاً زیارت شریفہ کے قربت ہونے کو ضروریات دین سے اور اس کے منکر کو کافر بتاتے ہیں، درہ مضیہ مولانا علی قاری میں ہے: "بعض فضلاء نے مبالغہ کیا کہ فرماتے ہیں زیارت شریفہ کا قربت ہونا دین سے ضرورتہ معلوم ہے اور اس کے منکر پر کفر کا حکم۔" 1 علامہ شہاب الدین خفاجی مصری نسیم الریاض شرح شفائے قاضی عیاض میں فرماتے ہیں: "قبر اکرم سید عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی زیارت اور اس کی طرف سفر کو ابن تیمیہ اور اس کے اتباع مثل ابن قیم نے منع کیا اور یہ اس کا وہ کلام شنیع ہے جس کے سبب علماء نے اس کی تکفیر کی اور امام سبکی نے اس میں مستقل کتاب لکھی۔" 2

اقول: قولِ تکفیر کی نفیس تقریر و عمدہ توجیہ مع جوابِ وجیہ فقیر غفراللہ تعالیٰ نے بتوفیق اللہ تعالی اصل فتوی میں ذکر کی، یہاں اس قدر کافی، مولیٰ تعالیٰ صدقہ اپنے حبیب کریم علیہ الصلوٰۃ والتسلیم کا ان کی سچی محبت اور سچا ادب بخشے اور انہی کی محبت و تعظیم و ادب و تکریم پر دنیا سے اٹھائے اور اپنے کرم عمیم و فضل عظیم سے دنیا و آخرت میں ان کی زیارت سے مشرف و بہرہ مند فرمائے آمین آمین یا ارحم الراحمین و صلی اللہ تعالیٰ علیٰ سید المرسلین محمد و آلہ و صحبہ اجمعین۔

واللہ تعالیٰ اعلم وعلمہ اتم واحکم۔

محمدی حنفی قادری

کتبہ عبدہ المذنب احمد رضا البریلوی عفی عنہ بمحمدن المصطفی النبی الامي صلی اللہ تعالیٰ علیہ وآلہ وسلم

1 دره مضیه 2 نسیم الریاض فصل فی حکم زیارة قبره علیه الصلوٰة والسلام دارالفکر بیروت ۳/ ۵۱۲

Volume Ten Fatawa Razawiya

Anwar-ul-Bisharah fi Masail-il-Hajj wal Ziyarah 1329 AH (Happy Springs in the Matters of Hajj and Pilgrimage)

All praise is due to Allah, Lord of the worlds, and peace and blessings be upon His Messenger Muhammad, his family, and all his companions.

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

Afterwards, these few words are for the guidance of the pilgrims. Most of them have been extracted from the blessed book 'Jawahar al-Bayan Sharif', a subtle composition by the seal of researchers, our master and teacher Maulvi Muhammad Naqi Ali Khan Sahib Qadri, may his secret be sanctified. On 3rd Shawwal 1329 AH, the noble Hazrat Syed Muhammad Ahsan Sahib Barelvi said to this humble servant Ahmad Raza Khan Qadri, may he be forgiven, that "I intend to go for Hajj on 10th Shawwal; many people go, [please provide] the method and etiquette of Hajj."

Note: And hundreds of issues were added from his own treatises and intermediate rituals etc. 12 Minhu (M)

Page 732 of 836

खंड दसवाँ फ़तावा रज़विया

अनवार-उल-बिशारा फ़ी मसाइल-इल-हज वल ज़ियारा १३२९ हिजरी (हज और ज़ियारत के मसाइल में खुशी की बहारें)

तमाम प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो सारे जहानों का रब है, और उसके रसूल मुहम्मद और उनकी आल और उनके तमाम असहाब पर दुरूद व सलाम हो।

अल्लाह के नाम से शुरू जो बहुत मेहरबान, निहायत रहम वाला है।

बाद अज़ॉ, ये चंद हुरूफ हाजियों की हिदायत के लिए हैं, इनमें से अक्सर मुस्तताब किताब 'जवाहिरुल बयान शरीफ' से लिए गए हैं, जो मुहक्किक़ीन के ख़ातम, हमारे सरदार और मौलाना मौलवी मुहम्मद नक़ी अली ख़ान साहब क़ादरी (उनका रहस्य पवित्र हो) की लतीफ तसनीफ है। ३ शव्वाल १३२९ हिजरी को महामहिम हज़रत सैयद मोहम्मद अहसन साहब बरेलवी ने फ़क़ीर अहमद रज़ा ख़ान क़ादरी (अल्लाह उनकी मग़फ़िरत फ़रमाए) से फ़रमाया कि १० शव्वाल को मेरा हज का इरादा है, बहुत से लोग जाते हैं, हज का तरीक़ा और आदाब (बताएं)।

नोट: और सैकड़ों मसाइल अपने रसायल और मुनासिक-ए-मुतवस्सिट वग़ैरा से इज़ाफ़ा किए। १२ मिन्हु (म)

पृष्ठ 732 का 836

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

انوار البشارۃ فی مسائل الحج والزیارۃ ۱۳۲۹ھ (حج وزیارت کے مسائل میں خوشی کی بہاریں)

الحمد للہ رب العلمین والصلوٰۃ والسلام علی رسولہ محمد وآلہ واصحابہ اجمعین۔

بسم اللہ الرحمن الرحیم ط

امّا بعد، یہ چند حروف ہدایت حجاج کے لیے ہیں، ان میں اکثر کتاب مستطاب جواہر البیان شریف تصنیف لطیف اقدس حضرت خاتم المحققین سیدنا و مولانا مولوی محمد نقی علی خاں صاحب قادری قدس سرہ الشریف سے التقاط عہ کئے ہیں، ۳ شوال ۱۳۲۹ھ کو والا جناب حضرت سید محمد احسن صاحب بریلوی نے فقیر احمد رضا خاں قادری غفر لہ سے فرمایا کہ ۱۰ شوال کو میرا ارادہ حج ہے بہت لوگ جاتے ہیں حج کا طریقہ اور آداب

عہ: اور صدہا مسائل اپنے رسائل اور مناسک متوسط وغیرہ سے اضافہ کیے ۱۲ منہ (م)

...wrote and published it. These few lines were written by the order of Hazrat Sayyid Sahib in a state of wonderment; it is hoped that by the blessing of the honorable descendants of the Prophet (Sadaat-e-Kiram), Almighty Allah accepts it and benefits the Muslim brothers, Ameen!

Chapter One: Etiquettes of Travel and Preliminaries of Hajj

(1) One who owes a debt or holds a trust should settle it. If wealth was taken unjustly, return it or seek forgiveness. If the owner's whereabouts are unknown, give the wealth to the poor. (2) Fulfill all pending obligatory acts of worship like Prayer (Salah), Fasting (Sawm), and Almsgiving (Zakah) and seek repentance (Tawbah). (3) One whose permission is required for travel, like parents or husband, should be made agreeable. Seek permission from creditors if unable to pay immediately. Still, Hajj cannot be stopped due to someone's lack of permission; one should strive for permission, but if not granted, one may still go. (4) The sole purpose of this journey should be for the sake of Allah and His Messenger. (5) It is forbidden (Haram) for a woman to travel without a husband or a trustworthy, adult Mahram (a relative with whom marriage is permanently prohibited). If she does so, the Hajj will be valid, but a sin will be recorded for every step taken. (6) Provision should be from lawful (Halal) wealth, otherwise, there is no hope for the acceptance of Hajj, although the obligation will be fulfilled. (7) Take more provisions than needed to help companions and give charity to the poor; this is a sign of an accepted Hajj (Hajj Mabroor). (8) Take books of jurisprudence (Fiqh) sufficient for needs, or travel with a scholar. If neither is possible, at least carry this treatise along. (9) Carry a mirror, kohl (surma), comb, and tooth-stick (miswak), as it is Sunnah. (10) Do not travel alone, as it is prohibited. Have a religious companion, for being alone is better than the company of an irreligious person. (11) It is stated in the Hadith: "When three people go on a journey, they should make one of them their leader (Amir)."[1] This ensures management of affairs. The leader should be good-natured, wise, and religious. The leader should prioritize the comfort of his companions over his own. When leaving, meet friends and relatives and seek forgiveness for shortcomings. It is incumbent upon them to forgive from the heart. The Hadith states that when a Muslim brother brings an apology, it is obligatory (to accept it).

---

1 Mishkat al-Masabih, Book of Jihad, Chapter on Etiquettes of Travel, Mujtabai Press, Delhi, p. 339. Page 733 of 836

फतावा रिज़विया जिल्द 10

...लिखकर छाप दे, हज़रत सैयद साहब के हुक्म से बहाल-ए-इस्तअजाबी ये चंद सतुर (पंक्तियाँ) तहरीर हुईं, उम्मीद कि बह बरकत-ए-सादात किराम, अल्लाह तआला कुबूल फरमाए और मुसलमान भाइयों को नफा पहुंचाए, आमीन!

अध्याय एक: सफर के आदाब और हज की प्रस्तावना

(१) जिसका कर्ज आता हो या अमानत पास हो अदा करे, जिनके माल नाहक लिए हों वापस दे या माफ़ कराए, पता न चले तो माल फकीरों को दे दे। (२) नमाज़, रोज़ा, ज़कात जितनी इबादतें ज़िम्मे पर हों अदा करे और ताइब (तौबा करने वाला) हो। (३) जिसकी बे-इजाज़त सफ़र मकरूह है जैसे माँ, बाप, शौहर, उसे रज़ामंद करे। जिसका उस पर क़र्ज़ आता है, उस वक़्त न दे सके तो उससे भी इजाज़त ले, फिर भी हज किसी की इजाज़त न देने से रुक नहीं सकता, इजाज़त में कोशिश करे न मिले जब भी चला जाए। (४) इस सफ़र से मक़सूद सिर्फ अल्लाह व रसूल हों। (५) औरत के साथ जब तक शौहर या महरम बालिग़ क़ाबिल-ए-इत्मीनान न हो जिससे निकाह हमेशा को हराम है, सफ़र हराम है, अगर करेगी हज हो जाएगा मगर हर कदम पर गुनाह लिखा जाएगा। (६) तोशा (सफर का सामान) माल-ए-हलाल से हो वरना कुबूल-ए-हज की उम्मीद नहीं अगरचे फर्ज़ उतर जाएगा। (७) हाजत से ज़्यादा तोशा लेकर रफ़ीक़ों (साथियों) की मदद और फक़ीरों पर सदक़ा करता चले, ये हज-ए-मबरूर की निशानी है। (८) आम कुतुब-ए-फ़िक्ह ब-क़द्र-ए-किफ़ायत साथ ले वरना किसी आलिम के साथ चला जाए, ये भी न मिले तो कम अज़ कम ये रिसाला हमराह हो। (९) आईना, सुरमा, कंघा, मिसवाक साथ रखे कि सुन्नत है। (१०) अकेला सफ़र न करे मना है, रफ़ीक़ दीनदार हो कि बद-दीन की हमराही से अकेला बेहतर है। (११) हदीस में है: जब तीन आदमी सफ़र को जाएँ अपने में एक को सरदार बना लें।[1] इसमें कामों का इंतज़ाम रहता है, सरदार उसे बनाएँ जो खुश-ख़ल्क़ (अच्छे स्वभाव वाला), आकिल (बुद्धिमान) और दीनदार हो, सरदार को चाहिए रफ़ीक़ों के आराम को अपनी आसाइश (सुविधा) पर मुक़द्दम (प्राथमिकता) रखे। चलते वक़्त अपने दोस्तों अज़ीज़ों से मिले और अपने कुसूर माफ़ कराए, और उन पर लाज़िम है कि दिल से माफ़ कर दें, हदीस में है कि जिसके पास उसका मुसलमान भाई माज़रत (माफ़ी) लाए वाजिब है...

---

1. मिश्कातुल मसाबीह, किताबुल जिहाद, बाब आदाबुल सफ़र, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, पृ. ३३९।

لکھ کر چھاپ دے ، حضرت سید صاحب کے حکم سے بحالِ استعجابی یہ چند سطور تحریر ہوئیں، امید کہ بہ برکت سادات کرام، اللہ تعالی قبول فرمائے اور مسلمان بھائیوں کو نفع پہنچائے، آمین!

فصلِ اوّل آدابِ سفر و مقدماتِ حج میں

(۱) جس کا قرض آتا ہو یا امانت پاس ہو ادا کرے، جن کے مال ناحق لیے ہوں واپس دے یا معاف کرائے، پتہ نہ چلے تو مال فقیروں کو دے دے۔ (۲) نماز، روزہ، زکوۃ جتنی عبادات ذمہ پر ہوں ادا کرے اور تائب ہو۔ (۳) جس کی بے اجازت سفر مکروہ ہے جیسے ماں، باپ، شوہر، اسے رضامند کرے جس کا اس پر قرض آتا ہے، اس وقت نہ دے سکے تو اس سے بھی اجازت لے، پھر بھی حج کسی کی اجازت نہ دینے سے رک نہیں سکتا، اجازت میں کوشش کرے نہ ملے جب بھی چلا جائے، (۴) اس سفر سے مقصود صرف اللہ و رسول ہوں۔ (۵) عورت کے ساتھ جب تک شوہر یا محرم بالغ قابل اطمینان نہ ہو جس سے نکاح ہمیشہ کو حرام ہے سفر حرام ہے، اگر کرے گی حج ہو جائے گا مگر ہر قدم پر گناہ لکھا جائے گا۔ (۶) توشہ مال حلال سے ہو ورنہ قبولِ حج کی امید نہیں اگرچہ فرض اتر جائے گا۔ (۷) حاجت سے زیادہ توشہ لے کر رفیقوں کی مدد اور فقیروں پر صدقہ کرتا چلے، یہ حج مبرور کی نشانی ہے۔ (۸) عام کتب فقہ بقدر کفایت ساتھ لے ورنہ کسی عالم کے ساتھ چلا جائے، یہ بھی نہ ملے تو کم از کم یہ رسالہ ہمراہ ہو۔ (۹) آئینہ، سرمہ، کنگھا، مسواک ساتھ رکھے کہ سنت ہے، (۱۰) اکیلا سفر نہ کرے منع ہے، رفیق دیندار ہو کہ بد دین کی ہمراہی سے اکیلا بہتر ہے۔ (۱۱) حدیث میں ہے: جب تین آدمی سفر کو جائیں اپنے میں ایک کو سردار بنالیں ۱۔ اس میں کاموں کا انتظام رہتا ہے، سردار اسے بنائیں جو خوش خلق، عاقل دیندار ہو، سردار کو چاہئے رفیقوں کے آرام کو اپنی آسائش پر مقدم رکھے۔ چلتے وقت اپنے دوستوں عزیزوں

سے ملے اور اپنے قصور معاف کرائے، اور ان پر لازم ہے کہ دل سے معاف کر دیں، حدیث میں ہے کہ جس کے پاس اس کا مسلمان بھائی معذرت لائے واجب ہے

---

1 مشکوۃ المصابیح کتاب الجہاد باب آداب السفر مطبع مجتبائی دہلی ص ۳۳۹ Page 733 of 836

Fatawa Razviyya Volume 10

...that he accepts it, otherwise he will not be allowed to come to the Pool of Kauthar (Haud-e-Kauthar).[1] (13) At the time of departure, seek prayers (Dua) from everyone so that one may attain blessings. (14) Entrust the religion, life, children, wealth, health, and well-being of all of them to Allah. (15) After putting on travel clothes, perform four units (Rakat) of voluntary prayer (Nafl) at home, reciting Surah Al-Fatiha and Surah Al-Ikhlas, then go out. Those Rakats will protect his family and wealth until his return. (16) Whichever direction one travels, Thursday, Saturday, or Monday are good days, and the morning time is blessed. For those obligated for Friday prayer, it is not good to travel on Friday before the prayer. (17) As soon as one steps out of the door, say: "Bismillahi amantu billahi wa tawakkaltu ‘alallahi wa la hawla wa la quwwata illa billah. Allahumma inna na'udhu bika min an nazilla aw nadilla aw nazlima aw nuzlama aw najhala aw yujhala ‘alayna ahad."[2] (18) After saying goodbye to everyone, depart from your local mosque; if it is not a disliked time for prayer, perform two units (Rakat) of voluntary prayer (Nafl) there. (19) Say at the time of departure: until return, wealth and family will remain protected, "Allahumma inna na'udhu bika min wa’tha-is-safari wa kaabatil-munqalabi wa su-il-manzari fil-mali wal-ahli wal-walad."[3]

Note 1: Translation: In the name of Allah and with the help of Allah, and I have put my trust in Allah, and there is no power to turn away from sins or strength for obedience except by the grace of Allah Almighty. O Allah! We seek Your protection from slipping ourselves or being made to slip by another, or going astray ourselves or being led astray, or committing injustice or being oppressed, or acting ignorantly or being treated ignorantly. (T) Note 2: O Allah! We seek Your refuge from the hardships of travel, from an unfortunate return, and from witnessing an unpleasant state in our wealth, family, or children. 12 (M)

[1] Al-Targhib wa al-Tarhib: Chapter on apologizing to one's brother, etc., Mustafa al-Babi Egypt, 3/291. [2] Kitab Ad'iya al-Hajj wa al-Umrah, supplement to Irshad al-Sari, Chapter on Farewell, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, p. 2. [3] Kitab Ad'iya al-Hajj wa al-Umrah, supplement to Irshad al-Sari, Chapter on Farewell, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, p. 3.

फ़तवा-ए-रज़विया खंड दसवाँ (जिल्द दहम)

कि वह स्वीकार कर ले अन्यथा हौज़-ए-कौसर पर आना नसीब नहीं होगा।[1] (13) प्रस्थान के समय सबसे दुआ लें ताकि बरकत प्राप्त हो। (14) उन सभी के धर्म, प्राण, संतान, धन, स्वास्थ्य और कुशलता को अल्लाह को सौंप दे। (15) यात्रा के कपड़े पहनकर घर में चार रकात नफ़्ल (स्वैच्छिक नमाज़), सूरह अल-हम्द और सूरह अल-इखलास के साथ पढ़कर बाहर निकलें। वे रकातें वापस आने तक उनके परिवार और धन की रक्षा करेंगी। (16) जिस दिशा में भी यात्रा पर जाएँ गुरुवार, शनिवार या सोमवार का दिन और सुबह का समय बरकत वाला है। जुमे (शुक्रवार) के दिन जुमे की नमाज़ से पहले यात्रा करना जुमे वालों के लिए अच्छा नहीं है। (17) दरवाज़े से बाहर निकलते ही कहें: "बिस्मिल्लाहि आमंतु बिल्लाहि व तवक्कलतु 'अलल्लाहि व ला हौला व ला कुव्वता इल्ला बिल्लाह। अल्लाहुम्मा इन्ना न'ऊज़ु बिका मिन अन नज़िल्ला औ नदिल्ला औ नज़्लिमा औ नुज़्लमा औ नज्हला औ युज्हला 'अलयना अहद।"[2] (18) सबसे विदा लेने के बाद अपनी मस्जिद से विदा लें; यदि नमाज़ के लिए मकरूह (अनुचित) समय न हो तो वहाँ दो रकात नफ़्ल पढ़ें। (19) चलते समय कहें: वापसी तक धन और परिवार सुरक्षित रहेंगे, "अल्लाहुम्मा इन्ना न'ऊज़ु बिका मिन व'थ़ा-इस-सफ़रि व काअतिल-मुनक़लबी व सू-इल-मन्ज़रि फ़िल-मालि वल-अह्लि वल-वलद।"[3]

टिप्पणी 1: अनुवाद: अल्लाह के नाम से और अल्लाह की मदद से, और मैंने अल्लाह पर भरोसा किया, और पापों से बचने की शक्ति और आज्ञाकारिता का सामर्थ्य अल्लाह सर्वशक्तिमान की कृपा के बिना संभव नहीं। ऐ अल्लाह! हम तेरी शरण चाहते हैं इससे कि हम स्वयं लड़खड़ाएँ या कोई और हमें लड़खड़ा दे, या स्वयं भटकें या कोई और हमें भटका दे, या हम किसी पर अन्याय करें या हम पर अन्याय हो, या हम अज्ञानतापूर्ण व्यवहार करें या कोई हमारे साथ अज्ञानतापूर्ण व्यवहार करे। (त) टिप्पणी 2: ऐ अल्लाह! हम यात्रा की कठिनाइयों, वापसी की बुरी स्थिति, और अपने धन, परिवार या बच्चों में किसी बुरी दशा को देखने से तेरी शरण माँगते हैं। 12 (म)

[1] अल-तरग़ीब व अल-तरहीब: अध्याय अपने भाई से माफ़ी माँगना आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 3/291। [2] किताब अदइया अल-हज्ज व अल-उमरा, इरशाद अल-सारी का पूरक, विदाई का अध्याय, दार अल-किताब अल-अरबी बेरूत, पृष्ठ 2। [3] किताब अदइया अल-हज्ज व अल-उमरा, इरशाद अल-सारी का पूरक, विदाई का अध्याय, दार अल-किताब अल-अरबी बेरूत, पृष्ठ 3।

पृष्ठ 734 / 836

کہ قبول کرلے ورنہ حوضِ کوثر پر آنا نہ ملے گا۔[1] (۱۳) وقتِ رخصت سب سے دعا لے کہ برکت پائے گا۔ (۱۴) ان سب کے دین، جان، اولاد، مال، تندرستی، عافیت خدا کو سونپے۔ (۱۵) لباسِ سفر پہن کر گھر میں چار رکعت نفل، الحمد و قل سے پڑھ کر باہر نکلے، وہ رکعتیں واپس آنے تک اس کے اہل و مال کی نگہبانی کریں گی، (۱۶) جدھر سفر کو جائے جمعرات یا ہفتہ یا پیر کا دن ہو، اور صبح کا وقت مبارک ہے، اور اہل جمعہ کو روزِ جمعہ قبلِ جمعہ سفر اچھا نہیں۔ (۱۷) دروازے سے باہر نکلتے ہی کہے: بِسمِ اللہِ اٰمَنتُ بِاللہِ وَتَوَکَّلْتُ عَلَی اللہِ وَلَا حَولَ وَلَا قُوَّۃَ اِلَّا بِاللہِ اَللّٰھُمَّ اِنَّا نَعُوذُ بِکَ مِن اَنْ نَّزِلَّ اَوْ نَضِلَّ اَوْ نَظْلِمَ اَوْ نُظْلَمَ اَوْ نَجْھَلَ اَوْ یُجْھَلَ عَلَیْنَا اَحَدٌ۔[2] (۱۸) سب سے رخصت کے بعد اپنی مسجد سے رخصت ہو، وقتِ کراہت نہ ہو تو اس میں دور کعت نفل پڑھے۔ (۱۹) چلتے وقت کہے: واپسی تک مال اور اہل و عیال محفوظ رہیں گے، اَللّٰھُمَّ اِنَّا نَعُوذُبِکَ مِنْ وَّعْثَاءِ السَّفَرِ وَکَاٰبَۃِ الْمُنْقَلَبِ وَ سُوءِ الْمَنْظَرِ فِي الْمَالِ وَالْاَھْلِ وَالْوَلَدِ۔[3]

عہ ۱: ترجمہ: اللہ کے نام سے اور اللہ کی مدد سے، اور میں نے اللہ پر بھروسہ کیا، اور نہ گناہوں سے پھرنا نہ طاعت کی طاقت مگر اللہ تعالٰی کی توفیق سے، الٰہی! ہم تیری پناہ چاہتے ہیں اس سے کہ خود لغزش کریں یا دوسرا ہمیں لغزش دے یا خود بہکیں یا دوسرا بہکائے یا ظلم کریں یا ہم پر ظلم ہو یا جہل کریں یا ہم پر کوئی جہل کرے۔ (ت) عہ ۲: الٰہی! ہم تیری پناہ مانگتے ہیں سفر کی مشقت اور واپسی کی بدحالی اور مال یا اولاد میں کوئی بری حالت نظر آنے سے ۱۲ (م)

[1] الترغیب والترہیب الترہیب ان یعتذر الی المرء اخوہ الخ مصطفی البابی مصر ۳/۲۹۱ [2] کتاب ادعیہ الحج والعمرہ ملحق ارشاد الساری فصل فی الوداع دارالکتاب العربی بیروت ص ۲ [3] کتاب ادعیہ الحج والعمرہ ملحق ارشاد الساری فصل فی الوداع دارالکتاب العربی بیروت ص ۳

Fatawa Razawiya Volume 2

(20) At the same time, recite the five Surahs from 'Qul Ya' [Surah Al-Kafirun] to 'Qul A'udhu bi Rabbin-Nas' [Surah An-Nas], excluding 'Tabbat' [Surah Al-Lahab], all starting with Bismillah. Then at the end, recite Bismillah Sharif once; one will remain in peace throughout the journey. (21) Also at that time, recite: 'Indeed, [He] who has imposed the Qur'an upon you will surely take you back to a place of return' once. One will return safely. (22) When boarding a train etc., say 'Bismillah'. Then say 'Allahu Akbar' and 'SubhanAllah' three times each, then 'La ilaha illallah' once. Then recite: 'Glory be to Him Who has subjected this to us, and we were not able to do it ourselves. And indeed, to our Lord we are to return'. [One will] be safe from its harm. (23) While climbing any height, say 'Allahu Akbar', and while descending a slope, say 'SubhanAllah'. (24) Upon reaching any destination, recite: 'I seek refuge in the perfect words of Allah from the evil of what He has created'. One will be safe from every harm. (25) When the town comes into view where one intends to stay, recite: 'O Allah, we ask You for the good of this town, the good of its people, and the good of what is in it, and we seek refuge in You from the evil of this town, the evil of its people, and the evil of what is in it.' One will remain protected from every calamity.

Translation: Note 1: Indeed, He who has made the Qur'an mandatory for you will surely bring you back to your place of return. (m) Note 2: Purity belongs to Him who has made this subservient to us, and we did not have the power to do it. Indeed, we are surely to return to our Lord. (m) Note 3: I seek refuge in the complete words of Allah from the evil of all this creation. (m) Note 4: O God! We ask You for the good of this town, the good of its inhabitants, and the good of whatever is in this town, and we seek Your refuge from the evil of this town and the evil of whatever is in it. (m)

1. Al-Quran 28/85
2. Al-Quran 43/13
3. Kitab al-Ad'iyah wal-Hajj wal-Umrah, appendix to Irshad al-Sari, chapter on Riding, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 3
4. Kitab al-Ad'iyah wal-Hajj wal-Umrah, appendix to Irshad al-Sari, chapter on Riding, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 3
5. Al-Adhkar of Imam Nawawi, chapter on what to say when seeing a town etc., section on Riding, p. 201.

फ़तावा रज़विया जिल्द-दोम

(२०) उसी वक़्त 'तब्बत' के सिवा 'कुल या' [सूरह अल-काफ़िरून] से 'कुल अऊज़ु बिरब्बिन नास' [सूरह अन-नास] तक पाँच सूरतें सब मय बिस्मिल्लाह पढ़े, फिर आख़िर में एक बार बिस्मिल्लाह शरीफ़ पढ़ ले, रास्ते भर आराम रहेगा। (२१) नीज़ उस वक़्त 'इन्नल्लज़ी फ़रज़ा अलै-कल क़ुरआ-न लराद-दु-क इला मआद' एक बार फिर पढ़ ले बिल-खैर वापस आएगा। (२२) रेल वग़ैरह जिस पर सवार हो 'बिस्मिल्लाह' कहे फिर 'अल्लाहु अकबर' और 'सुब्हानअल्लाह' तीन-तीन बार, 'ला इलाहा इल्लल्लाह' एक बार कहे, फिर कहे: 'सुब्हानल्लज़ी सख़्-ख़-र लना हाज़ा व मा कुन्ना लहू मुक़्रिनीन व इन्ना इला रब्बिना लमुन्क़लिबून' इसके शर से बचे। (२३) हर बुलंदी पर चढ़ते 'अल्लाहु अकबर' और ढाल में उतरते 'सुब्हानअल्लाह'। (२४) जिस मंज़िल पर उतरे 'अऊज़ु बिकलिमातिल्लाहित्ताम्माति कुल्लिहा मिन शर्रि मा ख़लक़' कहे हर नुक़सान से बचेगा। (२५) जब वह बस्ती नज़र पड़े जिसमें ठहरना चाहता है कहे: 'अल्लाहुम्मा इन्ना नस्अलु-क ख़ैर हाज़िहिल क़र्याह व ख़ैरा अहलिहा व ख़ैरा मा फ़ीहा व नऊज़ु बि-क मिन शर्रि हाज़िहिल क़र्याह व शर्रि अहलिहा व शर्रि मा फ़ीहा'। हर बला से महफ़ूज़ रहेगा।

तर्जुमा: सह १: बेशक वह जिसने तुझ पर क़ुरआन फ़र्ज़ किया ज़रूर तुझे फिरने की जगह वापस लाएगा। (म) सह २: पाकी है उसे जिसने इसे हमारे बस में कर दिया और हम में इसकी ताक़त न थी बेशक हम ज़रूर अपने रब की तरफ़ पलटने वाले हैं। (म) सह ३: मैं अल्लाह तआला की कामिल बातों की पनाह मांगता हूँ इस सब मख़लूक़ की शर से। (म) सह ४: इलाही हम तुझसे मांगते हैं इस बस्ती की भलाई और इस बस्ती वालों की भलाई और इस बस्ती में जो कुछ है उसकी भलाई और तेरी पनाह मांगते हैं इस बस्ती की बुराई से और इसमें जो कुछ है उसकी बुराई से। (म)

1. अल-क़ुरआन २८/८५
2. अल-क़ुरआन ४३/१३
3. किताब अल-अदइया वल-हज वल-उमरा मलहक़ इरशाद अस-सारी फ़स्ल फ़ी अर-रुकूब दार अल-किताब अल-अरबी बैरूत स ३
4. किताब अल-अदइया वल-हज वल-उमरा मलहक़ इरशाद अस-सारी फ़स्ल फ़ी अर-रुकूब दार अल-किताब अल-अरबी बैरूत स ३

5. अल-अज़कार इमाम नववी बाब मा-यक़ूलु इज़ा राआ क़र्याह अ-ल-ख़ फ़स्ल फ़ी अर-रुकूब स
   २०१

सफ़ा ८३६ का ७३५

فتاویٰ رضویہ جلد دوم

(۲۰) اسی وقت تَبَّتْ کے سوا قُلْ یَا سے قُلْ اَعُوْذُ بِرَبِّ النَّاسِ تک پانچ سورتیں سب مع بسم اللہ پڑھے، پھر آخر میں ایک بار بسم اللہ شریف پڑھ لے، راستے بھر آرام رہے گا۔ (۲۱) نیز اس وقت اِنَّ الَّذِیْ فَرَضَ عَلَیْکَ الْقُرْاٰنَ لَرَآدُّکَ اِلٰی مَعَادٍط ایک بار پھر پڑھ لے بالخیر واپس آئے گا۔ (۲۲) ریل وغیرہ جس پر سوار ہو بِسْمِ اللہ کہے پھر اَللّٰہُ اَکْبَرُ اور سُبْحَانَ اللہ تین تین بار ، لَا اِلٰہَ اِلَّا اللہ ایک بار ، پھر کہے : سُبْحٰنَ الَّذِیْ سَخَّرَ لَنَا ھٰذَا وَمَا کُنَّا لَہٗ مُقْرِنِیْنَ۝ وَاِنَّآ اِلٰی رَبِّنَا لَمُنْقَلِبُوْنَ۝۱۴ اس کے شر سے بچے۔ (۲۳) ہر بلندی پر چڑھتے اَللّٰہُ اَکْبَرُ اور ڈھال میں اترتے سُبْحَانَ اللہ ۔ (۲۴) جس منزل پر اترے اَعُوْذُ بِکَلِمَاتِ اللہِ التَّامَّاتِ کُلِّھَا مِنْ شَرِّ مَا خَلَقَ کہے ہر نقصان سے بچے گا۔ (۲۵) جب وہ بستی نظر پڑے جس میں ٹھہر نا چاہتا ہے کہے : اَللّٰھُمَّ اِنَّا نَسْئَلُکَ خَیْرَ ھٰذِہِ الْقَرْیَۃِ وَخَیْرَ اَھْلِھَا وَخَیْرَ مَا فِیْھَا وَنَعُوْذُ بِکَ مِنْ شَرِّ ھٰذِہِ الْقَرْیَۃِ وَشَرِّ اَھْلِھَا وَشَرِّ مَا فِیْھَا ۔ ہر بلا سے محفوظ رہے گا۔

ترجمہ : عہ۱: بیشک وہ جس نے تجھ پر قرآن فرض کیا ضرور تجھے پھرنے کی جگہ واپس لائے گا۔ (م) عہ۲: پاکی ہے اسے جس نے اسے ہمارے بس میں کر دیا اور ہم میں اس کی طاقت نہ تھی بیشک ہم ضرور اپنے رب کی طرف پلٹنے والے ہیں۔ (م) عہ۳: میں اللہ تعالیٰ کی کامل باتوں کی پناہ مانگتا ہوں اس سب مخلوق کی شر سے۔ (م) عہ۴: الٰہی ہم تجھ سے مانگتے ہیں اس بستی کی بھلائی اور اس بستی والوں کی بھلائی اور اس بستی میں جو کچھ ہے اس کی بھلائی اور تیری پناہ مانگتے ہیں اس بستی کی برائی سے اور اس میں جو کچھ ہے اس کی برائی سے۔ (م)

1 القرآن ۸۵/۲۸ 2 القرآن ۱۳/۴۳ 3 کتاب الادعیۃ والحج والعمرۃ ملحق ارشاد الساری فصل فی الرکوب دار الکتاب العربی بیروت ص ۳ 4 کتاب الادعیۃ والحج والعمرۃ ملحق ارشاد الساری فصل

فى الركوب دار الكتاب العربى بيروت ص ٣ 5 الاذكار امام نووى باب مايقول اذا رأى قرية الخ فصل فى الركوب ص ٢٠١

Fatawa Razawiyyah, Volume 10

(26) In whichever city one goes, one should visit the Sunni scholars and Shari'ah-abiding ascetics (faqirs) with respect, visit the shrines (mazarat), and not waste time in useless sightseeing. (27) When visiting a scholar, if he is inside his house, do not call out; wait for him to come out. Do not speak unnecessarily in his presence, do not ask questions without permission. If something he says seems contrary to Shari'ah in your view, do not object and maintain a good opinion in your heart. However, this is for a Sunni scholar; flee from an innovator in religion. (28) Solace the heart with the remembrance of God (Dhikr) so that an angel remains with you, and not with poetry and idle talk, as Satan will be with you. Travel more at night as the journey is completed quickly. (29) At a resting place, dismount away from the path as snakes and other harmful creatures pass there. (30) Urinating on the path is a cause for curse. (31) Do not stay scattered at a destination; stay together at one place. (32) In every journey, especially Hajj, do not be heedless of praying for yourself and your relatives and friends, for the traveler's prayer is accepted. (33) When boarding a ship, say: "In the name of Allah is its moving and its staying. Indeed, my Lord is Forgiving and Merciful." (Quran 11:41) "And they did not appreciate Allah with the appreciation due to Him, while the entire earth will be [within] His grip on the Day of Resurrection, and the heavens will be folded in His right hand. Exalted is He and high above what they associate with Him." (Quran 39:67). One will be safe from drowning. When help is needed in any difficulty, say three times: "O servants of Allah, help me!" (Ya 'Ibad Allah A'inooni). Help will come from the unseen; this is a command from Hadith.

Translation: In the name of Allah is the sailing and anchoring of this ship, indeed my Lord is Most Forgiving, Most Merciful. The disbelievers did not recognize the status of God as it should be recognized, even though the whole earth on the day of judgment is like a very small thing in His grip and all the heavens will be rolled up by His power. He is pure and exalted above their association of partners. (12 Minhu (M))

1. Kitab 'Amal al-Yawm wa al-Laylah, Chapter on what to say when boarding a ship, Majlis Dairat al-Ma'arif Hyderabad Deccan, p. 143.
2. Majma' al-Zawa'id, Chapter on what to say when one's animal bolts etc., Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, 10/132; Kanz al-Ummal with reference to Tab from Utbah bin Ghazwan Hadith 17498, Muassasah al-Risalah Beirut 6/509.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

(२६) जिस शहर में जाए वहाँ के सुन्नी आलिमों और शरीअत का पालन करने वाले फ़कीरों के पास अदब के साथ हाज़िर हो, मज़ारात की ज़ियारत करे, फ़ुज़ूल सैर तमाशे में वक़्त न खोए। (२७) जिस आलिम की ख़िदमत में जाए वह मकान में हो तो आवाज़ न दे, बाहर आने का इंतज़ार करे, उनके सामने बिना ज़रूरत बात न करे, इजाज़त लिए बिना मसला न पूछे, उनकी कोई बात अपनी नज़र में शरीअत के ख़िलाफ़ लगे तो ऐतराज़ न करे और दिल में नेक गुमान रखे, मगर यह सुन्नी आलिम के लिए है, बद-मज़हब के सामने से भागे। (२८) अल्लाह के ज़िक्र से दिल बहलाए ताकि फ़रिश्ता साथ रहे, न कि शेर-ओ-शायरी और लग़वियात (बेकार की बातों) से कि शैतान साथ होगा, रात को ज़्यादा चले कि सफ़र जल्दी तय होता है। (२९) मंज़िल में रास्ते से बचकर उतरे कि वहाँ साँप वगैरह मूज़ियों (नुकसान पहुँचाने वाले जीवों) का गुज़रना होता है। (३०) रास्ते पर पेशाब वगैरह करना लानत का कारण है। (३१) मंज़िल में अलग-अलग होकर न ठहरें, एक ही जगह ठहरें। (३२) हर सफ़र ख़ासतौर पर हज में अपने और अपने अज़ीज़ों और दोस्तों के लिए दुआ से ग़ाफ़िल न रहे कि मुसाफ़िर की दुआ क़बूल होती है। (३३) जब दरिया में सवार हो तो कहे: "बिस्मिल्लाहि मज्रेहा व मुरसाहा इन्ना रब्बी लग़फ़ूरुर्रहीम। व मा क़दरुल्लाहा हक़्क़ा क़द्रिही वल अरज़ु जमीअन क़ब्ज़तुहू यौमल क़ियामती वस्समावातु मतवियातुम बियमीनिही सुब्हानहू व तआला अम्मा युशरिकून।" डूबने से महफ़ूज़ रहेगा। जब किसी मुश्किल में मदद की ज़रूरत हो तो तीन बार कहे: "या इबादल्लाह अईनुनी" (ऐ अल्लाह के बंदों! मेरी मदद करो), ग़ैब (परोक्ष) से मदद होगी, यह हदीस का हुक्म है।

अनुवाद: अल्लाह के नाम से है इस कश्ती का चलना और ठहरना, बेशक मेरा रब ज़रूर बख्शने वाला मेहरबान है, काफ़िरों ने ख़ुदा ही की वैसी क़दर नहीं पहचानी जैसी चाहिए थी, हालाँकि सारी ज़मीन क़यामत के दिन बहुत हक़ीर सी चीज़ की तरह उसके क़ब्ज़े में है और सब आसमान उसकी क़ुदरत से लिपट जाएँगे, वह पाक और बुलंद है उनकी शिरकत से। (१२ मिन्हु म)

1. किताब अमल अल-यौम व अल-लैला, बाब मा यकूल इज़ा रकिब फ़ी अस्वफ़ीनह, मज्लिस दाइरत अल-मआरिफ़ हैदराबाद दक्कन, पृ. १४३।
2. मज्मअ अल-ज़वाइद, बाब मा यकूल इज़ा इन्फ़लतत दाब्बतुहू अलख़, दार अल-किताब अल-अरबी बैरूत १०/१३२; कंज़ अल-उम्माल हवालत तब अन उत्बा बिन ग़ज़वान हदीस १७४९८, मुअस्ससत अल-रिसाला बैरूत ६/५०९।

فتاوی رضویہ، جلد دہم

(۲۶) جس شہر میں جائے وہاں کے سنی عالموں اور باشرع فقیروں کے پاس ادب سے حاضر ہو، مزارات کی زیارت کرے، فضول سیر تماشے میں وقت نہ کھو دے۔ (۲۷) جس عالم کی خدمت میں جائے وہ مکان میں ہو تو آواز نہ دے باہر آنے کا انتظار کرے اس کے حضور بے ضرورت کلام نہ کرے، بے اجازت لیے مسئلہ نہ پوچھے، اس کی کوئی بات اپنی نظر میں خلافِ شرع ہو تو اعتراض نہ کرے اور دل میں نیک گمان رکھے، مگر یہ سنی عالم کے لیے ، بد مذہب کے سامنے سے بھاگے، (۲۸) ذکرِ خدا سے دل بہلائے کہ فرشتہ ساتھ رہے گا ، نہ کہ شعر و لغویات سے کہ شیطان ساتھ ہو گا ، رات کو زیادہ چلے کہ سفر جلد طے ہوتا ہے۔ (۲۹) منزل میں راستے سے بچ کر اترے کہ وہاں سانپ وغیرہ موذیوں کا گزرنا ہوتا ہے۔ (۳۰) راستے پر پیشاب وغیرہ باعثِ لعنت ہے۔ (۳۱) منزل میں متفرق ہو کر نہ اتریں ایک جگہ اتریں۔ (۳۲) ہر سفر خصوصاً حج میں اپنے اور اپنے عزیزوں دوستوں کے لیے دعا سے غافل نہ رہے کہ مسافر کی دعا قبول ہے (۳۳) جب دریا میں سوار ہو کہے: بِسْمِ اللّٰہِ مَجْرٖىہَا وَ مُرْسٰىہَاؕ اِنَّ رَبِّیْ لَغَفُوْرٌ رَّحِیْمٌ (1) وَ مَا قَدَرُوا اللّٰہَ حَقَّ قَدْرِہٖۖ وَ الْاَرْضُ جَمِیْعًا قَبْضَتُہٗ یَوْمَ الْقِیٰمَۃِ وَ السَّمٰوٰتُ مَطْوِیّٰتٌۢ بِیَمِیْنِہٖؕ سُبْحٰنَہٗ وَ تَعٰلٰی عَمَّا یُشْرِکُوْنَ (2) ڈوبنے سے محفوظ رہے گا۔ جب کسی مشکل میں مدد کی حاجت ہو تین بار کہے: یَا عِبَادَ اللّٰہِ اَعِیْنُوْنِیْ اے اللہ کے بندو! میری مدد کرو، غیب سے مدد ہوگی، یہ حکمِ حدیث ہے۔

عہ: ترجمہ: اللہ کے نام سے ہے اس کشتی کا چلنا اور ٹھہرنا، بیشک میرا رب ضرور بخشنے والا مہربان ہے، کافروں نے خدا ہی کی قدر جیسے چاہئے تھی نہ پہچانی ، حالانکہ ساری زمین قیامت

کے دن بہت حقیر سی کی طرح اس کے قبضہ میں ہے اور سب آسمان اس کی قدرت سے لپٹ جائیں گے، وہ پاک و بلند ہے ان کی شرکت سے ۱۲ منہ (م)

1. کتاب عمل الیوم واللیلۃ باب ما یقول اذا رکب فی السفینۃ مجلس دائرۃ المعارف حیدر آباد دکن ص ۱۴۳

2. مجمع الزوائد باب ما یقول اذا انفلتت دابتہ الخ دار الکتاب العربی بیروت ۱۰ / ۱۳۲، کنز العمال بحوالہ طب عن عتبہ بن غزوان حدیث ۱۷۴۹۸ موسسۃ الرسالۃ بیروت ۶ / ۵۰۹

Fatawa Razawiyya Volume 10

(34) Note 1: Recite "Ya Samad" 134 times daily; one will be saved from hunger and thirst. (35) If there is a fear of enmity or robbers, recite "Ya Hafeez" or "Ya Mani'" and stay safe from every calamity. (36) Always recite Ayat-ul-Kursi once before sleeping for protection against thieves and Satan. (37) If something is lost, say: Note 2 "O Assembler of people for a Day about which there is no doubt. Indeed, Allah does not fail in His promise, unite me with my lost item."[1] God willing, it will be found. (38) Show the owner whatever load is to be put on a hired camel, etc., and do not load more than that without their permission. (39) Be gentle with the animal, do not overwork it beyond its strength, do not beat it without reason, and never beat it on its tail. As far as possible, do not sleep while riding it, as the weight of a sleeping person is greater; if you have to stop for a while to talk to someone, dismount if possible. (40) There are many religious and worldly benefits in dismounting and walking on foot for a while every morning and evening. (41) Treat Bedouins and all Arabs with great kindness. If they act harshly, endure it with respect; intercession is promised for this. Especially for the people of the Holy Sanctuaries, specifically the people of Madinah, do not object to the actions of the Arabs, nor harbor malice in your heart. In this lies the happiness of both worlds. (42) Jamal, i.e., camel owners, should not be considered as mere hirelings, but rather as one's masters. Do not be stingy in sharing food and drink with them, as they get angry at such things, but are very pleased with small gestures and prove to be more helpful than expected. (43) During the journey to the pure city of Madinah, if the caravan does not stop, it becomes necessary due to compulsion to combine Dhuhr and Asr prayers. For this, it is mandatory...

Note 1: Translation: O Self-Sufficient. (M) Note 2: Translation: O Assembler of all people for a certain day, indeed Allah Almighty does not break His promise, make me find my lost item. 12 Minha (M)

[1] Ad-Durr al-Manthur under the verse "Innaka Jami'un Nas," Maktabat Ayatullah al-Uzma, Qom, Iran, 9/2.

फतावा रज़विया जिल्द 10

(34) अ१: "या समद" रोजाना 134 बार पढ़े, भूख और प्यास से बचेगा। (35) अगर दुश्मनी या डाकुओं का डर हो, तो "या हफ़ीज़" या "या मानि'" पढ़े, हर बला से सुरक्षित रहे। (36) सोते समय आयत-उल-कुर्सी एक बार हमेशा पढ़े ताकि चोर और शैतान से सुरक्षा रहे। (37) अगर कोई चीज़ गुम हो जाए तो कहे: अ२ "हे लोगों को उस दिन के लिए इकट्ठा करने वाले जिसके आने में कोई शक नहीं, बेशक अल्लाह वादे के खिलाफ नहीं करता, मुझे मेरी खोई हुई चीज़ से मिला दे।"[1] इंशाअल्लाह तआला वह मिल जाएगी। (38) किराए के ऊँट वगैरह पर जो कुछ भी लादना हो, उसके मालिक को दिखाए और उसकी अनुमति के बिना उससे ज़्यादा बोझ न रखे। (39) जानवर के साथ नरमी बरते, उसकी शक्ति से ज़्यादा काम न ले, बिना वजह न मारे, न कभी पूँछ पर मारे। जहाँ तक संभव हो उस पर सोये नहीं क्योंकि नींद का बोझ ज़्यादा होता है; किसी से बात करने के लिए अगर थोड़ी देर रुकना हो तो यदि संभव हो तो उतर जाए। (40) सुबह और शाम उतरकर कुछ देर पैदल चलने में दीन और दुनिया के बहुत से फायदे हैं। (41) बदुओं और सभी अरबों के साथ बहुत नरमी से पेश आए, अगर वे सख्ती करें तो अदब के साथ बर्दाश्त करे, इस पर शफ़ाअत (सिफारिश) मिलने का वादा फ़रमाया गया है। विशेषकर हरमैन के लोगों, विशेष रूप से मदीना के लोगों और अरबों के कार्यों पर आपत्ति न करे, न ही दिल में कड़वाहट लाए; इसमें दोनों जहान की खुशहाली है। (42) जमाल यानी ऊँट वालों को यहाँ के किराएदार न समझे बल्कि अपना मेज़बान या मालिक जाने और खाने-पीने में उनके साथ कंजूसी न करे क्योंकि वे ऐसी बातों से नाराज़ होते हैं और छोटी बातों में बहुत खुश हो जाते हैं और उम्मीद से ज़्यादा काम आते हैं। (43) मदीना तैयबा के सफर में काफिला न रुकने के कारण मजबूरी में ज़ुहर और अस्र की नमाज़ मिलाकर पढ़नी होती है, इसके लिए आवश्यक है...

अ१: अनुवाद: ऐ बे-नियाज़ (परम स्वतंत्र)। (म) अ२: अनुवाद: ऐ यकीनी दिन के लिए सब लोगों को जमा फ़रमाने वाले, बेशक अल्लाह तआला वादा खिलाफी नहीं करता, मुझे मेरी खोई हुई चीज़ मिला दे। १२ मिन्हा (म)

[1] अल-दुर्रुल मंसूर, आयत 'इन्नका जामिउन्नास' के तहत, मकतबा आयतुल्लाह अल-उज़मा, कुम, ईरान ९/२।

पृष्ठ 737/836

(۳۴) ع۱ "یَا صَمَدُ" ۱۳۴ بار روزانہ پڑھے بھوک و پیاس سے بچے گا۔ (۳۵) اگر دشمنی یا رہزن کا ڈر ہو یا حفیظ یا مانع پڑھے، ہر بلا سے امان رہے۔ (۳۶) سوتے وقت آیۃ الکرسی ایک بار ہمیشہ پڑھے کہ چور اور شیطان سے امان رہے، (۳۷) اگر کوئی چیز گم ہو جائے تو کہے: ع۲ "یَا جَامِعَ النَّاسِ لِیَوْمٍ لَا رَیْبَ فِیهِ إِنَّ اللَّهَ لَا یُخْلِفُ الْمِیعَادَ، اِجْمَعْ بَیْنِي وَبَیْنَ ضَالَّتِي"۱۔ ان شاء اللہ تعالیٰ مل جائے گی۔ (۳۸) کرایہ کے اونٹ وغیرہ جو کچھ بار کرنا ہو اس کے مالک کو دکھائے اور اس سے زیادہ بغیر اس کی اجازت کے نہ رکھے۔ (۳۹) جانور کے ساتھ نرمی کرے، طاقت سے زیادہ کام نہ لے، بے سبب نہ مارے، نہ کبھی پونچھ پر مارے، حتی المقدور اس پر نہ سوئے کہ سونے کا بوجھ زیادہ ہوتا ہے، کسی سے بات وغیرہ کرنے کو کچھ دیر ٹھہرنا ہو تو اتر لے اگر ممکن ہو۔ (۴۰) صبح وشام اتر کر کچھ دیر پیادہ چل لینے میں دینی دنیوی بہت فائدے ہیں۔ (۴۱) بدوؤں اور سب عربوں سے بہت نرمی کے ساتھ پیش آئے، اگر وہ سختی کریں ادب سے تحمل کرے، اس پر شفاعت نصیب ہونے کا وعدہ فرمایا ہے، خصوصاً اہل حرمین خصوصاً اہل مدینہ، اہل عرب کے افعال پر اعتراض نہ کرے، نہ دل میں کدورت لائے، اس میں دونوں جہان کی سعادت ہے، (۴۲) جمال یعنی اونٹ والوں کو یہاں کے کرایہ والے نہ سمجھے بلکہ اپنا مخدوم جانے اور کھانے پینے میں ان سے بخل نہ کرے کہ وہ ایسوں سے ناراض ہوتے ہیں اور تھوڑی بات میں بہت خوش ہوجاتے ہیں اور امید سے زیادہ کام آتے ہیں۔ (۴۳) سفر مدینہ طیبہ میں قافلہ نہ ٹھہرنے کے باعث بمجبوری ظہر و عصر ملا کر پڑھنی ہوتی ہے اس کے لیے لازم ہے

ع۱: ترجمہ: اے بے نیاز۔ (م) ع۲: ترجمہ: اے یقینی دن کے لیے سب لوگوں کے جمع فرمانے والے بیشک اللہ تعالیٰ وعدہ خلافی نہیں کرتا مجھے میری گئی چیز ملادے ۱۲ منہ (م)

Fatawa Razawiyyah, Volume 10

...that before finishing the obligatory (fard) prayers of Zuhr, he should make the intention to pray Asr at the same time, and perform the Asr prayer immediately after the Zuhr fard prayer, so that even the sunnahs of Zuhr are not in between. Similarly, for combining Maghrib and Isha, under the same conditions, he should intend before the time of Maghrib ends to pray them with Asr and Isha. (44) On return, also keep in mind the same procedure as described so far. (45) Inform the household in advance about the date and time of arrival; never go without informing, especially at night. (46) First of all, visit your local mosque and pray two rak'ats of nafl (voluntary prayer). (47) Pray two rak'ats after arriving home, then meet everyone with a cheerful face. (48) Must bring some gift for friends, and what greater gift from a Haji than the sacred relics (tabarrukat) of the Two Holy Sanctuaries? Another gift is prayer (du'a), which he should make for those who come to welcome him and for all Muslims before reaching home, as it is accepted.

Section Two: Ihram and its Rulings, and Entering the Honorable Sanctuary (Haram), Makkah Al-Mukarramah, and Masjid Al-Haram

(1) The miqat (the place where the command to wear Ihram applies) for Indians is in alignment with the mountain of Yalamlam. This place comes in the sea after leaving Kamran. When Jeddah is two or three miles away, the ship staff informs; prepare the Ihram supplies beforehand. (2) When that place approaches, perform a full bath (ghusl) thoroughly; if unable to bathe, then just perform ablution (wudu). (3) Men may shave their heads if they wish, as this will relieve them of the concern of protecting hair while in Ihram; otherwise, comb and apply fragrant oil. (4) Trim nails, trim the beard/mustache, and remove armpit and pubic hair. (5) Apply perfume as it is Sunnah. (6) Men should remove stitched clothes, wrap a new or clean sheet around the upper body, and tie a similar sheet around the lower body (tehband). White clothes are better. (7) When that place comes, pray two rak'ats with the intention of Ihram. In the first rak'at, after Surah Al-Fatihah, recite "Qul ya ayyuhal-kafirun", and in the second, recite "Qul huwallahu ahad".

फतावा रज़विया, जिल्द दहम (भाग 10)

...कि ज़ुहर के फ़र्ज़ों से फ़ारिग होने से पहले इरादा कर ले कि इसी वक़्त अस्र पढ़ूँगा, और फ़र्ज़ ज़ुहर के बाद फ़ौरन अस्र की नमाज़ पढ़े यहाँ तक कि बीच में ज़ुहर की सुन्नतें भी न हों, इसी तरह मग़रिब के साथ ईशा इन्हीं शर्तों से मग़रिब के वक़्त निकलने से पहले इरादा कर ले कि इन को अस्र व ईशा के साथ पढ़ूँगा। (44) वापसी में भी वही तरीक़ा मल्हूज़ रखे जो यहाँ तक बयान हुआ। (45) मकान पर अपने आने की तारीख और वक़्त की इत्तिला पहले से दे दे, बे-इत्तिला हरगिज़ न जाए ख़ास तौर पर रात में। (46) सबसे पहले अपनी मस्जिद में दो रकअत नफ़्ल के साथ मिले। (47) दो रकअत घर में आकर पढ़े फिर सब से कुशादा पेशानी (खुशमिजाजी) से मिले। (48) दोस्तों के लिए कुछ न कुछ तोहफ़ा ज़रूर लाए और हाजी का तोहफ़ा तबर्रुकात-ए-हरमैन शरीफैन से बढ़कर क्या है? और दूसरा तोहफ़ा दुआ है जो मकान में पहुँचने से पहले इस्तक़बाल करने वालों और सब मुसलमानों के लिए करे कि क़ुबूल है।

फसल दोम: एहराम और उसके अहकाम और दाखिली हरम-ए-मोहतरम व मक्का मुकर्रमा व मस्जिद अल-हराम

(1) हिंदुओं (भारतीयों) के लिए मीक़ात (जहाँ से एहराम बांधने का हुक्म है) कोह-ए-यलमलम की मुहाज़ात (सामने) है, यह जगह कामरान से निकल कर समुद्रों में आती है। जब जद्दा दो-तीन मील रह जाता है तो जहाज़ वाले इत्तिला देते हैं, पहले से एहराम का सामान तैयार कर रखें। (2) जब वह जगह क़रीब आए तो खूब मल कर नहाएं और अगर न नहा सकें तो सिर्फ वुज़ू कर लें। (3) चाहें तो मर्द सर मुंडा लें कि एहराम में बालों की हिफ़ाज़त से निजात मिलेगी वरना कंघी कर के खुशबूदार तेल डालें। (4) नाख़ून कतरें, ख़त बनवाएं मूँ-ए-बग़ल और ज़ेर-ए-नाफ़ दूर करें। (5) खुशबू लगायें कि सुन्नत है। (6) मर्द सिले हुए कपड़े उतारें, एक चादर नई या धुली हुई ओढ़ लें और एक वैसी ही तहबंद बांधें, ये कपड़े सफेद हों तो बेहतर है। (7) जब वह जगह आए तो एहराम की नियत से दो रकअत नमाज़ पढ़ें। पहली रकअत में फ़ातिहा के बाद "क़ुल या अय्युहल काफ़िरून" और दूसरी में "क़ुल हुवल्लाहु अहद" पढ़ें।

पृष्ठ 738 का 836

کہ ظہر کے فرضوں سے فارغ ہونے سے پہلے ارادہ کرلے کہ اسی وقت عصر پڑھوں گا، اور فرض ظہر کے بعد فوراً عصر کی نماز پڑھے یہاں تک کہ بیچ میں ظہر کی سنتیں بھی نہ ہوں، اسی طرح مغرب کے ساتھ عشاء انہی شرطوں سے مغرب کے وقت نکلنے سے پہلے ارادہ کرلے کہ ان کو عصر وعشاء کے ساتھ پڑھوں گا۔ (۴۴) واپسی میں بھی وہی طریقہ ملحوظ رکھے جو یہاں تک بیان ہوا۔ (۴۵) مکان پر اپنے آنے کی تاریخ وقت کی اطلاع پہلے سے دے دے، بے اطلاع ہر گز نہ جائے خصوصاً رات میں۔ (۴۶) سب سے پہلے اپنی مسجد سے دو رکعت نفل کے ساتھ ملے۔ (۴۷) دور کعت گھر میں آکر پڑھے پھر سب سے بکشادہ پیشانی ملے۔ (۴۸) دوستوں کے لیے کچھ نہ کچھ تحفہ ضرور لائے اور حاجی کا تحفہ تبرکاتِ حرمین شریفین سے زیادہ کیا ہے؟ اور دوسرا تحفہ دعا کہ مکان میں پہنچنے سے پہلے استقبال کرنے والوں اور سب مسلمانوں کے لیے کرے کہ قبول ہے۔

فصل دوم احرام اور اس کے احکام اور داخلی حرمِ محترم ومکہ مکرمہ ومسجد الحرام

(۱) ہندیوں کے لیے میقات (جہاں سے احرام باندھنے کا حکم ہے) کوہ یلملم کی محاذات ہے یہ جگہ کامران سے نکل کر سمندروں میں آتی ہے، جب جدہ دو تین میل رہ جاتا ہے جہاز والے اطلاع دیتے ہیں پہلے سے احرام کا سامان تیار کر رکھیں۔ (۲) جب وہ جگہ قریب آئے خوب مل کر نہائیں اور نہ نہا سکیں تو صرف وضو کرلیں۔ (۳) چاہیں مرد سر منڈالیں کہ احرام میں بالوں کی حفاظت سے نجات ملے گی ورنہ کنگھی کر کے خوشبودار تیل ڈالیں۔ (۴) ناخن کتریں، خط بنوائیں، موئے بغل وزیر ناف دور کریں۔ (۵) خوشبو لگائیں کہ سنت ہے۔ (۶) مرد سلے کپڑے اتاریں، ایک چادر

نئی یادھلی اوڑھ لیں اور ایک ایسا ہی تہبند باندھیں، یہ کپڑے سفید بہتر ہیں۔ (۷) جب وہ جگہ آئے دور کعت بہ نیتِ احرام پڑھیں، پہلی میں فاتحہ کے بعد قُلْ یَا أَیُّهَا الْکَافِرُونَ، دوسری میں قُلْ هُوَ اللّٰهُ۔

Fatawa-e-Razvia Volume 10

(8) Now Hajj is of three types. One is that he performs Hajj alone; this is called 'Ifrad'. In this, after the greeting (at the end of prayer), he should say: "O Allah! I intend to perform Hajj, so make it easy for me and accept it from me. I have intended Hajj purely for the sake of Allah Almighty."

The second is to intend only for Umrah from here, and then put on the Ihram for Hajj in Makkah al-Mu'azzamah; this is called 'Tamattu'. In this, after the greeting, he should say: "O Allah! I intend to perform Umrah, so make it easy for me and accept it from me. I have intended Umrah purely for the sake of Allah Almighty."

The third is to intend both Hajj and Umrah from here, and this is the most superior; it is called 'Qiran'. In this, after the greeting, he should say: "O Allah! I intend to perform Hajj and Umrah, so make them easy for me and accept them from me. I have intended Hajj and Umrah for the sake of Allah Almighty."

And in all three cases, after this intention, he should say the 'Talbiyah' loudly. The Talbiyah is: "Labbayk Allahumma Labbayk, Labbayka la sharika laka Labbayk, innal hamda wan ni'mata laka wal mulk, la sharika lak."

(9) This was the state of 'Ihram'. Upon entering it, these acts become forbidden: Intercourse with a woman, kissing, touching, hugging, looking at her private parts—when these four are done with lust; mentioning such things in front of women; obscenity and sins (which were always forbidden but now become strictly forbidden); worldly quarrels with anyone; hunting wild animals, gesturing towards game, or indicating it in any way, [using a] gun...

Note: Translation: O Allah! I intend to perform Hajj, so make it easy for me and accept it from me. I have intended Hajj purely for Allah Almighty. (M)

---

1 Mansak Mutawassit with Irshad-us-Sari, Chapter: Praying two rak'ahs after wearing [Ihram], Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 29 2 Mansak Mutawassit with Irshad-us-Sari, Chapter: Praying two rak'ahs after wearing [Ihram], Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 70 3 Mansak Mutawassit with Irshad-us-Sari, Chapter: Praying two rak'ahs after wearing [Ihram], Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 70 4 Mansak Mutawassit with Irshad-us-Sari, Chapter: Praying two rak'ahs after wearing [Ihram], Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 69

फ़तावा-ए-रज़विया भाग १०

(८) अब हज तीन प्रकार का होता है। एक यह कि केवल हज करे, इसे 'इफ़राद' कहते हैं। इसमें सलाम के बाद यूँ कहे: "ऐ अल्लाह! मैं हज का इरादा करता हूँ, तो उसे मेरे लिए आसान कर दे और मुझसे क़बूल फ़रमा। मैंने शुद्ध रूप से अल्लाह तआला के लिए हज की नीयत की।"

दूसरा यह कि यहाँ से केवल उमराह की नीयत करे, और मक्का मुअज़्ज़मा में हज का एहराम बाँधे; इसे 'तमत्तु' कहते हैं। इसमें सलाम के बाद यूँ कहे: "ऐ अल्लाह! मैं उमराह का इरादा करता हूँ, तो उसे मेरे लिए आसान कर दे और मुझसे क़बूल फ़रमा। मैंने शुद्ध रूप से अल्लाह तआला के लिए उमराह की नीयत की।"

तीसरा यह कि हज और उमराह दोनों की यहीं से नीयत करे और यह सबसे उत्तम है; इसे 'क़िरान' कहते हैं। इसमें सलाम के बाद यूँ कहे: "ऐ अल्लाह! मैं हज और उमराह का इरादा करता हूँ, तो उन्हें मेरे लिए आसान कर दे और उन्हें मुझसे क़बूल फ़रमा। मैंने अल्लाह तआला के लिए हज और उमराह की नीयत की।"

और तीनों स्थितियों में इस नीयत के बाद ज़ोर से 'लब्बैक' कहे। लब्बैक यह है: "लब्बैक अल्लाहुम्मा लब्बैक, लब्बैका ला शरीका लका लब्बैक, इन्नल हम्दा वन निअमता लका वल मुल्क, ला शरीका लक।"

(९) यह एहराम था। इसके धारण करते ही ये काम हराम (वर्जित) हो गए: स्त्री से संभोग, चुंबन, स्पर्श, आलिंगन, उसके गुप्त अंगों को देखना—जबकि ये चारों कार्य कामवासना के साथ हों; स्त्रियों के सामने इसका उल्लेख करना; अश्लीलता और पाप (जो सदैव हराम थे अब और भी कठोरता से हराम हो गए); किसी से सांसारिक लड़ाई-झगड़ा; जंगली जानवरों का शिकार, शिकार की ओर इशारा करना या किसी भी तरह से बताना, बंदूक...

अनुवाद: ऐ अल्लाह! मैं हज का इरादा करता हूँ तो उसे मेरे लिए आसान कर दे और मुझसे क़बूल फ़रमा, मैंने विशेष रूप से अल्लाह तआला के लिए हज की नीयत की। (म)

---

1 मनसक मुतवस्सित मअ इरशाद-उस-सारी, अध्याय: एहराम पहनने के बाद दो रकात नमाज़ पढ़ना, दारुल किताब अल-अरबी, बेरुत, पृ. २९ 2 मनसक मुतवस्सित मअ इरशाद-उस-सारी, अध्याय: एहराम पहनने के बाद दो रकात नमाज़ पढ़ना, दारुल किताब अल-अरबी, बेरुत, पृ. ७० 3

मनसक मुतवस्सित मअ इरशाद-उस-सारी, अध्याय: एहराम पहनने के बाद दो रकात नमाज़ पढ़ना, दारुल किताब अल-अरबी, बेरुत, पृ. ७० 4 मनसक मुतवस्सित मअ इरशाद-उस-सारी, अध्याय: एहराम पहनने के बाद दो रकात नमाज़ पढ़ना, दारुल किताब अल-अरबी, बेरुत, पृ. ६९

पृष्ठ ७३९ में से ८३६

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

(۸) اب حج تین طرح کا ہوتا ہے۔ ایک یہ کہ نراج کرے اسے افراد کہتے ہیں، اس میں بعد سلام یوں کہے: اَللّٰھُمَّ اِنِّیْ اُرِیْدُ الْحَجَّ فَیَسِّرْہُ لِیْ وَ تَقَبَّلْہُ مِنِّیْ نَوَیْتُ الْحَجَّ مُخْلِصًا لِّلّٰہِ تَعَالٰی۔

دوسرا یہ کہ یہاں سے نرے عمرے کی نیت کرے ، مکہ معظمہ میں حج کا احرام باندھے اسے تمتع کہتے ہیں اس میں بعد سلام یوں کہے: اَللّٰھُمَّ اِنِّیْ اُرِیْدُ الْعُمْرَۃَ فَیَسِّرْھَا لِیْ وَتَقَبَّلْھَا مِنِّیْ نَوَیْتُ الْعُمْرَۃَ مُخْلِصًا لِّلّٰہِ تَعَالٰی۔

تیسرا یہ کہ حج و عمرہ کی یہیں سے نیت کرے اور یہ سب سے افضل ہے اسے قران کہتے ہیں، اس میں بعد سلام یوں کہے: اَللّٰھُمَّ اِنِّیْ اُرِیْدُ الْحَجَّ وَالْعُمْرَۃَ فَیَسِّرْھُمَا لِیْ وَتَقَبَّلْھُمَا مِنِّیْ نَوَیْتُ الْحَجَّ وَالْعُمْرَۃَ لِلّٰہِ تَعَالٰی۔

اور تینوں صورتوں میں اس نیت کے بعد لبیک بآواز بلند کہے، لبیک یہ ہے: لَبَّیْکَ اَللّٰھُمَّ لَبَّیْکَ ط لَبَّیْکَ لَا شَرِیْکَ لَکَ لَبَّیْکَ ط اِنَّ الْحَمْدَ وَالنِّعْمَۃَ لَکَ وَالْمُلْکَ ط لَا شَرِیْکَ لَکَ ط

(۹) یہ احرام تھا اس کے ہوتے ہی یہ کام حرام ہوگئے۔ عورت سے صحبت، بوسہ، لمس، گلے لگانا، اس کی اندام نہانی پر نگاہ، جبکہ یہ چاروں باتیں بشہوت ہوں، عورتوں کے سامنے اس کا نام لینا، فحش گناہ، ہمیشہ حرام تھے اب اور سخت حرام ہوگئے، کسی سے دنیوی لڑائی جھگڑا، جنگل کا شکار، اس کی طرف شکار کرنے کو اشارہ کرنا یا کسی طرح بتانا، بندوق

ع: ترجمہ : الٰہی ! میں حج کا ارادہ کرتا ہوں تو اسے میرے لیے آسان کر دے اور مجھ سے قبول فرما، میں نے خاص اللہ تعالیٰ کے لیے حج کی نیت کی۔ (م)

1 منسک متوسط مع ارشاد الساری فصل یصلی رکعتین بعد اللبس دار الکتاب العربی بیروت ص ۲۹

2 منسک متوسط مع ارشاد الساری فصل یصلی رکعتین بعد اللبس دار الکتاب العربی بیروت ص ۷۰

3 منسک متوسط مع ارشاد الساری فصل یصلی رکعتین بعد اللبس دار الکتاب العربی بیروت ص ۷۰

4 منسک متوسط مع ارشاد الساری فصل یصلی رکعتین بعد اللبس دار الکتاب العربی بیروت ص ۶۹

...or (16) providing gunpowder or (17) giving a knife for its slaughter, (18) breaking its eggs, (19) plucking feathers, (20) breaking feet or wings, (21) milking it, (22) cooking its meat or (22) eggs, (23) roasting, (24) selling, (25) buying, (26) eating it, (27) clipping nails, (28) removing any hair from anywhere from head to toe, (29) covering the face or (30) head with any cloth etc., (31) placing a small bundle (baghchi) of bedding or clothes or a sack on the head, (32) tying a turban, (33) wearing a niqab and gloves, (34) wearing socks or stockings etc. that cover the shin and (35) ankle joint, (36) wearing sewn clothes, (37) applying perfume to the hair or (38) body or clothes, (39) wearing clothes dyed with Milagiri, safflower, or saffron—in short, any fragrant dye—(40) while they are still fragrant, (41) eating pure perfumes like musk, amber, saffron, mace, cloves, cardamom, cinnamon, ginger etc., (42) tying such perfume in the hem of a garment (43) which currently has a scent, (44) such as musk, amber, saffron; washing the head or beard with hollyhock or any (45) fragrant substance (46) that kills lice, (47) applying indigo or (48) henna dye, (49) matting hair with gum etc., (50) applying olive or sesame oil even if it's odorless (51) to the body or hair, (52) shaving someone's head even if they are not in Ihram, (53) killing or throwing away lice, signaling someone to kill it, (54) washing or (55) putting a cloth in the sun to kill it, applying (56) mercury etc. to the hair (57) for its death, in short, being the cause of the lice's destruction in any way.

(10) These things are disliked (Makruh) in Ihram: Removing body grime, washing hair or body with khali (oil-cake) or odorless soap etc., combing, scratching in such a way that hair breaks or lice fall, draping an Angarkha, shirt or trousers over the shoulders like wearing them, wearing or wrapping oneself in a cloth that has been fumigated with incense and still smells of it, intentionally smelling fragrance even if it's from a fragrant fruit or leaf like lemon, orange, mint, musk mallow, tying a bandage on the head or face, entering the Kaaba in Makkah al-Mukarramah in such a way that the cloth of the Kaaba touches the head or face, covering any part of the face like the nose with cloth, or eating or drinking something with perfume in it which has not been cooked nor has its scent faded, wearing unsewn cloth that has been darned or patched, or placing the face on a pillow.

Note: If a Muhrim carries something on his head that people normally wear, he will be considered to be wearing it, and if people do not wear it, such as a tub etc., then he will not be considered to be wearing it. (From Ash-Shami, citing An-Nahr and Al-Khaniyah).

1 Radd al-Muhtar, Chapter on Ihram, Mustafa al-Babi Egypt, 2/171 Page 740 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

...या (16) बारूद या उसके ज़बह के लिए (17) छूरी देना, (18) उसके अंडे तोड़ना, (19) पर उखाड़ना, (20) पाँव या बाजू तोड़ना, उसका (21) दूध दुहना, उसका गोश्त या (22) अंडे पकाना, (23) भूनना, (24) बेचना, (25) खरीदना, (26) खाना, (27) नाखून काटना, (28) सर से पाँव तक कहीं से कोई बाल अलग करना, (29) मुँह या (30) सर किसी कपड़े वगैरह से छुपाना, (31) बिस्तर या कपड़े की बगची या गठरी सर पर रखना, (32) इमामा (पगड़ी) बाँधना, (33) नक़ाब और दस्ताने पहनना, (34) मोज़े या जुराबें वगैरह जो पिण्डली और (35) टखने के जोड़ को छुपाएं पहनना, (36) सिला हुआ कपड़ा पहनना, (37) खुशबू बालों या (38) बदन या कपड़ों में लगाना, (39) मिलागीरी या कसुम केसर सारांश किसी खुशबू के रंगे (40) कपड़े पहनना जबकि अभी खुशबू दे रहे हों, (41) खालिस खुशबू जैसे मुश्क, अम्बर, ज़ाफ़रान, जावित्री, लौंग, इलायची, दालचीनी, सोंठ वगैरह खाना, (42) ऐसी खुशबू का आँचल में बाँधना (43) जिसमें फिलहाल महक हो, (44) जैसे मुश्क, अम्बर, ज़ाफ़रान; सर या दाढ़ी को खत्मी या किसी (45) खुशबूदार ऐसी चीज़ से धोना (46) जिससे जुएँ मर जाएँ (47) वस्मा या (48) मेहंदी का ख़िज़ाब लगाना, (49) गोंद वगैरह से बाल जमाना, (50) ज़ैतून या तिल का तेल अगरचे बे खुशबू हो (51) बदन या बालों में लगाना, (52) किसी का सर मुँडना अगरचे उसका एहराम न हो, (53) जू मारना फेंकना, किसी को उसके मारने का इशारा करना, कपड़ा उसके मारने (54) को धोना या (55) धूप में डालना, बालों (56) में पारा वगैरह उसके(57) मरने को लगाना, सारांश जू के हलाक पर किसी तरह बाइस होना।

(10) एहराम में ये बातें मकरूह हैं: बदन का मैल छुड़ाना, बाल या बदन खली या साबुन वगैरह बिना खुशबू वाली चीज़ से धोना, कंघी करना, इस तरह खुजलाना कि बाल टूटें या जू गिरे, अंगरखा, कुर्ता या पाजामा पहनने की तरह कंधों पर डालना, खुशबुओं की धूनी दिया हुआ कपड़ा कि अभी खुशबू दे रहा हो पहनना, ओढ़ना, जानबूझकर खुशबू सूंघना चाहे वह खुशबूदार फल या पत्ती हो जैसे नींबू, नारंगी, पुदीना, अत्तर दाना, सर या मुँह पर पट्टी बाँधना, ग़िलाफ़-ए-काबा मक्का मुअज़्ज़मा के अंदर इस तरह दाखिल होना कि ग़िलाफ़-ए-शरीफ़ सर या मुँह से लगे, नाक वगैरह मुँह का कोई हिस्सा कपड़े से छुपाना, या कोई ऐसी चीज़ खाना-पीना जिसमें खुशबू पड़ी हो और न पकाई गई हो न ज़ायल हुई हो, बिना सिला कपड़ा रफू किया या पैबंद लगा हुआ पहनना, तकिये पर मुँह रखकर।

नोट: अगर मुहरिम ने अपने सर पर कोई ऐसी चीज़ उठाई जिसे लोग पहनते हैं तो उसे पहनने वाला माना जाएगा, और यदि लोग उसे नहीं पहनते जैसे टब इत्यादि, तो उसे पहनने वाला नहीं माना जाएगा। (शामी, अन-नहर और खानिया के हवाले से)।

1 रद अल-मुह्तार, फ़सल फ़िल एहराम, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/171 पृष्ठ 836 का 740

یا ۱۶ بارود یا اس کے ذبح کے لیے ۱۷ چھری دینا، ۱۸ اس کے انڈے توڑنا، ۱۹ پر اکھاڑنا، ۲۰ پاؤں یا بازو توڑنا، اس کا ۲۱ دودھ دوہنا، اس کا گوشت یا ۲۲ انڈے پکانا، ۲۳ بھوننا، ۲۴ بیچنا، ۲۵ خریدنا، ۲۶ کھانا، ۲۷ ناخن کترنا، ۲۸ سر سے پاؤں تک کہیں سے کوئی بال جدا کرنا، ۲۹ منہ یا ۳۰ سر کسی کپڑے وغیرہ سے چھپانا، ۳۱ بستر یا کپڑے کی بگچی یا گٹھڑی سر پر رکھنا، ۳۲ عمامہ باندھنا، ۳۳ برقع و دستانے پہننا، ۳۴ موزے یا جرابیں وغیرہ جو پنڈلی اور ۳۵ اقدام کے جوڑ کو چھپائے پہننا، ۳۶ سلا کپڑا پہننا، ۳۷ خوشبو بالوں یا ۳۸ بدن یا کپڑوں میں لگانا، ۳۹ ملاگیری یا کسم کیسر غرض کسی خوشبو کے رنگے ۴۰ کپڑے پہننا جبکہ ابھی خوشبو دے رہے ہوں، ۴۱ خالص خوشبو مشک، عنبر، زعفران، جاوتری، لونگ، الائچی، دار چینی، زنجبیل وغیرہ کھانا، ۴۲ ایسی خوشبو کا آنچل میں باندھنا ۴۳ جس میں فی الحال مہک ہو، ۴۴ جیسے مشک، عنبر، زعفران، سر یا ڈاڑھی خطمی یا کسی ۴۵ خوشبو دار ایسی چیز سے دھونا ۴۶ جس سے جوئیں مر جائیں، ۴۷ وسمہ یا ۴۸ مہندی کا خضاب لگانا، گوند وغیرہ سے ۴۹ بال جمانا، زیتون یا تل کا ۵۰ تیل اگرچہ بے خوشبو ہو ۵۱ بدن یا بالوں میں لگانا، کسی کا ۵۲ سر مونڈنا اگرچہ اس کا احرام نہ ہو، ۵۳ جوں مارنا پھینکنا، کسی کو اس کے مارنے کا اشارہ کرنا، کپڑا اس کے مارنے ۵۴ کو دھونا یا ۵۵ دھوپ میں ڈالنا، بالوں ۵۶ میں پارہ وغیرہ اس کے ۵۷ مرنے کو لگانا، غرض جوں کے ہلاک پر کسی طرح باعث ہونا،

(۱۰) احرام میں یہ باتیں مکروہ ہیں: بدن کا میل چھڑانا، بال یا بدن کھلی یا صابون وغیرہ بے خوشبو کی چیز سے دھونا، سنگھی کرنا، اس طرح کھجانا کہ بال ٹوٹے یا جوں گرے، انگ رکھا، کُرتا یا پاجامہ پہننے کی طرح کندھوں پر ڈالنا، خوشبوں کی دھونی دیا ہوا کپڑا کہ ابھی خوشبو دے

رہا ہو پہننا، اوڑھنا، قصداً خوشبو سونگھنا اگر چہ خوشبودار پھل یا پتی ہو جیسے لیموں، نارنگی، پودینہ، عطر دانہ، سر یا منہ پر پٹی باندھنا، غلافِ کعبہ مکہ معظمہ کے اندر اس طرح داخل ہونا کہ غلاف شریف سر یا منہ سے لگے، ناک وغیرہ منہ کا کوئی حصہ کپڑے سے چھپائے، یا کوئی ایسی چیز کھانا پینا جس میں خوشبو پڑی ہو اور نہ ہو پکائی گئی ہو نہ زائل ہو گئی ہو، بے سلا کپڑا رفو کیا یا پیوند لگا ہوا پہننا، تکیہ پر منہ رکھ کر

عہ: لو حمل المحرم علی راسه شیئاً یلبسه الناس یکون لابسا، وان کان لا یلبسه الناس کالا جانة ونحوه فلا اهـ ش عن النهر والخانیة منه (م) اگر محرم نے کوئی ایسی شئی اٹھائی جسے لوگ پہنتے ہیں تو اب لباس پہننے والا سمجھا جائیگا، اور اگر لوگ اسے نہیں پہنتے مثلاً ٹب وغیرہ تو اب لابس نہ ہوگا، اھ ش نہر اور خانیہ کے حوالے سے ہے۔ ۱۲ منہ (ت)

۱ ردالمحتار فصل فی الاحرام مصطفی البابی مصر ۲/ ۱۷۱ Page 740 of 836

Volume 10 Fatawa Razawiya

Lying face down, touching fragrant perfume with the hand provided it does not stick to the hand, otherwise it is prohibited (haram). Tying an amulet (ta'wiz) on the arm or neck, even if wrapped in unstitched cloth. Tying a bandage on the body without an excuse. Adorning oneself. Taking a shawl and tying knots in its corners. Tying a loincloth (tahband) and tightening it with a strap.

(11) These things are permissible in Ihram: Draping an angarkha, shirt, or cloak over oneself in such a way that the head and face are not covered. Tying a loincloth using these garments or trousers. Tying a money belt (hamyani) or bandage. Taking a bath without removing dirt. Sitting in the shade of something. Using an umbrella. Wearing a ring. Applying unscented kohl (surma). Phlebotomy (fasd) without shaving hair. Cupping (pachhne). Removing a hair that grows in the eye. Scratching the head or body in such a way that hair does not break or lice do not fall. The persistence of perfume applied before entering Ihram. Slaughtering, cooking, and eating domestic animals like camels, cows, goats, or chickens. Milking them. Breaking and roasting eggs to eat. Fishing for food. Killing any aquatic animal as long as it is for medicine or food and not for mere entertainment as is common among people; then hunting in the sea or forest is prohibited in itself, and even more strictly prohibited in Ihram. Tying a bandage on a wound anywhere other than the face and head. Placing a pillow under the head or cheek. Placing one's own or another's hand on the head or nose. Covering the ears with cloth. Fabric coming onto the beard below the chin. Carrying a tray or sack on the head. Eating or drinking food in which musk etc. has been added during cooking, even if it gives off fragrance, or if it was added without cooking and does not give off a scent. Applying ghee, fat, bitter oil, coconut oil, almond oil, pumpkin oil, or lettuce oil to the body or hair, provided it is not scented. Wearing clothes dyed with perfume when their fragrance has dissipated.

Note (Arabic): It is disliked to bandage the head. If one bandages it for a day or a night, charity (sadqa) is due from him. There is nothing upon him if he bandages another part of his body due to an illness or without an illness, but it is disliked without an illness. [Fath al-Qadir] (m)

If someone tied a bandage on the head or forehead, even for one day or night, then charity will be due on them. And if they tied a bandage on any part of the body other than the head, whether it was due to some pain or without reason, then nothing will

be mandatory; however, tying it without reason will be disliked (makruh). [Fath al-Qadir, 12 from it] (t)

1 Fath al-Qadir, Chapter of Ihram, Maktaba Nooriya Razawiya Sukkur, 2/349 Page 741 of 836

औंधा लेटना, महकती ख़ुशबू को हाथ से छूना जबकि हाथ में न लग जाए वर्ना हराम है, बाजू या गले पर तावीज़ बांधना अगरचे बे-सिले कपड़े में लपेट कर, बिना उज़्र (कारण) बदन पर पट्टी बांधना, सिंगार करना, चादर ओढ़ कर उसके आँचलों में गिरह (गाँठ) दे लेना, तहबन्द बांध कर बंद से कसना,

(११) ये बातें एहराम में जाइज़ हैं: अंगरखा, कुर्ता, चुग़ा लपेट कर ऊपर से इस तरह डाल लेना कि सर और मुँह न छुपे, इन चीज़ों या पाजामा का तहबन्द बांधना, हमयानी (पैसे रखने की पट्टी) बांधना, बे-मैल छुड़ाए ग़ुस्ल करना, किसी चीज़ के साये में बैठना, छतरी लगाना, अँगूठी पहनना, बे-ख़ुशबू का सुरमा लगाना, फ़स्द (नस खोलना) बग़ैर बाल मूंढे, पछने (कपिंग) लगवाना, आँख में जो बाल निकले उसे जुदा करना, सर या बदन इस तरह खुजलाना कि बाल न टूटे, जूँ न गिरे, एहराम से पहले जो ख़ुशबू लगाई उसका लगा रहना, पालतू जानवर ऊँट, गाय, बकरी, मुर्ग़ी का ज़बह करना, पकाना, खाना, उसका दूध दुहना, अंडे तोड़ना, भूनना, खाना, खाने के लिए मछली का शिकार करना, किसी दरियाई जानवर का मारना दवा या ग़िज़ा के लिए न हो, निरी तफ़रीह (सिर्फ मनोरंजन) मंज़ूर हो जिस तरह लोगों में रायज है तो शिकार दरिया हो या जंगल खुद ही हराम है, और एहराम में सख़्त तर हराम, मुँह और सर के सिवा किसी और जगह ज़ख़्म पर पट्टी बांधना, सर या गाल के नीचे तकिया रखना, सर या नाक पर अपना या दूसरे का हाथ रखना, कान कपड़े से छुपाना, ठोड़ी से नीचे दाढ़ी पर कपड़ा आना, सर पर सिनी और बोरी उठाना, जिस खाने के पकने में मुश्क वग़ैरह पड़े हों अगरचे ख़ुशबू दें या बे पकाए जिसमें ख़ुशबू डाली और वो बू नहीं देती उसका खाना पीना, घी या चर्बी या कड़वा तेल या नारियल या बादाम या कद्दू या काहू का तेल कि बसाया न हो बदन या बालों में लगाना, ख़ुशबू के रंगे कपड़े पहनना जबकि उनकी ख़ुशबू जाती रही हो।

अरबी नोट: सिर पर पट्टी बाँधना मकरूह है, अगर किसी ने एक दिन या एक रात के लिए बाँधी तो उस पर सदक़ा लाज़िम होगा। और अगर सिर के अलावा शरीर के किसी अन्य हिस्से पर किसी बीमारी के कारण या बिना कारण पट्टी बाँधी तो उस पर कुछ भी लाज़िम नहीं होगा, लेकिन बिना कारण बाँधना मकरूह है। [फ़तह अल-क़दीर] (म)

अगर किसी ने सर पर या लड़ी पर पट्टी बांधी अगरचे एक दिन या रात हो तो उस पर सदक़ा होगा, और अगर सर के अलावा जिस्म के किसी और हिस्से पर पट्टी बांधी ख़्वाह किसी तकलीफ़ की वजह

से थी या बिला वजह, तो कोई चीज़ लाज़िम न होगी, हाँ बिला वजह बांधना मकरूह होगा, फ़तह अल-क़दीर १२ मिन्हु (त)

१ फ़तह अल-क़दीर, बाबुल एहराम, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर, २/३४९ पृष्ठ ८३६ का ७४१

اوندھا لیٹنا، مہکتی خوشبو ہاتھ سے چھونا جبکہ ہاتھ میں نہ لگ جائے ورنہ حرام ہے، بازو یا گلے پر تعویز باندھنا اگرچہ بے سلے کپڑے میں لپیٹ کر، بلادر بدن عہ پٹی باندھنا، سنگھار کرنا، چادر اوڑھ کر اس کے آنچلوں میں گرہ دے لینا، تہبند باندھ کر بند سے کسنا،

(۱۱) یہ باتیں احرام میں جائز ہیں : انگرکھا، کُرتا، چغہ لپیٹ کر اوپر سے اس طرح ڈال لینا کہ سر اور منہ نہ چھپے، ان چیزوں یا پاجامہ کا تہبند باندھنا، ہمیانی پٹی باندھنا، بے میل چڑائے حمام کرنا، کسی چیز کے سائے میں بیٹھنا، چھتری لگانا، انگوٹھی پہننا، بے خوشبو کا سرمہ لگانا، فصد بغیر بال مونڈے، پچھنے لینا، آنکھ میں جو بال نکلے اسے جدا کرنا، سر یا بدن اس طرح کھجانا کہ بال نہ ٹوٹے، جوں نہ گرے، احرام سے پہلے جو خوشبو لگائی اس کا لگا رہنا، پالتو جانور اونٹ، گائے، بکری، مرغی کا ذبح کرنا، پکانا، کھانا، اس کا دودھ دوہنا، انڈے توڑنا، بھوننا، کھانا، کھانے کے لیے مچھلی کا شکار کرنا، کسی دریائی جانور کا مارنا دوا یا غذا کے لیے نہ ہو، نری تفریح منظور ہو جس طرح لوگوں میں رائج ہے تو شکار دریا ہو یا جنگل خود ہی حرام ہے، اور احرام میں سخت تر حرام، منہ اور سر کا سوا کسی اور جگہ زخم پر پٹی باندھنا، سر یا گال کے نیچے تکیہ رکھنا، سر یا ناک پر اپنا یا دوسرے کا ہاتھ رکھنا، کان کپڑے سے چھپانا، ٹھوڑی سے نیچے داڑھی پر کپڑا آنا، سر پر سینی اور بوری اٹھانا، جس کھانے کے پکنے میں مشک وغیرہ پڑے ہوں اگر چہ خوشبو دیں یا بے پکائے جس میں خوشبو ڈالی اور وہ بو نہیں دیتی اس کا کھانا پینا، گھی یا چربی یا کڑوا تیل یا ناریل یا بادام یا کدو یا کاہو کا تیل کہ بسایا نہ ہو بدن یا بالوں میں لگانا، خوشبو کے رنگے کپڑے پہننا جبکہ ان کی خوشبو جاتی رہی ہو

عه: یکرہ تعصیب رأسه ولو عصبه یوما او لیلا فعلیه صدقة ولا شیئ علیه لو عصب غیرہ من بدنه لعلة او لغیر علة لکنه یکرہ بلا علة ۱ اھ فتح القدیر منه (م)

اگر کسی نے سر پر یا لڑی پر پٹی باندھی اگر چہ ایک دن یا رات ہو تو اس پر صدقہ ہوگا، اور اگر سر کے علاوہ جسم کے کسی اور حصہ پر پٹی باندھی خواہ کسی تکلیف کی وجہ سے تھی یا بلا وجہ ، تو کوئی شیئ لازم نہ ہوگی ، ہاں بلا وجہ باندھنا مکروہ ہوگا ، اھ فتح القدیر ۱۲ منه (ت)

۱ فتح القدیر باب الاحرام مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۳۴۹/۲ Page 741 of 836

Fatawa Razawiya Volume Ten

However, the color of safflower or saffron is prohibited for men in the same way. Fighting or arguing for the sake of religion is rather obligatory and necessary as per need. Wearing shoes that do not cover the joints of the feet, putting an amulet around the neck by wrapping it in unstitched cloth, looking in the mirror, touching such fragrance that currently has no scent, such as agarwood, frankincense, sandalwood, or tying it in the corner of one's cloth, performing marriage (Nikah). (12) In these matters, men and women are equal, but a few things are permissible for women: covering the head; rather, it is obligatory in front of a non-Mahram and during prayer. So, carrying bedding or a bundle on the head is permissible to a greater degree. Setting hair with gum etc., tying a bandage on the head etc. or an amulet on the arm or neck even if it is stitched. Entering inside the cover of the Kaaba in such a way that it remains on the head and does not touch the face. Wearing gloves, socks, and stitched clothes. A woman should not say 'Labbaik' in a voice loud enough for a non-Mahram to hear; however, it is always necessary for everyone in every recitation that the sound reaches their own ears. Note: Covering the face in Ihram is forbidden for women as well; she should keep a fan etc. held away from the face in front of her when before a non-Mahram. (13) The things that are prohibited in Ihram, if they occur due to some excuse or forgetfulness, then there is no sin, but the prescribed penalty (fines) must be paid in any case, even if they were unintentional, by mistake, under compulsion, or while sleeping. (14) From the time of Ihram until the stoning of the Jamrah (which will be mentioned), recite 'Labbaik' abundantly most of the time, especially while ascending or descending heights, when two caravans meet, morning and evening, the latter part of the night, and after the five daily prayers. Men should say it aloud, but not so loud as to cause distress to themselves or others. (15) When reaching the vicinity of the Haram, bow the head, keep the eyes downcast with shame for sins, enter with humility and submissiveness, and if possible, go on foot and barefoot, and keep reciting 'Labbaik' and prayers abundantly. It is better to enter during the day after taking a bath. (16) Around Makkah Mukarramah, there is a forest spanning several miles; its boundaries are marked on all sides. Within these boundaries, it is forbidden to uproot fresh grass, cut wild trees, or cause distress to the wild animals there. To the extent that if the sun is intense and there is only one tree under whose shade a deer is sitting, it is not permissible to make it move to sit there yourself. And if someone had a wild animal from outside the Haram in their hand and they entered the Haram with it, that

animal now belongs to the Haram; it is obligatory to release it immediately. In Makkah Muazzama, wild pigeons are in abundance in every house. Note: Killing malicious and harmful animals like kites, crows, mice, lizards, snakes, scorpions, bedbugs, mosquitoes, fleas etc. is permissible even within the Haram and also while in Ihram. (M)

मगर किसी भी प्रकार का कुसुम्भ या केसर का रंग मर्द के लिए वैसे ही हराम है, दीन के लिए लड़ना-झगड़ना बल्कि ज़रूरत के मुताबिक फ़र्ज़ और वाजिब है। ऐसा जूता पहनना जो पैरों के जोड़ों को न ढके बिना सिले कपड़े में लपेट कर गले में तावीज़ डालना, आईना देखना, ऐसी खुशबू को छूना जिसमें फिलहाल महक न हो जैसे अगरबत्ती, लोबान, चन्दन या उसके आँचल में गाँठ बाँधना, निकाह करना। (१२) इन मसलों में मर्द और औरत बराबर हैं मगर औरत के लिए कुछ बातें जायज़ हैं: सिर ढंकना, बल्कि नामहरम के सामने और नमाज़ में फ़र्ज़ है। तो सिर पर बिस्तर या पोटली उठाना बदरजा-ए-औला (अधिक बेहतर) है। गोंद आदि से बाल जमाना, सिर आदि पर पट्टी बाँधना या बाजू या गले पर तावीज़ बाँधना चाहे वह सिला हुआ हो। काबा के ग़िलाफ़ के अंदर इस तरह दाखिल होना कि वह सिर पर रहे चेहरे पर न आए, दस्ताने, मोज़े, सिले हुए कपड़े पहनना। औरत इतनी आवाज़ से लब्बैक न कहे कि नामहरम सुने, हाँ इतनी आवाज़ हर पढ़ने में हमेशा सबके लिए ज़रूरी है कि अपने कान तक आवाज़ आए। चेतावनी: एहराम में मुँह छुपाना औरत के लिए भी हराम है, नामहरम के सामने कोई पंखा आदि चेहरे से बचाकर सामने रखे। (१३) जो बातें एहराम में नाजायज़ हैं, वे अगर किसी उज़्र (बहाने) से या भूलकर हों तो गुनाह नहीं, मगर उन पर जो जुर्माना मुक़र्रर है वह हर हाल में देना होगा, चाहे वे बिना इरादे के हों, ग़लती से, मजबूरी में या सोते में हुए हों। (१४) एहराम के वक़्त से रमी जमराह तक (जिसका ज़िक्र आएगा) अक्सर औकात लब्बैक की खूब कसरत रखे, खासकर ऊँचाई पर चढ़ते-उतरते, दो काफ़िलों के मिलने पर, सुबह-शाम, पिछली रात, पाँचों नमाज़ों के बाद। मर्द आवाज़ के साथ कहें मगर इतनी बुलंद न हो कि अपने आप को या दूसरों को तकलीफ़ हो। (१५) जब हरम के नज़दीक पहुँचे तो सिर झुकाए, गुनाहों की शर्म से आँखें नीची किए हुए ख़ुशू-ओ-ख़ुज़ू (विनम्रता) के साथ दाखिल हो, और हो सके तो पैदल नंगे पाँव और लब्बैक व दुआ की कसरत रखे, और बेहतर यह है कि दिन में नहाकर दाखिल हो। (१६) मक्का मुकर्रमा के चारों ओर कई कोस का जंगल है, हर तरफ उसकी हदें बनी हुई हैं। इन हदों के अंदर हरी घास उखाड़ना, खुद उगने वाले पेड़ काटना, वहाँ के जंगली जानवरों को तकलीफ़ देना हराम है। यहाँ तक कि अगर तेज़ धूप हो और एक ही पेड़ हो जिसके साये में हिरण बैठा हो, तो उसे हटाकर खुद बैठने के लिए उठाना जायज़ नहीं है। और अगर कोई जंगली जानवर हरम के बाहर का किसी के हाथ में था और वह उसे लेकर हरम में दाखिल हो गया, तो अब वह जानवर हरम का हो गया, फ़र्ज़ है कि उसे फौरन आज़ाद करे। मक्का मुअज़्ज़मा में जंगली कबूतर हर घर में कसरत से हैं। नोट: चील, कौआ, चूहा, छिपकली, साँप, बिच्छू

खटमल, मच्छर, पिस्सू आदि जैसे गंदे और नुकसानदेह जानवरों को मारना हरम में भी जायज़ है और एहराम में भी। (म)

مگر کیسم کیسر کا رنگ مرد کو ویسے ہی حرام ہے، دین کے لئے لڑنا جھگڑنا بلکہ حسب حاجت فرض و واجب ہے، جوتا پہننا جو پاؤں کے جوڑ کو نہ چھپائے، بے سلے کپڑے میں لپیٹ کر تعویز گلے میں ڈالنا، آئینہ دیکھنا، ایسی خوشبو کا چھونا جس میں فی الحال مہک نہیں جیسے اگر لو بان ، صندل یا اس کا آنچل میں باندھنا، نکاح کرنا، (۱۲) ان مسائل میں مرد و عورت برابر ہیں مگر عورت کو چند باتیں جائز ہیں : سر چھپانا، بلکہ نامحرم کے سامنے اور نماز میں فرض ہے تو سر پر بستر بقچہ اٹھانا، بدرجہ اولٰی، گوند وغیرہ سے بال جمانا، سر وغیرہ پر پٹی خواہ بازو یا گلے پر تعویز باندھنا اگرچہ سی کر، غلاف کعبہ کے اندر یوں داخل ہونا کہ سر پر رہے منہ پر نہ آئے، دستانے موزے سلے کپڑے پہننا، عورت اتنی آواز سے لبیک نہ کہے کہ نامحرم سنے، ہاں اتنی آواز ہر پڑھنے میں ہمیشہ سب کو ضرور ہے کہ اپنے کان تک آواز آئے، تنبیہ : احرام میں منہ چھپانا عورت کو بھی حرام ہے، نامحرم کے آگے کوئی پنکھا وغیرہ منہ سے بچا ہوا سامنے رکھے۔ (۱۳) جو باتیں احرام میں ناجائز ہیں وہ اگر کسی عذر سے یا بھول کر ہوں تو گناہ نہیں، مگر ان پر جو جرمانہ مقرر ہے ہر طرح دینا آئے گا اگرچہ بے قصد ہوں سہواً یا جبراً یا سوتے میں۔ (۱۴) وقت احرام سے رمی جمرہ تک (جس کا ذکر آئے گا) اکثر اوقات لبیک کی بے شمار کثرت رکھے خصوصاً چڑھائی پر چڑھتے اترتے، دو قافلوں کے ملتے، صبح وشام، پچھلی رات، پانچویں نمازوں کے بعد مرد باآوازِ کہیں مگر اتنی بلند کہ اپنے آپ یا دوسرے کو تکلیف نہ ہو، (۱۵) جب حرم کے متصل پہنچے سر جھکائے، آنکھیں شرم گناہ سے نیچی کیے خشوع و خضوع سے داخل ہو، اور ہو سکے تو پیادہ ننگے پاؤں اور لبیک ودعا کی کثرت رکھے، اور بہتر یہ کہ دن کو داخل ہو نہا کر، (۱۶) مکہ مکرمہ کے گرداگرد کئی کوس کا جنگل ہے، ہر طرف اس کی حدیں

بنی ہوئی ہیں ان حدوں کے اندر تر گھاس اکھاڑنا، خودرو پیڑ کاٹنا، وہاں کے وحشی جانوروں کو تکلیف دینا حرام ہے۔ یہاں تک کہ اگر سخت دھوپ ہو اور ایک ہی پیڑ ہے اس کے سایہ میں ہرن بیٹھا ہے تو جائز نہیں کہ اپنے بیٹھنے کے لیے اسے اٹھائے، اور اگر کوئی وحشی جانور بیرونِ حرم کا اس کے ہاتھ میں تھا اسے لیے ہوئے حرم میں داخل ہو گیا، اب وہ جانور حرم کا ہو گیا، فرض ہے کہ فوراً اسے آزاد کرے، مکہ معظمہ میں جنگلی کبوتر بکثرت ہیں ہر مکان میں عہ: چیل، کوا، چوہا، چھپکلی، سانپ، بچھو، کھٹمل، مچھر، پسو وغیرہ خبیث اور موذی جانوروں کا قتل حرم میں بھی جائز ہے اور احرام میں بھی (م)

Fatawa Razawiyya

Volume 10

...stay aware, never scare them away, nor frighten them, nor cause them any harm. Some people from here and there who live in Makkah do not respect the pigeons settled there; do not follow their example, but do not speak ill of them either. When there is respect for the animals there, then what to say of human Muslims.

(17) When the city of the Lord of the worlds (Jalla Jalaluhu) comes into view, stop and pray, and recite Durud Sharif abundantly. It is better to enter after bathing and recite Fatihah for those buried in Jannat al-Mu'alla.

(18) When you reach the intended destination where the Great Ka'bah is visible, *Allahu Akbar*! This is a great time for acceptance and response. Seek forgiveness and well-being with a sincere heart for yourself and all your relatives, friends, and Muslims. This humble one presents a comprehensive prayer; recite Durud Sharif abundantly and read this at least three times:

"O Allah! This is Your House, and I am Your servant. I ask You for forgiveness and well-being in religion, this world, and the hereafter for myself, my parents, and for all believing men and women, and for Your servant Ahmad Raza bin Naqi Ali. O Allah! Forgive them both, have mercy on them, and help him with a mighty help."

Then recite Durud Sharif.

(19) Likewise, while mentioning Allah and His Messenger and praying for the success of all Muslims in both worlds, reach *Bab-us-Salam*, kiss this holy threshold, and enter by placing your right foot first and say:

"In the name of Allah, and all praise is for Allah, and peace be upon the Messenger of Allah. O Allah! Send blessings upon our master Muhammad and upon the family of our master Muhammad and the wives of our master Muhammad. O Allah! Forgive my sins and open the gates of Your mercy for me."

1: Translation: O Lord! This is Your house and I am Your servant. O Lord! I seek refuge in You, forgiveness for sins, and protection from every calamity in religion, world, and hereafter for myself and for my parents and for all men and women and for Your humble servant Ahmad Raza Khan Ali. O Lord! Grant him powerful help. Ameen!

2: Translation: In the name of Allah, and all excellence is for God, and peace be upon the Messenger of Allah. O Lord, send blessings upon our master Muhammad and his family and his wives. O Lord! Forgive my sins and open for me the doors of Your mercy. (M)

Page 743 of 836

फ़तावा रज़विया

जिल्द 10

...खबरदार रहें, उन्हें कभी न उड़ाएँ न डराएँ और न ही कोई कष्ट पहुँचाएँ। इधर-उधर के कुछ लोग जो मक्का में रहने वाले कबूतरों का सम्मान नहीं करते, उनका अनुकरण न करें, लेकिन उन्हें बुरा भी न कहें। जब वहाँ के जानवरों का सम्मान है, तो मुसलमान इंसानों का क्या कहना।

(१७) जब रब्बुल आलमीन (जल्ल जलालाहु) का शहर दिखाई दे, तो ठहरकर दुआ माँगें और कसरत से दरूद शरीफ़ पढ़ें। बेहतर यह है कि नहा-धोकर दाखिल हों और जन्नतुल मुअल्ला में दफ़्न लोगों के लिए फ़ातिहा पढ़ें।

(१८) जब उस जगह पहुँचें जहाँ काबा मुअज़्ज़मा नज़र आए, अल्लाह अकबर! यह कुबूलियत और दुआ की क़बूलियत का बड़ा अज़ीम वक़्त है। सच्चे दिल से अपने और अपने तमाम अज़ीज़ों, दोस्तों और मुसलमानों के लिए माफ़ी और सलामती माँगें, और यह फ़कीर एक व्यापक दुआ पेश करता है, दरूद शरीफ़ की कसरत करें और इसे कम से कम तीन बार पढ़ें:

"ऐ अल्लाह! यह तेरा घर है और मैं तेरा बंदा हूँ। मैं तुझसे दीन, दुनिया और आख़िरत में अपने लिए, अपने माता-पिता के लिए और तमाम मोमिन मर्दों और औरतों के लिए, और तेरे बंदे अहमद रज़ा बिन नकी अली के लिए माफ़ी और आफ़ियत (सलामती) माँगता हूँ। ऐ अल्लाह! उन दोनों को माफ़ कर दे, उन पर रहम कर और उसकी ज़बरदस्त मदद फ़रमा।"

फिर दरूद शरीफ़ पढ़ें।

(१९) इसी तरह अल्लाह और उसके रसूल का ज़िक्र करते हुए और तमाम मुसलमानों के लिए दोनों जहानों की भलाई की दुआ करते हुए बाब-उस-सलाम तक पहुँचें और इस पाक चौखट को चूमकर दायाँ पाँव पहले रखकर दाखिल हों और कहें:

"अल्लाह के नाम से, और सब तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं, और अल्लाह के रसूल पर सलाम हो। ऐ अल्लाह! हमारे आका मुहम्मद और हमारे आका मुहम्मद की आल (संतान) और हमारे आका मुहम्मद की पत्नियों पर दरूद भेज। ऐ अल्लाह! मेरे गुनाह माफ़ कर दे और मेरे लिए अपनी रहमत के दरवाज़े खोल दे।"

१: अनुवाद: ऐ इलाही! यह तेरा घर है और मैं तेरा बंदा हूँ। ऐ इलाही! मैं तुझसे पनाह माँगता हूँ, गुनाहों की माफ़ी और दीन, दुनिया व आख़िरत में हर बला से महफ़ूज़ी अपने लिए और अपने माँ-बाप और सब मर्दों व औरतों के लिए और तेरे हक़ीर बंदे अहमद रज़ा ख़ान अली के लिए। ऐ इलाही! इसकी ज़बरदस्त इमदाद फ़रमा, आमीन!

२: अनुवाद: अल्लाह के नाम से और सब खूबियाँ खुदा को और रसूलुल्लाह पर सलाम। ऐ इलाही! दरूद भेज हमारे आका मुहम्मद और उनकी आल और उनकी बीबियों पर। ऐ इलाही! मेरे गुनाह बख़्श दे और मेरे लिए अपनी रहमत के दरवाज़े खोल दे। (म)

पृष्ठ 743 / 836

فتاوی رضویہ

جلد دہم

رہتے ہیں خبر دار ہر گز انھیں نہ اڑائے نہ ڈرائے نہ کوئی ایذا پہنچائے، بعض ادھر اُدھر کے لوگ جو مکے میں بسے کبوتروں کا ادب نہیں کرتے، ان کی ریس نہ کرے، مگر برا انھیں بھی نہ کہے، جب وہاں کے جانوروں کا ادب ہے تو مسلمانوں انسان کا کیا کہنا،

(۱۷) جب رب العالمین جل جلالہ کا شہر نظر پڑے ٹھہر کر دعا مانگے اور درود شریف کی کثرت کرے اور افضل یہ ہے کہ نہا دھو کر داخل ہو اور مدفونین جنت المعلیٰ کے لیے فاتحہ پڑھے،

(۱۸) جب مدعیٰ میں پہنچے جہاں کعبہ معظمہ نظر آئے اللہ اکبر یہ عظیم قبولِ واجابت کا وقت ہے صدق دل سے اپنے اور تمام عزیزوں دوستوں مسلمانوں کے لیے مغفرت وعافیت مانگے، اور فقیر دعائے جامع عرض کرتا ہے درود شریف کی کثرت کرے اور اسے کم از کم تین بار پڑھیں،

اَللّٰھُمَّ ھٰذَا بَیْتُکَ وَ اَنَا عَبْدُکَ اَسْئَلُکَ الْعَفْوَ وَ الْعَافِیَۃَ فِی الدِّیْنِ وَ الدُّنْیَا وَالْاٰخِرَۃِ لِیْ وَ لِوَالِدَیَّ وَ لِلْمُؤْمِنِیْنَ وَالْمُؤْمِنٰتِ وَ لِعَبْدِکَ اَحْمَد رَضَا اِبْنِ نَقِیّ عَلِیّ اَللّٰھُمَّ اغْفِرْ لَھُمَا وَ ارْحَمْھُمَا وَ انْصُرْہُ نَصْرًا عَزِیْزًا

پھر درود شریف پڑھیں۔

(۱۹) یو نہی ذکر خدا اور رسول اور اپنے تمام مسلمانوں کے لیے دعائے فلاح دارین کرتا ہوا باب السلام تک پہنچے اور اس آستانہ پاک کو بوسہ دے کر داہنا پاؤں پہلے رکھ کر داخل ہو اور کہے:

بِسْمِ اللہِ وَالْحَمْدُ لِلہِ وَالسَّلَامُ عَلٰی رَسُوْلِ اللہِ اَللّٰھُمَّ صَلِّ عَلٰی سَیِّدِنَا مُحَمَّدٍ وَّ عَلٰی اٰلِ سَیِّدِنَا مُحَمَّدٍ وَّ اَزْوَاجِ سَیِّدِنَا مُحَمَّدٍ اَللّٰھُمَّ اغْفِرْ لِیْ ذُنُوْبِیْ وَ افْتَحْ لِیْ اَبْوَابَ رَحْمَتِکَ۔

۱: ترجمہ: الہی! یہ تیرا گھر ہے اور میں تیرا بندہ، الہی! میں تجھ سے پناہ مانگتا ہوں، گناہوں کی معافی اور دین و دنیا و آخرت میں ہر بلا سے محفوظی اپنے لیے اور اپنے ماں باپ اور سب مردوں عورتوں اور تیرے حقیر بندے احمد رضا خاں علی کے لیے، الہی! اس کی زبردست امداد فرما، آمین!

۲: ترجمہ: اللہ کے نام سے اور سب خوبیاں خدا کو اور رسول اللہ پر سلام، الہی درود بھیج ہمارے آقا محمد اور ان کی آل اور ان کی بیبیوں پر، الہی! میرے گناہ بخش دے اور میرے لیے اپنی رحمت کے دروازے کھول دے۔(م)

Fatawa Razawiya - Volume Two

(20) Remember this prayer well: whenever entering Masjid al-Haram Sharif or any mosque, enter in the same manner and recite this prayer. When leaving any mosque, place the left foot out first and recite the same prayer, but at the end, replace 'rahmatik' (Your mercy) with 'fadhlik' (Your grace) and add these words: 'wa sahhil ‘anhu abwaba rizqik'. Its religious and worldly blessings are countless. Praise be to Allah.

Section Three: Description of Tawaf and Sa’i between Safa and Marwa

Now that you have entered Masjid al-Haram, if there is no fear of missing the congregational prayer or an obligatory prayer (whether Witr or Sunnat-e-Mu'akkadah), then prioritize Tawaf before all other tasks. The Kaaba is a candle and you are a moth; do you not see how a moth sacrifices itself around a candle? You too should be ready to sacrifice yourself for this candle. First, examine the map of this noble place so that whatever is explained becomes well-understood.

[Diagram Labels: West, Masjid al-Haram Sharif, Black Stone, Station of Abraham, Shafi'i Musalla, Hanbali Musalla, Hanafi Musalla, Maliki Musalla, North, Iraqi Corner, Syrian Corner, Yemeni Corner, Hateem, Mizab-e-Rahmat, Gate of Peace, East, Dome of Zamzam, Gate of Safa, Safa, Marwa, First Green Marker, Second Green Marker.]

Masjid al-Haram is a vast circular enclosure, lined with numerous corridors and entry gates. In its center is the Mataf, a circular area paved with marble, and in the middle of that is the Grand Kaaba, the House of Allah (Peace be upon Him).

Footnote: Make easy for me the gates of Your sustenance. (T)

Page 744 of 836

फ़तावा रज़विया - जिल्द दो

(20) यह दुआ अच्छी तरह याद रखें: जब कभी मस्जिद अल-हराम शरीफ़ या किसी भी मस्जिद में दाख़िल हों, तो उसी तरह जाएँ और यह दुआ पढ़ें। और जब किसी मस्जिद से बाहर निकलें, तो पहले बायां पैर बाहर रखें और वही दुआ पढ़ें, लेकिन अंत में 'रहमतिक' (तेरी रहमत) की जगह 'फ़ज़्लिक' (तेरा फ़ज़्ल) कहें और ये शब्द और बढ़ाएँ 'व सह्हिल अन्हु अबवाबा रिज़्क़िक'। इसकी दीनी और दुनियावी बरकतें बेशुमार हैं। वलहम्दुलिल्लाह।

अध्याय तीन: तवाफ़ और सफ़ा व मरवा की सई का बयान

अब जब आप मस्जिद अल-हराम में दाख़िल हो चुके हैं, अगर जमाअत खड़ी होने या फ़र्ज़ नमाज़, वित्र या सुन्नत-ए-मुअक्कदा के छूटने का डर न हो, तो सबसे पहले तवाफ़ की तरफ मुतवज्जह हों। काबा एक शमा (मोमबत्ती) है और आप एक परवाना (पतंगा)। क्या आप नहीं देखते कि परवाना शमा के चारों ओर कैसे कुर्बान होता है? आप भी इस शमा पर कुर्बान होने के लिए तैयार हो जाएँ। पहले इस मुक़द्दस मक़ाम का नक़्शा देखें ताकि जो बात कही जाए वह ज़हन में अच्छी तरह आ जाए।

[आरेख के शब्द: पश्चिम, मस्जिद अल-हराम शरीफ़, हज्र-ए-अस्वद, मक़ाम-ए-इब्राहिम, शाफ़ई मुसल्ला, हंबली मुसल्ला, हनफ़ी मुसल्ला, मालिकी मुसल्ला, उत्तर, रुक्न-ए-इराक़ी, रुक्न-ए-शामी, रुक्न-ए-य़मानी, हतीम, मीज़ाब-ए-रहमत, बाब-उस-सलाम, पूर्व, क़ुब्बा-ए-ज़मज़म, बाब-उस-सफ़ा, सफ़ा, मरवा, मील-ए-अव्वल, मील-ए-दोयम।]

मस्जिद अल-हराम एक विशाल गोल घेरा है, जिसके किनारों पर बहुत सारे दालान और आने-जाने के दरवाज़े हैं। बीच में मताफ़ एक गोल दायरा है जहाँ संग-ए-मरमर बिछा हुआ है। इसके बीच में काबा मुअज़्ज़मा है, बैतुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम।

नोट: मेरे रिज़्क़ के दरवाज़ों में आसानी फ़रमा। (त)

पृष्ठ ७४४ / ८३६

(۲۰) یہ دعا خوب یاد رکھے جب کبھی مسجد الحرام شریف خواہ مسجد میں داخل ہو اسی طرح جائے اور یہ دعا پڑھے، اور جب کسی مسجد سے باہر آئے پہلے بایاں پاؤں باہر رکھے اور یہی دعا پڑھے مگر اخیر میں رَحْمَتِكَ کی جگہ فَضْلِكَ کہے اور یہ لفظ اور بڑھائے: وَسَہِّلْ عَنِّہ اَبْوَابَ رِزْقِكَ۔ اس کی برکات دین و دنیا میں بے شمار ہیں۔ والحمد للہ۔

فصل سوم طواف و سعی صفا و مروہ کا بیان

اب کہ مسجد الحرام میں داخل ہوا اگر جماعت قائم یا نماز فرض خواہ وتر یا سنت مؤکدہ کے فوت ہونے کا خوف نہ ہو، تو سب کاموں سے پہلے متوجہ طواف ہو، کعبہ شمع ہے اور تو پروانہ، دیکھتا نہیں کہ پروانہ شمع کے گرد کیسے قربان ہوتا ہے تو بھی اس شمع پر قربان ہونے کے لیے مستعد ہو جا، پہلے اس مقامِ کریم کا نقشہ دیکھے کہ جو بات کہی جائے خوب ذہن میں آجائے۔

[نقشہ کے الفاظ: مغرب، مسجد الحرام شریف، حجر اسود، مقام ابراہیم، مصلّٰی شافعی، مصلّٰی حنبلی، مصلّٰی حنفی، مصلّٰی مالکی، شمال، رکن عراقی، رکن شامی، رکن یمانی، حطیم، میزاب رحمت، باب السلام، مشرق، قبہ زمزم، باب الصفا، صفا، مروہ، میل اول، میل دوم۔]

مسجد الحرام ایک گول و وسیع احاطہ ہے، جس کے کنارے کنارے بہ کثرت دالان اور آنے جانے کے دروازے ہیں اور بیچ میں مطاف ایک گول دائرہ ہے جس میں سنگ مرمر بچھا ہے اس کے بیچ میں کعبہ معظمہ ہے بیت اللہ صلی اللہ علیہ وسلم۔

عنہ : اپنے رزق کے دروازوں میں آسانی فرما۔ (ت)

صفحہ 744 / 836

Fatawa Razawiya Volume 10

In the time of [Prophet Muhammad] (peace and blessings be upon him), the Masjid al-Haram was only that much; on its boundary is the old eastern gate, Bab al-Salam. The corner of a building where its two walls meet is called a 'corner' (angle), like this: I--------- H1 I H, H-B. Both walls meet at point H. This is the corner (Rukn). The Kaaba Mu'azzama has four corners: Rukn al-Aswad is in the south-eastern corner, where the sacred Black Stone is installed above the ground. Rukn al-Iraqi is in the north-eastern corner. The door of the Kaaba is in the eastern wall between these two corners, quite high from the ground. Multazam is that part of the eastern wall which is between Rukn al-Aswad and the door of the Kaaba Mu'azzama. Rukn al-Shami is in the north-western corner. Mizab al-Rahmah (the Golden Spout) is installed on the roof of the northern wall between Rukn al-Shami and Rukn al-Iraqi. Hatim is also towards this northern wall. This land was part of the Kaaba Mu'azzama itself. During the pre-Islamic era (Jahiliyyah), when the Quraysh rebuilt the Kaaba, they left this much land outside the Kaaba Mu'azzama due to lack of funds, and built a small curved wall around it, with entrances on both sides. It is a good fortune for Muslims that entering it is like entering the Kaaba Mu'azzama itself, which, by the grace of Allah, is achieved without difficulty. Rukn al-Yamani is in the south-western corner. Mustajab is that piece of the western wall between Rukn al-Iraqi and Rukn al-Yamani which is opposite the Multazam. Between Rukn al-Yamani and Rukn al-Aswad is the southern wall, where seventy thousand angels are appointed to say 'Amen' to prayers. The humble writer (Faqir) named it Mustajab. Maqam-e-Ibrahim is the stone in a dome in front of the Kaaba's door, upon which our master Ibrahim Khalillullah (peace be upon him) stood while building the Kaaba. The mark of his sacred feet became imprinted on it, which is still present, and which Allah Almighty called 'Clear Signs' (Ayat Bayyinat). The dome of Zamzam Sharif is located south of this in the Mosque. Bab al-Safa is one of the gates of the Mosque, exit through which leads to Mount Safa. Safa was a hill south of the Kaaba Mu'azzama that has now been leveled into the ground; a qibla-facing hall and stairs have been built there. Marwah was another hill to the east of Safa; a qibla-facing hall and stairs have been built there as well. The distance between Safa and Marwah is now a market. Walking from Safa, there are shops on the right hand and the enclosure of Masjid al-Haram on the left. Milain Akhdarain (the two green markers) are two green pillars installed in the wall of the Haram Sharif in the middle of this distance, just like stones are placed at the beginning of a mile. Mas'a is the distance between these two markers. Thoroughly memorize all these

descriptions written repeatedly in the treatise so that there is no need to ask upon arriving there. Footnote: From south to north, six cubits of the Kaaba's land, some say seven cubits, and some believe the entire Hatim is part of it. (M)

नबी करीम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के ज़माने में मस्जिद अल-हराम उतनी ही थी, उसकी सीमा पर प्राचीन पूर्वी द्वार बाब-अल-सलाम स्थित है। मकान का वह कोना जहाँ उसकी दो दीवारें मिलती हैं, उसे 'रुक़्न' (कोण) कहते हैं, इस तरह: I--------- H1 I H, H-B. दोनों दीवारें बिंदु H पर मिलती हैं। यह रुक़्न ज़ाविया है। काबा मुअज़्ज़मा के चार रुक़्न (कोने) हैं: रुक़्न अल-अस्वद दक्षिण-पूर्वी कोने में है, इसी में ज़मीन से ऊँचा पवित्र हज्रे अस्वद स्थापित है। रुक़्न अल-इराक़ी उत्तर-पूर्वी कोने में है। काबा का दरवाज़ा इन्हीं दोनों रुक़्नों के बीच पूर्वी दीवार में ज़मीन से काफ़ी ऊँचा है। मुल्तज़म पूर्वी दीवार का वह टुकड़ा है जो रुक़्न अल-अस्वद से काबा मुअज़्ज़मा के दरवाज़े तक है। रुक़्न अल-शामी उत्तर-पश्चिमी कोने में है। मीज़ाब-ए-रहमह (सोने का परनाला) रुक़्न-ए-शामी और इराक़ी के बीच की उत्तरी दीवार पर छत में लगा है। हतीम भी इसी उत्तरी दीवार की ओर है। यह ज़मीन काबा मुअज़्ज़मा की ही थी। ज़ाहिलियत के दौर में जब क़ुरैश ने काबा का पुनर्निर्माण किया, तो धन की कमी के कारण इतनी ज़मीन काबा मुअज़्ज़मा से बाहर छोड़ दी, और इसके चारों ओर एक छोटी घुमावदार दीवार बना दी, जिसमें दोनों तरफ़ आने-जाने का रास्ता है। और यह मुसलमानों का सौभाग्य है कि इसमें प्रवेश करना काबा मुअज़्ज़मा में ही प्रवेश करने जैसा है, जो अल्हम्दुलिल्लाह बिना किसी परेशानी के नसीब होता है। रुक़्न अल-यमानी दक्षिण-पश्चिमी कोने में है। मुस्तजाब रुक़्न-ए-इराक़ी और यमानी के बीच की पश्चिमी दीवार का वह टुकड़ा है जो मुल्तज़म के सामने है। रुक़्न अल-यमानी और रुक़्न अल-अस्वद के बीच जो दक्षिणी दीवार है, यहाँ सत्तर हज़ार फ़रिश्ते दुआ पर आमीन कहने के लिए नियुक्त हैं। फ़क़ीर ने इसका नाम मुस्तजाब रखा। मक़ाम-ए-इब्राहीम काबा के दरवाज़े के सामने एक गुंबद में वह पत्थर है जिस पर खड़े होकर हमारे सरदार इब्राहीम ख़लीलुल्लाह (अलैहिस्सलाम) ने काबा बनाया था। उनके पवित्र चरणों के निशान उस पर बन गए जो अब तक मौजूद हैं और जिसे अल्लाह तआला ने 'आयात-ए-बय्यिनात' (खुली निशानियाँ) फ़रमाया। ज़मज़म शरीफ़ का गुंबद इससे दक्षिण की ओर मस्जिद शरीफ़ में स्थित है। बाब-अस-सफ़ा मस्जिद शरीफ़ के दरवाज़ों में से एक दरवाज़ा है जिससे निकलकर सामने कोहे सफ़ा है। सफ़ा काबा मुअज़्ज़मा के दक्षिण में एक पहाड़ी थी जो अब ज़मीन में दब गई है; अब वहाँ क़िबला-मुख एक दालान और चढ़ने की सीढ़ियाँ बना दी गई हैं। मरवा सफ़ा से पूर्व की ओर दूसरी पहाड़ी थी; वहाँ भी क़िबला-मुख दालान और सीढ़ियाँ बना दी गई हैं। सफ़ा से मरवा तक जो दूरी है, अब वहाँ बाज़ार है। सफ़ा से चलते हुए दाहिने हाथ पर दुकानें और बाएँ हाथ पर मस्जिद अल-हराम का घेरा है। मीलैन अख़्दरैन (दो हरे निशान) इस दूरी के

बीच में हरम शरीफ़ की दीवार में दो हरे स्तंभ लगे हैं, जैसे मील के शुरू में पत्थर लगा होता है। मस्आ वह दूरी है जो इन दोनों मीलों के बीच है। यह सब स्थितियाँ रिसाले में बार-बार लिखकर अच्छी तरह ज़हननशीन कर लीजिए ताकि वहाँ पहुँचकर पूछने की ज़रूरत न रहे। टिप्पणी: दक्षिण से उत्तर तक छह हाथ काबा की ज़मीन है, और कुछ कहते हैं सात हाथ और कुछ का मानना है कि पूरा हतीम इसी का हिस्सा है। (म)

पृष्ठ 745 / 836

تعالیٰ علیہ وسلم کے زمانہ میں مسجد الحرام اسی قدر تھی، اس کی حد پر باب السلام شرقی قدیم دروازہ واقع ہے، رکن مکان کا گوشہ جہاں اس کی دو دیواریں ملتی ہیں جسے زاویہ کہتے ہیں، اس طرح ا ـــــــــــــ ح ۱ ا ح، ح ب دونوں دیواریں مقام ح پر ملی ہیں۔ یہ رکن زاویہ ہے، کعبہ معظمہ کے چار رکن ہیں، رکن اسود جنوب مشرق کے گوشہ میں، اسی میں زمین سے اونچا سنگ اسود شریف نصب ہے، رکن عراق مشرق وشمال کے گوشہ میں، دروازہ کعبہ انہی دونوں رکنوں کے بیچ کی شرقی دیوار میں زمین سے بہت بلند ہے۔ ملتزم اسی شرقی دیوار کا وہ ٹکڑا جو رکن اسود سے دروازہ کعبہ معظمہ تک ہے، رکن شامی شمال مغرب کے گوشہ میں، میزاب رحمت، سونے کا پرنالہ رکن شامی وعراقی کے بیچ کی شمالی دیوار پر چھت میں نصب ہے، حطیم بھی اسی شمالی دیوار کی طرف ہے، یہ زمین کعبہ معظمہ ہی کی تھی، زمانہ جاہلیت میں جب قریش نے کعبہ از سر نو بنایا، کمی خرچ کے باعث اتنی زمین کعبہ معظمہ سے باہر چھوڑ دی، اس کے گردا گرد ایک قومی انداز کی چھوٹی سی دیوار کھینچ دی اور دونوں طرف آمد و رفت کا دروازہ ہے۔ اور یہ مسلمانوں کی خوش نصیبی ہے اس میں داخل ہونا کعبہ معظمہ ہی میں داخل ہونا ہے جو بحمد اللہ تعالیٰ بے تکلیف نصیب ہوتا ہے، رکن یمانی غروب و جنوب کے گوشہ میں مستجاب رکن عراق و یمانی کے بیچ کی غربی دیوار کا وہ ٹکڑا جو ملتزم کے مقابل ہے، مستجاب رکن یمانی اور رکن اسود کے بیچ میں جو دیوار جنوبی ہے یہاں ستر ہزار فرشتے دعا پر آمین کہنے کے لیے مقرر ہیں، فقیر نے اس کا نام مستجاب رکھا، مقام ابراہیم دروازہ کعبہ کے سامنے ایک قبہ میں وہ پتھر ہے جس پر کھڑے ہو کر سیدنا ابراہیم خلیل اللہ علیہ الصلوۃ والسلام نے کعبہ بنایا تھا ان کے قدم پاک کا اس پر نشان ہو گیا جواب تک موجود ہے اور جسے اللہ تعالیٰ نے آیات بینات اللہ تعالیٰ

کی کھلی نشانیاں فرمایا۔ زمزم شریف کا قبہ اس سے جنوب کو مسجد شریف میں واقع ہے، باب الصفا مسجد شریف کے دروازوں میں سے ایک دروازہ ہے جس سے نکل کر سامنے کوہِ صفا ہے صفا کعبہ معظمہ سے جنوب کو ایک پہاڑی تھی کہ زمین میں چھپ گئی ہے، اب وہاں قبلہ رخ ایک دالان بنا دیا ہے اور چڑھنے کی سیڑھیاں۔ مروہ دوسری پہاڑی صفا سے پورب کو تھی، یہاں بھی قبلہ رخ دالان بنا دیا ہے اور سیڑھیاں۔ صفا سے مروہ تک جو فاصلہ ہے اب یہاں بازار ہے۔ صفا سے چلتے ہوئے دہنے ہاتھ کو دکانیں اور بائیں ہاتھ کو احاطہ مسجد الحرام ہے۔ میلین اخضرین اس فاصلہ کے وسط میں دیوارِ حرم شریف میں دو سبز میل نصب ہیں، جیسے میل کے شروع میں پتھر لگا ہوتا ہے، مسعی وہ فاصلہ کہ ان دونوں میلوں کے بیچ میں ہے، یہ سب صورتیں رسالہ میں بار بار لکھ کر خوب ذہن نشین کر لیجئے کہ وہاں پہنچ کر پوچھنے کی حاجت عہ: جنوباً شمالاً چھ ہاتھ کعبہ کی زمین ہے اور بعض کہتے ہیں سات ہاتھ اور بعض کا خیال ہے کہ سارا حطیم ہے۔ (م)

Fatawa Rizvia, Volume 10

...lest it be so, an uninformed person acts like a blind person, and one who has understood is far-sighted. Now, take the holy name of your Lord Almighty and perform the circumambulation (Tawaf).

(1) Before starting the Tawaf, a man should perform 'Idtiba' (wearing the ihram cloth under the right armpit and over the left shoulder), so that the right shoulder remains bare and both ends are placed on the left shoulder.

(2) Now stand facing the Kaaba to the right side of the Hajar al-Aswad (Black Stone) towards Rukn Yamani, near the Black Stone such that the entire stone is to your right. Then make the intention for Tawaf:

Allahumma inni uridu tawafa baytikal muharrami fayassirhu li wa taqabbalhu minni.

(3) After this intention, move towards your right while facing the Kaaba. When you are opposite the Black Stone (which will happen with minimal movement), raise your hands to the ears such that the palms are towards the Stone and say:

Bismillahi walhamdulillahi wallahu akbaru wassalatu wassalamu 'ala rasulillah - 1

(4) If possible, place both palms on the pure Black Stone and place your mouth between them to kiss it without making a sound. Do this three times. If you are blessed with this, it is extreme good fortune. Surely your Beloved and Master, Muhammad the Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) kissed it and placed his sacred face on it. What great fortune if your mouth reaches there! If it's not possible due to a crowd, do not harm others nor get crushed yourself; instead, touch the blessed Black Stone with your hand, or if the hand doesn't reach, with a stick, and then kiss it. If even that isn't possible, signal towards it with your hands and kiss them. You are looking at the place where Muhammad the Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) placed his mouth; is this not enough!

(5) Allahumma imanan bika wattiba'an lisunnati nabiyyika Muhammadin sallallahu ta'ala 'alayhi wa sallam - 2

Note 1: O Allah! I am beginning to circumambulate Your blessed and honored house, so make it easy for me and accept it from me. (T)

Note 2: In the name of Allah, all praise is for Allah, Allah is the Greatest, and peace and blessings be upon the Messenger of Allah. (T)

Note 3: O my God, I perform this Tawaf by believing in You and following Your Prophet (peace and blessings be upon him). 12 Minhu (M)

---

1. Mansak Mutawassit with Irshad al-Sari, Chapter on the Description of Starting Tawaf, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 89.
2. Al-Adhkar, Imam Nawawi, Chapter on Adhkar of Tawaf, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 167.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम (दसवीं)

...ऐसा न हो, अनभिज्ञ व्यक्ति अंधे की तरह काम करता है और जो समझ गया वह दूरदर्शी है। अब अपने रब अज़्व-व-जल्ल का पाक नाम लेकर तवाफ़ (परिक्रमा) कीजिए।

(१) तवाफ़ शुरू करने से पहले मर्द 'इज़्तिबाअ' करे, यानी चादर की सीधी जानिब दहिनी बगल के नीचे से निकाले कि सीधा कंधा खुला रहे और दोनों आँचल बाएँ कंधे पर डाल ले।

(२) अब रू-ब-क़ाबा हजर-ए-अस्वद की दहिनी तरफ़ रुक्न-ए-यमानी की जानिब संग-ए-अस्वद के करीब यूँ खड़े हों कि तमाम पत्थर आपके सीधे हाथ की ओर रहे। फिर तवाफ़ की नियत करें:

अल्लाहुम्मा इन्नी उरीदु तवाफ़ा बैतिकल मुहर्रमि फ़यस्सिरहु ली व तक़ब्बलहु मिन्नी।

(३) इस नियत के बाद क़ाबा की ओर मुँह किए अपनी दहिनी दिशा में चलें, जब संग-ए-अस्वद के मुक़ाबिल हों (और यह बात मामूली हरकत से हासिल हो जाएगी) तो कानों तक हाथ इस तरह उठाएँ कि हथेलियाँ पत्थर की तरफ रहें और कहें:

बिस्मिल्लाहि वलहम्दुलिल्लाहि वल्लाहु अक्बरु वस्सलातु वस्सलामु 'अला रसूलील्लाह - १

(४) अगर मुमकिन हो तो हजर-ए-अस्वद मुतहर पर दोनों हथेलियाँ और उनके बीच में मुँह रखकर यूँ बोसा (चूमना) दें कि आवाज़ पैदा न हो। तीन बार ऐसा ही करें, यह नसीब हो तो कमाल-ए-सआदत है, यकीनन तुम्हारे महबूब व मौला मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने इसे बोसा दिया और रू-ए-अक़दस इस पर रखा है। ज़हे खुशनसीबी कि तुम्हारा मुँह वहाँ तक पहुँचे! और हुजूम के सबब न हो सके तो न दूसरों को ईज़ा (तकलीफ़) दें और न खुद दबें-कुचलें, बल्कि इसके बदले हाथ से, और हाथ न पहुँचे तो लकड़ी से संग-ए-अस्वद मुबारक को छूकर उसे चूम लें, और यह भी न हो सके तो हाथों से उसकी तरफ़ इशारा करके उसे बोसा दें। मुहम्मद रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के मुँह रखने की जगह पर निगाह पड़ रही है, यही क्या कम है!

(५) अल्लाहुम्मा ईमानन बिका वत्तिबाअन लिसुन्नति नबिय्यिका मुहम्मदिन सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम - २

हाशिये का नोट १: ऐ अल्लाह! मैं तेरे मुबारक व मोअज़्ज़ज़ घर का तवाफ़ करने लगा हूँ इसे मेरे लिए आसान फ़रमा और इसे मेरी तरफ़ से क़बूल फ़रमा। (त)

हाशिये का नोट २: अल्लाह के नाम से, तमाम हम्द अल्लाह के लिए, अल्लाह सबसे बड़ा है और सलात व सलाम हो अल्लाह के रसूल पर। (त)

हाशिये का नोट ३: इलाही! तुझ पर ईमान ला कर और तेरे नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की पैरवी में यह तवाफ़ करता हूँ। १२ मिन्हु (म)

---

1. मनसक मुतवस्सित मअ इरशाद-उस-सारी, फ़स्ल फ़ी सफ़त-इश-शुरू फ़ित-तवाफ़, दार-उल-किताब-अल-अरबी, बैरूत, पृ. ८९।
2. अल-अज़्कार, इमाम नववी, फ़स्ल फ़ी अज़्कार-इत-तवाफ़, दार-उल-किताब-अल-अरबी, बैरूत, पृ. १६७।

पृष्ठ ८३६ का ७४६

نہ ہو، ناواقف آدمی اندھے کی طرح کام کرتا ہے اور جو سمجھ لیا وہ اکھیارا ہے۔ اب اپنے رب عزوجل کا نام پاک لے کر طواف کیجئے۔

(۱) شروع طواف سے پہلے مرد اضطباع کرے یعنی چادر کی سیدھی جانب دہنی بغل کے نیچے سے نکالے کہ سیدھا شانہ کھلا رہے اور دونوں آنچل بائیں کندھے پر ڈال لے۔

(۲) اب رو بہ کعبہ حجر اسود کی دہنی طرف رکن یمانی کی جانب سنگ اسود کے قریب یوں کھڑے ہو کہ تمام پتھر اپنے سیدھے ہاتھ کو رہے۔ پھر طواف کی نیت کرو:

اللھم انی ارید طواف بیتك المحرم فیسرہ لی وتقبلہ منی۔

(۳) اس نیت کے بعد کعبہ کو منہ کیے اپنی دہنی سمت چلو، جب سنگ اسود کے مقابل ہو (اور یہ بات ادنیٰ حرکت میں حاصل ہو جائے گی) کانوں تک ہاتھ اس طرح اٹھاؤ کہ ہتھیلیاں حجر کی طرف رہیں اور کہو:

بسم اللہ والحمد للہ واللہ اکبر و الصلوۃ والسلام علی رسول اللہ ۔1

(۴) میسر ہو سکے تو حجر اسود مطہر پر دونوں ہتھیلیاں اور ان کے بیچ میں منہ رکھ کر یوں بوسہ دو کہ آواز پیدا نہ ہو سکے۔ تین بار ایسا ہی کرو، یہ نصیب ہو تو کمال سعادت ہے، یقینا تمہارے محبوب و مولیٰ محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم نے اسے بوسہ دیا اور روئے اقدس اس پر رکھا ہے زہے خوش نصیبی کہ تمہارا منہ وہاں تک پہنچے، اور ہجوم کے سبب نہ ہو سکے تو نہ اوروں کو ایذا دو اور نہ آپ دبو کچلو، بلکہ اس کے عوض ہاتھ سے اور ہاتھ نہ پہنچے تو لکڑی سے سنگ اسود مبارک چھو کر اسے چوم لو، اور یہ بھی نہ بن پڑے تو ہاتھوں سے اس

کی طرف اشارہ کر کے اسے بوسہ دے، محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کے منہ رکھنے کی جگہ پر نگاہ پڑ رہی ہے یہی کیا کم ہے!

(۵) اللھم ایمانا بک و اتباعا لسنۃ نبیك محمد صلی اللہ تعالی علیہ وسلم 2

عہ ۱: اے اللہ ! میں تیرے مبارک و معزز گھر کا طواف کرنے لگا ہوں اسے میرے لیے آسان فرما اور اسے میری طرف سے قبول فرما۔ (ت)

عہ ۲: اللہ کے نام سے، تمام حمد اللہ کے لیے، اللہ سب سے بڑا ہے اور صلوٰۃ و سلام ہو اللہ کے رسول پر (ت)

عہ ۳: الٰہی تجھ پر ایمان لا کر اور تیرے نبی صلی اللہ تعالی علیہ وسلم کی پیروی کو یہ طواف کرتا ہوں ۱۲ منہ (م)

---

1 منسک متوسط مع ارشاد الساری فصل فی صفۃ الشروع فی الطواف دار الکتاب العربی بیروت ص ۸۹ 2 الاذکار امام نووی فصل فی اذکار الطواف دار الکتاب العربی بیروت ص ۱۶۷

...saying this, proceed towards the Door of the Kaaba. When you have passed the front of the Blessed Stone, straighten up and keep the House of Kaaba on your left side and walk in such a way that you do not cause harm to anyone.

(6) A man should perform Raml, which means walking quickly with short steps while moving the shoulders, like strong and brave people walk. Do not jump or run. Where there is a large crowd and performing Raml causes harm to yourself or others, discontinue Raml for that duration.

(7) Being as close to the House of Kaaba as possible during Tawaf is better, but not so close that your body or clothing touches the wall. If proximity prevents Raml due to a crowd, then staying further away is better.

(8) When you come before the Multazam, then the Iraqi Pillar, then the Mizab al-Rahmah (Spout of Mercy), then the Shami Pillar; these are all places for supplication. Specific prayers for these are mentioned in Jawahir al-Bayan Sharif, but remembering all of them is difficult. Therefore, choose what is better and superior to all prayers based on the true promise of Muhammad, the Messenger of Allah (may Allah bless him and grant him peace): send blessings (Durood) upon your beloved (may Allah bless him and grant him peace) instead of making your own supplications here and at all other places. The Messenger of Allah (may Allah bless him and grant him peace) says:

Idhan yakfi hammaka wa yaghfir laka dhanbaka[1]—Doing so, Allah Almighty will resolve all your affairs and forgive your sins.

(9) Do not stop for prayers and blessings during Tawaf; instead, recite them while walking.

(10) Do not recite prayers and blessings loudly as the Mutawwifs (guides) lead them, but rather softly so that only your own ears can hear the sound.

(11) When you reach the Yamani Pillar, touch it with both hands or the right hand for blessing, not just the left hand. If you wish, you may kiss it as well. If that's not possible, do not touch it with a stick or kiss your hand after pointing towards it.

(12) When you move past it, this is the Mustajab (place of acceptance) where seventy thousand angels say 'Ameen' to prayers. Recite the comprehensive prayer there, or simply reciting Durood Sharif with intentions for yourself, all your friends, Muslims, and this humble and lowly person is sufficient.

(13) Now when you reach the [Black] Stone again, this completes one circuit. Perform seven circuits in this manner. However, do not repeat the intention (niyyat) in the remaining circuits as the intention was already made at the beginning. Also, Raml is only in the first three circuits; in the remaining four, walk normally at a slow pace without moving your shoulders.

---

[1] Al-Targhib wa al-Tarhib, Encouragement to Increase Blessings upon the Prophet (may Allah bless him and grant him peace), Mustafa al-Babi Egypt, 2/105

...कहते हुए काबा के द्वार की ओर बढ़ें। जब आप मुबारक पत्थर के सामने से गुजर जाएं तो सीधे हो जाएं और काबा को अपनी बाईं ओर रखते हुए इस तरह चलें कि किसी को तकलीफ न हो।

(६) पुरुष रमल करते हुए चलें, यानी छोटे कदम तेजी से रखते हुए कंधे हिलाकर चलें, जैसे शक्तिशाली और बहादुर लोग चलते हैं। न कूदें और न ही दौड़ें। जहां बहुत भीड़ हो और रमल करने से आपको या दूसरों को तकलीफ हो, वहां उतनी देर के लिए रमल छोड़ दें।

(७) तवाफ में काबा के जितना करीब हों उतना बेहतर है, लेकिन इतना करीब नहीं कि शरीर या कपड़ा दीवार को छुए। अगर नजदीकी के कारण भीड़ की वजह से रमल न हो सके तो दूरी बेहतर है।

(८) जब आप मुल्तज़म, फिर रुक्न-ए-इराक़ी, फिर मीज़ाब-ए-रहमह, फिर रुक्न-ए-शामी के सामने आएं तो ये सब दुआ के स्थान हैं। इनके लिए विशेष दुआएं'जवाहर अल-बयान शरीफ' में वर्णित हैं, लेकिन उन सभी को याद रखना कठिन है। इसलिए वह तरीका अपनाएं जो अल्लाह के रसूल मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के सच्चे वादे के अनुसार सभी दुआओं से बेहतर और श्रेष्ठ है: यहाँ और अन्य सभी स्थानों पर अपनी दुआओं के बदले अपने हबीब (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर दरूद भेजें। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं:

इज़न यक्फ़ी हम्मका व यग़फ़िर लका ज़न्बका[1]—ऐसा करोगे तो अल्लाह ताला तुम्हारे सारे काम बना देगा और तुम्हारे गुनाह माफ कर देगा।

(९) तवाफ में दुआ और दरूद के लिए रुकें नहीं, बल्कि चलते हुए पढ़ें।

(१०) दुआ और दरूद चिल्ला-चिल्लाकर न पढ़ें जैसा कि मुतव्विफ पढ़ाते हैं, बल्कि धीरे से पढ़ें कि केवल आपके कानों तक आवाज आए।

(११) जब रुक्न-ए-यमानी के पास आएं तो बरकत के लिए उसे दोनों हाथों या दाहिने हाथ से छुएं न कि सिर्फ बाएं हाथ से। चाहें तो उसे चूम भी लें। यदि संभव न हो, तो लकड़ी से न छुएं और न ही इशारा करके हाथ चूमना है।

(१२) जब इससे आगे बढ़ें तो यह 'मुस्तजाब' है जहां सत्तर हजार फरिश्ते दुआ पर 'आमीन' कहते हैं। वहां जामे (व्यापक) दुआ पढ़ें, या अपने और सभी मित्रों, मुसलमानों और इस तुच्छ व अपमानित व्यक्ति की नियत से केवल दरूद शरीफ ही पर्याप्त है।

(१३) अब जब दोबारा हज्र (पत्थर) तक आएं तो यह एक चक्कर पूरा हुआ। इसी तरह सात चक्कर लगाएं, लेकिन बाकी चक्करों में वह नियत न करें क्योंकि नियत शुरुआत में हो चुकी है। और रमल केवल पहले तीन चक्करों में है, बाकी चार में कंधे हिलाए बिना सामान्य चाल से चलें।

---

[1] अत-तरग़ीब वत-तरहीब, नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर दरूद की अधिकता का प्रोत्साहन, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, २/१०५

کہتے ہوئے درِ کعبہ تک بڑھو، جب حجر مبارک کے سامنے سے گزر جاؤ سیدھے ہو لو خانہ کعبہ کو اپنے بائیں ہاتھ پر لے کر یوں چلو کہ کسی کو ایذا نہ دو۔

(۶) مرد رمل کرتا چلے یعنی جلد جلد چھوٹے قدم رکھتا شانے ہلاتا جیسے قوی و بہادر لوگ چلتے ہیں، نہ کودتا نہ دوڑتا، جہاں زیادہ ہجوم ہو جائے اور رمل میں اپنی یا غیر کی ایذا ہو اتنی دیر رمل ترک کرو۔

(۷) طواف میں جس قدر خانہ کعبہ سے نزدیک ہو بہتر ہے، مگر نہ اتنے کہ پشت دیوار پر جسم یا کپڑا لگے اور نزدیکی میں کثرتِ ہجوم کے سبب رمل نہ ہوسکے تو دوری بہتر ہے۔

(۸) جب ملتزم، پھر رکن عراقی، پھر میزاب الرحمۃ، پھر رکن شامی کے سامنے آؤ تو یہ سب دعا کے مواقع ہیں ان کے لیے خاص خاص دعائیں کہ جو جواہر البیان شریف میں مذکور ہیں سب کا یاد کرنا دشوار ہے اس سے وہ اختیار کرو جو محمد رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے سچے وعدے سے تمام دعاؤں سے بہتر و افضل ہیں یعنی یہاں اور تمام مواقع میں اپنے لیے دعا کے بدلے اپنے حبیب صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم پر درود بھیجو، رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں:

اِذًا یَکْفِیْ ھَمَّکَ وَیَغْفِرْ لَکَ ذَنْبَکَ ۱۔ ایسا کرے گا تو اللہ تعالیٰ تمھارے سب کام بنا دے گا اور تیرے گناہ معاف فرمادے گا۔

(۹) طواف میں دعا و درود کے لیے رکنا نہیں بلکہ چلتے میں پڑھو۔

(۱۰) دعا و درود چلا چلا کر نہ پڑھو جس طرح مطوف پڑھاتے ہیں بلکہ آہستہ اس قدر کہ اپنے کان تک آواز آئے۔

(۱۱) جب رکنِ یمانی کے پاس آؤ تو اسے دونوں ہاتھ یا دہنے ہاتھ سے تبرکاً چھوؤ، نہ صرف بائیں ہاتھ سے، اور چاہو تو اسے بوسہ بھی دو، اور نہ ہوسکے تو لکڑی سے چھونا یا اشارہ کر کے ہاتھ چومنا نہیں۔

(۱۲) جب اس سے بڑھو تو یہ مستجاب جہاں ستر ہزار فرشتے دعا پر آمین کہیں گے وہی دعائے جامع پڑھئے یا اپنے اور سب احباب و مسلمین اور اس حقیر و ذلیل کی نیت سے صرف درود شریف کافی ہے۔

(۱۳) اب جو دوبارہ حجر تک آئے یہ ایک پھیرا ہوا، یونہی سات پھیرے کرو، مگر باقی پھیروں میں وہ نیت کرنا نہیں کہ نیت تو ابتداء میں ہو چکی، اور رمل صرف اگلے تین پھیروں میں ہے، اور باقی چار میں آہستہ بے جنبش شانہ معمولی چال سے چلو۔

---

۱ الترغیب والترہیب الترغیب فی اکثار الصلوٰۃ علی النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم مصطفیٰ البابی مصر ۱۰۵/۲

Fatawa-e-Razawiyya Volume 10

(14) When the seven rounds (of Tawaf) are completed, kiss the Hajar (Black Stone) again at the end, or employ the same method as before using your hands or a stick. (15) After the Tawaf, come to Maqam-e-Ibrahim and recite the noble verse (1): 'And take the standing-place of Abraham as a place of prayer' [2:125], then perform two Rak'ats of Tawaf which are Wajib (obligatory). Recite 'Qul ya ayyuhal kafirun' and 'Qul huwallahu ahad' in them. Perform them if it is not a Makruh (disliked) time, for example, from the break of dawn until sunrise, or at midday, or after the Asr prayer until sunset. Otherwise, pray them later once the time has passed. After praying these Rak'ats, supplicate. A supplication is mentioned in the Hadith here, the greatness of whose benefits is evident from its words: 'O Allah (2), indeed You know my secrets and my public deeds, so accept my excuse. You know my need, so grant me my request. You know what is in my soul, so forgive me my sins. O Allah, I ask You for faith that directly touches my heart and a true certainty so that I know that nothing will befall me except what You have written for me, and make me satisfied with the livelihood You have apportioned for me, O Most Merciful of the merciful.' (2) It is narrated in the Hadith that Allah, the Mighty and Sublime, says: 'Whoever makes this supplication, I shall forgive their mistakes, remove their grief, relieve them from poverty, and make their trade prosper more than any merchant's; the world shall come to them reluctantly and compelled, even if they do not desire it.' (16) Then go to the Multazam, and near the Hajar (Black Stone), cling to it and place your chest and stomach, and sometimes your right cheek and sometimes your left cheek upon it. Spread both hands high above your head on the wall, or place your right hand towards the door and the left towards the Black Stone, and the supplication here is: (1): 'And make the station of Abraham a place of prayer' (12 Minh [M]). (2): 'O God! You know all that is hidden and manifest of mine, so accept my plea, and my need is known to You, so grant my desire, and You know what is in my heart, so forgive my sins. O God, I ask of You that faith which becomes embedded in my heart, and true certainty so that I know that I will only receive what You have decreed for me, and I am content with the sustenance You have granted me, O Most Merciful of all who show mercy.' (12 Minh [M])

1. Al-Quran 2/125
2. Maslak-e-Mutaqassit with Irshad-us-Sari, Chapter on the Method of Beginning Tawaf, Dar-ul-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 94 Page 748 of 836

(१४) जब सातों चक्कर पूरे हो जाएं तो अंत में फिर हजर (संगे-असवद) को चूमो या वही तरीका अपनाओ जैसे हाथ या लकड़ी से छूना। (१५) तवाफ़ के बाद मकाम-ए-इब्राहिम पर आकर ये आयते करीमा (१) 'वत्तखिज़ू मिम मकामि इब्राहीमा मुसल्ला' पढ़कर दो रकात तवाफ़ की नमाज़ पढ़ो जो वाजिब हैं। इनमें 'कुल या अय्युहल काफ़िरून' और 'कुल हुवल्लाहु अहद' पढ़ो। अगर मकरूह वक्त न हो, जैसे सुबह सादिक से सूरज निकलने तक या दोपहर को या असर की नमाज़ के बाद से सूरज डूबने तक, तो पढ़ो। वरना वक्त निकल जाने के बाद पढ़ो। ये रकातें पढ़कर दुआ मांगो। यहाँ हदीस में एक दुआ बताई गई है जिसकी खूबियों की अजमत इसी से ज़ाहिर है: 'अल्लाहुम्मा (२) इन्नाका तालमु सिर्री व अलानियती फक्बल माज़िरती व तालमु हाजती फ़ा-अतिनी सुअली व तालमु मा फ़ी नफ़्सी फ़ाग़फ़िर ली ज़ुनूबी, अल्लाहुम्मा इन्नी अस्अलुका ईमानाय-युबाशिरु कल्बी व यकीनन सादिकन हत्ता आलमा अन्नहू ला युसीबुनी इल्ला मा कतब्ता ली व अरज़िनी मिनल मईशति बिमा कसमता ली या अर्हमर-राहिमीन।' (२) हदीस में है कि अल्लाह तआला फरमाता है कि जो शख्स ये दुआ करेगा, मैं उसकी गलतियाँ माफ कर दूँगा, उसका गम दूर कर दूँगा, उसे मोहताजी (गरीबी) से निकालूँगा, हर ताजिर (व्यापारी) से बढ़कर उसकी तिजारत रखूँगा, और दुनिया लाचार होकर उसके पास आएगी चाहे वह उसे न चाहे। (१६) फिर मुल्तज़म पर जाओ और हजर (संगे-असवद) के करीब उससे लिपटो और अपना सीना और पेट और कभी दायाँ गाल और कभी बायाँ गाल उस पर रखो। दोनों हाथ सर से ऊँचे करके दीवार पर फैलाओ, या दायाँ हाथ दरवाज़े की तरफ और बायाँ संगे-असवद की तरफ। और यहाँ की दुआ ये है: (१): 'और मकाम-ए-इब्राहिम को नमाज़ की जगह बनाओ' (१२ मिन्ह [म])। (२): 'ऐ अल्लाह! तू मेरा छुपा और ज़ाहिर सब जानता है, तो मेरा उज़्र (बहाना/मजबूरी) कबूल फरमा और मेरी हाजत तुझे मालूम है, तो मेरी मुराद पूरी कर और जो मेरे दिल में है तू जानता है, तो मेरे गुनाह बख्श दे। ऐ अल्लाह! मैं तुझसे वो ईमान मांगता हूँ जो मेरे दिल में रच-बस जाए, और सच्चा यक़ीन कि मैं जानूँ कि मुझे वही मिलेगा जो तूने मेरे लिए लिख दिया है और मैं उस रोज़ी पर राज़ी हूँ जो तूने मुझे नसीब की है, ऐ सबसे बढ़कर मेहरबान।' (१२ मिन्ह [म])

1. अल-कुरान १२५/२
2. मसलक-ए-मुतक़स्सित मअ इरशाद-उस-सारी, तवाफ़ शुरू करने के तरीके का बयान, दारुल किताब अल-अरबी, बेरूत, पेज ९४ पृष्ठ ७४८ / ८३६

(۱۴) جب ساتوں پھیرے ہو جائیں آخر میں پھر حجر کو بوسہ دو یا وہی طریقے ہاتھ یا لکڑی کے برتو، (۱۵) بعد طواف مقام ابراہیم میں آکر آیہ کریمہ ع۱ وَاتَّخِذُوا مِنْ مَّقَامِ اِبْرٰهٖمَ مُصَلًّى ط ۱ پڑھ کر دو رکعت طواف کہ واجب ہیں قُلْ یٰٓاَیُّهَا الْكٰفِرُوْنَ اور قُلْ هُوَ اللّٰهُ سے پڑھو، اگر وقت کراہت مثلاً طلوع صبح سے بلندی آفتاب تک یا دو پہر یا نماز عصر کے بعد غروب تک نہ ہو ورنہ وقت نکل جانے پر بعد کو پڑھو، یہ رکعتیں پڑھ کر دعا مانگو، یہاں حدیث میں ایک دعا ارشاد ہوئی جس کے فائدوں کی عظمت اس سے کہنا ہی چاہتی ہے: اَللّٰهُمَّ ع۲ اِنَّكَ تَعْلَمُ سِرِّيْ وَعَلَانِيَتِيْ فَاقْبَلْ مَعْذِرَتِيْ وَتَعْلَمُ حَاجَتِيْ فَأَعْطِنِيْ سُؤْلِيْ وَتَعْلَمُ مَافِيْ نَفْسِيْ فَاغْفِرْ لِيْ ذُنُوْبِيْ اَللّٰهُمَّ اِنِّی اَسْئَلُكَ اِيْمَانًا يُبَاشِرُ قَلْبِيْ وَيَقِيْنًا صَادِقًا حَتّٰی اَعْلَمَ اَنَّه لَا يُصِيْبُنِيْ اِلَّا مَا كَتَبْتَ لِيْ وَارْضِنِیْ مِنَ الْمَعِيْشَةِ بِمَا قَسَمْتَ لِيْ يَا اَرْحَمَ الرّٰحِمِيْنَ ط ۲ حدیث میں ہے اللہ تعالٰی عزوجل فرماتا ہے جو یہ دعا کرے گا اس کی خطا بخش دوں گا، غم دور کروں گا، محتاجی سے نکالوں گا، ہر تاجر سے بڑھ کر اس کی تجارت رکھوں گا، دنیا ناچار و مجبور اس کے پاس آئے گی گو وہ اسے نہ چاہے۔ (۱۶) پھر ملتزم پر جاؤ اور قریب حجر اس سے لپٹو اور اپنا سینہ اور پیٹ اور کبھی دہنا رخسارہ کبھی بایاں رخسارہ اس پر رکھو اور دونوں ہاتھ سر سے اونچے کرکے دیوار پر پھیلاؤ، یا داہنا ہاتھ دروازے اور بایاں سنگ اسود کی طرف، اور یہاں کی دعا یہ ہے: ع۱: اور مقام ابراہیم کو نماز کی جگہ بناؤ ۱۲ منہ (م) ع۲: الٰہی! تو میرا چھپا اور ظاہر سب جانتا ہے، تو میرا عذر قبول فرما اور میری حاجت تجھے معلوم ہے، تو میری مراد دے اور جو میرے دل میں ہے تو جانتا ہے، تو میرے گناہ بخش دے، الٰہی امیں تجھ سے مانگتا ہوں وہ ایمان جو میرے دل میں پیوست ہو جائے، اور سچا یقین کہ میں جانوں کہ مجھے وہی ملے گا جو

تو نے میرے لیے لکھ دیا ہے اور میں اس معاش پر راضی ہوں تو نے مجھے نصیب کی ہے اے سب مہربانوں سے بڑھ کر مہربان ۱۲ منہ (م)

1 القرآن ۱۲۵/۲ 2 مسلک متقسط مع ارشاد الساری فصل فی صفۃ الشروع فی الطواف دار الکتاب العربی بیروت ص۹۴ Page 748 of 836

YA WAJIDU [1] YA MAJIDU LA TUZIL 'ANNI NI'MATAN AN'AMTA BIHA 'ALAYYA [1] (O All-Finding! O All-Glorious! Do not remove from me any blessing that You have bestowed upon me.)

It is stated in the Hadith: "Whenever I wish, I see Jibril (peace be upon him) clinging to the Multazam and reciting this supplication."

(17) Then come to Zamzam and, if possible, draw a bucket yourself, otherwise take it from those filling it. Facing the Kaaba, drink to your fill in three breaths. Start with 'Bismillah' and end with 'Alhamdulillah' each time. Pour the remaining water over your body and supplicate while drinking, for it is accepted. The Messenger of Allah (peace and blessings be upon him) said: "Zamzam is for whatever purpose it is drunk." Recite the comprehensive supplication here. You will have the opportunity to drink repeatedly during your stay in Makkah Al-Mukarramah. Drink it to be saved from the thirst of the Day of Judgment, sometimes for protection from the punishment of the grave, sometimes for the love of the Messenger of Allah (peace and blessings be upon him), sometimes for the expansion of sustenance, sometimes for healing from illnesses, and sometimes for the attainment of knowledge and other specific purposes.

(18) When you drink there, drink to your fill. It is in the Hadith: "The difference between us and the hypocrites is that they do not drink Zamzam to their fill." [2]

(19) Also look into the Well of Zamzam, for according to the Hadith, it is a repellent of hypocrisy. [3]

(20) Now, if there is no excuse such as fatigue etc., then immediately, otherwise after taking rest, come again to the Hajr-e-Aswad for Sa'i between Safa and Marwa. Kiss it as before after saying Takbir etc., and if that is not possible, face it and immediately head towards Safa through the Gate of Safa (Bab-e-Safa). Step out with your left foot first and put your right foot into the shoe first; always observe this etiquette when leaving any mosque.

(21) Engaged in Dhikr and Salawat, climb the stairs of Safa enough that the Kaaba Al-Mu'azzamah becomes visible; this is possible from the very first step. Then, facing the Kaaba, raise both hands to the shoulders as in prayer and engage in Tasbeeh, Tahleel, Salawat, and supplication for a long time, for it is a place of acceptance.

Recite the comprehensive supplication here as well, then descend while performing Dhikr.

Note: O Powerful One! O Glorious One! Do not take away from me the blessing that You have granted me. Amin. (M)

---

1. Maslak al-Mutaqassit with Irshad al-Sari, Chapter on the Description of Starting Tawaf, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 94.
2. Maslak al-Mutaqassit with Irshad al-Sari, Chapter on the Description of Starting Tawaf, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 95.
3. Maslak al-Mutaqassit with Irshad al-Sari, Chapter on the Recommendation of Drinking Abundantly from Zamzam Water, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 329.

या वाजिदु [1] या माजिदु ला तुज़िल 'अन्नी नि'मतन अन्'अम्ता बिहा 'अलय्या [1] (ऐ पाने वाले! ऐ बुज़ुर्ग! मुझसे वह नेमत न छीन जो तूने मुझे अता की है।)

हदीस में फ़रमाया गया: "जब मैं चाहता हूँ, जिब्रील (अ़लैहिस्सलाम) को देखता हूँ कि मुल्तज़म से लिपटे हुए यह दुआ कर रहे हैं।"

(17) फिर ज़मज़म पर आओ और हो सके तो ख़ुद एक डोल खींचो, वरना भरने वालों से ले लो और का़बा की तरफ़ मुँह करके तीन साँसों में पेट भर के जितना पिया जाए पियो, हर बार 'बिस्मिल्लाह' से शुरू और 'अलहम्दुलिल्लाह' पर ख़त्म करो। बाक़ी पानी बदन पर डाल लो और पीते वक़्त दुआ करो क्योंकि वह क़ुबूल होती है। रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: "ज़मज़म जिस मक़सद के लिए पिया जाए, उसी के लिए है।" यहाँ वही जामेअ़ (व्यापक) दुआ पढ़ो। मक्का मुअ़ज़्ज़मा में मौजूदगी तक बार-बार पीना नसीब होगा। क़यामत की प्यास से बचने के लिए पियो, कभी क़ब्र के अ़ज़ाब से हिफ़ाज़त के लिए, कभी रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम) की मोहब्बत के लिए, कभी रिज़्क़ (रोज़ी) की वुसअ़त (विस्तार) के लिए, कभी बीमारियों से शिफ़ा के लिए, कभी इल्म हासिल करने और अन्य विशेष मक़ासदों के लिए पियो।

(18) वहाँ जब पियो तो खूब पेट भर कर पियो। हदीस में है: "हममें और मुनाफ़िक़ों (पाखंडियों) में यह फ़र्क़ है कि वे ज़मज़म को पेट भर कर नहीं पीते।" [2]

(19) ज़मज़म के कुएँ के अंदर भी नज़र करो क्योंकि हदीस के अनुसार यह निफ़ाक़ (पाखंड) को दूर करने वाला है। [3]

(20) अब अगर थकान आदि का कोई उ़ज़्र (बहाना) न हो तो अभी, वरना आराम करके सफ़ा और मरवा के दरमियान सई के लिए फिर ह़जरे अस्वाद के पास आओ और उसी तरह तकबीर आदि कहकर चूमो, और अगर मुमकिन न हो तो उसकी तरफ़ मुँह करके फ़ौरन बाब-ए-सफ़ा से सफ़ा की तरफ़ रवाना हो। दरवाज़े से पहले बायाँ पाँव निकालो और दायाँ पहले जूते में डालो, और यह अदब (शिष्टाचार) हर मस्जिद से बाहर आते समय हमेशा ध्यान में रखो।

(21) ज़िक्र और दरूद में मशगूल होकर सफ़ा की सीढ़ियों पर इतना चढ़ो कि का़बा मुअ़ज़्ज़मा नज़र आए, और यह बात पहली ही सीढ़ी से हासिल हो जाती है। फिर का़बा की तरफ़ रुख़ करके दोनों

हाथ दुआ की तरह पहले कंधों तक उठाओ और देर तक तस्बीह, तहलील, दरूद और दुआ करो क्योंकि यह क़ुबूलियत का स्थान है। यहाँ भी जामेअ़ दुआ पढ़ो, फिर ज़िक्र करते हुए उतरो।

नोट: ऐ क़ुद्दरत वाले! ऐ इज़्ज़त वाले! मुझसे वह नेमत ज़ाएल (ख़त्म) न कर जो तूने मुझे बख़्शी है। आमीन। (म)

---

1. मलक अल-मुतक़स्सित मअ़ इर्शाद अल-सारी, फ़स्ल फ़ी सफ़त अल-शुरूअ़ फ़ी अल-तवाफ़, दार अल-किताब अल-अ़रबी, बैरुत, पृ. 94.
2. मलक अल-मुतक़स्सित मअ़ इर्शाद अल-सारी, फ़स्ल फ़ी सफ़त अल-शुरूअ़ फ़ी अल-तवाफ़, दार अल-किताब अल-अ़रबी, बैरुत, पृ. 95.
3. मलक अल-मुतक़स्सित मअ़ इर्शाद अल-सारी, फ़स्ल यस्तहि़ब्ब अल-इक्सार मिन शुरब मा-ए-ज़मज़म, दार अल-किताब अल-अ़बी, बैरुत, पृ. 329.

یَا وَاجِدُ ۱- یَا مَاجِدُ لَا تُزِلْ عَنِّي نِعْمَةً اَنْعَمْتَ بِهَا عَلَيَّ ۱- حدیث میں فرمایا : میں جب چاہتا ہوں جبریل کو دیکھتا ہوں کہ ملتزم سے لپٹے ہوئے یہ دعا کر رہے ہیں۔

(۱۷) پھر زمزم پر آؤ اور ہو سکے تو خواہ ایک ڈول کھینچو ورنہ بھرنے والوں سے لے لو اور کعبہ کو منہ کرکے تین سانسوں میں پیٹ بھر کے جتنا پیا جائے پیو، ہر بار بسم اللہ سے شروع اور الحمد للہ پر ختم، باقی بدن پر ڈال لو اور پیتے وقت دعا کرو کہ قبول ہے، رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: زمزم جس مراد سے پیا جائے اسی کے لیے ہے، یہاں وہی دعائے جامع پڑھو اور حاضریِ مکہ معظمہ تک پینا تو بار بار نصیب ہوگا، قیامت کی پیاس سے بچنے کے لیے پیو، کبھی عذاب قبر سے محفوظی کو، کبھی محبت رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کو، کبھی وسعت رزق، کبھی شفائے امراض، کبھی حصولِ علم و غیر ہا خاص مرادوں کے لیے پیو۔

(۱۸) وہاں جب پیو خوب پیٹ بھر کر پیو، حدیث میں ہے: ہم میں اور منافقوں میں یہ فرق ہے کہ وہ زمزم کو کھ بھر کر نہیں پیتے۔ 2

(۱۹) چاہِ زمزم کے اندر بھی نظر کرو کہ بحکم حدیث دافع نفاق ہے۔ 3

(۲۰) اب اگر کوئی عذر تھکان وغیرہ کا نہ ہو تو ابھی ورنہ آرام لے کر صفا و مروہ میں سعی کے لیے پھر حجر اسود کے پاس آؤ اور اسی طرح تکبیر وغیرہ کہہ کر چومو ، اور نہ ہو سکے تو اس کی طرف منہ کرکے فوراً باب صفا سے جانب صفا روانہ ہو ، دروازے سے پہلے بایاں پاؤں نکالو اور دہنا پہلے جوتے میں ڈالو، اور یہ ادب ہر مسجد سے باہر آتے ہمیشہ ملحوظ رکھو۔

(۲۱) ذکر ودرود میں مشغول صفا کی سیڑھیوں پر اتنا چڑھو کہ کعبہ معظمہ نظر آئے اور یہ بات پہلی ہی سیڑھی سے حاصل ہے پھر رخ کعبہ ہو کر دونوں ہاتھ دعا کی طرح پہلے شانوں تک اٹھاؤ اور دیر تک تسبیح و تہلیل و درود و دعا کرو کہ محلِ اجابت ہے، یہاں بھی دعائے جامع پڑھو، پھر اتر کر ذکر کرو

عه: اے قدرت والے اے عزت والے مجھ سے زائل نہ کر جو نعمت تو نے مجھے بخشی ہے ۲ امنہ (م)

---

1 مسلک متقسط مع ارشاد الساری فصل فی صفۃ الشروع فی الطواف دار الکتاب العربی بیروت ص ۹۴ 2 مسلک متقسط مع ارشاد الساری فصل فی صفۃ الشروع فی الطواف دار الکتاب العربی بیروت ص ۹۵ 3 مسلک متقسط مع ارشاد الساری فصل یستحب الاکثار من شرب ماء زمزم دار الکتاب العربی بیروت ص ۳۲۹

Fatawa Rizvia, Volume 10

Keep yourself busy in Durood and proceed towards Marwah. (22) When the first milestone comes, men should start running (but not excessively and without hurting anyone) until they pass the second milestone. During this interval, everyone should pray with full effort. The prayer here is: Rabbi-ghfir warham wa anta-al-a'azzu-al-akram[1]. (O my Lord, forgive and have mercy, for You are the Most Mighty, the Most Generous.) (23) After leaving the second milestone, slow down again until you reach Marwah. Standing near or climbing the first step provides the reward of ascending Marwah. Although the Kaaba is not visible due to the buildings, face the direction of the Kaaba and do as you did at Safa. This completes one circuit. (24) Then go back to Safa and return, until the seventh circuit ends at Marwah. Do the same in every circuit; this is called Sa'i. It should be clear that Umrah is the name for these acts of Tawaf and Sa'i alone. For those performing Qiran or Tamattu, this was their Umrah; and for those performing Ifrad, this was Tawaf al-Qudum, meaning the salute of attendance at the court. (25) A Qarin (one performing Qiran) should perform another Tawaf and Sa'i with the intention of Tawaf al-Qudum after this. (26) The Qarin and Mufrid (who performed Ifrad) should stay in Makkah with their Ihram while reciting the Talbiyah. Their Talbiyah will end at the time of throwing stones at the Jamrah on the 10th (of Dhu al-Hijjah). Only then will they leave Ihram, the details of which will follow, Insha Allah. However, the Mutamatti (who performed Tamattu) and the Mu'tamir (who is performing only Umrah) should stop reciting Talbiyah as soon as they take the first kiss of the Black Stone (Hajar al-Aswad) at the start of the Tawaf of the Great Kaaba. After the mentioned Tawaf and Sa'i, they should perform Halq (shave the entire head for men) or Taqsir (trimming hair for men and women) and come out of Ihram[2]. Then, if the Mutamatti wishes, he can remain without Ihram until the 8th of Dhu al-Hijjah, but it is better to put on the Ihram for Hajj early, provided he does not feel the days are too many.

Note 1: O my Lord, forgive and have mercy, for You are the Most Mighty, the Most Generous. 12 (M) Note 2: Sometimes, animals for sacrifice are taken along to Mina while in Ihram; this is called Suq al-Hady. If a Mutamatti has put on such an Ihram, then it is not permissible for him to open the Ihram after Umrah. Instead, he must remain in Ihram like a Qarin, reciting Talbiyah, until he throws stones on the 10th and then stops the Talbiyah. After the sacrifice, he should perform Halq or Taqsir and then come out of Ihram. 12 Minhu (M)

[1] Maslak-e-Munqasit with Irshad-us-Sari, Chapter of Sa'i between Safa and Marwah, Dar-ul-Kitab-ul-Arabi, Beirut, p. 117.

दुरूद में मसरूफ़ रहें और मरवाह की तरफ़ चलें। (22) जब पहला मील आए तो मर्द दौड़ना शुरू करें (लेकिन हद से ज़्यादा नहीं और न ही किसी को तकलीफ़ पहुँचाते हुए) यहाँ तक कि दूसरे मील से बाहर निकल जाएँ, इस दौरान पूरी कोशिश के साथ दुआ करें। यहाँ की दुआ यह है: रब्बि-ग़फ़िर वरहम व अन्ता-अल-अअज़्ज़ु-अल-अकरम १। (ऐ मेरे रब, मुझे बख़्श दे और रहम फ़रमा, तू ही सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाला और सबसे ज़्यादा करम वाला है।) (23) दूसरे मील से निकलकर फिर आहिस्ता हो जाएँ यहाँ तक कि मरवाह पहुँच जाएँ, यहाँ पहली सीढ़ी पर चढ़ने या उसके करीब खड़े होने से मरवाह पर चढ़ने का सवाब मिल जाता है। हालाँकि इमारतें बन जाने की वजह से अब काबा नज़र नहीं आता, फिर भी काबे की तरफ़ रुख़ करके वैसे ही करें जैसा सफ़ा पर किया था, यह एक चक्कर हुआ। (24) फिर सफ़ा की तरफ़ जाएँ और वापस आएँ, यहाँ तक कि सातवाँ चक्कर मरवाह पर ख़त्म हो, हर चक्कर में इसी तरह करें, इसे 'सई' कहते हैं। यह साफ़ हो कि उमराह सिर्फ़ इन्हीं आमाल तवाफ़ और सई का नाम है। किरान और तमत्तु करने वालों के लिए भी यही उमराह हो गया और इफ़्राद वालों के लिए यह 'तवाफ़-ए-कुदूम' हुआ यानी दरबार की हाज़िरी का सलामी। (25) कारिन यानी जिसने किरान किया है, वह इसके बाद तवाफ़-ए-कुदूम की नीयत से एक तवाफ़ और सई और करे। (26) कारिन और मुफ़रिद जिन्होंने इफ़्राद किया था, वे लब्बैक कहते हुए एहराम के साथ मक्का में ठहरें, उनकी लब्बैक दस तारीख़ को रमी-ए-जमरह के वक़्त ख़त्म होगी, तभी वे एहराम से निकलेंगे जिसका ज़िक्र इंशा अल्लाह आगे आएगा। मगर मुतमत्ति जिसने तमत्तु किया था और मोतमिर यानी सिर्फ़ उमराह करने वाला, काबा-ए-मुअज़्ज़मा का तवाफ़ शुरू करते हुए संग-ए-अस्वद शरीफ़ का पहला बोसा लेते ही लब्बैक कहना छोड़ दें और मज़कूरा तवाफ़ व सई के बाद हल्क़ करें यानी मर्द पूरा सर मुँड़वा दें या तक़सीर यानी मर्द और औरत बाल कटवाएँ और एहराम[2] से बाहर आ जाएँ। फिर मुतमत्ति चाहे तो आठ ज़िलहिज्जा तक बिना एहराम के रहे, लेकिन अफ़ज़ल यह है कि जल्द ही हज का एहराम बाँध ले, अगर यह ख़्याल न हो कि दिन ज़्यादा हैं।

नोट १: ऐ मेरे रब बख़्श दे और रहम फ़रमा, तू ही सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाला और सबसे बढ़कर करम वाला है। १२ (म) नोट २: कभी एहराम के साथ ही मिना में कुर्बानी के लिए जानवर साथ ले जाते हैं, इसे 'सूक़ुल हदी' कहते हैं। अगर किसी मुतमत्ति ने ऐसा एहराम बाँधा तो अब उमराह के बाद एहराम खोलना जाइज़ नहीं होगा, बल्कि उसे कारिन की तरह एहराम में रहना होगा और लब्बैक कहता रहे

यहाँ तक कि दस तारीख़ को रमी के साथ लब्बैक छोड़े। फिर कुर्बानी के बाद हल्क़ या तक़सीर करके एहराम से बाहर आए। १२ मिन्हु (म)

1. मस्लक-ए-मुनक़सित मअ इरशाद-उस-सारी, बाब-उस-सई बैनस सफ़ा वल मरवाह, दारुल किताबुल अरबी बैरूत, सफ़ा ११७।

पेज 750 / 836

درود میں مشغول مروہ کو چلو۔ (۲۲) جب پہلا میل آئے مرد دوڑنا شروع کریں (مگر نہ حد سے زائد نہ کسی کو ایذا دیتے) یہاں تک کہ دوسرے میل سے نکل جائیں، اس درمیان میں سب دعا بہ کوشش تمام کرو۔ یہاں کی دعا یہ ہے : رَبِّ اغْفِرْ لِي وَارْحَمْ وَأَنْتَ الْأَعَزُّ الْأَكْرَمُ ۱۔ (۲۳) دوسرے میل سے نکل کر پھر آہستہ ہو لو یہاں تک کہ مروہ پہنچو، یہاں پہلی سیڑھی چڑھنے بلکہ اس کے قریب کھڑے ہونے سے مروہ پر صعود مل جاتا ہے ، یہاں اگر چہ عمارتیں بن جانے سے کعبہ نظر نہیں آتا مگر روبہ کعبہ ہو کر جیسا صفا پر کیا تھا کرو، یہ ایک پھیرا ہوا۔ (۲۴) پھر صفا کو جاؤ پھر آؤ، یہاں تک کہ ساتواں پھیرا مروہ پر ختم ہو، ہر پھیرے میں اسی طرح کریں، اس کا نام سعی ہے۔ واضح ہو کہ عمرہ صرف انہی افعال طواف و سعی کا نام ہے ، قران و تمتع والے کے لیے بھی یہی عمرہ ہو گیا اور افراد والے کے لیے یہ طواف قدوم ہوا یعنی حاضری دربار کا مجرا۔ (۲۵) قران یعنی جس نے قران کیا ہے اس کے بعد طواف قدوم کی نیت سے ایک طواف و سعی اور بجا لائے۔ (۲۶) قارن اور مفرد جن نے افراد کیا تھا لبیک کہتے ہوئے احرام کے ساتھ مکہ میں ٹھہریں، ان کی لبیک دسویں تاریخ رمی جمرہ کے وقت ختم ہو گی، جبھی احرام سے نکلیں گے جس کا ذکر ان شاء اللہ تعالیٰ آتا ہے ، مگر متمتع جس نے تمتع کیا تھا وہ اور معتمر یعنی نرا عمرہ کرنے والا شروع طواف کعبہ معظمہ سے سنگ اسود شریف کا پہلا بوسہ لیتے ہی لبیک چھوڑ دیں اور طواف و سعی مذکور کے بعد حلق کریں یعنی مرد سارا سر منڈا دیں یا تقصیر یعنی مرد و عورت بال کتروائیں اور احرام عہ۲ سے باہر آئیں، پھر متمتع چاہے تو آٹھویں ذی الحجہ تک بے احرام رہے ، مگر افضل یہ ہے کہ جلد حج کا احرام باندھ لے ، اگر یہ خیال نہ ہو کہ دن زیادہ ہیں

یہ عہ ۱: اے میرے رب بخش دے اور رحم فرما نا تو ہی سب سے زیادہ عزت والا سب سے بڑھ

کر کرم والا ۱۲ (م) عہ ۲ : کبھی احرام کے ساتھ ہی منیٰ میں قربانی کے لیے جانور ہمراہ لیتے ہیں اسے سوق ہدی کہتے ہیں، اگر کسی متمتع نے ایسا احرام باندھا تو اب عمرہ کے بعد احرام کھولنا جائز ہو گا بلکہ قارن کی طرح احرام میں رہے اور لبیک کہہ کر یہاں تک کہ دسویں کو رمی کے ساتھ لبیک چھوڑے، پھر قربانی کے بعد حلق یا تقصیر کر کے احرام سے باہر آئے ۱۲ منہ (م)

۱ مسلک منقسط مع ارشاد الساری باب السعی بین الصفا والمروۃ دار الکتاب العربی بیروت ص ۱۱۷

Fatawa Ridawiyya Volume 10

...so it doesn't get stuck in the feet.

Caution: Idtiba' (placing the cloak under the right arm) and Raml (brisk walking) in Tawaf al-Qudum, and Sa'i between Safa and Marwa after it, are not mandatory. However, if one does not perform them now, then during Tawaf al-Ziyarah—which is the obligatory (Fard) Tawaf of Hajj, the mention of which will follow, God willing—all these actions must be performed. At that time, it is very crowded; it is quite possible that Raml during Tawaf and running during Sa'i might not be possible. If performed now, they will not be needed during that Tawaf. Therefore, we have included them absolutely in the procedure.

(27) The Mufrid and Qarin pilgrims complete the Raml and Sa'i of Hajj during Tawaf al-Qudum. However, the Tawaf and Sa'i performed by a Mutamatti' were for Umrah; the Raml and Sa'i for Hajj were not fulfilled by them. Since Tawaf al-Qudum is not applicable to a Mutamatti' so that they could finish these matters like a Qarin, if they wish to finish them beforehand, they should perform Raml and Sa'i in an optional (Nafl) Tawaf after donning the Ihram for Hajj. Then they will not need to do them during Tawaf al-Ziyarah.

(28) Now, all these pilgrims—be they Qarin, Mutamatti', or Mufrid—who are waiting in Makkah al-Mukarramah until the 8th (of Dhu al-Hijjah) to depart for Mina, should perform as many simple Tawafs as possible during their stay, without Idtiba', Raml, or Sa'i. For outsiders, this is the best form of worship. After every seven circuits (shawt), they should pray two rak'ahs at Maqam-e-Ibrahim (peace be upon him).

(29) Now, whether returning from Mina or whenever during the night your eyes fall upon the Exalted Kaaba, say 'La ilaha illallahu wallahu akbar' three times each, send salutations (Durood) upon the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), and pray, for this is a time for the acceptance of prayers.

(30) Although the Tawaf may be optional (Nafl), the following acts are forbidden (Haram) during it: Performing Tawaf without Wudu (ablution); exposing one-fourth of any body part that is mandatory to cover (Satr), such as the ear of a free woman; performing Tawaf on a mount, in someone's lap, or on shoulders without a valid excuse; sliding on the ground while sitting or walking on knees without a valid excuse; performing Tawaf in reverse with the Kaaba on one's right side; passing through the Hateem during Tawaf; and performing fewer than seven circuits.

(31) The following acts are disliked (Makruh) during Tawaf: Engaging in idle talk; selling or buying; reciting any poetry other than praise of Allah (Hamd), the Prophet (Na'at), or the saints (Manqabat); reciting Dhikr, supplications, Quranic verses, or any speech in a loud voice; performing Tawaf in impure clothes; omitting Raml, Idtiba', or kissing the Black Stone (Hajar al-Aswad) where they are commanded; keeping a long interval between the circuits of Tawaf—meaning performing some circuits then waiting for a long time or engaging in other work, and completing the remaining circuits later. However, if Wudu is lost, one should go and redo it; or if a congregational prayer begins and one has not yet prayed, they should join it. One can even leave Tawaf to join a funeral prayer (Janazah) and then resume from where they left off.

फतवा रज़विया जिल्द दसवाँ

...ताकि पैरों में न फंस जाए।

चेतावनी: तवाफ़-ए-क़ुदूम में इज़्तिबा' (चादर को दाहिनी बगल के नीचे से निकालना) और रमल (तेज़ चलना) और उसके बाद सफ़ा व मरवा में सई ज़रूर नहीं है, मगर अब नहीं करेगा तो तवाफ़-ए-ज़ियारत में, जो हज का तवाफ़ फ़र्ज़ है जिसका ज़िक्र इंशाअल्लाह आएगा, ये सब काम करने होंगे, और उस वक़्त हुजूम (भीड़) बहुत होता है, अजब नहीं कि तवाफ़ में रमल और मस'ई (सई की जगह) में दौड़ना न हो सके और इस वक़्त हो चुका तो तवाफ़ में उनकी हाजत (ज़रूरत) न होगी, लिहाज़ा हमने उनको मुतलक़न (पूर्ण रूप से) तरकीब में दाखिल कर दिया।

(२७) मुफ़रिद और क़ारिन तो हज के रमल और सई से तवाफ़-ए-क़ुदूम में फ़ारिग हो लिए, मगर मुतमत्ति' ने जो तवाफ़ और सई किए वो उमरा के थे, हज के रमल और सई उससे अदा न हुए और उस पर तवाफ़-ए-क़ुदूम है नहीं कि क़ारिन की तरह इसमें ये उमूर (काम) करके फ़रागत (छुट्टी) पा ले, लिहाज़ा अगर वो भी पहले से फ़ारिग हो लेना चाहे तो जब हज का एहराम बाँधेगा उसके बाद एक नफ़्ल तवाफ़ में रमल और सई करे, अब उसे तवाफ़-ए-ज़ियारत में उनकी हाजत न होगी।

(२८) अब ये सब हुज्जाज (हाजी), क़ारिन, मुतमत्ति', मुफ़रिद, कोई हो, कि मिना जाने के लिए मक्का मुअज़्ज़मा में आठवीं तारीख़ का इंतिज़ार कर रहे हैं, अयाम-ए-इक़ामत (ठहरने के दिनों) में जिस क़दर हो सके निरा (सिर्फ़) तवाफ़ बग़ैर इज़्तिबा' व रमल व सई करते रहें, बाहर वालों के लिए ये सब से बेहतर इबादत है और हर सात फेरों पर मक़ाम-ए-इब्राहीम अलैहिस्सलाम में दो रकअत पढ़ें।

(२९) अब ख़्वाह मिना से वापसी पर जब कभी रात में जितनी बार का'बा मुअज़्ज़मा पर नज़र पड़े 'ला इला-ह इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर' तीन-तीन बार कहें और नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम पर दरूद भेजें, दुआ करें कि ये वक़्त क़बूलियत का है।

(३०) तवाफ़ अगरचे नफ़्ल हो उसमें ये बातें हराम हैं: बे-वज़ू तवाफ़ करना, कोई उज़्व (अंग) जो सतर (ढकने वाले हिस्से) में दाखिल है उसका चौथाई खुला होना, जैसे आज़ाद औरत का कान, बे-मजबूरी सवारी पर या किसी की गोद में या कंधों पर तवाफ़ करना, बिला उज़र बैठ कर सरकना या घुटनों चलना, का'बा को दाहिने हाथ पर लेकर उल्टा तवाफ़ करना, तवाफ़ में हतीम के अंदर होकर गुज़रना, सात फेरों से कम करना।

(३१) ये बातें तवाफ़ में मकरूह हैं: फ़ुज़ूल बात करना, बेचना, ख़रीदना, हम्द व ना'त व मन्क़बत के सिवा कोई शेर पढ़ना, ज़िक्र या दुआ या तिलावत या कोई कलाम बुलंद आवाज़ से करना, नापाक कपड़ों में तवाफ़ करना, रमल या इज़्तिबा' या बोसा-ए-संग-ए-अस्वद जहाँ-जहाँ उनका हुक्म है तर्क करना (छोड़ना), तवाफ़ के फेरों में ज़्यादा फ़ासला देना यानी कुछ फेरे कर लिए फिर देर तक ठहर गए या और किसी काम में लग गए, बाक़ी फेरे बाद को किए मगर वज़ू जाता रहा तो कर आए या जमाअत क़ायम हुई और उसने नमाज़ अभी न पढ़ी हो तो शरीक हो जाए बल्कि जनाज़ा की जमाअत में भी तवाफ़ छोड़ कर मिल सकता है, बाक़ी जहाँ से छोड़ा था।

पृष्ठ ८३६ का ७५१

قد میں نہ پھنس گئی۔ تنبیہ : طواف قدوم میں اضطباع و رمل اور اس کے بعد صفا و مروہ میں سعی ضرور نہیں، مگر اب نہ کرے گا تو طواف الزیارت میں کہ حج کا طواف فرض ہے جس کا ذکر ان شاء اللہ آتا ہے، یہ سب کام کرنے ہوں گے، اور اس وقت ہجوم بہت ہوتا ہے عجب نہیں کہ طواف میں رمل اور مسعی میں دوڑنا نہ ہو سکے اور اس وقت ہو چکا تو طواف میں ان کی حاجت نہ ہو گی، لہٰذا ہم نے ان کو مطلقاً داخل ترکیب کر دیا۔ (۲۷) مفرد و قارن تو حج کے رمل و سعی سے طواف قدوم میں فارغ ہو لیے مگر متمتع نے جو طواف و سعی کیے وہ عمرہ کے تھے، حج کے رمل و سعی اس سے ادا نہ ہوئے اور اس پر طواف قدوم ہے نہیں کہ قارن کی طرح اس میں یہ امور کرکے فراغت پالے، لہٰذا اگر وہ بھی پہلے سے فارغ ہو لینا چاہے تو جب حج کا احرام باندھے گا اس کے بعد ایک نفل طواف میں رمل و سعی کرے اب اسے طواف الزیارت میں ان کی حاجت نہ ہوگی، (۲۸) اب یہ سب حجاج، قارن، متمتع، مفرد، کوئی ہو، کہ منیٰ جانے کے لیے مکہ معظمہ میں آٹھویں تاریخ کا انتظار کر رہے ہیں، ایامِ اقامت میں جس قدر ہو سکے نرا طواف بے اضطباع و رمل و سعی کرتے رہیں، باہر والوں کے لیے یہ سب سے بہتر عبادت ہے اور ہر سات پھیروں پر مقام ابراہیم علیہ الصلوۃ والسلام میں دو رکعت پڑھیں۔ (۲۹) اب خواہ منیٰ سے واپسی پر جب کبھی رات میں جتنی بار کعبہ معظمہ پر نظر پڑے لَا إِلٰهَ إِلَّا اللهُ وَاللهُ اَكْبَرُ تین تین بار کہیں اور نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم پر درود بھیجیں، دعا کریں کہ یہ وقت قبول ہے، (۳۰) طواف اگر چہ نفل ہو اس میں یہ باتیں حرام ہیں: بے وضو طواف کرنا، کوئی عضو جو ستر میں داخل ہے اس کا چہارم کھلا ہونا، مشیاراً یا آزاد عورت کا کان، بے مجبوری سواری پر یا کسی کی گود میں یا کندھوں پر طواف کرنا، بلا عذر بیٹھ کر سر کنا یا گھٹنوں چلنا، کعبہ کو داہنے ہاتھ پر لے کر الٹا طواف کرنا، طواف

میں حطیم کے اندر ہو کر گزرنا، سات پھیروں سے کم کرنا۔ (۳۱) یہ باتیں طواف میں مکروہ ہیں: افضول بات کرنا، بیچنا، خریدنا، حمد و نعت و منقبت کے سوا کوئی شعر پڑھنا، ذکر یا دعا یا تلاوت یا کوئی کلام بلند آواز سے کرنا، ناپاک کپڑے میں طواف کرنا، رمل یا اضطباع یا بوسہ سنگ اسود جہاں جہاں ان کا حکم ہے ترک کرنا، طواف کے پھیروں میں زیادہ فاصلہ دینا یعنی کچھ پھیرے کر لیے پھر دیر تک ٹھہر گئے یا اور کسی کام میں لگ گئے، باقی پھیرے بعد کو کیے مگر وضو جاتا رہا تو کر آئے یا جماعت قائم ہوئی اور اس نے نماز ابھی نہ پڑھی ہو تو شریک ہو جائے بلکہ جنازہ کی جماعت میں بھی طواف چھوڑ کر مل سکتا ہے، باقی جہاں سے چھوڑا تھا

...come back and complete it. Similarly, if there is a need for urination or defecation, one may go, perform ablution, and then complete the remaining. Starting another circumambulation (tawaf) before praying the rak'ats of the first one is allowed, except during the disliked times for prayer, such as from dawn (subh sadiq) until sunrise or after performing the Asr prayer until sunset. In these times, performing multiple tawafs without intervening prayers is permissible. Once the disliked time passes, one should perform two rak'ats for each tawaf. It is allowed to perform tawaf during the Imam's sermon, and if one has already prayed with the first congregation, there is no harm in performing tawaf during other congregations. One may also pass in front of those praying, as tawaf is like prayer. Eating during tawaf, or performing tawaf while needing to urinate, defecate, or pass wind, is disliked.

(32) These things are permissible (mubah) in both tawaf and Sa'i: Saying Salam, responding to it, drinking water, reciting verses of praise (Hamd, Naat, Manqabat) softly, and one may eat during Sa'i. Speaking for a need, asking for a fatwa, or giving a fatwa are also permissible.

(33) Like tawaf, performing Sa'i while riding or sitting without a necessity is impermissible and a sin.

(34) Two things are disliked (makruh) in Sa'i: Making too much of a gap between its rounds without a need, but if a congregation (Jama'at) starts, one should go. Similarly, for participating in a funeral prayer, fulfilling a need, or renewing ablution (though not mandatory for Sa'i). Buying and selling, useless talk, not climbing Safa or Marwa, a man not running in the Mas'a without an excuse, delaying Sa'i significantly after tawaf, not covering the private parts (satr), and wandering eyes (looking around aimlessly) is makruh in Sa'i and even more so in tawaf.

Ruling: There is no harm in performing Sa'i without ablution, though it is recommended (mustahabb) to be with ablution.

(35) Women are included in all the aforementioned rules of tawaf and Sa'i, but idhtiba' (exposing the right shoulder), raml (brisk walking), and running in the Sa'i are not for them. They should not strive for kissing the Black Stone, touching the Rukn Yamani, nearing the Kaaba, or looking into or fetching water from Zamzam if it involves being crowded. If these can be done without touching the bodies of non-mahram men, it is fine; otherwise, staying apart is best for them.

Chapter Four: Departure for Mina and the Stay at Arafah

(1) On the 7th date, the Imam will deliver a sermon in the Masjid al-Haram after the Dhuhr prayer; listen to it. (2) Yaum al-Tarwiyah, which is the name for the 8th date: those who haven't entered into Ihram should do so, and perform one nafl tawaf with raml and Sa'i as mentioned above.

...वापस आकर पूरा करे। इसी तरह अगर पेशाब या पाखाने की ज़रूरत हो तो चला जाए, वज़ू करे और बाकी पूरा करे। एक तवाफ़ के बाद जब तक उसकी रकअतें न पढ़ लें, दूसरा तवाफ़ शुरू कर देना जाइज़ है, मगर कराहत वाले नमाज़ के वक्त में, जैसे सुबह सादिक से सूरज निकलने तक या असर की नमाज़ पढ़ने के बाद से सूरज डूबने तक। इन औकात में नमाज़ के बिना कई तवाफ़ करना जाइज़ है। जब कराहत का वक्त निकल जाए, तो हर तवाफ़ के लिए दो रकअत अदा करे। इमाम के खुतबे के वक्त तवाफ़ करना जाइज़ है, और अगर खुद पहली जमाअत में पढ़ चुका है, तो बाकी जमाअतों के वक्त तवाफ़ करने में कोई हर्ज नहीं। नमाज़ियों के सामने से गुज़रा जा सकता है क्योंकि तवाफ़ भी नमाज़ की तरह ही है। तवाफ़ में कुछ खाना, या पेशाब, पाखाने या हवा के दबाव की हालत में तवाफ़ करना मकरूह है।

(32) ये बातें तवाफ़ और सई दोनों में मुबाह (जाइज़) हैं: सलाम करना, जवाब देना, पानी पीना, हम्द, नात और मनकबत के अशआर धीरे से पढ़ना, और सई में खाना खाया जा सकता है। ज़रूरत के लिए बात करना, फ़तवा पूछना, फ़तवा देना।

(33) तवाफ़ की तरह सई भी बिना ज़रूरत सवारी पर या बैठकर करना नाजाइज़ और गुनाह है।

(34) सई में दो बातें मकरूह हैं: बिना ज़रूरत उसके चक्करों के बीच ज़्यादा वक़्फ़ा देना, लेकिन अगर जमाअत खड़ी हो जाए तो चला जाए। इसी तरह जनाज़े में शिरकत, हाजत पूरी करना या वज़ू ताज़ा करना (चाहे सई में ज़रूरी नहीं)। खरीदो-फरोख्त, फ़ुज़ूल बातें, सफ़ा या मरवा पर न चढ़ना, मर्द का मसई में बिना किसी उज़्र (बहाने) के न दौड़ना, तवाफ़ के बाद सई करने में बहुत देर करना, सत्र-ए-औरत (परदा) न होना, परेशान नज़री यानी इधर-उधर फ़ुज़ूल देखना सई में भी मकरूह है और तवाफ़ में और भी ज़्यादा मकरूह।

मसला: बे-वज़ू भी सई में कोई हर्ज नहीं, हाँ बा-वज़ू होना मुस्तहब (पसंदीदा) है।

(35) तवाफ़ और सई के ऊपर बताए गए सभी मसाइल में औरतें भी शामिल हैं, लेकिन इज़्तिबा (दाहिना कंधा खुला रखना), रमल (तेज़ चलना), और सई में दौड़ना उनके लिए नहीं है। वे भीड़ के साथ हजरे अस्वद को चूमने, रुक्ने यमानी को छूने, काबा के करीब जाने या ज़मज़म के अंदर देखने या खुद पानी भरने की कोशिश न करें। अगर ये बातें इस तरह मुमकिन हों कि गैर-महरम से जिस्म न छुए तो ठीक है, वरना अलग-थलग रहना ही उनके लिए सबसे बेहतर है।

फ़स्ल-ए-चहारम: मिना की रवानगी और अरफ़ा का वक़ूफ़

(1) सातवीं तारीख को मस्जिदुल हराम में जोहर की नमाज़ के बाद इमाम खुतबा पढ़ेगा, उसे सुनो।
(2) यौम-उत-तरविया कि आठवीं तारीख का नाम है: जिसने एहराम न बाँधा हो वह बाँध ले और एक नफ़्ल तवाफ़ में रमल और सई करे जैसा कि ऊपर गुज़रा।

آکر پورا کرے، یونہی پیشاب پاخانہ کی ضرورت ہو تو چلا جائے وضو کرکے باقی پورا کرے، ایک طواف کے بعد جب تک اس کی رکعتیں نہ پڑھ لیں دوسرا طواف شروع کردینا مگر کراہت نماز کا وقت ہو جیسے صبح صادق سے طلوعِ آفتاب یا نماز عصر پڑھنے کے بعد سے غروب آفتاب تک کہ اس میں متعدد طواف بے فصل نماز جائز ہیں، وقت کراہت نکل جائے تو ہر طواف کے لیے دو رکعت ادا کرے، خطبہ امام کے وقت طواف کرنا، ہاں اگر خود پہلی جماعت میں پڑھ چکا تو باقی جماعتوں کے وقت طواف کرنے میں حرج نہیں اور نمازیوں کے سامنے سے گزر سکتا ہے کہ طواف بھی مثل نماز ہی ہے، طواف میں کچھ کھانا، پیشاب یا پاخانہ یا ریح کے تقاضے میں طواف کرنا،

(۳۲) یہ باتیں طواف وسعی دونوں میں مباح ہیں: اسلام کرنا، جواب دینا، پانی پینا، حمد ونعت ومنقبت کے اشعار آہستہ پڑھنا، اور سعی میں کھانا کھا سکتا ہے۔ حاجت کے لیے کلام کرنا، فتویٰ پوچھنا، فتویٰ دینا۔

(۳۳) طواف کی طرح سعی بھی بلا ضرورت سوار ہو کر یا بیٹھ کر نا جائز و گناہ ہے۔

(۳۴) سعی میں دو باتیں مکروہ ہیں: بے حاجت اس کے پھیروں میں زیادہ فصل دینا مگر جماعت قائم ہو تو چلا جائے، یونہی شرکتِ جنازہ یا قضائے حاجت یا تجدیدِ وضو کو اگرچہ سعی میں ضرور نہیں، خرید و فروخت، فضول کلام، صفا یا مروہ پر نہ چڑھنا، مرد کا مسعی میں بلا عذر نہ دوڑنا، طواف کے بعد بہت تاخیر کرکے سعی کرنا، سترِ عورت نہ ہونا، پریشان نظری یعنی ادھر ادھر فضول دیکھنا سعی میں بھی مکروہ ہے اور طواف میں اور زیادہ مکروہ۔

مسئلہ : بے وضو بھی سعی میں کوئی حرج نہیں، ہاں باوضو مستحب ہے،

(۳۵) طواف وسعی کے سب مسائل مذکورہ میں عورتیں بھی شامل ہیں مگر اضطباع، رمل، سعی میں دوڑنا ان کے لیے نہیں، مزاحمت کے ساتھ بوسہ سنگِ اسود یا مس رکن یمانی یا تقرب کعبہ یا زمزم کے اندر نظر یا خود پانی بھرنے کی کوشش نہ کریں، یہ باتیں یوں مل سکیں کہ نامحرم سے بدن نہ چھوئے تو خیر ورنہ الگ تھلگ رہنا اس کے لیے سب سے بہتر ہے۔

فصل چہارم منی کی روانگی اور عرفہ کا وقوف

(۱) ساتویں تاریخ مسجد حرام میں بعد نماز ظہر امام خطبہ پڑھے گا اسے سنو۔ (۲) یوم الترویہ کہ آٹھ تاریخ کا نام ہے جس نے احرام نہ باندھا ہو یا باندھ لے اور ایک نفل طواف میں رمل وسعی جیسا کہ اوپر گزرا۔

Fatawa Razawiyya Volume 10

(3) When the sun rises, proceed to Mina, and if possible, go on foot; for until you return to Makkah al-Mu'azzamah, seven hundred good deeds will be recorded for every step. A hundred thousand is a lakh, a hundred lakh is a crore, a hundred crore is a billion, and a hundred billion is a trillion. These good deeds are approximately 7.84 trillion. Allah's grace upon this Ummah, for the sake of this Prophet, is countless (Exalted and Almighty, may Allah bless him and grant him peace), and praise be to Allah, Lord of the worlds.

(4) Recite Talbiyah, prayers, Salawat (blessings upon the Prophet), and praises in abundance throughout the journey.

(5) When Mina comes into sight, say: "O Allah, this is Mina, so bestow upon me that which You have bestowed upon Your beloved friends." 1.

(6) Stay here for the night. Perform five prayers in Masjid al-Khayf from Dhuhr today until the morning of the ninth. Nowadays, some Mutawwifs (pilgrim guides) have started a practice of not staying in Mina on the eighth and going straight to Arafat; do not listen to them and never abandon this great Sunnah. Due to the persistence of the caravan, they too will be forced to comply.

(7) Stay awake in Mina on the night of Arafat engaged in remembrance (dhikr) and worship until morning; there are plenty of days to sleep. If not possible, at least perform Isha and Fajr with the primary congregation so that you receive the reward of staying awake all night. Sleep in a state of Wudu, for then the soul ascends to the Throne (Arsh).

(8) After performing the prayer at the recommended time until morning, remain occupied in Talbiyah, dhikr, and Salawat until the sun shines on Mount Thabir, which is in front of Masjid al-Khayf. Now proceed to Arafat. Strive to cleanse your heart from thoughts of anything other than Allah, for today is a day when He will accept some for their deeds and forgive others for their sake. Deprived is the one who remains deprived today. If distracting thoughts (waswasah) come, do not fight them, as that would fulfill the enemy's (Satan's) purpose; he wants you to get preoccupied with other thoughts. Even if you fight them, you are still thinking of them. Instead, do not pay them any attention at all. Realize that there is another entity bringing these thoughts, and you are concerned with your Lord. In this way, God willing, that rejected one (Satan) will return failed and unsuccessful.

(9) Spend the entire journey in dhikr and Salawat; do not speak unnecessarily. Keep reciting Talbiyah frequently.

(10) When your sight falls upon Jabal al-Rahmah (the Mount of Mercy), strive even harder in these matters, for God willing, it is a time of acceptance.

Note: O my Lord! This is Mina, so bestow upon me that favor which You bestowed upon Your friends. 12 Minhu (M)

---

1 Kitab al-Ad'iyah lil-Hajj wal-Umrah, supplement to Irshad al-Sari, Chapter: When it is the second day etc., Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, p. 17.

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

(३) जब सूरज निकल आए तो मिना की ओर चलें और हो सके तो पैदल चलें, क्योंकि जब तक आप मक्का मुअज़्ज़मा वापस नहीं लौटते, हर कदम पर सात सौ नेकियाँ लिखी जाएँगी। सौ हज़ार का एक लाख, सौ लाख का एक करोड़, सौ करोड़ का एक अरब, सौ अरब का एक खरब। ये नेकियाँ लगभग ७८ खरब ४० अरब होती हैं। और अल्लाह का फ़ज़ल इस नबी के सदक़े में इस उम्मत पर बेशुमार है (अल्लाह तआला उन पर रहमत और सलामती भेजे), और तमाम तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं जो तमाम जहानों का रब है।

(४) रास्ते भर लब्बैक, दुआ, दुरूद और तारीफ़ों की कसरत करें।

(५) जब मिना नज़र आए तो कहें: "ऐ अल्लाह! यह मिना है, तो मुझ पर वह एहसान कर जो तूने अपने वलियों (मित्रों) पर किया है" १।

(६) यहाँ रात को ठहरें। आज ज़ुहर से नौवीं की सुबह तक पाँचों नमाज़ें मस्जिद-ए-खैफ़ में पढ़ें। आज कल कुछ मुतव्विफ़ों (हाजियों के रहनुमाओं) ने यह तरीका निकाला है कि वे आठवीं को मिना में नहीं ठहरते और सीधे अराफ़ात पहुँच जाते हैं; उनकी बात न मानें और इस सुन्नत-ए-अज़ीमा (महान सुन्नत) को हरगिज़ न छोड़ें। क़ाफ़िले के इसरार पर वे भी मजबूर हो जाएँगे।

(७) मिना में अराफ़ात की रात ज़िक्र और इबादत में जागकर गुज़ारें, सोने के लिए बहुत दिन पड़े हैं। अगर ऐसा न हो सके तो कम से कम इशा और फज्र की नमाज़ जमात-ए-ऊला (पहली जमात) के साथ पढ़ें ताकि पूरी रात जागने का सवाब मिले। वुज़ू की हालत में सोएँ क्योंकि रूह अर्श तक बुलंद होती है।

(८) सुबह तक मुस्तहब वक़्त पर नमाज़ पढ़कर लब्बैक, ज़िक्र और दुरूद में मशगूल रहें यहाँ तक कि सूरज जबल-ए-सबीर पर चमके जो मस्जिद-ए-खैफ़ के सामने है। अब अराफ़ात की ओर चलें। दिल को अल्लाह के सिवा किसी और के ख्याल से पाक करने की कोशिश करें क्योंकि आज वह दिन है कि अल्लाह कुछ के अमल क़बूल करेगा और कुछ को उनके सदक़े में बख़्श देगा। वह महरूम है जो आज के दिन भी महरूम रहा। अगर वसवसे (बुरे विचार) आएँ तो उनसे लड़ाई न करें क्योंकि दुश्मन (शैतान) का मकसद ही यही है कि आप दूसरे ख्यालों में उलझ जाएँ। अगर आप उनसे लड़ेंगे तब भी आप उन्हीं ख्यालों में रहेंगे। बल्कि उनकी तरफ ध्यान ही न दें। यह समझ लें कि कोई और

वजूद है जो ऐसे ख्याल ला रहा है और मुझे अपने रब से काम है। इस तरह इंशा अल्लाह वह मरदूद (शैतान) नाकाम वापस जाएगा।

(९) पूरा रास्ता ज़िक्र और दुरूद में बिताएँ। बिना ज़रूरत कोई बात न करें। लब्बैक बार-बार और कसरत से पढ़ते रहें।

(१०) जब निगाह जबल-ए-रहमत (रहमत का पहाड़) पर पड़े तो इन चीज़ों में और ज़्यादा कोशिश करें क्योंकि इंशा अल्लाह तआला यह कुबूलियत का वक़्त है।

हशियः ऐ अल्लाह! यह मिना है तो मुझ पर वह एहसान कर जो तूने अपने दोस्तों पर किया। १२ मिन्हु (म)

---

१ किताबुल अदिअ़या लिल हज्जि वल उ़मरह, मुल्हक़ इरशादुस सारी, फ़स्ल: जब दूसरा दिन हो आदि, दारुल किताबुल अरबी बैरूत, पृ. १७।

पृष्ठ ७५३/८३६

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

(۳) جب آفتاب نکل آئے منی کو چلو اور ہو سکے تو پیادہ کہ جب تک مکہ معظمہ پلٹ کر آؤ گے ہر قدم پر سات سو نیکیاں لکھی جائیں گی، سو ہزار کا لاکھ ، سو لاکھ کا کروڑ ، سو کروڑ کا ارب، سو ارب کا کھرب، یہ نیکیاں تخمیناً ۷۸ کھرب ۴۰ ارب ہوتی ہیں، اور اللہ کا فضل اس نبی کے صدقہ میں اس امت پر بے شمار ہے جل وعلا صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم، والحمد للہ رب العالمین۔

(۴) راستے بھر لبیك و دعا اور درود و ثنا کی کثرت کرو۔

(۵) جب منٰی نظر آئے کہو: اَللّٰھُمَّ ع ھٰذِہٖ مِنًی فَامْنُنْ عَلَیَّ بِمَا مَنَنْتَ بِہٖ عَلٰی أَوْلِیَائِكَ ۱۔

(۶) یہاں رات کو ٹھہرو، آج ظہر سے نویں کی صبح تک پانچ نمازیں مسجد خیف میں پڑھو، آج کل بعض مطوفوں نے یہ نکالی ہے کہ آٹھویں کو منٰی نہیں ٹھہرتے سیدھے عرفات پہنچتے ہیں، ان کی نہ مانے اور اس سنت عظیمہ کو ہر گز نہ چھوڑے، قافلہ کے اصرار سے ان کو بھی مجبور ہونا پڑے گا،

(۷) شب عرفہ منٰی میں ذکر و عبادت سے جاگ کر صبح کرو، سونے کے بہت دن پڑے ہیں، اور نہ ہو تو کم از کم عشاء و صبح تو جماعت اولٰی سے پڑھو کہ شب بیداری کا ثواب ملے گا، اور باوضو سوؤ کہ روح عرش تک بلند ہو گی۔

(۸) صبح تک مستحب وقت نماز پڑھ کر لبیک و ذکر و درود میں مشغول رہو یہاں تک کہ آفتاب کوہ ثبیر پر کہ مسجد خیف شریف کے سامنے ہے چمکے ، اب عرفات کو چلو، دل کو خیال غیر سے پاک کرنے میں کوشش کرو کہ آج وہ دن ہے کہ کچھ کاج قبول کریں گے اور کچھ ان کے صدقے بخش دیں گے، محروم ہو جو آج محروم رہا، وسوسے آئیں تو ان سے لڑائی نہ باندھو کہ

یوں بھی دشمن کا مطلب حاصل ہے وہ تو یہ چاہتا ہے کہ تم اور خیال میں لگ جاؤ، لڑائی باندھی جائے جب بھی تو اور خیال پڑے، بلکہ ان کی طرف دھیان ہی نہ کرو، یہ سمجھ لو کہ کوئی اور وجود ہے جو ایسے خیالات لا رہا ہے مجھے اپنے رب سے کام ہے یوں ان شاء اللہ وہ مردود و ناکام واپس جائے گا۔

(۹) راستے بھر ذکر و درود میں بسر کرو، بے ضرورت کچھ بات نہ کرو، لبیک کی بار بار کثرت کرتے چلو،

(۱۰) جب نگاہ جبل رحمت پر پڑے ان امور میں اور زیادہ کوشش کرو کہ ان شاء اللہ تعالیٰ وقت قبول ہے۔

عہ : الٰہی ! یہ منیٰ ہے تو مجھ پر وہ احسان کر جو تو نے اپنے دوستوں پر کئے ۱۲منہ (م)

---

۱ کتاب الادعیة للحج والعمرة ملحق ارشاد الساری فصل فاذا کان الیوم الثانی الخ دار الکتاب العربی بیروت ص ۱۷

(11) In Arafat, alight near this blessed mountain or wherever space is available, avoiding the public thoroughfare. (12) In today's crowds where there are hundreds of thousands of people and thousands of tents, it becomes difficult to find one's tent upon return. Therefore, establish a recognizable mark so that it is visible from a distance. (13) If women are with you, attach a specific piece of brightly colored cloth as a sign on their burqas so you can distinguish them from afar and keep your heart at peace. (14) Until midday, spend most of your time in humble entreaty before Allah, with sincere intention, giving charity and alms according to your means, and engaging in Dhikr (remembrance), Labbaik, Durood (salutations upon the Prophet), supplication, seeking forgiveness, and the Kalima of Tawheed (Oneness). It is mentioned in a Hadith that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "The best thing that I and the Prophets before me have said on this day is: 'Lā ilāha illallāhu waḥdahū lā sharīka lahū lahul mulku wa lahul ḥamdu yuḥyī wa yumītu wa huwa ḥayyun lā yamūtu biyadihil khayru wa huwa ‘alā kulli shay’in qadīr.' (15) Finish with meals and other necessities before noon so that the heart is not distracted. Just as fasting is not suitable for a pilgrim on this day because it causes weakness in supplication, similarly, eating to one's fill is very harmful and causes negligence and lethargy. One with a hunger for three rotis (breads) should eat only one. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) always gave this command, and he himself departed from this world having never eaten barley bread to his fill, even though by Allah's command, the entire world was and is under his authority. If you wish to receive lights and blessings, then not just today, but for as long as you are present in the Two Holy Sanctuaries (Harmain Shareefain), do not eat more than one-third of your stomach's capacity. If you heed this, you will see its benefit; if not, you will see the loss with your own eyes. Try acting on this for a week; if you don't find a difference from your previous state, then tell me. If life remains, there are many days for eating and drinking; here, keep space vacant for light (Noor) and spiritual taste (Zauq).

How can a full body be filled again?

Footnote (ع): There is no true deity except Allah, He is One, He has no partner, His is the sovereignty and for Him is all praise, He gives life and He gives death, and He is alive and shall never die, all goodness is in His hand and He has power over all things. 12 (m)

1 Kitab Ad'iyat al-Hajj wal Umrah, annexed to Irshad al-Sari, Chapter on turning towards Arafat, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 17. Page 754 of 836

(11) अराफ़ात में इस मुबारक पहाड़ के पास या जहाँ जगह मिले, आम रास्ते से बचकर उतरो। (12) आज की भीड़ में जहाँ लाखों लोग और हज़ारों डेरे होते हैं, वापस आने पर अपने डेरे को ढूँढना मुश्किल हो जाता है। इसलिए पहचान का कोई निशान बना लें ताकि वह दूर से नज़र आए। (13) अगर महिलाएँ साथ हों, तो उनके बुर्के पर कोई खास चमकते रंग का कपड़ा निशानी के तौर पर लगा दें ताकि आप उन्हें दूर से पहचान सकें और दिल में कोई बेचैनी न रहे। (14) दोपहर तक ज़्यादा समय अल्लाह की हुज़ूरी में रोने-धोने, सच्चे इरादे के साथ अपनी हैसियत के मुताबिक सदक़ा-खैरात, ज़िक्र, लब्बैक, दरूद, दुआ, इस्तिग़फ़ार और कलिमा-ए-तौहीद में मसरूफ़ रहें। हदीस में है कि नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं: सबसे बेहतर चीज़ जो आज के दिन मैंने और मुझसे पहले नबियों ने कही, वह यह है: 'ला इलाहा इल्लल्लाहु वह्दहू ला शरीका लहू लहुल मुल्कु व लहुल हम्दु युहयी व युमीतु वहुवा हय्युल ला यमूतु बियदिहिल खैरू वहुवा अला कुल्लि शैइन क़दीर।' (15) दोपहर से पहले खाने-पीने और दूसरी ज़रूरतों से फ़ारिग हो जाएँ ताकि दिल कहीं और न लगा रहे। आज के दिन जैसे हाजी के लिए रोज़ा रखना मुनासिब नहीं क्योंकि इससे दुआ में कमज़ोरी आएगी, वैसे ही पेट भरकर खाना भी बहुत नुक़सानदेह है और ये ग़फ़लत और आलस का कारण बनता है। जिसे तीन रोटी की भूख हो, वह एक ही खाए। नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने तो हमेशा के लिए यही हुक्म दिया है, और वह खुद इस दुनिया से चले गए लेकिन जौ की रोटी कभी पेट भरकर नहीं खाई, हालाँकि अल्लाह के हुक्म से पूरी दुनिया उनके अख्तियार में थी और है। अगर आप अनवार और बरकतें हासिल करना चाहते हैं, तो न सिर्फ आज, बल्कि जब तक हरमैन शरीफ़ैन में हाज़िर रहें, पेट के एक तिहाई हिस्से से ज़्यादा कभी न खाएं। मानोगे तो इसका फ़ायदा होगा, नहीं मानोगे तो इसका नुक़सान अपनी आँखों से देख लोगे। एक हफ़्ते तक इस पर अमल करके तो देखें, अगर पिछली हालत से फ़र्क़ महसूस न हो तब कहना। अगर ज़िंदगी रही तो खाने-पीने के बहुत दिन हैं, यहाँ तो नूर और ज़ौक़ (आध्यात्मिक स्वाद) के लिए जगह खाली रखें।

भरा हुआ शरीर दोबारा क्या भरेगा?

नोट (९): अल्लाह के सिवा कोई सच्चा माबूद नहीं, वह अकेला है, उसका कोई साझी नहीं, उसी की बादशाही है और उसी के लिए सब खूबियाँ हैं, वही जिलाता है, वही मारता है, और वह ज़िंदा है कि कभी न मरेगा, सब भलाइयाँ उसी के क़ब्ज़े में हैं और वह सब कुछ कर सकता है। 12 (m)

1 किताब अद'इयतुल हज वल उमराह, इरशाद अस-सारी के साथ, अराफ़ात की ओर रुख करने का अध्याय, दारुल किताब अल-अरबी, बेरुत, पृष्ठ 17. पृष्ठ 754 of 836

(۱۱) عرفات میں اس کوہِ مبارک کے پاس یا جہاں جگہ ملے شارعِ عام سے بچ کر اترو۔ (۱۲) آج کے ہجوم میں کہ لاکھوں آدمی، ہزاروں ڈیرے ہوتے ہیں، اپنے ڈیرے سے جا کر واپسی میں اس کا ملنا دشوار ہوتا ہے اس لیے پہچان کا نشان قائم کر کہ دور سے نظر آئے۔ (۱۳) مستورات ساتھ ہوں تو ان کے برقعہ پر کوئی خاص کپڑا علامت چمکتے رنگ کا لگا دو کہ دور سے دیکھ کر تمیز کر سکو اور دل میں تشویش نہ رہے۔ (۱۴) دوپہر تک زیادہ وقت اللہ کے حضور زاری اور باخلاص نیت حسب استطاعت تصدق و خیرات و ذکر و لبیك و درود و دعا و استغفار و کلمہ توحید میں مشغول رہو، حدیث میں ہے نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: سب سے بہتر وہ چیز جو آج کے دن میں نے اور مجھ سے پہلے انبیاء نے کہی یہ ہے: لَآ اِلٰہَ اِلَّا اللہُ وَحْدَہٗ لَا شَرِیْكَ لَہٗ لَہُ الْمُلْكُ وَلَہُ الْحَمْدُ یُحْیِیْ وَیُمِیْتُ وَھُوَ حَیٌّ لَّا یَمُوْتُ بِیَدِہِ الْخَیْرُ ط وَھُوَ عَلٰی کُلِّ شَیْءٍ قَدِیْرٌ۔ (۱۵) دوپہر سے پہلے کھانے پینے وغیرہ ضروریات سے فارغ ہولو کہ دل کسی طرف لگانہ رہے، آج کے دن جیسے حاجی کو روزہ مناسب نہیں کہ دعا میں ضعف ہوگا، یو نہی پیٹ بھر کر کھانا سخت ضرر اور غفلت و کسل کا باعث ہے، تین روٹی کی بھوک والا ایک ہی کھائے۔ نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے تو ہمیشہ کے لیے یہی حکم دیا ہے، اور خود دنیا سے تشریف لے گئے اور جو کی روٹی کبھی پیٹ بھر کر نہ کھائی حالانکہ اللہ کے حکم سے تمام جہان اختیار میں تھا اور ہے، اور اگر انوار و برکات لینا چاہو تو صرف آج بلکہ حرمین شریفین میں جب تک حاضر ہو تہائی پیٹ سے زیادہ ہرگز نہ کھاؤ، مانو گے تو اس کا فائدہ، نہ مانو گے تو اس کا نقصان آنکھوں سے دیکھ لوگے، ہفتہ بھر اس پر عمل کر کے تو دیکھو، اگلی حالت سے فرق نہ پاؤ جبھی کہنا، جی بچے تو کھانے پینے کے بہت دن ہیں، یہاں تو نور و ذوق کے لیے جگہ خالی رکھو۔

عہ: اللہ کے سوا کوئی سچا معبود نہیں، وہ ایک اکیلا، اس کا کوئی ساجھی نہیں، اسی کی بادشاہی ہے اور اسی کے لیے سب خوبیاں، وہی جلائے وہ مارے، اور وہ زندہ ہے کہ کبھی نہ مرے گا، سب بھلائیاں اسی کے قبضہ میں ہیں اور وہ سب کچھ کر سکتا ہے ۱۲ (م)

1 کتاب ادعیۃ الحج والعمرۃ ملحق ارشاد الساری فصل فی التوجہ الی العرفات دار الکتاب العربی بیروت ص ۱۷

(16) When noon approaches, take a bath as it is a Sunnah Mu'akkadah (emphasized Sunnah); if not possible, then just perform wudu (ablution). (17) As soon as the sun declines, or even before that to find a place near the Imam, go to Masjid Nimra. After praying the Sunnahs and listening to the sermon, pray Dhuhr with the Imam. In between, let alone Salam and Qiyam (standing), do not even pray Sunnahs. And after Asr, there are no Nawafil (optional prayers). Combining Dhuhr and Asr is only permissible if the prayer is led either by the Sultan himself or by his appointed deputy for Hajj. He who prays Dhuhr alone or with his own specific congregation, it will not be lawful for him to pray Asr before its time. The wisdom for which Shariah commanded combining Asr with Dhuhr here—i.e., to have time free for supplication until sunset—would be lost. (18) Consider this: when Shariah takes such great care to free up this time for supplication, how absurd it is to be occupied in other tasks. Some fools have been seen: while the Imam is in prayer or after praying has gone to the *Mawqif* [1], they are busy eating, drinking, smoking hookah, or having tea. Beware, do not do this. As soon as you finish praying with the Imam, depart immediately for the *Mawqif*. If possible, go on a camel, as it is Sunnah and also provides protection from being crushed or trampled in the crowd. (19) Some Mutawwifs (guides) forbid going into this crowd and frighten people in various ways. Do not listen to them, for it is a place where special general mercy descends. Yes, women and weak men should join the supplication while standing right there, as the entire plain except for *Batn-e-Urna* [2] is the *Mawqif*. These people should also imagine themselves present in that gathering and not think of their "one-and-a-half bricks" (small group) as separate. In that gathering, certainly, many Awliya (saints) and even Prophets of Allah, Ilyas and Khidr (peace be upon them), are present. They should imagine that the lights and blessings descending upon them in that gathering reach us beggars too as Sadaqah (charity). In this way, even while being physically separate, they will be included. For whoever is able, attending there is not something to be missed. (20) It is best to stand near the Imam, close to Jabal-e-Rahmah (Mount of Mercy) where there is a floor of black stones, facing the Qibla with the Imam behind your back, provided that attaining these virtues does not cause difficulty or distress to anyone. Otherwise, perform *Wuquf* [3] wherever and however possible. Standing at the right side of the Imam is better than being on the left or in front of him. This *Wuquf* is the very soul of Hajj and its greatest pillar. Footnote 1: The place where it is commanded to stand and engage in Dhikr (remembrance) and Dua

(supplication) from after the prayer until sunset. (M) Footnote 2: Batn-e-Urna is one of the valleys of the Haram in Arafat, to the west of Masjid Nimra, towards Makkah al-Mukarramah. Staying there as a *Mawqif* is absolutely impermissible. (M) Footnote 3: Standing there for Dhikr and Dua. (M)

फतावा रज़विय्या - जिल्द दहम

(१६) जब दोपहर करीब आए तो नहाओ क्योंकि यह सुन्नत-ए-मुअक्कदह है, और अगर मुमकिन न हो तो सिर्फ वुज़ू करें। (१७) दोपहर ढलते ही, बल्कि इससे पहले कि इमाम के करीब जगह मिले, मस्जिद-ए-नमरह जाएं। सुन्नतें पढ़कर और खुतबा सुनकर इमाम के साथ ज़ुहर पढ़ें। बीच में सलाम और कयाम तो क्या मानी, सुन्नतें भी न पढ़ें। और असर के बाद भी नफिल नहीं। ज़ुहर और असर को मिलाकर पढ़ना तभी जायज़ है जब नमाज़ या तो सुल्तान खुद पढ़ाए या वह जो हज में उसका नायब (प्रतिनिधि) होकर आता है। जिसने ज़ुहर अकेले या अपनी खास जमाअत से पढ़ी, उसके लिए वक्त से पहले असर पढ़ना हलाल न होगा। जिस हिकमत (बुद्धिमत्ता) के लिए शरीअत ने यहाँ ज़ुहर के साथ असर मिलाने का हुक्म फ़रमाया है, यानी सूर्यास्त तक दुआ के लिए समय खाली मिलता है, वह खत्म हो जाएगी। (१८) ख्याल करो जब शरीअत इस वक्त को दुआ के लिए फारिग (खाली) करने का इस कदर एहतमाम करती है, तो इस वक्त दूसरे कामों में मसरूफियत कितनी बेहूदा है। कुछ बेवकूफों को देखा गया है कि इमाम तो नमाज़ में है या नमाज़ पढ़कर मौकिफ [९१] को चला गया, और वे खाने-पीने, हुक्का-चाय उड़ाने में मसरूफ हैं। खबरदार ऐसा न करो। इमाम के साथ नमाज़ पढ़ते ही फौरन मौकिफ की ओर रवाना हो जाओ। और मुमकिन हो तो ऊँट पर, क्योंकि यह सुन्नत भी है और भीड़ में दबने-कुचलने से हिफाज़त भी। (१९) कुछ मुतव्विफ (गाइड) इस भीड़ में जाने से मना करते हैं और तरह-तरह से डराते हैं। उनकी न सुनो क्योंकि वह खास रहमत के नुज़ूल (उतरने) की आम जगह है। हाँ, औरतें और कमज़ोर मर्द यहीं खड़े होकर दुआ में शामिल हों, क्योंकि बत्न-ए-उरनह [९२] के सिवा पूरा मैदान मौकिफ है। और ये लोग भी यही तसव्वुर (कल्पना) करें कि हम इस मजमे (भीड़) में हाज़िर हैं, अपनी 'डेढ़ ईंट की मस्जिद' अलग न समझें। उस मजमे में यकीनन कसरत से औलिया, बल्कि नबी अल्लाह इलियास और खिज़्र अलैहिस्सलाम मौजूद हैं। यह तसव्वुर करें कि जो अनवार-ओ-बरकात उस मजमे में उन पर उतर रहे हैं, उनका सदका हम भिखारियों को भी पहुँचता है। इस तरह अलग होकर भी वे शामिल रहेंगे। और जिससे मुमकिन हो, वहाँ की हाज़िरी छोड़ना कोई मामूली बात नहीं। (२०) अफज़ल (बेहतर) यह है कि इमाम के नज़दीक जबल-ए-रहमत के करीब, जहाँ काले पत्थरों का फर्श है, किबला की ओर मुँह करके इमाम की पीठ के पीछे खड़ा हो, बशर्ते कि इन फज़ाइलों को हासिल करने में किसी को तकलीफ या दिक्कत न हो। वरना जहाँ और जिस तरह मुमकिन हो, वुकूफ [९३] करें। इमाम के दाहिने हाथ की ओर खड़ा होना बाएं या सामने से अफज़ल है। यह वुकूफ ही हज की जान और उसका सबसे बड़ा रुक्न (स्तंभ) है। ९१: वह जगह जहाँ

नमाज़ के बाद से सूर्यास्त तक खड़े होकर ज़िक्र और दुआ करने का हुक्म है। (म) ९२: बत्न-ए-उरनह अराफात में हरम के नालों में से एक नाला है जो मस्जिद-ए-नमरह के पश्चिम यानी मक्का मुअज़्मा की ओर है। वहाँ वुकूफ करना महज़ नाजायज़ है। (म) ९३: वहाँ ज़िक्र और दुआ के लिए खड़ा होना। (म)

(۱۶) جب دوپہر قریب آئے نہاؤ کہ سنتِ مؤکدہ ہے اور نہ ہو سکے تو صرف وضو۔ (۱۷) دوپہر ڈھلتے ہی بلکہ اس سے پہلے کہ امام کے قریب جگہ ملے مسجدِ نمرہ جاؤ سنتیں پڑھ کر خطبہ سن کر امام کے ساتھ ظہر پڑھو، بیچ میں سلام وقیام تو کیا معنیٰ سنتیں بھی نہ پڑھو، اور بعد عصر بھی نفل نہیں، یہ ظہر و عصر ملا کر پڑھنا جبھی جائز ہے کہ نماز یا تو سلطان خود پڑھائے یا وہ جو حج میں اس کا نائب ہو کر آتا ہے، جس نے ظہر اکیلے یا اپنی خاص جماعت سے پڑھی اسے وقت سے پہلے عصر پڑھنا حلال نہ ہوگا، اور جس حکمت کے لیے شرع نے یہاں ظہر کے ساتھ عصر ملانے کا حکم فرمایا ہے یعنی غروبِ آفتاب تک دعا کے لیے وقت خالی ملتا ہے وہ جاتی رہے گی، (۱۸) خیال کرو جب شرع کو یہ وقت دعا کے لیے فارغ کرنے کا اس قدر اہتمام ہے تو اس وقت اور کام میں مشغولی کس قدر بیہودہ ہے، بعض احمقوں کو دیکھا ہے کہ امام تو نماز میں ہے یا نماز پڑھ کر موقف ع۱ کو گیا اور وہ کھانے پینے حقے چائے اڑانے میں مصروف ہیں خبردار ایسا نہ کرو، امام کے ساتھ نماز پڑھتے ہی فوراً موقف کو روانہ ہو جاؤ، اور ممکن ہو تو اونٹ پر کہ سنت بھی ہے اور ہجوم میں دبنے کچلنے سے محافظت بھی۔ (۱۹) بعض مطوف اس مجمع میں جانے سے منع کرتے ہیں اور طرح طرح سے ڈراتے ہیں ان کی نہ سنو کہ وہ خاص نزولِ رحمت عام کی جگہ ہے، ہاں عورت اور کمزور مرد یہیں کھڑے ہوئے دعا میں شامل ہوں کہ بطنِ عرنہ ع۲ کے سوا یہ سارا میدان موقف ہے اور یہ لوگ بھی تصور یہی کریں کہ ہم اس مجمع میں حاضر ہیں اپنی ڈیڑھ اینٹ کی الگ نہ سمجھیں، اس مجمع میں یقیناً بکثرت اولیاء بلکہ الیاس و خضر علیہ الصلوٰۃ والسلام نبی اللہ موجود ہیں، یہ تصور کریں کہ انوار و برکات جو اس مجمع میں ان پر اتر رہے ہیں ان کا صدقہ ہم بھکاریوں کو بھی پہنچتا ہے، یوں الگ ہو کر بھی شامل رہیں گے، اور جس سے ہو

سکے تو وہاں کی حاضری چھوڑنے کی چیز نہیں۔ (۲۰) افضل یہ ہے کہ امام سے نزدیک جبلِ رحمت کے قریب جہاں سیاہ پتھر کا فرش ہے رو بہ قبلہ پسِ پشتِ امام کھڑا ہو جبکہ ان فضائل کے حصول میں دقت یا کسی کی اذیت نہ ہو ورنہ جہاں اور جس طرح ہو سکے وقوف ع۳ کرو۔ امام کی دہنی جانب اور بائیں روبرو سے افضل ہے، یہ وقوف ہی حج کی جان اور اس کا بڑا رکن ہے۔ ع۱: وہ جگہ کہ نماز کے بعد سے غروبِ آفتاب تک وہاں کھڑے ہو کر ذکر و دعا کا حکم ہے۔ (م) ع۲: بطنِ عرنہ عرفات میں حرم کے نالوں میں سے ایک نالہ ہے مسجدِ نمرہ کے مغرب یعنی مکہ معظمہ کی طرف وہاں موقف محض ناجائز ہے۔ (م) ع۳: وہاں ذکر و دعا کے لیے کھڑا ہونا۔ (م)

(21) Some ignorant people commit the act of climbing the mountain and standing there waving handkerchiefs; avoid this and do not think ill of them. This is not the time to look at others' faults, but to feel ashamed of your own sins and engage in weeping and wailing.

(22) Now, those who are here and those in the tents, all should turn towards their Kind and Merciful Lord with an attentive heart and sincerity. Imagine standing before Him for the reckoning of deeds on the Day of Judgment. With extreme humility and submissiveness, trembling, quivering, fearing, and hoping, keep your eyes closed, head bowed, and raise your hands in prayer towards the sky higher than your head. Immerse yourself in Takbir, Tahlil, Tasbih, Labbaik, Hamd, Dhikr, Dua, repentance (Tawba), and seeking forgiveness (Istighfar). Try to shed even a single drop of tear, as it is a sign of acceptance and good fortune; otherwise, at least make a face as if crying, for even the appearance of good people is good. Repeat 'Labbaik' frequently during prayer and Dhikr. Many prayers for today have been narrated, and the comprehensive prayer mentioned above is sufficient; recite it a few times. Most importantly, spend the entire time in Salawat (Durood), Dhikr, and recitation of the Quran, for according to the promise in the Hadith, you will receive more than those who ask. Hold onto the mantle of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), seek mediation (Tawassul) through Ghaus-e-Azam (may Allah be pleased with him). Remember your sins and His Wrath, tremble like a willow tree, and know for certain that there is no refuge from His punishment except with Him. You cannot escape and go anywhere; there is no shelter except at His door. Therefore, holding onto the mantle of these intercessors, seek His refuge from His punishment. Stay in this state, sometimes with hope in His general mercy reviving the withered heart, and sometimes in humble supplication and wailing until the sun sets and the delicate part of the night begins. Departing before this is prohibited. Some impatient people leave during the day; do not go with them. If there were no need to stay until sunset, why would there be a command to combine the Asr and Zuhr prayers? Who knows when Divine Mercy will turn towards us? If it descends after you have left, then God forbid, what a loss! And if you exit the boundaries of Arafat before sunset, it is a complete sin, and you will have to offer a sacrifice as a penalty. Some guides (Mutawwifs) frighten people by saying there is danger at night; this might be true for one or two people, but when an entire caravan stays, there is no fear, God willing.

(23) One etiquette to be remembered for this day is to trust in Allah Almighty's true promises and believe that today I have become as pure from sins as the day I was born from my mother's womb. Now, I will strive not to commit sins in the future, so that the stain which Allah Almighty has washed from my forehead out of pure mercy is not reapplied.

(24) These things are disliked (Makruh) here: Leaving the stay (Wuquf) and departing before sunset when [staying] until sunset...

(21) कुछ अज्ञानी लोग यह हरकत करते हैं कि पहाड़ पर चढ़ जाते हैं और वहाँ खड़े होकर रूमाल हिलाते रहते हैं; इससे बचें और उनके प्रति बुरा विचार न रखें। यह समय दूसरों के दोष देखने का नहीं है, बल्कि अपने दोषों पर शर्मिंदा होने और रोने-गिड़गिड़ाने का है।

(22) अब वे जो यहाँ हैं और जो तंबुओं में हैं, सभी पूरे मन और सच्चाई के साथ अपने दयालु और कृपालु रब की ओर मुड़ जाएँ। क़यामत के मैदान में कर्मों के हिसाब के लिए उनके सामने उपस्थिति की कल्पना करें। अत्यंत विनम्रता और अधीनता के साथ, काँपते हुए, डरते हुए, और आशा करते हुए, अपनी आँखें बंद रखें, सिर झुकाएँ, और प्रार्थना के लिए अपने हाथ आकाश की ओर अपने सिर से ऊँचे उठाएँ। तकबीर, तहलील, तस्बीह, लब्बैक, हम्द, ज़िक्र, दुआ, तौबा और इस्तेगफ़ार में डूब जाएँ। कोशिश करें कि आँसू की एक बूंद भी टपक जाए, क्योंकि यह स्वीकृति और सौभाग्य का प्रमाण है; अन्यथा, कम से कम रोने जैसा चेहरा बनाएँ, क्योंकि अच्छे लोगों का रूप भी अच्छा होता है। प्रार्थना और ज़िक्र के दौरान बार-बार 'लब्बैक' दोहराएँ। आज के दिन के लिए बहुत सी दुआएँ वर्णित हैं, और ऊपर बताई गई व्यापक दुआ पर्याप्त है; उसे कुछ बार पढ़ लें। सबसे अच्छा यह है कि सारा समय दरूद, ज़िक्र और कुरान के पाठ में बिताएँ, क्योंकि हदीस के वादे के अनुसार, आप माँगने वालों से अधिक पाएँगे। नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का दामन थामें, गौस-ए-आज़म (रज़ियल्लाहु अन्हु) के माध्यम से वसीला लें। अपने पापों और उनकी क़ाहिरी (क्रोध) को याद करें, बेद के पेड़ की तरह काँपें और निश्चित रूप से जानें कि उनकी मार से उन्हीं के पास शरण है। आप उनसे भागकर कहीं नहीं जा सकते, उनके दर के सिवा कहीं ठिकाना नहीं है। इसलिए, इन सिफारिशियों का दामन थामकर उनके अज़ाब से उन्हीं की पनाह माँगें। इसी अवस्था में रहें, कभी उनकी सामान्य दया की आशा से मुरझाया हुआ हृदय प्रफुल्लित हो जाता है, और इसी तरह विनम्रता और गिड़गिड़ाहट में रहें जब तक कि सूर्य अस्त न हो जाए और रात का कोमल हिस्सा न आ जाए। इससे पहले कूच (प्रस्थान) वर्जित है। कुछ जल्दबाज़ लोग दिन में ही चल देते हैं; उनके साथ न जाएँ। यदि सूर्यास्त तक रुकने की आवश्यकता न होती, तो अस्र को जुहर के साथ मिलाकर पढ़ने का आदेश क्यों होता? क्या पता कि ईश्वरीय दया किस समय हमारी ओर ध्यान दे। यदि यह आपके जाने के बाद उतरी तो ख़ुदा न करे, कितना बड़ा नुकसान होगा! और यदि आप सूर्यास्त से पहले अराफ़ात की सीमाओं से बाहर निकल गए, तो यह एक पूरा अपराध है और दंड स्वरूप कुर्बानी देनी होगी। कुछ

मुतव्विफ यह कहकर डराते हैं कि रात में खतरा है; यह एक या दो लोगों के लिए सही हो सकता है, लेकिन जब पूरा काफिला ठहरेगा, तो इंशा अल्लाह कोई डर नहीं है।

(23) इस दिन का एक शिष्टाचार याद रखने योग्य यह है कि अल्लाह तआला के सच्चे वादों पर भरोसा करें और विश्वास करें कि आज मैं पापों से वैसा ही शुद्ध हो गया हूँ जैसा उस दिन था जब मैं अपनी माँ के पेट से पैदा हुआ था। अब कोशिश करूँ कि भविष्य में पाप न हों और जो दाग अल्लाह तआला ने केवल अपनी दया से मेरे माथे से धो दिया है, वह दोबारा न लगे।

(24) यहाँ ये बातें मकरूह (नापसंद) हैं: सूर्यास्त से पहले रुकना (वक़ूफ़) छोड़कर चले जाना, जबकि सूर्यास्त तक...

(۲۱) بعض جاہل یہ حرکت کرتے ہیں کہ پہاڑ پر چڑھ جاتے ہیں اور وہاں کھڑے رومال ہلاتے رہتے ہیں اس سے بچو اور ان کی طرف بھی برا خیال نہ کرو، یہ وقت اوروں کے عیب دیکھنے کا نہیں اپنے عیبوں پر شرمساری اور گریہ وزاری کا ہے۔

(۲۲) اب وہ کہ یہاں ہیں اور کہ ڈیروں میں ہیں سب ہمہ تن صدق دل سے اپنے کریم مہربان رب کی طرف متوجہ ہو جاؤ اور میدان قیامت میں حساب اعمال کے لیے اس کے حضور حاضری کا تصور کرو، نہایت خشوع و خضوع کے ساتھ لرزتے، کانپتے، ڈرتے، امید کرتے، آنکھیں بند کیے، گردن جھکائے، دستِ دعا آسمان کی طرف سر سے اونچے پھیلاؤ، تکبیر، تہلیل، تسبیح، لبیک، حمد، ذکر، دعا، توبہ، استغفار میں ڈوب جاؤ، کوشش کرو کہ ایک قطرہ آنسوؤں کا ٹپکے کہ دلیل اجابت وسعادت ہے ورنہ رونے کا سامنا بناؤ کہ اچھوں کی صورت بھی اچھی، اثنائے دعا و ذکر میں لبیک کی بار بار تکرار کرو۔ آج کے دن کی دعائیں بہت منقول ہیں، اور دعائے جامع کہ اوپر گزری کافی ہے، چند بار اسے کہہ لو، اور سب سے بہتر یہ ہے کہ سارا وقت درود، ذکر، تلاوتِ قرآن میں گزارو کہ بوعدہ حدیث دعا والوں سے زیادہ پاؤگے، نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا دامن پکڑو، غوث اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے توسل کرو، اپنے گناہ اور اس کی قہاری یاد کرو بید کی طرح لرزو اور یقین جانو کہ اس کی مار سے اسی کے پاس پناہ ہے۔ اس سے بھاگ کر کہیں جا نہیں سکتے، اس کے در کے سوا کہیں ٹھکانا نہیں، لہٰذا ان شفیعوں کا دامن لیے اس کے عذاب سے اسی کی پناہ مانگو اور اسی حالت میں رہو کہ کبھی اس کی رحمتِ عام کی امید سے مرجھایا دل نہال ہوا جاتا ہے اور یونہی تضرع وزاری میں رہو یہاں تک کہ آفتاب ڈوب جائے اور رات کا لطیف جز آجائے اس سے پہلے کوچ منع ہے، بعض جلد باز دن ہی سے چل دیتے ہیں ان کا ساتھ نہ

دو۔ غروب تک ٹھہرنے کی ضرورت نہ ہوتی تو عصر ظہر سے ملا کر پڑھنے کا حکم کیوں ہوتا، اور کیا معلوم کہ رحمتِ الٰہی کس وقت توجہ فرمائے، اگر تمہارے چل دینے کے بعد اتری تو معاذ اللہ کیسا خسارہ ہے، اور اگر غروب سے پہلے حدود عرفات سے نکل گئے جب تو پورا جرم ہے اور جرمانے میں قربانی دینی آئے گی، بعض مطوف یوں ڈراتے ہیں کہ رات میں خطرہ ہے یہ دو ایک کے لیے ٹھیک ہے اور جب قافلہ کا قافلہ ٹھہرے گا تو ان شاء اللہ کچھ اندیشہ نہیں۔

(۲۳) ایک ادب واجب الحفظ اس روز کا یہ ہے کہ اللہ تعالیٰ کے سچے وعدوں پر بھروسا کر کے یقین کرے کہ آج میں گناہوں سے ایسا پاک ہو گیا جیسا جس دن ماں کے پیٹ سے پیدا ہوا تھا، اب کوشش کروں کہ آئندہ گناہ نہ ہوں اور جو داغ اللہ تعالیٰ نے بمحض رحمت میری پیشانی سے دھویا ہے پھر نہ لگے۔

(۲۴) یہاں یہ باتیں مکروہ ہیں۔ غروب آفتاب سے پہلے وقوف چھوڑ کر روانگی جب کہ غروب تک

Fatawa Razawiya Volume 10

One should not go outside the boundaries of Arafat, otherwise it is forbidden (haram). After combining the Dhuhr and Asr prayers, delaying going to the station (Mauqif) from that time until sunset while being occupied with eating, drinking, or any work other than turning towards God, talking about worldly matters, delaying departure after being certain of sunset, or performing Maghrib or Isha in Arafat [is discouraged].

Caution: Avoid using an umbrella or seeking shade in any way at the station (Mauqif) as much as possible; however, one who is forced is excused.

Important Caution, Most Urgent Casting lustful gazes is always forbidden, not just during Ihram, nor just at the station (Mauqif), nor just in Masjid al-Haram, nor just in front of the Ka'bah al-Mu'azzamah, nor just during Tawaf in the Bait al-Haram. This is a time of great trial for you. Women have been commanded not to cover their faces here, and you have been commanded not to look at them. Rest assured that these are the bondwomen of a very honorable King, and at this time, you and all of them are present in a special court. If, metaphorically speaking, a lion's cub were in its side, who would dare look at it? So, the handmaidens of Allah, the One and the Subduer, who are present in His special court—how severe would a lustful gaze towards them be? "And to Allah belongs the highest attribute" (Quran). Yes, yes, be alert, save your faith, control your heart and gaze. The Haram is a place where even the intention to sin is seized upon, and one sin is considered equal to a hundred thousand sins. O God! Grant success for goodness. Amen!

Fifth Chapter: Mina, Muzdalifah, and Remaining Rites of Hajj (1) When you are certain of sunset, immediately head to Muzdalifah. It is better to be with the Imam, but if he is late, do not wait for him. (2) Throughout the way, stay busy with Dhikr, Durood, Dua, Labbaik, and humble weeping. (3) Wherever you find space on the path without the likelihood of harm to yourself or others, walk faster for that distance, whether on foot or mounted. (4) When Muzdalifah comes into view, if capable, it is better to walk, and it is preferable to enter after performing a bath (ghusl). (5) Upon reaching there, try as much as possible to dismount near Jabal-e-Quzah away from the path, otherwise, wherever space is available. (6) Probably, by the time you reach there, the twilight will have disappeared, the time for Maghrib will have passed, untying the camels,

फ़तावा रज़विया जिल्द दहुम (दसवीं)

अरफ़ात की हदों से बाहर न निकलें, वरना यह हराम है। ज़ुहर और अस्र की नमाज़ें मिलाकर पढ़ने के बाद मौक़िफ़ (ठहरने की जगह) जाने में देरी करना, उस समय से लेकर सूर्यास्त तक खाने-पीने या अल्लाह की याद के सिवा किसी और काम में मशगूल होना, दुनियावी बातें करना, सूर्यास्त का यकीन होने के बाद रवानगी में देरी करना, या अरफ़ात में ही मग़रिब या इशा पढ़ना।

चेतावनी: मौक़िफ़ में जहाँ तक मुमकिन हो छतरी लगाने या किसी तरह का साया लेने से बचें, हाँ जो मज़बूर है वह माज़ूर (क्षम्य) है।

ज़रूरी और निहायत ज़रूरी चेतावनी बुरी नज़र डालना हमेशा हराम है, न कि सिर्फ़ एहराम की हालत में, न सिर्फ़ मौक़िफ़ में, न सिर्फ़ मस्जिद-अल-हराम में, न सिर्फ़ काबा मुअज़्ज़मा के सामने, न सिर्फ़ बैतुल हराम में तवाफ़ के दौरान। यह आपके लिए बड़े इम्तिहान का मौक़ा है। औरतों को हुक्म दिया गया है कि यहाँ चेहरा न छुपाएँ और तुम्हें हुक्म दिया गया है कि उनकी तरफ न देखो। यक़ीन जानो कि ये एक निहायत बा-इज़्ज़त बादशाह की बांदियाँ हैं और इस वक़्त तुम और वो सब एक ख़ास दरबार में हाज़िर हो। अगर मिसाल के तौर पर एक शेर का बच्चा उसकी गोद में हो, तो उस वक़्त कौन उसकी तरफ नज़र उठा सकता है? तो अल्लाह तआला जो वाहिद और क़हार है, उसकी कनीज़ें (दासियाँ) जो उसके ख़ास दरबार में हाज़िर हैं, उन पर बुरी नज़र डालना कितना सख़्त होगा? "और अल्लाह की शान सबसे बुलंद है"। हाँ, हाँ, होशियार रहें, अपना ईमान बचाएं, दिल और नज़र को संभालें। हरम वह जगह है जहाँ गुनाह के इरादे पर भी पकड़ होती है और एक गुनाह लाख गुनाहों के बराबर ठहरता है। ऐ अल्लाह! ख़ैर (भलाई) की तौफ़ीक़ दे। आमीन!

पाँचवाँ अध्याय: मिना, मुज़्दलिफ़ा और हज के बाक़ी अरकान (१) जब सूर्यास्त का यक़ीन हो जाए, तो फ़ौरन मुज़्दलिफ़ा की तरफ़ चलें। इमाम के साथ चलना बेहतर है, लेकिन अगर वह देरी करे तो उसका इंतज़ार न करें। (२) रास्ते भर ज़िक्र, दरूद, दुआ, लब्बैक और रोने-धोने में मशगूल रहें। (३) रास्ते में जहाँ जगह मिले और अपनी या दूसरों की तकलीफ़ का डर न हो, तो उतनी दूर तेज़ चलें, चाहे पैदल हों या सवार। (४) जब मुज़्दलिफ़ा नज़र आने लगे, तो अगर मुमकिन हो तो पैदल हो जाना बेहतर है और ग़ुस्ल करके दाख़िल होना अफ़ज़ल (बेहतर) है। (५) वहाँ पहुँचकर जहाँ तक हो सके जबल-ए-क़ुज़ह के पास रास्ते से हटकर उतरें, वरना जहाँ जगह मिले। (६) मुमकिन है कि वहाँ

पहुँचते-पहुँचते शफ़क़ (शाम की लाली) डूब जाए और मग़रिब का वक़्त निकल जाए, ऊँटों को खोलना,

पृष्ठ ८३६ का ७५७

فتاوی رضویہ جلد دہم

حدودِ عرفات سے باہر نہ ہو جائے ورنہ حرام ہے۔ نماز ظہر و عصر ملانے کے بعد موقف کو جانے میں دیر اس وقت سے غروب تک کھانے پینے یا توجہ بخدا کسی کام میں مشغول ہونا، کوئی دنیوی بات کرنا، غروب پر یقین ہو جانے کے بعد روانگی میں تاخیر کرنا، مغرب یا عشاء عرفات میں پڑھنا۔

تنبیہ: موقف میں چھتری لگانے یا کسی طرح سایہ چاہنے سے حتی المقدور بچو، ہاں جو مجبور ہے معذور ہے۔

تنبیہ ضروری، اشد ضروری بد نگاہی ہمیشہ حرام ہے نہ کہ احرام میں نہ کہ موقف میں، یا مسجد الحرام میں نہ کہ کعبہ معظمہ کے سامنے نہ کہ طواف، بیت الحرام میں، یہ تمہارے بہت امتحان کا موقعہ ہے۔ عورتوں کو حکم دیا گیا ہے کہ یہاں منہ نہ چھپاؤ اور تمہیں حکم دیا گیا ہے کہ ان کی طرف نگاہ نہ کرو، یقین جانو کہ یہ بڑے عزت والے بادشاہ کی باندیاں ہیں اور اس وقت تم اور وہ سب خاص دربار میں حاضر ہو کر بلا تشبیہ شیر کا بچہ اس کی بغل میں ہو اس وقت کون اس کی طرف نگاہ اٹھا سکتا ہے، تو اللہ تعالی واحد قہار کی کنیزیں کہ اس کے خاص دربار میں حاضر ہیں ان پر بد نگاہی کس قدر سخت ہوگی وَلِلّٰهِ الْمَثَلُ الْأَعْلٰی (اور اللہ تعالی ہی کی شان سب سے بلند ہے) ہاں ہاں ہوشیار، ایمان بچائے ہوئے، قلب و نگاہ سنبھالے ہوئے، حرم وہ جگہ ہے جہاں گناہ کے ارادے پر پکڑا جاتا ہے اور ایک گناہ لاکھ گناہ کے برابر ٹھہرتا ہے، الہی! خیر کی توفیق دے۔ آمین!

فصل پنجم منی ومزدلفہ وباقی افعال حج (۱) جب غروبِ آفتاب کا یقین ہو جائے فوراً مزدلفہ کو چلو، اور امام کا ساتھ افضل ہے مگر وہ دیر کرے تو اس کا انتظار نہ کرو۔ (۲) راستے بھر ذکر، درود و دعا لبیک و زاری و بکا میں مصروف رہو۔ (۳) راستہ میں جہاں گنجائش پاؤ اور اپنی یا دوسرے کی ایذا کا احتمال نہ ہو تو اتنی دیر اتنی دور تیز چلو، پیادہ ہو خواہ سوار۔ (۴) جب مزدلفہ نظر آئے بشرطِ قدرت پیادہ ہو لینا بہتر ہے اور نہا کر داخل ہونا افضل ہے۔ (۵) وہاں پہنچ کر حتی الامکان جبلِ قزح کے پاس راستے سے بچ کر اترو ورنہ جہاں جگہ ملے۔ (۶) غالبا وہاں پہنچتے پہنچتے شفق ڈوب جائے گی، مغرب کا وقت نکل جائے گا، اونٹ کھولنے،

Before unloading your belongings, perform Maghrib and Isha prayers with the Imam. Even if time remains, never pray Maghrib beforehand, nor on the way; praying Maghrib at its designated time on this day is a sin. If you do pray it, you must repeat it at the time of Isha. In short, upon reaching here, perform Maghrib and Isha not with the intention of current performance (Ada) but with the intention of missed prayer (Qadha) behind the Imam to the best of your ability. As soon as his Salaam is over, the congregation for Isha will commence immediately; pray the Fard of Isha, then the Sunnahs of Maghrib and Isha, and then Witr. If you can join a congregation with the Imam, do so; otherwise, form your own congregation, and if that is not possible, pray alone.

(7) Spend the rest of the night in Dhikr, Talbiyah, Durood, and supplication, as this is a very superior place and a very superior night. If life permits, many nights for sleep will be available, and who knows if this night will be granted by God again. If staying awake is not possible, then sleep in a state of purity, for sleeping is better than idle talk. Wake up early enough to finish necessities and purification before dawn. Today, the morning prayer (Fajr) will be offered very early in the dark. Strive not to miss the Imam's congregation, or rather the first Takbeer, for one who performs Isha and Fajr in congregation receives the reward of staying awake the entire night.

(8) Now comes the time for the second attendance in the Great Presence. Yes, indeed, the doors of mercy have been opened; yesterday at Arafat, rights of Allah were forgiven, here there is a promise of forgiveness for rights of people. Perform Waqoof at Mash'ar al-Haram, specifically on the special hill, or at its base if space is unavailable. If that is also not possible, perform Waqoof anywhere except Wadi Muhassar where you find space, and keep in mind all the things mentioned regarding the Waqoof at Arafat.

(9) When the time for two Rak'ats remains before sunrise, proceed towards Mina with the Imam. Pick up small pebbles, about the size of date pits, from a clean place and wash them three times. Do not make pebbles by breaking stones.

(10) Remain engaged in Dhikr, supplication, Durood, and frequent Talbiyah throughout the way as usual.

(11) When you reach Wadi Muhassar (1), walk very quickly for five hundred and forty-five cubits to cross it, but not so fast that it causes distress to anyone. During this

interval, keep reciting this prayer: "O Allah! Do not kill us with Your wrath, nor destroy us with Your punishment." (2)

(1) This is a valley between Mina and Muzdalifah, outside the boundaries of both. It starts from the peak of the mountain on the left side while going from Muzdalifah to Mina and extends for 545 cubits. The People of the Elephant (Ashab-al-Feel) stayed here, and the punishment of Ababil birds descended upon them. One should pass through it quickly and seek refuge from divine punishment. 12 (m) (2) O Allah! Do not kill us with Your wrath, do not destroy us with Your punishment, and grant us well-being before that. 12 (m)

सामान उतारने से पहले इमाम के साथ मग़रिब और ईशा की नमाज़ पढ़ें। और अगर वक़्त बचा हो, तब भी मग़रिब की नमाज़ हरगिज़ न पढ़ें और न ही रास्ते में, क्योंकि आज के दिन मग़रिब की नमाज़ मग़रिब के वक़्त में पढ़ना गुनाह है। अगर आप पढ़ लेंगे, तो ईशा के वक़्त दोबारा पढ़नी होगी। संक्षेप में, यहाँ पहुँचकर मग़रिब और ईशा की नमाज़ अदा की नियत से नहीं बल्कि क़ज़ा की नियत से जहाँ तक संभव हो इमाम के साथ पढ़ें। उनके सलाम फेरते ही फ़ौरन ईशा की जमाअत होगी; ईशा के फ़र्ज़ पढ़ें, उसके बाद मग़रिब और ईशा की सुन्नतें और वित्र पढ़ें। अगर इमाम के साथ नमाज़ मिल सके तो अपनी जमाअत बना लें, और अगर न हो सके तो अकेले पढ़ें।

(७) बाकी रात ज़िक्र, लब्बैक, दुरूद और दुआ में गुज़ारें, क्योंकि यह बहुत अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) जगह है और बहुत अफ़ज़ल रात है। अगर ज़िंदगी रही तो सोने के लिए बहुत सी रातें मिलेंगी, और कौन जाने यह रात खुदा दोबारा कैसे अता करे। और अगर मुमकिन न हो, तो पाकी (पवित्रता) की हालत में सो जाएँ क्योंकि फ़ुज़ूल बातों से सोना बेहतर है। और सुबह होने से इतना पहले उठ जाएँ कि ज़रूरतों और पाकी से फ़ारिग हो सकें। आज सुबह की नमाज़ बहुत अंधेरे में पढ़ी जाएगी। कोशिश करें कि इमाम की जमाअत, बल्कि पहली तकबीर भी छूटने न पाए, क्योंकि जो ईशा और फ़ज्र की नमाज़ जमाअत से पढ़ता है, उसे पूरी रात जागने का सवाब मिलता है।

(८) अब दरबार-ए-आज़म की दूसरी हाज़िरी का वक़्त आया। हाँ, हाँ, करम के दरवाज़े खोल दिए गए हैं; कल अराफ़ात में अल्लाह के हक़ माफ़ हुए, यहाँ बंदों के हक़ माफ़ फ़रमाने का वादा है। मशअरुल हराम में यानी ख़ास पहाड़ी पर और अगर जगह न मिले तो उसके दामन (तलहटी) में, और न हो सके तो वादी-ए-मुहस्सर के अलावा जहाँ जगह पाएँ वुक़ूफ़ (ठहरना) करें और उन तमाम बातों का ख्याल रखें जो अराफ़ात के वुक़ूफ़ में बताई गई थीं।

(९) जब सूर्योदय में दो रकअत पढ़ने का वक़्त रह जाए, तो इमाम के साथ मिना की ओर चलें और यहाँ से छोटी-छोटी कंकरियाँ खजूर की गुठली के बराबर पाक जगह से उठा लें और तीन बार धो लें। किसी पत्थर को तोड़कर कंकरियाँ न बनाएँ।

(१०) रास्ते भर पहले की तरह ज़िक्र, दुआ, दुरूद और ज़ोर-ज़ोर से लब्बैक पुकारने में मशगूल रहें।

(११) जब वादी-ए-मुहस्सर (१) पहुँचें, तो पाँच सौ पैंतालीस हाथ की दूरी तक बहुत तेज़ी से चलें, लेकिन इतनी तेज़ी नहीं कि किसी को तकलीफ़ हो। और इस बीच यह दुआ पढ़ते रहें: "ऐ अल्लाह! हमें अपने ग़ज़ब से क़त्ल न कर और अपने अज़ाब से हमें हलाक न कर।" (२)

(१) यह मिना और मुज़दलिफ़ा के बीच एक नाला है जो दोनों की सीमाओं से बाहर है। मुज़दलिफ़ा से मिना जाते समय बाईं ओर जो पहाड़ पड़ता है उसकी चोटी से शुरू होकर ५४५ हाथ तक है। यहाँ 'असहाब-ए-फ़ील' (हाथी वाले) ठहरे थे और उन पर अबाबील का अज़ाब उतरा था। यहाँ से जल्दी गुज़रना चाहिए और ईश्वरीय दंड से पनाह माँगनी चाहिए। १२ (म) (२) ऐ अल्लाह! हमें अपने ग़ज़ब से हलाक न कर, हमें अपने अज़ाब से बर्बाद न कर, और इससे पहले हमें सलामती अता फ़रमा। १२ (म)

اسباب اتارنے سے پہلے امام کے ساتھ مغرب و عشاء پڑھو، اور اگر وقت باقی رہے جب بھی ابھی مغرب ہر گز نہ پڑھو نہ راہ میں کہ اس دن یہاں نماز مغرب وقت مغرب میں پڑھنا گناہ ہے اگر پڑھ لوگے عشاء کے وقت پھر پڑھنی ہوگی، غرض یہاں پہنچ کر مغرب و عشاء میں بہ نیت ادانہ کہ بہ نیت قضاء حتی الامکان امام کے ساتھ پڑھو، اس کا سلام ہوتے ہی معا عشاء کی جماعت ہوگی، عشاء کے فرض پڑھو، اس کے بعد مغرب و عشاء کی سنتیں اور وتر پڑھو، اگر امام کے ساتھ نماز مل سکے تو اپنی جماعت کر لو اور نہ ہو سکے تو تنہا پڑھو۔

(۷) باقی رات ذکر لبیک و درود ودعا میں گزار دو کہ یہ بہت افضل جگہ ہے اور بہت افضل رات ہے زندگی ہو تو اور سونے کو بہت سی راتیں ملیں گی اور یہاں یہ رات خدا جانے دوبارہ کیسے ملے اور نہ ہو سکے تو خیر باطہارت سور ہو کہ فضول باتوں سے سونا بہتر ہے اور اتنے پہلے اٹھ کر صبح چمکنے سے پہلے ضروریات و طہارت سے فارغ ہو لو، آج نماز صبح بہت اندھیرے سے پڑھی جائے گی، کوشش کرو کہ جماعت امام بلکہ پہلی تکبیر فوت نہ ہو کہ عشاء و صبح جماعت سے پڑھنے والا پوری شب بیداری کا ثواب پاتا ہے۔

(۸) اب دربار اعظم کی دوسری حاضری کا وقت آیا۔ ہاں ہاں کرم کے دروازے کھولے گئے ہیں کل عرفات میں حقوق اللہ معاف، یہاں حقوق العباد معاف فرمانے کا وعدہ ہے۔ مشعر الحرام میں یعنی خاص پہاڑی پر اور جگہ نہ ملے تو اس کے دامن میں، اور نہ ہو سکے تو وادی محسّر کے سوا جہاں گنجائش پاؤ وقوف کرو اور تمام باتیں کہ وقوف عرفات میں مذکور ہوئیں ملحوظ رکھو۔

(۹) جب طلوع آفتاب میں دو رکعت پڑھنے کا وقت رہ جائے امام کے ساتھ منیٰ کو چلو اور یہاں سے ساتھ چھوٹی چھوٹی کنکریاں دانہ خرما کے برابر پاک جگہ سے اٹھا کر تین بار دھو لو کسی پتھر کو توڑ کر کنکریاں نہ بناؤ۔

(۱۰) راستے بھر بدستور ذکر و دعا و درود و بکثرت لبیک میں مشغول رہو۔

(۱۱) جب وادی محسّر ۱؎ پہنچو پانچ سو پنتالیس ہاتھ بہت جلدی تیزی کے ساتھ چل کر نکل جاؤ مگر نہ وہ تیزی جس سے کسی کو ایذا ہو اور اس عرصہ میں یہ دعا کرتے جاؤ: اَللّٰھُمَّ ۲؎ لَا تَقْتُلْنَا بِغَضَبِکَ وَلَا تُھْلِکْنَا بِعَذَابِکَ

۱؎: یہ منی مزدلفہ کے بیچ میں ایک نالہ دونوں کی حدود سے خارج مزدلفہ سے منی کو جاتے بائیں ہاتھ کو جو پہاڑ پڑتا ہے اس کی چوٹی سے شروع ہو کر ۵۴۵ ہاتھ تک ہے یہاں اصحاب الفیل آکر ٹھہرے تھے اور ان پر عذاب ابابیل اترا تھا اس سے جلد گزرنا اور عذاب الہی سے پناہ مانگنا چاہئے ۱۲منہ(م) ۲؎: الہی! اپنے غضب سے ہمیں قتل نہ کر اور اپنے عذاب سے ہمیں ہلاک نہ کر اور اس سے پہلے ہمیں عافیت دے۔ ۱۲منہ (م)

Volume 10 Fatawa Razawiya

"And grant us safety before that"[1]. (12) When Mina comes into view, recite the same prayer that you recited upon seeing Mina while coming from Makkah. (13) Upon reaching Mina, before doing anything else, go to Jamrah al-Aqaba (Footnote 1), which is the last Jamrah from this side and is located in the middle of the valley before Makkah. While on your mount, stand five cubits away from the Jamrah such that Mina is on your right, the Kaaba is on your left, and you are facing the Jamrah. Throw seven pebbles individually, raising your right arm so that the whiteness of the armpit is visible, saying 'Bismillah Allahu Akbar' with each throw. It is better if the pebbles reach the Jamrah; otherwise, they should fall within a distance of three cubits. If they fall further away, that pebble will not be counted. Stop reciting 'Labbayk' after the first pebble. (14) When all seven are completed, do not stay there; immediately perform Dhikr and return while supplicating. (15) Now occupy yourself with the sacrifice. This is not the same sacrifice as that of Eid, which is not mandatory for a traveler at all but mandatory for a wealthy resident even if they are performing Hajj. Rather, this is a sacrifice of gratitude for Hajj. It is mandatory for a Qiran and Tamattu' pilgrim even if they are poor. It is recommended (mustahab) for a Mufrid pilgrim even if they are wealthy. The age and physical conditions for the animal are the same as for the Eid sacrifice. (16) If you know how to slaughter, do it yourself as it is Sunnah; otherwise, be present at the time of slaughter. (17) Lay the animal facing the Qibla and you also face the Qibla. While saying Takbir, quickly move a very sharp knife so that the four main veins are cut. Do not move the hand excessively to cause unnecessary pain.

Footnote 1: There are three pillars between Mina and Makkah called Jamrah. The first one near Mina is called Jamrah al-Ula, the middle one is Jamrah al-Wusta, and the last one near Makkah is Jamrah al-Aqaba. 12 Minhu (M). Footnote 2: Issue: A person in absolute poverty who neither possesses an animal fit for sacrifice nor enough cash or assets to sell and buy one, if they intend Qiran or Tamattu' Hajj, ten fasts will be mandatory for them instead of sacrifice. Three fasts should be kept during the months of Hajj, i.e., from the 1st of Shawwal to the 9th of Dhu al-Hijjah, at any time after wearing the Ihram, whether consecutively or separately. It is better to fast on the 7th, 8th, and 9th. The remaining seven fasts should be kept after the 13th whenever they wish, and it is better to do so after reaching home. (M).

[1] Maslak-e-Mutaqassit with Irshad-us-Sari, Chapter on Etiquettes of Heading towards Mina, Dar-ul-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 128. [2] Kitab Ad'iya al-Hajj wal-Umrah annexed to

Irshad-us-Sari, Chapter: When it is the second day etc., Dar-ul-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 17.

जिल्द दहम (खंड 10) फ़तावा रज़विया

"और हमें उससे पहले कुशलता प्रदान कर"[1]। (12) जब मिना नज़र आए तो वही दुआ पढ़ो जो मक्का से आते समय मिना को देखकर पढ़ी थी। (13) जब मिना पहुँचो तो सब कामों से पहले जमरतुल अक़बा (टिप्पणी 1) की ओर जाओ, जो इधर से आख़िरी जमरा है और मक्का मुअज़्ज़मा से पहले नाले के बीच में है। सवारी पर जमरे से पाँच हाथ की दूरी पर इस तरह खड़े हो कि मिना दाहिने हाथ पर, काबा बाईं ओर हो और जमरा की तरफ मुँह हो। सात कंकरियाँ एक-एक करके सीधा हाथ उठाकर इस तरह मारो कि बगल की सफेदी ज़ाहिर हो, हर एक पर 'बिस्मिल्लाह अल्लाहु अकबर' कहो। बेहतर यह है कि कंकरियाँ जमरे तक पहुँचें, वर्ना तीन हाथ के फासले पर गिरें। इससे ज़्यादा फासले पर गिरी हुई कंकरी गिनी नहीं जाएगी। पहली कंकरी के साथ 'लब्बैक' पुकारना बंद कर दो। (14) जब सात पूरी हो जाएँ तो वहाँ न रुको, तुरंत ज़िक्र करो और दुआ करते हुए पलट आओ। (15) अब क़ुर्बानी में मशगूल हो जाओ। यह वह क़ुर्बानी नहीं है जो ईद में होती है, क्योंकि वह तो मुसाफिर पर बिल्कुल नहीं होती और निवासी धनवान पर वाजिब है चाहे वह हज में ही क्यों न हो। बल्कि यह हज का शुक्राना है। 'क़ारिन' और 'मुतमत्ते' पर वाजिब है चाहे वह फकीर ही क्यों न हो। और 'मुफ़रिद' के लिए मुस्तहब (पसंदीदा) है चाहे वह अमीर हो। जानवर की उम्र और अंगों की वही शर्तें हैं जो ईद की क़ुर्बानी में होती हैं। (16) अगर ज़बह करना आता हो तो आप खुद ज़बह करें क्योंकि यह सुन्नत है, वर्ना ज़बह के समय वहाँ मौजूद रहें। (17) जानवर को क़िबला की ओर लिटाकर खुद भी क़िबला की तरफ रहें और तकबीर कहते हुए बहुत तेज़ छूरी से इतनी जल्दी चलाएं कि चारों रग़ें कट जाएं। हाथ को ज़रूरत से ज़्यादा न बढ़ाएँ जिससे बे-सबब तकलीफ़ हो।

टिप्पणी 1: मिना और मक्का के बीच तीन खंभे बने हुए हैं जिन्हें जमरा कहते हैं। पहला जो मिना के पास है 'जमरा ऊला' कहलाता है, बीच वाला 'जमरा वुस्ता' और आख़िरी जो मक्का मुअज़्ज़मा के पास है 'जमरा अक़बा' है। 12 मिन्हु (म)। टिप्पणी 2: मसला: एक निहायत मोहताज शख़्स जिसके पास न क़ुर्बानी के लायक कोई जानवर हो और न इतना नकद या सामान कि उसे बेचकर खरीद सके अगर वह 'क़िरान' या 'तमत्तो' की नीयत करता है, तो उस पर क़ुर्बानी के बदले दस रोज़े वाजिब होंगे। तीन रोज़े हज के महीनों में यानी 1 शव्वाल से 9 ज़िल-हिज्जा तक एहराम बाँधने के बाद जब चाहे रख ले, चाहे एक साथ या अलग-अलग। बेहतर यह है कि 7, 8 और 9 तारीख को रखे। बाकी सात रोज़े 13 तारीख के बाद जब चाहे रखे, और बेहतर यह है कि घर पहुँचने के बाद रखे। (म)।

[1] मस्लक-ए-मुतक़स्सित मअ इर्शाद-उस-सारी, फ़स्ल मिना की तरफ़ जाने के आदाब में, दारुल किताब अल-अरबी, बैरूत, पृ. 128। [2] किताब अदि'या अल-हज वल-उमरा मुल्हक़ इर्शाद-उस-सारी, फ़स्ल जब दूसरा दिन हो आदि, दारुल किताब अल-अरबी, बैरूत, पृ. 17।

पृष्ठ 836 का 759

وَعَافِنَا قَبْلَ ذٰلِکَ 1۔ (۱۲) جب منیٰ نظر آئے وہی دعا پڑھو جو مکہ سے آتے منیٰ کو دیکھ کر پڑھی تھی۔ (۱۳) جب منیٰ پہنچو سب کاموں سے پہلے جمرۃ العقبہ (عہ 1) کو جاؤ جو ادھر سے پچھلا جمرہ ہے اور مکہ معظمہ سے پہلے نالے کے وسط میں، سواری پر جمرے سے پانچ ہاتھ ہٹے ہوئے یوں کھڑے ہو کہ منیٰ داہنے ہاتھ پر اور کعبہ بائیں کو اور جمرہ کی طرف منہ ہو، سات کنکریاں جدا جدا سیدھا ہاتھ اٹھا کر کہ سپیدی بغل ظاہر ہو ہر ایک پر بِسْمِ اللّٰہِ اللّٰہُ اَکبَر کہہ کر مارو۔ بہتر یہ ہے کہ کنکریاں جمرہ تک پہنچیں ورنہ تین ہاتھ کے فاصلے پر گریں۔ اس سے زیادہ فاصلے پر گری تو وہ کنکری شمار میں نہ آئے گی۔ پہلی کنکری سے لبیک موقوف کرو۔ (۱۴) جب سات پوری ہو جائیں وہاں نہ ٹھہرو، فوراً ذِکر کرو، دعا کرتے پلٹ آؤ۔ (۱۵) اب قربانی میں مشغول ہو، یہ وہ قربانی نہیں جو عید میں ہوتی ہے کہ وہ تو مسافر پر اصلاً نہیں اور مقیم مالدار پر واجب ہے اگرچہ حج میں ہو بلکہ یہ حج کا شکرانہ ہے۔ قارن و متمتع پر واجب اگرچہ فقیر ہو۔ اور مفرد کے لیے مستحب اگرچہ غنی ہو، جانور کی عمر و اعضاء میں وہی شرطیں ہیں جو عید کی قربانی میں۔ (۱۶) ذبح کرنا آتا ہو تو آپ ذبح کرو کہ سنت ہے ورنہ وقتِ ذبح حاضر رہو۔ (۱۷) رو بقبلہ لٹا کر خود بھی رو بقبلہ رہو اور تکبیر کہتے ہوئے نہایت تیز چھری سے بہت جلد اتنی پھیرو کہ چاروں رگیں کٹ جائیں، زیادہ ہاتھ نہ بڑھاؤ کہ بے سبب کی تکلیف ہے۔

عہ ۱: منیٰ اور مکہ کے بیچ میں تین ستون بنے ہوئے ہیں ان کو جمرہ کہتے ہیں، پہلا جو منیٰ سے قریب ہے جمرہ اولیٰ کہلاتا ہے اور بیچ کا جمرہ وسطیٰ اور اخیر کا مکہ معظمہ سے قریب ہے جمرۃ العقبٰی ۱۲ منہ (م) عہ ۲: مسئلہ: محتاج محض جس کی ملک میں نہ قربانی کے لائق کوئی جانور ہو نہ اتنا نقد یا اسباب کہ اسے بیچ کر لے سکے وہ اگر قران یا تمتع کی نیت کرے گا تو اس

پر قربانی کے بدلے دس روزے واجب ہوں گے تین تو حج کے مہینوں میں یعنی یکم شوال سے نویں ذی الحج تک احرام باندھنے کے بعد اس بیچ میں جب چاہے رکھ لے ایک ساتھ خواہ جدا جدا۔ اور بہتر ہے ۷، ۸ اور ۹ کو ہوں اور باقی سات تیرھویں کے بعد جب چاہے رکھے، اور بہتر یہ ہے کہ گھر پہنچ کر ہوں۔ (م)

1 مسلک متقسط مع ارشاد الساری فصل فی آداب التوجہ الی منیٰ دارالکتاب العربی بیروت ص ۱۲۸

2 کتاب ادعیۃ الحج والعمرۃ ملحق ارشاد الساری فصل فاذا کان یوم الثانی الخ دارالکتاب العربی بیروت ص ۱۷

Fatawa Razawiyya Volume 10

(18) It is better at the time of slaughtering the sacrificial animal to tie both its forelegs and one hind leg, and untie them after slaughtering. (19) If it is a camel, make it stand and strike its chest at the base of the neck with a spear after saying 'Takbir' (Allah is Greatest), for this is the Sunnah, and slaughtering it (by cutting the throat) is disliked (Makruh). However, it will be Halal (permissible) if slaughtered by cutting at one place on the neck. The common notion among the ignorant that a camel is slaughtered at three places is wrong, contrary to Sunnah, and causes unnecessary pain and is disliked. (20) Do not skin or cut the limbs of any slaughtered animal until it has cooled down (death is confirmed), as it causes pain. (21) After performing this sacrifice, pray for the acceptance of your Hajj and sacrifice, and that of all Muslims. (22) After the sacrifice, sit facing the Qibla; men should perform 'Halq' (shave the entire head), which is superior, or 'Taqseer' (trim the hair), which is permissible. It is forbidden (Haram) for women to shave their heads; they should have their hair trimmed equivalent to the length of a finger joint. (23) Whether performing Halq or Taqseer, start from the right side and recite: "Allahu Akbar, Allahu Akbar, La ilaha illallahu wallahu Akbar, Allahu Akbar wa lillahil hamd." Recite this even after finishing, and seek forgiveness for all Muslims.1 (24) Bury the hair, and always bury whatever is separated from the body like hair, nails, or skin. (25) Do not trim nails or shave the beard before 'Halq' or 'Taqseer' here. (26) Now, everything that was prohibited by Ihram has become permissible, except for sexual intercourse with women, touching with lust, embracing, kissing, or looking with desire. (27) It is better to go to Makkah Mu'azzama today, on the 10th of Dhul-Hijjah, for the obligatory circumambulation called 'Tawaf al-Ziyarah'. Perform it on foot as mentioned before, in a state of purity and covering the 'awrah' (private parts), but there is no 'Idtiba' (baring the right shoulder) in this Tawaf. (28) If a Qarin or Mufrid has already performed both 'Raml' and 'Sa'ee' during 'Tawaf al-Qudum', or a Mutamatti' has done so during a voluntary (Nafl) Tawaf after wearing the Ihram for Hajj, or if they have only done 'Sa'ee', then they should not do Raml or Sa'ee in this (obligatory) Tawaf. However, if they did not perform Raml or Sa'ee at all, or only performed Raml, or the Tawaf in which they performed them was for Umrah (like the first Tawaf for Qarin and Mutamatti'), or if that Tawaf was performed without purity, then in these four cases, they should perform both Raml and Sa'ee during this obligatory Tawaf. (29) If weak people and women do not go on the 10th due to the crowd, then the 11th is better for them. A great benefit on that day is that the 'Mataf' (circumambulation area) is found empty;

there are only a few, about twenty people. Women can also perform it with complete peace of mind.

---

1 Maslak-e-Mutaqassit with Irshad-us-Sari, Chapter on Halq and Taqseer, Dar-ul-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 152.

(१८) बेहतर यह है कि क़ुरबानी के वक़्त जानवर के दोनों हाथ और एक पाँव बाँध लो, ज़बह करने के बाद खोल दो। (१९) ऊँट हो तो उसे खड़ा करके सीने में गले की जड़ पर तकबीर कहकर नेज़ा मारो कि सुन्नत यही है और उसका ज़बह करना मकरूह है। मगर हलाल ज़बह से भी हो जाएगा और गले पर एक जगह से ज़बह करे। जाहिलों में जो मशहूर है कि ऊँट तीन जगह से ज़बह होता है, वह ग़लत और सुन्नत के ख़िलाफ़ है और मुफ़्त की अज़ियत (तकलीफ़) व मकरूह है। (२०) किसी ज़बीहा (ज़बह किए हुए जानवर) को जब तक वह ठंडा न हो जाए, खाल न खींचो और न ही अंग काटो, क्योंकि यह ईज़ा (तकलीफ़) है। (२१) यह क़ुरबानी करके अपने और तमाम मुसलमानों के हज और क़ुरबानी के क़बूल होने की दुआ करो। (२२) क़ुरबानी के बाद क़िब्ला की तरफ़ मुँह करके बैठें, मर्द 'हलक़' करें यानी पूरा सिर मुंडाएं क्योंकि यह अफ़ज़ल है, या बाल कतरवाएं कि इसकी भी इजाज़त है। और औरतों के लिए सिर मुंडाना हराम है, वे एक पोर (उँगलियों के जोड़) के बराबर बाल कतरवा लें। (२३) हलक़ हो या तक़सीर, दाहिनी तरफ़ से शुरुआत करो और उस वक़्त 'अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर, ला इलाहा इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर व लिल्लाहिल हम्द' कहो। काम पूरा होने के बाद भी यह पढ़ो और तमाम मुसलमानों के लिए बख़्शिश (क्षमा) माँगो।1 (२४) बाल दफ़न करवाओ और हमेशा शरीर से जो भी चीज़ जैसे बाल, नाखून, खाल अलग हो, उसे दफ़न करो। (२५) यहाँ हलक़ या तक़सीर से पहले नाखून न कटवाओ और न ही ख़त (दाढ़ी) बनवाओ। (२६) अब औरत से सोहबत (यौन संबंध) करने, शहवत के साथ हाथ लगाने, गले लगाने, बोसा (चुंबन) लेने और देखने के सिवा वह सब कुछ हलाल हो गया जो एहराम ने हराम किया था। (२७) अफ़ज़ल यह है कि आज दसवीं तारीख़ को ही फ़र्ज़ तवाफ़ के लिए, जिसे 'तवाफ़-ए-ज़ियारत' कहते हैं, मक्का मुअज़्ज़मा जाओ। बताए गए तरीक़े के मुताबिक़ पैदल, पाकीज़ा हालत में और सतर-ए-औरत के साथ तवाफ़ करो, मगर इस तवाफ़ में 'इज़तिबा' (दाहिने कंधे को खुला रखना) नहीं है। (२८) क़ारिन और मुफ़रिद ने अगर 'तवाफ़-ए-क़ुदूम' में और मुतमत्ते ने हज का एहराम बाँधने के बाद किसी नफ़्ल तवाफ़ में हज के'रमल' और 'सई' दोनों कर लिए हों या सिर्फ़ सई कर चुके हों, तो इस तवाफ़ में रमल और सई कुछ न करें। और अगर इसमें रमल और सई कुछ न किया हो या सिर्फ़ रमल किया हो, या जिस तवाफ़ में किए थे वह उमराह का था (जैसे क़ारिन और मुतमत्ते का पहला तवाफ़) या वह तवाफ़ बिना पाकी (वज़ू/ग़ुस्ल) के किया था, तो इन चारों सूरतों में रमल और सई दोनों इस फ़र्ज़ तवाफ़ में करें। (२९) कमज़ोर लोग और औरतें अगर भीड़ की वजह से दसवीं को न जा सकें, तो उनके लिए ग्यारहवीं

को जाना अफ़ज़ल है। उस दिन यह बड़ा फ़ायदा है कि 'मताफ़' (तवाफ़ करने की जगह) ख़ाली मिलता है, गिनती के बस बीस आदमी होते हैं। औरतें भी पूरी तसल्ली के साथ...

---

1 मस्लक-ए-मुतक़स्सित मअ इरशाद-उस-सारी, फ़स्ल फ़िल हलक़ वत तक़सीर, दारुल किताब अल अरबी, बेरुत, पेज १५२।

(۱۸) بہتر یہ ہے کہ وقت ذبح قربانی والے جانور کے دونوں ہاتھ اور ایک پاؤں باندھ لو، ذبح کر کے کھول دو۔ (۱۹) اونٹ ہو تو اسے کھڑا کر کے سینہ میں گلے کے انتہا پر تکبیر کہہ کر نیزہ مارو کہ سنت یو نہی ہے اور اس کا ذبح کرنا مکروہ۔ مگر حلال ذبح سے بھی ہو جائے گا اور گلے پر ایک جگہ سے ذبح کرے۔ جاہلوں میں جو مشہور ہے کہ اونٹ تین جگہ سے ذبح ہوتا ہے غلط و خلاف سنت اور مفت کی اذیت و مکروہ ہے۔ (۲۰) کسی ذبیحہ کو جب تک سرد نہ ہو کھال نہ کھینچو، اعضاء نہ کاٹو کہ ایذا ہے۔ (۲۱) یہ قربانی کر کے اپنے اور تمام مسلمانوں کے حج و قربانی قبول ہو جانے کی دعا کرو۔ (۲۲) بعد قربانی رو بقبلہ بیٹھ کر مرد حلق کریں یعنی سار ا سر منڈائیں کہ افضل ہے یا بال کتروائیں کہ رخصت ہے۔ اور عورتوں کو حلق حرام ہے ایک پور برابر بال کتروادیں۔ (۲۳) حلق ہو یا تقصیر دہنی طرف سے ابتداء کرو اور اس وقت اللّٰہُ اَکْبَرُ ط اللّٰہُ اَکْبَرُ ط لَا اِلٰہَ اِلَّا اللّٰہُ وَ اللّٰہُ اَکْبَرُ ط اللّٰہُ اَکْبَرُ وَ لِلّٰہِ الْحَمْدُ ط بعد فراغت بھی کہو، سب مسلمانوں کی بخشش مانگو۔1 (۲۴) بال دفن کرواور ہمیشہ بدن سے جو چیز بال، ناخن، کھال جدا ہو دفن کرو۔ (۲۵) یہاں حلق یا تقصیر سے پہلے ناخن نہ کتر اؤ، خط نہ بنواؤ۔ (۲۶) اب عورت سے صحبت کرنے، شہوت سے ہاتھ لگانے، گلے لگانے، بوسہ لینے، دیکھنے کے سوا جو کچھ احرام نے حرام کیا تھا سب حلال ہو گیا۔ (۲۷) افضل یہ ہے کہ آج دسویں ہی تاریخ فرض طواف کے لیے جسے طواف الزیارۃ کہتے ہیں مکہ معظمہ جاؤ بدستور مذکور پیادہ با طہارت وستر عورت طواف کرو مگر اس طواف میں اضطباع نہیں۔ (۲۸) قارن و مفرد طواف قدوم میں اور متمتع بعد احرام حج کسی طواف نفل میں حج کے رمل و سعی دونوں خواہ صرف سعی کر چکے ہوں تو اس طواف میں رمل و سعی کچھ نہ کریں اور اگر اس میں رمل و سعی کچھ نہ کیا ہو یا صرف رمل کیا ہو یا جس طواف میں کئے تھے

وہ عمرہ کا تھا جیسے قارن و متمتع کا پہلا طواف یا وہ طواف بے طہارت کیا تھا تو ان چاروں صورتوں میں رمل وسعی دونوں اس طواف فرض میں کریں۔ (۲۹) کمزور اور عورتیں اگر بھیڑ کے سبب دسویں کو نہ جائیں تو اس کے بعد گیارھویں کو افضل ہے اور اس دن یہ بڑا نفع ہے کہ مطاف خالی ملتا ہے، گنتی کے ہیں بیس آدمی ہوتے ہیں۔ عورتوں کو بھی با طمینان تمام

---

1 مسلک متقسط مع ارشاد الساری فصل فی الحلق والتقصیر دارالکتاب العربی بیروت ص ۱۵۲

Every time, one gets to kiss the Hajar al-Aswad (Black Stone). (30) One who does not go on the eleventh should do so on the twelfth. After this, delaying without a valid excuse is a sin. A penalty of one sacrifice will be incurred; however, for instance, if a woman starts her periods or postnatal bleeding, she should perform it after they end. (31) In any case, one must pray two Rak'ahs after Tawaaf. After this Tawaaf, women will also become lawful [for their husbands]; the Hajj is now complete, as this Tawaaf was its second pillar. (32) Spending the nights of the tenth, eleventh, and twelfth in Mina is Sunnah—not in Muzdalifah, not in Makkah, and not on the way. Thus, whoever goes for Tawaaf on the tenth or eleventh must return to spend the night in Mina. (33) On the eleventh date, after listening to the Imam's sermon following the Zuhr prayer, proceed again for Ramy (stoning). During these days, begin Ramy at Jamrah al-Oula, which is near Masjid al-Khaif towards Muzdalifah. For its Ramy, approach from the direction of the road to Makkah and climb up, as this spot is higher compared to Jamarah al-Aqaba. Facing the Kaaba, throw seven pebbles like a sling and move slightly ahead of the Jamrah; raise your hands in supplication so that the palms face the Qibla. With presence of heart, engage in praise, Durood, supplication, and seeking forgiveness for a duration of at least twenty verses, otherwise for as long as it takes to recite one-fourth of a Para or Surah Al-Baqarah. (34) Then, do the same at Jamrah al-Wusta. (35) Then at Jamarah al-Aqaba, but do not stop here after Ramy; return immediately. Supplicate while returning. (36) Exactly in the same way, on the twelfth date, perform Ramy of the three Jamarat after noon (Zawaal). Some people perform Ramy before noon today and depart for Makkah al-Mukarramah; this is against our primary school of thought and is based on a weak narration. (37) After performing the Ramy on the twelfth, one has the option to leave for Makkah al-Mukarramah before sunset. However, leaving after sunset is undesirable. Now, staying for one more day and performing Ramy on the thirteenth after noon as usual before going to Makkah is better; but since common people leave on the twelfth, staying here for an additional night and day is difficult for a small group. (38) Shaving the head (Halq) is not permissible before Ramy. (39) Ramy on the eleventh and twelfth is not valid at all before noon. (40) These matters are disliked (Makruh) in Ramy: 1. Performing Ramy of the tenth after noon; 2. Performing Ramy of the thirteenth before noon; 3. Throwing a large stone during Ramy; 4. Breaking a large stone into smaller pebbles to throw; 5. Picking up and throwing pebbles that are lying at the base of the Jamrah, as these are rejected pebbles; those that are accepted are taken away to be placed in the scales of good deeds on the Day

of Resurrection, otherwise mountains of stones would have gathered around the Jamarat; 6. Throwing impure pebbles; seven...

हर फेरे में संग-ए-असवद का बोसा मिलता है। (३०) जो ग्यारहवीं को न जाए बारहवीं को कर ले। इसके बाद बिना किसी ठोस कारण के देरी करना पाप है। जुर्माने के रूप में एक कुर्बानी देनी होगी, हाँ उदाहरण के लिए अगर किसी महिला को मासिक धर्म या प्रसव के बाद का रक्तस्राव शुरू हो जाए, तो वह इनके खत्म होने के बाद करे। (३१) किसी भी स्थिति में, तवाफ़ के बाद दो रकअत ज़रूर पढ़ें। इस तवाफ़ से महिलाएँ भी हलाल हो जाएँगी; हज पूरा हो गया क्योंकि यह तवाफ़ इसका दूसरा स्तंभ था। (३२) १०वीं, ११वीं और १२वीं की रातें मिना में बिताना सुन्नत है, न मुज़दलिफ़ा में, न मक्का में और न रास्ते में। तो जो १० या ११ को तवाफ़ के लिए गया हो, वह वापस आकर रात मिना में ही बिताए। (३३) ग्यारहवीं तारीख को ज़ुहर की नमाज़ के बाद इमाम का खुत्बा सुनकर फिर रमी के लिए चलें। इन दिनों में रमी जमरह-ए-ऊला से शुरू करें जो मुज़दलिफ़ा की तरफ मस्जिद-ए-खैफ़ के करीब है। इसकी रमी के लिए मक्का के रास्ते की तरफ से आकर ऊपर चढ़ें क्योंकि यह जगह जमरह-ए-अक़बा की तुलना में ऊँची है। काबा की ओर मुँह करके सात कंकड़ियाँ गुलेल की तरह मारकर जमरह से थोड़ा आगे बढ़ जाएँ और दुआ में हाथ इस तरह उठाएँ कि हथेलियाँ किबला की ओर रहें। पूरे दिल से कम से कम बीस आयतें पढ़ने जितनी देर तक हम्द, दुरूद, दुआ और इस्तिग़फ़ार में व्यस्त रहें, वरना सवा पारा या सूरह बक़रह पढ़ने की अवधि तक। (३४) फिर जमरह-ए-वुस्ता पर जाकर वैसा ही करें। (३५) फिर जमरह-ए-अक़बा पर, लेकिन यहाँ रमी करके रुकें नहीं, तुरंत लौट आएँ। लौटते समय दुआ करें। (३६) बिल्कुल इसी तरह बारहवीं तारीख को तीनों जमरों की रमी ज़वाल (दोपहर) के बाद करें। कुछ लोग आज दोपहर से पहले रमी करके मक्का मुअज़्ज़मा के लिए चल देते हैं, यह हमारे मुख्य धर्म (मज़हब) के खिलाफ है और एक कमज़ोर रिवायत है। (३७) बारहवीं की रमी करके सूर्यास्त से पहले विकल्प है कि मक्का मुअज़्ज़मा के लिए रवाना हो जाएँ। लेकिन सूर्यास्त के बाद जाना नापसंद (मायूब) है। अब एक दिन और ठहरना और तेरहवीं को हमेशा की तरह दोपहर ढलने के बाद रमी करके मक्का जाना होगा और यही सबसे बेहतर है, लेकिन आम लोग बारहवीं को चले जाते हैं तो एक रात और दिन यहाँ रुकने में छोटी जमात को परेशानी होती है। (३८) रमी से पहले सिर मुँडवाना (हलक़) जायज़ नहीं है। (३९) ग्यारहवीं और बारहवीं की रमी दोपहर से पहले बिल्कुल भी सही नहीं है। (४०) रमी में ये बातें मकरूह (नापसंद) हैं: १. दसवीं की रमी दोपहर के बाद करना, २. तेरहवीं की रमी दोपहर से पहले करना, ३. रमी में बड़ा पत्थर मारना, ४. बड़े पत्थर को तोड़कर उसकी कंकड़ियाँ मारना, ५. जमरह के नीचे गिरी हुई कंकड़ियाँ उठाकर मारना क्योंकि ये वे कंकड़ियाँ हैं जिन्हें स्वीकार नहीं किया गया है; जो स्वीकार होती हैं, उन्हें कयामत

के दिन नेकियाँ तौलने वाले पलड़े में रखने के लिए उठा लिया जाता है, वरना जमरों के पास पहाड़ों का ढेर लग जाता, ६. नापाक कंकड़ियाँ मारना, सात...

ہر پھیرے میں سنگِ اسود کا بوسہ ملتا ہے۔ (۳۰) جو گیارہویں کو نہ جائے بارہویں کو کر لے۔ اس کے بعد بلا عذر تاخیر گناہ ہے۔ جرمانہ میں ایک قربانی ہو گی، ہاں مثلاً عورت کو حیض یا نفاس آ گیا تو وہ ان کے ختم کے بعد کرے۔ (۳۱) بہر حال بعد طواف دو رکعت ضرور پڑھیں۔ اس طواف سے عورتیں بھی حلال ہو جائیں گی، حج پورا ہو گیا کہ اس کا دوسرا رکن یہ طواف تھا۔ (۳۲) دسویں، گیارہویں، بارہویں راتیں منیٰ ہی میں بسر کرنا سنت ہے، نہ مزدلفہ میں نہ مکہ میں نہ راہ میں۔ تو جو دس یا گیارہ کو طواف کے لیے گیا واپس آ کر رات منیٰ ہی میں گزارے۔ (۳۳) گیارہویں تاریخ بعد نماز ظہر امام کا خطبہ سن کر پھر رمی کو چلو، ان ایام میں رمی جمرہ اولٰی سے شروع کرو جو مسجد خیف سے قریب مزدلفہ کی طرف ہے اس کی رمی کو راہ مکہ کی طرف سے آ کر چڑھو کہ یہ جگہ بہ نسبت جمرہ العقبہ کے بیبلند ہے، یہاں رو بہ کعبہ سات کنکریاں بطور منڈھور مار کر جمرہ سے کچھ آگے بڑھ جاؤ اور دعا میں ہاتھ یوں اٹھاؤ کہ ہتھیلیاں قبلہ کو رہیں، حضور قلب سے حمد و درود و دعا و استغفار میں کم سے کم بیس آیتیں پڑھنے کی قدر مشغول ہو ورنہ پون پارہ یا سورہ بقر پڑھنے کی مقدار تک۔ (۳۴) پھر جمرہ وسطیٰ پر جا کر ایسا ہی کرو۔ (۳۵) پھر جمرہ عقبہ پر مگر یہاں رمی کر کے نہ ٹھہرو، معاً پلٹ آؤ۔ پلٹنے میں دعا کرو۔ (۳۶) بعینہٖ اسی طرح بارہویں تاریخ تینوں جمرے بعد زوال رمی کرو۔ بعض لوگ آج دوپہر سے پہلے رمی کر کے مکہ معظمہ کو چل دیتے ہیں، یہ ہمارے اصل مذہب کے خلاف اور ایک ضعیف روایت ہے۔ (۳۷) بارہویں کی رمی کر کے غروب آفتاب سے پہلے اختیار ہے کہ مکہ معظمہ روانہ ہو جاؤ۔ مگر بعد غروب چلا جانا معیوب ہے۔ اب ایک دن اور ٹھہر نا اور تیرھویں کو بدستور دوپہر ڈھلے رمی کر کے مکہ جانا ہو گا اور یہی افضل ہے مگر عام لوگ بارہویں کو چلے جاتے ہیں تو ایک

رات دن یہاں قیام میں قلیل جماعت کو دقت ہے۔ (۳۸) حلق رمی سے پہلے جائز نہیں۔ (۳۹) گیارہویں بارہویں کی رمی دوپہر سے پہلے اصلاً صحیح نہیں۔ (۴۰) رمی میں یہ امور مکروہ ہیں: ۱۔ دسویں کی رمی دوپہر بعد کرنا، ۲۔ تیرھویں کی رمی دوپہر سے پہلے کرنا، ۳۔ رمی میں بڑا پتھر مارنا، ۴۔ توڑ کر بڑے پتھر کی کنکریاں مارنا، ۵۔ جمرہ کے نیچے جو کنکریاں پڑی ہیں اٹھا کر مارنا کہ یہ مردود کنکریاں ہیں جو قبول ہوتی ہیں قیامت کے دن نیکیوں کے پلے میں رکھنے کو اٹھائی جاتی ہیں ورنہ جمروں کے گرد پہاڑ جمع ہو جاتے، ۶۔ ناپاک کنکریاں مارنا، سات

...more than that. To act contrary to the direction mentioned for Rami, to stand at a distance of less than five cubits from the Jamrah (there is no harm if more), to change the sequence of the Jamrahs, to drop the pebble near the Jamrah instead of throwing it.

(41) On the last day, i.e., the 12th or 13th, when leaving Mina for Makkah al-Mukarramah, alight from your mount in the valley of Muhassab (1), which is near Jannat al-Mu'alla. If you don't alight, stay there for a while engaged in prayer. It is better to perform prayers until Isha, take a nap, and then enter Makkah al-Mukarramah.

(42) Now after the 13th, as long as you stay in Makkah, perform as many Umrahs as possible on behalf of your spiritual guide, teacher, parents, especially the Resplendent Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), his companions, his progeny, and Ghaus-e-Azam (may Allah be pleased with them all). Go to Tan'im, which is three miles north of Makkah al-Mukarramah towards Madinah Tayyibah. Bind the Ihram for Umrah from there as described above, come back, perform Tawaf and Sa'y according to the prescribed manner, and then do Halq (shave the head) or Taqseer (trim the hair). The Umrah is complete. For one who has already performed Halq and performs another Umrah on the same day, it is sufficient to run a razor over the head. Similarly for one who has no natural hair on his head.

(43) Do not remain deprived of completing the recitation of the Holy Quran at least once in Makkah al-Mukarramah.

(44) Visit Jannat al-Mu'alla and pay respects to the Mother of the Believers, Khadijah al-Kubra, and others buried there.

(45) Be honored by visiting the sacred birthplace of the Resplendent Prophet (peace and blessings of Allah be upon him).

(46) Visit the grave of Hazrat Abdul Muttalib and do not go to the grave of Abu Talib. Similarly, do not go to the shrine in Jeddah that people have built for Hazrat Hawwa (Eve, may Allah be pleased with her), which is hundreds of cubits long, as it is baseless.

(47) Seek honor from the service of scholars, especially the prominent ones like, currently, Hazrat Maulana Abdul Haq Sahib Muhajir Ilahabadi, who resides near

Hamidia Mahal and is a personification of mercy for the Muslims of India; and Hazrat Sheikh al-Ulama Maulana Muhammad Saeed Babasil; and Hazrat Sheikh al-A'immah Maulana Ahmad Abul Khair Mirdad near Safa; and Hazrat Imad us-Sunnah Maulana Sheikh Salih Kamal near Bab al-Islam; and Hazrat Maulana Saeed Ismail Afandi, the librarian of the Haram libraries in the Haram Sharif, and others, may Allah protect them (2).

---

(1): Jannat al-Mu'alla is Makkah's cemetery, near which is a mountain separated from the bed of the watercourse by another mountain on the right hand while going towards Makkah. The watercourse between these two mountains is Wadi Muhassab. Jannat al-Mu'alla is not included in Muhassab. (M)

(2): All these gentlemen have passed away. (M)

फ़तवा-ए-रज़विया जिल्द 10

...से अधिक मारना। रमी के लिए जो दिशा बताई गई है उसके विरुद्ध करना, जमराह से पांच हाथ से कम की दूरी पर खड़ा होना (अधिक होने में कोई हर्ज नहीं), जमराहों के क्रम को बदलना, मारने के बदले कंकड़ी जमराह के पास डाल देना।

(41) अंतिम दिन यानी बारहवीं या तेरहवीं को जब मिना से विदा होकर मक्का मुअज़्ज़मा चलें तो वादी-ए-मुहस्सब (1) में, जो जन्नतुल मुअल्ला के पास है, सवारी से उतर लें। यदि न उतरें तो कुछ देर रुककर दुआ में मग्न रहें। श्रेष्ठ यह है कि ईशा तक नमाज़ें पढ़ें, एक नींद लें और फिर मक्का मुअज़्ज़मा में प्रवेश करें।

(42) अब तेरहवीं के बाद जब तक मक्का में ठहरें, अपने पीर-उस्ताद, माता-पिता, विशेष रूप से हुज़ूर पुरनूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और उनके सहाबा और अहले बैत और हुज़ूर ग़ौसे आज़म रज़ियल्लाहु अन्हुम की ओर से जितने हो सकें उमराह करते रहें। तन'ईम जाएं जो मक्का मुअज़्ज़मा से उत्तर यानी मदीना तय्यबा की ओर तीन मील की दूरी पर है। वहाँ से उमराह का एहराम बाँधें जैसा कि ऊपर बताया गया है, वापस आएँ और नियम के अनुसार तवाफ़ और सई करके हलक़ (सिर मुँडवाना) या तक़सीर (बाल कटवाना) कर लें। उमराह हो गया। जिसने हलक़ कर लिया हो और मान लीजिए उसी दिन दूसरा उमराह किया, तो उसके लिए सिर पर उस्तरा फिरा लेना काफ़ी है। इसी तरह उसके लिए जिसके सिर पर प्राकृतिक बाल न हों।

(43) मक्का मुअज़्ज़मा में कम से कम एक बार कुरान मजीद का ख़त्म करने से वंचित न रहें।

(44) जन्नतुल मुअल्ला हाज़िर हों और उम्मुल मोमिनीन ख़दीजतुल कुबरा और वहां दफ़्न अन्य महानुभावों की ज़ियारत करें।

(45) हुज़ूर अनवर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पवित्र जन्म स्थान की ज़ियारत से भी सम्मानित हों।

(46) हज़रत अब्दुल मुत्तलिब की ज़ियारत करें और अबू तालिब की क़ब्र पर न जाएँ। इसी तरह जेद्दा में लोगों ने जो हज़रत हव्वा रज़ियल्लाहु अन्हा का मज़ार कई सौ हाथ का बना रखा है, वहाँ भी न जाएँ क्योंकि वह बे-बुनियाद है।

(47) विद्वानों की सेवा से सौभाग्य प्राप्त करें, विशेष रूप से वरिष्ठों से जैसे आजकल हज़रत मौलाना अब्दुल हक़ साहब मुहाजिर इलाहाबादी, जो हमीदिया महल के पास विराजमान हैं और भारत के

मुसलमानों के लिए रहमत की मूरत हैं; और हज़रत शैख़ुल उलमा मौलाना मुहम्मद सईद बाबसील; और हज़रत शैख़ुल अइम्मा मौलाना अहमद अबुल खैर मिरदाद सफ़ा के पास; और हज़रत इमादुस सुन्नत मौलाना शैख़ सालेह कमाल बाबुल इस्लाम के पास; और हज़रत मौलाना सईद इस्माइल आफ़ंदी, हरम शरीफ़ के पुस्तकालयों के लाइब्रेरियन, और अन्य, अल्लाह उनकी रक्षा करे(2)।

---

(1): जन्नतुल मुअल्ला मक्का का कब्रिस्तान है, इसके पास एक पहाड़ है और वह दूसरे पहाड़ के सामने मक्का जाते हुए दाहिने हाथ पर नाले के तल से अलग है। इन दोनों पहाड़ों के बीच का नाला वादी-ए-मुहस्सब है, जन्नतुल मुअल्ला मुहस्सब में शामिल नहीं है। (म)

(2): ये सभी महानुभाव परलोक सिधार चुके हैं। (म)

سے زیادہ مارنا۔ رمی کے لیے جو جہت مذکور ہوئی اس کا خلاف کرنا، جمرہ سے پانچ ہاتھ سے کم فاصلہ پر کھڑا ہونا، زیادہ کا مضائقہ نہیں، جمروں میں خلاف ترتیب کرنا، مارنے کے بدلے کنکری جمرے کے پاس ڈال دینا۔

(۴۱) اخیر دن یعنی بارھویں خواہ تیرھویں کو جب منٰی سے رخصت ہو کر مکہ معظمہ چلو تو وادی محصب عہ ۱ میں کہ جنۃ المعلٰی کے قریب ہے سواری سے اتر لو بے اترے کچھ دیر ٹھہر کر مشغول دعا ہو، اور افضل یہ ہے کہ عشاء تک نمازیں پڑھوا ایک نیند لے کر داخل مکہ معظمہ ہو۔

(۴۲) اب تیرھویں کے بعد جب تک مکہ میں ٹھہرو اپنے پیر استاد، ماں باپ خصوصاً حضور پر نور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم اور ان کے اصحاب وعترت اور حضور غوث اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہم کی طرف سے جتنے ہو سکیں عمرے کرتے رہو، تنعیم کو جو مکہ معظمہ سے شمال یعنی مدینہ طیبہ کی طرف تین میل کے فاصلے پر ہے جاؤ وہاں سے عمرہ کا احرام جس طرح اوپر بیان ہوا باندھ کر آؤ اور طواف و سعی حسب دستور کر کے حلق یا تقصیر کر لو عمرہ ہو گیا، جو حلق کر چکا اور مثلاً اسی دن دوسرا عمرہ کیا وہ سر پر استرا پھر وا لے کافی ہے۔ یوں ہی وہ جس کے سر پر قدرتی بال نہ ہوں۔

(۴۳) مکہ معظمہ میں کم از کم ایک بار ختم قرآن مجید سے محروم نہ رہے۔

(۴۴) جنۃ المعلٰی حاضر ہو کرام المومنین خدیجۃ الکبرٰی ودیگر مدفونین کی زیارت کرے۔

(۴۵) مکان ولادت اقدس حضور انور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی بھی زیارت سے مشرف ہو۔

(۴۶) حضرت عبد المطلب کی زیارت کریں اور ابوطالب کی قبر پر نہ جاؤ، یونہی جدہ میں جو لوگوں نے حضرت حوا رضی اللہ عنہا کا مزار کئی سو ہاتھ کا بنارکھا ہے وہاں بھی نہ جاؤ کہ بے اصل ہے۔

(۴۷) علماء کی خدمت سے شرف لو خصوصاً اکابر جیسے آج کل حضرت مولانا عبدالحق صاحب مہاجر الٰہ آبادی کہ حمید یہ محل کے قریب تشریف فرما اور مسلمانانِ ہند کے لیے رحمتِ مجسم ہیں اور حضرت شیخ العلماء مولانا محمد سعید بابصیل اور حضرت شیخ الائمہ مولانا احمد ابوالخیر مرداد وقریب صفا اور حضرت عماد السنہ مولانا شیخ صالح کمال قریب باب الاسلام اور حضرت مولانا سعید اسمعیل آفندی حافظ کتب الحرم حرم شریف کے کتب خانے میں وغیر ہم حفظہم عہ ۲ اللہ تعالیٰ۔

عہ۱: جنت المعلیٰ کہ مکہ کا قبرستان ہے اس کے پاس ایک پہاڑ ہے اور وہ دوسرے پہاڑ کے سامنے مکہ کو جاتے ہوئے داہنے ہاتھ پر نالے کے پیٹ سے جدا ہے۔ ان دونوں پہاڑوں کے بیچ کا نالہ وادی محصب ہے، جنت المعلیٰ محصب میں داخل نہیں۔ (م)

عہ۲: یہ سب حضرات رخصت ہو چکے ہیں۔ (م)

Fatawa-e-Razviya - Volume Ten

(48) Entering the Ka'bah Mu'azzamah is a matter of great bliss if attained in a permissible manner. Entry is open to the general public, but it is not a task for a weak man in such intense crowding. Neither are women allowed to venture into such crowds. Even if a strong man manages to save himself from harm, he will cause harm to others by pushing. And this is not permissible. One will not find any spiritual delight in such a visit. Specifically, entering through a transaction is forbidden (Haraam), and taking money for it is also Haraam. Even if a recommended (mustahab) act is achieved through forbidden means, it also becomes forbidden. If one cannot escape these evils, then visiting the Hateem Shareef should be considered a blessing; as mentioned earlier, that too is the land of the Ka'bah. And if it happens that it is agreed with the servants of the Ka'bah that they will not be given anything in exchange for entry, then afterwards or before, one may give thousands of rupees if desired. Enter with perfect observance of inner and outer etiquettes, eyes lowered, neck bowed, ashamed of sins. Trembling and shaking before the Majesty of the Lord of the House, say 'Bismillah' and enter by stepping forward with the right foot first. Walk until you are about three hand-spans away from the front wall. There, perform two cycles (Rakat) of voluntary prayer (Nafil) at a time that is not disliked (Makruh), as that was the prayer spot of the Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him). Then, placing your cheek and mouth against the wall, strive in praise, salutations, and supplication. Keeping your gaze lowered in the same way, go to the four corners and pray, cling to the pillars, then ask for the attainment of this wealth and the acceptance of Hajj and pilgrimage. Return in the same manner with eyes lowered; never look up or here and there. Hope for great grace, for He says: 'Whoever enters it is safe.' And all praise belongs to Allah.

(49) Never take leftover wick/candles etc. that the servants give here or in Madinah Tayyibah; instead, light a wick from your own side and take the remainder away.

(50) When intending to depart, perform the Farewell Circumambulation (Tawaf-e-Wida) without Raml, Sa'i, and Idtiba, as it is obligatory for outsiders. Yes, if a woman is in a state of menstruation or postnatal bleeding at the time of departure, it is not obligatory for her. Then perform two cycles (Rakat) of prayer at the Maqam-e-Ibrahim.

(51) Then come to Zamzam and drink water in the same manner. Pour some on your body.

(52) Then, standing at the door of the Ka'bah, kiss the pure threshold and pray for acceptance and repeated visits, and recite the same comprehensive prayer.

(53) Then, coming to Al-Multazam and holding the cover (Ghilaf) of the Ka'bah, cling to it in the same manner and do plenty of Dhikr, Salutations (Durood), and supplication.

(54) Then kiss the Hajar-e-Aswad (Black Stone) and shed whatever tears you have.

(55) Then, walking backwards with your face towards the Ka'bah, or if walking straight, turn back repeatedly and look at the Ka'bah with longing. Crying over the separation from it or making a weeping face, exit the noble mosque by stepping out with the left foot first and recite the mentioned prayer; Bab al-Hazwarah is better for this.

फ़तावा-ए-रज़विया - जिल्द दस

(48) काबा मुअज़्ज़मा के भीतर प्रवेश करना अत्यंत सौभाग्य की बात है यदि यह जायज़ तरीके से प्राप्त हो। आम जनता के लिए प्रवेश खुला होता है, लेकिन ऐसी भीषण भीड़ में यह किसी कमज़ोर व्यक्ति का काम नहीं है। न ही महिलाओं को ऐसी भीड़ में जाने की अनुमति है। यदि कोई शक्तिशाली पुरुष स्वयं को कष्ट से बचा भी ले, तो वह दूसरों को धक्के देकर कष्ट देगा। और यह जायज़ नहीं है। ऐसी हाज़िरी में कोई आध्यात्मिक आनंद नहीं मिलेगा। विशेष रूप से, लेन-देन के माध्यम से प्रवेश करना हराम (वर्जित) है और इसके लिए पैसा लेना भी हराम है। यदि हराम के माध्यम से कोई मुस्तहब (पसंदीदा) कार्य प्राप्त होता है, तो वह भी हराम हो जाता है। यदि इन बुराइयों से छुटकारा न मिले, तो हतीम शरीफ की हाज़िरी को गनीमत समझें; जैसा कि ऊपर बताया गया है कि वह भी काबा की ही भूमि है। और यदि शायद ऐसा हो सके कि काबा के खादिमों (सेवकों) के साथ यह तय हो जाए कि वे प्रवेश के बदले कुछ नहीं लेंगे, तो उसके बाद या पहले चाहे हज़ारों रुपये दे दें। पूर्ण आंतरिक और बाहरी शिष्टाचार का पालन करते हुए, आँखें नीची किए, गर्दन झुकाए, गुनाहों पर शर्मिंदा होकर प्रवेश करें। घर के रब के जलाल (प्रताप) से थरथराते और कांपते हुए 'बिस्मिल्लाह' कहकर पहले दायाँ पाँव आगे बढ़ाकर प्रवेश करें। सामने की दीवार तक इतना चलें कि तीन हाथ का फासला रहे। वहां दो रकात नफ़्ल (स्वैच्छिक नमाज़) उस समय पढ़ें जो मकरूह (नापसंद) न हो, क्योंकि वह नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का मुसल्ला (नमाज़ पढ़ने का स्थान) है। फिर दीवार पर गाल और मुँह रखकर हम्द (प्रशंसा), दुरूद और दुआ में पूरी कोशिश करें। इसी तरह निगाहें नीची किए चारों कोनों पर जाएँ और दुआ करें और खंभों से चिपटें, फिर इस दौलत के मिलने और हज व ज़ियारत की क़बूलियत मांगें। इसी तरह आँखें नीची किए वापस आएं ऊपर या इधर-उधर हरगिज़ न देखें। और बड़े फ़ज़्ल (अनुग्रह) की उम्मीद रखें क्योंकि वह फरमाता है: 'जो इस घर में दाखिल हुआ वह अमन में है।' और तमाम प्रशंसा अल्लाह के लिए है।

(49) बची हुई बत्ती वगैरह जो यहाँ या मदीना तैयबा में खादिम देते हैं, हरगिज़ न लें; बल्कि अपनी तरफ से बत्ती वहाँ रोशन करके बाकी उठा लें।

(50) जब विदाई का इरादा हो तो तवाफ़-ए-विदा (विदाई परिक्रमा) बिना रमल, सई और इज़्तिबा के अदा करें क्योंकि यह बाहर वालों पर वाजिब है। हाँ, यदि विदाई के समय महिला मासिक धर्म या प्रसवोत्तर रक्तस्राव की स्थिति में हो, तो उस पर यह अनिवार्य नहीं है। फिर मकाम-ए-इब्राहिम पर दो रकात पढ़ें।

(51) फिर ज़मज़म पर आकर उसी तरह पानी पिएं। शरीर पर डालें।

(52) फिर काबा के दरवाज़े पर खड़े होकर पावन देहरी को चूमों और क़बूलियत व बार-बार हाज़िरी की दुआ माँगो और वही दुआ-ए-जामे (व्यापक प्रार्थना) पढ़ो।

(53) फिर मुल्तज़म पर आकर काबा के गिलाफ़ (गिलाफ) को थामकर उसी तरह चिपटें और ज़िक्र, दुरूद और दुआ की कसरत (बहुतायत) करें।

(54) फिर हज्र-ए-असवद (काला पत्थर) को चूमों और जो भी आँसू आपके पास हों उन्हें बहाएं।

(55) फिर काबा की ओर मुँह करके उलटे पाँव चलें या सीधे चलते हुए बार-बार मुड़कर काबा को हसरत से देखें। उससे जुदाई पर रोते हुए या रोने जैसा मुँह बनाते हुए मस्जिद-ए-करीम के दरवाज़े से बायाँ पाँव पहले निकालकर बाहर निकलें और बताई गई दुआ पढ़ो और इसके लिए 'बाबुल हज़वरह' सबसे बेहतर दरवाज़ा है।

पेज 763 का 836

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

(۴۸) کعبہ معظمہ کی داخلی کمالِ سعادت ہے اگر جائز طور پر نصیب ہو، حرم عام میں داخلی ہوتی ہے مگر سخت کش مکش کمزور مر د کا کام ہی نہیں، نہ عورتوں کو ایسے ہجوم میں جرأت کی اجازت، زبردست مرد اگر آپ ایذا سے بچ بھی گیا تو اوروں کو دھکے دے کر ایذا دے گا۔ اور یہ جائز نہیں۔ نہ یوں حاضری میں کچھ ذوق ملے اور خاص داخلی بے لین دین اور اس پر لینا بھی حرام اور دینا بھی۔ حرام کے ذریعہ ایک مستحب ملا بھی تو وہ بھی حرام ہو گیا، ان مفاسد سے نجات نہ ملے تو حطیم شریف کی حاضری غنیمت جانے اوپر گزرا کہ وہ بھی کعبہ ہی کی زمین ہے اور اگر شاید بن پڑے یوں کہ خدام کعبہ سے ٹھہر جائے کہ داخلی کے عوض میں کچھ نہ دیں گے۔ اس کے بعد یا قبل چاہے ہزاروں روپے دے دو تو کمالِ آداب ظاہر وباطن کی رعایت سے آنکھیں نیچے کئے، گردن جھکائے گناہوں پر شرماتے ۔ جلالِ رب البیت سے لرزتے کانپتے بسم اللہ کہہ کر پہلے سیدھا پاؤں بڑھا کر داخل ہو او ر سامنے کی دیوار تک اتنا پڑھو کہ تین ہاتھ کا فاصلہ رہے۔ وہاں دو رکعت نفل غیر وقت مکروہ میں پڑھو کہ نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا مصلیٰ ہے۔ پھر دیوار پر رخسار اور منہ رکھ کر حمد ودرود اور دعا میں کوشش کرو۔ یوں ہی نگاہیں نیچے کئے چار گوشوں پر جاؤ اور دعا کرو اور ستونوں سے چمٹواور پھر اس دولت کا ملنا اور حج وزیارت کا قبول مانگو اور یو نہی آنکھیں نیچے کئے واپس آؤ اوپر ادھر ادھر ہر گز نہ دیکھو۔ اور بڑے فضل کی امید کرو کہ وہ فرماتا ہے جو اس گھر میں داخل ہوا وہ امان میں ۔ والحمد للہ

(۴۹) بچی ہوئی بتی وغیرہ جو یہاں یا مدینہ طیبہ میں خدام دیتے ہیں ہر گز نہ لو بلکہ اپنے پاس سے بتی وہاں روشن کر کے باقی اٹھالو۔

(۵۰) جب عزمِ رخصت ہو طوافِ وداع بے رمل وسعی واضطباع بجالاؤ کہ باہر والوں پر واجب ہے۔ ہاں وقت رخصت عورت حیض ونفاس میں ہو تو اس پر نہیں۔ پھر دو رکعت مقام ابراہیم میں پڑھو۔

(۵۱) پھر زمزم پر آکر اسی طرح پانی پیو۔ بدن پر ڈالو۔

(۵۲) پھر دروازہ کعبہ پر کھڑے ہو کر آستانہ پاک کو بوسہ دو اور قبول وبار بار حاضری کی دعا مانگو اور وہی دعائے جامع پڑھو۔

(۵۳) پھر ملتزم پر آکر غلاف کعبہ تھام کر اسی طرح چمٹو ذکر ودرود اور دعا کی کثرت کرو۔

(۵۴) پھر حجر اسود کو بوسہ دواور جو آنسورکھتے ہو گراؤ۔

(۵۵) پھر الٹے پاؤں رخ بہ کعبہ یا سیدھے چلنے میں بار بار پھر کر کعبہ کو حسرت سے دیکھئے۔ اس کی جدائی پر روتے یارو نے کا منہ بناتے مسجد کریم کے دروازے سے بایاں پاؤں پہلے بڑھا کر نکلو اور دعائے مذکور پڑھو اور اس کے لئے بہتر باب الحزورہ ہے۔

(56) A woman in a state of menstruation or post-natal bleeding should stand at the door, look at the Kaaba with a longing gaze, and return after supplicating. (57) Then, according to one's means, after giving charity to the poor of Makkah al-Mukarramah, proceed towards the Great Master of Madinah al-Tayyibah, and success is with Allah.

Section Six: Violations and their Expiations Detailed explanations would lead to lengthiness, whereas this treatise is short and time is limited. Acting upon the methods already described will, InshaAllah Ta'ala, be sufficient to avoid penalties. Therefore, only a few matters are briefly stated here. **Warning:** In this section, wherever 'Dam' (sacrificial animal) is mentioned, it refers to a sheep or a goat, and 'Badna' refers to a camel or a cow. All these animals must fulfill the same conditions as required for sacrifice (Qurbani). By 'Sadaqah' (charity), it means one hundred and seventy-five (175) rupees and eight annas in English currency, which is one and three-quarters seers (at the rate of one hundred rupees per seer) plus half an anna weight of wheat, or double that amount of barley or dates, or their value. **Problem:** Where 'Dam' is prescribed, if that violation is due to illness, intense heat, severe cold, a wound, boils, or the discomfort of lice, it is called an involuntary violation. In this case, one has the option to either give one Sadaqah each to six needy persons instead of 'Dam', or fast for three days. And if Sadaqah was prescribed and it was done out of necessity, one has the choice to keep one fast instead of Sadaqah. Now listen to the rulings: (1) If a sewn garment or one colored with perfume is worn for four full pahars (periods of three hours) or continuously for several days, 'Dam' is obligatory. If it is for less than four pahars, even if it is for a single moment (2), then Sadaqah is due. (2) If worn during the day and taken off at night due to heat, or worn at night due to cold and taken off during the day, and it was taken off with the intention of stopping but worn again the next day, then another penalty will apply; and so on for every time it is repeated. (3) If worn due to illness, it will be considered one violation as long as that illness persists. If that illness surely goes away and another illness starts, also requiring the wearing of such clothes, then this will be a second violation, but an involuntary one. **Note 1:** Four pahars mean the duration of one day or night. For example, from sunrise to sunset, or from sunset to sunrise, or from noon to midnight, or from midnight to noon. 12 Amna (M) **Note 2:** That is, wearing it for even a moment and then taking it off, still incurs Sadaqah. 12 Amna (M)

फ़तावा रज़विया - जिल्द दहम (दसवीं)

(56) मासिक धर्म या प्रसव के बाद के रक्तस्राव की स्थिति में महिला को दरवाजे पर खड़ा होकर काबा को हसरत भरी निगाहों से देखना चाहिए और दुआ करके लौट जाना चाहिए। (57) फिर अपनी सामर्थ्य के अनुसार मक्का मुअज्जमा के गरीबों को दान देकर मदीना तैयबा के महान आका की ओर प्रस्थान करें, और अल्लाह ही तौफीक देने वाला है।

अध्याय छठा: अपराध और उनके कफ़्फ़ारे (प्रायश्चित) इनका विस्तार करने से लेख लंबा हो जाएगा, जबकि यह पुस्तिका संक्षिप्त है और समय कम है। जो तरीके बताए गए हैं, उन पर अमल करना इंशाअल्लाह तआला जुर्माने से बचने के लिए पर्याप्त होगा। इसलिए यहाँ केवल संक्षेप में कुछ चुनिंदा मसलों का वर्णन किया जा रहा है। **चेतावनी:** इस अध्याय में जहाँ कहीं 'दम' (बलि) कहा जाएगा, उससे तात्पर्य एक भेड़ या बकरी होगी, और 'बदना' से ऊंट या गाय। ये सभी जानवर उन्हीं शर्तों पर होने चाहिए जो कुर्बानी के लिए होती हैं। और 'सदक़ा' से तात्पर्य अंग्रेजी रुपये के हिसाब से एक सौ पचहत्तर (175) रुपये आठ आने भर है, जो सौ रुपये प्रति सेर के हिसाब से पौने दो सेर और ऊपर से अठन्नी भर गेहूं, या उससे दोगुना जौ या खजूर या उनकी कीमत है। **मसला:** जहाँ 'दम' का हुक्म है, यदि वह अपराध बीमारी, सख्त गर्मी, अत्यधिक ठंड, घाव, फोड़े या जुओं की पीड़ा के कारण होगा, तो उसे 'गैर-इख्तियारी' (अनैच्छिक) अपराध कहते हैं। इसमें यह विकल्प होगा कि 'दम' के बदले छह गरीबों को एक-एक सदक़ा दे दे या तीन दिन के रोज़े रख ले। और यदि उसमें सदक़ा का हुक्म है और वह मजबूरी में किया गया था, तो विकल्प होगा कि सदक़ा के बदले एक रोज़ा रख ले। अब अहकाम (नियम) सुनें: (1) सिला हुआ कपड़ा या खुशबू से रंगा हुआ कपड़ा चार पहर (पूर्ण 12 घंटे) या लगातार कई दिनों तक पहना तो 'दम' वाजिब है, और चार पहर से कम, चाहे एक पल के लिए भी हो (2), तो सदक़ा देना होगा। (2) यदि दिन को पहना और रात को गर्मी के कारण उतार दिया, या रात को सर्दी के कारण पहना और दिन को उतार दिया, और इस इरादे से उतारा कि अब नहीं पहनेंगे, लेकिन दूसरे दिन फिर पहन लिया, तो दूसरा जुर्माना होगा। इसी तरह जितनी बार भी ऐसा करेगा। (3) यदि बीमारी के कारण पहना तो जब तक वह बीमारी रहेगी, वह एक ही अपराध माना जाएगा। और यदि वह बीमारी निश्चित रूप से चली गई और दूसरी बीमारी शुरू हो गई जिसमें पहनने की ज़रूरत पड़ी, तो यह दूसरा अपराध होगा लेकिन गैर-इख्तियारी (अनैच्छिक)। **टिप्पणी 1:** चार पहर से तात्पर्य एक दिन या रात की अवधि है। उदाहरण के लिए सूर्योदय से सूर्यास्त तक, या सूर्यास्त से सूर्योदय तक, या दोपहर से आधी रात तक, या आधी रात से दोपहर तक। 12 आमना (म)

टिप्पणी 2: यानी पल भर के लिए पहना और फिर उतार दिया, तब भी सदक़ा वाजिब है। 12 आमना (म)

पृष्ठ 764 / 836

(۵۶) حیض و نفاس والی دروازے پر کھڑے ہو کر کعبہ کو بہ نگاہ حسرت دیکھے اور دعا کرتی پلٹے۔ (۵۷) پھر بقدر قدرت فقرائے مکہ معظمہ پر تصدق کر کے متوجہ سرکار اعظم مدینہ طیبہ ہو، وباللہ التوفیق۔

فصل ششم جرم اور ان کے کفارے ان کی تفصیل موجب تطویل اور رسالہ مختصر اور وقت قلیل، اور جو طریقے بتادئیے ہیں ان پر عمل کرنا ان شاء اللہ تعالیٰ جرمانے سے بچنے کا کفیل۔ لہذا یہاں صرف اجمالاً معدود مسائل کا بیان ہوتا ہے۔ **تنبیہ:** اس فصل میں جہاں دم کہیں گے اس سے مراد ایک بھیڑ یا بکری ہو گی، اور بدنہ اونٹ یا گائے۔ یہ سب جانور انھیں شرائط کے ہوں جو قربانی میں ہوں، اور صدقہ سے مراد انگریزی روپے سے ایک سو پچھتر (۱۷۵) روپے آٹھ آنے بھر کہ سو روپے کے سیر سے پونے دوسیر ہوئے اٹھنی بھر اوپر گندم یا اس کے دوندے جو یا کھجور یا ان کی قیمت۔ **مسئلہ:** جہاں دم کا حکم ہے وہ جرم اگر بیماری یا سخت گرمی یا شدید سردی یا زخم یا پھوڑے یا جوؤں کے ایذا کے باعث ہوگا تو اسے جرم غیر اختیاری کہتے ہیں اس میں اختیار ہو گا کہ دم کے بدلے چھ مسکینوں کو ایک ایک صدقہ دے دے یا تین روزے رکھ لے۔ اور اگر اس میں صدقہ کا حکم ہے اور بہ مجبوری کیا تھا اختیار ہوگا کہ صدقہ کے بدلے ایک روزہ رکھ لے۔ اب احکام سنئے: (۱) سلا کپڑا یا خوشبو کا رنگا چار پہر عہ ۱ کامل یا لگاتار زیادہ دنوں پہنا تو دم واجب ہے، اور چار پہر سے کم اگرچہ عہ ۲ ایک لحظہ تو صدقہ۔ (۲) اگر دن کو پہنا اور رات کو گرمی کے باعث اتار ڈالا، یا رات کو سردی کے سبب پہنا دن کو اتار دیا اور باز آنے کی نیت سے اتارا دوسرے دن پھر پہنا تو دوسرا جرمانہ ہوگا، اسی طرح جتنی بار کرے۔ (۳) بیماری کے سبب پہنا تو جب تک وہ بیماری رہے گی ایک جرم ہے اور اگر وہ بیماری یقیناً جاتی رہی دوسری

بیماری شروع ہو گئی اور اس میں بھی پہننے کی ضرورت ہے جب بھی یہ دوسرا جرم ہوگا مگر غیر اختیاری۔ **عہ ۱:** چار پہر سے مراد ایک دن یا رات کی مقدار ہے۔ مثلاً طلوع سے غروب یا غروب سے طلوع یا دو پہر سے آدھی رات یا آدھی رات سے دوپہر تک ۲ امنہ (م) **عہ ۲:** یعنی لمحہ بھر پہنا اور پھر اتار ڈالنا جب بھی صدقہ ہے ۱۲ امنہ (م)

صفحہ 764 از 836

Fatawa Razawiya, Volume 10

(4) If due to illness etc., it becomes necessary to wear clothes from head to toe, it is considered a single involuntary offense. However, if for example, only a turban (amama) was necessary and the person wore a shirt (kurta) as well, then there are two offenses: (1) the involuntary one for the turban and (2) the voluntary one for the shirt. (5) If a man covers his entire head or one-fourth of it, or a man or woman covers the entire face or one-fourth of it for four periods (pehr) or more continuously, then a sacrifice (dam) is obligatory. If less than one-fourth is covered for four periods, or more continuously, then a sacrifice (dam) is obligatory. And if less than one-fourth is covered for four periods, or less than four periods even if the whole head or face is covered, then charity (sadaqah) is due. If covered for less than one-fourth for less than four periods, it is a sin but there is no expiation (kaffara). (6) If a lot of perfume is applied such that many people notice it upon seeing, even if on a small part of a limb or a large limb like the head, face, thigh, or calf is fully covered even with a little perfume, then a sacrifice (dam) is due. If a little perfume is applied to a small part, then charity (sadaqah) is due. Ruling: Perfume is applied to the Black Stone (Hajr-e-Aswad). If while kissing it in the state of Ihram, a lot of it gets on the face, a sacrifice (dam) must be given, and if a little, then charity (sadaqah). (7) Applying oil or henna dye to the head such that hair is not covered, then one sacrifice (dam) is due. If applied thickly and four periods pass, then for a man there are two sacrifices (dam) and for less than four periods, one charity (sadaqah) and one sacrifice (dam). For a woman, in any case, it's one sacrifice (dam). (8) No matter how much perfume is applied to the body in a single sitting, it is one offense. In different sittings, it is a new offense each time. (9) If a little perfume is applied to various parts of the body such that if combined, it equals the amount of one complete large limb, then a sacrifice (dam) is due, otherwise charity (sadaqah). (10) Applying scented kohl three or more times requires a sacrifice (dam), otherwise charity (sadaqah).

Footnote 1: Ruling: Similarly, if henna is applied to the entire palm or sole, a sacrifice (dam) is due, whether for a man or a woman. If applied to all four (hands and feet) in one sitting, then one sacrifice (dam) is due; otherwise, one sacrifice (dam) for each sitting. If applied to any part of a hand or foot, then charity (sadaqah). (M) Footnote 2: One sacrifice for perfume on a whole limb, another for covering the head for four periods. (M) Footnote 3: Sacrifice (dam) for perfume and charity (sadaqah) for covering the head for less than four periods. (M) Footnote 4: This sacrifice (dam) is only for the perfume because covering the head is permissible for her (a woman). (M)

Footnote 5: (Arabic) This condition is set because in the case of a large amount of perfume, it is not restricted by the completeness of the limb. So, be mindful. (T)

फ़तावा रज़विया, खंड 10

(4) बीमारी आदि के कारण यदि सिर से पैर तक सभी कपड़े पहनने की आवश्यकता हुई, तो यह एक ही अनैच्छिक (गैर-इख्तियारी) अपराध है। और यदि उदाहरण के लिए केवल पगड़ी (अमामा) की आवश्यकता थी और उसने कुर्ता भी पहन लिया, तो दो अपराध हैं: (1) पगड़ी का अनैच्छिक और (2) कुर्ते का ऐच्छिक। (5) यदि पुरुष पूरा सिर या उसका एक चौथाई हिस्सा, या पुरुष या स्त्री पूरा चेहरा या उसका एक चौथाई हिस्सा लगातार चार पहर या उससे अधिक समय तक ढके, तो 'दम' (बलि) अनिवार्य है। और एक चौथाई से कम चार पहर तक या उससे अधिक लगातार ढकने पर भी दम है। और एक चौथाई से कम चार पहर तक या चार से कम, भले ही पूरा सिर या चेहरा ढका हो, तो सदक़ा (दान) है। और एक चौथाई से कम को चार पहर से कम समय तक ढका जाए तो यह पाप है, लेकिन कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) नहीं है। (6) यदि बहुत अधिक सुगंध लगाई जिसे देखकर बहुत से लोग बताएं भले ही वह अंग के एक छोटे टुकड़े पर हो, या किसी बड़े अंग जैसे सिर, चेहरा, जांघ या पिंडली पर थोड़ी सी ही सुगंध से पूरा लेप किया गया हो, तो उस पर 'दम' है। और यदि थोड़ी सी सुगंध थोड़े से हिस्से में लगाई गई हो, तो सदक़ा है। मसला: हजर-ए-अस्वद शरीफ़ पर खुशबू लगी होती है, यदि एहराम की स्थिति में उसे चूमते समय चेहरे पर बहुत अधिक खुशबू लग गई, तो दम देना होगा, और थोड़ी लगने पर सदक़ा। (7) सिर पर तेल या मेहंदी का खज़ाब (रंग) लगाया जिससे बाल न ढके हों, तो एक दम है। और यदि गाढ़ा लेप लगाया और चार पहर बीत गए, तो पुरुष पर दो दम हैं और चार पहर से कम होने पर एक सदक़ा और एक दम। और महिला के लिए हर हाल में एक दम। (8) एक ही बैठक (मजलिस) में शरीर पर कितनी ही खुशबू लगाई जाए, वह एक ही अपराध है, और अलग-अलग बैठकों में हर बार नया अपराध। (9) शरीर के अलग-अलग हिस्सों पर थोड़ी-थोड़ी खुशबू लगाई, यदि उन सबको मिलाने से एक बड़े पूर्ण अंग की मात्रा हो जाए, तो दम है, अन्यथा सदक़ा। (10) खुशबूदार सूरमा तीन या उससे अधिक बार लगाया, तो दम है, अन्यथा सदक़ा।

हाशिया 1: मसला: इसी तरह पूरी हथेली या तलवे पर मेहंदी लगाई तो दम है, चाहे पुरुष हो या महिला। और चारों (हाथ-पैर) पर एक ही बैठक में लगाई तो एक ही दम, अन्यथा हर बैठक पर एक दम। और हाथ या पैर के किसी हिस्से पर लगाई तो सदक़ा। (म) हाशिया 2: एक पूरे अंग पर खुशबू लगाने का दम, दूसरा चार पहर सिर ढकने का। (म) हाशिया 3: खुशबू पर दम और चार पहर से कम सिर ढकने पर सदक़ा। (म) हाशिया 4: केवल खुशबू का दम है क्योंकि सिर ढकना उसके(महिला)

लिए जायज़ है। (म) हाशिया 5: (अरबी पाठ) यह शर्त इसलिए लगाई गई है क्योंकि अधिक खुशबू की स्थिति में इसे अंग की पूर्णता के साथ प्रतिबंधित नहीं किया जाता है। अतः सावधान रहें। (त)

(۴) بیماری وغیرہ سے اگر سر سے ۱ عہ پاؤں تک سب کپڑے پہننے کی ضرورت ہوئی تو ایک ہی جرم غیر اختیاری ہے اور اگر مثلاً ضرورت صرف عمامہ کی تھی اور اس نے کرتا بھی پہنا تو دو ۲ جرم ہیں ۱ عمامہ کا غیر اختیاری اور ۲ کرتا کا اختیاری۔ (۵) مرد سار ا سر یا چہارم یا مرد خواہ عورت منہ کی ٹکلی ساری یا چہارم چار پہر یا زیادہ لگاتار چھپائیں تو دم ہے اور چہارم سے کم چار پہر تک یا زیادہ لگاتار چھپائیں تو دم ہے اور چہارم سے کم چار پہر تک یا چار سے کم اگرچہ سارا سر یا منہ تو صدقہ ہے اور چہارم سے کم کو چار پہر سے کم تک چھپائیں تو گناہ ہے کفارہ نہیں۔ (۶) خوشبو اگر بہت سی لگائی جسے دیکھ کر بہت لوگ بتائیں اگرچہ عضو کے تھوڑے ٹکڑے پر یا کوئی بڑا عضو جیسے سر یا منہ یا ران یا پنڈلی پورا سان دیا اگرچہ تھوڑی ہی خوشبو سے، جب تو اس پر دم ہے، اور اگر تھوڑی سی خوشبو تھوڑے حصے میں لگائی تو صدقہ ہے۔ مسئلہ : سنگ اسود شریف پر خوشبو ملی جاتی ہے وہ اگر بوسہ لینے میں بحالت احرام منہ کو بہت سی لگ گئی تو دم دینا ہو گا اور تھوڑی سے صدقہ۔ (۷) سر پر تیل مہندی کا خضاب کیا کہ بال نہ چھپائے تو ایک دم ہے اور اگر گاڑھی تھوپی اور چار پہر گزرے تو مرد پر دو دم ۴ عہ ہیں اور چار پہر سے کم تو ایک صدقہ ۵ عہ اور ایک دم، اور عورت ۶ عہ پر بہر حال ایک دم۔ (۸) ایک جلسہ میں کتنے ہی بدن پر خوشبو لگائے ایک جرم اور مختلف جلسوں میں ہر بار نیا جرم۔ (۹) تھوڑی سی خوشبو بدن کے متفرق حصوں ۷ عہ پر لگائی اگر جمع کرنے سے ایک بڑے عضو کامل کی مقدار ہو جائے تو دم ہے ورنہ صدقہ۔ (۱۰) خوشبودار سرمہ تین بار یا زیادہ بار لگایا تو دم ہے ورنہ صدقہ۔

عہ ۱ مسئلہ : یونہی پوری ہتھیلی یا تلوے پر مہندی لگائے تو دم ہے ، عورت ہو یا مرد ، اور چاروں میں ایک ہی جلسہ میں لگائی تو ایک ہی دم ، ورنہ ہر جلسہ پر ایک دم ، اور ہاتھ یا پاؤں کے کسی حصہ پر لگائی تو صدقہ ۱۲ منہ (م) عہ ۲ : ایک سارے عضو پر خوشبو کا دوسرا چار پہر سر چھپانے کا ۱۲منہ (م) عہ ۳ : خوشبو پر دم اور چار پہر سے کم سے کم سر چھپانے پر صدقہ ۱۲منہ (م) عہ ۴ : صرف خوشبو کا دم ہے اس لیے کہ سر چھپانا تو اسے روا ہے ۲ امنہ (م) عہ ۵ : قیدت بہ لان الطیب الکثیر لایتقید بکمال العضو فتنبہ ۱۲ منہ (م) یہ قید اس لیے لگائی ہے کہ کثیر خوشبو کی صورت میں کمالِ عضو کے ساتھ مقید نہیں کیا جاتا پس متوجہ رہو ۱۲منہ (ت)

Fatawa Razvia Volume 10

(11) If so much of a pure fragrance-containing item is eaten that it coats most of the mouth (note 1), then a 'Dam' (sacrifice) is required; otherwise, 'Sadaqah' (charity). (12) If fragrance is added to food and it is either cooked or disappears, then there is no penalty. However, if the fragrance components are predominant, it falls under the rule of pure fragrance. If the food portion is greater, general books state an absolute ruling that there is no expiation; yes, if the scent remains, it is disliked (Karahat). (13) If fragrance is mixed into a drink and the fragrance portion is dominant, or if one drinks it three times or more, then a 'Dam' is required; otherwise, 'Sadaqah'. Issue: It is better not to smoke fermented tobacco (khamira), but there is no prohibition or expiation (note 2). (14) If more than one-fourth of the hair of the head or beard is removed by any means, then a 'Dam' is required; in case of less, 'Sadaqah'. (15) If one is balding or has a very thin beard, see whether the removed hair amounts to one-fourth of that area's capacity or not. (16) Similarly, if hair is removed from several spots, they will be combined to see if they reach the quantity of one-fourth. (17) If hair from the entire body is removed in one sitting, it is considered a single violation; if in different sittings, each is a new violation. (18) Even if the entire moustache is shaved, only 'Sadaqah' is required. (19) If the neck or one armpit is fully shaved, a 'Dam' is required; for less, even if it's half or more, 'Sadaqah'. Similarly, regarding pubic hair, treating one-fourth as equivalent to the whole only applies to the head and beard. (20) Even if both armpits are fully shaved, it is still only one 'Dam'. (21) For shaving any body parts other than the head, beard, pubic area, and armpits, only 'Sadaqah' is required.

Note 1: I say: 'Dam' was not prescribed for this as many have stated, because it does not adhere to most of the mouth. When 'Dam' is not mandatory for pure fragrance [in this context], how can it be for a mixture? Here, in Sharh al-Lubab, while citing from Halabi, there is either an alteration or an omission of words, as we have explained in the margin there. 12 Minhu (T) Note 2: As we have detailed in the margin of Radd al-Muhtar. 12 Minhu (T)

Page 766 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दहम (भाग 10)

(11) यदि शुद्ध खुशबू वाली कोई चीज़ इतनी खाई जाए कि वह मुँह के अधिकांश हिस्से (नोट 1) में लग जाए, तो 'दम' (बलि) अनिवार्य है, अन्यथा 'सदक़ा' (दान)। (12) यदि भोजन पकाते समय खुशबू डाली गई और वह पक गई या लुप्त हो गई, तो कुछ भी अनिवार्य नहीं है। लेकिन यदि खुशबू के अंश अधिक हों, तो वह शुद्ध खुशबू के हुक्म में है। और यदि भोजन का हिस्सा अधिक है, तो आम किताबों में निरपेक्ष हुक्म दिया गया है कि इसमें कोई कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) नहीं है; हाँ, यदि खुशबू आए तो कराहत (नापसंदगी) है। (13) यदि पीने की चीज़ में खुशबू मिलाई गई और खुशबू का हिस्सा हावी है या तीन बार या उससे अधिक पिया गया, तो 'दम' है, अन्यथा 'सदक़ा' । मसला: खमीरा तंबाकू न पीना बेहतर है, लेकिन मनाही या कफ़्फ़ारा नहीं है (नोट 2)। (14) यदि सिर या दाढ़ी के बाल एक चौथाई से अधिक किसी तरह हटाए गए, तो 'दम' है और कम में 'सदक़ा'। (15) यदि कोई व्यक्ति गंजा है या दाढ़ी बहुत हल्की और झिरी (विराज) है, तो यह देखें कि क्या इतने बाल उस स्थान की एक चौथाई मात्रा तक पहुँचते हैं या नहीं? (16) इसी तरह, यदि कई जगहों से बाल हटाए गए हों, तो उन्हें मिलाकर देखा जाएगा कि क्या वे एक चौथाई की मात्रा तक पहुँचते हैं। (17) यदि पूरे शरीर के बाल एक ही बैठक में हटाए जाएँ तो वह एक ही अपराध माना जाएगा; और यदि अलग-अलग बैठकों में, तो हर बार नया अपराध। (18) मूंछें भले ही पूरी मुँडवा दी जाएँ केवल 'सदक़ा' है। (19) यदि गर्दन या एक बगल पूरी मुँडवा दी जाए, तो 'दम' है और कम में, भले ही आधा या उससे अधिक हो, 'सदक़ा' है। इसी प्रकार नाफ़ के नीचे के बालों (गुप्तांग के बाल) के लिए भी यही हुक्म है। एक चौथाई को पूरे के बराबर ठहराना केवल सिर और दाढ़ी में है। (20) दोनों बगलें पूरी मुँडवा लेने पर भी एक ही 'दम' है। (21) सिर, दाढ़ी, नाफ़ के नीचे और बगल के अलावा बाकी अंगों को मुँडवाने में केवल 'सदक़ा' है।

नोट 1: मैं कहता हूँ: इसमें 'दम' नहीं कहा गया है जैसा कि बहुत से लोगों ने कहा है, क्योंकि यह मुँह के अधिकांश हिस्से में नहीं चिपकता। जब शुद्ध खुशबू से 'दम' अनिवार्य नहीं होता, तो मिश्रण के साथ कैसे होगा? यहाँ शरह अल-लुबाब में हलबी से उद्धरण देते समय या तो कोई हेर-फेर हुआ है या शब्द छूट गए हैं, जैसा कि हमने वहां हाशिये में स्पष्ट किया है। १२ मिन्हु (त) नोट 2: जैसा कि हमने रद अल-मुह्तार के हाशिये में विस्तार से बताया है। १२ मिन्हु (त)

पृष्ठ ७६६ / ८३६

فتاوی رضویہ جلد دہم

(۱۱) اگر خالص خوشبو کی چیز اتنی کھائی کہ اکثر منہ عہ۱ میں لگ گئی تو دم ہے ورنہ صدقہ۔ (۱۲) کھانے میں خوشبو اگر پکنے میں پڑی یا فنا ہوگئی جب تو کچھ نہیں ورنہ اگر خوشبو کے اجزاء زیادہ ہوں تو وہ خالص خوشبو کے حکم میں ہے، اور اگر کھانے کا حصہ زیادہ ہے تو عام کتابوں میں مطلق حکم دیا کہ اس میں کفارہ کچھ نہیں ، ہاں خوشبو آئی تو کراہت ہے۔ (۱۳) پینے کی چیز میں خوشبو ملائی اگر خوشبو کا حصہ غالب ہے یا تین بار یا زیادہ پیا تو دم ہے ورنہ صدقہ۔ مسئلہ : خمیرہ تمباکو نہ پینا بہتر مگر منع یا کفارہ نہیں عہ۲۔ (۱۴) اگر چہارم سر یا داڑھی کے بال زیادہ کسی طرح دور کئے تو دم ہے اور کم میں صدقہ۔ (۱۵) اگر چند لا ہے یا داڑھی بہت ہلکی چھدری تو یہ دیکھیں کہ اتنے بال اس جگہ کی چہارم مقدار تک پہنچتے ہیں یا نہیں؟ (۱۶) یو نہی چند جگہ سے دور کئے تو ملا کر چہارم کی مقدار دیکھیں گے۔ (۱۷) اگر سارے بدن کے بال ایک جلسہ میں دور کئے تو ایک ہی جرم ہے اور مختلف جلسے تو ہر بار نیا جرم۔ (۱۸) مونچھیں اگرچہ پوری ہوں صرف صدقہ ہے۔ (۱۹) گردن یا ایک بغل پوری ہو تو دم ہے اور کم میں اگرچہ نصف یا زائد ہو صدقہ۔ یونہی موئے زیر ناف چہارم کو سب کے برابر ٹھہرانا صرف سر اور داڑھی میں ہے۔ (۲۰) دونوں بغلیں پوری منڈائے جب بھی ایک ہی دم ہے۔ (۲۱) سر اور داڑھی اور زیر ناف اور بغل کے سوا باقی اعضاء کے منڈنے میں صرف صدقہ ہے۔

عہ۱ : اقول: لم یقل فیه الدم کما قال کثیرون لانه لم یلتزق باکثر فمه، لا یلزم الدم بالخالص فکیف بالمخلوط و وقع ههنا في شرح اللباب في النقل عن الحلبي تحریف او سقط فاجتنبه کما بیناه علی هامشه ۱۲ منه (م) | میں کہتا ہوں یہ نہیں کہا اس میں دم ہے جیسا کہ کثیر حضرات نے کہا کیونکہ حجر اسود سے کثیر چہرہ کا حصہ مس نہیں کرتا تو جب خالص خوشبو کی وجہ سے دم لازم نہیں تو

مخلوط کے ساتھ کیسے ہوگا یہاں شرح لباب میں حلبی سے نقل کرتے ہوئے تحریف ہوگئی ہے یا الفاظ ساقط ہوگئے ہیں جیسا کہ ہم نے وہاں حاشیہ میں بیان کردیا ہے ۱۲ منہ (ت) عہ۲: کما حققناہ فیما علی ردالمحتار ۱۲ منہ (م) | جیسا کہ ہم نے تفصیل حاشیہ ردالمحتار میں دی ہے۔ (ت)

(22) Shaving, trimming, plucking with tweezers, or applying depilatory cream, the ruling is the same for all. (23) If a woman trims hair from her entire head or a quarter of it equal to a finger-joint length, a 'Dam' (animal sacrifice) is required; for less than that, 'Sadaqah' (charity) is due. (24) If hair falls out while performing Wudu (ablution), scratching, or combing, full Sadaqah is due on it as well. Some have stated that for up to two or three hairs, for each hair, one handful of grain, a piece of bread, or a dried date should be given. (25) If hair falls out on its own without being touched, or if all hair falls out due to illness, then nothing is due. (26) If one trims five nails of one hand and five of one foot, or all twenty nails at once, one Dam is due. If full five nails are not trimmed from any single hand or foot, then one Sadaqah is due for each nail, up to the point where if four nails are trimmed from each of the four limbs (total sixteen), sixteen Sadaqahs are given, unless the total value of the Sadaqahs equals the cost of a Dam, in which case one should reduce the amount slightly. (27) If nails of one hand or foot are trimmed in one sitting and another limb in a different sitting, then two Dams are due; similarly, for four separate sittings for all four limbs, four Dams are due. (28) If a nail breaks such that it is no longer capable of growing and the remaining part is then cut off, nothing is due. (29) Kissing, embracing, and touching with lust requires a Dam, even if ejaculation does not occur; however, if done without lust, nothing is due. (30) Looking at the private parts results in nothing, even if ejaculation occurs, though it is certainly Makruh (disliked). (31) Ejaculation through masturbation requires a Dam; otherwise, the act is Makruh. (32) If the entire or most of the Fard (obligatory) Tawaf was performed in a state of Janabat (major ritual impurity) or during menstruation/post-natal bleeding, a 'Budnah' (sacrifice of a large animal like a camel or cow) is due. If performed without Wudu, a Dam is due. In the first case, repeating the Tawaf with ritual purity is Wajib (obligatory); in the second, it is Mustahabb (recommended). (33) If less than half the circuits were performed without ritual purity, then one Sadaqah is due for each circuit. (34) If the entire or most of the Fard Tawaf was not performed on foot without a valid excuse, but rather on a mount, being carried, or while sitting. (35) Or if it was performed without proper covering (Satr), for example, if a quarter of a woman's forearm or a quarter of the hair on her head was exposed. (36) Or if the Kaaba was kept to the right side (performing the Tawaf in reverse). (37) Or if the path taken during Tawaf passed through the Hateem. (38) Or if the Tawaf was performed after the 12th [of Dhu al-Hijjah]; in all these five cases, a Dam must be given.

Footnote 1: Here too, the sitting is considered; if one hair or all break in one sitting, one Sadaqah is due, and if in multiple sittings, then multiple [Sadaqahs]. Footnote 2: Issue: If a woman derives pleasure from these acts of a man, a Dam is also due.

(२२) मूंडना, काटना, चिमटी से नोचना, या बाल साफ़ करने वाली दवा (नूरा) लगाना, सब का एक ही हुक्म है। (२३) औरत अगर पूरे या चौथाई सिर के बाल एक पोर के बराबर काटे तो दम (कुर्बानी) वाजिब है और इससे कम में सदक़ा। (२४) वज़ू करने, खुजलाने या कंघी करने में जो बाल गिरें उन पर भी पूरा सदक़ा है। और बाज़ (कुछ) ने कहा कि दो-तीन बाल तक हर बाल के लिए एक मुट्ठी अनाज या रोटी का एक टुकड़ा या एक छुहारा दिया जाए। (२५) बाल अपने आप गिर जाएं बिना हाथ लगाए, या बीमारी की वजह से तमाम बाल गिर जाएं तो कुछ नहीं (कोई जुर्माना नहीं) है। (२६) एक हाथ और एक पाँव के पाँचों नाख़ून काटे या बीसों एक साथ काटे तो एक दम वाजिब है। और अगर किसी हाथ या पाँव के पूरे पाँच नाख़ून न काटे तो हर नाख़ून पर एक सदक़ा होगा, यहाँ तक कि चारों हाथ-पाँवों के चार-चार काटे तो सोलह सदक़े दे, लेकिन अगर सदक़ों की कुल कीमत एक दम के बराबर हो जाए तो कुछ कम कर ले। (२७) अगर एक बैठक में एक हाथ या पाँव के नाख़ून काटे, दूसरी बैठक में दूसरे के तो दो दम दे; इसी तरह चार बैठकों में चारों के काटे तो चार दम। (२८) अगर कोई नाख़ून टूट गया कि अब उगने के काबिल न रहा और उसका बाकी हिस्सा काट लिया तो कुछ नहीं है। (२९) शहवत (कामुकता) के साथ बोसा (चूमना), गले मिलना और छूने में दम वाजिब है, चाहे इंजाल (वीर्यपात) न हो, और बिना शहवत के कुछ नहीं है। (३०) शर्मगाह पर नज़र डालने से कुछ नहीं है चाहे इंजाल हो जाए, लेकिन यह मकरूह (नापसंद) ज़रूर है। (३१) मुश्तज़नी (हस्तमैथुन) से इंजाल हो जाए तो दम है, वर्ना मकरूह है। (३२) तवाफ़-ए-फ़र्ज़ पूरा या अक्सर हिस्सा जनाबत (नापाकी की हालत) में या हैज़ व निफ़ास में किया तो बदना (बड़ी कुर्बानी) वाजिब है, और बे-वज़ू किया तो दम है। पहली सूरत में तहारत के साथ उसका दोबारा करना वाजिब है, दूसरी में मुस्तहब (पसंदीदा) है। (३३) आधे से कम फेरे बे-तहारत (बिना पाकी के) किए तो हर फेरे के लिए एक सदक़ा। (३४) तवाफ़-ए-फ़र्ज़ पूरा या अक्सर बिना किसी उज़्र (मजबूरी) के अपने पैरों पर चल कर न किया बल्कि सवारी पर या गोद में या बैठे-बैठे किया। (३५) या बे-सतर (पर्दा न होने की हालत में) किया, मिसाल के तौर पर औरत की चौथाई कलाई या चौथाई सिर के बाल खुले थे। (३६) या काबा को दाहिने हाथ पर लेकर उल्टा तवाफ़ किया। (३७) या उसमें हतीम के अंदर से होकर गुज़रा। (३८) या बारहवीं तारीख के बाद किया, तो इन पाँचों सूरतों में दम दे।

टिप्पणी १: यहाँ भी बैठक का एतबार है, अगर एक बैठक में एक बाल या सारे टूटें तो एक सदक़ा, और कई बैठकों में तो कई सदक़े। टिप्पणी २: मसला: मर्द के इन कामों से अगर औरत को लज्जत (आनंद) मिले तो भी दम वाजिब है।

पृष्ठ ७६७ का ८३६

(۲۲) مونڈنا، کترنا، موچنہ سے لینا، نورہ لگانا سب کا ایک حکم ہے۔ (۲۳) عورت اگر سارے یا چہارم سر کے بال ایک پورہ برابر کترے تو دم ہے اور کم میں صدقہ۔ (۲۴) وضو عہ1 کرنے یا کھجانے یا کنگھی کرنے میں جو بال گرے اس پر بھی پورا صدقہ ہے۔ اور بعض نے کہا دو تین بال تک ہر بال کے لیے ایک مٹھی اناج یا ایک روٹی کا ٹکڑا یا ایک چھوہارا۔ (۲۵) بال آپ گر جائے بے اس کا ہاتھ لگائے یا بیماری سے تمام بال گر پڑیں تو کچھ نہیں۔ (۲۶) ایک ہاتھ ایک پاؤں کے پانچوں ناخن کترے یا بیسوں ایک ساتھ تو ایک دم ہے۔ اور اگر کسی ہاتھ پاؤں کے پورے پورے پانچ نہ کترے تو ہر ناخن پر ایک صدقہ، یہاں تک کہ چاروں ہاتھ پاؤں کے چار چار کترے تو سولہ صدقے دے مگر یہ کہ صدقوں کی قیمت ایک دم کے برابر ہو جائے تو کچھ کم کر لے۔ (۲۷) اگر ایک جلسہ میں ایک ہاتھ یا پاؤں کے کترے، دوسرے میں دوسرے کے، تو دو دم دے، یونہی چار جلسوں میں چاروں کے تو چار دم۔ (۲۸) کوئی ناخن ٹوٹ گیا کہ اب اگنے کے قابل نہ رہا اس کا بقیہ اس نے کاٹ لیا تو کچھ نہیں۔ (۲۹) شہوت کے ساتھ بوس و کنار و مساس میں دم عہ2 ہے اگرچہ انزال نہ ہو اور بلا شہوت میں کچھ نہیں۔ (۳۰) اندام نہانی پر نگاہ کرنے سے کچھ نہیں اگرچہ انزال ہو جائے۔ مگر وہ ضرور ہے۔ (۳۱) جلق سے انزال ہو جائے تو دم ہے ورنہ مکروہ ہے۔ (۳۲) طواف فرض کلی یا اکثر جنابت میں یا حیض و نفاس میں کیا تو بدنہ ہے، اور بے وضو تو دم ہے اور پہلی صورت میں طہارت کے ساتھ اس کا اعادہ واجب، دوسری میں مستحب۔ (۳۳) نصف سے کم پھیرے بے طہارت کے کئے تو ہر پھیرے کے لیے ایک صدقہ۔ (۳۴) طواف فرض کل یا اکثر بلا عذر اپنے پاؤں چل کر نہ کیا بلکہ سواری یا گود میں یا بیٹھے بیٹھے۔ (۳۵) یا بے ستر عورت کیا مثلاً عورت کی چہارم کلائی یا چہارم سر کے بال کھلے تھے۔ (۳۶) یا کعبہ کو

دہنے ہاتھ پر لے کے الٹا کیا۔ (۳۷) یا اس میں حطیم کے اندر ہو کر گزرا۔ (۳۸) یا بارہویں کے بعد کیا تو ان پانچوں صورتوں میں دم دے۔

عہ1: یہاں بھی جلسہ کا اعتبار چاہے ایک جلسہ میں ایک بال یا کل ٹوٹیں تو ایک صدقہ اور متعدد جلسوں میں تو متعدد [صدقے]۔ عہ2: مسئلہ: مرد کے ان افعال سے عورت کو لذت آئے تو بھی دم ہے۔

Fatawa Razawiyya Volume 10

(39) If fewer than four rounds [of Sa'i] were not performed at all, then give a dam (animal sacrifice). If performed after the 12th [of Zil Hijjah], then give sadaqah (charity) for each round. (40) If any circumambulation (Tawaf) other than the obligatory (Fard) one was performed in a state of major ritual impurity (janaba), then a dam is required; if without wudu (minor impurity), then sadaqah. (41) If any Tawaf, whether obligatory or otherwise, was performed in a deficient manner such that a penalty became necessary, and then it was repeated perfectly, the penalty is removed. However, regarding any deficiency that occurred after the 12th in any round other than Tawaf-e-Fard, its repetition is impossible as the 12th has passed. (42) Performing Tawaf in impure clothes is disliked (Makruh) but requires no penalty. (43) If four rounds of Sa'i or more were not performed at all without a valid excuse, or if performed while mounted, a dam is required and the Hajj is affected [by major deficiency]. For fewer than four rounds, give sadaqah for each round. (44) If Sa'i was performed before Tawaf, redo it. If not redone, a dam is mandatory. (45) If one failed to stay (Wuquf) in Muzdalifah on the morning of the 10th without a valid excuse, give a dam. However, if a weak person or a woman omits it due to fear of the crowd, there is no penalty. (46) If head-shaving (Halq) was not done within the Haram—either done outside its boundaries or after the 12th—then a dam is due. (47) If Halq was done before Ramy (pelting the pillars), give a dam. (48) If a Qarin or Mutamatti' performs sacrifice before Ramy, or performs Halq before sacrifice, they must give a dam. (49) If Ramy was not performed at all on any given day. (50) Or if most or all of it was omitted on a single day, for example, on the 10th only three pebbles were thrown, or on the 11th only ten pebbles. (51) Or if the Ramy of one day, whether all or most of it, was performed on the next day, then in these cases give a dam. But if the Ramy of a day was performed during the following night, there is no penalty. (52) If less than half of a day's Ramy was missed, for example, only three pebbles on the 10th, and ten pebbles for the day were completely left out or done the next day, then give one sadaqah for each pebble. If the total value of these charities reaches the cost of a dam, reduce it slightly. (53) If a person in Ihram shaves the hair or clips the nails of another person, if that other person is also in Ihram, then he [the one who did the clipping] must give sadaqah, and that sadaqah or dam follows the details mentioned above. And if the other person is not in Ihram, then give some charity, even if just a handful, and it is nothing [major].

फतावी रज़विया जिल्द दहम (10वाँ)

(39) यदि सई के चार से कम चक्कर बिल्कुल नहीं किए तो दम दें, और बारहवीं के बाद किए तो हर चक्कर पर सदका है। (40) तवाफ़े फ़र्ज़ के अलावा और कोई तवाफ़ नापाकी (जनाबत) में किया तो दम है, और बिना वुज़ू के तो सदका। (41) फ़र्ज़ आदि कोई तवाफ़ हो जिसे दोषपूर्ण तरीके से किया गया कि कफ़्फ़ारा (जुर्माना) अनिवार्य हो गया, जब उसे पूर्णतः दोहरा लिया गया तो कफ़्फ़ारा हट गया। लेकिन बारहवीं के बाद होने से जो दोष तवाफ़े फ़र्ज़ के अलावा किसी चक्कर में आया, उसे दोहराना असंभव है क्योंकि बारहवीं बीत गई। (42) नापाक कपड़ों में तवाफ़ करना मकरूह (नापसंद) है, कफ़्फ़ारा नहीं है। (43) सई के चार चक्कर या उससे अधिक बिना किसी ठोस कारण के बिल्कुल नहीं किए, या सवारी पर किए तो दम है और हज गया [बड़ी कमी हुई], और चार से कम में हर चक्कर पर सदका दें। (44) तवाफ़ से पहले सई कर ली तो फिर से करे, नहीं करेगा तो दम लाज़िम (अनिवार्य) है। (45) दसवीं की सुबह बिना किसी ठोस कारण के मुज़दलिफ़ा में वुक़ूफ़ (ठहराव) नहीं किया तो दम दे। हाँ, कमज़ोर या महिला भीड़ के डर से छोड़ दे तो कोई जुर्माना नहीं है। (46) हलक़ (बाल मुंडवाना) हरम की सीमा में नहीं किया—सीमा से बाहर किया या बारहवीं के बाद किया—तो दम है। (47) रमी (कंकड़ मारना) से पहले हलक़ कर लिया तो दम दे। (48) क़ारिन या मुतमत्तेअ रमी से पहले क़ुर्बानी या क़ुर्बानी से पहले हलक़ करें तो दम दें। (49) यदि रमी किसी दिन बिल्कुल न की। (50) या किसी एक दिन की पूरी या अधिकतर छोड़ दी, उदाहरण के लिए दसवीं को केवल तीन कंकड़ मारे या ग्यारहवीं को दस कंकड़ तक। (51) या किसी एक दिन की पूरी या अधिकतर रमी उसके अगले दिन की, तो इन स्थितियों में दम दे। और यदि किसी दिन की रमी उसके बाद आने वाली रात को कर ली तो कफ़्फ़ारा नहीं है। (52) यदि किसी दिन के आधे से कम रमी की, उदाहरण के लिए दसवीं की तीन कंकड़ और दिन की दस बिल्कुल छोड़ दीं या दूसरे दिन कीं, तो हर कंकड़ पर एक सदका दे। यदि इन सदकों की कुल कीमत एक दम के बराबर हो जाए तो कुछ कम कर ले। (53) एहराम वाले ने किसी दूसरे के बाल मूंढे या नाखून काटे, यदि वह दूसरा भी एहराम में है तो यह सदका दे और वह सदका या दम उसी विवरण पर है जो ऊपर गुज़रा। और यदि वह एहराम में नहीं है तो कुछ खैरात (दान) कर दे चाहे एक मुट्ठी हो, और वह कुछ नहीं [बड़ी बात नहीं]।

पृष्ठ 768 / 836

(۳۹) اس کے چار سے کم پھیرے بالکل نہ کئے تو دم دے اور بارہویں کے بعد کئے تو ہر پھیرے پر صدقہ ہے۔ (۴۰) طواف فرض کے سوا اور کوئی طواف ناپاکی میں کیا تو دم ہے، اور بے وضو تو صدقہ۔ (۴۱) فرض وغیرہ کوئی طواف ہو جیسے ناقص طور پر کیا کہ کفارہ لازم ہوا، جب کامل اعادہ کر لیا کفارہ اتر گیا مگر بارہویں کے بعد ہونے سے جو نقصان طواف فرض کے سوا کسی پھیرے میں آیا اس کا اعادہ ناممکن بارہویں تو گزر گئی۔ (۴۲) نجس کپڑوں سے طواف مکروہ ہے کفارہ نہیں۔ (۴۳) سعی کے چار پھیرے یا زیادہ بلاعذر اصلاً نہ کئے، یا سواری پر کئے تو دم ہے اور حج گیا اور چار سے کم میں ہر پھیرے پر صدقہ دے۔ (۴۴) طواف سے پہلے سعی کرلی پھر کرے، نہ کرے گا تو دم لازم۔ (۴۵) دسویں کی صبح بلاعذر مزدلفہ میں وقوف نہ کیا تو دم دے۔ ہاں کمزور یا عورت بخوف زحمت ترک کرے تو جرمانہ نہیں۔ (۴۶) حلق حرم میں نہ کیا حدودِ حرم سے باہر کیا یا بارہویں کے بعد کیا تو دم ہے۔ (۴۷) رمی سے پہلے حلق کر لیا دم دے۔ (۴۸) قارن یا متمتع رمی سے پہلے قربانی یا قربانی سے پہلے حلق کریں تو دم دیں۔ (۴۹) اگر رمی کسی دن اصلاً نہ کی۔ (۵۰) یا کسی ایک دن کی بالکل یا اکثر ترک کر دی مثلاً دسویں کو تین کنکریوں تک ماریں یا گیارھویں کو دس کنکریوں تک۔ (۵۱) یا کسی ایک دن کی بالکل یا اکثر اس کے بعد دوسرے دن کی، تو ان صورتوں میں دم دے، اور اگر کسی دن کی رمی اس کے بعد آنے والی رات کر لی تو کفارہ نہیں۔ (۵۲) اگر کسی دن کے نصف سے کم رمی مثلاً دسویں کی تین کنکریاں اور دن کی دس بالکل چھوڑ دیں یا دوسرے دن کیں، تو ہر کنکری پر ایک صدقہ دے۔ ان صدقوں کی قیمت دم کے برابر ہو جائے تو کچھ کم کرلے۔ (۵۳) احرام والے نے کسی دوسرے کے بال مونڈے

یا ناخن کترے اگر وہ بھی احرام میں ہے تو یہ صدقہ دے اور وہ صدقہ یا دم اسی تفصیل پر کہ اوپر گزری۔ اور اگر وہ احرام میں نہیں تو کچھ خیرات کردے اگرچہ ایک مٹھی، اور وہ کچھ نہیں۔

(54) And if someone else put sewn clothes on him or applied perfume in such a way that it did not touch himself, then there is no expiation (kaffara) on him; yes, it will be a sin if he was also in the state of Ihram. And he shall give a blood sacrifice (dam) or charity (sadaqah) as per the mentioned details. (55) If sexual intercourse occurred before the standing at Arafat (Wuquf-e-Arafah), the Hajj is invalidated. Complete it as part of Hajj, offer a sacrifice (dam), and then immediately perform its makeup (qada) the following year. If the woman was also in the Ihram of Hajj, then it is necessary for both to stay separate from the state of Ihram until the end, such that they do not see each other, if there is a fear of falling into this trouble again. If intercourse occurred after Wuquf, the Hajj will not be invalidated, but if it was done before shaving the head (Halq) and the Tawaf (al-Ziyarah), a camel sacrifice (Badnah) must be given. If done between the two (after Halq but before Tawaf), a sheep/goat sacrifice (dam) is required, though even then, a Badnah is better. After both (Halq and Tawaf), nothing is due. (56) In Umrah, if intercourse occurred before four circuits of Tawaf, the Umrah is invalidated; give a sacrifice (dam) and perform the Umrah again. If it was after four circuits, give a sacrifice (dam) and the Umrah remains valid. (57) If one kills a louse on their body or clothes or throws it away, for one louse, give a piece of bread. For two, a handful of grain, and for more, give charity (sadaqah). (58) If one washed their head or clothes to kill lice or put them in the sun, the same expiations apply as for direct killing. (59) Similarly, if someone else killed his louse at his request or sign, the expiation still applies to him, even if the other person is not in Ihram. (60) There is nothing due for killing a louse that has fallen on the ground etc., or is on another person's body or clothes, even if the other person is also in Ihram. Ruling: Where there is one sacrifice (dam) or charity (sadaqah) for a Mufrid, for a Qarin there are two. Ruling: The sacrifice for expiation (kaffara) or the thankfulness (shukrana) for Qarin and Mutamatti cannot be performed outside the Haram. However, one can eat from the shukrana sacrifice and feed the wealthy, while the expiation (kaffara) is solely the right of the needy. Advice: Expiations are so that if crimes are committed due to error, sleep, or compulsion, one becomes pure through expiation. They are not so that one knowingly commits a crime without an excuse and says, "We will give expiation." Giving will still be necessary, but intentional opposition to Allah's command is severe. We seek refuge in Allah Almighty. May the Holy Subhan grant the tawfiq (ability) of obedience and the pilgrimage to Madinah. Ameen! Footnote: From

him: I mentioned it to exit from a strong difference of opinion. (M) | I have mentioned this so that there may be an exit from strong disagreement. (T)

(५४) और अगर किसी ने उसे सिले हुए कपड़े पहना दिए या खुशबू इस तरह लगाई कि खुद को नहीं लगी, तो उस पर कोई कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) नहीं है; हाँ, यह पाप होगा यदि वह भी एहराम की स्थिति में था। और वह उल्लेखित विवरण के अनुसार दम (बलि) या सदक़ा (दान) देगा। (५५) यदि अराफ़ात में ठहरने (वक़ूफ़-ए-अराफ़ा) से पहले संभोग किया, तो हज अमान्य हो गया। उसे हज के रूप में ही पूरा करें, एक दम (बलि) दें, और फिर अगले वर्ष तुरंत इसकी क़ज़ा (भरपाई) करें। यदि महिला भी हज के एहराम में थी, तो दोनों के लिए आवश्यक है कि वे एहराम के अंत तक इस तरह अलग रहें कि वे एक-दूसरे को न देखें, यदि फिर से इस मुसीबत में पड़ने का डर हो। वक़ूफ़ के बाद संभोग करने से हज तो अमान्य नहीं होगा, लेकिन यदि यह सिर मुंडवाने (हलक़) और तवाफ़ (अल-ज़ियाराह) से पहले किया गया था, तो एक ऊँट की बलि (बदना) देनी होगी। यदि दोनों के बीच (हलक़ के बाद लेकिन तवाफ़ से पहले) किया गया, तो एक भेड़/बकरी की बलि (दम) आवश्यक है, हालाँकि तब भी बदना बेहतर है। दोनों (हलक़ और तवाफ़) के बाद, कुछ भी देय नहीं है। (५६) उमराह में, यदि तवाफ़ के चार चक्करों से पहले संभोग किया गया, तो उमराह अमान्य हो गया; दम (बलि) दें और फिर से उमराह करें। यदि चार चक्करों के बाद था, तो दम दें और उमराह मान्य रहेगा। (५७) यदि कोई अपने शरीर या कपड़ों पर जूँ मारता है या उसे फेंक देता है, तो एक जूँ के लिए, रोटी का एक टुकड़ा दे। दो के लिए, मुट्ठी भर अनाज, और अधिक के लिए, सदक़ा (दान) दे। (५८) यदि जूँ मारने के लिए सिर या कपड़े धोए या धूप में रखे, तो वही कफ़्फ़ारे लागू होते हैं जो सीधे मारने के लिए थे। (५९) इसी तरह, यदि किसी और ने उसके कहने या इशारे पर उसकी जूँ मार दी, तो भी कफ़्फ़ारा उसी पर है, भले ही दूसरा व्यक्ति एहराम में न हो। (६०) ज़मीन आदि पर गिरी हुई जूँ या दूसरे के शरीर या कपड़ों पर जूँ मारने के लिए कुछ भी देय नहीं है, भले ही दूसरा भी एहराम में हो। मसला: जहाँ मुफ़रिद के लिए एक दम या सदक़ा है, क़ारिन के लिए दो हैं। मसला: कफ़्फ़ारे की क़ुर्बानी या क़ारिन और मुतमत्ति के शुक्राने की क़ुर्बानी हरम की सीमाओं के बाहर नहीं हो सकती। हालाँकि, शुक्राने की क़ुर्बानी से आप खुद खा सकते हैं और धनी लोगों को खिला सकते हैं, जबकि कफ़्फ़ारा केवल ज़रूरतमंदों का अधिकार है। नसीहत: कफ़्फ़ारे इसलिए हैं ताकि यदि भूल-चूक से, नींद में या मजबूरी में अपराध हो जाएँ, तो कफ़्फ़ारे से पाक हो जाएँ। इसलिए नहीं कि जानबूझकर बिना किसी बहाने के अपराध करें और कहें कि कफ़्फ़ारा दे देंगे। देना तो तब भी पड़ेगा, लेकिन अल्लाह के हुक्म का जानबूझकर विरोध करना बहुत गंभीर है। हम अल्लाह तआला से पनाह माँगते हैं। हक़ सुबहान

तआला आज्ञाकारिता की तौफ़ीक़ (क्षमता) दे और मदीना की ज़ियारत कराए। आमीन! हाशिया: उनकी ओर से: मैंने इसे एक प्रबल मतभेद से बाहर निकलने के लिए उल्लेख किया है। (म) | मैंने इसे इसलिए उल्लेख किया है ताकि प्रबल मतभेद से बचा जा सके। (त)

पृष्ठ ८३६ का ७६९

(۵۴) اور اگر اس کو سلے کپڑے پہنائے یا خوشبو اس طرح لگائی کہ اپنے نہ لگی تو اس پر کفارہ نہیں، ہاں گناہ ہوگا، اگر وہ بھی احرام میں تھا۔ اور وہ حسب تفصیل مذکور دم یا صدقہ دے گا۔ (۵۵) وقوف عرفہ سے پہلے جماع کیا تو حج نہ ہوا اسے حج ہی کی طرف پورا کر کے دم دے اور پھر فوراً ہی سال آئندہ اس کی قضا کر لے۔ عورت بھی احرام حج میں تھی تو اس پر لازم ہے کہ حج کے احرام سے ختم تک دونوں اس طرح جدا رہیں کہ ایک دوسرے کو نہ دیکھیں، اگر خوف ہو کہ پھر اس بلا میں پڑ جائیں گے اور وقوف کے بعد صحبت کرنے سے حج تو نہ جائے گا مگر اگر حلق وطواف سے پہلے کیا تو بدنہ دے اور دونوں کے بیچ میں کیا تو دم، اور بہتر اب بھی بدنہ ہے اور دونوں کے بعد کچھ نہیں (۵۶) عمرہ میں طواف کے چار پھیروں سے پہلے جماع کیا تو عمرہ جاتا رہا دم دے اور عمرہ پھر کرے اور چار کے بعد دم دے عمرہ صحیح ہے۔ (۵۷) اپنی جوں اپنے بدن یا کپڑوں میں ماری یا پھینک دی تو ایک میں روٹی کا ٹکڑا دے۔ اور دو ہوں تو مٹھی بھر اناج اور زیادہ میں صدقہ دے۔ (۵۸) جوئیں مارنے کو سر یا کپڑا دھویا یا دھوپ میں ڈالا جب بھی یہی کفارے جو خود قتل میں تھے۔ (۵۹) یونہی دوسرے نے اس کے کہنے یا اشارہ کرنے سے اس کی جوں کو مارا جب بھی اس پر کفارہ ہے اگرچہ وہ دوسرا احرام میں نہ ہو۔ (۶۰) زمین وغیرہ پر گری ہوئی جوں یا دوسرے کے بدن یا کپڑوں کی مارنے میں اس پر کچھ نہیں اگرچہ وہ دوسرا بھی احرام میں ہو۔ مسئلہ: جہاں ایک دم یا صدقہ ہے قارن پر دو ہیں۔ مسئلہ: کفارہ کی قربانی یا قارن و متمتع کے شکرانہ کی غیر حرم میں نہیں ہو سکتی مگر شکرانہ کی قربانی سے آپ کھائے، غنی کو کھلائے، اور کفارہ کی صرف محتاجوں کا حق ہے۔ نصیحت: کفارے اس لیے ہیں کہ بھول چوک سے یا سونے میں یا مجبوری سے جرم ہوں تو کفارہ سے پاک ہو جائیں، نہ اس لیے کہ جان

بوجھ کر بلا عذر جرم کرو اور کہو کفارہ دے دیں گے، دینا تو جب بھی آئیگا، مگر قصداً حکم الہی کی مخالفت سخت ہے۔ والعیاذ باللہ تعالیٰ حق سبحانہ توفیق طاعت عطا فرما کر مدینہ کی زیارت کرائے۔ آمین! عنہ: ذکرتہ خروجا عن خلاف قوی ۱۲ منہ(م) | میں نے اس کو اس لیے ذکر کیا ہے تاکہ قوی اختلاف سے خروج ہو جائے۔ (ت)

Volume 10 Fatawa Razawiyya

Section Seven: Visiting the Great Sanctuary of Medina, the Court of the Beloved Presence of Allah (peace and blessings of Allah be upon him)

(1) Visiting the holy shrine is near-obligatory. Many people, pretending to be friends, will try to scare you in various ways—saying there is danger on the path or disease there. Beware! Listen to no one and never return with the stain of deprivation. Life must end one day; what could be better than it ending in their path? And experience shows that whoever holds onto their mantle, they take them comfortably under their shadow, and not even the prick of a nail is felt. Praise be to Allah. (2) While visiting, make the specific intention for the holy visitation, to the extent that Imam ibn al-Humam says one should not even intend visiting the Mosque Sharif this time. (3) Throughout the journey, immerse yourself in Durood (blessings upon the Prophet) and holy remembrance (dhikr). (4) When the sanctuary (Haram) of Medina comes into view, it is better to proceed on foot, weeping, with head bowed and eyes lowered. If possible, walk barefoot, or rather: Is this the place for a head, yet you place your foot? Do you not see whose foot you are placing and where? Walking upon the land of the Sanctuary with feet? O traveler, this is the place for the head! (5) When your gaze falls upon the Luminous Dome (Qubba-e-Anwar), increase your recitation of Durood and Salam. (6) When you reach the holy city, drown yourself in the contemplation of the majesty and beauty of the Beloved (peace and blessings of Allah be upon him). (7) Before visiting the mosque, finish all necessary tasks very quickly that might distract the heart. Do not engage in any useless talk besides these. Arrange for Wudu (ablution) and use a Miswak (tooth stick). Bathing (Ghusl) is better; wear clean white clothes, new ones being better. Apply kohl (surma) and fragrance; musk (mishk) is best. (8) Now immediately turn towards the holy threshold with utter humility and submissiveness. If tears do not come, make a crying face, and force your heart to weep, and turn towards the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) despite your hard-heartedness. (9) When you arrive at the door of the mosque, offer Salawat and Salam and wait a little as if asking permission for entry from the Master (Sarkar). Say 'Bismillah' and enter with the right foot first, embodying complete respect. (10) Every Muslim's heart knows the level of respect and veneration that is obligatory at this time. Purify your eyes, ears, tongue, hands, feet, and heart from all other thoughts. Do not look at the decorations and designs of the holy mosque.

जिल्द दहम फ़तावा रज़विया

फ़सल सातवीं: महान सरकार मदीना मुनव्वरा, हुज़ूर हबीब-ए-अकरम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की हाज़िरी के नियम

(1) पवित्र ज़ियारत (दर्शन) लगभग अनिवार्य है। बहुत से लोग दोस्त बनकर तरह-तरह से डराते हैं, कि रास्ते में खतरा है, वहां बीमारी है। सावधान! किसी की न सुनें, और हरगिज़ वंचित रहने का दाग़ लेकर न लौटें। जान एक दिन जानी ही है, इससे बेहतर क्या है कि उनकी राह में जाए। और अनुभव है कि जो उनका दामन थाम लेता है, वे उसे अपने साये में आराम से ले जाते हैं, काँटे की चुभन तक महसूस नहीं होती। अल्हम्दुलिल्लाह। (2) हाज़िरी में विशेष रूप से पवित्र ज़ियारत की नीयत (इरादा) करें, यहाँ तक कि इमाम इब्न अल-हुमाम फरमाते हैं कि इस बार मस्जिद शरीफ की भी नीयत न करें। (3) पूरे रास्ते भर दुरूद और ज़िक्र-ए-शरीफ में डूबे रहें। (4) जब मदीना का हरम नज़र आए, तो बेहतर यह है कि पैदल हो लें, रोते हुए, सर झुकाए, आँखें नीची किए हुए, और हो सके तो नंगे पाँव चलें बल्कि: यह सर रखने की जगह है और तुम पैर रख रहे हो देखते नहीं कि कहाँ पैर रख रहे हो हरम की ज़मीन पर कदम रखकर चलना अरे ओ जाने वाले, यह तो सर रखने का अवसर है (5) जब सुनहरे गुंबद (कुब्बा अनवर) पर नज़र पड़े तो दुरूद और सलाम की कसरत करें। (6) जब पवित्र शहर पहुँचें तो महबूब (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के जलाल और जमाल के तसव्वुर (कल्पना) में डूब जाएँ। (7) मस्जिद में हाज़िरी से पहले उन तमाम ज़रूरतों से बहुत जल्द फारिग हो जाएँ जो दिल बँटाने का कारण बनें। इनके सिवा किसी फालतू बात में मशगूल न हों। वज़ू और मिस्वाक करें और ग़ुस्ल (स्नान) बेहतर है। सफ़ेद और पाक-साफ कपड़े पहनें, नए हों तो और बेहतर। सुरमा और खुशबू लगाएँ, कस्तूरी (मुश्क) सबसे उत्तम है। (8) अब तुरंत पवित्र चौखट की ओर अत्यंत विनम्रता और समर्पण के साथ ध्यान लगाएं। अगर रोना न आए तो रोने जैसी सूरत बनाएं, और दिल को ज़बरदस्ती रोने पर लाएं और अपनी पत्थरदिली के बावजूद अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की ओर ध्यान लगाएं। (9) जब मस्जिद के दरवाज़े पर पहुँचें तो दुरूद और सलाम पेश करके थोड़ा ठहरें, जैसे सरकार से हाज़िरी की इजाज़त मांग रहे हों। 'बिस्मिल्लाह' कहकर दायां पाँव पहले रखें और पूरे अदब के साथ दाखिल हों। (10) इस समय जो अदब और ताज़ीम (सम्मान) फ़र्ज़ है, वह हर मुसलमान का दिल जानता है। अपनी आँखों, कानों, ज़बान, हाथों, पैरों और दिल को ग़ैर के ख्याल से पाक करें। पवित्र मस्जिद की नक्काशी और सजावट को न देखें।

पेज 770/836

فصلِ ہفتم حاضری سرکار اعظم مدینہ طیبہ حضور حبیب اکرم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم

(۱) زیارتِ اقدس قریب بواجب ہے بہت لوگ دوست بن کر طرح طرح ڈراتے ہیں، راہ میں خطرہ ہے وہاں بیماری ہے، خبردار! کسی کی نہ سنو، اور ہر گز محرومی کا داغ لے کر نہ پلٹو، جان ایک دن جانی ضرور ہے اس سے کیا بہتر ہے کہ ان کی راہ میں جائے۔ اور تجربہ ہے کہ جو ان کا دامن تھام لیتا ہے اسے اپنے سایہ میں بآرام لے جاتے ہیں کیل کا کھٹکا نہیں ہوتا۔ والحمد للہ ۔ (۲) حاضری میں خاص زیارتِ اقدس کی نیت کرو یہاں تک کہ امام ابن الہمام فرماتے ہیں اس بار مسجد شریف کی بھی نیت نہ کرے۔ (۳) راستہ بھر درود و ذکرِ شریف میں ڈوب جاؤ۔ (۴) جب حرم مدینہ نظر آئے بہتر یہ ہے کہ پیادہ ہو لو، روتے، سر جھکاتے، آنکھیں نیچی کئے، اور ہو سکے تو ننگے پاؤں چلو بلکہ جائے سر است اینکہ تو پامی نہی پائے نہ بینی کہ کجاہی نہی حرم کی زمین اور قدم رکھ کے چلنا ارے سر کا موقع ہے او جانے والے (۵) جب قبہ انور پر نگاہ پڑے درود و سلام کی کثرت کرو۔ (۶) جب شہر اقدس تک پہنچو جلال و جمال محبوب صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی تصور میں غرق ہو جاؤ۔ (۷) حاضری مسجد سے پہلے تمام ضروریات جن کا لگاؤ دل بٹنے کا باعث ہو نہایت جلد فارغ ہو، ان کے سوا کسی بیکار بات میں مشغول نہ ہو۔ منگاؤ ضو اور مسواک کرو اور غسل بہتر، سفید و پاکیزہ کپڑے پہنو اور نئے بہتر، سرمہ اور خوشبو لگاؤ اور مشک افضل ہے۔ (۸) اب فوراً آستانہ اقدس کی طرف نہایت خشوع و خضوع سے متوجہ ہو، رونا نہ آئے تو رونے کا منہ بناؤ، اور دل کو بزور رونے پر لاؤ اور اپنی سنگدلی سے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی طرف متوجہ کرو۔ (۹) جب در مسجد پر حاضر ہو صلوٰۃ و سلام عرض کرکے تھوڑا ٹھہرو جیسے سرکار سے حاضری کی اجازت مانگتے ہو، بسم اللہ کہہ کر سیدھا پاؤں پہلے رکھ کہ

ہمہ تن ادب ہو کر داخل ہو۔ (۱۰) اس وقت جو ادب و تعظیم فرض ہے ہر مسلمان کا دل جانتا ہے کہ آنکھوں کان، زبان، ہاتھ، پاؤں، دل سب خیالِ غیر سے پاک کرو۔ مسجد اقدس کے نقش و نگار نہ دیکھو۔

Fatawa Razawiya Volume 10

(11) If someone comes across you with whom greeting and conversation is necessary, then avoid it as much as possible, otherwise do not exceed the necessity; even then, let the heart remain focused towards the Master (peace and blessings be upon him). (12) Never, ever let even a single word be spoken loudly in the sacred mosque. (13) Know for certain that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is alive with a true, real, worldly, physical life, just as he was before his noble passing. His death, and the death of all the Prophets (peace be upon them), was merely for a single moment to fulfill the Divine Promise. Their passing is only a matter of becoming hidden from the eyes of common people. Imam Muhammad ibn al-Hajj al-Makki in 'al-Madkhal' and Imam Ahmad al-Qastallani in 'al-Mawahib al-Ladunniyyah', and other leaders of religion (may Allah have mercy on them all) state:

Arabic	Urdu Translation
There is no difference between his death and his life (peace and blessings of Allah be upon him) in terms of his observation of his Ummah and his knowledge of their states, their intentions, their determinations, and their thoughts. To him, all of this is manifest, with no hiddenness therein.[1]	There is no difference in the life and death of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) in the sense that he is watching his Ummah and recognizes their conditions, their intentions, their motives, and the thoughts in their hearts. This is all as clear to the Prophet as there is no concealment at all.

Imam (may Allah have mercy on him), a student of Imam al-Muhaqqiq ibn al-Humam, in 'al-Mansik al-Mutawassit', and Ali al-Qari al-Makki in its commentary 'al-Maslak al-Mutaqassit', state:

Arabic	Urdu Translation
Verily he (peace and blessings of Allah be upon him) is aware of your presence, your standing, and your greeting—rather, of all your actions, states, departures, and stays.[2]	Verily, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) is aware of your presence, your standing, and your greeting, rather of all your actions, conditions, journeying, and staying.

(14) Now if the congregation is established, join it, for in doing so, 'Tahiyyat al-Masjid' will also be fulfilled; otherwise, if overwhelmed by longing...

[1] Al-Madkhal by Ibn al-Hajj, Chapter on Visiting Graves, Dar al-Kutub al-Arabi, Beirut, 1/252; Sharh Mawahib al-Zarqani, The Tenth Objective, Matba'a al-Amirah, Egypt, 8/348. [2] Maslak al-Mutaqassit with Irshad al-Sari, Chapter on Visiting the Master of the Messengers, Dar al-Kutub al-Arabi, Beirut, p. 338.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहुम

(११) अगर कोई ऐसा सामने आ जाए जिससे सलाम-कलाम ज़रूरी हो, तो जहाँ तक बन सके कतरा जाओ, वरना ज़रूरत से ज़्यादा न बढ़ो, फिर भी दिल सरकार (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ही की तरफ हो। (१२) हरगिज़-हरगिज़ मस्जिद-ए-अक़दस में कोई हर्फ़ चिल्लाकर न निकले। (१३) यक़ीन जानो कि हुज़ूर-ए-अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) सच्ची हक़ीक़ी दुनियावी जिस्मानी हयात से वैसे ही ज़िन्दा हैं जैसे वफ़ात शरीफ़ से पहले थे। उनकी और तमाम अंबिया (अलैहिमुस्सलाम) की मौत सिर्फ़ वादा-ए-खुदा की तस्दीक (पुष्टि) के लिए एक पल के लिए थी। उनका इंतिक़ाल सिर्फ़ आम लोगों की नज़रों से छुप जाना है। इमाम मुहम्मद इब्न अल-हाज मक्की 'मदखल' में और इमाम अहमद क़स्तलानी 'मवाहिबुल लदुनिया' में और अइम्मा-ए-दीन (रहमहुल्लाहु तआला अलैहिम अजमईन) फ़रमाते हैं:

अरबी	उर्दू अनुवाद
"ला फ़र्क़ा बैन मौतिही व हयातिही सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़ी मुशाहदतिही लि-उम्मतिही..." (उनकी मौत और उनकी ज़िंदगी में अपनी उम्मत को देखने और उनकी हालातों, नियतों, इरादों और दिलों के खयालों को जानने में कोई फ़र्क नहीं है और यह उनके नज़दीक बिल्कुल साफ़ है, इसमें कुछ छुपा नहीं है।)[1]	हुज़ूर-ए-अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की हयात और वफ़ात में इस बात में कुछ फ़र्क नहीं कि वह अपनी उम्मत को देख रहे हैं और उनकी हालतों, उनकी नियतों, उनके इरादों और उनके दिलों के खयालों को पहचानते हैं, और यह सब हुज़ूर पर ऐसा रौशन है जिसमें असल में कोई पोशीदगी (गोपनीयता) नहीं।

इमाम (रहमहुल्लाह), जो इमाम मोहक़्क़िक़ इब्न अल-हुमाम के शागिर्द हैं, 'मन्सिक मुतवस्सित' में और अली क़ारी मक्की इसकी शरह (व्याख्या) 'मसलक मुतक़स्सित' में फ़रमाते हैं:

अरबी	उर्दू अनुवाद
"अन्नहू सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम आलिमुन बि-हुज़ूरिका व कियामिका व सलामका..." (बेशक वो सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम आपके हाज़िर होने, आपके खड़े होने, आपके सलाम बल्कि आपके तमाम अफ़आल, अह्वाल, जाने और रुकने से बाखबर हैं।)[2]	बेशक रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) तेरी हाज़िरी और तेरे खड़े होने और तेरे सलाम बल्कि तेरे तमाम अफ़आल (कार्यों), अह्वाल (स्थितियों), कूच (प्रस्थान) और मुक़ाम (ठहराव) से आगाह हैं।

(१४) अब अगर जमाअत क़ायम हो, तो शरीक हो जाओ कि इसमें तहिय्यतुल मस्जिद भी अदा हो जाएगी, वरना अगर ग़लबा-ए-शौक़ (शौक़ का प्रबल होना)...

[1] अल-मदखल इब्न अल-हाज, फ़स्ल फ़ी ज़ियारतुल कुबूर, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरुत १/२५२; शरह मवाहिब ज़रकानी, अल-मक़्सद अल-आशिर, मतबा-ए-आमिरा मिस्र ८/३४८। [2] मसलक मुतक़स्सित मा इरशाद अल-सारी, बाबे ज़ियारत सैयदुल मुर्सलीन, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरुत, पृ. ३३८।

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

(۱۱) اگر کوئی ایسا سامنے آجائے جس سے سلام کلام ضرور ہو تو جہاں تک بنے کترا جاؤ، ورنہ ضرورت سے زیادہ نہ بڑھو، پھر بھی دل سرکار ہی کی طرف ہو۔ (۱۲) ہرگز ہرگز مسجد اقدس میں کوئی حرف چلا کر نہ نکلے۔ (۱۳) یقین جانو کہ حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم سچی حقیقی دنیاوی جسمانی حیات سے ویسے ہی زندہ ہیں جیسے وفات شریف سے پہلے تھے۔ ان کی اور تمام انبیاء علیہم الصلوۃ والسلام کی موت صرف وعدہ خدا کی تصدیق کو ایک آن کے لیے تھی۔ ان کا انتقال صرف نظر عوام سے چھپ جانا ہے۔ امام محمد ابن الحاج مکی مدخل اور امام احمد قسطلانی مواہب اللدنیہ میں اور ائمہ دین رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہم اجمعین فرماتے ہیں :

عربی	اردو ترجمہ
لَا فَرْقَ بَيْنَ مَوْتِهٖ وَحَيَاتِهٖ صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَسَلَّمَ فِيْ مُشَاهَدَتِهٖ لِأُمَّتِهٖ وَمَعْرِفَتِهٖ بِأَحْوَالِهِمْ وَنِيَّاتِهِمْ وَ عَزَائِمِهِمْ وَخَوَاطِرِهِمْ وَذَالِكَ عِنْدَهٗ جَلِيٌّ لَّا خَفَاءَ بِهٖ (۱)	حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی حیات وفات میں اس بات میں کچھ فرق نہیں کہ وہ اپنی امت کو دیکھ رہے ہیں اور ان کی حالتوں اور ان کی نیتوں ، ان کے ارادوں ، ان کے دلوں کے خیالوں کو پہچانتے ہیں، اور یہ سب حضور پر ایسا روشن ہے جس میں اصلاً کوئی پوشیدگی نہیں۔

امام رحمۃ اللہ تلمیذ امام محقق ابن الہمام منسک متوسط اور علی قاری مکی اس کی شرح مسلک متقسط میں فرماتے ہیں :

عربی	اردو ترجمہ
اَنَّہٗ صَلَّی اللّٰہُ عَلَیْہِ وَسَلَّمَ عَالِمٌ بِحُضُوْرِكَ وَقِیَامِكَ وَسَلَامِكَ اَیْ بَلْ بِجَمِیْعِ اَفْعَالِكَ وَ اَحْوَالِكَ وَ ارْتِحَالِكَ وَ مَقَامِكَ۔ (۲)	بیشک رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم تیری حاضری اور تیرے کھڑے ہونے اور تیرے سلام بلکہ تیرے تمام افعال واحوال و کوچ و مقام سے آگاہ ہیں۔

(۱۴) اب اگر جماعت قائم ہو شریک ہو جاؤ کہ اس میں تحیۃ المسجد بھی ادا ہو جائیگی ورنہ اگر غلبہ شوق

(۱) المدخل لابن الحاج فصل فی زیارۃ القبور دار الکتاب العربی بیروت ۱/ ۲۵۲، شرح مواہب زرقانی المقصد العاشر مطبعہ عامرہ مصر ۸/ ۳۴۸ (۲) مسلک متقسط مع ارشاد الساری باب زیارۃ سید المرسلین دار الکتاب العربی بیروت ص ۳۳۸

Fatawa Razawiya, Volume 10

...if time allows and it is not a disliked (makruh) time, perform two Rak'ahs of Tahiyyat-ul-Masjid and gratitude for being present in the sacred court, reciting only Surah Al-Kafirun and Surah Al-Ikhlas, very lightly but following the Sunnah, at the place where the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) used to pray, where a mihrab is now built in the middle. If that place is not available, perform it as close to it as possible. Then, in the prostration of gratitude, pray: "O Allah! Grant me the etiquette of Your Beloved (peace and blessings of Allah be upon him), his acceptance, and Your acceptance. Ameen!"

(15) Now, immersed in perfect etiquette, with head bowed and eyes lowered, trembling, shivering, sweating from the shame of sins, hoping for the forgiveness and mercy of the Noble Prophet (peace and blessings of Allah be upon him), present yourself at the exalted presence from the foot-side, i.e., the east. Since the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is facing the Qiblah in the luminous tomb, come from this direction so that his merciful gaze falls upon you, and this is sufficient for you in both worlds. Praise be to Allah.

(16) Now, with perfect etiquette, awe, fear, and hope, stand beneath the lamp, near the silver nail fixed in the southern wall of the pure chamber opposite the luminous face. Stand at a distance of at least four cubits, with your back to the Qiblah and your face towards the luminous tomb, with hands folded as in prayer. In reliable books such as 'Al-Lubab', 'Sharh al-Lubab', 'Al-Ikhtiyar Sharh al-Mukhtar', and 'Fatawa 'Alamgiri', it is explicitly stated: "Stand as one stands in prayer." This phrase is from 'Alamgiri' and 'Al-Ikhtiyar'. In 'Al-Lubab' it is said: "Placing his right hand over his left," stand with folded hands, right hand over left.

(17) Beware of kissing or touching the sacred grill, as it is contrary to etiquette. Rather, do not go closer than four cubits. Is it not enough of his mercy that he called you to his presence and granted you a place before him? Although his noble gaze was already towards you, it is now specific and with this level of closeness. Praise be to Allah.

(18) Praise be to Allah, now like your heart, your face is also towards this pure grill, which is the resting place of the great beloved of Allah (Mighty and Majestic), peace and blessings of Allah be upon him. With utmost etiquette and dignity, in a sorrowful voice and a painful appearance, with a shameful heart and a broken liver, in a moderate voice, not loud or harsh (for voices in his presence...

1 Fatawa Hindiyyah, Conclusion on Visiting the Tomb of the Prophet (peace be upon him), Nurani Kutub Khana Peshawar 1/265. 2 Sharh al-Lubab with Irshad al-Sari, Chapter on Visiting the Master of Messengers, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, p. 337.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवां

...यदि समय मिले और वह मकरूह (नापसंद) समय न हो, तो दो रकात तहिय्यतुल मस्जिद और हुज़ूर के दरबार में हाज़िरी के शुक्राने के तौर पर, केवल सूरह अल-काफ़िरून और सूरह अल-इखलास के साथ बहुत हल्की लेकिन सुन्नत का लिहाज़ रखते हुए, रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के नमाज़ पढ़ने की जगह पर पढ़ें, जहाँ अब बीच में मेहराब बनी हुई है। यदि वह जगह न मिले, तो जहाँ तक संभव हो उसके पास अदा करें। फिर सजदा-ए-शुक्र में दुआ करें कि ऐ अल्लाह! अपने हबीब (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का अदब और उनका और अपना क़बूल नसीब कर। आमीन!

(15) अब पूर्ण शिष्टाचार में डूबे हुए, गर्दन झुकाए, आँखें नीची किए, लरज़ते, काँपते, गुनाहों की शर्मिंदगी से पसीने-पसीने होते हुए, हुज़ूर पुरनूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की माफ़ी और करम की उम्मीद रखते हुए, हुज़ूर के पैरों की ओर यानी पूर्व दिशा से मुवाजा-ए-आलिया (सामने) में हाज़िर हों। चूँकि हुज़ूर अक़दस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) मज़ार-ए-अनवर में क़िबला की ओर मुख करके विराजमान हैं, इस दिशा से हाज़िर हों ताकि हुज़ूर की निगाह आप पर पड़े, और यह बात आपके लिए दोनों जहानों में काफी है। वलहम्दुलिल्लाह।

(16) अब पूर्ण अदब, हैबत, खौफ और उम्मीद के साथ कंदील के नीचे उस चाँदी की कील के पास, जो हुजरा-ए-मुतहरा की दक्षिणी दीवार में चेहरा-ए-अनवर के सामने लगी है, कम से कम चार हाथ की दूरी से क़िबला की ओर पीठ और मज़ार-ए-अनवर की ओर मुँह करके नमाज़ की तरह हाथ बाँधकर खड़े हों। 'लुबाब', 'शरह लुबाब', 'अल-इख़्तियार शरह मुख्तार', 'फ़तावा आलमगीरी' आदि विश्वसनीय किताबों में स्पष्ट रूप से उल्लेख है कि: "वह वैसे ही खड़ा हो जैसे नमाज़ में खड़ा होता है।" यह इबारत आलमगीरी और इख़्तियार की है, और लुबाब में फरमाया: "अपना दायाँ हाथ बाएँ हाथ पर रखकर खड़ा हो।"

(17) सावधान! जाली शरीफ को चूमने या हाथ लगाने से बचें क्योंकि यह अदब के खिलाफ है। बल्कि चार हाथ के फासले से ज़्यादा करीब न जाएँ। क्या यह उनकी रहमत कम है कि उन्होंने आपको अपने पास बुलाया और अपने मुवाजा-ए-अक़दस में जगह दी? हालाँकि उनकी निगाह-ए-करीम पहले ही आपकी तरफ थी, अब वह विशिष्टता और इस दर्जे की निकटता के साथ है। वलहम्दुलिल्लाह।

(18) अलहम्दुलिल्लाह, अब आपके दिल की तरह आपका चेहरा भी उस पाक जाली की ओर है जो अल्लाह अज़्ज़वजल के अज़ीमुश्शान महबूब (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की आरामगाह है। निहायत अदब व वक़ार के साथ, ग़मगीन आवाज़ और दर्दनाक सूरत में, शर्मिंदा दिल और घायल जिगर के साथ, मध्यम आवाज़ में, न बहुत ऊँची और न सख्त (क्योंकि उनके दरबार में आवाज़...

---

1 फ़तावा हिंदीया, खातमा फी ज़ियारत क़ब्र अन-नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम), नूरानी कुतुब खाना पेशावर 1/265। 2 शरह अल-लुबाब मअ इरशाद अल-सारी, बाब फी ज़ियारत सैय्यद अल-मुरसलीन, दार अल-किताब अल-अरबी बैरुत, पृ. 337।

مہلت دے اور اس وقت کراہت نہ ہو تو دو رکعت تحیۃ المسجد اور شکرانہ حاضری دربارہ اقدس صرف قُلْ یٰۤاَیُّہَا اور قُلْ سے بہت ہلکی مگر رعایت سنت کے ساتھ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے نماز پڑھنے کی جگہ جہاں اب وسطِ کریم میں محراب بنی ہے اور وہاں نہ ملے تو جہاں تک ہو سکے اس کے نزدیک ادا کرو، پھر سجدہ شکر میں دعا کرو کہ الہی! اپنے حبیب صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا ادب اور ان کا اور اپنا قبول نصیب کر۔ آمین!

(۱۵) اب کمال ادب میں ڈوبے ہوئے گردن جھکائے آنکھیں نیچی کیے، لرزتے، کانپتے، گناہوں کی ندامت سے پسینہ پسینہ ہوتے ہوئے حضور پر نور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کے عفو و کرم کی امید رکھتے حضور والا کی پائیں یعنی مشرق کی طرف سے مواجہہ عالیہ میں حاضر ہو کہ حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم مزارِ انور میں رو بقبلہ جلوہ فرما ہیں اس سمت سے حاضر ہو کہ حضور کی نگاہِ بیکس پناہ تمہاری طرف ہوگی اور یہ بات تمہارے لیے دونوں جہان میں کافی ہے۔ والحمد للہ۔

(۱۶) اب کمال ادب و ہیبت وخوف و امید کے ساتھ زیرِ قندیل اس چاندی کی کیل کے جو حجرہ مطہرہ کی جنوبی دیوار میں چہرہ انور کے مقابل لگی ہے کم از کم چار ہاتھ کے فاصلہ سے قبلہ کو پیٹھ اور مزار انور کو منہ کر کے نماز کی طرح ہاتھ باندھے کھڑے ہو، لباب و شرح لباب و اختیار شرح مختار، فتاوائے عالمگیری وغیرہ ہما معتمد کتابوں میں اس کی تصریح فرمائی کہ یقف کما فی الصلوۃ 1، حضور کے سامنے ایسا کھڑا ہو جیسا نماز میں کھڑا ہوتا ہے، یہ عبارت عالمگیری و اختیار کی ہے، اور لباب میں فرمایا: وَاضِعاً یَمِیْنَہٗ عَلٰی شِمَالِہٖ 2 دست بستہ دہنا ہاتھ بائیں ہاتھ پر رکھ کر کھڑا ہو،

(۱۷) خبر دار جالی شریف کو بوسہ دینے یا ہاتھ لگانے سے بچو کہ خلافِ ادب ہے بلکہ چار ہاتھ فاصلہ سے زیادہ قریب نہ جاؤ یہ ان کی رحمت کیا کم ہے کہ تم کو اپنے حضور بلایا اور اپنے مواجہہ اقدس میں جگہ بخشی، ان کی نگاہِ کریم اگرچہ تمھاری طرف تھی اب خصوصیت اور اس درجہ قرب کے ساتھ ہے والحمد للہ۔

(۱۸) الحمد للہ اب کہ دل کی طرح تمھارا منہ بھی اس پاک جالی کی طرف ہے جو اللہ عزوجل کے محبوب عظیم الشان صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی آرام گاہ ہے نہایت ادب و وقار کے ساتھ بآوازِ حزیں و صورتِ درد آگیں، و دلِ شرمناک و جگر چاک چاک، معتدل آواز سے نہ بلند و سخت (کہ ان کے حضور آواز

---

1 فتاوٰی ہندیۃ خاتمہ فی زیارۃ قبر النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نورانی کتب خانہ پشاور ۱ / ۲۶۵

2 شرح لباب مع ارشاد الساری باب فی زیارت سید المرسلین دار الکتاب العربی بیروت ص ۳۳۷

Fatawa Rizvia, Volume 10

(Actions are wasted by raising the voice) nor should it be extremely soft and low (as it is against the Sunnah, although he is aware of even the inklings of your hearts, as just mentioned in the explanations of the Imams). Perform the salute and greeting and say:

Peace be upon you, O Prophet, and the mercy of Allah and His blessings. Peace be upon you, O Messenger of Allah. Peace be upon you, O best of Allah's creation. Peace be upon you, O intercessor for sinners. Peace be upon you and upon your family, your companions, and your entire Ummah.

(O beloved Prophet! Peace be upon you and Allah's mercy and blessings. O Messenger of Allah! Peace be upon you. O best of creation, peace be upon you. O intercessor for sinners, peace be upon you. Peace be upon you, your family, companions, and the entire Ummah. - Translator's note)

(9) As much as possible, as long as the tongue allows and there is no fatigue or weariness, recite Salawat and Salam in abundance. Ask for intercession from the Presence for yourself and for your parents, spiritual guide, teacher, children, relatives, friends, and all Muslims. Say repeatedly: "I ask you for intercession, O Messenger of Allah." (O Messenger of Allah! I am a seeker of intercession from you. - T)

(20) Then, if anyone has requested you to convey their greetings, fulfill it. It is prescribed by Sharia. And this humble servant requests those Muslims who read this treatise that when they are blessed with an audience in the sacred Presence, either during the humble servant's life or after, please do a favor to this unworthy person by reciting these words at least three times in the sacred Presence. May Allah reward them in both worlds. Amen:

Blessings and peace be upon you, O Messenger of Allah, and upon your family and your progeny at every moment and every second, equal to the number of every atom, a million times, from your humble servant Ahmad Raza son of Naqi Ali, who asks you for intercession, so intercede for him and for the Muslims.

(O Messenger of Allah, blessings and peace be upon you, and upon your family and progeny equal to every atom, a million times, from your servant Ahmad Raza bin Naqi Ali, and he is a seeker of intercession from you, please grant intercession for him and for all Muslims. - T)

1 Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter on Visiting the Master of Messengers, Dar al-Kutub al-Arabi, Beirut, p. 338 2 Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter on Visiting the Master of Messengers, Dar al-Kutub al-Arabi, Beirut, p. 339

(आवाज़ बुलंद करने से अमल अकारत हो जाते हैं) और न ही बहुत धीमी और पस्त (क्योंकि यह सुन्नत के खिलाफ है, हालांकि वे तुम्हारे दिलों के ख्यालों तक से वाकिफ हैं जैसा कि अभी इमामों के स्पष्टीकरणों में गुज़रा)। सलाम और अभिवादन पेश करो और कहो:

अस्सलामू अलैका अय्युहन नबिय्यु व रहमतुल्लाही व बरकातुहू। अस्सलामू अलैका या रसूलल्लाह। अस्सलामू अलैका या खैरा खल्किल्लाह। अस्सलामू अलैका या शफीअल मुज़्निबीन। अस्सलामू अलैका व अला आलिका व असहाबिका व उम्मतिका अजमईन।

(ऐ प्यारे नबी! आप पर सलाम हो और अल्लाह की रहमत और बरकतें हों। ऐ अल्लाह के रसूल! आप पर सलाम हो। ऐ मखलूक-ए-खुदा में सबसे बेहतर, आप पर सलाम हो। ऐ गुनाहगारों की शिफाअत (सिफारिश) फरमाने वाले, आप पर सलाम हो। आप पर और आपकी आल (संतान) व असहाब (साथियों) पर और तमाम उम्मत पर सलाम हो। - त)

(9) जहाँ तक मुमकिन हो और ज़बान साथ दे और कोई मलाल व थकान न हो, कसरत से दुरूद व सलाम पढ़ें। हुज़ूर से अपने लिए और अपने माँ-बाप, पीर, उस्ताद, औलाद, अज़ीज़ों, दोस्तों और सब मुसलमानों के लिए शिफाअत मांगो। बार-बार अर्ज़ करो: अस्सैलुकश शफ़ाअता या रसूलल्लाह। (ऐ अल्लाह के रसूल! मैं आपसे शिफाअत का सवाली हूँ। - त)

(20) फिर अगर किसी ने सलाम पहुँचाने की वसीयत की हो, तो उसे पूरा करें। शरीअत में इसका हुक्म है। और यह फ़क़ीर उन मुसलमानों को जो इस रिसाले को देखें, वसीयत करता है कि जब उन्हें हाज़िरी नसीब हो, फ़क़ीर की ज़िंदगी में या बाद में, कम से कम तीन बार मुवाजा-ए-अकदस (पवित्र उपस्थिति) में ज़रूर ये अल्फ़ाज़ अर्ज़ करके इस नालायक इंसान पर एहसान फरमाएं, अल्लाह उन्हें दोनों जहानों में बदला अता फरमाए। आमीन:

अस्सलातु वस्सलामू अलैका या रसूलल्लाही व अला आलिका व ज़ुर्रिय्यतिका फी कुल्लि आनिन व लह्ज़तिन अददा कुल्लि ज़र्रतिन अल्फ़ा अल्फ़ि मर्रतिन मिन उबैदिका अहमद रज़ा इब्ने नक़ी अली यस्तसइलुकश शफ़ाअता फ़शफ़अ लहू व लिल मुस्लिमीन।

(ऐ अल्लाह के रसूल! आप पर दुरूद व सलाम हो, आपकी आल और औलाद पर भी हर ज़र्रे के बराबर, लाखों बार आपके गुलाम अहमद रज़ा बिन नक़ी अली की तरफ से, और वो आपसे शिफाअत का तलबगार है, उसकी और तमाम मुसलमानों की शिफाअत फरमाइए। - त)

---

1 शरह लुबाब मआ इरशादुस सारी, बाब फ़ी ज़ियारते सैय्यदिल मुरसलीन, दारुल किताबुल अरबी, बैरूत, पृष्ठ 338 2 शरह लुबाब मआ इरशादुस सारी, बाब फ़ी ज़ियारते सैय्यदिल मुरसलीन, दारुल किताबुल अरबी, बैरूत, पृष्ठ 339

पृष्ठ 773 / 836

بلند کرنے سے عمل اکارت ہو جاتے ہیں) نہ نہایت نرم و پست (کہ سنت کے خلاف ہے اگرچہ وہ تمہارے دلوں کے خطروں تک سے آگاہ ہیں جیسا کہ ابھی تصریحات ائمہ سے گزرا) مجرا و تسلیم بجالاؤ اور عرض کرو: اَلسَّلَامُ عَلَيْكَ اَيُّهَا النَّبِيُّ وَرَحْمَةُ اللهِ وَبَرَكَاتُهُ۔ اَلسَّلَامُ عَلَيْكَ يَا رَسُولَ اللهِ۔ اَلسَّلَامُ عَلَيْكَ يَا خَيْرَ خَلْقِ اللهِ۔ اَلسَّلَامُ عَلَيْكَ يَا شَفِيْعَ الْمُذْنِبِيْنَ۔ اَلسَّلَامُ عَلَيْكَ وَعَلٰى اٰلِكَ وَأَصْحَابِكَ وَأُمَّتِكَ اَجْمَعِيْنَ۔ (اے پیارے نبی! آپ پر سلام ہو اور اللہ کی رحمت و برکات ہوں، اے اللہ کے رسول! آپ پر سلام ہو۔ اے مخلوقِ خدا میں سب سے بہتر آپ پر سلام ہو۔ اے گناہ گاروں کی شفاعت فرمانے والے آپ پر سلام ہو۔ آپ پر۔ اور آپ کے آل و اصحاب پر اور تمام امت پر سلام ہو۔ ت)

(۹) جہاں تک ممکن ہو اور زبان یاری دے اور ملال و کسل نہ ہو صلوٰۃ و سلام کی کثرت کرو۔ حضور سے اپنے لیے اور اپنے ماں باپ۔ پیر، استاد، اولاد، عزیزوں، دوستوں اور سب مسلمانوں کے لیے شفاعت مانگو، بار بار عرض کرو۔ اَسْئَلُكَ الشَّفَاعَةَ يَا رَسُوْلَ اللهِ (اے اللہ کے رسول! آپ سے شفاعت کا سوالی ہوں۔ت)

(۲۰) پھر اگر کسی نے عرض سلام کی وصیت کی بجالاؤ۔ شرعا اس کا حکم ہے۔ اور یہ فقیر ذیل ان مسلمانوں کو جو اس رسالہ کو دیکھیں وصیت کرتا ہے کہ جب انھیں حاضری نصیب ہو بارگاہ نصیب ہو فقیر کی زندگی میں یا بعد کم از کم تین بار مواجہہ اقدس میں ضرور یہ الفاظ عرض کر کے اس نالائق ننگِ خلائق پر احسان فرمائیں، اللہ ان کو دونوں جہاں میں جزا بخشے۔ آمین: اَلصَّلَاةُ وَالسَّلَامُ عَلَيْكَ يَا رَسُولَ اللهِ وَعَلٰى اٰلِكَ وَذُرِّيَّتِكَ فِي كُلِّ اٰنٍ وَّ لَحْظَةٍ عَدَدَ كُلِّ ذَرَّةٍ اَلْفَ اَلْفِ مَرَّةٍ مِّنْ عُبَيْدِكَ اَحْمَدَ رَضَا ابْنِ نَقِيّ عَلِيٍّ يَسْتَأْلُكَ الشَّفَاعَةَ فَاشْفَعْ لَهٗ وَلِلْمُسْلِمِيْنَ۔ (اے اللہ کے رسول آپ پر صلوٰۃ و سلام

ہو، آپ کی آل و ذریت پر بھی ہر ذرہ کے برابر، لاکھوں مرتبہ آپ کے غلام احمد رضا بن نقی علی پر، اور وہ آپ سے شفاعت کا خواستگار ہے اس کی اور تمام مسلمانوں کی شفاعت فرمائیے۔ت)

---

1 شرح لباب مع ارشاد الساری باب فی زیارت سید المرسلین دار الکتاب العربی بیروت ص ۳۳۸ 2 شرح لباب مع ارشاد الساری باب فی زیارت سید المرسلین دار الکتاب العربی بیروت ص ۳۳۹

(21) Then move a hand's length to your right, i.e., towards the East, stand in front of the luminous face of Hazrat Siddiq Akbar (may Allah be pleased with him) and say: "Peace be upon you, O Caliph of the Messenger of Allah. Peace be upon you, O Companion of the Messenger of Allah in the cave, and the mercy of Allah and His blessings be upon you."[1] (O Caliph of the Messenger of Allah! Peace be upon you. O companion of the Messenger of Allah in the cave! Peace be upon you and may the mercy and blessings of Allah descend upon you. (T))

(22) Then move the same distance further and stand before Hazrat Umar Farooq al-Azam (may Allah be pleased with him) and say: "Peace be upon you, O Leader of the Faithful. Peace be upon you, O completer of the forty. Peace be upon you, O honor of Islam and Muslims, and the mercy of Allah and His blessings be upon you."[2] (O Leader of the Faithful! Peace be upon you. O you who completed the forty Muslims! Peace be upon you. O honor of Islam and Muslims! Peace be upon you and may Divine mercy and blessings descend upon you. (T))

(23) Then turn back about a hand-span towards the West and stand between Siddiq and Farooq and say: "Peace be upon you both, O two Caliphs of the Messenger of Allah. Peace be upon you both, O two ministers of the Messenger of Allah. Peace be upon you both, O two who lie beside the Messenger of Allah, and the mercy of Allah and His blessings be upon you. I ask you both for intercession with the Messenger of Allah, may Allah bless him and you both and give peace."[3] (O the two Caliphs of the Messenger of Allah! Peace be upon you. O the two ministers of the Messenger of Allah! Peace be upon you. O those who lie by the side of the Messenger of Allah! Peace be upon you and may Allah's mercies and blessings descend upon you. It is requested from both of you that you become a means and support for intercession for me in the holy presence of the Messenger of Allah, may Allah bless him and you both and give peace. (T))

(24) All these presence are places of acceptance; strive in prayers, make comprehensive prayers. Satisfaction with Durood is better.

[1] Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter of Visiting the Master of Messengers, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 339. [2] Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter of Visiting the Master of Messengers, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 339. [3] Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter of Visiting the Master of Messengers, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 340.

(२१) फिर अपने दाहिने हाथ यानी पूर्व की ओर एक हाथ भर हटकर हज़रत सिद्दीक़े अकबर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) के नूरानी चेहरे के सामने खड़े होकर अर्ज़ करो: अस्सलामु अलैका या ख़लीफ़ता रसूल्लाह- अस्सलामु अलैका या साहिबा रसूल्लाह फ़िल ग़ारि व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू १- (ऐ अल्लाह के रसूल के ख़लीफ़ा! आप पर सलाम। ऐ अल्लाह के रसूल के ग़ार (गुफ़ा) के साथी! आप पर सलाम और अल्लाह की रहमत और बरकतें नाज़िल हों। (त))

(२२) फिर इतना ही और हटकर हज़रत उमर फ़ारूक़े आज़म (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) के सामने खड़े होकर अर्ज़ करो: अस्सलामु अलैका या अमीरल मोमिनीन। अस्सलामु अलैका या मुतम्मिल अरबईं। अस्सलामु अलैका या इज़्ज़ल इस्लामि वल मुस्लिमीन व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू २- (ऐ अमीरल मोमिनीन! आप पर सलाम। ऐ चालीस (४०) मुसलमानों को पूरा करने वाले! आप पर सलाम। ऐ इस्लाम और मुसलमानों की इज़्ज़त! आप पर सलाम और अल्लाह की रहमतें और बरकतें नाज़िल हों। (त))

(२३) फिर बालिश्त भर पश्चिम की ओर पलटकर सिद्दीक़ और फ़ारूक़ के दरमियान खड़े होकर अर्ज़ करो: अस्सलामु अलैकुमा या ख़लीफ़तई रसूल्लाह। अस्सलामु अलैकुमा या वज़ीरई रसूल्लाह। अस्सलामु अलैकुमा या ज़जीअई रसूल्लाह व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू। अस्अलुकुमाश शफ़ाअता इंदा रसूल्लाहि सल्लल्लाहु तआला अलैहि व अलैकुमा व बारका व सल्लम ३- (ऐ अल्लाह के रसूल के दोनों ख़लीफ़ाओं! तुम पर सलाम हो। ऐ अल्लाह के रसूल के दोनों वजीरों! तुम पर सलाम हो। ऐ अल्लाह के रसूल के पहलू में लेटने वालों! तुम पर सलाम और अल्लाह की रहमतें और बरकतें नाज़िल हों। आप दोनों से दरख्वास्त है कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु तआला अलैहि व सल्लम की बारगाहे अक़्दस में मेरे लिए शफ़ाअत का ज़रिया और सहारा बनें। (त))

(२४) ये तमाम हाज़िरियाँ क़बूलियत की जगहें हैं, दुआओं में कोशिश करो, जामे (विस्तृत) दुआ माँगो। दुरूद पर क़नाअत (संतोष) करना बेहतर है।

१ शरह लुबाब मआ इरशादुस सारी, बाब ज़ियारत सैयदुल मुरसलीन, दारुल किताबुल अरबी बेरुत, सफ़्हा ३३९ २ शरह लुबाब मआ इरशादुस सारी, बाब ज़ियारत सैयदुल मुरसलीन, दारुल किताबुल अरबी बेरुत, सफ़्हा ३३९ ३ शरह लुबाब मआ इरशादुस सारी, बाब ज़ियारत सैयदुल मुरसलीन, दारुल किताबुल अरबी बेरुत, सफ़्हा ३४०

पृष्ठ ७७४ का ८३६

(۲۱) پھر اپنے داہنے ہاتھ یعنی مشرق کی طرف ہاتھ بھر ہٹ کر حضرت صدیق اکبر رضی اللہ تعالٰی عنہ کے چہرہ نورانی کے سامنے کھڑے ہو کر عرض کرو: اَلسَّلَامُ عَلَیْكَ یَا خَلِیفَةَ رَسُولِ اللهِ- اَلسَّلَامُ عَلَیْكَ یَا صَاحِبَ رَسُولِ اللهِ فِي الْغَارِ وَرَحْمَةُ اللهِ وَبَرَكَاتُه ۱- (اے اللہ کے رسول کے خلیفہ! آپ پر سلام۔ اے رسول اللہ کے یارِ غار! آپ پر سلام اور اللہ کی رحمت و برکات کا نزول ہو۔ (ت))

(۲۲) پھر اتنا ہی اور ہٹ کر حضرت عمر فاروق اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ کے روبرو کھڑے ہو کر عرض کرو: اَلسَّلَامُ عَلَیْكَ یَا أَمِیرَ الْمُؤْمِنِینَ ط اَلسَّلَامُ عَلَیْكَ یَا مُتَمِّمَ الْأَرْبَعِینَ ط اَلسَّلَامُ عَلَیْكَ یَا عِزَّ الْإِسْلَامِ وَالْمُسْلِمِینَ وَرَحْمَةُ اللهِ وَبَرَكَاتُه ۲- (اے امیر المومنین آپ پر سلام۔ اے چالیس مسلمان پورے فرمانے والے! آپ پر سلام۔ اے اسلام اور مسلمانوں کی عزت! آپ پر سلام اور رحمت و برکات الٰہی کا نزول ہو۔ ت)

(۲۳) پھر بالشت بھر مغرب کی طرف پلٹو اور صدیق و فاروق کے درمیان کھڑے ہو کر عرض کرو: اَلسَّلَامُ عَلَیْكُمَا یَا خَلِیفَتَيْ رَسُولِ اللهِ ط اَلسَّلَامُ عَلَیْكُمَا یَا وَزِیرَيْ رَسُولِ اللهِ ط اَلسَّلَامُ عَلَیْكُمَا یَا ضَجِیعَيْ رَسُولِ اللهِ وَرَحْمَةُ اللهِ وَبَرَكَاتُه ط اَسْئَلُكُمَا الشَّفَاعَةَ عِنْدَ رَسُولِ اللهِ صَلَّی اللہ تَعَالٰی عَلَیْهِ وَعَلَیْكُمَا وَ بَارَكَ وَسَلَّمَ ۳- (اے رسول اللہ کے دونوں خلیفہ! تم پر سلام ہو، اے رسول اللہ کے دونوں وزیرو! تم پر سلام ہو۔ اے رسول اللہ کے پہلو میں لیٹنے والو! تم پر سلام اور اللہ کی رحمتوں و برکات کا نزول ہو، آپ دونوں سے درخواست ہے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وعلیکما و بارک وسلم کی خدمت اقدس میں میرے لیے شفاعت کا وسیلہ اور سہارا بنو۔ ت)

(۲۴) یہ سب حاضریاں محل اجابت ہیں دعاؤں میں کوشش کرو، دعائے جامع کرو۔ درود پر قناعت بہتر ہے۔

١ شرح لباب مع ارشاد الساری باب زیارة سید المرسلین دار الکتاب العربی بیروت ص ٣٣٩ ٢ شرح لباب مع ارشاد الساری باب زیارة سید المرسلین دار الکتاب العربی بیروت ص ٣٣٩ ٣ شرح لباب مع ارشاد الساری باب زیارة سید المرسلین دار الکتاب العربی بیروت ص ٣٤٠

(25) Then pray (make Dua) near the blessed pulpit (Mimbar). (26) Then come to the Garden of Paradise (i.e., the space between the pulpit and the blessed chamber, which has been called a garden of Paradise in the Hadith)[1] and perform two Rak'ahs of voluntary prayer (Nafil) at a non-disliked time, and then pray. (27) Similarly, perform prayers and make Dua near every pillar of the blessed Mosque, for these are places of blessings, especially some which have specific significance. (28) As long as you are blessed with presence in Madinah Tayyibah, let no breath go to waste. Apart from necessities, spend most of your time in the blessed Mosque in a state of purity. Spend time in prayer, recitation, and Salutations (Durood). Worldly talk is not permissible in any mosque, let alone here. (29) Always make the intention for I'tikaf (spiritual retreat) upon entering any mosque. Here, as a reminder, you will find this inscription as soon as you enter the door: NAWAYTU SUNNATAL I'TIKAF (I intend the sunnah of I'tikaf. - Translator). (30) If you are blessed with fasting in Madinah Tayyibah, especially in the heat, what can be said! For there is a promise of intercession for it. (31) Here, every good deed is recorded as fifty thousand; therefore, strive more in worship and certainly practice moderation in eating and drinking. (32) Complete at least one recitation of the Holy Quran here and in the Hatim of the Noble Ka'bah. (33) Looking at the Radiant Tomb (Rawdah Anwar) is also an act of worship, just like looking at the Noble Ka'bah or the Holy Quran. So, do this frequently with respect and offer Salutations and Greetings. (34) Be present at the blessed Frontage (Muwajaha Sharif) for the five daily prayers or at least morning and evening to offer greetings. (35) Wherever in the city or outside the city your gaze falls upon the blessed Dome, immediately fold your hands, face towards it, and offer Salutations and Greetings. Do not pass by without doing so, as it is against etiquette. (36) Abandoning the congregational prayer (Jama'at) without a valid excuse is a sin everywhere, and if done multiple times, it is strictly forbidden (Haram) and a major sin. And here, besides the sin, what severe deprivation it is! We seek refuge in Allah Almighty. It is in an authentic Hadith that the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: Whoever does not miss forty prayers in my mosque, for him freedom from Hell and hypocrisy shall be recorded.[2]

[1] Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter on Visiting the Master of Messengers, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 441. [2] Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Anas bin Malik, Dar al-Fikr, Beirut, 3/155.

(२५) फिर पवित्र मिंबर (मंच) के पास दुआ मांगें। (२६) फिर जन्नत की क्यारी में (अर्थात् वह स्थान जो मिंबर और पवित्र कक्ष के बीच है और जिसे हदीस में जन्नत की क्यारी कहा गया है) १ आकर गैर-मकरूह समय में दो रकात नफ़्ल पढ़ें और दुआ करें। (२७) इसी प्रकार मस्जिद शरीफ़ के हर स्तंभ के पास नमाज़ पढ़ें और दुआ मांगें कि ये बरकतों के स्थान हैं, विशेष रूप से कुछ स्तंभों की विशेष महत्ता है। (२८) जब तक मदीना तैयबा की उपस्थिति नसीब हो, एक सांस भी बेकार न जाए। ज़रूरतों के अलावा अधिकांश समय मस्जिद शरीफ़ में पाकीज़गी (पवित्रता) की हालत में हाज़िर रहें, नमाज़, तिलावत और दुरूद में समय बिताएं। दुनियावी बातें किसी भी मस्जिद में नहीं होनी चाहिए, यहाँ तो बिल्कुल भी नहीं। (२९) हमेशा हर मस्जिद में दाखिल होते समय एतिकाफ़ की नियत कर लें। यहाँ आपकी याददिहानी के लिए दरवाज़े से आगे बढ़ते ही यह लिखा हुआ मिलेगा: नवैतु सुन्नत अल-एतिकाफ़ (मैं एतिकाफ़ की सुन्नत की नियत करता हूँ। - अनुवादक) (३०) मदीना तैयबा में रोज़ा नसीब हो, विशेष रूप से गर्मी में, तो क्या कहना! उस पर शफ़ाअत (सिफारिश) का वादा है। (३१) यहाँ हर नेकी एक के बदले पचास हज़ार लिखी जाती है, इसलिए इबादत में अधिक कोशिश करें, खाने-पीने में कमी ज़रूर करें। (३२) कम से कम एक कुरआन मजीद का ख़त्म यहाँ और कबा मुअज़्ज़मा के हतीम में करें। (३३) रौज़ा अनवर पर नज़र डालना भी इबादत है जैसे कबा मुअज़्ज़मा या कुरआन मजीद को देखना, तो अदब के साथ इसे अधिक करें और दुरूद व सलाम पेश करें। (३४) पाँचों समय या कम से कम सुबह और शाम मुवाज़हा शरीफ़ में सलाम पेश करने के लिए हाज़िर रहें। (३५) शहर में या शहर से बाहर जहाँ कहीं गुंबद-ए-ख़ज़रा पर नज़र पड़े, तुरंत हाथ बाँधकर उधर मुँह करके सलात व सलाम पेश करें। इसके बिना हरगिज़ न गुज़रें क्योंकि यह अदब के खिलाफ है। (३६) बिना किसी उज़्र (बहाने) के जमाअत छोड़ना हर जगह गुनाह है और कई बार ऐसा करना सख़्त हराम और गुनाह-ए-कबीरा (बड़ा गुनाह) है, और यहाँ तो गुनाह के अलावा कितनी सख़्त महरूमी है! हम अल्लाह तआला की पनाह मांगते हैं। सही हदीस में है कि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फ़रमाते हैं: जिसकी मेरी मस्जिद में चालीस नमाज़ें कज़ा न हों, उसके लिए दोज़ख़ (नरक) और निफ़ाक़ (पाखंड) से आज़ादी लिख दी जाती है। २

१ शरह लुबाब मअ इरशाद-उस-सारी, बाब ज़ियारत सैय्यद-उल-मुरसलीन, दारुल किताब अल-अरबी, बेरूत, पृष्ठ ४४१ २ मुसनद अहमद बिन हंबल, अनस बिन मालिक से रिवायत, दारुल फ़िक्र, बेरूत, ३/१५५

पृष्ठ ७७५ का ८३६

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

(۲۵) پھر منبر اطہر کے قریب دعا مانگو۔ (۲۶) پھر روضہ جنت میں (یعنی جو جگہ منبر و حجرہ منورہ کے درمیان ہے اور اسے حدیث میں جنت کی کیاری فرمایا گیا) ۱ آ کر دو رکعت نفل غیر وقت مکروہ میں پڑھ کر دعا کرو۔ (۲۷) یو نہی مسجد شریف کے ہر ستون کے پاس نماز پڑھو اور دعا مانگو کہ محل برکات ہیں خصوصاً بعض میں خاص خصوصیت۔ (۲۸) جب تک مدینہ طیبہ کی حاضری نصیب ہو ہر ایک سانس بیکار نہ جائے وہ ضروریات کے سوا اکثر وقت مسجد شریف میں باطہارت حاضر ہو، نماز و تلاوت و درود میں وقت گزارو دنیا کی بات کسی مسجد میں نہیں چاہئے نہ کہ یہاں۔ (۲۹) ہمیشہ ہر مسجد میں جائے اعتکاف کی نیت کر لو۔ یہاں تمہاری یاد دہانی ہی کو دروازے سے بڑھتے ہی یہ کتبہ ملے گا۔ نَوَیْتُ سُنَّۃَ الْاِعْتِکَافِ ط (میں سنت اعتکاف کی نیت کرتا ہوں۔ ت) (۳۰) مدینہ طیبہ میں روزہ نصیب ہو خصوصاً گرمی میں تو کیا کہنا کہ اس پر وعدہ شفاعت ہے۔ (۳۱) یہاں ہر نیکی ایک کی پچاس ہزار لکھی جاتی ہے لہٰذا عبادت میں زیادہ کوشش کرو، کھانے پینے کی کمی ضرور کرو۔ (۳۲) قرآن مجید کا کم سے کم ایک ختم یہاں اور حطیم کعبہ معظمہ میں کرلو۔ (۳۳) روضہ انور پر نظر بھی عبادت ہے جیسے کعبہ معظمہ یا قرآن مجید کا دیکھنا تو ادب کے ساتھ اس کی کثرت کرو اور درود و سلام عرض کرو۔ (۳۴) پنجگانہ یا کم از کم صبح و شام مواجہہ شریف میں عرضِ سلام کے لیے حاضر رہو۔ (۳۵) شہر میں یا شہر سے باہر جہاں کہیں گنبد مبارک پر نظر پڑے فوراً دست بستہ ادھر منہ کر کے صلوٰۃ و سلام عرض کرو بغیر اس کے ہر گز نہ گزرو کہ خلاف ادب ہے۔ (۳۶) ترکِ جماعت بلا عذر ہر جگہ گناہ ہے اور کئی بار ہو تو سخت حرام و گناہِ کبیرہ، اور یہاں تو گناہ کے علاوہ کیسی سخت محرومی ہے

والعیاذ باللہ تعالیٰ، صحیح حدیث میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فرماتے ہیں: جسے میری مسجد میں چالیس نمازیں فوت نہ ہوں اس کے لیے دوزخ و نفاق سے آزادیاں لکھی جائیں ۲۔

۱ شرح لباب مع ارشاد الساری باب زیارۃ سید المرسلین دارالکتاب العربی بیروت ص ۴۴۱ ۲ مسند احمد بن حنبل مروی از انس بن مالک دارالفکر بیروت ۳ / ۱۵۵

(37) Never turn your back towards the noble grave, and as much as possible, even in prayer, stand in such a place where you do not have to turn your back towards it. (38) Do not perform Tawaf (circumambulation) of the Radiant Tomb. Neither prostrate, nor bow down so much that it equals Ruku' (the bowing posture in prayer). The reverence for the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) lies in his obedience. (39) Visiting Baqi, Uhud, and Quba is a Sunnah. The reward for two Rak'ats (units of prayer) in Masjid-e-Quba is equal to one Umrah. And if you wish, stay present here; my master Ibn Abi Jamra (may his secret be sanctified), when present, would remain standing in attendance throughout all eight watches (of the day and night). One day the thought of visiting Baqi etc. occurred, then he said: "This is the door of Allah, open for those seeking alms; leaving this, where shall I go?"

My head is here, prostration is here; devotion is here, peace is here.

(40) At the time of departure, present yourself before the Radiant Face and repeatedly ask for the gift of this blessing (of visiting) from the Prophet, and observe all the etiquettes that were mentioned for the departure from the Great Ka'bah, and pray with a sincere heart: "O Allah! Grant me death upon faith and Sunnah in Madinah Tayyibah and burial in the blessed Baqi. O Allah, grant us this, Ameen, Ameen, O Most Merciful of the merciful. And may the blessings of Allah be upon our Master Muhammad, his family, his companions, his son, and all his group. And all praise is due to Allah, the Lord of all the worlds."

(37) पवित्र कब्र की ओर कभी पीठ न करें, और जहाँ तक संभव हो, नमाज़ में भी ऐसी जगह खड़े हों जहाँ पीठ न करनी पड़े। (38) पवित्र रौज़े का तवाफ़ न करें। न सजदा करें और न इतना झुकें कि वह रुकू के बराबर हो जाए। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का सम्मान उनकी आज्ञाकारिता में है। (39) बक़ी, उहुद और क़ुबा की ज़ियारत सुन्नत है। मस्जिद-ए-क़ुबा में दो रकात का सवाब एक उमराह के बराबर है। और यदि आप चाहें, तो यहीं उपस्थित रहें; मेरे आका इब्न अबी जमरा (क़ुद्दिस सिर्रहु), जब उपस्थित होते, तो आठों पहर लगातार उपस्थिति में खड़े रहते। एक दिन बक़ी आदि की ज़ियारत का विचार आया, फिर उन्होंने कहा: "यह अल्लाह का द्वार है जो भीख माँगने वालों के लिए खुला है, इसे छोड़कर मैं कहाँ जाऊँ"

सिर यहाँ है, सजदा यहाँ है; बंदगी यहाँ है, करार यहाँ है।

(40) प्रस्थान के समय, पवित्र चेहरे (मुवाजा-ए-अनवर) के सामने उपस्थित हों और हुज़ूर से बार-बार इस अनुग्रह (नेमत) को प्रदान करने की विनती करें, और उन सभी शिष्टाचारों का पालन करें जो काबा मुअज्जमा से विदाई के समय बताए गए थे, और सच्चे दिल से दुआ करें: "हे अल्लाह! मुझे मदीना तैयबा में ईमान और सुन्नत पर मौत और पाक बक़ी में दफ़न होना नसीब हो। ऐ अल्लाह, हमें यह प्रदान कर, आमीन, आमीन, ऐ सबसे रहम करने वाले। और अल्लाह की कृपा हमारे आका मुहम्मद और उनके परिवार, उनके साथियों, उनके पुत्र और उनके पूरे समूह पर हो। और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है, जो सारे जहानों का रब है।"

पृष्ठ 776 / 836

(۳۷) قبرِ کریم کو ہر گز پیٹھ نہ کرو اور حتی الامکان نماز میں بھی ایسی جگہ کھڑے ہو کہ پیٹھ کرنی نہ پڑے۔ (۳۸) روضہ انور کا طواف نہ کرو۔ نہ سجدہ، نہ اتنا جھکنا کہ رکوع کے برابر ہو۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی تعظیم ان کی اطاعت میں ہے۔ (۳۹) بقیع واُحد و قبا کی زیارت سنت ہے۔ مسجدِ قبا کی دو رکعت کا ثواب ایک عمرے کے برابر ہے اور چاہو تو یہیں حاضر رہو، سیدی ابن ابی جمرہ قدس سرہ، جب حضور ہوتے آٹھوں پہر برابر حضوری میں کھڑے رہتے۔ ایک دن بقیع وغیرہ کی زیارت کا خیال آیا پھر فرمایا یہ ہے اللہ کا دروازہ بھیک مانگنے والوں کے لیے کھلا ہے اسے چھوڑ کر کہاں جاؤں ع سر ایں جا سجدہ ایں جا بندگی ایں جا قرار ایں جا (۴۰) وقتِ رخصت مواجہہ انور میں حاضر ہو اور حضور سے بار بار اس نعمت کی عطا کا سوال کرو، اور تمام آداب کہ کعبہ معظمہ سے رخصت میں گزرے ملحوظ رکھو اور سچے دل سے دعا کرو کہ الٰہی! ایمان و سنت پر مدینہ طیبہ میں مرنا اور بقیعِ پاک میں دفن ہونا نصیب ہو۔ اَللّٰھُمَّ ارْزُقْنَا اٰمِین اٰمِین یَا اَرْحَمَ الرَّاحِمِین وصلی اللہ تعالیٰ علی سیدنا محمد وآلہ وصحبہ وابنہ وحزبہ اجمعین والحمدللہ رب العالمین۔

Volume Ten Fatawa Razawiyya

An-Nayyirah al-Wudhiyyah Sharh al-Jawharah al-Mudhiyyah 1295 AH With Marginalia At-Tarrah ar-Radhiyyah 'ala an-Nayyirah al-Wudhiyyah

__ Text __ By the most eminent scholar Maulana Sayyid Hussain bin Salih Jamal al-Layl Fatimi Husayni, Imam and Preacher of Shafi'is, Makkah al-Mukarramah, may Allah have mercy on him (deceased 1291 AH).

__ Commentary and Marginalia __ By Ala-Hazrat, Imam of the People of Sunnah, Maulana Shah Ahmad Raza Khan Qadri Barelvi, may his secret be sanctified.

Etiquettes and Rulings of Hajj, Umrah, and the Pilgrimage to the Embodiment of Purity.

In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. All praise is due to Allah, Whose praise is a shining jewel from the oceans of sanctity, and blessings and peace be upon the one for whom blessings upon him are a bright light in the sky of radiance, and upon his family and companions upon whom peace be likewise.

Page 778 of 836

खंड दस फतावा रजविया

अन-नय्यरह अल-वुधिय्या शरह अल-जौहरह अल-मुधिय्या १२९५ हिजरी हाशिये के साथ अत-तर्रा अर-रधिय्या अला अन-नय्यरह अल-वुधिय्या

__ मूल पाठ __ महान विद्वान मौलाना सैयद हुसैन बिन सालेह जमल अल-लैल फातिमी हुसैनी, मक्का मुकर्रमा के शाफई इमाम और खतीब, उन पर अल्लाह की रहमत हो (मृत्यु १२९१ हिजरी)।

__ व्याख्या और हाशिए __ आला हजरत, इमाम-ए-अहले सुन्नत मौलाना शाह अहमद रज़ा खाँ कादरी बरेलवी, अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र रखे, द्वारा।

हज, उमराह और सरापा तहारत (पवित्रता के स्वरूप) की ज़ियारत के आदाब और मसाइल।

बिस्मिल्लाह हिर्रहमान निर्रहीम तमाम प्रशंसा अल्लाह के लिए है, जिसकी प्रशंसा पवित्रता के समुद्रों से एक चमकता हुआ मोती है, और उस पर दुरूद और सलाम हो जिस पर दुरूद नूर (प्रकाश) के आकाश में एक चमकदार रोशनी है, और उसके परिवार और साथियों पर जिन पर उसी तरह सलाम हो।

पृष्ठ ७७८ का ८३६

جلد دہم فتاویٰ رضویہ

النَّيِّرَةُ الْوُضِيَّةُ شَرْحُ الْجَوْهَرَةِ الْمُضِيَّةِ ۱۲۹۵ھ مع حاشیہ الطَّرَّةُ الرَّضِيَّةُ عَلَى النَّيِّرَةُ الْوُضِيَّةُ

__ متن __ از عالم اجل مولانا سید حسین بن صالح جمل اللیل فاطمی حسینی امام و خطیب شافعیہ مکہ مکرمہ رحمہ اللہ (متوفی ۱۲۹۱ھ)

__ شرح وحاشیہ __ از اعلیٰحضرت امام اہلسنت مولانا شاہ احمد رضا خاں قادری بریلوی قدس سرہ العزیز

حج، عمرہ اور زیارت سراپا طہارت کے آداب ومسائل

بسم اللہ الرحمن الرحیم ط الحمد للہ الذي حمده من بحار القدس جوهرة مضية والصلوة والسلام على من الصلوة عليه في سماء النور نيرة وضية وعلى آله وصحبه الذين السلام عليهم على تلك

Fatawa Rizvia, Volume 10

Except Allah, He is one, He has no partner, and I bear witness that Muhammad is His servant and His Messenger, peace and blessings of Allah be upon him, his family and his companions until the Day of Resurrection.

Amen! Now after that: The poor servant Abd al-Mustafa Ahmad Raza (may Allah forgive him and rectify his deeds) during the time of writing "Al-Nayyirah al-Wadhiyyah Sharh al-Jawharah al-Mudhiyyah", had written some subtle points and restrictions on it for the purpose of expressing intent, completing the discourse, or dispelling doubts. Now, including other useful notes for clarifying issues, citing hadiths, or increasing benefits, the purpose of this brief commentary named "Al-Turrah al-Radhiyyah 'ala al-Nayyirah al-Wadhiyyah" is just to provide a book of at least five hundred pages for the religious brothers. I ask Allah to benefit the Muslims through both of them and through all my other works, and to make them all an argument for me and not against me on the Day of Judgment. May Allah Almighty bless our master and lord Muhammad, his family, and all his companions.

In the commentary, where extreme brevity was intended, the translation of the text's sermon was also not written, but the text remains incomplete in it, so it is written here.

The author (may Allah have mercy on him) said: In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful.

Text (Poetry): Praise be to Him who sent down the obligation of Hajj and guided us to the straight path. Translation: All praise is for Him who sent down the obligation of Hajj and showed us the straight path among all paths.

Text: Then the peace and blessings of Allah be upon the Prophet whose religion is Islam. Translation: Then the blessings and peace of God be upon that Prophet whose religion is Islam.

Text: Muhammad, his noble family, and his eminent, virtuous companions. Translation: That is, Muhammad (peace and blessings of Allah be upon him) and his generous family and companions of great virtue and fame.

Text: And after this, this poor one says, who is famous by the title Jamal al-Layl. Translation: After this, this poor servant says that he is famous by the title of Jamal al-Layl.

Text: Husayn, son of Salih, brother of guidance, a leader and guide for the Shafi'is. Translation: Husayn, son of Salih, who was a possessor of guidance, a leader and guide of the Shafi'is.

Text: Here comes an urjuzah (poem) for the rituals (manasik), beneficial in knowing the rituals. Translation: This is a poem in rajaz meter for the pilgrim, which will be beneficial in recognizing the issues of Hajj.

Explanation: The original meaning of 'manasik' is acts of worship or sacrifices; here it means the pilgrim, as Hajj is among the best of acts of worship and includes sacrifice either as an obligation or a recommendation. 'Rajaz' is a type of poetry or rhymed prose, according to the differences among prosodists.

Text: I named it 'Al-Jawharah al-Mudhiyyah' (The Shining Jewel), through it the soul of a youth becomes radiant.

फ़तावा रिज़विया, खंड 10

अल्लाह के सिवा कोई इबादत के लायक नहीं, वह अकेला है, उसका कोई शरीक नहीं, और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद उसके बंदे और उसके रसूल हैं, अल्लाह तआला उन पर, उनके परिवार और उनके साथियों पर कयामत के दिन तक अपनी रहमतें और सलामती नाज़िल फरमाए।

आमीन! इसके बाद: फकीर अब्दुल मुस्तफा अहमद रज़ा (अल्लाह उन्हें माफ करे और उनके कर्मों को सुधारे) ने "अल-नैय्यिराह अल-वदिय्याह शरह अल-जौहराह अल-मुधिय्याह" के संकलन के समय, उद्देश्य व्यक्त करने, बात पूरी करने या संदेहों को दूर करने के लिए उस पर कुछ सूक्ष्म प्रतिबंध लिखे थे। अब अन्य उपयोगी हाशिये, मसलों की स्पष्टीकरण, हदीसों का संदर्भ, या लाभों को बढ़ाने वाले नोटों को शामिल करते हुए, "अत-तुर्राह अर-रदिय्याह अला अन-नैय्यिराह अल-वदिय्याह" नामक इस संक्षिप्त टिप्पणी का उद्देश्य धार्मिक भाइयों के लिए कम से कम पाँच सौ पन्नों की किताब तैयार करना है। मैं अल्लाह से प्रार्थना करता हूँ कि वह इन दोनों से और मेरी अन्य सभी रचनाओं से मुसलमानों को लाभान्वित करे, और कयामत के दिन उन सबको मेरे पक्ष में दलील बनाए न कि मेरे विरुद्ध। और अल्लाह तआला हमारे आका और मौला मुहम्मद, उनके परिवार और उनके सभी साथियों पर रहमत और सलामती नाज़िल फरमाए।

शरह (व्याख्या) में जहाँ अत्यंत संक्षिप्तता का विचार था, वहाँ मूल पाठ के खुतबे (प्रस्तावना) का अनुवाद भी नहीं लिखा गया था, लेकिन उसमें पाठ अधूरा रहता है, इसलिए यहाँ लिखा जा रहा है।

मुसन्निफ (लेखक) रहमतुल्लाह अलैहि ने कहा: अल्लाह के नाम से, जो अत्यंत दयालु और कृपालु है।

म (मूल पाठ): उस हस्ती की प्रशंसा जिसने हज का फर्ज़ उतारा और हमें सही रास्ते की ओर निर्देशित किया। त (अनुवाद): सारी प्रशंसा उस ज़ात के लिए है जिसने हज का फर्ज़ उतारा और हमें सभी रास्तों में सीधा रास्ता दिखाया।

म: फिर अल्लाह की दुरूद और सलाम उस नबी पर जिनका दीन इस्लाम है। त: फिर खुदा की दुरूद और सलाम उस नबी पर जिनका दीन इस्लाम है।

म: मुहम्मद, उनके महान परिवार और उनके महान गुणी साथियों पर। त: यानी मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और उनके उदार परिवार और बड़ी फज़ीलत और शोहरत वाले साथियों पर।

म: और इसके बाद यह फकीर कहता है जो जमाल अल-लैला के लक़ब (उपाधि) से प्रसिद्ध है। त: इसके बाद यह फकीर कहता है कि वह जमाल अल-लैला के लक़ब से मशहूर है।

म: हुसैन इब्ने सालेह, हिदायत के भाई, शाफई संप्रदाय के इमाम और पेशवा। त: हुसैन, सालेह के बेटे जो हिदायत के मालिक थे, शाफईयों के इमाम और पेशवा।

म: यह मनासिक (हज के अनुष्ठान) के लिए एक उर्जुज़ा (काव्य) है, जो मनासिक को जानने में सहायक होगा। त: यह हाजी के लिए रज़ज़ (छंद) में एक काव्य है जो हज के मसलों को पहचानने में लाभ देगा।

श (व्याख्या): मनासिक का मूल अर्थ इबादत या कुर्बानी है, यहाँ हाजी मुराद है क्योंकि हज बेहतरीन इबादतों में से है और इसमें वाजिब या मुस्तहब (पसंदीदा) रूप से कुर्बानी शामिल होती है, और रज़ज़ काव्य या लयबद्ध गद्य का एक प्रकार है, जिसमें छंदशास्त्रियों के बीच मतभेद है।

म: मैंने इसका नाम 'अल-जौहराह अल-मुधिय्याह' (चमकता हुआ मोती) रखा है, जिससे एक युवक की आत्मा उज्ज्वल हो जाती है।

فتاویٰ رضویہ، جلد دہم

الا الله وحده لا شريك له واشهد ان محمدا عبده ورسوله صلى الله تعالى عليه وسلم وعلى اله وصحبه الى يوم القيمة

آمین! اما بعد فقیر عبدالمصطفی احمد رضا غفر له واصلح عمله نے زمانہ تالیف "النیرة الوضیة شرح الجوهرة المضیة" میں اس پر بعض منہیات، تقییدات لطیفہ پر مشتمل، بغرض اظہار مرام یا اتمام کلام یا از ہاق اوہام لکھے تھے۔ اب دیگر حواشی مفید ہ توضیح مسائل یا تخریج احادیث یا زیادت فوائد کو متضمن اور اضافہ کیے، مقصود اس تعلیق مختصر مسمیٰ بالطرة الرضیۃ علی النیرة الوضیۃ سے صرف برادر ان دینی کے لیے کم از کم پانسو ورق کی کتاب درکار۔ اسأل الله ان ینفع بهما وبسائر تصانیفی المسلمین ویجعلهما جمیعا حجة لی لاعلی یوم الدین وصلی الله تعالی علی سیدنا ومولانا محمد وآله وصحبه اجمعین۔

شرح میں کہ کمال اختصار منظور تھا خطبہ متن کا ترجمہ بھی نہ لکھا مگر اس میں متن ناقص رہتا ہے، لہذا یہاں تحریر ہوتا ہے۔

قال المصنف رحمه الله تعالى بسم الله الرحمن الرحيم۔

م: حمد لمن انزل فرض الحج ودلنا على سوى النهج ت: سب خوبیاں اسے جس نے حج کا فرض اتارا اور ہمیں سب راہوں میں سیدھی راہ بتائی۔

م: ثم صلوة الله والسلام على نبى دينه الاسلام ت: پھر خدا کے درود و سلام اس نبی پر جن کا دین اسلام ہے۔

م: محمد وآله الكرام وصحبه الافاضل الاعلام ت: یعنی محمد صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اور ان کی کرم والی آل اور بڑی فضیلت و شہرت والے یاروں پر۔

م: وبعد ذا یقول ذا الفقیر بجمال اللیل ھو الشھیر ت: اس کے بعد کہتا ہے یہ فقیر کہ جمال اللیل کے لقب سے مشہور ہے۔

م: حسین نجل صالح اخی الھدی للشافعیۃ امام مقتدیت: ت: حسین پسر صالح کہ صاحب رہنمائی تھے شافعیہ کے امام پیشوا۔

م: ھذی اتت ارجوزۃ للمناسك تنفع في معرفۃ المناسک ت: یہ ایک رجز ہے حاجی کے لیے کہ نفع دے گی مسائل حج پہچاننے میں۔

ش: مناسک کے اصل معنی عبادتوں قربانی کنندہ، یہاں حاجی مراد ہے کہ حج عمدہ عبادات سے ہے اور وجوبا یا استحباباً قربانی پر مشتمل، اور رجز ایک قسم نظم یا نثر مسجع کی ہے علی اختلاف العروضیین فیہ۔

م: سمیتھا الجورھۃ المضیۃ تضحی بھا نفس الفتی وضیۃ

T: I have named it 'Jawhara-e-Muziya' (The Radiant Jewel); the lives of the seekers on the path of knowledge will gain light from it. M: Hoping for acceptance from my Lord, through it I attain success and desired goals. I hope for acceptance from my Lord, through it I obtain the fruit and fulfillment of my desires. M: From Him comes the divine grace for righteousness, and towards Him is the ultimate return. It is from Him that the means of righteousness are granted, and to Him is the final return in the end. M: Introduction on the Obligation of... etc. In the name of Allah, the Most Gracious, the Most Merciful. All praise is due to Allah, who made the Proof (Hujjah) obligatory and clarified the Path (Mahajjah) (1), and blessings and peace be upon His Prophet who established the Proof and straightened crooked nations (2), and upon his Family and Companions who manifested the narrow alleys (3) and wide paths (4) of religion, until a clamor (5) of their praises resounded in the heavens, causing a tremor (6). I bear witness that there is no god but Allah, and I bear witness that Muhammad is His servant and His Messenger, may Allah Almighty bless him and grant him peace as long as waves crash in the depths of the sea (7).

After praise and blessings, let it be clear that when divine guidance and grace, and the assistance of the refuge of Prophethood, peace and blessings be upon him, provided support, and in 1295 AH, this humble servant full of shortcomings, Ahmad Raza Hanafi Qadri Barkati Bareilvi (may his sins be forgiven), was in the company of the most virtuous of researchers, the foremost among the meticulous, the protector of the luminous Sunnah, the eradicator of worldly trials, my father, my great Qibla, Hazrat Maulana Maulvi Muhammad Naqi Ali Khan Sahib Qadri Barkati (may his lofty shadow endure as long as days and nights alternate), the successor of the exemplar of the Gnostics, the cream of the virtuous, the proof of Allah on earth, a miracle among the miracles of the Leader of the Messengers (peace and blessings be upon him), Hazrat Maulana Muhammad Raza Ali Khan Sahib Qadri (may his secret be sanctified). The blessing of visiting the honored city of Makkah al-Mukarramah (may Allah increase its honor and nobility) was granted. By a fortunate coincidence, one day, in the presence of Maulana Sayyidi Husain bin Salih Jamal-ul-Layl Alawi Fatimi Qadri Makki, the Imam and Khateeb of the Shafi'is, at Maqam Ibrahim (peace and blessings be upon him)...

Note 1: The straight path (12) Note 2: From 'iwaj' (crookedness), meaning bent and not straight (12) Note 3: With a damma, meaning a small street and a narrow path. Note 4: With a fatha, meaning a wide and open road; both refer to the apparent and

intricate aspects of religion (12). Note 5: Noise, clamor, and sound (12) Note 6: Tremor/Shaking (12) Note 7: The middle of the sea and the bottom of the sea, the sea of honor, and the meaning is either of the two (12 from him, may he be forgiven).

त: मैंने इसका नाम 'जौहरा-ए-मुज़िया' (देदीप्यमान रत्न) रखा है, ज्ञान के मार्ग के साधकों के जीवन को इससे प्रकाश प्राप्त होगा। म: अपने रब से स्वीकृति की आशा करते हुए, इसके माध्यम से मैं सफलता और अभीष्ट लक्ष्यों को प्राप्त करता हूँ। अपने रब से स्वीकृति की कामना करते हुए मैं उसी से फल और मुराद पाता हूँ। म: उसी की ओर से सत्यनिष्ठा का सामर्थ्य मिलता है और उसी की ओर अंततः लौटना है। सच्चाई के साधन ठीक करना उसी के पास है और अंत में उसी की ओर लौटना है। म: 'इत्यादि की अनिवार्यता' पर प्रस्तावना बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम तमाम प्रशंसा अल्लाह के लिए है जिसने दलील (हुज्जत) को अनिवार्य किया और मार्ग (महज्जत) (१) को स्पष्ट किया, और दुरूद व सलाम हो उसके नबी पर जिन्होंने दलील को स्थापित किया और टेढ़ी कौमों (२) को सीधा किया, और उनके आल और साथियों पर जिन्होंने धर्म की तंग गलियों (३) और चौड़े रास्तों (४) को स्पष्ट किया, यहाँ तक कि उनके गुणों की प्रशंसा के शोर (५) की गूंज आसमानों में पहुंची और एक कंपन (६) पैदा कर दिया। मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद उसके बंदे और रसूल हैं, अल्लाह तआला उन पर दुरूद और सलाम भेजे जब तक समुद्र की लहरें उसकी गहराई (७) में टकराती रहें।

प्रशंसा और दुरूद के बाद, स्पष्ट हो कि जब ईश्वरीय कृपा और सहायता और नबी-ए-करीम (उन पर दुरूद और सलाम हो) की मदद ने हाथ पकड़ा और १२९५ हिजरी में, यह अत्यधिक त्रुटिपूर्ण दास अहमद रज़ा हनफ़ी क़ादरी बरकाती बरेलवी (अल्लाह उसके गुनाहों को क्षमा करे), अपने वालिद, शोधकर्ताओं में श्रेष्ठ, सुन्नत के रक्षक, सांसारिक फ़ितनों को मिटाने वाले, हज़रत मौलाना मौलवी मुहम्मद नक़ी अली ख़ान साहब क़ादरी बरकाती (अल्लाह उनकी छाया को दिन और रात के चक्र तक बनाए रखे) के साथ थे, जो आरिफ़ों के आदर्श, फ़ाज़िलों के सार, ज़मीन पर अल्लाह की हुज्जत, रसूलों के सरदार (उन पर दुरूद और सलाम हो) के चमत्कारों में से एक चमत्कार, हज़रत मौलाना मुहम्मद रज़ा अली ख़ान साहब क़ादरी (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र रखे) के उत्तराधिकारी थे। तब पवित्र शहर मक्का मुअज़्ज़मा (अल्लाह इसके सम्मान और गौरव को बढ़ाए) की हाज़िरी का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सौभाग्यवश, एक दिन जनाब मौलाना सय्यिदी हुसैन बिन सालेह जमलुल-लैल अलवी फ़ातिमी क़ादरी मक्की, शाफ़ई इमाम और ख़तीब, के साथ मक़ाम-ए-इब्राहिम (उन पर दुरूद और सलाम हो) पर...

नोट १: सीधा रास्ता (१२) नोट २: 'एवज' (टेढ़ेपन) से, यानी टेढ़ा और जो सीधा न हो (१२) नोट ३: धम्म (पेश) के साथ, तंग गली और तंग रास्ता। नोट ४: फ़तह (ज़बर) के साथ, चौड़ा और खुला रास्ता; दोनों से मुराद धर्म के बाहरी और सूक्ष्म पहलू हैं (१२) नोट ५: शोर-शराबा और आवाज़ (१२) नोट ६: कंपन (१२) नोट ७: समुद्र का मध्य और तल, सम्मान का समुद्र, और मुराद दोनों में से एक है (१२ लेखक की ओर से, अल्लाह उन्हें क्षमा करे)

पृष्ठ ७८० / ८३६

ت: میں نے اس کا جوہرہ مضیہ نام رکھا، مردانِ راہِ علم کی جان اس سے روشنی پائے گی۔ م: مؤملاً من ربی القبولا بہ انال الفوز والمأمولات اپنے رب سے قبول کی تمنا کرتا ہوا میں اسی سے پاؤں گا فلح و مراد۔ م: من عندہ التوفیق للصواب ونحوہ المرجع فی المآبت اسی کے پاس ہے راستی کے سامان درست فرمانا اور اسی کی طرف ہے انتہا میں پلٹ جانا۔ م: مقدمۃ فی وجوب الخ بسم اللہ الرحمن الرحیم ط الحمد للہ الذی فرض الحجۃ، واوضح المحججۃ عہ1، والصلوۃ والسلام علی نبیہ الذی اقام الحجۃ، فقوم اقواماً معوجۃ عہ2، وعلی الہ وصحبہ الذین اظہر وازقاق عہ3 الدین وفجۃ عہ4 حتی وقعت بالسماوات من لجۃ عہ5 مدائحھم رجۃ عہ6 واشھد ان لا الہ الا اللہ واشھد ان محمداً عبدہ ورسولہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ماتلا لطم الامواج فی لجۃ عہ7۔ بعد حمد و صلوٰۃ کے واضح ہو کہ جب توفیق و عنایتِ الٰہی و اعانتِ حضرت رسالت پناہی علیہ الصلوٰۃ والسلام الغیر المتناہی نے دستگیری فرمائی اور ۱۲۹۵ھ میں فقیر سراپا تقصیر عبدالمنظور احمد رضا حنفی قادری برکاتی بریلوی غفر لہ ماجنی کو بہ ہمراہی رکابِ، سعادت انتساب، حضرت افضل المحققین، امثل المتقدقین، حامی السنۃ السنیہ، ماحی الفتن الدنیہ، خدمت والدم، قبلہ اعظم حضرت مولانا مولوی محمد نقی علی خاں صاحب قادری برکاتی مد ظلہم العالی مدی تعاقب الایام واللیالی، خلف حضرت قدوۃ العارفین، زبدۃ الفاضلین، حجۃ اللہ فی الارضین، معجزہ من معجزات سید المرسلین علیہ الصلوٰۃ والتسلیم حضرت مولانا محمد رضا علی خاں صاحب قادری قدس سرہ العلی، نعمتِ حاضریِ بلدہ معظمہ مکہ مکرمہ زاد ہا اللہ تعالیٰ شرفاً و تکریاً ہا تھ آئی، حُسنِ اتفاق سے ایک روز جناب مولانا سیدی حسین بن صالح جمل اللیل علوی فاطمی قادری مکی امام و خطیب شافعیہ سے مقام ابراہیم علیہ الصلوٰۃ والتسلیم کے

عہ1: راہِ راست (۱۲) عہ2: من الاعوجاج کج و انار است (۱۲) عہ3: بالضم کوچہ و راہ تنگ عہ4: بفتح راہِ کشادہ و فراخ والمراد بهما ظواہر الدین و دقائقہ ۱۲) عہ5: شور و غوغا و آواز (۱۲) عہ6: لرزہ (۱۲) عہ7: میانِ دریا و قعر، دریا و دریائے شرف و المراد احد الطرفین ۱۲ منہ غفر لہ)

Fatawa Razawiya, Volume 10

It was close to when the humble servant (faqir) finished the circumambulation (Tawaf) units and that gentleman finished leading the Maghrib prayer that the meeting took place. Subhan Allah! What a wonderful person, blessed with good times and blessings; thousands of people from nearby and distant lands like Arabia, Jada, and Dagestan are his disciples, or rather disciples of his disciples, and are benefited by the honor of allegiance (bay'at) and the chain of studentship. In the first prayer, he showed kindness beyond limit (Footnote 1). He took my hand in his blessed hand to his house, which is located near Bab-e-Safa, and urged me to visit until my stay in Makkah al-Mukarramah ended. As promised, I attended. He recited to me his poem on the issues of Hajj named "Al-Jawhara al-Mudiyya", then said that most people cannot benefit from it; firstly, it's in Arabic, secondly, it's the Shafi'i school, and most Indians are Hanafi. I want you to explain it in Urdu and clarify the Hanafi school's positions in it. I accepted, considering it a source of great reward and beautiful recompense, even though there was no leisure there, nor were books available. On the first and second days, more than three long pages were written regarding only the details of the issues. When presented as a sample, the Maulana said: My purpose is not such length and detail that the common people benefit and enjoy it less; let it just be a translation (Footnote 2) and summary of our words, and where there is a disagreement of the Hanafis, let their school's position be stated. I considered compliance with the order mandatory and saw it fitting with the available time. On the 7th of Dhu al-Hijjah, a heart-brightening Monday, I wrote these brief sentences and titled them "An-Nira al-Wadiyya fi Sharh al-Jawhara al-Mudiyya". Although it does not contain some (Footnote 3) necessities, it is according to the author's request and characterized by choosing the most correct (rajih) opinion and discarding the less preferred (marjuh) opinion (Footnote 4) in explaining the Hanafi school. "M" stands for text (matn), "T" for translation, and "Sh" for commentary (sharh).

Footnote 1: Although at that time there was no introduction, how would he know me? I had never seen him before. The words he then spoke, I hope for their blessings in this world and the hereafter. (12 Amina, may he be forgiven).

Footnote 2: According to the author's instructions, in explaining the Shafi'i school, I contented myself with only translation and commentary of the text, not intending to refine or prioritize opinions. Even though excellent materials were available in Makkah al-Mukarramah—Shafi'i books were found in abundance—it would have

caused delay, and secondly, the primary goal of this commentary was the benefit of Indians; among them, the Ahl al-Sunnah are generally Hanafi. Thus, refining the Shafi'i school or not was the same. (12 Amina).

Footnote 3: After returning from the journey to the two holy cities, my learned father (may his secret be sanctified) authored "Jawahir al-Bayan Sharif". I added a summary of some of its words at the end of this commentary as a supplement (takmila). Because of this, praise be to Allah, this brief writing now contains the necessities. However, the explanation of a penalty (jarmana) which requires a full record, and if a pilgrim is cautious there's no need for it anyway, was left out. Anyone who needs to know about any matter can inquire from the scholars. (12 Amina).

Footnote 4: But rare and alternative views also appeared in the explanation where there was strong evidence on both sides; then, whatever was considered stronger at that time was placed first in the explanation. (12 Amina).

करीब था कि फ़कीर (निवेदक) ने तवाफ़ की रकातें पूरी की थीं और वह सज्जन मग़रिब की नमाज़ की इमामत से फारिग हुए थे कि मुलाक़ात हासिल हुई। सुभान अल्लाह! क्या ही अजब बुजुर्ग, खुश औकात और बरकतों वाले हैं; अरब, जादा और दागिस्तान आदि करीब और दूर के शहरों के हजारों लोग उनके, बल्कि उनके मुरीदों के मुरीद और बैअत के शर्फ व तालीम के सिलसिले से फ़ायदा उठा रहे हैं। पहली नमाज़ में हद से ज़्यादा (हाशिया 1) मेहरबानी फरमाई, फ़कीर का हाथ अपने मुबारक हाथ में लेकर अपने घर तक ले गए, जो बाब-ए-सफ़ा के करीब स्थित है, और मक्का मुअज़्ज़मा में कयाम तक हाजिरी का तकाज़ा फरमाया। फ़कीर वादे के मुताबिक हाज़िर हुआ, हज के मसाइल में अपनी एक नज़्म (अरजूज़ा) जिसका नाम 'अल-जौहरा अल-मुज़िय्या' है फ़कीर को सुनाई, फिर फरमाया कि अक्सर लोग इससे फ़ायदा नहीं उठा सकते; एक तो अरबी ज़बान है, दूसरे शाफ़ई मज़हब, और हिन्दुस्तानी अक्सर हनफ़ी हैं। मैं चाहता हूँ कि तुम उर्दू ज़बान में इसकी व्याख्या और उसमें हनफ़ी मज़हब की वजाहत कर दो। फ़कीर ने बहुत सवाब और बेहतर अज्र समझकर इसे कबूल किया, हालाँकि वहाँ फुर्सत नहीं थी और न ही किताबें पास थीं। पहले और दूसरे दिन सिर्फ मसाइल की तफ़सील में तीन लंबे सफ़ों से ज़्यादा लिखे गए। जब नमूने के तौर पर पेश किए, तो मौलाना साहब ने फरमाया: मेरा मकसद इतना तवील (लंबा) और तफ़सील नहीं है जिससे आम लोग कम फ़ायदा उठा सकें, बस हमारे कलाम का तर्जुमा (हाशिया 2) और मतलब का खुलासा हो जाए और जहाँ हनफियों का इख्तिलाफ (मतभेद) हो वहाँ उनके मज़हब का बयान हो जाए। फ़कीर ने हुक्म की तामील को ज़रूरी समझा और मौजूद वक्त के मुताबिक देखते हुए ७ ज़ुल-हिज्जा पीर के दिन ये मुख्तसर जुमले लिख दिए और 'अन-नीरा अल-वज़िय्या फी शरह अल-जौहरा अल-मुज़िय्या' नाम रखा। हालाँकि इसमें कुछ (हाशिया 3) ज़रूरी बातें शामिल नहीं हैं, मगर मुसन्निफ (लेखक) की दरख्वास्त के मुताबिक है और हनफी मज़हब के बयान में राज़ेह (प्रबल) को चुनने और मरजूह (कमज़ोर) को छोड़ने (हाशिया 4) के साथ मुतसिफ़ (विशिष्ट) है। 'म' से मुराद मतन (मूल पाठ) है, 'त' से तर्जुमा और 'श' से शरह (व्याख्या)।

हाशिया 1: हालाँकि उस वक्त कोई पहचान न थी, वह फ़कीर को क्या जानते? फ़कीर ने भी इससे पहले उन्हें न देखा था, फिर जो कुछ अल्फाज़ उन्होंने फरमाए, फ़कीर दुनिया और आख़िरत में उनकी बरकतों की उम्मीद रखता है। (१२ आमिना ग़फ़रलाहू)।

हाशिया 2: मुसन्निफ के हुक्म के मुताबिक शाफ़ई मज़हब के बयान में सिर्फ मतन के तर्जुमे और शरह पर इक्तिफा किया, छानबीन और तरजीह (प्राथमिकता) देना मक्सद न रखा। हालाँकि मक्का मुअज़्ज़मा में इसका उम्दा सामान मौजूद था, शाफ़ई किताबें बहुतायत में थीं, मगर इसमें एक तो देर होती, दूसरे इस शरह से असल मक्सद हिन्दुस्तानियों का नफा था, और उनमें अहल-ए-सुन्नत अमूमन हनफ़ी हैं, तो शाफ़ई मज़हब की छानबीन होना न होना बराबर था। (१२ आमिना)।

हाशिया 3: हरमैन तैयबैन के सफर से वापसी के बाद हज़रत वालिद अल्लाम (अल्लाह उनकी कब्र को पवित्र करे) ने 'जवाहर अल-बयान शरीफ' तसनीफ फरमाई, फ़कीर ने उसके कुछ अल्फाज़ का खुलासा इस शरह के आखिर में लिखकर तकमिला (पूरक) कर दिया, जिसकी वजह से अलहम्दुलिल्लाह अब यह मुख्तसर तहरीर ज़रूरी बातों पर मुश्तमिल हो गई है। अलबत्ता एक जुर्माने का बयान जिसके लिए काफी तफ़सील चाहिए और अगर एहतियात रखने वाला मुहरिम (एहराम बाँधने वाला) हो तो उसकी ज़रूरत भी नहीं पड़ती, वह छोड़ दिया गया है। जिसे किसी बात की ज़रूरत हो वह उलेमा से पूछ सकता है। (१२ आमिना)।

हाशिया 4: मगर नादिर (दुर्लभ) और अन्य कौल (कथन) भी बयान में आए जहाँ दोनों तरफ दलीलें मज़बूत थीं, फिर जिसे उस वक्त ज़्यादा मज़बूत (अक्का) समझा गया उसे बयान में पहले रखा। (१२ आमिना)।

قریب کہ فقیر رکعاتِ طواف اور وہ جناب امامتِ نمازِ مغرب سے فارغ ہوئے تھے ملازمت حاصل ہوئی۔ سبحان اللہ ! عجب بزرگ خوش اوقات و با برکات ہیں، اکثر عرب و جادہ و داغستان وغیرہ بلاد نزدیک و دور کے ہزاروں آدمی ان کے بلکہ ان کے مریدوں کے مرید اور شرفِ بیعت و سلسلہ تلمذ سے مستفیض ہیں، اول نماز میں حد (عہ1) سے زیادہ تلطف فرمایا، فقیر کا ہاتھ اپنے دستِ مبارک میں لیے دولت خانہ تک کہ نزدیک باب صفا واقع ہے لے گئے اور تاقیام مکہ معظمہ حاضری کا تقاضا فرمایا، فقیر حسب وعدہ حاضر ہوا، مسائل حج میں ایک ارجوزہ اپنا مسمیٰ بالجوہرۃ المضیۃ فقیر کو سنایا، پھر فرمایا کہ اکثر اہل اس سے مستفیض نہیں ہوسکتے، ایک تو زبان عربی، دوسرے مذہب شافعی اور ہندی اکثر حنفی ہیں، میں چاہتا ہوں تو اس کی بزبان اردو تشریح اور اس میں مذاہب حنفیہ کی توضیح کردے۔ فقیر نے باعثِ اجر جزیل اور ثواب جمیل سمجھ قبول کیا اگرچہ وہاں فرصت نہ تھی، نہ کتابیں پاس۔ روزِ اول و دو بہیت کے متعلق صرف تفصیل مسائل میں تین ورق طویل سے زائد لکھے گئے۔ جب بطورِ انموذج حاضر کیے جناب مولانا نے فرمایا: میرا مقصود طویل اور اس قدر تفصیل نہیں کہ عوام اس سے کم منتفع و متمتع ہوتے ہیں صرف ہمارے کلام کا ترجمہ (عہ2) و خلاصہ مطلب اور جہاں حنفیہ کا اختلاف ہو ان کا بیان مذہب ہو جائے۔ فقیر نے امتثالِ امر لازم اور بہی امر فرصتِ حاصلہ کے ملائم دیکھ کر بتاریخ ہفتم ذی الحجہ روز جاں افروز دوشنبہ یہ مختصر جملے لکھ دئیے اور النیرۃ الوضیۃ فی شرح الجوھرۃ المضیۃ سے ملقب کئے اگرچہ بعض (عہ3) ضروریات پر بھی مشتمل نہیں مگر حسبِ استدعائے مصنف ہے اور بیانِ مذہب حنفیہ میں اختیارِ راجح اور ترک (عہ4) مرجوح کے ساتھ متصف۔ "م" سے مراد متن ہے اور "ت" ترجمہ "ش" شرح

عہ1 : حالانکہ اس وقت کوئی تعارف نہ تھا وہ تو فقیر کو کیا جانتے، فقیر نے بھی اس سے پہلے انہیں نہ دیکھا تھا پھر جو کچھ کلمات انہوں نے فرمائے فقیر دنیا و آخرت میں ان کی برکات کی امید رکھتا ہے ۱۲ امنہ غفرلہ)

عہ 2 : حسب الارشاد مصنف بیانِ شافعیہ میں صرف ترجمہ وشرحِ متن پر قناعت کی تنقیح و ترجیح سے غرض نہ رکھی اگرچہ مکہ معظمہ میں اس کا عمدہ سامان مہیا تھا، کتب شافعیہ بکثرت ملتیں مگر اس میں ایک تو دیر ہوتی دوسرے مقصودِ اصلی اس شرح سے ہندیوں کا نفع تھا ان کے اہل سنت عموماً حنفی، پھر مذہب شافعیہ کی تنقیح ہونی نہ ہونی ایک سی ۱۲ امنہ۔)

عہ 3 : سفر حرمین طیبین سے معاودت کے بعد حضرت والد علام قدس سرہ، نے جواہر البیان شریف تصنیف فرمائی، فقیر نے اس کے بعض کلمات کا خلاصہ اس شرح کے آخر میں لکھ کر تکملہ کر دیا جس کے باعث بحمد اللہ اب یہ مختصر تحریر ضروریات پر مشتمل ہو گئی البتہ ایک جرمانہ کا بیان کہ دفتر چاہتا ہے اور محرم احتیاط رکھے تو اس کی حاجت بھی نہیں پڑتی متروک رہا جسے کسی امر کی ضرورت ہو علماء سے دریافت کر سکتا ہے ۱۲ امنہ

عہ 4 : مگر نادر اور قول بھی بیان میں آئے جہاں دونوں جانب قوتِ قویہ تھی پھر جسے اس وقت اقویٰ سمجھا بیان میں مقدم رکھا ۱۲ امنہ

Fatawa Razawiya - Volume 10

"m" refers to the text (Matn), "t" to translation (Tarjuma), "sh" to explanation (Sharah), and "f" to benefit (Fa'ida). 1 - And from Allah we ask for success, from Him is the arrival to the straight path. (And from Allah Almighty alone we ask for guidance and by His grace access to the straight path is achieved. T)

M: Introduction regarding the obligation of the Hajj of Islam.

T: Regarding the Hajj of Islam becoming obligatory. SH: That is, when does Hajj become obligatory and what conditions are required for its obligation.

M: Its conditions are obligation (Taklif), Islam, intellect ('Aql), freedom (Hurriyah), and completion (Tamam).

T: Conditions for it are being a responsible (Mukallaf) Muslim, sane, and having full freedom. SH: Meaning the conditions for the obligation of Hajj, such that when they are all met, Hajj becomes mandatory, and if even one is missing, it does not. They are five: First: Puberty: That it is not obligatory for a child. If they perform it, it will be a voluntary (Nafl) act and the reward is for them. The father or other guardians will receive the reward for teaching and upbringing. Then, after puberty, if conditions are met, Hajj will become obligatory on them. Hajj performed in childhood will not suffice. Second: Islam: That no worship is obligatory for a disbeliever except bringing faith, nor can any worship be validly performed without it. When one becomes a Muslim, all rulings will be directed towards them. Third: Intellect: That it is not obligatory for the insane (Majnun) or the mentally impaired (Ma'tuh). A 'Ma'tuh' is one whose senses are not sound, who speaks incoherently, whose judgment is flawed. If they also hit people and use abusive language, then they are 'Majnun'.

Note 1: "f" is used where some fresh point is written, or some comment on the text is made, or a point contrary to the Hanafi school is mentioned. 12 Minhu. Note 2: Hajj-e-Islam refers to the obligatory Hajj, i.e., the first Hajj performed by a responsible person (Mukallaf). 12 Minhu. Note 3: The condition of intellect is self-evident from the text. It's clear that their Hajj will only be considered valid if they have that much understanding; the worship of an unintelligent child is not credible, neither as obligatory nor as voluntary. And Allah Almighty knows best. 12 Minhu. Note 4: Meaning, what is famous among the common people that parents receive the reward of children's worship and the children themselves don't, is wrong. Rather, the reward of worship is for them and the reward of teaching is for parents. 12 Minhu. Note 5:

[Arabic: This is the best of what has been said regarding the difference between them, Shami from al-Bahr. 12 Minhu (m)] | This is the best among the sayings regarding the difference between the two, Shami has quoted this from al-Bahr. (t)

फ़तावा रज़विया - जिल्द दसवीं

"म" से मुराद मतन (मूल पाठ) है, "त" से तर्जुमा (अनुवाद), "श" से शरह (व्याख्या), और "फ" से फायदा। १- वल्लाहु नसअलुत तौफ़ीक़, मिन्हुल वुसूलु इला सवाइस सबील (और अल्लाह तआला से ही हम तौफ़ीक़ का सवाल करते हैं और उसी के करम से सिराते मुस्तक़ीम तक रसाई है। त)

म: मुक़द्दमा फ़ी वुजूबे हज्जतुल इस्लाम।

त: हज्जे इस्लाम के वाजिब होने के बारे में। श: यानी हज्ज कब वाजिब होता है और उसके वुजूब के लिए क्या-क्या शर्तें दरकार हैं।

म: शरुतुहात तक़लीफ़ु वल इस्लाम वल अक़्लु वल हुर्रियतु वत तमान।

त: शर्तें इसके मुकल्लफ मुसलमान आक़िल होना और पूरी आज़ादी। श: यानी शराइते वुजूबे हज्ज कि जब वह जमा हों हज्ज फ़र्ज़ हो जाए और उनमें से एक भी फ़ौत हो तो नहीं, पाँच हैं: अव्वल: बुलूग़: कि बच्चे पर फ़र्ज़ नहीं, करेगा तो नफ़्ल होगा और सवाब उसी के लिए है। बाप वग़ैरा मुरब्बी तालीम व तरतीब का अज्र पाएँगे। फिर बाद बुलूग़ शर्तें जमा होंगी उस पर हज्ज फ़र्ज़ हो जाएगा, बचपन का हज्ज किफ़ायत न करेगा। दोम: इस्लाम: कि काफ़िर पर ईमान लाने के सिवा कोई इबादत फ़र्ज़ नहीं, न उसके अदा किए अदा हो सकें, जब मुसलमान होगा तो सब अहकाम उसकी तरफ़ मुतवज्जा होंगे। सोम: अक़्ल: कि मजनून व मअतूह पर फ़र्ज़ नहीं। मअतूह वह जिसके होश व हवास दुरुस्त न हों, बहकी-बहकी बातें करे, राये में फ़साद हो, फिर उसके साथ मारे, गालियाँ दे तो मजनून है।

अ'ह १: "फ" वहाँ आई जहाँ कोई ताज़ा बात लिखी या कौले मतन पर कुछ कलाम किया या मज़हबे हनफ़िया का ख़िलाफ़ बताया। १२ मिन्हु अ'ह २: हज्जे इस्लाम हज्ज फ़र्ज़ को कहते हैं यानी पहला हज्ज कि मुकल्लफ अदा करे। १२ मिन्हु अ'ह ३: क़ैदे अक़्ल ख़ुद मफ़ादे इबारत है ज़ाहिर है कि उस का हज्ज करना जब ही कहेंगे कि इतनी समझ रखता हो और बे-समझ बच्चे की इबादत कुछ मोतबर नहीं, न वह फ़र्ज़ हो न नफ़्ल वल्लाहु तआला आलम। १२ मिन्हु अ'ह ४: यानी यह जो अवाम में मशहूर है कि बच्चों की इबादत का सवाब माँ-बाप पाते हैं उन्हें नहीं होता, ग़लत है, बल्कि इबादत का सवाब उन्हें और तालीम का उन्हें। १२ मिन्हु अ'ह ५: [अरबी: हाज़ा अहसनु मा कीला फ़िल फ़र्क़ि बैनहुमा शामी अनिल बहर। १२ मिन्हु (म)] | दोनों में फ़र्क़ की बाबत अक़वाल में से यह अहसन है, यह शामी ने बहर से नक़्ल किया है। (त)

فتاوی رضویہ جلد دہم

"م" سے مراد متن ہے اور "ت" ترجمہ "ش" شرح "ف" فائدہ ۱- واللہ نسأل التوفیق ، منہ الوصول الی سواء الطریق (اور اللہ تعالی سے ہی ہم توفیق کا سوال کرتے ہیں اور اسی کے کرم سے صراط مستقیم تک رسائی ہے۔ ت)

م: مقدمة فی وجوب حجة الاسلام

ت : حجِ اسلام کے واجب ہونے میں۔ ش : یعنی حج کب واجب ہوتا ہے اور اس کے وجوب کے لئے کیا کیا شرطیں درکار ہیں۔

م : شروطها التکلیف والاسلام والعقل والحریة والتمام

ت : شرطیں اس کے مکلف مسلمان عاقل ہونا اور پوری آزادی۔ ش : یعنی شرائط وجوبِ حج کہ جب وہ جمع ہوں حج فرض ہو جائے اور ان میں سے ایک بھی فوت ہو تو نہیں، پانچ ہیں: اول : بلوغ : کہ بچے پر فرض نہیں ، کرے ۳- گا تو نفل ہوگا اور ثواب اسی کے لئے ہے۔ باپ ۴- وغیرہ مربی تعلیم و ترتیب کا اجر پائیں گے۔ پھر بعد بلوغ شرطیں جمع ہوں گی اس پر حج فرض ہو جائے گا، بچپن کا حج کفایت نہ کریگا۔ دوم : اسلام : کہ کافر پر ایمان لانے کے سوا کوئی عبادت فرض نہیں ، نہ اُس کے ادا کیے ادا ہو سکیں، جب مسلمان ہوگا تو سب اہکام اس کی طرف متوجہ ہونگے۔ سوم : عقل ، کہ مجنون و معتوہ پر فرض نہیں۔ معتوہ وہ جس کے ہوش و حواس درست نہ ہوں، بہکی بہکی باتیں کرے، رائے میں فساد ہو ، پھر اس کے ۵- ساتھ مارے ، گالیاں دے تو مجنون ہے۔

عہ ۱: "ف" وہاں آئی جہاں کوئی تازہ بات لکھی یا قول متن پر کچھ کلام کیا یا مذہبِ حنفیہ کا خلاف بتایا ۱۲ منہ عہ ۲: حج اسلام حج فرض کو کہتے ہیں یعنی پہلا حج کہ مکلف ادا کرے ۱۲ منہ عہ

۳: قید عقل خود مفادِ عبارت ہے ظاہر ہے کہ اس کا حج کرنا جبھی کہیں گے کہ اتنی سمجھ رکھتا ہو اور بے سمجھ بچے کی عبادت کچھ معتبر نہیں ، نہ وہ فرض ہو نہ نفل واللہ تعالٰی اعلم ۱۲ منہ عہ ۴: یعنی یہ جو عوام میں مشہور ہے کہ بچوں کی عبادت کا ثواب ماں باپ پاتے ہیں انہیں نہیں ہوتا ، غلط ہے ، بلکہ عبادت کا ثواب انہیں اور تعلیم کا انہیں ۱۲ منہ عہ ۵: ھذا احسن ماقیل فی الفرق بینھما شامی عن البحر ۱۲ منہ (م) | دونوں میں فرق کی بابت اقوال میں سے یہ احسن ہے ، یہ شامی نے بحر سے نقل کیا ہے (ت)

Fatawa Razawiya, Volume 10

Fourthly, complete freedom: because Hajj is not obligatory for Mukatab, Mudabbar, and Umm-ul-Walad (1) until they are completely free. Yes, if they perform it, it will be considered supererogatory (nafl). Then, after gaining complete freedom, if all conditions are met, they must perform the obligatory Hajj.

Note: A master said to his slave, 'I have made you a Mukatab for a certain amount of property' or specified a certain amount that 'if you bring this property, you are free.' And the slave accepted it. This is called a contract of Kitabat (manumission), and the slave is called Mukatab. And the one to whom it was said, 'You are free after my death,' is a Mudabbar. And the slave-girl who gives birth to a child (3) from the master's sperm (2) is an Umm-ul-Walad. In all their states of slavery, a kind of difference arises, but for Hajj to become obligatory, complete freedom is required.

Note: 'Mukallaf' refers to a sane adult, so after mentioning 'Takleef' (obligation), there was no need to mention 'Aql' (sanity), but the honorable author said my meaning of 'Takleef' is only puberty.

Note: There is a difference of opinion among scholars regarding whether acts of worship other than faith are obligatory for non-believers. According to the Shafi'is, they are obligatory, and this is also the opinion of the scholars of Iraq (4), and this is the most reliable (5) and preferred view. This humble servant says, upon this estimation, for Islam...

(1): Likewise, for one who is partially emancipated. 12 (1) منه

(2): This points to the fact that becoming pregnant through the master's intercourse is not a condition for becoming Umm-ul-Walad; rather, if the master's semen is introduced into her private parts in any way and she becomes pregnant and gives birth, she will become Umm-ul-Walad, as mentioned in 'al-Durr'. 12 منہ (M)

(3): In the sight of Allah, she becomes Umm-ul-Walad just by this much, as in 'al-Durr'. However, legally (judicially), for the first time, the master's acknowledgment is also a condition, meaning he should say, 'This child is mine.' For a slave-girl for whom this acknowledgment has been made once, it is no longer a condition for the second child legally, though it will be negated by denial if a long period has not elapsed so that the bedding is considered intermediate and not strong. 12 منہ

(4): The Shaikhs of Samarkand do not consider them obligatory at all. The Imams of Bukhara say it is obligatory to believe in these obligations, but the performance is not obligatory. It is stated in 'al-Manar' as the correct view. The result of the difference is that according to the Samarkandis, non-believers will be punished only for abandoning faith. According to the Bukharis, for not accepting the obligations as well, and according to the Iraqis, for not performing them as well. 12 منہ - May Allah forgive him.

(5): Allama Ibn Nujaym and Muhaqqiq Alai stated:

1: Durr al-Mukhtar, Bab al-Istilad, Matba' Mujtabai Delhi, 71/28 Page 783 of 836

फ़तावा रज़विया, खंड 10

चौथा, पूर्ण स्वतंत्रता: कि मुकातब, मुदब्बर और उम्म-उल-वल्द (1) पर हज फ़र्ज़ नहीं है, जब तक कि वे पूरी तरह से स्वतंत्र न हो जाएं। हाँ, यदि वे इसे करते हैं, तो यह नफ़्ल (स्वैच्छिक) होगा। फिर पूरी स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद, यदि सभी शर्तें पूरी होती हैं, तो हज फ़र्ज़ अदा करना होगा।

नोट: स्वामी ने अपने दास से कहा, 'मैंने तुम्हें माल के बदले मुकातब बनाया' या इतनी संपत्ति निर्धारित की कि 'यदि तुम यह माल ले आओ तो तुम स्वतंत्र हो।' और दास ने इसे स्वीकार कर लिया। इसे 'अक़्द-ए-किताबत' (मुक्ति का अनुबंध) कहते हैं और उस दास को 'मुकातब'। और जिससे कहा गया, 'मेरे बाद तुम स्वतंत्र हो', वह 'मुदब्बर' हुआ। और वह दासी जो अपने स्वामी के वीर्य (2) से बच्चा (3) जनती है, वह 'उम्म-उल-वल्द' है। उन सभी की गुलामी की स्थिति में एक प्रकार का अंतर आ जाता है, लेकिन हज फ़र्ज़ होने के लिए पूर्ण स्वतंत्रता आवश्यक है।

नोट: 'मुकल्लफ़' समझदार वयस्क को कहते हैं, इसलिए 'तकलीफ़' (दायित्व) के उल्लेख के बाद 'अक़्ल' (बुद्धि) के उल्लेख की आवश्यकता नहीं थी, लेकिन माननीय लेखक ने कहा कि तकलीफ़ से मेरा तात्पर्य केवल 'बुलूग़' (वयस्कता) है।

नोट: काफिरों (अविश्वासियों) पर ईमान के अलावा अन्य इबादतों (उपासनाओं) के फ़र्ज़ होने में विद्वानों के बीच मतभेद है। शाफ़ई संप्रदाय के अनुसार वे फ़र्ज़ हैं, और यही इराक़ी विद्वानों (4) का मत है, और यही विश्वसनीय (5) और अधिक मान्य है। यह दीन सेवक कहता है कि इस आधार पर इस्लाम को...

(1): इसी तरह आंशिक रूप से स्वतंत्र व्यक्ति के लिए। 12 (1) منه

(2): यह इस ओर इशारा है कि उम्म-उल-वल्द बनने के लिए स्वामी के संभोग से गर्भवती होना शर्त नहीं है, बल्कि यदि किसी तरह स्वामी का वीर्य उसकी योनि में डाल दिया जाए और वह गर्भवती हो जाए और बच्चा जने, तो वह उम्म-उल-वल्द बन जाएगी, जैसा कि 'दुरु' में है। 12 मिन्हु (M)

(3): अल्लाह के नज़दीक केवल इतने से ही वह उम्म-उल-वल्द हो जाती है जैसा कि 'दुरु' में है। हाँ, कानूनी तौर पर (क़ज़ा-अन) पहली बार स्वामी की स्वीकृति भी शर्त है, यानी वह कहे कि 'यह बच्चा मेरा है।' जिस दासी के लिए एक बार यह स्वीकृति दे दी गई, दूसरे बच्चे के मामले में कानूनी तौर पर

यह स्वीकृति शर्त नहीं रहती, अलबत्ता इनकार करने से वह निरस्त हो जाएगा यदि लंबा समय न बीता हो ताकि बिस्तर (वैवाहिक संबंध) मध्यवर्ती माना जाए, मजबूत नहीं। 12 मिन्हु

(4): समरकंद के बुजुर्ग इसे मूल रूप से फ़र्ज़ नहीं मानते। बुखारा के इमाम फरमाते हैं कि इन दायित्वों पर विश्वास करना फ़र्ज़ है, उनका निष्पादन फ़र्ज़ नहीं है। 'अल-मनार' में इसी को सही कहा गया है। मतभेद का परिणाम यह है कि समरकंदियों के अनुसार काफिरों को केवल ईमान छोड़ने के कारण दंड दिया जाएगा। बुखारा के विद्वानों के अनुसार दायित्वों को न मानने पर भी, और इराक़ियों के अनुसार उन्हें पूरा न करने पर भी। 12 मिन्हु - अल्लाह उसे क्षमा करे।

(5): अल्लामा इब्न नुजैम और मुहक़्क़िक़ अलई ने फरमाया:

1: दुर्रे मुख़्तार, बाबुल इस्तिलाद, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 71/28 पृष्ठ 783 / 836

فتاوی رضویہ، جلد دہم

چہارم پوری آزادی: کہ مکاتب و مدبر وام ولد ۱؎ پر فرض نہیں، جب تک کامل آزاد نہ ہوں، ہاں کر لیں تو نفل ہوگا۔ پھر بعد آزادی کامل اجتماع شرائط ہو تو حج فرض ادا کرنا پڑے گا۔

ف: مولیٰ نے اپنے غلام سے کہا میں نے تجھے مال پر مکاتب کیا یا اتنا مال مقرر کیا کہ مال لادے تو آزاد ہو۔ اور غلام نے قبول کر لیا۔ اسے عقد کتابت کہتے ہیں اور اس غلام کو مکاتب۔ اور جو کہا تو میرے بعد آزاد ہے تو یہ مدبر ہوا، اور جو کنیز اپنے مولیٰ کے نطفے ۲؎ سے بچہ ۳؎ جنے وہ ام ولد ہے، ان سب کی غلامی میں ایک طرح کا فرق آ جاتا ہے پر حج فرض ہونے کو پوری حریت درکار ہے۔

ف: مکلف عاقل بالغ کو کہتے ہیں تو بعد ذکر تکلیف، ذکر عقل کی حاجت نہ تھی، پر جناب مصنف نے فرمایا میری مراد تکلیف سے صرف بلوغ ہے۔

ف: کافروں پر ایمان کے سوا اور عبادتیں فرض ہونے میں علماء کو اختلاف ہے۔ شافعیہ کے نزدیک فرض ہیں اور یہی مذہب علمائے عراقیین ۴؎ کا ہے اور یہی معتمد ۵؎ و راجح تر ہے، فقیر کہتا ہے اس تقدیر پر اسلام کو

۱؎: یونہی معتق البعض ۱۲ منہ (۱)

۲؎: اشارۃ الیٰ انہ لایشترط تحبلھا بجماع المولیٰ حق ام ولد بننے کے لیے مالک کے جماع سے حاملہ ہونا شرط نہیں بلکہ کسی لو استدخلت منیۃ فی فرجھا فحبلت وولدت صارت ام طرح مالک کی منی کو اپنی شرمگاہ میں ڈالنے سے حاملہ ہو جائے تو ولد ۱؎ کما فی الدر ۱۲ منہ (م) بھی ام ولد بن جائیگی جیسا کہ دُر میں ہے ۱۲ منہ

۳ـہ: عنداللہ اسی قدر سے ام ولد ہو جاتی ہے کمافی الدر ہاں قضاءً پہلی بار مولیٰ کا اقرار بھی شرط ہے یعنی وہ کہے کہ یہ بچہ میرا ہے۔ جس کنیز کے لیے ایک دفعہ یہ اقرار کر لیا دوسرے بچے میں قضاءً بھی یہ اقرار شرط نہ رہا البتہ نفی سے منتفی ہو جائے گا اگر زمانہ دراز تک ساقط نہ رہا ہو کہ فراش متوسط ہے قوی نہیں ۱۲ منہ

۴ـہ: مشائخ سمرقند اصلاً فرض نہیں مانتے، ائمہ بخارا فرماتے ہیں ان پر فرائض کا اعتقاد فرض ہے ادا فرض نہیں۔ منار میں اسی کو صحیح کہا، ثمرہ اختلاف یہ ہے کہ سمرقندیوں کے نزدیک کافروں پر صرف ترک ایمان کے سبب عذاب ہوگا۔ بخاریوں کے نزدیک فرائض کے نہ ماننے پر بھی عراقیوں کے نزدیک ان کے بجانہ لانے پر بھی ۱۲ منہ غفر لہ۔

۵ـہ: علامہ ابن نجیم و محقق علائی نے فرمایا:

۱ در مختار باب الاستیلاد مطبع مجتبائی دہلی ۷۱/ ۲۸ Page 783 of 836

Volume 10 Fatawa Ridawiyya

There is hesitation in making it a condition for obligation (wujub), rather it is a condition for the validity (sihhat) of performance (ada). However, it can be said that 'obligation' here refers to that obligation due to which accountability can occur in this world, for there is no accounting of non-believers for leaving obligatory duties. "Leave them and what they profess, so understand" (We will not interfere with them in matters of their religion. - T). And Allah Almighty knows best.

M: Then, having the means for the path is a condition for it, so it should be memorized and kept well in mind. T: Then, the power over the path (financial and physical ability) is a condition for Hajj. Therefore, one should memorize and keep them well in mind. Sh: That is, the fifth condition is capability (istita'ah), which means owning enough wealth, besides necessary expenses, to travel to Makkah on one's own or a rented ride, spending moderately on food and clothing, and returning in the same manner, while covering essential costs. (Remainder of previous page's footnote) And this is the reliable opinion because the apparent meaning of the texts (Nusoos) testifies to them, and anything contrary to it is interpretation (ta'wil). 1 (M) This is the relied upon view because the apparent words of the texts bear witness to it, and going against it requires interpretation. (T)

In the Holy Quran, it is clearly stated: "What led you into Hell-Fire?" They will say: "We were not of those who prayed; nor were we of those who fed the poor; and we used to join with those who spoke against faith; and we used to deny the Day of Judgment, until there came to us the certainty (death)." 2 (12-Minhu) What thing brought you into Hell? They said, we were not among those who offered prayer, and we did not feed the needy, and we used to participate with those who conspired, and we used to deny the Day of Judgment until death came. (12-Minhu) (T)

(M) Note 1: That on this correct school of thought, leave aside obligation (wujub), it is the obligation of performance (wujub al-ada), therefore, a shift was made towards the prescribed conditions, i.e., validity of performance. (12-Minhu) Note 2: I say: Rather, you can say that since a non-believer is not capable of having intention (niyyah), and intention is a condition for the validity of Hajj, then Islam is inherently included within it, not as a separate condition. And Allah Almighty knows best. (12-Minhu) (M) I say, you can say that when a disbeliever is not capable of making an intention, while intention is a condition for the validity of Hajj, thus the condition of

being a Muslim was found, even if not as a separate condition. And Allah Almighty knows best. (T)

1 Kashf al-Astar, Hashiya Durr al-Mukhtar, Footnote No. 4, Kitab al-Hajj, Matba' Mujtabai Delhi, 1/160. 2 Al-Quran 74/42 to 47. Page 784 of 836

वजह के शर्त (अनिवार्यता) होने में हिचकिचाहट है, बल्कि यह अदा की सेहत (वैधता) की शर्त है। मगर यह कहा जाए कि वजूब (अनिवार्यता) से मुराद वह वजूब है जिसके कारण दुनिया में जवाबदेही हो सके क्योंकि काफिरों से अनिवार्य कर्तव्यों को छोड़ने पर कोई हिसाब नहीं लिया जाता। "उन्हें और उनके धर्म को उनके हाल पर छोड़ दो, तो समझ लो" (उनके धर्म के मामले में उनसे हस्तक्षेप नहीं करेंगे। - त)। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

म: फिर रास्ते की सामर्थ्य इसकी शर्त है, इसलिए उन्हें याद करके अच्छी तरह मन में रखना चाहिए। त: फिर रास्ते पर शक्ति हज की शर्त है। इसलिए चाहिए कि उन्हें याद करके खूब ख्याल में रखा जाए। श: यानी पांचवीं शर्त सामर्थ्य (इस्तिता'अत) है कि आवश्यक खर्चों के अलावा इतने माल का मालिक हो जो मक्का तक अपनी या किराए की सवारी में, खाने-पहनने में मध्यम खर्च करते हुए जाए और हज करके इसी तरह लौट आए और आवश्यक खर्च (पिछले पृष्ठ का शेष फुटनोट) और यही विश्वसनीय मत है क्योंकि ग्रंथों (नूसूस) का प्रत्यक्ष अर्थ उनका गवाह है और इसके विपरीत जाना व्याख्या (तावील) है। 1 (म) यही विश्वसनीय है क्योंकि ग्रंथों का प्रत्यक्ष अर्थ इसी पर गवाह है और इसके खिलाफ जाना व्याख्या है। (त)

कुरान मजीद में साफ़ इरशाद हुआ: "तुम्हें किस चीज़ ने जहन्नुम में पहुँचाया?" उन्होंने कहा: "हम नमाज़ पढ़ने वालों में से न थे; और न ही हम गरीबों को खाना खिलाते थे; और हम व्यर्थ की बातों में लगे रहने वालों के साथ लगे रहते थे; और हम फैसले के दिन को झुठलाते थे, यहाँ तक कि हमें यकीन (मौत) आ गया।" 2 (12-मिन्हु) तुम्हें किस चीज़ ने जहन्नुम में पहुँचाया? उन्होंने कहा हम नमाज़ी न थे और मिस्कीनों (गरीबों) को खाना न खिलाते थे और साज़िशें करने वालों के साथ शरीक होकर हम भी हिस्सा लेते थे और हम जज़ा (बदले) के दिन का इनकार करते थे यहाँ तक कि मौत आ गई। (12-मिन्हु) (त)

(म) नोट 1: कि इस सहीह मज़हब पर वजूब तो दूर, यह वजूब-ए-अदा (अदा करने की अनिवार्यता) है, इसलिए निर्धारित शर्तों यानी अदा की सेहत की तरफ रुजू किया गया। (12-मिन्हु) नोट 2: मैं कहता हूँ: बल्कि आप यह कह सकते हैं कि जब काफ़िर नियत करने के योग्य नहीं है और नियत हज की सेहत (वैधता) के लिए शर्त है, तो इस तरह इस्लाम का शर्त होना उसी में शामिल पाया गया, भले ही वह अलग शर्त न हो। और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है। (12-मिन्हु) (म) मैं कहता हूँ,

आप यह कह सकते हैं कि काफ़िर जब नियत करने का अहल (योग्य) नहीं है जबकि नियत हज की सेहत के लिए शर्त है तो यूँ इस्लाम का शर्त होना पाया गया, अलहदा (अलग) शर्त न सही, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (त)

1 कश्फ अल-अस्तार, हाशियह दुर्र अल-मुख्तार, हाशियह नंबर 4, किताब अल-हज, मतबा मुजतबाई दिल्ली, 1/160. 2 अल-कुरान 74/42 से 47. पेज 784 of 836

شرط وجوب ۱ ع ٹھہرانے میں تامل ہے بلکہ شرط صحت ۲ ع ادا ہے۔ مگر یہ کہا جائے کہ وجوب سے مراد وہ وجوب ہے جس کے باعث دنیا میں مواخذہ ہو سکے کہ کفار پر ترک فرائض میں احتساب نہیں، نترکھم و مایدینون فافھم (ان کے دین کے معاملہ میں ان سے تعرض نہ کرینگے۔ ت) واللہ تعالٰی اعلم م: ثم استطاعة السبیل شرطھا فلیک بالحفظ لھدی ضبطھا ت: پھر راہ پر قدرت شرط حج ہے۔ پس چاہئے کہ انہیں حفظ کرکے خوب خیال میں رکھا جائے۔ ش: یعنی شرط پنجم استطاعت ہے کہ علاوہ مصارف ضروری کے اس قدر مال کا مالک ہو جو مکہ تک اپنی خواہ کرایہ کی سواری میں، کھانے پہننے کا متوسط، صرف کرتا جائے اور حج کرکے اسی طرح لوٹ آئے اور ضروری مصارف (بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) وھو المعتمد لان ظاہر النصوص یشھد لھم وخلافه تأویل۔ 1(م) یہی معتمد علیہ ہے کیوں کہ نصوص کا ظاہر اسی پر گواہ ہے اور اس کا خلاف تاویل ہے۔ (ت) قرآن مجید میں صاف ارشاد ہوا: مَا سَلَکَکُم فی سَقَرَ ۵ قَالُوا لَم نَکُ مِنَ المُصَلِّینَ ۵ و لَم نَکُ نُطعِمُ المِسکِینَ ۵ و کُنَّا نَخُوضُ مَعَ الخَائِضِینَ ۵ و کُنَّا نُکَذِّبُ بِیَومِ الدِّینِ ۵ حَتّٰی اَتَانَا الیَقِینُ ۵ 2 ۱۲ منہ تمھیں کس چیز نے جہنم میں پہنچایا، انھوں نے کہا ہم نمازی نہ تھے اور مسکینوں کو کھانا نہ کھلاتے اور سازشیں کرنیوالوں کے ساتھ شریک ہو کر ہم بھی حصہ لیتے اور ہم یوم جزا کا انکار کرتے یہاں تک کہ موت آگئی ۱۲ منہ (ت) (م) ع ۱: کہ اس مذہب صحیح پر وجوب در کنار وجوب ادا ہے لہذا شرائط مرسوم یعنی صحت ادا کی طرف عدول کیا ۱۲ منہ ع ۲: اقول: بل لك ان تقول لما لم یکن الکافر من اھل النیة والنیة شرط الصحة کان الاسلام مندرجا فیھا لا شرطا بحیاله واللہ تعالی اعلم ۱۲ منه (م) میں کہتا ہوں، آپ یہ کہہ سکتے ہیں کہ کافر جب نیت کرنے کا اہل نہیں جبکہ نیت

صحت حج کے لیے شرط ہے تو یوں اسلام کا شرط ہونا پایا گیا، علیحدہ شرط نہ سہی، واللہ تعالی اعلم۔ (ت)

1 کشف الاستار حاشیہ در مختار حاشیہ نمبر ۴ کتاب الحج مطبع مجتبائی دہلی، ۱/۱۶۰ 2 القرآن ۷۴/ ۴۲ تا ۴۷

Volume 10 Fatawa Razawiyya

Such as a house to live in, clothes to wear, household assets, maintenance of family, debts to creditors, and professional tools for a craftsman. For a merchant, enough capital to earn a livelihood for himself and his children. For a student, necessary religious books (Note 1), and for those who need a vehicle or weapons, those too. F (Note): This capability (istita'at) is required during the months of Hajj, namely Shawwal, Dhul-Qa'dah, and Dhul-Hijjah. For those living far away who set out earlier, it is when the people of that city leave. Otherwise, if capability existed before this but was lost before the time arrived, Hajj will not be obligatory (Note 2). F (Note): According to our Imam (Abu Hanifa), health is a condition, meaning there should be no physical affliction that makes travel impossible, such as being crippled, paralyzed, or so old that one cannot stay on a ride. However, the Sahibayn (Imam Abu Yusuf and Imam Muhammad) state that it is obligatory for them to have Hajj-e-Badal performed. **M: Description of Ihram** Sh: Meaning the description of the nature of Ihram and its Sunnah and Fard elements. M: Stripping off sewn garments is mandatory for a Muhrim (one in Ihram) unless there is a persistent excuse. T: It is mandatory for the one in Ihram to remove sewn clothes, unless some excuse arises (Note 3). F: If one wears sewn clothes due to an excuse, they will not be a sinner according to us, otherwise, atonement (kaffara) must be given in any case. T: Similarly, Ihram consists of two unsewn, clean clothes. Sh: Meaning when one intends Ihram, they should remove sewn clothes, turban, cap, and socks, and wear an unsewn sheet and loincloth. Note 1: Books of logic and philosophy are not included in this. Note 2: Meaning if the capability existed in the year of Hajj but was lost before the time of departure. Otherwise, if it remained until the time of departure for one year, Hajj became obligatory and will not be waived even if capability is lost before the time in the second year. Note 3: Al-Lazib means Al-Lazim (necessary/permanent). The necessity of the excuse is not a condition, rather its existence at the time of committing the prohibited act is. Therefore, it has been interpreted as 'occurring' (lahiq). Page 785 of 836

जैसे रहने का मकान, पहनने के कपड़े, घर का सामान, परिवार का भरण-पोषण, लेनदारों का कर्ज, पेशेवर के लिए काम के औज़ार। व्यापारी के लिए इतनी पूंजी जिससे वह अपने और अपने बच्चों के लिए गुज़ारा कर सके विद्यार्थी के लिए आवश्यक धार्मिक पुस्तकें(टिप्पणी 1), और जिन्हें सवारी या हथियार की आवश्यकता हो, उनके लिए ये भी। फ़: यह सामर्थ्य (इस्तिता'अत) हज के महीनों यानी शव्वाल, ज़ीकादा और ज़िलहिज्जा में आवश्यक है। और जो दूर रहने वाले हैं जो पहले से चलते हैं, उनके लिए तब जब उस शहर के लोग जाते हैं। अन्यथा, यदि इससे पहले सामर्थ्य थी और यह समय आने से पहले ही समाप्त हो गई, तो हज फ़र्ज़ (टिप्पणी 2) नहीं होगा। फ़: हमारे इमाम के निकट तंदुरुस्ती एक शर्त है, यानी शरीर में ऐसी कोई बीमारी न हो जो यात्रा करने से रोक दे, जैसे कि अपंग, लकवाग्रस्त, या इतना वृद्ध कि सवारी पर टिक न सके। लेकिन साहिबैन (इमाम अबू यूसुफ और इमाम मुहम्मद) फ़रमाते हैं कि उन पर हज-ए-बदल कराना फ़र्ज़ है। **म: एहराम का विवरण (सिफतुल एहराम)** श: यानी एहराम की गुणवत्ता और उसके सुन्नत व फ़र्ज़ का वर्णन। म: एहराम बांधने वाले के लिए सिले हुए कपड़े उतारना अनिवार्य है जब तक कि कोई स्थायी मजबूरी न हो। त: एहराम वाले पर सिले हुए कपड़े उतारना वाजिब है, यदि कोई मजबूरी (उज़्र) पेश न आए (टिप्पणी 3)। फ़: यदि किसी मजबूरी के कारण कोई सिला हुआ कपड़ा पहन लेगा तो हमारे निकट वह गुनहगार नहीं होगा, अन्यथा कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) तो हर हाल में देना अनिवार्य होगा। त: इसी तरह एहराम दो बिना सिले, पाक और साफ कपड़ों में है। श: यानी जब एहराम बांधना चाहे तो सिले हुए कपड़े, पगड़ी, टोपी, मोज़े उतार दे और बिना सिली हुई चादर और तहबंद बांध ले। टिप्पणी 1: तर्कशास्त्र (मंतिक) और दर्शनशास्त्र (फ़लसफ़ा) की पुस्तकें इसमें शामिल नहीं हैं। टिप्पणी 2: यानी जिस वर्ष सामर्थ्य हुई, उसी वर्ष समय आने से पहले समाप्त हो गई। अन्यथा यदि एक वर्ष समय तक सामर्थ्य बाकी थी, तो हज फ़र्ज़ हो चुका, अब वह साक़ित (रद्द) नहीं होगा भले ही दूसरे वर्ष समय से पहले सामर्थ्य समाप्त हो जाए। टिप्पणी 3: 'लाज़िब' का अर्थ 'लाज़िम' (आवश्यक) है, जबकि उज़्र (मजबूरी) का लाज़िम होना शर्त नहीं है बल्कि वर्जित कार्य करते समय उसका अस्तित्व होना शर्त है, इसीलिए इसकी व्याख्या में 'लाहिक' (आने वाला/पेश आने वाला) कहा गया है। पृष्ठ 785/836

جیسے رہنے کا مکان، پہننے کے کپڑے، گھر کا اثاثہ، اہل و عیال کا نفقہ، قرض خواہوں کا قرض، پیشہ ور کو آلاتِ حرفہ۔ سوداگر کو اتنی پونجی جس سے اپنی اور اپنے بال بچوں کی کفایت کے لائق کما سکے، طالب علم کے لیے ضروری عہ۱ دینی کتابیں، اور جنہیں سواری ہتھیار کی حاجت ہو ان کے لیے یہ بھی۔ ف: یہ استطاعت حج کے مہینوں میں درکار ہے یعنی شوال، ذیقعدہ، ذی الحجہ، اور جو دور کے ساکن ہیں کہ پہلے سے چلتے ہیں تو جب اس شہر کے لوگ جائیں ورنہ اس سے پہلے اگر استطاعت تھی اور یہ وقت نہ آنے پایا کہ جاتی رہی تو حج فرض عہ۲ نہ ہوگا، ف: ہمارے امام کے نزدیک تندرستی شرط ہے یعنی بدن میں وہ آفت نہ ہو جو سفر سے معذور کر دے جیسے اپاہج، مفلوج، اتنا بوڑھا کہ سواری پر نہ ٹھہر سکے، مگر صاحبین فرماتے ہیں ان پر حجِ بدل کرانا فرض ہے۔ **م: صفۃ الاحرام** ش: یعنی احرام کی کیفیت اور اس کے سنت و فرض کا بیان م: تجرد عن المخیط واجب لمحرم من غیر عذر لازب ت: سلے کپڑے اتارنے واجب ہیں احرام والے پر، اگر کوئی عذر لاحق نہ ہو عہ۳۔ ف: اگر کسی عذر کے سبب سلا کپڑا پہن لے گا تو گنہگار نہ ہوگا ہمارے نزدیک ۱۲ منہ ورنہ کفارہ تو بہرحال دینا لازم آئے گا۔ ت: یونہی احرام دو کپڑوں میں ہے بے سلے پاک ستھرے۔ ش: یعنی جب احرام چاہے سلے کپڑے، عمامہ، ٹوپی، موزے اتارے، چادر، تہبند بے سلی اوڑھے باندھے۔ عہ۱: منطق فلسفہ کی کتابیں اس میں داخل نہیں ۱۲ منہ) عہ۲: یعنی جس سال استطاعت ہوئی اسی سال وقت آنے سے پہلے جاتی رہی ورنہ اگر ایک سال وقت تک باقی تھی تو حج فرض ہو چکا اب ساقط نہ ہوگا اگرچہ دوسرے برس وقت سے پہلے استطاعت زائل ہو جائے ۱۲) عہ۳: اللازب اللازم ولا یشترط لزوم العذر بل وجودہ حین ارتکاب المحظور فلذا فسرہ باللاحق ۱۲ منہ (م) لازب، لازم کو کہتے ہیں، جبکہ عذر کا لزوم نہیں

بلکہ ممنوع کے ارتکاب کے وقت اس کا وجود شرط ہے، اسی لیے اس کی تفسیر میں لاحق کہا ہے

۱۲ منہ (م) Page 785 of 836

Fatawa Razawiyya Volume 10

F: If [the Ihram clothes] are new and white, it is better; otherwise, they should be washed and bright. Darning or patching them is not desirable but permissible. There is no worry about wearing a money belt or a sword strap.

M: One intends to perform the ritual in the heart, and it is more virtuous to express it with the tongue. T: One should intend for Hajj or Umrah in the heart, and it is better to voice it with the tongue. Sh: That is, after wearing the general Ihram, one should intend in their heart for whatever ritual they wish to perform (be it Hajj, Umrah, or both). It is better to also utter the words of intention with the tongue, for example: "O Allah, I intend to perform Hajj; make it easy for me and accept it."

M: Saying the Talbiyah aloud from the Miqat and remembering Allah in all circumstances. T: Uttering "Labbayk" loudly from the Miqat and remembering God in various states. Sh: Miqat refers to those locations designated by the pure Shariah for entering the state of Ihram. It is forbidden for someone coming from outside (note 1) intending to reach Makkah to cross these points without Ihram. For Indians, this point is encountered at sea when they are aligned with Mount Yalamlam. F: There are only two pillars of Ihram: the intention in the heart and, along with it, a verbal remembrance (dhikr) that glorifies Allah Almighty, whether it be the Talbiyah or something else like "SubhanAllah," "Alhamdulillah," "Allahu Akbar," or "Allahummaghfirli" (note 2), etc. When these two (note 3) conditions are met, the Ihram is established, and whatever was prohibited for a person in Ihram becomes so.

Note 1: It is stated "intending for Makkah from outside" because if an "Afaqi" (outsider) enters the Miqat intending for a place within its boundaries, such as Jeddah or Khulais, they are no longer considered an Afaqi but become a "Miqati." For such a person, it is permissible to proceed to Makkah from there without Ihram. (12 Minh) Note 2: Pointing to the fact that it is not a condition for the remembrance (dhikr) to be pure as in the opening Takbir (tahrima) of prayer, rather any remembrance is sufficient even if mixed with supplication (dua), this is the correct view as in 'Al-Maslak al-Mutaqassit'. (12 Minh (M)). This indicates that pure dhikr is not a condition, unlike the opening Takbir of prayer; even if supplicatory words are included, it remains valid, as stated in "Maslak Mutaqassit." (12 Minh) Note 3: Ihram can sometimes be established through "Taqlid" and "Suq al-Budnah" (sacrificial animal rituals), but describing those would be lengthy and they are not common practice among Indians, so this explanation was deemed sufficient. (12 Minh)

1 Al-Maslak al-Mutaqassit with Irshad al-Sari, Chapter of Ihram, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 70. Page 786 of 836

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

फ़: यदि [एहराम के कपड़े] नए और सफ़ेद हों तो बेहतर है, अन्यथा धुले हुए और साफ़ होने चाहिए। उनमें रफ़ू या पैबंद होना भी अच्छा नहीं है, लेकिन जायज़ है। और कमरबंद (हमियानी) या तलवार की पेटी पहनने में कोई डर नहीं है।

म: दिल से इबादत अदा करने की नीयत करना और ज़बान से कहना अधिक उत्तम है। त: दिल से ह़ज या उमरा की नीयत करे और ज़बान से कहना और भी बेहतर है। श: यानी एहराम पहनकर अब जो कुछ अदा करना चाहता है (चाहे ह़ज हो या उमरा या दोनों) उसकी नीयत दिल से करे और ज़बान से भी नीयत के शब्द कहना बेहतर है, उदाहरण के लिए: ऐ अल्लाह! मैं ह़ज की नीयत करता हूँ, इसे मेरे लिए आसान कर और.क़ुबूल फ़रमा।

म: मीक़ात से ज़ोर से तल्बिया (लब्बैक) कहना और हर हाल में अल्लाह का ज़िक्र करना। त: मीक़ात से आवाज़ के साथ लब्बैक कहते हुए और विभिन्न स्थितियों में ख़ुदा को याद करते हुए। श: मीक़ात उन स्थानों को कहते हैं जो शरीअत ने एहराम के लिए निर्धारित किए हैं कि बाहर (नोट 1) से मक्का मुअज़्ज़मा का इरादा करने वाले के लिए एहराम के बिना उन स्थानों से आगे बढ़ना ह़राम है। भारतीयों के लिए वह स्थान समुद्र में तब आता है जब वे कोह-ए-यलमलम (Yalamlam पहाड़) के सामने पहुँचते हैं। फ़: एहराम के केवल दो स्तंभ (रुकन) हैं: दिल से नीयत और उसके साथ ज़बान से वह ज़िक्र जिसमें अल्लाह तआला की बड़ाई हो, चाहे वह तल्बिया हो या कुछ और जैसे सुब्ह़ानल्लाह या अल्ह़म्दुलिल्लाह या अल्लाह-ओ-अकबर या अल्लाहुम्मग़फ़िर-ली (नोट 2) आदि। जब ये दोनों (नोट 3) बातें पाई गईं, तो एहराम बंध गया और जो कुछ मुह़रिम पर ह़राम था, वह ह़राम हो गया।

नोट 1: बाहर से मक्का मुकर्रमा का इरादा इसलिए कहा गया क्योंकि यदि कोई 'आफ़ाक़ी' (बाहरी व्यक्ति) मीक़ात के अंदर के किसी स्थान जैसे जेद्दा या ख़ुलैस का इरादा करके मीक़ात में प्रवेश करता है, तो वह अब आफ़ाक़ी नहीं रहा बल्कि 'मीक़ाती' हो गया। उसके लिए वहां से बिना एहराम के मक्का मुअज़्ज़मा जाना जायज़ है। (12 मिन्ह़) नोट 2: यह इस ओर इशारा है कि ज़िक्र का पूरी तरह से शुद्ध होना शर्त नहीं है जैसा कि नमाज़ की तकबीर-ए-तह़रीमा (तहरीमा) में होता है, बल्कि कोई भी ज़िक्र काफ़ी है चाहे उसमें दुआ भी शामिल हो, यही सही मत है जैसा कि 'अल-मस्लक अल-मुतक़स्सित' में है। (12 मिन्ह़ (म))। इसमें इशारा है कि शुद्ध ज़िक्र शर्त नहीं है जैसा कि नमाज़ के तहरीमा में होता है, बल्कि दुआ वाले शब्द भी मिले हों तो सही है जैसा कि मस्लक मुतक़स्सित में है।

(12 मिन्ह़) नोट 3: एहराम कभी 'तक़्लीद' (तक़लीद) और 'सौक़-ए-बदना' (क़ुर्बानी के ऊंट को ले जाना) से भी होता है, लेकिन इसका वर्णन लंबा था और भारतीयों में इसका प्रचलन नहीं है, इसलिए इसी पर पर्याप्त किया गया। (12 मिन्ह़)

1 मस्लक मुतक़स्सित मअ इर्शादुस-सारी, बाबुल-एहराम, दारुल-किताबुल-अरबी बेरूत, पृ. 70 पृष्ठ 786 / 836

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

ف : نئے سفید ہوں تو بہتر ورنہ دھلے اُجلے اور ان میں رفو یا پیوند بھی اچھا نہیں، پر جائز ہے۔ اور ہمیانی یا تلوار کے پر تلے کا ڈر نہیں۔

م : ینوی اداء النسک بالجنان وفضلہ فی القول باللسان ت : نیت کرے حج یا عمرہ کی دل سے اور زیادہ خوبی زبان سے کہنے میں ہے۔ ش : یعنی جامع احرام پہن کر اب جو کچھ ادا کرنا چاہتا ہے (حج خواہ عمرہ یا دونوں) اس کی نیت دل سے کرے اور زبان سے بھی الفاظ نیت کہنا بہتر ہے، مثلاً الٰہی میں حج کی نیت کرتا ہوں اسے میرے لئے آسان کر اور قبول فرما۔

م : ملبیا جھرا من المیقات و ذاکر اللہ فی الحالات ت : لبیک کہتا ہوا بآواز میقات سے اور خدا کی یاد کرتا ہوا مختلف حالوں میں۔ ش : میقات ان مقاموں کو کہتے ہیں جو شرع مطہر نے احرام کے لیے مقرر کیے ہیں کہ باہر عہ۱ سے مکہ معظمہ کا قصد کرنے والے کو بے احرام ان مقاموں سے آگے بڑھنا حرام ہے، ہندیوں کو وہ جگہ سمندر میں آتی ہے جب کوہ یلملم کی سیدھ میں پہنچتے ہیں۔

ف : رکن احرام کے صرف دو ہیں، دل سے نیت اور اس کے ساتھ زبان سے وہ ذکر جس میں اللہ تعالی کی تعظیم ہو، خواہ لبیک یا کچھ اور مثل سبحان اللہ یا الحمدللہ یا اللہ اکبر یا اللھم اغفر لی عہ۲ وغیرہ ذلک، جب یہ دونوں عہ۳ باتیں پائی گئیں احرام باندھ گیا اور جو کچھ محرم پر حرام تھا (حرام ہو گیا)۔

عہ ۱ : باہر سے مکہ مکرمہ کا قصد اس لیے کہا کہ اگر آفاقی یعنی باہر والا میقات کے اندر کسی مکان مثل جدہ یا خلیص کا قصد کرکے میقات میں داخل ہو جائے تو اب آفاقی نہ رہا میقاتی ہو گیا اسے وہاں سے مکہ معظمہ میں بے احرام جانا جائز ہے ۱۲ منہ) عہ ۲ : اشارۃ الی انہ لا یشترط

کون الذکر خالصاً کما فی تحریمة الصلوة بل یکفی مطلقاً ولو مشوباً بالدعاء ھو الصحیح کما فی المسلک المتقسط ۱۲ منہ (م)۔ اس میں اشارہ ہے کہ خالص ذکر شرط نہیں ہے جیسا کہ نماز کے تحریمہ میں ہوتا ہے بلکہ دعائیہ کلمات بھی ملے ہوں تو صحیح ہے جیسا کہ مسلک متقسط میں ہے ۱۲ منہ) عہ ۳ : احرام کبھی تقلید وسوق بدنہ سے ہوتا ہے مگر اس کے بیان میں طول تھا اور ہندیوں میں اس کا رواج نہیں لہذا اسی پر اکتفاء کیا گیا ۱۲ منہ)

۱ مسلک متقسط مع ارشادی الساری باب الاحرام دارالکتاب العربی بیروت ص ۷۰ Page 786 of 836

Fatawa Razawiya, Volume 10

...became forbidden. Then saying 'Labbayk' is a Sunnah [Note] and for the person in Ihram (Muhrim), it is better than any other dhikr; he should do it as much as possible. As for this...

[Note]: It is mentioned in 'Al-Lubab' that reciting Talbiyah once is mandatory (fard), and in 'An-Nahr' and 'Ad-Durr' it is stated that it is a condition (shart). Mulla Ali Qari said that this is only at the beginning. However, the research is that the fard and shart are not the Talbiyah itself but rather any dhikr in general, as researched in 'Al-Bahr'. He said that those who called Talbiyah a condition meant a dhikr that implies veneration, not specifically Talbiyah. The full discussion is in 'Radd al-Muhtar'. I say: It is explicitly stated in 'Al-Lubab' just before what was mentioned that every dhikr intended for the veneration of Allah Almighty stands in place of Talbiyah. In the same book, at the beginning of the Chapter of Ihram, it says that the conditions for the validity of Ihram are Islam, intention, dhikr, or garlanding the sacrificial animal (budnah). Then Talbiyah was mentioned among its Sunnahs. Mulla Ali Qari said there that Talbiyah or its substitute are among the obligations (fara'id) of Ihram according to our companions. It is stated in 'Ad-Durr' that Hajj is valid with a general intention, even if only in the heart. (Continued on the next page).

Arabic text within the note: Note: It occurred in al-Lubab that Talbiyah is a fard once [1], and in al-Nahr and al-Durr it is a condition once [2], Mulla Ali al-Qari said: and it is at the commencement only [3]. However, the research is that the fard and the condition are only dhikr in general, not specifically Talbiyah, as verified in al-Bahr. He said: the statement of those who said it is a condition meant a dhikr intended for veneration, not specifically it [4]. The completion of it is in Radd al-Muhtar. I say: and it is clearly stated in al-Lubab shortly before what preceded that every dhikr intended for the veneration of Allah, Glorified be He, stands in place of Talbiyah [5]. End. And in it, at the start of the chapter on Ihram: the conditions for its validity are Islam, intention, and dhikr or the garlanding of the sacrificial animal [6]. End. Then he listed among its sunnahs the specification of Talbiyah. Al-Qari said there: Talbiyah or what stands in its place are among the obligations of Ihram according to our companions [7]. End. And in al-Durr: Hajj is valid with general intention even if with the heart only.

Footnotes: 1. Al-Lubab al-Manasik with Irshad al-Sari, Chapter and Condition of Talbiyah, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 70 2. Al-Durr al-Mukhtar, Chapter on Ihram, Matba' Mujtabai, Delhi, 1/163 3. Maslak al-Mutqassit with Irshad al-Sari, Chapter and

Condition of Talbiyah, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 70 4. Al-Bahr ar-Ra'iq, Chapter on Ihram, H.M. Saeed Company, Karachi, 2/322 5. Al-Lubab al-Manasik with Irshad al-Sari, Chapter and Condition of Talbiyah, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 70 6. Al-Lubab al-Manasik with Irshad al-Sari, Chapter and Condition of Talbiyah, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 62 7. Maslak al-Mutqassit with Irshad al-Sari, Chapter on Ihram, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 62

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

...हराम हो गया। फिर लब्बैक कहना सुन्नत है (अ़ह) और मोहरिम (एहराम बांधने वाले) के लिए हर ज़िक्र से बेहतर है जहाँ तक हो सके इसकी कसरत करे। इसके..

अ़ह: लुबाब में ज़िक्र है कि तल्बियह एक मर्तबा फ़र्ज़ है, और नह्र और दुर्र में है कि एक बार शर्त है। मुल्ला अली क़ारी ने कहा कि यह सिर्फ़ शुरू में है। लेकिन तहक़ीक़ यह है कि फ़र्ज़ और शर्त तल्बियह नहीं बल्कि मुतलक़न ज़िक्र है जैसा कि बहर में इसकी तहक़ीक़ है उन्होंने कहा कि जिसने कहा तल्बियह शर्त है उसकी मुराद यह है कि ताज़ीम पर मुश्तमिल ज़िक्र न कि ख़ास तल्बियह, मुकम्मल बहस रद-उल-मुहतार में है अक़ूल: लुबाब में तसरीह है कि जो ज़िक्र ताज़ीम पर मुश्तमिल हो वह तल्बियह के क़ायम मकाम होता है अ़ह इसी में बाबुल एहराम के शुरू में है कि एहराम के सही होने की शर्त इस्लाम, नियत, ज़िक्र और बुदना (क़ुरबानी का ऊँट) के गले में क़लादह बांधना है अ़ह फिर इसकी सुन्नतों में तल्बियह को ज़िक्र किया, मुल्ला अली क़ारी ने कहा कि यहाँ तल्बियह या इसके क़ायम मकाम एहराम के फ़राइज़ हैं हमारे असहाब के यहाँ अ़ह दुर्र में है कि हज, मुतलक़ ख़्वाह सिर्फ़ दिल से (बाक़ी अगले सफ़ह पर)

हवाले: 1. लुबाबुल मनासिक मआ इर्शादुस्सारी, फ़स्ल व शर्त्-उत्-तल्बियह अलख, दारुल किताबुल अरबी, बैरूत, पृ. 70 2. दुर्रे मुख्तार, फ़स्ल फ़िल एहराम, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, 1/163 3. मसलके मुतक़स्सित मआ इर्शादुस्सारी, फ़स्ल व शर्त्-उत्-तल्बियह अलख, दारुल किताबुल अरबी, बैरूत, पृ. 70 4. बहरुल राईक़, बाबुल एहराम, एच. एम. सईद कंपनी कराची, 2/322 5. लुबाबुल मनासिक मआ इर्शादुस्सारी, फ़स्ल व शर्त्-उत्-तल्बियह अलख, दारुल किताबुल अरबी, बैरूत, पृ. 70 6. लुबाबुल मनासिक मआ इर्शादुस्सारी, फ़स्ल व शर्त्-उत्-तल्बियह अलख, दारुल किताबुल अरबी, बैरूत, पृ. 62 7. मसलके मुतक़स्सित मआ इर्शादुस्सारी, बाबुल एहराम, दारुल किताबुल अरबी, बैरूत, पृ. 62

فتاوی رضویہ جلد دہم

حرام ہو گیا۔ پھر لبیک کہنا سنت عہ اور محرِم کے لیے ہر ذکر سے بہتر ہے جہاں تک ہو سکے اس کی کثرت کرے۔ اس کے

عہ: وقع فی اللباب ان التلبیة مرة فرض ' وفی النهر والدر انها مرة شرط قال القاری 2 وهو عند الشروع لا غیر 3 لکن التحقیق ان الفرض والشرط انما هو مطلق الذکر لا خصوص التلبیة کما حققه فی البحر قال وقول من قال انها شرط مراده ذکر یقصد به التعظیم لا خصوصها 4 وتمامہ فی ردالمحتار اقول وقد نص فی اللباب قبیل ما مر ان کل ذکر یقصد به تعظیم الله سبحانہ یقوم مقامہ التلبیة 5 اه وفیه فی صدر باب الاحرام شرائط صحتہ الاسلام والنیة و الذکر او تقلید البدنة 6 اه ثم عد من سننه تعیین التلبیة قال القاری هناك التلبیة او ما یقوم مقامها من فرائض الاحرام عند اصحابنا 7 اه وفی الدر یصح الحج بمطلق النیة ولو بقلبہ

عہ: لباب میں مذکور ہے کہ تلبیہ ایک مرتبہ فرض ہے، اور نہر اور در میں ہے کہ ایک بار شرط ہے۔ ملا علی قاری نے کہا کہ یہ صرف شروع میں ہے۔ لیکن تحقیق یہ ہے کہ فرض اور شرط تلبیہ نہیں بلکہ مطلقاً ذکر ہے جیسا کہ بحر میں اس کی تحقیق ہے انہوں نے کہا کہ جس نے کہا تلبیہ شرط ہے اس کی مراد یہ ہے کہ تعظیم پر مشتمل ذکر نہ کہ خاص تلبیہ، مکمل بحث ردالمحتار میں ہے اقول: لباب میں تصریح ہے کہ جو ذکر تعظیم پر مشتمل ہو وہ تلبیہ کے قائم مقام ہوتا ہے اھ اسی میں باب الاحرام کے شروع میں ہے کہ احرام کے صحیح ہونے کی شرط اسلام، نیت، ذکر اور بدنہ کے گلے میں قلادہ باندھنا ہے اھ پھر اس کی سنتوں میں تلبیہ کو ذکر کیا، ملا علی قاری نے کہا کہ یہاں تلبیہ یا اس کے قائم مقام احرام کے فرائض ہیں ہمارے اصحاب کے ہاں اھ در میں ہے کہ حج، مطلق خواہ صرف دل سے (باقی اگلے صفحہ پر)

1 لباب المناسک مع ارشاد الساری فصل وشرط التلبیة الخ دار الکتاب العربی بیروت ص ۷۰ 2 در مختار فصل فی الاحرام مطبع مجتبائی دہلی ۱/ ۱۶۳ 3 مسلک متقسط مع ارشادی الساری فصل وشرط التلبیة الخ دار الکتاب العربی بیروت ص ۷۰ 4 بحر الرائق باب الاحرام ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ۲/ ۳۲۲ 5 لباب المناسک مع ارشاد الساری فصل وشرط التلبیة الخ دار الکتاب العربی بیروت ص ۷۰ 6 لباب المناسک مع ارشاد الساری فصل وشرط التلبیة الخ دار الکتاب العربی بیروت ص ۶۲ 7 مسلک متقسط مع ارشاد الساری باب الاحرام دار الکتاب العربی بیروت ص ۶۲

Fatawa Razawiyya Volume 10

The Masnoon (Sunnah) words are:

Labbayka Allāhumma Labbayk, Labbayka lā sharīka laka Labbayk, Inna l-ḥamda wa-n-niʿmata laka wa-l-mulk, lā sharīka lak. Translation: I am present in Your court, O Allah! I am present in Your presence, I am present, You have no partner, I am present. Verily, praise, blessing, and sovereignty belong to You alone, You have no partner. (T)

Recite it frequently in the morning and evening, after every prayer, while ascending heights, descending into valleys, meeting another caravan, when stars set or rise, while standing, sitting, walking, or stopping - in short, with every change of state.

F: The Sunnah and recommended method of Ihram is to take a bath, remove dirt from the body, clip nails, trim facial hair, remove armpit and pubic hair. If one is accustomed to shaving the head, do so, otherwise comb it, apply oil, and put perfume on the body. Then wear the garments of Ihram and offer two rak'ahs of prayer with the intention of the Sunnah of Ihram. Then, sitting while facing the Qibla, make the intention with heart and tongue.

(Remainder of the footnote from the previous page) ...it becomes valid provided that the intention is accompanied by some Dhikr intended for glorification (Ah). Thus, the veil has been lifted, and praise be to Allah, Lord of the worlds. 12 Minhu (T)

But on condition of its being accompanied by a Dhikr by which glorification is intended (Ah). So the cover was uncovered, and praise be to Allah, Lord of the worlds. 12 Minhu (M)

Note: Regarding his saying "al-Mulk", pausing at it is deemed better so that it is not wrongly thought that what follows it is its predicate (Sharah al-Lubab). Some have reported that pausing here is recommended according to the four Imams (Ah, Radd al-Muhtar). I say: It is not obligatory because the meaning that could be wrongly assumed by joining it with what follows is also correct in itself, even if that meaning is not intended here. 12 Minhu (M)

Pausing on the word "al-Mulk" is better so that there is no possibility of what follows being taken as its predicate (Sharah Lubab). Some have cited that here, according to the four Imams, a pause is recommended (Ah, Radd al-Muhtar). I say: This pause is not mandatory because the meaning which might be wrongly perceived by joining it

with the following is also correct in its essence, though that meaning is not intended here. 12 Minhu (T)

1. Durr-e-Mukhtar, Chapter on Ihram, Matba' Mujtabai Delhi 1/163.
2. Maslak-e-Mutaqassit with Irshad-us-Sari, Chapter on then praying two rak'ahs, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut p. 69.
3. Radd al-Muhtar, Chapter on Ihram, Mustafa al-Babi Egypt 2/371.

फतावा रज़विया जिल्द दहम (खंड 10)

मसनून शब्द ये हैं:

लब्बैक अल्लाहुम्मा लब्बैक, लब्बैक ला शरीका लका लब्बैक, इन् नल हम्दा वन निअमता लका वल मुल्का, ला शरीका लक। अनुवाद: मैं आपके दरबार में हाज़िर हो गया इलाही! मैं आपकी बारगाह में हाज़िर हो गया, मैं हाज़िर हो गया, आपका कोई शरीक नहीं, मैं हाज़िर हो गया हूँ। बेशक तारीफ और नेमत और मुल्क आपके ही लिए है, आपका कोई शरीक नहीं। (त)

सुबह और शाम के समय, हर नमाज़ के बाद, ऊँचाई पर चढ़ते समय, गहराई में उतरते समय, दूसरे काफिले से मिलते समय, सितारों के डूबते और निकलते समय, खड़े होते, बैठते, चलते, ठहरते - संक्षेप में हर स्थिति के बदलने पर इसे अधिकता से पढ़ें।

फ़: एहराम का मसनून और मुस्तहब (पसंदीदा) तरीका यह है कि गुस्ल (स्नान) करे, शरीर से मैल उतारे, नाखून कटवाए, खत बनवाए (बाल ठीक करे), बगल और नाभि के नीचे के बाल हटाए। यदि सिर मुंडवाने की आदत हो तो मुंडवाए वरना कंघी करे, तेल डाले, शरीर पर खुशबू लगाए, फिर एहराम के कपड़े पहनकर एहराम की सुन्नत की नीयत से दो रकअत नमाज़ पढ़े। फिर वहीं क़िबला की ओर मुख करके बैठकर दिल और ज़बान से नीयत करे।

(पिछले पृष्ठ के फुटनोट का शेष भाग) ...यह सही हो जाता है बशर्ते कि नीयत के साथ कोई ऐसा ज़िक्र हो जिससे ताज़ीम (महिमामंडन) का इरादा हो (अह)। तो इससे पर्दा हट गया और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो तमाम जहानों का रब है। 12 मिन्हु (त)

"लेकिन इसके साथ ताज़ीम के इरादे से किए गए ज़िक्र की शर्त पर" (अह)। अतः पर्दा उठ गया और सब प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो संसारों का पालनहार है। 12 मिन्हु (म)

नोट: उनके शब्द "अल-मुल्क" के बारे में, इस पर रुकना (वक्फ) बेहतर समझा गया है ताकि यह भ्रम न हो कि इसके बाद वाला हिस्सा इसकी खबर (विधेय) है (शरह अल-लुबाब)। कुछ ने उद्धृत किया है कि यहाँ रुकना चारों इमामों के निकट मुस्तहब है (अह, रद अल-मुहतार)। मैं कहता हूँ: यह रुकना वाजिब (अनिवार्य) नहीं है क्योंकि इसके बाद वाले हिस्से के साथ जोड़ने से जिस अर्थ का भ्रम हो सकता है वह भी अपने आप में सही है, भले ही वह अर्थ यहाँ अभिप्रेत न हो। 12 मिन्हु (म)

शब्द "अल-मुल्क" पर रुकना बेहतर है ताकि बाद वाले के खबर होने का संदेह न रहे, शरह लुबाब। और कुछ ने नकल किया है कि यहाँ वक्फ, अइम्मा अरबआ (चार इमामों) के यहाँ मुस्तहब है (अह, रद अल-मुहतार)। मैं कहता हूँ यह वक्फ वाजिब नहीं है क्योंकि बाद वाले के साथ मिलाने से जिस अर्थ का वहम (भ्रम) हो सकता है, वह भी सही है हालांकि वह अर्थ यहाँ मुराद (अभिप्रेत) नहीं है। 12 मिन्हु (त)

1. दुर्रे मुख्तार, फसल फ़िल एहराम, मतबा मुजतबाई दिल्ली 1/163.
2. मसलके मुतकस्सित मय इरशादुस सारी, फसल सुम्मा युसल्ली रकातैन, दारुल किताब अल-अरबी बेरुत पृ. 69.
3. रद अल-मुहतार, फसल फ़िल एहराम, मुस्तफा अल-बाबी मिस्र 2/371.

पृष्ठ 836 का 788

فتاوی رضویہ جلد دہم

الفاظ مسنونہ یہ ہیں:

لَبَّیْكَ اَللّٰھُمَّ لَبَّیْكَ ط لَبَّیْكَ لَا شَرِیْكَ لَكَ لَبَّیْكَ ط اِنَّ الْحَمْدَ وَالنِّعْمَةَ لَكَ وَالْمُلْكَ ط لَا شَرِیْكَ لَكَ میں تیرے دربار میں حاضر ہو گیا الٰہی! میں تیری بارگاہ میں حاضر ہو گیا، میں حاضر ہو گیا، تیرا کوئی شریک نہیں، میں حاضر ہو گیا ہوں، بلا شبہ تعریف اور نعمت اور ملک تیرے ہی لیے ہے، تیرا کوئی شریک نہیں۔ (ت)

صبح و شام کے وقت اور ہر نماز کے بعد اور بلندی پر چڑھتے۔ پستی میں اترتے، دوسرے قافلہ سے ملتے، ستاروں کے ڈوبتے، نکلتے کھڑے ہوتے، بیٹھتے،، چلتے، ٹھہرتے غرض ہر حالت کے بدلنے زیادہ کثرت کرے۔

ف: احرام کا مسنون و مستحب طریقہ یہ ہے کہ غسل کرے، بدن سے میل اتارے، ناخن ترشوائے، خط بنوائے، موئے بغل و زیر ناف دُور کرے، سر منڈانے کی عادت ہو تو منڈائے ورنہ کنگھی کرے، تیل ڈالے، بدن میں خوشبو لگائے، پھر جامہ احرام پہن کر دو رکعت نماز بہ نیت سنت احرام پڑھے۔ پھر وہیں قبلہ رو بیٹھا دل و زبان سے نیت

(بقیہ حاشیہ صفحہ گذشتہ) ہو، صحیح ہو جاتا ہے بشرطیکہ نیت کے ساتھ کوئی ایسا ذکر ہو جس سے تعظیم مقصود ہو اھ تو اس سے پردہ چھٹ گیا والحمد للہ رب العلمین ۱۲ منہ (ت)

لکن بشرط ومقارنتھا بذکر یقصد بہ التعظیم اھ فانکشف الغطاء والحمد للہ رب العلمین ۱۲ منہ (م)

عـه: قوله الملك استحسن الوقف عليه لئلا يتوهم ان ما بعد خبره شرح اللباب ونقل بعضهم انه مستحب عند الائمة الاربعة اھ ردالمحتار، اقول ولم يجب لان المعنى ايضا صحيح في نفسه وان لم مر ادا ١٢ منـه (م)

لفظ "الملک" پر وقف بہتر ہے تاکہ ما بعد کے خبر ہونے کا احتمال پیدا نہ ہو، شرح لباب، اور بعض نے نقل کیا ہے کہ یہاں وقف، ائمہ اربعہ کے ہاں مستحب ہے اھ رد المحتار، اقول یہ وقف واجب نہیں کیونکہ بعد کے ساتھ ملانے سے جس معنی کا وہم ہو سکتا ہے وہ بھی درست ہے اگر چہ وہ معنی یہاں مراد نہیں ١٢ منہ (ت)

1 در مختار فصل فی الاحرام مطبع مجتبائی دہلی ١/ ١٦٣ 2 مسلک متقسط مع ارشاد الساری فصل ثم یصلی رکعتین دارالکتاب العربی بیروت ص ٦٩ 3 ردالمحتار فصل فی الاحرام مصطفی البابی مصر ٢/ ٣٧١

Fatawa Razvia, Volume 10

One should recite the Talbiyah (Labaik) aloud three times, pray for ease and acceptance, and send blessings (Durood) upon the Prophet ﷺ.

M: Prohibitions of Ihram

T: Those things which are forbidden to do in Ihram.

M: Wearing sewn clothes is forbidden for a person in Ihram, without a valid reason.

T: It is forbidden for a person in Ihram to wear sewn clothes unless due to a physical illness.

F: It should be clear that regarding the things forbidden in Ihram, if they are done due to an excuse or out of forgetfulness, there is no sin, but the prescribed penalty (jaza) must be paid in any case—whether it happened unintentionally, by mistake, under compulsion, through someone's coercion, during sleep, or in any other way. Wearing sewn clothes is forbidden when they are used in the customary manner; however, if a cloak or shirt is tied as a waist-wrap, or a coat or trousers are draped over the body while sleeping, it is not forbidden, although it should not have been done.

M: And perfume is forbidden, like myrtle (aas), and oiling the hair of the beard and head.

T: And perfume like 'aas' is forbidden, as is applying oil to the hair of the beard or head.

F: Applying perfume to the body or clothes is forbidden and smelling it is disliked (makruh). And perfumed oil and olive oil...

Note 1: But not excessively to the point of causing distress; and it will be mentioned soon that a woman should recite softly.

It is stated in 'Al-Mansik al-Mutawassit' that it is recommended to raise the voice with it, except in a city; I have not seen this from anyone else. Then Al-Qari justified it by the fear of ostentation (riya) and seeking reputation. I say: this is clearly questionable. Therefore, Al-Qari said the more apparent view is that it causes harm through his voice to some who are present. The writer has become confused. 12 Minhu (T).

Note 2: In Persian, the tree is named 'Murd', rhyming with 'Dost'. 12

In Persian, rhyming with 'Dost', 'Murd' is the name of a tree. 12 (T).

Note 3: If perfume was applied before Ihram and it remains, there is no harm; applying it after entering Ihram is forbidden. 12 Minhu.

---

1 Al-Mansik al-Mutawassit with Irshad al-Sari, Chapter and Condition of Talbiyah, Dar al-Kutub al-Arabi, Beirut, pp. 71 and 72. 2 Maslak al-Mutaqassit with Irshad al-Sari, Chapter and Condition of Talbiyah, Dar al-Kutub al-Arabi, Beirut, p. 72.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

ऊँची आवाज़ में तीन बार लब्बैक कहे, आसानी और क़बूलियत की दुआ माँगे, नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम पर दरूद भेजे।

म: एहराम की वर्जनाएँ(महरमात)

त: वे बातें जिनका एहराम में करना हराम है।

म: बिना किसी वाजिब कारण के एहराम की स्थिति में सिला हुआ कपड़ा पहनना हराम है।

त: बिना किसी बीमारी के एहराम वाले व्यक्ति पर सिला हुआ कपड़ा पहनना हराम है।

फ़: स्पष्ट हो कि जो बातें एहराम में हराम हैं, वे अगर किसी मजबूरी या भूल से की गई हों तो गुनाह नहीं, पर उनका निर्धारित जुर्माना (जज़ा) हर हाल में देना होगा—चाहे वे अनजाने में हों, गलती से हों, मजबूरी में हों, किसी के दबाव में हों, सोते में हों या किसी और तरह से। सिला हुआ कपड़ा पहनना तब हराम है जब उसे सामान्य तरीके से पहना जाए; लेकिन अगर जुब्बा या कुर्ते को तहबंद की तरह बाँधा जाए या कोट या पाजामा शरीर पर डालकर सोया जाए, तो हराम नहीं, हालांकि ऐसा नहीं करना चाहिए था।

म: और खुशबू हराम है जैसे 'आस' (एक पौधा), और दाढ़ी या सिर के बालों में तेल लगाना।

त: और हराम है खुशबू जैसे आस और तेल लगाना दाढ़ी या सिर के बालों में।

फ़: शरीर या कपड़ों पर खुशबू लगाना हराम है और सूंघना मकरूह, और खुशबू वाला तेल और जैतून का तेल...

नोट 1: मगर सीमा से अधिक नहीं जिससे कष्ट हो, और जल्द ही बताया जाएगा कि औरत धीरे से कहे।

'मन्सिक मुतवस्सित' में उल्लेख है कि इसके साथ आवाज़ बुलंद करना मुस्तहब (पसंदीदा) है, सिवाय इसके कि वह शहर में हो। मैंने इसे किसी और के यहाँ नहीं देखा। फिर अल्लामा क़ारी ने इसकी वजह रियाकारी (दिखावा) और शोहरत के डर से बताई है। मैं कहता हूँ इसमें गौर करने की ज़रूरत है। इसीलिए मुल्ला अली क़ारी ने कहा कि ज़ाहिर यह है कि इसमें दूसरों को उसकी आवाज़ से नुकसान होता है। लिखने वाले को भ्रम हो गया है। 12 मिन्हु (त)।

नोट 2: फारसी में 'दोस्त' के वज़न पर पेड़ को 'मुर्द' कहते हैं। 12

फारसी में 'दोस्त' के वज़न पर, 'मुर्द' एक पेड़ का नाम है। 12 (त)।

नोट 3: एहराम से पहले जो खुशबू लगाई गई और वह लगी रही, तो कोई हर्ज़ नहीं; एहराम के बाद लगाना हराम है। 12 मिन्हु।

---

1 मन्सिक मुतवस्सित मअ इरशाद-उस-सारी, फ़स्ल व शर्त-उत-तल्बिया, दार-उल-कुतुब-अल-अरबी, बेरूत, पृ. 71 और 72। 2 मसलक-उल-मुतक़स्सित मअ इरशाद-उस-सारी, फ़स्ल व शर्त-उत-तल्बिया, दार-उल-कुतुब-अल-अरबी, बेरूत, पृ. 72।

فتاویٰ رضویہ ، جلد دہم

کرے بآوازِ تین بار لبیک کہے، آسانی و قبول کی دعا مانگے، نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم پر درود بھیجے۔

م: محرمات الاحرام

ت: وہ باتیں جن کا احرام میں کرنا حرام ہے

م: لبس مخیط الثیاب حرماً من غیر علة علی من احرماً

ت: سیلا کپڑا پہننا حرام ہے بے کسی بیماری کے احرام والے پر۔

ف: واضح ہو کہ جو باتیں احرام میں حرام ہیں وہ اگر کسی عذر سے کیں یا بھول کر ہوئیں تو گناہ نہیں پر ان کا جو جرمانہ مقرر ہے وہ ہر طرح دینا ہو گا اگرچہ بے قصد واقع ہوں یا سہو سے یا مجبوری کو یا کسی کے جبر سے یا سوتے میں یا کسی طرح اور، سیلا کپڑا احرام جب ہے کہ بطور معتاد استعمال میں آئے ورنہ جبہ یا کرتے کا تہہ بند باندھنا مگر کھایا پاجامہ بدن پر ڈال کر سویا تو حرام نہیں اگرچہ چاہئے نہ تھا۔

م: ویحرم الطیب کمثل الآس ودھن شعر لحیة وراس

ت: اور حرام ہے خوشبو جیسے آس۸عہ۲ اور تیل لگانا داڑھی یا سر کے بالوں میں۔

ف: بدن یا کپڑوں پر۸عہ۳ میں خوشبو لگانا حرام ہے اور سونگھنا مکروہ، اور خوشبو کا تیل اور روغن زیتون

عہ۱: مگر نہ حد سے زائد جس میں اذیت ہو، اور عنقریب آتا ہے کہ عورت آہستہ کہے۔

ووقع في المنسك المتوسط انه يستحب ان يرفع بها صوته الا ان يكون في مصر[1]، اھ۔ ولم اره لغيره ثم وجهه القاري بخوف الرياء والسمعة اقول وفيه نظر ظاہر ولذا قال القاري ان الاظہر ان يكون يتضرر بصوته على بعض من حضر[2] منه (م)

منسک متوسط میں ہے کہ آواز بلند کرنا مستحب ہے۔ مگر شہر میں مستحب نہیں اھ، کسی اور جگہ یہ نہیں دیکھا، پھر علامہ قاری نے اس کی وجہ بیان کرتے ہوئے کہا شہر میں بلند کرنے میں ریاکاری کا خوف ہے۔ میں کہتا ہوں اس میں غور کی ضرورت ہے۔ اسی لیے ملا علی قاری نے کہا کہ ظاہر یہ ہے کہ اس میں دوسروں کو ضرر ہے۔ تحریر کرنیوالے کو اشتباہ ہو گیا ہے، ۱۲ منہ (ت)

عہ۲: بفارسی درخت مورد نامند بروزن دوست۱۲۸

فارسی میں دوست کے وزن پر، مورد ایک درخت کا نام ہے ۱۲ (ت)

عہ۳: احرام سے پہلے جو خوشبو لگائی وہ لگی رہی تو مضائقہ نہیں بعد احرام کے لگانا حرام ہے ۱۲ منہ

---

1 منسک متوسط مع ارشاد الساری فصل و شرط التلبیہ دار الکتاب العربی بیروت ص ۷۱ و ۷۲ 2 مسلک متقسط مع ارشاد الساری فصل و شرط التلبیہ دار الکتاب العربی بیروت ص ۷۲

And sesame oil (1), even if pure, is not permissible to apply to the hair or body, but ghee or fat is permissible.

M: Halq sha'r thumma qalam zufr 'aqd al-nikah thumma sayd al-bar. **T:** Shaving hair, clipping nails, marriage contract, hunting wild animals. **Sh:** Meaning, it is fundamentally not permissible to remove hair from any part of the body from head to toe by shaving, trimming, using hair removal cream (noorah), or tweezers, either by oneself or by someone else's hand. However, hair growing in the eye, and getting married according to the Hanafis, and hunting in the sea (2), are permissible by consensus. **F:** Apart from this, covering the face (3) or the head, even while sleeping; fighting someone unjustly; having sexual intercourse; or kissing with desire (4), or touching (with desire); discussing intercourse in front of women; shaving someone else's head even if they are not in Ihram; participating in any way in the killing of a wild animal (5), such as pointing it out to a hunter, gesturing towards it, providing a gun or gunpowder, giving a knife for slaughter, breaking its eggs, plucking its feathers, breaking its legs or wings, milking it, or [eating] its meat...

---

(1): These two oils are forbidden even if they have no fragrance. Other than these, fragrance-free oils like almond oil etc., their permissibility is derived from 'Durr-e-Mukhtar', but 'Sharh-e-Lubab' states they are absolutely forbidden. And Allah Almighty knows best. (12 Minhu) **(2):** That is, when it is specifically for food or medicinal purposes, or even as a profession/craft according to the preferred view. Otherwise, hunting for recreation, as is common among the general public today, whether it's from the sea or the forest, in Ihram or out of Ihram, is forbidden in every way, as stated in 'Durr-e-Mukhtar' etc. (12 Minhu) **(3):** Meaning the whole face or part of it, to the extent that lying face down with the face on a pillow is not permissible. However, lying on the back or side is allowed even if it involves covering the cheeks or a part of the head, as Sharia specifically permits this. This rule is the same for men and women, to the point that it's not allowed for [a man] to cover his face by placing a fan etc. on it; rather, he should hold it above the head away from the face to create a screen. Yes, covering the head is necessary for a woman even in Ihram. (12 Minhu, may he be forgiven) **(4):** Meaning, even with one's own wife or legal slave-girl, these things with desire are improper. Then with someone else, it's a double sin: one because the act itself is forbidden, and second, it's a prohibition of Ihram. (12 Minhu) **(5):** There is no harm in slaughtering, eating, or cooking domestic animals like camels, cows, goats, or chickens. (12 Minhu, may he be forgiven)

और तिल का तेल (१), भले ही शुद्ध हो, बालों या शरीर पर लगाना जायज नहीं है, और घी या चर्बी जायज है।

M: हल्क़ श'र सुम्मा क़लम ज़ुफ़र अक़्द अल-निकाह सुम्मा सैद अल-बर। (बाल मुंडवाना, फिर नाखून काटना, फिर निकाह करना, फिर जंगली शिकार।) **T:** बाल मुंडवाना, नाखून काटना, निकाह का अनुबंध, जंगली शिकार। **Sh:** यानी सिर से पैर तक किसी भी जगह के बाल मुंडवाकर, कतरकर, नूरा (बाल हटाने वाली क्रीम) से, चिमटी से, खुद या दूसरे के हाथ से हटाना मूल रूप से जायज नहीं है। लेकिन जो बाल आँख में निकल आएं और निकाह करना हनफ़ियों के नज़दीक और समुद्री शिकार (२) सर्वसम्मति से जायज है। **F:** इसके अलावा चेहरे (३) या सिर को ढंकना, भले ही सोते समय हो; किसी से अन्यायपूर्ण लड़ाई करना; संभोग करना; या कामवासना के साथ चुंबन लेना (४), या स्पर्श करना; महिलाओं के सामने संभोग की चर्चा करना; किसी का सिर मुंडवाना भले ही वह एहराम में न हो; जंगली शिकार (५) को मारने में किसी भी तरह से शामिल होना, जैसे शिकारी को बताना, इशारा करना, बंदूक या बारूद देना, ज़बह के लिए छुरी देना, उसके अंडे तोड़ना, पर उखाड़ना, पैर या बाजू तोड़ना, उसका दूध दुहना, उसका मांस या...

---

(१): इन दो तेलों में भले ही खुशबू न हो, वे वर्जित हैं। इनके अलावा बिना खुशबू वाले तेल जैसे बादाम का तेल आदि, उनका जायज होना 'दुर्रे मुख्तार' से निकलता है और 'शरह लुबाब' में उन्हें पूरी तरह से नाजायज कहा गया है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (१२ मिन्हु) **(२):** यानी जब वह विशेष रूप से भोजन या औषधि के उद्देश्य से हो, या पसंदीदा विचार के अनुसार पेशे और शिल्प के रूप में भी। अन्यथा, मनोरंजन के लिए शिकार, जैसा कि आज कल आम जनता में प्रचलित है, चाहे वह समुद्र का हो या जंगल का, एहराम में हो या एहराम के बाहर, हर तरह से हराम है जैसा कि दुर्रे मुख्तार आदि में है। (१२ मिन्हु) **(३):** यानी पूरा चेहरा या उसका कुछ हिस्सा, यहाँ तक कि तकिए पर मुँह रखकर औंधे लेटना जायज नहीं है। हाँ, पीठ के बल या करवट लेकर लेटना जायज है भले ही इसमें गालों या सिर के एक हिस्से का ढंकना हो क्योंकि शरीयत में विशेष रूप से इसकी अनुमति है। इसमें पुरुष और महिला का एक ही हुक्म है यहाँ तक कि उसे चेहरा छिपाने के लिए यह अनुमति नहीं है कि पंखा आदि चेहरे पर रख ले, बल्कि सिर पर चेहरे से अलग इस तरह रखे कि ओट हो जाए। हाँ, महिला के लिए एहराम में भी सिर ढंकना ज़रूरी है। (१२ मिन्हु गफ़र लहू) **(४):** यानी अपनी पत्नी या वैध दासी के साथ भी ये बातें कामवासना के साथ अनुचित हैं। फिर किसी और के साथ तो दोहरा गुनाह है, एक तो वह कार्य ही नाजायज है, दूसरा एहराम की मनाही है। (१२ मिन्हु) **(५):** पालतू

जानवर जैसे ऊँट, गाय, बकरी, मुर्गी को ज़बह करने, खाने और पकाने में कोई हर्ज नहीं है। (१२ मिन्हु गफ़र लहू)

पृष्ठ ७९० / ८३६

اور تل کا تیل ۱؎ اگرچہ خالص ہوں بالوں میں یا بدن میں لگانا جائز نہیں، اور گھی یا چربی جائز ہے۔ **م:** حلق شعر ثم قلم ظفر عقد النکاح ثم صید البر **ت:** اور بال مونڈنا، ناخن کترنا، عقد نکاح، جنگلی شکار۔ **ش:** یعنی سر سے پاؤں تک کسی جگہ کے بال مونڈ کر، کتر کر، نورہ سے، موچینہ سے، آپ یا دوسرے کے ہاتھ سے دور کرنا اصلا جائز نہیں، مگر جو بال آنکھ میں نکلے، اور نکاح کرنا حنفیہ کے نزدیک اور دریا کا شکار ۲؎ بالاتفاق جائز ہے۔ **ف:** اس کے سوا منہ ۳؎ یا سر کو ڈھانکنا اگرچہ سوتے میں، یا کسی سے ناحق لڑنا، یا جماع کرنا، یا شہوت سے بوسہ لینا ۴؎ ، یا مساس کرنا، یا عورتوں کے آگے جماع کا تذکرہ لانا، کسی کا سر مونڈنا اگرچہ اس کا احرام نہ ہو، جنگلی شکار ۵؎ کے ہلاک میں کسی طرح شریک ہونا مثلاً شکاری کو بتانا، اشارہ کرنا، بندوق یا بارود دینا، ذبح کے لیے چھری دینا، اس کے انڈے توڑنا، پر اکھاڑنا، پاؤں یا بازو توڑنا، اس کا دودھ دوہنا، اس کا گوشت یا

۱؎ : ان دو تیلوں میں اگرچہ خوشبو نہیں ناجائز ہیں، ان کے سوا اور بے خوشبو کے تیل جیسے روغن بادام وغیرہ، در مختار سے ان کا جواز نکلتا ہے اور شرح لباب میں مطلقاً ناجائز کہا، واللہ تعالیٰ اعلم (۱۲ منہ) **۲؎ :** یعنی جبکہ خاص کھانے یا دوا کی غرض سے ہو، یا مذہب راجح پر بطور پیشہ وحرفت بھی، ورنہ تفریحاً شکار جیسا کہ آجکل عوام میں رائج، دریا کا ہو یا جنگل کا، احرام میں ہو یا غیر احرام میں، ہر طرح حرام ہے کما فی الدر المختار وغیرہ (جیسا کہ در مختار وغیرہ میں ہے۔ ت ۱۲ منہ) **۳؎ :** یعنی کل منہ یا بعض، یہاں تک کہ تکیہ پر منہ رکھ کر اوندھے لیٹنا جائز نہیں، ہاں چت یا کروٹ سے روا ہے اگرچہ اس میں رخسارے یا سر کے ایک ٹکڑے کا

ڈھانکنا ہو کہ شرع میں خاص اس کی اجازت ہے اور اس میں مرد وزن کا ایک حکم ہے یہاں تک کہ اسے منہ چھپانے کے لیے روا نہیں کہ پنکھا وغیرہ منہ پر رکھ لے بلکہ سر پر منہ سے الگ یوں رکھے کہ آڑ ہو جائے۔ ہاں سر کا ڈھانکنا عورت کو احرام میں بھی ضرور ہے (۱۲ منہ غفر لہ) **۴ــہ :** یعنی اپنی عورت یا کنیز شرعی کے ساتھ بھی یہ باتیں بشہوت ناروا ہیں پھر غیر کے ساتھ دوہرا گناہ، ایک تو فعل آپ ہی ناجائز دوسرے احرام کا محظور (۱۲ منہ) **۵ــہ :** پالتو جانور جیسے اونٹ، گائے، بکری، مرغی کے ذبح کرنے، کھانے پکانے میں حرج نہیں (۱۲ منہ غفر لہ)

Fatawa-e-Razvia Volume 10

...or to cook, sell, buy, or eat eggs; or to be the cause of killing lice in any way, for example, by killing them, throwing them away, signaling someone to kill them, washing clothes for their death, or putting them in the sun. Applying Wasma (a type of black dye) [Footnote 1] or Henna (Mehndi) dye, washing hair with Khatmi (Marshmallow plant), or setting it with gum etc., all of this is impermissible. Similarly, all small and big sins are always bad, and in the state of Ihram, they are even worse.

M (Original Arabic text): And the ruling for a woman is like that, but her Ihram is in her face. Therefore, it is necessary that she does not cover it, and in her clothing, she remains in sewn garments and covers her head. T (Urdu Translation): And similarly is the ruling for a woman, but her Ihram is only in the face, so it became necessary that she [not] hide her face and remains in sewn clothes. She should cover her head. Sh (Explanation): That is, in the matters mentioned above, a woman is like a man, but for her, wearing sewn clothes and covering her head is permissible; she should only not let a cloth [Footnote 2] come onto her face. F (Verdict): A woman in purdah should keep some fan etc. away from the face in front of her, and women should not say 'Labbayk' aloud [Footnote 3].

Footnote 1: Henna became prohibited for two reasons: one is that it is a fragrance, and secondly, by applying it, the hair gets hidden, so it amounts to covering the head or face. And Wasma, although not a fragrance, will hide the hair; moreover, black dye is always impermissible except in Jihad, so for a Muhrim (one in Ihram), it is impermissible to a greater degree. It is in the Hadith: In another Hadith it is: "They will not smell even a scent of Paradise [Footnote 1]." Yes, if any thin oil without fragrance, which does not blacken the hair, is applied, then it will be based on the disagreement between Qari and Allai mentioned above. And Allah Almighty knows best. (12 Minhu) Footnote 2: By 'cloth', every covering thing is meant; the issue of the fan is proof of this. (12 Minhu) Footnote 3: 'Aloud' does not mean shouting, but rather it means that she herself should hear it, and it should not reach the ears of any stranger man.

[1] Kanz al-Ummal, Prohibition of Dyeing, Hadith 17337, Mu'assasat ar-Risalah Beirut 6/71.

फ़तावा-ए-रज़विया जिल्द दसवीं

...या अंडे पकाना, बेचना, ख़रीदना, खाना; जूँओं के हलाक होने का किसी तरह भी सबब बनना, मिसाल के तौर पर उन्हें मारना, फेंकना, किसी को उन्हें मारने का इशारा करना, उन्हें मारने के लिए कपड़े धोना या धूप में डालना। वस्मा [ع١] या मेहंदी का ख़िज़ाब लगाना, बालों को ख़त्मी (मार्शमैलो) से धोना, गोंद वगैरह से जमाना, यह सब नाजायज़ है। इसी तरह तमाम छोटे और बड़े गुनाह हमेशा बुरे होते हैं, और एहराम की हालत में तो बहुत ही ज़्यादा बुरे हैं।

म (मूल अरबी): और औरत का हुक्म भी उसी की तरह है लेकिन उसका एहराम उसके चेहरे में है, तो लाज़िम हुआ कि वह उसे न ढके और अपने पहनावे में वह सिले हुए कपड़ों में रहे और अपना सर ढके। त (उर्दू तरजुमा): और इसी तरह औरत का हुक्म है, लेकिन उसका एहराम सिर्फ़ चेहरे में है, तो लाज़िम हुआ कि वह अपना चेहरा [न] छुपाए और सिले हुए कपड़ों में रहे। सर ढके। श (व्याख्या): यानी ऊपर ज़िक्र की गई बातों में औरत मर्द की तरह ही है, लेकिन उसके लिए सिले हुए कपड़े पहनना और सर ढकना जायज़ है; वह सिर्फ़ अपने चेहरे पर कपड़ा [ع٢] न आने दे। फ़ (फ़तवा): पर्दानशीन औरत कोई पंखा वगैरह चेहरे से बचाकर अपने सामने रखे, और औरतें बुलंद आवाज़ [ع٣] से लब्बैक न कहें।

ع١: मेहंदी दो वजहों से हराम हुई: एक तो यह कि यह ख़ुशबू है, और दूसरे इसके लगाने से बाल छुप जाते हैं तो यह सर या मुँह को ढांकना हुआ। और वस्मा अगरचे ख़ुशबू नहीं है फिर भी बालों को छुपाएगा, और काला ख़िज़ाब हमेशा ही नाजायज़ है सिवाय जिहाद के, तो मुहरिम (एहराम वाले) के लिए यह और भी ज़्यादा नाजायज़ हुआ। हदीस में है: दूसरी हदीस में है: "वे जन्नत की महक तक नहीं सूँघ पाएंगे [१] ।" हाँ, अगर कोई पतला तेल बिना ख़ुशबू वाला लगाया जाए जिससे बाल काले न हों, तो वह उस कारी और अल्लाई के इख़्तिलाफ़ पर होगा जो ऊपर ज़िक्र हुआ। वल्लाहु तआला आलम (१२ मिन्हु)। ع٢: कपड़े से मुराद हर वह चीज़ है जो छुपा दे, पंखे वाला मसला इसकी दलील है। (१२ मिन्हु) ع٣: 'बुलंद आवाज़' का मतलब यह नहीं है कि वह चिल्लाए नहीं, बल्कि मुराद यह है कि वह सिर्फ़ ख़ुद ही सुने और किसी अजनबी मर्द के कानों तक आवाज़ न पहुँचे।

[१] कज़ुल उम्माल, महज़ूरात अल-ख़िज़ाब, हदीस १७३३७, मुअस्ससतु र रिसाला बेरूत ६/७१।

पृष्ठ ८३६ का ७९१

یا انڈے پکانا، بیچنا، خریدنا، کھانا، جوں کے ہلاک پر کسی طور باعث ہونا مثلاً مارنا، پھینکنا، کسی کو اس کے مارنے کا اشارہ کرنا، کپڑا اس کے مرجانے کے لیے دھونا یا دھوپ میں ڈالنا، وسمہ عہ۱ یا مہندی کا خضاب لگانا، بال خطمی سے دھونا، گوند وغیرہ سے جمانا سب ناجائز ہے۔ اسی طرح تمام چھوٹے بڑے گناہ کو ہمیشہ بُرے ہیں اور احرام میں بہت زیادہ بُرے۔

م: وحکم مرأۃ کذالکنما احرامھا فی وجھھا فلزم ان لا تغطیہ وفی لباسھا المخیط تبقی وغطاء راسھا

ت: اور اسی طرح عورت کا حکم ہے لیکن اس کا احرام صرف چہرے میں ہے تو لازم ہوا کہ منہ چھپائے اور سلے کپڑوں میں رہے۔ سر ڈھکے۔ ش: یعنی اوپر جو باتیں گزریں ان میں عورت مثل مرد کے ہے مگر اسے سلے کپڑے پہننا، سر ڈھکنا روا ہے صرف چہرے پر کپڑا نہ عہ۲ آنے دے۔ ف: پردہ نشین عورت کوئی پنکھا وغیرہ منہ سے بچا ہوا سامنے رکھے اور عورتیں لبیک بآواز عہ۳ نہ کہیں۔

عہ۱: مہندی دو وجہ سے حرام ہوئی: ایک تو خوشبو ہے، دوسرے اس کے لگانے سے بال چھپ جاتے ہیں تو سر یا منہ کا ڈھانکنا ہوا، اور وسمہ اگرچہ خوشبو نہیں بال چھپائے گا، پھر سیاہ خضاب ہمیشہ ناجائز ہے مگر جہاد میں، تو محرم کو بدرجہ اولٰی ناجائز ہوا۔ حدیث میں ہے: دوسری حدیث میں ہے: "وہ جنت یک بو نہ سونگھیں گے۱۔" ہاں اگر کوئی رقیق تیل بے خوشبو جس سے بال کالے نہ ہوں لگایا جائے تو وہ اس اختلاف قاری وعلائی پر ہوگا جو اوپر گزرا، واللہ تعالٰی اعلم (۱۲منہ) عہ۲: کپڑے سے مراد ہر چھپانے والی چیز ہے، پنکھے کا مسئلہ اس پر دلیل ہے (۱۲منہ) عہ۳: بآواز کے یہ معنی نہیں کہ چلا کر نہ ہو بلکہ یہ مراد ہے کہ آپ ہی سنے کسی اجنبی مرد کے کان تک نہ جائے کہ

١ كنز العمال محظورات الخضاب حديث ١٧٣٣٧ موسسة الرسالہ بیروت ۶/ ٧١

Fatawa Razawiyya Volume 10

M: And Hajj is certainly invalidated by sexual intercourse, and its makeup in the following year is emphasized. As long as he is not ignorant or forgetful, then no ransom (fidyah) is required of him.

T: And Hajj undoubtedly becomes invalid due to sexual intercourse; its makeup (qada) in the coming year (Note 1) is necessary, provided that this person is not ignorant or has not forgotten, so that it is not mandatory for him to pay fidyah.

M: And there is no fidyah for the intercourse that was disliked, nor is there invalidation in what has already been decided.

Sh: The summary is that if during Hajj, before the first release from Ihram (tahallul al-awwal) (Note 2) which occurs in Makkah on the 10th of Dhul-Hijjah in Mina, or in Umrah before complete finishing, one voluntarily and intentionally engages in sexual intercourse while being aware of its prohibition, then that Hajj or Umrah will be invalidated. It is obligatory upon him to complete it and then repeat it, and as a penalty, give a 'budana', meaning a camel. And for what was done after that, or if he didn't know the prohibition, or did it out of forgetfulness or under compulsion, then according to the most correct school of thought, neither Hajj nor Umrah is invalidated, nor is fidyah required.

F: All this detail was according to the Shafi'i school. According to the Hanafis, if sexual intercourse occurs before the standing at Arafat (wuquf-e-Arafah) during Hajj, then the Hajj is invalidated. One must still complete it as usual and slaughtering a goat (shaat) and repeating the Hajj is mandatory. After the standing, it does not fundamentally invalidate the Hajj. Furthermore, if it is done after finishing shaving the head (halq) and the obligatory circumambulation (tawaf-e-fard), then there is no penalty either. If it was done before these two, then a 'budana' will be mandatory, meaning a camel or a cow, particularly if it occurs between the two, meaning after the circumambulation of visitation (tawaf-e-ziyarat).

(Remaining footnote from previous page): There is a trial in this, and hearing oneself is certainly necessary in remembrance (dhikr), recitation, and speech. Merely moving the tongue without it has no validity, even to the extent that if in prayer one recites such that the sound doesn't reach their own ears, it won't be considered recitation, and according to the most correct school of thought, the prayer will not be valid. Many people are unaware of this issue. (12 Minhu)

Note 1: This means it's not like since it's invalidated now, they can make it up whenever they want, but rather they must perform the makeup (qada) immediately in the following year. (12 Minhu, may Allah forgive him)

Note 2: On the 10th, when stones are thrown at the pillars (rami jimar), everything becomes permissible except women; this is the first release (tahallul). Then, when the circumambulation of visitation (tawaf-e-ziyarat) is performed, women also become permissible; this is the final and complete release. This is the school of Imam Shafi'i. According to us (Hanafis), the first release occurs with shaving/cutting hair (halq). Until the hair is shaved/cut, nothing becomes permissible, even if one has performed the stoning. (12 Minhu)

फ़तावा रज़विया जिल्द 10

म: और निस्संदेह संभोग से हज अमान्य हो जाता है, अगले वर्ष उसकी कज़ा पर ज़ोर दिया गया है। जब तक कि वह अज्ञानी या भूला हुआ न हो, तो उस पर फ़िदया (दंड स्वरूप दान) देना ज़रूरी नहीं है।

त: और हज संभोग से निस्संदेह अमान्य हो जाता है, इसकी कज़ा (अगले वर्ष के लिए नोट 1) आवश्यक है, जब तक कि यह व्यक्ति अनभिज्ञ या भूला हुआ न हो, ताकि उस पर फ़िदया देना अनिवार्य न हो।

म: और उस संभोग के लिए कोई फ़िदया नहीं है जो नापसंद किया गया था, और न ही उस काम में अमान्यता है जिसके बारे में फैसला सुनाया गया है।

श: सारांश यह है कि यदि हज में पहले तहलुल (नोट 2) से पहले, जो मक्का में दसवीं तारीख को मिना में होता है, या उमराह में पूरी तरह संपन्न होने से पहले, कोई अपनी इच्छा से और जानबूझकर संभोग करता है और वह इसके निषेध से अवगत भी था, तो वह हज या उमराह अमान्य हो जाएगा। उस पर यह अनिवार्य है कि वह इसे पूरा करे और फिर से दोहराए, और दंड के रूप में 'बुदना' यानी एक ऊंट दे। और यदि इसके बाद संभोग किया या निषेध के बारे में पता नहीं था या भूलवश कर लिया या किसी के दबाव में किया, तो सबसे सही मत (असहे मज़हब) के अनुसार न तो हज और न ही उमराह अमान्य होगा और न ही फ़िदया देना होगा।

फ: यह सारा विवरण शाफ़ई मत का था। हनफ़ियों के अनुसार, यदि हज में अरफ़ात के ठहराव (वक़ूफ़-ए-अरफ़ा) से पहले संभोग किया गया तो हज अमान्य हो जाता है, और उसे यथावत पूरा करके बकरी (शात) की बलि देना और हज दोहराना अनिवार्य है। वक़ूफ़ के बाद ऐसा करने से हज मौलिक रूप से अमान्य नहीं होता। फिर यदि 'हलक़' (सिर मुंडवाना) और अनिवार्य तवाफ़ (तवाफ़-ए-फ़र्ज़) से भी फ़ारिग (मुक्त) होने के बाद किया, तो कोई दंड भी नहीं है। और यदि इन दोनों से पहले किया तो 'बुदना' अनिवार्य होगा यानी ऊंट या गाय, और यदि इन दोनों के बीच हुआ, यानी तवाफ़-ए-ज़ियारत के बाद।

(पिछले पृष्ठ के हाशिये का शेष भाग): इसमें फ़ितना (परीक्षा) है और ज़िक्र, क़िरात (पाठ) और बातचीत में खुद को सुनाई देना ज़रूरी है। इसके बिना केवल ज़बान हिलाने का कोई महत्व नहीं है,

यहाँ तक कि नमाज़ में क़िरात इस तरह पढ़ी कि अपने कानों तक आवाज़ न आए, तो वह क़िरात नहीं मानी जाएगी और सबसे सही मत के अनुसार नमाज़ नहीं होगी। बहुत से लोग इस मसले से अनजान हैं। (12 मिन्हु)

नोट 1: यानी इसका मतलब यह नहीं है कि अब अमान्य हो गया है तो जब चाहेंगे कज़ा कर लेंगे, बल्कि तुरंत अगले वर्ष ही कज़ा कर लें। (12 मिन्हु गफ़र लहु)

नोट 2: दसवीं को जब रमी जिमार (कंकड़ मारना) करते हैं तो स्त्रियों के अलावा सब कुछ हलाल (अनुमत) हो जाता है, यह पहला तहलुल हुआ। फिर जब तवाफ़-ए-ज़ियारत किया तो स्त्रियां भी हलाल हो गईं, यह अंतिम और पूर्ण तहलुल हुआ। यह इमाम शाफ़ई का मत है। हमारे (हनफ़ी) अनुसार पहला तहलुल 'हलक़' (बाल कटवाने) से होता है। जब तक हलक़ न किया जाए, कोई भी चीज़ हलाल नहीं होती, भले ही रमी कर चुके हों। (12 मिन्हु)

पेज 792 / 836

فتاوی رضویہ جلد دہم

م: والحج بالجماع بتا يفسد قضاؤه في قابل يؤكد مالم يكن ذاجا هلا اونسياً فما عليه ان يكون فاديا

ت: اور حج جماع سے بے شبہ فاسد ہو جاتا ہے قضا اس کی سالِ عہ۱ آئندہ میں ضروری ہوتی ہے، جب تک یہ شخص ناواقف یا بھولا ہوا نہ ہو کہ اس پر فدیہ دینا لازم نہیں۔

م: ولا فد البيع التي فدا كرهت وطأولافساد فيما قد قضت

ش: خلاصہ یہ کہ اگر حج میں قبلِ تحللِ اول عہ۲ مکہ دسویں تاریخ منیٰ میں ہوتا ہے یا عمرہ میں قبل اس سے فراغِ کلی کے باختیار خود قصداً جماع کیا اور اس کی حرمت سے آگاہ بھی تھا تو وہ حج یا عمرہ فاسد ہو جائے گا اور اس پر فرض ہے کہ اسے پورا کر کے پھر اعادہ کرے اور جرمانہ میں بُدَنہ یعنی ایک اونٹ دے، اور جو بعد اس کے کیا یا حرمت نہ جانتا تھا یا بھولے سے کر بیٹھا یا کسی کا جبر تھا تو مذہبِ اصح پر نہ حج و عمرہ فاسد ہو نہ فدیہ آئے۔

ف: یہ سب تفصیل مذہب شافعیہ کی تھی اور حنفیہ کے نزدیک اگر حج میں وقوفِ عرفہ سے پہلے جماع کیا تو حج فاسد، اور اسے بدستور پورا کر کے ذبحِ شاۃ (بکری) و اعادہ لازم، اور وقوف کے بعد کئے سے حج اصلاً فاسد نہیں ہوتا، پھر اگر حلق و طوافِ فرض سے بھی فارغ ہو کر کیا تو کچھ جرمانہ بھی نہیں، اور ان دونوں سے پہلے کیا تو بدنہ لازم آئیگا یعنی اونٹ یا گائے، اور دونوں کے بیچ میں واقع ہوا یعنی طوافِ زیارت کے بعد۔

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ): اس میں فتنہ ہے اور اپنا سننا ہر گز ذکر و قرآت و کلام میں ضرور ہے اس کے بغیر فقط زبان ہلانے کا کچھ اعتبار نہیں یہاں تک کہ نماز میں قرات ایسی پڑھی کہ اپنے

کان تک نہ آئے وہ قرات نہ ٹھہرے گی اور اصح مذہب پر نماز نہ ہوگی، بہت لوگ اس مسئلہ سے ناواقف ہیں ۱۲ منہ)

عہ۱: یعنی اس میں یہ نہیں کہ اب فاسد تو ہو گیا ہے جب چاہیں گے قضاء کرلیں گے، بلکہ فوراً سالِ آئندہ ہی قضاء کرلیں ۱۲ منہ غفرلہ)

عہ۲: دسویں کو جوری جمار کرتے ہیں سب کچھ حلال ہو جاتا ہے مگر عورتیں، یہ پہلا تحلل ہوا، پھر جب طوافِ زیارت کیا عورتیں بھی حلال ہو گئیں، یہ تحللِ آخر و تحللِ تام ہوا، یہ مذہبِ امام شافعی کا ہے۔ ہمارے نزدیک پہلا تحلل حلق سے ہوتا ہے جب تک حلق نہ کیا کوئی چیز حلال نہیں اگر چہ رمی کر چکے ۱۲ منہ

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

If shaving of the head occurs before [slaughtering] or vice versa, then a goat must be given as a penalty, but many scholars in the reverse case say a camel (Budnah) is required. In Umrah, there is corruption [of the rite] if intercourse occurs before four circuits of Tawaf, and completion, slaughtering of a goat, and repetition are necessary. After four circuits, there is only slaughtering and no corruption. In these rulings, it is the same whether it is intentional or forgotten, by choice or by force, knowingly or unknowingly. And Allah Almighty knows best.

M: Pillars of Hajj

Explanation (Sh): i.e., the pillars of Hajj and Umrah. Definition (F): The 'rukn' (pillar) of a thing is that upon which the essence of its existence depends, like bowing (ruku'), prostration (sujud), standing (qiyam), and sitting (qu’ud) for prayer. A 'shart' (condition) is something external upon which it depends, meaning it is not part of the reality of the thing, but the thing cannot exist without it.

Annotation (Ah): i.e., when sexual intercourse occurs after [the standing at Arafah] but before the [Tawaf az-Ziyarah]. It is stated in Al-Hidayah, Al-Kafi, Al-Majma', Al-Lubab, At-Tanwir, Ad-Durr, etc., that a goat is mandatory for it. In Radd al-Muhtar it says this is what the main texts (Mutun) mention. However, Al-Mabsut, Al-Badai', and Al-Isbijabi proceed upon the necessity of a camel (Budnah). In Al-Fath, it says this is more appropriate due to the general application of the manifest reports (Zahir ar-Riwayah). It is discussed in Al-Bahr and An-Nahr. Similarly, it is narrated in Al-Lubab. Al-Quduri and its commentators followed the first opinion. In short, this point is a matter of dispute; the first opinion is easier, and the second is based on precaution. And Allah Almighty knows best. (12 منه - T)

1. Durr al-Mukhtar, Chapter on Crimes, Mujtabai Press, Delhi, 1/175.
2. Radd al-Muhtar, Chapter on Crimes, Mustafa al-Babi, Egypt, 2/230.

Page 793 of 836

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

यदि हलाल होने (बाल काटने) से पहले [कुर्बानी] हो जाए या इसके विपरीत, तो एक बकरी दंड स्वरूप देनी होगी, लेकिन कई विद्वान विपरीत स्थिति में एक ऊँट (बदना) की आवश्यकता बताते हैं। उमराह में, तवाफ के चार चक्करों से पहले [सहवास] होने पर इबादत भ्रष्ट हो जाती है, और उसे पूरा करना, एक बकरी की कुर्बानी देना और उमराह दोहराना अनिवार्य है। चार चक्करों के बाद, केवल कुर्बानी है और इबादत भ्रष्ट नहीं होती। इन आदेशों में, चाहे जानबूझकर हो या गलती से, अपनी मर्जी से हो या जबरदस्ती, जानबूझकर हो या अनजाने में, सब बराबर हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

म: हज के अरकान (स्तंभ)

स्पष्टीकरण (श): यानी हज और उमराह के अरकान। परिभाषा (फ): किसी चीज़ का 'रुकन' (स्तंभ) वह है जिस पर उसके अस्तित्व का सार निर्भर करता है, जैसे नमाज़ के लिए रुकू सजदा, कयाम और कऊद। 'शर्त' (स्थिति) एक बाहरी चीज़ है जिस पर वह निर्भर करती है, यानी यह चीज़ की वास्तविकता का हिस्सा नहीं है, लेकिन इसके बिना चीज़ का अस्तित्व संभव नहीं है।

पार्श्व टिप्पणी (अह): यानी जब सहवास अराफ़ात के बाद लेकिन तवाफ-ए-ज़ियारत से पहले हो। अल-हिदाया, अल-काफी, अल-मजमा, अल-लुबाब, अत-तनवीर, अद-दुर्र आदि में कहा गया है कि इसके लिए एक बकरी अनिवार्य है। रद अल-मुहतार में कहा गया है कि यही मूल ग्रंथों (मुतून) में वर्णित है। हालाँकि, अल-मबसूत, अल-बदाई और अल-इस्बीजाबी ने ऊँट (बदना) की अनिवार्यता की बात कही है। अल-फ़तह में कहा गया है कि ज़ाहिर अर-रिवायत के व्यापक प्रयोग के कारण यही अधिक उपयुक्त है। अल-बहर और अन-नहर में इस पर चर्चा की गई है। इसी तरह अल-लुबाब में भी उल्लेख है। अल-कुद्दूरी और उसके टीकाकारों ने पहले मत का अनुसरण किया। संक्षेप में, यह स्थान विवाद का विषय है; पहला मत आसान है और दूसरा एहतियात (सावधानी) पर आधारित है। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। (12 मिन्हु - त)

1. दुर्र अल-मुख्तार, बाब अल-जिनायात, मुजतबाई प्रेस, दिल्ली, 1/175।
2. रद अल-मुहतार, बाब अल-जिनायात, मुस्तफा अल-बाबी, मिस्र, 2/230।

पेज 793 ऑफ 836

جلد دہم فتاوی رضویہ حلق سے پہلے یا بالعکس تو بکری دینی آئے گی مگر بہت علماء صورت عکس عہ امیں بدنہ کہتے ہیں، اور عمرہ میں چار طواف سے پہلے فساد ہے اور اتمام و ذبح شاۃ و اعادہ ضرور، اور چار کے بعد صرف ذبح ہے فساد نہیں، اور ان احکام میں برابر ہے قصداً یا بھولے سے، باختیار خود یا جبر سے، دانستہ یا نادانستہ، واللہ تعالٰی اعلم م:ارکان الحج ش: یعنی حج و عمرہ کے رکن ف: رکن شے کا وہ ہے جس سے اس کے نفس ذات کا قوام ہو جیسے نماز کے لیے رکوع، سجود، قیام، قعود اور شرط خارج موقوف علیہ کو کہتے ہیں یعنی حقیقتِ شئی میں داخل نہ ہو پر اس کے بغیر شئی موجود نہ ہو عہ: یعنی جبکہ جماع حتٰی کے بعد طواف سے پہلے ہو ففی الھدایۃ والکافی والمجمع واللباب والتنویر والدر وغیرھا ان فیہ شاۃ قال في رد المحتار ھو ما علیہ المتون ومشی فی المبسوط والبدائع والاسبیجابی علی وجوب البدنۃ وفي الفتح انہ الاوجہ لاطلاق ظاہر الروایۃ وناقشہ في البحر والنہر اھ وکذا حکاہ في اللباب وعلی الاول مشی القدوری وشراحہ وبالجملہ فالموضع نزاع والاول ارفق وھذا احوط واللہ تعالٰی اعلم ۱۲ منہ (م) تو ہدایہ، کافی، مجمع، لباب، تنویر اور در وغیرہ میں ہے کہ اس میں بکری لازم ہے۔ ردالمحتار میں کہا کہ اس پر متون وارد ہیں۔ اور مبسوط، بدائع، الاسبیجابی اس پر بدنہ کے وجوب کے قائل ہیں، اور فتح میں ہے کہ یہی ظاہر الروایت کے اطلاق سے موافق ہے۔ اور بحر اور نہر میں اس پر مناقشہ بیان کیا ہے اھ اور یوں ہی لباب میں حکایت کیا گیا ہے، اور پہلے قول پر قدوری اور اس کے شارحین نے رجحان ظاہر کیا ہے، غرضیکہ یہ مقام نزاع ہے، پہلا قول آسان ہے اور دوسرا احتیاط پر مبنی ہے۔ واللہ تعالٰی اعلم ۱۲ منہ (ت)

1 در مختار باب الجنایات مطبع مجتبائی دہلی ۱ / ۱۷۵ 2 رد المحتار باب الجنایات مصطفٰی البابی مصر ۲ / ۲۳۰

Fatawa Razawiya Volume 10

Just as for prayer, wudhu (ablution), niyyat (intention), istiqbal (facing the Qiblah), Takbir, and those obligations of any act whose omission renders the act void (batil), and omitting 'wajibat' (essentials) does not render it void but causes deficiency and flaws, such as reciting Al-Hamd, a Surah, At-Tahiyyat, etc., in prayer. Arabic text: The pillars of Hajj are counted as six / You must certainly memorize them. Translation: There are six pillars (arkan) of Hajj; it is necessary for you to remember them.

Note 1: This definition includes both 'rukn' (pillar) and 'shart' (condition), so 'farz' (obligation) is broader than them. In 'Al-Maslak al-Mutaqassit', it is stated that obligations are broader than pillars, conditions, etc., such as sincerity (ikhlas) in worship. I say, it appears to me that this pertains to the core obligation itself, of which sincerity is also a part, as it is a complete obligation. However, this is not among the specific obligations of prayer, otherwise, prayer would be invalidated by show-off (riyakari). But if something is an obligation for something else, then the existence of that thing must depend on this obligation, meaning its validity is impossible without it. Now, if this obligation is internal to that act, it is called a 'rukn', and if it is external but the act depends on it, it will be a 'shart'. Yes, in a 'shart', sometimes being prior in existence and remaining concurrent during its subsistence is also considered, like the sequence of prayer conditions that do not repeat in one rak'ah (unit). Understand this. (From the author, may he be forgiven).

Note 2: Among these six mentioned by the author, in our view, most are not pillars, and some are debatable even according to the Shafi'i school. This humble servant studied in Imam Nawawi's 'Al-Idah', which is a primary text of the Shafi'i school, and found that they count only five pillars of Hajj, considering the sequence among the 'wajibat'. Perhaps this is another narration in their school. (It could be that this is a second narration in their school. Trans. And Allah Almighty knows best. - Author).

1. Al-Maslak al-Mutaqassit with Irshad al-Sari, Chapter: Faraid al-Hajj, Dar al-Kutub al-Arabi, Beirut, p. 45.
2. This phrase could not be read.

फ़तावा रज़विया जिल्द १०

जैसे नमाज़ के लिए वुज़ू, नियत, इस्तक़बाल (किबला की ओर मुँह करना), तकबीर और किसी अमल के फ़राइज़ (अनिवार्यताएँ) वे हैं जिनके छोड़ने से अमल बातिल (अमान्य) हो जाता है, और वाजिबात के छोड़ने से बातिल नहीं होता, बल्कि उसमें कमी और दोष आ जाता है जैसे नमाज़ में अल-हम्द, सूरह, अत्तहियात आदि। अरबी पद्य: हज के अरकान (स्तंभ) छह गिने जाते हैं / तुम्हें उन्हें निश्चित रूप से याद रखना चाहिए। अनुवाद: हज के छह अरकान हैं, तुम्हारे लिए उन्हें याद रखना ज़रूरी है।

टिप्पणी १: यह परिभाषा रुक्न (स्तंभ) और शर्त (अनिवार्य स्थिति) दोनों को शामिल करती है, इसलिए 'फ़र्ज़' इनसे अधिक व्यापक है। 'अल-मसलिक अल-मुतक़स्सित' में उल्लेख है कि फ़राइज़, अरकान और शरायत आदि से अधिक व्यापक हैं, जैसे इबादत में इखलास (निष्ठा)। मैं कहता हूँ, मुझे यह प्रतीत होता है कि यह मामला स्वयं फ़र्ज़ का है जिसमें इखलास भी शामिल है, कि यह एक पूर्ण फ़र्ज़ है। हालांकि यह नमाज़ के फ़राइज़ में से नहीं है, अन्यथा नमाज़ दिखावे (रियाकारी) से अमान्य हो जाती। लेकिन यदि कोई चीज़ किसी दूसरी चीज़ के लिए फ़र्ज़ है, तो उस फ़र्ज़ पर उस दूसरी चीज़ का वजूद मुनहसिर (निर्भर) होना ज़रूरी है, यानी उसके बिना वह चीज़ सही न हो सके। अब यदि यह फ़र्ज़ उस चीज़ के भीतर शामिल हो तो रुक्न कहलाएगा, और यदि बाहर रहकर उस पर निर्भरता हो तो शर्त होगा। हाँ, शर्त में कभी वजूद के लिहाज़ से पहले होना और बक़ा (स्थायित्व) के लिहाज़ से साथ रहना भी ध्यान में रखा जाता है, जैसे नमाज़ की उन शर्तों का क्रम जो एक रकात में दोहराई नहीं जातीं। इसे समझें। (लेखक की ओर से, अल्लाह उन्हें क्षमा करे)।

टिप्पणी २: लेखक ने जो छह उल्लेख किए हैं, उनमें से हमारे नज़दीक अधिकतर रुक्न नहीं हैं और कुछ शाफ़ेई मत के अनुसार भी चर्चा का विषय हैं। मुझ फ़क़ीर (विनम्र सेवक) ने इमाम नववी की 'अल-ईदाह' में, जो शाफ़ेई मत का एक प्रामाणिक ग्रंथ है, अध्ययन किया कि उन्होंने हज के केवल पाँच अरकान गिने हैं और तरतीब (क्रम) को वाजिबात में गिना है। शायद उनके मत में यह कोई दूसरी रिवायत (वर्णन) हो। (हो सकता है कि यह उनके मत की दूसरी रिवायत हो। अनुवाद। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है - लेखक)।

1. मसलिक मुतक़स्सित मअ इरशाद-उस-सारी, अध्याय: हज के फ़राइज़, दार अल-कुतुब अल-अरबी, बेरुत, पृष्ठ ४५।
2. यह इबारत (वाक्यांश) पढ़ी नहीं जा सकी।

جیسے نماز کے لیے وضو، نیت، استقبال، تکبیر اور کسی عمل کے فرائض وہ ہیں جن کے ترک سے عمل باطل ہو جائے اور واجبات کے ترک سے باطل نہیں ہوتا، اس میں خلل آتا اور ناقص ہو جاتا ہے جیسے نماز میں الحمد، سورت، التحیات وغیرہ۔ للحج ارکان تعد ستة / لابد ان تحفظهن البتة ت: حج کے چھ رکن ہیں ضرور ہے کہ تو انہیں یاد کرے جنتا

عہ۱: یہ تعریف رکن و شرط دونوں کو شامل، تو فرض ان سے عام ہے، و فی المسلک المتقسط الفرائض اعم من الارکان والشرائط وغیرھما کا لا خلاص فی العبادة اقول یظھر لی ان ھذا فی الفرض فی نفسہ ومنہ الاخلاص فانہ فرض بحیالہ ولیس من فرائض الصلوٰة مثلا والا لبطلت بالریاء اما الفرض فی غیرہ فلا بد ان یتوقف وجودہ علیہ بمعنی انہ لا یصح الا بہ فان دخل فر کن وان کان خارجاً موقوفاً علیہ وھذا ھو معنی الشرط نعم قد یؤخذ فی الشرط تقدمہ وجوداً والمعیة بقاء کشروط الصلوة واسطة کترتیب مالا یتکرر فی رکعة فافھم ۱۲ منہ غفرلہ ۔ (م) مسلک متقسط میں ہے کہ فرائض، ارکان و شرائط وغیرہ سے عام ہیں جیسا کہ عبادت میں اخلاص اقول میرے ہاں ظاہر یہ ہے کہ یہ معاملہ نفس فرض کا ہے جس میں سے اخلاص بھی ہے کہ یہ مکمل فرض ہے حالانکہ یہ نماز کے فرائض میں سے نہیں ہے ورنہ نماز ریاکاری سے فاسد ہو جائے، لیکن غیر میں کوئی فرض ہو تو اس کے لیے ضروری ہے کہ اس فرض پر اس غیر کا وجود موقوف ہو یعنی اس کے بغیر اس غیر کی صحت نہ ہوسکے، تو اب یہ فرض اس غیر میں داخل ہو تو رکن کہلائے گا اور اگر خارج ہو کر موقوف علیہ بنے تو شرط ہوگا، ہاں شرط میں کبھی وجود کے اعتبار سے مقدم ہونا اور بقاء کے اعتبار سے موقوف کے ساتھ رہنا بھی ملحوظ ہوتا ہے جیسا کہ نماز کی ان شرائط کی ترتیب جو ایک رکعت میں مکرر نہیں آتی۔

عہ۲: یہ چھ کہ مصنف نے ذکر فرمائے ان میں ہمارے نزدیک تو اکثر رکن نہیں اور بعض بطور شافعیہ بھی محل کلام، فقیر نے ایضاح امام نووی میں کہ شافعیہ کے عمدہ مذہب واحد الشیخین میں مطالعہ کیا کہ انھوں نے ارکان حج صرف پانچ گنے ترتیب کو واجبات میں شمار کیا و لعل ھذہ روایۃ اخری فی مذھبہم (ہو سکتا ہے کہ ان کے مذہب کی یہ دوسری روایت ہو۔ ت واللہ تعالیٰ اعلم ۱۲ منہ)

۱ مسلک متقسط مع ارشاد الساری باب فرائض الحج دار الکتاب العربی بیروت ص ۲۴۵ یہ عبارت نہیں پڑھی گئی ۱۲

Volume Ten Fatawa Razawiya

M: For Hajj, there are six pillars that you must certainly memorize. T: Hajj has six pillars; it is necessary that you remember them for sure.

M: Then the intention for Hajj is the first attribute, followed by standing with them at Arafah. T: So the intention for Hajj comes first in the whole arrangement, then standing on the day of Arafah with the pilgrims.

Sh: For this standing (wuquf), just as a day is fixed, i.e., Arafah [Note 1], which is the 9th of Dhul-Hijjah, similarly, the place is also fixed, i.e., Arafat, which is nine kos (approx 18 miles) east of Makkah al-Mukarramah. So the author's saying 'standing with the pilgrims' refers to specifying the location; where pilgrims stay, one should stay there, otherwise being with others [Note 2] during the standing is not necessary.

M: Then tawaf, then sa'y at Safa, and shaving (halq), and the order in what has been described. T: Then Tawaf al-Ziyarah, then running between Safa and Marwah, and shaving the head, and maintaining order in these acts.

Sh: That is, first intention, then standing, then tawaf, then sa'y, but order between tawaf and shaving is not mandatory. Shaving (halq) is general, meaning shaving the head or trimming the hair, though shaving is better.

F: According to us, the pillars of Hajj are only [Note 3] two; the greatest pillar among all is the standing at Arafah, followed by Tawaf al-Ziyarah. The rest, intention, is a condition (shart), and in the obligations (fara'id), order is obligatory (fard), and sa'y and shaving (halq) are necessary (wajib).

M: These are the pillars for Umrah as well, except for the standing; thus is the explanation. T: Similarly, these things are pillars of Umrah except for the standing; it should be stated this way.

F: According to us, the pillar of Umrah is only tawaf, while intention is a condition, and sa'y and shaving are necessary (wajib).

F: This intention which is considered a condition in Hajj and Umrah has two meanings: one is the resolve (azm) for Hajj or Umrah at the beginning...

Note 1: It follows in the commentary that the time for standing (wuquf) is from noon of Arafah until the dawn of the tenth, but this night is counted as the night of the ninth. Scholars have said nights always follow the coming day, for example, the night

of Friday is the one whose morning is Friday, but the nights of the days of Hajj follow the preceding days, for example, the night of Arafah is the night that comes after the ninth, and the night of sacrifice (nahr) after the tenth. (12 m)

Note 2: Refuting a potential objection. (12 m)

Note 3: Besides these, in Ihram, although it is a condition, there are several similarities to a pillar, as explained in Rad al-Muhtar. I say: and regarding most of them, I have remarks which I explained in its margin. (12 m - as stated in Rad al-Muhtar, I say most of them have my remarks which I've stated in this margin. T)

जिल्द दस फ़तावा रज़विया

म: हज के छह अरकान (स्तंभ) हैं जिन्हें आपको अवश्य याद कर लेना चाहिए। त: हज के छह अरकान हैं, ज़रूरी है कि आप उन्हें यकीनी तौर पर याद रखें।

म: फिर हज की नियत पहली विशेषता है, फिर अरफ़ा में उनके साथ वुक़ूफ़ (ठहरना) करना। त: तो हज की पूरी व्यवस्था में नियत पहले है, फिर हाजियों के साथ अरफ़ा के दिन वुक़ूफ़ करना।

श: इस वुक़ूफ़ के लिए जिस प्रकार दिन निर्धारित है यानी अरफ़ा [नोट 1] जो ज़ुल-हिज्जा की नौवीं तारीख़ है, वैसे ही स्थान भी निश्चित है यानी अराफ़ात जो मक्का मुअज़्ज़मा से पूरब की ओर नौ कोस है। तो मुसन्निफ़ (लेखक) का कहना कि हाजियों के साथ वुक़ूफ़ करना, उससे स्थान के निर्धारण की ओर इशारा है; जहाँ हाजी ठहरते हैं वहाँ ठहरना वरना वुक़ूफ़ में दूसरों [नोट 2] के साथ होना ज़रूरी नहीं।

म: फिर तवाफ़, फिर सफ़ा पर सई (दौड़ना), और हलक़ (सिर मुँडाना) और जो वर्णन किया गया है उसमें तरतीब (क्रम)। त: फिर तवाफ़-ए-ज़ियारत, फिर सफ़ा-मरवा में दौड़ना और सिर मुँडाना और इन कार्यों में तरतीब।

श: यानी पहले नियत, फिर वुक़ूफ़, फिर तवाफ़, फिर सई, लेकिन तवाफ़ और हलक़ में तरतीब ज़रूरी नहीं। और हलक़ से मुराद आम है, सिर मुँडाना या बाल कतरवाना, हाँ मुँडाना अफ़ज़ल (बेहतर) है।

फ़: हमारे नज़दीक हज के अरकान केवल [नोट 3] दो हैं, सब में बड़ा रुक्न वुक़ूफ़-ए-अरफ़ा है, उसके बाद तवाफ़-ए-ज़ियारत। बाकी नियत शर्त है और फ़राइज़ (अनिवार्य कार्यों) में तरतीब फ़र्ज़ है और सई व हलक़ वाजिब हैं।

म: ये ही उमरह के भी अरकान हैं सिवाय वुक़ूफ़ के, इसी तरह बयान है। त: इसी प्रकार ये चीज़ें उमरह के रुक्न हैं सिवाय वुक़ूफ़ के, इसी तरह बयान किया जाना चाहिए।

फ़: हमारे यहाँ उमरह का रुक्न सिर्फ़ तवाफ़ है और नियत शर्त है और सई व हलक़ वाजिब है।

फ़: यह नियत जो हज और उमरह में शर्त मानी गई है, इसके दो अर्थ हैं: एक तो शुरू में हज या उमरह का इरादा (अज़्म)...

नोट 1: आगे शरह में आता है कि वुक़ूफ़ का समय अरफ़ा के दोपहर ढलने से दसवें की सुब्ह सादिक़ तक है, लेकिन यह रात नौवीं तारीख़ ही की रात गिनी जाती है। उलेमा ने फ़रमाया कि रातें हमेशा आने वाले दिन के ताबे (अधीन) होती हैं, जैसे जुमे की रात वह है जिसकी सुबह जुमा हो, पर हज के दिनों की रातें गुज़रे हुए दिनों के ताबे हैं, जैसे शबे अरफ़ा वह रात है जो नौवीं तारीख़ के बाद आएगी और शबे नहर दसवें के बाद। (12 म)

नोट 2: संभावित आपत्ति का समाधान। (12 म)

नोट 3: इनके अलावा एहराम में भी, हालाँकि वह शर्त है, रुक्न की कई समानताएँ हैं जैसा कि रद्द-उल-मुहतार में बयान किया गया है। मैं कहता हूँ: उनमें से अधिकांश पर मेरी टिप्पणी है जो मैंने इसके हाशिया (नोट) में बयान की है। (12 म - जैसा कि रद्द-उल-मुहतार में बयान किया गया है, मैं कहता हूँ कि उनमें से अधिकतर में मेरा कलाम है जो मैंने इस हाशिये में बयान किया है। त)

पृष्ठ 795/836

جلد دہم فتاوی رضویہ

م: للحج ارکان تعد ستة لابد ان تحفظهن البتة ت: حج کے چھ رکن ہیں ضرور ہے کہ تو انہیں یاد کرے جزماً

م: فنية الحج اول الصفة ثم الوقوف معهم بعرفة ت: پس نیت حج کی ساری ترکیب میں پہلے ہے پھر حاجیوں کے ساتھ عرفہ کے دن وقوف کرنا۔

ش: اس وقوف کے لیے جس طرح دن مقرر ہے یعنی عرفہ عہ۱ کہ ذی الحجہ کی نویں تاریخ ہے یونہی مکان بھی معین ہے یعنی عرفات کہ مکہ معظمہ سے پورب کو نو کوس ہے۔ تو مصنف کا فرمانا کہ حاجیوں کے ساتھ وقوف کرنا وہ اس سے تعیین مکان کی طرف اشارہ فرماتے ہیں جہاں حجاج ٹھہرتے ہیں وہاں ٹھہرنا ورنہ وقوف میں اوروں عہ۲ کے ساتھ ہونا ضرور نہیں۔

م: ثم طواف ثم سعي بالصفا والحلق والترتيب فيما وصفا ت: پھر طواف زیارت پھر صفا مروہ میں دوڑنا اور سر منڈانا اور ان افعال میں ترتیب۔

ش: یعنی پہلے نیت پھر وقوف پھر طواف پھر سعی، لیکن طواف و حلق میں ترتیب ضرور نہیں، اور حلق سے مراد عام ہے سر منڈانا یا بال کترانا، ہاں منڈانا افضل ہے۔

ف: ہمارے نزدیک رکن حج کے صرف عہ۳ دو ہیں، سب میں بڑا رکن وقوف عرفہ، اس کے بعد طواف زیارت باقی نیت شرط ہے اور فرائض میں ترتیب فرض اور سعی و حلق واجب۔

م: هذه كذا للعمرة الاركان سوى الوقوف هكذا البيان ت: یونہی یہ چیزیں عمرہ کی رکن ہیں سوا وقوف کے اسی طرح بیان چاہیے۔

ف: ہمارے ہاں رکن عمرہ صرف طواف ہے اور نیت شرط اور سعی و حلق واجب۔

ف: یہ نیت کہ حج و عمرہ میں شرط مانی گئی اس کے دو معنی ہیں ایک تو شروع میں حج یا عمرہ کا عزم

عہ۱: آگے شرح میں آتا ہے کہ وقوف کا وقت عرفہ کے دوپہر ڈھلے سے دسویں کی طلوع فجر تک ہے مگر یہ رات نویں تاریخ ہی کی رات گنی جاتی ہے، علماء نے فرمایا راتیں ہمیشہ آنے والے دن کے تابع ہوتی ہیں، مثلا جمعہ کی رات وہ ہے جس کی صبح کو جمعہ ہو، پر ایام حج کی راتیں گزرے دنوں کی تابع ہیں مثلاً شب عرفہ وہ رات ہے جو نویں تاریخ کے بعد آئے گی اور شب نحر دسویں کے بعد ۱۲منہ

عہ۲: دفع دخل مقدر ۱۲ منہ

عہ۳: ان کے سوا احرام میں بھی باآنکہ شرط ہے کئی مشابہتیں رکن کی ہیں کما بینہ فی ردالمحتار اقول ولی فی اکثر ھن کلام بینتہ علی ھامشہ ۱۲ منہ جیسا کہ ردالمحتار میں بیان کیا ہے، میں کہتا ہوں کہ ان میں سے اکثر میں میری کلام ہے جو میں نے اس حاشیہ میں بیان کی ہے۔ت)

Fatawa Razawiyyah, Volume 10

This is exactly Ihram, meaning intention from the heart and along with it, the remembrance of God with the tongue. Second, the intention for the 'Tawaf-e-Rukn' (foundational circumambulation) that it is obligatory (Fard), as it is not valid without intention (Footnote 1). Therefore, intention for it is also a condition.

Obligatory Acts (Fard) of Hajj

Note: This section was not written by the author. In our view, there are other obligations besides the pillars (Arkan), and the requirements (Wajibat) are separate. Therefore, I am explaining them in my own way. There are ten obligatory acts (Fard) in Hajj: 1. Ihram, 2. Wuquf (staying), 3. Four circuits of Tawaf (Footnote 2), 4. Intention for Tawaf among them, 5. Wuquf being in Arafat, 6. Being in its proper time, which is from the decline of the sun (Zawal) on the day of Arafah (Footnote 3) until the dawn of the day of Sacrifice (Nahr). 7. Tawaf being in Masjid al-Haram, 8. Being in its proper time, which is from the dawn of the day of Sacrifice until the end of life. 9. Sequence in the obligatory acts: Ihram first (Footnote 4) then Wuquf then Tawaf. 10. Abstaining from sexual intercourse (Footnote 5) before Wuquf. If even one of these ten is missed, Hajj is not valid, and we seek refuge with Allah.

Wajibat of Hajj (Necessary Acts)

Necessary acts of Hajj:

M: Pelting the Jamarat (stoning), Ihram, similarly sleeping in Muzdalifah.

T: Pelting pebbles at the Jamarat and Ihram, similarly sleeping in Muzdalifah.

Footnote 1: This is said because Wuquf-e-Arafah is also obligatory, in fact, the greatest pillar, but it is valid even without intention, so intention cannot be a condition for it. (12 Minhu)

Footnote 2: Every Tawaf has seven circuits, and so does this obligatory Tawaf. However, only four of them are obligatory (Fard). It is called Fard Tawaf based on them. The remaining three are necessary (Wajib); if not done, one must give an animal sacrifice (Dam), but Hajj is valid. If fewer than four are done, Hajj is not valid. (12 Minhu)

Footnote 3: From the decline of the sun on the 9th date until the breaking of dawn on the 10th, the time for Wuquf is in between. If someone performs Wuquf before

Zawal-e-Arafah and leaves the boundaries of Arafat, and does not return during the time, or if they had not done it before and did it after the dawn of Nahr shone, Hajj will not be valid. (12 Minhu)

Footnote 4: This obligation can be called three obligations: Ihram being before Wuquf is one, precedence over Tawaf is two, and Wuquf being before Tawaf is three. (12 Minhu)

Footnote 5: Abstaining from sexual intercourse is always necessary (Wajib) in Hajj until one is completely free from the obligatory Tawaf. However, caution until Wuquf is obligatory (Fard), as intercourse before that causes invalidation (fasad), and later it does not, as mentioned previously. (12 Minhu)

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

यह बिल्कुल इहराम है, यानी दिल से इरादा और उसके साथ ज़बान से खुदा का ज़िक्र। दूसरा, तवाफ़-ए-रुकन में तवाफ़ की नियत कि वह फ़र्ज़ है, और बिना नियत (फुटनोट 1) अदा नहीं होता, तो इसकी नियत भी शर्त ठहरी।

हज के फ़र्ज़

नोट: यह अध्याय लेखक ने नहीं लिखा था। हमारे नज़दीक रुकन के अलावा और भी फ़र्ज़ हैं और वाजिबात अलग हैं। इसलिए, मैं उन्हें अपने तरीके से समझा रहा हूँ। हज में दस फ़र्ज़ हैं: 1. इहराम, 2. वुकूफ़ (ठहरना), 3. तवाफ़ के चार चक्कर (फुटनोट 2), 4. उनमें तवाफ़ की नियत, 5. वुकूफ़ का अरफ़ात में होना, 6. अपने सही समय पर होना, जो अरफ़ा के दिन सूरज ढलने (ज़वाल) (फुटनोट 3) से लेकर नह्र (कुर्बानी के दिन) की फज्र तक है। 7. तवाफ़ का मस्जिद अल-हराम में होना, 8. अपने सही समय पर होना, जो नह्र की फज्र से लेकर उम्र के अंत तक है। 9. फ़र्ज़ों में तरतीब (क्रम) कि पहले इहराम (फुटनोट 4) हो, फिर वुकूफ़, फिर तवाफ़। 10. वुकूफ़ से पहले संभोग (जमाअ) (फुटनोट 5) से बचना। इन दस में से एक भी रह जाए तो हज नहीं हुआ, और अल्लाह की पनाह।

वाजिबात-ए-हज (हज के आवश्यक कार्य)

हज के वाजिब:

म: जमरात पर कंकड़ मारना और इहराम, इसी तरह मुज़दलिफ़ा में सोना।

त: जमरों पर कंकड़ मारना और इहराम, इसी तरह मुज़दलिफ़ा में सोना।

फुटनोट 1: यह इसलिए कहा गया क्योंकि वुकूफ़-ए-अरफ़ा भी फ़र्ज़ है, बल्कि सबसे बड़ा रुकन है, पर वह बिना नियत के भी अदा हो जाता है, तो इसकी नियत शर्त नहीं हो सकती। (12 मिन्हु)

फुटनोट 2: हर तवाफ़ में सात चक्कर होते हैं, और इस फ़र्ज़ तवाफ़ में भी वैसे ही हैं। लेकिन उनमें से केवल चार फ़र्ज़ हैं। उन्हीं के आधार पर इसे तवाफ़-ए-फ़र्ज़ कहा जाता है। शेष तीन वाजिब हैं; यदि नहीं किए तो दम (पशु बलि) देना होगा, हज हो जाएगा। और चार से कम किए तो हज ही नहीं हुआ। (12 मिन्हु)

फुटनोट 3: नौवीं तारीख को दोपहर ढलने से लेकर दसवीं की सुबह होने तक के बीच वुकूफ़ का समय है। यदि ज़वाल-ए-अरफ़ा से पहले वुकूफ़ करके अरफ़ात की सीमाओं से बाहर हो गया और समय रहते वापस नहीं लौटा, या पहले नहीं किया था और सुबह-ए-नह्र चमकने के बाद किया तो हज नहीं होगा। (12 मिन्हु)

फुटनोट 4: इस फ़र्ज़ को तीन फ़र्ज़ कह सकते हैं: इहराम का वुकूफ़ से पहले होना एक, तवाफ़ पर प्रधानता दो, वुकूफ़ का तवाफ़ से पहले होना तीन। (12 मिन्हु)

फुटनोट 5: संभोग से बचना हज में हमेशा वाजिब है जब तक कि पूरी तरह से तवाफ़-ए-फ़र्ज़ से फारिग न हो जाए। लेकिन वुकूफ़ तक परहेज़ करना फ़र्ज़ है क्योंकि इससे पहले संभोग से हज फासिद (अमान्य) हो जाता है, और बाद में नहीं, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है। (12 मिन्हु)

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

یہ بعینہ احرام ہے یعنی دل سے قصد اور اس کے ساتھ زبان سے ذکرِ خدا، دوسرے طواف رکن میں نیت طواف کہ وہ فرض ہے اور بے نیت ع۱ ادا نہیں ہوتا تو اس کی نیت بھی شرط ٹھہری۔

حج کے فرض

ف: یہ فصل جناب مصنف نے نہ لکھی، ہمارے نزدیک رکن کے سوا اور بھی فرض ہیں اور واجبات الگ، لہٰذا اپنے طور پر بیان کرتے ہیں، حج میں دس فرض ہیں: ۱ احرام، ۲ وقوف، ۳ طواف کے چار ع۲ پھیرے، ۴ ان میں طواف کی نیت، ۵ وقوف کا عرفات میں ہونا، ۶ اپنے وقت میں ہونا کہ زوال ع۳ عرفہ سے فجر نحر تک ہے۔ ۷ طواف کا مسجد الحرام میں ہونا، ۸ اپنے وقت میں ہونا کہ فجر نحر سے آخر عمر تک ہے۔ ۹ فرضوں میں ترتیب کہ پہلے احرام ع۴ ہو پھر وقوف پھر طواف، ۱۰ وقوف سے پہلے جماع ع۵ سے بچنا، ان دس میں سے ایک بھی رہ جائے تو حج نہ ہوا والعیاذ باللہ۔

واجبات الحج

حج کے واجب

م: الرمی للجماد والاحرام کذا بمزدلفہ المنام

ت: جمروں پر کنکریاں مارنا اور احرام، ایسا ہی مزدلفہ میں سونا۔

ع۱: یہ اس لیے کہ دیا کہ وقوفِ عرفہ بھی فرض بلکہ رکنِ اعظم ہے پر وہ بے نیت بھی ادا ہو جاتا ہے تو اس کی نیت شرط نہیں ہو سکتی ۱۲ منہ۔

ع۲: ہر طواف میں سات پھیرے ہوتے ہیں یونہی اس طواف فرض میں بھی، مگر ان سے فرض فقط چار ہیں، انہی کے اعتبار سے اسے طواف فرض کہا جاتا ہے۔ باقی تین واجب ہیں نہ کیے تو دم دے گا، حج ہو گیا۔ اور چار سے کم کیے تو حج ہی نہ ہوا ۱۲ منہ

ع۳: نویں تاریخ دوپہر ڈھلے سے دسویں پو پھٹے تک اس بیچ میں وقوف کا وقت ہے۔ اگر زوالِ عرفہ سے پہلے وقوف کر کے حدود عرفات سے باہر ہو گیا اور وقت میں اعادہ نہ کیا یا پہلے نہ کیا تھا صبح نحر چمکنے کے بعد کیا تو حج نہ ہوگا ۱۲ منہ

ع۴: اس فرض کو تین فرض کہہ سکتے ہیں احرام کا وقوف سے پہلے ہونا ایک، طواف پر تقدم دو، وقوف کا طواف سے پیشتر ہونا تین ۱۲ منہ۔

ع۵: جماع سے بچنا ہمیشہ حج میں واجب ہے جب تک مطلقاً طوافِ فرض سے فارغ نہ ہو جائے پر وقوف تک احتراز فرض ہے کہ اس سے پہلے جماع موجب فساد ہوتا ہے پھر فساد نہیں کما مر ۱۲ منہ

Volume 10

Fatawa-e-Razvia

F: According to us, Ihram is obligatory as previously mentioned. However, starting it from its Miqat (designated boundary) is mandatory (Wajib) [Annotation 1].

Sh: Mina is a settlement three kos from Makkah Mukarramah towards Arafat. There are three pillars there, called Jamar or Jamarat. On the 10th date, pebbles are thrown at each Jamrah. Muzdalifah is three kos from Mina. Returning from Arafat on the evening of the 9th, people spend the night there and come to Mina on the 10th. According to the Shafi'is, it is mandatory to spend the major part of the night here, which is why [Annotation 2] the author mentioned "sleeping," otherwise there is no literal command to sleep.

F: According to us, only this much is mandatory: to offer Maghrib and Isha prayers here and to stay for a short while in the morning (Wuquf). Staying for the rest of the night is Sunnah, not Wajib.

M: Then staying overnight in Mina for stoning (Ramy), then Tawaf-ul-Wada' (Farewell Tawaf) with intention.

T: Then stay at Mina at night for stoning the Jamarat, then make the intention for the Farewell Tawaf.

F: In Mina, stoning the Jamarat on the 10th, 11th, and 12th days is mandatory. Staying the night is Sunnah according to us. And Tawaf-ul-Wada', performed for departure, is mandatory for Afaqis (outsiders), not for a Makki (resident of Makkah) who has lived there for ten days and is not departing.

F: So far, five mandatory acts of our school of thought have been mentioned, and there are many more besides these, for example, Safa.

Annotation 1: People are of three types: People of Haram (residents of Makkah or its surrounding prohibited boundaries where hunting etc. is forbidden). People of Hill (those outside the Haram but within the Miqats). People of Afaq (those outside the Miqats). For Afaqis, the Miqat for both Hajj and Umrah is those specified Miqats, such as for Indians, the alignment with Yalamlam. For the people of Hill, their Miqat is the 'Hill' area, meaning when they go for Hajj or Umrah, they should put on Ihram before entering the Haram. For the people of Haram, the Miqat for Hajj is the Haram itself, i.e., the Masjid al-Haram, even from their own homes; in short, they should enter

Ihram from any place in the Haram. For Umrah, their Miqat is 'Hill', meaning they should go outside the Haram and put on Ihram for Umrah.

F: For a resident of Makkah, the most virtuous place for Umrah Ihram is Tan'im, which is three kos towards Medina. Similarly, when pilgrims finish Hajj and stay in Makkah for a few days, they should perform Umrah from there as it is both near and superior. And Allah Almighty knows best. [12th of the month]. Annotation 2: To address a potential objection.

खंड दसवाँ

फतावा-ए-रज़विया

फ: हमारे नज़दीक एहराम फ़र्ज़ है जैसा कि पहले गुज़रा। हाँ, इसके मीक़ात (सीमा) से होना वाजिब (अनिवार्य) है [टिप्पणी 1]।

श: मिना एक बस्ती है जो मक्का मुकर्रमा से अराफ़ात की तरफ तीन कोस की दूरी पर है। वहाँ तीन जगह खंभे बने हुए हैं जिन्हें जमार या जमरात कहते हैं। १० तारीख को हर एक जमरे पर कंकड़ियाँ मारते हैं। मुज़दलिफ़ा मिना से तीन कोस दूर है। ९ तारीख की शाम को अराफ़ात से लौटकर यहाँ रात बिताते हैं और १० तारीख को मिना आते हैं। शाफ़ई संप्रदाय के नज़दीक रात का बड़ा हिस्सा यहाँ गुज़ारना वाजिब है, इसीलिए [टिप्पणी 2] लेखक ने 'सोना' कहा, अन्यथा वास्तव में सोने का कोई आदेश नहीं है।

फ: हमारे नज़दीक केवल इतना वाजिब है कि मग़रिब और इशा की नमाज़ यहीं पढ़े और सुबह को कुछ देर ठहरे (वक़ूफ़), बाकी रात रहना वाजिब नहीं बल्कि सुन्नत है।

म: फिर रमी (कंकड़ी मारने) के लिए मिना में रात गुज़ारना, फिर नियत के साथ तवाफ़-उल-विदा' (विदाई तवाफ़) करना।

त: फिर रात को जमरात को कंकड़ी मारने के लिए मिना में रहे, फिर रुख़सत (विदाई) के तवाफ़ की नियत करे।

फ: मिना में १०वीं, ११वीं और १२वीं तारीख को रमी-ए-जमार (कंकड़ी मारना) वाजिब है। रात को ठहरना हमारे नज़दीक सुन्नत है। और तवाफ़-ए-विदा' जो रुख़सत के लिए करते हैं, वह आफ़ाक़ी (बाहरी लोगों) पर वाजिब है, न कि मक्की पर जो दस दिन का निवासी हो और रुख़सत होने वाला न हो।

फ: यहाँ तक हमारे मज़हब (विचारधारा) के पाँच वाजिबों का ज़िक्र हुआ, और इनके अलावा और भी बहुत हैं, जैसे सफ़ा।

टिप्पणी 1: लोग तीन प्रकार के हैं: अहल-ए-हरम (मक्का मुकर्रमा या उसके आस-पास के उन क्षेत्रों में रहने वाले जहाँ शिकार आदि हराम है)। अहल-ए-हिल (जो हरम से बाहर लेकिन मीक़ात के अंदर

हैं)। अहल-ए-आफ़ाक़ (जो मीक़ात के भी बाहर हैं)। आफ़ाक़ियों के लिए हज और उमराह दोनों की मीक़ात वही मीक़ात हैं, जैसे भारतीयों के लिए यलमलम का सीध। अहल-ए-हिल की मीक़ात 'हिल' है, यानी जब हज या उमराह के लिए जाएँ तो हरम में पहुँचने से पहले एहराम बाँध लें। अहल-ए-हरम के लिए हज की मीक़ात हरम है यानी मस्जिद अल-हरम, चाहे अपने घर ही से हो; संक्षेप में, वे हरम के किसी भी स्थान से एहराम करें। और उमराह के लिए मीक़ात 'हिल' है यानी हरम से बाहर जाकर उमराह का एहराम बाँधें।

फ: मक्की के लिए एहराम और उमराह के लिए सबसे उत्तम 'तनीम' है जो मदीना तैयबा की तरफ तीन कोस की दूरी पर है। इसी तरह जब हाजी हज से फ़ारिग होकर मक्का में कुछ दिन ठहरें, तो वहीं से उमराह करें क्योंकि यह नज़दीक भी है और उत्तम भी। और अल्लाह ताला बेहतर जानता है। [महीने की १२ तारीख]। टिप्पणी 2: संभावित आपत्ति को दूर करने के लिए।

पृष्ठ 797 का 836

جلد دہم

فتاویٰ رضویہ

ف: ہمارے نزدیک احرام فرض ہے کما سبق (جیسا کہ پیچھے گزرا ت) ہاں اس کا میقات عہ ۱ سے ہونا واجب ہے۔

ش: منی ایک بستی ہے مکہ معظمہ سے عرفات کی طرف تین کوس، وہاں تین جگہ ستون بنے ہیں انھیں جمار د جمرات کہتے ہیں اور ہر ایک جمرہ۔ دسویں تاریخ سے ان پر کنکریاں مارتے ہیں اور ت منی سے تین کوس مزدلفہ ہے نویں شام کو عرفات سے پلٹ کر یہاں رات گزارتے ہیں دسویں کو منی آتے ہیں۔ شافعیہ کے نزدیک رات کا بڑا حصہ یہاں بسر کرنا واجب ہے، اسی لیے عہ ۲ جناب مصنف سونا فر مایا ور نہ حقیقۃً سونے کا حکم کچھ نہیں۔

ف: ہمارے نزدیک واجب صرف اس قدر ہے کہ مغرب و عشاء یہیں پڑھے صبح کو کچھ دیر وقوف کرے، باقی رات کو رہنا واجب نہیں سنت ہے۔

م: ثم المبیت بمنی للرمی ثم الطواف للوداع ینوی

ت: پھر رات کو منی جمار کے لیے رہنا پھر طواف رخصت کی نیت کرے

ف: منی میں دسویں، گیارہویں، بارہویں دن رمی جمار واجب ہے، شب باشی ہمارے نزدیک سنت ہے اور طواف وداع کہ رخصت کے لیے کرتے ہیں آفاقی یعنی باہر والے پر واجب ہے مکی تو دس دن کا ساکن ہے نہ کہ رخصت ہونے والا۔

ف: یہاں تک ہمارے مذہب کے پانچ واجب گزرے اور ان کے سوا اور بہت ہیں مثلاً صفا

عہ ۱: لوگ تین قسم ہیں، اہل حرم جو مکہ معظمہ یا اس کے گرد ان مقاموں میں رہتے ہیں جہاں تک شکار وغیرہ حرام ہے۔ اہل حل جو حرم سے باہر مواقیت کے اندر ہیں، اہل آفاق جو مواقیت سے بھی باہر ہیں آفاقیوں کے لیے حج و عمرہ دونوں کی میقات انھیں مواقیت کے جیسے ہندیوں کے لیے محاذات یلملم، اہل حل کی میقات حل ہے یعنی جب حج یا عمرہ کو جائیں حرم میں پہنچنے سے پہلے احرام باندھ لیں اور اہل حرم کے لیے میقات حج حرم سے یعنی مسجد الحرام شریف خواہ اپنے گھر ہی سے، غرض حرم کی کسی جگہ سے احرام کریں اور عمرہ کے لیے حل یعنی حرم سے باہر جاکر عمرہ کا احرام باندھیں۔)

ف: مکی کے لیے احرام و عمرہ میں افضل تنعیم ہے کہ مدینہ طیبہ کی طرف تین کوس پر ہے، یو نہی جب حجاج حج سے فارغ ہو کر مکہ میں چند روز ٹھہریں وہیں سے عمرہ لائیں کہ نزدیک بھی ہے اور افضل بھی۔ واللہ تعالٰی اعلم ۱۲ منہ۔ عہ ۲: دفع دخل مقدر۔

Fatawa Razawiyya Volume 10

Sa'i in Marwah and after one complete Tawaf (1), starting from Safa and seven rounds and covering the full distance each time and, if capable, being on foot. For the one performing Wuquf in Arafah during the day (2), waiting until after sunset. Moving from Arafat with the Imam (3), meaning not leaving the boundaries of Arafah before the Imam moves, provided the Imam moves at the [correct] time (4) and there is no hardship in accompanying him. The stoning of Jamrat al-Aqaba on the tenth [of Dhu al-Hijjah] should be before shaving (Halq). The stoning of each day must be done on that same day. Shaving or trimming (Taqsir) and it being done within the specified land during the Days of Sacrifice (Ayyam al-Nahr). Completing the obligatory Tawaf by the twelfth (5). Starting from the Hajar al-Aswad, seven rounds outside the Hatim, with Wudu and covering the private parts (Satr al-Awrah), being on foot if capable, starting from one's right side meaning keeping the Kaaba on the left hand. For the Qarin (6) and Mutamatti', performing the sacrifice of gratitude after stoning and before shaving during the Days of Sacrifice, etc. And Allah Almighty knows best.

Footnote 1: A complete Tawaf is one that encompasses the conditions of validity and is free from ritual impurity (Janabat) and menstruation (Hayd), whether it is obligatory like Tawaf al-Ziyarah, or mandatory like Tawaf al-Wada' as will be mentioned later, or Sunnah like Tawaf al-Qudum, or optional (Nafl). For example, a Mutamatti' who wants to perform the Sa'i of Hajj before Tawaf al-Ziyarah should do so after performing an optional Tawaf. "Complete" here doesn't mean it must be after the seventh round; rather, being after the fourth round is sufficient. The Sa'i will be valid and the obligation fulfilled, although the Sunnah is to do it after the seventh round. Yes, if it is done before any rounds, the Sa'i will not be valid. "Afterness" (ba'diyyat) following the Tawaf does not mean immediate succession, although doing it immediately is recommended (Mustahabb). Once the Tawaf is done, whenever the Sa'i is performed, it will be correct. (12) Footnote 2: This condition is added because for one who could not perform it on the 9th and does it on the night of the 10th, nothing [extra] is mandatory for them. Passing even a moment in the land of Arafat is sufficient, as that is the extent of the obligation. (12) Footnote 3: This is said because for one who performs Wuquf at night, moving with the Imam is not mandatory, as the Imam would have already left before their arrival. (12) Footnote 4: Meaning if the Imam abandons the mandatory act and moves before sunset, do not accompany him. Similarly, if he delays after sunset, they should depart. (12) Footnote 5: Meaning if its four rounds, which are obligatory, are completed by the twelfth, then

the obligation is fulfilled, even if the remaining three are done later. However, the Sunnah is that the entire Tawaf be completed in those days, rather all seven rounds together. (12) Footnote 6: For the Mufrid, this sacrifice is recommended. (12, may he be forgiven)

मरवा में सई और एक कामिल तवाफ़ (१) के बाद सफा से शुरू करना और सात चक्कर और हर बार पूरी दूरी तय करना और सामर्थ्य होने पर पैदल होना। दिन में अरफ़ा का वुक़ूफ़ (२) करने वाले के लिए सूर्यास्त के बाद तक प्रतीक्षा करना। इमाम (३) के साथ अराफ़ात से कूच करना, यानी इमाम के चलने से पहले अराफ़ा की सीमाओं से बाहर न होना, बशर्ते कि इमाम समय (४) पर कूच करे और साथ चलने में कोई कठिनाई न हो। जमरा अल-अक़बा की रमी (कंकड़ मारना) जो दस तारीख को है, हल्क़ (सिर मुंडवाने) से पहले होना। हर दिन की रमी उसी दिन हो जाना। हल्क़ या तक़्सीर (बाल कटवाना) और उनका अय्याम-ए-नह्र (कुर्बानी के दिन) में विशेष भूमि में होना। फ़र्ज़ तवाफ़ का बारहवीं (५) तारीख तक हो जाना। हजर-ए-असवद से शुरू होना, हतीम के बाहर से सात चक्कर, वज़ू और सतर-ए-औराह (शरीर ढंकना) के साथ, सामर्थ्य होने पर पैदल, अपनी दाईं ओर से शुरुआत करना यानी काबा मुअज़्ज़मा को बाएं हाथ की ओर रखना। क़ारिन (६) और मुतमत्ती का शुक्र की कुर्बानी हल्क़ से पहले और रमी के बाद अय्याम-ए-नह्र में करना, इत्यादि। और अल्लाह तआला ही बेहतर जानता है।

हाशिया १: कामिल तवाफ़ वह है जो स्वास्थ्य की शर्तों को पूरा करता हो और जनाबत और माहवारी से पाक हो, चाहे वह फ़र्ज़ हो जैसे तवाफ़-ए-ज़ियारत, या वाजिब जैसे तवाफ़-ए-विदाई जैसा कि आगे आएगा, या सुन्नत जैसे तवाफ़-ए-कुदूम, या नफ़्ल। जैसे मुतमत्ती हज की सई तवाफ़-ए-ज़ियारत से पहले करना चाहे तो एक नफ़्ल तवाफ़ करके अदा करे। कामिल के ये मायने नहीं कि सातवें चक्कर के बाद हो, बल्कि चौथे के बाद होना काफ़ी है। सई सही और वाजिब अदा हो जाएगी, हालांकि सुन्नत यही है कि सातवें चक्कर के बाद करे। हाँ, अगर चक्करों से पहले की तो सई अदा न होगी। तवाफ़ के बाद से मुराद तुरंत बाद (मुत्तसिला) नहीं है, हालांकि तुरंत करना मुस्तहब है, लेकिन अगर पहले तवाफ़ हो गया तो फिर जब कभी सई करेगा सही होगी। (१२) हाशिया २: यह शर्त इसलिए लगाई गई है कि जो नौवीं तारीख को समय न निकाल सका हो और दसवीं की रात को करे, उस पर कुछ वाजिब नहीं। अराफ़ात की ज़मीन में एक पल के लिए गुज़र जाना ही काफ़ी है क्योंकि फ़र्ज़ इतना ही है। (१२) हाशिया ३: यह इसलिए कहा गया क्योंकि जो रात को वुक़ूफ़ करे, उस पर इमाम के साथ कूच करना वाजिब नहीं क्योंकि इमाम तो उसके आने से पहले जा चुका होता है। (१२) हाशिया ४: यानी अगर इमाम ने तर्कए-वाजिब करके सूर्यास्त से पहले कूच कर दिया तो साथ न दें, इसी तरह अगर सूर्यास्त के बाद उसने देरी की तो ये रवाना हो जाएं। (१२) हाशिया ५: यानी इसके चार चक्कर

जो फ़र्ज़ हैं बारहवीं तक हो गए तो वाजिब अदा हो गया, चाहे बाकी तीन फिर कभी हों। हाँ, सुन्नत यही है कि पूरा तवाफ़ इन्हीं दिनों में हो जाए, बल्कि सातों चक्कर एक साथ हों। (१२) हाशिया ६: मुफ़्रिद के लिए यह कुर्बानी मुस्तहब है। (१२, अल्लाह उसे क्षमा करे)

पृष्ठ ७९८ / ८३६

مروہ میں سعی اور اس کا ایک طواف کامل ۱عہ کے بعد صفا سے شروع اور سات پھیرے اور ہر بار پوری مسافت قطع اور بشرط قدرت پیادہ ہونا، دن میں ۲عہ وقوف عرفہ کرنے والے کو غروب شمس کے بعد تک انتظار کرنا، اس کا امام ۳عہ کے ساتھ عرفات سے کوچ کرنا یعنی امام کے چلنے سے پہلے حدود عرفہ سے باہر نہ ہونا بشرطیکہ امام وقت ۴عہ پر کوچ کرے اور ہمراہی میں حرج نہ ہو، جمرۃ العقبی کی رمی کہ دہم کو ہے حلق سے پہلے ہونا، ہر دن کی رمی اسی دن ہو جانا، حلق یا تقصیر اور ان کا ایام نحر میں خاص زمین میں ہونا، طواف فرض کا بارہویں ۵عہ تک ہو جانا حجر اسود سے شروع ہونا، ساتھ پھیرے حطیم سے باہر باوضو ستر عورت کے ساتھ، بشرط قدرت پیادہ، اپنی دہنی طرف سے آغاز ہونا یعنی کعبہ معظمہ بائیں ہاتھ کو رکھنا، قارن ۶عہ و متمتع کا شکر کی قربانی حلق سے پہلے رمی کے بعد ایام نحر میں کرنا وغیرہ ذالک۔ واللہ تعالٰی اعلم۔

عہ ۱: طواف کامل یہ ہے کہ شرائط صحت کو جامع اور جنابت و حیض سے پاک ہو عام ازیں کہ فرض ہو جیسے طواف زیارت یا واجب جیسے طواف الوداع کما سیأتی (جیسا کہ آگے آئیگا۔ت) یا سنت جیسے طواف القدوم یا نفل جیسے متمتع حج کی سعی طواف زیارت سے پہلے کرنی چاہئے تو ایک طواف نفل کر کے ادا کرے۔ اس کے سوا کامل کے یہ معنی نہیں کہ ساتویں پھیرے کے بعد ہو بلکہ چارے کے بعد ہونا کافی ہے۔ سعی صحیح اور واجب ادا ہو جائیگا، اگرچہ سنت یونہی ہے کہ ساتویں پھیرے کے بعد کرے، ہاں اگرچہ پھیروں سے پیشتر کی تو سعی ادا نہ ہوگی اور طواف کے بعد سے بعدیت متصلہ مراد نہیں اگرچہ مستحب فوراً ہوتا ہے مگر پہلے طواف ہو لیا تو پھر جب کبھی سعی کریگا صحیح ہوگی ۱۲ منہ) عہ ۲: یہ قید اس لیے لگادی کہ جو نویں تاریخ وقت نہ

کرسکا ہو اور دسویں شب کو کرے اس پر کچھ واجب نہیں ایک لمحہ کے لیے زمین عرفات میں گزر جانا کافی ہے کہ فرض اسی قدر ہے ۱۲ منہ) عہ ۳: اس کا اس لیے کہا جو رات کو وقوف کرے اس پر امام کے ساتھ کوچ بھی واجب نہیں کہ امام تو اس کے آنے سے پہلے جا چکا ۱۲ منہ) عہ ۴: یعنی اگر امام نے ترک واجب کر کے غروب سے پہلے کوچ کر دیا تو ساتھ نہ دیں یونہی اگر غروب کے بعد اس نے دیر کی یہ روانہ ہو جائیں ۱۲ منہ) عہ ۵: یعنی اس کے چار پھیرے جو فرض ہیں بارہویں تک ہو گئے تو واجب ادا ہو لیا اگرچہ باقی تین پھر کبھی ہوں، ہاں سنت یونہی ہے کہ پورا طواف انہی دنوں میں ہولے بلکہ ساتوں پھیرے ایک ساتھ ہو ۱۲ منہ) عہ ۶: مفرد کو یہ قربانی مستحب ہے ۱۲ منہ غفرلہ)

صفحہ ۷۹۸ / ۸۳۶

Fatawa Razawiyya Volume Ten

Some Sunnahs of Hajj

Text: It has been made Sunnah for a person to perform Tawaf upon arrival, and to kiss the Black Stone during it. Translation: A Tawaf is Sunnah for one coming from outside; in that Tawaf, one should kiss the Black Stone. Explanation: This is the first Tawaf performed by a 'Mufrid' (one performing only Hajj) as soon as they arrive, and by a 'Qarin' (one performing Hajj and Umrah together) after Umrah; it is called 'Tawaf-e-Qudum' (Tawaf of Arrival), as if it were a salute at the Great Court. Note: This Tawaf is not for a 'Mutamatti' (one performing Umrah then Hajj separately) nor for the residents of Makkah, as they are always present at the court. Kissing the Black Stone is Sunnah not only in this Tawaf but in every Tawaf; Tawaf begins with it and ends upon it.

Text: And 'Idtiba', then 'Raml' has come, and two rak'ahs for Tawaf, O young man! In the count of Sunnahs came 'Idtiba', then 'Raml', and those two rak'ahs of Tawaf, O youth! Explanation: 'Idtiba' means to pass the upper garment under the right armpit and throw its end over the left shoulder so that the right shoulder remains bare. And 'Raml' means to walk with short, quick steps in Tawaf while moving the shoulders. Note: Both these Sunnahs are specifically for men, and only in those Tawafs after which Sa'ee (walking between Safa and Marwa) is performed, i.e., Tawaf of Umrah, and in Hajj, the Tawaf-e-Qudum, because many, due to the thought of crowds and lack of time, perform Sa'ee immediately after it. Yes, if one missed it, they would do it after Tawaf-e-Ziyarah, then they should perform Raml in that Tawaf, but...

Note 1: The meanings of Mufrid, Qarin, and Mutamatti will soon appear in the supplement, Insha'Allah Ta'ala. (12, From Him) Note 2: Because he brought Umrah upon arrival and there is no Tawaf-e-Qudum in Umrah. When Umrah is completed, he becomes a 'Makki' (resident of Makkah), and there is no such Tawaf for a Makki. (12, From Him) Note 3: It comes later that for a Mufrid, it is better after Tawaf-e-Ziyarah, but on that day there is a huge crowd and many tasks, so they perform it at Tawaf-e-Qudum, and for a Qarin, this is indeed better. (12, From Him) Note 4: One who did not perform Sa'ee even after Tawaf-e-Ziyarah should do it after Tawaf-al-Wada' (Farewell Tawaf), as there is no fixed time for Sa'ee, and now he should also perform Raml in this Tawaf.

Because Raml is performed after a Tawaf which is followed by Sa'ee. He clarified this. (Continued on the next page)

फ़तावा रज़विया खंड दसवाँ

हज की कुछ सुन्नतें

म: त: क़द सुन्ना लिलमरइत तवाफ़ु अन क़दिम - वल हजरुल असवदु फ़ीहि युस्तलम त: बाहर से आने वाले के लिए एक तवाफ़ सुन्नत है, तवाफ़ में संगे-असवद (काला पत्थर) का बोसा ले। श: यह पहला तवाफ़ है जो 'मुफ़रिद' हाज़िर होते ही करता है और 'क़ारिन' उमराह के बाद, इसे तवाफ़े क़ुदूम (आगमन का तवाफ़) कहते हैं, मानो ये महान दरबार की हाज़िरी का सलाम हो। फ़: यह तवाफ़ 'मुतमत्ति' के लिए नहीं है और न ही मक्का वालों के लिए, क्योंकि वे हर समय दरबार में मौजूद हैं। संगे-असवद का बोसा केवल इसी तवाफ़ में नहीं बल्कि हर तवाफ़ में सुन्नत है; तवाफ़ इसी से शुरू और इसी पर ख़त्म होता है।

म: वल-इज़तिबाउ सुम्मा रमलुन क़द अता - व रकअतानि लित्तवाफ़ि या फ़नीतु सुन्नतों की गिनती में 'इज़तिबा' फिर 'रमल' आया और वे दो रकअतें तवाफ़ की, ऐ जवान! श: 'इज़तिबा' यह है कि चादर दाहिने बग़ल के नीचे से निकालकर उसका आँचल बाएँ कंधे पर डाल ले जिससे दाहिना कंधा खुला रहे। और 'रमल' यह है कि तवाफ़ में छोटे-छोटे तेज़ क़दम रखते हुए कंधों को हिलाते हुए चले। फ़: ये दोनों सुन्नतें विशेष रूप से पुरुषों के लिए हैं, वह भी केवल उसी तवाफ़ में जिसके बाद सफ़ा-मरवा की 'सई' होती है, यानी उमराह का तवाफ़ और हज में तवाफ़ेक़ुदूम, क्योंकि अक्सर भीड़ के डर और समय की कमी के कारण इसी के बाद सई कर लेते हैं। हाँ, जिससे रह गई वह तवाफ़ेज़ियारत के बाद करेगा तो उस तवाफ़ में रमल करे, मगर...

नोट 1: मुफ़रिद, क़ारिन, मुतमत्ति के अर्थ जल्द ही सप्लीमेंट में आएंगे, इंशाअल्लाह तआला। (12, मुनहु) नोट 2: इसलिए कि वह आते समय उमराह लाया और उमराह में तवाफ़ेक़ुदूम नहीं है। जब उमराह कर लिया तो वह मक्की (मक्का का निवासी) हो गया और मक्की के लिए यह तवाफ़ नहीं है। (12, मुनहु) नोट 3: आगे आता है कि मुफ़रिद के लिए तवाफ़ेज़ियारत के बाद करना बेहतर है, पर उस दिन बहुत भीड़ होती है और कई काम होते हैं, इसलिए तवाफ़ेक़ुदूम पर ही कर लेते हैं, और क़ारिन के लिए यही बेहतर है। (12, मुनहु) नोट 4: जिसने तवाफ़ेज़ियारत के बाद भी सई नहीं की, वह तवाफ़ेवदा के बाद कर ले, क्योंकि सई का कोई निश्चित समय नहीं है और अब इस तवाफ़ में रमल भी करे।

क्योंकि रमल उस तवाफ़ के बाद होता है जिसके बाद सई हो। (बाकी अगले पृष्ठ पर)

فتاویٰ رضویہ جلد دہم

بعض سُنن الحج حج کی بعض سنتیں

م: ت: قد سن للمرء الطواف ان قدم والحجر الاسود فیه یستلم ت: باہر سے آنے والے کو ایک طواف سنت ہے، طواف میں سنگِ اسود کا بوسہ لے۔ ش: یہ پہلا طواف ہے جو مفردِ حاضر ۱ ہوتے ہی کرتا ہے اور قارن عمرہ کے بعد ، اسے طواف قدوم کہتے ہیں گویا حاضریِ دربارِ اعظم کا مجرا۔ ف: یہ طواف متمتع ۲ کے لیے نہیں نہ اہلِ مکہ کو کہ وہ ہر وقت حاضرِ بارگاہ ہیں اور سنگِ اسود کا بوسہ نہ اسی طواف بلکہ ہر طواف میں سنت ہے ، طواف اسی سے شروع اور اسی پر ختم ہوتا ہے۔

م: والاضطباع ثم رمل قد اتی ورکعتان للطواف یافنیت سنتوں کے شمار میں اضطباع پھر رمل آیا اور وہ رکعتیں طواف کی اے جوان! ش: اضطباع یہ کہ چادر داہنے بغل کے نیچے سے نکال کر یہ آنچل بائیں شانے پر ڈال لے جس میں دہنا کندھا کھلا رہے۔ اور رمل یہ کہ طواف میں جلد جلد چھوٹے قدم رکھتا شانوں کو جنبش دیتا چلے۔ ف: یہ دونوں سنتیں خاص مردوں کے لیے ہیں وہ بھی صرف اس طواف میں جس کے بعد صفا مروہ میں سعی ہوتی ہے یعنی طواف عمرہ اور حج میں طواف قدوم کہ اکثر بخیال ۳ زحمت و کمی فرصت اسی کے بعد سعی کر لیتے ہیں ، ہاں جس سے رہ گئی وہ طواف زیارت ۴ کے بعد کرے گا تو اس طواف میں رمل کرے مگر

عہ ۱: مفرد ، قارن ، متمتع کے معنی عنقریب تکملہ میں آتے ہیں ان شاء اللہ تعالٰی ۱۲ منہ عہ ۲: اس لیے کہ وہ آتے وقت عمرہ لایا اور عمرہ میں طواف قدوم نہیں۔ جب عمرہ کر لیا مکی ہو گیا اور مکی کو یہ طواف نہیں ۱۲ منہ عہ ۳: آگے آتا ہے کہ مفرد کو طواف زیارت کے بعد کی افضل ہے

پر اس دن بہت ہجوم ہوتا ہے اور کئی کام اس لیے طواف قدوم پر کر لیتے ہیں اور قارن کے لیے افضل ہی یہ ہے ۱۲ منہ عہ ۴: جس نے طواف زیارت کے بعد بھی سعی نہ کی وہ طواف الوداع کے بعد کرلے کہ سعی کا کوئی وقت معین نہیں ہے اور اب اس طواف میں رمل بھی بجا لائے۔

لان الرمل بعد طواف یعقبه سعی افاده | کیونکہ رمل ایسے طواف کے بعد ہوتا ہے جس کے بعد

(باقی بر صفحہ آئندہ) | (باقی بر صفحہ آئندہ)

Fatawa Razawiyya - Volume 10

Idtiba (wearing the ihram under the right armpit and over the left shoulder) is dropped. Note: Idtiba occurs during Tawaf, and Raml (brisk walking) is only for the first three circuits (denoted by 'A'). In the remaining four, walk normally. If due to the crowd, Raml causes harm to oneself or others, then stop. When the crowd disperses, continue walking with Raml. Note: According to us, the two rak'ahs after every Tawaf are not Sunnah but Wajib (mandatory). Text: Two rak'ahs of Ihram, then bathing for it, and there is virtue in saying the Talbiyah aloud. Translation: And there is merit in praying two rak'ahs for Ihram, then bathing for it, and saying 'Labbaik' out loud.

(Continued from the footnote of the previous page) Arabic Text: The scholar Al-Khair Al-Ramli said: I have not seen it explicitly stated, though it is known from their general usage. 1 End from Rad al-Muhtar. I say: There is no dispute about its permissibility, as they have explicitly stated that there is no fixed time. Rather, the discussion is whether he is commanded to perform Sa'i after Tawaf al-Sadr (Farewell Tawaf), even if recommended. Perhaps the reason for this is so that his Sa'i occurs connected to the Tawaf, as is recommended. However, it is opposed by another recommended act, which is that there should be no barrier between his Tawaf al-Sadr and his departure from Mecca, as they have explicitly stated. Imam Shafi'i has made this mandatory, and a narration from Abu Yusuf and Hasan bin Ziyad (may Allah the Almighty have mercy on them) agrees with it. So, the recommendation is confirmed to avoid conflict. So understand. And Allah Subhanahu wa Ta'ala knows best. 12 [From him].

Urdu Translation/Explanation: It might be Sa'i, as Allama Khairuddin Ramli informed and stated. I have not seen this explicitly stated, although it might be inferred from the general statements of the jurists. Ah, Rad al-Muhtar. I say: There is no dispute about its permissibility, since they have already specified that there is no fixed time for it. There is certainly a discussion as to whether even as a recommended (mustahabb) act, the command for Sa'i after Tawaf al-Wada' exists. It could be that the reason is that it is recommended for Sa'i to be connected immediately after Tawaf. However, another recommended act comes into play here, which is that there should be no obstacle between Tawaf al-Wada' and departure from Mecca, as the jurists have specified. While Imam Shafi'i considers this mandatory, and a narration from Abu Yusuf and Hasan bin Ziyad also agrees with it, thus the recommendation to leave immediately afterwards is clarified to avoid disagreement. Understand this. And Allah Subhanahu wa Ta'ala knows best. 12 Amna (T).

Note 'A': Even to the extent that if he forgets in the first circuits, he should do it in those four. If he didn't remember in the first circuit, then in only two, and if he forgot in two, then in only one. 12 [From him]

1 Rad al-Muhtar, Chapter on Tawaf al-Ziyarah, Mustafa al-Babi, Egypt 2/198

इज़तिबा (कंधे पर कपड़ा डालने का विशेष तरीका) समाप्त हो गया। नोट: इज़तिबा तवाफ़ में होता है और रमल (तेज़ चाल) केवल पहले तीन चक्करों में होता है (चिह्न 'अ' द्वारा दर्शाया गया है), शेष चार में अपनी सामान्य चाल से चलें। और यदि भीड़ के कारण रमल करने में स्वयं को या दूसरों को कष्ट हो तो रुक जाएँ। जब भीड़ कम हो जाए, तो फिर रमल करते हुए चलें। नोट: हमारे निकट हर तवाफ़ के बाद दो रकात नमाज़ सुन्नत नहीं बल्कि वाजिब है। मूल पाठ: इहराम की दो रकात, फिर उसके लिए ग़ुस्ल (स्नान), और तलबीया को आवाज़ के साथ कहने में श्रेष्ठता है। अनुवाद: और इहराम की दो रकातें, फिर उसके लिए स्नान करना और लब्बैक (तलबीया) बुलंद आवाज़ में कहने में फ़ज़ीलत (पुण्य) है।

(पिछले पृष्ठ के फ़ुटनोट का शेष भाग) अरबी पाठ: अल्लामा ख़ैर अल-रमली ने कहा: मैंने इसे स्पष्ट रूप से नहीं देखा है, हालांकि यह उनके सामान्य उपयोग से ज्ञात होता है। १ रद अल-मुह्तार से उद्धरण समाप्त। मैं कहता हूँ: इसकी स्वीकार्यता में कोई विवाद नहीं है, क्योंकि उन्होंने स्पष्ट कर दिया है कि इसके लिए कोई निश्चित समय नहीं है। बल्कि, चर्चा यह है कि क्या उसे 'तवाफ़-ए-सद्र' (विदाई तवाफ़) के बाद सई करने का आदेश दिया गया है, भले ही वह मुस्तहब (पसंदीदा) हो। शायद इसका कारण यह है कि उसकी सई तवाफ़ से जुड़ी हुई हो, जैसा कि मुस्तहब है। हालाँकि, इसका विरोध एक अन्य मुस्तहब कार्य द्वारा किया जाता है, जो यह है कि उसके'तवाफ़-ए-सद्र' और मक्का से प्रस्थान के बीच कोई बाधा नहीं होनी चाहिए, जैसा कि उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है। इमाम शाफ़ई ने इसे अनिवार्य कर दिया है, और अबू यूसुफ़ और हसन बिन ज़ियाद (अल्लाह उन पर दया करे) का एक वर्णन भी इससे सहमत है। अत; विवाद से बचने के लिए तुरंत प्रस्थान करने की सिफ़ारिश की पुष्टि की जाती है। अतः समझें। और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है। १२ [लेखक की ओर से]

उर्दू अनुवाद/व्याख्या: यह सई हो सकती है, जैसा कि अल्लामा ख़ैर उद्दीन रमली ने बताया और फ़रमाया। मैंने स्पष्ट रूप से यह नहीं देखा, हालांकि फ़क़ीहों (धर्मशास्त्रियों) के सामान्य उल्लेखों से यह ज्ञात हो सकता है। अल्लामा इब्ने आबिदीन 'रद उल-मुह्तार' में कहते हैं: मैं कहता हूँ: इसके जायज़ होने में कोई संदेह नहीं है क्योंकि वे स्पष्ट कर चुके हैं कि इसके लिए कोई समय नियत नहीं है। इसमें यह चर्चा अवश्य है कि क्या 'तवाफ़-ए-विदा' के बाद सई का मुस्तहब होने का भी हुक्म है। हो सकता है कि इसका कारण यह हो कि तवाफ़ के बाद तुरंत सई हो जाए तो मुस्तहब है, लेकिन

यहाँ एक दूसरा मुस्तहब आड़े आ रहा है वह यह कि 'तवाफ़-ए-विदा' और मक्का से प्रस्थान के बीच कोई चीज़ रुकावट न बने जैसा कि फ़क़ीहों ने स्पष्ट किया है। जबकि इमाम शाफ़ई इसे वाजिब क़रार देते हैं और इमाम अबू यूसुफ़ और हसन बिन ज़ियाद का वर्णन भी इससे सहमत है, तो तुरंत बाद रवाना होने का मुस्तहब होना स्पष्ट हो गया। इसे समझो, और अल्लाह सुब्हानहू व तआला बेहतर जानता है। १२ [अम्ना] (त)

नोट 'अ': यहाँ तक कि अगर पहले चक्करों में भूल गया तो भी उन चार में करे, और अगर पहले चक्कर में याद न रहा तो दो ही में करे और दो में भूला तो एक ही में। १२ [लेखक की ओर से]

१ रद उल-मुह्तार, विषय: तवाफ़-ए-ज़ियारत, मुस्तफ़ा अल-बाबी, मिस्र, २/१९८

पृष्ठ ८०० / ८३६

اضطباع ساقط ہو گیا۔ ف: اضطباع طواف میں ہوتا ہے اور رمل صرف اگلے تین پھیروں عہ میں، باقی چار میں اپنی چال، اور ہجوم کے سبب رمل میں اپنی یا اور کی ایذا ہو تو رک رہے۔ جب غول نکل جائے پھر رمل کرتا چلے۔ ف: ہر طواف کے بعد دو رکعتیں ہمارے نزدیک سنت نہیں بلکہ واجب ہیں۔ م: وركعتا الاحرام ثم الغسل له وفی جهر الملبي فضل ت: اور احرام کی دو رکعتیں پھر اس کے لیے نہانا اور لبیک کے بآواز کہنے میں فضیلت ہے۔

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) العلامة الخير الرمل قال ولم اره صريحاً و ان علم فی اطلاقهم ۱ اھ ردالمحتار اقول: لا كلام فی جوازه قد صرحوا ان لاتوقيت و انما الكلافی انه يومر بايقاع السعي بعد طواف الصدر ولوند بأولعل الوجه فيه ان يقع سعيه متصلا بالطواف كما هوا لمستحب لكن يعارضه مستحب آخر وهوان لايكون بين طوافه للصدر ونفره من مكه حائل كما نصوا عليه وقد اوجب ذالك الامام الشافعی ويوافقه رواية عن ابی يوسف والحسن بن زياد رحمهم الله تعالی فتاكدالاستحباب خروجا عن الخلاف فافهم والله سبحانه وتعالیٰ اعلم ۱۲ منه

سعی ہو اس کا افادہ علامہ خیر الدین رملی نے کیا اور فرمایا اور میں نے صراحۃً یہ دیکھا کہ نہیں اگرچہ فقہاء کے اطلاقات سے معلوم ہو سکتا ہے اھ ردالمحتار اقول: اس کے جواز میں کوئی کلام نہیں ہے جبکہ وہ تصریح کر چکے ہیں کہ اس میں وقت مقرر نہیں۔ اس میں ضرور کلام ہے کہ کیا طواف وداع کے بعد سعی کا استحباباً بھی حکم ہے۔ ہو سکتا ہے کہ وجہ یہ ہو کہ طواف کے بعد متصل سعی ہو جائے تو مستحب ہے لیکن یہاں ایک دوسرا مستحب آڑے آرہا ہے وہ یہ کہ طواف وداع اور کوچ کرنے میں کوئی چیز درمیان میں حائل نہ ہو جیسا کہ فقہاء نے اس کی تصریح کی ہے جبکہ امام شافعی اس کو واجب قرار دیتے ہیں اور اس کی موافقت ابو یوسف اور حسن بن زیاد

کی روایت بھی کرتی ہے تو فوراً بعد میں روانہ ہونے کا استحباب واضح ہو گیا، اس کو سمجھو، واللہ سبحانہ وتعالیٰ اعلم ۱۲ امنہ(ت)

عہ: یہاں تک کہ اگر اول پھیروں میں بھول گیا تو بھی ان چار میں اور اگر پہلے پھیرے میں یاد نہ رہا تو دو ہی میں کرے اور دو میں بھولا تو ایک ہی میں ۱۲ منہ

۱ ردالمحتار مطلب فی طواف الزیارۃ مصطفی البابي مصر ۲/ ۱۹۸

Fatawa Ridawiyya, Volume 10

Sharh (Commentary): We have already written about these issues, and also that a woman should say the 'Labbaik' (Talbiyah) softly. The mention of the bath (ghusl) for the Ihram prayer is slightly delayed in the author's words, though it occurs earlier.

Matn (Original Text): Staying overnight in Mina on the night of Arafah is from the Sunnah, so understand it, O brother, with knowledge. Tarjuma (Translation): And staying overnight in Mina on the ninth night is Sunnah, so O brother! recognize and understand it.

Matn (Original Text): Combining the night and the day at Arafat has been mentioned in the traditions (Athar). Tarjuma (Translation): And the joining of night and day in Arafat has been mentioned in the Hadiths.

Sharh (Commentary): Meaning, those who perform the stay (wuquf) in Arafat on the ninth date should not end it during the day; rather, they should stay long enough for the sun to set there and for a small portion of the night to arrive. After that, they should proceed towards Muzdalifah.

Faidah (Benefit): The obligatory (fard) stay is such that one should be present in Arafat from after midday on the Day of Arafah until the dawn (Subh-e-Sadiq) of the tenth night, even if only for a moment (footnote 2). Furthermore, for one who stays at night, even if it is disliked (makruh), it is not necessary to stay long. For one who stays during the day after the sun starts to decline—which is the Sunnah—it is obligatory (wajib) in our view to observe the aforementioned matters, i.e., staying until sunset and including a small portion of the night. However, after sunset, one should not delay, as that is disliked.

Matn (Original Text): It is Sunnah to stay near the rocks (as-Sakharat) and the Mash'ar al-Haram when one arrives. Tarjuma (Translation): It is Sunnah to stop towards the rocks and in Mash'ar al-Haram when one arrives there.

Sharh (Commentary): In Arafat, the highest plain is near the black rocks where, if one stands facing the Qiblah, Jabal al-Rahmah is on the right hand.

Footnote 1: This means that as soon as sunset is certain, one should depart immediately, for staying further is disliked. It is clear that if even a moment passes after sunset, a small portion of the night has arrived. (12 Minhu)

Footnote 2: Even if without intention, even if sleeping, even if unconscious, even if forced, even if in a state of ritual impurity (hadath), menstruation (hayd), postpartum bleeding (nifas), or major ritual impurity (janabat), even if one does not know that this place is Arafat—the obligation (fard) will be fulfilled in every case. (12 Minhu)

Footnote 3 Qultu (I said): Regarding the determination of its grammatical inflection, I have composed a verse that matches it in weight and rhyme: Give it 'nasb' (accusative case) for being the object of the verb 'ya'ti' (when he comes), or give it 'jarr' (genitive case) by making it a conjunction with 'al-Sakharat'. (12 Minhu)

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

शरह (व्याख्या): ये मसले हम ऊपर लिख चुके हैं और ये भी कि औरत लब्बैक धीरे से कहे। एहराम की नमाज़ के लिए गुसल का ज़िक्र मुसन्निफ़ (लेखक) के कलाम में थोड़ा बाद में है जबकि ये पहले होता है।

मतन (मूल पाठ): और मिना में अरफ़ा की रात ठहरना सुन्नत में से है, तो ऐ भाई! इसे पहचान कर समझ ले। तर्जुमा (अनुवाद): और मिना में नौवीं रात को रुकना सुन्नत है, तो ऐ भाई! इसे पहचान और समझ ले।

मतन (मूल पाठ): और अराफ़ात में रात और दिन को जमा करना रिवायतों में आया है। तर्जुमा (अनुवाद): और अराफ़ात में रात और दिन को जोड़ना हदीसों में आया है।

शरह (व्याख्या): यानी नौवीं तारीख को जो अराफ़ात में वुकूफ़ (ठहरना) करते हैं, उसे दिन में ही ख़त्म न करें बल्कि इतना ठहरें कि सूरज वहीं डूबे और रात का एक छोटा हिस्सा आ जाए। उसके बाद मुज़दल्फ़ा की ओर चलें।

फ़ायदा: वुकूफ़-ए-फ़र्ज़ तो इतना है कि अरफ़ा के दिन दोपहर ढलने से लेकर दसवीं रात की सुबह सादिक़ तक अराफ़ात में मौजूदगी पाई जाए, चाहे एक पल के लिए ही क्यों न हो (हाशिया २)। फिर जो रात को वुकूफ़ करे, चाहे वो मकरूह हो, उसे ज़्यादा देर लगाना ज़रूरी नहीं। और जो दिन में ज़वाल के बाद वुकूफ़ करे—जैसा कि सुन्नत है—तो हमारे नज़दीक मज़कूरा उमूर यानी सूरज डूबने तक ठहरना और रात का थोड़ा हिस्सा लेना वाजिब है, मगर सूरज डूबने के बाद देर न करे क्योंकि वो मकरूह है।

मतन (मूल पाठ): चट्टानों की जानिब और मशअर-उल-हराम में ठहरना सुन्नत है जब वहाँ पहुँचे। तर्जुमा (अनुवाद): सुन्नत है पत्थरों की तरफ़ और मशअर-उल-हराम में ठहरना जब वहाँ आए।

शरह (व्याख्या): अराफ़ात में सबसे ऊँचा मैदान काली चट्टानों के पास है जिसमें क़िबला की ओर मुँह करके खड़े हों तो जबल-ए-रहमत दाहिने हाथ पर होगा।

हाशिया १: इससे मुराद ये है कि आफ़ताब का डूबना यक़ीनी हो जाए तो उसके फ़ौरन बाद ही कूच कर दें क्योंकि फिर रुकना मकरूह है। और ज़ाहिर है कि सूरज डूबने के बाद एक पल भी गुज़रा तो रात का एक हिस्सा आ गया। (१२ मिन्हु)

हाशिया २: चाहे बिना इरादे के चाहे सोते हुए, चाहे बेहोश, चाहे मजबूरी में, चाहे नापाकी (हैज़, निफ़ास या जनाबत) की हालत में, चाहे ये न जानता हो कि ये जगह अराफ़ात है—फ़र्ज़ हर तरह अदा हो जाएगा। (१२ मिन्हु)

हाशिया ३ कुल्तु (मैंने कहा): इसके एराब (स्वर चिह्नों) को मुक़र्रर करने के लिए एक शेर कहा है जो वज़न और क़ाफ़िया में इस शेर के मुताबिक़ है: इसे 'याती' फ़ेल (क्रिया) के मफ़ऊल (कर्म) होने की बिना पर नसब दें या 'अस-सख़रात' पर अत्फ़ (संयोजक) होने की बिना पर जर्र दें। (१२ मिन्हु)

पृष्ठ ८०१/८३६

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

ش: یہ مسائل ہم اوپر لکھ چکے اور یہ بھی کہ عورت لبیک آہستہ کہے۔ غسل نماز احرام کلام مصنف میں ذرا مؤخر ہے وقوعاً مقدم۔

م: وفی منی المبیت لیل عرفة من سنة فافهم اخي بمعرفة ت: اور منٰی میں نویں رات شب باشی سنت ہے پس اے برادر! اسے پہچان کر سمجھ لے۔

م: والجمع بین اللیل والنهار بعرفات جاء في الآثار ت: اور عرفات میں شب و روز کا جمع کرنا حدیثوں میں آیا ہے۔

ش: یعنی نویں تاریخ جو وقت سے عرفات میں وقوف کرتے ہیں اسے دن میں ختم کریں بلکہ اتنا ٹھہریں کہ سورج وہیں ڈوبے اور ایک لطیف۱ حصہ رات کا آجائے۔ اس کے بعد مزدلفہ چلیں۔

ف: وقوف فرض تو اس قدر ہے کہ عرفہ کی دوپہر ڈھلے سے دسویں شب کی صبح صادق تک عرفات میں ہونا پایا جائے اگرچہ ایک۲ لمحہ۔ پھر جو رات کو وقوف کرے اگرچہ مکروہ ہے اسے کچھ دیر لگانا ضرور نہیں اور جو دن کو بعد زوال وقوف کرے کہ سنت یہی ہے اس پر ہمارے نزدیک امور مذکورہ یعنی غروب شمس تک ٹھہرنا اور جزو قلیل شب کا لے لینا واجب ہیں مگر بعد غروب دیر نہ کرے کہ مکروہ ہے۔

م: سن الوقوف جانب الصخرات والمشعر۳ الحرام حین یاتی ت: سنت ہے ٹھہرنا پتھروں کی طرف اور مشعر حرام میں جب آئے۔

ش: عرفات میں سب سے اونچا میدان سیاہ چٹانوں کے پاس جس میں قبلہ رو کھڑے ہو تو جبل الرحمتہ دہنے ہاتھ

عہ۱: اس سے یہ مراد کہ آفتاب کا غروب یقینی ہوجائے اس کے بعد ہی فوراً کوچ کر دیں کہ پھر توقف مکروہ ہے اور ظاہر کہ بعد غروب ایک آن بھی گزری تو رات کا ایک لطیف حصہ آگیا ۱۲ منہ)

عہ۲: اگرچہ بلا قصد، اگرچہ سوتا ہوا، اگرچہ بیہوش، اگرچہ بالا کراہ، اگرچہ بحالت حدث حیض یا نفاس یا جنابت، اگرچہ جانتا بھی نہ ہو کہ یہ مقام عرفات ہے فرض ہر طرح ادا ہوجائے گا ۱۲ منہ)

عہ۳ قلت: فی ضبط اعرابہ شعرا یوافقہ زنۃ وقافیۃً | میں نے المشعر الحرام کے اعراب کو ضبط کرنے میں شعر کہا ہے جو انصبہ مفعولاً لفعل یاتی | وزن اور قافیہ میں اس شعر کے موافق ہے: او جرّہ عطفاً علی الصخرات | اسے "یاتی" فعل کے مفعول ہونے کی بنا پر نصب دے یا ۱۲ منہ غفرلہ۔ | "الصخرات" پر عطف ہونے کی بنا پر جر دے۔ ۱۲ منہ (ت)

Fatawa Razvia, Volume 10

...stays there. It is considered to be the place of stay of the Resplendent Master of the Universe (may Allah's peace and blessings be upon him). It is very virtuous that if no one is inconvenienced, one should stay there.

Note (F): This is recommended (mustahab), and Mash'ar al-Haram is the name of a specific place in Muzdalifah; specifically, staying there is sunnah, otherwise, we have written above that staying in Muzdalifah is obligatory (wajib) according to us.

M (Source): Collecting pebbles, O my companion, from Muzdalifah is sunnah, and washing them if you do it afterwards. T (Translation): Taking pebbles from Muzdalifah, O my companion! is Sunnah, and washing them if done after that.

Explanation (Sh): On the morning of the 10th, when going from Muzdalifah to Mina, today you will throw pebbles at one Jamrah there. For this, it is recommended to pick up seven pebbles from here. And washing them is recommended in any case, wherever they are picked from.

Footnote 1: And what some people do, picking up pebbles from here for the pelting of the three Jamarat for the remaining days, is permissible (mubah), neither recommended (mandub) nor undesirable (ma'yoob). (12 minhu)

Footnote 2: From this, it is also known that it is permissible to take pebbles from anywhere; yes, do not pick them up from near the Jamarat because those are thrown pebbles, and it is in the Hadith: "The ones that are accepted, the angels take them away, otherwise you would see mountains."[1] From this, it is known that what remains is, God forbid, rejected, so why use them in your Hajj? Reflect, this is also a clear miracle of our Prophet (may Allah's peace and blessings be upon him). It has been nearly thirteen hundred years since Hajj began in Islam. Every year there are hundreds of thousands of servants of God. In one narration it is six hundred thousand, in another eight hundred thousand, in the report of Hazrat Hasan Basri it is fifteen hundred thousand, they are not less than that, so the angels complete the number, and the rule is that in such a place, a higher number is taken such that a lesser number does not contradict it. The year this humble servant was present, i.e., 1295 AH, the census of Hajjis was heard to be eighteen hundred thousand. Then every person throws 49 or 70 pebbles. Even if we take 49, multiplying it by fifteen hundred thousand gives seven crore thirty-five lakh (73,500,000) pebbles collected. If you collect them, a mountain would be formed every year. But when you look, the

Jamarat are empty, only a few counted pebbles are seen in Mina. This is the glory of God and a clear proof of the truth of Islam. All praise is due to Allah, the Lord of the worlds.

Note (F): Similarly, one should not take pebbles from a mosque as it is disrespectful and brings its property into one's own use. Similarly, impure pebbles should not be taken because the name of God is invoked over them. And Allah Almighty knows best. (12 minhu)

[1] Kanz al-Ummal, Hadith 12121, 5/81 and At-Targhib wat-Tarhib, At-Targhib fi Ramy al-Jamar etc. 2/208.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

...रहता है। इसे हुज़ूर पुर नूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का मकाने वुक़ूफ़ (ठहरने का स्थान) माना जाता है। यह बहुत अफ़ज़ल है कि अगर किसी को तकलीफ़ न हो तो वहाँ वुक़ूफ़ करे।

फ़ (नोट): यह तो मुस्तहब (पसंदीदा) है और मशअरुल हराम मुज़दलिफ़ा में एक विशेष स्थान का नाम है, विशेष रूप से वहाँ वुक़ूफ़ करना सुन्नत है, वरना मुज़दलिफ़ा का वुक़ूफ़ हम ऊपर लिख चुके हैं कि हमारे नज़दीक वाजिब (अनिवार्य) है।

म: मुज़दलिफ़ा से कंकड़ियाँ लेना ऐ मेरे साथी! सुन्नत है और उनका धो लेना अगर उसके बाद करे।
त: मुज़दलिफ़ा से कंकड़ियाँ लेना ऐ मेरे साथी! सुन्नत है और उन्हें धो लेना अगर उसके बाद करे।

श (व्याख्या): दसवें की सुबह को जब मुज़दलिफ़ा से मिना जाते हैं, तो आज वहाँ एक जमरा पर कंकड़ियाँ मारेंगे, इसके लिए मुस्तहब है कि सात कंकड़ियाँ यहाँ से उठा ले। और धोना तो हर तरह से मुस्तहब है, चाहे कहीं से भी उठाए।

हाशिया 1: और वह जो कुछ लोग बाक़ी दिनों की रमी (कंकड़ मारना) के लिए भी तीनों जमरात की कंकड़ियाँ यहीं से लेते हैं, वह मुबाह (जायज़) है, न कि कुछ मंदूब (पसंदीदा) और न कुछ मयूब (बुरा)। (12 मिन्हु)

हाशिया 2: इससे यह भी मालूम हुआ कि कंकड़ियाँ हर जगह से लेना जायज़ है, हाँ, जमरात के पास से न उठाए क्योंकि वे फेंकी हुई कंकड़ियाँ होती हैं और हदीस में है: "जिनकी क़बूल होती हैं, फरिश्ते उठा ले जाते हैं वरना तुम्हें पहाड़ नज़र आते।"[1] इससे मालूम हुआ कि जो पड़ी रह जाती हैं, माज़ल्लाह (अल्लाह की पनाह) वह मरदूद (अस्वीकृत) होती हैं, तो उन्हें अपने हज में क्यों इस्तेमाल करें? गौर करें तो यह भी हमारे नबी सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का एक खुला मोजज़ा (चमत्कार) है। इस्लाम में हज होते हुए क़रीब तेरह सौ बरस गुज़रे। हर साल लाखों बंदगान-ए-खुदा होते हैं। एक रिवायत में छह लाख, एक रिवायत में आठ लाख, हज़रत हसन बसरी के असर (कथन) में पंद्रह लाख, इनसे कम नहीं होते, तो फरिश्ते संख्या पूरी करते हैं और नियम यह है कि ऐसी जगह अधिक संख्या ली जाती है ताकि कम संख्या उसका विरोध न करे। फ़क़ीर जिस साल हाज़िर हुआ यानी 1295 हिजरी, हाजियों की जनगणना अठारह लाख सुनी गई। फिर हर व्यक्ति 49 या 70 कंकड़ियाँ मारता है, 49 ही रखिये तो पंद्रह लाख में गुणा करने से सात करोड़ पैंतीस लाख

(73,500,000) कंकड़ियाँ जमा हुईं। जमा कीजिये तो हर साल पहाड़ बनता है, फिर जब देखिये तो जमरे खाली होते हैं, मिना में कुछ गिनी-चुनी कंकड़ियाँ ही नज़र आती हैं, यह खुदा की शान है और इस्लाम की हक़ीक़त का स्पष्ट प्रमाण है। वलहम्दुलिल्लाहि रब्बिल आलमीन।

फ़: इसी तरह मस्जिद की कंकड़ियाँ न ले क्योंकि यह बेअदबी है और उसकी चीज़ को अपने इस्तेमाल में लाना है। इसी तरह नापाक कंकड़ी भी नहीं लेनी चाहिए क्योंकि उन पर खुदा का नाम लिया जाता है। वल्लाहु तआला आलम (और अल्लाह बेहतर जानता है)। (12 मिन्हु)

[1] कन्ज़ुल उम्माल हदीस 12121, 5/81 और अत-तर्गीब वत-तर्हीब, अत-तर्गीब फ़ी रमी अल-जमार आदि 2/208।

کو رہتا ہے۔ اسے حضور پر نور سید عالم صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا مکان وقوف گمان کیا جاتا ہے بہت افضل ہے کہ کسی کی ایذا نہ ہو تو وہاں وقوف کرے۔

ف: یہ تو مستحب ہے اور مشعر الحرام کو مزدلفہ میں ایک خاص مقام کا نام ہے بالخصوص وہاں وقوف مسنون، ورنہ مزدلفہ کا وقوف ہم اوپر لکھ چکے ہیں کہ ہمارے نزدیک واجب ہے۔

مر: اخذ الحصاریا صاح من مزدلفة من سنة وغسلها ان اردفه ت: مزدلفہ سے کنکریاں لینا اے رفیق میرے! سنت ہے اور ان کا دھو لینا اگر اس کے بعد کرے۔

ش: دسویں کی صبح کو مزدلفہ سے منی جاتے ہیں تو آج وہاں ایک جمرہ پر کنکریاں ماریں گے اس کے لیے مستحب ہے کہ سات ع۱ سنگریزے یہاں سے اٹھالے۔ اور دھونا تو بہر طرح مستحب ہے کہیں ع۲ سے اٹھائے۔

ع۱: اور وہ جو بعض لوگ باقی دنوں کی رمی جمرات ثلاثہ کو بھی سنگریزے یہیں سے لیتے ہیں مباح ہے نہ کہ کچھ مندوب نہ کچھ معیوب (۱۲منہ)

ع۲: اس سے یہ بھی معلوم ہوا کہ سنگریزے ہر جگہ سے لینے جائز ہیں، ہاں جمرات کے پاس سے نہ اٹھائے کہ وہ پھینکی ہوئی کنکریاں ہوتی ہیں اور حدیث میں ہے: "جس کی قبول ہوتی ہیں فرشتے اٹھالے جاتے ہیں ورنہ تمھیں پہاڑ نظر آتے"[1] اس سے معلوم ہوا کہ جو پڑی رہ جاتی ہے ہو معاذ اللہ مردود ہوتی ہیں تو انھیں اپنے حج میں کیوں استعمال کیجیو، غور کرو تو یہ بھی ہمارے نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا کھلا معجزہ ہے۔ اسلام میں حج ہوتے تیرہ سو برس کے قریب گزرے۔ ہر سال لاکھوں بندگان خدا ہوتے ہیں ایک روایت میں چھ لاکھ ایک روایت میں آٹھ لاکھ

حضرت حسن بصری کے اثر میں پندرہ لاکھ ان سے کم ہوتے نہیں، تو فرشتے عدد پورا کرتے ہیں اور قاعدہ ہے کہ ایسی جگہ عدد زائد ماخوذ ہوتا ہے کہ کم اس کا منافی نہیں۔ فقیر جس سال حاضر ہوا یعنی ۱۲۹۵ھ حاجیوں کی مردم شماری اٹھارہ لاکھ سنی گئی پھر ہر شخص ۴۹ یا ۷۰ کنکریاں مارتا ہے ۴۹ ہی رکھئے تو پندرہ لاکھ میں ضرب دینے سے سات کروڑ پینتیس لاکھ (۷۳۵۰۰۰۰۰) کنکریاں جمع ہوئیں، جمع کیجئے تو ہر سال پہاڑ بنتا ہے پھر جب دیکھئے تو جمرے خالی ہوتے ہیں منی میں کچھ گنتی کنکریاں نظر آتی ہیں، یہ خدا کی شان ہے اور حقیقت اسلام کی صریح برہانو الحمد اللہ تعالی رب العلمین۔

ف: یونہی مسجد کی کنکریاں نہ لے کہ بے ادبی اور اسی کی چیز کا اپنے تصرف میں لانا ہے اسی طرح ناپاک کنکری بھی نہ لینی چاہئے کہ ان پر خدا کا نام لیا جاتا ہے واللہ تعالیٰ اعلم (۱۲ منہ)

[1] کنزالعمال حدیث ۱۲۱۲۱، ۸۱/۵ والترغیب والترہیب، الترغیب فی رمی الجمار الخ ۲/ ۲۰۸

Fatawa-e-Razvia, Volume 10

M: And in Mina, do not abandon the sacrifice; likewise, the Eid prayer with good intention. T: Do not abandon the sacrifice of Eid in Mina, and similarly, the Eid prayer is with a good intention. F: In our school of thought, both the Eid prayer and the sacrifice are obligatory (Wajib) for a resident wealthy person, while the Shafi'is consider them Sunnah. Therefore, the honorable author, following his own school of thought, counted them among the Sunnahs. However, a point worth noting here is that our scholars clarify in books like Az-Zakhirah, Al-Muhit, etc., that there is no Eid prayer in Mina at all because people are occupied with the rituals of Hajj. Allama Ibrahim Halabi said: Yes, by consensus, one should not perform Eid prayer. Allama Ali Qari said: There is a consensus of the scholars of the Ummah on this, as stated in Radd al-Muhtar. Understand this, and Allah knows best. (As in Radd al-Muhtar, so reflect upon it, and Allah Almighty knows best. -T) The same sacrifice is obligatory (Wajib) in the preferred school for a resident, like the people of Makkah and Mina, even if they are in the state of Ihram, while it is not demanded from a traveler.

M: And Sunnah: there is reward in its performance, but there is no punishment for the one who leaves it. T: And there is reward in performing the Sunnah, and no punishment in leaving it. F: However, there will be severe reprimand for abandoning Sunnah al-Mu'akkadah (emphasized Sunnahs), and may Allah forbid, deprivation of intercession has also been mentioned. Rather, the researchers state that there is a slight sin in abandoning them, though not equal to abandoning a Wajib (obligatory) act. For these reasons, Sunnah is distinguished from Mustahab (recommended); otherwise, whatever has been mentioned in the text would also apply to Mustahab.

M: Accountability is only held against a person for neglecting an obligation (Fard) that has been explained in detail. T: Likewise, accountability against a person is for abandoning a Fard which has been stated in detail. Sh: That is, there is no ambiguity or difficulty in its proof; thus, the word 'As-Sifah' [1] signifies that all Fard are like this. And from the context, it is clear that accountability refers to punishment, otherwise reprimand, which occurs on leaving a Sunnah, is itself a form of being held accountable and questioned.

[1] Whoever wishes to research this should consult Al-Bahr al-Ra'iq and Radd al-Muhtar and other books. (12 Minhu - M) [2] It is possible that it refers to what has passed in detail; based on this, it would be an indication of the obligations (Fara'id) of Hajj that have passed among the Wajib acts according to the author's school of

thought. But what is inferred from the context of the speech is that the purpose here is to state the ruling of Sunnah and Fard in general; therefore, we have interpreted it as we have. (12 Minhu - M)

Anyone who wishes to research this should consult books like Al-Bahr al-Ra'iq and Radd al-Muhtar. (12 Minhu - T) It is possible that it refers to what has been detailed previously; on this basis, it would point to those Fara'id of Hajj which, according to the author's school, were mentioned among the Wajib acts. However, the flow of the discourse indicates that the intent here is to state the general ruling of Sunnah and Fard; this is why we have provided the aforementioned interpretation. (12 Minhu - T)

1. Radd al-Muhtar, Kitab al-Hajj, Chapter on the ruling of Eid and Friday prayer in Mina, Mustafa al-Babi Egypt, 2/200.

फ़तावा-ए-रज़विया, जिल्द दहम (10)

म: और मिना में कुर्बानी न छोड़ें; इसी तरह अच्छी नीयत के साथ ईद की नमाज़। त: और मिना में ईद की कुर्बानी न छोड़ें, और इसी तरह ईद की नमाज़ नेक नीयत से है। फ़: हमारे नज़दीक ईद की नमाज़ और कुर्बानी दोनों एक निवासी धनवान व्यक्ति पर वाजिब हैं, जबकि शाफ़ई इसे सुन्नत कहते हैं। इसलिए, माननीय लेखक ने अपने मज़हब के अनुसार इन्हें सुन्नतों में गिना है। लेकिन यहाँ ध्यान देने वाली बात यह है कि हमारे विद्वान अल-ज़खीरा, अल-मुहीत आदि ग्रंथों में स्पष्ट करते हैं कि मिना में ईद की नमाज़ बिलकुल नहीं है क्योंकि लोग हज के कार्यों में व्यस्त होते हैं। अल्लामा इब्राहिम हलबी ने कहा: हाँ, सर्वसम्मति से ईद की नमाज़ न पढ़ी जाए। अल्लामा अली क़ारी ने कहा: उम्मत के विद्वानों की इस पर सहमति है, जैसा कि रद अल-मुहतार में है। इसे समझें और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है। (जैसा कि रद अल-मुहतार में है, इसलिए विचार करें, और अल्लाह तआला बेहतर जानता है। -त) वही कुर्बानी पसंदीदा मज़हब में निवासी पर वाजिब है, जैसे मक्का और मिना के लोग भले ही वे एहराम की स्थिति में हों, जबकि मुसाफिर (यात्री) से इसकी मांग नहीं है।

म: और सुन्नत: इसके करने में सवाब (पुण्य) है, इसे छोड़ने वाले पर अज़ाब (दंड) नहीं है। त: और सुन्नत के करने में सवाब है, छोड़ने में अज़ाब नहीं। फ़: मगर सुन्नत-ए-मुअक्कदा के छोड़ने में कड़ी फटकार होगी, और अल्लाह की पनाह, शफ़ाअत (सिफारिश) से वंचित होने की बात भी आई है। बल्कि शोधकर्ता कहते हैं कि इनके छोड़ने में थोड़ा सा गुनाह भी है, हालाँकि यह वाजिब छोड़ने के बराबर नहीं है। इन्हीं कारणों से सुन्नत मुस्तहब (पसंदीदा) से अलग है; अन्यथा पाठ में जो भी उल्लेख किया गया है वह मुस्तहब पर भी लागू होता।

म: आदमी की पकड़ केवल उस फ़र्ज़ की उपेक्षा करने पर होती है जो विस्तार से बताया गया हो। त: इसी तरह, आदमी पर पकड़ फ़र्ज़ छोड़ने में है जो विस्तार से आया है। श: यानी जिसके प्रमाण में कोई अस्पष्टता या कठिनाई नहीं है; अतः शब्द 'सिफ़ह' [1] स्पष्ट करता है कि सभी फ़र्ज़ ऐसे ही होते हैं। और संदर्भ से ज़ाहिर है कि पकड़ से मुराद अज़ाब (दंड) है, वरना सुन्नतों को छोड़ने पर जो फटकार होती है, वह स्वयं एक प्रकार की पकड़ और पूछताछ है।

[1] जो कोई इस पर शोध करना चाहता है उसे अल-बहर अल-राइक़ और रद अल-मुहतार और अन्य पुस्तकों का अध्ययन करना चाहिए। (12 मिन्हु - म) [2] संभव है कि इससे मुराद वह हो जो विस्तार से बीत चुका है; इस आधार पर यह हज के उन फ़राइज़ की ओर संकेत होगा जो लेखक के

मज़हब के अनुसार वाजिबात में गुज़रे हैं। लेकिन बातचीत के प्रवाह से जो अर्थ निकलता है वह यह है कि यहाँ सामान्य सुन्नत और फ़र्ज़ का हुक्म बयान करना उद्देश्य है; इसलिए हमने उपर्युक्त व्याख्या की है। (12 मिन्हु - म)

जो इसकी तहकीक (शोध) चाहता है, उसे चाहिए कि वह अल-बहर अल-राइक़ और रद अल-मुहतार आदि पुस्तकों को देखे। (12 मिन्हु - त) मुमकिन है कि इससे मुराद वह हो जो विस्तार से गुज़र चुका है; इस बिना पर हज के उन फ़राइज़ की तरफ इशारा होगा जो मुसन्निफ़ (लेखक) के मज़हब के मुताबिक़ वाजिबात में गुज़रे लेकिन सुक-ए-कलाम (बातचीत के प्रवाह) से जो समझा जा रहा है वह यह है कि यहाँ मुतलक़ (सामान्य) सुन्नत और फ़र्ज़ का हुक्म बयान करना मक़सूद है इसी लिए हमने मज़कूरा (उपर्युक्त) तफ़्सीर की है। (12 मिन्हु - त)

1. रद अल-मुहतार, किताब अल-हज्ज, मिना में ईद और जुमे की नमाज़ के हुक्म का विवरण, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, 2/200।

पेज 803 / 836

م: وفي منى لا تترك الأضحية كذا صلوة العيد مع الحسن النية ت: اور منی میں عید کی قربانی نہ چھوڑ، یونہی عید کی نماز نیک نیت ہے۔ ف: ہمارے نزدیک نماز عید و قربانی دونوں مقیم مالدار پر واجب ہیں اور شافعیہ سنت کہتے ہیں، لہذا مصنف علام نے اپنے مذہب کے موافق انہیں سنن میں گنا، مگر یہاں واجب التنبیہ یہ بات ہے کہ ہمارے علماء ذخیرہ و محیط و غیرہما میں تصریح فرماتے ہیں کہ منی میں نماز عید اصلاً نہیں کہ وہاں لوگوں کو امورِ حج سے فرصت نہیں ہوتی۔ علامہ ابراہیم حلبی نے فرمایا: ہاں بالاتفاق نماز عید نہ پڑھے۔ علامہ علی قاری نے فرمایا: اس پر تمام علمائے امت کا اجماع ہے کذا فی ردالمحتار فافھم واللہ تعالی اعلم (جیسا کہ ردالمحتار میں ہے لہذا غور کیجئے، واللہ تعالی اعلم ت) وہی قربانی وہ مذہب راجح میں مقیم پر واجب ہے جیسے اہلِ مکہ و منی اگرچہ احرام میں ہوں، اور مسافر سے تو اس کا مطالبہ ہی نہیں۔

م: وسنة في فعلها الثواب ليس على تاركها العقاب ت: اور سنت کے کرنے میں ثواب ہے چھوڑنے میں عذاب نہیں۔ ف: مگر سننِ مؤکدہ کے ترک میں سخت ملامت ہوگی، اور عیاذ باللہ شفاعت سے محرومی بھی وارد۔ بلکہ محققین فرماتے ہیں ان کے ترک میں تھوڑا سا گناہ بھی ہے اگرچہ نہ ترک واجب کے برابر۔ انہی وجوہ سے سنت کو مستحب سے امتیاز ہے ورنہ جتنی بات متن میں گزری مستحب کو بھی شامل۔

م: وانما يؤخذ المرء على اهمال فرض قد أتى مفصلا ت: یوں ہی ہے کہ آدمی پر مواخذہ فرض چھوڑنے میں ہے جو بتفصیل وارد ہوا۔ ش: یعنی جس کے ثبوت میں کوئی جمال و اشکال نہیں توصف عہ۱ کاشفہ ہے کہ فرض سب ایسے ہوتے ہیں اور بقرینہ سباق ظاہر کہ مواخذہ سے مراد عذاب ہے ورنہ ملامت کہ ترکِ سنن پر ہوگی خود گرفت و مواخذہ ہے۔

عہ۱: من اراد تحقیق ذلك فعلیه بالبحر الرائق وردالمحتار وغیرهما من الاسفار ۱۲ منہ (م) عہ۲: یمکن ان یراد به ماآتی ای سبق بیانه مفصلا فعلی هذا یکون اشارة الی فروض الحج المارّة فی الواجبات علی مذهب المصنف لکن الذی یعطیه سوق الکلام ان المقصود بیان حکم السنة والفرض مطلقا فلذا فسرنا ه بما فسرنا ۱۲منه (م)

جو اس کی تحقیق چاہتا ہے اسے چاہئے کہ وہ بحر الرائق و ردالمحتار وغیرہ کتب کو دیکھے ۱۲ منہ (ت) ممکن ہے اس سے مراد وہ ہو جو مفصلاً گزرا ہے اس بناء پر حج کے ان فرائض کی طرف اشارہ ہوگا جو مصنف کے مذہب کے مطابق واجبات میں گزرا لیکن سوقِ کلام جو مستفاد ہورہا ہے وہ یہ ہے کہ یہاں مطلق سنت اور فرض سے کا حکم بیان کرنا مقصود ہے اسی لیے ہم نے مذکورہ تفسیر کی ہے ۱۲ منہ (ت)

1 ردالمحتار کتاب الحج مطلب في حکم صلوة العید والجمعیة فی منی مصطفٰی البابی مصر ۲/۲۰۰

Fatawa Razawiyya, Volume 10

F: Shafi'is do not distinguish between 'Wajib' (obligatory) and 'Fard' (mandatory). According to us, they are two separate things and abandonment of both warrants punishment, though less for Wajib and more for Fard. And Allah is our refuge.

M: This is a set of famous Sunnahs, grander than the sun at noon. T: These are a few famous Sunnahs, greater in majesty than the midday sun. F: Besides these: Going from Makkah al-Mukarramah to Mina on the 8th, going from Mina to Arafat on the 9th after sunrise, bathing there, spending the night in Muzdalifah, going from there to Mina before sunrise on the 10th. Staying there during the nights of the days of Ramy al-Jamarat, and stopping at Wadi Muhassab[1] while leaving for Makkah al-Mukarramah from there, etc., all these are Sunnah al-Mu'akkadah (emphasized Sunnahs). And Allah Almighty knows best.

M: Al-Fidya (The Ransom) T: Explanation of Penalties.

M: That which invalidates the Hajj requires a 'Badana' (camel/cow), and in others, sacrificing a good sheep. T: Hajj becomes invalid (Fasid) due to sexual intercourse under the mentioned conditions, and we have explained the difference of opinion of the Shafi'is in detail; according to them 'Badana' refers only to a camel, while according to us[2] it also includes a cow. A 'good sheep' means it should be free from those defects which are impermissible for sacrifice (Udhiyya) and are mentioned in detail in Fiqh books. F: These two rules mentioned by the author are not according to our school of thought (Madhhab). According to us, sexual intercourse before 'Wuquf' (standing at Arafat) does not invalidate the Hajj nor does it necessitate a 'Badana', but after 'Wuquf' and before shaving (Halq) and Tawaf, a 'Badana' becomes necessary. (Hajj)

1: This valley is connected to the inhabited area of Makkah al-Mukarramah. There are two alleys adjacent to the cemetery of Makkah al-Mukarramah i.e., Jannat al-Ma'la; opposite them, on the left hand while going to Mina, there are some hills above the valley floor. The entire valley between these narrow passes and hills is Wadi Muhassab. When going to Makkah al-Mukarramah from Mina after performing Ramy al-Jamarat, it is necessary to stop here, and abandoning it without an excuse is bad. The superior method will be explained in 'Takmila' (Supplement), and if more is not possible, it is sufficient to stop the ride for a while and pray. (12 Minhu - Author) 2: So wherever 'Badana' becomes necessary, according to them (Shafi'is), specifically a

camel will be obligatory; according to us, a cow will also suffice, as stated in 'Al-Fath' (As clarified in Fath al-Qadeer. T). (12 Minhu - Author)

फतावा रज़विया, जिल्द दहम (10)

फ़ (फ़ायदा): शाफ़ई मज़हब में 'वाजिब' और 'फ़र्ज़' में कोई अंतर नहीं किया जाता। हमारे यहाँ ये दो अलग चीज़ें हैं और दोनों को छोड़ने पर सज़ा का हक़ बनता है, हालाँकि वाजिब छोड़ने पर कम और फ़र्ज़ छोड़ने पर ज़्यादा। अल्लाह की पनाह।

म (अरबी): ये प्रसिद्ध सुन्नतों का एक समूह है, जो दोपहर के सूरज से भी अधिक स्पष्ट और महान हैं। त (अनुवाद): ये कुछ प्रसिद्ध सुन्नतें हैं, जिनकी महिमा दोपहर के सूरज से भी बढ़ कर है। फ़: इनके अलावा: आठवीं तारीख़ को मक्का मुअज़्ज़मा से मिना जाना, नौवीं को सूरज निकलने के बाद मिना से अरफ़ात जाना, वहाँ ग़ुस्ल करना, मुज़दल्फ़ा में रात गुज़ारना, दसवीं को सूरज निकलने से पहले वहाँ से मिना जाना। वहाँ रमी-ए-जमार के दिनों में रातें गुज़ारना, और वहाँ से मक्का मुअज़्ज़मा जाते समय वादी-ए-मुहस्सब^1 में उतरना वग़ैरह, ये सब सुन्नत-ए-मुअक्कदा हैं। और अल्लाह तआला बेहतर जानता है।

म: अल-फ़िदया (जुर्माना/क़ुर्बानी) त: जुर्माने का बयान।

म (अरबी): जो चीज़ हज को फ़ासिद (अमान्य) कर दे उसमें 'बदना' (ऊँट या गाय की क़ुर्बानी) लाज़िम है, और उसके अलावा किसी चीज़ में एक अच्छी भेड़/बकरी की ज़बह काफ़ी है। त: ज़िक्र की गई शर्तों के साथ संभोग (जिमाअ) से हज फ़ासिद हो जाता है, और हमने शाफ़ई मज़हब के मतभेद को विस्तार से बयान कर दिया है; उनके यहाँ 'बदना' केवल ऊँट को कहते हैं, हमारे^2 यहाँ इसमें गाय भी शामिल है। अच्छी भेड़/बकरी का मतलब है कि वह उन दोषों से मुक्त हो जो 'उज़हिया' (क़ुर्बानी) में मना हैं और फ़िक़्ह की किताबों में विस्तार से बताए गए हैं। फ़: लेखक ने जो ये दो नियम बताए हैं, वे हमारे मज़हब के अनुसार नहीं हैं। हमारे नज़दीक 'वक़ूफ़' (अरफ़ात में ठहरने) से पहले संभोग करने से हज फ़ासिद नहीं होता और न ही 'बदना' लाज़िम होता है, बल्कि वक़ूफ़ के बाद और सर मुँडाने (हलक़) व तवाफ़ से पहले 'बदना' लाज़िम होता है। (हज)

1: यह वादी मक्का मुअज़्ज़मा की आबादी से जुड़ी हुई है। मक्का मुकर्रमा के क़ब्रिस्तान यानी जन्नत-उल-मुअल्ला के पास दो गलियाँ हैं; मिना जाते समय उनके सामने बाईं ओर घाटी के तल से ऊपर कुछ पहाड़ियाँ हैं। उन तंग रास्तों और पहाड़ियों के बीच की पूरी घाटी 'वादी-ए-मुहस्सब' है। जब मिना से रमी-ए-जमार करके मक्का मुअज़्ज़मा जाएँ तो यहाँ ठहरना ज़रूरी है और बिना किसी मज़बूरी के इसे छोड़ना बुरा है। इसका सबसे उत्तम तरीक़ा 'तकमिला' में आएगा, और अगर ज़्यादा

मुमकिन न हो तो इतना काफ़ी है कि सवारी रोककर थोड़ी देर दुआ कर लें। (१२ मिन्हु - लेखक) 2: तो जहाँ 'बदना' अनिवार्य होगा, उनके(शाफ़इयों के) अनुसार विशेष रूप से ऊँट वाजिब होगा; हमारे नज़दीक गाय भी पर्याप्त होगी, जैसा कि 'अल-फ़तह' (फ़तहुल क़दीर) में स्पष्ट किया गया है। (१२ मिन्हु - लेखक)

पेज 804 / 836

ف: شافعیہ واجب و فرض میں فرق نہیں کرتے۔ ہمارے نزدیک وہ دو چیزیں جدا جدا ہیں اور دونوں کے ترک پر استحقاق عذاب اگرچہ واجب میں کم فرض میں زیادہ۔ والعیاذ باللہ۔

م: ذی جملۃ من السنن الشھیرۃ اجل من شمس لدی الظھیرۃ ت: یہ چند مشہور سنتیں ہیں، مہر نیمروز سے جلالت میں افزوں۔ ف: ان کے سوا۔ آٹھویں تاریخ مکہ معظمہ سے منی، نویں کو بعد طلوع شمس منی سے عرفات جانا، وہاں نہانا، مزدلفہ میں رات بسر کرنا، دسویں کو وہاں سے قبل طلوع شمس منی کو جانا۔ وہاں ایام رمی جمار میں راتوں کو رہنا، مکہ معظمہ کو یہاں سے جاتے وادی محصب ع1 میں اترنا وغیرہ ذلک کہ یہ سب سنن مؤکدہ ہیں۔ واللہ تعالیٰ اعلم۔

م: الفدیۃ ت: جرمانہ کا بیان

م: ما یفسد الحج ففیہ بدنۃ و فی سواہ ذبح شاۃ حسنۃ ت: حج فاسد ہو جاتا ہے جماع سے بشرائط مذکورہ، اور ہم نے شافعیہ کا اختلاف بہ تفصیل بیان کر دیا، بدنہ ان کے یہاں صرف اونٹ کو کہتے ہیں ہمارے ع2 یہاں گائے کو بھی شامل، عمدہ بکری یہ کہ ان عیوب سے پاک ہو جو اضحیہ میں ناجائز ہیں اور فقہ میں بہ تفصیل مذکور۔ ف: یہ دونوں قاعدے کہ جناب مصنف نے ذکر کیے ہمارے مذہب کے مطابق نہیں جماع قبل الوقوف سے ہمارے نزدیک حج فاسد اور بدنہ لازم نہیں اور بعد الوقوف قبل الحلق و الطواف سے بدنہ لازم۔ حج

ع1: یہ وادی مکہ معظمہ کی آبادی سے ملی ہوئی ہے۔ مقبرہ مکہ مکرمہ یعنی جنت المعلی کے متصل دو کوچے ہیں ان کے مقابل منی کو جاتے ہوئے بائیں ہاتھ پر بطن وادی سے اوپر کچھ پہاڑیاں ہیں ان کو بھیچوں اور پہاڑیوں کے درمیان جتنی وادی رہی وہ وادی محصب ہے جب منی

سے رمی جمار کر کے مکہ معظمہ جائیں یہاں ٹھہرنا ضرور اور بلا عذر اس کا ترک بُرا، افضل طریقہ اس کا تکملہ میں آئے گا اور زیادہ نہ ہوسکے تو اسی قدر کافی کہ سواری روک کر کچھ دیر دعاء کرلیں (۱۲منہ) ع2: تو جہاں بدنہ لازم آئے گا ان کے نزدیک خاص اونٹ واجب ہوگا ہمارے نزدیک گائے بھی کفایت کر جائے گی کما نص علیہ فی الفتح (جیسا کہ فتح القدیر میں اس پر وضاحت کی گئی ہے۔ ت) (۱۲منہ۔)

Fatawa Razawiya, Volume 10

...not invalid.

Text (M): For every hair, a 'Mudd' of food, and for others, it is compensated by fasting. Translation (T): For every hair, the penalty is one-fourth of a 'Sa' of grain, and for anything beyond that, the penalty is fasting. Note (F): There is much detail regarding the penalty for hair etc. according to us, the explanation of which would lead to prolixity. In case of need, one should inquire from the scholars.

Text (M): And besides these which have been mentioned, their rulings are written in places other than this treatise. Translation (T): Rulings for things other than those mentioned here are inscribed elsewhere than in this treatise.

Text (M): This is only a summary to make it easy for one who comes hoping to memorize it. And Allah Almighty knows best.

Text (M): The Addition (Al-Ziyadah) Translation (T): Description of the pilgrimage to the pure tomb of the Master of Messengers, may Allah Almighty's peace and blessings be upon him.

Text (M): And when you have performed Hajj, intend to visit the tomb of Taha (the Prophet), for there is good news for you. Translation (T): And when you have completed the Hajj, then intend to visit the tomb of Taha (peace and blessings of Allah be upon him), for there is glad tidings for you. Note (F): Scholars differ whether one should perform Hajj first or visit the shrine. In 'Lubab' it is written: In voluntary (Nafl) Hajj one has a choice, and in obligatory (Fard)...

Footnote: 'Mudd' according to both Shafi'is and Hanafis is one-fourth of a 'Sa', but there is a difference in the 'Sa'. We say it is 8 Ratal, so a 'Mudd' is 2 Ratal, which is 5 and 3/11 Ratal Tola - 1/2. Upon investigation, a 'Sa' is 270 Tolas. So, according to our calculation in Bareilly's 'Seer' (which is equal to 100 rupees weight), one 'Sa' is five Mashas and five Rattis more than three Seers minus half a quarter-Seer. And half a 'Sa', which is the Sadaqah al-Fitr for one person from wheat, and the Fidyah for one day's fast, and the share of one poor person in expiation, is one Seer, seven Chhatank, two Mashas, and six and a half Rattis. (Here the text is somewhat abbreviated - 12 Sharaf Qadri). According to Rampur's 'Seer' which is 96 rupees weight (i.e., exactly ninety Tolas - Fatawa Razawiya), the calculation is very straightforward; a 'Sa' is exactly three Seers. According to Delhi's 'Seer' which is 80 rupees weight (i.e., 75 Tolas - 12 Fatawa Razawiya), the 'Sa' is 3-3/5, i.e., one-tenth of a

Seer more than three and a half Seers, and half a 'Sa' is one-fifth of a Seer less than two Seers. This calculation should be remembered; by the grace of Allah Almighty, it is a perfect investigation. And Allah, Glorified and Exalted, knows best. - 12 [Author]

फतावा रज़विया, जिल्द 10

...अमान्य नहीं।

मूल (म): प्रत्येक बाल के लिए, भोजन का एक 'मुद्द', और अन्य के लिए रोज़ा रखकर भरपाई की जाती है। अनुवाद (त): प्रत्येक बाल के लिए अनाज से एक चौथाई 'सा' का जुर्माना है, और इसके अलावा अन्य चीज़ों का जुर्माना रोज़े हैं। विशेष (फ़): बाल आदि के जुर्माने में हमारे यहाँ बहुत विस्तार है, जिसका वर्णन करने से बात बहुत लंबी हो जाएगी। ज़रूरत के समय विद्वानों से पूछ लें।

मूल (म): और इनके अलावा जिनका उल्लेख किया गया है, उनके नियम इस शोधपत्र के बाहर लिखे गए हैं। अनुवाद (त): इन उल्लेखित चीज़ों के अलावा अन्य चीज़ों के नियम इस शोधपत्र के बाहर लिखे हुए हैं।

मूल (म): यह केवल एक संक्षिप्त विवरण है ताकि उसे याद करने की आशा रखने वाले के लिए आसानी हो। और अल्लाह सबसे बेहतर जानता है।

मूल (म): अनुपूरक (अज़-ज़ियादा) अनुवाद (त): रसूलो के सरदार (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की अत्यंत पवित्र मज़ार की ज़ियारत (दर्शन) का वर्णन।

मूल (म): और जब आप हज कर लें, तो ताहा (नबी) की कब्र की ज़ियारत का इरादा करें, क्योंकि आपके लिए खुशखबरी है। अनुवाद (त): और जब आप हज कर चुकें, तो ताहा (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की कब्र की ज़ियारत का इरादा करें कि आपके लिए खुशखबरी है। विशेष (फ़): विद्वानों में मतभेद है कि पहले हज करें या ज़ियारत। 'लुबाब' में है: नफ़्ल हज में विकल्प है, और फ़र्ज़...

पाद-टिप्पणी: शाफ़ई और हनफ़ी दोनों के अनुसार 'मुद्द' एक चौथाई 'सा' है, लेकिन 'सा' की मात्रा में मतभेद है। हम इसे 8 रतल कहते हैं, तो एक 'मुद्द' 2 रतल हुआ, जो 5-3/11 रतल तोला-1/2 है। गहन शोध के अनुसार, एक 'सा' 270 तोले का होता है। तो हमारे हिसाब से बरेली के'सेर' के अनुसार (जो सौ रुपये के वजन के बराबर है), एक 'सा' पौने तीन सेर से पांच माशे और पांच रत्ती अधिक है। और आधा 'सा', जो गेहूं से एक व्यक्ति का सदका-ए-फित्र है और एक दिन के रोज़े का फिद्या है और कफ़्फ़ारा में एक गरीब का हिस्सा है, वह एक सेर सात छटाक दो माशे और साढ़े छह रत्ती है। (यहाँ इबारत में कुछ संक्षिप्तता की गई है - 12 शरफ कादरी)। रामपुर के'सेर' के अनुसार जो 96 रुपये के वजन का है (यानी पूरे नब्बे तोले का - फतावा रज़विया), हिसाब बहुत सीधा है; एक

'सा' पूरे तीन सेर का हुआ। दिल्ली के'सेर' के अनुसार जो 80 रुपये के वजन का है (यानी 75 तोले है - 12 फतावा रज़विया), 'सा' 3-3/5 हुआ, यानी साढ़े तीन सेर से सेर का दसवां हिस्सा अधिक, और आधा 'सा' यानी दो सेर से सेर का पांचवां हिस्सा कम। यह हिसाब याद रखना चाहिए, अल्लाह की कृपा से यह पूर्ण शोध है। और अल्लाह सुब्हानहू तआला सबसे बेहतर जानता है। - 12 [लेखक]

فاسد نہیں۔

م: في كل شعرة من الطعام مد ويعدى الغير بالصيام ت: ہر بال میں اناج سے چہارم صاع ہے اور ماورا کا جرمانہ روزے۔ ف: بال وغیرہ کے جرمانہ میں ہمارے یہاں بہت تفصیل ہے جس کا بیان موجب تطویل ہے وقت حاجت علماء سے دریافت کرلیں۔

م: وما عدا هذى التى قد ذكرت احكامها فيما سواها سطرت ت: ان مذکورات کے سوا اور چیزوں کے احکام اس رسالہ کے ماورا میں مسطور ہیں۔

م: وانما ذي جملة ليسهلا لمن اتي لحفظہ مؤملا ت: اور یہ تو چند باتیں تاکہ آسانی ہو اس کے لیے جو اسے یاد کرنے کی امید میں آئے۔ واللہ تعالٰی اعلم

م: الزيادة ت: زیارت سراپا طہارت سید المرسلین صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا بیان

م: واقصداذا حججت للزيارة لقبرطه فلك البشارة ت: اور جب حج کرچکے تو زیارت قبر طہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا قصد کر کہ تیرے لیے خوشخبری ہے۔ ف: علماء مختلف ہیں کہ پہلے حج کرے یا زیارت، لباب میں ہے: حج نفل میں مختار ہے، اور فرض

عہ: مد شافعیہ و حنفیہ دونوں کے نزدیک چہارم صاع ہے مگر صاع میں اختلاف ہے۔ ہم ۸ رطل کا کہتے ہیں تو مد ۲ رطل ہوا وہ ۵ - ۳/۱۱ رطل توا - ۲/۱ ہوا، اور صاع عندالتحقیق دو سو ستر تولے کا ہے۔ تو ہمارے حساب پر بریلی کے سیر سے کہ سو روپیہ بھر کا ہے، ایک صاع آدھ پاؤ کم تین سیر سے ۵ ماشے ۵ رتی زیادہ، اور نیم صاع کہ وہ گندم سے ایک آدمی کے فطر کا صدقہ اور ایک روزہ کا فدیہ اور کفارہ میں ایک مسکین کا حصہ یعنی ایک سیر سات چھٹانک دو ماشے

ساڑھے چھ رتی (یہاں عبارت میں کچھ اختصار کیا گیا ہے ۱۲ شرف قادری) رامپور کے سیر سے کہ ۹۶ روپے بھر کا ہے (یعنی پورے نوے تولے کا فتاویٰ رضویہ) حساب بہت سیدھا ہے پورے تین سیر کا صاع ہوا دہلی کے سیر سے کہ ۸۰ روپے بھر کا ہے (یعنی ۷۵ تولے ہے ۱۲ فتاویٰ رضویہ) صاع ۳ - ۳/۵ ہوا یعنی ساڑھے تین سیر سے دسواں حصہ سیر کا زائد اور نیم صاع یعنی دو سیر سے پانچواں حصہ سیر کا کم، یہ حساب یاد رکھنا چاہئے بحمد اللہ تعالی کمالِ تحقیق ہے۔ واللہ سبحانہ تعالٰی اعلم ۱۲ منہ

Fatawa Razawiya, Volume 10

...if it is so, then perform Hajj first. However, if Medina Tayyiba lies on the path, then prioritizing the visit (Ziyarat) is mandatory, "Intahi" (End of quote). That is, passing by without Ziyarat is a sign of disrespect; and the humble author mentions that the instruction of Allama Subki is very pleasing: that one should perform Hajj after becoming pure, so that the visitation of the Pure One is attained in a state of purity.

Become pure first, then cast your gaze upon that Pure Being. (First become pure, and then look at that pure entity).

Note (F): In the author's words, there is a clear indication that the journey to Medina Tayyiba should be specifically with the intention of the noble Ziyarat. Indeed, this matter is commendable in Sharia, and the noble Ziyarat is the greatest objective. In the Hadith, the words (Note) *'La tu'malu (f) illa ziyarati'* (2) are present, meaning:

Note (Ah) 1: Grand Benefit: This Hadith is authentic.

[Boxed Text] *Arabic:* رواه الطبراني الكبير والدارقطني في الامالي وابوبكر المقرى في المعجم والحافظ السلفي وابن عساكر وابو نعيم والحافظ ابو على وسعيد بن السكن البغدادي في كتاب السنن الصحاح عن عبد اللہ بن عمر رضي اللہ تعالى عنهما *Urdu Translation:* It was narrated by al-Tabarani in 'al-Kabir', al-Daraqutni in 'al-Amali', Abu Bakr al-Muqri in 'al-Mu'jam', al-Hafiz al-Silafi, Ibn Asakir, Abu Nu'aym, al-Hafiz Abu Ali, and Sa'id ibn al-Sakan al-Baghdadi in 'Kitab al-Sunan al-Sihah' from Abdullah bin Umar (may Allah be pleased with them both). (T)

Imam Ibn al-Sakan indicates that there is a consensus among the leaders of Hadith regarding the authenticity of this Hadith. In the second Hadith, it is stated:

Arabic: ٣- رواه العقيلى والبيهقى وابن عساكر۔ *Urdu Translation:* زارني متعمداً (He who) visits me with specific intent; it was narrated by al-Uqayli, al-Bayhaqi, and Ibn Asakir. (T)

In the third Hadith, it is stated:

Arabic: ٤۔ اخرج ابن ابى الدنيا *Urdu Translation:* زارني بالمدينة محتسبا (He who) visits me in Medina seeking reward... (continued on the next page)

Footnotes: 1. *Lubab and Sharh Lubab with Irshad al-Sari*, Chapter on Visiting the Master of Messengers, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, pp. 35-334. 2. *Al-Mu'jam al-Kabir*, narrated from Abdullah ibn Umar, Hadith 13149, Maktabah al-Faysaliyyah, Beirut, 12/291; *Kanz al-Ummal*, Hadith 3928, Mu'assasah al-Risalah, Beirut, 12/256. 3. *Shu'ab*

al-Iman, Hadith 4152, Chapter on Manasik, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 3/288. 4. *Shu'ab al-Iman*, Hadith 4151, Chapter on Manasik, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 3/290.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दहम

...यदि ऐसा हो, तो पहले हज करें। लेकिन, अगर मदीना तय्यिबा रास्ते में आए, तो ज़ियारत को प्राथमिकता देना अनिवार्य है "इन्तही" (उद्धरण समाप्त)। यानी बिना ज़ियारत के गुज़र जाना गुस्ताख़ी (अनादर) है; और फकीर (लेखक) कहता है कि अल्लामा सुबकी का यह इरशाद बहुत प्यारा है कि पहले हज करे ताकि पाक (पवित्र) होकर पाक की ज़ियारत मिले।

पाक शो अव्वल व पस दीदह बरां पाक अंदाज़ (पहले पवित्र हो जाओ और फिर उस पवित्र हस्ती पर नज़र डालो)।

नोट (फ़): लेखक के कलाम में स्पष्ट संकेत है कि मदीना तय्यिबा का सफर विशेष रूप से पाक ज़ियारत के इरादे से होना चाहिए और वास्तव में यह मामला शरीयत में प्रशंसनीय है और पाक ज़ियारत सबसे बड़ा उद्देश्य है। हदीस में शब्द (नोट) 'ला तुअमलु *(फ़)* इल्ला ज़ियारातीं' (२) मौजूद हैं, जिसका अर्थ है:

नोट (अह) १: महान लाभ: यह हदीस सही (प्रामाणिक) है।

[बॉक्स वाला पाठ] अरबी: رواه الطبراني الكبير والدارقطني في الامالي وابوبكر المقرى في المعجم والحافظ السلفي وابن عساكر وابو نعيم والحافظ ابو على وسعيد بن السكن البغدادي في كتاب السنن الصحاح عن عبد الله بن عمر رضي الله تعالى عنهما उर्दू अनुवाद का हिंदी: इसे तबरानी ने 'अल-कबीर' में और दाराकुतनी ने 'अल-अमाली' में, अबू बक्र अल-मुकरी ने 'अल-मुअजम' में, हाफ़िज़ अल-सिलाफी, इब्न असाकिर, अबू नुअइम, हाफ़िज़ अबू अली और सईद बिन अल-सकन अल-बगदादी ने 'किताब अल-सुनन अल-सिहाह' में हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हुमा) से रिवायत किया है। (त)

इमाम इब्न अल-सकन इशारा करते हैं कि इस हदीस की सेहत (प्रामाणिकता) पर हदीस के इमामों की सर्वसम्मति (इजमा) है। दूसरी हदीस में है:

अरबी: ٣- رواه العقيلى والبيهقى وابن عساكر۔ زارني متعمداً उर्दू अनुवाद का हिंदी: (जो) विशेष इरादे के साथ मेरी ज़ियारत करे; इसे उकैली, बैहक़ी और इब्न असाकिर ने रिवायत किया। (त)

तीसरी हदीस में है:

अरबी: اخرج ابن ابی الدنیا ٤۔ زارني بالمدينة محتسبا उर्दू अनुवाद का हिंदी: (जो) सवाब (पुण्य) की नीयत से मदीना में मेरी ज़ियारत करे... (बाकी अगले पन्ने पर)

पाद-लेख: 1. लुबाब और शरह लुबाब मा इरशाद अल-सारी, सय्यदुल मुर्सलीन की ज़ियारत का अध्याय, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरूत, पृष्ठ 35-334। 2. मुअजम कबीर, अब्दुल्लाह इब्न उमर से रिवायत, हदीस 13149, मकतबा अल-फैसलिया, बेरूत, 12/291; केंज़ अल-उम्माल, हदीस 3928, मुअस्ससा अल-रिसाला, बेरूत, 12/256। 3. शुअ़ब अल-ईमान, हदीस 4152, मनासिक का अध्याय, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरूत, 3/288। 4. शुअ़ब अल-ईमान, हدیس 4151, मनासिक का अध्याय, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरूत, 3/290।

ہو تو پہلے حج ، مگر مدینہ طیبہ راہ میں آئے تو تقدیم زیارت لازم اانتھی " یعنی بے زیارت گزر جانا گستاخی، اور فقیر کہ علامہ سبکی کا یہ ارشاد بہت بھایا پہلے حج کرے تاکہ پاک کی زیارت پاک ہو کر ملے۔

پاک شو اول و پس دیدہ براں پاک انداز (پہلے پاک ہو اور پھر اس پاک ہستی پر نظر ڈال)

ف: جناب مصنف کے کلام میں صاف اشارہ ہے کہ سفر مدینہ طیبہ خاص بقصد زیارت شریفہ ہو اور بیشک یہ امر شرعاً محمود اور زیارت اقدس اعظم مقصود اور حدیث میں لفظ عہ لا تعملہ (ف) الا زیارتی ۲ موجود یعنی

عہ ۱: فائدہ جلیلہ: یہ حدیث صحیح ہے [عبارت در جدول] رواہ الطبراني الکبیر والدارقطني في الامالي وابوبکر المقری في المعجم والحافظ السلفي وابن عساکر وابو نعیم والحافظ ابو علی وسعید بن السکن البغدادي في کتاب السنن الصحاح عن عبد اللہ بن عمر رضي اللہ تعالی عنہما۔ اس کو طبرانی نے کبیر اور دار قطنی نے امالی میں ، ابو بکر مقری نے معجم میں ، حافظ سلفی، ابن عساکر، ابو نعیم، حافظ ابو علی اور سعید بن سکن بغدادی نے سنن اور صحاح میں حضرت عبد اللہ بن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے۔ (ت)

امام ابن سکن اشارہ فرماتے ہیں کہ اس حدیث کی صحت پر ائمہ حدیث کا اجماع ہے۔ دوسری حدیث میں ہے: زارني متعمداً ۳- رواہ العقیلی والبیہقی وابن عساکر۔ بالقصد میری زیارت کرے، اس کو عقیلی، بیہقی اور ابن عساکر نے روایت کیا۔ ت)

تیسری حدیث میں ہے: زارني بالمدينة محتسبا ٤۔ اخرج ابن ابی الدنیا ثواب کی نیت سے میری زیارت کے لیے مدینے میں (باقی اگلے صفحے پر)

---

1 لباب وشرح لباب مع ارشاد الساری باب زیارة سید المرسلین دار الکتاب العربي بیروت ص ۳۵-۳۳۴ 2 معجم کبیر، مروی از عبد اللہ ابن عمر حدیث ۱۳۱۴۹ مکتبہ فیصلیہ بیروت ۱۲/ ۲۹۱، کنز العمال حدیث ۳۹۲۸ ۳ موسسة الرساله بیروت ۱۲/ ۲۵۶ 3 شعب الایمان ، حدیث ۴۱۵۲ باب المناسک دار الکتاب العلمیة بیروت ۳/ ۲۸۸ 4 شعب الایمان ، حدیث ۴۱۵۱ باب المناسک ، دار الکتاب العلمیة بیروت ۳/ ۲۹۰

Fatawa Radawiyya Volume 10

...he has no other work but my visitation. Imam ibn al-Humam states: In my view, it is better that the journey be undertaken specifically with the intent of being present [there]. (Its narration was recorded by Ibn Abi al-Dunya, Bayhaqi, and Ibn al-Jawzi from Hazrat Anas bin Malik (may Allah be pleased with him). - T)

In the fourth Hadith, it is stated: "He intended me in my mosque"[1] - recorded in 'Jadhb al-Qulub'. (One who comes to my mosque with the intention of visiting me. This is mentioned in Jadhb al-Qulub. - T)

I say: Moreover, all those Hadiths in which there is encouragement and emphasis on visiting the noble grave, and warnings and threats for abandoning it, are witnesses and testimonies to our claim. It is an amazing thing that a matter which the Lawgiver (peace and blessings of Allah be upon him) emphasizes and for whose neglect He issues a warning, the intent for it should be declared unlawful. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Actions are but by intentions"[2]. (The outcome of all deeds depends on intentions. - T). What a strange pious deed it is whose intention incurs punishment! There is no power or might except with Allah.

As for the Hadith "Do not travel except [to three mosques]", the leaders of the religion have clarified that the prohibition is specifically for travelling with the intention of going to a mosque other than these three. Otherwise, the words of the Hadith definitely do not prevent traveling for purposes such as seeking knowledge, reform of Muslims, Jihad against enemies, spreading the religion, lawful trade, meeting the righteous, etc. And the decisive factor in this dispute is that this very same Hadith is narrated by Imam Ahmad (may Allah have mercy on him) in his Musnad with a good chain from Hazrat Abu Sa'id al-Khudri (may Allah be pleased with him) as follows:

"It is not appropriate for a beast of burden that its saddle be tightened towards any mosque for the purpose of prayer, except for Masjid al-Haram, Masjid al-Aqsa, and this mosque of mine."[3]

Thus, the intention of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) has become clear from his own words. And all praise is due to Allah, the Lord of the worlds. - 12 (Author's note)

---

[1] Jadhb al-Qulub, Chapter 4, on the virtues of visiting the messengers, printed by Nawal Kishore, Lucknow, p. 196. [2] Sahih Bukhari, Chapter: How revelation began, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/2. [3] Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Abu Sa'id al-Khudri, Dar al-Fikr, Beirut, 23/3.

फ़तावा रज़विया, खंड 10

...उसे मेरी ज़ियारत के सिवा कोई काम न हो। इमाम इब्न अल-हुमाम फरमाते हैं: मेरे नज़दीक बेहतर यह है कि सफ़र ख़ास तौर पर हाज़िर होने के इरादे से हो। (इसे इब्न अबी अल-दुनिया, बैहक़ी और इब्न अल-जौज़ी ने हज़रत अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। - टी)

चौथी हदीस में है: "उसने मेरी मस्जिद में मेरा इरादा किया" [1] - जज़ब अल-क़ुलूब में इसका उल्लेख है। (जो मेरी ज़ियारत के इरादे से मेरी मस्जिद में आए। - टी)

मैं कहता हूँ: इसके अलावा वे तमाम अहादीस जिनमें कब्र शरीफ़ की ज़ियारत की तरग़ीब व ताकीद और इसे छोड़ने पर वईद व धमकियाँ हैं, हमारे दावे की गवाह हैं। ताज्जुब की बात है कि जिस काम की ताकीद अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाएँ और उसके छोड़ने पर वईद सुनाएँ, उसका इरादा करना नाजायज़ करार दिया जाए। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "आमाल का दारोमदार नियतों पर है" [2]। (तमाम कार्यों का फल नियत पर निर्भर है। - टी)। यह कैसा सवाब का काम है जिसकी नियत अज़ाब का कारण है! नेकी की ताक़त और बुराई से बचने की हिम्मत अल्लाह ही की तरफ से है।

रही हदीस "ला तशुद्दुर्रिहाल" (सफ़र न किया जाए), तो आइम्मा-ए-दीन ने स्पष्ट किया है कि वहां उन तीन मस्जिदों के अलावा किसी और मस्जिद के लिए विशेष रूप से सफ़र करने की मनाही है, वरना हदीस के शब्द इल्म की तलाश, मुसलमानों के सुधार, जिहाद, दीन के प्रचार, हलाल तिजारत, नेक लोगों से मुलाक़ात आदि के लिए सफ़र से नहीं रोकते। और झगड़े को खत्म करने वाली बात यह है कि यही हदीस हज़रत अबू सईद खुदरी (रज़ियल्लाहु अन्हु) की रिवायत से इमाम अहमद (रहमतुल्लाह अलैह) ने अपनी मुस्नद में हसन सनद के साथ इस तरह रिवायत की है:

"सवारी के जानवर के लिए यह मुनासिब नहीं कि उसके कजावे नमाज़ के इरादे से किसी मस्जिद की तरफ बाँधे जाएँ सिवाय मस्जिदे हराम, मस्जिदे अक़्सा और मेरी इस मस्जिद के।" [3]

तो खुद हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के इरशाद से हुज़ूर की मुराद साफ़ हो गई। और तमाम तारीफ़ें अल्लाह के लिए हैं जो तमाम जहानों का रब है। - 12 (लेखक की ओर से)

---

1. जज़ब अल-क़ुलूब, अध्याय 4, रसूलो की ज़ियारत के फ़ज़ाइल में, नवल किशोर लखनऊ द्वारा प्रकाशित, पृष्ठ 196।

2. सहीह बुखारी, अध्याय: वह्य (रहस्योद्घाटन) की शुरुआत कैसे हुई, क़दीमी कुतुब खाना कराची, 1/2।
3. मुस्नद अहमद बिन हंबल, अबू सईद खुदरी से रिवायत, दार अल-फ़िक्र बेरुत, 23/3।

पृष्ठ 807/836

اسے کوئی کام نہ ہو میری زیارت کے سوا۔ امام ابن الہمام فرماتے ہیں میرے نزدیک افضل یہ ہے کہ سفر خاص بقصد (بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) حاضر ہو (اس کی ابن ابی الدنیا، بیہقی اور ابن جوزی نے حضرت والبیھقی وابن الجوزی عن انس بن مالک رضی اللہ تعالٰی انس رضی اللہ تعالٰی عنہ سے تخریج کی۔ت) عنہ۔

چوتھی حدیث میں ہے: قصدنی فی مسجدی ۱۔ اور دہ فی جذب القلوب۔ میرا قصد کر کے میری مسجد میں آئے (اسکو جذب القلوب میں ذکر کیا گیا ہے۔ت)

اقول: علاوہ بریں وہ تمام احادیث جن میں زیارت قبر شریف کی ترغیب و تاکید اور اس کے ترک پر وعید و تہدید ہمارے مدعا کی گواہ و شہید، طرفہ بات یہ ہے کہ شارع صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم جس امر کی طرف تاکید بلائیں اور اس کے ترک پر وعید فرمائیں اس کا قصد ناجائز قرار پائے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں: انما الاعمال بالنیات ۲۔ (تمام اعمال کا مدار نیتوں پر ہے۔ت) یہ عجب کارِ ثواب ہے جس کی نیت موجبِ عذاب ہے لا حول ولا قوۃ الا باللہ۔

رہی حدیث "لا تشد الرحال" ائمہ دین نے تصریح فرمائی ہے کہ وہاں ان تینوں مسجدوں کے سوا اور مسجد کے لیے بالقصد سفر کرنے سے ممانعت ہے ورنہ زنہار الفاظ حدیث طلبِ علم و اصلاح مسلمین و جہاد واعداء و نشر دین و تجارت حلال وملاقاتِ صالحین و غیرہا مقاصد کے لیے سفر سے مانع نہیں۔ اور قاطع نزاع یہ ہے کہ بعینہ یہی حدیث بروایت حضرت ابوسعید خدری رضی اللہ تعالٰی عنہ امام احمد رحمۃ اللہ تعالٰی نے اپنی مسند میں بسند حسن یوں روایت کی:

لا ینبغی للمطی ان تشد رحالہ الی مسجد تبتغی فیہ ناقہ کو سزاوار نہیں کہ اس کے کجاوے کسی مسجد کی طرف بغرض الصلوۃ غیر المسجد الحرام والمسجد الاقصی و نماز کے جائیں سوائے مسجد حرام و مسجد اقصیٰ اور میری مسجد کے۔ مسجدی ہذا ۳۔

تو خود حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کے ارشاد سے حضور کی مراد واضح ہوگئی والحمد للہ رب العلمین ۱۲ منہ

---

۱ جذب القلوب باب چہار در ہم در فضائل زیارۃ المرسلین مطبوعہ نولکشور لکھنؤ ص ۱۹۶ ۲ صحیح بخاری باب کیف کان بدئ الوحی قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۲ ۳ مسند احمد بن حنبل مروی از ابو سعید خدری دارالفکر بیروت ۲۳/۳

The visitor should do this even if there is no intention for the holy mosque along with it, because in this, the veneration of the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is greater. When he presents himself, the attendance at the mosque will happen automatically, or he should keep its intention for another journey.

Problem: Indeed, visiting the Prophet is essential; send blessings upon him, for sending blessings is obligatory. Transcription: Undoubtedly, visiting the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is essential; send blessings upon him as it is an obligation. Commentary: Scholars state that visiting the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) is among the greatest of proximities and most excellent of obediences. It is a great fulfiller of purposes and needs, close to the level of emphasized obligations (Wajibat-e-Muakkadah), rather some have explicitly stated its necessity (Wujub 1).

The humble author says that the evidence necessitates this, and that is what we wish to say. Similarly, sending blessings upon the Luminous Presence (peace and blessings of Allah be upon him) once in a lifetime is a definitive obligation (Farz-e-Qat'i) by consensus. And according to Imam Shafi'i, it is obligatory in every prayer. Whenever his noble mention comes, scholars differ between obligation and recommendation. The school of Imam Tahtawi is that it is obligatory every time for both the speaker and the listener. Eminent scholars like Baqillani, Halabi, the author of Bahr al-Raiq, Tanwir al-Absar, etc., have declared this to be correct, predominant, chosen, and reliable. The evidence necessitates this, and it is what Allah likes more. However, in the case of a single gathering, to avoid hardship, overlapping (tadakhul) is accepted (2). And Allah knows best.

Problem: And the visitor is entitled to intercession according to what a reliable group has narrated. Transcription: And the visitor is entitled to intercession according to this Hadith narrated by a reliable group.

Footnote 1: That is, the term "Wujub" (obligation) as defined by the Hanafis, not as the ancient Zahiris say that the noble visit is obligatory in the sense of being a "Farz" (absolute obligation), because they do not distinguish between Wajib and Farz. However, the new Indian Zahiris, believing in Ibn Taymiyyah, utter such nonsense that even wood-eating termites wouldn't swallow. La Hawla wala Quwwata illa Billah. 12 (From him/T)

Footnote 2: According to us, the reliable view is obligation and overlapping (tadakhul); this is explained in Mirqat. 12 (From him/T)

ज़ियारत करने वाला ऐसा करे, यहाँ तक कि उसके साथ मस्जिद शरीफ़ का इरादा भी न हो, क्योंकि इसमें हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की ताज़ीम ज़्यादा है। जब वह हाज़िर होगा, तो मस्जिद की हाज़िरी खुद-ब-खुद हो जाएगी, या इसकी नीयत दूसरे सफ़र के लिए रखे।

मस्अला: बेशक नबी की ज़ियारत ज़रूरी है; उन पर दरूद भेजो कि दरूद फ़र्ज़ है। तहरीर: निस्संदेह, नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की ज़ियारत लाज़िम है; उन पर दरूद भेजें क्योंकि दरूद फ़र्ज़ है। शराह: उलेमा फ़रमाते हैं कि नबी (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की ज़ियारत महानतम निकटताओं और सर्वश्रेष्ठ इबादतों में से है। यह मकसदों और ज़रूरतों को पूरा करने वाली है, ताकीदी वाजिबात के दर्जे के करीब है, बल्कि कुछ ने तो इसके वाजिब (1) होने की स्पष्ट व्याख्या की है।

फकीर (लेखक) कहता है कि دلیل इसी की मांग करती है, और यही वह बात है जो हम कहना चाहते हैं। इसी तरह, हुज़ूर पुरनूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर उम्र में एक बार दरूद भेजना सर्वसम्मति से फ़र्ज़-ए-क़तई है। इमाम शाफ़ई के नज़दीक हर नमाज़ में फ़र्ज़ है। जब भी उनका ज़िक्र आए, तो उलेमा के बीच इसके वाजिब या मुस्तहब होने में मतभेद है। इमाम तहतावी का मज़हब यह है कि हर बार ज़िक्र आने पर ज़िक्र करने वाले और सुनने वाले, दोनों पर यह वाजिब है। बाक़िल्लानी, हलबी, बहरुल राइक और तनवीरुल अबसार के लेखकों जैसे बड़े उलेमा ने इसी को सही, राजिह (प्रबल), मुख़्तार (चुना हुआ) और मोतमद (भरोसेमंद) करार दिया है। दलील इसी का तकाज़ा करती है और यही अल्लाह तआला को अधिक पसंद है। अलबत्ता, एक ही मजलिस की सूरत में, कठिनाई से बचने के लिए तदाखुल (एक में दूसरे का शामिल होना) मुसल्लम (स्वीकार्य) है (2)। और अल्लाह बेहतर जानता है।

मस्अला: और ज़ियारत करने वाला शफ़ाअत (सिफारिश) का हकदार है, उस हदीस की रोशनी में जिसे एक विश्वसनीय जमात ने रिवायत किया है। तहरीर: और ज़ियारत करने वाला शफ़ाअत का हकदार है, उस हदीस की रू से जिसे मोतबर जमात ने रिवायत किया है।

हाशिया 1: यानी हनफियों की परिभाषा वाला "वजुब" (अनिवार्यता), प्राचीन ज़ाहिरियों की तरह नहीं जो कहते हैं कि पाक ज़ियारत वाजिब यानी फ़र्ज़ है, क्योंकि वे वाजिब और फ़र्ज़ में फर्क नहीं करते।

लेकिन हिंदुस्तानी नए ज़ाहिरी लोग तो इब्न तैमिया पर ईमान रखते हुए ऐसी बकवास करते हैं जिसे चाटने वाली दीमक भी न चाटे। ला हौला वला.कुव्वता इल्ला बिल्लाह। 12 (म/त)

हाशिया 2: हमारे नज़दीक विश्वसनीय मत वाजिब और तदाखुल है; इसका वर्णन मिरकात में है। 12 (म/त)

पृष्ठ 808 का 836

زیارت والا کرے یہاں تک کہ اس کے ساتھ مسجد شریف کا بھی ارادہ نہ ہو کہ اس میں حضور اقدس صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی تعظیم زیادہ ہے جب حاضر ہوگا حاضری مسجد خود ہو جائے گی یا اس کی نیت دوسرے سفر پر رکھے۔ مر: ان زیارۃ النبی لازبۃ صلوا علیہ فالصلوۃ واجبۃ ت: بے شک زیارت نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی لازم ہے درود بھیجو ان پر کہ درود فرض ہے، ش: علماء فرماتے ہیں زیارت نبی صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی اعظم قربات وافضل طاعات سے ہے۔ بہت برآورندہ مقاصد وحاجات، قریب بدرجہ مؤکدہ واجبات، بلکہ بعض نے وجوب عہ۱ کی تصریح فرمائی۔ فقیر کہتا ہے دلیل اسی کو مقتضی، وھو الذی نودان نقول بہ (ہم یہی کہنا چاہتے ہیں۔ ت) اسی طرح حضور پر نور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم پر درود عمر میں ایک بار تو بالا جماع فرض قطعی ہے اور امام شافعی ہر نماز میں فرض اور ہر بار کہ ذکر شریف آئے علماء کو وجوب واستحباب میں اختلاف، وامام طحطاوی کا مذہب ہر مرتبہ وجوب ہے ذاکر و سامع پر، باقلانی و حلبی وصاحب بحرالرائق و تنویر الابصار وغیرہ ہم اکابر علماء نے اسی کو صحیح و راجح و مختار و معتمد فرمایا اور دلیل اسی کو مقتضی و ھو الذی نندب اللہ بہ (یہی اللہ تعالٰی کو زیادہ پسند ہے۔ت) البتہ درصورت اتحاد مجلس دفعاً للحرج تداخل مسلم عہ۲۔ واللہ اعلم مر: ویستحق الزائر الشفاعۃ فیماروتہ ثقۃ الجماعۃ ت: اور زیارت کرنے والا مستحق شفاعت ہے اس حدیث کی رو سے جسے ثقہ جماعت نے روایت کیا۔ عہ۱: یعنی الوجوب المصطلح عند الحنفیۃ لا کما تقول القدماء الظاھریۃ ان الزیارۃ الکریمۃ واجبۃ ولا یفرقون بین الواجب والفرض اما احداثھم الھنود فقد آمنوا بابن تیمیۃ وتفوھو بمالا تعسطہ الدیمۃ الدومیۃ ولاحول ولاقوۃ الا باللہ ۱۲ منہ (م) یعنی احناف کی اصطلاح کا وجوب قدماء ظاہری مذہب والوں کا وجوب مراد نہیں کہ زیارت کریمہ واجب بمعنی فرض ہو

کیونکہ وہ فرض اور واجب میں فرق نہیں کرتے۔ لیکن ہندوستانی نئے ظاہری لوگ تو ابن تیمیہ پر ایمان رکھتے ہوئے وہ بکواس کرتے ہیں جن کو چاٹنے والی دیمک بھی نہ چاٹ سکے۔ لا حول ولا قوۃ الا باللہ ۱۲ منہ (ت) عہ۲: المعتمد عندنا الوجوب والتداخل افادہ في المرقاۃ ۱۲ منہ (م) ہمارے نزدیک قابل اعتماد وجوب اور تداخل ہے اس کا افادہ مرقات میں ہے ۱۲ منہ (ت)

Sh: Hadith 1: Hadith 17 is in Sahih, the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) says: "Whoever visits my grave, my intercession becomes mandatory for him." [1]

Hadith 28: "Whoever comes to visit me, and has no other purpose but visitation, it becomes a right upon me that I be his intercessor on the Day of Resurrection." [2]

Note 1: Narrated by Ibn Khuzaymah in his Sahih and Ibn Abi al-Dunya | It was narrated by Ibn Khuzaymah in his Sahih and Ibn Abi al-Dunya, Tabarani, Mahamili, and al-Tabarani in al-Mahamili and al-Bazzar and al-Uqayli and Ibn Adi | Bazzar, Uqayli, Ibn Adi, Abu Tahir al-Silafi, and Abdul Haqq in "Al-Ahkam", and al-Daraqutni and al-Bayhaqi and Abu al-Shaykh and Ibn Asakir and Abu Tahir | and Dhahabi and Ibn al-Jawzi, all of them narrated from Ibn Umar (may Allah be pleased with him). al-Silafi and Abdul Haqq in al-Ahkamain and al-Dhahabi and Ibn al-Jawzi | And Abdul Haqq called it authentic (Sahih) and Dhahabi graded it good (Hasan). I say: after its grading as Hasan, there is no doubt in its authenticity due to the abundance of its routes of transmission. All of them from Ibn Umar (may Allah be pleased with them both) and Abdul Haqq authenticated it | In this chapter, it is narrated from Bakr bin Abdullah; it was mentioned by Abu al-Hasan Yahya bin al-Hasan in "Akhbar al-Madina". And Dhahabi graded it Hasan. I say: After Hasan there is no doubt in | And narrations are reported from Umar al-Faruq, Ibn Abbas, Anas bin Malik, and Abu Huraira (may Allah have mercy on them), its authenticity due to the abundance of routes. In 'Al-Lubab' from Bakr bin Abdullah narrated by | as will be mentioned ahead. 12 (T) Abu al-Hasan Yahya bin al-Hasan in 'Akhbar al-Madina' and from | al-Faruq and from Ibn Abbas and from Anas bin Malik and from Abu | Huraira (may Allah have mercy on them) as will come. 12 Minhu. |

Note 2: This Hadith is also authentic, the detailed citation of which has passed in the marginal notes of the beginning of this section.

Strange Anecdote: The great Imam, the seal of the preservers and scholars of Hadith, Imam Zayn al-Din al-Iraqi, who was the teacher of the mountain of preservation and master of Muhaddithin Imam Ibn Hajar al-Asqalani (may Allah have mercy on them), was going to visit the luminous shrine of our master Ibrahim Khalilullah (peace and blessings be upon him). Some Hanbalis were in his entourage. A Hanbali, following Ibn Taymiyyah who claimed to be a Hanbali, said: "I have intended [the visit to] the mosque of Khalilullah..." (continued on the next page).

[1] Sunan al-Daraqutni, Kitab al-Hajj, Bab al-Mawaqit, Nashr al-Sunnah, Multan, 2/278. [2] Al-Mu'jam al-Kabir, narrated from Abdullah bin Umar, Hadith 13149, Maktaba al-Faysaliya, Beirut, 12/291; Kanz al-Ummal, Hadith 34928, Mu'assasah al-Risala, Beirut, 256/12.

श: हदीस 1: हदीस 17 सहीह में है, अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं, "जिसने मेरी क़ब्र की ज़ियारत की, उसके लिए मेरी शफ़ाअत वाजिब हो गई।" [1]

हदीस 28: "जो मेरी ज़ियारत को आया कि उसे ज़ियारत के सिवा और कोई काम न था, मुझ पर हक़ हो गया कि क़ियामत के दिन उसका शफीअ (सिफारिशी) बनूँ।" [2]

टिप्पणी 1: इसे इब्न खुज़ैमा ने अपनी सहीह में और इब्न अबी अद्दुनिया, तबरानी, महामिली, बज़ार, अक़ीली, इब्न अदी, अबू ताहिर सिलफ़ी और अब्दुल हक़ ने 'अहकाम' में, और ज़हबी और इब्न अल-जौज़ी, इन सब ने इब्न उमर (रज़ियल्लाहु तआला अन्हु) से रिवायत किया है। अब्दुल हक़ ने इसे सहीह कहा और ज़हबी ने इसे हसन कहा। मैं कहता हूँ कि हसन होने के बाद इसकी सेहत (प्रामाणिकता) में इसके विभिन्न रास्तों की बहुतायत के कारण कोई संदेह नहीं रहा। इस विषय में बक्र बिन अब्दुल्लाह से रिवायत है, जिसे अबुल हसन यह्या बिन अल-हसन ने 'अख़बार-ए-मदीना' में ज़िक्र किया है, और उमर फ़ारूक़, इब्न अब्बास, अनस बिन मालिक और अबू हुरैरा (रहमहुमुल्लाहु तआला अलैहिम) से रिवायतें मन्क़ूल हैं जैसा कि आगे आ रहा है। 12 मिन्हु (त)

टिप्पणी 2: यह हदीस भी सहीह है जिसकी तख़रीज (स्रोत का विवरण) फ़स्ल (अनुच्छेद) की शुरुआत के हाशिये में गुज़र चुकी है।

अजीब लतीफ़ा: इमाम-ए-अजल, खातमुल हुफ़्फ़ाज़ वल मुहद्दिसीन इमाम ज़ैनुद्दीन इराक़ी, जो उस्ताद हैं इमाम जबलुल हिफ़्ज़, उस्ताद-उल-मुहद्दिसीन इमाम इब्न हजर असक़लानी (रहमहुमुल्लाहु तआला) के हज़रत सैय्यदना इब्राहिम ख़लीलुल्लाह (अलैहिस्सलातु वस्सलाम) के पुर-अनवार मज़ार की ज़ियारत को जा रहे थे। कुछ हंबली हज़रत के साथ थे। एक हंबली ने इब्न तैमिया के अनुसरण में, जो हंबलीयत का दावेदार था, यों कहा कि "मैंने मस्जिद-ए-ख़लीलुल्लाह..." (बाक़ी अगले सफ़हे पर)।

[1] सुनन अल-दारकुतनी, किताब अल-हज्ज, बाब अल-मवाक़ीत, नश्र अस-सुन्ना, मुल्तान, 2/278।
[2] अल-मुअजम अल-कबीर, अब्दुल्लाह बिन उमर से रिवायत, हदीस 13149, मकतबा फ़ैसलिया, बैरूत, 12/291; कंजुल उम्माल, हदीस 34928, मुअस्ससा-ए-रिसाला, बैरूत, 256/12।

ش: حدیث ۱: حدیث ۱۷ صحیح میں ہے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں، جس نے میری قبر کی زیارت کی اس کے لیے میری شفاعت واجب ہو گئی۔ ۱

حدیث ۲۸: جو میری زیارت کو آیا کہ اسے سوائے زیارت کے کچھ کام نہ تھا، مجھ پر حق ہو گیا کہ روزِ قیامت اس کا شفیع ہوں۔ ۲

عہ ۱: رواہ ابن خزیمۃ فی صحیحہ وابن ابی الدنیا | اسے ابن خزیمہ نے اپنی صحیح میں اور ابن ابی الدنیا، طبرانی، محاملی، والطبرانی فی المحاملی والبزار والعقیلی و ابن عدی | بزار، عقیلی، ابن عدی، ابوطاہر سلفی، اور عبدالحق نے احکام میں والدارقطنی والبیہقی وابوالشیخ و ابن عساکر وابو طاہر | اور ذہبی اور ابن جوزی سب نے ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہ سے السلفی و عبدالحق فی الاحکامین والذہبی وابن الجوزی | روایت کیا، اور عبدالحق نے اسے صحیح کہا اور ذہبی نے اس کی کلہم عن ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہما وصححہ | تحسین کی اقول تحسین کے بعد اس کی صحت میں کثرتِ طرق کی بنا عبدالحق وحسنہ الذہبی اقول بعد الحسن فلا شک فی | پر شک نہ رہا اس باب میں بکر بن عبد اللہ سے روایت ہے اسے صحتہ لکثرۃ الطرق ففی لباب عن بکر بن عبداللہ رواہ | ابوالحسن یحیٰی بن الحسن نے اخبار مدینہ میں ذکر کیا اور عمر فاروق ابو الحسن یحیٰی بن الحسن فی اخبار المدینۃ وعن | سے ابن عباس سے انس بن مالک اور ابوہریرہ رحم اللہ تعالٰی عنہم الفاروق وعن ابن عباس وعن انس بن مالک وعن ابی | سے روایات مروی ہیں جیسا کہ آگے آ رہا ہے ۱۲ منہ (ت) ہریرۃ رحمہم اللہ تعالٰی عنہم کماسیأتی ۱۲ منہ

عہ ۲: یہ حدیث بھی صحیح ہے جس کی تخریج شروع فصل کے حواشی میں گزری۔

عجیب لطیفہ: امام اجل خاتمۃ الحفاظ والمحدثین امام زین الدین عراقی استاذ امام جبل الحفظ، استاد المحدثین امام ابن حجر عسقلانی رحمہم اللہ تعالیٰ زیارت مزار پُر انوار حضرت سیدنا ابراہیم خلیل اللہ علیہ الصلوٰۃ والسلام کو جاتے تھے بعض حنبلی حضرت کے ہمراہ رکاب تھے حنبلی نے باتباع ابن تیمیہ کہ مدعی حنبلیت تھا یوں کہا کہ میں نے مسجد خلیل اللہ (باقی بر صفحہ آئندہ)۔

۱ سنن الدار قطنی کتاب الحج باب المواقیت نشر السنۃ ملتان ۲۷۸/۲ ۲ معجم الکبیر مروی از عبداللہ بن عمر حدیث ۱۳۱۴۹ مکتبہ فیصلیہ بیروت ۲۹۱/۱۲، کنز العمال حدیث ۳۴۹۲۸ مؤسسہ رسالہ بیروت ۲۵۶/۱۲

Volume 10 Fatawa Ridawiyya

Hadith 3: Whoever comes to Medina with the intention of seeking reward to visit me, I am his intercessor and witness. [1] Hadith 4: Whoever visits me after my passing, it is as if he visited me during my lifetime and...

(Remainder of the footnote from the previous page) ...intended to pray in the [masjid near the grave of Prophet Ibrahim] peace be upon him. The Imam said, "I intended to visit the grave of our master Khalilullah (peace and blessings of Allah be upon him)." Then he said to the Hanbali, "You have opposed the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) as the Prophet forbade traveling to any mosque for prayer except for the three mosques, whereas I followed the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) as the Prophet said: 'Visit graves.' Did he ever say alongside this 'do not visit the graves of the Prophets'? The Hanbali was left with nothing but amazement." [2]

Allama al-Qastallani narrated it in 'al-Mawahib' from Shaykh Wali-ud-Din al-Iraqi from his father Imam Zayn-ud-Din al-Iraqi, may Allah Almighty have mercy on them all. (M) Allama Qastallani narrated it in Mawahib from Sheikh Wali-ud-Din Iraqi (who narrated it from his father Imam Zain-ud-Din Iraqi, may Allah Almighty have mercy on them all). (T)

See the glory of God! The very hadith from which these people mistakenly inferred a prohibition on traveling towards shrines, God Almighty used that same hadith to establish a case against them. And Allah's argument is supreme. 12 Minhu.

1: Narrated by Ibn Abi al-Dunya, al-Bayhaqi, and Abu al-Faraj ibn al-Jawzi from Anas (may Allah be pleased with him). 12 Minhu. (M) Narrated by Ibn Abi al-Dunya, Bayhaqi and Abu al-Faraj ibn Jawzi from Hazrat Anas bin Malik (may Allah be pleased with him). 12 Minhu. (T)

2: Narrated by al-Uqayli and Ibn Asakir from Ibn Abbas, and al-Yaqubi in his 'Juz' al-Hadithi' from Abu Hurayrah, and Ibn al-Najjar in 'al-Durrat al-Thaminah' from Anas bin Malik, and the beginning of the hadith is narrated from Ibn Umar. Uqayli and Ibn Asakir narrated from Ibn Abbas, and Yaqubi in 'Juz al-Hadithi' from Abu Hurairah, and Ibn al-Najjar in 'Al-Durra-tul-Thameena' from Anas bin Malik, and the main part of the

hadith is from Ibn Umar (may Allah be pleased with them both). (Continued on the next page)

1. Shu'ab al-Iman, Chapter on Rituals, Hadith 4157, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 3/475.
2. al-Mawahib al-Laduniyyah, Ruling on the Vow of Visiting, al-Maktab al-Islami, Beirut, 2/473-573.

जिल्द दस फ़तावा रज़विया

हदीस 3: जो मदीना में सवाब की नियत से मेरी ज़ियारत करने आए, मैं उसका शफीअ (सिफ़ारिशी) और गवाह हूँ। [1] हदीस 4: जो मेरे इंतिक़ाल के बाद मेरी ज़ियारत करे, गोया उसने मेरी ज़िंदगी में मेरी ज़ियारत की और...

(पिछले पृष्ठ के हाशिये का शेष) ...सलाम में नमाज़ पढ़ने की नियत की। इमाम ने फ़रमाया, मैंने सय्यदना खलीलुल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) की कब्र की ज़ियारत की नियत की। फिर हंबली से कहा, तुमने रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) की मुख़ालफ़त की, क्योंकि हुज़ूर ने तीन मस्जिदों के अलावा किसी और मस्जिद में नमाज़ पढ़ने के लिए सफ़र करने से मना किया था, जबकि मैंने हुज़ूर अकदस (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) का अनुसरण किया, क्योंकि हुज़ूर ने फ़रमाया: "कब्रों की ज़ियारत करो।" क्या इसके साथ कहीं यह भी फ़रमाया है कि नबियों की कब्रों की ज़ियारत न करो? हंबली के पास सिवाय हैरानी के कुछ न रहा। [2]

अल्लामा अल-क़स्तलानी ने 'अल-मवाहिब' में शेख वली-उद-दीन इराक़ी से, उन्होंने अपने पिता इमाम ज़ैन-उद-दीन इराक़ी (अल्लाह तआला उन सब पर रहम करे) से इसे रिवायत किया। (म) इसे अल्लामा क़स्तलानी ने मवाहिब में शेख वली-उद-दीन इराक़ी से (उन्होंने अपने वालिद इमाम ज़ैन-उद-दीन इराक़ी रहमतुल्लाह तआला अलैहिम अजमईन से) नक़्ल फ़रमाया। (त)

देखिये ख़ुदा की शान! जिस हदीस से ये लोग अपने गुमान में मज़ारात की तरफ़ सफ़र की मुमानअत (निषेध) निकालते थे, ख़ुदा तआला ने उसी हदीस से उन पर इल्ज़ाम क़ायम फ़रमाया। वल्लाह अल-हुज्जतुल सामिया। 12 मिन्हु।

1: इसे इब्न अबी अद्दुन्या, बैहक़ी और अबू अल-फ़रज इब्न अल-जौज़ी ने अनस रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया। 12 मिन्हु। (म) इसे इब्न अबी अद्दुन्या, बैहक़ी और अबू अल-फ़रज इब्न जौज़ी ने हज़रत अनस बिन मालिक रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत किया। 12 मिन्हु। (त)

2: अक़ीली और इब्न असाकिर ने इब्न अब्बास से, और यक़ूबी ने 'जुज़ अल-हदीसी' में अबू हुरैरा से, और इब्न अल-नज्जार ने 'अल-दुर्रतुल समीना' में अनस बिन मालिक से रिवायत किया है, और हदीस का मुख्य भाग इब्न उमर से रिवायत है। अक़ीली और इब्न असाकिर ने इब्न अब्बास से, और यक़ूबी ने 'जुज़ अल-हदीसी' में अबू हुरैरा से और इब्न अल-नज्जार ने 'अल-दुर्रतुल समीना' में अनस बिन मालिक

से रिवायत किया है और हदीस का मुख्य भाग इब्न उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा से है। (बाक़ी अगले सफ़हे पर)

1. शुअबुल ईमान, बाबुल मनासिक, हदीस 4157, दारुल कुतुब अल-इल्मिया, बेरुत, 3/475.
2. अल-मवाहिब अल-लदुन्निया, हुक्मे नज़रे ज़ियारत, अल-मक्तब अल-इस्लामी, बेरुत, 2/473-573.

جلد دہم فتاوی رضویہ

حدیث عہ ۳: جو مدینہ میں بہ نیتِ ثواب میری زیارت کرنے آئے میں اس کا شفیع و گواہ ہوں۔ ۱

حدیث عہ ۴: جو میرے انتقال کے بعد میری زیارت کرے گویا اس نے میری زندگی میں میری زیارت کی اور

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) علیہ الصلوٰۃ والسلام میں نماز پڑھنے کی نیت کی امام نے فرمایا میں نے زیارتِ قبر سیدنا خلیل اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی نیت کی، پھر حنبلی سے فرمایا تم نے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی مخالفت کی کہ حضور نے مساجد ثلاثہ کے سوا جو تھی مسجد میں نماز پڑھنے کے لیے سفر سے ممانعت کی اور میں نے حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کا اتباع کیا کہ حضور نے فرمایا: قبور کی زیارت کرو۔ کیا اس کے ساتھ کہیں یہ بھی فرمادیا ہے کہ قبور انبیاء کی زیارت نہ کرو، حنبلی کو سوا حیرت کے کچھ بن نہ آیا۔ ۲

نقله العلامة القسطلاني في المواهب عن الشيخ ولي الدين عراقي عن ابيه الامام زين الدين العراقي رحمة الله تعالى عليهم اجمعين۔ (م) اسے علامہ قسطلانی نے مواہب میں شیخ ولی الدین عراقی سے (انھوں نے اپنے والد امام زین الدین عراقی رحمۃ اللہ تعالیٰ علیہم اجمعین سے) نقل فرمایا۔ (ت)

دیکھئے خدا کی شان جس حدیث سے یہ لوگ زعم میں مزارات کی طرف سفر کی ممانعت نکالتے تھے خدا تعالیٰ نے اسی حدیث سے ان پر الزام قائم فرمایا واللہ الحجۃ السامیۃ ۱۲ منہ

عہ ۱ : رواه ابن ابی الدنیا و البیهقی وابو الفرج ابن الجوزي عن انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ ۱۲منہ (م) اسے ابن ابی الدنیا، بیہقی اور ابو الفرج ابن جوزی نے حضرت انس بن مالک رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ۱۲منہ (ت)

عہ ۲: رواہ العقیلی وابن عساکر عن ابن عباس والیعقوبی فی جزئہ الحدیثی عن ابی ھریرۃ، و ابن النجار فی الدرۃ الثمینۃ عن انس بن مالک و صدر الحدیث مروی عن ابن عمر عقیلی اور ابن عساکر نے ابن عباس سے، اور یعقوبی نے جزء الحدیثی میں ابوہریرہ سے اور ابن النجار نے الدرۃ الثمینہ میں انس بن مالک سے روایت کیا ہے اور صدر حدیث ابن عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہما (باقی بر صفحہ آیندہ)

۱ شعب الایمان باب المناسک حدیث ۴۱۵۷ دارالکتب العلمیہ بیروت ۳ / ۴۷۵ ۲ المواھب اللدنیہ حکم نذر الزیارۃ المکتب الاسلامیہ بیروت ۲ / ۴۷۳-۵۷۳

Fatawa Razawiyyah Volume 10

And on the Day of Resurrection, I will be a witness or intercessor for my visitor. [1]

Hadith 5: Whoever visits my grave, or said visits me, I am his intercessor and witness. [2] In short, this subject is mentioned in many Hadiths.

Hadith 6: One who goes to Makkah to perform Hajj and then comes to my mosque with the intention of visiting me, two accepted (mabroor) Hajjs will be recorded for him. [3] And the Prophet (peace be upon him) says: The reward for Hajj-e-Mabroor (accepted Hajj) is nothing but Paradise. [4]

(Continuation of previous page's footnote) [Arabic Section]: (May Allah be pleased with both of them), narrated by Sa'id ibn Mansur, al-Mahamili, al-Tabarani, Abu Ya'la, Ibn 'Adi, al-Daraqutni, al-Bayhaqi, Ibn 'Asakir, Ibn al-Jawzi, and Ibn al-Najjar. And from Hatib, narrated by al-Daraqutni, al-Mahamili, al-Bayhaqi, and Ibn 'Asakir. And from 'Ali (may Allah honor his face), narrated by Yahya ibn Ja'far al-Husayni in Akhbar al-Madinah, and Abu Sa'id mentioned it in Sharaf al-Mustafa. 12 Minhu (M). [Urdu Section]: ...is narrated from. It was narrated by Sa'id bin Mansur, Mahamili, Tabarani, Abu Ya'la, Ibn Adi, Daraqutni, Bayhaqi, Ibn Asakir, and Ibn Najjar. And it is narrated from Hatib, narrated by Daraqutni, Mahamili, Bayhaqi, and Ibn Asakir. And it is narrated from Hazrat Ali (Karam Allah Wajhah), recorded by Yahya bin Jafar al-Husayni in Akhbar al-Madinah, and Abu Said mentioned it in Sharaf al-Mustafa. 12 Minhu (T).

Footnote 1: [Arabic] Narrated by Abu Dawud al-Tayalisi, al-Bayhaqi, Abu Nu'aym, and Ibn 'Asakir from the Commander of the Faithful 'Umar (may Allah be pleased with him). 12 Minhu [Urdu] Recorded by Abu Dawud al-Tayalisi, Bayhaqi, Abu Nu'aym, and Ibn Asakir from the Commander of the Faithful Hazrat Umar (may Allah be pleased with him). (T)

(M) Footnote 2: [Arabic] Mentioned at the beginning of the chapter. 12 Minhu [Urdu] Mentioned at the beginning of the chapter. 121 Minhu (T)

Footnote 3: [Arabic] Narrated by Malik, Ahmad, al-Bukhari, Muslim, Abu Dawud, al-Tirmidhi, al-Nasa'i, and Ibn Majah. [Urdu] Recorded by Imam Malik, Ahmad, Bukhari, Muslim, Abu Dawud, Tirmidhi, Nasa'i, Ibn Majah, Asbahani, and Bayhaqi (continued on next page).

[1] Kitab al-Du'afa al-Kabir, biography 1513, Fadalah bin Sa'id, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut 3/457. [2] Musnad Abu Dawud al-Tayalisi, Hadith 'Man Zara Qabri', Dar al-Ma'rifah p. 12 & 13. [3] Jazb al-Qulub, chapter 4 on the virtues of visiting the Master of Messengers, Nawal Kishore, Lucknow p. 196. [4] Sahih al-Bukhari, Book of Umrah, chapter on the obligation and virtue of Umrah etc., Qadeemi Kutub Khana Karachi 1/238.

फ़तावा रज़विया, खंड 10

और मैं प्रलय के दिन अपने आगंतुक का साक्षी या सिफारिशी रहूँगा। [1]

हदीस 5: जो मेरी कब्र की, या फरमाया मेरी यात्रा करे मैं उसका सिफारिशी और साक्षी हूँ। [2] संक्षेप में, यह विषय कई हदीसों में वर्णित है।

हदीस 6: जो मक्का जाकर हज करे फिर मेरे इरादे से मेरी मस्जिद में हाज़िर हुआ, उसके लिए दो स्वीकृत (मबरूर) हज लिखे जाएंगे। [3] और आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: हज-ए-मबरूर का बदला जन्नत के सिवा कुछ नहीं है। [4]

(पिछले पृष्ठ के फुटनोट का शेष) [अरबी खंड]: (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो), सईद बिन मंसूर, अल-महामली, अल-तबरानी, अबू याला, इब्न अदी, अल-दारुकुतनी, अल-बैहकी, इब्न असाकिर, इब्न अल-जौज़ी और इब्न अल-नज्जार द्वारा रिवायत किया गया। और हातिब से, अल-दारुकुतनी, अल-महामली, अल-बैहकी और इब्न असाकिर द्वारा रिवायत किया गया। और अली (अल्लाह उनके चेहरे को सम्मानित करे) से, यह्या बिन जाफर अल-हुसैनी द्वारा अख़बार अल-मदीना में रिवायत किया गया, और अबू सईद ने शरफ अल-मुस्तफा में इसका उल्लेख किया। 12 मिन्हु (म)। [उर्दू खंड]: ...से वर्णित है। इसे सईद बिन मंसूर, महामली, तबरानी, अबू याला, इब्न अदी, दारुकुतनी, बैहकी, इब्न असाकिर और इब्न नज्जार ने रिवायत किया। और यह हातिब से रिवायत है, जिसे दारुकुतनी, महामली, बैहकी और इब्न असाकिर ने रिवायत किया। और यह हज़रत अली (करम अल्लाह वज्हहु) से रिवायत है, जिसे यह्या बिन जाफर अल-हुसैनी ने अख़बार अल-मदीना में रिवायत किया, और अबू सईद ने इसे शरफ अल-मुस्तफा में बयान किया। 12 मिन्हु (त)।

फुटनोट 1: [अरबी] इसे अबू दाऊद अल-तयालिसी, अल-बैहकी, अबू नुअैम और इब्न असाकिर ने अमीरुल मोमिनीन उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया। 12 मिन्हु [उर्दू] इसे अबू दाऊद अल-तयालिसी, बैहकी, अबू नुअैम और इब्न असाकिर ने अमीरुल मोमिनीन हज़रत उमर (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया। (त)

(म) फुटनोट 2: [अरबी] अध्याय की शुरुआत में उल्लेख किया गया। 12 मिन्हु [उर्दू] अध्याय की शुरुआत में गुज़रा। 121 मिन्हु (त)

फुटनोट 3: [अरबी] मलिक, अहमद, अल-बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, अल-तिर्मिज़ी, अल-नसाई और इब्न माजा द्वारा रिवायत किया गया। [उर्दू] इसे इमाम मालिक, अहमद, बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, नसाई, इब्न माजा, असबहानी और बैहकी ने रिवायत किया (शेष अगले पृष्ठ पर)।

---

[1] किताब अद-दुआफ़ा अल-कबीर, जीवनी 1513, फ़ज़ला बिन सईद, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया, बेरुत 3/457. [2] मसनद अबू दाऊद अल-तयालिसी, हदीस 'मन ज़ारा क़बरी', दार अल-मारिफ़ा पृष्ठ 12 और 13. [3] जज़्ब अल-कुलूब, अध्याय 4, सैयदुल मुर्सलीन की ज़ियारत के गुण, नवल किशोर, लखनऊ पृष्ठ 196. [4] सहीह अल-बुखारी, उमराह की पुस्तक, उमराह की अनिवार्यता और गुणों पर अध्याय आदि, क़दीमी कुतुब खाना, कराची 1/238.

पृष्ठ 811 का 836

فتاوی رضویہ جلد دہم

اور میں روز قیامت اپنے زائر کا گواہ یا شفیع ہوں گا۔ [1]

حدیث عہ 1 ۵ : جو میری قبر کی، یا فرمایا میری زیارت کرے میں اس کا شافع و شاہد ہوں۔ [2]

غرض یہ مضمون بہت حدیثوں میں وارد۔

حدیث عہ 2 ۶ : و مکہ جا کر حج کرے پھر میرے قصد سے میری مسجد حاضر ہوا اس کے لیے دو حج مبرور لکھے جائیں گے۔ [3] اور فرماتے ہیں صلی اللہ علیہ وسلم: حج مبرور عہ 3 کی جزا سوا جنت کے کچھ نہیں۔ [4]

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) [عربی حصہ]: رضی اللہ تعالیٰ عنہما، رواہ سعید بن منصور و المحاملی والطبرانی وابویعلی وابن عدی والدار قطنی والبیہقی وابن عساکر وابن الجوزی وابن النجار وعن حاطب رواہ الدار قطنی والمحاملی والبیہقی وابن عساکر و عن علی کر م اللہ وجہہ رواہ یحییٰ بن جعفر الحسینی فی اخبار المدینۃ، و اوردہ ابوسعید فی شرف المصطفیٰ ۱۲ منہ (م) [اردو حصہ]: سے مروی ہے۔ اسے سعید بن منصور، محاملی، طبرانی، ابویعلیٰ، ابن عدی، دار قطنی، بیہقی، ابن عساکر، ابن نجار نے روایت کیا، اور حاطب سے مروی ہے، اسے دار قطنی، محاملی، بیہقی اور ابن عساکر نے روایت کیا اور حضرت علی کرم اللہ وجہہ سے مروی ہے اسے یحییٰ بن جعفر الحسینی نے اخبار المدینہ میں روایت کیا، اور ابو سعید نے اسے شرف المصطفیٰ میں بیان کیا ۱۲ منہ (ت)

عہ 1: [عربی] رواہ ابو داؤد الطیالسی والبیھقی وابو نعیم وابن عساکر عن امیر المومنین عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ ۱۲ منہ [اردو] اسے ابوداؤد طیالسی، بیہقی، ابونعیم اور ابن عساکر نے امیر المومنین حضرت عمر رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا۔ (ت)

(م) عہ 2: [عربی] مر فی صدر الفصل ۱۲ منہ [اردو] فصل کے شروع میں گزر ۱۲۱ منہ (ت)

عہ 3: [عربی] رواہ مالک واحمد والبخاری ومسلم وابو داؤد والترمذی والنسائی وابن ماجہ [اردو] اسے امام مالک، احمد، بخاری، مسلم، ابوداؤد، ترمذی، نسائی، ابن ماجہ، اصبہانی اور بیہقی (باقی بر صفحہ آئندہ)

---

1 کتاب الضعفاء الکبیر ترجمہ ۱۵۱۳ فضالہ بن سعید دار الکتب العلمیہ بیروت ۳ / ۴۵۷ 2 مسند ابوداؤد طیالسی حدیث من زار قبری دار المعرفۃ ص ۱۲ و ۱۳ 3 جذب القلوب باب چہارم در فضائل زیارۃ سید المرسلین نولکشور لکھنو ص ۱۹۶ 4 صحیح بخاری ابواب العمرۃ باب وجوب العمرۃ وفضلھا الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۲۳۸/۱

Fatawa Razawiya, Volume 10

Hadith 7: Whoever comes intentionally to visit me shall be under the shade of my mantle on the Day of Resurrection. [1]

Hadith 8: Whoever performs the Hajj of Islam and is honored by visiting my grave, and participates in one Jihad, and prays in Bayt al-Maqdis (Jerusalem), Allah Almighty will not take an account of his obligatory duties. [2]

Hadith 9: Whoever performs Hajj and does not come to visit me, has behaved harshly towards me. [3]

It was narrated by al-Asbahani and al-Bayhaqi from Abu Hurairah; and by Ahmad from 'Amir bin Rabi'ah and from Jabir bin 'Abdullah; and by al-Tabarani in al-Mu'jam al-Kabir from Ibn 'Abbas; and by Ahmad, al-Tirmidhi, al-Nasa'i, Ibn Khuzaymah, and Ibn Hibban in their respective Sahihs from 'Abdullah bin Mas'ud (may Allah be pleased with them all). Al-Tirmidhi said: "Hasan Sahih" (Fairly Authentic). I say: It has been narrated through multiple chains. (Ref: 12 Minhu Ghaffaralahu)

Notes: - Note 1: Its mention has passed at the beginning of the chapter. 12 Minhu (t) - Note 2: It was narrated by Abu al-Fath al-Azdi via Sufyan al-Thawri from Mansur from Ibrahim from Alqama from Ibn Mas'ud (may Allah be pleased with him). 12 Minhu (t)

Footnotes: 1. Shu'ab al-Iman, Hadith 4157, Chapter of Manasik, Dar al-Kutub al-Ilmiyyah, Beirut, 3/490. 2. Tanzih al-Shari'ah al-Marfu'ah, ref: (Fat) Kitab al-Hajj, Section 3, 2/157. 3. Al-Kamil fi Du'afa al-Rijal, biography of Nu'man bin Shibl, Dar al-Fikr, Beirut, 7/2480.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

हदीस 7: जो जानबूझकर मेरी ज़ियारत के लिए हाज़िर हो, वो कयामत के दिन मेरे दामन के साये में होगा। [1]

हदीस 8: जो हज्जतुल इस्लाम (फ़र्ज़ हज) अदा करे और मेरी क़ब्र की ज़ियारत से मुशर्रफ़ हो, और एक जेहाद करे और बैतुल मुक़द्दस में नमाज़ पढ़े, अल्लाह तआला उससे फ़राइज़ का हिसाब नहीं लेगा। [2]

हदीस 9: जिसने हज किया और मेरी ज़ियारत को नहीं आया, उसने मुझ पर ज़्यादती (जुफ़ा) की। [3]

इसे इमाम मालिक, अहमद, बुखारी, मुस्लिम, अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, नसाई, इब्न माजा, अस्बहानी और बैहक़ी ने हज़रत अबू हुरैरा से, और अहमद ने आमिर बिन रबीअह से और जाबिर बिन अब्दुल्लाह से, और तबरानी ने 'मोजम अल-कबीर' में इब्न अब्बास से, और अहमद, तिर्मिज़ी, नसाई, इब्न खुज़ैमा और इब्न हब्बान ने अपनी अपनी 'सहीह' में अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। तिर्मिज़ी ने इसे 'हसन सहीह' कहा है। मैं कहता हूँ कि ये कई रास्तों से मरवी है। (12 मिन्हु गुफ़रलाहु)

नोट्स: - नोट 1: इसका ज़िक्र फ़स्ल के शुरू में पहले ही गुज़र चुका है। 12 मिन्हु (त) - नोट 2: इसे अबुल फ़तह अल-अज़दी ने सुफ़यान अस-सौरी के ज़रिए मंसूर से, उन्होंने इब्राहिम से, उन्होंने अलक़मा से, उन्होंने इब्न मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। 12 मिन्हु (त)

पाद-टिप्पणियाँ (Footnotes): 1. शोआब अल-ईमान, हदीस 4157, बाब अल-मनासिक, दारुल कुतुब अल-इल्मिय्या बेरूत, 3/490. 2. तंज़ीह अल-शरीअह अल-मरफ़ूआ, (फत) किताबुल हज, फ़स्ल 3, 2/157. 3. अल-कामिल फ़ी ज़ोआफ़ा अर-रिजाल, तर्जुमा नोमान बिन शिबल, दारुल फ़िक्र बेरूत, 7/2480.

पेज 812 का 836

فتاوٰی رضویہ، جلد دہم

حدیث عہ ۷ : جو بالقصد میری زیارت کو حاضر ہو روزِ قیامت میرے سایہ دامان میں ہو۔ ۱

حدیث عہ ۸ : جو حجۃ الاسلام بجالائے اور میری قبر کی زیارت سے مشرف ہو اور ایک جہاد کرے اور بیت المقدس میں نماز پڑھے اللہ تعالٰی اس سے فرائض کا حساب نہ لے۔ ۲

حدیث عہ ۹ : جس نے حج کیا اور میری زیارت کو نہ آیا اس نے مجھ پر جفا کی۔ ۳

والا صبہانی والبیہقی عن ابی ھریرۃ واحمد عن عامر بن ربیعۃ وعن جابر بن عبد اللہ و الطبرانی فی المعجم الکبیر عن ابن عباس واحمد والترمذی والنسائی و ابن خزیمۃ وابن حبان فی صحیحھما عن عبد اللہ بن مسعود رضی اللہ تعالی عنھم، قال الترمذی حسن صحیح، قلت وقد روی من غیر وجہ ۱۲ منہ غفرلہ (م) اسے امام مالک، احمد، بخاری، مسلم، ابوداؤد، ترمذی، نسائی، ابن ماجہ، اصبہانی اور بیہقی نے حضرت ابو ہریرہ سے اور احمد نے عامر بن ربیعہ سے اور جابر بن عبداللہ سے، اور طبرانی نے معجم الکبیر میں ابن عباس سے، اور احمد، ترمذی، نسائی، ابن خزیمہ اور ابن حبان نے اپنی اپنی صحیح میں عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا، ترمذی نے اسے حسن صحیح کہا، میں کہتا ہوں یہ متعدد وجوہ سے مروی ہے ۱۲منہ غفرلہ (ت)

عہ ۱: سبق ذکرہ فی صدر الفصل ۱۲ منہ (ت) عہ ۲: اسے ابوالفتح ازدی نے بطریق سفیان ثوری منصور سے ابراہیم سے علقمہ سے ابن مسعود رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ۱۲ منہ (ت)

حواشی: 1 شعب الایمان حدیث ۴۱۵۷ باب المناسک دارالکتب العلمیۃ بیروت ۳/۴۹۰ 2 تنزیہ الشریعۃ المرفوعہ بحوالہ (فت) کتاب الحج فصل ثالث ۲/۱۵۷ 3 الکامل فی ضعفاء الرجال ترجمہ نعمان بن شبل دارالفکر بیروت ۷/۲۴۸۰

Volume 10 Fatawa Razawiyya

Hadith 10: Whosoever from my Ummah has the capability and then does not visit me, there is no excuse for him. [1] **Hadith 11:** [Note 2] He who offers greetings (Salam) to me, I respond to him. [2] "Peace be upon you, O Prophet, and the mercy of Allah and His blessings." **Hadith 12:** [Note 3] He who offers greetings to me near my grave, Allah Almighty appoints an angel for him [Note 4] to convey his greetings to me and suffice for his worldly and afterlife affairs, and I will be his intercessor or witness on the Day of Judgment. [3] **Hadith 13:** [Note 5] Allah Almighty has lifted the world before me so that I see everything that is to happen in it until the Day of Judgment, as clearly as I see my own palm. [4]

Note 1: Narrated by Ibn al-Najjar from Anas bin Malik (May Allah be pleased with him). [12 Minhu (M)] | Ibn Najjar narrated it from Hazrat Anas bin Malik (May Allah be pleased with him). [12 Minhu (T)] **Note 2:** Narrated by Imam Ahmad and Abu Dawud from Abu Hurairah (May Allah be pleased with him) with a sound chain of narration, as stated by al-Munawi. [12 Minhu (M)] | Imam Ahmad and Abu Dawud narrated it with a sound chain of narration from Hazrat Abu Hurairah (May Allah be pleased with him). This was said by al-Munawi. [12 Minhu (T)] **Note 3:** This is a Hadith of Abu Hurairah (May Allah be pleased with him), cited in *Al-Jawhar al-Munazzam* and mentioned by Allama al-Zarqani in *Sharh al-Mawahib*. [12 Minhu (M)] | This Hadith belongs to Hazrat Abu Hurairah (May Allah be pleased with him); it has been recorded in *Jawhar al-Munazzam*, and Allama Zarqani has mentioned it in *Sharh al-Mawahib*. [12 Minhu (T)] **Note 4:** It is the etiquette of the royal court that the requests of those present are made through a presenter (Arz Begi), otherwise the intentions of the hearts are clear to the Holy Prophet (Peace and blessings of Allah be upon him). **Note 5:** Narrated by al-Tabarani from Ibn Umar al-Faruq (May Allah be pleased with him). [12 Minhu (M)] | al-Tabarani narrated it from Hazrat Ibn Umar al-Faruq (May Allah be pleased with him). [12 Minhu (T)]

Footnotes: 1. Tanzih al-Shariah al-Marfu'ah, referencing Tarikh Ibn al-Najjar, Book of Hajj, Section 2, Dar al-Kutub al-Ilmiyah Beirut, 1/272 2. Sunan Abi Dawud, Book of Rituals (Manasik), Chapter: Visiting Graves, Aftab Alam Press Lahore, 1/279 3. Shu'ab al-Iman, Chapter on Rituals (Manasik), Hadith 4156, Dar al-Kutub al-Ilmiyah Beirut, 3/489 4. Kanz al-Ummal, referencing Nu'aym bin Hammad in al-Fitan, Hadith 31810, Muassasat al-Risala Beirut, 11/378; and Kanz al-Ummal, referencing al-Tabarani from Ibn Umar, Hadith 27139, Muassasat al-Risala Beirut, 11/420.

हदीस 10: मेरी उम्मत में से जो कोई (मेरी ज़ियारत की) सामर्थ्य रखता हो और फिर भी मेरी ज़ियारत न करे, तो उसके पास कोई बहाना नहीं है। [1] **हदीस 11:** [नोट 2] जो मुझ पर सलाम भेजता है, मैं उसे जवाब देता हूँ। [2] ऐ नबी! आप पर सलामती हो, और अल्लाह की दया और उसकी बरकतें हों। **हदीस 12:** [नोट 3] जो मेरी क़ब्र के पास मुझ पर सलाम भेजे, अल्लाह तआला उस पर एक फ़रिश्ता नियुक्त करता है [नोट 4] जो उसका सलाम मुझ तक पहुँचाता है और उसके दुनिया और आख़िरत के कामों में उसकी मदद करता है, और मैं क़यामत के दिन उसका सिफ़ारिशी या गवाह बनूँगा। [3] **हदीस 13:** [नोट 5] अल्लाह तआला ने मेरे सामने दुनिया को इस तरह पेश कर दिया है कि जो कुछ क़यामत तक होने वाला है, मैं उन सबको इस तरह देख रहा हूँ जैसे अपनी हथेली को देखता हूँ। [4]

नोट 1: इसे इब्न अल-नज्जार ने अनस बिन मालिक (रज़िअल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। [12 मिन्हु (म)] | इब्न नज्जार ने इसे हज़रत अनस बिन मालिक (रज़िअल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। [12 मिन्हु (त)] **नोट 2:** इसे इमाम अहमद और अबू दाऊद ने सही इस्नाद के साथ हज़रत अबू हुरैरा (रज़िअल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है, जैसा कि अल-मनावी ने कहा है। [12 मिन्हु (म)] | इसे इमाम अहमद और अबू दाऊद ने सही इस्नाद के साथ हज़रत अबू हुरैरा (रज़िअल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया। अल-मनावी ने ऐसा कहा है। [12 मिन्हु (त)] **नोट 3:** यह हज़रत अबू हुरैरा (रज़िअल्लाहु अन्हु) की एक हदीस है, जिसे 'जौहर अल-मुनज़म' में उद्धृत किया गया है और अल्लामा ज़रक़ानी ने 'शरह अल-मवाहिब' में इसका ज़िक्र किया है। [12 मिन्हु (म)] | यह हदीस हज़रत अबू हुरैरा (रज़िअल्लाहु अन्हु) की है; इसे 'जौहर अल-मुनज़म' में दर्ज किया गया है, अल्लामा ज़रक़ानी ने 'शरह अल-मवाहिब' में इसका ज़िक्र किया है। [12 मिन्हु (त)] **नोट 4:** शाही दरबार का शिष्टाचार यह है कि उपस्थित लोगों की विनती एक 'अर्ज़-बेगी' (पेशकार) के माध्यम से होती है, अन्यथा हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) पर दिलों के इरादे तक स्पष्ट हैं। **नोट 5:** इसे तबरानी ने हज़रत इब्न उमर अल-फ़ारूक़ (रज़िअल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। [12 मिन्हु (म)] | इसे तबरानी ने हज़रत इब्न उमर अल-फ़ारूक़ (रज़िअल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। [12 मिन्हु (त)]

पादटिप्पणी: 1. तंज़ीह अल-शरीअह अल-मरफ़ूआ, तारीख इब्न अल-नज्जार के हवाले से, किताब अल-हज्ज, दूसरा भाग, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया बेरुत, 1/272 2. सुनन अबू दाऊद, किताब अल-मनासिक, अध्याय: कब्रों की ज़ियारत, आफ़ताब आलम प्रेस लाहौर, 1/279 3. शुअब अल-ईमान, मनासिक पर अध्याय, हदीस 4156, दार अल-कुतुब अल-इल्मिया बेरुत, 3/489 4. कंज़

अल-उम्माल, अल-फ़ितन में नुयम बिन हम्माद के हवाले से, हदीस 31810, मुअस्ससत अल-रिसाला बेरुत, 11/378; और कंज़ अल-उम्माल, इब्न उमर से तबरानी के हवाले से, हदीस 27139, मुअस्ससत अल-रिसाला बेरुत, 11/420।

पृष्ठ 813 / 836

حدیث ۱۰: جو امتی میرا قدرت رکھتا ہو پھر میری زیارت نہ کرے اس کے لیے کوئی عذر نہیں۔ ۱ **حدیث ۱۱:** ع ۲ جو مجھ پر سلام عرض کرتا ہے میں اسے جواب دیتا ہوں ۲، السلام علیک ایھا النبی ورحمۃ اللہ وبرکاتہ۔ **حدیث ۱۲:** ع ۳ جو مجھ پر میری قبر کے پاس سلام عرض کرے اللہ تعالی اس پر ایک فرشتہ مقرر فرمائے ع ۴ کہ اس کا سلام مجھے پہنچائے اور اس کے دنیا و آخرت کے کاموں کی کفایت فرمائے اور روز قیامت میں اس کا شفیع یا گواہ ہوں ۳۔ **حدیث ۱۳:** ع ۵ اللہ تعالی نے دنیا میرے سامنے اٹھائی کہ وہ جو کچھ قیامت تک اس میں ہونے والا ہے سب کو ایسا دیکھ رہا ہوں جیسا اپنی ہتھیلی کو۔ ۴

ع ۱: رواہ ابن النجار عن انس بن مالک رضی اللہ تعالی عنہ ۱۲ منہ (م) | اسے ابن نجار نے حضرت انس بن مالک رضی اللہ تعالی عنہ سے روایت کیا ۱۲منہ (ت) **ع ۲:** رواہ الامام احمد وابوداؤد عن ابی ہریرۃ رضی اللہ تعالی عنہ باسناد صحیح قالہ المناوی ۱۲ منہ (م) | اسے امام احمد اور ابوداؤد نے صحیح اسناد کے ساتھ حضرت ابوہریرہ رضی اللہ تعالی عنہ سے روایت کیا۔ یہ مناوی نے کہا ۱۲منہ (ت) **ع ۳:** ھذا حدیث ابی ہریرۃ رضی اللہ تعالی عنہ اورردہ فی الجوھر المنظم ذکرہ العلامۃ الزرقانی فی شرح المواھب ۱۲منہ (م) | یہ حدیث ابوہریرہ رضی اللہ تعالی عنہ کی ہے اسے جوہر المنظم میں درج کیا گیا ہے، علامہ زرقانی نے شرح مواہب میں اس کا ذکر کیا ہے ۱۲منہ (ت) **ع ۴:** دربار شاہی کا ادب ہے کہ حاضرین کی عرض بھی عرض بیگی کے ذریعہ سے ہوتی ہے ورنہ حضور پر دلوں کے ارادے تک روشن ہیں صلی اللہ تعالی علیہ وسلم۔ **ع ۵:** رواہ الطبرانی عن ابن عمر الفاروق رضی اللہ تعالی عنہ ۱۲منہ (م) | اسے طبرانی نے حضرت ابن عمر الفاروق رضی اللہ تعالی عنہ سے روایت کیا ۱۲منہ (ت)

حواشی: 1. تنزیہ الشریعۃ المرفوعہ بحوالہ تاریخ ابن نجار کتاب الحج فصل ثانی دار الکتب العلمیہ بیروت ۱/ ۲۷۲ 2. سنن ابو داؤد کتاب المناسک باب زیارۃ القبور آفتاب عالم پریس لاہور ۱/ ۲۷۹ 3. شعب الایمان باب فی المناسک حدیث ۴۱۵۶ دار الکتب العلمیہ بیروت ۳/ ۴۸۹ 4. کنز العمال بحوالہ نعیم بن حماد فی الفتن حدیث ۳۱۸۱۰ موسسۃ الرسالۃ بیروت ۱۱/ ۳۷۸ و کنز العمال بحوالہ طبرانی عن ابن عمر حدیث ۲۷۱۳۹ موسسۃ الرسالۃ بیروت ۱۱/ ۴۲۰

Fatawa Razawiyya | Volume 10

Hadith 14: My knowledge after my passing is exactly as it was during my life. [Footnote 1]

Hadith 15: My life and my death are both better for you; your deeds are presented before me. I express gratitude for the good deeds and I seek forgiveness for your bad deeds. [Footnote 2]

Hadith 16: Indeed, Allah Almighty has forbidden the earth from consuming the bodies of Prophets. So, the Prophet of Allah is alive and is provided with sustenance. [Footnote 3]

Note 1: [Arabic]: Extracted by al-Asbahani and Ibn 'Adi in 'al-Kamil' from Anas, may Allah Almighty be pleased with him. (From the author) [Urdu]: Al-Asbahani and Ibn 'Adi narrated it in 'al-Kamil' from Hazrat Anas, may Allah be pleased with him. (From the translator)

Note 2: [Arabic]: Narrated by al-Harith in his Musnad, Ibn Sa'd in 'al-Tabaqat', and Qadi Ismail with a Sahih (authentic) chain from Bakr bin Abdullah al-Muzani, the trustworthy Successor (Tabi'i), as a Mursal (disconnected) report. Similarly, al-Bazzar narrated it with an authentic chain from Abdullah bin Mas'ud, may Allah be pleased with him. [Urdu]: Al-Harith in his Musnad, Ibn Sa'd in his 'al-Tabaqat', and Qadi Ismail with a Sahih chain narrated it from Bakr bin Abdullah al-Muzani, the trustworthy Successor, as a Mursal report. Similarly, al-Bazzar narrated it with authentic chains from Abdullah bin Mas'ud, may Allah be pleased with him.

Note 3: [Arabic]: (From the author) The beginning of the Hadith is: "Indeed, Allah has forbidden the earth from eating the bodies of the Prophets." This was extracted by the Imams Ahmad, Abu Dawud, an-Nasa'i, Ibn Majah, al-Hakim, al-Daraqutni, Ibn Khuzaymah, Ibn Hibban, Abu Nu'aym, and others from Aws bin Aws, may Allah be pleased with him. It was authenticated (Sahih) by Ibn Khuzaymah, Ibn Hibban, and al-Daraqutni. Abdul Ghani and al-Mundhiri graded it as Hasan (good). Ibn Dihyah said it is 'Sahih Mahfuz' (authentically preserved), narrated by reliable narrators from reliable narrators. It was also narrated by al-Tabarani. [Urdu]: The initial part of the Hadith is: "Allah Almighty has forbidden the earth from eating the bodies of the Prophets." This was extracted by the noble Imams Abu Dawud, Ibn Majah, al-Hakim, al-Daraqutni, Ibn Khuzaymah, Ibn Hibban, Abu Nu'aym, and others from Aws bin Aws, may Allah be pleased with him. Ibn Khuzaymah, Ibn Hibban, and al-Daraqutni

have declared it Sahih. Abdul Ghani and al-Mundhiri have declared it Hasan. Ibn Dihyah stated that this is Sahih Mahfuz and all its narrators are 'Adil (reliable). Al-Tabarani and al-Bayhaqi narrated it from Abu Hurairah, and Ibn 'Adi... (remainder on the next page).

Footnotes: 1. Jazb al-Qulub, Chapter 14, regarding visiting the Prophet (peace be upon him), Naval Kishore Lucknow, p. 199. 2. Kanz al-Ummal, citing Ibn Sa'd from Bakr bin Abdullah al-Muzani, Hadith 31903, Muassasah al-Risalah Beirut, 11/407. 3. Sunan Ibn Majah, Chapters on Funerals, H.M. Saeed Company Karachi, p. 119.

हदीस 14: मेरा ज्ञान मेरी वफ़ात (मृत्यु) के बाद वैसा ही है जैसा मेरी ज़िंदगी में था। [फुटनोट 1]

हदीस 15: मेरी हयात (जीवन) और ममात (मृत्यु) दोनों तुम्हारे लिए बेहतर हैं; तुम्हारे आमाल (कर्म) मेरे सामने पेश किए जाते हैं। मैं नेक कामों पर अल्लाह का शुक्र अदा करता हूँ और तुम्हारी बुराइयों के लिए तुम्हारे लिए इस्तिग़फ़ार (क्षमा प्रार्थना) करता हूँ। [फुटनोट 2]

हदीस 16: बेशक अल्लाह तआला ने ज़मीन पर पैग़म्बरों का जिस्म खाना हराम कर दिया है, इसलिए अल्लाह का नबी ज़िंदा है और उसे रोज़ी दी जाती है। [फुटनोट 3]

नोट 1: [अरबी]: इसे असबहानी और इब्न अदी ने 'अल-कामिल' में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। [उर्दू]: इसे असबहानी और इब्न अदी ने कामिल में हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया।

नोट 2: [अरबी]: इसे अल-हारिस ने अपनी मुसनद में, इब्न साद ने 'तबाक़ात' में और क़ाज़ी इस्माइल ने एक सहीह सनद के साथ बक्र बिन अब्दुल्ला अल-मुज़नी (विश्वसनीय ताबई) से 'मुरसल' रूप में रिवायत किया है। इसी तरह, अल-बज़ार ने इसे सहीह सनद के साथ अब्दुल्ला बिन मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। [उर्दू]: हारिस ने अपनी मुसनद में और इब्न साद ने अपनी तबाक़ात में और क़ाज़ी इस्माइल ने सहीह सनद के साथ बक्र बिन अब्दुल्ला अल-मुज़नी ताबई सिक़ा से मुरसल और ऐसे ही सहीह असनाद के साथ बज़ार ने अब्दुल्ला बिन मसूद रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया।

नोट 3: [अरबी]: हदीस का शुरुआती हिस्सा यह है: "बेशक अल्लाह ने ज़मीन पर हराम कर दिया है कि वह नबियों के शरीरों को खाए।" इसे इमाम अहमद, अबू दाऊद, अन-नसाई, इब्न माजा, अल-हाकिम, अल-दारकुतनी, इब्न खुज़ैमा, इब्न हिब्बान, अबू नुएम और अन्य ने औस बिन औस रज़ियल्लाहु अन्हु से उद्धृत किया है। इब्न खुज़ैमा, इब्न हिब्बान और अल-दारकुतनी ने इसे सहीह कहा है, जबकि अब्दुल ग़नी और अल-मुन्ज़िरी ने इसे हसन कहा है। इब्न दिह्या ने कहा कि यह 'सहीह महफ़ूज़' है और इसके सभी रावी आदिल (न्यायप्रिय/विश्वसनीय) हैं। इसे तबरानी ने भी रिवायत किया है। [उर्दू]: हदीस का इब्तिदाई (प्रारंभिक) हिस्सा यह है कि अल्लाह तआला ने ज़मीन पर हराम फ़रमाया है कि वह अंबिया के अजसाम (शरीरों) को खाए। इस को आइमा किराम अबू दाऊद, इब्न माजा, हाकिम, दारकुतनी, इब्न खुज़ैमा, इब्न हिब्बान, अबू नुएम वग़ैरा ने औस बिन औस रज़ियल्लाहु अन्हु से तख़रीज किया है और इस को इब्न खुज़ैमा, इब्न हिब्बान और दारकुतनी ने सहीह कहा है और

अब्दुल ग़नी और मुन्ज़िरी ने इस को हसन कहा है और इब्न दिह्या ने कहा कि यह सहीह महफ़ूज़ है और इस के तमाम रावी आदिल हैं, और तबरानी और बैहक़ी ने अबू हुरैरा से और इब्न अदी (बाक़ी अगले पृष्ठ पर)।

फुटनोट्स: 1. जज़्ब अल-क़ुलूब, अध्याय 14, नबी (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की ज़ियारत के बारे में, नवल किशोर लखनऊ, पृष्ठ 199। 2. कंज़ अल-उम्माल, इब्न साद के हवाले से बक्र बिन अब्दुल्ला अल-मुज़नी से, हदीस 31903, मुअस्ससतुर् रिसाला बेरूत, 11/407। 3. सुनन इब्न माजा, जनाज़ा के अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी कराची, पृष्ठ 119।

पृष्ठ 814 / 836

حدیث ۱۴: میرا علم میری وفات کے بعد ایسا ہی ہے جیسا میری زندگی میں۔1

حدیث ۱۵: میری حیات وممات دونوں تمھارے لئے بہتر ہیں، تمھارے اعمال میرے حضور پیش کئے جاتے ہیں میں نیکیوں پر شکر کرتا ہوں اور برائیوں پر تمھارے لئے استغفار فرماتا ہوں۔2

حدیث ۱۶: بیشک اللہ تعالیٰ نے زمین پر پیغمبروں کا جسم کھانا حرام کیا ہے تو اللہ کا نبی زندہ ہے اور روزی دیا جاتا ہے۔3

عہ ۱: [Arabic]: اخرجه الاصبهانی و ابن عدی فی الکامل عن انس رضی الله تعالیٰ عنہ ۱۲ منہ (م) [Urdu]: اسے اصبہانی اور ابن عدی نے کامل میں حضرت انس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ۱۲ منہ (ت)

عہ ۲: [Arabic]: رواه الحارث فی مسنده وابن سعد فی طبقات والقاضی اسمعیل بسند صحیح عن بکر بن عبد الله المزنی التابعی الثقہ مرسلا والبزار مثلہ باسناد صحیح عن عبدالله بن مسعود رضی الله تعالیٰ عنہ ۱۲ منہ غفرلہ [Urdu]: حارث نے اپنی مسند میں اور ابن سعد نے اپنی طبقات میں اور قاضی اسمعیل نے بسند صحیح بکر بن عبداللہ المزنی التابعی الثقہ سے مرسلا اور ایسے ہی صحیح اسناد کے ساتھ بزار نے عبداللہ بن مسعود رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ۱۲منہ غفرلہ (ت)

(م) عہ ۳: [Arabic]: صدر الحدیث ان الله حرم علی الارض ان تاکل اجساد الانبیاء3 اخرج الائمہ احمد وابوداؤد و النسائی وابن ماجہ والحاکم والدارقطنی وابن خزیمۃ وابن حبان وابونعیم وغیرہم عن اوس بن اوس رضی الله تعالیٰ عنہ وصححہ ابنا خزیمہ وحبان والدارقطنی وحسنہ عبدالغنی والمنذری وقال ابن دحیہ انه صحیح محفوظ بنقل العدل عن العدل اه واخرجه الطبرانی [Urdu]: حدیث کا

ابتدائی حصہ یہ ہے اللہ تعالیٰ نے حرام فرمایا ہے زمین پر کہ وہ انبیاء کے اجسام کو کھائے۔ اس کو ائمہ کرام ابوداؤد، ابن ماجہ، حاکم، دارقطنی، ابن خزیمہ، ابن حبان، وابو نعیم و غیرہم نے اوس بن اوس رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے تخریج کیا ہے اور اس کو ابن خزیمہ، ابن حبان اور دارقطنی نے صحیح کہا ہے اور عبدالغنی اور منذری نے اس کو حسن کہا ہے اور ابن دحیہ نے کہا کہ یہ صحیح محفوظ ہے اور اس کے تمام راوی عادل ہیں، اور طبرانی اور بیہقی نے ابوہریرہ سے اور ابن عدی

(باقی بر صفحہ آئندہ)

حواشی: 1 جذب القلوب باب چہار دہم در زیارت النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نولکشور لکھنؤ ص ۱۹۹ 2 کنزالعمال بحوالہ ابن سعد عن بکر بن عبد اللہ المزنی حدیث ۳۱۹۰۳ موسسۃ الرسالہ بیروت ۱۱/ ۴۰۷ 3 سنن ابن ماجہ ابواب الجنائز ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۱۱۹

Fatawa Razawiya Volume 10

...is given [provision], peace and blessings of Allah be upon him. - 1

Hadith 17: Prayer in this mosque of mine is better than a thousand prayers in other mosques, except for Al-Masjid al-Haram. - 2

Hadith 18: Whoever dies in one of the two holy sanctuaries (Haramain) will rise on the Day of Resurrection without fear. - 3

(Remaining footnote from previous page) | This has been narrated by the eminent Imams Abu Dawood, Ibn Majah, Hakim, Daraqutni, Ibn Khuzaymah, And Al-Bayhaqi from Abu Hurairah and Ibn Adi from Anas with the addition: | Ibn Hibban, Abu Nu’aym and others from Aws bin Aws (may Allah be pleased with him). "So Allah's Prophet is alive and provided for." 4 Narrated by Ibn Majah with a sahih (authentic) chain from Abu | Ibn Khuzaymah, Ibn Hibban, and Daraqutni classified it as Sahih, while Abdul Ghani and Mundhiri Al-Darda (may Allah be pleased with them all) - 12 Minhu (M) | classified it as Hasan. Ibn Dihyah stated it is Sahih Mahfuz (authentically preserved) and all its narrators are reliable (Adil). Note 1: Narrated by Ahmad, and Sunan Abu Dawood from Abu Hurairah, and Ahmad | At-Tabarani and Al-Bayhaqi narrated it from Abu Hurairah and Ibn Adi from Anas (may Allah and Muslim, An-Nasa'i, and Ibn Majah from Ibn Umar, and Muslim from | be pleased with him). The addition "So Allah's Prophet is alive and provided for" Umm al-Mu'minin Maymuna, and Ahmad from Jubayr bin Mut'im, and from | was narrated by Ibn Majah with a Sahih chain from Abu al-Darda Sa'd, and from Al-Arqam bin Abi al-Arqam, and Ibn Majah from Jabir | (may Allah be pleased with them all). - 12 Minhu (T) bin Abdullah, and Ibn Hibban from Abdullah bin al-Zubayr (may Allah | This is found in Al-Bayhaqi narrated from Anas bin Malik, Bakr bin Abdullah, Hatib, and the Commander of the Faithful Umar Farooq (may Allah be pleased with them). This is the be pleased with them all) - 12 Minhu (M) | first, fourth, fifth, and seventh hadith completion. Their documentation has been passed. - 12 Minhu (T). Note 2: Narrated from Anas bin Malik by Al-Bayhaqi, and from Bakr bin Abdullah, and from Hatib, and from the Commander of the Faithful Umar, and from others (may Allah be pleased with them all). This is a completion for the first and fourth, fifth, and seventh hadiths. Their documentation has already been passed. - 12 Minhu (M)

1. Sunan Ibn Majah, Chapters of Funerals, H.M. Saeed Company, Karachi, p. 119.

2. Sahih Muslim, Chapter: Excellence of Prayer in My Two Mosques, Makkah and Madinah, Qadimi Kutub Khana, Karachi, 1/446.
3. Shu'ab al-Iman, Chapter on Rituals (Manasik), Hadith 4158, Dar al-Kutub al-Ilmiyya, Beirut, 3/490.
4. Sunan Ibn Majah, Chapters of Funerals, H.M. Saeed Company, Karachi, p. 119.

फ़तावा रज़विया खंड 10

...दिया जाता है, अल्लाह तआला उन पर दरूद और सलाम भेजे। - 1

हदीस 17: मेरी इस मस्जिद में नमाज़, मस्जिद-ए-हराम के अलावा अन्य मस्जिदों में एक हज़ार नमाज़ों से बेहतर है। - 2

हदीस 18: जो हरमैन (मक्का और मदीना) में से किसी भी हरम में मरता है, वह क़यामत के दिन बिना किसी डर के उठेगा। - 3

(पिछले पृष्ठ के फुटनोट का शेष भाग) | इसे इमाम अबू दाऊद, इब्न माजाह, हाकिम, दारकुतनी, इब्न खुज़ैमा, और अल-बैहक़ी ने अबू हुरैरा से और इब्न अदी ने अनस से इस वृद्धि के साथ: | इब्न हिब्बान, और अबू नुऐम आदि ने औस बिन औस रज़ियल्लाहु अन्हु "तो अल्लाह के नबी जीवित हैं और उन्हें रिज़्क़ दिया जाता है।" 4 इब्न माजाह ने अबू | से रिवायत किया है। इब्न खुज़ैमा, इब्न हिब्बान और दारकुतनी ने इसे दरदा रज़ियल्लाहु अन्हुम से सही सनद के साथ रिवायत किया है - 12 मिन्हु (म) | सही कहा है, और अब्दुल गनी और मुन्ज़िरी ने इसे हसन कहा है। इब्न दिह्या ने कहा कि यह सही महफ़ूज़ है और इसके सभी रावी आदिल (न्यायप्रिय) हैं। नोट 1: इसे अहमद ने रिवायत किया, और सुनन अबू दाऊद ने अबू हुरैरा से, और अहमद | तबरानी और बैहक़ी ने इसे अबू हुरैरा से और इब्न अदी ने अनस और मुस्लिम, अन-नसाई और इब्न माजाह ने इब्न उमर से, और मुस्लिम ने | रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत किया है। यह वृद्धि कि "अल्लाह के नबी उम्मुल मोमिनीन मैमूना से, और अहमद ने जुबैर बिन मुतिम से, और साद से, | जीवित हैं और उन्हें रिज़्क़ दिया जाता है" को इब्न माजाह ने सही सनद और अरक़म बिन अबी अरक़म से, और इब्न माजाह ने जाबिर बिन अब्दुल्लाह से, | के साथ अबू दरदा रज़ियल्लाहु अन्हुम से रिवायत किया है। - 12 मिन्हु (त) और इब्न हिब्बान ने अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर रज़ियल्लाहु अन्हुम से रिवायत किया है - 12 मिन्हु (म) | यह बैहक़ी के यहाँ अनस बिन मलिक, बक्र बिन अब्दुल्लाह, हातिब और अमीरुल मोमिनीन उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हुम से वर्णित है। यह पहली, चौथी, पाँचवीं और सातवीं हदीस का शेष भाग है। इसका संदर्भ दिया जा चुका है। - 12 मिन्हु (त) नोट 2: इसे अनस बिन मलिक से बैहक़ी ने, और बक्र बिन अब्दुल्लाह, और हातिब, और अमीरुल मोमिनीन उमर, और अन्य रज़ियल्लाहु अन्हुम से रिवायत किया गया है।

यह पहली और चौथी, पांचवीं और सातवीं हदीस का पूरक है। इनका संदर्भ पहले दिया जा चुका है। - 12 मिन्हु (म)

1. सुनन इब्न माजाह, जनाज़ा के अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, पृ. 119.
2. सहीह मुस्लिम, मक्का और मदीना की मस्जिदों में नमाज़ की फ़ज़ीलत का अध्याय, क़दीमी कुतुब खाना, कराची, 1/446.
3. शुअबुल ईमान, मनासिक का अध्याय, हदीस 4158, दारुल कुतुब अल-इल्मिया, बेरुत, 3/490.
4. सुनन इब्न माजाह, जनाज़ा के अध्याय, एच.एम. सईद कंपनी, कराची, पृ. 119.

فتاوی رضویہ جلد دہم

دیا جاتا ہے صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم - 1

حدیث 17: میری اس مسجد میں نماز اور مسجدوں کی ہزار نماز سے افضل ہے سوائے مسجد الحرام کے - 2

حدیث 18: جو حرمین میں سے کسی حرم میں مرے روز قیامت بے خوف اٹھے۔ 3

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) | اس کو ائمہ کرام ابوداؤد، ابن ماجہ، حاکم، دارقطنی، ابن خزیمہ، والبیھقی عن ابی ھریرۃ و ابن عدی عن انس و مع زیادۃ | ابن حبان، وابو نعیم وغیرہم نے اوس بن اوس رضی اللہ تعالیٰ عنہ فبنی اللہ حی یرزق 4 رواہ ابن ماجۃ بسند صحیح عن ابی | سے تخریج کیا ہے اور اس کو ابن خزیمہ، ابن حبان اور دارقطنی نے الدرداء رضی اللہ تعالیٰ عنہم اجمعین 12 منہ (م) | صحیح کہا ہے اور عبدالغنی اور منذری نے اس کو حسن کہا ہے اور ابن دحیہ نے کہا کہ یہ صحیح محفوظ ہے اور اس کے تمام راوی عادل ہیں، ع 1: رواہ احمد والسنۃ الابادؤد عن ابی ھریرۃ واحمد | اور طبرانی اور بیہقی نے ابوہریرہ سے اور ابن عدی نے انس رضی ومسلم والنسائی و ابن ماجۃ عن ابن عمر و مسلم عن | اللہ تعالیٰ عنہ سے روایت کیا ہے اس اضافہ "تو اللہ کا نبی زندہ ہے ام المومنین میمونۃ واحمد عن جبیر بن مطعم وعن | روزی دیا جاتا ہے" کو ابن ماجہ نے صحیح سند کے ساتھ ابودرداء وسعد وعن الارقم بن ابی الارقم و کا بن ماجۃ عن جابر | رضی اللہ تعالیٰ عنہم اجمعین سے روایت کیا ہے 12 منہ (ت) بن عبد اللہ و کا بن حبان عن عبد اللہ بن الزبیر رضی اللہ | یہ بیہقی کے ہاں انس بن مالک اور بکر بن عبد اللہ، حاطب اور امیر تعالٰی عنہم اجمعین 12 منہ (م) | المومنین عمر فاروق رضی اللہ تعالیٰ عنہم سے مروی ہے یہ پہلی، ع 2: مروی عن انس بن مالک عند البیہقی و عن بکر | چوتھی، پانچویں اور ساتویں حدیث کا تتمہ ہے۔ اس کی

تخریج گزر بن عبد اللہ و عن حاطب و عن امیر المومنین عمر و عن | چکیں 12 منہ (ت) غیرھم رضی اللہ تعالیٰ عنہم تتمة للحدیث الاول والرابع والخامس والسابع وقد مر تخریجھا 12 منہ (م)

1 سنن ابن ماجہ ابواب الجنائز ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۱۱۹ 2 صحیح مسلم باب فضل الصلوۃ بمسجدی مکہ والمدینہ قدیمی کتب خانہ کراچی ۴۴۶/۱ 3 شعب الایمان باب فی المناسک حدیث ۴۱۵۸ دارالکتب العلمیہ بیروت ۴۹۰/۳ 4 سنن ابن ماجہ ابواب الجنائز ایچ ایم سعید کمپنی کراچی ص ۱۱۹

Fatawa Razawiyya Volume 10

Hadith 19: Medina is superior to Mecca[1]. Hadith 20: Whoever can manage to die in Medina should die there, for whoever dies in Medina, I will intercede for him[2]. O Allah, grant us sustenance upon faith and the Sunnah, by his rank with You, by the greatest favor. Ameen, Ameen, Ameen. And may Allah Almighty's peace and blessings be upon our master and leader Muhammad, and his family and companions all together. M: There for you, O group of pilgrims / When you come from the most distant mountain passes. O group of pilgrims! Glad tidings to you when you come from far-off paths. T: And indeed you have encompassed a great favor / And for an accepted Hajj, the reward is Paradise. T: And indeed you have gathered a great favor and the reward for an accepted Hajj is Paradise. SH: This report is by way of hope, in view of many Hadiths (note) that have come in the same meaning; it refers to the general intention and specific forgiveness. Note 1: Narrated by al-Tabarani in al-Kabir and al-Daraqutni in al-Afrad from Rafi' ibn Khadij (may Allah Almighty be pleased with him). [M] Note 2: Narrated by Ahmad, al-Tirmidhi, Ibn Majah, and Ibn Hibban from Ibn 'Umar (may Allah Almighty be pleased with them both), and al-Tirmidhi declared it authentic. [M] Al-Tabarani narrated it in al-Kabir and al-Daraqutni in al-Afrad from Rafi' ibn Khadij (may Allah Almighty be pleased with him). [T] Ahmad, al-Tirmidhi, Ibn Majah, and Ibn Hibban narrated it from Ibn 'Umar (may Allah Almighty be pleased with them both), and al-Tirmidhi declared it authentic. [T] Note 3: Many Hadiths have been narrated in this regard; in the Virtues of Hajj and Umrah, my noble father (may his secret be sanctified) in Jawaher al-Bayan al-Sharif... (Continued on next page)

[1] Al-Mu'jam al-Kabir, narrated from Rafi' ibn Khadij, Maktabah al-Faysaliyyah, Beirut, 2/288. [2] Jami' al-Tirmidhi, Chapters on Virtues, Chapter on what has come regarding the excellence of Medina, Amin Company Kutub Khana Rashidiyah Delhi, 2/231.

फ़तावा रज़विया खंड 10

हदीस 19: मदीना मक्का से श्रेष्ठ है[1]। हदीस 20: जिससे मदीना में मरना हो सके तो उसी में मरे, क्योंकि जो मदीना में मरेगा मैं उसकी शफ़ाअत (सिफ़ारिश) फ़रमाऊँगा[2]। ऐ अल्लाह, हमें ईमान और सुन्नत पर रिज़्क़ अता फ़रमा, उनके मर्तबे के सदक़े में जो तेरे पास सबसे बड़ा एहसान है। आमीन आमीन आमीन। और अल्लाह तआला का दुरूद और सलाम हो हमारे सरदार और मौला मुहम्मद और उनकी आल (संतान) और सहाबा (साथियों) सब पर। म: वहाँ आपके लिए, ऐ हाजियों के समूह / जब आप सबसे दूर के पहाड़ी रास्तों से आते हैं। ऐ हाजियों के गिरोह! तुम्हें खुशखबरी हो जब तुम दूर-दराज़ के रास्तों से आते हो। त: और वास्तव में आपने एक बड़ा उपकार प्राप्त किया है / और एक स्वीकृत हज का बदला जन्नत है। त: और बेशक तुमने बड़ा एहसान जमा किया और अच्छे हज का बदला स्वर्ग है। श: यह खबर आशा के तौर पर है, कई हदीसों (नोट) को देखते हुए जो इसी अर्थ में आई हैं, यहाँ सामान्य मुराद और क्षमा का उल्लेख है। नोट 1: इसे तबरानी ने 'कबीर' में और दारकुतनी ने 'अफ़राद' में राफ़े बिन ख़दीज (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत किया है। [म] नोट 2: इसे अहमद, तिर्मिज़ी, इब्न माजा और इब्न हिब्बान ने इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत किया है और तिर्मिज़ी ने इसे सही कहा है। [म] इसे तबरानी ने 'कबीर' में और दारकुतनी ने 'अफ़राद' में राफ़े बिन ख़दीज (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत किया है। [त] इसे अहमद, तिर्मिज़ी, इब्न माजा और इब्न हिब्बान ने इब्न उमर (रज़ियल्लाहु अन्हा) से रिवायत किया है और तिर्मिज़ी ने इसे सही कहा है। [त] नोट 3: इस बारे में कई हदीसें आई हैं, 'फ़ज़ाइल-ए-हज व उमराह' में हज़रत वालिद (कुद्दिसा सिर्रुहुल माजीद) ने 'जवाहिरुल बयान शरीफ़' में... (बाकी अगले पृष्ठ पर)

[1] अल-मुअजम अल-कबीर, राफ़े बिन ख़दीज से रिवायत, मक्तबा अल-फ़ैसलिया बेरूत 2/288। [2] जामे तिर्मिज़ी, अबवाबुल मनाकिब, बाब जो मदीना की फ़ज़ीलत के बारे में आया, अमीन कंपनी कुतुब खाना रशीदिया दिल्ली 2/231।

पृष्ठ 816/836

حدیث ع۱ ۱۹: مدینہ مکہ سے افضل ہے1۔ حدیث ع۲ ۲۰: جس سے مدینہ میں مرنا ہو سکے تو اسی میں مرے کہ جو مدینہ میں مرے گا میں اس کی شفاعت فرماؤں گا2۔ اللھم ارزقنا علی الایمان والسنة بجاھه عندك بأعظم المنة أمین أمین وصلی اللہ تعالی علی سیدنا ومولانا محمد وآله وصحبه اجمعین۔ م: ھنالکما یا معشر الحجاج / اذ جئتم من ابعد الفجاج اے گروہ حاجیوں! تمہیں مژدہ جب آئے تم دور دراز راہوں سے۔ ت: وقد حویتم عظیم المنة / والحج مبروراً جزاہ الجنة ت: اور بیشک تم نے بڑا احسان جمع کیا اور اچھے حج کا بدلہ بہشت ہے۔ ش: یہ اخبار بہ طور رجا ہے، بنظرِ احادیث کثیرہ عہ کہ اسی معنی میں وارد ہوئیں یاد عامراد ہے اور تخصیص مغفرت عہ۱: رواہ الطبرانی فی الکبیر والدارقطنی فی الافراد عن رافع بن خدیج رضی اللہ تعالی عنه ۲ امنه (م) عہ۲: رواہ احمد والترمذی وابن ماجة وابن حبان عن ابن عمر رضی اللہ تعالی عنھما وصححه الترمذی ۱۲ منه (م) اس کو طبرانی نے کبیر میں اور دارقطنی نے افراد میں رافع بن خدیج رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے، ۱۲ منہ (ت) اس کو احمد، ترمذی، ابن ماجہ اور ابن حبان نے ابن عمر رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے اور ترمذی نے اسے صحیح کہا ۱۲ منہ (ت) عہ۳: اس بارے میں احادیث کثیرہ وارد ہیں، فضائل حج وعمرہ میں حضرت والد قدس سرہ الماجد نے جواہر البیان شریف (باقی بر صفحہ آئندہ)

1 المعجم الکبیر مروی از رافع بن خدیج المکتبة الفیصلیة بیروت ۲۸۸/۲ 2 جامع الترمذی ابواب المناقب باب ما جاء فی فضل المدینة امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی ۲ /۲۳۱

Fatawa-e-Razvia Volume 10

...does not mean that it is specifically your forgiveness, but rather that it is your special forgiveness (1).

Original Text (Arabic): So adhere to praising and thanking Allah, for this blessing is of the greatest magnitude. Translation: Therefore, commit to praising and thanking God, as this blessing is indeed very great.

Original Text (Arabic): And honor the Prophet by sending peace upon him, for he is the musk for the seal [finality]. Translation: And honor the Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, by sending greetings upon him, because this is musk for the seal of conclusion.

Original Text (Arabic): And upon his family, who are the cream of creation, together with his noble and virtuous companions. Translation: And upon his family, who are the essence of creation, along with the companions who possess great excellence and generosity.

Explanation: Such words are used in the context of praise; for example, referring to Imam Abu Hanifa, leader of the saints, or His Eminence Ghaus-e-Azam (may Allah be pleased with them both). Even for the scholars and leaders of the current era, terms like 'the best of researchers,' 'the most perfect of investigators,' 'the essence of the Prophetic lineage,' and 'the critic of the Murtadawi family' are used. These words are not intended to carry their absolute literal and comprehensive meaning. Otherwise, in that sense, the Leader of leaders and Master of the Saints is only the Holy Prophet, Master of the Two Worlds, peace and blessings of Allah be upon him. And if taken from among the Ummah (community) (2), then it refers to Hazrat Siddiq-e-Akbar (may Allah be pleased with him). Similarly, the 'essence of the Prophetic lineage' is Hazrat Batul-uz-Zahra (may Allah be pleased with her).

(Continuation of footnote from previous page): ...more than seventy hadiths are mentioned; many of them will be found useful in this regard. The most superior is what is narrated in the Sahihayn [Bukhari & Muslim] that the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said: "Whoever performs Hajj and avoids obscenity and sin, returns as pure as the day his mother gave birth to him." - 12 (Author)

Annotation 1: Meaning, separate and distinct from general forgiveness. - 12 (Author)
Annotation 2: This is said because the term 'Awliya' (saints/friends of Allah) is sometimes used in a broader sense, meaning every beloved of God; thus, it includes

Prophets and even angels. In this sense, the Great Quran says: "Unquestionably, [for] the allies of Allah there will be no fear concerning them, nor will they grieve." (1) (Listen, indeed, for the friends of Allah there is neither fear nor grief. - Translator). In this sense, the 'Leader of the Saints' is the Leader of the Beloveds, the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). And sometimes it refers to those besides Prophets and Messengers; you must have heard "Prophets and Saints" thousands of times, and the conjunction implies difference. In this sense, the 'Leader of the Saints' is Hazrat Siddiq-e-Akbar (may Allah be pleased with him), as he is, by consensus of the Ahl al-Sunnah, the most excellent and perfect of the entire Ummah. (Continued on the next page).

1. Al-Targhib wa al-Tarhib, Kitab al-Hajj, al-Targhib fi al-Hajj, Mustafa al-Babi Egypt, 2/123; Sahih al-Bukhari, Kitab al-Manasik, Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/206.

...इसका यह अर्थ नहीं कि विशेष रूप से तुम्हारी क्षमा हो, बल्कि यह कि तुम्हारी विशेष क्षमा (१) हो।

मूल पाठ (अरबी): अतः अल्लाह की स्तुति और कृतज्ञता के प्रति समर्पित रहें, क्योंकि यह वरदान अत्यंत महान है। अनुवाद: तो अल्लाह की प्रशंसा और धन्यवाद को अपना लें क्योंकि यह वरदान बहुत बड़ा है।

मूल पाठ (अरबी): और नबी पर सलाम भेजकर उनका सम्मान करें, क्योंकि वह अंत की मुहर के लिए कस्तूरी हैं। अनुवाद: और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का सम्मान उन पर सलाम भेज कर करो, क्योंकि यह अंत की मुहर (खातमा) के लिए कस्तूरी है।

मूल पाठ (अरबी): और उनके परिजनों पर जो सृष्टि का सार हैं, उनके श्रेष्ठ और सम्मानित साथियों के साथ। अनुवाद: और उनके परिजनों (आल) पर जो सृष्टि का सार हैं, उनके साथियों (सहाबा) के साथ जो अत्यंत गौरव और कृपा वाले हैं।

स्पष्टीकरण: इस प्रकार के शब्द प्रशंसा के स्थान पर उपयोग किए जाते हैं; जैसे इमाम अबू हनीफ़ा, औलिया के सरदार, हुज़ूर गौस-ए-आज़म (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो)। यहाँ तक कि वर्तमान समय के विद्वानों और सरदारों के लिए भी लिखा जाता है: 'श्रेष्ठ शोधकर्ता', 'पूर्ण अन्वेषक', 'मुस्तफ़वी वंश का सार', 'मुर्तज़ावी खानदान के आलोचक'। इन शब्दों से वास्तविक व्यापकता और समावेशन का अर्थ नहीं लिया जाता। अन्यथा, इस अर्थ में तो इमामों के इमाम और औलिया के सरदार केवल और केवल हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ही हैं। और यदि उम्मत (समुदाय) (२) में से लें, तो हज़रत सिद्दीक़-ए-अकबर (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो)। इसी प्रकार मुस्तफ़वी वंश का सार हज़रत बतुल-ए-ज़हरा हैं।

(पिछले पृष्ठ की शेष पाद-टिप्पणी): ...सत्तर से अधिक हदीसें उल्लेख की गई हैं, उनमें बहुत सी हदीसें इस अर्थ में लाभकारी मिलेंगी। सबसे श्रेष्ठ वह है जो सहीहैन में आया है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया: जिसने हज किया और उसमें अश्लीलता और पाप से बचा, वह वैसा ही शुद्ध होकर लौटा जैसा वह उस दिन था जब अपनी माँ के पेट से निकला था। - १२ (लेखक)

पाद-टिप्पणी १: अर्थात् सामान्य क्षमा से अलग और विशिष्ट। - १२ (लेखक) पाद-टिप्पणी २: यह इसलिए कह दिया गया क्योंकि 'औलिया' का प्रयोग कभी व्यापक अर्थ में होता है, यानी ईश्वर का हर

प्रिय; तो इसमें नबी बल्कि फ़रिश्ते भी शामिल हैं। इस अर्थ में कुरआन अज़ीम में फरमाया: "खबरदार! अल्लाह के वलियों पर न कोई डर है और न वे दुखी होंगे।" (१) (सुन लो, वास्तव में अल्लाह के वलियों पर न कोई डर है न दुख। - अनुवादक)। इस अर्थ में 'सैय्यद-उल-औलिया' महबूबों के सरदार हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हैं। और कभी नबियों और रसूलों के अतिरिक्त लोगों को मुराद लेते हैं; हज़ारों बार सुना होगा "अम्बिया और औलिया", और संयोजन भिन्नता को दर्शाता है। इस अर्थ में 'सैय्यद-उल-औलिया' हज़रत सिद्दीक़-ए-अकबर (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) हैं, क्योंकि सुन्नी मत के सर्वसम्मत निर्णय के अनुसार वह पूरी उम्मत में सबसे श्रेष्ठ और पूर्ण हैं। (शेष अगले पृष्ठ पर)।

1. अल-तरग़ीब वल-तरहीब, किताबुल हज, अल-तरग़ीब फिल हज, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र, २/१२३; सहीह बुखारी, किताबुल मनासिक, कदीमी कुतुब खाना कराची, १/२०६।

جلد دہم فتاوی رضویہ

کے یہ معنی نہیں کہ خاص تمہاری مغفرت ہو ، بلکہ یہ کہ تمہاری خاص مغفرت ۱۲ ہو ۔

م: فالتزموا الحمد لہ والشکر ا اذھذہ النعمۃ منھا الکبریٰ ت: تو حمد و شکر الٰہی کا التزام کر لو کہ یہ نعمت اس کی بہت بڑی ہے۔

م: وعظموا النبی بالسلام علیہ فھو المسک للختام ت: اور نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی تعظیم کروان پر سلام بھیج کر ، کیونکہ یہ مشک ہے مہر خاتمہ کے لیے۔

م: والہ خلاصۃ الانام مع صحبہ الافاضل الکرام ت: اور ان کی آل پر کہ خلاصہ مخلوقات ہیں مع صحابہ کے کہ بہت فضیلت و کرم والے ہیں۔

ف: اس قسم کے کلمات مقام مدح میں استعمال کرتے ہیں مثلاً امام ابو حنیفہ سید الاولیاء حضور غوث اعظم رضی اللہ تعالیٰ عنہما بلکہ علماء و سادات عصر کو لکھتے ہیں ، افضل المحققین ، اکمل المدققین ، خلاصہ دودمان مصطفوی ، نقاد خاندان مرتضوی اور ان الفاظ سے عموم واستغراق حقیقی مراد نہیں لیتے۔ ورنہ بایں معنی امام ائمہ وسیدنا الاولیاء حضور اقدس سرور دو عالم صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم ہیں وبس، اور اگر امت ۲ میں لیجئے تو حضرت صدیق اکبر رضی اللہ تعالیٰ عنہ ۔ اسی طرح خلاصہ دودمان مصطفوی حضرت بتول زہرا ہیں۔

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) میں ستر سے زائد حدیثیں ذکر فرمائیں ان میں بہت احادیث اس معنی کی مفید ملیں گی، سب سے اعلیٰ یہ ہے کہ صحیحین میں آیا حضور صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے فرمایا: جو حج کرے اور اس میں رفث و گناہ سے بچے ایسا پاک ہو کر پلٹے جیسا جس دن ماں کے پیٹ سے نکلا تھا ا ۱۲ منہ۔

عھ ۱: یعنی مغفرت عامہ سے جدا و ممتاز ۱۲ منہ عھ ۲: یہ اس لیے کہہ دیا کہ اولیاء کا اطلاق کبھی بمعنی اعم آتا ہے یعنی ہر محبوب خدا، تو انبیاء بلکہ ملائکہ کو بھی شامل، اس معنی پر قرآن عظیم میں فرمایا: اَلَآ اِنَّ اَوْلِیَآءَ اللّٰہِ لَا خَوْفٌ عَلَیْہِمْ وَ لَا ہُمْ یَحْزَنُوْنَ (۱) سن لو بیشک اللہ کے ولیوں پر نہ کچھ خوف ہے نہ غم۔ ت) بایں معنی سید الاولیاء حضور سید المحبوبین ہیں صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم، اور کبھی ماورائے انبیاء و مرسلین مراد لیتے ہیں ہزاروں بار سنا ہو گا انبیاء و اولیاء اور عطف مقتضی مغایرت ہے اس معنی پر سید الاولیاء حضرت صدیق اکبر رضی اللہ تعالیٰ عنہ ہیں کہ باجماع اہل سنت تمام امت سے افضل و اکمل (باقی اگلے صفحہ پر)

1 الترغیب والترھیب کتاب الحج الترغیب فی الحج مصطفی البابی مصر ۲ / ۱۲۳ ، صحیح بخاری کتاب المناسک قدیمی کتب خانہ کراچی ۱ / ۲۰۶

Fatawa Razawiya Volume 10

And from above, take Hazrat Mawla Mushkil Kusha and the critic of the Murtazavi family, Hasan al-Mujtaba (may Allah be pleased with them all).

(Remaining footnote from previous page) ...and the third application of this word is the most specific, which does not even include the Sahaba (Companions) or the Tabi'in (Successors), as they are distinguished by special names. For instance, when it is said that there is a consensus of the Sahaba, Tabi'in, saints of the Ummah, and scholars of the nation on this issue, at that time this word is synonymous with the terminology of Sufi masters and mystics. In this sense, undoubtedly, Ghaus-e-Azam (may Allah be pleased with him) is the Master of the Saints. No soul is excluded from this unless evidence arises (meaning in the sense that among the saints, you are the leader of all without exception; no saint will be excluded without proof). Therefore, in the command that must be followed: "This foot of mine is on the neck of every saint of Allah" (My this foot is on the neck of every saint - Translator), there is essentially no need for specific exclusion without a specificator, as we have established in Al-Mujeer al-Mu'azzam (as we have specified it in Al-Mujeer al-Mu'azzam 12 - from the author, may he be forgiven).

Note 18: In our book 'Matla' al-Qamarayn fi Abanat Sabqat al-Umrayn', we have proven through numerous hadiths that the elder grandson (Hasan) is superior to the younger grandson (Husain) (may Allah be pleased with them both). Among them is the hadith from Tabarani that the exalted Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said:

1. "To Hasan belongs my awe and leadership, and to Husain belongs my courage and generosity." [1] Second: The hadith of Ahmad and Abu Dawud where he said: "Hasan is mine and Husain is Ali's." [2] Third: The hadith of Abu Ya'la where he said: "Hasan is the leader of all the youth of Paradise." [3]

And this is a 'Hasan' (good) hadith, a clear text for what we said. (This hadith is a clear text for our claim - Translator). This humble person [the author], on the basis of hadiths, used to think so, until I found clarification of this meaning in Tayseer Sharh Jami' al-Saghir. All praise is due to Allah. 12 - from the author, may he be forgiven.

[1] Majma' al-Zawa'id, Chapter on what Hasan and Husain shared, etc., Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 9/185. [2] Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Miqdam bin

Ma'dikarib, Dar al-Fikr, Beirut, 4/132. [3] Majma' al-Zawa'id, Chapter on what has been narrated about Hasan bin Ali, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, 9/178.

फ़तावा रज़विया जिल्द १०

और ऊपर से लें तो हज़रत मौला मुश्किल कुशा और मुर्तज़वी खानदान के विवेचक हसन मुजतबा (अल्लाह उन सभी से प्रसन्न हो)।

(पिछले पृष्ठ की शेष पाद-टिप्पणी) ...और इस शब्द का तीसरा अनुप्रयोग विशिष्टतम है जिसमें सहाबा और ताबिईन को भी शामिल नहीं किया जाता क्योंकि वे विशेष नामों से विशिष्ट हैं। जैसे कहा जाता है कि इस मसले पर सहाबा, ताबिईन, उम्मत के औलिया और कौम के विद्वानों की सर्वसम्मति (इज्मा) है, उस समय यह शब्द सूफी शेखों और रहस्यवादियों की शब्दावली का पर्यायवाची होता है। इस अर्थ में, निस्संदेह हुज़ूर गौस-ए-आज़म (अल्लाह उनसे प्रसन्न हो) औलिया के सरदार हैं। उनसे कोई व्यक्ति तब तक अलग नहीं किया जाता जब तक कि प्रमाण न मिल जाए (अर्थात इस अर्थ में कि औलिया में आप बिना किसी अपवाद के सभी के सरदार हैं; बिना किसी प्रमाण के किसी वली का अपवाद नहीं होगा)। अतः वह आदेश जिसका पालन अनिवार्य है: 'क़दमी हाज़िही अला रक़बत-ए-कुल्लि वलीइल्लाह' (मेरा यह कदम अल्लाह के हर वली की गर्दन पर है - अनुवादक) में वास्तव में किसी विशिष्टकर्ता के बिना विशिष्टता की आवश्यकता नहीं है, जैसा कि हमने अल-मुजीर अल-मुअज्जम में प्रमाणित किया है (जैसा कि हमने इसे अल-मुजीर अल-मुअज्जम में विशिष्ट किया है १२ - लेखक की ओर से, उन्हें क्षमा किया जाए)।

नोट १८: हमने अपनी किताब 'मतला उल कमरैन फी इबानत सबक़त अल-उमरैन' में मनाही पर कई हदीसों से साबित किया है कि हज़रत बड़े पोते (हसन), छोटे पोते (हुसैन) से श्रेष्ठ हैं (अल्लाह उन दोनों से प्रसन्न हो)। उनमें से तबरानी की हदीस है कि हुज़ूर (अल्लाह की उन पर कृपा और शांति हो) ने फ़रमाया:

१ 'हसन के लिए मेरा रौब और सरदारी है और हुसैन के लिए मेरी बहादुरी और उदारता।' [1] दूसरा: अहमद और अबू दाऊद की हदीस कि फ़रमाया: 'हसन मेरा है और हुसैन अली का।' [2] तीसरा: अबू याला की हदीस कि फ़रमाया: 'हसन जन्नत के तमाम जवानों के सरदार हैं।' [3]

और यह एक 'हसन' (अच्छी) हदीस है, जो हमने कहा उसके लिए एक स्पष्ट पाठ है। (यह हदीस हमारे दावे पर स्पष्ट प्रमाण है - अनुवादक)। यह तुच्छ व्यक्ति [लेखक] हदीसों के आधार पर यही सोचता था यहाँ तक कि मुझे 'तयसीर शरह जामे सगीर' में इस अर्थ की स्पष्टता मिली, और अल्लाह का शुक्र है। १२ - लेखक की ओर से, उन्हें क्षमा किया जाए।

[1] मजमा-उज़-ज़वाइद, अध्याय: जिसमें हसन और हुसैन साझेदार थे आदि, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरुत, ९/१८५। [2] मुसनद अहमद बिन हंबल, मिकदाम बिन मादीकरिब से वर्णित, दार अल-फ़िक्र, बेरुत, ४/१३२। [3] मजमा-उज़-ज़वाइद, अध्याय: हसन बिन अली के बारे में जो वर्णित है, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरुत, ९/१७८।

पृष्ठ ८१८ / ८३६

اور اوپر سے لیجئے تو حضرت مولا مشکل کشاء اور نقاد خاندان مرتضوی حسن مجتبٰی رضی اللہ تعالٰی عنہم اجمعین۔

(بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) ہیں اور اس لفظ کا تیسرا اطلاق اخص اخص ہے جس میں صحابہ بلکہ تابعین کو بھی شامل نہیں رکھتے کہ وہ اسمائے خاصہ سے ممتاز ہیں، جیسے کہتے ہیں اس مسئلہ پر صحابہ و تابعین و اولیائے امت و علمائے ملت کا اجماع ہے اس وقت یہ لفظ اصطلاح مشائخ و صوفیہ کا ہم عناں ہوتا ہے، اس معنی پر بیشک حضور غوث اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ سید الاولیاء ہیں لا یخص منہ نفس الا ان یقوم دلیل (اس معنی کہ اولیاء میں آپ بلا تخصیص سب کے سردار ہیں بغیر دلیل کسی ولی کی تخصیص نہ ہوگی) تو فرمان واجب الاذعان "قدمی ھذہ علی رقبہ کل ولی اللہ" (میرا یہ قدم ہر ولی کی گردن پر ہے۔ت) میں تخصیص بلا مخصص کی اصلاً حاجت نہیں، کما حققناہ فی المجیر المعظم (جیسا کہ ہم نے المجیر المعظم میں اس کی تخصیص کی ہے ۱۲ منہ غفرلہ۔

ع ۱۸: ہم نے اپنی کتاب "مطلع القمرین فی ابانۃ سبقۃ العمرین" کے منہیات پر متعدد حدیثوں سے ثابت کیا کہ حضرت سبطِ اکبر حضرت سبطِ اصغر سے افضل ہیں رضی اللہ تعالٰی عنہما، از ان جملہ حدیث طبرانی کہ حضور والا صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم نے فرمایا:

۱ "حسن کے لیے میری ہیبت و سرداری ہے اور حسین کے لیے میری جرات و بخشش۔" [1] دوم: حدیث احمد و ابوداؤد کہ فرمایا: "حسن میرا ہے اور حسین علی کا۔" [2] سوم حدیث ابویعلٰی کہ فرمایا: "حسن تمام جوانانِ اہلِ جنت کے سردار ہیں۔" [3]

وھذا حدیث حسن ، نص صریح فما قلناہ (یہ حدیث ہمارے دعویٰ پر صریح نص ہے۔ت) فقیر بدلیل احادیث یہی گمان کرتا تھا یہاں تک کہ تیسیر شرح جامع صغیر میں اس معنی کی تصریح پائی والحمد للہ ۱۲ منہ غفرلہ۔

[1] مجمع الزوائد باب فیما اشترک الحسن والحسین الخ دار الکتاب العربی بیروت ۹/ ۱۸۵ [2] مسند احمد بن حنبل مروی از مقدام بن معدیکرب دار الفکر بیروت ۴/ ۱۳۲ [3] مجمع الزوائد باب ما جاء فی الحسن بن علی دار الکتاب العربی بیروت ۹/ ۱۷۸

Fatawa Razawiya, Volume 10

Thus, it has become clear that it is very correct to call the noble family (Aal-e-Athar) the essence of creation in the conventional sense. This does not imply their superiority over the Prophets and Messengers, nor even over the three Caliphs (may Allah be pleased with them all). Matters already established in the true beliefs are sufficient to clarify the intent. Praise be to Allah, first and last, and abundant and overflowing blessings and peace be upon the Exalted Beloved, inwardly and outwardly, and upon his family and companions, the masters of the world as long as the sun rises and the moon appears.

Supplement

This commentary on the method of Hajj and Umrah, the sequence of their actions from beginning to end, and the etiquettes of visiting the tomb of the Beloved (peace and blessings be upon him, the Near One, the Answerer), was written very briefly at the request of the author. Although, by the grace of Allah, it contains useful matters and is complete in choosing the preferred opinion and abandoning the non-preferred one, which only someone who has collected numerous books of jurisprudence and can work with precise observation and deep thought, along with mastery in the distant paths and various battlegrounds of preference or lack of clarity in legal rulings (fatwa), and the correction of the methods of fatwa and the etiquette of the Mufti, would know. Despite this, by the grace of Allah, there are subtle instructions and noble critiques in various places, which require a sharp mind to comprehend. Praise be to Allah, the Guardian of blessings. I say this out of gratitude, not out of pride or boastfulness, and I seek refuge in Allah from what displeases Him. However, since the sequence of actions and deeds from beginning to end was not explained, which pilgrims in general and the common people in particular need, and due to ignorance of which less-knowledgeable Muslims often face difficulties; therefore, the humble servant (may Allah forgive him) desired to complete the commentary with the aforementioned matters and to provide a brief detail of the pure etiquettes of visitation at the end. Thus, God willing, common believers will gain insight themselves and will not need guides or solicitors. Upon returning from the blessed journey of the two holy cities (Haramain Tayyibayn), the Crown of Scholars, the Lamp of the Perfect ones, the Authority of the Virtuous, my noble father (may his secret be sanctified), in the venerable book "Jawahir al-Bayan fi Asrar al-Arkan" (Jewels of Explanation on the Secrets of the Pillars), brought this magnificent work to completion. After explaining the subtle secrets and elegant nuances of purification,

prayer, fasting, and almsgiving, he wrote an unparalleled and matchless account of Hajj and visitation.

फ़तावा रज़विया, जिल्द दसवां

अतः यह स्पष्ट हो गया कि सामान्य रूप से आले अतहार (पवित्र वंश) को 'खलासा-ए-मखलूकात' (सृष्टि का सार) कहना बिल्कुल सही है। इससे उनकी श्रेष्ठता अंबिया (पैगंबरों) और मुरसलीन (दूतों) पर, यहाँ तक कि तीनों ख़लीफ़ाओं (अल्लाह उन सभी से प्रसन्न हो) पर लाज़िम नहीं आती, क्योंकि जो मामले सही अकीदों में स्थापित हो चुके हैं, वे स्वयं इरादे की स्पष्टता के लिए पर्याप्त हैं। और अल्लाह ही के लिए सब प्रशंसा है, आदि में और अंत में, और बहुत अधिक और प्रचुर मात्रा में दुरूद व सलाम हो महिमामयी महबूब (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) पर बातिन (परोक्ष) और ज़ाहिर (प्रत्यक्ष) में, और उनके परिवार और साथियों पर, जो संसार के स्वामी हैं जब तक सूरज निकलता है और चाँद चमकता है।

पूरक (तकमिला)

हज और उमराह की विधि, शुरू से आखिर तक उनके कार्यों का क्रम, और महबूब (सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम) की कब्र की ज़ियारत के आदाब के बारे में यह विवरण लेखक के निर्देशानुसार बहुत संक्षिप्त लिखा गया है। यद्यपि अल्लाह के शुक्र से यह बहुत ही उपयोगी मसलों पर आधारित है और सही राय चुनने और छोड़ी गई राय को त्यागने में पूर्ण है। इसे वही व्यक्ति जान पाएगा जो बहुत सी फ़िक़्ह (न्यायशास्त्र) की किताबों को जमा करके सूक्ष्म दृष्टि और गहरे चिंतन से काम ले सके और इसके साथ ही मतभेदों के समय प्राथमिकता देने या स्पष्टता न होने पर फ़तवा देने और फ़तवा लिखने के तरीकों और मुफ्ती के आदाब के कठिन रास्तों और कई ज्ञान क्षेत्रों में महारत रखता हो। इसके बावजूद, अल्लाह के शुक्र से जगह-जगह सूक्ष्म निर्देश और श्रेष्ठ आलोचनाएँ हैं जिन्हें समझना एक तेज़ दिमाग का काम है। और सारी प्रशंसा अल्लाह के लिए है जो नियामतों का देने वाला है। मैं यह बात शुक्र के तौर पर कह रहा हूँ न कि घमंड और फख्र के तौर पर, और अल्लाह की पनाह उन चीज़ों से जो उसे पसंद नहीं। लेकिन चूंकि शुरू से अंत तक कार्यों और कर्मों का क्रम बयान नहीं हुआ था जिसकी ज़रूरत आम तौर पर हाजियों को और विशेष रूप से आम जनता को होती है और इसके न जानने से अक्सर कम इल्म वाले मुसलमानों को कठिनाई होती है। इसलिए इस फ़क़ीर (अल्लाह उसे क्षमा करे) ने चाहा कि उपरोक्त बातों से विवरण को पूरा किया जाए और अंत में ज़ियारत के पवित्र आदाब का थोड़ा संक्षिप्त विवरण दिया जाए ताकि आम मोमिनों को इंशाअल्लाह स्वयं समझ मिल जाए और उन्हें गाइडों या मुताव्विफों की ज़रूरत न रहे। हरमैन तैयबैन की मुबारक यात्रा से वापसी

के बाद, विद्वानों के ताज, पूर्ण पुरुषों के चिराग, गुणीजनों के प्रमाण, मेरे सम्मानित पिता (अल्लाह उनके रहस्य को पवित्र करे) ने प्रतिष्ठित पुस्तक "जवाहिरुल बयान फ़ी असरारिल अरकान" में इस महान कार्य को पूर्णता तक पहुँचाया और पवित्रता, नमाज़, रोज़ा और ज़कात के सूक्ष्म रहस्यों और सुंदर बारीकियों का उल्लेख करने के बाद हज और ज़ियारत का एक बेमिसाल और अद्वितीय वर्णन लिखा।

پس واضح ہو گیا کہ طورِ متعارف پر حضرات آلِ اطہار کو خلاصہ مخلوقات کہنا بہت صحیح ہے اور اس سے ان کی فضیلت انبیاء و مرسلین بلکہ خلفائے ثلاثہ رضوان تعالیٰ علیہم اجمعین پر لازم نہیں آتی کہ جو امور عقائدِ حقہ میں مستقر ہو چکے وہ خود ایضاحِ مراد کو بس ہیں۔ والحمد للہ اولاً و اٰخرًا والصلوۃ و السلام کاثرًا و افرًا علی الحبیب الجلیل باطناً و ظاہراً و اٰلہ وصحبہ سادۃ الورٰی ماطلعت شمس و بدر سری۔

تکملہ

حج و عمرہ کی ترکیب اور اول سے آخر تک ان کے افعال کی ترتیب اور آدابِ زیارت قبر حبیب علیہ صلوٰۃ القریب المجیب میں یہ شرح کہ حسبِ فرمائشِ حضرت مصنف نہایت مختصر لکھی گئی اگرچہ بحمد اللہ اللہ کار آمد مسائل پر مشتمل اور اختیارِ راجح و ترکِ مرجوع میں تام و کامل، جسے نہ جانے گا مگر وہ کہ کتبِ کثیرہ فقہیہ جمع کر کے نظر تدقیق و فکرِ عمیق سے کام لے سکے اور اس کے ساتھ وقتِ اختلاف ترجیح یا عدمِ تصریح بافتاء و تصحیح رسمِ افتاء و آداب مفتی کے مسالک بعیدہ و معارکِ عدیدہ میں مہارت رکھے بایں ہمہ بحمد اللہ جابجا ارشادات لطیفہ و تنقیدات شریفہ ہیں جن پر اطلاع ذہنِ ثاقب کا کام، والحمد للہ ولی الانعام، قُلْتُہ شکرا لابطرا و فخرا و العیاذ باللہ مما لا یرضاہ، مگر ازاں جا کہ اول تا آخر ترکیب اعمال و ترتیب افعال بیان نہ ہوئی جس کی طرف حجاج کو عموماً اور عوام کو خصوصاً حاجت اور اس کے نہ جاننے سے اکثر اوقات کم علم مسلمانوں کو دقت ہوتی ہے۔ لہٰذا فقیر غفر اللہ تعالیٰ لہ نے چاہا کہ امورِ مذکورہ سے شرح کی تکمیل اور آخر میں قدرے آدابِ زیارت سراپا طہارت کی مختصر تفصیل کروں کہ عام مومنین کو ان شاء اللہ تعالیٰ خود

بصیرت ملے اور مطوفوں، مزیروں کی حاجت نہ رہے۔ سفر مبارک حرمین طیبین سے معاودت فرما کر حضرت تاج العلماء سراج الکملاء، سند الفضلاء حضرت والد قدس سرہ الماجد نے کتاب مستطاب "جواہر البیان فی اسرار الارکان" میں اس جلیل کام کو نہایت تک پہنچایا اور طہارت و صلوٰۃ و صوم و زکوٰۃ کے اسرارِ دقیقہ و لطائف انیقہ ارشاد فرما کر حج و زیارت کا بیان بے مثیل و عدیل تحریر فرمایا۔

Fatawa Razawiyya (Volume 10)

May Allah Ta'ala reward him with the best reward and elevate his ranks in the Abode of Meeting (Dar al-Liqa). Ameen! The subtlety, excellence, and charm of this beautiful, grand, and delightful book is:

"You will not know the taste of this wine, by God, until you drink it." (Without tasting it for God's sake, the flavor of this wine cannot be known.)

In more than half of this blessed book, this soul-refreshing description exists. This humble person summarizes a few words from its two sections [1]. Success is from Allah, and He is the Guide to the path.

Method of Hajj and Umrah We have already written the method of Ihram above; here, know that the Ihram of pilgrims [2] is of three types. Intending Hajj alone [3] is called 'Ifrad', and such a pilgrim is called 'Mufrid'. Or, one intends only Umrah [5] at the Miqat [4], and upon reaching Makkah al-Mu'azzamah...

[1] Most likely, this is a summary of it, although some words have been added in places. - 12 (Minhu) [2] The fourth Ihram is for Umrah alone, which is separate from Tamattu' and Qiran; it is called 'Ifrad bi al-Umrah'. It is not the Ihram of a (Hajj) pilgrim. - 12 (Minhu) [3] Meaning, one should not have an Ihram for Umrah until the stay at Arafat happens; otherwise, if the intention for Hajj and Umrah are combined, it will take the form of Qiran. As we have explained in detail in the margin of Radd al-Muhtar. (Translator: As we have clarified in the footnote of Radd al-Muhtar.) - 12 (Minhu) [4] [Arabic quote omitted for flow, translated as:] The restriction of Miqat is to explain the prescribed method for Tamattu', because Tamattu' is permissible for an 'Afaqi (one living outside the Miqat boundaries) but not for a non-'Afaqi. While it is forbidden for an 'Afaqi to cross the Miqat without Ihram, if a resident of Makkah performs Tamattu', or an 'Afaqi crosses the Miqat without Ihram and then performs Tamattu', both their Tamattu' will be valid. Although they will be sinful, some phrases and narrations might create a misconception to the contrary, which has confused some gentlemen. Such people should refer to Sharh al-Lubab. - 12 (Minhu) (Translator) [5] It was not said 'from the Miqat' because the beginning of Ihram at the Miqat is not mandatory; what is required is to be in the state of Ihram at the Miqat, whether one ties it exactly there or has tied it before, so that crossing without Ihram does not occur. Rather, putting it on before the geographical Miqat is better, provided its conditions are met, as they have clearly stated. (Translator: Rather,

preceding the spatial Miqat is superior as it is a condition, as stipulated on it.) - 12 (Minhu) (Translator)

फ़तावा रज़विया (खंड 10)

अल्लाह तआला उन्हें बेहतरीन बदला दे और दीदार-ए-इलाही के घर (दारुल-लीक़ा) में उनके दरजों को बुलंद करे। आमीन! इस खूबसूरत, महान और सुखद किताब की सूक्ष्मता, उत्कृष्टता और आकर्षण यह है:

"तुम खुदा की कसम, इस शराब का स्वाद तब तक नहीं जानोगे जब तक इसे चख न लो।" (बिना चखे इस शराब का स्वाद मालूम नहीं हो सकेगा।)

इस मुबारक किताब के आधे से ज़्यादा हिस्से में यही रूह-परवर बयान है। यह तुच्छ सेवक इसके दो अध्यायों से कुछ शब्दों का सारांश [1] करता है। और सफलता अल्लाह की ओर से है और वही सीधे रास्ते का मार्गदर्शक है।

हज और उमराह की विधि एहराम की विधि तो हम ऊपर लिख चुके हैं; यहाँ इतना जान लें कि हाजियों [2] का एहराम तीन तरह का होता है। केवल हज की नीयत [3] से एहराम बाँधने को 'इफ़राद' कहते हैं, और ऐसे हाजी को 'मुफ़्रिद' कहा जाता है। या यह कि मीक़ात [4] पर केवल उमराह [5] का इरादा करे, और मक्का मुअज़्ज़मा पहुँचकर...

[1] मुमकिन है कि यह उसी का सारांश हो, हालांकि कहीं-कहीं कुछ शब्द बढ़ा दिए गए हैं। - 12 (मिन्हु) [2] चौथा एहराम केवल उमराह का है जो तमत्तु और क़िरान से अलग है; इसे 'इफ़राद बिल-उमराह' कहते हैं। वह हाजी का एहराम नहीं है। - 12 (मिन्हु) [3] यानी जब तक अराफ़ात में रुकना न हो जाए तब तक उमराह का एहराम न हो, वर्ना हज और उमराह की नीयत एक साथ हो जाने पर वह 'क़िरान' की शक्ल बन जाएगी। जैसा कि हमने रद-उल-मुहतार के हाशिये में इसकी विस्तार से व्याख्या की है। (अनुवादक: जैसा कि हमने रद-उल-मुहतार के हाशिये में स्पष्ट किया है।) - 12 (मिन्हु) [4] [अरबी उद्धरण का अनुवाद:] मीक़ात की शर्त तमत्तु के निर्धारित तरीके को बताने के लिए है क्योंकि तमत्तु आफ़ाक़ी (मीक़ात की सीमाओं के बाहर रहने वालों) के लिए जायज़ है, गैर-आफ़ाक़ी के लिए जायज़ नहीं है। जबकि आफ़ाक़ी के लिए मीक़ात से आगे एहराम के बिना गुज़रना मना है, फिर भी अगर किसी मक्कावासी ने तमत्तु कर लिया या किसी आफ़ाक़ी ने बिना एहराम मीक़ात पार करके तमत्तु कर लिया, तो दोनों का तमत्तु मान्य होगा। हालांकि वे गुनहगार होंगे, लेकिन कुछ इबारतों और रिवायतों से इसके विपरीत होने का भ्रम होता है जिससे कुछ लोग भ्रमित हुए हैं। ऐसे लोगों को शरह-उल-लुबाब की ओर रुजू करना चाहिए। - 12 (मिन्हु) (अनुवादक) [5] 'मीक़ात से'

नहीं कहा क्योंकि मीक़ात से ही एहराम शुरू करना ज़रूरी नहीं है; ज़रूरी यह है कि मीक़ात पर पहुँचते समय व्यक्ति एहराम की स्थिति (मोहरिम) में हो, चाहे वहीं से बाँधे या पहले से बाँधा हो ताकि बिना एहराम के सीमा पार न हो। बल्कि भौगोलिक मीक़ात से पहले एहराम बाँधना बेहतर है बशर्ते कि उसकी शर्तें पूरी हों, जैसा कि उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है। (अनुवादक: बल्कि स्थानगत मीक़ात से पहले एहराम बाँधना श्रेष्ठ है क्योंकि वह एक शर्त है जैसा कि इस पर स्पष्ट प्रमाण है।) - 12 (मिन्हु) (अनुवादक)

पृष्ठ 820/836

فتاویٰ رضویہ (جلد دہم)

جزاہ اللہ تعالیٰ خیر جزاء واعلٰی درجانہ فی دارالقاء اٰمین! اس جمیل کتاب جلیل مستطاب کی لطافت و خوبی و دلکشی ع

ذوق ایں مئے نشناسی بخدا تا نہ چشی (بخدا چکے بغیر اس شراب کا ذائقہ معلوم نہ ہوسکے گا)

اس مبارک کتاب کے نصف سے زائد میں یہی بیان جانفزا ہے۔ فقیر اس کی دو فصلوں سے چند حروف تلخیص ع۱ کرتا ہے وباللہ التوفیق وہدایۃ الطریق۔

حج وعمرہ کی ترکیب احرام کی ترکیب تو ہم اوپر لکھ چکے ہیں یہاں اتنا جانئے کہ حاجیوں ع۲ کا احرام تین طرح کا ہوتا ہے، تنہا حج کی نیت ع۳ سے افراد کہتے ہیں، اور ایسے حاجی کو مفرد، یا یہ کہ میقات ع۴ پر صرف عمرہ ع۵ کا ارادہ کرے، مکہ معظمہ پہنچ کر

ع۱: غالبا اسی کا خلاصہ ہے اگرچہ کہیں کہیں کچھ حرف زائد کیے گئے ۱۲ منہ ع۲: چوتھا احرام تنہا عمرہ کا ہے جو تمتع و قران سے جدا ہو اسے افراد بالعمرہ کہتے ہیں، وہ حاجی کا احرام نہیں ۱۲ منہ ع۳: یعنی جس کے وقوف عرفہ کو ہو جانے تک احرام عمرہ نہ ہو ورنہ نیت حج نیت عمرہ مجتمع ہو تو قرآن کی شکل آجائیگی۔ کما فصلناہ علی ھامش ردالمحتار (جیسا کہ ہم نے ردالمحتار کے حاشیہ میں اس کی وضاحت کی ہے۔ ت) ۱۲ منہ ع۴: قید بالمیقات لبیان الطریق للشروع للمتعۃ فان غیر الافاقی لا یجوز لہ التمتع والآفاقی لایجوزلہ التجاوز بغیر احرام والافانی تمتع المکی او تجاوز الآفاقی ثم تمتع کان متعۃ بلاشك و ان اثماً خلافا لما یوھمہ بعض العبارات والراویات من ارتاب فعلیہ بشرح اللباب ۱۲ منہ (م) | میقات کی قید تمتع کے مشروع طریقہ کو بیان کرنے کے لیے ہے کیونکہ تمتع آفاقی یعنی میقات کے باہر والوں کے لیے جائز ہے غیر آفاقی کے لیے جائز نہیں،

جبکہ آفاقی کو میقات سے آگے احرام کے بغیر گزرنا منع ہے ورنہ اگر مکی نے تمتع کر لیا اور آفاقی نے بغیر احرام میقات سے گزر کر تمتع کر لیا تو دونوں کے تمتع ہو جائیں گے۔ اگرچہ ان کو گناہ ہوگا، اس کے خلاف بعض عبارات و روایات سے وہم ہوتا ہے جس سے بعض حضرات کو وہم ہوا ہے ایسے حضرات کو چاہئے کہ وہ شرح لباب کی طرف رجوع کریں ۱۲ منہ (ت) ع۵: میقات سے نہ کہا کہ میقات سے ابتدائے احرام ضرور نہیں میقات پر محرم ہونا درکار ہے خاص وہیں سے باندھے یا پہلے سے باندھا ہو تاکہ تجاوز بے احرام نہ ہو بل الافضل ھو التقدیم علی المیقات بشرطہ کما نصوا علیہ (بلکہ میقات مکانی پر مقدم ہونا افضل ہے کہ وہ شرط ہے جیسا کہ اس پر نص ہے ۱۲ منہ (ت)

Fatawa Rizwia Volume Ten

Performing Umrah during the months of Hajj (note 1) and then donning the Ihram for Hajj right there (note 3) is called *Tamattu'*, and this pilgrim is called a *Mutamatti'*. Alternatively, if one intends to combine Hajj and Umrah (note 4), it is called *Qiran* (note 5), and the pilgrim is called a *Qarin*; this carries more reward.

When you reach close to the Haram of Makkah, enter with respect and humility on foot, and it is better to be barefoot. Upon reaching Makkah al-Mu'azzamah, it is recommended (Mustahabb) to perform Ghusl. When your gaze falls upon the Ka'bah al-Mu'azzamah, supplicate as it is a place of acceptance. Go to Bab al-Salam, kiss the holy threshold, enter with the right foot first saying "Bismillah." Afterward, if a congregational prayer or an obligatory (Fard), Witr, or Sunnat Mu'akkadah prayer is not feared to be missed, then before all other tasks, turn towards performing Tawaf. A man should perform *Idtiba'* (note 6) and...

Note 1: The months of Hajj are from the 1st of Shawwal to the 10th of Dhu al-Hijjah. 12 (Minhu) Note 2: For Tamattu', it is necessary that the majority of the Tawaf of Umrah, i.e., four circuits, occur during these months, even if the entire Umrah does not fall within them. For example, if three circuits were done in Ramadan and four in Shawwal, it can still be Tamattu' because the ruling for the majority is the ruling for the whole. So, the Umrah will be considered to have occurred in the days when the majority of the Tawaf circuits took place. 12 (Minhu) Note 3: It is said "right there" because if one exits the Ihram of Umrah and returns to their homeland, then comes back and dons the Ihram for Hajj, it will not be Tamattu'. Umrah would be separate and Hajj would be separate, even if done in the same year. Another benefit of this condition is that the Ihram for Hajj should be donned right there, i.e., from the Haram, because his ruling is like that of a resident of Makkah (Makki). The Miqat for Hajj for a Makki is the Haram; if he dons it from Hill, he must offer a sacrifice (Dam). Yes, the Tamattu' of a non-Makki is valid in other ways too, but here the permissible and Sunnah form is described. 12 (Minhu) Note 4: The apparent and immediate meaning of 'combining' is to intend for both at the same time; this specific form is Sunnah. Also, if one first donned the Ihram for Umrah and had not yet performed four circuits, and then donned the Ihram for Hajj, it would still become Qiran. Similarly, if one had first donned the Ihram for Hajj alone and then donned the Ihram for Umrah before the stay at Arafat, he would become a Qarin, but he acted against the Sunnah, especially if the Ihram for Umrah was donned after some initial acts of

Hajj had begun, which is worse. 12 (Minhu) Quddisa Sirruhul Aziz. Note 5: Warning: There are twelve forms of Ihram, one of which is Tamattu'. Among the remaining eleven, according to some Imams, there are five types of *Ifrad* and six of *Qiran*. According to the research of some scholars, there are eight types: three of *Qiran*. We have provided an elegant and grand explanation and detail on the margins of *Radd al-Muhtar*, which likely won't be found elsewhere. From there, the complete, comprehensive, and exclusive definitions of these three types are apparent. Here, only a clear and common-sense explanation has been written. 12 (Minhu). Note 6: Warning: In Tawaf al-Qudum, there is an option whether or not to perform *Raml*, *Idtiba'*, and *Sa'y*. If one does them, there will be no need for these matters in Tawaf al-Ziyarah (which will be described later); otherwise, they must be done then. And on that day, there is a lot of crowd and more work. Therefore, for ease, we have included these matters in the sequence, and for a Qarin, it is even more excellent to perform these acts during this Tawaf. 12 (Minhu)

फ़तावा रज़विया जिल्द दसवीं

अशहुरुल हज (हज के महीने) (टिप्पणी 1) में उमराह (टिप्पणी 2) करके वहीं (टिप्पणी 3) हज का एहराम बांधे उसे तमत्तुअ कहते हैं और इस हाजी को मुतमत्तिअ, या यह कि हज और उमराह दोनों की नियत जमा (एकत्र) (टिप्पणी 4) करे उसे क़िरान (टिप्पणी 5) कहते हैं और हाजी को क़ारिन; और ज़्यादा सवाब इसी में है।

जब हरम मक्का के क़रीब पहुँचे, तो अदब और खुशु के साथ पैदल दाखिल हो और नंगे पाँव होना बेहतर है। जब मक्का मुअज़्ज़मा तक आए, तो नहाकर जाना मुस्तहब है। जब काबा मुअज़्ज़मा पर नज़र पड़े, तो दुआ मांगे क्योंकि यह दुआ की क़बूलियत का स्थान है। बाबुल सलाम पर जाकर पाक चौखट को चूमे, दायां पाँव पहले रखकर बिस्मिल्लाह कहकर दाखिल हो। उसके बाद अगर जमाअत खड़ी होने या फ़र्ज़ नमाज़, वित्र या सुन्नत मुअक्कदा के छूटने का डर न हो, तो सब कामों से पहले तवाफ़ की ओर मुतवज्जह हो। मर्द इज़्तिबाअ (टिप्पणी 6) करके और...

टिप्पणी 1: हज के महीने 1 शव्वाल से 10 ज़िलहिज्जा तक हैं। 12 मिन्हु टिप्पणी 2: तमत्तुअ के लिए उमराह के तवाफ़ के अक्सर (अधिकांश) हिस्से, यानी चार फेरों का इन महीनों में होना ज़रूरी है, चाहे पूरा उमराह उनमें न हो। मिसाल के तौर पर, अगर तीन फेरे रमज़ान में किए हों और चार शव्वाल में, तो भी तमत्तुअ हो सकता है क्योंकि अक्सर के लिए कुल का हुक्म है, इसलिए उमराह उन्हीं दिनों में माना जाएगा जिनमें तवाफ़ के ज़्यादातर फेरे हुए। 12 मिन्हु टिप्पणी 3: वहीं इसलिए कह दिया कि उमराह के एहराम से निकलकर अपने वतन वापस जाए, उसके बाद आकर हज का एहराम बांधे, तो तमत्तुअ न होगा; उमराह अलग रहा और हज अलग, चाहे उसी साल करे। दूसरा फ़ायदा इस शर्त का यह है कि हज का एहराम वहीं यानी हरम से बांधे क्योंकि उसका हुक्म मक्की (मक्का निवासी) जैसा है। मक्की के लिए हज का मीक़ात हरम है; अगर वह हिल (हरम से बाहर) से बांधेगा, तो दम (क़ुर्बानी) देना होगा। हाँ, ग़ैर-मक्की का तमत्तुअ अन्य तरीक़ों से भी सही है, लेकिन यहाँ जायज़ और मसनून शक्ल का बयान है। 12 मिन्हु टिप्पणी 4: जमा करने के ज़ाहिरी और फ़ौरी मानी यह हैं कि एक ही समय में दोनों की नियत करे; यह शक्ल ख़ास सुन्नत है। और अगर पहले उमराह का एहराम बांधा और अभी उसके चार फेरे नहीं किए थे कि हज का एहराम कर लिया, तब भी क़िरान हो गया। इसी तरह अगर पहले सिर्फ़ हज का एहराम किया था और वुक़ूफ़े अरफ़ा से पहले उमराह का एहराम कर लिया, तब भी क़ारिन हुआ, लेकिन सुन्नत के ख़िलाफ़ किया, ख़ासकर

जब उमराह का एहराम हज के कुछ कामों के शुरू होने के बाद हो, जो कि ज़्यादा बुरा है। 12 मिन्हु क़ुद्दिस सिर्रूहूल अज़ीज़। टिप्पणी 5: तन्बीह (चेतावनी): एहराम की बारह सूरतें (स्थितियाँ) हैं जिनमें एक तमत्तुअ है और बाक़ी ग्यारह में, कुछ इमामों के अनुसार, पाँच इफ़राद हैं और छह क़िरान। और कुछ शोधकर्ताओं के अनुसार आठ सूरतें हैं: तीन क़िरान। हमने 'रद्दुल मुहतार' के हाशिये पर इसकी बेहतरीन और शानदार व्याख्या और विस्तार किया है, जो शायद दूसरी जगह न मिले। वहाँ से इन तीन किस्मों की पूरी, व्यापक और अनन्य परिभाषा स्पष्ट होती है। यहाँ केवल साफ़-सुथरी और आम समझ वाली बात लिख दी गई है। 12 मिन्हु। टिप्पणी 6: तन्बीह (चेतावनी): तवाफ़-ए-कुदूम में रमल, इज़्तिबाअ और सई करने या न करने का अख्तियार (विकल्प) है। अगर करेगा, तो तवाफ़-ए-ज़ियारत में (जिसका बयान आगे आएगा) इन बातों की ज़रूरत नहीं होगी; वरना वहाँ करनी होंगी। और उस दिन भीड़ बहुत होती है और काम भी ज़्यादा। इसलिए हमने आसानी की दृष्टि से इन कामों को तरतीब (क्रम) में शामिल कर दिया है, और क़ारिन के लिए तो ख़ुद अफ़ज़ल ही यह है कि वह ये बातें इसी तवाफ़ में पूरी करे। 12 मिन्हु

اشہر الحج ع۱ میں عمرہ ع۲ کر کے وہیں ع۳ حج کا احرام باندھے اسے تمتع کہتے ہیں اور اس حاجی کو متمتع، یا یہ کہ حج و عمرہ دونوں کی نیت جمع ع۴ کرے اسے قران ع۵ کہتے ہیں اور حاجی کو قارن اور زیادہ ثواب اسی میں ہے۔

جب حرم مکہ کے متصل پہنچے با ادب و خشوع پیادہ پا داخل ہو اور برہنہ پاؤں بہتر ہے، جب مکہ معظمہ تک آئے نہا کر جانا مستحب ہے جب کعبہ معظمہ پر نظر پڑے دعا مانگے کہ محل اجابت ہے، باب السلام پر جا کر آستانہ پاک کو بوسہ دے، دہنا پاؤں پہلے رکھ کر بسم اللہ کہہ کر داخل ہو بعدہ اگر جماعت قائم یا نماز فرض خواہ وتر یا سنت موکدہ کے فوت کا خوف نہ ہو تو سب کاموں سے پہلے متوجہ طواف ہو مرد اضطباع ع۶ کر کے اور

عہ ۱: اشہر حج یکم شوال سے دہم ذی الحجہ تک ہیں ۱۲ منہ عہ ۲: تمتع کے لیے اکثر طواف عمرہ یعنی چار پھیروں کا ان مہینوں میں واقع ہونا ضرور ہے اگر چہ پورا عمرہ ان میں نہ ہو مثلاً تین پھیرے رمضان میں کر لیے چار شوال میں کیے ہوں، یوں بھی تمتع ہو سکتا ہے کہ اکثر کے لیے حکم کل کا ہے تو جن دنوں میں اکثر طواف واقع ہو گا انہی میں عمرہ ہونا ٹھہرے گا ۱۲ منہ عہ ۳: وہیں اس لیے کہہ دیا کہ عمرہ کے احرام سے نکل کر اپنے وطن کو واپس جائے اس کے بعد آ کر حج کا احرام باندھے تو تمتع نہ ہو گا، عمرہ الگ رہا حج الگ رہا، اگرچہ اسی سال کرے، دوسرا فائدہ اس قید کا یہ ہے کہ حج کا احرام وہاں یعنی حرم سے باندھے کہ اس کا حکم مثل مکی کے ہے اور مکی کے لیے حج کا میقات حرم ہے اگر حل سے باندھے دم دے گا۔ ہاں غیر مکی کا تمتع یوں بھی صحیح ہے پر یہاں جائز و مسنون شکل کا بیان ہے ۱۲ منہ عہ ۴: جمع کرنے کے

ظاہر متبادر معنی یہ ہیں کہ ایک ہی وقت میں دونوں کی نیت کرے یہ شکل خاص سنت ہے، اور اگر پہلے عمرہ کا احرام باندھا اور ہنوز اس کے چار پھیرے نہ کئے تھے کہ حج کا احرام کر لیا جب بھی تو قرآن ہو گیا۔ یونہی اگر پہلے فقط حج کا احرام کیا تھا اور وقوف عرفہ سے پہلے عمرہ کا احرام کر لیا تو بھی قارن ہوا مگر خلاف سنت کیا خصوصاً جبکہ احرام عمرہ بعض افعال حج میں شروع کے بعد ہو کہ زیادہ برا ہے ۱۲ منہ قدس سرہ العزیز۔ عہ ۵: تنبیہ: احرام کی بارہ صورتیں ہیں جن میں ایک تمتع ہے اور باقی گیارہ میں بعض ائمہ کے طور پر پانچ افراد ہیں اور چھ قرآن، اور بعض محققین کی تحقیق پر آٹھ افراد ہیں تین قرآن۔ اس کی نفیس و جلیل توضیح و تفصیل ہم نے ہوامش ردالمحتار پر کی کہ غالباً دوسری جگہ نہ ملے گی، وہاں سے ان تین قسموں کی پوری پوری جامع مانع تعریف ظاہر ہوتی ہے یہاں صرف صاف صاف عام فہم بات لکھ دی ہے ۱۲ منہ۔ عہ ۶: تنبیہ: طواف قدوم میں رمل و اضطباع و سعی کرنے نہ کرنے کا اختیار ہے، اگر کرے گا تو طواف زیارت میں جس کا بیان آگے آتا ہے ان امور کی حاجت نہ ہو گی ورنہ وہاں کرنے ہوں گے اور اس دن ہجوم بہت ہوتا ہے اور کام بھی زیادہ۔ لہذا ہم نے بنظر آسانی مطلقاً ان امور کو داخل ترتیب کر دیا اور قارن کو تو خود افضل ہی یہ ہے کہ یہ باتیں اسی طواف میں بجالائے ۱۲ منہ

And a woman, without idtiba (uncovering the right shoulder), should stand near the sacred stone towards the right side of the Black Stone (Hajr al-Aswad) in the direction of the Rukn Yamani, such that the entire stone remains on her right side. Then, intending for Tawaf (circumambulation), she should turn towards the Kaaba and move to her right side. When she is opposite the Black Stone—which will happen with the slightest movement—she should raise her hands to her ears in such a way that the palms are facing the stone, and say: "Bismillah wal Hamdulillah wallahu Akbar was Salatu was Salamu ala Rasulillah" (In the name of Allah, and all praise is for Allah, and Allah is the Greatest, and peace and blessings be upon the Messenger of Allah). Then, she should place both palms and her mouth between them on the pure stone and kiss it in a way that no sound is produced. This should be done three times if it is possible without causing harm or struggle. Otherwise, she should touch it with her hand or a stick and then kiss them. If that is also not possible, she should gesture towards it with her hands and then kiss her hands. Then, she should move towards the door of the Kaaba. Once she has passed the alignment of the stone, she should straighten up and proceed with the Kaaba on her side. Men should perform raml (brisk walking with short steps) without causing harm or interference (women do not perform raml). In Tawaf, being as close to the Kaaba as possible is better, but not so close that the body or clothing touches the base of the wall. If raml cannot be performed due to crowding when close, then maintaining distance is superior. When she reaches the Rukn Yamani, she should touch it with both hands or the right hand for blessings, but not just the left. If she wishes, she can kiss it, and if not possible, it is fine (Note 2), until she returns to the Black Stone. This completes one circuit. In this manner, seven circuits are completed, but raml is not performed after the first three circuits. At the end of Tawaf, she should kiss the Black Stone again, then go to Maqam-e-Ibrahim. As far as the marble floor extends, she should pray two rak'ats of Tawaf prayer, provided it is not a disliked (makruh) time; otherwise, she should delay it. After that, she should supplicate. Then she should come to the Multazam, which is the name of that part of the wall between the Black Stone and the door of the Kaaba. Here, she should cling close to the Multazam and place her chest, stomach, right cheek, sometimes the left cheek, or her entire face upon it. She should spread both hands on the wall higher than her head, the right hand towards the door and the left towards the stone, and supplicate. Then she should come to Zamzam. If possible, she should draw a bucket herself; otherwise, take the pure water from someone else,

face the Qibla, and drink it to her fill in three breaths, starting each time with Bismillah and ending with Alhamdulillah. She should pour the remainder on her body. While drinking, she should pray for acceptance. She should also look into the well as it is a cure for hypocrisy. Now, if there is no excuse like needing rest etc., she should go for Sa'i between Safa and Marwa. First, she should kiss the Black Stone again as mentioned. If that is not possible, she should just face it and immediately depart from Bab-us-Safa towards Safa. She should step out of the door with her left foot first and put the right foot into the shoe first. Then she should climb the stairs of Safa until the Kaaba is visible. Facing the Qibla, she should raise both hands towards the sky up to the shoulders as one does in supplication, and perform Takbeer for a long time.

Note 1: This etiquette should also be observed in every kiss of reverence, for example, kissing the hands and feet of saints and scholars. 12 (Author). Note 2: That is, if kissing and touching are not possible, it is not prescribed here (at Rukn Yamani) to touch with a stick and kiss it or gesture with hands and kiss them; these actions are specific only to the Black Stone. 12 (Author).

और महिला बिना इत्तिबा (दायाँ कंधा खोले) के हजर-ए-अस्वद के दाहिने हिस्से में रुकन-ए-यमानी की ओर पवित्र पत्थर के पास इस तरह खड़ी हो कि पूरा पत्थर उसके दाहिने हाथ की ओर रहे। फिर तवाफ़ की नीयत करके काबा की ओर मुँह करके अपनी दाहिनी ओर चले। जब वह हजर-ए-अस्वद के सामने हो—जो ज़रा सी हरकत से हो जाएगा—तो अपने हाथों को कानों तक इस तरह उठाए कि हथेलियाँ पत्थर की तरफ़ हों, और कहे: "बिस्मिल्लाह वल्हम्दुलिल्लाह वल्लाहु अकबर वस-सलातु वस-सलामु अला रसूलिल्लाह"। फिर पवित्र पत्थर पर अपनी दोनों हथेलियाँ और उनके बीच में मुँह रखकर इस तरह चूमे कि आवाज़ न निकले। ऐसा तीन बार करे, बशर्ते कि बिना किसी कष्ट या खींचातानी के मुमकिन हो। वरना अपने हाथ या लकड़ी से उसे छूकर चूम ले। अगर यह भी मुमकिन न हो, तो हाथों से उसकी तरफ़ इशारा करके उन्हें चूम ले। फिर काबा के दरवाज़े की ओर बढ़े। जब पत्थर की सीध से गुज़र जाए तो सीधी हो जाए और काबा शरीफ़ को अपनी तरफ़ करके बिना किसी को तकलीफ़ दिए पुरुष 'रमल' (तेज़ चाल) करें (और महिला बिना रमल के चले)। तवाफ़ में काबा के जितना करीब हों उतना बेहतर है, लेकिन इतना करीब नहीं कि शरीर या कपड़ा दीवार के आधार से छुए। अगर पास होने पर भीड़ की वजह से रमल न हो सके, तो दूर रहना बेहतर है। जब रुकन-ए-यमानी पर आए तो बरकत के लिए उसे दोनों हाथों या दाहिने हाथ से छुए, केवल बाएँ से नहीं। अगर चाहे तो चूम भी ले, और न हो सके तो कोई बात नहीं (नोट २), यहाँ तक कि हजर-ए-अस्वद तक आ जाए। यह एक चक्कर हुआ। इसी तरह सात चक्कर पूरे करे, लेकिन रमल पहले तीन चक्करों के बाद नहीं। तवाफ़ के अंत में भी हजर-ए-अस्वद को चूमे, फिर मकाम-ए-इब्राहीम पर आए और जहाँ तक संगमरमर बिछा है, दो रकात तवाफ़ की नमाज़ पढ़े, बशर्ते कि वह मकरूह वक्त न हो, अन्यथा देरी करे। उसके बाद दुआ माँगे। फिर मुलतज़म पर आए, जो हजर-ए-अस्वद और काबा के दरवाज़े के बीच की दीवार के हिस्से का नाम है। यहाँ मुलतज़म से लिपट जाए और अपना सीना, पेट, दाहिना गाल, कभी बायाँ गाल या पूरा चेहरा उस पर रखे। अपने दोनों हाथ सिर से ऊँचे करके दीवार पर फैलाए, दायाँ हाथ दरवाज़े की ओर और बायाँ पत्थर की ओर, और दुआ करे। फिर ज़मज़म पर आए। यदि संभव हो तो स्वयं एक डोल खींचे, अन्यथा किसी और से लेकर पवित्र जल क़िबला की ओर मुँह करके तीन साँसों में पिए, हर बार बिस्मिल्लाह से शुरू करे और अल्हम्दुलिल्लाह पर ख़त्म करे, और जी भर कर पिए। बाकी पानी शरीर पर डाल ले। पीते समय स्वीकार्यता की दुआ करे। कुएँ के अंदर भी नज़र डाले क्योंकि यह मुनाफ़िक़त (ढोंग) को दूर करने वाला है। अब यदि विश्राम आदि जैसा

कोई बहाना न हो, तो सफ़ा और मरवा के बीच सई (दौड़) के लिए फिर से हजर-ए-अस्वद को उक्त तरीके से चूमे। यदि संभव न हो, तो केवल उसकी ओर मुँह करके तुरंत 'बाब-उस-सफ़ा' से सफ़ा की ओर रवाना हो जाए। दरवाज़े से पहले बायाँ पाँव बाहर निकाले और दायाँ पहले जूते में डाले। फिर सफ़ा की सीढ़ी पर चढ़े ताकि काबा नज़र आए। क़िबला की ओर मुँह करके दोनों हाथ कंधों तक आसमान की ओर फैलाए जैसे दुआ में करते हैं, और देर तक तकबीर कहे।

फुटनोट्स: नोट १: यह अदब हर सम्मानजनक चुंबन में ध्यान में रखा जाना चाहिए, उदाहरण के लिए संतों और विद्वानों के हाथ और पैर चूमने में। १२ (लेखक)। नोट २: यानी यदि चूमना और छूना संभव न हो, तो यहाँ यह नियम नहीं है कि लकड़ी से छूकर उसे चूम लिया जाए या हाथों से इशारा करके चूम लिया जाए; ये बातें केवल हजर-ए-अस्वद के लिए थीं। १२ (लेखक)।

اور عورت بے اضطباع حجر اسود کی دہنی طرف رکن یمانی کی جانب سنگ مکرم کے قریب یوں کھڑا ہو کہ تمام پتھر اپنے اپنے دستِ راست کی طرف رہے پھر طواف کی نیت کر کے کعبہ کو منہ کئے اپنی دہنی سمت چلے، جب سنگ اسود کے مقابل ہو اور یہ بات ادنی حرکت سے حاصل ہو جائے گی، کانوں تک ہاتھ اس طرح اٹھا کر کہ ہتھیلیاں جانب حجر رہیں، بسم اللہ والحمد للہ واللہ اکبر والصلوۃ والسلام علی رسول اللہ کہے اور پھر حجرِ مطہر پر دونوں کف دست اور ان کے بیچ میں منہ رکھ کر یوں بوسہ لے کہ آواز نہ پیدا ہو۔ تین بار ایسا ہی کرے، اگر بے ایذاء و کشمکش میسر آئے ورنہ ہاتھ یا لکڑی سے مس کر کے انہیں چوم لے، اور یہ بھی نہ ہو سکے تو ہاتھوں سے اس کی طرف اشارہ کر کے انہیں بوسہ دے لے، پھر در کعبہ کی طرف بڑھے، جب محاذات حجر سے گزر جائے سیدھا ہولے اور خانہ کعبہ کو اپنی طرف کر کے بے ایذا و مزاحمت مرد رمل کرتا (اور عورت بے رمل) چلے۔ طواف میں کعبہ سے جتنا پاس ہو بہتر۔ مگر اتنا نہ کہ پشتۂ دیوار پر جسم یا کپڑا لگے اور نزدیکی میں ازدحام سے رمل نہ کر سکے تو دوری افضل ہے جب رکن یمانی پر آئے اسے دونوں ہاتھوں یا دہنے سے تبرکاً چھوئے، نہ صرف بائیں سے اور چاہے تو بوسہ بھی دے اور نہ ہو سکے تو کچھ نہیں عہ ۲، یہاں تک کہ حجر اسود تک آجائے۔ یہ ایک پھیرا ہوا، یوں ہی سات پھیرے کرے، مگر رمل تین پھیروں کے بعد نہیں، ختم طواف میں بھی حجر اسود پر بوسہ دے، پھر مقامِ ابراہیم میں آکر جہاں تک مر مر بچھا ہے دو رکعت طواف پڑھے بشرطیکہ وقت مکروہ نہ ہو ورنہ تاخیر کرے، اس کے بعد دعا مانگے۔ پھر ملتزم میں آئے کہ اس پارہ دیوار کا نام ہے جو درمیان حجر اسود و درِ کعبہ کے ہے، یہاں قریب حجر ملتزم سے لپٹے اور اپنا سینہ، پیٹ، دہنا رخسارہ کبھی بایاں کبھی تمام منہ اس پر رکھے۔ دونوں ہاتھ سر سے بلند کر کے دیوار پر

پھیلائے یاد ہنا دروازے اور بایاں حجر کی طرف اور دعا کرے۔ پھر زمزم پر آئے۔ ہو سکے تو خود ایک ڈول کھینچے ورنہ کسی سے لے کر آبِ مطہر رو بقبلہ تین سانسوں میں ہر بار بسم اللہ سے شروع، الحمد پر ختم کرتا خوب پیٹ بھر کر پیے۔ باقی بدن پر ڈال لے۔ پیتے وقت دعا کرے کہ قبول ہے۔ کنوئیں کے اندر بھی نظر کرے کہ دافع نفاق ہے، اب اگر کوئی عذر مثل استراحت وغیرہ نہ ہو تو صفا مروہ میں سعی کے لیے پھر حجر اسود کو بطور مذکور چومے۔ اور نہ ہو سکے تو فقط اس کی طرف منہ کر کے فوراً بابِ صفا سے جانب صفا روانہ ہو، دروازے سے بایاں پاؤں پہلے نکالے اور داہنا پہلے جوتے میں ڈالے پھر صفا کی سیڑھی پر چڑھے کہ کعبہ نظر آئے۔ رو بقبلہ ہو کر دونوں ہاتھ آسمان کی طرف پھیلے شانوں تک اٹھائے جیسے دعا میں کرتے ہیں۔ دیر تک تکبیر،

عہ ۱: یہ ادب ہر بوسہ تعظیم مثلاً اولیاء وعلماء کے دست و پا چومنے میں بھی ملحوظ رکھے ۱۲ منہ۔ عہ ۲: یعنی بوسہ و مس نہ ملے تو یہاں یہ نہیں کہ لکڑی سے چھو کر اسے چومے یا ہاتھوں سے اشارہ کر کے بوسہ دے یہ باتیں صرف حجر اسود میں تھیں ۱۲ منہ

Fatawa-e-Razwiya, Volume 10

Stay engaged in Tahlil (proclaiming Allah's oneness), Durood, and supplication as this is a place for the acceptance of prayers. Then descend and, while occupied with Dhikr and Durood, proceed towards Marwa. Between these two, on the left wall of Masjid al-Haram, two green marks are placed, which are called 'Milain-e-Akhzarain'. Men should start running from the first mark but not excessively, nor causing harm to anyone, until they pass the second mark. This specific path is called 'Mas'a'. Women should not run. In this interval, pray earnestly. From the second mark, slow down again until you reach Marwa. From here, the Kaaba is not visible, but face its direction as was done at Safa. This completes one round. Then go back to Safa and run in the Mas'a until the seventh round ends at Marwa. It should be clarified that Umrah consists only of these acts of Tawaf and Sa'ee. For the Qarin and Mutamatti, this becomes their Umrah [1]. For the Mufrid, it is Tawaf-e-Qudum, but the Qarin should similarly perform another Tawaf and Sa'ee with the intention of Tawaf-e-Qudum. Both he and the Mufrid remain in the state of Ihram. Staying in Makkah reciting Talbiyah, unlike the Mutamatti who, like a person performing only Umrah, stops reciting Talbiyah as soon as he kisses the Black Stone at the beginning. After the mentioned Tawaf and Sa'ee, he (the Mutamatti) should shave or trim his hair and come out of Ihram [2]. If he wishes, he can remain without Ihram until the 8th of Dhu al-Hijjah, but it is better to put on the Ihram for Hajj sooner if he does not fear that he won't be able to bear the restrictions of Ihram for many days. During the days of stay, all these pilgrims [3] should perform as many voluntary Tawafs as possible without Sa'ee, Ramal, and Idtiba, and pray two rak'ahs at Maqam Ibrahim after every seven rounds. On the 7th date, after the Zuhr prayer, listen to the Imam's sermon in Masjid al-Haram. On the 8th date, whoever [4] has not yet put on the Ihram should do so. And if one wishes to perform the Ramal [5] and Sa'ee of Hajj earlier...

[1]: Even if they did not intend for Umrah in these acts. 12 Minhu [2]: However, for the Mutamatti who has brought a sacrificial animal, it is not permissible to come out of Ihram like the Qarin. 12 Minhu [3]: Meaning these few lines in between were specifically about the Mutamatti; ahead are general rules in which Qarin, Mutamatti, and Mufrid are all included. 12 Minhu [4]: And that would be the same Mutamatti who came out of Ihram after Umrah, or a resident of Makkah who has not yet put on the Hajj Ihram. 12 Minhu [5]: The Ramal and Sa'ee performed by the Mufrid and Qarin during Tawaf-e-Qudum will free them from it during Tawaf-e-Ziyarah. But for the Mutamatti, there is no Tawaf-e-Qudum, and the Ramal and Sa'ee he performed

were for Umrah, so the Ramal and Sa'ee of Hajj were not fulfilled. Therefore, he must perform them during Tawaf-e-Ziyarah. If, due to concern about crowds or lack of time, he wishes to finish these earlier, he should perform them with a voluntary Tawaf. 12 Minhu

तहलील, दरूद और दुआ में मशगूल रहें क्योंकि यह दुआओं की क़ुबूलियत की जगह है। फिर उतर कर ज़िक्र और दरूद में व्यस्त होकर मरवा की ओर चलें। इन दोनों के बीच, मस्जिद-ए-हराम की दीवार में बाईं ओर दो जगह हरे निशान बने हुए हैं जिन्हें 'मिलैन-ए-अख़ज़रैन' कहते हैं। पुरुष पहले निशान से दौड़ना शुरू करें लेकिन हद से ज़्यादा नहीं और न ही किसी को तकलीफ़ दें, यहाँ तक कि दूसरे निशान से बाहर निकल जाएँ। इतने रास्ते को 'मस्'आ' कहते हैं, औरतें न दौड़ें। इस बीच खूब गिड़गिड़ाकर दुआ करें। दूसरे निशान से फिर धीरे हो जाएँ यहाँ तक कि मरवा पहुँचें। यहाँ से काबा नज़र नहीं आता लेकिन उसी ओर मुँह करें जैसे सफ़ा पर किया था। यह एक चक्कर हुआ। फिर सफ़ा पर जाएँ और मस्'आ में दौड़ें यहाँ तक कि सातवाँ चक्कर मरवा पर ख़त्म हो। यह स्पष्ट रहे कि उमराह सिर्फ़ इन्हीं तवाफ़ और सई के कार्यों का नाम है। क़ारिन और मुतमत्ति के लिए यही उमराह [१] हो गया। और मुफ़रिद के लिए तवाफ़-ए-क़ुदूम, मगर क़ारिन इसी तरह तवाफ़-ए-क़ुदूम की नियत से एक और तवाफ़ और सई करे। और वह और मुफ़रिद दोनों एहराम में रहें। मक्का में रहते हुए लब्बैक कहते रहें, इसके विपरीत मुतमत्ति जो सिर्फ़ उमराह करने वाले की तरह शुरू में हजर-ए-अस्वद को चूमते ही लब्बैक कहना छोड़ दे और उक्त तवाफ़ और सई के बाद बाल मुंडवाकर या कटवाकर एहराम [२] से बाहर आ जाए। फिर चाहे तो ८ ज़िल हिज्जा तक बिना एहराम के रहे, लेकिन बेहतर यह है कि जल्द ही हज का एहराम बाँध ले अगर यह डर न हो कि दिन ज़्यादा होने की वजह से एहराम की पाबंदियाँ नहीं निभ पाएँगी। ठहरने के दिनों में ये सभी हाजी [३] जितना हो सके बिना सई, रमल और इज़्तिबा के नफ़्ली तवाफ़ करते रहें और हर सात चक्करों पर मक़ाम-ए-इब्राहीम में दो रकात नमाज़ पढ़ें। ७ तारीख़ को ज़ुहर की नमाज़ के बाद मस्जिद-ए-हराम शरीफ़ में इमाम का खुतबा सुनें। ८ तारीख़ को जिसने [४] अभी तक एहराम न बाँधा हो वह बाँध ले। और अगर हज का रमल [५] और सई पहले करना चाहे...

[१]: चाहे उन्होंने इन कार्यों में उमराह की नियत न की हो। १२ मिन्हु [२]: मगर जिस मुतमत्ति ने क़ुरबानी का जानवर साथ लाया हो, उसके लिए क़ारिन की तरह एहराम से बाहर आना जायज़ नहीं। १२ मिन्हु [३]: यानी बीच की ये कुछ पंक्तियाँ खास तौर पर मुतमत्ति के बारे में थीं, आगे फिर आम नियम हैं जिनमें क़ारिन, मुतमत्ति और मुफ़रिद सब शामिल हैं। १२ मिन्हु [४]: और वह वही मुतमत्ति होगा जो उमराह करके एहराम से बाहर आ गया हो, या कोई मक्का का निवासी जिसने अभी तक हज का एहराम न बाँधा हो। १२ मिन्हु [५]: मुफ़रिद और क़ारिन ने तवाफ़-ए-क़ुदूम में जो रमल और

सई की थी, अब वे तवाफ़-ए-ज़ियारत में उससे आज़ाद रहेंगे। लेकिन मुतमत्ति के लिए तवाफ़-ए-क़ुदूम नहीं है और उसने जो रमल और सई की थी वह उमराह के लिए थी, उससे हज की रमल और सई अदा नहीं हुई, इसलिए उसे तवाफ़-ए-ज़ियारत में ये करने होंगे। लिहाज़ा अगर भीड़ या समय की कमी के डर से वह इसे पहले पूरा करना चाहे, तो एक नफ़्ली तवाफ़ के साथ इसे अदा करे। १२ मिन्हु

تہلیل ، درود و دعا میں رہے کہ محلِ اجابت ہے پھر اتر کر ذکر و درود میں مشغول مروہ کو چلے۔ ان دونوں کے بیچ میں بائیں ہاتھ کو دیوارِ مسجد الحرام میں دو جگہ سبز علامتیں بنی ہیں جنھیں میلین اخضرین کہتے ہیں ، مرد پہلے میل سے دوڑنا شروع کریں مگر نہ حد سے زائد کسی کو ایذا دیتے۔ یہاں تک کہ دوسرے میل سے نکل جائیں۔ اتنے راستے کو "مسعیٰ" کہتے ہیں ، عورتیں نہ دوڑیں۔ اس مابین میں دعا بجد کرے میل دوم سے پھر آہستہ ہو لے یہاں تک کہ مروہ پر پہنچے یہاں کو کعبہ نظر نہیں آتا مگر استقبال کر کے جیسے صفا پر کیا تھا کرے۔ یہ ایک پھیرا ہوا۔ پھر صفا پر جائے اور مسعیٰ میں دوڑے یہاں تک کہ ساتواں پھیرا مروہ پر ختم ہو۔ واضح ہو کہ عمرہ صرف انہی افعال طواف و سعی کا نام ہے۔ قارن و متمتع کے لیے یہی عمرہ ع۱ ہو گیا۔ اور مفرد کے لیے طوافِ قدوم مگر قارن اسی طرح بہ نیتِ طوافِ قدوم ایک طواف و سعی اور کرے۔ اور وہ اور مفرد دونوں احرام میں رہیں۔ لبیک گویاں مقیم مکہ ہوں بخلاف متمتع کہ تنہا عمرہ والے کی طرح شروع سے بوسہ حجر لیتے ہی لبیک چھوڑ دے اور طواف و سعی مذکور کے بعد حلق یا تقصیر کر کے احرام ع۲ سے باہر آئے، پھر چاہے تو ہشتم ذی الحجہ تک بے احرام رہے ، مگر افضل یہ ہے کہ جلد احرام حج باندھ لے اگر یہ خیال نہ ہو کہ دن زیادہ ہیں احرام کی قیدیں مجھ سے نہ نبھیں گی۔ ایامِ اقامت میں یہ سب حجاج ع۳ جس قدر ہو سکے نزاطواف بے سعی ورمل واضطباع کرتے رہیں اور ہر سات پھیروں پر مقام ابراہیم میں دو رکعت پڑھیں۔ ساتویں تاریخ بعد نماز ظہر مسجد الحرام شریف میں امام کا خطبہ سنے۔ آٹھویں تاریخ جس نے ع۴ ابھی احرام نہ باندھا ہو باندھ لے اور حج کے رمل ع۵ و سعی پیشتر کرنا چاہے

ع۱ : اگرچہ انھوں نے ان افعال میں نیتِ عمرہ نہ کی ہو ۱۲ منہ ع۲ : مگر جس متمتع نے سوقِ ہدی کیا ہو اسے قارن کی طرح احرام سے باہر آنا روا نہیں ۱۲ منہ ع۳ : یعنی یہ چند سطریں بیچ میں خاص متمتع کے بیان میں تھیں آگے پھر عام احکام ہیں جن میں قارن، متمتع، مفرد سب شریک ۱۲ منہ ع۴ : اور وہ وہی متمتع ہوگا جو عمرہ کر کے احرام سے باہر آیا یا مکی جس نے ابھی حج کا احرام نہ کیا ۱۲ منہ ع۵ : مفرد و قارن نے طوافِ قدوم میں جو رمل و سعی کی تھی اب انھیں طوافِ زیارت میں فراغت رہے گی پر متمتع کے لیے طوافِ قدوم نہیں اور وہ رمل و سعی کہ اس نے کی تھی عمرہ کی تھی اس سے حج کی رمل و سعی ادا نہ ہوئی تو اسے طوافِ زیارت میں کرنے ہوں گے لہٰذا اگر بخیالِ زحمت و قلتِ فرصت یہ بھی پیشتر فارغ ہو لینا چاہے تو ایک نفلی طواف کے ساتھ ادا کرے ۱۲ منہ

Fatawa Razawiyya Volume Ten

Perform a voluntary Tawaf; when the sun rises, everyone should proceed to Mina, provided they have the strength to walk. For as long as it takes to return to Mecca, for every step, seventy million (7 crore)[1] good deeds will be recorded. A hundred thousand is a lakh, a hundred lakhs is a crore, a hundred crores is an arb, a hundred arbs is a kharab; these good deeds approximately[2] come to seventy-eight kharab and forty arb (7.84 trillion). And Allah's grace upon this Ummah, for the sake of this Prophet (peace be upon him), is immense. Increase the recitation of Talbiyah (Labaik), supplications, salutations (Durood), and praise along the way. Upon seeing Mina, offer a prayer. Stay there for the night and perform five prayers from today's Zuhr until the morning of the ninth. Spend this night awake in remembrance and worship, or sleep in a state of purity. When morning comes, after performing the prayer at the recommended time, remain engaged in Talbiyah and remembrance until the sun shines upon "Koh-e-Shabir," which is opposite Masjid al-Khayf. Now proceed towards Arafat, making a complete effort to purify the heart from thoughts other than Allah. Spend the journey in abundant Talbiyah, remembrance, salutations, repentance, and seeking forgiveness. When the gaze falls upon Jabal al-Rahma (Mount of Mercy), strive completely in these matters, for God-willing, it is a time of acceptance. In Arafat, descend near this blessed mountain or wherever space is found, avoiding the main thoroughfare. Until noon, remain occupied in humility and entreaty, and with sincere intention, give charity, remember Allah, recite Talbiyah, salutations, supplications, seeking forgiveness, and the Kalima of Tawhid (Oneness)[3]. Then, a little before the sun begins to decline (Zawal), take a bath as it is a Sunnat Muakkada, or perform Wudu, and finish eating, drinking, and other necessities before Zawal, so the heart is not attached to any side. Today, as for a pilgrim, fasting is not appropriate so that there is no weakness in supplication; likewise, eating to full satiety is a severe poison, a cause of negligence and laziness; three rotis is enough for hunger.

Note 1: It is stated in the Hadith that a person going on foot receives seven hundred rewards for every step from the virtues of the Haram[1], and it is established from another Hadith that every virtue in the Haram is equal to a hundred thousand virtues[2]. So, multiplying seven hundred by a hundred thousand results in seventy million (7 crore). 12 Minhu. Note 2: Arafat is counted as nine kos (miles) from Mecca; coming and going makes eighteen kos. The humble author (faqir) has experienced that an 'urfi' kos is 5 1/3, so consider it approximately 28 miles. Four thousand steps per mile, multiplying 28 by 4000 gives one lakh twelve thousand steps. Multiply these

by seventy million, and it comes to seventy-eight kharab and forty arb good deeds. Even if Arafat is considered only 9 miles from Mecca, it would be seventy-two thousand steps, which amounts to fifty kharab and forty arb good deeds—is this a small amount? And Allah's grace is very great. 12 Ghafara Lahu. Note 3: Meaning: 'There is no god but Allah, alone, without partner. His is the sovereignty, and His is the praise. He gives life and causes death, and He is living and does not die. In His hand is all good, and He is over all things powerful.' The Hadith states: 'The best Kalima that I and the prophets before me have said on the day of Arafah is this.' 12 Minhu.

[1] Fath al-Qadeer, Kitab al-Hajj, Miscellaneous Issues, Maktabah Nooriya Razawiyya Sukkur 7/87 [2] Fath al-Qadeer, Kitab al-Hajj, Miscellaneous Issues, Maktabah Nooriya Razawiyya Sukkur 7/87

तो एक नफ़्ल तवाफ़ के साथ कर ले, जब सूरज निकल आए सब मिना की ओर चलें बशर्ते कि चलने की शक्ति हो, क्योंकि जब तक मक्का लौट कर आएंगे, हर क़दम पर सात करोड़[1] नेकियां लिखी जाएंगी। सौ हज़ार का लाख, सौ लाख का करोड़, सौ करोड़ का अरब, सौ अरब का खरब; ये नेकियां लगभग[2] अठहत्तर खरब चालीस अरब आती हैं और अल्लाह का फ़ज़्ल इस नबी के सदक़े में इस उम्मत पर बहुत है सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम। रास्ते में लब्बैक, दुआ, दरूद और सना की अधिकता करे। मिना देखकर दुआ माँगे। वहां रात गुज़ार कर आज की ज़ोहर से नौवीं की सुबह तक पांच नमाज़ें पढ़े। यह रात ज़िक्र और इबादत में जागते हुए या पवित्रता की अवस्था में सोते हुए गुज़ारे। जब सुबह हो, मुस्तहब समय पर नमाज़ पढ़कर लब्बैक और ज़िक्र में रहे यहाँ तक कि सूरज 'कोह-ए-शबीर' पर चमकने लगे जो मस्जिद-ए-ख़ैफ़ शरीफ़ के सामने है। अब अराफ़ात की ओर चले, दिल को ग़ैर के ख़्याल से पाक करने में पूरा प्रयास करे। रास्ता लब्बैक, ज़िक्र, दरूद, तौबा और इस्तिग़फ़ार की अधिकता में काटे। जब निगाह जबल-ए-रहमत पर पड़े तो इन कार्यों में पूर्ण प्रयास करे कि इंशा अल्लाह यह क़बूलियत का वक़्त है। अराफ़ात में इस मुबारक पहाड़ के पास या जहाँ जगह मिले, आम रास्ते से बचकर उतरे। दोपहर तक आज़िज़ी, गिड़गिड़ाहट और सच्चे इरादे के साथ अपनी सामर्थ्य अनुसार दान-पुण्य, ज़िक्र, लब्बैक, दरूद, दुआ, इस्तिग़फ़ार और कलिमा-ए-तौहीद[3] में व्यस्त रहे। फिर ज़वाल (दोपहर ढलने) से कुछ पहले स्नान करे क्योंकि यह सुन्नत-ए-मुअक्कदा है, या वज़ू करे और ज़वाल से पहले खाने-पीने और अन्य ज़रूरतों से फ़ारिग हो ले ताकि दिल किसी और तरफ़ न लगा रहे। आज के दिन हाजी के लिए रोज़ा रखना उचित नहीं है ताकि दुआ में कमज़ोरी न हो; इसी तरह पेट भरकर खाना बहुत ज़हर है, जो ग़फ़लत और सुस्ती का कारण बनता है; भूख के लिए तीन रोटी काफ़ी हैं।

नोट १: हदीस में है कि पैदल जाने वाले को हर क़दम पर हरम की नेकियों में से सात सौ नेकियां मिलती हैं[1], और दूसरी हदीस से साबित है कि हरम की हर नेकी लाख नेकियों के बराबर है[2]। तो सात सौ को लाख से गुणा करने पर सात करोड़ हुए। १२ मिन्हु। नोट २: अराफ़ात मक्का मुअज़्ज़मा से नौ कोस माना जाता है, आने-जाने के अठारह कोस हुए। फ़क़ीर (लेखक) ने अनुभव किया है कि एक 'उर्फ़ी' कोस ५ १/३ होता है, तो लगभग २८ मील समझो। हर मील के चार हज़ार क़दम, २८ को ४००० से गुणा करने पर एक लाख बारह हज़ार क़दम हुए। इन्हें सात करोड़ से गुणा करें तो वही ७८ खरब ४० अरब नेकियां होती हैं। और अगर अराफ़ात को मक्का मुअज़्ज़मा से केवल ९ मील ही रखें तो ७२

हज़ार क़दम हुए जिनकी ५० खरब ४० अरब नेकियां होंगी—क्या यह थोड़ी हैं? और अल्लाह तआला का फ़ज़ल बहुत बड़ा है। १२ ग़फ़रा लहू। नोट ३: यानी: 'ला इलाहा इल्लल्लाहु वहदहु ला शरीका लहू लहुल मुल्क व लहुल हम्दु युहयी व युमीतु वहुवा हय्युल्ला यमूतु बियदिहिल खैर वहुवा अला कुल्लि शयइन क़दीर'। हदीस में फ़रमाया: सबसे बेहतर कलिमा जो आज अरफ़ा के दिन मैंने और मुझसे पहले नबियों ने फ़रमाया, वह यह है। १२ मिन्हु।

[1] फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-हज्ज, मुतफ़र्रिक मसाइल, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर ७/८७ [2] फ़तह अल-क़दीर, किताब अल-हज्ज, मुतफ़र्रिक मसाइल, मकतबा नूरिया रज़विया सुक्कुर ७/८७

تو ایک طواف نفل کے ساتھ کرلے، جب آفتاب نکل آئے سب منیٰ کو چلیں بشرطِ قوت پیادہ کہ جب تک مکہ پلٹ کر آئے گاہر قدم پر سات کروڑ ۸۱۸ نیکیاں لکھی جائیں گی۔ سوہزار کا لاکھ، سولا کھ کا کروڑ، سو کروڑ کا ارب، سو ارب کا کھرب، یہ نیکیاں تخمیناً ۸۲۸ اٹھتر کھرب چالیس ارب آتی ہیں اور خدا کا فضل اس نبی کے صدقے میں اس امت پر بہت ہے صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم راہ میں لبیک و دعا ودرود وثنا کی کثرت کرے۔ منیٰ دیکھ کر دعا مانگے۔ وہاں شب باش ہو کر آج کی ظہر سے نویں کی صبح تک پانچ نمازیں پڑھے۔ یہ رات ذکر و عبادت میں جاگتا یا باطہارت سوتا گزارے۔ جب صبح ہو نمازِ مستحب وقت پڑھ کر لبیک و ذکر میں رہے یہاں تک کہ آفتاب "کوہ شبیر" پر کہ مسجد الخیف شریف کے مقابل ہے چمک۔ اب عرفات کو چلے قلب کو خیال غیر سے پاک کرنے میں جہدِ کامل کرے۔ راستہ کثرتِ لبیک و ذکر و درود و توبہ واستغفار میں کاٹے۔ جب نگاہ جبل رحمت پر پڑے ان امور میں جہدِ تام کرے کہ ان شاء اللہ وقت قبول ہے۔ عرفات میں اس کوہِ مبارک کے پاس یا جہاں جگہ ملے شارعِ عام سے بچ کر اترے۔ دوپہر تک تضرع وابتہال اور باخلاص نیت حسبِ استطاعت تصدق و خیرات وذکر و لبیک ودرود ودعا واستغفار وکلمہ توحید ۸۳۸ میں مشغول رہے، پھر زوالِ آفتاب سے کچھ پہلے نہائے کہ سنتِ موکدہ ہے یا وضو کرے اور قبل از زوال کھانے پینے، وغیرہ ہما ضروریات سے فارغ ہولے کہ قلب کو کسی جانب تعلق نہ رہے۔ آج کے دن جیسے کہ حاجی کو روزہ مناسب نہیں کہ دعا میں ضعف نہ ہو، یوں پیٹ بھر کھانا سخت زہر ور، غفلت و کسل کا باعث، تین روٹی بھوک والا

عہ ۱ : حدیث میں یوں ہے کہ پیادہ جانیوالے کو ہر قدم پر سات سو نیکیاں ملتی ہیں حرم کی نیکیوں سے ۸۱۸ اور دوسری حدیث سے ثابت ہے کہ حرم کی ہر نیکی لاکھ نیکیوں کے برابر ہے ۸۲۸

تو سات سو کو لاکھ میں ضرب دینے سے سات کروڑ ہوئے ۱۲ منہ۔ عہ ۲ : عرفات مکہ معظمہ سے نو کوس گنی جاتی ہے آتے جاتے اٹھارہ کوس ہوئے، اور فقیر نے تجربہ کیا کہ عرفی کوس ۵ ۱/۳ ہوتا ہے تو تخمیناً ۲۸ میل سمجھو، ہر میل کے چار ہزار قدم، ۲۸ کو ۴۰۰۰ میں ضرب دینے سے ایک لاکھ بارہ ہزار قدم ہوئے انھیں سات کروڑ میں ضرب دیجئے تو وہی ۷۸ کھرب ۴۰ ارب نیکیاں ہوتی ہیں، اور اگر عرفات کو مکہ معظمہ سے ۹ میل ہی رکھتے تو ۷۲ ہزار قدم ہوئے جن کی ۵۰ کھرب ۴۰ ارب نیکیاں یہ کیا تھوڑی ہیں، اور اللہ تعالیٰ کا فضل بہت بڑا ہے ۱۲ غفر لہ عہ ۳ : یعنی لا الہ الا اللہ وحدہ لا شریک لہ لہ الملك و لہ الحمد یحیی ویمیت وھو حی لا یموت بیدہ الخیر وھو علی کل شيء قدیر۔ حدیث میں فرمایا: بہتر وہ کلمہ جو آج عرفہ کے دن میں نے اور مجھ سے پہلے انبیاء نے فرمایا یہ ہے ۱۲ منہ

۸18 فتح القدیر کتاب الحج مسائل منثورہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۷ /۸۷ ۸28 فتح القدیر کتاب الحج مسائل منثورہ مکتبہ نوریہ رضویہ سکھر ۷ /۸۷

Fatawa Razawiyya, Volume 10

...eat only once. (Note 1) When the sun declines, or even better before that, to secure a place near the Imam, one should go to Masjid Nimrah. After performing the Sunnah prayers and listening to the sermon, pray Zuhr with the Imam. Immediately after, the Takbir for Asr will be called; perform Asr in congregation without delay. Between the two, there is no place for conversation, let alone greetings. Do not perform the concluding Sunnahs of Zuhr, nor any Nafil prayers after Asr. This combination of Zuhr and Asr is only valid if the prayer is led by the Great Imam (i.e., the Sultan) or his authorized deputy; otherwise, performing Asr before its time would be invalid. Immediately after the prayer, proceed to the Mawqif (standing place). It is best to stand on a camel near the Imam, close to Jabal al-Rahmah where there is a pavement of black stones, facing the Qibla with the Imam behind, provided this does not cause difficulty or harm to others. Otherwise, perform the Wuquf wherever and however possible (Note 2). Standing to the right of the Imam is better than the left, and the left is better than being directly in front. Now, with extreme humility and submissiveness—trembling, shivering, fearing, yet hoping, eyes closed, neck bowed, hands raised towards the sky—immerse yourself in Takbir, Tahlil, Tasbih, Hamd, Durood, supplication, repentance, and seeking forgiveness. Strive for even a single drop of a tear to fall, as it is a sign of acceptance and ultimate bliss. If not, adopt the expression of those weeping, for "Whoever imitates a people is one of them." (Hadith). Repeatedly recite the Talbiyah (Labbayk) during prayers and remembrance. Supplications are highly accepted today, but the best among all is...

Note 1: In the Hadith, it is commanded to always eat only one-third of the stomach's capacity. We, being greedy, often fail to act upon this. At least during the stay in the Two Holy Sanctuaries, one should follow this. Otherwise, dear brother:

A container that is full, how can it take more? (When the stomach is full, other matters slip from one's hands)

Dear friend! Try acting upon this for a week. If you see no difference from your previous state, then the choice is yours; if there is life, there are many days for eating and drinking. May your stay in the Haramayn pass with vigor. Dear brother! If even this much patience is difficult, then from the 8th to the 13th are the specific days of Hajj, and about eight to ten days in Medina Tayyiba for the blessed presence—hold the reins of the self tightly. Otherwise, know for sure that:

One who eats a lot is very abased. (Excessive eating leads to much humiliation). - 12 (Author's note)

Note 2: Meaning avoid Batn 'Urnah, as staying there is absolutely impermissible. It is a valley in Arafat, one of the valleys of the Holy Sanctuary, situated behind Masjid Arafat (known as Masjid Nimrah) towards the Ka'bah Mu'azzamah. - 12 (Author's note)

Footnote: Al-Targhib wa al-Tarhib, referencing Tirmidhi Hadith 2; Al-Tarhib min al-Im'an fi al-Shiba', etc., Mustafa al-Babi Egypt 3/136.

फ़तावा रज़विया, जिल्द 10

...एक ही भोजन करें। (नोट 1) जब ज़वाल (सूरज ढलना) हो, बल्कि उससे पहले ही ताकि इमाम के पास जगह मिल सके, मस्जिद-ए-नमरह जाएँ। सुन्नतें पढ़कर खुत्बा सुनें और इमाम के साथ ज़ुहर की नमाज़ पढ़ें। इसके तुरंत बाद अस्र की तकबीर होगी; बिना रुके जमात में अस्र की नमाज़ पढ़ लें। बीच में बातचीत तो क्या, सलाम का भी कोई स्थान नहीं है। ज़ुहर की बाद वाली सुन्नतें भी न पढ़ें और अस्र के बाद कोई नफ़िल नमाज़ नहीं। ज़ुहर और अस्र को एक साथ पढ़ना तभी जायज़ है जब नमाज़ इमाम-ए-आज़म (अर्थात सुल्तान) या उनके अधिकृत प्रतिनिधि के पीछे हो, अन्यथा अस्र समय से पहले होने के कारण बातिल (अमान्य) होगी। नमाज़ के तुरंत बाद मौकिफ़ (ठहरने का स्थान) की ओर जाएँ। श्रेष्ठ यह है कि ऊँट पर इमाम के पास जबल-ए-रहमत के निकट जहाँ काले पत्थरों का फर्श है, किबला की ओर मुँह करके और इमाम को पीछे रखकर खड़े हों, बशर्ते कि इन गुणों को प्राप्त करने में कोई कठिनाई या किसी को कष्ट न हो। अन्यथा जहाँ (नोट 2) और जिस तरह संभव हो वुक़ूफ़ (ठहरना) करें। इमाम के दाहिनी ओर रहना बाईं ओर से और बाईं ओर रहना सामने से बेहतर है। अब पूर्ण विनय और विनम्रता के साथ—कांपते हुए, डरते हुए, उम्मीद रखते हुए, आँखें बंद किए, गर्दन झुकाए, हाथ दुआ के लिए आसमान की तरफ उठाए—तकबीर, तहलील, तस्बीह, हम्द, दुरूद, दुआ, तौबा, इस्तगफ़ार में डूब जाएँ। कोशिश करें कि आँसू की एक बूंद टपक जाए क्योंकि यह दुआ की स्वीकार्यता और सौभाग्य की निशानी है। अन्यथा रोने वालों जैसा चेहरा बनाएँ क्योंकि "जिसने जिस कौम की समानता अपनाई, वह उन्हीं में से होगा।" (हदीस)। दुआ और ज़िक्र के दौरान 'लब्बैक' को बार-बार दोहराएँ। आज के दिन दुआएँ बहुत स्वीकार होती हैं, लेकिन उन सब में सबसे...

नोट 1: हदीस में हमेशा पेट का एक तिहाई हिस्सा खाने का निर्देश है। हम लालची लोग अक्सर इस पर अमल नहीं कर पाते, तो काश! हरमैन में रहने के दिनों में तो इस पर अमल करें। वरना भाई जान:

जो बर्तन भरा हो, उसमें और क्या समा सकता है? (जब पेट भरा होता है, तो अन्य कार्य हाथ से निकल जाते हैं)

प्रिय! एक सप्ताह तक इस पर अमल करके देखो। फिर यदि पिछली स्थिति से कोई अंतर न दिखे तो मानना, वरना आपकी इच्छा है; जीवन है तो खाने-पीने के बहुत दिन हैं। हरमैन का निवास उत्साह के साथ गुज़रे। भाई जान! यदि इतना धैर्य भी कठिन है, तो 8 से 13 तारीख तक हज के विशेष दिन हैं

और आठ-दस दिन मदीना तैयबा में उपस्थिति के दिन हैं, तो अपनी नफ़्स (इच्छाओं) पर थोड़ा नियंत्रण रखें। वरना निश्चित रूप से जान लें कि:

अधिक खाने वाला बहुत अपमानित होता है। (अधिक खाना बहुत अपमान का कारण है)। - 12 (लेखक)

नोट 2: अर्थात बत्न-ए-उरनह से बचें, वहाँ वुक़ूफ़ (ठहरना) सर्वथा नाजायज़ है। वह अराफ़ात में एक नाला है, जो हरम-ए-मोहतरम के नालों में से है और मस्जिद-ए-अराफ़ात (जिसे मस्जिद-ए-नमरह कहते हैं) के पीछे काबा मोअज़्ज़मा की दिशा में है। - 12 (लेखक)

पादलेख: अत-तरग़ीब वत-तरहीब, सन्दर्भ तिर्मिज़ी हदीस 2; अत-तरहीब मिनल इम'आन फ़िश शिबा' आदि, मुस्तफ़ा अल-बाबी मिस्र 3/136।

ایک ہی کھائے، ۱ ع جب زوال ہولے بلکہ اس سے پہلے کہ امام کے قریب جگہ ملے مسجد نمرہ جائے سنتیں پڑھ کر خطبہ سن کر امام کے ساتھ ظہر پڑھے اس کے بعد بے توقف عصر کی تکبیر ہوگی معاً جماعت میں عصر پڑھ لے بیچ میں سلام کلام تو کیا معنیٰ ۔ ظہر کی پچھلی سنتیں بھی نہ پڑھے اور بعد عصر بھی نفل نہیں۔ یہ ظہر و عصر کی جمع جبھی جائز ہے کہ نماز امام اعظم یعنی سلطان یا اس کے نائب ماذون کے پیچھے ہو ورنہ عصر وقت سے پہلے باطل ہوگی۔ بعد نماز فوراً فوراً موقف کو جائے۔ افضل یہ ہے کہ اونٹ پر امام سے نزدیک جبل الرحمۃ کے قریب جہاں سیاہ پتھروں کا فرش ہے رو بقبلہ پس پشت امام کھڑا ہو جبکہ ان فضائل کے حصول میں دقت یا کسی کی اذیت نہ ہو ورنہ جہاں ۲ ع اور جس طرح ہوسکے وقوف کرے۔ امام کی دہنی جانب بائیں اور بائیں روبرو سے افضل ہے۔ اب غایت خشوع و خضوع کے ساتھ لرزتا ، کانپتا، ڈرتا، امید کرتا، آنکھیں بند کئے، گردن جھکائے، دست دعا آسمان کی طرف اٹھائے، تکبیر، تہلیل، تسبیح، حمد ، درود، دعا، توبہ، استغفار میں ڈوب جائے، کوشش کرے کہ ایک قطرہ آنسوؤں کا ٹپکے کہ دلیل اجابت و کمال سعادت ہے ورنہ رونے والوں کا سا منہ بنائے کہ مَنْ تَشَبَّہَ بِقَوْمٍ فَھُوَ مِنْھُمْ (جس نے جس قوم کی مشابہت اختیار کی وہ انہی میں سے ہوگا۔ت) اثنائے دعا و ذکر میں لبیک کی بار بار تکرار کرے، آج کے دن دعائیں بہت مقبول ہیں، مگر سب میں بہت

۱ ع : حدیث میں ہمیشہ تہائی پیٹ کھانے کو فرمایا ہے ۱ ہم حریصوں سے مدام عمل نہیں ہوتا تو کاش ایام اقامت حرمین میں تو اس پر عامل رہیں ورنہ جان برادر:

انائے کہ پر شد دگر چوں پرد (پیٹ جب پر ہوتا ہے تو دوسرے امور ہاتھ سے جاتے رہتے ہیں)

اے عزیز ! ہفتہ بھر اس پر عمل کر دیکھ پھر اگلا گلی حالت سے کچھ فرق دیکھے ماننا ورنہ اختیار ہے زندگی ہے تو کھانے پینے کے بہت دن ہیں۔ حرمین کی اقامت تو نشاط سے گزرے، جان برادر! اگر اتنا صبر بھی شاق ہے تو ۸ سے ۱۳ تک خاص اعمال حج کے دن ہیں اور آٹھ دس روز مدینہ طیبہ کے کہ حضوری مبارک کے ایام ہیں ذرا نفس کی باگ کڑی کرلے ورنہ یقین جان کہ:

بسیار خوارست بسیار خوار (بسیار خوری ___ کثیر ذلت ہے) ۱۲ منہ

۲ ع : یعنی بطن عُرنہ سے بچ کر وہاں وقوف محض ناجائز ہے وہ عرفات میں ایک نالہ ہے حرم محترم کے نالوں سے مسجد عرفات سے جسے مسجد نمرہ کہتے ہیں پچھال یعنی کعبہ معظمہ کی طرف ۱۲ منہ

۱ الترغیب والترہیب بحوالہ ترمذی حدیث ۲ الترھیب من الامعان فی اشبع الخ مصطفی البابی مصر ۳/ ۱۳۶

It is that instead of making supplications (dua), one should spend all the time in sending blessings (durood), remembrance of Allah (dhikr), and recitation of the Quran, for such a person will receive more than those who ask. In short, one should remain in this state of humility and weeping until the sun sets and a portion of the night's litany begins; leaving before this is prohibited. One essential etiquette to remember this day is to trust in Allah's true promises and believe that today I have become as pure from sins as the day I was born from my mother's womb. Now I will strive not to commit sins in the future, and let not the stain that Allah Almighty has washed from my forehead out of His sheer mercy return. After being certain of sunset, one should immediately proceed to Muzdalifah with calmness and dignity along with the Imam, occupied in Labbaik, Takbeer, Dhikr, and Durood. If there is space on the way and it doesn't cause harm to anyone, one should quicken their pace. Do not pray Maghrib and Isha prayers at Arafat or on the way; when Muzdalifah is in sight, if possible, one should walk, otherwise it's better. Here, near Jabal Qazah, avoiding the path, dismount. Before unpacking or untying camels, at the time of Isha, after Adhan and Iqamah, pray Maghrib with the intention of performing it on time, and immediately after that, without or with Takbeer, perform Sunnah and Nafl prayers, then pray Isha together. Congregation is not a condition for this combining of prayers. Stay occupied in the remembrance of God, Durood, and supplication until morning as much as possible. When morning comes, pray the Fajr prayer at its earliest time in deep darkness and then come to Mash'ar al-Haram. Facing the Qibla behind the Imam, exert effort in Dhikr, Labbaik, Durood, and supplication. With utmost humility, ask Allah Almighty for deliverance from the rights of fellow beings (Huquq-ul-Ibad). Pick up seven pebbles from here, wash them, and keep them. When it is well-lit and sunrise is near, proceed towards Mina along with the Imam, occupied in Labbaik and Dhikr. When reaching Wadi-e-Muhassar, quicken the pace for about five hundred and forty-five Shari' yards.

Footnote 1: This matter is proven from Hadiths; those who wish to see them should study Jawahir al-Bayan Shareef. The summary is that the Holy Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) said to Hazrat Ubayy bin Ka'b (may Allah be pleased with him): 'If you send blessings upon me instead of all your supplications, Allah Almighty will fulfill all your tasks and forgive your sins.' In a Hadith of Bayhaqi, it says: 'The Lord of Honor, glorified and exalted, says: Whosoever is unable to find time for supplication due to My remembrance, I will give him more than all those who ask.' 2.

In a Hadith of Tirmidhi, it says: 'The Master Almighty says: To whomsoever the recitation of the Quran and My remembrance leave no time for supplication, I shall grant the best of what I give to all seekers.' We have already written the meaning of this, that it refers to being certain of the sunset, then do not delay. Footnote 3: As mentioned above, accompanying the Imam is Sunnah, provided he departs at the prescribed time and there is no harm to oneself or others. Footnote 4: This is a ravine between Mina and Muzdalifah, outside the boundaries of both. While going from Muzdalifah to Mina, it starts from the peak of the mountain on the left side. It is 545 yards long. The People of the Elephant stayed here and the punishment of Ababil (swallows) descended upon them. Therefore, one should pass through here quickly and seek refuge from Allah's punishment.

1 Mishkat al-Masabih, Chapter on Prayer upon the Prophet (PBUH), Second Section, Mujtabai Press, Delhi, p. 86 2 Shu'ab al-Iman, Hadith 4735, Beirut 1/413 3 Jami' at-Tirmidhi, Chapters on Virtues of Quran, Amin Company, Kitab Khana Rashidiyya, Delhi (116/2)

यह है कि दुआ के बदले सारा समय दुरूद, ज़िक्र और क़ुरआन की तिलावत में गुज़ारे क्योंकि ऐसा करने वाला मांगने वालों से ज़्यादा पाएगा। संक्षेप में, इसी तरह विनम्रता और रोने-गिड़गिड़ाने की स्थिति में रहे यहाँ तक कि सूरज डूब जाए और रात के वज़ीफ़े का एक हिस्सा आ जाए; इससे पहले कूच करना मना है। और इस दिन याद रखने योग्य एक अनिवार्य अदब यह है कि अल्लाह तआला के सच्चे वादों पर भरोसा करके यह यकीन कर ले कि आज मैं गुनाहों से ऐसा पाक हो गया हूँ जैसे उस दिन था जब माँ के पेट से पैदा हुआ था। अब कोशिश करूँगा कि भविष्य में गुनाह न हो, और जो दाग़ अल्लाह तआला ने अपनी महज़ रहमत से मेरी पेशानी से धो दिया है, वह फिर न लगे। सूर्यास्त का यकीन हो जाने के बाद, तुरंत सुकून और गरिमा के साथ इमाम के साथ लब्बैक, तकबीर, ज़िक्र और दुरूद में व्यस्त होकर मुज़दलिफ़ा जाएँ। रास्ते में जगह मिले और किसी को तकलीफ़ न हो तो रफ़्तार तेज़ करें। मग़रिब और इशा की नमाज़ अरफ़ात में या रास्ते में न पढ़ें; जब मुज़दलिफ़ा नज़र आए तो सामर्थ्य होने पर पैदल हो जाएँ वरना जो बेहतर हो, यहाँ जबल-ए-क़ज़ह के करीब रास्ते से बचकर उतरें। सामान उतारने और ऊँट खोलने से पहले इशा के वक्त में अज़ान और इक़ामत के बाद अदा की नियत से मग़रिब की नमाज़ पढ़ें और उसके बाद बिना तकबीर या तकबीर कहकर बिना अंतराल के सुन्नत और नफ़्ल के साथ इशा पढ़ लें। इस जमा (दो नमाज़ों को मिलाने) में जमाअत शर्त नहीं है। सुबह तक अपनी सामर्थ्य के अनुसार खुदा की याद, दुरूद और दुआ में रहें। जब सुबह हो जाए तो नमाज़-ए-फ़ज्र अव्वल वक़्त में अच्छी तरह अंधेरे में पढ़कर मशअरुल हराम में आएँ। इमाम के पीछे क़िबला-रुख होकर ज़िक्र, लब्बैक, दुरूद और दुआ में कोशिश (मेहनत) करें। अल्लाह जल्ल जलालुहू से पूरी विनम्रता के साथ बंदों के अधिकारों (हुक़ूक़ुल इबाद) से छुटकारे की दुआ माँगें। यहाँ से सात कंकड़ियाँ उठाकर उन्हें धोकर रख लें। जब अच्छी रोशनी हो जाए और सूरज निकलने के करीब हो तो इमाम के साथ लब्बैक और ज़िक्र में व्यस्त होकर मिना की ओर चलें। जब वादी-ए-मुहस्सर पहुँचें तो लगभग पाँच सौ पैंतालीस शरई गज़ तक तेज़ चलें।

हाशिया १: यह बात हदीसों से साबित है, जिसे इन्हें देखना हो वह 'जवाहरुल बयान शरीफ़' का अध्ययन करे। उनका सारांश यह है कि हुज़ूर अकदस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने हज़रत उबय बिन काब रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से फ़रमाया: "अगर तू अपनी सारी दुआओं के बदले मुझ पर दुरूद भेजेगा, तो अल्लाह तआला तेरे सारे काम बना देगा और तेरे गुनाह माफ़ फ़रमा देगा।" बैहक़ी की हदीस में है: "रबुल इज़्ज़त जल्ल जलालुहू फ़रमाता है कि जिसे मेरे ज़िक्र के कारण दुआ

का समय न मिले, उसे मैं माँगने वालों से ज़्यादा दूँगा।" २. तिरमिज़ी की हदीस में है: "मौला तआला फ़रमाता है कि जिसे क़ुरआन की तिलावत और ज़िक्र ने दुआ की मोहलत न दी, उसे मैं सब माँगने वालों से बेहतर अता करूँगा।" इसका अर्थ हम ऊपर लिख चुके हैं कि सूर्यास्त का यकीनी हो जाना मुराद है, फिर देरी न करे। हाशिया ३: ऊपर गुज़रा कि इमाम के साथ रहना सुन्नत है, यदि वह मसनून वक़्त पर कूच करे और साथ रहने में अपनी या दूसरों की तकलीफ़ न हो। हाशिया ४: यह मिना और मुज़दलिफ़ा के बीच एक नाला है जो दोनों की सीमाओं से बाहर है। मुज़दलिफ़ा से मिना जाते समय बाईं ओर जो पहाड़ पड़ता है, उसकी चोटी से शुरू होता है और ५४५ गज़ लंबा है। यहाँ असहाब-ए-फ़ील (हाथी वाले) रुके थे और उन पर अबाबील का अज़ाब उतरा था, इसलिए यहाँ से जल्दी गुज़रना चाहिए और अल्लाह के अज़ाब से पनाह माँगनी चाहिए।

१ मिश्क़ातुल मसाबीह, बाब अस-सलातु अलान नबी (स.), फ़स्ल सानी, मतबा मुज्तबाई दिल्ली, पृ. ८६ २ शुअबुल ईमान, हदीस ४७३५, बेरूत १/४१३ ३ जामे अत-तिरमिज़ी, अबवाब फ़ज़ाइलुल क़ुरआन, अमीन कंपनी किताब ख़ाना रशीदिया दिल्ली (११६/२)

पृष्ठ ८२६ का ८३६

یہ ہے کہ دعا کے بدلے سارا وقت درود و ذکر و تلاوتِ قرآن میں گزارے کہ دعا والوں سے زیادہ پائے گا۔ غرض اسی حالت تضرع و زاری پر رہے یہاں تک کہ سورج ڈوب جائے اور ایک جز وظیفہ رات کا آجائے، اس سے پہلے کوچ منع ہے اور ایک ادب واجب الحفظ اس روز یہ ہے کہ اللہ تعالیٰ کے سچے وعدوں پر بھروسا کر کے یقین جانے کہ آج میں گناہوں سے ایسا پاک ہو گیا جیسا جس دن ماں کے پیٹ سے پیدا ہوا تھا۔ اب کوشش کروں گا کہ آئندہ گناہ نہ ہو، اور جو داغ اللہ تعالیٰ نے بہ محضِ رحمت میری پیشانی سے دھویا ہے پھر نہ لگے۔ بعدِ تیقنِ غروب فوراً سکینہ و وقار کے ساتھ ہمراہ امام لبیك و تکبیر و ذکر و درود میں مشغول مزدلفہ جائیں۔ راہ میں وسعت ملے اور کسی کی ایذانہ ہو تو سیر میں شتابی کریں۔ نمازِ مغرب و عشاء عرفات خواہ راہ میں نہ پڑھیں، جب مزدلفہ نظر آئے بشرطِ قدرت پیادہ ہو جائے اور نہ سکے تو بہتر، یہاں جبلِ قزح کے قریب راہ سے بچ کر اتریں، اسباب اتارنے، اونٹ کھولنے سے پہلے وقتِ عشاء میں بعدِ اذان و اقامت نمازِ مغرب بہ نیت ادا اور اس کے بعد بے تکبیر یا تکبیر کہہ کر بے فصل سنت و نفل معا عشاء پڑھ لیں، اس جمع میں جماعت شرط نہیں۔ صبح تک بقدرِ قدرت یادِ خدا و درود و دعا میں رہیں، جب صبح ہو نمازِ صبح اولِ وقت خوب تاریکی میں پڑھ کر مشعر الحرام میں آئیں، امام کے پیچھے رو بلقبلہ ذکر و لبیك و درود و دعا میں جہد رکھیں۔ اللہ جل جلالہ سے بتضرعِ تمام حقوق العباد سے خلاصی مانگیں، یہاں سے سات کنکریاں اٹھا کر دھو کر رکھ لیں- جب خوب روشنی ہو جائے اور آفتاب قریب طلوع آئے ہمراہ امام لبیك و ذکر میں مشغول منیٰ کو چلیں، جب وادیِ محسر پہنچیں بقدر پانچسو پینتالیس گز شرعی کے سیر میں

عه۱: یہ امر حدیثوں سے ثابت ہے جسے ان کا دیکھنا ہو جواہر البیان شریف مطالعہ کرے، خلاصہ ان کا یہ کہ حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے حضرت ابی بن کعب رضی اللہ تعالیٰ عنہ سے فرمایا: "اگر تو اپنی سب دعاؤں کے عوض مجھ پر درود بھیجا کرے گا تو اللہ تعالیٰ تیرے سب کام بنا دے گا اور تیرے گناہ معاف فرمائے گا۔" بیہقی کی حدیث میں ہے: "رب العزت جل جلالہ فرماتا ہے جو میرے ذکر کے سبب دعا کی فرصت نہ پائے اسے سب مانگنے والوں سے زیادہ دوں۔ ۲۔ ترمذی کی حدیث میں ہے: "مولا تعالیٰ فرماتا ہے جسے تلاوتِ قرآن، ذکر و دعا کی مہلت نہ دے اسے سب سائلوں سے افضل عطا کروں۔" اس کے معنی ہم اوپر لکھ چکے کہ غروبِ آفتاب کا یقینی ہو جانا مراد ہے پھر دیر نہ کرے ۱۲ منہ عه۳: اوپر گزرا کہ ہمراہِ امام سنت ہے اور اگر وہ وقت مسنون پر کوچ کرے اور معیت میں اپنی یا غیر کی اذیت نہ ہو ۱۲ منہ۔ عه۴: یہ منیٰ و مزدلفہ کے بیچ میں ایک نالہ ہے دونوں کی حدود سے خارج مزدلفہ سے منیٰ کو جاتے ہوئے بائیں ہاتھ کو جو پہاڑ پڑتا ہے اس کی چوٹی سے شروع ہوا ہے ۵۴۵ گز طول رکھتا ہے یہاں آکر اصحاب الفیل ٹھہرے اور ان پر عذاب ابابیل اترا تھا اس لیے اس سے جلد گزرنا اور عذاب الٰہی سے پناہ مانگنا چاہئے۔ ۱۲ منہ

۱ مشکوٰۃ المصابیح باب الصلوۃ علی النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم فصل ثانی مطبع مجتبائی دہلی ص ۸۶ ۲ شعب الایمان حدیث ۴۷۳۵ بیروت ۱ / ۴۱۳ ۳ جامع الترمذی ابواب فضائل القرآن امین کمپنی کتب خانہ رشیدیہ دہلی (۱۱۶/۲)

Fatawa Razawiya, Volume 10

Without hurting anyone, move quickly and during this time seek refuge from the wrath and punishment of Allah. When you reach Mina, before all other tasks, go to Jamrah al-Aqabah, which is the last Jamrah from this side and the first from Makkah al-Mukarramah. Stand in the middle of the valley on a mount, five Shari' yards away from the Jamrah, such that Mina is on the right and the Kaaba is on the left. Then, facing the Jamrah, throw seven pebbles one by one, raising the right hand well so that the whiteness of the armpit is visible. On each throw, say "Bismillah Allahu Akbar". It is better that the pebbles reach the Jamrah; otherwise, they should fall within a distance of three Shari' yards. Beyond that, the pebble will not be counted. Stop saying "Labbaik" from the first pebble. When all seven are completed, return immediately while doing dhikr and dua. Now comes the sacrifice (Qurbani) [Footnote 1], which is obligatory (wajib) for Mutamatti' and Qarin, and recommended (mustahabb) for Mufrid. If you know how to slaughter, do it yourself; otherwise, be present during the slaughter. Tie both its legs and one foot, lay it down facing the Qibla, and say Takbir, then run an extremely sharp knife over it very quickly. Afterward, untie its legs and feet. If it is a camel, stand it up and strike a spear into the base of its neck (manhar), as this is the Sunnah, and slaughtering it (like a goat) is disliked (makruh), though it suffices for lawfulness (hallat). After finishing, pray for the acceptance of Hajj and Qurbani for yourself and all Muslims. Do not skin it until it has cooled down, as it is painful. Afterward, sit facing the Qibla and let men shave their entire heads, which is superior, or have their hair trimmed, which is permitted; start from the right side. During the shaving (halq), keep saying "Allahu Akbar, Allahu Akbar, La ilaha illallahu wallahu Akbar, Allahu Akbar wa lillahil hamd." After finishing, say it again and ask for forgiveness for all Muslims. Bury the hair. Do not trim nails or groom the beard before shaving the head. Shaving is not permissible for women; they should have their hair trimmed to the length of a finger-joint. Now, everything that Ihram had made forbidden, except for sexual intercourse and its preliminaries, has become lawful. It is best to go to Makkah al-Mukarramah today, on the tenth, for the obligatory Tawaf, which is called "Tawaf al-Ziyarah." Perform it as mentioned before, on foot, with purity and covering of the 'awrah, but without Idtiba' [Footnote 2]. Similarly [Footnote 3], for Mufrid or Mutamatti', like the Qarin, Raml and Sa'y of Hajj, whether both or just Sa'y of Hajj, in any complete Tawaf [Footnote 4] with purity...

Footnote 1: This sacrifice is separate from the Eid sacrifice. It is not at all for a traveler, and is obligatory for a wealthy resident, even if they are a pilgrim. 12 Minhu. Footnote 2: We have already written that there is no Idtiba' at all in this Tawaf, even if it was not done before. 12 Minhu. Footnote 3: The correct ruling is that it is superior for the Qarin to perform Raml and Sa'y during Tawaf al-Qudum. This is the meaning of the saying "like Qarin" (T: this is the meaning of the phrase "like Qarin"). And for the Mufrid also, it is permitted considering the hardship and lack of time, and for the Mutamatti', although Tawaf al-Qudum is not said, as we have explained before (T: as we have already stated), but for him... (continued on next page).

किसी को कष्ट पहुँचाए बिना तेज़ी से चलें और इस दौरान अल्लाह के क्रोध और दंड से शरण माँगें। जब मिना पहुँचें, तो सबसे पहले जमरा-ए-अक़बा पर जाएँ जो इस तरफ से आखिरी जमरा है और मक्का मुअज़्ज़मा से पहला। वादी के बीच में सवारी पर जमरा से पाँच शरीअत वाले गज़ की दूरी पर खड़े हों, ताकि मिना दाहिने हाथ पर रहे और काबा बाईं ओर। फिर जमरा की ओर मुख करके सात कंकड़ अलग-अलग दाहिना हाथ अच्छी तरह उठाकर मारें ताकि बगल की सफेदी दिखाई दे। हर एक पर "बिस्मिल्लाह अल्लाहु अकबर" कहें। बेहतर यह है कि कंकड़ जमरा तक पहुँचें, अन्यथा वे तीन शरीअत वाले गज़ की दूरी के भीतर गिरें। इससे अधिक दूरी पर कंकड़ की गिनती नहीं होगी। पहले कंकड़ से "लब्बैक" कहना बंद कर दें। जब सातों कंकड़ पूरे हो जाएं तो तुरंत ज़िक्र और दुआ करते हुए वापस आएं। अब कुर्बानी [हशया 1] का समय है, जो मुतमत्ति और क़ारिन पर वाजिब (अनिवार्य) है और मुफ़रिद के लिए मुस्तहब (पसंदीदा) है। यदि आपको ज़िबह (बलि देना) करना आता है, तो स्वयं करें अन्यथा ज़िबह के समय उपस्थित रहें। उसके दोनों पैर और एक पाँव बाँधकर किबला की ओर मुँह करके लिटाएँ और तकबीर कहकर अत्यंत तेज़ छुरी बहुत तेज़ी से फेर दें। उसके बाद हाथ-पाँव खोल दें। यदि ऊँट हो, तो उसे खड़ा करके गले के निचले हिस्से (मन्हर) में नेज़ा मारें, क्योंकि सुन्नत यही है और उसे (बकरी की तरह) ज़िबह करना मकरूह है, हालाँकि हलाल होने के लिए पर्याप्त है। फ़ारिग होने (कार्य पूरा करने) के बाद अपने और सभी मुसलमानों के लिए हज और कुर्बानी की स्वीकार्यता की दुआ करें। जब तक जानवर ठंडा न हो जाए, खाल न उतारें क्योंकि यह कष्टदायक है। इसके बाद किबला की ओर मुख करके बैठें और पुरुष पूरा सिर मुँडवाएँ जो कि अफ़ज़ल (श्रेष्ठ) है, या बाल कटवाएँ जिसकी अनुमति है; दाहिनी ओर से शुरुआत करें। मुँडवाने (हलक़) के समय "अल्लाहु अकबर अल्लाहु अकबर ला इलाहा इल्लल्लाहु वल्लाहु अकबर अल्लाहु अकबर व लिल्लाहिल हम्द" कहते रहें। कार्य पूरा करने के बाद भी कहें और सभी मुसलमानों की मग़फ़िरत (क्षमा) माँगें। बालों को दफना दें। सिर मुँडवाने से पहले नाखून न काटें, ख़त (दाढ़ी) न बनवाएँ। महिलाओं के लिए सिर मुँडवाना जायज़ नहीं है, वे एक पोर के बराबर बाल कटवा लें। अब संभोग और उसके कारणों के अलावा जो कुछ एहराम ने हराम किया था, वह सब हलाल हो गया। श्रेष्ठ यह है कि आज दसवीं तारीख को ही फ़र्ज़ तवाफ़ के लिए, जिसे "तवाफ़-ए-ज़ियारत" कहते हैं, मक्का मुअज़्ज़मा जाएँ। बताए गए तरीके के अनुसार पैदल, पाकी (शुद्धता) के साथ और पर्दे का ध्यान रखते हुए बिना इज़्तिबा [हशया 2] के तवाफ़ करें। इसी तरह [हशया 3] जो मुफ़रिद, मुतमत्ति,

क़ारिन की तरह रमल और सई-ए-हज, चाहे दोनों या केवल सई-ए-हज, किसी भी पूर्ण तवाफ़ [हशया 4] में पाकी के साथ...

हशया 1: यह कुर्बानी ईद की कुर्बानी से अलग है। यह यात्री पर बिल्कुल नहीं है और निवासी मालदार पर वाजिब है, भले ही वह हाजी हो। 12 मिन्हु। हशया 2: हम ऊपर लिख चुके हैं कि इस तवाफ़ में इज़्तिबा बिल्कुल नहीं है, भले ही पहले न किया गया हो। 12 मिन्हु। हशया 3: तो सही मसला यह है कि क़ारिन के लिए तवाफ़-ए-क़ुद्दूम में रमल और सई कर लेना अफ़ज़ल है। यही "क़ारिन की तरह" कहने का अर्थ है (त: इसके शब्द 'क़ारिन की तरह' का यही अर्थ है)। और मुफ़रिद को भी कठिनाई और समय की कमी के विचार से अनुमति है, और मुतमत्ति के लिए यद्यपि तवाफ़-ए-क़ुद्दूम नहीं कहा गया, जैसा कि हमने पहले वर्णन किया है (त: जैसा कि हमने पहले बयान किया है), लेकिन उसके लिए... (अगले पृष्ठ पर जारी)।

بے ایذائے احدے تیزی کریں اور اس عرصہ میں غضب و عذاب الہی سے پناہ مانگیں، جب منیٰ پہنچیں سب کاموں سے پہلے جمرہ عقبہ کو کہ ادھر سے پچھلا جمرہ ہے اور مکہ معظمہ سے پہلا، جائیں اور بطن وادی میں سواری پر جمرہ سے پانچ گز شرعی چھوڑ کر کھڑے ہوں کہ منیٰ دہنے ہاتھ پر رہے اور کعبہ بائیں پر۔ پس رخ بجمرہ سات کنکریاں جدا جدا سیدھا ہاتھ خوب اٹھا کر کہ سپیدی بغل ظاہر ہو، ہر ایک پر "بسم اللہ اللہ اکبر" کہہ کر ماریں۔ بہتر یہ ہے کہ کنکریاں جمرہ تک پہنچیں ورنہ تین گز شرعی کے فاصلہ تک گریں، اس سے زیادہ میں وہ کنکری شمار میں نہ آئے گی، پہلی کنکری سے لبیك موقوف کریں، جب سات پوری ہو جائیں فوراً ذکر و دعا کرتے پلٹ آئیں، اب قربانی عہ۱ میں کہ متمتع و قارن پر واجب اور مفرد کو مستحب ہو، اگر ذبح کرنا آئے خود ذبح کریں ورنہ ذبح میں حاضر ہوں، دونوں ہاتھ اور ایک پاؤں اس کا باندھ کر رو بقبلہ لٹائیں اور تکبیر کہہ کر نہایت تیز چھری بسرعت تمام پھیر دیں، بعدہ ہاتھ پاؤں کھول دیں، اونٹ ہو تو اسے کھڑا کر کے سینہ میں منتا ہئے گلو پر نیزہ ماریں کہ سنت یونہی ہے اور اس کا ذبح مکروہ، اگرچہ حلت میں کافی ہے۔ بعد فراغ اپنے اور تمام مسلمانوں کے لیے قبول حج و قربانی کی دعا کریں، جب تک سرد نہ ہو کھال نہ کھینچیں کہ ایذا ہے، بعدہ رو بقبلہ بیٹھ کر مرد ساراسر منڈائیں کہ افضل ہے یا بال کتروائیں کہ رخصت ہے، ابتداء دہنی جانب سے کریں، وقت حلق اللہ اکبر اللہ اکبر لا الہ الا اللہ واللہ اکبر اللہ اکبر وللہ الحمد کہتے جائیں، بعد فراغ بھی کہیں، سب مسلمانوں کی مغفرت مانگیں، بال دفن کر دیں، حلق سے پہلے ناخن نہ کتروائیں، خط نہ بنوائیں، عورتوں کو حلق روا نہیں ایک پور برابر بال کتروا دیں، اب جماع و دواعی جماع کے سوا جو کچھ احرام نے حرام کیا تھا سب حلال ہو گیا۔ افضل یہ ہے کہ آج دسویں ہی تاریخ طواف فرض کے لیے جسے "طواف

زیارۃ" کہتے ہیں، مکہ معظمہ جائیں بدستور مذکور پیادہ پا با طہارت وستر عورت بے اضطباع عہ۲ کریں، اسی طرح عہ۳ جو مفرد متمتع مثل قارن رمل وسعی حج دونوں خواہ صرف سعی حج، سے کسی طواف عہ۴ کامل با طہارت میں

عہ۱: یہ قربانی عید کی قربانی سے جدا ہے وہ مسافر پر اصلاً نہیں اور مقیم مالدار پر واجب ہے اگرچہ حاجی ہو ۱۲ منہ عہ۲: ہم اوپر لکھ چکے کہ اس طواف میں اضطباع اصلاً نہیں اگرچہ پیشتر نہ کیا ہو ۱۲ منہ عہ۳: تو صحیح مسئلہ یہ ہے کہ قارن کو طواف قدوم میں رمل و سعی کر لینی افضل ہے وہذہ معنی قولہ مثل قارن (اس کے قول "مثل قارن" کا یہی معنی ہے۔ ت) اور مفرد کو بھی بخیال زحمت و قلت فرصت اجازت اور متمتع کے لیے اگرچہ طواف قدوم نہیں کہا بینا من قبل (جیسا کہ ہم نے پہلے بیان کر دیا ہے۔ ت) مگر اسے (باقی بر صفحہ آئندہ)

If he has finished, he should perform Raml and Sa'i, otherwise perform both now. After Tawaf, pray two rak'ahs at Maqam Ibrahim; with this, women also become permissible (halal) for him. Delaying it until the 12th is permissible. After that, without a valid excuse, it is Makruh Tahrimi (prohibitively disliked) and necessitates a 'Dam' (sacrificial penalty).

Now, on the 10th date, after offering Zuhr prayer in Makkah Mukarramah, go back to Mina [Footnote 1]; spend the night of the 11th there, not in Makkah or on the way.

(Remainder of the footnote from the previous page) We have written above that it should be done earlier, so do it with an optional (Nafl) prayer. Now, if these people were not free from these tasks earlier, then well and good; today there will be no need. But whoever has not done them, whether he is a Qarin, Mufrid, or Mutamatti', he must do them now. However, Raml is prescribed in that Tawaf after which Sa'i is performed. So for one who has not yet done either, it is clear that he will do both with this Tawaf. And one who did not perform Sa'i but did Raml, he should also do both now. Sa'i was remaining anyway, and Raml because the first Raml occurring in a Tawaf without Sa'i was not as prescribed; now perform it in the prescribed manner. And one who had performed Sa'i but did not do Raml, he should now do nothing. He has already performed Sa'i, and as for Raml, if he performs it, it will occur without Sa'i, and Sa'i cannot be repeated. (12) (Signature)

Note 2: The meaning of 'Complete Tawaf' has been explained in the section on 'Wajibat' (Obligatory Acts). (12) (Signature)

(Footnote for this page) Note 1: Every person, high and low, has witnessed a wonderful spectacle of Divine Power in Mina with these very eyes, which by the grace of Allah manifests the truth of Islam and the clear miracle of the Master of Mankind (peace and blessings be upon him). Mina is the name of a small area between a few mountains, whose width is very small and length is two miles; consider the entire area to be less than one square mile. Here, for four or five days, there is a massive crowd of all pilgrims. It is not like the space in rows of prayer or a gathering, but rather like how people live in cities—thousands of tents, camps, awnings, screens, each in their separate station, plus the actual permanent buildings. And we wrote above that in no year are they fewer than 1.5 million. The year this humble servant was present, I heard a census of 1.8 million. Yet, you will never see that Mina has become full or that at any time it became cramped for the attendees. All of them

spread out, walk, move, sleep, reside, and do their work comfortably. By the grace of Allah, this is a direct confirmation of the Hadith where it was stated: "Mina expands for the pilgrims just as a mother's womb does for the child; as the child grows, the mother's womb provides space." I bear witness that Islam is truth and disbelief is falsehood. And praise be to Allah, Lord of the worlds. (12) (Signature) May he be forgiven.

1. Kanz al-Ummal, with reference to Tabarani from Abu al-Darda, Hadith 38497, Mu'assasat al-Risalah Beirut 12/230. Mentioned in Durr al-Manthur under the verse "And remember Allah during the numbered days". Publications of Ayatollah al-Uzma, Qom Iran 1/235.

फतावा-ए-रज़विया - जिल्द दहम (10)

जो फारिग हो चुका है, वह रमल और सई करे, वरना अब दोनों बजा लाए। तवाफ के बाद मकाम-ए-इब्राहिम में दो रकात पढ़ें, इससे औरतें भी हलाल हो गईं। बारहवीं तक इसकी ताखीर (देरी) रवा (जायज़) है। इसके बाद बिना उज़्र (कारण) के मकरूह तहरीमी है और दम (बलि) वाजिब करता है।

अब दसवीं तारीख को मक्का मुकर्रमा में ज़ुहर की नमाज़ पढ़कर फिर मिना [टिप्पणी 1] जाए; ग्यारहवीं की रात वहीं बिताए, न मक्का में न रास्ते में।

(पिछले पृष्ठ की शेष टिप्पणी) हमने ऊपर लिखा कि पहले कर लेना चाहिए तो एक नफल के साथ कर ले। अब ये लोग अगर पहले इन कामों से फारिग नहीं हुए थे तो बेहतर है, आज ज़रूरत नहीं पड़ेगी। मगर जिसने नहीं किए हों, चाहे वह कारिन हो या मुफ़्रिद या मुतमत्ती, उसे अब करने चाहिए। मगर रमल उसी तवाफ में मशरूअ (निर्धारित) है जिसके बाद सई हो। तो जिसने अब तक दोनों न किए हों, ज़ाहिर है कि वह इस तवाफ के साथ दोनों करेगा। और जिसने सई नहीं की थी मगर रमल कर लिया था, वह भी अब दोनों करे। सई तो बाकी थी ही, और रमल इसलिए कि पहला रमल जो बिना सई वाले तवाफ में हुआ था, वह मशरूअ नहीं था; अब मशरूअ तरीके से बजा लाए। और जिसने सई कर ली थी पर रमल नहीं किया था, वह अब कुछ न करे। सई तो वह कर चुका है, और रमल अगर करता है तो वह बिना सई के होगा, और सई दोबारा नहीं हो सकती। (12) (हस्ताक्षर)

टिप्पणी 2: 'कामिल तवाफ' का अर्थ वाजिबात (अनिवार्य कृत्यों) के खंड में गुज़र चुका है। (12) (हस्ताक्षर)

(इस पृष्ठ की टिप्पणी) टिप्पणी 1: अल्लाह की कुदरत का एक अजीब तमाशा हर खास-ओ-आम ने मिना में अपनी आँखों से देखा है, जिससे अल्लाह के शुक्र से इस्लाम की सत्यता और हुज़ूर सैयदुल अनाम (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का स्पष्ट मोजज़ा ज़ाहिर होता है। मिना कुछ पहाड़ों के बीच एक छोटी सी जगह का नाम है जिसकी चौड़ाई बहुत ही कम है और लंबाई दो मील है; पूरे क्षेत्रफल को एक वर्ग मील से भी कम समझें। यहाँ चार-पाँच दिन तमाम हाजियों का हुजूम (भीड़) रहता है। फिर ऐसा नहीं जैसे नमाज़ की सफें या महफ़िल की जगह हो, बल्कि जैसे शहरों में लोग बसते हैं—हज़ारों खेमे, डेरे, कनातें, पर्दे, हर एक अपनी-अपनी अलग मंज़िल में, फिर असल आबादी की इमारतें इसके अलावा। और हमने ऊपर लिखा कि किसी भी साल पन्द्रह लाख से कम नहीं होते। यह फ़कीर जिस साल हाज़िर था, अठारह लाख की जनगणना सुनने में आई। फिर कभी न देखेंगे कि मिना भर गया या

किसी वक्त हाज़िरीन के लिए तंग हो गया। सब आराम से फैलते, चलते-फिरते, सोते, बसते और अपना काम-काज करते हैं। यह अल्लाह के शुक्र से उस हदीस की स्पष्ट पुष्टि है जिसमें फरमाया गया: "मिना हाजियों के लिए वैसे ही फैलता है जैसे माँ का पेट बच्चे के लिए, कि जितना बच्चा बढ़ता जाता है माँ का पेट जगह देता जाता है"। मैं गवाही देता हूँ कि इस्लाम हक़ है और कुफ़्र बातिल है। और सब तारीफें अल्लाह के लिए हैं जो तमाम जहानों का रब है। (12) (हस्ताक्षर) अल्लाह उनकी मगफिरत फरमाए।

1. कंजुल उम्माल, हवाले से तबरानी, अबू दरदा से रिवायत, हदीस 38497, मुअस्ससतु र रिसाला बेरूत 12/230। दुर्रे मंसूर में "अल्लाह को याद करो गिने हुए दिनों में" आयत के तहत ज़िक्र है। प्रकाशन आयतुल्लाह अल-उज़्मा, कुम ईरान 1/235।

पेज 828 का 836

فارغ ہو چکا ہے وہ رمل و سعی کرے ورنہ اب دونوں بجالائے۔ بعد طواف دور کعت مقام ابراہیم میں پڑھیں اس سے عورتیں بھی حلال ہو گئیں، بارہویں تک اس کی تاخیر روا۔ اس کے بعد بلاعذر مکروہ تحریمی موجب دم۔ اب دسویں تاریخ نماز ظہر مکہ معظمہ میں پڑھ کر پھر منی عہ۱ جائے، گیارہویں شب وہیں بسر کرے، نہ مکہ میں نہ راہ (بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) ہم اوپر لکھ آئے کہ پہلے کر لینا چاہئے تو ایک نفل کے ساتھ کر لے اب یہ لوگ اگر پیشتر ان کاموں سے فارغ نہ ہوئے تھے فبہا، آج حاجت نہ پڑے گی مگر جس نے نہ کئے خواہ قارن ہو یا مفرد یا متمتع، اسے اب کرنے چاہئیں، پر رمل اسی طواف میں مشروع ہے جس کے بعد سعی ہو تو جس نے ہنوز دونوں نہ کئے ہوں ہو تو ظاہر ہے کہ اس طواف کے ساتھ دونوں کرے گا اور جس نے سعی نہ کی اور رمل کر لیا وہ بھی اب دونوں کرے۔ سعی تویوں کہ باقی تھی اور رمل یوں کہ پہلا رمل جو طواف بے سعی میں واقع ہوا نامشروع تھا، اب بروجہ مشروع بجالائے اور جس نے سعی کرلی تھی رمل نہ کیا تھا وہ اب کچھ نہ کرے۔ سعی تو یوں کر چکا ہے اور رمل یوں کہ کرتا ہے تو بے سعی واقع ہو گا اور سعی دوبارہ نہیں ہو سکتی ۱۲ منہ عہ۲: طواف کامل کے معنی فصل واجبات میں گزرے ۱۲ منہ (حاشیہ صفحہ ھذا) عہ۱: قدرت الہی کا ایک عجیب تماشاہر کس و ناکس نے منی میں ان آنکھوں سے دیکھا ہے جس سے بحمد اللہ حقانیت اسلام و معجزہ باہرہ حضور سید الانام علیہ افضل الصلوۃ والسلام ظاہر ہو۔ منی چند پہاڑوں کے درمیان ایک چھوٹی سی جگہ کا نام ہے جس کا عرض تو بہت ہی قلیل ہے اور طول دو میل، سارار قبہ ایک مربع میل سے بھی کم سمجھئے، یہاں چار پانچ روز تمام حجاج کا ہجوم رہتا ہے پھریوں نہیں جیسے نماز کی صفیں یا مجلس کی گنجائش بلکہ جس طرح شہروں میں بستے ہیں ہزار ہا خیمے، ڈیرے، قناتیں، پردے، ہر ایک اپنی اپنی جدا

منزل میں، پھر اصل آبادی کی عمارتیں علاوہ۔ اور ہم اوپر لکھ آئے کہ کسی سال پندرہ لاکھ سے کم نہیں ہوتے، فقیر جس سال حاضر تھا اٹھارہ لاکھ کی مردم شماری سننے میں آئی۔ پھر کبھی نہ دیکھئے گا کہ منی بھر گئی یا کسی وقت حاضرین سے تنگ ہو گئی۔ سب ابلے گیلے بہ فراغت پھیلتے، چلتے پھرتے، سوتے، بستے، کام کاج کرتے ہیں، یہ بحمد اللہ صریح تصدیق ہے اس حدیث کی کہ ارشاد ہوا: "منی حاجیوں کے لیے ایسی پھیلتی ہے کہ جیسے ماں کا پیٹ بچہ کے لیے کہ جتنا بچہ بڑھتا جاتا ہے ماں کا پیٹ جگہ دیتا ہے"۔ - اشھدان الا سلام حق والکفر باطل والحمد للہ رب العالمین ۱۲ منہ غفرلہ۔

1. کنزالعمال، بحوالہ طس عن ابی الدرداء، حدیث ۳۸۴۹۷، مؤسسة الرسالة بیروت ۱۲ / ۲۳۰، در منشور واذکروا اللہ فی ایام معدودات کے تحت مذکور ہے منشورات آیة اللہ العظمیٰ قم ایران ۱ / ۲۳۵

Fatawa Rizvia Volume 10

It is disliked (makruh) [to do otherwise]. On the eleventh day, after listening to the Imam's sermon following the Zuhr prayer, one should turn towards the stoning (Rami). During these days, start the stoning from Jamrah-e-Ula, which is near Masjid Khaif towards Muzdalifah. Approach from the direction of Makkah and climb the ascent, as this place is elevated compared to Jamrah-al-Aqabah. Facing the Kaaba, throw seven pebbles as mentioned, then move a little forward from the Jamrah. Facing the Qiblah, raise hands in prayer such that the palms face the Qiblah. With presence of heart, engage in praise (Hamd), blessings (Durood), prayer (Dua), and seeking forgiveness (Istighfar) for the duration of reciting Surah Baqarah, or at least for the length of twenty verses.

Next is Jamrah-e-Wusta; do the same there. Then is Jamrah-al-Aqabah; stone here and do not stay, return immediately. While returning, supplicate. Spend the night of the twelfth here at your lodging. On the twelfth, perform the stoning of the three Jamarat after the sun begins to decline (Zawal) in the same manner. Now, until sunset, one has the choice to depart towards Makkah. Staying one more day is superior, but leaving after sunset is undesirable. Thus, if one stays on the thirteenth as well, perform the stoning of the Jamarat in the same way and then head towards Makkah al-Mukarramah. When you reach Wadi Muhassab, which is near Jannat al-Mu'alla, whether on a mount or on foot, stay for a while engaged in prayer. It is better to perform prayers there until Isha, take some sleep, and then enter Makkah al-Mukarramah.

Now, perform as many Umrahs as possible on behalf of yourself, your parents, teachers, and benefactors, especially on behalf of the Master of Messengers, peace and blessings of Allah be upon him, his companions, and his progeny. When the intention for departure is made, perform the Farewell Tawaf (Tawaf al-Wada') without Ramal (brisk walking), Sa'i, or Idtiba' (exposing the right shoulder). Perform the required two units of prayer. Then come to Zamzam (note a), drink the water in the mentioned manner, and pour it over the body.

(Note a): A clear example of Divine power is in this blessed well. A small well, just a bit of a distance, and a crowd of millions. In twenty-four hours, the water does not stop for a single moment. Thousands drink, thousands perform ablution, thousands bathe, thousands of water skins are being filled and distributed in the city; one group moves away and the next arrives, before it can move the third arrives. Yet, can

anyone say that at such and such time the well's water decreased slightly? By Allah, it is the blessing of Mustafa, peace and blessings of Allah be upon him. Imagine any large or deep well and let a crowd of 1.5 to 1.8 million come to it in a single day; you will hear in a moment that not even dust remains at the bottom. Once during the time of the Sahaba (Companions), may Allah be pleased with them all, a dark-skinned person fell into the Zamzam well and died. All the water had to be drawn out; people got exhausted and their limbs became numb. With great difficulty it decreased slightly, when suddenly from the direction of the Black Stone (Hajr-e-Aswad), a torrential stream fell with such force that it filled it back up instantly. Infinite blessings of Allah be upon Muhammad, peace and blessings of Allah be upon him, and his family. 12. From him, may he be forgiven.

यह मकरूह है। ग्यारहवें दिन ज़ुहर की नमाज़ के बाद इमाम का खुतबा सुनकर रमी (कंकड़ मारना) की ओर मुड़ें। इन दिनों में रमी जमरह-ए-ऊला से शुरू करें, जो मुज़दलिफ़ा की तरफ मस्जिद ख़ैफ़ के करीब है। मक्का की तरफ से आकर चढ़ाई पर चढ़ें क्योंकि यह जगह जमरह-अल-अक़बह की तुलना में ऊँची है। काबा की ओर मुँह करके बताए गए तरीके से सात कंकड़ मारकर जमरह से थोड़ा आगे बढ़ें। क़िबला की ओर मुँह करके दुआ के लिए हाथ इस तरह उठाएं कि हथेलियाँ क़िबला की ओर हों। दिल की हाज़िरी के साथ हम्द, दुरूद, दुआ और इस्तिग़फ़ार में सूरह बक़रह की तिलावत या कम से कम बीस आयतों के बराबर समय तक व्यस्त रहें।

आगे जमरह-ए-वुस्ता है, वहाँ भी ऐसा ही करें। फिर जमरह-ए-अक़बह है, यहाँ रमी करके न रुकें बल्कि तुरंत वापस लौट आएं। लौटते समय दुआ करें। बारहवीं की रात यहीं अपने पड़ाव पर गुज़ारें। बारहवीं तारीख़ को ज़वाल (सूरज ढलने) के बाद इसी तरीके से तीनों जमरात की रमी करें। अब सूर्यास्त तक अधिकार है कि मक्का की ओर रवाना हो जाएं, और एक दिन और ठहरना अफ़ज़ल (बेहतर) है, लेकिन सूर्यास्त के बाद जाना नापसंद है। अतः यदि तेरहवीं को भी ठहरे, तो इसी तरह जमरात की रमी करके मक्का मुअज़्ज़मा की ओर रुख करें। जब वादी-ए-मुहस्सब में पहुँचें, जो जन्नत-अल-मुअल्ला के करीब है, तो सवारी से उतरकर या बिना उतरे कुछ देर ठहरकर दुआ में व्यस्त रहें। बेहतर तो यह है कि ईशा तक की नमाज़ें यहीं पढ़ें, नींद लेकर मक्का मुअज़्ज़मा में दाखिल हों।

अब अपनी ओर से और अपने माता-पिता, उस्तादों और उन बुज़ुर्गों की ओर से जिनसे उपकार प्राप्त हुआ है, विशेष रूप से रसूलो के सरदार, अल्लाह उन पर और उनके साथियों और वंशजों पर शांति और आशीर्वाद भेजे, की ओर से जितने हो सकें उमरे करते रहें। जब विदाई का इरादा हो, तो तवाफ़-ए-विदा बिना रमल (तेज़ चाल), सई और इज़्तिबा (दाहिने कंधे को खुला रखना) के करें। दो रकअत नमाज़ पढ़ें। फिर ज़मज़म (नोट अ) पर आएं, बताए गए तरीके से पानी पिएं और बदन पर डालें।

(नोट अ): ईश्वरीय शक्ति का स्पष्ट नमूना इस बरकत वाले कुएँ में है। छोटा सा कुआँ, ज़रा सी दूरी, और लाखों की भीड़। चौबीसों घंटे में एक पल के लिए भी पानी नहीं थमता। हज़ारों पीते हैं, हज़ारों वज़ू करते हैं, हज़ारों नहा रहे हैं, हज़ारों मशकें शहर में जारी हैं; एक झुंड हटा नहीं कि दूसरा आया, उसके हटने से पहले तीसरा आया। फिर कोई बता दे कि फ़लाँ समय कुएँ का पानी कुछ कम हो गया। अल्लाह की कसम, यह मुस्तफ़ा (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की बरकत है। किसी बड़े से

बड़े, गहरे से गहरे कुएँ की कल्पना कीजिए और एक दिन में पंद्रह लाख, अठारह लाख की भीड़ उस पर आने दीजिए; पल भर में आप सुन लेंगे कि उसकी तलहटी में धूल भी नहीं बची। एक बार सहाबा किराम (अल्लाह उन सब से प्रसन्न हो) के ज़माने में ज़मज़म शरीफ़ में एक हबशी गिरकर मर गया। सारा पानी निकालना था, लोग थक-थक गए। अंग सुन्न हो गए, बड़ी मुश्किल से थोड़ा कम हुआ कि अचानक हज्र-ए-अस्वद की तरफ से एक मूसलाधार परनाला उसी वेग से गिरा कि देखते ही देखते उसे फिर वैसा ही भर दिया। अल्लाह तआला की अनगिनत रहमतें मोहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) और उनकी आल (वंश) पर हों। 12. उनकी ओर से, अल्लाह उन्हें क्षमा करे।

पृष्ठ 829/836

مکروہ ہے، روزِ یاز دہم بعد نمازِ ظہر امام کا خطبہ سن کر متوجہ رمی ہو، ان ایام میں رمی جمرہ اولیٰ سے شروع کرے جو مزدلفہ کی طرف مسجد خیف سے قریب ہے، راہ مکہ کی طرف سے آکر چڑھائی پر چڑھے کہ یہ جگہ نسبت جمرۃ العقبہ کے بلند ہے رو بہ کعبہ بطورِ مذکور سات کنکریاں مار کر جمرہ سے قدرے آگے بڑھے، مستقبلِ قبلہ ہاتھ دعامیں یوں اٹھا کر ہتھیلیاں رو بہ قبلہ رہیں حضور قلب سے حمد و درود و دعا و استغفار میں بقدر قرأت یا سورہ بقرہ یا کم سے کم بمقدارِ بست آیت مشغول رہے۔

آگے جمرہ وسطیٰ ہے وہاں بھی ایسا ہی کرے پھر جمرہ عقبہ ہے یہاں رمی کرکے نہ ٹھہرے معاً پلٹ آئے، پلٹنے میں دعا کرے، شبِ دوازدہم یہیں اپنی فرودگاہ پر گزارے۔ بارھویں تاریخ جمرات ثلاثہ کو بعد زوال اسی طریقے سے رمی کرے— اب تانہ غروبِ آفتاب مختار ہے کہ جانب مکہ روانہ ہو اور ایک دن اور ٹھہرے تو افضل ہے مگر بعد غروب چلا جانا معیوب۔ پس اگر تیرہویں کو بھی ٹھہرا تو اسی طرح رمی جمرات کر کے متوجہ مکہ معظمہ ہو۔ جب وادی محصب میں کہ جنت المعلیٰ کے قریب ہے، پہنچے، سواری اترے یا بے اترے کچھ دیر ٹھہر کر مشغول دعا ہو، بہتر تو یہ ہے کہ عشاء تک نمازیں یہیں پڑھے، نیند لے کر داخلِ مکہ معظمہ ہو۔

اب اپنے اور اپنے والدین و مشائخ و اولیائے نعمت خصوصاً حضور سید المرسلین صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اور ان کے اصحاب و عترت علیہ و علیہم الصلوٰۃ والتحیۃ کی طرف سے جتنے ہو سکیں عمرے کرتا رہے، جب عزم سفر ہو طوافِ وداع بے رمل و سعی و اضطباع کرے، دو رکعت مطلوبہ پڑھے۔ پھر زمزم عہ پر آئے، پانی بہ طریق مذکور پیئے، بدن پر ڈالے۔

عہ: قدرت ربانی کا صریح نمونہ اس مبارک کنویں میں ہے، چھوٹا سا کنواں ذرا سا دور، اور لاکھوں کا ہجوم، آٹھ پہر میں ایک دم کو پانی تھمنے نہیں پاتا۔ ہزاروں پیتے ہیں، ہزاروں وضو کرتے ہیں، ہزاروں نہار ہے ہیں، ہزاروں مشکیں شہر میں جاری ہیں ایک غول سر کا دوسرا آیا ہٹنے نہ پایا کہ تیسرا آیا، پھر کوئی بتادے کہ فلاں وقت کنویں کا پانی کچھ کم ہو گیا۔ واللہ برکت والے مصطفیٰ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی برکت ہے۔ کوئی بڑے سے بڑا، گہرے سے گہرا کنواں فرض کیجئے اور ایک دن میں پندرہ لاکھ، اٹھارہ لاکھ کا ہجوم اس پر آنے دیجئے، دم کے دم میں سن لیجئے گا کہ تلی میں خاک بھی نہ رہی، ایک بار صحابہ کرام رضوان اللہ تعالیٰ علیہم اجمعین کے زمانہ میں زمزم شریف میں ایک زنگی گر کر مر گیا، سب پانی کھینچنا تھا، تھک تھک گئے۔ شل ہو گئے بہزارِ مشکل قدرے گھٹا کہ دفعہ حجرِ اسود کی طرف سے ایک موسلا دھار پرنالہ اسی جوش سے گرا کہ آن کی آن میں پھر ویسا ہی کر دیا۔ اللہ تعالیٰ کی بے شمار درودیں محمد صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اور ان کی آل پر ۱۲ منہ غفرلہ۔

Volume Ten Fatawa Razawiyya

Then, weeping, stand at the sacred door. Kiss the pure threshold. Pray for success in both worlds, acceptance of Hajj, forgiveness of sins, and the grace for a good return many times over. Coming to the Multazam, in the manner mentioned, hold and cling to the covering of the Kaaba; perform as much supplication, humility, prayer, weeping, remembrance, and Salawat as possible. After kissing the sacred stone (Hajr al-Aswad), walk backwards with the face towards the Kaaba, or if walking straight, turn back repeatedly to look at the Kaaba with a longing gaze, weeping or making a face as if weeping at the separation from the House. Exit through the door of the sacred mosque named "Bab al-Khurura", then after giving charity to the poor of the Haram according to one's means, head towards Madinah Munawwarah.

Presence in the Court of Madinah Munawwarah

In this journey full of victory, let the intention be pure from all other considerations and increase significantly the recitation of Salawat and noble remembrance of the Holy Prophet (may Allah the Almighty bless him and grant him peace). When entering the sanctuary (Haram) of Madinah, it is better to dismount from the ride, walking while weeping, with head bowed and eyes downcast. If possible, walking barefoot is better, rather: "This is a place of heads where you are placing your feet; do you not see where you are putting your feet?" (It is the land of the Haram and to step on it; oh traveler, this is a place for the head). When the gaze falls upon the dome of bliss and the tower of miracles, increase the recitation of Salawat and Salam. Upon reaching the holy city itself, before entering if possible, or else after entering, prior to presenting oneself at the mosque, perform ablution (Wudu), use the Miswak, and take a proper bath (Ghusl). Wear clean white clothes, new ones are better. Apply Kohl (Surma) and fragrance; Musk is best. When entering the city gate, devote all energy to increasing Salawat and Salam. Immerse yourself in the contemplation of the majesty and beauty of the Beloved of the Lord of Majesty (may Allah the Almighty bless him and grant him peace). Now, having quickly finished with those necessities and needs whose involvement causes distraction of the heart, the first thing to do is to turn towards the exalted threshold with extreme humility and submissiveness. If tears do not come, make a face as if weeping and force the heart to weep. Plead with the Messenger of Allah (may Allah the Almighty bless him and grant him peace) regarding the hardness of the heart. Upon reaching the mosque door, offer Salawat and Salam and pause for a while as if seeking permission for presence from the Master. Then, placing the right foot first, enter as the embodiment of respect from

head to toe. At that time, the heart of a Muslim is itself aware of the mandatory respect and veneration; keep the heart and limbs away from thoughts of others and vain actions. Do not look towards the outward decoration and adornment of the sacred mosque. If someone comes forward with whom salutation and speech are necessary, avoid it as much as possible. If it cannot be avoided, do not exceed the minimum necessity. Even then, let the heart remain focused in that direction.

फिर रोते हुए दर-ए-अकदस पर खड़ा हो। आस्ताना-ए-पाक को बोसा दे। दुनिया और आख़िरत की कामयाबी, हज की कुबूलियत, गुनाहों की मग्फिरत और बार-बार नेक वापसी की तौफीक की दुआ करे। मुल्तज़म पर आकर ज़िक्र किए गए तरीके के मुताबिक़ काबा के ग़िलाफ़ को पकड़ कर चिमट जाए; गिड़गिड़ाने, आज़िज़ी, दुआ, रोने, ज़िक्र और दुरूद की जितनी कसरत हो सके उसे अंजाम दे। हजर-ए-मुतहर (संग-ए-अस्वद) को बोसा देकर काबा की तरफ मुँह करके उलटे पाँव चले, या सीधा चलते हुए बार-बार मुड़कर हसरत भरी निगाहों से काबा को देखे और बैतुल्लाह की जुदाई पर रोए या रोने जैसी सूरत बनाए। मस्जिद-ए-मुकद्दस के उस दरवाज़े से निकले जिसका नाम "बाब अल-खुरूरह" है, फिर अपनी बिसात के मुताबिक़ हरम के फकीरों को सदक़ा देकर मदीना तैयबा की तरफ मुतवज्जेह हो।

हाज़िरी दरबार-ए-मदीना तैयबा

इस फतह-ओ-नुसरत भरे सफर में नीयत दुनियावी गर्ज़ से पाक और हुज़ूर अकदस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम पर दुरूद और ज़िक्र की निहायत कसरत रखे। जब हरम-ए-मदीना में दाखिल हो, तो बेहतर यह है कि सवारी से उतर जाए, रोता हुआ, सर झुकाए और आँखें नीची किए चले। हो सके तो नंगे पाँव चलना बेहतर है, बल्कि: "जाय-ए-सरास्त ईं के तू पाय-ए-मी नही, पाय-ए-न-बीनी के कुजा मी नही" (हरम की ज़मीन है और कदम रख के चलना, अरे यह सर रखने की जगह है ऐ जाने वाले!) जब निगाह गुंबद-ए-सआदत और बुर्ज-ए-करामत पर पड़े, तो दुरूद-ओ-सलाम की कसरत करे। जब खास शहर-ए-अकदस तक पहुँचे, तो दाखिल होने से पहले, और अगर मुमकिन न हो तो दाखिल होने के बाद, मस्जिद में हाज़िरी से पहले वज़ू और मिस्वाक करे और बेहतरीन तरीके से गुस्ल करे। साफ-सुथरे सफेद कपड़े पहने, नए हों तो बेहतर है। सुरमा और खुशबू लगाए, मुश्क सबसे बेहतर है। जब शहर के दरवाज़े में दाखिल हो, तो अपनी तमाम हिम्मत दुरूद-ओ-सलाम की कसरत में लगा दे। महबूब-ए-ज़ी-जलाल सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के जलाल-ओ-जमाल के मुराक़बे में डूब जाए। अब उन ज़रूरतों और कामों से, जिनका लगाव दिल की परेशानी का सबब बने, तेज़ी से फारिग होकर पहला काम यह करे कि आस्ताना-ए-आली की तरफ निहायत आज़िज़ी और इंकिसारी के साथ मुतवज्जेह हो। अगर रोना न आए तो रोने जैसी सूरत बनाए और दिल को ज़ोर लगाकर रोने पर लाए। अपने दिल की सख़्ती के लिए रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की तरफ इल्तिजा करे। जब मस्जिद के दरवाज़े पर हाज़िर हो, तो दुरूद-ओ-सलाम अर्ज़ करके

थोड़ी देर रुके, जैसे सरकार से हाज़िरी की इजाज़त माँग रहा हो। फिर दायाँ पाँव पहले रखे और सर से पाँव तक अदब की मूरत बनकर दाखिल हो। उस वक्त जो अदब और ताज़ीम वाजिब है, मुसलमान का दिल खुद उससे वाकिफ है। दिल और अंगों को दूसरों के ख्याल और बेकार की हरकतों से दूर रखे। मस्जिद-ए-अकदस की बाहरी सजावट और खूबसूरती की तरफ निगाह न करे। अगर कोई ऐसा सामने आए जिससे सलाम-ओ-कलाम ज़रूरी हो, तो जहाँ तक हो सके परहेज करे। अगर मुमकिन न हो, तो ज़रूरत से ज़्यादा बात न करे। फिर भी दिल उसी तरफ मुतवज्जेह रहे।

पृष्ठ ८३०/८३६

پھر رو روئے درِ اقدس کھڑا ہو۔ آستانہ پاک کو بوسہ دے۔ فلاح دارین، قبولِ حج، مغفرتِ ذنوب، توفیقِ حسنِ عود بارہا کی دعا کرے، ملتزم پر آکر بہ نہج مذکور غلافِ کعبہ تھام کر چمٹے، تضرع، خشوع، دعا، بکاء، ذکر، درود کی جو تکثیر ہو سکے بجالائے۔ حجرِ مطہر کو بوسہ دے کر الٹے پاؤں رخ بہ کعبہ یا سیدھے چلنے میں بار بار پھر کر کعبہ کو بہ نگاہِ حسرت دیکھتا اور فراقِ بیت پر روتا یا رونے کی صورت بناتا مسجد مقدس کے دروازہ مستمیٰ بہ "باب الخرورہ" سے نکلے پھر بقدرِ استطاعت فقرائے حرم پر تصدق کر کے متوجہ مدینہ طیبہ ہو۔

حاضری دربارِ دربارِ مدینہ طیبہ

اس سفر سراپا ظفر میں نیت لحاظ غیر سے خالص اور درود وذکرِ شریف حضور اقدس صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی نہایت کثرت کرے جب حرم مدینہ میں داخل ہو ، احسن یہ ہے کہ سواری سے اتر پڑے، روتا، سر جھکائے، آنکھیں نیچے کئے چلے۔ ہو سکے تو برہنہ پائی بہتر بلکہ۔ جائے سراست ایں کہ تو پائے می نہی پائے نہ بینی کہ کجا می نہی (حرم کی زمین اور قدم رکھ کے چلنا ارے سر کا موقع ہے او جانیوالے) جب نگاہ قبہ سعادت وبرج کرامت پر پڑے صلوٰۃ وسلام کی کثرت کرے، جب خاص شہر اقدس تک پہنچے قبل دخول اور نہ بن پڑے تو بعد دخول، پیش از حضور مسجد، وضو ومسواک کرے اور غسل احسن، جامہ سفید پاکیزہ پہنے۔ نیا بہتر، سرمہ وخوشبو لگائے، مشک افضل، جب دروازہ شہر میں داخل ہو تمام ہمت اپنی تکثیر صلوٰۃ وسلام میں مصروف کرے۔ مراقبہ جلال و جمال محبوب ذی الجلال صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم میں ڈوب جائے، اب ان ضروریات وحوائج سے جن کا لگاؤ باعثِ تشویش خاطر ہو بسرعت تمام فراغ پا کر پہلا کام

یہ کرے کہ آستانہ والا کی طرف بہ نہایت خشوع وخضوع متوجہ ہو۔ اگر رونا نہ آئے رونے کا منہ بنائے اور دل کو بہ زور رونے پر لائے۔ اپنی سختیِ دل سے رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی طرف التجا کرے۔ جب درِ مسجد پر حاضر ہو صلوٰۃ وسلام عرض کر کے قدرے توقف کرے گویا سرکار سے اذنِ حضوری طلب کرتا ہے، پھر دہنا پاؤں پہلے رکھتا سر سے پاؤں تک ادب بنتا داخل ہو، اس وقت جو ادب و تعظیم واجب ہے مسلمان کا قلب خود واقف ہے دل وجوارح کو خیالِ غیر وحرکاتِ عبث سے باز رکھے، مسجد اقدس کی آرائش وزینت ظاہری کی طرف نگاہ نہ کرے۔ اگر کوئی ایسا سامنے آئے جس سے سلام وکلام ضروری ہو حتی الوسع اعراض کر جائے۔ نہ بن پڑے تو قدرِ ضرورت سے تجاوز نہ کرے۔ پھر بھی دل اسی طرف متوجہ ہو

Fatawa Razawiya, Volume 10

Never, never utter a single word loudly in this sacred mosque. Be certain that He (the Prophet), peace be upon him, is alive in the most fragrant and luminous place with an apparent, worldly, and real life, just as He was before His passing. 1- Death for Him was a momentary event, and His passing is merely being hidden from the eyes of the general public. The leaders of religion state that the Prophet, peace and blessings of Allah be upon him, is aware of our every word (Footnote 2), action, and even the thoughts in our hearts (Footnote 3). 2- Now, if a congregation is established, join it so that Tahiyyat al-Masjid will also be fulfilled. Otherwise, if the intensity of longing permits, perform two Rak'ats of Tahiyyat al-Masjid and gratitude for presence, with great brevity using only Surah al-Kafirun and Surah al-Ikhlas, but while observing the Sunnahs, at the prayer place of the Messenger of Allah, peace and blessings of Allah be upon him, where the mihrab is now built in the middle of the mosque. If that is not accessible, then as close to it as possible. Afterwards, fall into a prostration of gratitude and pray: "O Allah! Grant me the respect for Your Beloved, peace and blessings of Allah be upon him." Now the time has come that his face, like his heart, should be directed towards that holy window (Shubbak) which is the exalted resting place of the great and majestic Beloved of Allah, peace and blessings of Allah be upon him. With head bowed, eyes lowered, trembling, shaking like a willow branch, drenched in the sweat of shame from regret for sins, move forward. Leave no stone unturned in humility, dignity, devotion, and meekness. Except for the prostration of worship, perform whatever is most perfect in respect and majesty. Stand at the feet of the Exalted Presence, i.e., the east.

Footnote 1: At this refined place, there are such soul-refreshing and enemy-scorching fragrances in the blessed book "Jawahir al-Bayan" that this humble servant has written the book "Sultanat al-Mustafa fi Malakut Kull al-Wara" as its commentary. Whoever wishes to see the details of these truths should refer to it. God willing, it will imprint the color of truth and crush the head of falsehood. That is from the favor of Allah upon us and upon mankind, but most of the people are not grateful. 12 Minhu (from the author). Footnote 2: Allama Ali Qari stated that nothing is hidden from the Prophet; He is aware of all your actions, states, departures, and stays. 12 Minhu. Footnote 3: Imam Allama Muhaddith Shihabuddin Ahmad Qastalani, the commentator of Bukhari, in "Mawahib al-Ladunniyyah," and Allama Ibn al-Hajj Makki Muhammad Abdari in "Al-Madkhal," and other great scholars have explicitly stated this meaning. 12 Minhu Ghafar Allahu Lahu (May Allah forgive him).

1 Sharh Mawahib Zurqani, Al-Maqsad al-Ashir, Matba'ah Amirah Egypt, 8/348 2 Al-Madkhal, Chapter on Visiting Graves, Dar al-Kitab al-Arabi Beirut, 1/252 3 Maslak Mutaqassit with Irshad al-Sari, Chapter on Visiting the Master of Messengers, p. 338

हरगिज़ हरगिज़ इस पवित्र मस्जिद में कोई शब्द ज़बान से न निकालें। निश्चित रूप से जानें कि वह (नबी), उन पर अल्लाह की शांति हो, सबसे सुगंधित और प्रकाशमय स्थान में प्रत्यक्ष, सांसारिक और वास्तविक जीवन के साथ वैसे ही जीवित हैं जैसे वे अपने निधन से पहले थे। 1- मृत्यु उनके लिए एक क्षणिक घटना थी, और उनका निधन केवल आम जनता की नज़रों से छिप जाना है। धर्म के इमाम फ़रमाते हैं कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हमारे हर एक शब्द (पाद-टिप्पणी 2), कर्म, यहाँ तक कि दिल के ख्यालों (पाद-टिप्पणी 3) से अवगत हैं। 2- अब यदि जमाअत (समूह प्रार्थना) स्थापित हो तो उसमें शामिल हो जाएँ ताकि तहिय्यतुल मस्जिद भी अदा हो जाए। अन्यथा, यदि चाहत की तीव्रता अनुमति दे, तो दो रकात तहिय्यतुल मस्जिद और उपस्थिति के शुक्राना के रूप में, सूरह काफ़िरून और इख़लास के साथ बहुत संक्षेप में लेकिन सुन्नतों का पालन करते हुए, रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नमाज़ पढ़ने के स्थान पर अदा करें जहाँ अब मस्जिद के बीच में मेहराब बनी है। यदि वहाँ संभव न हो, तो यथासंभव उसके पास। उसके बाद शुक्र के सजदे में गिर जाएँ और दुआ माँगें कि "ऐ अल्लाह! अपने हबीब सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का अदब (सम्मान) नसीब फ़रमा।" अब वह समय आ गया है कि उसका चेहरा उसके दिल की तरह उस पाक खिड़की (शुब्बाक) की ओर हो जाए जो अल्लाह के महान और प्रतापी महबूब सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का उच्च विश्राम स्थल है। सिर झुकाए, आँखें नीची किए, कांपते हुए, बेंत की तरह थरथराते हुए, पापों के पछतावे से शर्म के पसीने में डूबे हुए, आगे बढ़ें। नम्रता, गरिमा, भक्ति और दीनता का कोई कसर न छोड़ें। इबादत (पूजा) के सजदे के अलावा, वह सब कुछ करें जो सम्मान और महिमा में सबसे पूर्ण हो। हुज़ूर के चरणों में यानी पूर्व दिशा में खड़े हों।

पाद-टिप्पणी 1: इस उत्कृष्ट स्थान पर "जवाहर अल-बयान" नामक पवित्र पुस्तक में वे प्राण-पोषक और शत्रु-दाहक सुगन्धियाँ हैं जिनकी व्याख्या में इस फ़क़ीर ने "सल्तनत अल-मुस्तफ़ा फ़ी मलकूत कुल्ल अल-वरा" पुस्तक लिखी है। जो इन सच्चाइयों का विवरण देखना चाहे, वह उसकी ओर रुख करे। इंशाअल्लाह, यह सत्य का रंग जमा देगा और असत्य का सिर कुचल देगा। यह हम पर और मानव जाति पर अल्लाह का अनुग्रह है, लेकिन अधिकांश लोग आभारी नहीं हैं। 12 मिन्हु (लेखक की ओर से)। पाद-टिप्पणी 2: अल्लामा अली क़ारी ने फ़रमाया कि हुज़ूर से कुछ भी छिपा नहीं है, वे आपके सभी कार्यों, स्थितियों, प्रस्थान और पड़ाव से अवगत हैं। 12 मिन्हु। पाद-टिप्पणी 3: इमाम अल्लामा मुहद्दिस शिहाबुद्दीन अहमद क़स्तलानी, बुख़ारी के व्याख्याकार, ने "मवाहिब अल-

लदुनिया" में और अल्लामा इब्न अल-हज्ज मक्की मुहम्मद अब्दरी ने "अल-मदख़ल" में, और उनके अलावा अन्य महान विद्वानों ने इस अर्थ की स्पष्ट व्याख्या की है। 12 मिन्हु ग़फ़रल्लाहु लहू (अल्लाह उन्हें क्षमा करे)।

1 शरह मवाहिब ज़ुरक़ानी, अल-मक़्सद अल-आशिर, मतबा आमिरा मिस्र, 8/348 2 अल-मदख़ल, क़ब्रों की ज़ियारत का अध्याय, दार अल-किताब अल-अरबी बेरूत, 1/252 3 मसलक मुतक़स्सित म'आ इरशाद अस-सारी, सैय्यदुल मुर्सलीन की ज़ियारत का अध्याय, पृ. 338

पृष्ठ 831 का 836

زنہار زنہار اس مسجد مقدس میں کوئی حرف چلا کر نہ کہے۔ یقین جان کہ وہ جناب ع امر از اعطر و انور میں بحیات ظاہری، دنیاوی، حقیقی ویسے ہی زندہ ہیں جیسے پیش از وفات تھے۔ 1- موت ان کی ایک امر آنی تھی، اور انتقال ان کا صرف نظر عوام سے چھپ جانا۔ ائمہ دین فرماتے ہیں حضور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم ہمارے ایک ایک قول عہ 2، فعل بلکہ دل کے خطروں عہ 3 پر مطلع ہیں 2- اب اگر جماعت قائم ہو شریک ہو جائے کہ اس میں تحیۃ المسجد بھی ادا ہو جائے گی ورنہ اگر غلبہ شوق اجازت دے تو دور کعت تحیۃ المسجد و شکرانہ حاضری صرف سورہ کافرون و اخلاص سے بہت تخفیف کے ساتھ مگر بہ مراعات سنن، مصلائے رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم میں جہاں اب وسط مسجد میں محراب بنی ہے اور وہاں میسر نہ آئے تو حتی الوسع اس کے نزدیک ادا کرے۔ بعدہ سجدہ شکر میں گرے اور دعا مانگے کہ الہی! اپنے حبیب صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کا ادب نصیب فرما۔ اب وہ وقت آیا کہ منہ اس کا مثل دل کے اس شباک پاک کی طرف ہو گیا جو اللہ تعالٰی کے محبوب عظیم الشان کی آرام گاہ رفیع المکان ہے صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم، گردن جھکائے، آنکھیں نیچی کئے، لرزتا، کانپتا، بید کی طرح تھرتھراتا، ندامت گناہ سے عرق شرم میں ڈوبا، قدم بڑھا۔ خضوع ووقار و خشوع و انکساری کا کوئی دقیقہ فرو گزاشت نہ کر، سوا سجدہ عبادت کے جو بات ادب و اجلال میں اکمل ہو بجالا، حضور والا کے پائیں یعنی شرق

عہ 1: اس نفیس مقام پر کتاب مستطاب جواہر البیان شریف میں وہ نفحات جاں افروز و نفحات دشمن سوز ہیں جن کی شرح میں فقیر نے کتاب "سلطنت المصطفیٰ فی ملکوت کل الوریٰ" تحریر کی، جسے ان حقائق کی تفصیل دیکھنی منظور ہو اس کی طرف رجوع کرے ان شاء اللہ تعالٰی حق کا رنگ رچا لے گا اور باطل کا سر کچلا، ذلک من فضل اللہ علینا و علی الناس ولکن اکثر الناس لا

یشکرون ۱۲ منہ عہ 2: علامہ علی قاری نے فرمایا حضور سے کچھ پوشیدہ نہیں وہ تیرے تمام افعال واحوال و کوچ و مقام سے آگاہ ہیں 12 منہ عہ 3: امام علامہ محدث شہاب الدین احمد قسطلانی شارح بخاری نے مواہب لدنیہ اور علامہ ابن الحاج مکی محمد عبدری نے مدخل میں اور ان کے ماسوا اور اکابر علماء نے اس معنی کی تصریح فرمائی ۱۲ منہ غفرلہ

1 شرح مواہب زرقانی المقصد العاشر مطبع عامرۃ مصر ۸/ ۳۴۸ 2 المدخل فصل فی زیارۃ القبور دارالکتاب العربی بیروت ۱/ ۲۵۲ 3 مسلک متقسط مع ارشاد الساری باب زیارۃ سید المرسلین ص ۳۳۸

Come from that direction, for he (the Holy Prophet) is facing the Qibla in the illuminated shrine. When you present yourself from that direction, his sight, which is the refuge of the helpless, will be towards you, and this matter is sufficient for you in both worlds.

Then, having reached under the lamp, opposite the silver nail fixed in the wall of the sacred chamber facing the radiant face, stand with your back to the Qibla, hands folded as in prayer, for reliable books (1) have clarified this meaning. And beware, stay away from kissing and touching the noble grill, for it is contrary to etiquette. Now, with extreme awe and dignity, offer salutations and submission in a sorrowful voice, with a painful appearance, a shameful heart, and a torn liver. Speak in a moderate voice, neither extremely soft and low nor very loud and harsh, and say: Peace be upon you, O Prophet, and the mercy of Allah and His blessings. Peace be upon you, O Messenger of Allah. Peace be upon you, O best of Allah's creation. Peace be upon you, O intercessor for sinners. Peace be upon you and upon your family and all your companions (2).

As much as possible, as long as the tongue allows and there is no weariness or boredom, increase the sending of blessings and peace. Seek intercession from the Prophet for yourself, your parents, mentors, friends, and all the people of Islam. Repeatedly say: I ask you for intercession, O Messenger of Allah (3). Then, if someone has entrusted you with conveying their greetings, fulfill it by saying: Peace be upon you, O Messenger of Allah, from your servant (Note 4) and the son of your servant, Ahmad Raza son of Naqi Ali.

Note 1: Like Ikhtiyar Sharh Mukhtar, Fatawa Alamgiri, Lubab, Sharh Lubab etc. 12 (Minhu).

Note 2: Applying the word 'Abd' meaning slave is absolutely permissible and common, occurring in the Quran and Hadith. This humble servant (may Allah Almighty forgive him) has written a detailed investigation in his book "Al-Bariq al-Shariqah 'ala Mariqah al-Mashariqah" and also provided some explanation in his treatise "Mujir Mu'azzam Sharh Qaseeda Iksir-e-Azam" (1302 AH), sufficing with eleven Hadiths. Here it is enough that the Lord of lords, in His Great Majesty, says in the Great Quran: "And marry off the single among you and the righteous among [your slaves]..." (Surah An-Nur: 32) — and marry them off even if they are your slaves.

1. Fatawa Hindiyya, Conclusion on visiting the Prophet's tomb (peace be upon him), Noorani Kutub Khana, Peshawar, 1/265.
2. Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter on visiting the Leader of Messengers, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 338.
3. Sharh Lubab with Irshad-us-Sari, Chapter on visiting the Leader of Messengers, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 339.

उस दिशा से आएं क्योंकि वह पवित्र मज़ार में किबला की ओर मुख किए हुए हैं। जब आप उस दिशा से उपस्थित होंगे, तो हुज़ूर की निगाह, जो बेसहारा लोगों की पनाहगाह है, आपकी ओर होगी और यह मामला आपके लिए दोनों जहानों में काफी है।

फिर कंदील के नीचे, पवित्र कक्ष की दीवार में लगे चांदी के कील के सामने, जो प्रकाशमान चेहरे के सामने है, पहुंचकर किबला की ओर पीठ करके नमाज़ की तरह हाथ बांधकर खड़े हों, क्योंकि विश्वसनीय पुस्तकों (1) में इसका स्पष्ट वर्णन है। और खबरदार, पवित्र जाली को चूमने और छूने से दूर रहें क्योंकि यह अदब (शिष्टाचार) के खिलाफ है। अब अत्यंत गरिमा और सम्मान के साथ, दुखी आवाज़, दर्द भरे चेहरे, शर्मसार दिल और टुकड़ों-टुकड़ों जिगर के साथ, मध्यम आवाज़ में, न बहुत धीमी और न ही बहुत तेज़ और कठोर, अर्ज़ करें: "अस्सलामु अलैका अय्युहन नबिय्यु व रहमतुल्लाही व बरकातुहू, अस्सलामु अलैका या रसूलल्लाह, अस्सलामु अलैका या खैरा खल्किल्लाह, अस्सलामु अलैका या शफ़ीअुल मुज़निबीन, अस्सलामु अलैका व अला आलि क व असहाबिक अजमईन" (2)।

जहाँ तक संभव हो और जब तक ज़ुबान साथ दे और थकान या ऊब न हो, दुरूद-ओ-सलाम की अधिकता करें। हुज़ूर से अपने लिए और अपने माता-पिता, गुरुओं, मित्रों और सभी मुसलमानों के लिए शफ़ाअत (सिफारिश) मांगें। बार-बार अर्ज़ करें: "असअलुकश शफ़ाअत या रसूलल्लाह" (3)। फिर, यदि किसी ने सलाम पेश करने की वसीयत की हो, तो उसे पूरा करें और कहें: "अस्सलामु अलैका या रसूलल्लाह, मिन अब्दिका (नोट 4) वब्नि अब्दिका अहमद रज़ा बिन नकी अली"।

नोट 1: जैसे इख्तियार शरह मुख्तार, फतावा आलमगीरी, लुबाब और शरह लुबाब आदि।

नोट 2: 'अब्द' शब्द का प्रयोग गुलाम के अर्थ में पूरी तरह से जायज़ और प्रचलित है और कुरान व हदीस में मौजूद है। फ़कीर (अहमद रज़ा खान) ने अपनी पुस्तक "अल-बारिकुश शारिक़ह अला मारिक़तिल मशारिक़ह" में इसका विस्तृत शोध लिखा है और अपने रिसाले "मुजीरे मुअज्ज़म शरह क़सीदा इक्सीरे आज़म" (1302 हिजरी) में भी कुछ स्पष्टीकरण दिया है और ग्यारह हदीसों पर संतोष किया है। यहाँ इतना ही पर्याप्त है कि रब्बुल अरबाब (ईश्वर) कुरान-ए-अज़ीम में फरमाता है: "व अनकिहुल अयामा मिनकुम वस्सालिहीना मिन..." यानी अपने में से अविवाहितों का निकाह कर दो और उनमें से जो नेक हों...

मजलिस-ए-दावत-ए-इस्लामी

1. फतावा हिंदिया, पैगंबर की कब्र की यात्रा पर समापन, नूरानी कुतुब खाना, पेशावर, 1/265।
2. शरह लुबाब मआ इरशादुस सारी, सैय्यदुल मुर्सलीन की ज़ियारत का अध्याय, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरुत, पृष्ठ 338।
3. शरह लुबाब मआ इरशादुस सारी, सैय्यदुल मुर्सलीन की ज़ियारत का अध्याय, दार अल-किताब अल-अरबी, बेरुत, पृष्ठ 339।

पृष्ठ 832/836

کی سمت سے آ، کہ وہ جناب مزارِ پر انوار میں رو بقبلہ جلوہ فرما ہیں جب تو اس سمت سے حاضر ہو گا حضور کی نگاہ بیکس پناہ تیری طرف ہوگی اور یہ امر تیرے لیے دو جہاں میں بس ہے۔ پھر زیر قندیل میخِ سیمیں کے محاذی جو دیوارِ حجرہ مقدسہ میں چہرہ انور کے مقابل مرکوز ہے پہنچ کر پشت بہ قبلہ دست بستہ مثلِ نماز کھڑا ہو کہ کتبِ معتمدہ 1 میں اس معنی کی تصریح ہے اور زنہار جالی شریف کے بوسہ و مس سے دور رہ کہ خلافِ ادب ہے، اب نہایت ہیبت و وقار کے ساتھ مجرا و تسلیم بجالا بہ آواز حزیں و صورتِ درد آگیں و دلِ شرمناک و جگرِ صد چاک، معتدل آواز سے نہ نہایت نرم و پست نہ بہت بلند و سخت عرض کر: السلام علیك ایها النبی ورحمة الله وبرکاته، السلام علیك یا رسول الله، السلام علیك یا خیر خلق الله، السلام علیك یا شفیع المذنبین، السلام علیك وعلی الك واصحابك اجمعین 2۔ جہاں تک ممکن ہو اور زبان یاری دے اور ملال و کسل نہ ہو۔ صلوۃ و سلام کی کثرت کر۔ حضور سے اپنے اور اپنے والدین و مشائخ و احباب تمام اہل اسلام کے لیے شفاعت مانگ۔ بار بار عرض کر: اسئلك الشفاعة یا رسول الله 3۔ پھر کسی نے عرضِ سلام کی وصیت کی تو بجالا، عرض کر: السلام علیك یا رسول الله من عبدك عہ 4 وابن عبدك احمد رضا بن نقی علی

عہ ۱: مثل اختیار شرح مختار و فتاوی عالمگیری و لباب و شرح لباب وغیرہا ۱۲ منہ عہ ۲: اطلاق عبد بمعنی غلام قطعاً جائز و شائع اور قرآن و حدیث میں واقع، فقیر غفراللہ تعالیٰ نے اپنی کتاب "البارق الشارقة علی مارقة المشارقة" میں اس کی تحقیق مشبع لکھی اور اپنے رسالہ "مجیر معظم شرح قصیدہ اکسیر اعظم" (۱۳۰۲ھ) میں بھی قدرے توضیح ، اور گیارہ احادیث پر قناعت کی۔ یہاں

اسی قدر کافی کہ رب الارباب عز جلالہ قرآن عظیم میں فرماتا ہے: وَأَنْكِحُوا الْأَيَامَىٰ مِنْكُمْ وَالصَّالِحِينَ مِنْ ... نکاح کر دواپنوں میں ان کا جو بے نکاح ہوں اور ان کا جو صالح ہوں...

مجلس دعوت اسلامی

1 فتاوی ہندیہ خاتمہ فی زیارۃ قبر النبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ و سلم نورانی کتب خانہ پشاور ۱/ ۲۶۵

2 شرح لباب مع ارشاد الساری باب زیارۃ سید المرسلین دار الکتاب العربی بیروت ص ۳۳۸ 3 شرح لباب مع ارشاد الساری باب زیارۃ سید المرسلین دار الکتاب العربی بیروت ص ۳۳۹

Fatawa Razawiyya, Volume 10

...asks you for intercession, so intercede for him and for the Muslims. The humble author earnestly requests his Muslim brothers who read this treatise, and whom Allah Almighty grants the honor of visiting the sacred shrine, to recite these words to gain great reward and to make this undeserving, lowest of creatures indebted to them. May Allah Almighty grant you the best of rewards in both worlds. Amen! Afterward, move about one Shari'i yard (approx. half a meter) to your right, i.e., towards the east, and stand facing the radiant countenance of Hadrat Siddiq al-Akbar (may Allah Almighty be pleased with him) and say: "Peace be upon you, O Successor of the Messenger of Allah. Peace be upon you, O Minister of the Messenger of Allah. Peace be upon you, O Companion of the Messenger of Allah in the Cave, and the mercy and blessings of Allah be upon you." [1] Then move further back and stand before Hadrat Farooq al-A'zam (may Allah Almighty be pleased with him) and say: "Peace be upon you, O Commander of the Faithful. Peace be upon you, O Completer of the Forty. Peace be upon you, O Honor of Islam and the Muslims, and the mercy and blessings of Allah be upon you." [2] Then return back about half a Shari'i yard and stand between Siddiq and Farooq and say: "Peace be upon you, O two companions of the Messenger of Allah. Peace be upon you, O two successors of the Messenger of Allah. Peace be upon you, O two ministers of the Messenger of Allah, and the mercy and blessings of Allah be upon you." [3] During all these presences, pray with utmost effort as it is a place of acceptance. Then come near the pure pulpit (Mimbar) and pray. Then, in the luminous garden (Rawdah), which is the place between the radiant pulpit and the pure shrine and is called a garden of Paradise in Hadith, perform two rak'ahs of voluntary (Nafl) prayer and supplicate. (Continuation of the footnote from the previous page): ...of your worthy male and female slaves. (T) "your male slaves and female slaves" [4] See, Allah Almighty has called our slaves our 'abd' (slaves/servants), although we should not call our slave 'Ya Abdi' (O my slave) as it is against humility; prohibition for this has come in Hadith, not that a slave should not call himself the slave of his master. Amen.

[1] Sharh lil-Lubab with Irshad al-Sari, Chapter on Visiting the Master of Messengers, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 339 [2] Sharh lil-Lubab with Irshad al-Sari, Chapter on Visiting the Master of Messengers, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 339 [3] Sharh lil-Lubab with Irshad al-Sari, Chapter on Visiting the Master of Messengers, Dar al-Kitab al-Arabi, Beirut, p. 340 [4] Al-Quran 32/32

फतावा रज़विया, जिल्द दस (10)

...आपसे शफ़ाअत (सिफारिश) मांगता है, अतः उसके लिए और सभी मुसलमानों के लिए शफ़ाअत करें। फ़क़ीर (लेखक) अपने मुसलमान भाइयों से विनम्र निवेदन करता है कि जो साहब इस रिसाले (पुस्तिका) से परिचित हों और अल्लाह अज़्व-ओ-जल्ल उन्हें रौज़ा-ए-अकदस (पवित्र मज़ार) की हाज़िरी का अवसर दे, वे इन शब्दों को कहकर पुण्य प्राप्त करें और इस अयोग्य, सृष्टि के अपमान को कृतज्ञ बनाएं। अल्लाह तआला आपको दोनों जहानों में बेहतरीन प्रतिफल प्रदान करे। आमीन! इसके बाद एक शरीई गज़ (लगभग आधा मीटर) अपने दाहिने हाथ यानी पूर्व की ओर हटकर हज़रत सिद्दीक़ अकबर (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) के नूरानी चेहरे के सामने खड़े होकर कहें: "अस्सलाम अलैका या खलीफ़ता रसूलिल्लाह। अस्सलाम अलैका या वज़ीरा रसूलिल्लाह। अस्सलाम अलैका या साहिबा रसूलिल्लाह फ़िल-ग़ारि व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू।" [1] फिर कुछ और पीछे हटकर हज़रत फ़ारूक़-ए-आज़म (अल्लाह उन पर प्रसन्न हो) के सामने खड़े होकर कहें: "अस्सलाम अलैका या अमीरल मोमिनीन। अस्सलाम अलैका या मुतम्मिल अरबईं। अस्सलाम अलैका या इज़्ज़ल इस्लामि वल-मुस्लिमीन व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू।" [2] फिर आधा शरीई गज़ वापस लौटें और सिद्दीक़ व फ़ारूक़ के बीच खड़े होकर कहें: "अस्सलाम अलैका या साहिबै रसूलिल्लाह। अस्सलाम अलैका या खलीफ़तई रसूलिल्लाह। अस्सलाम अलैका या वज़ीरई रसूलिल्लाह व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू।" [3] इन सभी हाज़िरी के दौरान पूरी कोशिश के साथ दुआ करें क्योंकि यह क़बूलियत का स्थान है। फिर पवित्र मिम्बर के पास आकर दुआ करें। फिर रौज़ा मुनव्वरा में, यानी वह स्थान जो नूरानी मिम्बर और पवित्र रौज़ा के बीच है और जिसे हदीस में जन्नत की क्यारी (रियाज़ुल जन्नह) कहा गया है, आकर दो रकात नफ़्ल नमाज़ पढ़ें और दुआ करें। (पिछले पृष्ठ के हाशिए का शेष भाग): अपने योग्य दासों और दासियों का। (त) "इबादि-कुम व इमा-इकुम" (तुम्हारे दास और तुम्हारी दासियाँ) [4] देखो, अल्लाह तआला ने हमारे दासों को हमारा 'अब्द' कहा है, हालाँकि हमें अपने दास को 'या अब्दी' (ऐ मेरे दास) नहीं कहना चाहिए, क्योंकि यह विनम्रता के विरुद्ध है; हदीस में इसकी मनाही आई है, न कि यह कि दास स्वयं को अपने स्वामी का दास न कहे। आमिना।

[1] शरह लिल-लुबाब मअ इरशादुस सारी, बाब ज़ियारत सैयदुल मुरसलीन, दारुल किताब अल-अरबी, बेरुत, पृ. 339 [2] शरह लिल-लुबाब मअ इरशादुस सारी, बाब ज़ियारत सैयदुल मुरसलीन, दारुल किताब अल-अरबी, बेरुत, पृ. 339 [3] शरह लिल-लुबाब मअ इरशादुस सारी, बाब ज़ियारत सैयदुल मुरसलीन, दारुल किताब अल-अरबी, बेरुत, पृ. 340 [4] अल-कुरान 32/32

पृष्ठ 833 का 836

یسئلك الشفاعة فاشفع له وللمسلمین۔ فقیر اپنے مسلمان بھائیوں سے عاجزانہ درخواست کرتا ہے جو صاحب اس رسالہ پر واقف ہوں اور اللہ عزوجلالہ حاضری روضہ اقدس عطا فرمائے ان الفاظ کو عرض کر کے ثواب جزیل پائیں اور نالائق ننگِ خلائق کو ممنون احسان بنائیں، اللہ تعالٰی تمھیں دونوں جہان میں جزائے خیر بخشے۔ آمین! بعدہ ایک گز شرعی اپنے دہنے ہاتھ یعنی مشرق کی جانب ہٹ کر مقابل چھرہ انور حضرت صدیق اکبر رضی اللہ تعالٰی عنہ کھڑا ہو کر عرض کر: السلام علیك یا خلیفة رسول اللہ۔ السلام علیك یا وزیر رسول اللہ ۔ السلام علیك یا صاحب رسول اللہ في الغار ورحمة اللہ وبرکاته۔ 1 پھر اس قدر ہٹ کر روبروئے جناب فاروق اعظم رضی اللہ تعالٰی عنہ قیام کر کے کہہ: السلام علیك یا امیر المؤمنین۔ السلام علیك یا متمم الاربعین۔ السلام علیك یا عز الاسلام والمسلمین ورحمة اللہ وبرکاته۔ 2 پھر بقدر نصف گز شرعی کے پلٹ آ، اور صدیق وفاروق کے درمیان کھڑا ہو کر عرض کر: السلام علیك یا صاحبی رسول اللہ۔ السلام علیك یا خلیفتی رسول اللہ۔ السلام علیك یا وزیری رسول اللہ ورحمة اللہ وبرکاته۔ 3 ان سب حاضریوں میں بہ جہد تمام دعا کرے کہ محل قبول ہے۔ پھر منبر اطہر کے قریب آکر دعا کرے، پھر روضہ منورہ میں یعنی جو جگہ منبر انور اور روضہ مطہرہ کے ہے اور اسے حدیث میں جنت کی کیاری فرمایا آکر دو رکعت نفل پڑھے اور دعا کرے۔ (بقیہ حاشیہ صفحہ گزشتہ) اپنے لائق غلاموں اور کنیزوں کا۔ (ت) عِبَادِکُمْ وَاِمَآئِکُمْ 4 دیکھو اللہ تعالٰی نے ہمارے غلاموں کو ہمارا عبد فرمایا اگرچہ ہمیں اپنے غلام کو یا عبدی نہ کہنا چاہئے، کہ تواضع کے خلاف ہے حدیث میں اس کی ممانعت آئی نہ یہ کہ غلام بھی اپنے آپ کو آقا کا عبد نہ کہے امنہ

1 شرح للباب مع ارشاد الساری باب زیارة سید المرسلین دارالکتاب العربی بیروت ص ۳۳۹ 2 شرح للباب مع ارشاد الساری باب زیارة سید المرسلین دارالکتاب العربی بیروت ص ۳۳۹ 3 شرح للباب مع ارشاد الساری باب زیارة سید المرسلین دارالکتاب العربی بیروت ص ۳۴۰ 4 القرآن ۳۲/۳۲

Fatawa Rizvia - Volume 10

Then in Rawdah Munawwarah, which is the place between the luminous pulpit (Minbar Anwar) and the pure tomb (Rawdah Mutahharah), and which has been called a garden of Paradise in the Hadith, one should come and offer two rak'ahs of voluntary (nafl) prayer and supplicate. Similarly, one should offer prayers near the pillars of the noble Masjid. Ask for prayers as these are places of blessings. Especially in some of them (footnote 1) there are special characteristics, and Allah Almighty knows best.

Ruling (Mas'alah): Consider staying in this paradise-like inhabited place as a great opportunity; strive so that not a single breath passes in vain. Do not go out of the luminous Masjid except for necessities. Stay present in a state of purity, but heaven forbid that time be wasted in worldly talk or futile actions.

Ruling (Mas'alah): Always maintain the intention of I'tikaf (seclusion) when entering the Masjid (footnote 2), and if fasting is granted, especially during summer days, then...

Footnote 1: My noble father (may his secret be sanctified) explained the details of seven pillars in 'Jawahir al-Bayan Sharif'. He (Radi Allahu Anhu) said: Among them, one pillar is on the right side of the noble Mihrab, marking the prayer place (musalla) of the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him). The 'Hannanah' pillar was ahead of it. The second pillar is that of the Mother of the Believers, Aisha Siddiqah (Radi Allahu Anha); if the Imam leads prayer in the noble Musalla, among the pillars in the row behind him, it is the third pillar from the pulpit towards the east. The Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) prayed towards it for a few days. Prayers are accepted near it. The third is 'Ustuwanah at-Tawbah' (Pillar of Repentance), which is between the Aisha pillar and the pillar adjacent to the wall of the [Prophet's] chamber. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) prayed towards it and performed I'tikaf there. The fourth is 'Ustuwanah as-Sarir', which is attached to the noble grille (Jali Sharif), east of Ustuwanah at-Tawbah; the Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) performed I'tikaf near it. The fifth pillar is of Ali (Radi Allahu Anhu), which is behind Ustuwanah at-Tawbah towards the north; Janab-e-Murtaza (Karam Allahu Wajhah) used to sit and pray here. The sixth is 'Ustuwanah al-Wufud', which is behind the Ali pillar on the same side; only the Ali pillar stands between it and Ustuwanah at-Tawbah. The Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) and eminent companions used to grace this place. The seventh

is 'Ustuwanah at-Tahajjud', which is behind the house of Fatima (Radi Allahu Anha). [12 Minhu]

Footnote 2: According to the preferred (mufta biha) narration, there is no fixed duration for I'tikaf; it can even be for a single moment, nor is fasting a condition for it. Therefore, every person in every mosque should take care at all times that upon entering, they make the intention for I'tikaf. As long as they remain, they will also receive the reward of I'tikaf. Furthermore, this intention will not bind them to anything. Whenever they wish to come out, the I'tikaf will end at that moment. "For leaving a voluntary I'tikaf is its conclusion, not its nullification, as they have explicitly stated." (Because in voluntary circumambulation, leaving the mosque marks the end of I'tikaf, not its corruption, as has been clarified. - T). People lose this great reward for free due to their ignorance or heedlessness. May Allah Almighty grant us the success for good deeds for the sake of the Master of all creations, upon whom be the best of prayers and salutations. Ameen. [12 Minhu]

फिर रौज़ा मुनव्वरा में, यानी वह स्थान जो मिम्बर अनवर और रौज़ा मुतहरा के बीच है और जिसे हदीस में जन्नत की क्यारी कहा गया है, आकर दो रकात नफ़्ल पढ़ें और दुआ करें। इसी तरह मस्जिद शरीफ़ के खंभों (स्तंभों) के पास नमाज़ें पढ़ें। दुआएँ माँगें क्योंकि ये बरकतों की जगहें हैं। विशेष रूप से इनमें से कुछ (फुटनोट 1) में विशेष गुण हैं, और अल्लाह तआला सबसे बेहतर जानता है।

मसला (नियम): जन्नत जैसी बसी इस जगह में ठहरने को ग़नीमत जानें; प्रयास करें कि एक भी साँस बेकार न जाए। मस्जिद अनवर से ज़रूरतों के अलावा बाहर न जाएँ। पवित्रता (पाकी) की हालत में मौजूद रहें, लेकिन खुदा न करे कि दुनियावी बातों या व्यर्थ के कामों में समय बर्बाद हो।

मसला (नियम): मस्जिद में प्रवेश करते समय हमेशा एतिकाफ़ की नीयत रखें (फुटनोट 2), और अगर रोज़ा नसीब हो, विशेष रूप से गर्मी के दिनों में, तो...

फुटनोट 1: मेरे महान पिता (क़ुद्दसा सिर्रहु) ने 'जवाहर अल-बयान शरीफ़' में सात स्तंभों का विवरण दिया है। उन्होंने (रज़ी अल्लाह तआला अन्हु) फ़रमाया: उनमें से एक स्तंभ वह है जो मेहराब-ए-मुकर्रम के दाहिनी ओर नबी (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) के मुसल्ला (नमाज़ पढ़ने की जगह) की निशानी है, सुतून-ए-हन्नाना इसके आगे था। दूसरा स्तंभ मोमिनों की माँ आयशा सिद्दीक़ा (रज़ी अल्लाह तआला अन्हा) का है; यदि इमाम मुसल्ला शरीफ़ में नमाज़ पढ़े, तो उनके पीछे वाली सफ़ (कतार) में जो खंभे हैं, उनमें से मिम्बर से पूर्व की ओर तीसरा खंभा है। अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने कुछ दिनों तक इसकी ओर मुँह करके नमाज़ पढ़ी। इसके पास दुआ क़बूल होती है। तीसरा उस्तुआना-ए-तौबा (तौबा का खंभा) है, और वह आयशा स्तंभ और हुजरा की दीवार से लगे खंभे के बीच में है। नबी (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने इसकी ओर नमाज़ पढ़ी और वहाँ एतिकाफ़ किया। चौथा उस्तुआना-ए-सरीर है जो जाली शरीफ़ से सटा हुआ है, उस्तुआना-ए-तौबा से पूर्व की ओर; नबी (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) ने इसके पास एतिकाफ़ किया। पाँचवाँ स्तंभ अली (रज़ी अल्लाह तआला अन्हु) का है और वह उत्तर की ओर उस्तुआना-ए-तौबा के पीछे है; जनाब-ए-मुर्तज़ा (करम अल्लाह वज्हह) यहाँ बैठते और नमाज़ पढ़ते थे। छठा उस्तुआना-ए-वुफ़ूद है जो अली स्तंभ के पीछे उसी तरफ़ है; इसके और उस्तुआना-ए-तौबा के बीच केवल अली स्तंभ ही आता है। नबी (सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम) और श्रेष्ठ सहाबा

यहाँ तशरीफ़ लाते थे। सातवाँ उस्तुआना-ए-तहज्जुद है जो फ़ातिमा (रज़ी अल्लाह तआला अन्हा) के घर के पीछे है। [12 मिन्हु]

फुटनोट 2: मुफ़्ता बिहा (जिस पर फ़तवा दिया गया है) रिवायत के अनुसार, एतिकाफ़ के लिए कोई निश्चित अवधि नहीं है, यह एक पल का भी हो सकता है, और न ही इसके लिए रोज़ा शर्त है। इसलिए, हर आदमी को हर मस्जिद में हर समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जब भी प्रवेश करे, एतिकाफ़ की नीयत कर ले। जब तक वह रहेगा, उसे एतिकाफ़ का भी सवाब मिलेगा। साथ ही, यह नीयत उसे किसी चीज़ के लिए मजबूर नहीं करेगी। जब भी वह बाहर आना चाहेगा, एतिकाफ़ उसी समय समाप्त हो जाएगा। "क्योंकि नफ़्ली एतिकाफ़ से बाहर निकलना उसकी समाप्ति है, न कि उसे रद्द करना, जैसा कि उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है।" (क्योंकि नफ़्ली तवाफ़ में मस्जिद से निकलना एतिकाफ़ का अंत है, न कि बिगाड़ना, जैसा कि इस पर स्पष्टीकरण दिया गया है। - त)। लोग अपनी अनभिज्ञता या बेख्याली के कारण इस महान सवाब को मुफ़्त में खो देते हैं। अल्लाह तआला हमें तमाम मख्लूक़ात के सरदार के वसीले से नेक कार्यों की तौफ़ीक़ दे, जिन पर सर्वश्रेष्ठ दुरूद और सलाम हों। आमीन। [12 मिन्हु]

पृष्ठ 834/836

پھر روضہ منورہ میں یعنی جو جگہ منبر انور و روضہ مطہرہ کے ہے اور اسے حدیث میں جنت کی کیاری فرمایا آ کر دو رکعت نفل پڑھے اور دعا کرے۔ اسی طرح مسجد شریف کے ستونوں کے پاس نمازیں پڑھے۔ دعائیں مانگے کہ محل برکات ہیں۔ خصوصاً بعض عہ۱ میں خصوصیات خاصہ ، واللہ تعالیٰ اعلم۔

مسئلہ : اس سوادِ جنت آباد کی اقامت غنیمت جانے ، جہد کرے کہ کوئی نفس بیکار نہ گزرے۔ مسجد انور سے ضروریات کے سوا باہر نہ جائے۔ با طہارت حاضر رہے مگر حاشا کہ دنیوی باتوں، عبث کاموں میں وقت ضائع نہ کرے۔

مسئلہ : ہمیشہ جلوس مسجد عہ۲ میں نیت اعتکاف رکھے، اور روزہ نصیب ہو خصوصاً ایام گرما میں تو

عہ ۱: حضرت والد قدس سرہ نے جواہر البیان شریف میں سات ستونوں کی تفصیل فرمائی قال رضی اللہ تعالیٰ عنہ ان میں ایک ستون وہ ہے جو محرابِ مکرم کے دہنی طرف مصلاے نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم کی علامت ہے، ستون حنانہ اس کے آگے تھا۔ دوسرا ستون ام المومنین عائشہ صدیقہ کا کہ امام اگر مصلاے شریف میں نماز پڑھے تو اس کے پیچھے کی صف میں جو ستون واقع ہوں ان میں سے منبر سے جانب مشرق تیسرا ستون ہے۔ رسول اللہ صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے چند روز اس کی طرف نماز پڑھی۔ اس کے پاس دعا مقبول ہوتی ہے، تیسرا اسطوانہ توبہ ، اور وہ ستون عائشہ اور ستون ملاصق بہ دیوار حجرہ کے بیچ میں ہے، نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے اس کی طرف نماز پڑھی اور وہاں اعتکاف فرمایا تھا۔ چوتھا اسطوانہ السریر کہ جالی شریف

سے ملتصق ہے اسطوانہ توبہ سے مشرق کو نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم نے اس کے پاس اعتکاف کیا۔ پانچواں ستون علی رضی اللہ تعالیٰ عنہ اور وہ شمال کی طرف اسطوانہ توبہ کے پیچھے ہے جناب مرتضیٰ کرم اللہ وجہہ یہاں بیٹھتے اور نماز پڑھتے۔ چھٹا اسطوانہ الوفود کہ وہ اسی جانب اسطوانہ علی کے پیچھے ہے اس میں اور اسطوانہ توبہ میں صرف ستون علی حائل ہے، نبی صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم اور افاضل صحابہ یہاں رونق افروز ہوتے ____ ساتواں اسطوانہ التہجد کہ بیت فاطمہ رضی اللہ تعالیٰ عنہ کے پیچھے ہے ۱۲ منہ

عہ ۲ : روایت مفتی بہا پر اعتکاف کے لیے کوئی مقدار معین نہیں ایک لمحہ کا بھی ہو سکتا ہے ، نہ اس کے لیے روزہ شرط ، تو آدمی کو ہر مسجد میں ہر وقت اس کا لحاظ کرنا چاہئے کہ جب داخل ہوا اعتکاف کی نیت کر لے جب تک رہے گا اعتکاف کا بھی ثواب پائے گا، پھر یہ نیت اسے کچھ پابند نہ کرے گی۔ جب چاہے باہر آئے اسی وقت اعتکاف ختم ہو جائے گا فان الخروج فی النفل المطلق منہ لافسد کما نصوا علیہ (کیونکہ نفلی طواف میں مسجد سے نکلنا اعتکاف کا اختتام ہے مفسد نہیں جیسا کہ اس پر تصریح کی گئی ہے۔ ت) لوگ اپنی ناواقفی یا بے خیالی سے اس ثواب عظیم کو مفت کھوتے ہیں، وفقنا اللہ تعالیٰ للحسنات بجاہ سید الکائنات علی افضل الصلوات والتحیات آمین ۱۲ منہ

Fatawa Rizvia, Volume 10

What to say! On this, there is a promise ^1 of intercession.

Ruling: Here, every righteous deed is multiplied up to fifty thousand times; therefore, effort in worship is mandatory, stay awake at night, keep eating and drinking minimal, and complete at least one recitation of the Holy Quran here and in the Hateem ^2 of the Great Kaaba.

Ruling: Looking towards the illuminated chamber (Hujra Munawwara) and the fragrant dome (Qubba Mu'attara) is an act of worship like looking towards the Kaaba, so do it frequently with humility and respect.

Ruling: After the five daily prayers, present yourself before the Prophet (peace be upon him) and offer Salawat and Salam.

Ruling: When passing through the vicinity of the sacred dome, even if outside the mosque or outside Medina from where the noble dome is visible, do not pass without stopping and offering Salawat and Salam, as that would be a lack of etiquette.

Ruling: Abandoning the congregational prayer is bad everywhere, but here it is a severe deprivation, may Allah protect us. Hadith ^3 says: Whoever for forty...

---

^1: The radiant Prophet (peace and blessings of Allah be upon him) says: Whosoever among my Ummah endures the intensity and hardships of Medina with patience, I will be his intercessor on the Day of Resurrection [1] (Narrated by Muslim from Abu Huraira, may Allah be pleased with him). And it is evident that patience is required for the intensity and labor in fasting, especially in hot lands and particularly during the summer season. The Hadith itself states: "Fasting is half of patience" [2].

Sublime Benefit: The things for which intercession is promised, like this Hadith or the Hadith of noble visitation (Ziyarat) or the Hadith of dying in Medina or the Hadith of asking for the 'Wasilah' (intermediary) etc., are, by the grace of Allah, beautiful tidings of a good end. Because here is a promise of intercession, and the promise of the Prophet is the promise of the Forgiving Lord, "Verily, Allah does not fail in His promise" [3] (Indeed, Allah does not act against His promise. T). And intercession for a disbeliever is impossible. Therefore, it is inevitably heralded that the one who is patient under the hardships of Medina, the visitor of the radiant Prophet, the one who dies in Medina Tayyiba, and the one who asks for the 'Wasilah' for the Prophet,

will meet their end upon faith. All praise is for Allah, Lord of the worlds. O Allah, grant this to us, Amen. 12 Minhu (from the author).

^2: The ground inside the small crescent-shaped wall adjacent to the northern side of the Great Kaaba is called Hateem. A large portion of it was inside the Kaaba in the construction by Ibrahim (peace be upon him). The Quraysh excluded it from the new construction due to lack of funds. 12 Minhu.

^3: Narrated by Imam Ahmad in his Musnad with an authentic chain from Anas. Imam Ahmad narrated it in his Musnad with a sound chain from Anas bin Malik (may Allah be pleased with him). All praise is for Allah, Lord of the worlds. (T)

---

1 Sahih Muslim, Chapter: Encouragement to reside in Medina etc., Qadimi Kutub Khana Karachi, 1/444. 2 Musnad Ahmad bin Hanbal, Hadith of a man from Bani Sulaym, Dar al-Fikr Beirut, 2/260. 3 Al-Quran, 13/31.

फ़तावा रज़विया, जिल्द १०

क्या कहना! इस पर शफ़ाअत (सिफारिश) का वादा ^1 है।

मसला: यहाँ हर नेक अमल का सवाब पचास हज़ार गुना तक बढ़ जाता है, इसलिए इबादतों में खूब कोशिश लाज़िम है, रात को जागें, खाने-पीने में कमी रखें, और कम से कम एक बार कुरान मजीद का ख़त्म यहाँ और हतीम ^2 काबा-ए-मुअज़्ज़मा में कर लें।

मसला: हुजरा-ए-मुनव्वरा और.क़ुब्बा-ए-मुअ़त्तरा (पावन गुंबद) की तरफ देखना इबादत है जैसे काबा की तरफ देखना, इसलिए आजिजी और अदब के साथ इसे कसरत से करें।

मसला: पांचों वक्त की नमाज़ के बाद हुज़ूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की बारगाह में हाज़िर होकर दरूद व सलाम पेश किया करें।

मसला: जब मुक़द्दस गुंबद के सामने से गुज़रें, चाहे मस्जिद के बाहर हों या मदीना के बाहर जहाँ से मुबारक गुंबद नज़र आए, बिना ठहरे और दरूद व सलाम पेश किए न गुज़रें क्योंकि यह अदब के खिलाफ है।

मसला: जमाअत छोड़ना हर जगह बुरा है, लेकिन यहाँ यह सख़्त महरुमी है, खुदा की पनाह। हदीस ^3 में है: जिससे चालीस...

---

^1: हुज़ूर पुर नूर (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) फरमाते हैं: "मेरी उम्मत का जो भी व्यक्ति मदीना की शिद्दत और सख़्ती पर सब्र करेगा, मैं कयामत के दिन उसका शफीअ (सिफारिश करने वाला) बनूँगा।" [1] (रवाहु मुस्लिम, अन अबी हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु)। और यह ज़ाहिर है कि रोज़े में शिद्दत और मशक़्क़त पर सब्र होता है, खास तौर पर गर्म मुल्कों में और विशेष रूप से गर्मियों के मौसम में। खुद हदीस में आया है: "रोज़ा आधा सब्र है।" [2]

फाएदा-ए-जलीला: जिन चीज़ों पर शफ़ाअत का वादा फरमाया गया है, जैसे यह हदीस या ज़ियारत-ए-शरीफ़ा की हदीस या मदीना में मौत की हदीस या वसीला मांगने की हदीस वगैरह, वे अल्हम्दुलिल्लाह हुस्न-ए-खातिमा (अच्छे अंत) की बेहतरीन बशारत (खुशखबरी) हैं। क्योंकि यहाँ शफ़ाअत का वादा है, और हुज़ूर का वादा रब-ए-ग़फ़ूर का वादा है, "बेशक अल्लाह वादे के खिलाफ नहीं करता।" [3] (बेशक अल्लाह वादे के खिलाफ नहीं करता। त) और काफिर के लिए शफ़ाअत नामुमकिन है। तो यकीनी तौर पर यह बशारत है कि मदीना की सख़्ती पर सब्र करने वाला, हुज़ूर का

ज़ायिर, मदीना तैयबा में मरने वाला और हुज़ूर के लिए वसीला मांगने वाला ईमान पर खातिमा पाएगा। अल्हम्दुलिल्लाह रब्बिल आलमीन। ऐ अल्लाह हमें यह नसीब फरमा, आमीन। १२ मिन्हु (लेखक की ओर से)।

^2: काबा-ए-मुअज़्ज़मा के उत्तर की ओर जो एक छोटी अर्धवृत्ताकार दीवार है, उसके अंदर की ज़मीन को हतीम कहते हैं। इब्राहिम अलैहिस्सलाम के बनाए हुए काबा का एक बड़ा हिस्सा इसमें शामिल था। कुरैश ने निर्माण के दौरान खर्च की कमी के कारण इसे नई इमारत से बाहर कर दिया था। १२ मिन्हु।

^3: इसे इमाम अहमद ने अपनी मसनद में सहीह सनद के साथ अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से रिवायत किया है। अल्हम्दुलिल्लाह रब्बिल आलमीन। (त)

---

१ सहीह मुस्लिम, बाब: मदीना में रहने की तरगीब आदि, क़दीमी कुतुब खाना कराची, १/४४४ २ मसनद अहमद बिन हंबल, बनी सुलैम के एक व्यक्ति की हदीस, दारुल फिक्र बेरुत, २/२६० ३ अल-कुरान, १३/३१

पृष्ठ ८३५/८३६

کیا کہنا اس پر وعدہ ع۱ شفاعت ہے۔ مسئلہ : یہاں ہر عمل صالح پچاس ہزار تک مضاعف ہوتا ہے لہذا عبادات میں جہد لازم ، شب بیداری رہے ، کھانے پینے کی تقلیل رکھے ، قرآن مجید کا کم سے کم ایک ختم تو یہاں اور حطیم ع۲ کعبہ معظمہ میں کر لے۔ مسئلہ : نظر حجرہ منورہ و قبہ معطرہ کی طرف عبادت ہے جیسے کعبہ کی طرف، تو خشوع و ادب کے ساتھ اس کی کثرت کرے۔ مسئلہ : پنجگانہ نماز کے بعد حضور میں حاضر ہو کر صلوۃ و سلام عرض کیا کرے۔ مسئلہ : جب محاذات گنبد اقدس میں گزارے اگر چہ بیرون مسجد اگر چہ بیرون مدینہ جہاں سے قبہ کریمہ نظر آئے بے ٹھہرے اور صلوۃ و سلام عرض کئے نہ گزرے کہ ترکِ ادب ہے۔ مسئلہ : ترکِ جماعت ہر جگہ بُرا ہے مگر یہاں سخت محرومی، والعیاذ باللہ ، حدیث ع۳ میں ہے : جس سے چالیس

ع۱: حضور پر نور صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم فرماتے ہیں : میرا جو امتی مدینہ کی شدت و سختی پر صبر کرے گا میں قیامت کے روز اس کا شفیع ہوں گا ۱ (رواہ مسلم عن ابی ھریرۃ رضی اللہ تعالٰی عنہ) اور پر ظاہر کہ روزہ میں شدت و محنت پر صبر ہوتا ہے خصوصاً بلادِ گرم میں خصوصاً جبکہ موسم گرما ہو ، خود حدیث میں آیا: الصوم نصف الصبر ۲ روزہ آدھا صبر ہے۔ فائدہ جلیلہ : جن چیزوں پر وعدہ شفاعت فرمایا گیا جیسے یہ حدیث یا حدیث زیارت شریفہ یا حدیث موت فی المدینہ یا حدیث سوال وسیلہ وغیرہا وہ بحمد اللہ حسن خاتمہ کی بشارت جمیلہ ہیں کہ یہاں وعدہ شفاعت ہے اور وعدہ حضور وعدہ رب غفور ، اِنَّ اللّٰہَ لَا یُخْلِفُ الْمِیْعَادَ (۳) (بیشک اللہ وعدہ کے خلاف نہیں کرتا۔ ت) اور کافر کی شفاعت محال ، تو لاجرم بشارت فرماتے ہیں کہ سختی مدینہ پر صابر اور حضور پر نور کا زائر اور مدینہ طیبہ میں مرنے والا اور حضور کے لیے سوالِ وسیلہ کرنے والا ایمان پر خاتمہ پائے گا والحمد للہ رب العالمین اللھم ارزقنا آمین ۱۲ منہ ع۲: کعبہ معظمہ

سے جو متصل جانبِ شمال جو ایک چھوٹی سی دیوار قوسی شکل پر ہے اس کے اندر کی زمین کو حطیم کہتے ہیں اس کا بڑا ٹکڑا بنائے ابراہیم علیہ الصلوٰۃ والسلام میں داخل کعبہ تھا قریش نے تنگی خرچ کے سبب بنائے جدید میں خارج کر دیا ۱۲ منہ ع۳: رواہ الامام احمد فی مسندہ بسند صحیح عن انس اسے امام احمد نے بسند صحیح اپنی مسند میں انس بن مالک رضی اللہ تعالٰی عنہ سے روایت کیا ہے والحمد للہ رب العالمین (ت)

---

1 صحیح مسلم باب الترغیب فی سکنی المدینہ الخ قدیمی کتب خانہ کراچی ۱/۴۴۴ 2 مسند احمد بن حنبل حدیث رجل من بنی سلیم دار الفکر بیروت ۲/۲۶۰ 3 القرآن ۱۳/۳۱

Fatawa Razawiyya Volume 10

For him whose prayers are not missed in my mosque, freedoms from Hell, hypocrisy, and punishment shall be written[1].

Ruling: One should not touch the wall of the chamber nor cling to it, but rather maintain a distance of at least three Shari'a yards (gaz), for this is the proper etiquette.

Ruling: One should never turn their back towards the pure and fragrant grave, neither during prayer nor at any other time.

Ruling: One should not perform circumambulation (tawaf) around the luminous tomb, nor kiss the ground. One should not bend as if in ruku' (bowing), for the true reverence of the Messenger of Allah (peace and blessings of Allah be upon him) lies in obeying him.

Ruling: If one intends to visit Al-Baqi, Uhud, Quba, and other sacred sites based on the recommendations of the scholars, then they should seek details from the books of scholars; otherwise, what greater wealth is there than staying present before the pure chamber? May Allah Almighty grant their closeness in this world and the Hereafter, Ameen.

And may the blessings of Allah Almighty be upon our master and leader Muhammad, and upon all his family and companions. And our final call is that all praise belongs to Allah, the Lord of the worlds.

The 'Raziya' gloss on 'An-Nayyirat-ul-Waziya Sharh Al-Jawharat-ul-Mudiya' is completed, and praise be to Allah.

[Central Logo text: I.T. Majlis of Dawat-e-Islami, www.dawateislami.net]

[1] Musnad Ahmad bin Hanbal, narrated from Anas bin Malik (may Allah be pleased with him), Dar al-Fikr Beirut, 3/155

Page 836 of 836

फतावा रज़विया जिल्द 10

जिसकी नमाज़ें मेरी मस्जिद में नहीं छूटतीं, उसके लिए दोज़ख, निफ़ाक़ और अज़ाब से आज़ादियाँ लिख दी जाएँगी[1]।

मसला: हुजरा (कक्ष) की दीवार को न छुए और न ही उससे चिपके, बल्कि कम से कम तीन शरीअत वाले गज़ की दूरी रखे, क्योंकि अदब यही है।

मसला: पावन और सुगंधित कब्र की तरफ कभी भी पीठ न करे, न नमाज़ में और न ही नमाज़ के अलावा।

मसला: रौज़ा-ए-अनवर का तवाफ़ न करे, न ज़मीन चूमे। रुकू की तरह पीठ न झुकाए, क्योंकि रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की ताज़ीम उनकी इताअत (आज्ञाकारिता) में है।

मसला: यदि उलमा की संस्तुति के अनुसार बक़ीअ, उहुद, क़ुबा और अन्य पवित्र स्थलों की ज़ियारत (दर्शन) का इरादा हो, तो उनका विवरण उलमा की किताबों से प्राप्त करे; अन्यथा पावन हुजरे की उपस्थिति के बराबर कौन सी दौलत है? अल्लाह तआला दुनिया और आखिरत में उनका कुर्ब (समीपता) प्रदान करे, आमीन।

और अल्लाह तआला की रहमतें हों हमारे आका और मौला मुहम्मद और उनके तमाम आल (परिवार) और असहाब (साथियों) पर। और हमारी आखिरी पुकार यह है कि तमाम तारीफें अल्लाह के लिए हैं जो तमाम जहानों का रब है।

'अन्नय्यिरतुल वज़िया शरह अल-जौहरतुल मुज़िया' पर 'तुर्रतुर्रज़िया' समाप्त हुई, और अल्लाह का शुक्र है।

[केंद्रीय लोगो का पाठ: I.T. मजलिस-ए-दावत-ए-इस्लामी, www.dawateislami.net]

[1] मसनद अहमद बिन हंबल, अनस बिन मालिक (रज़ियल्लाहु अन्हु) से वर्णित, दारुल फिक्र बेरुत 3/155

فتاوٰی رضویہ جلد دہم

نمازیں میری مسجد میں فوت نہ ہوں اس کے لیے دوزخ و نفاق و عذاب سے آزادیاں لکھی جائیں ۱۔

مسئلہ: دیوارِ حجرہ کو مس نہ کرے نہ اس سے چمٹے بلکہ کم سے کم تین گز شرعی کا فاصلہ رکھے کہ ادب یہی ہے

مسئلہ: قبر اطہر واعطر کو ہر گز نہ پیٹھ نہ کرے نماز میں نہ غیرِ نماز میں۔

مسئلہ: روضہ انور کا طواف نہ کرے، نہ زمین چومے۔ نہ پیٹھ مثل رکوع جھکائے کہ رسول اللہ صلی اللہ تعالٰی علیہ وسلم کی تعظیم ان کی اطاعت میں ہے۔

مسئلہ: حسبِ استحسانِ علماء زیارت بقیع واحد و قبا و دیگر آثار شریفہ کا قصد ہو تو ان کی تفصیل کتابِ علماء سے دریافت کرے ورنہ حجرہ مطہرہ کے حضور حاضر رہنے کے برابر کون سی دولت ہے اللہ تعالٰی دنیا و آخرت میں ان کا قرب عطا فرمائے، آمین۔

وصلی اللہ تعالٰی علی سیدنا و مولانا محمد وآلہ وصحبہ اجمعین۔ وآخر دعوانا ان الحمدللہ رب العالمین۔

تمت الطرۃ الرضیۃ علی النیرۃ الوضیۃ شرح الجوھرۃ المضیۃ والحمد للہ۔

[لوگو تحریر: آئی ٹی مجلس دعوت اسلامی، www.dawateislami.net]

۱ مسند احمد بن حنبل مروی از انس بن مالک رضی اللہ عنہ دارالفکر بیروت ۳/ ۱۵۵